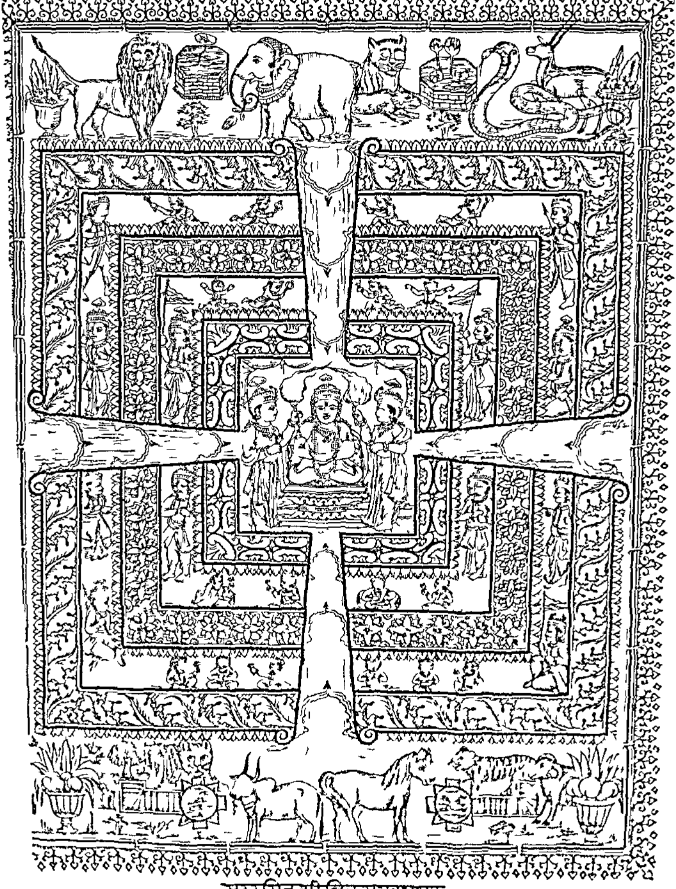


सुररचित श्रीजिन समवशरण

प्रस्तावना

आ असार संसार समुद्रनेविषे सतत पर्यटन करनारा प्राणीओने जन्म मरणादिक
त्युग्र दुःखोमाथी मुक्त करे एवो तो मात्र एक धर्मज छे अने एमज सर्व दर्शनीना
ास्त्रमा पण कहेलु छे, एवो जे धर्म तेनु मूल तो सर्वांश युक्त दयाज छे कहेलु छे
के " अहिंसा परमो धर्म " दयावडे धर्मनी प्राप्ति थाय छे, अने परिपूर्ण धर्म प्राप्त थया
ठी जीव मोक्षगामी थाय छे, माटें दया सर्वोत्कृष्ट पदार्थ छे सर्व दर्शनीओ दयानो
उपयोग करेछे खरा, परंतु सर्वांशें करता नथी एटलाज माटे तेओने धर्म पदार्थनो
वो जोइयें तेवो लाभ थतो नथी दयानो सर्वांशे उपयोग तो मात्र जैन दर्शनमां
स्वीकार्यो छे तेथीज जैनदर्शन धर्मधुरिसर कहेवाय छे, माटें दयानो सर्वांशें
उपयोग करवानी अगत्य छे, जेम कांई भोजनार्थे पक्वान्न करवु होय तो तेमा घृत,
ट, शर्करादिक अगत्य वस्तुनु एकत्रपणु यथाविधि थाय त्यारेज ते पक्वान्न स्वादिष्ट
कहेवाय, पण जो उपर कहेली वस्तुओमाथी एक पण वस्तुनु ओछा पणु होय तो ते
क्वान्न स्वाद रहित बने माटें दया पदार्थ सर्वांशे पलाय तोज तेथी धर्मोपलब्धि
थाय, ते विना तो कदी पण थायज नहीं सर्व दर्शनीओने दया मान्य छे खरी तथा
पि तेओनी समजमा फेर होवाथी तेओ श्रेष्ठता पूर्वक दयानो उपयोग सर्वांशें करी शकता
थी ए वात आगलना व्याख्यान उपरथी सिद्ध थशे जेमके कोइएक दर्शनी तो एम
माणे छे के पशुओनो प्राणघात करवो, एटले तेओ जन्मथी छूटे, एम कही दया मानी
नथे छे, कोइएक कहेछे के प्राणीओ, ज्यां सुधी शरीरे सुखी होय त्यां सुधी तेमनी उ
र दया करवी, पण ज्यारे तेओ व्याधिग्रस्त स्थितिमा पीडाता होय त्यारे तो ते प्रा
णीओनो वध करी तेमने थती पीडामाथी मुक्त करवा एज दयाछे केटलाएक कहे छे
के सूक्ष्म अथवा स्थूल प्राणीओ, जेओ मनुष्यने दुःख दीये छे, तेओने मारी नाखवा एज
दया छे, केटलाएक तो यज्ञयागादिक करवामा प्राणीओनो नाश करी तेमाज धर्म धुरं
धरता मानी बेठा छे, अने केटलाएक अति सूक्ष्मादि प्राणीओ जेनु स्वरूप दृष्टिगोच
र नथी तेनी चिंता लेश मात्र न राखता मात्र स्थूल प्राणीओ उपरज दया करवामां
दया माने छे, एम अनेक प्रकारें दयानो उपयोग अन्य दर्शनीओ करे छे तथापि तेओ
स्वदया, परदया, द्रव्यदया, भावदया, निश्चयदया, व्यवहारदया, स्वरूपदया, अनुब
धदया, इत्यादि दयाना अनेक प्रकार, जैनग्रंथोमा सविस्तर वर्णन करेला छे ते प्रमा
णें वर्त्ता दयानु स्वरूप नयशैलीपूर्वक समजता नथी, एज तेओनी मतिमा विभ्रम छे

अने एवी भ्रमित मतिवाला दर्शनीउंनु मत क्यारें पण शुद्ध कहेवाय नहीं
दर्शनमा पोताना आत्मानु आत्मत्वपणु जाणीने पूर्णपणे दयाने अंगीकार क
य, एवु तो एक श्री जैनदर्शन छे अने ते सर्व लोक प्रविदित छे तेथी ए ध
तुमा सर्वोत्कृष्ट कहेवाय छे ए धर्मना एक रीतें, आचारधर्म, दयाधर्म, क्रियाध
वस्तुधर्म, एवा चार भेद छे अने दान, शील, तप, तथा भाव, ए चार तेनां क
हवे धन बले करी दान देवाय, मन बलवडे शील पलाय, शरीर बलवडे तप
अने सम्यक्ज्ञानबलवडे भावधर्मनी वृद्धि थाय ए भावधर्म, दान, शील अ
ए त्रणे करता अधिक छे, केमके भावधर्मनु कारण ज्ञान बल छे, जेणे कर
स्वरूप जाणीयें, तेने ज्ञान कहीये ते ज्ञानथकी आत्मधर्मनी वृद्धि तथा सर
टलु थायछे तेटलु पेला त्रण जे दान, शील ने तप, ते थकी थतु नथी एनुं का
के नय, निक्षेप, प्रमाण, चार अनुयोगनो विचार, सप्तभंगी, षट्द्रव्यादिकनो
आदि लइ ज्ञान बलवडे जीवने परिपूर्ण प्राप्त थायछे वली श्री दशवैकालिक
मा पण प्रथम ज्ञानने पछी क्रिया कहीछे ते उपरात ज्ञान विनानी जे ि
रवी ते पण क्लेशरूप कहीछे अर्थात् क्रिया तो ज्ञाननी दासी जेवीजछे ज्ञान
नी अल्प क्रिया पण अत्यत श्रेष्ठ छे वली श्री उत्तराध्ययनमा पण कह्यु छे
गुण सयुक्त जे होय तेनेज मुनि कहेवो एथी पण ज्ञाननु महात्म्य अत्युत्कृ
थछे श्री महानिशीथमा ज्ञानने अप्रतिपाति वर्णव्यु छे श्री मरुदेवी माताने
उपर बेठा छता केवल ज्ञान उत्पन्न थयु वली श्री भरतेश्वरने आरीसा न
छता कर्मोनी विमुक्तता थइ ते पण ज्ञाननुज प्राबल्य हतु अने श्री उपदेश म
कह्युछे के ज्ञान रूपी नेत्रे करी उजमाल एवा मुनिने वदन करवु योग्य छे दे
मल्लवादि प्रमुखोए बौध दर्शनीउंने जीतीने जगत्मा यशोवाद लीधो ते पण
ज प्रसाद जाणवो ज्ञाननी जे तीक्ष्णता तेज अवध चारित्र जाणवु जे
कर्मनो क्रोडो वर्षपर्यंत दान, शील तथा तप करवाथी विनाश थतो नथी ते
एक श्वासोश्वासमा थायछे एटलाज माटे क्रिया गुरुने पींपलाना पत्र जेवा गण
अने ज्ञानी गुरुने समुद्र समान गण्या छे ज्ञान विना सम्यक्त्वपणु रही शके नर
न विना अहिसानो मार्ग समजाय नहीं, सिद्धातोक्त समस्त क्रियानु मूल जे
तेनु पण कारण ज्ञान छे केमके ज्ञान विना श्रद्धानी प्राप्ति थती नथी, एवु जे
तेना पाच प्रकार छे मति, श्रुत, अवधि, मन पर्यव अने केवल ए पाचने वि
श्रुतज्ञान सर्वथी अधिकोपयोगी छे श्रुतज्ञान पदार्थमात्रनु प्रकाशक छे स्वमत
रमतनु परिपूर्ण प्रकाश करनारु पण श्रुतज्ञानज छे अज्ञानरूप तिमिर टालवाने

ाछे तथा दुस्सम कालरूप रात्रीने विषे तो दीपक समानछे बीजा चार प्रकारना जे
न छे तेनु पण कारण नूत श्रुतज्ञानज छे. परमेश्वरे कह्यु छेके श्रुतज्ञान सव्यवहा
छे उद्देश, समुदेश, आज्ञा इत्यादि व्यवहारनो लान श्रुतज्ञानथी थाय छे वली स्व
रूपने परस्वरूप समजाववाने श्रुत ज्ञानज समर्थ छे बीजा केवल ज्ञानादिक चारे
नथकी जाणेला पदार्थनु स्वरूप पण श्रुत ज्ञानवडेज कहेवाय छे माटे मत्यादि
चार ज्ञान स्थापवा योग्यछे पण तेणे करीने परजीवने उपदेश आपी उपकार करी
शाय नहीं, अने श्रुतज्ञानथी उपदेश थाय माटे उपकारी छे श्रुतज्ञानना श्रवण
वाथी शुद्धात्मिक परमपदनी प्राप्ति थाय छे माटें श्रुतज्ञान ते महोटु निमित्त कारण
श्रुतज्ञानने सानलवे करी जीवने शुद्धस्वरूप विशुद्ध श्रद्धान (प्रतीत) उपजे ने
थी शुद्धात्मानु आचरण, आसेवन तथा अनुनव उपजे तेज परमपद प्राप्ति जा
नी श्रुतज्ञान सानलवाना प्रनावथकी जीव, धर्मने विशेषे जाणे विवेकवत थाय,
मितिनो त्याग करे, ज्ञाननी प्राप्ति थाय अने अतें मोक्ष पामे, माटें श्रुतज्ञाननो आ
अवश्य करवो श्रुतज्ञाननो सयोग थवो जीवने अत्यत दुर्लन छे श्रुतज्ञानने स
गे करीने पूर्वें श्रीगौतमस्वामी, सुधर्मस्वामी, जबुस्वामी प्रमुख घणा जीवो ससार स
द्रने तरी गया, अने वर्त्तमान कालें महाविदेह क्षेत्रने विषे विहरमान सीमधरादिक
श तीर्थकरनी वाणी सानलीने घणा जीवो तरेछे, तथा आगमिक काले पद्मनाजा
क तीर्थकरनी वाणी सानलीने श्रीधर्मरुचि अणगार प्रमुख अनेक जीवो तरशे ते
ज आ नरतादिक क्षेत्रने विषे हमणा पण जे श्रुत ज्ञानने सानलशे, नणशे, श्र
रग रुचिए करीने जे श्रद्धा (प्रतीत) करशे, ते सुलन बोधी थशे, कर्मथी विमुक्त
शे अने तेथी परपराए मुक्ति पामशे एवु श्रुतज्ञाननु मूल द्वादशागी छे ते श्रुतज्ञान
ी वाचना, पृछना, परावर्त्तना, अनुप्रेक्षा अने धर्मकथा थाय छे ए धर्मकथा श्रीउव
ाइ सूत्रमा चार प्रकारनी कही छे – आक्षेपिणी, विक्षेपिणी, निर्वेदिनी अने सवेदिनी
ने जे थकी एक तत्वमार्गमा प्रवृत्ति थाय तेने आक्षेपिणी कहीए, जे थकी मिथ्यात्वनी
नवृत्ति थाय तेने विक्षेपिणी कहीए, जे थकी मोक्षनी अनिलाषा उत्पन्न थाय, तेने नि
र्वेदिनी कहीयें अने जे थकी वैराग नावनी उत्पत्ति थाय तेने सवेदिनी कहीयें

एवी ए श्रुतज्ञानरूप कथा श्री अरिहत देवाधिदेव तीर्थकर परमेश्वर समवसरण
मा बेशीने त्रिपदी उच्चारण पूर्वक द्वादश पर्षदाना मध्यने विषे करेछे अने तद्रूप द्वा
नथी श्रीगणधरो द्वादशागीनी रचना करेछे, ते सूत्र कहेवायछे ते प्रत्येक तीर्थकरना
शासनने विषे थाय छे, तथा ते तीर्थकरोना शासनमा थयेला प्रत्येक बुध, चौद पूर्वधर,
तथा दश पूर्वधर प्रमुख महत्पुरुषो जे निबधोनी रचना करे छे तेने पण सूत्र सज्ञा

अने एवी भ्रमित मतिवाला दर्शनीउनु मत क्यारें पण शुद्ध कहेवाय नहीं परंतु जे दर्शनमा पोताना आत्मानु आत्मत्वपणु जाणीने पूर्णपणे दयाने अंगीकार करी हो य, एवु तो एक श्री जैनदर्शन छे अने ते सर्व लोक प्रविदित छे तेथी ए धर्म जग तुमा सर्वोत्कृष्ट कहेवाय छे ए धर्मना एक रीतें, आचारधर्म, दयाधर्म, क्रियाधर्म अने वस्तुधर्म, एवा चार भेद छे अने दान, शील, तप, तथा भाव, ए चार तेना कारण छे हवे धन वलें करी दान देवाय, मन बलवडे शील पलाय, शरीर बलवडे तप थाय अने सम्यक्ज्ञानबलवडे भावधर्मनी वृद्धि थाय ए भावधर्म, दान, शील अने तप, ए त्रणे करता अधिक छे, केमके भावधर्मनु कारण ज्ञान बल छे, जेणे करी वस्तुनु स्वरूप जाणीयें, तेने ज्ञान कहीये ते ज्ञानथकी आत्मधर्मनी वृद्धि तथा संरक्षण जे टलु थायछे तेटलु पेला त्रण जे दान, शील ने तप, ते थकी थतु नथी एनु कारण ए छे के नय, निक्षेप, प्रमाण, चार अनुयोगनो विचार, सप्तभंगी, षट्द्रव्यादिकनो विचार, आदि लइ ज्ञान बलवडे जीवने परिपूर्ण प्राप्त थायछे वली श्री दशवैकालिक सूत्र मा पण प्रथम ज्ञानने पछी क्रिया कहीछे ते उपरात ज्ञान विनानी जे क्रिया क रवी ते पण क्लेशरूप कहीछे अर्थात् क्रिया तो ज्ञाननी दासी जेवीजछे ज्ञानी पुरुष नी अल्प क्रिया पण अत्यत श्रेष्ठ छे वली श्री उत्तराध्ययनमा पण कह्यु छे के ज्ञान गुण सयुक्त जे होय तेनेज मुनि कहेवो एथी पण ज्ञाननु महात्म्य अत्युत्कृष्ट जणा यछे श्री महानिशीथमा ज्ञानने अप्रतिपाति वर्णव्यु छे श्री मरुदेवी माताने हस्ती उपर बेठा उता केवल ज्ञान उत्पन्न थयु वली श्री भरतेश्वरने आरीसा भुवनमा रह्यां उता कर्मोनी विमुक्तता थइ ते पण ज्ञाननुज प्राबल्य हतु, अने श्री उपदेश मालामां कह्युछे के ज्ञान रूपी नेत्रें करी उजमाल एवा मुनिने वदन करवु योग्य छे देवाचार्य मल्लवादि प्रमुखोए बौध दर्शनीउने जीतीने जगतमा यशोवाद लीधो ते पण ज्ञाननो ज प्रसाद जाणवो ज्ञाननी जे तीक्ष्णता तेज अबध चारित्र जाणवु जे निकाचित कर्मनो क्रोडो वर्षपर्यंत दान, शील तथा तप कर्याथी विनाश थतो नथी ते ज्ञानथी एक श्वासोश्वासमा थायछे एटलाज माटे क्रिया गुरुने पींपलाना पत्र जेवा गण्या छे अने ज्ञानी गुरुने समुद्र समान गण्या छे ज्ञान विना सम्यक्त्वपणु रही शके नही, ज्ञा न विना अहिंसानो मार्ग समजाय नहीं, सिद्धातोक्त समस्त क्रियानु मूल जे श्रद्धा छे तेनु पण कारण ज्ञान छे केमके ज्ञान विना श्रद्धानी प्राप्ति थती नथी, एवु जे ज्ञान तेना पाच प्रकार छे मति, श्रुत, अवधि, मन पर्यव अने केवल ए पांचने विषे पण श्रुतज्ञान सर्वथी अधिकोपयोगी छे श्रुतज्ञान पदार्थमात्रनु प्रकाशक छे स्वमत तथा प रमतनु परिपूर्ण प्रकाश करनारु पण श्रुतज्ञानज छे अज्ञानरूप तिमिर टालवाने सूर्यस

दशछे तथा डुस्सम कालरूप रात्रीने विषे तो दीपक समानछे बीजा चार प्रकारना जे ज्ञान छे तेनु पण कारण नूत श्रुतज्ञानज छे परमेश्वरे कह्यु छेके श्रुतज्ञान सव्यवहारक छे उद्देश, समुद्देश, आज्ञा इत्यादि व्यवहारनो लाज श्रुतज्ञानथी थाय छे वली स्वस्वरूपने परस्वरूप समजाववाने श्रुत ज्ञानज समर्थ छे बीजा केवल ज्ञानादिक चारे ज्ञानथकी जाणेला पदार्थनु स्वरूप पण श्रुत ज्ञानवडेज कहेवाय छे माटे मत्यादिक चार ज्ञान स्थापवा योग्यछे पण तेणे करीने परजीवने उपदेश आपी उपकार करी शकाय नहीं, अने श्रुतज्ञानथी उपदेश थाय माटे उपकारी छे श्रुतज्ञानना श्रवण करवाथी शुद्धात्मिक परमपदनी प्राप्ति थाय छे माटें श्रुतज्ञान ते महोटु निमित्त कारण छे श्रुतज्ञानने साजलवे करी जीवने शुद्धस्वरूप विशुद्ध श्रद्धान (प्रतीत) उपजे ने तेथी शुद्धात्मानु आचरण, आसेवन तथा अनुजव उपजे तेज परमपद प्राप्ति जाणवी श्रुतज्ञान साजलवाना प्रजावथकी जीव, धर्मने विशेषे जाणे विवेकवत थाय, डुर्मतिनो त्याग करे, ज्ञाननी प्राप्ति थाय अने अतें मोक्ष पामे, माटें श्रुतज्ञाननो आदर अवश्य करवो श्रुतज्ञाननो सयोग थवो जीवने अत्यत डुर्लज छे श्रुतज्ञानने सयोगे करीने पूर्वे श्रीगौतमस्वामी, सुधर्मस्वामी, जबुस्वामी प्रमुख घणा जीवो ससार समुद्रने तरी गया, अने वर्त्तमान कालें महाविदेह क्षेत्रने विषे विहरमान सीमधरादिक वीश तीर्थकरनी वाणी साजलीने घणा जीवो तरेछे, तथा आगमिक कालें पद्मनाजादिक तीर्थकरनी वाणी साजलीने श्रीधर्मरुचि अणगार प्रमुख अनेक जीवो तरशे तेमज आ जरतादिक क्षेत्रने विषे हमणा पण जे श्रुत ज्ञानने साजलशे, जणशे, अतरग रुचिए करीने जे श्रद्धा (प्रतीत) करशे, ते सुलज बोधी थशे, कर्मथी विमुक्त थशे अने तेथी परपराए मुक्ति पामशे एवु श्रुतज्ञाननु मूल द्वादशागी छे ते श्रुतज्ञाननी वाचना, पृछना, परावर्त्तना, अनुप्रेक्षा अने धर्मकथा थाय छे ए धर्मकथा श्रीउववाइ सूत्रमा चार प्रकारनी कही छे – आक्षेपिणी, विक्षेपिणी, निर्वेदिनी अने सवेदिनी हवे जे थकी एक तत्वमार्गमा प्रवृत्ति थाय तेने आक्षेपिणी कहीए, जे थकी मिथ्यात्वनी निवृत्ति थाय तेने विक्षेपिणी कहीए, जे थकी मोक्षनी अजिलाषा उत्पन्न थाय, तेने निर्वेदिनी कहीये अने जे थकी वैराग जावनी उत्पत्ति थाय तेने सवेदिनी कहीये

एवी ए श्रुतज्ञानरूप कथा श्री अरिहत देवाधिदेव तीर्थकर परमेश्वर समवसरणमां बेशीने त्रिपदी उच्चारण पूर्वक द्वादश पर्षदाना मध्यने विषे करेछे अने तद्रूप दानथी श्रीगणधरो द्वादशागीनी रचना करेछे, ते सूत्र कहेवायछे ते प्रत्येक तीर्थकरना शासनने विषे थाय छे, तथा ते तीर्थकरोना शासनमा थयेला प्रत्येक बुध, चौद पूर्वधर, तथा दश पूर्वधर प्रमुख महत्पुरुषो जे निबधोनी रचना करे छे तेने पण सूत्र सज्ञा

होवाथी द्वादशांगना बारमा दृष्टिवादमा तेनो समावेश थायछे वर्त्तमान श्रीमहावी र परमेश्वरना शासनमा हाल प्रवर्त्तमान पीस्तालीश सूत्रो छे ते सर्व श्रुतज्ञाननाज भेद छे एम जाणवु बीजा पण अक्षर अनक्षरादिक चौद अने पर्याय पर्यायसमासादिक वीश भेद पण छे हाल पचम कालमा मात्र श्रुत ज्ञानज प्रगट पणे छे अने मति ज्ञान तो श्रुतज्ञान रूपज छे, केमके श्रुत ज्ञाननु समवायिकारण, मतिज्ञान छे अने कार्यथी कारण भिन्न नथी, किंतु ? अभिन्नज छे बीजा अवधि, मन पर्यव अने केव ल, ए त्रण ज्ञान आ समयमा क्षेत्र कालादिक भेदने लीधे आ क्षेत्रमा श्रीवीर तीर्थंकर ना शासनमा प्रवर्त्तमान नथी, मात्र मतिश्रुतरूप श्रुतज्ञाननोज प्रसार रह्यो छे ए श्रुत ज्ञानना उद्देश, समुद्देश, अनुज्ञा अने अनुयोग, ए चार प्रकार थाय छे सामान्य कथन करवु, तेनु नाम उद्देश, विशेषकथन करवु, ते समुद्देश, आज्ञा अ थवा अनुमोदन ते अनुज्ञा, अने प्रश्न, इच्छा, प्रार्थना प्रमुख करवु तेने अनुयोग क हीयें एटला कारण माटे व्याख्यान करवामा श्रुत ज्ञानज उपयोगी छे, पण बीजा ज्ञान नथी, माटे चालता समयमा श्रुतज्ञाननी वृद्धि तथा सरक्षण करवु, ते धर्मनी वृद्धि तथा सरक्षण कर्या प्रमाणे छे आ ठेकाणे ज्ञान कारण छे अने धर्म कार्य छे हवे जेम राजा तथा प्रधान ए बेउ प्रजानी वृद्धि तथा सरक्षणने माटे तत्पर होय छे, तेम द्वादशांगीरूप श्रुतज्ञानना मूलसूत्र, राजा समान छे अने तेना अर्थ रूप टीका, भाष्य, चूर्णी प्रमुख, प्रधान तुल्य छे तेथी सूत्र अने टीका प्रमुख धर्मनी वृद्धि त था सरक्षणने माटे छे अने ते श्रुतज्ञानरूप छे तेथी श्रुत ज्ञाननी वृद्धि अने सरक्षण करवाना उपाय तथा तत्सबधी उद्योगमा अस्मन्मतविजयाभिलाषी, सुज्ञजनोयें ब द्धपरिकर थइ तन, मन अने धनवडे आग्रह राखीने आदरवा, एना जेवु बीजु को इ पण धर्मवृद्धि करवानु अत्युत्तम साधन नथी श्रुतज्ञाननी सतत वृद्धि ने सरक्षण करवानु साधन वर्त्तमान कालमा मुद्रायंत्र सर्वोत्तम छे ते द्वाराए ग्रथो छपावीने तेना भडारा कराववा, ए सर्वोत्तमोत्तम उपायछे तेउमा प्रथम श्रुतज्ञानना आधारभू त एवा जे पिस्तालिश आगम छे, तेने शुद्ध करी छपावीने प्रसिद्ध करवा एवा स र्वोत्कृष्ट उपायनो श्री मकशुदाबादेति नगरनिवासी " रायधनपतिसिंहजी प्रतापसिंह जी बहादुर " तेउए पोताना परलोक प्राप्त मातुश्री " महताब बाई " तेमना निरत र नामस्मरण निमित्ते तथा पूर्ण पुण्योपार्जन निमित्ते तथा अस्मदीय दर्शनग त सुजन पुरुषोने श्रुतज्ञान वृद्धि थवाने निमित्ते, प्रारभ कर्यो छे उपर कह्या जे पी स्तालीश आगम तेमाथी हाल आ " श्री सूयगडागसूत्र " छापवाने मने आज्ञा करवाथी, में यथामति शुद्ध करीने छाप्युछे आ ग्रथ, अत्युत्तम अने अद्भुत रचना

युक्त छे एनु सहज व्याख्यान प्रगट करु छु, ते वाचवाथी एनु अतिशय श्रेष्ठपणुं ते मज आवश्यकता ध्यानमा आवशे

सूयगडांग एटले संस्कृत भाषामा सूत्रकृताग एवु नाम छे सूत्र एटले जेमा सूत्र नी सूचना होय तथा स्वपरमतनी सूचना कराय ते सूत्र कहीये ते सूत्र बे प्रकारनु होय छे पहेलु द्रव्यसूत्र अने बीजु भावसूत्र जे कार्पासादिकथी उत्पन्न थयु होय, ते द्रव्यसूत्र कहीये, अने श्रुत ज्ञानरूप सूत्र ते भावसूत्र छे, एम जाणवु वली जे प दार्थनु सूचक होय ते श्रुतज्ञान सूत्र जाणवु ते श्रुतज्ञान सूत्रना चार भेद छे सज्ञा सूत्र, सग्रहसूत्र, वृत्तबधसूत्र, तथा जातिबधसूत्र हवे जे स्वसकेत पूर्वक बाधे लु होय ते सज्ञासूत्र केवाय, जेमा घणा अर्थोनो सग्रह तथा धर्माधर्मद्रव्यनु ग्रह ण होय ते सग्रह सूत्र केवाय, जे अनेक प्रकारना वृत्त छदनी जातिथी बाधेलु होय ते वृत्तबधसूत्र केवाय अने जे जातिथी बाधेलु होय ते जातिबध सूत्र कहवाय ए जाति सूत्रना चार भेद छे तेना नाम कहीये छैये जेम के, कथ्य, गद्य, पद्य, अने गेय हवे जे उत्तराध्ययन तथा ज्ञाताधर्मकथादिकनी पेरें प्राये पूर्व रुपिना चरित्र प्रमुख कथा उनो विस्तार जेमा होय ते कथ्य, जे ब्रम्हचर्य अध्ययनादिकनी पेरें जेमा मुक्त भाषानु विवेचन होय ते गद्य जेमा छदरचनावडे मनोहर वर्णन होय, ते पद्य अने कापिली अध्ययननी परें स्वप्रीतिथी गायन करी जेनी रचना थइ होय ते गेय

अथवा तीर्थकरोना मुख थकी भव्य जीवोना मोक्षार्थे उत्पन्न थयेलो जे अर्थ ते सूत्र, अने तेनी जे गणधरे रचना करी तेने कृत कहीयें एम सूत्र अने कृत ए बे मलीने सूत्रकृत एवु पद थयु अथवा सूत्रने अनुसारें जेमा तत्वनो प्रबोध होय, ते पण सूत्रकृत कहेवाय, अने तेना कर्त्ता पण गणधरो छे हवे गणधर कोने कहेवा? जे सामान्याचार्य होय ते गणधर कहेवाय, ते गौतमादिक जाणवा ते गौतमादिक एकाद श गणधरोमाहेला पाचमा गणधर श्रीसुधर्मा स्वामी तेमणे पोताना श्रीजबुप्रभृति शिष्योने उपदेश करवाने अर्थे आ ग्रथनी रचना कीधी छे, अने ए कारण माटें आ ग्र थनु नाम सूत्रकृत छे एम जाणवु वली बीजु नाम द्वितीय सूत्रकृताग एवु पण छे, तेनु कारणके पूर्वोक्त पिस्तालीश सूत्रातर्गत एकादशागमानु एद्वितीय अगछे ते पूर्वो क्त गणधर विरचित एकादशाग मध्ये प्रथमागनु नाम आचाराग छे, तेमा जीवनी छ कायनु स्वरूप जाणवु, एनो सविस्तर उपदेश करेलो छे अने एमा ज्ञाननु प्राधान्य छे ज्ञाननी प्राप्ति थया पछी ज्ञान पूर्वक क्रिया करवी ते सबधी आरभमा (बुझिज्झ) एवी गाथा लखीने प्रथम आचाराग साथे आ द्वितीय सूत्रकृतागनो सबध मेलव्यो छे एना बे श्रुत स्कध छे ते मध्यें प्रथम श्रुतस्कधना शोल अने द्वितीय श्रुतस्कधना सा

त, मली त्रेवीश अध्ययनो छे अने तेमा तेत्रीश उद्देशाउ छे एनी पद संख्या छत्रीश हजारनी छे मूल सूत्रनी श्लोक सख्या (२१००) छे एमा मुख्यत्वें द्रव्यानुयोग नी प्रधानता छे अने स्वमतानुसारी महान् साधु जनोनें उदासीनरूप क्रिया प्रवृत्ति आश्रयी उपदेश करता थका अन्य पाखमी दर्शनीउना मतोनु खमन यथायोग्य कीधु छे ए शीवाय बीजा पण जे जे विपयोछे ते सर्व अनुक्रमणिकामा सविस्तर दर्शावेला छे, ते जोवाथी स्पष्ट समजाशे

ए ग्रथनी टीका करनार पमितोमा श्रेष्ठ एवा श्रीशीलगाचार्य नामे पमित हता, तेउ विक्रम सवत् छसोना सुमारमा थइ गया एवी दतकथा छे ए विपे कोइ ग्रथ साक्षी आपे एवु आज सुधी महारा जाणवामा आव्यु नथी ए महान् टीकाकारनी जन्मभूमि वल्लनीपुर नगरी जे हाल वलाने नामे प्रख्यात छे त्या हती, एवु मने साभलवामा आव्यु छे साप्रत कालना पमितो एमनी टीका वाचीने तेनी वाक्यरचना तथा उत्तम सरलता साथे गाभिर्य्य अने शब्द चातुर्यथी मोह पामी स्तुति करवामा महोटो आनद माने छे ए टीकानी श्लोक सख्या बार हजार आठशो ने पचाश छे ए महा पमितें अन्यसूत्रो आचारागादि उपर पण टीका करेली छे ए स्तुतिपात्र टीकाकारनी टीका करवानी शैली एवी सरल अने सुगम छे के ते वाचता वाचता पमिताने पदश परमानदप्रादुर्नाव थातो रहेज नहि तथा एनी मनोहर रचना अने अर्थ चमत्कृतिनी एवी सुदर छटाथी वाचनार ते वाणी रसनेज अनुभवे सूक्ष्म विषयनु विवेचन एवी अलौकिक ढबथी कर्यु छे के वक्ता तेमज श्रोता उभयना मनने सपूर्ण सतोष उपजे अने क्यारे पण सशयतो लेश मात्र रहेज नहीं प्रत्येक विषयनु निरूपण साद्यत नियम बध कीधेलु छे के जेथी आपोआप तेनी सर्व मतलब ध्यान मा आवे जेम एक वार लखेली वातनो सबध बीजे ठेकाणे लगाडवो होय, तो त्या पूर्ववत् ए सकेतथी वाचनारने तुरत आगली वातनु ज्ञान थाय वली आ टीका वाचवा थकी जाणे टीकाकारें ग्रथकर्तानो सर्वहृगत अभिप्राय सान्निध्यताथी निःक्षेप श्रवण कर्यो होय एम टीका वाचनारने उत्प्रेक्षा थाय छे एम सूत्रनो अक्षरश अर्थ न जाय एवी रीतें सनिर्युक्तिक टीका करी छे एवा अनेक प्रकार जेणे करीने टीकानी श्रेष्टता अने स्तुति पमितो करे, ते आ महाविद्वान् पमितनी टीकामा नजरें आवे छे टुकामा एटलु ज केवु छे के जेटली खुबीउ ए टीकामा रही छे ते सर्व विस्तारनी बार छे मात्र वाचवाथीज तेनो आनद प्राप्त थाय एम छे

एनी दीपिका श्री हेमविमलसूरिए विक्रम सवत् १५७२ ना वर्षमा करेली छे तेनी श्लोक सख्या मूल सुधा सात हजार छे कारणके "सप्त सहस्राणि किंचिन्न्यूना

नि " एवुं एमणे पोतेंज लख्यु छे ए दीपिका पण घणी सरल सुरस, अने पदना य थायोग्य अर्थयुक्त अतिशय मनोहर छे एनी शैली एवी बांधीछे के जेने थोडु घणु स स्कृतनु ज्ञान होय तेने पण सुगमताथी समज पडे अने एवी सरलरचनाने माटे ते वा जनो, ए पण्डितनो अत्यत आनार माने छे

आ ग्रथनो बालावबोध श्री पार्श्वचद्र सूरियें करेलो छे आ वात, बीजा श्रुतस्कध ना अतमा प्रगट करेली छे ए बालावबोध टीका उपरथी कीधेलो छे केमके दीपिका करनार करता बालावबोध करनारनी उत्पत्ति पूर्वे छे, तो पण ज्यारे ते मारा वाचवामा आव्यो त्यारे ते एटलो तो अस्तव्यस्त देखायो के तेने सुधारवानी मारी हिम्मत चाली नहीं तथापि ए कार्य अवश्य थवुज जोइयें एवु जाणी में मारी अल्पमत्यनुसार श्रम लइने सुधार्यो छे

हवे ए सूत्ररूप कल्पवृक्षनो जे जन आश्रय ग्रहण करे छे, ते निज नावानुसार फल पामे छे पण तेने अर्थे ए वृक्ष उपर आरोहण करवा माटे पूर्वाचार्योए निश्रे णियो करेली छे , जेम के टीका, नाष्य, निर्युक्ति, दीपिका, चूर्णी तथा बालावबोध प्रमुख एमाथी वली टीकाकर्त्ताये टीकामाहेज निर्युक्तिनी गाथाउ लखीने तेनी पण टीका करेली छे तेथी निर्युक्तिनो समावेश टीकामा करेलो छे तथा दीपिका अने बा लावबोध रूप एवी चार नीश्रेणीउ जूदा जूदा चार आचार्योनी करेली आ सूयगडा गसूत्ररूप कल्पवृक्षने लगाडी छे तेने उपयोगमां लइ उपर कह्यु एवु जे आ सूयग डाग सूत्ररूपकल्पवृक्ष, तेना फल ग्रहण करवा माटे नविक जनोए अत्यानद पूर्वक तत्पर थवु, ए मारी सविनय प्रार्थना छे

ए सूत्रमा सर्व जगत्ने प्रमोद उपजावनारी श्री वीतरागनी वाणी छे ते केवी छे तोके नव रूप वेलनी कृपाणी, ससार रूप समुद्रथी तारवा वाली, महामोहरूप अधकार नो नाश करवाने दिनकरना किरणो जेवी प्रकाश वाली, क्रोधरूप दावानलनो उपशम करनारी मुक्तिना मार्गने दर्शावनारी, कलिमलनो प्रलय करनारी, मिथ्यात्वने छेदन कर नारी, त्रिनुवननु पालन करनारी, मन्मथनो रोध करनारी, अमृतरसनु आस्वादन करावनारी अने हृदयने अत्याल्हाद करनारी एवा अनेक विशेषणोपयुक्त एवी जे श्री जिनवाणी ते सर्व सज्जनोने मान्य थाउ

कदापि निबिड कर्मनी शृखलायें प्रतिबद्ध थयेला एवा अनव्य दुर्नव्यने बोध कर वा माटे ए वाणी समर्थ नथी थती तो पण ए वाणीनु असामर्थ्य समजवु नहीं केमके सूर्यना किरणो जेम घुग्धड पक्षीना नेत्रने प्रकाश करी शकता नथी तो पण ते जगत्मां निदाना आधिष्ठान थता नथी वली जलनी वृष्टि करनारो मेघ जो प

ए उपर क्षेत्रने विषे तृणादिक उत्पन्न करवा माटे असमर्थ छे ते छतां ते लोकने विषे निदानें पात्र थतो नथी तेमज जे पुरुषने ए वाणी गमती नथी ते तेनु पोतानुज दौर्भाग्य समजवु माटे कुशल बुद्धिवाला सज्जनोने आ जिनवाणी रूप प्राधान्य ग्रंथ महोत्सवरूप आनद आपनारो थाउ अने तेमना चित्त रूप सरोवरने विषे प्रेम रूप जल भराउ, तथा तेने योगे तेउने मोक्ष रूप महा सुंदर कमलनी प्राप्ति थाउ अस्तु

शा० भी० मा०

विज्ञापना

परमेश्वरनी वाणी रूप अमृतरस जेमा रेलाइ रह्यो होय तेवा ग्रथोने मुद्रित करी प्रसिद्ध करवा ए महा परमार्थ छे एथी सुज्ञजनो आनद पामेछे विवेकी जनो पठन पाठन करीने जिनधर्म भावमा दृढता वधारे छे, सामान्य जीवो व्याख्यानादिक श्रवण करीने धर्मलाभने पामे छे सज्जन पुरुषो वाचीने पोताना चित्तनें निर्मल राखी धर्मने विषे आदर करेछे एवी उत्कृष्ट जिनवाणी जेमा मुख्य छे एवा श्रुतज्ञाननी वृद्धि, सरक्षण तथा विनय करवा जेवु कोइ पण उग्र, पुण्यप्रकृति बाधनारु बीजु शुभ कर्म नथी तेनु साधन वर्त्तमान समयमा उपर कह्या प्रमाणे मुद्रायत्र घणु सुलभ अने मनोहर छे एनी सहायतार्थी सर्व सूत्रो तथा सर्व ग्रथो छपावी प्रसिद्ध करवा, ए श्रुतज्ञाननी वृद्धि, सरक्षण तथा विनय, हाल सर्वोत्कृष्ट गणाय एम छे खरु पण ए कार्य, द्रव्यवान् गृहस्थथी बनी शके. जेम द्रव्यवान् तेमज वली श्रीजिन धर्म प्रसार उपर प्रीतिमान् पण सपूर्ण होवो जोइयें, एवो असाधारण पुरुष चतुर्विध सघमा कोइ विरलोज मली आवे जेम हाल बाबु साहेब "राय धनपतिसिंहजी प्रतापसिंहजी" छे एवो श्रावक आधुनिक वर्त्तमान कालमा बीजो कोइ पण नथी एमणे उक्त रीति प्रमाणे प्रीतिसहित सर्व आगमो छपावी प्रसिद्ध करवानो उद्योग चालु कर्योछे ए स्वधर्माग्रही बाबु साहेबें मने हाल श्री सूयगडाग सूत्र छापवानी आज्ञा करी ते में यथा बुद्ध्यनुसार सुधारीने मूल सूत्र, दीपिका, टीका तथा बालावबोध सहित छाप्यु छे. एमां दृष्टिदोषथी वा बुद्धिदोषथी अज्ञानरूप अधकारना पराधीन पणाथी कोइ अशुद्धपद, वा शब्दनी योजना थइ होय तो सज्जन पुरुषोए तेने माटे मने क्षमा करवी यद्यपि आ मारो विवेक योग्य नथी केम के सज्जनोनो तो एवो स्वभावज होय छे के कोइ पण सत्कर्ममा दोष तेउनी दृष्टिगोचर थतो नथी, ते छता पूर्वे श्रेष्ठ ग्रथकारोए एवी

पद्धति राखी छे तेने अनुगत थईने मे पण ए विवक कीधो छे सज्जनो पासे क्षमा मागी, तेना करता विशेषपणे दुर्जनो पासे क्षमा मागु छु, केम के तेउनो स्वनावज एवो होय छे के कोइना हाथथी शुन रुत्य थाय छे ते जोइ तेमने मन सताप उपजे छे अने बीजानी हानी थाय तेमा तेउ लान समजे छे बीजाना दोष कहाडवामा महा पण्डित होय छे बीजाना कल्याणरूप घृतनी उपर माखी थइ बेसे छे इत्यादिक अगणित दीर्घदोषोये करी युक्त दुष्टजनो होय छे, एवा दुष्टजनो उलूक समान छे तेथी तेउ आ जिनवाणी रूप सूर्यना प्रकाश थकी अध थइने विपर्यासने पामशे, अने द्वेप बुद्धिथी ईर्ष्या करशे तेथी तेमना हृदयमा ताप उत्पन्न थशे तेने माटे हु तेमनी पासे क्षमा मागु छु, कारणके, ते ताप उत्पन्न थवानु कारण तेउ मने गणशे अस्तु

शा० नी० मा०

ज्ञान प्रसाररूप पुण्यकर्म उपार्जन करवामा प्रथम पक्तिमा गणवा लायक महान्पुरुष जेणे लोकोपकारने अर्थे पिस्तालीश आगम सूत्र तथा तेउमाथी जेनी टीका प्रमुख जे अग मले ते सहित मुद्रित करी प्रसिद्ध करवानो उद्योग आ समयमा प्रसार कीधो छे , तेवा सज्जन गृहस्थोनी उत्पत्ति विषे सहज लख्या विना मारी कलम अन्यकार्य करवामा चाली शकती नथी तेथी यत्किंचित् लखु छु

बगाला इलाकामा बालोचर, मकशुदाबाद, अने मुरसिदाबाद एवा त्रण नाम उलखातु सुदर शहेर छे त्या कृष्णगढथी आवी निवास करनारा उसवशरूप नदन वनमा कल्पवृक्ष समान दुगडगोत्रीय, धर्म, न्याय, विवक अने विनयादिक श्रेष्ठगुणे युक्त,तेमज मर्म मलवादिउमा अग्रेसर,महाबुद्धिनिधि, दीन जीवने तन, मन,धनवडे सहाय करनार, रुडा स्वनाववाला, पुण्य प्रनावरूप चद्रना प्रकाशवडे दिशाउने प्रकाश करनारा एवा “ राय बुद्धसिहजी” नामें श्रावक श्रीजिनधर्म उपर महोटा श्रद्धावान् हता तेमनी कुशलादे नामे पत्नीनी कुक्षिथकी सवत् १८३७ ना माघवदि एकमने गुरुवारने दिवसे राय प्रतापसिहनामें कुलदीपक सुपुत्र उत्पन्न थया तेउ सर्व धनाढ्योमा शिरोमणि अने महाधर्मनिष्ठ तेमज क्षमावान् तथा धर्माऽधर्मना निर्णय करनाराउमा अग्रेसर थया तेमनी चतुर्थ पत्नीनु नाम महताववाई हतु तेमणे उसवशमा मुकुटमणि, न्यायमार्गे लक्ष्मीनु उपार्जन करनार तथा धर्म, अर्थ, काम, ए त्रिवर्गना साधनारा अने प्राणिमात्रने विषे दयाईपणाए युक्त, एवा महातेजस्वी बे पुत्रोने जन्म आप्यो तेमा वडा पुत्रनु नाम “ रायलक्ष्मीपति सिह बाहादुर ’ तथा जेमणे आवा ग्रथ छपावी प्रसिद्ध करवानो उद्योग आरभ्यो छे, ते कनिष्ठ पुत्रनु नाम ‘ राय धनपति सिह बाहादुर ’ बे बन्नेदु सद गृहस्थो, सद्गुणनिधान अने मनुष्य मात्रना कल्याणमा उत्सुक छे, माटे आ जिनधर्म

प्रेरक उत्तम ग्रंथ छपावी एमणे पोताना जन्मनु सार्थक कर्यु छे एवा परमार्थ कार्यो, ए भाग्यशालीओने हाथे प्रतिदिवस थाओ एवी मारी वार वार विज्ञापना छे

॥ काव्य छंद ॥

जिनवच पियूष पान, करन जो अति अभिलाषी,
एहि रातिदिन ध्यान, चित्तमे रहत विभाषी,
कथा सुनत सुतप्रीति, रीति अद्भुत धरी हीमे,
ज्ञान वृद्धिके हेत, अधिक उत्सुक सबहीमे १
जिहिँ मातुश्री प्रान, त्यागि गय सुरभव माही,
सुमरन तिनके नाम, कीय निश्चय इक आहीं,
सबही आगम छापि, प्रसिद्ध करिय या जगमे
बहुत प्रानि अवलोकि, बाचि सुनि वहे ता मगमे २
चलत सोइ उद्योग, करन मुद्रित सब आगम,
तिनमे इक मुद्रि दीन्ह, इतहि जब भयो समागम,
सूत्र कृताग पवित्र, डुतिय जो अग कहावै,
सब विधि अति उत्कृष्ट, सुनत वाचत मन भावै ३
सो किय छापि प्रसिद्ध, होइ मनमे उल्लासा,
भयो एह उपकार, मोरि मति परम प्रकाशा,
बाबु साब परताप, जानि यह अर्पण करहु,
सदा रहहु जगमाहि मनुष अस भावन धरहु ४
धर्म वृद्धि के हेत, बुद्धि अति उदार कीनी,
लीनी कीर्ति अखण्ड, स्हाय तन मन धन दीनी,
सफल कीन नर देह, धन्य धनपतिसिंह जगमे
अमर आपका नाम, रहो जिनधर्म ग्रंथमे ५

॥ इति प्रस्तावनादि समाप्त ॥

॥ श्रीसद्गुरुभ्योनम ॥

॥ अथ ॥

॥ श्रीसूयगडागसूत्र द्वितीयागानुक्रमणिका प्रारम्भ ॥

॥ तत्र ॥

॥ प्रथम श्रुतस्कधस्य षोडशाध्ययनानुक्रमणिका ॥

पहेलु समयाख्य नामा अध्ययन छे, तेमा स्वसमय अने परसमयनी प्ररूपणा करी छे ए अध्ययनना चार उद्देशा छे तेमध्यें पहेला उद्देशामा छ अर्थाधिकार छे, बीजा उद्देशामा चार अर्थाधिकार छे, त्रीजा उद्देशामा बे अर्थाधि कार छे अने चोथा उद्देशामा एकज अर्थाधिकार छे ते मध्ये अनुक्रमे प्रथमाध्ययनना चार उद्देशामाहेला प्रत्ये क अर्थाधिकारनी अनुक्रमणिका दर्शाविये छैयें

॥ तत्र प्रथमोद्देशानुक्रमणिका ॥

१ पहेला उद्देशाना पहेला अर्थाधिकारनी प्रथम गाथामा आचाराग साथे आ सूयगडागनो सबध एवी रीतें मेलव्यो छे के आचारागमा छकायनु स्वरूप जाणवु, एटले ज्ञान कह्यु, ते ज्ञानप्राप्ति थया पछी ज्ञानपूर्वक क्रिया करवी ते सबधें आरम्भमा (बुज्झिज्ज) ए गाथाथी सबध छे ते स बध मेलवीने पछी पाचमी गाथा पर्यंत स्वसमयनु स्थापन कर्यु छे ते वार पछी आठमी गाथा पर्यंत परसमयी जे पचमहाभूतवादी तेनु मत कहेलु छे ते आ प्रमाणे के पृथ्वी, अप्, तेज, वायु अने आकाश ए पाचनु सर्वत्र व्यापकपणु छे माटें ए पाच महाभूतज सर्वत्र छे परतु आ त्मा छेज नहीं ए रीते एमनु मत कहीने पछी तेनु खण्डन कर्यु छे — १

२ पहेला उद्देशाना बीजा अर्थाधिकारमा चेतनाचेतन सर्वने विषे एक आ त्मा वर्त्ते छे माटे सर्व पदार्थ एक आत्मरूपज छे परतु शरीर शरीरने विषे जूदो जूदो आत्मा नथी एवो आत्माद्वैतवादीनु मत नवमी गाथा पर्यंत दर्शावीने पछी दशमी गाथामा तेनु खण्डन कर्यु छे — २६

प्रेरक उत्तम ग्रंथ छपावी एमणे पोताना जन्मनु सार्थक कर्यु छे एवा परमार्थ कार्यों, ए भाग्यशालीओने हाथे प्रतिदिवस थाओ एवी मारी वार वार विज्ञापना छे

॥ काव्य छद ॥

जिनवच पियूप पान, करन जो अति अभिलाषी,
एहि रातिदिन ध्यान, चित्तमे रहत विभाषी,
कथा सुनत युतप्रीति, रीति अद्भुत धरी हीने,
ज्ञान वृद्धिके हेत, अधिक उत्सुक सबहीमे १
जिहिँ मातुश्री प्रान, त्यागि गय सुरभव माही,
सुमरन तिनके नाम, कीय निश्चय इक आहीं,
सबही आगम छापि, प्रसिद्ध करिय या जगमे,
बहुत प्रानि अवलोकि, बाचि सुनि वह ता मगमें २
चलत सोइ उद्योग, करन मुद्रित सब आगम,
तिनमे इक मुहि दीन्ह, इतहि जब भयो समागम,
सूत्र कृताग पवित्र, द्वितिय जो अग कहावै,
सब विधि अति उत्कृष्ट, सुनत बाचत मन भावै ३
सो किय छापि प्रसिद्ध, होइ मनमे उल्लासा,
भयो एहउपकार, मोरि मति परम प्रकाशा,
बाबु साब परताप, जानि यह अर्पण करहु,
सदा रहहु जगमाहि मनुप अस भावन धरहु ४
धर्म वृद्धि के हेत, बुद्धि अति उदार कीनी,
लीनी कीर्ति अखण्ड, स्हाय तन मन धन दीनी,
सफल कीन नर देह, धन्य धनपतिसिंह जगमे,
अमर आपका नाम, रहो जिनधर्म ग्रथमे ५

॥ तृतीयोद्देशानुक्रमणिका ॥

॥ चतुर्थोद्देशानुक्रमणिका ॥

॥ द्वितीयोद्देशानुक्रमणिका ॥

॥ अथ चतुर्थाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

चोथु स्त्रीपरिज्ञानामे अध्ययनछे एमा बे उद्देशक छे, एकेक उद्देशकमा एकेको अर्थाधिकार छे तेनी अनुक्रमणिका करीये छैयें

॥ अथ पचमाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

पाचमु निरयविभक्ति नामें अध्ययन छे एमा बे उद्देशा छे, प्रत्येक उद्देशामां एकेक अर्थाधिकार छे तेनी अनुक्रमणिका लखीये छैयें

॥ अथ द्वितीयाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

बीजु वैतालीयनामा अध्ययन छे एमा त्रण उद्देशक छे प्रत्येक उद्देशकमा एकेक अर्थाधिकार छे तेनी अनुक्रमणिका करीयें छैयें

॥ अथ तृतीयाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

त्रीजु उपसर्ग परिज्ञानामे अध्ययन छे एमा चार उद्देशक छे ते मध्ये त्रीजा उद्देशामा बे अर्थाधिकार छे अने बाकीना त्रणे उद्देशामा प्रत्येके एकेक अर्थाधिकार छे तेनी अनुक्रमणिका करीये छैये

॥ अथाष्टमाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

॥ अथ नवमाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

॥ अथ दशमाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

॥ अथ एकादशाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

॥ अथ द्वादशाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

॥ अथ षष्ठाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

॥ अथ सप्तमाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

॥ अथ ॥

॥ द्वितीय श्रुतस्कंधस्य सप्ताध्ययनानुक्रमणिका ॥

॥ तत्र ॥

॥ प्रथमाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

प्रथम गाथामा ए चारे मतनी गणना करी पढी बीजी गाथामां अज्ञान वादीनु मत दर्शावीने तेनु खमन कर्युछे त्रीजी गाथामा विनयवादीनु मत देखाडी पढी चोथी गाथाना पूर्वार्द्धमा तेनु अज्ञानपणु देखाड्युं छे चोथी गाथाना उत्तरार्द्धमा अक्रियावादीनु मत देखाडी पढी पाच मी गाथामा अक्रियावादीनु अज्ञानपणु दर्शावीने ढठी गाथामा तेने दूषण आपी खमन कर्यु छे सातमी गाथाथी सर्व शून्यवादीनु मत कर्यु छे अगीआरमी गाथाथी क्रियावादीनु मत दर्शावी पढी तेनु अ ज्ञानपणु बतावीने तथा जैनदर्शनमा ससार परिभ्रमणनो अजाव दे खाडीने बावीशमी गाथा पर्यंत अध्ययनपरि समाप्त कर्यु छे

॥ अथ त्रयोदशाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

१३ तेरमु याथातथ्य नामा अध्ययन छे एमा पण एक उद्देशक अने एकज अ र्थाधिकार छे आ अध्ययननी त्रेवीशे गाथामा कापिल, काणाद,अक्षपाद, सौधोदन अने जैमनीय प्रमुख मतानुसारीउ जे कुमार्गपणे तत्व साधन करे छे ते दर्शाव्युछे तथा याथातथ्य सम्यक्ज्ञाननु स्वरूप, तथा सत्पुरु षनो श्रुत चारित्ररूप धर्म, अने पूर्वोक्त परतीर्थिक साधु तथा गृहस्थना डुराचार तथा स्वतीर्थिक पासत्थादिकना डुराचार तथा निर्वाण मार्ग अने ससार भ्रमणरूपमार्ग तेमज निन्ह्वादिक बोटीकादिक एवा जे मिथ्यात्वना प्रेर्या कदाग्रही जिनमार्गना उत्थापक कुमार्गना उपदेशक जनो छे ते सर्व याथातथ्य पणे कह्या छे

॥ अथ चतुर्दशाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

१४ चौदमुं ग्रंथपरित्यागनामा अध्ययन छे एमा पण एक उद्देशक अने ए कज अर्थाधिकार छे आ अध्ययनमा सत्तावीश गाथा छे तेमा मुख्यत्वें करी गुरुकुल वास करवो कह्यो छे तथा बाह्याभ्यंतर परिग्रहना त्याग थकी चारित्र थाय छे माटें एमा ग्रंथपरित्याग करवानो उपदेश करेलो छे

॥ अथ पंचदशाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

१५ पंदरमु आदाननामा अध्ययन छे एमा एक उद्देशक अने एकज अर्था

॥ अथ पोडशाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

॥ अथ ॥

॥ द्वितीय श्रुतस्कधस्य सप्ताध्ययनानुक्रमणिका ॥

॥ तत्र ॥

॥ प्रथमाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

ज्ञानप्राप्ति थती नथी तेथी ते पौन्डरिक कहेवाय नहि ते नु सविस्तर वर्णन तथा जे सत्साधु छे ते सम्यक्दर्शनादिक एवा मोक्षमार्गमा प्रवर्त्तता कर्मना मोचक जाणवा, ते प्रतिपादन कर्यु छे आ अध्ययनमा जूदा जूदा शाठ आलावा छे, तेनी अनुक्रमणिका लखीये छैये

ज्ञानप्राप्ति थती नथी तेथी ते पौम्हरिक कहेवाय नहि ते
नु सविस्तर वर्णन तथा जे सत्साधु छे ते सम्यक्दर्शनादिक
एवा मोक्षमार्गमा प्रवर्त्तता कर्मना मोचक जाणवा, ते
प्रतिपादन कर्यु छे आ अध्ययनमा जूदा जूदा शाठ
आलावा छे, तेनी अनुक्रमणिका लखीये छैयें

॥ अथ द्वितीयाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

बीजु क्रिया स्थानक नामा अध्ययन छे एमा एक उद्देशक अने एकज अर्थाधिकार छे एमा बार क्रियास्थानके करी कर्म बधाय छे अने तेरमा क्रियास्थानके करी कर्म मूकाय छे एवा तेर क्रिया स्थानकनु स्वरूप कह्यु छे एमा पञ्चाशी आलावा छे तेनी अनुक्रमणिका लखीयें छेयें

॥ अथ तृतीयाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

त्रीजुं आहारपरिज्ञानामा अध्ययन छे तेनो एक उद्देशक तथा अर्थाधिकार पण एकज छे, तेना जूदा जूदा आ डत्रीश आलावा छे तेनी अनुक्रमणिका लखियें छैये

॥ अथ चतुर्थाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

चोथुं प्रत्याख्यान क्रियानामा अध्ययन छे एमा एकज उदेशक अने अर्थाधिकार पण एकज छे एना जूदा जूदा अगीआर आलावा छे तेनी अनुक्रमणिका लखीयें छैयें

॥ अथ पंचमाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

॥ अथ षष्ठाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

छट्ठु आर्द्रकीयनामा अध्ययन छे एमा एक उद्देशक अने एकज अर्थाधिकार छे ते मध्ये पञ्चावन गाथाउ छे तेनी अनुक्रमणिका लखीयें छैये

॥ अथ सप्तमाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

सातमुं नालदीय नामा अध्ययन ले तेमा एकज उद्देशक अने एकज अर्थाधिकार ले, एमा जूदा जूदा चालीश आलावा ले पूर्वाध्ययनमा साधुना आचार कह्या तेम आ अध्ययनमा श्रावकना आचार कह्या ले तेनी अनुक्रमणिका लखीये लैये

॥ अथ षष्ठाध्ययनस्यानुक्रमणिका ॥

छठु आर्द्रकीयनामा अध्ययन छे एमां एक उद्देशक अने एकज अर्थाधिकार छे ते मध्ये पञ्चावन गाथाउं छे तेनी अनुक्रमणिका लखीयें छैये

रायधनपतसिंघ बाहादुरका जैनागम संग्रह

नाग डुसरा.

॥ ॐनमो वीतरागाय ॥

अथ

॥ द्वितीयसूत्रकृतांग ॥

गुर्जरनापासहित श्रीहर्षकुलरुतदीपिकायुक्त शीलंगाचार्यकृतटीकायुतंच प्रारन्यते

तत्रमूल ॥ बुज्झिज्जत्तितिउट्टिज्जा, बंधणं परिजाणिया॥किमाह बंधणं वीरो किंवा जाणति उट्टइ ॥ १ ॥ चित्तमंतमचित्तंवा परिगिज्झ किसामवि ॥ अन्नंवा अणुजाणाइ एवं डुक्काणमुच्चइ ॥ २ ॥

प्रथम गुर्जर नापामा अर्थकर्तानु मंगलाचरण

अर्थ–प्रणम्य सद्गुरून् नक्त्या बालाना बोधहेतवे ॥ किंचित् सूत्ररुतांगस्य ज्ञिख्यते वार्तिकं मया ॥ १ ॥ प्रथम श्रीआचारांग कहीने पठी सुयगडांग कह्यु तेनो संबंध मेलवेठे जे कारण श्री आचारांग माहे, (जीवो ठक्काय परू, वणा य तेसिंव हेणबंधो त्ति) ॥ इत्यादि कह्यु ठे ते सर्व परमार्थने (बुज्झिज्जके०) जाणवु जोइए एम आचारांगसाथे आ सुयगडांगनो संबंध जाणवो ए अधिकारे बीजु अंग सुयगडांग प्रारंनीए ठैए अहींया केटलाएक वादी ज्ञानेकरीनेज मुक्ति थायठे एम कहेठे, अने केटलाएक क्रियाए करी मुक्ति कहेठे अने जेन तो एम कहेठे के ज्ञान अने क्रिया ए बन्ने थकी मुक्तिठे, ए अर्थ ए श्लोकमाहे देखाडेठे ते एमके

(बुज्झिज्जत्ति) के० ठ कायनु स्वरूप जाणे एटले ज्ञान कह्यु, अने ज्ञानपूर्वक क्रिया करवी ते सफलठे तेकारण माटे आगल (तिउट्टिज्जा) एवो सूत्रपाव कह्यो, ते (तिउट्टिज्जाके०) त्रोडे ते शु जाणीने। शु त्रोडे। ते कहेठे (बंधणं) के० बांधीए जे जीवने प्रदेशें करी ते बंधन ज्ञानावरणादि अष्ट प्रकार कर्मरूप इत्यर्थ ते कर्मना हेतु मिथ्यात्व, अविरत, कषाय अने योग अथवा परिग्रह आरंन ए बंधनना कारणने (परिजाणिया) के० जाणे पण एकला जाणपणाथकी वांठितार्थसिद्धिडर्लनठे, ते माटे क्रिया देखाडेठे ते बंधन ज्ञपरिज्ञाए करी जाणीने पठी प्रत्याख्यानपरिज्ञा जे संयमानुष्ठान तेणे करी बंधनने त्रोडे एटले आत्माथकी कर्म दूर करे, एवु वचन श्रीसुधर्मास्वामिनापित साजलीने ज

॥ इत्यनुक्रमणिका समाप्ता ॥

नक्त्या तथापि विवरीतुमहं यतिष्ये ॥ किं पक्षिराजगतमप्यवगम्य सम्यक्, तेनैव वांछति पथा शलनो न गंतुम् ॥ २ ॥ ॥ इंद्रवज्रावृत्तम् ॥ ॥ ये मध्यवर्ज्ञा व्यधुरिद्धबोधा, जानंति ते किंचन तानपास्य ॥ मत्तोपि यो मंदमतिस्तथास्ति, तस्योपकाराय ममैष यत्न ॥ ३ ॥ इहापारसंसारांतर्गतेनाऽसुमताऽवाप्याऽतिडुर्लन्नं मनुजत्वं सुकुलोत्पत्तिसमग्रेंद्रियसामर्थ्याद्युपेतेनाऽर्हद्दर्शनमशेषकर्मोच्छित्तये यतितव्यम् ॥कर्मोच्छेदश्च सम्यग्विवेकसव्यपेक्षोऽसावप्याप्तोपदेशमंतरेण न नवति ॥आप्तश्चात्यंतिकाद्दोषक्षयात्स चार्हन्नेवातस्तत्प्रणीतागमपरिज्ञाने यत्नो विधेय ॥ आगमश्च द्वादशांगादिरूप सोप्यार्यरक्षितमिश्रैरैदंयुगीनपुरुषानुग्रहबुद्ध्या चरणकरणद्रव्यधर्मकथागणितानुयोगनेदाच्चतुर्धा अवस्थापित ।तत्राचारांग चरणकरणप्राधान्येन व्याख्यातमधुनाऽवसरायातं द्रव्यप्राधान्येन सूत्रकृताख्यं द्वितीयमंग व्याख्यातुमारभ्यत इति । ननु चार्थस्य शासनाच्छास्त्रमिदं ।शास्त्रस्य चाशेषप्रत्यूहोपशांत्यर्थमादिमंगलं तथा स्थिरपरिचयार्थं मध्यमंगलं शिष्यप्रशिष्यविच्छेदार्थं चांत्यमंगलमुपादेयं तच्चेह नोपलभ्यते । सत्यमेतत् । मंगलं हीष्टदेवतानमस्कारादिरूपं । अस्य च प्रणेतासर्वज्ञस्तस्य चापरनमस्कार्याजावान्मंगलकरणे प्रयोजनानावाच्च न मंगलाभिधानं । गणधराणामपि तीर्थकृडुक्तानुवादित्वान्मंगलाकरणं । अस्मदाद्यपेक्ष्यातु सर्वमेव शास्त्रं मंगलं।अथवा निर्युक्तिकारएवात्रनावमंगलमनिधातुकामआह ॥ (तिछयरे जिनवरे, सुत्तकरे गणहरे पणमि कण । सूयगडस्स नगवर्ज, णिज्जुत्तिं कित्तइस्सामि) ॥ १ ॥ गाथापूर्वार्द्धेनेह्रावमंगलमनिहितं पश्चार्द्धेन तु प्रेक्षापूर्वकारिप्रवृत्यर्थंप्रयोजनादित्रयमिति । तडुक्तं-"उक्तार्थं ज्ञातसंबंधं, श्रोतुं श्रोता प्रवर्त्तते ॥ शास्त्रादौ तेन वक्तव्यं संबंधं सप्रयोजनं" । तत्र सूत्रकृतस्येत्यनिधेयपदं । निर्युक्तिं कीर्त्तयिष्ये इति प्रयोजनपदं । प्रयोजनं तु मोक्षावाप्ति । संबंधस्तु प्रयोजनपदानुमेय इति पृथक् नोक्त ॥ तडुक्तं-"शास्त्रं प्रयोजनं चेति संबंधस्याश्रयावुनौ ॥ तडुक्त्यंतर्गतस्तस्मान्निन्नो नोक्त प्रयोजनादिति समुदायार्थ ॥ अधुनाऽवयवार्थं कथ्यते ॥ तत्र तीर्थं द्रव्यनावनेदाद्विधा । तथापि द्रव्यतीर्थं नद्यादे समं समुत्तरणमार्गं ॥नावतीर्थं तु सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि॥संसारार्णवाडुत्तारकत्वात् तदाधारोवा संघ प्रथमगणधरोवा तत्करणशीलास्तीर्थंकरास्तान्नत्वेति क्रिया । तत्रान्येषामपितीर्थंकरत्वसनवेत द्व्यवच्छेदार्थमाह (जिनवरानिति) ॥ रागद्वेषमोहजितो जिना । एवंनूताश्च सामान्यकेवलिनोऽपिनवंति त द्व्यवच्छेदार्थमाह-(वरा) प्रधानाश्चतुस्त्रिंशदतिशयसमन्वितत्वेन तान्नत्वेति ॥ एतेषां च नमस्कारकरणमागमार्थोपदेष्टृत्वेनोपकारित्वात् । विशिष्टविशेषणोपादानं च शास्त्रस्य गौरवाधानार्थं शास्तु प्राधान्येनेह शास्त्रस्यापि प्राधान्यं नवतीति नाव । अर्थस्य सूचनात्सूत्रं तत्करणशीला सूत्रकारास्ते च स्वयंबुद्धादयोपि नवतीत्यतआह (गणधरास्ताश्च नत्वेति) ॥ सामान्याचार्याणां गणधरत्वेपि तीर्थंक

बूस्वामिप्रमुख शिष्य पूछेछे के, (किमाहबधणवीरो) के० श्रीमहावीर देवे बधन केवुं कहुं छे ! अथवा (किवा जाणतिउट्टई) के०शु जाणीने ते बधन त्रोडे? इति प्रथम श्लोकार्थ ॥१

हवे बधननु कारण कहेछे, ए जगतमाहे ज्ञानावरणीयादिक जे कर्म ते बधन जाण वु, ते कर्म बाधवाना कारण आरभ अने परिग्रहछे तेमा पहेलु परिग्रह देखाडेछे, (चि त्तमतमचित्तवा) के० सचित्तते द्विपद चतुष्पदादिक अने अचित्तते सुवर्णरूप्यादिक ए बे प्रकारे परिग्रहछे, ते (परिगिज्झ किसामवि) के० थोडा तृण तुषादिक पोतानीपासे परिग्र हीने (अन्नवा) के० अनेरा बीजा पासे परिग्रहावे तथा (अणु जाणाइ)के०परिग्रह करतां ने अनुमोदे एवो जीव, (एव) के०एरीते (डुक्खा णमुच्चइ) के० दु खथकी न मूकाए ॥२॥

श्री ॥ अथ श्री द्वितीयागदीपिका प्रारम्यते ॥

॥प्रणम्य श्रीजिन वीर, गौतमादिगुरूस्तथा ॥ स्वाम्योपरुतये कुर्वे द्वितीयागस्य दीपिकां ॥१॥ इह हि प्रवचने चत्वारोऽनुयोगा ॥ तथाहि चरणकरणानुयोग १ द्रव्यानुयोग २ धर्मकथानुयोग ३ गणितानुयोगश्च ४ तत्र प्रथम श्रीमदाचाराग चरणकर णानुयोगप्राधान्येन व्याख्यातं ॥ अथेद श्रीसूत्रकृताख्य द्वितीयाग द्रव्यानुयोगप्राधा न्येन व्याख्यायते ॥ सूत्ररुतागमिति क शब्दार्थ ॥ उच्यते ॥ सूत्र स्वपरसमयसूचन रुत येन तत्सूत्र तदेवागमिति ॥ तत्रश्रुतस्कध द्वय ॥ प्रथमश्रुतस्कधे षोडशाध्ययनानि ॥ द्वितीये सप्त ॥ तत्र प्रथमश्रुतस्कधस्य प्रथमाध्ययने चत्वारउद्देशका ॥ तत्रापि पूर्वं प्र थमोद्देशक ॥ तस्यायमादि श्लोक ॥ (बुज्झिज्जत्ति०) ॥१॥ व्याख्या ॥ बुध्येत जानीया त् ॥ किंतत् ॥ बधन बध्यते जीवोऽनेन बधन ज्ञानावरणाद्यष्टप्रकार कर्म ॥ तद्धेतवो मिथ्यात्वादयोवा परिग्रहारभादयो वा बधन जानीयादित्युक्त ॥ नच ज्ञानमात्रेण सिद्धि रित्याह ॥ (तिउट्टिज्जा) (परिजाणिआ) परिज्ञायत्रोटयेत् अपनयेत् आत्मन पृथक्कुर्यादि त्यर्थ ॥ अथजबुस्वामी शिष्य श्रीसुधर्मस्वामिनमाह ॥ (किमाहेति) ॥ श्रीवीर किंबधन माह उक्तवान् किंवा जानन् बधन त्रोटयति ॥ उत्तरमाह ॥ १ ॥ (चित्तेति) ॥ चि त्तवत् सचित्त द्विपदचतुष्पदादि अचित्त कनकरजतादि तद्द्वयमपि परिगृह्य परिग्रह कृत्वा कृशमपि स्तोकमपि स्वयमन्यान्वा ग्राहयित्वा ॥ गृण्हतोवाऽन्याननुज्ञाय एवडुखान्नमुच्यते॥ परिग्रहएव परमानर्थमूलमित्युक्त ॥ परिग्रहतश्चावश्यमारभस्तस्मिश्च प्राणातिपात इति दर्शयति ॥ २ ॥

॥ ॐनम सिद्धाय ॥ अथ श्री शीलंगाचार्यरुत टीका ॥ आर्या वृत्त ॥

स्वपरसमयार्थसूचकमनतगमपर्ययार्थगुणकलितम् ॥ सूत्रकृतमगमतुल, विवृणोमि जिना त्रमस्कृत्य ॥ १ ॥ ॥ वसततिलकावृत्तम् ॥ ॥ व्याख्यातमगमिद यद्यपि सूरिमुख्यै,

न चाकर्तृकं कर्म भवतीत्यर्थात्कर्तुराक्षेपो धात्वर्थस्य च करणस्यामीषां त्रयाणामपि प्रत्येकं नामादि । षोढानिक्षेपस्तत्रगाथापश्चार्द्धेनाल्पवक्तव्यत्वात्तावत्करणमतिक्रम्यकारकस्य निक्षेपमाह—तत्र नामस्थापने प्रतिक्षुण्णत्वादनादृत्य द्रव्यादिकं दर्शयति (दव्वेऽति ॥ द्रव्यविषये कारकश्चिन्त्य । सच द्रव्यस्य द्रव्येण द्रव्यभूतो वा कारको द्रव्यकारक । तथा क्षेत्रे भरतादौ य कारको यस्मिन् वा क्षेत्रे कारको व्याख्यायते सक्षेत्रकारक । एव कालेपि योज्य ॥ भावेन तु भाव द्वारेण चिन्त्यमानोत्र कारकोयस्मात्सूत्रस्य गणधर कारक ॥ एतच्चसूत्रकृदेवोत्तरत्र वक्ष्यति (विइ अपुभावेत्यादौ)॥४॥साप्रतं करणव्याचिख्यासया नामस्थापने मुक्त्वा द्रव्यादिकारणनिक्षेपार्थं निर्युक्तिरुवाह ॥ (दव्वपउंगवीससं, पउंगसामूल उत्तरे चेव ॥ उत्तरकरणं वजण, अत्थो उउवरकरोसव्वो) ॥५॥ (दव्वइत्यादि) द्रव्ये द्रव्यविषये करणं चिन्त्यते । तद्यथा द्रव्यस्य द्रव्येण द्रव्यनिमित्तवा करणमनुष्ठानं द्रव्यकरण । तत्पुनर्द्विधा । प्रयोगकरणं विस्रसाकरणं च । तत्र प्रयोगकरणं पुरुषादिव्यापारनिष्पाद्य । तदपि द्विविधं । मूलकरणमुत्तरकरणं च । तत्रोत्तरकरणं गाथापश्चार्द्धेन दर्शयति—उत्तरत्र करणमुत्तरकरणं कर्णवेधादि । यदिवा तन्मूलकरणं घटादिकं येनोपस्करेण दडचक्रादिना अभिव्यज्यते स्वरूपत प्रकाश्यते तदुत्तरकरणं । कर्तुरुपकारक सर्वोप्युपस्करार्थं इत्यर्थं ॥५॥पुनरपि प्रपचतो मूलोत्तरकरणे प्रतिपादयितुमाह॥(मूलकरण सरीरा, णि पचतिसुकसुखदमादीय । दव्विंदियाणि परिणा, मियाणि विसउंजहा दीहि) ॥६॥ (मूलकरणमित्यादि) । मूलकरणमौदारिकादीनि शरीराणि पच । तत्र चौदारिकवैक्रियाहारकेषु त्रिषूत्तरकरणं कर्णस्कधादिकं विद्यते । तथाहि सीसमुरोयर पिठी, दो बाहू ऊरुयाय अठगत्ति, त्रयाणामप्येतन्निष्पत्तिर्मूलकरणं । कर्णस्कधाद्यगोपागनिष्पत्तिरुत्तरकरणं ॥ कार्मणतैजसयोस्तु स्वरूपनिष्पत्तिरेव मूलकरणमगोपागाभावान्नोत्तरकरणं ॥ यदिवौदारिकस्य कर्णवेधादिकमुत्तरकरणं । वैक्रियस्यतूत्तरकरणमुत्तरवैक्रियं दंतकेशादिनिष्पादनरूपं वा आहारकस्यतु गमनाद्युत्तरकरणं ॥ यदिवौदारिकस्य मूलोत्तरकरणे गाथापश्चार्द्धेन प्रकारातरेण दर्शयति—द्रव्येंद्रियाणि कलबुकापुष्पाद्याकृतीनि मूलकरणं तेषामेव परिणामिना विषौषधादिभि पाटवाद्यापादनमुत्तरकरणमिति ॥६॥ साप्रतमजीवाश्रितं करणमभिधातुकाम आह (सघायणेयपरिसा, डणाय मीसे तहेव पडिसेहो ॥ पडिसखसगडथूणा, उट्टतिरिछादिकरणंच)॥७॥(सघायणेयइत्यादि)॥ सघातकरणं आतानवितानीभूततंतुसघातेन पटस्य ॥ परिसाटकरणं करपत्रादिनाशखस्य निष्पादनं ॥ सघातपरिसाटकरणंशकटादेस्तदुभयनिषेधकरणं स्थूणादेरूर्ध्वतिरश्चीनाद्यापादनमिति ७प्रयोगकरणमभिधाय विस्रसाकरणाभिधित्सयाह (खधेसुदुपएसा,दिएसु अब्भेसुविज्जुमाईसु । णिप्फणगाणि दव्वा,णि जाणतंवीससाकरणं) ॥८॥ (खधेसु इत्यादि) । विस्रसाकरणं साद्यनादिभेदाद्द्विधा ।

रनमस्कारानतरोपादानाद्गौतमादय एवेह विवक्षिता ॥ प्रथमश्चकार सिद्धायुप लक्षणार्थो द्वितीय समुच्चित । क्त्वाप्रत्ययस्य क्रियातरसव्यपेक्षतामाह–स्वपर समयसूचन कृतमनेनेति सूत्रकृतंस्तस्य महार्थवत्वाद्भगवास्तस्यानेन च सर्वज्ञप्रणी तत्वमावेदितं नवति ॥ (निर्युक्ति कीर्तयिष्ये) इति ॥ योजनयुक्ति । अर्थघटना निश्चये नाधिक्येन वा युक्तिर्निर्युक्ति । सम्यगर्थप्रकटनमिति यावत् । निर्युक्ताना वा सूत्रेष्वेव प रस्परसबधानामर्थानामाविर्नेवन । युक्तशब्दलोपान्निर्युक्तिरिति । ता कीर्त्तयिष्येऽनिधास्य इति । इह सूत्रकृतस्य निर्युक्तिं कीर्त्तयिष्ये इत्यनेनोपक्रमद्वारमुपक्षिप्त तच्चेहोद्देशेनिर्देशे इत्यादिनेपदनिहितमिति । तदनतर निक्षेप ॥ सचत्रिविध । तद्यथा–उंघनिष्पन्नो नामनिष्पन्न सूत्रालापकनिष्पन्नश्चेति । तत्रौंघनिष्पन्ने निक्षेपेऽग नामनिष्पन्ने तु निक्षे पे सूत्रकृतमिति॥१॥तत्र तत्त्वनेदपर्यायैर्व्याख्येत्यत पर्यायप्रदर्शनार्थ निर्युक्तिरुदाह(सूय गड अगाण, बितिय तस्स य इमाणि नामाणि ॥ सूयगड सुत्तकड,सूयगम चेव गोणाइ॥) ॥ २ ॥ सूत्रकृतमित्येतदगाना द्वितीय तस्य चामून्येकार्थिकानि । तद्यथा–सूत्रमुत्पन्नमर्थ रूपतया तीर्थकृद्भ्य । तत कृतं ग्रथरचनया गणधरैरिति । तथा (सूत्रकृतमिति) । सूत्रा नुसारेणतत्वावबोध क्रियतेऽस्मिन्निति । तथा सूचाकृतमिति । स्वपरसमयार्थसूचन सूचा साऽस्मिन्कृतेति।एतानि चास्य गुणनिष्पन्नानि नामानीति॥२॥साप्रतं सूत्रकृतपदयोर्निक्षेपा र्थमाह (दव्व तु पोंडयादी, नावे सुत्तमिह सूयतं नाण। सन्नासगहवित्ते, जातिणिबद्धेय कच्चादी) ॥ ३ ॥ (दव्वमित्यादि) । नामस्थापनेऽनादृत्य सूत्र दर्शयति (पोंडया इति)। पों डग च वनीफलादुत्पन्न कार्प्पासिक । आदिग्रहणादडजवालजादेर्ग्रहण । नावसूत्रवि हास्मिन्नधिकारे सूचक ज्ञान श्रुतज्ञानमित्यर्थ ॥ तस्यैव स्वपरार्थसूचकत्वादिति । तच्च श्रुतज्ञानसूत्र चतुर्धा नवति । तद्यथा–सज्ञासूत्र सग्रहसूत्र वृत्तबद्ध जातिनिबद्ध । तत्र सज्ञासूत्र यत् स्वसकेतपूर्वक निबद्ध ॥ तद्यथा–जन्ने एसागरिय नसेवे सव्वामगध परिण्ण यणिरामगधो परिव्वए इत्यादि ।तथा लोकेपि पुलना सस्कारक्षेत्रजाइत्यादि ॥ सग्रहसूत्र तु यत्प्रनूतार्थसग्राहक ॥ तद्यथा द्रव्यमित्याकारिते समस्तधर्माऽधर्मादिद्रव्यग्रहइति । यदिवोत्पादव्ययध्रौव्ययुक्त सदिति ॥ वृत्तनिबद्ध सूत्र पुनर्यदनेकप्रकारया वृत्तजात्या निब द्ध ॥ तद्यथा(बुज्झिज्जत्तितिउट्टिज्जेत्यादि)॥जातिनिबद्ध तु चतुर्धा॥ तद्यथा कथनीयकथ्य मुत्तराध्ययनज्ञाताधर्मकथादि पूर्वर्षिचरितकथानकप्रायत्वात्तस्य । तथा गद्य–ब्रह्मचर्या ध्ययनादि तथा पद्य–छदोनिबद्ध तथा गेय यत्स्वरसचारेण गीतिप्राय निबद्ध । तद्यथा– कापिलीयमध्ययन अधुवेअसासयमि ससारमि डुक्खपउराए इत्यादि ॥३॥ इदानी कृतप दनिक्षेपार्थं निर्युक्तिकृद्गाथामाह (करण चकारउय, कड च तिण्हपि छक्कनिक्खेवो, दव्वे खित्ते काले, नावेणउ कारउ जीवो) ॥ ४ ॥ (करणचेत्यादि) । इहकृतमित्यनेन कर्मोपात्त

ति। यदिवा व्यंजनपर्यायापन्न शब्द द्वाराऽयातमिक्षुकरणादिकमितीक्षुक्षेत्रकरण ॥ लांगलादिना संस्कार क्षेत्रकरण। तच्च बहुधा शालिक्षेत्रादि भेदादिति॥ए॥सांप्रतं कालकरणाभिधित्सयाऽह ॥ (कालो जो जावइउं, ज कीरइ जंमि जंमि कालंमि । उहेण णामउ पुण, करणा एक्कारस हवंति)॥१०॥ (कालोजोइत्यादि) । कालस्यापि मुख्य करण न संभवतीत्योपचारिक दर्शयति ॥ कालोयोयावानिति। य कश्चिद्घटिकादिको नलिकादिना व्यवच्छिद्य व्यवस्थाप्यते तद्यथा। षष्ट्युदकपलमाना घटिका। द्विघटिकोमुहूर्त्तस्त्रिंशन्मुहूर्तमहोरात्रमित्यादि तत्कालकरणमिति । यद्वा यत् यस्मिन् काले क्रियते यत्रवा काले करण व्याख्यायते तत्कालकरणमेतदोघत ॥१०॥ नामतस्त्वेकादशकरणानि तानि चामूनि (बवच बालव चेव, कोलव तेत्तिल तहा। गरादि वणिय चेव,विठी हवइ सत्तमा ॥११॥ सउणि चउप्पय नाग,किंसुग्घ च करण भवे एयं। एते चत्तारि धुवा,अन्ने करणा चला सत्त ॥१२॥ चाउद्दसि रत्तीए, सउणी पडिवज्जए सदा करण।तत्तो अहक्कम खलु,चउप्पयं णागकिंसुग्घ) ॥१३॥ एतज्गाथात्रय सुखोन्नेयमिति ॥११॥१२॥१३॥ इदानीं भावकरणप्रतिपादनायाह (भावे पउंग वीसस, पउंगसा मूल उत्तरे चेव । उत्तर कम सुय जोवण, वणादीनो अणादीसु) ॥१४॥ (भावे पउंगेत्यादि) । भावकरणमपि द्विधा। प्रयोग विस्रसाभेदात् । तत्र जीवाश्रित प्रायोगिक मूलकरण पंचाना शरीराणां पर्याप्तिस्तानि हि पर्याप्तिनामकर्मोदयादौदयिके भावे वर्तमानो जीव स्ववीर्यजनितेन प्रयोगेण निष्पादयति । उत्तरकरण तु गाथापश्चार्द्धेनाह–उत्तरकरण क्रमश्रुतयौवनवर्णादिचतूरूपं। तत्र क्रमकरण शरीरनिष्पत्त्युत्तरकाल बालयुवस्थविरादिक्रमेणोत्तरोत्तरोऽवस्थाविशेष । श्रुतकरण तु व्याकरणादिपरिज्ञानरूपोऽवस्थाविशेषोऽपरकलाना परिज्ञानरूपश्चेति । यौवनकरणकालकृतो वयोवस्थाविशेषो रसायनाद्यापादितोवेति ॥ तथा वर्णगंधरसस्पर्शकरण विशिष्टेषु भोजनादिषु सत्सु यद्विशिष्टवर्णाद्यापादनमित्येतच्च पुद्गलविपाकित्वाद्वर्णादीनामजीवाश्रितमपिद्रष्टव्य मिति १४ इदानीं विस्रसाकरणाभिधित्सयाऽह॥(वणादियायवणा,दिएसुजेकेइवीससा मेला ॥ ते दुवि थिरा अथिरा, गया तरङ्गमादीसु)॥१५॥ (वणाइत्यादि) वर्णादिका इति रूपरसगंधस्पर्शास्ते यदा परेषामपरेषां वा स्वरूपादिना मिलति ते वर्णादिमेलकाविस्रसाकरण ॥ तेच मेलका स्थिरा असख्येयकालावस्थायिनोऽस्थिराश्च क्षणावस्थायिन सध्यारागाभ्रेंद्रधनुरादयोभवति ॥ तथा गयात्वेनातपत्वेनच पुद्गलाना विस्रसा परिणामत एव परिणामो भावकरण ॥ स्तनप्रच्यवनानतर क्षुधादेश्च प्रतिक्षण कठिणाम्लादिभावेन गमनमिति१५सांप्रतं श्रुतज्ञानमधिकृत्य मूलकरणाऽभिधित्सयाऽह ॥ (मूलकरण पुण सुते, तिविहे जोगे सुभासुभे झाणे ॥ ससमयसुएण पगयं, अज्झवसाणेण य सुहेण)॥ १६ ॥ (मूलेत्यादि) श्रुते पुन श्रुतग्रंथे मूलकरणमिद त्रिविधे योगे मनोवाका

तत्रानादिक धर्माऽधर्माऽकाशानामन्योन्यानुवेधेनावस्थान ।
सत्यप्यनादित्वे करणत्वाविरोध । रुपिद्रव्याणां च द्व्यणुकादिप्रक्रमेण
स्कधत्वापत्ति । सादिक करण पुद्गलद्रव्याणां च दशधा परिणाम । तद्यथा बधन
सस्थान नेद वर्ण गध रस स्पर्श अगुरुलघु शब्दरूप इति। तत्र बंध
तिपरिणामो देशातरप्राप्तिलक्षण । सस्थानपरिणाम परिमम्लादिक पंचधा।
म खम्रप्रतरचूर्णिकाऽनुतटिकोत्करिकानेदेन पचयैव। खडादिस्वरूपप्रतिपादकं चेद
द्य। तद्यथा (खडेहि खडनेय, पयरन्नेयं जहस्स पडलस्स॥ चुसु चुसियन्नेयं,
वसवक्कलिय) ॥१॥ (डुडुमि समारोहे, नेए उक्केरियाय उक्केर॥ वीलस पउंगमीसग,
विउंगविविह्गमो)॥ २ ॥ वर्णपरिणाम पचाना श्वेतादीना वर्णाना परि
परिणतिश्च। एतत्स्वरूप च गाथान्योऽवसेय। ताश्चेमा (जइ कालगमेगगुण, सुक्किलयंपि
हविज्ज बहुय गुण। परिणामिज्जइ काल सुक्केण गुणाहियगुणेण ॥ १ ॥ जइ
गगुण कालगदव्व तु बहुगुण जइय। परिणामिज्जइ सुक्क, कालेण गुणाहियगुणेण ॥ २॥
इ सुक्क एक्कगुण, कालगदव्वपि एक्कगुणमेव। कावोय परिणाम, तुल्लगुणत्तेण सनवइ॥३
एव पचविवस्सा, सजोएण तु वसपरिणामो, एकत्तीस नगा, सव्वेवि य ते मुणेयव्वा ॥४॥
एमेवय परिणामो, गधाण रसाण तहय फासाण, सगणाणय नणिउं,
गप्पो) ॥ ५ ॥ एकत्रिंशद्भगा एव पूर्यंते। दशद्विकसयोगा दशत्रिकसयोगा
गा एक पचकसयोग प्रत्येक वर्णाश्च पचेति । अगुरुलघुपरिणामस्तु परमाणोरारभ्य
यावदनतानतप्रदेशिका स्कधा सूक्ष्मा । शब्दपरिणामस्ततविततघनसुषिरनेदाच्चतुर्धा ।
तथा ताल्वोष्टपुटव्यापारादिनिवर्त्त्यश्च । अन्येपि पुद्गलपरिणामाश्छायादयो नवति ते
चामी (ठाया य आयवो वा, उज्जोउ तहय अधकारो य । एसो उ पुग्गलाण, परिणा
मो फदणा चेव ॥ १ ॥ सीयाणा य पगासा, ठायाणाइच्चिया बहुवि गप्पा । उन्हो पु
णप्पगासो, णायव्वो आयवो नाम ॥ २ ॥ नविसीउ नविउन्हो, समोपगासोय होइ उ
ज्जोउ। काल मइल तंपिय वियाणतं अधयारति ॥ ३ ॥ दव्वस्स चलण पप्फ, दणाउ
सापुण गईउ निद्दिठ्ठा। वीलस पउंग मीसा, अत्तपरेण तु उनउंवी)॥ ४ ॥ तथाऽभ्रेंद्रध
नुर्विद्युदादिषु कार्येषु यानि पुद्गलद्रव्याणि परिणतानि तद्विस्रसाकरणमिति॥७॥गतंद्रव्यक
रण इदानीं क्षेत्रकरणानिधित्सयाऽह ॥ (णविणा आगासेण,कीरइज किंचि खेत्तमागास।
वजण परियावन्नं,उच्छुकरणमादिय बहुहा) ॥७॥ (णविणेत्यादि) ॥ क्षिनिवासगत्योरस्मा
दधिकरणे प्रना क्षेत्रमिति। तच्चावगाहदानलक्षणमाकाश । तेनचावगाहदानलक्षणयो
ग्येन विना न किंचिदपि कर्तु शक्यत इत्यत क्षेत्रकरण । क्षेत्रकरण नित्यत्वेपि चोपचा
रत क्षेत्रस्यैव करण क्षेत्रकरण। यथा गृहादावपनीते कृतमाकाश उत्पादिते विनष्टमि

वाऽन्यथाऽर्थस्य प्रतिपादयितुमशक्यत्वात् ॥ मतेर्मतिज्ञानस्य संघटना मतिसंघटना अक्षर गुणेन मतिसंघटना ॥ नावश्रुतस्य द्रव्यश्रुतेन प्रकाशनमित्यर्थः ॥ अक्षरगुणस्य वा मत्या बुध्या संघटना रचनेति यावत् ॥ तया ऽक्षरगुणमतिसंघटनया ॥ तथा कर्मणा ज्ञानावरणा दीनां परिशाटना जीवप्रदेशेन्य पृथक्करणरूपा तयाच हेतुनूतया सूत्रकृतांग कृतमिति संबन्धः । तथाहि । यथा यथा गणधराः सूत्रकरणायोद्यमं कुर्वन्ति तथा तथा कर्मपरिशा टना नवति । यथा यथाच कर्मपरिशाटना तथा तथा ग्रंथरचनायोद्यमः संपद्यत इति । ए तदेव गाथापश्चार्धेन दर्शयति । तडुनययोगेनेति ॥ अक्षरगुणमतिसंघटनायोगेन कर्मपरि शाटनायोगेन च ॥ यदि वा वाग्योगेन मनोयोगेन च कृतमिदं सूत्रं तेन सूत्रकृतमिति । इहा ऽनंतरं सूत्रकृतस्य निरुक्तमुक्तमधुना सूत्रपदस्य निरुक्तानिधित्सयाह । " सुत्तेण सुत्तिय चिय, अब्रा तह सूइयाय जुत्ताय ॥ तोबहुविहप्पउत्ता एया पसिद्धा अणादीया ' ॥ २१ ॥ सुत्तेणेत्यादि । अर्थस्य सूचनात्सूत्रं तेन सूत्रेण केचिदर्थाः साक्षात्सूत्रिता मुख्यतयो पात्तास्तथाऽपरे सूचिता अर्थापत्त्याक्षिप्ता ॥ साक्षादनुपादानेपि दध्यानयनचोदनया तदा धारानयनचोदनावदिति । एवंच कृत्वा चतुर्दशपूर्वविद परस्परं षट्स्थानपतिता नवति । तथा चोक्तं । अक्खरलंनेण समा, ऊणहिया हुंति मतिविसेसेहिं । तेविय मईविसेसा, सुयणाणब्नितरेजाण ॥ १ ॥ तत्र ये साक्षाडुपात्तास्तान् प्रति सर्वेपि तुल्या ॥ ये पुनः सूचिता स्तदपेक्षया कश्चिदनंतनागाधिकमर्थं वेत्त्यपरोऽसंख्येयनागाधिकमन्यः संख्येयनागाधि क तथान्यः संख्येयाऽसंख्येयाऽनंतगुणमिति तेच सर्वेपि युक्ता युक्त्युपपन्ना सूत्रो पात्ताएव वेदितव्या । तथा चानिहितं " तेवियमईविसेसे " इत्यादि । ननु किं सूत्रो पात्तेन्योऽन्येपि केचनार्थाः संति येन तदपेक्षया चतुर्दशपूर्वविदां षट्स्थानपतितत्वमुद् घुष्यते । बाढं विद्यते । यतोऽनिहितं । पण्णवणिज्जानावा, अणंतनागोउ अणनिल प्पाणं । पण्णवणिज्जाणं पुण, अणंतनागो सुयनिबद्धो ॥ १ ॥ यतश्चैवं ततस्ते अर्था आगमे बहुविध प्रयुक्ताः सूत्रेरुपात्ताः केचन साक्षात्केचिदर्थापत्त्या समुपलन्यन्ते । य दि वा क्वचिद्देशग्रहणं क्वचित्सर्वार्थोपादानमित्यादि । यैश्च पदैस्ते अर्थाः प्रतिपाद्यन्ते तानि पदानि प्रकर्षेण सिद्धानि प्रसिद्धानि न साधनीयानि । तथाऽनादीनि च तानि नेदानीमुत्पाद्यानि ॥तथा चेयं द्वादशांगी शब्दार्थरचनाद्वारेण विदेहेषु नित्या नरतैरावं तेष्वपि शब्दरचनाद्वारेणैव प्रति तीर्थकरं क्रियते ऽन्यथा तु नित्यैव । एतेन चोत्तरत्ति प्रध्वंसिनो वर्णा इत्येतन्निराकृतं वेदितव्यमिति॥ २१ ॥सांप्रतं सूत्रकृतस्य श्रुतस्कंधाध्ययनादि निरूपणार्थमाह । "दोचेवसुयक्खधा, अज्जयणाइं च हुंति तेवीसं॥ तेत्तिसुद्देसणकाला, आ याराउ डुगुणमंग" ॥ २२॥ (दोचेवेत्यादि)। द्वावत्र श्रुतस्कन्धौ त्रयोविंशतिरध्ययनानि त्रय स्त्रिंशदुद्देशनकालास्ते चैव नवंति । प्रथमाध्ययने चत्वारो द्वितीये त्रयस्तृतीये चत्वार ॥

यलक्षणे व्यापारे शुनाशुने च ध्याने वर्तमानैर्ग्रंथरचना क्रियते । तत्र लोकोत्तरैः
शुनध्यानावस्थितैर्ग्रंथरचना विधीयते ॥ लोकेत्वशुनध्यानाश्रितैर्ग्रंथग्रथन
लौकिकग्रथस्य कर्मबंधहेतुत्वात् कर्तुरशुनध्यायित्वमवसेय ॥ इहतु सूत्रकृतस्य
समयेन शुनाध्यवसायेनच प्रकृतं ॥ यस्माद्गणधरैः शुनध्यानावस्थितैरिदमगं
तेषाच ग्रथरचनाप्रति शुनध्यायिना कर्मद्वारेण योऽवस्थाविशेषस्तद्दर्शयितुकामो
क्तिरुदाह ॥ (विइअणुजावे बधण, निकायणनिहत्त दीहहस्सेसु ॥ सकम
उदये वेदेउवसलेयं)॥१७॥(विइइत्यादि) । तत्र कर्मस्थितिं प्रति
निर्गणधरैः सूत्रमिद कृतमिति ॥ तथाऽनुजावो विपाकस्तदपेक्षया मदानुजावैस्तथा
धमगीकृत्य ज्ञानावरणीयादिप्रकृतीर्मदानुजावा बध्नद्भिस्तथाऽनिकाचयद्भिरेव
वस्थामकुर्वद्भिस्तथा दीर्घस्थितिका प्रकृतीर्ह्स्वीयर्स नय
सु सक्रामयद्भिस्तथोदयवता कर्मणामुदीरणा विदधानैरप्रमत्तगुणस्थैस्तु
यूष्यनुदीरद्भिस्तथा मनुष्यगति पचेद्रिय जात्यौदारिक शरीर तद
मुदये वर्तमानैस्तथावेदमगीकृत्य पुवेदेसति तथोवसमेति सूचनात्सूत्रमिति
मिकाजावे वर्तमानैर्गणधारिनिरिद सूत्ररुतांग ग्रथितमिति १७साप्रतं
द्वारेण करणप्रकारमनिधातुकामश्राह ॥ (सोऊण जिणवरमतं, गणहारी काउ
उं वसम ॥ अज्ञवसाणेण कय, सूत्तमिण तेणसूयगड) ॥१८॥ (सोऊणेत्यादि)
निशम्य जिनवराणां तीर्थकराणा मतमनिप्रायं मातृकाडिपद गणधरैर्गौतमादिनि कृत्वा
तत्रग्रथरचने क्षयोपशम तत्प्रतिबधकर्मक्षयोपशमाद्दत्तावधानैरितिनाव ॥
येन वसता कृतमिद सूत्र तेनसूत्रकृतमिति॥१८॥इदानीं कस्मिन् योगे वर्तमानैस्तीर्थकृद्भि
र्नापितं कुत्रवा गणधरैर्दृब्धमित्येतदाह ॥(वइजोगेणपजावियं, मणेगजोगधराणसाहूण॥
तो वय जोगेणकय, जीवस्स सजावियगुणेण)॥ १९ ॥ (वइजोगेणेत्यादि) । तत्र तीर्थ
कृद्भि क्षायिकज्ञानवर्तिनिर्वाग्योगेनार्थ प्रकर्षेण जापित प्रजापितो गणधराणां ॥ तेच
नप्राकृतपुरुषकल्पा किंत्वनेकयोगधरा ॥ तत्र योग क्षीराश्रवादिलब्धिकलापसबधस्त
धारयतीत्यनेकयोगधरास्तेषां प्रजापितमिति सूत्रकृतांगाऽपेक्षया नपुसकता ॥ साधवश्चा
त्र गणधरा एव गृह्यते तदुद्देशेनैव जगवतामर्थप्रजापणादिति ॥ ततोर्थं निशम्य गणधरै
रपि वाग्योगेनैव कृतं तच्च जीवस्य स्वाजाविकेन गुणेनेति ॥ स्वस्मिन्जावे जव स्वाजावि
क प्राकृतइत्यर्थं ॥ प्राकृतजाषयेत्युक्त जवति॥ नपुन सस्कृतया जदलिट्शप् प्रकृतिप्रत्य
यादिविकारविकल्पनानिष्पन्नयेति ॥१९॥ पुनरन्यथा सूत्रकृतनिरुक्तमाह ॥ (अरकरगुण
मतिसघा, यणाएकम्मपरिसाडनाएय ॥ मङजयजोगेण कय, सुत्तमिण तेण सूत्तगम)
॥ २० ॥ (अरकरेत्यादि) । अक्षराणि अकारादीनि तेषा गुणोऽनतगमपर्यायत्वमुच्चारण

ततस्तथैव यत्न विधत्त यूयमिति शिष्याणामुपदेशो दीयते ॥ सप्तमे त्विदमभिहितं ॥ त द्यथा ॥ नि शीला गृहस्था कुशीलास्त्वन्यतीर्थिका पार्श्वस्थादयो वा ते परित्यक्ता येन सा धुना स परित्यक्तनि शीलकुशील इति ॥ तथा सुशीला उद्युक्तविहारिण संविग्ना सवे गमग्नास्तत्सेवाशील शीलवान् भवतीति । अष्टमे त्वेतत्प्रतिपाद्यते । तद्यथा । ज्ञात्वा वीर्य द्वय पण्डितवीर्ये प्रयत्नो विधीयत इति ॥ नवमे चार्थाधिकारस्त्वय ॥ तद्यथा ॥ यथाऽवस्थि तोधर्म कथ्यते ॥ दशमेतु समाधि प्रतिपाद्यते ॥ एकादशेतु सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रात्म को मोक्षमार्ग कथ्यते ॥ द्वादशे त्वयमर्थाधिकार ॥ तद्यथा । समवसृता अवतीर्णा व्य वस्थिताश्चतुर्पु मतेषु क्रियाऽक्रियाऽज्ञानवेनयिकाख्येष्वभिप्रायेषु त्रिषष्ट्युत्तरशतत्रय सख्या पाषण्डिन स्वीय स्वीयमर्थं प्रसाधयत समुदितास्तदुपन्यस्तसाधनदोपोद्भा वनतो निराक्रियते ॥ त्रयोदशे त्विदमभिहित ॥ तद्यथा ॥ सर्ववादिषु कपिलकणा दाक्षपादशौद्धोदनिजैमिनिप्रभृतिमतानुसारिषु कुमार्गप्रणेतृत्व साध्यते ॥ चतुर्दशेतु ग्रंथाख्येऽध्ययनेऽयमर्थाधिकार ॥ तद्यथा । शिष्याणा गुणदोषकथनं तथा शिष्यगुणसंपदु पेतेन च विनेयेन नित्य गुणानुरूपगुरुकुलवासो निषेव्य इति ॥ पंचदशे त्वादानीयाख्ये ऽध्ययनेऽर्थाधिकारोऽय ॥ तद्यथा ॥ आदीयते गृह्यते उपादीयते इत्यादानीयानि पदान्य र्था वा ते च प्रागुपन्यस्तपदैरर्थैश्च प्रायशोऽत्र सकलिता ॥तथा आयत चरित्र सम्यक्चरित्र मोक्षमार्गप्रसाधक तच्चात्र व्यावर्ण्यत इति ॥ षोडशेतु गाथाख्येऽष्टग्रंथेऽध्ययनार्थोय व्यावर्ण्यते। तद्यथा ॥ पंचदशभिरध्ययनैर्योर्थोऽभिहित सोत्र पण्डितवचनेन सक्षिप्ताभिधा नेन प्रतिपाद्यत इति ॥ 'गाहा सोलसगाण पिंडत्थोवन्निओ समासेण ॥ इत्तो इक्किक्क पुण अज्झयण कित्तयिस्सामि' ॥१॥ तत्रायमध्ययन समयाख्य तस्य चोपक्रमादीनि चत्वार्य नुयोगद्वाराणि भवति ॥ तत्रोपक्रमणमुपक्रम्यते वाऽनेन शास्त्र न्यासदेश निक्षेपावसरमा नीयत इत्युपक्रम । सच लौकिको नामस्थापनाद् द्रव्यक्षेत्रकालभावभेदेन पड्रूप आवश्यका दिष्वेवप्रपंचित ॥शास्त्रीयोप्यानुपूर्वीनामप्रमाणवक्तव्यतार्थाधिकारसमवताररूप पोढैव । तत्रानुपूर्व्यादीन्यनुयोगद्वारानुसारेण ज्ञेयानि तावद्यावत्समवतारसूत्रैस्तदध्ययनमानु पूर्व्यादिषु यत्र यत्र समवतरति तत्र तत्र समवतारयितव्य ॥ तत्र दशविधायामानुपूर्व्यांग णनानुपूर्व्यां समवतरति सापि त्रिधा। पूर्वानुपूर्वी पश्चानुपूर्वी अनानुपूर्वी चेति॥तत्रेदमध्य यन पूर्वानुपूर्व्या प्रथम पश्चानुपूर्व्या षोडशम्। अनानुपूर्व्या तु चिंत्यमानमस्यामेवैकादिका यामेकोत्तरिकायां षोडश गच्छताया श्रेण्यामन्योन्याभ्यासद्विरूपोनसंख्याभेद भवति ॥ अना नुपूर्व्यांतु षोडशभेदसंख्यापरिज्ञानोपायोय । तद्यथा । 'एकाद्या गच्छपर्यंता परस्परसमाह ता ॥राशयस्तद्धि विज्ञेय विकल्पगणिते फल'॥१॥ प्रस्तारानयनोपायस्त्वय॥पुव्वाणुपुव्विहेट्ठा

एव चतुर्थपञ्चमयो र्द्वौ द्वौ तथैकादशस्वेकसरकेष्वेकादशेवेति । प्रथमश्रुतस्कन्धे तथा यश्रुतस्कन्धे सप्ताध्ययनानि तेषा सप्तैवोद्देशनकाला एवमेते सर्व...
रागाद्द्विगुणमग षट्त्रिंशत्पदसहस्रपरिमाणमित्यर्थ ॥२२॥ सांप्रत ...
प्रथमश्रुतस्कधस्य नामनिष्पन्ननिक्षेपानिधित्सयाऽह । "निक्खेवोगाहाए,चउव्विहो सोलससु॥निक्खेवोयसुयमिय,खधेयचउव्विहो होइ"॥२३॥ (निक्खेवो इत्यादि) इहाद्यश्रुतस्कंधस्य गाथाषोडशक इति नाम। गाथाख्य षोडशमध्ययन यस्मिन् श्रुतस्कंधे सतथेति । तत्र गाथाया नामस्थापनाद्रव्यनावश्चतुर्विधो निक्षेप ॥ नामस्थापनेप्रसिद्धे ॥ द्रव्यगाथा द्विधा ॥ आगमतो नो आगमतश्च ॥ तत्र आगमतो ज्ञाता तत्र चानुपयुक्तोऽनुपयोगो द्रव्यमिति कृत्वा । नोआगमतस्तु त्रिधा । ज्ञशरीरद्रव्यगाथा नव्यशरीरद्रव्यगाथा ताभ्यां विनिर्मुक्ता च ॥ 'ससछतरूविसामणसेहयाताए गछणह जलया ॥गाहाएपञ्चद्धेतउग्गे ति इक्ककलो ' इत्यादिलक्षणलक्षिता पत्रपुस्तकादिन्यस्तेति ॥ नावगाथापि द्विविधा ॥ आगमत आगमनेदात्॥ तत्रा ऽऽगमतो गाथापदार्थज्ञस्तत्र चोपयुक्त ।नोआगमतस्त्विद मेव गाथाख्यमध्ययन ॥ आगमैकदेशत्वादस्य षोडशकस्यापि नामस्थापनाद् द्रव्यक्षेत्र कालनावनेदात् षोढा निक्षेप ॥ तत्र नामस्थापने क्षुण्णे । द्रव्यषोडशक ज्ञशरीरनव्य शरीरविनिर्मुक्त । सचित्तादीनि षोडश द्रव्याणि । क्षेत्रषोडशक षोडशाकाशप्रदेशा ॥ कालषोडशक षोडश समया एतत्कालावस्थापि वा द्रव्यमिति ॥ नावषोडशकमिदमेवाध्ययनषोडशक क्षायोपशमिकनाववृत्तित्वादिति ॥ श्रुतस्कधयो प्रत्येक चतुर्विधो निक्षेप ॥ सचान्यत्र निक्षेपेण प्रतिपादित इति नेह प्रतन्यते ॥२३॥ साप्रतमध्ययनानाप्रत्येकमर्थाधिकारदिदर्शयिषयाऽह ॥ "ससमय परसमयपरू, वणायणाऊण बज्झणा चेव ॥ सबुद्धस्सु वसग्गा थीदोसविवज्जणाचेव ॥ २४ ॥ उवसग्गजीरुणोथी वस्साणरएसु होज्ज उववाउ ॥ एवमहप्पावीरो जयमास तहा जएज्जाह ॥ २५ ॥ परिचत्तनिशीलकुशी,लसुशील स विग्गशीलवचेउ ॥ णाऊण वीरियदुग पहिय नीरियपहुज्ज पवयइ ॥ २६ ॥ धम्मोसमा हिमग्गो समोसढा चउसुसव्ववादीसु ॥ सीसगुण दोसकहणा गथम्मि सदा गुरुनिवासो ॥२७॥ आदाणिय सकलिया आदाणीयम्मि आदयचरित्त ॥ अप्पग्गथे पम्हिय वयणेणहा गहाइ अहिगारो" ॥२८॥ (ससमय इत्यादि गाथा पंच) । तत्र प्रथमाध्ययने स्वसमयपरसमयप्ररूपणा । द्वितीये स्वसमयगुणान् परसमयदोषांश्च ज्ञात्वा स्वसमय एव बोधो विधेय इति ॥ तृतीयाध्ययने तु सबुद्ध सन्नुपसर्गसहिष्णुर्नवति तदनिधीयते ॥ चतुर्थे स्त्रीदोषविवर्जना ॥ पचमेत्वयमर्थाधिकार ॥ तद्यथा ॥ उपसर्गाऽसहिष्णो स्त्रीवशवर्तिनोऽवश्य नरकेषु पात इति ॥ षष्ठे पुनरेवमित्यनुकूलप्रतिकूलोपसर्गसहनेन स्त्री वर्जनेन च नगवान् महावीरो जेतव्यस्य कर्मण ससारस्य वा पराजवेन जयमाह ॥

द्त्ते समुयारो णत्थि पुहुत्ते समोयारो ॥ १ ॥ तथा ॥ आसज्ज उ सोयारं नएनय वि सारउ बूया' ॥ संख्याप्रमाण त्वष्टधा ॥ नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, परिमा ण, पर्यंच, भाव, भेदात् । तत्रापि परिमाणसंख्यायां समवतार ॥ सापि कालिकदृष्टि वादभावात् द्विधा ॥ तत्रास्य कालिकपरिमाणसंख्यायां समवतारस्तत्राप्यंगानंगयोर गप्रविष्टे समवतार । पर्यवसंख्यायां त्वनंता पर्यवा ॥ तथा संख्येयान्यक्षराणि संख्ये या संघाता संख्येयानि पदानि संख्येया श्लोका संख्येया गाथा संख्येया वेदा संख्येयान्यनुयोगद्वाराणि । सांप्रतं वक्तव्यतायां समवतारश्चिंत्यते ॥ साच स्व, पर, समय,तदुभयभेदात्रिधा । तत्रेदमध्ययनं त्रिविधायामपि समवतरति । अर्थाधिकारो द्वेधा॥ अध्ययनार्थाधिकार उद्देशार्थाधिकारश्च । तत्राध्ययनार्थाधिकारोऽभिहित । उद्देशार्थाधि कारं तु गाथांतरित निर्युक्तिकृ द्वक्ष्यति । सांप्रतं निक्षेपावसर सच त्रिधा । उंघनिष्पन्नो ना मनिष्पन्न सूत्रालापकनिष्पन्नश्च । तत्रौघनिष्पन्नेऽध्ययनं तस्यच निक्षेप आवश्यकादौ प्रब धेनाभिहित एव । नामनिष्पन्नेतु समय इति॥२८॥नाम तन्निक्षेपार्थं निर्युक्तिकार आह॥ "ना मठवणा दविए खेत्ते काले कुतित्थसंगारे ॥ कुलगणसंकरगंडी । बोधव्वा भावसमएय" ॥२९॥ (नाम ठवणाइत्यादि) । नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, कुतीर्थ, संगार, कुल, गण, संकर गंडी, भाव, भेदात् द्वादशधा समयनिक्षेप । तत्र नामस्थापने क्षुण्णे । द्रव्यसमयो द्रव्यस्य सम्यगयनं परिणतिविशेष स्वभाव इत्यर्थ । तद्यथा । जीवद्रव्यस्योपयोग पुद्गलद्रव्यस्य मूर्तत्वं धर्माधर्माकाशानां गतिस्थित्यवगाहदानलक्षणोऽथवा योयस्य द्र व्यस्यावसरो द्रव्यस्योपयोगकाल इति ॥ तद्यथा ॥ 'वर्षासु लवणममृतं शरदि जलं गो पयश्च हेमंते ॥ शिशिरे चामलकरसो घृतं वसंते गुडश्चांते' ॥ १ ॥ क्षेत्रसमय क्षेत्रमाका श तस्य समय स्वभाव । यथा ॥ ' एगेणविसेपुसे दोहिविपुणे सयपि माएज्जा ॥ लखस एणविपुसे, कोडिसहस्सं पि माएज्जा' ॥१॥ यदि वा देवकुरुप्रभृतीनां क्षेत्राणामीदृशोऽनु भावो यदुत तत्र प्राणिन सुरूपा नित्यसुखिनो निर्वैराश्च भवतीति क्षेत्रस्य वा परिकर्मणाव सर क्षेत्रसमय इति ॥ कालसमयस्तु सुषमादेरनुभावविशेष । उत्पलपत्रशतभेदानि व्यग्यो वा कालविशेष कालसमय इति ॥ अत्र च द्रव्यक्षेत्रकालप्राधान्यविवक्षया द्रव्यक्षे त्रकालसमयता द्रष्टव्येति । कुतीर्थसमय पाखंडिकानामात्मीयानात्मीय आगमविशेष स्तदुक्तं वानुष्ठानमिति ॥ संगार संकेतस्तद्रूप समय संगारसमय ॥ यथा सिद्धार्थसार थिदेवेन पूर्वकृतसंगारानुसारेण गृहीतहरिशवो बलदेव प्रतिबोधित इति ॥ कुलसमय कुलाचारो यथा शकानां पितृशुद्धि आभीरकाणां मथनिका शुद्धि । गणसमयो यथा॥ मल्लानामयमाचारो यथा यो ह्यनाथोमल्ला म्रियते स तै संस्क्रियते पतितश्चोध्रियत इति । संकरसमयस्तु संकरोभिन्नजातीयानां मीलकस्तत्र च समये एकवाक्यता ॥ यथा वाममा

१२३४५ इत्यादि॥तत्र।'गणितेत्यविनक्ते तु लब्ध शेषैर्विनाजयेत् ॥ आदावते च
२१३४५ स्थाप्य विकल्पगणिते क्रमात्'॥१॥ अथ श्लोक शिष्यहितार्थं
१३२४५ त्र सुखावगमार्थं षट् पदानि समाश्रित्य तावत् श्लोकार्थो योज्यते ।
३१२४५ षट् पदानि स्थाप्यानि । १२३४५६ । एतेषा परस्परताडनेन
२३१४० विंशत्युत्तराणि गणितमुच्यते । तस्मिन् गणितेऽस्योत्र षट्कस्तेन नागे
३२१४५ शत्युत्तर शतं लभ्यते तच्च पक्षा पंक्तीनामत्यपंक्तो षट्काना न्यस्यते ।
१२४३५ पचकाना विंशत्युत्तरमेवशतम्॥एवमधोधश्चतुष्कत्रिकद्विकैकाना प्रत्येक विंश
त्युत्तरशतं न्यस्यमेवमत्यपंक्तो सप्त शतानि विंशत्युत्तराणि नवत्येषा च गणितप्रक्रियाया
दिरुच्यते । तथा यत्तद्विंशत्युत्तर शत लब्ध तस्य च पुन शेषेण पचकेन नागेनापहते ल
ब्धा चतुर्विंशतिस्तावतस्तावन्तश्च पचकचतुष्कत्रिकद्विकैका प्रत्येक पचमपंक्तौ न्यस्या याव
द्विंशत्युत्तर शतमिति॥ तदधोग्रतो न्यस्तमक मुक्त्वा येन्ये तेषा यो यो महत्सख्य स सोष
स्ताच्चतुर्विंशतिसख्य एव तावत् न्यस्यो यावत्सप्तशतानि विंशत्युत्तराणि पचमपंक्तावपि
पूर्णानि नवति ॥ एषा च गणितप्रक्रियेत्यभिधीयते ॥ एवमनया प्रक्रियया चतुर्विंशते शे
षचतुष्ककेन नागे हते षट् लभ्यते तावतश्चतु पंक्ता चतुष्कका स्थाप्यास्तदध षट्त्रिका
पुनर्द्विका नूय एकका पुन पूर्वन्यायेन पंक्ति पूरणीया ॥ पुन षट्कस्य शेषत्रिकेण
नागे हते द्वौ लभ्येते तावन्मात्रौ त्रिकौ तृतीयपंक्तौ शेष पूर्ववत् ।शेषपंक्ति द्वये शेषमक द्व
य क्रमोत्क्रमाभ्या व्यवस्थाप्यमिति ॥ तथा नाम्नि षड्विधनाम्न्यवतरति । यतस्तत्र षड्
नावा प्ररूप्यते । श्रुतस्यच क्षायोपशमिकनाववर्तित्वात् । प्रमाणमधुना प्रमीयतेनेने
ति प्रमाण॥तत् द्रव्यक्षेत्रकालनावभेदाच्चतुर्द्धा । तत्रास्याध्ययनस्य क्षायोपशमिकनावव्य
वस्थितत्वाद्भावप्रमाणेऽवतार । नावप्रमाण च गुण, नय, सख्या, नेदात्रिधा । तत्रापि गु
णप्रमाणे समवतार । तदपि जीवाजीवभेदाद् द्विधा । समयाध्ययनस्य च क्षायोपशमिक
नावरूपत्वात्तस्य च जीवानन्यत्वाज्जीवगुणप्रमाणे समवतार । जीवगुणप्रमाणमपि ज्ञान,
दर्शन, चारित्र, नेदात्रिविध । तत्रास्य बोधरूपत्वात् ज्ञानगुणप्रमाणे समवतार॥ तदपि
प्रत्यक्षानुमानोपमानागमभेदाच्चतुर्द्धा । तत्रास्यागमप्रमाणे समवतार ॥ सोपि लौ
किक, लोकोत्तर, नेदाद् द्विधा ।तदस्य लोकोत्तरे समवतारस्तस्य च सूत्रार्थतदुनयरूपत्वा
त्त्रैविध्य । त्रिष्वपि समवतार । यदि वाऽत्मानतरपरपरनेदादागमस्त्रिविधस्तत्र तीर्थ
कृतामर्थापेक्षयाऽत्मागमो गणधराणामनतरागमस्तच्छिष्याणा परपरागम । सूत्रापेक्षया
तु गणधराणामात्मागमस्तच्छिष्याणामनतरागमस्तदन्येषा परपरागम । गुणप्रमाणानत
र नयप्रमाणावसरस्तस्य चेदानीं पृथक्त्वानुयोगे नास्ति समवतारो नवेद्वा पुरुषापे
क्षया ॥ तथा चोक्त ॥ मूढनइय सुय का,लियतुगणया समोरयति इह ॥ अपु

गत उंधनामनिष्पन्ननिक्षेपयोरंतर्गतत्वात् । तथाच वक्ष्यमाणस्य सूत्रस्य निक्षेपावसरत्वा त् । उपोद्घातनिर्युक्त्यानुगमस्तु पड्विंशति द्वारप्रतिपादकागाथा द्वयादवसेयस्तच्चेद उद्देश निर्देशोय इत्यादि । सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्त्यनुगमस्तु सूत्रे सति संभवति ॥ सूत्र च सूत्रानुगमे सचावसरप्राप्त एव । तत्राऽस्खलितादिगुणोपेत सूत्रमुच्चारणीय । तच्चेद ॥ बुज्झिज्जत्ति तिउट्टि ज्जत्यादिश्लोक । अस्य संहितादिक्रमेण व्याख्या । (बुध्यतेत्यादि) । सूत्रमिद सूत्रकृता गादौ वर्तते । अस्यच ऽऽचारांगेन सहाय संबध । तद्यथा आचारागेनिहित । ' जीवो छ कायपरू, वणायतेसिं वहेणबंधोत्ति इत्यादि तत्सर्व बुध्येतेत्यादि । यदि चेह केषाचि द्वादिना ज्ञानादेवमुक्त्यवाप्तिरन्येषा क्रियामात्रात् । जैनाना तूनान्या निश्रेयसाधिगम इत्ये तदनेन श्लोकेन प्रतिपाद्यते । तत्रापि ज्ञानपूर्विका क्रिया फलवती भवतीत्यादि बुध्येते त्यनेन ज्ञानमुक्त॥त्रोटयेदित्येनेनच क्रियोक्ता॥तत्रायमर्थो बुध्येतावगच्छेत् बोध विदध्यादित्यु पदेश । किंपुनस्तद्बुध्येत तदाह । बंधन बध्यते जीवप्रदेशैरन्योन्यानुवेधरूपतया व्यवस्था प्यत इति बंधन ज्ञानावरणाद्यष्टप्रकार कर्म तद्धेतवो वा मिथ्यात्वाऽविरत्यादय परि ग्रहारंभादयो वा । नच बोधमात्रादभिलषितार्थावाप्तिर्भवतीत्यत क्रिया दर्शयति । त च बंधन परिज्ञाय विशिष्टया क्रियया सयमानुष्ठानरूपया त्रोटयेदपनयेदात्मन पृथक्कुर्या त्परित्यजेद्वा । एव चाभिहिते जबूस्वाम्यादिको विनेयो बंधादिस्वरूप विशिष्ट जिज्ञासु प प्रच्छ ॥ किमाह किमुक्तवान् बंधन वीरस्तीर्थकृत् किंवा जानन्नवगच्छस्तद्बंधन त्रोटयति ततो वा त्रुट्यतीति श्लोकार्थ ॥ १ ॥ बंधनस्वरूपनिर्वचनायाह ॥ (चित्तमतमचित्त वे त्यादि)॥ इह बंधन कर्म तद्धेतवो वाऽभिधीयते ॥ तत्र न निदानमन्तरेण निदानिनो जन्मेति निदानमेव दर्शयति ॥ तत्रापि सर्वारंभा कर्मोपादानरूपा प्रायश आत्मात्मी यग्रहोत्थानामिति कृत्वाऽदो परिग्रहमेव दर्शितवान् ॥ चित्तमुपयोगो ज्ञान तद्विद्यते य स्य तच्चित्तवत् द्विपदचतुष्पदादि । ततोन्यदचित्तवत् कनकरजतादि तदुभयरूपमपि परि ग्रह परिगृह्य कृशमपि स्तोकमपि तृणतुषादिकमपीत्यर्थ । यदि वा कसन कस परिग्रह ग्रहणबुध्या जीवस्य गमनपरिणाम इति यावत् । तदेव स्वत परिग्रह परिगृह्यान्यान्वा ग्राहयित्वा गृह्णतो वान्याननुज्ञाय दु खयतीति दु खमष्टप्रकार कर्म तत्फल वा असा तादयादिरूपं तस्मान्न मुच्यत इति । परिग्रहाग्रह एव परमार्थतोनर्थमूल भवति । तथा चोक्त । 'ममाहमिति चेष यावदभिमानदाहज्वर कृतातमुखमेव तावदिति न प्रशात्युन्न य ॥ यश सुखपिपासितैरयमसावनर्थोत्तर परैरपसद कुतोपि कथमप्यपाकृष्यते' ॥ १ ॥ तथाच ॥ द्वेषस्यायतन धृतेरपचय क्षांते प्रतीपो विधिर्व्याक्षेपस्य सुहृन्मदस्य भवन ध्या नस्य कष्टो रिपु ॥ दु खस्य प्रभव सुखस्य निधन पापस्य वासो निज प्राज्ञस्यापि परिग्र हो ग्रहइव क्लेशाय नाशायच' ॥ १ ॥ २ ॥

गीदावनाचारप्रवृत्तावपि शुचिकरणमिति । गडीसमयो यथा शाक्यानां
डीताडनमिति । नावसमयस्तु नो आगमत इदमेवाध्ययनमनेनैवात्राधिकार
तु शिष्यमतिविकासार्थमुपन्यास इति ॥२९॥सांप्रतं नाऽध्यय. दे ।
ऽह ॥ "मह्पचनूय एक्क, प्पएय तज्जीवतस्सरीरेय ॥ तहय अगार गवाती
अफलवादी ॥३०॥ बीए नियवाईउं, अण्णाणियतह्य नाणवाईउं ॥ कम्म च
चउविहं निक्खुसमयंमि ॥ ३१॥ तइए आहाकम्म, कडवाई जह्यतेयवाईउं ॥
य चउत्थे, परप्पवाई अविरएसु ' ॥ ३२ ॥ मह्पचनूय इत्यादिगाथात्रय ।
स्य चत्वार उद्देशकास्तत्राद्यस्यषडर्थाधिकारा आद्यगाथयाऽभिहिता ॥ तद्यथा ।
नि पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशाख्यानि महांति च तानि सर्वलोकव्यापित्वात् भूतानि च
हाभूतानि इत्ययमेकोऽर्थाधिकार । तथा चेतनाचेतन सर्वं मेकात्मविवर्त
तवाद प्रतिपाद्यत इत्यर्थाधिकारो द्वितीय । स चासो जीवश्च तज्जीव कायाकारो
परिणामस्तदेव शरीर जीवशरीरयोरैक्यमिति यावदिति तृतीयोर्थाधिकार । त
जीव सर्वस्या पुण्यपापक्रियाया इत्येववादीति चतुर्थोधिकार ॥ तथात्मा षष्ठ इति
चाना भूतानामात्मा षष्ठ प्रतिपाद्यत इत्यय पचमोर्थाधिकार । तथा-फलवादीति
न विद्यते कस्याश्चित् क्रियाया फलमित्येव वादी च प्रतिपाद्यत इति षष्ठोर्थाधिकार इ
ति । द्वितीयोद्देशकेचत्वारोर्थाधिकारा ॥तद्यथा । नियतिवादस्तथाऽज्ञानिकमतं
च प्रतिपाद्यते । कर्म च चयमुपचय चतुर्विधमपि न गच्छति भिक्षुसमये शाक्यागमे
चतुर्थोर्थाधिकार । चातुर्विध्यतु कर्मणो ऽविज्ञोपचित ॥ अविज्ञानमविज्ञा तयोपचि
तमनाभोगकृतमित्यर्थ । यथा मातु स्तनाद्याक्रमणेन पुत्रव्यापत्तावप्यनाभोगान्नक
र्मोपचीयते । तथा परिज्ञान परिज्ञा केवलेन मनसा पर्यालोचन तेनापि कस्यचित्प्रा
णिनो व्यापादनाभावात् कर्मोपचयाभाव इति । तथा ईरणमीर्यागमन तेन जनि
तमीर्याप्रत्यय तदपि कर्मोपचय न गच्छति प्राणिव्यापादनाभिसंधेरभावादिति । तथा
स्वप्नांतिक स्वप्नप्रत्यय कर्म नोपचीयते । यथा स्वप्नभोजने तृप्त्यभाव इति तृतीयोद्देश
केत्वयमर्थाधिकार । तथा आधाकर्मगतविचारस्तद्भोजिना च दोषोपदर्शनमिति । तथा
कृतवादी च भण्यते । तद्यथेश्वरेण कृतोय लोक प्रधानादिकृतो वा ॥ यथा च ते प्रतिवादि
न आत्मीय कृतवाद गृहीत्वोपस्थितास्तथा भण्यत इति द्वितीयोधिकार । चतुर्थोद्देशकाधि
कारस्त्वय । तद्यथा ॥ अविरतेषु गृहस्थेषु यानि कृत्यान्यनुष्ठानानि स्थितानि तैरसंयमप्र
धानै कर्तव्यै परप्रवादी परतीर्थिक उपमीयत इति । इदानीमनुगम सच द्वेधा । सूत्रा
नुगमो निर्युक्त्यनुगमश्च । तत्र निर्युक्त्यनुगमस्त्रिविध । तद्यथा । निक्षेपनिर्युक्त्यनुगम
उपोद्घातनिर्युक्त्यनुगम सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्त्यनुगमश्च । तत्र निक्षेपनिर्युक्त्यनुगमोऽनु

रेण बधनमेवाह् । सयंतीत्यादि । स परिग्रहवानसतुष्टो नूयस्तदर्जनपर समार्जितोप इवकारिणि च द्वेषमुपगतस्तत स्वयमात्मना त्रिन्यो मनोवाक्कायेन्य आयुर्बलशरीरेन्यो वा पातयेत् च्यावयेत् प्राणान् प्राणिन । अकारलोपाद्वा अतिपातयेत् प्राणानिति । प्राणाश्चामी । पचेंद्रियाणि त्रिविध बलच, उच्छ्वासनिश्वासमथान्यदायु ॥ प्राणा दशैते नगवद्भिरुक्ता,स्तेषा वियोजीकरण तु हिसा ॥ १ ॥ तथा स परिग्रहाग्रही न केवल स्वतो व्यापादयति अपरैरपि घातयति घ्नतश्चान्यान् समनुजानीते तदेव कृतकारितानुमतिनि. प्राण्युपमर्दनेन जन्मांतरशतानुबध्यात्मनो वैर वर्धयति । ततश्च दुखपरपरारूपबधनान्न मुच्यत इति । प्राणातिपातस्य चोपलक्षणार्थत्वात् मृषावादादयोपि बंधहेतवो इष्टव्या इति ॥ ३ ॥ पुनर्बंधनमेवाश्रित्याह । (जेस्सिमित्यादि) । यस्मिन् राष्ट्रकूटादौ कुले जातो यैर्वा सह पासुक्रीमितैर्नार्यादिनिर्वा सह सवसेन्नरस्तेषु मातृपितृन्रातृनगिनीनार्यावयस्यादिषु ममायमिति ममत्ववान् स्निह्यन् लुप्यते विलुप्यते ममत्वजनितेन कर्मणा नारकतिर्यड्मनुष्यामरलक्षणे ससारे न्रम्यमाणो बाध्यते पीड्यते। कोसौ बालोऽज्ञ स दसद्विवेकरहितत्वादन्येष्वन्येषु च मूर्छितो गृद्धोऽध्युपपन्नो ममत्वबहुल इत्यर्थ । पूर्व तावन्मातापित्रोस्तदनुनार्याया पुन पुत्रादौ स्नेहवानिति ॥ ४ ॥

वित्त सोयरिया चेव, सवमेय नताणइ॥ सखाए जीविञ्च चेवं, कम्मुणा उ तिउट्टइ ॥५॥ एए गथे विउक्कम्म, एगे समणमाह णा ॥ अयाणता विउस्सित्ता सत्ता कामेहि माणवा ॥ ६ ॥

अर्थ–हवे जे प्रथम कह्यु हतुके, कहेवु जाणतो थको बंधन त्रोडे ते कहेछे. वित्त के० धनधान्यादिक सचित्त तथा अचित्त वस्तु अने सोयरियाके० नाइ प्रमुख कौटुंबिक स्वजनादिक चेवके० वली सवमेयके० ए सर्व जे कुटुबादिक स्नेहवतछे, ते शारीरी, मानसी वेदना नोगवता थका ए जीवने नताणइके० त्राण नणी न थाय एवु जाणीने जीवियंचके० जे प्राणीउनु जीवतव्य अल्पछे एयके० एवु सखाएके० जाणीने, जीवितव्य प्राणीउने एटले परिग्रह प्राणिघात अने स्वजन स्नेहादिक बधनना स्थानने ज्ञपरिज्ञाये जाणीने, प्रत्याख्यान परिज्ञाये ठांमिने, कम्मुणाउ तिउट्टइके० कर्म थकी छूटे अर्थात् कर्म थकी वेगलो थाय ॥ ५ ॥ हवे स्वसमयनो अधिकार कही परसमयनो अधिकार कहेछे एएगथेके० ए अरिहतना नावित ग्रथ जे करुणारसमय छे ते ने गमीने स्वेछाये रचित ग्रथोने विषे विउक्कम्मके० आसक्त थका, एगेसमणाके० एक शाक्यादिकना श्रमण, बीजा बृहस्पतिमतानुसारी एवा माहणा के० ब्राह्मण ए अयाणताके० परमार्थना अजाण थका विउस्सित्ता के० विविध प्रकारे उत्प्रबलपणे पोताना

सयं निवायए पाणे, अडुवाऽन्नेहिं घायए ॥ हणंतं वा णुजा
णाइ, वेरं वड्ढइ अप्पणो ॥३॥ जेस्सिं कुले समुप्पन्ने जेहिं वा सं
वसे नरे ॥ ममाइ लुप्पई वाले, अणे अणेहिं मुछिए ॥ ४ ॥

अर्थ–हवे ज्यां परिग्रह त्यां आरंभ होय, अने ज्यां आरंभ त्यां प्राणातिपात होय एवुं देखाडेछे ते परिग्रहवंत पुरुष असंतोषी थतो ते परिग्रह उपार्जवाने अर्थे, अने उपार्जन करेलो परिग्रह राखवाने अर्थे सयंके० पोते, पाणेके० प्राणीर्उनो, निवायएके० निपात एटले विनाश करे, अडुवाके० अथवा अन्नेहिं घायएके० अनेरा पासे प्राणीर्उनी घात करावे, वाके० अथवा हणंत के० जे प्राणीर्उने हणतो होय अर्थात् प्राणीर्उनो विनाश करतो होय तेने अणुजाणाइके० अनुमोदवे करी प्राणीर्उनी घात करतो थको अथवा करावतो थको अप्पणोके० आत्माने वेरवड्ढइके० वैरनी वृद्धी करेछे तेथी जे डुःख परंपरारूप बंधन तेथकी बुटे नहीं ॥३॥ वली पण बंधन आश्रयी कहेछे जेस्सिं कुले समुप्पन्नेके० रागोडादिक जे कुलमां उत्पन्न थयो, अथवा जेहिंवा संवसे के० जेनी साथे वास वसे, एटले पांसुक्रीडादिक करे एवा नरेके० मनुष्य जे माता, पिता, नाई, बेहेन, नार्या, अने मित्रादिक तेने विषे ममाइके० ममत्वनो करनार एटले मातापितादिकनी साथे स्नेह करतो एवो वालेके० अज्ञानी जीवते लुप्पइके० कर्मे संसारचक्रमांहे नमतो थको पीडायछे, ते मनुष्य केवोछे तोके अणेअणेहिंके० अन्य अन्य एटले प्रथम माता पिता, तदनंतर नाईने विषे, तदनंतर पुत्रपौत्रादिक, एम अन्य अन्यने विषे मुछिएके० मूर्छित एटले मूर्छा पामतो थको स्नेहे करी पीडायछे ॥ ४ ॥

दीपिका ॥ अथवा प्रकारांतरेण बंधनमेवाह । सयंतीति ॥ सपरिग्रहवान् स्वयमात्मना प्राणानतिपातयेत् जीवान् हिंस्यात् । अथवा अन्यैः परैरपि घातयति घ्नतश्चान्याननु जानीते तदेवं कृतकारितानुमतिभिः प्राणिघातं कुर्वन्नात्मनो वैरं वर्धयति ततश्च बंधनान्न मुच्यते इति नावः ॥ ३ ॥ पुनर्बंधनमेवाश्रित्याह । जेस्सिमिति । यस्मिन् कुले जातो यैर्वा मित्रैर्नार्यादिभिर्वा सह संवसेन्नरः तेषु मित्रपितृमातृनार्यादिषु ममायमिति ममत्ववान् लुप्यते ममत्वजनितेन कर्मणा बाध्यते । बालो मूर्खः विवेकरहितत्वादन्येषु च मूर्छितो ममत्वबहुल इत्यर्थः ॥ ४ ॥

टीका ॥ तथाच परिग्रहेष्वप्राप्तनष्टेषु कांक्षाशोकौ प्राप्तेषु च रक्षणमुपनोगे वाऽतृप्तिरित्येवं परिग्रहे सति डुःखात्मकाद्बंधनान्न मुच्यत इति परिग्रहवतश्चावश्यंनाव्यारंनस्तस्मिंश्च प्राणातिपात इति दर्शयितुमाह । सयंनिवायएपाणे इत्यादि । यदि वा प्रकारांत

रेण बंधनमेवाह् । सर्यतीत्यादि । स परिग्रहवानसंतुष्टो भूयस्तदर्जनपर समार्जितोप द्रवकारिणि च द्वेषमुपगतस्तत स्वयमात्मना त्रिभ्यो मनोवाक्कायेभ्य आयुर्बलशरीरेभ्यो वा पातयेत् च्यावयेत् प्राणान् प्राणिन । अकारलोपाद्वा अतिपातयेत् प्राणानिति । प्रा णाश्चामी । पचेंद्रियाणि त्रिविध बलंच, उच्छ्वासनिश्वासमथान्यदायु ॥ प्राणा दशैते भगव द्भिरुक्ता,स्तेषां वियोजीकरण तु हिंसा ॥ १ ॥ तथा स परिग्रहाग्रही न केवल स्वतो व्या पादयति अपरैरपि घातयति घ्नतश्चान्यान् समनुजानीते तदेव कृतकारितानुमतिभि प्राण्युपमर्दनेन जन्मांतरशतानुबंध्यात्मनो वैर वर्धयति । ततश्च दु खपरपरारूपबंधनान्न मुच्यत इति । प्राणातिपातस्य चोपलक्षणार्थत्वात् मृषावादादयोपि बंधहेतवो इष्टव्या इति ॥ ३ ॥ पुनर्बंधनमेवाश्रित्याह । (जेस्सिमित्यादि) । यस्मिन् राष्ट्रकूटादौ कुले जातो यैर्वा सह पांसुक्रीडितैर्भार्यादिभिर्वा सह सवसेन्नरस्तेषु मातृपितृभ्रातृभगिनीभार्यावय स्यादिषु ममायमिति ममत्ववान् स्निह्यन् लुप्यते विलुप्यते ममत्वजनितेन कर्मणा नारकतिर्यङ्मनुष्यामरलक्षणे ससारे भ्रम्यमाणो बाध्यते पीड्यते। कोसौ बालोऽज्ञ स दसद्विवेकरहितत्वादन्येष्वन्येषु च मूर्छितो गृद्धोध्युपपन्नो ममत्वबहुल इत्यर्थ । पूर्वं तावन्मातापित्रोस्तदनुभार्यायां पुन पुत्रादौ स्नेहवानिति ॥ ४ ॥

वित्त सोयरिया चेव, सवमेय नताणइ॥ सखाए जीविअं चेव,
कम्मुणा उ तिउट्टइ ॥५॥ एए गथे विउक्कम्म, एगे समणमाह
णा ॥ अयाणता विउस्सित्ता सत्ता कामेहि माणवा ॥ ६ ॥

अर्थ–हवे जे प्रथम कह्यु हतुके, कहेवुं जाणतो थको बंधन त्रोडे ते कहेवे. वित्तं के० धनधान्यादिक सचित्त तथा अचित्त वस्तु अने सोयरियाके० भाइ प्रमुख कौटुंबि क स्वजनादिक चेवके० वली सवमेयंके० ए सर्व जे कुटुंबादिक स्नेहवतछे, ते शारीरी, मानसी वेदना भोगवता थकां ए जीवने नताणइके० त्राण भणी न थाय एवुं जाणी ने जीविर्यचके० जे प्राणीउंनु जीवतव्य अल्पछे एयके० एवु सखाएके० जाणीने, जी वितव्य प्राणीउंने एटले परिग्रह प्राणिघात अने स्वजन स्नेहादिक बंधननां स्थानने ज्ञ परिज्ञाये जाणीने, प्रत्याख्यान परिज्ञाये छांमिने, कम्मुणाउ तिउट्टइके० कर्म थकी त्रुटे अ र्थात् कर्म थकी वेगलो थाय ॥ ५ ॥ हवे स्वसमयनो अधिकार कही परसमयनो अधिकार कहेवे एएगथेके० ए अरिहंतना भावित ग्रंथ जे करुणारसमय छे ते ने छांमीने स्वेछायें रचित ग्रंथोने विषे विउक्कम्मके० आसक्त थका, एगेसमणके० एक शाक्यादिकना श्रमण, बीजा बृहस्पतिमतानुसारी एवा माहणा के० ब्राह्मण ए अया णताके० परमार्थना अजाण थका विउस्सित्ता के० विविध प्रकारे बलवत्तपणे पोताना

सय निवायए पाणे, अडुवाऽन्नेहिं घायए ॥ हणंत वा णुजा
णाइ, वेरं वड्ढइ अप्पणो ॥३॥ जेस्सिं कुले समुप्पन्ने जेहिं वा सं
वसे नरे ॥ ममाइ लुप्पई बाले, अन्ने अन्नेहिं मुछिए ॥ ४ ॥

अर्थ—हवे ज्यां परिग्रह त्यां आरंभ होय, अने ज्यां आरंभ त्यां प्राणातिपात होय एवुं देखाडेछे ते परिग्रहवंत पुरुष असंतोषी थको ते परिग्रह उपार्जवाने अर्थे, अने उपार्जन करेलो परिग्रह राखवाने अर्थे सयके॰ पोते, पाणेके॰ प्राणीउनो, निवायएके॰ निपात एटले विनाश करे, अडुवाके॰ अथवा अन्नेहिं घायएके॰ अनेरा पासे प्राणीउनी घात करावे, वाके॰ अथवा हणंत के॰ जे प्राणीउने हणतो होय अर्थात् प्राणीउनो विनाश करतो होय तेने अणुजाणाइके॰ अनुमोदवे करी प्राणीउनी घात करतो थको अथवा करावतो थको अप्पणोके॰ आत्माने वेरवड्ढइके॰ वैरनी वृद्धी करेछे ते थी जे डुःख परंपरारूप बंधन तेथकी बुटे नहीं ॥३॥ वली पण बंधन आश्रयी कहेछे जेस्सिं कुले समुप्पन्नेके॰ राठोडादिक जे कुलमां उत्पन्न थयो, अथवा जेहिंवा संवसे के॰ जेनीसाथे वास वसे, एटले पांसुक्रीडादिक करे एवा नरेके॰ मनुष्य जे माता, पिता, नाई, बेहेन, नार्या, अने मित्रादिक तेने विषे ममाइके॰ ममत्वनो करनार एटले मातापितादिकनी साथे स्नेह करतो एवो बालेके॰ अज्ञानी जीवते लुप्पइके॰ कर्मे संसारचक्रमांहे नमतो थको पीडायछे, ते मनुष्य केवोछे तोके अन्नेअन्नेहिंके॰ अन्य अन्य एटले प्रथम माता पिता, तदनंतर नाईने विषे, तदनंतर पुत्रपौत्रादिक, एम अन्य अन्यने विषे मुछिएके॰ मूर्छित एटले मूर्छा पामतो थको स्नेहे करी पीडायछे ॥ ४ ॥

दीपिका ॥ अथवा प्रकारांतरेण बंधनमेवाह । सयतीति ॥ सपरिग्रहवान् स्वयमात्मना प्राणानतिपातयेत् जीवान् हिंस्यात् । अथवा अन्यैः परैरपि घातयति घ्नतश्चान्याननु जानीते तदेव कृतकारितानुमतिभिः प्राणिघातं कुर्वन्नात्मनो वैरं वर्धयति ततश्च बंधनान्न मुच्यते इति नावः ॥ ३ ॥ पुनर्बंधनमेवाश्रित्याह । जेस्सिमित्ति । यस्मिन् कुले जातो यैर्वा मित्रैर्नार्यादिभिर्वा सह संवसेन्नरः तेषु मित्रपितृमातृनार्यादिषु ममायमिति ममत्ववान् लुप्यते ममत्वजनितेन कर्मणा बाध्यते । बालो मूर्खः विवेकरहितत्वादन्येषु च मूर्छितो ममत्वबहुल इत्यर्थः ॥ ४ ॥

टीका ॥ तथाच परिग्रहेष्वप्राप्तनष्टेषु कांक्षाशोकौ प्राप्तेषु च रक्षणमुपनोगे वाऽतृप्तिरि त्येवं परिग्रहे सति डुःखात्मकाद्बंधनान्न मुच्यत इति परिग्रहवतश्चावश्यंनाव्यारंजस्त स्मिंश्च प्राणातिपात इति दर्शयितुमाह । सयनिवायएपाणे इत्यादि । यदि वा प्रकारांत

कश्चित् किंतु विज्ञानमेवैकं विवर्ततइति । क्षणिका सर्वसंस्कारात्यादि । तथा सांख्या एवं व्यवस्थिता । सत्वरजस्तमसां साम्यावस्था प्रकृतिः 'प्रकृतेर्महान्' महतोऽहंकारस्तस्माद्गणश्च षोडशकस्तस्मात्षोडशकादपि पंचनूतानि चैतन्यं पुरुषस्य स्वरूपमित्यादि । वैशेषिका पुनराहुः । इव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवायाः षट् पदार्थाइति । तथा नैयायिकाः प्रमाणप्रमेयादीनां पदार्थानामन्वयव्यतिरेकपरिज्ञानान्निःश्रेयसाधिगमइति व्यवस्थिताः । तथा मीमांसकाश्चोदनालक्षणोधर्मो नच सर्वज्ञः कश्चिद्विद्यते मुक्त्यनावश्चेत्येवमाश्रिताः । चार्वाकास्त्वेवमनिहितवंतो यथा नास्तिकश्चित्परलोकयायी नूतपंचकाद्व्यतिरिक्तः पदार्थो नापि पुण्यपापे स्तइत्यादि । एवंचागीकृत्य ते लोकायतिका । मानवाः पुरुषाः सक्ताः गृद्धा अध्युपपन्नाः कामेष्विबामदनरूपेषु । तथाचोचुः । एतावानेव पुरुषो, यावानिंडियगोचरः ॥ नद्वेवृकपदं पश्य, यद्वदंत्यबहुश्रुताः ॥ १ ॥ पिब खाद च साधु शोजने यदतीतं वरगात्रि तन्न ते ॥ नहि नीरु गतं निवर्तते, समुदयमात्रमिदं कलेवरं ॥ २ ॥ एवं ते तंत्रांतरीयाः स्वसमयार्थवासितांतःकरणाः संतो नगवदर्हदुक्तं ग्रथार्थमज्ञातपरमार्थाः समतिक्रम्य स्वकीयेषु ग्रथेषु सिताः सबद्धाः कामेषु च सक्ताइति ॥ ६ ॥

संति पंच महब्भुया, इहमेगेसि माहिया ॥ पुढवी आउ तेऊ वा,
वाउ आगासपंचमा ॥ ७ ॥ एए पंच महब्भूया, तेब्भो एगोत्ति
आहिया ॥ अहतेसिं विणासेणं, विणासो होइ देहिणो ॥ ८ ॥

अर्थ—हवे ग्रंथकार प्रथम चार्वाकनुं मत देखाडेछे संतिपंचमहब्भूया के० ते चार्वाक एम कहेछे के जगतमां सर्वलोकव्यापी पंचमहानूत छे इहके० आ लोकमांहे, एगेसिं के० कोइ एक नूतवादी तेना मतने विषे आहियाके० कह्याछे ते कोण? तोके० पुढवी के० पृथ्वी कठिणरूप छे, आउके० अप्प ते इव्य लक्षणछे, तेऊके० तेज उष्णरूप, वाउके० वायु चलन लक्षण अने पंचमाके० पांचमुं आगासके० आकाश अवकाश लक्षण छे, ॥७॥ हवे एनुंज विशेष कहेछे एएपंचमहब्भूयाके० ए पूर्वे कह्याते जे पंचमहानूत तेब्भो के० ते थकीज एगोत्ति के० कोइ एक चिडूप ते नूत थकी अव्यतिरिक्त एवो आहिया के० आत्मा होय छे, परंतु जेम ए पांच नूत थकी पृथक् नूत एवो अन्य कोइ बीजो आत्मा छे, एवी रीते जे बीजा दर्शनी कल्पना करेछे तेम नथी केमके ए परलोकनो जनार, सुखडुःखनो नोगवनार जीव एवो पदार्थ कोइ बीजो नथी, एम ते चार्वाक कहेछे तेमने कोइ परवादी एम पूछे के, अहो चार्वाको ! तमारे मते पंचमहानूत थकी अन्य काइ आत्मा एवो पदार्थ नथी, तो मरण पाम्यो एम काण कहेवाय?

ग्रथनेविषे सत्ता एटले बधाणा, एतावता आपणा मतना कदाग्रही एवा उतां माणवाके० पु रुष जे छे, ते पोतपोताना मतना अनुरागेकरी, कामेहि के० इच्छामदनादिक तेनेविषे सत्ता के० आसक्त थका प्रवर्त्ते छे एटले पोतानो मार्ग लोकोमाहे प्रसिद्धपणे सारो करी देखाडेछे

॥ दीपिका–किं जानन् बधन त्रोटयतीत्यस्योत्तरमाह । (वित्तमिति) । वित्त द्रव्यं तच्च सचित्तमचित्त वा । सोदर्या भ्रातृभगिन्यादय सर्वमेतद्वित्तादिक ससारे पीड्यमानस्य जतो र्न त्राणाय न रक्षणाय भवतीति । एतत् सख्याय ज्ञात्वा तथा जीवितं स्वल्पमिति स ख्याय ज्ञपरिज्ञया ज्ञात्वा प्रत्याख्यानपरिज्ञया प्रत्याख्याय कर्मण सकाशात् त्रुटयति अ पगच्छत्यसो । तुर्निश्चये त्रुटयेदेव । यदि वा कर्मणा क्रियया सयमानुष्ठानरूपया बधनात् त्रुटयति कर्मण पृथग्भवतीत्यर्थ ॥ ५ ॥ स्वसमय प्रतिपाद्य परसमयप्रतिपादयितुका म आह । (एएऽति) । एतान् पूर्वोक्तान् ग्रथान् सूत्रार्थान् व्युत्क्रम्य परित्यज्य एके केचित् श्रमणब्राह्मणा श्रमणा शाक्यादयो ब्राह्मणाश्च (अयाणता) परमार्थमजानाना (विउस्सित्ता) विविधमुत्प्राबल्येन सिता बद्धा स्वसमयेषु प्रतिबद्धा सत्त कामेषु च सक्ता वर्तंतइति ॥ ६ ॥

॥टीका–साप्रत यदुक्त प्राक् किंवा जानन् बधन त्रोटयतीत्यस्य निर्वचनमाह।(वित्तमित्या दि) । वित्त द्रव्य तच्च सचित्तमचित्त वा । तथा सोदर्या भ्रातृभगिन्यादय सर्वमपि चैत द्वित्तादिक ससारातर्गतस्यासुमतोऽतिकटुका शरीरमानसवेदनास्समनुभवतो न त्राणाय रक्षणाय भवतीत्येतत्सख्याय ज्ञात्वा । तथा जीवितं च प्राणिना स्वल्पमपि तत्सख्याय ज्ञप रिज्ञया । प्रत्याख्यानपरिज्ञया तु सचित्ताचित्तपरिग्रहप्राण्युपघातस्वजनस्नेहादीनि ब धनस्थानानि प्रत्याख्याय कर्मण सकाशात्त्रुटयति अपगच्छत्यसौ । तुरवधारणे । त्रुटयेदे वेति । यदि वा कर्मणा क्रियया सयमानुष्ठानरूपया बधनात्त्रुटयति । कर्मण पृथग्भ वतीत्यर्थ ॥ ५ ॥ अध्ययनार्थाधिकाराभिहितत्वात्स्वसमयप्रतिपादनानतर परसमयप्र तिपादनाभिधित्सयाऽह । (एएगथेविउक्कम्मेत्यादि) । एतानतरोक्तान् ग्रथान् व्युत्क्रम्य प रित्यज्य स्वरुचिविरचितार्थेषु ग्रथेषु सक्ता सिता बद्धा एके न सर्वे इति सबध । ग्रथा तिक्रमश्चैतेषा तदुक्तार्थानभ्युपगमात् । अनतरग्रथेषु चायमर्थोऽभिहितस्तद्यथा जीवा स्तित्वे सति ज्ञानावरणीयादि कर्मबधन तस्य हेतवो मिथ्यात्वाविरतिप्रमादादय परिग्रहा रभादयश्च । तत्रोटन च सम्यग्दर्शनाद्युपायेन मोक्षसद्भावश्चेत्येवमादिक । तदेवमेके श्रमणा शाक्यादयो बार्हस्पत्यमतानुसारिणश्च ब्राह्मणा एतानर्हदुक्तान् ग्रथानतिक्रम्य परमार्थमजानाना विविधमनेकप्रकारमुत्प्राबल्येन सिता बद्धा स्वसमयेष्वभिनिविष्टा । तथा च शाक्या एव प्रतिपादयति । यथा सुखदुःखेच्छाद्वेषज्ञानाधारभूतो नास्त्यात्मा

न्मात्राख्यानि । तत्र गधतन्मात्रात्पृथिवी गधरसरूपस्पर्शवती । रसतन्मात्रादापो रस रूपस्पर्शवत्य । रूपतन्मात्रात्तेजो रूपस्पर्शवत् । स्पर्शतन्मात्राद्वायु स्पर्शवान् । शब्द तन्मात्रादाकाश गधरसरूपस्पर्शवर्जितमुत्पद्यतइति । तथा वैशेषिका अपि नूतान्यनि हितवत । तद्यथा । पृथिवीत्वयोगात्पृथिवी । साच परमाणुलक्षणा नित्या । द्व्यणुकादि प्रक्रमनिष्पन्नकार्यरूपतया त्वनित्या । चतुर्दशभिर्गुणैरूप, रस, गध, स्पर्श, सख्या, परि माण, पृथक्त्व, सयोग, विनाग, परत्वा,परत्व, गुरुत्व, द्रवत्व, वेगाख्यैरुपेता । तथा प्त्वयोगादापस्ताश्च रूपरसस्पर्शसख्यापरिमाणपृथक्त्वसयोगविनागपरत्वापरत्वगुरुत्व स्वानाविकद्रवत्वस्नेहवेगवत्यस्तासु च रूप शुक्लमेव रसो मधुरएव स्पर्श शीतएवेति । तेजस्त्वानिसबधात्तेज । तच्च रूपस्पर्शसख्यापरिमाणपृथक्कसयोगविनागपरत्वापरत्वनै मित्तिकद्रवत्ववेगाख्यैरेकादशभिर्गुणैर्गुणवत् । तत्र रूप शुक्ल नास्वर च । स्पर्शउष्णएवेति । वायुत्वयोगाद्वायु । सचानुष्णशीतस्पर्शसख्यापरिमाणपृथक्त्वसयोगविनागपरत्वापरत्व वेगाख्यैर्नवभिर्गुणैर्गुणवान् । हृत्कपशब्दानुष्णशीतस्पर्शलिंग । आकाशमिति पारिनाषिकी संज्ञा एकत्वात्तस्य । तच्च सख्यापरिमाणपृथक्त्वसयोगविनागशब्दाख्यै षड्निर्गुणैर्गुण वत् । शब्दलिंगचेत्येवमन्यैरपि वादिभिर्नूतसन्नावाश्रयणे किमिति लोकायतिकमतापेक्ष या नूतपचकोपन्यासइत्युच्यते । साख्यादिनिर्हि प्रधानात्साहकारिक तथा कालदिगात्मा दिक चान्यदपि वस्तुजातमन्युपेयते । लोकायतिकैस्तु नूतपचकव्यतिरिक्त नात्मादिक किं चिदन्युपगम्यते इत्यतस्तन्मताश्रयणेनैव सूत्रार्थो व्याख्यायतइति ॥ ७ ॥ यथा चैतत्त था दर्शयितुमाह । (एएपचमहब्भूयाइत्यादि) । एतान्यनतरोक्तानि पृथिव्यादीनि पंच महा नूतानि यानि तेन्य कायाकारपरिणतेन्य एक कश्चिच्चिद्रूपो नूताव्यतिरिक्त आत्मा नवति न नूतेन्यो व्यतिरिक्तोऽपर कश्चित्पर परिकल्पित परलोकानुयायी सुखडुखनो का जीवाख्य पदार्थोस्तीत्येवमाख्यातवतस्ते । तथाहि । एव प्रमाणयति । न पृथिव्यादि व्यतिरिक्त आत्माऽस्ति तद्ग्राहकप्रमाणानावात् ॥ प्रमाण चात्र प्रत्यक्षमेव नानुमानादिक । तत्रेंद्रियेण साक्षादर्थस्य सबधानावाद्व्यनिचारसनव । सति च व्यनिचारसनवे सदृशे च वाधासनवे तल्लक्षणमेव दूषितं स्यादिति सर्वत्रानाश्वास । तथाचोक्त । हस्तस्पर्शादि वांधेन, विषमे पथि धावता ॥ अनुमानप्रधानेन, विनिपातो न डुर्लन ॥ १ ॥ अनुमान चात्रोपलक्षणमागमादीनामपि । साक्षादर्थसबधानावाद्धस्तस्पर्शनेनैव प्रवृत्तिरिति । तस्मात्प्रत्यक्षमेवैक प्रमाण । तेन च नूतव्यतिरिक्तस्यात्मनो न ग्रहण । यत्तु चैतन्य ते षूपलन्यते तन्नूतेष्वेव कायाकारपरिणतेष्वनिव्यज्यते मद्यागेषु समुदितेषु मदशक्तिवदि ति । तथा न नूतव्यतिरिक्त चैतन्य तत्कार्यत्वाद्घटादिवदिति । तदेव नूतव्यतिरिक्तस्या त्मनोऽनावान्नूतानामेव चैतन्यानिव्यक्तिर्जलस्य बुद्बुदादिव्यक्तिवदिति । केषांचिल्लोकाय

हवे एनो उत्तर चार्वाक दर्शनीओ कहेछे थहएसिके० अथ एटले हवे एसि एटले महाभूत जे छे तेना विणासेण के० विनाश थकी, देहिणो के० जीवनो पण होइ के० विनाश होयछे परतु जे एवु कहेछे के आत्मा चवीने अन्यत्र स्थाने कर्मना वशथकी सुखी दुःखी थायछे, ते सर्वे मुग्धरजन जाणवु ॥ ८ ॥

॥ दीपिका–सांप्रतं नास्तिकमतमाश्रित्याह । (सतीति) सति पंचमहाभूतानि अस्मिन् लोके एकेषा भूतवादिनामाख्यातानि तत्वार्थकृतानि । तैर्वा कैराख्यातानि स्वयमगीकृतानि । परेषां च प्रतिपादितानि तानि चामूनि । (दि)। पृथ्वी १ आपो जल २ तेजो वन्हि ३ वायु ४ आकाश पंचम येषां तानि ननु साख्यादिभिरपि भूतानि मन्यंतएव । तत्कथ चार्वाकमतापेक्षयैव भूतोपन्यास ति चेदुच्यते । साख्यादिभिर्हि प्रधानाहकारादिक तथा कालदिगात्मादिक वस्तुजातमगीक्रियते । चार्वाकैस्तु भूतव्यतिरिक्त नात्मादि किचिन्मन्यतइति येणैवायं सूत्रोपन्यास इति ॥७॥ चार्वाकमतांगीकारमेवाह । (एतइति) । एतानि ५ हाभूतानि तेभ्यो भूतेभ्य कायाकारपरिणतेभ्य एक कश्चिच्चिद्रूपो भूताव्यतिरिक्त आत्मा भवति नतु कश्चिदपर परलोकयायी जीवाख्य पदार्थोस्तीत्येवमाख्यातवतस्ते । ननु यदि भूतेभ्योन्य कश्चिदात्मा नास्ति कथ तर्हि मृतइति व्यपदेशइत्याशकायामाह । (अ हतेसिति) । अथ तेषा भूतानां विनाशेऽपगमे देहिनो देवदत्तादेर्विनाशो भवति ततश्च मृतइत्युच्यते न पुनर्जीवापगमइति । अत्रैतन्मतनिर्लोठनयुक्तयो वृत्तितोऽवसेया ॥८॥

॥ टीका–सांप्रतं विशेषेण सूत्रकार एव चार्वाकमतमाश्रित्याऽह । (सतिपंचमहभू याइत्यादि) । सति विद्यते महांति च तानि भूतानि च महाभूतानि । सर्वलोकव्यापि त्वान्महत्वविशेषण । अनेन च भूताभाववादिनिराकरण द्रष्टव्य । इहास्मिन् लोके एके षा भूतवादिनामाख्यातानि प्रतिपादितानि तत्तीर्थकृता तैर्वा भूतवादिभिर्बार्हस्पत्यम तानुसारिभिराख्यातानि स्वयमगीकृतान्यन्येषा च प्रतिपादितानि । तानि चामूनि । तद्य था । पृथिवी कठिनरूपा । आपो द्रवलक्षणा । तेज उष्णरूपं । वायुश्चलनलक्षण । आकाश सुषिरलक्षणमिति तच्च पंचम येषां तानि । तथा । एतानि सांगोपांगानि प्रसि द्धत्वात् प्रत्यक्षप्रमाणावसेयत्वाच्च न कैश्चिदपह्नोतु शक्यानि । ननु च सांख्यादिभिरपि भूतान्यभ्युपगतान्येव । तथाहि । साख्यास्तावदेवमूचु । तद्यथा । सत्वरजस्तमोरूपात्प्र धानान्महान् बुद्धिरित्यर्थ । महतोऽहकारोऽहमितिप्रत्ययस्तस्मादप्यहकारात्षोडशकोग ण उत्पद्यते । सचायं । पंच स्पर्शादीनि बुद्धीद्रियाणि, वाक्पाणिपादपायूपस्थरूपाणि पंच कर्मेंद्रियाणि । एकादश मन । पचतन्मात्राणि । तद्यथा । गधरसरूपस्पर्शशब्दत

इत्यसौति)। इहेंद्रियाणि प्रत्येक भूतात्मकानि तान्येवापरस्य द्रष्टुरभावाद्द्रष्टृणि तेषां च प्रत्येक स्वविषयग्रहणादन्यविषये चाप्रऽवृत्तेर्नान्यदिंद्रियज्ञातमन्यदिंद्रियं जानातीत्यतो मया पंचापि विषया ज्ञाता इत्येवमात्मकः सकलनाप्रत्ययो न प्राप्नोत्यनुभूयते चायं तस्मादेकेनैव द्रष्टा भवितव्यम्। तस्यैव च चैतन्यं न भूतसमुदायस्येति। प्रयोगः पुनरेवं भूतसमुदाये चैतन्यं तदारंभेंद्रियाणां प्रत्येकविषयग्राहित्वे सति सकलनाप्रत्ययाभावात्। यदि पुनरन्यगृहीतमप्यन्यो गृह्णीयाद्देवदत्तगृहीतं यज्ञदत्तेनापि गृह्येत न चैतद् दृष्टमिष्टं चेति। ननु च स्वातंत्र्यपक्षेऽयं दोषः। यदा पुनः परस्परसापेक्षाणां संयोगपारतंत्र्याभ्युपगमेन भूतानामेव समुदितानां चैतन्याख्यो धर्मः संयोगवशादाविर्भवति। यथा किण्वोदकादिषु मद्यांगेषु सुमुदितेषु प्रत्येकमविद्यमानापि मदशक्तिरिति तदा कुतोऽस्य दोषस्यावकाशइति। अत्रोत्तरं। गाथाया चशब्दाक्षिप्तमभिधीयते। यत्तावदुक्तं। यथा भूतेभ्यः परस्परसव्यपेक्षसंयोगभाग्भ्यश्चैतन्यमुत्पद्यते। तत्र विकल्पयामः। किमसौ संयोगः संयोगिभ्यो भिन्नोऽभिन्नो वा। भिन्नश्चेत्षष्ठभूतप्रसंगो न चान्यत्पंचभूतव्यतिरिक्तसंयोगाख्यभूतग्राहकं भवतां प्रमाणमस्ति। प्रत्यक्षस्यैवैकस्याभ्युपगमात्तेन च तस्याग्रहणात् प्रमाणांतराभ्युपगमे च तेनैव जीवस्यापि ग्रहणमस्तु। तथाऽभिन्नो भूतेभ्यो भूतानामेव संयोगस्तत्राप्येतच्चिंतनीयं किंभूतानि प्रत्येकं चेतनावत्यचेतनावंति वा। यदि चेतनावंति तदा एकेंद्रियसिद्धिस्तदा समुदायस्य पंचप्रकारचैतन्यापत्तिः। अथाचेतनानि तत्रोक्तो दोषो नहि। यदत्र प्रत्येकमविद्यमानं तत्समुदाये न भवत्युपलभ्यते सिकतासु तैलवदित्यादिना। यदप्यत्र पूर्वोक्तं तथा मद्यांगेष्वविद्यमानाऽपि प्रत्येकं मदशक्तिः समुदाये प्रादुर्भवतीति। तदप्ययुक्तं। यतस्तत्र किण्वादिषु याच यावती शक्तिरुपलभ्यते। तथाहि॥ किण्वे बुभुक्षापनयनसामर्थ्यं भ्रमिजननसामर्थ्यं चोदकस्य तृडपनयनसामर्थ्यमित्यादिनेति भूतानां प्रत्येकं चैतन्याऽनभ्युपगमे दृष्टांतदार्ष्टांतिकयोरसाम्यं। किंच भूते चैतन्याभ्युपगमे मरणाभावो मृतकायेपि पृथ्व्यादीनां भूतानां सद्भावात्। नैतदस्ति। तत्र मृतकाये वायोस्तेजसो वाऽभावान्मरणसद्भाव इत्यशिक्षितस्योल्लापः। तथाहि। मृतकाये शोफोपलब्धेर्वायोरभावः कायस्य च पक्तिस्वभावस्य दर्शनाच्चाग्नेरिति। अथसूक्ष्मः कश्चिद्वायुविशेषोग्निर्वा ततोपगतइति मतिरित्येव च जीव एव नामांतरेणाभ्युपगतो भवति। यत्किंचिदेतत्। तथा न भूतसमुदायमात्रेण चैतन्याविर्भाव। पृथिव्यादिष्वेकत्र व्यवस्थापिते चैतन्यानुपलब्धेः। अथकायाकारपरिणतौ सत्यां तदाभिव्यक्तिरिष्यते। तदपि न। यतो लेप्यमयप्रतिमायां समस्तभूतसद्भावेऽपि जडत्वमेवोपलभ्यते। तदेवमन्वयव्यतिरेकाभ्यामालोच्यमानो नायचैतन्याख्यो गुणो भूतानां भवितुमर्हति। समुपलभ्यते चायं शरीरेषु। तस्मात् पारिशेषात् जीवस्यैवायमिति स्वदर्शनपक्षपातं विहायांगीक्रियतामिति।

तिकानामाकाशस्यापि नूतत्वेनाभ्युपगमाद्भूतपंचकोपन्यासो न दोषायेति । नूतव्यतिरिक्तोऽपरः कश्चिदा माख्यः पदार्थो न विद्यते कथं तर्हि मृतइति क्याह । अथैषां कायाकारपरिणतौ चैतन्याभिव्यक्तौ सत्यां तदूर्ध्वं तेषामन्यतमस्य ऽपगमे वायोस्तेजसश्चोनयोर्वा देहिनो देवदत्ताख्यस्य विनाशोऽपगमो नवति तइति व्यपदेशः प्रवर्तते न पुनर्जीवापगमइति नूताव्यतिरिक्तचैतन्यवादिपूर्वपक्षइति । प्रतिसमाधानार्थं निर्युक्तिरुदाह । "पंचएह संजोए,अएणगुणाणंच चेयणाइगुणो यंगाणाण,णअएणमुणिय मुणइ अणो ॥२१॥(पंचएहसंजोएइत्यादि)।पंचानां नूतानां संयोगे कायाकारपरिणामे चैतन्यादिकं । आदिशब्दात् नाषाचंक्रमणादिकश्च न नवतीति प्रतिज्ञा । अन्यादयस्त्वत्र हेतुत्वेनोपात्ता । दृष्टांतस्त्वन्यूह्य । ... पादानं । तत्रेदं चार्वाकः प्रष्टव्यः । यदेतद्भूतानां संयोगे चैतन्यमभिव्यज्यते तत्कि ... गेपि स्वातंत्र्यएवाहोस्वित्परस्परापेक्षया पारतंत्र्ये इति । किंचाऽतः ॥ न तावत्स्वातंत्र्ये आह । (अएणगुणाणंचेति) चैतन्यादन्ये गुणा येषां तान्यन्यगुणानि । तथा । गुणा पृथिवी इव्यगुणा आपः पक्तृगुणं तेजः । चलनगुणो वायुः अव... काशमिति । यदि वा प्रागभिहिता गंधादयः ... न्यादिति । तदेवं पृथिव्यादीन्यन्यगुणानि । च शब्दो ... तासु ... चैतन्यगुणे साध्ये पृथिव्यादीनामन्यगुणानां सतां चैतन्यगुणस्य पृथिव्य ... प्यनावान्नतत्समुदायाच्चैतन्याख्यो गुणः सिद्ध्यतीति । प्रयोगस्तत्र ... स्वातंत्र्ये सति धर्मित्वेनोपादीयते न तस्य चैतन्याख्यो गुणोस्तीति । साध्यो धर्मः पृथिव्यादीनामन्यगुणत्वात् । योयोन्यगुणानांसमुदायस्तत्रतत्राऽपूर्वगुणोत्पत्तिर्न नवतीति । यथा सिकतासमुदाये स्निग्धगुणस्य तैलस्य नोत्पत्तिरिति घटपटसमुदाये वा स्तनाद्याविर्नावइति । दृश्यते च कार्ये चैतन्यं तदात्मगुणो नविष्यतीति न नूतानामिति । अस्मिन्नेवसाध्ये हेत्वंतरमाह । (पंचिंदियगणाणंति) । पंच च तानि स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुःश्रोत्राख्यानीन्द्रियाणि तेषां स्थानान्यवकाशास्तेषां चैतन्यगुणानावान्न नूतसमुदाये चैतन्यं । इदमत्र हृदयं । लोकायतिकानां हि अपरस्य इष्टुरनभ्युपगमादिन्द्रियाएयेव इष्टृणि । एतेषां च यानि स्थानान्युपादानकारणानि तेषामचिद्रूपत्वान्न नूतसमुदाये चैतन्यमिति । इन्द्रियाणां चामूनि स्थानानि । तद्यथा । श्रोत्रेंद्रियस्याकाशं सुषिरात्मकत्वात् । घ्राणेन्द्रियस्य पृथिवी तदात्मकत्वात् । चक्षुरिन्द्रियस्य तेजस्तद्रूपत्वात् । एवं रसनेंद्रियस्यापः । स्पर्शनेंद्रियस्य वायुरिति । प्रयोगश्चात्र नेंद्रियाएयुपलब्धिमंति तेषामचेतनगुणारब्धत्वात् । यद्यदचेतनगुणारब्धं तत्तदचेतनं । यथा घटपटादीनि । एवमपि च नूतसमुदाये चैतन्यानावएव साधितो नवति । पुनर्हेत्वंतरमाह । (ण अएणमुणियंमुण

पत्त्याप्यात्मास्तीत्यवसीयते । तथापि सत्यपि पृथिव्यादिभूतसमुदाये लेप्यकर्मादौ न सु खदु खेच्छाद्वेषप्रयत्नादिक्रियाणा सद्भाव इत्यत सामर्थ्यादवसीयते । अस्ति भूतातिरिक्त कश्चित्सुखदु खेच्छादीना क्रियाणा समवायिकारण पदार्थ सचात्मेति । तदेव प्रत्यक्षानुमा नादिपूर्विकाऽन्याप्यर्थापत्तिरभ्यूह्या । तस्यास्विद लक्षण । प्रमाणषट्कविज्ञातो, यत्रार्थो नान्यथा भवेत् ॥ अदृष्ट कल्पयेदन्य, सार्थापत्तिरुदाहृता ॥ १ ॥ तथाऽगमादप्यस्तित्वमवसे य । सचायमागम । अत्थिमेआयाउववाइएइत्यादि । यदि वा किमत्राऽपरप्रमाणचितया सकलप्रमाणज्येष्ठेन प्रत्यक्षेणैवात्मास्तीत्यवसीयते । तद्गुणस्य ज्ञानस्य प्रत्यक्षत्वात् । ज्ञान गुणस्य च गुणिनोऽनन्यत्वात् । प्रत्यक्षएवात्मा रूपादिगुणप्रत्यक्षत्वेन पटादिप्रत्यक्षवत् । तथा ह्यह सुख्यहदु रूयेवमाद्यहप्रत्ययग्राह्यऽस्त्यात्माप्रत्यक्ष । अहप्रत्ययस्य स्वसविद्रूपत्वा दिति । ममेद शरीर पुराण कर्मेति च शरीराभेदेन निर्दिश्यमानत्वादित्यादीन्यन्यान्यपि प्रमाणानि जीवसिद्धावभ्यूह्यानीति ॥ तथा यदुक्त । न भूतव्यतिरिक्त चैतन्यं तत्कार्यत्वा त् घटादिवदित्येतदप्यसमीचीन । हेतोरसिद्धत्वात् । तथाहि । न भूताना कार्य चैतन्यं तेषामतद्गुणत्वात् भूतकार्यचैतन्ये सकलनाप्रत्ययासभवाच्चेत्यादिनोक्तप्रायमतोऽस्त्यात्मा भूतव्यतिरिक्तो ज्ञानाधारइत्युक्त । ननुच किं ज्ञानाधारभूतेनात्मना ज्ञानाभिन्नेनाश्रितेन यावता ज्ञानादेव सर्वसकलनाप्रत्ययादिक सेत्स्यति किमात्मनातर्गडुकल्पेनेति । तथाहि । ज्ञानस्यैव चिद्रूपत्वाद्भूतरचेतने कायाकारपरिणते सह सबधे सति सुखदु खेच्छाद्वेषप्रय त्नक्रिया प्रादुष्पति तथा सकलनाप्रत्ययो भवान्तरगमनचेति । तदेव व्यवस्थिते किमात्मना कल्पितेनेत्यत्रोच्यते । नत्वात्मानमेकमाधारभूतमतरेण सकलनात्र न्याय्या घटते । तथा हि । प्रत्येकमिन्द्रियं स्वविषयग्रहणे सति परविषये चाप्रवृत्तेरेकस्य च परिच्छेत्तुरभावात् । मया पचापि विषया परिच्छिन्ना इत्यात्मकस्य सकलनाप्रत्ययस्याभावादिति । आलय विज्ञानमेकमस्तीति चेदेव सत्यात्मनएव नामातर भवता कृत स्यात् । नच ज्ञानाख्यो गुणो गुणिनमतरेण भवतीत्यवश्यमात्मना गुणिना भाव्यमिति । सच न सर्वव्यापी तद्गुणस्य सर्वत्रानुपलभ्यमानत्वात् घटवत् । नापि श्यामाकतंडुलमात्रोगुष्ठपर्वमात्रो वा । तावन्मात्रस्योपात्तशरीराव्यापित्वात् त्वक्पर्यंतशरीरव्यापित्वात् त्वचोपलभ्यमानगुणत्वा त् । तस्मात्स्थितमिदमुपात्तशरीरत्वक्पर्यंतव्याप्यात्मेति । तस्य चानादिकर्मसबद्धस्य क दाचिदपि सासारिकस्यात्मन स्वरूपेऽनवस्थानात् सत्यप्यमूर्तत्वे मूर्तेन कर्मणा सबधो न विरुध्यते । कर्मसबधाच्च सूक्ष्मबादरैकेंद्रियद्वित्रिचतु पचेंद्रियपर्याप्तापर्याप्तसाद्यवस्था बहु विधा प्रादुर्भवति । तस्य चैकातेन क्षणिकत्वे ध्यानाध्ययनश्रमप्रत्यभिज्ञानाद्यभाव । ए कातनित्यत्वे च नारकतिर्यङ्मनुष्यामरगतिपरिणामाभाव स्यात्तस्मात्स्यादनित्य स्या न्नित्यश्चात्मेत्यलमतिप्रसगेन ॥ ८ ॥

यच्चोक्तं प्राक् न पृथिव्यादिव्यतिरिक्त आत्माऽस्ति तद्ग्राहकप्रमाणाभावात् ।
त्र प्रत्यक्षमेवैकमित्यादि तत्र प्रतिविधीयते । यत्तावदुक्त प्रत्यक्षमेवैक प्रमाण
कमित्येतदनुपासितगुरोर्वच । तथाहि । अर्थाविसवादक प्रमाणमित्युच्यते
प्रामाण्यमेव व्यवस्थाप्यते । कश्चित्प्रत्यक्षव्यक्तीर्धर्मित्वेनोपादाय प्रमाणयति ।
मेता अर्थाऽविसवादकत्वादनुभूतप्रत्यक्षव्यक्तिवत् । नच ताभिरेव
स्वसंविदितानि परव्यवहारयितुमयमीशस्तासा स्वसन्निविष्टत्वान्मूकत्वाच्च ।
स्य नानुमान प्रमाणमित्यनुमानेनैवानुमाननिरास कुर्वंश्चार्वाक कथ नोन्मत्त
देव ह्यसौ तदप्रामाण्य प्रतिपादयेत् । यथा नानुमान प्रमाण
मानव्यक्तिवदित्येतच्चानुमानमथपरप्रसिध्येतदुच्यते । तदप्ययुक्त ।
नुमान भवत प्रमाणमप्रमाण वा । प्रमाण चेत्कथमनुमानमप्रमाणमित्युच्यते ।
माण कथमप्रमाणेन सता तेन पर प्रत्याय्यते । परेण तस्य
चेत्तदप्यसाप्रतं । यदिनाम परो मौढ्यादप्रमाणमेव प्रमाणमित्यवध्यस्यति । किं
तिनिपुणेनापि तेनैवाऽसौ प्रतिपाद्यते । यो ह्यन्यो गुडमेव विषमपि मन्यते किं तस्य
रयितुकामेनापि बुद्धिमता गुडएव दीयते । तदेव प्रत्यक्षानुमानयो
व्यवस्थापयतो भवतोऽनिच्छतोपि बलादायातमनुमानस्य प्रामाण्य । तथा
वतादे प्रतिषेध कुर्वन् भवान् केन प्रमाणेन करोति न तावत्प्रत्यक्षेण प्रतिषेध कर्तुं पार्यते
यतस्तत्प्रत्यक्ष प्रवर्तमान वा तन्निषेध विदध्यान्निवर्तमान वा । न तावत्प्रवर्तमान
ऽभावविषयत्वविरोधात् । नापि निवर्तमान । यतस्तच्च नास्ति तेन च
गतं । तथाहि । व्यापकविनिवृत्तौ व्याप्यस्यापि निवृत्तिरिष्यते ॥ न चार्वाकदर्शितप्रत्यक्षे
ण समस्तवस्तुव्याप्ति सभाव्यते । तत्कथ प्रत्यक्षविनिवृत्तौ पदार्थव्यावृत्तिरिति । तदेव स्व
र्गादे प्रतिषेध कुर्वता चार्वाकेणाऽवश्यं प्रमाणातरमभ्युपगतं । तथाऽन्याभिप्रायवि
ज्ञानाभ्युपगमादत्र स्पष्टमेव प्रमाणातरमभ्युपगतं । अन्यथा कथ परावबोधाय शा
स्त्रप्रणयनमकारि चार्वाकेणेत्यलमतिप्रसगेन । तदेव प्रत्यक्षादन्यमपि प्रमाणमस्ति
तेनात्मा सेत्स्यति किंपुनस्तदिति चेदुच्यते । अस्त्यात्मा । असाधारणतद्गुणोपल
ब्धेश्चक्षुरिंद्रियवत् । चक्षुरिंद्रियं हि न साक्षादुपलभ्यते । स्पर्शनादींद्रियाऽसाधारणरूप
विज्ञानोत्पादनशक्त्या त्वनुमीयते । तथात्मापि पृथिव्याद्यसाधारणगुणोपलब्धेरस्तीत्य
नुमीयते । चैतन्य च तस्यासाधारणगुणइत्येतत्पृथिव्यादिभूतसमुदाये चैतन्यस्य निराक
तत्वादवसेयं । तथास्त्यात्मा समस्तेंद्रियोपलब्धार्थसकलनाप्रत्ययसद्भावात् । पंचगवाक्षा
न्यनन्योपलब्धार्थसकलनाविधाय्येकदेवदत्तवत् । तथाऽत्माऽर्थद्रष्टा नेंद्रियाणि । तद्विग
मे हि तदुपलब्धार्थस्मरणात् । गवाक्षोपरमेऽपि तद्वारोपलब्धार्थस्मर्तृदेवदत्तवत् । तथार्था

नवति ॥ए॥ अस्योत्तरमाह् । (एवमिति) एवमात्माद्वैतवादमाश्रिता एके जल्पंति । मंदा जडा । मंदत्व चैतेषां युक्तिविकलजीवाऽद्वैतपक्षाश्रयणात् । तथाहि । यद्येकएवात्मा स्या त्तदा एके कृषीवलादय आरंभे जीवहिंसात्मके निश्रिता आसक्ताः स्वयपापं कृत्वा तीव्रं नारकादिडुःखं (निगछइत्ति) आर्षत्वाद्बहुवचनार्थे एकवचनं । निश्चयेन गछंति । तएवारं नसक्तानान्ये इत्येतन्न स्यात् । यद्येक एवात्मा स्यात्तदा एकेनाप्यशुभे कर्मणि कृते सर्वेषां डुःखं स्यान्नचैव दृश्यते । तस्मादेकएवात्मेति न युक्तं ॥ १० ॥

॥ टीका ॥ सांप्रतमेकात्माऽद्वैतवादमुद्देशार्थाधिकारप्रदर्शितं पूर्वपक्षयितुमाह् ।(ज हापुढवीत्यादि) दृष्टांतबलेनैवार्थस्वरूपावगतेः पूर्वंदृष्टांतोपन्यासः । यथेत्युपदर्शने । च शब्दोऽपिशब्दार्थे । सचभिन्नक्रमएकेइत्यस्यानंतरं डष्टव्यः । पृथिव्येव स्तूपः पृथिव्या वा स्तूपः पृथिवीसंघातावयवी । सचैकोपि यथा नानारूपः सरित्समुड्पर्वतनगरसंनिवेशा द्याधारतया विचित्रो दृश्यते निम्नोन्नतमृडुकठिनरक्तपीतादिभेदेन वा दृश्यते । नच तस्य पृथिवीतत्त्वस्यैतावताभेदेन भेदो भवत्येवमुक्तरीत्या । भोइत्यादिपरामंत्रणं । कृ त्स्नोपि लोकश्चेतनाचेतनरूप एकोविद्वान् वर्तते । इदमत्र हृदयं । एकएव ह्यात्मा वि द्वान् ज्ञानपिंडः पृथिव्याद्याकारतया नाना दृश्यते नच तस्यात्मनएतावताऽत्मतत्त्व भेदो भवति । तथा चोक्तं । एकएव हि भूतात्मा, भूते भूते व्यवस्थितः ॥ एकधा बहु धा चैव दृश्यते जलचंड्वत् ॥ १ ॥ तथा पुरुषएवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यं ॥ उतामृतत्व स्येशानो यदन्नेनातिरोहति, यदेजति यन्नेजति यद्दूरे यदंतरस्य सर्वस्य यत्सर्वस्यास्य वा ह्यत इत्यात्माद्वैतवादः ॥ए॥ अस्योत्तरदानायाह् । (एवमेगे इत्यादि) एवमित्यनंतरोक्ता त्माद्वैतवादोपदर्शनं । एके केचन पुरुषकारणवादिनो जल्पंति प्रतिपादयंति । किंभूतास्ते ऽ त्याह । मंदा जडाः सम्यक्परिज्ञानविकलाः ॥ मंदत्वं चैषां युक्तिविकलात्माऽद्वैतपक्षसमाश्रय णात् । तथाहि । यद्येकएवात्मा स्यान्नात्मबहुत्वं ततो ये सत्वाः प्राणिनः कृषीवलादय एके केच न आरंभे प्राण्युपमर्दकारिणि व्यापारे निश्रिता आसक्ताः सबद्धा अध्युपपन्नास्ते च भरंभ समारंभे कृत्वोपादाय स्वयमात्मना पापमशुभप्रकृतिरूपमसातोदयफलं तीव्रं डुःखं तदनुभ वस्थानं वा नरकादिकं नियछतीति । आर्षत्वाद्बहुवचनार्थे एकवचनमकारि । ततश्चायमर्थो निश्चयेन यछत्यवश्यतया गछंति प्राप्नुवंति तएवारंभासक्ता नान्यइत्येतन्न स्यादपित्वे केनापि अशुभे कर्मणि कृते सर्वेषां शुभानुष्ठायिनामपि तीव्रडुःखानिसंबंधः स्यादेकत्वा दात्मनइति । नचैतदेवं दृश्यते । तथाहि । यएव कश्चिदसमंजसकारी सएव लोके तदनुरू पाविडंबना समनुभवन्नुपलभ्यते नान्यइति । तथा सर्वगतत्वे आत्मनो बंधमोक्षाद्यभाव स्तथा प्रतिपाद्यप्रतिपादकविवेकाभावाछास्त्रप्रणयनाभावश्च स्यादिति । एतदर्थसंवादित्वा च्चाकान्येव निर्युक्तिकृन्नाथात्र व्याख्यायते । तद्यथा । पंचानां पृथिव्यादीनां भूतानामेकत्र

जहा य पुढवीथूने, एगे नाणाहि दीसइ ॥ एवं नो कसिणे लोए
विन्नू नाणाहि दीसइ ॥ ए ॥ एवमेगेत्ति जप्पंति, मंदा आरंनणि
स्सिआ ॥ एगे किच्चा सयं पावं, तिव्वं डुक्कं नियच्छइ ॥ १० ॥

अर्थ–एम पचनूतियागता एटले पच नूतिक वादिनो मत कह्यु हवे वादिनो मत दृष्टातेकरी कहिये ठेये जहाय के० जेम पुढवीथूनेएगे के० पृथ्वीरूप एक ठता नाणाहिदीसइ के०नदी, समुड, पर्वत, नगर अने ग्राम इत्यादि रुप नाना प्रकारे देखायठे परतु विचाले पृथ्वीनु अतर काइ देखातु नथी एटले पृथ्वी एकज ठे एवके० ए उक्त न्याये, नो ए वचन परने बोलाववाने अर्थेठे एटले अहो ? दर्शनीउं तेम लोएके० ए समस्त लोक चराचर स्वरूप एकज ठे एटले आत्मारूप ठे, परतु विन्नू विद्वान् ते चराचररूप आत्मा नाणाइ दीसइ के० नानाप्रकारे द्विपद चतुष्पद दादिरूप देखाय ठे परतु जे एम कहे के, शरीर शरीरने विषे आत्मा जुदो जुदो ठे ते ख्या ठे यडुक्त। एकएवहि नूतात्मा, नूते नूते व्यवस्थित ॥ एकधा बहुधा चैव, जलचंद्रवत् ॥ १ ॥ इत्यादि ॥ ए ॥ हवे जैन एने उत्तर आपेठे एव के० ए न्याये एगेत्ति के० एक एटले कोइ एक परवादी, पोताना ठदने बलात्कारे एम जप्पंति के०बोले ठे ते केवाठे, तोके मंदा के०मद ठे एटले सम्यक् ज्ञान विकल ठे, केमके, जो सर्वत्र आत्मा एकज ठे बीजो नथी तो जगत्माहे एगेके० एकेक जीव करसणी प्रमुख आरंनणिस्सिआ के० जीवहिंसात्मक आरंननेविषे निस्सिया एटले आसक्त थका सयंके० पोते पाव के० पापने किच्चा के० करीने तिव्वडुक्क के० तीव्र डुःखने नियच्छइ के० पामेठे पण अनेरा नथी पामता, तथा जे जीव जगत्मा काइ असमजस चौरादिक कर्म करे ठे, ते ठेदनन्नेदनादिक अनेक विटबनाउं पामेठे अने जे नलो समाचरेठे ते साता पामेठे माटे जो सर्वजीवनो आत्मा एकज होय तो सर्व जीवने विटबना अथवा साता केम न थवी जोइये ? माटे ए तमारु वचन मिथ्या ठे, केमके सर्व जीव पोतपोतानी करणीए सुख डुःखने पामेठे ॥ १० ॥ ए सव्वगतवादिगता एटले सर्वगत वादीनु मत कह्यु

॥ दीपिका– अथ एकात्माऽद्वैतवादमुद्दिश्याह । (जधायेति) यथा च शब्दोऽपिशब्दार्थे। सच निन्न । पृथिव्या स्तूप पृथिव्येव वा स्तूप पृथिवीसघाताख्योऽवयवी। सच एकोपि यथा नानारूप सरित्समुड्पर्वतनगरग्रामाद्याधारतया विचित्रो दृश्यते। निम्नोन्नतमृडुकठिनरक्तपीतादिन्नेदेन वा दृश्यते । नच तावता पृथिवीत्वस्यैकस्य नेदो नवति। एव नोइति परामत्रण । कृत्स्नोपि चेतनाचेतनरूपो लोक एको विद्वानेक एवात्मा विद्वान् ज्ञानपिंड पृथिव्यादिनूताकारतया नाना दृश्यते। नच तावता तस्यैकस्यात्मतत्त्वस्य नेदो

नवति ॥ए॥ अस्योत्तरमाह । (एवमिति) एवमात्माद्वैतवादमाश्रिता एके जल्पति । मंदा जडा । मंदत्व चैतेषा युक्तिविकलजीवाऽद्वैतपक्षाश्रयणात् । तथाहि। यद्येकएवात्मा स्या त्तदा एके कृषीवलादय आरंभे जीवहिंसात्मके नि श्रिता आसक्ता स्वयपाप कृत्वा तीव्र नारकादिडु ख (निगह्नइत्ति) आर्षत्वाद्बहुवचनार्थे एकवचन। निश्चयेन गछति । तएवार नसक्तानान्ये इत्येतन्न स्यात्। यद्येक एवात्मा स्यात्तदा एकेनाप्यशुभे कर्मणि कृते सर्वेषा डु ख स्यान्नचैव दृश्यते । तस्मादेकएवात्मेति न युक्त ॥ १० ॥

॥ टीका ॥ साप्रतमेकात्माऽद्वैतवादमुद्देशार्थाधिकारप्रदर्शित पूर्वपक्षयितुमाह ।(ज हापुढवीत्यादि) दृष्टातबलेनैवार्थस्वरूपावगते पूर्वदृष्टातोपन्यास । यथेत्युपदर्शने । च शब्दोऽपिशब्दार्थे । सचभिन्नक्रमएकेऽस्यस्यानतर इष्टव्य । पृथिव्येव स्तूपा पृथिव्या वा स्तूप पृथिवीसघातावयवी। सचैकोपि यथा नानारूप सरित्समुद्रपर्वतनगरसन्निवेशा याधारतया विचित्रो दृश्यते निम्नोन्नतमृडुकठिनरक्तपीतादिभेदेन वा दृश्यते । नच तस्य पृथिवीतत्त्वस्यैतावताभेदेन भेदो भवत्येवमुक्तरीत्या । भोइत्यादिपरामत्रण। कृ त्स्नोपि लोकश्चेतनाचेतनरूप एकोविद्वान् वर्तते । इदमत्र हृदय । एकएव ह्यात्मा वि द्वान् ज्ञानपिंड पृथिव्याद्याकारतया नाना दृश्यते नच तस्यात्मनएतावताऽत्मतत्त्व भेदो भवति । तथा चोक्त । एकएव हि भूतात्मा, भूते भूते व्यवस्थित ॥ एकधा बहु धा चैव दृश्यते जलचद्रवत् ॥ १ ॥ तथा पुरुषएवेद सर्व यद्भूत यच्च भव्य॥ उतामृतत्व स्येशानो यदन्नेनातिरोहति, यदेजति यन्नेजति यद्दूरे यदतरस्य सर्वस्य यत्सर्वस्यास्य वा ह्यत इत्यात्माद्वैतवाद ॥ए॥ अस्योत्तरदानायाह। (एवमेगे इत्यादि) एवमित्यनतरोक्ता त्माद्वैतवादोपदर्शन।एके केचन पुरुषकारणवादिनो जल्पति प्रतिपादयति ।किंभूतास्ते इ त्याह।मदा जडा सम्यक्परिज्ञानविकला ॥मदत्व चैषा युक्तिविकलात्माऽद्वैतपक्षसमाश्रय णात्। तथाहि।यद्येकएवात्मा स्यान्नात्मबहुत्व ततो ये सत्वा प्राणिन कृषीवलादय एके केच न आरंभे प्राण्युपमर्दकारिणि व्यापारे नि श्रिता आसक्ता सबद्धा अध्युपपन्नास्ते च भरभ समारंभे कृत्वोपादाय स्वयमात्मना पापमशुभप्रकृतिरूपमसातोदयफल तीव्र डु ख तदनुभ वस्थान वा नरकादिक नियछतीति। आर्षत्वाद्बहुवचनार्थे एकवचनमकारि। तत्रायमर्थो निश्चयेन यछत्यवश्यतया गच्छति प्राप्नुवति तएवारंभासक्ता नान्यइत्येतन्न स्यादपित्वे केनापि अशुभे कर्मणि कृते सर्वेषा शुभानुष्ठायिनामपि तीव्रडु खानिसबध स्यादेकत्वा दात्मनइति । नचैतदेव दृश्यते।तथाहि।यएव कश्चिदसमजसकारी सएव लोके तदनुरू पाविडबना समनुभवन्नुपलभ्यते नान्यइति । तथा सर्वगतत्वे आत्मनो बधमोक्षायभाव स्तथा प्रतिपाद्यप्रतिपादकविवेकाभावाच्छास्त्रप्रणयनाभावश्च स्यादिति । एतदर्थसवादित्वा च्छ्लाक्यन्येव निर्युक्तिकृतायात्र व्याख्यायते । तद्यथा । पचाना पृथिव्यादीनां भूतानामेकत्र

कायाकारपरिणतानां चैतन्यमुपलभ्यते । यदि पुनरेकएवात्मा व्यापी स्यात्तदा चैतन्योपलब्धि स्यान्नचैव । तस्मान्नेकआत्मा भूतानां चान्योन्यगुणत्वं न दात्मनोभिन्नत्वात् । तथा पंचेंद्रियस्थानानां पंचेंद्रियाश्रितानां ज्ञानानां प्रवृत्तौ न्येन ज्ञात्वा विदितमन्यो न जानातीत्येतदपि न स्याद्यद्येकएवात्मा स्यादिति ॥ १०

पत्तेअं कसिणे आया, जे बाला जे अ पंमिआ ॥ संति पिच्चा न ते संति, नत्थि सत्तोववाइया ॥ ११ ॥ नत्थि पुण्णेच पावेवा, नत्थि लोए इतो परे ॥ सरीरस्स विणासेण, विणासो होइ देहिणो ॥१

अर्थ–हवे तज्जीवतच्छरीरवादिनो मत कहेछे –ते तज्जीवतच्छरीरवादी एम के, जेम पंचभूत मली कायाने आकारें परिणामी चेतना उपजावेछे तो ते कारणे प तेअंकसिणेआया के० शरीर शरीर प्रत्ये आत्मा जुदो जुदो छे जगत्मां जे बालाके० बाल अज्ञानी तथा जेअपंमिआके० जे पंमित एटले विवेकी छे, ते सर्व जुदा छे परंतु एक आत्मा सर्वव्यापी न जाणवो एटले जैनमत अने तेमनो एकज थयो हवे गाथाना उत्तरार्द्धवडे तेमनो भेद देखाडेछे ते परवादी एम कहेछे के, आत्मा घणा छे, परंतु ज्यांसुधी शरीर छे त्यांसुधी संति के० छे पण जेवारे नहीं, तेवारे आत्मापण नहीं एटले गत्यंतर गामी आत्माउ नथी ए प्रकारे करी भेद देखाड्यो वली तेहिज कहेछे पिच्चानते संतिके० ते आत्माउ परलोकने विषे न जाय एतावता शरीरथकी भिन्न आपणा कर्मनो भोगवनार एवो आत्मा नथी तथापि न त्थिसत्तोववाइयाके० सत्व जे प्राणीउ ते उपपातिक नथी एटले भवांतरमां जई उपजे नहीं अर्थात् गतागति पण नथी अहीं शिष्य पूछेछे के, पूर्वे जे भूतवादि कह्या अने ए तज्जीव तच्छरीरवादी ए बेहुने मांहोमांहे शुं विशेषछे? तेवारें गुरु कहेछे के, भूतवा दीने मतें जे पंचमहाभूत तेहिज कायाने आकारे परिणमीने धावनवलनादिक क्रिया करे अने एमने मते पंचभूत कायाने आकारे परिणमी चैतन्य स्वरूप आत्मा उप जावे परंतु भूतथकी आत्मा जुदो नथी एटलु विशेष छे ॥ ११ ॥ हवे तेनी वक्त व्यता कहेछे, नत्थिपुण्णेचपावेवा के० तज्जीवतच्छरीरवादी एम कहेछे के, पुण्य नथी, पाप पण नथी, अने नत्थिलोएइतोपरे के० अत उपरांत लोक पण नथी जेटलु दृष्टि गोचर आवेछे तेटलोज लोक छे वली ग्रंथकार एनु कारण कहेछे के, सरीरस्सविणासे णके० शरीरने विनाशेकरी विणासीहोइ देहिणो के० आत्मानो पण विनाश थाय ए कार ण माटे आत्माने अभावे पुण्य पाप तथा लोकनी संभावना क्यां थकी थाय? ॥१२॥ “ तज्जीवतच्छरीरवादिगता ” एटले तज्जीवतच्छरीरवादिनु ए प्रमाणे मत कह्यु

॥ दीपिका— सांप्रतं तज्जीवतच्छरीरवादिमतं पूर्वपक्षयन्नाह । (पत्तेअमिति)। प्रत्येकं प्रति शरीरमात्मान कृत्स्ना सर्वेपि ये बाला अज्ञा ये च पंडितास्ते सर्वेपि पृथग्व्यवस्थिता नहि एकएवात्मा सर्वव्यापी स्वीकार्यो बालपंडितविनागाजावप्रसंगात् । नन्वेवमात्मब हुत्वं जैनैरपि स्वीक्रियतएव तत्किमिति परमतमाश्रित्य सूत्रमिदमुच्यतइत्याशंकायामा ह । (संतित्ति) । संतिविद्यते जीवा शरीरं यावत् । शरीराजावे तु न संति । एतदे वाह । (पिच्चानतेसंति) प्रेत्य परलोके ते जीवा न संति । तेषां मते शरीराद्भिन्न पर लोकयायी न कश्चिदात्माख्य पदार्थोस्तीति जैनेन्यो जेद किमित्येवं ते मन्यंत इत्या ह । (नत्थिसत्तोववाइया) उपपातिका जवाद्भवांतरगामिन सत्त्वा प्राणिनो नहि न संति । ननु जूतवादिनोस्य च तज्जीवतच्छरीरवादिन को जेद इत्यत्रोच्यते । जूतवादिनो जूतान्येव कायाकारपरिणतानि धावनवल्गनादिक्रिया कुर्वंति । अस्य तु कायाकारपरि णतेन्योजूतेन्यश्चैतनाख्य आत्मोपपद्यते अनिव्यज्यते वा तेन्यश्चाभिन्न इत्यनयो विशेष ॥ ११ ॥ तन्मतमेवाह । (नत्थीति) । नास्ति पुण्यं पापं च नास्त्यतोऽस्मा ल्लोकात्परोऽन्यो लोक परलोको यत्र पुण्यपापानुजवश्ति । अत्र हेतुमाह । शरीरस्य वि नाशेन देहिनो आत्मनोपि विनाशो ऽजावो जवति । तथाच दर्श्यते तन्मतलेश । य था स्वजावादेव जगद्वैचित्र्यं । यदुक्तं । कंटकस्य च तीक्ष्णत्वं, मयूरस्य विचित्रता ॥ वर्णाश्च ताम्रचूडानां, स्वजावेन जवंति हीति ॥ १२ ॥

॥ टीका— सांप्रतं तज्जीवतच्छरीरवादिमतं पूर्वपक्षयितुमाह । (पत्तेअमित्यादि)। तज्जीव तच्छरीरवादिनामयमच्युपगम । यथा पंचन्यो जूतेन्य कायाकारपरिणतेन्यश्चैतन्यमुत्पद्यते अनिव्यज्यते चैकैकं शरीरंप्रति प्रत्येकमात्मन कृत्स्ना सर्वेप्यात्मान एवमवस्थिता ॥ ये बालाअज्ञा ये च पंडिता सदसद्विवेकज्ञास्ते सर्वे पृथग्व्यवस्थिता । नह्येकएवात्मा सर्वव्यापित्वेनाच्युपगंतव्यो बालपंडिताद्यविनागप्रसंगात् । ननु प्रत्येकशरीराश्रयत्वेनात्म बहुत्वमर्हतानामपीष्टमेवेत्याशंक्याह । संति विद्यते यावच्छरीरं विद्यते तदजावे तु न विद्यते। तथाहि । कायाकारपरिणतेषु जूतेषु चैतन्याविर्जावोजवति जूतसमुदायविघट्टने च चैत न्यापगमो न पुनरन्यत्र गतश्चैतन्यमुपलक्ष्यते । तदेव दर्शयति । (पिच्चानते संतीति) प्रे त्य परलोके न ते आत्मान संति विद्यते । परलोकानुयायी ह्यात्मा शरीराद्भिन्न स्वकर्मफ लजोक्ता न कश्चिदात्माख्य पदार्थोस्तीति जाव । किमित्येवमतआह । (नत्थिसत्तोववाइया)। अस्तिशब्दस्तिङंतप्रतिरूपको निपातो बहुवचने द्रष्टव्यस्तदयमर्थ । न संति न विद्यते॥ तद जावेतु न विद्यते सत्वा प्राणिन उपपातेन निर्वृत्ता उपपातिका जवाद्भवांतरगामिनो न जवतीति तात्पर्यार्थ । तथाहि । तदागमा विज्ञानघनएवैतेन्यो जूतेन्य समुछाय तान्ये

वानुविनश्यतीति नप्रेत्य सञ्ज्ञा अस्तीति । ननु प्रागुपन्यस्तभूतवादिनोऽस्य च वादिन को विशेष इत्यत्रोच्यते । भूतवादिनो भूतान्येव कायाकारपरिणतानि नादिका क्रिया कुर्वत्यस्य तु कायाकारपरिणतेभ्यो भूतेभ्यश्चैतन्याख्य आत्मोत्पद्यते ज्यते वा तेभ्यश्चाभिन्नइत्यय विशेष ॥११॥ एवच धर्मिणोऽभावाद्धर्मस्याप्यभावइति तुमाह । (नह्रिपुसुच पावेवा इत्यादि) । पुण्यमभ्युदयप्रातिलक्षण तद्विपरीतं । मपि न विद्यते । आत्मनो धर्मिणोऽभावात् । तदभावाच्च न. . .ोऽस्म लोको यत्र पुण्यपापानुभवइति । अत्रार्थेसूत्रकार कारणमाह । शरीरस्य कायस्य नाशेन भूतविघटनेन विनाशेन देहिनआत्मनोप्यभावो भवति यतो न पुन शरीरे तस्मादात्मा परलोक गत्वा पुण्य पाप वाऽनुभव. . .र्मि . . .त्मनोभा . पुण्यपापयोरप्यभावइति । अस्मिन्नर्थे बहवो दृष्टाता सति । तद्यथा । यथा दो जलातिरेकेण नापर कश्चिद्विद्यते तथा भूतव्यतिरेकेण नापर कश्चिदात्मेति । यथा कदलीस्तभस्य बहिस्त्वगपनयने क्रियमाणे त्वङ्मात्रमिव सर्वं भात क. व भूतसमुदाये विघटति सति तावन्मात्र विहाय भात सारभूत कश्चिदात्माख्य र्थ उपलभ्यते । यथावाऽलात भ्राम्यमाणमतद्रूपमपि चक्रबुद्धिमुत्पादयत्येव भू पि विशिष्टक्रियोपेतो जीवभ्रातिमुत्पादयतीति । यथा च स्वप्ने बहिर्मुखाकारतया नमनुभूयते आतरैव बाह्यमर्थमेवमात्मानमतरेण तद्विज्ञान भूतसमुदाये . . . ति । तथा । यथाऽदर्शे स्वच्छत्वात्प्रतिबिंबितो बहि स्थितोप्ययौतर्गतो लक्ष्यते नचासौ प्रा । यथाच ग्रीष्मे भौमेनोष्मणा परिस्पदमाना मरीचयो जलाकार . . . वमन्येपि गधर्वनगरादय स्वस्वरूपेणाऽतथाभूता अपि तथा प्रतिभासते तथात्मापि . तसमुदायाकारपरिणतौ सत्या पृथगसन्नेव तथा भ्राति समुत्पादयतीत्यमीरा च . . ना प्रतिपादकानि केचित्सूत्राणि व्याचक्षते । अस्माभिस्तु सूत्राऽदर्शेषु . . चाददृष्टत्वान्नालिंगितानीति । ननु च यदि भूतव्यतिरिक्त कश्चिदात्मा न विद्यते तत्कृते च पुण्यापुण्ये न तत्कथमेतद्वैचित्र्यं घटते । तद्यथा कश्चिदीश्वरोऽपरो दरिद्रोन्य सुभगो परोदुर्भग सुखी दुःखी सुरूपो मदरूपो व्याधितो नीरोगीत्येव प्रकारा विचित्रता किन्नि बधनेत्यत्रोच्यते । स्वभावात् । तथाहि । कुत्रचिच्छिलाशकले प्रतिमारूप विद्यते तत्र कु कुमागरुचदनादिविलेपनानुभोगमनुभवति धूपाद्यामोद च । अन्यस्मिंस्तु पाषाणखडे पाद क्षालनादि क्रियते नच तयो पाषाणखडयो शुभाशुभे स्त । यदुदयात्स तादृगवस्था विशेष इत्येव स्वभावाज्जगद्वैचित्र्य । तथाचोक्त । कटकस्य च तीक्ष्णत्व मयूरस्य विचि त्रता ॥ वर्णाश्च ताम्रचूडानां,स्वभावेन भवति हीति॥ १॥तद्यावत्तच्छरीरवादिमतं गतं ॥१२॥

कुव्व च कारय चेव, सव्व कुव्व न विज्जई ॥ एवं अकारउ अप्पा, एव तेउ पगप्तिआ ॥ १३ ॥ जे ते उवाइणो एव, लोए तेसि कउसिया ॥ तमाउ ते तम जति, मंदा आरम्भनिस्सिया ॥१४॥ आत्मपष्ठवादीगत ॥

अर्थ–हवे अक्रियावादिनो मत कहेछे ते अकर्मवादी एम कहेछे के, आत्मा अमूर्त्तछे, नित्यछे, तथा सर्वव्यापी छे ते कारणे कुव्वचके० क्रियानो कर्त्ता नथी तथा कारयचेवके० अनेरा पासे करावनार पण नथी, एटले आत्मा पोते क्रियाने विषे न प्रवर्त्ते, तथा अनेराने पण प्रवर्त्तावे नही पूर्वे चकार आव्योछे ते अतीत अनागतना कर्त्ताने निषेधवाने अर्थे छे यद्यपि स्थितिक्रिया अने मुद्राप्रतिबिंबोदयन्याये जोजनक्रिया पण करे तथापि समस्त क्रिया कारकपणु नथी एहिज नाव देखाडेछे सव्वकुव्वन विज्जई के० सर्व क्रियाने एटले देशथकी देशातर गमनरूप क्रियाने आत्मा करतो नथी एवअकारउ अप्पाके० ए रीते आत्मा अकारक छे एवतेउपगप्तिआके० एप्रकारे ते साख्यवादी धृष्टपणु करता थका, प्रकृति करे, पुरुष जोगवे, इत्यादिक अयोग्य वचन बोले एटले अक्रिया वादिनु मत कह्यु ॥१३॥ हवे जैन, एना मतनु निराकरण करेछे जेते उवाइणो एवके० जे, आत्मा शरीरथकी जुदो नथी तथा आत्मा अकर्त्ता छे एम कहेछे तेसिके० तेने लो एकउसियाके० चतुर्गतिक ससाररूप लोक क्या थकी होय? नि केवल ते लोकमाहे वाचालपणु देखाडेछे एवा छता तमाउते तमजतिके० ते अज्ञानरूप तम एटले अंधकार तेमाहेथकी निकळीने अनेरा तम एटले अंधकारमाहे जति एटले जायछे, एटले ज्ञानवर्णादिक कर्म उपार्जन करेछे अथवा तमनेविषे हिंअर्थे नरक पृथ्वी एवो अर्थ थायछे माटे त्यापण जायछे ते नरक पृथ्वीये केम जाय, तेनु कारण कहेछे ते लोक मंदाके० मंद एटले मूर्ख छे, वली आरम्भनिस्सियाके० आरम्भनिश्रित एटले आरम्भ जे प्राणघात तेना व्यापारे निश्रितछे, एकाते तेमा आसक्तछे, जे कारण माटे तेमना मते आत्मानो अजावछे, ते कारणे पुण्य पाप पण नथी एवु जाणीने ते नास्तिकवादी आरम्भ करता थका शका पामता नथी तथा जे एवु कहेछे के आत्मा क्रिया करे नही, तेपण एमनी पेरेज आरम्भी जाणवा ॥ १४ ॥ अक्रियावाइगता एटले साख्यनु मत ए प्रमाणे कह्यु

॥दीपिका–अथाऽक्रियावादिमतमाह।(कुर्वन्निति) कुर्वन् कारयश्चाऽऽत्मा न नवति। आत्मनो व्यापकत्वादमूर्तत्वाच्च कर्तृत्वानुपपत्ति।ततएव कारयितृत्वमप्यात्मनो न युक्त।एकश्च शब्दोऽतीतानागतकर्तृत्वनिषेधको द्वितीय समुच्चयार्थे ॥ कर्तृत्वकारयितृत्वनिषेधादन्यापि क्रिया तस्य नास्तीत्याह । (सव्वति)। सर्वा परिस्पदादिका देशाद्देशातरप्राप्तिरूपा क्रियां

कुर्वन्नात्मा न विद्यते। सर्वव्यापित्वेनामूर्तत्वेन चाकाशस्येवात्मनो निष्क्रियत्व (एवतेऽत्ति) एवमुक्तप्रकारेण ते सांख्या प्रगल्भिता प्रागल्भ्यवतो धार्ष्ट्यवतो साप्रतं तज्जीवतच्छरीराकारकवादिनोमतं निराकुर्वन्नाह। (जेतेऽति)। ये ऽव्यतिरिक्तात्मवादिन एव पूर्वोक्तयुक्त्या भूताऽव्यतिरिक्तमात्मानमभ्युपगतवतस्ते यंते। तेषा लोकश्चतुर्गतिजवरूप सुभग, दुर्भग, सुरूप, कुरूपेश्वर, जगद्वैचित्र्यरूप कुत स्यात्। आत्माऽनङ्गीकारे पुण्यपापाभावे कथ तेच नास्तिकास्तमसोऽज्ञानरूपात् तमो याति। ज्ञानावरणावृता तम प्रविशति। अथवा सद्विवेकप्रध्वसित्वात्तमोऽ ख तस्मात्तमो महाऽ ख यतस्ते मदा जडा परलोकनिरपेक्षत्वाच्चाऽरजनिश्रिता। अयमेव... तमाश्रित्य किंचिद्विद्रियते। येवादिनोऽकारका सांख्या सति तेषा लोको शोकहर्षादिरूपो नारकतिर्यगादिरूपो निष्क्रिये सत्यात्मनि कुत कस्माद्धेतो स्या स्यादित्यर्थ। ततश्चदृष्टेष्टबाधारूपात्तमसोऽज्ञानात्त तमो वेदनास्थान याति। यतो दाश्चारजनिश्रिताश्चेति सांख्यमतं निरस्त ॥ १४ ॥

॥टीका–इदानीमकर्मकवादिमता निवित्सयाऽह। (कुव्वचेत्यादि) कुर्वन्निति स्वतंत्र धीयते ॥ अत्मनश्चामूर्तत्वात्सर्वव्यापित्वाच्च कर्तृत्वाऽनुपपत्ति ॥ अतएवहेतो प्यात्मनोऽनुपपन्नमिति। पूर्वश्चशब्दोऽतीतानागतकर्तृत्वनिषेधको द्वितीय समुच्चयार्थ। तश्चात्मा न स्वयं क्रियाया प्रवर्तते नाप्यन्य प्रवर्तयति। यद्यपि च स्थितिक्रियां तिबिंबोदयन्यायेन च भुजिक्रिया करोति तथापि समस्तक्रियाकर्तृत्व तस्य र्शयति। (सव्वकुव्वणविज्जइत्ति) सर्वां परिस्पदादिकां देशाद्देशांतरप्राप्तिलक्षणा क्रियां कु र्वन्नात्मा न विद्यते। सर्वव्यापित्वेनामूर्तत्वेन चाकाशस्येवात्मनो निष्क्रियत्वमिति। तथा चोक्त। अकर्ता निर्गुणो भोक्ता, आत्मा सांख्यनिदर्शन इति। एवमनेन प्रकारेणात्माऽका रक इति ते सांख्या। तुशब्द पूर्वेभ्यो व्यतिरेकमाह। ते पुन सांख्या एव प्रगल्भिता प्रगल्भवतो धार्ष्ट्यवत सतो भूयोभूयस्तत्र तत्र प्रतिपादयति। यथा प्रकृति करोति पुरु ष उपभुक्ते यथा बुध्यवसितमर्थं पुरुषश्चेतयते इत्याद्यकारकवादिमतमिति ॥ १३ ॥ सां प्रतं तज्जीवतच्छरीराकारकवादिनो मतं निराचिकीर्षुराह। (जेतेउवाइणोइत्यादि) तत्र ये तावच्छरीराव्यतिरिक्तात्मवादिन एवमिति पूर्वोक्तया नीत्या भूतव्यतिरिक्तमात्मानमभ्यु पगतवतस्ते निराक्रियंते। तत्र यत्तैस्तावदुक्त। यथा न शरीराद्भिन्नोऽस्त्यात्मेति तदसगतं। यतस्तत्प्रसाधक प्रमाणमस्ति। तच्चेद। विद्यमानकर्तृकमिद शरीरमादिमत्प्रतिनियताका कारकत्वात्। इह यद्यदादिमत्प्रतिनियताकार तत्तद्विद्यमानकर्तृक दृष्ट। यथा घट। य

श्चाऽविद्यमानकर्तृक तदादिमत्प्रतिनियताकारमपि न नवति यथाकाशं । श्चादिमत्प्रतिनियताकारस्य च सकर्तृत्वेन व्याप्ते । व्यापकनिवृत्तौ व्याप्यस्य विनिवृत्तिरिति सर्वत्र योजनीय। तथाविद्यमानाधिष्ठातृकानीडियाणि । करणत्वात् । यद्यदिह करण तत्तद्विद्यमानाधिष्ठातृक दृष्ट । यथा दडादिकमिति । श्रधिष्ठातारमतरेण करणत्वाऽनुपपत्ति । यथाकाशस्य। हृषीकाणा चाधिष्ठाताऽत्मा सच तेन्योऽन्य इति । तथा विद्यमानाधिष्ठातृकमिदमिडियविषयकदबक । श्चादानादेयसन्नावात् । इह यत्र यत्राऽदानादेयसन्नावस्तत्र तत्र विद्यमान श्चादाता ग्राहको दृष्ट । यथा सदशकाय पिडयोस्तद्भिन्नोऽयस्कार इति । यश्चात्रेडिय करणैर्विषयाणामादाता ग्राह्क स तद्भिन्नश्चात्मेति । तथा विद्यमानन्नोक्तृकमिद शरीर न्नोग्यत्वादोदनादिवत् । अत्रच कुलालादीना मूर्तत्वाऽनित्यत्वसहतत्वदर्शनादात्मापि तथैव स्यादिति धर्मविशेषविपरीतसा धनत्वेन विरुद्धा शका न विधेया । ससारिण श्चात्मन कर्मणा सहान्योन्यानुब धत कथचिन्मूर्तत्वाद्यन्युपगमादिति । तथा यडुक्त। नास्ति सत्त्वाश्चौपपातिका इति तदप्ययुक्त । यतस्तदहर्जातबालकस्य य स्तनाभिलाष सोन्याभिलाषपूर्वको ऽभिलाषत्वात् कुमाराभिलाषवत् । तथा बालविज्ञानमन्यविज्ञानपूर्वक विज्ञानत्वात् कुमारविज्ञानवत् । तथाहि । यदहर्जातबालकोपि यावत्सएवाय स्तन इत्येव नावधारयति तावन्नोपरत रुदितो मुखमर्पयति स्तने इत्यतोऽस्ति बालके विज्ञानलेश सचाऽन्यविज्ञानपूर्वक । तथान्यद्विज्ञान नवातरविज्ञान तस्मादस्ति सत्त्व उपपातिक इति। तथा। यदभिहित विज्ञानघनएवैतेन्यो नूतेन्य समुत्थाय तान्येवानुविनश्यतीति । तत्राप्यय मर्थो विज्ञानघनो विज्ञानपिड श्चात्मा नूतेन्य उत्थायेति प्राक्तनकर्मवशात्तथाविधकायाकार परिणते नूतसमुदाये तद्वारेण स्वकर्मफलमनुनूय पुनस्तद्विनाशे श्चात्मापि तदनु तेनाकारेण विनश्यापरपर्यायातरेणोत्पद्यते नपुनस्तैरेव सह विनश्यतीति । तथा यडुक्त। धर्मिणो ऽनावात्तद्धर्मयो पुण्यपापयोरनावइति तदप्यसमीचीन । यतो धर्मी तावदनतरोक्तिकदबकेन साधितस्तत्सिद्धौ च तद्धर्मयो पुण्यपापयोरपि सिद्धिरवसेया जगद्वैचित्र्यदर्शनाच्च।यत्तु स्वनावमाश्रित्योपलशकल दृष्टातत्वेनोपन्यस्त तदपि तद्भोक्तृकर्मवशादेव तथा तथासवृत्तइति डुर्निवार पुण्यापुण्यसन्नावइति।येपि वदव कदलीस्तनादयो दृष्टाता श्चात्मनो ऽनावसाधनायोपन्यस्तास्तेप्यभिहितनीत्याऽत्मनोनूतव्यतिरिक्तस्य परलोकयायिन सारनूतस्य साधितत्वात्केवल नवतो वाचालता प्रख्यापयति इत्यलमतिप्रसगेन । शेषं सूत्र विव्रियतेऽधुनेति । तदेव तेषा नूतव्यतिरिक्तात्मनिन्हववादिना योय लोकश्चतुर्गतिकससारो नवान्नयातरगतिलक्षण प्राक् प्रसाधित्त सुनगडुर्नगसुरुपमद रूपेश्वरदारिद्र्यादिगत्या जगद्वैचित्र्यलक्षणश्च स एवनूतो लोकस्तेषा कुतो नवेत् । कयोपपन्त्या घटेत । श्चात्मनोऽनन्युपगमान्न किंचिदित्यर्थ । तेच नास्तिका परलोकयायिजीवा

कुर्वन्नात्मा न विद्यते। सर्वव्यापित्वेनामूर्तत्वेन चाकाशस्येवात्मनो निष्क्रियत्व (एवतेउत्ति) एवमुक्तप्रकारेण ते साख्या प्रगल्भिता प्रागल्भ्यवतो धार्ष्ट्यवतो विद्यते॥१३। साप्रत तज्जीवतच्छरीराकारकवादिनोमत निराकुर्वन्नाह। (जेतेइति)। ये तावच्छरीरा व्यतिरिक्तात्मवादिन एव पूर्वोक्तयुक्त्या भूताऽव्यतिरिक्तमात्मानमभ्युपगतवतस्ते निराक्रियते। तेषा लोकश्चतुर्गतिभवरूप सुभग, दुर्भग, सुरूप, कुरूपेश्वर, दारिद्र्या,दिगल्या जगद्वैचित्र्यरूप कुत स्यात्। आत्माऽनगीकारे पुण्यपापाभावे कथ विश्ववैचित्र्यमित्यर्थ। तेच नास्तिकास्तमसोऽज्ञानरूपात् तमो याति। ज्ञानावरणावृता पुनर्ज्ञानावरणरूप तम प्रविशति। अथवा सद्विवेकप्रध्वसित्वात्तमोड्ख तस्मात्तमो महाड्ख याति। यतस्ते मदा जडा परलोकनिरपेक्षत्वाच्चाऽरभनिश्रिता। अयमेवश्लोकोऽकारकवादिम तमाश्रित्य किंचिद्विव्रियते। येवादिनोऽकारका साख्या सति तेषा लोको जरामरण शोकदर्पादिरूपो नारकतिर्यगादिरूपो निष्क्रिये सत्यात्मनि कुत कस्माद्धेतो स्या न्न स्यादित्यर्थ। ततश्चदृष्टेष्टबाधारूपात्तमसोऽज्ञानाभ्ने तमो वेदनास्थान याति। यतो म दाआरभनिश्रिताश्चेति साख्यमत निरस्त॥ १४॥

॥टीका–इदानीमकर्मकवादिमतानिधित्सयाऽह। (कुवचेत्यादि) कुर्वन्निति स्वतत्र कर्तानि धीयते॥ आत्मनश्चामूर्तत्वात्सर्वव्यापित्वाच्च कर्तृत्वाऽनुपपत्ति॥ अतएवहेतो कारयितृत्वम प्यात्मनोनुपपन्नमिति। पूर्वश्चशब्दोऽतीतानागतकर्तृत्वनिषेधको द्वितीय समुच्चयार्थ। त तश्चात्मा न स्वयं क्रियाया प्रवर्तते नाप्यन्यं प्रवर्तयति। यद्यपि च स्थितिक्रिया मुद्राप्र तिबिबोदयन्यायेन च भुजिक्रिया करोति तथापि समस्तक्रियाकर्तृत्व तस्य नास्तीत्येतद्द र्शयति। (सवकुवणविज्जइत्ति) सर्वा परिस्पदादिकां देशाद्देशातरप्राप्तिलक्षणा क्रिया कु र्वन्नात्मा न विद्यते। सर्वव्यापित्वेनामूर्तत्वेन चाकाशस्येवात्मनो निष्क्रियत्वमिति। तथा चोक्त। अकर्ता निर्गुणो भोक्ता, आत्मा साख्यनिदर्शन इति। एवमनेन प्रकारेणात्माऽका रक इति ते साख्या। तुशब्द पूर्वेभ्यो व्यतिरेकमाह। ते पुन साख्या एव प्रगल्भिता प्रगल्भवतो धार्ष्ट्यवत सतो भूयोभूयस्तत्र तत्र प्रतिपादयति। यथा प्रकृति करोति पुरु ष उपभुक्ते यथा बुध्यवसितमर्थं पुरुषश्चेतयते इत्याद्यकारकवादिमतमिति॥ १३॥ सा प्रत तज्जीवतच्छरीराकारकवादिनो मत निराचिकीर्षुराह। (जेतेउवाइणोइत्यादि) तत्र ये तावच्छरीराव्यतिरिक्तात्मवादिन एवमिति पूर्वोक्तया नीत्या भूतव्यतिरिक्तमात्मानमभ्यु पगतवतस्ते निराक्रियंते। तत्र यत्तैस्तावदुक्त। यथा न शरीराद्भिन्नोस्त्यात्मेति तदसगत। यतस्तत्प्रसाधक प्रमाणमस्ति। तच्चेद। विद्यमानकर्तृकमिद शरीरमादिमत्प्रतिनियताका कारकत्वात्। इह यद्यदादिमत्प्रतिनियताकार तत्तद्विद्यमानकर्तृक दृष्ट। यथा घट। य

ऽविद्यमानकर्तृक तदादिमत्प्रतिनियताकारमपि न भवति यथाकाशं । आदिमत्प्रतिनियताकारस्य च सकर्तृत्वेन व्याप्ते । व्यापकनिवृत्तो व्याप्यस्य विनिवृत्तिरिति सर्वत्र योजनीय। तथाविद्यमानाधिष्ठातृकानीन्द्रियाणि । करणत्वात् । यद्यदिह करणं तत्तद्विद्यमानाधिष्ठातृकं दृष्टं । यथा दण्डादिकमिति । अधिष्ठातारमन्तरेण करणत्वाऽनुपपत्ति । यथाकाशस्य। हृषीकाणां चाधिष्ठाताऽऽत्मा सच तेभ्योऽन्य इति । तथा विद्यमानाधिष्ठातृकमिदमिन्द्रियविषयकदम्बकं । आदानादेयसद्भावात् । इह यत्र यत्राऽऽदानादेयसद्भावस्तत्र तत्र विद्यमान आदाता ग्राहको दृष्ट । यथा संदंशकाय पिण्डयोस्तद्भिन्नोऽयस्कार इति । यश्चात्रेन्द्रियं करणैर्विषयाणामादाता ग्राहक स तद्भिन्नआत्मेति । तथा विद्यमानभोक्तृकमिदं शरीरं भोग्यत्वादोदनादिवत् । अत्रच कुलालादीनां मूर्तत्वाऽनित्यत्वसद्भतत्वदर्शनादात्मापि तथैव स्यादिति धर्मविशेषविपरीतसाधनत्वेन विरुद्धा शंका न विधेया । संसारिण आत्मन कर्मणा सहान्योन्यानुवेधत कथंचिन्मूर्तत्वाद्यभ्युपगमादिति । तथा यदुक्तं। नास्ति सत्त्वाऔपपातिका इति तदप्ययुक्तं । यतस्तदहर्जातबालकस्य य स्तनाभिलाष सोन्याभिलाषपूर्वको ऽभिलाषत्वात् कुमाराभिलाषवत् । तथा बालविज्ञानमन्यविज्ञानपूर्वकं विज्ञानत्वात् कुमारविज्ञानवत् । तथाहि। यदहर्जातबालकोपि यावत्सएवाय स्तन इत्येव नावधारयति तावन्नोपरत रुदितो मुखमर्पयति स्तने इत्यतोऽस्ति बालके विज्ञानलेश सचाऽन्यविज्ञानपूर्वकं । तथान्यद्विज्ञानं भवांतरविज्ञानं तस्मादस्ति सत्त्व उपपातिक इति। तथा। यदभिहितं विज्ञानघनएवैतेभ्यो भूतेभ्य समुत्थाय तान्येवानुविनश्यतीति । तत्राप्ययमर्थो विज्ञानघनो विज्ञानपिंड आत्मा भूतेभ्य कथंचिदुत्थायेति प्राक्तनकर्मवशात्तथाविधकायाकारपरिणते भूतसमुदाये तद्द्वारेण स्वकर्मफलमनुभूय पुनस्तद्विनाशे आत्मापि तदनु तेनाकारेण विनश्यापरपर्यायांतरेणोत्पद्यते नपुनस्तैरेव सह विनश्यतीति । तथा यदुक्तं। धर्मिणो ऽभावात्तद्धर्मयो पुण्यपापयोरभावइति तदप्यसमीचीनं । यतो धर्मी तावदनंतरोक्तिकदम्बकेन साधितस्तत्सिद्धा च तद्धर्मयो पुण्यपापयोरपि सिद्धिरवसेया जगद्वैचित्र्यदर्शनाच्च।यत्तु स्वभावमाश्रित्योपलशकलं दृष्टांतत्वेनोपन्यस्तं तदपि तद्भोक्तृकर्मवशादेव तथा तथासंवृत्तइति दुर्निवारं पुण्यापुण्यसद्भावइति।येपि वह्व कदलीस्तंभादयो दृष्टांता आत्मनो ऽभावसाधनायोपन्यस्तास्तेप्यभिहितनीत्याऽऽत्मनोभूतव्यतिरिक्तस्य परलोकयायिन सारभूतस्य साधितत्वात्केवलं भवतो वाचालतां प्रख्यापयति इत्यलमतिप्रसंगेन । शेषं सूत्रं विवियतेऽधुनेति । तदेवं तेषां भूतव्यतिरिक्तात्मनिन्ह्ववादिनां योयं लोकश्चतुर्गतिकसंसारो भवाद्भवांतरगतिलक्षण प्राक् प्रसाधित सुभगदुर्भगसुरूपमदरूपेश्वरदारिद्र्यादिरन्या जगद्वैचित्र्यलक्षणश्च स एवंभूतो लोकस्तेषां कुतो भवेत् । कयोपपत्त्या घटेत । आत्मनोऽनभ्युपगमान्न किंचिदित्यर्थ । तेच नास्तिका परलोकयायिजीवा

ऽनन्युपगमेन पुण्यपापयोश्चाभावमाश्रित्य यत्किंचनकारिणोऽज्ञानरूपात्तमस सकाशाद न्यत्तमो याति । भूयोपि ज्ञानावरणादिरूपं महत्तर तम सचिन्वतीत्युक्त भवति । यदि वा तमश्वतमो दु खसमुद्घातेन सदसद्विवेकप्रध्वंसित्वाद्यातनास्थान तस्मादेवभूताः मस परतर तमो याति । सप्तमनरकपृथिव्या रौरव, महारौरव, काल, महाकालाप्र तिष्ठानाख्य नरकावास यातीत्यर्थ । किमिति । यतस्ते मदा जडा मूर्खा सत्यपि यु क्त्युपपन्ने आत्मन्यसदभिनिवेशात्तदभावमाश्रित्य प्राण्युपमर्दकारिणि विवेकिजननिंदि ते आरम्भे व्यापारे निश्चयेन नितरां चाश्रिता सबद्धा पुण्यपापयोरभाव इत्याश्रित्य परलो कनिरपेक्षयाऽरम्भनिश्रिताइति । तथा तज्जीवतच्छरीरवादिमतं निर्युक्तिकारोपि निराचिकी र्षुराह । “ पचएह्मित्यादिगाथा प्राग्वदत्रापि ” ॥ ३३ ॥ साम्प्रतमकारकवादिमतमाश्रि त्यायमनतरश्लोको भूयोपि व्याख्यायते । ये एते अकारकवादिन आत्मनोऽमूर्तत्वनि त्यत्वसर्वव्यापित्वेभ्यो हेतुभ्यो निष्क्रियत्वमेवाभ्युपपन्नास्तेषा यएषलोको जरामरणशोका क्रंदनहर्षादिलक्षणो नरकतिर्यङ्मनुष्यामरगतिरूप सोयमेवभूतो निष्क्रिये सत्यात्मन्य प्रच्युतानुत्पन्नस्थिरैकस्वभावे कुत कस्माद्धेतो स्यान्न कथचित्कुतश्चित्स्यादित्यर्थ । तत श्च दृष्टेष्टबाधारूपात्तमसोऽज्ञानरूपात्ते तमोतर निकृष्ट यातनास्थान याति । किमिति । यतो मदाजडा प्राण्युपकारकाऽरम्भनिश्रिताश्च ते इति । अधुना निर्युक्तिकारोऽकारकवादि मतनिराकरणार्थमाह । “ कोवेएई य कय, कयनासो पचहा गई न ह्रि ॥ देवमणुस्सग यागइ, जाईसरणा इयाण च ” ॥ ३४ ॥ (कोवेएइत्यादि) । आत्मनोऽकर्तृत्वात्कृतं नास्ति ततश्चाकृतं को वेदयते । तथा निष्क्रियत्वे वेदनक्रियाऽपि न घटा प्राचलि । अथा ऽकृतमप्यनुभूयेत तथा सत्यकृतागमकृतनाशापत्ति स्यात् । ततश्च एककृतपातकेन सर्वे प्राणिगणो दु खित्त स्यात् पुण्येन च सुखी स्यादिति । नचैतद्दृष्टमिष्ट वा । तथाव्यापि त्वान्नित्यत्वाच्चात्मन पचधा पचप्रकारा नारक, तिर्यङ्,मनुष्या,मर, मोक्ष, लक्षणागति र्न भवेत् । ततश्च भवता सांख्यानां कापायचीवरधारण,शिरस्तुडमुडन,दडधारण, भिक्षाभोजित्व,पचरात्रोपदेशानुसारयमनियमाद्यनुष्ठान । तथा । पचविंशतितत्त्वज्ञो, यत्र तत्राश्रमे रत ॥ जटी मुडी शिखी वापि, मुच्यते नात्र सशयइत्यादि सर्वमपार्थकमा प्नोति । तथा देवमनुष्यादिषु गत्याऽगती न स्याता सर्वव्यापित्वादात्मन । तथानित्यत्वा च्च विस्मरणाभावाज्जातिस्मरणादिका च क्रिया नोपपद्यते । तथा । आदिग्रहणात्प्रकृ ति करोति पुरुषश्चभुक्तइति भुजिक्रिया या समाश्रिता सापि न प्राप्नोति । तस्या अपि क्रियात्वादिति । अथ मुद्राप्रतिबिंबोदयन्यायेन भोगइति चेदेतत्तु निरतरा सुहृद प्रत्ये प्यंति । वाङ्मात्रत्वात् । प्रतिबिंबोदयस्यापि च क्रियाविशेषत्वादेव । तथा नित्ये चावि कारिण्यात्मनि प्रतिबिंबोदयस्याप्यभावात्किंचिदेतदिति ॥३४॥ ननुच भुजिक्रियामात्रेण प्र

तिर्विबोदयमात्रेण च यद्यप्यात्मा सक्रियस्तथापि न तावन्मात्रेणास्मानि सक्रिय त्वमिष्यते किं तर्हि समस्तक्रियावत्वे सतीत्येतदाशक्य निर्युक्तिकृदाह् । "णहु अफलत्तो वणि तित, कालफलत्तणमिह अहुमहेउ ॥ णाइवत्तोवडुय,नाणणगा वित्तणेहेऊ" ॥ ॥ ३५ ॥ (णहुअफलेत्यादि) नहु नैवाऽफलत्व द्रुमानावे साध्ये हेतुर्नवति । नहि यदेव फलवांस्तदेव द्रुमोऽन्यदात्वद्रुम इति नाव । एवमात्मनोपि सुताद्यवस्थाया यद्य पि कथचिन्निष्क्रियत्व तथापि नैतावता त्वसौ निष्क्रियइति व्यपदेशमर्हति । तथा स्तोक फलत्वमपि न वृक्षानावसाधनायालं । स्वल्पफलोपि हि पनसादिर्वृक्षस्य व्यपदेशनाग्न वति । एवमात्मापि स्वल्पक्रियोपि क्रियावानेव ॥ कदाचिदेपा मतिर्नवतो नवेत् स्तोकक्रि यो निष्क्रियएव । यथैककार्षापणधनो न धनित्वमास्कदत्येवमात्मापि स्वल्पक्रियत्वा दक्रियइत्येतदप्युपचार । यतोय दृष्टात प्रतिनियतपुरुपापेक्षया चोपगम्यते समस्तपुरुषा पेक्षया वा । तत्र यद्याद्य पक्षस्तदा सिद्धसाध्यता । यत सहस्रादिधनवदपेक्षया निर्धनए वासौ । अथ समस्तपुरुपा पेक्षया तदसाधु । यतोन्यान्जरच्चीवरधारिणोपेक्ष्य कार्पापणध नोपि धनवानेव । तथात्मापि यदि विशिष्टसामर्थ्योपेतपुरुपक्रियापेक्षया निष्क्रियोऽभ्युपगम्य ते । न काचित्क्षति । सामान्यापेक्षया तु क्रियावानेवेत्यलमतिप्रसगेन । एवमनिश्चिताकालफ लत्वाख्यहेतु द्वयमपि न वृक्षानावसाधकमित्यादि योज्य । एवमदुग्धत्वस्तोकदुग्धत्वरूपावपि हेतू न गोत्वानावत्व साधयत । उक्तन्यायेनेव दार्ष्टातिकयोजना कार्येति ॥ ३५ ॥ १४ ॥

सति पच महब्भूया, इहमेगेसि आहिया ॥ आयछ्ठो पुणो आहु,
आया लोगेय सासए ॥ १५ ॥ दुहर्ड ण विणस्संति, नोय उप्पज्ज
ए असं ॥ सव्वे वि सव्वहा नावा, नियतीनावमागया ॥ १६ ॥

अर्थ—हवे आत्मपष्टवादिनो मत कहेछे ते वादी एम कहेछे के, इहमेगेसिआहियाके० आससारनेविपे एक आत्मपष्ठवादिऊना मते एम कह्यु के, सतिपचमहब्भूयाके० पाच महा नूतने वली ते वादी एम कहेछे के, आयछ्ठोपुणोआहुके०जेम पच महानूत तेम आत्मा छठोछे वली अनेराने मते आत्मा अने पच महानूत अशाश्वताछे तेम एने मते नथी, ते कहेछे के, आयालोगेयसासएके० आत्मा अने पृथिव्यादिकरुपजे लोक ते एने मते शा श्वता सर्वव्यापिछे माटे अविनाशि रुपछे ॥ १५ ॥ वली तेनु नित्यपणु देखाडेछे ते आत्मपष्ठ पृथिव्यादिक पदार्थ, नि कारण विनाश अथवा सकारण विनाश, ए दुहर्डके० बन्ने विनासे करी, णविणस्सतिके० विनास पामे नही पृथ्वी, अप्प, तेज, वा यु, अने आकाश ए कदापि पोतानु स्वरूप छांमे नही, ते कारणे शाश्वताछे तथा कोइ ए जेनो आकार कर्यो नथी, ते कारणमाटे आत्मा शाश्वत छे यदुक्त । नैन छिदति शस्त्राणि,

नैन दहति पावक ॥ नचैन क्लेदयंत्यापो, नशोपयति मारुत ॥१॥ अछेद्योयमनेद्योय, विकारी सउच्यते, ॥ 'नित्य सर्वगत स्याणुरचलो य सनातन ॥२॥ इत्यादिवचनात् ॥ तथा नोयउप्पज्जएअसके० जे असत् एटले अविद्यमान होय ते उपजे नही केमके अवि द्यमान पदार्थने विषे करनारनो व्यापार स्फुरे नही जो असती वस्तु उपजे तो आकाश कुसुमगर्दनशृगादिक पदार्थ पण उपजवानो सनवहे ए कारणे सव्वविसव्वहानावा के० सर्वकाले पण पृथिव्यादिक सर्वे पदार्थो नियतिनावमागया के० नित्यनावे परिणाम पा म्याहे ॥ १६ ॥ "आत्मषष्टवादीगत " एटले आत्म षष्टवादीनु मत ए प्रमाणे कर्तु

॥ दीपिका— अथाऽत्मषष्ठवादिमतमाह । (सतित्ति) सति पच महानूतानि । इ हाऽस्मिन्ससारे एकेषामात्मषष्ठवादिना साख्याना वैशेषिकाणा चैतदाख्यातं नूतान्या ख्यातानि वा । ते पुनर्वादिन एवमाहु । यञ्चूतानि आत्मषष्ठानि आत्मा षष्ठोयेषातानि अत्मषष्ठानि । केषाचिद्वादिनामनित्यानि नूतानि आत्मा च न तथा एषामित्याह (आया) आत्मा लोकश्च पृथिव्यादिरूप शाश्वतोनित्य ॥ १५ ॥ शाश्वतत्वमेवाह । (डुहउत्ति) ते नूतपदार्था आत्मषष्ठा उनयतो निर्हेतुकसहेतुकविनाशान्या न विनश्य ति । बौद्धादिमते घटादिवस्तु हेतु विनापि क्षणे क्षणेविनश्यति । वैशेषिकाणां तु लकु टादिहेतुयोगेन घटादीना विनाश । तेन द्विविधेनापि विनाशेन लोकात्मनोर्नविनाशइ ति तात्पर्यार्थे । यदिवा द्विरूपाचेतनाचेतनस्वनावान्न विनश्यत्यात्मा पृथिव्याद्या लो काश्च चेतनस्वनावान्नविनश्यतीति न चोत्पद्यते ऽसदविद्यमान । सर्वेपिनावा सर्वथा नियतिनाव नित्यत्वमागता प्राप्ता ॥ १६ ॥

॥ टीका—साप्रतमात्मषष्ठवादिमतं पूर्वपक्षयितुमाह (सतीत्यादि) सति विद्यते पचमहा नूतानि पृथिव्यादीनि इहास्मिन्ससारे एकेषा वेदवादिना साख्याना शैवाधिकारिणा च ए तदाख्यातमाख्यातानि च नूतानि तेच वादिन एवमाहुरेवमाख्यातवत । यथा । आत्म षष्ठानि आत्मा षष्ठो येषा तानि आत्मषष्ठानि नूतानि विद्यतइति । एतानि चात्मषष्ठा नि नूतानि यथा न्येषा वादिनामनित्यानि तथा नामीषामितिदर्शयति । आत्मा लोक श्च पृथिव्यादिरूप शाश्वतोऽविनाशी । तत्रात्मन सर्वव्यापित्वादमूर्तत्वाच्चाकाशस्येव शा श्वतत्व पृथिव्यादीना च तद्रूपाप्रच्युतेरविनश्वरत्वमिति ॥ १५ ॥ शाश्वतत्वमेव नूय प्र तिपादयितुमाह । (डुहउणविणस्सतीत्यादि) ते आत्मषष्ठा पृथिव्यादय पदार्था उनय तइति निर्हेतुकसहेतुकविनाशद्वयेन न विनश्यति । यथा बौद्धाना स्वतएव निर्हेतुको विना श । तथाच ते कचु । जातिरेव हि नावाना, विनाशे हेतुरिष्यते॥ यो जातश्च न च ध्वस्तो,

नश्येत्पश्चात्स केन च ॥ १ ॥ यथाच वैशेषिकाणां लकुटादिकारणसांनिध्ये विनाश स हेतुकस्तेनोजयरूपेणापि विनाशेन लोकात्मनोर्न विनाशइति तात्पर्यार्थ । यदि वा (डुहउ ति) । द्विरुपादात्मन स्वनावाच्चेतनाचेतनरूपान्न विनश्यतीति । तथाहि । पृथिव्यप्तेजो वाय्वाकाशानि रूपापरित्यागतया नित्यानि । न कदाचिदनीदृश जगदिति कृत्वा आत्मापि नित्यएव कृतकत्वादिन्यो हेतुन्य । तथा चोक्त । नैन छिदति शस्त्राणि, नैन दहति पावक ॥ न चैन क्लेदयत्यापो न शोपयति मारुत ॥ १ ॥ अछेद्योयमदाह्योयमविकार्योयमुच्यते॥ नित्य सर्वगत स्थाणुरचलोय सनातन ॥२॥ एव च कृत्वा नासदुत्पद्यते सर्वस्य सर्वत्र स न्नावादसति च कारकव्यापाराजावात् सत्कार्यवाद । यदि वा असदुत्पद्येत खरविपाणा देरप्युत्पत्ति स्यादिति । तथा चोक्त । असदकरणाडुपादानग्रहणात्सर्वसंजवाजावात् शक्तस्य शक्यकरणात्कारणजावाच्च सत्कार्य । एवच कृत्वा मृत्पिडेपि घटोस्ति । तदर्थिना मृत्पि डोपादानात् । यदि वा ऽसदुत्पद्येत ततो यत कुतश्चिदेव स्यान्नावश्यमेतदर्थिना मृत्पिडो पादानमेव क्रियते इत्यत सदेव कारणे कार्यमुत्पद्यतइति । एव च कृत्वा सर्वेपि जावा पृथिव्यादय आत्मषष्ठा नियतिजाव नित्यत्वमागता नाजावरुपतामजूत्वा च जावरुपतां प्रतिपद्यते । आविर्जावतिरोजावमात्रत्वाडुत्पत्तिविनाशयोरिति । तथा चाजिहितं । नास तो जायते जावो नाजावो जायते सतइत्यादि । अस्योत्तर निर्युक्तिकृदाह । "कोवेएइत्या दिप्राक्तन्येव गाथा,, । सर्वपदार्थनित्यत्वाज्युपगमे कर्तृत्वपरिणामो न स्यात्ततश्चात्मनोऽक र्तृत्वे कर्मबधाजावस्तदजावाच्च को वेदयति न कश्चित्सुखडु खादिकमनुजवतीत्यर्थ । एव च सति कृतनाश स्यात् । तथा असतश्चोत्पादाजावे येय मया आत्मन पूर्वजावपरित्यागेनापर जावोत्पत्तिलक्षणा पचधा गतिरुच्यते सा न स्यात् । ततश्च मोक्षगतेरजावाद्दीक्षादिक्रियानु ष्ठानमनर्थकमापद्यते । तथाऽप्रच्युताऽनुत्पन्नस्थिरैकस्वजावत्वेन त्वात्मनो देवमनुष्यगत्या गती तथा विस्मृतेरजावात् जातिस्मरणादिक वा न प्राप्नोति । यच्चोक्तं सदेवोत्पद्यते तदप्यसत् । यतो यदि सर्वथा सदेव कथमुत्पाद । उत्पादश्चेत्तर्हि सर्वदा सदिति । तथा चो क्त । कर्मगुणव्यपदेशा प्रागुत्पत्तेर्न सति यत्तस्मात्कार्यमसद्विज्ञेय क्रियाप्रवृत्तेश्च कर्तृणा । तस्मात्सर्वपदार्थाना कथचिन्नित्यत्व सदसत्कार्यवादश्चेत्यवधार्य । तथाचाजिहितं । सर्व व्यक्तिषु नियतं, क्षणे क्षणेऽन्यत्वमथ च न विशेप । सत्यश्चित्यपचित्योराकृतिजाति व्यवस्थानात् इति । तथा । नान्वय सहि जेदत्वा,न्न जेदोऽन्वयवृत्तित ॥ मृद्भेदद्वयस सर्गे, वृत्तिजात्यतर घट ॥ १ ॥ १६ ॥

पच खधे वयतेगे, वालाउ खणजोइणो ॥ अस्रो अणस्रो णेवाहु, हेउय च अहेउय ॥ १७ ॥ पुढवी आउ तेऊ य, तहा वाऊय एग उ ॥ चत्तारि धाउणो रूव, एवमाहु सु जाणया ॥ १८ ॥

नैन दहति पावक' ॥ नचैन क्लेदयंत्यापो, नशोषयति मारुत ॥१॥
विकारी सउच्यते, ॥ नित्य सर्वगत स्थाणुरचलो य सनातन ॥२॥
तथा नोयउप्पऊएअसके० जे असत् एटले अविद्यमान होय ते उपजे नही
द्यमान पदार्थने विषे करनारनो व्यापार स्फुरे नहीं जो अछती वस्तु उपजे तो
कुसुमगर्दनशृंगादिक पदार्थ पण उपजवानो सनवठे ए कारणे सव्वविसव्वहानावा
सर्वकाले पण पृथिव्यादिक सर्वे पदार्थो नियतिनावमागया के० नित्यनावे परिणाम
म्याठे ॥ १६ ॥ "आत्मपष्ठवादीगत" एटले आत्म पष्टवादीनु मत ए प्रमाणे कह्यु

॥ दीपिका– अथाऽत्मपष्ठवादिमतमाह । (सतित्ति) सति पच महाभूतानि ।
हाऽस्मिन्ससारे एकेषामात्मपष्ठवादिना साख्याना वैशेषिकाणा चेतदाख्यात
ख्यातानि वा । ते पुनर्वादिन एवमाहु । यद्भूतानि आत्मपष्ठानि आत्मा ...
अत्मपष्ठानि । केषाचिद्वादिनामनित्यानि भूतानि आत्मा च न तथा ...।
(आया) आत्मा लोकश्च पृथिव्यादिरूप शाश्वतोनित्य ॥ १५ ॥ शाश्वतत्वमेवाह
(डुहउत्ति) ते भूतपदार्था आत्मपष्ठा उनयतो निर्हेतुकसहेतुकविनाशाभ्यां न
ति । बौद्धादिमते घटादिवस्तु हेतु विनापि क्षणे क्षणेविनश्यति । वैशेषिकाणां तु लक्कु
टादिहेतुयोगेन घटादीना विनाश । तेन द्विविधेनापि विनाशेन लोकात्मनोर्नविनाशइ
ति तात्पर्यार्थ । यदिवा द्विरूपाच्चेतनाचेतनस्वनावान्न विनश्यत्यात्मा पृथिव्याद्या लो
काश्च चेतनस्वनावान्नविनश्यतीति न चोत्पद्यते ऽसदविद्यमान । सर्वेपिनावा सर्वथा
नियतिनाव नित्यत्वमागता प्राप्ता ॥ १६ ॥

॥ टीका–साप्रतमात्मपष्ठवादिमतं पूर्वपक्षयितुमाह (सतीत्यादि) सति विद्यते पचमहा
भूतानि पृथिव्यादीनि इहास्मिन्ससारे एकेषा वेदवादिना साख्याना शैवाधिकारिणा च ए
तदाख्यातमाख्यातानि च भूतानि तेच वादिन एवमाहुरेवमाख्यातवत । यथा । आत्म
पष्ठानि आत्मा पष्ठो येषा तानि आत्मपष्ठानि भूतानि विद्यतइति । एतानि चात्मषष्ठा
नि भूतानि यथा न्येषा वादिनामनित्यानि तथा नामीषामितिदर्शयति । आत्मा लोक
श्च पृथिव्यादिरूप शाश्वतोऽविनाशी । तत्रात्मन सर्वव्यापित्वादमूर्तत्वाच्चाकाशस्येव शा
श्वतत्व पृथिव्यादीना च तद्रूपाप्रच्युतेरविनश्वरत्वमिति ॥ १५ ॥ शाश्वतत्वमेव भूय प्र
तिपादयितुमाह । (डुहउणविणस्सतीत्यादि) ते आत्मपष्ठा पृथिव्यादय पदार्था उनय
तइति निर्हेतुकसहेतुकविनाशद्वयेन न विनश्यति । यथा बौद्धाना स्वतएव निर्हेतुको विना
श । तथाच ते कचु । जातिरेव हि नावाना, विनाशे हेतुरिष्यते॥ यो जातश्च न च ध्वस्तो,

त्मानमित्थवतस्तथा बौद्धा नैवाहुर्नोक्तवत । तथा हेतुन्योजातोहेतुक कायाकारपरि णतनूतनिष्पादित तथा ऽहेतुकोनित्य इत्येव तमात्मान बौद्धा नागीकृतवतइति ॥१७॥ तथान्ये चतुर्धातुक जगद् बौद्धा वदतीत्याह । (पुढवीति) पृथिवीधातु । आपोजल धा तु । तथातेजो वायुश्चेति धातव । एते चत्वारोपि धातवो यदा (एकउत्ति) एकाकार परिणतास्तदाकारतयाजीवाख्या जनते । एवमाहुर्जानका पमितंमन्या बौद्धा । (एव माहसुआवरेइति) क्वचित्पाठ । तत्र आवरेत्ति । अपरे बौद्धा इत्यर्थ ॥ १८ ॥

॥ टीका—साप्रतं बौद्धमतं पूर्वपक्षयन्निर्युक्तिकारोपन्यस्तमफलवादाधिकारमाविर्भावयन्ना ह । (पचखधेवयतेगेइत्यादि) । एके केचन वादिनो बाद्धा पच स्कधान् वदति । रूप,वे दना, विज्ञान, सज्ञा, सस्कारा,ख्या पचैव स्कधाविद्यंते नापर कश्चिदात्माख्य स्कधो स्तीत्येव प्रतिपादयति । तत्र रूपस्कध पृथिवीधात्वादयो रूपादयश्च ॥१॥ सुखा डु खा अ डु खसुखाचेति वेदनावेदनास्कध ॥ २ ॥ रूपविज्ञान रसविज्ञानमित्यादि विज्ञान वि ज्ञानस्कध ॥३॥ सज्ञास्कध सज्ञानिमित्तोऽवग्रहणात्मक प्रत्यय ॥४॥ सस्कारस्कध पु एयापुण्यादिधर्मसमुदाय इति ॥ ५ ॥ नचैतेन्यो व्यतिरिक्त कश्चिदात्माख्य पदार्थोऽध्य क्षेणाऽध्यवसीयते । तदव्यभिचारिलिंगग्रहणाऽभावान्नाप्यनुमानेन । नच प्रत्यक्षा नुमानव्यतिरिक्तमर्थाऽविसवादिप्रमाणातरमस्तीत्येव बालाइव बाला यथाऽवस्थितता र्थापरिज्ञानात् बौद्धा प्रतिपादयति । तथा ते स्कधा क्षणयोगिन । परमनिरुष्ट का ल क्षण । क्षणेन योग सबध क्षणयोग स विद्यते येषा ते क्षणयोगिन । क्षणमा त्राऽवस्थायिनइत्यर्थ । तथाच तेऽभिदधति । स्वकारणेन्य पदार्थउत्पद्यमान किं विनश्वरस्वभावउत्पद्यतेऽविनश्वरस्वभावो वा । यद्यविनश्वरस्ततस्तद्व्यापिन्या क्रमयौगप द्यान्यामर्थक्रियाया अभावात् पदार्थस्यापि व्याप्यस्याभाव प्रसक्तति । तथाहि । यदेवा र्थक्रियाकारि तदेव परमार्थत सदिति । सच नित्योर्थ क्रियाया प्रवर्तमान क्रमेण वा प्रव र्तते यौगपद्येन वा । न तावत्क्रमेण । यतो ह्येकस्याऽर्थक्रियाया काले तस्यापरार्थक्रियाकर णस्वभावो विद्यते वा न वा । यदि विद्यते किमिति क्रमकरण । सहकार्यपेक्षयेति चेत् । तेन सहकारिणा तस्य कश्चिदतिशय क्रियते न वा । यदि क्रियते किं पूर्वस्वभावपरित्यागे नापरित्यागेन वा । यदि परित्यागेन ततोऽतादवस्थ्यापत्तेरनित्यत्व । अथ पूर्वस्वभावाप रित्यागेन ततोऽतिशयाभावात्किं सहकार्यपेक्षया । अथाऽकिंचित्करोपि विशिष्टकार्यार्थ मपेक्षते । तदयुक्त । यत । अपेक्षेत पर कश्चि,द्यदि कुर्वीत किंचन ॥ यदकिंचित्कर व स्तु, किं केनचिदपेक्ष्यते ॥ १ ॥ अथ तस्यैकार्थक्रियाकारणकाले ऽपरार्थक्रियाकरणस्व भावो न विद्यते । तथाच सति स्पष्टैव नित्यताहानि । अथासौ नित्यो यौगपद्येनाऽर्थक्रि

अर्थ–हवे अफलवादिनुं मत कहेछे एगे के० कोइएक वादी एटले बौद्ध ते पंते के० पंचस्कंध बोलेछे, तेना नाम कहेछे प्रथम विज्ञान ते रसज्ञ, वि वेदना, संज्ञा ते धर्मसमुदायने पृथिव्यादिकते संस्कार, अने धातुरूपादिकते रूप, ए पांच दार्थ जगतमाछे, पण एथकी अन्य आत्मादिक पदार्थ जगतमाहे कोइ नथी एम ते जावके० बाल एटले अज्ञानी कहेछे वलीते स्कंध केवा छे, खणजोइणोके० गीछे एटले एक क्षण मात्र रहे, उपरात रहे नहीं एवीरीतना बोलनारा ते दी जाणवा हवे अनेरा दर्शनीउंथकी एमनो भेद जे छे, ते गाथाना उत्तरार्द्ध वडे दे खाडेछे अम्मोअणम्मो णेवाहुके० ते जेम आत्मषष्ठवादी सांख्यादिक भूत थकी आ त्मा अन्य छे, एम कहेछे तथा जेम चार्वाकमति भूतथकी आत्मा अनेरो नथी एट ले जे भूत तेहिज आत्मा एम कहेछे, तेम बौद्धमति कहेता नथी तथा हेउयंच के० हेतु एटले आत्मा कोणे नीपजाव्यो एम पण कहेता नथी अने अहेउय के० अहेतु क एटले अनादि अनंत शाश्वत आत्माछे एम पण बौद्ध कहेता नथी ॥ १७ ॥ अ फलवादीगत। तथा अनेरा बौद्धदर्शनी चतुर्धातुक जगत् कहेछे, ते देखाडेछे पुढवीके० पृथिवी ते पाषाण पर्वत अने स्थलादिक ए प्रथमधातु, तथा आउके० अप्प ते पाणी ए बीजी धातु, तथा तेज के० अग्नि ए त्रीजी धातु, तथा वायु ए चोथी धातु, जे कारणे ए चारे पदार्थ जगत्रने धरे एटले पोषे ते कारणे एने धातु कहिये ए केहवाछे? तोके एगउं के० ए चारे एकाकार पणे परिणमे, माटे एकाकारछे तेथी ए चत्तारिधाउणोरूव के० चारेधातुरूप जाणवा एटले ए शरीर चतुर्धारूप छे ते थकी अनेरो आत्मा एवो प दार्थ कोइ नथी, एव के० एम ते बौद्ध कहेछे तेकेवा जाणवा? तोके आहंसु के०पो ताने लोकमाहे जाणयाके० जाण कहेवराविये एवु अभिमान धरेछे परंतु ए सर्वे क्षणि कवादिपणा थकी क्रियाना फलने संबंध मले नहीं तेकारणे एने अफलवादि कहियें

॥ दीपिका–अथ बौद्धमतमाह। (पंचेति)। एके बौद्धा पंचस्कंधान् वदंति। रूपस्कंध १ वेदनास्कंध २ विज्ञानस्कंध ३ संज्ञास्कंध ४ संस्कारस्कंध ५। तत्र रूप पस्कंध पृथिवीत्वादयो रूपादयश्च। वेदनास्कंध सुखा दुःखा अदुःखसुखा च वेदना। विज्ञानस्कंधो रूपविज्ञान रसविज्ञानमित्यादि। संज्ञास्कंध संज्ञानिमित्तोद्ग्रहणात्मिक प्रत्यय। सविकल्पसंज्ञानमित्यर्थ। संस्कारस्कंध पुण्यापुण्यादिधर्मसमुदाय ५ नचैते न्योन्य कश्चिदात्माख्य पदार्थोस्तीति। बाला मूर्खा। ते स्कंधा किंभूता क्षणयोगि न क्षणेक्षणेविनश्वराइत्यर्थ। पूर्ववादिभ्यो बौद्धव्यतिरेकमाह। (अणोत्ति)। यथा सांख्यादयो भूतेभ्योऽन्यमात्मानमंगीकृतवंत। यथा चार्वाका भूतेभ्योऽनन्यमभिन्नमा

नका ज्ञानिनो वयं किलेत्यभिमानाग्निदग्धाः संत एवमाहुरिति संबधनीयं । अफलवादि त्वं चैतेषां क्रियाक्षणएव कर्तुः सर्वात्मना नष्टत्वात् क्रियाफलेन संबंधाजावादवसेयं । स र्वेएव वा पूर्ववादिनोऽफलवादिनो इष्टव्याः कैश्चिदात्मनोऽनित्यस्याऽविकारिणोऽभ्युपगत त्वात् कैश्चित्त्वात्मनएवानभ्युपगमादिति । अत्रोत्तरपदार्थानां प्राक्तन्येव निर्युक्तिगाथा। कोवेएइत्यादि व्याख्यायते । यदि पंचस्कंधव्यतिरिक्तः कश्चिदात्माख्यः पदार्थो न विद्यते त तस्तदजावात्सुखडुःखादिकं कोऽनुजवतीत्यादिगाथा प्राग्व्याख्येयेति । तदेवमात्मनो जावाद्योयं स्वसंविदितं सुखडुःखानुजवः स कस्य जवत्विति चिंत्यतां। ज्ञानस्कंधस्यायमनु जवइति चेन्न। तस्यापि क्षणिकत्वात्।ज्ञानक्षणस्य चातिसूक्ष्मत्वात् सुखडुःखानुजवाजावः । क्रियाफलवतोश्च क्षणयोरत्यंतासंगतेः कृतनाशाकृताभ्यागमापत्तिरिति ज्ञानसंतान ए कोस्तीति । तस्यापि संतानिव्यतिरिक्तस्याऽजावाद्यत्किंचिदेतत् । पूर्वक्षणएव उत्तरक्षणे वासनामाधाय विनश्यतीति चेत्। तथाचोक्तं। यस्मिन्नेव हि संताने, आहिता कर्मवासना॥ फलं तत्रैव संधत्ते, कार्पासे रक्तता यथा ॥ १ ॥ अत्रापीदं विकल्प्यते। सा वासना किं क्षणेभ्यो व्यतिरिक्ताऽव्यतिरिक्ता वा । यदि व्यतिरिक्ता वासकत्वानुपपत्तिरथाव्यतिरिक्ता क्ष णवत् क्षणक्षयित्वं तस्याः । तदेवमात्माजावे सुखडुःखानुजवाजावः स्यादस्ति च सुखडुः खानुजवोऽतोस्त्यात्मेति । अन्यथा पंचविषयानुजवोत्तरकालमिंद्रियज्ञानानां स्वविषया दन्यत्राप्रवृत्तेः संकलनाप्रत्ययो न स्यात् । आलयविज्ञानाद्भविष्यतीति चेदात्मैव तर्हि स ज्ञांतरेणाभ्युपगतइति । तथा बौद्धागमोप्यात्मप्रतिपादकोस्ति । सचायं। इत । एकनवति मे कल्पे, शक्त्या मे पुरुषो हतः ॥ तेन कर्मविपाकेन, पादे विद्धोस्मि भिक्षवः ॥ १ ॥ तथा । कृतानि कर्माण्यतिदारुणानि, तनूजवत्यात्मनिगर्हणेन ॥ प्रकाशनात्संवरणाच्च तेषां,मत्यंतमूलोद्धरणं वदामीत्येवमादि । तथा यडुक्तं। क्षणिकत्वं साधयता यथा पदार्थः कारणेभ्य उत्पद्यमानो नित्यः समुत्पद्यते ऽनित्यो वेत्यादि। तत्र नित्येऽप्र च्युतानुत्पन्नस्थिरैकस्वजावे कारकाणां व्यापाराजावादतिरिक्ता वाचोयुक्तिरिति नित्यत्वपक्षा नुत्पत्तिरेव । यच्च नित्यपक्षे जणतानिहितं नित्यस्य न क्रमेणार्थक्रियाकारित्वं नापि यौगप द्येनेति तत्क्षणिकत्वेपि समानं । यतः क्षणिकोप्यर्थक्रियायां प्रवर्तमानः क्रमेण यौ गपद्येन वाऽवश्यं सहकारिकारणसव्यपेक्षएव प्रवर्तते । यतः । सामग्री जनिका नैकं किंचिदिति । तेनच सहकारिणा न तस्य कश्चिदतिशयः कर्तुं पार्यते। क्षणस्याविवेकत्वेना ऽनाधेयातिशयत्वात् क्षणानां च परस्परोपकारकोपकार्यत्वानुपपत्तेः सहकारित्वाजावः । सहकार्यनपेक्षाया च प्रतिविशिष्टकार्यानुपपत्तिरिति । तदेवमनित्यएव कारणेभ्यः पदा र्थः समुत्पद्यतइति द्वितीयपक्षसमाश्रयणमेव । तत्रापि चैतदालोचनीयं । किं क्षणक्षयि त्वेनानित्यत्वमाहोस्वित्परिणामाऽनित्यतयेति । तत्र क्षणक्षयित्वे कारणकार्यत्वाजावा

या कुर्यात्तथा सति प्रथमक्षणएवाऽशेषार्थक्रियाणां करणात् द्वित
तं। तथाच सैवानित्यता। अथ तस्य तत्स्वभावत्वात्तदर्थक्रिया भूयो भूयो
यादिक्षणेष्वपि कुर्यात्तदसांप्रत। कृतस्य करणाभावादिति। किंच द्वि
ध्या अप्यर्था प्रथमक्षणएव प्राप्नुवंति। तस्य तत्स्वभावत्वात्।
तस्यानित्यत्वापत्तिरिति। तदेव नित्यस्य क्रमयौगपद्याभ्यामर्थक्रियाविरहान्न
न्यो नित्यस्योत्पादइति। अथाऽनित्य स्वभाव समुत्पद्यते। तथाच सति
दायातमस्मदुक्तक्रमशेषपदार्थजातस्य क्षणिकत्व। तथाचोक्त। जातिरेव हि
विनाशो हेतुरिष्यते॥ यो जातश्च नच ध्वस्तो नश्येत्पश्चात्स केन च॥ १॥ ननु च
त्यप्यनित्यत्वे यस्य यदा विनाशहेतुसद्भावस्तस्य तदा विनाश। तथा च।
रणापेक्षाणामनित्यानामपि पदार्थानां न ... धातु
तेन मुद्गरादिकेन विनाशहेतुना घटादे किं क्रियते। किमत्र प्रष्टव्यमभाव क्रियते।
च प्रष्टव्यो देवानांप्रिय। अभाव इति किं पर्युदासप्रतिषेधोयमुत प्रसज्यप्रतिषेधइति
तत्र यदि पर्युदासस्ततोयमर्थो भावादन्यो भावो भावांतर घटात्पटादि सोऽभावइति।
त्र भावांतरे यदि मुद्गरादिव्यापारो न तर्हि तेन किंचिद्घटस्य कृतमिति। अथ
तिषेधस्तदा यथार्थो विनाशहेतुरभाव करोति। किमुक्त भवति भाव न करोतीति
ततश्च क्रियाप्रतिषेधएव कृत स्यात्। नच घटादे पदार्थस्य मुद्गरादिना करण।
स्वकारणैरेव कृतत्वात्। अथ भावाभावोऽभावस्तं करोतीति तस्य तुच्छस्य न
कुतस्तत्र कारणाना व्यापारोऽथ तत्रापि कारणव्यापारो भवेत् खरशृंगादावपि
रन् कारणानीति। तदेव विनाशहेतोरकिंचित्करत्वात् स्वहेतुतएवाऽनित्यताक्रोडीकृ
तानां पदार्थानामुत्पत्तेर्विघ्नहेतोश्चाभावात् क्षणिकत्वमवस्थितमिति। तुशब्द पूर्वादिभ्यो
ऽस्य व्यतिरेकप्रदर्शक। तमेव श्लोकपश्चार्धेन दर्शयति। (अस्तोअणस्तोइति)। ते
हि बौद्धा यथाऽत्मषष्ठवादिन साख्यादयो भूतव्यतिरिक्तमात्मानमभ्युपगतवतो यथा
चार्वाका भूताऽव्यतिरिक्त चैतन्याख्यमात्मानमिष्टवतस्तथा नैवाङ्गनैवोक्तवत। तथा
हेतुभ्योजातो हेतुक। कायाकारपरिणतभूतनिष्पादितइति यावत्। तथाऽहेतुको
ऽनाद्यपर्यवसितत्वान्नित्यइत्येवमात्मान ते बौद्धा नाऽभ्युपगतवत इति॥ १७॥
तथाऽपरे बौद्धाश्चतुर्धातुकमिद जगदाहुरित्येतद्दर्शयितुमाह। (पुढवीत्यादि) पृथि
वी धातुरापश्च धातुस्तथा तेजो वायुश्चेति धारकत्वात्पोषकत्वाच्च धातुत्वमेषा। (एगउत्ति)।
यदैते चत्वारोप्येकाकारपरिणतिं बिभ्रति कायाकारतया तदा जीवव्यपदेशमश्नुवत।
तथाचोचु। चतुर्धातुकमिद शरीर न तद्व्यतिरिक्तआत्मास्तीति। (एवमाहसुअवरेत्ति)
अपरे बौद्धविशेषा एवमाहुरभिहितवतइति। क्वचिज्जाणगा इतिपाठस्तत्राप्ययमर्थो आ

नका ज्ञानिनो वयं किलेत्यभिमानाग्निदग्धा सत एवमाहुरिति सबधनीय । अफलवादित्व चैतेषा क्रियाक्षणएव कर्तु सर्वात्मना नष्टत्वात् क्रियाफलेन सबधाभावादवसेयं । स र्वेएव वा पूर्ववादिनोऽफलवादिनो द्रष्टव्या केश्चिदात्मनोऽनित्यस्याऽविकारिणोऽभ्युपगतत्वात् कैश्चित्त्वात्मनएवानभ्युपगमादिति । अत्रोत्तरपदार्थाना प्राक्तन्येव निर्युक्तिगाथा। कोवेएइत्यादि व्याख्यायते । यदि पचस्कधव्यतिरिक्त कश्चिदात्माख्य पदार्थो न विद्यते त तस्तदभावात्सुखदु खादिक कोऽनुभवतीत्यादिगाथा प्राग्व द्व्याख्येयेति । तदेवमात्मनो भावाद्योय स्वसविदित सुखदु खानुभव स कस्य भवत्विति चिन्त्यता। ज्ञानस्कधस्यायमनुभवइति चेन्न। तस्यापि क्षणिकत्वात् ।ज्ञानक्षणस्य चातिसूक्ष्मत्वात् सुखदु खानुभवाभाव । क्रियाफलवतोश्च क्षणयोरत्यतासगते कृतनाशाकृताभ्यागमापत्तिरिति ज्ञानसतान एकोस्तीति । तस्यापि सतानिव्यतिरिक्तस्याऽभावाद्यत्किचिदेतत् । पूर्वक्षणएव उत्तरक्षणे वासनामाधाय विनश्यतीति चेत्। तथाचोक्त। यस्मिन्नेव हि सताने, आहिता कर्मवासना॥ फल तत्रैव सधत्ते, कार्पासे रक्तता यथा ॥ १ ॥ अत्रापीद विकल्प्यते। सा वासना किं क्षणेभ्यो व्यतिरिक्ताऽव्यतिरिक्ता वा । यदि व्यतिरिक्ता वासकत्वानुपपत्तिरथाव्यतिरिक्ता क्षणवत् क्षणक्षयित्व तस्या । तदेवमात्माभावे सुखदु खानुभवाभाव स्यादस्ति च सुखदु खानुभवोऽतोस्त्यात्मेति । अन्यथा पचविषयानुभवोत्तरकालमिंद्रियज्ञानाना स्वविषयादन्यत्राप्रवृत्ते सकलनाप्रत्ययो न स्यात् । आलयविज्ञानाद्भविष्यतीति चेदात्मैव तर्हि स ज्ञातरेणाभ्युपगतइति । तथा बौद्धागमोप्यात्मप्रतिपादकोस्ति । सचायं। इत । एकनवतिमे कल्पे, शक्त्या मे पुरुषो हत ॥ तेन कर्मविपाकेन, पादे विद्धोस्मि भिक्षव ॥ १ ॥ तथा । कृतानि कर्माण्यतिदारुणानि, तनूभवत्यात्मनिगर्हणेन ॥ प्रकाशनात्सवरणाच्च तेषा,मत्यतमूलोद्धरण वदामीत्येवमादि । तथा यदुक्त। क्षणिकत्व साधयता यथा पदार्थ कारणेभ्य उत्पद्यमानो नित्य समुत्पद्यते ऽनित्यो वेत्यादि। तत्र नित्येऽप्रच्युतानुत्पन्नस्थिरकस्वभावे कारकाणा व्यापाराभावादतिरिक्ता वाचोयुक्तिरिति नित्यत्वपक्षानुत्पत्तिरेव । यच्च नित्यपक्षे भवतानिहितं नित्यस्य न क्रमेणार्थक्रियाकारित्व नापि यौगपद्येनेति तत्क्षणिकत्वेपि समान । यत क्षणिकोप्यर्थक्रियाया प्रवर्तमान क्रमेण यौगपद्येन गाऽन्नस्य सहकारिकारणसव्यपेक्षएव प्रवर्तते । यत । सामग्री जनिका नह्येक किंचिदिति । तेनच सहकारिणा न तस्य कश्चिदतिशय कर्तु पार्यते। क्षणस्यविवेकत्वेनाऽनाधेयातिशयत्वात् क्षणाना च परस्परोपकारकोपकार्यत्वानुपपत्ते सहकारित्वाभाव । सहकार्यनपेक्षाया च प्रतिविशिष्टकार्यानुपपत्तिरिति । तदेवमनित्यएव कारणेभ्य पदार्थ समुत्पद्यत इति द्वितीयपक्षसमाश्रयणमेव । तत्रापि चैतदालोचनीय । किं क्षणक्षयित्वेनानित्यत्वमाहोस्वित्परिणामाऽनित्यतयेति । तत्र क्षणक्षयित्वे कारणकार्यत्वाभावा

या कुर्यात्तथा सति प्रथमक्षणएवाऽशेषार्थक्रियाणां करणात् [
तं। तथाच सैवानित्यता। अथ तस्य तत्स्वभावत्वात्ताएगर्थक्रिया भूयो
यादिक्षणेष्वपि कुर्यात्तदसांप्रत। कृतस्य करणाभावादिति। किंच द्वित
ध्या अप्यर्था प्रथमक्षणएव प्राप्नुवति। तस्य तत्स्वभावत्वात्।
तस्यानित्यत्वापत्तिरिति। तदेव नित्यस्य क्रमयौगपद्याभ्यामर्थक्रियाविरहान्न
भ्यो नित्यस्योत्पादइति। अथाऽनित्य स्वभाव समुत्पद्यते। तथाच सति
दायातमस्मदुक्तक्रमशेषपदार्थजातस्य क्षणिकत्व। तथाचोक्त। जातिरेव हि
विनाशे हेतुरिष्यते॥ यो जातश्च नच ध्वस्तो नश्येत्पश्चात्स केन च॥ १॥ ननु च
त्यप्यनित्यत्वे यस्य यदा विनाशहेतुसद्भावस्तस्य तदा विनाश। तथा च।
रणापेक्षाणामनित्यानामपि पदार्थाना न क्षणिकत्वमित्येतच्चानुपासितगुरोर्वच।
तेन मुजरादिकेन विनाशहेतुना घटादे कि क्रियते। किमत्र प्रष्टव्यमभाव क्रियते।
च प्रष्टव्यो देवानांप्रिय। अभाव इति कि पर्युदासप्रतिषेधोयमुत
तत्र यदि पर्युदासस्ततोयमर्थो भावादन्यो भावो भावातर घटात्पटादि सोऽभावइति।
त्र भावातरे यदि मुजरादिव्यापारो न तर्हि तेन किंचिद्घटस्य कृतमिति। अथ
तिषेधस्तदा यथार्थो विनाशहेतुरभाव करोति। किमुक्त भवति भाव न करोतीति
ततश्च क्रियाप्रतिषेधएव कृत स्यात्। नच घटादे पदार्थस्य मुजरादिना करण।
स्वकारणैरेव कृतत्वात्। अथ भावाभावोऽभावस्तं करोतीति तस्य तुच्छस्य नी
कुतस्तत्र कारणाना व्यापारोऽथ तत्रापि कारणव्यापारो भवेत् खरशृगादावपि व्य
रन् कारणानीति। तदेव विनाशहेतोरकिंचित्करत्वात् स्वहेतुतएवाऽनित्यताक्रोडीकृ
तानां पदार्थानामुत्पत्तेर्विघ्नहेतोश्चाभावात् क्षणिकत्वमवस्थितमिति। तुशब्द पूर्वादिभ्यो
ऽस्य व्यतिरेकप्रदर्शक। तमेव श्लोकपश्चार्धेन दर्शयति। (असोअणसोइति)। ते
हि बौद्धा यथाऽऽत्मषष्ठवादिन सांख्यादयो भूतव्यतिरिक्तमात्मानमभ्युपगतवतो यथा
चार्वाका भूताऽव्यतिरिक्त चैतन्याख्यमात्मानमिष्टवतस्तथा नैवाहुर्नैवोक्तवत। तथा
हेतुभ्योजातो हेतुक। कायाकारपरिणतभूतनिष्पादितइति यावत्। तथाऽहेतुको
ऽनाद्यपर्यवसितत्वान्नित्यइत्येवमात्मान ते बौद्धा नाऽभ्युपगतवत इति॥ १७॥
तथाऽपरे बौद्धाश्चतुर्धातुकमिद जगदाहुरित्येतद्दर्शयितुमाह। (पुढवीत्यादि) पृथि
वी धातुरापश्च धातुस्तथा तेजो वायुश्चेति धारकत्वात्पोषकत्वाच्च धातुत्वमेषा। (एगडत्ति)।
यदैते चत्वारोप्येकाकारपरिणतिं बिभ्रति कायाकारतया तदा जीवव्यपदेशमश्नुवत।
तथाचोचु। चतुर्धातुकमिद शरीर न तद्व्यतिरिक्तआत्मास्तीति। (एवमाहसुअवरेत्ति)
अपरे बौद्धविशेषा एवमाहुरभिहितवतइति। कचिज्जाणगा इतिपाठस्तत्राप्ययमर्थो जा

आत्मनश्च शरीरव्यतिरिक्तस्य साधितत्वाच्चतुर्भूतकमात्रं शरीरमेवेदमित्येतडुन्मत्तप्रल पितमपकर्णयितव्यमित्यलं प्रसंगेनेति ॥ १८ ॥

अगारमावसंतावि, अरणा वा वि पव्वया ॥ इमं दरिसणमावणा सव्वडुक्का विमुच्चई ॥१९॥ ते णावि संधिं णच्चा णं, न ते धम्मविउं जणा ॥ जे ते उ वाइणो एवं,न ते उहृतराहिया ॥२०॥ ते णावि संधिं णच्चा णं, न ते धम्मविउं जणा ॥ जे ते उ वाइणो एवं,न ते संसारपारगा ॥२१॥ ते णावि संधिं णच्चा णं,न ते धम्मविउं जणा ॥ जे ते उ वाइणो एवं, न ते गप्नस्स पारगा ॥२२॥ ते णावि संधिं णच्चा णं, न ते धम्म विउं जणा ॥ जे ते उ वाइणो एवं, न ते जम्मस्स पारगा ॥ २३ ॥ ते णावि संधिं णच्चा णं, न ते धम्मविउं जणा ॥ जे ते उ वाइणो एवं, न ते डुक्खस्स पारगा ॥ २४ ॥ ते णावि संधिं णच्चा णं, न ते धम्म विउं जणा ॥ जे ते उ वाइणो एवं, न ते मारस्स पारगा ॥ २५ ॥

अर्थ–हवे ए पूर्वोक्त दर्शनी पोतपोताना दर्शननेविषे मुक्तीनुं कारण जे कहेछे ते देखाडेछे ते उपर कहेछेके ते सर्व दर्शनी अगार के० घर तेनेविषे आवसंतावि के० निवास करनार एटले गृहस्थ, वा के० अथवा, अरणा के० अरण्यवासी तापसादिक अथवा पव्वयाके० प्रव्रजितशाक्यादिक ते एम भावना करेछे के, इमंदरिसणमावणा के० अमारा दर्शने आवणा एटले आव्या एटले जे कोई अमे कहिये तेने माने तो, ते सव्वडु क्काविमुच्चईके०सर्व डुःखथकी मुक्त थाय एवी रीते पोतपोताना दर्शननेविषे सर्व कोई मुक्ति देखाडेछे ॥१९॥ हवे ग्रंथकार कहेछे तेणाविके० ते पंचभूतवादी प्रमुख दर्शनीउ तेने नैव के० नथी संधिके० छिद्र एटले ज्ञानावरणादिक कर्म तेनो विपर्ययभाव ते संधि जाणवी ते अर्हीं ज्ञानावरणादिक कर्मना विवरण तेने णच्चाणंके० अजाणताथका बापडा डुःख थी मूकाववाने अर्थे सावधान थयाछे ते कारणे ते जणाके० जन एटले लोक, नतेध म्मविउंके० क्षांत्यादिक दशप्रकारनो जे यतिधर्म तेना जाण नथी जेतेउवाइणो एवंके० ते वादी जे नास्तिकमति प्रमुख पूर्वे कह्या, ते असमंजस वचनना बोलनारछे माटे नतेउहृतराहिया के० ते संसाररूप उघ एटले प्रवाह, अर्थात् संसारसमुद्रना तारना र ते नथी एम श्रीतीर्थंकरे तथा गणधरे कह्युंछे ॥ २० ॥ ते पंचभूतवादी प्रमुख कर्म आववाना स्थानक जाणता नथी, वली ते जनके० लोक क्षांत्यादिक दशविध यतिधर्मने जाणता नथी एवा ते पूर्वे कह्या जे नास्तिकप्रमुख वादी ते संसारना पा

त् कारणाना व्यापारएवानुपपन्न कुत क्षणिकानित्यस्य कारणेन्य उत्पादइति।
वेक्षणाडुत्तरक्षणोत्पादे सति कार्यकारणनावो नवतीत्युच्यते तदयुक्त। यतोसौ
विनष्टो वोत्तरक्षण जनयेदविनष्टो वा। न तावद्विनष्टस्तस्यासत्वाज्जनकत्वानुपपत्तेः।
प्यविनष्ट उत्तरक्षणकाले पूर्वक्षणव्यापारसमावेशात्क्षणनंगनंगापत्ते। पूर्वक्षणो
स्तूत्तरक्षणमुत्पादयिष्यति तुलातयोर्नामोन्नामवदितिचेत्। एव तर्हि क्षणयो
लताश्रिता। तथाहि। यासौ विनश्यदवस्था साऽवस्था तु निन्ना।
रिपत्सोस्ततश्च तयोर्विनाशोत्पादयोर्योगपद्याभ्युपगमे तर्द्धर्मिणोरपि पूर्वोत्तरक्षणयोरेक
कालावस्थायित्वमिति। तद्नेतानभ्युपगमे च विनाशोत्पादयोरवस्तुत्वापत्तिरिति।
क्त जातिरेव हि नावानामित्यादि। तत्रेदमनिधीयते। यदि जातिरेवोत्पत्तिरेव
पदार्थानामनावहेतुस्ततोऽनावकारणस्य सन्निहितत्वेन येन।
ऽथोत्पत्त्युत्तरकाल विनाशो नविष्यतीत्यन्युपगम्यते। तथा सति उत्पत्तिक्रियाकाले त
तत्वात्पश्चाच्च नवन्नतरायएव नवति न नूयसा कालेनेति। किमत्र नियामक विनाशे
व इतिचेत्। यतश्चक्त निर्हेतुकत्वाद्विनाशस्य स्वनावानुवधितेत्येतदप्ययुक्त। यतो घ
ना मुजरादिव्यापारानरमेव विनाशो नवन् लक्ष्यते। ननु चोक्तमेवात्र तेन मुजरादिना
दे किं क्रियत इत्यादि। सत्यमुक्त। इदमयुक्ततूक्त तथाह्यनावइति। नत्र्य
ष्प द्वयेन योयं विकल्प पक्षद्वयेपि च दोष प्रदर्शित सोऽदोष एव। यत घ
कपालाख्यनावांतरकारणे घटस्य च परिणामानित्यतया तद्रूपतापत्ते कथ
टादीन् प्रत्यकिंचित्करत्व। प्रसज्यप्रतिषेधस्तु नाव न करोतीति प्रतिषेधात्मकोत्र
यते। किंतर्हि प्रागनाव,प्रध्वसानावे,तरेतरा,त्यतानावाना चतुर्णा मध्ये
नावएवेहाश्रीयते। तत्र च कारकातरणा व्यापारोनवत्येव। यतोसौ वस्तुत पर्या
योऽवस्थाविशेषो न नावमात्र। तस्य चाऽवस्थाविशेषस्य नावरूपत्वात्पूर्वोपमर्देन च
प्रवृत्तत्वाद्यएव कपालादेरुत्पाद सएव घटादेर्विनाशइति विनाशस्य सहेतुकत्वमवस्थि
त। अपिच कादाचित्कत्वेन विनाशस्य सहेतुकत्वमवसेयमिति। पदार्थव्यवस्थार्थ चाऽव
श्यमनावचातुर्विध्यमाश्रयणीय। तडुक्त। कार्यद्रव्यमनादि स्या,त्प्रागनावस्य निन्हवे॥
प्रध्वसस्य च नावस्य, प्रच्यवेऽनतता व्रजेत्॥ १॥ सर्वात्मक तदेक
क्रमे इत्यादि। तदेव क्षणिकस्य विचाराक्षमत्वात्परिणामानित्यपक्षएव ज्यायानिति। एव
च सत्यात्मा परिणामी ज्ञानाधारो नवातरयायी नूतेन्य कथचिदन्यएव शरीरेण सहा
ऽन्योन्यानुवेधादनन्योपि। तथा सहेतुकोपि नारकतिर्यङ्मनुष्यामरनवोपादानकर्मणा तथा
तथा विक्रियमाणत्वात् पर्यायरूपतयेति। तथात्मस्वरूपाप्रच्युतेर्नित्यत्वादहेतुकोपीति।

भ्यो डुःखेभ्यो विमुच्यंते । सकलद्वंद्वविनिर्मोक्तं मोक्षमास्कदंतीत्युक्तं भवति ॥ १९ ॥ इदानीं तेषामेवाऽफलवादित्वाविष्करणायाह । (तेणावीत्यादि) ते पंचभूतवाद्याद्या नापि नैव संधि छिद्रं विवरं । सचद्रव्यभावभेदाद्वेधा । तत्र द्रव्यसंधि कुड्यादेर्भावसंधिर्ज्ञानावरणादिकर्मविवररूपस्तमज्ञात्वा ते प्रवृत्ता । णमिति वाक्यालंकारे । यथा आत्मकर्मणो संधिर्द्विधा भावलक्षणोभवति । तथा अबुधाइव ते वराका डुःखमोक्षार्थमभ्युद्यताइत्यर्थ । यथा तएवभूतास्तथा प्रतिपादित लेशत प्रतिपादयिष्यतेच । यदि वा संधान संधिरुत्तरोत्तरपदार्थपरिज्ञान तदज्ञात्वा प्रवृत्ताइति । यतश्चैवमतस्ते न सम्यक्धर्मपरिच्छेदे कर्तव्ये विद्वांसो निपुणा जना पंचभूतास्तित्वादिवादिनो लोकाइति । तथाहि । क्षांत्यादिकोदशविधो धर्मस्तमज्ञात्वैवान्यथा च धर्म प्रतिपादयति । यत्फलाभावाच्च तेषामफलवादित्व तदुत्तरग्रंथेनोद्देशकपरिसमाप्त्यवसानेन दर्शयति । ये तेत्विति । तुशब्दश्चशब्दार्थे यद्त्यस्यानंतर प्रयुज्यते । येच ते एवमनंतरोक्तप्रकारवादिनो नास्तिकादयोर्उघोभवौघ संसारस्तत्तरणशीलास्ते न भवतीति श्लोकार्थ ॥ २० ॥ तथा न ते वादिन संसार, गर्भ, जन्म, डुःख, माराविपारगा भवतीति ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥

णाणाविहाइ डुःखाइ, अणुहवंति पुणो पुणो ॥ ससारचक्कवालंमि, मच्चुवाहिजराकुले ॥२६॥ उच्चावयाणि गछंता, गप्भमेस्संति णंतसो ॥ नायपुत्ते महावीरे, एवमाह जिणोत्तमे ॥२७॥ इति वेमि पढममज्झयणं पढमो उद्देसो समत्तो ॥ १ ॥ १ ॥

अर्थ–वली ते जे स्थितिने पामे ते कहेछे णाणाविहाइडुःखाइ के० नानाविध बहुप्रकारे छेदन भेदन ताडनादिक डुःखोनें अणुहवंतिपुणोपुणो के० वली वली अनुभवेछे परंतु ते डुःख क्यां पामे ? तोके संसार चक्कवालंमिके० संसारचक्रवालने विषे पामे ते संसार केवो डुस्तरछे तो के, मच्चुवाहिजराकुले के० मृत्यु, व्याधि अने जरा तेणे करी आकुलव्याकुल छे एवा संसारमांहे परिभ्रमण करता अनंतो काल डुःखी थाय ॥२६॥ ते दर्शनीउ वली असमंजस थका सूत्रविरोधना बोलनारा उच्चावयाणिगछंता के० उंचे नीचे स्थानके परिभ्रमण करतां आगामिक काले गप्भमेस्संतिणंतसोके० अनंता गर्भनां डुःख पामसे एवमाहके० एवु वचन, नायपुत्तेमाहावीरेके० ज्ञातपुत्र श्रीमहावीरदेव जिणोत्तमेके० जिनोत्तम तेणे कह्यु तेम अमे पण कहिये छैए ॥२७॥ इतिप्रथमाध्ययनस्य प्रथमोद्देशक समाप्त ॥ ए प्रथम उद्देशकमां भूतवादिप्रमुख परवादीना मत कह्या

॥ दीपिका–ते यत्प्राप्नुवंति तदाह । (णाणेति) । नानाविधान्यनेकप्रकाराणि डुःखानि

रगामी नहोय ए गाथानां पहेला त्रण पदनो अर्थ प्रथम कह्यो तेप्रमाणेज
जे एम बोले ते गर्जना पारगामी नहीं, एटले अनता गर्जनां दुःख सहन करे
वली जे एम बोले ते जन्मना पारगामी नथी अर्थात् अनता जन्मनु दुःख
रे ॥ २३ ॥ तथा जे एम बोले ते दुःखना पारगामि न होय, अनतो काल
रूप ससारना दुःख सहन करे. ॥ २४ ॥ तथा जे एम बोले ते मरणना
समजवा, अर्थात् अनतिवार मरण पामे ॥२५॥

॥ दीपिका–अथ पूर्वोक्तसर्वेङमतीनामफलत्व स्वदर्शनागीकार च दर्शयन्नाह
गारेति) अगार गृहमावसतस्तिष्ठतो गृहस्था आरण्या वा तापसादय
क्यादय । अपि सनावने । इद ते सनावयंति । यथा इदमस्मदीयं दर्शन मतमापन्ना
श्रिता सर्वेडुःखेन्यो जीवाविमुच्यतइति ते वदति ॥ १९ ॥ अथ तेषां
तेइति पड्नि । ते पच पचनूतवाद्याद्या सधिज्ञानाचरणादिकर्मविवररूपं नापि
ज्ञात्वा अज्ञात्वेऽत्यर्थ । णवाक्यालकारे । यथा जीवकर्मणो सधिर्जिन्नत्व नवति
था ज्ञात्वा मोक्षार्थं प्रवृत्ता इत्यर्थ ॥ सधिर्द्विविध । इव्यसधि कुडयादे । नावसधि
विवररूपस्तमुत्तरोत्तरपदार्थपरिज्ञान वा संधिस्त मज्ञात्वा प्रवृत्ता । ते किंनूताइत्याह।(
तेत्ति)। ते जना लोका न सम्यक्धर्मविद । येतु ते। एवविधवादिनस्ते। उंघो नवौघ
स्तत्तरणशीला न आख्याता जिनै ॥२०॥ अग्रेतना पंचश्लोका एवमेव व्याख्येया।
ससार १ गर्न २ जन्म ३ दुःख ४ मारपारगा न नवतीति ज्ञेय ॥२१॥२२॥२३॥२४॥२

॥ टीका–सांप्रतं पचनूतात्माऽद्वैततज्जीवतच्छरीराकारकात्मषष्ठक्षणिकपचस्कंधवादिना
मफलवादित्व वक्तुकाम सूत्रकारस्तेषा स्वदर्शनफलाच्युपगम दर्शयितुमाह । (अगारेत्या
दि) अगार गृह तदावसतस्तस्मिंस्तिष्ठतो गृहस्थाइत्यर्थ । आरण्या वा तापसादय
प्रव्रजिताश्च शाक्यादय । अपि सनावने । इद ते सविनावयंति । यथेदमस्मदीयं दर्शन
मापन्नाआश्रिता सर्वेडुःखेन्यो विमुच्यते । आर्षत्वादेकवचन सूत्रे कृतं । तथाहि । पं
चनूततज्जीवतच्छरीरवादिनामयमाशयोयथेदमस्मदीयं दर्शन ये समाश्रितास्ते गृहस्था
सत सर्वेन्य शिरस्तुडमुडन,दडाऽजिनजटाकाषायचीवरधारण, केशोल्लुंचन, नाग्न्यस्तपश्च
रण,कायक्लेशरूपेन्यो दुःखेन्यो मुच्यंते । तथा हु । तपासि यातनाश्चित्रा , सयमो
न ॥ अग्निहोत्रादिक कर्म, बालक्रीडेव लक्ष्यत इति । सांख्यादयस्तु मोक्षवादिनएव
सनावयंति यथा । येऽस्मदीयं दर्शनमकर्तृत्वात्माऽद्वैतपचस्कंधादिप्रतिपादकमापन्ना प्रव्र
जितास्ते सर्वेन्यो जन्मजरामरणगर्नपरपराऽनेकशारीरमानसातितीव्रतराऽसातोदयरूपे

ल ईश्वर स्वनावादिकनु करेलु क्याथी होय जो स्वयकृत सुख डु ख छे, तो सर्व जीव व्यापारादिक सरिखो व्यापार करता सर्व सरखाज केम नथी थता माटे पुरुषाकारे काइज नथाय, अने जो काल ईश्वरादिकना करेला सुख डु ख होय तो जगतनी विचित्र ता केम थाय? तेमाटे काल ईश्वरादिकनु करेलु पण सुख डु ख थतु नथी एटले जीव ने सुहवाजइवाडुककके० सुख अथवा डुख जे छे ते केवा छे, तोके सेंद्रिय वा असेंद्रियं के० सेंद्रिक अथवा असेंद्रिक छे तेमा स्रग् चदन विनितादिक तेथकी उपनु जे सुख तेने सेंद्रिक कहिये अने अतरग आनदरूप जे सुख तेने असेंद्रिक कहिये एवीरीते बे प्रकारे डु ख पण जाणवु, तेमा एक वध, बधन, ताडनादिक क्रियाना करवाथीकरी अने बीजु शूलज्वरादिरूप जाणवु, एटले एक कारणे निष्पन्न अने बीजु स्वाजाविक नि ष्पन्न छे ॥ २ ॥ ए सुखडु ख जो कोइए कस्या नथी, तो ए जीव सुखी डु खी केम थायछे, ते कहेछे सयकडनअएणेहिवेदयति पुढोजियाके०सय एटले पोतानु करेलु अथ वा अनेरानु करेलु जे सुख डु ख ते जीव वेदतो नथी किंतु सगइअतलहातेसिके० नवित व्यतानु करेलु तेहिज जीवने सुख डु ख उपजेछे तथाच तन्मत। प्राप्तव्यो नियतिबला श्रयेण योऽर्थ, सोवश्य नवति नृणा शुनोशुनो वा ॥ नूताना महति कृतेपिहि प्रयत्ने, ना नाव्य नवति न नाविनोस्ति नाश ॥ १ ॥ इति वचनात् ॥ ३ ॥ एप्रमाणे नियतवादी ना मतनो अनिप्राय दर्शाव्यो

॥ दीपिका–उक्त प्रथमोद्देशक । अथ द्वितीयोद्देशक कथ्यते । तस्यायमर्थसबंध । आद्योद्देशके नूतवादादिमतं प्रदर्श्य निराकृतं । इहाप्यवशिष्ट तदेवोपदर्श्य निराक्रियत इत्यनेन सबधेनागतस्यास्योद्देशकस्य सूत्र यथा । (आघायमिति) । पुन एकेषा नियतिवा दिनामेतदाख्यात । आख्यातमित्यत्र नावे क्तप्रत्यय।तद्योगेन वा क्लीवइति कर्तरिषष्ठी। तत श्च नियतिवादिनिरिदमाख्यातमित्यर्थ । किं तदित्याह । (उववएणत्ति) उपपन्ना युक्तया घट माना पृथक् अनेके जीवा । जीवसत्वे पचनूततच्छरीरवादिमतं निराकृत । पृथगित्यनेन आत्माऽद्वैतवादिनिरासश्च । तेऽनेके जीवा सुख डु ख देवनारकादिनवेषु वेदयत्यनुनवति अनेनाऽकर्तृवादो निरस्त (अडुवेत्ति)। अथवा लुप्यंते स्थानात् स्थानातर सक्राम्यते। ए तेनोपपातिकत्वमप्युक्त ॥ १ ॥ नियतिवादमतमेवाह श्लोकद्वयेन । (नतमिति) यत्ते प्राणिनिरनुनूयते सुख डु ख स्थानविलोपन वा न तत्स्वयमात्मना पुरुषकारेण कृतं डु ख। डु खस्यचोपलक्षणात्सुखमपि ग्राह्य । सुखडु खानुनव पुरुषकारकृतो न स्यादित्यर्थ । अनेन कालेश्वरस्वनावकर्मादिना च कुत कृतं । एमित्यलकारे। कालादिनिरपि न कृत मित्यर्थ । किंतु नियतेरेव निष्पद्यते सर्वमिति । तत सुख सेंद्रिक सिद्धो मोक्षे नव सं

अनुनवति । पुन पुन ससारचक्रवाले व्याधिमृत्युजरानिराकुले व्याते ॥
ङ खफलमुपसहार चाह । (उच्चेति) । उच्चावचान्यधमोत्तमानि स्थानानि
मतोगर्नार्जनमेष्यति यास्यत्यनतश । (नायपुत्तेति) । ज्ञात
पुत्र श्रीमहावीरो जिन एवमुक्तवान् । इति ब्रवीमीति सुधर्मस्वामी जबूस्वामिन
॥ २७ ॥ इति श्रीसूत्ररुते द्वितीयांगे प्रथमाध्ययनेप्रथमोद्देशकव्याख्या सपूर्णा ॥

॥ टीका–यत्पुनस्ते प्राप्नुवति तद्दर्शयितुमाह (णाणाविहाइत्यादि)
बहुप्रकाराणि ङ खान्यासातोदयलक्षणान्यनुनवति पुन पुन । तथाहि नरकेषु
दारण,कुनीपाक,तप्ताय शाल्मलीसमालिंगनादीनि तिर्यक्षु च
तिसारारोपणक्षुत्तडादीनि । मनुष्येषु इष्टवियोगाऽनिष्टसयोगशोकाक्रदनादीनि देवेषु
नियोगेर्ष्याकिल्बिषिकत्वच्यवनादीन्यनेकप्रकाराणि ङ खानि ये एवनूता वादिनस्ते
पुन्येन समनुनवति। एतच्च श्लोकार्द्ध सर्वेपूत्तरश्लोकार्धेषु योज्यं। शेष सुगम
समाप्तिरिति ॥२६॥ नवरमुच्चावचानीति अधमोत्तमानि नानाप्रकाराणि वासस्थानानि
तीति गच्छतोच्चमतोगर्नार्जनमेष्यंति यास्यत्यनतशो निविच्छेदमिति ब्रवीमीति
जबूस्वामिन प्रत्याह । ब्रवीम्यह तीर्थकराज्ञया न स्वमनीषिकया सचाह ब्रवीमि येन
तीर्थकरसकाशाछ्रुतं । एतेनच क्षणिकवादिनिरासो इष्टव्य ॥२७॥ इति
ध्ययने प्रथमोद्देशक समाप्त ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

अथ प्रथमाध्ययने द्वितीयउद्देशक प्रारन्यते

आघाय पुण एगेसि, उववन्ना पुढो जिया ॥ वेदयति सुह ङ ख, अङ
वा लुप्पति ठाणउ ॥ १ ॥ न त सय कड डुक्क, कउ अन्नकड च ण॥सुह
वा जइ वा डुख, सेहिय वा असेहिय ॥ २ ॥ सय कड न अन्नेहि,
वेदयति पुढो जिया ॥ सगइअ त तहा तेसि, इहमेगेसि आहिअ ॥३॥

अर्थ–पुणके० वली एगेसिके० एक नियतवादिने मते, आघायके० एम कह्युछे ए
टले तेनो जे अनिप्राय छे ते कहेछे उववन्नापुढोजियाके० पृथक् पृथक् नारकादिकने
नवे जे जीवछे, ते पोतपोताना देहस्थित थका सुहडुक्क के० सुखङ खने वेदयंतिके०
वेदेछे अडुवाके० अथवा ते प्राणीउं सुख ङ ख अनुनवता ठाणउके० ते स्थानकथी
पोतानु आयुष्य पूर्णकरीने लुप्पतिके० स्थानांतरे सक्रमे एम नियतवादी कहेछे
॥ १ ॥ वली पण वेगाथाए नियतवादीनां मतनो अनिप्राय कहेछे जे ते प्राणी
सुख ङ ख अनुनवेछे, एक स्थानक थकी बीजे स्थानके उपजेछे, नतंसयंकडंडुक्कके०
ते ङ खादिक ते जीवनु पोतानु कीधेलु नथी तेम कउअन्नकडचण के० अनेरा का

च पृथक्पृथक्नारकादिनवेषु शरीरेषु चैत्यनेनाऽप्यात्माऽद्वैतवादिनिरासोऽवसेय । के पुन स्ते पृथगुपपन्नास्तदाह 'जीवा प्राणिन सुखड खभोगिन '। अनेन च पचस्कधातिरिक्तजीवा भावप्रतिपादकबौद्धमताऽपक्षेप कृतोऽद्रष्टव्य । तथा' ते जीवा पृथक्पृथक् प्रत्येकदेहे व्य वस्थिता सुख डु ख च वेदयत्यनुभवति । न वय प्रतिप्राणिप्रतीत सुखड खानुभव निह्नु महे'। अनेन चाऽकर्तृवादिनोनिरस्ताभवति । अकर्तर्यविकारिण्यात्मनि सुखड खानुभवा नुपपत्तेरिति भाव । तथैतदस्माभिर्नोऽपलप्यते । अडुवेत्यथवा । तेप्राणिन सुख डु ख चानुभवति विलुप्यते उच्छियते स्वायुष प्रच्याव्यते स्थानात्स्थानातर सक्राम्यत इत्यर्थ । ततश्चौपपातिकत्वमप्यस्माभिस्तेषा न निषिध्यते इतिश्लोकार्थ ॥ १ ॥ तदेव पचभूता स्तित्वादिवादिनिरास कृत्वा यत्तैर्नियतिवादिभिराश्रीयते तच्छ्लोकद्वयेन दर्शयितुमाह ।

(नतसयमित्यादि) यत् ते प्राणिभिरनुभूयते सुख डु ख स्थानविलोपन वा न तत्स्वय मात्मना पुरुषकारेण कृत निष्पादित डु खमिति । कारणेकार्योपचारात् । डु खकारणमेवो क्त । अस्य चोपलक्षणत्वात् सुखाद्यपि ग्राह्य । ततश्चेदमुक्त भवति । योय सुखड खानुभव सपुरुषकारकृतकारणजन्यो न भवतीति । तथा कुतोऽन्येन कालेश्वरस्वभावकर्मादिना च कृ तं भवेत् । णमित्यलकारे । तथाहि । यदि पुरुषकारकृतं सुखाद्यनुभूयेत तत सेवकवणि क्कर्षकादीना समाने पुरुषकारे सति फलप्राप्तिवैसदृश्य फलप्राप्तिश्च न भवेत् । कस्यचित्तु से वादिव्यापाराभावेपि विशिष्टफलावाप्तिर्दृश्यत इत्यतो न पुरुषकारात्किंचिदासाद्यते किं त ह्निनियतेरेवेत्येतच्च द्वितीयश्लोकातेऽभिधास्यते । नापि काल कर्ता । तस्यैकरूपत्वाज्जग ति फलवैचित्र्यानुपपत्ते । कारणभेदे हि कार्यभेदोभवति नाभेदे । तथा ह्ययमेवहि भेदो भेदहेतुर्वा घटते । यडुत विरुद्धधर्माध्यास कारणभेदश्च । तथेश्वरकर्तृकेपि सुखड खे नभ वत । यथाऽसावीश्वरो मूर्तोऽमूर्तो वा । यदि मूर्तस्तत प्राकृतपुरुषस्येव सर्वकर्तृत्वाभाव । अथाऽमूर्तस्तथा सत्याकाशस्येव सुतरा निष्क्रियत्व । अपिच यद्यसौ रागादिमास्ततो ऽस्मदाद्यव्यतिरेकाद्विश्वस्याकर्तैव । अथासौ विगतरागस्ततस्तत्कृत सुभगडुर्भगेश्वरद रिद्रादिजगद्वैचित्र्य न घटां प्राचति ततोनेश्वर कर्तेति । तथा स्वभावस्यापि सुखडु खादिकर्तृत्वानुपपत्ति । यतोऽसौ स्वभाव पुरुषाद्भिन्नोऽभिन्नोवा । यदि भिन्नोन पुरुषा श्रिते सुखड खे कर्तुमल तस्माद्भिन्नत्वादिति । नाप्यभिन्नोऽभेदे पुरुषएव स्यात्तस्य चाक र्तृत्वमुक्तमेव । नापि कर्मण सुखडु ख प्रति कर्तृत्व घटते । यतस्तत्कर्म पुरुषाद्भिन्नमभि न्न वा भवेत् । अभिन्न चेत्पुरुषमात्रतापत्ति कर्मणस्तत्र चोक्तो दोष । अथ भिन्न तत्किं स चेतनमचेतन वा । यदि सचेतन एकस्मिन् काये चैतन्यद्वयापत्ति । अथाचेतन तथा सति कुतस्तस्य पाषाणखडस्येवास्वतत्रस्य सुखडु खोत्पादनप्रति कर्तृत्वमित्येतच्चोत्तरत्र व्यासेन प्रतिपादयिष्ये इत्यल प्रसगेन । तदेव सुख सैद्धिक सिद्धावपवर्गलक्षणाया

द्धिक । यदिवा डु खमसैद्धिकं सांसारिक । अथवा सैद्धिकमसैद्धिकं च सुखं
यदनागनाद्युपनोगक्रियासिद्धो नव सैद्धिक । आतर सुखमानदरूपमसैद्धिकं ।
सैद्धिकमसैद्धिक च डु ख यथा । कशात्ताडनाकनादिक्रियासिद्धो नव सैद्धिक ।
तिशूलादिरूपमगोत्नमसैद्धिक डु ख । एतडुनयमपि सुख डु ख च नपुरुपकारकृतं।
न्यै कालादिनि कृतं वेदयत्यनुनवति पृथक्जीवा । कथ तर्हि
स्यादित्याह् । (सगइअति) । सम्यक् स्वपरिणामेन गतिर्यस्या यदा यत्र
वन सा सगतिर्नियतिस्तस्यानव सागतिक नियतिकृतमित्यर्थ । २
नुनववादे एकेषा नियतिवादिनामिदमाख्यातं । यडुक्त ते ।
योर्थ ,सोऽवश्यं नवति नृणा शुनोऽशुनो वा॥ नूताना महति कृतेपि हि प्रयत्ने,
नवति न नाविनोस्ति नाश इति ॥ ३ ॥

॥ टीका–उक्त प्रथमोदेशकस्तदनु द्वितीयोऽनिधीयते । तस्य चायमनिसबंध ।
ऽनतरोद्देशके स्वसमयपरसमयप्ररूपणाकृता ।
ते । यदि चानतरोद्देशके नूतवादादिमतं प्रदर्श्य तन्निराकरण कृतं । तदिहापि
नियतिवाद्यादिमिथ्यादृष्टिमतान्युपदर्श्य निराक्रियंते । अथवा प्रागुद्देशकेऽन्यधायि
बधन बुध्येत तच्च त्रोटयेदिति तदेव च बधन नियतिवाद्यनिप्रायेण न
प्रदर्श्यते । तदेवमनेन सबधेनायातस्यास्योद्देशकस्य चत्वार्यनुयोगद्वाराणि व्यावर्ण्य
नुगमेऽस्खलितादिगुणोपेतं सूत्रमुच्चारणीयं । तच्चेद । (आघायमित्यादि) अस्य
रपरपरसूत्रे सबधोवक्तव्यस्तत्राऽनतरसूत्रसबधोय । इहानतरसूत्रे इदमनिहितं यथा।
पंचनूतस्कधादिवादिनोमिथ्यात्वोपहताऽतरात्मनोऽसद्ग्राहानिनिविष्टा परमार्थाऽव
बोधविकला सत ससारचक्रवाले व्याधिमृत्युजराकुले उच्चावचानि स्थानानि गच्चतो
गर्नमेष्यंत्यन्वेपयति वाऽनतशइति । तदिहापि नियत्यज्ञानिज्ञानचतुर्विधकर्मोपच
यवादिना तदेव ससारचक्रवालन्रमणगर्नान्वेपण प्रतिपाद्यते । परपरसूत्रसबधस्तु (बु
ज्झेज्जेत्यादि) । तेन च सहाय सबधस्तत्र बुध्येतेत्येतत् प्रतिपादितमिहापि यदाख्यातं नि
यतिवादिनिस्तद्बुध्येतेत्येव मध्यसूत्रैरपि यथासनव सबधो लगनीयइति । तदेव पूर्वोत्तरसं
बधसबद्धस्यास्य सूत्रस्याऽधुनार्थ प्रतन्यते । पुन शब्द पूर्वादिन्यो विशेष दर्शयति ।
नियतिवादिनां पुनरेकेषामेतदाख्यात । अत्र चाविवक्षितकर्मकाअपि अकर्मका नवती
ति ख्यातेर्धातोर्नावे निष्ठाप्रत्ययस्तद्योगे कर्तरि षष्ठी । ततश्चायमर्थस्तैर्नियतवादिनि पुन
रिदमाख्यातं तेषामयमाशयइत्यर्थ । तद्यथा । उपपन्नो-युक्त्या घटमानकाइत्यनेन च पं
चनूततज्जीवतच्छरीरवादिमतमपाकृतं नवति। युक्तिस्तु लेशात प्राग्दर्शितेव। प्रदर्शयिष्यते

र्च पृथक्पृथक्नारकादिनवेषु शरीरेषु चेत्यनेनाऽप्यात्माऽद्वैतवादिनिरासोऽवसेय । के पुन स्ते पृथगुपपन्नास्तदाह।जीवा प्राणिन सुखदुःखभोगिन '। अनेन च पंचस्कंधातिरिक्तजीवा भावप्रतिपादकबौद्धमताऽपक्षेप कृतोऽष्टव्य । तथा ते जीवा पृथक्पृथक् प्रत्येकदेहे व्य वस्थिता सुख दुःख च वेदयत्यनुभवति । न वय प्रतिप्राणिप्रतीत सुखदुःखानुभव निहु महे'। अनेन चाऽकर्तृवादिनोनिरस्ताभवति । अकर्तर्यविकारिण्यात्मनि सुखदुःखानुभवा नुपपत्तेरिति भाव । तथैतदस्माभिर्नोऽपलप्यते । अदुवेत्यथवा । ते प्राणिन सुख दुःख चानुभवति विलुप्यते चक्षियते स्वायुष प्रच्याव्यंते स्थानात्स्थानातर सक्राम्यत इत्यर्थ । ततश्चौपपातिकत्वमप्यस्मानिस्तेषा न निषिध्यते इतिश्लोकार्थ ॥ १ ॥ तदेव पचभूता स्तित्वादिवादिनिरास कृत्वा यत्तेर्नियतिवादिनिराश्रीयते तच्छ्लोकद्वयेन दर्शयितुमाह ।

(नतसयमित्यादि) यत् तै प्राणिभिरनुभूयते सुख दुःख स्थानविलोपन वा न तत्स्वय मात्मना पुरुषकारेण कृत निष्पादित दुःखमिति । कारणेकार्योपचारात् । दुःखकारणमेवो क्त । अस्य चोपलक्षणत्वात् सुखाद्यपि ग्राह्य । ततश्चेदमुक्त भवति । योय सुखदुःखानुभव सपुरुषकारकृतकारणजन्यो न भवतीति । तथा कुतोऽन्येन कालेश्वरस्वभावकर्मादिना च कृ तं भवेत् । णमित्यलकारे । तथाहि । यदि पुरुषकारकृतं सुखाद्यनुभूयेत तत सेवकवणि क्कर्षकादीना समाने पुरुषकारे सति फलप्राप्तिवैसदृश्य फलप्राप्तिश्च न भवेत् । कस्यचित्तु से वादिव्यापाराभावेपि विशिष्टफलावाप्तिर्दृश्यत इत्यतो न पुरुषकारात्किंचिदासाद्यते किं त र्हि नियतेरेवेत्येतच्च द्वितीयश्लोकातेऽभिधास्यते । नापि काल कर्ता । तस्यैकरूपत्वाज्जग ति फलवैचित्र्यानुपपत्ते । कारणभेदे हि कार्यभेदोभवति नाभेदे । तथा ह्ययमेवहि भेदो भेदहेतुर्वा घटते । यदुत विरुद्धधर्माध्यास कारणभेदश्च । तथेश्वरकर्तृकेपि सुखदुःखे नभ वत । यथाऽसावीश्वरो मूर्तोऽमूर्तो वा । यदि मूर्तस्तत प्राकृतपुरुषस्येव सर्वकर्तृत्वाभाव । अथाऽमूर्तस्तथा सत्याकाशस्येव सुतरा निष्क्रियत्व । अपिच यद्यसौ रागादिमान्स्ततो ऽस्मदाद्यव्यतिरेकाद्विश्वस्याकर्तैव । अथासौ विगतरागस्ततस्तत्कृत सुभगदुर्भगेश्वरद रिद्रादिजगद्वैचित्र्य न घटां प्राचति ततोनेश्वर कर्तेति । तथा स्वभावस्यापि सुखदु खादिकर्तृत्वानुपपत्ति । यतोऽसौ स्वभाव पुरुषाद्भिन्नोऽभिन्नोवा । यदि भिन्नोन पुरुषा श्रिते सुखदुःखे कर्तुमल तस्माद्भिन्नत्वादिति । नाप्यभिन्नोऽभेदे पुरुषएव स्यात्तस्य चाक र्तृत्वमुक्तमेव । नापि कर्मण सुखदुःख स प्रति कर्तृत्व घटते । यतस्तत्कर्म पुरुषाद्भिन्नमभि न्न वा भवेत् । अभिन्न चेत्पुरुषमात्रतापत्ति कर्मणस्तत्र चोक्तो दोष । अथ भिन्न तत्किं स चेतनमचेतन वा । यदि सचेतन एकस्मिन काये चैतन्यद्वयापत्ति । अथाचेतन तथा सति कुतस्तस्य पाषाणखंडस्येवास्वतत्रस्य सुखदुःखोत्पादनप्रति कर्तृत्वमित्येतच्चोत्तरत्र व्यासेन प्रतिपादयिष्ये इत्यल प्रसगेन । तदेव सुख सैद्धिक सिद्धावपवर्गलक्षणायां

नव यदि वा डुख आसातोदयलक्षणमसैद्धिक सांसारिक । यदिवोजयमप्येतत्सुखं वा स्रक्चंदनागनाद्युपजोगक्रियासिर्द्धजव तथा कशाताडनांकनादिसिर्द्धा नव सैद्धिकं थाऽसैद्धिक सुखमांतरमानंदरूपमाकस्मिकमनवधारितबाह्यनिमित्त । एव डुःखमपि शिरोर्तिशूलादिरूपमगोह्यमसैद्धिक । तदेतडुजयमपि न स्वय पुरुषकारेण रुतं केनचित् कालादिना कृत वेदयत्यनुजवति पृथक्जीवा प्राणिनइति । कथ तर्हि नूदिति नियतिवादी स्वाभिप्रायमाविष्करोति (संगइयंति) सम्यक्स्वपरिणामेन यदा यत्र यत्सुखडुःखानुजवन सा संगतिर्नियतिस्तस्यां नव सांगतिक । यतश्चैव न पकारादिकृतं सुखडुःखाद्यतस्तत्तेषां प्राणिना नियतिकृतं सांगतिकमित्युच्यते । न् सुखडुःखानुजववादे एकेषां वादिनामाख्यात तेषामयमन्युपगम । तथाचोक्त । व्यो नियतिबलाश्रयेण योर्थ, सोऽवश्य नवति नृणां शुनोऽशुनो वा ॥ नूताना कृतेपि हि प्रयत्ने नानाव्य नवति न जाविनोस्ति नाश ॥ १ ॥ ३ ॥

एवमेयाणि जपता, बाला पमिश्रमाणिणो ॥ नियत्रानियय सत, अयाणता अबुद्धिया ॥ ४ ॥ एवमेगे उ पासबा, ते नुज्जो विप्पग ब्भिआ ॥ एव उवठिआ संता, ण ते डुःखविमोक्खया ॥ ५ ॥

अर्थ–हवे ग्रंथकार एने उत्तर आपेछे एवमेयाणिजपता के० एव पूर्वोक्त वचन यतवादाश्रित बोलता एवा ते बालाके०बाल अज्ञानी उता पोताने पमिश्रमाणिणोके० पमित करी मानता शा माटे मानेछे ते कहेछे के, नियत्रानिययके० ते अज्ञानी नियतिक त सुख डुःख अथवा अनियतिकृत पुरुषकारादिकनु करेलु एवु सुख डुःख ते सतं के० एकांते नवितव्यतायेज कर्यु एम कहेछे, ते कारणे तेने सुखडुःखादि कारणना अया णता अबुद्धियाके० अजाण, बुद्धिरहित कहिए अने जैनतो नियतिकृतपणे तथा अ नियतिकृतपणे ए बने प्रकारे सुख डुःख मानेछे एटले स्याद्वादी कहिए ॥ ४ ॥ हवे ते ने एवी प्ररूपणानु विपाक देखाडेछे एवमेगेके० एरीते कोइ एक नियतवादने विषे आ श्रित परवादीछे ते केवाछे, तोके पासबाके० पार्श्वस्थ एटले न्यायपक्षथकी बाहेर अथ वा पासबा एटले पाशके० कर्मनु बधन तेने विषे स्थित नुज्जो के० तेवली पुन विप्पगब्भियाके० विविध प्रगल्नित एटले अत्यत धिठाथका मुक्तिमार्गनेविषे प्रवर्त्ते, वली एवु कहेछे के अमे एवी क्रिया करता थका मुक्तिपामीशु परतु एवके० ए प्रकारे ते उ वठियासंताके० उठित एटले पोतानी क्रियानेविषे प्रवर्तता उता णतेडुःखविमोक्खयाके० पोताने डुःखथी मूकावनार न होय एटले मुक्ति पामेनही ॥५॥ एटले नियतवादी कह्या

॥ दीपिका–अस्योत्तरमाह । (एवमिति) । एवमेतानि पूर्वोक्तानि वचनानि जल्पतो

नियतिवादिनोबाला मूर्खा पंडितमानिन स्वयमपण्डिताअप्यात्मानं पंडितं मन्यमा ना । किंभूता नियताऽनियतमजानन्त किंचिन्नियतिकृतमवश्यंभावि नियतमात्मपुरु षकारेश्वरादिकृत किंचिदनियतमेव द्विविधं वस्तु अजानन्तोनियतिकृतमेवैकान्तेनाश्र यतोऽतएवाबुद्धिकाबुद्धिरहिताभवंति । पुरुषकारादयोपि वस्तूत्पादका । यत । न दैवमिति संचिन्त्य, त्यजेदुद्यममात्मन । अनुद्यमेन कस्तैलं तिलेभ्य प्राप्तुमर्हति ॥ १ ॥ इत्याद्यजानन्तोऽतएव निर्बुद्धिका ॥ ४ ॥ एतद्वादिनामपायमाह । (एवमिति) । एवमेके नियतिवादिन पार्श्वस्था युक्तिसमूहाद्बहिस्तिष्ठतीति पार्श्वस्था परलोकक्रियापार्श्वस्थावा । अथवा पाश कर्मबंधनं तत्र स्थिता । (तेभुज्जोत्ति) । ते भूयो विविध प्रगल्भिता धा र्ष्ट्योपेतानियतिवादमंगीकृत्यापि एवं पुनरपि स्वकार्यपरलोकक्रियासु प्रवर्तमानाअतएव धार्ष्ट्योपेतानते दुःखविमोचकाआत्मानं दुःखान्न मोचयति॥ ५॥ नियतिवादिनोगता॥

॥टीका–एवं श्लोकद्वयेन नियतिवादिमतमुपन्यस्यास्योत्तरदानायाह । (एवमेयाणि इत्यादि) एवमित्यनंतरोक्तस्योपप्रदर्शने । एतानि पूर्वोक्तानि नियतिवादाश्रितानि वचना नि जल्पतोऽनिदंयतो बालाअज्ञा सदसद्विवेकविकलाअपि सन्त पंडितमानिनआत्मा नं पण्डितं मन्तुं शीलं येषां ते तथा । किमिति तएवमुच्यतइति तदाह । यतो (निययानि ययसंतमिति) । सुखादिकं किंचिन्नियतिकृतमवश्यं भाव्युदयप्रापितं तथाऽनियतमात्म पुरुषकारेश्वरादिप्रापितं सत् नियतिकृतमेवैकान्तेनाश्रयन्तोऽजानाना सुखदुःखादिकारण मबुद्धिकाबुद्धिरहिताभवंतीति । तथाह्यार्हताना किंचित्सुखदुःखानि नियतितएव भव ति । तत्कारणस्य कर्मण कस्मिंश्चिदवसरेऽवश्यंभाव्युदयसद्भावान्नियतिकृतमित्युच्यते । तथा किंचिदनियतिकृतं च पुरुषकालेश्वरस्वभावकर्मादिकृतं तत्र कथंचित्सुखदुःखादे पु रुषकारसाध्यत्वमप्याश्रीयते । यत क्रियात फलं भवति क्रिया च पुरुषकाराऽयत्ता प्रव र्तते । तथाचोक्तं । न दैवमिति संचिन्त्य, त्यजेदुद्यममात्मन । अनुद्यमेन कस्तैलं तिलेभ्य प्राप्तुमर्हति ॥१॥ यत्तु समाने पुरुषव्यापारे फलवैचित्र्यं दूषणत्वेनोपन्यस्तं तददूषणमेव । यतस्तत्रापि पुरुषकारवैचित्र्यमपि फलवैचित्र्ये कारणं भवति । समाने वा पुरुषकारे य फलाभाव कस्यचिद्भवति सोऽदृष्टकृत । तदपि चास्माभि कारणत्वेनाश्रितमेव । तथा कालोपि कर्ता । यतो बकुलचंपकाशोकपुन्नागसहकारादीनां विशिष्टएव काले पुष्पफला युद्भवोन सर्वदेति । यच्चोक्तं । कालस्यैकरूपत्वाज्जगद्वैचित्र्यं न घटतइति तदस्मान् प्रति न दूषणं । यतोऽस्माभिर्न कालएवैकं कर्तृत्वेनाभ्युपगम्यतेऽपितु कर्मापि ततो जग द्वैचित्र्यमित्यदोष । तथेश्वरोपि कर्ता । आत्मैवहि तत्र तत्रोत्पत्तिद्वारेण सकलजगद्व्या पनादीश्वर । तस्य सुखदुःखोत्पत्तिकर्तृत्वं सर्ववादिनामविगानेन सिद्धमेव । यच्चात्र मूर्तामू

नव यदि वा दुःख आसातोदयलक्षणमसैद्धिक सासारिक। यदिवोनयमप्येतत्सुखं दुःखं वा स्रक्चन्दनाङ्गनाद्युपभोगक्रियासिद्धौनव तथा कशाताडनाकनादिसिद्धौ नव सैद्धिक। त थाऽसैद्धिक सुखमातरमानदरूपमाकस्मिकमनवधारितबाह्यनिमित्त। एव दुःखमपि ज्वर शिरोर्तिशूलादिरूपमगोद्भवमसैद्धिक। तदेतद्द्वयमपि न स्वयं पुरुषकारेण कृतं नाप्यन्येन केनचित् कालादिना कृत वेदयत्यनुभवति पृथक्जीवा प्राणिनइति। कथ तर्हि तत्तेषाम भूदिति नियतिवादी स्वाभिप्रायमाविष्करोति (सगइयति) सम्यक्स्वपरिणामेन गतिर्यस्य यदा यत्र यत्सुखदुःखानुभवन सा सगतिर्नियतिस्तस्या नव सागतिक। यतश्चैव न पुरु षकारादिकृत सुखदुःखायतस्तत्तेषा प्राणिना नियतिकृत सागतिकमित्युच्यते। इहास्मि न् सुखदुःखानुभववादे एकेषा वादिनामाख्यात तेषामयमभ्युपगम। तथाचोक्त। प्राप्त व्यो नियतिबलाश्रयेण योर्थ, सोऽवश्य नवति नृणा शुभोऽशुभो वा॥ भूतानां महति कृतेपि हि प्रयत्ने नाभाव्य नवति न भाविनोस्ति नाश॥ १॥ ३॥

एवमेयाणि जपता, बाला पंडिअमाणिणो॥ निययानियय सत, अयाणता अबुद्धिया॥ ४॥ एवमेगे उ पासत्था, ते भुज्जो विप्पग ब्भिआ॥ एव उवट्ठिआ सता, ण ते दुःखविमोक्खया॥ ५॥

अर्थ—हवे ग्रथकार एने उत्तर आपेछे एवमेयाणिजपता के० एव पूर्वोक्त वचन नि यतवादाश्रित बोलता एवा ते बालाके०बाल अज्ञानी छता पोताने पंडिअमाणिणोके० पंडित करी मानता शा माटे मानेछे ते कहेछे के, निययानियथके० ते अज्ञानी नियतिकृ त सुख दुःख अथवा अनियतिकृत पुरुषकारादिकनु करेलु एवु सुख दुःख ते सत के० एकाते भवितव्यतायेज कर्यु एम कहेछे, ते कारणे तेने सुखदुःखादि कारणना अया णता अबुद्धियाके० अजाण, बुद्धिरहित कहिए अने जैनतो नियतिकृतपणे तथा अ नियतिकृतपणे ए बने प्रकारे सुख दुःख मानेछे एटले स्याद्वादी कहिए॥ ४॥ हवे ते ने एवी प्ररूपणानु विपाक देखाडेछे एवमेगेके० एरीते कोइ एक नियतवादने विषे आ श्रित परवादीछे ते केवाछे, तोके पासत्थाके० पार्श्वस्थ एटले न्यायपक्षथकी बाहेर अथ वा पासत्था एटले पाशके० कर्मनु बधन तेने विषे स्थित भुज्जो के० तेवली पुन विप्पगब्भियाके० विविध प्रगल्भित एटले अत्यत धिठायका मुक्तिमार्गनेविषे प्रवर्त्ते, वली एवु कहेछे के अमे एवी क्रिया करता थका मुक्तिपामीशु परतु एवके० ए प्रकारे ते उ वट्ठियासताके० उद्वित एटले पोतानी क्रियानेविषे प्रवर्तता छता णतेदुक्खविमोक्खयाके० पोताने दुःखथी मूकावनार न होय एटले मुक्ति पामेनही॥५॥ एटले नियतवादी कह्या

॥ दीपिका—अस्योत्तरमाह। (एवमिति)। एवमेतानि पूर्वोक्तानि वचनानि जल्पतो

स्थानक जे वधनुं कारण ते स्थानक थकी असकिणो के० शका पामे नहीं ॥ ६ ॥ वली एहिज कहेहे के, ते मृगादिक जीव परियाणिआणि के० परित्राण जे रक्षानु स्थानक तेथी सकता के० शकाता अने पासिताणि असकिणो के० पाशना स्थानक थकी अण शकाता, असाणजयके० अजाणपणे अथवा जयें करी, सविग्गा के० व्याकुल थका सपजिति तहि तहि के० तेहिज तेहिज स्थानके जाय ज्या त्या पाशादिक माहेज पडे ॥ ७ ॥ वली एज दृष्टात दिपावेडे अह के० अथ एटले हवे तंके० ते मृगादिक जीव ते वागुरादिकनो जे बझपवेक्ष के० वधपाशादिकना स्थानक ने अहेवक्षस्सवाव ए के० नीचे अथवा उपर आक्रमीने जाय जो एम करे तो ते मुच्चेक्षपयपासाउके० पगना पाशथकी मूकाय एटले डुटो थाय परतु ते अनर्थ परिहरवानो उपाय तंके० ते, मंदे के० मद अज्ञानी, णदेहएके० नदेखे ॥ ८ ॥

॥ दीपिका—अथाज्ञानिमतमाह । (जविणोत्ति)। यथा जविनोवेगवत सतोमृगा परित्राणेन शरणेन वर्जितारहिता । अथवा परित्राण वागुरादिवंधन तेन तर्जितानय प्रापिता सतोऽशकितानि स्थानानि शकते जयभ्राता सतोनिर्जयान्यपि स्थानानि सजयतया मन्यते । शकितानि च वागुरादीन्यशकमाना सपर्ययतइत्युत्तरसूत्रेण स वध ॥ ६ ॥ परित्राण सजात येषु तानि परित्राणितानि शरनूतानि स्थानानि मूढ त्वात् शकमाना सजयानि मन्यमाना पाशितानि पाशयुक्तान्यशकमानास्तेषु शकाम कुर्वाणाअज्ञानेन जयेन च (सविग्गत्ति) सम्यक्व्याप्तास्तत्र तत्र वागुरादिके वधने स पर्ययते समेकीनावेन परिसमतादयते गच्छतीति ॥ ७ ॥ इममेव दृष्टातमाश्रित्याह । (अ हेति)। अथानतरमसौ मृगस्तत् (वक्षमिति) वधोवधनकारण रज्जुवागुरादिवध वा यदि उवेतोपरिगच्छेत वा अथवा वधस्याधोव्रजेत् तदा पदपाशात् वागुरादिवधनान्मुच्यते । एव सतमपि तमनर्थपरिहरणोपाय मदोजडोन देहतीति न पश्यतीति ॥ ८ ॥

॥ टीका—साप्रतमज्ञानिमतं दूषयितु दृष्टांतमाह । (जविणोइत्यादि) यथा जविनोवेग वत सतोमृगाआरण्या पशव परिसमतात् त्रायते रक्षतीति परित्राण तेन वर्जिता रहि ता परित्राणविकलाइत्यर्थ । यदिवा परित्राण वागुरादिवधन तेन तर्जितानय ग्रहि ता सतोनयोद्भ्रातलोचना समाकुलीनूतात करणा सम्यक्विवेकविकलाअशकनी यानि कूटपाशादिरहितानि स्थानान्यशकार्हाणि तान्येव शकते अनर्थोत्पादकत्वेन गृएहति । यानि पुन शकार्हाणि शका सजाता येषु योग्यत्वात्तानि शकितानि शकायोग्या नि वागुरादीनि तान्यशकिनस्तेषु शकामकुर्वाणास्तत्र तत्र पाशादिके सपर्ययतइत्युत्तरेण सबध ॥६॥ पुनरप्येतदेवाऽतिमोहाविष्करणायाह । (परियाणीत्यादि) परित्रायते इति परित्राण तज्जातं येषु तानि । यथा परित्राणयुक्तान्येव शकमानाअतिमूढत्वाद्विपर्यस्तवु

त्वादिदूषणमुपन्यस्त तदेवनूतेश्वरसमाश्रयणे दूरोच्छेदितमेवेति । स्वनावस्यापि कथंचि त्कर्तृत्वमेव । तथा ह्यात्मनउपयोगलक्षणत्वमसंख्येयप्रदेशत्व । पुज्ञलानां च मूर्तत्व ध र्माधर्मास्तिकाययोर्गतिस्थित्युपष्टंनकारित्वममूर्तत्व चेत्येवमादिस्वनावापादितं । यदपि चा त्मव्यतिरेकाऽव्यतिरेकरूप दूषणमुपन्यस्त तददूषणमेव । यत स्वनावआत्मनोऽव्यति रिक्त । आत्मनोपि च कर्तृत्वमन्युपगतमेव तदपि स्वनावापादितमेवेति । तथा कर्मापि कर्तृ नवत्येव । तद्धि जीवप्रदेशै सहान्योन्यानुवेधरूपतया व्यवस्थित कथंचिच्चात्मनोऽनि न्न त द्वशाच्चात्मा नरकतिर्यङ्मनुष्यामरनवेषु पर्यटन् सुखउखादिकमनुनवतीति । तदेवं नियत्यनियत्यो कर्तृत्वे युक्त्युपपन्ने सति नियतेरेव कर्तृत्वमन्युपगछतो निर्युक्तिकानवतीत्य वसेयम् ॥४॥तदेव युक्त्या नियतिवाद दूषयित्वा त द्वादिनामपायदर्शनायाह। (एवमेगेइत्या दि)। एवमितिपूर्वान्युपगमससूचक । सर्वस्मिन्नपि वस्तुनि नियतानियते सत्येके नियतमेवा ऽवश्यनाव्येव कालेश्वरादिनिराकरणेन निर्हेतुकतया नियतिवादमाश्रिता । तुरवधार णे । तएव नान्ये । किंविशिष्टा पुनस्ते इति दर्शयति । युक्तिकदंबकाद्बहिस्तिष्ठतीति पा र्श्वस्था परलोकक्रियापार्श्वस्थावा । नियतिपक्षसमाश्रयणात्परलोकक्रियावैयर्थ्य । य दि वा पाशइवपाश कर्मबंधन तच्चेह युक्तिविकलनियतिवादप्ररूपण तत्रस्थिता पाश स्था । अन्येप्येकांतवादिन कालेश्वरादिकारणिका पार्श्वस्था पाशस्थावा इष्टव्याइ त्यादि । ते पुनर्नियतिवादमाश्रित्यापि नूयोविविध विशेषेण वा प्रगल्निताधाष्टर्योपग ता परलोकसाधकासु क्रियासु प्रवर्तंते । धाष्टर्याश्रयण तु तेषा नियतिवादाश्रयणे स त्येव । पुनरपि तत्प्रतिपथिनीषु क्रियासु प्रवर्तनादिति ते पुनरेवमप्युपस्थिता परलोक साधकासु क्रियासु प्रवृत्ताअपि सतोनात्मउखविमोक्षका । असम्यक्प्रवृत्तत्वान्नात्मान उखाद्विमोचयति । गतानियतिवादिन ॥ ५ ॥

जविणो मिगा जहा संता, परिताणेण वज्जिआ ॥ असंकियाइ संकति, संकिआइ असंकिणो ॥६॥ परियाणिआणि संकता, पासिताणि असंकि णो ॥ अणाणनयसंविग्गा संपलिंति तहिंतहिं ॥ ७ ॥ अह त पवेज्ज वझं, अहे वझस्स वा वए ॥ मुच्चेज्ज पयपासाउ, त तु मंदे ण देहए ॥ ८ ॥

अर्थ—हवे अज्ञानवादीना मत उपर दृष्टांत कहेछे जहाके० जेम, मिगाके० मृग एटले अरण्यना पशु जविणो संता के० वेगवंत छता ते केवाछे, तोके परिताणेणवज्जि याके० परित्राण एटले शरणेकरी वर्जित अर्थात् तेमनो कोइ राखनार नथी एवा ते नयविव्हलनृत विवेकरहित थका असंकियाइ के० अशंकित स्थानक जे कूट पा शादिक रहित तेने संकति के० शंकातु स्थानक जाणे तथा जे संकिआइ के० शंकित

मेलवेछे एवतु के० एरीते जेम ते मृग अजाणता थका पाशमाहे पडेछे, तेम सम णाएगे के० कोइएक श्रमण शाक्यादिक दर्शनी ते केवाछे, तोके मिछदिट्ठी के० मिथ्यादृष्टी तथा अणारिआ के० अनार्य अज्ञानपणे अनाचारना सेवनारा ते असकिया इके० अशकित एवा जे रुडा धर्मना अनुष्ठानछे, तेनेविपे सकति के० अधर्मनी शका आणे, अने सकियाइ के० जे हिंसादिक शकित स्थानकछे, तेथकी असकिणो के० न शकाय ॥ १० ॥ वली ते दर्शनीउंनी जे विपरीत मति छे ते देखाडेछे धम्मपण्णव णाजासा के० क्षात्यादिक दशविध धर्मेमहित प्ररूपणा जेनीछे ततुसकतिमूढगा के० तेथकी ते अज्ञानी शकाय अने कहेके ए अधर्मनी प्ररूपणाछे, तथा जे आरंभाइके० आरंभादिक पापना कारण छे तेथकी नसकति के० न शकाय अने तेनेज धर्म करी देखाडे माटे ते केवा छे, अविअत्ता के० अव्यक्त, मुग्ध, विवेक, विकल तथा अकोवि याके० अकोविद एटले अपंडित छे ॥ ११ ॥ हवे तेने फल देखाडेछे सव्वप्पग के० सर्वात्मक ते लोभ, विउक्कस्स के० मान, सव्व के० समस्त, णूम के० माया, तथा अप त्तिय के० क्रोध ए चार कषाय विहूणिया के० खपावीने जीव अकम्मसेके० अकर्माश थाय, एटले कर्माशरहित थाय एयमठ के० एवो अर्थ ते मिगेके० मृगनी पेरे अज्ञान प्रवादी दर्शनी चूएके० ठामेछे साराश जेथकी जीव मुक्ति पामे ते अर्थ जाणता नथी॥१२॥

॥ दीपिका—पाशमपश्यतोयाऽवस्था स्यात्तामाह । (अहिअप्पेति । स मृगोऽहिता त्मा तथा अहितं प्रज्ञान बोधोयस्य सोऽहितप्रज्ञान विपमातेन कूटपाशादियुक्तेन प्रदेशे नोपागत । अथवा विपमाते कूटपाशे आत्मानमनुपातयेत् । तत्र चासौ बद्ध पादपाशा दीननर्थबहुलान् अवस्थाविशेषान् प्राप्तस्तत्र बधने घात विनाश निगच्छति प्राप्नोति ॥ ॥ ए ॥ दृष्टातयोजनामाह । (एवमिति) । एव पूर्वोक्तमृगदृष्टातेन । तुरवधार णे । एकेश्रमणा पाखण्डाश्रितमिथ्यादृष्टयोऽनार्याअसदनुष्ठानाअशकितानि धर्मानुष्ठा नानि शकमानास्तथा शकितान्येकातपक्षाश्रयणान्यशकिनोमृगाइवाऽनर्थभाज स्युः ॥ ॥ १० ॥ शकिताशकितविपर्यासमाह । (धम्मेत्ति) । धर्मप्रज्ञापना क्षात्यादिदशविधधर्म प्ररूपणा या सा प्रसिद्धा ता शक्ते सद्धर्मप्ररूपणेयमिति मन्यते । आरंभाश्च पापो पादानभूतान् शकते । यतोऽव्यक्तामुग्धा सदसद्विवेकविकलाअकोविदाअपडिता स च्छास्त्रावबोधविधुरा ॥११॥ तेपा सत्फलाभावमाह । (सव्वप्पगमिति) सर्वात्मकोलो भस्त । व्युत्कर्षोमानस्त (सव्वणूमति) माया तथा (अप्पत्तिअति) क्रोधस्त च विधूय अकर्मा श न विद्यते कर्माशोयस्य सोऽकर्माश स्यात् । अकर्माशत्व च ज्ञानाद्भवति नाऽज्ञानादि त्याह । (एयमठति) । एतमर्थं कर्माभावरूप मृगइव मृगोऽज्ञानी (चुएत्ति) त्यजेत् ॥१२॥

ङयस्त्रातर्यपि नयमुत्प्रेक्षमाणानि पाशितानि पाशे . . .
शंकामकुर्वाणा सतोऽज्ञानेन नयेन च (सविग्गति)। सम्यक्व्याताववशीनूता.
कनीयमशकनीय वा तत्राऽपरित्राणोपेत पाशाद्यनर्थोपेत वा स
स्तत्र तत्राऽनर्थबहुले पाशवागुरादिके बधने सपर्ययते समेकीनावेन परिसमतादयंते पाशि
वा गच्छतीत्युक्त नवति । तदेव दृष्टांत प्रसाध्य नियतिवा- च ॥ऽज्ञा ।
त्वेनाऽयोज्या । यतस्तेप्येकातवादिनोऽज्ञानकास्त्राणनूतानेकातवादवर्जिता सर्वदो
विनिर्मुक्त कालेश्वरादिकारणवादाभ्युपगमेनाऽनाशकनीयमनेकातवादमाशकते शकनी
यं च नियत्यज्ञानवादमेकात न शकते । ते एवनूता परित्राणार्हेप्यनेकातवादे शकां कु
र्वाणायुक्त्याऽघटमानकमनर्थबहुलमेकातवादमशकनीयत्वेन गृण्हतोऽज्ञानावृतास्ते
षु तेषु कर्मबधस्थानेषु सपर्ययंत इति ॥ ७ ॥ पूर्वदोषैरतुप्यन्नाचार्योदोषातरदित्सया
पुनरपि प्राक्तनदृष्टातमधिकृत्याह । (अहतपवेज्जइत्यादि) अथानतरमसौ मृगस्तत् (बक्ष
मिति) बद्ध बधनाकारेण व्यवस्थित । वागुरादिक वा बधन बधकत्वाद्बधमित्युच्यते । तदे
वनूतं कूटपाशादिक बधन यद्यसावुपरिलवेत् तदधस्तादतिक्रम्योपरिगच्छेत् तस्य क
र्यादेर्वधनस्याधोगच्छेत्तत एव क्रियमाणेऽसौ मृग पदेपाश पदपाशोवागुरादिबधन त
स्मान्मुच्यते । यदि वा पद कूट पाश प्रतीतस्ताभ्या मुच्यते । क्वचित्पदपाशादीति पठ्य
ते । आदिग्रहणाद्वधताडनमारणादिका क्रियागृह्यते । एव सतमपि तमनर्थोत्पादक
परिहरणोपाय मदोजडोऽज्ञानावृतोन देहतीति न पश्यतीति ॥ ८ ॥

अहिअप्पाऽहियप्पाणे, विसमतेणुवागते ॥ सबद्धे पयपासेण, तत्त
घाय नियछइ ॥ए॥ एव तु समणा एगे, मिछदिछी अणारिआ ॥ अ
सकिआइ सकति, संकिआइ असकिणो ॥ १० ॥ धम्मपसवणा जा
सा, त तु संकति मूढगा ॥ आरनाइ न सकति, अविअत्ता अकोवि
आ ॥ ११ ॥ सवप्पग विउक्कस्स, सवणूम विहूणिआ ॥ अप्पत्तिअ
अकम्मसे, एयमठ मिगे चुए ॥ १२ ॥

अर्थ–हवे ते उपाय अण देखतो थको जे अवस्थाने पामे ते कहेछे अहिअप्पा
के० ते मृग आत्माने अहित तथा अहियप्पाणेके० अहित जेनु जाणपणु छे, एवा
छता, विसमते के० विषम कूट पाशादिक प्रदेशे, णुवागते के० आवे एटले ते पाश
माहे पडे सबद्धेपयपासेण के० ते त्या पड्या छता बधन पामे तथा तछघाय के०
त्यां ते विनाशने नियछइके० डुःखी थता पामे ॥ ए ॥ हवे ए दृष्टात परवादिसाथे

एवमन्नाणिया नाणं, वयतावि सयं सयं ॥ निछयत्थ न याणंति, मिलक्खुव्व अबोहिया ॥ १६ ॥

अर्थ– वली एनोज दोष देखाडेछे जेएयनाभिजाणंति के० जे अज्ञानवादी ए कर्म खपाववानो उपाय नथी जाणता, ते केवा छे, मिछदिठीअणारिया के० मिथ्यादृष्टी अनार्य एवा मिगावापासबद्धाते के० मृगलानी परे पाशमा बधाणाछे तेघायमेस्संति ए तसो के० आगामिक काले अनंताघात एटले मरणने पामशे, एटले मृगतो एकवार मरण पामीनेज छूटेछे परंतु ते अज्ञानी अनंते मरणे पण छूटसे नहीं ॥ १३ ॥ हवे जे पोते एकवार ग्रह्युं एवु जे पोतानु कदाग्रह तेने कोइवारे मूकेनहीं ते उपर विशेष कहेछे माहणासमणाएगे के० एक ब्राह्मण तथा एक श्रमण परिव्राजक विशेष ए सव्वे के० सर्व, सयके० पोत पोतानु, नाणके० जाणपणु रुडुछे एम वएके० वदे एटले कहेछे वली ते जुदा जुदा ज्ञान परस्पर माहोमाहे विरुद्ध संदेह उपजावेछे, ते माटे अजाणपणुज भलु छे जाणपणानु काइ काम नथी, ए रीते अज्ञानवादी कहेछे तेमाटे सव्वलोगेविके० सर्व लोकमांहे जे पाणा के० जे प्राणीउं छे, नतेजाणंतिकिंचण के० ते काइ जाणता नथी, एटले सर्व सम्यक्ज्ञान रहित जाणवा यद्यपि तेने काइ गुरुपरंपरागत जाणपणु होय तथापि ते काई परमार्थ जाणता नथी, माटे ते अज्ञानीज जाणवा ॥ १४ ॥ हवे ते उपर दृष्टांत कहेछे मिलक्खुअमिलक्खुस्स के० जेम म्लेछ आर्यभाषानो अजाण थको अम्लेछ जे आर्य भाषा तेने जहाचुत्ताणुभासए के० जेम भाषतानी परे बोले परंतु ते णहेउसेविआणाइ के० हेतु एटले परमार्थ काइ जाणे नहीं, नि केवल परमाथ करी शून्य भासियतणुभासए के० भाषाने केडे भाषे ॥ १५ ॥ हवे ए दृष्टांत अज्ञानवादी साथे मेलवेछे एवमन्नाणियाणाण के० एरीते अज्ञानी सम्यक्ज्ञानरहित एवा श्रमण ब्राह्मणादिक पोतपोताना मतनु ज्ञान प्रमाण करीने वयताविसयसय के० पोतपोतानो मार्ग कहेछे पण ते निछयत्थनयाणंति के० निश्चयार्थ नथी जाणता मिलक्खुव्वअबोहिया के० ते म्लेछवत् एटले म्लेछनीपरे अबोधिक एटले ज्ञानरहित छे ॥ १६ ॥

॥ दीपिका–भूयोप्यज्ञानवादिनां दोषमाह। (जेएतमिति)। ये एतं कर्मक्षयोपायं न जानंति मिथ्यादृष्टयोऽनार्यास्ते मृगाइव पाशबद्धाघातं विनाशमेष्यंति यास्यत्यन्वेष यंतिवा तद्योग्यक्रियाकरणात्। अनंतशोनिरंतरम् ॥ १३ ॥ अज्ञानवादिनामेव दूषणांतर माह। (माहणाइति)। एके ब्राह्मणास्तथा श्रमणा परिव्राजका सर्वे स्वकमात्मीयं ज्ञानं वदंति नच तानि सर्वेषां ज्ञानानि। अन्योन्यविरोधेन प्रवृत्तत्वात्। तस्मादज्ञान मेव श्रेयइत्याह। (सव्वलोयेविति)। सर्वस्मिन् लोके ये प्राणा प्राणिनस्ते किंचन स

॥ टीका–कूटपाशादिकं चापश्यन् यामवस्थामवाप्नोति तां दर्शयितुमाह । (दि) स मृगोऽहितात्मा । तथाऽहित प्रज्ञान बोधोयस्य सोऽहितप्रज्ञान । न सन् विषमातेन कूटपाशादियुक्तप्रदेशेनोपागत । यदिवा विषमांते कूटपाशादिके त्मानमनुपातयेत् । तत्र चासौ पतितो बद्धश्च तेन कूटादिना । वस्थाविशेषान् प्राप्तस्तत्र बधने घातं विनाश नियच्छति प्राप्नोतीति ॥ ए ॥ एव प्रदर्श्य सूत्रकारएव दार्ष्टांतिकमज्ञानविपाक दर्शयितुमाह । (एवतुइत्यादि) यथा मृगाअज्ञानावृताअनर्थमनेकश प्राप्नुवंति । तुरवधारणे । एवमेव श्रमणा त्पाखम्डविशेषाश्रिता । एके न सर्वे । किंनूतास्ते इति दर्शयति । मिथ्या ष्टिर्येषामज्ञानवादिना नियतिवादिना वा ते मिथ्यादृष्टय । तथा अनार्या ता सर्वे हेयधर्मेभ्यइति आर्या , न नार्याअज्ञान तत्वादि यावत् । अज्ञानावृतत्व च दर्शयति । अशंकितान्यशंकनीयानि शुध । शंकमानास्तथा शंकनीयान्यपायबहुलान्येकांतपक्षसमाश्रयणान्यशंकिनोमृगाइव चेतसस्तत्तदाऽरभते यद्यदनर्थाय संपद्यतइति ॥ १० ॥

समाह । (धम्मपरूवणेत्यादि) । धर्मस्य क्षांत्यादिदशलक्षणोपेतस्य या प्ररूपणा । तंत्विति । तामेव शंकते असद्धर्मप्ररूपणेयमित्येवमध्यवस्यति । ये पापोपादानभूता समारंभास्तानाशंकते । किमिति । यतोऽव्यक्तामुग्धा द्विवेकविकला । तथा । अकोविदाअपंडिता सच्छास्त्रावबोधरहिताइति ॥ ११ तेच अज्ञानावृतायन्नाप्नुवंति तद्दर्शनायाह । (सव्वप्पगमित्यादि) । सर्वत्राप्यात्मा ऽसौ सर्वात्मको लोभस्त विधूयेति संबध । तथा । विविधउत्कर्षोगर्वोव्युत्कर्षोमानइत्य र्थ । तथा (णूमति) माया ता विधूय । तथा (अप्पत्तियति) क्रोध विधूय । कषा यविधूनने च मोहनीयविधूननमावेदितं भवति तदपगमाच्च शेषकर्माभाव प्रतिपादितो भवतीत्याह । (अकर्मांशइति) । न विद्यते कर्मांशोऽस्येत्यकर्मांश । सच कर्मांशोवि शिष्टज्ञानाद्भवति नाज्ञानादित्येव दर्शयति । एतमर्थं कर्माभावलक्षण मृग अज्ञानी (चुएत्ति) । त्यजेत् । विभक्तिपरिणामेन वा अस्मादेवभूतादर्थात् च्यवेत् भ्रश्येदिति ॥ १२ ॥

जे एय नाभिजाणंति, मिच्छदिठी अणारिया ॥ मिगा वा पासबद्धा ते, घायमेसंति णंतसो ॥ १३ ॥ माहणा समणा एगे, सव्वे नाणं सयं वए ॥ सव्वलोगे वि जे पाणा, न ते जाणंति किंचण ॥ १४ ॥ मिलक्खू अमिलक्खु स्स, जहा वुत्ताणुभासए ॥ ण हेउं से विजाणाइ, भासिअतणु भासए ॥ १५

नमेव श्रेयइति । एवं यावद्यावज्ज्ञानान्युपगमस्तावत्तावद्गुरुतरदोषसद्भव । तथाहि । यो वगह्नन्पादेन कस्यचित् शिर स्पृशति तस्य महानपरायोनवति । यस्त्वनानोगेन स्पृशति तस्मे न कश्चिदपराध्यतीत्येव चाज्ञानमेव प्रधानन्नावमनुनवति नतु ज्ञानमिति । १६ ॥

अन्नाणियाण वीमंसा, नाणे ण विनियच्छइ ॥ अप्पणो य परं नालं, कुतो अन्नाणुसासिउं ॥ १७ ॥ वणे मूढे जहा जंतू, मूढे णेयाणुगामिए ॥ दोवि एए अकोविया, तिव्वं सोयं नियच्छइ ॥ १८ ॥ अंधो अंधं प हं णितो, दूरमद्धाणु गच्छइ ॥ आवज्जे उप्पहं जंतु, अडुवा पंथाणु गामिए ॥ १९ ॥ एवमेगे णियायठी, धम्ममाराहगा वयं ॥ अडुवा अ हम्ममावज्जे, ण ते सव्वज्जुयं वए ॥ २० ॥ ॥ ॥ ॥

अर्थ—हवे एने दोष देखाडेछे जे एम कहेके, अज्ञानज नलुंछे, तेने अन्नाणियाण के० अज्ञानवादी कहिये तेनी जे वीमंसा के० जाणवानी इछा, ते नाणे ण विनिय छइ के० ज्ञानने विषे पहोंचे नहीं कारण ते एम विचार करेछे के अज्ञानवडे अ पराध करनारानो दोष स्वल्प छे, अने जाणनारने दोष घणो लागेछे जेम कोइक म नुष्य मार्गे जता जाणतो थकोज कोइकना मस्तकने पगे करीने फरशे तोते महा अ पराधनो पात्र थायछे परंतु जो अजाणता फरशे तोते स्वल्प अपराधी छे ए कार ण माटे अज्ञानपणुज रुडुंछे, एवी जेनामां विचारणा छे ते अज्ञानवादी जाणवा ते अज्ञानवादी अप्पणोय कहेता पोतानो आत्मा समजवानेज असमर्थ छे तो परनालं के० बीजाने कुतो अन्नाणुसासिउं के० बीजा अज्ञानी जनोने समजाववाने क्यां थी समर्थ थाय? अर्थात् नज थाय ॥ १७ ॥ हवे एज अर्थ दृष्टांते करी देखावेछे वणे के० वन एटले अटवीने विषे, जहा के० जेम, कोइक मूढेजंतू के० दिशिमूढजीव ते दिशिने जाणवा असमर्थ थको मूढेणेयाणुगामिए के० अनेरा दिशिमूढने आगेवा न करीने तेनी पाछल चाले ते समये दोविएए के० ते बन्ने जण, ते मार्गना अकोवि या के० अजाण थका, तिव्वसोयनियछइ के० तीव्र गहनमांहे पडे अर्थात् महादु ख पामे ॥ १८ ॥ वली बीजुं दृष्टांत कहेछे अंधोअंधपहंणितो के० जेम कोइएक पोते अंध छतां अनेरा अंधने मार्गे लेई जतो थको दूरमद्धाणुगछइ के० घणे दूर ज ईने आवज्जेउप्पहंजंतु के० ते अंध उन्मार्गे पडे, अडुवा के० अथवा पंथाणुगामिए के० अनेरे पंथे जाय पण वांछित मार्गे न जाय एटले पोते उन्मार्गे पडता पाछला ने पण उन्मार्गे पाडे ॥१९॥ हवे ए दृष्टांत अज्ञानवादी साथे मेलवेछे एवं के० ए अ

म्यक् न जानंति ॥ १४ ॥ अथ दृष्टांतमाह् । (मिलरकुइति) । यथा
म्लेछस्य आर्यस्य यदुक्त नाषितं तदनुनापते परमार्थशून्य
नच हेतु विजानाति ॥ १५ ॥ दार्ष्टांतिके योजयति (एवमिति) ।
म्यक्ज्ञानरहिता स्वक स्वकमात्मीय ज्ञान प्रमाणत्वेन वदतोपि निश्चयार्थं न
इत यथा म्लेछो निश्चयार्थमजानन् परोक्तमनुवदत्येव तेप्यबोधिकाबोधरहिताः
ततोऽज्ञानमेव श्रेयइति ॥ १६ ॥

॥ टीका—नूयोप्यज्ञानवादिना दोषानिविरत्सयाह् । (जेएयमित्यादि) । ये
पक्षं समाश्रिताएन कर्मक्षपणोपाय न जानति । आत्मीया
थ्यादृष्टयोऽनार्यास्ते मृगाइव पाशबन्धाघातं विनाशमेष्यति यास्यत्यन्वेष्यति वा ।
योग्यक्रियानुष्ठानात् । अनतशोविछेदेनेत्यज्ञानवादिनोगता ॥ १३॥
दूषणोद्भिनावयिषया स्ववाग्यंत्रितावादिनोन चजिप्यतीति तन्मतानिष्करणायाह् । (
हणाइत्यादि) । एके केचन ब्राह्मणविशेषास्तथा श्रमणा परिव्राजकविशेषा
ते ज्ञायतेऽनेनेति ज्ञान हेयोपादेयार्थाऽविर्भावक परस्परविरोधेन व्यवस्थितं स्व
वदति । नच तानि ज्ञानानि परस्परविरोधेन प्रवृत्तत्वात्सत्यानि । तस्मादज्ञानमेव
कि ज्ञानपरिकल्पनयेत्येतदर्शयति । सर्वस्मिन्नपि लोके ये प्राणा प्राणिनोन ते ।
पि सम्यगुपेतवाच जानतीति विदतीति ॥ १४ ॥ यदपि तेषा गुरुपारपर्येण
तदपि छिन्नमूलत्वादवितथ न नवतीति दृष्टात द्वारेण दर्शयितुमाह् । (
स्सेत्यादि) । यथा म्लेछआर्यनाषानभिज्ञोऽम्लेछस्यार्यस्य म्लेछनाषानभिज्ञस्य
तं तदनुनापते अनुवदति केवल न सम्यक्तदभिप्राय वेत्ति यथाऽनया
न नाषितमिति । नच हेतु निमित्त निश्चयेनासौ म्लेछस्तन्नापितस्य जानाति । केवल
मार्थशून्य तन्नापितमेवानुनाषत इति ॥ १५ ॥ एव दृष्टातं प्रदर्श्य दार्ष्टांतिक योजयितुमा
ह् । (एवमित्यादि) । यथा म्लेछ अम्लेछस्य परमार्थमजानान केवल तन्नाषितानु
नापते । तथा अज्ञानका सम्यक्ज्ञानरहिता श्रमणाब्राह्मणावदतोपि स्वीय
ज्ञान प्रमाणत्वेन परस्परविरुद्धार्थनाषणात् निश्चयार्थं न जानति । तथाहि । ते
य तीर्थंकर सर्वज्ञत्वेन निर्द्धार्य तदुपदेशेन क्रियासु प्रवर्तेरन् । नच सर्वज्ञविवक्षा
ग्दर्शना ग्रहीतु शक्यते । नासर्वज्ञ सर्वज्ञ जानातीति न्यायात् । तथाचोक्त ।
सावित्ति ह्येतत्तत्कालेपि बुजुत्सुनि ॥ तज्ज्ञानज्ञेयविज्ञान,रहितैर्गम्यते कथ ॥ १ ॥ ए
व परचेतोवृत्तीना डुरन्वयत्वाडुपदेष्टुरपि यथावस्थितविवक्षया ग्रहणाऽसनवान्निश्चया
र्थमजानानाम्लेछवदपरोक्तमनुनाषतएव । अबोधिकाबोधरहिता केवलमित्यतोऽज्ञा

चनस्य ज्ञानरूपत्वादिति । अपिच तेऽज्ञानवादिनआत्मनोपि परं प्रधानमज्ञानवाद मिति शासितुमुपदेष्टुं नालं न समर्थास्तेषामज्ञानपक्षसमाश्रयणेनाऽज्ञत्वादिति कुत पुनस्ते स्वयमज्ञाः सतोऽन्येषां शिष्यत्वेनोपगतानामज्ञानवादमुपदेष्टुमलं समर्थाभवेयु रिति । यदप्युक्तं छिन्नमूलत्वात् म्लेछानुनाषणवत्सर्वमुपदेशादिकं तदप्ययुक्तं । यतोऽ नुनाषणमपि न ज्ञानमृते कर्तुं शक्यते । तथा । यदप्युक्तं परचेतोवृत्तीनां डुरन्वयत्वाद ज्ञानमेव श्रेयइति तदप्यसत् । यतोनवर्तेवाज्ञानमेव श्रेयइत्येवं परोपदेशदानाभ्यु पगतेन परचेतोवृत्तिज्ञानस्याभ्युपगमः रुतइति । तथाऽन्यैरप्यधायि । आकारैरिंगितैर्गत्या चेष्टया नाषितेन च ॥ नेत्रवक्त्रविकारैश्च, गृह्यतेंतर्गतं मनः ॥ १७ ॥ तदेवं ते तपस्विनोऽ ज्ञानिनआत्मनः परेषां च शासने कर्तव्ये यथा न समर्थास्तथा दृष्टांतद्वारेण दर्शयितुमा ह । (वणेइत्यादि) वनेऽटव्यां यथा कश्चिन्मूढो जंतुः प्राणोदिक्परिछेदं कर्तुमसमर्थः स एवंनूतोयदा परं मूढमेव नेतारमनुगछति तदा द्वावप्यकोविदौ सम्यक्ज्ञानाऽनिपुणौ सतो तीव्रमसह्यं स्रोतोगहनं शोकं वा नियछतोनिश्चयेन गछतः प्राप्नुतोऽज्ञानावृत त्वात् । एवं तेप्यज्ञानवादिनआत्मीयं मार्गं शोजनत्वेन निर्धारयंतः परकीयं वा शोजन त्वेन जानाना स्वयं मूढाः सन्तः परानपि मोहयंतीति ॥ १८ ॥ अस्मिन्नेवार्थे दृष्टांतांत रमाह । (अंधोअंधमित्यादि ।) यथा अंधः स्वयमपरमंधं पंथानं नयन् दूरमध्वानं वि वक्षितादध्वनः परतरं गछति तथोत्पथमापद्यते जंतुरंधः । अथवा परं पंथानमनुगछे न्न विवक्षितमेवाध्वानमनुयायादिति ॥१९॥ एवं दृष्टांतं प्रसाध्य दार्ष्टांतिकमर्थं दर्शयितुमा ह । (एवमेगेनियायछित्ति ।) एवमिति पूर्वोक्तोर्थोपप्रदर्शने । एवं नावमूढानावाधाश्चके आजीविकादयः (नियायछित्ति) । नयोमोक्षः सद्धर्मोवा तदर्थिनस्ते किल वयं सद्धर्मारा धकाइत्येवं संधाय प्रव्रज्यायामुद्यताः सन्तः पृथिव्यनुवनस्पत्यादिकायोपमर्दनं पचनपा चनादिक्रियासु प्रवृत्ताः सतस्तत्स्वयमनुतिष्ठन्त्यन्येषां चोपदिशंति येनाऽनिप्रेतायामो क्षावाप्तेर्भ्रंश्यति । अथवा तावन्मोक्षानावस्तमेव प्रवर्तमानाअधर्मं पापमापद्येरन् । स नावनायामुत्पन्नेन लिङ्प्रत्ययेनैतदर्शयति । एतदपरं तेषामनर्थांतरं सन्नाव्यते । पक्षुत विवक्षितार्थानावतया विपरीतार्थावाप्तेः पापोपादानमिति । अपिच तएवमसदनुष्ठायि नआजीविकादयोगोशालकमतानुसारिणोऽज्ञानवादप्रवृत्ताः सर्वैः प्रकारैर्ऋजुः प्रगुणो विवक्षितमोक्षगमनप्रत्यकुटिलः सर्वर्जुसंयमः सद्धर्मोवा तं सर्वर्जुकं ते न व्रजेयुर्न प्रा मुयुरित्युक्तं नवति । यदि वा सर्वर्जुकं सत्यं तत्तेऽज्ञानाधाज्ञानाऽपलापिनोन वदेयुरि ति । एते चाज्ञानिकाः सप्तषष्टिनेदानवंति । तेच नेदाअमुनोपायेन प्रदर्शनीयाः । तद्यथा । जीवादयोनव पदार्थाः । सत्, असत्, सदसत्, अवक्तव्यं , सदवक्तव्यं , असदवक्तव्यं , सदसदवक्तव्यमित्येतैः सप्तनिः प्रकारैर्विज्ञातुं न शक्यते नच विज्ञातैः प्रयोजनमस्ति । ना

जाणता अंधनी पेठें नावमूढ एग एगे के० कोइ एक परदर्शनी णियायठी के० ना अर्थी धम्ममाराह्गावय के० अमे धर्मना आराधक छैये एम कही प्रव्रज्याने अनेक छकायनुं मर्दन करता थका, अडुवा के० अथवा अनेराने छकायना उपदेश करता थका, अहम्ममावज्जे के० अधर्मज आचरे परंतु एतेसवज्जुअवए सर्व प्रकारे ऋजु एटले सरल एवो मार्ग न पामे एटले ते मोक्षने अर्थे यत्न रतु मोक्षनो मार्ग न पामे ॥ २० ॥

॥ दीपिका–इदानीमेतद्दूपणायाह । (अन्नाणित्ति) अज्ञानिकानामज्ञानमेव वादिना योविमर्शोविचारस्स अज्ञानेऽज्ञानविपये न नियच्छति न युज्यते । सत्यमसत्य वेति विमर्श । अज्ञानेन कृतेऽपराधे स्वल्पोदोष ज्ञानेन कृते महान् भूतोविचारोपि तेपा न युज्यते । एवविधविचारस्य ज्ञानरूपत्वादित्यज्ञानवादे युज्यते । तथा आत्मनोपि पर प्रधानमज्ञानवाद शासितुमुपदेष्टु नाल न समर्था स्वयमज्ञत्वात् कुतोऽन्येषा शिष्याणामुपदेष्टु समर्थाभवेयु ॥ १७ ॥ यथा ते परेपा च शिक्षणे ऽसमर्थास्तथा दृष्टांतेनाह (वणेत्ति) वनेऽरण्ये यथा क नेतार प्रापकमनुगच्छत्याश्रयति तदा तौ द्वावप्यकोविदो मार्गाऽनिपुणौ सतौ त स्रोतोगहन शोक वा नियच्छत प्राप्नुत ॥ १८ ॥ दृष्टांतातरमाह । (अंधेति) यथा स्वय अन्यमंध पथान नयन् दूरमध्वान वांछितमार्गादन्य दूर मार्ग गच्छति । तथा यमुन्मार्गमापद्यते जतु प्राणी अंध । अथवा पर पथानमनुगच्छेन्न वांछितं ॥ १९ दार्ष्टांतिकमर्थमाह । (एवमिति) । एव पूर्वोक्तार्थेन एके भावमूढानियागोमोक्ष मोंवा तदर्थिनस्ते किल वय धर्माराधका इतिजानतोऽधर्मं पापमेवापद्येरन् तथा ते सदनुष्ठानाआजीविकादयोगोशालकमतानुसारिणोऽज्ञानवादप्रवृत्ता सर्वथा ऋ जु सर्वर्जु सयम सद्धर्मोवा त न व्रजेयु न गच्छति न प्राप्नुवतीत्यर्थ । अथवा सर्व र्जुक सत्यमज्ञानाधान व्रजेयु ॥ २० ॥

॥ टीका–एवमज्ञानवादिमतमनूद्येदानीं तद्दूपणायाह । (अन्नाणियाणमित्यादि) न ज्ञा नमज्ञान तद्विद्यते येषा तेऽज्ञानिन ।अज्ञानशब्दस्योत्तरपदत्वाद्वा मत्वर्थीय ।यथा दरण्यमिति । यथा तेषामज्ञानिनामज्ञानमेव श्रेयइत्येव वादिना योय विमर्श पर्यालोच नात्मकोमीमासा वा मातु परिच्छेत्तुमिच्छा साऽज्ञानेऽज्ञानविषये (णणियच्छत्ति) न नि श्चयेन यच्छति नावतरति न युज्यतइतियावत् । तथाहि । यैवभूता मीमांसा विमर्शोवा किमेतज्ज्ञान सत्यमुताऽसत्यमिति । यथा अज्ञानमेव श्रेयोयथा यथाच ज्ञानातिशय स्तथा तथाच दोषातिरेकइति सोयमेवभूतोविमर्शस्तेपा न बुध्यते । एवभूतस्य पर्यालो

ते पंजर के० पजरमांहे पड्युं थकुं पांजराने त्रोडीने पोताने मूकावी शके नहीं तेम ए अज्ञानवादी पण पोताने ससारपजरथकी मूकावी शके नहीं एम जाणवु ॥ २२ ॥ हवे सामान्याकारे एकात मतिने दूषण करेछे सयसयपससता के० सर्व दर्शनी पोतपोता नु दर्शन प्रशसता अने परवय के० पारका वचनने गरहता के० निंदता जेउ के० जे तद्य के० त्या एरीते विउस्सति के० पोतानु विश्वास एटले पंडित पणु देखाडेछे ते के० ते एवा वचनना बोलनार ससार के० चतुर्गतिक ससारमांहे विउस्सिया के० विशेषे बां ध्या रहता अनंतो काल तद्य के० त्याज रहे ॥ २३ ॥ एटले अन्नाणवाईगया के० अ ज्ञानवादी कह्या हवे क्रियावादीनो मत कहेछे अह के० अथ एटले हवे अवरं के० अपर एटले अज्ञानवादीना मतथकी अनंतर पुरस्कार्य के० पूर्वे कह्यु एवु किरि यावाइदरिसण के० क्रियावादीनु दर्शन, ते क्रियावादी केवाछे, कम्मचितापणछाण के० कर्मचिताप्रनष्ट एटले कर्म जे ज्ञानावरणीयादिक तेने विषे चिंता एटले आलोच वु ते थकी प्रनष्ट थयेला एटले ते कर्मबंधनो परमार्थ जाणे नहीं तेथी तेनु दर्शन नि केवल ससारस्सपवढ्ढण के० ससारनु वधारनार जाणवु ॥ २४ ॥

॥ दीपिका–दूषणांतरमाह । (एवमिति) । एव पूर्वोक्तनीत्या एकेऽज्ञानवादिनोवि तर्कानिर्मीमासानि स्वमतिकल्पनानि परमन्य जैनादिक न पर्युपासते न सेवते स्वम तमेव श्रेयइति ज्ञात्वा तदेव सेवते नान्य ज्ञानादिवादिन । तथा (अप्पणोत्ति) । आत्मी येवितर्कै सुविचारैरयमस्मदीयोमार्गोऽज्जुर्निर्दोषत्वाद्व्यक्त स्पष्टऋजुर्वा प्रगुणोऽकुटि ल । इयस्मात्ते दुर्मतयस्ततएव एवमाहु ॥ २१ ॥ पुनस्तेषामेव दोषमाह । (एवमि ति) । एव पूर्वोक्तन्यायेन तर्कया स्वकल्पनया साधयतोवदतोधर्माधर्मयोरकोविदादु ख ते नातित्रोटयति नातिशयेनापनयति । यथा शकुनि पजर । पक्षी पजरस्यो य था पजर त्रोटयितु बंधनादात्मान मोचयितु न समर्थएवमसावपि ससारपजरादात्मा न मोचयितु नाल ॥ २२ ॥ अथैकातवादिमत दूषयन्नाह । (सयमिति) । स्वक स्व क आत्मीयमात्मीय मत प्रशसत परकीया वाच गर्हतोनिन्दत । यथा साख्यानित्यवादि नोबौद्ध क्षणिकवादिन निंदति तेपि साख्यान् । एवमन्येपि ज्ञेया । एवमेकातवादिनो पे । तुरवधारणे । तत्र तेष्विव स्वमतेषु विद्वस्यते विश्वासञ्चाचरति ते ससार व्युषिता विविधमनेकप्रकारमुत्प्राबल्येन श्रिता ससारे संबद्धावपिता स्यु ॥ २३ ॥ अथ क्रिया वादिमतमाह । (अथेति) । अथापर पूर्वमाख्यात पूर्वसूचित क्रियावादिदर्शन । किं भूता क्रियावादिनइत्याह । (कम्मचितत्ति) । कर्मणि ज्ञानावरणादिके चिंता कर्मचिंता तत प्रनष्टाअपगता । यतस्ते चतुर्विध कर्मबध नेच्छति तत कर्मचिताप्रणष्टास्तेषामि द मत ससारस्यप्रवर्धन स्यात् ॥ २४ ॥

वना चेयं। सन् जीवइति कोवेत्ति किंवा तेन ज्ञातेन । असन् जीवइति को वेत्ति ज्ञातेनेत्यादि । एवमजीवादिष्वपि प्रत्येक सप्त विकल्पा । नव सप्तकास्त्रिषष्टि चान्ये चत्वारस्त्रिषष्टिमध्ये स्थाप्यते । तद्यथा। सती चावोत्पत्तिरिति को जानाति या ज्ञातया। एवमसती सदसदवक्तव्यताभावोत्पत्तिरिति को . . ।
शेषविकल्पत्रय तूत्पत्त्युत्तरकाल पदार्थावयवापेक्षमतोत्र न संभवतीति नोक्त। प्रक्षेपात्सप्तषष्टिर्भवति। तत्र सन् जीवइति को वेत्तीत्यस्यायमर्थोन कस्यचिद्विशिष्टं स्ति योऽतींद्रियान् जीवादीनवभोत्स्यते । नच तैर्ज्ञातै किंचित्फलमस्ति । तथाहि । दि नित्य सर्वगतोऽमूर्तोज्ञानादिगुणोपेतएतद्गुणव्यतिरिक्तोवा तत कतमस्य र्थस्य सिद्धिरिति तस्मादज्ञानमेव श्रेयइति ॥ २० ॥

एवमेगे वियक्काहिं, नोअन्न पज्जुवासिया ॥ अप्पणोय वियक्काहिं, अय मजूहिं दुम्मई ॥ २१ ॥ एव तक्काइ साहिंता, धम्माधम्मे अकोविया ॥ दुक्ख ते नाइतुट्टंति, सउणी पजरं जहा ॥ २२ ॥ सयं सयं पससंता, गरहंता परं वयं ॥ जे उ तत्त विउस्सति, ससार ते विउस्सिया ॥२३॥ अ हावरं पुरक्खाय, किरियावाइदरिसण ॥ कम्मचितापणट्ठाण, ससरा स्स पवड्ढण ॥ २४ ॥

अर्थ–वली ग्रंथकार कहेछे एव के०एरीते एगे के० कोइएक अज्ञानी परवादी विय क्काहिं के० वितर्क करी, पोतानी कल्पित कल्पनाए असत्यने सत्य करी मानता थका नोअन्नपज्जुवासिया के० अनेरा साचा होय तोपण तेने पर्युपासे नहीं एटले सेवे न हीं किंतु अप्पणोयवियक्काहिं के० पोतानाज वितर्के करी एवु कहे जे ए अयमजूहिं के० अमारो मार्गज ऋजु एटले सरल अकुटिल छे, इत्यादिक कहेछे तेमाटे ते दुम्म ई के० दुर्मति विपरीतबुद्धिवाला छे केमके ते सन्मार्गथी उपराग वर्तेछे अने विप रीत मार्गने सन्मुख छे तेथी ते विपरीतबुद्धिवाला जाणवा ॥ २१ ॥ हवे ज्ञानवादी ते अज्ञानवादीनो अनर्थ प्रगट देखाडेछे एव के० ए पूर्वोक्त न्याये तक्काइसाहिंताके० तर्के करी एटले पोतानी कल्पनाये मोक्षमार्गने कहेता थका अष्ट प्रकारे जे कर्मनो बंध तेने त्रोडी न शके, ते केवाछे, धम्माधम्मे के० धर्म जे क्षांत्यादिक दशविध अने अधर्म जे हिंसादिक पाच आश्रव तेने विषे अकोविया के० अकोविद एटले अजाणछे अर्थात् ते धर्मअधर्मने जाणता नथी दुक्खतेनाइतुट्टंति के० ते पोतानां दुःखने शी रीते त्रोडे ते उपर दृष्टांत कहेछे ते जहा के० जेम सउणी के० शकुनी एटले पक्षी

ते पजर के० पजरमांहे पडयु थकु पाजराने त्रोडीने पोताने मूकावी शके नहीं तेम ए अज्ञानवादी पण पोताने ससारपजरथकी मूकावी शके नहीं एम जाणवु ॥ २२॥ हवे सामान्याकारे एकात मतिने दूषण करेछे सयसयपससता के०सर्व दर्शनी पोतपोता नु दर्शन प्रशसता अने परवय के० पारका वचनने गरहता के० निदता जेउ के० जे तह के०त्या एरीते विउस्सति के० पोतानु विश्वास एटले पण्डित पणु देखाडेछे ते के० ते एवा वचनना बोलनार ससार के० चतुर्गतिक ससारमाहे विउस्सिया के० विशेषे बां ध्या थता अनतो काल तह के० त्याज रहे ॥ २३ ॥ एटले अन्नाणवाईगया के० अ ज्ञानवादी कह्या हवे क्रियावादीनो मत कहेछे अह के० अथ एटले हवे अवरं के० अपर एटले अज्ञानवादीना मतथकी अनतर पुरक्खायं के० पूर्वे कह्यु एवु किरि यावाइदरिसण के० क्रियावादीनु दर्शन, ते क्रियावादी केवाछे, कम्मचितापणठाण के० कर्मचिताप्रनष्ट एटले कर्म जे ज्ञानावरणीयादिक तेने विषे चिता एटले आलोच नु ते थकी प्रनष्ट थयेला एटले ते कर्मबधनो परमार्थ जाणे नहीं तेथी तेनु दर्शन नि केवल ससारस्सपव्वड्ढण के० ससारनु वधारनार जाणवु ॥ २४ ॥

॥ दीपिका—दूषणातरमाह । (एवमिति) । एव पूर्वोक्तनीत्या एकेऽज्ञानवादिनोवि तर्कानिर्मीमासाभि स्वमतिकल्पनाभि परमन्य जैनादिक न पर्युपासते न सेवते स्वम तमेव श्रेयइति ज्ञात्वा तदेव सेवते नान्य ज्ञानादिवादिन । तथा (अप्पणोत्ति)। आत्मी यैर्वितर्कै सुविचारैरयमस्मदीयोमार्गोऽञ्जुर्निर्दोषत्वाद्व्यक्त स्पष्टऋजुर्वा प्रगुणोऽकुटि ल । हियस्मात्ते दुर्मतयस्ततएव एवमाहु ॥ २१ ॥ पुनस्तेषामेव दोषमाह । (एवमि ति) । एव पूर्वोक्तन्यायेन तर्कया स्वकल्पनया साधयतोवदतोधर्माधर्मयोरकोविदाडु ख ते नातित्रोटयति नातिशयेनापनयति । यथा शकुनि पजर । पक्षी पजरस्थो य था पजर त्रोटयितु बधनादात्मान मोचयितु न समर्थएवमसावपि ससारपजरादात्मा न मोचयितु नाल ॥ २२ ॥ अथैकातवादिमत दूषयन्नाह । (सयमिति) । स्वक स्व क आत्मीयमात्मीय मतं प्रशसत परकीया वाच गर्हतोनिदत । यथा सांख्यानित्यवादि नोबौद्ध क्षणिकवादिन निदति तेपि सांख्यान् । एवमन्येपि ज्ञेया । एवमेकातवादिनो ये । तुरवधारणे । तत्र तेष्विव स्वमतेषु विद्स्यते विश्वासइवाचरति ते ससार व्युत्रिता विविधमनेकप्रकारमुत्प्रावल्येन श्रिता ससारे सबद्धाउषिता स्यु ॥ २३ ॥ अथ क्रिया वादिमतमाह । (अथेति) । अथापर पूर्वमाख्यातं पूर्वसूचित क्रियावादिदर्शन । किं भूता क्रियावादिनइत्याह । (कम्मचितत्ति) । कर्मणि ज्ञानावरणादिके चिता कर्मचिता तत प्रनष्टाअपगता । यतस्ते चतुर्विध कर्मबध नेछति तत कर्मचिताप्रणष्टास्तेषामि द मतं ससारस्यप्रवर्धन स्यात् ॥ २४ ॥

॥ टीका–पुनरपि तद्दूपणाभिधित्सयाऽऽह । (एवमित्यादि) । एवमनंतरोक्तया त्या एके केचनाऽज्ञानिकावितर्कानिर्मीमांसानि स्वोत्प्रेक्षितानिरसत्कल्पनानि र्हतादिक ज्ञानवादिन न पर्युपासते न सेवते स्व ज्ञेप स्व ।व ज्ञानपर कश्चिदित्येव नान्यं पर्युपासतइति । तथात्मनि ...पेर ऽयमेवास्मदीयोऽज्ञानमेव श्रेयइत्येवमात्मकोमार्गे । ऋजुरिति।निर्दोषत्वा द्व्यक्त स्पष्ट स्तिरस्कर्तुमशक्यऋजुर्वा प्रगुणोऽकुटिल । यथावस्थितार्थाभिधायित्वात् । किमिति वमभिदधति । हिर्यस्मादर्थे । यस्मात्ते दुर्मतयोविपर्यस्तबुद्धयइत्यर्थ ॥ २१ ॥ सांप्रतम ज्ञानवादिनां ज्ञानवादिना स्पष्टमेवाऽनर्थाभिधित्सयाह । (एव तक्काइत्यादि) एव पूर्वो क्तन्यायेन तर्कया स्वकीयविकल्पनया साधयंत प्रतिपादयंतोधर्मे क्षात्यादिके अधर्मे जीवोपमर्दापादिते, पापेऽकोविदाअनिपुणाड खमसातोदयलक्षण तद्धेतु वा चितकर्मबंधन नातित्रोटयति अतिशयेनैत व्द्यवस्थित ।तथा ते न त्रोटयत्यपनयंतीति। दृष्टांतमाह ।यथा पंजरस्थ शकुनि पंजर त्रोटयितु पंजरबंधनादात्मान मोचयितु मसावपि संसारपंजरादात्मान मोचयितु नालमिति ॥२२॥

दूपणार्थमाह । (सयंसयमित्यादि) स्वक स्वकमात्मीय च दर्शनमभ्युपगत यंत समर्थयंतोवा । तथा गर्हमाणानिंदंत परकीयां वाच । तथाहि । साख्या स्याविर्भावतिरोभाववादिन सर्व वस्तु क्षणिक निरन्वयनिरीश्वर वेत्यादिवादिनोबौद्धान पर्यंति तेपि नित्यस्य क्रमयौगपद्याभ्यामर्थक्रियाविरहात् साख्यान् । एवमन्येपि इति । तदेव यएकांतवादिन ।तुरवधारणे भिन्नक्रमश्च ।तत्रैव तेष्वेवाऽत्मीयात्मीयेषु दर्शने षु प्रशंसा कुर्वाणा परवाचं च विगर्हमाणाविद्वस्यते विद्वांसइवाऽऽचरति तेषु वा वि शेषेणोशति स्वशास्त्रविषये विशिष्ट युक्तिव्रातं वदति । तेचैव वादिन संसारं चतुर्गतिभे दैन संसृतिरूपं विविधमनेकप्रकारमुत्प्राबल्येन श्रिता संबद्धा । तत्र वा संसारे उषिता संसारांतर्वर्तिन सर्वदा भवतीत्यर्थ ॥ २३ ॥ सांप्रतं यदुक्त निर्युक्तिकारेणोद्देशकार्थाधि कारे कर्मचयं न गच्छति चतुर्विध भिक्षुसमयइति तदधिकृत्याह । (आहावरमित्यादि) । अथेत्यानतर्ये । अज्ञानवादिमतानंतरमिदमन्यत् पुरा पूर्वमाख्यातं कथितं । किंपुन स्तदित्याह ।क्रियावादिदर्शन। क्रियैव चैत्यकर्मादिका प्रधान मोक्षागमित्येव वदितु शीलं ये षा ते क्रियावादिनस्तेषा दर्शनमागम क्रियावादिदर्शन ॥ किंभूतास्ते क्रियावादिनइत्याह। कर्मणि ज्ञानावरणादिके चितापर्यालोचन कर्मचिता तस्या प्रणष्टाअपगता कर्मचिता प्रणष्टा । यतस्ते अविज्ञानाद्युपचित चतुर्विध कर्मबधं नेच्छत्यत कर्मचिताप्रणष्टास्ते षां चेद दर्शन दुःखस्कंधस्यासातोदयपरंपराया विवर्धन भवति । क्वचित्संसारवर्धनमिति पाठ । तेह्येव प्रतिपद्यमाना संसारस्य वृद्धिमेव कुर्वंति नोच्छेदमिति ॥ २४ ॥

जाणं काएण णाउट्टी, अबुहो ज च हिंसति ॥ पुट्ठो संवेदइ पर, अविय
त्त खु सावज्जं ॥ २५॥ संति मे तउ आयाणा, जेहिं कीरइ पावगं ॥ अ
भिकम्माय पेसाय, मणसा अणुजाणिया ॥ २६ ॥ एते उ तउ आया
णा, जेहिं कीरइ पावग ॥ एव भावविसोहीए, निव्वाणमभिगच्छइ ॥
॥ २७ ॥ पुत्त पिया समारप्प, आहारेज्ज असजए ॥ भुंजमाणो य
मेहावी, कम्मणा नो विलप्पइ ॥ २८ ॥

अर्थ–जे कारणे ते कर्मचिंता थकी प्रनष्ट छे, ते उपर देखाडेछे जाणकाएणणाउट्टी के० जे पुरुष जाणतो थको प्राणीउंने हणे एटले जे पुरुष क्रोधे चड्यो थको मनने व्यापारे प्राणीनो घात करे परतु कायाये करी अनाकुट्टी एटले कायाये करी प्राणीना अवयवना छेदनभेदनना व्यापारे प्रवर्ते नही तेने कर्मबंध न लागे तथा जचके० जे पुरुष अबुहोके० अजाणतो थको एकली कायाना व्यापारेज, हिंसतिके० प्राणीउंनी हिंसा करे तेने पण कर्म लागे नही तथा एवा एकला मनना व्यापारे अथवा एकला कायाना व्यापारे जो कर्म लागे तो पुट्ठोके० ईषत्मात्र फरश्यो थको स्पर्शरूपेज कर्म भोगवे, परके० परतु एनो अधिक विपाक नथी केमके खुके० निश्चे सावज्जके० ते सावद्य एटले पाप ते केवुछे, तो के अवियत्तके० अव्यक्तमात्र छे एटले अस्पष्ट छे, सिकतामुष्टिवत् छे एटले जेम वेलुनी मुष्टी भीतने सन्मुख नांखी छतां स्पर्श मात्र करी पाछी पडे, पण ते भीतने काइ लागी रहे नही तेम ए कर्मनो बध जाणवो, एम क्रियावादी कहेछे ॥ २५ ॥ हवे कर्मनो बध पूरण केम थाय एटले कर्मनो उपचय केम थाय ते कहेछे मेतउ के० ए त्रण आयाणा के० आदान एटले कर्मबंधनना कारण सति के० छे जेहिं किरइपावगके० जेणे करी पाप करीये ते देखाडेछे अभिकम्मायके० अभिमुख चित्तमांहे जाणीने जे स्वयमेव एटले पोते जीवने हणे तथा तेने हणवानु मन करे के हु एनो विनाश करु ए पहेलु कर्म बधननु कारण जाणवु तथा ते जीवनो विनाश करवाने अर्थे पेसाय के० अन्यने आदेश आपी तेनोविनाश करावे ए बीजु कर्मबधनु कारण जाणवु अने मणसाअणुजाणियाके० बीजो कोई जीवनो विनाश करतो होय तेने मने करी अनुमोदे, ए त्रीजु कर्मबधनु कारण जाणवु ॥ २६ ॥ हवे ए त्रण कारणे करी उपार्ज्यु कर्म अधिक बधाय ते कहेछे एतेउतउआयाणाके० निश्चे पूर्वोक्त ए त्रण कर्म बधनां कारणछे, ए त्रण एकठां मले तो निबड कर्म बधाय एरीते जेहिके० जे दुष्टअध्यवसायेकरी कीरइपावगके० पाप उपचयरूप करे एवके० एरीते ए त्रण प्रकारे प्राणीघातने विषे प्रवर्त्ते नहीं अने भावविसोहीएके० भावनी विशुद्धि होय एतावता रागद्वेष

विना यद्यपि कांई मने करी तथा कायाये करी प्राणिघात थाय तोपण तेने विशुद्धिये कर्मबंध न लागे ते कर्मबंधने अनावे निर्वाणमनिगछइ के० निर्वाणपदे चे एटले मुक्ति पामे एम परवादी कहेछे ॥२७॥ ए उपर दृष्टांत कहेछे रपुत्तं के० बाप दीकरानो विनाश करी तेनु मांस आहारने अर्थे कोइक आपत्कालने आहारेज्जअसजए के० असयत जे गृहस्थ ते रागद्वेषरहित थको पुत्रना मांसने तथा मेधावी के० पंडितपण एटले सयती दीक्षित ते पण ते मांसनो नुजमाणो आहार करतो थको जो शुद्ध अध्यवसाय छे तो कम्मणानोविलिप्पई के० कर्मे नथी तेम बीजो प्राणी पण रागद्वेषरहित कर्तो थको कर्मे करी बधातो नथी ॥ २८

॥ दीपिका–कर्मचितानष्टत्वमेवाह ॥ जानन् य प्राणिनोहिनस्ति कायेनशरीरेणच ट्टी अहिंसक । कोर्थ । कोपादेर्निमित्तात्मनोव्यापारेण जीवान् हति न कायेन कर्मोपचयोन स्यादित्यर्थ । तथा अबुधोऽजानन् कायेन हिनस्ति तस्यापि नावान्न कर्मबध । (पुट्ठोत्ति) । तेन कर्मणा असौ केवलमनोव्यापारकृतेन यक्रियोत्थेन वा स्पृष्टएव सवेदयति स्पर्शमात्रेणैव तत्कर्मानुजवति न तस्याधिको स्पर्शानतरमेव परिशटतीत्यर्थ । एव तत्सावद्य कर्माऽव्यक्तमेव न स्पष्ट ॥ २५ ॥ तर्हि कर्मोपचय स्यादित्याह । (सतित्ति)। सत्यमूनि त्रीण्यादानानि नानि । ये पापकर्म क्रियते तान्याह । अनिक्रम्य सन्मुख गत्वा स्वय हति १ पर प्य यत्कारयति २ कुर्वत वाऽनुजानातीति ३ एतत्कर्मोपादानत्रय । अय नाव । केवलम नसा शरीरेण वा न कर्मबध किंतु यत्र स्वयकृतकारितानुमतय क्लिष्टाध्यवसायश्च तत्रैव कर्मबध ॥ २६ ॥ एतदेव दर्शयति । तुरवधारणे । एतान्येव त्रीणि व्यस्तानि समस्तानि कर्मोपादानानि ये पाप कर्म क्रियते । एव सति यत्र कृतकारितानुमतय प्राणिहिंसाया न सति तत्र नावविशुध्या रागद्वेषरहितबुध्या प्रवर्तमानस्य सत्यपि प्राणातिपाते केवलेन म नसा मनोव्यापाररहितेन कायेन उनयेन वा विशुद्धबुद्धेर्न कर्मबधस्तदनावान्निर्वाणम निगछति प्राप्नोति ॥ २७ ॥ नावशुध्या प्रवर्तमानस्य हिंसायामपि कर्मबधो न स्यादि त्यत्रार्थे दृष्टातमाह । (पुत्तति) । पिता पुत्र समारन्य व्यापाद्य आहारार्थ कस्या चित्त याविधायामापदि रागद्वेषरहितोऽसयतोगृहस्थस्तन्मास नुजानोपि । चशब्दोप्यर्थे । मेधा वी सयतोपि नुजान कर्मणा नोपलिप्यते । यथा पितु पुत्र व्यापादयतोपि शुद्धमन स कर्मबधोन स्यात्तथा तस्यारक्तद्विष्टस्य प्राणिवधे न कर्मबध ॥ २८ ॥ ॥

॥ टीका–यथा च ते कर्मचितातोनष्टास्तथा दर्शयितुमाह ।(जाणकायेणणाउट्टीत्यादि)।यो हि जानन्नवगछन् प्राणिनोहिनस्ति कायेन चाऽनाकुट्टी । कुटछेदने । आकुट्टनमाकुट्ट सवि

यते यस्यासावाकुट्टी नाकुट्टयनाकुट्टी। इदमुक्त नवति। योहि कायादेर्निमित्तात् केवलमनोव्यापारेण प्राणिनोव्यापादयति नच कायेन प्राण्यवयवाना छेदनजेदनादिके व्यापारे वर्तते न तस्याऽवद्य। यस्य कर्मोपचयोन नवतीत्यर्थः। तथाऽवुधोऽजानान कायव्यापारमात्रेण यच हिनस्ति प्राणिन तत्रापि मनोव्यापाराजावान्न कर्मोपचयइति। अनेन च श्लोकार्धेन यडुक्त निर्युक्तिरुता। यथा चतुर्विध कर्म नोपचीयते निक्कुसमयइति। तत्र परिज्ञोपचितमविज्ञोपचिताख्य जेदछ्य साक्षाडपात्त। शेप त्वीर्यापयस्वप्नांतिकजेदछ्यच शब्देनोपात्त। तत्रेरणमीर्या गमन तत्सवछ पथाईर्यापथस्तत्प्रत्यय कर्मेर्यापथ। एतडुक्त नवति। पथि गच्छतोयथाकथचिदनजिसधेर्यत्प्राणिव्यापादन नवति कर्मणश्चयोन नवति तथा स्वप्नांतिकमिति। स्वप्नएव लोकोक्त्या स्वमात सविद्यते यस्य तत्स्वमातिक तदपि न कर्मबधाय। यथा स्वमे जुजिक्रियाया तृप्त्यजावस्तथा कर्मणोपीति। कथ तर्हि तेपा कर्मोपचयोनवतीत्युच्यते। यद्यसौ हन्यमान प्राणी नवति हतुश्च यदि प्राणीत्येव ज्ञानमुत्पद्यते तथैन हन्मीत्येव च यदि बुद्धि प्राडुप्यादेतेपु च सत्सु यदि कायचेष्टा प्रवर्तते तस्यामपि यद्यसौ प्राणी व्यापाद्यते ततोहिसा ततश्च कर्मोपचयोनवतीत्येपामन्यतराजावेपि न हिसा नच कर्मचय। अत्र च पचाना पदाना द्वात्रिशन्नगाजवति। तत्र प्रथम नगे हिसकोऽपरेप्वेकत्रिशत्स्वहिसक। तथाचोक्त। प्राणी प्राणिज्ञान, घातकचित्त च तजता चेष्टा॥ प्राणैश्च विप्रयोग पचजिरापद्यते हिसा॥ १॥ किमेकातेनैव परिज्ञोपचितादिना कर्मोपचयो न नवत्येव काचिदव्यक्तिमात्रेति दर्शयितु श्लोकपश्चार्धमाह। पुछोत्ति। तेन केवलमनोव्यापाररूपपरिज्ञोपचितेन केवलकायक्रियोछेदेन वाऽविज्ञोपचितेनेर्यापथेन स्वमातिकेन च चतुर्विधेनापि कर्मणा स्पृष्टः्पत्सुत सस्तत्कर्माऽसौ स्पर्शमात्रेणैव परमनुनवति न तस्याधिकोविपाकोस्ति। कुड्यापतितसिकतामुष्टिवत्स्पर्शानतरमेव परिशटतीत्यर्थः। अतएव तस्य चयाजावोऽजिधीयते न पुनरत्पतानावइति। एवच रुत्वा तदव्यक्तमपरिस्फुट। खुरवधारणे। अव्यक्तमेव स्पष्टविपाकानुनवानावात्। तदेवमव्यक्तसद्दावयेन गर्ह्येण वर्तते तत्परिज्ञोपचितादिकर्मेति॥ २५॥ ननु च यद्यनतरोक्त चतुर्विध कर्म नोपचय याति कथ तर्हि कर्मोपचयोनवतीत्येतदाशक्याह। (सतिमेऽत्यादि)। सति विद्यते अमूनि त्रीणि आदीयते स्वीक्रियते अमीजि कर्मेत्यादानानि। एतदेव दर्शयति। यैरादानं क्रियते विधीयते निष्पाद्यते पापक कल्मप तानि चामूनि। तद्यथा। अतिक्रम्येत्याजिमुख्येन वध्य प्राणिन ज्ञात्वा तद्घाताजिमुख चित्त विधाय यत्र स्वतएव प्राणिन व्यापादयति तदेक कर्मादान। तथाऽपर च प्राणिघाताय प्रेष्य समादिश्य यत्प्राणिव्यापादन तद्वितीय कर्मादानमिति। तयाऽपर व्यापादयतं मनसाऽनुजानीतइत्येतत्तृतीय कर्मादान। परिज्ञोपचितादस्याप जेद। तत्र केवल मनसा

चितनमिह त्वपरेण व्यापाद्यमाने प्राणिन्यनुमोदनमिति ॥ २६ ॥ तदेव यत्र सर्व रितानुमतय प्राणिघाते क्रियमाणे विद्यते क्लिष्टाध्यवसायस्य प्राणातिपातश्च पचयोनान्यत्रेति दर्शयितुमाह ।(एएउइत्यादि) तुरवधारणे।एतान्येव पूर्वोक्तानि स्तानि समस्तानि वा आदानानि यैर्दुष्टाध्यवसायव्यपेक्षैः पापक कर्मोपचीयतइति । स्यते यत्र कृतकारितानुमतय प्राणिव्यपरोपण प्रति न विद्यते। तथा नावदुध्या द्विष्टबुध्या प्रवर्तमानस्य सत्यपि प्राणातिपाते केवलेन मनसा कायेन वा रहितेनोनयेन वा विशुद्धबुद्धेर्नकर्मोपचयस्तदभावाच्च निर्वाण सर्वदः गच्छत्याभिमुख्येन प्राप्नोतीति ॥ २७ ॥ नावशुध्या प्रवर्तमानस्य कर्मबधोन त्रार्थे दृष्टातमाह । (पुत्तपियाइत्यादि) पुत्रमपत्य पिता जनक समारभ्य । रार्थ कस्याचित्तथाविधायामापदि तदुद्धरणार्थमरक्तद्विष्टोऽसयतोगृहस्थस्तत्पिशितं जानोपि चशब्दस्यापिशब्दार्थत्वादिति । तथा मेधाव्यपि सयतोपीत्यर्थ । तदेव निक्षुर्वा शुद्धाशय पिशिताश्यपि कर्मणा पापेन नोपलिप्यते नाश्लिष्यतइति । त्र पितु पुत्र व्यापादयतस्तत्रारक्तद्विष्टमनस कर्मबधो न भव नस्य। करणस्य प्राणिवधे सत्यपि न कर्मबधोभवतीति ॥ २८ ॥

मणसा जे पउस्सति, चित्त तेसि ण विज्जइ ॥ अणवज्जमतह तेसि, ण ते सवुम्चारिणो ॥२९॥ इच्चेयाहि य दिठीहि, सातागारवणिस्सिया ॥ स रणति मन्नमाणा, सेवती पावगं जणा ॥ ३० ॥ जहा अस्साविणिं णाव, जाइ अधो डुरूहिया ॥ इच्छई पारमागतु, अतराय विसीयई ॥ ३१ ॥ एव तु समणा एगे, मिच्छदिठी अणारिया ॥ ससारपारकखी ते, ससार अणुपरियट्टतित्तिबेमि ॥ ३२ ॥ इति प्रथमाध्ययने द्वितीयोद्देशक ॥

अर्थ—हवे एने उत्तर कहेछे मणसाजे पउस्सतिके० जे कोई पुरुष कोईक कारण उत्पन्न थया थकी मने करी द्वेष करे, चित्ततेसिणविज्जइ के० तेनु चित्त शुद्ध केवी रीते थशे ? अर्थात् नहीं थशे, कारणके ते दर्शनीये एम कह्यु के, अणवज्जमतहतेसि के० एकला मनना व्यापार थकी कर्म न लागे ते एवु तेनु बोलवु मिथ्याछे जेमाटे ते एकले मनने अशुद्धपणे णतेसवुम्चारिणो के० ते सवृतचारी नहीं एटले सबुद्धचारी थ को सवरमा प्रवर्त्तनार नथी केमके कर्मबधनी वेलाये मुख्य कारणतो मनजछे माटे जो तेने व्यापारेज कर्मबध न थाय, तो पछी बीजा कया कारणे कर्मबध थाय? ते माटे पुत्रपिता ए दृष्टांत योग्य नथी ॥ २९ ॥ हवे ए क्रियावादीने अनर्थपरंपरा देखाडे

छे इच्चेयाहिं के० इत्यादिक ए पूर्वोक्त एवी दिठीहिं के० ज्ञानदृष्टीना अंगीकारे करीने ते वादी सातागारवणिस्सिया के० सातागारवे निश्रित एटले आसक्त अर्थात् सुखशी लीया एवा थका, ते क्रियाना करनार जेवो सदोष निर्दोष आहार पामे तेना नोगवनार एवा छतां ते पोतानुज दर्शन सरणतिमन्नमाणाके० संसारथकी उद्धरवासमर्थछे. एवु माणा एटले मानता थका, सेवतीपावग के० ते विपरीत अनुष्ठाने करी हिंसादिक पापज सेवेछे, तेमाटे यद्यपि ते व्रतधारी छे, तथापि ते अनेरा पामर एवा जणाके० लोक तेना सरखा जाणवा ॥ ३० ॥ एहिज अर्थ दृष्टाते कहेछे जहा के० जेम अस्साविणि के० छिद्रसहित एवी णाव के० नाव तेने विषे जाइअधो के० जातिअध एटले जन्माध पुरुष डुरुहिया के० चडीने इच्छईपारमागतु के० पार पामवा वांछे परतु पार पामे नहीं किंतु अतराय के० अतराले एटले वचमांहेज ते विसीयई के० बुडी जाय इत्यर्थ ॥ ३१ ॥ हवे ए दृष्टात दर्शनीउं साथे मेलवेछे जेम सछिद्रनावे चड्यो थको अंध पुरुष पार पोहोचे नहीं एवतुसमणाएगे के० तेनीपेरे कोइएक शाक्यादिक श्रमण ते मिच्छदिठीअणारिया के० मिथ्यादृष्टी एटले जिनप्रणीत धर्मथकी विपरीत दृष्टि तथा अनारिया एटले अनाचारी ससारपारकखीते के० ते पोताना दर्शनने अनुरागे ससारनो पार पामवाने वांछे छे, परतु ते संसारअणुपरियट्टंति के० संसारमांहेज परावर्तन घचन घोलन इत्यादिक अनत कालसुधी पामे ॥ ३२ ॥ एम श्रीमहावीर देवे कह्यु इति के० एम हु पण तुजने कहुछु एरीते श्रीसुधर्मास्वामिये पोताना शिष्य श्रीजबुस्वामी प्रत्ये कह्यु इति प्रथम समयाध्ययनस्य द्वितीयोद्देशक समाप्त । ए उद्देशे करी स्वसमय परसमयनी प्ररूपणा करीछे

॥ दीपिका–एतद्दूषयन्नाह । (मणसेत्ति) । ये कुतोपि हेतोर्मनसा प्रडुष्यति प्रद्वेषपति तेषा वधपरिणताना शुद्ध चित्त न विद्यते । एवच यत्तैरुक्त केवलमन प्रद्वेषेप्यनवद्यपापाभावइति तत्तेषामतथ्य मिथ्या । यतस्ते न सवृतचारिणोमनसोऽशुद्धत्वात् । तथाहि । कर्मबधे मुख्योहेतुर्मनएव । यथा ईर्यापथेऽनुपयुक्तोगच्छन् कर्मबधक । उपयुक्तस्तु सहसा हिंसकोपि न कर्मबधकइति तत पुत्र पितेति दृष्टांतोन समीचीन इति ॥ २९ ॥ अथ तेषामनर्थमाह । (इच्चेहियाहिति) । इत्येताभि पूर्वोक्ताभिर्दृष्टीभिर्मतैस्ते वादिन सातागौरवनिश्रिताइदमस्मन्मतं शरणमिति मन्यमानानरा पापमेव सेवते कुर्वंति ॥ ३० ॥ अत्रार्थे दृष्टांतमाह । (जहत्ति) । आश्राविणीं सछिद्रां नाव यथा जात्यध समारुह्य पार तटमागतुमिच्छति स नरोनावोजलव्याप्तत्वादतरा मध्यएव विषीदति जले निमज्जति ॥ ३१ ॥ दार्ष्टांतिकमर्थमाह । एवमिति । एव नौदृष्टांतेन ए

के श्रमणा शाक्यादयोमिथ्यादृष्टयोऽनार्या समतानुसारेण संसारपारकांक्षिणोपि रमेवानुपर्यटंति संसारएवानंतकालं भ्रमंति इति ब्रवीमीति पूर्ववत् ॥ ३२ ॥ इति त्रकृतांगे प्रथमाध्ययने द्वितीयोद्देशकः समाप्तः ॥ ॥ ॥ ॥

॥ टीका–सांप्रतमेतद्दूषणायाह । (मणसाजेइत्यादि) । येहि सांऽत करणेन प्रदुष्यति प्रद्वेषमुपयाति तेषां वधपरिणतानां शुद्धं चित्तं न विद्यते । व यत्तैरनिहितं । यथा केवलमनःप्रद्वेषेप्यनवद्यं कर्मोपचयाभावइति । षामतथ्यमसदर्थाभिधायित्वं । यतो न ते संवृतचारिणोमनसोऽशुद्धत्वात् । तथाहि र्मोपचये कर्तव्ये मनएव प्रधानं कारणं । यतस्तैरपि मनोरहितकेवलकायव्यापारे चयाभावोभिहितः । ततश्च यद्यस्मिन् सति भवत्यसति तु न भवति तत्तस्य कारणमिति । ननु तस्यापि कायचेष्टारहितस्याऽकारणत्वमुक्तं सत्यमुक्तं । अयुक्तं तूक्तं यतोभवतैवैव भावशुध्यानिर्वाणमभिगच्छतीति भणता मनसएवैकस्य प्रा यि । तथाऽन्यदप्यभिहितं । चित्तमेव हि संसारे रागादिक्लेशवासितं ॥ तदेव त भवातइतिकथ्यते । तथान्यैरप्यभिहितं । मतिविभवमनस्ते यत्समत्वेपि पुंसां, सि शुभाशे कल्मषांशैस्त्वमेव ॥ निरयनगरवर्त्मप्रस्थिताः कष्टमेके सूर्यसन्नेदिनोन्ये ॥ १ ॥ तदेव भवदभ्युपगमेनैव क्लिष्टमनोव्यापारः कर्मबंधायेत्युक्तं भव ति । तथेर्यापथेपि यद्यनुपयुक्तोघातितवान् ततोनुपयुक्ततैव क्लिष्टचित्ततेति कर्मबंधो भवत्येवाथोपयुक्तोयाति ततो ऽप्रमत्तत्वादबंधकएव । तथाचोक्तं । उच्चालियंमि पाए, इरि यासमियस्स संकमट्ठाए । वावज्जेज्ज कुलिंगी, मरेज्ज तं जोगमासज्ज ॥ १ ॥ णय तस्स तन्नि मित्तो बंधो सुहुमो विदेसिउं समये । अणवज्जो उपयोगे, ण सव्वभावे णसो जम्हा ॥ २ ॥ स्वप्नांतिकेप्यशुद्धचित्तसद्भावादीषद्बंधोभवत्येव सच भवतोप्यभ्युपगतएवाव्यक्तं तत्सावद्य मित्यनेनेति । तदेवं मनसोपि क्लिष्टस्यैकस्यैव व्यापारबंधसद्भावात् । यदुक्तं भवता प्राणी प्रा णिज्ञानमित्यादि तत्सर्वं प्लवतइति । यदप्युक्तं । पुत्रं पिता समारभ्येत्यादि तदप्यनालोचि ताभिधानं । यतोमारयामीत्येवं यावन्न चित्तपरिणामोभूत्तावन्न कश्चिद्व्यापादयति । एवं भूतचित्तपरिणतेश्च कथमसंक्लिष्टता चित्तसंक्लेशे चावश्यंभावी कर्मबंधइत्युभयोरपि संवा दोत्रेति । यदपि च तैः क्वचिदुच्यते यथापरव्यापादितपिशितभक्षणे परहस्ताऽकृष्टांगारदा हाभाववन्न दोषइति । पिशितभक्षणेऽनुमतिरप्रतिहताऽस्याश्च कर्मबंधइति । तथा चान्यैरप्य भिहितं । अनुमंता, विशसिता, संहर्ता, क्रयविक्रयी, ॥ संस्कर्ता, चोपभोक्ता च, घातकश्चा ष्ट घातकाः ।। यच्च कृतकारितानुमतिरूपमादानत्रयं तैरभिहितं तज्जैनेंद्रमतलवास्वादनमेव तैरकारीति । तदेवं कर्मचतुष्टयं नोपचयं यातीत्येवं तदभिदधानाः कर्मचिंतातोनष्टा

इति सुप्रतिष्ठमिदमिति ॥ २९ ॥ अधुनैतेषां क्रियावादिनामनर्थपरंपरां दर्शयितुमाह । (इच्चेयाहि इत्यादि) इत्येतानि पूर्वोक्तानिश्चतुर्विधं कर्म नोपचयं यातीति दृष्टिनिरभ्यु पगमैस्ते वादिनः सातागौरवनिश्रिताः सुखशीलतायामासक्तायत्किंचनकारिणोयथाल ब्धनोजिनश्च संसारोद्धरणसमर्थ शरणमिदमस्मदीयं दर्शनमित्येवं मन्यमानाविपरीता नुष्ठानतया सेवंते कुर्वंति पापमवद्यमेव व्रतिनोपि संतोजनाइव जना प्राकृतपुरुषसदृशा इत्यर्थ ॥ ३० ॥ अस्यैवार्थस्योपदर्शकं दृष्टांतमाह । (जहाअस्साविणिमित्यादि) आस मंतात्स्रवति तच्छीला आस्राविणी सच्छिद्रेत्यर्थ । तां तथाभूतां नावं यथा जात्यंध समारुह्य पारं तटमागंतु प्राप्तुमिच्छत्यसौ तस्याश्च स्राविणीत्वेनोदकप्लुतत्वादंतराले जलम ध्यएव विषीदति वारिणि निमज्जति तत्रैव च पंचत्वमुपयातीति ॥ ३१ ॥ सांप्रतं दार्ष्टां तिकयोजनार्थमाह । (एवमित्यादि) यथाऽंध सच्छिद्रां नावं समारूढ पारगमनाय नालं तथा श्रमणाएके शाक्यादयोमिथ्या विपरीता दृष्टिर्येषां मिथ्यादृष्टय । तथापि शिताशनानुमतेरनार्या स्वदर्शनानुरागेण संसारपारकांक्षिणोमोक्षाभिलाषुकाअपि सं तस्ते चतुर्विधकर्मचयानभ्युपगमेनानिपुणत्वाच्छासनस्य संसारमेव चतुर्गतिसंसरणरूपम नुपर्यटंति । भूयोभूयस्तत्रैव जन्मजरामरणादौ गत्यादिक्लेशमनुभवतोऽनंतमपि कालं मासते न निर्वांक्षितमोक्षसुखमाप्नुवंतीति । ब्रवीमीति पूर्ववदिति ॥३२॥ इति सूत्रकृतांगे समयाख्याध्ययनस्य द्वितीयोद्देशकं समाप्त ॥

॥ अथ प्रथमाध्ययने तृतीयोद्देशकं प्रारभ्यते ॥

जं किंचिउ पूइकड सड्ढीमागंतुमीहियं ॥ सहस्संतरियं भुंजे, डुपस्कं चेव सेवइ ॥ १ ॥ तमेव अवियाणंता, विसमंसि अकोविया ॥ मच्छा वेसा लिया चेव, उदगस्स भियागमे ॥ २ ॥ उदगस्स पभावेण, सुक्कं सिग्घं तमिं तिउ ॥ ढंकेहिय कंकेहिय, आमिसत्थेहिं ते डुही ॥ ३ ॥ एवं तु सम णा एगे, वट्टमाणसुहेसिणो ॥ मच्छा वेसालिया चेव, घातमेस्संति णंतसो ४

अर्थ–पाठलना उद्देशे स्वसमय परसमय प्ररूपणा करी, अने अहींपण तेहिज कहेछे जं किंचियके० जे काइ अल्प अथवा घणो आहार पाणी पूइकड के० पूतीकर्म एटले आधाक र्मिना एक कणे सहित एवो आहार पाणी सड्ढिके० श्रद्धावंत गृहस्थे भक्तियें करी आग तुमीहिय के० अनेरा आवनारना उद्देशे करी नीपजाव्योछे तेज आहार कदाचित् सह स्संतरियं के० सहस्रांतरित एटले एके बीजाने दीधो, बीजे त्रीजाने दीधो, त्रीजे चो थाने दीधो एवी रीते सहस्रांतरित थयो ते सदोष आहार जे भुंजे के० भक्षण करे ते,

के श्रमणा शाक्यादयोमिथ्यादृष्टयोऽनार्या स्वमतानुसारेण . ..
रमेवानुपर्यटंति संसारएवानंतकालं भ्रमंति इति ब्रवीमीति पूर्ववत् ॥ ३२ ॥ इति
त्रकृतांगे प्रथमाध्ययने द्वितीयोद्देशकः समाप्तः ॥ ॥ ॥ ॥

॥ टीका–सांप्रतमेतद्दूषणायाह । (मणसाजेइत्यादि) । येहि
सांऽत करणेन प्रदुष्यति प्रद्वेषमुपयाति तेषां वधपरिणतानां शुद्धं चित्तं न विद्यते ।
व यत्तैरभिहितं । यथा केवलमनःप्रद्वेषेप्यनवद्यं कर्मोपचयाभावइति ।
षामतथ्यमसदर्थाभिधायित्वं । यतो न ते संवृतचारिणोमनसोऽशुद्धत्वात् । तथाहि
र्मोपचये कर्तव्ये मनएव प्रधानं कारणं । यतस्तैरपि मनोरहितकेवलकायव्यापारे
चयाभावोभिहितः । ततश्च यद्यस्मिन् सति भवत्यसति तु न भवति तत्तस्य
कारणमिति । ननु तस्यापि कायचेष्टारहितस्याऽकारणत्वमुक्तं सत्यमुक्तं । अयुक्तं तूक्तं
यतोभवतैवैव भावशुध्यानिर्वाणमभिगच्छतीति भणता मनसएवैकस्य
यि । तथाऽन्यदप्यभिहितं । चित्तमेव हि संसारे रागादिक्लेशवासितं ॥ तदेव
भवातइतिकथ्यते । तथान्यैरप्यभिहितं । मतिविभवमनस्ते यत्समत्वेपि पुंसां,
ति शुभाशे कल्मषांशैस्त्वमेव ॥ निरयनगरवर्त्मप्रस्थिताः कष्टमेके
सूर्यसमेदिनोन्ये ॥ १ ॥ तदेवं भवदभ्युपगमेनैव क्लिष्टमनोव्यापारः कर्मबंधायेत्युक्तं
ति । तथेर्यापथेपि यद्यनुपयुक्तोयातितवान् ततोनुपयुक्ततैव क्लिष्टचित्ततेति कर्मबंधो
भवत्येवाथोपयुक्तोयाति ततो ऽप्रमत्तत्वादबंधकएव । तथाचोक्तं । उच्चालियमि पाए, इरि
यासमियस्स संकमठ्ठाए । वावज्जेज्जकुलिंगी, मरेज्ज तं जोगमासज्ज ॥ १ ॥ णय तस्स तन्नि
मित्तो बंधो सुहुमो विदेसिउं समये । अणवज्जो उपयोगे, ण सव्वभावे णसो जम्हा ॥ २ ॥
स्वप्नांतिकेप्यशुद्धचित्तसद्भावादीषद्बंधोभवत्येव सच भवतोप्यभ्युपगतएवाव्यक्तं तत्सावद्य
मित्यनेनेति । तदेवं मनसोपि क्लिष्टस्यैकस्यैव व्यापारबंधसद्भावात् । यदुक्तं भवता प्राणी प्रा
णिज्ञानमित्यादि तत्सर्वं प्लवतइति । यदप्युक्तं । पुत्रं पिता समारभ्येत्यादि तदप्यनालोचि
ताभिधानं । यतोमारयामीत्येवं यावन्न चित्तपरिणामोभूत्तावन्न कश्चिद्व्यापादयति । एवं
भूतचित्तपरिणतेश्च कथमसंक्लिष्टता चित्तसंक्लेशे चावश्यभावी कर्मबंधइत्युभयोरपि संवा
दोत्रेति । यदपि च तैः क्वचिदुच्यते यथापरव्यापादितपिशितभक्षणे परहस्ताऽकृष्टांगारदा
हाभाववन्न दोषइति । पिशितभक्षणेऽनुमतिरप्रतिहताऽस्याच्च कर्मबंधइति । तथा चान्यैरप्य
भिहितं । अनुमंता, विशसिता, संहर्ता, क्रयविक्रयी, ॥ संस्कर्ता, चोपभोक्ता च, घातकश्चा
ष्ट घातकाः ॥ यच्च कृतकारितानुमतिरूपमादानत्रयं तैरभिहितं तद्भोर्नेदमतत्त्वास्वादनमेव
तैरकारीति । तदेवं कर्मचतुष्टयं नोपचयं यातीत्येवं तदभिदधाना कर्मचिंतातोनष्टा

तरितमपि यो भुंजीत स द्विपक्षं गृहस्थपक्षं प्रव्रजितपक्षंच सेवते। अयमर्थ । आधाक र्मादिलवेनापि संसृष्ट परकृतमप्याहार योऽभ्यवहरेत् सोपि द्विपक्षसेवी स्यात् किं पुन स्वयमाहार निष्पाद्य ये शाक्यादयोऽभुंजते ते सुतरां द्विपक्षसेविन स्युरित्यर्थ । अथवा द्विपक्षमीर्यापथ सांपरायिक वा बद्धनिकाचितभेद वा कर्म तत्सेविन परतीर्थिका स्वयूथ्यावा स्युरिति ॥ १ ॥ अथ तद्भोजिना विपाक दृष्टांतेनाह । (तमेवेति)। तमाधाकर्माद्युपभोगदोषमविजानतोविषमे कर्मबंधे संसारे वा अकोविदा कथ कर्मबंध स्यात्कथ च न स्यात् कथ संसारार्णवस्तीर्यतइत्यत्राऽनिपुणादुःखिन स्यु । दृष्टांतमाह। मत्स्या यथा (वेसालियत्ति) विशाल समुद्रस्तत्र भवाविशालाख्यजातिभवावा विशालाएव वा वैशालिकावृहच्छरीरावदकस्य जलस्याभ्यागमे समुद्रवेलाया सत्यामुदकस्य प्रभावेन नदीमुखमागता पुनर्वेलापगमे जले शुष्के वेगे अपगते सति ढंकै कंकैश्च पक्षिविशेषैरन्यैश्चामिषार्थिभिर्विलुप्यमानास्ते दुःखिनोमत्स्यघातं विनाशं याति प्राप्नुवती ति श्लोकद्वयार्थ ॥ ३ ॥ दार्ष्टांतिकयोजनामाह। (एवमिति)। एवमेके श्रमणा शाक्यादय स्वयूथ्यावा वर्तमानमेव सुखमिहलोकसुखमाधाकर्माद्युपभोगजमेषितु शील येषां ते वर्तमानसुखैषिणोवैशालिकामत्स्याइव घात विनाशमेष्यंत्यनतशोयास्यंति बहुवार संसारे भ्रमिष्यति दुःखमनुभवत ॥ ४ ॥

॥ टीका–द्वितीयोद्देशकानंतर तृतीय समारभ्यते ॥ अस्य चायमभिसंबंध । अध्ययनार्थाधिकार स्वसमयपरसमयप्ररूपणेति। तत्रोद्देशकद्वयेन स्वपरसमयप्ररूपणा कृता। अत्रापि सैव क्रियते। अथ चाऽद्ययोरुद्देशकयो कुदृष्टय प्रतिपादितास्तद्दोषाश्च तदिहापि तेषामाचारदोष प्रदर्श्यतइत्यनेन संबंधेनायातस्यास्योद्देशकस्य चत्वार्यनुयोगद्वाराणि व्यावर्णास्खलितादिगुणोपेतं सूत्रमुच्चारणीय। तच्चेद। (जंकिंचिउपूइकडमित्यादि)। अस्य चानंतरसूत्रेण संबंध इहानंतरोद्देशकपर्यंतसूत्रेभिहित । (एवंतुश्रमणाएके इत्यादि)। तदिहापि संबध्यते। एके श्रमणायत्किंचित्पूतिकृतं भुंजाना संसार पर्यटंतीति। परंपरसूत्रेत्वभिहितं (बुज्झिज्जइत्यादि) यत्किंचित्पूतिकृतं तद्बुध्येतेत्येवमन्येरपि सूत्रैरुत्प्रेक्ष्य संबंधोयोज्य । अधुना सूत्रार्थ प्रतीयते। (यत्किंचिदिति)। आहारजातं स्तोकमप्यास्तांतावत्प्रभूतं । तदपि पूतिकृतमाधाकर्मादि सिक्थेनाप्युपसृष्टमास्तांताव दाधाकर्म। तदपि न स्वयंकृतमपितु श्रद्धावतान्येन भक्तिमताऽपरानागतुकानुद्दिश्येहितं चेष्टितं निष्पादितं तच्च सहस्रांतरितमपि योभुंजीताभ्यवहरेदसौ द्विपक्षं गृहस्थपक्षं प्रव्रजितपक्षं वा सेवते। एतदुक्तं भवति। एवंभूतमपि परकृतमपरागतुकयत्यर्थं निष्पादितं यदाधाकर्मादि तस्य सहस्रांतरितस्यापि योवयवस्तेनाप्युपसृष्टमाहारजातं भुंजानस्य द्विपक्षसेवनमापद्यते। किं पुन यएते शाक्यादय स्वयमेव सकलमाहारजातं निष्पाद्य स्वय

चेवके० निश्चे डुपक्खके० द्विपक्ष एटले गृहस्थ अने प्रव्रजितनो पक्ष सेवइके०
ते लिंगे तो प्रव्रजित देखायछे, पण सदोष आहारना लेवा थकी गृहस्थ .
यडुक्तं । आहाकम्मञ्जुजमाणे,समणे कइकम्मपयडीउंबधइ ॥
सिढिलबंधण बद्धाउ, धणियबधणबद्धाउंकरेत्ति ॥ इत्यादिवचनात् ए कारणे
अथवा स्वतीर्थी आधाकर्मादिक आहार लेता थका द्विपक्षना सेवनार जाणवा
एने एवो आहार लेता थका जे विपाक उपजे ते देखाडेछे .
ते दर्शनी ते आधाकर्मि आहारनो दोष अजाणता तथा गिलमसिके० विषम
प्रकारना कर्मनो बंध अथवा चतुर्गतिक संसारने विषे अकोविया के०
टले ते एम नथी जाणता के जीवने कर्मनो बंध अथवा मोक्ष केम थाय?
वा उपाय थकी संसारसमुद्र तरे एवो परमार्थ ते जाणता नथी एवा छतां
हे कर्मपाशे बंधाणा थका डुःखी थायछे, अहिंया दृष्टांत कहेछे मछा के०
ला वेसालिया के० समुद्रना उपना, अथवा विशाल जातीना उपना, अथवा
एटले बृहत्काय एटले मोहोटा शरीरवाला एवा महामछ ते ..
पाणीना आगमे एटले समुद्रनी वेलि प्रसार पामी छते, ॥ २ ॥ उदकस्सपजावेण
उदकने प्रजावे एटले पाणीने पूरे, समुद्र थकी निकलीने नदीना मुखमां आवी
रपछी ते पाणी सुकसिग्घतमितिउ के० सुके छते ते मछ शरीरने स्थूलपणे
हे खूता थका घातमेस्सति के० मरण पामे ते केवी रीते, तो के हि
ढक अने कंक ए जातिना पक्षी विशेष अने आमिसछेहि के० बीजापण मांसना
निए एवा मछीमारोए विलुप्यमान एवा ते डुही के० डुःख पामेछे एटले ते
वता मछोने विछुरी नाखे, छेदीनाखे, किं बहुना प्राण थकी मुकावे ए रीते डुःख
मे ॥ ३ ॥ ए दृष्टांत दर्शनीउ साथे मेलवेछे, एवंतु के० ए पूर्वोक्त न्याये मावलानी
समणाएगे के० एक शाक्यादिक श्रमण अथवा स्वतीर्थी द्रव्यलिंगी ते केवाछे, तं
वट्टमाणसुहेसिणोके० वर्त्तमान सुख जे आधाकर्मिकआहार जोजन सुख तेना ग
णहार परलोकना सुखथी पराङ्मुख मछावेसालियाचेव के० वैशालिक मछनी
आगमिक काले अरहट्टघटिकाने न्याये घातमेस्सतिणतसो के० संसारमाहे अनंता
न्मज्जन निमज्जन सरखा जन्म मरण पामे पण संसारना पारंगामी न थाय ॥ ४

॥ दीपिका–द्वितीयोदेशके स्वान्यसमयप्ररूपणा कृता तृतीयेपि सैवोच्यतइति तस्
मादिसूत्र। (जंकिंचिदिति किंचिदाहारजातं स्वल्प घनं वा पूतिकृतमाधाकर्मादिसिक्थेना
युक्तं। (सड्ढित्ति)। श्रद्धावता जक्तिमताऽन्येनापरानागतुकानुद्दिश्य ईहितं कृतं तत्सहस्र

अर्थ–हवे अनेरा अज्ञानीनु मत देखाडेछे इणमन्नतु अन्नाण के० ए पूर्वे कह्योजे सदोष आहार लइने सुख माने तेनाथी वली अन्य अज्ञानीनुमत देखाडेछे इहमेगेसिआ हियंके० अहीयां कोइ एकने मते पण सर्वने मते नहीं एटले कोइक अज्ञानी एम कहेछे के देवउत्तेअयंलोए के० आ लोक जे चराचर ससार छे, ते देवे नीपजावेलो छे जेम करसणी बीज वावीने करसण नीपजावेछे ते सरखो जाणवो तथा वली बीजा एम कहेछे के बंभउत्तेतिआवरे के० ए लोक ब्रह्मदेवे नीपजाव्योछे ब्रह्मा जगत्पितामह इतिवचनात् ॥ ५ ॥ वली कोइएक एम कहेछे, के ईसरेणकडेलोए के० ए लोक ईश्वरें करेलोछे पहाणाइ तहावरे के० तथा अवरे एटले बीजा वली एम कहेछे के, प्रधान एटले सत्व, रज अने तमगुणनी जे सम अवस्था ते प्रकृति कहिए तेणे ए लोक करे लो छे बीजा एम कहेछे के मोरनी पाख कोणे चीतरी? सेलडीमिष्ट कोणे कीधी? स्वभा वथकी लोक नीपनोछे वली कांटा तीखा कोणे कीधा! लींब कडवो कोणे कस्यो तथा लस ण दुर्गंधमय, कमल सुगंधमय ए सर्व स्वभावेज नीपनांछे, तेम लोक पण स्वभावे निष्प न्न छे ते लोक केवोछे, तोके जीवाजीवसमाउत्तेके० जीव अजीव सहित तथा सुह दुःख सम न्निएके०सुखदु खसहित छे ॥ ६ ॥ एक कहेछे के, सयंभुणाकडेलोएके० ए लोक स्वयंभु एटले विष्णु तेणे नीपजाव्यो अथवा ते विष्णु पेहेलो एकज हतो तेणे जगत नीपजाववानी चिंता करी त्यारे बीजी शक्ति नीपनी, त्यार पछी जगतनी सृष्टी निष्पन्न थई इतिवुत्तंम हेसिणा के० एवु महर्षिए कह्युछे त्यार पछी स्वयंभुए लोक नीपजावीने एवु चिंतव्यु जे एटली जगत सृष्टीनो समास क्या थशे! तेवारे मार एटले यम नीपजाव्यो पछी मारे णसंथुयामायाके० तेणेमारे माया नीपजावी ते थकी ए लोक मरेछे तेणलोए असासए के० ते कारण माटे ए लोक अशाश्वतो छे ॥ ७ ॥ वली तेहिज कहेछे माहणा समणा एगेके० एक ब्राह्मण तथा एक श्रमण जे त्रिदंडी प्रमुख ते एम आह के० कहेछे के, अंमकडेजगेके०ए सचराचर जगत ते अंमथकी निपनु छे, ते एम कहेछे के जेवारे जगत मा काइ वस्तु न हती सर्व पदार्थ शून्य ससार हतो तेवारे ब्रह्मायें पाणीमांहे इंडु सरज्यु पछी ते इंडु वध्यु तेवारे ते भांगीने बे खंम थया, तेमांहे थकी अधोलोक अने ऊर्ध्वलोक नीपना तेमां समस्त प्रजा उत्पन्न थई एवा अनुक्रमे पृथ्वी, पाणी, अग्नि, वायु, आकाश, समुद्र, नदी, पर्वत, ग्राम, आगर, नगर इत्यादिक सर्व स्थिति उत्पन्न थई, ए कारणे अ सोके० ए ब्रह्माये ए सर्व तत्तके० तत्व एटले पदार्थ ते अकासीयके० कीधा एरीते ते ब्राह्मणादिक अयाणता मुसवदेके० परमार्थने अजाणता थका मृषा बोलेछे ॥ ८ ॥

॥ दीपिका–अथाऽपराज्ञानिमतमाह । (इणमिति) । इद वक्ष्यमाणमन्यदज्ञान

इसबात को सुनकर और भी उदासीन होगई वासवदत्ता को उदासीन देखकर बसन्तकने उससे कहा कि उदयन् का स्नेह तुम्हारे ऊपर कमनहीं हुआहै किन्तु मगधराज शत्रुको अपना मित्रबनाने के लिये यह युक्तिकीगई है यह सुनकर वासवदत्ता को धैर्य हुआ जब पद्मावती के विवाहके दिन निकट आये तब फिर वासवदत्ताने नहीं म्लान होनेवाले हार और तिलक पद्मावती के बनादिये इसके उपरान्त सातवें दिन राजा उदयन् अपने मन्त्रियों समेत विवाह करने के लिये मगधदेशमें आया जो राजा उदयन् को फिर वासवदत्ताके मिलजानेकी आशा न होती तो वह मनसे भी इस उद्योगको कभी स्वीकार न करता उदयन् को आया हुआ सुनकर जैसे उदयहुए चन्द्रमाको देखकर समुद्र उमगताहै इसी प्रकार उदयन् के लिवालानेको मगधराज चला ७३ जिससमय राजा उदयन् ने मगधदेशकी राजधानी में प्रवेश किया उससमय सम्पूर्ण पुरवासी अपने २ घर मे बडा उत्सवकरके उदयन् के देखने को चले विरहसे कृश शरीरवाले राजाउदयन् को देखके लोगों के चित्त मे यह सन्देह होताथा कि यह रतिके विरहसे दुबला हुआ कामदेवही है इसके उपरान्त मगधराज के मन्दिर में जाकर अनेक स्त्रियों से भरे हुए विवाहके स्थानमें राजाउदयन् गया वहांजाकर उसने अपने मुखारविन्द से चन्द्रमाकी भी जीतने वाली पद्मावती देखी और पद्मावती के नहीं म्लानहोनेवाले माला और तिलकको देखकर उसके चित्तमें यह सन्देहहुआ कि यह इसके पास कहां से आये क्योंकि इसको मेरे और वासवदत्ताके सिवाय कोई दूसरा नहींजानता फिर उदयन् ने वेदीपर बैठके पद्मावतीका पाणिग्रहण किया वह पद्मावतीका हाथ नहींथा मानो सम्पूर्ण पृथ्वीकी राजलक्ष्मीका हाथ था उदयन् को वासवदत्ता बहुत प्यारी है इससे यह इस उत्सवको नहीं देखसक्ता इसीलिये मानों वेदीकेधुएँ ने आंसुओं से उसके नेत्र रोकदिये ८० अग्निकी प्रदक्षिणाकरने से लालहोजानेवाला पद्मावतीका मुख ऐसा शोभायमान होताथा कि मानो अपने पति के अभिप्राय को जानकर यह कुपितहोगई है फिर विवाहहोजाने के उपरान्त उदयन् ने पद्मावतीका हाथ छोडदिया परन्तु वासवदत्ता को हृदयसे क्षणभरभी नहीं छोडा विवाहके उत्सव में मगधराज ने इतने रत्न उदयन् को दिये जिससे यह मालूमहोताथा कि सम्पूर्ण पृथ्वी रत्नो से खालीहोगई उससमय यौगन्धरायणने अग्निको साक्षीकरके राजा उदयन् और मगधराजका द्रोह छुटाकर सन्धिकरादी ८४ फिर उस उत्सव में अनेक प्रकारके वस्त्र तथा आभूषण बँटनेलगे नट डोम गानेलगे और वेश्या नाचनेलगीं उससमय अपने पतिके उदयहोनेकी इच्छासे वासवदत्ता दिनमें चन्द्रमाकी कांतिकेसमान छिपीरही इसके उपरान्त जब राजा उदयन् महलके भीतरगया तब यौगन्धरायणने इस सन्देह से कि ऐसा न होय कहीं राजा वासवदत्ताको देखले तो मन्त्र खुलजायगा मगधराजसे कहा कि उदयन् को आप आजही विदा करदीजिये उसके वचनो को मानकर मगधराजने उदयन् से यह बातकही और उसने भी स्वीकारकरली तब उदयन् अपनी सम्पूर्ण सेनाको भोजनादिक से निवृत्तकरके पद्मावती और मन्त्रियों समेत वहां से चला फिर पद्मावतीकी भेजीहुई सवारीपर चढकर और उसी के भेजेहुए सिपाहीआदि को साथलेकर वासवदत्ताभी बसन्तक समेत सेनाके पीछे २ छिपीहुईचली धीरे २ पद्मावती समेत राजा उदयन् ला-

वाणक में अपने घरको पहुँचा और वासवदत्ता सिपाहियोको बैठालकर गोपालकके घरको चलीगई वहा गोपालकको देखके उसके कण्ठ मे लिपटकर वासवदत्ता बहुत रोई यह बातजानकर यौगन्धरायण तथा रुमण्वान् भी अपने मत्रको गुप्तसमझकर गोपालकके यहागये ९६ जबतक यौगन्धरायण वासवदत्ताको यहा सावधानकरनेलगा तबतक सिपाहियो ने जाकर पद्मावती से कहा कि अवन्तिका हम लोगो को छोडकर गोपालकके घर में चलीगई उदयन् के आगे उनलोगो के ऐसे वचन सुनकर पद्मावती कुछ सन्देहयुक्तहोकर उनसे बोली कि तुम अवन्तिकासे जाकरकहो कि वह ब्राह्मण तुमको हमारे सुपुर्द्दकरगयाथा इसलिये तुम वहा क्यों गईहो जहांहमरहे वहाहीचलीआओ १०० यह सुनकर जब वह सिपाहीचलेगये तब राजाने पद्मावती से एकान्तमें पूंछा कि यह माला और तिलक किसनेबनाये हे तब पद्मावतीबोली कि कोई ब्राह्मण अवन्तिकानाम अपनी कन्याको मेरे यहा रखगयाथा उसीकी यहकारीगरी है और उसीका यहहाल सिपाहीलोग कहतेथे यह सुनकर और शोचकर कि शायद वासवदत्ता गोपालकके घरहोगी उदयन् गोपालकके यहा चलागया वहाजाकर उदयन्ने देखा कि बाहरतो सिपाही बैठे हैं और भीतर गोपालक यौगन्धरायण रुमण्वान् तथा वसन्तकसमेत वासवदत्तावैठी हे ग्रहणसेछुटीहुई चन्द्रमाकी मूर्त्तिकेसमान परदेशसे आईहुई वासवदत्ताको देखकर राजाउदयन् शोचसे व्याकुलहोकर पृथ्वीपर गिरपडा और वासवदत्ताभी कपायमानहोकर पृथ्वीपरगिरपडी और अपने चरित्रकी निन्दाकरके रोनेलगी उन दोनोंका ऐसा विलापदेखकर यौगन्धरायणके भी आसूआगये और उससमय उस कोलाहलको सुनकर पद्मावती भी वहा आगई और राजा तथा वासवदत्ताकी यह दशादेखकर वह भी उन्हीं के समान रोदनकरनेलगी क्योंकि सतीस्त्रिया वडे स्नेहयुक्त और भोली होती है ११० उससमय वासवदत्ताने रोकर यहकहा कि पतिको दुःखदेनेवाले इस मेरे जीवनसे क्या प्रयोजनहे तब यौगन्धरायण बोला कि मगधराजकी कन्याके मिलने से आप चक्रवर्त्ती होजाइयेगा इसलिये मैनेही यह उपाय किगाहै इसमें वासवदत्ताका कोई अपराधनहींहै और यह पद्मावतीही इसके धर्म्मकी साक्षिणी हे यौगन्धरायणके यह वचनसुनकर पद्मावती ईर्षारहितहोकरबोली कि वासवदत्ताकी शुद्धता प्रकटकरनेको में अग्निमे प्रवेशकरसक्तीहू तब राजाने कहा कि इसमें मेराही अपराधहे जिसके कारण रानी वासवदत्ता को भी क्लेशसहनापडा यहसुनकर वासवदत्ताने कहा कि मै राजाको अपनी शुद्धता प्रकटकरने के लिये अवश्य अग्निमें प्रवेश करूंगी तब वडाबुद्धिमान् यौगन्धरायण आचमनकरके और पूर्व्वकी ओर मुख करके यह वचनबोला कि जो मैं राजाका हितकारीहू और रानी वासवदत्ता शुद्धहे तो हे लोकपाललोगो तुमभी इसबातकोकहो नहीं तो मै अपनाशरीर त्यागताहू यह कहकर यौगन्धरायणके चुपहोजानेपर यह आकाशवाणीहुई कि हे राजा तुम धन्यहो जिसका ऐसा श्रेष्ठ यौगन्धरायण मन्त्री है और वासवदत्ता सरीखी जो पूर्व्वजन्मकी देवीहै वह तुम्हारी स्त्री है और वासवदत्तामे कोईदोष नहीं है यह कहकर आकाशवाणी बन्दहोगई १२० नवीन मेघो के गर्जने के समान इस आकाशवाणीको सुनकर नीलकण्ठ [illegible] के समान ऊपर गर्द्दनउठायेहुए वह सबलोग सन्तापसे रहितहोगये फिर गोपालकसमेत राजा

उदयन् ने यौगन्धरायणके कार्यकी बड़ीप्रशसाकी और सम्पूर्ण पृथ्वी अपने हाथमें आईहुईजानी इसके उपरान्त राजाउदयन् वासवदत्ता और पद्मावती को पाकर नित्य २ उनके साथ क्रीड़ाकरताहुआ बड़े आनन्दको प्राप्तहुआ १२३ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायालावाणकलम्बकेद्वितीयस्तरङ्ग २ ॥

इसके उपरान्त एकदिन राजाउदयन् वासवदत्ता तथा पद्मावतीके साथ एकान्तमें मद्यपानादिक कर-के गोपालक रुमरावान् वसन्तक तथा यौगन्धरायणको बुलाकर विश्वासयुक्त बातें करनेलगा उससमय राजा अपने विरहके विषयमे यह कथा कहनेलगा कि पूर्वसमयमें पुरूरवा नाम एक ऐसा प्रतापी राजा था जिसका रथ पृथ्वी के समान स्वर्गमें भी चलताथा एक समय नन्दनवनमें विहारकरतेहुए राजाको देखकर उर्वशीनाम वेश्या कामसे ऐसी व्याकुलहुई कि उसकी विकलताको देखकर उसकी रंभादिक स-खिया बहुत घबरागईं और राजाभी उर्वशीको देखकर कामसे अत्यन्त पीड़ितहोकर मूर्च्छितहुआ इसके उपरान्त श्रीकृष्णभगवान्ने क्षीरसमुद्र में दर्शन करने के लिये आयेहुए नारदमुनिसे कहा कि हे नारद नन्दनवनमे राजापुरूरवा उर्वशीको देखकर बहुत व्याकुलहोरहाहै तो तुमजाकर हमारी आज्ञासे पुरूरवा को इन्द्रसे कहकर उर्वशी दिलवादो १० विष्णुभगवान्की यहआज्ञापाकर नारदजीने पुरूरवाको मूर्च्छा से जगाकर यह कहा कि हे राजा उठो तुम्हारे लिये विष्णुभगवान्ने हमको यहाभेजाहै क्योंकि वह अपने निष्कपटभक्तोंकी आपत्ति नहीं देखसक्तेहैं इसप्रकार पुरूरवाको समझाकर नारदमुनि पुरूरवाको साथले-कर इन्द्रकेपासगये और वहा इन्द्रसे विष्णुभगवान्का सदेशा कहकर पुरूरवाको उर्वशी दिलवादी उर्वशी के देनेसे स्वर्गतो निर्जीवसाहोगया परन्तु उर्वशीके मानोंशरीरमे प्राणआगये इसके उपरान्त उर्वशीको सायलेकर राजा पुरूरवा पृथ्वीपरआगया और उर्वशीको देखकर पृथ्वीके सपूर्ण लोगोंको बड़ा आश्च-र्य्यहुआ पृथ्वी में आकर राजा और उर्वशी दोनो बड़े स्नेहसे आनन्दका भोगकरनेलगे १७ एक समय इन्द्रने दैत्योंके युद्धमें सहायताके लिये पुरूरवाकोस्वर्गमें बुलवाया वहा जाकर जब राजाने मायाधरनाम दैत्यो के स्वामीकोमारा तो स्वर्गमें बड़ा उत्सवहोनेलगा उस उत्सवमें सपूर्ण अप्सरा नृत्यकरनेलगीं उन मेंसे जिससमय तुम्बुरुनाम गधर्वके आचार्य्य होकर स्थितहोनेपर रंभानाम उर्वशी नाचनेलगी तब भावके विगड़ जानेपर पुरूरवा हँसनेलगा उसेहँसता देखकर रंभाने ईर्षा से यहवचन कहा कि हे मनुष्य इसदिव्य नृत्यको में जानतीहू पर तू क्या जानताहै तबपुरूरवाने कहा कि उर्वशीके सगसे में वहबातें जानताहू जोतु-म्हारा गुरुतुम्बुरुभी न जानताहोगा यहसुनकर तुम्बुरुने क्रोधसे राजाको यहशापदिया कि उर्वशीसे तुम्हारा वियोग तबतकरहैगा जबतक कि तुम श्रीकृष्णभगवान्का आराधन न करोगे२३ इसशापको सुनकर राजा ने पृथ्वीमेंजाके वज्रपातके समान कठोरशापका वृत्तांत उर्वशीको सुनाया इसके उपरात एकसमय एका एकी गन्धर्वलोग उर्वशीको हरलेगये और राजाउन्हें न देखसका तबराजाने शापकादोष जानकर बद्रि-काश्रममें जाकर श्रीकृष्णभगवान्का आराधनकिया और उर्वशी गन्धर्वोंके लोकमें वियोगसे व्याकुल होकर मरीहुईसी सोईहुईसी अथवा तसवीरमें लिखीहुईसी चेतनारहित होगई फिर रात्रिके समय चक-

वाकीकेसमान शापके अन्तकी आशासे उसकेप्राण नहीं निकलगये यहीआश्चर्यहै इसके उपरान्त पुरूरवाकेतपसे प्रसन्नहुए श्रीभगवान्‌की कृपासे गन्धर्वों ने इसे उर्वशी देदी फिर शापके अन्तमें उर्वशीको पाकर राजापुरूरवा पृथ्वीमे दिव्य आनदोंको भोगनेलगा ३० यहकहकर राजाकेचुप होजानेपर वासवदत्ताको उर्वशीका अनुराग सुनकर यहलज्जाहुई कि हाय मैंने राजाका वियोग सहलिया युक्तिपूर्व्वक राजासे लज्जित कीहुई रानीको देखकर राजाको प्रसन्नकरने के लिये यौगन्धरायण वोला कि हे राजा जो आपने यहकथा न सुनीहोय तो सुनिये कि तिमिरानाम नगरी मे विहितसेननाम एक राजाथा उसकी वडीसुन्दर तेजोवती नामरानीथी राजा उससे ऐसा स्नेह करताथा कि उसीके गले मे हाथडाले हुए आलिंगनके लोभ से रानीको कचुकी (आंगी) तक नही पहरने देताथा एकसमय उस राजा को जीर्णज्वर होगया तव वैद्योने राजा और रानीका समागम वन्दकरवादिया रानी के न मिलने से राजाके हृदयमे एक ऐसा फोडाहोगया जो कि सम्पूर्ण औषधियों से असाध्यथा तव वैद्यों ने मत्री से कहा कि भय शोक अथवा चोटमे यहफोडाफूटसक्ताहै तव मत्रीवोले कि पीठपर वडेविषधरसर्पके गिरनेसे औरमहलतक शत्रुकीसेना के आजानेसेभी जिसेभयनहींहुआ उसराजाको अन्य किसरीति से भयहोसक्ताहै यहशोचकर मन्त्रियोंने रानीकेसाथ सलाहकरके औररानीको छिपाकर राजासेकहा कि रानी मरगई ४१ इसशोकसे अतिव्याकुल होजानेवाले राजाके हृदयका फोडाफूटगया तवरोगसेछूटेहुए राजाको वहरानी देदी औरराजाभी रानीपर वहुतप्रसन्नहुआ और उसपरछिपनेके अपराधमे खफाभी न हुआ पतिकाहितचाहनाही रानीहोनेका परमधर्महै केवल पतिको प्रसन्नरखनेसेही रानीनहींहोसक्ती है राज्यकेकार्य्य के भारका चिन्ताकरनाही मत्रीपनहै और स्वामीकी हॉमेंहॉमिलाना मुसाहिवोका लक्षणहै इसकारणसे शत्रु मगधराजकेसाथ मेलमिलापकरके सपूर्णपृथ्वी के विजयकरनेका हमनेयहयत्नकियाथा इससे हेराजा रानीने आपकीभक्तिसे असह्यआपके वियोगको सहकर कोई अपराधनहीं कियाहै वल्कि उपकार किया है ४८ मन्त्री के यह यथार्थ वचन सुनकर और अपनाही अपराध समझकर राजा प्रसन्नहोकर वोला कि मै इसवातको जानताहूं कि आपकेही कहने से रानी ने यह उपाय करके साक्षात् नीति के समान मानो मुझे सम्पूर्णपृथ्वीका राज्यदिया और मैंने वडेप्रेमसे यहवात कहीथी क्योंकि स्नेहमे अन्धे हृदय वालो को विचार नहीं होता है इसीप्रकार की अनेक वातो मे राजाने रानीकी लज्जा दूरकरके वहदिन व्यतीत किया दूसरेदिन मगधराजका भेजाहुआ दूत उदयन् के पास आकर वोला कि हे राजा मगधराजने यह सदेशा कहाहै कि तुम्हारे मन्त्रियों ने हमारे साथ छलकिया तो अवऐसा यत्नकरना कि जिसमे हमलोगों को खेद न होवे यह सुनकर उदयन् ने वडेआदर पूर्व्वक उसदूतको पद्मावती के पास सदेशेका जवावलेने के लिये भेजदिया वहॉ वासवदत्ता मे वहुत नम्रता करनेवाली पद्मावती वासवदत्ताके निकट उसदूतसे मिली क्योंकि नम्रताही सतीस्त्रियो का परमधर्म है ५६ पद्मावती से उसदूतने कहा कि हे पुत्री छलसे यहलोग तुम्हारा विवाह करलाये और तुम्हारे पतिका चित्त अन्य स्त्री मे लगाहै इसखेद से मुझे कन्याके जन्मका फलमिलगया दूतके मुखमे पिताके इस सदेशे को सुनकर पद्मावती वोली कि

उदयन् ने यौगन्धरायणके कार्यकी बडीप्रशसाकी और सम्पूर्ण पृथ्वी अपने हाथमें आईहुईजानी इसके उपरान्त राजाउदयन् वासवदत्ता और पद्मावती को पाकर नित्य २ उनके साथ क्रीड़ाकरताहुआ बड़े आनन्दको प्राप्तहुआ १२३ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायालावाणकलम्बकेद्वितीयस्तरङ्ग २ ॥

इसके उपरान्त एकदिन राजाउदयन् वासवदत्ता तथा पद्मावतीके साथ एकान्तमें मद्यपानादिक करके गोपालक रुमण्वान् वसन्तक तथा यौगन्धरायणको बुलाकर विश्वासयुक्त बातें करनेलगा उससमय राजा अपने विरहके विषयमे यह कथा कहनेलगा कि पूर्वसमयमें पुरूरवा नाम एक ऐसा प्रतापी राजा था जिसका रथ पृथ्वी के समान स्वर्गमें भी चलताथा एक समय नन्दनवनमें विहारकरतेहुए राजाको देखकर उर्वशीनाम वेश्या कामसे ऐसी व्याकुलहुई कि उसकी विकलताको देखकर उसकी रंभादिक सखिया बहुत घबरागईं और राजाभी उर्वशीको देखकर कामसे अत्यन्त पीडितहोकर मूर्च्छितहुआ इसके उपरान्त श्रीकृष्णभगवान्ने क्षीरसमुद्र में दर्शन करने के लिये आयेहुए नारदमुनिसे कहा कि हे नारद नन्दनवनमें राजापुरूरवा उर्वशीको देखकर बहुत व्याकुलहोरहाहै तो तुमजाकर हमारी आज्ञासे पुरूरवा को इन्द्रसे कहकर उर्वशी दिलवादो १० विष्णुभगवान्की यहआज्ञापाकर नारदजीने पुरूरवाको मूर्च्छा से जगाकर यह कहा कि हे राजा उठो तुम्हारे लिये विष्णुभगवान्ने हमको यहाभेजाहै क्योंकि वह अपने निष्कपटभक्तोंकी आपत्ति नहीं देखसक्तेहैं इसप्रकार पुरूरवाको समझाकर नारदमुनि पुरूरवाको सायलेकर इन्द्रकेपासगये और वहा इन्द्रसे विष्णुभगवान्का सदेशा कहकर पुरूरवाको उर्वशी दिलवादी उर्वशी के देनेसे स्वर्गतो निर्जीवसाहोगया परन्तु उर्वशीके मानोंशरीरमें प्राणआगये इसके उपरान्त उर्वशीको सायलेकर राजा पुरूरवा पृथ्वीपरआगया और उर्वशीको देखकर पृथ्वीके सपूर्ण लोगोको बडा आश्चर्यहुआ पृथ्वी मे आकर राजा और उर्वशी दोनो बडे स्नेहसे आनन्दका भोगकरनेलगे १७ एक समय इन्द्रने दैत्योंके युद्धमें सहायताके लिये पुरूरवाकोस्वर्गमें बुलवाया वहा जाकर जब राजाने मायाधरनाम दैत्योंके स्वामीकोमारा तो स्वर्गमें बडा उत्सवहोनेलगा उस उत्सवमें सपूर्ण अप्सरा नृत्यकरनेलगीं उन मेंसे जिससमय तुम्बुरनाम गधर्वके आचार्य्य होकर स्थितहोनेपर रभानाम उर्वशी नाचनेलगी तब भावके बिगड जानेपर पुरूरवा हँसनेलगा उसेहँसता देखकर रभाने ईर्षासे यहवचन कहा कि हे मनुष्य इसदिव्य नृत्यको मैं जानतीहूं पर तू क्या जानताहै तबपुरूरवाने कहा कि उर्वशीके सगसे मैं वहबातें जानताहू जोतुम्हारा गुरुतुम्बुरभी न जानताहोगा यहसुनकर तुम्बुरने क्रोधसे राजाको यहशापदिया कि उर्वशीसे तुम्हारा वियोग तबतकरहैगा जबतक कि तुम श्रीकृष्णभगवान्का आराधन न करोगे२३ इसशापको सुनकर राजा ने पृथ्वीमेंजाके वज्रपातके समान कठोरशापका वृत्तात उर्वशीको सुनाया इसके उपरात एकसमय एका एकी गन्धर्वलोग उर्वशीको हरलेगये और राजाउन्हें न देखसका तबराजाने शापकादोष जानकर बदिकाश्रममें जाकर श्रीकृष्णभगवान्का आराधनकिया और उर्वशी गन्धर्वोंके लोकमें वियोगसे व्याकुल होकर मरीहुईसी सोईहुईसी अथवा तसवीरमें लिखीहुईसी चेतनारहित होगई फिर रात्रिके समय चक-

कालके समय गुहसेनने अपनेपुत्र गुहचन्द्रसे कहा कि हे पुत्र इसेअपनी शय्यापरसुलाओ क्योंकि अपनी स्त्रीको कौन अपनी शय्यापरनहीं सुलाताहै यहवचन सुनकर सोमप्रभाने अपने श्वशुरको वडेक्रोध से देखकर यमराजकी आज्ञाके समान अपनी तर्जनी उंगलीघुमाई उसअंगुली को देखतेही गुहसेनके तो प्राण निकलगये और अन्यवणिये डरगये फिर गुहचन्द्रने भी अपने पिताको मरादेखकर यहजाना कि यहस्त्री महामारीरूप मेरेघरमें आई है ६० इसके उपरान्त गुहचन्द्रने उसकेसाथ भोगनहींकिया और असिधारा व्रतसा धारणकरलिया फिर इसदुःख से बहुत व्याकुल होकर सवभोगोंको त्यागकर गुहसेन नियम पूर्वक रोज ब्राह्मणोंको भोजन करानेलगा उसकी स्त्री भी मौन धारणकरके सपूर्ण ब्राह्मणोंको रोज दक्षिणादेतीथी एकसमय किसी वृद्धब्राह्मणने सोमप्रभाके वडे विलक्षणरूपको देखकर एकान्त में गुहसेनसे कहा कि यहस्त्री तुम्हारी कौनहै हमसेवताओ तववहुत पूछनेसे गुहसेनने सववृत्तान्त उसका ब्राह्मणसे कहदिया यहवात सुनकर उस ब्राह्मणने दयापूर्व्वक गुहसेनका मनोरथ सिद्धहोनेके लिये उसे एक अग्निकामंत्र वतादिया उसमंत्रको एकान्तमें जपते २ गुहसेनके आगे एकपुरुष अग्निमें से निकला उसेदेखकर गुहचन्द्र उसके चरणोंपर गिरपडा तवब्राह्मण रूपधारी अग्निने उससे कहा कि आज हम तुम्हारे घरमें भोजनकरके रात्रिको तुम्हारेही यहाँरहेंगे और तुम्हें सपूर्णतत्त्वदिखाकर तुम्हारा मनोरथ पूर्णकरदेंगे यहकहकर वह ब्राह्मण गुहचन्द्रके घरको चलागया १०० और वहाँ जाके साधारण ब्राह्मणों के समान भोजनकरके रात्रि के समय गुहसेनके साथ सोगया प्रहरभर रात्रि व्यतीत होनेपर जवगुहचन्द्रके यहाँ सवलोग सोगये तव गुहचन्द्रकी स्त्री घरसे वाहर निकली उससमय उसब्राह्मणने गुहचन्द्रको जगाकरकहा कि आओ अपनी स्त्रीका चरित्रदेखो फिर उसब्राह्मणने अपने योगके वलसे गुहसेनका और अपना रूप भौंरेकासा करलिया और वह दोनों गुहचन्द्रकी स्त्री के पीछे २ चले वह सोमप्रभा नगरसे वाहर निकलकर वहुतदूरतक चलीगई वहाँजाकर गुहचन्द्र और ब्राह्मणने यहदेखा कि वहाँपर वडी सघन छायावाला एकवडका वृक्षहै उसके नीचे उन्होंने वडीसुन्दर वीणाकी ध्वनि और अत्यन्त मधुर गीत सुनाई दिये उसवृक्ष की एकशाखा पर वडेउत्तम सिंहासनपर सोमप्रभा के समान एक वडी उत्तम कन्या वैठीदिखाई दी उसकन्या की कान्ति चांदनीसे भी निर्मलथी और सखिया उसके ऊपर श्वेतचमर डुलारहीं थीं वह कन्या क्याथी मानो चन्द्रमाकी सुन्दरताके खजाने की देवताथी वहाँ सोमप्रभाभी उस वृक्षपर चढके उसकन्याके आधे सिंहासनपर वैठगई समान कान्तिवाली उनदोनोंको देखकर गुहचन्द्र को यह मालूमहोताथा कि आजकी रात्रिको तीनचन्द्रमा निकले हैं यह देखकर वहुत आश्चर्य्य पूर्व्वक गुहचन्द्र शोचनेलगा कि क्या यहस्वप्नहै अथवा भ्रान्तिहै या यहदोनों वातें नहीं हैं सन्मार्गरूपी वृक्षकी सत्संगतिरूपी मञ्जरीका यहफूलफूलाहै अवइससे उचितफल मुझको मिलेगा गुहचन्द्रके इस विचारके करने के समय उन दोनो कन्याओं ने दिव्य भोजन और दिव्यमद्यका पान किया तदनन्तर सोमप्रभा वोली कि आज हमारे यहां एकवडा तेजस्वी ब्राह्मण आयाहै उससे मेरा चित्त डरताहै इसीसे मैं जातीहूं यहकहकर और उसकी आज्ञा लेकर सोमप्रभा उसवृक्षसे उतरी यहदेखकर वह दोनों

तुम हमारे पिता और मातासे यह वचन कहना कि खेदकरने का कोई प्रयोजन नहीं है क्योंकि आर्य पुत्र (पति) मेरे ऊपर अन्यन्त स्नेह करते हैं और देवीवासवदत्ता भी मेरे ऊपर वहिनके समान स्नेह करती है इसकारण से मेरे पिताको अपने सत्य और मेरे प्राणोंकी जो पालना करनी होय तो आर्य पुत्र(पति) के साथ स्नेह सदैव वनायरक्खे पद्मावती के इस उचित सन्देशे को कहकर चुपहोजाने पर वासवदत्ताने उसदूतको वहुत सत्कारकरके विदाकिया ६१ दूतके चलेजानेपर पिताकेघरका स्मरणकरके पद्मावती कुछ उदासीन होगई तव उसको प्रसन्न करने के लिये वासवदत्ता ने वसन्तकको बुलवाकर यह कथा कहलाई कि पाटलिपुत्र नामनगरमे धर्मगुप्त नाम एकवडा धनवान् वणिया रहताथा उसके चन्द्र-प्रभानाम एकस्त्री थी एकसमय उस चन्द्रप्रभाके सर्वांग सुन्दरी एक कन्या उत्पन्नहुई वह कन्या उत्पन्नहो तेही उठकेबैठगई और स्पष्ट (साफ २) वोलनेलगी यह देखकर सपूर्णस्त्रिया बहुतघवराई और धर्मगुप्तभी डरकर वहाँआगया और प्रणामकरके उसकन्यासेवोला कि हेभगवती तुमकौनहो मेरेयहाँ अवतारलेकर आईहो तव वहकन्या वोली कि हे पिता तुम मेरा किसी के साथविवाह न करना मुझे अपने घरमेंही रखने से तुम्हारी भलाईहोगी और अन्यवृत्तान्त पूछनेसे तुमको क्या प्रयोजनहै उसके यह बचन सुनकर डरे हुए धर्मगुप्तने उस कन्याको छिपाकर अपनेघरमेरक्खा और वाहर यहखवर उडादी कि कन्यामरगई ७० इसके उपरात दिव्य स्वरूपवाली वह सोमप्रभा नाम कन्या उसकेघरमें वढनेलगी एकसमय वह कन्या अपने महलके ऊपर चढीहुई वसन्तके उत्सवको देखरहीथी वहाँ कामदेवके भालेकेसमान उस कन्याको देखकर गुहचन्द्र नाम कोई वणियेका लडका कामसे मूर्च्छितहोकर वडेदुःखसे अपनेघरको आया उसके माता पिताने वहुतहठसे जव उसके व्याकुलहोनेका कारण पूछा तव उसने मित्रोंके मुखसे यहहाल कह लवादिया यहवात सुनकर गुहसेननाम उस लडकेका पिता पुत्रके स्नेहसे धर्मगुप्तके यहाँ कन्या मागने कोगया और वहाँजाकर उसने कन्यामागी तव धर्मगुप्तने उससेकहा कि हेमूर्ख मेरेयहाँ कन्याकहाँ है धर्म-गुप्तके यहवचन सुनकर गुहसेनने जाना कि इसने अपनी कन्या छिपारक्खी है और अपने घरमेजाकर अपनेपुत्रको व्याकुलदेखके उसने शोचा कि मैं राजासे कहकर उससे वहकन्यालेलूं क्योंकि मैंने पहले राजाकी वडीसेवाकी है इससे राजा मेरे पुत्रको व्याकुलदेखकर उसकन्याको दिवादेगा ७८ ऐसानिश्चय करके गुहसेनने राजाके पासजाकर रत्नोंकी भेटदेकर राजासे अपना मनोरथ कहदिया राजातो उससे प्रसन्नहीथा इससे उसने सहायताकेलिये कोतवालको उसके साथकरदिया तवकोतवालने वहाँ जाकर धर्मगुप्तकाघर चारोंओरसे घेरलिया यहदेखकर धर्मगुप्तको इसलिये वडाखेदहुआ कि आजमेरा सवधन नाशहोजायगा तवसोमप्रभाने उससे कहा कि हेपिता मुझे तुम इसेदेदो इसमें मेरे लिये तुम्हारे यहाँ कोई उपद्रव न होय परन्तु अपनेसमधीसे यहनियम करलो कि मेरापति मुझे अपनी शय्यापर न बुलावे कन्या के यहवचन सुनकर धर्मगुप्तने शय्यापर न बुलाने का नियमकरके कन्यादेना स्वीकार करलिया और गुहसेनने भी अपने चित्तमें हँसकर किसीतरहसे पुत्रका विवाह तो होजाय इसलिये वहवात स्वीकार करलीनी ८५ इसके उपरान्त गुहसेनकापुत्र गुहचन्द्र सोमप्रभाको विवाहकरके अपने घरलेगया साय-

इन्द्रको भी यह शापदिया कि तुमको भगका बडा लोभहै इससे तुम्हारे शरीरमें हज़ार भगहोजायँगी और जब विश्वकर्म्मा तिलोत्तमानाम अप्सराको बनावेंगे तब उसे देखकर यह सब तुम्हारे शरीरकी भग नेत्र होजायँगी १४५ इसप्रकार से शाप देके मुनि तपकरनेको चलेगये अहल्या शिलाहोगई और इन्द्रका सम्पूर्ण शरीर भगोंसे व्याप्तहोगया (ठीक है दुस्स्वभाव से किसको बुराई नहीं होती) इसप्रकार से जो कुकर्म कोई करताहै उसकाफल उसको अवश्य मिलताहै क्योंकि जो जैसा बीजबोता है उसको वैसाही फल मिलताहै इसीसे महात्मालोग पराया विरोध कभी नहीं करते हैं और यही अच्छेलोगोंका भी सदैव नियम रहताहै तुम दोनो रानी पूर्वजन्मकी बहिनहो और दिव्यस्त्रीहो और शापसे यहाँ आई हो इसीसे तुमदोनो आपसमें बडास्नेह करतीहो और आपसमे भेद नहीं रखतीहो १५० वसन्तकके मुख से इसकथा और बातोको सुनकर वासवदत्ता और पद्मावतीके हृदयोमें ईर्षाका लेशमात्रभी नहींरहा फिर वासवदत्ताने अपनेसमान पद्मावती मे भी उदयन्‌का बडास्नेह बढादिया पद्मावतीके भेजेहुए दूतोंसे वासवदत्ताके ऐसे उत्तम स्वभावको सुनकर मगधराज बहुत प्रसन्नहुआ इसकेपीछे एकदिन यौगन्धरायण ने रानी और अन्यलोगो के सन्मुख राजाउदयन्‌से यहवचनकहा कि हे राजा अब उद्योग करनेके लिये कौशाम्बीको चलिये छलेहुए भी उस मगधराजसे अबकुछ डरनही है क्योकि कन्याके सम्बन्धसे वहखूब वशीभूतहोगयाहै आपसे लडकर प्राणो से भी प्यारी अपनीकन्याको कैसे छोडसकेगा इसकेसिवाय वह अपने सत्यकोभी नहीं त्यागेगा और आपने उसकेसाथ कुछछल भी नहीं कियाहै छलतो मैंने कियाहै पर उससे भी उसको कुछ दुःखनहीं हुआ मैंने दूतोंके मुखसे यह बातजानली है कि अब वह कुछ उपद्रव नहींकरेगा इसीबातके जाननेको मै यहा इतने दिनतक ठहरारहाथा १५८ यौगन्धरायण यह सब बातें करहीरहाथा कि उसीसमय मगधराजका दूतआयाहै यहखबर द्वारपालने आकरकही राजाने उसे उसी समय भीतर बुलवालिया तो उस दूतने वहांआकर प्रणामकरकेकहा कि पद्मावती के सन्देशेसे प्रसन्न हुए मगधराजने आपके पास यह सन्देशाभेजाहै कि बहुत कहने से क्या प्रयोजनहै सम्पूर्ण बातों को जानकर मै तुम्हारेऊपर प्रसन्नहू तो जिसलिये तुम्हारा यह उद्योगहै उसकोकरो हम तुमसे दबगये यौगन्धरायणकी नीतिरूपी वृक्षकेपुष्परूपी दूतके यह सुन्दर वचनसुनकर प्रसन्नहुए उदयन्‌ने पद्मावतीको बुलाकर उसके सन्मुख दूतको बहुतसा धनदेकर विदाकिया १६२ इसके उपरान्त राजा चण्डमहासेनका दूतभी राजाके पासआके प्रणामपूर्वककबोला कि हे स्वामी कार्य्य के तत्वकोजाननेवाले राजा चण्डमहासेनने आपका वृत्तान्तजानकर प्रसन्नहोकर यह सन्देशाभेजाहै कि आपकी श्रेष्ठताकावर्णन तो इतनेही से होगया कि यौगन्धरायण आपका मन्त्रीहै फिर अधिककहने से क्या है और वासवदत्ताभी धन्यहै जिसने कि तुम्हारी भक्तिसे यह कार्य्यकियाहै उसके यशसे सज्जनो के बीचमें मेराशिर ऊंचाहोगया मै पद्मावती और वासवदत्तामें कोई भेदनहींसमझता क्योंकि स्नेहसे उनदोनोकाचित्त एकहोगया इससे अब तुम शीघ्र अपना उद्योगकरो तब अपने श्वशुरके दूतसे यह वचनसुनकर राजा उदयन् को बडा आनन्दहुआ और रानी वासवदत्ता तथा यौगन्धरायणपर राजाका अत्यन्त प्रेमहोगया इसके उपरान्त

अपने घरमें आनकर पहले से सोगये और फिर गुहचन्दकी स्त्रीभी छिपकर आकर सोरही ११८ इस के उपरान्त उस ब्राह्मणने एकान्त में गुहचन्द्रसे कहा कि तुमने देखा कि यह सोमप्रभा दिव्यस्त्री है मानुषी स्त्री नहीं है और इसकी बहिनको भी तुमने देखा तो अब बताओ कि दिव्य स्त्री मनुष्य से कैसे समागमचाहैगी अब तुम्हारे मनोरथ के सिद्ध करनेके लिये मैं तुम्हें एक मन्त्रबताताहू उसे दरवाजेपर लिखदेना और उसके सिद्धकरनेकी युक्तिभी तुम्हेंबताताहू जैसे केवल अग्निभी जलासक्ती है तोवायुके संयोगमें तो अवश्यही जलावेगी इसमें क्या कहनाहै इसीप्रकार केवल मन्त्रही मनोरथको सिद्धकरसक्ता है और उसमे श्रेष्ठ युक्तिभी होय तो क्या कहनाहै यह कहकर और गुहचन्द्रको युक्ति समेत मन्त्रको बनाकर प्रात काल वह ब्राह्मण अन्तर्द्धान होगया और गुहचन्द्रने भी अपनी उसस्त्रीके घरके द्वारपर वह मन्त्रलिखकर ब्राह्मणकी बताईहुई युक्तिकरदी फिर इसके उपरान्त गुहसेन बडे उत्तमवस्त्र पहनकर अपनी स्त्रीके सन्मुख किसी अन्य स्त्रीसे कुछ बातकरनेलगा यह देखकर मन्त्रसे खुलीहुई जिह्वावाली सोमप्रभाने उससे बुलाकर पूछा कि यह कौन स्त्री है तब गुहचन्द्र यह मिथ्यावचन बोला कि यह स्त्री मुझसे बडा स्नेह करती है इससे आज मैं इसके यहा जाताहू यह सुनकर तिरछी नजर से देखकर और बाये हाथ से उसे रोककर सोमप्रभाबोली कि क्यातुमने इसीलिये यह ठाटकिये हैं इसके यहा तुम मतजाओ उससे तुम्हें क्या प्रयोजनहै मेरे पासआओ क्योंकि मैं तुम्हारी स्त्रीहू तब पुलकावली तथा कम्पसे युक्त और मन्त्रके प्रभावसे वशीभूतहुई सोमप्रभाके ऐसे वचन सुनकर गुहसेन उसे शयनस्थानमे लेजाकर उस दिव्य सुखको भोगनेलगा जिसका कि वह मनोरथभी नहीं करसक्ताथा १३१ इसप्रकार मन्त्रके प्रतापसे अत्यन्त स्नेहयुक्त सोमप्रभाको पाकर गुहचन्द्र सुखपूर्व्वक रहनेलगा इसरीति से यज्ञादिक बडे २ पुण्य करनेवालों के यहा शापसे आईहुई दिव्य स्त्रियाभी उनकी स्त्री होती हैं देवता तथा ब्राह्मणोकी सेवा सज्जनोंके लिये कामधेनु के समान होती है उससे कौन २ पदार्थ नहीं पासक्ता है और साम आदिक उपाय तो ऊपरके दिखावेहै पातक बडे २ उच्चपदवाले दिव्यपुरुषोको भी अपने पदसे नीचे ऐसे गिरा देते है जैसे कि वायु पुष्पोंको नीचे गिरादेती है यह कहकर बसन्तक पद्मावती से फिर कहनेलगा कि इस विषयमे मैं तुम्हें अहल्या की कथा सुनाताहू कि पूर्व्वसमय मे त्रिकालज्ञ महर्षि गौतम नाम मुनि की बडी रूपवती अहल्या नाम स्त्री थी एकसमय उसके रूपसे मोहित होकर इन्द्रने एकान्त मे उससे प्रार्थनाकी ठीकहै कि स्वामीलोग धन ऐश्वर्य्य से मदान्ध होकर अनुचित कार्य्य भी करने लगते हैं अहल्यानेभी कामातुर होकर इन्द्रकी प्रार्थना स्वीकार करली इसबातको अपने प्रभावसे जानकर गौतममुनि वहाआये मुनिको आया जानकर इन्द्रने अपना बिल्लीका स्वरूप धारणकरलिया तब गौतमने अहल्यासे पूछा कि यहा अभी कौनथा उसने यह सत्यवचन कहा कि यह मेराजार और बिल्लीथा यहसुनकर गौतमने हँसकर कहा कि ठीकहै तेराजार यहा अभीथा और यह शापदिया कि हेपापिनि तू बहुत कालतक पत्थरकी शिलाबनी रहेगी फिर उसके सत्यवचनोंको समझकर यह भी कहदिया कि जब बनमें श्रीरामचन्द्रजी आवेंगे तब उनके दर्शनसे तुम्हारा शापछूटजायगा इसके उपरान्त गौतमने

चला प्रातःकाल कमल सहित तडागकी जो शोभाहोती है और चन्द्रमाके उदयमें जो समुद्रकी शोभा होती है वहीशोभा उससमय उस राजभवनकीभी हुई उससमय करदेनेवाले राजाओंकी भेटोंमे वह सं-पूर्ण राजभवन भरगया उन भेटोंसे यह सूचित होताथा कि मानों संपूर्ण पृथ्वी के राजा लोगों की भी भेटे इसीप्रकारसे आवेंगी इसके उपरान्त संपूर्ण राजालोगोंका आदरकरके सबलोगोंके चित्तके समान अपने महलोमें राजा चलागया वहाँरति और प्रीतिकेमध्यमें बैठेहुए कामदेवके समान दोनों रानियोंके बीचमें बैठेहुए राजाने मद्यपानादि क्रीडाओंसे वहदिन व्यतीतकिया २७ दूसरेदिन अपने मंत्रियोंसमेत राजा सभामें बैठाथाकि उसीसमय किसीब्राह्मणनेद्वारसे चिल्लाकर कहा कि बडा अन्धेरहै कि हे राजा वनमेंपापी गोपालकोंने विनाकारणही मेरेपुत्रके पैरकाटलिये यहसुनकर राजाने उसीसमय दो तीन गोपालकोंको पकडवाके पूछा तब वह कहनेलगे कि हे राजा हमगोपालक लोग निर्जन वनमें रहते हैं हममेंसे एकदेव-सेन नाम गोपालकने वनके एक स्थानमें शिलापर बैठके हमलोगोंसे कहा कि हम तुम्हारे राजाहैं और वही हमलोगोंपर अब हुक्म चलाताहै हमलोगोंमेंसे उसकी आज्ञाको कोई नहीं टालता इसप्रकारसे देव-सेन वनमें राज्य करताहै आज इस ब्राह्मणका लडका उसी मार्गमें जारहाथा उस बालकने हमलोगोंके राजाकोप्रणाम नहीं किया राजाकी आज्ञासे हमलोगोंने उससेकहा भी कि तू विनाप्रणाम कियेहुए मत जा परन्तु वह हमारे वचनको न मानकर हँसताहुआ चलागया तब उसराजाने यह हुक्मदिया कि इस दुष्ट बालकके पैरकाटलो तब हमने दौडकर बालकके पैर काटलिये क्योंकि हमलोग अपने प्रभुकी आ-ज्ञाको नहीं टालसक्ते हैं ३७ गोपालकों के यह वचन सुनकर यौगन्धरायणने विचारकर राजा उदयन्से एकान्तमें यहवचन कहा किमुझे मालूम होताहै कि जिस स्थानमें गोपालक राजा बनके बैठाहै वहांपर कोई निधि अवश्यहै जिसकेप्रभावसे गोपालकभी ऐसा प्रभुत्वकरताहै यौगन्धरायणके यह वचन सुनके राजा उन गोपालकोंको साथलेकर सेनासमेतचला और वहांजाकर परीक्षा करके जब पृथ्वी खुदवाईगई तो एक बडाभारी पर्वतके समान यक्ष उसमेंसे निकला और बोला कि हेराजा तुम्हारे पितामहकी गा-डी हुई निधिकी मैंने बहुत कालतक रक्षाकी अब आ इसे सभालिये राजासे यह वचनकहकर और राजा के कियेहुए पूजनको ग्रहणकरके वह यक्ष अन्तर्द्धान होगया फिर उस गढे में बहुतसीनिधि मिली और एक बहुत बडा रत्नोंका सिंहासनमिला यह बातठीकहै कि उदय होनेके समयमें बहुतसी अच्छी २ शुभ बातें इकट्ठी होजाती हैं ४४ इसके उपरान्त सम्पूर्ण धनकोलेकर और उन गोपालकोंको दण्डदेकर राजा अपनी पुरीको चलाआया वहां माणिक्यकी किरणोंके समूहसे दिशाओंमें फैलनेवाले राजा उदयनके प्रतापको प्रकट करनेहुए और चांदी के तागे में पुरेहुए मोतियों के समूहों से मंत्रियोंकी बुद्धिके आ-श्चर्यको मानो हँसनेहुए उस सुवर्ण के सिंहासनको देखकर प्रजा के लोग बडे प्रसन्नहुए और नगाडे बजनेलगे मंत्रीलोगभी राजाकी जयका निश्चय करके बडा उत्सव करनेलगे क्योंकि प्रारम्भ मेंही होने-वाले कल्याणसे कार्य्य की सिद्धि जानी जाती है इसके उपरान्त पताकारूपी बिजलियासे आकाशके व्याप्तहोजानेपर वह राजारूपी मेघ सेवकोंपर सुवर्णकी वृष्टिकरनेलगा उत्सवकेद्वारा उसदिनके व्यतीत

वासवदत्ता और पद्मावती से बहुत खातिरकियेहुए उस दूतको विदाकरके राजा उदयन् मंत्रियों से सलाहकरके उद्योगकरने के लिये कौशाम्बी चलनेकी इच्छाकरनेलगा १७१ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायालावाणकलम्बकेतृतीयस्तरङ्गः ३ ॥

इसके उपरान्त राजा उदयन् दूसरे दिन लावाणक से कौशाम्बी नगरीको चला विनासमयके किनारोपर फैलेहुए समुद्रके जलके समान सपूर्ण पृथ्वीको व्याप्तकरनेवाली राजाकी सेना शब्दोंको करतीहुई चली उससमय हाथीपर चढेहुए राजाकी ठीक २ उपमा तबहोसक्ती है जब कि सूर्य्य उदयाचल समेत आकाशमे चलें श्वेतछत्रसे राजाकी ऐसी शोभा होरहीथी कि मानो इसराजाने सूर्य्य के तेजको जीतलियाहै इससे प्रसन्नहुआ चन्द्रमा राजाकी सेवाकररहाहै अपनी कक्षाओं से सबके ऊपर विराजमान तेजस्वी राजाके मनओर ऐसे छोटे२ राजालोग घूमरहेथे जैसे कि ध्रुवजीके चारोओर सब ग्रहघूमते हे और राजाके पीछे हथिनीपर चढीहुई दोनोंरानिया ऐसीशोभित होतीथी कि मानोलक्ष्मी और पृथ्वी स्वरूप धारण कियेहुए राजाके स्नेहसे पीछे २ चली आती हे और सेना के घोडों के खुरोंके चिह्नरूपी नखक्षतों से युक्त मार्ग की पृथ्वी भोगकीहुईसी मालूमहोती थी इसप्रकारसे चलताहुआ वन्दीजनो से स्तुति कियाहुआ राजाउदयन् थोडेही दिनमे कौशाम्बी मे पहुचा ८ ध्वजाके रक्तवस्त्रोसे ढकी हुई झरोखे रूपी प्रफुल्लित नेत्रवाली द्वारमे रक्खेहुए पूर्णकुम्भ रूपी स्तनवाली मनुष्योके कोलाहलरूपी शब्दवाली और श्वेतमहल रूप हास्यवाली वहपुरी परदेशसे अपने स्वामीके आजानेपर अत्यन्त शोभितहुई फिर राजाने दोनोरानियो समेत उस पुरी में प्रवेशकिया तब पुरकी स्त्रिया राजाके देखनेको वडाउत्सव माननेलगी उससमय महलोपर चढीहुई स्त्रियो के मुखोसे आकाश पूर्णहोगया वहमुख क्याथे मानों रानियोंके मुखोसे जीतेगये चन्द्रमाकी सेना सेवाकरनेकोआई झरोखोंसे वेपलक लगायेहुए स्त्रियाको देखकर यह भ्रम होताथा कि राजाके देखनेकेलिये विमानो पर चढीहुई मानों अप्सराही आई हैं (क्योंकि अप्सराओंकेभी नेत्रनहीं बन्दहोते हैं) कोईस्त्रिया झरोखोकी जालीमें नेत्रलगाये देखरहीथी वह मानों कामदेवके पिंजरे बनारहीथीं १४ राजाके देखनेकेलिये प्रफुल्लित किसी स्त्रीकी उत्सुकदृष्टि राजाको नहीं देखतेहुए कानकेपास मानो राजाकाहाल कहनेको गई जल्दी मे आईहुई किसीस्त्री के वारम्वार हिलते हुएस्तन राजाको देखनेकेलिये मानोआगी से बाहरनिकलना चाहतेथे किसीस्त्रीके घबराहट से टूटेहुए हारकेमोती गिररहेथे वहमानो प्रसन्नतासे हृदयमें निकलेहुए स्वेदजलके बिन्दुसे शोभित होते थे कोई स्त्रिया वासवदत्ताके जलनेकी खबरसे यह बातें कररहीथीं कि जोलावाणकमे अग्नि इसेजलादेती तोवह प्रकाशक होकरभी जगत्में अन्धकारकी फैलानेवाली होजाती पद्मावती को देखकर कोई स्त्री अपनी सखीसे कहतीथी कि सखीके तुल्य पद्मावतीसे वासवदत्तानहीं लज्जितहुई यह योग्यहै कोई स्त्रिया अपने नेत्ररूपी कमलोंमे उनदोनो रानियोंको देखकर परस्पर यह कहतीथीं कि विष्णु और शिवने इनदोनो रानियोका रूप नहींदेखा नहींतो वह लक्ष्मी और पार्वतीजीका वडाआदर नहींकरते इसप्रकारसे अपनी प्रजाओंके नेत्रोको आनन्द देताहुआ उदयन् मंगलाचारकरके रानियो समेत अपने राजमंदिरमें

चला प्रात काल कमल सहित तडागकी जो शोभाहोती है और चन्द्रमाके उदयमें जो समुद्रकी शोभा होती है वहीशोभा उससमय उस राजभवनकीभी हुई उससमय करदेनेवाले राजाओंकी भेटोंमे वह सम्पूर्ण राजभवन भरगया उन भेटोंसे यह सूचित होताथा कि मानों सपूर्ण पृथ्वी के राजा लोगो की भी भेंट इसीप्रकारसे आवेगी इसके उपरान्त सपूर्ण राजालोगोंका आदरकरके सवलोगोंके चित्तके समान अपने महलोंमे राजा चलागया वहॉरति और प्रीतिकेमध्यमें वैठेहुए कामदेवके समान दोनो रानियोंके बीचमें वैठेहुए राजाने मद्यपानादि क्रीडाओंसे वहदिन व्यतीतकिया २७ दूसरेदिन अपने मन्त्रियोसमेत राजा सभामें वैठाथाकि उसीसमय किसीब्राह्मणनेद्वारसे चिल्लाकर कहा कि वडा अन्धेरहै कि हे राजा वनमेपापी गोपालकोने विनाकारणही मेरेपुत्रके पैरकाटलिये यहसुनकर राजाने उसीसमय दो तीन गोपालकोको पकडवाके पूछा तव वह कहनेलगे कि हे राजा हमगोपालक लोग निर्जन वनमे रहते हैं हमर्मेसे एकदेवसेन नाम गोपालकने वनके एक स्थानमें शिलापर वैठके हमलोगोमे कहा कि हम तुम्हारे राजाहैं और वही हमलोगोंपर अव हुक्म चलाताहै हमलोगोमेंसे उसकी आज्ञाको कोई नही टालता इसप्रकारसे देवसेन वनमे राज्य करताहै आज इस ब्राह्मणका लडका उसी मार्गसे जारहाथा उस वालकने हमलोगोके राजाकोप्रणाम नहीं किया राजाकी आज्ञासे हमलोगोने उससेकहा भी कि तू विनाप्रणाम कियेहुए मत जा परन्तु वह हमारे वचनको न मानकर हॅसताहुआ चलागया तव उसराजाने यह हुक्मदिया कि इस दुष्ट वालकके पैरकाटलो तव हमने दौडकर वालकके पैर काटलिये क्योंकि हमलोग अपने प्रभुकी आज्ञाको नहीं टालसक्ते हैं ३७ गोपालकों के यह वचन सुनकर यौगन्धरायणने विचारकर राजा उदयन्से एकान्तमें यहवचन कहा किमुझे मालूम होताहै कि जिस स्थानमे गोपालक राजा वनके वैठेहैं वहांपर कोई निधि अवश्यहै जिसकेप्रभावसे गोपालकभी ऐसा प्रभुत्वकरताहै यौगन्धरायणके यह वचन सुनके राजा उन गोपालकोको साथलेकर सेनासमेतचला और वहाजाकर परीक्षा करके जव पृथ्वी खुदवाईगई तो एक वडाभारी पर्व्वतके समान यक्ष उसमेंसे निकला और वोला कि हेराजा तुम्हारे पितामहकी गाडी हुई निधिकी मैंने वहुत कालतक रक्षाकी अव आ इसे सभालिये राजासे यह वचनकहकर और राजा के कियेहुए पूजनको ग्रहणकरके वह यक्ष अन्तर्द्धान होगया फिर उस गढे में वहुतसीनिधि मिली और एक वहुत वडा रत्नोंका सिंहासनमिला यह वातठीकहै कि उदय होनेके समयमें वहुतसी अच्छी २ शुभ वातें इकट्ठी होजाती हैं ४४ इसके उपरान्त सम्पूर्ण धनकोलेकर और उन गोपालकोको दण्डदेकर राजा अपनी पुरीको चलाआया वहां माणिक्यकी किरणोंके समूहसे दिशाओंमें फैलनेवाले राजा उदयनके प्रतापको प्रकट करतेहुए और चादी के तारो मे पुरेहुए मोतियों के समूहों मे मन्त्रियोंकी वुद्धिके आश्चर्य्यको मानों हॅसतेहुए उस सुवर्ण के सिंहासनको देखकर प्रजा के लोग वडे प्रसन्नहुए और नगाडे वजनेलगे मन्त्रीलोगभी राजाकी जयका निश्चय करके वडा उत्सव करनेलगे क्योंकि प्रारम्भ मेंही होनेवाले कल्याणसे कार्य्य की सिद्धि जानी जाती है इसके उपरान्त पताकारूपी विजलियोसे आकाशके व्याप्त होजानेपर वह राजारूपी मेघ सेवकोंपर सुवर्णकी वृष्टिकरनेलगा उत्सवकेद्वारा उसदिनके व्यतीत

होजाने पर दूसरे दिन राजाके चित्तकी परीक्षाके लिये यौगन्धरायण बोला कि हे राजा यह जो पुरखों का सिहासन आपको मिला है उसपर बैठकर आपउसे शोभित कीजिये यह सुनकर राजाने कहा कि जिस सिहासन पर हमारे पुरखे लोग सपूर्ण पृथ्वीको जीतकर बैठे थे उससिंहासन पर बिनादिशाओंको जीतेहुए बैठने से मेरी क्या शोभाहोगी इससे समुद्र पर्य्यन्त सपूर्ण पृथ्वीको जीतकर इस रत्नजटित सिंहासनपर मै बैठूगा यह कहकर राजा उस सिहासनपर नहीं बैठा ठीकहै क्योकि कुलीन पुरुषोका अभिमान बनावटका नहीं होता ५५ तब यौगन्धरायणने खुशहोकर राजासे कहा कि हे राजा आपने बहुत ठीक कहा तो अब आप प्रथम पूर्व दिशाके जीतनेका उपायकीजिये यह सुनकर राजा ने प्रसगपाकर यौगन्धरायणसे पूछा कि राजालोग पहले उत्तरादि दिशाओंको छोडकर सबसे प्रथम पूर्व दिशामेही क्यों चढाईकरते है यहसुनकर यौगन्धरायण फिर बोला कि हे राजा यद्यपि उत्तरदिशा बहुत उत्तमहै तौभी म्लेच्छो के ससर्ग से बहुत दूषितहै पश्चिम दिशा सूर्य्यादि ग्रहो के अस्तहोनेका स्थान है इसमे वहभी श्रेष्ठ नहीं है-और दक्षिणदिशामें राक्षस तथा चाण्डाल रहते हैं इसलिये वहभी नहीं उत्तमहै पूर्व्व दिशामे सूर्य्यका उदयहोताहै उसी मे इन्द्ररहतेहैं और गगाजीभी उसीदिशाको जाती हैं इससे वही दिशा सब दिशाओ से बहुत श्रेष्ठहै विन्ध्याचल तथा हिमालयके बीचके देशों मे भी जो देश गगाजी के जलसे पवित्रहै वह बहुत उत्तम और पवित्र समझाजाताहै इसीसे मगलके चाहनेवाले राजालोग प्रथम पूर्व्वदिशापर चढाई करते हैं और गगाजीसे युक्त देशों में रहते हैं तुम्हारे पुरखोंने भी प्रथम पूर्व्वही दिशापर चढाईकीथी और गगाजीके किनारे हस्तिनापुरमे रहतेथे ६३ तुम्हारा पितामह सतानीक यहशोचकर कि राज्यपुरुषार्थसे होताहै इसमे देशकारण नहींहै इसलिये कौशाम्बी नगरीको मनोहर समझकर उसमें रहाथा यहकहकर यौगन्धरायण के चुपहोजानेपर राजा उदयन् पुरुषार्थकोही मुख्य समझकर बोला कि ठीकहै चक्रवर्त्ती होनेमें देश का नियमकारण नहींहै क्योंकि बलवान् लोगोंका पुरुषार्थही सम्पत्तियोंका कारणहै एकभी और आश्रयसे रहितभी बलवान् पुरुषार्थी लक्ष्मीकोपाताहै क्या आपने इस विषयमें सत्ववान पुरुषकी कथानहीं सुनी है यह कहकर मन्त्रियो के पूछनेपर राजा उदयन् रानियों के सन्मुख इसकथा को कहने लगा कि ६८ सपूर्ण ससारमें विख्यात उज्जयिनी नाम पुरी में आदित्यसेन नाम एकराजा था उस राजाकारथ चक्रवर्त्ती होने के कारण सूर्य्यके रथके समान कहीं भी नहीं रुकता था उसराजाके श्वेत छत्रके आकाश में प्रकाशित होनेपर अन्यराजा लोगोंके छत्र बन्दहोजाते थे जैसे समुद्रमे सपूर्ण जल चलेजाते हैं उसीप्रकार से सम्पूर्ण पृथ्वी मे उत्पन्न होनेवाले रत्नउस राजा के पास आजाते थे एकसमय वह राजा किसी कारणसे सेना समेत गगाजी के किनारे टिकाथा वहाँ उसी राजा के राज्यमे रहनेवाले किसी गुणवर्म्मा नाम बणिये ने अपनी बडीउत्तम कन्या राजाको भेटदेने के लिये आकर प्रतीहार से कहा कि यह मेरी कन्या त्रैलोक्यमे रत्नके समान है राजाके सिवाय और कोई पुरुष इसके योग्यनहीं है प्रतीहारसे इसबातको भीतर राजाके पास कहलाकर गुणवर्म्माने भीतरजाके अपनी कन्या राजाको दिखादीनी ७६ अपनी कान्ति से सपूर्ण दिशाओ को प्रकाशित करनेवाली कामदेव

के घरके रत्नोके दीपककी शिखाके समान उसतेजस्वती नाम कन्याको देखकर राजाको वडास्नेहउत्पन्न हुआ इसीसे उसकन्याकी कान्तिके तेजके पडने से कामाग्निसे सतप्तहुए राजाके पसीने क्या निकले मानो राजा पिघलगया उससमय उसकन्याको स्वीकारकरके राजाने प्रसन्नहोकर उस गुणवर्मानणियेको अपने समान वनालिया इसके उपरान्त उस तेजस्वतीके साथ विवाहकरके राजा अपनेको कृतार्थ समझ-कर उज्जयिनीनाम अपनी नगरीकोलौटआया वहाँआकर राजासदैव तेजस्वतीके मुखको देखाकरताथा इससे राज्यके वडे २ भारीभी कार्य्योंको नहीं देखताथा फिर तेजस्वतीके मनोहर वचनोंसे मानों राजाके कानकीलदियेसे होगये इसीसे वह प्रजालोगोके दु खित शब्दोंकोभी नहीं सुनाकरताथा वहुतकालसे महलों में गयाहुआ राजातो वाहरनहीं निकलताथा परन्तु शत्रुओंके हृदयसे भय निकलाजाताथा ८३ कुछ समयकेपीछे उस तेजस्वतीरानीके एकवडीसुन्दरकन्या उत्पन्नहुई और राजाकेहृदयमें दिग्विजयकी इच्छा उत्पन्नहुई अपनेस्वरूपसे तीनोलोकोंको तुच्छकरनेवाली उसकन्याने राजाकाहर्ष और दिग्विजय की इच्छाने राजाका प्रतापवढ़ाया इसकेउपरान्त लडनेकेलिये उद्यत किसी करदेनेवाले राजापर चढाई करनेकेलिये राजा आदित्यसेन उज्जयिनीसे चले और तेजस्वती रानीकोभी हथिनीपर चढाकर राजा अपने साथलेचला और राजा चलनेवाले पर्वतके समान ऊंचे शुभलक्षणोसे युक्तआभूषण धारी और मदसे वहतेहुए पसीनेवाले घोडेपरचढा वहघोडा ओष्ठ पर्य्यन्त उठेहुए पैरों से अपने समान वेगवाले गरुडकी चालकामानो अभ्यास करताथा और अपनी गर्दनको उठाकर मानों यह देखताथा कि क्या यह सपूर्ण पृथ्वी मेरी दौडभरको होजायगी इसप्रकार कुछ दूरचलकर सम पृथ्वीमें आकर राजाने तेज-स्वतीके दिखाने को अपना घोडा तेजकिया राजाकी ऍडके लगतेही वहघोडा धनुषसे निकले हुए वाणके समान वहुत वेगसे वहुतदूर जाकर लोगोंकी दृष्टिसे वाहरचलागया ९२ यहदेखकर सेनाके लोग व्याकुल होगये और हजारोंसवार राजाके ढूढनेको दौडे परन्तु राजाकापता नहीं मिला तव मन्त्रीलोग भयसे सेनासमेत रोतीहुई रानीको लेकर उज्जयिनीको लौटआये और वहाँआकर नगरके फाटकोंको वन्दकरके और परकोटेकी रक्षाकरके सपूर्ण प्रजाको समझाके राजाकी खवरलगाने लगे इस वीचमें वह घोडा राजाको विन्ध्याचलके वडे घोरवनमें लेगया वहाँ जाकर भाग्यसे उस घोडे के ठहरजानेपर राजा को उस वनमे व्याकुलता के कारण दिशाओं का भ्रम होगया तव घोडों की जाति के जाननेवाले उस राजाने उस श्रेष्ठघोडेपर से उतरके उससे प्रणाम करके कहा कि तुम देवताहो तुम सरीके उत्तम लोग अपने स्वामी का द्रोह नहीं करते हैं इसमे मैं तुम्हारी शरण में आयाहू तुम मुझको उत्तम मार्ग से घर लेचलो यहवचन सुनकर अपने पूर्व जन्मका स्मरण करनेवाले उस घोडे ने पश्चात्तापकर राजाके वचन अपने मनमे स्वीकारकरलिये क्योंकि श्रेष्ठ घोडा देवता होताहै १०० इसके उपरान्त राजाके च-ढनेपर वह घोडा सुन्दर शीतलजलसे युक्त श्रमके दूरकरनेवाले मार्ग से चला और सायंकालकेसमय सौ योजन पृथ्वी उल्लघन करके उसने राजाको उज्जयिनी के समीप पहुँचादिया उस घोड़ेके वेगमे जीते गये अपने सातों घोडेको देखकर मानों लज्जितहुए सूर्य्य भगवान् के अस्ताचलकी कन्दरामें पहुंच-

जानेपर तथा अन्धकारके फैलजानेपर उज्जयिनी के फाटकों को बन्ददेखके और बाहरके श्मशान को बहुत भयकर देखके वह बुद्धिमान घोडा राजाको रात्रिभर रहने के लिये नगर के बाहर एकान्त स्थान मे बनेहुए ब्राह्मणों के मठमे लेगया राजाने उसमठको रात्रिभररहने के योग्य समझकर उसके भीतर जानाचाहा तब उसमठके रहनेवाले ब्राह्मणों ने राजाको रोका और कहनेलगे कि यह कोई श्मशानका रक्षक है अथवाचोरहै यह कहतेहुए और लडाई करतेहुए मठसे बाहर निकले क्योंकि वैदिक ब्राह्मण भय कोप तथा कठोरताके घरहोते है १०८ उनलोगो के इसप्रकार लडने पर उसमठ से विदूषकनाम एक बडागुणवान् तथा बलवान् ब्राह्मण निकला उसयुवा ब्राह्मणने तपसे अग्निको प्रसन्न करके एक ऐसा उत्तम खड्गपायाथा कि जिससमय वह उसखड्गको यादकरताथा उसीसमय वह उसके पास आजाताथा उसब्राह्मणने आयेहुए राजाकी बडी मनोहर आकृति देखकरके यहजाना कि कोई देवता छिपकर यहांआयाहै तब वह अन्यब्राह्मणोंको रोककर राजाको बडी नम्रतापूर्वक मठके भीतर लेगया और थकेहुए राजाकीधूलको दासियो से सफाकरवाके उसने राजाके लिये बडा उत्तमभोजन बनवाया फिर राजाको भोजनकराके उस थकेहुए घोडेकी काठीखुलवाके और दानाचारा आदिक देकर उसेभी सावधान करदिया तब उस विदूषकने राजासेकहा कि आप इस बिछेहुए पलँगपरसोइये मैं आपके शरीरकी रक्षाकरूंगा फिर राजाके सोजानेपर स्मरणकरने से आयेहुए उस खड्गको लेकर वह रात्रिभर द्वारेपर बैठारहा प्रात काल जब राजाजगा तब विदूषक विनाकहेहुएही घोडेको तैयारकरके ले आया राजाभी घोडे परचढ और उससे पूछकर उज्जयिनी में चलाआया राजाको दूरसे आताहुआ देखकर सम्पूर्ण प्रजाके लोग बडेप्रसन्नहुए और मन्त्री आदिक सम्पूर्णलोग राजाके निकटगये उससमय राजाके आनेसे आनन्दकी ध्वनि सम्पूर्ण शहरमे फैलगई और मन्त्रियो समेत राजा अपने राजभवन मे आया और रानी तेजस्वती के हृदयसे सताप चलागया १२० राजाके आने के उत्सवमे लगाई हुई वायुसे हिलतीहुई पताकाओ से मानो उससमय उस नगरका सपूर्णशोक निकाल दियागया रानीने उसदिन महोत्सवमे इतना गुलाल उडाया कि जिससे सूर्य्य समेत आकाश और प्रजाकेलोग रक्तवर्ण होगये दूसरे दिन राजा आदित्यसेनने सम्पूर्ण ब्राह्मणो समेत विदूषकको उस मठसे बुलवाया और रात्रिका सम्पूर्ण वृत्तान्त कहके विदूषकको हजार गाव दिये फिर राजाने विदूषकको छत्र और सवारी देकर अपना पुरोहित बनालिया इसप्रकारसे वह विदूषक छोटे राजाओ के समान होगया ठीकहै बडों के साथ कियाहुआ उपकार व्यर्थ कैसे होसक्ताहै १२६ विदूषकने जो गाव राजासे पाये वह सब उसने मठमें रहनेवाले ब्राह्मणो के समुदायमे साधारण रक्खे फिरराजाका सेवन करताहुआ विदूषक उनगावों की सब आमदनीको उन ब्राह्मणों के साथ अपने भोग विलासमे लाताथा कुछ समयके व्यतीतहोने पर धनमे मतवाले वहसब ब्राह्मण अपनी २ प्रधानताकी इच्छामे विदूषकको कुछ भी नही गिननेलगे एक स्थानमे रहनेवाले जुदे २ वह सातब्राह्मण परस्परमे लडकर दुष्टग्रहो के समान उन ग्रामवासियोंको दुःख देतेथे उन ब्राह्मणोंके उद्दड होजानेपर विदूषक उदासीन बनारहा क्योंकि निर्बललोगोपर धीरलोगों

का अनादरही शोभादेताहै एक समय उन ब्राह्मणोंको लडतेहुए देखकर कोई चक्रधरनाम वडानिष्ठुर ब्राह्मण वहाँ आया क्योंकि पराये झगडे के फैसले में कानेके भी वडी २ आंखें होजाती हैं और गूंगा भी बडा वाचाल होजाताहै वह ब्राह्मण उनसे बोलाकि हे मूर्खो तुम भिखारियों को भी इतना धनमिलगया तो आपसके झगडे से इनगांवों को क्यों नष्ट करतेहो परन्तु यहदोष विदूषककाहै जो कि तुम लोगोंको सजानहीं देताहै इससे निस्सन्देह तुमलोग थोडेही दिनोंमें फिर भीख मांगोगे झगडते हुए बहुत मालिकोंसे नष्टहुए सब धनवाले स्थानकी अपेक्षा भाग्यसे बढनेवाले वेस्वामीका स्थान अच्छाहै १३६ इससे जो तुम लोग अपने धनको नष्ट न किया चाहो तो मेरे कहनेसे कोई मुखिया तजवीज करो यह सुनकर जब वह लोग किसी मुखियाकी तजवीज करनेलगे तब उस चक्रधरने सोचकर फिर कहा कि आपसमें झगडनेवाले तुम लोगोंको मुखिया बनाने के लिये मैं एकशर्त्त तुमसे कहताहूं यहाँ श्मशान मे तीन चोर शूलीपर चढाकर मारे गयेहैं और वह वहाँ ही लटकते हैं तुममें से जो कोई रात्रिके समय उन तीनोंकी नाक काटलावे वही तुम्हारा मुखिया होय क्योंकि वीरपुरुष ही स्वामी होसक्ताहै चक्रधरके ऐसे वचन सुनकर विदूषकने उन ब्राह्मणों से कहा कि ऐसाही करो इसमें क्या हर्ज है १४१ तब वह ब्राह्मण बोले कि हम लोग यह कामनहीं करसक्ते जो समर्थ होय वहकरे हमलोग इस शर्त्त से नहीं हटेंगे तब विदूषकने कहा कि मैं रात्रिके समय श्मशानमें जाकर चोरोंकी नाक काटलाऊंगा इसबातको बहुत कठिन समझकर वह बोले कि जो तुम ऐसा करोगे तो तुम्हीं हमारे स्वामी होगे उनलोगोंसे यह शर्त्त करके रात्रिके समय विदूषक उन ब्राह्मणोंसे पूछकर श्मशानको गया स्मरण करनेसे प्राप्तहोनेवाले अग्निके दियेहुए उस खड्गको लेकर वह उस बडे भयङ्कर श्मशानमें घुसा वहाँ डाकिनी गीध तथा कौए चिल्लारहेथे और अगिया वैतालोंकी मुखकी अग्निसे चिताकी अग्नि और भी बढरहीथी उस श्मशान के बीचमें शूलीपर चढेहुए उनचोरोंको विदूषकने देखा वह तीनोंचोर मानो नाकोंके काटनेके डरसे ऊंचे को शिर कररहेथे जब विदूषक उनके निकटगया तो वह तीनों वैतालके आवेशमें विदूषकको घूंसे मारने लगे और वह भी निडर होकर खड्गसे उन्हें मारने लगा क्योंकि वीर लोगों के हृदयमें कभी भयनहीं होताहै १५० मारने से जब वह वैताल उनमेंसे निकलगया तब उसने उन तीनोंकी नाकें काटकर कपडे में बांधलीं फिर वहाँसे लौटतेहुए विदूषकने उसी श्मशानमें मुर्देपर बैठाहुआ जपकरताहुआ एकसन्यासी देखा उसकी चेष्टा और क्रीडा देखनेके उत्साह से विदूषक छिपकर उसके पीछे जा बैठा क्षणभरम ही जिस मुर्देपर सन्यासी बैठाथा वह अपने मुखसे फूत्कार करनेलगा उससमय उस मुर्देके मुखसे अग्नि निकलने लगी और नाभिसे सरसों निकली तब वह सन्यासी उन सरसों को लेकर उसपरसे उठा और हाथसे उसे मारनेलगा तब वैतालके पराक्रमसे वह मुर्दा खडाहोगया और वह सन्यासी उसके कन्धेपर चढगया १५६ और उसपर चढके वहाँसे चला और विदूषक भी चुपचाप उसके पीछे २ चला वहाँ से थोडीदूर चलकर विदूषकने कात्यायनीका एक निर्जन मन्दिर देखा वहाँ वह सन्यासी मुर्देके कन्धे से उतरकर मंदिरमें चलागया और वह मुर्दा गिरपडा विदूषक भी छिपकर उसकी इन सबबातोंको देखना

रहा तब वह सन्यासी भगवतीका पूजनकरके यहवचन बोलाकि हे देवीजी जो आप मेरे ऊपर प्रसन्नहैं तो मेरामनोरथ पूर्णकरो नहीं तो मैं अपना बलिदान देकर तुमको प्रसन्न करूगा तीव्र मत्रके सिद्धकरने से अभिमान युक्त उस सन्यासीके यह बचन सुनकर उस मदिरसे यह आवाज आई कि आदित्यसेन राजाकी कन्याको लाकर भेटकरो तब तुम्हारा मनोरथ पूराहोगा यह आवाज सुनकर उस सन्यासीने मन्दिरसे निकलकर उस मुर्देको हाथ से मारकर उठाया फूत्कार करके उठे हुए मुखसे अग्निकी ज्वाला निकालनेवाले उस मुद्दपर चढकर वह राजकन्याके लेने के लिये आकाशमें उडगया १६५ यह देखकर विदूपकने चित्तमें विचारा कि यह कैसे मेरे जीतेजी राजकन्याको मारसकेगा इससे जबतक यह दुष्ट लौटकर आजाय तबतक मैं यहीं ठहारहू यह शोचकर विदूपक छिपकर वहीं ठहरारहा और वह सन्यासी झरोखेके द्वारा राज कन्याके महलमें चलागया और अपनी कान्तिसे सब दिशाओं को प्रकाशित करनेवाली चन्द्रमाकी कलाको जैसे राहुग्रसता है उसीप्रकार रात्रिके समय सोतीहुई राजकन्याको पकडकर श्यामवर्णवाला वह सन्यासी आकाशमार्ग से चला हापिता हामाता इसप्रकार से रोती हुई उस कन्याको लियेहुए वह सन्यासी उसी देवीके मदिरमे उतरा १७० और उसमुर्देको छोडकर उस कन्यारूपी रत्नको लेकर देवीके मदिरमे गया वहा जाकर जैसे कि वह उसराजपुत्रीको मारना चाहताहीथा वैसेही विदूपकभी अपने खड्गको खीचकर मदिरमें पहुचा और बोला कि अरे पापी तू मालतीके फूलको पत्थरसे मारना चाहताहै क्योंकि तू ऐसी सुन्दर आकृतवाली पर शस्त्र चलानाचाहताहै यह कहकर और उसके बाल पकडकर विदूपकने उसका शिर अपने खड्गसे काटडाला और कुछ पहचानकर उसके शरीरमें भयसे मानो घुसीसी जातीहुई राजकन्याको समझाकर सावधान किया उस समय विदूपकने यहशोचा कि इसराजकन्याको मैं इसकेमहलमे कैसे पहुचाऊ इसके विचार करतेही यह आकाशवाणीहुई कि हे विदूषकसुन तूने जिससन्यासीको माराहै इसनेवेताल और सरसों बहुत सिद्ध कियेथे और यह सपूर्ण पृथ्वीका राज्य और सपूर्ण राजाओंकी कन्याओंको चाहताथा इसी से आज इसमूर्खकी यहदशाहुई इस्से हेवीर तुम इनसरसवोंको इसकेवस्त्रसे खोललो इनसे आजकी रात्रिभर तुमको आकाशमें चलनेकी सामर्थ्य होजायगी इस आकाशवाणीको सुनकर विदूपक बहुत प्रसन्नहुआ यहठीक है कि प्राय देवतालोगभी ऐसे वीर पुरुषोपर दया करते हैं १८० तब विदूषकने उस सन्यासी के कपडोंसे सरसों खोलली और उसराजकन्याको गोदमे लेकर जैसे वह देवीजीके मदिरसे बाहर निकला उसीसमय फिर आकाशवाणीहुई कि हेवीर महीने भरकेपीछे तुम इसी देवीके मदिरमें फिर आना और इसबातको भूलनानहीं इस आकाशवाणीको सुनकर और बहुत अच्छा आऊगा यह कहकर विदूषक देवीजीकी कृपासे उसराजकन्याको लेकर आकाशमें उडा और आकाशमार्गसे राजकन्याको महल में पहुचाकर और उसे समझाकर बोला कि प्रात काल में आकाशके मार्गसे नहीं जासकूगा तो द्वारसे निकलतेहुए मुझेलोग देखेंगे इस्से मैं अभी जाताहू उसके यह वचनसुनकर राजकन्या बोली कि तुम्हारे जानेसे मारेडरके मेरे प्राण निकलजायँगे इस्से हेमहाभाग तुमयहा रहकर मेरे प्राणबचाओ क्योंकि अपने

कियेका निर्वाहकरना यही सज्जन लोगोंका स्वाभाविक धर्म्म है १८८ यह सुनकर बड़े वीर विदूषकने यहशोचा कि चाहै जोहोय मैं अवनहीं जाऊंगा क्योंकि मेरे जानेपर भयसे यह मरजायगी फिर मेरी करी कराई राजाकी भक्ति सबव्यर्थ होजायगी यह शोचकर वह रात्रिभर उसीकन्याके महलमेंरहा और व्या-याम तथा जागरणके श्रममे वहीं सोगया, परन्तु राजाकी कन्या मारेभयके रात्रिभर नहीं सोई प्रातःकाल भी राजकन्याने सोतेहुए विदूषकको बड़े प्रेमसे इसलिये नहींजगाया कि यह थकाहुआ है इससे अभी थोड़ीदेर और आराम करले इसके उपरान्त वहां आईहुई दासियोंने विदूषकको देखा और घबराकर यह वृत्तान्त राजासेकहा तब राजाने इसवातके निश्चय करने को कोई प्रतीहारभेजा उस खबरलेजानेवालेने भी वहां जाकर विदूषकको देखा और राजकन्याके मुखसे उसका सपूर्ण वृत्तान्त सुना फिर उसने वह सब वृत्तान्त राजासेकहा यह सुनकर विदूषकके पराक्रमके जाननेवाले राजाको कुछ घबराहटसीहुई कि यह क्यानातहै तब राजाने विदूषकको अपनी कन्याकेमहलसे बुलवाया उससमय स्नेहसे राजकन्याका चित्तभी उसके साथही मानो चलाआया आयेहुए विदूषकसे राजाने सबवृत्तान्त पूछा तब विदूषकने भी आदिसे सब वृत्तान्त कहकर वस्त्रमें बँधीहुई चोरोंकीनाकें और सन्यासीकी पृथ्वीके भी भेदन करनेवाली सरसों दिखाई १९९ तब इसवातको सत्यसमझकर राजाने चक्रधरसमेत सम्पूर्ण मठके ब्राह्मणोंको बुला के उनसे सबबातेंपूछीं और श्मशानमेंभी जाकर नाककटेहुए तीन चोर और शिरकटाहुआ वहसन्यासी देखा इसप्रकार अच्छेप्रकार निश्चय होजानेपर अपनी कन्याके प्राणबचानेवाले विदूषकको यह अपनी कन्यादेदी (ठीक है उदारलोग उपकारी पुरुषोंको प्रसन्न होकर क्यानहीं देसक्ते हैं) उस राजकन्या के हाथमें मानो कमलके स्नेहसे लक्ष्मी रहती थी क्योंकि उसका पाणिग्रहण करतेही विदूषकको लक्ष्मी प्राप्तहुई तब वह विदूषक उस राजकन्या के साथ राजाकेही घरमें राजा लोगोंकेही समान भोगविलास करनेलगा इसके उपरान्त कुछदिन व्यतीतहोनेपर एकसमय भाग्यवशसे उस राजकन्या ने रात्रिमें वि-दूषकसे कहा कि हे नाथ आपको वह बातयाद है कि रात्रिकेसमय देवीकेमंदिरके बाहर आकाशवाणी ने कहाथा कि एकमहीने पीछे तुम फिर यहाँ आना वह महीना तो आज व्यतीतहुआ और आप उस बातको भूलगये अपनी प्रियाके यह वचन सुनकर विदूषक उस आकाशवाणी को स्मरण करके बड़ा प्रसन्नहुआ और बोला हे प्रिये तुमने खूब यादरक्खी मैंभूलगयाथा यह कहकर उसने अपनी प्रियाको आलिङ्गनरूप इनामदिया २०६ इसके उपरान्त राजकन्या के सोजानेपर विदूषक अपने खड्गको लेकर महलसे बाहरहोकर देवीजीके मंदिरकोचला वहाँ जाकर उसने बाहरसेही यह कहा कि मैं विदूषक आ याहूं तब भीतरसे यह शब्दहुआ कि भीतर चलेआओ यह किसीके वचन उसने सुने तब भीतर जाकर विदूषकने एक दिव्यस्थानदेखा और उसस्थानमें दिव्यठाटवाली एक महासुन्दर कन्या देखी वह कन्या क्या थी मानो अपनेप्रकाशसे अन्धकारकी नाशकरनेवाली रात्रिकेसमय प्रकाशमान शिवजीके कोपकी अग्निमें जलेहुए कामकी सञ्जीवनी औषधहीथी यह देखकर आश्चर्य्ययुक्त होनेवाले विदूषकको उसने बड़ेस्नेह और आदर सत्कारसे अत्यन्त प्रसन्नकिया तब इसके प्रेमको देखकर विदूषक विश्वास पूर्वक

वहाँ बैठा और उसे उसके वृत्तान्त जानने की इच्छाहुई तब वह कन्याबोली कि मैं विद्याधरों के कुलमें उत्पन्न हुईहूं और भद्रामेरानामहै अपनी इच्छापूर्व्वक घूमतीहुई मैने उसदिन तुमको यहांदेखाथा तुम्हारे गुणोंको देखकर मेरा चित्त तुमपर आसक्तहोगया तब मैंनेही तुमको बुलाने के लिये अदृश्य वाणी से कहाथा और आजभी मैंनेही मन्त्रका प्रयोग करके उस कन्याकेद्वारा तुमको याद दिलाईथी २१८ अब तुम्हारेलिये मैं यहाँ स्थितहूं तो मैं यह अपना शरीर तुम्हारे अर्पण करतीहू तुम मेरा पाणिग्रहणकरो उस भद्रानाम विद्याधरीके यहवचन सुनकर विदूषकने उससे गान्धर्व विवाह करलिया और अपने पुरुषार्थकी फल सिद्धरूपी उस विद्याधरी के साथ दिव्यभोगों को पाकर वहीं रहनेलगा इस वीचमें प्रातःकाल के समय वह राजकन्या जागी और वहाँ अपने पतिको न देखकर महाव्याकुल होगई फिर नेत्रों में आँसू भरीहुई विह्वल होकर गिरती परती वह राजपुत्री अपनी माताके पासगई और अपने अपराधसे डरकर तथा पश्चात्ताप करके मातासे बोली कि आज मेरापति रात्रिके समय कहीं चलागया तब उसकी माता स्नेहसे बहुत घबराई और राजाभी वहाँ आकर इसबातको सुनके बहुत घबरागया २२५ इसके उपरान्त राजकन्याने यहकहा कि मुझे मालूम होताहै कि मेरापति श्मशानमें जो देवीका मन्दिरहै वहाँ गयाहोगा यह सुनकर राजा आप वहाँगया परन्तु विद्याधरी की विद्या के प्रभाव से छिपाहुआ विदूषक राजा को बहुत ढूंढनेपरभी नहीं मिला तब राजाके लौट आनेपर निराशहोकर वह राजकन्या अपना शरीर त्याग करने को तैयारहुई उससमय किसी ज्ञानी ने आकर उससे कहा कि तुम कोई बुराई का सन्देह मतकरो तुम्हारापति दिव्य आनन्दों को भोगताहुआ वर्त्तमानहै थोडेदिनो में तुमको मिलजायगा उसज्ञानी के यह वचन सुनकर अपने पतिके फिर मिलजाने की आशासे राजकन्याने अपना शरीर त्याग नहींकिया इसवीचमें उस विद्याधरीके पास रहतेहुए विदूषकके यहाँ उस भद्राकी कोई योगेश्वरीनाम सखीआई उसने भद्राको एकान्तमें लेजाकरकहा कि हे सखी मनुष्यके सत्सगसे विद्याधरलोग तुमपर नाराजहैं और तुम्हारे साथ कोई बुराईभी कियाचाहते हैं इसलिये तुमयहासे चलीजाओ पूर्व समुद्रके पार कर्कोटकनाम शहर है उसशहर के आगे शीतोदानाम एकबडी पवित्रनदी है और उसनदी के पार सिद्धों के रहनेका स्थान एकउदयनाम पर्व्वतहै उसपर्व्वतपर विद्याधरलोग नहींजासक्ते हैं इससे तुम अभी वहींचलीजावो और इसअपने प्यारे मनुष्यके लिये कोई चिन्तामतकरो २३५ अपना सब वृत्तान्त इसमनुष्य से तुमकह जाना जिससे कि पीछेसे यह वीर पुरुषभी तुम्हारे पास वहींचलाआवेगा अपनी सखीके यहवचनसुनकर भद्रा यद्यपि विदूषकसे वडा स्नेहकरतीथी तथापि भयभीतहोकर उसने अपनी सखीके वचनमानलिये फिर उसने विदूषकसे अपनी सबबातें कहकर उसेअपनी अंगूठीदेदी और रात्रिके व्यतीतहोनेपर वहअन्तर्द्धान होगई तब क्षणभरके बाद विदूषकने अपनेको उसशून्य देवीके मन्दिरमें बैठाहुआपाया न वहां भद्राथी और न वह दिव्य मन्दिरथा उसविद्या के जालको स्मरणकरताहुआ और उसअगूठीको देखताहुआ विदूषक खेद तथा आश्चर्य्यको प्राप्तहुआ फिर उसने स्वप्नकेसमान उसविद्याधरी के वचनों को स्मरणकरके अपने चित्तमें कहा कि वह मुझे उदयपर्व्वतपर बुलागई है इससे मुझे शीघ्रही उससे मिलने के लिये वहांजाना

चाहिये परन्तु लोगोंके देखनेसे जोराजा मुझे सुनपावेगा तो नहींछोडेगा इससे यहापर में कोई युक्तिकरू तो मेरा कार्य्यसिद्धहोय यहशोचकर उसने अपना वेषवदलडाला फटेकपडे पहनकर और शरीरमें धूल लपेटकर विदूपक उसदेवी के मदिरसे हायभद्रे २ यहकहताहुआ निकला २४४ उससमय विदूपक को देखकर उसदेशके रहनेवाले लोग यह वही निदूपकहै यहवही निदूपकहै ऐसा कोलाहल मचानेलगे यह खबरसुनकर राजाने खुदआकर सिडीकीसी चेष्टामें उस विदूपकको देखा और पकडवाके उसे अपनेमहल में लेगया वहा स्नेहसे व्याकुल सेवक तथा वधुओंने उससे जो कुछ कहा उसने उसका हा भद्रे हा भद्रे यही उत्तरदिया वैद्योंके वतायेहुए तैलोंके मर्द्दनकरनेपरभी वह उसीसमय अपने शरीरमे वहुतसी धूल लपेटलेताथा राजकन्या वडेस्नेहसे जो कुछ उत्तम भोजनलाती थी उसे निदूपक लातमारकर फेंकदेता था इसप्रकारसे अपनेवस्त्रों को फाडताहुआ विदूपक उन्मत्तोकीसी चेष्टामें कुछ दिन वहारहा तव राजा आदित्यसेनने यहशोचा कि यह अच्छाहोता मालूमनहींहोता क्योंकि इसके अच्छेहोनेका कोई यत्न नहीं है तो क्यों इसे व्यर्थ क्लेशदेनाचाहिये और शायद इसीतौरपर इसके प्राण निकलजायँ तो ब्रह्महत्याहोगी और स्वतन्त्रतापूर्वक घूमनेसे शायद कुछकालमें यहअच्छाभी होजाय यहशोचकर राजाने उसे छुडवा दिया २५२ तव निदूपक अगूठीलेकर दूसरे दिन स्वच्छन्दतासे भद्राके पास पहुँचने को चला रोज २ पूर्व दिशामें जाते २ एकदिन मार्ग मे उसे पौण्ड्रवर्द्धननाम शहरमिला वहा किसी वृद्धाब्राह्मणी से इसने यहपूछा कि हे माता आज रात्रिभर मे तुम्हारे यहा रहजाऊ यहकहकर उसके घरमेंगया तवउस ने भी उसका अतिथि सत्कारकरके उसकेरहनेको अपनेघरमें जगहदी फिर क्षणभरके उपरान्त दुःख से भरीहुई उसब्राह्मणी ने विदूपकसे आकरकहा कि हे पुत्र मैंने यह अपना सम्पूर्णघर तुमको देदिया तुम इसेलेलो क्योंकि मैं अवनहीं जीऊगी तव विदूपकनेपूछा कि तुम ऐसा क्योंकहतीहो यहसुनकर वहवृद्धा वोली कि सुनो मैं तुमसे सववृत्तान्त कहतीहू २५८ हे पुत्र इसनगरमें देवसेननामराजाहै इसराजाके एक वहुतसुन्दरकन्या उत्पन्नहुई तव राजाने वडेप्रेमसे वडेदुःखसे पानेकेकारण उसकन्याकानाम दुःखलब्धिकारक्खा समयपाकर जव वहकन्यातरुणहुई तवराजाने कच्छपनाथ राजाकोवुलाकर उसकेसाथ कन्या का विवाह करदिया वह कच्छपनाथ जिससमय उसकन्याके रहनेके स्थानमेंगया उसीसमय उसके प्राण निकलगये तव राजाने दुखीहोकर किसी अन्यराजाके साथ उसका विवाहकरदिया और वहभी उसीप्रकारसे मरगया इसभयसे जव अन्य राजालोग उसकेसाथ विवाहकरनेको नहीं इच्छाकरतेभये तव राजा ने अपने सेनापतिको यह आज्ञादी कि इसदेशसे क्रमपूर्वक एक २ आदमी एक २ घरसे ब्राह्मण अथवा क्षत्री रोजलाओ और लाकर उसे रात्रिमें मेरीकन्याके यहा भेजो मैं देखू तो कितने आदमी यहा आकर मरते हैं जो पुरुष यहा वचजायगा वही इसका पतिहोगा क्योंकि अद्भुत कार्य्यवाले ब्रह्माकी गतिको कोई नहीं टालसक्ताहै २६७ राजाकी यह आज्ञापाकर सेनापति प्रतिदिन क्रमसे एक आदमीको घरोंसे लेजाताहै इसप्रकारसे सैकडोंआदमी वहा जा २ कर मरगये मुझ पापिनी के एकही पुत्रहै आज उसपुत्र की वहां मरनेजानेकी वारी है उसके मरजाने पर प्रातःकाल मे आगमें जलजाऊगी इसलिये अपने

जीतेजी मैं यह सब अपना घर तुम्हे इस निमित्त दियेदेतीहूं जिससे कि मुझे दूसरेजन्ममें दुःख न होवे उसके यह वचनसुनकर बुद्धिमान्धीर विदूषकनेकहा कि हे माता जो ऐसाहै तो तुम मतघबराओ आज मैं वहा जाऊंगा जिससे तुम्हारा यह पुत्रजीतारहे और यहशोचकर कि मैं इसेक्योंमखाऊ मेरेऊपर दया मतकरो क्योंकि सिद्धिके वलसे वहा जाने से मुझे कुछ भयनहीं है विदूषकके यह वचनसुनके वह ब्राह्मणी बोली कि तुम मेरे पुण्यसे आयेहुए कोई देवताहो तो हे पुत्र तुम हमारे प्राणोकी रक्षाकरो और अपनेको भी वचाना २७५ इसप्रकार उसवृद्धासे सलाहकर सायंकालके समय सेनापतिके नौकरकेसाथ वह विदूषक राजकन्याके घरकोगया वहा जाकर उसने पुष्पों के गुच्छो के भारसे झुकीहुई लताकेसमान योवनकेमदसे उन्मत्त राजकन्यादेखी तब रात्रिके समय राजकन्याके पलंगपर लेटजानेपर ध्यानकरनेसे आयेहुए खड्गको अपने हाथमे लेकर विदूषक उसमंदिरमे इसलिये जागतारहा कि मैं देखूं यहा मनुष्यो को कौन मारडालताहै सम्पूर्ण मनुष्यो के सोजानेपर एकवडाघोर राक्षस किवाडे खोलकर दरवाजेपर दिखाईदिया उसराक्षसने दरवाजेपरही खडे २ सैकडोमनुष्यो के मारनेवाली अपनीभुजा उसघरके भीतर डाली तब विदूषकने दौडकर क्रोधसे खड्गके एकहीप्रहारसे वह भुजाकाटडाली भुजाके कटजानेपर विदूषकके पराक्रमसे डराहुआ राक्षस फिर कभीनहींआनेका विचारकरके वहा से भागगया २८३ फिर राजकन्याने जगकर उसराक्षसकी कटीहुई और पृथ्वी मे पडीहुई भुजादेखी तब उसे भय हर्ष तथा आश्चर्य यह तीनों एकसाथही हुए प्रात काल राजा देवसेनने अपनी कन्याके महलके दरवाजेपर वह कटीपडी हुई भुजादेखी वह भुजा क्याथी मानो विदूषकने वडाभारी वेलन इसलिये लगादियाथा कि अब आज से यहां कोई अन्यपुरुष न आवे तब राजाने दिव्यप्रभाववाले विदूषक के साथ प्रसन्नता पूर्वक बहुतसा धनदेकर अपनी कन्याका विवाहकरदिया विदूषक साक्षात् सम्पत्तिके समान उसकन्याके साथ कुछ दिन वहारहा एकदिन सोईहुई राजकन्याको छोडकर विदूषक भद्रासे मिलनेको वहासे रात्रिके समयचला प्रातःकाल वह राजकन्या विदूषकको न देखकर बहुतदुःखितहुई तब उसके पिताने विदूषकके फिर लौट आनेकी आशासे उसकन्याको सावधानकिया २९० विदूषकभी प्रति दिन चलताहुआ क्रमसे पूर्व समुद्रके निकट ताम्रलिप्तिकानाम नगरी में पहुँचा वहाजाकर उसने समुद्रके पारजानेवाले किसी स्कन्ददासनाम वणियेसे मेलकिया और उसी वणिये के साथ बहुत धनसेभरेहुए जहाजपर चढ़कर समुद्रमें चला वह जहाज समुद्रकेवीचमे जाकर किसीचीजमें अटककर चलते २ रुकगया फिर रत्नादिसे समुद्रका पूजनकरनेपर भी जब वह जहाज न चला तब स्कन्ददास वहुतदुखीहोकर बोला कि जो इस मेरे जहाज को छुडाकर चलादेवे उसे मैं अपना आधाधन और अपनी कन्यादूं यहसुनकर धैर्य्यवान् विदूषकबोला कि मै समुद्रके भीतरघुसकर समुद्रकेजलको देखकर तुम्हारे जहाजको अभी चलाय देताहूं तुमलोग मुझे रस्सी में बांधकर लटकादो और रस्सिया मजबूती से पकडेरहना जब जहाजचलनेलगे तब तुम मुझे पानीमे से खैंचलेना वणिये नें विदूषकके वचन अंगीकारकरलिये और मल्लाहों ने विदूषककी कांख मे रस्सीबाँधी ३०० तब रस्सी से बँधाहुआ विदूषक समुद्रके भीतरउतरा ठीकहै (पराक्रमी पुरुष समयपर कभी

नहीं चूकते हैं) समुद्रके भीतर ध्यानकरने से आयेहुए अपने खड्गको हाथमें लेकर वीरविदूपक जहाजके नीचेगया वहाजाकर उसनेदेखा कि एकवडाभारी पुरुषसोरहाहै और उसीकीजाघ में जहाजरुका हुआहे तवविदूपकने अपनेखड्गसे उसकी जाघकाटडाली और वहजहाज वेरोकके चलदिया जहाज को चलाहुआ देखकर उसपापीवणियेने धनकेदेनेके लोभसे वहरस्सीकटवादी तवछुटेहुए अपने चरित्र के समान उसजहाजसे वहवणिया अपने वहुत लोभके समान वहुतवडे समुद्रकेपारगया २०६ कटीहुई रस्सियोको पकडेहुए विदूपकभी समुद्रकेऊपरतैरआया और अपनी यहदशादेखकर वहधीरपुरुषशोचने लगा कि इसवणियेने यहक्याकिया अथवा इसमें कहनाहीक्याहै क्योंकि धनकेलोभसे अन्धे कृतघ्नी पुपरुउपकारको नही देखसक्के तोयहसमय घवरानेकानहीं है क्योंकि घवरानेसे मनुष्य थोडीसी आपत्तिकोभी नहीं दूरकरसक्का यह शोचकर उसने जोपानीके भीतर पुरुषकी टागकाटीथी उसीपरचढा और अपने हाथों से समुद्रके जलको हटाताहुआ उसीजाघको नौकाके समान वनाकर समुद्रके पारपहुचा ठीकहै (दिलेरपुरुषोका भाग्यही सहायकहोताहै) महावीरजीके समान रामार्थ (रामके निमित्त और रामा अर्थात् स्त्री के निमित्त) समुद्रके पारआयेहुए वलवान् विदूपकको यहआकाशवाणीहुई कि स्यावास २ हेविदूपक तुमसेवढकर कौनदिलेर होसक्काहै तुम्हारे इसधैर्य्य से में वहुतप्रसन्नहू तो तुमसुनो कि इसनग्नदेशमे तुम आगयेहो और यहासेचलकर सातदिनमे ककोटकनगरमें पहुचोगे वहासे धैर्य्यपूर्वक जाकर शीघ्रही तुम्हारा मनोरथ पूर्णहोजायगा और मैं पहले तुमसे आराधनकियाहुआ अग्निदेवताहू अवहमारे वरदानसे तुम्हेक्षुधा और तृषाकीवाधा न होगी तो तुम विश्वासपूर्वक अपने कार्य्य के सिद्ध करनेकोजाओ यहकहकर वहआकाशवाणी वन्दहोगई २१६ यहसुनकर अग्निको प्रणामकरके विदूपक हर्षपूर्वक यहासेचला और सातवेंदिन ककोटकनगरमे पहुचा वहाजाकर विदूपक एकमठमेंगया उसमठमे अनेक देशो मे आयेहुए अभ्यागत श्रेष्ठ ब्राह्मणरहतेथे वहमठयहा के आर्य्यवर्म्मा नाम राजाने अनेक सुन्दर २ सुवर्णकी देवताओंकी मूर्त्तियोसमेत वनवायाथा उसमठमें सपूर्ण ब्राह्मणोसे सत्कार कियेहुए विदूपकको एकब्राह्मणने घरके भीतरलेजाकर स्नानभोजन तथा वस्त्रसेसन्तुष्टकिया सायकालके समय उसमठमे वैठेहुए विदूपकने उसनगरमें यहढढोरा पिटताहुआसुना कि जोकोई ब्राह्मण अथवा क्षत्री प्रातकाल राजकन्याकेसाथ विवाहकरनाचाहै वह आजरात्रिको उसके यहारहै यह सुनकर विदूपकनेजाना कि इसमें कोईकारण है यहशोचकर उससाहसीने राजकन्याके यहा जानेकी इच्छाकरी २२३ तवमठके ब्राह्मण विदूपकसेवोले कि हेब्राह्मण साहसमतकरो यहराजकन्याका घरनहीं है वहतो मृत्युका खुलाहुआ मुखहै जोरात्रिकेसमय वहाजाताहै वहनहींजीताइसप्रकारसे वहुतसेसाहसीपुरुषयहामरचुकेहैं उनब्राह्मणों के कहनेपरभी उनकेवचन न मानकर विदूपकराजाके नौकरोंकेसाथ राजाकेयहागया वहाआपराजाआर्यवर्मानें विदूपकको देखकर उसकी वडीखातिरकी और रात्रिके समय जैसेसूर्य्य अग्निमजाताहै उसीप्रकार विदूपक राजकन्याके महलमेगया यहा विदूपककी आकृतिको देखकर राजकन्याको वडाअनुरागहुआ और निराशहोकर दु समेनेत्रोंमें आसूभरके उसेदेखनेलगी राजकन्याकी यहदशादेखकर ध्यानकरनेसे

आयेहुए,अपने खड्गको हाथमे लेकर विदूषकरात्रिमें इधर उधर देखताहुआ जागताहीरहा एकाएकी एकवडा घोरराक्षस द्वारपरदिखाईदिया उसराक्षसकी दाहिनीभुजाकटीथी इस्से उसने अपना बाया हाथ उसघरके भीतरफैलाया यहदेखकर विदूषकने शोचा कि यह वहीराक्षसहै जिसका दाहनाहाथ मैंने पौंड्रवर्द्धन नगरमेंकाटाथा तो मै आजइसकी भुजानहीं काटूंगा नहींतो यहपहलेकी तरह फिरभागजायगा इस्से इसको अच्छेहीप्रकारसे मारूगा यहशोचकर विदूषकने दौडकर उसके बालपकडकर उसका शिरकाटना चाहा तव उसराक्षसने डरकर उस्सेकहा कि मुझेमतमारो मुझेमतमारो तुमवडे बलवानहो मेरेऊपरदया करो ३३४ तव विदूषकने उसेछोडकर उस्सेपूंछा कि तुम्हारा क्यानाम है और तुम्हारा यह कैसाकामहै तव राक्षसवोला कि मेरायमदष्ट्रनामहै मेरेदोकन्याहुईं एकतो यह और दूसरी पौण्ड्रवर्द्धननगरमें है मुझे महादेवजीकी यहआज्ञाथी कि इनदोनोंराजकन्याओंको वीरतारहितपुरुषके सगसेबचाना तोपहले पौंड्रवर्द्धननगरमें एकपुरुषने मेरीएकभुजाकाटडालीथी और आजयहा तुमने हमकोजीतलिया अबमेरा वह कामसमाप्त होगया यहसुनकर विदूषकने हँसकर उस्सेकहा कि मैनेही पौण्ड्रवर्द्धन मे तेराहाथकाटाथा तव राक्षसबोला कि तुम मनुष्यनहींहो किसीदेवताका अवतारहौ मैजानताहू तुम्हारेहीलिये मुझेमहादेवजीने यहआज्ञादीथी तो अवतुम हमारेमित्रहोगये जवतुम मेराध्यानकरोगे तब मैं सकटमेभी तुम्हारा कार्य्य सिद्धकरनेको आऊगा विदूषकने यहउसकी बातस्वीकारकरली इसप्रकार वह राक्षस विदूषक से मित्रताकरके अन्तर्द्धानहोगया ३४२ तबराजकन्याने बहुतप्रसन्नहोकर विदूषकके बडेपराक्रमकी प्रशसा की और विदूषकने भी आनन्दपूर्व्वक वहरात्रिउसकेसाथव्यतीतकी प्रात काल राजाने यह सपूर्णवृत्तात जानकर वडीप्रसन्नतासे वीरताकी पताकाकेसमान धनसमेत अपनीकन्या विदूषककोदी विदूषककुछदिन उसराजकन्याकेसाथ वहारहा विदूषककेगुणोसे प्रसन्नहुई वहलक्ष्मीकेसमान कन्या उसको एकक्षणभर भी अकेला अलगनहींछोडतीथी एकदिन रात्रिकेसमय उसकन्याकेसोजानेपर भद्राकी यादकरके विदूषक वहासेभीचलाठीकहै दिव्यरसकास्वादलेकर अन्यरसों में किसकाचित्तलगताहै नगरसेबाहरनिकल कर विदूषकने उसराक्षसका स्मरणकिया स्मरणकरनेसे आयेहुए प्रणामकरतेहुए उसराक्षससेबोला कि मुझे भद्रानाम विद्याधरी के लिये उदयाचलपर सिद्धक्षेत्रमेंजानाहै इस्से हे मित्र तुमसुझेवहींलेचलो उसने उसके वचनमानलिये और उसे अपने कन्धेपर वैठालकर रात्रिभरमें उसे दुर्गमसाठयोजनपरलेगया और प्रात काल मनुष्योसे पारजाने के अयोग्य शीतोदानाम नदीसे पारहोकर वह राक्षसउदयाचलके पास विना परिश्रमकेपहुचा और वोला कि यहउदयनामपर्व्वत तुम्हारे सन्मुखहै इसकेऊपर सिद्धक्षेत्रमे मेरी गतिनहीं है यहकहकर और आज्ञालेकर उसराक्षसके चलेजानेपर विदूषकने वहा एक वडीसुन्दरबावडी देखी ३५२ भ्रमरोके गुजारसे मानों स्वागतपूछतीहुई और प्रफुल्लितकमलरूपी मुखवाली उस बावडी के किनारेपर विदूषकबैठगया वहापर विदूषकने स्त्रियोंकेचरणोंकी वडीलम्बीकतारदेखी वह पक्ति मानों विदूषकसे कहतीथी कि तुम्हारी प्रियाके आनेका यहीमार्ग है तव विदूषकने वहायहशोचा कि इसपर्व्वत पर मनुष्यतो जानहींसक्ते है इस्से यहठीकहै कि मै थोडीदेरतक यहाठहरू और देखू कि यह किसके पैरों

की पङ्क्तिहै २५५ उसके यह विचारकरतेही करते वहुतसी सुन्दर २ स्त्रिया सुवर्ण के घटले लेकर जलभरने को आई जब वह जलभरचुकीं तब विदूषकने नम्रतापूर्व्वक उनसेपूछा कि यह जल किसके लिये तुम भर कर लियेजातीहो उनस्त्रियों ने कहा कि यहा पर्व्वतपर भद्रानाम विद्याधरी रहती है उसी के स्नानकेलिये यह जल हमलियेजाती हैं वडाआश्चर्य्य है कि वडे कठिनकार्य्योंके करनेवाले धीरपुरुषोंपर प्रसन्नहोके ब्रह्माही उसकेयोग्य सामग्रियोंको इकट्ठाकरदेते हैं तब उन स्त्रियोंमें से एकस्त्रीविदूषकसेवोली कि हेमहाभाग यहघडा मेरेकन्धेपर रखवादो विदूषकने उसकेकहने से घडा उसके कन्धेपररखवादिया और भद्राकीदीहुई अगूठीभी, उसीघडेमेंडालदी फिर विदूषकतो उसीवावडी के किनारेपर बैठगया और वह स्त्रिया जललेकर भद्राकेयहाचलीगई २६२ वहाजाकर वहभद्राको स्नानकेलिये जब जलदेनेलगीं तबवहअगूठी भद्राकीगोद मेघडेसेगिरपडी उसअगूठीकोदेखके और पहचानकर भद्राने अपनी सखियोंसेपूछा कि आज क्या तुमने यहा कोई अपूर्व्वपुरुषदेखाहै तब उनस्त्रियोंनेकहा कि वावडीकेकिनारेपर एकतरुणपुरुषवैठाहै और उसीने यह मेराघडाभी कन्धेपर रखवादियाहै यहसुनकर भद्राने कहा कि शीघ्रहीउसको स्नानकराके और वस्त्राभूषणपहराके यहालेआओ वह मेरापतिहै भद्राकी यह आज्ञापाकर उनस्त्रियोंने जाके विदूषकसे यह सब वृत्तातकहा और वह सब स्नानकराके वस्त्रालकारयुक्त उसे वहा लिवालेगईं विदूषकने वहाजाकर अपनी वीरतारूपीवृक्षकी साक्षात्पकीहुई फलीकेसमान वहुतकालसे इन्तजारकरनेवाली भद्राकोजाकरदेखा भद्रा भी उसेदेखकर उठकेहर्षके आसुओंसे मानों अर्घदेतीहुई उसकेगलेमें अपनीभुजारूपी मालाडालाकर चिपटगई उससमय उनदोनोंके परस्पर वहुत दवाकर आलिङ्गनकरनेसे स्वेदके बहानेसे मानों वहुतदिनोंका इकट्ठाहुआ स्नेह दवकर टपकपडा २७० इसके उपरान्त वैठकर वह दोनों परस्पर देखने से तृप्त नहीं हुए और उनकी उत्कण्ठा पूर्व्वसेभी सौगुनी वढगई उससमय भद्राने विदूषक से पूछा कि तुम इतनी दूर कैसे आयेहो तब विदूषकबोला कि तुम्हारे स्नेहके सहारेसे प्राणोंकेभी सन्देहोंमें फँसकर इतनीदूर चलाआयाहूं और मैं तुमसे क्याकहूं यह सुनकर और प्राणोंसेभी अधिक उसका स्नेह अपने ऊपर देखकर भद्राको उस पर वहुत स्नेहबढा और वोली कि हेआर्य्यपुत्र मुझे अब इन सखियों से और सिद्धियों से कुछ काम नहीं है तुम्हीं मेरे प्राणहो और मैं तुम्हारी गुणोंसे खरीदीहुई दासीहूं तब विदूषकनेकहा कि अगर ऐसाहै तो तुम इस दिव्य ऐश्वर्य्यको छोडकर हमारे साथ चलकर उज्जयिनी में रहो भद्राने उसी समय उसके वचन मान लिये और ऐसा विचारकरनेसे नष्टहुई विद्याओंका तृणकेसमान त्यागकर दिया २७७ विदूषक उस दिन तो रात्रिभर अपनी प्रियाके साथ वहींरहा और योगेश्वरी नाम भद्राकीसखीने उसकी बडीखातिरकरी फिर प्रातःकाल भद्रासमेत उस पर्व्वतसे उतरकर उसने यमदंष्ट्रनाम राक्षसका स्मरणकिया स्मरण करनेमेंआये हुए राक्षससे अपने जानेका मार्ग वनाके विदूषक भद्रासमेत उसराक्षसके कन्धेपरचढा और राक्षसपरचढ़ के वहासे चलाहुआ भद्रासमेत कर्कोटकपुर में पहुचा वहाराक्षसको देखकर लोग वहुतडरे और विदूषकने आर्य्यवर्मा नाम राजासे उसकी कन्या अपनी स्त्री मागी राजाने अपनीकन्या उसेदेदी और विदूषकभी अपने वाहुवलसे पाईहुई उसराजकन्याको लेकर उसीराक्षसपर चढके वहासेभी चला समुद्रके किनारे पर

आयेहुए,अपने खड्गको हाथमे लेकर विदूपकरात्रिमें इधर उधर देखताहुआ जागताहीरहा एकाएकी एकवडा घोरराक्षस द्वारपरदिखाईदिया उसराक्षसकी दाहिनीभुजाकटीथी इस्से उसने अपना बाया हाथ उसघरके भीतरफैलाया यहदेखकर विदूपकने शोचा कि यह वहीराक्षसहै जिसका दाहनाहाथ मैंने पौंड्रवर्द्धन नगरमेकाटाथा तो मै आजइसकी भुजानहीं काटूंगा नहींतो यहपहलेकी तरह फिरभागजायगा इस्से इसको अच्छेहीप्रकारसे मारूंगा यहशोचकर विदूपकने दौडकर उसके वालपकडकर उसका शिरकाटना चाहा तव उसराक्षसने डरकर उस्सेकहा कि मुझेमतमारो मुझेमतमारो तुमवडे बलवानहो मेरेऊपरदया करो ३३४ तव विदूपकने उसेछोडकर उस्सेपूंछा कि तुम्हारा क्यानाम है और तुम्हारा यह कैसाकामहै तव राक्षसबोला कि मेरायमदंष्ट्रनामहै मेरेदोकन्याहुईं एकतो यह और दूसरी पौण्ड्रवर्द्धननगरमें है मुझे महादेवजीकी यहआज्ञाथी कि इनदोनोंराजकन्याओंको वीरतारहितपुरुपके सगसेवचाना तोपहले पौंड्रवर्द्धननगरमे एकपुरुपने मेरीएकभुजाकाटडालीथी और आजयहा तुमने हमकोजीतलिया अबमेरा वह कामसमाप्त होगया यहसुनकर विदूपकने हंसकर उस्सेकहा कि मैंनेही पौण्ड्रवर्द्धन मे तेराहाथकाटाथा तव राक्षसबोला कि तुम मनुष्यनहींहो किसीदेवताका अवतारहो मैंजानताहूं तुम्हारेहीलिये मुझेमहादेवजीने यहआज्ञादीथी तो अवतुम हमारेमित्रहोगये जवतुम मेराध्यानकरोगे तव मैं सकटमेभी तुम्हारा कार्य्य सिद्धकरनेको आऊंगा विदूपकने यहउसकी बातस्वीकारकरली इसप्रकार वह राक्षस विदूषक से मित्रताकरके अन्तर्द्धानहोगया ३४२ तवराजकन्याने वहुतप्रसन्नहोकर विदूपकके बडेपराक्रमकी प्रशसा की और विदूपकने भी आनन्दपूर्व्वक वहरात्रिउसकेसाथव्यतीतकी प्रात काल राजाने यह सपूर्णवृत्तात जानकर बडीप्रसन्नतासे वीरताकी पताकाकेसमान धनसमेत अपनी कन्या विदूपककोदी विदूपककुछदिन उसराजकन्याकेसाथ वहारहा विदूपककेगुणोंसे प्रसन्नहुई वहलक्ष्मीकेसमान कन्या उसको एककदमभर भी अकेला अलगनहींछोडतीथी एकदिन रात्रिकेसमय उसकन्याकेसोजानेपर भद्राकी यादकरके विदूपक वहासेभीचलाठीकहै दिव्यरसकास्वादलेकर अन्यरसों मे किसकाचित्तलगताहै नगरसेबाहरनिकल कर विदूपकने उसराक्षसका स्मरणकिया स्मरणकरनेसे आयेहुए प्रणामकरतेहुए उसराक्षससेबोला कि मुझे भद्रानाम विद्याधरी के लिये उदयाचलपर सिद्धक्षेत्रमेजानाहै इस्से हे मित्र तुमसुझेवहींलेचलो उसने उसके वचनमानलिये और उसे अपने कन्धेपर बैठालकर रात्रिभरमें उसे दुर्गमसाठयोजनपरलेगया और प्रात काल मनुष्योंसे पारजाने के अयोग्य शीतोदानाम नदीसे पारहोकर वह राक्षसउदयाचलके पास विना परिश्रमकेपहुंचा और वोला कि यहउदयनामपर्व्वत तुम्हारे सन्मुखहै इसकेऊपर सिद्धक्षेत्रमे मेरी गतिनहीं है यहकहकर और आज्ञालेकर उसराक्षसके चलेजानेपर विदूपकने वहा एक वडीसुन्दरबावडी देखी ३५२ भ्रमरोंके गुजारसे मानों स्वागतपूछतीहुई और प्रफुल्लितकमलरूपी मुखवाली उस बावडी के किनारेपर विदूपकवैठगया वहापर विदूपकने स्त्रियोंकेचरणोंकी वडीलम्बीकतारदेखी वह पङ्क्ति मानों विदूपकसे कहतीथी कि तुम्हारी प्रियाके आनेका यहीमार्ग है तव विदूपकने वहायहशोचा कि इसपर्वत पर मनुष्यतो जानहींसक्ते है इस्से यहठीकहै कि मैं थोडीदेरतक यहाठहरूं और देखूं कि यह किसके पैरो

दिग्विजयकीजिये यौगन्धरायणके यहवचनसुनकर राजाबोला कि यहतो ठीकहै परन्तु कल्याणके सिद्ध होने में बहुतसे विघ्नहोते हैं इससे दिग्विजयके लिये मैं तपस्याकरके महादेवजीका आराधनकरूं क्योंकि विना शिवजीकी कृपाके मनोरथकी सिद्धिनहीं होसक्ती है यहसुनकर जैसे समुद्रमें सेतुबांधने के समय रामचन्द्रजीके वचन कपीश्वरोंने मानेथे उसीप्रकार मन्त्रियोंनेभी राजाके तपकरने के विचारको स्वीकार करलिया इसके उपरान्त दोनों रानी और मन्त्रियों समेत तपकरनेको बैठेहुए राजासे तीनदिनके व्रत के उपरान्त स्वप्नमें शिवजीने रात्रिके समय यहकहा कि तुम्हारे ऊपर मैं प्रसन्नहूं अब तुम तपछोडदो तुम्हारी निर्विघ्नतासे जयहोगी और थोडेही दिनों में तुम्हारे पुत्रहोगा वहसम्पूर्ण विद्याधरोंका राजाहोगा जब राजाकी निद्राउछटगई और सूर्य्यकी किरणों से तृप्तहुए प्रतिपदाके चन्द्रमाके समान शिवजी की कृपासे राजाव्रतके क्लेशसे निवृत्त होगया तब प्रातःकाल राजाने स्वप्नकहकर मन्त्रियोंको और व्रत करने से शिथिल होनेवाली पुष्प के समान कोमल दोनों रानियोंको प्रसन्न किया ६ सुनने के योग्य इसस्वप्नके वर्णन को सुनकर तृप्तहुई दोनों रानियों को वहव्रत आगे होनेवाले ऐश्वर्य्य की औषध के समान होगया और तपसे राजाका प्रभाव अपने पुरुषों के समान होगया तथा राजाकी रानियोंकी कीर्त्ति अन्य प्राचीन पतिव्रताओं के समान परमपवित्रहोगई जब राजाने उसव्रतका पारण किया तब पुरमें बडाउत्सवहुआ फिर उत्सव के दूसरेदिन यौगन्धरायणने राजासे कहा कि हे राजा तुम धन्यहो क्योंकि तुम्हारेऊपर श्रीशिवजी इसप्रकारसे प्रसन्नहुएहैं तो अब तुम शत्रुओंकोजीतकर अपने भुजाओं के बलसे उपार्ज्जितकीहुई लक्ष्मीका भोगकरो अपने धर्म से उपार्जनकीहुई लक्ष्मी राजालोगोंके वंशमें स्थिररहती है क्योंकि अपने धर्म से उपार्ज्जितकीहुई लक्ष्मीकानाशनहींहोता और इसी से बहुत दिनसे नष्टहुई आपके पुरुषोंकी निधि पृथ्वी में गडीहुई आपकोमिली इसीविषयपर मैं आपको एक कथा सुनाताहूं १५ पाटलिपुत्रनाम नगरमें किसी महाधनवान् वणियेका एकदेवदासनाम पुत्रथा वह पौण्ड्रवर्द्धननाम नगरसे किसी बडेधनवान् वणियेकी कन्या विवाहलायाथा पिताके मरजानेपर देवदास धीरे२ जुएमें सब धनहारगया तब उसका श्वशुर अपनीकन्याको दरिद्रमें बहुतदुखी देखकर वहांसे पौण्ड्रवर्द्धनमें अपने घरलेगया धीरे २ विपत्तिसे व्याकुल देवदासभी रोजगारकरनेकी इच्छासे अपने श्वशुरसे धनमांगनेकोचला सायंकालकेसमय पौण्ड्रवर्द्धन नगरमें पहुँचकर अपनेको धूलमें लिप्त फटेवस्त्र धारण कियेहुये देखकर देवदासने शोचा कि इसप्रकारसे मैं अपने श्वशुरकेयहां कैसेजाऊं क्योंकि कहाभी है कि (वरहिमानिनोमृत्युर्नदैन्यस्वजनाग्रत) अर्थात् मानीपुरुषका मरजानाअच्छाहै परन्तु अपने सम्बन्धियों के आगे दीनताकरना अच्छानहीं यह शोचकर बाजारमेंजाके किसी दूकानकेबाहर रात्रिकेसमय कमलकेसमान मुरझाकर वह बैठरहा २३ क्षणभरकेहीपीछे उसने देखा कि कोई जवानवणिया उसदूकान के किवाडखोलकर भीतरचलागया और क्षणभरकेहीपीछे उसीदूकानमें एक स्त्री बहुत धीरे२ पैरधरतीहुई जल्दी से उसीदूकानमेंचलीगई जब दीपकके उजयाले में देवदासने दूकानके भीतरदेखा तो उसे मालूम हुआ कि यह तो मेरीही स्त्री है तब किवाडेबन्दकरके अन्य पुरुषके साथ सम्भोगकरने के लिये गईहुई

जाके विदूषकने उसपापी बणियेको पाया जिसने समुद्रमें पडेहुए इसकी रस्सी काटदीनीथी और धन समेत उस बणियेकी कन्यालेली क्योंकि पहले उसने समुद्रमे जहाजके छुटानेके निमित्त अपनेआधेधन समेत अपनीकन्या देनीकी थी और धनका छीनलेनाही विदूषकने उसका मारडालना समझा क्योंकि प्रायः नीचलोगोको धन प्राणसेभी अधिक प्याराहोताहै ३८७ इसके उपरान्त विदूषक उसराक्षसपरभद्रा राजकन्या तथा वणियेकीकन्या समेत चढकर आकाश मार्गसेचला और अपनी स्त्रियोंको सत्त्वों (जीव तथा पराक्रम) के वेगसे युक्त अपने पराक्रमके समान मसुद्रको दिखाताहुआ समुद्रके पारआया और वहासे उस पौण्ड्रवर्द्धन नाम नगरमे पहुचा वहा राक्षसपरचढेहुए विदूषक को देखकर लोगोंको बडा आश्चर्य्य हुआ फिर राक्षसकी भुजाकाटनेसे मिलीहुई बहुतदिनों से उत्कंठित राजादेवसेनकी कन्याको विदूषकने जाकर प्रसन्न किया और राजाके रोकनेपर भी अपने देशकी उत्कंठा से राजकन्याको लेकर उसी राक्षस पर चढकरचला और थोडेही समयमे उसराक्षस के प्रभावसे उज्जयिनीपुरी में जापहुचा वह पुरी क्याथी मानो बाहर निकलीहुई अपने देश के देखने की साक्षात् प्रसन्नताथी कन्धेपर बैठीहुई स्त्रियोकी कान्तिसे प्रकाशित शरीरवाले राक्षसपर चढेहुए विदूषकको लोगो ने जाज्वल्यमान औष धियों से युक्त उदयाचलके शिखरपर चन्द्रमाके समान देखा इसके उपरान्त उसे देखकर लोगों के डरनेपर उसकाश्वशुर राजा आदित्यसेन इसबातको सुनके वहाआया विदूषकने राजाको देखकर राक्षसपरसे उतरकर उसेप्रणामकिया और राजानेभी उसे अपने पासबुलाकर उसकीबडी खातिरकी ३६७ फिर विदूषकने अपनी सब स्त्रियोंको उतारकरउसराक्षससे कहा कि अब तुम्हारा जहाचित्तचाहे वहाजाओ उसराक्षसके चलेजानेपर विदूषक अपने श्वशुरके साथ राजमन्दिर में गया और वहाजाकर उसने बहुत दिनों से उत्कण्ठित अपनी पहली स्त्री राजाकी कन्याको प्रसन्नकिया इसकेउपरान्त राजाने विदूषकसे पूछा कि यहस्त्रिया तुम्हे कहा से मिली और यहराक्षस कौनथा राजाके यहवचन सुनकर विदूषकने सब वृत्तान्त कहदिया तब राजाने उसपर अत्यन्त प्रसन्नहोकर अपना आधा राज्य उसेदेदिया तबसे वहविदूषक ब्राह्मणभी राजाहोगया और श्वेतछत्र समेत उसपर चमरढुलनेलगा उससमय मगलके बाजे और गानोंसे उज्जयिनीपुरी ऐसीशोभितहुई कि मानो यहपुरीही आनन्दके शब्दकररही है इसप्रकार राज्य के ऐश्वर्य्यको पाकर विदूषकने धीरे२ सपूर्ण पृथ्वी जीतकर सब राजा अपने वशीभूतकरलिये और परस्पर ईर्षारहित भद्रा आदिक सपूर्ण रानियों के साथ आनन्दका भोगकरने लगा इसप्रकार से भाग्यके अनुकूल होनेपर धीरलोगोको अपना पराक्रमही लक्ष्मी के खैचनेको सिद्धहुआ महामन्त्र होजाताहै उदयनके मुखसे इसप्रकार अद्भुत अर्थवाली विचित्रकथाको सुनकर पास बैठेहुए सपूर्ण मन्त्री वासवदत्ता और पद्मावती समेत अत्यन्त प्रसन्नहुए ४०७॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायालावाणकलम्बकेचतुर्थस्तरङ्ग ४॥

इसकेउपरान्त यौगन्धरायण उदयनसे बोला कि हे राजा आपके भाग्य और पुरुषार्थ दोनों अनुकूल हैं और नीतिके मार्ग में हमलोगों ने भी कुछ श्रम कियाहै इससे अब आपशीघ्रही विचारके अनुसार

दिग्विजयकीजिये यौगन्धरायणके यहवचनसुनकर राजाबोला कि यहतो ठीकहै परन्तु कल्याणके सिद्ध होने में बहुतसे विघ्नहोते है इससे दिग्विजयके लिये मै तपस्याकरके महादेवजीका आराधनकरू क्योंकि विना शिवजीकी कृपाके मनोरथकी सिद्धिनहीं होसक्ती है यहसुनकर जैसे समुद्रमें सेतुबाधने के समय रामचन्द्रजीके वचन कपीश्वरोंने मानेथे उसीप्रकार मन्त्रियोंनेभी राजाके तपकरने के विचारको स्वीकार करलिया इसके उपरान्त दोनों रानी और मन्त्रियों समेत तपकरनेको वैठेहुए राजासे तीनदिनके व्रत के उपरान्त स्वप्नमें शिवजीने रात्रिके समय यहकहा कि तुम्हारे ऊपर में प्रसन्नहू अव तुम तपछोडदो तुम्हारी निर्विघ्नतासे जयहोगी और थोडेही दिनोंमे तुम्हारे पुत्रहोगा वहसम्पूर्ण विद्याधरोंका राजाहोगा जब राजाकी निद्राउच्छटगई और सूर्य्यकी किरणोंसे तृप्तहुए प्रतिपदाके चन्द्रमाके समान शिवजी की कृपासे राजाव्रतके क्लेशसे निवृत्त होगया तब प्रात काल राजाने स्वप्नकहकर मन्त्रियोंको और व्रत करने से शिथिल होनेवाली पुष्प के समान कोमल दोनों रानियोंको प्रसन्न किया ६ सुनने के योग्य इसस्वप्नके वर्णन को सुनकर तृप्तहुई दोनों रानियों को वहव्रत आगे होनेवाले ऐश्वर्य्य की औषध के समान होगया और तपसे राजाका प्रभाव अपने पुरुषों के समान होगया तथा राजाकी रानियोंकी कीर्त्ति अन्य प्राचीन पतिव्रताओं के समान परमपवित्रहोगई जव राजाने उसव्रतका पारण किया तव पुरमें वडाउत्सवहुआ फिर उत्सव के दूसरेदिन यौगन्धरायणने राजासे कहा कि हे राजा तुम धन्यहो क्योंकि तुम्हारेऊपर श्रीशिवजी इसप्रकारसे प्रसन्नहुएहैं तो अव तुम शत्रुओंकोजीतकर अपने भुजाओं के वलसे उपार्जितकीहुई लक्ष्मीका भोगकरो अपने धर्म से उपार्जनकीहुई लक्ष्मी राजालोगोंके वंशमें स्थिररहती है क्योंकि अपने धर्म से उपार्जितकीहुई लक्ष्मीकानाशनहींहोता और इसी से वहुत दिनसे नष्टहुई आपके पुरुषोंकी निधि पृथ्वी में गडीहुई आपकोमिली इसीविषयपर में आपको एक कथा सुनाताहू १५ पाटलिपुत्रनाम नगरमे किसी महाधनवान् वणियेका एकदेवदासनाम पुत्रथा वह पौण्ड्रवर्द्धननाम नगरसे किसी वडेधनवान् वणियेकी कन्या विवाहलायाथा पिताके मरजानेपर देवदास धीरे२ जुएमें सव धनहारगया तव उसका श्वशुर अपनीकन्याको दरिद्रसे वहुतदुखी देखकर वहासे पौण्ड्रवर्द्धनमें अपने घरलेगया धीरे २ विपत्तिसे व्याकुल देवदासभी रोजगारकरनेकी इच्छासे अपने श्वशुरसे धनमागनेकोचला सायकालकेसमय पौण्ड्रवर्द्धन नगरमें पहुँचकर अपनेको धूलमें लिप्त वुरेवस्त्रधारण कियेहुये देखकर देवदासने सोचा कि इसप्रकारसे मैं अपने श्वशुरकेयहा कैसेजाऊ क्योंकि कहाभी है कि (वरहिमानिनोमृत्युर्नदैन्यस्वजनाग्रत) अर्थात् मानीपुरुषका मरजानाअच्छाहै परंतु अपने सम्बधियों के आगे दीनताकरना अच्छानहीं यह सोचकर वाजारमेंजाके किसी दूकानकेबाहर रात्रिकेसमय कमलकेसमान मुरझाकर वह वैठरहा २३ क्षणभरकेहीपीछे उसने देखा कि कोई जवानवणिया उसदूकान के किवाडखोलकर भीतरचलागया और क्षणभरकेहीपीछे उसीदूकानमें एक स्त्री वहुत धीरे२ पैरधरतीहुई जल्दी से उसीदूकानमेंचलीगई जव दीपकके उजयालेमें देवदासने दूकानके भीतरदेखा तो उसे मालूम हुआ कि यह तो मेरीही स्त्री है तव किवाडेवन्दकरके अन्य पुरुषके साथ सभोगकरने के लिये गईहुई

अपनी स्त्री को देखकर उसकी छाती मे दु खरूपी वज्रसालगा और वह शोचनेलगा कि धनहीन पुरुषके शरीरको भी लोगहरलेते है तो स्त्रियोंका क्या कहनाहै क्योंकि स्त्रियां तो स्वभावही से बिजली के समान चंचलहोती हैं व्यसनरूपी समुद्रमें डूबेहुए मनुष्योको यह विपत्तिहोती है और पिताकेघरमें रहनेसे स्वतंत्र स्त्रियोंकी यह गतिहोती है ऐसा विचार करते २ उसने बाहरसे रतिकेउपरान्त जारकेसाथ में लेटीहुई अपनी स्त्रीका वार्त्तालापकरनासासुना तब वह द्वारेमें कानलगाकरसुननेलगा उससमय उसकी स्त्री अपने यार बणियेसे बोली कि सुनो आज मैं तुमसे स्नेहकेवशहोकर अपने घरकी गुप्तबातकहतीहू कि मेरे पतिके वीरवर्मानाम प्रपितामहने अपनेघरके आंगनके चारोकोनेमें सुवर्णसेभरेहुए चारकलशेगाडेथे ३३ और उसने अपनीस्त्रीसे यहसब वृत्तांत कहदिया उसने मरतेसमय अपनीवहू अर्थात् मेरेपतिकीदादीसे कहा उसने अपनीवहू अर्थात् मेरीसाससे व मेरीसासने मुझसे कहदियाथा इसप्रकार मेरे पतिके यहां यहबात सासोंकेमुखसे क्रमपूर्वक सुनीजाती है मैंनेअपने पतिकेदरिद्री होजानेपर भी यहवृत्तात उस्से नहीकहा क्योंकि उसज्वारीसे मुझे द्वेषथा और तुम मेरेपरमप्रियहो इस्सेयह मैंने तुमसेकहदिया तो तुममेरेपतिके पासजाकर उसे कुछ धनदेकर वहघरखरीदलो और वहसोना निकालकर यहांआकर मेरेसाथ आनन्द करो उसके यहवचनसुनकर उसकायार उसपर विनापरिश्रमकेही इतनाधन मिलजानेकीआशासे बहुत प्रसन्नहुआ फिरदेवदासभी उसदुष्टस्त्रीके वचनरूपीबाणोंसेअत्यन्त खेदितहुआ और धनमिलनेकीआशा उससमय उसकेहृदयमे कीलितसीहोगई इसकेउपरान्त वहशीघ्रही अपने पाटलपुत्रनगरमे चलाआया और घरमेआकर उसने सब धन खोदलिया ४० इसके उपरान्त इसकीस्त्रीकायार वहीबणिया धनकेलोभ से रोजगारके बहानेवहाआया और देवदाससे उसने वहघरखरीदा देवदासनेभी उसमकानकी बहुतसी कीमतली इसके उपरान्त देवदास किसी और घरमे अपना कारखाना जमाकर शीघ्रही अपनी स्त्रीको युक्तिपूर्वक अपने श्वशुरकेघरसे अपनेघरलेआया ऐसाकरनेके उपरान्त उसकीस्त्रीके यारबणियेने वहा धन न पाकर देवदासमेआकर कहा कि यहतुम्हाराघर बहुतपुरानाहै इससेमुझे नही अच्छा मालूमहोता तो तुम हमाराधन हमेंदेदो और अपना मकानलेलो जब देवदासने उसकेकहनेको मजर न किया तब वह दोनों लडतेहुए राजाकेयहा गये वहा जाकर देवदासने हृदयमें स्थितविषके समान दुरसह अपनी स्त्री का सम्पूर्ण वृत्तान्त राजाकेआगे कहदिया तब राजाने उसकीस्त्रीको बुलाके और सब बातोंका निश्चय करके पराई स्त्रीके चाहनेवाले उस दुष्टबणियेका सबधन छीनालिया और देवदासभी उसदुष्ट अपनी स्त्री की नाककाटके और किसी अन्यस्त्री से विवाहकरके सुखपूर्वक भोगकरनेलगा ४६ इसप्रकार धर्म से उपार्जनकीहुई लक्ष्मी अनेकपुस्तोंतक नष्टनहींहोती और अधर्मसे उपार्जनकीहुई लक्ष्मी पालेकेजलके कणोंकीसमान शीघ्र नष्टहोनेवाली होती है इससे मनुष्यको धर्म से धनका उपार्जन करनाचाहिये और राजाको तो यहबात औरभी अधिकआवश्यकहै क्योंकि राज्यरूपीवृक्षका धनही मूलहै इससे कार्यको सिद्ध करनेकेलिये मन्त्रियोका यथायोग्य सन्मानकरके धर्मपूर्वकलक्ष्मीके उपार्जन करनेके निमित्त आप दिग्विजयकीजिये आपकेदोनोंश्वशुरोंके सबधसे बहुतसेराजालोग आपसेलडेंगेनहीं किंतु बिनालडेही

मिलजायँगे और यहकाशीका ब्रह्मदत्तनामराजा आपकासदैवकावैरीहै तो पहिलेइसीकोजीतो फिरइसे जीतकर क्रमसे पूर्वादिचारों दिशाओंको जीतकर कुमुदके समान उज्ज्वल पाडुकेयशको अत्यन्त उन्नत करो ५५ मन्त्रीकेयहवचनसुनकर विजयकेलिये उद्यतउदयन्नेयात्राके प्रारंभका हुक्मदेदिया इसकेउपरांत सहायताके लिये आयेहुये वासवदत्ताकेभाई गोपालकको राजाने सत्कार करनेके लिये विदेह देशका राज्यदेदिया और सेनाओंको साजकर सहायके लिये आयेहुए पद्मावतीकेभाई सिंहवर्माको चदेलीका राज्य देदिया और फिरजैसे मेघोंसे वर्षाऋतु दिशाओंको व्याप्तकरती है उसीप्रकार सेनाओं से दिशाओंके व्याप्तकरनेवाले,अपने मित्रम्लेच्छोंके राजा पुलिन्दकको बुलाया इसप्रकार वत्सदेशमें विजयके निमित्त यात्राकी तैयारी होनेपर सबशत्रुओंके हृदयमे व्याकुलता होनेलगी यौगन्धरायणने पहलेही से थोडेसे गोइन्देकाशीजी में इसलिये भेजे कि वहराजा ब्रह्मदत्तके कार्य्योंको जानकर यौगन्धरायणके पासखबर भेजतेरहें ६१ इसके उपरान्त कोई अच्छादिन देखके राजा उदयन्ने ब्रह्मदत्तके जीतनेकेलिये पूर्वमेंचढाईकी उससमय बहुतसे अच्छे२ शकुनहुए वडेऊंचेहाथीपर छत्र लगाकर चढेहुए राजाकीऐसी शोभाहुई जैसी कि जिसपर्वतपर एकवृक्षफूलाहोय उसपरचढेहुए मतवालेसिंहकी होतीहै जयकी सिद्धिको मानों कहतीहुई शरदऋतुसे दिग्विजयकाहर्ष और भी अधिक होगया क्योंकि नदियों मे जलके कम होजानेसे मार्गबहुत सुगमहोगया और अनेक प्रकारके शब्दों करके युक्तसेनासे संपूर्ण पृथ्वीतल पूर्ण होगयाउससमय अवसरकेविनाही मेघरहित वर्षाऋतुका भ्रमहोताथा सेनाके शब्दोंकेभाईशब्दोंसेव्याकुलहुई चारोंदिशा मानोंपरस्पर राजाके आनेके भयकी बातेंकरतीथीं सुवर्ण के बख्तरोंको धारणकरने से सूर्य्यकेसमान प्रभावाले घोडोंको चलतेहुए देखकर यहमालूम होताथा किनीराजनमे प्रसन्नहुई अग्नि घोडोंके साथ२ चलीजातीहै सेनाके हाथीकानोंमे लगेहुए श्वेतचामरों से अत्यन्त शोभित होते थे और कपोलोंमें लगेहुए सिंदूरके बहनेसे हाथियों के मदकाजल लालहोगयाथा वहहाथी क्याथे मानोपर्व्वतों ने डरकर शरदऋतुके श्वेतमेघोंसे युक्त और गेरुआदि धातुओं के प्रवाहसे युक्त अपने २ पुत्र राजाकी यात्रामें भेजे यहराजा किसी दूसरेके तेजकोनहीं सहसक्ताहै इसीसे मानोंसेनाकी धूलने उडकर सूर्य्य के तेजको ढकलिया उसयात्रामें दोनोंरानीभी राजाके पीछे २ चलीजातीथीं वहरानी क्याथीं मानो राजाकी नीतिके गुणोंसे वशीभूतहुई कीर्त्ति और जयरूपी लक्ष्मीथीं वायुके द्वारासुकडेहुए और फैलेहुएपताकाओंके वस्त्रमानों शत्रुओंसे कहतेथे कि यातोनम्रहोजाओ अथवा भागजाओ ७२ इसप्रकारसे वहराजा चारोंओर प्रफुल्लित श्वेत कमलोंको देखताहुआ चला वह कमल क्याथे मानो पृथ्वीके दबनेके भयसेघबरायेहुए शेषने अपनेफणदेखनेको निकालेथे इसबीचमें यौगन्धरायणके भेजेहुए वहगोइन्दे कपालियोंका स्वरूपधारणकरके काशीजीमें पहुंचे उनमेंसे एकपुरुषजो अच्छेप्रकारसे अनेक मायाओंको जानताथा वहतो अपनेकोवडाज्ञानी दर्शाकरगुरुबनगया और बाकीउसके शिष्यबनगये वहसबशिष्य इधर उधरजाकर यहकहतेथे कि यहभिक्षामागनेवाला हमारा आचार्य्य त्रिकालज्ञहै जोकोई लोगउसपर श्रद्धा करके उससे पूछने आतेथे उनसे वहजोकुछ अग्नि दाहादिक फलबतलाताथा वहबात उसके शिष्यछिपकर

अपनी स्त्री को देखकर उसकी छाती में दुःखरूपी वज्रसालगा और वह शोचनेलगा कि धनहीन पुरुषके शरीरको भी लोगहरलेते हैं तो स्त्रियोंका क्या कहनाहै क्योंकि स्त्रिया तो स्वभावही से बिजली के समान चंचलहोती हैं व्यसनरूपी समुद्रमे डूबेहुए मनुष्योंको यह विपत्तिहोती है और पिताकेघरमें रहनेसे स्वतन्त्र स्त्रियोंकी यह गतिहोती है ऐसा विचार करते २ उसने बाहरसे रतिकेउपरान्त जारकेसाथ में लेटीहुई अपनी स्त्रीका वार्त्तालापकरनासासुना तब वह द्वारेमें कानलगाकरसुननेलगा उससमय उसकी स्त्री अपने यार बणियेसे बोली कि सुनो आज मैं तुमसे स्नेहकेवशहोकर अपने घरकी गुप्तबातकहतीहूं कि मेरे पतिके वीरवर्मानाम प्रपितामहने अपनेघरके आंगनके चारोकोनोमे सुवर्णसेभरेहुए चारकलशेगाडेथे ३३ और उसने अपनीस्त्रीसे यहसबवृत्तात कहदिया उसने मरतेसमय अपनीबहू अर्थात् मेरेपतिकीदादीसे कहा उसने अपनीबहू अर्थात् मेरीसाससे व मेरीसासने मुझसे कहदियाथा इसप्रकार मेरे पतिके यहां यहबात सासोंकेमुखसे क्रमपूर्वक सुनीजाती है मैंनेअपने पतिकेदरिद्री होजानेपर भी यहवृत्तात उस्से नहींकहा क्योंकि उसज्वारीसे मुझे द्वेषथा और तुम मेरेपरमप्रियहो इस्सेयह मैंने तुमसेकहदिया तो तुममेरेपतिके पासजाकर उसे कुछ धनदेकर वहघरखरीदलो और वहसोना निकालकर यहांआकर मेरेसाथ आनन्द करो उसके यहवचनसुनकर उसकायार उसपर विनापरिश्रमकेही इतनाधन मिलजानेकीआशासे बहुत प्रसन्नहुआ फिरदेवदासभी उसदुष्टस्त्रीके वचनरूपीबाणोंसे अत्यन्त खेदितहुआ और धनमिलनेकीआशा उससमय उसकेहृदयमे कीलितसीहोगई इसकेउपरान्त वहशीघ्रही अपने पाटलपुत्रनगरमें चलाआया और घरमेंआकर उसने सबधन खोदलिया ४० इसके उपरान्त इसकीस्त्रीकायार वहीबणिया धनकेलोभ से रोजगारके बहानेयहांआया और देवदाससे उसने वहघरखरीदा देवदासनेभी उसमकानकी बहुतसी कीमतली इसके उपरान्त देवदास किसी और घरमें अपना कारखाना जमाकर शीघ्रही अपनी स्त्रीको युक्तिपूर्वक अपने श्वशुरकेघरसे अपनेघरलेआया ऐसाकरनेके उपरान्त उसकीस्त्रीके यारबणियेने वहा धन न पाकर देवदासमे आकर कहा कि यहतुम्हाराघर बहुतपुरानाहै इससेमुझे नहीं अच्छा मालूमहोता तो तुम हमाराधन हमेंदेदो और अपना मकानलेलो जब देवदासने उसकेकहनेको मंजूर न किया तब वह दोनों लडतेहुए राजाकेयहां गये वहां जाकर देवदासने हृदयमें स्थितविषके समान दुस्सह अपनी स्त्री का सम्पूर्ण वृत्तान्त राजाकेआगे कहदिया तब राजाने उसकीस्त्रीको बुलाके और सब बातोंका निश्चय करके पराई स्त्रीके चाहनेवाले उस दुष्टबणियेका सबधन छीनलिया और देवदासभी उसदुष्ट अपनी स्त्री की नाककाटके और किसी अन्यस्त्री से विवाहकरके सुखपूर्वक भोगकरनेलगा ४८ इसप्रकार धर्म से उपार्जनकीहुई लक्ष्मी अनेकपुश्तोंतक नष्टनहींहोती और अधर्मसे उपार्जनकीहुई लक्ष्मी पालेकेजलके कणोंकीसमान शीघ्र नष्टहोनेवाली होती है इससे मनुष्यको धर्म से धनका उपार्जन करनाचाहिये और राजाको तो यहबात औरभी अधिकआवश्यकहै क्योंकि राज्यरूपीवृक्षका धनही मूलहै इससे कार्यको सिद्ध करनेकेलिये मन्त्रियोंका यथायोग्य सन्मानकरके धर्मपूर्वकलक्ष्मीके उपार्जन करनेके निमित्त आप दिग्विजयकीजिये आपकेदोनोंश्वशुरोंके सबबसे बहुतसेराजालोग आपसेलडेंगेनहीं किंतु बिनालडेही

गया १०० अपने पिताके पासगईहुई वासवदत्ता बालावस्थाका स्मरणकरके सपूर्ण सुखोंके होने परभी उदासीनसीहोगई राजाचडमहासेन जैसेवासवदत्तासे मिलकर प्रसन्नहुआ उसीप्रकार पद्मावतीमेभीमिल कर प्रसन्नहोगया इसप्रकार कुछदिन उज्जयिनी में रहकर प्रसन्नहुआ राजाउदयन् अपने श्वशुरकीभी सेनालेकर पश्चिमदिशाके जीतनेकोचला उदयन्का खड्गमानो प्रतापरूपी अग्निका धुआथा क्योंकि उसने लाटदेशकी स्त्रियोंकेनेत्र आसुओंसे मैलेकरदीनेथे उदयन्के हाथियोसे कपायेहुए वनमाला मदराचलपर्व्वत इसलिये मानों कापताथा कि ऐसा न होय कि यहराजा कहीं समुद्रमथनकेलिये मुझेउखाडे मालूमहोताहै कि यहराजाउदयन् सूर्य्यादिग्रहोंसेभी विलक्षण तेजस्वीथा क्योंकि पश्चिमदिशामें उसका औरभी अधिक उदयहुआ इसके उपरान्त अलकापुरीसेयुक्त और कैलाशरूपी हास्यवाली उत्तरदिशाको उदयन्चला वहाजाकर जैसे वानरोंकी सेनालेजाकर समुद्रबाधकर श्रीरामचन्द्रजीने राक्षसोंको माराथा उसीप्रकार सिन्धुदेशके राजाकोअपनेवशीभूत करके अपनी सेनाओंसे उदयन्ने म्लेच्छोंका नाशकिया जैसे चचलसमुद्रकी लहरें किनारेके वनोंमें आकर नष्टहोजाती हैं उसीप्रकार म्लेच्छोंके घोडे उदयन् के हाथियोंमें आकर नष्टहोगये जैसे हाथमे चक्रलेकर विष्णुभगवान्ने राहुका शिरकाटडालाथा उसीप्रकार सपूर्ण राजाओसे करलेनेवाले उदयन्ने पारसदेशके महापापी राजाका शिरकाटडाला ११० हूणदेशके जीतनेवाले उदयन्कीकीर्त्ति दिशाओंको शब्दायमान करतीहुई दूसरी गगाजीके समान हिमालयको चली उदयन्की सेनाओंके गर्जनेपर भयसे शत्रुओके शान्तहोजानेके कारण केवलपर्व्वतोंकी गुहाहों सेही भाईशब्द सुनाई देताथा कामरूपदेशका राजाभीछत्रकी छायाको छोडकर उदयन्के आगे नम्र होकर मिला कामरूपदेशके राजाके दियेहुये हाथियोंको लेकर उदयन् लौटा वहहाथी क्याथे मानो पर्व्वतोने छोटे २ जगम पहाडराजाको भेंटकियेथे इसप्रकार सपूर्ण पृथ्वीको जीतकर राजाउदयन् सेना समेत पद्मावती के पिता मगधराज के यहागया जैसे रात्रि के समय चन्द्रमा की उजयाली मे कामका उत्सव होता है उसीप्रकार रानियों समेत राजाउदयन् के आने के समय मगध देशमें उत्सव होनेलगा पहले छिपकर आईहुई और दूसरीवार प्रकटहोके आईहुई वासवदत्ता से मगधराज बडेप्रेमपूर्व्वक मिला इसके उपरात सपूर्ण नगर निवासियों समेत मगधराजके उत्तमसत्कारको अगीकारकरके स्नेहसे सबके चित्तोंको अपने साथमें लेताहुआ और सेनाके भारसे पृथ्वीको दबाताहुआ राजा उदयन् लावाणक नाम अपने देशमें आया ११८ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायालावाणकलम्बके पचमस्तरङ्ग ५ ॥

इसके उपरान्त सेनाके विश्राम करानेकेलिये लावाणकमेंठहरेहुए राजाउदयन्ने एकान्तमें यौगन्धरायणसेकहा कि तुम्हारीसलाहसे मैनेपृथ्वीकेसपूर्ण राजाजीतलिये और उपायसेवशीभूतहुए यहराजा लोग अबनहींबिगडेंगे परन्तुकाशीका यहराजा ब्रह्मदत्तबडाकुटिलहै मैंजानताहू कि शायदयही अकेला किरकुछ उपद्रवकरेगा क्योंकि कुटिलमनुष्योपर क्याविश्वासहोसकताहै उदयन्केयहवचन सुनकर यौगन्धरायणनेकहा कि हेराजा अबब्रह्मदत्तआपकेसाथ कोईउपद्रवनहींकरेगा क्योंकि जब आपनेउसपर

उसीप्रकारसेकरदेतेथे इसीसे वहकाशीजीमें बडाप्रसिद्धहोगया उसकी सिद्धिको देखकर राजाब्रह्मदत्तका परमप्रिय एकराजपुत्र उसपर बडाप्रसन्नहुआ तबउसने उसराजपुत्रको अपनासेवकबनालिया राजाब्रह्म-दत्तउसी राजपुत्रके द्वाराजोकुछ पूछनाचाहताथा वहपूछताथा इससे वहराजाकी लडाईकी गुप्तबातोंकाभी जाननेवालाहोगया ७६ इसके उपरान्त ब्रह्मदत्तकेमंत्री योगकरण्डकने मार्गमे आतेहुए राजाउदयन्के लियेबहुतसे उपद्रवकिये अर्थात् उसने मार्गके वृक्षपुष्पलता जलतथा तृणयहसब विषआदि औषधियोंसे युक्तिपूर्व्वक दूषितकरदिये विषदेनेवाली स्त्रिया वेश्यावनाकर सेनामेंभेजी औररात्रिमें छुपकर मारडालने वाले पुरुषभीभेजे इनसबबातोकोजानकर उसबनेहुए ज्ञानीनेअपनेशिष्योके द्वारासबबातें यौगन्धरायण से कहलाभेजीं ८२ इनबातोंको जानकर यौगन्धरायणने भी दूषितजलादि पदार्थ औषधियों से शुद्ध करवाये और बेजानीहुई स्त्रीका सेनाके भीतर आना बन्दकरवादिया और उसने रुमण्वानके साथघूम२ कर जितने घातक पुरुषपाये वहसबमरवाडाले इनसब बातोंको जानकर जबब्रह्मदत्तकी मायाकुछ नहीं चली तबउसने जाना कि सेनासे दिशाओंके पूरितकरनेवाले उदयन्को मैंनहीं जीतसकूगा तबसलाह करके उसने पहलेतो दूतभेजा और जबउदयन् निकटआगया तबआपही हाथजोडताहुआ उसकेपास गया भेटलेकर आयेहुए राजाब्रह्मदत्तका उदयन्ने भी प्रीतिपूर्व्वक बडासत्कार किया क्योंकि शूरलोगों को नम्रता प्रियहोतीहै इसप्रकार ब्रह्मदत्तको जीतकर पूर्व्वदिशामे दबनेवाले नम्रराजाओंको अपनेआ-धीन करताहुआ और कठिन राजाओंको निर्मूल करताहुआ राजाउदयन् पूर्वसमुद्रपर कोमल वृक्षोंको झुकातीहुई और कठिन वृक्षोको उखाडतीहुई वायुके समान प्राप्तहुआ वहासमुद्रमे जोबडी२ लहरेंआती थीं उनसे यहमालूमहोताथा कि मानो बगदेशवासियों के पराजयसे डराहुआ समुद्र कापरहाहै६०समुद्रके किनारेपर राजाने जयस्तभगाडदिया वह जयस्तभक्याथा मानों अभयमागनेके लिये पातालसे शेषजी ही निकले थे इसके उपरान्त जबकलिङ्ग देशके निवासियोने आगेआकर उसेकरदिया तब उसकायश महेन्द्रपर्व्वतपर फैलगया महेन्द्रकी पराजयसे मानो डरकर आयेहुए विन्ध्याचलके शिखरोंके समान हा-थियोंसे सपूर्ण राजालोगोंको जीतकर उदयन् दक्षिण दिशाकोचला उसदक्षिण दिशामें जैसे शरदऋतु मेघोंको निस्सार पाडुवर्ण गर्जनारहित तथा पर्वतनिवासी करदेतीहै उसीप्रकार राजाउदयन्ने अपनेशत्रु लोग निस्सार पाण्डुवर्ण गर्जनारहित और पर्वतनिवासी करदिये उदयन्से उल्लघनकीहुई कावेरीनदी और चोलकदेशके राजाकीकीर्त्ति दोनोंएकसाथही गदलेपनेको प्राप्तहोगई उदयन्मुरलाके निवासियों के शिरोंकीही उन्नतिनहीं सहसका यह बात नहीं किंतु हाथोंसेपीटेहुए उनकी स्त्रियोकेस्तनोकीभी उन्नति नहीं सहसका उसके हाथियोंने सातधाराओं से बहनेवाली गोदावरी नदीके जलोका जो पानीपिया इसीसे मानों उनके शरीरोंके सातस्थानोंसे मदबहनेलगा ६७ इसकेउपरान्त उदयन्रेवानदीको उतरकर उज्जयिनीमें पहुचा और राजाचडमहासेन उसेआगेआकर लेगया वहाउसेमालाकी शिथिलतासे खुले हुए चुट्टेवाली और इसीसे अधिक शोभावाली मालव देशकी स्त्रियोंनेदेखा फिर राजाचडमहासेनने उदयन्का ऐसासत्कारकिया कि जिस्से प्रसन्नहुआ उदयन् अपने देशके सपूर्णउत्तम भोगोंकोभी भूल

गया १०० अपने पिताके पासगईहुई वासवदत्ता बालावस्थाका स्मरण करके सपूर्ण सुखोंके होने परभी उदासीनसीहोगई राजाचडमहासेन जैसेवासवदत्तासे मिलकर प्रसन्नहुआ उसीप्रकार पद्मावतीसेभीमिल कर प्रसन्नहोगया इसप्रकार कुछदिन उज्जयिनी में रहकर प्रसन्नहुआ राजाउदयन् अपने श्वशुरकीभी सेनालेकर पश्चिमदिशाके जीतनेकोचला उदयन्का खड्गमानो प्रतापरूपी अग्निका धुआथा क्योंकि उसने लाटदेशकी स्त्रियोंकेनेत्र आसुओंसे मैलेकरदीनेथे उदयन्के हाथियोंसे कपायेहुए वनमाला मदरा चलपर्व्वत इसलिये मानो कांपताथा कि ऐसा न होय कि यहराजा कहीं समुद्रमथनकेलिये मुझेउखाडे मालूमहोताहै कि यहराजाउदयन् सूर्य्यादिग्रहोंसेभी विलक्षण तेजस्वीथा क्योंकि पश्चिमदिशामें उसका औरभी अधिक उदयहुआ इसके उपरान्त अलकापुरीसेयुक्त और कैलाशरूपी हास्यवाली उत्तरदिशाको उदयन्चला वहाजाकर जैसे वानरोंकी सेनालेजाकर समुद्रपारकर श्रीरामचन्द्रजीने राक्षसोंको माराथा उसीप्रकार सिन्धुदेशके राजाकोअपनेवशीभूत करके अपनी सेनाओंसे उदयन्ने म्लेच्छोंका नाशकिया जैसे चचलसमुद्रकी लहरें किनारेके वनोंमें आकर नष्टहोजाती हैं उसीप्रकार म्लेच्छोंके घोडे उदयन् के हाथियोंमें आकर नष्टहोगये जैसे हाथमें चक्रलेकर विष्णुभगवान्ने राहुका शिरकाटडालाथा उसीप्रकार सपूर्ण राजाओंसे करलेनेवाले उदयन्ने पारसदेशके महापापी राजाका शिरकाटडाला ११० हूणदेशके जीतनेवाले उदयन्कीकीर्त्ति दिशाओंको शब्दायमान करतीहुई दूसरी गगाजीके समान हिमालयको चली उदयन्की सेनाओंके गर्जनेपर भयसे शत्रुओंके शान्तहोजानेके कारण केवलपर्व्वतोंकी गुहाओं सेही झाईशब्द सुनाई देताथा कामरूपदेशका राजाभीछत्रकी छायाको छोडकर उदयन्के आगे नम्र होकर मिला कामरूपदेशके राजाके दियेहुये हाथियोंको लेकर उदयन् लौटा वहहाथी क्याथे मानो पर्व्वतोंने छोटे २ जगम पहाडराजाको भेंटकियेथे इसप्रकार सपूर्ण पृथ्वीको जीतकर राजाउदयन् सेना समेत पद्मावती के पिता मगधराज के यहागया जैसे रात्रि के समय चन्द्रमा की उजयाली में कामका उत्सव होता है उसीप्रकार रानियों समेत राजाउदयन् के आने के समय मगध देशमें उत्सव होनेलगा पहले छिपकर आईहुई और दूसरीवार प्रकटहोके आईहुई वासवदत्ता से मगधराज बडेप्रेमपूर्व्वक मिला इसके उपरात सपूर्ण नगर निवासियों समेत मगधराजके उत्तमसत्कारको अगीकारकरके स्नेहसे सबके चित्तोंको अपने साथमें लेताहुआ और सेनाके भारसे पृथ्वीको दबाताहुआ राजा उदयन् लावाणक नाम अपने देशमें आया ११८ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायालावाणकलम्बकेपचमस्तरङ्गः ५ ॥

इसके उपरान्त सेनाके विश्राम करानेकेलिये लावाणकमेंठहरेहुए राजाउदयन्ने एकान्तमें यौगन्धरायणसेकहा कि तुम्हारीसलाहसे मैंनेपृथ्वीकेसपूर्ण राजाजीतलिये और उपायसेवशीभूतहुए वहराजा लोग अबनहींबिगडेंगे परन्तुकाशीका यहराजा ब्रह्मदत्तबडाकुटिलहै मैंजानताहू कि शायदयही अकेला फिरकुछ उपद्रवकरेगा क्योंकि कुटिलमनुष्योंपर क्या विश्वासहोसक्ताहै उदयन्केयहवचन सुनकर यौगन्धरायणनेकहा कि हेराजा अबब्रह्मदत्तआपकेसाथ कोईउपद्रवनहींकरेगा क्योंकि जब आपनेउसपर

चढाईकीथी और वहनम्रहोकर आपकेपासभेटलेकरआयाथा तब आपनेउसकाबडा सत्कारकियाहै कौन बुद्धिमान्भलाई करनेवालेकेसाथ बुराईकरेगा और जोकोईबुराईकरेभी तो उलटकर उसीकेलिये बुराईहोती है इसीविषयपरमैंतुम्हे एककथासुनाताहू ६ पद्मनामदेशमे अग्निदत्तनाम एकबडाप्रसिद्ध ब्राह्मणरहताथा राजानेउसेगावदिये थे उसीसे उसका निर्वाहहोताथा उसब्राह्मणके दोपुत्रथे बडेकानाम सोमदत्तथा और छोटेका नाम वैश्वानरदत्तथा बडाभाई बहुत मूर्ख सुन्दर तथा महादुष्टथा और छोटाभाई विद्वान् नम्र तथा सदैवविद्यापढने वालाथा अग्निदत्तके मरजानेपर उन दोनोंने विवाहकरके अपनेपिताका गाव आदिक धनआधाश्आटलिया उनमेंसे छोटेभाईका तो राजानेबडा आदरकिया और बडाभाई सोमदत्त चचलता से क्षत्रियोकेमे कर्म करनेलगाएकसमय शूद्रोंकेसाथ बैठेहुए सोमदत्तकोदेखकर उसके पिताके मित्रकिसी ब्राह्मणने कहा कि हेमूर्ख तू अग्निदत्तका पुत्र होकर शूद्रोंकेसे कर्म करताहै और राजाकेयहाअपने छोटे भाईकी ऐसी प्रतिष्ठा देखकर तुझे लज्जाभी नहीं आती१२ यहसुनकर सोमदत्तने क्रोधसे उसब्राह्मणका कुछ गौरव न मानकर एकलात उसके मारी तबलातमारनेसे क्रोधितहुआ ब्राह्मण अन्य दो तीनब्राह्मणों को गवाहकरके राजासे जाकर पुकारा राजाने ब्राह्मणके वचन सुनकर सोमदत्तके पकडनेको अपनेसि पाही भेजे उन सिपाहियोंको सोमदत्तके शस्त्रधारी मित्रोंने मारा तब राजाने बहुतसी सेना भेजकर सो मदत्तको बॅधवा मॅगवाया और क्रोधसे सोमदत्तको शूली देनेका हुक्म दे दिया शूलीपर चढाया गया सोमदत्त शूलीपर से पृथिवीपर ऐसेगिरपडा कि मानोंकिसीने उसे वहासेउठाकर पटकदिया और उसेफिर शूलीपर चढानेके लिये उद्यतहुए वधिकलोग आखोंसे अधे होगये ठीकहै जिसके लिये कुछ अच्छाहोने वाला होताहै उसका भाग्यही उसकी रक्षाकरताहै उससमय इस वृत्तान्तको सुनकर प्रसन्नहुए राजा ने सोमदत्तके छोटेभाईके कहनेसे उसेशूलीसे छुडवा दिया इसके उपरान्त मृत्युसेबचाहुआ सोमदत्तराजा के अनादरसे अपने घरके लोगोको लेकर अन्य देशमे जानेकी इच्छाकरनेलगा यहबात सुनकर उसके भाई बन्धोंने उसे परदेश जानेसे रोका तब सोमदत्त राजाके दियेहुए गावो का हिस्साछोडके वहीं रहने लगा २० इसके उपरान्त किसी अन्य रोजगारके न होनेसे वह खेती करनेके विचारसे खेतीके योग्य पृथ्वी ढूढनेकेलिये किसी अच्छे दिन वनकोगया वनमे जाकर उसे फलहोनेके योग्य बडी सुन्दर पृथ्वी मिली और उसपृथ्वीके बीचमे एकबडाभारी पीपलकावृक्ष उसको दिखाईपडा उसवृक्षकी ऐसी शीतलसघन छायाथी कि उसके नीचे सदैव वर्षाऋतुसी बनीरहतीथी उसवृक्षको देखकर बहुत प्रसन्नहुए सोमदत्तने कहा कि जोकोई देवता इसवृक्षका मालिकहै उसीका मैंभक्तहू और प्रदक्षिणा करके उसवृक्षको प्रणाम किया इसके उपरान्त मगलाचारकरके और उसवृक्षके नीचे बलिदानकरके सोमदत्त दो बैलोंको जोडकर वहीं खेती करनेलगा सोमदत्त उसीवृक्षके नीचेरहा करताथा और उसकीस्त्री वही उसको भोजनले आया करतीथी समयपाकर जब उसकासब नाज पकआया तब किसी अन्यदेशके राजाने आकर उसपृथ्वीको उजाडदिया फिर राजाकी सेनाके चलेजानेपर और नाजके नष्ट होजानेपर रोतीहुई अपनी स्त्रीको धीर सोमदत्तने समझाकर जो कुछ नाज बचाथा सोसब देदिया और पहलेके समान बलिदानकरके उसीवृक्ष

के नीचेरहा ठीकहै ऐसाही कहाहै (निसर्ग सहधीराणा पद्यापद्यधिक दृढा) (आपत्तियों में अधिक दृढहोना धीरोंका स्वभावहै) ३१ इसके उपरात रात्रिके समय उसी वृक्षके नीचे अकेले बैठेहुए और चिन्तासे जागतेहुए सोमदत्तको उसीवृक्षपरसे यह वचन सुनाईपडे कि हेसोमदत्त तुम्हारेऊपर मै प्रसन्नहू तो तुम श्रीकंठदेशमे आदित्यप्रभनाम राजाके राज्यमें जाओ वहाजाकर राजाके द्वारपर सध्या और अग्निहोत्रके मन्त्रोंको पढकर यहवचन कहना कि मै फलभूति नाम ब्राह्मणहू जो कुछ मै कहताहूं वह सुनो (भद्रकृत्प्राप्नुयाद्भद्रमभद्रचाप्य भद्रकृत्) (नेकी करनेवालोंको नेकी और वदी करनेवालेको वदी मिलती है) ऐसा कहनेसे वहा तुमको वडा ऐश्वर्य्य मिलैगा सध्या तथा अग्निहोत्रके मन्त्र तुममुझीसे अभी पढलो मै एक यक्षहू यहकहकर अपने प्रभावसे सोमदत्तको वह मन्त्रपढाकर उसवृक्ष से वह वाणी निवृत्त होगई प्रात काल सोमदत्त यक्षके कहनेसे अपना फलभूतिनाम रखकर स्त्रीसमेत वहासे चला मार्गमें विषम और टेढे वेढेवनोंको दुर्दशाओं के समान ,उल्लघनकरके वह श्रीकण्ठ देशमे पहुचा वहा जाकर सध्या तथा अग्निहोत्रके मन्त्रपढकर राजाके द्वारपर अपना फलभूतिनाम कहकर (भद्रकृत्प्राप्नुयाद्भद्रमभद्र चाप्यभद्रकृत्) यहवचन कहनेलगा यहवचन सुनकर लोगोंको वडा आश्चर्य्य हुआ और वारवार यही वचन कहतेहुए फलभूतिको जानकर राजा आदित्यप्रभने वडेआश्चर्य्य से बुलाया वहाँजाकर भी वह वारवार राजाके साम्हनेवही वचन कहनेलगा यहसुनकर राजा अपनी समाज समेत हँसनेलगा और राजाने प्रसन्नहोके उसेवस्त्र आभूषणों समेत कुछगावदिये ठीकहै (नतोषोमहतामृषा) (वडेलोगों की प्रसन्नता व्यर्थनहीं होती है) इसप्रकारसे उससमय यक्षके अनुग्रहसे दुर्वल फलभूतिको राजाका दिया हुआ वहुतसा धनमिला ४५ सदैव यहीवचन कहताहुआ फलभूति राजाका वडा प्रियहोगया क्योंकि राजालोगोंका चित्तऐसी २ आनन्दकी वातोंका अत्यन्त रसिकहोता है क्रमसे राजाके यहा महलों में और सपूर्ण राज्यभरमें उसफलभूतिका वडाआदर इसलिये होनेलगा कि यह राजाका परममित्रहै एक समय वनसे शिकार खेलकर आयाहुआ राजा आदित्यप्रभ अपने महलमेंगया और द्वारपालकों को घवरानेसे सन्देहयुक्त राजाने भीतर जाकर देखा कि रानीकुवलयावती नग्नवाल खोलेहुए नेत्रोंकोवन्द कियेहुए सिंदूरका वडातिलक लगायेहुए जपकरतीहुई विचित्ररगोंसे वनीहुई चौकमें वैठीहुई और रुधिर मद्यतथा माससे उग्रवलिदान करतीहुई किसी देवताका पूजनकररहीथी राजाके आनेपर घवराके रानीने वस्त्रपहनलिये और राजाके पूछनेपर अभयमागकर रानीवोली कि आपही के उदयके वास्ते मै यह पूजनकर रहीथी इसविषयमें शास्त्रका वृत्तान्त और अपनी सिद्धि आपको सुनातीहू ५३ पहले मै अपने पिताके यहा जवकन्याथी तववसन्तके उत्सवमें मेरीसखियोंने वगीचेमें मुझसे कहा कि इसवगीचे में वृक्षोंके मडलके नीचमें देवताओंके भी देवता वरदायक गणेशजी रहतेहै उनका प्रभावहम लोगोंने देखाहै उनवरदायक गणेशजी का जोतुम भक्तिपूर्व्वक पूजनकरो तोतुम्हें शीघ्रही निर्विघ्ननामे योग्य पतिमिलजाय यहसुनकर मैनेभोलेपन मे अपनी सखियों मे पूछा क्यागणेशजीके पूजनमे कन्याओं को पतिमिलते हैं तव वहवोलीं कि तुम इसनीति वातक्या कहतीहो इससमार में गणेशजी के पूजनके

विना मनुष्यको कोईभी सिद्धिनहीं मिलसक्ती है सुनोहमतुम्हारे आगे गणेशजीका प्रभाव वर्णनकरती हैं यहकहकर वह सखिया यहकथा कहनेलगीं ५६ पूर्वकाल मे जिससमय तारकासुरसे हारेहुए इन्द्रश्री शिवजीके पुत्रको अपना सेनापति वनायाचाहते थे और श्रीशिवजीकी दृष्टिसे कामदेव भस्महोगया था उससमय वडातपकरनेवाले ऊर्ध्वरेता महादेवजीको पार्वतीजीने वडाघोर तपकरके प्रसन्न किया था और प्रसन्नकरके उन्हींके साथ अपना विवाहकियाथा विवाहके उपरान्त पार्वतीजीने श्री महादेवजीसे यहचाहा किमेरे एकपुत्रहोय और कामदेव फिरजीआवे परन्तु पार्वतीजीने अपने कार्य्य के सिद्धहोने केलिये विघ्नराज गणेशजीका स्मरणनहीं कियाथा इसके उपरान्त इसमनोरथके मागनेवाली पार्वती जीसे श्रीशिवजीने कहा कि हे प्रिये पहले ब्रह्माके मनसे कामदेव उत्पन्नहुआथा और उसने उत्पन्नहोते हीं अहकारसे यहवातकही कि (कदर्पयामि) (किसको दलनकरू) तब ब्रह्माने उसकानाम कदर्प रखदिया और कहा कि हेपुत्र जोतुम बडे अभिमानी हो तो केवलतुम श्रीशिवजी के चित्तके विगाडने का कभी उद्योगनकरना नहीं तो तुम्हारी मृत्युहोजायगी ब्रह्माजी के इसकहनेपरभी वह मूर्ख मेरे चित्त विगाडने को आया तवमैंने उसे भस्मकरदिया इसकारणसे अवयह सदेह उत्पन्न नहीं होसक्ता और मैं तुम्हारे अपनी शक्तिसे पुत्रउत्पन्न करूगा क्योकि ससारीजीवोंके समान मेरे कामके उत्साहसे पुत्रनहीं होता ६७ पार्वतीसे महादेवजी के इसवचनको कहतेही इन्द्रसमेत ब्रह्मावहा आकर प्रकटहुए और स्तुति करके ब्रह्माने तारकासुरके मारनेकी प्रार्थनाकी तवशिवजीने पार्वतीजीमें अपना औरसपुत्र उत्पन्न करना स्वीकारकिया और ब्रह्माके कहनेसे सृष्टिके नाशहोनेकी रक्षाके लिये लोगोके चित्तमे कामदेव का उत्पन्न होना स्वीकारकिया और अपने भी चित्तमे महादेवजीने कामको अवकाशदिया इसबातसे प्रसन्नहोकर ब्रह्माजी चलेगये और पार्वतीजी भी प्रसन्नहोगई इसके पीछे बहुतकाल व्यतीत होजाने पर एकसमय एकान्त में श्रीशिवजी पार्वतीजी से रतिकरनेलगे जब सैकडोवर्ष के व्यतीत होजानेपर भी उनकी रतिनहीं समाप्तहुई तब भयसे तीनोंलोक कापनेलगे उससमय ससारके नाशहोजाने के भयसे सम्पूर्ण देवतालोग ब्रह्माकी आज्ञासे श्रीशिवजी की रतिमे विघ्न करनेकेलिये अग्निका स्मरण करने लगे स्मरण करतेही अग्नि श्रीशिवजी को अधृष्य (दवानेके अयोग्य) समझकर देवतालोगों से भागकर जलमें छिपगये तब ढूढतेहुए देवतालोगो को मेढको ने जल में छिपेहुए अग्नि देवताको वतादिया क्योंकि वह उनके तेजसे जलेजाते थे तब मेढको को यहशापदेकर कि तुम लोगों के वचन प्रकटनहीं होगे अग्नि देवता मन्दराचल पर्व्वतपर चलेगये वहा किसी वृक्षके खोखले में घोंघे का स्वरूपरखकर बैठेहुए अग्निदेवको हाथी और तोतों ने देवतालोगों को वतादिया तब अग्नि ने देवता लोगोंको दर्शनदिये और शापसे हाथी तथा तोतोंकी जिह्वा विपरीतकरदी फिर देवतालोगों के स्तुति करनेपर उनकेकार्य्यको स्वीकारकरके अग्निदेवने कैलाशपर जाके अपनी गरमीसे श्रीशिवजीकी रति से वन्दकरादिया और शापके भयसे प्रणामकरके देवतालोगों का कार्य्य श्री शिवजी से कहदिया तब महादेवजीने अपना वीर्य्य अग्निमें छोडदिया उसवीर्य्यको न अग्नि धारणकरसके न पार्वतीजी धारण

करसकीं तब पार्वतीजीने खेदसे व्याकुलहोकर महादेवजीसे कहा कि आपसे मुझको पुत्रकी प्राप्तिनहीं हुई यहसुनकर श्रीशिवजी बोले कि तुमने विघ्नराज गणेशजीका पूजननहीं कियाथा इसीसे तुम्हारेगर्भ में विघ्नहोगया अब तुमगणेशजीका पूजनकरो तो अग्निमें पडेहुए वीर्य्यसे पुत्रहोजाय महादेवजी के यहकहनेसे पार्वतीजीने गणेशजीका पूजनकिया तब महादेवजी के वीर्य्य से अग्निकेभी गर्भरहा ८४ शिवजीके तेजको धारणकरतेहुए अग्निदेवकी दिनमेंभी ऐसी शोभाहोतीथी कि मानों इससमयमेंभी सूर्य्यने अग्निमें प्रवेशकियाहै अग्निने शिवजी के महाइस्सह तेजको गंगाजी में वमनकरदिया और गंगाने शिवजीकी आज्ञासे सुमेरुपर्व्वतपर अग्निकुण्डमें उसेछोडदिया वहांमहादेवजीके गणोंसे रक्षा कियाहुआ वहगर्भ हजारवर्ष के उपरान्त छः मुखका कुमारहोकर उसकुण्डमें से निकला इसके उपरान्त पार्वतीजीकी भेजीहुई छः कृत्तिकाओंके स्तनोंके दुग्धको अपनेछओं मुखसे पानकरके थोडेही दिनोंमें वहबालक बडाहोगया इसी बीचमें ताडकासुरसे हारेहुए इन्द्र युद्धछोडकर दुर्गम सुमेरुपर्व्वतके शिखरों पर आरूढ रहनेलगे और ऋषियोंसमेत सम्पूर्ण देवतालोग इन्हीं स्वामिकार्त्तिकजीकी शरणमें आये जब स्वामिकार्त्तिकने उनकीरक्षाकी तबसब उन्हींके पास उन्हेंघेरकर रहनेलगे यहबात जानकर इन्द्रनेसमझा कि अब तो यहहमारा राज्यही छीनलेंगे यहसमझकर क्रोधसे इन्द्र स्वामिकार्त्तिक के पासजाकर उनसे लडनेलगे इन्द्रकेवज्रके लगनेसे स्वामिकार्त्तिकके शरीरसे शाख और विशाखनाम महातेजस्वी दोपुत्र उत्पन्नहुए तब पुत्रोंसमेत स्वामिकार्त्तिकने इन्द्रकोजीतलिया यहबातजानकर श्रीशिवजी ने वहांआके स्वामिकार्त्तिकको युद्धसे निवृत्तकरके यहशिक्षाकी कि तुमताडकासुरके मारनेको और इन्द्रके राज्यकी रक्षाकरनेको उत्पन्नहुएहो इससेअपने कार्य्यकोकरो ६४ इसकेउपरान्त प्रसन्नहुए इन्द्रने उससमय स्वामिकार्त्तिकको अपनी सेनाकासेनापति बनानेकेलिये अभिषेककरनेका प्रारम्भकिया जिससमय इन्द्रने अपने हाथसे अभिषेककरनेके निमित्त जलकाकलश उठाया उससमय उनकीभुजा स्तम्भ (जकडगई) होगई इससेइन्द्रको बडा क्लेशहुआ तब श्रीशिवजी ने इन्द्रसे कहा कि तुमने सेनापति बनाने के समय गणेशजीका पूजननहीं किया इसीसे यहविघ्नहुआहै अब तुम गणेशजीका पूजनकरो यहसुनकर इन्द्र ने गणेशजीका पूजनकिया और पूजनकरतेही इन्द्रकी भुजा अच्छीहोगई और उन्होंने अच्छेप्रकारसे अपने सेनापति का अभिषेक किया इसके उपरान्त शीघ्रही ताडकासुरको युद्ध करके मारडाला तब सम्पूर्ण देवता बडे प्रसन्नहुए और श्रीपार्व्वतीजी को भी ऐसा वीर पुत्र प्राप्तहोने से बडी प्रसन्नताहुई इसप्रकारसे हे राजकन्या देवतालोगों को भी गणेशजी के पूजन बिना कोई सिद्धिनहीं होती इससे तुम योग्य पति के मिलने के अर्थ गणेशजी का पूजन करो १०० सखियों के यहवचन सुनकर मैंने बगीचे के एकान्त स्थान में रहनेवाले विघ्नहर्त्ता श्रीगणेशजी का पूजन किया पूजन के उपरान्त मैंने देखा कि अकस्मात् मेरी सखिया अपनी सिद्धि से उडकर आकाश में विहारकररहीहै यह देखकर मैंने उनको आकाशसेबुलाकर पूछा कि तुमको यह सिद्धिकैसेहुई तब वह बोली कि मनुष्यकेमासको खानेसे डाकिनीके मन्त्रकोजपकर यह सिद्धियांहोती है इसमन्त्रकी उपदेशकरनेवाली एक कालरात्रि

विना मनुष्यको कोईभी सिद्धिनहीं मिलसक्ती है सुनोहमतुम्हारे आगे गणेशजीका प्रभाव वर्णनकरती हैं यहकहकर वह सखिया यहकथा कहनेलगीं ५६ पूर्वकाल में जिससमय तारकासुरसे हारेहुए इन्द्रश्री शिवजीके पुत्रको अपना सेनापति वनायाचाहते थे और श्रीशिवजीकी दृष्टिसे कामदेव भस्महोगया था उससमय वडातपकरनेवाले ऊर्ध्वरेता महादेवजीको पार्वतीजीने वडाघोर तपकरके प्रसन्न किया था और प्रसन्नकरके उन्हींके साथ अपना विवाहकियाथा विवाहके उपरान्त पार्वतीजीने श्री महादेवजीसे यहचाहा किमेरे एकपुत्रहोय और कामदेव फिरजीआवे परन्तु पार्वतीजीने अपने कार्य्य के सिद्धहोने केलिये विघ्नराज गणेशजीका स्मरणनहीं कियाथा इसके उपरान्त इसमनोरथके मागनेवाली पार्वती जीसे श्रीशिवजीने कहा कि हे प्रिये पहले ब्रह्माके मनसे कामदेव उत्पन्नहुआथा और उसने उत्पन्नहोते ही अहंकारसे यहबातकही कि (कदर्पयामि) (किसको दलनकरूं) तब ब्रह्माने उसकानाम कदर्प रखदिया और कहा कि हेपुत्र जोतुम वडे अभिमानी हो तो केवलतुम श्रीशिवजी के चित्तके बिगाडने का कभी उद्योगनकरना नहीं तो तुम्हारी मृत्युहोजायगी ब्रह्माजी के इसकहनेपरभी वह मूर्ख मेरे चित्त बिगाडने को आया तवमैंने उसे भस्मकरदिया इसकारणसे अववह सदेह उत्पन्न नही होसक्ता और मैं तुम्हारे अपनी शक्तिसे पुत्रउत्पन्न करूंगा क्योंकि ससारिजीवोंके समान मेरे कामके उत्साहसे पुत्रनहीं होता ६७ पार्वतीसे महादेवजी के इसवचनको कहतेही इन्द्रसमेत ब्रह्मावहा आकर प्रकटहुए और स्तुति करके ब्रह्माने तारकासुरके मारनेकी प्रार्थनाकी तवशिवजीने पार्वतीजीमें अपना औरसपुत्र उत्पन्न करना स्वीकारकिया और ब्रह्माके कहनेसे सृष्टिके नाशहोनेकी रक्षाके लिये लोगोंके चित्तमे कामदेव का उत्पन्न होना स्वीकारकिया और अपने भी चित्तमे महादेवजीने कामको अवकाशदिया इसवातसे प्रसन्नहोकर ब्रह्माजी चलेगये और पार्वतीजी भी प्रसन्नहोगई इसके पीछे वहुतकाल व्यतीत होजाने पर एकसमय एकान्त में श्रीशिवजी पार्वतीजी से रतिकरनेलगे जब सैकडोंवर्ष के व्यतीत होजानेपर भी उनकी रतिनहीं समाप्तहुई तव भयसे तीनोलोक कांपनेलगे उससमय ससारके नाशहोजाने के भयसे सम्पूर्ण देवतालोग ब्रह्माकी आज्ञासे श्रीशिवजी की रतिमें विघ्न करनेकेलिये अग्निका स्मरण करने लगे स्मरण करतेही अग्नि श्रीशिवजी को अधृष्य (दवानेके अयोग्य) समझकर देवतालोगों से भागकर जलमें छिपगये तव ढूंढतेहुए देवतालोगों को मेढकोंने जल मे छिपेहुए अग्नि देवताको वतादिया क्योंकि वह उनके तेजसे जलेजाते थे तव मेढकों को यहशापदेकर कि तुम लोगोंके वचन प्रकटनहीं होंगे अग्नि देवता मन्दराचल पर्व्वतपर चलेगये वहा किसी वृक्षके खोखले में घोंघे का स्वरूपरखकर वैठेहुए अग्निदेवको हाथी और तोतों ने देवतालोगों को वतादिया तव अग्नि ने देवता लोगोंको दर्शनदिये और शापसे हाथी तथा तोतोंकी जिह्वा विपरीतकरदी फिर देवतालोगों के स्तुति करनेपर उनकेकार्य्यको स्वीकारकरके अग्निदेवने कैलाशपर जाके अपनी गरमीसे श्रीशिवजीको रति से वन्दकरदिया और शापके भयसे प्रणामकरके देवतालोगों का कार्य्य श्री शिवजी से कहदिया तव महादेवजीने अपना वीर्य्य अग्निमें छोडदिया उसवीर्य्यको न अग्नि धारणकरसके न पार्वतीजी धारण

क रजोगुणवाले पुरुषोंके चित्तको विगाडदेती है क्योंकि वृद्ध तथा विद्वान्भी उपाध्यायने विनाविचारेअत्यत क्रोधपूर्वक इतनाविरोध मुझसेकिया १२८ अथवा सृष्टिकीआदिसेही विद्वान् ब्राह्मणोंके भी काम और क्रोधमोक्षके द्वारके स्वाभाविकरोकनेवालेवेलनहैं देखोपहले भी देवदारु वनमें अपनी स्त्रियोंके विगडने के सन्देहसे मुनिलोग क्या शिवजीपर क्रुद्धनहींहुएहें और उन ऋषिलोगोंने चपणक (यती) का रूपधरके पार्वतीजीकोऋपियोंकाभी शान्त न होनादिखानेहुए महादेवजीको नहींजानाफिर शापदेनेपर तीनोलोकोंके नाशकरनेवाले महादेवजीको पहचानकर उन्हींकी शरणमें गये तो इसप्रकारसे कामक्रोधादि छ शत्रुओंके द्वारा मुनिलोगभी मोहितहोजाते हैं तो वेदपाठी ब्राह्मणोंका क्या कहनाहै रात्रिके समय इसप्रकार ध्यानकरताहुआ वहसुन्दरक चोरोंकेभयसेशून्य गोवाटनाम महलमें चढकरबैठरहा जब तक कि वहउसमहलमें छिपकरकही बैठनेहीकोथा तबतक उसीमहलमें वहकालरात्रि चक्रकोहाथमेंलिये हुए भयकर फूत्कारोंको छोडतीहुई नेत्रतथा मुखमे अग्निकी लपटें निकालतीहुई और बहुतसी डाकनियोंको अपने साथमें लियेहुए आई उसप्रकारसे आईहुई कालरात्रिको देखकर सुन्दरकने भयसे राक्षसोंके नाशकरनेवाले मत्रोंका स्मरणकिया उनमत्रोंसे मोहितहुई कालरात्रिने एकान्तमें भयसे अगोंकोसकोडेहुए बैठेहुए सुन्दरकको नहींदेखा इसके उपरान्त कालरात्रि उडनेके मत्रकोजपकर महलसमेत आकाशमें उडगई सुन्दरकने वहमत्रसुनकर यादकरलिया और कालरात्रि उसमहल समेत शीघ्रही उज्जयिनीको चलीगई १४१ उज्जयिनी मे जाकर शाकवाट (शाककी मडी) में उसमहलको मत्रके द्वाराउतारकर कालरात्रि डाकिनियो समेत श्मशान भूमिमें क्रीडा करनेचली लगी और उससमय क्षुधा से व्याकुल सुन्दरकने महलसे शाकवाटमे जाकर उखाडी हुई मूलीखाई और मूलियोंके द्वारा अपनी क्षुधाको निवृत्तकरके वह गोवाटमें जाके उसीप्रकारसे बैठरहा इसके उपरान्त कालरात्रि उसश्मशानसे लौटी और उसीगोपाटपर चढके मंत्रोकेद्वारा आकाशमार्ग में उडी और अपने यहाँ आकर गोवाटको जहाँसे लियाथा वहीं रखकर और उनडाकिनियोंको विदाकरके शयनके स्थानमें चलीगई सुन्दरकभी आश्चर्य्य पूर्वक उसरात्रिको व्यतीत करके प्रात काल गोवाटसे उठकर अपने मित्रोंके पासचलागया वहाँ अपने मित्रोंसे सपूर्ण वृत्तान्तकहकर विदेशजानेकी इच्छा करनेलगा तबमित्रोंने समझाकर उसे अपनेही पासरक्खा उपाध्यायके घरको छोडकर यज्ञगृहमे भोजन करताहुआ सुन्दरक अपने मित्रोंके साथ विहारकरताहुआ स्वच्छन्द रहनेलगा १४९ एकसमय घरकेलिये किसी चीजके खरीदनेके लिये बजारमेंगईहुई कालरात्रिने सुन्दरकको देखा उससमयभी वहकामसे पीडितहोकर उससेबोलीकि हे सुन्दरक तू अबभी मेरेसाथ भोगकर क्योंकि मेरेप्राण तेरेही आधीनहैं उसके यहवचन सुनकर उससाधु सुन्दरकनेकहा कि तुमऐसा मतकहो मेरायह धर्मनहींहै क्योंकि तुमगुरुपत्नी होनेसे मेरीमाताके समान हो तबकालरात्रि बोली कि जो तुमधर्मको जानतेहो तोमेरेप्राण रक्खो क्योंकि प्राणदानमे बढकर कोई धर्मनहीं है यहसुनकर सुन्दरकने कहा हेमाता ऐसाविचार अपने हृदयमें कभीमतकरो भलागुरुकी स्त्री केसाथ भोगकरना भी कहीं धर्म होसक्ताहै इसप्रकार सुन्दरकसे निषेधकीहुई क्रोधसे सुन्दरकको डराती

नाम ब्राह्मणी हमारी गुरूहै सखियो के यह वचनसुनकर आकाश मे चलनेकी सिद्धिके लोभसे और मनुष्यकेमासके खानेकेभयसे मै क्षणभर बहुत सन्देहयुक्तरही फिर सिद्धिके लोभसे मैंने अपनी सखियों सेकहा कि उस मन्त्रका उपदेश मुझेभी दिलवादो मेरे यह कहने से सखियां उसीसमय वडे भयङ्कररूप वाली कालरात्रिको वहींबुलालाईं मिलीहुई भृकुटीवाली ढीडयुक्तनेत्रवाली टेढी और चपटी नाकवाली स्थूलकपोलवाली भयकरओष्ठवाली वडे २ दातवाली वडीलम्बी गर्दनवाली लम्बेस्तनवाली बडेउदर वाली और फटेहुए तथा फूलेहुए पैरवाली उस कालरात्रिको देखकर यह मालूमहोताथा कि मानों ब्रह्माने बुरीचेष्टाबनानेकी सम्पूर्णचतुरता इसी मे खतमकरदीनी है १०६ उसे आईदेखकर मै उसके पैरों में गिरी तब उसने स्नानकरवाके मुझसे प्रथमतो गणेशजीका पूजनकरवाया और वस्त्र उतरवाके मडलके भीतर मुझेलेजाकर भैरवजीका पूजनकरवाया इसकेउपरान्त मेरा अभिषेककरके उसने अपने मन्त्रोका उपदेश मुझेकरदिया और पूजनमे वलिदानकियाहुआ मनुष्यकामास मुझेखानेको दिया मन्त्रोंकोलेकर और मनुष्यके मासकोखाकर उसीसमय मै नग्नही अपनी सखियो समेत आकाशमे उडगई फिर वहा थोडी देरतक विहारकरके अपनी गुरानीकीआज्ञासे उतरकर मै अपने महलमें चलीगई हे राजा इसप्रकार से मैं बालावस्थामे भी डाकिनियो के साथरहाकरतीथी उससमय हमने मिल २ कर बहुतसे मनुष्य खायेथे हे महाराज इसीकथाके बीचमें मै आपको एक दूसरी कथासुनातीहूं कि उस कालरात्रिनाम ब्राह्मणीका विष्णु स्वामीनाम पतिथा वह उसदेशभरमे वेदविद्याका वडाजाननेवालाथा इससे अनेक देशो से आये हुए विद्यार्थियोंको पढायाकरताथा सम्पूर्णशिष्यों मे से एक सुन्दरकनाम तरुणशिष्य बडारूपवान् तथा शीलवान्था एकसमय विष्णुस्वामी के कहींचलेजानेपर कालरात्रिने कामसे व्याकुलहोकर एकान्तमे सुन्दरकसे अपनेसाथ भोगकरनेकोकहा कामदेव मानों बुरेरूपवालोको हँसीका खिलौनाबनाकर उनके साथखेलताथा क्योकि कालरात्रिने अपने स्वरूपको विना देखे सुन्दरककेसाथ भोगकरनेकी इच्छाकी ११९ सुन्दरकने कालरात्रिके बहुत हठकरनेपर भी ऐसे बुरेकामकरनेकी इच्छानहींकी ठीकहै स्त्रियाचाहे जैसी बुरीचेष्टाकरें परन्तु सज्जनपुरुषोंका चित्तकभी नहींडुलता इसके उपरान्त सुन्दरकके चलेजानेपर कालरात्रिने क्रोधितहोकर दातों से और नखों से अपना सम्पूर्ण अगघायलकरडाला और बालों को तथा वस्त्रोंको फैलायेहुएरोतीहुई तबतक बैठीरही जबतक कि विष्णुस्वामी घरकोआये जब वह घरमेंआये तो उनसे बोली कि हे स्वामी आज सुन्दरकने जबरदस्ती से मेरी क्या दशाकी है यह सुनकर उससमय उपाध्यायको वडाक्रोधहुआ ठीकहै (अत्ययस्त्रीपुमण्णाति विमर्षविदुषामपि) (स्त्रियोंपर विश्वासकरनेसे विद्वान्लोगोका भी विचारनष्टहोजाताहै) सायकालकेसमय जब सुन्दरकआया तब विष्णुस्वामीने अपने शिष्योंसमेत दौडकरघूसोंसे लातोंसे और लाठियोंसे उसे खूबपीटा जब मारते २ वह बेहोशहोगया तब रात्रिकेसमय उसकोवेपरवाईसे अपनेशिष्यों के हाथों से पकडवाके बाहरसडकपर डलवादिया इसके उपरान्त उससमयकी वायुके लगनेसे सुन्दरक धीरे२ होशमेआगया और अपनी यहदशादेखकर विचारनेलगा कि अरे जैसे बहुततेजवायु बालूयुक्त तड़ागोंको गदलाकरदेतीहै उसीप्रकारस्त्रियोंकी प्रेरणा अधि-

क रजोगुणवाले पुरुषोंके चित्तको विगाडदेती है क्योंकि वृद्ध तथा विद्वान्भी उपाध्यायने विनाविचारेअत्यत क्रोधपूर्व्वक इतनाविरोध मुझसेकिया १२६ अथवा सृष्टिकीआदिसेही विद्वान् ब्राह्मणोंके भी काम और क्रोधमोक्षके द्वारके स्वाभाविकरोकनेवालेवेलनहैं देखोपहले भी देवदारुवनमें अपनी स्त्रियों के विगडने के सन्देहसे मुनिलोग क्या शिवजीपर क्रुद्धनहींहुएहैं और उन ऋषिलोगोंने चपणक (यती) का रूपधरके पार्वतीजीकोऋषियोंकाभी शान्त न होनादिखानेहुए महादेवजीको नहींजानाफिर शापदेनेपर तीनोंलोकोंके नाश करनेवाले महादेवजी को पहचानकर उन्हींकी शरणमें गये तो इसप्रकारसे कामक्रोधादि छ शत्रुओंके द्वारा मुनिलोगभी मोहितहोजाते हैं तो वेदपाठी ब्राह्मणोंका क्या कहनाहै रात्रिके समय इसप्रकार ध्यानकरताहुआ वहसुन्दरक चोरोंकेभयसेशून्य गोवाटनाम महलमे चढकरवैठरहा जव तक कि वहउसमहलमे छिपकरकही वैठनेहीकोथा तवतक उसीमहलमें वहकालरात्रि चक्रकोहाथमेंलिये हुए भयकर फूत्कारोंको छोडतीहुई नेत्रतथा मुखमे अग्निकी लपटें निकालतीहुई और वहुतसी डाकनियोंको अपने साथमें लियेहुए आई उसप्रकारसे आईहुई कालरात्रिको देखकर सुन्दरकने भयसे राक्षसोंके नाशकरनेवाले मन्त्रोंका स्मरणकिया उनमन्त्रोंसे मोहितहुई कालरात्रिने एकान्तमें भयसे अगोंकोसकोडेहुए वैठेहुए सुन्दरकको नहींदेखा इसके उपरान्त कालरात्रि उडनेके मन्त्रकोजपकर महलसमेत आकाशमें उडगई सुन्दरकने वहमंत्रसुनकर यादकरलिया और कालरात्रि उसमहल समेत शीघ्रही उज्जयिनीको चलीगई १४१ उज्जयिनी मे जाकर शाकवाट (शाककी मडी) में उसमहलको मन्त्रके द्वाराउतारकर कालरात्रि डाकिनियों समेत श्मशान भूमिमें क्रीडा करनेचली लगी और उससमय क्षुधा से व्याकुल सुन्दरकने महलसे शाकवाटमे जाकर उखाडी हुई मूलीखाई और मूलियोंके द्वारा अपनी क्षुधाको निवृत्तकरके वह गोवाटमें जाके उसीप्रकारसे वैठरहा इसके उपरान्त कालरात्रि उसश्मशानसे लौटी और उसीगोवाटपर चढके मन्त्रोंकेद्वारा आकाशमार्ग मे उडी और अपने यहाँ आकर गोवाटको जहाँसे लियाथा वहीं रखकर और उनडाकिनियोंको विदाकरके शयनके स्थानमें चलीगई सुन्दरकभी आश्चर्य्य पूर्व्वक उसरात्रिको व्यतीत करके प्रात काल गोवाटसे उठकर अपने मित्रोंके पासचलागया वहाँ अपने मित्रोंसे सपूर्ण वृत्तान्तकहकर विदेशजानेकी इच्छा करनेलगा तवमित्रोंने समझाकर उसे अपनेही पासरक्खा उपाध्यायके घरको छोडकर यज्ञगृहमें भोजन करताहुआ सुन्दरक अपने मित्रोंके साथ विहारकरताहुआ स्वच्छन्द रहनेलगा १४६ एकसमय घरकेलिये किसी चीजके खरीदनेके लिये वजारमेंगईहुई कालरात्रिने सुन्दरकको देखा उससमयभी वहकामसे पीडितहोकर उसमेवोलीकि हे सुन्दरक तू अवभी मेरेसाथ भोगकर क्योंकि मेरेप्राण तेरेही आधीनहैं उसके यहवचन सुनकर उससाधु सुन्दरकनेकहा कि तुमऐसा मतकहो मेरायह धर्मनहींहै क्योंकि तुमगुरुपत्नी होनेसे मेरीमाताके समान हो तवकालरात्रि वोली कि जो तुमधर्मको जानतेहो तोमेरेप्राण रक्खो क्योंकि प्राणदानमे वढकर कोई धर्मनहीं है यहसुनकर सुन्दरकने कहा हेमाता ऐसाविचार अपने हृदयमें कभीमतकरो भलागुरुकी स्त्री केसाथ भोगकरना भी कहीं धर्म होसकाहै इसप्रकार सुन्दरकमे निषेधकीहुई क्रोधसे सुन्दरकको छाती

हुई कालरात्रि अपनेही हाथसे अपने वस्त्रफाडकर घरमे आई और घरमें अपने पतिको अपनावस्त्र दिखाकरबोली कि देखोआज सुन्दरकने दौडकर मेरावस्त्र फाडडाला यहसुनकर उसकेपतिने यज्ञशालामें जाकर यहकहकर कि यहसुन्दरक भोजनकेदेने योग्यनहींहै वल्किमारनेके योग्यहै उसका भोजन बन्द करवादिया इसके उपरान्त सुन्दरक बडे खेदसे परदेश जानेकेलिये फिर उद्यत हुआ और गोवाटनाम महलमें सीखाहुआ आकाशमे उडनेका मन्त्रतो उसेयादहीथा परन्तु उतरनेकामन्त्र कुछभूलगयाथा उसी को सीखनेकेलिये वहउसी शून्यगोवाटमे फिरजाकर पहलेहीके समानबैठा तवकालरात्रि वहाँआकरमहलसमेत उडकर उज्जयिनीको चलीगई उज्जयिनीमे गोवाटको मन्त्रकेद्वारा शाकवाटमें उतारकर क्रीडा करनेकेलिये श्मशानकोचलीगई १६१ सुन्दरकने उसमन्त्रको दूसरीवारभी सुनकर नहींयादकिया क्योंकि गुरूकी आज्ञाकेविना सपूर्ण सिद्धिनहीं होसक्ती इसकेउपरात सुन्दरकने कुछमूलीखाई और कुछ मूलीघर लानेकेलिये गोवाटमे उठाकररखली और वहींछिपकर बैठरहा तवकालरात्रि वहाँआकर गोवाटसमेतउडी और गोवाटको उसके ठीकस्थानमें रखकर अपने घरकोचलीगई प्रात काल सुन्दरकभी गोवाटसे निकलकर उनमूलियोंको बाजारमें इसलिये वेचनेकोचला कि इनको बेचकर जोकुछ धनमिलेउससे भोजनको लाऊ उसेमूली वेचतेहुए देखकर मालवदेशके राजसेवकोंने विना मूल्यदियेही अपने देशकी उत्पन्नहुई मूलिया उससे छीनलीनी जबवह उनसे लडनेलगा तो वहउसे बाँधकर राजाके यहाँ लेगये और उसके मित्रभी उसके पीछे २ उसकेसाथचलेगये वहाँजाकर उनमालवदेशवालोंनेराजासे कहा कि हे राजा हम लोगइससेपूछतेहैं कि तूमालवदेशसे मूलीलाकर कान्यकुब्जदेशमें सदैव कैसेवेचाकरताहै इसकाउत्तरतो यहकुछनहीं देताहै परन्तुढेलेमारताहै यहअद्भुत वातसुनकर राजानेउससे पूछाकि यहकैसीवातहै तब उसके मित्रबोले कि हेराजा जो हमलोगोसमेत इसेमहलपरचढाइये तो यहसववातकहैगा नहींतो नहींकहैगा १७० राजाने उसीसमय उसको मित्रोसमेत महलपरचढा दिया तवसुन्दरक महलसमेत राजाके देखतेही देखते आकाशमें उडगया सुन्दरक अपनेमित्रोसमेत धीरे २ प्रयागपहुँचा और वहाथककर उसनेकिसी राजाको गगास्नानकरतेहुये देखा वहामकानको आकाशमेही रोककर वहगंगाजीमे कूदपडालोगोंको उसके देखनेसे बडाआश्चर्य्य हुआ और वहउसी स्नानकरनेवाले राजाकेपासचलागया राजानेप्रणाम करके उससेपूछा कि तुमकौनहो और किसलिये आकाशसेउतरेहो तवउसनेकहा किमैं मुरजकनामम हादेवजीका गणहू मनुष्योंकेसे भोगकरनेको मै महादेवजीकी आज्ञासे तुम्हारेपास आयाहू यहसुनकर उसकेवचन सत्यजानकर राजाने सपूर्णअन्नोसे युक्त रत्नोंसेपूर्ण एकपुरस्त्री तथाराज्यके सवअगोंसमेत उसेदेदिया वहउसपुरमें जाकर पुरसमेत आकाशमें उडगया और अपनेसाथियोसमेत अपनीइच्छासे निहारकरनेलगा सुवर्णके पलँगपरसोताहुआ चामरोंसे मोरछलक्रियाहुआ और श्रेष्ठस्त्रियोसे भोगकिया हुआ सुन्दरक आकाशहीमें इन्द्रकेसेसुख भोगनेलगा १७८ एकसमय कोईसिद्ध आकाशमार्गसेचला जाताथा उसकी इससुन्दरकने बडी स्तुतिकी तव उसनेप्रसन्नहोकर इसको आकाशसे उतरनेकामन्त्रवता दिया आकाशसे उतरने का मन्त्रपाकर वह पुरसमेत अपने कान्यकुब्ज देशमें आकाशसे उतरा बडे

धनाढ्य पुरसमेत आकाश से उतरेहुये उसे जानकर राजा वडे आश्चर्य्य से आपही उसकेपास आया राजाने उसे पहचानकर जब उससे पूछा तो उसने अपना और कालरात्रिका सबवृत्तान्त ठीक २ राजा से कह दिया यहसुनकर राजाने कालरात्रिको बुलाकरपूछा तो उसने निर्भयहोकर अपना सम्पूर्ण दोष स्वीकार करलिया यह सुनकर जब राजा कुपित होकर उसके कानकाटने को उद्यत हुआ तो पकड़ने पर भी सबके देखतेर अन्तर्ध्यानहोगई राजाने तबसे कालरात्रिका अपने देशमें रहना निषेध करदिया और राजा के पूजन को ग्रहण करके सुन्दरकभी आकाश को चलागया १८५ रानी कुवलयावली इसप्रकार राजा आदित्य प्रभसे कहकर फिर कहनेलगी कि हे स्वामी डाकिनियों के मन्त्रकी सिद्धिया इसी प्रकारकी होती हे और यह वृत्तान्त मेरे पिताके देशभरमे प्रसिद्धहै मैंने यहतो आपसे कहा कि मे कालरात्रिकी शिष्यहू परन्तु पतिव्रता होने के कारण मेरीसिद्धि कालरात्रिसे भी वढ़ीहुई हे आज आपने मुझे देखलिया मे आपही के लिये यह पूजनकररहीथी और वलिदान देनेके निमित्त मन्त्रसे किसी पुरुषको खेंचनेको उद्यतथी हे राजा अब आप भी इस हमारे मार्ग्ग में आजाइये तो अपनी सिद्धि से सम्पूर्ण राजालोगोंको जीतकर उनके शिरोमणि होजाइये यह सुनकर राजाने कहा कि कहा तो डाकिनियों के मार्ग मे मनुष्यके मास का भोजनकरना और कहा राज्य करना इसमें वडा अन्तरहै और यह वात कहके राजा ने अपने सयुक्त होनेको निषेध करदिया परन्तु जबरानी प्राण देनेको तय्यारहुई तब राजा ने उसका कहना अगीकार करलिया ठीकहै (विषयाकृष्यमानाहि तिष्ठन्तिस्वपथेकथम्) (विषयोंके वशीभूत मनुष्य अच्छेमार्गमें कैसे रहसक्ते ह) १८७ इसकेउपरान्त रानी ने पहलेसे पूजन कियेहुए उसमण्डलमें राजाकोवुलालिया और उस्से सपूर्णवातोका नियमकरनेका कौलकरारकहा कि यह जो फलभूति नाम ब्राह्मण आपके पासरहताहै उसीको आज मैंने भेटदेने के लिये खेंचनेका विचार कियाथा परन्तु मन्त्रकेद्वारा खेंचने मे वडापरिश्रमहे इस्से किसी रसोइयेको भी इसमार्ग में लेनाचाहिये जिस्से कि वह रसोइया उसेआपहीमारे और पकावे हे राजा उसवलिदानके मासकेखाने मे घृणा (नफरत) न करनाचाहिये क्योंकि पूजनके समाप्तहोजानेपर सिद्धिपूर्णहोजातीहे इस्से यह मासवडाउत्तमहै प्रियाके यहवचनसुनकर पापसेडरेहुए भी राजाने ब्राह्मणका वलिदानदेना स्वीकार करलिया (वडेकष्ट देनेवाली स्त्रियोंकी आज्ञाके पालनकरनेको धिक्कारहे) इसकेउपरान्त साहसिकनाम रसोइयेको बुलाकर और उसेभी विश्वासपूर्वक अपना शिष्यकरके राजा और रानी दोनोउस्सेवोले कि राजा और रानी आज साथही भोजनकरेंगे इस्से शीघ्रही भोजनवनाओ, यहवात तुमसे जो कोई आकरकहे उसेमारकर उसीकेमासमे प्रात काल एकान्तमे तुम स्वादिष्ट भोजन हमारेवास्तेवनाना राजाकी इसआज्ञाको स्वीकारकरके वह रसोइया अपने घरकोचलागया २०० प्रात काल राजाने फलभूतिसेकहा कि तुमसाहसिक नाम रसोइयेसे जाकरकहो कि रानीसमेत राजा आज स्वादिष्ट भोजनकरेंगे इस्से तुम शीघ्रही उत्तम भोजनवनाओ राजाकी आज्ञाकोलेकर वाहरगयेहुए फलभूतिसे चन्द्रप्रभनाम राजाके पुत्रने कहा कि यह सोनालेकर आज शीघ्रही तुमहमारेलिये वैसे कुण्डलवनवाओ जैसे कि पहले तुमने हमारे पिताके

हुई कालरात्रि अपनेही हाथसे अपने वस्त्रफाडकर घरमेआई और घरमे अपने पतिको अपनावस्त्र दिखाकरबोली कि देखोआज सुन्दरकने दौडकर मेरावस्त्र फाडडाला यहसुनकर उसकेपतिने यज्ञशालामें जाकर यहकहकर कि यहसुन्दरक भोजनकेदेने योग्यनहींहै वल्किमारनेके योग्यहै उसका भोजन बन्द करवादिया इसके उपरान्त सुन्दरक वडे खेदसे परदेश जानेकेलिये फिर उद्यत हुआ और गोवाटनाम महलमे सीखाहुआ आकाशमे उडनेका मन्त्रतो उसेयादहीथा परन्तु उतरनेकामन्त्र कुछभूलगयाथा उसी को सीखनेकेलिये वहउसी शून्यगोवाटमे फिरजाकर पहलेहीके समानवैठा तवकालरात्रि वहाँआकरमहलसमेत उडकर उज्जयिनीको चलीगई उज्जयिनीमे गोवाटको मन्त्रकेद्वारा शाकवाटमें उतारकर क्रीडा करनेकेलिये श्मशानकोचलीगई १६१ सुन्दरकने उसमन्त्रको दूसरीवारभी सुनकर नहीयादकिया क्योंकि गुरुकी आज्ञाकेविना सपूर्ण सिद्धिनही होसक्ती इसकेउपरात सुन्दरकने कुछमूलीखाई और कुछ मूलीघर लानेकेलिये गोवाटमे उठाकररखली और वहींछिपकर बैठरहा तवकालरात्रि वहाँआकर गोवाटसमेतउडी और गोवाटको उसके ठीकस्थानमे रखकर अपने घरकोचलीगई प्रात काल सुन्दरकभी गोवाटसे निकल कर उनमूलियोंको बाजारमे इसलिये वेचनेकोचला कि इनको वेचकर जोकुछ धनमिलेउससे भोजनको लाऊ उसेमूली वेचतेहुए देखकर मालवदेशके राजसेवकोंने विना मूल्यदियेही अपने देशकी उत्पन्नहुई मूलिया उससे छीनलीनी जवयह उनसे लडनेलगा तो वहउसे बाँधकर राजाके यहाँ लेगये और उसके मित्रभी उसके पीछे २ उसकेसाथचलेगये वहाँजाकर उनमालवदेशवालोंनेराजासे कहा कि हे राजा हम लोगइससेपूछतेहैं कि तूमालवदेशसे मूलीलाकर कान्यकुब्जदेशमें सदैव कैसेवेचाकरताहै इसकाउत्तरतो यहकुछनहीं देताहै परन्तुढेलेमारताहै यहअद्भुत वातसुनकर राजानेउससे पूछाकि यहकैसीवातहै तव उस के मित्रबोले कि हेराजा जो हमलोगोंसमेत इसेमहलपरचढाइये तो यहसववातकहैगा नहीतो नहीकहैगा १७० राजाने उसीसमय उसको मित्रोसमेत महलपरचढा दिया तवसुन्दरक महलसमेत राजाके देखतेही देखते आकाशमें उडगया सुन्दरक अपनेमित्रोसमेत धीरे २ प्रयागपहुँचा और वहाथककर उसनेकिसी राजाको गंगास्नानकरतेहुये देखा वहामकानको आकाशमेही रोककर वहगंगाजीमे कूदपडालोगोंको उसके देखनेसे वडाआश्चर्य हुआ और वहउसी स्नानकरनेवाले राजाकेपासचलागया राजानेप्रणाम करके उससेपूछा कि तुमकौनहो और किसलिये आकाशसेउतरेहो तवउसनेकहा किमैं मुरजकनामम हादेवजीका गणहू मनुष्योंकेसे भोगकरनेको मै महादेवजीकी आज्ञासे तुम्हारेपास आयाहू यहसुनकर उसकेवचन सत्यजानकर राजाने सपूर्णअन्नोंसे युक्त रत्नोंसेपूर्ण एकपुरस्त्री तथाराज्यके सवअशोंसमेत उसेदेदिया वहउसपुरमें जाकर पुरसमेत आकाशमें उडगया और अपनेसाथियोसमेत अपनीइच्छासे विहारकरनेलगा सुवर्णके पलँगपरसोताहुआ चामरोंसे मोरछलकियाहुआ और श्रेष्ठस्त्रियोंसे भोगकिया हुआ सुन्दरक आकाशहीमें इन्द्रकेसेसुख भोगनेलगा १७८ एकसमय कोईसिद्ध आकाशमार्गसेचला जाताथा उसकी इससुन्दरकने वडी स्तुतिकी तव उसनेप्रसन्नहोकर इसको आकाशसे उतरनेकामन्त्रवता दिया आकाशसे उतरने का मन्त्रपाकर वह पुरसमेत अपने कान्यकुब्ज देशमें आकाशसे उतरा वड़े

वहुतसा धनदेकर निहालकिया फिरराजाने क्षेत्रोंमेंभी वहुतसा धनदिया उससमय मृदगोंके शब्दों से भरीहुई पुरीमें प्रजालोग आगेहोनेवाले अन्यउत्तम फलोंके विचारसे अपने २ घरोंमें उत्सवकरनेलगे इस प्रकार सपूर्ण पृथ्वीको जीतकर निहालहुआ राजाउदयन् रुमण्वान् और यौगन्धरायण दोनोमन्त्रियोंपर सपूर्ण राज्यका भाररखकर वासवदत्ता और पद्मावती के साथ आनन्द पूर्वक विराजमानहुआ कीर्त्ति और लक्ष्मीके समान उनदोनो रानियोंके वीचमें वैठाहुआ राजाउदयन् सुन्दर नटो के गानको सुनता हुआ अपने यशके समान स्वच्छ चादनी में शत्रुओंके प्रतापके समान मद्यपानकरनेलगा २३० ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायालावाणकलम्बकेषष्ठस्तरग लावाणकनामतीसरालम्बकसमाप्तहुआ ॥

नर वाहनदत्त जननाम चतुर्थोलम्बक ॥

कर्णनाल वलाघात सीमन्तितकुलाचल ॥
पंथानमिवसिद्धीनांदिशंजयतिविघ्नजित् १ ॥

इसके उपरान्त राजाउदयन् कौशाम्बीमें रहकर जीतीहुई सम्पूर्ण पृथ्वीका भोग करनेलगा रुमण्वान् और यौगन्धरायण पर राज्यका सम्पूर्ण भाररखकर वसन्तक समेत राजा सुखपूर्व्वक विहार करनेलगा और रानी वासवदत्ता तथा पद्मावतीकोसगमें लेकर वीणाको वजाकर सगीत गानका सुख अनुभवकरने लगा जिससमय राजावीणा वजाताथा और रानीकाकली अर्थात् धीरे २ गभीर मधुरस्वरसे गानकरती थी उससमय दोनोंस्वरोंका ऐसा अभेद होजाताथा कि वीणा वजाने में राजाकी चलतीहुई उगलीको देखकर मालूम होताथा किवीणाभीवजती है अपनीकीर्तिके समान चादनीसे निर्मल महलोंपर शत्रुओं के मदके समान मद्यको राजापीताथा वेश्याजन सुवर्णके कलशोंमें भरकरमद्य उसके लिये लातीथीं वह मद्य क्याथी मानों कामदेवके राज्यमें अभिषेककरनेका जलथा राजा कुछ रक्तवर्ण सुन्दर रसयुक्त निर्म्मल और रानियोंके सुखोंके प्रतिविम्वसे युक्त मद्यको रानियोंके मध्यमें रखताथा वहमद्य न थी मानों राजाका मूर्त्तिमान चित्तही था ईर्षा और क्रोधके विनाभी टेढी भृकुटीवाले रानियो के रक्तमुखारविन्दोंको देखकर राजाकी दृष्टि तृप्त नहीं होतीथी मद्यसे भरेहुए अनेक स्फटिकके प्यालोंसेयुक्त मद्यपीनेकी पृथ्वी प्रात काल की धूपसे कुछ रक्तवर्णवाले श्वेत कमलोंसे युक्त पद्मिनीके समान शोभित होतीथी १० वीच २ में अनेक व्याघ्रोंसे युक्त पलासरूपीकाले वस्त्रको पहरेहुए और वाणासन (वाण तथा असनके वृक्ष पक्षान्तरमें धनुष)से युक्त अपने समानवनमें राजा शिकारखेलनेको गया जव राजाकीचसे भरेहुए शूकरोंको वाणों से मारताथा तव किरणोंसे अधकारके समूहोंके नाश करनेवाले सूर्य्यके समान शोभित होताथा शिकार के लिये राजाके दौडनेपर डरकर इधर उधर भागेहुए मृग पहले जीतीहुई दिशाओंके कटाक्षों के समान शोभितहुए फैलेहुए मुखोंमें लगेहुए भालोंसे छिदजानेपर मरनेके समयमेंभी गर्जनेवाले सिंहोंको देखकर राजा अत्यन्त प्रसन्न होताथा शिकारी कुत्ते पशुओं के मार्गों में गढ्ढे और पशुओंके वाधनेकी डोरी

लिये वनवायेथे जबराजपुत्रने फलभूतिसे बहुतहठपूर्व्वक शीघ्रजानेकोकहा तो वह राजाका संदेसा उ
राजपुत्रसे कहकर कुंडलवनवानेको चलागया और राजपुत्रभी फलभूतिकी बताईहुई राजाकी आज्ञाक
कहनेकेलिये अकेलाही रसोईदारकेपासगया वहाजाकर जबराजपुत्रनेरसोइयेसे राजाकीआज्ञाकही त
उस साहसिकने शीघ्रही राजपुत्रको छुरीसे मारडाला और उसीके माससेबनायेहुए भोजनको पूजन
उपरान्त राजा रानी ने विनाउसतत्त्वकेजाने खाया २०८ राजाने पश्चात्तापसहित वह रात्रिव्यतीतकर
प्रात काल कुंडलोंको हाथमेंलिये आयेहुए फलभूतिको देखा उसे देखकरराजाको बडा सन्देहहुआ औ
कुण्डलोंके बहानेसे राजाने उससमय उससे पूछा कि तुम यह कैसे कुंडललेकर यहा आयेहो तब फलभू
ने कुण्डलोंका सबवृत्तान्त कहदिया उसवृत्तान्तको सुनतेही राजापृथ्वी में गिरकर हापुत्र २कहकरचिल्ल
नेलगा और अपनी तथा रानीकी निन्दाकरनेलगा जब मंत्रियोंनेपूछा कि यह क्या वृत्तातहै तबराजा
सबवृत्तान्त सत्य २ कहदिया और बोला कि फलभूतितो नित्य कहताहीथा कि (भद्रकृत्प्राप्नुयाद्भद्रम
चाप्यभद्रकृत्) (नेकीकरनेवालेको नेकी और वदीकरनेवालेको बदी) जैसे दीवारपर फेकीहुई गेंद फेंक
वालेहीकीओर लौटकर आजाती है उसीप्रकार दूसरेकेलिये विचाराहुआ दोषअपनेही ऊपरआताहै दे
हमदोनों पापियोंने ब्रह्महत्या करनेका विचारकियाथा इससे अपनेहीपुत्रको मरवाकर उसीका मासखान
पडा यहकहकर और नीचेको मुखकियेहुए अपने मंत्रियोको समझाकर राजाने अपने सबराज्य
उसीफलभूतिका राज्याभिषेक करदिया २१५ पुत्र रहितराजा इसप्रकार अपने पापसे छूटनेकेलिये सपू
राज्यका दानकरके और पश्चात्ताप से बहुत संतप्तहो के रानी समेत अग्नि मे जलगया फलभूति उ
राज्यको पाकर सबपृथ्वीका पालनकरनेलगा इसीप्रकार भलाई या बुराई जो दूसरेपर कियाचाहो व
अपनेही ऊपरआजाती है इसप्रकारइसकथाको कहकर यौगन्धरायणराजासे फिरकहनेलगा कि हेराज
आपने ब्रह्मदत्तको जीतकरके भी उसकेसाथ भलाईकी है अबवह जोकोईभी उपद्रवकरे तो आपउसक
मारडालिये यौगन्धरायणके यह वचन सुनकर राजाउदयनने उसकी प्रशसाकी और वहासे उठकरअपन
दिवसका नित्यकृत्यकिया दूसरेदिन सपूर्णदिग्विजयसे निवृत्तहुआ राजालावाणकसे अपनी कौशाम्ब
पुरीकोचला और धीरे २ सेना समेत अपनी कौशाम्बीनगरीमे आया उससमय वहनगरी पताकारूप
भुजाओंको उठाकर मानोंबडेहर्षसे नाचरहीथी पुरवासियोंकी स्त्रियोंके नेत्ररूपीवनमे अधिकवायुके वे
सेहोनेवाली शृगाररसकी चेष्टाको उत्पन्नकरताहुआ नगरी के भीतरचला कथिकों के गानको बंदियों
स्तुतिको सुनताहुआ और राजालोगोसे प्रणामकियाहुआ राजाउदयन् अपने राजमदिरमे आया२२
इसकेउपरात हारेहुए सपूर्ण देशोंके राजालोगोंपर अपने शासनको जमाकर राजाउदयन् निधिमे मिले
हुये अपनेपुरुखोके प्राचीन रत्नसिहासनपरबैठा उससमय मंगलके निमित्त बजायेगये नगाडो के शब्द
तथाझाई शब्दों से आकाशभरगया वह नगाडोंका शब्दनहींथा मानों राजाके मंत्रियोंपर प्रसन्नहुए
लोकपाल सपूर्ण दिशाओंमें धन्यनाद कररहेथे फिरलोभरहित राजाने पृथ्वीके जीतनेसे लायेहुए धनको
दानकरके ब्राह्मणोंको दिया और बडाउत्सव करके सपूर्णहारेहुए राजालोगोंको तथा अपने मंत्रियोंको

आप जैसा उचित समझें कीजिये आपही मालिकहैं उसके दीनवचनो को सुनकर राजाने प्रतीहारसे कहाकि इसेलेजाकर वासवदत्ताको सौंपदो ४५ तब आगे २ जातेहुए शुभकर्म्मके समान उसप्रतीहारके साथ वहब्राह्मणी वासवदत्ताके समीप पहुची तब रानी वासवदत्ताने प्रतीहार के द्वारा राजाकी भेजीहुई जानकर उसपर वडी श्रद्धाकी और उसके दोपुत्र देखकर अपनेचित्तमे शोचाकि (अहोवामैकवृत्तिरकिम्प्येतत्प्रजापते अहोवस्तुनिमात्सर्य्यं महोभक्तिरवस्तुनि) ब्रह्माकी कैसी कुटिलगतिहै कि योग्यस्थानों में ऐसी उदासीनता और अयोग्यस्थानमे ऐसी कृपा,देखो मेरे अवतक एकभी पुत्रनहीं उत्पन्नहुआ और इसदीनके दोपुत्र एकसाथही उत्पन्नहुए इसप्रकारसे शोचतीहुई रानी स्नानकरनेकोगई और दासियोंको उस ब्राह्मणी के भी स्नानादिकरावनेकी आज्ञादेगई दासियों से स्नानकराईगई वस्त्र पहनाईगई और भोजनकराईगई ब्राह्मणी जलसे सींचीहुई उष्ण पृथ्वी केसमान प्रसन्नताको प्राप्तहुई ५१ इसके उपरान्त जब वह ब्राह्मणी सावधानहुई तब वासवदत्ताने कथाकेप्रसगसे उसकी परीक्षाकरने के लिये उससे कहा कि हेब्राह्मणी कोई कथाकहो रानी के वचनसुनकर वह ब्राह्मणी यह कथाकहनेलगी कि पूर्वसमय मे जयदत्तनाम किसी सामान्य राजाके देवदत्तनाम पुत्रहुआ समयपाकर देवदत्तके तरुणहोनेपर उसके विवाहकरनेकी इच्छासे उस बुद्धिमान् राजाने यह शोचा कि (वेश्येवनलवद्भोग्या राजश्रीरतिचचला वणिजातुकुलस्त्रीव स्थिरालक्ष्मीरनन्यगा) अत्यन्त चचल राजलक्ष्मी वेश्याके समान वलवान्ही से भोगकीजासक्ती है और वणियोंकीलक्ष्मी कुल स्त्री के समान अन्य गामिनीनहींहोती इससे मैं अपने पुत्रका विवाह वणियेकीपुत्री से करूंगा इसकारणसे अनेक उपाधियुक्त इसराज्यमे इसको क्लेश न होगा ऐसा निश्चयकरके राजा जयदत्तने अपने पुत्र के लिये पटनेकेरहनेवाले वसुदत्तनाम वणिये से अपने पुत्रकेलिये कन्यामागी वसुदत्तने भी उत्तमसम्बन्धकी इच्छासे दूरदेशमे भी राजपुत्रकेलिये अपनी कन्या देनास्वीकारकरलिया और विवाहकेसमय जामाताको इतने रत्नदिये कि उसको अपने पिताके सम्पूर्ण ऐश्वर्य्यका अभिमान दूरहोगया उस धनवान् वणियेकी कन्याकेसाथ अपने पुत्रका विवाहकरके वह जयदत्तराजा सुखपूर्वकरहनेलगा ६१ एकसमय वसुदत्त वहुत उत्कण्ठितहोकर अपने जमाई के घरजाकर अपनी पुत्रीको लिवालेगया इसके उपरान्त अकस्मात् राजा जयदत्त तो स्वर्गवासीहुआ और उसके भाइयों ने देवदत्तसे सम्पूर्ण राज्यछीनलिया तव उनके डरसे उसकी माताछिपकर उसे किसी दूरदेशमें लेगई वहाजाकर देवदत्तसे उसकीमातानेकहा कि पूर्व्वदिशाकाराजा चक्रवर्त्ती है और वहीहमारा स्वामीहै उसकेपास तुमजाओ वह तुमको तुम्हाराराज्यदिलवादेगा माताके यह वचनसुनकर राजपुत्रने कहा कि परिकरके विना वहामुझको कौन राजपुत्रसमझेगा यह सुनकर फिर मातावोली कि पहले तुम अपने श्वशुरके घरजाकर वहासे धनलेकर परिकरवनाके उस चक्रवर्त्ती के पासजाओ मातासे इसप्रकार प्रेरणा कियाहुआ वह राजपुत्र लज्जितहोकर वहासे धीरे २ चला और सायकालकेसमय अपने श्वशुरके घर के समीपपहुचा ६९ पिता और राजलक्ष्मी से रहित वह राजपुत्र रात्रिकेसमय लज्जासे अपने श्वशुरके घरमें न जासका श्वशुरके घरके निकट किसी यज्ञशालाके वाहरठहरा वहा रात्रिकेसमय उसनेदेखा कि

यह सब सामग्री केवल शस्त्रों के द्वाराही कार्य्य सिद्ध करनेवाले राजाके साथमेंथीं १६ इसप्रकार सुखका भोग करतेहुए राजाके स्थानपर एकसमय नारदमुनि आये आकाशके आभूषण स्वरूप और अपने शरीरकी प्रभाके मंडलसे युक्त नारदजी क्याथे मानो तेजस्वियोंके प्रेमसे उतरेहुए साक्षात् सूर्य्य भगवान् थे राजाने उनका बडा सत्कारकर बारम्बार प्रणामकरके आसनपर बैठाया क्षणभर बैठकर प्रसन्नहुए नारदजी ने राजासे कहा कि हेउदयन् सुनो तुमसे हम संक्षेप पूर्व्वक कहते हैं कि तुम्हारे पूर्व्व पुरुखों में पाण्डु नाम राजाहुए उनकेभी तुम्हारे समान दोरानियाथीं एक कुन्ती और दूसरीमाद्री समुद्र पर्य्यन्त सम्पूर्ण पृथ्वीको जीतकर एकसमय राजापाण्डु शिकारखेलनेको वनमें गये वहाजाकर राजाने मृगरूपसे अपनी भार्य्याके साथ रतिकरतेहुए किन्दमनाम मुनिकोमारा बाणके लगतेही मुनिने मृगके स्वरूपको त्यागकर मरते समय यहशापदिया कि तुमने बिना विचारकियेही एकांत में रतिकरतेहुए मुझकोमाराहै इससेतुमभी मेरेही समान अपनी स्त्री से भोगकरते हुए मृत्युको प्राप्तहोगे इसप्रकार शापपाकर भयसे भोगकी इच्छाको छोडकर अपनी स्त्रियो समेत राजापाण्डु तपोवनमे रहनेलगा वहाभी शापकी प्रेरणासे एकसमय राजाने माद्रीनाम अपनी स्त्रीकेसाथ भोगकिया तभी उनकी मृत्युहोगई इससे हे राजायहशिकारकरना राजालोगोकेलिये बडा दुखदाईहै इसकेद्वारा और भी राजालोग मृगोंके समानमृत्युको प्राप्त हुएहै भयङ्कर शब्दवाली माससे भरीहुई रूखीधुमैले वर्णवाली उठेहुएकेशवाली और भालेरूपदांतवाली शिकारमृगया राक्षसीके समान कल्याणकरनेवाली कैसेहोसक्ती है इससे व्यर्थ श्रमवालेशिकारको त्याग दो इसमें शिकार खेलनेवाले उनके वाहन और वनके पशु इनतीनोंकेही प्राणोंका सशयरहताहै हे राजा तुम्हारे पुरखोकी प्रीति से तुमभी मेरे बडे प्यारेहो अब तुम्हारे कामदेवका अवतार पुत्रहोगा वहभी मै तुम को सुनाताहू ३१ एकसमयमें कामदेवके शरीर धारणकरनेके लिये रतिनेशिवजी महाराजकी बडीस्तुति की तब श्रीशिवजीने प्रसन्नहोकररतिसे यहसंक्षिप्त वचनकहे कि पार्व्वतीजी अपनेअंशसेपृथ्वी में अवतार लेकर और पुत्रकी इच्छासे मेरीआराधना करके कामदेवको उत्पन्नकरेगी इससे चंडमहासेनके यहा वासवदत्तारूपसे पार्वतीजीने अवतारलिया और वहीतुम्हारी रानीहै यह श्रीशिवजीका आराधन करके कामदेवके अंशरूप पुत्रको उत्पन्न करेगी और वहसम्पूर्ण विद्याधरोंका चक्रवर्तीहोगा इसप्रकार कहकर राजासे आदर कियेगये नारदजी अन्तर्ध्यान होगये ३७ इसकेउपरान्त दूसरेदिन सभामें बैठेहुएराजासे नित्योदितनाम प्रतीहारने आकर यह विज्ञापनकिया कि एकबडीदीन ब्राह्मणी दोबालको को लियेहुए द्वारपर खडीहै और आपके दर्शनकरनेकी अभिलाषा करतीहै यहसुनकर राजाने उसको आने की आज्ञादेदी तब अत्यन्त दुर्बल और पाण्डु तथा धूसरवर्णवाली वह ब्राह्मणीमानके समान गलेहुए फटेवस्त्रोंसे व्याकुल और दुःख तथा दैत्यके समान दोनों बालकोंको लियेहुए सभामें आई वहा उसने यथायोग्य प्रणामकरके कहा कि हे महाराज मैं कुलीन ब्राह्मणी इसप्रकारकी दुर्दशाको प्राप्तहुईहू और भाग्यवशसे यह दोपुत्र मेरे एकसाथहीहुए हैं भोजनके न मिलने से स्तनों में दूधभी नहीं पैदाहोताहै जो इन्हें पिलाकर पालनकरू इससे दीनअनाथ तथाशरणागतोंकी रक्षाकरनेवाले आपकीशरणमें मैं आईहू

कदाचित् वही इसेलेगयाहोगा इसप्रकार शोचतीहुई उसवणियेकी पुत्रीका हृदय अपने दुराचारके प्रकट होजानेसे व्याकुलहोकर कातरतासे फटगया इसके मरजानेपर इसके पिताने पुत्री के वृत्तान्तके जानने वाली दासी से पूछके और सम्पूर्ण तत्त्व समझकर अपने शोकको त्याग करदिया और वह राजपुत्र राज्यकोपाकर अपने गुणोंसे प्रसन्नहुई चक्रवर्तीकी कन्याको दूसरी राज्य लक्ष्मी के समान प्राप्तहोकर अत्यन्त प्रसन्नहुआ ९९ इससे यह निश्चयहोता है कि साहस के समय स्त्रियोंका हृदय वज्रसे भी अधिक कठिन और भयतथा सम्भ्रम के समय पुष्पसे भी अधिक कोमल होताहै (तास्तुकास्वनसद्वंशजाता मुक्ताइवाङ्गना या सुवृत्ताच्छ हृदयायान्ति भूषणताभुवि) श्रेष्ठवंशमें उत्पन्नहुई मोतियोंके समान ऐसीस्त्रियातो कोई२होती हैं जो अपने निर्म्मल हृदय और सुन्दर आचरणों से पृथ्वीमें आभूषण रूपहोती हैं (हरिणीवच राजश्रीर्दैवम्विप्लविनीसदा धैर्य्यपाशेन वन्धुञ्चतामेव जानतेबुधाः) हरिनीके समान राज्यलक्ष्मी इसीप्रकारसे सदैव भागती है और पण्डितलोग धैर्य्यरूपी पाशसे इसीप्रकार उसका बाधना भी जानते हैं इससे आपत्तिमें भी सम्पत्तिके चाहनेवाले मनुष्योंको सत्त्वका त्याग नहीं करनाचाहिये यहीवृत्तान्त मेरेलिये भी उदाहरण रूपहुआथा जो मैंने अत्यन्त क्लेशमें भी अपने आचरणोंकी रक्षा कीथी वहतुम्हारे दर्शन होनेसे सफलहुई १०१ उसब्राह्मणीके मुखसे इसकथाको सुनकर वासवदत्ताने आदर पूर्व्वक अपने चित्तमें विचार कियाकि इसके प्रौढवचनो से और आचरणके रक्षाकी कहावतसे ज्ञातहोताहै कि निस्सन्देह यहकोई कुलीन ब्राह्मणी है और इसीमें इसे राजाकी सभामें प्रवेशकरनेकी चतुरताहुई यहविचारकर रानीने फिरउस ब्राह्मणीसे पूछाकि तुमकिसकी स्त्रीहो अपना सववृत्तान्त मुझसे वर्णनकरो वासवदत्ताकी आज्ञापाकर ब्राह्मणी कहनेलगी कि हे रानी मालवदेशमें बडाविद्वान् और धनवान् अग्निदत्तनाम एकब्राह्मणथा वहसदैव याचकोंको धनदिया करताथा उसके अपनेही समान दो पुत्र उत्पन्नहुए ज्येष्ठकानाम शङ्करदत्त और कनिष्ठकानाम शान्तिकर था उनमें से शान्तिकर विद्या पढ़नेके लिये वालावस्थामेंही पिताके घरसे निकलकरकहीं चलागया और बडेभाईने यज्ञकरनेके निमित्त धनके इकट्ठे करनेवाले यज्ञदत्तनाम ब्राह्मणकी कन्याके साथ विवाहकिया वह मैंहूं समयपाकर मेरा श्वशुर स्वर्गवासीहुआ और मेरी सासभी उसीके साथ सतीहोगई ११० इसकेउपरान्त मुझगर्भवतीको छोडकर मेरे पतिने तीर्थयात्राके वहाने जाकर सरस्वती नदी के प्रवाहमें शोकमें अन्धहोकर अपना शरीर त्यागकरदिया जवउसके साथियोंनेआकर उसका वृत्तान्तकहा तवमैं गर्भवती होनेकेकारण उसकेदुःखमें अपना शरीर नहींत्यागसकी इसकेउपरान्त अकस्मात् वहुतसे चोरोंनेआकर जिसगावमें मैं रहतीथी वह सवगाव लूटलिया उससमय तीनब्राह्मणियोंके साथहोकर मैं अपने आचरणकी रक्षाकरने के लिये थोडे से वस्त्रोंको लेकर वहासे भागी देशभङ्गहोनेसे वहुतदूरआकर एकदेशमें महीनेभरतक वहुतकठिनकामोंकी जीविकाकरके निवास किया वहालोगोंसे राजा उदयनको अनाथोंकी रक्षाकरनेवाले सुनकरब्राह्मणियोंकेसाथ केवल सदाचाररूपी पाथेय(सफरखर्च) को लेकर यहाआई इसदेशमें आनेही उनतीनो ब्राह्मणियोंके समीपहीमें एकसाथही यहदोनो पुत्र उत्पन्नहुए शोक विदेश दरिद्रता और एकसाथही दोनो

श्वशुरके कोठे से एकस्त्री रस्सी के सहारे नीचे उतररही है क्षणभरमें आकाश से गिरीहुई ज्वालाके समान रत्नजटित आभूषणो से देदीप्यमान उस स्त्रीको उसने पहचाना कि यह तो मेरीही स्त्री है और पहचानकर उसके चित्तमे बडाखेदहुआ उसस्त्री ने तो उसे देखकर भी मलिनता और दुर्बलताके कारण नहीपहचाना और उससेपूछा कि तू कौनहै उसनेकहा कि मै एकपथिकहू इसकेउपरान्त वह यज्ञशाला के भीतरगई और राजपुत्रभी छिपकर देखने के लिये उसकेपीछे चलागया वहा वहस्त्री एकपुरुषके पास गई उसने उसे देखकरकहा कि तू आज बहुतदेरकरकेआई और लातो से उसे बहुतपीटा पीटने से और भी अधिक अनुरागयुक्तहोकर उसने उसे प्रसन्नकिया और इच्छाके अनुसार उसकेसाथरमणकिया यह सपूर्ण चरित्र देखकर राजपुत्रने अपने चित्तमें विचारकिया कि यह क्रोधका समयनहीं है अभी मुझे अन्य कार्य्यकरने हैं मेरा यह शत्रुओ के योग्य शस्त्र इसदीनस्त्रीपर और इसजडपुरुषपर चलानेके योग्य नहीं है इसदुष्टस्त्री से मुझे क्या प्रयोजनहै यह सबकार्य्य मेरेही दुर्भाग्यका है जो कि मेरे धैर्य्यकी परीक्षा के लिये दु खपैदु खदिये चलाजाताहै और इसमे इसका अपराधही क्याहै यह तो समान कुलमे सबन्ध न करनेका फलहै ठीक कहा है कि (मुक्त्वावलिभुजकाकी कोकिले रमते कथम्) काकी (कौए की स्त्री) कौए को छोडकर कोकिलकेसाथ कैसे रमणकरे यह शोचकर उसने अपनीस्त्री और जार दोनोको उपेक्षाकरके न मारा (सतागुरुजिगीषेहिचेतसि स्त्री तृणकियत्) बहुतजीतने की इच्छा करनेवाले सज्जनलोगोंके चित्तमें स्त्रीरूपी तृणक्याहै ८१ उससमय रतिके आनन्दमे मोतियों से जडाहुआ आभूषण उसस्त्रीके कानमेसे गिरपडा वहउसने रतिके अन्तमेंभी शीघ्रतासे नही सँभाला और जारसेपूछकर जिसमार्ग से आईथी उसी मार्गहोकर चलीगई और उसके जानेके बाद वह जार पुरुषभी चलागया इनदोनोके चलेजानेके उपरान्त राजपुत्रने वह जडाऊ आभूषण उठालिया रत्नोके प्रकाशसे देदीप्यमान वहआभूषण क्या था मानों ब्रह्माने खोईहुई राज्य लक्ष्मीके ढूढनेके लिये मोहरूपी अन्धकार का दूर करनेवाला दीपक उसके हाथमे दिया उस आभूषणको बहुमूल्यजानकर राजपुत्रने जाना कि मेरा कार्य्य सिद्धहुआ और उसे लेकर कान्यकुब्ज देशको चलागया वहा उसने वह आभूषण एक लाख अशर्फी मे गिरवीरखकर हाथी और घोडेआदि सबपरिकर इकट्ठे किये और उससब परिकरकोलेकर चक्रवर्तीकेपास जाके अपना वृत्तान्त वर्णनकिया और चक्रवर्तीकी दीहुई बहुतसी सेना अपने साथमे लेकर शत्रुओको मार अपने पिताके राज्यको लेलिया देवदत्तको फिर अपने राज्यपर बैठा देखकर उसकी माता बहुतप्रसन्नहुई ८८ इसके उपरान्त देवदत्तने उसआभूषणको छुडाकर अपनी स्त्री का सम्पूर्ण वृत्तान्त प्रकटकरनेके लिये अपने श्वशुरके पास भेज दिया उसनेभी अपनीकन्याके कानके आभूषण को देखकर घबराके अपनी कन्याको जाकर दिखाया पहले भ्रष्टहुये आचारके समान उसआभूषणको देखकर और उसे अपने पतिका भेजा जानकर वणियेकी पुत्री ने व्याकुलहोकर अपने चित्तमें स्मरण किया कि यहआभूषण उसरात्रिको यज्ञशालामें गिरथा जिसमें कि मैने वहा एकपथिक देखाथा इससे यहज्ञातहोताहै कि वहमेरा पति मेरे आचरणकी परीक्षाकरनेको आयाथा परन्तु मै उसेनहीं पहचानसकी

रात्रितक व्रतकरनेकेउपरान्त रात्रिके समय स्वप्नमें श्रीशिवजीने प्रकटहोकर राजा और रानीसे कहा कि तुमउठो व्रतको त्यागकरो हमारी कृपासे तुम्हारे कामका अवतार पुत्रहोगा और वह सम्पूर्ण विद्याधरोंका राजाहोगा ऐसाकहकर श्रीशिवजीके अन्तर्द्धान होनेपर वहदोनों जगकर वरदानकी प्राप्ति से अत्यन्त प्रसन्नहुए और प्रात काल उठकर सम्पूर्ण प्रजाओंको बुलाकर वहस्वप्नसुनाया और सबने मिलकर पारण किया कुछ दिनके पीछे रानीको स्वप्नमें एकजटाधारी पुरुषने आकर फलदिया रानी ने प्रात काल उठकर यहस्वप्न राजाको सुनाया उसस्वप्नसे यहजान कर कि श्रीशिवजीने फलके व्याजसे पुत्रदियाहै राजामंत्रियों समेत अत्यन्त प्रसन्नहुआ और उसने यहजानलिया कि हमारा मनोरथ बहुत शीघ्रपूर्णहोगा॥१७६॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांनरवाहनदत्तजननलम्बकेप्रथमस्तरङ्गः॥१॥

इसकेउपरान्त वासवदत्ताने उदयनके हृदयका हर्षबढानेवाला गर्भधारणकिया वह गर्भकामके अंश से अत्यन्त देदीप्यमानथा चञ्चलनेत्र तथा पीलीकान्तिवालेमुखसे वासवदत्ताकी ऐसी शोभाहोतीथी कि मानो गर्भमें स्थितकामदेवके प्रेमसे चन्द्रमा उसके सेवनकोआयाहै जिससमय वासवदत्ता पलँगपर बैठतीथी और उसका प्रतिबिम्ब रत्नजटित पाटियोंपर पड़ताथा तो ऐसी शोभाहोतीथी कि मानो कामदेवके प्रेमसे रति और प्रीति दोनो उसके पासआई हैं उसकी सेवाकरनेवाली सखियों को देखकर यहमालूम होताथा कि मानोहोनेवाले विद्याधरोंके स्वामीके गर्भकी सेवाके निमित्त सम्पूर्ण विद्या मूर्त्तिधारणकरके आईहैं वासवदत्ताके नीले मुखवाले दोनोस्तन ऐसेशोभित होतेथे कि मानो गर्भके अभिषेक करने के लिये वह दोकलशधारण करतीहै अत्यन्त दीप्तिवाली मणियोंकी चट्टानवाले मन्दिरके बीचमें शय्या पर बैठीहुई वासवदत्ता ऐसीशोभायमान होतीथी कि मानोहोनेवाले उसकेबालकके भयसे सम्पूर्ण रत्नोंके समूह उसकी सेवाकररहेहैं ऊपर उडतेहुए विमानों पर पडीहुई उसकी प्रतिमा ऐसी शोभितहोतीथी कि मानो विद्याधरोंकी राजलक्ष्मी उसे प्रणामकरनेकेलिये आकाशमार्गमें आईहै मंत्रके सिद्ध करनेवाले साधक लोगोंकी कथाके सुननेकेलिये वासवदत्ताका चित्तचलताथा एकदिन वासवदत्ताने स्वप्नमेंदेखा कि सुन्दर मधुर गीतगातीहुई विद्याधरोंकी स्त्रियां उसेआकाशमें लेजाकर उसकी सेवाकरतीहैं यहस्वप्न देखकर जब वह जगी तो उसे यहइच्छाहुई कि मैं आकाशमें विहारकरूं और वहांसे पृथ्वीके कौतुकदेखूं उसकेइस मनोरथको यौगन्धरायणने यन्त्र मन्त्र औरइन्द्रजाल आदिकोंसे पूर्णकिया यौगन्धरायणकेयत्नों से जिससमय वहआकाशमें विहारकरतीथी उससमय पुरजनोंकीस्त्रियां अत्यन्त आश्चर्यकरके बारम्बार शिर उठा २ कर उसे देखतीथीं १३ एकसमय बैठेहुए वासवदत्ताके हृदयमें यह इच्छाहुई कि मैं विद्याधरों की कथासुनूं उसकी यह इच्छाजानकर यौगन्धरायणने सबको सुनाकर यहकथाकही कि श्रीपार्वतीजी का पिता हिमालयनाम पर्वत जो कि केवल पर्वतहीनहीं किन्तु श्रीशिवजीका श्वशुरभी है उस पर्वतपर विद्याधरोंका राजा जीमूतकेतु रहताथा उसके घरमें एक कल्पवृक्ष पुरुषाओं के समयसेथा उसी के द्वारा राजाके सम्पूर्ण मनोरथ पूर्णहोतेथे एकसमय राजा जीमूतकेतुने बगीचे में जाकर कल्पवृक्ष से यह प्रार्थनाकरी कि हे देव सदैव आप हमारे सम्पूर्ण मनोरथोंको पूर्णकरतेहो इससे मुझ अपुत्रको एक

पुत्रोंका उत्पन्नहोना वाह ब्रह्मानेमानों मेरेलिये आपत्तियोंका द्वारही खोलदिया ११८ तब इनबालकोंके पालनकरने के लिये कोई गति न समझकर मैंने स्त्रियो के लज्जारूपी आभूषणको छोड़कर सभामें आकर महाराज उदयन्से प्रार्थनाकी और उनकी आज्ञासे तुम्हारे सन्निकट प्राप्तहुई ठीककहा है कि (क श्शक्त सोढुमीपन्न बालापत्यार्त्तिदर्शनम्) आपत्तिमे पडेहुए बालकोंके दुःखको कौनदेखसकाहै तुम्हारे द्वारपर आतेही मेरी सम्पूर्ण विपत्तिया मानो किसीने मारकर भगादीं हे रानी यह मेरा सम्पूर्ण वृत्तान्तहै और बालकपनसेही अग्निहोत्रके धुए से मेरेनेत्र पिङ्गलवर्णके होगये इसलिये मेरा पिङ्गलिकानाम है और मेरा शान्तिकरनाम देवर जो परदेश चलागयाथा सोकहा है यह अबतक नहींमालूमहुआ १२२ इस प्रकार अपने वृत्तान्तको कहनेवाली उसब्राह्मणीको कुलीनजानकर रानी विचारकर बोली कि यहाशान्तिकरनाम विदेशी ब्राह्मणरहताहै वहमेरा पुरोहितहै मैं जानतीहू कि वहीतेरा देवरहोगा इसप्रकार उस ब्राह्मणी से कहकर और उस उत्कण्ठित ब्राह्मणी को रात्रिभर अपने समीप रखकर प्रातःकाल रानी ने शान्तिकरको बुलाके उसका वृत्तान्त पूछा उस वृत्तान्तको सुनकर रानीको निश्चय होगया कि यह पिंगलिकाका देवरहै फिर शान्तिकरसेकहा कि यह तुम्हारे बडेभाईकी स्त्री तुम्हारी भावी है तब जानपहचान हो जानेपर उसकेद्वारा अपने मातापिता तथा भाईकी मृत्यु जानकर शान्तिकर उसको अपने घरलेगया और वहा जाकर अपने मातापिता और भाईका शोककरके अपनी उस भावीको सावधान किया रानी वासवदत्तानेभी पिंगलिकाके दोनोपुत्र होनेवाले अपने पुत्रके पुरोहित बनाये और बहुतसा धन देकर ज्येष्ठका नाम शांतिसोम और कनिष्ठका नाम वैश्वानर रक्खा (अन्धस्येवास्यलोकस्य फलभूमिंस्वकर्म्मभि पुरोगैर्नीय मानस्य हेतुमात्र स्वपौरुषम्) अन्धके समान यह लोक आगे चलतेहुए अपने कर्म्मों करके फलरूपी पृथ्वीपर पहुचाया जाताहै उसमें अपना पुरुषार्थ हेतुमात्रहै क्योंकि पिंगलिका शान्तिकर और वह दोनों बालक सब अनायास एकस्थानमे आकर मिलगये १३२ इसके उपरान्त कुछ दिनोंके व्यतीत होजानेपर एकसमय एक कुम्हारी अपने पाच बालकोंको साथ लेकर सकोरेदेनेके लिये वासवदत्ता के घरआई उसे देखकर रानीने पास बैठीहुई पिंगलिकासे कहा कि हेसखी इसके तो पाचपुत्रहैं और मेरे अभी तक एकपुत्रभी नहींहुआ यह तो ऐसीपुण्यात्माहै और मैं इसकेभी समान पुण्यात्मा नहीं हू यह सुनकर पिंगलिकाने कहा कि हेरानी दरिद्रियोंकेही यहा पापोंसे बहुतसी सन्तति दुःखभोगने और भुगाने को होती है और आप सरीके लोगोंके तो वहीहोगा जो कोई अत्यन्त उत्तम श्रेष्ठ पुरुषहोगा इससे शीघ्रता न करो थोडेही कालमे अपने योग्य पुत्रको पाओगी पिंगलिकाके यहवचन सुनकरभी वासवदत्ता पुत्र के उत्पन्न होने के लिये बहुत उत्कण्ठितहोके चित्तमे चिन्तामे उसी का विचार करती रही १३६ इसके उपरान्त राजा उदयन्ने रानीकी चित्तकी वृत्तिको जानकर उससे कहा कि नारदमुनि तुम्हारे शिवजीकी आराधनासे पुत्रकाहोना बतागये हैं इससे वरदायक श्री शिवजी का आराधन अवश्य करना चाहिये राजाके यहवचन सुनकर रानीने शीघ्रही व्रतकरनेका निश्चयकिया जबरानीने व्रतकरना प्रारम्भ किया तब सम्पूर्ण मन्त्रियों तथा प्रजा समेत राजानेभी श्री महादेवजीका व्रतकरना प्रारम्भ किया तीन

मित्रावसु की वहिनको एकान्तमें देखा और ज्ञानसे जानलिया कि यहमेरी पूर्व्वजन्मकीस्त्री है उससमय उनदोनोंका एकान्तमें परस्पर देखनाही मनरूपी मृगोंके बांधनेकीदृढ डोरीके समान होगया ४६ इसके उपरान्त एकदिन मित्रावसुने आकर एकाएकी जीमूतवाहनसे कहा कि मलयवतीनाम मेरी एक छोटी बहिन है उसे मैं तुमको दियाचाहताहूं तुम मेरी इच्छाको भगन करना यहसुनकर जीमूतवाहनबोला कि हेयुवराज यहतो पूर्व्वजन्ममें भी मेरी स्त्रीथी और तुमदूसरे हृदयके समान मेरे परममित्रथे मैं ज्ञातिस्मर हूं इससेमुझे पूर्व्वजन्मका स्मरण बनाहै उसके यहवचन सुनकर मित्रावसुबोला कि पूर्व्वजन्मकी सम्पूर्ण कथाकहो मुझे उसके सुननेकी परमइच्छाहै मित्रावसुके ऐसे कहनेपर पुण्यात्मा जीमूतवाहन अपने पूर्व्वजन्मकी कथा कहनेलगा कि मैं पूर्व्वजन्म में आकाशमार्ग से चलनेवाला विद्याधर था एक समय हिमालयके ऊपरके शिखरपरहोकर मैं जारहाथा और नीचे श्रीशिवजी पार्वतीजी के साथ क्रीडाकररहेथे मुझे ऊपरजाते देखकर उल्लङ्घनसे क्रोधितहोकर महादेवजी ने शापदिया कि तू मनुष्यहोजायगा वहां विद्याधरी स्त्रीकोपाकर और अपनेपुत्रको अपना अधिकार देकर फिर विद्याधरों के यहांउत्पन्नहोगा और तुझे अपने पूर्व्वजन्मोंका स्मरण बनारहैगा इसप्रकार शापदेके और शापका अन्तभी कहकर महादेव जीके अन्तर्द्धान होजानेपर थोडेही समयके उपरान्त मैं पृथ्वीपर वणियों के कुलमें उत्पन्नहुआ वलभी नाम नगरी में महाधननाम वैश्यकेघरमें मेराजन्महुआ और वसुदत्त मेरा नामहुआ ६२ जबमेरी युवा-वस्थाहुई तब मेरे पिताने द्वीपान्तरजानेके लिये मेरी तय्यारीकरदी और मैंभी उनकी आज्ञालेकर रोज गारकरनेको चलागया ६३ इसकेउपरान्त जब मैं वहासे लौटा तो वनमें बहुतसे चोरों ने आकर मेरा सब धन छीनलिया और वहमुझे बांधकर अपने गांवकी चण्डिकाके मन्दिर में लेगये उसमन्दिर में लाल वस्त्रकी लम्बी पताका ऐसी शोभित होतीथी कि मानों पशुओंकी मारनेकी इच्छासे यमराजने अपनी जिह्वा निकाली वहांदेवीका पूजनकरतेहुए पुलिन्दकनाम अपने स्वामीके निकट बलिदानके निमित्त मुझे लेगये वह पुलिन्दक मुझे देखतेही मुझपर अत्यन्त दयालुहोगया (वक्तिजन्मान्तर प्रीतिम्मन स्स्नेहदकारणम्) कारणके विनाही मनमें स्नेह उत्पन्नहोनेसे जन्मान्तरकी प्रीति सूचितहोती है ६५ तबपुलिन्दकने मुझे छुडवाकर अपने आपकोही बलिदानकरके पूजनको समाप्त करनाचाहा उसका साहसाहम देखकर यहआकाशवाणीहुई कि ऐसामतकर मैं तेरेऊपर प्रसन्नहूं तू वरमांग इसआकाशवाणी को सुनकर पुलिन्दक प्रसन्न होकर बोला कि हे भगवती यदि तुम प्रसन्नहो तो मुझे अन्य वरदानसे क्या प्रयोजनहै तथापि मैं यह वरमांगताहूं कि जन्मान्तरमें भी इसवणियेके साथ मेरी मित्रताहोवे तब एवमस्तु यहकहकर वाणीके निवृत्त होजानेपर पुलिन्दकने बहुत मानदेकर मुझे मेरेघर भेजदिया परदेशमें और मृत्युके मुखसे बचकर मेरे लौटनेपर मेरे पिताने सबवृत्तान्त जानकर बडा उत्सव किया ७० इसके उपरान्त कुछसमयके व्यतीतहोनेपर मैंने देखा कि उसी पुलिन्दकको पथिकों के लूटनेके अप राधसे राजाने बँधवा मँगायाहै उसी समय अपने पितासे कहकर मैंने एकलाख रुपया खर्चकरके उस पुलिन्दकको राजाके यहाँसे फांसीसे बचाया इसप्रकार प्राणोंके बचानेका प्रत्युपकार करके अपने धर्म

गुणवान् पुत्रदीजिये यह सुनकर कल्पवृक्षनेकहा कि, तुम्हारे अत्यन्तदानी पूर्व्वजन्मका स्मरणकरने वालासम्पूर्ण प्राणियोंका हितकारी पुत्रहोगा यहसुनकर प्रसन्नहुए राजाजीमूतकेतुने कल्पवृक्षको प्रणाम किया, और महलमें जाकर रानी से भी यहवृत्तान्तकहकर उसे अत्यन्त प्रसन्न किया २२ इसके उपरान्त थोडेही दिनोंमें राजाके पुत्रहुआ उसनेउसकानाम जीमूतवाहनरक्खा जैसे २ वह जीमूतवाहन बढ़ता था वैसेही वैसे उसके हृदयमे सम्पूर्ण प्राणियों पर दया भी बढ़ती जाती थी समय पाकर जब वह युव- राजहुआ तब उसीने अपनी सेवासे प्रसन्नकरके पितासे एकान्तमें कहा कि हे महाराज इस संसार में जितनेभर पदार्थ हैं वह सब क्षणभगुरहैं परन्तु महात्माओ का निर्म्मलयश कल्पपर्य्यन्त रहताहै यदि पराये उपकारसे ऐसासुन्दर यशप्राप्तहोता है, तो धन प्राणों से भी अधिकप्यारा क्यों होनाचाहिये जिस सम्पत्तिसे पराया उपकारनहींहोताहै वह बिजली के समान लोगों के नेत्रोंको खेददेकर चञ्चलतासे नाश को प्राप्त होजाती है इस्से यह जो कल्पवृक्ष सपूर्ण मनोरथोंका पूर्णकरनेवाला हमारे यहां है वह जो पराये उपकारके अर्थ रखदियाजाय तो उसकाहोना सफलहोजाय तो अब मैं ऐसाकरताहूं कि जिस्से कल्पवृक्ष की सम्पत्तियोंसे सम्पूर्ण याचकलोग दरिद्र रहितहोजायँ पिता से, यहकहकर और उनकी आज्ञा पाके जीमूतवाहन कल्पवृक्षके पास जाकर बोला कि हेदेव आप सदैव हमारे मनोरथोंको पूर्ण करतेरहेहो इस्से अब हमारे इसमनोरथकोभी पूर्णकरो कि यहसम्पूर्ण पृथ्वी दरिद्र रहितहोजाय आपकाकल्याणहोय मैंने आपको सम्पूर्ण याचकोंके अर्थ देदिया उसके यहवचनसुनकर कल्पवृक्षने बहुतसी सुवर्णकी वृष्टिपृथ्वी परकी इससे सम्पूर्ण प्रजा आनन्दित होगई जीमूतवाहनकी इस उदारताको देखकर लोगों ने कहा कि जीमूतवाहनसे अधिक और कौन बौद्धावतारके समान दयालुहोगा जो कल्पवृक्षको भी याचकों के निमित्त देसके इसप्रकार जीमूतवाहनका यश सम्पूर्ण दिशाओमे फैलगया २६ इसके उपरान्त जीमूत केतुके राज्यको पुत्रके यशसे दृढहोते जानकर उसके गोत्री भाई द्वेषकरनेलगे और कल्पवृक्षके देदेनेसे उसे प्रभाव रहित जानके उन्होंने यह जानलिया कि इसको हम शीघ्रही जीतलेगें ऐसे समझकर वह स- पूर्ण जब युद्धके लिये तैयारहुए तब जीमूतवाहनने अपने पितासेकहा कि जो यह शरीरही पानीके बुल बुले के समानहै तो वायुमें रक्खेहुए दीपकके समान चचल लक्ष्मीसे क्या प्रयोजनहै और उसेभी दूसरों को क्लेशदेकर कौन बुद्धिमान् लेनाचाहे इससे हेपिता मैं इनगोत्री भाइयोंके साथयुद्ध नहीं करूंगा और राज्य छोडकर यहासे किसीवनमे चला जाऊंगा यह लोभी राज्यको भोगकरें मैं अपने वंशका नाशनहीं करूंगा जीमूतवाहनके यह वचन सुनकर जीमूतकेतु निश्चयकरके बोला कि हेपुत्र जब तुम्हींने युवा होकर भी इसराज्यको तृणके समान त्यागदिया तो मैं वृद्धहोकर इसराज्यको क्याकरूंगा और मैंभी तुम्हारेही साथ वनको चलूंगा पिता के यहवचन सुनकर जीमूतवाहन पिता और माता दोनों लेकर मलयाचल पर चलागया मलयाचल में जहां अनेक चन्दनके वृक्ष लगेहुए हैं झरने झररहे हैं और अनेक सिद्ध लोग निवास करते हैं वहां, एक आश्रममें रहकर अपने माता पिताकी सेवा करनेलगा वहां रहते ७ स- पूर्ण सिद्धों के राजाविश्वावसुके पुत्र मित्रावसुके साथ उसकी मित्रताहोगई किसीसमय जीमूतवाहनने

मित्रावसु की बहिनको एकान्तमें देखा और ज्ञानसे जानलिया कि यहमेरी पूर्व्वजन्मकीस्त्री है उससमय उनदोनोंको एकान्तमें परस्पर देखनाही मनरूपी मृगोंके बांधनेकीदृढ डोरीके समान होगया ४६ इसके उपरान्त एकदिन मित्रावसुने आकर एकाएकी जीमूतवाहनसे कहा कि मलयवतीनाम मेरी एक छोटी बहिन है उसे मैं तुमको दियाचाहताहूं तुम मेरी इच्छाको भगनकरना यहसुनकर जीमूतवाहनबोला कि हेयुवराज यहतो पूर्व्वजन्ममें भी मेरी स्त्रीथी और तुमदूसरे हृदयके समान मेरे परममित्रथे मैं जातिस्मर हूं इससेमुझे पूर्व्वजन्मका स्मरण बनाहै उसके यहवचन सुनकर मित्रावसुबोला कि पूर्व्वजन्मकी सम्पूर्ण कथाकहो मुझे उसके सुननेकी परमइच्छाहै मित्रावसुके ऐसे कहनेपर पुण्यात्मा जीमूतवाहन अपने पूर्व्वजन्मकी कथा कहनेलगा कि मैं पूर्व्वजन्म में आकाशमार्ग से चलनेवाला विद्याधर था एक समय हिमालयके ऊपरके शिखरपरहोकर मैं जारहाथा और नीचे श्रीशिवजी पार्वतीजी के साथ क्रीडाकररहेथे मुझे ऊपरजाते देखकर उल्लङ्घनसे क्रोधितहोकर महादेवजी ने शापदिया कि तू मनुष्यहोजायगा वहां विद्याधरी स्त्रीकोपाकर और अपनेपुत्रको अपना अधिकार देकर फिर विद्याधरों के यहांउत्पन्नहोगा और तुझे अपने पूर्व्वजन्मोंका स्मरण बनारहैगा इसप्रकार शापदेके और शापका अन्तभी कहकर महादेव जीके अन्तर्द्धान होजानेपर थोडेही समयके उपरान्त मैं पृथ्वीपर बणियोंके कुलमें उत्पन्नहुआ वलभी नाम नगरीमें महाधननाम वैश्यकेघरमें मेराजन्महुआ और वसुदत्त मेरा नामहुआ धीरे२ जबमेरी युवावस्थाहुई तब मेरे पिताने द्वीपान्तरजानेके लिये मेरी तय्यारीकरदी और मैंभी उनकी आज्ञालेकर रोजगारकरनेको चलागया ६१ इसकेउपरान्त जब मैं वहांसे लौटा तो वनमें बहुतसे चोरों ने आकर मेरा सब धन छीनलिया और वहमुझे बांधकर अपने गांवकी चण्डिकाके मन्दिर में लेगये उसमन्दिर में लाल वस्त्रकी लम्बी पताका ऐसी शोभित होतीथी कि मानो पशुओंकी मारनेकी इच्छासे यमराजने अपनी जिह्वा निकाली यहांदेवीका पूजनकरतेहुए पुलिन्दकनाम अपने स्वामीके निकट बलिदानके निमित्त मुझे लेगये वह पुलिन्दक मुझे देखतेही मुझपर अत्यन्त दयालुहोगया (वक्तिजन्मान्तर प्रीतिम्मन स्स्निह्यदकारणम्) कारणके विनाही मनमें स्नेह उत्पन्नहोनेसे जन्मान्तरकी प्रीति सूचितहोती है ६५ तबपुलिन्दकने मुझे छुडवाकर अपने आपकोही बलिदानकरके पूजनको समाप्त करनाचाहा उसका महसाहस देखकर यहआकाशवाणीहुई कि ऐसामतकर मैं तेरेऊपर प्रसन्नहूं तू वरमांग इसआकाशवाणी को सुनकर पुलिन्दक प्रसन्न होकर बोला कि हे भगवती यदि तुम प्रसन्नहो तो मुझे अन्य वरदानसे क्या प्रयोजनहै तथापि मैं यह वरमांगताहूं कि जन्मान्तरमें भी इसबणियेके साथ मेरी मित्रताहोवे तब एवमस्तु यहकहकर वाणीके निवृत्त होजानेपर पुलिन्दकने बहुत माधनदेकर मुझे मेरेघर भेजदिया परदेशमें और मृत्युके मुखमें बचकर मेरे लौटनेपर मेरे पिताने सबवृत्तान्त जानकर बड़ा उत्सव किया ७० इसके उपरान्त कुछसमयके व्यतीतहोनेपर मैंने देखा कि उसी पुलिन्दकको पथिकोंके लूटनेके अपराधमें राजाने बँधवा मँगायाहै उसी समय अपने पितासे कहकर मैंने एकलाख मोहरें देनेकरके उस पुलिन्दकको राजाके यहाँसे फांसीसे बचाया इसप्रकार प्राणोंके बचानेका प्रत्युपकार करके अपने धर्म

लाकर बहुत प्रीति पूर्वक उसे रक्खा और कुछ दिनके उपरान्त उसको बहुत सत्कार पूर्वक बिदा किया वहभी अपना प्रेम युक्त हृदय मेरे पास रखकर अपने गांवको गया वहां मेरे प्रत्युपकारके निमित्त अपने पासकी कस्तूरी तथा मोती आदिकको न्यूनसमझकर बहुतसे गजमुक्ता लेनेके निमित्त हाथियों के मारने को हिमाचल पर्वतपर धनुषबाण लेकरगया हिमाचलपर घूमते २ उसे एक बड़ा सुन्दर ताल मिला उसमें बहुत से अनेक २ प्रकारके कमल फूलरहेथे और किनारेपर एकमहासुन्दर मन्दिर बनाहुआ था वहाँ यहशोचकर कि यहाँ हाथीपानीपीने आवेंगे पुलिन्दक छिपकर एकान्तमें बैठगया उसीसमय वहां एकबड़ी सुन्दर कन्या सिंहपर चढीहुई श्रीशिवजीका पूजन करनेको आई श्रीशिवजीका पूजन करने वाली कन्यकाभाव में वर्त्तमान दूसरी पार्वतीजीके समान उसकन्याको देखकर पुलिन्दकको बड़ा आश्चर्य्य हुआ और उसने शोचा कि यदि यहमनुष्यकी स्त्रीहोती तो सिंहपर कैसे सवारहोती और जो दिव्यस्त्रीहोती तो मुझसरीखोंकी दृष्टिगोचर कैसेहोती इससे यहि निश्चयहोताहै कि मेरे नेत्रोंके प्राक्तन पुण्योंकी परिणति (फल) मूर्त्ति धारणकरके आई है यदि इसके साथमैं अपने उसमित्रका विवाहक-राऊं तो बड़ाही उत्तम प्रत्युपकार उसके साथमेंहोजाय इससे इसकेपास जाकर इसके मनोभिलषित करके जाननेको उद्योगकरूं यहशोचकर पुलिन्दक उसके पासगया और वहकन्या भी छायामें बैठेहुए सिं-हपरसे उतरकर तालाबमें से कमल तोड़नेलगी ८५ पुलिन्दकभी उसकेपासजाकर प्रणामकरके खड़ा होगया तब कन्याने उसे अपूर्व्वअतिथिके स्नेहसे स्वागत पूछकर प्रसन्नकिया और पूछा कि तुमकौन हो और किसनिमित्त इसदुर्गमभूमि मे आयेहो उसके यहमधुरवचन सुनकर पुलिन्दक बोला कि मैं श्रीपार्वतीजीके चरणोंकासेवक शबरोंकाराजाहूं यहाँ गजमुक्ता लेने के निमित्त आयाहूं इससमय तुम्हें देखकर अपने प्राणदायक मित्र साहूकारकेपुत्र वसुदत्तकीयाद आगईहै सुन्दरी वहभी तुम्हारेही स-मानरूप और यौवनसे इससंसारके नेत्रोंका आनन्द देनेवाला अद्वितीय सुन्दरहै इससंसारमें वहकन्या धन्यहै जो मित्रता दान दया तथा धैर्य्यादि गुणोंके निधिरूप उसके पाणिको ग्रहणकरेगी जो यहतुम्हारी सुन्दर आकृति उससुन्दर पुरुषकेसाथ संयोगको न पावेगी तो कामका धनुष धारणकरनाही व्यर्थहै इसप्र-कार कामदेवके मोहनमन्त्रों के समान पुलिन्दकके वचनों को सुनकर उसका चित्तहरगया और काम देवसे प्रेरितहोकर पुलिंदकसे बोली कि तुम्हारा वह मित्रकहाँ है मुझेलाकर दिखलाओ उसके यहवचन सुनकर और उससे आज्ञालेकर पुलिन्दक वहाँसे अपने घरको आया और वहासे बहुत से मोती तथा कस्तूरी आदिक पदार्थोंको भारोंपर लदवाकर मेरे स्थानको आया मेरे यहाँ सबलोगों ने उसका बड़ा सत्कारकिया और जो २ पदार्थ लायाथा वहसब उसने मेरे पिताकी भेंटकरदिया इसप्रकार उत्सवसे उस दिनके व्यतीत होजानेपर रात्रिके समय एकान्तमें पुलिन्दकने कन्याके देखनेका सपूर्ण वृत्तान्त मुझे सुनाकर मुझसे कहा कि हे मित्रचलो वहींचलें यहसुनकर मैं उत्कण्ठित होकर उसी रात्रिको उसके संगचला प्रातःकाल मेरे पिताने मुझे पुलिन्दकके साथगयाहुआ सुनकर पुलिन्दकके प्रेमके विश्वास से धैर्य्य धारणकरलिया और पुलिन्दकने मार्गमें मेरे सपूर्ण कार्य्य करके क्रमसे मुझे हिमालयपर पहु-

चाया वहाँ सायंकालके समय उसतालाबपर पहुंचकर हमदोनोंने स्नानकिये और सुन्दर मधुरफलखाकर वहीं एकरात्रि व्यतीतकी लताओंके पुष्प जिसमें खिलेहुएहें भौंरे जहाँ सुन्दर गुंजार कररहे हैं शीतल मन्द सुगन्ध वायु जिसमें आरहीहै और औषधरूपी दीपक जिसमें जलरहेहैं ऐसा वहवन हमलोगोंको रात्रिके समय विश्राम करनेको रतिके निवासके समान मालूमहुआ १०४ इसके उपरान्त दूसरेदिन उस के देखनेकी इच्छासेमानो वारवार फड़कतेहुए दक्षिण नेत्रसे सूचित आगमनवाली और वारवारउत्कंठित होके उसी के मार्गमें जानेवाले मनसेमानो आगे चलकर लीगई वहकन्या वहाँ आई बड़ी २ जटावाले सिंहकी पीठपर वैठी हुई उसकन्याको शरदकालके मेघोंपर विराजमान चन्द्रमाकी कलाके समान मैंने देखा उससमय आश्चर्य्य उत्कण्ठा और भयसे उसेदेखकर मेराचित्तकैसाहुआ वह मैं नहींजानता इसके उपरान्त वह सिंहपरसे उतरकर फूलोंकोतोड तडागमें स्नानकरके तडागके किनारेपर वर्त्तमान श्रीशिवजीका पूजनकरनेलगी पूजनके अन्तमें पुलिन्दक उसकेपासगया और प्रणामकरके बोला कि हेसुन्दरी तुम्हारेयोग्य उस वरको मयहाँ लिवालायाहूं यदिआज्ञाहोय तो अभी बुलाकरदिखाऊं यहसुनकर उसने कहा कि दिखाओ तवपुलिन्दक मुझेवहाँसे बुलाकर उसके पासलेगया वहतिरछीदृष्टिसे प्रेमपूर्व्वक मुझे देखकर कामके वशीभूतहोकर पुलिन्दकसेबोली कि तुम्हारायहमित्र मनुष्यनहीं है मेरे ठगनेकेलिये कोई देवताआयाहै क्योंकि मनुष्यकी ऐसीआकृतिनहींहोसक्ती उसके यह वचनसुनकर उसे विश्वासदिलाने के लिये मैंनेकहा कि हेसुन्दरी मैं मनुष्यहीहूं सीधेजनकेसाथ छलकरनेसे क्याप्रयोजनहै मैं वलभीनगरमें रहनेवाले महाधननाम वैश्यका श्रीशिवजीके वरसेप्राप्तहुआ पुत्र हूं पुत्रकेनिमित्त श्रीशिवजीके प्रसन्न करने को तपकरतेहुए मेरे पितासे महादेवजीने प्रसन्नहोकर स्वप्नमेंकहा कि उठोतुम्हारे कोई महात्मापुत्र होगा और इसकावड़ावृत्तान्तहै उसकेकहनेसे कोईप्रयोजननहीं यहसुनकर मेरे पिताकी निद्राखुली तो समयपाकर मेराजन्महुआ और उन्होंने वसुदत्तमेरानाम रक्खा और शवरोंकास्वामी यह पुलिन्दक विपत्तिमें रक्षाकरनेवाला परममित्रमुझे विदेशमेंप्राप्तहुआथा यहमेरासम्पूर्ण वृत्तान्तहै इसप्रकारकहकर जब मैं निवृत्तहुआ तबवहकन्यालज्जासे नीचेमुखकरके बोली कि तुम्हाराकहना वहुतठीकहै गतरात्रिमें मैंने स्वप्नमें देखा कि मैं श्रीशिवजीका पूजनकरचुकीथी कि उससमय शिवजीनेकहा कि तुझेप्रात काल पति मिलेगा इस्सेतुम्हीं मेरे पतिहो और तुम्हारामित्र मेराभाई है इसप्रकार वचनरूपी अमृतोंसे मुझेप्रसन्न करके वहचुपहोगई १२३ इसकेउपरान्त विधिपूर्व्वक विवाहकरनेके लिये उस्सेसलाहकरके मैंने अपनेघर जानेकी मित्रसमेतइच्छाकी तवउसने सिंहको इशारेसे बुलाकरमुझसे कहा कि हे आर्यपुत्र तुमइसपर सवारहोजाओ मैंनेभी सिंहपरचढ़के उसस्त्रीको गोदीमें उठालिया और मित्रसमेतवहाँसे प्रसन्नतापूर्व्वक चला पुलिन्दकके वाणों से मारेगये हिरणोंकेमांसको खातेहुए हमसब लोग क्रमसे वलभीपुरी में पहुंचे वहाँमुझे उस कन्यासमेत सिंहपरसवार देखकर लोगोंने वड़ेआश्चर्य्यपूर्व्वक मेरे पितासे जाकरकहा और मेरे पिताभीहर्षसे आगेआकरसिंहसे उतरकर प्रणामकरतेहुए मुझेदेखकर आश्चर्य्यसमेत अत्यन्त प्रसन्न हुए और अत्यन्तसुन्दरी उसकन्याको प्रणामकरते देखकरमेरेयोग्य स्त्रीजानकर आनन्द में मगनहोगये

इसके उपरान्त हम सव लोगों को घरमे लेजाकर और सपूर्ण वृत्तान्तपूछकर मेरेपिताने पुलिन्दककी मित्रताकी वडी प्रशसा की और महाउत्सवक्रिया फिर ज्योतिषीकी आज्ञा से दूसरे दिन सपूर्ण वन्धुओं को वुलाकर उसकन्याकेसाथ मेराविवाहक्रिया मेरे विवाहके होजानेपर वह सिह सव के देखते २ दिव्य-वस्त्राभरणधारी दिव्यपुरुषहोगया यह देखकर लोगोंके अत्यन्त आश्चर्य्य युक्त होनेपर उसने प्रणामकर-के मुझ से कहा कि मै चित्रागदनाम विद्याधर हू और यह प्राणोंसेभी अधिकप्यारी मनोवतीनाम मेरी कन्याहै इसकोसदैव गोदीमें लेकर वनमें घूमताहुआ मैं एक समय श्रीगगाजी के तटपरपहुंचा वहॉत पस्वियोंके वहुतसे आश्रमोंको देखकर तपस्वियोंके उल्लघनके भयसे गगाजीके वीचमें होकर मैं चला भाग्यवशसे मेरीपुष्पोंकीमाला गगाजीके जल मे गिरपडी उसके गिरतेही जल के भीतरवैठेहुए नारद जीने एकाएकी उठकर उसमालाके पीठपर गिरने के अपराध से क्रोधकरके मुझे यह शापदिया कि हे पापीतू इस उद्दण्डता के कारण हिमालयपर्व्वत में जाकर सिंहहोगा और इसकन्याको पीठपरलिये २ घूमेगा फिर जिससमय मनुष्यके साथतेरी कन्याका विवाहहोगा तव तू उसे देखकर शापसे छूटजायगा इसप्रकार नारदमुनिसे शापदियागया मै हिमाचल मे सिंहहोकर सदैव श्रीशिवजीकी पूजाकरनेवाली इसकन्या को पीठपर धारण करतारहा इसके उपरान्त जिस प्रकार पुलिन्दक के यत्न से यह सम्पूर्ण कार्य्य सिद्धहुआ सो तो आपसव लोगोंको विदितही है अव मैं जाताहू मेराशाप छूटगया आप सव लोगोंका कल्याणहोय यहकहकर वह विद्याधर आकाशको उडगया १४४ तव इस आश्चर्य्य को देख कर सम्पूर्ण वान्धवलोग वडे प्रसन्नहुए और इसश्रेष्ठसम्बन्ध से प्रसन्नहोकर मेरे पिताने वडामहोत्सव किया (कोहिनिर्व्याजमित्राणा चरितचिन्तयिष्यति ॥ सुहृत्सुनैवतृप्यन्ति प्राणैरप्युपकृत्यये) निर्व्याज मित्रोंके चरित्रोंको कौनजानसक्ताहै जो मित्रोंकेसाथ प्राणोंसे भी उपकारकरके नहींतृप्तहोते है यह वात किसने पुलिन्दकके चरित्रको ध्यानकरके आश्चर्य्यपूर्व्वक नहींकही वहाकाराजा भी पुलिन्दकके उस वृत्तान्तको जानकर हमारे स्नेहसे उसपर अत्यन्त प्रसन्नहुआ और मेरे पिताने राजाको प्रसन्नजानकर वहुतसे रत्नोंकीभेट देकर पुलिन्दकको सम्पूर्णवनका राज्य दिलवादिया इसकेउपरान्त अपनी प्रिया म-नोवती और प्रियमित्र पुलिन्दकके साथमे कृतार्थहोकर सुखपूर्वक रहनेलगा और पुलिन्दकभी अपने देशकेस्नेहको छोडकर वहुधा मेरेहीघरमे रहनेलगा परस्पर उपकार करनेसे नहींतृप्त होतेहुए हमदोनों मित्रोंकासमय व्यतीतहोताथा १५२ थोडेदिनोंके उपरान्त मनोवतीमे मेरे पुत्रउत्पन्नहुआ वह पुत्र क्या था मानों सम्पूर्ण कुलके हृदयका उत्सव रूप धारणकरके वाहरआगया हिरण्यदत्तनाम वह पुत्र धीरे २ वडा और सम्पूर्ण विद्याओंकोपढकर योग्यहोगया तव मेरे पिताने उसका विधिपूर्व्वक व्याहकरवादिया यह सम्पूर्ण उत्सवकरके और जीवनके फलको परिपूर्ण जानके मेरे पिता मेरीमाता समेत श्रीभागीरथी गगाजीके तटपर शरीर त्यागकरनेको चलेगये तव पिताके शोकमे अत्यन्त व्याकुल मुझेजानकर व-न्धुओंने वहुतसमझाकर मुझे गृहस्थीकाभार धारण करवाया उससमय मनोवतीके मुग्ध (भोले) मुख-चन्द्रको देखकर और प्रियमित्र पुलिन्दकसे मिलकर मेराचित्त सावधानहुआ इसके उपरान्त सत्पुत्रमे

आनन्दयुक्त सुन्दरस्त्रीसे मनोहर और प्रियमित्रके समागमसे मेरे वह उत्तमदिन व्यतीतहुए समयपाकर जब मैं वृद्धहुआ तो वृद्धावस्थाने प्रीतिपूर्व्वक मानों मुझसे यह कहकर कि हेपुत्र क्या अब भी घर में रहोगे मेरी ठोढी पकडली तब मुझे शीघ्रही वैराग्य उत्पन्नहुआ और वनजानेकी इच्छासे मैंने कुटुम्ब का सम्पूर्णभार अपनेपुत्रपर रखदिया और स्त्रीसमेत मैं कालिंजर पर्व्वतपर चलागया मेरे स्नेहसे राज्य को त्यागकर मेरा प्रियमित्र पुलिन्दकभी मेरेपास चलाआया वहां जाकर मुझे अपने पूर्व्वजन्मकी और समाप्तहुए श्रीशिवजीके शापकी यादआगई वह सब मैंने पुलिन्दक और मनोवतीसे कहदिया इसके उपरान्त मनुष्य शरीरके त्यागकरनेकी इच्छासे मैंने यहीस्त्री और मित्र मुझको पूर्व्वजन्म में भी मिले और स्मरणभी बनारहे यह कहकर और हृदयमें श्री शिवजी का ध्यानकरके उस पर्व्वतपरसे स्त्री तथा मित्र समेत गिरकर शरीरका त्यागकिया १६५ वही मैं इसविद्याधरके कुलमें अपने पूर्व्वजन्मको स्मरण करताहुआ जीमूतवाहननाम से उत्पन्नहुआहूं और वह पुलिन्दक श्रीशिवजीकी कृपासे सिद्धोंके राजा विश्वावसुके पुत्र मित्रावसुनाम तुमहो और वह मनोवतीनाम मेरीस्त्री तुम्हारी-बहिन मलयवती नाम से उत्पन्नहुई इसप्रकार तुम हमारे पूर्व्वजन्मके मित्रहो और तुम्हारी बहिन हमारी पूर्व्वजन्मकी स्त्री है इससे इसकेसाथमें विवाहकरना योग्यही है परन्तु पहिलेजाकर हमारेमातापितासे कहो जब वहस्वीकार करलेंगे तब यह कार्य्यसिद्धहोगा इसप्रकार जीमूतवाहनसे सुनकर मित्रावसुने उसके मातापितासे जाकर अपना अभीष्टकहा जब उनलोगोंने उसकीबात स्वीकार करलीनी तो उसने अपने माता पितासे सब वृत्तान्तकहा वह भी जब उसकेमनोरथको सुनकर प्रसन्नहुए तबउसनेजाकर अपनी बहिनकेविवाह की तैयारीकरी और मलयवतीका विवाह जीमूतवाहनके साथ विधिपूर्व्वक करदिया उससमय विद्याधर सिद्ध और अनेक आकाशचारी देवयोनियोंका बडाउत्सवहुआ इसप्रकार विवाहकरके उस मलयाचलपर्व्वतपर जीमूतवाहन अपनी मलयवती स्त्रीसमेत बडेऐश्वर्य्यको भोगकरताहुआ रहनेलगा १७६ एकसमय जीमूतवाहन अपनेसाले मित्रावसुको साथलेकर समुद्रके किनारों की सैरकरनेको गया वहां जाकरदेखा कि एकयुवापुरुष उदासीन होकर आया है और हापुत्र २ हापुत्र कहकर रोतीहुई अपनी माताको लौटारहाहै उसीके साथमें एकदूसरापुरुष औरहै जिसने कि उसे एकबडीऊंची शिलाके पास जाकर छोडदियाहै यह देखकर जीमूतवाहनने उसउदासीन पुरुषसेपूछा कि तुम कौनहो क्या चाहते हो और तुम्हारीमाता क्यों शोक कररहीहै यह सुनकर उसनेकहा कि पूर्व्वसमय में कश्यपमुनि की स्त्री कद्रू और विनताने आपसमें कथाप्रसंगमें परस्पर यह विवादकिया कि सूर्य्यके घोडेकाले हैं अथवा श्वेत तब कद्रूने कहा कालेहैं और विनताने कहा श्वेत और यह प्रणकिया कि जो हारे वह दासीहोय तब कद्रूने एकान्तमें अपनेपुत्र सर्पो से कहकर विषकेफूत्कारोंसे सूर्य्यके घोडे काले करवादिये और विनता को उसीप्रकारके काले दिखलाकर छलसे उसेजीतकर अपनीदासी बनालिया ठीककहाहै स्त्रियोंकाडाह बडाही कठिनहोताहै १८४ यह सब वृत्तान्त जानकर विनताकेपुत्र गरुडने कद्रूको समझाकर अपनी माताको दासपनेसे छुटानेकी प्रार्थनाकी तब कद्रूकेपुत्र सर्पोनेसोचकर गरुडसेकहा किहेविनतेय देवता

इसके उपरान्त हम सब लोगों को घरमें लेजाकर और सपूर्ण वृत्तान्तपूछकर मेरेपिताने पुलिन्दककी मित्रताकी बडी प्रशसा की और महाउत्सवकिया फिर ज्योतिषीकी आज्ञा से दूसरे दिन सपूर्ण बन्धुओं को बुलाकर उसकन्याकेसाथ मेराविवाहकिया मेरे विवाहके होजानेपर वह सिह सब के देखते २ दिव्य-वस्त्राभरणधारी दिव्यपुरुषहोगया यह देखकर लोगोके अत्यन्त आश्चर्य्य युक्त होनेपर उसने प्रणामकर-के मुझ से कहा कि मै चित्रागदनाम विद्याधर हू और यह प्राणोंसेभी अधिकप्यारी मनोवतीनाम मेरी कन्याहै इसकोसदैव गोदीमें लेकर बनमें घूमताहुआ मै एक समय श्रीगगाजी के तटपरपहुंचा वहाँत पस्वियोंके बहुतसे आश्रमोंको देखकर तपस्वियोके उल्लघनके भयसे गगाजीके बीचमें होकर मैं चला भाग्यवशसे मेरीपुष्पोंकीमाला गगाजीके जल मे गिरपडी उसके गिरतेही जल के भीतरबैठेहुए नारद जीने एकाएकी उठकर उसमालाके पीठपर गिरने के अपराध से क्रोधकरके मुझे यह शापदिया कि हे पापीतू इस उद्दण्डता के कारण हिमालयपर्व्वत में जाकर सिंहहोगा और इसकन्याको पीठपरलिये २ घूमेगा फिर जिससमय मनुष्यके साथतेरी कन्याका विवाहहोगा तब तू उसे देखकर शापसे छूटजायगा इसप्रकार नारदमुनिसे शापदियागया मै हिमाचल मे सिहहोकर सदैव श्रीशिवजीकी पूजाकरनेवाली इसकन्या को पीठपर धारण करतारहा इसके उपरान्त जिस प्रकार पुलिन्दक के यत्न से यह सम्पूर्ण कार्य्य सिद्धहुआ सो तो आपसब लोगोको विदितही है अब मैं जाताहू मेराशाप छूटगया आप सब लोगोका कल्याणहोय यहकहकर वह विद्याधर आकाशको उडगया १४४ तब इस आश्चर्य्य को देख-कर सम्पूर्ण बान्धवलोग बडे प्रसन्नहुए और इसश्रेष्ठसम्बन्ध से प्रसन्नहोकर मेरे पिताने बडामहोत्सव किया (कोहिनिर्व्याजमित्राणा चरितचिन्तयिष्यति ॥ सुहृत्सुनैवतृप्यन्ति प्राणैरप्युपकृत्यये) निर्व्याज मित्रोंके चरित्रोंको कौनजानसक्ताहै जो मित्रोंकेसाथ प्राणोंसे भी उपकारकरके नहींतृप्तहोते हैं यह बात किसने पुलिन्दकके चरित्रको ध्यानकरके आश्चर्य्यपूर्व्वक नहींकही वहाकाराजा भी पुलिन्दकके उस वृत्तान्तको जानकर हमारे स्नेहसे उसपर अत्यन्त प्रसन्नहुआ और मेरे पिताने राजाको प्रसन्नजानकर बहुतसे रत्नोंकीभेट देकर पुलिन्दकको सम्पूर्णवनका राज्य दिलवादिया इसकेउपरान्त अपनी प्रिया म-नोवती और प्रियमित्र पुलिन्दकके साथमे कृतार्थहोकर सुखपूर्वक रहनेलगा और पुलिन्दकभी अपने देशकेस्नेहको छोडकर बहुधा मेरेहीघरमे रहनेलगा परस्पर उपकार करनेसे नहींतृप्त होतेहुए हमदोनो मित्रोंकासमय व्यतीतहोताथा १५२ थोडेदिनोके उपरान्त मनोवतीमें मेरे पुत्रउत्पन्नहुआ वह पुत्र क्या था मानों सम्पूर्ण कुलके हृदयका उत्सव रूप धारणकरके बाहरेआगया हिरण्यदत्तनाम वह पुत्र धीरे २ बडा और सम्पूर्ण विद्याओंकोपढकर योग्यहोगया तब मेरे पिताने उसका विधिपूर्व्वक व्याहकरवादिया यह सम्पूर्ण उत्सवकरके और जीवनके फलको परिपूर्ण जानके मेरेपिता मेरीमाता समेत श्रीभागीरथी गगाजीके तटपर शरीर त्यागकरनेको चलेगये तब पिताके शोकमे अत्यन्त व्याकुल मुझेजानकर ब-न्धुओंने बहुतसमझाकर मुझे गृहस्थीकाभार धारण करवाया उससमय मनोवतीके मुग्ध (भोले) मुख चन्द्रको देखकर और प्रियमित्र पुलिन्दकसे मिलकर मेराचित्त सावधानहुआ इसके उपरान्त सत्पुत्रमे

मोहहोताहै तो आज मैं गरुडको अपनाशरीरदेकर तुम्हें बचाऊंगा हे मित्र शोकमतकरो जीमूतवाहनके यह वचनसुनकर शङ्खचूडने धैर्य्यधारणकरके यह वचनकहा कि ईश्वर न करे ऐसाहोय हे धीर अब ऐसा मतकहना काचकेनिमित्त मोतीकीहानिकरना उचितनहीं मैं ऐसाकरके कुलकाकलङ्की नहींहोऊंगा इस प्रकार जीमूतवाहनसेकहकर और क्षणभरमें गरुडके आनेका समयजानकरके शङ्खचूड समुद्रके तटपर वर्त्तमान श्रीगोकर्णनाम शिवजीको अन्तसमयमें नमस्कारकरनेकोगया २१८ उसके चलेजानेपर अत्यन्तदयालु जीमूतवाहननेजाना कि उसके बचानेका अवसरमुझेमिला और शीघ्रही उसबातको विस्मृतसीकरके युक्तिपूर्व्वक किसी कार्य्य के बहानेसे मित्रावसुको अपनेघरभेजदिया उससमय निकटआये हुए गरुडके पङ्खोंकी वायुकेवेगसे वहाकी पृथ्वी जीमूतवाहनके सत्वके देखनेके आश्चर्य्य से मानोंकाप उठी उस भूकम्पसे गरुडको आतेहुएजानके परमदयालु जीमूतवाहन उस वधशिलापर चढगया उसी क्षणमें अपनीछायासे आकाशको आच्छादितकरतेहुए गरुडजी चोंचमारकर जीमूतवाहनको उठालेगये और जिसके शरीरसे रुधिरटपकरहाहै जिसकी चूडामणि उखडकर पृथ्वीपरगिरपडी है ऐसे जीमूतवाहन को पर्व्वतके शिखरपर लेजाकरखानेलगे उससमय आकाशसे पृथ्वीपर पुष्पोंकी वृष्टिहुई और उसेदेखकर गरुडको आश्चर्य्यहुआ कि यहक्या बातहै यहा तो गरुडजी जीमूतवाहनको खारहे थे और वहागोकर्ण नाम शिवजीको नमस्कारकरके लौटेहुए शङ्खचूडने वध्यशिलापर पडाहुआ रुधिरदेखा यह देखकरकहा कि हाय मुझेधिक्कारहै मेरे लिये उस महात्माने शरीरदेदिया तो इससमय गरुड उसे कहालेगयेहोंगे जल्दी से ढूढू कदाचित् मिलजाय यह शोचकर वहउसरुधिरकी धारको देखताहुआचला इसीबीचमें गरुडने जीमूतवाहनको प्रसन्नदेखकर भक्षणकरनात्यागकर आश्चर्य्य पूर्व्वक शोचा कि क्या यह कोई औरही है जो मुझसे भक्षणकियाजाना भी दुःखके सिवाय प्रसन्नहोरहाहै इसप्रकार शोचतेहुए गरुडजी से जीमूतवाहन अपने अभीष्टको सिद्धकरने के लिये बोला कि हे पक्षिराज मेरे शरीरमें अभीरुधिर और मास है तुमक्यों विनातृप्तहुएही भोजनसे निवृत्तहोगयेहो यहसुनकर गरुडने बहुत आश्चर्य्ययुक्तहोकर कहा कि मानो तुम सर्प तो नहींहो बताओ कौनहो यह सुनकर जीमूतवाहनने कहा कि सर्पहीहूं तुम अपने कामकोकरो (आरब्धाह्यसमाप्तेन किंधीरैस्त्यज्यतेक्रिया) क्या धीरलोग कार्य्यको प्रारम्भकरके बिना समाप्तकियेही छोडदेते हैं जिससमय जीमूतवाहन यह कहरहाथा उसीसमय शङ्खचूडने दूरसे पुकारकर कहा कि हे गरुड यह सर्पनहीं है तुम्हारा भक्ष्यसर्प मैं हूं तुम इसे छोडदो यह तुमको कैसा अयोग्यभ्रम हुआहै यह सुनकर गरुडको तो बडाभ्रमहुआ और जीमूतवाहनको अपने मनोरथ के न होनेसे खेदहुआ तब परस्परकी बातोंसे जीमूतवाहनको विद्याधरोंका स्वामीजानकर गरुडजीको अज्ञानतासे उसकेखाने का बडासन्तापहुआ कि अरेमुझपापीने यहबडाही अधमकार्य्यकिया अथवा कुमार्गमें चलनेवालोंको पापसुलभहीहोते हैं एकयही महात्मा प्रशंसाकरनेके योग्यहै जिसने परायेनिमित्त प्राणदेकर ममतारूपी मोहमें पडेहुए सम्पूर्णको तुच्छकरदिया २२० इसप्रकार विचारकरके पापसेछूटनेके लिये अग्निमेंप्रवेश करनेकी इच्छाकरतेहुए गरुडसे जीमूतवाहनने कहा कि हे पक्षीन्द्र क्यों दुःखीहोतेहो जो तुम सत्य २ ही

लोगोंने समुद्रके मथनेका प्रारंभ कियाहै वहांसे अमृत लाकर जो हमको देतो अपनी माताको लेजाओ क्योंकि तुम वडे बलवान्हो सर्पोंके यहबचन सुनकर गरुडने क्षीरसमुद्रमें जाकर अमृतके लिये बडाही पुरुषार्थ दिखाया गरुडके पराक्रमको देखकर प्रसन्नहुए भगवान्विष्णुनेकहा कि तुम्हारे ऊपर मैं प्रसन्नहूं तुम कोई वरमांगो भगवान्के वचन सुनकर माताके दासीभाव से क्रुद्धहुए गरुडने यह वरमांगा कि सर्प हमारे भक्ष्यहोजायँ भगवान्नेकहा ऐसाही होगा इसप्रकार भगवान्से वरपाकर और अपने पराक्रम से अमृतलेकर जब गरुडचलनेलगे तब इन्द्रने सबवृत्तान्त जानकर उनसेकहा कि हेपक्षीन्द्र ऐसाउपायकरना जिससे मूर्ख सर्प अमृत न खासकें और मैं उनसे लेआऊं इन्द्रके वचनको स्वीकार करके विष्णुभगवान्के वरदानसे वडे प्रचंड गरुडजी अमृतके कलशको लेकर सर्पों के पासआये और वरके प्रभाव से डरेहुए मूर्ख सर्पों से बोले कि यह अमृत हम लेआये हैं तुम हमारी माताको छोडकर इसकोलो और जो तुम्हें सन्देहहोवे तो मैं इसे कुशोंपर रक्खे देताहूं और अपनी माताको छुडाकर लिये जाताहूं तुम इसेलेलेना सर्पों ने गरुडकी बात स्वीकार करलीनी तब गरुड ने पवित्र कुशासनपर अमृतका कलश रखदिया और सर्पोंने उनकी माताको छोडदिया इसप्रकार अपनी माताको दासीभाव से छुटाकर गरुड जीके चले जानेपर जैसेही सर्प निस्सन्देह होकर अमृतको लेने लगे वैसेही इन्द्र वहां आकर अपनी शक्ति से सर्पों को मोहित करके कुशासनपरसे अमृतके कलशको हरलेगया तब सर्प अत्यन्त दुःखित होके उन कुशोंको इसलोभसे चाटनेलगे कि कदाचित् कुछ अमृतइनमें लगगयाहोगा इससे जिह्वा के कटजानेसे वह नाहकही द्विजिह्वताको प्राप्तहोगये ठीकहै (हास्यादृतेकिमन्यत्स्यादतिलौल्यवताफलम्) अत्यन्त लोभियोंको हँसीकेसिवाय और क्या फलहोनाचाहिये २०० इसके उपरान्त सर्पोंको अमृत तो नहींमिला परन्तु गरुडने वैरमानकर विष्णुभगवान्के वरसे वहां आनकर उनका खानाप्रारम्भकरदिया गरुडके आने से पातालमें द्विमुहे विषरहितसर्प तो निर्जीवहोजाते थे और गर्भिणीनागिनियों के गर्भ गिरपडते थे इसप्रकार सर्पोंको नष्टहोते देखकर वासुकीने विचारकरके वडेबलवान् गरुडसे प्रार्थनाकरके यहनियम करके कहा कि हे पक्षीन्द्र एकसर्प हम तुम्हारेलिये समुद्रकेतटके पर्वतपर रोज भेजाकरेंगे आप पातालमें न आयाकरिये क्योंकि आपके यहांपर आनेसे बहुतसे सर्प एकसाथही नष्टहोजाते हैं इससे हमारे और आप दोनोंके स्वार्थकीहानिहोती है वासुकी के इसवचनको स्वीकारकरके वासुकीके भेजेहुए एकसर्पको रोजयहां गरुडखानेलगे इसप्रकारसे यहां बहुतसेसर्प नाशहुएहैं मैं शङ्खचूडनाम सर्पहूं और आज मेरीबारी है इसीसे मैं सर्पराजकी आज्ञासे गरुडके भोजनकेलिये इस वध्यशिलापरआयाहूं और यहीकारणहै कि मेरी माता अत्यन्त शोककररही है उसके यहवचनसुनकर जीमूतवाहनने बहुत दुःखित होकर कहा कि सब परमेश्वर कुशल करेंगे और यहभी कहा कि सर्पों के राजा वासुकीवडेहीनिस्सत्वहैं जो कि अपनेही हाथमें अपनी प्रजाको शत्रुकीभेटकरते हैं उस नपुंसकने पहले अपने आपकोही गरुडको न देकर अपने वंशकाक्षयदेखना स्वीकारकिया कश्यपजी से उत्पन्नहोकर गरुडभी कैसापापकरते हैं ठीकहै (देहमात्रकृतेमोहःकीदृग्गोमहतामपि) महात्मालोगों को भी केवल शरीरही के निमित्त कैसा

मोहहोताहै तो आज मैं गरुडको अपनाशरीरदेकर तुम्हें बचाऊंगा हे मित्र शोकमतकरो जीमूतवाहनके यह वचनसुनकर शङ्खचूडने धैर्य्यधारणकरके यह वचनकहा कि ईश्वर न करे ऐसाहोय हे वीर अब ऐसा मतकहना काचकेनिमित्त मोतीकीहानिकरना उचितनहीं मैं ऐसाकरके कुलकाकलङ्की नहींहोऊंगा इस प्रकार जीमूतवाहनसेकहकर और क्षणभरमें गरुडके आनेका समयजानकरके शङ्खचूड समुद्रके तटपर वर्तमान श्रीगोकर्णनाम शिवजीको अन्तसमयमें नमस्कारकरनेकोगया ११८ उसके चलेजानेपर अत्यन्तदयालु जीमूतवाहननेजाना कि उसके बचानेका अवसरमुझेमिला और शीघ्रही उसबातको विस्मृतसीकरके युक्तिपूर्व्वक किसी कार्य्य के बहानेमे मित्रावसुको अपनेघरभेजदिया उससमय निकटआये हुए गरुडके पङ्खोंकी वायुकेवेगसे वहांकी पृथ्वी जीमूतवाहनके सत्वके देखनेके आश्चर्य्य से मानोंकांप उठी उस भूकम्पसे गरुडको आतेहुएजानके परमदयालु जीमूतवाहन उस वध्यशिलापर चढगया उसी क्षणमें अपनीछायामे आकाशको आच्छादितकरतेहुए गरुडजी चोंचमारकर जीमूतवाहनको उठालेगये और जिसके शरीरसे रुधिरटपकरहाहै जिसकी चूडामणि उखडकर पृथ्वीपरगिरपडी है ऐसे जीमूतवाहन को पर्व्वतके शिखरपर लेजाकरखानेलगे उससमय आकाशसे पृथ्वीपर पुष्पोंकी वृष्टिहुई और उसेदेखकर गरुडको आश्चर्य्यहुआ कि यहक्या बातहै यहां तो गरुडजी जीमूतवाहनको खारहे थे और वहांगोकर्ण नाम शिवजीको नमस्कारकरके लौटेहुए शङ्खचूडने वध्यशिलापर पडाहुआ रुधिरदेखा यह देखकरकहा कि हाय मुझेधिक्कारहै मेरे लिये उस महात्माने शरीरदेदिया तो इससमय गरुड उसे कहांलेगयेहोंगे जल्दी से ढूंढूं कदाचित् मिलजाय यह शोचकर वहउसरुधिरकीधारको देखताहुआचला इसीबीचमें गरुड़ने जीमूतवाहनको प्रसन्नदेखकर भक्षणकरनात्यागकर आश्चर्य्य पूर्व्वक शोचा कि क्या यह कोई औरही है जो मुझसे भक्षणकियाजाता भी दुःखके सिवाय प्रसन्नहोरहाहै इसप्रकार शोचतेहुए गरुडजी से जीमूतवाहन अपने अभीष्टको सिद्धकरने के लिये बोला कि हे पक्षिराज मेरे शरीरमें अभीरुधिर और मांस है तुमक्यों विनातृप्तहुएही भोजनसे निवृत्तहोगयेहो यहसुनकर गरुडने बहुत आश्चर्य्ययुक्तहोकर कहा कि साधो तुम सर्प तो नहींहो बताओ कौनहो यह सुनकर जीमूतवाहनने कहा कि सर्पहीहूं तुम अपने कामकोकरो (आरब्धाह्यसमाप्तैव किंधीरैस्त्यज्यतेक्रिया) क्या धीरलोग कार्य्यको प्रारम्भकरके विना समाप्तकियेही छोडदेते हैं जिससमय जीमूतवाहन यह कहरहाथा उसीसमय शङ्खचूडने दूरसे पुकारकर कहा कि हे गरुड यह सर्पनहीं है तुम्हारा भक्ष्यसर्प मैं हूं तुम इसे छोडदो यह तुमको कैसा अयोग्यभ्रम हुआहै यह सुनकर गरुडको तो बडाभ्रमहुआ और जीमूतवाहनको अपने मनोरथ के न होनेमे खेदहुआ तब परस्परकी बातोंमे जीमूतवाहनको विद्याधरोंका स्वामीजानकर गरुडजीको अज्ञानतासे उसकेखाने का बडासन्तापहुआ कि अरेमुझपापीने यहबडाही अधमकार्य्यकिया अथवा कुमार्गमें चलनेवालोंको पापसुलभहीहोते हैं एकयही महात्मा प्रशंसाकरनेके योग्यहै जिसने परायेनिमित्त प्राणदेकर ममताके मोहमे पडेहुए सम्पूर्णको तुच्छकरदिया १२० इसप्रकार विचारकरके पापसेछूटनेके लिये अग्निमेंप्रवेश करनेकी इच्छाकरतेहुए गरुडसे जीमूतवाहनने कहा कि हे पक्षीन्द्र क्यों दुःखीहोतेहो जो तुम सत्यही

लोगोंने समुद्रके मथनेका प्रारंभ कियाहै वहांसे अमृत लाकर जो हमको दोतो अपनी माताको लेजाओ क्योंकि तुम बड़े बलवान्हो सर्पोंके यहबचन सुनकर गरुडने क्षीरसमुद्रमे जाकर अमृतके लिये बड़ाही पुरुषार्थ दिखाया गरुडके पराक्रमको देखकर प्रसन्नहुए भगवान्विष्णुनेकहा कि तुम्हारे ऊपर मैं प्रसन्नहूं तुमकोई वरमांगो भगवान्के वचन सुनकर माताके दासीभाव से क्रुद्धहुए गरुडने यह वरमांगा कि सर्प हमारे भक्ष्यहोजायँ भगवान्नेकहा ऐसाही होगा इसप्रकार भगवान्से वरपाकर और अपने पराक्रम से अमृतलेकर जब गरुडचलनेलगे तब इन्द्रने सववृत्तान्त जानकर उनसे कहा कि हेपक्षीन्द्र ऐसाउपायकरना जिससे मूर्ख सर्प अमृत न खासके और मैं उनसे लेआऊं इन्द्रके वचनको स्वीकार करके विष्णुभगवान्के वरदानसे बड़े प्रचंड गरुडजी अमृतके कलशको लेकर सर्पों के पासआये और वरके प्रभाव से डरेहुए मूर्ख सर्पों से बोले कि यह अमृत हम लेआयेहैं तुम हमारी माताको छोड़कर इसकोलो और जो तुम्हें सन्देहहोवे तो मैं इसे कुशोंपर रक्खे देताहूं और अपनी माताको छुड़ाकर लिये जाताहूं तुम इसेलेलेना सर्पों ने गरुडकी बात स्वीकार करलीनी तब गरुड ने पवित्र कुशासनपर अमृतका कलश रखदिया और सर्पोंने उनकी माताको छोड़दिया इसप्रकार अपनी माताको दासीभाव से छुंटाकर गरुड जीके चले जानेपर जैसेही सर्प निस्सन्देह होकर अमृतको लेने लगे वैसेही इन्द्र वहां आकर अपनी शक्ति से सर्पों को मोहित करके कुशासनपरसे अमृतके कलशको हरलेगया तब सर्प अत्यन्त दुःखित होके उन कुशोंको इसलोभसे चाटनेलगे कि कदाचित् कुछ अमृतइनमें लगगयाहोगा इससे जिह्वा के कटजानेसे वह नाहकही द्विजिह्वताको प्राप्तहोगये ठीकहै (हास्याद्दतेकिमन्यत्स्यादतिलौल्यवताफलम्) अत्यन्त लोभियोंको हँसीकेसिवाय और क्या फलहोनाचाहिये २०० इसके उपरान्त सर्पोंको अमृत तो नहींमिला परन्तु गरुडने वैरमानकर विष्णुभगवान्के वरसे वहां आनकर उनका खानाप्रारम्भकरदिया गरुडके आने से पातालमें द्विमुहे विषरहितसर्प तो निर्जीवहोजाते थे और गर्भिणीनागिनियो के गर्भ गिरपड़ते थे इसप्रकार सर्पोंको नष्टहोते देखकर वासुकीने विचारकरके बड़ेबलवान् गरुडसे प्रार्थनाकरके यहनियमकरके कहा कि हे पक्षीन्द्र एकसर्प हम तुम्हारेलिये समुद्रकेतटके पर्व्वतपर रोज भेजाकरेंगे आप पातालमें न आयाकरिये क्योंकि आपके यहांपर आनेसे बहुतसे सर्प एकसाथही नष्टहोजाते हैं इससे हमारे और आप दोनोंके स्वार्थकीहानिहोती है वासुकी के इसवचनको स्वीकारकरके वासुकीके भेजेहुए एकसर्पको रोजयहां गरुडखानेलगे इसप्रकारसे यहां बहुतसेसर्प नाशहुएहैं मैं शङ्खचूडनाम सर्पहूं और आज मेरीबारी है इसीसे मैं सर्पराजकी आज्ञासे गरुडके भोजनकेलिये इस वध्यशिलापरआयाहूं और यहीकारणहै कि मेरी माता अत्यन्त शोककररही है उसके यहवचनसुनकर जीमूतवाहनने बहुत दुःखित होकर कहा कि सब परमेश्वर कुशलकरेंगे और यहभीकहा कि सर्पों के राजा वासुकीबड़ेहीनिस्सत्वहै जो कि अपनेही हाथसे अपनी प्रजाको शत्रुकीभेटकरते हैं उस नपुंसकने पहले अपने आपकोही गरुडको न देकर अपने वंशकाभयदेखना स्वीकारकिया कश्यपजी से उत्पन्नहोकर गरुडभी कैसापापकरते हैं ठीकहै (देहमात्रकृतेमोहःकीदृशोमहतामपि) महात्मालोगों को भी केवल शरीरही के निमित्त कैसा

मोहहोताहै तो आज मैं गरुडको अपनाशरीरदेकर तुम्हें बचाऊंगा हे मित्र शोकमतकरो जीमूतवाहनके यह वचनसुनकर शङ्खचूडने धैर्य्यधारणकरके यह वचनकहा कि ईश्वर न करे ऐसाहोय हे वीर अब ऐसा मत कहना काचकेनिमित्त मोतीकीहानिकरना उचितनहीं मैं ऐसाकरके कुलकाकलकी नहींहोऊंगा इस प्रकार जीमूतवाहनसे कहकर और क्षणभरमें गरुडके आनेका समयजानकरके शङ्खचूड समुद्रके तटपर वर्तमान श्रीगोकर्णनाम शिवजीको अन्तसमयमें नमस्कारकरनेकोगया १८ उसके चलेजानेपर अत्यन्तदयालु जीमूतवाहनने जाना कि उसके बचानेका अवसरमुझेमिला और शीघ्रही उसबातको विस्मृतसीकरके युक्तिपूर्वक किसी कार्य्य के वहानेसे मित्रावसुको अपनेघरभेजदिया उससमय निकटआये हुए गरुडके पङ्खोंकी वायुकेवेगसे वहाकी पृथ्वी जीमूतवाहनके सत्वके देखनेके आश्चर्य्य से मानोंकांप उठी उस भूकम्पसे गरुडको आतेहुएजानके परमदयालु जीमूतवाहन उस वध्यशिलापर चढगया उसी क्षणमें अपनीछायासे आकाशको आच्छादितकरतेहुए गरुडजी चोंचमारकर जीमूतवाहनको उठालेगये और जिसके शरीरसे रुधिरटपकरहाहै जिसकी चूडामणि उखडकर पृथ्वीपरगिरपडी है ऐसे जीमूतवाहन को पर्वतके शिखरपर लेजाकरखानेलगे उससमय आकाशसे पृथ्वीपर पुष्पोंकी वृष्टिहुई और उसेदेखकर गरुडको आश्चर्यहुआ कि यहक्या बातहै यहा तो गरुडजी जीमूतवाहनको खारहे थे और वहागोकर्ण नाम शिवजीको नमस्कारकरके लौटेहुए शङ्खचूडने वध्यशिलापर पडाहुआ रुधिरदेखा यह देखकरकहा कि हाय मुझेधिक्कारहै मेरे लिये उस महात्माने शरीरदेदिया तो इससमय गरुड उसे कहालेगयेहोंगे जल्दी से ढूंढू कदाचित् मिलजाय यह शोचकर वहउसरुधिरकीधारको देखताहुआचला इसीबीचमें गरुड़ने जीमूतवाहनको प्रसन्नदेखकर भक्षणकरनात्यागकर आश्चर्य्य पूर्वक शोचा कि क्या यह कोई औरही है जो मुझसे भक्षणकियाजाता भी दुःखके सिवाय प्रसन्नहोरहाहै इसप्रकार शोचतेहुए गरुडजी से जीमूत वाहन अपने अभीष्टको सिद्धकरने के लिये बोला कि हे पक्षिराज मेरे शरीरमें अभीरुधिर और मास है तुमक्यों विनातृप्तहुएही भोजनसे निवृत्तहोगयेहो यहसुनकर गरुडने बहुत आश्चर्यमुक्तहोकर कहा कि साधो तुम सर्प तो नहींहो बताओ कौनहो यह सुनकर जीमूतवाहनने कहा कि सर्पहीहूं तुम अपने कामकोकरो (आरम्भाह्यसमाप्तेन किंधीरैस्त्यज्यतेक्रिया) क्या धीरलोग कार्य्यको प्रारम्भकरके विना समाप्तकियेही छोडदेते हैं जिससमय जीमूतवाहन यह कहरहाथा उसीसमय शङ्खचूडने दूरसे पुकारकर कहा कि हे गरुड यह सर्पनहीं है तुम्हारा भक्ष्यसर्प मैं हूं तुम इसे छोडदो यह तुमको कैसा अयोग्यभ्रम हुआहै यह सुनकर गरुडको तो बडाभ्रमहुआ और जीमूतवाहनको अपने मनोरथ के न होनेसे खेदहुआ तब परस्परकी बातोंसे जीमूतवाहनको विद्याधरोंका स्वामीजानकर गरुडजीको अज्ञानतासे उसकेखाने का बडासन्तापहुआ कि अरेमुझपापीने यहबडाही अधमकार्य्यकिया अथवा कुमार्गमें चलनेवालोंको पापसुलभहीहोते हैं एकयही महात्मा प्रशंसाकरनेके योग्यहै जिसने परायेनिमित्त प्राणदेकर ममताके मोहमें पडेहुए सम्पूर्णको तुच्छकरदिया २० इसप्रकार विचारकरके पापमिटानेके लिये अग्निमें प्रवेश करनेकी इच्छाकरतेहुए गरुडसे जीमूतवाहनने कहा कि हे पक्षीन्द्र क्यों दुःखीहोतेहो जो तुम सर्पसे डरते

लोगोंने समुद्रके मथनेका प्रारंभ कियाहै वहासे अमृत लाकर जो हमको दोतो अपनी माताको लेजाओ क्योंकि तुम वडे बलवान्हो सर्पोके यहबचन सुनकर गरुडने क्षीरसमुद्रमें जाकर अमृतके लिये बडाही पुरुषार्थ दिखाया गरुडके पराक्रमको देखकर प्रसन्नहुए भगवान्विष्णुनेकहा कि तुम्हारे ऊपर मै प्रसन्नहू तुमकोई वरमागो भगवान्के वचन सुनकर माताके दासीभाव से क्रुद्धहुए गरुडने यह वरमागा कि सर्प हमारे भक्ष्यहोजायँ भगवान्नेकहा ऐसाही होगा इसप्रकार भगवान्से वरपाकर और अपने पराक्रम से अमृतलेकर जब गरुडचलनेलगे तब इन्द्रने सबवृत्तान्त जानकर उनसेकहा कि हेपक्षीन्द्र ऐसाउपायकरना जिससे मूर्ख सर्प अमृत न खासके और मैं उनसे लेआऊ इन्द्रके वचनको स्वीकार करके विष्णुभगवान्के वरदानसे वडे प्रचंड गरुडजी अमृतके कलशको लेकर सर्पों के पासआये और वरके प्रभाव से डरेहुए मूर्ख सर्पों से बोले कि यह अमृत हम लेआये है तुम हमारी माताको छोडकर इसकोलो और जो तुम्हे सन्देहहोवे तो मै इसे कुशोपर रक्खे देताहू और अपनी माताको छुडाकर लिये जाताहू तुम इसेलेलेना सर्पो ने गरुडकी बात स्वीकार करलीनी तब गरुड ने पवित्र कुशासनपर अमृतका कलश रखदिया और सर्पोंने उनकी माताको छोडदिया इसप्रकार अपनी माताको दासीभाव से छुटाकर गरुड जीके चले जानेपर जैसेही सर्प निस्सन्देह होकर अमृतको लेने लगे वैसेही इन्द्र वहा आकर अपनी शक्ति से सर्पो को मोहित करके कुशासनपरसे अमृतके कलशको हरलेगया तब सर्प अत्यन्त दुःखित होके उन कुशोंको इसलोभसे चाटनेलगे कि कदाचित् कुछ अमृतइनमें लगगयाहोगा इससे जिह्वा के फटजानेसे वह नाहकही द्विजिह्वताको प्राप्तहोगये ठीकहै (हास्याहतेकिमन्यत्स्यादतिलौल्यवताफलम्) अत्यन्त लोभियोंको हँसीकेसिवाय और क्या फलहोनाचाहिये २०० इसके उपरान्त सर्पोंको अमृत तो नहींमिला परन्तु गरुडने वैरमानकर विष्णुभगवान्केवरसे वहा आनकर उनका खानाप्रारम्भकरदिया गरुडके आने से पातालमे द्विमुहे विषरहितसर्प तो निर्जीवहोजाते थे और गर्भिणीनागिनियो के गर्भ गिरपडते थे इसप्रकार सर्पोको नष्टहोते देखकर वासुकीने बिचारकरके वडेबलवान् गरुडसे प्रार्थनाकरके यहनियमकरके कहा कि हे पक्षीन्द्र एकसर्प हम तुम्हारेलिये समुद्रकेतटके पर्व्वतपर रोज भेजाकरेंगे आप पातालमे न आयाकरिये क्योकि आपके यहापर आनेसे बहुतसे सर्प एकसाथही नष्टहोजाते हैं इससे हमारे और आप दोनोके स्वार्थकीहानिहोती है वासुकी के इसवचनको स्वीकारकरके वासुकीके भेजेहुए एकसर्पको रोजयहा गरुडखानेलगे इसप्रकारसे यहा बहुतसेसर्प नाशहुएहैं मै शङ्खचूडनाम सर्पहूं और आज मेरीवारी है इसीसे मैं सर्पराजकी आज्ञासे गरुडके भोजनकेलिये इस वध्यशिलापरआयाहू और यहीकारणहै कि मेरी माता अत्यन्त शोककररही है उसके यह वचनसुनकर जीमूतवाहनने वहुत दुःखित होकर कहा कि सब परमेश्वर कुशलकरेंगे और यहभीकहा कि सर्पो के राजा वासुकीवडेहीनिस्सत्वहै जो कि अपनेही हाथमे अपनी प्रजाको शत्रुकीभेटकरते है उस नपुंसकने पहले अपने आपकोही गरुडको न देकर अपने वंशकाक्षयदेखना स्वीकारकिया कश्यपजी से उत्पन्नहोकर गरुडभी कैसापापकरते हैं ठीकहै (देहमात्रकृतेमोहःकीदृग्गोमहतामपि) महात्मालोगोंको भी केवल शरीरही के निमित्त कैसा

मोहहोताहै तो आज में गरुडको अपनाशरीरदेकर तुम्हें बचाऊंगा हे मित्र शोकमतकरो जीमूतवाहनके यह वचनसुनकर शङ्खचूडने धैर्य्यधारणकरके यह वचनकहा कि ईश्वर न करे ऐसाहोय हे वीर अब ऐसा मत कहना काचकेनिमित्त मोतीकीहानिकरना उचितनहीं में ऐसाकरके कुलकाकलंकी नहींहोऊंगा इस प्रकार जीमूतवाहनसेकहकर और क्षणभरमें गरुडके आनेका समयजानकरके शङ्खचूड समुद्रके तटपर वर्तमान श्रीगोकर्णनाम शिवजीको अन्तसमयमें नमस्कारकरनेकोगया १९८ उसके चलेजानेपर अत्यन्तदयालु जीमूतवाहननेजाना कि उसके बचानेका अवसरमुझेमिला और शीघ्रही उसबातको विस्मृतसीकरके युक्तिपूर्वक किसी कार्य के बहानेसे मित्रावसुको अपनेघरभेजदिया उससमय निकटआये हुए गरुडके पङ्खोंकी वायुकेवेगसे वहांकी पृथ्वी जीमूतवाहनके सत्वके देखनेके आश्चर्य्य से मानोंकांप उठी उस भूकम्पसे गरुडको आतेहुएजानके परमदयालु जीमूतवाहन उस वध्यशिलापर चढगया उसी क्षणमें अपनीछायासे आकाशको आच्छादितकरतेहुए गरुडजी चोंचमारकर जीमूतवाहनको उठालेगये और जिसके शरीरसे रुधिरटपकरहाहै जिसकी चूडामणि उखडकर पृथ्वीपरगिरपडी है ऐसे जीमूतवाहन को पर्व्वतके शिखरपर लेजाकरखानेलगे उससमय आकाशसे पृथ्वीपर पुष्पोंकी वृष्टिहुई और उसेदेखकर गरुडको आश्चर्य्यहुआ कि यहक्या बातहै यहां तो गरुडजी जीमूतवाहनको खारहे थे और महागोकर्ण नाम शिवजीको नमस्कारकरके लौटेहुए शङ्खचूडने वध्यशिलापर पडाहुआ रुधिरदेखा यह देखकरकहा कि हाय मुझेधिक्कारहै मेरे लिये उस महात्माने शरीरदेदिया तो इससमय गरुड उसे कहांलेगयेहोंगे जल्दी से ढूंढूं कदाचित् मिलजाय यह शोचकर वहउसरुधिरकीधारको देखताहुआचला इसीबीचमें गरुड़ने जीमूतवाहनको प्रसन्नदेखकर भक्षणकरनात्यागकर आश्चर्य्य पूर्व्वक शोचा कि क्या यह कोई औरही है जो मुझसे भक्षणकियाजाता भी इसके सिवाय प्रसन्नहोरहाहै इसप्रकार शोचतेहुए गरुडजी से जीमूतवाहन अपने अभीष्टको सिद्धकरने के लिये बोला कि हे पक्षिराज मेरे शरीरमें अभीरुधिर और मांस है तुमक्यों विनातृप्तहुएही भोजनसे निवृत्तहोगयेहो यहसुनकर गरुडने बहुत आश्चर्य्ययुक्तहोकर कहा कि मानो तुम सर्प तो नहींहो बताओ कौनहो यह सुनकर जीमूतवाहनने कहा कि सर्पहीहूं तुम अपने कामकोकरो (आरब्धाह्यसमाप्तेव किंधीरैस्त्यज्यतेक्रिया) क्या धीरलोग कार्य्यको प्रारम्भकरके विना समाप्तकियेही छोडदेते हैं जिससमय जीमूतवाहन यह कहरहाथा उसीसमय शङ्खचूडने दूरसे पुकारकर कहा कि हे गरुड यह सर्पनहीं है तुम्हारा भक्ष्यसर्प मैं हूं तुम इसे छोडदो यह तुमको कैसा अयोग्यभ्रम हुआहै यह सुनकर गरुडको तो बडाभ्रमहुआ और जीमूतवाहनको अपने मनोरथ के न होनेसे खेदहुआ तब परस्परकी बातोंमें जीमूतवाहनको विद्याधरोंका स्वामीजानकर गरुडजीको अज्ञानतासे उसके खाने का बड़ासन्तापहुआ कि अरेमुझपापी ने यहबड़ाही अधमकार्य्यकिया अथवा कुमार्गमें चलनेवालोंको पापसुलभहीहोते हैं एक्यही महात्मा प्रशंसाकरनेके योग्यहै जिसने पराये निमित्त प्राणदेकर समनाके मोहमें पडेहुए सम्पूर्णको तुच्छकरदिया २०० इसप्रकार विचारकरके पापसेछूटनेके लिये अग्निमें प्रवेश करनेकी इच्छाकरतेहुए गरुडसे जीमूतवाहनने कहा कि हे पक्षीन्द्र क्यों दुःखीहोतेहो जो तुम सत्य २ ही

पापसे डरतेहो तो अब फिर कभी सर्पोको न खाना और जिनको खाचुकेहो उनके लिये पश्चात्तापकरो यही इसकाउपायहै और अन्य तुम्हारा शोचनाव्यर्थ है इसप्रकार उसदयालुके वचनोंको सुनकरगरुड़ने प्रसन्नहोकर गुरुके समान उसके वचन स्वीकारकरलिये और जीमूतवाहनके घायलअंगोंको पुष्टकरनेके लिये तथा अन्य मरेहुए सर्पों के जिलानेके लिये स्वर्ग में अमृतलेनेको गरुड़जी चलेगये इसकेउपरान्त मलयवतीकी भक्ति से प्रसन्नहुई भगवती ने साक्षात् वहांआकर जीमूतवाहनपर अमृतसींचा इससे उस के अंग पहलेसे भी अधिक सुन्दरहोगये तब देवतालोगों नें आनन्दसे आकाशमें दुन्दुभीबजाई इसप्रकार जीमूतवाहनके स्वस्थहोजानेपर गरुडने स्वर्ग से अमृतलाकर संपूर्ण समुद्रके तटपर बरसाया उससे जिन सर्पोंका हाडआदिक कोई भी अंगपडाथा वह सब जीउठे उससमय अनेकसर्पों से व्याप्तसमुद्रका तट ऐसा शोभितहुआ कि मानो गरुडके भयसे रहितहोकर संपूर्ण पाताल जीमूतवाहनके देखने को आयाहै २५० इसके उपरान्त अक्षय शरीर तथा यशसे विराजमान जीमूतवाहन को जानकर उसके बन्धुजन अत्यन्तप्रसन्नहुए और उसकी स्त्री तथा माता पिताभी अत्यन्त आनन्दितहुए ठीकहै (कोन प्रहृष्येद्दु खेनसुखत्वपरिवर्त्तिना) सुखरूपसे अन्तमे परिणत (बदलने) होनेवाले दुःखसे कौन नहीं प्रसन्नहोताहै इसकेउपरान्त जीमूतवाहनसे आज्ञालेकर शंखचूड पातालको चलागया और जीमूतवाहनका यशतीनोंलोकों में छागयाउससमय श्रीभगवतीकीकृपासे जीमूतवाहनके मतंगादिक बांधवजो कि प्रथम विरुद्धहोगये थे वह सब फिर भयभीतहोकर आप आकरउससेमिले और बहुतसी प्रार्थनाकरके जीमूतवाहनकोमलयाचलसेहिमालयपर लेगये वहांमित्रावसुमलयवती तथा अपने मातापिता समेत जीमूतवाहन विद्याधरोंका चक्रवर्तीहोकर बहुतकालतक राज्यका भोगकरतारहा इसप्रकार तीनोंलोकों के हृदयमें चमत्कारकरनेवाले है चरित्र जिनके ऐसे सज्जनो के पासअनेकप्रकारकी सम्पत्तियांआजाती हैं यौगन्धरायणके मुख से इसकथाको सुनकर गर्भकेभार से उत्तममनोरथवाली रानी वासवदत्ता अत्यन्त प्रसन्नहुई इसके उपरान्त प्रसन्नहुए देवताओं की निरन्तर आज्ञाओं के विश्वाससे होनेवाले विद्याधरोंके स्वामी अपने पुत्रकी कथासे वह दिन वासवदत्ताने अपने पति के निकट बैठे व्यतीत किया २५६ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायानरवाहनदत्तजननलम्बके द्वितीयस्तरङ्गः २ ॥

इसकेउपरान्त किसी दिन मन्त्रियों समेत एकान्तमें बैठेहुए राजाउदयनसे वासवदत्ताने कहा हे आर्यपुत्र जबसे मैंने यह गर्भधारणकियाहै तबसे इसके रक्षाकरनेकी बड़ीचिन्ता मेरेहृदयमें रहती है गतरात्रि को उसीकी चिन्तामें जब मुझे कुछनिद्राआई तबस्वप्नमें भस्मको संपूर्णशरीरमे धारण कियेहुए मस्तकमें चन्द्रमाको धारण किये त्रिशूलहाथमेंलिये और पीली २ जटाओं से युक्त एकपुरुषको मैंने देखा वह दयापूर्वक मेरेपासआकर मुझसेबोला कि हे पुत्री गर्भकेलिये कोईचिन्तामतकरो मैं सदैव इसकी रक्षाकरताहूं क्योंकि मैंनेही तुझे यहदियाहै औरतेरे विश्वासकेलिये एकबात कहताहूं उसेसुन कल कोई स्त्री अपनेपति को मिथ्या दोषारोपणकरके उसे लेकर तुम्हारे यहां विज्ञापन करनेको आवेगी वह दुष्ट स्त्री अपने बांधवों के बलसेअपनेपतिको मरवानेके अभिप्रायसे जो कुछ कहेगी सबमिथ्याहोगा इससे हे पुत्री तुम उदयनसे

पहलेही कहदेना जिससे वह साधुबचजाय यहकहकर उसमहात्माके अन्तर्द्धान होजानेपर मैं एकाएकी जगपडी और प्रातःकाल होगया १० वासवदत्ताके यहवचनसुनकर सबों ने यह निश्चयकिया कि यह श्रीशिवजीकी कृपाथी और सबकेचित्तमें आश्चर्य्यपूर्व्वक उसवृत्तान्तके देखनेकी इच्छाहुई उसीक्षणमें मुख्य प्रतीहारने उदयनसे आकर कहा कि एकस्त्री अपने बान्धव और पांचों पुत्रों समेत तुम्हें विज्ञापन करनेको आईहै और अपने विवसपतिको भी साथमें लियेहुएहै यहसुनकर रानी के स्वप्नके वृत्तान्तसे विस्मितहुए राजानेकहा कि उसे यहींलेआओ और रानी वासवदत्ताको स्वप्नकीसत्यता देखकर सत्पुत्र प्राप्तहोने के निश्चयसे बडाही आनन्दहुआ इसकेउपरान्त सबलोगों से उत्कण्ठापूर्व्वक देखीगई वहस्त्री अपने पतिसमेत प्रतीहारकी आज्ञासे भीतरआई और भीतर आकर बडी दीनतापूर्व्वक सबको यथा-योग्य प्रणामकरके रानी समेत राजासेबोली कि यह मेरापतिहोकरभी मुझ निरपराध अनाथको भोजन वस्त्रादिक नहीं देताहै उसके यह कहनेपर उसकापतिबोला कि यह अपने बन्धुओं समेत मेरे मारनेकी इच्छासे मिथ्या बनाकर कहती है मैंने सालभर पहलेही से इसे भोजन वस्त्रादिकी सपूर्ण सामग्री देदी है इसविषयमें इसके बान्धव और अन्यसाधारण लोगभी मेरेसाक्षी हैं उसका यह विज्ञापन सुनकर राजाने कहा कि रानीकेस्वप्नमें साक्षात् शिवजीही साक्षीहोचुके हैं तो अन्य साक्षियोंका क्याप्रयोजनहै इससेबन्धु-ओं समेत इसस्त्रीकोही दण्ड देनाचाहिये राजाके यहवचनसुनकर बुद्धिमान् यौगन्धरायणने कहा कि हे महाराज यद्यपि आपका वचनबहुतठीकहै तथापि साक्षियों के वचनसे जोयोग्यहोय सो करनाचाहिये क्यों कि स्वप्नके वृत्तान्तकोनहीं जाननेवालेलोग आपके न्यायपर कैसे विश्वास करेंगे यह सुनकर राजाने सा-क्षियोंको उसीसमय बुलवाकरपूछा तो उन्होंने उसस्त्रीको मिथ्यावादिनीकहा तब राजाउदयनने ग्रहप्रकट करके कि इसने अपने सत्पतिसे द्रोहकियाहै उसेबान्धव तथा पुत्रोंसमेत अपने देशसे निकलवादिया और उसके पतिको दूसरे विवाहके योग्य बहुतसा धनदेकर छोडदिया ८६ (पुमांसमाकुलक्रूरा पतितदुर्दशावटे जीवन्तमेवकुष्णाति काकीवकुटुम्बिनी) दुर्दशारूपी गढ़े में पडेहुए व्याकुल पुरुषको काकी के समान दुष्टस्त्री जीतेहीजीते मारनेकी इच्छाकरती है (स्निग्धाकुलीनामहतीगृहणीतापहारिणीतरुच्छायेवमार्गस्थापुण्यैःकस्यापिजायते) स्निग्धा (घनी और स्नेहयुक्त) कुलीना (पृथ्वी में व्याप्त और सत्कुलमेंउत्प-न्नहुई) तापहारिणी (धूपसेबचानेवाली और दुःखकी दूरकरनेवाली) और महती (बड़ी और महत्वगुण युक्त) और मार्गस्था (मार्गमें स्थित और सन्मार्गमेंचलनेवाली) वृक्षकी छायाकेसमान स्त्रीपुण्यों से किसी कोमिलती है इसप्रकार इसप्रसंगसे कहतेहुए राजासे पासमें बैठाहुआ कथा कहने में चतुर बसन्तकबोला कि हेराजा इस संसारमें विरोध अथवा स्नेह प्रायः पूर्व्वजन्मके संस्कारके संयोगसे होताहै इसी विषय में मैं आपको एककथा सुनाताहूं आप सुनिये काशीजीमें विक्रमचण्डनाम एकराजाथा उसके अत्यन्त प्रिय सिंहपराक्रमनाम एकसेवक्या वहरणके सिवाय द्यूतमेंभी अठेल जीतनेवालाथा उससिंहपराक्रमके कलह-कारी कलह यथार्थ नामकी स्त्रीथी वहजैसी कुरूपथी वैसीही चित्तमेभी कुटिलथी सिंहपराक्रम राजासे और द्यूतसे बहुतसा धनलाय २ कर उसको देताथा परन्तु वहदुष्टा स्त्री अपने तीन पुत्रोंसमेत क्षणभरभी बिना

समेतराजाभी अपनेमंत्रियोंके पुत्रोंकोप्यारकरके अत्यन्त प्रसन्नहुआ बाल्यावस्थामेंही बड़े उदयके कारण रूपगुणोंके समान मंत्रियोंके छः पुत्रोंके साथ नरवाहनदत्त सदैव रमतारहताथा खेलनेमें अप्रकट सुन्दर अभिलाषोंको करतेहुए और प्रेमयुक्त राजालोगोंकी गोदियोंसे गोदियोंमें जातेहुए और कुछमुस्कराते हुए मुखारविन्दवाले पुत्रको देखतेहुए राजाउदयन्के वह दिन बड़ेआनन्दसे व्यतीतहोतेथे ६४॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांनरवाहनदत्तजननलम्बकेतृतीयस्तरंगः ३॥

नरवाहनदत्तजननंनामचतुर्थलम्बकसमाप्तहुआ ४॥

चतुर्दारिकानामपंचमोलम्बकः

मदघूर्णितवक्त्रोत्थैःसिन्दूरैश्छुरयन्महीम्॥
हेरम्बःपातुवोविघ्नान्स्वतेजोभिर्दहन्निव १॥

इसप्रकार रानीसमेत राजाउदयन् नरवाहनदत्तनाम अपने पुत्रको पालनकरताहुआ रहनेलगा एक समय बालककी रक्षामें आतुरराजाको देखकर यौगन्धरायणने, एकान्तमें उससे कहा कि हेराजा इसबालक की रक्षाकेलिये आप चिन्तानकीजिये भगवान् श्रीशिवजी ने इसबालकको आपके यहां संपूर्ण विद्याधरोंका चक्रवर्ती होनेकेलिये उत्पन्नकियाहै, इसबातको संपूर्ण विद्याधर अपनी विद्याओं के प्रभाव से जानकर ईर्षासे पापकरनेकेलिये हृदयमें क्षोभको प्राप्तहुए यह बातजानकर शशिशेखर श्रीशिवजीने इसकी रक्षाकेलिये स्तम्भकनाम गणेशको नियतकिया है वह सदैव अलक्ष्य होकर इसबालककी रक्षा किया करते हैं यहबात नारदजी आकर मुझसे, कहगये हैं यौगन्धरायणके इसप्रकारसे कहतेही कहते आकाशके मध्य से किरीट कुण्डलोंको, धारणकियेहुए और खड्गको लिये एक दिव्यपुरुष उतरा उसे प्रणाम करतेहुए देखकर राजाउदयन्ने अतिथि सत्कारकरके आश्चर्य पूर्वकपूछा कि तुमकौनहो और तुम्हारा यहां कौनकामहै उसनेकहा कि मैं मनुष्य योनिसे विद्याधरोंका स्वामीहोगयाहूं शक्तिवेग मेरा नामहै और बहुतसे मेरेशत्रुहैं मैं इससमय अपनी विद्याओंके प्रभावसे तुम्हारे पुत्रको अपना चक्रवर्ती होनेवाला जानकर देखनेको आयाहूं,उसके यहवचन सुनकर राजाने नरवाहनदत्तको उसेदिखा दिया और प्रसन्नहोकर उससे पूछा कि हेमित्र विद्याधरत्व किसप्रकारसे मिलताहै वह कैसाहोताहै और तुमने कैसेपाया यहसब मुझसे कहो १४ राजाके यह वचनसुनकर उसने विनय पूर्वककहा कि हेराजा इस जन्ममें अथवा पूर्वजन्ममें श्रीशिवजीका आराधन करके उन्हींकी कृपासे धीरलोग विद्याधरीपदवीको पातेहैं विद्याखड्ग तथा मालाआदिके साधनसे विद्याधरपदवी कई प्रकारकीहोतीहै और मैंने जिसप्रकार से [illegible] पदवी पाई है उसेसुनो यह कहकर रानी वासवदत्ताके सन्मुख वह अपनी कथा कहने लगा [illegible] पृथ्वीके आभूषणरूप वर्द्धमानपुरमें बड़ाप्रतापी परोपकारनाम राजाथा मेघकी बिजली

के समान उसराजाके कनकप्रभानाम स्त्रीथी परन्तु उसमें चपलता नहीथी समयपाकर उसराजाके उसी रानीमें एक कन्या उत्पन्नहुई जिसे लक्ष्मीके रूपके अभिमानको दूरकरनेके लिये मानो ब्रह्माने बनायाथा राजाने रानीके नामके अनुसार उसका कनकरेखा नामरक्खा और वह कन्या ससारके नेत्रोंको आनन्द देतीहुई धीरे २ बढ़ी एकसमय उसकी युवावस्था देखकर राजाने रानीसे एकान्तमेंकहा कि हेरानी इसे युवा देखकर इसके विवाहकी चिन्ता मेरे हृदयमें बनी रहती है स्थानको (वर और स्वरोंके स्थान) नहीं प्राप्तहुई कन्यागीतके समान सुननेसे दूसरोंको भी क्लेशदेनेवाली होतीहै विद्याके समान कन्याको अपात्रमेंदेने से न यशहोताहै न धर्म होताहै परन्तु पश्चात्तापहोताहै इससे मैं किसराजाको यहकन्यादूं और कौन इसके योग्यहै यहमुझे बहुतबड़ी चिन्तावनी रहतीहै यहसुनकर कनकप्रभा हँसकरबोली कि तुमतो ऐसा कहतेहो और यह विवाहही करनानहीं चाहती आजही उसे गुड़िया खेलते देखकर मैंने कहाथा कि हे बेटी मैं तेरा विवाह करदेऊंगी यहसुनकर यहबोली कि हे माता ऐसामतकहो मेराविवाह किसीके साथनकरना मेरावियोग तुमसे न होनाचाहिये मैं कन्याभावमें ही बहुत अच्छी हूं और जो तुम ऐसा न करोगी तो मेरी मृत्युहोजायगी इसमें कोई कारण है उसके यहवचन सुनकर मैं उदासीन होकर आपकेपास चलीआईहूं इसमें जबयह विवाहही न करेगी तोवरढूंढनेमें क्या प्रयोजनहै ३२ रानी के यहवचन सुनकर राजा चकितहोकर कन्याके मन्दिरमें गया और उससे बोला कि देवता तथा दैत्यों की भी कन्या तपकर २ के विवाहकी कामना करती हैं हे पुत्री तुमने उसका निषेध क्यों कियाहै यह सुनकर कनकरेखा नीचेको नेत्रकरके बोली कि हे तात इससमय मुझे विवाहकी कोई कामनानहीं है इससे आपको भी उससे क्या कामहै और आप क्यों आग्रह करते हैं यहसुनकर फिर बड़ाबुद्धिमान् राजा परोपकारी बोला कि हे पुत्री कन्यादानसे अधिक और कोई पुण्यपापोंका नाश करने वाला नहीं है और बन्धुओं से पराधीन कन्याभी स्वतन्त्रताको नहीं प्राप्तहोसक्ती कन्यापराये लिये ही उत्पन्नहोती है और रक्षा कीजातीहै बाल्यावस्थाके सिवाय पतिके बिना उसका पिताके घरमें निवास कैसेहोसक्ताहै जो कन्या पिताके घरमें विवाहके बिनाही ऋतुधर्मको प्राप्तहोती है तोउसके सबबान्धवनरकको जाते हैं और शास्त्र में उसकन्याको वृषली और उसके पतिको वृषलीपति कहते हैं पिताके यहवचन सुनकर कनकरेखाने अपने मनकी बातकही कि हे तात जिसब्राह्मण अथवा क्षत्रीने कनकपुरी नामनगरी देखीहोय उसीके साथमेरा विवाह करना क्योंकि वही मेरापतिहोगा और नही तो व्यर्थ मुझे क्लेशदेनाहोगा उसके यह वचन सुनकर राजाने सोचा कि अच्छा इसने विवाहकी बाततो अंगीकारकरी मुझे मालूमहोताहै कि यहकोई देवी किसीकारणसे मेरे यहाँ उत्पन्नहुईहै और नहीं तो यहइस छोटीसी अवस्था में इतनी बात कैसेजानसक्ती यहसोचकर और उसके वचनों को स्वीकारकर राजाने वहाँ से उठकर अपना आह्निक किया ४८ दूसरेदिन राजाने सभामें आकर सबसे कहा कि तुमलोगों में से किसीने कनकपुरी देखी है जिसने देखीहोगी वहब्राह्मण हो अथवा क्षत्रीहो मैं उसे कनकरेखा और युवराज पदवी दूंगा यहसुनकर उनलोगोंने परस्पर एकदूसरे का मुखदेखकर कहा कि हेस्वामी हमलोगोंने कनकपुरीका नामभी नहीं

ममेतराजाभी अपनेमन्त्रियोंके पुत्रोंकोप्यारकरके अत्यन्त प्रसन्नहुआ बाल्यावस्थामेंही बडे उदयकेकारण रूपगुणोंके समान मन्त्रियोंके छ पुत्रोंके साथ नरवाहनदत्त सदैव बनारहताथा खेलनेमें अप्रकट सुन्दर अभिलाषोंको करतेहुए और प्रेमयुक्त राजालोगोंकी गोदियोंसे गोदियोंमें जातेहुए और कुंकुमसुस्क्या-तेहुए मुखारविन्दवाले पुत्रको देखतेहुए राजाउदयन्के वह दिन बडेआनन्दसे व्यतीतहोतेथे १४॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांनरवाहनदत्तजननलम्बकेतृतीयस्तरंग ३॥

नरवाहनदत्तजनननामचतुर्थलम्बकसमाप्तहुआ ४॥

चतुर्द्दारिकानामपंचमोलम्बकः

इघूर्णितवक्रोत्थैःसिन्दूरैश्छुरयन्महीम्॥
हरंवं पातुनोविघ्नान्सतेजोभिर्दहन्निव १॥

इसप्रकार रानीसमेत राजाउदयन् नरवाहनदत्तनाम अपने पुत्रको पालनकरताहुआ रहनेलगा एक समय बालककी रक्षामें आतुरराजाको देखकर यौगन्धरायणने, एकान्तमें उससेकहा कि हेराजा इसबालक की रक्षाकेलिये आप चिन्तान कीजिये भगवान् श्रीशिवजी ने इसबालकको आपके यहा सपूर्ण विद्या-धरोंका चक्रवर्ती होनेकेलिये उत्पन्नकियाहै इसबातको सपूर्ण विद्याधर अपनी विद्याओं के प्रभाव से जानकर ईर्षासे पापकरनेकेलिये हृदयमे क्षोभको प्राप्तहुए यह बातजानकर शशिशेखर श्रीशिवजी ने इसकी रक्षाकेलिये स्तंभकनाम गणेशको नियतकिया है वह सदैव अलक्ष्य होकर इसबालककी रक्षा किया करते है यहबात नारदजी आकर मुझसे कहगये है यौगन्धरायणके इसप्रकारसे कहतेही कहते आकाशके मध्य से किरीट कुण्डलोंको धारणकियेहुए और खड्गको लिये एक दिव्यपुरुष उतरा उसे प्रणाम करतेहुए देखकर राजाउदयन्ने अतिथि सत्कारकरके आश्चर्य पूर्वकपूछा कि तुमकौनहो और तुम्हारा यहा कौनकामहै उसनेकहा कि मैं मनुष्य योनिसे विद्याधरोंका स्वामीहोगयाहू शक्तिवेग मेरा नामहै और बहुतसे मेरेशत्रुहैं मै इससमय अपनी विद्याओंके प्रभावसे तुम्हारे पुत्रको अपना चक्रवर्ती होनेवाला जानकर देखनेको आयाहू उसके यहवचन सुनकर राजाने नरवाहनदत्तको उसेदिखा दिया और प्रसन्नहोकर उससे पूछा कि हेमित्र विद्याधरत्व किसप्रकारसे मिलताहै वह कैसाहोताहै और तुमने कैसेपाया यहसबमुझसे कहो १४ राजाके यह वचनसुनकर उसने विनय पूर्वककहा कि हेराजा इस जन्ममें अथवा पूर्वजन्ममें श्रीशिवजीका आराधन करके उन्हींकी कृपासे धीरलोग विद्याधरीपदवीको पातेहैं विद्याखड्ग तथा मालाआदिके साधनसे विद्याधरपदवी कई प्रकारकीहोतीहै और मैंने जिसप्रकार से विद्याधरपदवी पाईहै उसेसुनो यह कहकर रानी वासवदत्ताके सन्मुख वह अपनी कथा कहने लगा कि पूर्वसमयमे पृथ्वीके आभूषणरूप वर्द्धमानपुरमें बडाप्रतापी परोपकारीनाम राजाथा मेघकी बिजली

के समान उसराजाके कनकप्रभानाम स्त्रीथी परन्तु उसमे चपलता नहीथी समयपाकर उसराजाके उसी रानीमे एक कन्या उत्पन्नहुई जिसे लक्ष्मीके रूपके अभिमानको दूरकरनेके लिये मानो ब्रह्माने बनाया था राजाने रानीके नामके अनुसार उसका कनकरेखा नामरक्खा और वह कन्या संसारके नेत्रोंको आनन्द देतीहुई धीरे २ बढ़ी एकसमय उसकी युवावस्था देखकर राजाने रानीसे एकान्तमें कहा कि हेरानी इसे युवा देखकर इसके विवाहकी चिन्ता मेरे हृदयमे बनी रहती है स्थानको (वर और स्वरोंके स्थान) नहीं प्राप्तहुई कन्यागीतके समान सुननेसे दूसरोंको भी क्लेशदेनेवाली होतीहै विद्याके समान कन्याको अपात्रमेंदेने से न यशहोताहै न धर्म होताहै परन्तु पश्चात्तापहोताहै इससे मैं किसराजाको यहकन्यादू और कौन इसके योग्यहै यहमुझे बहुतबड़ी चिन्ताबनी रहतीहै यहसुनकर कनकप्रभा हँसकरबोली कि तुमतो ऐसा कहतेहो और वह विवाहही करनानहीं चाहती आजही उसे गुड़िया खेलते देखकर मैंने कहाथा कि हेबेटी मैं तेरा विवाह करदेऊंगी यहसुनकर वहबोली कि हे माता ऐसामतकहो मेराविवाह किसीके साथनकरना मेरावियोग तुमसे न होनाचाहिये मैं कन्याभावमे ही बहुत अच्छी हूं और जो तुम ऐसा न करोगी तो मेरी मृत्युहोजायगी इसमे कोई कारण है उसके यहवचन सुनकर मैं उदासीन होकर आपकेपास चलीआईहूं इसमे जबवह विवाहही न करेगी तोवरढूंढनेसे क्या प्रयोजनहै ३२ रानी के यहवचन सुनकर राजा चकितहोकर कन्याके मन्दिरमें गया और उससे बोला कि देवता तथा दैत्यों की भी कन्या तपकर २ के विवाहकी कामना करती है हे पुत्री तुमने उसका निषेध क्यों कियाहै यह सुनकर कनकरेखा नीचेको नेत्रकरके बोली कि हे तात इससमय मुझे विवाहकी कोई कामनानहीं है इससे आपको भी उससे क्या कामहै और आप क्यों आग्रह करते है यहसुनकर फिर बड़ाबुद्धिमान् राजा परोपकारी बोला कि हे पुत्री कन्यादानसे अधिक और कोई पुण्यपापोंका नाशकरने वाला नहीं है और बन्धुओं से पराधीन कन्याभी स्वतन्त्रताको नहीं प्राप्तहोसकी कन्यापरायें लिये ही उत्पन्नहोती है और रक्षा कीजातीहै बाल्यावस्थाके सिवाय पतिके बिना उसका पिताके घरमें निवास कैसेहोसक्ताहै जो कन्या पिताके घरमे विवाहके बिनाही ऋतुधर्मको प्राप्तहोती है तोउसके सबबांधवनरकको जाते हैं और शास्त्र मे उसकन्याको वृषली और उसके पतिको वृषलीपति कहते हैं पिताके यहवचन सुनकर कनकरेखाने अपने मनकी बातकही कि हे तात जिसब्राह्मण अथवा क्षत्रीने कनकपुरी नामनगरी देखीहोय उसीके साथमेरा विवाह करना क्योंकि वही मेरापतिहोगा और नहीं तो व्यर्थ मुझे क्लेशदेनाहोगा उसके यह वचन सुनकर राजाने सोचा कि अच्छा इसने विवाहकी बाततो अंगीकारकरी मुझे मालूमहोताहै कि यहकोई देवी किसीकारणसे मेरे यहां उत्पन्नहुईहै और नहीं तो यहइस छोटीसी अवस्था मे इतनी बात कैसेजानसक्ती यहसोचकर और उसके वचनो को स्वीकारकर राजाने वहां से उठकर अपना आह्निक किया ४६ दूसरेदिन राजाने सभामे आकर सबसे कहा कि तुमलोगों मे से किसीने कनकपुरी देखी है जिसने देखीहोगी वहब्राह्मण हो अथवा क्षत्रीहो मैं उसे कनकरेखा और युवराज पदवी दूंगा यहसुनकर उनलोगोने परस्पर एकदूसरे का मुखदेखकर कहा कि हेस्वामी हमलोगोने कनकपुरीका नामभी नहीं

समेतराजाभी अपनेमन्त्रियोंके पुत्रोंकोप्यारकरके अत्यन्त प्रसन्नहुआ बाल्यावस्थामेंही बड़े उदयके कारण रूपगुणोंके समान मन्त्रियोंके छः पुत्रोंके साथ नरवाहनदत्त सदैव बनारहताथा खेलनेमें अप्रकट सुन्दर अभिलाषोंको करतेहुए और प्रेमयुक्त राजालोगोंकी गोदियोंसे गोदियोंमें जातेहुए और कुछमुस्कुरातेहुए मुखारविन्दवाले पुत्रको देखतेहुए राजाउदयन्के वह दिन बड़ेआनन्दसे व्यतीतहोतेथे १४॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांनरवाहनदत्तजननलम्बकेतृतीयस्तरंगः ३॥

नरवाहनदत्तजनननामचतुर्थलम्बकसमाप्तहुआ ४॥

चतुर्दारिकानामपंचमोलम्बकः

सदघूर्णितवक्त्रोत्थैः सिन्दूरैश्छुरयन्महीम्॥
हेरम्बः पातुवोविघ्नान्स्वतेजोभिर्दहन्निव १॥

इसप्रकार रानीसमेत राजाउदयन् नरवाहनदत्तनाम अपने पुत्रको पालनकरताहुआ रहनेलगा एक समय बालककी रक्षामें आतुरराजाको देखकर यौगन्धरायणने एकान्तमें उससेकहा कि हेराजा इसबालककी रक्षाकेलिये आप चिन्ता न कीजिये भगवान् श्रीशिवजी ने इसबालकको आपके यहां संपूर्ण विद्याधरोंका चक्रवर्ती होनेकेलिये उत्पन्नकियाहै इसबातको संपूर्ण विद्याधर अपनी विद्याओं के प्रभावसे जानकर ईर्षासे पापकरनेकेलिये हृदयमें क्षोभको प्राप्तहुए यह बातजानकर शशिशेखर श्रीशिवजीने इसकी रक्षाकेलिये स्तम्भकनाम गणेशको नियतकिया है वह सदैव अलक्ष्य होकर इसबालककी रक्षा किया करते हैं यहबात नारदजी आकर मुझसे कहगये हैं यौगन्धरायणके इसप्रकारसे कहतेही कहते आकाशके मध्यसे किरीट कुण्डलोंको धारणकियेहुए और खड्गको लिये एक दिव्यपुरुष उतरा उसे प्रणाम करतेहुए देखकर राजाउदयन्ने अतिथि सत्कारकरके आश्चर्य्य पूर्वकपूछा कि तुमकौनहो और तुम्हारा यहां कौनकामहै उसनेकहा कि मैं मनुष्य योनिसे विद्याधरोंका स्वामीहोगयाहूं शक्तिवेग मेरा नामहै और बहुतसे मेरेशत्रुहैं मैं इससमय अपनी विद्याओंके प्रभावसे तुम्हारे पुत्रको अपना चक्रवर्त्ती होनेवाला जानकर देखनेको आयाहूं उसके यहवचन सुनकर राजाने नरवाहनदत्तको उसेदिखा दिया और प्रसन्नहोकर उससे पूछा कि हेमित्र विद्याधरत्व किसप्रकारसे मिलताहै वह कैसाहोताहै और तुमने कैसेपाया यहसबमुझसे कहो १४ राजाके यह वचनसुनकर उसने विनय पूर्वककहा कि हेराजा इस जन्ममें अथवा पूर्वजन्ममें श्रीशिवजीका आराधन करके उन्हींकी कृपासे धीरलोग विद्याधरीपदवीको पातेहैं विद्याखड्ग तथा मालाआदिके साधनसे विद्याधरपदवी कई प्रकारकीहोतीहै और मैंने जिसप्रकार से विद्याधरपदवी पाईहै उसेसुनो यह कहकर रानी वासवदत्ताके सन्मुख वह अपनी कथा कहने लगा कि पूर्वसमयमें पृथ्वीके आभूषणरूप वर्द्धमानपुरमें बड़ाप्रतापी परोपकारीनाम राजाथा मेघकी बिजली

माधवनाम दो धूर्त्तोंकी कथा सुनातीहूं यहकहकर वह कनकरेखा कथा कहनेलगी ६१ कि रत्नपुरनाम यथार्थ नामवाले नगर में शिव और माधव नाम दो धूर्त्त रहते थे उनदोनों ने बहुत से धूर्त्तोंको अपने साथ में लेकर अपनी माया के प्रयोग से नगर के सम्पूर्ण धनीलोग ठग लिये एकसमय उन दोनों ने आपसमें यह सलाहकरी कि यह नगर तो हमने सबठग लिया इससे अब उज्जयिनीपुरी में चलकररहें वहां राजाका शंकरस्वामी नाम पुरोहित बडा धनवान् सुनाई देताहै युक्तिपूर्वक उससे धन लेकर मालव देशकी स्त्रियोंके रसको भोगकरेंगे उज्जयिनी के ब्राह्मण लोग उसे यमराज के समान कठिन कहते हैं क्योंकि वह उनसे आधीदक्षिणा लेलेता है और एक कन्याभी उसके है वह भी इसी प्रसंगसे हमें अवश्य मिलेगी। इसप्रकार निश्चयकरके और अपने २ कर्त्तव्यको विचारकरके वह दोनों धूर्त्त उस पुरी से चले धीरे २ उज्जयिनी के निकट पहुंचकर माधवने राजपुत्रका भेष बनाकर सब सामान सहित नगर के बाहर डेरा किया और शिव पहलेही ब्रह्मचारी का भेष बनाकर अकेला उसनगरी में चलागया और वहां शिप्रा नदी के किनारेपर एक मठबनाकर उसमें मृत्तिकाकुश भिक्षा के पात्र तथा मृगचर्मको सब के देखने के योग्य स्थान में रखकर रहनेलगा और प्रातःकाल बहुतसी मृत्तिका अपने शरीर में लपेटकर नदीके जलमें बहुतकालतक अधोमुख होकर रहताथा मानो कुकर्मसे होनेवाली अपनी अधोगतिका पहलेहीसे अभ्यास करताथा और स्नानकरके बहुतकालतक सूर्य्य के सन्मुख ऊपरको मुखकिये पडा रहताथा मानो अपनी शूली देनेकी योग्यताको प्रकटकरताथा फिर देवताके सन्मुख जाकर कुशों को हाथमें लेके पद्मासनसे बैठाहुआ दम्भमें अत्यन्त चतुरहोकर जपकरताथा इसके अनन्तर साधु लोगों के हृदयोंके समान स्वच्छ पुष्पोंको लेकर श्रीशिवजीका पूजन करताथा और पूजनकरके फिरभी झूठ मूठ ध्यानदेकर जपकरताथा मानों आगे होनेवाले नरकोंका ध्यान करताथा और अपराह्नके समय मृगचर्मको पहनकर भिक्षाके निमित्त मायारूपी स्त्रीके कटाक्षके समान वह पुरमें घूमताथा ब्राह्मणोंके घरोंसे तीन भिक्षाओंको लेकर उसभिक्षाके तीनभाग करताथा एक भाग काकोंको देताथा एक भाग अभ्यागतोंको देताथा और एक भागसे अपना पेट भरताथा भोजनके उपरान्त मालाको लेकर फिर झूठ मूठ जप कियाकरताथा मानों अपने सम्पूर्णपापोंको गिनताथा और रात्रिके समय लोगोंकी सूक्ष्मतर्क करनेकी बातोंको विचारताहुआ अकेला उसीमठ में रहताथा इसप्रकार प्रतिदिन अत्यन्त कठिन कपटमें भरेहुये तपकोकरके उसने नगरीके निवासियों का चित्त अपने वशीभूत करलिया नगरभरे में उसकी यह प्रसिद्धिहोगई कि यह बडाशान्त तथा तपस्वीहै और सम्पूर्णलोग उसके भक्तहोगये १०५ इसके उपरान्त उसकामित्र माधवभी दूतके मुखसे यहवृत्तान्त सुनकर नगरी में आया और वहांथोडीदूरपर किसी देवमन्दिरमें रहकर राजपुत्रके भेषसे शिप्रानदीमें स्नानकरनेको गया और स्नानकरने के उपरान्त देवताके आगे अपने मित्रशिवको देखकर नम्रतापूर्वक उसकेपैरोंपर गिरपडा और सबलोगोंको सुनाकर बोला कि ऐसा और कोई तपस्वी नहीं है मैंने इसे बहुधातीर्थोंपर घूमताहुआ देखाहै और शिव इसको देखकरभी उसीप्रकारसे खडारहा फिरमाधव अपने डेरेको चलागया रात्रिकेसमय दोनों ने एकस्थानमें

सुनाहै देखनेकी कौनक है तबराजाने प्रतीहारको बुलाकर कहा कि जाओ शहरभरे में ढँढोरा पिटवाओ किसीने कनकपुरी देखी है यानहीं राजाकी यह आज्ञापावेही प्रतीहारने बाहरजाकर राजपुरुषोसे ढँढोरा पिटवाया सपूर्ण नगरभरमें ढँढोरापीट २ कर राजपुरुषोंने यहवचन कहा कि ब्राह्मण अथवा क्षत्री जिसने कनकपुरी देखीहोय वहकहे उसेराजा अपनी कन्या और युवराजपदवीदेगा इसढँढोरेको सुनकर सपूर्ण वृद्धपुरवासी कहतेथे कि आजयह क्या सपूर्ण नगरभरमें कनकपुरीके नामसे ढँढोरा पिटरहाहै यह तो हम वृद्धलोगोने भी आजतक न कहींदेखी न सुनी यह बाततो सबने कही परन्तुयह बात किसीने भी नहीं कही कि मैंने कनकपुरी देखीहै उससमय उसनगरके निवासी बलदेवनाम ब्राह्मणके पुत्र व्यसनी तथाजुएसे निर्धन सत्यदेवनाम युवाब्राह्मणने वहढँढोरा सुना और शोचाकि मैं जुएमे सपूर्णधन हारगयाहू इससे न पिताके यहां जासक्ताहू और न वेश्याओंकेघर जासक्ताहू तोअबमुझे कोईगतिनहीं है इससे ढँढोरियोंसे मिथ्या कहदू कि मैंने कनकपुरी देखीहै कौनमुझे जानेगा कि इसनेनहीं देखीहै क्योंकि उसे किसी ने देखाही नहीं कदाचित् इसप्रकार से राजपुत्री के साथ मेरासमागम होजाय इसप्रकार शोचकर शक्तिदेवने राजपुरुषोसे झूठमूठ कहदिया कि मैंने कनकपुरी देखी है तबराजपुरुषोंने कहा कि अच्छीबातहै तुमहमारे साथप्रतीहारके पासचलो वहउनकेसाथ प्रतीहारके पासगया और उससेभी जाकर कहा कि मैंने कनकपुरी देखी है वहभी सत्कारपूर्व्वक उसेराजाके पासलेगया राजाके आगेभी उसने निस्सन्देह होकर कहा कि मैंने कनकपुरी देखी है ठीककहाहै कि (द्यूततान्तस्यकिन्नाम कितवस्यहिदुष्करम्) जुएमे हाराहुआ धूर्त्तक्यानहींकरता ६५ राजानेभी निश्चयजाननेके लिये उसब्राह्मणको कनकरेखाकेपास भेजदिया कनकरेखाने प्रतीहारके द्वारा उसेकनकपुरी का देखनेवाला जानकर अपनेपास बैठाया और पूछा कि क्यातुमने कनकपुरीदेखीहै उसनेकहाहा विद्यापढनेके समय सम्पूर्ण पृथ्वीपर घूमतेहुए मैंने कनकपुरी देखी है यहसुनकर उसकन्यानेकहा कि तुमवहा किसमार्गसे गयेथे और वह कैसीहै तबशक्तिदेवने कहा कि यहासे मैंहरपुरनाम नगरकोगया वहासे धीरे २ काशीजी पहुचा काशीजीसे कुछ दिनों में पौण्ड्रवर्द्धननगरमें गया और वहासे कनकपुरीनाम नगरीमें पहुचा और वहाजाकर विनापलकलगाये शोभादेखने के योग्य स्वर्गके समान बडेपुण्यात्माओके भोगकरनेकी भूमि कनकपुरीदेखी और वहाविद्यापढकर कुछकालके पीछे मैंयहा चलाआया इसप्रकार जिसमार्गसे मैंगयाथा और जैसीनहपुरी है सोसबमैंने निवेदनकिया इसप्रकार उसधूर्त्त ब्राह्मणके कहचुकनेपर कनकरेखा हँसकरबोली कि हेब्राह्मण क्यासत्य २ तुमने वहनगरीदेखी है अच्छाफिरकहो कितुमकिसमार्गसे वहागये थे यहसुनकर जबवह फिर धूर्त्तता करनेलगा तबउसने दासियोसे उसेनिकलवादिया उसके चलेजानेपर वह उसीसमय अपनेपिताके पासगई और राजानेभी पूछा कि क्यावहब्राह्मण सत्यकहताथा यहसुनकर राजकन्याने कहा किहेतात आप राजाहोकर भी विनाविचारे बातकरतेहो क्यानहीं जानते हो कि धूर्त्त लोग सीधे लोगोंको ठगते हैं वह ब्राह्मण झूठमूठमुझेठगना चाहताहै उसमिथ्यावादीने वहनगरीकभी नहीं देखी इससंसारमें धूर्त्तलोग अनेकप्रकारकी छलकियाकरतेहैं सुनो इसीविषयमे मैं तुम्हे शिव और

माधवनाम दो धूर्त्तोकी कथा सुनातीहू यहकहकर वह कनकरेखा कथा कहनेलगी ६१ कि रत्नपुरनाम यथार्थ नामवाले नगर में शिव और माधव नाम दो धूर्त्त रहते थे उनदोनों ने बहुत से धूर्त्तोंको अपने साथ में लेकर अपनी माया के प्रयोग से नगर के सम्पूर्ण धनीलोग ठग लिये एकसमय उन दोनोंने आपसमे यह सलाहकरी कि यह नगर तो हमने सब ठग लिया इससे अब उज्जयिनीपुरी मे चलकररहें वहां राजाका शङ्करस्वामी नाम पुरोहित बडा धनवान् सुनाई देताहै युक्तिपूर्व्वक उससे धन लेकर मालव देशकी स्त्रियोंके रसको भोगकरेंगे उज्जयिनी के ब्राह्मण लोग उसे यमराज के समान कठिन कहते हैं क्योंकि वह उनसे आधी दक्षिणा लेलेता है और एक कन्याभी उसके है वह भी इसी प्रसगसे हमें अवश्य मिलेगी इसप्रकार निश्चयकरके और अपने २ कर्त्तव्यका विचारकरके वह दोनो धूर्त्त उस पुरी से चले धीरे २ उज्जयिनी के निकट पहुचकर माधवने राजपुत्रका भेष बनाकर सब सामान सहित नगर के बाहर डेरा किया और शिव पहलेही ब्रह्मचारी का भेष बनाकर अकेला उसनगरी में चलागया और वहां शिप्रा नदी के किनारेपर एक मठबनाकर उसमे मृत्तिकाकुश भिक्षा के पात्र तथा मृगचर्मको सब के देखने के योग्य स्थान में रखकर रहनेलगा और प्रातःकाल बहुतसी मृत्तिका अपने शरीर में लपेटकर नदीके जलमे बहुतकालतक अधोमुख होकर रहताथा मानो कुकर्मसे होनेवाली अपनी अधोगतिका पहलेहीसे अभ्यास करताथा और स्नानकरके बहुतकालतक सूर्य्य के सन्मुख ऊपरको मुखकिये पडा रहताथा मानो अपनी शूली देनेकी योग्यताको प्रकटकरताथा फिर देवताके सन्मुख जाकर कुशो को हाथमे लेके पद्मासनसे बैठाहुआ दभमें अत्यन्त चतुरहोकर जपकरताथा इसके अनन्तर साधु लोगो के हृदयके समान स्वच्छ पुष्पोंको लेकर श्रीशिवजीका पूजन करताथा और पूजनकरके फिरभी झूठ मूठ ध्यानदेकर जपकरताथा मानों आगे होनेवाले नरकोंका ध्यान करताथा और अपराह्णके समय मृगचर्मको पहनकर भिक्षाके निमित्त मायारूपी स्त्रीके कटाक्षके समान वह पुरमें घूमताथा ब्राह्मणोंके घरोंसे तीन भिक्षाओंको लेकर उसभिक्षाके तीनभाग करताथा एक भाग काकोंको देताथा एक भाग अभ्यागतोंको देताथा और एक भागसे अपना पेट भरताथा भोजनके उपरान्त मालाको लेकर फिर झूठ मूठ जप कियाकरताथा मानों अपने सपूर्णपापोंको गिनताथा और रात्रिके समय लोगोंकी सूक्ष्मतर्क करनेकी बातोंको विचारताहुआ अकेला उसीमठ मे रहताथा इसप्रकार प्रतिदिन अत्यन्त कठिन कपटमें भरेहुये तपकोकरके उसने नगरीके निवासियों का चित्त अपने वशीभूत करलिया नगरभरे में उसकी यह प्रसिद्धिहोगई कि यह बडाशान्त तथा तपस्वीहै और सपूर्णलोग उसके भक्तहोगये १०५ इसके उपरान्त उसकामित्र माधवभी दूतके मुखसे यहवृत्तान्त सुनकर नगरी में आया और वहाथोडीदूरपर किसी देवमन्दिरमें रहकर राजपुत्रके भेषसे क्षिप्रानदीमें स्नानकरनेको गया और स्नानकरने के उपरान्त देवताके आगे अपने मित्रशिवको देखकर नम्रतापूर्वक उसकेपैरोंपर गिरपडा और सबलोगोंको सुनाकर बोला कि ऐसा और कोई तपस्वी नहीं है मैंने इसे बहुधातीर्थोंपर घूमताहुआ देखाहै और शिव इसको देखकरभी उसीप्रकारसे खडारहा फिरमाधव अपने डेरोंको चलागया रात्रिकेसमय दोनों ने एकस्थानमें

सुनाहै देखनेकी कौनक है तबराजाने प्रतीहारको बुलाकर कहा कि जाओ शहरभरे में ढँढोरा पिटवाओ किसीने कनकपुरी देखी है यानहीं राजाकी यह आज्ञापावेही प्रतीहारने बाहर जाकर राजपुरुषोंसे ढँढोरा पिटवाया सपूर्ण नगरभरमें ढँढोरापीट २ कर राजपुरुषोंने यहवचन कहा कि ब्राह्मण अथवा क्षत्री जिसने कनकपुरी देखीहोय वहकहै उसेराजा अपनी कन्या और युवराजपदवीदेगा इसढँढोरेको सुनकर सपूर्ण वृद्धपुरवासी कहतेथे कि आजयह क्या सपूर्ण नगरभरमें कनकपुरीके नामसे ढँढोरा पिटरहाहै यह तो हम वृद्धलोगोंने भी आजतक न कहींदेखी न सुनी यह बाततो सबने कही परन्तुयह बात किसीने भी नहीं कही कि मैंने कनकपुरी देखीहै उससमय उसनगरके निवासी बलदेवनाम ब्राह्मणके पुत्र व्यसनी तथाजुएसे निर्धन सत्यदेवनाम युवाब्राह्मणने वहढँढोरा सुना और शोचाकि मैं जुएमें सपूर्णधन हारगयाहू इससे न पिताके यहा जासक्ताहू और न वेश्याओकेघर जासक्ताहू तोअवमुझे कोईगतिनहीं है इससे ढँढोरियोंसे मिथ्या कहदू कि मैंने कनकपुरी देखीहै कौनमुझे जानेगा कि इसनेनहीं देखीहै क्योंकि उसे किसी ने देखाही नहीं कदाचित् इसप्रकार से राजपुत्री के साथ मेरासमागम होजाय इसप्रकार शोचकर शक्तिदेवने राजपुरुषोंसे झूठमूठ कहदिया कि मैंने कनकपुरी देखी है तबराजपुरुषोंने कहा कि अच्छीबातहै तुमहमारे साथप्रतीहारके पासचलो वहउनकेसाथ प्रतीहारके पासगया और उससेभी जाकर कहा कि मैंने कनकपुरी देखी है वहभी सत्कारपूर्व्वक उसेराजाके पासलेगया राजाके आगेभी उसने निस्सन्देह होकर कहा कि मैंने कनकपुरी देखी है ठीककहाहै कि (द्यूततान्तस्यकिन्नाम कितवस्यहिदुष्करम्) जुएमें हाराहुआ धूर्त्तक्यानहींकरता ६५ राजानेभी निश्चयजाननेके लिये उसब्राह्मणको कनकरेखाकेपास भेजदिया कनकरेखाने प्रतीहारके द्वारा उसेकनकपुरी का देखनेवाला जानकर अपनेपास बैठाया और पूछा कि क्यातुमने कनकपुरीदेखीहै उसनेकहाहा विद्यापढनेके समय सम्पूर्ण पृथ्वीपर घूमतेहुए मैंने कनकपुरी देखी है यहसुनकर उसकन्यानेकहा कि तुमवहा किसमार्गसे गयेथे और वह कैसीहै तबशक्तिदेवने कहा कि यहासे मैंहरपुरनाम नगरकोगया वहासे धीरे २ काशीजी पहुंचा काशीजीसे कुछ दिनों में पौण्ड्रवर्द्धननगरमे गया और वहासे कनकपुरीनाम नगरी में पहुचा और वहाजाकर विनापलकलगाये शोभादेखने के योग्य स्वर्गके समान बडेपुण्यात्माओंके भोगकरनेकी भूमि कनकपुरीदेखी और वहाविद्यापढकर कुछकालके पीछे मैंयहा चलाआया इसप्रकार जिसमार्गसे मैंगयाथा और जैसीवहपुरी है सोसबमैंने निवेदनकिया इसप्रकार उस धूर्त्त ब्राह्मणके कहचुकनेपर कनकरेखा हँसकरबोली कि हेब्राह्मण क्यासत्य २ तुमने वहनगरीदेखी है अच्छाफिरकहो कितुमकिसमार्गसे वहागये थे यहसुनकर जबवह फिर धूर्त्तता करनेलगा तबउसने दासियोंसे उसेनिकलवादिया उसके चलेजानेपर वह उसीसमय अपनेपिताके पासगई और राजानेभी पूछा कि क्यावहब्राह्मण सत्यकहताथा यहसुनकर राजकन्याने कहा किहेतात आप राजाहोकर भी विनाविचारे बातकरतेहो क्यानहीं जानते हो कि धूर्त्त लोग सीधे लोगोंको ठगते हैं वह ब्राह्मण झूठमूठमुझेठगना चाहताहै उसमिथ्यावादीने वहनगरीकभी नहीं देखी इससंसारमें धूर्त्तलोग अनेकप्रकारकी छलविद्याकरतेहैं सुनो इसीविषयमें मैं तुम्हें शिव और

माधवनाम दो धूर्त्तोंकी कथा सुनातीहू यहकहकर वह कनकरेखा कथा कहनेलगी ९१ कि रत्नपुरनाम यथार्थ नामवाले नगर में शिव और माधव नाम दो धूर्त्त रहते थे उनदोनों ने बहुत से धूर्त्तोंको अपने साथ मे लेकर अपनी माया के प्रयोग से नगर के सम्पूर्ण धनीलोग ठग लिये एकसमय उन दोनोंने आपसमे यह सलाहकरी कि यह नगर तो हमने सबठग लिया इसमे अब उज्जयिनीपुरी मे चलकररहैं वहा राजाका शङ्करस्वामी नाम पुरोहित बडा धनवान् सुनाई देताहै युक्तिपूर्व्वक उससे धन लेकर मालव देशकी स्त्रियोंके रसको भोगकरेंगे उज्जयिनी के ब्राह्मण लोग उसे यमराज के समान कठिन कहते है क्योंकि वह उनसे आधीदक्षिणा लेलेता है और एक कन्याभी उसके है वह भी इसी प्रसगसे हमें अवश्य मिलेगी। इसप्रकार निश्चयकरके और अपने २ कर्त्तव्यका विचारकरके वह दोनो धूर्त्त उस पुरी से चले धीरे २ उज्जयिनी के निकट पहुंचकर माधवनें राजपुत्रका भेष बनाकर सब सामान सहित नगर के बाहर डेरा किया और शिव पहलेही ब्रह्मचारी का भेष बनाकर अकेला उसनगरी में चलागया और वहां शिप्रा नदी के किनारेपर एक मठबनाकर उसमें मृत्तिकाकुश भिक्षा के पात्र तथा मृगचर्मको सब के देखने के योग्य स्थान में रखकर रहनेलगा और प्रातःकाल बहुतसी मृत्तिका अपने शरीर मे लपेटकर नदीके जलमें बहुतकालतक अधोमुख होकर रहताथा मानो कुकर्मसे होनेवाली अपनी अधोगतिका पहलेहीमे अभ्यास करताथा और स्नानकरके बहुतकालतक सूर्य्य के सन्मुख ऊपरको मुखकिये पडा रहताथा मानों अपनी शूली देनेकी योग्यताको प्रकटकरताथा फिर देवताके सन्मुख जाकर कुशों को हाथमे लेके पद्मासनसे बैठाहुआ दम्भमे अत्यन्त चतुरहोकर जपकरताथा इसके अनन्तर साधु लोगों के हृदयोंके समान स्वच्छ पुष्पोंको लेकर श्रीशिवजीका पूजन करताथा और पूजनकरके फिरभी झूठ मूठ ध्यानदेकर जपकरताथा मानों आगे होनेवाले नरकोंका ध्यान करताथा और अपराह्नके समय मृगचर्मको पहनकर भिक्षाके निमित्त मायारूपी स्त्रीके कटाक्षके समान वह पुरमें घूमताथा ब्राह्मणोंके घरोंसे तीन भिक्षाओंको लेकर उसभिक्षाके तीनभाग करताथा एक भाग कार्कोंको देताथा एक भाग अभ्यागतोंको देताथा और एक भागसे अपना पेट भरताथा भोजनके उपरान्त मालाको लेकर फिर झूठ मूठ जप कियाकरताथा मानों अपने सपूर्णपापोंको गिनताथा और रात्रिके समय लोगोंकी सूक्ष्मतर्क करनेकी बातोंको विचारताहुआ अकेला उसीमठ मे रहताथा इसप्रकार प्रतिदिन अत्यन्त कठिन कपटमें भरेहुये तपकोकरके उसने नगरीके निवासियो का चित्त अपने वशीभूत करलिया नगरभरे में उसकी यह प्रसिद्धिहोगई कि यह बडाशात तथा तपस्वीहै और सपूर्णलोग उसके भक्तहोगये १०५ इसके उपरान्त उसकामित्र माधवभी दूतके मुखसे यहवृत्तान्त सुनकर नगरी में आया और वहाथोडीदूरपर किसी देवमन्दिरमें रहकर राजपुत्रके भेषसे शिप्रानदीमें स्नानकरनेको गया और स्नानकरने के उपरान्त देवताके आगे अपने मित्रशिवको देखकर नम्रतापूर्वक उसकेपैरोंपर गिरपडा और सबलोगोंको सुनाकर बोला कि ऐसा और कोई तपस्वी नहीं है मैंने इसे बहुधातीर्थोंपर घूमताहुआ देखाहै और शिव इसको देखकरभी उसीप्रकारसे गडारहा फिरमाधव अपने डेरोंको चलागया रात्रिकेसमय दोनो ने एकस्थानमे

मिलकर भोजनतथा पानकरके आगे जोकुछ कर्त्तव्यथा उसकीसलाहकी पिछलेपहर शिवतो अपनी मठीमें चलाआया और माधवने प्रातःकाल उठकर एकधूर्त्त से कहा किदो वस्त्रों की भेटलेकर राजा के पुरोहित शंकर स्वामीके यहाँजाओ और उनसे जाकर विनयपूर्व्वक यहकहो कि माधवनाम राजपुत्र अपने गोत्री भाइयो के द्वारा राज्यसे निकाल दियागयाहै वह कई एक अन्य राजपुत्रोंको भी अपने साथ में लेकर और अपने पिताका बहुतसा धन लेकर दक्षिण दिशासे यहा आया है और आपके राजाकासेवन करना चाहताहै उसीने आपके दर्शन करने के लिये मुझको भेजाहै इसप्रकार कहकर माधवकाभेजाहुआ वहदूतभेटलेकर पुरोहितजी के यहाँ पहुचा और एकान्त मे भेट देकर उसने माधव का सब सदेशा उससे कहदिया उसनेभी भेटके लोभसे और आगेको भी बहुतसा लाभसमझकर उन बातोंपर विश्वासकरलिया ठीकहै (उपप्रदानलिप्सूनामेकह्याकर्षणौषधम्) कुछ देना ही लोभियों के आकर्षण करनेकी परम औषधहै १२० इसके उपरान्त उसधूर्त्तके लौटआनेपर दूसरेदिन माधव अवकाश पाकर उसपुरोहितकेपास आपहीगया राजपुत्रोंके भेषको धारणकियेहुए बहुतसे धूर्त्तोंको साथमें लेकर पुरोहितके यहाँ पहुचा पुरोहितनेभी पहलेहीसे उसका आगमन सुनकर आगे आकर उसेलिया और स्वागत पूछकर उसेबहुत प्रसन्न किया वहाँ थोडीदेर उसकेसाथ बैठकर माधव अपने डेरे पर चलाआया दूसरेदिन फिर दोवस्त्र भेजकर उसके पासगया और बोला कि कुटुम्बके अनुरोधसे मैं सेवाकरनेकी इच्छा करताहू इसीसे मैंने आपका आश्रय लियाहै और धनतो मेरेपास बहुतहै उसके यहवचन सुनकर पुरोहितने अधिक धनकेपानेकी इच्छासे कहा कि मैं तुम्हारा अभीष्ट सिद्धकरदूंगा और क्षणभरमें राजाके पास जाकर माधवकी जीविकाके लिये पुरोहितजीने विज्ञापनाकरी और राजाने भी उनके गौरवसे वह बात स्वीकार करली दूसरे दिन पुरोहित अन्यधूर्त्तों समेत माधवको राजाके निकट लेगया राजाने भी माधवकी आकृति राजपुत्रोंके समान देखकर आदर पूर्व्वक उसकी जीविका अपने यहाँ करदी इसके उपरात माधव राजाकी सेवा करनेलगा रात्रिके समय वह अपने मित्र शिवके पास आकर सलाह कर जाया करताथा माधवसे उस पुरोहितने लोभसे कहा कि तुममेरेही घरमे आकर रहो तबवह अपने सपूर्ण साथियो समेत उसके घरमें जाकररहा और कृत्रिममाणिक्यों केबनेहुए भूषणोंसे भराहुआ पात्र उसी के यहाँ रखवाकर और अनेक बहानोंसे उसे बीच २ में भी खोलकर उन आभूषणोसे उसने उस पुरोहित का चित्तहरलिया घासको देखकर पशुकेसमान लोभितहुए उस पुरोहितके विश्वासित होजानेपर माधव ने भोजन घटाकर अपना शरीर दुर्बलकरके मिथ्यारोग प्रगट किया कुछदिनोके व्यतीत होनेपर शय्या के पास बैठेहुए पुरोहितसे धूर्त्तराज माधव धीमेस्वरसे बोला कि मेरे शरीरकीदशा अब अच्छी नहीं है इससे आप किसी उत्तम ब्राह्मणको बुलालाओ जिसे मैं सकल्प करके अपना सर्वधन देदूँ इससे मेरे इसलोक और परलोक दोनोंमे उपकार होगा वीरलोग प्राणोंको स्थिर न जानकर धनपर ममता नहीं करते है उसके यहवचन सुनकर दानकी जीविका करनेवाला पुरोहित बोला कि मैं ऐसाही करूंगा यह सुनकर माधव उसके पैरोंपर गिरपडा इसके उपरान्त पुरोहित जिन २ ब्राह्मणों को बुलाकर लाया

उन,सनपर माधनने उत्तम न समझकर श्रद्धानकी,यहदेखकर उसकेपास बैठाहुआ एक धूर्त्त बोला कि इसे प्राय सामान्य ब्राह्मण अच्छो नहीं मालूमहोतो इससे यहजो क्षिप्रानदी के तटपर शिवनाम बड़ा तपस्वी ब्राह्मण रहताहै वह इसे अच्छामालूमहोताहै कि नहीं यहसुनकर माधवने उस पुरोहित से कहा कि आप मेरे ऊपर कृपाकरके उस,ब्राह्मणको लेआइये क्योंकि उसके समान और कोई ब्राह्मण नहीं है १४३ उसके यहवचन सुनकर पुरोहित शिवके पासगया उससमय वह निश्चल ध्यानलगायेहुए बैठा था पुरोहित प्रदक्षिणा करके उसके सम्मुख बैठगया और उससमय शिवने धीरेसे नेत्रखोलकर देखा तब पुरोहित प्रणाम करके बोला कि हे प्रभो जो आप कोप न करें तो मैं एक,प्रार्थनाकरूं यहसुनकर उसने इशाराकिया कि कहो तबवह बोला कि माधवनाम बड़ाधनवान् एकदक्षिणका राजपुत्र मेरेयहाँ रहताहै वह,अपना सर्वस्वदानकरनेको तैयार है यदि आप स्वीकारकरें तो नानाप्रकारके रत्नोंसे जटित महामूल्य सपूर्ण आभूपण वह आपको देवे यहसुनकर शिवने धीरेसे कहा कि हे ब्राह्मण मुझभिक्षुक ब्रह्मचारीको धनसे क्या प्रयोजनहै तबपुरोहितने कहा कि आप ऐसा मतकहो क्या आश्रमके क्रमको आपनहीं जानतेहो विवाहकरके घरमें देवपितृ और अतिथियोका पूजन करतेहुए गृहस्थ लोग धनसे धर्म अर्थ काम इनतीनोंको प्राप्तहोते हैं क्योंकि गृहस्थाश्रम सम्पूर्ण आश्रमो से श्रेष्ठहै यहसुनकर शिवने कहा कि मेरा विवाहही कहाँ हुआहै और विवाहमें कठिनता यहहै कि मैं ऐसे वैसे साधारण,कुलसे कन्या नहीं लूंगा उसके,यहवचन सुनतेही पुरोहितने अपने मनमें शोचा कि यदि इसका विवाह मेरी,कन्यासे होजाय तो धन सुखपूर्वक भोगकरनेको मिले यहशोचकर उसने कहा कि मेरे विनयस्वामिनी नाम एक अति सुन्दर कन्या है वह मैं आपको देदूंगा इस्से आप गृहस्थाश्रमको स्वीकार कीजिये और जो कुछ,धन आपको माधवसे मिलेगा उसकी रक्षा मैं करूंगा तब शिव अपने मनोरथको सिद्धजानकर यह वचन बोला कि हे ब्राह्मण यदि आपको ऐसाही आग्रहहै तो मैं ऐसाही करूंगा परन्तु मैं,तपस्वी होनेके कारण सुवर्ण और रत्नको नहीं जानता और तुम्हारेही वचन,से इसकार्य्य में प्रवृत्तहोताहूं इस्से तुम्हें जैसा योग्य समझपडे वैसाकरो शिवके यहवचन सुनकर प्रसन्नहुआ पुरोहित उसे,अपने घरको लेगया वहाँ उसे लेजाके माधवसे सपूर्ण वृत्तान्त कहदिया और वह भी सुनकर बड़ा प्रसन्नहुआ उससमय पुरोहितने [illegible]से हारीहुई सम्पत्तिके समान अपनी,कन्या अशिवस्वरूपशिवको देदीनी फिर विवाहकरनेके उपरान्त [illegible]न पुरोहित शिवको दानदिलानेकेलिये माधवकेपास लेगया उसे देखतेही तुझ महातपस्वीको म[illegible]रताहूं यह,मिथ्या वचनकहकर माधव,उसके पैरोंपर गिरपड़ा और पुरोहितने वहाँ से बहुत रत्नि[illegible]क्यों के बनेहुए आभूषण उसेदेदिये शिवने भी मैं इनकेमूल्यको नहीं जानताहूं तुम्हीं जानो यह [illegible]र पुरोहितको वहसब देदिये पुरोहितने भी मैं तो पहलेही स्वीकारकर चुकाहूं आपको क्या चिन्ताहै [illegible]कर सब आभूपण लेलिये १६६ इसके उपरान्त शिवतो आशीर्वाद,देकरअपनी स्त्रीके पास चला [illegible]ौर पुरोहितनेवहसब रत्न अपनेभंडारमें रखदिये माधवभी दूसरे दिनसे महादानके प्रभावसे अपने धीरे२ शान्तहोनाकहनेलगा और पुरोहितसे बोला कि तुम्हारी सहायतासे मैं इसमहा आपत्तिसे

मिलकर भोजनतथा पानकरके आगे जोकुछ कर्त्तव्यथा उसकीसलाहकी पिछलेपहर शिवतो अपनी मठीमें चलाआया और माधवने प्रातःकाल उठकर एकधूर्त्त से कहा किदो वस्त्रो की भेटलेकर राजा के पुरोहित शंकर स्वामीके यहाजाओ और उनसे जाकर विनयपूर्व्वक यहकहो कि माधवनाम राजपुत्र अपने गोत्री भाइयो के द्वारा राज्यसे निकाल दियागयाहै वह कई एक अन्य राजपुत्रोंको भी अपने साथ में लेकर और अपने पिताका बहुतसा धन लेकर दक्षिण दिशासे यहा आया है और आपके राजाकासेवन करना चाहताहै उसीने आपके दर्शन करने के लिये मुझको भेजाहै इसप्रकार कहकर माधवकाभेजाहुआ वहदूतभेटलेकर पुरोहितजी के यहाँ पहुचा और एकान्त में भेट देकर उसने माधव का सब संदेशा उससे कहदिया उसनेभी भेटके लोभसे और आगेको भी बहुतसा लाभसमझकर उन बातोंपर विश्वासकरलिया ठीकहै (उपप्रदानलिप्सूनामेकह्याकर्षणौषधम्) कुछ देना ही लोभियों के आकर्षण करनेकी परम औषधहै १२० इसके उपरान्त उसधूर्त्तके लौटआनेपर दूसरेदिन माधव अवकाश पाकर उसपुरोहितकेपास आपहीगया राजपुत्रोंके भेपको धारणकियेहुए बहुतसे धूर्त्तोंको साथमें लेकर पुरोहितके यहाँ पहुचा पुरोहितनेभी पहलेहीसे उसका आगमन सुनकर आगे आकर उसेलिया और स्वागत पूछकर उसेबहुत प्रसन्न किया वहाँ थोडीदेर उसकेसाथ बैठकर माधव अपने डेरे पर चलाआया दूसरेदिन फिर दोवस्त्र भेजकर उसके पासगया और बोला कि कुटुम्बके अवरोधसे मैं सेवाकरनेकी इच्छा करताहू इसीसे मैंने आपका आश्रय लियाहै और धनतो मेरे पास बहुतहै उसके यहवचन सुनकर पुरोहितने अधिक धनकेपानेकी इच्छासे कहा कि मैं तुम्हारा अभीष्ट सिद्धकरदूगा और क्षणभरमें राजाके पास जाकर माधवकी जीविकाके लिये पुरोहितजीने विज्ञापनाकरी और राजाने भी उनके गौरवसे वह बात स्वीकार करली दूसरे दिन पुरोहित अन्यधूर्त्तों समेत माधवको राजाके निकट लेगया राजाने भी माधवकी आकृति राजपुत्रोंके समान देखकर आदर पूर्व्वक उसकी जीविका अपने यहाँ करदी इसके उपरात माधव राजाकी सेवा करनेलगा रात्रिके समय वह अपने मित्र शिवके पास आकर सलाह कर जाया करताथा माधवसे उस पुरोहितने लोभसे कहा कि तुममेरेही घरमे आकर रहौ तबवह अपने सपूर्ण साथियो समेत उसके घरमें जाकररहा और कृत्रिममाणिक्यों के बनेहुए भूषणोंसे भराहुआ पात्र उसी के यहाँ रखवाकर और अनेक बहानो से उसे बीच २ मे भी खोलकर उन आभूषणोंसे उसने उस पुरोहित का चित्तहरलिया घासको देखकर पशुकेसमान लोभितहुए उस पुरोहितके निश्वासित होजानेपर माधव ने भोजन घटाकर अपना शरीर दुर्बलकरके मिथ्यारोग प्रगट किया कुछदिनोके व्यतीत होनेपर शय्या के पास बैठेहुए पुरोहितसे धूर्त्तराज माधव धीमेस्वरसे बोला कि मेरे शरीरकीदशा अब अच्छी नहीं है इससे आप किसी उत्तम ब्राह्मणको बुलालाओ जिसे मैं संकल्प करके अपना सर्वधन देदूँ इससे मेरे इसलोक और परलोक दोनोंमें उपकार होगा धीरलोग प्राणोंको स्थिर न जानकर धनपर ममता नहीं करते हैं उसके यहवचन सुनकर दानकी जीविका करनेवाला पुरोहित बोला कि मैं ऐसाही करूंगा यह सुनकर माधव उसके पैरोंपर गिरपडा इसके उपरान्त पुरोहित जिन २ ब्राह्मणों को बुलाकर लाया

मनुष्योंपर कौन २ सी विपत्ति नहीं आती इसप्रकार पुरोहित तो अपने धनेगको करनेलगये और वेहदोनों धूर्त प्रसन्न हुए राजासे वहुतमा धनपाकर सुखपूर्वक नहीं रहनेलगे इसीप्रकारसे जालसाजीकरके जीविका करनेवाले धीवरोंकेसमान धूर्त सैकड़ोंप्रकारके ढगोंकोरचकर संसारमेंजालफैलाते हैं २०० इससे हे पिता झूठही कनकपुरीकादेखन बताकर यह ब्राह्मण तुम्हेंठगकर मुझेलेनाचाहता है इससे आप मेरे विवाहके लिये शीघ्रतान करें मैं अभी कन्याहीरहूंगी देखूं क्याभवितव्यताहै कन्याकेयहवचनसुनकर वहपरोपकारी राजा बोला कि हे पुत्री युवावस्थामें बहुतकालतक कन्यारहना अच्छानहीं है गुणमें ईर्षाकरनेवाले दुष्ट लोग मिथ्यादोषलगाते हैं और उत्तमलोगोंमें लोगविशेषकरके कलंककोबनालेतेहैं इसीविषयमें मैं हर-स्वामीब्राह्मणकी एककथा कहताहूं गंगाजीकेनिकट जो कुसुमपुरनाम नगरहै वहां तीर्थका सेवनकरने वाला हरस्वामीनाम एकब्राह्मणरहताथा वहगङ्गाजी के किनारेकुटीवनाके भिक्षावृत्तिसे अपना पालन करताथा और तपकेप्रभावसे वहां केनिवासियोंपर उसकाबड़ादबावहोगया था एकसमय उसब्राह्मणको भिक्षामागनेको जाते देखकर उसकेगुणोंमे ईर्षाकरनेवाले एकदुष्टनेलोगोंसे कहा कि क्या तुमजानतेहो कि यहकैसाकपटी तपस्वी है इसीने इसनगरमे सबबालकखायेहैं यहसुनकर उसीकासाथी एकदूसरादुष्ट बोला कि तुमठीककहतेहो मनेभी लोगोंसेऐसाही सुनाहै तब एकतीसरादुष्ट और बोला कि हां यहबात बहुतठीकहै सत्यकहाहै कि (बध्नात्यार्य्यपरीवादःखलसंवादशृंखला) दुष्टलोगोंकी बातोंकीपरम्परा स-ज्जनलोगोंके अपयशकोकरतीहै २११ इसीक्रमसे एकसेदूसरेकेकानमेंजाताहुआ यहचवासपूर्णनगरमें फैलगया तब सपूर्णपुरवासी अपनेबालकोंको घरसे बाहरनहीं निकलनेदेते थे इसकारणसे कि हरस्वामी लड़कोंको लेजाकरखाडालताहै इसकेउपरान्त वहांकेसंपूर्ण ब्राह्मणोंने बालकोंकेनाशकेभयसे उसको न-गरसे बाहरनिकालदेनेकी सलाहकी और सबलोगइसभयसे कि यहकोपकरके हमीलोगोंकोनखालेउसके पासनहींजासके तब उन्होंनेउसकेपास दूतभेजे दूतोंनेदूरहीसेजाकर उससेकहा कि ब्राह्मणलोगकहते हैं कि तुमइसनगरसेचलेजाओ उसनेआश्चर्य्ययुक्तहोकर उनसेपूछा कि क्योंऐसाकहतेहैं तबदूतोंनेउत्तरदिया कि तुमजिसबालकको देखपातेहो उसेखाडालतेहो यहसुनकर हरस्वामी ब्राह्मणोंको समझानेकेलिये आपही उनके पासचलाउसेआते देखकर लोगभागनेलगे और ब्राह्मणलोगभयसे अपने२ मठोंपर चढगयेठीकहै (प्रवादमोहितःप्रायोनविचारक्षमोजनः) प्राय मिथ्या अपवादसे मोहितहुए लोग विचार नहीं करसक्ते हैं इसके उपरान्त हरस्वामीने नीचे खड़ेहोकर मठोंपर खड़ेहुए ब्राह्मणोंसे एक२ का नामलेकरकहा कि हे ब्राह्मणलोगो तुम्हें आज यह क्या अज्ञानहुआहै अपनेआपसमें क्योंनहीं देखतेहो कि मैंने किसके कि-तनेबालक कबकहां खायेहैं यह सुनकर सबब्राह्मणलोगोंने आपसमें विचारकिया तो मालूमहुआ कि सब के बालक जीते हैं क्रमसे सबपुरवासियों ने विचार कियातो सबको मालूमहुआ कि किसीकाभी बालक इसने नहींखाया यहदेखकर सम्पूर्ण ब्राह्मण तथा बणियोंने कहा कि अरेहमसबमूर्खलोगोंने इससाधुको मिथ्याही दोषलगाया सबकेबालकतो जीते हैं इसने किसके बालकखाये इसप्रकार सब लोगोंके कहने पर हरस्वामी अपनी शुद्धताको प्रकटकरके नगरसे जानेको तैयारहुआ ठीककहाहै कि (दुर्जनोत्पादि

परिहुआ और इसीकेप्रभावसे यहमेरा शरीरबचाहै यहकहकर शिवकेसाथ प्रत्यक्षमेभी मित्रता करनेलगा इसके उपरान्त कुछ दिनोके व्यतीतहोनेपर शिवनेपुरोहितसे कहा कि इसप्रकारसे मैं तुम्हारे यहाँ कबतक भोजनकरूगा इस्से तुम्ही इनआभूपणोंको क्यो नहीं मोल लेलेतेहो और जो इनआभूषणोंको बहुमूल्य जानतेहो तो जो कुछ तुमसेहोसके वही मुझको देदो यहसुनकर पुरोहितने उनभूषणोंको बहुमूल्य समझकर अपना सर्वस्व उसे देदिया और अपने धनसे उन आभूपणोंको अधिक मूल्यका समझकर उसने एकलेख शिवसेलिखवालिया और आपभी उसेलिखदिया इसप्रकार उनदोनोंने एकदूसरेका लिखाहुआ कागजलेलिया और अपनानिवासभी दोनोने अलग २ करलिया इसकेउपरान्त शिव और माधवदोनों पुरोहितके धनको भोगतेहुए सुखपूर्वकरहनेलगे कुछसमयके व्यतीतहोनेपर पुरोहित उनआभूषणोंमेंसे एक आभूपणलेकर बाजारमे वेचनेकोगया वहाउसआभूपणको देखकररत्नकेपहचाननेवाले बणिये बोले कि किसमें ऐसीचतुरताहै जिसनेयहकृत्रिम भूपणवनायाहै यह तो पीतलमेजडेहुए अनेकरगोंसे रगेहुए काचतथा बिल्लौरकेटुकडे है इसमें न रत्नहै न सुवर्णहै यहसुनकर पुरोहितने बहुत बिह्वलहोकर सब आभूपण घरसे लाकर उन्हेदिखाये उनलोगोंने देखकरकहा कि यहसब आभूपणकृत्रिमहै यहसुनतेही पुरोहितकी छातीमेंवज्रसालगा और उसनेउससमय शिवसे जाकरकहा कि तुम अपने आभूषणलेलो और मेराधनदेदो तबशिवने उत्तरदिया कि अब मेरेपासधनकहा है मैंने सबखर्चकरडाला तब लडतेहुए वह दोनो राजाकेपासगये वहामाधवभी राजाकेपास बैठाथा पुरोहितनेराजासेकहा कि शिवनेपीतलमें जडे हुए अनेकरगोंसे रगेहुए काचतथा बिल्लौरकेटुकडों से बनेहुए झूठे आभूपण मुझेदेकर मुझ न जाननेवाले का सर्वस्वखाडाला तबशिवनेकहा कि हे महाराज मैं तो बाल्यावस्थाही से तपस्वीथा इसीनेबहुत प्रार्थनाकरके मुझेदानदिलवाया और मैने उसीसमय इस्सेकहदियाथा कि मै रत्नादिक और सुवर्णनहीं पहचानताहूं तुम्हें जैसासमझपडे वैसाकरो इसनेकहाथा कि मै सबदेखलूगा तुमको इस्से कुछकामनहीं और मैंने वहसबलेकर इसीकोदेभीदियाथा तब इसने अपनीइच्छाकेअनुसार मुझेमोलदेकर सबलेलिया इसविपयमें हमारी इनकीलिखापढीभी होगई थी वहदोनोकेपासहै अबआप जैसा उचितसमझिये वैसा कीजिये इसप्रकार कहकर शिवकेचुपहोजानेपर माधवपुरोहितसे बोला कि आपऐसा न कहिये इसमें मेरा भी कोई अपराधनहीं है मैने आपसे और शिवसे कुछ लेनहींलिया मैने अपने पिताकाधन किसी के पासरखदिया था बहुतदिनोकेपीछे उससे लेकर यहाचलाआया और वही दानकरकेदेदिया यदिसत्य २ उसमें सुवर्णतथा रत्ननहीं हैं तो मुझेपीतल बिल्लौरतथा काचहीके देनेकाफलहोगा और निष्कपटहोने के कारणमुझे तो दानमें विश्वासहै इसीकेप्रभावसे मैं अत्यन्तमहाकठिनरोगसे निवृत्तहोगया यहसब कोई जानताहै इसप्रकार जबमाधवनेकहा और उसकेमुखपर किसीप्रकारका विकारनहींमालूमहुआ तब राजासपूर्ण मन्त्रियोंसमेत हँसा और माधवपरप्रसन्नहोगया उससमय संपूर्ण सभाकेलोगोंने हँसीको रोककर यहकहा कि इसमेंमाधव और शिव किसीकाभी कोईदोपनहीं है यहसुनकर पुरोहितलज्जितहोकर वहासे चलागया ठीककहाहै कि (कासादिनापदाहेतु रतिलोभान्धबुद्धिता) अत्यन्त लोभान्धहोनेसे

मनुष्योंपर कौन२सी विपत्तिनहीं आती इसप्रकारपुरोहित तो अपनेघरकोचलेगये और वहदोनो धूर्त्तप्रसन्नहुए राजासे बहुतसा धनपाकर सुखपूर्व्वकनहींरहनेलगे इसीप्रकारसे जालसाजीकरके जीविका करनेवाले, बीनरोंकेसमान धूर्त्तसैकड़ोंप्रकारके ढगोंकोरचकर संसारमेंजालफैलाते हैं २०० इससे हे पिता झूठही कनकपुरीकादेखनवताकर यहब्राह्मण तुम्हेंठगकर मुझेलेनाचाहता है इससे आप मेरे विवाहके लिये शीघ्रतानकरें मैं अभी कन्याहीरहूंगी देखूं क्याभवितव्यताहै कन्याकेयहवचनसुनकर वहपरोपकारी राजा बोला कि हे पुत्री युवावस्थामें बहुतकालतक कन्यारहना अच्छानहीं है गुणमें ईर्षाकरनेवाले दुष्ट लोग मिथ्यादोषलगाते हैं और उत्तमलोगोंमें लोगविशेषकरके कलंककोलगालेतेहैं इसीविषयमें मैं हर-स्वामीब्राह्मणकी एककथा कहताहूं गंगाजीकेनिकट जो कुसुमपुरनाम नगरहै वहां तीर्थका सेवनकरने वाला हरस्वामीनाम एकब्राह्मणरहताथा वहगंगाजी के किनारेकुटीबनाके भिक्षावृत्तिसे अपना पालन करताथा और तपकेप्रभावसे वहां केनिवासियोंपर उसकाबड़ादबावहोगयाथा एकसमय उसब्राह्मणको भिक्षामांगनेको जाते देखकर उसकेगुणोंमें ईर्षाकरनेवाले एकदुष्टनेलोगोंसे कहा कि क्या तुमजानतेहो कि यहकैसाकपटी तपस्वी है इसीने इसनगरमें सबबालकखायेहैं यहसुनकर उसीकासाथी एकदूसरादुष्ट बोला कि तुमठीककहतेहो मैंनेभी लोगोंसेऐसाही सुनाहै तब एकतीसरादुष्ट और बोला कि हां यहबात बहुतठीकहै सत्यकहाहै कि (बध्नात्यार्य्यपरीवादं खलसंवादशृंखला) दुष्टलोगोंकी बातोंकीपरम्परा स-ज्जनलोगोंके अपयश कोकरतीहै २११ इसीक्रमसे एकसेदूसरेकेकानमेंजाताहुआ यहवचनसम्पूर्णनगरमें फैलगया तब सम्पूर्णपुरवासी अपनेबालकोंको घरसे बाहरनहीं निकलनेदेते थे इस कारणसे कि हरस्वामी लड़कोंको लेजाकरखाडालताहै इसकेउपरान्त वहांकेसम्पूर्ण ब्राह्मणोंने बालकोंकेनाशकेभयसे उसको न-गरसे बाहरनिकालदेनेकी सलाहकी और सबलोगइसभयसे कि यहक्रोधकरके हमींलोगोंकोनखालेउसके पासनहींजासके तब उन्होंनेउसकेपास दूतभेजे दूतोंनेदूरहीसेजाकर उससेकहा कि ब्राह्मणलोग कहते हैं कि तुमइसनगरसेचलेजाओ उसनेआश्चर्य्ययुक्तहोकर उनसेपूछा कि क्योंऐसाकहतेहैं तबदूतोंनेउत्तरदिया कि तुमजिसबालकको देखपातेहो उसेखाडालतेहो यहसुनकर हरस्वामी ब्राह्मणोंको समझानेकेलिये आपही उनके पासचलाउसेआते देखकर लोगभागनेलगे और ब्राह्मणलोगभयसे अपने२ मठोंपर चढगयेठीकहै (प्रवादमोहितःप्रायोनविचारक्षमोजनः) प्राय मिथ्या अपवादसे मोहितहुए लोग विचार नहीं करसक्ते हैं इसके उपरान्त हरस्वामीने नीचे खड़ेहोकर मठोंपर खड़ेहुए ब्राह्मणोंसे एक२ का नामलेकरकहा कि हे ब्राह्मणलोगो तुम्हें आज यह क्या अज्ञानहुआहै अपनेआपसमें क्योंनहीं देखतेहो कि मैंने किसके कि तनेबालक कबकबखायेहैं यह सुनकर सबब्राह्मणलोगोंने आपसमें विचारकिया तो मालूमहुआ कि सब के बालकजीतेहैं क्रमसे सबपुरवासियों ने विचार कियातो सबको मालूमहुआ कि किसीकाभी बालक इसने नहींखाया यहदेखकर सम्पूर्ण ब्राह्मण तथा बणियोंने कहा कि अरेहमसबमूर्खलोगोंने इससाधुको मिथ्याही दोषलगाया सबकेबालकतो जीतेहैं इसने किसके बालकखाये इसप्रकार सब लोगोंके कहने पर हरस्वामी अपनी शुद्धताको प्रकटकरके नगरसे जानेको तैयारहुआ ठीककहाहै कि (दुर्जनोत्पादि

तांवधविरक्तीकृतचेतस ।। अविवेकिनिदुर्द्देशेरतिःकाहिमनस्विनं) दुर्जनों के द्वारालगायेहुए दोषसे विरक्त चित्तवाले धीरलोगोंको विवेकरहित दुर्द्देशमें स्नेह नहींहोताहै २२६ इसकेउपरान्त व ब्राह्मण और वणियोंने चरणोंपर गिरकर हरस्वामीको वहुत समझाया तबउसने बडेआग्रहसे वहां रहनास्वीकारकिया इसप्रकार प्राय दुष्टलोग उत्तम आचरणों के देखनेसे द्वेषयुक्त होकर मिथ्यादूषण सज्जनों को लगाया करतेहैं और उससमय जो कहीं उनको कुछ देखनेका अवकाश मिलजाय तो मानोंबढतीहुई अग्निमें घृतकी धारपडगई इस्से हे पुत्री जो तुममुझे दुःखित नहीं करनाचाहती हो तो इसनवीन यौवनमें बहुत कालतक अपनी इच्छापूर्वक तुम्हें कन्यारहना उचितनहीं है क्योंकि इस अवस्थामें दुर्जनोंको कलंक लगादेना वहुतसुलभहै राजाके यहवचन सुनकर स्थिर निश्चयवाली राजपुत्री फिर बोली कि मैंतो आप से पहले ही कहचुकीहूं कि जिसब्राह्मण अथवा क्षत्रीने कनकपुरीदेखी है उसेशीघ्रढूंढकर मेरा विवाहकर दो यहसुनकर पूर्व्वजन्मके स्मरण करनेवाली अपनी कन्याके निश्चयको दृढजानकर और उसके विवाह करनेका कोई दूसरा उपाय न देखकर राजाने नवीन आनेवाले लोगों से पूछनेके निमित्त देश भरमें रोजढँढोरा फेरनेकी आज्ञादेदी कि जिसब्राह्मण अथवा क्षत्रीने कनकपुरी देखी होय वह कहे उसे राजा अपनी कन्या और युवराजपदवी देगा यह बात सब देशभरमें ढँढोरापीट २ कर कहीगई परन्तु कनकपुरीका देखनेवाला एकभी नहीं मिला २२७॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांचतुर्द्दारिकालम्बकेप्रथमस्तरंग १॥

इसवीचमें शक्तिदेवनाम उसयुवा ब्राह्मणने उदासीनहोकर शोचा कि झूठमूठ कनकपुरीका देखना कहनेसे मेराअपमानभी हुआ और राजकन्या नहींमिली इस्से उसकन्याकी प्राप्तिके निमित्त पृथ्वीपर पर्य्यटनकरूंगा यातो उसनगरीको देखूंगा या मेरे प्राणजायँगे जो मैंने उसपुरीको देखकर यहां आकर राजकन्यासे विवाह न किया तो मेरेजीवनको धिक्कारहै इसप्रकार प्रतिज्ञाकरके वहवर्द्धमानपुरसे दक्षिण दिशाकोचला क्रमसे चलते २ विन्ध्याचलके वनमें पहुंचा और अपने मनोरथके समान वडेगहन वनमेंघुसा वह वन सूर्य्यकी किरणोंसे सन्तापको पाकर वायुके द्वाराकँपेहुए वृक्षोंके कोमलपत्रोंसे मानों अपने पंखाकररहाथा और रात्रिदिन अनेक चोरोंके उपद्रवों के दुःखसे मानोंकराल सिंहादिकोंके मारेगये मृगोके शब्दोंसे कोलाहल मचारहाथा और वडीकठिन मरुमरीचिका (दूरसे जो रेतपानीके समान चमकतीदीखती है) ओंसे अत्यन्तउग्रसूर्य्यकेभी तेजकोमानोजीतनेकी इच्छाकररहाथा वहांकहीं भीजल नहींमिलताथा और आपत्तिकाभय हरएकस्थानो में होताथा निरन्तरचलते २ भी मालूमहोता था कि मानों पृथ्वी दूरहोतीजाती है ऐसेगहनवनमें कईदिनतक वहुतदूरमार्ग चलकर उसने एकान्तमें शीतल तथा निर्म्मलजल युक्त तालावदेखा वह तालाव कमलरूपी छत्रसे और हंसरूपी चामरोंसे सम्पूर्ण तालावोंका राजा मालूम होताथा उसतडागमें स्नानकरके उसने उसीके तटपरउत्तरकी ओर फल सहित घनेवृक्षोंसे युक्त एक आश्रमदेखा और उसीआश्रममें पीपलके वृक्षकेनीचे अनेक तपस्वियों सहित सूर्य्यतपा नाम एक वृद्धमुनिको वैठेहुए देखा वह मुनि अपने कानमें मालापहनेहुए था वह माला क्या

थी मानों अपनी अवस्थाके मौत्रपाँकी सख्याथी उनमुनिको प्रणाम करके शक्तिदेव उनके पासगया और मुनिनेभी उसका अतिथिसत्कारकरके उससे पूछा कि तुमकहांसे आयेहो और कहां जानाचाहतेहो तब शक्तिदेवबोला कि मैं वर्द्धमानपुरमे आयाहू और कनकपुरीजाने की प्रतिज्ञाकरके चलाहू न मालूम वह कनकपुरी कहॉहोगी जोआपको मालूमहोय तो बताइये तबमुनि बोले किहे वत्स मुझे इसआश्रममें रहते हुए एकसौआठ १०८ वर्षहोचुकेहैं परन्तु अभीतक मैंने उसकानामभीनहीं सुनाथा मुनिके यह वचनसुन करशक्तिदेव बहुतखेदसेबोला किजो आपभी नहींजानते हैं तो मैं पृथ्वीपर घूमतेही घूमते मराइसकेउपरान्त मुनिने सम्पूर्णवृत्तान्त जानकर कहा कि जोतुमनिश्चय कनकपुरी में जानेकाविचार करते हो तो जैसा मैं कहूं वैसाकरो यहॉसे सौ योजनपरकापिल्यनाम देशहै उसमें उत्तरनाम पर्वतहै उस पर्वतपर एक आश्रमहै उसमें दीर्घतपानाम मेरे बड़ेभाई रहते हैं उनकेपास जाओ कदाचित् वहवृद्ध होने के कारण उसपुरीको जानतेहोंगे यह सुनकर उसे भरोसाहुआ और उसरात्रिको वहींरहा प्रातःकाल वहॉसे शीघ्रही चला बड़े क्लेशसे अनेकवनोंकोलांघताहुआ बहुत कालमें कपिल देशमेंपहुंचा और वहॉ उत्तरनामपर्वतपर चढ़ा वहॉ आश्रममें बैठेहुए दीर्घतपानाम मुनिको देखकर प्रसन्नता पूर्वक उसने प्रणाम किया और मुनिने भी उसका बड़ा सत्कारकिया इसकेउपरान्त उसने मुनिसे कहा किमहाराज राजकन्याकी बताईहुई कनकपुरीको देखनेके लिये मैं चलाहूं परन्तु मुझे नहीं मालूम कि वहपुरी कहॉ है और वहॉ जाना आवश्यक है इससे उसका पतालगानेके लिये सूर्य्य तपनाम ऋषिने मुझे आपके पासभेजाहै २६ शक्तिदेवके यह वचन सुनकर मुनिबोले कि हे पुत्र इतनी अवस्थामें मैंने उसका आज नामसुनाहै अनेक देशोंसे आये हुए नाजानें कितने पुरुषों से मेरासमागम हुआहै परन्तु देखना तो दूररहा मैंने उसका नाम भी नहीं सुना मैं जानताहूं कि किसी अन्य द्वीपमें वहपुरी बहुत दूरपरहोगी उसके जाननेका उपाय मैं तुमको बताताहूं समुद्रके बीचमें उत्स्थल नामद्वीप है वहॉ सम्पूर्ण निषादोंका स्वामी बड़ा धनवान् सत्यव्रतनाम निषाद रहताहै वहसम्पूर्ण द्वीपोंमें जाया आया करताहै कदाचित् उसने वहनगरी देखी हो या सुनीहो इससे तुमपहले समुद्रके किनारेपर विटङ्कपुरनाम नगरहै उसमें जाओ वहॉ किसीवणियेके साथ जहाज पर चढ़कर अपने मनोरथ सिद्ध करनेके लिये उसनिषादके द्वीपको जाओ मुनिके यहवचन सुनकर शक्तिदेवउनके वचन स्वीकार करके उनसे पूछ वहॉसे चला मार्ग में अनेक देशोंको उल्लंघनकरके सैकड़ों कोसके उपरान्त वहसमुद्रके किनारे विटङ्कपुरनाम नगरमें पहुंचा वहॉ उत्स्थल द्वीपके जानेवाले समुद्रदत्त वणियेको ढूंढ़कर उसकेसाथ उसने मित्रताकी और उसके जहाजमें उसकेसाथ चढ़कर उसके प्रेमरूपी राहखर्चको लेकर उसकेसाथ समुद्रमें चला थोड़ीदूर चलकर बिजलीरूपी जिह्वाको निकालतेहुए मेघरूपी राक्षस गरजतेहुए आगये हलकी चीजोंको उठातीहुई और भारी चीजोंको भी गिरातीहुई महाप्रचंडवायु भाग्यके समान अपने प्रभावको दिखानेलगी वायुके लगनेसे जो समुद्रमें बड़ी २ लहरें उठतीथी उनको देखनेसे मालूमहोता था कि मानों समुद्रमें चलनेके अपराधसे सपक्षपर्वतही बाँधकरके निकले हैं वह जहाज क्षणभरमें ऊपर और क्षणभरमें नीचे जाताहुआ धनीलोगोंकी बढ़ती और घटतीके क्रमको मानो

तावद्यविरक्तीकृतचेतस ।। अविवेकिनिदुर्देशेरतिःकाहिमनस्विन) दुर्जनों के द्वारालगायेहुए दोषसे विरक्त चित्तवाले धीरलोगोंको विवेकरहित दुर्देशमें स्नेह नहींहोताहै २२६ इसकेउपरान्त व ब्राह्मण और वणियोंने चरणोंपरगिरकर हरस्वामीको वहुत समझाया तवउसने वडेआग्रहसे वहां रहनास्वीकारकिया इसप्रकार प्राय दुष्टलोग उत्तम आचरणों के देखनेसे द्वेषयुक्त होकर मिथ्यादूषण सज्जनों को लगाया करतेहैं और उससमय जो कहीं उनकोकुछ देखनेका अवकाश मिलजाय तो मानोंबढतीहुई अग्निमें घृतकी धारपडगई इस्से हे पुत्री जो तुममुझे दुःखित नहीं करनाचाहती हो तो इसनवीन यौवनमें बहुत कालतक अपनी इच्छापूर्वक तुम्हें कन्यारहना उचितनहीं है क्योंकि इसअवस्थामें दुर्जनोंको कलंक लगादेना वहुतसुलभहै राजाके यहवचन सुनकर स्थिर निश्चयवाली राजपुत्री फिर बोली कि मैंतो आप से पहले ही कहचुकीहूं कि जिसब्राह्मण अथवा क्षत्रीने कनकपुरीदेखी है उसेशीघ्रढूंढकर मेरा विवाहकर दो यहसुनकर पूर्वजन्मके स्मरण करनेवाली अपनी कन्याके निश्चयको दृढजानकर और उसके वि- वाह करनेका कोई दूसरा उपाय न देखकर राजाने नवीन आनेवाले लोगों से पूछनेके निमित्त देश भरमें रोजढंढोरा फेरनेकी आज्ञादेदी कि जिसब्राह्मण अथवा क्षत्रीने कनकपुरी देखी होय वह कहे उसे राजा अपनी कन्या और युवराजपदवी देगा यह बात सब देशभरमें ढंढोरापीट २ कर कहीगई परन्तु कनकपुरीकी देखनेवाला एकभी नहीं मिला २२३॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायाचतुर्दारिकालम्बकेप्रथमस्तरंग १॥

इसबीचमें शक्तिदेवनाम उसयुवा ब्राह्मणने उदासीनहोकर शोचा कि झूठमूठ कनकपुरीका देखना कहनेसे मेराअपमानभी हुआ और राजकन्या नहींमिली इस्से उसकन्याकी प्राप्तिके निमित्त पृथ्वीपर पर्य्यटनकरूंगा यातो उसनगरीको देखूंगा या मेरे प्राणजायँगे जो मैंने उसपुरीको देखकर यहां आकर राजकन्यासे विवाह न किया तो मेरेजीवनको धिक्कारहै इसप्रकार प्रतिज्ञाकरके वहवर्द्धमानपुरसे दक्षि- ण दिशाकोचला क्रमसे चलते २ विन्ध्याचलके वनमें पहुंचा और अपने मनोरथके समान बडेगहन वनमेंघुसा वह वन सूर्य्यकी किरणोंसे सन्तापको पाकर वायुके द्वाराकँपेहुए वृक्षोंके कोमलपत्रोंसे मानों अपने पखाकररहाथा और रात्रिदिन अनेक चोरों के उपद्रवों के दुःखसे मानोंकराल सिंहादिकोंके द्वारा मारेगये मृगोंके शब्दों से कोलाहल मचारहाथा और वडीकठिन मरुमरीचिका (दूरसे जो रेतपानीके समान चमकतीदीखती है) ओंसे अत्यन्तउग्रसूर्य्यकेभी तेजकोमानोजीतनेकी इच्छाकररहाथा वहांकहीं भीजल नहींमिलताथा और आपत्तिकाभय हरएकस्थानों में होताथा निरन्तरचलते २ भी मालूमहोता था कि मानों पृथ्वी दूरहोतीजाती है ऐसेगहनवनमें कईदिनतक बहुतदूरमार्ग चलकर उसने एकान्तमें शीतल तथा निर्म्मलजल युक्त तालावदेखा वह तालाव कमलरूपी छत्रसे और हंसरूपी चामरोंसे स- म्पूर्ण तालावोंका राजा मालूम होताथा उसतडागमें स्नानकरके उसने उसीके तटपरउत्तरकी ओर फल सहित घनेवृक्षोंसे युक्त एक आश्रमदेखा और उसीआश्रममें पीपलके वृक्षकेनीचे अनेक तपस्वियों समेत सूर्य्यतप नाम एक वृद्धमुनिको बैठेहुए देखा वह मुनि अपने कानमें मालापहनेहुए था वह माला क्या

थी मानों अपनी अवस्थाके सौवर्षोंकी संख्याथी उनमुनिको प्रणामकरके शक्तिदेव उनके पासगया और मुनिनेभी उसका अतिथिसत्कारकरके उससे पूछा कि तुमकहांसे आयेहो और कहां जानाचाहतेहो तब शक्तिदेवबोला कि मैं वर्द्धमानपुरसे आयाहूं और कनकपुरीजाने की प्रतिज्ञा करके चलाहूं न मालूम वह कनकपुरी कहांहोगी जोआपको मालूमहोय तो बताइये तबमुनि बोले कि हे वत्स मुझे इसआश्रममें रहते हुए एकसौआठ १०८ वर्षहोचुकेहैं परन्तु अभीतक मैंने उसकानामभीनहीं सुनाथा मुनिके यह वचनसुन करशक्तिदेव बहुतखेदसेबोला किजो आपभी नहींजानते हैं तो मैंपृथ्वीपर घूमतेही घूमते मराइसकेउपरांत मुनिने सम्पूर्णवृत्तान्त जानकर कहा कि जोतुमनिश्चय कनकपुरी में जानेकाविचार करते हो तो जैसा मैं कहूं वैसाकरो यहांसे सौ योजनपरकापिल्यनाम देशहै उसमें उत्तरनाम पर्व्वतहै उस पर्वतपर एक आश्रमहै उसमें दीर्घतपानाम मेरे बड़ेभाई रहते हैं उनकेपास जाओ कदाचित् वहवृद्ध होने के कारण उसपुरीको जानतेहोंगे यह सुनकर उसे भरोसाहुआ और उसरात्रिको वहींरहा प्रातःकाल वहांसे शीघ्रही चला बड़े क्लेशसे अनेकवनोंकोलांघताहुआ बहुत कालमें कपिल देशमेंपहुंचा और वहां उत्तरनामपर्व्वतपर चढ़ा वहां आश्रममें बैठेहुए दीर्घतपानाम मुनिको देखकर प्रसन्नता पूर्व्वक उसने प्रणाम किया और मुनिने भी उसका बड़ा सत्कारकिया इसकेउपरान्त उसने मुनिसे कहा किमहाराज राजकन्याकी बताईहुई कनकपुरीको देखनेके लिये मैं चलाहूं परन्तु मुझे नहीं मालूम कि वहपुरी कहां है और वहां जाना आवश्यक है इससे उसका पतालगानेके लिये सूर्य्य तपनाम ऋषिने मुझे आपके पासभेजाहै २६ शक्तिदेवके यह वचन सुनकर मुनिबोले कि हे पुत्र इतनी अवस्थामें मैंने उसका आज नामसुनाहै अनेक देशोंसे आये हुए नाजानें कितने पुरुषों से मेरासमागम हुआहै परन्तु देखना तो दूररहा मैने उसका नाम भी नहीं सुना मैं जानताहूं कि किसी अन्य द्वीपमे वहपुरी बहुत दूरपरहोगी उसके जाननेका उपाय मैं तुमको बताताहूं समुद्रके बीचमें उत्स्थल नामद्वीप है वहां सपूर्ण निषादोंका स्वामी बड़ा धनवान् सत्यव्रतनाम निषाद रहताहै वहसपूर्ण द्वीपोंमें जाया आया करताहै कदाचित् उसने वहनगरी देखी हो या सुनीहो इस्से तुमपहले समुद्रके किनारेपर विटकपुरनाम नगरहै उसमें जाओ वहां किसीवणियेके साथ जहाज पर चढ़कर अपने मनोरथ सिद्धकरनेके लिये उसनिषादके द्वीपको जाओ मुनिके यहवचन सुनकर शक्तिदेवउनके वचन स्वीकार करके उनसे पूछ वहांसे चला मार्ग में अनेक देशोंको उल्लघनकरके सैकड़ों कोसके उपरान्त वहसमुद्रके किनारे विटकपुरनाम नगरमें पहुंचा वहां उत्स्थल द्वीपके जानेवाले समुद्रदत्त वणियेको ढूंढ़कर उसकेसाथ उसने मित्रताकी और उसके जहाजमें उसकेसाथ चढ़कर उसके प्रेमरूपी राहखर्चको लेकर उसकेसाथ समुद्रमें चला थोड़ीदूर चलकर बिजलीरूपी जिह्वाको निकालतेहुए मेघरूपी राक्षस गरजतेहुए आगये हलकी चीज़ोंको उठातीहुई और भारी चीज़ोंको भी गिरातीहुई महाप्रचंडवायु भाग्यके समान अपने प्रभावको दिखानेलगी वायुके लगनेसे जो समुद्रमें बड़ी २ लहरें उठतीथीं उनको देखनेसे मालूमहोता था कि मानों समुद्रमें चलनेके अपराधसे सपक्षपर्व्वतही क्रोधकरके निकले हैं वह जहाज क्षणभरमें ऊपर औरक्षणभरमें नीचे जाताहुआ धनीलोगोंकी बढ़ती और घटतीके क्रमको मानो

दिखाताथा क्षणभरमें वणियोंके कोलाहलोंसे भराहुआ वह जहाजमानो शब्दके भारको न सहकरटूट गया जहाजके टूटजानेपर समुद्रमें गिराहुआ जहाजका स्वामी काठके टुकडेके सहारे दूसरे जहाजमें पहुचकर पारचलागया और शक्तिदेव जवगिरा तो उसे एकमछली समूचा निगलगई वह मछली भाग्याधीन समुद्रके बीचमें घूमतीहुई उस उत्स्थल द्वीपके किनारे पहुची वहां निषादोंके स्वामी उस सत्यव्रतके मछली पकडनेवाले नौकर उसबडीभारी मछलीको पकडकर बड़े आश्चर्य्य से अपने स्वामीके निकटलेगये उसस्वामी ने भी उसप्रकारकी उसमछली को आश्चर्य्य पूर्व्वक देखकर अपने नौकरों को उसके काटनेकी आज्ञादेदी जबवह मछली काटीगई तो उसके पेटमेंसे आश्चर्य्य पूर्व्वक गर्भके वासको अनुभव करके जीताहुआ शक्तिदेव निकला और निकलकर तुम्हारा कल्याण होय इसप्रकार कहतेहुए तरुण शक्तिदेवको देखकर सत्यव्रत ने पूछा कि तुम कौनहो कैसे तुमने मछलीके पेटमें निवास किया और क्या तुम्हारा वृत्तान्त है यहसव कहो ५४ यहसुनकर शक्तिदेव ने कहा कि मैं शक्तिदेवनाम ब्राह्मण वर्द्धमानपुरसे कनकपुरीके देखनेको निश्चयकरके चला उसको विनाजाने मैं बहुतकालतक पृथ्वी में घूमतारहा फिर दीर्घतपनाम मुनिके कहनेसे किसी द्वीपान्तरमें उसपुरीकाहोना अनुमान करके उसके जाननेके लिये उत्स्थलद्वीपके रहनेवाले निषादोंके स्वामी सत्यव्रतके पास जहाजपर चढकर चला बीचमेंही जहाजके टूटजानेसे मैं समुद्रमें गिरा और वही मुझे मछलीने निगललिया और उसी के द्वारा मैं यहाआया उसके यहवचन सुनकर निषादोंका स्वामीवोला कि सत्यव्रत मैंहीहू और यही उत्स्थलद्वीप है परन्तु बहुतद्वीपोंके मुझ देखनेवालेने भी वहपुरी नहीं देखी किन्तु द्वीपान्तरों मे सुनी है यहकहनेसे शक्तिदेवको उदासीन देखकर सत्यव्रत अभ्यागतके स्नेहसे फिर बोला कि हे ब्राह्मण दुःख न करो आज रात्रिको यहींरहो प्रातःकाल मैं तुम्हारे मनोरथके सिद्धकरनेका कोई उपायकरूंगा इसप्रकार समझाकर उसने शक्तिदेवको ब्राह्मणोंके मठमें भेजदिया उसमठमें अतिथियोंका सत्कार बहुत सुलभथा वहां भोजनकरनेके उपरान्त उसीमठके रहनेवाले विष्णुदत्तनाम ब्राह्मणसे कुछ बातचीतकरने लगा उसीप्रसंग से उसने अपना देश कुल तथा सम्पूर्ण वृत्तान्त विष्णुदत्तसे कहा वह इसके सर्व वृत्तान्तको सुनकर और पहचानकर बडा प्रसन्नहुआ उससमय हर्ष से उसके आंसू बहनेलगे और उसेहृदयमें लगाकर गद्गदस्वर से बोला कि तुममेरे मामाके पुत्रहो हमारा तुम्हारा एकही देशमें जन्महुआथा मैं बाल्यावस्थाही में अपने देशसे यहाचलाआयाथा आज भाग्यसे हमारा तुम्हारा यहा संयोगहोगया इससे तुम अब यहींरहो थोडेही कालमें अनेकद्वीपों से आयेहुए वैश्यों के द्वारा तुम्हारा मनोरथ सिद्धहोजायगा यहकहकर और अपने वंशको वताकर विष्णुदत्तने शक्तिदेवका बडा सत्कारकिया और शक्तिदेवभी मार्गके सम्पूर्ण खेद को भूलकर अत्यन्त आनन्दको प्राप्तहुआ ठीक है (विदेशेबन्धुलाभोहि मरावमृतनिर्झरः) विदेश में बन्धुका मिलना मरुदेशमें अमृतकी वृष्टिके समानहै ७० शक्तिदेवने विष्णुदत्तके मिलनेसे अपनेकार्य्य को शीघ्रही सिद्धहोनेवाला माना क्योंकि बीचमें हुआ कल्याण कार्य्य की सिद्धिको सूचितकरता है इसके उपरान्त रात्रिके समय अपने मनोरथके विचारसे उसे निद्रा आते न देखकर विष्णुदत्तने उसके

चित्तको प्रसन्नकरनेके लिये यहकथाकही कि पूर्वसमयमें श्रीयमुनाजी के तटपर एक बडेग्राममें गोविंद स्वामीनाम ब्राह्मण रहताथा उसब्राह्मणके अशोकदत्त और विजयदत्तनाम दो पुत्रथे कुछकालमें वहा बडाभारी दुर्भिक्षपडा इससे गोविन्दस्वामी अपनी स्त्रीसे बोला कि यहदेश दुर्भिक्षके कारण नष्टहोगया है मै यहारहकर अपने मित्रबान्धव और कुटुम्बकी दुर्दशानहीं देखनाचाहताहू और जो कुछ अन्न मेरे पासहै उसमेसे कितना किसेदू इससे जोकुछ मेरे पासहै वहसब मित्र और बन्धुओं को देकर इसदेशसे चला जाऊ और कुटुम्ब सहित काशीजी में जाकररहू उसब्राह्मणके यहवचन उसकी स्त्रीने भी स्वीकार करलिये फिर अपने मित्र तथा बन्धुओंको सम्पूर्ण अन्नदेकर गोविन्दस्वामी उसदेश से अपने कुटुम्ब सहितचला ठीककहाहै कि (उत्सहन्तेनहिद्रष्टुमुत्तमास्स्वजनापदम्) उत्तमपुरुष अपने मित्र बन्धुओं के क्लेश को नहीं देखनाचाहतेहैं ८० मार्ग मे चलते २ उसब्राह्मणने जटाको धारण किये हुए सम्पूर्ण शरीर मे भस्म धारण किये हुए और कपालों की मालाको धारण किये अर्द्धचन्द्रधारी श्रीशिवजी के समान एक महाव्रती को देखा और उसके पास जाकर गोविंदस्वामी ने उसे नमस्कार करके उससे अपने पुत्रोका शुभाशुभ पूछा तब उसने कहा कि तुम्हारे पुत्रो का आगे कल्याण होनेवाला है परन्तु यह जो तुम्हारा छोटा पुत्र विजयदत्त है उससे कुछ दिनतक तुम्हारा वियोग होगा तब इस अशोकदत्तके प्रभावसे फिर विजयदत्तका समागम होगा उसके यहवचन सुनकर गोविन्दस्वामी सुख और दुःख दोनो से सयुक्त होके उसज्ञानी की आज्ञालेकर वहा से चला और काशीजी के निकट पहुचकर नगरके बाहरएक भगवतीके मन्दिरमे पूजनादिकरके वह दिनव्यतीत किया सायकालके समय देवीजी के मन्दिरके बाहर वृक्षके नीचे जहा अनेक देशोसे आयेहुए अनेक भिक्षुक टिकेथे वहीं वहभी अपने कुटुम्ब सहित रहा रात्रि के समय जब सम्पूर्ण पथिकलोग वृक्षोकेपत्ते आदिकों को बिछाकर सोगये तब गोविन्दस्वामीका छोटा पुत्र विजयदत्त एकाएकी जगपडा और बडेवेगमे उसके शीतज्वर चढा मानों बन्धुओंसे होनेवाले वियोगके भयसे ज्वरकेद्वारा उसके सबरोम खडेहोगये और सबशरीर कापनेलगा शीतसे व्याकुलहोकर उसने अपने पिताको जगाकर कहा कि हेतात मुझे बडेवेगसे शीतज्वर चढाहै इससे लकडीलाकर अग्निबालो और मुझेतपाओ उससेही मेराशीतजायगा नहीं तो शीतकी शान्ति न होगी और मै इसरात्रिको नहीं व्यतीत करसकूंगा यह सुनकर गोविन्दस्वामी उसकी पीडाको देखकर व्याकुलहोके बोला कि हेपुत्र इससमय यहा अग्नि कहा मिलसक्ती है तब उसने कहा कि देखो यहा पासही बहुतसी अग्नि बलरही है वहींजाकर मै अपने अगोको क्यो न तपाऊ इससे आप मुझको लेकर वहां शीघ्रचलिये पुत्रके यहवचन सुनकर वह ब्राह्मण फिर बोला कि हेपुत्र यह श्मशानमे चिताबलरही है पिशाचादिको से अत्यन्त भयंकर इसस्थान में कैसे चले क्योंकि तुम अभी बालकहो पिता के यह वचन सुनकर वीर विजयदत्तने आक्षेप पूर्वक कहा कि यह बिचारे पिशाचादिक हमारा क्या करेगे क्या मैं कोई अल्पवीर्यहूं आपमुझे निस्सन्देह वहा लेचलिये इसप्रकार उसके आग्रह करनेपर गोविन्दस्वामी उसको वहा लेगया और वह भी अपने अगो को तपाताहुआ चिता के निकट चला

गया वह चिता अग्निकी ज्वालामें उठेहुए धूमरूपी केशवाली और मनुष्यों के मासकी ग्रहणकरने वाली साक्षात् राक्षसो की देवी के समान शोभित होरही थी क्षणभरके पीछे विजयदत्तने सावधानहो के अपने पितासे पूछा कि चिताकेभीतर यह क्या दिखाई देताहै तब गोविन्दस्वामी ने कहा कि हेपुत्र यह मनुष्यका कपाल चितामें जलरहाहै तव उसने अपने साहस के समान जलतेहुए एक काष्ठसे वह कपाल फोडडाला तब उस फूटेहुए कपाल से उछलकर चरबी उसके मुखमें चलीगई मानों उस श्मशानकी अग्निने राक्षसीसिद्धि उसके मुखमेंरखदी १०४ चरबीके मुखमें पडने से वह बालक राक्षसहो-गया उसके शिरमें वहुतऊंचे २ वालनिकलआये मुखमेंवडी २ दाढेंदीखनेलगीं और उसने अपनी शिखासे निकालकर खड्गहाथमेंलेलिया चितामें से उसकपालको निकालकर सब चरबीको पीके अग्निकी ज्वालाकेसमान चचल जिह्वासे उसेचाटनेलगा और फिर उसकपालको फेंककर खड्गलेकर अपनेपिताकोभी मारनेचला उससमय श्मशानसे यहशब्दसुनाईदिया कि हे कपालस्फोटदेव अपनेपिताकोनमारो यहाँआओ यहवचनसुनकर और कपालस्फोट यहनामपाकर राक्षसरूप वहबालकअपने पिताकोछोड कर वहाँसेचलागया और उसकापिता गोविन्दस्वामीभी हापुत्र हागुणिन् हा विजयदत्त यहकहकर रोताहुआ वहाँसेचलाआया और देवीकेमन्दिरमेंआकर प्रातःकाल अपनीस्त्रीतथा बडेपुत्र अशोकदत्तसे यहसबवृत्तान्तकहा विनामेघ के बिजलीकेसमान उसशोकसे गोविन्दस्वामी अपनीस्त्री और पुत्रसमेत ऐसाविकलहुआ कि काशीकेनिवासी जोकोई वहाँ देवीकेदर्शनकोआतेथे वहभी उसीकेसमान अत्यन्त दुखीहोजातेथे उससमय देवीके पूजनकेनिमित्त आयेहुए एकसमुद्रदत्तनाम बणियेने गोविन्दस्वामीकी यहदशादेखके उसेसमझाकर कुटुम्बसहित अपनेघरको लेगया और वहाँलेजाकर स्नानभोजनादिकसे उसकी वडीसेवाकीठीकहै (निसर्गोह्येषमहता यदापन्नानुकम्पनम्) दुःखितोंपर दयाकरना महात्माओं का स्वाभाविकधर्म है ११६ इसके उपरान्त गोविन्दस्वामीभी उसमहाव्रतीके वचनको स्मरणकरके पुत्रके फिरमिलनेकी आशासे स्त्रीसमेत धैर्य्यको प्राप्तहुआ और उसबणियेकी प्रार्थनासे उसीकेघरमेंरहा काशीजीमेंरहकर उसकेवडेपुत्र अशोकदत्त ने सम्पूर्णविद्यापढीं और युवावस्थाके आनेपर वह बाहुयुद्ध सीखनेलगा धीरे२ बाहुयुद्धमें वहऐसाचतुरहोगया कि पृथ्वीतलमें कोईमल्लभी उसकोनहीं जीतसक्ताथा एकसमय देवयात्रा में अनेक मल्लों के समागम होनेपर दक्षिणदिशा से एक बडा प्रसिद्ध महामल्ल यहाँआया उसने काशीकेराजा प्रतापमुकुटकेसन्मुख सपूर्णमल्लजीतलिये तबराजानेउस समुद्रदत्तनाम बणिये केमुखसे अशोकदत्तकी प्रशसासुनकर उसे बुलाके उसमल्लसे युद्धकरनेकीआज्ञादी वह मल्ल तालठोककर अशोकदत्तसे लडनेलगा परन्तु अशोकदत्तने हाथमारकर उसे गिरादिया तब उसमल्लके गिरजानेपर उत्पन्नहुए शब्दसेयुद्धकीभूमिने मानोंप्रसन्नहोकरउसकीप्रशसाकी १२५ राजानेअशोकदत्तके ऐसे पराक्रमको देखकर अत्यन्त प्रसन्नहोके उसे बहुतसे रत्नदिये और सदैव उसको अपने समीप रखनेलगा और वहभी राजाका प्रियहोकर थोडेही दिनों में वडाऐश्वर्य्यवान्होगया गुणग्राही राजा शूरलोगोंके लिये निधिके समानहोताहै— एकसमय वह राजा चतुर्दशी के दिन नगरकेबाहर दूरपर

मन्दिरमें शिवजीका पूजनकरनेगया रात्रिके समय पूजनकरके श्मशानके निकटसे राजाआरहाथा उस समय श्मशानमेंसे यहशब्द सुनाईदिया कि मुझको दण्डाधिकारीने द्वेषसे मिथ्या वधका अपराधलगा कर शूलीपर चढायाथा आजतीनदिन होचुकेहैं कि मुझपापीके प्राण अभीतक नहीं निकलतेहैं इससे हे राजा मैं वडाप्यासाहू मुझे जलदिलवादो यहसुनकर राजाने कृपापूर्व्वक अशोकदत्तसे कहा कि इसे जल भिजवादो इससमय रात्रिको और कौनजायगा मैंहीं जाताहू यहकहकर अशोकदत्त जललेके वहा से चला राजाको अपनी पुरीमें चलेजानेपर वहवीर अत्यन्त अन्धकारसे सवओर व्याप्त सन्ध्याके समय शिवा अर्थात् शृगालोंके निमित्त दीगई वलिके माससे युक्तकहीं २ चिताओंकी ज्योतिरूप दीपकों से प्रकाशित और वडे उद्दण्ड वेतालोंके शब्दोंसे युक्त कृष्णपक्षकी रात्रिके निवासके स्थानके समान श्मशानमें गया वहाजाकर जोरसे बोला कि राजासे किसने जलमागाहै तव एकओरसे यहशब्द आया कि मैंने मागाहै १३७ उसवचनको सुनकर उसीके अनुसार जाकर उसने देखा कि एक चिता वलरही है उसके पास एकपुरुष शूलीपर चढाहुआहै और उसकेनीचे सुन्दर आभूषणोंको पहरेहुए एकपरमसुदर स्त्री वैठीहुई रोरहीहै वह स्त्री क्याथी मानों कृष्णपक्ष में क्षीणहोकर चन्द्रमा के अस्तहोजाने पर उजेली रात्रिही चितामें भस्महोनेको आईथी उसेदेखकर अशोकदत्तनेपूंछा कि हे अम्ब तुम कौनहो और यहा वैठकर क्यों रोरहीहो तव वह स्त्री वोली कि यह जो पुरुष शूलीपरचढाहै इसकी मैं अभागिनी स्त्रीहू इसके साथ चितामें निश्चयभस्महोने के लिये यहा वैठीहूं इसके प्राणनिकलनेकी आशादेखरहीहू आज तीन दिन के व्यतीतहोजानेपर भी इसके प्राणनहीं निकलते हैं और यह वारम्वार जलमागताहै मैं जल तो ले आईहू परन्तु इस ऊँचेशूलपर इसके मुखतक मैं नहीं पहुँचतीहू उसके यह वचनसुनकर वीर अशोकदत्त वोला कि राजाने भी मेरे हाथ इसके लिये जल भेजाहै इससे तुम मेरी पीठपर लातरखकर इसके मुखमें जल छोडदो क्योंकि आपत्तिमें स्त्रियोंको परपुरुषका स्पर्शमात्र दूषितनहीं है उसके यह वचनसुनकर वह स्त्री शूलीके नीचेझुककर खडेहुए अशोकदत्तकी पीठपर जललेकर खड़ीहोगई क्षण भर में पृथ्वीपर और अपनी पीठपर रुधिरकी वूदगिरती जानकर अशोकदत्तने जो शिर उठाकर देखा तो वह स्त्री शूलीपर चढेहुए पुरुषके मासको छुरी से काटकर खाती हुई दिखाईदी तव उसका, ऐसा चरित्र देखकर अशोकदत्तने क्रोधसे नूपुरों समेत पैरको पकडकर उसे पृथ्वी में पटकनेकी इच्छाकरी तव वह शीघ्रही माया से अपने पैरको छुडाकर आकाशमें जाकर कहीं गुप्तहोगई और अशोकदत्त के हाथमें पैरके खेंचनेमे ढीलाहोकर एकमणि जटित नूपुररहगया इसके उपरान्त आदि मे सुन्दर मध्य में नीचे करनेवाली और अन्तमें विकारसे घोर दुर्जनोंकी सगति के समान उसस्त्रीको नष्टहुई जानकर और दिव्य नूपुरको हाथ में देखकर अशोकदत्तको आश्चर्य्य सन्ताप और हर्षतीनों एकसाथही हुए तदनन्तर वह श्मशानसे नूपुर लेकर अपने घरको चलाआया और प्रातःकाल स्नानकरके राजाके पास आया राजाने पूछा कि उसशूलीवाले पुरुषको तुमने जलदियाथा तव अशोकदत्त ने हाँ कहकर राजा को वह नूपुरदिखाया राजाने पूछा कि यह कहाँसे लाये ऐसा राजाके पूछनेपर उसने रात्रिका वहसव

वृत्तान्त कहदिया तब अशोकदत्तके असाधारण पराक्रमको वहुत अधिक जानकर राजा यद्यपि उसके अन्य गुणोंसे प्रसन्नथा तथापि उससमय और भी प्रसन्नहोगया और उसनूपुरको लेकर राजाने रानीको देकर वहुत प्रसन्नहोकर उसका सम्पूर्ण वृत्तान्त वर्णनकिया रानी भी उसवृत्तान्तको सुनके और मणि जटित दिव्य नूपुरको देखकर अशोकदत्तकी वहुत प्रशंसाकरके अत्यन्त प्रसन्नहुई १६० तब राजारानी से बोला कि हे प्रिये जातिके समान विद्यासे और सत्यके समान रूपसे बड़ोंमें भी वड़ा यह अशोक-दत्त जो मदनरेखा नाममेरी अत्यन्त शुभलक्षण वाली कन्याका पति होवै तो वड़ी उत्तम वातहै वरके यहीगुण देखने चाहिये क्षणभंगुर लक्ष्मीकी अपेक्षा नहीं करनीचाहिये इस्से मैं अपनी वहकन्या इसवीर को दूंगा प्रतिके यहवचन सुनकर रानी आदर पूर्वक वोली कि आप उचित कहतेहो यहवर मेरीकन्याके अनुरूपहै वहकन्याभी जवसे वसन्तोद्यानमें उसे देखआईहै तबसे उसकाचित्त उसीमें ऐसालगाहै कि न सुनतीहै न देखतीहै यहवात उसकी सखियों से जानकर मैं विचार करतीहुई कुछरात्रिरहे सोगई सोजाने पर एक दिव्य स्त्रीने मुझसे कहा कि हे पुत्री तुममदनलेखानाम अपनी कन्याको किसी दूसरेको न देना यह जन्मान्तरम उपार्जन कीहुई अशोकदत्तकी स्त्री है यहसुनकर मैं जगपड़ी और प्रातःकाल मदनले-खाके पासजाकर मैंने इसस्वप्नके विश्वासमें उसे समझादिया और इससमय आपने भी वहीबात मुझसे कही इस्सेवृक्षकेसाथ ऋतुकी लताके समान अशोकदत्तके साथ इसकाविवाहहोना योग्यहै प्रियाके यह वचनसुनकर प्रसन्नहुए राजाने वड़ा उत्सवकरके अशोकदत्तको बुलाके अपनी कन्याका विवाह उसके साथकरदिया उससमय राजपुत्री और अशोकदत्तका समागम लक्ष्मी और विनयके समागमके समान परस्पर शोभाकारीहुआ १७१ इसके उपरान्त एकसमय रानीने राजासे कहा कि अशोकदत्तका लाया हुआ वहनूपुर अकेला नहीं शोभित होताहै इस्से उसीके समान एक दूसराभी वनवाओ तब राजाने सुनारोंको बुलाकर कहा कि इसनूपुरके समान दूसरानूपुर बनालाओ उसेदेखकर सुनारलोग बोले कि हे महाराज इसके समान दूसरा नहीं वनसक्ता यह दिव्यशिल्पहै मनुष्य इसके तुल्य नहीं वनासक्ते इसप्र-कारके रत्नभी पृथ्वीमें नहींहोते हैं इस्से जहां यह नूपुरमिलाहो वहांसे ही दूसराभी ढुंढवाइये यहसुनकर रानी समेत राजा उदास होगया तब राजाको उदास देखकर वहां बैठाहुआ अशोकदत्त बोला कि मैं ऐसाही दूसरानूपुरभी लादूंगा उसकी यह प्रतिज्ञासुनकर राजाने साहससे डरकर उसको स्नेहकरके नि-वारणकिया परन्तु वह अपने निश्चयसे नहीं हटा और उसनूपुरको लेकर कृष्णपक्षकी चतुर्दशीके दिन रात्रिके समय जहां वह श्मशानभूमि मे नूपुरमिलाथा वहींगया और वहांजाकर चिताकेधुएसे मैले और फांसीमें टँगेहुए मनुष्योंसे युक्तवृक्षोंके समान राक्षसोंसे व्याप्त श्मशान में उसस्त्रीको न देखकर नूपुरकी प्राप्तिके लिये उसने महामांसका वेचनाही उपाय शोचा और वृक्षपरसे एकमुर्दे को लेकर महामांसलो यह शब्द कहकर महामांसको वेचताहुआ वहीं घूमनेलगा उससमय दूरसे एकस्त्रीने पुकारकर कहा कि हे महामल्ल इसेलेकर मेरेपास आओ यह वचन सुनकर उसकेपास जाके अशोकदत्तने वृक्षकेनीचे आ-सनपर वैठीहुई अनेकस्त्रियोंसे घिरीहुई रत्नके आभूषणोंको पहरेहुई और मरुदेशमें कमलनी के समान

श्मशानमें असभवहै स्थिति जिसकी ऐसी एकदिव्यस्त्री देखी उसके पास जाकर यह बोला कि मैं महा मासवेचताहू तुम लेलो तब वहदिव्यस्त्री बोली कि इसका क्यामूल्यहै यहसुनकर अशोकदत्त हाथमें रक्खे हुए उस मणिजटितनूपुरको और कंधेपर रक्खेहुए मृतकको दिखाकर बोला कि जो इसनूपुरके सदृश दूसरानूपुरदे उसे मैं यहमासदू जो तुम्हारे पासनूपुरहोय तो मासलो यहसुनकर वहबोली कि मेरेपासदूसरा नूपुरहै और यहभी मेराही नूपुरहै जो तुम हरलेगयेथे औरमें भी वहीहू जिसेतुमने शूलीपर चढेहुए पुरुप के पासबैठेहुए देखाथा इससमय तुमने मेरे रूपवदलनेकेकारण नहींपहचाना अब इसमाससे क्या प्रयो-जनहै जो मै तुमसेकहू वह तुमकरो तो मै दूसरा नूपुर तुमकोदेदू उसके यह वचनसुनकर उसने कहा कि जो तुमकहो वह मैं क्षणभरमे करदूगा १९४ तब उस स्त्री ने अपना सम्पूर्ण अभिलाप उससे कहना प्रारम्भकिया कि हे महासत्त्व हिमालय के शिखरपर त्रिघण्टनामपुरहै उसपुर में सम्पूर्ण राक्षसों का स्वामी बडा बलवान् लम्बजिह्वनाम राक्षसथा उसकी विद्युज्जिह्वानाम मै स्त्री हू मुझेयह सामर्थ्य है कि जैसाचाहू वैसारूप धारणकरलू भाग्यवशसे मेरे एक कन्या के उत्पन्नहोनेपर मेरापति कपालस्फोटनाम राक्षसों के राजाके सन्मुख रणमेंमारागया तब राजाने प्रसन्नहोकर वह पुर मुझे देदिया इससे मै सुख पूर्वक अपनी कन्या समेत वहारहती हू अब मेरी यह कन्या युवावस्थाको प्राप्तहुई है इससे मेरे चित्त में उसके वरकी बडी चिन्तावनीरहती है इसीकारणसे चतुर्दशी के दिन रात्रिकेसमय इसमार्ग से राजाके साथ तुमको जातेदेख कर मैंने यहा बैठे २ शोचा कि यह वीर युवापुरुप मेरीकन्याके पतिहोने के योग्य है इससे इसकी प्राप्तिके लिये कोई उपाय शोचनाचाहिये मनमे यह विचारकरके शूलीपरचढेहुए पुरुप के वहाने से जलमागकर तुमको श्मशानमें बुलाया और क्षणभर अपनी मायासे वह सम्पूर्ण मिथ्यारूप दिखाकर तुम्हे धोखादिया और फिर तुमको युक्तिसे बुलाने के लिये जजीरके समान इस नूपुरको छो डकर मै यहाँसेचलीगई इसप्रकार से आजतुम मुझ को प्राप्तहुएहो इस्से मेरे घरपरचलके मेरीकन्याको ग्रहणकरो और दूसरानूपुरलो उसराक्षसीके इनवचनोको स्वीकारकरके उसीकेसाथ उसकी सिद्धिमे आ-काशमार्गहोकर उसकेपुरमेंपहुचा और वहाँपहुचकर सुवर्णमय उसपुरको आकाश मे चलते २ थककर विश्रामके लिये बैठेहुये सूर्य्यके विम्बकेसमान देखा उसपुरमे मूर्त्तिधारणकिये अपनेसाहसकी सिद्धि के समान विद्युत्प्रभानाम राक्षसोंकेस्वामीकी कन्या उसे वहाँमिली वहअपनीसासके ऐश्वर्य्यमे प्रसन्नहोकर अपनी उसराक्षसी प्रियाकेसाथ कुछकालतक वहारहा २०६ फिर कुछकाल के उपरान्त अपनी सासमे बोला कि यह नूपुर दो मुझे अभी काशीपुरीकोजानाहै वहाँमैने राजाकेसन्मुख इसीनूपुरकेसमान दूसरे नूपुरलाने की प्रतिज्ञाकीथी उसके यह वचन सुनकर उसराक्षसीने दूसरानूपुर और एकसुवर्णकाकमल उसे देकर विदाकिया अशोकदत्त फिर आनेका नियमकरके और नूपुरतथा सुवर्णका कमल लेकर उस पुरसेचला उसकीसासने अपनीसिद्धिके प्रभावमे आकाशकेमार्गमे उसीश्मशानमे उसेफिर पहुचादिया और उसीवृक्षकेनीचे खडीहोकर उस्मेकहा कि मै कृष्णपक्षकी चतुर्दशीकी रात्रिमें सदैव यहा आती हू इस्सेतुम जब कृष्णपक्षकी चतुर्दशीकीरात्रिको यहा आओगे तब इसीवृक्षके नीचे मुझेपाओगे २१६

वृत्तान्त कहदिया तब अशोकदत्तके असाधारण पराक्रमको बहुत अधिक जानकर राजा यद्यपि उसके अन्य गुणोंसे प्रसन्नथा तथापि उससमय और भी प्रसन्नहोगया और उसनूपुरको लेकर राजाने रानीको देकर बहुत प्रसन्नहोकर उसका सम्पूर्ण वृत्तान्त वर्णनकिया रानी भी उसवृत्तान्तको सुनके और मणि जटित दिव्य नूपुरको देखकर अशोकदत्तकी बहुत प्रशंसाकरके अत्यन्त प्रसन्नहुई १६० तब राजारानी से बोला कि हे प्रिये जातिके समान विद्यासे और सत्यके समान रूपसे बड़ोंमें भी बड़ा यह अशोकदत्त जो मदनरेखा नाममेरी अत्यन्त शुभलक्षण वाली कन्याका पति होवे तो बड़ी उत्तम बातहै वरके यहीगुण देखने चाहिये क्षणभंगुर लक्ष्मीकी अपेक्षा नहीं करनीचाहिये इससे मैं अपनी वहकन्या इसवीर को दूगा पतिके यहवचन सुनकर रानी आदर पूर्व्वक बोली कि आप उचित कहतेहो यहवर मेरीकन्याके अनुरूपहै वहकन्याभी जबसे वसन्तोद्यानमें उसे देखआईहै तबसे उसकाचित्त उसीमें ऐसालगाहै कि न सुनतीहै न देखतीहै यहबात उसकी सखियों से जानकर मैं विचार करतीहुई कुछरात्रिरहे सोगई सोजाने पर एक दिव्यस्त्रीने मुझसे कहा कि हे पुत्री तुममदनलेखानाम अपनी कन्याको किसी दूसरेको न देना यह जन्मान्तरमें उपार्जन कीहुई अशोकदत्तकी स्त्री है यहसुनकर मैं जगपड़ी और प्रातःकाल मदनलेखाके पासजाकर मैंने इसस्वप्नके निश्वाससे उसे समझादिया और इससमय आपने भी वहीबात मुझसे कही इससेवृक्षकेसाथ ऋतुकी लताके समान अशोकदत्तके साथ इसकाविवाहहोना योग्यहै प्रियाके यह वचनसुनकर प्रसन्नहुए राजाने बड़ा उत्सवकरके अशोकदत्तको बुलाके अपनी कन्याका विवाह उसके साथकरदिया उससमय राजपुत्री और अशोकदत्तका समागम लक्ष्मी और विनयके समागमके समान परस्पर शोभाकारीहुआ १७१ इसके उपरान्त एकसमय रानीने राजासे कहा कि अशोकदत्तका लाया हुआ वहनूपुर अकेला नहीं शोभित होताहै इससे उसीके समान एक दूसराभी बनवाओ तब राजाने सुनारोंको बुलाकर कहा कि इसनूपुरके समान दूसरानूपुर बनाला जो उसेदेखकर सुनारलोग बोले कि हे महाराज इसके समान दूसरा नहीं बनसक्ता यह दिव्यशिल्पहै मनुष्य इसके तुल्य नहीं बनासक्के इसप्रकारके रत्नभी पृथ्वीमें नहींहोते हैं इससे जहां यह नूपुरमिलाहो वहांसे ही दूसराभी ढुंढवाइये यहसुनकर रानी समेत राजा उदास होगया तब राजाको उदास देखकर वहां बैठाहुआ अशोकदत्त बोला कि मैं ऐसाही दूसरानूपुरभी लादूंगा उसकी यह प्रतिज्ञासुनकर राजाने साहससे डरकर उसको स्नेहकरके निवारणकिया परन्तु वह अपने निश्चयसे नहीं हटा और उसनूपुरको लेकर कृष्णपक्षकी चतुर्दशीके दिन रात्रिके समय जहां वह श्मशानभूमि मे नूपुरमिलाथा वहींगया और वहांजाकर चिताकेधुएंसे मैले और फांसीमें टँगेहुए मनुष्यों से युक्त वृक्षोंके समान राक्षसोंसे व्याप्त श्मशान मे उसस्त्रीको न देखकर नूपुरकी प्राप्तिके लिये उसने महामांसका बेचनाही उपाय शोचा और वृक्षपरसे एकमुर्दे को लेकर महामांसलो यह शब्द कहकर महामांसको बेचताहुआ वहीं घूमनेलगा उससमय दूरसे एकस्त्रीने पुकारकर कहा कि हे महामल्ल इसेलेकर मेरेपास आओ यह वचन सुनकर उसकेपास जाके अशोकदत्तने वृक्षकेनीचे आसनपर बैठीहुई अनेकस्त्रियोंमें घिरीहुई रत्नके आभूषणोंको पहरेहुई और मरुदेशमें कमलनीके समान

और कमल मेरे पास कहा है राक्षसों के स्वामी कपालस्फोटके तडागमें इसप्रकारके कमल उत्पन्नहोते हैं उस तडागमे से उसने प्रसन्नहोकर एक कमल मेरे पतिको दियाथा उसके यह वचनसुनकर अशोकदत्त बोला कि तुम मुझे वहा लेचलो मैं उसमें से कमल तोडलाऊगा तब वह बोली कि दारुणराक्षस उसकी रक्षाकरते हैं इससे वहासे कमल तुम नहीलासक्के उसके नाहींकरने को न मानकर जब अशोकदत्त ने बहुतसा आग्रहकिया तो उसने उसे लेजाकर दूरसे पर्वतके ऊंचेशिखरपर वर्त्तमान वह दिव्यतडाग दिखाया वह तडाग अत्यन्त देदीप्यमान सुवर्ण के कमलों से ढकाहुआथा और वह कमलदीप्तिमे ऐसे शोभितहोरहेथे कि मानों सदैव उन्मुखरहने के कारण सूर्यकीप्रभा उनमें समागईथी तडागकी ऐसीशोभा देखकर अशोकदत्त जबवहाँजाकर कमलतोडनेलगा तब रक्षाकरनेवाले घोरनिशाचरोंने आकर इसे घेर लिया इसने शस्त्रसे बहुतों को मारडाला और बहुतों ने भागकर जाके कपालस्फोटनाम अपने स्वामी से निवेदन किया वह भी सुनतेही कुपित होकर आपही वहाँ चला आया और अशोकदत्तको कमल तोडते देखकर उसने आश्चर्य्य पूर्व्वक कहा कि यह मेराभाई अशोकदत्त यहाँ कैसे आगया इसप्रकार पहचानकर वहशस्त्रोंको छोडकर हर्षके आसुओंको अपने नेत्रों से वहाताहुआ दौडकर उसके पैरोंपर गिरा और बोला कि मैं विजयदत्तनाम तुम्हारा छोटाभाई हूं हम तुम दोनो विप्रवर गोविन्दस्वामी के पुत्रहै भाग्यवशसे इतने कालतक मैं निशाचररहा चिताके कपालको फोडने से कपालस्फोट मेरानाम हुआ इससमय आपके दर्शनसे मुझे अपने ब्राह्मणपनेकी याद आगई और मोहसे बुद्धिका आच्छादित करनेवाला राक्षसपना मेरानष्ट होगया इसप्रकार विजयदत्तके कहनेपर अशोकदत्त जब उसे आलिङ्गनकरके प्रेमके आंसुओं से राक्षसभावसे दूषितहुए उसके शरीरको मानों धोनेलगा उसीसमय आकाशमे विद्याधरोंका विज्ञप्तिकौशिकनाम गुरूउतरा उसने उनदोनों के पास आकर कहा कि तुम सब विद्याधरहो शापसे तुम्हारी यह दशाहोगई थी इससमय तुम्हारा वह शाप शान्त होगया इसमे अपनी विद्याओंको ग्रहणकरो और अपने बन्धुओंकोभी विद्यासिखाकर उन्हे सायलेकर अपने स्थान को चलेआओ इसप्रकार कहकर और विद्याओंको देकर प्रज्ञप्तिकौशिक आकाशको चलागया २६१ इसके उपरान्त वहदोनों विद्याधरहोकर वहा से बहुतसे सुवर्णके कमलोंको लेकर राक्षसों के स्वामीकी कन्या कनकरेखाके पास आये वहभी शापके क्षीणहोनेसे विद्याधरी होगई उसेसाथमें लेकर वहदोनों आकाशमार्गमे काशीपुरीको चले काशीजीमे पहुचकर उनदोनोंने दर्शनरूपी अमृत वरसाकर वियोग रूपी अग्निमे सतप्त अपने माता पिताको शीतलता प्राप्तकराई देहके नहीं भिन्नहोनेपरभी विचित्र जन्मान्तरको प्राप्तहुए उनदोनों भाइयोंको देखकर केवल उनके माता पिताकोही नहीं किन्तु सब लोगोंको बडाउत्सवहुआ बहुतकालके उपरान्त विजयदत्तको आलिङ्गनकरके गोविन्दस्वामीका मनोरथ विशाल वनस्थलके समान पूर्णहुआ उससमय इसवृत्तान्तको सुनकर अशोकदत्तका श्वशुर राजा प्रतापमुकुट भी हर्षसे वहींआगया और वहाआकर उसने अशोकदत्तके सम्पूर्ण वृत्तान्तको जानकर उनदानोंकाही सत्कारकिया इसकेपीछे अशोकदत्त अपने सम्पूर्ण साथियो समेत राजभवनको गया वहा उसकी स्त्री

उसके वचनोको स्वीकारकरके और उससेआज्ञामागकर अशोकदत्त अपने पिताकेघरमेंआया छोटेपुत्रके वियोगके दुःखको दूनाकरनेवाले इसके बहुतकालतक परदेशमे निवासकरनेसे इसके मातापिता अत्यन्त दुःखितहोरहेथे उसेदेखकर वह अत्यन्तही प्रसन्नहुए और अशोकदत्त जबतक अपनेश्वशुरकेयहाँ जाने का विचारही करताथा कि वह उसका आनासुनकर वहीं आगया राजासाहसी के स्पर्श मे मानोंडरेहुए रोमाचित अपने अगोंसे प्रणामकरते हुए अशोकदत्तको आलिगनकरके अत्यन्तही आनन्दितहुआ फिरराजाके साथही मूर्त्तिको धारणकियेहुए आनन्दके समान अशोकदत्त राजमन्दिरकोगया और वहाँ जाकरराजाको उसनेदोनो दिव्यनूपुरदिये वह नूपुर अपनीझन्कारसे मानोअशोकदत्तके पराक्रमकी प्रशसाकररहेथे फिर वह सुवर्णका कमलभी अशोकदत्त ने राजाको राक्षसोंकी राज्यलक्ष्मी के हाथसे हर लायेहुये लीला कमलके समान देदिया इसके उपरान्त रानी समेत राजाके आश्चर्य्यपूर्वक पूछने पर उसने अपनासपूर्ण आनन्ददायक वृत्तान्त उनसेकहदिया विचित्रचरित्रों से चित्तमे चमत्कार करनेवाला निर्मल यश क्या विनासाहस किये प्राप्तहोसक्ताहै इसप्रकारकहते हुए राजाने और नूपुरको पाकर प्रसन्न हुई रानी ने उस जामातासे अपनेको कृतार्थ माना उससमय उत्सवसे बजायेगये बाजोंसे शब्दायमान राजभवन अशोकदत्तके गुणो को गाताहुआ सा मालूमहुआ २२७ इसके उपरान्त दूसरेदिन राजा ने अपने देवमन्दिरमें चादी के कलशपर वह कमलरखवाया श्वेत तथा लाल वह कलश और कमल राजा तथा अशोकदत्तके यश और प्रतापके समान शोभितहुए उनदोनोंको इसप्रकार शोभितदेखकर अत्यत प्रसन्नहुआ राजा श्रीशिवजीकी भक्तिकेरसमे मग्नहोकर बोला कि यह सुन्दर कलश इस कमलसे पिंगलवर्ण के जटाजूटको धारणकियेहुए भस्मसे श्वेत श्रीशिवजी के समान शोभितहोताहै यदि इसीप्रकार का एक और कमलहोता तो दूसरेकलश में भी मै रखवादेता यहसुनकर अशोकदत्तबोला कि मै दूसराभी कमलआपके निमित्तलाऊगा तब राजानेकहा कि मुझेदूसरेकमलसे कोईप्रयोजननहीं है तुमसाहस मत करो राजाके ऐसाकहनेपर भी अशोकदत्त के चित्त मे दूसरेसुवर्ण कमलके लानेकीइच्छाबनीरही इसके उपरान्त कुछदिनोंके व्यतीतहोनेपर कृष्णपक्षकी चतुर्दशीआई उसदिन अशोकदत्तकी सुवर्णके कमल के लाने की इच्छा को जानकरके मानो भय से आकाशरूपीतडाग के स्वर्णकमलरूपी भगवान्सूर्य्य के अस्तहोनेपर सध्यासे रक्तवर्ण को प्राप्तहुए मेघरूपी मासको खाने के लिये मानों धुए के समानधूम्रवर्णवाले अन्धकाररूपी राक्षसों के सब ओर दौडनेपर और चमकते हुए दीपकोंकी पंक्तिरूपी दातोंकी पंक्तिसे देदीप्यमान तथा भयकर रात्रिरूपी राक्षसी के अत्यन्त भयकर मुखके फैलनेपर अशोकदत्त राजपुत्रीको सोतीहुई जानकर मंदिर से निकलकर श्मशानको चलागया वहाजाकर वरगदके वृक्षके नीचेबैठीहुई उसराक्षसी को उसने देखा और उसने भी उसका बडे आदरपूर्व्वक शिष्टाचार से स्वागत किया २४० इसके उपरान्त उसीराक्षसीके साथ हिमालयके शिखरपर त्रिघण्टनामपुरमें पहुँचा वहा विद्युज्जिह्वा अत्यन्त उत्कण्ठासे उसका मार्गहीदेखरहीथी कुछ कालतक उसके साथ वहारहकर अशोकदत्तने अपनी साससेकहा कि एक दूसरा सोनेका कमलमुझे कहींसेलाकरदो यहसुनकर वह बोली कि

और कमल मेरे पास कहा है राक्षसों के स्वामी कपालस्फोटके तडागमें इसप्रकारके कमल उत्पन्नहोते है उस तडागमें से उसने प्रसन्नहोकर एक कमल मेरे पतिको दियाथा उसके यह वचनसुनकर अशोकदत्त बोला कि तुम मुझे वहां लेचलो मैं उसमें से कमल तोडलाऊंगा तब वह बोली कि दारुणराक्षस उसकी रक्षाकरते हैं इसमे वहासे कमल तुम नहींलासक्ते उसके नाहींकरने को न मानकर जब अशोकदत्त ने बहुतसा आग्रहकिया तो उसने उसे लेजाकर दूरसे पर्व्वतके ऊंचेशिखरपर वर्त्तमान वह दिव्यतडाग दिखाया वह तडाग अत्यन्त देदीप्यमान सुवर्ण के कमलो से ढकाहुआथा और वह कमलदीप्तिमे ऐसे शोभितहोरहेथे कि मानों सदैव उन्मुखरहने के कारण सूर्यकीप्रभा उनमें समागईथी तडागकी ऐसीशोभा देखकर अशोकदत्त जबवहाँजाकर कमलतोडनेलगा तब रक्षाकरनेवाले घोरनिशाचरोंने आकर इसे घेर लिया इसने शस्त्रसे बहुतों को मारडाला और बहुतों ने भागकर जाके कपालस्फोटनाम अपने स्वामी से निवेदन किया वह भी सुनतेही कुपित होकर आपही वहाँ चला आया और अशोकदत्तको कमल तोडते देखकर उसने आश्चर्य्य पूर्व्वक कहा कि यह मेराभाई अशोकदत्त यहाँ कैसे आगया इसप्रकार पहचानकर वहशस्त्रोंको छोडकर हर्षके आसुओंको अपने नेत्रों से बहाताहुआ दौडकर उसके पैरोंपर गिरा और बोला कि मैं विजयदत्तनाम तुम्हारा छोटाभाई हूं हम तुम दोनों विप्रवर गोविन्दस्वामी के पुत्रहैं भाग्यवशसे इतने कालतक मैं निशाचररहा चिताके कपालको फोडने से कपालस्फोट मेरानाम हुआ इससमय आपके दर्शनमे मुझे अपने ब्राह्मणपनेकी याद आगई और मोहसे बुद्धिका आच्छादित करनेवाला राक्षसपना मेरानष्ट होगया इसप्रकार विजयदत्तके कहनेपर अशोकदत्त जब उसे आलिङ्गनकरके प्रेमके आंसुओं मे राक्षसभावसे दूषितहुए उसके शरीरको मानों धोनेलगा उसीसमय आकाशसे विद्याधरोंका प्रज्ञप्तिकौशिकनाम गुरूउतरा उसने उनदोनों के पास आकर कहा कि तुम सब विद्याधरहो शापसे तुम्हारी यह दशाहोगई थी इससमय तुम्हारा वह शाप शान्त होगया इससे अपनी विद्याओंको ग्रहणकरो और अपने बन्धुओंकोभी विद्यासिखाकर उन्हें साथलेकर अपने स्थान को चलेआओ इसप्रकार कहकर और विद्याओंको देकर प्रज्ञप्तिकौशिक आकाशको चलागया २८० इसके उपरान्त वहदोनों विद्याधरहोकर वहा से बहुतसे सुवर्णके कमलोंको लेकर राक्षसों के स्वामीकी कन्या कनकरेखाके पास आये वहभी शापके क्षीणहोनेसे विद्याधरी होगई उसेसाथमें लेकर वहदोनों आकाशमार्गमे काशीपुरीको चले काशीजीमें पहुचकर उनदोनोंने दर्शनरूपी अमृत बरसाकर वियोग रूपी अग्निसे सतप्त अपने माता पिताको शीतलता प्राप्तकराई देहके नहीं भिन्नहोनेपरभी विचित्र जन्मान्तरको प्राप्तहुए उनदोनों भाइयोंको देखकर केवल उनके माता पिताकोही नहीं किन्तु सब लोगोंको बडाउत्सवहुआ बहुतकालके उपरान्त विजयदत्तको आलिङ्गनकरके गोविन्दस्वामीका मनोरथ विशाल वनस्थलके समान पूर्णहुआ उससमय इसवृत्तान्तको सुनकर अशोकदत्तका श्वशुर राजा प्रतापमुकुट भी हर्षसे वहींआगया और वहांआकर उसने अशोकदत्तके सम्पूर्ण वृत्तान्तको जानकर उसकाबडाही सत्कारकिया इसकेपीछे अशोकदत्त अपने सम्पूर्ण साथियों समेत राजभवनको गया वहां उसकी स्त्री

राजकन्या बडी उत्कण्ठा से उसपर ध्यानलगाये वैठी थी अपने दर्शन से उसके चित्तको प्रसन्नकरके अशोकदत्त ने वहुतसे सुवर्ण के कमल राजाको दिये और राजाभी मनोरथ से अधिक प्राप्तिहोने से अत्यन्त प्रसन्नहुआ २७० तदनन्तर सव लोगोंके सन्मुख गोविन्दस्वामी आश्चर्य और कौतुकसे युक्त होकर विजयदत्तसे वोला कि हे पुत्र श्मशानमे रात्रिके समय जव तुम राक्षसपने को प्राप्तहुए तब तुम्हारा क्या वृत्तान्तहुआ उसे वर्णनकरो तव विजयदत्तने कहा कि हे तात चपलतासे दैवाधीनहोकर चितामे जलते हुए कपालको फोडकर उससे उछलकर मुखमे गईहुई चरबी से मैं राक्षसहोकर माया से मोहितहोगया यह तो आपने देखाही था इसके उपरान्त राक्षसो ने मुझे कपालस्फोटनामसे पुकारा और मैं उनमेंजाकर मिलगया वहमुझे अपने साथ राक्षसो के स्वामी के पासलेगये उसनेभी मुझे देख कर प्रसन्नहोके मुझे अपना सेनापति वनालिया एकसमय वहराक्षसो का स्वामी अभिमानसे गन्धर्वों के साथ युद्धकरनेको गया वहा संग्राम में शत्रुओ ने उसे मारडाला उसके मरजानेपर सम्पूर्ण राक्षस मेरी आज्ञामाननेलगे तवसे मैं उसपुर में रहकर राक्षसो पर राज्य करनेलगा उसीपुर मे अकस्मात् सुवर्ण के कमलोंको लेनेके लिये गयेहुए ज्येष्ठभ्राता अशोकदत्त के दर्शनसे मेरी वह दशाजातीरही फिर जैसे हमलोगोको शापके छूटजाने से अपनी विद्याप्राप्तहुई वह सम्पूर्ण वृत्तान्त आर्य्य अशोकदत्त आपलोगोंसे वर्णन करेंगे २८० इसप्रकार विजयदत्त के कहनेपर अशोकदत्त अपने शापका वृत्तान्त प्रारम्भसे कहनेलगा कि पूर्व्वसमयमें हम दोनो विद्याधरथे एकसमय आकाशमार्ग से उडते २ गालव मुनिके आश्रममे हम दोनोंने गंगाजी मे स्नानकरतीहुई मुनिकी कन्यकाओंको देखा उन्हें देखकर हम दोनों के चित्तमे और हमेंदेखकर उन सवके चित्तो मे कामकी चेष्टा उत्पन्नहुई जव हम दोनोंने एकान्तमे जाकर उनके प्राप्तकरनेकी इच्छाकरी तव दिव्यदृष्टिवाले उनके वन्धुओ ने सव वृत्तान्तजानकर हमको क्रोधसे शापदिया कि हे पापियो तुम दोनों मनुष्ययोनिमे उत्पन्नहोजाओ और वहा भी तुम्हारा विलक्षण वियोगहोगा मनुष्योसे अगोचर अत्यन्त दूरदेशमें गयेहुए एकको देखकर जव दूसरेको ज्ञानहोगा तव विद्याधरों के गुरूसे विद्याओं को प्राप्तकरके तुम दोनो शापसे छूटकर फिर विद्याधरहोजाओगे इस प्रकार मुनियो के शापसे हम दोनो यहा उत्पन्नहुए और यहा जिसप्रकार हमारा वियोगहुआ वह तो आपलोगोंको विदितही है इससमय कमल के निमित्त अपनी सासकी सिद्धिके प्रभावसे राक्षसपति के पुरमें जाकर यह विजयदत्त मेरा छोटाभाई मुझे वहा मिला और वहीं प्रज्ञप्ति गुरूसे विद्याओं को पाकर हम दोनों विद्याधरहोगये और वहा से यहाचलेआये यहकहकर अशोकदत्तने अपने माता पिता और अपनी स्त्री राजकन्याको सम्पूर्ण विद्यासिखलादीं उन विद्याओंको पाकर वह सव भी विद्याधरहोगये और अत्यन्त विचित्रचरित्रवाला अशोकदत्त शापसे छूटकर वहुतप्रसन्नहुआ इसके उपरान्त राजाप्रताप मुकुटसे आज्ञालेकर अशोकदत्त तथा विजयदत्त अपने माता पिता तथा स्त्रियों समेत वहा से उडकर आकाशमार्ग से अपने चक्रवर्ती के स्थानकोचलेगये वहाजाके चक्रवर्ती के दर्शनकरके चक्रवर्तीकी आज्ञासे अशोकदत्त अशोकवेग और विजयदत्त विजयवेग इन अपने पुरानेनामोंको पाकर सम्पूर्ण

कुटुम्बसहित अपने स्थानकोचले और गोविन्दकूटनाम पर्वतपर अपनेस्थानमे पहुँचगये इसके उपरान्त काशी के स्वामी राजप्रतापमुकुटने भी अपने देवमन्दिरके दूसरे कलशमें भी सुवर्णका कमललगादिया और उसके दियेहुए अन्यकमलो से श्रीशिवजीका पूजनकरके और उसके सम्बन्धकी बडाई से प्रसन्न होकर अपने कुलको कृतार्थमाना इसप्रकार दिव्य जीव भी किसीकारणसे पृथ्वी मे अवतारलेते हैं और वह अपने योग्यसत्त्व तथा उत्साह को धारणकरतेहुए दुर्लभकार्य्योंकी भी सिद्धिको प्राप्तहोते हैं इस्से हेसत्त्वसागर तुमभी मेरे अनुमानसे कोई देवांशमालूम होतेहो तुम्हारा कार्य्य अवश्य सिद्धहोगा (प्राय क्रियासुमहतामपिदुष्करासुसोत्साहता कथयतिप्रकृतेर्विशेषम्) प्राय महात्माओंसे भी दुष्करकार्य्यों में उत्साह युक्तहोनेसे प्रकृतिकी विशेषता प्रकटहोती है और यदितुम्हारा मनोरथ न सिद्धिहोने वालाहोता तो वहदिव्य राजकन्या कनकरेखा कनकपुरीके देखनेवाले दिव्य पतिकी इच्छा क्यों करती इसप्रकार एकान्तमें विष्णुदत्त से इससरसकथाको सुनकर हृदय में कनकपुरी के दर्शन करनेकी इच्छाकरनेवाले शक्तिदेवने धैर्य्य धारणकरके उसरात्रिको व्यतीतकिया २३८ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायाचतुर्द्दारिकालम्बकेद्वितीयस्तरङ्ग २ ॥

इसके उपरान्त प्रातःकालके समय उत्स्थलद्वीपके मठमेंबैठेहुए शक्तिदेवके पास निषादोंका स्वामी आया और अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार बोला कि मैंने तुम्हारे मनोरथके सिद्धकरनेके लिये एक उपाय शोचाहै कि समुद्रके बीचमें रत्नकूटनाम एकद्वीपहै उसमें समुद्रसे प्रतिष्ठाकियेगये श्रीशिवजीका स्थानहै आषाढ शुदी १२ के दिन वहा बडा उत्सव होताहै उसमे सपूर्णद्वीपों से बहुतसे लोग दर्शन करनेको आतेहैं कदाचित् वहा तुमको कनकपुरीका पतालगजाय इस्सेचलो वहींचले क्योंकि वह तिथिभी निकट आगई है सत्यव्रतके यहवचन सुनकर शक्तिदेव विष्णुदत्त के दियेहुए पाथेय (राहखर्च) को लेकर सत्यव्रतके लायेहुए जहाजपरचढकर उसीकेसाथ वहासेचला कुछदूर चलकर ऐसे अद्भुत स्थानमें जहाद्वीपो के समान बडे २ मगरथे पहुचकर उसने जहाजको खेवतेहुए सत्यव्रत मे पूछा कि यहा से थोडीदूरपर समुद्रमें यहकौनसी बडीभारीवस्तु समुद्रसे निकलेहुए सपक्ष पर्व्वतके समान दिखाईदेरही है तब सत्यव्रतबोला कि यह बर्गदका वृक्षहै इसके नीचेबडे २ भौंरोंसे युक्त बडवानलहै इसस्थानको बचाकर यहा चलना पडताहै क्योंकि इसकेभँवरमें जाकर फिरलौटनाकठिनहै सत्यव्रतके ऐसा कहनेपर जलके वेगसे वहजहाज उसीओरकोजानेलगा यहदेखकर सत्यव्रत शक्तिदेवसे बोला कि हेविप्रवर निस्सन्देह हमलोगों के विनाशकासमय आगया क्योंकि अकस्मात् यहजहाज देखो उसीओरजारहाहै औरमै इसेकिसीप्रकार सेभी नहींरोकसक्ता मृत्युके मुखकेसमान इसगभीरभँवरमें बलवान्कर्मके समान जलने हमलोगोंको डाल दियाहै इसबातका मुझे कोईदु ख नहीं है क्योंकि किसकाशरीर स्थिररहसक्ताहै परन्तु दु खयहहै कि इतना क्लेश सहकरभी तुम्हारा मनोरथ सिद्धनहींहुआ इस्से जबतक मे धीरे २ इसजहाजको रुका रक्खताहू तब तक तुम इस बर्गदकी शाखापर चढजाओ तुम्हारी सुन्दरआकृति से मालूमहोताहै कि कदाचित् तुम्हारे जीवनका कोईउपाय निकलआवे क्योंकि (विधेर्विलासानध्येश्वतरगान्कोहिनिरूपयेत) भाग्यके विलास

राजकन्या वडी उत्कण्ठा से उसपर ध्यानलगाये वैठी थी अपने दर्शन से उसके चित्तको प्रसन्नकरके अशोकदत्त ने वहुतसे सुवर्ण के कमल राजाको दिये और राजाभी मनोरथ से अधिक प्राप्तिहोने से अत्यन्त प्रसन्नहुआ २७० तदनन्तर सव लोगोंके सन्मुख गोविन्दस्वामी आश्चर्य और कौतुकसे युक्त होकर विजयदत्तसे वोला कि हे पुत्र श्मशानमें रात्रिके समय जव तुम राक्षसपने को प्राप्तहुए तव तुम्हारा क्या वृत्तान्तहुआ उसे वर्णनकरो तव विजयदत्तने कहा कि हे तात चपलतासे दैवाधीनहोकर चितामे जलते हुए कपालको फोडकर उससे उछलकर मुखमे गईहुई चरवी से मैं राक्षसहोकर माया से मोहितहोगया यह तो आपने देखाही था इसके उपरान्त राक्षसो ने मुझे कपालस्फोटनामसे पुकारा और मैं उनमेंजाकर मिलगया वहमुझे अपने साथ राक्षसो के स्वामी के पासलेगये उसनेभी मुझे देख कर प्रसन्नहोके मुझे अपना सेनापति वनालिया एकसमय वहराक्षसो का स्वामी अभिमान से गन्धर्व्वों के साथ युद्धकरनेको गया वहा संग्राम में शत्रुओ ने उसे मारडाला उसके मरजानेपर सम्पूर्ण राक्षस मेरी आज्ञामाननेलगे तवसे मै उसपुर में रहकर राक्षसो पर राज्य करनेलगा उसीपुर मे अकस्मात् सुवर्ण के कमलोंको लेने के लिये गयेहुए ज्येष्ठभ्राता अशोकदत्त के दर्शनसे मेरी वह दशाजातीरही फिर जैसे हमलोगोको शापके छूटजाने से अपनी विद्याप्राप्तहुई वह सम्पूर्ण वृत्तान्त आर्य्य अशोकदत्त आपलोगोंसे वर्णन करेंगे २८० इसप्रकार विजयदत्त के कहनेपर अशोकदत्त अपने शापका वृत्तान्त प्रारम्भसे कहनेलगा कि पूर्व्वसमयमें हम दोनो विद्याधरथे एकसमय आकाशमार्ग से उडते २ गालव मुनिके आश्रममें हम दोनोंने गगाजी मे स्नानकरतीहुई मुनिकी कन्यकाओंको देखा उन्हे देखकर हम दोनों के चित्तमे और हमेंदेखकर उन सवके चित्तों मे कामकी चेष्टा उत्पन्नहुई जव हम दोनोने एकान्तमें जाकर उनके प्राप्तकरनेकी इच्छाकरी तव दिव्यदृष्टिवाले उनके वन्धुओं ने सव वृत्तान्तजानकर हमको क्रोधसे शापदिया कि हे पापियो तुम दोनो मनुष्ययोनिमें उत्पन्नहोजाओ और वहा भी तुम्हारा विलक्षण वियोगहोगा मनुष्योसे अगोचर अत्यन्त दूरदेशमें गयेहुए एकको देखकर जन दूसरेको ज्ञानहोगा तव विद्याधरों के गुरूसे विद्याओं को प्राप्तकरके तुम दोनो शापसे छूटकर फिर विद्याधरहोजाओगे इस प्रकार मुनियो के शापसे हम दोनो यहा उत्पन्नहुए और यहा जिसप्रकार हमारा वियोगहुआ वह तो आपलोगोको विदितही है इससमय कमल के निमित्त अपनी सासकी सिद्धिके प्रभावसे राक्षसपति के पुरमें जाकर यह विजयदत्त मेरा छोटाभाई मुझे वहा मिला और वहीं प्रज्ञप्ति गुरूसे विद्याओं को पाकर हम दोनों विद्याधरहोगये और वहा से यहाचलेआये यहकहकर अशोकदत्तने अपने माता पिता और अपनी स्त्री राजकन्याको सम्पूर्ण विद्यासिखलादीं उन विद्याओंको पाकर वह सव भी विद्याधरहोगये और अत्यन्त विचित्रचरित्रवाला अशोकदत्त शापसे छूटकर वहुतप्रसन्नहुआ इसके उपरान्त राजाप्रताप मुकुटसे आज्ञालेकर अशोकदत्त तथा विजयदत्त अपने माता पिता तथा स्त्रियों समेत वहा से उडकर आकाशमार्ग से अपने चक्रवर्त्ती के स्थानमेंचलेगये वहांजाके चक्रवर्त्ती के दर्शनकरके चक्रवर्त्तीकी आज्ञासे अशोकदत्त अशोकवेग और विजयदत्त विजयवेग इन अपने पुरानेनामोंको पाकर सम्पूर्ण

अद्भुत रचनाकी रूपवती पराकाष्ठा (हद्द) के समान उस चन्द्रप्रभाको देखा वहभी शक्तिदेवको देखतेही उसके वशीभूत होकर रत्नोंके पलगपरसे उठी और आप आकर उसे भीतर लिवालेगई वहाँ उसका स्वागत करके और आदर पूर्वक उसे बैठालके बोली कि हे महाभाग तुमकौनहो और मनुष्योंसे दुर्गम इसस्थानमें कैसे आगयेहो उसके यहवचन सुनकर शक्तिदेवने अपना देशनाम तथा जातिकहकर कनकपुरीके देखनेके नियमसे कनकरेखानाम राजकन्याको पानेके लिये जिसप्रकार वहाँगयाथा वहसब वृत्तान्त वर्णनकिया इसवृत्तान्तको जानकर कुछध्यानकरके और दीर्घश्वास लेकर चन्द्रप्रभा एकान्तमे शक्तिदेवसे बोली कि हे सुभग इससमय मे तुमसे कोई गुप्तबात कहतीहू उसे सुनो यहाँके सम्पूर्ण विद्याधरोंका स्वामी शशिखड नाम विद्याधरहै उसके चारकन्याहुईं सबसे बडी चन्द्रप्रभानाम मै हूं दूसरी का नाम चन्द्ररेखा तीसरीका शशिरेखा और चौथीका शशिप्रभानामहै हम चारोबहन अपने पिताके घरमें क्रमसे वृद्धिको प्राप्तहुई एकसमय मैं तो कन्याओंके व्रतमे स्थितथी और मेरी छोटी तीनो बहनें स्नान करनेकेलिये गगाजीकोगई वहाँ जाकर यौवनके मदसे जलक्रीड़ा करतीहुई उनतीनोंने जलमे बैठेहुए अग्रतप नामसुनिको जलसे बहुत सींचा तब रोकनेपरभी बहुत हठकरनेवाली उनको देखकर मुनिने उन तीनोंको यहशाप दिया कि हे दुष्टकन्याओ तुम तीनों मृत्युलोकमे उत्पन्न होगी इसशापको जानकर हमारे पिताने वहाँ जाकर मुनिको बहुत प्रसन्नकिया तबमुनिने उनतीनोके अलग२ शापका अन्तबतलाया और कहा कि मनुष्ययोनि में भी इनको दिव्यज्ञानसे अपने इसजन्मका स्मरण बनारहैगा इसके उपरान्त जब वहतीनों मेरीबहन अपने २ शरीरों को त्यागकरके मृत्युलोकको गईं तब मेरे पिता खेद से मुझे यहनगरी सौंपकर वनकोचलेगये यहाँ रहते २ एकसमय भगवती ने मुझ से स्वप्नमें कहा हे पुत्री मनुष्य तेरापति होगा भगवती की स्वप्नमेदीहुई उसी आज्ञाको मानकर मैने पिता के बताये हुए अनेकविद्याधरों को अपने पतिकरनेको नहीं स्वीकार किया और अबतक मैं कन्याही बनीहू इससमय आश्चर्य्य भरेहुए तुम्हारे यहा आगमनसे और अत्यन्त श्रेष्ठ स्वरूपसे मैं तुम्हारे वशीभूत होगईहू इससे आनेवाली चतुर्दशीके दिन ऋषभनाम पर्व्वतपर अपने पितासे तुम्हारे लिये विज्ञापनकरनेको जाऊगी उसपर्व्वतपर प्रतिवर्ष इसचतुर्दशीके दिन श्रीशिवजीका पूजनकरनेके लिये सम्पूर्ण विद्याधर वहाइकट्ठे होतेहैं इससे मेरापिताभी वहा अवश्यआवेगा वहा उनसे आज्ञालेकर मै शीघ्रआऊगी तब तुम मेरेसाथ विवाहकरना अबउठो अपना नित्यनैमित्तिक कर्मकरो यहकहकर चन्द्रप्रभाने विद्याधरोंके योग्य उत्तम२ सुखदायी पदार्थोंसे शक्तिदेवकी सेवाकरी उससमय उनपदार्थोंका अनुभवकरके शक्तिदेवको ऐसा सुख हुआ कि जैसादावानलसे सतप्त मनुष्यको अमृतके तालाबमे गोतालगानेसे होताहै ६६ इसकेउपरान्त जब चतुर्दशीका दिनआया तब चन्द्रप्रभा शक्तिदेवसे बोली कि आज मैं अपने पिताके पास तुम्हारे लिये विज्ञापनकरनेको जाऊगी और यहसम्पूर्ण परिकरभी मेरेही साथ जायगा तुम दोदिन यहा अकेले रहकर किसीप्रकारका चित्तमें खेद न करना और इसमन्दिरमें अकेले रहकरभी कभी बीचके खगड में न जाना यहकहकर चन्द्रप्रभा अपने चित्तको उसकेपास और उसके चित्तको अपनेसाथ लेकर चली।

और समुद्रकी तरगोंको कौन जानसक्ता है धैर्य्यवान् सत्यव्रतके ऐसा करनेपर वह जहाज उस वृक्षके निकट पहुचगया उससमय शक्तिदेवने निर्भयहोकर उछलके उसबर्गदके वृक्षकी बडी मोटीशाखा पकड लीनी और सत्यव्रत तो पराये निमित्त त्यागकियेगये बहतेहुए शरीर तथा जहाज दोनों समेत बडवा नलमें चलागया २१ इसके उपरान्त शाखाओंसे आशा (दिशा) ओंके पूर्ण करनेवाले उसवृक्षका आ लम्बन करकेभी शक्तिदेवने निराश होकर शोचा कि मैंने वह कनकपुरी नाम नगरी तो नहीं देखी परतु इसस्थानमें उसनिषादों के स्वामीको नष्टकरके मैं आपभी नष्टहोनेवालाहू अथवा सदैव सबके शिरपर पैररखनेवाली भगवती भवितव्यताको कौनउल्लघन करसक्ताहै अपनी दशाकेअनुसार इसप्रकार चिंता करते २ उसीवृक्षपर बैठे बैठे उसका वह दिन व्यतीतहुआ सायकालके समय उसबर्गद के वृक्षपर सब ओरसे शब्दकरतेहुए बहुतसे पक्षी आकरबैठे बडे २ पक्षोंकीवायुसे चलायमान समुद्रकी लहरोंसे मानों आगे चलकर लियेगये बहुतसे गिद्ध उसवृक्षपर आनकर बैठे उससमय पत्तों के भीतर छिपकर बैठेहुए शक्तिदेवने वृक्षकी शाखाओंपर बैठेहुए पक्षियोकी परस्पर मनुष्यभाषामें बात चीत सुनी किसीने द्वीप किसीने पर्वत और किसीने देशान्तर अपने २ उसदिनके चुगनेका स्थानबताया उनमेंसे एक वृद्धप क्षीनेकहा कि आज मैं कनकपुरीमें चुगनेके निमित्तगयाथा और प्रातःकालभी वहीं सुखपूर्व्वक चुगने के निमित्त जाऊगा बहुतदूर जाकर बडे श्रमकरने से मुझको क्यालाभ है उसपक्षी के अमृतकी वृष्टिके समान वचनोंसे शक्तिदेवका सपूर्णसन्ताप दूरहोगया और उसनेशोचा कि भाग्यबशसे आजउसनगरी का होना सभवहुआ औरवहा पहुचनेकेलिये बडेशरीरवाला यहपक्षीही वाहनरूपसे मेराउपायहोगा यह शोचकर शक्तिदेव धीरे २ उसपक्षीके पासजाकर सोतेहुए उसपक्षीकी पीठके पखोंमें छुपरहा ३४ प्रातः काल होजानेपर जब अन्य सपूर्णपक्षी इधर उधर उडगये तब भाग्यके समान आश्चर्य्यकारी अपने पक्ष पातोंको दिखाताहुआ वहपक्षी उसवृक्षपरसे उडकर पीठमें छुपेहुए शक्तिदेव समेत क्षणभरमे कनकपुरीमें पहुचा वहा पहुचकर जबवहपक्षी किसीवनमें उतरकर चुगनेलगा उससमय शक्तिदेवने धीरे २ उसकी पीठसे उतरकर और उसके पाससे दूरजाकर उसने देखा कि दो स्त्रिया पुष्प तोडरही हैं धीरे २ उनके पासजाके उनसेपूछा कि यह कौनदेशहै और तुम दोनोंकौनहो यहवचन सुनकर और उसके देखने से आश्चर्य्ययुक्तहोकर वेहबोलीं कि यहकनकपुरीनाम नगरी है इसमें विद्याधर लोगरहते हैं और चद्रप्रभानाम विद्याधरी का यहबगीचाहै हमदोनोंइसकी रक्षाके लिये यहाँ नौकरहैं और इससमय उसी चन्द्रप्रभा के निमित्त फूल तोडरही हैं यहसुनकर शक्तिदेव बोला कि तुम ऐसा उपायकरो कि जिस्से मैं भी तुम्हारी स्वामिनीको देखू शक्तिदेवके इनबचनोंको स्वीकार करके वहदोनों स्त्री उसे नगरीके भीतर राजमन्दिर में लेगई उसने भी वहाँ जाकर सम्पत्तियों के निवासके समान माणिक्यके खभोंसे युक्त और सुवर्णकी दीवारवाला वह राजमन्दिर देखा ४४ वहाँ गयेहुए शक्तिदेवको देखकर सम्पूर्ण सेवकों ने चन्द्रप्रभासे आश्चर्य्य पूर्व्वक कहा कि कोई मनुष्य यहाँ आया है यहसुनकर उसने शीघ्रही प्रतीहारको भेजकर शक्तिदेवको शीघ्रतासे अपने पास बुलवाया इसने भीतर जाकर नेत्रोंकी आनन्द देनेवाली ब्रह्माकी

अद्भुत रचनाकी रूपवती पराकाष्ठा (हद्द) के समान उस चन्द्रप्रभाको देखा वहभी शक्तिदेवको देख-तेही उसके वशीभूत होकर रत्नोंके पलंगपरसे उठी और आप आकर उसे भीतर लिवालेगई वहाँ उसका स्वागत करके और आदर पूर्व्वक उसे बैठालके बोली कि हे महाभाग तुमकौनहो और मनुष्योंसे दुर्गम इसस्थानमें कैसे आगयेहो उसके यहवचन सुनकर शक्तिदेवने अपना देशनाम तथा जातिकहकर कनकपुरीके देखनेके नियमसे कनकरेखानाम राजकन्याको पानेके लिये जिसप्रकार वहाँगयाथा वहसव वृत्तान्त वर्णनकिया इसवृत्तान्तको जानकर कुछध्यानकरके और दीर्घश्वास लेकर चन्द्रप्रभा एकान्तमें शक्तिदेवसे बोली कि हे सुभग इससमय मैं तुमसे कोई गुप्तबात कहतीहूं उसे सुनो यहाँके सम्पूर्ण विद्याधरोंका स्वामी शशिखंड नाम विद्याधरहै उसके चारकन्याहुईं सबसे बडी चन्द्रप्रभानाम मैं हूं दूसरी का नाम चन्द्ररेखा तीसरीका शशिरेखा और चौथीका शशिप्रभानामहै हम चारोंबहन अपने पिताके घरमें क्रमसे वृद्धिको प्राप्तहुईं एकसमय मैं तो कन्याओंके व्रतमें स्थितथी और मेरी छोटी तीनो बहनें स्नान करनेकेलिये गंगाजीकोगईं वहाँ जाकर यौवनके मदसे जलक्रीडा करतीहुईं उनतीनोंने जलमें बैठेहुए अग्रतप नाममुनिको जलसे बहुत सींचा तब रोकनेपरभी बहुत हठकरनेवाली उनको देखकर मुनिने उन तीनोंको यहशाप दिया कि हे दुष्टकन्याओ तुम तीनों मृत्युलोकमे उत्पन्न होगी इसशापको जानकर हमारे पिताने वहाँ जाकर मुनिको बहुत प्रसन्नकिया तबमुनिने उनतीनोके अलग२ शापका अन्तबतलाया और कहा कि मनुष्ययोनि में भी इनको दिव्यज्ञानसे अपने इसजन्मका स्मरण बनारहैगा इसके उपरान्त जब वहतीनों मेरीबहन अपने २ शरीरों को त्यागकरके मृत्युलोकको गईं तब मेरे पिता खेद से मुझे यहनगरी सौंपकर बनकोचलेगये यहाँ रहते २ एकसमय भगवती ने मुझ से स्वप्नमें कहा हे पुत्री मनुष्य तेरापति होगा भगवती की स्वप्नमेंदीहुई उसी आज्ञाको मानकर मैंने पिता के बताये हुए अनेकविद्याधरों को अपने पतिकरनेको नहीं स्वीकार किया और अबतक मैं कन्याही बनीहूं इससमय आश्चर्य्य भरेहुए तुम्हारे यहा आगमनसे और अत्यन्त श्रेष्ठ स्वरूपसे मैं तुम्हारे वशीभूत होगईहूं इससे आनेवाली चतुर्दशीके दिन ऋषभनाम पर्व्वतपर अपने पितासे तुम्हारे लिये विज्ञापनकरनेको जाऊंगी उसपर्व्वतपर प्रतिवर्ष इसचतुर्दशीके दिन श्रीशिवजीका पूजनकरनेके लिये सम्पूर्ण विद्याधर वहाइकट्ठे होतेहैं इससे मेरापिताभी वहा अवश्यआवेगा वहा उनसे आज्ञालेकर मैं शीघ्रआऊंगी तब तुम मेरेसाथ विवाहकरना अबउठो अपना नित्यनैमित्तिक कर्मकरो यहकहकर चन्द्रप्रभाने विद्याधरोंके योग्य उत्तम२ सुखदायी पदार्थोंसे शक्तिदेवकी सेवाकरी उससमय उनपदार्थोंका अनुभवकरके शक्तिदेवको ऐसा सुख हुआ कि जैसादावानलसे सतप्त मनुष्यको अमृतके तालाबमें गोतालगानेमे होताहै ६६ इसके उपरान्त जब चतुर्दशीका दिनआया तब चन्द्रप्रभा शक्तिदेवसे बोली कि आज मैं अपने पिताके पास तुम्हारे लिये विज्ञापनकरनेको जाऊंगी और यहसम्पूर्ण परिकरभी मेरेही साथ जायगा तुम दोदिन यहा अकेले रहकर किसीप्रकारका चित्तमें खेद न करना और इसमन्दिरमें अकेले रहकरभी कभी बीचके महल में न जाना यहकहकर चन्द्रप्रभा अपने चित्तको उसकेपास और उसके चित्तको अपनेसाथ लेकर चली

और समुद्रकी तरगोंको कौन जानसक्ता है धैर्य्यवान् सत्यव्रतके ऐसा करनेपर वह जहाज उस वृक्षके निकट पहुचगया उससमय शक्तिदेवने निर्भयहोकर उछलके उसबर्गदके वृक्षकी वडी मोटीशाखा पकड़ लीनी और सत्यव्रत तो पराये निमित्त त्यागकियेगये बहतेहुए शरीर तथा जहाज दोनों समेत बडवानलमें चलागया २१ इसके उपरान्त शाखाओंसे आशा (दिशा) ओंके पूर्ण करनेवाले उसवृक्षका आलम्वन करकेभी शक्तिदेवने निराश होकर शोचा कि मैंने वह कनकपुरी नाम नगरी तो नहीं देखी परतु इसस्थानमें उसनिपादों के स्वामीको नष्टकरके मैं आपभी नष्टहोनेवालाहू अथवा सदैव सबके शिरपर पैररखनेवाली भगवती भवितव्यताको कौनउल्लघन करसक्ताहै अपनी दशाकेअनुसार इसप्रकार चिंता करते २ उसीवृक्षपर वैठे वैठे उसका वह दिन व्यतीतहुआ सायकालके समय उसवर्गद के वृक्षपर सब ओरसे शव्दकरतेहुए वहुतसे पक्षी आकरवैठे वडे २ पक्षोंकीवायुसे चलायमान समुद्रकी लहरोंसे मानों आगे चलकर लियेगये वहुतसे गिद्ध उसवृक्षपर आनकर बैठे उससमय पत्तों के भीतर छिपकर बैठेहुए शक्तिदेवने वृक्षकी शाखाओपर वैठेहुए पक्षियोकी परस्पर मनुष्यभाषामें वात चीत सुनी किसीने द्वीप किसीने पर्व्वत और किसीने देशान्तर अपने २ उसदिनके चुगनेका स्थानबताया उनमेंसे एक वृद्धपक्षीनेकहा कि आज मैं कनकपुरीमें चुगनेके निमित्तगयाथा और प्रातःकालभी वही सुखपूर्व्वक चुगने के निमित्त जाऊगा वहुतदूर जाकर वडे श्रमकरने से मुझको क्यालाभ है उसपक्षी के अमृतकी वृष्टिके समान वचनोंसे शक्तिदेवका सपूर्णसन्ताप दूरहोगया और उसनेशोचा कि भाग्यवशसे आजउसनगरी का होना सभवहुआ औरवहा पहुचनेकेलिये वडेशरीरवाला यहपक्षीही वाहनरूपसे मेराउपायहोगा यह शोचकर शक्तिदेव धीरे २ उसपक्षीके पासजाकर सोतेहुए उसपक्षीकी पीठके पखोंमें छुपरहा २४ प्रातःकाल होजानेपर जव अन्य सपूर्णपक्षी इधर उधर उडगये तव भाग्यके समान आश्चर्य्यकारी अपने पक्षपातोंको दिखाताहुआ वहपक्षी उसवृक्षपरसे उडकर पीठमें छुपेहुए शक्तिदेव समेत क्षणभरमें कनकपुरीमें पहुचा वहा पहुचकर जववहपक्षी किसीवनमें उतरकर चुगनेलगा उससमय शक्तिदेवने धीरे २ उसकी पीठसे उतरकर और उसके पाससे दूरजाकर उसने देखा कि दो स्त्रिया पुष्प तोडरही हैं धीरे २ उनके पासजाके उनसेपूछा कि यह कौनदेशहै और तुम दोनोंकौनहो यहवचन सुनकर और उसके देखने से आश्चर्य्ययुक्तहोकर वहवोलीं कि यहकनकपुरीनाम नगरीहै इसमें विद्याधर लोगरहते हैं और चन्द्रप्रभानाम विद्याधरी का यहवगीचाहै हमदोनोंइसकी रक्षाके लिये यहॉ नौकरहैं और इससमय उसी चन्द्रप्रभा के निमित्त फूल तोडरही हैं यहसुनकर शक्तिदेव वोला कि तुम ऐसा उपायकरो कि जिस्से मैं भी तुम्हारी स्वामिनीको देखू शक्तिदेवके इनवचनोंको स्वीकार करके वहदोनों स्त्री उसे नगरीके भीतर राजमन्दिर में लेगई उसने भी वहाँ जाकर सम्पत्तियों के निवासके समान माणिक्यके खभोंसे युक्त और सुवर्णकी दीवारवाला वह राजमन्दिर देखा २५ वहॉ गयेहुए शक्तिदेवको देखकर सम्पूर्ण सेवकों ने चन्द्रप्रभासे आश्चर्य्य पूर्व्वक कहा कि कोई मनुष्य यहॉ आया है यहसुनकर उसने शीघ्रही प्रतीहारको भेजकर शक्तिदेवको शीघ्रतासे अपने पास वुलवाया इसने भीतर जाकर नेत्रोंकी आनन्द देनेवाली ब्रह्माकी

शीघ्रही अपने पितासे बोली कि हेतात इसने सत्यही कनकपुरीदेखी है थोडेही कालमें यह कनकपुरी में मेरा पतिहोगा और अन्यमेरी तीनबहनोंके साथ विवाह करके उसीपुरीमें विद्याधरोंका राजाहोगा मैअब उसीपुरीमें रक्खेहुए अपनेशरीरमे प्रवेशकरूंगी मुनिके शापसे आपके यहामेरा जन्महुआथा जिससमय मुनिने मुझको शापदियाथा उसीसमय मुनिने यह शापका अन्त कहदियाथा कि जब कनकपुरीमेंतेरे शरीरको देखकर कोईमनुष्य आनकर मनुष्य शरीरमे स्थित तुझमे कहैगा उससमय तेराशाप छूटजायगा और वही मनुष्य तेरापतिहोगा इसप्रकारसे मुनिने मुझे मेरेशापका अन्त बतायाथा मुझे मनुष्यभावमे भी ज्ञानसे अपने पूर्व्वजन्मका स्मरणबनाहै इस्से मैं सिद्धिकेलिये अपने विद्याधरोंके स्थानको जातीहू यह कहकर राजकन्या उसशरीरको छोडकर चलीगई और राजमन्दिरमें बडाभारी रोदनका कोलाहल मचगया १०६ शक्तिदेवभी दोनोओरसे भ्रष्टहोकर बडेक्लेशोंसे मिलीहुई अपनी दोनो प्रियाओंका ध्यान करताहुआ मनोरथके सम्पूर्ण न होनेसे खिन्नहोकर अपने भाग्यकी निन्दाकरताहुआ राजभवनसे निकल करइसप्रकार शोचनेलगा कि कनकरेखाने तोमेरेमनोरथकासिद्धहोना कहाहीहै तोअब मैं खेदक्यों करता हू सम्पूर्णसिद्धिया सत्त्वके आधीनहैं इस्से मैं उसीमार्गसे फिरकनकपुरीको चलताहू निस्सन्देह भाग्यवश से कोईनकोई उपाय फिर होजायगा यह शोचकर शक्तिदेव वर्द्धमानपुरसे फिर चला ठीकहै (अभिद्धार्था निवर्त्तन्ते नहिधीराः कृतोद्यमा) धीरलोग उद्योगकरके कार्य्यसिद्धकियेविना नहींनिवृत्तहोतेहैं चलतेर बहुतकालके उपरात समुद्रकेतटपर उसीविटकनाम नगरमे वह फिर पहुचा वहाँसन्मुख आतेहुए उसबणिये को उसनेदेखा जिसकेसाथ जहाजमे जातेहुए जहाजटूटगयाथा उसेदेखकर शक्तिदेवने अपनेचित्तमेकहा कि क्या यहवही समुद्रदत्तहै यह समुद्रमे गिरकर कैसेनिकलआया अथवाइसमें आश्चर्य्यहीक्याहै क्योंकि मैंही इसका दृष्टान्तहू इसप्रकार शोचकर जबतक यह उसकेपास जाताहीथा तब तबवही इसेपहचानकर गलेमे लिपटगया और अपनेघरमें लेजाके सम्पूर्णअतिथि सत्कारकरके इससेपूछा कि जहाजके टूटजाने पर तुम कैसे२ समुद्रमेंनिकलेथे तब उसने जैसेमछलीकेनिगलनेमे उत्स्थलद्वीपमें पहुचाथा वहसब व्योरे वार वृत्तान्तकहदिया फिर शक्तिदेवने समुद्रदत्तसे भी पूछा कि उससमय तुम कैसे समुद्रकेपार हुए तब वह बोला कि उससमय मैंसमुद्रमें पडाहुआ एककाष्ठके सहारेमे तीन दिनतक पानीपरही इधर उधर बहाकिया इसके उपरान्त उसीमार्गसे एक जहाज जाताहुआ निकला जहाजवालोने मुझे चिल्लातेहुए देखकर अपने जहाजपर चढालिया जहाजपर चढकर मैंने वहाँ उससमय अपनेपिताको देखा जोकि बहुतकाल से द्वीपान्तरमे घरकोलौटेथे मेरेपिताने भी मुझेदेख और पहचानकर गलेमे लगालिया और रोदनकरके मुझसे सम्पूर्ण वृत्तान्तपूछा तबमैने कहा कि हेतात जब आप बहुतकालसे जाकरनहींलौटे तब मैं व्यापार को अपनाधर्म जानकर उसमे प्रवृत्तहुआ फिर द्वीपान्तरमें जातेहुए जहाजके टूटनेसे समुद्रमेंगिरा तीन दिनतक समुद्रहीमें काष्ठकेसहारेसे घूमतारहा आज आपलोगोंने मुझेदेखकर यहॉ निकालामेरे यहवचन सुनकर पितावोले कि तुमऐसेप्राणोंके सदेहकारीकामोंको क्योंकरतेहो हेपुत्र मेरेपासधनहै और मैं अभी धनके उपार्जनकरनेमें स्थितहीहू देखोसुवर्णसे भराहुआ यहजहाज मैं तुम्हारेलियेलायाहू इसप्रकार सम-

गई शक्तिदेवभी अकेला अपने चित्तको बहलाताहुआ बडे २ उत्तम स्थानो में घूमनेलगा घूमते २ यह शोचकर कि चन्द्रप्रभाने मुझे बीचके खण्डमें जानेको क्यो निषेधकियाहै उसमन्दिरके उसीबीचके खंड मे चढगया ठीकहै (प्रायोवारितवामाहि प्रवृत्तिर्मनसोनृणाम्) प्राय मनुष्योंकी चित्तवृत्ति निषेधकरने से उलटीहोतीहै वहाजाकर उसने रत्नोके तीन मण्डप देखे उनमेंसे दोके तो द्वारबन्दथे और एकका द्वार खुलाथा,उसखुलेहुए द्वारमे जाके रत्नजटित पलँगपर सम्पूर्ण शरीरको लपेटेहुए किसी को सोताहुआ देखा जब उसने उसके वस्त्रको खोला तब परोपकारी राजाकी मरीहुई कनकरेखानाम कन्या दिखाईदी उसे देखकर उसने बडे आश्चर्यसे शोचा कि क्या यह वही कन्या मरीहुई पडी है या मुझको भ्रान्ति है जिसके लिये मै इतनीदूरआया वह यहा मरीहुई पडीहै और मेरेदेशमें जीतीहुई है यहा उसकी कान्ति में कुछ अन्तरभी नहींहुआहै मुझे मालूमहोताहै कि ब्रह्माने किसीकारणसे मेरे लिये यह इन्द्रजालरचाहै इसप्रकार शोचकर वह उस मंदिरसे निकलकर उन दूसरे बन्द दोनों मंदिरो में गया उनमे भी उसीप्रकार दो मरीहुई कन्या पलँगोंपर पडीहुई दिखाईदी तब उन दोनों मन्दिरो से भी निकलकर आश्चर्यपूर्व्वक वह वहा बैठगया वहा बैठे उसनेदेखा कि एक बडीसुन्दर बावडी निर्म्मल जलसे भरीहुई है और बावडी के किनारेपर एकघोडाखडाहै जिसपर रत्नजटित काठीरक्खीहुईहै यह देखकर शक्तिदेव बावडी के कि-नारे परगया और उस घोडे के पासजाके उसको शून्यजानकर उसपर चढने का विचार किया तब उस घोडेने लातमारकर उसे बावडी मे डालदिया,उस बावडी में गोताखाकर शक्तिदेव अपने वर्द्धमानपुरके बगीचेकी बावडीमें जानिकला जन्मभूमिकी बावडीके जलमें स्थित उसने चन्द्रप्रभाके बिना कुमुदों के समान दीन अपनेको देखकर शोचा कि कहा यह वर्द्धमानपुर और कहा वह विद्याधरोंकी कनकपुरी नगरी यहकैसा आश्चर्य्यकारी मायाका आडम्बरहै बडेकष्टका विषयहै कि मुझमदभागीको किसीने कैसा ठगाहै अथवा कौनजानताहै कि अभी क्याहोनेवालाहै इसप्रकार शोचताहुआ शक्तिदेव उसबावडीके जलसे निकलकर अपने पिताके घरमेंआया और वहा उसके पिता तथा अन्यसब बांधवलोग उसेदेख कर अत्यन्त प्रसन्नहुए और बडा उत्सवहुआ दूसरेदिन घरके बाहरजाकर उसने फिर यह ढंढोरा पिटता हुआसुना कि ब्राह्मण अथवा क्षत्री जिसने कनकपुरीदेखीहो वहकहै राजायुवराजपदवी समेत अपनी कन्या उसेदेगा उसढंढोरेको सुनकर उसने ढंढोरेपीटनेवालों से कहा कि मैंने कनकपुरी देखी है वह उसे राजाके निकट लेगये और राजाने उसेपहचानकर पहलेहीके समान उसको झूठाजाना तब उसने राजा से कहा कि जो मेरा कनकपुरीका देखना मिथ्यानिकले तो आप मुझे प्राणदंड दीजियेगा यह मै नियम करताहू आजराजकन्या मुझसे जोचाहै सोपूछे उसके यह वचनसुनकर राजाने सेवकोंको भेजकर राज-कन्या वहीं बुलवाली उसने वहा शक्तिदेवको देखकर और पहचानकर राजासेकहा कि हे तात यह फिर भी कुछ मिथ्याही कहैगा राजकन्या के यहवचन सुनकर शक्तिदेव बोला कि मैझूठ अथवा सत्य जो कुछ बोलूगा परन्तु मुझे यहआश्चर्य्यहै सोतोबताओ कि मैने तुमको कनकपुरीमें मरी पडीहुई पलँगपर देखाहै और यहा तुमको जीतीहुई देखताहू यह क्या बात है उसके इसपतेकी बातको सुनकर कनकरेखा

विवाहकरदिया विवाहहोजानेपर पुण्यसे प्राप्तहुई स्वरूपको धारणकियेहुए सुखकीसिद्धिके समान उस दिव्य स्त्री विन्दुमती के साथ शक्तिदेव वहां रहनेलगा १५७ एकसमय महलपर बैठे हुए शक्तिदेव ने गोमांसकोलेकर मार्ग में आयेहुए चाण्डालको देखकर अपनी विन्दुमतीनाम प्रियासेकहा कि हे कृशोदरि देखो कि तीनोंलोकोंकी भी वन्दनीय गौओं के भी मांसकाखानेवाला यह कैसा पापी है यहसुनकर विन्दुमती बोली कि हे आर्य्यपुत्र यह पातक अचिन्त्यहै इसमें क्या कहूं मैं तो गौओं के थोड़ेही अपराधसे इस निषादकुलमें उत्पन्नहुईहूं और इसपापका तो उद्धारही नहीं है उसके यह वचनसुनकर शक्तिदेव बोला कि हे प्रिये मुझे बड़ा आश्चर्य्यहोताहै कि तुम कौनहो और तुम्हारा इस कुलमें कैसे जन्म हुआ उसके बहुत आग्रहसे पूछनेपरविन्दुमतीबोली कि यदि तुममेरावचनमानो तोमैं अपना गुप्तवृत्तांतभी तुमको बताऊं शक्तिदेवने शपथखाकर कहा कि मैं अवश्यही तेरेवचनको मानूंगा तबवह पहले अपना मनोरथ कहनेलगी कि इसद्वीपमें अभीएक और स्त्री तुम्हारीहोगी और वहथोड़ेही कालमें गर्भवती होगी गर्भ के आठवें महीनेमें उसका पेटफाड़कर तुमगर्भ निकाल लेना और किसीप्रकारकी घृणा न करना उसके यहवचन सुनकर शक्तिदेवको बड़ा आश्चर्य्यहुआ और उसके चित्तमें घृणाहुई तब फिर विन्दुमती बोली कि यहमेरे वचन किसीकारणसे तुमको अवश्य करने चाहियें अबजोमैंहूं और जिसप्रकारसे मेरा जन्महुआहै वह सबसुनो मैं पूर्व जन्ममें विद्याधरीथी अब मैंशापसे मृत्युलोक में उत्पन्नहुईहूं जब मैं विद्याधरीथी उससमय मैंने वीणाकी तातको दांतसे तोड़कर जोड़ाथा इसी से मेरा जन्म निषाद के कुलमें हुआ इससे जो गौओंकी सूखी नसको दांतसे छूनेसे ऐसी अधोगति होगई तो उनके मांसके खानेमें क्याही कहनाहै १७१ उसके इतनेकहनेही पर उसके एकभाईने वहां आकर घबराके शक्तिदेव से कहा कि उठो २ यहबड़ाभारी शूकर कहीं से आकर अनेकमनुष्योंको मारताहुआ क्रोधसे सन्मुख आरहा है यहसुनकर शक्तिदेवमहलपरसे उतरा और हाथमें शक्तिलेके और घोड़ेपर सवारहोकर उसशूकरके पीछे भागा और उसपर प्रहारभीकिया तबघायल शूकरउसे फिरभी अपनेपीछे आताहुआ देखकर भागके एक बिलमें घुसगया शक्तिदेव भी उसके ढूंढ़नेको उसके पीछे २ उसी बिलमें चलागया क्षणभरमें भीतरजाकर उसे वहां एक महल और एक बड़ा उत्तम बगीचा दिखाईदिया और वहीं अत्यन्त स्वरूपवती घबराकर आतीहुई एककन्या स्नेहसे आईहुई वनदेवीके समान दिखाईदी उसकन्याको देखकर शक्तिदेवने उससे पूछा कि हे सुन्दरी तुमकौनहो और तुमको किसकारणसे घबराहटहै उसके वचन सुनकर वह बोली कि दक्षिण देशका स्वामी चंडविक्रम नामराजाहै उसीकी मैं विन्दुरेखानाम बिनब्याही कन्याहूं अकस्मात् जाज्वल्य नेत्रवाला महापापी एकदैत्य आज पिताके घरसे छलकर मुझे यहाँ हरलायाहै और मांसके निमित्त इसीसमय शूकरके रूपको धरके बाहरगया था वहाँ किसी वीरने इसभूखे दैत्यको ऐसी शक्ति मारी कि जिससे घायलहोकर यहाँ आकर मृत्युको प्राप्तहोगया इससे मेरा कन्यकाभाव अभी दूषित नहीं हुआहै मैं भागकर बाहर चलीआईहूं यहसुनकर शक्तिदेवने कहा कि तो घबराहटकी क्याबातहै मैंनहीं शक्तिसे शूकरको माराथा तबवह बोली कि आपकौनहैं उसने कहा कि मैं शक्तिदेवनाम ब्राह्मणहूं यह

झाकर वह मुझे उसीजहाजपर विटकपुरमें लेआये १३० उसवणियेसे यह सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनकर और रात्रिभर उसीकेयहाँ रहकर दूसरेदिन शक्तिदेवने उससे कहा कि हेमित्र मुझे फिरभी उत्स्थलद्वीपको जाना है बताओ मैं वहाँ किस प्रकारसे जाऊं तब वह वणिया बोला कि मेरे व्यवहारी आजही उत्स्थलद्वीपको जानेवालेहैं उनके जहाजपर चढकर आपचलेजाइये उसके यह वचन सुनकर उसीके व्यवहारियोंके साथ शक्तिदेव उत्स्थलद्वीपकोगया वहाँ पहुंचकर उसने शोचा कि वह महात्मा विष्णुदत्त मेराभाई जो यहा रहताहै उसीके पासचलकर रहूं यह शोचकर वह बाजारके मार्गसे अपने भाईके घरकी ओर चला भाग्य वशसेमार्गमें निषादोंके स्वामी सत्यव्रतके पुत्रोंने उसेदूरसे देखकर पहचानलिया और बुलाकर कहा कि हे ब्राह्मण तुम यहा से कनकपुरीके ढूढनेकेलिये हमारेपिताके साथगयेथे इससमय तुम अकेले कैसे आये यह सुनकर शक्तिदेव बोला कि जलोंके वेगसे जहाजके वडवानलमें चलेजाने से तुम्हारा पिता समुद्रमें डूबगया शक्तिदेवके वचन सुनकर सत्यव्रतके पुत्रोंने क्रोधकरके अपने सेवकोंसे कहा कि इस दुष्टकोबा धलो इसने हमारे पिताकोमाराहै नहीं तो कैसे सम्भवहै कि एकहीजहाजपर दोमनुष्य चढेहोयँ उनमेंएक डूबजाय और एक बचे इससे पिताके मारनेवाले इसदुष्टको प्रातःकाल चण्डिका देवीके आगेपशुके स मान मारेंगे सेवकोंसे इसप्रकारकहकर सत्यव्रतके पुत्र आपही शक्तिदेवको बाधकर निरन्तर अनेक जीवों के भक्षणकरनेवाले वडे उदरवाले बँधीहुई घटाओंकी मालारूपी दातवाले मृत्युके मुखके समान भयकर चण्डिकाके मंदिरमें लेगये १४४ उस मंदिरमें रात्रिके समय वन्धनमें पडेहुए प्राणोंके बचने में सन्देहमें युक्तशक्तिदेवने भगवती चण्डिकाजी से यह विज्ञापनाकरी कि हे भगवति प्रातःकालके सूर्य्यके समान मानोंनिहुत पियेगये और फैलेहुए रुरुनाम दैत्यके कण्ठके रुधिरवाली मूर्त्तिसे तुमने संसारकी रक्षाकी है इससे हे वरदेभगवति प्रिय जनकी प्राप्तिकी तृष्णासे बहुतदूर आयेहुए और निष्कारण दुष्टलोगों के हाथमें पडेहुए मुझ सदैवनमस्कार करनेवालेकी रक्षाकरो इसप्रकार भगवती से विज्ञापन करके जबउसे किसी प्रकारसे निद्रापडी तो स्वप्नमें उसी मन्दिरसे निकलीहुई एकदिव्यस्त्री उसे दिखलाई दीनी उस दिव्यस्वरूपवाली स्त्री ने उसके पास आकर दयापूर्व्वक कहा कि हे शक्तिदेवडरोमत तुम्हारे लिये कोई अनिष्ट नहीं होगा सत्यव्रतके पुत्रोंकी एक बिन्दुमतीनाम बहनहै वह प्रातःकाल तुम्हें देखकर तुमको अपना पतिबनाने की प्रार्थना करेगी तुमउसकी बातको स्वीकार करलेना वही तुमको छुटादेगी वह निषादकी कन्या नहीं है वहतो शापसे आईहुई कोई दिव्यस्त्री है यह सुनकर उसकी निद्राखुलगई और प्रातःकाल उसके नेत्रोंमें अमृतकीसी वृष्टिकरती हुई सत्यव्रतकी कन्या देवीजीके मन्दिरमें आई और इससे बोली कि मैं निषादोंकेपति सत्यव्रतकी कन्याहूं यहासे तुम्हें छुडवादूंगी इससे तुम मेरेमनोरथकोपूर्ण करो मैंने भाइयोंके बतायेहुए अनेकवरोंका निषेधकरदियाहै तुमको देखकर मेरे चित्तमें स्नेहउत्पन्नहुआ है इससे तुम मुझे स्वीकारकरो उसके यह वचनसुनकर शक्तिदेवने स्वप्नका स्मरणकरके प्रसन्नतापूर्व्वक उसे स्वीकारकिया और उस कन्याके भाइयोंको भी भगवती ने स्वप्नमें यहीआज्ञादेदीथी इससे उन्होंने भी उसके मनोरथके पूर्णकरने के लिये उसके कहनेसे शक्तिदेवको बन्धनमें छुड़वाकर उसीकेसाथ उसका

विराहकरदिया विराहहोजानेपर पुण्यसे प्राप्तहुई स्वरूपको धारणकियेहुए सुखकीसिद्धिके समान उस दिव्य स्त्री विन्दुमती के साथ शक्तिदेव वहा रहनेलगा १५७ एकसमय महलपर बैठे हुए शक्तिदेव ने गोमासकोलेकर मार्ग मे आयेहुए चाण्डालको देखकर अपनी विन्दुमतीनाम प्रियासेकहा कि हे कृशोदरि देखो कि तीनोलोकोंकी भी वन्दनीय गौओं के भी मासकाखानेवाला यह कैसा पापी है यहसुनकर विन्दुमती बोली कि हे आर्य्यपुत्र यह पातक अचिन्त्यहै इसमें क्या कहूं मैं तो गौओं के थोडेही अपराधसे इस निषादकुलमे उत्पन्नहुईहूं और इसपापका तो उद्धारही नहीं है उसके यह वचनसुनकर शक्तिदेव बोला कि हे प्रिये मुझे वडा आश्चर्य्यहोताहै कि तुम कौनहो और तुम्हारा इस कुलमें कैसे जन्म हुआ उसके वहुत आग्रहसे पूछनेपरविन्दुमतीबोली कि यदि तुममेरावचनमानों तोमें अपना गुप्तवृत्तान्तभी तुमको बताऊं शक्तिदेवने शपथखाकर कहा कि मैं अवश्यही तेरेवचनको मानूंगा तववह पहले अपना मनोरथ कहनेलगी कि इसद्वीपमें अभीएक और स्त्री तुम्हारीहोगी और वहथोडेही कालमें गर्भवती होगी गर्भ के आठवें महीनेमे उसका पेटफाडकर तुमगर्भ निकाल लेना और किसीप्रकारकी घृणा न करना उसके यहवचन सुनकर शक्तिदेवको वडा आश्चर्य्यहुआ और उसके चित्तमें घृणाहुई तव फिर विन्दुमती बोली कि यहमेरे वचन किसीकारणसे तुमको अवश्य करने चाहियें अवजोमैंहूं और जिसप्रकारसे मेरा जन्महुआहै वह सवसुनो मैं पूर्व्व जन्ममे विद्याधरीथी अव मैंशापसे मृत्युलोक में उत्पन्नहुईहूं जव मैं विद्याधरीथी उससमय मैंने वीणाकी तातको दातसे तोडकर जोडाथा इसी से मेरा जन्म निषाद के कुलमें हुआ इससे जो गौओकी सूखी नसको दातके छूनेसे ऐसी अधोगति होगई तो उनके मासके खानेमें क्याही कहनाहै १७१ उसके इतनेकहनेही पर उसके एकभाईने वहा आकर घवराके शक्तिदेव से कहा कि उठो २ यहवडाभारी शूकर कहीं से आकर अनेकमनुष्योंको मारताहुआ क्रोधसे सन्मुख आरहा है यहसुनकर शक्तिदेवमहलपरसे उतरा और हाथमें शक्तिलेके और घोडेपर सवारहोकर उसशूकरके पीछे भागा और उसपर प्रहारभीकिया तवघायल शूकरउसे फिरभी अपनेपीछे आताहुआ देखकर भागके एक विलमे घुसगया शक्तिदेव भी उसके ढूढनेको उसके पीछे २ उसी विलमें चलागया क्षणभरमें भीतरजाकर उसे वहा एक महल और एक वडा उत्तम वगीचा दिखाईदिया और वहीं अत्यन्त स्वरूपवती घवराकर आतीहुई एककन्या स्नेहसे आईहुई वनदेवीके समान दिखाईदी उसकन्याको देखकर शक्तिदेवने उससे पूछा कि हे सुन्दरी तुमकौनहो और तुमको किसकारणसे घवराहटहै उसके वचन सुनकर वह बोली कि दक्षिण देशका स्वामी चडविक्रम नामराजाहै उसीकी मैं विन्दुरेखानाम विनव्याही कन्याहूं अकस्मात् जाज्वल्य नेत्रवाला महापापी एकदैत्य आज पिताके घरमे छलकर मुझे यहॉ हरलायाहै और मासके निमित्त इसीसमय शूकरके रूपको धरके वाहरगया था वहॉ किसी वीरने इसभूखे दैत्यको ऐसी शक्ति मारी कि जिससे घायलहोकर यहॉ आकर मृत्युको प्राप्तहोगया इससे मेरा कन्यकाभाव अभी दूषित नहीं हुआहै मैं भागकर वाहर चलीआईहूं यहसुनकर शक्तिदेवने कहा कि तो घवराहटकी क्याबातहै मैंनेही शक्तिसे शूकरको माराथा तववह बोली कि आपकौनहै उसने कहा कि मैं शक्तिदेवनाम ब्राह्मणहूं यह

सुनकर कन्याने कहा तो आपही मेरेपतिहो उसके वचनोंको स्वीकार करके और उसे लेकर शक्तिदेव बाहर निकलआया और घरमेआकर विन्दुमती से अपना सम्पूर्णवृत्तान्त कहदिया और उसीकी आज्ञा से उसविन्दुरेखाके साथ भी अपना विवाह किया इसके उपरान्त दोनों स्त्रियोंसमेत रहतेहुए शक्तिदेवकी दूसरी स्त्री विन्दुरेखा गर्भवतीहुई जबउसका आठवां महीना प्राप्तहुआ तबपहली स्त्री विन्दुमतीने एकान्तमें शक्तिदेवसे कहा कि हे वीर जो तुमने मुझसे प्रतिज्ञाकी थी उसे यादकरो तुम्हारी दूसरी स्त्रीके गर्भका आठवां महीना आगया इस्से तुमजाकर उसके पेटको फाड़कर उसगर्भको निकाललाओ क्योंकि तुमको अपने सत्यवचनको त्यागना नहीं चाहिये १६० उसके यहवचन सुनकर स्नेह तथा कृपासे व्याकुल और प्रतिज्ञाके आधीन शक्तिदेव क्षणभर विना कुछ उत्तरदिये वहाँठहरा और फिर घबराकर वहाँसे विन्दुरेखाके पासचलागया उसने भी उसे खेदसे आतेदेखकर कहा कि हे आर्यपुत्र आजतुम क्योंव्याकुलहो मैं जानतीहूं कि विन्दुमतीने मेरे गर्भको निकालनेके लिये तुमको भेजाहै तुमको यहअवश्य करना चाहिये क्योंकि इसमे कोई कारणहै और इसमें कोईपाप नहीं है इससे घृणामतकरो इसविषयमे मै तुम्हे देवदत्तकी कथा सुनातीहूं पूर्व्व समय मे कबुकनाम पुरमे हरदत्तनाम एकधनवान् ब्राह्मण था उसके एकदेवदत्तनाम पुत्रथा वहविद्वान् होजानेपर भी बाल्यावस्थामे जुआ बहुत खेलताथा एकसमय जुएमें वस्त्रादिक हारकर पिताके घरमे न जासका और किसी शून्यमन्दिरमे चलागया वहाँ जाकर अनेक औषधियोको सिद्धकरके जपकरतेहुए जालपादनाम महाव्रती को अकेला बैठाहुआ देखा उसके पास जाकर देवदत्तने उसे प्रणामकिया और उसने भी मौनताको छोड़कर स्वागतसे उसे प्रसन्नकिया क्षणभर वहाँ बैठनेके उपरान्त उसमहाव्रतीने देवदत्तसे दुःखका कारण पूछा और उसने भी अपना जुएसे धन नष्टहोनेका सबवृत्तान्त कहदिया तबमहाव्रती बोला कि हे वत्स इससंसारमें व्यसनी लोगोकी इच्छापूर्ण करनेको पर्य्याप्त (काफी) धननहींहै जो विपत्तियोके नाशकरनेकी तुमको इच्छा होय तो मेराकहना करो क्योंकि मैने विद्याधर पदवीको पाने के लिये सामग्री इकट्ठीकी है इस्से हे सुलक्षण तुमभी हमारे साथ विद्याधरपनेको सिद्धकरो परन्तु तुमहमारी आज्ञाका उल्लंघन न करना इस्से तुम्हारी सम्पूर्ण विपत्तिया नष्टहोजायँगी २०३ उसमहाव्रतीके वचनो को स्वीकारकरके देवदत्त उसीके पास वहाँ रहनेलगा दूसरेदिन वहमहाव्रती रात्रिके समय श्मशानमें जाकर बरगदके नीचे पूजनकरके खीरकानैवेद्य लगाके दिशाओंमें बलिफेंककर और दिशाओंका पूजनकरके पासखड़ेहुए देवदत्तसे बोला कि तुमभी यहाँ प्रतिदिन हे विद्युत्प्रभे इसपूजनको ग्रहणकरो ऐसाकहकर इसीप्रकारसे पूजन कियाकरो इसके उपरान्त जो होगा वहमैं जानताहूं इस्सेहमारी और तुम्हारी निस्सन्देह सिद्धिहोगी यहकहकर उसे अपने साथलेकर वहमहाव्रती उसीमन्दिरमें चलागया फिर देवदत्त प्रतिदिन उसीवृक्षके नीचेजाकर उसी विधिसे पूजन करनेलगा एकसमय पूजनके अन्तमें वहवृक्ष फटगया और उसमेसे अकस्मात् एकदिव्य स्त्री निकली और देवदत्तसे बोली कि चलो तुमको मेरी स्वामिनी बुलाती है यहकहकर वहस्त्री उसदेवदत्तको वृक्षके भीतर लेगई वहाँजाकर देवदत्तने दिव्यमणिमय स्थानमें पलँगपर बैठीहुई एकदिव्य स्त्री देखी उसेदेख

कर जब यह शोचनेलगा कि यह तो मेरी मूर्त्तिमती सिद्धिहीहोगी उससमय उस स्त्री ने अतिथिसत्कार करके पलँगपर से उठकर देवदत्तको पलँगपर बैठालिया उठने में जो उसके आभूषणबजे थे वह मानों देवदत्तसे स्वागत पूछतेथे पलँगपर बैठालकर उसने देवदत्तसे कहा कि हे महाभाग में रत्नवर्षनाम यक्षपतिकी विद्युत्प्रभानाम पुत्रीहू इसजालपादनाम महाव्रती ने मेरा बहुतआराधनकियाहै इससे उसके तो केवल मनोरथकोही सिद्धकरूंगी परन्तु तुम मेरे प्राणोंकेभी स्वामीहौ इससे केवल दर्शनमात्रसे मुझस्नेह युक्तसे अपनाविवाहकरो उसके यहवचनसुनकर देवदत्तने उसकेसाथ विवाहकरलिया और कुछकालतक वहींरहा जब वह गर्भवतीहुई तब देवदत्त फिर आनेकी प्रतिज्ञाकरके वहा से चलकर उस महाव्रतीके पास आया और उससे सम्पूर्ण वृत्तान्तकहा उसनेभी सबवृत्तान्त सुनकर अपनी सिद्धिकेलिये देवदत्तसेकहा कि तुमने बहुत अच्छाकिया अब जाकर तुम उसयक्षिणीका पेटफाडकरउसका गर्भ निकाललाओ यह कहकर और पुरानी प्रतिज्ञाकास्मरणकराके उसने फिर देवदत्तको उसयक्षिणीके पास भेजदिया २२१ वहा जाकर जबदेवदत्त उसबातको शोचकरखिन्नचित्तहोके बैठा उसीसमय विद्युत्प्रभा उससेआपहीबोली कि हे आर्य्यपुत्र तुम क्यों खिन्नहो मैं जानगई किजालपादने मेरागर्भनिकालनेको तुम्हें भेजाहै इससे तुममेरा पेटफाडकर मेरागर्भनिकाललो और जोतुम नहींनिकालोगे तो मैं आपही निकालूंगी क्योंकि इसमें कोई हेतुहै उसके ऐसाकहनेपर भी जब देवदत्त गर्भको नहींनिकालसका तब उसने आपही अपना पेटफाड कर गर्भनिकालके देवदत्तके आगेरखदिया और उससे कहा कि विद्याधरत्वके भोगनेका कारण यहगर्भ लो मैं शापसे विद्याधरों के घरसे भ्रष्टहोकर यक्षों के यहा उत्पन्नहुई थी और यही मेरे शापका अन्तथा मुझे अपने पूर्व्वजन्मका सम्पूर्ण स्मरणबनाहै अब मैं अपने स्थानकोजातीहू वहीं आकर मुझसे तुम्हारा समागमहोगा यह कहकर विद्युत्प्रभा अन्तर्द्धानहोगई देवदत्तभी उस गर्भकोलेकर चित्तमें खेदकरताहुआ जालपादके निकटआया और सिद्धिदायक वह गर्भ उसे देदिया ठीककहाहै कि (भजत्यात्मभरित्वंहि दुर्लभेष्विनमाधव) दुर्लभ पदार्थों मे भी सज्जनलोग अपस्वार्थी नहीं होतेहैं इसके उपरान्त महाव्रतीने गर्भके मासका परिपाककरके देवदत्तको वनमें भैरवके पूजनकरनेको भेजा उससमय देवदत्त जब बलिदानदेकर लौटा तो उसने देखा कि उस महाव्रतीने वह सम्पूर्ण मासखाडाला और जैसे कि उसनेकहा कि तुमने सम्पूर्ण मास क्यों खाडाला वैसेही वह कुटिल जालपाद विद्याधरहोकर आकाशको उडगया तब आकाशकेसमान नीले खड्गकोलेकर और हार तथा बाजूबन्दपहरकर उस जालपादके उडजानेपर देवदत्तने शोचा कि इस पापीने मुझे कैसाठगाहै अथवा बहुत सीधेपनसे किसका तिरस्कारनहींहोताहै अब मैं इसका बदलाकैसेलू और विद्याधरहुए जालपादको कैसेपाऊ इसमें वेताल सिद्धकरनेकेसिवाय और मेरे लिये कोई दूसरा उपायनहीं है २३७ यह शोचकर वहा मनुष्यके शरीरमें वेतालको बुलाकर पूजनकरके देवदत्त मनुष्यके मासकोनलिसे उसे तृप्तकरनेलगा वेतालको उतनेमांससे तृप्तहोता न देखकर और अन्य मासलेनेतक उसकाठहरना असम्भवसमझकर उसको तृप्तकरने के लिये वह अपनाही मास काटनेलगा उससमय वेताल उससे बोला कि तुम्हारे सत्वसे मैं प्रसन्नहू साहसमतकरो तुम्हारी क्या इच्छाहै

सुनकर कन्याने कहा तो आपही मेरेपतिहो उसके वचनोंको स्वीकार करके और उसे लेकर शक्तिदेव बाहर निकलआया और घरमेआकर विन्दुमती से अपना सम्पूर्णवृत्तान्त कहदिया और उसीकी आज्ञा से उसविन्दुरेखाके साथ भी अपना विवाह किया इस के उपरान्त दोनो स्त्रियोंसमेत रहतेहुए शक्तिदेवकी दूसरी स्त्री विन्दुरेखा गर्भवतीहुई जबउसका आठवां महीना प्राप्तहुआ तबपहली स्त्री विन्दुमतीने एकान्तमे शक्तिदेवसे कहा कि हे वीर जो तुमने मुझसे प्रतिज्ञाकी थी उसे यादकरो तुम्हारी दूसरी स्त्रीके गर्भका आठवां महीना आगया इस्से तुमजाकर उस के पेटको फाडकर उसगर्भको निकाललाओ क्योंकि तुमको अपने सत्यवचनको त्यागना नहीं चाहिये १९० उसके यहवचन सुन कर स्नेह तथा कृपासे ब्याकुल और प्रतिज्ञाके आधीन शक्तिदेव क्षणभर विना कुछ उत्तरदिये वहाँठहरा और फिर घबराकर वहाँसे विन्दुरेखाके पासचलागया उसने भी उसे खेदसे आतेदेखकर कहा कि हे आर्यपुत्र आजतुम क्योंब्याकुलहो मैं जानतीहूं कि विन्दुमतीने मेरे गर्भको निकालनेके लिये तुमको भेजाहै तुमको यहअवश्य करना चाहिये क्योंकि इसमे कोई कारणहै और इसमें कोईपाप नही है इससे घृणामतकरो इसविषयमे मैं तुम्हें देवदत्तकी कथा सुनातीहूं पूर्व्व समय मे कंबुकनाम पुरमे हरदत्तनाम एकधनवान् ब्राह्मण था उसके एकदेवदत्तनाम पुत्रथा वहविद्वान् होजानेपर भी बाल्यावस्थामे जुआ बहुत खेलताथा एकसमय जुएमे वस्त्रादिक हारकर पिताके घरमे न जासका और किसी शून्यमन्दिरमे चलागया वहाँ जाकर अनेक औषधियोंको सिद्धकरके जपकरतेहुए जालपादनाम महाव्रती को अकेला बैठाहुआ देखा उसके पास जाकर देवदत्तने उसे प्रणामकिया और उसने भी मौनताको छोडकर स्वागतसे उसे प्रसन्नकिया क्षणभर वहाँ बैठनेके उपरान्त उसमहाव्रतीने देवदत्तसे दुःखका कारण पूछा और उसने भी अपना जुएसे धन नष्टहोनेका सबवृत्तान्त कहदिया तबमहाव्रती बोला कि हे वत्स इससंसारमे व्यसनी लोगोंकी इच्छापूर्ण करनेको पर्य्याप्त (काफी) धननहींहै जो विपत्तियोंके नाशकरनेकी तुमको इच्छा होय तो मेराकहना करो क्योंकि मैंने विद्याधर पदवीको पाने के लिये सामग्री इकट्ठीकी है इस्से हे सुलक्षण तुमभी हमारे साथ विद्याधरपनेको सिद्धकरो परन्तु तुमहमारी आज्ञाका उल्लंघन न करना इस्से तुम्हारी सम्पूर्ण विपत्तियां नष्टहोजायँगी २०३ उसमहाव्रतीके वचनो को स्वीकारकरके देवदत्त उसीके पास वहाँ रहनेलगा दूसरेदिन वहमहाव्रती रात्रिके समय श्मशानमें जाकर बरगदके नीचे पूजनकरके खीरकानैवेद्य लगाके दिशाओंमें बलिफेंककर और दिशाओंका पूजनकरके पासखडेहुए देवदत्तसे बोला कि तुमभी यहाँ प्रतिदिन हे विद्युत्प्रभे इसपूजनको ग्रहणकरो ऐसाकहकर इसीप्रकारसे पूजन कियाकरो इसके उपरान्त जो होगा वहमैं जानताहूं इस्सेहमारी और तुम्हारी निस्सन्देह सिद्धिहोगी यहकहकर उसे अपने साथलेकर वहमहाव्रती उसीमन्दिरमें चलागया फिर देवदत्त प्रतिदिन उसीवृक्षके नीचेजाकर उसी विधिसे पूजन करनेलगा एकसमय पूजनके अन्तमें वहवृक्ष फटगया और उसमेंसे अकस्मात् एकदिव्य स्त्री निकली और देवदत्तसे बोली कि चलो तुमको मेरी स्वामिनी बुलाती है यहकहकर वहस्त्री उसदेवदत्तको वृक्षके भीतर लेगई वहाँजाकर देवदत्तने दिव्यमणिमय स्थानमें पलँगपर बैठीहुई एकदिव्य स्त्री देखी उसेदेख

कर जब यह शोचनेलगा कि यह तो मेरी मूर्त्तिमती सिद्धिहीहोगी उससमय उस स्त्री ने अतिथिसत्कार करके पलँगपर से उठकर देवदत्तको पलँगपर वैठालिया उठने में जो उसके आभूषणबजे थे वह मानों देवदत्तसे स्वागत पूछतेथे पलँगपर वैठालकर उसने देवदत्तसे कहा कि हे महाभाग मैं रत्नवर्षनाम यक्षपतिकी विद्युत्प्रभानाम पुत्रीहूं इसजालपादनाम महाव्रती ने मेरा बहुतआराधनकियाहै इससे उसके तो केवल मनोरथकोही सिद्धकरूंगी परन्तु तुम मेरे प्राणोंकेभी स्वामीहो इससे केवल दर्शनमात्रसे मुझस्नेह युक्तमे अपनाविवाहकरो उसके यहवचनसुनकर देवदत्तने उसकेसाथ विवाहकरलिया और कुछकालतक वहींरहा जब वह गर्भवतीहुई तब देवदत्त फिर आनेकी प्रतिज्ञाकरके वहा से चलकर उस महाव्रतीके पास आया और उससे सम्पूर्ण वृत्तान्तकहा उसनेभी सबवृत्तान्त सुनकर अपनी सिद्धिकेलिये देवदत्तसेकहा कि तुमने बहुत अच्छाकिया अब जाकर तुम उसयक्षिणीका पेटफाडकरउसका गर्भ निकाललाओ यह कहकर और पुरानी प्रतिज्ञाकास्मरणकराके उसने फिर देवदत्तको उसयक्षिणीके पास भेजदिया २२१ वहा जाकर जबदेवदत्त उसबातको शोचकरखिन्नचित्तहोके वैठा उसीसमय विद्युत्प्रभा उससेआपहीबोली कि हे आर्य्यपुत्र तुम क्यों खिन्नहो मै जानगई किजालपादने मेरागर्भनिकालनेको तुम्हें भेजाहै इससे तुममेरा पेटफाडकर मेरागर्भनिकाललो और जोतुम नहींनिकालोगे तो मैं आपही निकालूंगी क्योंकि इसमे कोई हेतुहै उसके ऐसाकहनेपर भी जब देवदत्त गर्भको नहींनिकालसका तब उसने आपही अपना पेटफाड़ कर गर्भनिकालके देवदत्तके आगेरखदिया और उससे कहा कि विद्याधरत्वके भोगनेका कारण यहगर्भ लो मैं शापसे विद्याधरों के घरसे भ्रष्टहोकर यक्षों के यहा उत्पन्नहुई थी और यही मेरे शापका अन्त था मुझे अपने पूर्व्वजन्मका सम्पूर्ण स्मरणबनाहै अब मैं अपने स्थानकोजातीहूं वहीं आकर मुझसे तुम्हारा समागमहोगा यह कहकर विद्युत्प्रभा अन्तर्द्धानहोगई देवदत्तभी उस गर्भकोलेकर चित्तमें खेद [illegible] जालपादके निकटआया और सिद्धिदायक वह गर्भ उसे देदिया ठीककहाहै कि (भजन्त्यर्त्थेस्वार्त्थे दुर्लभेपिनसाधव) दुर्लभ पदार्थों मे भी सज्जनलोग अपस्वार्थी नहीं होतेहैं इसके [illegible]

बताओ मैं उसको सिद्धकरू उसके यह वचनसुनकर वीर देवदत्त बोला कि जहा विश्वासघाती जालपाद है वहीं विद्याधरों के स्थानमें उसके मारनेकेलिये मुझे लेचलो तब वेताल उसके वचनोंको स्वीकारकर उसको अपनेकन्धेपरचढाकर आकाशमार्गसे विद्याधरो के स्थानपर लेगया वहांजाकर देवदत्तने विद्याधरोंके राज्यपाने से अभिमानयुक्त रत्नसिंहासनपर बैठेहुए और नहीं इच्छाकरतीहुई विद्याधरी विद्युत्प्रभाको अपनीस्त्री बनानेकेलिये अनेकप्रकारकेवचनोंकरके समझातेहुए जालपादकोदेखा फिरउसेदेखकर प्रसन्नहुई विद्युत्प्रभाके नेत्ररूपीचकोरोंकेलिये चन्द्रमारूप वहदेवदत्त वेतालसमेत जालपादपरदौडा जालपादभी उसे वहा अकस्मात्आया देखकर घबराके आसनसे पृथ्वीपरगिरपडा और भयसेउसके हाथमेंसे खड्गभी छूटगया देवदत्तने वह खड्गतो उठालिया परन्तु उसे मारा नहींठीकहै (रिपुस्वपिहिभीतेषुस्वानुकम्पामहाशया) डरेहुएशत्रुओपरभी महात्मालोगदयाकरते हैं और वेतालकोभी उसकेमारनेमें उद्युक्त देखकर उसने कहा कि इसदीनपाखडी को मारने से क्याप्रयोजन है तुम इसे पृथ्वीमें लेजाकर अपने पास रक्खो यह पापी वहीं फिरभी भिक्षुक होकररहै उससमय देवदत्तके ऐसाकहते ही आकाशसे भगवती पार्वतीजी उतरकर देवदत्तके समीप प्रत्यक्ष आईं और प्रणाम करनेवाले देवदत्तसे बोलीं किहेपुत्र तेरे असाधारण सत्वको देखकर मैं प्रसन्नहू इस्से मैंने तुमको यहा के विद्याधरों का राज्यदिया यहकह कर और सम्पूर्ण विद्यादेकर भगवती अन्तर्द्धान होगईं और वेताल जालपादको लेकर पृथ्वीपर चला गया और उस महाव्रती की सम्पूर्ण सिद्धीनष्टहोगई ठीकहै (नाधर्म्मश्चिरमृद्धये) अधर्मसे बहुत काल तक सुखनहीं मिलता इसके उपरान्त देवदत्त विद्याधरोंके राज्यको पाकर विद्युत्प्रभाके साथवहाँ आनन्द पूर्वक रहनेलगा २५५ इसप्रकार शक्तिदेवसे सम्पूर्ण कथा कहकर मृदुभाषिणी विन्दुरेखा फिरबोली कि इसप्रकार से बहुधाकार्य्यहुआ करते हैं इस्से तुम विन्दुमती के कहने से शोकत्यागकर मेरागर्भ निकाललो विन्दुरेखाके इसप्रकार कहनेपर और शक्तिदेवके पापसे भयभीत होनेपर आकाशवाणी हुई कि हे शक्तिदेव निस्सन्देह तुम इसका पेटफाडकर गर्भनिकाललो जबउसगर्भ का कण्ठ तुम पकडोगे तब बडेसुन्दर खड्गकी मूठ तुम्हारे हाथ आवेगी और वह गर्भखड्ग होजायगा इस आकाशवाणी को सुनकर शक्तिदेवने शीघ्रही विन्दुरेखाका पेटफाडकर गर्भ निकाललिया और हाथसे उसका गला पकडा हाथमेंलेतेही वह गर्भसुन्दर खड्गरूप होगया वहखड्ग क्याथा मानोंसत्वसे खींचागया सिद्धिके बालोंका समूहथा इसके उपरान्त शक्तिदेव शीघ्रही विद्याधरहोगया और विन्दुरेखा उसीसमय अन्तर्द्धान होगई उसे गुप्तहुई देखकर उसने अपनी पहली स्त्री विन्दुमती से जाकर सम्पूर्ण वृत्तान्त कहा तब वह बोली कि हे नाथ विद्याधरके स्वामी की पुत्री हमतीनों बहनें शापके द्वारा कनकपुरीसे च्युत (अपने अधिकारसे भ्रष्ट) हुईं उनमेंसे एक कनकरेखानामथी जिसको तुमने वर्द्धमानपुरमें देखाथा वहीं तुम्हारे आगे उसकेशापकाभी अन्तहोगयाथा वहअपनीपुरीको चलीगई भाग्यवशसे उसकेशापका अन्तऐसाही विचित्रथा *दूसरी विन्दुरेखा जिसके शापका अन्तगर्भके निकालने से हुआ है वह आपकोविदितही है *

* विन्दुरेखा का नाम यहा पर मूल पुस्तकमें छूटा हुआसा मालूम होताथा इसलिये अपनी ओरसे लिखा है।

और तीसरी में हूं इसीसमय मेरेभी शापका अन्त है हे प्रिय मैं आजही अपनी नगरी को जाऊंगी क्योंकि हमतीनों वहिनोंके विद्याधर शरीर वहीं हैं हमारी बडी वहिन चन्द्रप्रभाभी वहीं है इस्से तुमभी खड्गके प्रभावसे वहीं आओ वहा वनमें स्थित हमारे पिता हम चारों वहिनों का विवाह तुम्हारे साथ करदेंगे और तुम उसपुरीके राजा होजाओगे २६६ विन्दुमतीसे इससम्पूर्ण वृत्तान्त को सुनकर शक्तिदेव उसी के साथ आकाशमार्ग से कनकपुरीको गया वहा जाकर उसने जो तीनों मडपों में पलॅगोपर तीन स्त्रियोंके तीन मृत शरीर देखेथे उनशरीरों में प्रविष्टहुई कनकरेखा आदि अपनी तीनों प्रियाप्रणाम करतीहुई उसने देखीं और उनतीनों की वडीवहिन मगलाचार करतीहुई चौथी चन्द्रप्रभाको वहुतकाल तक दर्शन न होनेसे उत्कण्ठित दृष्टिकेद्वारा उसके रूपको मानों पानकरतीहुई सी को देखा अपने २ कार्य्यों में लगीहुई सेवकोंकी स्त्रिया शक्तिदेवको भीतरगया हुआ देखकर वहुत प्रसन्नहुई और चन्द्रप्रभाने उस्से कहा कि हे सुभग जो तुमने वर्द्धमानपुरमें कनकरेखानाम कन्यादेखीथी वह यहीमेरी वहिन चन्द्रेरेखानाम है, उत्स्थल द्वीपमें जो निषादोंके स्वामी की विन्दुमती कन्या तुम्हारी स्त्री हुईथी वही यह मेरी वहिन शशिरेखा है और जो दैत्य से हरीगई विन्दुरेखानाम राजकन्या तुम्हारी दूसरी स्त्री हुई थी वही मेरी छोटी वहिन यह शशिप्रभाहै इस्से अवतुम हमारे साथ हमारे पिताके पास चलो वह हम सव को तुम्हें देदेंगे तव तुम हमारे साथ विवाह करलेना चन्द्रप्रभा के कामकी आज्ञा से प्रगल्भ यह वचन शीघ्रही कहनेपर उनचारों को साथलेकर शक्तिदेव वन में उनके पिता के पासगया २७६ वहाँ जाकर इनचारोंने प्रणामकरके अपने पितासे सव वृत्तान्तकहा उनके वचनों को सुनकर और उन्हीं के अनुकूल आकाशवाणी को भी सुनकर उसने प्रसन्नता पूर्व्वक अपनी चारोंकन्या शक्तिदेव को देदीं और उनके दहेज में अपना कनकपुरीका सवराज्य तथा अपनी सपूर्ण विद्या भी अर्पण करदीं और अपने विद्याधरों में उसका योग्य शक्तिवेग नाम धरदिया और उसने शक्तिदेवसे कहा कितुम्हें वडे प्रभावसे कोई जीत न सकेगा परन्तु वत्सदेशके स्वामी राजा उदयन् का पुत्र नरवाहनदत्तनाम तुम्हारा चक्रवर्तीहोगा उस्से तुम सदैव नम्रताकरना इसप्रकार कहकर वडे प्रभाववाले उस विद्याधरों के स्वामीश शिखण्डने जामाता को अपनी कन्याओं समेत आदरपूर्व्वक तपोवन से राजधानी में जाने के लिये विदाकिया इसके उपरान्त शक्तिवेग विद्याधरोंके लोककी वैजयती पताकाके समान कनकपुरीमें राजा होकर अपनी स्त्रियों समेत गया सुवर्ण की रचना से जिसके मदिर देदीप्यमान होरहे हैं और इसी से वहुत उन्नतहोने के कारण मानों सूर्य्यकी प्रभा सिमटकर इकट्ठी होगई है ऐसीसुन्दर उसपुरी मे अपनी चारों स्त्रियो समेत शक्तिवेग रत्नजटित सिढ़ीवाली वावडियों से मनोहर वगीचों में अत्यन्त आनन्द को भोगकरनेलगा इसप्रकार अपनेही विचित्र चरित्र को कहकर शक्तिवेग राजाउदयन् से फिर वोला कि हे चन्द्रकुलभूषण वह शक्तिवेग मैंही हू और इस समय उत्पन्न हुए भावी नवीन अपने चक्रवर्त्ती तुम्हारेपुत्रके चरणों के दर्शनकी अभिलाषा से आयाहू हे राजा इसप्रकार मैंने मनुष्यहोकरभी श्री शिवजीकी कृपासे विद्याधरोंका राज्यपाया मैंने अपने स्वामीको देख लिया अवमैं अपने घरको जाताहू

आपका सदैव कल्याणहोय इसप्रकार हाथ जोडकर उसके कहनेपर और आज्ञालेकर चन्द्रमाके समान उसके उसीसमय आकाश में चलेजानेपर दोनों रानी तथा सम्पूर्ण मन्त्रियोंसमेत राजाउदयन् अपने बालक पुत्रको देखकर अपूर्व आनन्द को प्राप्तहुआ २८६ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांचतुर्द्दारिकालम्बकेतृतीयस्तरंग ३ ॥
चतुर्द्दारिकानामपंचमलम्बकसमाप्तहुआ ॥

मदनमंचुकानामषष्ठोलम्बकः ॥

तर्जयन्निवविघ्नोघान्नमितोन्नमितेनयः ॥
मुहुर्विभातिशिरसासपायाद्वोगजाननः १
नमःकामाययद्वाणपातैरिवानिरन्तरम् ॥
भातिकण्टकितंशंभोरप्युमालिङ्गितंवपुः २

इत्यादि अनेक दिव्यचरितोंकोकरके अपनेको अन्यकेसमान दर्शितकराके और सम्पूर्ण विद्याधरोंके ऐश्वर्य्यको पाके नरवाहनदत्तने किसीप्रसंगमें पत्नियोंसमेत महर्षियो के पूछनेपर अपने मुखसे जो चरित्र आदिसे वर्णनकियाहै उसको अब सुनो४इमकेउपरान्त महाराज उदयन्से पालनकियागया नरवाहनदत्त पूरेआठवर्षकाहुआ उससमय वहसम्पूर्णविद्याओंको सीखताहुआ मन्त्रिपुत्रोंकेसाथ उपवनोंमेंक्रीडाकरता था रानीवासवदत्ता औरपद्मावती यहदोनों अत्यन्तस्नेहसे रात्रिदिन नरवाहनदत्तकेही प्रेममें एकाग्ररहती थीं सद्वंशमें उत्पन्न और गुण(प्रत्यंचातथा शीलादिगुण)के आरोहणसे नम्र और धीरे२ पूर्णहोतेहुए धनुष तथा शरीरसे नरवाहनदत्त अत्यन्त शोभितहोताथा और उसकापिता राजा उदयन् फल सम्पत्तिके निकट होनेसे मनोहर उसके विवाहादि मनोरथों से अपनेसमयकोव्यतीतकरताथा इसी कथाकेबीचमें औरजो विचित्र कथाहुई है उसका वर्णनकरते हैं वितस्तानामनदी के तटपर तक्षशिलानाम एकपुरीथी नदी के जलमें उसपुरीका प्रतिविम्ब ऐसा शोभितहोताथा कि मानों पातालपुरी नीचे से उसकी शोभादेखनेको आई है उसपुरी में कलिङ्गदत्तनाम बौद्धमतावलम्बी राजाथा और ताराके वरदानसे उसकी सम्पूर्ण प्रजा जिन देवकीपरमभक्तथी वहपुरी बडेसुन्दर रत्नजटित श्रेष्ठमंदिरों से ऐसी शोभितहोतीथी कि मानों उत्पन्न हुए मदके शृंगों से मेरे समान कोई दूसरी पुरीनहीं है यह कहतीथी राजा कलिंगदत्त पिताके समान प्रजाओंका केवल पालनही नहींकरताथा किन्तु गुरुकेसमान आपही ज्ञानकाभी उपदेशकरताथा १४ उसी नगरी में बौद्धमतावलंबी वितस्तादत्तनाम एकधनवान् वैश्य रहताथा वह सदैव भिक्षुकोंका पूजन किया करताथा उसवणियेका रत्नदत्तनाम तरुणपुत्र सदैव उसकी निन्दाकिया करताथा और उसेपापी कहाकरता था किसीसमय अपने पुत्रसे उसने कहा कि हे पुत्र तू मेरी निन्दा क्यों कियाकरता है तो

वह ईर्षासे बोला कि हेतात तुम वेदोंके मार्गको छोडकर यह बडा अधर्म करतेहो जो ब्राह्मणों को छो-ड़कर सदैव श्रावकोंका पूजनकरते हो स्नानादिक नियमोंसेरहित अपनेसमयपर भोजनके लोभी शिखा समेत सम्पूर्ण केशों के मुडाने वाले और केवललँगोटी बाधनेवाले सम्पूर्ण अधम जातिके लोग, विहार और स्थान के लोभसे जिस बौद्धधर्म का अवलम्बन करते हैं उस्से तुम्हें क्या प्रयोजनहै यह, सुनकर वह वणिया बोला कि हेपुत्र धर्मएकही प्रकारका नहीं है अलौकिकधर्म अन्यहै और सपूर्ण लोकों का धर्म अन्यहै देखोब्राह्मणत्व भी राग आदिके त्यागकरने को सत्यको और सपूर्ण प्राणियोंपर दयाकर-ने कोही कहते हैं व्यर्थजाति के झगडे को ब्राह्मणत्व नहींकहते और सपूर्ण प्राणियों को अभय देने वाले इसधर्मकी निन्दा प्राय पुरुषों के दोष से तुमको नहीं करनी चाहिये, उपकार करना परमधर्म है इसविषयमें किसी शास्त्रकाभी विवाद नहींहै और मेरे मतसे प्राणियोंकी रक्षाकरनेसे बढ़कर कोई उप कार नहींहै इस्से अहिंसा प्रधान और मोक्षदायक इस बौद्धमतमें जो मेरा बडा अनुरागहै तोमेरा अ-धर्मही क्याहै अपने पिताके यहवचन सुनकरभी रत्नदत्तने वह बातें स्वीकारतो नहींकीं परन्तु उसमत की और भी अधिक निन्दाकी २६ तब उसके पिताने धर्मशिक्षक राजाकलिंगदत्तके पास जाकर खेद पूर्वक अपना सपूर्ण वृत्तान्त वर्णनकिया उसके वचन सुनकर राजाने युक्तिपूर्वक वणियेके पुत्र को सभामें बुलवाकर मिथ्या कोप दिखाकर द्वारपालसे कहाकि मैंने सुनाहै कि यह महापापी और कुकर्मी है इस्से देशके दूषित करनेवाले इसदुष्टको विना विचारे मारडालो राजा के ऐसा कहनेपर वितस्तादत्त ने जब विज्ञापना की तब राजाने धर्माचरणकी परीक्षा करनेकेलिये दोमहीनेतक उसकावध रोकरक्खा और दोमहीनेकेपीछे फिर आनेकी आज्ञादेके उसीकेपिता को उसे सौंपदिया राजासे आज्ञालेकर रत्न-दत्त अपने पिताके साथ घरकोआया और भयसे व्याकुल होकर यह विचारने लगाकि मैंने राजाका क्या अपराधकियाहै दोमहीने के उपरान्त बिना कारणकेही मेरीमृत्यु होगी यह शोचकर उसे रात्रि दिन निद्रानहीं आतीथी और भोजनके न्यूनहोजानेसे उसकीचेष्टा अत्यन्त म्लानहोगईथी जब इसी प्रकार दोमहीने व्यतीतहुए तब वितस्तादत्त कृश तथा पाडुवर्णवाले अपने पुत्रको फिर राजाके निकट लेगया राजाने उसे दुर्बल तथा दुखी देखकर कहा कि तुम ऐसे दुर्बल कृशशरीर क्यों होगयेहो क्यामैंने तुम्हारा भोजन रोंकदियाथा यह सुनकर रत्नदत्त बोला कि हे महाराज मैं तो अपने आपहीको भूलग-याथा भोजनकी क्या कथा है हे स्वामी जिस दिनसे आपने वधकी आज्ञादीथी उसी दिनसे अबमृत्यु आती है अबमृत्यु आतीहै यही रोज शोचाकरताहू उसके यहवचन सुनकर राजा बोला कि हे पुत्र मैंने युक्ति पूर्वक तुम्हें मृत्युके भयकाज्ञान करवायाहै सब प्राणियोंको भी इसीप्रकार मृत्युका भयहोताहै तो बताओ कि मृत्युकी रक्षामें उपकार से अधिक और कौनसा धर्महै इसमें मैंने तुम्हें धर्मके लिये और मोक्षकी इच्छाके निमित्त यहभय दिखायाथा क्योंकि मृत्युमे डराहुआ मनुष्य मोक्षके लिये यत्नकरताहै इससे ऐसेधर्मके अवलम्बन करनेवाले अपने पिताकी तुमनिन्दा मतकियाकरो राजाके यहवचन सुनकर रत्नदत्त बहुतनम्रहोकर बोला कि हे महाराज आपने धर्मकाउपदेशदेकर मुझे कृतार्थ करदिया अब मेरी

मोक्षके लिये इच्छा उत्पन्न हुई है आप कृपाकरके उसका भी उपदेश कीजिये यहसुनकर राजाने किसी उत्सवके दिन रत्नदत्तके हाथमे एकतेलसे भरापात्र धरकर कहा कि इसपात्रको लेकर तुमसम्पूर्ण पुरीमें घूमआओ परन्तु इसमेसे एक बिन्दुभी तेल न गिरनेपावे जो एकबिन्दुभी तेलका इसमें से गिरेगा तो यहपुरुष तुमको शीघ्रही मारडालेंगे इसप्रकार कहकर और खड्गधारी पुरुषोंको उसके साथमें करके पुरीमें घूमनेके लिये उसेभेजा ४६ वहभी भयसे तेलके गिरनेको बचाताहुआ सम्पूर्णपुरी में घूमकर बडेक्लेशसे राजाकेपास आया राजाने तेल नहीं गिराहुआ देखकर उससेकहा कि आज तुमने पुरीमें घूमतेहुए किसी को देखाहै यहसुनकर वहहाथजोडकर बोला कि मैंने न किसीको देखाहै न कुछ सुनाहै मैं खड्गके भयसे बहुत सावधानता पूर्व्वक तेलके गिरनेको बचाताहुआ पुरीमेंघूमा उसके इसप्रकार कहनेपर राजाबोला कि तुमने इसतेलकी रक्षामें केवल चित्तलगाकर कुछभी नही देखा इससे इसीप्रकारकी एकाग्रतासे परमात्मा का ध्यानकरो क्योंकि बाहरकी वृत्तियोंसे निवृत्तहुआ पुरुष एकाग्र होकर तत्त्वको देखताहै और तत्त्वको देखकर फिर कर्मजालमे नहीं फँसताहै यह मोक्षका उपदेश मैंने संक्षेपसे तुम्हारेआगे वर्णनकिया राजाके यह वचन सुनकर रत्नदत्त उसके पैरोंपर गिरपडा और फिर उससे आज्ञालेकर कृतार्थ होके बहुत प्रसन्नता पूर्व्वक अपने घरको चलाआया ५४ इसप्रकार प्रजाओंका पालन करतेहुए राजा कलिंगदत्त के तारादत्ता नाम योग्य महाकुलीन रानीथी सुन्दर रीति (मर्य्यादा और काव्योंके बनाने की प्रणाली) वाली अच्छे वृत्त (आचरण और छन्द) वाली उसरानीसे अनेक दृष्टान्तोंका रसिक राजा सरस्वतीसे सुकविके समान शोभितहुआ अमृतमय चन्द्रमासे प्रकाश गुणके द्वारा प्रशंसनीय चन्द्रिकाके समान राजाकलिंगदत्त से वहरानी अत्यन्त स्नेहके कारण अभिन्न मालूम पडतीथी स्वर्ग में इन्द्राणीकेसाथ इन्द्रके समान उसनगरी में तारादत्तानाम रानीकेसाथरहतेहुए राजाकलिंगदत्तके दिनआनन्दपूर्व्वक व्यतीत होतेथे इसीबीचमें किसीकारण से स्वर्गमें इन्द्रकेयहांबडा उत्सवहुआ उसउत्सवमें नृत्यके निमित्तसम्पूर्ण वेश्याओंके आने परभी एक श्रेष्ठ सुरभिदत्तानाम वेश्या नहीं दिखाईदी तब इन्द्रनेध्यानधरके देखा कि वह किसी विद्याधरके साथ नन्दनवनमें एकान्तमेंस्थितहै यहदेखकर इन्द्रनेचित्तमें क्रोधपूर्व्वक शोचाकि यहदोनों कैसेदुराचारी और कैसेकामान्धहैं यहवेश्यातो हमलोगोंको भूलकर स्वतन्त्रकेसमान कार्य्यकरतीहै और यहविद्याधर देवभूमिमें भी आकर कैसीअनीतिकरताहै अथवा इसविचारे विद्याधरकाक्यादोषहै इसेयही वेश्या अपनेरूपसे मोहितकरके यहांलेआई है उन्नतस्तनोंसेपूर्ण हृदयवाली लावण्यरूपी जलकीनदीरूपी स्त्रीसे आकर्षणकियेहुए अपनेचित्तको कौनरोकसक्ताहै पूर्व्वसमयमें सम्पूर्ण उत्तमपदार्थोंमेंसे तिल२भर लेकर ब्रह्मासे बनाईगई तिलोत्तमानाम अप्सराको देखकर क्याशिवजीके चित्तमें क्षोभनहींहुआ क्या मेनका को देखकर विश्वामित्रकाचित्त चलायमान नहींहुआ क्या शर्मिष्ठाकेरूपके लोभसे ययातिवृद्धावस्थाको नहींप्राप्तहुए इससे तीनोंलोकोंके क्षोभकरने में समर्थरूपकेद्वारा अप्सरासे मोहितकियेगये इसविद्याधर का कोई अपराधनहीं है किन्तु यहीस्वर्गकी पापिनी अप्सरानीतिकासंग करनेसे अपराधिनी है क्योंकि यह देवताओं को छोडकर इसविद्याधरको नन्दनवनमेंलेआई इसप्रकार शोचकर इन्द्रने उसविद्याधरको

छोडकर उर्वशी अप्सराको शापदिया कि हेपापिनि तू मनुष्ययोनिमें उत्पन्नहोगी वहांअयोनिज पुत्रीको पाकर और दिव्य कार्यकरके फिर स्वर्गकोआवेगी ७१ इसीबीचमें तक्षशिलापुरीमें राजाकलिंगदत्तकी स्त्री ऋतुधर्मको प्राप्तहुई उससमय रानीकेउदरमें इन्द्रके शापसे भ्रष्टहुई सुरभिदत्तानाम अप्सराप्राप्तहुई उसकेगर्भमे आनेसे रानीकास्वरूप अत्यन्तही शोभितहोगया और रानीने स्वप्नमें आकाशसे गिरीहुई एक ज्वाला अपनेउदरमें प्रवेशकरतीहुई देखीप्रातःकाल रानीने आश्चर्य्यपूर्वक यहस्वप्न राजासे कहा स्वप्नको सुनकर राजाभी प्रसन्नहोकर बोला कि हे सुन्दरि शापसे भ्रष्टहुए दिव्यजीवभी मनुष्ययोनिमें आतेहें इस्से मैं जानताहूं कि कोई दिव्यजीव तुम्हारेगर्भ मे आया है ठीककहा है (विचित्रसदसत्कर्म निबद्धास्संचरन्तिहि जन्तवस्त्रिजगत्यस्मिन्शुभाशुभफलाप्तये,) नानाप्रकारके उत्तमतथा निकृष्ट विलक्षण कर्मोंसेबँधेहुए प्राणी तीनोंलोकोंमें शुभाशुभकर्मोंके भोगनेकेलिये भ्रमणकियाकरते हैं राजाकेयहवचन सुनकर प्रसंगसे रानीबोली कि ठीकहै शुभाशुभभोगोंका देनेवाला कर्महीबलवान् है इसीविषयमें पूर्व्व सुनीहुई मैं कथा कहती हूं आप सुनिये कोशलदेश में धर्मदत्तनाम एकराजाथा उसराजाकी नागश्री नाम रानीथी सतियोंमें अग्रगण्य वह रानी ऐसी पतिव्रताथी कि सम्पूर्ण लोग उसेपृथ्वी मे अरुन्धती कहतेथे कुछ समय व्यतीतहोनेपर राजाधर्मदत्तके नागश्रीनाम रानीमें मेराजन्महुआ जब मैं अत्यन्तही बालकथी उससमय मेरीमाताने अकस्मात् अपनेपूर्व्वजन्मका स्मरणकरके मेरे पितासेकहा कि हेराजा आज अकस्मात् मुझे अपनेपूर्व्वजन्मका स्मरणआयाहै जो उसेनहीं कहतीहूं तो चित्तनहीं मानताहै और कहदूंगी तो मेरीमृत्युहोजायगी क्योंकि अकस्मात् स्मरणमेंआयेहुए पूर्वजन्मके वृत्तान्तको कहने से मृत्युहोती है ऐसाप्राचीन लोगकहतेहैं इस्से मेरे चित्तमेंबडा खेदहोरहाहै ८४ मेरी माताकेयहवचन सुनकर मेरापिता बोला कि हेप्रिये मुझेभी अकस्मात् अपनेपूर्व्वजन्मका स्मरणआया है इससे तुमअपना वृत्तान्तमुझसेकहो औरमैंभी अपनावृत्तान्त तुमसेकहूंगा जो होनाहोय सोहोय क्योंकि भवितव्यताको कोईभी नहींमेटसक्ता है अपनेपतिसे इसप्रकार प्रेरणाकीगई रानी बोली कि हे राजा जो आपको आग्रहहै तो सुनिये मैं कहतीहूं इसीदेशमें मैं पूर्व्वजन्ममें माधवनाम किसीब्राह्मणके यहांदासीथी मेरा आचरण बहुतअच्छाथा और मेरेपतिकानाम देवदासथा वहविचाराभी किसी वणियेके यहांसेवकथा हमदोनों स्त्री पुरुष अपनेयोग्य घरबनाकर अपने २ मालिकोंके यहांसे लायेहुए पकान्नको खाकर रहते थे हमारेयहां वारिधानी (पलहडी) घडा बुहारी मचिया मैं और मेरापति इनको छोड़कर और कोई वस्तुनथी हमारेयहां कभी कलहनहींहोतीथी इस्सेबडे सन्तोषपूर्व्वक हमारासमय व्यतीतहोताथा देवता पितर तथा अतिथियों को देकर जो शेष अन्नरहताथा वही अन्न हमदोनोंखाते थे हमदोनों के ओढने से जो कुछ अधिक वस्त्रहोताथा वहभी किसीगरीब भिक्षुकको देदेते थे इसप्रकार सुखपूर्वक रहते २ इस देशमें बडा दुर्भिक्षपडा इससे हमदोनों को सेवाकरने में जो अन्न मिलता था वहथोडाहीसा मिलने लगा तब क्षुधासे हमदोनों का शरीरकृशहोगया और बड़ा क्लेश होनेलगा उन्हीं दिनों में एकसमय भोजनके अवसरमें एक थकाहुआ अतिथि ब्राह्मण आया यद्यपि उसनाथ प्राणोंकेभी रहने में सन्देह

मोक्षके लिये इच्छा उत्पन्न हुई है आप कृपाकरके उसका भी उपदेश कीजिये यहसुनकर राजाने किसी उत्सवके दिन रत्नदत्तके हाथमें एकतेलसे भरापात्र धरकर कहा कि इसपात्रको लेकर तुम सम्पूर्ण पुरीमें घूमआओ परन्तु इसमेंसे एक बिन्दुभी तेल न गिरनेपावे जो एकबिन्दुभी तेलका इसमें से गिरेगा तो यहपुरुष तुमको शीघ्रही मारडालेंगे इसप्रकार कहकर और खड्गधारी पुरुषोंको उसके साथमें करके पुरीमें घूमनेके लिये उसेभेजा ४६ वहभी भयसे तेलके गिरनेको बचाताहुआ सम्पूर्णपुरी में घूमकर बड़ेक्लेशसे राजाकेपास आया राजाने तेल नहीं गिराहुआ देखकर उससेकहा कि आज तुमने पुरीमें घूमतेहुए किसी को देखाहै यहसुनकर वहहाथजोड़कर बोला कि मैंने न किसीको देखाहै न कुछ सुनाहै मैं खड्गके भयसे बहुत सावधानता पूर्व्वक तेलके गिरनेको बचाताहुआ पुरीमें घूमा उसके इसप्रकार कहनेपर राजाबोला कि तुमने इसतेलकी रक्षामें केवल चित्तलगाकर कुछभी नहीं देखा इस्से इसीप्रकारकी एकाग्रतासे परमात्मा का ध्यानकरो क्योंकि बाहरकी वृत्तियोंसे निवृत्तहुआ पुरुष एकाग्र होकर तत्त्वको देखताहै और तत्त्वको देखकर फिर कर्मजालमें नहीं बँधताहै यह मोक्षका उपदेश मैंने संक्षेपमें तुम्हारेआगे वर्णनकिया राजाके यह वचन सुनकर रत्नदत्त उसके पैरोंपर गिरपड़ा और फिर उस्से आज्ञालेकर कृतार्थ होके बहुत प्रसन्नता पूर्व्वक अपने घरको चलाआया ५८ इसप्रकार प्रजाओंका पालन करतेहुए राजा कलिंगदत्त के तारादत्ता नाम योग्य महाकुलीन रानीथी सुन्दर रीति (मर्य्यादा और काव्योंके बनाने की प्रणाली) वाली अच्छे वृत्त (आचरण और छन्द) वाली उसरानीसे अनेक दृष्टान्तोंका रसिक राजा सरस्वतीसे सुकविके समान शोभितहुआ अमृतमय चन्द्रमासे प्रकाश गुणके द्वारा प्रशंसनीय चन्द्रिकाके समान राजाकलिंगदत्त से वहरानी अत्यन्त स्नेहके कारण अभिन्न मालूम पड़तीथी स्वर्ग में इन्द्राणीकेसाथ इन्द्रके समान उसनगरी में तारादत्तानाम रानीकेसाथरहतेहुए राजा कलिंगदत्तके दिनआनन्दपूर्व्वक व्यतीत होतेथे इसीबीचमें किसीकारण से स्वर्गमें इन्द्रकेयहांबड़ा उत्सवहुआ उसउत्सवमें नृत्यके निमित्तसम्पूर्ण वेश्याओंके आने परभी एक श्रेष्ठ सुरभिदत्तानाम वेश्या नहीं दिखाईदी तब इन्द्रनेध्यानधरके देखा कि वह किसी विद्याधरके साथ नन्दनवनमें एकान्तमेंस्थितहै यहदेखकर इन्द्रनेचित्तमें क्रोधपूर्व्वक शोचाकि यहदोनों कैसेदुराचारी और कैसेकामान्धहैं यहनेश्याते हमलोगोंको भूलकर स्वतन्त्रकेसमान कार्य्यकरतीहै और यहविद्याधर देवभूमिमें भी आकर कैसीअनीतिकरताहै अथवा इसविचारे विद्याधरकाक्यादोषहै इसेयही वेश्या अपनेरूपसे मोहितकरके यहांलेआई है उन्नतस्तनोंसेपूर्ण हृदयवाली लावण्यरूपी जलकीनदीरूपी स्त्रीसे आकर्षणकियेहुए अपनेचित्तको कौनरोकसक्ताहै पूर्व्वसमयमें सम्पूर्ण उत्तमपदार्थोंमेंसे तिलरभर लेकर ब्रह्मासे बनाईगई तिलोत्तमानाम अप्सराको देखकर क्याशिवजीके चित्तमें क्षोभनहींहुआ क्या मेनका को देखकर विश्वामित्रकाचित्त चलायमान नहींहुआ क्या शर्मिष्ठाकेरूपके लोभसे ययातिदुर्दशाको नहींप्राप्तहुए इस्से तीनोंलोकोंके क्षोभकरने में समर्थरूपकेद्वारा अप्सरासे मोहितकियेगये इसविद्याधर का कोई अपराधनहीं है किन्तु यहीस्वर्गकी पापिनी अप्सरानीचकासंग करनेसे अपराधिनी है क्योंकि यह देवताओं को छोड़कर इसविद्याधरको नन्दनवनमेंलेआई इसप्रकार शोचकर इन्द्रने उसविद्याधरको

छोडकर उर्स अप्सराको शापदिया कि हेपापिनि तू मनुष्ययोनिमें उत्पन्नहोगी वहांअयोनिज पुत्रीको पाकर और दिव्य कार्य्यकरके फिर स्वर्गकोआवेगी ७१ इसीबीचमें तक्षशिलापुरीमें राजाकलिंगदत्तकी स्त्री ऋतुधर्मको प्राप्तहुई उससमय रानीकेउदरमें इन्द्रके शापसे भ्रष्टहुई सुरभिदत्तानाम अप्सराप्राप्तहुई उसकेगर्भमें आनेसे रानीकास्वरूप अत्यन्तही शोभितहोगया और रानीने स्वप्नमें आकाशसे गिरीहुई एक ज्वाला अपनेउदरमें प्रवेश करतीहुई देखीप्रातःकाल रानीने आश्चर्य्यपूर्व्वक यहस्वप्न राजासे कहा स्वप्नको सुनकर राजाभी प्रसन्नहोकर बोला कि हे सुन्दरि शापसे भ्रष्टहुए दिव्यजीवभी मनुष्ययोनिमें आतेहैं इससे मैं जानताहू कि कोई दिव्यजीव तुम्हारेगर्भमें आया है ठीककहा है (विचित्रसदसत्कर्म निबद्धास्सचरंतिहि जंतवस्त्रिजगत्यस्मिन्शुभाशुभफलाप्तये) नानाप्रकारके उत्तमतथा निकृष्ट विलक्षण कर्मोसेबँधेहुए प्राणी तीनोंलोकोंमें शुभाशुभकर्मोंके भोगनेकेलिये भ्रमणकियाकरते हैं राजाकेयहवचन सुनकर प्रसंगसे रानीबोली कि ठीकहै शुभाशुभभोगोंका देनेवाला कर्मही बलवान् है इसीविषयमें पूर्व्व सुनीहुई मैं कथा कहती हूं आप सुनिये कोशलदेश में धर्मदत्तनाम एकराजाथा उसराजाकी नागश्री नाम रानीथी सतियोंमें अग्रगण्य वह रानी ऐसी पतिव्रताथी कि सम्पूर्ण लोग उसेपृथ्वी में अरुन्धती कहतेथे कुछ समय व्यतीतहोनेपर राजाधर्मदत्तके नागश्रीनाम रानीमें मेराजन्महुआ जबमें अत्यन्तही बालकथी उससमय मेरीमाताने अकस्मात् अपनेपूर्व्वजन्मका स्मरणकरके मेरे पितासेकहा कि हेराजा आज अकस्मात् मुझे अपनेपूर्व्वजन्मका स्मरणआयाहै जो उसेनहीं कहतीहूं तो चित्तनहीं मानताहै और कहदूंगी तो मेरीमृत्युहोजायगी क्योंकि अकस्मात् स्मरणमेंआयेहुए पूर्व्वजन्मके वृत्तान्त को कहने से मृत्युहोती है ऐसाप्राचीन लोगकहतेहैं इससे मेरे चित्तमेंबडा खेदहोरहाहै ८४ मेरी माताके यहवचन सुनकर मेरापिता बोला कि हेप्रिये मुझेभी अकस्मात् अपनेपूर्व्वजन्मका स्मरणआया है इससे तुमअ-पना वृत्तान्तमुझसेकहो और मैंभी अपनावृत्तान्त तुमसेकहूंगा जो होनाहोय सोहोय क्योंकि भवितव्य-ताको कोईभी नहींमिटसक्ता है अपनेपतिसे इसप्रकार प्रेरणाकीगई रानी बोली कि हे राजा जो आपको आग्रहहै तो सुनिये मैं कहतीहूं इसीदेशमें मैं पूर्व्वजन्ममें माधवनाम किसीब्राह्मणके यहांदासीथी मेरा आचरण बहुतअच्छाथा और मेरेपतिकानाम देवदासथा वहभी किसी वणियेके यहांसेवक था हमदोनों स्त्री पुरुष अपनेयोग्य घरबनाकर अपने २ मालिकोंके यहांसे लायेहुए पक्वान्नको खाकर रहते थे हमारेयहां वारिधानी (पलहडी) घडा बुहारी मचिया मैं और मेरापति इनके सिवाय और कोई वस्तुनथी हमारेयहां कभी कलहनहींहोतीथी इससे बडेसन्तोषपूर्व्वक हमारासमय व्यतीतहोताथा देवता पितर तथा अतिथियों को देकर जो शेष अन्नरहताथा वही अन्न हमदोनोंखाते थे हमदोनों के ओढ़ने से जो कुछ अधिक वस्त्रहोताथा वहभी किसीगरीब भिक्षुकको देदेते थे इसप्रकार सुखपूर्व्वक रहते ९ इस देशमें बडा दुर्भिक्षपडा इससे हमदोनोंको सेवाकरने से जो अन्न मिलता था वहथोडाथोडा मिलने लगा तब क्षुधासे हमदोनोंका शरीरक्षीणहोगया और बडा क्लेश होनेलगा उन्हीं दिनों में एकसमय भोजनके अवसरमें एकथकाहुआ अतिथि ब्राह्मणआया यद्यपि उसनसमय प्राणोंकेभी रहने में सन्देह

था तथापि हम दोनो ने अपनासम्पूर्ण अन्न उस अतिथि को देदिया भोजन करके उसके चले जा-ने पर इसने अतिथि का आदरकिया हमारा नहींकिया मानों इसक्रोध से मेरेपति के प्राण निकलगये तबमैं अच्छे प्रकारसे चितालगाकर अपने पतिकेही साथ जलगई और मेरा सपूर्ण दुःखदूरहोगया इसी से मैं राजाके यहाँ उत्पन्नहोकर तुम्हारी रानीहुई ठीक है (अचिन्त्यहिफलसूते सद्य सुकृतपादपः) पुण्यरूपीवृक्ष शीघ्रही अचिन्त्य फलको उत्पन्न करता है ६६ मेरीमाता के यह वचन सुनकर मेरा पिता बोला कि हेप्रिये वहीमैं तुम्हारा पूर्व्वजन्मका पतिहू बणियेकासेवक देवदास मैंहीथा मुझेभी अभीअपने इसी पूर्व्वजन्मका स्मरणआयाहै यहकहकर और अपनी पहिचान बताकर मेरापिता मेरीमाता समेत कुछप्रसन्न और कुछ दुखीहोकर शीघ्रही स्वर्गको चलागया इसप्रकार जब मेरे माता पिता परलोकगा-मीहुए तब मेरी मौसी मेरे पालन करनेको मुझेअपने घरलेगई जबमैं कन्याही थी उससमय मेरी मौसी के घरपर एक अतिथिआया मेरीमौसीने उसकी सेवाकरनेको मुझे आज्ञादी जैसे कुन्तीने दुर्वासाजीका सेवनकियाथा उसीप्रकार मैंनेभी उस अतिथिका सेवनकिया और उसीके बरदानसे मुझेआप धर्मात्मा पतिमिलेहो इसीप्रकारसे धर्मकेद्वारा अनेक प्रकारके सुख प्राप्तहोते हैं देखोधर्महीके प्रतापसे हमारे माता पिताको राज्यमिला और उन्हें अपने पूर्व्वजन्मका स्मरण आया रानीतारादत्तके मुखारविन्दसे यह वचन सुनकर अत्यन्त धर्मात्मा राजा कलिंगदत्त बोला कि ठीकहै अच्छे प्रकार से साधन कियागया थोडा धर्म्मभी बहुतफल दायकहोताहै इसीविषयमें तुमको मैं प्राचीन सात ब्राह्मणोंकी कथा सुनाताहू कुंडिनपुरमें किसी ब्राह्मण उपाध्यायके ब्राह्मणों के सातपुत्र शिष्यथे एक समय दुर्भिक्षके दोषसे उपा-ध्यायने अपने सातोंशिष्योंको अपने श्वशुरके यहाँ गौ मागनेकोभेजा दुर्भिक्षसे दुर्बल वह सातोंशिष्य अन्यदेशमें रहनेवाले उपाध्यायके श्वशुरके यहाँ गये और जाकर बोले कि उपाध्यायने एक गौ मागी है उस कृपणने अपने जामाताके जीविकाके निमित्त एक गौ तो देदी परन्तु उन भूखे ब्राह्मणों को भो-जन नहीं दिया तब उस गौ को लेकर जब आधीदूर वह सातों पहुचेतो क्षुधासे अत्यन्त व्याकुल हो-कर मुरझाके पृथ्वी में गिरपडे उससमय में उन सबोंने मिलकर यह विचारकिया कि उपाध्याय का घर यहाँसे बहुत दूरहै और हम लोगोंको बडाभारी क्लेशहोरहाहै यहाँ अन्न मिलनाभी सर्वथा दुर्लभहै इस्से हम लोगोंके अब प्राणही जातेहैं और हम लोगोंके विना यह गौभी जल तृण तथा मनुष्य रहित इस वनमें अवश्य नष्ट होजायगी तब गुरूका कुछभी प्रयोजन सिद्ध न होगा इस्से इसगौके मासको खाके अपने प्राणबचावें और जो मासबचे वह गुरूको जाकरदेवें क्योंकि यह आपत्तिका समयहै इस प्रकार सलाहकरके उन सातों ने शास्त्रोक्त विधि से गौ को मारकर उसके मास से देव पितरों का पूजनकरके आप भोजनकिया और जो मासबचा वहलेकर अपने उपाध्यायकेपासचले उपाध्यायके पास आकेप्र-णामपूर्व्वक उनसबने अपनासम्पूर्ण वृत्तान्तकहदिया उपाध्यायभी उन अपराधी शिष्योंपर सत्यबोल ने के कारण अत्यन्त प्रसन्नहुआ सातदिनके उपरान्त दुर्भिक्षके दोषसे वहसातोंमृत्युकोप्राप्तहोगये और सत्यके प्रभावसे दूसरेजन्ममें भी जातिस्मरहुए १२० इसप्रकार किसानोंके समानपुरुषों

रूपी जलसे सींचागया.स्वल्पभी पुण्यरूपी बीज फलदायकहोताहै और जो वही पुण्यरूपी बीज दुष्ट सकल्परूपी जलसे दूषितहुआ तो अनिष्टफलको देताहै इसबातपर भी मैं तुमसे एक दृष्टान्त कहताहू उसे सुनो कि पूर्व समयमें गगाजी के तटपर एक ब्राह्मण और एक चाडाल दोनों अनशन व्रत करके बैठे उनमें से क्षुधासे व्याकुल ब्राह्मणने,वहा आकर मछलिया खातेहुए निषादोंको देखकर चित्तमें शोचा कि ससारमें यह निषादही धन्यहै क्योंकि यह अपनी इच्छाके अनुसार नित्य मछलियोंका मासखातेहैं और उस चाण्डालने उन निषादोंको देखकर यह शोचा कि जीवों के मारनेवाले मासाशी इन निषादों को धिक्कारहै यहा इनका मुखभी मुझे नहीं देखनाचाहिये इसप्रकार शोचकर उसने अपने नेत्रबन्दकर लिये और अपने आत्माका ध्यानकरनेलगा क्रमसे थोडेहीदिनों मे अनशनसे वह दोनों ब्राह्मण और चाण्डाल मृत्युको प्राप्तहुए तब ब्राह्मण के शरीर को तो कुत्तों ने खाडाला और चाण्डालका शरीर गगा जी में गलगया इसके उपरान्त वह ब्राह्मण तो निषादों के यहा उत्पन्नहुआ परन्तु तीर्थ के प्रभावसे पूर्व्व जन्मका स्मरणबनारहा और वह धीरचाण्डाल गगाजी के तटपर राजाके यहा उत्पन्नहुआ और उसे भी अपने पूर्व जन्मका स्मरणबनारहा इसप्रकार उत्पन्नहोकर अपने २ पूर्वजन्मका स्मरणकरतेहुए उन दोनों में से ब्राह्मण तो निषादहोकर पश्चात्तापको प्राप्तहुआ और चाण्डाल राजाहोकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ इससे धर्मरूपी वृक्षकामूल मन जिसका जैसा शुद्धहोताहै उसको वैसाही फल निस्सदेह मिलता है और अशुद्धको अशुद्धफल मिलताहै १३२ रानी तारादत्तासे इसप्रकार कहकर राजा कलिंगदत्त प्रसंगपाकर फिर बोला कि हे रानी जो कर्म्म जैसा अधिक सत्त्वयुक्तहोताहै उसमें वैसाही अधिक फल होताहै क्योंकि सपत्तिया सत्त्वके आधीनहैं इस विषयमें मैं तुमको एक विचित्र कथा सुनाताहू अवन्ती नाम देशमें उज्जयिनीनाम पुरीहै श्वेतमहलों से वह पुरी ऐसी शोभितहोती है कि मानों महाकालनाम शिवकी सेवाके निमित्त कैलास के शिखरही आये है प्रवेशकरती हुई अनेकवाहिनि (सेना) ओं से युक्त और सपक्षी भूधरों (राजाओं) से व्याप्त उसपुरीकी भँवरदार जलसे भरीहुई परिखा समुद्रके समान गभीरथी ऐसी सुन्दर उस पुरी में विक्रमसिंह नाम राजा था उसका यह नाम सार्थकथा क्योंकि वैरीरूपी मृग उसके सम्मुख कभी नहीं आये शत्रुओं के न होने से कभी युद्धकरनेका अवसर उसे नहीं मिला इससे अपने अस्त्र शस्त्र और भुजबलको अनादरकरताहुआ वह राजा अन्तःकरणमे खिन्नरहताथा अ-मरगुप्तनाम मन्त्री ने राजा के अभिप्राय को जानकर प्रसगपाकर कहा कि हे महाराज भुजबल और शस्त्र बलके अभिमान से शत्रुओं की अभिलाषा करतेहुए राजालोगो को दोषहोना दुर्लभनहीं है दे-खियेपूर्व समयमें बाणासुरने सहस्र भुजाओं के अभिमानसे श्रीशिवजीका पूजनकरके अपने योग्य शत्रुचाहा जब उसने अपनी इच्छा के अनुसार वरदानपाया तब उसके वैरी भगवान् श्रीकृष्णने युद्धमें उसकी सम्पूर्ण भुजाकाटडालीं इससे आपकोभी युद्धके विना असन्तोष नहीं करनाचाहिये और अनिष्ट-कारी शत्रुओं की इच्छा कभी नहीं करनीचाहिये जो शस्त्रशिक्षा और अपने पराक्रमके दिखाने की इच्छाहोय तो वनकी योग्य पृथ्वीमें शिकारखेलकर उसे दिखाइये राजालोगों को व्यायामादिके निमि-

त शिकारखेलना उचित है क्योंकि कदापि श्रम नहीं करनेवाले राजा युद्ध में प्रशंसा नहीं पाते हैं और वनके दुष्टजीव चाहते हैं कि पृथ्वी शून्य होजाय इससे राजालोगों को उनका वधकरना चाहिये इस निमित्त भी शिकार खेलना उचितहै परन्तु इसकाभी अधिक सेवन नहीं करनाचाहिये क्योंकि इसीके व्यसन से पूर्व्वसमय में पाण्डवादिक राजा नाशको प्राप्तहुए हे अमरगुप्तनाम अपने बुद्धिमान् मन्त्री के यहवचन सुनकर राजा विक्रमसिंह ने उसकी शिक्षा स्वीकार करली १६६ दूसरे दिन राजा सम्पूर्ण परिकरलेकर शिकार खेलनेको चला उससमय सम्पूर्ण पृथ्वी घोड़े पदाति तथा कुत्तों से अरगई पशुओं की बांधनेवाली डोरियोंसे सम्पूर्ण दिशाव्याप्तहोगईं और प्रसन्न व्याधों के शब्दों से आकाश लागया जब हाथीपर सवारहोकर राजाचला तब उससमय उसने पुरके बाहर किसी शून्य देवमन्दिर मे परस्पर कुछ सलाह करतेहुए दो पुरुष एकान्तमे खड़ेहुए दूसरे देखे और उनको देखताहुआ राजा वनमें शिकार खेलने को चलागया वहां खड्गो से न डरनेवाले वृद्धव्याघ्रो को देखकर सिंहोंके शब्दोंको सुनकर और पर्व्वत तथा पृथ्वीके विचित्र स्थानो को देखकर राजा अत्यन्त प्रसन्नहुआ हाथियों के मारनेवाले सिंहों कोमारकर उनके नखोंमे गिरेहुए पराक्रमके बीजके समान गजमोती सम्पूर्ण पृथ्वीमे राजाने बखेरदिये तिरछे चलनेवाले पक्षी तथा मृग वक्रहोकर राजाके निकटहोकर भागे उनको विनावक्रहुएही मारकर वह अत्यन्तही प्रसन्नहुआ इसप्रकार शिकारखेलकर सेवकोंके थकजाने और धनुषोंके शिथिल होजानेपर राजा अपनी उज्जयिनी नगरीको लौटा फिर लौटते समय भी राजाने जातेसमय जिन दो पुरुषों को शून्य देवमन्दिर मे सलाह करते देखाथा उन्हें उसी प्रकारसे उतने समयतक खडेहुए देखा उनको देखकर राजाने शोचा कि यह कौन हैं और इतनी देरतक क्या विचारकररहे हैं निस्सन्देह यह दोनों किसी बड़ी गुप्तबातके विचार करनेवाले चोर हैं यह शोचकर राजाने प्रतीहारको भेजकर उनदोनों को बुलवाया और दोनों को बँधवालिया दूसरेदिन सभा मे उनदोनो को बुलाकर राजाने पूछा कि तुम कौनहो और बहुत कालतक तुम क्या विचार कररहे थे राजाके यहवचन सुनकर उनमें से एक पुरुष अभय मांगकर बोला कि हे महाराज सुनिये मैं सम्पूर्ण यथार्थ वृत्तान्त वर्णन करताहूं आपकी इसीपुरी मे वेद विद्याका जाननेवाला करभकनाम एक ब्राह्मणथा उसने वीरपुत्र होनेकी इच्छासे अग्नि का आराधन किया तब मेरा जन्महुआ समय पाकर जब मेरेपिता मरगये और मेरीमाता उन्हींके साथ सतीहोगई जब मैं बाल्यावस्थाही में विद्याओंको पढकर भी अनाथहोनेके कारण द्यूत खेलनेलगा और शस्त्रविद्या में अभ्यास करनेलगा ठीकहै (कस्यनोच्छृखलबाल्य गुरुशासनवर्जितम्) बड़े लोगों की शिक्षाके विना बाल्यावस्थामे कौनपुरुष कुमार्गी नहीं होजाताहै १६६ इसप्रकारसे बाल्यावस्थाके व्यतीत होजानेपर एकसमय में अपने भुजबलके अभिमानसे वनमें बाणफेंकनेको गया उससमय उसीमार्गसे नगरीके बाहर एकवधू बहुतसे बरातियों समेत गाडीपर चढीहुई वहाँआई और अकस्मात् जजीर तोड़कर कहींसे भागाहुआ एकमतवाला हाथी उसी वधूपर दौडा उसके भयसे उसकापति तथा अन्य सब लोग इधर उधर भागगये यहदेखकर मैंने घबराके एकाएकी शोचा कि हाय इनकातरोंने कैसे इस बिचारी

को अकेला छोडदिया तो इसहाथी से मैं इसअनाथको बचाऊगा क्योंकि (आपन्नत्राणविकलैः किं प्राणैःपौरुषेणवा) विपत्तिमें पडेहुएको न बचानेवाले व्यर्थप्राण और पुरुषार्थ से क्या प्रयोजन है यह सोचकर मैं गर्जकर उसहाथीकी ओरदौडा और वह हाथीभी उस स्त्री को छोडकर मेरी ओरदौडा तब डरीहुई उसस्त्री से बारबार देखागया मैं भागकर उस हाथीको बहुत दूरतक लेगया बीचमें घनेपत्रों से युक्त किसीवृक्षकी टूटीहुई शाखको लेकर उससे अपने को आच्छादितकरके मैं वृक्षोंके बीचमें चलागया और शीघ्रतासे वृक्षोंके बीचमे उसशाखाको धरकर मैंतो भागगया और हाथी ने वह शाखा तोडडाली तब मैंने वहाँसे उसस्त्रीके पासआकर उससे शरीरकी कुशलपूछी वहभी मुझे देखकर दुःख तथा हर्षसेयुक्त होकर बोली कि मुझे कुशलही क्याहै जिसका ऐसे कुत्सित पुरुषके साथ विवाह हुआहै जो ऐसे सङ्कट में भी मुझे छोडकर कहीं भागगयाहै परन्तु यहकुशलहै जो तुम उसहाथीसे बचकर फिर दिखाईदियेहो इससे अब वह मेरा कौनहै तुम्हीं मेरे पतिहो जिसने शरीरकी आशा छोडकर निपेक्षहोकर मृत्युके मुखसे मेरी रक्षाकी अब वह मेरापति अपने सेवकों समेत देखो आरहाहै इससे तुम पीछे २ छिपकर मेरे साथ चलेआओ अवसर मिलनेपर तुमसे मिलकर जहाँचाहोगे वहाँचलूगी उसके यहवचन सुनकर मैंने स्वीकारकरलिये (सुरूपाप्यर्पितात्मापि परस्त्रीग्रंकिमेतया ॥ इति धैर्यस्यमार्गोय नताकृण्यस्य सङ्गिनः) यद्यपि स्वरूपवती भी है और स्वयं अपनेको अर्पणभी करती है तथापि यहपरस्त्री होनेके कारण ग्रहण करनेके योग्यनहीं है इसधैर्य्यके मार्गपर युवापुरुष नहीं चलसक्ते १८३ क्षणभरमें उसके पतिने आकर उसे सावधानकिया और अपने भृत्यो समेत उसेलेकर वहाँसे चला और मैं भी गुप्तता पूर्व्वक उसके दिये हुए पाथेय (राहखर्चको) को भोजन करताहुआ उसकेसाथ बहुतदूरतक अन्य मार्गसे छिपकर पीछे२ चला और उस स्त्रीने हाथी के भयसे गिरपडने के कारण मिथ्या पीडाका बहाना करके अपने पतिको अपना स्पर्श भी नहीं करनेदिया ठीकहै (कस्यरक्तोन्मुखीगाढरूढान्तर्विषदुस्सहा ॥ तिष्ठेदनपकृत्यस्त्री भुज्यगीविविकारिता) विकार युक्त होगई रक्तोन्मुखी (रुधिर पीनेकी इच्छा करतीहुई और अनुराग युक्त पुरुषकी अभिलाषिणी) और अन्तःकरणमें उत्पन्नहुए घने विकाररूपी विषसे दुस्सह सर्पिणी के समान किसकी स्त्री विना अपकारकिये रहती है क्रमसे चलते २ हम उन्हीं के साथ पीछे २ लोहनगर में पहुँचे वहीं रोजगारसे जीविकाकरनेवाले उस स्त्री के पतिका घर था पहले दिन वह लोग बाहर एक देवमन्दिर में रहे वहीं यह ब्राह्मण हमको मिला नवीन दर्शन में भी हम दोनो को परस्पर बडा हर्ष हुआ ठीकहै (चित्तजानातिजन्तूनां प्रेमजन्मान्तरार्जितम्) प्राणियोंका चित्त जन्मान्तरके सञ्चित प्रेमको जानताहै १९० तब मैंने अपना सम्पूर्ण रहस्य इससे कहदिया उसेजानकर इसने मुझसे एकान्तमें कहा कि तुमचुपरहो जिसलिये तुमयहाँ आयेहो उसका उपाय मेरे पासहै इसवणियेकी बहिन मेरे साथ यहाँ से निकल चलनेको उद्यतहै औरइसबातका मनठीकभी होचुकाहै इससे उसीकी सहायतासे तुम्हाराभी अभीष्ट सिद्ध होगा मुझसे यहकहकर इसब्राह्मणने उसस्त्रीकी ननदसे सम्पूर्ण वृत्तान्त कहदिया दूसरे दिन सलाह करके वह अपने भाईकी स्त्रीको लेकर उसी देवमन्दिरके एकगुप्तस्थानमें आई वहाँ हम

दोनोंमेंसे मेरे मित्र इसब्राह्मणका वेष उसने अपने भाईकी स्त्रीकासा बनालिया और इसे लेकर अपने भाईके साथ नगरमें अपने घरकोगई और मैं पुरुष वेषधारिणी उस बणियेकी स्त्रीको साथलेकर धीरे २ उज्जयिनी में आया और उसकी नन्द रात्रिके समय उत्सव से उन्मत्तहोकर जब सपूर्णलोगसोगये तब मेरे इसमित्रको लेकर वहाँसे निकली तब यह उसे लेकर छिपकर इस उज्जयिनी नगरी में आया और यहाँ आकर मुझसे मिला।२०० इसप्रकार हमदोनोंको वहदोनों नन्द और भावज अपने २ अनुरागसे मिलीं इस्से हे महाराज हमलोगोंको यहाँ सनकहीं निवासकरनेमें सन्देह होताहै क्योंकि साहसी चित्त किसीपर विश्वास नहींकरते इसीसे उनस्त्रियोंके निवासकेलिये और धनकेलिये हमदोनों कल एकान्तमें विचार कररहे थे उससमय आपने दूरसे देखकर चार (गोइन्दा) के सन्देहसे हम दोनोंको पकडमँगवाया और आज आपके पूछनेपर मैने अपना और अपने मित्रका सम्पूर्ण वृत्तान्त वर्णन किया अब आप स्वामीहैं जैसा उचित समझिये वैसा कीजिये उसके यहवचन सुनकर राजाविक्रमसिंह उनदोनो ब्राह्मणों से बोला कि तुम दोनोपर मैं प्रसन्नहू डरोमत मै तुमदोनों को निर्वाहके योग्य धनदूंगा इमीपुरी में रहो यहकहकर राजाने उनको यथेष्ट जीविका दी और वह अपनी स्त्रियो समेत सुखपूर्व्वक राजाके निकट रहे इसप्रकार प्रबलसत्त्वसे कियेगये सम्पूर्ण कार्य्योंमें सम्पत्तियोंका निवासहै और इसीप्रकारसे साहसी तथा बुद्धिमान् मनुष्योपर प्रसन्नहोकर राजालोग उन्हे यथेष्ट धनदेते हैं इस्से हे रानी देवता तथा दैत्यादिक सम्पूर्ण सृष्टिके लोगोंको इसजन्ममे अथवा पूर्वजन्ममे अपनेही कियेहुए शुभाशुभकर्मके अनुसार नानाप्रकारके विचित्र भोग भोगने पडते हैं इस्सेस्वप्नके वृत्तान्तके बहानेसे आकाशसेगिरीहुई जोज्वाला तुमने अपनेउदरमें प्रवेश करतीहुई देखी है वह किसी कर्मवशसे निस्सन्देह कोई देवजाति तुम्हारेगर्भ में आई है इसप्रकार अपने पति राजाकलिगदत्तसे सुनकर गर्भवती रानीतारादत्ता अत्यन्त प्रसन्नहुई॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायामदनमचुकालम्बकेप्रथमस्तरग १॥

इसके उपरान्त तक्षशिला नाम पुरी में राजा कलिगदत्तकी रानी तारादत्ता धीरे २ गर्भ के भारसे आलस्य युक्तहुई जब प्रसवका समय आया तब पाडुवर्ण मुखवाली और चचल नेत्रों की पुतलीवाली रानीतारादत्ता उदयहोतेहुए चन्द्रमासे युक्त पूर्व्व दिशाके समान शोभितहुई और थोडेही समयमें उस के एक अत्यन्त सुन्दर और ब्रह्माकी सम्पूर्ण सुन्दरता बनाने के रगकी कटोरीसी अपूर्व्व कन्या उत्पन्न हुई उससमय स्नेहयुक्त दीपक उसकी कान्ति से पराजित होके ऐसा पुत्र क्यों न हुआ इसलिये मानों कान्ति रहित होगये राजा कलिगदत्तभी ऐसी सुन्दर कन्याको भी देखकर तद्रूपपुत्र होनेकी आशाके व्यर्थ होजाने से उदास होगया और उसकन्या को दिव्य जानकर भी उसके चित्तमें खेदहीहुआ क्यों हुआ क्योंकि उसे पुत्रहोनेकी आशाथी ठीकहै (शोककन्द क्कन्याहि कानन्द कायनान्सुत) कहाँ तो शोककी मूलकन्या और कहाँ मूर्तिमान् आनन्दरूप पुत्र इसके उपरान्त राजा खिन्नहोकर मन्दिर से निकलकर चित्तको वहलानेक लिये जिनदेव के मन्दिरमें गया वहाँ जाकर राजाने बहुतसे मनुष्यों के बीचमें बैठे हुए धर्म्म के उपदेश करने वाले एक भिक्षुकके मुख से यह व्याख्यान सुना कि ससार में

धनका देनाही परमतपहै, धनका देनेवाला प्राणदाता कहलाता है क्योंकि प्राणधनके आश्रितहै देखो करुणासे व्याप्त चित्तवाले बुद्धनेपराये निमित्त अपना शरीरभी तृणकेसमान देदिया तो धनका क्या कहनाहै इसीप्रकारके धैर्य और तपसे इच्छारहित होकर दिव्यज्ञानको प्राप्तहुए बुद्ध, बुद्ध होगये इस्से शरीर पर्य्यन्त सपूर्ण अभिलाषोंको आशासे हटाकर बुद्धिमान् मनुष्य अच्छेप्रकार ज्ञानकी प्राप्तिके लिये प्राणियोंका हितकरे १२ पूर्व्वसमयमें कृतनाम किसी राजाके अत्यन्त सुन्दर सातकन्याक्रमसेहुई वह सातोंबाल्यावस्थामेंही वैराग्यसे पिताकेघरकोछोडकर श्मशानमें चलीगई जबपरिवारके लोगोंने उनसे पूँछा कि तुमने गृहकात्यागक्योंकिया है तबवहबोलीं कि यह सपूर्ण ससारही असारहै ससारमेंभी यह शरीर अधिकअसारहै और इसशरीरमें भी अभीष्टकी प्राप्तिआदिक सुखस्वप्नके समान अत्यन्तही अ-सारहै परन्तु एकपरहितही इससंसारमें सारहै इस्सेइसशरीर से हमसब प्राणियोंका हित करेंगी इसजीते हुएही शरीरको श्मशानमें राक्षसोंके भोजनकेनिमित्त डालदेंगी क्योंकि सुन्दरभी इसशरीरसे क्याप्र-योजनहै देखो पूर्वसमयमें एकसुन्दर राजपुत्र तरुणअवस्थामेंही निरक्तहोकर सन्यासीहोगया एकसमय वह किसीवैश्यके यहां भिक्षाके निमित्तगया वहां उसवैश्यकी स्त्रीकाचित्त कमलकेपत्रोंके समान बडे २ उसके सुन्दरनेत्रोंकी शोभासे चलायमानहुआ तो वहबोली कि तुमने इसअवस्थामें इसकष्टदायी स-न्यासका ग्रहण क्योंकिया वहस्त्रीधन्यहै जिसको तुम अपने नेत्रकमलसे देखतेहो उसके यहवचन सुन कर राजपुत्रने अपना एकनेत्र फाडकरहाथमें लेकरकहा कि हेमातादेखो यह ऐसानिन्दितमास रुधिर से भराहुआ नेत्रहै जो आपको प्रिय लगताहोय तो लेलो और दूसरा नेत्र भी इसी प्रकारकाहै बताओ इनमें रमणीयता क्याहै उसके यहवचनसुनकर और उसे देखकर वहस्त्री बहुत दुखितहोके बोली हाय२ मैं महादुष्टाहू मुझपापिनीने यहबडा पापकिया क्योंकि तुम्हारे नेत्रके निकालनेकाहेतु मैंहीहू यहसुनकर राजपुत्र बोला कि हे माताखेदमतकरो तुमने मेरेसाथ उपकार कियाहै इसबातपर मैं तुम्हें एकदृष्टान्त सुनाता हू पूर्वसमयमें गगाजी के तटपर किसी उपवनमें एकयती वैराग्य के अधिक बढनेकी इच्छासे तपकरताथा वहाँ भाग्यवशसे कोईराजा अपनी रानियोंसमेत विहारकरनेको आया विहारकरनेके उप-रान्त जबमद्यपानकरके राजासोगया तबसपूर्णरानी उसके पाससेउठकर अपनी चपलतासे उसउपवनमें घूमनेलगीं और उसमुनिको एकस्थानमें समाधि लगायेहुए बैठादेखकर आश्चर्य्य से सपूर्णरानी उसे घेरकर बैठगई जबवह बहुतकालतक वहाँबैठीरहीं तबराजाने जगकर रानियोंको अपनेपास न देखकर उन्हें ढूढनेके लिये सपूर्ण वनमें भ्रमणकिया और देखा कि मुनिको घेरे हुए सपूर्णरानी बैठीहै उन्हें देखकरईर्षासे कुपितहोकर राजाने मुनिपर खड्गकाप्रहार किया ठीकहै (ऐश्वर्य्यमीर्ष्या नैर्घृण्यमक्षीवत्त्वं निर्विवेकिता ॥ एकैककिन्नयत्कुर्य्यात् पचाग्नित्वेनतुकाकथा) ऐश्वर्य, ईर्षा, निर्दयता, उन्मत्तता और विवेककानहोना इनमेंसे एकएकही कौनसे कुकर्मको नहींकरसक्ता और जहाँ यहअग्निके समान पाचों इकट्ठेहोयँ वहाँ क्याकहनाहै ३२ इसके उपरान्त जबवह राजाचलागया और शरीरके कटजानेपर भी मुनिको क्रोधनहींहुआ तबएकदेवी प्रत्यक्षहोकर मुनिसेबोली कि हे महात्मन् जिसपापीने क्रोधसे तु-

म्हारेऊपर प्रहारकियाहै उसे जो तुम्हारी आज्ञाहोयतो मैं मारडालूं देवी के वचनसुनकर मुनि बोला कि हे देवी ऐसामतकहो वहमेरे धर्मका सहायकहै अपकारीनहींहै उसकी कृपासे मैंराक्षमारूपी धर्मबढ़ा यदि वहऐसा न करता तो मैं किसपर क्षमाकरता और जानसक्ता कि मैं अपने को बशीभूतकरचुका इस अनश्वर शरीरकेलिये बुद्धिमान् क्रोध नहीं करते हैं प्रिय और अप्रियमें समताहोनेसे जो क्षमाहोतीहै वह ब्रह्मकापदहै मुनिके यहवचनसुनकर उसके तपसे प्रसन्नहुई देवी उसके अंगोको घावोंसे रहित करके अन्तर्द्धानहोगई इससे हे माता जैसे वहराजा मुनिका उपकारीहुआ उसीप्रकार तुम भी मेरानेत्र निकलनेकरमेरी उपकारिणीहुई हो इसप्रकार उसवैश्यकी स्त्रीसे कहकर जितेन्द्री वहराजपुत्र अपने सुन्दर शरीरमें भी विश्वास न करके सिद्धिके लिये चलागया इससेबाल भी और रम्यभी इसनश्वर शरीरमे क्या विश्वासहै बुद्धिमानोंको इसशरीर से केवल परोपकारही करनाउचितहै इस्से हमसातों इसस्वाभाविक सुखदायी श्मशानमें प्राणियोंके निमित्त इसशरीरको रक्खेगी अपने परिवारवालोंमें इसप्रकार कहकर उनराजकन्याओ ने वैसाही किया और परम सिद्धियो को प्राप्तहुई इसप्रकार बुद्धिमान् लोगो को अपने शरीरमें भी ममता नहीं होती है और पुत्र तथा स्त्री आदि परिवाररूपी तृणोंकी कौनगणना है इत्यादि अनेक उपदेशोको उसजैन मन्दिरमे धर्मोपदेशक से सुनकर राजा कलिंगदत्त उसदिनको वहाँ व्यतीत करके अपने स्थानको चलाआया ४५ वहा आकर कन्या जन्मके शोकसे उसे व्याकुल देखकर राजगृह के किसीवृद्ध ब्राह्मण ने उससे कहा कि हे राजा कन्यारूपी रत्नके उत्पन्नहोने से तुम क्यो दुखी होतेहो ऐहिक और पारलौकिक सुख की देनेवाली कन्या पुत्रो से भी उत्तम होती हैं और राज्य के लोभीपुत्रो मे राजालोगो को विश्वास न करना चाहिये क्योंकि वह मकडी के समान अपने पिता को भी नष्ट करदेता है कुन्ति भोजादिक राजा कुन्ती आदि कन्यकाओं के गुणों से दुस्सह दुर्वासाआदिके शापसे बचे हैं कन्यादानसे जो पारलौकिक फल मिलताहै वह पुत्रसे कैसेमिलसक्ताहै इस विषय में मैं सुलोचनाकीकथा आपको सुनाताहूं कि चित्रकूट पर्वतपर सुषेणनाम राजाथा जिसे ब्रह्माने शिवजीकी ईर्ष्यासे मानों द्वितीयकामके समान बनायाथा उसने चित्रकूटके तट में एकदिव्य उपवन बनवाया वह ऐसासुन्दर बनाथा जिसेदेखकर देवतालोगो को नन्दनवनके विहार से अनिच्छा होजातीथी और उसी उपवन के बीचमें प्रफुल्लितकमलों से युक्त एकबावडी बनवाईथी वहबावडी क्या थी मानोलक्ष्मीजीके क्रीडाके कमलोंकी नवीनखानथी उस बावडी की रत्नजटितसीढियोंपर अपनेयोग्य स्त्रियोंके न होनेसे अकेलाहीराजा सुषेण विहारकरताथा एक समय उसीमार्गसे आकाशमें भ्रमणकरती हुई रम्भानामअप्सरा इन्द्रके भवनसेआई उसने उस उपवन में प्रफुल्लितपुष्पों के वनमे साक्षात्वसन्तके समान विहारकरतेहुए राजाकोदेखा बावडीकेकमलों में वर्त्तमान लक्ष्मीकेलिये क्या यह चन्द्रमास्वर्गमे आयाहै परन्तु यह चन्द्रमानहीं है क्योंकि इसकी शोभास्थिरहै क्या यह कामदेवहै यहा पुष्पतोडनेको वनमेंआयाहै परन्तु इसकेसाथ सदैवरहनेवाली रतिकहागई इसप्रकारचित्त मे सन्देहकरतीहुई रम्भा मनुष्य शरीरधारणकरके राजाकेपासगई उसे अपनेपासआईहुई देखकर राजाने आश्चर्यपूर्वकसोचा

कि यह अपूर्वसुन्दररूपवाली कौनहै यह मानुषीतोनहींहै क्योंकि इसकेपैरो में धूलनहींलगी और इसके नेत्रोंमें पलकैंभीनहींलगती हैं इससे यह कोईदिव्यस्त्री मालूमहोतीहै परन्तुइससेपूछनानहींचाहिये पूछने से कदाचित्चली न जाय क्योंकि किसीकारणसे मिलीहुईदिव्यस्त्री प्राय अपने भेदको नहीं प्रकट कर सक्ती हैं इसप्रकार विचारतेहुए राजासे उसने आकर सम्भाषणकिया और क्रमसे उनदोनोंका उससमय समागमभीहुआ राजाउसअप्सराके साथ बहुतकालतक क्रीडाकरतारहा और उसने भी स्वर्गका स्मरण नहींकिया ठीकहै (रम्यप्रेमनजन्मभू) प्रेमरमणीयहोताहै जन्मभूमि नहींरम्यहोती ६४ रम्भाकी सखी यक्षिणियों से वर्षायेगये सुवर्णके समूहसे राजाके राज्यकीपृथ्वी ऐसीव्याप्तहोगई जैसे कि सुमेरुके शिखरोंसे स्वर्गहोताहै इसकेउपरान्त समयपाकर राजासुषेणकी वह श्रेष्ठअप्सरा रम्भागर्भवतीहुई और गर्भ के पूरेहो जानेपर एकअत्यन्त सुन्दरकन्या उत्पन्नहुई कन्याके उत्पन्नहोतेही रम्भाराजासे बोलीकि हे राजा मुझे इतनेदिनका शापथा वह इससमय छूटगया मै रम्भानामस्वर्गकी अप्सराहूं तुम्हें देखतेही मेरे चित्त में अनुरागउत्पन्नहुआ अब मै इसकन्याको यहांछोड़करजातीहूं क्योंकि मेराऐसाही नियम है आपइस कन्याकी रक्षाकीजिये और इसकेविवाहसे स्वर्ग में हमारा तुम्हारा फिरसमागमहोगा इसप्रकार कहकर पराधीन वह अप्सरा अन्तर्द्धानहोगई और राजाउसके दुःख से प्राणदेने को उद्यतहुआ राजाकी यह दशादेखकर मन्त्रियोंने उससेकहा क्या शकुन्तलाको उत्पन्नकरके मेनका के चलेजानेपर विश्वामित्रने निराशहोकर शरीरत्यागदियाथा मन्त्रियोंके इत्यादि अनेकवचनोंको सुनकर राजाको धीरेधीरे धैर्यहुआ और उसकन्याको देखकर उसके विवाहमे रम्भा के फिर मिलनेकी आशाहुई राजाने सर्वांगसुन्दरी उस कन्याकानाम लोचनोंके अत्यन्तसुन्दरहोनेके कारण सुलोचनारक्खा समयपाकर जब सुलोचना युवती हुई तबउसे उपवनमें कश्यपजीके पुत्र वत्सनाम युवामुनिनेदेखा तपकेसमूह रूपभी वत्समुनि राजकन्या को देखकर अनुरागवशहोगये और शोचनेलगे किइसकन्याका रूपपरमअद्भुतहै यदि यह मेरीस्त्री न होय तो इसके सिवाय तपका क्या फलहोगा इसप्रकार शोचतेहुए धूमरहित अग्निके समान जाज्वल्यतेजवाले वत्समुनिको सुलोचनाने भी देखा माला यज्ञोपवीत तथा कमण्डलधारी मुनिको देखकर उसके चित्त में भी प्रेम उत्पन्नहुआ और शोचनेलगी कि यह कौनहै इसकी आकृति कैसी शान्त और मनोहरहै इसप्रकार शोचकर मानों स्वयम्बरकेलिये नेत्रकमलोंकी माला उसपरफेंकतीहुई सुलोचनाने निकटजाकर उसे प्रणामकिया तबदेवता और दैत्यों सेभीनहींउल्लंघनकरनेके योग्य कामकी आज्ञाके वशीभूत मुनिनेतुम पतिप्राप्तहोयंयहआशीर्वाददिया उससमय मुनिके अपूर्वरूपके लोभसे निर्लज्जहोकरसुलोचना मुसक्या कर नम्रहोकर बोली किजो आपकी ऐसीही इच्छाहै और यह केवल हास्यनहींहैतो मेरेपितासे जाकरयाचना कीजिये वहीमुझे देसक्ताहै तब मुनिने उसकी सखियों से उसकासम्पूर्ण वृत्तान्त पूछकरउसके पिताराजा सुषेणके पासजाकरउसकी याचनाकी राजाने भी उसे तप और शरीर दोनोंमे अत्यन्त उत्कृष्ट जानकर अतिथिसत्कारकरके कहा कि हे भगवन् यहमेरी कन्यारम्भाअप्सरासे उत्पन्नहुई है जबरम्भास्वर्गको जाने लगीथी तबउसने कहाथा किइसकन्याके विवाहमें हमारातुम्हारा फिर समागमहोगा यहजानकेमे मि

छहोगी इसको आप विचारलीजिये राजाके यहवचनसुनकरवत्समुनिने क्षणभरयह विचारकिया कि पूर्व्वसमयमें मेनकाकी कन्या प्रमद्वराको जवसर्पने काटाथा तवरुरुनाममुनिने अपनी आयुका अर्द्ध-भागदेकर क्या उसकेसाथविवाह नहीं किया था क्या विश्वामित्र भयभीत त्रिशकुको स्वर्ग नहीं लेगये थे इस्सेमैंभी अपनेतपके कुछ अशको व्ययकरके इसके मनोरथको क्यों न सिद्धकरू यह शोचकर और यहकुछ कठिन वातनहींहै ऐसा कहकर वह मुनिबोले कि हे देवतालोगो मेरे तपके अशसे शरी-रसहित यह राजा रम्भा से सम्भोग करनेके निमित्त स्वर्ग को जाय मुनि के ऐसा कहने पर एवमस्तु यह आकाशवाणी राजसभामें सुनाईदी तवराजा सुषेण वत्समुनिकेसाथ सुलोचनाका विवाहकरके स्वर्ग को चलागया और स्वर्गमें जाकर दिव्य शरीरहोके इन्द्रकी आज्ञासे दिव्यप्रभाववाली रभाकेसाथ आ-नन्दपूर्व्वक रमणकरनेलगा इसप्रकार कन्याके प्रभावसे राजासुषेण कृतार्थहुआ हे महाराज आपलोगों के यहाँ इसीप्रकारकी कन्या उत्पन्न होती हैं और यहकन्याभी शापसे भ्रष्टहुई कोई दिव्य स्त्री तुम्हारे यहाँ उत्पन्नहुईहै इस्से आप इसके जन्मसे शोकन कीजिये उस वृद्धब्राह्मणके मुखसे इसकथाको सुनकर राजा कलिगदत्तकी चिन्तादूरहोगई और उसके चित्तमें सन्तोषहोगया ९६ तदनन्तर चन्द्रमाकी कलाके समान नत्रोंको आनन्ददेनेवाली अपनी कन्याकानाम राजाने कलिङ्गसेना रक्खा वह कन्या अपने पिताके घरमें धीरे २ वडीहुई और सखियोंके साथ क्रीडा करनेलगी क्रीडाके रससे भरेहुए बाल्यावस्थारूपी समुद्रकी तरगके समान वह कलिगसेना महलों में गृहों में और उपवनों में विहारकरनेलगी एक समय अपने महलपर खेलतीहुई कलिङ्गसेनो को आकाशमार्गसे जातीहुई मयासुरकी पुत्री सोमप्रभाने देखा अपनेरूपसे मुनियों के मनोंको मोहनेवाली कलिङ्गसेना को देखकर सोमप्रभा के चित्तमें स्नेह उत्पन्न हुआ और उसने आकाशही में शोचा क्या यह चन्द्रमाकीमूर्त्ति है नहीं क्योंकि चन्द्रमाकी कान्ति तो दिनमें नष्टहोजाती है अथवारतिहै परन्तुइसके साथमें कामनहींहै इस्सेमेरेविचारसे यह शापसे च्युतहुई कोईदिव्यस्त्री यहा आकर राजकन्याहुई है इसेदेखकर मेरेचित्त में अत्यन्तस्नेह उत्पन्न होता है इस्से मैं जानती हू कि पूर्वजन्म में भी मेरी इसकेसाथ मित्रता थी इस्से मैं आपहीजाकर इस्से मित्रता करतीहू इसप्रकार विचारकरके कलिङ्गसेनाको भय न होय इसलिये सोमप्रभा आकाशसे अलक्षितहोकर उतरी और विश्वासकेलिये मनुष्यकी कन्याका स्वरूपधारणकरके धीरे २ कलिङ्गसेनाके पासगई उसेदेखकर कलिङ्गसेनाने यह शोचाकि यह कोई अत्यन्त अद्भुतरूपवती कन्यामेरेपासआई है इस्सेमित्रताकरना मुझेयोग्य है इसप्रकार शोचकर और उठकर कलिङ्गसेना ने सोमप्रभाको आलिङ्गनकरके आदरपूर्वक अपने पास वैठाया और उस्से पूछा कि तुम्हारा क्यानाम है और किस श्रेष्ठ कुलमें तुम्हारा जन्म है तब सोमप्रभाने कहा कि ठहरो मैं वर्णन करूगी इसके उपरान्त कुछ कालतक वार्त्तालाप करके उनदोनों ने आपसमें हाथमारकर मित्रताकी ११० तदनन्तर सोमप्रभा बोली कि हे सखी तुमराजकन्या हो और राजपुत्रोंके साथमित्रता निवाहना बहुतकठिनहै क्योंकि वहथोडे ही अपराधमें अत्यन्त कुपित होजाते हैं इसपरमें एकराजपुत्र और वणिक्पुत्रकी कथासुनातीहू पुष्करावतीनाम नगरी में गूढसेननाम राजा

थी उसके एकहीपुत्रथा वहराजपुत्र अभिमानसे जो कुछशुभाशुभ कार्य्य करताथा वहसव उसकापिता सहलेताथा एकसमय उपवनमें भ्रमणकरतेहुए राजपुत्रने ब्रह्मदत्तनाम वैश्यका अपने समानरूप और ऐश्वर्य्यवान् पुत्रदेखा देखतेही राजपुत्रने जाकर उस्से मित्रताकरली उनदोनोंमें ऐसी मित्रतावढी कि वहदोनों एकरूपसे होगये परस्पर विनादेखे वहक्षणभरभी नहीं ठहरसक्के ये ठीकहै (आशुबध्नातिहिप्रेम प्राग्जन्मान्तरसस्तव) पूर्व्वजन्मका संस्कार शीघ्रही प्रेमको दृढकरदेताहै राजपुत्र उससुखको कभी नहीं भोगकरताथा जो उस वणिक्पुत्रके लिये पहलेसेही नहीं कल्पित कियाजाताथा एकसमय राजपुत्र अपने मित्र वणिक्पुत्रके विवाहका पहिलेहीसे निश्चयकरके अपने विवाहकेलिये अहिच्छत्र देशको जानेकेलिये अपने मित्रसमेत हाथीपरचढकर सवसेना सहितचला और सायंकालके समय इक्षुमती नदीके तीरपररहा वहाँ रात्रिकेसमय चांदनीमें मद्यपानकरके पलंगपरलेटा और अपनी उपमाताके कहनेसे कोई कथा कहनेलगा कथाके वीचहीमें श्रमसे और मदसे राजपुत्रको तो निद्राआगई और उसकी उपमाताभी सोगई परन्तु वहवणिक्पुत्रस्नेहसे जागतारहा उससमय आकाशमें स्त्रियों कीसी यह वातचीत उसवणिक्पुत्रको सुनाईदी कि यहपापी कथाको विनाकहे सोगया इस्से मैं इसे यहशाप देतीहूं कि प्रातःकाल इसे एकहार दिखाईदेगा यदि यह उसेलेलेगा तो उसके पहरतेही इसकी मृत्युहोजायगी यहकहकर जवएक चुपहुई तवदूसरी वोली कि जो इस्से यहवचजायगा तो मार्गमें एकआम्रका वृक्ष इसेदिखाईदेगा जो उसके फल यहखायगा तो इसकी मृत्युहोजायगी यहकहकर जवयह चुपहुई तव तीसरीवोली कि जो यह इस्से भी वचजायगा तो विवाहकेलिये यह जिसघरमें जायगा वहीघर इसके ऊपरगिरेगा और उसीसे इसकी मृत्युहोजायगी यहकहकर जवयह भी चुपहोगई तवचौथी वोली कि जो इस्से भी यहवचजायगा तो रात्रिके समय जवयह शयनके स्थानमें जायगा तवजातेही इसेसौवार सौ छींकेंआवेगी जो हरछींकमें कोई मनुष्य इस्से जीव २ नहींकहैगा तो इसकी मृत्युहोजायगी और जिसने हमलोगोंकी यहवातचीत सुनीहोगी वह जो कदाचित् इसके वचानेके लिये इस्से कहेगा तो उसकी भी मृत्युहोजायगी यहकहकर वह भी चुपहोगई १३१ इससपूर्ण दुखदायी वार्त्तालापको सुन कर वहवणिक्पुत्र राजपुत्रके स्नेहसे व्याकुलहोकर सोचनेलगा कि वडे खेदकाविषय है कि प्रारम्भकी हुई कथाको अलक्षित होकर देवतालोग भी सुनते हैं जो उसे पूरी न करे तो वहशाप देजातेहैं अच्छा होयसोहोय इस्से क्यालाभहै अवइस राजपुत्रके मरजानेपर मेराजीना भी व्यर्थहोजायगा इस्से प्राणोंके समान प्रिय इसमित्रकी युक्तिपूर्व्वक रक्षाकरनी चाहिये और यह वृत्तान्त भी उस्से नहीं कहनाचाहिये क्योंकि कहनेसे मुझे दोषहोगा इसप्रकार शोचकर वडे खेदसे उसने वहरात्रि व्यतीतकी प्रातःकाल वहाँसे चलकर राजपुत्रने एकहार मार्गमें पडाहुआदेखा और उसके लेनेकी इच्छाकी तववणिग्के पुत्रनेकहा कि हे मित्र वहहारमतलो यहहारनहीं है मायाहै नहींतो सैनिकलोग इसे क्यों नहीं देखते अपने मित्रके यहवचनसुनकर उसे छोडकर राजपुत्रने आगेचलकर एक आम्रका वृक्षदेखा और उसके फलखानेकी इच्छाकरी तव फिर वैश्यपुत्रने उसीप्रकारसे वहाँभी निषेधकरदिया इसके उपरान्त धीरे २

द्धहोगी इसको आप विचारलीजिये राजाके यहवचनसुनकरवत्समुनिने क्षणभरयह विचारकिया कि पूर्व्वसमयमें मेनकाकी कन्या प्रमद्धराको जवसर्पने काटाथा तवरुरुनाममुनिने अपनी आयुका अर्द्ध-भागदेकर क्या उसकेसाथविवाह नहीं किया था क्या विश्वामित्र भयभीत त्रिशकुको स्वर्ग नहीं लेगये थे,इस्सेमैंभी अपनेतपके कुछ अशको व्ययकरके इसके मनोरथको क्यों न सिद्धकरू यह शोचकर और यहकुछ कठिन वातनहींहै ऐसा कहकर वह मुनिवोले कि हे देवतालोगो मेरे तपके अशसे शरी-रसहित यह राजा रम्भा से सम्भोग करनेके निमित्त स्वर्ग को जाय मुनि के ऐसा कहन पर एवमस्तु यह आकाशवाणी राजसभामें सुनाईदी तवराजा सुषेण वत्समुनिकेसाथ सुलोचनाका विवाहकरके स्वर्ग को चलागया और स्वर्गमें जाकर दिव्य शरीरहोके इन्द्रकी आज्ञासे दिव्यप्रभाववाली रभाकेसाथ आ-नन्दपूर्व्वक रमणकरनेलगा इसप्रकार कन्याके प्रभावसे राजासुषेण कृतार्थहुआ हे महाराज आपलोगों के यहाँ इसीप्रकारकी कन्या उत्पन्न होती हैं और यहकन्याभी शापसे भ्रष्टहुई कोई दिव्य स्त्री तुम्हारे यहाँ उत्पन्नहुईहै इस्से आप इसके जन्मसे शोक न कीजिये उस वृद्धब्राह्मणके मुखसे इसकथाको सुनकर राजा कलिंगदत्तकी चिन्तादूरहोगई और उसके चित्तमें सन्तोषहोगया ६६ तदनन्तर चन्द्रमाकी कलाके समान नत्रोंको आनन्ददेनेवाली अपनी कन्याकानाम राजाने कलिङ्गसेना रक्खा वह कन्या अपने पिताके घरमें धीरे २ वडीहुई और सखियोंके साथ क्रीडा करनेलगी क्रीडाके रससे भरेहुए वाल्यावस्थारूपी स-मुद्रकी तरगके समान वह कलिगसेना महलों में गृहों में और उपवनों में विहारकरनेलगी एक समय अपने महलपर खेलतीहुई कलिङ्गसेना को आकाशमार्गसे जातीहुई मयासुरकी पुत्री सोमप्रभाने देखा अपनेरूपसे मुनियों के मनोंको मोहनेवाली कलिङ्गसेना को देखकर सोमप्रभा के चित्तमें स्नेह उत्पन्न हुआ और उसने आकाशहीमें शोचा क्या यह चन्द्रमाकीमूर्त्ति है नहीं क्योंकि चन्द्रमाकी कान्ति तो दिनमें नष्टहोजाती है अथवारतिहै परन्तुइसके साथमें कामनहींहै इस्सेमेरेविचारसे यह शापसे च्युतहुई कोईदिव्यस्त्री यहा आकर राजकन्याहुई है इसेदेखकर मेरेचित्त में अत्यन्तस्नेह उत्पन्न होता है इस्से मैं जानती हू कि पूर्वजन्म में भी मेरी इसकेसाथ मित्रता थी इस्से मैं आपहीजाकर इस्से मित्रता करतीहू इसप्रकार विचारकरके कलिङ्गसेनाको भय न होय इसलिये सोमप्रभा आकाशसे अलक्षितहोकर उतरी और विश्वासकेलिये मनुष्यकी कन्याका स्वरूपधारणकरके धीरे २ कलिङ्गसेनाके पासगई उसेदेखकर कलिङ्गसेनाने यह शोचाकि यह कोई अत्यन्त अद्भुतरूपवती कन्यामेरेपासआई है इस्सेमित्रताकरना मुझेयोग्य है इसप्रकार शोचकर और उठकर कलिङ्गसेना ने सोमप्रभाको आलिङ्गनकरके आदरपूर्वक अपने पास वैठाया और उस्से पूछा कि तुम्हारा क्यानाम है और किस श्रेष्ठ कुलमें तुम्हारा जन्म है तब सोमप्रभाने कहा कि ठहरो सैंब वर्णन करूगी इसके उपरान्त कुछ कालतक वार्त्तालाप करके उनदोनों ने आपसमें हाथमारकर मित्रताकी ११०, तदनन्तर सोमप्रभा वोली कि हे सखी तुमराजकन्या हो और राजपुत्रोंके साथमित्रता निवाहना वहुतकठिनहै क्योंकि वहथोडेही अपराधमें अत्यन्त कुपित होजाते हैं इसपरमें एकराजपुत्र और वणिक्पुत्रकी कथासुनातीहू पुष्करावतीनाम नगरी में गूढसेननाम राजा

थी उसके एकहीपुत्रथा वहराजपुत्र अभिमानसे जो कुछ शुभाशुभ कार्य्य करताथा वहसब उसकापिता सहलेताथा एकसमय उपवनमें भ्रमणकरतेहुए राजपुत्रने ब्रह्मदत्तनाम वैश्यका अपने समानरूप और ऐश्वर्य्यवान् पुत्रदेखा देखतेही राजपुत्रने जाकर उससे मित्रताकरली उनदोनोंमें ऐसी मित्रतावढी कि वहदोनों एकरूपसे होगये परस्पर विनादेखे वहक्षणभर भी नहीं ठहरसक्ते थे ठीकहै (आशुबन्नातिहिप्रेम प्राग्जन्मान्तरसस्तव) पूर्व्व जन्मका संस्कार शीघ्रही प्रेमको दृढकरदेताहै राजपुत्र उससुखको कभी नहीं भोगकरताथा जो उस वणिक्पुत्रके लिये पहलेसेही नहीं कल्पित कियाजाताथा एकसमय राजपुत्र अपने मित्र वणिक्पुत्रके विवाहका पहिलेहीसे निश्चयकरके अपने विवाहकेलिये अहिच्छत्र देशको जानेकेलिये अपने मित्रसमेत हाथीपरचढकर सबसेना सहितचला और सायकालके समय इक्षुमती नदीके तीरपररहा वहाँ रात्रिकेसमय चादनीमें मद्यपानकरके पलगपरलेटा और अपनी उपमाताके कहने से कोई कथा कहनेलगा कथाके बीचहीमें श्रमसे और मदसे राजपुत्रको तो निद्राआगई और उसकी उपमाताभी सोगई परन्तु वहवणिक्पुत्रस्नेहसे जागतारहा उससमय आकाशमें स्त्रियों कीसी यह बातचीत उसवणिक्पुत्रको सुनाईदी कि यहपापी कथाको विनाकहे सोगया इससे मैं इसे यहशाप देतीहू कि प्रातःकाल इसे एकहार दिखाईदेगा यदि यह उसेलेलेगा तो उसके पहरतेही इसकी मृत्युहो-जायगी यहकहकर जबएक चुपहुई तबदूसरी बोली कि जो इससे यहबचजायगा तो मार्गमें एकआम्रका वृक्ष इसेदिखाईदेगा जो उसके फल यहखायगा तो इसकी मृत्युहोजायगी यहकहकर जबवह चुपहुई तब तीसरीबोली कि जो यह इससे भी बचजायगा तो विवाहकेलिये यह जिसघरमें जायगा वहीघर इसके ऊपरगिरेगा और उसीमें इसकी मृत्युहोजायगी यहकहकर जबवह भी चुपहोगई तबचौथी बोली कि जो इससे भी यहबचजायगा तो रात्रिके समय जबयह शयनके स्थानमें जायगा तबजातेही इसेसौवार सौ छींकेंआवेंगी जो हरछींकमें कोई मनुष्य इससे जीव २ नहींकहेगा तो इसकी मृत्युहोजायगी और जिसने हमलोगोंकी यहबातचीत सुनीहोगी वह जो कदाचित् इसके बचानेके लिये इससे कहेगा तो उसकी भी मृत्युहोजायगी यहकहकर वह भी चुपहोगई १२१ इससपूर्ण दुखदायी वार्त्तालापको सुन कर वहवणिक्पुत्र राजपुत्रके स्नेहसे व्याकुलहोकर शोचनेलगा कि बडे खेदकाविषय है कि प्रारंभकी हुई कथाको अलक्षित होकर देवतालोग भी सुनतेहैं जो उसे पूरी न करे तो वहशाप देजातेहैं अच्छा होयसोहोय इससे क्यालाभहै अबइस राजपुत्रके मरजानेपर मेराजीना भी व्यर्थहोजायगा इससे प्राणोंके समान प्रिय इसमित्रकी युक्तिपूर्व्वक रक्षाकरनी चाहिये और यह वृत्तान्त भी उससे नहीं कहनाचाहिये क्योंकि कहनेसे मुझे दोषहोगा इसप्रकार शोचकर बडे खेदसे उसने वहरात्रि व्यतीतकी प्रातःकाल वहाँसे चलकर राजपुत्रने एकहार मार्गमें पडाहुआदेखा और उसके लेनेकी इच्छाकी तबवणिक्के पु-त्रनेकहा कि हे मित्र यहहारमतलो यहहारनहीं है मायाहै नहींतो सेनिकलोग इसे क्यों नहीं देखते अपने मित्रके यहवचनसुनकर उसे छोड़कर राजपुत्रने आगेचलकर एक आम्रका वृक्षदेखा और उसके फलखानेकी इच्छाकरी तब फिर वैश्यपुत्रने उसीप्रकारसे वहाँभी निषेधकरदिया इसके उपरान्त धीरे -

छ्होगी इसको आप विचारलीजिये राजाके यहवचनसुनकरवत्समुनिने क्षणभरयह विचारकिया कि पूर्व्वसमयमें मेनकाकी कन्या प्रमद्वराको जवसर्पने काटाथा तवरुरुनामसुनिने अपनी आयुका अर्द्ध भागदेकर क्या उसकेसाथविवाह नहीं किया था क्या विश्वामित्र भयभीत त्रिशकुको स्वर्ग नहीं लेगये थे इस्सेमैंभी अपनेतपके कुछ अशको व्ययकरके इसके मनोरथको क्यों न सिद्धकरू यह शोचकर और यहकुछ कठिन वातनहींहै ऐसा कहकर वह मुनिबोले कि हे देवतालोगो मेरे तपके अशसे शरीरसहित यह राजा रम्भा से सम्भोग करनेके निमित्त स्वर्ग को जाय मुनि के ऐसा कहन पर एवमस्तु यह आकाशवाणी राजसभामें सुनाईदी तवराजा सुपेण वत्समुनिकेसाथ सुलोचनाका विवाहकरके स्वर्ग को चलागया और स्वर्गमें जाकर दिव्य शरीरहोके इन्द्रकी आज्ञासे दिव्यप्रभाववाली रभाकेसाथ आनन्दपूर्व्वक रमणकरनेलगा इसप्रकार कन्याके प्रभावसे राजासुपेण कृतार्थहुआ हे महाराज आपलोगों के यहाँ इसीप्रकारकी कन्या उत्पन्न होती हैं और यहकन्याभी शापसे भ्रष्टहुई कोई दिव्य स्त्री तुम्हारे यहाँ उत्पन्नहुईहै इस्से आप इसके जन्मसे शोकन कीजिये उस वृद्धब्राह्मणके मुखसे इसकथाको सुनकर राजा कलिंगदत्तकी चिन्तादूरहोगई और उसके चित्तमें सन्तोपहोगया ६६ तदनन्तर चन्द्रमाकी कलाके समान नेत्रोंको आनन्ददेनेवाली अपनी कन्याकानाम राजाने कलिङ्गसेना रक्खा वह कन्या अपने पिताके घरमें धीरे २ वडीहुई और सखियोंके साथ क्रीडा करनेलगी क्रीडाके रससे भरेहुए बाल्यावस्थारूपी समुद्रकी तरगके समान वह कलिंगसेना महलों में गृहों में और उपवनों में विहारकरनेलगी एक समय अपने महलपर खेलतीहुई कलिङ्गसेना को आकाशमार्गसे जातीहुई मयासुरकी पुत्री सोमप्रभाने देखा अपनेरूपसे मुनियों के मनोंको मोहनेवाली कलिङ्गसेना को देखकर सोमप्रभा के चित्तमें स्नेह उत्पन्न हुआ और उसने आकाशही में शोचा क्या यह चन्द्रमाकीमूर्त्ति है नहीं क्योंकि चन्द्रमाकी कान्ति तो दिनमें नष्टहोजाती है अथवारतिहै परन्तुइसकेसाथमें कामनहींहै इस्सेमेरेविचारसे यह शापसे च्युतहुई कोईदिव्यस्त्री यहा आकर राजकन्याहुई है इसेदेखकर मेरेचित्त में अत्यन्तस्नेह उत्पन्न होता है इस्से मैं जानती हू कि पूर्वजन्म में भी मेरी इसकेसाथ मित्रता थी इस्से मैं आपहीजाकर इस्से मित्रता करतीहू इसप्रकार विचारकरके कलिङ्गसेनाको भय न होय इसलिये सोमप्रभा आकाशसे अलक्षितहोकर उतरी और विश्वासकेलिये मनुष्यकी कन्याका स्वरूपधारणकरके धीरे २ कलिङ्गसेनाके पासगई उसेदेखकर कलिङ्गसेनाने यह शोचाकि यह कोई अत्यन्त अद्भुतरूपवती कन्यामेरेपासआई है इस्सेमित्रताकरना मुझेयोग्य है इसप्रकार शोचकर और उठकर कलिङ्गसेना ने सोमप्रभाको आलिङ्गनकरके आदरपूर्वक अपने पास वैठाया और उस्से पूछा कि तुम्हारा क्यानाम है और किस श्रेष्ठ कुलमें तुम्हारा जन्म है तब सोमप्रभाने कहा कि ठहरो सैवे वर्णन करूगी इसके उपरान्त कुछ कालतक वार्त्तालाप करके उनदोनों ने आपसमें हाथमारकर मित्रताकी ११० तदनन्तर सोमप्रभा बोली कि हे सखी तुमराजकन्या हो और राजपुत्रोंके साथमित्रता निवाहना वहुतकठिनहै क्योंकि वहथोडेही अपराधमें अत्यन्त कुपित होजाते हैं इसपरमें एकराजपुत्र और वणिक्पुत्रकी कथासुनातीहू पुष्करावतीनाम नगरी में गूढसेननाम राजा

थी उसके एकहीपुत्रथा वहराजपुत्र अभिमानसे जो कुछशुभाशुभ कार्य्य करताथा वहसव उसकापिता सहलेताथा एकसमय उपवनमें भ्रमणकरतेहुए राजपुत्रने ब्रह्मदत्तनाम वैश्यका अपने समानरूप और ऐश्वर्य्यवान् पुत्रदेखा देखतेही राजपुत्रने जाकर उस्से मित्रताकरली उनदोनोंमें ऐसी मित्रतावढी कि वहदोनों एकरूपसे होगये परस्पर विनादेखे वहक्षणभर भी नहीं ठहरसक्के ये ठीकहै (आशुबध्नातिहिप्रेम प्राग्जन्मान्तरसस्तव) पूर्व जन्मका सस्कार शीघ्रही प्रेमको दृढकरदेताहै राजपुत्र उससुखको कभी नहीं भोगकरताथा जो उस वणिक्पुत्रके लिये पहलेसेही नहीं कल्पित कियाजाताथा एकसमय राजपुत्र अपने मित्र वणिक्पुत्रके विवाहका पहिलेहीसे निश्चयकरके अपने विवाहकेलिये अहिच्छत्र देशको जानेकेलिये अपने मित्रसमेत हाथीपरचढकर सवसेना सहितचला और सायकालके समय इक्षुमती नदीके तीरपररहा वहाँ रात्रिकेसमय चादनीमें मद्यपानकरके पलगपरलेटा और अपनी उपमाताके कहने से कोई कथा कहनेलगा कथाके वीचहीमें श्रमसे और मदसे राजपुत्रको तो निद्राआगई और उसकी उपमाताभी सोगई परन्तु वहवणिक्पुत्रस्नेहसे जागतारहा उससमय आकाशमें स्त्रियों कीसी यह वातचीत उसवणिक्पुत्रको सुनाईदी कि यहपापी कथाको विनाकहे सोगया इस्से मैं इसे यहशाप देतीहू कि प्रात काल इसे एकहार दिखाईदेगा यदि यह उसेलेलेगा तो उसके पहरतेही इसकी मृत्युहो-जायगी यहकहकर जवएक चुपहुई तवदूसरी वोली कि जो इस्से यहवचजायगा तो मार्गमें एकआम्रका वृक्ष इसेदिखाईदेगा जो उसके फल यहखायगा तो इसकी मृत्युहोजायगी यहकहकर जववह चुपहुई तव तीसरीवोली कि जो यह इस्से भी वचजायगा तो विवाहकेलिये यह जिसघरमे जायगा वहीघर इसके ऊपरगिरेगा और उसीमे इसकी मृत्युहोजायगी यहकहकर जववह भी चुपहोगई तवचौथी वोली कि जो इस्से भी यहवचजायगा तो रात्रिके समय जवयह शयनके स्थानमें जायगा तवजातेही इसेसौवार सौ छींकेंआवेगी जो हरछींकमें कोई मनुष्य इस्से जीव २ नहींकहेगा तो इसकी मृत्युहोजायगी और जिसने हमलोगोंकी यहवातचीत सुनीहोगी वह जो कदाचित् इसके वचानेके लिये इस्से कहेगा तो उसकी भी मृत्युहोजायगी यहकहकर वह भी चुपहोगई १३१ इसभयपूर्ण दुखदायी वार्त्तालापको सुन कर वहवणिक्पुत्र राजपुत्रके स्नेहसे व्याकुलहोकर शोचनेलगा कि वडे खेदकाविषय है कि प्रारभकी हुई कथाको अलक्षित होकर देवतालोग भी सुनते हैं जो उसे पूरी न करें तो वहशाप देजाते हैं अच्छा होयसोहोय इस्से क्यालाभहै अवइस राजपुत्रके मरजानेपर मेराजीना भी व्यर्थहोजायगा इस्से प्राणोंके समान प्रिय इसमित्रकी युक्तिपूर्वक रक्षाकरनी चाहिये और यह वृत्तान्त भी उस्से नहीं कहनाचाहिये क्योंकि कहनेसे मुझे दोषहोगा इसप्रकार शोचकर वडे खेदसे उसने वहरात्रि व्यतीतकी प्रातःकाल वहाँसे चलकर राजपुत्रने एकहार मार्गमें पडाहुआदेखा और उसके लेनेकी इच्छाकी तववणिक्के पुत्रनेकहा कि हे मित्र यहहारमतलो यहहारनहीं है मायाहै नहींतो सैनिकलोग इसे क्यों नहीं देखते अपने मित्रके यहवचनसुनकर उसे छोडकर राजपुत्रने आगेचलकर एक आम्रका वृक्षदेखा और उसने फलखानेकी इच्छाकरी तव फिर वैश्यपुत्रने उसीप्रकारसे वहाँभी निषेधकरदिया इसके उपरान्त धीरे २

राजपुत्र अपने श्वशुरके यहाँ पहुचा वहाँ जबविवाहके निमित्त घरमे जानेलगा तबवणिक्पुत्रनें द्वारही से उसेरोका और उसीसमय वहघर गिरपडा इसप्रकार इनआपत्तियोंसे बचकर राजपुत्र रात्रिके समय वणिक्पुत्रकी उनबातोंमेकुछ आश्चर्यपूर्वक विश्वास करताहुआ अपनी स्त्री समेत शयन स्थानमें गया वहाँ वणिक्पुत्र पहलेहीसे जाकर पलगकेनीचे छिपकर बैठरहाथा वहाजाकर पलगपर बैठतेही राजपुत्र को सौवार छींकेंआई और प्रतिवार नीचेसे वणिक्पुत्रने धीरे २ जीव २ यहशब्दकहा फिर छिपाहुआ ही प्रसन्नहोकर वहाँसे निकलनेलगा निकलते समय उसे राजपुत्रने देखकर ईर्षासे उसके स्नेहको भूलकर कुपितहोके द्वारपालोंसे कहा कि यहपापी यहाँ एकान्तमें भी मेरे रणवासमें चलाआया इस्से इसे बाँधकर रक्खो प्रात काल इसे फासीदीजायगी राजपुत्रके वचनसुनकर रक्षकोंने उसे रात्रिभर बाँध रक्खा और प्रात काल वध्यस्थानको लेचले उससमय वणिक्पुत्रने उनसेकहा कि पहले मुझेराजपुत्रके पासलेचलो क्योकि मुझे उस्से कुछकहनाहै पीछे मेरावधकरना उसके यहवचनसुनकर उनलोगोंने राजासेजाकर यहीविज्ञापनाकी तबराजपुत्रने मन्त्रियोंके कहनेसे उसे अपनेपास बुलवाया वहाँ आकर वणिक्पुत्रने राजपुत्रसे वहसपूर्ण वृत्तान्त जो रात्रिके समय दिव्यस्त्रियोसे सुनाथा कहदिया यह राजपुत्रने घरगिरनेके विश्वास से वहसबबातें निश्चयमानलीं और वधसे उसेछुडाकर अत्यन्त प्रसन्नहोकर उसीकेसाथ अपनी स्त्री समेत अपनी पुरीमेंआया और वहाँ आकर अपने मित्र वणिक्पुत्रका भी विवाहकरवाया विवाहके उपरान्त मार्गकी बातोंको सुनकर सपूर्ण लोगों से प्रशसाकियागया वणिक्पुत्र सुखपूर्वक रहनेलगा हे सखी इसप्रकार उच्छृखल (जजीरसेछुटा और उद्दड) होकर अपने नियन्ता (शिक्षक और महावत) को भी मारनेवाले उन्मत्तहाथीके समान राजपुत्र हितको नहीं मानते हैं और वेतालके समान हसकर भी प्राणलेतेहैं ऐसेराजपुत्रोसे मित्रता क्या करनीचाहिये इस्से हे राजपुत्री मेरी मित्रतामे कभी भेद न करना १५२ सोमप्रभाके मुखसे इसकथाको सुनकर कलिगसेना स्नेहपूर्व्वक उस्से बोली कि मेरी बुद्धिसे तो ऐसेस्वभाववाले राजपुत्रनहीं हैं पिशाच हैं इसविषयमे मे तुमको दुर्ग्रहनाम पिशाचकी कथा सुनातीहू यज्ञस्थलनाम किसीग्राममें एकदरिद्री ब्राह्मणरहता था वह एकसमय बनमें काष्ठ लेनेको गया वहाँ कुठारसे कटाहुआ एककाष्ठ भाग्यवशसे उसकी जघामें घुसगया उसके लगने से वह मूर्च्छितहोकर गिरपडा और जघासे रुधिर बहनेलगा उस समय किसी पुरुषने उसे पहचानकर घर पहुचादिया वहा उसकी स्त्रीने पतिकी यह दशादेखकर रुधिरधोकर उसकी जघा में पट्टी बाधदी इसके उपरान्त प्रतिदिन औषध करने पर भी वहघावपूरातो नहीं हुआ परन्तु नासूरहोगया उससे अत्यन्त दुखी होके वह ब्राह्मण मरने के लिये उद्यतहुआ उससमय उसके किसी मित्र ब्राह्मणने उस्से एकान्तमें जाकर कहा कि मेरामित्र यज्ञदत्तनाम ब्राह्मण बडादरिद्री था पिशाचका साधन करने से उसको बहुतसाधन प्राप्तहुआ और अबवह सुखपूर्व्वक रहताहै उसने वह पिशाचसाधन मुझे भी बता दियाहै इस्से हेमित्र तुमभी पिशाचसिद्धकरो वहतुम्हारे इसघाव और नासूरको अच्छाकरदेगा यहकह कर और मत्र बताकर उसने यह विधिभी बताई किरात्रिके पिछले पहर में उठकर बालोको खोलकर न-

ग्न होके आचमन विनाकिये दोमुट्ठियोंमें जितने चावलआसकें उतने चावललेकर मन्त्रको जपतेहुये तुमचौराहेपरजाना वहा दोनों मुट्ठी चावलरखकर मौनहोकर चलेआना और पीछेफिरकर न देखना जबतक पिशाच प्रकट होकर यह न कहे कि मैं तुम्हारे रोगको खोदूगा तबतकप्रतिदिन इसीरीतिकोकरे चलेजाना इसप्रकारसे पिशाच सिद्धहोकर तुम्हारे रोगको दूरकरदेगा अपने मित्रके यह वचन सुनकर उस ब्राह्मणने उसीरीतिपर किया तब पिशाचने सिद्धहोकर हिमाचलसे ओषधीलाकर उसका नासूर खोदिया नासूरके अच्छे होजानेसे प्रसन्नहुए उस ब्राह्मणसे वह पिशाच बोला कि हेब्राह्मण मुझे कोई दूसराघाव और बताओ जिसको मैं पूराकरूं नहींतो मैं तुम्हारेलिये कोईअनर्थकरदूगा या तुम्हारे शरीर कोहीनष्ट करदूगा यह सुनकर ब्राह्मण भयभीतहोके अपनेको बचाने के लिये बोलाकि सातदिनके उपरान्त मैं तुमको दूसरा घावबतलाऊगा तबपिशाच चलागया और वह ब्राह्मण अपने जीवनसे निराशहोगया इतनी कथा कहकर कलिंगसेना असभ्यवचनो के कहने की लज्जासे निवृत्त होकर सोमप्रभा के कहने से फिरबोली कि इसके उपरान्त उस ब्राह्मण की एकचतुर विधवापुत्री अपनेपिताको खिन्नदेखकर बोली कि आप क्यों उदासीनहो तबउसने उससे सपूर्ण वृत्तान्तकहदिया तब कन्याने व्रण के न मिलने से अपने पिताको खिन्नजानकर कहा कि मैं उस पिशाच को छललूगी तुम उससे जाकरकहो कि मेरी पुत्री के नासूरहै उसे पूराकरो पुत्रीके वचन सुनकर ब्राह्मण प्रसन्नहोकर पिशाचके पासगया और उसको अपनी पुत्रीके पासलेआया तब लडकी ने पिशाचको एकान्तमें अपनी योनि दिखाकरकहाकि इसमेरेघावको तुमपूराकरो उसकेवचन सुनकर वहमूर्खपिशाच अनेक प्रकारके लेप और वत्तीआदि उसकी योनि में लगाने लगा परन्तुउसे पूर्ण न करसका कुछदिनोंके पीछे खिन्नहोकर पिशाच उस ब्राह्मणकी पुत्री की जघा अपने कन्धोंपर रखकर उसकीयोनि को देखने लगा कि यहव्रण क्यों नहींपूर्णहोताहै उससमय कुछ नीचेदृष्टि पडने से उसेगुदा का छिद्रदिखाईदिया उसेदेखकर वह घबरा कर शोचनेलगा कि एकव्रण को तो पूराही नहीं करचुकाहू दूसरा और उत्पन्नहोगया यह कहावतठीकहै कि (छिद्रेष्वनर्थाबहुलीभवन्ति) छिद्रोंमें अनर्थ बहुत होतेहैं (प्रभवन्तियतोलोका प्रलययान्तियेनच। ससारवर्त्मविवृतक पिधातुतदीश्वर) जिससे सपूर्ण लोग उत्पन्न होते हैं और जिसके द्वारा नाशकोप्राप्तहोतेहैं उसखुलेहुएससारके मार्गको कौन ढकसक्ताहै यह शोचकर उसेयहभयहुआ कि घाव तोनहीं अच्छाहुआ अबमुझको यहीं बन्धनमें पडनापडेगा इसभयसे वहमूर्ख पिशाच वहासे भागगया इसप्रकारसे उसमूर्खपिशाचको छलकरके ब्राह्मणकी पुत्रीने अपने पिताकी रक्षाकरी और ब्राह्मणभी पिशाचके चलेजाने पर नीरोगहोकर सुखपूर्वक रहनेलगा १८४इसप्रकारके पिशाच और पिशाचोंकेतुल्य नवयुवक राजपुत्र होतेहैं वह सिद्धहोकर भी अनर्थही करतेहैं परबुद्धिमान् लोग उनसेभी अपनी रक्षा करते हैं परन्तु हेसखी कुलीन राजपुत्री तो तुमने ऐसी कभी न देखी होगी और न सुनीहोगी इस्से तुम मेरी मित्रतामें कभी सन्देह मतकरो इसप्रकार कलिंगसेनासे हास्यकारी इस विचित्र कथाको सुनकर सोमप्रभा प्रसन्नहोकर बोली कि यहा से साठयोजन मेरा घरहै दिनथोडाही रहगयाहै और मुझे आये

वहुत देरहोचुकी इस्से मैं जातीहूं तव सूर्य्य के अस्तहोनेपर फिर अनेक नियम कराने वाली कलिंग सेनासेपूंछकर सोमप्रभा आकाशमे उडकर अपने स्थानको चली गई इसआश्चर्य्यको देखकर कलिंग सेना अपने चित्तमें अनेक प्रकारके तर्क वितर्ककरके शोचने लगी कि क्या यह मेरीसखी सिद्धाङ्गना है अथवा अप्सराहै या विद्याधरीहै आकाशमार्गमें उडनेसे इसके दिव्य स्त्री होनेमें तो कुछ सदेहनहीं है और दिव्यस्त्रिया भी स्नेहके वशीभूत होकर मानुपी स्त्रियो से सगत करती हैं देखो अरुन्धती ने राजापृथुकी कन्यासे स्नेहकियाथा उन्हीं की प्रीतिसे पृथुस्वर्ग से सुरभीगऊको लायेथे उसके दूधको पी कर राजापृथु भ्रष्टहोकर भी स्वर्ग को गये और तभीसे इसपृथ्वीमें अनेक गौउत्पन्नहुईं मैधन्यहू क्योंकि किसीपुण्यके उदयसेयह दिव्यसखी मुझको मिलीहै प्रात काल जववह आवेगी तवउससेनाम और वश अवश्यपूछूंगी इसप्रकार अपने हृदयमे विचारतीहुई कलिगसेनाने वहरात्रि व्यतीतकरी और सोमप्रभा ने भी अपने स्थानमे जाके कलिगसेना के फिर दर्शनों की उत्कण्ठा से वहरात्रि व्यतीत करी–१६३॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायामदनमञ्चुकालम्बकेद्वितीयस्तरग २॥

इसके उपरान्त प्रात काल सोमप्रभा कलिगसेनाको प्रसन्नकरनेके लिये एकपिटारीमें काष्ठमयअनेक मायाके यन्त्रो की पुतली रखकर उसपिटारीको लेकर आकाशमार्ग से फिर कलिगसेनाके पास आई कलिगसेना भी उसे देखतेही आनन्दके अश्रुओं को वहातीहुई उठकर उसके कठमे लिपटगई और उसे अपने पास वैठाकरवोली कि हे सखी तुम्हारे मुखरूपी पूर्णचन्द्रके दर्शनके विना आज अन्धकार मय यह चारप्रहर रात्रि सैकडो प्रहरके समान होगई इस्से तुम्हारे साथ मेरा पूर्व जन्मका कैसा सम्बन्ध है जिसका कि यहपरिणामहुआहै जो तुम जानतीहो तो कहो यहसुनकर सोमप्रभावोली कि हेसखी मुझे ऐसा विज्ञान नहीं है मुझे तो अपनेही पूर्वजन्मकाभी स्मरणनहीं है इसविषयको तो मुनिलोगभी नहीं जानतेहैं और जो कोई२ जानतेहैं उन्होंने पूर्व जन्ममें कोई अत्यन्तउत्तमकर्म किये हैं और वह परतत्त्व कोभी जानते हैउसके यहवचन सुनकर कलिङ्गसेना एकान्तमे प्रेमपूर्व्वक उस्से वोली कि हेसखी तुमने देवताओंकी किसजातिमेंसे अपने पिताके वश को अपने जन्मसे सुवृत्त(गोलऔर अच्छे आचरणवाली) मोतीकेसमान सुशोभित कियाहै और ससारमें मनुष्योंके कानोंकासुखदाई तुम्हारानाम क्या है और यह पिटारी तुम किसलिये लाईहो और इसमे क्या है कलिगसेनाके इन प्रेमपूर्ण वचनोंको सुनकर सोमप्रभा क्रमसे सववातोंका उत्तर कहनेलगी कि तीनोलोकों में मयनामदैत्य विख्यातहै जो अपने आसुरीभावको छोडकर श्रीकृष्ण भगवान्की शरणमेंगया फिर श्रीकृष्णजी से अभयपाकर उसने इन्द्रकी सभावनाई तव दैत्योंने उसेदेवताओ का पक्षीजानकर उसपर अत्यन्त क्रोधकिया उनकेभयसे उसनेविन्ध्याचलके भीतर अनेकप्रकारके आश्चर्य्यों से युक्त एकमन्दिर अपने निवासकेलिये मायाके छिद्रो से युक्तकरकेवनाया उसमें दैत्यलोगनहीं जासक्ते हैं उस मयदैत्यकी दोकन्याहैं वडी स्वयंप्रभानाम कन्या ब्रह्मचारिणी है इस्से वह कुमारी ही अपने पिताके गृहमें रहती है और छोटी सोमप्रभानाम मैं हूं पिताने कुवेरके पुत्र नलकूवर के साथ मेराविवाह करदियाहै और मुझे अनेक प्रकारके मायाके यन्त्र सिखाये हैं उन्हीं यन्त्रो से भरी

हुई यह पिटारीमें स्नेहसे तुम्हारे पासलाई हूं १७ यह कहकर सोमप्रभाने काष्ठसे बनीहुई माया के यन्त्रों की पुतलियां उसे दिखाई कीलकेदवाने से ही कोई पुतली आकाशमे जाकर सोमप्रभाकी आज्ञासे पुष्पों की माल लेआई कोईपानी लेआई कोई नाचनेलगी और कोई वातचीत करनेलगी इत्यादिक आश्चर्यों से कुछ कालतक कलिंगसेनाको प्रसन्न करके सोमप्रभाने यन्त्रोंकी पिटारी बन्दकरके छिपाकर रखदीनी और कलिंगसेनासे पूछकर आकाशमार्गसे अपने स्थानको चलीगई कलिगसेनाकोउनआश्चर्यकारी यन्त्रोंके देखनेसे ऐसी प्रसन्नताहुई कि उसदिन उसने खुशीकेमारे भोजनभी नहींकिया तवउसकी माता ने रोगकेभयसे आनन्दनाम वैद्यको बुलाकर उसेदिखाया तो वैद्यने उसेदेखकरकहा कि इसके प्रफुल्लित नेत्र और मानो हँसतेहुए मुखसे मालूमहोताहै कि किसीकारणसे इसको बडा हर्षहुआहै इसीसे इसको भूखनहीं लगी है इसेकोई रोगनहीं है वैद्यके यहवचनसुनकर रानीके पूछनेपर कलिंगसेनाने वह सपूर्ण वृत्तान्त कहदिया उसे श्रेष्ठसखीके मिलने से अपनी कन्याको प्रसन्न जानकर रानीने वडी प्रशंसाकरके उसको उचित भोजन कराया २७ इसके उपरान्त दूसरेदिन आकर एकान्तमें सोमप्रभाने कलिंगसेना से कहा कि मैने अपने ज्ञानीपतिसे तुम्हारी मित्रताका वृत्तान्त कहदियाहै और उससे तुम्हारेपास नित्य आनेकी आज्ञा लेलीनीहै इस्से तुमभी अपने मातापितासे यहवृत्तान्त कहकर उन की आज्ञालेलो तो हम तुम दोनों स्वच्छन्दहोकर निस्सन्देह विहारकरें सोमप्रभाके यहवचनसुनकर कलिंगसेना उसका हाथप- कडकर अपने मातापिताके पासलेगई औरउनसे जाकरबोली कि यही मेरीसखी सोमप्रभाहै उसे देखकर वह दोनों वहुत प्रसन्नहोकर बोले कि हे वत्से इस कलिंगसेनाको हमने तुम्हारे हाथसौंपाहै इसेलेकर तुम स्वच्छन्दहोकर क्रीडाकरो उनके यहवचनसुनकर कलिंगसेना और सोमप्रभा दोनों उसयन्त्रकी पिटारी को लेकर राजाके वनवायेहुए बुद्धके मदिरमें क्रीडाकरनेको गईं वहाँ जाकर सोमप्रभाने एकयन्त्रके यक्षको बुद्धके पूजनकेलिये भेजा उसयक्षने आकाशमार्गसे वहुत दूरजाकर उत्तम मोती मणितथा सु- वर्णके कमललाकर बुद्धका पूजनकिया और उनमणियोंसे सपूर्ण मन्दिर देदीप्यमानहोगया यहवृत्तान्त राजा कलिंगदत्तने भी सुना और रानी समेत वहाँ आकरदेखा उसविचित्र चमत्कारको देखकर राजाने सोमप्रभासे पूछा कि यहक्या वातहै तवसोमप्रभा बोली कि हे राजा यह अनेक प्रकारके माया यन्त्रादिक शिल्प (कारीगरी) पूर्व समयमें मेरेपिताने वनाये थे जैसे यहसपूर्ण ससाररूपी यन्त्र पचभूतात्मकहै इसीप्रकार यहसब यन्त्रभी पंचभूतात्मकहैं सुनिये मैं आपको अलग २ वताती हूं जिसयन्त्रमें पृथ्वी तत्त्व प्रधानहै वहद्वारआदि वन्दकरताहै और उसकेवन्दकियेहुए द्वारआदिको कोईभीनहीं खोलसक्ताहै जिस यन्त्रमे जलतत्त्व प्रधानहै वहसजीवसा मालूमहोताहै जिसयन्त्रमें अग्नितत्त्वप्रधानहै उसमेंसे ज्वाला नि- कलतीहै जिसमें वायुप्रधानहै वहगमनागमन आदिकचेष्टा करताहै और जिसमेंआकाशतत्त्व प्रधानहै वहबोलता चालताहै मैंने यहसम्पूर्ण यन्त्र अपने पितासेपाये हैं परन्तु जोअमृत का रक्षकचक्रयन्त्रहै उसे मेरे पिताही जानते हैं और कोई नहीं जानता ४७ उसके इसप्रकार कहतेही पहले मानों उस के वचनपर श्रद्धा करतेहुए मध्याह्न समय के सूचक शंखवजनेलगे तव सोमप्रभाने राजा कलिंगदत्त से

वहुत देरहोचुकी इससे मैं जातीहू तब सूर्य्य के अस्तहोनेपर फिर अनेक नियम कराने वाली कलिंग सेनासेपूछकर सोमप्रभा आकाशमे उडकर अपने स्थानको चली गई इसआश्चर्य्यको देखकर कलिंग सेना अपने चित्तमें अनेक प्रकारके तर्क वितर्ककरके शोचने लगी कि क्या यह मेरीसखी सिद्धाङ्गना है अथवा अप्सराहै या विद्याधरीहै आकाशमार्गमें उडनेसे इसके दिव्य स्त्री होनेमें तो कुछ संदेहनहीं है और दिव्यस्त्रिया भी स्नेहके वशीभूत होकर मानुषी स्त्रियो से सगत करती हैं देखो अरुन्धती ने राजापृथुकी कन्यासे स्नेहकियाथा उन्हीं की प्रीतिसे पृथुस्वर्ग से सुरभीगऊको लायेथे उसके दूधको पी कर राजापृथु भ्रष्टहोकर भी स्वर्ग को गये और तभीसे इसपृथ्वीमे अनेक गौउत्पन्नहुई मैधन्यहू क्योंकि किसीपुण्यके उदयसेयह दिव्यसखी मुझको मिलीहै प्रात काल जबवह आवेगी तबउससेनाम और वश अवश्यपूछगी इसप्रकार अपने हृदयमें विचारतीहुई कलिंगसेनाने वहरात्रि व्यतीतकरी और सोमप्रभा ने भी अपने स्थानमे जाके कलिगसेना के फिर दर्शनो की उत्कण्ठा से वहरात्रि व्यतीत करी–१६३॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायामदनमचुकालम्बकेद्वितीयस्तरग २॥

इसके उपरान्त प्रात काल सोमप्रभा कलिगसेनाको प्रसन्नकरनेके लिये एकपिटारीमें काष्ठमयअनेक मायाके यन्त्रों की पुतली रखकर उसपिटारीको लेकर आकाशमार्ग से फिर कलिंगसेनाके पास आई कलिगसेना भी उसे देखतेही आनन्दके अश्रुओ को वहातीहुई उठकर उसके कठमें लिपटगई और उसे अपने पास बैठाकरबोली कि हे सखी तुम्हारे मुखरूपी पूर्णचन्द्रके दर्शनके विना आज अन्धकार मय यह चारप्रहर रात्रि सैकडों प्रहरके समान होगई इससे तुम्हारे साथ मेरा पूर्व्व जन्मका कैसा सम्बन्ध है जिसका कि यहपरिणामहुआहै जो तुम जानतीहो तो कहो यहसुनकर सोमप्रभाबोली कि हेसखी मुझे ऐसा विज्ञान नहीं है मुझे तो अपनेही पूर्वजन्मकाभी स्मरणनहीं है इसविषयको तो मुनिलोगभी नहीं जानतेहै और जो कोई २ जानतेहैं उन्होंने पूर्व जन्ममें कोई अत्यन्तउत्तमकर्म किये हैं और वह परतत्त्व कोभी जानते हैं उसके यहवचन सुनकर कलिङ्गसेना एकान्तमें प्रेमपूर्व्वक उस्से बोली कि हेसखी तुमने देवताओंकी किम जातिमेंमे अपने पिताके वश को अपने जन्मसे सुवृत्त(गोल और अच्छे आचरणवाली) मोतीकेसमान सुशोभित कियाहै और ससारमें मनुष्योंके कानोकासुखदाई तुम्हारानाम क्या है और यह पिटारी तुम किसलिये लाईहो और इसमे क्या है कलिगसेनाके इन प्रेमपूर्ण वचनोंको सुनकर सोमप्रभा क्रमसे सबबातोंका उत्तर कहनेलगी कि तीनोलोकों में मयनामदैत्य विख्यातहै जो अपने आसुरीभावको छोडकर श्रीकृष्ण भगवान्की शरणमेगया फिर श्रीकृष्णजी से अभयपाकर उसने इन्द्रकी सभाबनाई तब दैत्योंने उसेदेवताओ का पक्षीजानकर उसपर अत्यन्त क्रोधकिया उनकेभयसे उसनेविन्ध्याचलके भीतर अनेकप्रकारके आश्चर्य्यों से युक्त एकमन्दिर अपने निवासकेलिये मायाके छिद्रो से युक्तकरकेबनाया उसमें दैत्यलोगनहीं जासक्ते है उस मयदैत्यकी दोकन्याहै वडी स्वयंप्रभानाम कन्या ब्रह्मचारिणी है इस्से वह कुमारी ही अपने पिताके गृहमें रहती है और छोटी सोमप्रभानाम मै हू पिताने कुबेरके पुत्र नलकूबर के साथ मेराविवाह करदियाहै और मुझे अनेक प्रकारके मायाके यन्त्र सिखाये है उन्ही यन्त्रो से भरी

हिकुटिल श्वश्रू परतन्त्रवधूस्थिति) कुटिलसासों के आधीन होंकर सज्जन वधुओं का रहना बडा कष्ट-दायकहै एकसमय देवसेन वाणिज्यकेलिये बन्धुओंके कहनेसे वलभीपुरीके जानेकोउद्युक्तहुआ तबकीर्त्ति-सेनाउससेबोली कि हेआर्य्यपुत्र अवतकमैंने तुमसे कुछनहीं कहाथा परन्तु अवकहनापडता है तुम्हारी यहमाता मुझे तुम्हारे होनेपरभी अत्यन्त त्रासदेतीहै और तुम्हारे चलेजानेपर न जानिये क्याकरेगी सो मैं नहीं जानतीहूं यहसुनकर उसकेस्नेहसे घबराकर देवसेन डरताहुआ अपनीमाताके पासप्रणाम करके बोला कि हे अम्ब मैं इसकीर्त्तिसेनाको तुम्हेंसौंपे जाताहूं इससेतुम्हें कठोरताकरनी नहीं उचितहै क्योंकि यहसत्कुलमें उत्पन्नहुई इससे इसका सरलस्वभाव है यहसुनकर उसकी माता कीर्त्तिसेनाको वुलाकर त्यौरीबदलकर देवसेनसेबोली कि इससे पूछो तो मैंने क्याकियाहै यहघरमें भेदडालने के लिये तुमको बहकाती है हेपुत्रमुझे तो तुमदोनों समानहीहो यहसुनकर देवसेनका चित्तसावधान होगया ठीकहै (व्याजसप्रणयैर्वाक्यै र्जनन्याकोनवञ्च्यते) अपनी माताके कपटभरे प्रेमके वचनोंमें कौननहीं फँसता है ८९ कीर्त्तिसेनाभी उसके भयसे चकित होकर चुपखडीरही उसके दूसरेदिन देवसेन तो वलभीपुरीको चला गया और पतिके क्लेशसेव्याकुल उस कीर्त्तिसेनाके पास जोदासी नौकरथीं वहसव उसकी सास ने धीरे २ छुडादीं और एकदिन उसने अपनीदासीसे सलाहकरके कलिंगसेना को भीतर वुला कर नंगीकरके लातों से दांतोंसे और नखों से वडी ताडनाकरी और कहा कि हेदुष्टे तूमेरे पुत्रको भडकाती है फिरएकतहखानेमें से सव असवाव निकलवाकर उसखाली तहखाने में उसेवन्दकरके जंजीर लगादी और प्रतिदिन सायंकालके समय वह पापिनी उसको आधासकोराभर भातदेने लगी तदनन्तर उस ने शोचा कि इससमय इसका पतितो वहुत दूरहै जो यहइसीमें पडे २ मरजाय तो इसको फिकवाकर लोगोंसे कहदूंगी कि वह निकलगई इसप्रकार पापिनी साससे तहखानेमें डाली गई सुखके योग्य कीर्त्तिसेना रोदनकरके शोचने लगी कि धनवान् पति सत्कुलमें जन्म सौभाग्य और अच्छे आचरण इनसव सुलक्षणों के होनेपरभी सासकी कृपा से मुझे यह विपत्ति भोगनी पडी है इसीसे वाधव लोग कन्याके जन्म की निन्दा करतेहैं सास औरननदोंके आधीनहोकर कन्याओंको अनेक प्रकारके दुःख भोगने पडतेहैं इसप्रकार शोचतीहुई कीर्त्तिसेनाको अकस्मात् उसी तहखाने में एककुदाली मिलगई वह कुदाली क्याथी मानो ब्रह्माने उसके चित्तसे दुःख रूपीशल्य निकालकर वाहरडाल दियाथा उसी कुदाली से उसने सुरंग खोदी वह सुरंग भाग्यवश से उसीके निवासस्थान में जा निकली वहा उसके पूर्व जन्म के पुण्यके समान दीपक का प्रकाश होरहाथा उस समय थोडीहीसी रात्रिवाकी रही थी इस्से कीर्त्तिसेना थोडेसे वस्त्र और सुवर्ण वहांसे लेकर छिपकर नगरके वाहर चलीगई वहाजाके उसने शोचा कि इसप्रकारसे मुझे अपने पिताके यहाजाना तो उचित नहीं है क्योंकि वहाजाकरमैं क्याकहूंगी और लोग मुझपर कैसे विश्वासकरेंगे इस्सेअपनी युक्तिपूर्वक मुझको अपने पतिकेही पासजानाउचितहै क्योंकि (इहामुत्रचसाध्वीनापतिरेकागतिर्यतः) साध्वीस्त्रियों को इसलोक और परलोकमें पतिके सिवाय और कोई गतिनहींहै यह शोचकर उसने तडाग में स्नानकरके अपना भेषराजपुत्र का वनाया और वाजा-

कलिगसेनाको अपने घरलेजानेके लिये आज्ञामागी और कहा कि मैं इसको वहा इसके योग्यही भोजनदूगी राजाने उसके वचनसुनकर कलिगसेना के लेजानेकी आज्ञादेदी तब सोमप्रभा कलिंगसेना को यन्त्रसेवनेहुए विमानपर चढाके आकाशमार्गसे अपनी वडी वहिनके घरकोचली और क्षणभरमें विन्ध्याचल पर्व्वतपर मयासुरके मन्दिरमें स्वयंप्रभाके निकट पहुँची वहां कलिगसेनाने लम्बी २ जटा जिसके लटकरही हैं लबी मालाधारण किये श्वेत वस्त्रपहने हँसतीहुई उग्रतपको करनेवाली पार्वतीजी के समान जिसकी आकृतिहै ऐसी ब्रह्मचारिणी स्वयंप्रभाको देखा स्वयप्रभाने भी सोमप्रभाके कहनेसे प्रणाम करतीहुई कलिगसेनाको अतिथिसत्कारकरके फलभोजनकरनेकेलिये दिये उससमय सोमप्रभा ने कलिगसेनासे कहा कि हे सखीपद्मोंके नाशकरनेवाले पालेके समान तुम्हारे स्वरूपको नाशकरने वाली वृद्धावस्था इनफलोंके खाने से तुमको नहीआवेगी इसीलिये तुमको मैं स्नेहसे यहा लाईथी उस के यहवचन सुनकर कलिगसेनाने वह फलखाये और उसीसमय उसके सम्पूर्ण अगों में मानों अमृत सा सिचगया वहा कौतुकसे भ्रमण करतीहुई कलिगसेनाने उस नगरका उपवनदेखा उसकी बावडियोंमें सुवर्णके कमल खिलरहेथे वहाके वृक्षोंमें अमृतकेसमान स्वादिष्टफल लटकरहेथे उनपर अनेक २ प्रकारके सुवर्णमय पक्षी बैठेथे दूरसे उनवृक्षोंके देखनेसे मणिमय खभोंकी भ्रान्तिहोतीथी और शून्यस्थानमें दीवारकीभ्रान्ति होतीथी और जहादीवारवनीथी वहाशून्यकी भ्रान्तिहोतीथी जलमेंस्थलकी और स्थलमे जलकी भ्रान्तिहोतीथी वह उपवनक्याथा मानों मयासुरने अपनीमायासे कोई अपूर्व्वलोक वनायाथा पूर्व्वसमयमे सीताको ढूढनेको जोवानरलोग उसमे चलेगयेथे तबवह वहुतदिनोंतक उसीमें पडे २ स्वयप्रभाकी कृपासे बाहरनिकले इसप्रकारके आश्चर्य्यदायी उसउपवन और पुरको अच्छेप्रकार से देखकर और स्वयप्रभासे आज्ञालेकर वृद्धावस्थाके भयसेरहित कलिंग सेना सोमप्रभाके साथ उसी विमानपर चढके आकाशमार्गसे अपनेस्थानको आई और वहाआकर अपने मातापितासे वहाकासपूर्ण वृत्तान्तकहा वहभीसुनकर वहुतप्रसन्नहुये ६४ इसप्रकार उनदोनों सखियों के कुछदिन स्नेहपूर्वक व्यतीतहोनेपर एकदिन सोमप्रभा कलिगसेनासे बोली कि हेसखी जवतक तुम्हारा विवाह नहींहुआ है तभीतक मेरीमित्रताहै पीछे तुम्हारेपतिकेयहा मैं कैसेआसकूगी क्योंकि अपनीसखीके पतिको न देखना उचितहै और न उसकेयहा जानाउचित है (अवेर्वृकीवस्तुपाया स्वश्रूमांसानिखादति) जैसे भेडीके मासको भेडियेकी भिड़नीखाती है उसीप्रकार बहूकेमासको दुष्टसासखातीहै इससे औरभी तुम्हारे यहा मेराआना उचित न होगा इस विषयमें तुमको मैं एककथा सुनातीहू पाटलिपुत्रनाम पुरमें धनपालित नाम एक वडाधनी वणियारहता था उसके कीर्त्तिसेनानाम अत्यन्तरूपवती प्राणोंसे भी अधिकप्यारी कन्याथी उसने उसकन्याका विवाह मगधदेशकेनिवासी देवसेननाम महाधनवान् वणियेकेसाथ किया उस सज्जनदेवसेनके यहा उसकी दुष्टमाता गृहकी स्वामिनीथी क्योंकि उसका पिता मरगयाथा वह अपनी वधूकीर्त्तिसेनाको अपनेपुत्रको प्यारीदेखकर कोधसे अत्यन्त जाज्वल्यहोतीथी और पुत्रकेपरोक्षमें उसे वहुतत्रास दियाकरतीथी परन्तुकीर्त्तिसेना अपनेपतिसे कुछभी नहींकहतीथी ठीक है (कष्टा-

थी इसप्रकार तपस्वी के अन्तर्धान होजानेपर मानों अमृतसे तृप्त हुई भूख और प्याससे रहित वह कीर्ति-
सेना तपस्वी के बताये हुए मार्ग से चली कुछ दूर चलकर श्री सूर्य्य भगवान् को अस्त होते जानके
और किरणरूपी हाथों को फैलाकर पक्षियों के शब्दों से मानो एक रात्रि यहां ठहरजाओ ऐसा कहनेपर
कीर्तिसेना किसी बड़े वृक्ष की जड़ के गृहके समान खोखलमें चली गई और उसका द्वार किसी दूसरे काठ
से बन्द करलिया सायंकाल के समय उसने छिद्रों में से देखा कि एक बड़ी भयंकर राक्षसी अपने बालकों
को लिये चली आती है उसे देखकर इसको यह भय हुआ कि अन्य विपत्तियों से तो मैं बचआई हूं परन्तु
यह राक्षसी आज मुझे खाडालेगी उस तपस्वी को तो यह वृत्तान्त विदितही न था इस हेतुसे वह अपने
बालकों समेत वृक्षपर चढ़गई उससमय उसके बालकोंने अपनी माता राक्षसी से कहा कि हे माता कुछ
भोजन दो तब वह बोली कि आज मुझे स्मशानमें भी जाकर कुछ भोजन नहीं मिला और डाकिनियों
से भी मैंने मांगा परन्तु उन्होंने भी मुझे भाग नहीं दिया इसी खेदसे मैंने भैरवनाथजी से प्रार्थना भी कर
न कुछ मुझसे नाम तथा वंशको पूछकर बोले कि भयंकरी तू स्वच्छन्दपूर्णके वनमें उत्पन्न होने के कारण यहाँ
कुलीन है इससे यहांसे थोड़ीदूर पर वसुदत्तपुर नाम नगरमें तू जा वहाँ वसुदत्तनाम बड़ा धर्मवान् राजा
है वही इस सम्पूर्ण वनकी रक्षा करता है और पथिकोंसे थोड़ासा कर लेकर चोरोंसे उनकी रक्षा करता है
एकसमय वह राजा वनमें शिकार खेलनेके लिये आया और शिकार खेलकर थकके सोगया
उससमय एक कनखजूरा उसके कानमें चलागया परन्तु उसे नहीं मालूम हुआ और कानके भीतर
जाकर उस कनखजूरेने बहुतसे बच्चे दिये हैं इसरोगसे राजा वसुदत्त अत्यन्त दुर्बल होगया है वैद्यलोग
उसके इस रोगको नहीं जानसक्ते हैं जो दूसरा भी कोई न जानेगा तो कुछकालमें राजाकी मृत्युहो-
जायगी राजाके मरजानेपर उसका मांस तुम अपनी मायासे हरकरखाना उसके खानेमें छ महीनेतक
तुम्हारी तृप्तिहोगी इसप्रकारसे भैरवजीने मुझसे यह सन्दिग्धवचन कहे हैं इसमें हे बालको मैं क्या
करूं इसराक्षसी के यह वचन सुनकर वह बोले कि हे माता जो इसरोगको जानकर कोई दूसरा पुरुष
अच्छा करदे तो वह राजा जी सक्ता है और जो जी सक्ता है तो यह रोग किसप्रकारसे जा सक्ता है अपने
पुत्रोंके यह वचन सुनकर वह राक्षसी बोली कि इसरोगके दूर होजानेपर वह राजा अवश्य जी सक्ता है मैं
तुम्हें इसरोगके दूरहोनेका उपाय बतलाती हूं पहले राजाके शिरमें गर्मघृत लगाकर उसे मध्याह्नकी अ-
त्यन्त कड़ी धूपमें बैठावे फिर उसके कानमें एक बांसकी नली जिसमें बराबर छिद्र होय लगादे और उस
नलीके दूसरी ओर से शीतलजलसे भरेहुए घड़ेपर छेद दारके गन्दा करके उसछिद्रमें लगादे इस
उपायसे स्वेद तथा धूपसे व्याकुलहोकर सम्पूर्ण कनखजूरे शिरसे निकलकर कानकेद्वारा नलीमेंहोकर
शीतलजलके लोभसे घड़ेमें गिरपड़ेंगे इसउपायसे राजा बड़ेरोगसे छूटजायगा इसप्रकार अपने पुत्रोंसे
कहतीहुई उसराक्षसीसे इस सम्पूर्ण वृत्तान्तको सुनकर खोखलमें पड़ीहुई कीर्तिसेना सोचनेलगी कि
जो मैं यहांसे बचजाऊंगी तो इसीयुक्तिसे राजा वसुदत्तको नीरोग करूंगी यही राजा थोड़ासा करलेकर
इसवनकी रक्षा करता है इसीलोभसे सम्पूर्ण वाणिये इसमार्गमें आते हैं यत्नात् समुद्रदत्तने भी मुझे

रमें जाकर कुछ सुवर्ण वेचके उसदिन किसी वाणियेके यहा निवास किया १०० दूसरेदिन वलभीपुरी को जाने की इच्छा करते हुए, समुद्रसेन वाणिये के साथ परिचय करके उसी के साथ राजपुत्र का भेषवना कर वलभीपुरी को चली और उस वैश्य से उसने कहा कि मुझे गोत्री भाइयों ने यहा क्लेश दिया है इस्से में तुम्हारे साथ वलभीपुरी मे अपने सुजन से मिलने को चलता हू यह सुनकर उस वैश्य ने उसे राजपुत्र जानकर गौरवसे मार्ग मे उसकी वडी सेवा करनेलगा कुछदूर चलकर वह वणिया अपने साथियों समेत साधारण मार्ग को छोडकर वनके मार्ग की ओर चला क्योंकि साधारण मार्ग में बहुत साकर पुडताथा कुछ दिनोंके उपरान्त वनके द्वारपर पहुचकर जब सम्पूर्ण लोग वहां सायकालके समय टिके उससमय यमराजकी दूती के समान शृगालीने भयकर शब्द किया उस शब्दको सुनकर उसके जाननेवाले वैश्यलोग अपने२ शस्त्रोंको लेकर सबओरसे अपने सम्पूर्णपदार्थों को घेरकर सावधानीसे वैठे उससमय चोरों की आगे चलनेवाली सेना के समान सब ओर से अन्धकार के आजानेपर पुरुष वेषधारी कीर्त्तिसेना शोचनेलगी कि पापियो का कर्म्म वश के समान वढताही जाताहै देखो मेरीसास के कर्म्मों का फल मुझे यहा भी मिला पहले मृत्युके समान सास के कोपने मुझे भक्षणकिया तब मैं द्वितीय गर्भवास के समान तहखाने मे डालीगई भाग्यवश से उससे भी निकलकर मानों दूसरीवार जन्मलेकर धीरे २ यहा आई अव यहा आकर भी मुझे प्राणो का सन्देह होरहा है जो चोर मुझे यहां मारडालेंगे तो वह वैरिणी सास मेरेपतिसे कहैगी कि वह किसी के साथ भागगई और जो वस्त्रों के खुलजाने से मुझे कोई पुरुष स्त्री जानजायगा तो मुझे मृत्यु अच्छी है परन्तु अपने आचार का भ्रष्ट करना उचित नही है इस्सेमुझे अपनी रक्षा करनीचाहिये इसमित्र वणिये की अपेक्षा नहीं करनी चाहिये क्योंकि मित्रादिको को छोडकर स्त्रियों को अपने सतीधर्म्म की रक्षाकरनीही योग्य है यह निश्चयकरके उसने ढूँढकर वृक्षों के वीच में एकघर के समान बनाहुआ गढा देखा मानों पृथ्वी ने रहने के लिये उसेस्थानदियाथा उसने उसके भीतर जाकर और तृण तथा पत्ते आदिकों से अपने शरीरको ढककर पति के मिलने की आशा से चित्तको सावधान करके वहीं स्थिति करी इसके उपरान्त अर्द्ध रात्रिके समय शस्त्रधारणकिये हुए बहुत से चोरो की सेनाने आकर सम्पूर्ण साथियो समेत समुद्रदत्त को घेरलिया उससमय चोररूपी मेघगर्जनेलगे शस्त्रो की ज्वालारूपी विजली चमकनेलगी और रुधिररूपी जल वरसने लगा इसप्रकार उसयुद्धरूपी वर्षा में साथियो समेत समुद्रसेन को मारकर वह वलवान् चोर सम्पूर्ण वन को लेकर चलेगये उससमय चोरों के कोलाहल को सुनकर भी जो कीर्त्तिसेना के प्राणनहीं निकले इसमें केवल भाग्यही कारण है १२० तदनन्तर रात्रि के व्यतीत होजानेपर और सूर्य्य भगवान् के उदित होजाने पर वह कीर्त्तिसेना उस गढे से बाहर निकली निस्सन्देह अपने व्रत को नहीं भंगकरनेवाली पतिव्रतास्त्रियों को आपत्ति में देवतालोग आपही आकर वचाते हैं क्योंकि उस निर्ज्जनवन में सिंह ने उसे देखकर भी छोडदिया और किसी ओर से किसी तपस्वी ने आकर सम्पूर्ण वृत्तान्त पूछकर अपने कमण्डल से जल पिलाकर उसे सावधान किया और मार्ग भी वता

त्यो उस फिर तपस्वी के अन्तर्द्धान होजानेपर मानो अमृतसे तृप्तहुई क्षुधा और तृषासे रहित रही थी कीर्त्ति-
सेना तपस्वी के बतायेहुए मार्ग में चली कुछदूर चलकर श्री सूर्य्य भगवान् को अस्त होते जानकर
और किरण रूपी हाथोंको फैलाकर पक्षियोंके शब्दोंसे मानो एकरात्रि यहां ठहरजाओ ऐसा कहनेपर
कीर्त्तिसेना किसी बड़े वृक्षकी जड़ के गृहके समान खोखलमें चलीगई और उसका द्वार किसी दूसरे काठ
से बन्द करलिया सायंकाल के समय उसने छिद्रोंमें से देखा कि एक बड़ी भयकर राक्षसी अपने बालकों
को लिये चली आती है उसे देखकर इसको महाभय हुआ कि अन्य विपत्तियोंसे तो मैं बचआई हूं परन्तु
यह राक्षसी आज मुझे खाडालेगी उस राक्षसी को जो यह वृत्तान्त विदितही न था इस हेतुसे वह अपने
बालकों समेत वृक्षपर चढ़गई उससमय उसके बालकोंने अपनी माता राक्षसी से कहा कि हे माता कुछ
भोजन दो तब वह बोली कि आज मुझे श्मशानमेंभी जाकर कुछ भोजन नहीं मिला और डाकिनियों
से भी मैंने मांगा परन्तु उन्होंनेभी मुझे भाग नहीं दिया इसी खेदसे मैंने भैरवनाथजी से प्रार्थनाकी तब
उन्होंने मुझसे नाम तथा वंशको पूछकर बोले कि भयकरी तू खरदूषणके वंशमें उत्पन्न होनेके कारण बड़ी
कुलीन है इससे यहांसे थोड़ीदूर पर वसुदत्तपुर नाम नगरमें तूजा वहां वसुदत्तनाम बड़ा धर्मवान् राजा
है वही इस सम्पूर्ण वनकी रक्षा करता है और पथिकोंसे थोड़ासा कर लेकर चोरोंसे उनकी रक्षा करता है
एकसमय वह राजा वनमें शिकार खेलनेके लिये आया और शिकार खेलकर थकके यहीं सोगया
उससमय एक खनखजूरा उसके कानमें चलागया परन्तु उसे नहीं मालूम हुआ और कानके भीतर
जाकर उस खनखजूरेने बहुतसे बच्चे दिये हैं इसरोगसे राजा वसुदत्त अत्यन्त दुर्बल होगया है वैद्यलोग
उसके इस रोगको नहीं जानसके हैं जो दूसरा भी कोई न जानेगा तो कुछकालमें राजाकी मृत्यु हो-
जायगी राजा के मरजानेपर उसका मांस तुम अपनी मायासे हरकर खाना उसके खानेसे छःमहीनेतक
तुम्हारी तृप्ति होगी इसप्रकारसे भैरवजीने मुझसे यह सन्दिग्ध वचन कहे हैं इससे हे बालको मैं क्या
करूं उस राक्षसी के यह वचन सुनकर वह बोले कि हे माता जो इसरोगको जानकर कोई दूसरा पुरुष
अच्छा करदे तो वह राजा जी सक्ता है और जो जी सक्ता है तो यह रोग किसप्रकारसे जा सक्ता है अपने
पुत्रोंके यह वचन सुनकर वह राक्षसी बोली कि इसरोगके दूर होजानेपर वह राजा अवश्य जी सक्ता है मैं
तुम्हें इसरोगके दूरहोनेका उपाय बतलाती हूं पहले राजाके शिरमें गर्म घृत लगाकर उसे मध्याह्न की अ-
त्यन्त कड़ी धूपमें बैठावे फिर उसके कानमें एक बांसकी नली जिसमें बराबर छिद्र होय लगादे और उस
नलीके दूसरी ओरसे शीतलजलसे भरेहुए घड़ेपर छेद दोरके रोगन्दा करके उसछिद्र में लगादे इस
उपायसे स्वेद तथा धूपसे व्याकुल होकर सम्पूर्ण खनखजूरे शिरसे निकलकर कानके द्वारा नलीमें होकर
शीतलताके लोभसे घटमें गिरपड़ेंगे इसउपायसे राजा बड़ेरोगसे छूटजायगा इसप्रकार अपने पुत्रोंसे
कहतीहुई उस राक्षसीसे इस सम्पूर्ण वृत्तान्तको सुनकर खोखलमें खड़ीहुई कीर्त्तिसेना सोचनेलगी कि
जो मैं यहांसे बचजाऊंगी तो इसीयुक्तिसे राजा वसुदत्तको नीरोग करूंगी यही राजा थोड़ासा करलेकर
इसवनकी रक्षा करता है इसीलोभसे सम्पूर्ण बणिये इसमार्गमें आते हैं यह बात समुद्रदत्तने भी मुझसे

कही थी इस्से मेरापतिभी इसी मार्ग से आवेगा तो मैं इसवनसे वसुदत्तपुर में जाकर राजाको नीरोग करके वहीं अपने पतिके आनेकी प्रतीक्षाकरूंगी इसप्रकार विचारतीहुई कीर्त्तिसेना बड़ेखेदसे उसरात्रि को व्यतीत करके प्रातःकाल राक्षसों के चलेजानेपर उसखोलमें से निकली और धीरे २ वहा से चली कुछदूरचलकर मध्याह्नके समय एक साधूगोपाल उसेमिला उसके पासजाकर कीर्त्तिसेना ने पूछा कि यह कौनसा प्रदेशहै यह सुनकर उसकी सुकुमारता और मार्ग गमनके क्लेशको देखकर वह गोपाल दयापूर्व्वक बोला कि देखो यह सन्मुख वसुदत्तनाम राजाका वसुदत्तपुर नामनगर है यह महात्माराजा रोगसे दो एकदिन में मरने चाहताहै यह सुनकर कीर्त्तिसेना उस्से बोली कि जो मुझे उसके पासकोई लेचले तो मैं उसके रोगको दूरकरदूगा तब वह गोपाल बोला कि मैं इसीपुरमें जाताहू तुम मेरे साथ चलो मैं तुम्हे राजाकेपास पहुँचानेका उद्योग करूगा उसके वचनोंको स्वीकार करके कीर्त्तिसेना उसीके साथ वसुदत्तपुरको गई वहा जाकर उसगोपालने राजाके रोगको देखकर किसीदुखित प्रतीहारसे कहा कि यह वैद्यराजाके रोगको दूरकरनेको कहताहै यह सुनकर प्रतीहार राजासे निज्ञापनाकरके और आज्ञा लेकर कीर्त्तिसेनाको उसके पासलेगया रोगसे पीडित राजाभी उसके अद्भुत स्वरूपको देखतेही सावधानहोगया ठीकहै (वेत्त्यात्मैवहिताहितम्) आत्माही हिताहित को पहचानताहै और बोला कि हेसुलक्षण जोतुम मेरे इसरोगको दूरकरदोगे तो मैं तुम्हें अपना आधा राज्यदेदूंगा मैंने स्वप्नमे देखा था कि किसी स्त्री ने मेरीपीठपरसे काला कम्वल उतारलिया है इस्से मुझे निश्चय होताहै कि आप मेरे इस रोगको अवश्यदूर करियेगा राजाके यहवचन सुनकर कीर्त्तिसेना बोली कि हे महाराज आजतो दिन व्यतीतहोगयाहै कलमें आपकेरोगको दूरकरदूगा आपअपने धैर्य्यको न छोडियेगा यह कहकर उसने राजाके शिरपर गौका घृतमलवाया उस्से राजाकी पीडाकमहोगई और निद्राआगई तब सम्पूर्ण लोग कीर्त्तिसेनाकी बडाईकरके बोले कि यहकोई देवता हमलोगोंके पुण्यसे वैद्यकारूप धारणकरके आयाहै रानीनेभी राजाकेयोग्य सम्पूर्ण उत्तम२ सामग्रियोंसे उसका सेवनकरके रात्रिकेसमय दासियोंसमेत एक वडासुन्दर स्थान उसके शयनकरनेकोदिया १६९ इसकेउपरान्त दूसरेदिन मध्याह्नकेसमय सम्पूर्ण मंत्री और रानियोंके सन्मुख कीर्त्तिसेनाने राक्षसीकीनताई उस अपूर्व्वयुक्तिकेद्वारा राजाकेशिरसे डेढसो खन खजूरे कानकेमार्गसे निकाले उनखनखजूरोंको घटेमेंरखकर दूध और घी आदि पुष्टपदार्थोंसे राजाकोतृप्त किया क्रमसेरोगके निवृत्तहोजानेपर राजा सावधानहोगया और घडे मे उनखनखजूरोको देखकर सपूर्ण लोगोंको वडाआश्चर्यहुआराजानेभी उनकीडोको देखकर भय तथाआनदसे युक्तहोकर अपनापुनर्जन्म माना और स्नानकरनेकेपीछे उत्सवकरके कीर्त्तिसेनाको अपना आधाराज्य देनेका प्रस्तावकिया जब कीर्त्तिसेनाने आधाराज्य नहीं स्वीकारकिया तब गाव हाथी घोडे तथा सुवर्ण देकर उसेप्रसन्नकिया सम्पूर्ण रानी तथा मन्त्रियोंनेभीकहा कि इसने हमारे स्वामीके प्राणोंकीरक्षाकीहै इस्सेयहहमारा पूज्यहै और वहुतसे वस्त्र तथा सुवर्णके आभूषणउसेदिये कीर्त्तिसेना उनसम्पूर्ण पदार्थोंको राजाके हाथमें सौंपकर और मैं यहा कुछदिन रहूगा यहकहकर अपने पतिकी वाटदेखती हुई वहीं रहनेलगी इसके उपरान्त सपूर्ण

लोगोंसे आदरकीगई उसकीर्त्तिसेनाने पुरुष वेषसे वहां कुछदिन रहकर अपने पतिदेवसेनको वलभीसे वहा,आयाहुआसुना और जिसवैश्य पथिकसमाजमें उसका पतिथा उसे उसनगरी में आयाहुआ जानके नवीन मेघको मयूरीके समान उसने अपने पतिको वैश्यसमूहमें जाकरदेखा बहुतकाल उत्कण्ठा से व्याकुल चित्तसे आनन्दके आंसुओंका अर्घदेतीहुई कीर्त्तिसेनापतिके पैरोंपरगिरपडीवहभी दिनमें सूर्य्यकी किरणोंसे अलक्षित चन्द्रमाकी मूर्त्तिके समान पुरुषवेषमें छिपीहुई अपनी प्रियाको पहचानगया और उसके मुखरूपी चन्द्रमाको देखकर चन्द्रकान्त (चन्द्रमाके समान सुन्दर और चन्द्रकान्तमणि) उसे देवसेनका हृदय जोनहीं गलितहुआ यह वडा आश्चर्य्यहै तदनन्तर कीर्त्तिसेनाको अपने स्वरूप के प्रकट करनेपर देवसेनको वडा आश्चर्य्यहुआ कि यहक्यावातहै और उसके साथके सपूर्ण वणियों कोभी वडा आश्चर्य्य हुआ उससमय इसवृत्तान्त को सुनकर राजावसुदत्तभी वहा आश्चर्य्य पूर्व्वक आया और उसने कीर्त्तिसेनासे पूछा कि यह क्यावातहै तब उसने अपनी सासके दुराचारसेहुए अपने सपूर्ण वृत्तान्तका वर्णनकिया वहसब वृत्तान्त सुनकर उसका पति देवसेन अपनी मातासे विमुखहोगया और उसेक्रोधक्षमा आश्चर्य तथा हर्ष एकसाथहीहुए १८७ कीर्त्तिसेनाके इसअद्भुत चरित्रको सुनकर सम्पूर्ण लोग आनन्दपूर्व्वक कहतेथे कि पतिकी भक्तिरूपी रथपरचढकर शीलरूपी कवचको धारणकर और धर्मरूपी सारथीको साथले साध्वीपतिव्रतास्त्री बुद्धिरूपी शस्त्रसे विजयको प्राप्तहोती हैं राजाने भी कहा कि पतिके निमित्त इतनाक्लेशसहकर इसने श्रीरामचन्द्रके निमित्त क्लेशसहनेवाली सीतादेवीको भी जीतलिया इस्से प्राणोंकी रक्षाकरनेवाली यहमेरीधर्मकी वहन है इसप्रकार प्रशंसाकरतेहुए राजासे कीर्त्तिसेनाबोली कि हेमहाराज जोआपके दियेहुए ग्राम हाथी घोडे तथा रत्नादिक पदार्थ मैंने आपको सोंपदिये थे वह मेरेपतिको देदीजिये उसके यह वचनसुनकर राजाने ग्रामादिक सम्पूर्ण पदार्थ देवसेनको देदिये और प्रसन्नहोके उसको पक्का लेखभी लिखदियो इसप्रकार राजाके दियेहुये और वाणिज्यमें उत्पन्नकियेहुए धनसे देवसेन वडा ऐश्वर्य्यवान् होकर अपनी माताको त्यागकरके कीर्त्तिसेनाकी प्रशंसा करताहुआ उसी वसुदत्तपुरमें रहनेलगा और कीर्त्तिसेनाभी अपने चरित्रके प्रभावसे वडेयशको पाकर और उसपापिनी सासको छोडकर सपूर्ण ऐश्वर्य्यको सुखपूर्व्वकभोगतीहुई अपनेपतिकेपास मूर्त्तिमती पुण्योंके फलकी समृद्धिकेसमान रहनेलगी इसप्रकार दुर्दैवके योगसे दुःखको सहकरविपत्तिमेंभी अपने चरित्रकी रक्षाकरतीहुई साध्वीस्त्रिया अपने वडे सत्वके प्रभावसे अपनी रक्षाकरके अपना और पतिका भी कल्याण करती है हेसखी बहुओंको प्राय सास और नन्दोकेद्वारा इसीप्रकारके दुःखभोगने पडते हैं इस्से मैं तुम्हारे लिये ऐसी सुसराल चाहती हू जहा दुष्टसास और नन्द न होय सोमप्रभा से इसअद्भुत आनन्ददायिनी कथाको सुनकर कलिंगसेना अत्यन्त प्रसन्नहुई और मानो इसीविचित्र कथाको समाप्त जानकर सूर्य्य भगवान्के अस्ताचल पर जानेके समय सोमप्रभा कलिंगसेना से मिलकर अपने स्थानको चलीगई १९९ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायामदनमञ्चुकालम्बके तृतीयस्तरङ्गः ३॥

कही थी इस्से मेरापतिभी इसी मार्ग से आवेगा तो मैं इसकनसे वसुदत्तपुर में जाकर राजाको नीरोग करके वहीं अपने पतिके आनेकी प्रतीक्षाकरूगी इसप्रकार विचारतीहुई कीर्त्तिसेना वडेखेदमें उसरात्रि को व्यतीत करके प्रातःकाल राक्षसो के चलेजानेपर उसखोलमें से निकली और धीरे २ वहा से चली कुछदूरचलकर मध्याह्नके समय एक साधूगोपाल उसेमिला उसके पासजाकर कीर्त्तिसेना ने पूछा कि यह कौनसा प्रदेशहै यह सुनकर उसकी सुकुमारता और मार्ग गमनके क्लेशको देखकर वह गोपाल दयापूर्व्वक बोला कि देखो यह सन्मुख वसुदत्तनाम राजाका वसुदत्तपुर नामनगर है यह महात्माराजा रोगसे दो एकदिन में मरने चाहताहै यह सुनकर कीर्त्तिसेना उस्से बोली कि जो मुझे उसके पासकोई लेचले तो मैं उसके रोगको दूरकरदूगा तब वह गोपाल बोला कि मैं इसीपुरमें जाताहू तुम मेरे साथ च लो मैं तुम्हें राजाकेपास पहुँचानेका उद्योग करूगा उसके वचनोंको स्वीकार करके कीर्त्तिसेना उसीके साथ वसुदत्तपुरको गई वहा जाकर उसगोपालने राजाके रोगको देखकर किसीदुखित प्रतीहारसे कहा कि यह वैद्यराजाके रोगको दूरकरनेको कहताहै यह सुनकर प्रतीहार राजासे निवेदनाकरके औरआज्ञा लेकर कीर्त्तिसेनाको उसके पासलेगया रोगसे पीडित राजाभी उसके अद्भुत स्वरूपको देखतेही सावधानहोगया ठीकहै (वेत्यात्मैवहिताहितम्) आत्माही हिताहित को पहचानताहै और बोला कि हेसु लक्षण जोतुम मेरे इसरोगको दूरकरदोगे तो मैं तुम्हें अपना आधा राज्यदेदूंगा मैने स्वप्नमें देखा था कि किसी स्त्री ने मेरीपीठपरसे काला कम्बल उतारलिया है इस्से मुझे निश्चय होताहै कि आप मेरे इस रोगको अवश्यदूर करियेगा राजाके यहवचन सुनकर कीर्त्तिसेना बोली कि हे महाराज आजतो दिन व्यतीतहोगयाहै कलमें आपकेरोगको दूरकरदूगा आपअपने धैर्य्यको न छोडियेगा यह कहकर उसने राजाके शिरपर गौका घृतमलवाया उस्से राजाकी पीडाकमहोगई और निद्राआगई तब सम्पूर्ण लोग कीर्त्तिसेनाकी वडाईकरके बोले कि यहकोई देवता हमलोगोंके पुण्यसे वैद्यकारूप धारणकरके आयाहै रानीनेभी राजाकेयोग्य सम्पूर्ण उत्तम २ सामग्रियोंसे उसका सेवनकरके रात्रिकेसमय दासियोंसमेत एक वडासुन्दर स्थान उसके शयनकरनेकोदिया १६६ इसकेउपरान्त दूसरेदिन मध्याह्नकेसमय सम्पूर्ण मन्त्री और रानियोंके सन्मुख कीर्त्तिसेनाने राक्षसीकीवताई उस अपूर्वयुक्तिकेद्वारा राजाकेशिरसे डेढसौ खन खजूरे कानकेमार्गसे निकाले उनखनखजूरोको घडेमेंरखकर दूध और घी आदि पुष्टपदार्थोंसे राजाकोतृप्त किया क्रमसेरोगके निवृत्तहोजानेपर राजा सावधानहोगया और घडे में उनखनखजूरोंको देखकर सपूर्ण लोगोंको वडाआश्चर्यहुआराजानेभी उनकीडोको देखकर भय तथाआनदसे युक्तहोकर अपनापुनर्जन्म माना और स्नानकरनेकेपश्चात् उत्सवकरके कीर्त्तिसेनाको अपना आधाराज्य देनेका प्रस्तावकिया जब कीर्त्तिसेनाने आधाराज्य नहीं स्वीकारकिया तब गाव हाथी घोडे तथा सुवर्ण देकर उसेप्रसन्नकिया सं पूर्ण रानी तथा मन्त्रियोंनेभीकहा कि इसने हमारे स्वामीके प्राणोंकीरक्षाकीहै इस्सेयहहमारा पूज्यहै और वहुतसे वस्त्र तथा सुवर्णके आभूषणउसेदिये कीर्त्तिसेना उनसपूर्ण पदार्थोंको राजाके हाथमें सौंपकर और मैं यहा कुछदिन रहूंगा यहकहकर अपने पतिकी वाटदेखती हुई वहीं रहनेलगी इसके उपरान्त सपूर्ण

लोगोंसे आदरकीगई उसकीर्त्तिसेनाने पुरुष वेषसे वहां कुछदिन रहकर अपने पतिदेवसेनको वलभीसे चहा आयाहुआसुना और जिसवैश्य पथिकसमाजमें उसका पतिथा उसे उसनगरीमें आयाहुआ जानके नवीन मेघको मयूरीके समान उसने अपने पतिको वैश्यसमूहमें जाकरदेखा वहुतकाल उत्कण्ठा से व्याकुल चित्तसे आनन्दके आसुओंका अर्घदेतीहुई कीर्त्तिसेनापतिके पैरोंपरगिरपडी वहभी दिनमें सूर्य्यकी किरणोंसे अलक्षित चन्द्रमाकी मूर्त्तिके समान पुरुषवेषमें छिपीहुई अपनी प्रियाको पहचानगया और उसके मुखरूपी चन्द्रमाको देखकर चन्द्रकान्त (चन्द्रमाके समान सुन्दर और चन्द्रकान्तमणि) उसे देवसेनका हृदय जोनहीं गलितहुआ यह वडा आश्चर्य्यहै तदनन्तर कीर्त्तिसेनाको अपने स्वरूप के प्रकट करनेपर देवसेनको वडा आश्चर्य्यहुआ कि यहक्यावातहै और उसके साथके सपूर्ण वणियों कोभी वडा आश्चर्य्य हुआ उससमय इसवृत्तान्त को सुनकर राजावसुदत्तभी वहां आश्चर्य्य पूर्व्वक आया और उसने कीर्त्तिसेनासे पूछा कि यह क्यावातहै तब उसने अपनी सासके दुराचारसेहुए अपने सपूर्ण वृत्तान्तका वर्णनकिया वहसव वृत्तान्त सुनकर उसका पति देवसेन अपनी मातासे विमुखहोगया और उसेक्रोधक्षमा आश्चर्य्य तथा हर्ष एकसाथहीहुए १८७ कीर्त्तिसेनाके इसअद्भुत चरित्रको सुनकर सम्पूर्ण लोग आनन्दपूर्व्वक कहतेथे कि पतिकी भक्तिरूपी रथपरचढकर शीलरूपी कवचको धारणकर और धर्मरूपी सारथीको साथले साध्वीपतिव्रतास्त्री बुद्धिरूपी शस्त्रसे विजयको प्राप्तहोती है राजाने भी कहा कि पतिके निमित्त इतनाक्लेशसहकर इसने श्रीरामचन्द्रके निमित्त क्लेशसहनेवाली सीतादेवीको भी जीतलिया इस्से प्राणोंकी रक्षाकरनेवाली यहमेरीधर्मकी वहन है इसप्रकार प्रशंसाकरतेहुए राजासे कीर्त्तिसेनावोली कि हेमहाराज जोआपके दियेहुए ग्राम हाथी घोडे तथा रत्नादिक पदार्थ मैंने आपको सौंपदिये थे वह मेरेपतिको देदीजिये उसके यह वचनसुनकर राजाने ग्रामादिक सम्पूर्ण पदार्थ देवसेनको देदिये और प्रसन्नहोके उसको पक्का लेखभी लिखदिया इसप्रकार राजाके दियेहुये और वाणिज्यमें उत्पन्नकियेहुए धनसे देवसेन वडा ऐश्वर्य्यवान् होकर अपनी माताको त्याग करके कीर्त्तिसेनाकी प्रशंसा करताहुआ उसी वसुदत्तपुरमें रहनेलगा और कीर्त्तिसेनाभी अपने चरित्रके प्रभावसे वडेयशको पाकर और उसपापिनी सासको छोड़कर सपूर्ण ऐश्वर्य्यको सुखपूर्व्वकभोगतीहुई अपनेपतिकेपास मूर्त्तिमती पुण्योंके फलकी समृद्धिके समान रहनेलगी इसप्रकार दुर्दैवके योगसे दुःखको सहकरविपत्तिमेंभी अपने चरित्रकी रक्षाकरतीहुई साध्वीस्त्रियां अपने वडे सत्वके प्रभावसे अपनी रक्षाकरके अपना और पतिका भी कल्याण करती हैं हेसखी वहुओंको प्राय सास और नन्दोंकेद्वारा इसीप्रकारके दुःखभोगने पड़ते हैं इस्से मैं तुम्हारे लिये ऐसी सुसराल चाहती हूं जहां दुष्टसास और नन्द न होय सोमप्रभा से इसअद्भुत आनन्ददायिनी कथाको सुनकर कलिंगसेना अत्यन्त प्रसन्नहुई और मानो इसीविचित्र कथाको समाप्त जानकर सूर्य्य भगवान्के अस्ताचल पर जानेके समय सोमप्रभा कलिंगसेना से मिलकर अपने स्थानको चलीगई १८८॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांमदनमञ्चुकालम्बकेतृतीयस्तरङ्ग ३॥

॥ इसके उपरान्त अपने स्थान को गई हुई सोमप्रभा के मार्ग को स्नेह से देखने के उपरान्त आनन्द युक्त हुई कलिङ्गसेना को आकाश मार्ग से जाते हुए मदनवेग नाम युवा विद्याधरने देखा कि जो रूप की इन्द्रजाल की पिटारी (डबिया) के समान अपने रूप से त्रिलोकी को मोहित करनेवाली कलिङ्गसेना को देखकर उस का चित्त कामसे पीड़ित हुआ तब उसने विचारा कि विद्याधरी स्त्रियों क्या हैं और अप्सराओं की भी क्या गणनी है इस मानुषी का कैसा अद्भुत स्वरूप है जो यह मेरी स्त्री न हुई तो मेरा जीवन ही व्यर्थ है परन्तु मैं विद्याधर होकर इस मानुषी से कैसे संसर्ग करूं यह सोचकर उसने प्रज्ञप्ति नाम विद्या का ध्यान किया ध्यान करते ही वह विद्या साक्षात् प्रकट होकर बोली कि यह मानुषी नहीं है राजा कलिङ्गदत्त के यहां यह कोई अप्सरा शाप से भ्रष्ट होकर उत्पन्न हुई है विद्या के यह वचन सुनकर मदनवेग प्रसन्न होके अपने स्थान को चला गया और वहां अन्य सम्पूर्ण कार्य्यों को छोड़कर कामसे पीड़ित होके यह विचारने लगा कि जो मैं हठसे इसको हरलाऊं तो यह मुझे योग्य नहीं है क्योंकि हठपूर्वक स्त्रियों के साथ भोग करने से मेरी मृत्यु होजायगी यह मुझे शाप होचुका है इससे इसकी प्राप्ति के निमित्त मुझे तप करके श्री शिवजी का आराधन करना चाहिये क्योंकि सम्पूर्ण कल्याण तपही के आधीन है और मेरे लिये इससे अन्य कोई उपाय ही नहीं है यह निश्चय करके दूसरे दिन मदनवेग ऋषभ पर्व्वत पर जाकर एक पैर से खड़ा हो निराहार होके तप करने लगा थोड़े काल के उपरान्त उसके तपसे प्रसन्न हुए पार्वती पति शीघ्रप्रसाद श्री महादेवजी प्रकट हुए और प्रणाम करते हुए मदनवेग से बोले कि इस कलिङ्गसेना नाम कन्या का रूप सम्पूर्ण संसार में विख्यात है इसके समान रूपवान् पति संसार में नहीं है केवल वत्स देश का स्वामी राजा उदयन है और वह इसे चाहता भी है परन्तु वासवदत्ता के भय से प्रकट होकर उस के पिता से मांगता नहीं है और कलिङ्गसेना भी सोमप्रभा के मुख से उसके रूप की प्रशंसा सुनके उसके रूप में लुब्ध होकर उसी के साथ स्वयम्बर करने की इच्छा करती है इस से जब तक उनका विवाह होवे उस के बीच ही में उदयन का रूप धारण करके तुम इसके साथ गान्धर्व विवाह करो इस प्रकार श्री शिवजी के वचन सुनकर और उनको प्रणाम करके मदनवेग कालकूट नाम पर्व्वत के तटपर अपने स्थान को चला गया ॥ १८ ॥ इस बीच में सोमप्रभा आकाशगामी विमान पर चढ़कर प्रतिदिन प्रातःकाल तक्षशिलापुरी में कलिङ्गसेना के पास आती थी और सायङ्काल को चली जाती थी एक दिन क्रीड़ा करते करते कलिङ्गसेना ने सोमप्रभा से एकान्त में कहा कि हे सखी मैं जो तुमसे यह बात कहती हूं इसे किसी से मत कहना मैं जानती हूं कि मेरा विवाह होनेवाला है क्योंकि बहुत से राजा लोगों ने मेरे मांगने के लिये अपने अपने दूत भेजे थे उनको मेरे पिताने किसी बहाने से टालदिया परन्तु श्रावस्तीपुरी के स्वामी राजा प्रसेनजित के दूतका बड़ा सत्कार किया है और मेरी माता भी प्रसेनजित को बहुत श्रेष्ठ समझती है इससे मैं

[illegible] हमारे [illegible] कुल [illegible]

और पाण्डवों की पितामही अम्बा अम्बालिकादिक उत्पन्न हुई थीं इससे हे सखी

[illegible] निश्चय यह कलिङ्गसेना के यह वचन सुनकर आत्

ओंकी धारसे मानों स्तनोमें द्वितीयमाला पहरतीहुई सोमप्रभा रोनेलगी उसेरोतेदेखकर कलिंगसेना ने पूछा कि हे सखीतुम्हारे शोक का क्या कारणहै तब सम्पूर्ण भूलोक की देखनेवाली सोमप्रभा बोली कि अवस्था, रूप, कुल, शील, तथा धन यह सब बातें वरकी देखी जाती हैं इन में से अवस्था पहले देख लेनी चाहिये फिर वशकुल आदिका विचार करना चाहिये राजाप्रसेनजित की अवस्था अधिकहै उसे मैंने देखाहै चमेली के मुरझाये हुए पुष्प के समान जीर्ण उसराजाकी केवल जातिमे क्या प्रयोजनहै हिमकेसमान श्वेतवर्णवाले उस राजासे युक्त कुम्हलायेहुए मुखारविन्दवाली तुम हेमन्तऋतुकी कमलनीके तुल्य शोचकरने के योग्यहोगी इसीसे मुझको दुखहुआ है मुझको तो तभी प्रसन्नता होय जब वत्सराज राजाउदयन तुम्हारास्वामीहोय इस पृथ्वी में रूपलावण्य कुल शूरता तथा ऐश्वर्य्य में उदयन के समान कोई दूसराराजा नहीं है जो उस सदृशपति के साथ तुम्हारा विवाहहोयतो ब्रह्मा का तुम्हारा रूपबनाना सफलहोय सोमप्रभाके यन्त्रों के समान इन वचनों से कलिंगसेना का चित्त उदयन की ओर चलागया और उसने सोमप्रभासे पूछा कि वह किस वंश मे उत्पन्नहुआ है और वह वत्सराज क्यों कहाताहै और उसका उदयन नाम कैसे हुआहै तब सोमप्रभा बोली कि हे सखी सम्पूर्ण पृथ्वी का आभूषणरूप वत्सनाम देशहै उसमें दूसरी अमरावती के समान कौशाम्बी नाम पुरी है उसपुरी मे वह राज्य करताहै इससे उसको वत्सराज कहते हैं अब उसका वंश मैं कहती हू पाण्डुकेपुत्र अर्जुन के अभिमन्यु नाम पुत्रथा जिसने चक्रव्यूहको तोडकरके कौरवों का नाशकिया उसके परीक्षितनाम पुत्रहुआ परीक्षित के सर्पयज्ञ करनेवाला जन्मेजय पुत्रहुआ जन्मेजयके सतानीकनाम पुत्रहुआ जो कौशाम्बी में आकररहा और देवासुरों के युद्ध मे दैत्यो को मारकर आपभी मरा उससतानीक के संसार में प्रशसनीय सहस्रानीकनाम पुत्रहुआ जो इन्द्रके भेजेहुए रथपर चढकर स्वर्ग में आया जाया करता था इस राजा सहस्रानीक के मृगावतीनाम रानी मे यह उदयननाम राजाचन्द्रवंशका भूषण उत्पन्नहुआहै ४४ हे सखी अब इसका उदयननाम जैसे हुआहै सोसुनों इसकी माता मृगावती जब गर्भिणीहुई तो उसे यह अभिलाषाहुई कि मैं रुधिर मे स्नानकरूं इस अभिलाषको जानकर राजा सहस्रानीक ने पाप से डरकर लाखके रसकी बावडी बनवाई उसमें रानीमृगावती स्नानकरनेलगी उसेस्नानकरतेहुए देखकर गरुडके वंशमे उत्पन्नहुए किसीपक्षीने उसेमासका पिण्डजानकर उठाके भाग्यवशसे उदयाचलमें डालदिया वहा जमदग्निऋषिने उसे अपने आश्रममें रखकर उससे कहा कि तेरापति तुझेमिलजायगा तू सावधानरहो (अनादरसे ईर्ष्यायुक्त तिलोत्तमाने उसकेपति सहस्रानीकको कुछ कालतक रानीसे वियोगहोनेका ऐसाही शापदियाथा) इसके उपरान्त कुछ दिनोंके व्यतीतहोनेपर उसी उदयाचलपर जमदग्निजीके आश्रममें नवीनचन्द्रमाको आकाशकेसमानरानीने पुत्रउत्पन्नकिया पुत्रके उत्पन्नहोतेही यह आकाशवाणीहुई कि यह उदयन सपूर्ण पृथ्वीकाचक्रवर्ती राजाहोगा और इसकापुत्र सम्पूर्ण विद्याधरोंका चक्रवर्तीराजाहोगा इसप्रकार आकाशवाणीमे देवतालोगोंने उदयाचलमें उत्पन्नहोनेसे इसका उदयननामरक्खा इसबीचमें राजासहस्रानीकने भी मातलिसारथीके कहनेसे शापके अन्तमें याागाल-

इसके उपरान्त अपने स्थान को गई हुई सोमप्रभा के मार्ग को स्नेह से देखने के लिये खड़ी हुई कलिङ्गसेना को आकाशमार्ग से जाते हुए मदनवेग नाम युवा विद्याधर ने भाग्यवश से देखा कामरूपी इन्द्रजाल की पिञ्छिका (छड़ी) के समान अपने रूप से त्रिलोकी को मोहित करनेवाली उस कलिङ्गसेना को देखकर उसका चित्त काम से मोहित हुआ तब उसने विचार किया कि विद्याधरी स्त्रियां क्या हैं और अप्सराओं की भी क्या गणना है इस मानुषी का कैसा अद्भुत स्वरूप है जो यह मेरी स्त्री न हुई तो मेरा जीवन ही व्यर्थ है परन्तु मैं विद्याधर होकर इस मानुषी से कैसे संग करूं यह शोच करके उसने प्रज्ञप्ति नाम विद्या का ध्यान किया ध्यान करते ही वह विद्या साक्षात् प्रकट होकर बोली कि यह मानुषी नहीं है राजा कलिङ्गदत्त के यहां यह कोई अप्सरा शाप से भ्रष्ट होकर उत्पन्न हुई है विद्या के यह वचन सुनकर मदनवेग प्रसन्न होके अपने स्थान को चला गया और वहां अन्य सम्पूर्ण कार्यों को छोड़कर काम से पीड़ित होके यह विचारने लगा कि जो मैं हठ करके इसको हरलाऊं तो यह मुझे योग्य नहीं है क्योंकि हठपूर्वक स्त्रियों के साथ भोग करने से मेरी मृत्यु होजायगी यह मुझे शाप होचुका है इससे इसकी प्राप्ति के निमित्त मुझे तप करके श्रीशिवजी का आराधन करना चाहिये क्योंकि सम्पूर्ण कल्याण तप ही के आधीन है और मेरे लिये इससे अन्य कोई उपाय ही नहीं है यह निश्चय करके दूसरे दिन मदनवेग ऋषभ पर्वत पर जाकर एक पैर से खड़ा हो निराहार होके तप करनेलगा थोड़े काल के उपरान्त उसके तप से प्रसन्न हुए पार्वतीपति शीघ्रप्रसाद श्रीमहादेवजी प्रकट हुए और प्रणाम करते हुए मदनवेग से बोले कि इस कलिङ्गसेना नाम कन्या का रूप सम्पूर्ण संसार में विख्यात है इसके समान रूपवान् पति संसार में नहीं है केवल वत्सदेश का स्वामी राजा उदयन है और वह इसे चाहता भी है परन्तु वासवदत्ता के भय से प्रकट होकर उसके पिता से मांगता नहीं है और कलिङ्गसेना भी सोमप्रभा के मुख से उसी के रूप की प्रशंसा सुनकर उसके रूप में लुब्ध होकर उसी के साथ स्वयम्वर करने की इच्छा करती है इससे जब तक उसका विवाह होय उसके बीच ही में उदयन का रूप धारण करके तुम इसके साथ गान्धर्व विवाह करो इस प्रकार श्रीशिवजी के वचन सुनकर और उनको प्रणाम करके मदनवेग कौल ऋषभ पर्वत के तट पर अपने स्थान को चलागया ॥ इसबीच में सोमप्रभा आकाशगामी विमान पर चढ़कर प्रतिदिन प्रातःकाल तक्षशिला पुरी में कलिङ्गसेना के पास आती थी और सायङ्काल को चली जाती थी एक दिन क्रीड़ा करते करते कलिङ्गसेना ने सोमप्रभा से एकान्त में कहा कि हे सखी मैं जो तुमसे यह बात कहती हूं इसे किसी से मत कहना मैं जानती हूं कि मेरा विवाह होनेवाला है क्योंकि बहुत से राजा लोगों ने मेरे मांगने के लिये अपने अपने दूत भेजे थे उनको मेरे पिता ने किसी बहाने से टाल दिया परन्तु श्रावस्तीपुरी के स्वामी राजा प्रसेनजित के दूत का बड़ा सत्कार किया है और मेरी माता भी प्रसेनजित को बहुत श्रेष्ठ समझती है इससे मैं जानती हूं कि उसी के साथ मेरा विवाह होगा हमारे पिता उसे बड़ा कुलीन समझते हैं वह उस कुल में उत्पन्न हुआ है जिसमें कौरव और पाण्डवों की पितामही अम्बा अम्बालिकादिक उत्पन्न हुई थीं इससे हे सखी श्रावस्ती के राजा प्रसेनजित के साथ मेरे विवाह का निश्चय है कलिङ्गसेना के यह वचन सुनकर आश्

ओंकी धारसे मानों स्तनोमें द्वितीयमाला पहरतीहुई सोमप्रभा रोनेलगी उसेरोतेदेखकर कलिंगसेना ने पूछा कि हे सखीतुम्हारे शोक का क्या कारणहै तब सम्पूर्ण भूलोक की देखनेवाली सोमप्रभा बोली कि अवस्था, रूप, कुल, शील, तथा धन यह सब बातें वरकी देखी जाती हैं इन में से अवस्था पहले देख लेनी चाहिये फिर वंशकुल आदिका विचार करना चाहिये राजाप्रसेनजित की अवस्था अधिकहै उसे मैंने देखाहै चमेली के मुरझाये हुए पुष्प के समान जीर्ण उसराजाकी केवल जालिमे क्या प्रयोजनहै हिमकेसमान श्वेतवर्णवाले उस राजामे युक्त कुम्हलायेहुए मुखारविन्दवाली तुम हेमन्तऋतुकी कमलनीके तुल्य शोचकरने के योग्यहोगी इसीसे मुझको दुःखहुआ है मुझको तो तभी प्रसन्नता होय जब वत्सराज राजाउदयन तुम्हारास्वामीहोय इस पृथ्वी में रूपलावण्य कुल शूरता तथा ऐश्वर्य्य में उदयन के समान कोई दूसराराजा नहीं है जो उस सदृशपति के साथ तुम्हारा विवाहहोयतो ब्रह्मा का तुम्हारा रूपवनाना सफलहोय सोमप्रभाके यन्त्रों के समान इन वचनो से कलिंगसेना का चित्त उदयन की ओर चलागया और उसने सोमप्रभासे पूछा कि वह किस वंश मे उत्पन्नहुआ है और वह वत्सराज क्यों कहाताहै और उसका उदयन नाम कैसे हुआहै तब सोमप्रभा बोली कि हे सखी सम्पूर्ण पृथ्वी का आभूषणरूप वत्सनाम देशहै उसमें दूसरी अमरावती के समान कौशाम्बी नाम पुरी है उसपुरी मे वह राज्य करताहै इससे उसको वत्सराज कहते हैं अब उसका वंश मे कहती हूं पाण्डुकेपुत्र अर्जुन के अभिमन्यु नाम पुत्रथा जिसने चक्रव्यूहको तोड़करके कौरवों का नाशकिया उसके परीक्षितनाम पुत्रहुआ परीक्षित के सर्पयज्ञ करनेवाला जन्मेजय पुत्रहुआ जन्मेजयके सतानीकनाम पुत्रहुआ जो कौशाम्बी में आकररहा और देवासुरों के युद्ध मे दैत्यो को मारकर आपभी मरा उससतानीक के समार में प्रशसनीय सहस्रानीकनाम पुत्रहुआ जो इन्द्रके भेजेहुए रथपर चढकर स्वर्ग में आया जाया करता था इस राजा सहस्रानीक के मृगावतीनाम रानी में यह उदयननाम राजाचन्द्रवंशका भूषण उत्पन्नहुआहै ४४ हे सखी अब इसका उदयननाम जैसे हुआहै सोसुनों इसकी माता मृगावती जब गर्भिणीहुई तो उसे यह अभिलाषाहुई कि मैं रुधिर मे स्नानकरू इस अभिलाषको जानकर राजा सहस्रानीक ने पाप से डरकर लाखके रसकी बावड़ी बनवाई उसमें रानीमृगावती स्नानकरनेलगी उसेस्नानकरतेहुए देखकर गरुड़के वंशमे उत्पन्नहुए किसीपक्षीने उसेमासका पिण्डजानकर उठाके भाग्यवशसे उदयाचलमें डालदिया वहां जमदग्निऋषिने उसे अपने आश्रममे रखकर उससे कहा कि तेरापति तुझेमिलजावेगा तू सावधानहोजा (अनादरसे ईर्ष्यायुक्त तिलोत्तमाने उसकेपति सहस्रानीकको कुछ कालतक रानीसे वियोगहोनेका ऐसाही शापदियाथा) इसके उपरान्त कुछ दिनोंके व्यतीतहोनेपर उसी उदयाचलपर जमदग्निजीके आश्रममे नवीनचन्द्रमाको आकाशकेसमानरानीने पुत्रउत्पन्नकिया पुत्रके उत्पन्नहोतेही यह आकाशवाणीहुई कि यह उदयन सम्पूर्ण पृथ्वीकाचक्रवर्त्ती राजाहोगा और इसकापुत्र सम्पूर्ण विद्याधरोंका चक्रवर्त्तीराजाहोगा इसप्रकार आकाशवाणीसे देवतालोगोंने उदयाचलमे उत्पन्नहोनेसे इसका उदयननामरक्खा इसबीचमें राजासहस्रानीकने भी मातलिसारथीके कहनेसे शापके अन्तमे आगमन

पाकर रानीमृगावती के विना बहुकाल बड़े खेदसे व्यतीतकिया शापके व्यतीतहो जानेपर उदयाचल पर्व्वतसे आयेहुए किसी निषादसे अपनी पहिचान पाकर और उसी समय हुई आकाशवाणी से सब वृत्तान्तजानकर राजासहस्रानीक उसीनिषादको साथलेकर उदयाचलपर्व्वतको गया वहा मनोरथ की सिद्धिके समान रानीमृगावती और मनके राज्यकेसमान अपनेपुत्र उदयनको पाकर दोनोंकोसाथलेके कौशाम्बीपुरी को चलाआया और वहा आकर उदयन के गुणोंसे प्रसन्नहुए राजासहस्रानीक ने उसे युवराजपदवी देदी और अपने मन्त्रियोंके पुत्रयौगन्धरायण आदिक उसकेमन्त्री बनादिये इसप्रकारउदयनपर सम्पूर्णपृथ्वीका भाररखकर रानीसमेत राजासहस्रानीक सुखपूर्व्वक राज्यका सुखभोगनेलगा कुछ कालके उपरान्त वृद्धावस्थाके आजाने पर सपूर्ण राज्य उदयनको देकर अपनीरानी तथा मन्त्रियोंसमेत राजा सहस्रानीक इस ससारके आनन्द को त्यागकर हिमालय को चलागया इसप्रकार अपने पिता के राज्य कोपाकर और सपूर्ण पृथ्वीकोजीतकर राजाउदयन यौगन्धरायणके मन्त्रसे सपूर्ण पृथ्वीकाराज्य करताहै ६० इसभाति इस सबवृत्तान्त को कहकर सोमप्रभाएकान्त में फिर कलिगसेनासे कहनेलगी कि यह राजा पाण्डवो के वंशमे उत्पन्नहोने से चन्द्रवशी वत्सदेशके राज्य करने से वत्सराज हुआ और उदयाचल मे जन्महोने से देवतालोगो ने इसका उदयननाम रक्खाहै ससार मे इसके समान रूपवान् कामदेवभीनहीं है हे त्रैलोक्यसुन्दरि इसत्रिलोकी में तुम्हारेयोग्यपति उदयनसे अन्यकोई नहीं है और वहभी तुम्हारी लावण्यताके लोभसे तुम्हारे निमित्त प्रार्थना करना चाहताहै परन्तु राजा चण्डमहासेन की पुत्री वासवदत्ता उसकीपटरानी है उसने अत्यन्त अनुरागसे अपने बन्धुओं को छोड़कर और ऊषा शकुतला आदि कन्याओंकी लज्जाको हरकर इसको स्वीकारकिया है उसके नरवाहनदत्तनाम पुत्र भी उत्पन्नहोचुकाहै उसेदेवतालोगोंने विद्याधरोंका चक्रवर्त्तीहोनेवाला बतायाहै इससे वासवदत्ताके भय से वह तुम्हारे लिये प्रार्थना नही करताहै मैंने वासवदत्ताको भी देखाहै उसका स्वरूप तुम्हारे समान नहीं है इसप्रकार सोमप्रभाके वचन सुनकर कलिगसेना राजाउदयनके लिये उत्सुकहोकर बोली कि यह मै जानतीहू परन्तु मै मातापिताके आधीन होनेके कारणकुछनहीं करसक्ती इससे हे सखी तुमसर्व्वज्ञ और बड़ी प्रभाववाली हो तुम्हारेही उद्योग से मेरासबकार्य्य होसक्ता है तब सोमप्रभा बोली कि यह कार्य्य दैवाधीन है इसमे मेरा कुछवश नहीं है इसविषयपर मै तुम्हे एककथासुनाती हू उज्जयिनी नाम पुरी में विक्रमसेननाम एकराजा पूर्व समय मे था उसराजा के तेजस्वती नाम अत्यन्त सुन्दरी कन्या थी उसकन्याको प्राय कोई भी राजा अपने विवाह के योग्य नहीं मालमहोता था एकसमय उस ने अपने महलपर से किसी पुरुष को देखा उसे अपने समान सुन्दर जानकर उसके पास सदेशा लेकर अपनी सखीभेजी सखीने जाकर उससे राजपुत्री का सदेशा कहा परन्तु उसने साहसमे डरकर अगीकार नहीं किया फिरसखी ने बहुत प्रार्थना करके उससे यह सकेत किया कि यहजोनिर्जन देवमन्दिर तुम देखतेहो इसमेंरात्रिमे तुमआकर उसराजपुत्रीकी प्रतीक्षाकरना यहकहकर सखीने वहांसे आकर तेजस्वती से उसका सब वृत्तान्त कहदिया तब तेजस्वती तो सूर्य्यके अस्तहोनेकी प्रतीक्षाकरनेलगी

स्वीकारकरके भी भयसे और कहीं चलागया ठीकहै (नभेक कोकनदिनी किंजल्कास्वादकोविद) मेंढक रक्तकमलनीके किंजल्कके स्वादको नहीं जानता ७८ इसीबीचमें कोई कुलीनराजपुत्र अपने पिताके मरजानेपर उसके मित्र इसराजाविक्रमसेन से मिलनेको उज्जयिनीमेंआया गोत्री भाइयोंने उसका राज्यहरलियाथा इससे वह अकेलाही-सोमदत्तनाम सुन्दरराजपुत्र सायंकालके समय उसपुरी में पहुंचकर भाग्यवशसे जिसदेवमन्दिरमें तेजस्वतीकी सखी उसपुरुषको बुलाआईथी उसीमें रात्रिव्यतीत करनेकोरहा रात्रिके समय राजपुत्री तेजस्वती ने अनुरागसे बिनापहचाने उसीराजपुत्रको अपना पति बना लिया वह बुद्धिमान् राजपुत्रभी भाग्यवशसे मिलीहुई होनेवाली राज्यलक्ष्मीकी सूचित करनेवाली उस राजपुत्री के साथ चुपचाप आनन्दको प्राप्तहोगया क्षणभरके उपरान्त राजपुत्री ने उसे अपनेयारकेविना वह पुरुष न जानकर और उसकी भव्यआकृति देखकर अपने चित्तमेंकहा कि मुझेठगानहीं है यह उससेभी सुन्दरहै तदनन्तर उससे वार्त्तालापकरके और सलाहकरके राजपुत्री अपने मंदिरमें चलीआई और वह उसीमन्दिरमेंरहा प्रातःकाल राजद्वारमें जाकर और प्रतीहारकेद्वारा अपनानाम राजाको निवेदनकरके राजाकी आज्ञापाकर भीतरगया वहां उसने राजासे अपना संपूर्ण राज्यकेहरजाने आदिका वृत्तान्तकहा राजाने उसके शत्रुओंके जीतनेमें सहायता करनेको अंगीकार करके उसकेसाथ अपनी कन्याके विवाह करनेका विचारकिया और मंत्रियों से अपना अभिप्रायकहा फिर रानीने भी सखियोंके मुखसे कन्याका वृत्तान्त सुनकर राजासेकहा उसवृत्तान्तको सुनकर अनिष्टका न सिद्धहोना और इष्टका सिद्धहोजाना इस काकतालीय न्यायसे विस्मित राजासे उससमय एकमंत्री बोला कि जैसे स्वामियोंके सोजानेपर अच्छेभृत्य जागाकरते हैं उसीप्रकार भव्यपुरुषों के कार्य्यों मे उनका भाग्यही सहायक होताहै इसीविषयमे आपको मैं एककथा सुनाताहूं किसीग्राममें हरिशर्म्मा नाम एक मूर्खदरिद्री ब्राह्मणथा वह दीनब्राह्मण जीविकाके न होनेसे बहुत दुखी रहताथा और पूर्वजन्मके पापोंके भोगनेकेलिये उसके बहुतसे पुत्रभीहुएथे इससे वह कुटुम्बसहित भिक्षामांगताहुआ किसीनगरमें पहुंचा वहां स्थूलदत्त नाम किसी बड़े धनवान् गृहस्थकेयहां उसने चाकरी करली तब अपने पुत्रोंको उसके पशुओंकी रक्षाकेलिये नियुक्तकरदिया और आप अपनी स्त्री समेत उसकी सेवकाई करनेलगा एकसमय स्थूलदत्तके यहां कन्याके विवाहका उत्सवहुआ उसउत्सवमें बहुतसे बराती तथा कुटनियों के आनेसे स्थूलदत्तका घरभरगया उससमय हरिशर्माने अपने कुटुम्ब समेत यह आशालगाई कि घी मद्य मांस आदिक उत्तमभोजन हमें गलेतक खानेको मिलेंगा और इसीमें वह भोजनकेसमय नकी आशा देखता रहा परन्तु उससमय उसको किसीनेभी स्मरणनहीं किया तबभोजनको न पाकर महादुःखीहोकर वह अपनी स्त्रीसे बोला कि दरिद्रता और मूर्खतासे मेरा यहां ऐसा अनादरहै इससे मैं युक्तिपूर्वक कोई बनावट करके ज्ञान प्रकटकरूंगा जिससे यह स्थूलदत्त मेरा सत्कारकियाकरेगा तुम अवसरपाकर इससेकहदेना कि मेरा पति बड़ाज्ञानी है यह कहकर और विचारकरके जब सबलोग सोगये तब उसने स्थूलदत्तके दामादका घोड़ा खोलकर बहुत दूरजाकर कहीं छिपादिया प्रातःकाल बरातियों ने तब इधर उधर ढूंढा

गाकर रानीमृगावती के विना बहकाल बड़े खेदसे व्यतीतकिया शापके व्यतीतहोजानेपर उदयाचल पर्व्वतसे आयेहुए किसी निषादसे अपनी पहचान पाकर और उसी समय हुईआकाशवाणी से सब वृत्तान्तजानकर राजासहस्रानीक उसीनिषादको साथलेकर उदयाचलपर्व्वतको गया वहां मनोरथ की सिद्धिके समान रानीमृगावती और मनके राज्यकेसमान अपनेपुत्र उदयनको पाकर दोनोंकोसाथलेके कौशाम्बीपुरी को चलाआया और वहां आकर उदयन के गुणोंसे प्रसन्नहुए राजासहस्रानीक ने उसे युवराजपदवी देदी और अपने मन्त्रियोंके पुत्रयौगन्धरायण आदिक उसकेमन्त्री बनादिये इसप्रकारउदयनपर सम्पूर्णपृथ्वीका भाररखकर रानीसमेत राजासहस्रानीक सुखपूर्व्वक राज्यका सुखभोगनेलगा कुछ कालके उपरान्त वृद्धावस्थाके आजाने परसम्पूर्ण राज्य उदयनको देकर अपनीरानी तथा मन्त्रियोंसमेत राजा सहस्रानीक इस संसारके आनन्दको त्यागकर हिमालय को चलागया इसप्रकार अपने पिता के राज्य को पाकर और सम्पूर्ण पृथ्वीकोजीतकर राजाउदयन यौगन्धरायणके मन्त्रसे सम्पूर्ण पृथ्वीकाराज्य करताहै ६० इसभांति इस सबवृत्तान्त को कहकर सोमप्रभाएकान्त में फिर कलिंगसेनासे कहनेलगी कि यह राजा पाण्डवों के वंशमें उत्पन्नहोने से चन्द्रवंशी वत्सदेशके राज्य करने से वत्सराज हुआ और उदयाचल में जन्महोने से देवतालोगों ने इसका उदयननाम रक्खाहै संसार में इसके समान रूपवान् कामदेवभीनहीं है हे त्रैलोक्यसुन्दरि इसत्रिलोकी में तुम्हारेयोग्यपति उदयनसे अन्यकोई नहीं है और वहभी तुम्हारी लावण्यताके लोभसे तुम्हारे निमित्त प्रार्थना करना चाहताहै परन्तु राजा चण्डमहासेन की पुत्री वासवदत्ता उसकीपटरानी है उसने अत्यन्त अनुरागसे अपने बन्धुओं को छोड़कर और ऊषा शकुन्तला आदि कन्याओंकी लज्जाको हरकर इसको स्वीकारकिया है उसके नरवाहनदत्तनाम पुत्र भी उत्पन्नहोचुकाहै उसेदेवतालोगोंने विद्याधरोंका चक्रवर्तीहोनेवाला बतायाहै इससे वासवदत्ताके भय से वह तुम्हारे लिये प्रार्थना नहीं करताहै मैंने वासवदत्ताको भी देखाहै उसका स्वरूप तुम्हारे समान नहीं है इसप्रकार सोमप्रभाके वचन सुनकर कलिंगसेना राजाउदयनकेलिये उत्सुकहोकर बोली कि यह मैं जानतीहूं परन्तु मैं मातापिताके आधीन होनेके कारणकुछनहीं करसक्ती इससे हे सखी तुमसर्व्वज्ञ और बड़ी प्रभाववाली हो तुम्हारेही उद्योग से मेरासबकार्य्य होसक्ता है तब सोमप्रभा बोली कि यह कार्य्य दैवाधीन है इसमें मेरा कुछवश नहीं है इसविषयपर मैं तुम्हें एककथासुनाती हूं उज्जयिनी नाम पुरी में विक्रमसेननाम एकराजा पूर्व्व समय में था उसराजा के तेजस्वती नाम अत्यन्त सुन्दरी कन्या थी उसकन्याको प्राय कोई भी राजा अपने विवाह के योग्य नहीं मालूमहोता था एकसमय उस ने अपने महलपर से किसी पुरुष को देखा उसे अपने समान सुन्दर जानकर उसके पास सँदेशा लेकर अपनी सखीभेजी सखीने जाकर उससे राजपुत्रीका सँदेशा कहा परन्तु उसने साहससे डरकर अंगीकार नहीं किया फिर सखी ने बहुत प्रार्थना करके उससे यह संकेत किया कि यहजोनिर्ज्जन देवमन्दिर तुम देखतेहो इसमेंरात्रिमें तुमआकर उसराजपुत्रीकी प्रतीक्षाकरना यहकहकर सखीने वहांसे आकर तेजस्वती से उसका सब वृत्तान्त कहदिया तब तेजस्वती तो सूर्य्यके अस्तहोनेकी प्रतीक्षाकरनेलगी और वहपुरुष

स्वीकारकरके भी भयसे और कहींचलागया ठीकहै (नभेक कोकनदिनी किंजल्कास्वादकोविद) मेढक रक्तकमलनिके किंजल्कके स्वादको नहीं जानता ७८ इसीबीचमें कोई कुलीनराजपुत्र अपने पिताके मरजानेपर उसके मित्र इसराजाविक्रमसेन से मिलनेको उज्जयिनीमेंआया गोत्री भाइयोंने उसका राज्यहरलियाथा इससे वह अकेलाही-सोमदत्तनाम सुन्दरराजपुत्र सायकालके समय उसपुरी में पहुंचकरभाग्यवशसे जिसदेवमन्दिरमें तेजस्वतीकी सखी उसपुरुषको बुलाआईथी उसीमें रात्रिव्यतीत करनेकोरहा रात्रिके समय राजपुत्री तेजस्वती ने अनुरागसे विनापहचाने उसीराजपुत्रको अपना पतिवना लिया वह बुद्धिमान् राजपुत्रभी भाग्यवशसे मिलीहुई होनेवाली राज्यलक्ष्मीकी सूचित करनेवाली उस राजपुत्रीके साथ चुपचाप आनन्दको प्राप्तहोगया क्षणभरके उपरान्त राजपुत्री ने उसे अपत्यसकेतित वह पुरुष न जानकर और उसकी भव्यआकृति देखकर अपने चित्तमेंकहा कि भाग्यने मुझेठगानहीं है यह उससेभी सुन्दरहै तदनन्तर उससे वार्त्तालापकरके और सलाहकरके राजपुत्री अपने मंदिरमें चलीआई और वह उसीमन्दिरमेंरहा प्रातःकाल राजद्वारमें जाकर और प्रतीहारकेद्वारा अपनानाम राजाको निवेदनकरके राजाकी आज्ञापाकर भीतरगया वहां उसने राजासे अपना सम्पूर्ण राज्यकेहरेजाने आदिका वृत्तान्तकहा राजाने उसके शत्रुओंके जीतनेमें सहायता करनेको अंगीकार करके उसकेसाथ अपनी कन्याके विवाह करनेका विचारकिया और मंत्रियों से अपना अभिप्रायकहा फिर रानीने भी सखियोंके मुखसे कन्याका वृत्तान्त सुनकर राजासेकहा उसवृत्तान्तको सुन कर अनिष्टका न सिद्धहोना और इष्टका सिद्धहोजाना इस काकतालीय न्यायसे विस्मित राजासे उससमय एकमन्त्री बोला कि जैसे स्वामियोंके सोजानेपर अच्छेभृत्य जागाकरते हैं उसीप्रकार भव्यपुरुषों के कार्यों में उनका भाग्यही सहायक होताहै इसीविषयमें आपको म एककथा सुनाताहूं किसीग्राममें हरिशर्मा नाम एक मूर्खदरिद्री ब्राह्मणथा वह दीनब्राह्मण जीविकाके न होनेसे बहुत दुखी रहताथा और पूर्वजन्मके पापोंके भोगनेकेलिये उसके बहुतसे पुत्रभीहुएथे इससे वह कुटुम्बसहित भिक्षामागताहुआ किसीनगरमें पहुंचा वहां स्थूलदत्त नाम किसी बड़े धनवान् गृहस्थके यहां उसने नौकरी करली तब अपने पुत्रोंको उसके पशुओंकी रक्षाकेलिये नियुक्तकरदिया और आप अपनी स्त्रीसमेत उसकी सेवकाई करनेलगा एकसमय स्थूलदत्तके यहां कन्याके विवाहका उत्सवहुआ उसउत्सवमें बहुतसे नगरनिवासी तथा कुटुम्बियों के आनेसे स्थूलदत्तका घरभरगया उससमय हरिशर्माने अपने कुटुम्ब समेत यह आशालगाई कि घी मांस आदिक उत्तमभोजन हमें गलेतक खानेको मिलेंगा और इसीमें वह भोजनके समय की आशा देखताथा परन्तु उससमय उसको किसीनेभी स्मरणनहीं किया तबभोजनको न पाकर महादुःखीहोकर वह अपनी स्त्रीसे बोला कि दरिद्रता और मूर्खतासे मेरा यहां ऐसा अनादरहै इससे मैं युक्तिपूर्वक कोई बनावटी ज्ञान प्रकटकरूंगा जिस्से यह स्थूलदत्त मेरा सत्कारकियाकरेगा तुम अवसरपाकर इसनेकहदेना कि मेरा पतिबड़ाज्ञानी है यह कहकर और विचारकरके जब सबलोग सोगये तब उसने स्थूलदत्तके घरसे दामादका घोड़ा खोलकर बहुत दूरपर कहीं छिपादिया प्रातःकाल नगरनिवासी ने जब इधर उधरढूंढ़ा

परन्तु घोडा नहींमिला तब स्थूलदत्तके चित्तमे सन्देहहुआ कि यह बडा अशकुनहै उससमय हरिशर्म्माकी स्त्रीने आकर स्थूलदत्तसे कहा कि मेरापति बडाज्ञानीहै और ज्योतिष आदिक विद्या अच्छे प्रकार जानता है आपउससेक्यों नहीं पूछते उसके पूछने से आपका घोडा मिलजायगा यह सुनकर स्थूलदत्तने हरिशर्म्माको बुलवाया तब वह कल मुझे भूलगये आज घोडा खोनेपर मेरी यादआई है ऐसा कहताहुआ उसके पासआया तब स्थूलदत्त ने उससेकहा कि मैं भूलगया मेरे अपराधको क्षमा करो और बताओ घोडा किसने हराहै उसके वचन सुनकर हरिशर्म्मा बहुतसी झूठमूठकी रेखाखेंचकर बोला कि यहासे दक्षिणकीओर कुछ दूरपर चोरोंने तुम्हारा घोड़ा लेजाकर बाधाहै वहासे जाकर शीघ्र लेआओ नहीतो वह वहासेभी लेजायँगे यह सुनकर बहुतसे लोग दौडकरगये और हरिशर्म्मा की प्रशसा करतेहुए वहासे घोडा लेआये उस समय सब लोगों ने हरिशर्म्माकी बडी प्रशसाकी और वह सुखपूर्व्वक स्थूलदत्त के यहा रहनेलगा इसके उपरान्त कुछ दिनो के व्यतीत होजानेपर उस नगरके राजा के यहा से बहुत से रत्न तथा सुवर्ण कोई चुरालेगया जब बहुत खोज करने पर भी राजा को उसका पता नहीं मिला तब राजा ने हरिशर्म्मा की बहुत प्रशसा सुनकर इसे बुलवाया वहा जाकर हरिशर्म्मा ने कुछ समय टालने के लिये कहा कि मैं प्रात काल बताऊगा और वहीं राजा के यहा रात्रिको निवासकिया राजाके यहा जिह्वानाम एक चेरी थी उसीने अपने भाई से मिलकर वह धन चुरायाथा वह जिस स्थानमें हरिशर्म्मा सोरहाथा उसके द्वारपर कानलगाकर खडीहुई कि देखू यह ज्ञानी क्या कररहाहै उससमय हरिशर्म्मा ने एकान्तजानकर अपनी मिथ्यावादिनी जिह्वाकी इसप्रकार निन्दा की कि हे जिह्वे तूने भोग मे लम्पटहोकर यह क्या दुराचारकिया अब तुझे यहा मृत्युका क्लेश भोगना होगा यह सुनकर जिह्वाने जाना कि यह ज्ञानी मुझेजानगया और भयसे व्याकुलहोकर किसी युक्ति से भीतरजाके उसके पैरोंपर गिरकर कहा कि हे महाराज धनकी चुरानेवाली जिह्वा मैंही हू आपने अपने ज्ञानसे मुझे जानलिया अब आप मेरी रक्षाकीजिये यह थोडासा सुवर्ण उसमेंका मेरे पासहै सो आप लेलीजिये और शेष सम्पूर्णधन मैंने उपवनमे अनारके वृक्षकेनीचे गाडदियाहै यह सुनकर हरिशर्म्मा बोला कि मैं भूत भविष्य वर्त्तमान इन तीनोंकालोंकी बातजानताहू तू मेरी शरणमें आई है इससे मैं तेरानाम नहींबताऊगा और यह जो सुवर्ण तेरे पासहै सो मुझे फिर देना उसके वचनसुनकर वह चेरी वहा से चलीगई और हरिशर्म्मा आश्चर्य्यपूर्व्वक सोचनेलगा कि (असाध्यसाधयत्यर्थं हेलयाभिमुखो विधि) अनुकूलभाग्य असाध्यकार्य्योंको भी सहजही में सिद्धकरताहै देखो यहा कैसे अनर्थ मे फँस कर मे अपनी जिह्वाकी निन्दाकररहाथा उससे जिह्वानाम चोट्टी मुझे मिलगई और मेरा प्रयोजन सिद्ध होगया ठीकहै (शङ्कयैवप्रकाशन्ते वतप्रच्छन्नपातका) छिपेहुये पातक शङ्कामात्रही से प्रकटहोजाते हैं इसप्रकार विचारकर उसने वह रात्रि प्रसन्नतापूर्व्वक व्यतीतकी प्रात काल झूठमूठ लकीरआदि खेंचकर उसने उपवनमें राजाको लेजाकर सबधन खुदवादिया और कहदिया कि इसमें से कुछधन चोरलेकर भागग[illegible] [illegible]र्म्मा के इसअपूर्व्व विज्ञानको देखकर राजा उसको ग्रामदेनेको उद्यतहुआ तब मन्त्री

ने राजासे कानमें कहा कि शास्त्रकेबिना ऐसाज्ञान नहींहोसक्ताहै और यह मूर्ख है तो निस्सन्देह इसने चोरोंके साथ मिलकर अपनी यह जीविका निकाली है इससे एकबार किसी युक्तिसे इसकी परीक्षा फिर करलीजिये तब राजाने एक नवीनघट में एक मेंढक बन्दकरवाके उसके सन्मुखरक्खा और कहा कि हे ब्राह्मण इसघटमें जो पदार्थ है उसे जानजाओ तो मैं आपकी बडीपूजाकरूंगा राजाके यह वचन सुनकर और अपने नाशका समयजानकर हरिशर्म्मा बाल्यावस्थामें पिताके रक्खेहुए मेंढक इस अपने नामको स्मरणकरताहुआ भाग्यवशहोके उससे कहनेलगा कि हे मेंढक तुम साधूके विनाशकेलिये अकस्मात यह घट उपस्थितहुआ उसके यह वचन सुनकर सब लोग प्रशंसा करनेलगे कि यहबडा ज्ञानी है इसने इस मेंढकको भी जानलिया और राजाने उसको अत्यन्त ज्ञानी जानकर बहुत प्रसन्नहोके उसे सुवर्णछत्र तथा वाहनसहित बहुतसे ग्रामदिये इससे हरिशर्म्मा सामन्तके समान होगया इसप्रकार पुण्यात्मा मनुष्यों के कार्य्य भाग्यवशसे सिद्धहोजाते हैं इससे हे राजा भाग्यहीने आपकी पुत्री तेजस्वती को नीच पुरुषसे बचाकर इसे योग्य राजपुत्र सोमदत्त से मिलाया मंत्रीके यह वचन सुनकर राजाने लक्ष्मी के समान अपनी कन्या सोमदत्त को देदी तब सोमदत्त अपने श्वशुरसे सेनालेकर शत्रुओं को जीत के सुखपूर्वक स्त्रीसमेत राज्यका सुखभोगनेलगा हेसखी कलिंगसेना इसप्रकार भाग्यकी विशेषतासे सम्पूर्णकार्य्य सिद्धहोते हैं इससे भाग्यकेबिना वत्सदेशके स्वामी राजाउदयनकेसाथ तुम्हारासयोग कौन करासक्ताहै मैं इसमें क्या करसक्ती हूं इसप्रकार सोमप्रभाके मुखसे इसकथाको सुनकर कलिंगसेना अपने बन्धुओं के भय तथा लज्जाको शिथिलकरके राजाउदयन के समागमकेलिये उत्कण्ठितहुई तदनन्तर त्रैलोक्यके दीपकरूप श्री सूर्य्यभगवान् को अस्तहोता देखकर सोमप्रभा प्रातःकाल फिर आनेका नियमकरके और अपने मनोरथ के उद्योगके निमित्त विचारकरतीहुई कलिंगसेनासे पूछकर आकाशमार्ग से अपने घरकोगई १४८॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायामदनमञ्चुकालम्बकेचतुर्थस्तरंग ४॥

इसके उपरान्त दूसरेदिन प्रातःकाल जब सोमप्रभाआई तब कलिंगसेना ने उससे कहा कि मेरेपिता निस्सन्देह मेराविवाह राजाप्रसेनजितके साथ कियाचाहते हैं यह बात मैंने अपनीमातासे सुनी है परन्तु वह वृद्धहै यह तुमने देखाही है और वत्सराज उदयनकी तुम्हारे मुखसे प्रशंसा सुनकर मेराचित्त उसमें लगाहै इससे पहले राजाप्रसेनजितको दिखाकर जहाँ राजाउदयन हैं वहाँ मुझे लेचलो मुझे माता पिता से कोई प्रयोजन नहीं है उस के यह वचन सुनकर सोमप्रभाबोली कि जो चलनाहै तो इस आकाशगामी यन्त्रपर चढकरचलो परन्तु अपनासम्पूर्ण परिकरलेलो क्योंकि तुम राजाउदयन को देखकर फिर न आसकोगी तुम्हें अपने माता पिताका भी स्मरण नहीं आवेगा और प्रियपतिको पाकर मेराभी स्मरण नहीं आवेगा और हे सखी जैसे मैं यहाँ आती हूं वैसे मैं तुम्हारे पतिके यहाँ आऊंगी भी नहीं उसके यह वचन सुनकर कलिंगसेना रोतीहुई बोली कि हेसखी जो ऐसाही है तो तुम राजाउदयन को यहां लेआओ क्योंकि मैं तुम्हारेबिना क्षणभरभी यहाँ नहीं ठहरसक्ती क्या चित्रलेखा अनिरुद्धको नहीं

परन्तु घोडा नहीमिला तब स्थूलदत्तके चित्तमे सन्देहहुआ कि यह बडा अशकुनहै उससमय हरिशर्म्माकी स्त्रीने आकर स्थूलदत्तसे कहा कि मेरापति बडाज्ञानी है और ज्योतिष आदिक विद्या अच्छे प्रकार जानता है आपउससेक्यो नहीं पूछते उसके पूछने से आपका घोडा मिलजायगा यह सुनकर स्थूलदत्तने हरिशर्म्माको बुलवाया तब वह कल मुझे भूलगये आज घोडा खोनेपर मेरी यादिआई है ऐसा कहताहुआ उसके पासआया तब स्थूलदत्त ने उससेकहा कि मैं भूलगया मेरे अपराधको क्षमा करो और बताओ घोडा किसने हराहै उसके वचन सुनकर हरिशर्म्मा बहुतसी झूठमूठकी रेखाखेंचकर बोला कि यहासे दक्षिणकीओर कुछ दूरपर चोरोंने तुम्हारा घोड़ा लेजाकर बाधाहै वहासे जाकर शीघ्र लेआओ नहींतो वह वहासेभी लेजायँगे यह सुनकर बहुतसे लोग दौडकरगये और हरिशर्म्मा की प्रशसा करतेहुए वहासे घोडा लेआये उस समय सब लोगों ने हरिशर्म्माकी बडी प्रशसाकी और वह सुखपूर्वक स्थूलदत्त के यहा रहनेलगा इसके उपरान्त कुछ दिनो के व्यतीत होजानेपर उस नगरके राजा के यहा से बहुत से रत्न तथा सुवर्ण कोई चुरालेगया जब बहुत खोज करने पर भी राजा को उसका पता नहीं मिला तब राजा ने हरिशर्म्मा की बहुत प्रशसा सुनकर इसे बुलवाया, वहा जाकर हरिशर्म्मा ने कुछ समय टालने के लिये कहा कि मै प्रात काल बताऊगा और वहीं राजा के यहा रात्रिको निवासकिया राजाके यहा जिह्वानाम एक चेरी थी उसीने अपने भाई से मिलकर वह धन चुरायाथा वह जिस स्थानमें हरिशर्म्मा सोरहाथा उसके द्वारपर कानलगाकर खडीहुई कि देखू यह ज्ञानी क्या कररहाहै उससमय हरिशर्म्मा ने एकान्तजानकर अपनी मिथ्यावादिनी जिह्वाकी इसप्रकार निन्दा की कि हे जिह्वे तूने भोग मे लम्पटहोकर यह क्या दुराचारकिया अब तुझे यहा मृत्युका क्लेश भोगना होगा यह सुनकर जिह्वाने जाना कि यह ज्ञानी मुझेजानगया और भयसे व्याकुलहोकर किसी युक्ति से भीतरजाके उसके पैरोंपर गिरकर कहा कि हे महाराज धनकी चुरानेवाली जिह्वा मैंही हू आपने अपने ज्ञानसे मुझे जानलिया अब आप मेरी रक्षाकीजिये यह थोडासा सुवर्ण उसमेंका मेरे पासहै सो आप लेलीजिये और शेष सम्पूर्णधन मैंने उपवनमे अनारके वृक्षकेनीचे गाडदियाहै यह सुनकर हरिशर्म्मा बोला कि मैं भूत भविष्य वर्त्तमान इन तीनोंकालोंकी बातजानताहू तू मेरी शरणमें आई है इससे मैं तेरानाम नहींबताऊगा और यह जो सुवर्ण तेरे पासहै सो मुझे फिर देना उसके वचनसुनकर वह चेरी वहा से चलीगई और हरिशर्म्मा आश्चर्य्यपूर्वक सोचनेलगा कि (असाध्यसाधयत्यर्थं हेलयाभिमुखो विधि) अनुकूलभाग्य असाध्यकार्य्योंको भी सहजही में सिद्धकरताहै देखो यहा कैसे अनर्थ में फँस करमे अपनी जिह्वाकी निन्दाकररहाथा उससे जिह्वानाम चोट्टी मुझे मिलगई और मेरा प्रयोजन सिद्ध होगया ठीकहै (शङ्कयैवप्रकाशन्ते वतप्रच्छन्नपातका) छिपेहुये पातक शङ्कामात्रही से प्रकटहोजाते है इसप्रकार विचारकर उसने वह रात्रि प्रसन्नतापूर्वक व्यतीतकी प्रात काल झूठमूठ लकीरआदि खेंचकर उसने उपवनमें राजाको लेजाकर सबधन खुदवादिया और कहदिया कि इसमें से कुछधन चोरलेकर भागगयाहै हरिशर्म्मा के इसअपूर्व विज्ञानको देखकर राजा उसको ग्रामदेनेको उद्यतहुआ तब मन्त्री

ने राजासे कानमें कहा कि शास्त्रकेविना ऐसाज्ञान नहींहोसक्ताहै और यह मूर्ख है तो निस्सन्देह इसने चोरोंके साथ मिलकर अपनी यह जीविका निकाली है इससे एकबार किसी युक्तिसे इसकी परीक्षा फिर करलीजिये तब राजाने एक नवीनघट में एक मेंढक बन्दकरवाके उसके सन्मुखरक्खा और कहा कि हे ब्राह्मण इसघटमें जो पदार्थ है उसे जानजाओ तो मैं आपकी बडीपूजाकरूंगा राजाके यह वचन सुनकर और अपने नाशका समयजानकर हरिशर्म्मा बाल्यावस्थामें पिताके रक्खेहुए मेंढक इस अपने नामको स्मरणकरताहुआ भाग्यवशहोइ ऐसे कहनेलगा कि हे मेंढक तुम साधूके विनाशकेलिये अकस्मात यह घटउपस्थितहुआ उसके यह वचन सुनकर सब लोग प्रशंसा करनेलगे कि यहबडा ज्ञानी है इसने इस मेंढकको भी जानलिया और राजाने उसको अत्यन्त ज्ञानी जानकर बहुत प्रसन्नहोके उसे सुवर्णछत्र तथा वाहनसहित बहुतसे ग्रामदिये इससे हरिशर्म्मा सामन्तके समान होगया इसप्रकार पुण्यात्मा मनुष्यों के कार्य्य भाग्यवशसे सिद्धहोजाते हैं इससे हे राजा भाग्यहीनने आपकी पुत्री तेजस्वती को नीच पुरुषसे बचाकर इसे योग्य राजपुत्र सोमदत्त से मिलाया मन्त्रीके यह वचन सुनकर राजाने लक्ष्मी के समान अपनी कन्या सोमदत्त को देदी तब सोमदत्त अपने श्वशुरसे सेनालेकर शत्रुओं को जीत के सुखपूर्व्वक स्त्रीसमेत राज्यका सुखभोगनेलगा हेसखी कलिंगसेना इसप्रकार भाग्यकी विशेषतासे सम्पूर्णकार्य्य सिद्धहोते हैं इससे भाग्यकेबिना वत्सदेशके स्वामी राजाउदयनकेसाथ तुम्हारासंयोग कौन करासक्ताहै मैं इसमें क्या करसक्ती हूं इसप्रकार सोमप्रभाके मुखसे इसकथाको सुनकर कलिंगसेना अपने बन्धुओं के भय तथा लज्जाको शिथिलकरके राजाउदयन के समागमकेलिये उत्कण्ठितहुई तदनन्तर त्रैलोक्यके दीपकरूप श्री सूर्य्यभगवान् को अस्तहोता देखकर सोमप्रभा प्रातःकाल फिर आनेका नियमकरके और अपने मनोरथ के उद्योगके निमित्त विचारकरतीहुई कलिंगसेनासे पूछकर आकाशमार्ग से अपने घरकोगई १९८ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायामदनमञ्चुकालम्बकेचतुर्थस्तरंग ४ ॥

इसके उपरान्त दूसरेदिन प्रातःकाल जब सोमप्रभाआई तब कलिंगसेना ने उससे कहा कि मेरेपिता निस्सन्देह मेराविवाह राजाप्रसेनजितके साथ कियाचाहते हैं यह बात मैंने अपनीमातासे सुनी है परन्तु वह वृद्धहै यह तुमने देखाही है और वत्सराज उदयनकी तुम्हारे मुखसे प्रशंसा सुनकर मेराचित्त उसमें लगाहै इससे पहले राजाप्रसेनजितको दिखाकर जहाँ राजाउदयन है वहाँ मुझे लेचलो मुझे माता पिता से कोई प्रयोजन नहीं है उस के यह वचन सुनकर सोमप्रभाबोली कि जो चलनाहै तो इस आकाश गामी यन्त्रपर चढकरचलो परन्तु अपनासम्पूर्ण परिकरलेलो क्योंकि तुम राजाउदयन को देखकर फिर न आसकोगी तुम्हें अपने माता पिताका भी स्मरण नहीं आवेगा और प्रियपतिको पाकर मेराभी स्मरण नहीं आवेगा और हे सखी जैसे मैं यहाँ आती हूं वैसे मैं तुम्हारे पतिके यहाँ आऊंगी भी नहीं उस के यह वचन सुनकर कलिंगसेना रोतीहुई बोली कि हेसखी जो ऐसाही है तो तुम राजाउदयन को यहां लेआओ क्योंकि मैं तुम्हारेबिना क्षणभरभी वहाँ नहीं ठहरसकूंगी क्या चित्रलेखा अनिरुद्धको नहीं

करलेआई परन्तु मुफ्सरीकी स्त्री जो परपुरुषका स्पर्शभी नहीं करती है वह इसविषयमें क्या करसक्ती है इस्से मैं तुझे प्रथम राजाप्रसेनजित्को दिखाकर राजाउदयन्के यहाँ लिये चलतीहू सोमप्रभाके इन वचनोंको स्वीकार करके कलिंगसेना मायायन्त्रके विमानपर चढकर अपने संपूर्णधन तथा परिकरको लेकर मातापितासे छिपकर वहाँसे चली ठीकहै (नहिपश्यतितुंगमारवश्रवा स्त्रीजनोग्रत स्मरेणनीतः परमाधारावाजीवसादिना) काममे प्रेरणकीगई स्त्री सवारसे तीव्रगति पर्लेजायेगये घोडे के समान आगे ऊंचा खाली कुछनहीं देखती है ३६ पहले श्रावस्तीपुरी में जाकर शिकार खेलनेके निमित्त निकलेहुए वृद्ध राजाप्रसेनजित्को कलिंगसेनाने देखा राजाके ऊपर जो चमरढुलाया जाताथा वहमानो यहकहताथा कि इसवृद्धके पाससे दूरचलीजा उसे देखकर सोमप्रभाने मुस्कुराकर कलिंगसेनासे कहा कि हे सखी यहवही राजाप्रसेनजित् है जिसकेसाथ तुम्हारे पिता तुम्हारा विवाहकिया चाहते हैं तबकलिंगसेना बोली कि इसको तो वृद्धावस्थाने स्वीकारकर लियाहै अबकौनसी स्त्री इसे अंगीकार करेगी यहकहकर वहाँसे सोमप्रभाके साथ आकाश मार्गसे कौशाम्बी नगरीकोगई वहाँ उपवनमें सखी सोमप्रभासे बतायेहुए राजाउदयन्को वह ऐसी उत्कण्ठासे देखनेलगी जैसे कि चकोरी चन्द्रमाको देखती है वह प्रफुल्लित दृष्टि और हृदयमें रक्खेहुए हाथसे मानों यहकहरहीथी कि यह इसीमार्गसे यहाँगया है इसप्रकार उसे देखकर उसने सोमप्रभासे कहा कि हे सखी आजही मुझे वत्सराज उदयन् से मिलाओ इसे देखकर मैं क्षणभर भी नहीं ठहरसक्ती हूं उसके यहवचनसुनकर सोमप्रभा बोली कि आज मैंने कोई अशकुन देखाहै इस्से तुम आजकेदिन इसी उपवनमें छिपकर रहो कहींदूर न जाना प्रातःकाल आकर तुम्हारे समागमका उपाय करूंगी अवमैं इससमय अपने पतिकेपास जाया चाहतीहूं यहकहकर और कलिंगसेनाको उसी उपवनमें छोडकर सोमप्रभा अपने घरचलीगई और राजाउदयन्भी उपवनमें अपने मंदिरको चलागया तदनन्तर कलिंगसेनाने अपने एक प्रधान अधिकारी से अपना संपूर्ण तत्त्वकहा और शकुनके जाननेवाली अपनी सखीके निषेधको न मानकर संदेशा लेकर उसे प्रधानको राजाउदयन्के पासभेजा ठीकहै (स्वतन्त्रोभिनवारूढो युवतीनामनोभवः) युवतीस्त्रियोंका नवीन यौवनमें उत्पन्नहुआ काम स्वतन्त्रहोताहै अर्थात् किसीनिषेधको नहींमानताहै ५२ उसप्रधानने राजद्वारमें जाकर प्रतीहारकेद्वारा आज्ञा मंगवाकर राजाकेनिकटजाके यह विज्ञापनाकी कि हे राजातक्षशिलापुरीके स्वामी राजाकलिंगदत्तकी कन्या कलिंगसेना आपकीप्रशंसाकोसुनकर आपकेसाथ स्वयंवर करनेकेलिये अपनेमातापिताको छोडकर यहाँ आई है उसेमयासुरकी पुत्री नलकूबरकी स्त्री सोमप्रभा नाम उसकी सखी आकाशगामी मायायन्त्र पर चढाकर परिकर समेत यहां लाई है इस प्रकार यहां आकर उसने मुझे विज्ञापन करनेके लिये आपके पास भेजा है आपउसे अंगीकार कीजिये चन्द्रमा और चन्द्रिकाके समान आपदोनोंका समागमहोय प्रधानके यह वचनसुनकर राजाउदयनने उसकी विज्ञापनाको स्वीकारकरके सुवर्ण तथा वस्त्रादिलेकर उसेविदाकिया और मुख्यमंत्री यौगन्धरायणसे बुलाकर कहा कि राजाकलिंगदत्तकी कलिंगसेनानाम कन्या जिसके स्वरूपकी प्रशंसासम्पूर्ण पृथ्वीमें

लेआई थी इसकथाको तुम जानतीहोगी परन्तु मैं भी तुमको सुनातीहूं बाणासुरके ऊपानाम कन्याथी उसको श्रीभगवती पार्वतीजी ने सेवासे प्रसन्नहोकर यह वरदान दियाथा कि स्वप्नमें जिस्से तेरा समागमहोगा वहीतेरा पतिहोगा किसीदिन ऊपाने स्वप्नमे देवकुमारके समान एक पुरुप देखा और गान्धर्व विधिकेद्वारा उसकेसाथ अपना विवाहकिया और प्रात काल सम्भोग के चिन्हों से युक्तहोकर वह जगी उससमय स्वप्नमें देखेहुए उसपुरुपको न देखकर और सभोग चिन्होको जानकर श्री पार्वतीजीके वरदानको स्मरण करके आश्चर्य्य भयतथा सतापसे ऊपा बहुत व्याकुलहुई तब स्वप्नमें देखेहुए उसपतिके विना अत्यन्त विकलऊषा से चित्ररेखाने पूछा कि हेसखी आजतुम्हे खेदक्यो है तब उसने सम्पूर्ण स्वप्न का वृत्तान्त कहदिया इसके वचनसुनकर योगेश्वरी चित्ररेखा उसपुरुपके कुछनाम आदि पहचानको न जानकर वोली कि हेसखी यहभगवती पार्वतीजीका प्रभावहै इसमें सन्देह क्याकरना है परन्तु विना किसी पहचानके मैं तुम्हारे प्रियको कैसे ढूढलाऊ जो तुम उसेपहचानतीहो तो देवता दैत्य तथा मनुष्य आदि सम्पूर्ण जगत्काचित्र मैं तुमको दिखातीहू उसमे उस अपने प्रियको मुझे दिखादो तो मैं उसको लेआऊ उसने कहा हा मैं पहचानतीहू तुम चित्रलिखो तब चित्ररेखाने क्रमसे सम्पूर्ण ससारका चित्रलिखा उसमें ऊपा ने वहयही है यहकहकर हर्पसे कापतीहुई उंगली के द्वारा द्वारिकामे यदुवशियों में से अनिरुद्धको दिखाया उसे देखकर चित्ररेखा वोली हे सखी तू धन्यहै जिसे श्रीकृष्ण भगवान् के पौत्र अनिरुद्धपति मिले है परन्तु वह यहा से साठहजार योजनपर है यह सुनकर ऊपा और भी अत्यन्त उत्कण्ठित होकर वोली कि हेसखी जोआजही उस पुरुपकी चन्दन के समान शीतलगोदी में मैं नहीं बैठूगी तो अत्यन्त प्रचण्ड कामाग्नि में जलकर मृत्युको प्राप्तहूगी उसके यहवचन सुनकर चित्ररेखा उसको सावधान करके आकाश मार्गसे द्वारिका कोगई समुद्रके मध्यमे बडे २ उन्नत मन्दिरों से दूसरी वारसमुद्रमें डालेगये मन्दराचल पर्वत के शिखरोंकी भ्रान्तिको उत्पन्न करती हुई उस द्वारिका पुरीमें जाकर चित्ररेखाने रात्रि के समय सोतेहुए अनिरुद्धको जगाके स्वप्नमें देखने से उत्पन्नहुए ऊपाके अनुरागका सब वृत्तान्त कहा और पूर्वही से स्वप्न के वृत्तान्तको जाननेवाले उत्कण्ठित अनिरुद्धको अपनी सिद्धिके प्रभावसे लेकर क्षणभरमे चित्ररेखा द्वारकासे लौटआई और मार्गे देखतीहुई ऊपाके महल में आकाश मार्ग से उनको छिपाकर लेगई अनिरुद्धको साक्षात् आयेहुए देखकर चन्द्रमा को देखकर समुद्रकी लहरों के समान ऊपाप्रसन्नतामे अपने अगोमे नहींसमाई और मूर्त्तिमान अपने जीवनके समान अनिरुद्धकेसाथ सुखपूर्वक क्रीडाकरनेलगी जब यहवृत्तान्त ऊपाके पिता वाणासुरको मालूमहुआ तो वह वहुत क्रोधितहुआ तब अनिरुद्ध अपने तथा अपने पितामहके पराक्रमसे उसको जीतकर ऊपाको लेकर द्वारिका चलेगये द्वारिकामें वह दोनों स्नेहसे पार्वती और शिवजी के समान अभिन्न शरीर होकर रहनेलगे इसप्रकार चित्ररेखाने ऊपाको एकही दिनमे अपने प्रियसे मिलादिया हे सखी मैं तुम्हे ऊपामे भी अधिकप्रभाववाली जानतीहू इस्से तुमराजाउदयनको अहालेआओ देर न करो कलिंगसेनाके यहवचनसुनकर सोमप्रभाबोली कि चित्ररेखा तो दैत्यकीस्त्रीथी इस्से वहपर पुरुपको उठा

करलेआई परन्तु मुभमरीकी स्त्री जो परपुरुषका स्पर्शभी नहीं करती है वह इसविषयमें क्या करसक्ती है इससे मैं तुझे प्रथम राजाप्रसेनजित्को दिखाकर राजाउदयन्के यहाँ लिये चलतीहू सोमप्रभाके इन वचनोंको स्वीकार करके कलिंगसेना मायायन्त्रके विमानपर चढकर अपने संपूर्ण धन तथा परिकरको लेकर मातापितासे छिपकर वहाँसे चली ठीकहै (नहिपश्यतितुंगमाग्वभवा स्त्रीजनोग्रत स्मरेणनीत× परमाधाराराजीवसादिना) कामसे प्रेरणकीगई स्त्री सवाग्मे तीव्रगति परलेजायेगये घोडे के समान आगे ऊचा नीची कुछनहीं देखती है ३९ पहले श्रावस्तीपुरी में जाकर शिकार खेलनेके निमित्त निकलेहुए वृद्ध राजाप्रसेनजित्को कलिंगसेनाने देखा राजाके ऊपर जो चमरढुलाया जाताथा वहमानो यहकहताथा कि इसवृद्धके पाससे दूरचलीजा उसे देखकर सोमप्रभाने मुस्कुराकर कलिंगसेनासे कहा कि हे सखी यहवही राजाप्रसेनजित् है जिसकेसाथ तुम्हारे पिता तुम्हारा विवाहकिया चाहते हैं तबकलिंगसेना बोली कि इसको तो वृद्धावस्थाने स्वीकारकर लियाहै अबकौनसी स्त्री इसे अंगीकार करेगी यह कहकर वहाँसे सोमप्रभाके साथ आकाश मार्गमें कौशाम्बी नगरीकोगई वहाँ उपवनमें सखी सोमप्रभासे बतायेहुए राजाउदयन्को वह ऐसी उत्कण्ठासे देखनेलगी जैसे कि चकोरी चन्द्रमाको देखती है वह प्रफुल्लित दृष्टि और हृदयमें रक्खेहुए हाथसे मानो यहकहरहीथी कि यह इसीमार्गसे यहाँगया है इसप्रकार उसे देखकर उसने सोमप्रभासे कहा कि हे सखी आजही मुझे वत्सराज उदयन् से मिलाओ इसे देखकर मैं क्षणभर भी नहीं ठहरसक्ती हू उसके यहवचनसुनकर सोमप्रभा बोली कि आज मैंने कोई अशकुन देखाहै इससे तुम आजकेदिन इसी उपवनमें छिपकर रहो कहींदूर न जाना प्रातःकाल आकर तुम्हारे समागमका उपाय करूंगी अबमैं इससमय अपने पतिकेपास जाया चाहतीहू यहकहकर और कलिंगसेनाको उसी उपवनमें छोडकर सोमप्रभा अपने घरचलीगई और राजाउदयन्भी उपवनमे अपने मंदिरको चलागया तदनन्तर कलिंगसेनाने अपने एक प्रधान अधिकारी से अपना संपूर्ण तत्त्वकहा और शकुनके जाननेवाली अपनी सखीके निषेधको न मानकर संदेशा लेकर उसे प्रधानको राजाउदयन्के पासभेजा ठीकहै (स्वतन्त्रोभिनवारूढो युवतीनामनोभवः) युवतीस्त्रियोंका नवीन यौवनमें उत्पन्नहुआ काम स्वतन्त्रहोताहै अर्थात् किसीनिषेधको नहींमानताहै ५३ उसप्रधानने राजद्वारमें जाकर प्रतीहारकेद्वारा आज्ञा मगाकर राजाकेनिकटजाके यह विज्ञापनाकी कि हे राजा तक्षशिलापुरीके स्वामी राजाकलिंगदत्तकी कन्या कलिंगसेना आपकीप्रशंसाकोसुनकर आपकेसाथ स्वयंवर करनेकेलिये अपनेनातेदारोंको छोडकर यहाँ आई है उसेमयासुरकी पुत्री नलकूबरकी स्त्री सोमप्रभा नाम उसकी सखी आकाशगामी मायायन्त्र पर चढाकर परिकर समेत यहां लाई है इस प्रकार यहां आकर उसने मुझे विज्ञापन करनेके लिये आपके पास भेजा है आपउसे अंगीकार कीजिये चन्द्रमा और चन्द्रिकाके समान आपदोनोंका समागमहोय प्रधानके यह वचनसुनकर राजाउदयनने उसकी विज्ञापनाको स्वीकारकरके सुवर्ण तथा वस्त्रादिलेकर उसेविदाकिया और मुख्यमंत्री यौगन्धरायणको बुलाकरकहा कि राजाकलिंगदत्तकी कलिंगसेनानाम कन्या जिसके रूपकी प्रशंसासम्पूर्ण पृथ्वीमें विख्या

तहै वह आपहीमेरेसाथ विवाहकरनेकेलिये यहाआई है तोबताओ कि क्रनउसकेसाथ विवाहकरू क्योंकि वह त्यागकरनेके योग्यनहीं है वत्सराजके यहवचनसुनकर भविष्यमें उसकेहितका चाहनेवाला यौगन्धरायण शोचनेलगा कि कलिंगसेनाकारूप संसारमें विख्यातहै उसके समान त्रैलोक्यमेंभी कोईस्त्री नहींहै देवतालोगभी उसकी इच्छाकरतेहैं उसकेसाथ विवाहहोनेसे यहराजाउदयन अन्यसम्पूर्ण कार्य्यों को छोडदेगा और रानीवासवदत्ता सपत्नीकेक्लेशसे अपने प्राणत्यागदेगी उसकेमरनेसे उसकापुत्रनरवाहनदत्तभी नष्टहोजायगा और वासवदत्ताके विना रानीपद्मावतीका जीनाभीस्नेहसे दुष्करहै जो यह दोनों रानीमरजायगी तोइनकेपिता चण्डमहासेन और प्रद्योत यातो मरजायँगे या वत्सराजसे विरुद्ध होजायगे इसप्रकार इसविवाहसे सबनष्टहोजानेका सन्देहहै परन्तु राजासे निषेधकरनाभी योग्यनहीं है क्योंकि निवारणकरनेसे इसराजाको व्यसनमें अत्यन्तरुचि होतीहै इससे विवाहकेहोनेमें कुछ समयका अन्तरमें डालूंगा इसप्रकार शोचकर यौगन्धरायण राजाउदयनसेबोला कि हेराजा आपधन्यहो जिसके यहाँ कलिंगसेना आपही आई है इसके विवाहसे राजाकलिंगदत्त आपके सेवक के समान होजायगा इससे आपज्योतिषियो से अच्छीलग्न पूछकर विधिपूर्व्वक इसके साथ विवाहकीजिये क्योंकि यह बड़े कुलीन महाराज कलिंगदत्त की कन्याहै और आजउसके रहने केलिये कोई योग्यस्थान दीजिये और दास दासी वस्त्र तथा आभूषणादिक भिजवादीजिये, यौगन्धरायण के यह वचन सुनकर राजाउदयन ने सब उसका कहना प्रसन्नतापूर्व्वक किया और कलिंगसेना राजाकेदियेहुए अत्युत्तमगृह में जाकर अपने मनोरथ को शीघ्रही सिद्धहोनेवाला जानकर बड़ी प्रसन्नहुई ७२ इसके उपरान्त यौगन्धरायण राजमंदिरसे अपनेघरमे जाकरशोचनेलगा कि प्राय अशुभकार्य्यकेलिये विलम्ब करनाही बडाउपायहै देखो पूर्वसमयमें जब इन्द्र ब्रह्महत्याकेकारण भागगयेथे तब राजानहुषने इन्द्रहोकर इन्द्राणीकी चाहना कीथी उससमय बृहस्पतिजीने आजआवेगी कलआवेगी इसप्रकार कहकर कुछकालतक उसे टालाथा फिर टालते २ नहुषब्राह्मणके शापसे नष्टहोगया और इन्द्र फिर अपनी पदवीपरपहुचगया इसप्रकार कलिंगसेनाके लिये मुझेभी इसराजाकोटालना चाहिये इसप्रकारशोचकरउसने सम्पूर्ण ज्योतिषियोंको बुलाके यह गुप्त आज्ञादेदी कि राजा जोविवाहकेलिये लग्नपूछे तो बहुत कालकेउपरान्तकी लग्नबताना इसके उपरान्त कलिंगसेना के वृत्तान्तको सुनकर रानी वासवदत्ताने यौगन्धरायणको अपनेघर बुलवाया और बुलाकर रुदनकरकेकहा कि हेआर्य आपने मुझसे पहलेकहाथा कि हेरानी मेरे विद्यमान होने पर पद्मावतीके सिवाय अन्यसपत्नी तुम्हारे नहींहोगी परन्तु अब कलिंगसेनाका विवाह आर्यपुत्र केसाथ होताहै और कलिंगसेना अत्यन्त रूपवतीहै इससे वत्सराज उसीकेसाथ अनुरागकरेंगे तो अब आपतो मिथ्यावादीहुए और मेरी मृत्युआई रानीके यहवचन सुनकर यौगन्धरायणनेकहा कि हेरानी धैर्य्यधरो मेरेजीतेहुए यह कैसे होसक्ताहै तुम इसविषय में राजासे कुछभी प्रतिकूलता न करना किन्तु धैर्य्यधरके पहलेसे भी अधिक अनुकूलता दिखाना रोगी प्रतिकूल वचनों से वैद्यके वशमें नहीं होता किन्तु अनुकूल वचन कहकर उसीके अनुसार चिकित्साकरके उसेवशीभूत करते हैं मनुष्य विपत्तिके

प्रतिकूल उद्योगकरके उस्से उद्धारनहींपाता किन्तु उसीके अनुकूल उपाय करके उस्से उद्धारको प्राप्त होताहै इस्से जब राजाउदयन तुम्हारे निकटआवें तबतुम अपने चित्तके विकारको छिपाकरके अच्छी रीतिमे उनका सेवनकरना और कलिगसेनाके विवाहमें यहकहकर अपनीभी सम्मतिदेना कि इसके विवाहहोजानेपर उसका पिताभी आपके राज्यका सहायक होजायगा ऐसाकरने से वत्सराज तुम्हारे महत्वको देखकर तुमपर अधिक स्नेह करेंगे और कलिंगसेनाको अपने आधीन जानकर अधिक उत्कण्ठित नहींहोंगे क्योंकि निवारण करने से विषयों पर अधिक अभिलाष बढता है इस्से तुम ऐसाही करना और रानीपद्मावतीकोभी यही सवबातें सिखलादेना इसप्रकार करनेसे राजाउदयन् मुझसे युक्तिपूर्व्वक कियेहुए कालक्षेपको सहसकेगा और इसके उपरान्त जोकुछहोगा वहसब मैं ठीककरदूगा अब तुममेरी युक्तिके बलकोदेखो क्योंकि (सकटेहिपरीक्ष्यन्ते प्राज्ञाश्शूराश्चसगरे) सकट पडनेमें बुद्धिमान् और युद्धमें शूरवीरोंकी परीक्षाहोतीहै इस्से हेरानी तुमखेद न करो इसप्रकार वासवदत्ताको समझाकर यौगन्धरायण अपने मन्दिरको चलागया और रानी वासवदत्ताने अपने चित्तमें उसकी युक्तिकी बडी प्रशसाकी उसदिन राजाउदयन स्वयवरके निमित्तआईहुई कलिगसेनाके नवीनसगमके निमित्त उत्कण्ठितहोकर वासवदत्ता तथा पद्मावतीके यहा रात्रिको नहींगया उसदिनकी वहरात्रि रानीवासवदत्ता तथा यौगन्धरायणको अत्यन्त चिन्तामय राजाउदयनको दुर्लभरसकी उत्कण्ठामय और कलिंगसेना को प्रियके मिलापकी आशासे महोत्सवमय व्यतीतहुई ६६ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायामदनमञ्चुकालम्बकेपचमस्तरग ५ ॥

इसके उपरान्त प्रात काल उत्कण्ठित राजाउदयन् से यौगन्धरायणने आकरकहा कि कलिगसेनाके विवाहकी लग्नआजही आप क्यों नहीं दिखवाते हैं यहसुनकर राजाने कहा कि मेरे हृदय में भी यही बातथी क्योंकि उसकेबिना क्षणभरभी मेराचित्त नहींमानताहै यह कहकर उसने उसीसमय प्रतीहारको भेजकर ज्योतिषीलोग बुलवाये तब यौगन्धरायण से प्रथमही शिक्षाकियेगये ज्योतिषीआकर बोले कि हे महाराज छ महीनेके उपरान्त अनुकूललग्नहै यह सुनकर यौगन्धरायणने मिथ्या कोप प्रकटकरके कहा कि यह ज्योतिषी अज्ञहैं हे महाराज जिस ज्योतिषी को आपने बडा ज्योतिषी बतायाहै वह आज नहींआयाहै उसेही बुलवाकर आप पूँछिये उसके कहनेपर जैसा योग्य समझियेगा सो कीजियेगा मत्री के यह बचनसुनकर सरलचित्तवाले राजा उदयन्ने उस ज्योतिषी को भी बुलवाया उसने भी आकर यौगन्धरायणकी शिक्षाके अनुसार कहा हे महाराज छ महीने के उपरान्त उत्तमलग्नहै, तब यौगन्धरायण उद्विग्नसाहोकर राजासे कहनेलगा कि हे महाराज अब क्या करनाचाहिये आप बताइये उस समय उत्कण्ठा तथा अच्छीलग्न इच्छासे युक्त राजा भी विचारकरबोला कि अब कलिंगसेनासे पूछना चाहिये देखिये वह क्या कहती है राजाके यह बचनसुनकर यौगन्धरायण दो ज्योतिषियों को साथ में लेकर कलिगसेना के निकटगया वहा कलिंगसेना ने उसे बडे आदरपूर्व्वक बैठाया उसके स्वरूप को देखकर यौगन्धरायण ने शोचा कि राजा इसेपाकर व्यसनके आधीनहोकर सब राजकाज छोड़देगा

तहै वह आपहीमेरेसाथ विवाहकरनेकेलिये यहांआई है तोबताओ कि कवउसकेसाथ विवाहकरूं क्योंकि वह त्यागकरनेके योग्यनहीं है वत्सराजके यहवचनसुनकर भविष्यमें उसकेहितका चाहनेवाला यौगन्धरायण शोचनेलगा कि कलिंगसेनाकारूप संसारमें विख्यातहै उसके समान त्रैलोक्यमेंभी कोईस्त्री नहींहै देवतालोगभी उसकी इच्छाकरतेहैं उसकेसाथ विवाहहोनेसे यहराजाउदयन अन्यसम्पूर्ण कार्य्यों को छोडदेगा और रानीवासवदत्ता सपत्नीकेक्लेशसे अपने प्राणत्यागदेगी उसकेमरनेसे उसकापुत्रनरवाहनदत्तभी नष्टहोजायगा और वासवदत्ताके विना रानीपद्मावतीका जीनाभीस्नेहसे दुष्करहै जो यह दोनों रानीमरजायगी तो इनकेपिता चण्डमहासेन और प्रद्योत यातो मरजायगे या वत्सराजसेविरुद्ध होजायगे इसप्रकार इसविवाहसे सबनष्टहोजानेका सन्देहहै परन्तु राजासे निषेधकरनाभी योग्यनहीं है क्योंकि निवारणकरनेसे इसराजाको व्यसनमें अत्यन्तरुचि होतीहै इससे विवाहकेहोनेमें कुछ समयका अन्तरमें डालूंगा इसप्रकार शोचकर यौगन्धरायण राजाउदयनसेबोला कि हेराजा आपधन्यहो जिसके यहाँ कलिंगसेना आपही आई है इसके विवाहसे राजाकलिंगदत्त आपके सेवक के समान होजायगा इससे आपज्योतिषियों से अच्छीलग्न पूछकर विधिपूर्व्वक इसके साथ विवाहकीजिये क्योंकि यह बडे कुलीन महाराज कलिंगदत्त की कन्याहै और आजउसके रहने केलिये कोई योग्यस्थान दीजिये और दास दासी वस्त्र तथा आभूषणादिक भिजवादीजिये यौगन्धरायण के यह वचन सुनकर राजाउदयन ने सब उसका कहना प्रसन्नतापूर्व्वक किया और कलिंगसेना राजाकेदियेहुए अत्युत्तमगृह में जाकर अपने मनोरथ को शीघ्रही सिद्धहोनेवाला जानकर बडी प्रसन्नहुई ७२ इसके उपरान्त यौगन्धरायण राजमंदिरसे अपनेघरमें जाकरशोचनेलगा कि प्राय अशुभकार्य्यकेलिये विलम्ब करनाही बडाउपायहै देखो पूर्वसमयमें जब इन्द्र ब्रह्महत्याकेकारण भागगयेथे तब राजानहुषने इन्द्रहोकर इन्द्राणीकी चाहना कीथी उससमय बृहस्पतिजीने आजआवेगी कलआवेगी इसप्रकार कहकर कुछकालतक उसे टालाथा फिर टालते २ नहुषब्राह्मणके शापसे नष्टहोगया और इन्द्र फिर अपनी पदवीपरपहुचगया इसप्रकार कलिंगसेनाके लिये मुझेभी इसराजाकोटालना चाहिये इसप्रकार शोचकरउसने सम्पूर्ण ज्योतिषियोंको बुलाके यह गुप्त आज्ञादेदी कि राजा जो विवाहकेलिये लग्नपूंछे तो बहुत कालकेउपरान्तकी लग्नबताना इसके उपरान्त कलिंगसेना के वृत्तान्तको सुनकर रानी वासवदत्ताने यौगन्धरायणको अपनेघर बुलवाया और बुलाकर रुदनकरकेकहा कि हेआर्य आपने मुझसे पहलेकहाथा कि हेरानी मेरे विद्यमान होने पर पद्मावतीके सिवाय अन्यसपत्नी तुम्हारे नहींहोगी परन्तु अब कलिंगसेनाका विवाह आर्यपुत्र केसाथ होताहै और कलिंगसेना अत्यन्त रूपवतीहै इस्से वत्सराज उसीकेसाथ अनुरागकरेंगे तो अब आपतो मिथ्यावादीहुए और मेरी मृत्युआई रानीके यहवचन सुनकर यौगन्धरायणनेकहा कि हेरानी धैर्य्यधरो मेरेजीतेहुए यह कैसे होसक्ताहै तुम इसविषय में राजासे कुछभी प्रतिकूलता न करना किन्तु धैर्य्यधरके पहलेसे भी अधिक अनुकूलता दिखाना रोगी प्रतिकूल वचनों से वैद्यके वशमें नहीं होता किन्तु अनुकूल वचन कहकर उसीके अनुसार चिकित्साकरके उसेवशीभूत करते हैं मनुष्य विपत्तिके

पुत्रथा विष्णुदत्त १६ वर्षकी अवस्था मे विद्यापढने के लिये वलभीपुरी मे जानेको उपस्थितहुआ उसे ब्राह्मणों के सातपुत्र वहा जानेकेलिये साथीमिले यह तो कुछपढा और कुलीनभीथा परन्तु वह सातों मूर्खथे आपसमे एक दूसरेकेलिये परित्याग न करनेको शपथखाकर उनके साथ रात्रिके समय अपने माता पितासे छिपकर विष्णुदत्त चला ४५ घरमे चलतेही कुछ अशकुन देखकर उसने अपने साथी मित्रोंमे कहा कि आजअकस्मात यहअशकुन हुआहै इससेलौटचलना चाहिये फिरकभी जब अच्छा समय होगा तब चलेगे यहसुनकर वह सातोंमूर्खबोले कि व्यर्थ शकामतकरो हमइससे नहींडरते जोतुम डरतेहो तो लौटजाओ हम तो अभीजाते है क्योंकि प्रात काल हमारे बाधवलोग जो जानजायगे तो हमे नहींजानेदेंगे उनकेयहवचन सुनकर विष्णुदत्त शपथके आधीनहोकर उन्हीकेसाथ विष्णुभगवान को स्मरणकरके चलदिया चलते २ रात्रिके व्यतीत होजानेपर फिर कुछ अशकुन देखके विष्णुदत्तने उनसे लौटनेकोकहा तब वह बोले कि और तो कोईअशकुन नहीं है परन्तु बडा अशकुन यही है जो कौएके समान पद २ पर शंकाकरनेवाले तुम हमारेसाथ में आयेहो उनके यह वचनसुनकर विष्णुदत्त पराधीनहोकर उनकेसाथ चुपचापचला और शोचनेलगा (नोपदेशोविधातव्यो मूर्खस्यस्वाभिचारिण सस्कारोवस्करस्येव तिरस्कारकरोहिस १ एकोबहूनामूर्खाणामध्येनिपतितोबुध पद्मपायस्तरगानामिव विप्लवतेध्रुवम्) अपनीही इच्छाके अनुसार करनेवाले मूर्खोंको उपदेश न करनाचाहिये क्योंकि मूर्खोंका उपदेश उपस्थ इन्द्रीके सस्कारके समानकेवल तिरस्कार का हेतुहोता है बहुतमे मूर्खों में पडकर एकवि द्वान् भी जलकी लहरों में पडेहुए कमलकेसमान नष्टहोताहै इस्से मुझे इनमूर्खोंसेहित अनहितकुछ भी नहींकहना उचितहै और चुपचाप चलनाचाहिये परमेश्वरकी कृपासे सब कल्याण होगा इसप्रकार शो- चताहुआ विष्णुदत्त उन्हीं मूर्खोंकेसाथ सायकाल के समय निषादों के ग्राममें पहुचा वहा रात्रिकेसमय उनको ठहरने के लिये किसी युवतीस्त्री का गृह मिला वहाजाकर वह सातों मूर्खतो क्षणभरमे सो गये परन्तु विष्णुदत्त उसघरमे किसी अन्यपुरुषके न होनेसे जागताही रहाठीक है (स्वपन्त्यज्ञाहिनिश्चेष्टा कुतोनिद्राविवेकिनाम्) मूर्खलोग निश्चेष्ट होकर सोते ह परन्तु विवेकी लोगोंको निद्रा नहींआती ६० उससमय एक युवापुरुष उसघर मे आकर उसयुवती स्त्रीके पासचलागया और उसकेसाथ रमणकिया फिर कुछकाल वार्त्तालाप करकेदोनो सोगये उनदोनोंका यहवृत्तान्त विष्णुदत्तने भीतर दीपक प्रकाशित होनेके कारण द्वारके छिद्रमे देखा और विचारा कि इस दुश्चारिणी स्त्री के यहा हमकैसे आगये मुझे मालूम होताहै कि यह इसका जारहै पतिनहीं है नहीं तो इसकी चाल सन्देह पूर्व्वक ऐसी धीरे न होती और मुझे पहलेही यह चपलचित्त मालूम हुईथी परन्तु कोई स्थान रहनेको नहीं मिला तब इस में लाचार होकर रहनापडा अच्छा कोई डर नहीं है हमकई आदमी है परस्पर साथीहोनेके है इसप्रकार विचार करते २ उसेबाहर मनुष्योंकासा शब्द सुनाईपडा और फिर एक तरुणपुरुष अनुचरों समेत खड्ग को लियेहुए वहा आया अनुचरगनो अपने २ स्थान परजाबैठे और उसने विष्णुदत्तसे पूछा कि तुम लोग कौनहो उसने डरकरकहा कि हम पथिकहै तबभीतरजाकर और अपनी स्त्रीके जारकेसाथ सोनी

और कहा कि मै ज्योतिषियो को लेकर तुम्हारे विवाहकी लग्नठीककरने को आयाहू अपने जन्मका नक्षत्रबताओ यह सुनकर उसके सेवकोने उसके जन्मकानक्षत्र बतादिया तब ज्योतिषियों ने वहा भी उसकी सलाहसे झूठाविचारकरके कहा कि छ महीने के उपरान्त उत्तमलग्नहै छ महीने के भीतर कोई भी उत्तमलग्न नहींमालूमपडती यह सुनकर लग्नको दूरजानके कलिंगसेना के चित्तको उद्विग्नदेखकर उसका प्रधान बोला कि पहले अनुकूललग्न देखनाचाहिये जिससे इन दोनोका सदैव कल्याणहोय शीघ्रता और विलम्बसे क्याहै प्रधानके यह वचनसुनकर सबलोगबोले कि आप बहुत उचितकहतेहैं और यौगन्धरायणने भी कहा कि कुलग्नमें विवाहकरने से राजा कलिंगदत्तको खेदहोगा उससमय कलिंगसेना भी विवशहोकर बोली कि जैसा आपलोग उचितसमझे और चुपहोगई उसके इसीवचनको मानकर और उससेआज्ञालेकर यौगन्धरायण ज्योतिषियों समेत राजाकेपासआया वहा राजासे सपूर्ण वृत्तान्त कहकर और युक्तिपूर्व्वक उसको छ महीनेकेलिये रोककर अपने घरको चलाआया २३ अपने घरपर जाकर बिवाहके विलम्बको सिद्धकरके शेषकार्य्यके सिद्धकरनेकेलिये उसने योगेश्वर नाम ब्रह्म राक्षसका स्मरणकिया स्मरण करतेही वहराक्षस आगया और नमस्कार करके बोला कि आपने किस लिये मेरा स्मरण किया है तब उससे यौगन्धरायणने कलिंगसेनाका सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनाकरकहा कि हे मित्र मैने युक्तिसे विलम्ब तो करदियाहै अबतुम इतने अवसरमें छिपकर कलिंगसेनाके आचरणको देखो विद्याधरादिक देवगण इसकी निस्सन्देह अभिलाषा करते है क्योंकि त्रैलोक्यमें इसके समान सुन्दर और कोई स्त्री नहीं है इससे जो किसी सिद्ध अथवा विद्याधरके साथ इसका सगमहोजाय और तुमदेखआओ तो बहुत अच्छाहोगा किसी अन्यरूपमे आयेहुए विद्याधरादिक दिव्यपुरुषोंको शय नके समयमें तुमदेखना क्योकि दिव्यपुरुष सोनेके समय अपनेही स्वरूपमे होजाते हे इसप्रकार तुम्हारे द्वारा कलिंगसेनाका दोषजो हमेमालूमहोजाय तो राजाका अनुराग उसपरसे जातारहै और हमारा कार्य्य सिद्धहोजाय यौगन्धरायणके यहवचनसुनकर वहराक्षस बोला कि युक्ति पूर्व्वक मैंहीं कहिये तो इसके आचरणको न बिगाडदू या इसेमारडालू तब यौगन्धरायणने कहा कि ऐसा कदापि न करना यहमहा अधर्म है जो धर्मका पालनकरके अपने मार्गमें चलताहै उसके मनोरथो की सिद्धिमें धर्म्मही सहायक होताहै इससे हे मित्र तुम छिपकर उसीके दोषको देखो इससे मै तुम्हारी मित्रताके बलसे अ पने राजाका कार्य्य करू उसके यहवचनसुनकर ब्रह्मराक्षस कलिंगसेनाके घरमें अपने योगसे छिपकर चलागया ३६ इसबीचमें कलिंगसेनाके निकट सोमप्रभा आई वह कलिंगसेनासे रात्रिके सम्पूर्ण वृत्ता न्तको पूछकर उसब्रह्मराक्षसके छिपकर वहाँ बैठेहोने के समय बोली कि आज प्रातःकालही मैं तुमको ढूढतीहुई यहाँआई थी परन्तु यौगन्धरायणको तुम्हारेपास देखकर छिपरही मैने तुम्हारी सबबातचीत सुनीथी उससे मुझे सबमालूम होगया तुमने मेरेनिषेध करनेपर भी कलही इसकार्य्यका आरभकरदिया हेसखी दुश्शकुनको विनादूर किये जो कार्य्य कियाजाताहै उसमें अनिष्टफल होताहै इस विषयमें तुम को मै एक कथासुनाती हू पूर्व्वही अन्तरवेदमें वसुदत्तनाम एकब्राह्मण रहताथा उसके विष्णुदत्तनाम

उसपुरके समीप एकवनडानहै उसमें मकरणकनाम मुनिका आश्रमहै वहमुनि अपने आश्रममे ऊपर कोपैरकियेहुए तपकररहेथे एकसमयमुनिने तपकरते २ आकाशमार्ग में मेनकानाम अप्सरादेखी और वायुकेद्वारा वस्त्रोंके चलायमानहोनेसे उसकेअगभी साफ २ उन्हें दिखाईदिये उसेदेखकर मुनिका चित्त कामसे चलायमानहुआ और एकनवीन केलेकेपत्तेपर उनकावीर्य्य निकलपडा वीर्य्यपातहोतेही एक वडी सुन्दरकन्या उसीसमय उत्पन्नहोगई ठीकहै (अमोघहिमहर्षीणा वीर्य्यफलतितत्क्षणम्) महर्षि लोगोंका अमोघवीर्य्य तत्क्षणही फलदायी होता है वह कन्या केले मे उत्पन्नहुईथी इससहेतु से मुनिने उसकानाम कदलीगर्भारक्खा जैसे रंभाकेदेखनेसे गोतमकावीर्य्य च्युतहोके द्रोणाचार्य्य कीस्त्री कृपीका जन्महुआ था इसीप्रकार उत्पन्नहोनेवाली कदलीगर्भा मुनि के आश्रममें धीरे २ वडी हुई एकसमय मध्यदेशका स्वामी राजादृढवर्मा शिकार खेलने को गयाथा उसका घोडा किसी कारण से भागकर उसको मकरणकमुनिके आश्रममे लेगया वहां जाकर राजाने वल्कलोको धारणकरेहुए मुनिकन्याओं के भेषमे अत्यन्त शोभित कदलीगर्भाको देखा उसे देखतेही राजाकाचित्त उसके वशीभूत होगया और उसे अपनी सम्पूर्ण रानियोंका स्मरणभी नही रहा तव जैसे राजादुष्यन्तने कण्वमुनिकी कन्या शकुन्तला पाईथी उसीप्रकार क्या यह ऋषिकी कन्या मुझेभी मिलेगी इसप्रकार शोचतेहुए राजादृढवर्माने कुशा तथा समिधोंकोलेकर आतेहुए मकरणकमुनिको देखा मुनिको देखतेही घोड़ेको छोडकर राजाने अपना नाम कहकर प्रणामकिया तव मुनिने कदलीगर्भासेकहा कि हे वत्से इस अतिथि राजा केलिये अर्घलाओ इसप्रकार मुनिकी आज्ञापाकर कदलीगर्भाने राजाका अर्घादिक सम्पूर्ण सत्कार किया तदनन्तर राजाने मुनिसेपूछा कि यहकन्या आपके कैसेहुई तव मुनिने उसकी उत्पत्तिका वृत्तान्त और नाम सव राजासे कहदिया मुनिके वचन सुनकर राजाने कदलीगर्भाको मेनकाके स्मरण मे उत्पन्नहोने के कारण अप्सरा जानकर मुनिसेकहा कि हे महाराज यह कन्या आप मुझे देदीजिये तव मुनिने राजाको सुन्दर योग्यवर जानकर कदलीगर्भाका उसके साथ विवाहकरदिया ठीकहै (दिव्यानुभावपूर्वेपा मविचार्य्यहिचेष्टितम्) प्राचीन लोगोंके दिव्यप्रभावयुक्त कार्य्यों में विचारनहींकरना चाहिये ११५ कदलीगर्भाके विवाहको जानकर वहुतसी अप्सराओंने मेनकाके स्नेहमे उस आश्रममें आकर विवाहके योग्य सम्पूर्ण आभूषणादिक उसेपहरादिये और थोडीसी सरसों उसके हाथमे देकर कहा कि हे पुत्री जातेसमय इनसरसोंके दानोंको मार्गमे वोतीचलीजाना कदाचित् यहतुम्हारापति राजातुम्हें निरस्कारकरे तो तुमइन्हीं सरसोंके वृक्षोंकी पहचानमे मार्ग जानकर यहां चलीआना उनके इसकहने के उपरान्त राजादृढवर्म्मा कदलीगर्भाको अपने घोडेपर सवारकराके वहासेचला और मार्ग में छुटीहुई सेनाको फिर पाकर उन्हें सायमेंलेके राजधानीकोआया और कदलीगर्भा भी मार्ग में सरसों वोतीहुई चलीआई राजाराजधानीमें आकर अपने मन्त्रियोंसे कदलीगर्भाका सव वृत्तान्तकहकर अन्यरानियोंमे विमुखहोके केवल उसीकेसाथ आनन्दपूर्वक विहार करनेलगा राजाकी यहदशा देखकर उसकी पटरानीने मंत्रीकोवुलाकर एकान्तमें अपनेप्राचीनउपकारोंको स्मरणकराके कहा कि राजाने नवीन स्त्रीमे आसक्त

हुई देखके उसनेखड्गसे जारका शिरकाटलिया और स्त्रीको न मारा न जगाया और दूसरे पलंगपरखड्ग को अपने पासही रखकर शयनकिया विष्णुदत्तने यह वृत्तान्तभी द्वार की सन्धिसे देखकर शोचा कि इसने अपनी भार्य्याको स्त्रीजानकर उसे छोड जो जारहीकोमारा यह अच्छाकिया परन्तु ऐसाघोरकर्म करके यह निस्सन्देह होकर निर्भयसोरहाहै यह बडे आश्चर्य्यकी वातहै विष्णुदत्तके इसप्रकार शोचतेही वह दुष्टस्त्री उठकर अपने जारको मराहुआ और अपने पतिको सोताहुआ देखकर जारके धडको कन्धे पर रखकर और उसके शिरको हाथमें लेकर बाहर जाकर कहीं राखकेढेरमें धड समेत शिरको डालकर चुपचाप लौटआई विष्णुदत्तभी उसीके साथजाके दूरहीसे सबवृत्तान्त देखकर लौटकर अपने मित्रों के साथलेटरहा तब उसस्त्रीने लौटकर उसीखड्गसे अपने पतिका शिरकाटडाला और बहुत चिल्लाकर महा रोदन करकेकहा कि हाय २ इन पथिकोंने मेरे पतिको मारडाला उसके वचनसुनकर सम्पूर्ण सेवकलोग दौडे और अपने स्वामीको मरादेखकर शस्त्रलेके उनसातों आठों निरपराध ब्राह्मणोंको मारनेलगे जब उनपर मारपडनेलगी तब वह सबघबराकर उठबैठे और उनमेंसे विष्णुदत्त जल्दीसे बोला हेसेवकलोगो ब्रह्महत्या न करो हमलोगोका कोई अपराधनही है इसी दुश्चारिणीस्त्रीका यहदुष्टकर्म है इसप्रकार उनको मारनेसे निवृत्त करके उसने रात्रिका सम्पूर्ण वृत्तान्त उनसे कहदियाऔर उन्हें अपने साथलेजाकर वह धड तथा शिरराखमें पडाहुआ दिखलादिया तब उसस्त्रीका मुख म्लानहोगया और उसकुचालनीकी निन्दा करके सबलोग कहनेलगे कि कामके आधीन होकर जो स्त्री निश्शकहो साहस करती है वह पराये हाथमें गयेहुए खड्गके समान किसको नहीं मारती है यहकहकर उनलोगोंने विष्णुदत्त आदिक आठों ब्राह्मणोको छोडदिया तब वह सातोंब्राह्मण विष्णुदत्त से कहनेलगे कि आजरात्रिके समय सोते हुए हमलोगोंके निमित्त रक्षाकेलिये स्थापन कियेगये रत्नके दीपकके समान तुमहोगये तुम्हारी कृपासे हमलोग इसदुश्शकुनके प्रभावसे होनेवाली मृत्युसेबचे इसप्रकार विष्णुदत्तकी प्रशंसा करके और अपने दुष्ट वचनों के अपराधको क्षमाकरा के उसी के साथ अपने कार्य्योंको चले इसप्रकार सोमप्रभा कलिंग सेनासे कहकर फिरबोली कि हे सखी ऐसेही जो लोग कार्य्य के प्रारंभमें हुए दुश्शकुनको विलम्बादि के द्वारा दूरनहीं करते हैं उनके कार्य्यों में अशुभफल होताहै और बुद्धिमानो के वचनोंको न मानने वाले मूर्ख लोग हठसे कार्य्यमें प्रवृत्त होकर अन्त में पश्चात्तापको प्राप्तहोते हैं इससे तुमने कलके दिन दुश्शकुन के होने परभी वत्सराज के पास दूत भेजा सो उचित नहीं किया परमेश्वर निर्विघ्नता से तुम्हारा विवाहकरदेवे तुमघरसे अच्छीलग्नमें नहींचलीहो इससे तुम्हारा विवाहदेरमेंहोगा, तुम्हारेलिये देवतालोगभी अभिलाषाकरतेहैं इससे अच्छेप्रकारसे अपनी रक्षारखना और अत्यन्तनीति निपुण महामन्त्री यौगन्धरायणकाभी ध्यानरखना कदाचित् वहराज्यमें हानिहोती जानकर तुम्हारे कार्य्यमें विघ्नकरे अथवा विवाहहोजानेपरभी कोई दोष तुममें निकालदे अथवा वह धर्मात्माहै इससे कोई अधर्मनभीकरे परन्तु हेसखी सपत्नियोंका ध्यानसदैव रखनाचाहिये इसविषयमें तुमको मैं एककथा सुनातीहूं ६७ विश्वामित्रकी बनाईहुई इक्षुमतीनाम एकनदीहै उसीकेतटपर उसीनामकी एकपुरीभीहै

उसपुराके समीप एकवडावनहै उसमें मकरण्कनाम मुनिका आश्रमहै वहमुनि अपने आश्रममें ऊपर कोपैरकियेहुए तपकररहेथे एकसमयमुनिने तपकरते २ आकाशमार्ग में मेनकानाम अप्सरादेखी और वायुकेद्वारा वस्त्रोंके चलायमानहोनेसे उसकेअगभी साफ २ उन्हें दिखाईदिये उसेदेखकर मुनिका चित्त कामसे चलायमानहुआ और एकनवीन केलेकेपत्तेपर उनकावीर्य्य निकलपडा वीर्य्यपातहोतेही एक बडी सुन्दरकन्या उसीसमय उत्पन्नहोगई ठीकहै (अमोघहिमहर्षीणा वीर्य्यफलतितत्क्षणम्) महर्षि लोगोंका अमोघवीर्य्य तत्क्षणही फलदायी होता है वह कन्या केले में उत्पन्नहुईथी इसहेतु से मुनिने उसकानाम कदलीगर्भारक्खा जैसे रंभाकेदेखनेसे गौतमकावीर्य्य च्युतहोके द्रोणाचार्य्य कीस्त्री कृपीका जन्महुआ था इसीप्रकार उत्पन्नहोनेवाली कदलीगर्भा मुनि के आश्रममें धीरे २ बड़ी हुई एकसमय मध्यदेशका स्वामी राजादृढवर्मा शिकार खेलने को गयाथा उसका घोडा किसी कारण से भागकर उसको मकणकमुनिके आश्रममें लेगया वहा जाकर राजाने वल्कलोंको धारण करेहुए मुनिकन्याओं के भेपसे अत्यन्त शोभित कदलीगर्भाको देखा उसे देखतेही राजाकाचित्त उसके वशीभूत होगया और उसे अपनी सम्पूर्ण रानियोंका स्मरणभी नहीं रहा तब जैसे राजादुष्यन्तने कण्वमुनिकी कन्या शकुन्तला पाईथी उसीप्रकार क्या यह ऋषिकी कन्या मुझेभी मिलेगी इसप्रकार शोचतेहुए राजादृढवर्माने कुशा तथा समिधोकोलेकर आतेहुए मकणकमुनिको देखा मुनिको देखतेही घोडेको छोडकर राजाने अपना नाम कहकर प्रणामकिया तब मुनिने कदलीगर्भासेकहा कि हे वत्से इस अतिथि राजा केलिये अर्घलाओ इसप्रकार मुनिकी आज्ञापाकर कदलीगर्भाने राजाका अर्घादिक सम्पूर्ण सत्कार किया तदनन्तर राजाने मुनिसेपूछा कि यहकन्या आपके कैसेहुई तब मुनिने उसकी उत्पत्तिका वृत्तान्त और नाम सब राजासे कहदिया मुनिके वचन सुनकर राजाने कदलीगर्भाको मेनकाके स्मरण से उत्पन्नहोने के कारण अप्सरा जानकर मुनिसेकहा कि हे महाराज यह कन्या आप मुझे देदीजिये तब मुनिने राजाको सुन्दर योग्यवर जानकर कदलीगर्भाका उसके साथ विवाहकरदिया ठीकहै (दिव्यानुभावपूर्वेपा मविचार्य्यहिचेष्टितम्) प्राचीन लोगोंके दिव्यप्रभावयुक्त कार्य्यों में विचारनहींकरना चाहिये ११५ कदलीगर्भाके विवाहको जानकर बहुतसी अप्सराओंने मेनकाके स्नेहसे उस आश्रममें आकर विवाहके योग्य सम्पूर्ण आभूपणादिक उसेपहरादिये और थोडीसी सरसों उसके हाथमे देकर कहा कि हे पुत्री जातेसमय इनसरसोंके दानोंको मार्गमें बोतीचलीजाना कदाचित् यहतुम्हारापति राजातुम्हे तिरस्कारकरे तो तुम इन्हीं सरसोंके वृक्षोंकी पहचानसे मार्ग जानकर यहा चलीआना उनके इसकहने के उपरान्त राजादृढवर्मा कदलीगर्भाको अपने घोडेपर सवारकरवाके वहासेचला और मार्ग में छूटीहुई सेनाको फिर पाकर उन्हें साथमेंलेके राजधानीकोआया और कदलीगर्भा भी मार्ग में सरसों बोतीहुई चलीआई राजाराजधानीमें आकर अपने मन्त्रियोंसे कदलीगर्भाका सब वृत्तान्तकहकर अन्यरानियोंसे विमुखहोकेकेवल उसीकेसाथ आनन्दपूर्वक विहार करनेलगा राजाकी यहदशा देखकर उसकी पटरानीने मन्त्रीकोबुलाकर एकान्तमें अपनेप्राचीनउपकारोंको स्मरणकराके कहा कि राजाने नवीन स्त्रीमें आसक्त

होकर मेरा त्यागकरदिया इस्से ऐसा उपायकरो जिस्से यह मेरी सपत्नी अलग होजाय यह सुनकर मन्त्रीने कहा हे रानी हमलोगोका यह कामनहीं है कि अपनेस्वामीका स्त्रीसे वियोगकराना अथवा स्त्रीकानाश करना यहकाम सन्यासिनी स्त्रियोंका है वह दंभकरनेमें वडी चतुर होतीहैं और बहुतसे दम्भी पुरुषों को वह जानती हैं और उन्हींकी संगतमें रहती हैं मन्त्रीके यह वचनसुनकर रानी लज्जित होकर बोली कि अच्छा मैं इसनिन्दित कार्य्यको नहीं करानाचाहती उसके ऐसाकहनेपर जब मन्त्री चलागया तब उसने मन्त्रीके वचनो को अपने हृदयमे ध्यानकरके सखीकेद्वारा एकसन्यासिनी बुलवाई और उससे सब अपना वृत्तान्त कहकर कार्य्यसिद्ध होजानेपर उसे बहुतसाधन देनेकहा वह दुष्टतपस्विनी धनकेलोभसे बोली कि हे रानी यहकौन वडीबातहै मै तुम्हारे कार्य्यको सिद्धकरदूगी मुझे अनेक प्रकारके बहुतसे प्रयोग मालूमहैं इसप्रकार रानीको समझाकर वह अपनी मठीमें आकर भयभीत होकर शोचने लगी कि अत्यन्त भोगतृष्णा किसे क्लेशनहीं देती है देखो मैने रानीके आगेसहसा यहप्रतिज्ञा तो करलीहै परन्तु मुझे इसविषयमें प्रवीणता बहुतकमहै और राजगृहमें अन्यस्थानो के समान छलभी न करना चाहिये क्योंकि कपटखुलनेपर राजालोग सर्वनाशकरदेते हैं इसविषयमें एकउपायहै कि वह जोमेरामित्र नाई इसविषयमें प्रवीणहै वह चाहैतो उद्योग करसक्ताहै यह शोचकर उसने उसनाईके पासजाके अपना सम्पूर्ण मनोरथ वर्णनकिया तब उसधूर्त्तनाई ने शोचा कि भाग्यबशसे यहलाभका योग उपस्थितहुआ है इस्से राजाकी नवीन स्त्री कदलीगर्भाका नाश तो न करनाचाहिये क्योंकि उसका पिता दिव्यदृष्टिहै वह सम्पूर्ण वृत्तान्त जानजायगा परन्तु राजाका उससे वियोगकराके इस रानीसे खूबधन लेनाचाहिये और कुछ कालके उपरान्त फिर राजाके साथ उस नवीन रानीका संयोग कराके राजाके सन्मुख ऐसी बात कहनीचाहिये जिससे राजा और रानी कदलीगर्भा दोनों प्रसन्नहोयँ ऐसा करने से बहुत पापतो होगा नहीं परन्तु जीविका अच्छी होजायगी यह शोचकर वह नाई उससे बोला कि हे अम्ब मै यह सबकाम करसक्ताहू परन्तु योगबलसे रानी कदलीगर्भाका मारना योग्य नहीं है क्योंकि जोराजाजान जायगा तो हम सबका नाशकरदेगा दूसरे स्त्रीकी हत्याहोगी और तीसरे उसके पिता मुनि शाप देंगे इससे मैं अपनी बुद्धिके बलसे उसके साथ राजाका वियोग करवादूगा तो पटरानी को सुखहोगा और मुझे धन मिलेगा मेरे लिये यह कोई वडीबात नहीं हैमैं बुद्धिसे कौनकार्य्य सिद्धनहीं करसक्ताहू सुनो मैं अपनी चतुरता सुनाताहू १४५ इस दृढवर्म्मा राजाका पिता बडा दुराचारीथा और मै उसका सेवकथा एकसमय राजा भ्रमणकरताहुआ मेरे घरकी ओर आया और मेरी स्वरूपवती स्त्रीका मुखदेखकर उसका चित्त चलायमानहुआ तब उसने अपने सेवकों से पूँछा कि यह कौनहै सेवकों ने कहा कि यह आपके नापितकी स्त्री है सेवकों के वचनसुनकर यह जानकर कि नापित मेरा क्या करेगा राजा मेरे घरमें आकर मेरी स्त्री से यथेष्टभोगकरके चलागया मै उसदिन भाग्यबश से कहीं बाहरगयाथा दूसरेदिन घरमें आकर मैंने अपनी स्त्री के कुछ नयेही ढँग देखे जब मैंने पूँछा तबउसने अभिमानपूर्व्वक सबवृत्तान्त कहदिया तब मे मुझ अशक्तकी स्त्री के साथ राजा नित्यआकर रमणकरनेलगा ठीकहै (कुतोगम्यमगम्यवाकुशी

लोन्मादिन प्रभो ज्ञातोद्धतस्यदावाग्ने कितृणकिंचकाननम्) दुराचारसे उन्मत्त राजाको गम्यागम्यका विचार नहीं रहता वायुसे प्रचंड अग्निको जैसेतृण वैसेही वन यहदशादेखकर राजाके निवारण करने का कोई उपाय न जानकर मैंने अपना भोजन घटाकर शरीरको दुर्बलकरदिया और दुर्बलतासे बहुत श्वासलेताहुआ राजाके यहा हजामत बनानेको गया राजाने मुझको दुर्बलदेखकर गुप्त अभिप्राय से पूछा कि अरे तू ऐसा क्योंहोगयाहै तब मैंने कईवार टालकर राजाके बहुत पूछनेपर एकान्त में अभय मागकर कहा कि हे महाराज मेरीस्त्री डाकिनी है वह नित्यमेरी आतें मेरीगुदासे निकालकर चूसती है और चूसके उसीमें फिर रखदेती है इसीसे मैं दुर्बलहोगयाहू और मुझे पुष्ट तथा धातुवर्द्धक भोजनभी नहीं मिलते हैं जिनसे कुछ बलबनारहे मेरे यह वचनसुनकर राजाने सन्देह पूर्व्वक विचारकिया कि क्या सत्यही वह डाकिनी है इसी से मेराचित्त उसके आधीन होगया जब मैं सोजाताहू तब मेरी भी आतें वह चूसतीहोगी परन्तु मैं बलकारी भोजन करताहू इससे दुर्बलनहीं हुआहू तो आज मैं युक्ति पूर्व्वक रात्रि में उसकी परीक्षा करूंगा इसप्रकार शोचकर राजाने मुझे बलकारी भोजन दिलवादिया १६० तदनन्तर मैं वहासे अपने घरआकर अपनीस्त्री के पासरोनेलगा जब उसने पूछा कि क्यों रोतेहो तबमैंनेकहा कि हे प्रिये किसीसे कहना नहीं मैं तुमसे कहताहू इसराजाकी गुदामें वज्रकेसमान पुष्टदांत निकले हैं इस्से आज बालबनाते में मेरा बडा उत्तम छुराटूटगया इसीप्रकारसे जो मेरारोज छुराटूटेगा तो मैं नित्यनया कहासे लाऊगा इसकारण रोताहू हाय मेरी जीविकाही नष्टहुई जाती है मेरे यहवचन सुनकर मेरीस्त्रीने अपने चित्तमेंकहा कि आजजब राजा रात्रिको आकर सोजावेंगे तब उनकी गुदाके दातदेखूगी देखो सम्पूर्ण ससारभरमें कहींभी नहीं देखीगई मेरी इसअसभव बातको वह सचजानगई ठीकहै (विदग्धाअपिवच्यन्ते विद्वशठ्ऐनयास्त्रिय) चतुरस्त्रियाभी धूर्तोंके कहने में फँसजाती हैं इसके उपरान्त रात्रिके समय राजामेरे यहाआकर और मेरीस्त्रीकेसाथ भोगकरके मेरे कहनेकी परीक्षा करनेके लिये झूठमूठसोरहा और मेरीस्त्रीने उसेसोयाहुआ जानकर गुदाकेदात देखनेके लिये उसकी गुदाकीओर धीरे २ हाथ बढाया गुदामें हाथकेलगतेही राजा एकाएकी उठबैठा और डाकिनी २ यह कहकर भय-भीतहोकर अपने घरकोचलागया और फिरउसदिनसे डरकेमारे मेरेघरकभीन आया तब मैं अपनीस्त्रीके साथ आनन्द पूर्व्वक स्वाधीनहोकर रहनेलगा इसप्रकार मैंने अपनी बुद्धिके बलसे राजासे अपनी स्त्री छुटाईथी उसतपस्विनीसे यह वचनकह कहकर फिर नाईबोला कि मैं तुम्हारा यहकार्य अपनी बुद्धिके बल से सिद्धकरदूगा और उसका उपायभी मैं तुमको बतायेदेताहू कि किसी अन्त पुरमें रहनेवाले वृद्धपुरुषको अपनी ओर मिलाकर गाठलो वह राजासे एकान्तमें कहदे कि तुम्हारी रानीकदलीगर्भा डाकिनी है और उसीरानीका कोई सेवक रात्रिके समय किसी जीवके कटेहुए हाथपैर आदिक मन्दिर ऐसे स्थानमें रखदे जिसे राजा देखसके इसप्रकार यत्नकरनेसे कटेहुए अगोंको देखकर राजा उसवृद्धके कहनेको सत्यमानकर भयभीतहोकर कदलीगर्भाको छोडदेगा इसउपायसे सौतके अलगहोजानेसे पटरानी सुखपूर्व्वकरहेगी और मेरा बडा सत्कारकरेगी तब मुझेभी कुछ मिलजायगा नाईके यह वचन सुनकर उसकपटनी तपस्विनी

होकर मेरा त्यागकरदिया इस्से ऐसा उपायकरो जिस्से यह मेरी सपत्नी अलगहोजाय यह सुनकर मन्त्रीने कहा हे रानी हमलोगोंका यह कामनहीं है कि अपनेस्वामीका स्त्रीसे वियोगकराना अथवा स्त्रीकानाश करना यहकाम सन्यासिनी स्त्रियोंका है वह दम्भकरनेमें बडी चतुर होतीहैं और बहुतसे दम्भी पुरुषों को वह जानती हैं और उन्हींकी सगतमें रहती हैं मन्त्रीके यह वचनसुनकर रानी लज्जित होकर बोली कि अच्छा मैं इसनिन्दित कार्य्यको नहीं करानाचाहती उसके ऐसा कहनेपर जब मन्त्री चलागया तब उसने मन्त्रीके वचनो को अपने हृदयमें ध्यानकरके सखीकेद्वारा एकसन्यासिनी बुलवाई और उससे सब अपना वृत्तान्त कहकर कार्य्यसिद्ध होजानेपर उसे बहुतसाधन देनेकहा वह दुष्टतपस्विनी धनकेलोभसे बोली कि हे रानी यहकौन वडीवातहे मैं तुम्हारे कार्य्यको सिद्धकरदूगी मुझे अनेक प्रकारके बहुतसे प्रयोग मालूमहैं इसप्रकार रानीको समझाकर वह अपनी मठीमें आकर भयभीत होकर शोचने लगी कि अत्यन्त भोगतृष्णा किसे क्लेशनहीं देती है देखो मैंने रानीके आगेसहसा यहप्रतिज्ञा तो करलीहै परन्तु मुझे इसविषयमें प्रवीणता बहुतकमहै और राजगृहमें अन्यस्थानो के समान छलभी न करना चाहिये क्योंकि कपटखुलनेपर राजालोग सर्वनाशकरदेते हैं इसविषयमें एकउपायहै कि वह जोमेरामित्र नाई इसविषयमें प्रवीणहै वह चाहेतो उद्योग करसक्ताहै यह शोचकर उसने उसनाईके पासजाके अपना सम्पूर्ण मनोरथ वर्णनकिया तब उसधूर्त्तनाई ने शोचा कि भाग्यबशसे यहलाभका योग उपस्थितहुआ है इस्से राजाकी नवीन स्त्री कदलीगर्भाका नाश तो न करनाचाहिये क्योंकि उसका पिता दिव्यदृष्टिहै वह सम्पूर्ण वृत्तान्त जानजायगा परन्तु राजाका उससे वियोगकराके इस रानीसे खूबधन लेनाचाहिये और कुछ कालके उपरान्त फिर राजाके साथ उस नवीन रानीका सयोग कराके राजाके सन्मुख ऐसी वात कहनीचाहिये जिससे राजा और रानी कदलीगर्भा दोनों प्रसन्नहोयँ ऐसा करने से बहुत पाप तो होगा नहीं परन्तु जीविका अच्छी होजायगी यह शोचकर वह नाई उससे बोला कि हे अम्ब मैं यह सबकाम करसक्ताहू परन्तु योगबलसे रानी कदलीगर्भाका मारना योग्य नहीं है क्योंकि जोराजाजान जायगा तो हम सबका नाशकरदेगा दूसरे स्त्रीकी हत्याहोगी और तीसरे उसके पिता मुनि शाप देंगे इससे मैं अपनी बुद्धिके वलसे उसके साथ राजाका वियोग करवादूगा तो पटरानी को सुखहोगा और मुझे धन मिलेगा मेरे लिये यह कोई बडीवात नहीं है मैं बुद्धिसे कौनकार्य्य सिद्धनहीं करसक्ताहू सुनो मैं अपनी चतुरता सुनाताहू १८५ इस दृढवर्म्मा राजाका पिता वडा दुराचारीथा और मैं उसका सेवकथा एकसमय राजा भ्रमणकरताहुआ मेरे घरकी ओर आया और मेरी स्वरूपवती स्त्रीका मुखदेखकर उसका चित्त चलायमानहुआ तब उसने अपने सेवकों से पूंछा कि यह कौनहै सेवकों ने कहा कि यह आपके नापितकी स्त्री है सेवकों के वचनसुनकर यह जानकर कि नापित मेरा क्या करेगा राजा मेरे घरमें आकर मेरी स्त्री से यथेष्टभोगकरके चलागया मैं उसदिन भाग्यवश से कहीं वाहरगयाथा दूसरेदिन घरमें आकर मैंने अपनी स्त्री के कुछ नयेही ढँग देखे जब मैंने पूंछा तबउसने अभिमानपूर्वक सबवृत्तान्त कहदिया तब मे मुझ अशक्तकी स्त्री के साथ राजा नित्यआकर रमणकरनेलगा ठीकहै (कुलोगम्यमगम्यवाकुशी

वाह करनेको आई है यहसुनकर वासवदत्ता प्रसन्नतापूर्व्वक बोलीकि मैं जानतीहूं वहतोसाक्षात् लक्ष्मी ही-आपके यहा आई है कलिगसेनाके विवाहसे राजाकलिंगदत्त के आपके आधीनहोजानेपर यह सम्पूर्ण पृथ्वी आपके वशमें होजायगी मुझे तोआपहीके ऐश्वर्य्य तथा सुखसेसुखहै यहबात तो आप को पहलेहीसे विदितहै क्यामें अन्यनहींहूं जिसके आपभरीके पतिहो जिनके लिये राजाओं की कन्या अन्यराजाओंको छोडकर अभिलाष करती है वासवदत्ताके यहवचनसुनकर राजा उदयन् वडा प्रसन्नहुआ और उसीके साथ मद्यपान करके वहीं सोगया कुछ कालकेपीछे जबराजाकी निद्राखुली तब उसने शोचा कि रानी वासवदत्ताकैसी महानुभावहै और कैसीमेरी शुभा काङ्क्षिणीहै जो कलिगसेनाको अपनी सौतबनाने में भी निषेध नहींकरती अथवा इसने भाग्य वशसे पद्मावती के विवाहमें शरीर नहीं छोडाथा परन्तु कलिगसेनाके विवाहको यहनहीं सहसकेगी और जो इसकेलिये कोई अनिष्टहुआ तो मेरा सर्वनाशहोजायगा क्योंकि पुत्र श्वशुर सालेतथा पद्मावती और राज्यपर्य्यन्त सब इसीके अवलम्बनसेहैं इससे मैं कलिगसेनाकेसाथ कैसे विवाहकरूं इसप्रकार शोचकर राजा प्रातःकाल वहासे चलाआया और मध्यान्हके उपरान्त रानीपद्मावती के यहागया वहा पद्मावतीने भी वासवदत्ता की शिक्षाके अनुसार राजाका वडा सत्कारकिया और कलिंगसेनाके विवाहकेविषयमे पूछनेपर रानी वासवदत्ताही के समान उत्तरदिया दोनोंरानियो का चित्ततथा वचन एकहीसाजानकर राजाने दूसरे दिन यहबात यौगन्धरायण से कही यौगन्धरायण भी राजाको विचारमें पडाहुआ जानकर समय के अनुसार कहनेलगा कि मेरी बुद्धिसे रानियों का यही अभिप्राय नहीं है उन्होने प्राणत्यागनेका विचार करके यहवचन कहा है पतिके अन्यमें आशक्तहोजाने पर अथवा मरजानेपर साध्वी स्त्रियाप्राणदेने का निश्चयकरके दीनताको नहीं प्राप्तहोती हैं और सम्पूर्ण विषयों से निस्पृहहोजाती हैं कुटुम्बिनी पतिव्रता स्त्रियों को वडे प्रेमका अत्यन्ततोडना बहुत असह्यहोता है इस विषयमें मैं आपको राजा श्रुतसेनकी कथा सुनताहूं कि दक्षिण दिशामें गोकर्णनामपुर में श्रुतसेननाम एक विद्वान् राजा था राजाको सम्पूर्ण सपत्तियों के होनेपर भी एकयह वडी चिन्ताथी कि उसे कोई अपने अनुरूप स्त्री नहीं मिलती थी एकसमय चिन्ता करते हुए राजासे प्रसगपाकर अग्निशर्म्मानाम ब्राह्मण ने कहा कि हे महाराज मैंने दोआश्चर्य्य देखेहैं वह आपके आगे कहताहूं मै एकसमय तीर्थ यात्राकरते २ उस पचतीर्थी में पहुचा जिसमें किसी ऋषिके शापसे पाच अप्सरा ग्राह होकर रहतीथीं जिनका तीर्थयात्रा के समय अर्जुनने उद्धार कियाथा उस तीर्थका यह माहात्म्य है कि जो मनुष्य वहापाच दिन उपवास करके रहते हैं वह विष्णु भगवान्के पार्षद होजाते हैं ऐसे पवित्र उस तीर्थमें स्नानकरके जैसे मैं कुछ चला वैसेही देखा कि किसी खेतमें एकखेती करनेवाला खेतजोतरहाहै और कुछ गाताहै उससेती करनेवाले से उसीमार्गमें आतेहुए किसी सन्यासीने कहींका मार्गपूछा वह उसके वचनको न सुनकर गाताहीरहा तब वह सन्यासी क्रोधकरके उससे कटुवचन कहनेलगा कटुवचनोंको सुनकर वह अपना गीत छोडकरबोला कि तू सन्यासी होकर भी धर्मके अगको नहीं जानता मैंने तो मूर्ख होकरभी धर्मका

ने जाकर पटरानी से सबउपाय कहदिया तब उसने उसकी बताईहुई युक्तिकीइस्से राजाने कदलीगर्भा में वह महाअवगुण देखकर उसे त्यागकरदिया तब पटरानी ने प्रसन्नहोकर बहुतसा धन उसतपस्विनीको दिया और उसने उसमे से नाईको भी बहुतसा धनदेकर प्रसन्नकिया इसके उपरान्त राजासे त्यागकी हुई कदलीगर्भा मिथ्यादोषो से सन्तप्त होकर राजमन्दिरसे निकलकर पूर्व में बोईहुई सरसोंके वृक्षोंकी पहचान से जिस मार्ग से आईथी उसी मार्ग के द्वारा अपने पिता मकणक ऋषि के पासचलीगई वहा मकणकने उसेएकाएकी आईहुई देखके सन्देहसे क्षणभर ध्यानकिया और ध्यानहीसे सम्पूर्ण वृत्तान्त को जानकर स्नेहसे उसका बडा आदर किया और समझाकर सावधान किया फिर उसे अपने साथमें लेकर मुनिने आपही राजाके यहा आकर राजा से सब सपत्नियों का कियाहुआ दोष कह दिया उस समय उस नाईनेभी राजाको वह सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनाकरकहा कि हे राजा मैंने इसभयसे कि ऐसा न होय कि पटरानी इस कदलीगर्भाको मारण करवाके मरवाडालें इसलिये युक्ति पूर्व्वक आपसे वियोगकरवा दिया उसके यह वचन सुनकर और मुनिके वचनोंका विश्वास करके राजाने कदलीगर्भाको स्वीकार करलिया फिर मुनिको विदाकरके उसनाईको अपना शुभचिन्तक जानकर बहुतसा पारितोषिकदिया और अपनी पटरानीसे विमुखहोकर उसी कदलीगर्भाके साथ सुखपूर्व्वक रहनेलगा हे कलिंगसेना इस प्रकारके बहुतसे मिथ्यादोष सौतें शुद्धस्त्रियो मे लगादेती हे इससे तुम बडे यत्न पूर्व्वक अपनी रक्षा करना क्योंकि तुम अभी कन्याहो तुम्हारे विवाह होनेमें अभी बहुत देरहे और देवता लोगभी तुम्हारे इस रत्नरूपी स्वरूपकी अभिलाषा रखतेहैं यह स्वरूपही तुम्हारा इस समय शत्रु होरहाहै हे सखी अब मैं तुम्हारे पास नहीं आऊगी क्योकि अब तुम अपने पतिके मन्दिरमेंहो श्रेष्ठस्त्रिया अपनी सखीके पति के यहा नहीं जातीं और मेरेपतिने भी आजमुझे निषेध करदियाहै तुम्हारे स्नेहसे मैं अपने पतिसे छुप कर भी यहा नहीं आसक्ती क्योंकि वह दिव्यदृष्टि है आजभी मैं उन्हीं से पूछकर यहा आईहू हे सखी अब मेरा यहा कुछ कामनहींहै इस्से घरको जातीहू जोमेरा पति मुझे आज्ञादेगा तो फिर भी मैं तुम्हारे पास आऊंगी आसूभरके इन वचनोंको कहकर सोमप्रभा रोतीहुई कलिंगसेनाको समझाकर आकाश मार्गसे अपने स्थानको चलीगई १६६॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायामदनमञ्चुकालम्बकेषष्ठस्तरंग ६॥

इसके उपरान्त अपने देश तथा बन्धुओंसे रहित और विवाहहोने में विलम्बहोने के कारण उदासीन कलिंगसेना अपनी प्रियसखी सोमप्रभाको स्मरणकरतीहुई कोशाम्बी नगरीमें वनसे छूटीहुई मृगी के समानरही और राजाउदयनभी कलिंगसेनाके विवाहकी लग्नको बहुतदूर बतानेवाले ज्योतिषियों पर कुछ कुपितसा होके अपने चित्तको बहलाने के लिये रानी वासवदत्ताके महलमेंगया वहां यौगन्धरायण की शिक्षाके अनुसार वासवदत्ताने निर्विकारहोकर उसका बडासत्कारकिया उससमय राजा ने कलिंगसेनाके वृत्तान्तके प्रसिद्धहोजानेपरभी यहखिन्न क्योंनहींहै यहसोचकर उसके अभिप्राय के जाननेके लिये कहा कि हे प्रिये क्यातुमको मालूम है कि कलिंगसेना नाम राजपुत्री मेरे साथवि

वाह करनेको आई है यहसुनकर वासवदत्ता प्रसन्नतापूर्व्वक बोलीकि मैं जानतीहूं वहतोसाक्षात् लक्ष्मी ही आपके यहां आई है कलिंगसेनाके विवाहसे राजाकलिंगदत्त के आपके आधीनहोजानेपर यह सम्पूर्ण पृथ्वी आपके वशमें होजायगी मुझे तोआपहीके ऐश्वर्य्य तथा सुखसेसुखहै यहबात तो आप को पहलेहीसे विदितहै क्यामैं धन्यनहींहूं जिसके आपभरीके प्रतिहो जिनके लिये राजाओं की क- न्या अन्यराजाओंको छोडकर अभिलाप करती हैं वासवदत्ताके यहवचनसुनकर राजा उदयन् बडा प्रसन्नहुआ और उसीके साथ मद्यपान करके वहीं सोगया कुछ कालकेपीछे जबराजाकी निद्राखुली तब उसने शोचा कि रानी वासवदत्ताकैसी महानुभावहै और कैसीमेरी शुभा काक्षिणी है जो कलिंग- सेनाको अपनी सौतबनाने में भी निषेध नहींकरती अथवा इसने भाग्य वशसे पद्मावती के विवाहमें शरीर नहीं छोडाथा परन्तु कलिंगसेनाकेविवाहको यहनहीं सहसकेगी और जो इसकेलिये कोई अ निष्टहुआ तो मेरा सर्वनाशहोजायगा क्योंकि पुत्र श्वशुर सालेतथा पद्मावती और राज्यपर्य्यन्त सब इसीके अवलम्बनसेहैं इस्से मैं कलिंगसेनाकेसाथ कैसे विवाहकरूं इसप्रकार शोचकर राजा प्रात काल वहांसे चलाआया और मध्यान्हके उपरान्त रानीपद्मावती के यहागया वहां पद्मावतीने भी वासवदत्ता की शिक्षाके अनुसार राजाका बडा सत्कारकिया और कलिंगसेनाके विवाहकेविषयमें पूछनेपर रानी वासवदत्ताही के समान उत्तरदिया दोनोंरानियों का चित्ततथा वचन एकहीसाजानकर राजाने दूसरे दिन यहबात यौगन्धरायण से कही यौगन्धरायण भी राजाको विचारमें पडाहुआ जानकर समय के अनुसार कहनेलगा कि मेरी बुद्धिसे रानियोंका यही अभिप्राय नहींहै उन्होंने प्राणत्यागनेका विचार करके यहवचन कहा है पतिके अन्यमें आशक्तहोजानें पर अथवा मरजानेपर साध्वी स्त्रिया प्राणदेने का निश्चयकरके दीनताको नहीं प्राप्तहोती हैं और सम्पूर्ण विपयों से निष्पृहहोजाती हैं कुटुम्बिनी पतिव्रता स्त्रियों को बडे प्रेमका अत्यन्ततोटना बहुत असह्यहोता है इस विषयमें मैं आपको राजा श्रुतसेनकी कथा सुनताहूं कि दक्षिण दिशामें गोकर्णनामपुर में श्रुतसेननाम एक विद्वान् राजा था राजाको सम्पूर्ण सम्पत्तियों के होनेपर भी एकयह बडी चिन्ताथी कि उसे कोई अपने अनुरूप स्त्री नहीं मिलती थी एकसमय चिन्ता करते हुए राजासे प्रसंगपाकर अग्नि शर्म्मानाम ब्राह्मण ने कहा कि हे महाराज मैंने दोआश्चर्य्य देखेहैं वह आपके आगे कहताहूं मैं एकसमय तीर्थ यात्राकरते २ उस पंचतीर्थी में पहुंचा जिसमें किसी ऋषिके शापसे पांच अप्सरा ग्राह होकर रहतीथीं जिनका तीर्थयात्रा के समय अर्जुनने उद्धार कियाथा उस तीर्थका यह माहात्म्य है कि जो मनुष्य वहांपांच दिन उपवास करके रहते हैं वह विष्णु भगवान्के पार्षद होजाते हैं ऐसे पवित्र उस तीर्थमें स्नानकरके जैसे मैं कुछ दूरचला वैसेही देखा कि किसी खेतमें एक खेती करनेवाला खेतजोतरहाहै और कुछ गारहाहै उसखेती करनेवाले से उसीमार्गमें आतेहुए किसी सन्यासीने कहींका मार्गपूछा वह उसके वचनको न सुनकर गाताहीरहा तब वह सन्यासी क्रोधकरके उस्से कटुवचन कहनेलगा कटुवचनोंको सुनकर वह अपना गीत छोडकरबोला कि तू सन्यासी होकर भी धर्मके अंशको नहीं जानता मैंने तो मूर्ख होकरभी धर्मका

ने जाकर पटरानी से सबउपाय कहदिया तब उसने उसकी बताईहुई युक्तिकी इससे राजाने कदलीगर्भा में वह महाअवगुण देखकर उसे त्यागकरदिया तब पटरानी ने प्रसन्नहोकर बहुतसा धन उसतपस्विनीको दिया और उसने उसमे से नाईको भी बहुतसा धनदेकर प्रसन्नकिया इसके उपरान्त राजासे त्यागकी हुई कदलीगर्भा मिथ्यादोषो से सन्तप्त होकर राजमन्दिरसे निकलकर पूर्व में बोईहुई सरसोंके वृक्षोंकी पहचान से जिस मार्ग से आईथी उसी मार्ग के द्वारा अपने पिता मंकणक ऋषि के पासचलीगई वहा मकणकने उसेएकाएकी आईहुई देखके सन्देहसे क्षणभर ध्यानकिया और ध्यानहीसे सम्पूर्ण वृत्तान्त को जानकर स्नेहसे उसका बडा आदर किया और समझाकर सावधान किया फिर उसे अपने साथमें लेकर मुनिने आपही राजाके यहा आकर राजा से सब सपत्नियों का कियाहुआ दोष कह दिया उस समय उस नाईनेभी राजाको वह सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनाकरकहा कि हे राजा मैंने इसभयसे कि ऐसा न होय कि पटरानी इस कदलीगर्भाको मारण करवाके मरवाडालें इसलिये युक्ति पूर्वक आपसे वियोगकरवा दिया उसके यह वचन सुनकर और मुनिके वचनोंका विश्वास करके राजाने कदलीगर्भाको स्वीकार करलिया फिर मुनिको विदाकरके उसनाईको अपना शुभचिन्तक जानकर बहुतसा पारितोषिकदिया और अपनी पटरानीसे विमुखहोकर उसी कदलीगर्भाके साथ सुखपूर्वक रहनेलगा हे कलिंगसेना इस प्रकारके बहुतसे मिथ्यादोष सौतैं शुद्धस्त्रियों में लगादेती हैं इससे तुम बडे यत्न पूर्वक अपनी रक्षा करना क्योंकि तुम अभी कन्याहो तुम्हारे विवाह होनेमें अभी बहुत देरहै और देवता लोगभी तुम्हारे इस रत्नरूपी स्वरूपकी अभिलाषा रखतेहैं यह स्वरूपही तुम्हारा इस समय शत्रु होरहाहै हे सखी अब मैं तुम्हारे पास नहीं आऊंगी क्योंकि अबतुम अपने पतिके मन्दिरमेंहो श्रेष्ठस्त्रियां अपनी सखीके पति के यहा नहीं जातीं और मेरेपतिने भी आजमुझे निषेध करदियाहै तुम्हारे स्नेहसे मैं अपने पतिसे छुप कर भी यहा नहीं आसक्ती क्योंकि वह दिव्यदृष्टि है आजभी मैं उन्हीं से पूछकर यहा आईहू हे सखी अब मेरा यहा कुछ कामनहीं है इस्से घरको जातीहू जोमेरा पति मुझे आज्ञादेगा तो फिर भी मैं तुम्हारे पास आऊंगी आसूभरके इन बचनोंको कहकर सोमप्रभा रोतीहुई कलिंगसेनाको समझाकर आकाश मार्गसे अपने स्थानको चलीगई १६६॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायामदनमञ्चुकालम्बकेषष्ठस्तरंग ६॥

इसके उपरान्त अपने देश तथा बन्धुओंसे रहित और बिवाहहोनें में बिलम्बहोने के कारण उदासीन कलिंगसेना अपनी प्रियसखी सोमप्रभाको स्मरणकरतीहुई कौशाम्बी नगरीमें बनसे छूटीहुई मृगी के समानरही और राजाउदयन्भी कलिंगसेनाके बिवाहकी लग्नको बहुतदूर बतानेवाले ज्योतिषियों पर कुछ कुपितसा होके अपने चित्तको बहलाने के लिये रानी वासवदत्ताके महलमेंगया वहां यौगन्धरायण की शिक्षाके अनुसार वासवदत्ताने निर्विकारहोकर उसका बडासत्कारकिया उससमय राजा ने कलिंगसेनाके वृत्तान्तके प्रसिद्धहोजानेपरभी यहखिन्न क्योंनहींहै यहशोचकर उसके अभिप्राय के जाननेके लिये कहा कि हे प्रिये क्यातुमको मालूम है कि कलिंगसेना नाम राजपुत्री मेरे साथवि

राजपुत्री विद्युद्द्योतादेखी कुछ कालमें उसके दर्शन से होनेवाले, वेगकोरोककर मैने शोचा कि जो हमारे राजाकी यह स्त्री होय तो वह राज्यको भूलजाय, तथापि यह वृत्तान्त राजा से अवश्य कहना चाहिये नहीं तो उन्मादनी और देवसेनकासा वृत्तान्त होजानेका भय है राजादेवसेनके राज्य में जगत्को उन्मत्त करनेवाली किसी वणियेकी उन्मादनी नाम कन्याथी उसवैश्यके प्रार्थना करने परभी राजाने उसे अंगीकार नहीं कियाथा क्योंकि ब्राह्मणोंने राज्यकी हानि समझकर राजासे कहदियाथा कि इसकन्याके लक्षण अच्छे नहीं हैं राजाके स्वीकार न करने पर राजाके प्रधान मंत्रीने उसके साथ विवाहकरलिया एक समय उस उन्मादनीने झरोखेमें खड़ेहोकर राजाको अपना स्वरूपदिखादिया उस उन्मादिनी रूप सर्पिणीकी दृष्टिरूपी विषसे मारागया राजा वारवार मूर्च्छितहुआ और ऐसा विकलहो गया कि उसने भोजनभी नहीं किया राजाको विकल देखकर उन्मादिनी पति अपने प्रधान मन्त्रीके प्रार्थना करनेपर भी उस धार्मिक राजाने उन्मादनीका ग्रहण नहीं किया और विकलहोकर प्राणत्याग करदिये इससे जो मैं राजासे नहीं कहूंगा तो उपकारके बदले हानिहोगी यहशोचकर मैने आपसे यहां आकर यह दूसरा आश्चर्य भी कहदिया ६७ उस ब्राह्मणसे कामकी आज्ञाके समान इन वचनोंको सुनकर राजा श्रुतसेनका चित्त विद्युद्द्योतामें आशक्तहोगया और उसीसमय उसने उसब्राह्मणको वहां भेजकरऐसा उपायकिया जिससे शीघ्रही वहराजपुत्री विद्युद्द्योता राजावसन्तसेनके यहां से आगई और उसकेसाथ राजाका विवाहहोगया राजाको विद्युद्द्योता ऐसी प्रियहोगई कि सूर्य्यकी प्रभाके समान वह राजासे क्षणभर भी अलगनहीं हुई इसके उपरान्त एक महा धनवान् वैश्यकी मातृदत्तानाम कन्या अपने रूपके अभिमानसे राजासे स्वयंवर करनेकोआई राजाने अधर्मके भयसे उसवैश्य कन्याको अंगीकार करलिया इसवृत्तान्तको जानकर विद्युद्द्योता हृदय फटकरमरगई और राजाभी अपनी प्रियाकी यहदशा देखकर उसे गोदीमेंही धरेहुए मरगया तब वह वैश्यकी लड़की मातृदत्ता भी राजाके साथ सतीहोगई इसप्रकार वह सम्पूर्ण राज्यही राजाकेमरनेसे नष्टहोगया इससे हेराजा घनेप्रेम कादूटना बहुत ही असह्य और कठिन होताहै और इस धीरगंभीर वासवदत्ताको तो अत्यन्तही दुस्सहहोगा इनदोनों रानियोंके गंभीर वचनोंहीसे मालूम होताहै कि इनका चित्त प्राणदेनेके निश्चयसे सबबातोंसे निस्पृह होगया इससे हेराजा जो आपकलिंगसेनाके साथ विवाह करियेगा तो रानी वासवदत्ता अवश्य प्राण छोड़देगी और रानी पद्मावती भी मरजायगी क्योंकि इनदोनोंका एकही जीवनहै रानी वासवदत्ता के मरनेसे आपके पुत्र नरवाहनदत्तका भी जीना कठिन होजायगा और इनसब दुःखोंको आपभी मेरी बुद्धिमें न सहसकियेगा इसप्रकार यहसब बनाबनाया खेल एकसाथही नष्टहोजायगा इससे आपको स्वार्थकी रक्षाकरनी चाहिये पशुपक्षी भी अपनी रक्षा करना जानते हैं फिर आपसरीखे बुद्धिमान मनुष्योंका क्या कहना है यौगन्धरायणके यहवचन सुनकर राजा उदयन अच्छे प्रकारसे विवेक युक्त होके यहवचन बोला कि आपकाकहना निस्सन्देह बहुत ठीकहै जो मैं विवाह करूंगा तोअवश्य मेरा सर्व नाशहोजायगा इससे कलिंगसेनाके विवाह से मुझे क्या प्रयोजन है ज्योतिषियों ने जो मुझे

साराश जानलिया,यह सुनकर,संन्यासीने कहा कि तुमने क्याजानलियाहै तब वह बोला कि यहाछाया में बैठजाओ मैं तुमसे,कहताहू,सुनो इस प्रान्तमें ब्रह्मदत्त, सोमदत्त, और विष्णुदत्त यह तीनसगे भाई ब्राह्मण रहते हैं उनमे से दोका तो विवाह होगया है और छोटेका नहीं हुआ है वह विष्णुदत्त नाम छोटाभाई,अपने वडे भाइयोंकी, आज्ञाको पालन,करताहुआ मेरे साथ सेवकों के समान क्रोध रहित होकर रहताथा,मैं,उनके घरका,खितिहरहू ब्रह्मदत्त और सोमदत्त दोनों वडेभाई साधू सन्मार्गी सीधे तथा निरालस्यी अपने छोटे भाई विष्णुदत्तको मूर्ख समझतेथे एक समय विष्णुदत्तकी भाभीलोगोंने कामातुरहोके उससे रतिकरनेकेलिये कहा,परन्तु उसने उनको माताके समान,जान कर निषेधकरदिया तब उन दोनोंने अपने२ पतिसेकहा कि यह तुम्हारा छोटाभाई एकान्तमें हमाराधर्म भ्रष्टकरना चाहताहै स्त्रियोंके कहनेसे वह दोनों उसपर,कुपितहोगये ठीकहै (नदसदानहिविदु कुस्त्रीवचनमोहिता।) दुष्टस्त्रियोंके वचनोंसे मोहित पुरुषोंको अच्छेबुरे और सत्यासत्यकाज्ञान नहीं होता ४२ तब उनदोनों भाइयोंने विष्णुदत्तसे कहा कि तुम खेतमें जाकर वहाँ जो सर्पकीवामीहै उसे बराबरकर आओ उनकी आज्ञापाकर वह कुदाललेके यहाँ आकरबामीको खोदनेलगा उसे खोदतेदेखकर मैंने निषेध किया कि अरेइसमें कालासर्प है इसको मतखोदो मेरेवचनोंको सुनकरभी,जो होनाहोगा,सो होगा ऐसा कहकर वह अपने,पापी बडेभाइयोंकी आज्ञाको उल्लघन न करके उसे खोदताहीरहा,खोदते खोदते एक सुवर्णसे भराहुआ,कलश उसमे उसकोमिला और सर्प नहीं दिखाईदिया,ठीकहै (सदासर्वत्रधर्मोहि सान्निध्यकुरुतेमताम्) धर्मसर्वत्र,सज्जनलोगोंकी सदैव सहायताकरताहै तब,उसने मेरे निषेधकरने परभी वह सब धन अपने,भाइयोंकोलाकर देदिया उन दोनोंसे उसीधनमेंसे कुछधनघातकोंको देकर सब धनलेने की इच्छासे उसीके हाथ पैर कटवाडाले इतने परभी उसने, अपने भाइयोंपर क्रोध नहीं किया इसीधर्मके प्रभावसे उसके हाथ पैर फिर यथावस्थितहोगये इस वृत्तान्तको देखकर मैंने सम्पूर्ण क्रोध उसीदिनसे त्यागकरदिया और तुमने, तपस्वीहोकर भी अब तक क्रोध नहीं छोडा,इसीसमय देखलो कि मैंने क्रोधके जीतनेसे स्वर्गको,जीतलिया,यह कहकर वह खेतीकरनेवाला शरीरको त्याग करस्वर्गको चलागया एक आश्चर्य्य तो मैंने यह देखाहै अब दूसरासुनिये फिर वहाँ सेभी चलकर तीर्थ यात्राकेनिमित्त,समुद्रके तटपर भ्रमण करता २ मैं राजावसन्तसेनके राज्यमें पहुचा,वहाँ भोजन करनेकेलिये जब मैं राजाके सदावर्त्तमें जानेलगा,तो वहाँ के ब्राह्मण मुझसेबोले, कि हे ब्राह्मण इस मार्गसे मतजाओ यहाँ,विद्युद्द्योतानाम,राजकन्यावैठी,है,यदि कोई मुनिभी उसको देखलेवे तो वह कामसे व्याकुलहोके,उन्मत्तहोकर मरजाय तब मैंने उनसे कहा कि यह कोई आश्चर्य्य की,बात नहीं है मैं सदैव कामके समान सुन्दर राजावसन्तसेनको देखताहू जब वह राजायात्रादिकोंमें निकलताहै तब रक्षकलोग सत्कुलकी,स्त्रियोंको उनके धर्मके भगहोजानेके भयसे मार्ग मेंसे हटादेते हैं मेरे यह वचन सुनकर मुझे आपका ब्राह्मणजानके सदावर्त्तके अधिकारी पुरोहितलोग मुझे भोजनकरानेके लिये राजाके पासलेगये वहाँ जाकर मैंने कामदेवकी ज॰

राजपुत्री विद्युद्द्योतादेखी कुछ कालमें उसके दर्शन से होनेवाले, वेगकोरोककर, मैंने सोचा कि जो हमारे राजाकी यह स्त्री होय तो वह राज्यको भूलजाय, तथापि यह वृत्तान्त राजा से अवश्य कहना चाहिये नहीं तो उन्मादनी और देवसेनकासा वृत्तान्त होजानेका भय है राजादेवसेनके राज्य में जगत् को उन्मत्त करनेवाली किसी वणियेकी उन्मादनी नाम कन्याथी उसवैश्यके प्रार्थना करने परभी राजाने उसे अंगीकार नहीं कियाथा क्योंकि ब्राह्मणोंने राज्यकी हानि समझकर राजासे कहदियाथा कि इसकन्याके लक्षण अच्छे नहीं हैं राजाके स्वीकार न करने पर राजाके प्रधान मन्त्रीने उसके साथ विवाहकरलिया एक समय उस उन्मादनीने झरोखेमें खड़ेहोकर राजाको अपना स्वरूपदिखादिया उस उन्मादिनी रूप सर्पिणीकी दृष्टिरूपी विषसे मारागया राजा बारबार मूर्च्छितहुआ और ऐसा विकलहो गया कि उसने भोजनभी नहीं किया राजाको विकल देखकर उन्मादिनी पति अपने प्रधान मन्त्रीके प्रार्थना करनेपर भी उस धार्मिक राजाने उन्मादनीका ग्रहण नहीं किया और विकलहोकर प्राणत्याग करदिये इससे जो मैं राजासे नहीं कहूंगा तो उपकारके बदले हानिहोगी यहसोचकर मैंने आपसे यहां आकर यह दूसरा आश्चर्य भी कहदिया ६७ उस ब्राह्मणसे कामकी आज्ञाके समान इन वचनोंको सुनकर राजा श्रुतसेनका चित्त विद्युद्द्योतामें आसक्तहोगया और उसीसमय उसने उसब्राह्मण को वहां भेजकरऐसाउपायकिया जिससे शीघ्रही वहराजपुत्री विद्युद्द्योता राजावसन्तसेन के यहां से आगई और उनकेसाथ राजाका विवाह होगया राजाको विद्युद्द्योता ऐसी प्रियहोगई कि सूर्य्यकी प्रभाके समान वह राजासे क्षणभर भी अलगनहीं हुई इसके उपरान्त एक महाधनवान् वैश्यकी मातृदत्तानाम कन्या अपने रूपके अभिमानसे राजासे स्वयंवर करनेकोआई राजाने अधर्मके भयसे उसवैश्य कन्याको अ-ंगीकार करलिया इसवृत्तान्तको जानकर विद्युद्द्योता हृदय फटकरमरगई और राजाभी अपनी प्रियाकी यहदशा देखकर उसे गोदीमेंही धरेहुए मरगया तब वह वैश्यकी लड़की मातृदत्ता भी राजाके साथ सतीहोगई इसप्रकार वह सम्पूर्ण राज्यही राजाकेमरनेसे नष्टहोगया इससे हेराजा बनेप्रेम का टूटना बहुत ही असह्य और कठिन होताहै और इस धीरगंभीर वासवदत्ताको तो अत्यन्तही दुस्सहहोगा इनदोनों रानियोंके गंभीर वचनोंहीसे मालूम होताहै कि इनका चित्त प्राणदेनेके निश्चयसे सबबातोंसे निस्पृह होगया इससे हेराजा जो आपकलिंगसेनाके साथ विवाह करियेगा तो रानी वासवदत्ता अवश्य प्राण छोड़देगी और रानीपद्मावती भी मरजायगी क्योंकि इनदोनोंका एकही जीवनहै रानी वासवदत्ता के मरनेसे आपके पुत्र नरवाहनदत्तका भी जीना कठिन होजायगा और इनसब दुःखोंको आपभी मेरी बुद्धिसे न सहसकियेगा इसप्रकार यहसब बनाबनाया खेल एकसाथही नष्टहोजायगा इससे आपको स्वार्थकी रक्षाकरनी चाहिये पशुपक्षी भी अपनी २ रक्षा करना जानतेहैं फिर आपसरीके बुद्धिमान मनुष्योंका क्या कहना है यौगन्धरायणके यहवचन सुनकर राजा उदयन अच्छे प्रकारसे विवेक युक्त होके यहवचन बोला कि आपका कहना निस्सन्देह बहुत ठीकहै जो मैं विवाह करूंगा तोअवश्य मेरा सर्वनाशहोजायगा इससे कलिंगसेनाके विवाह से मुझे क्या प्रयोजन है ज्योतिषियों ने जो मुझे

सारांश जानलिया यह सुनकर संन्यासीने कहा कि तुमने क्याजानलियाहै तब वह बोला कि यहांआया में बैठजाओ मैं तुमसे कहताहूं सुनो इस प्रान्तमें ब्रह्मदत्त, सोमदत्त, और विष्णुदत्त यह तीनसगे भाई ब्राह्मण रहते हैं उनमें से दोका तो विवाह होगया है और छोटेका नहीं हुआ है वह विष्णुदत्त नाम छोटाभाई अपने वडे भाइयोंकी आज्ञाको पालन करताहुआ मेरे साथ सेवकों के समान क्रोध रहित होकर रहताथा मैं उनके घरका खितिहरहूं ब्रह्मदत्त और सोमदत्त दोनों वडेभाई मार्ग सन्मार्गी सीधे तथा निरालस्यी अपने छोटे भाई विष्णुदत्तको मूर्ख समझतेथे एक समय विष्णुदत्तकी भावीलोगोंने कामातुरहोके उसमें रतिकरनेकेलिये कहा परन्तु उसने उन को माताके समान जानकेर निषेधकरदिया तब उन दोनोंने अपने २ पतिसेकहा कि यह तुम्हारा छोटाभाई एकान्तमें हमाराधर्म भ्रष्टकरना चाहताहै स्त्रियोंके कहनेमें वह दोनों उसपर कुपितहोगये ठीकहै (नदसद्वानहिविद दुःस्त्रीवचनमोहिता) दुष्टस्त्रियोंके वचनोंसे मोहित पुरुषोंको अच्छेबुरे और सत्यासत्यकाज्ञान नहीं होता ४२ तब उनदोनों भाइयोंने विष्णुदत्तसे कहा कि तुम खेतमें जाकर वहाँ जो सर्पकीवामीहै उसे बराबरकर आओ उनकी आज्ञापाकर वह कुदारीलेके यहाँ आकरवामीको खोदनेलगा उसे खोदतेदेखकर मैंने निषेध किया कि अरेइसमें कालासर्प है इसको मतखोदो मेरेवचनोंको सुन करभी जो होनाहोगा सो होगा ऐसा कहकर वह अपने पापी वडेभाइयोंकी आज्ञाको उल्लंघन न करके उसे खोदताहीरहा खोदते खोदते एक सुवर्णसे भराहुआ कलश उसमें उसकोमिला और सर्प नहीं दिखाईदिया ठीकहै (सदासर्वत्रधर्मोहि सान्निध्यङ्कुरुतेसताम्) धर्मसर्वत्र सज्जनलोगोंकी सदैव सहायताकरताहै तब उसने मेरे निषेधकरने परभी वह सब धन अपने भाइयोंकोलाकर देदिया उन दोनोंसे उसीधनमेंसे कुछ वनघातकोंको देकर सब धनलेने की इच्छासे उसके हाथ पैर कटवाडाले इतने परभी उसने अपने भाइयोंपर क्रोध नहीं किया इसीधर्मके प्रभावसे उसके हाथ पैर फिर यथावस्थितहोगये इस वृत्तान्तको देखकर मैंने सम्पूर्ण क्रोध उसीदिनसे त्यागकरदिया और तुमने तपस्वीहोकर भी अब तक क्रोध नहीं छोडा इसीसमय देखलो कि मैंने क्रोधके जीतनेसे स्वर्गको जीतलिया यह कहकर वह खेतीकरनेवाला शरीरको त्याग करस्वर्गको चलागया एक आश्चर्य्य तो मैंने यह देखाहै अब दूसरासुनिये फिर वहाँ सेभी चलकर तीर्थ यात्राकेनिमित्त समुद्रके तटपर भ्रमण करता २ मैं राजावसन्तसेनके राज्यमें पहुंचा वहाँ भोजन करनेकेलिये जब मैं राजाके सदावर्त्तमें जानेलगा तो वहाँ के ब्राह्मण मुझसेबोले कि हे ब्राह्मण इस मार्गसे मतजाओ यहाँ विद्युद्द्योतानाम राजकन्यावैठी है यदि कोई मुनिभी उसको देखलेवे तो वह कामसे व्याकुलहोके उन्मत्तहोकर मरजाय तब मैंने उनसे कहा कि यह कोई आश्चर्य्य की बात नहीं है मैं सदैव कामके समान सुन्दर राजाशत्रुसेनको देखताहूं जब वह राजायात्रादिकोंमें निकलताहै तब रक्षकलोग सत्कुलकी स्त्रियोंको उनके धर्मके भगहोजानेके भयसे मार्ग मेंसे हटादेते हैं मेरे यह वचन सुनकर मुझे आपका ब्राह्मणजानके सदावर्त्तके अधिकारी पुरोहितलोग मुझे भोजनकरानेके लिये राजाके पासलेगये वहाँ जाकर मैंने क[illegible] मगवध [illegible] करनेव [illegible] समान

का मूसा भोजनथा और विलावके मूसा, नौला तथा उल्लू यह तीनों भोजनथे बिल्लीके भयसे मूसा तथा नौला अपने आहार तथा भोजनकेलिये रात्रिमें बाहर निकलतेथे और उल्लू स्वभावहीसे रात्रिको अपने भोजनको निकलताथा और बिलाव रात्रि दिन निर्भय होकर जब चाहताथा तब निकलताथा उस वृक्षके निकट एक जौका खेतथा उसमें जब बिल्ली उल्लू तथा नौला अपने आहारकेलिये जातेथे तब वह यहभी चाहाकरते थे कि मूसा मिलजाय तो हम उसेभी मारकर खाजायँ एकसमय कोई बहेलिया वहां आया उसने बिल्लीके पजे खेतकी तरफ गयेहुए देखकर उसके मारनेकेलिये खेतके चारों ओर जालबिछादिया जब रात्रिके समय बिलाव मूसेके मारनेकी इच्छासे खेतमेंगया तो वहां जालमें फँसगया फिर अन्नके निमित्त वहां गयाहुआ मूसा बिलावको जालमें फँसा देखकर प्रसन्नहोकर उछलने कूदनेलगा और बिल्ली से दूरके मार्ग से खेतके भीतर चलागया उससमय उल्लू तथा नौला यह दोनो भी वहां गये और बिलावको बधादेखकर मूसेको पकड़नेकी इच्छाकरनेलगे मूसेने दूरहीसे उन दोनोंको देखकर चित्तमेंशोचा कि जो नौला तथा उल्लूको भय देनेवाले बिलावकीशरणमें जाऊं तो जालमें बधाहुआभी अपनेपजेके एकही प्रहारसे मुझे मारडालेगा और जो उसकेपास न जाऊं तो यहदोनों मुझे मारडालेंगे तो अब इनशत्रुओंके बीचमें पड़कर में क्या करूं और कहांजाऊं इससमय इस बिलावहीकी शरणमें मुझे जानाचाहिये क्योंकि यह इससमय आपत्ति में पड़ाहै अपने बचानेके लिये मुझे जालके काटनेका उपयोगी समझकर अवश्य बचावेगा यह शोचकर मूसा धीरे बिलावके पास जाकर बोला कि तुम्हें बन्धनमे पडे देखकर मुझे बडा खेदहोताहै इससे मैं तुम्हारे जालको काटे देताहूं सीधे जीवोंको साथमें रहनेसे शत्रुओ परभी स्नेह होजाताहै परन्तु तुम्हारे ऊपर मुझे विश्वास नहीं है क्योंकि मैं तुम्हारेचित्तकी बात नहीं जानता यहसुनकर बिलावबोला कि तुम मेरे ऊपर विश्वास करो आजसे तुमप्राणोंकीरक्षा करनेके कारण मेरेमित्रहोगये उसके इसप्रकार कहनेपर मूसा उसके पास जाकर बैठगया यह देखकर नौला और उल्लू निराशहोके वहांसे चलेगये तदनन्तर बिलावने मूसे से कहा कि हे मित्र रात्रि बहुत थोडी रहगई है इसमे बहुत शीघ्र मेरेजालकोकाटदो तबमूसा धीरे २ प्राणोंको काटता हुआ बहेलियेके आनेकी बाट देखताहुआ बहुतकालतक झूठमूठ दात कटकटायाकिया जब रात्रिव्यतीत होगई और बहेलिया आगया तबबिलावकी प्रार्थनासे मूसेने सबजालकी फांसीकाटदी पाशोंके कटजाने पर बिलाव तो बहेलिये के भयसे भागगया और मूसा मृत्युके मुखसे बचकर भागकर अपने बिलमें घुस गया और फिर जब उसे बिलावने बुलाया तो उसने उसपर विश्वास न करकेकहा कि कालके सयोग से शत्रु भी मित्रहोजाताहै परन्तु वह सदैव मित्र नहीं बनारहता इसप्रकार मूसेने भी बहुतसे शत्रुओं से अपनी रक्षाकी तो मनुष्योंकेलिये क्या कहना चाहिये यही बात सोचकर मैंने राजा से कहाथा कि वह बुद्धिपूर्वक अपनी वासवदत्ता रानीकी रक्षाकरके अपने कार्य्यको सभाले सो तुमने भी सुनलिया होगा हे योगेश्वर बुद्धिही सर्वत्र सबकीमुख्य मित्रहै बुद्धिहीन पुरुषार्थ से कुछनहीं होता इस विषयमें भी मैं तुमको एक कथासुनाताहूं १२२ श्रावस्तीनाम नगरी में प्रसेनजित् नाम एकराजाथा उसके पुर

लग्नदूखताई यहबहुतही अच्छाकिया और स्वयंवरकेलिये आईहुई इसकलिंगसेनाके त्यागसे अधर्मही कितना होगा राजाके यहवचन सुनकर यौगन्धरायणने अपने चित्तमे शोचा कि मेरा कार्य अब सिद्धप्रायही है (उपायरससिक्तादेशकालोपबृंहिता सेयंनीतिमहावल्लीकिंनाम नफलेत्फलम्) उपाय रूपी जलसे सींचीहुई और देशतथा कालकोपाकरबढीहुई नीतिरूपीलतामें कौन २ फलनहीं फलतेहैं इसप्रकार शोचकर देशतथा कालका विचार करताहुआ यौगन्धरायण राजाको प्रणामकरके अपनेघर कोचलागया और राजाभी वासवदत्ताके यहाजाकर अपनेहृदयके अभिप्रायको छिपाकर सत्कारकरने वाली रानीवासवदत्तासे बोला कि हेमृगनयनीतुम मेरेवचनो के अभिप्रायको जानतीहो जैसे कमलका जीवनमूलजलहै उसीप्रकार मेरा जीवन तुम्हाराप्रेमहै मैं दूसरी स्त्रीकानाम भी नहीं लेनाचाहताहूं पर न्तु कलिंगसेना हठकरके मेरेयहा आई है और यहबात प्रसिद्धहै कि रंभातपकरतेहुए अर्जुनकेपास हठ पूर्व्वकरमण करनेको आई जब अर्जुनने उसे स्वीकारनहींकिया तब नपुंसकहोने का शापदेकर चली गई वहशाप अर्जुनने विराटकेयहारहकर स्त्रीवेशधारण करके भोगा इससे मैने उससमय कलिंगसेना का निषेधनहींकिया परन्तु तुम्हारी इच्छाकेविना मैं उस्से कुछ भी नहीं कहसक्ताहूं इसप्रकार उसेसम- झाकर और उसके हृदयके क्रूर अभिप्रायको जानकर यौगन्धरायणकी बातोंपर विश्वास करताहुआ राजा उसरात्रिको वासवदत्ता के साथ उसीके मन्दिर मे रहा ६४ इसवीचमें यौगन्धरायणने कलिंग- सेनाके वृत्तान्तको जाननेकेलिये जिस योगेश्वर नाम ब्रह्मराक्षसको नियतकियाथा उसने आकर यौ- गन्धरायणसे कहा कि मैं कलिंगसेनाके यहाँ निरन्तर स्थितरहा परन्तु दिव्य अथवा मनुष्य किसीको भी वहाँ आतेहुए मैंने नहीं देखा आज सायंकालके समय मैंने अकस्मात् महलके ऊपर आकाशमें कोई अव्यक्त शब्दसुना उसशब्दके कारणको जाननेकेलिये मैंने अपनी विद्याचलाई परन्तु चली नहीं तब मैंने विचारा कि कलिंगसेनाकी सुन्दरताके लोभसे आकाशमें भ्रमण करतेहुए किसीदिव्य प्रभा- वशाली पुरुषका यहशब्दहै क्योंकि मेरीविद्या इसपर नहीं चलती इस्से कुछ औसर देखताहूं जागते हुए चतुर पुरुषों को पराया छिद्रजानना कठिन नहीं होताहै मन्त्रिवर यौगन्धरायणने मुझसे कहाहै कि दिव्यपुरुष भी कलिंगसेनाकी अभिलाषा करते हैं और इसकी सखी सोमप्रभाको भी मैंने यही बात कहतेहुए सुनाथा यहनिश्चय करके मैं आपसे भी यही कहने को यहाँ चलाआयाहूं अब मैं एकबात आपसे प्रसंगपाकर पूछता हूं सो कहिये आपने राजाउदयन् से कहाथा कि पशुपक्षी भी अपने आत्मा की रक्षा करते हैं यहबात मैंने अलक्षितहोके योगके द्वारा सुनलीथी यदि इसविषय में आपको कोई दृष्टान्त मालूमहोय तो कहिये योगेश्वरके यहवचनसुनकर यौगन्धरायण बोला कि हे मित्र इस विषयपर एककथाहै वहमैं तुमको सुनाताहूं विदिशा नाम नगरी के बाहर एकबडा बर्ग- दका वृक्षथा उसमें नौला उल्लू बिलार और मूसा यहचारो प्राणी अलग २ स्थानों में रहते थे जड में मूसा और नौला अलग२बिलमे रहतेथे बिलावृक्षके मध्यमें किसीबडेभारी खोलमे रहताथा और उल्लू वृक्षकी चोटी जहा कोई पहुंच नहीं सक्ताथा उसपर रहताथा इनमेंसे बिलार नौला तथा उल्लू ॥

बोला कि बृहस्पतिजीको छोडकर तुम्हारेसमान नीतिका जाननेवाला और कौनहै राज्यरूपी वृक्षके लिये तुम्हारा मंत्र अमृत सींचनेके समानहै मैं अपनी बुद्धि तथा शक्तिके अनुसार कलिंगसेनाके आचरणजाननेका अहर्निश उद्योगकरूंगा यहकहकर योगेश्वरचलागया उनदिनों कलिंगसेना अपने महलमरसेंवत्सराज उदयन्कोदेख२कर व्याकुलहुआ करतीथी कामसेंव्याकुलहोके उसकाचित्तराजाही में लगारहताथा पुष्पों के आभूषण तथा हारों के पहरने से और चन्दनके लेपसे भी उसको शरीर में शीतलता नहीं मालूमहोतीथी इसबीचमें कलिंगसेनाको पहले देखकर मदनवेगनाम विद्याधरोंका स्वामी कामसे अत्यन्त पीडितरहा और कलिंगसेनाकी प्राप्तिकेलिये तपकरके श्रीशिवजी से वरपाकरभी कलिंगसेना अन्यदेशमें रहनेके कारण तथा अन्यपुरुषमें आशक्तहोने के कारण उसको सुलभनहींहुई इसी से औसरपाने के लिये वह मदनवेग रात्रिके समय कलिंगसेनाके मन्दिरके ऊपर घूमाकरता था एक दिन रात्रिकेसमय उसने श्रीशिवजीकी आज्ञाका स्मरणकरके अपनी विद्याके प्रभावसे राजाउदयन्का स्वरूपधारणकरलिया औरउसीरूपसे कलिंगसेनाके मंदिरमें प्रवेशकिया द्वारपालोंने उसकी वन्दनाकी और यह जाना कि राजा उदयन् लग्नके कालतक ठहरनहींसका है इमीसे मन्त्रियों से छिपकर यहां रात्रिको आयाहै कलिंगसेनाभी उसे भीतरआया देखकर कंपायमान होकर उठी उठने में जो उसके आभूषण बजे वह मानों अपने शब्दोंसे उसेनिवारण करतेथे कि यहराजा उदयन् नहीं है तब उदयन् कोस्वरूपसे कलिंगसेना को विश्वासित करके मदनवेगने उसके साथ गान्धर्व विवाह करलिया उस समय योग से अलक्षित होकर वहां स्थित योगेश्वरनाम ब्रह्मराक्षसने राजाउदयन् को देखकर बहुत अप्रसन्नहोके उसीसमय यौगन्धरायण से जाकर सबवृत्तान्त कहा फिर यौगन्धरायणके कहने से युक्ति पूर्वक वासवदत्ताकेपास राजा उदयन्को सोताहुआ देखकर प्रसन्नहोके यौगन्धरायणही के कहने से फिर कलिंगसेनाके यहां उस वनेहुए उदयन्के सोजानेपर यथार्थ स्वरूपके देखनेको यहचलागया वहां जाकर उसने सोईहुई कलिंगसेनाके पलँगपर सोयेहुए मदनवेगको उसके निजस्वरूपमें देखा छत्र तथा ध्वजाके चिन्होंसे युक्त वोयेहुए चरणवाले दिव्यपुरुष मदनवेगको शयनमें विद्याओंके अन्तर्द्धान होजाने से निजरूपमें स्थितदेखकर योगेश्वरने जाकर यौगन्धरायण से निवेदन करदिया और बहुत प्रसन्नहोके कहा कि मन्त्रिवर मैं कुछ नहीं जानताहूं तुम नीतिरूपीनेत्रोंसे सब जानतेहो तुम्हारे मन्त्रके बलसे यह दुस्साध्य कार्य भी सिद्धहोगया (किंव्योमविनार्केण किंतोयेनविनासरः किंमन्त्रेण विना राज्यंकिंसत्येनविनावचः) सूर्य्यके विना आकाश क्याहै जलके विना तडागही क्याहै मन्त्रके विना राज्य क्याहै और सत्यके विना वचन क्याहै योगेश्वरके इसप्रकार वचनसुनकर यौगन्धरायण प्रसन्नहोकर प्रातःकाल वत्सराजके पासगया वहां जाकर जब राजाने पूछा कि कलिंगसेनाके लिये क्याकरना उचितहै तब उसनेकहा कि वह स्वच्छन्दहै इस्से आपको उसका स्पर्शभी नहीं करनाचाहिये यह भगनीही इच्छासे राजा प्रसेनजित्के देखनेको आईथी इसे वृद्धदेखकर फिरआपके रूपसे लोभसे आपके पासआई इससे यह अन्यपुरुषोंका भी समागम स्वेच्छासे करती है यह सुनकर राजाने कहा कि यह

मे कोई अपूर्व्व ब्राह्मण आया वह शूद्रका अन्ननहीं खाताथा इससे किसी वैश्यने उसे किसी ब्राह्मणके घरमें टिकादिया और शुष्कअन्न तथा दक्षिणा उसे रोजदेनेलगा कुछदिनमे अन्यवैश्य भी उसे पहचान कर शुष्कअन्न और दक्षिणा देनलगे इसप्रकार अधिक प्राप्तिहोने से उसने धीरे ९ हजार अशर्फी इकट्ठीकीं और वनमे जाकर वहसब अशर्फी कहीं पृथ्वी में गाड दीं वह अकेला प्रतिदिन बनमें जाकर उसस्थानको देखआताथा एकदिन उस ने उस स्थानको खुदाहुआ देखा और अशर्फी वहा न देखीं उस गढेको शून्य देखकर केवल उसका चित्तही शून्यनहीं होगया किन्तु उसको सबदिशाभी शून्य ही दिखाई देनेलगी फिररोताहुआ उसब्राह्मणके यहाँआया जिसके यहाँ टिकाथा उसेरोते देखकर गृह के स्वामीने पूछा कि तुम क्यों रोतेहो तब उसने अपना सबवृत्तान्त कहदिया और तीर्थपरजाके अनशन व्रतकरके अपने प्राणदेनेको उद्यतहुआ इसवृत्तान्तको सुनकर वह अन्नदाता वणियाँ भी अन्य वणियोंको साथलेकर आया और उससे कहनेलगा कि हे ब्राह्मण तुम धनके निमित्त क्यों प्राणदेना चाहतेहो धनतो अकालमेघके समान आया जाया करताहै अन्नदाता वैश्य को यह बचन सुनकरभी उसने शरीर त्याग करनेका हठनहीं छोडा ठीकहै (प्राणेभ्योप्यर्थमात्राहि कृपणस्यगरीयसी) लोभी को प्राणोंसे भी अधिक धन प्यारा होताहै तब मरनेके लिये तीर्थपरजातेहुए उसब्राह्मणके वृत्तान्तको जानकर राजा प्रसेनजितने आपही वहाँ आकर उससे पूछा कि हे ब्राह्मण जहाँ तुमने वह धनगाडाथा उसपृथ्वीकी कुछ पहचानभी मालूमहै उसने कहा कि हाँ महाराज वनमे एकछोटासा वृक्षहै उसकी जडमें मैंने अपना धनगाडा था यहसुनकर राजाने कहा तुमप्राणमतदो तुम्हारा धन हमढुढवादेगे या अपने खजानेसेदेंगे इसप्रकार कहकर और ब्राह्मणको मरनेमे निवारणकरके राजा अपने मन्दिर को चलागया वहाँ प्रतीहारको बुलाकर यहआज्ञा दी कि मेरे शिरमे पीडाहै इससे ढढोरा पीटकर नगर भरके वैद्योंको बुलाओ इसप्रकार सबवैद्योंको बुलाकर एक २ वैद्यसे राजाने पूछा कि तुम्हारेपास कितने कौनरोगी हैं और तुमने किसको कौनसी दवादी है संपूर्ण वैद्योंने अपने २ रोगी तथा औषधियां बताईं उनमेंसे एकने कहा कि मातृदत्तनाम रोगी वणियेको मैंने दो दिन से नागबला औषध बताई है यहसुनकर राजाने उसवणियेको बुलाकर पूछा कि तुम्हारेलिये नागबला कौनलायाथा उसने कहा कि एकमेरा सेवक लायाथा तबराजाने उसके सेवकको बुलाकर कहा कि तुमने नागबलाके लिये वृक्षकी जड खोदनेमें जो अशर्फी पाई है वहदेदो वहब्राह्मणकी है राजाके इसप्रकार कहनेसे वहडरकर अशर्फीलाके उसीसमय देगया और राजाने उसीसमय उसब्राह्मणको बुलाकर उसके बाहर चलनेवाले प्राणके समान वहअशर्फी देदीं इसप्रकार राजाने उसवृक्षकी जडमें उसऔषधिको जानके बुद्धिके बलसे ब्राह्मणकी अशर्फीपाई इससेसदैव पुरुषार्थकी अपेक्षा बुद्धिप्रधानहै ऐसेकार्य्योंमें पराक्रमक्यकिरसक्ता है इससे हेयोगेश्वर तुमभी बुद्धिसे ऐसाकरो जिससे कि कलिंगसेनाका कोईदोष मालूमहोय क्योंकि किसी दोषके मिलजानेसे न उसकेलिये कोई बुराईहोगी न हमारेलियेहोगी राजा उसके साथ विवाह न करेगा और किसीप्रकारका अधर्म्म भीन होगा यह यौगन्धरायणके वचन

बोला कि बृहस्पतिजीको छोडकर तुम्हारे समान नीतिका जाननेवाला और कौनहै राज्यरूपी वृक्षके लिये तुम्हारा मंत्र अमृत सींचनेके समानहै मैं अपनी बुद्धि तथा शक्तिके अनुसार कलिंगसेनाके आचरण जाननेका अहर्निश उद्योग करूंगा यहकहकर योगेश्वरचलागया उनदिनों कलिंगसेना अपने महलपरसे वत्सराज उदयन्‌को देखकर व्याकुलहुआ करतीथी कामसेन्याकुलहोके उसका चित्त राजाही में लगारहताथा पुष्पों के आभूषण तथा हारों के पहरने से और चन्दनके लेपसे भी उसको शरीरमें शीतलता नहीं मालूमहोतीथी इसबीचमें कलिंगसेनाको पहले देखकर मदनवेगनाम विद्याधरोंका स्वामी कामसे अत्यन्त पीडितरहा और कलिंगसेना की प्राप्तिकेलिये तप करके श्रीशिवजी से वरपाकरभी कलिंगसेना अन्यदेशमें रहनेके कारण तथा अन्यपुरुषमें आशक्तहोने के कारण उसको सुलभनहींहुई इसी से औसरपाने के लिये वह मदनवेग रात्रिके समय कलिंगसेनाके मन्दिरके ऊपर घूमाकरता था एक दिन रात्रिकेसमय उसने श्रीशिवजीकी आज्ञाका स्मरणकरके अपनी विद्याके प्रभावसे राजाउदयन्‌का स्वरूपधारण करलिया और उसीरूपसे कलिंगसेनाके मंदिरमें प्रवेश किया द्वारपालोंने उसकी वन्दनाकी और यह जाना कि राजा उदयन् लग्नके कालतक ठहरनहींसका है इसीसे मन्त्रियों से छिपकर यहां रात्रिको आयाहै कलिंगसेनाभी उसे भीतरआया देखकर कंपायमान होकर उठी उठने में जो उसके आभूषण बजे वह मानो अपने शब्दोंसे उसेनिवारण करतेथे कि यहराजा उदयन् नहीं है तब उदयन्‌के स्वरूपसे कलिंगसेना को विश्वासित करके मदनवेगने उसके साथ गान्धर्व विवाह करलिया उस समय योग से अलक्षित होकर वहाँ स्थित योगेश्वरनाम ब्रह्मराक्षसने राजाउदयन्‌को देखकर बहुत अप्रसन्नहोके उसीसमय योगन्धरायण से जाकर सब वृत्तान्त कहा फिर योगन्धरायणके कहने से युक्तिपूर्वक वासवदत्ताकेपास राजा उदयन्‌को सोताहुआ देखकर प्रसन्नहोके योगन्धरायणही के कहने से फिर कलिंगसेनाके यहां उस बनेहुए उदयन्‌के सोजानेपर यथार्थ स्वरूपके देखनेको वहलौटगया वहाँ जाकर उसने सोईहुई कलिंगसेनाके पलँगपर सोयेहुए मदनवेगको उसके निजस्वरूपमें देखा छत्र तथा ध्वजाके चिन्होंसे युक्त धोयेहुए चरणवाले दिव्यपुरुष मदनवेगको शयनमें विद्याओंके अन्तर्द्धान होजाने से निजरूपमें स्थितदेखकर योगेश्वरने जाकर योगन्धरायण से निवेदन करदिया और बहुत प्रसन्नहोके कहा कि मन्त्रिवर मैं कुछ नहीं जानताहूं तुम नीतिरूपनेत्रोंसे सब जानतेहो तुम्हारे मन्त्रके बलसे यह दुस्साध्य कार्य भी सिद्धहोगया (किंव्योमविनार्केण किंतोयेनविनासरः किंमन्त्रेण विना राज्यं किंसत्येनविनावचः) सूर्य्यके विना आकाश क्याहै जलके विना तडागही क्याहै मन्त्रके विना राज्य क्याहै और सत्यके विना वचन क्याहै योगेश्वरके इसप्रकार वचनसुनकर योगन्धरायण प्रसन्नहोके प्रातःकाल वत्सराजके पासगया वहाँ जाकर जब राजाने पूछा कि कलिंगसेनाके लिये क्या करना उचितहै तब उसनेकहा कि वह स्वच्छन्दहै इससे आपको उसका स्पर्शभी नहीं करनाचाहिये वह धर्मनीही इच्छासे राजा प्रसेनजित्‌के देखनेको आईथी उसे वृद्धदेखके विराग होने से फिर गोंभसे आपके पासआई इससे वह अन्यपुरुषोंका भी समागम स्वेच्छासे करती है यह सुनकर राजाने कहा कि वह

मेंकोई अपूर्व्वी ब्राह्मण आया वहशूद्रका अन्ननहीं खाताथा इससे किसी वैश्यने उसे किसी ब्राह्मणके घरमें टिकादिया और शुष्कअन्न तथादक्षिणा उसे रोजदेनेलगा कुछदिनमें अन्यवैश्य भी उसे पढ़वा न कर शुष्कअन्न और दक्षिणा देनलगे इसप्रकार अधिक प्राप्तिहोने से उसने धीरे २ हजार अशर्फी इकट्ठीकीं और वनसे जाकर वहसब अशर्फी कहीं पृथ्वी मे गाड दीं वह अकेला प्रतिदिन वनमें जा कर उसस्थानको देखआताथा एकदिन उस ने उस स्थानको खुदाहुआ देखा और अशर्फी वहा न देखीं उस गढेको शून्य देखकर केवल उसका चित्तही शून्यनहीं होगया किन्तु उसको सबदिशाभी शून्य ही दिखाई देनेलगीं फिररोताहुआ उसब्राह्मणके यहाँआया जिसके यहाँ टिकाथा उसेरोते देखकर गृह के स्वामीने पूछा कि तुम क्यों रोतेहो तब उसने अपना सबवृत्तान्त कहदिया और तीर्थपरजाके अन शन व्रतकरके अपने प्राणदेनेको उद्यतहुआ इसवृत्तान्तको सुनकर वह अन्नदाता वणियां भी अन्य वणियोंको साथलेकर आया और उससे कहनेलगा कि हे ब्राह्मण तुम धनके निमित्त क्यों प्राणदेना चाहतेहो धनतो अकालमेघके समान आया जाया करताहै अन्नदाता वैश्य के यह वचन सुनकरभी उसने शरीर त्याग करनेका हठनहीं छोडा ठीकहै (प्राणेभ्योऽप्यर्थमात्राहि कृपणस्यगरीयसी) लोभी को प्राणोंसे भी अधिक धन प्यारा होताहै तब मरनेके लिये तीर्थपरजातेहुए उसब्राह्मणके वृत्तान्तको जानकर राजा प्रसेनजित्ने आपही वहाँ आकर उससे पूछा कि हे ब्राह्मण जहाँ तुमने वह धनगाडाथा उसपृथ्वीकी कुछ पहचानभी मालूमहै उसने कहा कि हाँ महाराज वनमें एकछोटासा वृक्षहै उसकी जडमें मैंने अपना धनगाडा था यहसुनकर राजाने कहा तुमप्राणमतदो तुम्हारा धन हमढुढवादेंगे या अपने खजानेसेदेंगे इसप्रकार कहकर और ब्राह्मणको मरनेसे निवारणकरके राजा अपने मन्दिर को चलागया वहाँ प्रतीहारको बुलाकर यहआज्ञा दी कि मेरे शिरमें पीडाहै इससे ढढोरा पीटकर न गर भरकेवैद्योंको बुलाओ इसप्रकार सबवैद्योंको बुलाकर एक २ वैद्यसे राजाने पूछा कि तुम्हारेपास कितने कौनरोगी हैं और तुमने किसको कौनसी दवादी है संपूर्ण वैद्योंने अपने २ रोगी तथा औष धियां बताईं उनमेंसे एकने कहा कि मातृदत्तनाम रोगी वणियेको मैंने दो दिन से नागबला औषध बताई है यहसुनकर राजाने उसवणियेको बुलाकर पूछा कि तुम्हारेलिये नागबला कौनलायाथा उसने कहा कि एकमेरा सेवक लायाथा तबराजाने उसके सेवकको बुलाकर कहा कि तुमने नागबलाके लिये वृक्षकी जड खोदनेमें जो अशर्फी पाई हैं वहदेदो वहब्राह्मणकी हैं राजाके इसप्रकार कहनेसे वहडरकर अशर्फीलाके उसीसमय देगया और राजाने उसीसमय उसब्राह्मणको बुलाकर उसके बाहर चलनेवाले प्राणोंके समान वहअशर्फी देदीं इसप्रकार राजाने उसवृक्षकी जडमें उसऔषधिको जानके बुद्धिके बलसे ब्राह्मणकी अशर्फीपाईं इससेसंदेह पुरुषार्थकी अपेक्षा बुद्धिप्रधानहै ऐसेकार्य्योंमें पराक्रम क्या करसक्ताहै इससे हेयोगेश्वर तुमभी बुद्धिसे ऐसाकरो जिससे कि कलिंगसेनाका कोईदोष मालूमहोय क्योंकि किसी दोषके मिलजानेसे न उसकेलिये कोई बुराईहोगी न हमारेलियेहोगी राजा उसकेसाथ विवाह न करेगा और किसीप्रकारका अधर्म्म भी न होगा ९१ योगन्धरायणके यहवचनसुनकर योगेश्वर प्रसन्नहोकर

जीसे वरपाया तुमको उदयन्में अनुरक्त जानकर उसीका स्वरूप धारणकरके उसके साथ तुम्हारा विवाह होनेसे पूर्वही तुमसे विवाह करलिया कानों के मार्गसे गयेहुए उसके इस वचनरूपी अमृत से कलिंगसेनाका हृदयारविन्द डहडहाहोगया तवमदनवेग कलिंगसेनाको समझाकर और बहुतसा सुवर्ण देकर फिर आनेकी प्रतिज्ञा करके आकाशको चलागया कलिंगसेनाने भी योग्यजानकर उसीमदनवेगको अपनापति निश्चितकरके उसपर अपने अन्तःकरणकी भक्तिवढाई और मेरे पतिका स्थानदिव्यों के रहनेके योग्यहै वहाँ मनुष्य नहीं जासक्तेहैं यहजानकर और अपनेपिताके स्थानको मैं अपनी इच्छा से छोडआईहू ऐसा शोचकर मदनवेगकी आज्ञालेकर वहीं अपने रहनेको निश्चय किया २१७॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायामदनमंचुकालम्बकेसप्तमस्तरंगः ७॥

इसके उपरान्त एकसमय कलिंगसेनाके अनुपम शरीरको स्मरण करताहुआ कामसे पीडित राजा उदयन् रात्रिके समय खड्गलेकर अकेला कलिंगसेना के मन्दिरकोगया वहा कलिंगसेनाने उसका बडा सत्कार किया जव राजाने संभोगके लिये उससे प्रार्थनाकरी तव उसने कहा कि हेराजा मैं पराईस्त्रीहू इसहेतुसे आपको मेरेसाथ संभोग नहींकरना चाहिये उसके यहवचनसुनकर राजानेकहा कि तुमतृतीय पुरुषको प्राप्तहोने के कारण पुंश्चलीहो परस्त्रीके साथ गमन करने में दोषहै परन्तु तुम्हारे साथ भोग करने में दोषनहीं है राजाके यहवचनसुनकर उसने कहा कि तुम्हारे निमित्त मैं आईथी तुम्हारा रूपधरके विद्याधरने मुझसे विवाह करलिया और वहीमेरा एकपतिहै तो मैंपुंश्चलीकैसेहू वन्धुओंका उल्लंघनकरके स्वेच्छासे कार्य्य करतीहुई विवाहिता स्त्रियों को भी ऐसी विपत्तिया भोगनी पडती हैं कुमारियोंका तो कहनाही क्याहै अशकुनको देखकर निषेध करनेवाली अपनी सखी के वचनोंको न मानकर जो मैंने आपके पास दूतभेजा उसका यह फलहुआ इससे जो आपहठसे मेरास्पर्शभी करियेगा तो मैंप्राणदेदूगी कौनकुलीन स्त्री अपने पतिको त्यागकरके पराये पतिका संगकरेगी इसविषयमें मैं आपको एककथा सुनातीहू उसे आप सुनिये पूर्वसमय में इन्द्रदत्तनाम चेदिदेशका राजा था उसने शरीरको क्षणभंगुर जानकर यशरूपी शरीरकी प्राप्तिकेलिये पापशोधननाम तीर्थपर एक वडा सुन्दर देवमन्दिर वनवाया राजा वडी भक्तिसे दर्शन करनेको वहां नित्यआताथा और सम्पूर्ण वहाके मनुष्य तीर्थ स्नानकरने के लिये उसस्थानपर आतेथे एकसमय तीर्थपर स्नानके निमित्त आईहुई किसी वैश्यकी स्त्री जिसकापति परदेशमेंथा राजाने देखी निर्मलकान्तिरूपी सुधासे सिंचीहुई विचित्ररूप तथा आभूषणवाली वह स्त्री क्याथी मानो कामदेवकी मनोहरजंगम राजधानीथी तुम्हारे वलसे हम ममारको जीतेंगे इसलिये मानों कामदेवके वरस्मोंकी शोभा उसके पैरोंमें आलगीथी ऐसी सुन्दर उस स्त्रीको देखकर राजाका चित्त उसपर ऐसा आसक्तहुआ कि रात्रिके समय वह उसको ढूढकर उसके घर पहुचा और उससे संभोग केलिये प्रार्थना करनेलगा तव उसने राजासे कहा कि आप तो धर्मकी रक्षा करनेवालेहो आपको परस्त्रियोंपर अधर्म करना उचित नहीं है जो आप हठसे मेरा स्पर्श करोगे तो वडा अधर्म होगा और मैं इस दोषको न सहकर शीघ्रही मरजाऊंगी उसके यह कहनेपरभी राजाके हठ करनेकी इच्छा करने

बडी कुलीनकन्याहै ऐसा कभी न करेगी और मेरे अन्त पुरमे जाही कौनसक्ता है राजाके यह वचन सुनकर यौगन्धरायण वोला कि हे राजा मै आजही आपको प्रत्यक्ष दिखादूंगा सिद्धादिक दिव्यपुरुष उसकी अभिलापा करते है इससे मनुष्य तो वहा नहीजासक्तेहैं परन्तु दिव्यपुरुषों को कौनरोकसक्ताहै चलिये मैं आपको साक्षात् दिखादूंगा तवराजाने रात्रिके समय उसके यहाँ जानेका निश्चयकिया राजा से ऐसा निश्चयकरके यौगन्धरायणने रानी वासवदत्ताके यहाँ जाकर उससे कहा कि पद्मावतीके सिवाय और कोई तुम्हारी सपत्नी नहीहोगी यह जो मैने तुमसे प्रतिज्ञाकी थी वह सब आज पूर्णहुई यह कहकर कलिंगसेनाका सपूर्ण वृत्तान्त कहदियो यहसुनकर वासवदत्ता वहुत प्रसन्नहोकर नम्रता पूर्वक वोली कि यह आपकी शिक्षाके अनुसार कार्य्य करनेका फलहै १९३ तदनन्तर अर्धरात्रि के समय यौगन्धरायण राजाको साथलेकर कलिंगसेनाके मन्दिरकोगया और वहा जाकर सोतीहुई कलिंगसेनाके साथ सोतेहुए मदनवेगको उसके निजस्वरूप में देखा राजाने उसे देखकर जैसे चाहा कि इस साहसिकको मारडालू वैसेही वह विद्याके प्रभावसे जगपडा और आकाशको उडगया क्षणभर में कलिंगसेनाने भी जगकर सूनीशय्या देखकर कहा कि वत्सराज पहले जगकर मुझे सोतीहुई छोडकर चलेजाते हैं यहसुनकर यौगन्धरायणने राजासे कहा कि इसविद्याधरीको इस पुरुषने तुम्हारारूप धारण करके भ्रष्टकरदिया है मैने यहवात योगवलसे जानके प्रत्यक्ष तुम्हें दिखादीहै यहपुरुष दिव्य प्रभावशालीहै इसको कोई मारनहींसक्ता यह कहकर यौगन्धरायण राजाको लेकर उसके पासगया उनदोनों को देखकर कलिंगसेनाने बडा आदरकरके कहा कि हे राजा अभी आप कहाँजाकर मन्त्रीको साथ लेकर चलेआये उसके वचनसुनकर यौगन्धरायण वोला कि हे कलिंगसेना किसी ने मायासे उदयन का रूपवनाके तुमको मोहितकरके तुम्हारे साथ विवाह करलियाहै हमारे राजाके साथ तुम्हारा विवाह नहीं हुआहै यहसुनकर उसकी छाती मे वाणसालगा और वहुत घबराकर आसूभरके उदयन्से कहने लगी कि हे राजा गान्धर्व विधिसे भी मेरेसाथ आप विवाहकरके मुझे भूलेजातेहो जैसे कि शकुन्तला को राजादुष्यन्त भूलगया था तव राजाने नीचेको मुखकरके उससे कहा कि मैंने तुम्हारे साथ विवाह नहीं कियाहै मैं तो यहाँ आजही आयाहू इसप्रकार कहतेहुए राजाको यौगन्धरायण यह कहकर कि चलोचलें राजमदिरमें लिवालाया जवराजा मन्त्री समेत चलागया तब विदेशमें प्राप्त अपने बंधुओं से रहित कलिंगसेना अपने यूथसे छूटीहुई मृगीके समान व्याकुलहुई सभोगसे दलेमले मुखरूपी कमल वाली और विसरीहुई चोटीरूपी भ्रमरोंकी पङ्क्तिवाली हाथी से पीडित कमलनीके समान कलिंगसेना कन्यका भावके नष्टहोजानेसे उपाय रहित होकर आकाशकी ओर देखकर यह वचन वोली कि जिसने उदयन्का रूपधरके मेरे साथ विवाह कियाहो वह प्रकटहोजाय वही मेरा कुमार अवस्थाका पति है उसके ऐसा कहनेपर हार तथा वाजुओंको पहनेहुए दिव्य रूपधारी वह मदनवेग विद्याधर आकाशसे उतरा जब कलिंगसेना ने पूछा कि तुमकोनहो तब वह वोला कि मैं विद्याधरों का स्वामी मदनवेग नाम विद्याधर हू मैंने पहले तुमको तुम्हारे पिताके घरदेखकर तुम्हारी प्राप्तिके लिये तपकरके श्री शिव

जीसें वरपाया तुमको उदयन्में अनुरक्त जानकर उसीका स्वरूप धारणकरके उसके साथ तुम्हारा विवाह होनेसे पूर्वही तुमसे विवाह करलिया कानों के मार्गसे गयेहुए उसके इस वचनरूपी अमृत से कलिंगसेनाका हृदयारविन्द डहडहाहोगया तबमदनवेग कलिंगसेनाको समझाकर और बहुतसा सुवर्ण देकर फिर आनेकी प्रतिज्ञा करके आकाशको चलागया कलिंगसेनाने भी योग्यजानकर उसीमदनवेगको अपनापति निश्चितकरके उसपर अपने अन्तःकरणकी भक्तिवढाई और मेरे पतिका स्थानदिव्यों के रहनेके योग्यहै वहाँ मनुष्य नहीं जासक्तेहै यहजानकर और अपनेपिताके स्थानको मैं अपनी इच्छा से छोडआईहू ऐसा शोचकर मदनवेगकी आज्ञालेकर वहीं अपने रहनेको निश्चय किया २१७॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायामदनमंचुकालम्बकेसप्तमस्तरंगः ७॥

इसके उपरान्त एकसमय कलिंगसेनाके अनुपम शरीरको स्मरण करताहुआ कामसे पीडित राजा उदयन् रात्रिके समय खड्गलेकर अकेला कलिंगसेना के मन्दिरकोगया वहां कलिंगसेनाने उसका बडा सत्कार किया जब राजाने संभोगके लिये उससे प्रार्थनाकरी तब उसने कहा कि हेराजा मैं पराईस्त्रीहू इसहेतुसे आपको मेरेसाथ संभोग नहींकरना चाहिये उसके यहवचनसुनकर राजानेकहा कि तुमतृतीय पुरुषको प्राप्तहोने के कारण पुंश्चलीहो परस्त्रीके साथ गमनकरने में दोषहै परन्तु तुम्हारे साथ भोग करने में दोषनहींहै राजाके यहवचनसुनकर उसने कहा कि तुम्हारे निमित्त मैं आईथी तुम्हारा रूपधरके विद्याधरने मुझसे विवाह करलिया और वहीमेरा एकपतिहै तो मैंपुंश्चलीकैसेहू बन्धुओंका उल्लंघनकरके स्वेच्छासे कार्य्य करतीहुई विवाहिता स्त्रियों को भी ऐसी विपत्तियां भोगनी पडती हैं कुमारियोंका तो कहनाही क्याहै अशकुनको देखकर निषेध करनेवाली अपनी सखी के वचनोंको न मानकर जो मैंने आपके पास दूतभेजा उसका यह फलहुआ इससे जो आपहठसे मेरास्पर्शभी करियेगा तो मैंप्राणदेदूंगी कौनकुलीन स्त्री अपने पतिको त्यागकरके पराये पतिका संगकरेगी इसविषयमें मैं आपको एककथा सुनातीहू उसे आप सुनिये पूर्वसमय में इन्द्रदत्तनाम चेदिदेशका राजा था उसने शरीरको क्षणभंगुर जानकर यशरूपी शरीरकी प्राप्तिकेलिये पापशोधननाम तीर्थपर एक बडा सुन्दर देवमन्दिर बनवाया राजा बडी भक्तिसे दर्शन करनेको वहां नित्यआताथा और सम्पूर्ण वहांके मनुष्य तीर्थ स्नानकरने के लिये उसस्थानपर आतेथे एकसमय तीर्थपर स्नानके निमित्त आईहुई किसी वैश्यकी स्त्री जिसकापति परदेशमें था राजाने देखी निर्मलकान्तिरूपी सुधासे सिंचीहुई विचित्ररूप तथा आभूषणवाली वह स्त्री क्याथी मानो कामदेवकी मनोहरजंगम राजधानीथी तुम्हारे बलसे हम संसारको जीतेंगे इसलिये मानों कामदेवके तरकसोंकी शोभा उसके पैरोंमें आलगीथी ऐसी सुन्दर उस स्त्रीको देखकर राजाका चित्त उसपर ऐसा आसक्तहुआ कि रात्रिके समय वह उसको ढूंढकर उसके घर पहुंचा और उससे संभोगकेलिये प्रार्थना करनेलगा तब उसने राजासे कहा कि आप तो धर्मकी रक्षा करनेवालेहो आपको परस्त्रियोंपर अधर्म्म करना उचित नहीं है जो आप हठसे मेरा स्पर्श करोगे तो बड़ा अधर्म्म होगा और मैं इस दोषको न सहकर शीघ्रही मरजाऊंगी उसके यह कहनेपरभी राजाके हठ करनेकी इच्छा करने

पर अपने आचरणके भ्रष्टहोनेके भयसे उस पतिव्रता स्त्रीका हृदय फटगया यहदेखकर राजा लज्जित होके अपने घरको चलागया और इसी पश्चात्तापसे कुछ दिनमें आपभी मरगया इसकथाको कहकर कलिंगसेना भयसे नम्रता पूर्व्वक उदयन्से कहनेलगी कि इस्से हेराजा अधर्मसे मेरे प्राण नाशमत करो यहां अपने आश्रय में आपमुझे रहने न दीजिये नहीं तो मैं अन्यत्र कहीं चलीजाऊं कलिंगसेनाके यह वचन सुनकर धर्मज्ञ राजा उदयन् विचारकर उस अधर्म से निवृत्तहोके यह कहनेलगा कि हेराजपुत्री तुम अपनी इच्छाके अनुसार अपने पतिके साथ यहां निवासकरो अब मैं तुमसे कुछनहीं कहूंगा भयमतकरो यह कहकर राजाके चलेजानेपर मदनवेग कलिंगसेना और राजाके वार्तालापको सुनकर आकाशसे उतरा और बोला कि हे प्रिये तुमने बहुत अच्छाकिया जो तुम ऐसा न करती तो तुम्हारे लिये कल्याण न होता क्योंकि मैं तुम्हारे इसअपराधको न सहसक्ता इसप्रकार कहके और उसको समझाके रात्रिभर उसीके पासरहा और तबसे नित्य वहां आने जानेलगा कलिंगसेनाभी विद्याधरोंके स्वामीको अपना पतिपाकर मृत्युलोकमें भी दिव्य सुखोंको भोगनेलगी और राजा उदयन् भी कलिंगसेनाकी चिन्ताको छोड़कर यौगन्धरायणके वचनको स्मरण करके रानी वासवदत्ता तथा नरवाहनदत्तको मानो फिर मिलाहुआसामानकर बहुत प्रसन्नहुआ और रानीवासवदत्ता तथा यौगन्धरायण भी नीतिरूपी कल्पलताके सफल होजाने से अत्यन्त प्रसन्नहुए २० इसके उपरान्त कुछदिनोंके व्यतीत होनेपर कलिंगसेना गर्भवतीहुई उसका मुखरूपी कमल पीत होगया उसके श्याम मुखवाले उन्नतस्तन मदकी मुद्रासे अंकित कामदेवकी निधिके कुंभोंके समान शोभित होनेलगे तबमदनवेगने कलिंगसेनासे आकरकहा कि हे प्रिये हमलोग दिव्यपुरुषों का यह नियम है कि जब मनुष्य गर्भ होताहै तब उसे छोड़कर चलेजाते हैं देखो मेनका कण्वमुनिके आश्रम में शकुन्तलाको छोड़कर चलीगई तुम यद्यपि अप्सराहो तथापि अपने अपराधसे इन्द्र के शापकेद्वारा मनुष्य योनिमें प्राप्तहुईहो और इसीसे तुमको लोगोंने निरपराधभी पुंश्चलीकहा इससे मैं अब अपने स्थानको जाताहूं तुम अपनी सन्तानकी अच्छे प्रकार रक्षाकरना जब तुम मुझे स्मरण करोगी तब मैं तुम्हारे पास आऊंगा इसप्रकार कहकर और अश्रुमुखी कलिंगसेनाको समझाकर और बहुतसे रत्नादिकदेके मदनवेग नियमसे पराधीन होकर चलागया परन्तु उसका चित्त कलिंगसेनामें लगारहा और कलिंगसेनाभी सन्ततिहोने में आसरालगाकर राजा उदयनके आश्रयमें वहीं रही २८ इसबीचमें अंग सहित पतिके मिलनेकेलिये तप करतीहुई रतिसे श्री शिवजीने कहा कि वत्सराज राजाउदयनके यहां तेरापति नरवाहनदत्तनामसे उत्पन्नहुआहै उसने मेरा अपराध कियाथा इसीसे उसकी उत्पत्ति योनिसेहुई है और तुमने मेरी आराधनाकी है इससे तुम मृत्युलोकमें भी अयोनिज होओगी और वहीं तुमको अंगसहित पति मिलेगा रति से इसप्रकार कहकर श्री शिवजीने ब्रह्माको यह आज्ञादी कि कलिंगसेनाके पुत्रहोगा उसको तुम अपनी मायासे हरके इस रतिको दिव्य शरीरसे मानुषी कन्या बनाकर वहीं स्थापितकरना इसप्रकार श्रीशिवजीकी आज्ञाको मानकर ब्रह्माजीके चलेजानेपर समयपाकर कलिंगसेनाके पुत्रहुआ तबब्रह्माने उत्पन्नहोतेही

उसको मायासे हरकर उस के स्थान में रतिमानुषी कन्या बनाकर रखदी और सबोंने उस कन्याहीका उत्पन्न होनाजाना दिनमें भी अकस्मात् उदितहुई द्वितीयाके चन्द्रमाकी कलाके समान उसकन्याकी कान्तिसे सम्पूर्ण घर देदीप्यमान होगया और रत्नोंके दीपकोंकी पंक्तियां मानों लज्जित होकर निस्तेज होगईं ऐसी सुन्दर उस कन्याको देखकर कलिंगसेनाने प्रसन्न होकर पुत्रके जन्मसे भी अधिक उत्सव किया ७६ इसके उपरान्त राजा उदयन्ने मन्त्रियों तथा रानियोंके निकट बैठे २ सुना कि कलिंगसेनाके महारूपवती कन्या उत्पन्नहुई है यहसुनकर राजाने अकस्मात् ईश्वरकी प्रेरणासे यौगन्धरायण के आगे रानी वासवदत्तासे कहा कि यह कलिंगसेना शापसे भ्रष्टहुई कोई दिव्यस्त्री है और इसकी यहअपूर्व रूपवती कन्याभी कोई दिव्य स्त्री होगी इससे यहकन्या नरवाहनदत्तके समान रूपवती होनेके कारण इसकी पटरानी होनेके योग्यहै यहसुनकर वासवदत्ताने राजासे कहा कि हे महाराज यह क्याबात आप अकस्मात् कहरहेहैं कहांतो दोनोंकुलोंसे शुद्ध आपकापुत्र और कहांपुंश्चलीकेगर्भसे उत्पन्नहुई यहकन्या यहसुनकर राजानेकहा कि यहबात में अपने आप नहीं कहरहाहूं कोई मेरेअन्तःकरणमें प्रवेशकरकेमुझ से कहलवारहाहै और मुझे आकाशवाणीसी सुनाईदेरही है कि यहकन्या नरवाहनदत्तकी पहलेही से स्त्रीबनादीगईहै और सत्कुलमें उत्पन्नहुई यहकलिंगसेना बड़ी पतिव्रता है परन्तु पूर्वजन्मके कर्म के वशसे यहपुंश्चली कहाईहै राजाके इसप्रकार कहनेपर बड़े बुद्धिमान् यौगन्धरायणनेकहा कि हेमहाराज मैंने सुनाहै कि कामके भस्महोजानेपर रतिने अपनेपतिके प्राप्तहोनेके लिये तपकिया उसेश्री शिवजी ने प्रसन्नहोके यहवर दियाहै कि मृत्युलोक में उत्पन्नहुए अपने शरीरवाले पति से तेरा समागमहोगा और जिससमय नरवाहनदत्तका जन्महुआथा उससमय आकाशवाणी हुईथी कि यहकामका अवतार है और रतिकोभी शिवजीकी आज्ञासे मृत्युलोकमें अवतार लेनाही है फिर दाईने आकर आजमुझसे एकान्तमें यहबात कहीथी कि मैंने आज पहले कलिंगसेनाका गर्भगर्भाशय (जेर) से युक्तदेखा और फिर उसीसमय गर्भाशयसे रहित अन्यसा दिखाईदिया इसआश्चर्य्यको देखकर मैं आपसे कहनेके लिये आईहूं यहबात उसदाईने मुझसे कहीथी और आपको इसबातका कुछ अनुभवभी हुआ है इससे मैं जानताहूं कि देवता लोगोंने मायासे कलिंगसेनाके गर्भको हरकेरतिको कलिंगसेनाकी अयोनिज कन्या बनादियाहै हे राजा यहकामके अवतार नरवाहनदत्तकी स्त्री अवश्यहोगी इसविषयमें मैं आपको एकयक्ष की कथा सुनाताहूं कि कुबेरका सेवक विरूपाक्षनाम एकयक्षथा वहलाखों निधानोंके रक्षकोंका प्रधानथा उसने मथुरा नगरीके बाहर जो एक निधानथा उसकीरक्षाके लिये एकऐसेयक्षको नियतकिया जोकि रात्रि दिन उसनिधानपरसे स्तम्भके समान नहीं हटताथा वहां मथुराका निवासी एकपाशुपत ब्राह्मण जो कि पृथ्वीमें निधिहोनेकी परीक्षा करसक्ता था मनुष्यकी चर्बीके दीपकको हाथमें लिये हुए स्थानों की परीक्षा करताहुआ आया वहां आतेही वह दीपक उसके हाथसे गिरपड़ा उसलक्षणसे उसने वहां निधिजानकर अपनेमित्रोंसमेत खोदनेका आरम्भकिया उससमयवहांका रक्षक जोयक्षथा उसनेजाकर विरूपाक्षसे कहदिया यहसुनकर विरूपाक्षने कोपयुक्त होकर कहा कि जाकर शीघ्रही उनखोदनेवालों

पर अपने आचरणके भ्रष्टहोनेके भयसे उस पतिव्रता स्त्रीका हृदय फटगया यहदेखकर राजा लज्जित होके अपने घरको चलागया और इसी पश्चात्तापसे कुछ दिनमें आपभी मरगया इसकथाको कहकर कलिंगसेना भयसे नम्रता पूर्व्वक उदयन्से कहनेलगी कि इस्से हेराजा अधर्म से मेरे प्राण नाशमत करो यहां अपने आश्रय में आपमुझे रहने न दीजिये नहीं तो मैं अन्यत्र कहीं चलीजाऊं कलिंगसेनाके यह वचन सुनकर धर्मज्ञ राजा उदयन् विचारकर उस अधर्म से निवृत्तहोके यह कहनेलगा कि हेराजपुत्री तुम अपनी इच्छाके अनुसार अपने पतिके साथ यहां निवासकरो अब मैं तुमसे कुछनहीं कहूंगा भयमतकरो यह कहकर राजाके चलेजानेपर मदनवेग कलिंगसेना और राजाके वार्तालापको सुनकर आकाशसे उतरा और बोला कि हे प्रिये तुमने बहुत अच्छाकिया जो तुम ऐसा न करतीं तो तुम्हारे लिये कल्याण न होता क्योंकि मैं तुम्हारे इसअपराधको न सहसक्ता इसप्रकार कहके और उसको समझाके रात्रिभर उसीके पासरहा और तबसे नित्य वहां आने जानेलगा कलिंगसेनाभी विद्याधरोंके स्वामीको अपना पतिपाकर मृत्युलोकमें भी दिव्य सुखोंको भोगनेलगी और राजा उदयन् भी कलिंगसेनाकी चिन्ताको छोड़कर यौगन्धरायणके वचनको स्मरण करके रानी वासवदत्ता तथा नरवाहनदत्तको मानो फिर मिलाहुआसामानकर बहुत प्रसन्नहुआ और रानीवासवदत्ता तथा यौगन्धरायण भी नीतिरूपी कल्पलताके सफल होजाने से अत्यन्त प्रसन्नहुए २० इसके उपरान्त कुछ दिनोंके व्यतीत होनेपर कलिंगसेना गर्भवतीहुई उसका मुखरूपी कमल पीत होगया उसके श्यामामुखवाले उन्नतस्तन मदकी मुद्रासे अंकित कामदेवकी निधिके कुंभोंके समान शोभित होनेलगे तबमदनवेगने कलिंगसेनासे आकरकहा कि हे प्रिये हमलोग दिव्यपुरुषों का यह नियम है कि जब मनुष्य गर्भ होताहै तब उसे छोड़कर चलेजाते हैं देखो मेनका कण्वमुनिके आश्रम में शकुन्तलाको छोड़कर चलीगई तुम यद्यपिअप्सराहो तथापि अपने अपराधसे इन्द्रके शापकेद्वारा मनुष्य योनिमें प्राप्तहुईहो और इसीसे तुमको लोगोंने निरपराधभी पुंश्चलीकहा इससे मैं अब अपने स्थानको जाताहूं तुम अपनी सन्तानकी अच्छे प्रकार रक्षाकरना जब तुम मुझे स्मरण करोगी तब मैं तुम्हारे पास आऊंगा इसप्रकार कहकर और अश्रुमुखी कलिंगसेनाको समझाकर और बहुतसे रत्नादिकदेके मदनवेग नियमसे पराधीन होकर चलागया परन्तु उसका चित्त कलिंगसेनामें लगारहा और कलिंगसेनाभी सन्ततिहोने में आसरालगाकर राजा उदयनके आश्रममें वहीं रही २६ इसबीचमें अंग सहित पतिके मिलनेकेलिये तप करतीहुई रतिसे श्रीशिवजीने कहा कि वत्सराज राजाउदयनके यहां तेरापति नरवाहनदत्तनामसे उत्पन्नहुआहै उसने मेरा अपराध कियाथा इसीसे उसकी उत्पत्ति योनिसेहुई है और तुमने मेरी आराधनाकी है इससे तुम मृत्युलोक में भी अयोनिज होओगी और वहीं तुमको अंगसहित पति मिलैगा रति से इसप्रकार कहकर श्रीशिवजीने ब्रह्माको यह आज्ञादी कि कलिंगसेनाके पुत्रहोगा उसको तुम अपनी मायासे हरके इस रतिको दिव्य शरीरसे मानुषी कन्या बनाकर वहीं स्थापितकरना इसप्रकार श्रीशिवजीकी आज्ञाको मानकर ब्रह्माजीके चलेजानेपर समयपाकर कलिंगसेनाके पुत्रहुआ [illegible]

उस को मायामे हरकर उस के स्थान में रतिमानुषी कन्या बनाकर रखदी और सबों ने उस कन्याहीका उत्पन्नहोनाजानी दिनमें भी अकस्मात् उदितहुई द्वितीयाके चन्द्रमाकी कलाके समान उसकन्याकी कान्तिसे सम्पूर्ण वर्ग देदीप्यमान होगया और रत्नोंके दीपकोकी पंक्तियां मानों लज्जित होकर निस्तेज होगई ऐसी सुन्दर उस कन्याको देखकर कलिंगसेनाने प्रसन्न होकर पुत्रके जन्मसे भी अधिक उत्सव किया ४६ इसके उपरान्त राजा उदयनने मन्त्रियो तथा रानियोंके निकट बैठे २ सुना कि कलिंगसेनाके महारूपवती कन्या उत्पन्नहुई है यहसुनकर राजानेअकस्मात् ईश्वरकी प्रेरणासे योगन्धरायणके आगे रानी वासवदत्तासे कहा कि यह कलिंगसेना शापसे भ्रष्टहुई कोई दिव्यस्त्री है और इसकी यहअपूर्व रूपवती कन्याभी कोई दिव्य स्त्री होगी इससे यह कन्या नरवाहनदत्तके समान रूपवती होनेके कारण इसकी पटरानी होनेके योग्यहै यहसुनकर वासवदत्ताने राजासे कहा कि हे महाराज यह क्याबात आप अकस्मात् कहरहेहैं कहांतो दोनोंकुलोंमे शुद्ध आपकापुत्र और कहांपुंश्चलीकेगर्भसे उत्पन्नहुई यहकन्या यहसुनकर राजानेकहा कि यहबात मैं अपने आप नहीं कहरहाहूं कोई मेरेअन्तःकरणमे प्रवेशकरके मुझ से कहलवारहाहै और मुझे आकाशवाणीसीसुनाईदेरही है कि यहकन्या नरवाहनदत्तकी पहलेही से स्त्रीबनादीगईहै और सत्कुलमें उत्पन्नहुई यहकलिंगसेना बड़ी पतिव्रता है परन्तु पूर्व्वजन्मके कर्म के वशमे यहपुंश्चली कहाईहै राजाके इसप्रकार कहनेपर बड़े बुद्धिमान् योगन्धरायणनेकहा कि हेमहाराज मैने सुनाहै कि कामके भस्महोजानेपर रतिने अपनेपतिके प्राप्तहोनेके लिये तपकिया उसेशी शिवजी ने प्रसन्नहोके यहवर दियाहै कि मृत्युलोक में उत्पन्नहुए अपने शरीरवाले पति से तेरा समागमहोगा और जिससमय नरवाहनदत्तका जन्महुआथा उससमय आकाशवाणी हुईथी कि यहकाम का अवतार है और रतिकोभी शिवजीकी आज्ञामे मृत्युलोकमें अवतार लेनाही है फिर दाईने आकर आजमुझसे एकान्तमें यहबात कहीथी कि मैंने आज पहले कलिंगसेनाका गर्भगर्भाशय (जेर) से युक्तदेखा और फिर उसीसमय गर्भाशयसे रहित अन्यसा दिखाईदिया इसआश्चर्य्यको देखकर मैं आपसे कहनेके लिये आईहूं यहबात उसदाईने मुझसे कहीथी और आपको इसबातका कुछ अनुभवभी हुआ है इससे मैं जानताहूं कि देवता लोगोंने मायासे कलिंगसेनाके गर्भको हरकेरतिको कलिंगसेनाकी अयोनिज कन्या बनादियाहै हे राजा यहकामके अवतार नरवाहनदत्तकी स्त्री अवश्यहोगी इसविषयमें मैं आपको एकयक्ष की कथा सुनाताहूं कि कुबेरका सेवक विरूपाक्षनाम एकयक्षथा वहलाखों निधानोंके रक्षकोंका प्रधानथा उसने मथुरा नगरीके बाहर जो एक निधानथा उसकीरक्षाके लिये एकऐसेयक्षको नियतकियाथा जोकि रात्रि दिन उसनिधानपरसे स्तम्भके समान नहीं हटताथा वहां मथुराका निवासी एकपाशुपत ब्राह्मण जो कि पृथ्वीमें निधिहोनेकी परीक्षाकरनेका था मनुष्यकी चरबीके दीपकको हाथमें लिये हुए स्थानों की परीक्षा करताहुआ आया वहां आतेही वह दीपक उसके हाथमे गिरपड़ा उसलक्षणसे उसने वहां निधिजानकर अपनेमित्रों समेत खोदनेका प्रारम्भकिया उससमयवहांका रक्षक जोयक्षथा उसनेजाकर विरूपाक्षसे कहदिया यहसुनकर विरूपाक्षने क्रोधयुक्त होकर कहा कि जाकर शीघ्रही उनखोदनेवालों

को मारडालो यहआज्ञापाकर उसयक्षने महाजाके अपनी युक्तिसे निधिके खोदनेवाले वहसम्पूर्ण ब्राह्मण मारडाले जब यहवृत्तान्त कुबेरने सुनातब कोपकरके विरूपाक्षसे कहा कि हे पापी तूने सहसा ब्रह्महत्या क्योंकरवाई दुर्दशा ग्रस्त निर्धनलोग लोभसे क्या नहींकरते हैं उन्हें, विघ्नों से डराकर भगादेना चाहिये मारना न चाहिये यहकहकर उसे शापदिया कि तू इसपापके प्रभावसे मृत्युलोकमें उत्पन्नहोजा शापके प्रभावसे वहयक्ष किसी जमींदार ब्राह्मणके यहा उत्पन्नहुआ तब उसयक्षकी स्त्री ने कुबेरसे कहा कि हे धनाध्यक्ष आपने जहाँ मेरे पतिको भेजाहै वहांही कृपा करके मुझेभी भेजदीजिये मैं उसके वियोगमे नहीं जीसक्ती उस पतिव्रता स्त्री के यह वचन सुनकर कुबेर ने कहा कि जिस ब्राह्मणके यहा वह उत्पन्नहुआहै उसकी दासीके यहा तू अयोनिज कन्याहोगी वहा तेरापति तुझे मिलजायगा और तेरेही प्रभाव से वह अपने शापसे उद्धार होकर तुझसमेत फिर मेरे पास आजायगा कुबेरके इस वचन से वह पतिव्रता मानुषी कन्या होकर उस ब्राह्मणकी दासीके द्वारपर आपडी दासीनें अकस्मात् अपने द्वारपर उसकन्या को देखकर लेके अपने स्वामी उस ब्राह्मणको दिखाया उसे देखकर उस ब्राह्मणने कहा कि यह निस्सन्देह कोई अयोनिज दिव्य कन्याहै यही मेरा चित्तकहताहै इससे तू इसको मेरेही घरमे रख यही मेरे पुत्रकी स्त्रीहोगी अपने स्वामीकी यह आज्ञापाकर दासीने वह कन्या उसीके घरमें रक्खी क्रमसे वह कन्या और ब्राह्मणका पुत्र दोनों बढे और उनदोनोंमे परस्पर बडा स्नेहहोगया तब उसब्राह्मणने उनदोनोका विवाहकरदिया यद्यपि उनदोनोंको अपने पूर्व्व जन्मका स्मरण नहीं था तथापि उनदोनोंको समागम होनेसे ऐसे आनन्दहुआ मानों बहुत कालके विरहके उपरान्त मिलेहैं कुछकालमें वहयक्ष अपनी स्त्री के तपसे पापरहितहोके मृत्युके वशहोगया और वह उसके साथ सती होगई इसप्रकार वह दोनो अपने लोकको फिर चलेगये इस रीतिसे किसीकारणके द्वारा दिव्य स्त्रिया मृत्युलोकमें अयोनिज उत्पन्न होती हैं इससे हे राजा कलिंगसेनाकी कन्या आपके पुत्र नरवाहनदत्तकी स्त्री होनेके योग्यहै और यहतो देवतालोगों की बनाई हुई अयोनिजहै इसका कुलही क्या होसक्ताहै यौगन्धरायण के यह वचन सुनकर रानी वासवदत्ता समेत राजा उदयन् ने यह बात स्वीकार करली इसके उपरान्त यौगन्धरायण के अपने घर चलेजानेपर राजा मद्यपानादि क्रियाकरके रानी वासवदत्ता केही यहाँ उसदिनरहा ६६ कुछ दिनों के व्यतीत होने पर कलिंगसेनाकी कन्या मोह से अपने पूर्व्व जन्मको भूलकर सौन्दर्य्यसमेत बढनेलगी वह मदनवेगनाम विद्याधरकी कन्या थी इसहेतु से कलिंगसेनासमेत अन्य सबलोगोंने उसका मदनमंचुकानाम रक्खा मानों उसने सपूर्ण सुन्दर स्त्रियों का रूप लेलियाथा नहीं तो उसके सन्मुख वह सब विरूप क्यों होगई एकसमय रानी वासवदत्ता ने उसके स्वरूपकी बडी प्रशसा सुनकर उसको अपनेपास बुलाया वहां धायकी गोदमें आईहुई मदनमञ्चुकाको दीपककी ज्योतिके समान वासवदत्ता राजा उदयन् तथा यौगन्धरायण इन तीनों ने देखा उसके अपूर्व्व नेत्रोंसमेत आनन्ददायी स्वरूपको देखकर सबको यही विश्वास होगया कि महसाक्षात् रतिही उत्पन्नहुई हे उससमय वासवदत्ताने नेत्रोंको आनन्ददायी अपनेपुत्र नरवाहनदत्तको वहाबुलाया

प्रफुल्लित मुखारविन्दवाला,नरवाहनदत्त,वहांआकर जैसे,पद्माकर सूर्यकी प्रभाको देखता है उसी प्रकार देदीप्यमान मदनमंचुकाको देखनेलगा वहभी जैसे,चन्द्रमाको देखकर चकोरी नहीं तृप्तहोती है इसाप्रकार प्रफुल्लित नेत्रोंसे उसे, देखकर तृप्त नहीं हुई तबसे वहदोनों बाल्यावस्थाही में मानों दृष्टिरूपी पाशोंसे बँधेहुए क्षणभरभी अलग २ नहीं रहसक्तेथे कुछ दिनोंके उपरान्त राजा उदयन्ने देवता लोगोंसे,पहलेही निश्चित कियेगये उनदोनों के विवाहका निश्चयकिया तब कलिंगसेना वत्सराज उदयन्के इस विचारको जानकर बड़ी प्रसन्नहुई और नरवाहनदत्त को अपना होनेवाला जामाता जानकर उससे अत्यन्त स्नेह करनेलगी इसके अनन्तर राजाने मन्त्रियोंसे सलाह करके नरवाहनदत्तके लिये अपनासा मंदिर,अलग बनवादिया,और,उसे बहुत गुणवान् जानकर सम्पूर्ण सामग्री इकट्ठी करके युवराजपदवीपर उसका अभिषेक करदिया,अभिषेकके समय नरवाहनदत्तके शिरपर पहले तो आनन्द देनेवाले माता पिताके अश्रुगिरे,और पीछेसे श्रुतिकेमन्त्रोंसे पवित्र सम्पूर्ण तीर्थोंका जल अभिषेकके जलसे उसके मुखारविन्दके निर्मल,होजानेसे सम्पूर्ण दिशाभी निर्म्मलहोगईं फिर माताओं के मंगलकारी पुष्पोंके बरसानेपर आकाश से भी दिव्य पुष्पोंकी वृष्टिहुई पृथ्वी तथा आकाशमें आनन्दके नगाडेबजे उससमय युवराज,पदवीपर बैठेहुए नरवाहनदत्तके आगे ऐसाकोई न था जो नम्र न हुआ केवल उसका प्रभावही ऊंचेको,बढ़ा उससमय राजाने नरवाहनदत्तके मित्र अपने मन्त्रियो के पुत्रोंको बुलवाकर उसके मन्त्रीबनाये उनमें,से यौगन्धरायणके पुत्र मरुभूति को मन्त्रीका,रूमएवान्के पुत्र हरिशिखको सेनापतिका, वसन्तकके पुत्र तपतकको क्रीडा सखाभावका, इत्यक अर्थात् नित्योदितके पुत्र गोमुख को सम्पूर्ण प्रतीहारोंके स्वामीका,और पिंगलिकाके पुत्र अपने पुरोहितके भतीजे वैश्वानर तथा शान्तिसोमको पुरोहितका अधिकार दिया इसप्रकारसे राजाके अधिकार देनेपर आकाशसे पुष्पों की वृष्टिहोकर यह आकाशवाणीहुई कि यह सबमन्त्री नरवाहनदत्तके सम्पूर्ण कार्य्योंके साधकहोंगे और गोमुख तो इसके द्वितीय शरीरहीके समान होगा इस आकाशवाणी को सुनकर राजा उदयन् ने प्रसन्नहोके सम्पूर्ण मन्त्रियोंके पुत्रोंका वस्त्र तथा,आभूषणोंसे बडा सत्कारकिया उससमय राजाने सम्पूर्ण सेवकोंको इतनाधनदिया जिससे केवल दरिद्रशब्दही वहां अनर्थरहा वायुकेद्वारा हिलतीहुई पताकाओंके वस्त्रोंसे मानों बुलायेगये नट,वेश्या तथा चारणादिकों से सम्पूर्ण नगरी भरगई उससमय कलिंगसेना भी अपने भविष्यत जामाताके उत्सव में होनेवाली साक्षात् विद्याधरोंकी लक्ष्मीके समान आई फिरवासवदत्ता और पद्मावती उसकलिंगसेना समेत प्रसन्नहोकर मिलीहुई उत्साह मन्त्र तथा प्रभाव इनतीनों शक्तियोंके समान नाचनेलगीं उसउत्सवमें वायुकेद्वारा कम्पित उपवनके लता समेत वृक्षभी नाचतेसे मालूमहोतेथे फिर चैतन्यपुरुषोंका तो क्याहीकहनाहै इसप्रकार अभिषेक होनेके उपरान्त नरवाहनदत्त हाथीपर चढकर नगरमें निकला तब पुरकी स्त्रियों ने नीलकमल लीले, तथा रक्त कमलोंके समान अपने नील श्वेत तथा रक्तवर्ण नेत्रोंसे उसे आच्छादित करदिया इसरीति से सम्पूर्ण पुरमें घूमकर और पुरीके पूज्यदेवताओंका दर्शनकरके बन्दीगणोंसे स्तुति कियागया नरवाहनदत्त

अपने सब मन्त्रियों समेत अपने मन्दिरमें गया वहां कलिंगसेना पहलेहीसे दिव्य भोजन तथा पीने के पदार्थ लाईथी वह उसे मन्त्रियों समेत भोजन और पीनेके लियेदिये फिर भोजन कराके जामाता के स्नेहसे कातरहोके उसने अपने ऐश्वर्य्य सेभी अधिक वस्त्र तथा दिव्य आभूषण मन्त्री मित्र तथा उसके सेवको समेत नरवाहनदत्तको दिये इसप्रकार बडे उत्सवसे अमृतकी वृष्टिके समान आनन्ददायी वह दिवस राजा उदयन् आदि सबको व्यतीतहुआ १२० इसकेउपरान्त रात्रिके समय कलिंगसेनाने अपनी कन्याके विवाहका विचार करते २ अपनी सखी सोमप्रभाका स्मरण किया स्मरण करतेही उस के पति महाज्ञानी नलकूबरने उससे कहा कि हे प्रिये तुम्हारी सखी कलिंगसेना उत्कण्ठितहोके तुमको स्मरण करती है इससे वहा उसके पास जाकर उसकी कन्याके विवाहके लिये दिव्य उपवनबनादो यह कहकर और कलिंगसेनाका सम्पूर्ण भूत तथा भविष्य वृत्तान्त वताकर नलकूबरने सोमप्रभाको भेज दिया तव सोमप्रभा कलिंगसेना के निकट आकर बहुतकालकी उत्कण्ठासे उसके गलेमें लिपटकर और कुशल पूछकर कहनेलगी कि हे सखी वडे ऐश्वर्य्यवान् विद्याधरके साथ तुम्हारा बिवाहहुआ है और साक्षात् रति अवतारलेकर श्रीशिवजीकी कृपासे तुम्हारी कन्याहुई है यह राजा उदयन्के पुत्र कामके अवतार नरवाहनदत्तकी भार्य्या पहलेही से है नरवाहनदत्त दिव्य कल्प पर्यन्त विद्याधरोंका चक्रवर्ती राजाहोगा और यह तुम्हारी कन्या उसकी सब स्त्रियोंमें पटरानीहोगी और तुमभी पूर्व्वजन्म की अप्सराहो इन्द्रके शापसे भ्रष्टहोके इस पृथ्वीलोकमें आगईहो जब तुम्हारे सम्पूर्ण कार्य्य समाप्तहोंगे तव शापसे छूटकर स्वर्गको चलीजाओगी यह सम्पूर्ण बातें मेरे ज्ञानी पतिने मुझसे कहदीहैं इससे तुम चिन्ता न करो तुम्हारेलिये भविष्यतमें सब अच्छाहीहोगा मैं तुम्हारी कन्याके लिये एक दिव्य उपवन बनाये देतीहूं जैसा न पातालमें न स्वर्गमें न पृथ्वीमें है यहकहकर और अपनी मायासे दिव्य उपबन बनाकर जानेदेनेको नहीं इच्छा करनेवाली सखीकलिंगसेनासे किसीप्रकार आज्ञालेकर सोमप्रभा अपने स्थानको चलीगई १४२ प्रातःकाल अकस्मात् आकाश से पृथ्वीपर गिरेहुए नन्दनबनके समान उस उपवनको लोगोंने देखा और उसउपवनका वृत्तान्त सुनकर राजा उदयन्भी अपने मन्त्री तथा स्त्रियों समेत उसउपवनको देखनेके लिये आया और नरवाहनदत्तभी अपने साथियों समेत वहाआया उसउप वनमें सदैव होनेवाले सब ऋतुके फलफूल वृक्षोंमें लगेथे और दीवारें तथा बावडी और पृथ्वी अनेक प्रकार की अपूर्व मणियों से जटितथीं सुवर्णमय सैकडों पक्षी उसमें उडते थे और दिव्य सुगन्धयुक्त वायुचलतीथी वह उपवन क्या था मानों देवता लोगोंकी आज्ञासे द्वितीय स्वर्गही पृथ्वी में उतरकर आयाथा ऐसे अति अद्भुत उपवनको देखकर राजाने अतिथि सत्कारमें व्यग्रचित्तवाली कलिंगसेना से पूँछा कि यह क्या आश्चर्य है उसने सब के आगे राजा उदयन् से कहा कि विश्वकर्माका अवतार मयनाम दैत्य है जिसने युधिष्ठिर और इन्द्रकेलिये रम्यपुरबनाया था उसकी सोमप्रभानाम कन्या मेरी सखी है उसने रात्रिकेसमय मेरे पासआकर स्नेह से मेरी कन्याके लिये यह दिव्य उपवन बना दिया और मेरा सम्पूर्ण भूत भविष्य वृत्तान्त भी बतादिया यहकहकर उस ने सोमप्रभाका कहाहुआ सम्पूर्ण

वृत्तान्त राजासे कहदिया कलिंगसेना के इनवचनोको यथार्थ जानकर सम्पूर्ण लोग निस्सन्देहहोकर अत्यन्तही प्रसन्नहुए वह दिन कलिंगसेना ने उन लोगों के सत्कारही में व्यतीतकिया और राजा उदयन् भी अपनी स्त्रियों तथा पुत्र समेत उस दिन वहींरहा। दूसरेदिन राजा उदयन् देवमन्दिर में देवताओं के दर्शनकरनेकोगयाथा वहा उसने सुन्दर वस्त्रालकारयुक्त बहुतसी दिव्य स्त्रिया देखीं राजा ने उनसे पूँछा कि तुम कौनहो वह बोलीं कि हम सम्पूर्ण विद्या और कलाहै तुम्हारे पुत्रकेलिये यहा आई है अब जाकर हम उसीके अन्त करण में प्रवेशकरती हैं यहकहकर वह अन्तर्द्धान होगई तब राजा उदयन् ने आश्चर्यपूर्वक दर्शनकरके मन्दिर में जाकर रानी वासवदत्ता और सम्पूर्ण मंत्रियो से वह सब वृत्तान्तकहके सबको आनन्ददिया वह लोगभी सुनकर देवताकी कृपामानकर अत्यन्त प्रसन्न हुए इसके उपरान्त नरवाहनदत्त मन्दिर में आया तो राजा के कहने से वासवदत्ता वीणाबजानेलगी माताको वीणाबजाते देखकर नरवाहनदत्त ने नम्रतापूर्वक कहा कि वीणास्थानसे च्युतहोगई उसके यह वचनसुनकर राजाने कहा कि अच्छा तुमतो इसेलेकर बजाओ तब पिताकी आज्ञासे उसने वीणा लेकर ऐसी सुन्दरतामे बजाई कि जिसे सुनकर गन्धर्व्वलोग भी विस्मितहोजायँ इसप्रकारसे सम्पूर्ण विद्याओं तथा कलाओं में उसकी परीक्षाकरके राजाने जानलिया कि सम्पूर्ण विद्यातथा कलाओं ने इसके अन्त करण में प्रवेशकिया है और पुत्रको गुणवान् जानकर कलिंगसेनाकी कन्या मदनमंचुका को नृत्यसिखवाया फिर जैसे २ चन्द्रमाकी कलाकेसमान मदनमंचुका सम्पूर्ण कलाओ से पूर्णहुई वैसेही वैसे नरवाहनदत्त रूपसमुद्र आनन्दकी तरंगयुक्तहुआ उनदिनों गातीहुई और भावबताकर नाचतीहुई मदनमंचुकाको मानों कामदेवकी आज्ञाको पढतीहुईसी देखकर वह नरवाहनदत्त अत्यन्त प्रसन्नहोताथा मदनमंचुका क्षणभर भी चन्द्रमा के समान सुन्दर नरवाहनदत्तको विनादेखे आनन्दभरकर प्रात काल जल से आर्द्र कुमुदिनी के समान शोभितहोतीथी और नरवाहनदत्त भी उसके मुखारविन्द को विनादेखे क्षणभरभी नहीं ठहरसक्ताथा इससे उस उपवन में जाकर वह सदैव विहारकरताथा वहा कलिंगसेना उसे अपने पासबुलाके मदनमंचुका के साथ उसको क्रीडाकराकर प्रसन्नहोतीथी नरवाहनदत्तके चित्तकी वृत्तिका जाननेवाला गोमुख उसके वहा बहुतकालतक ठहरने के लिये कलिंगसेनासे अनेक २ प्रकारकी कथा कहाकरता था औरनरवाहनदत्त अपने चित्तके अनुसार उसके कार्य्य करने मे उसपर अत्यन्त प्रसन्नहोता था ठीक है (हृदयानुप्रवेशोहि प्रभोस्सम्वननपरम्) स्वामी के चित्तकाजानना स्वामी का बडा वशीकरण है १६६ उस उपवनकी संगीतशाला मे नरवाहनदत्त आपही मदनमंचुकाको नृत्यआदिक सिखलाताथा और जब वह नाचती थी तब बडे २ गन्धर्वों को भी लज्जित करताहुआ आपही उसके साथ मृदंगादिक बाजे बजाता था उनदिनों वह हाथी घोडे रथ शस्त्र अस्त्र चित्र तथा पुस्तकादि विद्याओं में ऐसा चतुरहोगया था कि अनेक २ देशों से आये हुए अनेक २ विषयों के जाननेवाले पंडितों को भी उसने जीतलिया इसप्रकार सम्पूर्ण विद्याओ मे वह नरवाहनदत्त के कुमारावस्थाके दिन व्यतीतहुए १७३ एकसमय नरवाहनदत्त अपनेसम्पूर्ण मंत्री

तथा मदनमचुका समेत किसी उत्सवमें नागवननाम उपवनमेंगया,वहां किसी बणियेकी स्त्रीने गोमुखसे कामकी चेष्टाकरनेकी अभिलाषाकी,परन्तु उसने उसका तिरस्कारकरदिया तब उसस्त्रीने सविष शर्बत पिलाकर गोमुखको मारनाचाहा,परन्तु उसीकी सखीसे यहवृत्तान्तजानकर गोमुखने शर्बतनहीं पिया और इसप्रकार से स्त्रियोंकी निन्दा करनेलगा कि (अहोधात्रापुरस्सृष्टसाहसतदनुस्त्रियं नैतासां दुष्करंकिञ्चिन्निसर्गादिहविद्यते) ब्रह्माने पहले साहस बनाया फिर स्त्रियाबनाईं क्योंकि इनको स्वभाव ही से कोई काम दुष्करनहीं है (नूनस्त्रीनांमसृष्टेयंममृतेनविषेणच अनुरक्तामृतसाहिविरक्ताविषमेवच) निस्सन्देह स्त्रीविष और अमृतसे मिलाकर बनाईगई है अनुरागयुक्तस्त्रीतो अमृतहैऔर विरक्त स्त्री विषरूप है (ज्ञायतेकान्तवदना केनपृच्छन्नपातका कुस्त्रीप्रफुल्लकमलागूढनक्रेवपद्मनी) जैसे किसी तड़ागमें सुन्दर कमल फूलरहे हों और उसकेभीतर छुपाहुआ मगर बैठाहो उसीप्रकार सुन्दर मुखवाली कुलटा स्त्रीके अन्तःकरण में छिपेहुए पातकको कौन जानसक्ता है (दिव पततिकाचित्तुगुणचक्रप्रचोदिनीभर्तृश्लाघासहासुस्त्रीप्रभाभानोरिवामला) (हन्त्येवाशुगृहीतान्या पररक्तागतस्पृहा पापाविरागविषभृद्भर्त्तारम्भुजगीनसा) कोई पापिनी स्त्री परपुरुष में अनुरक्तहोकर द्वेषरूप विषसेयुक्त सर्पिणी के समान अपने पतिको स्पर्शकरतेही शीघ्र मारडालती है देखो,किसी ग्राममें शत्रुघ्ननाम कोई पुरुषरहताथा उसकीस्त्री बड़ी व्यभिचारिणी थी उसने एकदिन,सायकाल के समय अपनीस्त्रीको जारकेसाथ रमणकरते देख कर खड्ग से जारको मारडाला और उसदुष्टास्त्रीको भीतर रखकर द्वारपर इसनिमित्त जाबैठा कि अधिक रात्रि व्यतीतहोजाय तो इसे बाहर फेंकआऊं उससमय कोई पथिक उसकेघर टिकनेकोआया उसने उसे टिकालिया और उसीको साथ लेकर उसजारकी लोथको लेकर वनमेंजाके जैसेही किसी अन्धे कुएमें फेंकनाचाहा वैसेही पीछेसे चुपके २ आईहुई उसकीस्त्रीने,उसेभी कुएमें ढकेल दिया इसप्रकारसे कुलटा स्त्री कौन २ साहसनहीं करती हैं इसरीतिसे गोमुखने कुमारावस्थाही में स्त्रियोंकी बड़ी निन्दा की तदनन्तर नागवनमें सर्पोंका पूजनकरके नरवाहनदत्त अपने परिकर समेत अपने मन्दिरकोआया वहां आकर उसने दूसरेदिन जानकर भी परीक्षा करने के लिये गोमुखादि मन्त्रियो से नीतिका तत्त्व पूछा तब वह लोग कहनेलगे कि यद्यपि आप सर्वज्ञहो,तथापि आपके पूछनेपर हम लोग नीति के तत्त्वको कहते हैं राजापहले वशीभूत कियेहुए,इन्द्रीरूपी घोड़ों पर चढ़कर काम क्रोधादिक भीतरे शत्रुओंको जीतकर अपनी आत्माको अन्य शत्रुओं के,जीतनेके लिये प्रथमहीजीते क्योंकि जिसने अपने आत्माही को नहीं जीता है वह विवश होने के कारण दूसरे को क्या जीतसकेगा तदनन्तर सम्पूर्ण गुणयुक्त मन्त्रीकरे और,अथर्व वेद का जाननेवाले चतुर तपस्वी ब्राह्मण को अपना पुरोहित बनावे और मत्री तथा पुरोहितों की भय, लोभ, धर्म तथा काममें युक्तिपूर्वक परीक्षा करके कार्य्यों में नियुक्तकरे और उनके अन्तःकरण को भी देखता रहे कार्यों में परस्पर अपना अपना बिचार कहतेहुए मंत्रियोंके बचनों में इसबातकी परीक्षाकरे कि यह वचन सत्यहै अथवा द्वेषयुक्त है और स्नेह से कहाहै अथवा स्वार्थ सिद्ध करनेको कहागया है जब वह सत्य कहे तो उनपर प्रसन्नहोवे और जब

असत्यकहैं तो उनको योग्य दण्डदेवे और गोयन्दों के द्वारा मंत्रियों के आचरणको सदैव गुप्तरीति से जानतारहै इसप्रकार सम्पूर्ण कार्योंपर दृष्टिकरताहुआ दुष्टलोगोंको राज्यकार्योंसे निकालकर और सेना तथा कोश (खजाना) को वढाकर अपने राज्यको पुष्टकरै तिसपीछे उत्साहप्रभुता तथा मन्त्र शक्तिसे युक्तहोकर अन्य राजालोगों के जीतनेकी इच्छाकरे परन्तु अपने और उनके बलाबल को देखले प्रमाणिक तथा बहुश्रुत बुद्धिमान् लोगों के साथ विचारकरे और जब वह लोग निश्चय करचुकें तब अपनी बुद्धिसे भी सब प्रकार शोचले और साम दामादिक उपायों को जानकर योग क्षेम (प्राप्तकी रक्षा और अप्राप्तकी प्राप्तिका उपाय) को सिद्धकरे फिर संधि विग्रह आदिक छओं गुणोंको काममें लावे इसप्रकार निरालस्य होकर स्वदेश और परदेशकी चिन्ता करताहुआ राजा सदैव जयको प्राप्त होताहै और कभी पराजित नहीं होता और जो मूर्ख राजा काम तथा लोभसे अन्धे होते हैं उन्हें धूर्त्त लोग झूठे उपदेश करके आपत्ति में डालके उनसे खूबधन लेतेहैं १०२ जैसे खेतके स्वामी जन खेतके चारोंओर काटोंकी मेंड लगादेतेहैं तब उसमें कोई नहीं जासक्ता है उसीप्रकार जिसराजाको बहुत से धूर्त्त लोग घेरेही रहतेहैं उसके पास किसी सज्जन का प्रवेश नहीं होने पाताहै धूर्त्तलोग सम्पूर्ण गुप्त बातोंको जानकर उसे ऐसा अपने वशकरते हैं कि राज्यलक्ष्मी दुखित होकर उसके पाससे चलीजाती है इससे राजा अपनी आत्माकोजीतै और सम्पूर्ण विशेष बातोंको जानै और योग्य दण्डदेवे इससे उसपर प्रजाका अनुराग वढताहै और प्रजाहीके अनुरागसे वह राज्यलक्ष्मीका पात्र होताहै पूर्व समय में सूरसेन नाम एक राजा अपने मन्त्रियोंपर बड़ा विश्वास करताथा इससे मन्त्रीलोग आपसमें मिलकर उससे जो चाहतेथे सो लेतेथे राजा अपने जिस सेवकको कुछ देना चाहताथा उसे वह एक तिनकाभी नहीं देने देतेथे और अपने सेवकोंको जो चाहतेथे वह राजासे दिलवा देतेथे राजाने धीरे २ अपने मंत्रियों की यह परस्पर मिलावट जानकर युक्ति पूर्व्वक उनमें भेदकरादिया और उन धूर्त्तों मे भेद होजानेसे राजा अच्छेप्रकार से अपने राज्यका कार्य्य करनेलगा और फिर उसे कोई न ठगसका पूर्व्वसमय में हरिसिंह नाम एक साधारण राजाथा उसने नीतिके तत्त्वको जानकर विद्वान् तथा भक्त मन्त्रीकिये क़िलेको बहुत दृढ करलिया कोशखजाना बहुत इकट्ठा किया और योग्य कार्य्य करके सम्पूर्ण प्रजा अपने में ऐसी प्रीति युक्त करली कि चक्रवर्त्ती के साथभी लडने मे वह नहीं पराजित हुआ इसप्रकार बहुत कहने से क्या प्रयोजन है विचार और चिन्तवन राज्य का मार्ग्ग है इत्यादि बातों को कहकर वह गोमुखादिक मन्त्री चुप होरहे मन्त्रियों के यह वचन सुनकर और उनके वचनों की प्रशंसा करके नरवाहनदत्त ने कहा कि पुरुषो को चिन्तवन करना तो उचितही है परन्तु भाग्य मुख्यहै यह कहकर अपने मन्त्रियोंको साथ लेकर विलम्ब होनेके कारण महाउत्कण्ठित होकर अपनी प्रिया मदनमञ्चुकाके देखनेको गया वहाजाकर जब नरवाहनदत्त आसनपर बैठा तो कलिंगसेना ने विस्मितहोकर गोमुख से कहा कि आज नरवाहनदत्तकोआया न देखकर मदनमञ्चुका उत्कण्ठितहोके इसके मार्गके देखनेके निमित्त मन्दिरके ऊपर चढगई और मैभी इसके पीछे २ चलीगई उससमय नि-

रीटको धारण कियेहुए खड्गको लियेहुए एक दिव्यपुरुष आकाशसे उतरकर मुझसे बोला कि मैं विद्याधरोंका स्वामी मानसवेगनाम विद्याधरहूं और तुम शाप से भ्रष्टहुई सुरभिदत्तानाम अप्सराहो और तुम्हारी यह कन्याभी दिव्यहै यह मुझे मालूमहै इससे यह कन्या मुझे देदो यह सम्बन्ध बहुत योग्य है यह सुनकर मैंने हँसकरकहा कि देवतालोगोंने पहलेही से इसका पति नरबाहनदत्त बनायाहै जो तुम सबलोगोंका चक्रवर्त्ती होगा मेरे यह वचन सुनकर वह आकाशको चलागया और अकस्मात् विजली चमकने के समान उस विद्याधरको देखकर मदनमञ्चुका के नेत्र चकचौंधी से होगये कलिङ्गसेनाके यह वचनसुनकर गोमुख बोला कि जिससमय नरवाहनदत्त का जन्म हुआथा तब आकाशवाणीके द्वारा इसको अपना चक्रवर्त्ती होनेवाला जानकर संपूर्ण विद्याधर इसके लिये कोई घातकर ना विचारतेथे क्योंकि कोई उद्दण्ड पुरुष नहीं चाहताहै कि उसपर बलवान् स्वामीहोय विद्याधरों की यह दुष्ट इच्छाजानकर श्री शिवजीने अपने गण भेजकर इसकी रक्षाकी यह नारदमुनिका कहाहुआ मैंने अपने पिताके मुखसे सुनाहै इससे सपूर्ण विद्याधर लोग हमारे विरोधी हैं गोमुखके यहवचनसुन कर कलिंगसेना अपने वृत्तान्तको शोचकर कहनेलगी कि मेरे समान इसके साथभी कोई अपनी माया न करे इससे राजपुत्रके साथ इसका शीघ्रही विवाह होजाना चाहिये यह सुनके गोमुखादिकों ने कहा कि तुम्हींको इसकार्य्यमें राजा उदयनसे प्रेरणा करनी चाहिये २२६ इसके अनन्तर नरबाहन दत्त मदनमञ्चुका को देखताहुआ उसदिन उसी उपवन में रहा और अपने चित्तमें उसकी इसप्रकार प्रशसा करनेलगा कि प्रफुल्लित कमलके समान मुखवाली फूलीहुई कुमुदिनीके समान नेत्रवाली हुए हरिया पुष्पके सदृश सुन्दर ओष्ठवाली पारजातके पुष्पों के गुच्छेके समान स्तनवाली और शिरसके फूलोंके समान कोमल अगवाली मदनमञ्चुकाको मानों कामदेवने जगत्को जीतनेके लिये पाचों बाणों को मिलाकर एक बाण बनाया है दूसरेदिन कलिंगसेनाने वत्सराजके पासजाकर अपना मनोरथ कहा तब राजा उदयनने उसे विदाकरके रानी बासवदत्ता औरमन्त्रियोंको बुलाकर कहा कि कलिंगसेना अपनी कन्याके विवाहके निमित्त शीघ्रता करती है और कलिंगसेना यद्यपि शुद्धहै परन्तु तौभी लोग उसको पुंश्चली कहते हैं और लोकके अपवादसे सबको सदैव बचनाचाहिये देखो रामचन्द्रजीने लोकापवादसे डरकर अपनी सीतासरीकी पतिव्रतास्त्रीका भी त्याग करदिया और भीष्मजी ने अपने भाई के लिये अम्बाको हरकरभी उसे अन्यपुरुषमें आशक्तजानकर त्याग करदिया इसीप्रकार कलिंगसेना मेरे स्वयंवरके लिये आईथी परन्तु मदनवेगके साथइसका बिवाहहोगया इसी से सबलोग उसकी निन्दा करतेहैं इससे मदनमञ्चुकाके साथ नरवाहनदत्त आपही गान्धर्व्व विवाह करले तो अच्छाहै उदयनके यह वचन सुनकर यौगन्धरायणने कहा कि हे महाराज कलिंगसेना इस अनुचित कार्य्य को कैसे अगीकार करेगी यहसामान्यस्त्री नहींहै यह दिव्यस्त्री है और इसकी कन्याभी दिव्यहै यहबात मुझे आपभी मालूमहै और मेरे मित्र योगेश्वर ब्रह्मराक्षस ने भी कहाहै इसप्रकार वह लोग जिससमय बिचार कररहेथे उससमय श्री शिवजी ने आकाशवाणी के द्वारा यहकहा कि मेरे नेत्रकी अग्निसे भस्महुए कामके अवतार नर-

वाहनदत्त के लिये मैंनेही तप से प्रसन्न होकर रति को मदनमञ्चुका नाम से उत्पन्न कियाहै और यह इस नरवाहनदत्त की स्त्री होगी इसके साथ यह मेरी कृपासे सम्पूर्ण शत्रुओं को जीतकर एक दिव्य कल्प पर्य्यन्त सब विद्याधरोंका चक्रवर्ती होकर राज्य करेगा यह कहकर आकाशवाणी के निवृत्त हो जानेपर श्री शिवजीकी इस वाणीको सुनकर राजा उदयन् ने श्री शिवजीका स्मरण करके पुत्र के विवाह का निश्चय किया और पहलेही से सम्पूर्ण तत्त्वोंके जाननेवाले यौगन्धरायणकी प्रशंसा करके ज्योतिषियों को बुलाके विवाहकी लग्न पूछी ज्योतिषियोंने थोडेही दिनोंमे होनेवाली वडी दिव्य सुन्दर लग्न बता दीनी और कहा कि हे महाराज हम सबको अपने शास्त्र से मालूम होताहै कि कुछ काल तक नरवाहन दत्तका मदनमञ्चुकाके साथ वियोग होगा यह कहकर ज्योतिषी तो चलेगये और राजाने अपने पुत्रके विवाहके लिये इतनी सामग्री इकट्ठी की जिससे केवल उसकी सब पुरीही नहीं किन्तु सम्पूर्ण पृथ्वी उसके उद्योग से उकला गई जब विवाहका दिन आया तब कलिंगसेनाने मदनवेगके दियेहुए दिव्य आभूषणों से और पतिकी आज्ञासे आईहुई सोमप्रभा ने अपने लाएहुए आभूषणोंसे मदनमञ्चुकाका शृंगार किया दिव्य शृंगारसे युक्त स्वाभाविक सुन्दर वह मदनमञ्चुका उससमय अत्यन्त शोभितहुई जैसे चन्द्रमाकी कला सदैव मनोहर होती है परन्तु कार्त्तिकमें तो क्याही कहनाहै उससमय श्रीशिवजी की आज्ञासे दिव्यस्त्रियां अलक्षितहोके मंगलकेगीत गानेलगीं मानों उसके रूपसे जीतलीगईथीं इससे लज्जितहोकर नहीं प्रकटहुई इसके अनन्तर नरवाहनदत्त विवाहकावेष बनाकर जिस गृहमें विवाहके निमित्त मदनमञ्चुका थी उसमें गया वहां विवाहविधिको समाप्त करके मदनमञ्चुका समेत जाज्वल्यमान अग्नियुक्त वेदीपरचढ़ा वह निर्मल रत्नों के दीपकोंसे युक्त वेदी क्याथी मानों वडे २ राजालोगोंके मस्तक थे, जो एक साथहीसूर्य और चन्द्रमा सुमेरुकी प्रदक्षिणा करें तो उससमय अग्निकी प्रदक्षिणा करतेहुए वधू और वरकी उपमा पूरीहोय जैसे विवाहके उत्सव में बजतेहुए नगाडेके शब्दों को आकाशमें बजने वाले नगाडों के शब्दोंने छालिया उसीप्रकार वधूसे डालीगई होमकी खीलें देवतालोगोंके फेंकेहुए पुष्पों ने छालीं उससमय अत्यन्त उदार कलिंगसेनाने इतने रत्नोंके समूह और सुवर्णके ढेर अपने जामाता को दिये कि जिससे लोगोंने उसके आगे कुबेरको भी दरिद्री जाना और अन्य कृपण राजा लोगोंकी तो क्या गणना है इसप्रकार बहुत कालमे अभिलाषा कियेगये पाणिग्रहणके महोत्सवकी विधि के समाप्त होजानेपर वह दोनों वधू वर निर्मल चित्रोंमे युक्त दीवारवाले और स्त्रियों से व्याप्त गृह के भीतरगये उस समय राजा उदयन्ने अपने सेवकोंको इतना सुवर्ण दिया किराज्यभरके सम्पूर्ण लोग सुवर्णमय होगये अनेक २ देशोंमे आयेहुए कथिक तथा वेश्याओं के समूहों से सम्पूर्ण लोग नृत्यगीत तथा वाद्यमय जगत्को जाननेलगे उस उत्सवमें वायुसे कम्पित पताकारूपी भुजावाली और पुरकीस्त्रियोंसे कियेगये शृंगाररूपी आभरणवाली कौशाम्बीपुरी भी मानो नृत्य करती थी उससमय बडे २ तेजस्वी राजालोग अपनी २ सेनाओं को साथलेकर चारोंओर से समुद्रोंके समान बडे २ सुन्दर रत्नों की भेट लेकर वत्स राज उदयन्के पास आये उससमय वह पुरी राजाओंमे ऐसीव्याप्त होरहीथी कि मानों उसपुरीमें केवल

राजा लोगही रहतेथे इसप्रकार से प्रति दिन बढ़ताहुआ वह महोत्सव बहुत दिनों में समाप्त हुआ उस उत्सवमें सम्पूर्ण सुहृद परिजन तथा अन्य सब जनोंके मनोरथ पूर्ण होगये और युवराज नरवाहनदत्त बहुतकाल से अभिलाषा कियेगये सुखको मदनमञ्चुका के साथ अनुभव करनेलगा २६५ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांमदनमंचुकालम्बकेअष्टमस्तरंग ८॥
मदनमञ्चुकानामछठालम्बकसमाप्तहुआ ॥

रत्नप्रभानाम सप्तमोलम्बकः ७॥

केलिकेशग्रहव्यग्र गौरीकरनखाङ्कितम् ॥
शिवायानेकचन्द्राढ्यमिवशार्वंशिवोस्तुव १
करंदानाम्भसार्द्रयः कुञ्चिताग्रंप्रसारयन् ॥
ददात्सिद्धिमिवाभांति सपायाद्वोगजाननः २

इसप्रकार महाराज उदयनका पुत्र नरवाहनदत्त मदनमञ्चुकाके साथ विवाहकरके अपने मन्त्री गोमुखादिके साथ सुखपूर्व्वक रहनेलगा एकसमय उन्मत्तकोकिलाओंके कूजनेपर मलयाचलकी वायु के द्वारा लताओंके कम्पनरूपी नृत्यके प्रवृत्त होनेपर और सुन्दरभ्रमरोंके गुञ्जार करनेपर नरवाहनदत्त अपने मन्त्रियो समेत वसन्तोत्सवमे वनविहार करनेगया वहा तपन्तकने उपवन में भ्रमणकरके बड़ी प्रसन्नता पूर्व्वक आकर नरवाहनदत्तसे कहा कि हे युवराज यहासे थोड़ी दूरपर आकाशसे उतरकर एक दिव्य कन्या अशोकवृक्षके नीचे खड़ीहुई है उसके साथमें बहुतसी सखी है और उसकी कान्तिसे वह स्थान देदीप्यमान होरहाहै उसीने आपको बुलानेके लिये मुझे भेजाहै तपन्तकके यहवचन सुनकर नरवाहनदत्त उसके देखनेके लिये अपने सब मंत्रियों समेत अशोकवृक्षके नीचेगया वहा उसने चचल नेत्ररूपी भ्रमरवाली लाल ओष्ठरूपी पल्लववाली बड़ेस्तनरूपी पुष्पोंके गुच्छेवाली गौरवर्णरूपी पराग वाली और छाया (कान्ति) से तापहरनेवाली उचित स्वरूपको धारण कियेहुए साक्षात् बनदेवता के समान वहकन्यादेखी उससमय उसके स्वरूपसे इसकेनेत्र उसमे आशक्तहोगये और उसकन्याको प्रणाम करतीहुई देखकर उसके समीपजाके उसका बड़ा आश्वासनकिया १३ इसके उपरान्त यथायोग्य सब के बैठजानेपर गोमुखने उससेपूँछा कि हे शुभे तुम कौनहो और किस निमित्त कहा से यहा आईहो यहसुन-कर वह कामदेवकी दुर्लंघ्य आज्ञासे लज्जारहितहोके तिरछी दृष्टि से नरवाहनदत्त के मुखारविन्द को वारम्वार देखतीहुई विस्तारपूर्व्वक अपना वृत्तान्त वर्णनकरनेलगी कि त्रैलोक्य में विख्यात हिमवान् नाम पर्वतहै जिसके बहुतसे शृंगों में से एक कैलास भी है देदीप्यमान मणियोंकी प्रभासेयुक्त और श्वेतहिम के समूहोंसेव्याप्त वह पर्व्वत इतनाबड़ाहै कि आकाशके समान उसका कोई परिमाण नहीं करसक्ता है

जिसके शिखर वृद्धावस्था तथा मृत्युकी नाशकरनेवाली श्री शिवजीकी कृपासे मिलनेवाली सिद्धियो तथा औषधियोंकी खान हैं विद्याधरो के शरीरोंकी शोभासे मिलेहुए जिसके शिखर सुमेरुके शिखरोंकी भी शोभाको तिरस्कारकरते हैं ऐसे सुन्दर उस पर्वतपर काञ्चनशृंगनाम एक सुवर्णमयपुरहै जो अपनी प्रभाओं से प्रभाकर (सूर्य्य) का स्थानसा मालूमहोताहै अनेक योजन लम्बे उस पुर में श्रीशिवजी का परमभक्त हेमप्रभनाम विद्याधरोका राजा है सम्पूर्ण रानियों में बहुत प्यारी उसकी अलकार प्रभानाम पटरानी है वह राजा हेमप्रभ अलङ्कारप्रभा के साथ नित्य प्रातःकाल उठकर स्नानकरके विधिपूर्वक श्री शिवजीका पूजनकरके मृत्युलोक में आकर रत्नोंसमेत एकलाख अशर्फी दरिद्रीब्राह्मणों को देताहै और वहा से लौटकर धर्मपूर्वक राज्य के कार्योंको देखकर मुनियों के समान बडेनियम से आहार पानादिककरताहै इसप्रकारसे कुछदिनो के व्यतीतहोनेपर किसी कथाको स्मरणकरके राजा हेमप्रभको मेरे पुत्रनहीं है यहचिन्ता उत्पन्नहुई उस चिन्तामे अत्यंत खिन्न राजाको देखकर अलकारप्रभाने नम्रता से पूछा कि हे आर्य्यपुत्र आप उदास क्यों हैं तब राजा ने कहा कि मेरे यहा सम्पूर्ण सम्पत्तियां हैं परन्तु मेरेपुत्रनहीं है यही दुःख मुझको बडा होरहा है मैंने जो पहले सत्त्वशीलनाम एक अपुत्र पुरुषकी कथा सुनीथी उसीकेस्मरण से मुझको यह चिन्ता उत्पन्न हुई है यहसुनकर रानीने पूछा कि वह कथा कौनसीहै मुझसे भी कहिये तबराजा सक्षेपमे कथा कहने लगा कि चित्रकूटनाम पर्वतपर सदैव ब्राह्मणों का पूजन करनेवाला ब्राह्मण वरनामराजाथा उसराजा के यहा सत्त्वशील नाम एक सेवक केवल युद्ध के ही लिये नौकरथा उसको राजाकेयहा से सौ अशर्फी मासिक मिलतीथीं परन्तु उतने में उसमहादान शील सत्त्व शीलका निर्वाहनहीं होताथा क्योंकि वह अपुत्रहोने के कारण केवलदानमें अपनाचित्त बहलाया करताथा वह यहशोचाकरताथा कि परमेश्वर ने मुझे चित्तकेप्रसन्न करनेकेलिये पुत्र तो नहीं दिया है और दान का व्यसनदेदिया है तिसपर भी धननहीं दिया ससारमें सूखेहुए जीर्ण वृक्ष तथा पाषाणका भी जन्म अच्छाहै परन्तु दानशीलका दरिद्री होना नहीं अच्छाहै इसप्रकार शोचते २ उसे एक समय उपवनमें बहुतसी निधि मिलगई बहुतसे सुवर्ण तथा रत्नमय उसनिधिको वह निजसेवकोंके द्वारा वह अपने घर उठवालाया और उसधनसे ब्राह्मणोंको तथा अपने मित्रोंको देताहुआ और यथेच्छ भोग करताहुआ सुखपूर्वक रहनेलगा उसके गोत्रीभाइयों ने उसे सुखपूर्वक रहताजानकर यह अनुमान करके कि इसको निधिमिली है राजासे जाकर कहदिया राजाने उसे प्रतीहारके द्वारा बुलवाभेजा तब वह सत्त्वशील राजाकी आज्ञासे वहा गया और पहले क्षणभर भीतर जानेकी आज्ञा न पाकर राजाके आगनमें एकान्त में बैठगया वहा शोकके कारण पृथ्वी खोदते २ उसे ताम्रके कलशे में और बहुतसी निधिमिली मानोईश्वरने उसपर प्रसन्नहोके राजा को प्रसन्नकरने के लिये उपाय निकालदिया उसने उसनिधिको देखकर उसीप्रकार मिट्टीसेतोपदिया और प्रतीहारकेद्वारा आनापाकर राजाके निकटजाके उसेप्रणामकिया तब राजाने उससे कहा कि मुझे मालूमहुआ है कि तुमने निधिपाई है वह मुझे देदो उसने कहा कि हे महाराज जो निधिपहले मिली है वह देऊं अथवा जो आजमिली है वह निधि देऊं राजा

राजा लोगही रहतेथे इसप्रकार से प्रति दिन बढ़ताहुआ वह महोत्सव बहुत दिनों में समाप्त हुआ उस उत्सवमें सम्पूर्ण सुहृद परिजन तथा अन्य सब जनोंके मनोरथ पूर्ण होगये और युवराज नरवाहनदत्त बहुतकाल से अभिलाषा कियेगये सुखको मदनमञ्चुका के साथ अनुभव करनेलगा २६५ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांमदनमंचुकालम्बकेअष्टमस्तरंग ८॥
मदनमञ्चुकानामछठालम्बकसमाप्तहुआ ॥

रत्नप्रभानाम सप्तमोलम्बकः ७ ॥

केलिकेशग्रहव्यग्र गौरीकरनखाहृतम् ॥
शिवायानेकचन्द्राढ्यमिवशर्वशिरोस्तुवः १
करंदानाम्भसार्द्रयः कुञ्चिताग्रंप्रसारयन् ॥
ददत्सिद्धिमिवाभांति सपायाद्वोगजाननः २

इसप्रकार महाराज उदयनका पुत्र नरवाहनदत्त मदनमञ्चुकाके साथ बिवाहकरके अपने मन्त्री गोमुखादिके साथ सुखपूर्व्वक रहनेलगा एकसमय उन्मत्तकोकिलाओंके कूजनेपर मलयाचलकी वायु के द्वारा लताओंके कम्पनरूपी नृत्यके प्रवृत्त होनेपर और सुन्दरभ्रमरोंके गुञ्जार करनेपर नरवाहनदत्त अपने मन्त्रियों समेत वसन्तोत्सवमें बनविहार करनेगया वहा तपन्तकने उपवन में भ्रमणकरके बड़ी प्रसन्नता पूर्व्वक आकर नरवाहनदत्तसे कहा कि हे युवराज यहासे थोड़ी दूरपर आकाशसे उतरकर एक दिव्य कन्या अशोकवृक्षके नीचे खड़ीहुई है उसके साथमें बहुतसी सखी हैं और उसकी कान्तिसे वह स्थान देदीप्यमान होरहाहै उसीने आपको बुलानेके लिये मुझे भेजाहै तपन्तकके यहवचन सुनकर नरवाहनदत्त उसके देखनेके लिये अपने सब मन्त्रियों समेत अशोकवृक्षके नीचेगया वहा उसने चचल नेत्ररूपी भ्रमरवाली लाल ओष्ठरूपी पल्लववाली बड़ेस्तनरूपी पुष्पोंके गुच्छेवाली गौरवर्णरूपी पराग वाली और छाया (कान्ति) से तापहरनेवाली उचित स्वरूपको धारण कियेहुए साक्षात् बनदेवता के समान वहकन्यादेखी उससमय उसके स्वरूपसे इसकेनेत्र उसमे आशक्तहोगये और उसकन्याको प्रणाम करतीहुई देखकर उसके समीपजाके उसका बड़ा आश्वासनकिया १३ इसके उपरान्त यथायोग्य सब के बैठजानेपर गोमुखने उससेपूंछा कि हे शुभे तुम कौनहो और किस निमित्त कहा से यहा आईहो यहसुन कर वह कामदेवकी दुर्लंघ्य आज्ञासे लज्जारहितहोके तिरछी दृष्टि से नरवाहनदत्त के मुखारबिन्द को बारम्बार देखतीहुई बिस्तारपूर्व्वक अपना वृत्तान्त वर्णनकरनेलगी कि त्रैलोक्य में विख्यात हिमवान् नाम पर्वतहै जिसके बहुतसे शृंगोंमें से एक कैलास भी है देदीप्यमान मणियोंकी प्रभासेयुक्त और श्वेतहिम के समूहोंसेव्याप्त वह पर्व्वत इतनाबड़ाहै कि आकाशके समान उसका कोई परिमाण नहीं करसक्ता है

करने से तो आपप्रकट होगये परन्तु मैं ने इतने दिनतक नियम पूर्व्वक हवन किया और आपनहीं प्रकटहुए इसका क्या कारणहै तब अग्निदेवने कहाकि जो हम इसेवर न देते तो यह शीघ्रही सत्त्ववान् होने के कारण अपना शिर हवनकरदेता है ब्राह्मण तीव्रसत्त्ववाले लोगों को शीघ्रही सिद्धिहोती है और तुमसरीके मन्द सत्त्ववालों को देरमें सिद्धिहोतीहै यह कहकर अग्नि के अन्तर्द्धान होजाने पर नागशर्मा राजासे पूछकर अपने घरकोगया और क्रमसे वडा धनवान् होगया और राजा भी वडे सत्त्वके कारण सपूर्ण लोगो से अपनी प्रशंसा सुनताहुआ पाटलिपुत्र नगर को चलाआया ७८ वहां एकसमय अकस्मात् शत्रुञ्जय नाम प्रतीहार ने मंदिर में वैठेहुए राजा से विज्ञापन किया कि हे महाराज दत्तशर्म्मा नाम एक विद्यार्थी ब्राह्मण द्वारपर खडाहै और आपसे एकान्तमें कुछ विज्ञापन किया चाहताहै राजाने कहा अच्छा आनेदो तब राजाकी आज्ञासे वह ब्राह्मण भीतर आकरप्रणाम करके वैठगया और कहने लगा कि हे राजा मैं किसी चूर्ण की युक्तिसे तांबेका सुवर्ण वनासक्ताहू यह युक्तिमेरे गुरूने मुझे वताई है और मेरे आगेही गुरूजीने इस युक्तिसे सुवर्ण वनाया था उसके यह वचन सुनकर राजाने तांवा मगवाकर गलवाया और उसब्राह्मण ने उसमें चूर्णडाला उस चूर्णको कोई यक्ष अदृश्यहोकर डालतेही हर लेगया यहवात केवल राजाहीने अग्निकी कृपा से देखली चूर्णके न पडने से तांवा सुवर्ण नहीं हुआ इस प्रकार उसने तीनिवार अपना चूर्ण छोडा और तीनों वार यक्षके हरलेजानेसे उस का श्रम व्यर्थहो गया तब राजाने उसको खिन्न देखकर तांवा गलवाके उससे चूर्ण लेकर अपने हाथ से डाला और यक्ष राजा के तेजके प्रभाव से उसे हरनहींसका और लज्जितहोकर चलागया तवचूर्ण के पडने से तांवा सुवर्ण होगया राजा के हाथ से सुवर्ण वनता देखकर उसब्राह्मण ने वडे आश्चर्य्य पूर्व्वक पूछा कि यह क्या वातहै उसके यह वचन सुनके राजाने यक्षका सब वृत्तान्त कहदिया और उस वालक ब्राह्मण से चूर्ण वनाने की युक्ति सीखकर उसे वहुतसा धन देकर कृतार्थकर दिया धनपाकर वह ब्राह्मण तो विवाह करके सुखपूर्व्वक रहने लगा और राजाभी उस युक्ति से वनायेहुए सुवर्ण से अपने खजाने को पूर्णकरके इतनादान करनेलगा कि कोई भी ब्राह्मण दरिद्री नहींरहा और सुखपूर्व्वक अपनी रानियों समेत रहने लगा इससे इस प्रकार मानो डराहुआ अथवा प्रसन्नहुआ ईश्वरही वडे सत्त्ववालों के मनोरथ को पूर्ण करताहै और हे राजा तुम से अधिक धीर सत्त्ववान् तथादानी दूसरा कौन है श्री शिवजीकी आराधना करने से आपके अवश्य पुत्रहोगा शोक न कीजिये रानी अलंकारप्रभा के मुखसे इस उत्तमकथा को सुनकर राजाने प्रसन्नहोकर उसके कहने पर विश्वास किया और उत्साह युक्त अपने हृदयमें यहजाना कि श्रीशिवजी के आराधनसे मेरे अवश्य पुत्र होगा इसके उपरान्त दूसरे दिन रानी समेत स्नान करके श्रीशिवजी का पूजनकरके और नौकरोड अशर्फीब्राह्मणों को दानकरके पुत्रकी प्राप्ति के लिये श्रीशिवजी के सन्मुख निराहारहोकर राजा तपकरनेलगा और उसने मनमें यह निश्चय करलिया कि के तो शिवजी प्रसन्नहोंगे या शरीरही नष्टहोगा फिर तपमें स्थितहोके राजाने उपमन्युको दुग्धसमुद्र के देनेवाले वृन्दारक श्रीशिवजीकी स्तुति इसप्रकारसे की कि हे गौरीश आकाशादिक भेदोंसे भिन्न २

ने कहा कि आजकी मिलीहुई निधि मुझको देदे तब उसने राजाको लेजाकर वह निधि जो आंगनमें मिलीथी राजाको दिखलादी उस निधिको पाके राजाने प्रसन्नहोकर कहा कि हे सत्त्वशील तुम पहले की पाईहुई निधिको यथेच्छ भोगकरो राजाके यह वचनसुनकर सत्त्वशील अपने घरमें आकरदान तथा भोगसे अपने नामको यथार्थ करताहुआ और अपुत्रताके दुःखको किसीप्रकार दूरकरता हुआ रहा ५० यह कथा सत्त्वशील की मैंने प्रथम सुनी थी उसीका स्मरण करके पुत्रनहोनेकी चिन्तासे मुझे दुःखहो रहाहै इसप्रकार अपने पतिके मुखसेकथाको सुनकर रानीअलकारप्रभाबोली सत्यहै कि सत्त्ववान् पुरुषों का भाग्यही सहायकरता है देखो सत्त्वशीलको सकटमे दूसरी निधि मिलगई इस्से आपका भी अपने सत्त्व के प्रभावसे मनोरथ सिद्धहोगा इसविषय पर मै आपको विक्रमतुगनाम राजाकी कथा सुनातीहूं सम्पूर्ण पृथ्वी का आभूषण रूप अनेकप्रकारकी मणियों से युक्त पाटल पुत्रनाम नगरहै उसमें विक्रम तुगनाम सत्त्ववान् राजाथा जो दानमें अर्थियों से और युद्धमें शत्रुओं से कभी नहीं पराङ्मुखहुआ वह राजा एकसमय वनमें शिकार खेलनेकोगया वहा एकब्राह्मण बेलोंकाहवनकररहाथा उसे देखकर राजा ने पूछने की इच्छाभी की परन्तु शिकारमें तत्परहोने के कारण सेनासमेत वहासे आगे चलागया बहुत कालतक उछलतेहुए और गिरतेहुए सिहादि जीवोंको अपने हाथसेमारकर शिकार खेलके राजा लौटा लौटकर भी राजाने ब्राह्मणको उसीप्रकार हवनकरते देखा और उसकेपास जाके प्रणाम पूर्वक पूछा कि आपका क्यानामहै और आप यह किसनिमित्तकररहे हैं राजाके पूछनेपर ब्राह्मणने आशीर्वाद देकरकहा कि मैं नागशर्म्मानाम ब्राह्मणहू और इसहोमका यहफलहै कि बिल्वोंका हवनकरते २ जब अग्नि भगवान् प्रसन्नहोते हैं तब कुण्डसे सुवर्ण के बेल निकलने लगते हैं और अग्नि भगवान् साक्षात् प्रकटहोकर वरदानदेते हैं मुझे बहुत काल बेलोंका हवनकरतेहुए व्यतीतहोचुकाहै परन्तु अभी तक मुझ मन्दभागी पर अग्निदेव प्रसन्न नहींहुए हैं उसब्राह्मण के यह बचन सुनकर बडा सत्त्ववान् राजा विक्रमतुङ्ग बोला कि हे ब्राह्मण मुझको एक बेलदो मैं अभी हवनकरके अग्निको प्रसन्न करता हू तब ब्राह्मण ने कहा कि मैं व्रतमें बैठाहुआ महापवित्रहू जब मेरे हवनसे नहीं प्रसन्नहुए तो तुम तो महाभ्रष्टहोरहे हो तुम्हारे हवनमे कैसे प्रसन्नहोंगे ब्राह्मण के वचन सुनकर राजाने फिरकहा कि ऐसा नहीं है तुम मुझको बिल्वदेदो तो अभी आश्चर्य्य देखलो तब ब्राह्मणने आश्चर्य्य देखनेकेलिये उसको बेलदेदिया और राजाने अपने दृढसत्त्वयुक्त चित्तमें यहसकल्पकरके कि इसबेलकेहवनसे अग्निदेवनहीं प्रसन्नहोंगे तोमैं अपना शिर हवनकरदूगा बेलकाहवनकरदिया हवनकरतेही कुडमेंसे साक्षात् अग्निदेव राजाके सत्त्वरूपीवृक्षके फलकेसमानसुवर्णके बेलको हाथमेंलियेहुएप्रकटहुए और बोले कि हेराजा तुम्हारे सत्त्वमे मैं प्रसन्नहू वरदानमागो अग्निके यहवचन सुनकर राजाने प्रणामकरके कहा कि मुझे और कोई वरनचाहिये आपइस ब्राह्मणके मनोरथ को पूर्णकीजिये यह सुनकर अग्निदेव ने प्रसन्न होकर कहा कि हे राजा यह ब्राह्मण बड़ाधनवान्होगा और हमारी कृपासे तुम्हाराभी खजाना कभी क्षीण न होगा इस प्रकार वरदान देतेहुए अग्निदेव से उस ब्राह्मण ने कहा कि इस स्वेच्छाचारी राजाके एकहीवार हवन

है देखो रत्नप्रभा विनीतभी है विद्यावतीभी है और रूप तथा युवावस्थासे युक्तभी है परन्तु इसकेविवाह के लिये मेरे चित्तमें खेदवनारहताहै यहसुनकर रानीनेकहा कि इसके जन्मकेसमय यह आकाशवाणी हुई थी कि यह नरवाहनदत्तकी स्त्रीहोगी जो कि विद्याधरोंका चक्रवर्तीहोगा उसीकेसाथ इसका विवाह क्यों नहींकरते रानी के यह वचनसुनकर राजाने कहा कि वह कन्या धन्यहै जिसका विवाह नरवाहनदत्त के साथहो क्योंकि वह कामका अवतारहै परन्तु अभीतक वह दिव्यता को नहीं प्राप्तहुआहै इससे मैं यह प्रतीक्षाकरताहूं कि जब उसे विद्याओं की प्राप्तिहोले तब मैं अपनी कन्यारूप कामदेव के मोहनमंत्रोंको प्रदान पिताके वचनो को सुनकर रत्नप्रभा भ्रान्तसी भूतग्रस्तसी सुप्तसी और लिखितसी होगई उसकाचित्त उसी वरने हरलिया तब वह रत्नप्रभा माता पिताको नमस्कारकरके अपने महल में जाकर चिन्तासे व्याकुलहोकर सोगई स्वप्नमें पार्वतीजी ने कृपाकरके उससे यहकहा कि हे पुत्री प्रातःकाल शुभदिनहै इससे तुम कौशाम्बीनगरी मे जाकर वत्सराज उदयन्के पुत्र अपने वरको देखना तब तुम्हारा पिता तुमको और तुम्हारे वरको यहालाकर तुम्हारा विवाहकरदेगा इसप्रकार स्वप्नमें श्रीपार्वतीजी की आज्ञा को पाकर उसने प्रातःकालही उठकर वह स्वप्न अपनी माता से कहा और माता की आज्ञापाकर विद्याके प्रभावसे अपने वरको उपवनमें जानकर उसके देखनेके लिये अपने पुरसे गमन किया हे आर्यपुत्र वह रत्नप्रभा मैंहीहूं क्षणभरमेंही वहा से चलकर यहा आगईहूं अब जो आप उचित समझिये सो कीजिये उसके यह वचनसुनकर और नेत्रो में अमृतकीसी वृष्टिकरनेवाले उसके स्वरूप को देखकर नरवाहनदत्त अपने अन्तःकरणमे ब्रह्माकी यह निन्दाकरके कि मेरासम्पूर्णशरीर कर्ण तथा नेत्रमय क्यों नहीं बनादिया बोला कि हे सुन्दरि मैं धन्यहूं मेरा जन्मसफलहै जिसके पास तुम आपही आईहो १४ इसप्रकार परस्पर उन दोनों के नवीन प्रेमसे वार्तालापकरने पर अकस्मात् आकाश में विद्याधरोंकी सेना दिखाईदी उस सेनाको देखकर रत्नप्रभा बोली कि यह तो यहीं आगये उसके ऐसा कहतेही राजा सोमप्रभ अपने पुत्रसमेत आकाशसे उतरा और नरवाहनदत्तके निकटआया नरवाहनदत्तने स्वागत पूंछकर उनका बडाआदर सत्कारकिया फिर परस्पर शिष्टाचारकरके जैसे वह बैठे वैसेही राजा उदयन् ने भी उस वृत्तान्तको सुनकर अपने मन्त्रियों समेत वहा आकर हेमप्रभका बडाआदर सत्कारकिया तब हेमप्रभने उदयन् से रत्नप्रभाका सम्पूर्ण वृत्तान्तकहकर कहा कि मैने अपनी विद्याके प्रभावसे जानलिया कि मेरी कन्या यहाआई है और इसका सम्पूर्ण वृत्तान्त मैं जानताहूं हे राजा मैं अपनी विद्यासे विमानबनाकर यदि आपकी आज्ञाहोय तो नरवाहनदत्तको उसपरचढाकर अपने पुरमें लेजाऊं थोडेहीकाल में यह रत्नप्रभाको लेकर आपकेपास आजायगा इसप्रकार वत्सराज से प्रार्थना करके और उनकी अनुमतिपाकर हेमप्रभने अपनी विद्याके बलसे उत्तम विमानबनाया और कहा कि ऐसाही विमान कुछकालके पीछे आपके पुत्रकेपास भी होजायगा फिर विमानको बनादेखकर राजाकी आज्ञासे लज्जासे अधोमुख नरवाहनदत्त अपने गोमुखादि मंत्रियों समेत उसपर बैठा और यौगन्धरायण भी राजाकी आज्ञासे उसकेसाथ बैठगया इसप्रकार उन सबलोगों के बैठजानेपर हेमप्रभ रत्नप्रभा

अष्ट मूर्त्तिवाले और सम्पूर्ण संसारकी उत्पत्ति पालन तथा नाश करनेवाले आपको नमस्कारहै सदैव प्रफुल्लित हृदयरूपी कमलमे शयनकरनेवाले शुद्धमानसमे रहनेवाले राजहंसरूप आपको नमस्कार है हे शम्भो दिव्यप्रकाशवाले निर्मल जलात्मक अद्भुत चन्द्रमारूप आपको दोषरहित पुरुष देखमक्के हैं ऐसे आपको मेरा नमस्कारहै अर्द्धशरीरमें स्त्रीके धारण करनेवाले केवल ब्रह्मचारी आपको नमस्कारहै अपनी इच्छासे सम्पूर्ण संसारको रचनेवाले विश्वात्मक आपको नमस्कार है इसप्रकार स्तुतिकरतेहुए राजाको तीनदिनके उपरान्त श्रीशिवजीने स्वप्नमें साक्षात्कार दर्शनदेकर कहा कि हे राजा उठो तुम्हारे वंशका वर्द्धक वीर पुत्र उत्पन्नहोगा और पार्वतीजीकी कृपासे एकश्रेष्ठ कन्याभी तुम्हारे उत्पन्नहोगी जो कि तुम लोगोंके होनेवाले चक्रवर्त्ती महातेजस्वी नरवाहनदत्तकी रानीहोगी इसप्रकार कहकर श्री शिवजी के अन्तर्द्धान होजानेपर प्रातःकाल हेमप्रभ प्रसन्नता पूर्व्वक जागा और उसने रानीअलंकार प्रभा से अपना स्वप्न कहकर उसको बहुत प्रसन्नकिया और रानीने भी कहा कि मुझसे भी श्रीपार्वतीजीने स्वप्नमे ऐसाही कहाहै इसप्रकार परस्पर अपनेस्वप्नके वृत्तान्तको वर्णनकरके रानी तथा राजाने स्नानकरके श्रीशिवजीका पूजनकिया और बहुतसा दानदेके व्रतका पारण कर महाउत्सवकिया १०८ इसके उपरान्त कुछ दिनोंके व्यतीत होनेपर रानी अलंकारप्रभा गर्भवतीहुई चञ्चल नेत्ररूपी भ्रमरवाले पीत कमल के समान सुन्दर उसके मुखको देखकर राजा अत्यन्त प्रसन्नहुआ रानीके उदारगर्भके मनोरथोंसे राजाको पहलेहीसे यह अनुमान होगया कि बड़ा तेजस्वी पुत्र होगा समय पाकर सूर्य्यको आकाशके समान रानीने पुत्र उत्पन्न किया उसबालकके स्वाभाविक तेजसे सम्पूर्ण सूतिकागृह देदीप्यमान होगया तब राजा सोमप्रभने अपने पुत्रको शत्रुओं का भयदायी जानकर और आकाशवाणी सुनकर उसका नाम वज्रप्रभरक्खा शुक्लपक्ष के चन्द्रमा के समान वह बालक कुलरूपी समुद्रकी वृद्धिकेलिये धीरे२ कलाओं से पूर्ण होकर बढ़नेलगा तदनन्तर थोड़ेही कालमे रानी अलंकारप्रभा फिर गर्भवतीहुई वह गर्भवती रानी सुवर्णके सिंहासन पर बैठीहुई अन्तःपुरोंके रत्नके समान शोभितहोतीथी उनदिनों रानी के चित्तमें यह मनोरथ उत्पन्नहुआथा कि मैं विमानपर चढ़कर आकाशमेघूमूं हेमप्रभने अपनी विद्याके प्रभाव से कमलों का विमान बनाके रानीको आकाशमें भ्रमण करवाया इसप्रकार गर्भके महीनो के व्यतीत होजानेपर रानीके एकबड़ी सुन्दर कन्या उत्पन्नहुई जिसका कि वर्णन इतना बहुतहै कि उसका जन्म श्रीपार्वतीजीकी कृपासे हुआथा कन्याकेजन्मके समय यह आकाशवाणीहुई कि यह नरवाहन-दत्तकी स्त्री होगी इस आकाशवाणी को सुनकर राजाने पुत्रोत्सव के समानही उसका भी उत्सव किया और उसका नाम रत्नप्रभारक्खा वहरत्नप्रभा अपने पिताकी विद्याओंसे संस्कार युक्तहोकर दिशाओंमे प्रकाशित करतीहुई बढ़ी इसके उपरान्त राजा अपने पुत्र वज्रप्रभका विवाहकरके उसे युवराजपदवी देकर और सम्पूर्ण राज्यकाभार उसपर रखकर सावधानहोकर रहनेलगा परन्तु केवल कन्याकेविवाहकी चिंता उसके हृदयमे बाकीरही एकसमय राजानेपास बैठीहुई रानी अलंकार प्रभासे अपनी कन्याको विवाह के योग्य देखकरकहा कि हे रानी कुलकी आभूषणरूपी कन्या महात्माओंको भी महादुःखदायी होती

है देखो रत्नप्रभा विनीतभी है विद्यावतीभी है और रूप तथा युवावस्थासे युक्तभी है परन्तु इसकेविवाह के लिये मेरे चित्तमें खेदबनारहताहै यहसुनकर रानीनेकहा कि इसके जन्मकेसमय यह आकाशवाणी हुई थी कि यह नरवाहनदत्तकी स्त्रीहोगी जो कि विद्याधरोंका चक्रवर्त्तीहोगा उसीकेसाथ इसका विवाह क्यों नहींकरते रानी के यह वचनसुनकर राजाने कहा कि वह कन्या धन्यहै जिसका विवाह नरवाहनदत्त के साथहो क्योंकि वह कामका अवतारहै परन्तु अभीतक वह दिव्यता को नहीं प्राप्तहुआहै इससे मैं यह प्रतीक्षाकरताहूं कि जब उसे विद्याओंकी प्राप्तिहोले तब मैं अपनी कन्यादूं कामदेव के मोहनमन्त्रों के समान पिताके वचनों को सुनकर रत्नप्रभा भ्रान्तसी भूतग्रस्तसी सुप्तसी और लिखितसी होगई उसकाचित्त उसी वरने हरलिया तब वह रत्नप्रभा माता पिताको नमस्कारकरके अपने महल में जाकर चिन्तासे व्याकुलहोकर सोगई स्वप्नमें पार्वतीजी ने कृपाकरके उससे यहकहा कि हे पुत्री प्रातःकाल शुभदिनहै इसमें तुम कौशाम्बीनगरीमें जाकर वत्सराज उदयन्के पुत्र अपने वरको देखना तब तुम्हारा पिता तुमको और तुम्हारे वरको यहांलाकर तुम्हारा विवाहकरदेगा इसप्रकार स्वप्नमें श्रीपार्वतीजी की आज्ञा को पाकर उसने प्रातःकालही उठकर वह स्वप्न अपनी माता से कहा और माता की आज्ञापाकर विद्याके प्रभावसे अपने वरको उपवनमें जानकर उसके देखनेके लिये अपने पुरसे गमन किया हे आर्यपुत्र वह रत्नप्रभा मैंहींहूं क्षणभरमेंही वहां से चलकर यहां आगईहूं अब जो आप उचित समझिये सो कीजिये उसके यह वचनसुनकर और नेत्रों में अमृतकीभी वृष्टिकरनेवाले उसके स्वरूप को देखकर नरवाहनदत्त अपने अन्तःकरणमें ब्रह्माकी यह निन्दाकरके कि मेरासम्पूर्णशरीर कर्ण तथा नेत्रमय क्यों नहीं बनादिया बोला कि हे सुन्दरि मैं धन्यहूं मेरा जन्मसफलहै जिसके पास तुम आपही आईहो १४ इसप्रकार परस्पर उन दोनों के नवीन प्रेमसे वार्त्तालापकरनेपर अकस्मात् आकाश में विद्याधरोंकी सेना दिखाईदी उस सेनाको देखकर रत्नप्रभा बोली कि यह तो यहीं आगये उसके ऐसा कहतेही राजा सोमप्रभ अपने पुत्रसमेत आकाशसे उतरा और नरवाहनदत्तके निकटआया नरवाहनदत्तने स्वागत पूँछकर उनका बडाआदर सत्कारकिया फिर परस्पर शिष्टाचारकरके जैसे वह बैठे वैसेही राजा उदयन् ने भी उस वृत्तान्तको सुनकर अपने मन्त्रियोंसमेत वहां आकर हेमप्रभका बडाआदर सत्कारकिया तब हेमप्रभने उदयन् से रत्नप्रभाका सम्पूर्ण वृत्तान्तकहकर कहा कि मैंने अपनी विद्याके प्रभावसे जानलिया कि मेरी कन्या यहांआई है और इसका सम्पूर्ण वृत्तान्त मैं जानताहूं हे राजा मैं अपनी विद्यासे विमानबनाकर यदि आपकी आज्ञाहोय तो नरवाहनदत्तको उसपरचढ़ाकर अपने पुरमें लेजाऊं थोडेहीकाल में यह रत्नप्रभाको लेकर आपकेपास आजायगा इसप्रकार वत्सराज से प्रार्थना करके और उनकी अनुमतिपाकर हेमप्रभने अपनी विद्याके बलसे उत्तम विमानबनाया और कहा कि ऐसाही विमान कुछकालके पीछे आपके पुत्रकेपास भी होजायगा फिर विमानको बनादेगवरकर राजाकी आज्ञासे लज्जासे अधोमुख नरवाहनदत्त अपने गोमुखादि मन्त्रियों समेत उसपर बैठा और यौगन्धरायण भी राजाकी आज्ञासे उसकेसाथ बैठगया इसप्रकार उन सबलोगों के बैठजानेपर हेमप्रभ रत्नप्रभा

अष्ट मूर्त्तिवाले और सम्पूर्ण संसारकी उत्पत्ति पालन तथा नाश करनेवाले आपको नमस्कारहै सदैव प्रफुल्लित हृदयरूपी कमलमे शयनकरनेवाले शुद्धमानसमे रहनेवाले राजहंसरूप आपको नमस्कार है हे शंभो दिव्यप्रकाशवाले निर्मल जलात्मक अद्भुत चन्द्रमारूप आपको दोषरहित पुरुष देखसक्ते हैं ऐसे आपको मेरा नमस्कारहै अर्द्धशरीरमें स्त्रीके धारण करनेवाले केवल ब्रह्मचारी आपको नमस्कारहै अपनी इच्छासे सम्पूर्ण संसारको रचनेवाले विश्वात्मक आपको नमस्कार है इसप्रकार स्तुतिकरतेहुए राजाको तीनदिनके उपरान्त श्रीशिवजीने स्वप्नमें साक्षात्कार दर्शनदेकरकहा कि हे राजा उठो तुम्हारे वंशका वर्द्धक वीर पुत्र उत्पन्नहोगा और पार्वतीजीकी कृपासे एकश्रेष्ठ कन्याभी तुम्हारे उत्पन्नहोगी जो कि तुम लोगोंके होनेवाले चक्रवर्त्ती महातेजस्वी नरवाहनदत्तकी रानीहोगी इसप्रकार कहकर श्री शिवजी के अन्तर्द्धान होजानेपर प्रातःकाल हेमप्रभ प्रसन्नता पूर्व्वकजगा और उसने रानीअलंकार प्रभा से अपना स्वप्न कहकर उस को बहुत प्रसन्नकिया और रानीने भी कहा कि मुझसे भी श्रीपार्वतीजीने स्वप्नमे ऐसाहीकहाहै इसप्रकार परस्पर अपनेस्वप्नके वृत्तान्तको वर्णनकरके रानी तथा राजाने स्नानकरके श्रीशिवजीका पूजनकिया और बहुतसा दानदेके व्रतका पारणकर महाउत्सवकिया१०८इसके उपरान्त कुछ दिनोंके व्यतीत होनेपर रानी अलंकारप्रभा गर्भवतीहुई चञ्चल नेत्ररूपी भ्रमरवाले पीत कमल के समान सुन्दर उसके मुखको देखकर राजा अत्यन्त प्रसन्नहुआ रानीके उदारगर्भके मनोरथोसे राजाको पहलेहीसे यह अनुमान होगया कि बड़ा तेजस्वी पुत्र होगा समय पाकर सूर्य्यको आकाशके समान रानीने पुत्र उत्पन्न किया उसबालकके स्वाभाविक तेजसे सम्पूर्ण सूतिकागृह देदीप्यमान होगया तब राजा सोमप्रभने अपने पुत्रको शत्रुओं का भयदायी जानकर और आकाशवाणी सुनकर उसका नाम वज्रप्रभरक्खा शुक्लपक्ष के चन्द्रमा के समान वह बालक कुलरूपी समुद्रकी वृद्धिकेलिये धीरे २ कलाओं से पूर्ण होकर बढनेलगा तदनन्तर थोड़ेही कालमे रानी अलंकारप्रभा फिर गर्भवतीहुई वह गर्भवती रानी सुवर्णके सिंहासन पर बैठीहुई अन्तःपुरोंके रत्नके समान शोभितहोतीथी उनदिनों रानी के चित्तमें यह मनोरथ उत्पन्नहुआथा कि मैं विमानपर चढकर आकाशमेंघूमूं हेमप्रभने अपनी विद्याके प्रभाव से कमलो का विमान बनाके रानीको आकाशमें भ्रमण करवाया इसप्रकार गर्भके महीनो के व्यतीत होजानेपर रानीके एक बड़ी सुन्दर कन्या उत्पन्नहुई जिसका कि वर्णन इतना बहुतहै कि उसका जन्म श्रीपार्वतीजीकी कृपासे हुआथा कन्याके जन्मके समय यह आकाशवाणीहुई कि यह नरबाहन-दत्तकी स्त्री होगी इस आकाशवाणी को सुनकर राजाने पुत्रोत्सव के समानही उसका भीउत्सव किया और उसका नाम रत्नप्रभारक्खा वहरत्नप्रभा अपने पिताकी विद्याओंसे संस्कार युक्तहोकर दिशाओंमे प्रकाशित करतीहुई बढी इसके उपरान्त राजा अपने पुत्र वज्रप्रभका विवाहकरके उसे युवराजपदवी देकर और सम्पूर्ण राज्यकाभार उसपर रखकर सावधानहोकर रहनेलगा परन्तु केवल कन्याकेविवाहकी चिंता उसके हृदयमे बाकीरही एकसमय राजानेपास बैठीहुई रानी अलंकार प्रभासे अपनी कन्याको विवाह के योग्य देखकरकहा कि हे रानी कुलकी आभूषणरूपी कन्या महात्माओंको भी महादुखदायी होती

नामवाला राजाथा उसने सम्पूर्ण पृथ्वी को जीतनेके लिये और पृथ्वीपरके सबराजाओंकी कन्याओं को अपनी स्त्री बनानेके लिये विष्णुभगवान् का तपकिया तपसे प्रसन्न होकर साक्षात् विष्णुभगवान् ने दर्शन देकर प्रणाम करतेहुए राजासे कहा कि हे राजा उठो जो मैं कहताहूं उसेसुनो कोई गन्धर्व मुनि के शापसे कलिंग देशमें श्वेतरश्मिनाम श्वेत हाथी होकर उत्पन्नहुआ है पूर्वजन्म में तप के प्रभावसे और मेरी भक्तिसे उसज्ञानी हाथीको पूर्वजन्मका स्मरणभी बनाहै और वह आकाशमें भी गमनकरसक्ताहै उसको मैंने स्वप्नमें तुम्हारेपास आनेकी आज्ञादेदी है वह आकाशमार्ग से आकर आपका वाहनबनेगा उसके ऊपर चढकर ऐरावतपरचढे इन्द्रके समान तुम आकाशमार्गसे जिसजिस राजाके पासजाओगे वह तुम्हारे दिव्य प्रभावको देखकर तुमको अपनी कन्या देदेगा और मैं उन राजालोगों को स्वप्नमें आज्ञाभी देताहूंगा इसप्रकार तुम सम्पूर्ण पृथ्वीको जीतलोगे और अस्सी हजार राजकन्या तुम्हारी स्त्री होजायँगी यह कहकर विष्णुभगवान् के अन्तर्द्धान होजानेपर राजा ने व्रतका पारण किया और दूसरे दिन वह श्वेतरश्मि हाथी उसके पास आकाश मार्ग से आया उसपर चढकर विष्णु भगवान् की आज्ञानुसार वह राजा सम्पूर्ण पृथ्वी जीतकर अस्सी हजार राजकन्या ले आया और अपने रत्नकूट पुरमें सुख पूर्वक विहार करने लगा और उस श्वेतरश्मि हाथी की शान्तिकेलिये प्रति दिन पांचसौ ब्राह्मणों का भोजन करवाने लगा एक समय राजा रत्नाधिपति उसहाथी पर चढकर बहुत से द्वीपों में घूमकर अपने द्वीप में आया वहां आकर जब वह हाथी आकाशसे उतरनेलगा उस समय भाग्यवश से गरुडवंशके किसी पक्षीने उसके शिरमें टोंटमारी वह पक्षी तो राजाके तीक्ष्ण अंकुशमारनेसे भागगया परन्तु हाथी मूर्च्छित होकर पृथ्वी में गिरपडा और राजाके उतर आनेपर मूर्च्छा जगने परभी वह उठाने से भी नहीं उठसका और न खासका पांचदिन तक इसीप्रकार उस हाथीके निराहार पडेरहनेपर राजानेभी कुछ आहार नहीं किया और पांचवेंदिन बहुत दुखीहोकर यह कहा कि हे लोकपालो इससंकट में मुझे कोई उपाय बताओ नहीं तो मैं अपना शिरकाटकर आप लोगोंकी भेंट करदूंगा यह कहकर राजा खड्ग लेकर अपना शिरकाटनेको उद्यक्त होगया राजाको ऐसा साहस करते जानकर उसी समय आकाश वाणीहुई कि हेराजा साहस मत-करो कोई सती स्त्री इस हाथीको अपने हाथमें स्पर्शकरे तो यह अच्छा होजाय नहीं तो नहीं अच्छा होगा इसआकाशवाणीको सुनकर राजाने उसी समय बहुत प्रसन्न होकर अपनी उसअमृतलता नाम रानीको जिसकी कि उसने बडी रक्षाकीथी बुलवाया उसने आकर हाथीका स्पर्शकिया परन्तु हाथी नहीं उठा तब राजाने अपनी सम्पूर्ण स्त्रियोंको बुलवाकर सबसे एक २ करके स्पर्शकरवाया पर हाथी नहींउठा क्योंकि उनमें एकभी सती न थी राजाने उनअस्सीहजार रानियोंको लज्जित देखकर अपने पुरकी सम्पूर्ण स्त्रियोंको बुलवाकर क्रमपूर्वक सबसे हाथीका स्पर्श करवाया जब इतनेपर भी वह हाथी न उठा तो राजाके चित्तमें लज्जाहुई कि हाय मेरे पुरमें एकभी सती स्त्री नहीं है उस समय हर्षगुप्त नाम एक वैश्यताम्रलिप्ती नाम नगरी से उसद्वीप में आयाथा वह भी इसवृत्तान्तको सुनकर कौतुक

कोभी बैठालकर विमानको लेकर काञ्चनशृगनाम अपने पुरकोगया वहा नरवाहनदत्तने अपने श्वशुर का सुवर्ण के परकोटे से देदीप्यमान सुवर्ण से बनाहुआ पुरदेखा वह पुर सव ओरसे निकलीहुई किरणों के समूहसे ऐसा शोभितहोताथा कि मानों जामाता के स्नेहसे उसने अनेक भुजाफैलाई थीं ऐसे सुन्दर उस पुरमें नरवाहनदत्त को लेजाकर वडेउत्सव से हेमप्रभ ने रत्नप्रभाका विवाहकरदिया और दायजमें बहुतसे देदीप्यमान रत्नोंके समूहदिये उन समूहोंको देखकर यह भ्रान्तिहोतीथी कि बिवाहके निमित्त मानों कईस्थानो मे अग्नि प्रज्वलितकीगयी है उससमय हेमप्रभने अपने सेवकोंको भी बहुतसा धन दिया उस उत्सव में पताकायुक्त गृहभी ऐसे शोभितहोते थे कि मानों इन्हों ने भी वस्त्रपाये हैं इसप्रकार बिवाह के होजानेपर नरवाहनदत्त दिव्य ऐश्वर्य्य को भोगकरताहुआ वहा रत्नप्रभाके साथ रहा और रत्नप्रभाकी विद्याके बलसे आकाश में जाकर दिव्यउपवन बावडी तथा देवमंदिरों में उसने आनन्द से विहार किया इसप्रकार कुछदिन विद्याधरों के देश में रहकर नरवाहनदत्त यौगन्धरायण की अनुमतिसे वहा से चलनेको उद्यतहुआ तब अलकारप्रभा ने उसका वडा मगलाचार किया और हेमप्रभ फिरभी रत्नादिदेकर उसका बहुत सत्कार करके रत्नप्रभा तथामन्त्रियो समेत उसे उसी बिमान पर बैठालकर कौशाम्बीपुरीको लेआया अत्यन्त प्रसन्न राजा उदयन्से कियेगये महा महोत्सवसे युक्त कौशाम्बी मे आकर नरवाहनदत्त हेमप्रभ रत्नप्रभा तथा मन्त्रियों समेत राजमन्दिरमें गया और वासवदत्ता समेत अपने पिताके चरणोंपर गिरा वधूसमेत प्रणामकरतेहुए अपने पुत्र को देखकर राजा उदयन्के हृदयमे बडा हर्षहुआ और उसने अपने ऐश्वर्य्य के अनुसार अपने सम्बन्धी हेमप्रभका बडा सत्कारकिया इसके उपरान्त राजा उदयन् से आज्ञालेकर हेमप्रभके चलेजानेपर नरवाहनदत्त ने रत्नप्रभा मदनमचुका तथा अपने मन्त्रियोंके साथ बहदिन बडेहर्षसे व्यतीत किया १६४॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायारत्नप्रभालंबकेप्रथमस्तरग १॥

इसप्रकार अत्यन्त रूपवती विद्याधरी रत्नप्रभाको पाकर उसी के मन्दिर मे बैठेहुए नरवाहनदत्तके दर्शनके लियेदूसरे दिन प्रात काल गोमुखादिक मन्त्रीद्वारपर आये उससमय द्वारपालिकाने क्षणभर उनलोगों को रोककर भीतरसे आज्ञापाकर उन्हें आनेदिया तब उनलोगों का आदर करके रत्नप्रभाने द्वारपालिकासे कहा कि आर्य्यपुत्रके मित्र गोमुखादिकों को अब कभी न रोकना यहतो हमारे शरीरही के समान है और अन्त पुरमे इतनी रक्षाकरनेमें भी मेरीअनुमति नहीं है द्वारपालिका से इसप्रकार कहकर उसने अपने पतिनरवाहनदत्तसे कहा कि हे आर्यपुत्र मै प्रसगपाकर आपसे कहतीहू कि स्त्रियोंकी रक्षा केवल नीति है और ईर्षासे अधिक रक्षाकरना अज्ञानताहै क्योंकि उससे कोई प्रयोजन सिद्ध नहींहोता सत्कुल में उत्पन्न होनेवाली स्त्रियोंकी रक्षाकेवल उनकाशीलही करताहै (धातापिनप्रभु प्रायश्चपला नांतुरक्षणे मत्तानदीचनारीचनियन्तुकेनपार्य्यते) प्राय चपलस्त्रियों की रक्षाकरने में ब्रह्माभी नहीं समर्थ हैं मत्तनारी और नदीको कौनरोकसक्ता है इस विषयपर में आपको एक कथासुनाती हू कि समुद्रके बीचमें रत्नकूटनाम एक बडाद्वीप है उस द्वीपमें बडा उत्साही परमवैष्णव रत्नाधिपनाम यथार्थ

नामवाला राजाथा उसने सम्पूर्ण पृथ्वी को जीतनेके लिये और पृथ्वीपरके सबराजाओंकी कन्याओं को अपनी स्त्री बनानेके लिये विष्णुभगवान् का तपकिया तपसे प्रसन्न होकर साक्षात् विष्णुभगवान् ने दर्शन देकर प्रणाम करतेहुए राजासे कहा कि हे राजा उठो जो मैं कहताहूं उसेसुनो कोई गन्धर्व मुनि के शापसे कलिंग देशमें श्वेतरश्मिनाम श्वेत हाथी होकर उत्पन्नहुआ है पूर्व्वजन्म में तप के प्रभावसे और मेरी भक्तिसे उसज्ञानी हाथीको पूर्व्वजन्मका स्मरणभी बनाहै और वह आकाशमें भी गमनकरसक्ताहै उसको मैंने स्वप्नमें तुम्हारेपास आनेकी आज्ञादेदी है वह आकाशमार्ग से आकर आपका वाहनबनेगा उसके ऊपर चढकर ऐरावतपरचढे इन्द्रके समान तुम आकाशमार्गसे जिसजिस राजाके पासजाओगे वह तुम्हारे दिव्य प्रभावको देखकर तुमको अपनी कन्या देदेगा और मैं उन राजालोगों को स्वप्नमें आज्ञाभी देतारहूंगा इसप्रकार तुम सम्पूर्ण पृथ्वीको जीतलोगे और अस्सी हजार राजकन्या तुम्हारी स्त्री होजायँगी यह कहकर विष्णुभगवान् के अन्तर्द्धान होजानेपर राजा ने व्रतका पारण किया और दूसरे दिन वह श्वेतरश्मि हाथी उसके पास आकाश मार्ग से आया उसपर चढकर विष्णु भगवान् की आज्ञानुसार वह राजा सम्पूर्ण पृथ्वी जीतकर अस्सी हजार राजकन्या ले आया और अपने रत्नकूट पुरमें सुख पूर्व्वक विहार करने लगा और उस श्वेतरश्मि हाथी की शान्तिकेलिये प्रति दिन पाचसौ ब्राह्मणों का भोजन करवाने लगा एक समय राजा रत्नाधिपति उसहाथी पर चढकर बहुत से द्वीपों में घूमकर अपने द्वीपमें आया वहा आकर जब वह हाथी आकाशसे उतरनेलगा उस समय भाग्यवश से गरुडवशके किसी पक्षीने उसके शिरमें टोंटमारी वह पक्षी तो राजाके तीक्ष्ण अंकुशमारनेसे भागगया परन्तु हाथी मूर्च्छित होकर पृथ्वी में गिरपडा और राजाके उतर आनेपर मूर्च्छा जगने परभी वह उठाने से भी नहीं उठसका और न खासका पाचदिन तक इसीप्रकार उस हाथीके निराहार पडेरहनेपर राजानेभी कुछ आहार नहीं किया और पाचवेंदिन बहुत दुखीहोकर यह कहा कि हे लोकपालो इससंकट में मुझे कोई उपाय बताओ नहीं तो मैं अपना शिरकाटकर आप लोगोंकी भेंट करदूंगा यह कहकर राजा खड्ग लेकर अपना शिरकाटनेको उद्युक्त होगया राजाको ऐसा साहस करते जानकर उसी समय आकाश वाणीहुई कि हेराजा साहस मत-करो कोई सती स्त्री इस हाथीको अपने हाथसे स्पर्शकरे तो यह अच्छा होजाय नहीं तो नहीं अच्छा होगा इसआकाशवाणीको सुनकर राजाने उसी समय बहुत प्रसन्न होकर अपनी उसअमृतलता नाम रानीको जिसकी कि उसने बडी रक्षाकीथी बुलवाया उसने आकर हाथीका स्पर्शकिया परन्तु हाथी नहीं उठा तब राजाने अपनी सम्पूर्ण स्त्रियोंको बुलवाकर सबसे एक २ करके स्पर्शकराया पर हाथी नहींउठा क्योंकि उनमें एकभी सती न थी राजाने उनअस्सीहजार रानियोंको लज्जित देखकर अपने पुरकी सम्पूर्ण स्त्रियोंको बुलवाकर क्रमपूर्व्वक सबसे हाथीका स्पर्श करवाया जब इतनेपर भी वह हाथी न उठा तो राजाके चित्तमें लज्जाहुई कि हाय मेरे पुरमें एकभी सती स्त्री नहीं है उस समय हर्षगुप्त नाम एक वैश्यताम्रलिप्ती नाम नगरी से उसद्वीप में आयाथा वह भी इसवृत्तान्तको सुनकर कौतुक

देखनेकेलिये वहांपर गया उसने थियेंकी शीलवती नाम स्त्रीभी उसके पीछे २ चलीगई और उसने कहा कि जो मैंने चित्तसे भी अपनेमनमें किसी अन्य पतिका स्मरणभी न कियाहोय तो मेरेहाथके स्पर्श मे यह हाथी उठे यहकहकर उसने उस हाथीका स्पर्शकिया उसके स्पर्श करतेही हाथी स्वस्थ होकर उठखड़ाहुआ और चारा खानेलगा हाथीको उठा देखकर सबलोग शीलवती की प्रशंसा करके कहने लगे कि ऐसी साध्वी स्त्रियां कहीं विरलीही होती हैं जो ईश्वर के समान इस सम्पूर्ण संसारकी उत्पत्ति पालन तथा संहार करसक्ती है राजा रत्नाधिपतिने भी प्रसन्नहोकर शीलवतीको असंख्य रत्नों से पूर्ण करदिया और उसके स्वामी हर्षगुप्तकोभी बड़ेसत्कार पूर्व्वक अपने घरके पासही मकान देकर टिकाया और उसदिनसे अपनी सम्पूर्ण स्त्रियोंका स्पर्शभी त्यागकरके उनको केवल भोजन और वस्त्रमात्रदेने मिलने की आज्ञादी इसके उपरान्त राजाने भोजन करके हर्षगुप्त समेत शीलवतीको एकान्तमें बुला कर कहा कि हेशीलवती तुम्हारे पिताके वंशमें कोई औरभी कन्याहै जो होय तो तुम उसका मेरेसाथ विवाह करवादो मैं जानताहूं कि वह भी तुम्हारेही समान होगी राजाके यह वचन सुनकर शीलवती बोली कि हे महाराज ताम्रलिप्तीपुरी में तारादत्तानाम एक मेरी बहिनहै वह बड़ी रूपवती है जो आपकी इच्छाहोय तो उसके साथ विवाह करलीजिये राजाने उसके वचन स्वीकारकरलिये और दूसरे दिन ताम्रलिप्तीपुरी के चलनेका निश्चय किया और हर्षगुप्त तथा शीलवती को उसी श्वेतरश्मि हाथीपर सवारकराके उस पुरीको गया और हर्षगुप्त के यहां पहुंचकर शीलवती की बहिनके विवाहके निमित्त ज्योतिषियों से लग्नपूछी ज्योतिषियों ने दोनों के जन्म नक्षत्र पूछकर कहा कि आजसे तीनमहीने के उपरान्त शुद्धलग्नहै और एक लग्न आजभी है उसमें जो विवाहहोगा तो तारादत्ता अवश्य कुलटा होजायगी ज्योतिषियों के यह वचन सुनकर राजाने सुन्दर स्त्री के लिये उत्कण्ठितहोकर और बहुत कालतक स्त्री के विनारहनेको असमर्थहोकर शोचा कि विचारमें क्या प्रयोजनहै आजही राजदत्ता के साथ विवाहकरनाचाहिये यह शीलवतीकी बहिन है इससे यह निरभिमानहोने के कारण कुलटा न होगी और समुद्रके बीच में मनुष्यरहित एक द्वीपखण्डहै जिसमें कि मेरा चौखनामहल बना है उसमें इसेरक्खूंगा और उस दुर्गमस्थान मे केवल स्त्रीही इसकी सेवाके लिये रक्खूंगा इसप्रकार पुरुषके बिना देखेभाले यह कैसे पुंश्चली होजायगी यह निश्चयकरके राजा ने उसीदिन उसी लग्न मे शीलवती के कहने से राजदत्ताके साथ अपना विवाहकरलिया और विवाहकरके हर्षगुप्त शीलवती तथा राजदत्ता को उसी श्वेतरश्मि हाथी पर बैठाकर क्षण भरमे आकाशमार्ग के द्वारा रत्नकूट द्वीप जहां कि उसका मार्ग सब लोग देखरहे थे आया और वहां आकर शीलवती को फिरभी इतना धन दिया कि जिससे वह अपने पतिव्रतपने का फल पाकर कृतकृत्य होगई ६२ तदनन्तर राजाने रत्नदत्ताको श्वेतरश्मिपर बैठालकर पहलेहीसे विचारेहुए समुद्रके बीच मनुष्योंसे दुर्गम द्वीपमें लेजाकर अपने मंदिर में रक्खा और केवल स्त्रियांही उसकी सेवाकेलिये रक्खी और जिन २ वस्तुओंकी वहां आवश्यकता थी वह सब वस्तुराजाने किसीपर विश्वासनकरके आपही आकाश मार्गमें वहां पहुंचाई राजा उसके

अनुरागसे रात्रिभर तो उसीकेपास रहताथा और दिनको राज्यके कार्य्य करनेको रत्नकूटपर चला आता था एकसमय राजाने कोई दुस्स्वप्न देखाथा इससे प्रातःकाल मंगलाचार करके आपभी मद्यपान किया और रानीको भी मद्यपान करवाया फिर किसी कार्य्यके लिये रत्नकूटमे आनेका विचार किया यद्यपि वह मदमे उन्मत्त होकर राजाको छोडना नहीं चाहती थी तथापि वह कार्य्यवशसे रत्नकूटको चलाही आया और चित्तमे शोचतारहा कि वह मदोन्मत्त वहा अकेली क्या करेगी इस बीचमें राजदत्ता उस दुर्गमद्वीपमें दासियों के अपने २ कार्यों मे लगजानेपर अकेली द्वारपर चलीआई और वहाँ राजा की सबरक्षाओं के जीतने के लिये मानो आयेहुए भाग्यके समान एक आश्चर्य्यकारी पुरुषको देखकर उसमदोन्मत्तने पूछा कि तुमकौनहो और इस अगम्यस्थान में कैसे आयेहो रानीके यह वचनसुनकर अनेक क्लेशोंका भोगनेवाला वह पुरुष बोला कि मै पवनसेननाम वैश्यहू मथुरामें मेराघरहै मेरे गोत्री भाइयोने पिताके मरनेपर मुझे अनाथ जानकर मेरा सब धनछीन लिया तब मैने विदेशमे जाकर नौकरी करली वहा कुछधन इकट्ठा करके रोजगार करने के लिये अन्य देशको चला मार्ग में चोरोंने मेरा सब धन छीनलिया चोरों के हाथ सब धन गमाकर वहा से अपने समान अन्य साथियो के साथ कनकक्षेत्र नाम एक स्थानमें जहा रत्नोकी खानि निकाली जाती थी गया वहा राजा से कुछ पृथ्वी लेकर सालभरतक खोदतारहा परन्तु एकभी रत्न नहीं मिला और मेरे साथियों को अनेक रत्न मिले तब मै अपनी ऐसी मन्दभाग्यता देखकर समुद्रके तटपर जाकर बहुतसे काष्ठ इकट्ठे करके चिता बनाके जलने का विचार करनेलगा उस समय जीवदत्तनाम एक वैश्य वहा आया उसने मुझे चिता से निवारण करके अपने पास नौकररलिया और मुझे अपने साथ जहाजपर बैठाकर स्वर्ण-द्वीपमें जानेका प्रस्थानकिया पाच दिनतक समुद्रमे चलते २ छठेदिन अकस्मात् मेघ बरसनेलगे और वायुसे वह जहाज मतवालेहाथीके शिरके समान घूमनेलगा और फटकर पानीमें डूबगया उसके डूबजाने पर भाग्यवश से मुझकोगोते खाते २ एककाष्ठका टुकडा मिलगया उसीपर चढकर मेघोंके शान्तहोजाने पर मै इसद्वीपके तटपर पहुचगया और उस काष्ठके टुकडे से उतर कर इसवनमे घूमते यह तुम्हारा मन्दिर मुझेमिला और यहा आकर नेत्रोंमे अमृतकी वृष्टिके समान सुखदेनेवाली तुमको देखा उसके यह वचनसुनकर रानी तारादत्ताने मदमे और कामदेवसे उन्मत्तहोकर उसको पलगपर लेटाकर उसका आलिंगनकिया (स्त्रीत्वमुन्मत्तत्वमेकान्त पुंसोलाभोऽनियंत्रणा। यत्रपञ्चाग्नयस्तत्रवार्त्ता-शीलतृणस्यका) स्त्रीपना, उन्मत्तता, एकान्त, पुरुषका मिलना और स्वतन्त्रता इनपाच अग्नियोंके सन्मुखशीलरूपी तृणकी क्यासामर्थ्यहै काममे मोहितस्त्री विचारकरने में समर्थनहीं होती देखो रानी राजदत्ताने उस विपत्तिमे पडेहुए अयोग्य पुरुषके साथभी रमणकी इच्छाकी उससमय राजा रत्नाधिपतिने उत्कण्ठित होकर उसी श्वेतरश्मिपर चढकर वहाँ आके मन्दिर में जाकर रानी राजदत्ता उस दीन पुरुषके सायरमण करतीहुई देखी और उसपुरुषको मारनेकी इच्छाकी परन्तु वह पैरोपर गिरकर दीनवचन कहनेलगा इससे छोडदिया और अपनी रानी तारादत्ताको उन्मत्त तथा भयभीत देखकर

देखनेकेलिये वहापर गया उसनगियेंकी शीलवतीनाम स्त्रीभी उनके पीछे २ चलीगई थी उसने कहा कि जो मैने चित्तसे भी अपनेमनमें किसी अन्य पतिका स्मरणभी न किया होय तो मेरे हाथके स्पर्श से यह हाथी उठे यहकहकर उसने उस हाथीका स्पर्श किया उसके स्पर्श करतेही हाथी स्वस्थ होकर उठखडाहुआ और चारा खानेलगा हाथीको उठा देखकर सबलोग शीलवती की प्रशंसा करके कहने लगे कि ऐसी साध्वी स्त्रिया कहीं विरलीही होती है जो ईश्वर के समान इस सम्पूर्ण ससारकी उत्पत्ति पालन तथा सहार करसक्ती है राजा रत्नाधिपतिने भी प्रसन्नहोकर शीलवतीको असरव्य रत्नों से पूर्ण करदिया और उसके स्वामी हर्षगुप्तकोभी बडे सत्कार पूर्व्वक अपने घरके पासही मकान देकर टिकाया और उसदिनसे अपनी सम्पूर्ण स्त्रियोंका स्पर्शभी त्यागकरके उनको केवल भोजन और वस्त्रमात्रदेने मिलने की आज्ञादी इसके उपरान्त राजाने भोजन करके हर्षगुप्त समेत शीलवतीको एकान्तमें बुला कर कहा कि हे शीलवती तुम्हारे पिताके वंशमें कोई औरभी कन्याहै जो होय तो तुम उसका मेरेसाथ विवाह करवादो मैं जानताहूं कि वह भी तुम्हारेही समान होगी राजाके यह वचन सुनकर शीलवती बोली कि हे महाराज ताम्रलिप्तीपुरी में तारादत्तानाम एक मेरी बहिनहै वह वडी रूपवती है जो आपकी इच्छाहोय तो उसके साथ विवाह करलीजिये राजाने उसके वचन स्वीकारकरलिये और दूसरे दिन ताम्रलिप्तीपुरी के चलनेका निश्चय किया और हर्षगुप्त तथा शीलवती को उसी श्वेतरश्मि हाथीपर सवारकराके उस पुरीको गया और हर्षगुप्त के यहा पहुचकर शीलवती की बहिनके विवाहके निमित्त ज्योतिषियों से लग्नपूछी ज्योतिषियों ने दोनों के जन्म नक्षत्र पूछकर कहा कि आजसे तीनमहीने के उपरान्त शुद्धलग्नहै और एक लग्न आजभी है उसमें जो विवाहहोगा तो तारादत्ता अवश्य कुलटा होजायगी ज्योतिषियों के यह वचन सुनकर राजाने सुन्दर स्त्री के लिये उत्कण्ठितहोकर और बहुत कालतक स्त्री के विनारहनेको असमर्थहोकर शोचा कि विचारमें क्या प्रयोजनहै आजही राजदत्ता के साथ विवाहकरनाचाहिये यह शीलवतीकी बहिन है इससे यह निरभिमानहोने के कारण कुलटा न होगी और समुद्रके बीच में मनुष्यरहित एक द्वीपखण्डहै जिसमें कि मेरा चौखनामहल बना है उसमें इसेरक्खूगा और उस दुर्गमस्थान में केवल स्त्रीही इसकी सेवाके लिये रक्खूगा इसप्रकार पुरुषके बिना देखेभाले यह कैसे पुंश्चली होजायगी यह निश्चयकरके राजा ने उसीदिन उसी लग्न में शीलवती के कहने से राजदत्ताके साथ अपना विवाहकरलिया और विवाहकरके हर्षगुप्त शीलवती तथा राजदत्ता को उसी श्वेतरश्मि हाथी पर बैठाकर क्षण भरमे आकाशमार्ग के द्वारा रत्नकूट द्वीप जहा कि उस-का मार्ग सब लोग देखरहे थे आया और वहा आकर शीलवती को फिरभी इतना धन दिया कि जिससे वह अपने पतिव्रतपने का फल पाकर कृतकृत्य होगई ६२ तदनन्तर राजाने राजदत्ताको रत्न नरासिपर बैठालकर पहलेहीसे विचारेहुए समुद्रके बीच मनुष्योंसे दुर्गम द्वीपमें लेजाकर अपने मंदिर में रक्खा और केवल स्त्रियांही उसकी सेवाकेलिये रक्खी और जिन २ वस्तुओंकी वहा आवश्यकता थी वह सब वस्तु राजाने किसीपर विश्वासनकरके आपही आकाश मार्गमे वहा पहुंचाई राजा उसके

अनुरागसे रात्रिभर तो उसीकेपास रहताथा और दिनको राज्यके कार्य्य करनेको रत्नकूटपर चला आता था एकसमय राजाने कोई दुस्स्वप्न देखाथा इससे प्रातःकाल मंगलाचार करके आपभी मद्यपान किया और रानीको भी मद्यपान करवाया फिर किसी कार्य्यके लिये रत्नकूटमें आनेका विचार किया, यद्यपि वह मदसे उन्मत्त होकर राजाको छोड़ना नहीं चाहती थी तथापि वह कार्य्यवशसे रत्नकूटको चलाही आया और चित्तमें शोचतारहा कि वह मदोन्मत्त वहां अकेली क्या करेगी इस बीचमें राजदत्ता उस दुर्गमद्वीपमें दासियों के अपने २ कार्यों में लगजानेपर अकेली द्वारपर चलीआई और वहाँ राजा की सबरक्षाओं के जीतने के लिये मानो आयेहुए भाग्यके समान एक आश्चर्य्यकारी पुरुषको देखकर उसमदोन्मत्तने पूछा कि तुमकौनहो और इस अगम्यस्थान में कैसे आयेहो रानीके यह वचनसुनकर अनेक क्लेशोंका भोगनेवाला वह पुरुष बोला कि मैं पवनसेननाम वैश्यहूं मथुरामें मेराघरहै मेरे गोत्री भाइयोंने पिताके मरनेपर मुझे अनाथ जानकर मेरा सब धनछीन लिया तब मैंने विदेशमें जाकर नौकरी करली वहां कुछधन इकट्ठा करके रोजगार करने के लिये अन्य देशको चला मार्ग में चोरोंने मेरा सब धन छीनलिया चोरों के हाथ सब धन गमाकर वहां से अपने समान अन्य साथियों के साथ कनकक्षेत्र नाम एक स्थानमें जहां रत्नोंकी खानि निकाली जाती थी गया वहां राजा से कुछ पृथ्वी लेकर सालभरतक खोदतारहा परन्तु एकभी रत्न नहीं मिला और मेरे साथियों को अनेक रत्न मिले तब मैं अपनी ऐसी मन्दभाग्यता देखकर समुद्रके तटपर जाकर बहुतसे काष्ठ इकट्ठे करके चिता बनाके जलने का विचार करनेलगा उस समय जीवदत्तनाम एक वैश्य वहां आया उसने मुझे चिता में निवारण करके अपने पास नौकरकरलिया और मुझे अपने साथ जहाजपर बैठाकर स्वर्ण-द्वीपमें जानेका प्रस्थानकिया, पांच दिनतक समुद्रमें चलते २ छठेदिन अकस्मात् मेघ बरसनेलगे और वायुसे वह जहाज मतवालेहाथीके शिरके समान घूमनेलगा और फटकर पानीमें डूबगया उसके डूबजाने पर भाग्यवश से मुझकोगोते खाते २ एककाष्ठका टुकडा मिलगया उसीपर चढकर मेघों के शान्तहोजाने पर मैं इसद्वीपके तटपर पहुंचगया और उस काष्ठके टुकडे से उतर कर इसवनमें घूमते यह तुम्हारा मन्दिर मुझेमिला और यहां आकर नेत्रोंमें अमृतकी वृष्टिके समान सुखदेनेवाली तुमको देखा उसके यह वचनसुनकर रानी तारादत्ताने मदमें और कामदेवसे उन्मत्तहोकर उसको पलंगपर लेटाकर उसका आलिंगनकिया (स्त्रीत्वमुन्मत्तत्वमेकान्तं पुंसोलाभोऽनियन्त्रणा। यत्रपञ्चाग्नयस्तत्रवार्त्ताशीलतृणस्य का) स्त्रीपना, उन्मत्तता, एकान्त, पुरुषका मिलना और स्वतन्त्रता इनपांच अग्नियों के सन्मुखशीलरूपी तृणकी क्यासामर्थ्यहै कामसे मोहितस्त्री विचारकरने में समर्थनहीं होती देखो रानी राजदत्ताने उस विपत्तिमें पडेहुए अयोग्य पुरुषके साथभी रमणकी इच्छाकी उससमय राजा रत्नाधिपतिने उत्कण्ठित होकर उसी श्वेतरश्मिपर चढकर वहाँ आके मन्दिर में जाकर रानी राजदत्ता उस दीन पुरुषके साथरमण करतीहुई देखी और उसपुरुषको मारनेकी इच्छाकी परन्तु वह पैरोंपर गिरकर दीनवचन कहनेलगा इससे छोडदिया और अपनी रानी तारादत्ताको उन्मत्त तथा भयभीत देखकर

विचार किया कि (मद्येमारैकसुहृदिप्रसक्तासीसतीकुत । नियन्तुचपलानारी रक्षयापिनशक्यते ॥ किन्नामोत्पातवातालीवाहुभ्याजातुवध्यते) कामदेवके मुख्य मित्र मद्य में प्रसक्तस्त्री सती कैसे होसक्ती है चपलस्त्री रक्षा करनेसेभी नहींरुकसक्ती है क्या आंधीकी हवाको कोई भुजाओंसे रोकसक्ताहै मैने ज्योतिषियोंका कहा नहीं किया उसीका यह फलमुझको मिला (विपाककटुकम्यनास्तवाक्यावधीरण) शिष्टलोगोंके वाक्यका तिरस्कार करना किसको अन्तमें अनिष्टकारी नहीं होताहै मैंने इसको शीलवतीकी बहिनजानकर अमृतके साथ उत्पन्नहुए विषका स्मरण नहीं रक्खा अथवा अद्भुत कार्य्य करनेवाले ब्रह्माके अपूर्व कार्य्योंको कौनपुरुष अपने पुरुषार्थ से जीतसक्ताहै इसप्रकार शोचकर राजा ने किसीपर क्रोध नहीं किया और उसवैश्यसे सम्पूर्ण वृत्तान्त पूछकर उसेछोडदिया तब उस वैश्यनेभी वहाँ जीविकाकी कोई गति न जानकर समुद्रके तटपर आकर एक जहाज उसमार्गसे जाताहुआदेखा और शीघ्रतासे उसीकाष्ठके टुकडेपर फिरचढकर समुद्रमें जाके पुकारकरकहा कि मुझे यहाँसे निकाललो उसके यह वचनसुनकर कोशवर्म्मानाम जहाजके स्वामीने उसे जहाजपर चढालिया (यस्ययद्विहितधात्राकर्मनाशायतस्यनत् । पदवींयत्रतत्रापि वात्रतोप्यनुधावति) ब्रह्माने जौनसा कर्म जिसके नाशहोने के लिये नियतकर दियाहै वह उसकेसाथ सर्वत्रजाता है देखो वह मूर्ख जहाजपरजाकर एकान्तमें क्रोधवर्म्मांकीस्त्री के साथ रतिमें आसक्तहुआ और क्रोधवर्म्मा ने उसेदेखकर समुद्रमें ढकेलदिया १०२ वहा राजा रत्नाधिपति अपने सम्पूर्णपरिकर समेत रानी राजदत्ताको श्वेतरश्मिपर चढाकर रत्नकूटमें लेआया औरराजदत्ताको शीलवतीके सुपुर्दकरके शीलवतीसे और अपने मन्त्रियोंसे उसकासम्पूर्ण वृत्तान्त कह दिया और वैराग्ययुक्तहोकर यहवचनकहे कि मैंने इनअसार विरस विषयोंमें चित्तलगाकर कितनादुख उठाया इससे अब मैं वनमें जाकर श्रीकृष्णभगवान् का भजन करूंगा जिससे फिरऐसे दुख भोगने न पडें राजाके यह वचनसुनकर मन्त्रियोंने तथा शीलवतीनेभी समझाया परन्तु उसका चित्त वैराग्यसे नहीं हटा तब उसने अपने खजाने में से आधाधन शीलवती को देकर आधा सम्पूर्ण ब्राह्मणोंको बांटदिया और सम्पूर्ण राज्य पापभंजननाम किसी गुणवान् ब्राह्मण को विधिपूर्व्वक दानकरदिया- और सब राज्य सकल्पकरके राजाके स्नेहसे आंसुभरेहुए प्रजालोगोंके देखतेहुएही तपोवनजानेके लिये श्वेतरश्मिको बुलवाया श्वेतरश्मि वहाँ आतेही अपने शरीरको त्यागकर हारआदिक दिव्य आभूषणों से युक्त दिव्यपुरुष होगया उसकी यहदशादेखकर राजाने कहा कि तुम कौनहो और यहक्याबात है तब वहबोला कि मलयाचलके रहनेवाले हम दो गन्धर्व परस्परभाई हैं मेरासोमप्रभनामहै और मेरे बडेभाई का देवप्रभनाम है मेरे भाईके राजवतीनाम परमप्रिय एकही स्त्री है एकसमय देवप्रभराजवतीको गोदमें लेकर मेरेसाथ सिद्धवासनाम स्थानको गया वहा जाकर श्री विष्णुभगवान् का पूजन करके भगवान्के आगे हम सबलोग गानेलगे उससमय वहा कोई सिद्धआकर अत्यन्त मनोहर गानकरती हुई राजवती को अनिमेष दृष्टिसे देखनेलगा उसे इसप्रकार देखताहुआ देखकर मेरे भाईने कुपित होकर उससे [illegible] होकरभी परस्त्री को बुरी अभिलाषसे देखतेहो तब सिद्धने कुपित होकर कहा

कि हे मूर्ख मैने इसको अपृथ्वीगतके कारण से देखाथा मेरी बुरी अभिलाषा न थी तेरे चित्तमें बडी ईर्षा है इससे तू मृत्युलोकमें उत्पन्न होगा और वहां अपनी स्त्री को परपुरुषमे रमण करतीहुई देखेगा इस शापको सुनकर मैंने लडकपनसे कुपित होकर उसको एक मृत्तिका के श्वेत हाथीसे जिसको कि मैं खेलनेको लायाथा मारा तबउसने मुझेभी शापदिया कि तूने मुझे श्वेतहाथी से माराहै इससे तू भी पृथ्वी में श्वेत हाथीके रूपसे उत्पन्न होगा सिद्धके इस शापको सुनकर मेरे भाईने उनसे बडी विनय करी तब उसकी अतिविनयको सुनकर सिद्धने कृपाकरके इसप्रकार हमदोनोंके शापका अन्त बताया कि तुम मनुष्य योनिमें भी विष्णुभगवान् की कृपासे द्वीपभरके स्वामी होकर दिव्य हाथीरूप अपने भाई को अपना वाहनपाओगे और अस्सीहजार तुम्हारी रानीहोंगी उन सबके दुराचारको जानकर मनुष्य योनिमें उत्पन्न होनेवाली इस अपनीस्त्री से भी विवाह करके इसे अपनी आंखोंसे पर पुरुषके साथ रमण करतीहुई देखोगे इसकी यह दशादेखकर तुम वैराग्ययुक्त होकर ब्राह्मण को अपना सब राज्यदेकर जब वनजाने को उद्युक्त होगे तब पहले तुम्हारा यह भाई हाथीपनेसे छूटजायगा और इसे देखकर तुमभी अपनी स्त्रीसमेत शापसेछूटजाओगे इसप्रकार उससिद्धके वचन के अनुसार पूर्वजन्म के कर्म के फलसे हम लोगोंका इससमय शापका अन्तहुआ सोमप्रभके यह वचन सुनकर राजा अपने पूर्व्व जन्मका स्मरणकरके बोला कि वह देवप्रभ मैं हीहू और राजदत्ता मेरी स्त्रीराजवतीहै यह कह कर राजा राजदत्ता समेत शरीरको त्यागकरके गन्धर्वहोगया फिर क्षणभरमें सबके देखतेही देखते वह तीनो आकाशमें उडकर अपने स्थान मलयाचलपर चलेगये शीलवती भी अपनेशीलके माहात्म्य से वहुतसी सम्पत्ति पाके ताम्रलिप्तीपुरी में जाकर धर्मपूर्व्वक रहनेलगी इसप्रकार इस संसार मे कोई पुरुष भी स्त्रीकी रक्षा हठपूर्व्वक नहींकरसक्ता है कुलीन स्त्रियोंको केवल उनकेशुद्ध सत्वरूपी पाशका बन्धनही उनकी सदैव रक्षाकरता है और ईर्षा तो मनुष्यों को दुखदाई महादोषरूप है और अन्यपुरुषों से द्वेषकराने का कारण है इस्से स्त्रियोंकी रक्षा तो नहीं होसक्ती है किन्तु इसके विपरीत उनके चित्तमें उत्कण्ठा अधिक वढजाती है रत्नप्रभाके मुखसे इससाराश से भरीहुई कथाको सुनकर नरवाहनदत्त अपने मन्त्रियों समेत वडा प्रसन्नहुआ १३५ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषाया रत्नप्रभालम्बकेद्वितीयस्तरंग २ ॥

इसप्रकार रत्नप्रभाकी कही हुई कथाके प्रसंगसे गोमुख नरवाहनदत्त से कहनेलगा कि हे युवराज ठीकहै सतीस्त्रिया तो वहुत कमहोती है और चपल अधिकहोतीहै इस्से इनका विश्वास न करना चाहिये इस विषय पर मैं आपको एककथा सुनाताहू सम्पूर्ण संसारमे विख्यात उज्जयिनी नाम नगरीमें निश्चयदत्तनाम एकवणिये का पुत्र अत्यन्त ज्वारीथा वह प्रतिदिन जुएमें धनजीतकर शिप्रा नदी में स्नानकरके श्रीमहाकाल शिवजीका पूजनकरके और ब्राह्मण तथा दीन अनाथोंको धनदेके भोजनादिक कार्य्य करताथा और वह नित्यही स्नानादि के उपरान्त महाकाल के निकट श्मशानमें जाकर अपने शरीर मे चन्दनादिक लगाताथा और वहींएकपत्थरके खंभमें चन्दनलगाकर अपनी पीठरगड-

विचार किया कि (मद्येमारेकसुहृदिप्रसक्तास्त्रीसतीकुत । नियन्तुचपलानारी रक्षयापिनशक्यते ॥ किन्नामोत्पातवातालीबाहुभ्याजातुवध्यते) कामदेवके मुख्य मित्र मद्य में प्रसक्तस्त्री सती कैसे होसक्ती है चपलस्त्री रक्षा करनेसेभी नहींरुकसक्ती है क्या आंधीकी हवाको कोई भुजाओंसे रोकसक्ताहै मैंने ज्योतिषियोंका कहा नहीं किया उसीका यह फलमुझको मिला (विपाककटुकःकस्यनाप्तवाक्यावधीरण) शिष्टलोगोंके वाक्यका तिरस्कार करना किसको अन्तमें अनिष्टकारी नहीं होताहै मैंने इसको शीलवतीकी बहिनजानकर अमृतके साथ उत्पन्नहुए विषका स्मरण नहीं रक्खा अथवा अद्भुत कार्य्य करनेवाले ब्रह्माके अपूर्व कार्य्योंको कौनपुरुष अपने पुरुषार्थ से जीतसक्ताहै इसप्रकार शोचकर राजा ने किसीपर क्रोध नहीं किया और उसवैश्यसे सम्पूर्ण वृत्तान्त पूछकर उसेछोडदिया तब उस वैश्यनेभी वहाँ जीविकाकी कोई गति न जानकर समुद्रके तटपर आकर एक जहाज उसमार्गसे जाताहुआदेखा और शीघ्रतासे उसीकाष्ठके टुकडेपर फिरचढकर समुद्रमें जाके पुकारकरकहा कि मुझे यहाँसे निकाललो उसके यह वचनसुनकर कोशवर्म्मानाम जहाजके स्वामीने उसे जहाजपर चढालिया (यस्ययद्विहितधात्राकर्मनाशायतस्यतत् । पदवींयत्रतत्रापिधावतोप्यनुधावति) ब्रह्माने जौनसा कर्म जिसके नाशहोने के लिये नियतकर दियाहै वह उसकेसाथ सर्वत्रजाता है देखो वह मूर्ख जहाजपरजाकर एकान्तमें क्रोधवर्म्माकीस्त्री के साथ गतिमें आसक्तहुआ और क्रोधवर्म्मा ने उसेदेखकर समुद्रमें ढकेलदिया १०२ वहा राजा रत्नाधिपति अपने सम्पूर्णपरिकर समेत रानी राजदत्ताको श्वेतरश्मिपर चढाकर रत्नकूटमे लेआया औरराजदत्ताको शीलवतीके सुपुर्दकरके शीलवतीसे और अपने मन्त्रियोंसे उसकासम्पूर्ण वृत्तान्त कह दिया और वैराग्ययुक्तहोकर यहवचनकहे कि मैंने इनअसार विरस विषयोंमें चित्तलगाकर कितनादुःख उठाया इससे अब मैं वनमें जाकर श्रीकृष्णभगवान् का भजन करूगा जिससे फिरऐसे दुख भोगने न पडें राजाके यह वचनसुनकर मन्त्रियोंने तथा शीलवतीनेभी समझाया परन्तु उसका चित्त वैराग्यसे नहीं हटा तब उसने अपने खजाने में से आधाधन शीलवती को देकर आधा सम्पूर्ण ब्राह्मणोको बाटदिया और सम्पूर्ण राज्य पापभंजननाम किसी गुणवान् ब्राह्मण को विधिपूर्व्वक दानकरदिया और सब राज्य सकल्पकरके राजाके स्नेहसे आसुभरेहुए प्रजालोगोंके देखतेहुएही तपोवनजानेके लिये श्वेतरश्मिको बुलवाया श्वेतरश्मि वहाँ आतेही अपने शरीरको त्यागकर हारआदिक दिव्य आभूषणों से युक्त दिव्यपुरुष होगया उसकी यहदशादेखकर राजाने कहा कि तुम कौनहो और यहक्याबात है तब वहबोला कि मलयाचलके रहनेवाले हम दो गन्धर्व परस्परभाई हैं मेरासोमप्रभनामहै और मेरे बडेभाई का देवप्रभनाम है मेरे भाईके राजवतीनाम परमप्रिय एकही स्त्री है एकसमय देवप्रभराजवती को गोदमें लेकर मेरेसाथ सिद्धवासनाम स्थानको गया वहा जाकर श्री विष्णुभगवान् का पूजन करके भगवान्के आगे हम सबलोग गानेलगे उससमय वहा कोई सिद्धआकर अत्यन्त मनोहर गानकरती हुई राजवती को अनिमेष दृष्टिसे देखनेलगा उसे इसप्रकार देखताहुआ देखकर मेरे भाईने कुपित होकर उससे कहा तुमसिद्ध होकरभी परस्त्री को बुरी अभिलाषसे देखतेहो तब सिद्धने कुपित होकर कहा

कर उत्तरदिशाको प्रस्थानकिया कुछदूर चलकर उत्तरदिशाकोही जानेवाले तीन वैश्यके लडके उस को साथी मिलगये उनकेसाथ अनेक ग्राम नगर वन तथा नदियों का उल्लघन करताहुआ निश्चय-दत्त उत्तरदिशामें म्लेच्छोंकी वस्ती में पहुचा वहा ताजिक जातिके म्लेच्छों ने इनचारों को पकडकर किसी अन्यताजिक के हाथ कुछ धनलेकर वेचडाला उस मोललेनेवाले ने उनचारोको अपने नौकरों के द्वारा मुरवार नाम म्लेच्छ के यहा भेटकेलिये भेजदिया वहाजाकर उनसेवकोंने मुरवारको मराजान कर उसके पुत्रको वहचारों भेटकरदिये उसनेकहा कि मेरे पिताकेलिये उसके मित्रने इनचारों को भेजा है इसमे इनचारोंको भी उसी कवरमें अपने पिताकेपास डालकर तोपदेनाचाहिये यह कहकर उसने उनको जञ्जीरों में वधवाकर रक्खा तव वन्धनमें पडकर रात्रिकेसमय निश्चयदत्तने अपने तीनों मित्रों को मरने के भयसे व्याकुल देखकर कहा कि खेद करनेसे क्या लाभहोगा धैर्य्यधारण करो विपत्तिया धीर मनुष्योंकेपास से भयभीतसीहोकर भागजाती हैं इससमय आपत्तिकी नाश करनेवाली भगवती दुर्गाका ध्यानकरो इसप्रकार उन्हें धैर्य्यदेकर वह भगवती की स्तुतिकरनेलगा कि हे महादेवी तुमको नमस्कार है मारेगये दैत्यों के रुधिरसे मानोंभरेहुए महावरसे युक्त तुम्हारेचरणों में मैं नमस्कार करताहू ससार में ऐश्वर्य्यको देनेवाली अपनी शक्तिसे तुमने शिवजीको भी जीतलिया है हे भगवती तुम्हारीही शक्तिसे यहसम्पूर्ण ससारजीताहै हे महिषासुरमर्द्दनी तुमने तीनोंलोकोंकी रक्षाकरीहै हे भक्तवत्सले इस समय मुझ शरणागतकी रक्षाकरो इसप्रकार अपने मित्रोंसमेत भगवती की स्तुतिकरके वहनिद्राको प्राप्त होगया उससमय भगवती ने उनचारो को स्वप्नमें दर्शन देकरकहा कि हे पुत्रो उठो अवजाओ तुम्हारा वन्धन खुलगया यहस्वप्न देखकर चारोंकी निद्राखुलगई और अपने २ वन्धन खुलेहुए देखे और परस्पर अपने २ स्वप्नके वृत्तान्त को कहके अति प्रसन्नहोकर वहा से चले कुछदूर जाकर रात्रिके व्यतीतहोजाने पर निश्चयदत्त के वह तीनोंमित्र भयभीतहोकर वोले कि हे मित्र इस उत्तरदिशामें वहुत म्लेच्छहैं इससे हमलोग इसदिशाको त्यागकर अव दक्षिणको लौटजाते हैं तुम्हारी जैसी इच्छाहोय सो करो उनके यह वचन सुनकर उन्हें लौटने की आज्ञादेकर निश्चयदत्त अनुरागपराके प्रेमरूपी वन्धनसे वधाहुआ अ-केलाही उत्तरदिशाको चला कुछदूर चलकर चार महाव्रती उसेसाथी मिलगये उनकेसाथ वितस्ताना मनदी के पार जाकर भोजनकरके श्री सूर्य्यभगवान्के अस्तहोतेसमय मार्गमें मिलेहुए एकवनमें उन्हीं चारोंकेसाथ वहचला वहा कुछ काष्ठके वोझेवाले मिले वह इनलोगोंको वनमें जातेहुए देखकर वोले कि इससमय दिन व्यतीतहोगया है तुम कहाजातेहो आगे कोई ग्राम निकट नहींहै एकसूना शिवा लय इसवनमें है उसमें रात्रिकेसमय जो कोई मनुष्य भीतर अथवा वाहररहताहै उसे शृगोत्पादनी नाम यक्षिणीसींग उत्पन्न करके पशुवनाकर मोहितकरके खाजाती है यहसुनकर वह महाव्रती उसवात पर उपेक्षाकरके वोले कि चलोचलें वह विचारी यक्षिणी हमारा क्या करेगी हमलोग वडे २ कठिन श्मशानो मे भी रहे हैं इसप्रकार कहतेहुए उन चारों के साथ निश्चयदत्त उसी सूने शिवालय में पहुँचा और रात्रि व्यतीतकरनेकेलिये उसी मन्दिरके भीतर अग्निवलाके एक वडाभारी भस्मका मण्डलवनाकर उसीमें

ताथा वहुत दिनतक रगडने से वहखभा एकओर बहुत चिकनाहोगया एकसमय उसीमार्गसे कोई चित्रकार एक चितेरे समेत वहां आया उसने उसखभेको बहुत चिकनादेखकर श्रीपार्वतीजीका चित्र उसमें बनादिया और उस चितेरेने अपने जन्त्रों से वह चित्र खोददिया फिर उनदोनोंके चलेजानेपर श्रीमहाकाल शिवजीका पूजनकरनेको आईहुई एकविद्याधरकी कन्याने खभेमे पार्वतीजीकी मूर्त्तिदेखी उसमूर्त्तिके बहुतशुभलक्षण देखकर उसमेभगवतीका अशजानकर भगवतीका पूजनकरके वह विश्रामकेलिये अदृश्यहोकर उसीखभमे प्रवेशकरगई उससमय निश्चयदत्त भी वहाआया खभेमें श्रीपार्वतीजीकी मूर्त्तिको आश्चर्य्य पूर्व्वक देखकर वह अपनेसम्पूर्ण शरीरमे चन्दनलगाकर उसखभे की दूसरी ओर चन्दन लगाकर अपनीपीठरगडनेलगा उसे पीठरगडते देखके और उसकेरूपसे मोहितहोकर उस विद्याधरीने शोचा कि ऐसेसुन्दर पुरुषकोभी कोई पीठमें चन्दनलगानेवाला नहीं है तो आज मैंही इसकी पीठ में चन्दन मलेदेतीहू यह शोचकर वहखभेमेसे हाथ निकालकर बडेस्नेहसे उसकी पीठमें चन्दनमलनेलगी उससमय हाथके स्पर्शको जानके और ककणके शब्दको सुनकर निश्चयदत्तने फिरकर अपने हाथसे उसका हाथपकडलिया तबउसने खभेमेंसे कहा कि हेमहाभाग मैंने तुम्हाराक्याअपराधकियाहै मेरा हाथ छोडदो इसअदृश्य वचनकोसुनकर निश्चयदत्तनेकहा कि तुमप्रत्यक्षहोकर कहो कि तुमकौनहो तभी तुम्हारा हाथ छोडूगा उसने शपथ खाकरकहा कि मैं प्रत्यक्ष आकर आपसे सबवृत्तान्तकहूगी आप मेरा हाथ छोडदीजिये उसके इसप्रकार कहने से निश्चयदत्तके हाथछोडनेपर वहखभेसे निकलकर निश्चयदत्तके मुखको देखतीहुई बैठकर अपना वृत्तान्त कहनेलगी कि हिमालयके आगे पुष्करावती नाम एक नगरी है उसमें विद्याधरों का स्वामी विन्ध्यपर नाम विद्याधर रहताहै उसकी मैं अनुरागपरानाम कन्या हू इससमय श्रीमहाकालजी के पूजनकेनिमित्त आकर विश्रामकेलिये यहा बैठीथी उतनेमें कामदेवके मोहनास्त्रके समान तुमभी यहा आकर अपनी पीठ इसमें रगडनेलगे तबपहले तो आपके अनुराग से मेरा हृदय रागयुक्त हुआ और पीछे पीठके मलनेमें अगराग के लगजाने से हाथभी रक्तहोगया इसके उपरान्त जो हुआ सो आप जानतेहै अब मै अपने पिताके स्थानको जातीहू उसके यहवचन सुनकर निश्चयदत्त बोला कि हे सुन्दरि तुमने जो मेरा चित्तहरलिया है वह मैंने अभी नहींपाया सो पराई वस्तुलेकर बिनादिये तुम कैसे चलीजाओगी निश्चयदत्तके इसकहनेपर वह अनुराग से वशीभूतहोकर बोली कि हे नाथ जो तुम मेरीपुरीमे आओगे तो मै वहा आपसेमिलूगी और वहपुरी तुमको कुछ दुर्गम भी नहीं है आपका मनोरथ सिद्धहोगा क्योंकि (नहिदुष्करमस्तीहकिञ्चिदध्यवसायिनाम्) उत्साही मनुष्यों को इस ससारमें कुछ दुर्लभनहीं है यह कहकर वह अनुरागपरा विद्याधरी आकाशको चलीगई और निश्चयदत्त उसीकाध्यान करताहुआ अपनेघरको चलागया २० घरमें जाकर वहशोचनेलगा कि खम्भेरूपीवृक्षसे निकलेहुए उसके पाणिपल्लवको पकडकरभीमैंने उसका पाणिग्रहण नहीं किया तो अब उसीपुष्करावती पुरीको चलनाचाहिये यातो मेरेप्राणहीजायगे या भाग्यसहायता करेगा इसप्रकार शोचकर निश्चयदत्तने कामसे पीडितहोकर वह दिनव्यतीतकिया दूसरेदिन प्रातःकाल उठ

कर उत्तरदिशाको प्रस्थानकिया कुछदूर चलकर उत्तरदिशाकोही जानेवाले तीन वैश्यके लडके उस को साथी मिलगये उनकेसाथ अनेक ग्राम नगर वन तथा नदियों का उल्लंघन करताहुआ निश्चय-दत्त उत्तरदिशामें म्लेच्छोंकी वस्ती में पहुचा वहा ताजिक जातिके म्लेच्छों ने इनचारों को पकडकर किसी अन्यताजिक के हाथ कुछ धनलेकर वेचडाला उस मोललेनेवाले ने उनचारोंको अपने नौकरों के द्वारा मुरवार नाम म्लेच्छ के यहा भेटकेलिये भेजदिया वहाजाकर उनसेवकोंने मुरवारको मराजान कर उसके पुत्रको वहचारों भेटकरदिये उसनेकहा कि मेरे पिताकेलिये उसके मित्रने इनचारों को भेजा है इस्मे इनचारोंको भी उसी क्वरमें अपने पिताकेपास डालकर तोपदेनाचाहिये यह कहकर उसने उनको जञ्जीरों में वधवाकर रक्खा तब वन्धनमें पडकर रात्रिकेसमय निश्चयदत्तने अपने तीनों मित्रों को मरने के भयसे व्याकुल देखकर कहा कि खेद करनेसे क्या लाभहोगा धैर्य्यधारण करो विपत्तिया धीर मनुष्योंकेपास से भयभीतसीहोकर भागजाती है इससमय आपत्तिकी नाश करनेवाली भगवती दुर्गाका ध्यानकरो इसप्रकार उन्हें धैर्य्यदेकर वह भगवती की स्तुतिकरनेलगा कि हे महादेवी तुमको नमस्कार है मारेगये दैत्यों के रुधिरसे मानोंभरेहुए महावरसे युक्त तुम्हारेचरणों में मैं नमस्कार करताहू ससार में ऐश्वर्य्यको देनेवाली अपनी शक्तिसे तुमने शिवजीको भी जीतलिया है हे भगवती तुम्हारीही शक्तिसे यहसम्पूर्ण ससारजीताहै हे महिषासुरमर्द्दनी तुमने तीनोंलोकोंकी रक्षाकरीहै हे भक्तवत्सले इस समय मुझ शरणागतकी रक्षाकरो इसप्रकार अपने मित्रोंसमेत भगवती की स्तुतिकरके वहनिद्राको प्राप्त होगया उससमय भगवती ने उनचारो को स्वप्नमें दर्शन देकरकहा कि हे पुत्रो उठो अवजाओ तुम्हारा वन्धन खुलगया यहस्वप्न देखकर चारोंकी निद्राखुलगई और अपने २ वन्धन खुलेहुए देखे और परस्पर अपने २ स्वप्नके वृत्तान्त को कहके अति प्रसन्नहोकर वहा से चले कुछदूर जाकर रात्रिके व्यतीतहोजाने पर निश्चयदत्त के वह तीनोंमित्र भयभीतहोकर वोले कि हे मित्र इस उत्तरदिशामें बहुत म्लेच्छहैं इस्से हमलोग इसदिशाको त्यागकर अब दक्षिणको लौटेजाते हैं तुम्हारी जैसी इच्छाहोय सो करो उनके यह वचन सुनकर उन्हें लौटने की आज्ञादेकर निश्चयदत्त अनुरागपराके प्रेमरूपी वन्धनसे वधाहुआ अ-केलाही उत्तरदिशाको चला कुछदूर चलकर चार महाव्रती उसेसाथी मिलगये उनकेसाथ वितस्ताना मनदी के पार जाकर भोजनकरके श्री सूर्य्यभगवान्के अस्तहोतेसमय मार्गमें मिलेहुए एकवनमें उन्हीं चारोंकेसाथ वहचला वहा कुछ काष्ठके वोझेवाले मिले वह इनलोगोंको वनमें जातेहुए देखकर वोले कि इससमय दिन व्यतीतहोगया है तुम कहाजातेहो आगे कोई ग्राम निकट नहींहै एकसूना शिवा-लय इसवनमें है उसमें रात्रिकेसमय जो कोई मनुष्य भीतर अथवा वाहररहताहै उसे शृंगोत्पादनी नाम यक्षिणीसींग उत्पन्न करके पशुवनाकर मोहितकरके खाजाती है यहसुनकर वह महाव्रती इसवात पर उपेक्षाकरके वोले कि चलोचलें वह विचारी यक्षिणी हमारा क्या करेगी हमलोग वडे २ कठिन श्मशानों म भी रहेहै इसप्रकार कहतेहुए उन चारों के साथ निश्चयदत्त उसी सूने शिवालय में पहुँचा और रात्रि व्यतीतकरनेकेलिये उसी मन्दिरके भीतर अग्निजलाके एक वडाभारी भस्मका मण्डलवनाकर उसीमें

ताथा वहुत दिनतक रगडने से वहखभा एकओर वहुत चिकनाहोगया एकसमय उसीमार्गसे कोई चित्रकार एक चितरे समेत वहा आया उसने उसखभेको वहुत चिकनादेखकर श्रीपार्वतीजीका चित्र उसमें बनादिया और उस चितेरेने अपने जन्त्रों से वह चित्र खोददिया फिर उनदोनोंके चलेजानेपर श्रीमहाकाल शिवजीका पूजनकरनेको आईहुई एकविद्याधरकी कन्याने खभेमें पार्वतीजीकी मूर्त्तिदेखी उसमूर्त्तिके वहुतशुभलक्षण देखकर उसमेंभगवतीका अशजानकर भगवतीका पूजनकरके वह विश्रामकेलिये अदृश्यहोकर उसीखभमे प्रवेशकरगई उससमय निश्चयदत्त भी वहाआया खभेमें श्रीपार्वतीजीकी मूर्त्तिको आश्चर्य्य पूर्वक देखकर वह अपनेसम्पूर्ण शरीरमे चन्दनलगाकर उसखभे की दूसरी ओर चन्दन लगाकर अपनीपीठरगडनेलगा उसे पीठरगडते देखके और उसकेरूपसे मोहितहोकर उस विद्याधरीने शोचा कि ऐसेसुन्दर पुरुषकोभी कोई पीठमें चन्दनलगानेवाला नहीं है तो आज मैंही इसकी पीठ में चन्दन मलेदेतीहू यह शोचकर वहखभेमेसे हाथ निकालकर वडेस्नेहसे उसकी पीठमें चन्दनमलनेलगी उससमय हाथके स्पर्शको जानके और ककणके शब्दको सुनकर निश्चयदत्तने फिरकर अपने हाथसे उसका हाथपकडलिया तवउसने खभेमेंसे कहा कि हेमहाभाग मैंने तुम्हाराक्याअपराधकियाहै मेरा हाथ छाडदो इसअदृश्य वचनकोसुनकर निश्चयदत्तनेकहा कि तुमप्रत्यक्षहोकर कहो कि तुमकौनहो तभी तुम्हारा हाथ छोडूगा उसने शपथ खाकरकहा कि मै प्रत्यक्ष आकर आपसे सववृत्तान्तकहूगी आप मेरा हाथ छोडदीजिये उसके इसप्रकार कहने से निश्चयदत्तके हाथछोडनेपर वहखभेसे निकलकर निश्चयदत्तके मुखको देखतीहुई बैठकर अपना वृत्तान्त कहनेलगी कि हिमालयके आगे पुष्करावती नाम एक नगरी है उसमें विद्याधरों का स्वामी विन्ध्यपर नाम विद्याधर रहताहै उसकी मै अनुरागपरानाम कन्या हू इससमय श्रीमहाकालजी के पूजनकेनिमित्त आकर विश्रामकेलिये यहा बैठीथी उतनेमें कामदेवके मोहनास्त्रके समान तुमभी यहा आकर अपनी पीठ इसमें रगडनेलगे तवपहले तो आपके अनुराग से मेरा हृदय रागयुक्त हुआ और पीछे पीठके मलनेमें अगराग के लगजाने से हाथभी रक्तहोगया इसके उपरान्त जो हुआ सो आप जानतेहै अव मै अपने पिताके स्थानको जातीहू उसके यहवचन सुनकर निश्चयदत्त वोला कि हे सुन्दरि तुमने जो मेरा चित्तहरलिया है वह मैने अभी नहींपाया सो पराई वस्तुलेकर विनादिये तुम कैसे चलीजाओगी निश्चयदत्तके इसकहनेपर वह अनुराग से वशीभूतहोकर वोली कि हे नाथ जो तुम मेरीपुरीमे आओगे तो मै वहा आपसेमिलूगी और वहपुरी तुमको कुछ दुर्गम भी नहीं है आपका मनोरथ सिद्धहोगा क्योंकि (नहिदुष्करमस्तीहकिञ्चिदध्यवसायिनाम्) उत्साही मनुष्यों को इस ससारमे कुछ दुर्लभनहीं है यह कहकर वह अनुरागपरा विद्याधरी आकाशको चलीगई और निश्चयदत्त उसीकाध्यान करताहुआ अपनेघरको चलागया ३० घरमें जाकर वहशोचनेलगा कि खम्भेरूपीवृक्षमे निकलेहुए उसके पाणिपल्लवको पकडकरमीमैंने उसका पाणिग्रहण नहीं किया तो अव उसीपुष्करावती पुरीको चलनाचाहिये यातो मेरेप्राणहीजायगे या भाग्यसहायता करेगा इसप्रकार शोचकर निश्चयदत्तने कामसे पीडितहोकर वह दिनव्यतीतकिया दूसरेदिन प्रातःकाल उठ

कर उत्तरदिशाको प्रस्थानकिया कुछदूर चलकर उत्तरदिशाकोही जानेवाले तीन वैश्यके लडके उस को साथी मिलगये उनकेसाथ अनेक ग्राम नगर वन तथा नदियों का उल्लघन करताहुआ निश्चय-दत्त उत्तरदिशामें म्लेच्छोंकी वस्ती में पहुचा वहा ताजिक जातिके म्लेच्छों ने इनचारों को पकडकर किसी अन्यताजिक के हाथ कुछ धनलेकर वेचडाला उस मोललेनेवाले ने उनचारोको अपने नोकरों के द्वारा मुरवार नाम म्लेच्छ के यहा भेटकेलिये भेजदिया वहाजाकर उनसेवकोंने मुरवारको मराजान कर उसके पुत्रको वहचारों भेटकरदिये उसनेकहा कि मेरे पिताकेलिये उसके मित्रने इनचारों को भेजा है इसमे इनचारोंको भी उसी कवरमें अपने पिताकेपास डालकर तोपदेनाचाहिये यह कहकर उसने उनको जजीरों में वधवाकर रक्खा तव वन्धनमें पडकर रात्रिकेसमय निश्चयदत्तने अपने तीनों मित्रों को मरने के भयसे व्याकुल देखकर कहा कि खेद करनेसे क्या लाभहोगा धैर्य्यधारण करो विपत्तिया धीर मनुष्योंकेपास से भयभीतसीहोकर भागजाती हैं इससमय आपत्तिकी नाश करनेवाली भगवती दुर्गाका ध्यानकरो इसप्रकार उन्हें धैर्य्यदेकर वह भगवती की स्तुतिकरनेलगा कि हे महादेवी तुमको नमस्कार है मारेगये दैत्यों के रुधिरसे मानोंभरेहुए महावरसे युक्त तुम्हारेचरणों में में नमस्कार करताहूं ससार में ऐश्वर्य्यको देनेवाली अपनी शक्तिसे तुमने शिवजीको भी जीतलिया है हे भगवती तुम्हारीही शक्तिसे यहसम्पूर्ण ससारजीताहै हे महिषासुरमर्द्दनी तुमने तीनोंलोकोंकी रक्षाकरीहै हे भक्तवत्सले इस समय मुझ शरणागतकी रक्षाकरो इसप्रकार अपने मित्रोंसमेत भगवती की स्तुतिकरके वहनिद्राको प्राप्त होगया उससमय भगवती ने उनचारो को स्वप्नमें दर्शन देकरकहा कि हे पुत्रो उठो अवजाओ तुम्हारा वन्धन खुलगया यहस्वप्न देखकर चारोंकी निद्राखुलगई और अपने २ वन्धन खुलेहुए देखे और परस्पर अपने २ स्वप्नके वृत्तान्त को कहके अति प्रसन्नहोकर वहा से चले कुछदूर जाकर रात्रिके व्यतीतहोजाने पर निश्चयदत्त के वह तीनोंमित्र भयभीतहोकर वोले कि हे मित्र इसउत्तरदिशामें वहुत म्लेच्छहैं इस्से हमलोग इसदिशाको त्यागकर अव दक्षिणको लौटेजाते हैं तुम्हारी जैसी इच्छाहोय सो करो उनके यह वचन सुनकर उन्हें लौटने की आज्ञादेकर निश्चयदत्त अनुरागपराके प्रेमरूपी वन्धनसे वधाहुआ अ-केलाही उत्तरदिशाको चला कुछदूर चलकर चार महाव्रती उसेसाथी मिलगये उनकेसाथ वितस्ताना-मनदी के पार जाकर भोजनकरके श्री सूर्य्यभगवान्के अस्तहोतेसमय मार्गमें मिलेहुए एकवनमें उन्हीं चारोंकेसाथ वहचला वहा कुछ काष्ठके वोझेवाले मिले वह इनलोगोंको वनमें जातेहुए देखकर वोले कि इससमय दिन व्यतीतहोगया है तुम कहाजातेहो आगे कोई ग्राम निकट नहींहै एकसूना शिवा लय इसवनमें है उसमें रात्रिकेसमय जो कोई मनुष्य भीतर अथवा वाहररहताहै उसे शृगोत्पादनी नाम यक्षिणीसींग उत्पन्न करके पशुवनाकर मोहितकरके खाजाती है यहसुनकर वह महाव्रती उसवात पर उपेक्षाकरके वोले कि चलोचले वह विचारी यक्षिणी हमारा क्या करेगी हमलोग वडे २ कठिन श्मशानो में भी रहे हैं इसप्रकार कहतेहुए उन चारों के साथ निश्चयदत्त उसी सूने शिवालय में पहुँचा और रात्रि व्यतीतकरनेकेलिये उसी मन्दिरके भीतर अग्निवलाके एक वडाभारी भस्मका मण्डलवनाकर उसमें

बैठकर सबलोग अपनी रक्षाकेलिये मन्त्रजपनेलगे ६३ उससमय शृगोत्पादनीनाम यक्षिणी नाचतीहुई और हड्डियोंकी कींगिडीबजातीहुई वहाआई और एकमहाव्रतीकी ओर दृष्टिलगाकर नाच २ के मंडलके बाहर मन्त्रपढनेलगी उस मन्त्रके प्रभावसे महाव्रतीके सींगनिकलआये और वह मोहितहोकर बलतीहुई अग्निमें गिरपडा उसे आधाजलाहुआ देखकर अग्निमे से निकालकर उस यक्षिणी ने बडी प्रसन्नता पूर्वक खाडाला फिर दूसरे महाव्रती की ओर दृष्टि लगाकर नाच २ कर मन्त्र जपनेलगी मन्त्रके प्रभावसे उसके भी सींग निकलआये और नाचकर मोहित होकर अग्निमें गिरपड़ा उसेभी उसने आधा जला हुआ देखके अग्निसे निकालकर खाडाला इसप्रकार उसने चारों महाव्रती मन्त्रकेप्रभावसे मोहितकरके खाडाले भाग्यवशसे जबचौथेको खानेलगी तब अपनी कींगिडी पृथ्वीमें रखदी उसकींगिडीको पृथ्वीमें धरी देखकर निश्चयदत्तने वहआपउठालीनी और कईवार सुनने से यादहुए मन्त्रकोपढकर उसयक्षिणी के मुखमें दृष्टिलगाकर नाच २ कर कींगिडी बजाई उस मन्त्रके प्रभावसे विवश यक्षिणी भयभीतहोकर बोली कि हेमहासत्त्व तुममुझ विचारीस्त्रीको मतमारो अबमन्त्रपाठको समाप्तकरो तुममुझ शरणागतकी रक्षाकरो मैं तुम्हारेसपूर्ण मनोरथको जानतीहू और उसेसिद्धभी करदूगी जहावहअनुरागपराहै वहातुम्हें पहुचादूगी उसके यह विश्वास योग्य वचन सुनकर निश्चयदत्त मन्त्रपाठको बन्दकरके उसी यक्षिणीके कहनेसे उसीके कन्धेपर चढकर आकाशमार्गसेचला चलते २ जब रात्रि व्यतीत होगई तब उसयक्षिणी ने उसे एकपर्व्वतके वन मे पहुँचाकरकहा कि सूर्य के उदयहोजानेपर मुझे ऊपरजानेकी शक्तिनहीं है इससेआप इसीसुन्दरवनमें इसदिनको व्यतीतकरिये और सुन्दर मधुरफलखाकर झिरनोका जलपीजिये मैं अपने स्थानकोजातीहू रात्रिकेसमय फिरआकर आपको हिमालयकेऊपर पुष्करावतीनगरी में अनुरागपरा के पास पहुँचाऊगी इसप्रकार कहकर और निश्चयदत्त से आज्ञालेकर सत्यबोलनेवाली वह यक्षिणी फिर आनेके लिये कहकर वहासेचलीगई उसके चलेजानेपर निश्चयदत्त ने एक बडासुन्दर शीतल जलसे भराहुआ तडागदेखा उसके जल में विषमिलाहुआथा मानों सूर्य्यभगवान् अपनी किरणरूपी हाथों को फैलाकर कहते थे कि हे प्रेमी स्त्रियोंकाचित्त ऐसाहीहोताहै सुगन्धिसे उस जलमे विषमिलाहुआजानकर उसे छोडकर वह प्याससे व्याकुलहोकर उसी दिव्यपर्व्वतपर घूमनेलगा घूमते २ एक बडे ऊचे स्थान में दोपद्मराग मणिसी चमकतीहुई देखकर उसने वहाकी मिट्टीहटाई मृत्तिका के हटानेसे एक जीवतेहुए बन्दरकाशिर उसे दिखाईदिया जिसके कि नेत्र पद्मरागमणि से चमकरहे थे उसे देखकर जब इसे बडाआश्चर्य्यहुआ तब वह बन्दर मनुष्यवाणीसे बोला कि मैं ब्राह्मणहू भाग्यवशसे बन्दरहोगयाहू जो आप मुझे निकालिये तो मैं अपना सम्पूर्ण वृत्तान्तकहू उसके यह वचनसुनकर निश्चयदत्त ने मृत्तिकाहटाके उसे निकाललिया तब वह वहासे निकलके उसके चरणोंपरगिरकर बोला कि आपने मुझे इसक्लेशसे निकालकर प्राणदानदिया तो आओ आप थकगयेहोंगे कुछ फलखाकर जलपानकरो और तुम्हारी कृपासे मैं भी बहुतदिनों के उपरान्त जलपानकरूं यह कहकर वह वानर उसे थोडीदूरपर पर्व्वतीनदीपर लेगया जहा बडे २ सुन्दर मधुरफलों से युक्त सघनछायावालेवृक्ष लगेहुएथे

वहां स्नानकरके और फलादि भोजनपूर्वक जलपानकरके निश्चयदत्त भोजन से निवृत्तहुए उस बन्दर से बोला कि आप मनुष्य से बन्दर कैसे होगये सो कहिये तब वह बन्दर बोला कि सुनो काशीपुरी में चन्द्रस्वामीनाम एक ब्राह्मणरहताहै उसकी सुवृत्तानाम स्त्री में मेराजन्महुआ है सोमस्वामी मेरानामहै क्रमसे जब मैं बडाहुआ तब मद से निरंकुश कामरूपी मतवालेहाथीपर चढकर इधर उधर घूमनेलगा एकसमय काशीपुरी के रहनेवाले श्रीगर्भनाम वैश्यकी पुत्री और वराहदत्तनाम वैश्यकी स्त्री बन्धुदत्ता नाम तरुणी ने मुझे अपने पिताके घरके झरोखेसे देखा देखतेही काममें व्याकुलहोकर उसने अपनी सखीको मेरे पास सगमके लिये भेजा वह मुझ से उसका सम्पूर्ण वृत्तान्तकहकर मुझे अपनेघर लिवा लेगई और मुझको वहां छोडकर कामकीव्यथासे निर्लज्ज उस बन्धुदत्ताको वहीं लिवालाई वह आतेही बडे स्नेहसे मेरे गले में हाथडालकर लिपटगई ठीकहै (एकोगेहिनारीणां मतिभ्रंमिंगतस्मर) स्त्रियों का बहुतबढाहुआ कामदेव बडाबीरहोताहै इसप्रकार से बन्धुदत्ता प्रतिदिन अपने पिताके घरसे अपनी सखी के घरमें आकर मुझसे रमणकरनेलगी एकसमय बहुतकालसे अपने पिताहीके घरमे रहनेवाली बन्धुदत्ता को उसकापति मथुरासे लेनेकेलियेआया और उसके पिताने उसकी बिदाकी तैयारीकरदी तब बन्धुदत्ता अपने जानेका निश्चयजानकर अपनी सखी से बोली कि हे सखी निस्सन्देह मेरा पति मुझे मथुरालेजायगा और मैं वहांसोमस्वामीके बिना जीनहींसक्तीहूं इससे कोई उपाय तुममुझको बताओ उसके यह वचनसुनकर योगकीज्ञाता वह सखी बोली कि मुझे दोमन्त्र मालूमहैं जिनमें से एक मन्त्रको पढकर गले में सूत्रबांधनेसे मनुष्य शीघ्रही बन्दरहोजाताहै और दूसरे मन्त्रको पढकर सूत्र खोललेने से वह फिर मनुष्यहोजाताहै और बन्दरहोने में उसकी बुद्धिनहींबदलती इससे जो तुम्हारा प्रिय सोमस्वामी इसबातको अंगीकारकरे तो मैं उसे शीघ्रही बन्दरका बच्चाबनादूं तब तुम क्रीडाकेबहानेसे इसकोमथुरामें लेजाना और मैं तुम्हें दोनो मन्त्र भी बतलाये देतीहूं उन मन्त्रों के प्रभावसे तुम इसको सदैव बन्दर बनारखना और एकान्तमें पुरुषबनाकर इसके साथ भोगविलासकरना अपनी सखीके यह वचनसुनकर उस बन्धुदत्ताने मुझे एकान्तमें बुलाकर यह सब वृत्तान्तकहा तब मैंने कामकेवशहोकर उसका कहना मानलिया और उसकी सखी ने मुझे बन्दरका बच्चाबनादिया मुझे उसीरूपसे लेजाकर बन्धुदत्ता ने अपने पतिको दिखाकर कहा कि मेरी सखी ने मुझे खेलनेकेलिये यह बन्दर दिया है वह मुझे देखकर बहुत प्रसन्नहुआ और मैं ज्ञानवान् तथा बोलने को समर्थहोकर भी बन्दर के समान उसकी गोदी में जाकर बैठगया और अपने चित्तमें स्त्रियोंके विचित्र चरित्रको सोचकर हँसताहुआ भी बन्दरहीके समान बनारहा क्योंकि यह कामदेव किसको नहीं ठगताहै दूसरे दिन बन्धुदत्ता अपनी सखीसे उन मन्त्रोंको सीखकर पतिके साथ मथुराको चली और उसके पतिने उसके स्नेहसे मुझे एक नौकरके कन्धे पर चढादिया इसप्रकार हम सब लोग दोदिन चलकर एक बड़े वनमें पहुँचे जिसमें बडे २ भयंकर बहुतसे बन्दर रहतेथे वह सब मुझे देखकर किलकारी मार २ कर मुझे बुलातेहुए आकर जिस नौकरके कन्धेपर मैं बैठाथा उसे काटने लगे तब वह भयसे विह्वलहोकर मुझे पृथ्वी में छोडकर भागगया और

बैठकर सबलोग अपनी रक्षाकेलिये मन्त्रजपनेलगे ६३ उससमय शृंगोत्पादनीनाम यक्षिणी नाचतीहुई और हड्डियोंकी कीगिडीनजातीहुई वहाआई और एकमहाव्रतीकी ओर दृष्टिलगाकर नाच २ के मडलके बाहर मन्त्रपढनेलगी उस मन्त्रके प्रभावसे महाव्रतीके सींगनिकलआये और वह मोहितहोकर बलतीहुई अग्निमें गिरपडा उसे आधाजलाहुआ देखकर अग्निमे से निकालकर उस यक्षिणी ने बडी प्रसन्नता पूर्वक खाडाला फिर दूसरे महाव्रती की ओर दृष्टि लगाकर नाच २ कर मन्त्र जपनेलगी मन्त्रके प्रभावसे उसके भी सींग निकलआये और नाचकर मोहित होकर अग्निमें गिरपडा उसेभी उसने आधा जला हुआ देखके अग्निसे निकालकर खाडाला इसप्रकार उसने चारों महाव्रती मन्त्रकेप्रभावसे मोहितकरके खाडाले भाग्यवशसे जबचौथेको खानेलगी तब अपनी कीगिडी पृथ्वीमें रखदी उसकीगिडीको पृथ्वीमे धरी देखकर निश्चयदत्तने वहआपउठालीनी और कईवार सुनने से यादहुए मन्त्रकोपढकरउसयक्षिणी के मुखमें दृष्टिलगाकर नाच २ कर कीगिडी बजाई उस मन्त्रके प्रभावसे विवश यक्षिणी भयभीतहोकर बोली कि हेमहासत्त्व तुमसुझ विचारीस्त्रीको मतमारो अबमन्त्रपाठको समाप्तकरो तुमसुझ शरणागतकी रक्षाकरो मैं तुम्हारेसपूर्ण मनोरथको जानतीहू और उसेसिद्धभी करदूगी जहावहअनुरागपराहै वहातुम्हे पहुचादूगी उसके यह विश्वास योग्य वचन सुनकर निश्चयदत्त मन्त्रपाठको बन्दकरके उसी यक्षिणीके कहनेसे उसीके कन्धेपर चढकर आकाशमार्गसेचला चलते २ जब रात्रि व्यतीत होगई तब उसयक्षिणी ने उसे एकपर्व्वतके वन मे पहुँचाकरकहा कि सूर्य्य के उदयहोजानेपर मुझे ऊपरजानेकी शक्तिनहीं है इससेआप इसीसुन्दरवनमें इसदिनको व्यतीतकरिये और सुन्दर मधुरफलखाकर झिरनोंका जलपीजिये मैं अपने स्थानकोजातीहू रात्रिकेसमय फिरआकर आपको हिमालयकेऊपर पुष्करावतीनगरी मे अनुरागपरा के पास पहुँचाऊगी इसप्रकार कहकर और निश्चयदत्त से आज्ञालेकर सत्यबोलनेवाली वह यक्षिणी फिर आनेके लिये कहकर वहासेचलीगई उसके चलेजानेपर निश्चयदत्त ने एक बडासुन्दर शीतल जलसे भराहुआ तडागदेखा उसके जल में विषमिलाहुआथा मानो सूर्य्यभगवान् अपनी किरणरूपी हाथों को फैलाकर कहते थे कि हे प्रेमी स्त्रियोंकाचित्त ऐसाहीहोताहै सुगन्धिसे उस जलमे विषमिलाहुआजानकर उसे छोडकर वह प्यासमे व्याकुलहोकर उसी दिव्यपर्व्वतपर घूमनेलगा घूमते २ एक वडे ऊचे स्थान में दीपपद्मराग मणिसी चमकतीहुई देखकर उसने वहाकी मिट्टीहटाई मृत्तिका के हटानेसे एक जीवतेहुए बन्दरकाशिर उसे दिखाईदिया जिसके कि नेत्र पद्मरागमणि से चमकरहे थे उसे देखकर जब इसे वडाआश्चर्य्यहुआ तब वह बन्दर मनुष्यवाणीसे बोला कि मैं ब्राह्मणहू भाग्यवशसे बन्दरहोगयाहू जो आप मुझे निकालिये तो मैं अपना सम्पूर्ण वृत्तान्तकहू उसके यह वचनसुनकर निश्चयदत्त ने मृत्तिकाहटाके उसे निकाललिया तब वह वहांसे निकलके उसके चरणोंपरगिरकर बोला कि आपने मुझे इसक्लेशसे निकालकर प्राणदानदिया तो आओ आप थकगयेहोंगे कुछ फलखाकर जलपानकरो और तुम्हारी कृपासे मै भी वहुतदिनों के उपरान्त जलपानकरू यह कहकर वह बानर उसे थोडीदूरपर पर्व्वतीनदीपर लेगया जहा वडे २ सुन्दर मधुरफलों से युक्त सघनछायावालेवृक्ष लगेहुएथे

होकर पीटा,उसदुष्टाने कौतुकको छिपाकर मेरी मारको सहलिया और दूसरेदिन क्रीडाके बहानेसे मेरे गले में,एकसूत्रबांधदिया सूत्रके बांधतेही में उसीसमय बधिया बैलहोगया तब उसनेमुझे एकऊंटवाले,पुरुषसे यथेच्छ धनलेकर बेचडाला,वहऊंटवाला मुझसे बोझा ढुलवानेलगा एकदिन बन्धमोचनीका नाम यो-गिनीने मुझे भारसे पीडित देखकर और ज्ञानमे यहजानकर कि सोमदाने इसेपशुबनायाहै मेरे स्वामी के परोक्षमें कृपाकरके मेरे गलेका सूत्रखोलदिया में उसीसमय मनुष्यहोगया और मेरास्वामी मुझेभागा जानकर इधर उधर ढूंढनेलगा तदनन्तर भाग्यवशसे सोमदाने मुझको बन्धमोचनीकेसाथ जाताहुआ देखलिया और क्रोधसे जाज्वल्यमानहोकर बन्धमोचनी से कहा कि इसपापीको तुमने पशुपनेसे क्यों छुटादिया है पापिन तुझे इसकर्मका फलमिलेगा देखप्रातःकाल में तुझे और इसेदोनोंको मारडालूगी उसके यहवचन कहकर चलेजानेपर बन्धमोचनीने उससे बचनेके लिये मुझसे कहा कि सोमदाकाली घोडीका स्वरूप धरकरमुझे मारनेकेलिये आवेगी और मैं लालघोडीका स्वरूप धारण करूंगी जबमेरा और उसका युद्ध होनेलगे तब तुम खड्गलेकर पीछेसे उसे मारना इसप्रकारसे हम तुम दोनों मिलकर उसे मारलेंगे इससे तुम प्रातःकाल मेरेघरपर आजाना यहकहकर उसने मुझे अपनाघर दिखलादिया और अपने घरमें चलीगई तबमें एकही जन्ममें अनेक जन्मोंका अनुभव करके अपने घरको आया और प्रा-तःकाल खड्गलेकर बन्धमोचनीके मकानपर गया वहाँ उससमय सोमदा कालीघोडीका स्वरूप धारण करके आई और बन्धमोचनीने लाल घोडीका स्वरूप धारणकिया,जब उनदोनोंका लत्तियों और दांतों से युद्धहोनेलगा तब मैं पीछेसे सोमदाके खड्गमारनेलगा और बन्ध मोचनी ने उससोमदाको मारडाला उसे मरीहुई देखकर में निर्भय होगया और पशुपनेका स्मरण करके फिर कभी मैंने परस्त्रीका मनमें भी ध्यान न किया चपलता, साहस और डाकिनी होना यहतीनों दोष स्त्रियोंके प्राय मनुष्यों को भयदायक हैं इससे डाकिनीकी सखी बन्धुदत्तासे तुमस्नेह न करो जिसे अपने पतिपरही स्नेह नहीं है उसे तुमपर कैसे स्नेह होसक्ताहै अपने मित्र भवशर्माके ऐसा कहनेपर भी मैंने उसका कहना नहीं किया इसीसे मैं इसगतिको प्राप्तहुआ हूं इससे अब मैं तुमको समझाताहूं कि अनुरागपरासे कभी स्नेह न करो यह अपने सजातीय पुरुषको पाकर तुमको अवश्य छोडदेगी जैसे भौंरीनवीन २ पुष्पों की वाञ्छा करतीहै वैसेही स्त्रीभी नवीन २ पुरुषोंकी अभिलाष किया करतीहै इससे हे मित्र जो तुम मेरा कहना नहीं मानोगे तो तुमको मेरेही समान पश्चात्ताप करना पड़ेगा कपिरूप सोमस्वामी के यहवचन निश्चयदत्तके अनुरागसे पूर्ण हृदयमें नहीं भाये और उसने सोमस्वामी से कहा कि विद्या धरोंके शुद्धकुलमें,उत्पन्नहुई अनुरागपरा मुझे छोडकर व्यभिचार नहींकरेगी इसप्रकार इनदोनों की वार्त्ता होतेहीहोते मध्यासे कर श्री सूर्य्यभगवान् मानों,निश्चयदत्तकी प्रसन्नताके लिये अस्ताचलको चलेगये १७७ तदनन्तर अग्रदूतीके समान रात्रिके आजानेपर वह शृगोत्पाटनीनाम यक्षिणी निश्चय-दत्तकेपास आई उसयक्षिणीको आया देखकर निश्चयदत्तने सोमस्वामी से जानेके लिये आज्ञामांगी उसने कहा अच्छा जाओ परन्तु मेरास्मरण रखना इसप्रकार उससे आज्ञालेकर निश्चयदत्त उसयक्षि

वह बन्दर मुझे पकडलेगये मेरे स्नेह से बन्धुदत्ता तथा उसका पति और उसके सब नौकर ब न्दरो को पत्थर लाठी आदिके मारने से भी नहीं जीतसके और लाचारहोके वहा से चलेगये तब वह सपूर्ण बन्दर मानों मेरे कुकर्मसे कुपित होकर दातोंसे तथा नखोंसे मेरा रोया रोंया नोचनेलगे उसस मय गलेमें बँधेहुए सूत्रके प्रभावसे और श्रीशिवजीके स्मरणसे मै बलवान् होकर उनसे अपने बधन को छुटाकर वहास भागा और भागते २ उनकी दृष्टिसे अलक्ष्यहोकर अनेक बनोंमें घूमता हुआ इस बनमें आया यहा आकर मानों ब्रह्माने दु खरूपी अन्धकारसे अन्धे मुझ दीनपर इसलिये कुपितहोके कि बन्धुदत्तासे भ्रष्टहुए तुझ दुष्टको क्या परस्त्री सगमका यहवानर होनाही फलमिलैगा औरभी दु ख दिया कि अकस्मात् एक हथिनीने यहा आकर मुझे सूडसे पकडकर मेघों के जलसे बही हुई सर्पकी बामीकी कीचडमें डालदिया मैं जानताहू कि वह हथिनीके रूपमे भाग्यसे प्रेरित कोई देवताथी क्योंकि मै बहुत यत्न करने परभी उस कीचसे निकल नहींसका उसकीचडके सूखजाने पर मेरी मृत्यु नहीं हुई और निरन्तर श्रीशिवजीका ध्यान करनेसे मेरी क्षुधातथा तृषाभी मिटगई और बहुतकालके पीछेआज तुमने मुझे इससूखी कीचड से निकाला हेमित्र श्रीशिवजीकी कृपासे ज्ञानके प्राप्तहोनेपरभी मुझे इतनी शक्तिनहीं है कि मे बन्दर भावसे छूटकर फिर मनुष्य होसकू जब कोई योगिनी उसी मन्त्रको पढकर मेरे गलेका सूत्रखोलेगी तब मैं फिर मनुष्य होजाऊगा यहमेरा सम्पूर्ण वृत्तान्तहै अब हे मित्र तुमभी बताओ कि इसऐसे अगम्यस्थानमें कैसे और किसनिमित्त आयेहो बन्दररूप उससोमस्वामी के इसप्रकारबचन सुनकर निश्चयदत्तने उज्जयिनीमे विद्याधरीके मिलनेसेलेकर अपने धैर्यके प्रभावसे जीतीहुई यक्षिणी के द्वारा वहा पहुचनेतकका अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त कहदिया १४० निश्चयदत्तके यहबचनसुनकर बदर रूपधारी बुद्धिमान् सोमस्वामीबोला कि हे मित्र तुमनेभी हमारेही समानस्त्रीके निमित्त बडादु ख उठाया (नचश्रिय स्त्रियश्चेह कदाचित्कस्यचित्स्थिरा) किसीकी लक्ष्मी और स्त्री कदापि स्थिर नहींहोसक्ती है (सध्यावत्क्षणरागिण्यो नदीवत्कुटिलाशया, भुजगीवदविश्वास्याविद्युद्वच्चपला स्त्रिय) स्त्रिया सध्या के समानक्षणमात्र रागयुक्तनदीके समान कुटिलचित्त सर्पिणीके समान विश्वास करनेके अयोग्य और बिजलीके समान चपल होतीहैं इस्से वह अनुरागपरा विद्याधरी अभी तो तुमसे स्नेह करती है परन्तु अपने किसी सजातीयकोपाकर तुमको मनुष्य जानकर छोडदेगी इस्सेतुमस्त्रीके निमित्त अन्तमें नीरस किंपाकफलके समान परिश्रम मतकरो हे मित्र तुम पुष्करावती विद्याधरपुरी को मतजाओ उसी यक्षि णीके कन्धेपर चढकर अपनी उज्जयिनी पुरीको लौटजाओ मेरा कहनामानो देखो मैंने पहले प्रेमके बशीभूतहोकर अपने मित्रकाकहना नहींमानाथा उस्से अबतक दु खपारहाहू जब मेरा बन्धुदत्तासे स्नेह होगया था तब भवशर्मानाम मेरेमित्र ब्राह्मणने मुझको निषेध करनेकेलिये यहबातें कहींथीं कि हेमित्र स्त्रीके बशीभूतमतहो क्योंकि स्त्रियोंका चित्तबदा कठिनहोताहै देखो मैंतुमको अपनाही वृत्तान्तसुनाताहू यहीं काशीपुरीमें सोमदानाम एकबडी चपलरूपवती ब्राह्मणी गुप्तयोगिनी थी उसके साथभाग्यवशसे मेरा समागमहोगया और धीरे २ उसपरमेरा बहुत स्नेह होगया एकदिन मैंने उसको ईर्षासे क्रोध युक्त

होकर पीटा, उसदुष्टाने क्रोधको छिपाकर मेरी मारको सहलिया और दूसरेदिन क्रीड़ाके वहानेसे मेरे गले में एकसूत्रवान्दिया सूत्रके वाधतेही मैं उसीसमय वधिया वैलहोगया तव उसनेमुझे एकऊंटवाले पुरुषसे यथेच्छ धनलेकर वेचडाला वहऊंटवाला मुझसे वोझा ढुलवानेलगा एकदिन वन्धमोचनिका नाम योगिनीने मुझे भारसे पीडित देखकर और ज्ञानसे यहजानकर कि सोमदाने इसेपशुवनायाहै मेरे स्वामी के परोक्षमें कृपाकरके मेरे गलेका सूत्रखोलदिया मैं उसीसमय मनुष्यहोगया और मेरास्वामी मुझेभागा जानकर इधर उधर ढूंढनेलगा तदनन्तर भाग्यवशसे सोमदाने मुझको वन्धमोचनीकेसाथ जाताहुआ देखलिया और क्रोधसे जाज्वल्यमानहोकर वन्धमोचनी से कहा कि इसपापीको तुमने पशुपनेसे क्यों छुड़ादिया हे पापिन तुझे इसकर्मका फलमिलेगा देखप्रातःकाल मैं तुझे और इसेदोनोंको मारडालूंगी उसके यहवचन कहकर चलेजानेपर वन्धमोचनीने उससे वचनेके लिये मुझसे कहा कि सोमदाकाली घोडीका स्वरूप धरकरमुझे मारनेकेलिये आवेगी और मैं लालघोडीका स्वरूप धारण करूंगी जवमेरा और उसका युद्ध होनेलगे तव तुम खड्गलेकर पीछेसे उसे मारना इसप्रकारसे हम तुम दोनों मिलकर उसे मारलेंगे इससे तुम प्रातःकाल मेरेघरपर आजाना यहकहकर उसने मुझे अपनाघर दिखलादिया और अपने घरमें चलीगई तवमैं एकही जन्ममें अनेक जन्मोंका अनुभव करके अपने घरको आया और प्रातःकाल खड्गलेकर वन्धमोचनीके मकानपर गया वहाँ उससमय सोमदा कालीघोडीका स्वरूप धारण करके आई और वन्धमोचनीने लाल घोडीका स्वरूप धारणकिया, जव उनदोनोंका लत्तियों और दांतों से युद्धहोनेलगा तव मैं पीछेसे सोमदाके खड्गमारनेलगा और वन्ध मोचनी ने उससोमदाको मारडाला उसे मरीहुई देखकर मैं निर्भय होगया और पशुपनेका स्मरण करके फिर कभी मैंने परस्त्रीका मनसे भी ध्यान न किया चपलता, साहस और डाकिनी होना यहतीनों दोष स्त्रियोंके प्राय मनुष्यों को भयदायक हैं इससे डाकिनीकी सखी वन्धुदत्तासे तुमस्नेह न करो जिसे अपने पतिपरही स्नेह नहीं है उसे तुमपर कैसे स्नेह होसक्ताहै अपने मित्र भवशर्म्माके ऐसा कहनेपर भी मैंने उसका कहना नहीं किया इसीमे मैं इसगतिको प्राप्तहुआ हूं इससे अव मैं तुमको समझाताहूं कि अनुरागपराभे कभी स्नेह न करो यह अपने सजातीय पुरुषको पाकर तुमको अवश्य छोड़देगी जैसे भौंरीनवीन २ पुष्पों की वाञ्छा करतीहै वैसेही स्त्रीभी नवीन २ पुरुषोंकी अभिलाष किया करतीहै इससे हे मित्र जो तुम मेरा कहना नहीं मानोगे तो तुमको मेरेही समान पश्चात्ताप करना पडेगा कपिरूप सोमस्वामी के यहवचन निश्चयदत्तके अनुरागसे पूर्ण हृदयमें नहीं भाये और उसने सोमस्वामी से कहा कि विद्या धरोंके शुद्धकुलमें उत्पन्नहुई अनुरागपरा मुझे छोडकर व्यभिचार नहींकरेगी इसप्रकार उनदोनों की वार्त्ता होतेहीहोते सन्ध्यासे रक्त श्री सूर्य्यभगवान् मानों निश्चयदत्तकी प्रसन्नताके लिये अस्ताचलको चलेगये १७७ तदनन्तर अग्रदूतीके समान रात्रिके आजानेपर वह शृंगोत्पादिनीनाम यक्षिणी निश्चयदत्तकेपास आई उसयक्षिणीको आया देखकर निश्चयदत्तने सोमस्वामी से जानेके लिये आज्ञामांगी उसने कहा अच्छा जाओ परन्तु मेरास्मरण रखना इसप्रकार उससे आज्ञालेकर निश्चयदत्त उसयक्षि

वह बन्दर मुझे पकडलेगये मेरे स्नेह से बन्धुदत्ता तथा उसका पति औ
न्दरों को पत्थर लाठी आदिके मारने से भी नहीं जीतसके और लाचारहो
सपूर्ण बन्दर मानों मेरे कुकर्मसे कुपित होकर दातोसे तथा नखोंसे मेरा
मय गलेमें बँधेहुए सूत्रके प्रभावसे और श्रीशिवजीके स्मरणसे मैं ब
को छुटाकर वहास भागा और भागते २ उनकी दृष्टिसे अलक्ष्यहोक
वनमें आया यहा आकर मानो ब्रह्माने दु खरूपी अन्धकारसे अ
कि बन्धुदत्तासे भ्रष्टहुए तुझ दुष्टको क्या परस्त्री सगमका यहवा
दिया कि अकस्मात् एक हथिनीने यहा आकर मुझे सूडसे प
वामीकी कीचडमें डालदिया मैं जानताहू कि वह हथिनीके र
मैं बहुत यत्न करने परभी उस कीचसे निकल नहींसका उ
और निरन्तर श्रीशिवजीका ध्यान करनेसे मेरी क्षुधातथा तृ
तुमने मुझे इससूखी कीचड से निकाला हेमित्र श्रीशिवजी
शक्तिनहीं है कि मे बन्दर भावसे छूटकर फिर मनुष्य होस
गलेका सूत्रखोलेगी तब मैं फिर मनुष्य होजाऊगा यहमेर
कि इसऐसे अगम्यस्थानमें कैसे और किसनिमित्त आये
सुनकर निश्चयदत्तने उज्जयिनीमे विद्याधरीके मिलनेसे
के द्वारा वहा पहुचनेतकका अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त कहा
रूपधारी बुद्धिमान् सोमस्वामीबोला कि हे मित्र तुमनेभी
(नचाश्रिय स्त्रियश्चेह कदाचित्कस्यचित्स्थिरा) किसीकं
(सध्यावत्क्षणरागिण्यो नदीवत्कुटिलाशया भुजगीवदा
के समानक्षणमात्र रागयुक्तनदीके समान कुटिलचित्त स
बिजलीके समान चपल होतीहैं इस्से वह अनुरागपरा ।
अपने किसी सजातीयकोपाकर तुमको मनुष्य जानकर
किंपाकफलके समान परिश्रम मतकरो हे मित्र तुम पु
णीके कन्धेपर चढकर अपनी उज्जयिनी पुरीको लौट
वशीभूतहोकर अपने मित्रकाकहना नहींमानाथा उस्से
होगया था तब भवशर्मानाम मेरेमित्र ब्राह्मणने मुझसे
स्त्रीके वशीभूतमतहो क्योंकि स्त्रियोंका चित्तबड़ा कठि
यहीं काशीपुरीमें सोमदानाम एक बडी चपलरूपवती
मेरा समागमहोगया और धीरे २ उसपरमेरा बहुत स्ने

अपनेवशीभूत करके तुम्हारे अर्पणकरदिया है इससे हे सुन्दरी पृथ्वी के निवासी मनुष्य को छोड़कर तुम जबतक तुम्हारा पिता नहीं जानता है तबतक हमारेसाथ विवाहकरलो उसके यहवचन सुनकर अनुरागपराने उसे तिरछी दृष्टिसे देखकर अपने चित्तमें सोचा कि मेरे योग्य पति यही है तब अनुरागपराके आशयको जानकर उसरागभजनने अनुरागपरा से विवाहकरलिया ठीक है (अपेक्षतेद्वयोरैक चित्येकिंरहसिस्मर) एकान्त मे स्त्री पुरुष के चित्त मिलजानेपर कामदेव किसी बातकी अपेक्षानहीं करता है तदनन्तर उस विद्याधरके चलेजानेपर निश्चयदत्त सोमस्वामी के पाससे अनुरागपरा के पास आया उससमय अनुरागपराने विरक्तहोकर शिरकी पीडाके बहाने से उसका आलिंगन भी नहींकिया परन्तु स्नेहसे मोहित सरलचित्त निश्चयदत्त उसबहाने को सचाही जानकर दुःख पूर्व्वक वहदिन व्यतीतकरके दूसरे दिन प्रातःकाल खेदमे अपने चित्तको बहलाने के लिये उसी की बताईहुई विद्या के बल से फिर अपने मित्र सोमस्वामीकेपास आया उसके चलेआनेपर वहरागभजन विद्याधर अनुरागपरा के विना रात्रिभर जागकर उससमय अवकाशपाकर उसके गलेमें आकर लिपटगया और यथेच्छ रमणकरके श्रमसे सोगया और अनुरागपराभी गोदी मे उस सोतेहुए विद्याधरको अपनी विद्याके बलसे छिपाकर रात्रिभरके जागनेसे सोगई इसबीच में निश्चयदत्त अपने मित्रके पासपहुँचा सोमस्वामीने उसका शिष्टाचारकरके उससे पूँछा कि हे मित्र आज तुम उदासीनसे क्यों मालूमहोतेहो निश्चयदत्त ने कहा कि अनुरागपरा आज बहुत पीडित है इससे मैं उदासीनहोरहाहूं क्योंकि वह मुझे प्राणों से भी अधिक प्रियहै यह सुनकर ज्ञानी वानररूप सोमस्वामी ने कहा कि जाओ इससमय अनुरागपरा सोरही है उसको उसीकीबताईहुई विद्या के बल से गोदी मे लेकर मेरे पास चलेआओ मैं तुम्हे यहां बडा आश्चर्य्य दिखाऊंगा उसके इसप्रकार कहने से निश्चयदत्त ने आकाशमार्ग से जाकर अपनी प्रियाको सोतीहुई देखकर गोदी में उठालिया परन्तु उसकी गोदी में सोताहुआ वह विद्याधर उसे नहीं दिखाई दिया क्योंकि उसने उसे पहलेही विद्याके प्रभावसे अदृश्यकरदिया था उसे लेकर निश्चयदत्त शीघ्रही सोमस्वामी के पास आगया उससमय दिव्यदृष्टि सोमस्वामी ने उसे योगका उपदेशकिया जिसके प्रभावसे उसने अनुरागपराकी गोदी में सोतेहुए विद्याधरको देखलिया उसे देखकर हा धिक्कार यह क्या बात है इसप्रकार कहतेहुए निश्चयदत्तको सोमस्वामी ने उसका सम्पूर्ण वृत्तान्त अपने ज्ञान के बलसे जानकर बतलादिया यह सुनकर उसके कुपित होनेपर वह रागभजन विद्याधर जगकर आकाशको चलागया और अनुरागपराभी जगकर अपने भेदको खुलगया जानकर लज्जासे अधोमुख होकरबैठी उससमय निश्चयदत्त आंसूभरकर उससेबोला कि हे पापिन तूने मुझ निःस्वामीको इस प्रकारसे क्योंछला उसके यहकहनेपर अनुरागपरा धीरे २ रोतीहुई विना कुछ उत्तरदिये आकाश में उड़कर अपने स्थानको चलीगई तब सोमस्वामीने निश्चयदत्तसेकहा कि तुमने मेरे निवारण करनेपरभी उसके पास गमनकिया उसी तीव्र अनुरागरूपी अग्निका यह फलहै कि तुम इससमय पश्चात्ताप कररहेहो स्वभावही मे चचल स्त्रियों का और सम्पत्तियोंका क्या विश्वासहै इसमें अब पश्चात्ताप न करो

णी के कन्धेपर चढकर वहाँसे चला और अर्द्धरात्रिके समय हिमाचलपर पुष्करावती नगरीमें पहुँचा उससमय अनुरागपरा अपनी विद्याके प्रभावसे उसकेआगमनको जानकर उसेलिवालानेकेलिये नगरी के वाहर आई उसे आते देखकर यक्षिणीने निश्चयदत्तसे कहा कि नेत्रोंकी आनन्द देनेवाली चन्द्रमा की दूसरी मूर्त्तिके समान तुम्हारी कान्ताआरहीहै तो अवमैं जातीहूं यहकहकर और उसे अपने कन्धे से उतारकर यक्षिणी प्रणामकरके चलीगई तव अनुरागपराने वहुत कालसे उत्कण्ठितहोनेके कारण वहुत गाढ आलिंगन करके उसको प्रसन्नकिया और वह भी वहुत क्लेशोंको सहकर प्राप्त होनेवाली अनुरागपरासे यथेच्छ आलिंगनकरके मानों आनन्दके कारण अपने शरीरमें न समाकर उसकेहृदय मे प्रविष्ट साहोगया तदनन्तर अनुरागपरा के साथ गान्धर्व विवाहकरके विद्याके वलसे उसी के वनाये हुए पुरमें रहनेलगा और उसीकी विद्याके प्रभावसे उसके माता पिताने भी उसे नहीं देखा फिर निश्चय दत्त ने उसके पूछने पर अपने मार्गके सव क्लेशोंका वर्णनकिया उनक्लेशोको सुनकर अनुरागपरा उस पर अत्यन्त प्रसन्नहुई और दिव्य ऐश्वर्य्यों से उसका सेवन करनेलगी निश्चयदत्त नें अपने मार्ग के वृत्तान्त में वानररूपी सोमस्वामीकी भी कथा अनुरागपरा को सुनाकर कहा कि हे प्रिये जो तुम्हारे उपायसे मेरामित्र पशुयोनिसे छूटजाय तो वडा उपकारहोय उसके यहवचन सुनकर अनुरागपराने कहा कि यह योगिनी स्त्रियों की वातें हैं मैं इनविषयों को क्याजानूं परन्तु भद्ररूपानाम सिद्ध योगिनी मेरी सखी है मैं उस्से कहकर तुम्हारा अभीष्ट सिद्धकरवादूंगी उसके यहवचन सुनकर निश्चयदत्त वहुतप्र सन्नहोके वोला कि चलो अपने उसमित्रको तुम्हें दिखलाऊं तव अनुरागपरा उसे गोदी में लेकर आ काश मार्ग से उसको उसवानररूप सोमस्वामी के पास लेआई वहा आकर निश्चयदत्तने अनुरागपरा समेत अपने मित्र वानरको प्रणामकरके कुशल क्षेम पूछी सोमस्वामीने अनुरागपरा को आशीर्वाददे कर निश्चयदत्त से कहा कि अव मुझको कुशलही है जो मैंने तुमको अनुरागपरा के साथ देखा तव वह सव एक मनोहर शिलापर बैठगये और सोमस्वामी को पशुपने से छुटाने का वार्त्तालाप करने लगे कुछ काल वार्त्तालाप करके निश्चयदत्त सोमस्वामी से आज्ञालेकर प्रियाकी गोदी में बैठकर पुष्करावती को गया दूसरे दिन उसने अनुरागपरा से फिर कहा कि हेप्रिये चलो उसी मित्र के पास फिरचलें तव वह वोली कि आज तुम्हींजाओ मैं तुम्हें आकाश में उडने की और आकाश से उतरने की विद्या वताये देतीहूं यह कहकर उसने उसे वह दोनों विद्या सिखादीं तव वह उन विद्याओं को पाकर आकाश मार्ग से अपने मित्रकेपास आया २०२ निश्चयदत्त तो यहा आकर अपनेमित्रसे वार्त्ता लाप करनेलगा और अनुरागपरा अपने घरसे निकलकर उपवनमें विहार करनेकोगई वहा उपवनमें वैठी हुई अनुरागपरा को स्वेच्छा से आकाशमें भ्रमण करतेहुए किसी विद्याधर के कुमार ने देखकर अपनी विद्यासे जानलिया कि यह किसी मनुष्य से प्रेमकरती है यहजानकर वह उसकेपासगया उसे देखकर वह अपना नीचे मुखकरके वोली कि तुम कौनहो और यहा किसलिये आयेहो उसनेंकहा कि मैं सम्पूर्ण विद्याओं का जाननेवाला गगनभजन नाम विद्याधरहूं तुम्हारे देखनेही मे कामदेव ने मुझे

अपनेवशीभूत करके तुम्हारे अर्पणकरदिया है इससे हे सुन्दरी पृथ्वी के निवासी मनुष्य को छोडकर तुम जबतक तुम्हारा पिता नहीं जानता है तबतक हमारेसाथ विवाहकरलो उसके यहवचन सुनकर अनुरागपराने उसे तिरछी दृष्टिसे देखकर अपने चित्तमें शोचा कि मेरे योग्य पति यही है तब अनुरागपराके आशयको जानकर उसरागभजनने अनुरागपरा से विवाहकरलिया ठीक है (अपेक्षतेद्वयोरेक चित्येकिंरहसिस्मर) एकान्त में स्त्री पुरुष के चित्त मिलजानेपर कामदेव किसी बातकी अपेक्षानहीं करता है तदनन्तर उस विद्याधरके चलेजानेपर निश्चयदत्त सोमस्वामी के पाससे अनुरागपरा के पास आया उससमय अनुरागपराने विरक्तहोकर शिरकी पीडाके बहाने से उसका आलिंगन भी नहींकिया परन्तु स्नेहसे मोहित सरलचित्त निश्चयदत्त उसबहाने को सचाही जानकर दुःख पूर्व्वक वहदिन व्यतीतकरके दूसरे दिन प्रातःकाल खेदमें अपने चित्तको बहलाने के लिये उसी की बताईहुई विद्या के बल से फिर अपने मित्र सोमस्वामीकेपास आया उसके चलेआनेपर वहरागभजन विद्याधर अनुरागपरा के विना रात्रिभर जागकर उससमय अवकाशपाकर उसके गलेमें आकर लिपटगया और यथेच्छ रमणकरके श्रम से सोगया और अनुरागपराभी गोदी में उस सोतेहुए विद्याधरको अपनी विद्याके बलसे छिपाकर रात्रिभरके जागनेसे सोगई इसबीच में निश्चयदत्त अपने मित्रके पासपहुँचा सोमस्वामीने उसका शिष्टाचारकरके उससे पूँछा कि हे मित्र आज तुम उदासीनसे क्यों मालूमहोतेहो निश्चयदत्त ने कहा कि अनुरागपरा आज बहुत पीडित है इससे मैं उदासीनहोरहाहूं क्योंकि वह मुझे प्राणों से भी अधिक प्रियहै यह सुनकर ज्ञानी वानररूप सोमस्वामी ने कहा कि जाओ इससमय अनुरागपरा सोरही है उसको उसीकीबताईहुई विद्या के बल से गोदी मे लेकर मेरे पास चलेआओ मैं तुम्हें यहां बडा आश्चर्य्य दिखाऊंगा उसके इसप्रकार कहने से निश्चयदत्त ने आकाशमार्ग से जाकर अपनी प्रियाको सोतीहुई देखकर गोदी में उठालिया परन्तु उसकी गोदी में सोताहुआ वह विद्याधर उसे नहीं दिखाई दिया क्योंकि उसने उसे पहलेही विद्याके प्रभावसे अदृश्यकरदिया था उसे लेकर निश्चयदत्त शीघ्रही सोमस्वामी के पास आगया उससमय दिव्यदृष्टि सोमस्वामी ने उसे योगका उपदेशकिया जिसके प्रभावसे उसने अनुरागपराकी गोदी में सोतेहुए विद्याधरको देखलिया उसे देखकर हा धिक् यह क्या बात है इसप्रकार कहतेहुए निश्चयदत्तको सोमस्वामी ने उसका सम्पूर्ण वृत्तान्त अपने ज्ञान के बलसे जानकर बतलादिया यह सुनकर उसके कुपित होनेपर वह रागभजन विद्याधर जगकर आकाशको चलागया और अनुरागपराभी जगकर अपने भेदको खुलगया जानकर लज्जासे अधोमुख होकरबैठी उससमय निश्चयदत्त आंसूभरकर उससेबोला कि हे पापिन तूने मुझ विश्वासीको इस प्रकारसे क्योंछला उसके यहकहनेपर अनुरागपरा धीरे २ रोतीहुई विना कुछ उत्तरदिये आकाश में उडकर अपने स्थानको चलीगई तब सोमस्वामीने निश्चयदत्तसेकहा कि तुमने मेरे निवारण करनेपरभी उसके पास गमनकिया उसी तीव्र अनुरागरूपी अग्निका यह फलहै कि तुम इससमय पश्चात्ताप कररहेहो स्वभावही से चचल स्त्रियों का और सम्पत्तियोंका क्या विश्वासहै इससे अब पश्चात्ताप न करो

अपने चित्तको शान्तिकरो ब्रह्माभी होनहारको नहीं मेटसक्ते हैं सोमस्वामी के शोक तथा मोहनाशक यह वचन सुनकर निश्चयदत्त वैराग्य युक्तहोके श्रीशिवजीकी शरणमें गया इसके उपरान्त परममित्र कपिरूप सोमस्वामी के साथ वनमें रहतेहुए निश्चयदत्त के पास मोक्षदा नाम तपस्विनी भाग्यवशसे आई उसने प्रणाम करतेहुए निश्चयदत्तसे पूंछा कि तुम तो मनुष्यहो इसबन्दरकेसाथ तुम्हारी मित्रता कैसेहुई तब निश्चयदत्तने अपना और अपनेमित्रका सम्पूर्णवृत्तान्त सुनाकर उससे दीनतापूर्वक कहा कि जो तुम कोई प्रयोग अथवा मन्त्र जानतीहो तो मेरे इस सुहृद सन्मित्रको पशुपने से छुटाओ यह सुनकर उसने बहुत अच्छा कहकर मन्त्रकी युक्तिसे सोमस्वामी के गलेसे वह सूत्र खोललिया सूत्रके खुलतेही वह बन्दर के स्वरूपको छोडकर जैसा पहलेथा वैसाही मनुष्यहोगया सोमस्वामी को मनुष्य बनाकर उस तपस्विनी के अन्तर्द्धान होजानेपर निश्चयदत्त और सोमस्वामी बहुतकालतक बडातप करके परमगतिको प्राप्तहुए इसप्रकारसे स्त्रिया प्राय स्वभावही से चपलहोती हैं उनके दुश्चरित प्रबंधों को देखकर सत्पुरुषोको विवेक और वैराग्य उत्पन्नहोताहै कोई २ स्त्री पतिव्रताभी होती है जो आकाश को चन्द्रमाके समान अपने विशाल कुलको आभूषित करती है इसप्रकार गोमुखके मुखसे इस विचित्र कथाको सुनकर नरवाहनदत्त रत्नप्रभा समेत अत्यन्त प्रसन्नहुआ २२४॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायारत्नप्रभालवकेतृतीयस्तरग ३॥

इसके उपरान्त गोमुखकी कथा से नरवाहनदत्तको प्रसन्न देखकर उसकी स्पर्द्धा से मरुभूति बोला कि प्राय स्त्रिया चपलहोती है परन्तु सर्व साधारण यह बात नहींहै कहीं २ वेश्या भी सुशील होती हैं फिर अन्य सत्कुलोत्पन्न स्त्रियोंका तो क्याही कहनाहै इसविषयमें मैं आपको एककथा सुनाताहू पाटलि पुत्र नाम नगरमें विक्रमादित्य नाम एक राजाथा उसके बहुत से घोडे तथा हाथियो से सम्पन्न हयपति और गजपति नाम दो बडे राजा परममित्र थे और प्रतिष्ठान देशका स्वामी बहुतसी पदाती सेना से सम्पन्न नरसिंह नामराजा उसका शत्रुथा एकसमय राजा विक्रमादित्यने अपने मित्रोंके बलके अभिमान से सहसा यह प्रतिज्ञाकी कि मैं राजा नृसिंहको इसप्रकार से जीतूंगा कि जब वह द्वारपर आवे तो बन्दी और मागध लोग सेवक के समान उसका निवेदन मेरे सन्मुखकरे इसप्रकार प्रतिज्ञाकरके अपने मित्र हयपति और गजपति को बुलाकर उनको साथमें लेकर हाथी और घोडो से पृथ्वीको व्याकुल करताहुआ राजाविक्रमादित्य अपनीसपूर्ण सेनालेकर राजानरसिंहदत्तसे लडनेकोगया जब प्रतिष्ठान के निकटपहुचा तबराजा नरसिंहदत्त उसेआताहुआ जानके सब सेनाको तैयारकरके युद्धकेलिये बाहर निकला उससमय उनदोनों राजाओंकी सेनाओंका ऐसाघोर आश्चर्य्यकारी युद्धहुआ कि हाथी और घोडोंकेमाथ पैदललडे युद्धहोते २ राजानरसिंहके एककरोड पैदलोंसे विक्रमादित्यकी सबसेना हारगई और विक्रमादित्य भागकर पाटलि पुत्र नगरको चलागया और उसके मित्र अपने २ देशकोभागगये तब राजानरसिंह वन्दीगणोंसे कीगई अपनी प्रशसाको सुनताहुआ अपनेनगरके भीतरगया तदनन्तर राजा विक्रमादित्यने अपने कार्य्यको सिद्धहुआ न जानकर शोचा कि पराक्रमसे नहीं जीतनेके योग्य

शत्रुको बुद्धिसे जीतना चाहिये इसमें चाहै मेरीकोई निन्दाभी करे परन्तु प्रतिज्ञाझूठी न होये यहशोच कर और योग्य मन्त्रियोंपर राज्यका भाररखकर बुद्धिवरनाम मुख्य मन्त्री सौ राजपुत्र तथा पांच कुलीन शूरोंको साथमेंलेकर राजा विक्रमादित्य भिक्षुकोंकासाभेष वनाकर प्रतिष्ठाननाम नगरकोगया वहांपहुंचकर मदनमालानाम वेश्याके राजमंदिरकेसमान सुन्दर भवनमें गया वह भवन शिखरों पर लगीहुई पताओंके वायुसेचञ्चल वस्त्रोंसेमानों राजाको वुलारहाथा उसभवनके मुख्यपूर्वदिशाके फाटकपर रात्रि दिन अनेक प्रकारके शस्त्रों को धारण कियेहुए वीस हजार पैदल रक्षकरहते थे अन्य तीनफाटकों पर दश २ हजार पैदल शूर रक्षकरहतेथे ऐसे वडेभारी उस भवनके द्वारपर जाकर विक्रमादित्य अपनेभीतर जानेके लिये निवेदन कराकर और प्रतीहारकेद्वारा आज्ञापाकर अपने साथियोंसमेत भीतरचला उस मन्दिरमें कहीं वडे २ सुन्दर सैकडों घोडे वँधेथे कहीं वडे २ उन्नतहाथी झूमतेथे कहींपर अनेक २ प्रकार देदीप्यमान शस्त्ररक्खे थे कहीं अनेक प्रकारके सुन्दर रत्नोंसे देदीप्यमान धनके समूहके समूह से भरेहुए खजाने इकट्ठेथे कहींपर सैकडों सेवकलोग अपना २ कार्य्यकररहेथे कहींपर सैकडो वन्दियों के समूह उच्चस्वरसे स्तुति कररहे थे और कहींपर मृदंगकी ध्वनिके अनुसार मधुरगान होरहाथा इसप्रकार शोभा देखताहुआ सात डेवढियोंका उल्लंघन करके अपने सब साथियोंसमेत मदनमालाके रहने के वडेउन्नत दिव्य सुन्दरस्थानमें पहुंचा मदनमालाभी अपने सेवकोंकेद्वारा यह सुनकर कि यहसपूर्ण घोडे आदि पदार्थों को वडे ध्यानसे देखताहुआ आयाहै उसे कोई छिपाहुआ उत्तमपुरुष जानकर कुछ दूर आगे चलकर प्रणामकरके लेगई और भीतरलेजाकर राजाके योग्य आसनपर बैठाकर वडासत्कार किया राजाभी उसकेरूप लावण्य तथा विनयसे वशीभूत होकर अपनेको नहीं प्रकटकरके उसकीवडी प्रशंसा करनेलगा उससमय मदनमालाने स्नान पुष्प अनुलेपन वस्त्र तथा वहुमूल्य आभूषणों से राजाका सन्मानकरके उसके सपूर्ण साथियों को रोजीना दिवाकर मन्त्रीसमेत राजाको अतिउत्तम भोजनकराये और उसके साथ मद्यपानादि क्रीडासे दिन व्यतीत करके रात्रिके समय उसके सुन्दरस्वरूपसे वशीभूत होकर अपना शरीरभी उसके अर्पण करदिया इसप्रकार मदनमाला से सेवाकियागया राजा विक्रमादित्य अपनेको छिपाकर चक्रवर्त्तियोंके समान ऐश्वर्य्योंको भोग करता हुआ रहनेलगा वह नित्यही याचकोंको जितना धनदेताथा सो सब मदनमाला अपनेपाससे दिलवातीथी और उससे भोग कियेगये अपने शरीर तथा धनको धन्य मानतीथी वह राजाके ऐसी वशीभूत होगईथी कि अन्य पुरुषोंसे पराङ्मुखहोकर अत्यन्त अनुरक्त राजानरसिंहकोभी उसने युक्तिपूर्वक निवृत्तकरदिया इसप्रकार उसके सेवनको देखकर राजाने अपने वुद्धिवर मन्त्रीसे एकान्तमें कहा कि धनकी चाहनेवाली वेश्या काममेंभी धनके विना नहीं प्रसन्नहोतीहै नह्माने मानों सपूर्ण याचकोंका लोभ वेश्याओंकोही देदिया है परन्तु यह मदनमाला तो मुझे अपने धनको भोगकरतेहुए देखकर विरक्त तो नहीं होती किन्तु स्नेहसे अधिक प्रसन्नहोती है तो इससमय इसके साथ कैसे प्रत्युपकार करनाचाहिये जिससे मेरी प्रतिज्ञाभी पूरीहोजाय यह सुनकर वुद्धिवर मन्त्रीने कहा कि जो आपके चित्तमें ऐसाही है तो प्रपञ्चवुद्धिनाम

अपने चित्तको शान्तकरो ब्रह्माभी होनहारको नहीं मेटसक्ते हैं सोमस्वामी के शोक तथा मोहनाशक यह वचन सुनकर निश्चयदत्त वैराग्य युक्तहोके श्रीशिवजीकी शरणमें गया इसके उपरान्त परममित्र कपिरूप सोमस्वामी के साथ वनमें रहतेहुए निश्चयदत्त के पास मोक्षदा नाम तपस्विनी भाग्यवशसे आई उसने प्रणाम करतेहुए निश्चयदत्तसे पूछा कि तुम तो मनुष्यहो इसबन्दरकेसाथ तुम्हारी मित्रता कैसेहुई तब निश्चयदत्तने अपना और अपनेमित्रका सम्पूर्णवृत्तान्त सुनाकर उससे दीनतापूर्वक कहा कि जो तुम कोई प्रयोग अथवा मंत्र जानतीहो तो मेरे इस सुहृद सन्मित्रको पशुपने से छुटाओ यह सुनकर उसने बहुत अच्छा कहकर मन्त्रकी युक्तिसे सोमस्वामी के गलेसे वह सूत्र खोललिया सूत्रके खुलतेही वह बन्दर के स्वरूपको छोडकर जैसा पहलेथा वैसाही मनुष्यहोगया सोमस्वामी को मनुष्य बनाकर उस तपस्विनी के अन्तर्द्धान होजानेपर निश्चयदत्त और सोमस्वामी बहुतकालतक बडातप करके परमगतिको प्राप्तहुए इसप्रकारसे स्त्रिया प्राय स्वभावही से चपलहोती हैं उनके दुश्चरित प्रबन्धों को देखकर सत्पुरुषोको विवेक और वैराग्य उत्पन्नहोताहै कोई २ स्त्री पतिव्रताभी होती है जो आकाश को चन्द्रमाके समान अपने विशाल कुलको आभूषित करती है इसप्रकार गोमुखके मुखसे इस विचित्र कथाको सुनकर नरवाहनदत्त रत्नप्रभा समेत अत्यन्त प्रसन्नहुआ २४४ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांरत्नप्रभालंबकेतृतीयस्तरंगः ३ ॥

इसके उपरान्त गोमुखकी कथा से नरवाहनदत्तको प्रसन्न देखकर उसकी स्पर्द्धा से मरुभूति बोला कि प्राय स्त्रिया चपलहोती है परन्तु सर्व साधारण यह बात नही है कहीं २ वेश्या भी सुशील होती हैं फिर अन्य सत्कुलोत्पन्न स्त्रियोका तो क्याही कहनाहै इसविषयमें मैं आपको एककथा सुनाताहू पाटलि पुत्र नाम नगरमें विक्रमादित्य नाम एक राजाथा उसके बहुत से घोडे तथा हाथियो से सम्पन्न हयपति और गजपति नाम दो बडे राजा परममित्र थे और प्रतिष्ठान देशका स्वामी बहुतसी पदाती सेना से सम्पन्न नरसिंह नामराजा उसका शत्रुथा एकसमय राजा विक्रमादित्यने अपने मित्रोके बलके अभि मान से सहसा यह प्रतिज्ञाकी कि मैं राजा नृसिंहको इसप्रकार से जीतूंगा कि जब वह द्वारपर आवे तो वन्दी और मागध लोग सेवक के समान उसका निवेदन मेरे सन्मुखकरे इसप्रकार प्रतिज्ञाकरके अपने मित्र हयपति और गजपति को बुलाकर उनको साथमें लेकर हाथी और घोडों से पृथ्वीको व्याकुल करताहुआ राजाविक्रमादित्य अपनीसपूर्ण सेनालेकर राजानरसिंहदत्तसे लडनेकोगया जब प्रतिष्ठान के निकटपहुचा तबराजा नरसिंहदत्त उसेआताहुआ जानके सब सेनाको तैयारकरके युद्धकेलिये बाहर निकला उससमय उनदोनों राजाओंकी सेनाओंका ऐसाघोर आश्चर्य्यकारी युद्धहुआ कि हाथी और घोडोंकेमाथ पैदललडे युद्धहोते २ राजानरसिंहके एककरोड पैदलोंसे विक्रमादित्यकी सबसेना हारगई और विक्रमादित्य भागकर पाटलि पुत्र नगरको चलागया और उसके मित्र अपने २ देशकोभागगये तब राजानरसिंह वन्दीगणोंसे कीगई अपनी प्रशसाको सुनताहुआ अपनेनगरके भीतरगया तदनन्तर राजा विक्रमादित्यने अपने कार्य्यको सिद्धहुआ न जानकर शोचा कि पराक्रमसे नहीं जीतनेके योग्य

प्रकटहुए कुबेरजीको प्रणाम करके मैने कहा कि जिससमय में आपसे कोई अपने प्रयोजन का वर चाहूंगा तब आप प्रकट होकर मुझे वही वरदीजियेगा तब कुबेर एवमस्तु कहकर अन्तर्द्धान होगये और मैं अपने घरको चलाआया यह मेरा सपूर्ण वृत्तान्त है इससे मैं अब कुबेर के वरसे मदनमाला का प्रत्युपकार करूंगा तो हे बुद्धिवर तुम इनराजपुत्रों को अपने सायलेकर पाटलिपुत्र को जाओ और मैं भी मदनमाला का प्रत्युपकार करके वहीं चला आऊंगा और औसर पाकर फिर यहां आजाऊंगा यह कहकर राजाने अपने मंत्री को परिकर समेत विदाकरदिया और उसके चले जाने पर उस दिनको व्यतीतकरके रात्रि के समय होनेवाले वियोग से उत्कण्ठितहोकर मदनमाला के साथ वहरात्रि व्यतीतकी और मदनमाला भी अपनी अन्तरात्मामे मानों राजाको दूरहुआसा जानकर वारम्वार आलिंगनकरके उत्कण्ठासे रात्रिभरसोई नहीं प्रातःकाल राजा सन्ध्यावन्दनादिक आवश्यक कार्य्यकरके अकेलाही देवमंदिर में जपकरने के बहाने से गया और वहांजाकर कुबेर देवता का आवाहनकरके प्रकटहुए कुबेरजीको प्रणामकरके वह वर जो उन्होंने पहले देनेकोकहाथा उनसेमांगा कि हे देव सुवर्ण के पांच अक्षयपुरुष मुझे दीजिये जिनके अंगनिरन्तर काटनेपर भी पूरेही बनजाया करें तब कुबेर देवता एवमस्तु कहकर अन्तर्द्धान होगये और राजाको उसीसमय सुवर्ण के पांचपुरुष उसी मंदिर में दिखाई दिये तब राजा देवमंदिरसे निकलकर अपनी प्रतिज्ञाको स्मरण करताहुआ आकाश मार्ग से पाटलिपुत्रको चलाआया। ८५ वहां आकर अपने मंत्री पुरवासी तथा सब रानियों को प्रसन्न करके राज्य कार्य्य करनेलगा परन्तु उसका चित्त प्रतिष्ठान देशमेंही लगारहा राजा तो यहांचला आया और वहां वह मदनमाला राजा के आनेकी बहुत कालतक बाट देखकर उसे ढूंढनेकेलिये देवमन्दिर में गई वहां उसे राजा तो नहीं दिखाईदिया परन्तु सुवर्णके पांचपुरुष बहुतबड़े दिखाईदिये उनको देखकर और राजाको न पाकर वह दुखितहोकर शोचनेलगी कि मेराप्रिय कोईगन्धर्व अथवा विद्याधर था जो मुझे यह पांचपुरुष देकर आकाश को चलागया तो उसके बिना भारतुल्य इनपुरुषोंको मैं क्याकरूं यहशोचकर अपने सेवकोंसे पूछनेलगी कि तुमने मेरे प्यारेको कहीं देखा तो नहीं है और उसके ढूंढनेके लिये इधर उधर फिरनेलगी फिर राजाको कहींभी न पाकर विलाप करतीहुई मदनमालाको मंदिर उपवन तथा किसी स्थानमें चैन न पड़ा और वियोग से अत्यन्त व्याकुलहोकर वह अपना शरीर त्यागने को उद्यतहोगई उसकी यह दशा देखकर सम्पूर्ण लोगोंने उसे समझाया कि हे मदनमाले विषाद न करो तुम्हारा प्रिय कोई कामधारी देवताहै वह तुमको फिर प्राप्तहोजायगा इन वचनोंको सुनकर उसके चित्त में कुछ भरोसाहुआ और सावधान चित्तकरके उसने यह प्रतिज्ञाकी कि छः महीने के भीतर जो मुझे वह दर्शन नहींदेगा तो मैं सर्वस्वदान करके अग्निमें जलजाऊंगी इसप्रकारकी प्रतिज्ञामें अपनेको सावधान करके वह उसका ध्यानकरके नित्यदान करनेलगी एकदिन उस ने सुवर्ण के पुरुषोंमें से एक के हाथ काटकर ब्राह्मणोंको देदिये दूसरेदिन उसको उस पुरुषके हाथ फिर ज्योंके त्यों दिखाई दिये तब रात्रिभरमें उसके हाथोंको उत्पन्नहुआ जानकर उसने सब पुरुषोंके हाथ काटकर दान

भिक्षुकके दियेहुए अमूल्य रत्नोंमेंसे कुछ इसकोभी दीजिये मंत्रीके यह वचन सुनकर राजाबोला कि उन संपूर्ण रत्नोंके भी देनेसे इसका प्रत्युपकार नहींहोसक्ता परन्तु इसी भिक्षुकके सम्बन्धमें एक और उपायहै जिससे इसका प्रत्युपकार होजायगा ४४ यह सुनकर मंत्रीने कहा कि हे राजा उस भिक्षुकने आपकी क्या सेवाकीथी वहसववृत्तान्त मुझसेभी कहिये तब राजाने कहा कि सुनो मैं तुमसे उसकी सब कथा कहताहूं पहले पाटलिपुत्र नगरमें प्रपंच बुद्धिनाम भिक्षुकने मेरीसभामें आकर एक संपुट (एक प्रकारका डिब्बा) मुझेदिया मैंने उसे लेकर बिना खोलेही खजानचीको देदिया इसीप्रकारसे वह कई दिनतक रोजएक संपुटलातारहा और मैं बिनाखोलेही अपने खजानचीको देतारहा एकदिन भिक्षुकका दियाहुआ डिब्बा मेरे हाथसे गिरकर दैवयोगसे खुलगया और उसमें से अग्निके समान प्रज्वलित एक महारत्न निकलामानों उसने अपना हृदय खोलकर मुझे दिखलादिया उसरत्नको देखकर मैंने और सब डिब्बे भी मँगवाकर उनमें से सबरत्न निकलवालिये और उससमय प्रपंच बुद्धिसे कहा कि तुम इन बहुमूल्य रत्नोंसे मेरा नित्यसेवनक्योंकरते हो तब उसने एकान्तमें मुझसे कहा कि इसआनेवाली कृष्ण पक्षकी चतुर्दशीको रात्रिके समय श्मशानमें मुझे कोई विद्या सिद्धकरनी है हे वीर मैं चाहताहूं कि वहाँ मेरी सहायताके लिये आप आइये क्योंकि वीरोंकी सहायता से निर्विघ्नता पूर्वक सुगमता से सब सिद्धियां सुलभहोजाती हैं उस भिक्षुकके यहवचन मैंने स्वीकार करलिये इसके उपरान्त वह भिक्षुक तो प्रसन्नहोकर चलागया और कुछदिनोंके पीछे वह कृष्णपक्षकी चतुर्दशी आई और मुझे उस भिक्षुकके वचनोंका स्मरण आगया तब मैं संपूर्ण आह्निककरके सायकालतक अपने संपूर्ण कार्य्य करतारहा और संध्यावन्धके उपरान्त कुछ सोगया उससमय गरुडपर चढेहुए लक्ष्मी जी समेत भक्तवत्सल भगवान् विष्णुने स्वप्नमें मुझे दर्शन देकर कहा कि यह प्रपंचबुद्धिनाम भिक्षुक अपने नाम के अर्थ से युक्तहै यह तुमको श्मशानमें लेजाकर बलिदान करना चाहताहै इससे वह जो कुछ तुमसे कहै वही न करनेलगना तुम उससे कहना कि पहले तू ऐसाही कर फिर मैं भी उसे सीखकर करूंगा जबवह उसीप्रकारसे करनेलगे तब उसीक्षण तुम उसको मारडालना इसप्रकारसे जो सिद्धि उसको होनेवाली है वह तुमको होजायगी यहकहकर भगवान्के अन्तर्द्धान होजानेपर मैंने जगकर शोचा कि विष्णु भगवान्की कृपासे मुझे इसमायावीकी माया मालूम होगई इसप्रकार शोचकर दूसरेप्रहर में खड्ग लेकर मैं श्मशानको गया वहाँ वह भिक्षुक पूजन कररहा था वह मुझे देखकर अत्यन्त प्रसन्न होकर बोला कि हे राजा नेत्र बन्दकरके अंगोंको फैलाकर नीचेको मुखकरके पृथ्वी में लेटजाओ इसप्रकारसे हम तुम दोनोंको बड़ी सिद्धिहोजायगी तब मैंने उससे कहा कि तुम प्रथम इसरीतिसे लेटो उसे देखकर मैं भी उसीरीति से लेटूंगा यहसुनकर वहमूर्ख उसीप्रकारसे पृथ्वी में लेटगया तब मैंने खड्ग से उसका शिर काटडाला उससमय यह आकाशवाणी हुई कि हे राजा तुमने जो इस महापापी भिक्षुकको मारा यह बहुत अच्छा किया जो यह आकाशमें अपनी गति सिद्धकरना चाहताथा वह तुमको सिद्धहोगई और मैं कुवेरहूं तुम्हारे धैर्य्यसे तुमपर बड़ा प्रसन्न हूं इससे तुम जो चाहो सो वरमुझसे मांगो यहकहकर

प्रकटहुए कुबेरजीको प्रणाम करके मैंने कहा कि जिससमय मैं आपसे कोई अपने प्रयोजन का वर चाहूंगा तब आप प्रकट होकर मुझे वही वरदीजियेगा तब कुबेर एवमस्तु कहकर अन्तर्द्धान होगये और मैं अपने घरको चलाआया यह मेरा सपूर्ण वृत्तान्त है इसमे मैं अब कुबेर के वरसे मदनमाला का प्रत्युपकार करूगा तो हे बुद्धिवर तुम इनराजपुत्रों को अपने सायलेकर पाटलिपुत्र को जाओ और मैं भी मदनमाला का प्रत्युपकार करके वहीं चला आऊगा और औसर पाकर फिर यहा आजाऊगा यह कहकर राजाने अपने मत्री को परिकर समेत बिदाकरदिया और उसके चले जाने पर उस दिनको व्यतीतकरके रात्रि के समय होनेवाले वियोग से उत्कण्ठितहोकर मदनमाला के साथ वहरात्रि व्यतीतकी और मदनमाला भी अपनी अन्तरात्मामे मानों राजाको दूरहुआसा जानकर बारम्बार आलिंगनकरके उत्कण्ठासे रात्रिभरसोई नहीं प्रात काल राजा सन्ध्यावन्दनादिक आवश्यक कार्य्यकरके अकेलाही देवमंदिर में जपकरने के बहाने से गया और वहांजाकर कुबेर देवता का आवाहनकरके प्रकटहुए कुबेरजीको प्रणामकरके वह वर जो उन्होंने पहले देनेकोकहाथा उनसेमागा कि हे देव सुवर्ण के पाच अक्षयपुरुष मुझे दीजिये जिनके अगनिरन्तर काटनेपर भी पूरेही बनजाया करें तब कुबेर देवता एवमस्तु कहकर अन्तर्द्धान होगये और राजाको उसीसमय सुवर्ण के पाचपुरुष उसी मदिर में दिखाई दिये तब राजा देवमदिरसे निकलकर अपनी प्रतिज्ञाको स्मरण करताहुआ आकाश मार्ग से पाटलिपुत्रको चलाआया ८५ वहा आकर अपने मंत्री पुरवासी तथा सब रानियों को प्रसन्न करके राज्य कार्य्य करनेलगा परन्तु उसका चित्त प्रतिष्ठान देशमेंही लगारहा राजा तो यहाचला आया और वहां वह मदनमाला राजा के आनेकी बहुत कालतक बाट देखकर उसे ढूंढने केलिये देवमन्दिर में गई वहा उसे राजा तो नहीं दिखाईदिया परन्तु सुवर्णके पाचपुरुष बहुतबडे दिखाईदिये उनको देखकर और राजाको न पाकर वह दुःखितहोकर शोचनेलगी कि मेराप्रिय कोईगन्धर्व अथवा विद्याधरथा जो मुझे यह पाचपुरुष देकर आकाश को चलागया तो उसके बिना भारतुल्य इनपुरुषोंको मैं क्याकरू यहशोचकर अपने सेवकोंसे पूछनेलगी कि तुमने मेरे प्यारेको कहीं देखा तो नहीं है और उसके ढूढनेके लिये इधर उधर फिरनेलगी फिर राजाको कहींभी न पाकर विलाप करतीहुई मदनमालाको मदिर उपवन तथा किसी स्थानमें चैन न पडा और वियोग मे अत्यन्त व्याकुलहोकर वह अपना शरीर त्यागने को उद्यतहोगई उसकी यह दशा देखकर सम्पूर्ण लोगोंने उसे समझाया कि हे मदनमाले विषाद न करो तुम्हारा प्रिय कोई कामधारी देवताहै वह तुमको फिर प्राप्तहोजायगा इन वचनोंको सुनकर उसके चित्त में कुछ भरोसाहुआ और सावधान चित्तकरके उसनेयह प्रतिज्ञाकी कि छ महीने के भीतर जो मुझे वह दर्शन नहीं देगा तो मैं सर्वस्वदान करके अग्निमे जलजाऊगी इसप्रकारकी प्रतिज्ञामें अपनेको सावधान करके वह उसका ध्यानकरके नित्यदान करनेलगी एकदिन उस ने सुवर्ण के पुरुषोंमें से एकके हाथ काटकर ब्राह्मणोंको देदिये दूसरेदिन उस को उस पुरुषके हाथ फिर ज्योंके त्यों दिखाई दिये तब रात्रिभरमें उसके हाथोंको उत्पन्नहुआ जानकर उसने सब पुरुषोंके हाथ काटकर दान

कर दिये फिर उन सबकेभी उसीप्रकार सवहाथ निकलआये तब उनपुरुषोंको अक्षयजानकर वह वेद पाठी ब्राह्मणोंको जो जितने वेद पढाहो उनको उतनीही भुजा देनेलगी कुछ दिनों में दिशाओंमें फै लीहुई उस चर्चाको सुनकर चारवेदका जाननेवाला गुणवान् दरिद्री सग्रामदत्त नाम ब्राह्मण पाटलि पुत्रसे दानलेनेको उसके यहा गया तब द्वारपालों के द्वारा उस ब्राह्मणको आया जानकर उसने उस ब्राह्मण को सुवर्णकी चार भुजा दानमे दीनी उससमय मदनमाला के बिरहसे कृश तथा पीले अङ्गों को देखकर और उसके दुखी परिजनों से सम्पूर्ण वृत्तान्त तथा घोर प्रतिज्ञा को सुनकर सग्रामदत्त दुखी तथा प्रसन्नहोकर दो ऊंटोपर उन चारों भुजाओंको लादकर अपने पाटलिपुत्र नगरको चलाआया वहाँ आकर उसने राजाकी रक्षाके विना मेरा महसुवर्ण कुशल पूर्वक नहीं रहसक्ता यह शोचकर स भामे जाकर राजा विक्रमादित्यसे यह विज्ञापनाकरी कि हे महाराज मै इसीनगरका रहनेवाला ब्राह्मण हू दरिद्रसे व्याकुल होकर मै धन उपार्जन करनेको दक्षिण दिशामें गयाथा राजा नरसिंहके प्रतिष्ठान नामपुरमे पहुचकर अत्यन्त यशस्विनी मदनमाला नाम वेश्याके यहाँ में दानलेनेकोगया कोई दिव्य पुरुष उसके पास वहुत कालतक रहकर उसे पाच सुवर्ण के अक्षयपुरुष देकर अन्तर्द्धान होगया है उसके विरह से महाव्याकुल होकर उस वेश्याने जीवनको बिपकी पीडा शरीरको निष्फल भार और भोजनको चोरीके समान मानकर धैर्य्य रहित होके अपने परिजनोंके बहुत समझानेसे यह प्रतिज्ञाकी है कि जो छ महीनेके भीतर मेरा प्रिय मुझे नहीं मिलैगा तो मैं अपने इसअभागे शरीरको अग्निमें जलादूंगी इसप्रकार प्रतिज्ञा करके शरीर त्याग करनेके निश्चयसे युक्त मदनमाला धर्मकी इच्छा करके नित्य महादान करती है ११४ हे महाराज मैंने उसे देखाहै कि यद्यपि भोजन थोडाकरनेसे उसका श रीर कृशहोगयाहै परन्तु उसकी शोभा न्यून नही हुई है जिसै सुन्दरपुरुष के पीछे सुन्दरी मदनमाला अपने शरीरको त्याग करनेकी इच्छा कररही है और जिसने विरक्त होकर उसका त्याग कियाहै वह पुरुष मेरेमतसे निन्द्यभी और वन्द्यभीहै उसी वेश्याने मुझको चार सुवर्णकी भुजा इस निमित्तदी है कि मैं चारो वेदपढाहू तो अब मैं अपनेघरमें सदानत्त जारीकरके स्वधर्म का सेवनकिया चाहताहूं इस में आप मेरे सहायक हूजिये उस ब्राह्मणके मुखसे इसप्रकार अपनी प्रियाकी वार्त्ताको सुनकर राजा का चित्त उसीसमय मदनमालाकी ओर चलागया तब प्रतिहारको उसब्राह्मणके मनोरथको सिद्धकरने की आज्ञादेकर और मदनमालाका प्राणों से भी अधिक अपने ऊपर अनुराग देखकर और अपनी कि हो के सिद्ध होनेके लिये उसकी सहायताके लिये उत्कण्ठित होकर और उसके शरीर त्याग करने नुम अवधिमें थोडाहीसा समय वाकी जानकर राजाविक्रमादित्य मत्रियों को सम्पूर्णराज्य सौपकर आ मे भी मार्गसे प्रतिष्ठान नगरमें अपनी प्रियाके यहा पहुचा और वहा उसने चन्द्रिकाके समान उज्ज्वल शिर कांति विबुध (पण्डित और देवता लोग) लोगों को अपने ऐश्वर्य्यकी देनेवाली अमावास्याके यह वहुत अङ्गोंकी कलाके समान अपनी कृशित प्रिया देखी वहभी नेत्रोंमे अमृतकी वृष्टि करनेवाले और मे कुवेरस्मात् देखकर कुछ भ्रान्ति युक्तहोकर मानों फिर भागजाने के भयसे उसके गलेमें दोनों

हाथ डालकर लिपटगई और बोली कि हे निर्दय मुझ निरपराधिनीको छोड़कर तुम क्यों चलेगये थे उसके यह वचनसुनकर राजाने कहा कि चलो एकान्तमें कहैंगे यहकहकर उसे एकान्तमें लेजाकर राजाने नरसिंह राजाके जीतनेकी प्रतिज्ञासे लेकर अपना संपूर्ण वृत्तान्त वर्णन किया और प्रपञ्चबुद्धि को मारकर आकाशमें उड़नेकी शक्तिका संपूर्ण वृत्तान्त तथा कुबेरके वरदानसे उन पांचों सुवर्ण पुरुषोंके मिलनेका वृत्तान्त और ब्राह्मण के द्वारा उसके अनुरागको सुनकर अपने वहाँ जानेका वृत्तान्त वर्णनकरके कहा कि हे प्रिये यह राजा नरसिंह बड़ा बलवान्हे इससे मैं अपनी सेनाके बलसे तो इसको नहीं जीतसका और द्वन्द्व युद्धमें आकाशमें उड़कर मैं उसे मारभीलेता परन्तु अधर्म्म से जीतना क्षत्री लोगोंको उचित नहीं है इससे मैंने जो यह प्रतिज्ञाकी है कि राजा नरसिंह मेरे द्वारपर आवेगा तो बन्दीलोग तथा प्रतीहारलोग उसका सेवकोंके समान मुझसे निवेदन करेंगे सो इसप्रतिज्ञाके पूर्ण होनेमे तुम सहायताकरो यहसुनकर उसने कहा कि मैं धन्यहूं और राजाके साथ सलाहकरके अपने वन्दियों को बुलाकर यह आज्ञादी कि जबराजा नरसिंह मेरे मकानपर आवे तब तुमलोग द्वारपरखड़ेलगाये खड़ेरहना और द्वारमें प्रवेशकरने के समय यहकहना कि हे महाराज राजानरसिंह आपका बड़ाभक्त है और आपसे वहुत स्नेह करताहै इसप्रकार कहनेपर जब राजा पूछे कि यहाँ कौनहै तो कहदेना कि महाराज विक्रमादित्य भीतरहैं वन्दियों से इसप्रकार कहकर प्रतीहारसे कहा कि राजानरसिंह जबआवे तब उसको रोकना नहीं इसप्रकार आज्ञादेकर मदनमाला दूसरीबार अपने प्रियको पाकर सुखपूर्वक वहुत सा दानकरतीहुई रहनेलगी इसके उपरान्त राजानरसिंह मदनमालाके अत्यन्त दानका वृत्तान्त सुनकर और पांच अक्षय सुवर्णके पुरुषोंका प्राप्तहोना सुनकर उसे देखनेके लिये उसके यहाँ आया उससमय प्रतीहारी ने उसे निषेध नहीं किया और बन्दीलोग उच्चस्वरसे यह कहनेलगे कि हे महाराज राजा नरसिंह आपका बड़ाभक्तहै और आपसे सदैव नम्ररहता है यहसुनकर भय तथा क्रोधमें युक्त होकर राजानरसिंहने पूछा कि भीतर कौनहै मंत्रियों ने कहा कि महाराज विक्रमादित्य हैं यहसुनकर उसने अपने चित्तमें शोचा कि विक्रमादित्यने जो प्रतिज्ञाकी थी वह पूर्ण करलीनी यह बड़ातेजस्वी है इसने आज मुझे जीतलिया इससमय यह अकेला हमारे यहाँ आयाहै इससे इसका मारना भी उचित नहीं है इसप्रकार शोचकर वन्दियोंसे निवेदन कियाहुआ राजानरसिंह भीतरगया उसको मुस्कुरातेहुए भीतर आते देखकर विक्रमादित्यने मुस्कुराकर उठकर उसे अपने गलेसे लगाकर अपने पास बैठालिया फिर परस्पर कुशलक्षेम पूछकर प्रमगसे राजानरसिंहने विक्रमादित्यसे पूछा कि यहसुवर्णके पुरुष कहांसे आपने पायेहैं उसके इसप्रकार पूछनेपर विक्रमादित्य ने प्रपंचबुद्धिनाम भिक्षुक के मारने से आकाशमें गमन करनेकी शक्तिका प्राप्तहोना और कुबेरकी कृपासे अक्षय सुवर्ण के पांचपुरुषोंका मिलना विस्तार पूर्वक वर्णनकिया यहसुनकर नरसिंहने उसको आकाशमें उड़ने के कारण महाराज किमान जानकर और उसकी बुद्धिको पापसे निवृत्त जानकर उसके साथ मित्रताकरली और मित्रताकरके उसे अपने घरमें लेजाकर राजालोगोंके योग्य उसका बड़ा सत्कार किया और फिर उसे मद-

कर दिये फिर उन सबकेभी उसीप्रकार स्वहाथ निकलआये तब उनपुरुषोंको अक्षयजानकर वह वेद पाठी ब्राह्मणोंको जो जितने वेद पढाहो उनको उतनीही भुजा देनेलगी कुछ दिनों में दिशाओं में फैलीहुई उस चर्चाको सुनकर चारवेदका जाननेवाला गुणवान् दरिद्री सग्रामदत्त नाम ब्राह्मण पाटलि पुत्रसे दानलेनेको उसके यहा गया तब द्वारपालों के द्वारा उस ब्राह्मणको आया जानकर उसने उस ब्राह्मण को सुवर्णकी चार भुजा दानमे दीनी उससमय मदनमाला के विरहसे कृश तथा पीले अङ्गों को देखकर और उसके दुखी परिजनों से सम्पूर्ण वृत्तान्त तथा घोर प्रतिज्ञा को सुनकर सग्रामदत्त दुखी तथा प्रसन्नहोकर दो ऊटोपर उन चारों भुजाओंको लादकर अपने पाटलिपुत्र नगरको चलाआया वहाँ आकर उसने राजाकी रक्षाके विना मेरा यहसुवर्ण कुशल पूर्व्वक नहीं रहसक्ता यह शोचकर स भामें जाकर राजा विक्रमादित्यसे यह विज्ञापनाकरी कि हे महाराज मै इसीनगरका रहनेवाला ब्राह्मण हू दरिद्रसे व्याकुल होकर मै धन उपार्जन करनेको दक्षिण दिशामें गयाथा राजा नरसिंहके प्रतिष्ठान नामपुरमे पहुचकर अत्यन्त यशस्विनी मदनमाला नाम वेश्याके यहाँ मैं दानलेनेकोगया कोई दिव्य पुरुष उसके पास बहुत कालतक रहकर उसे पाच सुवर्ण के अक्षयपुरुष देकर अन्तर्द्धान होगया है उसके विरह से महाव्याकुल होकर उस वेश्याने जीवनको विषकी पीडा शरीरको निष्फल भार और भोजनको चोरीके समान मानकर धैर्य्य रहित होके अपने परिजनोंके बहुत समझानेसे यह प्रतिज्ञाकी है कि जो छ महीनेके भीतर मेरा प्रिय मुझे नही मिलैगा तो मैं अपने इसअभागे शरीरको अग्निमें जलादूगी इसप्रकार प्रतिज्ञा करके शरीर त्याग करनेके निश्चयसे युक्त मदनमाला धर्मकी इच्छा करके नित्य महादान करती है ११४ हे महाराज मैंने उसे देखाहै कि यद्यपि भोजन थोडाकरनेसे उसका श रीर कृशहोगयाहै परन्तु उसकी शोभा न्यून नहीं हुई है जिस सुन्दरपुरुष के पीछे सुन्दरी मदनमाला अपने शरीरको त्याग करनेकी इच्छा कररही है और जिसने विरक्त होकर उसका त्याग कियाहै वह पुरुष मेरेमतसे निन्द्यभी और वन्द्यभीहै उसी वेश्याने मुझको चार सुवर्णकी भुजा इस निमित्तदी है कि में चारों वेदपढाहू तो अब मैं अपनेघरमें सदावर्त्त जारीकरके स्वधर्म का सेवनकिया चाहताहू इस में आप मेरे सहायक हूजिये उस ब्राह्मणके मुखसे इसप्रकार अपनी प्रियाकी वार्त्ताको सुनकर राजा का चित्त उसीसमय मदनमालाकी ओर चलागया तब प्रतिहारको उसब्राह्मणके मनोरथको सिद्धकरने की आज्ञादेकर और मदनमालाका प्राणों से भी अधिक अपने ऊपर अनुराग देखकर और अपनी प्रतिज्ञाके सिद्ध होनेके लिये उसकी सहायताके लिये उत्कण्ठित होकर और उसके शरीर त्याग करने नुम अवधिमें थोडाहीसा समय बाकी जानकर राजाविक्रमादित्य मन्त्रियों को सम्पूर्णराज्य सौंपकर आ मे भी मार्गसे प्रतिष्ठान नगरमें अपनी प्रियाके यहा पहुचा और वहा उसने चन्द्रिकाके समान उज्ज्वल शिर कोटि विबुध (पण्डित और देवता लोग) लोगोंको अपने ऐश्वर्य्यकी देनेवाली अमावास्याके यह बहुत अमाकी कलाके समान अपनी कृशित प्रिया देखी वहभी नेत्रोंमें अमृतकी वृष्टि करनेवाले और मै कुबेरस्माव देखकर कुछ भ्रान्ति युक्तहोकर मानों फिर भागजाने के भयसे उसके गलेमें दोनों

मान और बल में भीमसेन के समान था इसप्रकार मृगभुज को गुणवान् देखकर वीरभुजकी सम्पूर्ण रानियां गुणवरा से ईर्ष्या करनेलगीं उनमें से अयशोलेखा नाम रानीने सबसे सलाहकरके जबराजा उसके यहा आया तब उदासीन होकर राजासे कहा कि हे आर्यपुत्र आप तो दूसरों के दोषोंको मि-टातेहो फिर अपने घरके दूषणोंको कैसेसहतेहो यह जो सुरक्षितनाम सम्पूर्ण अन्त पुरोंका अधिकारी है उसके साथ आपकी गुणवरा रानी आसक्त है और उसके सिवाय अन्य पुरुष अन्त पुरवालों को मिलभी नहीं सक्ताहै क्योकि अन्य सब रक्षक तो नपुंसक हैं यह बात आपकी सम्पूर्ण रानियों को विदित होगई है उसके यहवचन सुनकर राजाने बहुत विचारकरके अपनी सम्पूर्ण रानियों से जाकर पूछा उनसबनेभी कपटसे वही बात राजासे कही तब बुद्धिमान् राजा वीरभुजने क्रोधको रोककर विचारा कि रानी गुणवरा और सुरक्षितपर ऐसे दोषका सम्भव नहीं होसक्ताहै परन्तु यह प्रवाद तो इसप्रकार से फैलाही है इससे विना निश्चयकिये इसबातका भेद किसीकेआगे नहीं खोलनाचाहिये और युक्तिपूर्वक इनदोनोंको पृथक् २ रखकर देखना चाहिये कि क्या होताहै यह निश्चय करके राजाने दूसरे दिन सुर क्षितको बुलाकर क्रोधपूर्वककहा कि हे पापी मैंने सुनाहै कि तुमने ब्रह्महत्याकी है इससे जबतक तुम सम्पूर्ण तीर्थयात्रा न कर आओगे तबतक में तुम्हारा स्वरूप नहीं देखूंगा यह सुनकर उसने घबराकर कहा कि हे महाराज मैंने ब्रह्महत्या कहाकी है तब राजाने उससे फिर कहा कि धृष्टता मतकरो पापके नाश करनेवाले उस कश्मीर देशको जाओ जहा विष्णु भगवान् से पवित्र किया गया विजय क्षेत्र नन्दि क्षेत्र तथा वाराह क्षेत्रहै और जहा बहतीहुई भगवती गंगाका वितस्ता ऐसा नामहै ऐसे पवित्र और मडव क्षेत्र तथा उत्तर मानसरोवरसे युक्त कश्मीर देशकी यात्रासे पवित्र होकर तुम मेरेपासआओ यह कहकर राजाने उस विचारे सुरक्षितको निरपराधही तीर्थयात्राके बहानेसे बहुत दूर भेजदिया-३८ तदनन्तर राजा स्नेह क्रोध तथा विचारसे युक्त होकर रानी गुणवराकेमन्दिर में गया उसने राजाको उदासीन देखकर बहुत व्याकुल होकर कहा कि हे आर्यपुत्र आज अकस्मात् आपउदासीन क्यों हैं यह सुनकर राजाने बातबनाकर उससे कहा कि हेरानी आज कोई महाज्ञानी आकर मुझसे कहगया है कि रानी गुणवराको कुछकालतक तहखानेमें बदरखिये और आप ब्रह्मचारी हूजिये नहीं तो आपके राज्यका नाशहोजायगा और गुणवरा मरजायगी उसज्ञानी के इन वचनोंसे मुझे बड़ा विषाद होरहाहै यह सुनकर पतिव्रता रानी गुणवरा भय तथा अनुराग से व्याकुल होकर बोली कि हे आर्य्यपुत्र तो आजही आप मुझको तहखाने में क्यों नहीं छोड़देते जो मेरे प्राणों से भी आपका हितहोय तो मैं अन्यहू मेरी चाहे मृत्यु होजाय परन्तु आपकी कोई हानि न होय क्योंकि इसलोक और परलोक में स्त्रियोंको पतिही एक परमगतिहै यहसुनकर राजाने नेत्रों में आंसूभरकर अपने चित्तमें सोचा कि इस रानीपर और सुरक्षितपर मुझे कोई सन्देह नहीं होता मैंने उसको निस्सन्देह देखाहै और उसके मुखकी कान्तिभी नहीं म्लान हुईथी तथापि इसप्रवादका निश्चय करना अवश्य उचितहै यहसोचकर रानीसे राजानेकहा कितो यहीं तहखाना बनवाकर तुमरहो उसनेकहा बहुत अच्छा जैसी महाराजकी आज्ञा

नमालाकेही घर भेजदिया इसप्रकार राजा विक्रमादित्यने अपने पराक्रम और बुद्धिसे अपनी प्रतिज्ञा को पूर्णकरके वहाँसे अपने देशको चलनेका विचार किया उससमय मदनमालाभी विरहको सहने के लिये समर्थ न होकर अपने सम्पूर्ण गृहादिक ब्राह्मणोको दानकरके राजा के साथ चलने को उद्यतहुई तव राजा विक्रमादित्य मदनमालाके हाथी घोडे तथा सव सेनाको साथमें लेकर उस समेत अपने पाटलिपुत्र नगरमें आया और राजा नरसिंहसे मित्रताहोने के कारण अपनेदेशमें भी अत्यन्त आनन्द पूर्वक मदनमालाके साथ रहनेलगा इसप्रकार हे युवराज कभी२ वेश्याभी रानियोंकेही समान राजा लोगोंपर दृढ़प्रेम करती हैं और सत्कुलमें उत्पन्नस्त्रियों का तो कहनाही क्याहै मरुभूति के मुखसे इस उत्तम कथाको सुनकर नरवाहनदत्त और विद्याधरोंके श्रेष्ठकुलमें उत्पन्न होनेवाली रानीरत्नप्रभा दोनों अत्यन्त आनन्द को प्राप्तहुए १६१॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषाया रत्नप्रभालम्बकेचतुर्थस्तरंग ४॥

इसप्रकार मरुभूतिके कहनेके उपरान्त सेनाका स्वामी हरिशिख नरवाहनदत्तके आगे बोला कि हे युवराज ठीकहै कि सती स्त्रियोको पतिके सिवाय कोई प्रिय नहींहोता है इस विषयपरभी आप मुझ से एक वडी विचित्र कथासुनिये कि वर्धमान नाम पुरमें वीरभुजनाम एक वडा धर्मात्मा राजाथा उसराजाके सौ रानिया थीं उनमें से एकगुणवरा नाम रानी राजा को अत्यन्त प्यारीथी उन सौ रानियों में किसीकेभी कोई पुत्रनथा एकसमय राजाने श्रुतवर्द्धननाम वैद्यसेपूछा कि कोई ऐसीभी औषधहै जिस से पुत्रहोसके यह सुनकर वैद्यने कहा कि हे महाराज आप वनका बकरा मँगाइये तो मैं ऐसी औषध वनासक्ताहू वैद्यके इस वचनको सुनकर राजाने उसीसमय प्रतीहारको भेजकर वनका बकरा मँगादिया वैद्यने उसवकरेको रसोईदारों को देदिया कि इसके मासका वडासुन्दर रस वनालाओ जव रस बनकर आगया तव उसने सपूर्ण रानियोंको बुलवाकर उसरसमें कोई चूर्ण मिलाकर थोडा२ सबको पिलादिया उस समय अन्य सवरानी तो आईथीं परन्तु गुणवरा नहीं आईथी क्योंकि वह राजाके साथ परमेश्वर का पूजनकरनेगईथी क्षणभरके बाद राजा अपनीरानी गुणवरा समेत पूजनकरकेआया और उसरसमें से कुछभी बचा न देखकर उसवैद्यसे बोला कि तुमने गुणवराकेलिये कुछभी नहींरक्खा जिसके लिये यह सपूर्ण कार्य्य कियागयाथा उसीको तुम भूलगये राजाके यहवचनसुनकर वैद्यके उदासीन होजानेपर राजाने रसोईदारोंसे कहाक्या उस वकरेके मासमेंसे अभी कुछवाकीहै उन्होंनेकहा कि मास तो नहीं रहा परन्तु सींग बाकीहैं तववैद्यने कहा कि यहवहुतही अच्छाहै। सींगोंके भीतरके गूदेका रस अति उत्तम होताहै यहकहकर सींगोंके गूदेकारस वनवाकर वही चूर्ण उसमेभी मिलाकर गुणवराको पिलादिया तब राजाकी वहनिन्नानवे रानिया गर्भवतीहुई और समयपाकर सवके पुत्र उत्पन्नहुए और रानी गुणवराने सवके पीछेगर्भवती होनेके कारण सवके पीछे पुत्र उत्पन्नकिया राजा वीरभुजने उसपुत्रको सींगों के रस से उत्पन्न होनेके कारण उसकानाम शृंगभुज रक्खा सपूर्ण भाइयोंसमेत बढताहुआ शृंगभुज अवस्था मे तो सवमे छोटाथा परन्तु गुणो में सवसे श्रेष्ठहुआ वह रूपमे कामके समान धनुर्वेद में अर्जुनके स

मान और बल में भीमसेन के समान था इसप्रकार मृगभुज को गुणवान् देखकर वीरभुजकी सम्पूर्ण रानियां गुणवरा से ईर्ष्या करनेलगीं उनमें से अयशोलेखा नाम रानीने सबसे सलाहकरके जबराजा उसके यहां आया तब उदासीन होकर राजासे कहा कि हे आर्यपुत्र आप तो दूसरों के दोषोंको मि-टातेहो फिर अपने घरके दूषणोंको कैसेसहतेहो यह जो सुरक्षितनाम सम्पूर्ण अन्त पुरोंका अधिकारी है उसके साथ आपकी गुणवरा रानी आशक्त है और उसके सिवाय अन्य पुरुष अन्त पुरवालों को मिलभी नहीं सक्ता है क्योंकि अन्य सब रक्षक तो नपुंसक हैं यह बात आपकी सम्पूर्ण रानियों को विदित होगई है उसके यहवचन सुनकर राजाने बहुत विचारकरके अपनी सम्पूर्ण रानियो से जाकर पूछा उनसबनेभी कपटसे वही बात राजासे कही तब बुद्धिमान् राजा वीरभुजने क्रोधको रोककर विचारा कि रानी गुणवरा और सुरक्षितपर ऐसे दोषका सम्भवनहीं होसक्ताहै परन्तु यह प्रवाद तो इसप्रकार से फैलाही है इससे विना निश्चयकिये इसबातका भेद किसीकेआगे नहीं खोलनाचाहिये और युक्तिपूर्वक इनदोनोंको पृथक् २ रखकर देखना चाहिये कि क्या होताहै यह निश्चय करके राजाने दूसरे दिन सुर-क्षितको बुलाकर क्रोधपूर्वककहा कि हे पापी मैंने सुनाहै कि तुमने ब्रह्महत्याकी है इससे जबतक तुम सम्पूर्ण तीर्थयात्रा न कर आओगे तबतक मैं तुम्हारा स्वरूप नहीं देखूंगा यह सुनकर उसने घबराकर कहा कि हे महाराज मैंने ब्रह्महत्या कहांकी है तब राजाने उससे फिर कहा कि धृष्टता मतकरो पापके नाश करनेवाले उस कश्मीर देशको जाओ जहां विष्णु भगवान् से पवित्र किया गया विजय क्षेत्र नन्दि क्षेत्र तथा वाराह क्षेत्रहै और जहां बहतीहुई भगवती गंगारूप वितस्ता ऐसा नामहै ऐसे पवित्र और मडन क्षेत्र तथा उत्तर मानसरोवरसे युक्त कश्मीर देशकी यात्रासे पवित्र होकर तुम मेरेपासआओ यह कहकर राजाने उस विचारे सुरक्षितको निरपराधही तीर्थयात्राके बहानेसे बहुत दूर भेजदिया २६ तदनन्तर राजा स्नेह क्रोध तथा विचारसे युक्त होकर रानी गुणवराके मन्दिर में गया उसने राजाको उदासीन देखकर बहुत व्याकुल होकर कहा कि हे आर्यपुत्र आज अकस्मात् आपउदासीन क्यों हैं यह सुनकर राजाने बातबनाकर उससे कहा कि हेरानी आज कोई महाज्ञानी आकर मुझसे कहगया है कि रानी गुणवराको कुछकालतक तहखानेमें बदरखिये और आप ब्रह्मचारी हूजिये नहीं तो आपके राज्यका नाशहोजायगा और गुणवरा मरजायगी उसज्ञानी के इन वचनोंसे मुझे बड़ा विषाद होरहाहै यह सुनकर पतिव्रता रानी गुणवरा भय तथा अनुराग से व्याकुल होकर बोली कि हे आर्य्यपुत्र तो आजही आप मुझको तहखाने में क्यों नहीं छोडदेते जो मेरे प्राणों से भी आपका हितहोय तो मैं धन्यहूं मेरी चाहे मृत्यु होजाय परन्तु आपकी कोई हानि न होय क्योंकि इसलोक और परलोक में स्त्रियोंको पतिही एक परमगतिहै यहसुनकर राजाने नेत्रों में आंसूभरकर अपने चित्तमें शोचा कि इस रानीपर और सुरक्षितपर मुझे कोई सन्देह नहीं होता मैंने उसको निस्सन्देह देखाहै और उसके मुखकी कान्तिभी नहीं म्लान हुईथी तथापि इसप्रवादका निश्चय करना अवश्य उचितहै यहशोचकर रानीसे समझानेकरा कि तो यहीं तहखाना बनवाकर तुमरहो उसनेकहा बहुत अच्छा जैसी महाराजकी आज्ञा

होय तब राजाने वहीं तहखाना बनवाकर उसेबंदकरदिया और उसके पुत्र शृंगभुजको उदासीनदेखकर उससेभी वही कारण कहदिया रानी गुणवराने राजा का हितजानकर उसतहखाने को भी स्वर्ग के तुल्य मानलिया ठीकहै (स्वसुखनास्तिसाध्वीनां तासांभर्तृसुखंसुख) सती स्त्रियोंको अपना सुखसुख नहीं मालूमहोता उनको तो पतिकाही सुख महासुखहै इधर रानी गुणवराकी यहदशा देखकर यशोलेखाने एकांतमें निर्वासभुज अपने पुत्रसे कहा कि रानी गुणवरा तो मेरे उद्योगसे गढ़ेमें बन्दकरदी गई अब इसका पुत्रभी इस देशसे निकलजाय तो बहुत अच्छाहो इससे हे पुत्र तुम अपने अन्य भाइयों से भी सलाहकरके शीघ्रही इसके देशसे निकालनेकी युक्तिकरो माताके यह वचन सुनकर निर्वासभुज अपने अन्य भाइयोंसे सलाह करके शृंगभुजके निकालने का उपाय शोचनेलगा एकसमय सम्पूर्ण राजपुत्र अस्त्रों का अभ्यास कररहेथे उससमय उनको एक बड़ाभारी बगला महलपर दिखाई दिया उसे देखकर उन सबोंको बड़ा आश्चर्य्यहुआ उन सबको आश्चर्यित देखकर उसी मार्गसे आतेहुए किसी ज्ञानी क्षपणक (श्रावकजती) ने कहा कि हे राजपुत्रो यह बगला नहीं है यह अग्निशिखनाम राक्षस बगलेका रूप धरेहुए नगरोंका विनाश कियाकरता है तो इसहेतुसे इसको बाण मारकर भगादो क्षपणकके यह वचन सुनकर निर्वासादि राजपुत्रों ने अलग अलग बाणमारा और किसी का भी बाण उसके नहीं लगा तब वह क्षपणक फिर बोला कि तुम्हारा छोटाभाई शृंगभुज इस बगले को मारसक्ता है इससे वह योग्य धनुष लेकर इसको मारे उसके यह वचन सुनकर निर्वासभुज अपनी माताके वचनोंको स्मरणकरके विचारनेलगा कि शृंगभुजके निकालनेका यहअवसर मुझे मालूमहोताहै कि अपने पिता राजाका धनुषबाण लाकर शृंगभुजको दूं जो यह उससुवर्णके बाणसे इसबगलेको मारेगा और बगला बाण समेत उड़जायगा तब बाणको ढूंढनेकेलिये इसेलेकर हम सब इधरउधरजायँगे तब ढूंढनेसे बक रूपधारी यहराक्षस तोमिलेगा नहीं और शृंगभुज बाण विनालिये लौटेगा नहीं इसप्रकारसे हमारा कार्य्य सिद्धहोजायगा यह शोचकर उसने अपने पिताका धनुषबाण शृंगभुज को लादिया उसने वह धनुष बाण लेकर पराक्रम से धनुषको खैंचकर वह बाण उसकेमारा और बाणके लगतेही बगले के शरीर से रुधिरकी धारबहनेलगी और बाण समेत वह वहाँ से उड़गया तब शृंगभुजसे निर्वासभुज और उसकी प्रेरणासे अन्य सबभाई कहनेलगे कि वह सुवर्णमय बाणदेदो नहीं तो हमसब तुम्हारेही आगे अपना २ शरीर त्यागदेंगे क्योंकि राजा उसबाणके विना हमलोगोंको निकालदेगा और उसकेसमान न बनवाये से बनसक्ताहै और न मोल मिलसक्ताहै यहसुनकर शृंगभुजने अपने कुटिल भाइयों से कहा कि धैर्य्य धरो दीनहोकर भय मतकरो मैं जाकर उस राक्षसको मारकर बाण ला दूंगा यह कहकर और अपना धनुष बाण लेकर शृंगभुज पृथ्वी में रुधिरकी धारको देखताहुआ जिस दिशा मे वह बगला गया था उसी दिशाको चल दिया उससमय अन्य सबभाई तो प्रसन्न होकर अपनी २ माताके पास चलेगये और शृंगभुज क्रमसे जाते २ एक वनमें बहुतदूर जाकरपहुँचा उस वनमें एक बड़ासुन्दर पुर उसे मिला वह पुर क्या था मानों पुण्यकर्मी जनका फल समयपर भोगकरने के लिये प्राप्तहुआ था वहां उपवन में

किसी वृक्षकेनीचे क्षणभर विश्राम करनेकेपीछे उसे एकवडी रूपवती कन्यादिखाईदी विरह मे प्राणों के हरनेवाली और संगम मे प्राणों की देनेवाली उस कन्याको मानो ब्रह्माने अमृत और विष मिलाकर बनाया था धीरे२ प्रेमयुक्त दृष्टिसे देखतीहुई वह कन्या जब निकट आई तब शृगभुजने उससे पूछा कि हे मृगनयनी इसपुरका क्यानाम है यहाका राजाकौनहै तुम कौनहो और यहा किसलिये आईहो तब वह नीचेको मुखकरके तिरछी दृष्टिसे देखकर मधुरवाणी से बोली कि यह संपूर्ण सम्पत्तियो से युक्त धूमपुरनाम नगर है अग्निशिखनाम राक्षस यहा का राजाहै उसीकी रूपशिखा नाम मै कन्याहू और तुम्हारे असामान्य स्वरूपको देखनेकेलिये यहा आईहू अब तुम वतलाओ कि तुम कौनहो और यहा किसलिये आएहो उसके यह वचन सुनकर शृगभुजने अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त वाणके निमित्त धूमपुर में आने तकका कहदिया उसके सम्पूर्ण वृत्तान्तको सुनकर रूपशिखाबोली कि तुम्हारे समान त्रैलोक्यमें कोई धनुर्द्धारी नहीं है जिसने वकरूपधारी मेरे पिताको भी वाणसेमारा वह वाण मैने खेलनेके लिये लेलिया है और हमारे पिताको महादष्ट नाम मन्त्री ने घावकी अच्छी करनेवाली औषध लगाकर उसके घावको आराम करदिया तो अब हे आर्य्यपुत्र अपने पिता से कहकर तुम्हे भीतर लेचलूगी। क्योंकि मैने अपना शरीर तुम्हारे अर्पण करदियाहै यह कहकर रूपशिखा शृगभुजको वहीं बैठालकर बोली कि हे तात असाधारणरूप कुलशील तथा अवस्था के गुणों से युक्त शृगभुजनाम कोई राजपुत्र यहा आयाहै मैं जानतीहू कि वह मनुष्य नहीं है किसी देवताका अवतारहै जो वह मेरा पति न होगा तो मै अपना शरीर त्यागदूगी उसके यहवचनसुनकर अग्निशिख बोला कि हे पुत्री मनुष्य तो हमारे आहार होतेहैं और जो इतनेपर भी तुम्हें आग्रहहै तो उसराजपुत्रको यहाँ लाकर मुझे दिखलाओ तब रूपशिखा शृगभुजसे सबवृत्तान्त कहकर उसे अपने पिताकेपास बुलालाई अग्निशिखने प्रणाम करतेहुए शृगभुजसे कहा कि हे राजपुत्र जो तुम मेरी आज्ञाको न उल्लघन करो तो मै अपनी पुत्रीरूपशिखा तुमकोदेदू उसके यहवचनसुनकर शृगभुजने नम्रतापूर्वक कहा कि बहुत अच्छा मै आपकी आज्ञाका उल्लघन कभी नहीं करूगा तब प्रसन्नहोकर अग्निशिख बोला कि अच्छाजाओ स्नान स्थानमे स्नानकरके शीघ्र मेरे पास आओ उससे यहकहकर अग्निशिख रूपशिखा से बोला कि तुम जाओ और शीघ्रही अपनी सबबहनोंको साथलेकर चलीआओ उसके यहवचनसुनकर वहदोनों बाहर निकले १०२ तब शृगभुजसे रूपशिखाने कहा कि हे आर्य्यपुत्र मेरे सौ बहनेंहै सबका एकही समान स्वरूपहै सबके वस्त्र आभूषण एकसेही है और सबके गले में एकही प्रकारके हारहै इसमे हमारा पिता हमसबको मिलाकर तुम्हें मोहित करनेके लिये कहेगा कि इनमें से जिसको चाहो उसेलेलो मै अपने पिताके कपटके अभिप्रायको जानतीहू नहीं तो हम सबको वह क्यों बुलाता मै उससमय गले मे अपनाहार निकालकर अपने शिरमें लगाऊगीइसीपरिचयसे तुम मेरे ऊपर वनमाला डालदेना मेरा पिता भूतोंके समानहै इसकी बुद्धिमें विवेक नहीं है इसीसे यह मेरे साथ भी छल करताहै क्योंकि जातिका स्वभाव कभी भी नष्टनहीं होताहै इसमे यहजो कुछ तुमसे तुम्हारे छलनेको कहै सो सब स्वी

होय तब राजाने वहीं तहखाना बनवाकर उसे बंद करदिया और उसके पुत्र शृंगभुजको उदासीन देखकर उससे भी वही कारण कहदिया रानी गुणवराने राजा का हित जानकर उस तहखाने को भी स्वर्गके तुल्य मानलिया ठीकहै (स्वसुखनास्ति साध्वीनां तासां भर्तृसुखं सुखं) सती स्त्रियों को अपना सुख सुख नहीं मालूम होता उनको तो पतिकाही सुख महासुखहै इधर रानी गुणवराकी यहदशा देखकर रानी अयशोलेखाने एकान्त में निर्वासभुज अपने पुत्रसे कहा कि रानी गुणवरा तो मेरे उद्योगसे गढे में बन्द करदी गई अब इसका पुत्रभी इस देशसे निकलजाय तो बहुत अच्छाहो इससे हे पुत्र तुम अपने अन्य भाइयों से भी सलाहकरके शीघ्रही इसके देशसे निकालनेकी युक्तिकरो माताके यह बचन सुनकर निर्वासभुज अपने अन्य भाइयोंसे सलाह करके शृंगभुजके निकालने का उपाय शोचनेलगा एकसमय सम्पूर्ण राजपुत्र अस्त्रों का अभ्यास कररहे थे उससमय उनको एक बड़ाभारी बगला महलपर दिखाई दिया उसे देखकर उन सबोंको बड़ा आश्चर्य्यहुआ उन सबको आश्चर्य्ययुत देखकर उसी मार्गसे आतेहुए किसी ज्ञानी क्षपणक (श्रावकजती) ने कहा कि हे राजपुत्रो यह बगला नहींहै यह अग्निशिखनाम राक्षस बगलेका रूप धरेहुए नगरोंका विनाश कियाकरता है तो इसहेतुसे इसको बाण मारकर भगादो क्षपणकके यह बचन सुनकर निर्वासने राजपुत्रों ने अलग अलग बाणमारा और किसी का भी बाण उसके नहीं लगा तब वह क्षपणक फिर बोला कि तुम्हारा छोटाभाई शृंगभुज इस बगलेको मारसक्ता है इससे वह योग्य धनुष लेकर इसको मारे उसके यह बचन सुनकर निर्वासभुज अपनी माताके बचनोंको स्मरणकरके विचारनेलगा कि शृंगभुजके निकालनेका यहअवसर मुझे मालूम होताहै कि अपने पिता राजाका धनुषबाण लाकर शृंगभुजको दूं जो यह उससुवर्णके बाणसे इसबगलेको मारेगा और बगला बाण समेत उडजायगा तब बाणको ढूढनेकेलिये इसेलेकर हम सब इधर उधर जायँगे तब ढूढनेसे बक रूपधारी वह राक्षस तो मिलेगा नहीं और शृंगभुज बाण बिनालिये लौटेगा नहीं इसप्रकारसे हमारा कार्य्य सिद्धहोजायगा यह शोचकर उसने अपने पिताका धनुषबाण शृंगभुज को लादिया उसने वह धनुष बाण लेकर पराक्रम से धनुषको खैंचकर वह बाण उसके मारा और बाणके लगतेही बगले के शरीर से रुधिरकी धार बहनेलगी और बाण समेत वह वहाँ से उड़गया तब शृंगभुजसे निर्वासभुज और उसकी प्रेरणासे अन्य सबभाई कहनेलगे कि वह सुवर्णमय बाण देदो नहीं तो हमसब तुम्हारेही आगे अपना २ शरीर त्यागदेंगे क्योंकि राजा उसबाणके बिना हमलोगोंको निकालदेगा और उसकेसमान न बनवाये में बनसक्ताहै और न मोल मिलसक्ताहै यहसुनकर शृंगभुजने अपने कुटिल भाइयों से कहा कि धैर्य्य धरो दीनहोकर भय मतकरो मैं जाकर उस राक्षसको मारकर बाण ला दूंगा यह कहकर और अपना धनुष बाण लेकर शृंगभुज पृथ्वी में रुधिरकी धारको देखताहुआ जिस दिशा में वह बगला गया था उसी दिशाको चल दिया उससमय अन्य सबभाई तो प्रसन्न होकर अपनी २ माताके पास चलेगये और शृंगभुज क्रमसे जाते २ एक बनमें बहुतदूर जाकरपहुँचा उस बनमें एक बड़ासुन्दर पुर उसे मिला वह पुर क्या था मानों पुण्यरूपी वृक्षकाफल समयपर भोगकरने के लिये प्राप्तहुआ था वहां उपवन में

हुआ वहासे चला क्षणभर के पीछेही जैसे उसने मुखमोडकर पीछे को देखा तो धूमशिख पीछे चला आरहाथा तब उसने अपने पीछे मार्गमें मृत्तिका डालदी उस मृत्तिकासे बडाभारी पर्व्वत होगया उस पर्व्वत को किसी प्रकार उल्लघन करके जब वह राक्षस फिर पीछे आया तो उसने अपने पीछे जल छोडा उससे मार्ग में बडी भारी नदीहोगई उस नदीको भी किसी प्रकार उल्लघन करके जब वह फिर पीछे आया तो उसने वह काटे अपने पीछे मार्गमें छोडदिये उन काटोंसे मार्ग में बडाभारी काटों का वनहोगया उस वनको भी उल्लघन करके वह राक्षस जब पीछेही आया तब वह अग्नि उसने अपने पीछे मार्ग मे डालदी उससे वह सम्पूर्ण वन जलने लगा और खाण्डववन के समान जलते हुए उस वनको उल्लघन करने में असमर्थ होकर खिन्न तथा भयभीत होकर वहराक्षस लौटगया उससमय रूपशिखाकी मायासे मोहित होकर उसराक्षस को आकाशमार्ग से उडने की याद न रही उस राक्षसको लौटाहुआ देखकर शृगभुज अपनी प्रियाकी मायाकी प्रशसाकरता हुआ निर्भय होकर धूमपुरमें पहुचा वहा पहले रूपशिखाके पासजाके उसका घोडादेके और सबवृत्तान्त कहके अग्निशिख के पासजाकर बोला कि मैं तुम्हारे भाई को निमन्त्रण देआया यह सुनकर अग्निशिख ने आश्चर्य्यितहोकर कहा कि जो तुम वहा गयेहो तो वहा की कुछ पहचान बताओ तब शृगभुजने कहा कि वहा श्रीशिवके बाई ओर तो पार्वतीजी हैं और दक्षिणकी ओर विघ्नहर्त्ता श्रीगणेशजी हैं यही पहचानहै यहसुनकर अग्निशिख शोचनेलगा कि यह वहा गयाभी परन्तु मेरा भाई इसको नहीं खासका मै जानताहू यह मनुष्य नहींहै कोई देवता है इससे यह मेरी कन्या के योग्यही वरहै यह शोचकर उसने शृगभुजको रूपशिखाके पासभेजदिया और यहभेद उसेकुछ नहीं मालूमहुआ शृगभुजने रूपशिखाके पासजाकर भोजनादिकरके विवाहके लिये उत्कण्ठितहोके वह रात्रि किसीप्रकारसे व्यतीतकी प्रात काल अग्निशिखने अग्निको प्रज्वालितकरके अपनी सम्पत्ति के अनुसार रूपशिखा उसकोदेदी कहा तो राक्षसकी पुत्री रूपशिखा कहा राजपुत्र शृगभुज और कहा इनदोनोंका विवाह वाह प्राक्तन कर्मोंकी विचित्रगति है जैसे पकमे उत्पन्नहुई कमलिनीको पाकर राजहस शोभितहोता है उसीप्रकार राक्षसकी पुत्री रूपशिखाको पाकर शृगभुज शोभितहुआ विवाहके उपरान्त शृगभुज अपनी प्रियाके साथवहीं अपने श्वशुरके ऐश्वर्य्यको भोगताहुआ रहा १६१इसके उपरान्त कुछदिनो के व्यतीतहोनेपर शृगभुजने एकान्तमें अपनीप्रियासे कहा कि हे प्रिये चलो वर्द्धमानपुरको चलें वह हमारी राजधानीहै मेरे भाइयोंने मुझेयुक्तिपूर्व्वक वहांसे निकालाहै यह बात मै नहींसहसक्ताहू क्योंकि हमसरीखेलोगों को मानहीप्राणहै इससेतुम मेरे लिये इसआपनी जन्मभूमिको छोडकर अपने पितासेकहके और उससुवर्णके बाणको लेकरचलो शृगभुजके यहवचनसुनकर रूपशिखा बोली कि हे आर्य्यपुत्र जैसाआपकहोगे वैसाही मैं करूगी जन्मभूमि और स्वजन क्या पदार्थ है मेरे तो आपही सब कुछहो क्योंकि सतीस्त्रियो को पतिकेसिवाय और कोईगतिनहीं है परन्तु यहजो आपनेकहा कि अपनेपितासे कहो सो योग्यनहीं है क्योंकि वह हमलोगों को छोडनानहींचाहता इससे उसकोशी से बिनाहीकहे चलेचलिये जो पीछेसे परिजनो के कहनेसे वह आवेगा तो मै अपनी मायासे उसे मोहित

कारकरके तुम मुझसे कहदेना तब जो उचित होगा सो मैं करूंगी यहकहकर रूपशिखा अपनी बहनोके पासचलीगई और शृगभुज स्नानकरनेको चलदिया फिर रूपशिखा अपनी सपूर्ण बहनों को साथ लेकर अग्निशिखके पासआई और शृगभुज भी स्नानकर वहीं आया तब अग्निशिख शृगभुजको एकवनमाला देकर बोला कि इनमेंसे जो तुम्हारी प्रियाहो उसके गले में इसवनमालाको डाल दो उसने वनमाला लेकर पहले सकेतके अनुसार रूपशिखाके गलेमें पहरादीनी यह देखकर अग्निशिखने कहा कि प्रात काल में तुमदोनो का विवाहकरदूगा यहकहकर उसने उनसबको जानेकी आज्ञादी और क्षणभरमें शृगभुजको बुलाकर फिर कहा कि इनदोनो वधिया बैलोंको लेकर नगरके बाहर जो डेढ सौ मन तिल इकट्ठे रक्खे हैं उन्हे पृथ्वीमें वोआओ उसके वचनोंको स्वीकारकरके शृगभुजने उदासहोकर रूपशिखा से जाकर यहबात कही उसनेकहा हे आर्य्यपुत्र खेद न करो चलो मैं अपनीमाया से सपूर्ण कार्य्य सिद्धकरदूगी यहसुनकर शृगभुज उसीको साथलेकर नगरके बाहरगया और तिलों के ढेरमेंसे कुछ तिललेकर वोनेलगा यह तो वोताही रहा किन्तु रूपशिखाने अपनीमायाके बलसे शीघ्रही पृथ्वीको जोतकर सम्पूर्णतिलबोदिये तिलोंको वोयाहुआ देखकर शृगभुजने अग्निशिखसे आकर कहा कि सबतिल मैंने वोदिये तब उसछलीने फिर कहा कि मुझे उनतिलोंके बोनेसे कुछप्रयोजन नहींहै जाओ उनसबको इकट्ठाकर आओ यहसुनकर उसने रूपशिखासे जाकर कहदिया उसने उसीसमय अपनीमायासे असख्य चेंटी उत्पन्नकरके सबतिल इकट्ठाकरदिये यहदेखकर शृगभुजने फिर जाकर अग्निशिख से कहा कि सम्पूर्णतिल इकट्ठेहोगये यहसुनकर वह मूर्ख फिर बोला कि यहांसे दक्षिणदिशा में दो योजन पर वनमें एकशून्यशिवमन्दिर है उसमें धूमशिखनाम मेरा प्रियभाई रहताहै वहाजाकर तुम देवमन्दिरके सन्मुख खडेहोकर कहना कि हे धूमशिख कुटुम्बसहित तुमको निमन्त्रणदेनेकेलिये अग्निशिखने मुझे भेजाहै शीघ्रही आओ प्रात काल रूपशिखाका विवाह होनेवाला है यह कहकर शीघ्रही चलेआओ और प्रात काल रूपशिखा के साथ विवाह करो उसपापी के इनवचनों को स्वीकार करके शृगभुज ने रूपशिखा से जाकर सब कहदिया तब रूपशिखा मृत्तिका जल काटे तथा अग्नि उसे देकर बोली कि हे आर्य्य पुत्र तुम मेरे इस घोडेपर चढकर शीघ्रही शिवालयको जाओ और शीघ्रही धूमशिखको निमन्त्रण देकर इसी घोडेपर सवारहोके भगातेहुए चलेआओ और लौटते समय बारम्बार पीछे को देखतेजाना जोपीछे धूमशिख को आता देखना तो अपने पीछे मार्ग में यह मृत्तिका छोडदेना तिसपर भी जो धूमशिख पीछे ही आवे तो यह जल अपने पीछे मार्ग मे छोडदेना और फिर भी जो वह पीछे आवे तो यह काटे छोड देना और जो इतने पर भी वह पीछे आवे तो यह अग्नि अपने पीछे मार्ग में छोडदेना इसप्रकार करने से तुम निर्विघ्नतापूर्वक यहा आजाओगे सन्देह न करो जाओ आजमेरी विद्याका बल देखना उसके यह वचनसुनकर शृगभुज मृत्तिका आदिपदार्थो को लेकर उसी के घोडेपर चढकर देवमन्दिरको गया वहा बाईं ओर पार्वती तथा दाहिनी ओर श्रीगणेशजी से युक्त श्री शिवजी को नमस्कार करके और अग्निशिखका निमन्त्रण धूमशिखसे कहकर घोडा दौडाता

हुआ वहासे चला क्षणभर के पीछेही जैसे उसने मुखमोडकर पीछे को देखा तो धूमशिख पीछे चला आरहाथा तब उसने अपने पीछे मार्गमें मृत्तिका डालदी उस मृत्तिकासे बडाभारी पर्व्वत होगया उस पर्व्वत को किसी प्रकार उल्लघंन करके जब वह राक्षस फिर पीछे आया तो उसने अपने पीछे जल छोडा उससे मार्ग में बडी भारी नदीहोगई उस नदीको भी किसी प्रकार उल्लघन करके जब वह फिर पीछे आया तो उसने वह काटे अपने पीछे मार्गमें छोडदिये उन काटोंसे मार्ग में बडाभारी काटों का बनहोगया उस बनको भी उल्लघन करके वह राक्षस जब पीछेही आया तब वह अग्नि उसने अपने पीछे मार्ग मे डालदी उससे वह सम्पूर्ण बन जलने लगा और खाण्डववन के समान जलते हुए उस बनको उल्लघन करने मे असमर्थ होकर खिन्न तथा भयभीत होकर वहराक्षस लौटगया उससमय रूपशिखाकी मायासे मोहित होकर उसराक्षस को आकाशमार्ग से उड़ने की याद न रही उस राक्षसको लौटाहुआ देखकर शृंगभुज अपनी प्रियाकी मायाकी प्रशंसाकरता हुआ निर्भय होकर धूमपुरमें पहुचा वहा पहले रूपशिखाके पासजाके उसका घोंड़ादेके और सबवृत्तान्त कहके अग्निशिख के पासजाकर बोला कि मैं तुम्हारे भाई को निमन्त्रण देआया यह सुनकर अग्निशिख ने आश्चर्य्यितहोकर कहा किजो तुम वहा गयेहो तो वहा की कुछ पहचान बताओ तब शृंगभुजने कहा कि वहा श्रीशिवके बाईं ओर तो पार्वतीजी हैं और दक्षिणकी ओर विघ्नहर्त्ता श्रीगणेशजी हैं यही पहचानहै यहसुनकर अग्निशिख शोचनेलगा कि यह वहा गयाभी परन्तु मेरा भाई इसको नहीं खासका मै जानताहूं यह मनुष्य नहींहै कोई देवता है इससे यह मेरी कन्या के योग्यही वरहै यह शोचकर उसने शृंगभुजको रूपशिखाके पासभेजदिया और यहभेद उसेकुछ नहीं मालूमहुआ शृंगभुजने रूपशिखाके पासजाकर भोजनादिकरके विवाहके लिये उत्कण्ठितहोके वह रात्रि किसीप्रकारसे व्यतीतकी प्रात काल अग्निशिखाने अग्निको प्रज्वलितकरके अपनी सम्पत्ति के अनुसार रूपशिखा उसकोदेदी कहा तो राक्षस की पुत्री रूपशिखा कहा राजपुत्र शृंगभुज और कहा इनदोनोंका विवाह वाह प्राक्तन कर्मोंकी विचित्रगति है जैसे पङ्कसे उत्पन्नहुई कमलिनीको पाकर राजहंस शोभितहोता है उसीप्रकार राक्षसकी पुत्री रूपशिखाको पाकर शृंगभुज शोभितहुआ विवाहके उपरान्त शृंगभुज अपनी प्रियाके साथवहीं अपने श्वशुरके ऐश्वर्यको भोगताहुआ रहा १६१इसके उपरान्त कुछदिनो के व्यतीतहोनेपर शृंगभुजने एकान्तमें अपनीप्रियासे कहा कि हे प्रिये चलो वर्द्धमानपुरको चलें वह हमारी राजधानीहै मेरे भाइयोंने मुझेयुक्तिपूर्व्वक वहासे निकालाहै यह बात मे नहींसहसकताहूं क्योंकि हमसरीखेलोगों को मानहीप्राणहै इससेतुम मेरे लिये इसआपनी जन्मभूमिको छोडकर अपने पितासेकहके और उससुवर्णके बाण को लेकरचलो शृंगभुजके यहवचनसुनकर रूपशिखा बोली कि हे आर्यपुत्र जैसाआपकहोगे वैसाही मैं करूंगी जन्मभूमि और स्वजन क्या पदार्थ है मेरे तो आपही सब कुछहो क्योंकि सतीस्त्रियों को पतिकेसिवाय और कोईगतिनहीं है परन्तु यहजो आपनेकहा कि अपनेपिता से कहो सो योग्यनहीं है क्योंकि वह हमलोगों को छोडनानहींचाहता इससे हमको उस से बिनाहीकहे चलेचलिये जो पीछेसे परिजनों के कहनेसे वह आवेगा तो मै अपनी मायासे उसे मोहित

करदूंगी उसके यह वचनसुनकर शृगभुज वहुत प्रसन्नहोगया दूसरेदिन रूपशिखा रत्नों से भरेहुए डिब्बे को लेके और सुवर्ण के वाणकोभी लेकर शृगभुजसमेत अपने गरेगेगनाम घोडेपर चढकर उपवन के विहारके वहानेसे उसनगरके वाहरचलीआई वहाँसे वर्द्धमानपुरकी ओर कुछदूरचलेआनेपर अग्निशिख उनके गमनको जानकर क्रोधसे आकाशमार्ग में उडकर उनकेपीछे आया उसके आगमनके वेग से होनेवालेशब्दको सुनकर रूपशिखाने कहाकि हे आर्यपुत्र मेरापिता मेरे लौटाने के लिये पीछे से आ-रहाहै इससे तुम यहींठहरो देखो मैं इसको अपनी माया से कैसा मोहितकरतीहूं यह तुम को घोडेसमेत देखनहींसकेगा क्योंकि मैं अपनी विद्यासे तुम्हे ढकेदेती हूं यह कहकर उसने घोडे से उतरकर अपना पुरुष कासाभेष वनालिया और एकलकडीवाले से कहाकि यहाँ एक वडाराक्षस आताहै तुम थोडीदेर ठहर जाओ इसप्रकार वनमेसे लकडीलेने आयेहुए लकडीवालेसे कहकर उसीसे कुल्हाडी लेकर वह लकडी काटने लगी इतने मे अग्निशिखने वहा आकर आकाशसे उतरकर उसे लकडहारा जानकर पूछा कि यहा तुमने इस मार्ग से जातेहुए कोई स्त्री पुरुष देखे हैं उसने कहा नहीं हम परिश्रमसे दुखी होरहेहै हमने कुछनहींदेखा आज राक्षसोका स्वामी अग्निशिख मरगयाहै उसके जलानेकेलिये हमको वहुतसी लकडी काटनी हैं यह सुनकर वह मूर्ख राक्षस शोचनेलगा कि अरेक्या मैं मरगयाहू अबमुझे उस कन्यासे क्या प्रयोजनहै पहले अपने घरमे जाकर पुरजनों से अपनी मृत्युका वृत्तान्त तो पूछलूं यह शोचकर वह शीघ्रतासे अपने घरको लौटगया और रूपशिखा अपने पति समेत हँसतीहुई वहासे चली अग्निशिख घरमें जाकर हँसतेहुए अपने परिजनों से अपनेको जीताहुआ सुनकर प्रसन्नहोकर क्षणभरमेही फिर उसीके पीछे आगया तव घोर शब्द से उसको फिर आयाहुया जानकर रूपशिखा उसी प्रकार अपने पतिको छिपाकर मार्ग मे आतेहुए किसी हलकारे के हाथसे पत्रलेकर पुरुषका वेष वनाकर खडी होगई इतनेमें उसराक्षसने वहा आकर आकाश से उतरकर उससे पूछा कि तुमने कोई स्त्री पुरुष इधरजातेहुए देखेहैं उसनेकहा नहीं मैंने जल्दीमें कुछ नहीं देखा अग्निशिखनाम राक्षसों के राजाको उसके शत्रुओंने माराहै अवकुछ प्राण उसके वाकीहै इसलिये उसने मुझे चिट्ठी देकर अपने भाई धूमशिखको राज्यदेनेके लिये बुलाने को मुझे भेजाहै यह सुनकर अग्निशिख अपने मनमें क्या मुझे शत्रुओं ने मारडाला है इसलिये घवराकर अपने घरको लौटगया उसे यह ज्ञान नहीं हुआ कि मैंतो अभी भलाचगाहू मारा कौनगया ब्रह्माकी सृष्टिमें अपूर्व २ तामसी विचित्र जीवहैं घरमे जाकर हँसतेहुए अपने परिजनों से अपने मारेजाने के वृत्तान्त को मिथ्या भी जानकर वह मोहित होकर अपनी कन्याको भूलकर फिर नहीं आया रूपशिखाभी इसप्रकार अपने पिताको मोहित करके शृग-भुजके साथ उसी घोडेपर सवार होलिनी ठीकहै सतीस्त्रिया अपने पतिके हितके सिवाय और कुछनहीं जानती तव शृंगभुज अपनी प्रिया समेत उसी घोडेको दौडाकर वडी शीघ्रतासे वर्द्धमान पुरमें पहुँच गया १९५ वहा राजा वीरभुज उसे स्त्री समेत आया सुनकर प्रसन्नहोके मन्दिरसे वाहर उसके देखने को आया सत्यभामा से युक्त श्रीकृष्णजी के समान रूपशिखा से युक्त शृगभुजको देखकर राजाको

नवीन राज्य मिलनेकासा सुखहुआ और घोडेसे उतरकर रूपशिखा समेत पैरोंपर गिरतेहुए शृगभुजको हृदयमें लगाकर राजाके नेत्रोंसे प्रेमके आसू बहनेलगे और उन्हीं आसुओं मे मानो दु खरूपी अमगलको शान्त करके राजा बडे उत्सवसे उसे भीतरलेगया और सुखपूर्व्वक बैठालकर बोला कि हे पुत्र तुम कहागयेथे पिताके यह वचन सुन उसने अपना सपूर्णवृत्तान्त कहदिया और राजाकेसन्मुख अपने निर्वासभुज आदि सबभाइयोंको बुलवाकर वह सुवर्णका तीर रूपशिखासे उन्हें दिलवादिया राजावीरभुज सब वृत्तान्तको जानकर और अपने सन्मुखही वाणका देना देखकर अपने वीरभुजादिक पुत्रों से विरक्त होकर केवल शृगभुजको ही अपना पुत्र मानकर उसपर अधिक स्नेह करनेलगा और उसने शोचा कि जैसे इनभाई रूपशत्रुओं ने निरपराध शृगभुजको ढेपमे निकालदियाथा उसीप्रकार इनसब पुत्रोंकी माताओं ने मेरीनिर्दोषप्रिया गुणवराको मिथ्याकलंक लगायाहोगा इससे आजही चलकर निश्चयकरना चाहिये इसप्रकार शोचकर राजारात्रि के समय अयशोलेखा रानीके यहाँ परीक्षाकरने को गया वहा राजाके आने से प्रसन्नहोकर मद्यपीके रतिके उपरात श्रमसे कुछ औंघकर रानी अयशोलेखा बकनेलगी कि जो मै गुणवराको मिथ्यादोष न लगाती तो आज राजा मेरेयहाँ इसप्रकार क्यों आता उस दुष्टरानी के यह वचन सुनकर राजा अपने विचारको पुष्टजानकर क्रोधयुक्तहोके वहाँ से चलाआया और अपने प्रधान पुरुषों को बुलाकर बोलाकि गुणवराको गढेसे निकाल के और स्नानकराके शीघ्र मेरेपासलेआओ उसज्ञानीने इसी समयतक अनिष्टके शान्तकरने केलिये गुणवराको गढे में रखनेकी आज्ञादीथी यह सुनकर वह लोग उसीसमय गुणवराको निकालकर स्नानकराके और नवीन आभूषण वस्त्रपहराकर राजाके निकट लेआये तब राजा बहुतकालके विरहके उपरान्त उसेदेखकर उसके गले मे लिपटगया और परस्पर आलिंगन से तृप्तहोकर वह रात्रिव्यतीतकी राजा ने उससमय गुणवरासे शृगभुजकाभी सम्पूर्ण वृत्तान्त कहदिया उसेसुनकर गुणवरा अत्यन्त प्रसन्नहुई राजातो यहाँ आकर सुखवश मे मिलकर अत्यन्त आनन्द को प्राप्तहुआ और वहाँ रानी अयशोलेखा होश में आकर अपने छल को प्रकटहुआ जानकर अत्यन्त खेदको प्राप्तहुई प्रात काल राजावीरभुज ने रानी गुणवरा के पास शृगभुज को रूपशिखा समेत बुलवाभेजा उसने वहा आकर अपनी माता को गढे से निकली हुई देखकर अत्यन्त प्रसन्नहोकर रूपशिखा समेत बडे आनन्द पूर्व्वक प्रणाम किया गुणवरा भी बहुत दूरपरदेश मे आयेहुये वधूसमेत अपने पुत्रको आलिंगन करके आनन्द की पराकाष्ठा को प्राप्तहुई उससमय राजाकी आज्ञा मे शृंगभुज ने अपनासम्पूर्ण वृत्तात और जो २ रूपशिखाने विचित्र कार्य किये थे वह सब विस्तारपूर्वक कहे उस वृत्तान्त को सुनकर रानी गुणवरा बोली कि हे पुत्र इस विचित्र चरित्रवाली रूपशिखाने तुम्हारेलिये क्या २ नहीं किया इसने अपनेप्राणोंकी आशा भाईबन्धु तथा स्वदेश छोडकर तुम्हारे प्राण बचाये और तुम्हें स्वदेश तथा बन्धुओंसे मिलाया भाग्य वशसे यह कोई देवी तुम्हारे लिये उत्पन्न हुई है इसने अपने आचरणों से सपूर्ण पतिव्रताओं को नीचे करदिया रानी के यह वचन सुनकर राजा ने कहा कि बहुत ठीकहै और रूपशिखा ने विनयसे अपना शिरझुकालिया उससमय अयशोलेखा से मिथ्या दोषलगाया

करदूंगी उसके यह वचनसुनकर शृंगभुज वहुत प्रसन्नहोगया दूसरेदिन रूपशिखा रत्नों से भरेहुए डिब्बे को लेके और सुवर्ण के बाणकोभी लेकर शृगभुजसमेत अपने शरवेगनाम घोडेपर चढकर उपवन के विहारके वहानेसे उसनगरके बाहरचलीआई वहाँसे वर्द्धमानपुरकी ओर कुछदूरचलेआनेपर अग्निशिख उनके गमनको जानकर क्रोधसे आकाशमार्ग में उडकर उनकेपीछे आया उसके आगमनके वेग से होनेवालेशब्दको सुनकर रूपशिखाने कहाकि हे आर्यपुत्र मेरापिता मेरे लौटाने के लिये पीछे से आ रहाहै इससे तुम यहींठहरो देखो मैं इसको अपनी माया से कैसा मोहितकरतीहूं यह तुम को घोडेसमेत देखनहींसकेगा क्योंकि मैं अपनी विद्यासे तुम्हे ढकेदेती हूं यह कहकर उसने घोडे से उतरकर अपना पुरुष कासाभेप वनालिया और एकलकडीवाले से कहाकि यहाँ एक वडाराक्षस आताहै तुम थोडीदेर ठहर जाओ इसप्रकार वनमेंसे लकडीलेने आयेहुए लकडीवालेसे कहकर उसीसे कुल्हाडी लेकर वह लकडी काटने लगी इतने मे अग्निशिखने वहा आकर आकाशसे उतरकर उसे लकडहारा जानकर पूछा कि यहा तुमने इस मार्ग से जातेहुए कोई स्त्री पुरुष देखे हैं उसने कहा नहीं हम परिश्रमसे दुखी होगयेहैं हमने कुछनहींदेखा आज राक्षसोंका स्वामी अग्निशिख मरगयाहै उसके जलानेकेलिये हमको बहुतसी लकडी काटनी हैं यह सुनकर वह मूर्ख राक्षस शोचनेलगा कि अरेक्या मैं मरगयाहू अबमुझे उस कन्यासे क्या प्रयोजनहै पहले अपने घरमे जाकर पुरजनों से अपनी मृत्युका वृत्तान्त तो पूछलूं यह शोचकर वह शीघ्रतासे अपने घरको लौटगया और रूपशिखा अपने पति समेत हँसतीहुई वहासे चली अग्निशिख घरमें जाकर हँसतेहुए अपने परिजनों से अपनेको जीताहुआ सुनकर प्रसन्नहोकर क्षणभरमेंही फिर उसीके पीछे आगया तब घोर शब्द से उसको फिर आयाहुआ जानकर रूपशिखा उसी प्रकार अपने पतिको छिपाकर मार्ग में आतेहुए किसी हल्कारे के हाथसे पत्रलेकर पुरुषका वेष बनाकर खडी होगई इतनेमें उसराक्षसने वहा आकर आकाश से उतरकर उससे पूछा कि तुमने कोई स्त्री पुरुष इधरजातेहुए देखेहैं उसनेकहा नहीं मैंने जल्दीमें कुछ नहीं देखा अग्निशिखनाम राक्षसों के राजाको उसके शत्रुओंने माराहै अवकुछ प्राण उसके बाकीहैं इसलिये उसने मुझे चिट्ठी देकर अपने भाई धूमशिखको राज्यदेनेके लिये बुलाने को मुझे भेजाहै यह सुनकर अग्निशिख अपने मनमें क्या मुझे शत्रुओं ने मारडाला है इसलिये घवराकर अपने घरको लौटगया उसे यह ज्ञान नहीं हुआ कि मैंतो अभी भलाचगाहू मारा कौनगया ब्रह्माकी सृष्टिमें अपूर्व २ तामसी विचित्र जीवहैं घरमें जाकर हँसतेहुए अपने परिजनों से अपने मारेजाने के वृत्तान्त को मिथ्या भी जानकर वह मोहित होकर अपनी कन्याको भूलकर फिर नहीं आया रूपशिखाभी इसप्रकार अपने पिताको मोहित करके शृग-भुजके साथ उसी घोडेपर सवार होलीनी ठीकहै सतीस्त्रिया अपने पतिके हितके सिवाय और कुछनहीं जानती तब भृगभुज अपनी प्रिया समेत उसी घोडेको दौडाकर वडी शीघ्रतासे वर्द्धमान पुरमें पहुँच गया १९४ वहा राजा वीरभुज उसे स्त्री समेत आया सुनकर प्रसन्नहोके मन्दिरसे बाहर उसके देखने को आया सत्यभामा से युक्त श्रीकृष्णजी के समान रूपशिखा से युक्त शृगभुजको देखकर राजाको

नवीन राज्य मिलनेकासा सुखहुआ और घोडेसे उतरकर रूपशिखा समेत पैरोंपर गिरतेहुए शृगभुजको हृदयमें लगाकर राजाके नेत्रोंसे प्रेमके आंसू वहनेलगे और उन्हीं आंसुओं मे मानो दु खरूपी अमगलको शान्त करके राजा बडे उत्सवसे उसे भीतरलेगया और सुखपूर्व्वक वैठालकर वोला कि हे पुत्र तुम कहागयेथे पिताके यह वचन सुन उसने अपना सपूर्णवृत्तान्त कहदिया और राजाकेसन्मुख अपने निर्व्वासभुज आदि सवभाइयोंको वुलवाकर वह सुवर्णका तीर रूपशिखासे उन्हें दिलवादिया राजावीरभुज सव वृत्तान्तको जानकर और अपने सन्मुखही वाणका देना देखकर अपने वीरभुजादिक पुत्रों से विरक्त होकर केवल शृगभुजको ही अपना पुत्र मानकर उसपर अधिक स्नेह करनेलगा और उसने शोचा कि जैसे इनभाई रूपशत्रुओं ने निरपराध शृगभुजको द्वेषमे निकालदियाथा उसीप्रकार इनसव पुत्रोंकी माताओं ने मेरीनिर्दोषप्रिया गुणवराको मिथ्याकलक लगायाहोगा इससे आजही चलकर निश्चयकरना चाहिये इसप्रकार शोचकर राजारात्रि के समय अयशोलेखा रानीके यहाँ परीक्षाकरने को गया वहा राजाके आने से प्रसन्नहोकर मद्यपीके रतिके उपरात श्रमसे कुछ ओंघकर रानी अयशोलेखा वकनेलगी कि जो मैं गुणवराको मिथ्यादोष न लगाती तो आज राजा मेरेयहाँ इसप्रकार क्यों आता उस दुष्टरानी के यह वचन सुनकर राजा अपने विचारको पुष्टजानकर क्रोधयुक्तहोके वहाँ से चलाआया और अपने प्रधान पुरुषों को वुलाकर वोलाकि गुणवराको गढेसे निकाल के और स्नानकराके शीघ्र मेरेपासलेआओ उसज्ञानीने इसी समयतक अनिष्टके शान्तकरने केलिये गुणवराको गढे में रखनेकी आज्ञादीथी यह सुनकर वह लोग उसीसमय गुणवराको निकालकर स्नानकराके और नवीन आभूषण वस्त्रपहराकर राजाके निकट लेआये तव राजा वहुतकालके विरहके उपरान्त उसेदेखकर उसके गले मे लिपटगया और परस्पर आलिगन से तृप्तहोकर वह रात्रिव्यतीतकी राजा ने उससमय गुणवरासे शृगभुजकाभी सम्पूर्ण वृत्तान्त कहदिया उसेसुनकर गुणवरा अत्यन्त प्रसन्नहुई राजातो यहाँ आकर गुणवरा मे मिलकर अत्यन्त आनन्द को प्राप्तहुआ और वहाँ रानी अयशोलेखा होश में आकर अपने छल को प्रकटहुआ जानकर अत्यन्त खेदको प्राप्तहुई प्रात काल राजा वीरभुज ने रानी गुणवरा के पास शृगभुज को रूपशिखा समेत वुलवाभेजा उसने वहा आकर अपनी माता को गढे से निकली हुई देखकर अत्यन्त प्रसन्नहोकर रूपशिखा समेत वडे आनन्द पूर्व्वक प्रणाम किया गुणवरा भी वहुत दूरपरदेश मे आयेहुये वधूसमेत अपने पुत्रको आलिगन करके आनन्द की पराकाष्ठा को प्राप्तहुई उससमय राजाकी आज्ञा मे शृगभुज ने अपना सम्पूर्ण वृत्तात और जो२ रूपशिखाने विचित्र कार्य किये थे वह सव विस्तारपूर्व्वक कहे उस वृत्तान्त को सुनकर रानी गुणवरा वोली कि हे पुत्र इस विचित्र चरित्रवाली रूपशिखाने तुम्हारेलिये क्या २ नहीं किया इसने अपनेप्राणोंकी आशा भाईवन्धु तथा स्वदेश छोडकर तुम्हारे प्राण वचाये और तुम्हें स्वदेश तथा वन्धुओंमे मिलाया भाग्य वशसे यह कोई देवी तुम्हारे लिये उत्पन्न हुई है इसने अपने आचरणों से सपूर्ण पतिव्रताओ को नीचे करदिया रानी के यह वचन सुनकर राजा ने कहा कि वहुत ठीक्है और रूपशिखा ने विनयसे अपना शिरझुकालिया उससमय अयशोलेखा से मिथ्या दोषलगाया

करदूंगी उसके यह वचनसुनकर भृगभुज वहुत प्रसन्नहोगया दूसरेदिन रूपशिखा रत्नों से भरेहुए डिब्बे को लेके और सुवर्ण केव्याणकोभी लेकर भृगभुजसमेत अपने शरवेगनाम घोडेपर चढकर उपवन के विहारके बहानेसे उसनगरके बाहरचलीआई वहाँसे वर्द्धमानपुरकी ओर कुछदूरचलेआनेपर अग्निशिख उनके गमनको जानकर क्रोधसे आकाशमार्ग में उडकर उनकेपीछे आया उसके आगमनके वेग से होनेवालेशब्दको सुनकर रूपशिखाने कहाकि हे आर्यपुत्र मेरापिता मेरे लौटाने के लिये पीछे से आ-रहाहै इससे तुम यहींठहरो देखो मैं इसको अपनी माया से कैसा मोहितकरतीहूं यह तुम को घोडेसमेत देखनहींसकेगा क्योंकि मैं अपनी विद्यासे तुम्हे ढकेदेती हूं यह कहकर उसने घोडे से उतरकर अपना पुरुष कासाभेष वनालिया और एकलकडीवाले से कहाकि यहाँ एक वडाराक्षस आताहै तुम थोडीदेर ठहर जाओ इसप्रकार वनमे से लकडीलेने आयेहुए लकडीवालेसे कहकर उसीसे कुल्हाडी लेकर वह लकडी काटने लगी इतने मे अग्निशिखने वहा आकर आकाशसे उतरकर उसे लकडहारा जानकर पूछा कि यहा तुमने इस मार्ग से जातेहुए कोई स्त्री पुरुष देखे हैं उसने कहा नहीं हम परिश्रमसे दुखी होरहेहैं हमने कुछनहींदेखा आज राक्षसोंका स्वामी अग्निशिख मरगयाहै उसके जलानेकेलिये हमको वहुतसी लकडी काटनी हैं यह सुनकर वह मूर्ख राक्षस शोचनेलगा कि अरेक्या मैं मरगयाहूं अबमुझे उस कन्यासे क्या प्रयोजनहै पहले अपने घरमे जाकर पुरजनों से अपनी मृत्युका वृत्तान्त तो पूछलूं यह शोचकर वह शीघ्रतासे अपने घरको लौटगया और रूपशिखा अपने पति समेत हँसतीहुई वहासे चली अग्निशिख घरमें जाकर हँसतेहुए अपने परिजनों से अपनेको जीताहुआ सुनकर प्रसन्नहोकर क्षणभरमेंही फिर उसीके पीछे आगया तब घोर शब्द से उसको फिर आयाहुआ जानकर रूपशिखा उसी प्रकार अपने पतिको छिपाकर मार्ग मे आतेहुए किसी हलकारे के हाथसे पत्रलेकर पुरुषका वेष बनाकर खडी होगई इतनेमें उसराक्षसने वहा आकर आकाश से उतरकर उससे पूछा कि तुमने कोई स्त्री पुरुष इधरजातेहुए देखेहैं उसनेकहा नहीं मैंने जल्दीमें कुछ नहीं देखा अग्निशिखनाम राक्षसों के राजाको उसके शत्रुओंने माराहै अबकुछ प्राण उसके बाकीहैं इसलिये उसने मुझे चिट्ठी देकर अपने भाई धूमशिखको राज्यदेनेके लिये बुलाने को मुझे भेजाहै यह सुनकर अग्निशिख अपने मनमें क्या मुझे शत्रुओं ने मारडाला है इसलिये घबराकर अपने घरको लौटगया उसे यह ज्ञान नहीं हुआ कि मैंतो अभी भलाचगाहूं मारा कौनगया ब्रह्माकी सृष्टिमे अपूर्व २ तामसी विचित्र जीवहैं घरमे जाकर हँसतेहुए अपने परिजनों से अपने मारेजाने के वृत्तान्त को मिथ्या भी जानकर वह मोहित होकर अपनी कन्याको भूलकर फिर नहीं आया रूपशिखाभी इसप्रकार अपने पिताको मोहित करके भृग-भुजके साथ उसी घोडेपर सवार होलीनी ठीकहै सतीस्त्रिया अपने पतिके हितके सिवाय और कुछनहीं जानतीं तब भृगभुज अपनी प्रिया समेत उसी घोडेको दौडाकर वडी शीघ्रतासे वर्द्धमान पुरमें पहुँच गया १९४ वहा राजा वीरभुज उसे स्त्री समेत आया सुनकर प्रसन्नहोके मन्दिरसे वाहर उसके देखने को आया सत्यभामा से युक्त श्रीकृष्णजी के समान रूपशिखा से युक्त भृगभुजको देखकर राजाको

हुआ अन्त पुरका रक्षक सुरक्षित सपूर्ण तीर्थोंका भ्रमण करके राजाके द्वारपर आया प्रतीहारके मुख से उसका आना सुनकर राजा ने उसेभीतर बुलाके प्रणाम करते हुए उस को वडे आदर से अपने पास वैठाया और उसीके द्वारा सपूर्ण दुष्टरानियो को वुलवाकर उसी से कहा कि इनसबको तहखानो में बन्द करदो यह सुनकर उन सब रानियों को भयभीत देखकर रानी गुणवरा अत्यन्त कृपापूर्व्वक राजा के चरणो में गिरकर वोली कि हे आर्यपुत्र इनको तहखाने में बन्द न करवाइये मेरे ऊपर कृपा करिये मैं इन सबको भय भीत नहीं देखसक्ती हू इस प्रकार प्रार्थना करके उसने राजा से उनसबका बन्धन छुड़वा दिया ठीक है (महतामनुकम्पाहिविरुद्धेष्वप्रतिक्रिया) विरोधियों पर दयाकरनाही महात्मा लोगों का वदला लेनाहै तब वह सम्पूर्ण रानी लज्जित होकर अपने २ घरको चलीगईं और राजाने रानी गुण वराको अत्यन्त सुशीलमानकर अपने को महाधन्यमाना कि जिसे ऐसी स्त्री मिली इसके उपरान्त राजाने निर्वास आदिक अपने सम्पूर्ण पुत्रोंको बुलवाकर युक्ति पूर्व्वक उनको निकालनेके लिये कहा कि मैने सुनाहै कि तुम सबपापियोंने कोई पथिक वैश्यमारडालाहै इससे तुमलोग यहाँ मतरहो सपूर्ण तीर्थोका पर्य्यटनकरो राजाके यहवचनसुनकर वह सब उसे समझ न सके क्योंकि स्वामीके हठकरने पर कौन विश्वास करासक्ताहै तव उनसव भाइयोको जाते देखकर शृगभुज कृपासे आसूभरकर अपने पितासे वोला कि हे तात आप कृपाकरके इनके एक अपराधको क्षमा करिये और यहकहकर चरणोंपर गिरपडा राजा भी उसके विनयको देखकर और वाल्यावस्थाहीमे व्रज मे रहनेवाले श्रीकृष्ण भगवान् के समान सम्पूर्ण शत्रुओ के मारने मे समर्थ जानकर उसके वचन स्वीकार करलिये और वह निर्वासभुज आदि सवभाईभी उसको अपने प्राणोंकारक्षक जाननेलगे सब प्रजालोगभी शृगभुजके ऐसे२ उत्तम गुणों को देखकर उसपर बडा अनुराग करनेलगे तदनतर राजाने शृगभुजको गुणोंमे सवसे वडा जानकर उसके सम्पूर्ण वडेभाइयोंको छोडकर उसीको युवराज पदवीदी तव युवराज पदवीकोपाकर शृगभुज अपनेपिता से आज्ञा लेकर सम्पूर्ण सेनाको साजकर दिग्विजय करने को गया और अपनी भुजाओ के पराक्रमसे सम्पूर्ण पृथ्वी के राजा लोगोंको जीतकर उनको अपने साथ में लेकर और दिशाओ में अपनी कीर्त्तिको फैलाकर लौट आया इसप्रकार सम्पूर्ण पृथ्वी को अपने वशमे करके शृगभुज अपने भाइयो समेत सम्पूर्ण राज्य के कार्य्यों को करके अपने मातापिताको प्रसन्न करनेलगा तव उसके पिता माता राजा रानी भी निश्चिन्त होकर आनन्द पूर्व्वक ऐश्वर्य्यका भोग करनेलगे और शृगभुजभी सम्पूर्ण ब्राह्मणोंको दानादि से प्रसन्न करताहुआ रूपवती सम्पत्ति के समान रूपशिखा के साथ सुखपूर्व्वक रहनेलगा इसप्रकार से सतीस्त्रिया सव रीतियों से अपने पतिका सेवन करतीहैं जैसे कि गुणवरा और रूपशिखा दोनों सास वहूने किहर शिखके मुखसे इस सुन्दर कथा को सुनकर रत्नप्रभासमेत नरवाहनदत्त अत्यन्त प्रसन्नहोके वहासे उठकर अपने नित्य नियमको करके अपने पिता राजा उदयनके निकट गया वहा भोजन करके गीत वाद्यादिकों से दिनको व्यतीतकर रात्रिके समय अन्त पुर में अपनी प्रियाओं समेत रहा। २४७ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांरत्नप्रभालम्बकेपञ्चमस्तरङ्ग ५ ॥

प्रातःकाल फिर रत्नप्रभा के मन्दिर में स्थित नरवाहनदत्तके पास गोमुखादिक मन्त्री आये परन्तु मरुभूति मद्य पीनेसे कुछ उन्मत्त होकर हारादि पहर के और चन्दनादिक लेपनकरके कुछ विलम्ब से आया उसके डगमगातेहुये पैरोंको देखकर गोमुख उसकी नीतिसे प्रसन्नहोकर उससे हँसी करनेकेलिये बोला कि तुम यौगन्धरायणके पुत्रहोकरभी नीति नहीं जानतेहो प्रातःकाल मद्यपीतेहो और उन्मत्तहोकर स्वामीके पास आतेहो यह सुनकर उन्मत्त मरुभूति क्रोधकरके बोला कि यह बाततो युवराजको कहना उचितथी अथवा कोई गुरु कहता है इत्यकके पुत्र तू कौनहै जो मुझे सिखारहा है यह सुनकर गोमुख फिर हँसकर बोला कि क्या स्वामी उद्दण्डको अपने मुख से थोडेही डांटते हैं वहा बैठने वाले लोगोंको यथोचित अवश्य कहदेना चाहिये और मैं तो इत्यकपुत्रहू यह ठीकही है परन्तु तुम मन्त्रिवृषभ (श्रेष्ठ मन्त्री और मन्त्रियों में बैल) हो तुम्हारी जडताही से यह बात विदितहोती है परन्तु तुम्हारे सींग नहीं हैं यह सुनकर मरुभूतिने कहा कि तुम गोमुखकाही वृषभहोना सिद्ध (छजता) है इतनेपर भी जो तुम दात (बधिया) नहींहो सो तुम्हारा जातिसंकरत्वहै यह सुनकर सबलोगोंके हँसनेपर गोमुखबोला कि मरुभूति अवेध्यरत्नहै इसमें सैकडो यत्नों से भी कोई गुणोंका प्रवेशनहीं होसक्ताहै वह पुरुषरत्न तो जुदेही होते हैं जिनमे विना यत्न के गुणोंका प्रवेशहोजाताहै इसबातपर मैं वालूके पुलका वृत्तान्त आपलोगोंको सुनाताहू प्रतिष्ठानदेशमें तपोदत्तनाम एक ब्राह्मणथा उसने बाल्यावस्थामें पिताके ताडना करनेपरभी विद्यानहींपढी जब अवस्था अधिकहुई तब सबलोगों से अपनी निन्दा सुनकर पश्चात्तापकरके विद्या की प्राप्तिके लिये श्रीगंगाके तटपरजाके तपस्या करनेलगा वहा उसे उग्रतपकरताहुआ देखकर इन्द्र ब्राह्मणका स्वरूप धारणकर उसके निवारण करने के लिये उसके निकटआये और उसी के आगे किनारेपरकी वालूलेकर गंगाजी में फेकनेलगे यह देखकर तपोदत्त मौन को त्यागकरके बोला कि हे ब्राह्मण यह तुम क्या कररहेहो उसके बहुत पूछनेपर इन्द्रने कहा कि लोगों के पारजाने के लिये मैं गंगा में पुलबनारहाहू यह सुनकर उसने कहा कि हे मूर्ख प्रवाहसे बहजानेवाली वालूमे कहीं गंगाजीका पुल बनसक्ताहै तब इन्द्रने उससेकहा कि जो तुम यह जानतेहो तो विना पढने के व्रत उपवासादि करके विद्याके उपार्जन करनेको क्यो उद्युक्त हुएहो अक्षरों के विना लिखना और अध्ययनके विना विद्या खरगोशके सींग और आकाशके चित्रके समान है इन्द्रके यह वचन सुनके तपोदत्त उनवचनों को यथार्थ जानकर तपको त्यागकर अपने घरचलागया इसप्रकार बुद्धिमान्लोग तो थोडेही में समझ जाते हैं परन्तु मरुभूति निर्बुद्धि है समझाने से समझता तो नहीं है किन्तु और क्रोधकरताहै गोमुखके यह वचन सुनकर बीचमें हरिशिखबोला कि ठीकहै बुद्धिमानलोग बहुतजल्दी समझजाते हैं काशीपुरी में विरूपशर्मानाम अत्यन्त निर्धन तथा कुरूप एक ब्राह्मणथा वह अपने कुरूप और दुर्दशासे खिन्न होकर तपोवनमें जाके रूप तथा धनकी अभिलाषासे तप करनेलगा तब इन्द्र एक कुरूप महारोगी स्यार का स्वरूप धारणकरके उसके आगे आकर बैठा उसशृगालको मक्खियों से लिपाहुआ तथा अत्यन्त पीडित देखकर विरूपशर्मा अपने चित्तमें सोचनेलगा कि इससंसारमें प्राक्तनकर्मों से ऐसे २ जीव भी

हुआ अन्त पुरका रक्षक सुरक्षित सपूर्ण तीर्थोंका भ्रमण करके राजाके द्वारपर आया प्रतीहारके मुख से उसका आना सुनकर राजा ने उसेभीतर बुलाके प्रणाम करते हुए उस को बड़े आदर से अपने पास बैठाया और उसीके द्वारा सपूर्ण दुष्टरानियों को बुलवाकर उसी से कहा कि इनसबको तहखानो में बन्द करदो यह सुनकर उन सब रानियो को भयभीत देखकर रानी गुणवरा अत्यन्त कृपापूर्व्वक राजा के चरणो में गिरकर बोली कि हे आर्यपुत्र इनको तहखाने मे बन्द न करवाइये मेरे ऊपर कृपा करिये मैं इन सबको भय भीत नहीं देखसक्ती हू इस प्रकार प्रार्थना करके उसने राजा से उनसबका बन्धन छुड़वा दिया ठीक है (महतामनुकम्पाहिविरुद्धेप्वप्रतिक्रिया) विरोधियों पर दयाकरनाही महात्मा लोगों का बदला लेनाहै तब वह सम्पूर्ण रानी लज्जित होकर अपने २ घरको चलीगई और राजाने रानी गुणवराको अत्यन्त सुशीलमानकर अपने को महाधन्यमाना कि जिसे ऐसी स्त्री मिली इसके उपरान्त राजाने निर्वास आदिक अपने सम्पूर्ण पुत्रोंको बुलवाकर युक्ति पूर्व्वक उनको निकालनेके लिये कहा कि मैंने सुनाहै कि तुम सबपापियोने कोई पथिक वैश्यमारडालाहै इससे तुमलोग यहाँ मतरहो सपूर्ण तीर्थोंका पर्य्यटनकरो राजाके यहवचनसुनकर वह सब उसे समझ न सके क्योंकि स्वामीके हठकरने पर कौन विश्वास करासक्ताहै तब उनसब भाइयोको जाते देखकर शृगभुज कृपासे आसू भरकर अपने पितासे बोला कि हे तात आप कृपाकरके इनके एक अपराधको क्षमाकरिये और यहकहकर चरणोंपर गिरपडा राजा भी उसके विनयको देखकर और बाल्यावस्थाहीमें व्रज मे रहनेवाले श्रीकृष्ण भगवान् के समान सम्पूर्ण शत्रुओ के मारने में समर्थ जानकर उसके वचन स्वीकार करलिये और वह निर्वासभुज आदि सबभाईभी उसको अपने प्राणोंकारक्षक जाननेलगे सब प्रजालोगभी शृगभुजके ऐसे२ उत्तम गुणों को देखकर उसपर बडा अनुराग करनेलगे तदनतर राजाने शृगभुजको गुणों में सबसे बडाजानकर उसके सम्पूर्ण बडेभाइयोको छोडकर उसीको युवराज पदवीदी तब युवराज पदवीकोपाकर शृगभुज अपनेपिता से आज्ञा लेकर सम्पूर्ण सेनाको साजकर दिग्विजय करने को गया और अपनी भुजाओं के पराक्रमसे सम्पूर्ण पृथ्वी के राजा लोगोंको जीतकर उनको अपने साथ मे लेकर और दिशाओं मे अपनी कीर्त्तिको फैलाकर लौट आया इसप्रकार सम्पूर्ण पृथ्वी को अपने वशमे करके शृगभुज अपनेभाइयो समेत सम्पूर्ण राज्य के कार्य्यों को करके अपने मातापिताको प्रसन्न करनेलगा तब उसके पिता माता राजा रानी भी निश्चिन्त होकर आनन्द पूर्व्वक ऐश्वर्य्यका भोग करनेलगे और शृगभुजभी सम्पूर्ण ब्राह्मणोंको दानादि से प्रसन्न करताहुआ रूपवती सम्पत्ति के समान रूपशिखा के साथ सुखपूर्व्वक रहनेलगा इसप्रकार से सतीस्त्रिया सब रीतियों से अपने पतिका सेवन करतीहैं जैसे कि गुणवरा और रूपशिखा दोनों सास बहूने कि हर शिखके मुखसे इस सुन्दर कथा को सुनकर रत्नप्रभासमेत नरवाहनदत्त अत्यन्त प्रसन्नहोके वहासे उठकर अपने नित्य नियमको करके अपने पिता राजा उदयन्के निकट गया वहा भोजन करके गीत वाद्यादिकों से दिनको व्यतीतकर रात्रिके समय अन्त पुर में अपनी प्रियाओं समेत रहा॥ २४७ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायारत्नप्रभालम्बकेपचमस्तरग ५॥

प्रातःकाल फिर रत्नप्रभा के मन्दिर में स्थित नरवाहनदत्तके पास गोमुखादिक मन्त्री आये परन्तु मरुभूति मद्य पीनेसे कुछ उन्मत्त होकर हारादि पहर के और चन्दनादिक लेपनकरके कुछ विलम्ब से आया उसके डगमगातेहुये पैरोंको देखकर गोमुख उसकी नीतिसे प्रसन्नहोकर उससे हँसी करनेकेलिये बोला कि तुम यौगन्धरायणके पुत्रहोकरभी नीति नहीं जानतेहो प्रातःकाल मद्यपीतेहो और उन्मत्तहोकर स्वामीके पास आतेहो यह सुनकर उन्मत्त मरुभूति क्रोधकरके बोला कि यह बाततो युवराजको कहना उचितथी अथवा कोई गुरु कहता है इत्यकके पुत्र तू कौनहै जो मुझे सिखारहा है यह सुनकर गोमुख फिर हँसकर बोला कि क्या स्वामी उद्दण्डको अपने मुख से थोडेही डाटते हैं वहां बैठने वाले लोगोंको यथोचित अवश्य कहदेना चाहिये और मैं तो इत्यकपुत्रहूं यह ठीककही है परन्तु तुम मन्त्रिवृषभ (श्रेष्ठ मन्त्री और मन्त्रियों में बैल) हो तुम्हारी जडताही से यह बात विदितहोती है परन्तु तुम्हारे सींग नहीं है यह सुनकर मरुभूतिने कहा कि तुम गोमुखकाही वृषभहोना सिद्ध (छजता) है इतनेपर भी जो तुम दांत (बधिया) नहींहो सो तुम्हारा जातिसंकरत्वहै यह सुनकर सबलोगोंके हँसनेपर गोमुखबोला कि मरुभूति अवेध्यरत्नहै इसमें सैकडो यत्नों से भी कोई गुणोंका प्रवेशनहीं होसक्ताहै वह पुरुषरत्न तो जुदेही होते हैं जिनमें विना यत्न के गुणोंका प्रवेशहोजाताहै इसबातपर मैं बालूके पुलका वृत्तान्त आपलोगोंको सुनाताहूं प्रतिष्ठानदेशमें तपोदत्तनाम एक ब्राह्मणथा उसने बाल्यावस्थामें पिताके ताडना करनेपरभी विद्यानहींपढी जब अवस्था अधिकहुई तब सबलोगों से अपनी निन्दा सुनकर पश्चात्तापकरके विद्या की प्राप्तिके लिये श्रीगंगाके तटपरजाके तपस्या करनेलगा वहां उसे उग्रतपकरताहुआ देखकर इन्द्र ब्राह्मणका स्वरूप धारणकर उसके निवारण करने के लिये उसके निकटआये और उसी के आगे किनारेपरकी बालूलेकर गंगाजी में फेंकनेलगे यह देखकर तपोदत्त मौन को त्यागकरके बोला कि हे ब्राह्मण यह तुम क्या कररहेहो उसके बहुत पूछनेपर इन्द्रने कहा कि लोगों के पारजाने के लिये मैं गंगा में पुलबनारहाहूं यह सुनकर उसने कहा कि हे मूर्ख प्रवाहसे बहजानेवाली बालूसे कहीं गंगाजीका पुल बनसक्ताहै तब इन्द्रने उससेकहा कि जो तुम यह जानतेहो तो विना पढने के व्रत उपवासादि करके विद्याके उपार्जन करनेको क्यों उद्यतहुएहो अक्षरों के विना लिखना और अध्ययनके विना विद्या खरगोशके सींग और आकाशके चित्रके समान है इन्द्रके यह वचन सुनके तपोदत्त उनवचनों को यथार्थ जानकर तपको त्यागकर अपने घरचलागया इसप्रकार बुद्धिमान्लोग तो थोडेही में समझ जाते हैं परन्तु मरुभूति निर्बुद्धि है समझाने से समझता तो नहीं है किन्तु और क्रोधकरताहै गोमुखके यह वचन सुनकर बीचमें हरिशिखबोला कि ठीकहै बुद्धिमानलोग बहुतजल्दी समझजाते हैं काशीपुरी में विरूपशर्मानाम अत्यन्त निर्धन तथा कुरूप एक ब्राह्मणथा वह अपने कुरूप और दरिद्रतासे खिन्न होकर तपोवनमें जाके रूप तथा धनकी अभिलाषासे तप करनेलगा तब इन्द्र एक कुरूप महारोगी स्यार का स्वरूप धारणकरके उसके आगे आकर बैठा उसशृगालको मक्खियों में लिपाहुआ तथा अत्यन्त पीडित देखकर विरूपशर्मा अपने चित्तमें शोचनेलगा कि इससंसारमें प्राक्तनकर्मों से ऐसे २ जीव भी

त्पन्नहोते हैं तो ईश्वरकी मेरेऊपर यही बडी कृपाहै कि मुझे भी ऐसाही नहीं किया भाग्यके लिखेको कौन मेटसक्ताहै यह शोचकर विरूपशर्म्मा तपोवनसे अपने घरकोचलागया हरिशिखके इसप्रकार कहने पर और गोमुखके प्रशंसाकरनेपर मरुभूति उन्मत्ततामें क्रोधकरके बोला कि हे गोमुख तुमलोगोंके वचनमेंही बलहै भुजाओंमें नहीं तुमसरीके नपुंसक वकवादियोंसे कलहकरने में वीरपुरुषोंको लज्जा होतीहै यह कहकर लडनेकी इच्छा करतेहुए मरुभूतिको नरवाहनदत्तने मुस्कराकर आपही समझाया और स्नेहसे उसे उसीके घर भेजके अपना नित्यनैमित्तिककरके वह दिन सुखपूर्वक व्यतीतकिया ३६ प्रातःकाल फिर सम्पूर्ण मंत्रियोंके आजानेपर मरुभूतिको लज्जित देखकर रत्नप्रभा नरवाहनदत्त से बोली कि हे आर्यपुत्र आप बडे पुण्यात्माहो जिनको ऐसे शुद्धचित्त और बाल्यावस्थासेही स्नेहरूपी डोरीसे बँधेहुए यह मन्त्री मिले हैं और यह मन्त्री भी धन्यहैं जिनको आपसरीखे स्वामी मिलेहों निस्सन्देह आपलोगोंका पूर्वज संस्कारसे संयोगहुआहै रानी रत्नप्रभाके यह वचन सुनकर वसन्तकका पुत्र [त]पन्तकबोला कि ठीकहै हमलोगोंको पूर्वजन्मकेही संयोगसे यह स्वामी मिलाहै और इससंसारके संपूर्ण कार्य्य पूर्व संस्कारहीसे होते हैं इस विषयपर मैं तुमको एककथा सुनाताहूं विलासपुरनाम नगरमें विनयशीलनाम एक बडा सुशील राजाथा उसके प्राणोंसे भी प्यारी कमलप्रभारानीथी राजा बहुत कालतक सुखपूर्व्वक उसरानीके साथ विहार करताहुआ रहा समयपाकर सुन्दरताकी नष्टकरनेवाली वृद्धावस्था राजाके प्रकटहुई वृद्धावस्था को देखकर राजा शोचनेलगा कि पाले से मारेहुए कमल के समान अपना म्लानमुख मैं रानीको कैसे दिखाऊं हा धिक्कारहै मेरा तो मरनाही अच्छा है यह शोचकर उसने तरुणचन्द्रनाम वैद्यको सभामें बुलाकर कहा कि हे तरुणचन्द्र तुम हमारे बडेभक्तहो और बडेचतुरहो इस लिये तुमसे पूछताहूं कि क्या कोई ऐसीभी युक्तिहै जिससे वृद्धावस्था निवृत्तहोजाय राजाके यहवचन सुनकर केवल कलाओंसेही युक्त वह कुटिल तरुणचन्द्र अपने को परिपूर्ण करनेकी इच्छासे शोचने लगा कि यह राजा मूर्ख है इससे प्रथम इसके पाससे खूबधनलेनाचाहिये फिर जैसाहोगा तैसा देखाजायगा यह शोचकर वह राजासे बोला कि हे स्वामी पृथ्वीमें एकबडाभारी गढाखुदवाकर आठमहीनेतक अकेले उसमें रहिये और मेरीदीहुई औषध खाइये तो आपकी वृद्धावस्था दूरहोजाय वैद्यके यह वचन सुनकर राजाने शीघ्रही पृथ्वीमे एक बडाभारी गढाबनवाया ठीकहै (क्षमन्तेनविचारंहिमूर्खा विषयलोलुपाः) विषयके लोभी मूर्खलोग विचार नहीं करसक्ते हैं राजाको वैद्यकी आज्ञामें उद्यत देखकर मंत्रियोंने कहा कि हे महाराज प्राचीनलोगोंके सत्त्व तप तथा दमसे और युगके प्रभावसे रसायन सिद्ध होताथा आजकलतो रसायन केवल सुनी हैं देखी नहीं हैं और जो कोई करताभी है तो सामग्रीके न मिलनेसे उलटा फल मिलता है इससे आपको इसके कहने में आना योग्य नहींहै क्योंकि धूर्त्तलोग मूर्खोंको ठगकर खायाकरते हैं आप विचारिये तो सही क्या गईहुई अवस्था भी फिर लौट सकतीहै मंत्रियोंके अनेक वचन घनी भोग तृष्णासे भरेहुए राजाके हृदयमें नहीं समाये और वह राजा अपने सम्पूर्ण ऐश्वर्य्य को छोडकर उस गढे मे अकेलाहीगया केवल

वैद्य अपने नौकरके साथ औषधादि देनेको उसके पास जाताथा राजा उस अन्धकारमय गढे में अपने हृदयसे अधिक होनेके कारण निकलेहुए अज्ञान में मानों कुछ कालतक रहा उसमें रहते २ जब छ महीने व्यतीत होगये तब वह वैद्य राजा की वृद्धावस्थाको और भी अधिक देखकर राजा के समान आकृतिवाले किसी युवापुरुषको तुझे राजा बनाऊंगा यह कहकर सुरंगखोदकर रात्रिके समय उसीगढे मे लेआया और सोतेहुए राजाको मारकर वहा से लेकर किसी अन्धेकुएँ में छोड आया और उस तरुणपुरुष को वहीं बैठालकर वह सुरंग बन्दकर दीनी ठीकहै (सम्प्राप्यमूढबुद्धीनामवकाशं निरर्गलम् उच्छृंखलमति कुर्यात् प्राकृत किन्नसाहसं) मूर्खलोगों में निरर्गल अवकाश पाकर उद्दंड साधारण लोग कौनसा साहस नहीं करतेहैं तब उस वैद्यने दूसरे दिन राजाके सम्पूर्ण परिकरके लोगों से कहा कि मैंने छ महीने में राजाको युवाकरदिया और दो महीने में इसकारूपभी बदल जायगा इस्से तुमलोग कुछ दूरसे राजाकी चेष्टा देखो यह कहकर उसने सम्पूर्ण लोगों को बुलाकर उस युवापुरुष से सबके नाम और कार्य्य बतलाये इस युक्तिसे उसने दो महीने तक उस युवापुरुषको रानी पर्य्यन्त सम्पूर्ण परिकर पहचनवादिया और सुन्दर भोजनों से उसे पुष्टकरके आठमहीनों के बाद बाहर निकालकर सबसे कहा कि देखो राजा अजर होगया उससमय सम्पूर्ण लोग राजाको औषधसे अजरहुआ जानकर उसको सब ओरसे घेरकर खडे होकर देखनेलगे तदनन्तर वह तरुण पुरुष स्नान करके बडे उत्सव पूर्वक मंत्रियों के साथ सम्पूर्ण राज्य कार्य्य करनेलगा तबसे उसका नाम राजा अजरहोगया और सम्पूर्ण रानियों के साथ क्रीडा करताहुआ राज्यके सुखोंको भोगनेलगा वैद्यके छलको न जानकर सब लोगों ने यही जाना कि यह वही राजाहै रसायन के प्रभावसे इसका स्वरूप बदलगया है तब राजा अजर स्नेहसे सम्पूर्ण प्रजातथा रानी कमल प्रभाको अपने ऊपर अनुरक्त करके अपने मित्रों समेत राज्य सुख को भोगनेलगा उसने अपने परममित्र भेषजचन्द्र तथा पद्मदर्शन को इतने हाथी घोडे और रत्न दिये कि वह राजाके समान ऐश्वर्य्यवान् होगये परन्तु तरुणचन्द्र नाम वैद्य को केवल औषधके लिये रक्खा और सत्य तथा धर्मसे उसको च्युतजानके उसपर विश्वास नहीं किया एकदिन उस वैद्यने एकान्तमें राजासे कहा कि तुम मुझे कुछ भी नहीं गिनतेहो स्वतन्त्रता से जो चाहतेहो सो करते हो क्या वहदिन भूलगया जो मैंने तुमको राजा बनायाथा यह सुनकर राजा अजरने वैद्यसे कहा कि अरे तुम बडे मूर्खहो कौन किसको करताहै और कौन किसको देताहै अपने पूर्वजन्म के कर्मही सब करतेहैं और देतेहैं इस्से तुम अभिमान न करो यह मुझे तपके प्रभावसे राज्य मिलाहै यह बात मैं तुमको थोडेही कालमें प्रत्यक्ष दिखादूंगा उसके यह वचन सुनकर उस वैद्यने भयभीतहोकर सोचा कि यह तो धृष्टता रहित महाधीर ज्ञानी मालूम होताहै जो गुप्तबातका जानना राजा लोगोंको वशमें रखने का मुख्य कारण होताहै वह भी इसके सन्मुख नहीं चलता इस्से इसी के अनुकूल बनारहना चाहिये और देखूं यह क्या अपने तपका प्रभाव मुझे दिखावेगा इस प्रकार सोचकर वह वैद्य चुपहोगया दूसरेदिन राजा अजर तरुणचन्द्रादिकों को लेकर भ्रमण करने को निकला भ्रमण करते २ नदी के

उत्पन्नहोते है तो ईश्वरकी मुझपर यही बडीकृपाहै कि मुझे भी ऐसाही नहीं किया भाग्यके लिखेको कौन मेटसक्ताहै यह शोचकर विरूपशर्म्मा तपोवनसे अपने घरकोचलागया हरिशिखके इसप्रकार कहने पर और गोमुखके प्रशंसाकरनेपर मरुभूति उन्मत्ततासे क्रोधकरके बोला कि हे गोमुख तुमलोगोंके वचनमेंही बलहै भुजाओं मे नहीं तुमसरीके नपुंसक वकवादियों से कलहकरने मे वीरपुरुषोंको लज्जा होती है यह कहकर लडनेकी इच्छा करतेहुए मरुभूतिको नरवाहनदत्तने मुस्कराकर आपही समझाया और स्नेहसे उसे उसी के घर भेजके अपना नित्यनैमित्तिककरके वह दिन सुखपूर्व्वक व्यतीतकिया १६ प्रातःकाल फिर सम्पूर्ण मन्त्रियो के आजानेपर मरुभूतिको लज्जित देखकर रत्नप्रभा नरवाहनदत्त से बोली कि हे आर्यपुत्र आप बडे पुण्यात्माहो जिनको ऐसे शुद्धचित्त और बाल्यावस्थासे ही स्नेहरूपी जंजीरमें बँधेहुए यह मन्त्री मिले है और यह मन्त्री भी धन्यहैं जिनको आपसरीखे स्वामी मिलेहो निस्सन्देह आपलोगोंका पूर्वज संस्कारसे संयोगहुआहै रानी रत्नप्रभाके यह वचन सुनकर वसन्तकका पुत्र तपंतकबोला कि ठीकहै हमलोगोंको पूर्वजन्मकेही संयोगसे यह स्वामी मिलाहै और इससंसारके संपूर्ण कार्य्य पूर्व संस्कारही से होते है इसे विषयपर मैं तुमको एककथासुनाताहूं विलासपुरनाम नगरमें विनयशीलनाम एक बडा सुशील राजाथा उसके प्राणों से भी प्यारी कमलप्रभारानीथी राजा बहुत कालतक सुखपूर्व्वक उसरानी के साथ विहार करताहुआ रहा समयपाकर सुन्दरताकी नष्टकरनेवाली वृद्धावस्था उसराजाके प्रकटहुई वृद्धावस्था को देखकर राजा शोचनेलगा कि पाले से मारेहुए कमल के समान अपना म्लानमुख मैं रानीको कैसे दिखाऊं हा धिक्कारहै मेरा तो मरनाही अच्छा है यह शोचकर उसने तरुणचन्द्रनाम वैद्यको सभामें बुलाकर कहा कि हे तरुणचन्द्र तुम हमारे बडेभक्तहो और बडेचतुरहो इस से मैं तुमसे पूछताहूं कि क्या कोई ऐसीभी युक्तिहै जिससे वृद्धावस्था निवृत्तहोजाय राजाके यह वचन सुनकर केवल कलाओं से ही युक्त वह कुटिल तरुणचन्द्र अपने को परिपूर्ण करनेकी इच्छासे शोचने लगा कि यह राजा मूर्ख है इससे प्रथम इसके पाससे खूबधनलेनाचाहिये फिर जैसाहोगा तैसा देखाजायगा यह शोचकर वह राजासे बोला कि हे स्वामी पृथ्वी में एकबडाभारी गढाखुदवाकर आठमहीनेतक आप अकेले उसमें रहिये और मेरीदीहुई औषध खाइये तो आपकी वृद्धावस्था दूरहोजाय वैद्यके यह वचन सुनकर राजाने शीघ्रही पृथ्वी मे एक बडाभारी गढाबनवाया ठीकहै (क्षमन्तेनविचारंहिमूर्खा विषयलोलुपा) विषयके लोभी मूर्खलोग विचार नहीं करसक्ते है राजाको वैद्यकी आज्ञामे उद्यत देखकर मन्त्रियों ने कहा कि हे महाराज प्राचीनलोगोंके सत्त्व तप तथा दमसे और युगके प्रभावसे रसायन सिद्ध होती थी आजकलतो रसायन केवल सुनी हैं देखी नहीं है और जो कोई करताभी है तो सामग्री के न मिलने से विपरीत फल मिलता है इससे आपको इसके कहने मे आना योग्य नहींहै क्योंकि धूर्त्तलोग बहुधा अज्ञानोंको ठग २ कर खायाकरते हैं आप विचारिये तो सही क्या गईहुई अवस्था भी फिर लौट सक्ती है मन्त्रियों के इत्यादिक अनेक वचन धनी भोग तृष्णा से भरेहुए राजाके हृदयमें नहीं समाये और वह उस वैद्यके कहनेसे अपने सम्पूर्ण ऐश्वर्य्य को छोडकर उस गढे मे अकेलाहीगया केवल

सार शुभाशुभफल प्राप्त होताहै इससे आपभी हमारे प्राक्तन कर्म के अनुसार हमारे स्वामी हुएहो नहीं तो अन्य लोगोंके होतेहुए भी आपहमारेही ऊपर इतने प्रसन्न कैसे होसक्ते हो तपतकके मुखसे इस विचित्र रमणीय कथा को सुनकर नरवाहनदत्त रत्नप्रभा समेत स्नान करनेको उठा और स्नान करके माता पिताके नेत्रोंमें अमृतकी वृष्टिके समान आनन्द देताहुआ उनके निकट गया वहा उन्हींके साथ भोजन करके मन्त्री तथा रानियों समेत सुख पूर्व्वक पानादि क्रियासे दिनको व्यतीत करके अन्त -पुरमें जाकर रात्रि व्यतीत की ११६ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायारत्नप्रभालम्बकेषष्ठस्तरग ६॥

इसके उपरान्त दूसरे दिन रत्नप्रभाके मन्दिरमें अपने मन्त्रियों के साथ अनेक २ प्रकारकी वार्त्तालाप करतेहुए नरवाहनदत्तने मन्दिरके आगनमें वाहरकी ओर अकस्मात् किसी पुरुषके रोनेका शब्दसुना यह क्याहै उसके इसप्रकार पूछनेपर चेरियों ने आकर कहा कि हे स्वामी यह धर्मगिरिनाम कञ्चुकीरोरहाहै यहा इसके किसी मूर्ख मित्रने उससे तीर्थमें गयेहुए उसके भाईके मरजानेका वृत्तान्त कहदियाहै इससे वह शोकमे व्याकुल होकर रोरहाहै और लोग उसको उसके घरपहुँचाये देतेहैं यह सुनकर युवराजको दयासे कुछ दु खहुआ और रानी रत्नप्रभा उदासीन होकर वोली कि प्रिय वधुओं के वियोगका दु ख वडा दुस्सह होताहै ब्रह्माने सबजीवोंको अजर तथा अमरही क्यों न करदिया रानीके यह वचन सुनकर मरुभूति वोला कि हे रानी मनुष्योंमें यह वात कैसे होसक्ती है इसविषय में एककथा मैं आपको सुनाताहू कि चिरायु नाम नगर में चिरायुनाम एक वडाधनवान् चिरजीवी राजाथा उसके वुद्धदेव का अवतार नागार्जुन नाम दयालुदानी तथा विज्ञानी एकमन्त्रीथा वह सपूर्ण औषधियोंकी युक्तिजानताथा इससे उसने रसायन वनाकर अपनेको और राजाचिरायु को अजर तथा चिरजीवी करलियाथा एक समय नागार्जुन का एकपुत्र जोकि सपूर्ण पुत्रों में से उसे अधिक प्रियथा मरगया उसदु खसे व्याकुल होकर नागार्जुनने मनुष्योंकी मृत्युकी शान्तिकेलिये अपने तप तथा दानके प्रभाव से वहुतसी औषधिया मिलाकर अमृत वनाया एकही औषध उसमें मिलानेको वाकीथी उसके मिलानेका समय आनेही था कि इन्द्र ने यह जानकर देवताओं से सलाह करके अश्विनीकुमार से कहा कि नागार्जुन से जाकर हमारे यह वचन कहो कि तुममन्त्री होकर भी यह क्या अन्याय करतेहो क्या तुम ब्रह्माकेभी जीतनेको उद्यत हुएहो क्योंकि ब्रह्माने मनुष्य मृत्युके लिये उत्पन्नकिये हैं तुम अमृत वनाकर उन्हें भी अमर वनाया चाहतेहो ऐसा करने से देवता और मनुष्यों में भेदही क्या रहेगा और पूज्य पूजकके अभावसे ससार की मर्य्यादा नष्टहोजायगी इससे हमारे वचनको मानकर तुम अमृत मतवनाओ नहीं तो देवता लोग कुपितहोकर तुमको शापदेंगे और जिस पुत्रके शोकसे यहयत्न तुमने कियाहै वह स्वर्गमें सुख पूर्व्वक रहताहै यह कहकर इन्द्रने अश्विनीकुमार को नागार्जुनकेपास भेजा तव अश्विनीकुमारने नागार्जुन के पास आकर अर्घपाद्यादि सत्कारके ग्रहण करनेके पीछे इन्द्रका सदेशा उसे सुनाया और यह भी कहा कि तुम्हारा पुत्र स्वर्ग में सुखपूर्व्वक वर्त्तमानहै इन्द्रके सदेशेको सुनकर नागार्जुन उदासीनहोकर

तीरपर पहुचा वहा नदीके प्रवाहमें बहतेहुए पाच सुवर्णके कमल उसने देखे सेवकोंके द्वारा वह कमल मँगवाकर और देखकर उसने अपनेपास खडेहुए तरुणचन्द वैद्यसे कहा कि तुम नदीके किनारे किनारे जाकर इन कमलों के उत्पन्न होनेका स्थान देख आओ और देखकर शीघ्रही मुझसे कहो मुझेइन अद्भुत कमलोंके लिये वडा आश्चर्य्य होरहाहे तुम बडे चतुरहो इसी से में तुमको भेजताहू यह कहकर राजा तो अपनेघरको चलाआया और तरुणचन्दने विवसहोकर उसी नदीके किनारेकिनारे चलतेचलते नदी के तटपर एक शिवजी का मन्दिर और एक वडा भारी वरगदका वृक्ष जिसपर कि किसी मनुष्य के हाडों की पजरी लटकरहीथी उसे देखा और वहां थकके स्नानकरके श्रीशिवजी का पूजन करके कुछ देरतक विश्राम किया उस समय अकस्मात् मेघ वरसनेलगा जलवरसने से वरगदकी शाखाओं में लटकेहुए मनुष्यके पजरसे जो जलके विन्दु नदी में गिरे वह सुवर्ण के कमल होगये यह आश्चर्य देखकर तरुणचन्द्र शोचने लगा कि यह क्या आश्चर्य्य है इस निर्जन वन में किससे पूछू अथवा ईश्वर की अनेक आश्चर्य्योंसे भरी सृष्टिको कौन जानसकाहे मैंने सुवर्ण के कमलोंका उत्पत्ति स्थान तो देखही लियाहे अब इस पाजरको नदीके जलमें फेंकदू तो एक तो धर्महोगा और इसकी पीठपर कमल उत्पन्न होंगे यह शोचकर उसने वह पजर जल में फेंकदिया और वह दिन वहीं व्यतीत करके कई दिनों में वहां से धीरे धीरे चलकर विलासपुर पहुचके राजद्वार में अपने आगमन का निवेदन करवाया फिर द्वारपाल से आज्ञापाकर राजा अजरके निकट पहुचके तरुणचन्द्र जैसे कि कुशल पूछकर चाहताही था कि मैं सब वृत्तान्त कहू वैसेही राजाने वहा से सब लोगोंको हटाकर उससे कहा कि हे मित्र तुमने सुवर्ण के कमलोंके उत्पत्ति स्थान को देखा और उस उत्तम क्षेत्रमें तुमने मनुष्य का पाजर लटकताहुआ भी देखा वह मेरा पूर्व्व जन्म का शरीरहे वहा मैंने पैरोंसे वरगदको पकडके नीचे को मुखकरके तपकरते २ शरीर सुखाकर त्याग करदिया था उसी तपके माहात्म्य से पांजरसे गिरेहुए जलके विन्दु सुवर्णके कमल होजाते हैं और तुमने जो वह पाजर जलमें फेंकदिया सो बहुत उचित किया तुम मेरे पूर्व्व जन्म के मित्रहो और यह भेषजचन्द्र तथा पद्मदर्शन भी मेरे पूर्व जन्म के वडे मित्रहे हेमित्र उसीतपके प्रभावसे मुझे ज्ञान तथा राज्य प्राप्तहुआहे और पूर्व्व जन्मका स्मरणभी बना है मैंने युक्ति पूर्व्वक यह तुमको प्रत्यक्ष दिखादिया और पाजर फेंकने की पहचान भी तुम्हारे निश्चय के लिये तुमसे कहदी इससे तुम यह अभिमान छोडदो कि मैंने इसको राज्य दियाहे और अपने चित्तमें खेदभी मतकरो (विनाहिप्राक्तनकर्म्मनदाताकोपिकस्यचित् आगर्भाज्जन्तुरश्नातिपूर्व्वकर्मतरो फलम्) प्राक्तन कर्म्मके विना कोई किसीका दाता नहीं है मनुष्य जबसे गर्भ में आताहे तभी से अपने प्राक्तन कर्मरूपी वृक्षके फलको खाताहै राजा अजरके यह वचन सुनकर और यथार्थ जानकर तरुण-चन्द्र उसी दिनसे सन्तोषपूर्व्वक उसका सेवन करनेलगा और राजा अजरभी आदर पूर्व्वक उसे बहुत-सा धन देकर रानी तथा मित्रों समेत पुण्यके प्रभावसे मिलेहुए अकण्टक राज्य का सुख पूर्व्वक भोग करनेलगा इस प्रकारसे हे युवराज इस ससारमें सदैव सब जन्तुओं को अपने पूर्वजन्मके कर्मके अनु-

सार शुभाशुभफल प्राप्त होताहै इससे आपभी हमारे प्राक्तन कर्म के अनुसार हमारे स्वामी हुएहो नहीं तो अन्य लोगोंके होतेहुए भी आपहमारेही ऊपर इतने प्रसन्न कैसे होसक्ते हो तपतकके मुखसे इस विचित्र रमणीय कथा को सुनकर नरवाहनदत्त रत्नप्रभा समेत स्नान करनेको उठा और स्नान करके माता पिताके नेत्रोंमें अमृतकी वृष्टिके समान आनन्द देताहुआ उनके निकट गया वहा उन्हींके साथ भोजन करके मन्त्री तथा रानियों समेत सुख पूर्व्वक पानादि क्रियासे दिनको व्यतीत करके अन्त पुरमें जाकर रात्रि व्यतीत की ११६॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायारत्नप्रभालम्वकेषष्ठस्तरग ६॥

इसके उपरान्त दूसरे दिन रत्नप्रभाके मन्दिरमें अपने मन्त्रियों के साथ अनेक २ प्रकारकी वार्त्तालाप करतेहुए नरवाहनदत्तने मन्दिरके आगनमें वाहरकी ओर अकस्मात् किसी पुरुषके रोनेका शब्दसुना यह क्याहै उसके इसप्रकार पूछनेपर चेरियों ने आकर कहा कि हे स्वामी यह धर्मगिरिनाम कञ्चुकीरोरहाहै यहा इसके किसी मूर्ख मित्रने उससे तीर्थमें गयेहुए उसके भाईके मरजानेका वृत्तान्त कहदियाहै इसमे वह शोकसे व्याकुल होकर रोरहाहै और लोग उसको उसके घरपहुँचाये देतेहैं यह सुनकर युवराजको दयासे कुछ दु खहुआ और रानी रत्नप्रभा उदासीन होकर वोली कि प्रिय बधुओं के वियोगका दु ख वडा दुस्सह होताहै ब्रह्माने सवजीवोंको अजर तथा अमरही क्यों न करदिया रानीके यह वचन सुनकर मरुभूति वोला कि हे रानी मनुष्योंमें यह वात कैसे होसक्ती है इसविषय में एककथा मैं आपको सुनाताहू कि चिरायु नाम नगर में चिरायुनाम एक वडाधनवान् चिरजीवी राजाथा उसके वुद्धदेव का अनतार नागार्जुन नाम दयालुदानी तथा विज्ञानी एकमन्त्रीथा वह संपूर्ण औषधियोंकी युक्तिजानताथा इससे उसने रसायन वनाकर अपनेको और राजाचिरायु को अजर तथा चिरजीवी करलियाथा एक समय नागार्जुन का एकपुत्र जोकि सपूर्ण पुत्रों में से उसे अधिक प्रियथा मरगया उसदु खसे व्याकुल होकर नागार्जुनने मनुष्योंकी मृत्युकी शान्तिकेलिये अपने तप तथा दानके प्रभाव से वहुतसी औषधिया मिलाकर अमृत वनाया एकही औषध उसमे मिलानेको वाकीथी उसके मिलानेका समय आरहीथा कि इन्द्र ने यह जानकर देवताओं से सलाह करके अश्विनीकुमार से कहा कि नागार्जुन से जाकर हमारा यह वचन कहो कि तुममत्री होकर भी यह क्या अन्याय करतेहो क्या तुम ब्रह्माकेभी जीतनेको उद्यत हुएहो क्योंकि ब्रह्माने मनुष्य मृत्युके लिये उत्पन्नकिये हैं तुम अमृत वनाकर उन्हें भी अमर वनाया चाहतेहो ऐसा करने से देवता और मनुष्यों में भेदही क्या रहेगा और पूज्य पूजकके अभावसे ससार की मर्य्यादा नष्टहोजायगी इससे हमारे वचनको मानकर तुम अमृत मतवनाओ नहीं तो देवता लोग कुपितहोकर तुमको शापदेंगे और जिस पुत्रके शोकसे यहयत्न तुमने कियाहै वह स्वर्गमें सुख पूर्व्वक रहताहै यह कहकर इन्द्रने अश्विनीकुमार को नागार्जुनकेपास भेजा तब अश्विनीकुमारने नागार्जुन के पास आकर अर्घपाद्यादि सत्कारके ग्रहण करनेके पीछे इन्द्रका सदेशा उसे सुनाया और यह भी कहा कि तुम्हारा पुत्र स्वर्ग में सुखपूर्व्वक वर्त्तमानहै इन्द्रके सदेशेको सुनकर नागार्जुन उदासीनहोकर

शोचनेलगा, कि जो मैं इन्द्रका वचन नहीं, मानूगा तो देवता तो अलगरहे पहले, यह अश्विनीकुमार ही मुझे शापदेंगे इससे अमृतको जानेदो मेरा मनोरथ सिद्धनहीं होगा और मेरापुत्र तो अपने पुण्योंसे उत्तम गतिको पहुचही गया इसप्रकार शोचकर उसने अश्विनीकुमार से कहा कि मैंने इन्द्रकी आज्ञामानली अबमैं अमृत नहीं बनाऊगा जो आप न आजाते तो मैं पृथ्वीके सपूर्ण जीवोंको पांचही दिन पीछे अजर अमर करदेता यह कहकर नागार्जुन ने अश्विनीकुमार के आगेही वह सिद्ध होने वाला अमृत पृथ्वीमें गाडदिया तब अश्विनीकुमारने इससे आज्ञालेकर इन्द्रके पासजाके उनसे यह सब वृत्तान्त कहकर उनको प्रसन्नकिया इसके उपरान्त राजा चिरायुने जीवहर नाम अपने पुत्रको युवराज पदवीदी युवराज पदवीपाकर यह जीवहर प्रसन्नहोकर अपनी धनपरा नाम माताको प्रणामकरनेगया धनपराने पुत्रको प्रसन्न देखकर कहा कि हे पुत्र इस युवराज पदवी को पाकर तुम क्यों प्रसन्नहोते हो तुम्हारे पिता के न जानिये कितने पुत्र युवराज पदवी पाकर चलेगये परन्तु राज्य किसीको भी नहीं प्राप्तहुआ क्योंकि नागार्जुन ने इसको ऐसी रसायन बनाकरदी है कि जिससे यह आठसौ वर्षका पूरा होचुकाहै न जाने अभी कितने अल्पायु इसके राज्यमे युवराज होंगे यह सुनकर अपने पुत्रको उदासीन देखकर उसने कहा कि जो तुम राज्य लेनाचाहतेहो तो यह उपायकरो कि नागार्जुन प्रतिदिन सम्पूर्ण आह्निक करके भोजन के समय यह ढढोरा पिटवाताहै कि कौन याचकहै किसे क्या दियाजाय और कौन क्या चाहताहै उस समय तुम जाकर उससे कहो कि तुम अपना शिर मुझे देदो तब वह सत्यवक्ता अपना शिरकाटकर तुमको देदेगा इसप्रकार उसके मरजानेपर उसके शोकसे राजाकैतो मर जायगा या बनको चलाजायगा इसरीतिसे तुमको राज्यमिलेगा इसके सिवाय और कोई उपाय राज्य मिलनेका नहीं है माताके यह वचन सुनकर जीवहरने प्रसन्नहोकर यही उपाय करनेका निश्चय किया ठीकहै (कष्टोहिबान्धवस्नेह राज्यलोभोतिवर्त्तते) खेदका विषयहै कि राज्यके लोभसे बन्धुताका स्नेहभी नष्ट होजाताहै इसके उपरान्त दूसरे दिन जीवहरने भोजनके समय कौन क्या मागताहै इत्यादि वचन कहतेहुए नागार्जुन से उसका शिरमागा युवराजकी यह याञ्चा सुनकर उसने कहा कि हे वत्स मेरे इस शिरको लेकर तुम क्याकरोगे मास हड्डी तथा बालोंका समूहरूप यह शिर तुम्हारे किस काम आवेगा इतनेपर भी जो तुमको इससे कुछ प्रयोजनही है तो तुम काटलो यह कहकर उसने अपनी गर्दन उसके आगे रखदी रसायनसे दृढ उसकी ग्रीवाके काटने में राजपुत्रके बहुतसे खड्गों के टुकड़े २ होगये परन्तु ग्रीवा नहींकटी उससमय इस वृत्तान्तको सुनकर राजा चिरायुभी वहा आकर नागार्जुन को शिर देनेसे निवारण करनेलगा तब उसने कहा हे राजा मुझे अपने पूर्वजन्मों का स्मरणहै मेरे निन्नानवे जन्म होचुके हैं उनसबजन्मों में मैंने अपना शिर दियाहै यह सौवाजन्महै इसमेंभी मुझे शिर देना है इससे आप मुझे निषेध न कीजिये मेरे पाससे अर्थी कभी विमुखहोकर नहीं लौटताहै अब मैं अपना शिर तुम्हारे पुत्रको दियेदेताहू तुम्हारे देखने के लिये मैंने इतनी देरलगाई है यह कहकर और राजासे मिलकर उसने अपने पाससे एक चूर्णलेकर राजपुत्रके खड्गमें लगादिया राजपुत्रने

नालसे कमलके समान नागार्जुनका शिर गर्दनसे अलग काटलिया उस समय सम्पूर्ण लोग रोदन करनेलगे और राजा चिरायुभी प्राणदेनेको उद्यतहुआ तब यह आकाशवाणीहुई कि हे राजा ऐसा अनर्थ न करो यह तुम्हारा मित्र नागार्जुन शोक करने के योग्यनहीं है यह मुक्तहोकर बुद्धके समान उत्तमगतिको प्राप्तहुआहै यह आकाशवाणी सुनकर राजाचिरायु बहुतसा दानकरके शोकसे राज्यको त्यागके वनको चलागया और वहां कुछकाल तपकरके परमगतिको प्राप्तहुआ और उसका पुत्र जीवहर राज्यपरबैठा उसके राज्यपर बैठतेही नागार्जुन के पुत्रों ने अपने पिताका वध स्मरणकरके राज्यमें भेद करवाके उसे मरवाडाला तब जीवहरके शोकसे उसकी माता धनपराकाभी हृदय फटगया ठीक है (अनार्य्यजुष्टेन पथाप्रवृत्तानाशिवकुत) अनुचित मार्गों से चलनेवालोंका कल्याण कैसे होसक्ता है जीवहरको माता समेत मराहुआ देखकर मन्त्रियों ने राजा चिरायुके अन्य रानी से उत्पन्नहुए शतायु नाम पुत्रको राज्यपर बैठाया इसप्रकार नागार्जुन से मनुष्योंकी मृत्युके नाशके लिये बनायेहुए अमृत को देवतालोग न सहसके और नागार्जुन भी मृत्युको प्राप्तहुआ इससे ब्रह्माका बनायाहुआ यह अनित्य जीवलोक दुस्सहदुःखों से भराहुआहै जो ब्रह्मा नहीं चाहते हैं वह सैकड़ों यत्नों से भी कोई नहीं करसक्ताहै इसकथाको कहकर मरुभूति के निवृत्त होजानेपर नरवाहनदत्त ने अपने मन्त्रियों समेत उठ कर अपने दिनका कृत्यकिया ६१ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायारत्नप्रभालम्बकेसप्तमस्तरंग ७ ॥

इसके उपरान्त दूसरे दिन नरवाहनदत्त अपनी उत्कण्ठित रत्नप्रभा प्रिया से शीघ्रही लौट आने को कहकर अपने पिताके साथ मित्रों समेत बहुतसी सेनाको लेकर शिकारखेलनेकेलिये वनकोगया वहां हाथियोंके मारनेवाले मारेगये सिंहों के नखों से गिरेहुए मोतियोंसे मानों वोईगई भालेसेमारेगये व्याघ्रोंकी दाढोंसे मानों अंकुरितहुई हिरनोंके रुधिरसे मानोंपल्लवयुक्तहुई बाणोंसे छिदेहुए शूकरोंसे मानों गुच्छेदारहुई और मारेगये अन्यपशुओं से मानों फलितहुई गिरतेहुए शिलीमुखों (बाण और भ्रमर) के शब्दोंसे गुञ्जनको शोभितकरनेवाली शिकाररूपी लतासे उसको अत्यन्त प्रसन्नताहुई इस प्रकार शिकार खेलकर थोडीदेर विश्रामकरके नरवाहनदत्त घोडे पर सवारहोकर और दूसरे घोडे पर गोमुखको सवारकराके उसेसाथलेकर वनकी शोभादेखने को गया और वहां जाकरगेंद खेलनेलगा उससमय कोई तपस्विनी उसमार्गसे आनिकली और नरवाहनदत्तके हाथसे छूटकरगेंद उसके शिरपर जालगी तब वह तपस्विनी हँसकरबोली कि जो तुम्हें अभीसे इतनामदहै तो कर्पूरिका स्त्री जब तुम्हें मिलजायगी तो क्या तुम्हारी दशाहोगी यह सुनकर नरवाहनदत्तने घोडेसे उतर उसको प्रणामकरके कहा कि मैंने तुमको नहीं देखाथा अकस्मात् गेंद तुम्हारे लगगईहै इसमें हे भगवती मेरे अपराधको क्षमाकरो नरवाहनदत्तके यह वचनसुनकर क्रोधकी जीतनेवाली उस तपस्विनीने मुझको क्रोध नहीं है ऐसा कहकर उसे आशीर्वाददिया तब नरवाहनदत्तने उसको सच्चीतपस्विनी तथा ज्ञिनी जानकर बडी नम्रतापूर्वक पूछा कि हे भगवती यह कर्पूरिका कौनहै जिसका आपने नामलिया

शोचनेलगा कि जो मैं इन्द्रका वचन नहीं मानूगा तो देवता तो अलगरहे पहले यह अश्विनीकुमार ही मुझे शापदेंगे इससे अमृतको जानेदो मेरा मनोरथ सिद्ध नहीं होगा और मेरापुत्र तो अपने पुण्यों से उत्तम गतिको पहुचही गया इसप्रकार शोचकर उसने अश्विनीकुमार से कहा कि मैंने इन्द्रकी आज्ञामानली अबमैं अमृत नहीं बनाऊगा जो आप न आजाते तो मैं पृथ्वीके सपूर्ण जीवोंको पांचही दिन पीछे अजर अमर करदेता यह कहकर नागार्जुन ने अश्विनीकुमार के आगेही वह सिद्ध होने वाला अमृत पृथ्वीमें गाडदिया तब अश्विनीकुमारने इससे आज्ञालेकर इन्द्रके पासजाके उनसे यह सब वृत्तान्त कहकर उनको प्रसन्नकिया इसके उपरान्त राजा चिरायुने जीवहर नाम अपने पुत्रको युवराज पदवीदी युवराज पदवीपाकर वह जीवहर प्रसन्नहोकर अपनी धनपरा नाम माताको प्रणामकरनेगया धनपराने पुत्रको प्रसन्न देखकर कहा कि हे पुत्र इस युवराज पदवी को पाकर तुम क्यों प्रसन्नहोते हो तुम्हारे पिता के न जानिये कितने पुत्र युवराज पदवी पाकर चलेगये परन्तु राज्य किसीको भी नहीं प्राप्तहुआ क्योंकि नागार्जुन ने इसको ऐसी रसायन बनाकरदी है कि जिससे यह आठसौ वर्षका पूरा होचुकाहै न जाने अभी कितने अल्पायु इसके राज्यमें युवराज होंगे यह सुनकर अपने पुत्रको उदासीन देखकर उसने कहा कि जो तुम राज्य लेना चाहतेहो तो यह उपायकरो कि नागार्जुन प्रतिदिन सम्पूर्ण आह्निक करके भोजन के समय यह ढढोरा पिटवाताहै कि कौन याचकहै किसे क्या दियाजाय और कौन क्या चाहता है उस समय तुम जाकर उससे कहो कि तुम अपना शिर मुझे देदो तब वह सत्यवक्ता अपना शिरकाटकर तुमको देदेगा इसप्रकार उसके मरजानेपर उसके शोकसे राजाके तो मर जायगा या बनको चलाजायगा इसरीतिसे तुमको राज्यमिलेगा इसके सिवाय और कोई उपाय राज्य मिलनेका नहीं है माताके यह वचन सुनकर जीवहरने प्रसन्नहोकर यही उपाय करनेका निश्चय किया ठीकहै (कष्टेहिबान्धवस्नेह राज्यलोभोतिवर्त्तते) खेदका विषयहै कि राज्यके लोभसे बन्धुताका स्नेहभी नष्ट होजाताहै इसके उपरान्त दूसरे दिन जीवहरने भोजनके समय कौन क्या मागताहै इत्यादि वचन कहतेहुए नागार्जुन से उसका शिरमागा युवराजकी यह प्रार्थना सुनकर उसने कहा कि हे वत्स मेरे इस शिरको लेकर तुम क्याकरोगे मास हड्डी तथा बालोंका समूहरूप यह शिर तुम्हारे किस काम आवेगा इतनेपर भी जो तुमको इससे कुछ प्रयोजनही है तो तुम काटलो यह कहकर उसने अपनी गर्दन उस के आगे रखदी रसायनसे दृढ उसकी ग्रीवाके काटने में राजपुत्रके बहुतसे खड्गो के टुकड़े २ होगये परन्तु ग्रीवा नहींकटी उससमय इस वृत्तान्तको सुनकर राजा चिरायुभी वहा आकर नागार्जुन को शिर देनेसे निवारण करनेलगा तब उसने कहा हे राजा मुझे अपने पूर्वजन्मों का स्मरणहै मेरे निन्नानबे जन्म होचुके हैं उनसबजन्मों में मैंने अपना शिर दियाहै यह सौवाजन्महै इसमेंभी मुझे शिर देना है इससे आप मुझे निषेध न कीजिये मेरे पाससे अर्थी कभी विमुखहोकर नहीं लौटताहै अब मैं अपना शिर तुम्हारे पुत्रको दियेदेताहू तुम्हारे देखने के लिये मैंने इतनी देरलगाई है यह कहकर और राजासे मिलकर उसने अपने पाससे एक चूर्णलेकर राजपुत्रके खड्गमें लगादिया उसखड्गके प्रहारसे राजपुत्रने

था, आप जो मेरे ऊपर प्रसन्नहैं तो उसे मुझे बताओ इस प्रकारतप्रतासे कहतेहुए नरवाहनदत्तसे वह तपस्विनीबोली कि समुद्रकेपार कर्पूरसभव नाम पुरहै वहां कर्पूरकनाम यथार्थ नामवाला राजाहै उसके कर्पूरिकानाम एक अतिसुन्दर कन्याहै वह सपूर्ण पुरुषोंसे द्वेषसा करकेविवाहकरना नहीं चाहती है तुमको देखकर विवाहकरलेगी इससे हे पुत्र तुम वहां जाओ तुमको वह सुन्दरी मिलेगी और मार्गमें जाते समय तुमको वनमें बड़ाक्लेशहोगा उससे तुम खिन्नमतहोना परिणाम शुभहै यह कहकर वह तपस्विनी आकाशमें जाकर अन्तर्द्धानहोगई १ और नरवाहनदत्त, कामकी आज्ञाके समान उस तपस्विनीके वचन सुनकर गोमुखसेबोला कि चलो कर्पूरिकाकेलिये कर्पूरसभवपुरको चले क्योंकि अब मुझे उसके देखेबिना क्षणभरभी चैन नहीं पड़ता नरवाहनदत्तके यह वचन सुनकर गोमुखबोला कि हे युवराज, साहस नहीं करना चाहिये कहां तुम कहां समुद्र कहां वह पुर कहां उसपुरका मार्ग और कहां वह कन्या केवलनामही सुनकर अपनी दिव्यस्त्रियोंको छोड़कर जो कि विवाहभी नहीं करना चाहती है ऐसी मानुषीकेलिये आप अकेले जाना कहतेहो यह सुनकर नरवाहनदत्तने कहा कि उस सिद्ध तपस्विनी का बचन झूठ नहीं होसक्ता इससे मैं उस राजकन्याकेलिये अवश्य कर्पूरसभवपुरको जाऊंगा यह कहकर वह उसीसमय घोड़ेपर चढ़करचला और गोमुखभी इच्छाके विनाभी उसके पीछे २ चला क्योंकि (अकुर्वन्वचनभृत्येरनुगम्यः प्रभुः) जो स्वामी सेवकोंके वचन नहीं भी माने तो भी सेवकों को उसीके अनुसार चलना चाहिये इसप्रकार यह दोनो तो चलेगये, और राजाउदयन् नरवाहनदत्तकोभी सेनाके साथजानकर सपूर्ण सेनाको साथमें लेकर अपनीपुरी को चलाआया और नरवाहनदत्त के मंत्री मरुभूति आदिकभी उसको सेनाके मध्यमें जानकर चलेआये पुरीमें आकर जब नरवाहनदत्तको किसी ने भी नहीं देखा तो उसे ढूंढ़तेहुए राजा उदयन् आदि सब लोग रत्नप्रभाके पासगये उसने अपने पतिको न आया जानके व्याकुलहोकर अपनी विद्याके बलसे सब वृत्तान्त जानलिया और अपने श्वशुर उदयन् से कहा कि वनमें किसी तपस्विनी के मुखसे कर्पूरिकानाम राजकन्याकी प्रशंसा सुनकर उसकी प्राप्तिके लिये कर्पूरसभवपुरको आर्यपुत्रगये हैं और शीघ्रही अपने मनोरथको सफल करके गोमुखके साथ लौट आवेंगे इससे आप चिन्ता न करिये मैंने अपनी विद्याके बलसे सब जानलियाहै यह कहकर उसने सब परिकर समेत अपने श्वशुरको सावधान किया और मार्गमें नरवाहनदत्तके क्लेशको दूर करने के लिये एक विद्या उसकेपास भेजी (नेर्ष्याम्भर्तृहितैषिण्यो गणयन्तिहिसुस्त्रियः) पतिका कल्याण चाहने वाली श्रेष्ठस्त्रिया ईर्षा नहीं करती है इतने बीचमें नरवाहनदत्त गोमुख समेत वनमें बहुतदूर निकलगया वहां अकस्मात् उसे एक कन्या देखपड़ी और बोली कि मै रत्नप्रभाकी भेजीहुई मायावती नाम विद्याहूं अलक्षित होकर मार्गमें आपकी रक्षाकरूंगी इससे अब आप निस्सन्देह होकर चलिये यह कहकर वह अन्तर्द्धान होगई और उसके प्रभावसे नरवाहनदत्त की क्षुधातृषा शान्त होगई और वह अपनी प्रिया रत्नप्रभाकी प्रशंसा करताहुआ आगेचला सायकालके समय मधुर फलवाले वृक्षों से युक्त एक निर्मल तडागपर पहुंचकर वहीं गोमुख समेत नरवाहनदत्त ने स्नान करके आहार पानादिक किया और रात्रिके

समय घोड़ोंको घासदेकर किसी बड़े वृक्षके नीचे बांधकर उसी वृक्षपर चढ़कर निवास किया उस वृक्ष की बड़ी शाखापर गोमुख समेत सोयाहुआ नरवाहनदत्त डरेहुए घोड़ोंकी हिनहिनाहट से जगपड़ा और उसे एकसिंह वृक्षके नीचे दिखाई पड़ा उसेदेखकर घोड़ेको बचानेके लिये उसने वृक्षपरसे उतरना चाहा तब गोमुखने कहा कि तुम अपनी देहकी कुछ अपेक्षा न करके विनासवाहालिये ही जो चाहतेहो सो करतेहो राजा लोगोंके लिये शरीरही मुख्यहै और राज्यके लिये मन्त्र मुख्यहै सो तुम विना विचार किये नख तथा दंष्ट्रारूपी शस्त्रवाले मृगोंके साथ युद्ध किया चाहते हो इस शरीरही की रक्षाके लिये वृक्ष पर चढ़े थे नहीं तो वृक्षपर चढनेका क्या प्रयोजन था गोमुखके यह वचनसुनकर नरवाहनदत्तने घोड़े को मारतेहुए सिंहको वृक्षपरसेही एक छुरी फेंककर मारी उसके लगनेपर भी उससिंहने एक घोड़ेको मारकर दूसरे को भी मारा तब नरवाहनदत्तने गोमुखसे खड्ग लेकर फेंककर उसे मारा उस खड्गके लगनेमें सिंहके बीचमें से दो टुकड़े होगये सिंहको मरादेखकर वह वृक्षसे उतरकर खड्गलेकर फिर वृक्षपरही चढगया और उसीपर रात्रिभर रहा प्रातःकाल उसवृक्षपरसे उतरकर गोमुख समेत नरवाहनदत्त पैदलही कर्पूरिकाके निमित्त चला मार्ग में गोमुखने उसे पैदल चलना देखकर चित्तबहलाने के लिये प्रसगपाकर कहा कि हे युवराज मैं एक कथा आपसे कहताहूं कि अलकासे भी महासुन्दर एक ऐरावतीनाम नगरीहै उस में परित्यागसेन नाम राजाथा उसके प्राणों के समान दो रानीथीं एकतो उसी के मंत्रीकी पुत्री अधिक सगमाता सी और दूसरी भी किसी राजाकी पुत्री काव्यालंकारा नाम उस राजा के कोई पुत्र न था इसीमे अपनी दोनों रानियों को साथ लेकर निराहारहोके कुशोंके आसनोंपर बैठकर उसने तपकरना प्रारम्भ किया उसके तपसे प्रसन्नहुई भगवती पार्वतीने दो दिव्य फल देकर उससे कहा कि हे राजा उठो यह दोनों फल अपनी रानियों को देदो तुम्हारे दो वीर पुत्रहोंगे यह कहकर पार्वतीजी अन्तर्द्धान होगई और राजाने उठकर अपने हाथमें दोनों फलोंको देखके रानियोंसे स्वप्नका वृत्तान्त कहा और प्रसन्नता पूर्वक श्रीभगवती पार्वतीजी का पूजन किया और पारण किया तदनन्तर मंत्रीके गौरवसे पहले अधिक सगमानाम रानीके यहां जाकर रात्रिके समय उसे एक फलखिलाके उसीके साथ निवासकिया और दूसरा फल दूसरी रानी के लिये अपने सिराने रखलिया जब राजा सोगया तो रानी अधिकसगमा ने उठकर अपनेही दो पुत्रोंके होने की इच्छासे उस फलको भी खालिया क्योंकि (निसर्गसिद्धोनारीणा सपत्नीषु हिमत्सरः) स्त्रियोंको अपनी सौतों से स्वाभाविक बैरहोताहै प्रातःकाल उठकर उस फलको ढूंढतेहुए राजा से रानी ने कहदिया कि वह फलभी मैंने ही खालिया तब राजा उदासीन होके दिन व्यतीत करके रात्रिके समय रानी काव्यालंकाराके यहां गया और जब उसने फलमांगा तब राजाने कहदिया कि मेरे सोजानेपर तुम्हारी सौत दूसराफल भी खागई राजा के यह वचन सुनकर और पुत्रोत्पत्ति के निमित्त उस फलको न पाकर वह रानी चित्तमें अत्यन्त दुखित होके चुपहो रही कुछ दिनोंके व्यतीत होनेपर रानी अधिकसगमा गर्भवतीहुई और समय पूरेहोनेपर एकसाथही उसके दो पुत्रहुए राजा परित्यागसेनने पुत्रोंकी उत्पत्ति से अपने मनोरथको सफल जानके अत्यन्त प्रसन्नहोकर बड़ा उत्सव किया और कमलके समान नेत्र

वाले अद्भुत स्वरूपवान् अपने वडे पुत्रका नाम इन्दीवरसेन रक्खा और छोटेका नाम अनिच्छासेन रक्खा क्योंकि उसकी माताने राजाकी अनिच्छासे वह फल खायाथा उन दोनों बालकोंको देखकर रानी काव्यालंकाराने क्रोधयुक्तहोकर शोचा कि देखो मेरी सौतने मुझेछलकर मेरे पुत्र नहींहोनेदिये इससे इसके साथ मुझे बदला अवश्य लेनाचाहिये कि किसी युक्तिसे इन दोनों बालकोंका नाश होजाय इसप्रकार शोचकर वह उसका उपाय ढूंढनेलगी जैसे २ वह दोनों बालक बढे तैसे २ उसरानी के हृदय में वैररूपी वृक्षभी बढतागया क्रमसे जब वह दोनों तरुणहुए तब दिग्विजय की इच्छासे अपने पिता से बोले कि हम दोनों अस्त्र विद्यासीखचुके और युवावस्थाभी आगई तो इन व्यर्थ भुजाओं को लेकर क्याकरें विजयकी इच्छासे रहित क्षत्रीकी भुजा तथा यौवनको धिक्कारहै इससे हे तात हमें दिग्विजय के लिये आज्ञादीजिये पुत्रों के यह वचन सुनकर राजा परित्यागसेनने प्रसन्नहोकर उनकी यात्राका आरम्भ करदिया और यहभी कहदिया कि जो तुम्हे मार्गमें कोई संकटपडे तो भगवती पार्वतीजीका स्मरणकरना क्योंकि उन्हींकी कृपासे तुम दोनोंका जन्महुआहै यहकहकर बहुतसी सेना तथा जमींदार साथमें देकर उन्हें विदाकिया और पीछे से अपने प्रधान मन्त्री उन बालकोंके मातामह बुद्धिमान् प्रथम संगमको भेजा तब महाबलवान् उन दोनों राजपुत्रों ने जाकर पहले पूर्व दिशाको विजयकिया और वहां से अनेक जीतेहुए राजाओं को अपने साथ में लेकर दक्षिण दिशाके विजयको गमन किया अपने पुत्रों के इस वृत्तान्तको सुनकर राजा परित्यागसेन रानी अधिकसंगमा समेत बहुत प्रसन्नहुआ और रानी काव्यालंकारा द्वेषरूपी अग्नि से अत्यन्त सन्तप्तहुई तब उसने सन्धि विग्रहके अधिकारी कायस्थको बहुतसा धन देकर राजाकी ओरसे जमींदारोंको जो कि उसके साथमें थे यह पत्रलिखवाया कि यह दोनों मेरे पुत्र अपनी भुजाओं के बल से सम्पूर्ण पृथ्वीको जीतकर मुझे मारकर राज्यलेना चाहते हैं इससे जो तुमलोग मेरे भक्तहो तो बिना विचारेही इन दोनोंको मारडालो यह लिखवाकर पत्र देकर हलकारेको भेज दिया उस हलकारे ने छिप कर सेनामें जाके वह पत्र उन छोटे राजाओंको जो उनराजपुत्रों के साथ उनकी रक्षाके लिये राजा ने भेजदिये थे देदिया उन लोगों ने वह पत्र बांचकर राजनीतिको अत्यन्त कठिन समझकर और राजा की आज्ञाका उल्लंघन करना उचित न जानकर रात्रिके समय सलाहकरके उन दोनों के मारने का निश्चय किया यद्यपि राजपुत्रों के गुणों से वह सब प्रसन्न थे तथापि राजाकी आज्ञासे विवशहोकर उन लोगों ने यह विचारकिया इस वार्त्ताको किसी मित्रके मुखसे जानकर उनराजपुत्रोंका मातामह प्रथम संगमनाम महामन्त्री उन्हें घोडोंपर सवारकराके उनको लेकर भागा रात्रिके समय मार्ग न जानने के कारण वह तीनों विन्ध्याचल के वनमें चलेगये वहां रात्रि के व्यतीतहोजानेपर चलते चलते मध्याह्न के समय घोडे प्यासेहोकर जल न पाकर मरगये और वह वृद्ध मन्त्री भी क्षुधा तथा तृषासे तालूके सूखने के कारण अपने दौहित्रों के देखतेही देखते मरगया घोडोंको तथा अपने मातामहको मराहुआ देखकर वह दोनों शोचनेलगे कि देखो हमारे पिताने हमारी उसदुष्ट सौतेली माताके कहनेसे अपराध के विनाभी हमलोगों की यहदशाकी इसप्रकार शोचकर दुःखितहोके और पिताके उपदेशको स्मरण

भाई एकान्तमे इस मदनदंष्ट्राके साथ भोगकरनेलगा स्नानसे लौटकर मैने साक्षात् इसको रमण करते देखकर बहुतसे कुवाच्य इसमे कहे तदनन्तर तुम्हारेभाईके विनय करनेपरभी भाग्य के समान दुर्लंघ्य ईर्ष्यासे मोहितहोकर मैंने शोचा कि यह मेराकहना न मानकर अन्यस्त्रीके साथ रमणकरताहै मैं जानतीहूं कि इसे खड्गके माहात्म्यमे इतना अभिमानहै इससे यह खड्ग छिपादेना चाहिये यह शोचकर जब तुम्हाराभाई सोगया तब मैंने खड्गको उठाकर अग्नि में छोडदिया खड्गके अग्नि में छोडतेही इसकी तो यहदशा होगई और खड्ग कलंकित होगया तबमैंतो पश्चात्ताप करनेलगी और मदनदंष्ट्रा मेरी निन्दा करनेलगी फिर शोकसे व्याकुलहोके हम दोनोंके मरनेके लिये उद्यतहोनेपर तुम यहांआ गये तो अब तुम इसखड्गको लेकर मुझहत्यारिनि राक्षसीको इसी खड्गसे मारो उसके यह वचनसुन कर अनिच्छासेनने उसको अवध्यजानकर अपनाही शिर काटनाचाहा उससमय यह आकाशवाणी हुई कि हे राजपुत्र ऐसासाहस मतकरो तुम्हारा बडाभाई मरानहीं है खड्गके अपराधसे इसको देवीने मोहितकरदियाहै और इस खड्गदंष्ट्राकाभी कोई अपराधनहीं है क्योंकि शापमे उत्पन्नहोनेवाली स्त्रियोंके बहुधा ऐसेही काम हुआ करते है यह दोनों पूर्वजन्मकी तुम्हारे भाईकी स्त्रिया हे इससे तुमजा कर उन्हीं भगवती पार्वतीजीको प्रसन्नकरो इस आकाशवाणीको सुनकर अनिच्छासेन मरणके उद्योग मे निवृत्तहोकर विमानपर चढके और उस कलंकित खड्गकोलेकर विन्ध्यवासिनीको गया वहा पहुँच कर उपवास करके भगवतीको प्रसन्न करनेके अर्थ अपना शिरकाटनेको उद्यतहुआ उस समय यह आकाशवाणी हुई कि हे पुत्र साहस मतकरो मै तुम्हारी भक्तिसे प्रसन्नहू तुम्हाराभाई जीउठेगा औरयह खड्ग फिर निर्मलहोजायगा इसआकाशवाणीको सुनकर और खड्गको अपनेहाथमें निर्मल देखकर अनिच्छासेन भगवतीकी परिक्रमा करके और अपने विमानपर चढकर शैलपुरमे अपने भाई के निकट आया और उसे उसीसमय चैतन्यहुआ देखकर नेत्रों में अश्रुभरकर उसके पैरोंपर गिरपडा और उसने भी उसे पैरो मे उठाकर अपने गले मे लगालिया १७७ उससमय वह दोनो स्त्रिया भी अनिच्छासेनके पैरोंपर गिरकरबोलीं कि तुमने हमारेपतिके प्राण रखलिये इसके उपरान्त इन्दीवरसेनके पूछनेपर उसनेसब व्यौरेवार वृत्तान्त कहदिया उस सपूर्ण वृत्तान्तको सुनकर इन्दीवरसेन खड्गदंष्ट्रापर क्रोधित नहींहुआ और अपने भाईपर अत्यन्त प्रसन्नहुआ फिर अनिच्छासेनके मुखमे अपनी सौतेली माताकी माया मे अपने मारनेकी आज्ञाको जानकर और माता पिताको उत्कण्ठित सुनकर इन्दीवरसेन अपने भाई मे उस खड्गको लेकर उसीके प्रभावमे मिलेहुए विमानपर अपनेभाई तथा स्त्रियोंसमेत चढकर और सुवर्णके मन्दिरोंकोभी उसीपर रखकर आकाशमार्गमे इरावतीनाम पुरीको चलाआया वहा आकाशमे उतरकर पुरवासियों के चित्तमें आश्चर्य्य कराताहुआ राजमन्दिरमें अपने मातापिताके पास भाई तथा स्त्रियो समेत गया और आसूभरकर अपने माता पिताके चरणोंपर गिरा वहभी सदमा अपने पुत्रको देखकर और उसे हृदयसे लगाकर सन्तापरहित होगये और दिव्यरूप बहुओंकोभी वन्दना करतेदेख कर उनके चित्तमें परमानन्दहुआ तदनन्तर कथाके प्रसगमे उन दोनों बहुओंने अपने पुत्रकी पूर्व

वाले अद्भुत स्वरूपवान् अपने वडे पुत्रका नाम इन्दीवरसेन रक्खा और छोटेका नाम अनिच्छासेन रक्खा क्योंकि उसकी माताने राजाकी अनिच्छासे वह फल खायाथा उन दोनों बालकोंको देखकर रानी काव्यालकाराने क्रोधयुक्तहोकर शोचा कि देखो मेरी सौतने मुझेछलकर मेरे पुत्र नहींहोनेदिया इससे इसके साथ मुझे वदला अवश्य लेनाचाहिये कि किसी युक्तिसे इन दोनों बालकोंका नाश होजाय इसप्रकार शोचकर वह उसका उपाय ढूंढनेलगी जैसे २ वह दोनों बालक बढे तैसे २ उसरानी के हृदय में वैररूपी वृक्षभी वढतागया क्रमसे जव वह दोनों तरुणहुए तब दिग्विजय की इच्छासे अपने पिता से वोले कि हम दोनों अस्त्र विद्यासीखचुके और युवावस्थाभी आगई तो इन व्यर्थ भुजाओं को लेकर क्याकरें विजयकी इच्छासे रहित क्षत्रीकी भुजा तथा यौवनको धिक्कारहै इससे हे तात हमें दिग्विजय के लिये आज्ञादीजिये पुत्रों के यह वचन सुनकर राजा परित्यागसेनने प्रसन्नहोकर उनकी यात्राका आरम्भ करदिया और यहभी कहदिया कि जो तुम्हें मार्गमें कोई सकटपडे तो भगवती पार्वतीजीका स्मरणकरना क्योंकि उन्हींकी कृपासे तुम दोनोंका जन्महुआहै यहकहकर बहुतसी सेना तथा जमींदार साथमें देकर उन्हें विदाकिया और पीछे से अपने प्रधान मन्त्री उन बालकों के मातामह बुद्धिमान् प्रथम सगमको भेजा तब महाबलवान् उन दोनों राजपुत्रों ने जाकर पहले पूर्व दिशाको विजयकिया और वहा से अनेक जीतेहुए राजाओं को अपने साथ में लेकर दक्षिण दिशाके विजयको गमन किया अपने पुत्रों के इस वृत्तान्तको सुनकर राजा परित्यागसेन रानी अधिकसगमा समेत बहुत प्रसन्नहुआ और रानी काव्यालकारा द्वेषरूपी अग्नि से अत्यन्त सतप्तहुई तब उसने सन्धि विग्रहके अधिकारी कायस्थको बहुतसा धन देकर राजाकी ओरसे जमींदारोंको जो कि उसके साथमें थे यह पत्रलिखवाया कि यह दोनों मेरे पुत्र अपनी भुजाओं के बल से सम्पूर्ण पृथ्वीको जीतकर मुझे मारकर राज्यलेना चाहते हैं इससे जो तुमलोग मेरे भक्तहो तो बिना विचारेही इन दोनोंको मारडालो यह लिखवाकर पत्र देकर हलकारेको भेज दिया उस हलकारे ने छिप कर सेनामे जाके वह पत्र उन छोटे राजाओंको जो उनराजपुत्रों के साथ उनकी रक्षाके लिये राजा ने भेजदिये थे देदिया उन लोगों ने वह पत्र बांचकर राजनीतिको अत्यन्त कठिन समझकर और राजा की आज्ञाका उल्लघन करना उचित न जानकर रात्रिके समय सलाहकरके उन दोनों के मारने का निश्चय किया यद्यपि राजपुत्रों के गुणों से वह सब प्रसन्न थे तथापि राजाकी आज्ञासे विवशहोकर उन लोगों ने यह विचारकिया इस वार्ताको किसी मित्रके मुखसे जानकर उनराजपुत्रोंका मातामह प्रथम सगमनाम महामन्त्री उन्हें घोडोंपर सवारकराके उनको लेकर भागा रात्रिके समय मार्ग न जानने के कारण वह तीनों विन्ध्याचल के वनमें चलेगये वहां रात्रि के व्यतीतहोजानेपर चलते चलते मध्याह्न के समय घोडे प्यासेहोकर जल न पाकर मरगये और वह वृद्ध मन्त्री भी क्षुधा तथा तृषासे तालूके सूखने के कारण अपने दौहित्रों के देखतेही देखते मरगया घोडोंको तथा अपने मातामहको मराहुआ देखकर वह दोनों शोचनेलगे कि देखो हमारे पिताने हमारी उसदुष्ट सौतेली माताके कहनेसे अपराध के बिनाभी हमलोगों की यहदशाकी इसप्रकार शोचकर दुःखितहो के और पिताके उपदेशको स्मरण

भाई एकान्तमें इस मदनदंष्ट्राके साथ भोगकरनेलगा स्नानसे लौटकर मैने साक्षात् इसको रमण करते देखकर बहुतसे दुर्वाच्य इससे कहे तदनन्तर तुम्हारेभाईके विनय करनेपरभी भाग्य के समान दुर्लंघ्य ईर्ष्यासे मोहितहोकर मैंने शोचा कि यह मेराकहना न मानकर अन्यस्त्रीके साथ रमणकरताहै मैं जानतीहूं कि इसे खड्गके माहात्म्यमें इतना अभिमानहै इससे यह खड्ग छिपादेना चाहिये यह शोचकर जब तुम्हाराभाई सोगया तब मैंने खड्गको उठाकर अग्नि में छोडदिया खड्गके अग्नि में छोडतेही इसकी तो यहदशा होगई और खड्ग कलंकित होगया तबमैंतो पश्चात्ताप करनेलगी और मदनदंष्ट्रा मेरी निन्दा करनेलगी फिर शोकसे व्याकुलहोके हम दोनोंके मरनेके लिये उद्यतहोनेपर तुम यहांआ गये तो अब तुम इसखड्गको लेकर मुझहत्यारिन राक्षसीको इसी खड्गसे मारो उसके यह वचनसुन कर अनिच्छासेनने उसको अवध्यजानकर अपनाही शिर काटनाचाहा उससमय यह आकाशवाणी हुई कि हे राजपुत्र ऐसासाहस मतकरो तुम्हारा बडाभाई मरानहीं है खड्गके अपराधसे इसको देवीने मोहितकरदियाहै और इस खड्गदंष्ट्राकाभी कोई अपराधनहीं है क्योंकि शापमें उत्पन्नहोनेवाली स्त्रियोंके बहुधा ऐसेही काम हुआ करते हैं यह दोनो पूर्व्वजन्मकी तुम्हारे भाईकी स्त्रिया हैं इससे तुमजाकर उन्हीं भगवती पार्वतीजीको प्रसन्नकरो इस आकाशवाणीको सुनकर अनिच्छासेन मरणके उद्योग में निवृत्तहोकर विमानपर चढके और उस कलंकित खड्गकोलेकर विन्ध्यवासिनीको गया वहां पहुंच कर उपवास करके भगवतीको प्रसन्न करनेके अर्थ अपना शिरकाटनेको उद्यतहुआ उस समय यह आकाशवाणी हुई कि हे पुत्र साहस मतकरो मैं तुम्हारी भक्तिसे प्रसन्नहूं तुम्हाराभाई जीउठेगा औरयह खड्ग फिर निर्मलहोजायगा इसआकाशवाणीको सुनकर और खड्गको अपनेहाथमें निर्म्मल देखकर अनिच्छासेन भगवतीकी परिक्रमा करके और अपने विमानपर चढकर शैलपुरमें अपने भाई के निकट आया और उसे उसीसमय चैतन्यहुआ देखकर नेत्रों में अश्रुभरकर उसके पैरोंपर गिरपडा और उसने भी उसे पैरों से उठाकर अपने गले में लगालिया १७७ उससमय वह दोनो स्त्रिया भी अनिच्छासेनके पैरोंपर गिरकरबोलीं कि तुमने हमारेपतिके प्राण रखलिये इसके उपरान्त इन्दीवरसेनके पूछनेपर उसनेसब व्योरेवार वृत्तान्त कहदिया उस संपूर्ण वृत्तान्तको सुनकर इन्दीवरसेन खड्गदंष्ट्रापर क्रोधित नहींहुआ और अपने भाईपर अत्यन्त प्रसन्नहुआ फिर अनिच्छासेनके मुखसे अपनी सौतेली माताकी आज्ञा से अपने मारनेकी आज्ञाको जानकर और माता पिताको उत्कण्ठित सुनकर इन्दीवरसेन अपने भाई से उस खड्गको लेकर उसीके प्रभावसे मिलेहुए विमानपर अपनेभाई तथा स्त्रियोंसमेत चढकर और सुवर्णके मन्दिरोंकोभी उभीपर रखकर आकाशमार्गसे इरावतीनाम पुरीको चलाआया वहां आकाशसे उतरकर पुरवासियों के चित्तमें आश्चर्य्य कराताहुआ राजमन्दिरमें अपने मातापिताके पास भाई तथा स्त्रियो समेत गया और आंसूभरकर अपने माता पिताके चरणोंपर गिरा वहभी सहसा अपने पुत्रको देखकर और उसे हृदयसे लगाकर सन्तापरहित होगये और दिव्यरूप बहुओंकोभी वन्दना करतेदेख कर उनके चित्तमें परमानन्दहुआ तदनन्तर कथाके प्रसगमें उन दोनों बहुओंको अपने पुत्रकी पूर्व

जन्मकी स्त्रियां जानकर और विमान तथा सुवर्णके मन्दिरो को देखकर उन दोनोंरानी अधिकसंगमा तथा राजा परित्यागसेनके चित्तमे आश्चर्य्य पूर्वक प्रसन्नताहुई इसप्रकार अपने माता पिताको प्रसन्न करके इन्दीवरसेन अपने भाई और स्त्रियोंसमेत कुछ कालतक सुखपूर्वक रहा कुछसमयके उपरान्त अपने पितासे आज्ञालेकर अपनेभाई समेत दिग्विजय करने को गया और खड्गके प्रभावसे संपूर्णपृथ्वी जीतकर राजालोगों से सुवर्ण हाथी घोडे तथा रत्नलेकर लौटआया लौटकर आयेहुए इन्दीवरसेनके पीछे सेनाके चलनेसे जो धूल उडरहीथी सो मानो संपूर्ण विजय कीहुई पृथ्वी उसके पीछे २ चलीआती थी राजापरित्यागसेन अपने पुत्रको दिग्विजय करके लौटाहुआ जानकर राजधानीसे बाहर आगे से जाकर लेआया और जब मन्दिरमे आगया तब रानी अधिकसंगमा भी अपने पुत्रों से मिलकर अत्यन्त प्रसन्नहुई इसप्रकार अपने माता पिताको प्रसन्नकरके और संपूर्ण विजय कियेहुए राजालोगोंका सत्कार करके इन्दीवरसेन ने वह दिन अपनेभाई तथा स्त्रियों समेत बडे आनन्दसे व्यतीत किया दूसरे दिन अपने पिताको वह सबकुछ जो राजालोगोंसे मिलाथा देकर उसे अकस्मात् अपने पूर्वजन्मका स्मरण आगया तब सोकर उठेहुएके समान वह अपने पितासे बोला कि हे तात मुझे अपने पूर्वजन्म का स्मरण आगयाहै वह मैं आपको सुनाताहूं हिमालयके शिखरपर मुक्तापुर नाम एक नगरहै उसमे मुक्तासेननाम विद्याधरों का राजाहै उसके कंबुमतीनाम रानी में पद्मसेन और रूपसेननाम दो पुत्रहुए उनमें से पद्मसेनके साथ आदित्यप्रभानाम विद्याधरीने स्वयंवर करलिया यह जानकर आदित्यप्रभा की सखी चन्द्रवतीनाम विद्याधरीनेभी कामातुरहोकर पद्मसेनके साथ विवाह किया तब दो स्त्रियोंसेयुक्त पद्मसेन सौतसे ईर्ष्या करनेवाली आदित्यप्रभा से बहुत खिन्नहोकर अपने पितासे बोला कि हे तात मैं प्रतिदिन ईर्ष्यायुक्त स्त्रियोंके कलहको नहीं सहसक्ताहूं इससे इस दुःखके दूरकरने के लिये मेरी तपोवन जानेकी इच्छाहै सो आप मुझे आज्ञादीजिये जब एकबार कहनेसे पिताने आज्ञा नहीं दी तब पद्मसेन ने बडा हठ किया उससमय उसके बहुत हठकरनेसे क्रुद्धहोकर मुक्तासेनने उसको यह शाप दिया कि तुम तपोवनमे जाकर क्याकरोगे मृत्युलोकमे जाओ वहां यह बडी आदित्यप्रभा नाम कलहकारिणी तुम्हारी स्त्री राक्षसयोनिमें उत्पन्नहोकर तुम्हारी स्त्री होगी और यह दूसरी तुम्हारी बहुतप्यारी चन्द्रवती किसी राजाकी रानीहोकर राक्षसकी स्त्री होगी फिर पीछेसे तुम्हारीस्त्रीहोगी और यहरूपसेनभी तुम्हारे साथ तपोवन जानेकी इच्छा करताथा इससे यहभी वहां तुम्हारा छोटाभाई होगा वहां दो स्त्रियोंके होने से कुछ दुःख अनुभव करके जब संपूर्ण पृथ्वी जीतकर अपने पिताको देदोगे तब इन सब समेत तुम अपनी जातिको स्मरणकरके शापसे छूटजाओगे इसप्रकार अपने पितासे अपने शापका उद्धार सुन कर [illegible] अपनेभाई तथा स्त्रियोंसमेत पृथ्वीमें उत्पन्नहुआ हे तात वह पद्मसेन मैंही हूं जिसको कि [illegible] सेननाम रक्खाहै मैं अपना सब कर्त्तव्य करचुका और जो रूपसेननाम दूसरा विद्याधर [illegible] अनिच्छासेन नाम मेराछोटाभाई है आदित्यप्रभानाम जो मेरीस्त्री थी वह यह खड्ग[illegible] [illegible] मेरीस्त्री मदनदंष्ट्राहै इससमय हमारे शापकी [illegible] आगई इससे हम

करके उन्होंने भगवती पार्वतीजीका ध्यानकिया अनन्तर उन भगवती के ध्यानकरतेही क्षुधा तृषा तथा श्रम का नाशहोगया और उनके शरीरमें बलनढगया तब वह दोनों भगवतीकी कृपाके विश्वासमें सावधान होके भगवती विन्ध्यवासिनीके दर्शन करनेकोचले और मार्गके श्रमकेविनाही वहां पहुंचकर भगवती के आगे निराहाररहोके भगवतीकी आराधनाकरनेकेलिये तप करनेलगे १०९ इसबीचमें वह संपूर्ण राजालोग सेनासे मिलके उन दोनों राजपुत्रोंके मारनेकेलिये उनके डेरेपरआये वहां मातामहके साथ उनको भागाहुआ जानिकर मन्त्रके खुलजानेसे भयभीतहोके राजा परित्यागसेनके पास चलेआये और वहां राजाको संपूर्ण लेखदिखाकर सबवृत्तान्त वर्णनकिया राजा वह सब वृत्तान्त सुनके घबराकर क्रोधपूर्वक बोला कि यहलेख मेरे भेजेहुए नहीं हैं यह तो कोई इन्द्रजालहै हे मूर्खो क्या तुम इतना भी नहीं जानतेहो कि मैं इतने कठिन तपसे प्राप्तहुए अपने पुत्रोंको मरवाडालता तुमने तो उन्हें मार हीडालाहोता परन्तु वह अपने पुण्यसे बचगये और उनके मातामहने मन्त्रीहोनेका फलदिखाया उनसे इसप्रकार कहके राजाने भागेहुए मिथ्यालिखनेवाले उसकायथको बहुतदूरसे पकडमँगवाकर सब हाल पूंछकर मरवाडाला और उस दुष्टकार्य्य करनेवाली रानी काव्यालकाराको पुत्रघातिनी जानकर तहखानेमें बन्द करवादिया (अविचार्य्यैतुपर्य्यन्तमातिठेपान्नयाधिया सहसाहितंतपापकथमापद्विपत्तये) परिणामकी विनाशोके रूपसे अन्धेहोकर सहसा कियागया पाप विपत्तिका कारण क्यों न होगा जोराजा लोग राजपुत्रोंके मार्गमेसे लौटआयेथे उनको राजाने उनके राज्योंसे निकालकरके उनके स्थानापन्न दूसरेकोकरदिया और रानी अधिकसंगमा समेत दुःखितहोकर अपने पुत्रोंको ढुंढवाताहुआ गंगाभगवती का स्मरण करनेलगा इसबीचमें राजपुत्र इन्दीवरसेनपर बहुतप्रसन्नहुई भगवती विन्ध्यवासिनीने स्वप्न में एकखड्ग देकर उससे कहा कि इसखड्ग के प्रभावसे तुम दुर्जय शत्रुकोभीजीतोगे और जोकुछ इच्छा करोगे वह सबभी इसखड्गके प्रभावसे मिलेगा और इसीसे तुम दोनोंके मन मनोरथभी पूर्णहोंगे यह कहकर भगवतीके अन्तर्द्धान होजानेपर इन्दीवरसेनने जगकर अपने हाथमें खड्गदेखा और अपने भाई से स्वप्नका वृत्तान्त कहकेतथाखड्ग दिखाकर उस सुमेत मन्त्रहोके बतके फल फलोंसेही तपका पारण किया तदनन्तर भगवतीकी कृपासे श्रमरहित होकर वह दोनों भाई भगवतीको प्रणाम करके आनन्द पूर्वक खड्गको लेकर वहांसेचले बहुत दूरचलकर एकबड़ा सुन्दर नगरमिला जिसके सुवर्ण मयगृहोंको देखकर सुमेरु पर्वतकी भ्रान्ति होतीथी उस नगरके द्वारपर एक बड़ा भयकर राक्षस बैठा था उससे इन्दीवरसेनने पूछा कि इसनगरका क्यानामहै और इसका स्वामी कौनहै तब उस राक्षसने कहा कि इस नगरका शैलपुरनामहै और यमदंष्ट्र नाम हमारा स्वामी यहांकाराजाहै राक्षसके यहवचन सुनकर यमदंष्ट्रके मारनेकी इच्छासे इन्दीवरसेन अपने भाईसमेत उस नगरमें प्रवेश करनेलगा तब उस द्वार पालनेरोका तो इन्दीवरसेनने अपने एकही खड्गप्रहारसे उसका शिरकाटकर नगरके भीतर राजभवन में जाकर सिंहासनपर बैठेहुए यमदंष्ट्रनाम राक्षसको देखा उसके बाईं ओर एक बड़ी स्वरूपवती स्त्री बैठी थी और दहिनाओर एक दिव्य कुमारी बैठीथी इसप्रकार स्त्रियोंके बीचमें बैठेहुए बड़ी २ डाढोंसे भय–

जन्मकी स्त्रियाजानकर और विमान तथा सुवर्णके मन्दिरों को देखकर उन दानोंरानी अधिकसंगमा तथा राजा परित्यागसेनके चित्तमें आश्चर्य्य पूर्वक प्रसन्नताहुई इसप्रकार अपने माता पिताको प्रसन्न करके इन्दीवरसेन अपने भाई और स्त्रियोंसमेत कुछ कालतक सुखपूर्वक रहा कुछसमयके उपरान्त अपने पितासे आज्ञालेकर अपनेभाई समेत दिग्विजय करनेको गया और खड्गके प्रभावसे सम्पूर्ण पृथ्वी जीतकर राजालोगों से सुवर्ण हाथी घोड़े तथा रत्नलेकर लौटआया लौटकर आयेहुए इन्दीवरसेनके पीछे सेनाके चलनेसे जो धूल उड़रहीथी सो मानों सम्पूर्ण विजय कीहुई पृथ्वी उसके पीछे २ चलीआतीथी राजापरित्यागसेन अपने पुत्रको दिग्विजय करके लौटाहुआ जानकर राजधानीसे बाहरआगे से जाकर लेआया और जब मन्दिरमें आगया तब रानी अधिकसंगमा भी अपने पुत्रों से मिलकर अत्यन्त प्रसन्नहुई इसप्रकार अपने माता पिताको प्रसन्नकरके और सम्पूर्ण विजय कियेहुए राजालोगोंका सत्कार करके इन्दीवरसेन ने वह दिन अपनेभाई तथा स्त्रियों समेत बड़े आनन्दसे व्यतीत किया दूसरे दिन अपने पिताको वह सबकरजो राजालोगोंसे मिलाथा देकर उसे अकस्मात् अपने पूर्व्व जन्मका स्मरण आगया तब सोकर उठेहुएके समान वह अपने पितासे बोला कि हे तात मुझे अपने पूर्वजन्म का स्मरण आगयाहै वह मैं आपको सुनाताहूं हिमालयके शिखरपर मुक्तापुर नाम एक नगरहै उसमें मुक्तासेननाम विद्याधरों का राजाहै उसके कम्बुमतीनाम रानी में पद्मसेन और रूपसेननाम दो पुत्रहुए उनमें से पद्मसेनके साथ आदित्यप्रभानाम विद्याधरीने स्वयंवर करलिया यह जानकर आदित्यप्रभा की सखी चन्द्रवतीनाम विद्याधरीनेभी कामासक्तहोकर पद्मसेनके साथ विवाह किया तब दो स्त्रियोंसेयुक्त पद्मसेन सौतसे ईर्ष्या करनेवाली आदित्यप्रभा से बहुत खिन्नहोकर अपने पितासे बोला कि हे तात मैं प्रतिदिन ईर्ष्यायुक्त स्त्रियोंके कलहको नहीं सहसक्ताहूं इससे इस दुःखके दूरकरनेके लिये मेरी तपोवन जानेकी इच्छाहै सो आप मुझे आज्ञादीजिये जब एकबार कहनेसे पिताने आज्ञा नहीं दी तब पद्मसेन ने बड़ा हठ किया उससमय उसके बहुत हठकरनेसे क्रुद्धहोकर मुक्तासेनने उसको यह शाप दिया कि तुम तपोवनमें जाकर क्याकरोगे मृत्युलोकमें जाओ वहां यह बड़ी आदित्यप्रभा नाम कलहकारिणी तुम्हारी स्त्री राक्षसयोनिमें उत्पन्नहोकर तुम्हारी स्त्री होगी और यह दूसरी तुम्हारी बहुतप्यारी चन्द्रवती किसी राजाकी रानीहोकर राक्षसकी स्त्री होगी फिर पीछेमें तुम्हारीस्त्रीहोगी और यहरूपसेनभी तुम्हारे साथ तपोवन जानेकी इच्छा करताथा इससे यहभी वहां तुम्हारा छोटाभाई होगा वहां दो स्त्रियोंके होने से कुछ दुःख अनुभव करके जब सम्पूर्ण पृथ्वी जीतकर अपने पिताको देदोगे तब इन सब समेत तुम अपनी जातिको स्मरणकरके शापसे छूटजाओगे इसप्रकार अपने पितासे अपने शापका उद्धार सुन कर पद्मसेन अपनेभाई तथा स्त्रियोंसमेत पृथ्वीमें उत्पन्नहुआ हे तात वह पद्मसेन मैंही हूं जिसको कि आपने इन्दीवरसेननाम रक्खाहै मैं अपना सब कर्त्तव्य करचुका और जो रूपसेननाम दूसरा विद्याधर कुमारथा वह यही अनिच्छासेन नाम मेराछोटाभाई है आदित्यप्रभानाम जो मेरीस्त्री थी वह यह खड्गदंष्ट्राहै और दूसरी चन्द्रावतीनाम मेरीस्त्री मदनदंष्ट्राहै इससमय हमारे शापकी अवधि आगई इससमय

करके उन्होंने भगवती पार्वतीजीका ध्यान किया और ध्यान करतेही भगवती के ध्यान करतेही क्षुधा तृषा तथा श्रम का नाशहोगया और उनके शरीरमें बलपड़गया तब वह दोनों भगवतीकी कृपाके विश्वाससे सावधान होके भगवती विन्ध्यवासिनी के दर्शन करनेको चले और मार्गके श्रमकेविनाही वहां पहुंचकर भगवती के आगे निराहारहोके भगवतीकी आराधनाकरनेकेलिये तप करनेलगे ,१०६ इसबीचमें वह सम्पूर्ण राजालोग सेनासे मिलके उन दोनों राजपुत्रोंके मारनेकेलिये उनके डेरेपरआये वहांमातामहके साथ उनको भागाहुआ जानके मन्त्रके खुलजानेसे भयभीतहोके राजा परित्यागसेनके पास चलेआये और वहां राजाको सम्पूर्ण लेखदिखाकर सबवृत्तान्त वर्णनकिया राजा वह सब वृत्तान्त सुनकर बड़ाक्रोधपूर्वक बोला कि यह लेख मेरे भेजेहुए नहीं हैं यह तो कोई इन्द्रजालहै हे मूर्खो क्या तुम इतना भी नहीं जानतेहो कि मैं इतने कठिन तपसे प्राप्तहुए अपने पुत्रोंको मरवाडालता तुमने तो उन्हें मार हीडालाहोता परन्तु वह अपने पुण्यसे बचगये और उनके मातामहने मन्त्रीहोनेका फलदिखाया उनसे इसप्रकार कहके राजाने भागेहुए मिथ्यालिखनेवाले उसकायथको बहुतदूरसे पकड़मँगवाकर सब हाल पूछकर मरवाडाला और उस दुष्टकार्य करनेवाली रानी काव्यालंकाराको पुत्रघातिनी जानकर तह-खानेमें बन्दकरवादिया (अविचार्यतुपर्यन्तमतिक्षेपान्नयाप्रिया, सहसाहिकृतपापकर्मभ्रंशेपापये) परिणामको विनासोचे क्षेपसे अन्धेहोकर सहसा कियागया पाप विपत्तिका कारण क्यों न होगा जोराजा लोग राजपुत्रोंके साथमेंसे लौटआयेथे उनको राजाने उनके राज्योंसे निकालकरके उनके स्थानापन्न दूसरोंको करदिया और रानी अधिकसंगमा समेत दुःखितहोकर अपने पुत्रोंके दुखपाताहुआ गौरीभगवती का स्मरण करनेलगा इसबीचमें राजपुत्र इन्दीवरसेनपर तपसेप्रसन्नहुई भगवती विन्ध्यवासिनीने स्वप्न में एक खड्ग देकर उससे कहा कि इसखड्गके प्रभावसे तुम दुर्जय शत्रुकोभीजीतोगे औरजोकुछइच्छा करोगे वह सबभी उस खड्गके प्रभावसे मिलेगा और इसीसे तुम दोनोंके मन मनोरथ भी पूर्णहोंगे यह कहकर भगवतीके अन्तर्द्धान होजानेपर इन्दीवरसेनने जागकर अपने हाथमें खड्गदेखा और अपने भाई से स्वप्नका वृत्तान्त कहके तथाखड्ग दिखाकर उस समेत प्रसन्नहोके वनके फल फूलोंसेही व्रतका पारण किया तदनन्तर भगवतीकी कृपासे श्रमरहित होकर वह दोनों भाई भगवतीको प्रणामकरके आनन्द पूर्वक खड्गको लेकर वहांसेचलेबहुत दूरचलकर एकबड़ा सुन्दर नगरमिला जिसके सुवर्ण मयगृहोंको देखकर सुमेरु पर्वतकी भ्रान्ति होतीथी उस नगरके द्वारपर एक बड़ा राक्षसखड़ाथा उससे इन्दीवरसेननेपूछा कि इसनगरका क्यानामहै औरइसका स्वामी कौनहै तब उस राक्षसनेकहा कि इस नगरका शैलपुरनामहै और यमदंष्ट्र नाम हमारा स्वामी यहांकाराजाहै राक्षसके यहवचन सुनकर यमदंष्ट्रके मारनेकी इच्छासे इन्दीवरसेन अपने भाईसमेत उस नगरमें प्रवेश करनेलगा तब उस द्वारपालनेरोका तो इन्दीवरसेनने अपने एकही खड्गकेप्रहारसे उसका शिरकाटकर नगरके भीतर राजभवन में जाकर सिंहासनपर बैठेहुए यमदंष्ट्रनाम राक्षसको देखा उसके बाईं ओर एक बड़ी स्वरूपवती स्त्री बैठी थी और दहिनीओर एकदिव्य कुमारीबैठीथी इसप्रकार स्त्रियोंके बीचमें बैठेहुए बड़े २ दाढ़ोंसे भय—

मुखवाले उस यमदंष्ट्र को इन्दीवरसेन ने युद्ध करने को बुलाया वह भी खड्ग लेकर उठ खडाहुआ और उन दोनोंका युद्ध होनेलगा युद्ध में इन्दीवरसेन ने कईवार अपने खड्गसे उस राक्षसका शिरकाटा परन्तु वह बारंबार जम जम आया उसकी इस मायाको देखकर उस कुमारी स्त्री ने जो कि इन्दीवरको देखकर अनुरक्तहोगई थी यह सञ्ज्ञा (इशारा) की कि शिरको काटकर उसके दो टुकडे करडालो इस सञ्ज्ञाको जानकर उसने शीघ्रही राक्षसका शिरकाटकर दोटुकडे करडाले इससे उसकी माया नष्टहोगई और शिर फिर नहीं जमा इसीसे वह राक्षस मरगया राक्षसके मरजानेपर उस स्त्री तथा कुमारीको प्रसन्न देखके भाई समेत इन्दीवरसेनने बैठकर उनसे पूछा कि ऐसे सुन्दर पुरमें यह केवल एक द्वारपाल राक्षससे युक्त राक्षसोंका राजा कौन था और तुम दोनों कौनहो जो कि इसे मरा देखकर प्रसन्न होरही हो यह सुनकर उनमें से कुमारी बोली कि इस शैलपुर में वीरभुजनाम राजाथा उसकी यह मदनदंष्ट्रानाम रानी है इस यमदंष्ट्रनाम राक्षसने अपनी मायासे वीरभुजनाम राजाको उसके सब परिकर समेत खाकर इस मदनदंष्ट्राको अपनी स्त्री बनालिया और इसरम्यपुरमें सुवर्ण के घरबनाकर परिकरके विनाही इसके साथ रमणकरताहुआ रहनेलगा और मैं उसराक्षसकी खड्गदंष्ट्रानाम छोटी बहिनहूं अभी मेरा विवाह नहीं हुआहै तुम्हें देखकर मेरे चित्त में अनुराग उत्पन्नहुआहै इससे हे आर्य्यपुत्र तुम मेरे साथ विवाहकरो इस राक्षसने हठपूर्वक इसमदनदंष्ट्राके साथ विवाह कियाथा इसीसे उसके मरनेसे इसको प्रसन्नताहुई है इसप्रकार उस खड्गदंष्ट्रा के वचन सुनकर इन्दीवरसेन उसके साथ गान्धर्व विवाहकरके उसीनगरमें भगवती के दिये हुए खड्गके प्रभाव से मनोवांछित भोगकरताहुआ अपने भाईसमेतरहा एकदिन खड्गके प्रभावसे आकाशगामी विमान बनाकर इन्दीवरसेनने अपनेभाईको उसपर बैठालकर अपने माता पिता से अपना वृत्तान्त कहने के लिये भेजा वह विमानपर चढकर क्षणभरमें इरावतीनाम पुरी में पहुँचकर अपने माता पिता के निकट गया जैसे चन्द्रमाको देखकर तीव्र दुःखरूपी धूपसे व्याकुल चकोर प्रसन्नहोते हैं उसीप्रकार अनिच्छासेनको देखकर उसके माता पिता प्रसन्नहुए पैरोंपर पडेहुए अपने छोटेपुत्र अनिच्छासेन को आलिंगनकरके राजा और रानी ने सन्देहयुक्त होकर अपने बडेपुत्रका कुशल पूछा तब उसने अपने भाईकी कुशल कहकर आदिसे अन्ततकका सब वृत्तान्त वर्णन किया और अपने माता पितासे अपनी पापिन सौतेली माताका कियाहुआ वह कुकार्य्य सुना तदनन्तर कुछदिन वहा रहकर दुःस्वप्नोंके देखने से शंकितहोके उसने अपने माता पितासे कहा कि मैं अब जाकर आपकी उत्कण्ठा का वर्णनकरके आर्य्य इन्दीवरसेनको यहाँ लिवायलाताहूं इससे आप मुझे जानेकी आज्ञादीजिये यह सुनकर राजा और रानी ने उसका जानेकेलिये आज्ञा देदी तब अनिच्छासेन विमान मे चढके आकाशमार्ग से शैलपुरको गया और प्रातःकाल उसने अपने भाईके मंदिर में जाकर देखा कि इन्दीवरसेन पृथ्वीपर अचेतहुआ पडा है और खड्गदंष्ट्रा तथा मदनदंष्ट्रा उसकेपास बैठीहुई रोरही हैं यह देखकर घबराके उसने पूछा कि मेरे भाई की यह क्यादशाहोगई तब मदनदंष्ट्रा तो खड्गदंष्ट्राकी निन्दा करनेलगी और खड्गदंष्ट्रा नीचे को मुखकरके बोली कि तुम्हारे चलेजानेके उपरान्त एकदिन जब मैं स्नान करनेको गई

अपने स्थानको जातेहैं यह कहकर अपनेभाई तथा स्त्रियोंसमेत पद्मसेनने अपना मानुषी स्वरूपत्याग कर विद्याधरोंका स्वरूप धरलिया और अपनेपिताको प्रणामकरके स्त्रियोंको गोदमें लेकर अपने भाई समेत आकाशमार्ग से अपने मुक्तापुर नगरमें पहुँचकर अपने पिता मुक्तासेन तथा माता कम्बुमतीको प्रणाम किया कम्बुमती समेत मुक्तासेनभी अपने पुत्रों और बहुओंको देखकर उनकासत्कारकरके अत्यन्त प्रसन्नहुआ इसप्रकार शापसे छूटकर पद्मसेन ईर्ष्यारहित आदित्यप्रभा और चन्द्रप्रभा समेत सुखपूर्वक रहनेलगा नरवाहनदत्तसे इसरमणीय कथाको कहकर गोमुख फिर कहनेलगा कि हे युवराज महात्मालोगोंकोही इसप्रकारसे बड़ाक्लेश तथा बड़ा उदय प्राप्तहोताहै और साधारण लोगोंको जैसासाधारण दुःख वैसाही साधारण सुख प्राप्तहोताहै और आपतोराजपुत्री कर्पूरिकाको विनाक्लेशहीपाओगे क्योंकि रानी रत्नप्रभाकी विद्या आपकी रक्षाकरती है गोमुखके इनवचनोंको सुनताहुआ नरवाहनदत्त विना परिश्रम केही बहुत दूर चलागया चलते २ सायंकाल के समय अमृतके समान मधुर शीतल जलवाले तड़ाग पर पहुंचा उस तड़ागके किनारेपर आम कटहल तथा अनार आदिक फलों के मनोहर वृक्ष लगेथे उस के जल में सुन्दर कमल प्रफुल्लितहोरहे थे और सुन्दर राजहंस मनोहर शब्दकररहेथे ऐसे सुन्दर उस तड़ाग में स्नानकरके और भक्तिपूर्वक श्रीशिवजी का पूजनकरके नरवाहनदत्त और गोमुख दोनो ने सुगन्धित मधुरफलतोड़कर खाये और रात्रिके समय कोमल २ पत्ते बिछाकर शयनकिया इसप्रकार सुखपूर्वक वह रात्रि उन दोनोंकी व्यतीत हुई २२५ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायारत्नप्रभालम्बकेअष्टमस्तरंग ८ ॥

इसके उपरान्त प्रातःकाल उस तड़ाग के तटसे चलाहुआ नरवाहनदत्त गोमुखसे बोला कि हे मित्र आज कुछ थोड़ी रात्रिरहे स्वप्नमें एक श्वेतवस्त्र धारणकिये कुमारी ने मुझ से कहा कि हे पुत्र निश्चिन्त होजाओ यहां से कुछ दूर चलकर समुद्रके किनारेपर वनमें एक बड़ा आश्चर्य्यकारी नगर तुमको मिलेगा वहां विश्रामकरके क्लेश विनाही कर्पूरसम्भव नगर में पहुंचकर तुम्हें कर्पूरिकानाम राजपुत्री मिलेगी यह कहकर वह अन्तर्द्धान होगई और मेरी निद्राजातीरही उसके यह वचनसुनकर गोमुख प्रसन्न होकर बोला कि हे युवराज तुम्हारे ऊपर देवताओंकी कृपाहै तुमको कोई वस्तु दुर्लभ नहीं है इससे निस्सन्देह तुम्हारा मनोरथ विनाश्रमके पूर्णहोजायगा इसप्रकार कहतेहुए गोमुख के साथ नरवाहनदत्त बहुत शीघ्रतासे मार्ग में चला और चलते २ समुद्रके तटपर पर्व्वतों के समान उन्नत चौबारे तथा फाटकोंसे युक्त सुमेरु के समान सुवर्णमय राजमन्दिर से शोभित और दूसरे भूमण्डलके समान विस्तार युक्त नगरके निकट प्राप्तहुआ और उस नगरके भीतर जाकर बजारमें उसने सम्पूर्ण जीव, काष्ठयन्त्र के देखे जोकि चैतन्यों के समान चेष्टाकररहेथे, केवल न बोलने के कारण निर्जीव मालूम होते वैश्य वेश्या तथा पुरजनों को आश्चर्य्यपूर्वक देखताहुआ गोमुख समेत नरवाहनदत्त राजमन्दिरके निकट पहुंचा वहां भी काष्ठकेही घोड़े तथा हाथी देखकर सुवर्ण से बनेहुए उस रत्नमन्दिर में भीतरगया वहां यन्त्रमय प्रतीहार वेश्या तथा सेवकादिकों से युक्त एक भव्यपुरुष सिंहासनपर बैठाहुआ उसने देखा उसने

मुखवाले उस यमदंष्ट्र को इन्दीवरसेन ने युद्ध करने को बुलाया वह भी खड्ग लेकर उठ खड़ा हुआ। और उन दोनोंका युद्ध होनेलगा युद्ध में इन्दीवरसेन ने कईबार अपने खड्गसे उस राक्षसका शिर काटा परन्तु वह बारबार जम जम आया उसकी इस मायाको देखकर उस कुमारी स्त्री ने जो कि इन्दीवरको देखकर अनुरक्तहोगई थी यह सञ्ज्ञा (इशारा) की कि शिरको काटकर उसके दो टुकड़े करडालो इस सञ्ज्ञाको जानकर उसने शीघ्रही राक्षसका शिरकाटकर दोटुकड़े करडाले इससे उसकी माया नष्टहोगई और शिर फिर नहीं जमा इसीसे वह राक्षस मरगया राक्षसके मरजानेपर उस स्त्री तथा कुमारीको प्रसन्न देखके भाई समेत इन्दीवरसेनने बैठकर उनसे पूंछा कि ऐसे सुन्दर पुरमें यह केवल एक द्वारपाल राक्षससे युक्त राक्षसोंका राजा कौन था और तुम दोनों कौनहो जो कि इसे मरा देखकर प्रसन्न होरही हो यह सुनकर उनमें से कुमारी बोली कि इस शैलपुर में वीरभुजनाम राजाथा उसकी यह मदनदंष्ट्रानाम रानी है इस यमदंष्ट्रनाम राक्षसने अपनी मायासे वीरभुजनाम राजाको उसके सब परिकर समेत खाकर इस मदनदंष्ट्राको अपनी स्त्री बनालिया और इसरम्यपुरमें सुवर्ण के घरबनाकर परिकरके विनाही इसके साथ रमणकरताहुआ रहनेलगा और मैं उसराक्षसकी खड्गदंष्ट्रानाम छोटी बहिनहूं अभी मेरा विवाह नहीं हुआहै तुम्हें देखकर मेरे चित्त में अनुराग उत्पन्नहुआहै इससे हे आर्य्यपुत्र तुम मेरे साथ विवाहकरो इस राक्षसने हठपूर्वक इसमदनदंष्ट्राके साथ विवाह कियाथा इसीसे उसके मरनेसे इसको प्रसन्नताहुई है इसप्रकार उस खड्गदंष्ट्रा के वचन सुनकर इन्दीवरसेन उसके साथ गान्धर्व विवाहकरके उसीनगरमें भगवती के दिये हुए खड्गके प्रभाव से मनोवाञ्छित भोगकरताहुआ अपने भाईसमेतरहा एकदिन खड्गके प्रभावसे आकाशगामी विमान बनाकर इन्दीवरसेनने अपनेभाईको उसपर बैठालकर अपने माता पिता से अपना वृत्तान्त कहने के लिये भेजा वह विमानपर चढ़कर क्षणभरमें इरावतीनाम पुरी में पहुँचकर अपने माता पिता के निकट गया जैसे चन्द्रमाको देखकर तीव्र दुःखरूपी धूपसे व्याकुल चकोर प्रसन्नहोते हैं उसीप्रकार अनिच्छासेनको देखकर उसके माता पिता प्रसन्नहुए पैरोंपर पड़ेहुए अपने छोटेपुत्र अनिच्छासेन को आलिंगनकरके राजा और रानी ने सन्देहयुक्त होकर अपने बड़ेपुत्रका कुशल पूंछा तब उसने अपनी भाईकी कुशल कहकर आदिसे अन्ततकका सब वृत्तान्त वर्णन किया और अपने माता पितासे अपनी पापिन सौतेली माताका कियाहुआ वह कुकार्य्य सुना तदनन्तर कुछदिन वहां रहकर दुःस्वप्नोंके देखने से शंकितहोके उसने अपने माता पितासे कहा कि मैं अब जाकर आपकी उत्कण्ठा का वर्णनकरके आर्य्य इन्दीवरसेनको यहाँ लिवायलाताहूं इससे आप मुझे जानेकी आज्ञादीजिये यह सुनकर राजा और रानी ने उसका जानेकेलिये आज्ञा देदी तब अनिच्छासेन विमान में चढ़के आकाशमार्ग से शैलपुरको गया और प्रातःकाल उसने अपने भाईके मंदिर में जाकर देखा कि इन्दीवरसेन पृथ्वीपर अचेतहुआ पड़ा है और खड्गदंष्ट्रा तथा मदनदंष्ट्रा उसकेपास बैठीहुई रोरही हैं यह देखकर घबराके उसने पूंछा कि मेरे भाई की यह क्यादशाहोगई तब मदनदंष्ट्रा तो खड्गदंष्ट्राकी निन्दा करनेलगी और खड्गदंष्ट्रा नीचे को मुखकरके बोली कि तुम्हारे चलेजानेके उपरान्त एकदिन जब

अपने स्थानको जातेहैं यह कहकर अपनेभाई तथा स्त्रियोंसमेत पद्मसेनने अपना मानुषी स्वरूपत्याग कर विद्याधरोंका स्वरूप धरलिया और अपनेपिताको प्रणामकरके स्त्रियोंको गोदमें लेकर अपने भाई समेत आकाशमार्ग से अपने मुक्तापुर नगरमें पहुँचकर अपने पिता मुक्तासेन तथा माता कम्बुमतीको प्रणामकिया कम्बुमती समेत मुक्तासेनभी अपने पुत्रों और बहुओंकोदेखकर उनकासत्कारकरके अत्यन्त प्रसन्नहुआ इसप्रकार शापसे छूटकर पद्मसेन ईर्ष्यारहित आदित्यप्रभा और चन्द्रप्रभा समेत सुखपूर्वक रहनेलगा नरवाहनदत्तसे इसरमणीय कथाको कहकर गोमुख फिर कहनेलगा कि हे युवराज महात्मालोगोंकोही इसप्रकारसे बड़ाक्लेश तथा बड़ा उदय प्राप्तहोताहै औरसाधारण लोगोंको जैसासाधारण दुःख वैसाही साधारण सुख प्राप्तहोताहै और आपतोराजपुत्री कर्पूरिकाको विनाक्लेशहीपाओगे, क्योंकि रानी रत्नप्रभाकी विद्या आपकी रक्षाकरती है गोमुखके इनवचनोंको सुनताहुआ नरवाहनदत्त विना परिश्रम केही बहुत दूर चलागया चलते २ सायंकाल के समय अमृतके समान मधुर शीतल जलवाले तडाग पर पहुंचा उस तडागके किनारेपर आम कटहल तथा अनार आदिक फलों के मनोहर वृक्ष लगेथे उसके जल में सुन्दर कमल प्रफुल्लितहोरहे थे और सुन्दर राजहस मनोहर शब्दकररहेथे ऐसे सुन्दर उस तडाग में स्नानकरके और भक्तिपूर्व्वक श्रीशिवजी का पूजनकरके नरवाहनदत्त और गोमुख दोनो ने सुगन्धित मधुरफलतोडकर खाये और रात्रिके समय कोमल २ पत्ते बिछाकर शयनकिया इसप्रकार सुखपूर्व्वक वह रात्रि उन दोनोंकी व्यतीत हुई २२५ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायारत्नप्रभालम्बकेअष्टमस्तरंग ८ ॥

इसके उपरान्त प्रात काल उस तडाग के तटसे चलाहुआ नरवाहनदत्त गोमुखसे बोला कि हे मित्र आज कुछ थोडी रात्रिरहे स्वप्नमें एक श्वेतवस्त्र धारणकिये कुमारी ने मुझ से कहा कि हे पुत्र निश्चिन्त होजाओ यहा से कुछ दूर चलकर समुद्रके किनारेपर वनमें एक बड़ा आश्चर्य्यकारी नगर तुमको मिलेगा वहा विश्रामकरके क्लेश विनाही कर्पूरसम्भव नगर में पहुचकर तुम्हें कर्पूरिकानाम राजपुत्री मिलेगी यह कहकर वह अन्तर्द्धान होगई और मेरी निद्राजातीरही उसके यह वचनसुनकर गोमुख प्रसन्न होकर बोला कि हे युवराज तुम्हारे ऊपर देवताओंकी कृपाहै तुमको कोई वस्तु दुर्लभ नहीं है इससे निस्सन्देह तुम्हारा मनोरथ विनाश्रमके पूर्णहोजायगा इसप्रकार कहतेहुए गोमुख के साथ नरवाहनदत्त बहुत शीघ्रतासे मार्ग में चला और चलते २ समुद्रके तटपर पर्व्वतों के समान उन्नत चौराह तथा फाटकों से युक्त सुमेरु के समान सुवर्णमय राजमन्दिर से शोभित और दूसरे भूमण्डलके समान विस्तार युक्त नगरके निकट प्राप्तहुआ और उस नगरके भीतर जाकर बजारमें उसने सम्पूर्ण जीव, काष्ठयन्त्र के देखे जोकि चैतन्यों के समान चेष्टाकररहेथे, केवल न बोलने के कारण निर्जीव मालूम होते वैश्य वेश्या तथा पुरजनों को आश्चर्य्यपूर्व्वक देखताहुआ गोमुख समेत नरवाहनदत्त राजमन्दिरके निकट पहुचा वहा भी काष्ठकेही घोड़े तथा हाथी देखकर सुवर्ण से बनेहुए उस राजमन्दिर मे भीतरगया वहा यन्त्रमय प्रतीहार वेश्या तथा सेवकादिकों से युक्त एकभव्यपुरुष सिंहासनपर बैठाहुआ उसेदेखा उसने

मुखवाले उस यमदंष्ट्र को इन्दीवरसेन ने युद्ध करने को बुलाया वह भी खड्ग लेकर उठ खड़ाहुआ और उन दोनोंका युद्ध होनेलगा युद्ध में इन्दीवरसेन ने कईवार अपने खड्गसे उस राक्षसका शिरकाटा परन्तु वह वारवार जम जम आया उसकी इस मायाको देखकर उस कुमारी स्त्री ने जो कि इन्दीवरको देखकर अनुरक्तहोगई थी यह सञ्ज्ञा (इशारा) की कि शिरको काटकर उसके दो टुकड़े करडालो इस सञ्ज्ञाको जानकर उसने शीघ्रही राक्षसका शिरकाटकर दोटुकड़े करडाले इससे उसकी माया नष्टहोगई और शिर फिर नहीं जमा इसीसे वह राक्षस मरगया राक्षसके मरजानेपर उस स्त्री तथा कुमारीको प्रसन्न देखके भाई समेत इन्दीवरसेनने बैठकर उनसे पूछा कि ऐसे सुन्दर पुरमें यह केवल एक द्वारपाल राक्षससे युक्त राक्षसोंका राजा कौन था और तुम दोनों कौनहो जो कि इसे मरा देखकर प्रसन्न होरही हो यह सुनकर उनमें से कुमारी बोली कि इस शैलपुर में वीरभुजनाम राजाथा उसकी यह मदनदंष्ट्रानाम रानी है इस यमदंष्ट्रनाम राक्षसने अपनी मायासे वीरभुजनाम राजाको उसके सब परिकर समेत खाकर इस मदनदंष्ट्राको अपनी स्त्री बनालिया और इसरम्यपुरमें सुवर्ण के घरबनाकर परिकरके विनाही इसके साथ रमणकरताहुआ रहनेलगा और मैं उसराक्षसकी खड्गदंष्ट्रानाम छोटी बहिनहूं अभी मेरा विवाह नहीं हुआहै तुम्हें देखकर मेरे चित्त में अनुराग उत्पन्नहुआहै इससे हे आर्य्यपुत्र तुम मेरे साथ विवाहकरो इस राक्षसने हठपूर्वक इसमदनदंष्ट्राके साथ विवाह कियाथा इसीसे उसके मरनेसे इसको प्रसन्नताहुई है इसप्रकार उस खड्गदंष्ट्रा के वचन सुनकर इन्दीवरसेन उसके साथ गान्धर्व विवाहकरके उसीनगरमें भगवती के दिये हुए खड्गके प्रभाव से मनोवांछित भोगकरताहुआ अपने भाईसमेतरहा एकदिन खड्गके प्रभावसे आकाशगामी विमान बनाकर इन्दीवरसेनने अपनेभाईको उसपर बैठालकर अपने माता पिता से अपना वृत्तान्त कहने के लिये भेजा वह विमानपर चढ़कर क्षणभरमें इरावतीनाम पुरी में पहुँचकर अपने माता पिता के निकट गया जैसे चन्द्रमाको देखकर तीव्र दुःखरूपी धूपसे व्याकुल चकोर प्रसन्नहोते हैं उसीप्रकार अनिच्छासेनको देखकर उसके माता पिता प्रसन्नहुए पैरोंपर पड़ेहुए अपने छोटेपुत्र अनिच्छासेन को आलिंगनकरके राजा और रानी ने सन्देहयुक्त होकर अपने बड़ेपुत्रका कुशल पूछा तब उसने अपनी भाईकी कुशल कहकर आदिसे अन्ततकका सब वृत्तान्त वर्णन किया और अपने माता पितासे अपनी पापिन सौतेली माताका कियाहुआ वह कुकार्य्य सुना तदनन्तर कुछदिन वहां रहकर दुस्स्वप्नोंके देखने से शंकितहोके उसने अपने माता पितासे कहा कि मैं अब जाकर आपकी उत्कण्ठा का वर्णनकरके आर्य्य इन्दीवरसेनको यहां लिवायलाताहूं इससे आप मुझे जानेकी आज्ञादीजिये यह सुनकर राजा और रानी ने उसको जाने केलिये आज्ञा देदी तब अनिच्छासेन विमान में चढ़के आकाशमार्ग से शैलपुरको गया और प्रातःकाल उसने अपने भाईके मंदिर में जाकर देखा कि इन्दीवरसेन पृथ्वीपर अचेतहुआ पड़ा है और खड्गदंष्ट्रा तथा मदनदंष्ट्रा उसकेपास बैठीहुई रोरही हैं यह देखकर घबराके उसने पूछा कि मेरे भाई की यह क्यादशाहोगई तब मदनदंष्ट्रा तो खड्गदंष्ट्राकी निन्दा करनेलगी और खड्गदंष्ट्रा नीचे को मुखकरके बोली कि तुम्हारे चलेजानेके उपरान्त एकदिन जब मैं स्नान व

अपने स्थानको जातेहैं यह कहकर अपनेभाई तथा स्त्रियोंसमेत पद्मसेनने अपना मानुषी स्वरूपत्याग कर विद्याधरोंका स्वरूप धरलिया और अपनेपिताको प्रणामकरके स्त्रियोंको गोदमें लेकर अपने भाई समेत आकाशमार्ग से अपने मुक्तापुर नगरमें पहुँचकर अपने पिता मुक्तासेन तथा माता कम्बुमतीको प्रणामकिया कम्बुमती समेत मुक्तासेनभी अपने पुत्रो और बहुओंकोदेखकर उनकासत्कारकरके अत्यन्त प्रसन्नहुआ इसप्रकार शापसे छूटकर पद्मसेन ईर्ष्यारहित आदित्यप्रभा और चन्द्रप्रभा समेत सुखपूर्वक रहनेलगा नरवाहनदत्तसे इसरमणीय कथाको कहकर गोमुख फिर कहनेलगा कि हे युवराज महात्मालोगोंकोही इसप्रकारसे बडाक्लेश तथा बडा उदय प्राप्तहोताहै और साधारण लोगोंको जैसासाधारण दुःख वैसाही साधारण सुख प्राप्तहोताहै और आपतोराजपुत्री कर्पूरिकाको विनाक्लेशहीपाओगे क्योंकि रानी रत्नप्रभाकी विद्या आपकी रक्षाकरती है गोमुखके इनवचनोंको सुनताहुआ नरवाहनदत्त विना परिश्रम केही बहुत दूर चलागया चलते २ सायंकाल के समय अमृतके समान मधुर शीतल जलवाले तडाग पर पहुंचा उस तडागके किनारेपर आम कटहल तथा अनार आदिक फलों के मनोहर वृक्ष लगेथे उस के जल में सुन्दर कमल प्रफुल्लितहोरहे थे और सुन्दर राजहंस मनोहर शब्दकररहेथे ऐसे सुन्दर उस तडाग में स्नानकरके और भक्तिपूर्वक श्रीशिवजी का पूजनकरके नरवाहनदत्त और गोमुख दोनो ने सुगन्धित मधुरफलतोडकर खाये और रात्रिके समय कोमल २ पत्ते बिछाकर शयनकिया इसप्रकार सुखपूर्वक वह रात्रि उन दोनोंकी व्यतीत हुई २२५ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायारत्नप्रभालम्बकेअष्टमस्तरंग ८॥

इसके उपरान्त प्रातःकाल उस तडाग के तटमे चलाहुआ नरवाहनदत्त गोमुखसे बोला कि हे मित्र आज कुछ थोडी रात्रिरहे स्वप्नमें एक श्वेतवस्त्र धारणकिये कुमारी ने मुझ से कहा कि हे पुत्र निश्चिन्त होजाओ यहा से कुछ दूर चलकर समुद्रके किनारेपर वनमें एक बडा आश्चर्य्यकारी नगर तुमको मिलेगा वहा विश्रामकरके क्लेश विनाही कर्पूरसम्भव नगर में पहुचकर तुम्हें कर्पूरिकानाम राजपुत्री मिलेगी यह कहकर वह अन्तर्द्धान होगई और मेरी निद्राजातीरही उसके यह वचनसुनकर गोमुख प्रसन्न होकर बोला कि हे युवराज तुम्हारे ऊपर देवताओंकी कृपाहै तुमको कोई वस्तु दुर्लभ नहीं है इससे निस्सन्देह तुम्हारा मनोरथ विनाश्रमके पूर्णहोजायगा इसप्रकार कहतेहुए गोमुख के साथ नरवाहनदत्त बहुत शीघ्रतासे मार्ग में चला और चलते २ समुद्रके तटपर पर्व्वतों के समान उन्नत चौवारे तथा फाटकों से युक्त सुमेरु के समान सुवर्णमय राजमन्दिर से शोभित और दूसरे भूमण्डलके समान विस्तार युक्त नगरके निकट प्राप्तहुआ और उस नगरके भीतर जाकर बजारमें उसने सम्पूर्ण जीव, काष्ठयन्त्र के देखे जोकि चैतन्यों के समान चेष्टाकररहेथे, केवल न बोलने के कारण निर्जीव मालूम होते वैश्य वेश्या तथा पुरजनों को आश्चर्य्यपूर्वक देखताहुआ गोमुख समेत नरवाहनदत्त राजमन्दिरके निकट पहुचा वहा भी काष्ठकेही घोडे तथा हाथी देखकर सुवर्ण से बनेहुए उस राजमन्दिर के भीतरगया वहा यन्त्रमय प्रतीहार वेश्या तथा सेवकादिकों से युक्त एकभव्यपुरुष सिंहासनपर बैठाहुआ उसेदेखा जोमे

जड इन्द्रियोंका चलानेवाला केवल अधिष्ठाता एकआत्माहै उसीप्रकार वहां उन सम्पूर्ण जड पदार्थों के चलानेका कारण एक वही चैतन्यपुरुषथा वह नरवाहनदत्तकी सुन्दर आकृतिको देखकर उठा और स्वागतकरके अपने आसनपर लिवालेगया और आदरपूर्वक अपने रत्नजटित सिंहासनपर बैठाकर पूछनेलगा कि आप कौनहैं और इस मनुष्यों से रहित स्थानमें किसलिये आये हैं तब नरवाहनदत्त ने अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त कहकर उससे पूछा कि आप कौन हैं और यह कैसा आश्चर्य्यकारी आपका पुर है यह सुनकर वह अपना वृत्तान्त इसप्रकार कहने लगा कि पृथ्वी की आभूषण रूप बडी सुन्दर कांची नाम एक नगरी है उस नगरी में बाहुबल नाम राजा है जिसने अपनी भुजाओंके बलसे चंचल लक्ष्मीको भी अपने खजाने मे बन्द कररक्खाहै उस राजाके राज्यमें मयासुरके बनायेहुए काष्ठादिके माया यन्त्रोंके जाननेवाले हम दो भाई ज्ञातके बढई रहतेथे बडे भाईका नाम प्राणधरहै वह अत्यन्त व्यभिचारी है और छोटा राज्यधर नाम अपने भाईका परमभक्त मैंहूं मेरे भाईने पिताका सम्पूर्ण धन खर्चकरके अपना पैदा किया हुआ भी सब धन खर्च करडाला और फिर मेरा उपार्जन कियाहुआ भी धन व्ययकरदिया परन्तु मैंने स्नेहमें उसेनिषेध नहीं किया इतनेपर भी उसव्यभिचारी ने वेश्याओं के निमित्त धनलाने की इच्छासे रस्सी के यन्त्रसे चलनेवाले दो हंस काष्ठके बनाये वह दोनों हंस रात्रि के समय रस्सीके हिलानेसे राजा बाहुबलके यहां झरोखे के द्वारा भीतरजाकर खजाने में से आभूषणों को अपनी चोंचमें दाबलाते थे उन आभूषणों को बेचकर मेराभाई वेश्याके संग भोग करताथा इस प्रकारसे उसने बहुत दिनतक राजाके खजाने से धन लेलेकर उडाया और मेरे निवारण करनेपर भी उस कुकर्म से निवृत्त नहींहुआ ठीकहै (कोहिमार्गममार्गंवाव्यसनान्धोनिरीक्षते) व्यसनसे अन्धा होकर कौन पुरुष कुमार्ग और सुमार्गका विचार करताहै तब खजानचीने कपाटोंके बन्द रहनेपर भी खजाने में से आभूषण जातेदेखकर कुछदिन तक तो भयसे राजासे नहीं कहा और रोज उसकी तलाशकरतारहा परन्तु जब तलाश करनेपर भी पता न लगा और नित्य आभूषण जानेलगे तब उसने व्याकुल होकर राजासे कहदिया राजाने भी बहुत से रक्षकोंको आज्ञादिया कि देखो रात्रिके समय कौन आभूषणों को लेजाताहै उन रक्षकोंने वहां जाकर अर्द्धरात्रिके समय झरोखे के द्वारा आयेहुए रस्सी में बँधेहुए दोकाष्ठके हंसदेखे जब वह हंस चोंचोंमें आभूषण लेकर यन्त्रकी प्रेरणासे घूमनेलगे तब उनरक्षकों ने राजाको दिखाने के लिये रस्सी काटकर वह दोनों हंसलेलिये उससमय हमारे बडे भाईने घबराकर मुझसे कहा कि हे भाई राजाके रक्षकोंने वह मेरे दोनों हंस पकड़लिये क्योंकि यन्त्रकी रस्सी शिथिल होगई है और कीलठोकने से भी यन्त्र नहीं चलताहै इससे हम दोनोंको आजही यहां से भागजाना चाहिये नहीं तो प्रातःकाल राजा हमदोनोंको चोरजानकर मरवाडालेगा क्योंकि इस नगरमें हमही दोनों जने मायायन्त्रके जाननेवाले प्रसिद्धहैं इससे मेरे पास जो वायुका यन्त्रविमानहै उसपर चढकर परदेशमें बहुतदूर निकल चलो वह यन्त्र एकबार कीलठोकने से ८०० योजन बहुत शीघ्र चलाजाता है यद्यपि परदेशमें क्लेशहोगा तथापि लाचारी में क्याकरें (पापेकर्मण्यवज्ञातेहितशक्येऽन्यतस्सुखम्)

हितवादी पुरुषके वचनको न मानकर कियेगये पापमें सुख कैसे होसक्ता है जो मुझपापीने तुम्हारा कहना नहीं माना उसीका फल आज यह हुआहै जो कि तुझनिरपराधी को भी प्राप्त हुआहै यह कहकर मेराभाई प्राणधर उसीसमय कुटुम्ब समेत विमानपर चढा परन्तु मैं उसके कहनेपर भी बहुत भीड देखकर उस पर न चढा तब वह उस विमानको उडाकर कहीं चलागया ४२ प्राणधरके चलेजाने पर मैंभी प्रातःकाल राजाके भयसे अपने बनायेहुए विमानपर चढ़कर वहांसे दोसौयोजन चलागया दोसौयोजनपर पहुंचकर फिर वहांसे कीलठोककर और आगे दोसौयोजन चलागया इसप्रकार चारसौ योजनपृथ्वी उल्लंघनकरके समुद्रके निकट विमानको छोडकर पैरों पैरों इसशून्यपुरमें पहुंचा और आश्चर्य्य पूर्वक इसराजमंदिर में आकर वस्त्र आभूषण तथा शय्या आदिक राजाओंके योग्य सामग्रीको देखकर मन्दिरके बाहर उद्यानकी बावडीमें स्नानकरके और मधुरफलखाके मन्दिरके भीतर उसी शय्या परसोरहा रात्रिकेसमय वहां अकेले लेटे २ मैंने शोचा कि इस निर्जन स्थानमें रहकर मैं क्याकरूंगा अब यहां राजाबाहुबलसे तो कुछ भयहैहीनहीं इससे प्रातःकाल उठकर किसी अन्यस्थानको चलूंगा इसप्रकार शोचकर सोयेहुए मुझसे कुछ रात्रिरहे स्वप्नमें मोरपर सवार किसी दिव्यपुरुषने मुझसे कहा कि तुम यहींरहो अन्यत्रकहीं न जाओ भोजनके समय मध्यमपुरमें आकरठहरना यह कहकर उसपुरुष के अन्तर्द्धान होजानेपर मैंने जगकर शोचा कि निस्सन्देह यह दिव्यस्थान श्रीस्वामिकार्त्तिकजी का बनायाहुआहै और उन्होंनेही पूर्वपुण्योंके प्रभावसे मुझे दर्शनदेकर मेरे ऊपर कृपाकीहै इससे मुझे यहीं रहनेमें कल्याणहै इसप्रकार निश्चयकरके और शय्यापरसे उठके सब नित्यका आह्निक करके भोजन के समय मैं मध्यमपुर में जाकरबैठा वहां प्रथम तो अकस्मात् सुवर्ण के पात्र मेरे आगे आगये फिर आकाशसे घी दूध तथा चावलआदिक भोजन उनपात्रों में आगया और मैं जैसा २ विचारकरतागया उसी २ प्रकारके भोजन मेरे आगे आतेगये उन सम्पूर्ण पदार्थोंको खाकर मैं अत्यन्त संतुष्टहुआ और तब से इसी पुरमें अपनी इच्छाके अनुसार प्रतिदिन प्राप्तहोनेवाले राज्यके सुखोंको अनुभव करतारहा केवल स्त्री तथा परिजन मुझे अभिलाषा करनेसे भी नहीं मिले इससे यन्त्रमय संपूर्ण परिकर मैंनेयहां बनालिया इसप्रकार भाग्यवश से यहां आकर मैं बढ़ई होकर भी राजाओंके सुखका अनुभव करता हूं इससे हे राजा इस स्वामिकार्त्तिकके पुरमें आपभी आजके दिन विश्रामकरके यथाशक्ति कीहुई मेरीसेवा को ग्रहण कीजिये यह कहकर राज्यधर गोमुख समेत नरवाहनदत्तको उस पुरके उपवनमें लेगया वहां बावड़ी के जलमें स्नानकर,कमलों से श्रीशिवजीका पूजन करके पुरके मध्यमभागमें भोजनकेनिमित्त लेगया वहां अपनी अभिलाषाके अनुसार प्राप्तहुए दिव्यपदार्थों का भोजन करके नरवाहनदत्त गोमुख समेत अत्यन्त प्रसन्नहुआ फिर किसी अदृश्य पुरुषके द्वारा भोजनस्थानके शुद्ध होजानेपर मद्यपान पूर्वक ताम्बूलखाकर सुखपूर्वक वहींरहा तदनन्तर रात्रि के समय राज्यधरके भी भोजन करचुकने पर चिन्तामणिकेसमान उसपुरके माहात्म्य से विस्मित नरवाहनदत्त और गोमुख दिव्य शय्याओंपर लेटे उससमय कर्पूरिका की उत्कण्ठासे नरवाहनदत्तको निद्रा न आतीदेखकर सुखसे लेटाहुआ राज्य-

बवोला कि हे महाभाग सोते क्यों नहीहो तुमको कर्पूरिका अवश्य मिलैगी चिन्ता मतकरो क्योंकि (उदात्तसत्त्ववृणुतेस्वयंहिश्रीरिवाङ्गना) लक्ष्मीके समान स्त्री सत्त्ववान् पुरुषोंको आपही स्वीकारकरती है इस विषयपर मैं अपनेनेत्रोंसे प्रत्यक्ष देखीहुई एक कथा आपको सुनाताहूं मैंने जो काचीके स्वामी गजानाहुनल का आपके सन्मुख वर्णन कियाथा उसके वडा धनवान् अर्थलोभनाम यथार्थ नामवाला एक प्रतीहारथा उस प्रतीहारके मानपरानाम महासुन्दर स्त्रीथी अर्थलोभ राजाके यहां से उपार्जन कियेहुए धनसे व्योपारभी करताथा और अत्यन्त लोभकेकारण सेवकोंपर विश्वास न करके रोजगारके व्यवहारों में अपनी स्त्रीसे काम कराताथा यद्यपि वह स्त्री इस कामको अपने चित्तसे अपने योग्य नहीं समझतीथी तथापि पतिके आधीनहोकर उसे बणियों के साथ व्यवहार करना पडताथा उसके सुन्दररूप तथा मधुर बचनोंके लोभसे बहुत से व्यापारी उसके पास खरीदने तथा बेचनेको आतेथे हाथी घोडे रत्न तथा बस्त्रादिक जो २ पदार्थ वह मानपरा बेचतीथी उससे बडी आमदनी देखकर अर्थलोभ अत्यन्त प्रसन्नहोता था एकसमय वहां किसीदूरदेशसे सुखधन नाम एकवैश्य बहुतसे घोडे तथा हाथी आदिलेकर बेचनेको आया उसका आना सुनकर अर्थलोभ ने मानपरासे कहा कि हे प्रिये सुखधन नाम वैश्य किसी दूरदेश से यहां आया है उसके पास बीसहजार घोडे और चीन देश के उत्तमवस्त्रों के असंख्य जोडे हैं इससे तुम उसके पास जाकर पांचहजार घोडे और दशहजार वस्त्रोंके जोडे लेआओ उन पांचहजार घोडों में एकहजार अपने घोडे मिलाकर मैं राजाके पास लेजाऊंगा और राजाके हाथ बेचूंगा यह कहकर अर्थलोभने मानपराको सुखधन वैश्य के पासभेजा मानपराने सुखधनसे पांच हजार घोडे और दश हजार वस्त्रोंके जोडे मोललेने को कहा सुखधन उसके रूपको देखकर कामके विवश होकर स्वागत करके उसे एकान्त में लेजाकर बोला कि मूल्य लेकर तो हम तुमको एक घोडा अथवा एक वस्त्रभी नहीं देंगे परन्तु जो तुम एकरात्रि मेरे साथ रहो तो पांचसौ घोडे और पांचहजार वस्त्र मैं तुमकोदूंगा यह कहकर उसने मानपरासे अपनी अभिलाषा बहुत प्रकटकी ठीकहै (स्त्रीष्वनर्गलचेष्टासुकस्येच्छा नोपजायते) स्वच्छन्द व्यवहार करनेवाली स्त्रियोंपर किसकी इच्छा नहीं चलती है तब मानपराने उससे कहा कि मैं अपने पतिसे जाकरपूछतीहूं कदाचित् वह लोभके कारण मुझेइसबातकी भी प्रेरणा करदेगा यह कहकर उसने अपने घरमें आके अर्थलोभसे जो कुछ सुखधनने एकान्त में लेजाकर उस से कहाथा वह सब कहदिया यह सुनकर अर्थलोभने कहा कि हे प्रिये जो एकही रात्रिमें पांचहजार घोडे और पांचहजार जोडे मिलते हैं तोक्यादोषहै आजरात्रिभर जाकर तुम वहीं रहो कल प्रात काल चली आना अपने पतिके यह वचनसुनकर वह मानपरा उसपर घृणाकरके अपने मनमें यह शोचनेलगी कि स्त्रीके वेचनेवाले सत्त्वरहित अत्यन्त लोभयुक्त इस पतिको धिक्कारहै मेरेलिये अब वही पति अच्छा है जो पांचसौ घोडे तथा पांचहजार जोडे देकर मुझे एकरात्रिके लिये मोललेताहै यह शोचकर अर्थलोभसे यह कहकर कि मेरा इसमें कोई दोष नहीं है मानपरा उसे छोडकर उस सुखधनके यहां चलीगई सुखधनने उसे आई देखकर सम्पूर्ण वृत्तान्त पूछके बडे आश्चर्य पूर्वक उसके मिलनेमें अपने को

वन्यमाना और उसीसमय पांचसौ घोडे तथा पांचहजार जोडे अर्थलोभ को भेजदिये और अपनी सम्पत्तिकी मूर्त्तिमती फल श्रीकेसमान मानपराके साथ सुखपूर्व्वक रात्रिभररहा प्रातःकाल उस निर्लज्ज अर्थलोभके भेजेहुए बुलानेके लिये आयेहुए सेवकोंसे मानपरावोली कि उसने मुझे बेचडालाहै मैं दूसरेकी स्त्री होगई अब मैं फिर उसके पास कैसे जाऊं क्या जैसा वह निर्लज्जहै वैसीही मैं भी निर्लज्ज होजाऊं तुम्हींलोग बताओ क्या मुझे यह बात शोभादेती है इससे तुमलोग जाओ जिसने मुझे मोल लिया है वही मेरापति है मानपराके यह वचनसुनकर सेवकोंने जाके अधोमुख होकरके अर्थलोभ से मानपराका उत्तर कहदिया सेवकोंके वचन सुनकर उसनेचाहा कि मैं सुखधनके पाससे मानपराको जबरदस्ती लेआऊं तब उसके हरबलनाम एक मित्रने कहा कि तुम सुखधनके यहांसे उसे नहीं लासक्के हो उसवीरके आगे तुम्हारी धीरता नहीं चलेगी वह बडा बलवान्है बलवान्मित्र भी उसके साथ में हैं और मानपरा के मिलने से उसका उत्साह बढरहाहै और तुमतो कृपणताके कारण भेजीहुई स्त्री ने त्यागदिया है इससे निरुत्साह होरहेहो और तुम स्वतः बलवान् नहींहो न तुम्हारे साथ कोई बलवान् मित्रहै इस्से तुम उसको जीतनहींसक्के और कदाचित् राजा जानलेगा तो वह भी तुमको स्त्री का वेचनेवाला जान कर तुमसे क्रुद्धहोजायगा इससे चुपहोरहो अपनी हँसी मतकरवाओ इसप्रकार मित्रके समझानेपरभी अर्थलोभ ने क्रोधसे अपनी सेना लेकर जाके सुखधनका घर घेरलिया तब सुखधन तथा सुखधन के मित्रोंकी सेनाने निकलकर अर्थलोभको सेना समेत मारभगाया वहां से भागकर अर्थलोभ ने राजासे जाकर कहा कि हे महाराज सुखधन नाम वैश्य ने मेरी स्त्री हरलीनी है उसके वचन सुनकर राजा ने क्रोधसे सुखधनको पकड मँगवानाचाहा तब सधाननाम मन्त्री ने राजासेकहा कि हे राजा साधारणता से वह पकडने में नहीं आवेगा क्योंकि ग्यारह मित्रों के साथमें आयेहुए सुखधन के पास सब मिलाकर एक लाखसे भी अधिक घोडे हैं और इस विषयका अभी कुछ तत्त्वभी नहीं मालूमहुआ है ऐसा प्रसिद्ध पुरुष विना किसीकारण के ऐसा निन्दितकर्म्म कभी नहीं करसक्ता है इससे दूत भेजकर प्रथम पूछलेना चाहिये कि वह क्या कहताहै मन्त्री के यह वचन सुनकर राजा ने सुखधनके पास अपना दूत भेजा दूतने वहां जाकर जब उससेपूछा तो मानपराने आपही सब वृत्तान्त उससे कहदिया लौटे दूत के मुखसे उनसबबातोंको सुनकर राजा बाहुबल अर्थलोभ को साथ लेकर सुखधनके यहां मानपरा के देखने के लिये और उसके मुखसे उसके वृत्तान्तको सुनने के निमित्त उसके घरगया वहां आदरपूर्व्वक सुखधनसे प्रणामकियेगये राजाने ब्रह्माकी भी सौन्दर्य्य लक्ष्मी को आश्चर्य्य करनेवाली मानपराको देखा और उससे सब वृत्तान्त पूछा उसने नम्रतापूर्व्वक अर्थलोभ के आगेही राजा से अपना सब वृत्तान्त कहदिया सो सुनकर और सत्य २ जानकर और अर्थलोभको निरुत्तर देखके राजा ने मानपरासे कहा कि अब क्या होना चाहिये तब मानपराबोली कि हे महाराज जिस लोभी ने आपत्ति के विनाही मुझे अन्य पुरुषके हाथ बेचडाला उस सत्त्वहीन निर्लज्ज लोभी के पास अब मैं कैसे जाऊं यह सुनकर राजाने कहा कि बहुत ठीकहै तब काम क्रोध तथा लज्जासे व्याकुलहोकर अर्थलोभ बोला

वरोला कि हे महाभाग सोते क्यों नहीं हो तुमको कर्पूरिका अवश्य मिलैगी चिन्ता मतकरो क्योंकि (उदारसत्ववृणुतेस्वयंहिश्रीरिवाङ्गना) लक्ष्मीके समान स्त्री सत्त्ववान् पुरुषों को आपही स्वीकारकरती हैं इस विषयपर मैं अपनेनेत्रोंसे प्रत्यक्ष देखीहुई एक कथा आपको सुनाताहूं मैंने जो कांचीके स्वामी राजाबाहुबल का आपके सन्मुख वर्णन कियाथा उसके बडा धनवान् अर्थलोभनाम यथार्थ नामवाला एक प्रतीहारथा उस प्रतीहारके मानपरानाम महासुन्दर स्त्रीथी अर्थलोभ राजाके यहां उपार्जन कियेहुए धनसे व्योपारभी करताथा और अत्यन्त लोभकेकारण सेवकोंपर विश्वास न करके रोजगारके व्यवहारोंमें अपनी स्त्रीसे काम कराताथा यद्यपि वह स्त्री इस कामको अपने चित्तसे अपने योग्य नहीं समझतीथी तथापि पतिके आधीनहोकर उसे बणियों के साथ व्यवहार करना पडताथा उसके सुन्दररूप तथा मधुर बचनोंके लोभसे बहुत से व्यापारी उसके पास खरीदने तथा बेचनेको आतेथे हाथी घोडे रत्न तथा वस्त्रादिक जो २ पदार्थ वह मानपरा बेचतीथी उसमें बडी आमदनी देखकर अर्थलोभ अत्यन्त प्रसन्नहोता था एकसमय वहां किसीदूरदेशसे सुखधन नाम एकवैश्य बहुतसे घोडे तथा हाथी आदिलेकर बेचनेको आया उसका आना सुनकर अर्थलोभ ने मानपरा से कहा कि हे प्रिये सुखधन नाम वैश्य किसी दूरदेश से यहां आया है उसके पास बीसहजार घोडे और चीन देश के उत्तमवस्त्रों के असंख्य जोडे हैं इससे तुम उसके पास जाकर पांचहजार घोडे और दशहजार वस्त्रोंके जोडे लेआओ उन पांचहजार घोडों में एकहजार अपने घोडे मिलाकर मैं राजाके पास लेजाऊंगा और राजाके हाथ बेचूंगा यह कहकर अर्थलोभने मानपराको सुखधन वैश्य के पासभेजा मानपराने सुखधनसे पांच हजार घोडे और दश हजार वस्त्रोंके जोडे मोललेने को कहा सुखधन उसके रूपको देखकर कामके विवश होकर स्वागत करके उसे एकान्त में लेजाकर बोला कि मूल्य लेकर तो हम तुमको एक घोडा अथवा एक वस्त्रभी नहीं देंगे परन्तु जो तुम एकरात्रि मेरे साथ रहो तो पांचसौ घोडे और पांचहजार वस्त्र मैं तुमकोदूंगा यह कहकर उसने मानपरासे अपनी अभिलाषा बहुत प्रकटकी ठीकहै (स्त्रीष्वनर्गलचेष्टासुकस्येच्छा नोपजायते) स्वच्छन्द व्यवहार करनेवाली स्त्रियोंपर किसकी इच्छा नहीं चलती है तब मानपराने उससे कहा कि मैं अपने पतिसे जाकरपूछतीहूं कदाचित् वह लोभके कारण मुझेइसबातकी भी प्रेरणा करदेगा यह कहकर उसने अपने घरमें आके अर्थलोभसे जो कुछ सुखधनने एकान्त में लेजाकर उस से कहाथा वह सब कहदिया यह सुनकर अर्थलोभने कहा कि हे प्रिये जो एकही रात्रिमें पांचहजार घोडे और पांचहजार जोडे मिलते हैं तोक्यादोषहै आजरात्रिभर जाकर तुम वहीं रहो कल प्रात काल चली आना अपने पतिके यह वचनसुनकर वह मानपरा उसपर घृणाकरके अपने मनमें यह सोचनेलगी कि स्त्रीके बेचनेवाले सत्त्वरहित अत्यन्त लोभयुक्त इस पतिको धिक्कारहै मेरेलिये अब वही पति अच्छा है जो पांचसौ घोडे तथा पांचहजार जोडे देकर मुझे एकरात्रिके लिये मोललेताहै यह सोचकर अर्थलोभसे यह कहकर कि मेरा इसमें कोई दोष नहीं है मानपरा उसे छोडकर उस सुखधनके यहां चलीगई सुखधनने उसे आई देखकर सम्पूर्ण वृत्तान्त पूछके बडे आश्चर्य पूर्वक उसके मिलनेमे अपने को

वन्यमाना और उसीसमय पांचसौ घोड़े तथा पांचहजार जोड़े अर्थलोभ को भेजदिये और अपनी सम्पत्तिकी मूर्त्तिमती फल श्रीकेसमान मानपराके साथ सुखपूर्व्वक रात्रिभररहा प्रातःकाल उस निर्लज्ज अर्थलोभके भेजेहुए बुलानेके लिये आयेहुए सेवकोंसे मानपराबोली कि उसने मुझे वेचडालाहै में दूसरेकी स्त्री होगई अब में फिर उसके पास कैसे जाऊं क्या जैसा वह निर्लज्जहै वैसीही में भी निर्लज्ज होजाऊं तुम्हींलोग बताओ क्या मुझे यह बात शोभादेती है इससे तुमलोग जाओ जिसने मुझे मोल लिया है वही मेरापति है मानपराके यह वचनसुनकर सेवकोंने जाके अधोमुख होकरके अर्थलोभ से मानपराका उत्तर कहदिया सेवकोंके वचन सुनकर उसनेचाहा कि में सुखधनके पाससे मानपराको जबरदस्ती लेआऊं तब उसके हरबलनाम एक मित्रने कहा कि तुम सुखधनके यहांसे उसे नहीं लासक्ते हो उसवीरके आगे तुम्हारी धीरता नहीं चलेगी वह बड़ा बलवान्है बलवान्मित्र भी उसके साथ में हैं और मानपरा के मिलने से उसका उत्साह बढ़रहाहै और तुमतो कृपणताके कारण भेजीहुई स्त्री ने त्यागदिया है इससे निरुत्साह होरहेहो और तुम स्वतः बलवान् नहींहो न तुम्हारे साथ कोई बलवान् मित्रहै इस्से तुम उसको जीतनहींसक्ते और कदाचित् राजा जानलेगा तो वह भी तुमको स्त्री का वेचनेवाला जान कर तुमसे क्रुद्धहोजायगा इससे चुपहोरहो अपनी हँसी मतकरवाओ इसप्रकार मित्रके समझानेपरभी अर्थलोभ ने क्रोधसे अपनी सेना लेकर जाके सुखधनका घर घेरलिया तब सुखधन तथा सुखधन के मित्रोंकी सेनाने निकलकर अर्थलोभको सेना समेत मारभगाया वहां से भागकर अर्थलोभ ने राजासे जाकर कहा कि हे महाराज सुखधन नाम वैश्य ने मेरी स्त्री हरलीनी है उसके वचन सुनकर राजा ने क्रोधसे सुखधनको पकड़ मँगवानाचाहा तब सधाननाम मन्त्री ने राजासेकहा कि हे राजा साधारणता से वह पकड़ने में नहीं आवेगा क्योंकि ग्यारह मित्रों के साथमें आयेहुए सुखधन के पास सब मिलाकर एक लाखसे भी अधिक घोड़े हैं और इस विषयका अभी कुछ तत्त्वभी नहीं मालूमहुआ है ऐसा प्रसिद्ध पुरुष विना किसीकारण के ऐसा निन्दितकर्म्म कभी नहीं करसक्ता है इससे दूत भेजकर प्रथम पूछलेना चाहिये कि वह क्या कहताहै मन्त्री के यह वचन सुनकर राजा ने सुखधनके पास अपना दूत भेजा दूतने वहां जाकर जब उससेपूछा तो मानपराने आपही सब वृत्तान्त उससे कहदिया लौटे दूत के मुखसे उनसबबातोंको सुनकर राजा बाहुबल अर्थलोभ को साथ लेकर सुखधनके यहां मानपरा के देखने के लिये और उसके मुखसे उसके वृत्तान्तको सुनने के निमित्त उसके घरगया वहां आदरपूर्व्वक सुखधनसे प्रणामकियेगये राजाने ब्रह्माकी भी सौन्दर्य्य लक्ष्मी को आश्चर्य्य करनेवाली मानपराको देखा और उससे सब वृत्तान्त पूछा उसने नम्रतापूर्व्वक अर्थलोभ के आगेही राजा से अपना सब वृत्तान्त कहदिया सो सुनकर और सत्य २ जानकर और अर्थलोभको निरुत्तर देखके राजा ने मानपरासे कहा कि अब क्या होना चाहिये तब मानपराबोली कि हे महाराज जिस लोभी ने आपत्ति के विनाही मुझे अन्य पुरुषके हाथ वेचडाला उस सत्त्वहीन निर्लज्ज लोभी के पास अब में कैसे जाऊं यह सुनकर राजाने कहा कि बहुत ठीकहै तब काम क्रोध तथा लज्जासे व्याकुलहोकर अर्थलोभ बोला

कि हे महाराज, यह सुखधन और हम मित्रोंकी सहायताके विना अपनी २ सेना समेत युद्धकरें तब आप हमारा और इसका पराक्रम देखिये अर्थलोभ के यह वचन सुनकर सुखधनबोला कि सेना से क्या प्रयोजनहै आओ हम तुम दोई द्वन्द्वयुद्धकरें दोमें से जो कोई जीतेगा उसीको मानपरा मिलैगी यह सुनकर राजा ने कहा कि ऐसाही होनाचाहिये तब सबलोगों के आगे घोडोंपर चढकर वह दोनो युद्धभूमि मे उतरकर परस्पर युद्ध करनेलगे सुखधन ने घोड़े के ऐसा भालामारा कि जिससे घोडा उछला और अर्थलोभ नीचे गिरपडा इसीप्रकार और तीनवार घोड़ेको मार २ कर सुखधन ने अर्थलोभ को पृथ्वीपर गिराया परन्तु धर्म युद्ध जानकर पृथ्वीपर पडेहुए अर्थलोभको जीवसे नामारा पांचवींवार अर्थलोभ घोडेपर से गिरा और ऊपरसे घोडाभी उसपर गिरा इसी से वह मूर्च्छितहोगया तब उसके सेवक उसे उठालेगये उससमय सबलोगों ने सुखधनकी वडी प्रशंसाकी राजा बाहुबल ने भी उसका वडा सत्कारकरके उसकी लाईहुई भेंट उसीको लौटादी और कुकर्म से पैदा कियाहुआ अर्थलोभ का सब धन छीनकर उसके स्थानमें दूसरा प्रतीहार रखकर प्रसन्न होकर अपने मंदिरको गमन किया ठीक है (निवृत्तपापसम्पर्काः सन्तोयातिहिनिर्वृतिम्) सज्जनलोग पापियोंका संपर्क छोडकर प्रसन्न होते हैं सुखधन भी इसप्रकार मिलीहुई मानपरा के साथ विहार करताहुआ आनन्दपूर्वक रहनेलगा इसप्रकार सत्त्व रहित पुरुषों से धन तथा स्त्री निकलजाती हैं और सत्त्ववान् के पास आपही आती हैं इससे आप चिन्ता न करिये वह राजपुत्री कर्पूरिका आपको थोडेहीं कालमें अवश्य मिलैगी राज्यधरसे इस यथार्थ कथाको सुनकर गोमुख सहित नरवाहनदत्त निद्राको प्राप्तहुआ ३ २३ प्रातःकाल आह्निक तथा भोजन के उपरान्त क्षणभर बैठकर गोमुख राज्यधरसे बोला कि आप यन्त्रका विमान बनादीजिये जिसपर चढकर कर्पूरसम्भवपुर मे पहुंचकर हमारे स्वामी को कर्पूरिकानाम राजकन्या मिले यह सुनकर राज्यधरने पहले बनायाहुआ अपना यानयन्त्र नरवाहनदत्तको देदिया उसमनको समान शीघ्रगामी विमानपर गोमुख समेत नरवाहनदत्त चढकर मानो उसके धैर्य्य के देखनेकी प्रसन्नतासे बहुत लहराते हुए समुद्रका उल्लंघन करके कर्पूरसम्भवपुर में पहुंचा वहां आकाश से उतरेहुए विमानसे उतरकर गोमुख सहित नरवाहनदत्त पुरके भीतर घूमनेलगा और लोगों से पूछकर उसपुरको वही कर्पूरसम्भव जानके प्रसन्नतापूर्वक राजमन्दिरके निकटगया वहां एक वृद्धा स्त्री का सुन्दर स्थान देखकर उससे रहने के लिये आज्ञा लेकर उसमें गया युक्तिपूर्वक जाननेकी इच्छासे नरवाहनदत्त ने उस वृद्धा से पूछा कि हे आर्य्ये यहां के राजाका क्या नामहै उसके कौन २ सन्तति हैं और कैसा उनका रूप है हमसे कहो क्योंकि हम विदेशी हैं उसके यह वचन सुनकर वह वृद्धा उसके उत्तम स्वरूपको देखकर बोली कि हे महाभाग तुम सुनो मैं सब कहतीहूं इस कर्पूरसम्भवनाम नगर में कर्पूरकनाम राजा है इस के प्रथम कोई सन्तति न थी इसी से इसने बुद्धिकरीनाम अपनी रानीसमेत निराहारहोकर तपकिया तीन दिन व्रतकरने के उपरान्त शिवजी ने रात्रिके समय स्वप्नमें दर्शनदेकर कहा कि पुत्र उसे पुत्र से भी अधिक सुखदायिनी तुम्हारे ऐसी कन्या उत्पन्नहोगी कि जिनका पति विद्याधरोंका चक्रवर्त्ती

राजा होगा स्वप्नमें श्री शिवजी से इसप्रकार वरदान पाकर राजा ने प्रातःकाल उठकर रानी से स्वप्नका वृत्तान्त कहा और रानी के साथ प्रसन्नतापूर्वक व्रतका पारण किया तदनन्तर थोडेही दिनों में रानी वृद्धिको प्राप्त गर्भवतीहुई और समयपाकर उसके एक अत्यन्त सुन्दरी कन्या उत्पन्नहुई उसकी कान्तिसे जीतेगये सूतिकागृहके दीपक काजल के विहीने से मानों शोककी श्वासें छोडते थे, कन्याका जन्म सुनकर राजा कर्पूरक ने बडा उत्सवकरके अपने नामके अनुसार उसका नाम कर्पूरिका रक्खा लोगों के नेत्रों में चन्द्रिका के समान आनन्द देनेवाली कर्पूरिका धीरे धीरे बढकर अब युवतीहुई है राजा कर्पूरक उसका विवाह करना चाहता है परन्तु वह कर्पूरिका पुरुषों से द्वेषकरके अपना विवाह करना नहीं चाहती मेरी पुत्री उसकी सखी है उसने एक दिन उससे पूछा कि हे सखी कन्या जन्म का फल विवाह है तुम उसे क्यों नहीं चाहतीहो इसप्रकार पूछनेपर उसने कहा कि हे सखी मुझे अपने पूर्वजन्मका स्मरणहै वही विवाह न करनेका कारणहै सो सुनो मैं तुमको सुनातीहूं समुद्र के तटपर चन्दन का एक बडा वृक्षहै उस वृक्ष के निकट प्रफुल्लित कमलों संयुक्त एक बडा सुन्दर तडागहै वहीं मैं पूर्व जन्ममें किसी कर्मके वशसे राजहंसिनीहुईथी एकसमय मैंने अपने पति राजहंस के साथ उसचन्दन के वृक्षमें अपना घोसला बनाया उसमें रहते रहते मेरे बच्चेहुए वह अकस्मात् समुद्रकी लहर में बहगये बच्चोंके बहजाने से रोतीहुई मैं विनाभोजन किये शोकमें समुद्रके तटपर श्रीशिवजी के लिंगके आगे जाबैठी तब मेरे पति राजहंसने मुझसे आकर कहा कि उठो तुम मरेहुए बच्चोंको क्या शोचरहीहो और बच्चेहोंगे क्योंकि जीवतेहुए जीवों को सम्पूर्ण पदार्थ प्राप्तहोतेहैं उसके यह वचन मेरे हृदयमें बाणके समानलगे तब मैंने शोचा कि धिक्कारहै पुरुष बडेपापी होतेहैं अपने छोटे छोटे बच्चोंपर भी कृपा तथा प्रेम नहीं करतेहैं परन्तु स्त्रियों के चित्तमें स्नेहहोताहै इससे इसपतिसे और इस दुखी शरीरसे मुझे क्या प्रयोजनहै इसप्रकार शोचकर मैंने श्रीशिवजीको नमस्कार करके और हृदयमें उनका ध्यानकरके ऐसी अपने पति राजहंसके आगेमैं भविष्य जन्ममें राजपुत्री होऊं और मुझे अपने पूर्वजन्मका स्मरणरहै यह कहकर अपने शरीरको त्यागदिया इसीमें मैं इस जन्म में राजपुत्रीहुईहूं और मुझे पूर्वजन्मका स्मरणहै पूर्वजन्ममें अपनेपतिकी कठोरताको स्मरणकरके मेराचित्त किसी पुरुषपर अनुरक्त नहीं होताहै इससे मैं विवाह नहीं करना चाहतीहूं आगे भाग्यके आधीन है यह वृत्तान्त कर्पूरिका ने मेरीपुत्री से कहाथा उसने मुझसे आकरकहा और मैंने पूछनेपर तुमसे कहाहै १६७ मुझे मालूम होताहै कि यह तुम्हारीही स्त्री होगी क्योंकि श्रीशिवजीने कहाथा कि यह सम्पूर्ण विद्याधरों के भावी चक्रवर्तीकी स्त्री होगी और उसके तिलक आदिक लक्षण तुममें हैं क्या जानें ब्रह्मा इसलिये तुमको यहां लायाहै अच्छा जो होगा सो देखाजायगा आप चलकर भोजनकरो यह कहकर उस वृद्धा ने गोमुख समेत नरवाहनदत्तको उत्तम २ भोजन करवाये फिर भोजन करके वह दोनो उसी वृद्धाके यहां रात्रिभर रहे प्रातःकाल गोमुखने एकान्तमें सलाह करके नरवाहनदत्त महाव्रतीका वेषधनाकर गोमुखको साथमेंलेकर हा हन्सि २ इसप्रकार नाचता कहताहुआ राजद्वारके निकट घूमने लगा उसे इसप्रकार रहते देखकर

कि हे महाराज यह सुखधन और हम मित्रोंकी सहायताके विना अपनी २ सेना समेत युद्धकरें तब आप हमारा और इसका पराक्रम देखिये अर्थलोभ के यह वचन सुनकर सुखधनबोला कि सेना से क्या प्रयोजनहै आओ हम तुम दोई द्वन्द्व युद्धकरें दोमें से जो कोई जीतेगा उसीको मानपरा मिलैगी यह सुनकर राजा ने कहा कि ऐसाही होनाचाहिये तब सबलोगों के आगे घोडोंपर चढकर वह दोनों युद्धभूमि में उतरकर परस्पर युद्ध करनेलगे सुखधन ने घोड़े के ऐसा भालामारा कि जिससे घोडा उछला और अर्थलोभ नीचे गिरपडा इसीप्रकार और तीनवार घोड़ेको मार २ कर सुखधन ने अर्थलोभ को पृथ्वीपर गिराया परन्तु धर्म युद्ध जानकर पृथ्वीपर पडेहुए अर्थलोभको जीवसे नामारा पांचवींबार अर्थलोभ घोडेपर से गिरा और ऊपरसे घोडाभी उसपर गिरा इसी से वह मूर्च्छितहोगया तब उसके सेवक उसे उठालेगये उससमय सबलोगों ने सुखधनकी बडी प्रशंसाकी राजा बाहुबल ने भी उसका बडा सत्कारकरके उसकी लाईहुई भेट उसीको लौटादी और कुकर्म से पैदा कियाहुआ अर्थलोभ का सब धन छीनकर उसके स्थानमें दूसरा प्रतीहार रखकर प्रसन्न होकर अपने मंदिरको गमन किया ठीक है (निवृत्तपापसम्पर्काः सन्तोयातिहिनिर्वृतिम्) सज्जनलोग पापियों का सम्पर्क छोडकर प्रसन्न होते हैं सुखधन भी इसप्रकार मिलीहुई मानपरा के साथ विहार करताहुआ आनन्दपूर्वक रहनेलगा इसप्रकार सत्त्व रहित पुरुषों से धन तथा स्त्री निकलजाती है और सत्त्ववान् के पास आपही आती हैं इससे आप चिन्ता न करिये वह राजपुत्री कर्पूरिका आपको थोडेहीं कालमें अवश्य मिलैगी राज्यधरसे इस यथार्थ कथाको सुनकर गोमुख सहित नरवाहनदत्त निद्राको प्राप्तहुआ ॥ २२ प्रातःकाल आह्निक तथा भोजन के उपरान्त क्षणभर बैठकर गोमुख राज्यधरसे बोला कि आप यन्त्रका विमान बनादीजिये जिसपर चढकर कर्पूरसम्भवपुर में पहुंचकर हमारे स्वामी को कर्पूरिकानाम राजकन्या मिले यह सुनकर राज्यधरने पहले बनायाहुआ अपना वातयन्त्र नरवाहनदत्तको देदिया उसमनकी समान शीघ्रगामी विमानपर गोमुख समेत नरवाहनदत्त चढकर मानो उसके धैर्य्य के देखनेकी प्रसन्नतासे बहुत लहराते हुए समुद्रका उल्लंघन करके कर्पूरसम्भवपुर में पहुंचा वहां आकाश से उतरेहुए विमानसे उतरकर गोमुख सहित नरवाहनदत्त पुरके भीतर घूमनेलगा और लोगों से पूछकर उसपुरको वही कर्पूरसम्भव जानके प्रसन्नतापूर्वक राजमन्दिरके निकट गया वहां एक वृद्धा स्त्री का सुन्दर स्थान देखकर उससे रहने के लिये आज्ञा लेकर उसमें गया युक्तिपूर्वक जाननेकी इच्छासे नरवाहनदत्त ने उस वृद्धा से पूछा कि हे आर्य्ये यहां के राजाका क्या नामहै उसके कौन सन्तति है और कैसा उनका रूप है हमसे कहो क्योंकि हम विदेशी हैं उसके यह वचन सुनकर वह वृद्धा उसके उत्तम स्वरूपको देखकर बोली कि हे महाभाग तुम सुनो मैं सब कहतीहूं इस कर्पूरसम्भवनाम नगर में कर्पूरकनाम राजा है इसके प्रथम कोई सन्तति न थी इसी से इसने बुद्धिकरीनाम अपनी रानीसमेत निराहारहोकर तपकिया तीन दिन व्रतकरने के उपरान्त श्रीशिवजी ने रात्रिके समय स्वप्नमें दर्शनदेकर कहा कि पुत्र उठो पुत्र से भी अधिक सुखदायिनी तुम्हारे ऐसी कन्या उत्पन्नहोगी कि जिसका पति विद्याधरोंका चक्रवर्ती

भकर से कडों वनोंका उल्लघन करके समुद्रके तटपर पहुचा वहा हेमपुरका रहनेवाला राज्यधर नाम वढई मिला उसने अपना वनायाहुआ यन्त्रका विमान इसको दिया मूर्त्तिमान् साहसके समान भयदायी विमान पर चढकर समुद्रका उल्लघन करके मुझसमेत यह इस नगर में आकर पहुँचा इसी से यह हा हसी हा हसी कहताहुआ भ्रमण कररहाथा अब तुम्हारे निकट पहुँचगया इससमय तुम्हारे मुखरूपी चन्द्रमाकेदर्शनसे असख्य दु खरूपी अधकारका नाशहुआहै हे सुदरी अपनी दृष्टिरूपी नील कमलकी मालासे इस अतिथि का पूजन करो इसप्रकार गोमुख के वचन सुनकर अपने पूर्व्व जन्मके वृत्तान्त से विश्वास युक्त होके कर्पूरिकाने देखो इस आर्यपुत्रका मेरे ऊपर वडा स्नेहहै मैं व्यर्थही विरक्तहोगईथी इसप्रकार प्रेमपूर्व्वक अपने अन्त करण में शोचकर कहा ठीकहै वह हसी मैंही हू मैं धन्यहू जिसके लिये आर्यपुत्रने दोनों जन्मों में ऐसा दु खसहा अव मैं प्रेमसे मोललीगई आपकी दासीहू यह कहकर उसने गोमुख समेत नरवाहनदत्तको स्नानादि करवाये और सखियों के द्वारा अपने पितासे यह सव वृत्तान्त कहलाभेजा उस वृत्तान्तको सुनकर राजाकर्पूरक अपनी कन्याकी विवाहकी इच्छा जानकर वहीं चलाआया और वहा अपनी कन्याके वर नरवाहनदत्तको विद्याधरों के चक्रवर्त्तियों के लक्षणों से युक्त देखकर अत्यन्त प्रसन्नहुआ उससमय राजाने अपनेको कृतार्थ जानकर अपनी पुत्री कर्पूरिकाका नरवाहनदत्तके साथ विवाह करदिया और तीन २ करोड अशर्फी तीन २ करोड पल कपूर दश २ करोड वस्त्र और तीन २ सौ आभूषित दासी प्रति प्रदक्षणा में उसको दीनी उससमय सुवर्ण और कपूरके समूह वहा ऐसे शोभित होतेथे कि मानों पार्वतीजी के विवाहके देखनेवाले सुमेरु और कैलासके शिखर विवाहकी शोभा देखनेको आयेहैं नरवाहनदत्त मूर्त्तिमती प्रीतिकेसमान कर्पूरिकाको पाकर अत्यन्त शोभितहुआ माधवी लता और वसन्तोत्सवकेसमान वधू और वरका सगम देखकर किसका चित्त प्रसन्न नहींहुआ २१६ इस प्रकार विवाहविधि के उत्सवके व्यतीत होजाने पर दूसरे दिन नरवाहनदत्तने कर्पूरिकासेकहा कि चलो कौशाम्बीकोचलें तो वह वोली कि अच्छा उसी अपने आकाशगामी विमानपर चढकर चलिये जिसमे शीघ्रही पहुचजायँ और जो वह छोटाहोय तो मैं वडा विमान वनवालू यहा देशान्तर से आयाहुआ प्राणधर नाम वढई रहताहै उससे मैं शीघ्रही विमान वनवालूगी यह कहकर उसने प्रतीहारको बुलवा कर कहा कि तुम जाकर प्राणधर नाम वढईसे कहो कि मेरेजानेकेलिये आकाशगामी एक वडा विमान वनादे यहकहकर उसने प्रतीहारको भेजा और चेरीके हाथ अपने पितासे अपने जानेकी इच्छा कहला भेजी नरवाहनदत्तने प्राणधरका नाम सुनकर यह शोचा कि राज्यधरका भाई यह वही प्राणधर मालूम होताहै जो राजाके भयसे अपने देशको त्यागकर भागाथा उसके इसप्रकार विचारतेही विचारते राजा वहा आगया और प्रतीहार के साथ प्राणधरभी आकर वोला कि एक वडा विमान वनायाहुआ मेरे पास रक्खाहै जिसपर हजारों मनुष्य वैठकर सुखपूर्वक जासक्तेहैं प्राणधरके यहवचनसुनकर नरवाहन दत्तने वहुतअच्छा कहकर उससे पूँछा कि क्या तुम राज्यधरके वडेभाई अनेकप्रकारके यन्त्रों के जानने वाले प्राणधर हो उसने नम्रता पूर्व्वक कहा कि हा मैं वही प्राणधरहू परन्तु आप हम दोनोभाइयोंको

न्त्रेरियोंने आश्चर्य पूर्वक जाकर राजपुत्री कर्पूरिकासे कहा कि हे राजपुत्री फाटकके पास कोई महाव्रती जो कि द्वितीय सहितहोकरभी सुन्दरता से अद्वितीयहै स्त्रियों के चित्तको मोहित करनेवाले हा हंसि हा हंसि इसप्रकारके अद्भुत मन्त्रको रात्रि दिन उच्चारण क्रियाकरताहै यहसुनकर पूर्वजन्मकी हंसी राजपुत्रीने उसे अपनेपास बुलालिया और श्रीशिवजीकी आराधनाकेलिये व्रतको ग्रहणकियेहुए अत्यंत मनोहर स्वरूप वाले नवीनकामदेवके समान नरवाहनदत्तको आश्चर्य्यपूर्वक देखकर पूछा कि तुम हा हंसि हा हंसि क्यों बारबार कहतेहो उसके पूछनेपरभी नरवाहनदत्त हा हंसि हा हंसि यहीकहतारहा तब साथमें गयेहुए गोमुख ने राजपुत्री से कहा कि हे राजपुत्री सुनो मैं तुमको इसका वृत्तान्त संक्षेपसे सुनाताहूं पूर्वजन्ममें यह कर्म योगसे राजहंसथा और समुद्रके तटपर किसी बड़े तडागके समीप चन्दनके वृक्षमे घोंसला बनाकर अपनी राजहंसिनी समेत रहताथा एकसमय भाग्यवश से इसके बच्चे समुद्रकी लहरमें बहगये तब इसकी राज हंसिनीने शोकसे व्याकुल होकर अपनाशरीर त्याग करदिया तब इसने भी उसके वियोग से पक्षियों की योनिसे चित्तको हटाकर शरीर त्यागनेकी इच्छासे अपने चित्तमे यह संकल्प किया कि आगेहोने वाले जन्ममें मैं पूर्व्वजन्मका स्मरण करनेवाला राजपुत्र होजाऊं और अपने पूर्व्वजन्मकी स्मरण कर नेवाली यही राजहंसिनी मेरी स्त्रीहोय यह संकल्प करके और श्रीशिवजीका ध्यानकरके इसने विरहा-ग्निमें संतप्तहोकर समुद्रमें गिरकर अपने प्राण त्यागकिये इसीसे यह कौशाम्बी नगरीमें राजाउदयन्का पुत्र हुआहै और इसे अपने पूर्व्वजन्मका स्मरण बना है जिससमय इसका जन्म हुआथा तब यहआ-काशवाणीहुईथी कि यह संपूर्ण विद्याधरोंका चक्रवर्त्ती राजाहोगा राजाउदयन्ने इसको युवराज पदवी देकर किसी कारणसे उत्पन्नहुई दिव्यस्त्री मदनमंचुकाके साथ इसका विवाह करदिया तदनन्तर हेम प्रभनाम विद्याधरोंके स्वामीकी रत्नप्रभानाम कन्याने आकर इसकेसाथ आपही विवाहकिया इसप्रकार दो दिव्यस्त्रियों को पाकरभी यह प्रसन्न नहीं हुआहै और उसी अपनी हंसिनीको स्मरण करता है इस ने अपने संपूर्ण पूर्व्वजन्मकी कथा और अपने चित्तका संपूर्ण वृत्तान्त मुझ बाल्यावस्थाके मित्रसे कहा है भाग्यवशसे वनमें शिकार खेलनेको आयेहुए इसको मेरेआगेही एक वृद्ध तपस्विनी मिली उसने प्रसंगपाकर कृपापूर्व्वक इससे कहा कि हे पुत्र पूर्व्वही किसी कर्म्म के योगसे कामदेव हंसयोनि में उत्पन्नहोकर समुद्रके तटपर चन्दनके वृक्षमें रहताथा वहां कोई दिव्यस्त्री शापसे भ्रष्टहोकर हंसयोनि मे उत्पन्नहोकर इसकी स्त्री थी समुद्रकी लहरसे बच्चोंके बहजानेपर शोक से उस हंसिनी ने अपना शरीर त्याग दिया तब वह हंसभी व्याकुल होकर समुद्रमें डूबकर मरगया श्रीशिवजीकी कृपासे राजाउदयन् के यहां वही हंस नरवाहनदत्तनामसे तुम उत्पन्न हुए हो हे वत्स तुमतो इन बातों को जानतेही होगे क्योंकि तुमको अपने पूर्वजन्म का स्मरण है वह हंसीभी समुद्रकेपार कर्पूरसंभवनाम पुर में कर्पूरिका नाम राजपुत्रीहुई है इससे हे पुत्र तुम वहां जाओ तुम्हारी प्रिया स्त्री तुमको मिलजायगी यह कहकर वह तपस्विनी आकाशमे जाकर अन्तर्द्धान होगई और यह हमारास्वामी उस तपस्विनी के मुखसे तुम्हारी प्रवृत्तिपाकर मेरे साथ यहांको चला और तुम्हारे स्नेहसे वशीभूतहोकर अपने प्राणोंकोभी कुछ न सम-

झकर से कड़ों वनोंका उल्लघन करके समुद्रके तटपर पहुचा वहा हेमपुरका रहनेवाला राज्यधर नाम वढई मिला उसने अपना वनायाहुआ यत्रका विमान इसको दिया मूर्त्तिमान् साहसके समान भयदायी विमान पर चढकर समुद्रका उल्लघन करके मुझसमेत यह इस नगर में आकर पहुँचा इसी से यह हा हसी हा हसी कहताहुआ भ्रमण कररहाथा अव तुम्हारे निकट पहुँचगया इससमय तुम्हारे मुखरूपी चन्द्रमाकेदर्शनसे असख्य दु खरूपी अधकारका नाशहुआहै हे सुदरी अपनी दृष्टिरूपी नील कमलकी मालासे इस अतिथि का पूजन करो इसप्रकार गोमुख के वचन सुनकर अपने पूर्व्व जन्मके वृत्तान्त से विश्वास युक्त होके कर्पूरिकाने देखो इस आर्यपुत्रका मेरे ऊपर वडा स्नेहहै मैं व्यर्थही विरक्तहोगईथी इसप्रकार प्रेमपूर्व्वक अपने अन्त करण में शोचकर कहा ठीकहै वह हसी मैंही हू मैं धन्यहू जिसके लिये आर्यपुत्रने दोनों जन्मों में ऐसा दु खसहा अव मैं प्रेमसे मोललीगई आपकी दासीहू यह कहकर उसने गोमुख समेत नरवाहनदत्तको स्नानादि करवाये और सखियों के द्वारा अपने पितासे यह सव वृत्तान्त कहलाभेजा उस वृत्तान्तको सुनकर राजाकर्पूरक अपनी कन्याकी विवाहकी इच्छा जानकर वहीं चलाआया और वहा अपनी कन्याके वर नरवाहनदत्तको विद्याधरों के चक्रवर्त्तियों के लक्षणों से युक्त देखकर अत्यन्त प्रसन्नहुआ उससमय राजाने अपनेको कृतार्थ जानकर अपनी पुत्री कर्पूरिकाका नरवाहनदत्तके साथ विवाह करदिया और तीन २ करोड अशर्फी तीन २ करोड पल कपूर दश २ करोड वस्त्र और तीन २ सौ आभूषित दासी प्रति प्रदक्षणा में उसको दीनी उससमय सुवर्ण और कपूरके समूह वहा ऐसे शोभित होतेथे कि मानों पार्वतीजी के विवाहके देखनेवाले सुमेरु और कैलासके शिखर विवाहकी शोभा देखनेको आयेहैं नरवाहनदत्त मूर्त्तिमती प्रीतिकेसमान कर्पूरिकाको पाकर अत्यन्त शोभितहुआ माधवी लता और वसन्तोत्सवकेसमान वधू और वरका सगम देखकर किसका चित्त प्रसन्न नहींहुआ २१६ इस प्रकार विवाहविधि के उत्सवके व्यतीत होजाने पर दूसरे दिन नरवाहनदत्तने कर्पूरिकासे कहा कि चलो कौशाम्बीकोचलें तो वह वोली कि अच्छा उसी अपने आकाशगामी विमानपर चढकर चलिये जिससे शीघ्रही पहुचजायँ और जो वह छोटाहोय तो मैं वडा विमान वनवालू यहा देशान्तर से आयाहुआ प्राणधर नाम वढई रहताहै उससे मैं शीघ्रही विमान वनवालूगी यह कहकर उसने प्रतीहारको बुलवाकर कहा कि तुम जाकर प्राणधर नाम वढईसे कहो कि मेरेजानेकेलिये आकाशगामी एकवडा विमान वनादे यहकहकर उसने प्रतीहारको भेजा और चेरीके हाथ अपने पितासे अपने जानेकी इच्छा कहला भेजी नरवाहनदत्तने प्राणधरका नाम सुनकर यह शोचा कि राज्यधरका भाई यह वही प्राणधर मालूम होताहै जो राजाके भयसे अपने देशको त्यागकर भागाथा उसके इसप्रकार विचारतेही विचारते राजा वहा आगया और प्रतीहार के साथ प्राणधरभी आकर वोला कि एक वडा विमान वनायाहुआ मेरे पास रक्खाहै जिसपर हजारों मनुष्य वैठकर सुखपूर्व्वक जासक्तेहैं प्राणधरके यहवचनसुनकर नरवाहन दत्तने वहुतअच्छा कहकर उससे पूँछा कि क्या तुम राज्यधरके वडेभाई अनेकप्रकारके यन्त्रों के जानने वाले प्राणधर हो उसने नम्रता पूर्व्वक कहा कि हा मैं वही प्राणधरहू परन्तु आप हम दोनोंभाइयोंको

नौकरियोंने आश्चर्यपूर्वक जाकर राजपुत्री कर्पूरिकासे कहा कि हे राजपुत्री फाटकके पास कोई महाव्रती जो कि द्वितीय सहितहोकरभी सुन्दरता से अद्वितीयहै स्त्रियों के चित्तको मोहित करनेवाले, हा हंसि हा हंसि इसप्रकारके अद्भुत मन्त्रको रात्रि दिन उच्चारण कियाकरताहै यहसुनकर पूर्वजन्मकी हंसी राजपुत्रीने उसे अपनेपास बुलालिया और श्रीशिवजीकी आराधनाकेलिये व्रतको ग्रहणकियेहुए अत्यत मनोहर स्वरूप वाले नवीनकामदेवके समान नरवाहनदत्तको आश्चर्य्यपूर्वक देखकर पूछा कि तुम हा हंसि हा हंसि क्यों वारवार कहतेहो उसके पूछनेपरभी नरवाहनदत्त हा हंसि हा हंसि यहीकहतारहा तब साथमें गयेहुए गोमुख ने राजपुत्री से कहा कि हे राजपुत्री सुनो मैं तुमको इसका वृत्तान्त सक्षेपसे सुनाताहूं पूर्वजन्ममें यह कर्म योगसे राजहंसथा और समुद्रके तटपर किसी बडे तडागके समीप चन्दनके वृक्षमे घोंसला वनाकर अपनी राजहंसिनी समेत रहताथा एकसमय भाग्यवश से इसके बच्चे समुद्रकी लहरमें बहगये तब इसकी राज हंसिनीने शोकसे व्याकुल होकर अपनाशरीर त्याग करदिया तब इसने भी उसके वियोग से पक्षियो की योनिसे चित्तको हटाकर शरीर त्यागनेकी इच्छासे अपने चित्तमे यह सकल्प किया कि आगेहोने वाले जन्ममें मै पूर्व्वजन्मका स्मरण करनेवाला राजपुत्र होजाऊ और अपने पूर्व्वजन्मकी स्मरण कर- नेवाली यही राजहंसिनी मेरी स्त्रीहोय यह सकल्प करके और श्रीशिवजीका ध्यानकरके इसने विरहा- ग्निमें सतप्तहोकर समुद्रमें गिरकर अपने प्राण त्यागकिये इसीसे यह कौशाम्बी नगरीमे राजाउदयनका पुत्र हुआहै और इसे अपने पूर्व्वजन्मका स्मरण वना है जिससमय इसका जन्म हुआथा तब यहआ- काशवाणीहुईथी कि यह सपूर्ण विद्याधरोंका चक्रवर्त्ती राजाहोगा राजाउदयनने इसको युवराज पदवी देकर किसी कारणसे उत्पन्नहुई दिव्यस्त्री मदनमचुकाके साथ इसका विवाह करदिया तदनन्तर हेम प्रभनाम विद्याधरोंके स्वामीकी रत्नप्रभानाम कन्याने आकर इसकेसाथ आपही विवाह किया इसप्रकार दो दिव्यस्त्रियों को पाकरभी यह प्रसन्न नही हुआहै और उसी अपनी हंसिनीको स्मरण करता है इस ने अपने सपूर्ण पूर्व्वजन्मकी कथा और अपने चित्तका सपूर्ण वृत्तान्त मुझ वाल्यावस्थाके मित्रसे कहा है भाग्यवशसे वनमें शिकार खेलनेको आयेहुए इसको मेरेआगेही एक वृद्ध तपस्विनी मिली उसने प्रसगपाकर कृपापूर्व्वक इससे कहा कि हे पुत्र पूर्व्वही किसी कर्म्म के योगसे कामदेव हंसयोनि में उत्पन्नहोकर समुद्रके तटपर चन्दनके वृक्षमें रहताथा वहा कोई दिव्यस्त्री शापसे भ्रष्टहोकर हंसयोनि में उत्पन्नहोकर इसकी स्त्री थी समुद्रकी लहरसे वच्चोंके वहजानेपर शोक से उस हंसिनी ने अपना शरीर त्याग दिया तब वह हंसभी व्याकुल होकर समुद्रमें डूबकर मरगया श्रीशिवजीकी कृपासे राजाउदयन् के यहा वही हंस नरवाहनदत्तनामसे तुम उत्पन्न हुए हो हे वत्स तुमतो इन वातों को जानतेही होगे क्योंकि तुमको अपने पूर्वजन्म का स्मरण है वह हंसीभी समुद्रकेपार कर्पूरसभवनाम पुर मे कर्पूरिका नाम राजपुत्री हुई है इससे हे पुत्र तुम वहा जाओ तुम्हारी प्रिया स्त्री तुमको मिलजायगी यह कहकर वह तपस्विनी आकाशमें जाकर अन्तर्द्धान होगई और यह हमारास्वामी उस तपस्विनी के मुखसे तुम्हारी प्रवृत्तिपाकर मेरेसाथ यहाको चला और तुम्हारे स्नेहसे वशीभूतहोकर अपने प्राणोंकोभी कुछ न सम-

झकर सैकडों वनोंका उल्लघन करके समुद्रके तटपर पहुचा वहा हेमपुरका रहनेवाला राज्यधर नाम वढई मिला उसने अपना वनायाहुआ यत्रका विमान इसको दिया मूर्त्तिमान् साहसके समान भयदायी विमान पर चढकर समुद्रका उल्लघन करके मुझसमेत यह इस नगर में आकर पहुँचा इसी से यह हा हसी हा हसी कहताहुआ भ्रमण कररहाथा अव तुम्हारे निकट पहुँचगया इससमय तुम्हारे मुखरूपी चन्द्रमाकेदर्शनसे असख्य दु खरूपी अधकारका नाशहुआहै हे सुदरी अपनी दृष्टिरूपी नील कमलकी मालासे इस अतिथि का पूजन करो इसप्रकार गोमुख के वचन सुनकर अपने पूर्व्व जन्मके वृत्तान्त से विश्वास युक्त होके कर्पूरिकाने देखो इस आर्यपुत्रका मेरे ऊपर वडा स्नेहहै मैं व्यर्थही विरक्तहोगईथी इसप्रकार प्रेमपूर्व्वक अपने अन्त करण में सोचकर कहा ठीकहै वह हसी मैही हू मैं धन्यहू जिसके लिये आर्यपुत्रने दोनों जन्मों में ऐसा दु खसहा अव मैं प्रेमसे मोललीगई आपकी दासीहू यह कहकर उसने गोमुख समेत नरवाहनदत्तको स्नानादि करवाये और सखियों के द्वारा अपने पितासे यह सव वृत्तान्त कहलाभेजा उस वृत्तान्तको सुनकर राजाकर्पूरक अपनी कन्याकी विवाहकी इच्छा जानकर वहीं चलाआया और वहा अपनी कन्याके वर नरवाहनदत्तको विद्याधरों के चक्रवर्त्तियों के लक्षणों से युक्त देखकर अत्यन्त प्रसन्नहुआ उससमय राजाने अपनेको कृतार्थ जानकर अपनी पुत्री कर्पूरिकाका नरवाहनदत्तके साथ विवाह करदिया और तीन २ करोड अशर्फी तीन २ करोड पल कपूर दश २ करोड वस्त्र और तीन २ सौ आभूषित दासी प्रति प्रदक्षणा में उसको दीनी उससमय सुवर्ण और कपूरके समूह वहा ऐसे शो-भित होतेथे कि मानों पार्वतीजी के विवाहके देखनेवाले सुमेरु और कैलासके शिखर विवाहकी शोभा देखनेको आयेहैं नरवाहनदत्त मूर्त्तिमती प्रीतिकेसमान कर्पूरिकाको पाकर अत्यन्त शोभितहुआ माधवी लता और वसन्तोत्सवकेसमान वधू और वरका सगम देखकर किसका चित्त प्रसन्न नहींहुआ २१६ इस प्रकार विवाहविधि के उत्सवके व्यतीत होजाने पर दूसरे दिन नरवाहनदत्तने कर्पूरिकासेकहा कि चलो कौशाम्बीकोचलें तो वह वोली कि अच्छा उसी अपने आकाशगामी विमानपर चढकर चलिये जिसमे शीघ्रही पहुचजायँ और जो वह छोटाहोय तो मैं वडा विमान वनवालूं यहा देशान्तर से आयाहुआ प्राणधर नाम वढई रहताहै उससे मैं शीघ्रही विमान वनवालूंगी यह कहकर उसने प्रतीहारको बुलवा कर कहा कि तुम जाकर प्राणधर नाम वढईसे कहो कि मेरेजानेकेलिये आकाशगामी एक वडा विमान वनादे यहकहकर उसने प्रतीहारको भेजा और चेरीके हाथ अपने पितासे अपने जानेकी इच्छा कहला भेजी नरवाहनदत्तने प्राणधरका नाम सुनकर यह शोचा कि राज्यधरका भाई यह वही प्राणधर मालूम होताहै जो राजाके भयसे अपने देशको त्यागकर भागाथा उसके इसप्रकार विचारतेही विचारते राजा वहा आगया और प्रतीहार के साथ प्राणधरभी आकर वोला कि एक वडा विमान वनायाहुआ मेरे पास रक्खाहै जिसपर हजारों मनुष्य वैठकर सुखपूर्व्वक जासक्तेहैं प्राणधरके यहवचनसुनकर नरवाहन दत्तने वहुतअच्छा कहकर उससे पूँछा कि क्या तुम राज्यधरके वडेभाई अनेकप्रकारके यन्त्रों के जानने वाले प्राणधर हो उसने नम्रता पूर्व्वक कहा कि हा मैं वही प्राणधरहू परन्तु आप हम दोनोंभाइयोंको

नेरियोंने आश्चर्य पूर्वक जाकर राजपुत्री कर्पूरिकासे कहा कि हे राजपुत्री फाटकके पास कोई महाव्रती जो कि द्वितीय सहितहोकरभी सुन्दरता से अद्वितीयहै स्त्रियों के चित्तको मोहित करनेवाले, हा हंसि हा हंसि इसप्रकारके अद्भुत मन्त्रको रात्रि दिन उच्चारण कियाकरताहै यहसुनकर पूर्वजन्मकी हंसी राजपुत्रीने उसे अपनेपास बुलालिया और श्रीशिवजीकी आराधनाकेलिये व्रतको ग्रहणकियेहुए अत्यन्त मनोहर स्वरूप वाले नवीनकामदेवके समान नरवाहनदत्तको आश्चर्य्यपूर्वक देखकर पूछा कि तुम हा हंसि हा हंसि क्यों वारवार कहतेहो उसके पूछनेपरभी नरवाहनदत्त हा हंसि हा हंसि यहीकहतारहा तब साथमें गयेहुए गोमुख ने राजपुत्री से कहा कि हे राजपुत्री सुनो मैं तुमको इसका वृत्तान्त संक्षेपसे सुनाताहूं पूर्वजन्ममें यह कर्म योगसे राजहंसथा और समुद्रके तटपर किसी बड़े तडागके समीप चन्दनके वृक्षमें घोंसला बनाकर अपनी राजहंसिनी समेत रहताथा एकसमय भाग्यवश से इसके बच्चे समुद्रकी लहरमें बहगये तब इसकी राज हंसिनीने शोकसे व्याकुल होकर अपनाशरीर त्याग करदिया तब इसने भी उसके वियोग से पक्षियो की योनिसे चित्तको हटाकर शरीर त्यागनेकी इच्छासे अपने चित्तमें यह संकल्प किया कि आगेहोने वाले जन्ममें मैं पूर्व्वजन्मका स्मरण करनेवाला राजपुत्र होजाऊं और अपने पूर्व्वजन्मकी स्मरण कर-नेवाली यही राजहंसिनी मेरी स्त्रीहोय यह संकल्प करके और श्रीशिवजीका ध्यानकरके इसने विरहा-ग्निमें संतप्तहोकर समुद्रमें गिरकर अपने प्राण त्यागकिये इसीसे यह कौशाम्बी नगरीमें राजाउदयन्का पुत्र हुआहै और इसे अपने पूर्व्वजन्मका स्मरण बना है जिससमय इसका जन्म हुआथा तब यहआ काशवाणीहुईथी कि यह संपूर्ण विद्याधरोंका चक्रवर्त्ती राजाहोगा राजाउदयन्ने इसको युवराज पदवी देकर किसी कारणसे उत्पन्नहुई दिव्यस्त्री मदनमञ्चुकाके साथ इसका विवाह करदिया तदनन्तर हेम प्रभनाम विद्याधरोंके स्वामीकी रत्नप्रभानाम कन्याने आकर इसकेसाथ आपही विवाहकिया इसप्रकार दो दिव्यस्त्रियों को पाकरभी यह प्रसन्न नहीं हुआहै और उसी अपनी हंसिनीको स्मरण करता है इस ने अपने संपूर्ण पूर्व्वजन्मकी कथा और अपने चित्तका संपूर्ण वृत्तान्त मुझ बाल्यावस्थाके मित्रसे कहा है भाग्यवशसे वनमें शिकार खेलनेको आयेहुए इसको मेरेआगेही एक वृद्ध तपस्विनी मिली उसने प्रसंगपाकर कृपापूर्व्वक इससे कहा कि हे पुत्र पूर्व्वही किसी कर्म्म के योगसे कामदेव हंसयोनि में उत्पन्नहोकर समुद्रके तटपर चन्दनके वृक्षमें रहताथा वहां कोई दिव्यस्त्री शापसे भ्रष्टहोकर हंसयोनि में उत्पन्नहोकर इसकी स्त्री थी समुद्रकी लहरसे बच्चोंके बहजानेपर शोक से उस हंसिनी ने अपना शरीर त्याग दिया तब वह हंसभी व्याकुल होकर समुद्रमें डूबकर मरगया श्रीशिवजीकी कृपासे राजाउदयन् के यहां वही हंस नरवाहनदत्तनामसे तुम उत्पन्न हुए हो हे वत्स तुमतो इन बातों को जानतेही होगे क्योंकि तुमको अपने पूर्वजन्म का स्मरण है वह हंसीभी समुद्रकेपार कर्पूरसंभवनाम पुर में कर्पूरिका नाम राजपुत्री हुई है इससे हे पुत्र तुम वहां जाओ तुम्हारी प्रिया स्त्री तुमको मिलजायगी यह कहकर वह तपस्विनी आकाशमें जाकर अन्तर्द्धान होगई और यह हमारास्वामी उस तपस्विनी के मुखसे तुम्हारी प्रवृत्तिपाकर मेरे साथ यहांको चला और तुम्हारे स्नेहसे वशीभूतहोकर अपने प्राणोंकोभी कुछ न सम-

शिकार कहा तपस्विनी कहा समुद्रके तटपर राज्यधरनाम बढ़ईका मिलना कहा उसके विमानपर चढ़कर समुद्रके पारजाना और कहा पहलेहीसे इस द्वीपमें विमानबनानेवालेका दैवयोगसे वहां पहुंचजाना परमेश्वर भाग्यवान् पुरुषों के कल्याणकी सिद्धिके उपायकी रचनाकी चिन्ता पहलेही से करताहै यह बात वहां सबलोगोंने आनन्दपूर्वक कही और गोमुखके स्वामिभक्तहोनेकी बड़ी प्रशंसाकरी और पतिव्रता धर्म मे अत्यन्त सन्तुष्ट रत्नप्रभाकीभी सब लोगो ने इसलिये बड़ी प्रशंसाकी कि उसनेमार्ग में विद्याको भेजकर अपने पतिकी रक्षाकीथी इसके उपरान्त नरवाहनदत्त अपने पिता माता मन्त्री तथा स्त्रियोंसमेत राजधानीमें गया और अपनेमन्दिरमें पहुँचकर उसने अपनेमित्र तथा बन्धुओंको बहुतसा सुवर्ण देकर प्राणधर तथा राजा कर्पूरकके प्रतीहारको धनसें पूर्ण करदिया तदनन्तर भोजनादिके उपरान्त प्राणधर ने नरवाहनदत्त से कहा कि हे स्वामी राजाकर्पूरकने चलते समय हमसे यह कहदिया है कि कर्पूरिका को कौशाम्बी में पहुँचाकर शीघ्रही लौटआना जिससे मुझे विदित होजाय कि वह आनन्दपूर्वक कौशाम्बीमें पहुँचगई इससे हमलोगो को अभी जानाहै आप कर्पूरिकासे राजाकर्पूरकके नाम एक पत्री लिखवा दीजिये पत्रके विना अत्यन्त स्नेहयुक्त राजाके चित्तमें विश्वास नहींहोगा उसे यह सन्देह होगा कि कहीं विमानपरसे गिरतो नहीं पड़ी इससे चिट्ठीदेकर मुझको और जानेकेलिये उद्यत इस प्रतीहार को आज्ञादीजिये मैं वहां होकर अपने कुटुम्ब को लेके यहीं लौटआऊंगा क्योंकि आपके अमृतमय चरणकमलों को मैं नहीं छोड़सक्ताहूं प्राणधरके यह वचन सुनकर नरवाहनदत्तने कर्पूरिकाको पत्रलिखनेकी आज्ञादी तब उसने हे तात श्रेष्ठपति के यहां स्थित मेरे लिये आप कोई चिन्ता न कीजियेगा क्या पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण भगवान्को प्राप्तहुई लक्ष्मी की चिन्ता समुद्रको करनी चाहिये इसप्रकार पत्र लिखकर प्रतीहार को देदिया तब नरवाहनदत्तने प्रतीहार तथा प्राणधरको सत्कारपूर्वक विदाकिया वह दोनों विमानपरचढ़के देखनेवालोंको आश्चर्य करातेहुए आकाशमार्ग मे समुद्रके पार कर्पूरसम्भव नगरमें पहुँचे वहां उनदोनोंने कर्पूरिका की कुशलकहकर उसके हाथका पत्र राजाको देकर आनन्दित किया दूसरेदिन प्राणधर राजाकी आज्ञालेकर अपने कुटुम्बसमेत वहांसे चलकर कौशाम्बी मे नरवाहनदत्तके निकट आगया नरवाहनदत्तने शीघ्रही उसको अपने मन्दिरहीके पास रहनेको स्थान दिया और उसकी अपने यहांसे बड़ी जीविका करदीनी उसके बनायेहुए विमानोंपर रानियों समेत चढ़कर क्रीड़ा करताहुआ नरवाहनदत्त मानो होनेवाली विद्याधरोंकी आकाशगति का अभ्यासकरताथा इसप्रकार मित्र मन्त्री तथा रानियोंको आनन्ददेताहुआ नरवाहनदत्त रत्नप्रभा मदनमञ्चुका तथा नीमर्गकर्पूरिका को पाकर सुखपूर्वक दिन व्यतीत करने लगा २७५॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांरत्नप्रभालम्बकेनवमस्तरंगः ९॥

रत्नप्रभानामसातवांलम्बकसमाप्तहुआ॥

कैसे जानते हैं तब नरवाहनदत्तने जिसप्रकार उसने राज्यधरको देखाथा और जो२ राज्यधरने कहाथा वह सबकहदिया तदनन्तर अपनेश्वशुर राजाकर्पूरककी आज्ञालेकर नरवाहनदत्त कर्पूरिका तथा गोमुख समेत प्राणधरके लायेहुए बडे विमानपर बैठा और उसीपर कपूरवस्त्र तथा सुवर्णरखवाकर और दासियों कोभी उसीपर बैठालकर चलतेसमय नरवाहनदत्तने ब्राह्मणोंको बहुतसा दानदिया और उसकी सासने उससमय बडा मंगलाचारकिया फिर अपने श्वशुरकी आज्ञासे प्राणधरको तथा वहाके एकप्रतीहारकोभी साथलेकर अपने मनोरथके समान पूर्णविमानपर आकाशमार्ग से गमनकरतेहुए नरवाहनदत्तने प्राणधर से कहा कि प्रथम समुद्रके तटपर राज्यधरके पास चलो फिर वहा होकर कौशाम्बीको चलना क्षणभरमें ही समुद्रको लाघकर वह विमान हेमपुरमें राज्यधरके मन्दिरपर पहुचा वहा राज्यधर अपने भाई को देखकर बडा प्रसन्नहुआ और उसके चरणोंपरगिरा फिर नरवाहनदत्त तथा गोमुखसे प्रीतिपूर्व्वक मिला इसप्रकार राज्यधरसे मिलकर और स्नेहसे अपने भाईको नहीं छोडतेहुए राज्यधरसे किसीप्रकार पूछ-कर नरवाहनदत्त अपने सम्पूर्ण परिकर समेत कौशाम्बीपुरीकोचला और क्षणमात्रमेंही कौशाम्बी के निकट आगया वहा आकाशसे उतरेहुए उसविमानको और परिकर तथा नवीन स्त्री समेत नरवाहनदत्त को देखकर लोगोको बडाआश्चर्य हुआ फिर पुरवासियोंके उत्साहसे नरवाहनदत्तको आया जान-कर वत्सराज उदयन् प्रसन्नहोके उसकोलेनेकेलिये रानी मन्त्री तथा बहुओंसमेत आगेआया चरणोंपर गिरतेहुए अपने पुत्रसे मिलकर और विमानसे होनेवाली विद्याधरोंकी चक्रवर्त्तिताकी सूचना जान-कर राजाउदयन् अत्यन्त प्रसन्नहुआ रानीवासवदत्ता तथा पद्मावतीके नरवाहनदत्तको आलिंगनकरके अश्रुपात होनेलगा मानो बहुत कालमें उसके न देखनेके कारण जो दुःखकी गाठपडगईथी वह पिघ लगई प्रेम से ईर्ष्यारहित मदनमंचुका तथा रत्नप्रभा ने आनन्दपूर्वक नरवाहनदत्त के चरणों मे प्रणाम किया उनदोनोंको ईर्ष्यारहित देखकर नरवाहनदत्तके हृदयमें उनपर बडाही अनुराग उत्पन्नहुआ यौग-न्धरायण आदिक पिताके मन्त्रियोंसे और मरुभूति आदिक अपने मन्त्रियों से नरवाहनदत्त यथायोग्य सत्कार पूर्वकमिला दाशार्ह कुलके आभूषित करनेवाले अपने पतिसे समुद्रका उल्लंघन करके लाई गई अमृतकी बहिन लक्ष्मीजी के समान कर्पूरिकाको यथायोग्य प्रणामकरते देखकर और उसके साथ अनेक दासियों को देखकर राजा उदयन् आदिक सम्पूर्णलोग अत्यन्त प्रसन्नहुए तदनन्तर सुवर्ण कपूर तथा वस्त्रोंकोदेतेहुए राजाकर्पूरकके प्रतीहारका राजाउदयन्ने बडा सत्कारकिया और नरवाह नदत्तसे बनायेगये विमानके बनानेवाले प्राणधरको उपकारी जानकर उसकाभी बडा आदरकिया इस प्रकार सबका आदर सत्कार करके राजाने बडा सन्मान करके गोमुखसे पूछा कि तुम किसप्रकारसे गये और कैसे यह राजकन्या मिली तब गोमुखने जैसे वनमें वह तपस्विनी मिलीथी जैसे राज्यधरके दियेहुए विमानपर चढके समुद्रके पार पहुंचे जैसे विवाहमें विमुखभी कर्पूरिकाको विवाहकेलिये उत्सुक कियाथा और जैसे प्राणधर के बनायेहुए विमानपर चढके कौशाम्बी में आये थे वह सम्पूर्ण वृत्तान्त पत्नियों तथा रानियों समेत राजाउदयनसे वर्णन किया २५५ गोमुखसे सब वृत्तान्त को सुनकर कहा

शिकार कहा तपस्विनी कहा समुद्रके तटपर राज्यधरनाम बढ़ईका मिलना कहा उसके विमानपर चढ़-कर समुद्रके पारजाना और कहा पहलेहीसे इस दूसरे विमानबनानेवालेका दैवयोगसे वहां पहुंचजाना परमेश्वर भाग्यवान् पुरुषो के कल्याणकी सिद्धिके उपायकी रचनाकी चिन्ता पहलेही से करताहै यह बात वहां सबलोगोने आनन्दपूर्वक कही और गोमुखके स्वामिभक्तहोनेकी बडी प्रशंसाकरी और पतिव्रता धर्म से अत्यन्त संतुष्ट रानीरत्नप्रभाकीभी सब लोगो ने इसलिये बडी प्रशंसाकी कि उसनेमार्ग मे विद्याको भेजकर अपने पतिकी रक्षाकीथी इसके उपरान्त नरवाहनदत्त अपने पिता माता मन्त्री तथा स्त्रियोंसमेत राजधानीमें गया और अपनेमन्दिरमें पहुँचकर उसने अपनेमित्र तथा बन्धुओंको बहुतसा सुवर्ण देकर प्राणधर तथा राजा कर्पूरकके प्रतीहारको धनसे पूर्ण करदिया तदनन्तर भोजनादिके उपरान्त प्राणधर ने नरवाहनदत्त से कहा कि हे स्वामी राजाकर्पूरकने चलते समय हमसे यह कहदिया है कि कर्पूरिका को कौशाम्बी में पहुँचाकर शीघ्रही लौटआना जिससे मुझे विदित होजाय कि वह आनन्दपूर्वक कौशाम्बीमें पहुँचगई इससे हमलोगो को अभी जानाहै आप कर्पूरिकासे राजाकर्पूरकके नाम एक पत्री लिखवा दीजिये पत्रके विना अत्यन्त स्नेहयुक्त राजाके चित्तमें विश्वास नहींहोगा उसे यह सन्देह होगा कि कहीं विमानपरसे गिरतो नहीं पडी इसमे चिट्ठीदेकर मुझको और जानेकेलिये उद्यत इस प्रतीहार को आज्ञादीजिये मैं वहां होकर अपने कुटुम्ब को लेके यहीं लौटआऊगा क्योंकि आपके अमृतमय चरणकमलों को मैं नहीं छोडसक्ताहूं प्राणधरके यह वचन सुनकर नरवाहनदत्तने कर्पूरिकाको पत्रलि खनेकी आज्ञादी तब उसने हे तात श्रेष्ठपति के यहां स्थित मेरे लिये आप कोई चिन्ता न कीजियेगा क्या पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण भगवानको प्राप्तहुई लक्ष्मी की चिन्ता समुद्रको करनी चाहिये इसप्रकार पत्र लिखकर प्रतीहार को देदिया तब नरवाहनदत्तने प्रतीहार तथा प्राणधरको सत्कारपूर्वक विदाकिया वह दोनो विमानपरचढके देखनेवालोको आश्चर्य करातेहुए आकाशमार्ग मे समुद्रके पार कर्पूरसम्भव नगरमे पहुँचे वहां उनदोनोंने कर्पूरिका की कुशलकहकर उसके हाथका पत्र राजाको देकर आनन्दित किया दूसरेदिन प्राणधर राजासे आज्ञालेकर अपने कुटुम्बसमेत वहांसे चलकर कौशाम्बी मे नरवाहन-दत्तके निकट आगया नरवाहनदत्तने शीघ्रही उसको अपने मन्दिरहीके पास रहनेको स्थान दिया और उसकी अपने यहांसे बडी जीविका करदीनी उसके बनायेहुए विमानोंपर रानियों समेत चढकर क्रीडा करताहुआ नरवाहनदत्त मानो होनेवाली विद्याधरों की आकाशगति का अभ्यासकरताथा इसप्रकार मित्र मन्त्री तथा रानियोंको आनन्ददेताहुआ नरवाहनदत्त रत्नप्रभा मदनमञ्चुका तथा नीमर्गोकर्पूरिका को पाकर सुखपूर्वक दिन व्यतीत करने लगा २७५॥

इति श्रीकथासरित्सागरभाषायांरत्नप्रभालम्बकेनवमस्तरङ्ग ०॥

- -रत्नप्रभानामसातवांलम्बकसमाप्तहुआ॥

कैसे जानते हैं तब नरवाहनदत्तने जिसप्रकार उसने राज्यधरको देखाथा और जो २ राज्यधरने कहाथा वह सबकहदिया तदनन्तर अपनेश्वशुर राजाकर्पूरककी आज्ञालेकर नरवाहनदत्त कर्पूरिका तथा गोमुख समेत प्राणधर के लायेहुए बडे विमानपर बैठा और उसीपर कपूरवस्त्र तथा सुवर्णरखवाकर और दासियों कोभी उसीपर बैठालकर चलतेसमय नरवाहनदत्तने ब्राह्मणोंको बहुतसा दानदिया और उसकी सासने उससमय बडा मंगलाचारकिया फिर अपने श्वशुरकी आज्ञासे प्राणधरको तथा वहाके एकप्रतीहारकोभी साथलेकर अपने मनोरथके समान पूर्णविमानपर आकाशमार्ग से गमनकरतेहुए नरवाहनदत्तने प्राणधर से कहा कि प्रथम समुद्रके तटपर राज्यधरके पास चलो फिर वहा होकर कौशाम्बीको चलना क्षणभरमें ही समुद्रको लाघकर वह विमान हेमपुरमें राज्यधरके मन्दिरपर पहुचा वहा राज्यधर अपने भाई को देखकर बडा प्रसन्नहुआ और उसके चरणोपरगिरा फिर नरवाहनदत्त तथा गोमुखसे प्रीतिपूर्व्वक मिला इसप्रकार राज्यधरसे मिलकर और स्नेहसे अपने भाईको नहीं छोडतेहुए राज्यधरसे किसीप्रकार पूछ-कर नरवाहनदत्त अपने सम्पूर्ण परिकर समेत कौशाम्बीपुरीकोचला और क्षणमात्रमेही कौशाम्बी के निकट आगया वहा आकाशसे उतरेहुए उसविमानको और परिकर तथा नवीन स्त्री समेत नरवाहनदत्त को देखकर लोगोको बडाआश्चर्य्य हुआ फिर पुरवासियोंके उत्साहसे नरवाहनदत्तको आया जान-कर वत्सराज उदयन् प्रसन्नहोके उसकोलेनेकेलिये रानी मन्त्री तथा बहुओसमेत आगेआया चरणोंपर गिरतेहुए अपने पुत्रसे मिलकर और विमानसे होनेवाली विद्याधरोंकी चक्रवर्त्तिताकी सूचना जान कर राजाउदयन् अत्यन्त प्रसन्नहुआ रानीवासवदत्ता तथा पद्मावतीके नरवाहनदत्तको आलिंगनकरके अश्रुपात होनेलगा मानो बहुत कालमे उसके न देखनेके कारण जो दुःखकी गाठपडगईथी वह पिघ लगई प्रेम से ईर्ष्यारहित मदनमंचुका तथा रत्नप्रभा ने आनन्दपूर्वक नरवाहनदत्त के चरणो मे प्रणाम किया उनदोनोंको ईर्ष्यारहित देखकर नरवाहनदत्तके हृदयमे उनपर बडाही अनुराग उत्पन्नहुआ यौग-न्धरायण आदिक पिताके मन्त्रियोंसे और मरुभूति आदिक अपने मन्त्रियों से नरवाहनदत्त यथायोग्य नमस्कार पूर्व्वकमिला दाशार्ह कुलके आभूषित करनेवाले अपने पतिसे समुद्रका उल्लंघन करके लाई गई अमृतकी बहिन लक्ष्मीजी के समान कर्पूरिकाको यथायोग्य प्रणामकरते देखकर और उसके साथ अनेक दासियों को देखकर राजा उदयन् आदिक सम्पूर्णलोग अत्यन्त प्रसन्नहुए तदनन्तर सुवर्ण कपूर तथा वस्त्रोंकोदेतेहुए राजाकर्पूरकके प्रतीहारका राजाउदयन्ने बडा सत्कारकिया और नरवाह नदत्तसे बनायेगये विमानके बनानेवाले प्राणधरको उपकारी जानकर उसकाभी बडा आदरकिया इस प्रकार सबका आदर सत्कार करके राजाने बडा सन्मान करके गोमुखसे पूछा कि तुम किसप्रकारसे गये और कैसे यह राजकन्या मिली तब गोमुखने जैसे वनमे वह तपस्विनी मिलीथी जैसे राज्यधरके दियेहुए विमानपर चढके समुद्रके पार पहुचे जैसे विवाहमे विमुखभी कर्पूरिकाको विवाहके लिये उत्सुक कियाथा और जैसे प्राणधर ने बनायेहुए विमानपर चढके कौशाम्बी में आये थे यह सम्पूर्ण वृत्तान्त मन्त्रियों तथा रानियों समेत राजाउदयनसे वर्णन किया २५५ गोमुखसे सब वृत्तान्त को सुनकर कहा

की कृपासे विद्याधरों के स्वामियोंका चक्रवर्त्ती होनेवालाहै इससे यह विद्याधरत्वकी प्राप्त करानेवाली विद्याओंको क्यों नहीं सिद्ध करताहै इसीलिये श्रीशिवजीने मुझको यहा भेजाहै इससे जो आपआ ज्ञादीजिये तो मैं इसेलेजाकर विद्याधरोंके चक्रवर्त्ती होनेकी कारणरूप विद्याओं का साधन इसे सिखाऊं इसकार्य्यमें श्रुतशर्म्मानाम विद्याधर इसका प्रतिद्वन्द्वी है क्योंकि उसेइन्द्रने विद्याधरों का चक्रवर्त्तीकरने का विचार कियाहै इससे यह जो विद्याओं को सिद्ध करले तो हम लोगोंके साथजाकर उस श्रुतश-र्म्माको जीतकर विद्याधरोंका चक्रवर्त्ती होजायगा मयदैत्यके यह वचन सुनकर राजाचन्द्रप्रभ ने कहा कि हम धन्यहैं और यहभी बड़ापुण्यात्माहै जिसपर श्रीशिवजीकी ऐसी कृपाहै आप इसे जहाचाहें वहां अपनी इच्छाके अनुसार लेजाइये इस प्रकार राजासे आज्ञापाकर मयदैत्य मन्त्रियों समेत सूर्य्यप्रभको पातालमें लेगया वहां उसने उसको ऐसे तपोंका उपदेश किया कि जिससे उसने अपने मन्त्रियोंस मेत शीघ्रही सब विद्या सीखलीं तब मयासुरने विमानका साधनभी उसे बतादिया जिससे उसने भूता-सननाम विमान सिद्ध किया तब मयासुर उसी विमानपर मन्त्रियोंसमेत सूर्य्यप्रभको चढाकर राजाचन्द्र प्रभकेपास लेआया और बोला कि तुम तबतक इसीलोकमें सिद्धियों के सुखको भोगो जबतक कि म न आऊं यह कहकर और इसके कियेहुए पूजनको ग्रहण करके मयासुर चलागया और राजा चन्द्र प्रभ अपने पुत्रको विद्याओंसे सपन्न देखकर अत्यन्त प्रसन्नहुआ ३६ सूर्य्यप्रभभी विद्याओं के प्रभाव से विमानपर चढकर अपने मन्त्रियों समेत नानादेशोंमें भ्रमण करनेलगा जहाजहां जिसजिस राज कन्याने उसे देखा उसउस ने कामसे मोहितहोकर उसकेसाथ स्वयवर किया ताम्रलिप्ती के राजा वीर-भटकी अत्यन्त सुन्दरी मदनसेना नाम्न कन्या अपरान्त देशके स्वामी राजासुभटकी चन्द्रिकावतीनाम कन्या जिसे सिद्धलोगोंने लेजाकर अन्यस्थानमें रक्खाथा कांची नगरी के स्वामी राजाकुम्भीरक की अत्यन्त रूपवती वरुणसेनानाम कन्या लावाणकदेशके स्वामी राजा पौरवकी अत्यन्त सुन्दरनेत्रवाली सुलोचनानाम कन्या चीनदेशके राजा सुरोहकी सुन्दरसुवर्ण के समान वर्णवाली विद्युन्मालानामक-न्या श्रीकण्ठदेशके राजाकान्तिसेनकी कान्तिसे अप्सराओंको जीतनेवाली कान्तिमतीनाम कन्या और कौशाम्बी नगरीके राजा जनमेजयकी अत्यन्त मधुर बोलनेवाली परपुष्टानाम कन्या इनसातों कन्या ओंको उनके पिताओंसे विना कहेही सूर्य्यप्रभ हरलाया परन्तु उनलोगों ने जानकरभी विद्याके प्रभाव से भयभीत होकर क्रोध नहीं किया किन्तु नम्रही बनेरहे इन सातों अपनी प्रियोंको भी विद्या सिखा-कर सूर्य्यप्रभ विद्याकेप्रभावसे अनेक स्वरूप धरके उनसबोंके साथ एकसाथही रमण करनेलगा और अपने मन्त्री तथा रानियों समेत आकाशमें विहार सगीत तथा मद्यपानादिक क्रीडा करनेलगा वह दिव्य चित्र तथा कलाओंको जानताथा इससे कभी कभी विद्याधरी स्त्रियोंके चित्रबनाकर और क्रीडा में कुटिल वचनकहकर प्रियाओं को मनाने के लिये कुपित करताथा और टेढी भृकुटी तथा लालनेत्र वाले उनके मुखोंको देखकर और कपायमान ओष्ठोंमें स्पष्टता पूर्वक नहीं निकलते हुए वचनों को सुनकर अत्यन्त प्रसन्नहोताथा एक समय सूर्य्यप्रभ अपने मंत्री तथा रानियों समेत आकाशमार्ग से

सूर्य्यप्रभोनामअष्टमोलम्बकः ॥

चलत्कर्णानिलोद्धून सिन्दूरारुणिताम्बरः ॥
जयत्यकालेपिसृजन्सन्ध्यामिवगजाननः १

इसप्रकार मदनमचुका रत्नप्रभा तथा कर्पूरिकाको पाकर नरवाहनदत्त कौशाम्बी में सुखपूर्व्वक आनन्द करनेलगा एकसमय सभा में अपने पिता के समीप बैठे हुए नरवाहनदत्त ने आकाश से आयेहुए एक दिव्य पुरुषको देखा और प्रणामकरतेहुए उस पुरुष से आदरपूर्व्वक पूछा कि तुम कौनहो और यहा किसलिये आयेहो तव वह कहनेलगा कि हिमाचल पर्व्वतपर वज्र के समान पुष्ट वज्रकूट नाम यथार्थ नामवाला नगर है उस पुर में सम्पूर्ण विद्याधरों का स्वामी वज्रप्रभ नाम मै राजाहू मेरा शरीर वज्र से वनाहुआहै इसीसे मेरानाम यथार्थ है मेरे तपसे प्रसन्नहुए श्रीशिवजीने मुझे यह वरदान दियाहै कि मेरे नियत कियेहुए अपने चक्रवर्त्तियोंके तुम भक्त वनेरहो इससे तुमको कोई शत्रु नही जीतसकैंगे इन दिनों अपनी विद्या के प्रभाव से यह जानकर कि वत्सराजका पुत्र कामका अवतार नरवाहनदत्त श्रीशिवजीकी कृपा से मनुष्यहोकर भी वेदी के दोनो भागोका चक्रवर्त्तीहोगा इससे मै प्रणाम करने को यहा चलाआया हू यद्यपि पहलेभी श्रीशिवजीकी कृपासे सूर्य्यप्रभ नाम मनुष्यही दिव्य कल्प पर्य्यन्त हमारा चक्रवर्त्ती रहाहै तथापि वह वेदी के दक्षिणभागही का स्वामी था और उत्तर भाग में श्रुतशर्मा नाम चक्रवर्त्ती था परन्तु उन दोनो भागोंके दिव्य कल्पपर्य्यन्त चक्रवर्त्ती होनेवाले अत्यन्त पुण्यवान् आपहीहो, उसके यह वचन सुनकर राजाउदयन् और नरवाहनदत्तने कौतुक पूर्वक उससे पूँछा कि सूर्य्यप्रभने मनुष्य होकर भी किसप्रकार से विद्याधरो का ऐश्वर्य्य पायाथा सो आप कहिये तब वह राजा वज्रप्रभ मन्त्री तथा रानियोंके आगे उदयन् और नरवाहनदत्त से उसकी कथा कहने लगा कि पूर्वही मद्रदेश में शाकल नाम एक नगरथा वहा अगारप्रभका पुत्र चन्द्रप्रभ नाम राजाथा सम्पूर्ण ससारको आनन्द देने से उसका यह नाम यथार्थथा परन्तु उसके शत्रु उसको अग्नि के समान सन्तापकारी जाननेथे उसके कीर्त्तिमती नाम रानीमें अत्यन्त शुभलक्षणों से भावी उदयको सूचन करनेवाला पुत्र हुआ उससमय चन्द्रप्रभ के कर्णों में अमृत के समान आनन्द देनेवाली यह आकाशवाणी हुई कि यह सूर्य्यप्रभनाम बालक उत्पन्नहुआ है श्रीशिवजीकी कृपासे यह विद्याधरोंके राजाओं का चक्रवर्त्ती होगा इस आकाशवाणी को सुनकर राजाने वडा उत्सव किया, राजपुत्र सूर्य्यप्रभ धीरे २ बढने लगा बाल्यावस्थामेंही वहगुरुके पास जाकर सम्पूर्ण विद्या तथा कलाओंमें पारङ्गत होगया जब वह सोलह वर्षका हुआ तब चन्द्रप्रभने उसके गुणोंसे अत्यन्त प्रजाको प्रसन्न देखकर उसे युवराजपदवी देदी और अपने मन्त्रियोंके पुत्र भास,प्रभास,सिद्धार्थ तथा प्रहस्तादिक उसके मन्त्री वनादिये इसप्रकार भास प्रभासादिकों के साथ युवराजपदवी को पाकर सूर्य्यप्रभ के राज्य कार्य्य करनेपर एकसमय मयनाम दैत्य वहा आया और सभा में सूर्य्यप्रभके आगे चन्द्रप्रभ से बोला कि हे राजा यह तुम्हारा पुत्र श्रीशिवजी

की कृपासे विद्याधरों के स्वामियोंका चक्रवर्ती होनेवालाहै इससे यह विद्याधरत्वकी प्राप्त करानेवाली विद्याओंको क्यों नहीं सिद्ध करताहै इसीलिये श्रीशिवजीने मुझको यहां भेजाहै इससे जो आपआज्ञादीजिये तो मैं इसेलेजाकर विद्याधरोंके चक्रवर्त्ती होनेकी कारणरूप विद्याओं का साधन इसे सिखाऊं इसकार्य्यमें श्रुतशर्म्मानाम विद्याधर इसका प्रतिद्वन्दी है क्योंकि उसेइन्द्रने विद्याधरों का चक्रवर्त्तीकरने का विचार कियाहै इससे यह जो विद्याओं को सिद्ध करले तो हम लोगोंके साथजाकर उस श्रुतशर्म्माको जीतकर विद्याधरोंका चक्रवर्त्ती होजायगा मयदैत्यके यह वचन सुनकर राजाचन्द्रप्रभ ने कहा कि हम धन्यहैं और यहभी बड़ापुण्यात्माहै जिसपर श्रीशिवजीकी ऐसी कृपाहै आप इसे जहांचाहें तहां अपनी इच्छाके अनुसार लेजाइये इस प्रकार राजासे आज्ञापाकर मयदैत्य मन्त्रियों समेत सूर्य्यप्रभको पातालमें लेगया वहां उसने उसको ऐसे तपोंका उपदेश किया कि जिससे उसने अपने मन्त्रियोंसमेत शीघ्रही सब विद्या सीखलीं तब मयासुरने विमानका साधनभी उसे बतादिया जिससे उसने भूतासननाम विमान सिद्धकिया तब मयासुर उसी विमानपर मन्त्रियोंसमेत सूर्य्यप्रभको चढ़ाकर राजाचन्द्रप्रभकेपास लेआया और बोला कि तुम तबतक इसीलोकमें सिद्धियों के सुखको भोगो जबतक कि मैं न आऊं यह कहकर और इसके कियेहुए पूजनको ग्रहण करके मयासुर चलागया और राजा चन्द्रप्रभ अपने पुत्रको विद्याओंसे संपन्न देखकर अत्यन्त प्रसन्नहुआ ३६ सूर्य्यप्रभभी विद्याओं के प्रभाव से विमानपर चढ़कर अपने मन्त्रियों समेत नानादेशोंमें भ्रमण करनेलगा जहांजहां जिसजिस राजकन्याने उसे देखा उसउस ने काम से मोहितहोकर उसकेसाथ स्वयंवर किया ताम्रलिप्ती के राजा वीरभटकी अत्यन्त सुन्दरी मदनसेना नाम कन्या अपरान्त देशके स्वामी राजासुभटकी चन्द्रिकावतीनाम कन्या जिसे सिद्धलोगोंने लेजाकर अन्यस्थानमें रक्खाथा कांची नगरी के स्वामी राजाकुबीरक की अत्यन्त रूपवती वरुणसेनानाम कन्या लावाणकदेशके स्वामी राजा पौरसकी अत्यन्त सुन्दरनेत्रवाली सुलोचनानाम कन्या चीनदेशके राजा सुरोहकी सुन्दरसुवर्ण के समान वर्णवाली विद्युन्मालानामकन्या श्रीकण्ठदेशके राजाकान्तिसेनकी कान्तिसे अप्सराओंको जीतनेवाली कान्तिमतीनाम कन्या और कौशाम्बी नगरीके राजा जनमेजयकी अत्यन्त मधुर बोलनेवाली परपुष्टानाम कन्या इनसातों कन्याओंको उनके पिताओंसे विना कहेही सूर्य्यप्रभ हरलाया परन्तु उनलोगों ने जानकरभी विद्याके प्रभाव से भयभीत होकर क्रोध नहीं किया किन्तु नम्रही बनेरहे इन सातों अपनी प्रियोंको भी विद्या सिखाकर सूर्य्यप्रभ विद्याकेप्रभावसे अनेक स्वरूप धरके इनसबोंके साथ एक सायही रमण करनेलगा और अपने मन्त्री तथा रानियों समेत आकाश में विहार संगीत तथा मद्यपानादिक क्रीड़ा करनेलगा वह दिव्य चित्र तथा कलाओंको जानताथा इससे कभी कभी विद्याधरी स्त्रियोंके चित्रबनाकर और क्रीडा में कुटिल वचनकहकर प्रियाओं को मनाने के लिये कुपित करताथा और टेढ़ी भृकुटी तथा लालनेत्र वाले उनके मुखोंको देखकर और कंपायमान ओष्ठोंसे स्पष्टता पूर्वक नहीं निकलते हुए वचनों को सुनकर अत्यन्त प्रसन्नहोताथा एक समय सूर्य्यप्रभ अपने मन्त्री तथा रानियों समेत आकाशमार्ग से

ताम्रलिप्ती मे जाकर वहाके उपवनों में मदनसेना के साथ विहार करनेलगा एक दिन वहीं सपूर्णमत्री तथा रानियोंको छोडकर भूतासन विमानपर चढके प्रहस्तको अपनेसाथ लेकर वज्ररात्र नगरको गया और रम्भनाम राजाकी तारावली नाम कन्याको अपनेऊपर अनुरक्त तथा कामाग्निसे पीडितजानकर वहासे हरकर ताम्रलिप्ती मे लेआया और वहाआकर वहीं के राजाकी विलासिनीनाम एक दूसरीकन्या को भी हरलाया विलासिनी का भाई अपने मामा तथा सेवकोंको साथलेकर कुपितहोकर उससे लडने को आया उनसबको उसने अपनी विद्याके प्रभाव से स्तम्भित करदिया और उनके शिर मुंडवादिये परन्तु उन्हें अपनी प्रियाके बन्धु जानकर मारानहीं और उनके अभिमान को नष्ट देखकर उन्हें छोड दिया तदनन्तर अपने पिताकेबुलानेसे अपनी नवों प्रियाओंको साथलेके सर्यप्रभ उसीविमानपर चढ कर अपने शाकलपुरको चलाआया उसके पहुँचतेही ताम्रलिप्तीसे राजावीरभटने चन्द्रप्रभके पास दूत के द्वारा यह सदेसा भेजा कि तुम्हारे पुत्रने हमारी दो कन्या हरली हैं इसमें कोई अनुचित बात नहीं है क्योंकि यह उनके योग्य पति है जो आपलोगोंको हमपर स्नेह है तो यहा आइये मै विवाहका सपूर्ण आचार पूर्णकरू दूतके यह वचन सुनके उसका सत्कार करके राजाचन्द्रप्रभने दूसरेही दिन ताम्रलिप्ती के जाने का विचार किया और राजा वीरभटकी सत्यताको निश्चय करनेके लिये दूतके आनेजाने में देर होना जानके प्रहस्तको उसके पासभेजा प्रहस्त शीघ्रही आकाशमार्गसे राजा वीरभटके पासजाकर उससे वार्त्तालाप करके उसे विश्वासपात्र जानकर और उससे यह कहकर कि प्रातःकालही मेरे स्वामी आप के पास आवेगे अपने राजाचन्द्रप्रभके पास लौट आया प्रहस्त से वीरभटको विश्वासपात्र जानकर और सपूर्ण सामग्री उसके यहा इकट्ठीहुई सुनकर चन्द्रप्रभ अपनीरानी कीर्त्तिमती सर्य्यप्रभ विलासिनी तथा मदनसेना और अपने तथा सूर्य्यप्रभ के मन्त्री इन सबको अपने साथ लेके भूतासन विमान पर चढ प्रातःकालही चला और पहरभर दिनचढे ताम्रलिप्तीके निकट पहुँचगया वहा आकाशसे उतरकर पहलेही मे लेनेके लिये आयेहुए राजा वीरभटके साथ उसपुरीके भीतर गया चन्दनके जलसे सिचीहुई उसपुरीके मार्गमें पुरकी स्त्रिया नीलकमलोंकेसमान अपनेकटाक्ष फेंकरहीथी वीरभटने अपनेसवधी तथा जामाताको मन्दिर में लेजाकर पूजनकिया और अपनी दोनों कन्याओंको विवाहका आचार सूर्य्यप्रभके साथ कर दिया और ढाई २ मनकी हजार विदरी सुवर्ण रत्नोंसे भरेहुए आभूषणोंके सौ ऊट अनेक प्रकारके श्रेष्ठ वस्त्रों से लदेहुए पाचसौऊट सातहज़ार घोडे पाचहज़ार हाथी और रूपतथा आभूषणोंसे अलकृत एक हज़ार दासी अपनी कन्याओंको वेदीपर सकल्पकरके दीं और सूर्य्यप्रभतथा चन्द्रप्रभको अनेक प्रकारके रत्न तथा देश दिये और प्रहस्तादिक मन्त्रियोंको भी बहुतसा धन देकर तृप्त किया उस दिन सम्पूर्ण नगरी के जनों ने अपने २ गृहमें बडा उत्सवकिया और सूर्य्यप्रभ अपने माता पिता मन्त्री तथा स्त्रियों समेत बडे २ उत्तम दिव्य भोजनकरके और मद्यपीके गान सुननेलगा उससमय वज्ररात्रपुर से राजा रम्भका भेजाहुआ दूत सभामें आकर सबके सन्मुख अपने स्वामी का वचन कहनेलगा कि विद्याओं के बल से बडे अभिमानी सूर्य्यप्रभ ने मेरी कन्या को हरके मेरा बड़ा तिरस्कार किया अब तुम्हे ।

है कि राजा वीरभट जिसका कि हमारेही समान तुमने तिरस्कार किया था उसके साथ तुमने सन्धि करली है उसीप्रकार जो हमारे भी साथ सन्धि करनाचाहते हो तो यहां आओ नहीं तो मैं अपने प्राण त्याग करदूंगा दूत के वचन सुनकर राजा चन्द्रप्रभने उसका बडा सत्कारकिया और प्रहस्तसे कहा कि तुम राजारम्भके यहां जाकर मेरे यह वचन कहो कि व्यर्थ क्यो सन्ताप करतेहो श्रीगिरजी ने सूर्य्यप्रभ को विद्याधरोंका भावी चक्रवर्त्ती नियत कियाहै और तुमलोगोंकी कन्या उसकी रानीहोंगी इससे तुम्हारी कन्या उचित स्थानमें प्राप्तहुई है तुमसे कन्या इसलिये नहींमागी कि तुम्हारा स्वभाव बडा कठिन है इससे अब तुम सन्ताप न करो तुम हमारे मित्रहो हम तुम्हारे यहां अवश्य आवेंगे राजाका यह सन्देसा सुनकर प्रहस्तने पहरभरमे वज्ररात्र नगरमें पहुँचकर राजारम्भसे सबसंदेसा कहदिया और उसकी अनुमति लेकर लौटके राजा चन्द्रप्रभ से कहदिया कि वह आपके संदेसेसे प्रसन्नहै आप वहां चलिये तब राजा चन्द्रप्रभने प्रभासनाम मन्त्री से कहा कि तुम शाकलमें जाकर राजा रम्भकी कन्या तारावली को लेकर वज्ररात्रको चलो मैं भी वहीं आताहूं इसप्रकार उसे भेजके राजा चन्द्रप्रभ सूर्य्यप्रभ तथा वीरभट और अन्य अपने सब परिकरको साथमें लेके वज्ररात्र नगरमें पहुँचा वहां पहलेही से सबलोग उसका मार्ग देखरहे थे राजा रम्भ ने आगेआकर उनसबको अपनी राजधानी मे लेजाकर प्रभास के साथ आईहुई अपनी तारावली कन्याके विवाह आचार सूर्य्यप्रभके साथ करदिया और असंख्य अशर्फी हाथी घोडे तथा रत्नादिक अपनी कन्याको दहेजमें दिये और अपने जामाता सूर्य्यप्रभकी ऐसी सेवा किया कि जिससे उसे अपने यहां के सम्पूर्ण ऐश्वर्य्य भूलगये जब यह सम्पूर्ण लोग उस उत्सव मे आनन्दित होरहेथे उसीसमय काची नगरी से राजा रम्भके पास दूतआया उससे सब संदेसेको सुनकर राजा रम्भने चन्द्रप्रभसे कहा कि काची का राजा कुम्भीर मेरा बडाभाई है उसने मेरे पास इसलिये दूत भेजाहै कि सूर्य्यप्रभ पहले मेरी कन्या हरलेगया था उसके पीछे तुम्हारी मैने सुनाहै कि तुमने उसके साथ मित्रता करलीनी है इससे उनके साथ मेरी भी मित्रता करवादो यह सब लोग मेरे यहां भी आवें मै अपने हाथसे वरुण सेनाको संकल्पकरके सूर्य्यप्रभको दूं यहउसकी प्रार्थनाहै उसे आप पूर्ण कीजिये रम्भके यह वचन सुनकर राजा चन्द्रप्रभने विश्वासकरके प्रहस्तसे कहा कि शीघ्रही शाकल मे वरुणसेनाको लेकर काची में आओ मै भी वहीं आताहूं इसप्रकार उसे भेजकर दूसरे दिन राजा चन्द्रप्रभ सूर्य्यप्रभ रम्भ वीरभट तथा अन्य परिकरको लेकर विमानपर चढकर काञ्ची नगरी को गया अनेक प्रकार के रत्नों से जटित गुणों से गुफित पृथ्वी की काञ्ची के समान काञ्चीपुरी में राजा कुम्भीर ने उसे राजमन्दिर में लेजाकर सूर्य्यप्रभ के साथ अपनी कन्या का विवाह करदिया और बहुतसा धन जामाता तथा अपनी कन्याको दिया १०८ विवाहके उपरान्त भोजन करके जब सब लोग सुखपूर्वक बैठे तब प्रहस्त ने सबके आगे चन्द्रप्रभ से कहा कि हे स्वामी मैं घूमताघूमता श्रीकण्ठदेश मे गया था वहां किसी प्रसंगसे मिलेहुए राजा कान्तिसेन ने मुझसे कहा था कि सूर्य्यप्रभ मेरी कान्तिमती नाम कन्याको हरलेगयाहै वह यहां आवे तो मैं अपनी कन्याका विवाह उसके साथ करदूं नहीं तो स्नेह मे

मोहितहोकर मैं अपना शरीर त्यागदूगा उसके यह वचन आज मैंने प्रसंगपाकर आप से कहे हैं प्रह स्तके यह वचन सुनकर राजा ने उससे कहा कि तुम शाकलमें कान्तिमती को लेकर राजा कान्ति सेन के पास जाओ मैंभी सबको लेकर आताहू राजा के यह वचन सुनकर प्रहस्त शाकल में जाकर कान्तिमती को लेकर राजा कान्तिसेन के पास गया और प्रातःकाल राजा चन्द्रप्रभ, सूर्य्यप्रभ तथा कुमीरादिक सम्पूर्ण परिकरको लेकर आकाशगामी विमान पर चढकर श्रीकण्ठदेश में पहुँचा वहा राजा कान्तिसेन ने आगे आकर सबको पुरी मे लेजाकर सूर्य्यप्रभ के साथ अपनी कान्तिमती का विवाहकरदिया और इन पिता पुत्रो को अपरमित आश्चर्य्यकारी रत्न दिये तदनन्तर भोजनादि करके सबलोगो के सुखपूर्वक बैठनेपर कौशाम्बी नगरी के राजा का दूत आकर बोला कि राजा जनमेजय ने आपलोगो से यह कहा है कि मेरी परपुष्टानाम कन्याको कोई हरलेगया था आज मुझे मालूम हुआ है कि उसे सूर्य्यप्रभ लेगयाहै तो वह उसको साथ लेकर निर्भयहोकर मेरे यहा आवे मैं परपुष्टा के बिवाह का आचार करके उसे विदाकरूगा नही तो तुम हमारे शत्रु और हम तुम्हारे शत्रु इसप्रकार अपने स्वामी के वचन कहकर दूत के चुपहोजानेपर चन्द्रप्रभ ने एकान्त में सम्पूर्ण राजा तथा मन्त्रियो से कहा कि इसप्रकार अभिमानयुक्त वचन कहनेवाले राजा जनमेजय के यहा जाना कैसे योग्य है यह सुनकर सिद्धार्थनाम मन्त्री बोला कि हे स्वामी इसमे कुछ अनुचित नहीं है उसे ऐसाकहना योग्यही है राजा जनमेजय महादानी महापण्डित महा शूर कुलीन तथा अश्वमेध यज्ञकाकरनेवाला है वह कभी किसी से हारा नहीं है इससे उसके इस यथार्थ वचन मे अनुचितही क्या है और जो उसने शत्रुताका नाम लियाहै सो इसमें कुछ छन्दका कारण है इससे उसके यहा अवश्य जानाचाहिये परन्तु यद्यपि वह राजा सत्यसन्ध है तथापि उसकी चित्तकी वृत्तिजानने के लिये प्रथम किसी को भेजदीजिये सिद्धार्थ के यह वचन सुनकर सबलोग बोले कि बहुतठीक है तब चन्द्रप्रभ ने दूतका सत्कारकरके प्रहस्त को जनमेजय के यहा भेजा प्रहस्त ने कौशाम्बी मे जाकर राजा जनमेजय से वार्त्तालाप करके उसकी चित्तवृत्ति जानली और उससे एक लेख लिखवाकर राजा चन्द्रप्रभ को लाकरदिया लेख को देखकर प्रसन्नहोके चन्द्रप्रभ ने प्रहस्तकोही शाकल से परपुष्टा को लेकर कौशाम्बी जानेकी आज्ञादी प्रहस्त के चलेजानेपर दूसरे दिन सूर्य्यप्रभ कान्तिमेना तथा सम्पूर्ण परिकर को लेकर विमान पर चढके राजा चन्द्रप्रभ कौशाम्बी में पहुँचा वहा राजा जनमेजय ने नम्रतापूर्वक अगमानी आदि से सबका सत्कारकरके अपनी कन्याका विवाह सूर्य्यप्रभ के साथ करदिया और पाच हजार हाथी एक लाख श्रेष्ठ घोडे और रत्न सुवर्ण वस्त्र कपूर तथा अगर से भरेहुए पाच हजार ऊंट दिये और ब्राह्मणों का तथा सब राजा लोगों का पूजनकरके इतना उत्सव किया कि जिस्मे सम्पूर्णनगर नृत्य तथा वाद्यमय ज्ञातहोनेलगा १२२ उससमय अकस्मात् आकाश पीतवर्ण होगया उससे यह सूचित होताथा कि मानों अभी आकाश रुधिरसे रक्तवर्ण होना चाहताहै दिशाओ में भयंकर शब्दहोनेलगे मानो शत्रुओं की सेनाको देखकर वह डरगई और बडी प्रचण्ड वायु चलनेलगी मानो देवतालोगों के साथ युद्ध करने के लिये पृथ्वी से

मनुष्योंको ऊपर फेंकना चाहती थी उसी क्षणमें विद्याधरोंकी बड़ी सेना आकाशमें दिखाईदी उनकी कान्तिसे सम्पूर्ण दिशायें देदीप्यमानहोकर उनके गम्भीर शब्दोंसे पूर्णहोगई उस सेनाके बीचमें एक बड़ा सुन्दर विद्याधर कुमार सूर्य्यप्रभ आदिकोंको दिखाई दिया उससमय उस कुमारके आगे खड़ेहोकर विद्याधरोंका बन्दी उच्चस्वरसे बोला कि यह आषाढेश्वरका पुत्र दामोदरनाम युवराजहै हे पृथ्वीके रहनेवाले मनुष्य सूर्य्यप्रभ इसके पैरोंपर आकर गिर हे जनमेजय तू भी आकर इसे प्रणामकर तूने अपनी कन्या अयोग्य पुरुषको देदी है इससे इसका सेवनकर नहीं तो यह तेरे अपराधको नहीं क्षमा करेगा बन्दी के यह वचन सुनकर और उनकी सेनाको देखकर सूर्य्यप्रभ अपने खड्ग तथा ढालको लेकर आकाशको चलागया उसकेपीछे प्रहस्त प्रभास भास सिद्धार्थ प्रज्ञाढ्य, सर्वदमन, वीतभीति, और शुभकर यह सब मन्त्री अपने २ शस्त्रलेकर विद्याओंके प्रभावसे आकाशमें चलेगये और उनके साथ विद्याधरोंका युद्धहोनेलगा और सूर्य्यप्रभ खड्गसे शत्रुओंको मारताहुआ और उनके शस्त्रोंको अपनी ढालपर रोकताहुआ दामोदरकी ओरचला दामोदरके साथ तो लाखोंपुरुषथे और सूर्य्यप्रभकेसाथ आठही थे परन्तु उन लाखोंको युद्धमें वह आठो अपने समानही मालूमहुए शूरोंके शरीर में लगतेहुए रुधिरसे रक्तखड्ग यमराजकी दृष्टिके समान शोभितहुए युद्धमें मरेहुए विद्याधर भयसे मानों शरणके लिये पृथ्वीपर चन्द्रप्रभके आगे गिरने लगे उससमय सूर्य्यप्रभ शत्रुओं को मारकर सिंदूरके समान रुधिरसे आकाशको रक्तवर्ण करके सूर्य्य के समान अत्यन्त शोभित होताहुआ दामोदर के साथ जाके लड़ने लगा और अपनी खड्गसे उसकी ढालको काटके उसे पृथ्वी में गेरकर जैसेही सूर्य्यप्रभने उसका शिरकाटना चाहा वैसेही विष्णुभगवान्ने आकाश में आकर हुंकारशब्द किया हुंकारको सुनके और विष्णुभगवान्के दर्शन करके उसने विष्णुभगवान्के गौरवसे दामोदर को छोड़दिया उसेबचाकर और उसको अपने साथलेकर विष्णुभगवान् अन्तर्द्धान होगये ठीकहै विष्णुभगवान् अपने भक्तकी सदैव सर्वत्र रक्षाकरते हैं तब दामोदरकी सेनातो इधर उधर भागगई और सूर्य्यप्रभ आकाश से उतरकर अपने पिताकेपास आया मन्त्रियों समेत सूर्य्यप्रभको शत्रुओं को जीतकर आकाश से आया देखकर चन्द्रप्रभ तथा अन्य राजालोग उसपर अत्यन्त प्रसन्न होकर उसकी प्रशंसा करनेलगे तदनन्तर प्रसन्नता पूर्वक बैठेहुए सब लोगों के पास राजा सुभटके दूतने आकर चन्द्रप्रभ के आगे पत्ररखदिया उस लेखको सिद्धार्थने सभामें बांचा उसमें लिखाथा कि कौकण देशसे राजासुभट आदर पूर्वक उन्नत वंशोंके मौक्तिकमणि श्रीमान् राजाचन्द्रप्रभसे यह विज्ञापन करताहै कि मेरी कन्याको रात्रिके समय कोई हरलेगयाथा मैंने सुनाहै कि वह आपकाही पुत्रथा इससे मुझे बड़ी प्रसन्नताहुई है सो आपकृपा करके सूर्य्यप्रभको साथ लेकर मेरे यहां भी आइये मैं यहां परलोकसे मानों लौटिहुई अपनी कन्याको देवूं और उसका विवाह आपके पुत्रसेकरूं इस पत्रको सुनकर राजाचन्द्रप्रभने दूतका बड़ा सत्कार किया और प्रहस्तसे कहा कि उस शाकलसे चन्द्रिकावतीको लेकर कौकण देशमें जाओ मैं भी वहीं आताहूं प्रातःकाल राजाचन्द्रप्रभ सूर्य्यप्रभ आदिकोंको साथ लेकर उसी विमानपर बैठकर कौकण

मोहितहोकर मैं अपना शरीर त्यागदूंगा उसके यह वचन आज मैंने प्रसंगपाकर आप से कहे हैं प्रह
स्तके यह वचन सुनकर राजा ने उससे कहा कि तुम शाकलमें कान्तिमती को लेकर राजा कान्ति-
सेन के पास जाओ मैंभी सबको लेकर आताहूं राजा के यह वचन सुनकर प्रहस्त शाकल में जाकर
कान्तिमती को लेकर राजा कान्तिसेन के पास गया और प्रातःकाल राजा चन्द्रप्रभ, सूर्य्यप्रभ तथा
कुम्भीरादिक सम्पूर्ण परिकरको लेकर आकाशगामी विमान पर चढकर श्रीकण्ठदेश में पहुँचा वहां
राजा कान्तिसेन ने आगे आकर सबको पुरी में लेजाकर सूर्य्यप्रभ के साथ अपनी कान्तिमती का
विवाहकरदिया और इन पिता पुत्रों को अपरमित आश्चर्य्यकारी रत्न दिये तदनन्तर भोजनादि करके
सबलोगों के सुखपूर्व्वक बैठनेपर कौशाम्बी नगरी के राजा का दूत आकर बोला कि राजा जनमेजय ने
आपलोगों से यह कहा है कि मेरी परपुष्टानाम कन्याको कोई हरलेगया था आज मुझे मालूम हुआ है
कि उसे सूर्य्यप्रभ लेगयाहै तो वह उसको साथ लेकर निर्भयहोकर मेरे यहां आवे मैं परपुष्टा के बिवाह
का आचार करके उसे बिदाकरूंगा नहीं तो तुम हमारे शत्रु और हम तुम्हारे शत्रु इसप्रकार अपने
स्वामी के वचन कहकर दूत के चुपहोजानेपर चन्द्रप्रभ ने एकान्त में सम्पूर्ण राजा तथा मन्त्रियों से कहा
कि इसप्रकार अभिमानयुक्त वचन कहनेवाले राजा जनमेजय के यहां जाना कैसे योग्य है यह सुनकर
सिद्धार्थनाम मन्त्री बोला कि हे स्वामी इसमें कुछ अनुचित नहीं है उसे ऐसाकहना योग्यही है राजा
जनमेजय महादानी महापण्डित महा शूर कुलीन तथा अश्वमेध यज्ञकाकरनेवाला है वह कभी किसी
से हारा नहीं है इससे उसके इस यथार्थ वचन में अनुचितही क्या है और जो उसने शत्रुताका नाम
लियाहै सो इसमें कुछ इन्द्रका कारण है इससे उसके यहां अवश्य जानाचाहिये परन्तु यद्यपि वह
राजा सत्यसन्ध है तथापि उसकी चित्तकी वृत्तिजानने के लिये प्रथम किसी को भेजदीजिये सिद्धार्थ के
यह वचन सुनकर सबलोग बोले कि बहुतठीक है तब चन्द्रप्रभ ने दूतका सत्कारकरके प्रहस्त को जनमे-
जय के यहां भेजा प्रहस्त ने कौशाम्बी में जाकर राजा जनमेजय से वार्त्तालाप करके उसकी चित्तवृत्ति
जानली और उससे एक लेख लिखवाकर राजा चन्द्रप्रभ को लाकरदिया लेख को देखकर प्रसन्नहोके
चन्द्रप्रभ ने प्रहस्तकोही शाकल से परपुष्टा को लेकर कौशाम्बी जानेकी आज्ञादी प्रहस्त के चलेजानेपर
दूसरे दिन सूर्य्यप्रभ कान्तिसेना तथा सम्पूर्ण परिकर को लेकर विमानपर चढ़के राजा चन्द्रप्रभ कौशा
म्बी में पहुँचा वहां राजा जनमेजय ने नम्रतापूर्व्वक अगमानी आदि से सबका सत्कारकरके अपनी
कन्याका विवाह सूर्य्यप्रभ के साथ करदिया और पांच हज़ार हाथी एक लाख श्रेष्ठ घोडे और रत्न
सुवर्ण वस्त्र कपूर तथा अगर से भरेहुए पांच हज़ार ऊंट दिये और ब्राह्मणों का तथा सब राजा लोगों
का पूजनकरके इतना उत्सव किया कि जिस्मे सम्पूर्णनगर नृत्य तथा वाद्यमय ज्ञातहोनेलगा १२३
उससमय अकस्मात् आकाश पीतवर्ण होगया उसमे यह सूचित होताथा कि मानों अभी आकाश
रुधिरसे रक्तवर्ण होना चाहताहै दिशाओं में भयङ्कर शब्दहोनेलगे मानों शत्रुओं की सेनाको देखकर
वह डरगई और बडी प्रचण्ड वायु चलनेलगी मानो देवलोगों के साथ युद्ध करने के लिये पृथ्वी से

मनुष्योंको ऊपर फेंकना चाहती थी उसी क्षणमें विद्याधरोंकी बड़ी सेना आकाशमें दिखाईदी उनकी कान्तिसे सम्पूर्ण दिशायें देदीप्यमानहोकर उनके गम्भीर शब्दोंसे पूर्णहोगई उस सेनाके बीचमें एक बड़ा सुन्दर विद्याधर कुमार सूर्य्यप्रभ आदिकोंको दिखाई दिया उससमय उस कुमारके आगे खड़ेहो कर विद्याधरोंका वन्दी उच्चस्वरसे बोला कि यह आषाढेश्वरका पुत्र दामोदरनाम युवराजहै हे पृथ्वीके रहनेवाले मनुष्य सूर्य्यप्रभ इसके पैरोंपर आकर गिर हे जनमेजय तू भी आकर इसे प्रणामकर तूने अपनी कन्या अयोग्य पुरुषको देदी है इससे इसका सेवनकर नहीं तो यह तेरे अपराधको नहीं क्षमा करेगा वन्दी के यह वचन सुनकर और उनकी सेनाको देखकर सूर्य्यप्रभ अपने खड्ग तथा ढालको लेकर आकाशको चलागया उसकेपीछे प्रहस्त प्रभास भास सिद्धार्थ प्रज्ञाढ्य, सर्वदमन, वीतभीति, और शुभकर यह सब मन्त्री अपने २ शस्त्रलेकर विद्याओंके प्रभावसे आकाशमें चलेगये और उनके साथ विद्याधरोंका युद्धहोनेलगा और सूर्य्यप्रभ खड्गसे शत्रुओंको मारताहुआ और उनके शस्त्रोंको अपनी ढालपर रोकताहुआ दामोदरकी ओरचला दामोदरके साथ तो लाखोंपुरुषथे और सूर्य्यप्रभकेसाथ आठही थे परन्तु उन लाखोंको युद्धमें वह आठो अपने समानही मालूमहुए शूरोंके शरीर में लगतेहुए रुधिर से रक्तखड्ग यमराजकी दृष्टिके समान शोभितहुए युद्धमें मरेहुए विद्याधर भयसे मानों शरणके लिये पृथ्वीपर चन्द्रप्रभके आगे गिरने लगे उससमय सूर्य्यप्रभ शत्रुओं को मारकर सिंदूरके समान रुधिरसे आकाशको रक्तवर्ण करके सूर्य्य के समान अत्यन्त शोभित होताहुआ दामोदर के साथ जाके लड़ने लगा और अपनी खड्गसे उसकी ढालको काटके उसे पृथ्वी में गेरकर जैसेही सूर्य्यप्रभने उसका शिरकाटना चाहा वैसेही विष्णुभगवान्ने आकाश में आकर हुंकारशब्द किया हुंकारको सुनके और विष्णुभगवान्के दर्शन करके उसने विष्णुभगवान्के गौरवसे दामोदर को छोड़दिया उसेबचाकर और उसको अपने साथलेकर विष्णुभगवान् अन्तर्द्धान होगये ठीकहै विष्णुभगवान् अपने भक्तकी सदैव सर्वत्र रक्षाकरते हैं तब दामोदरकी सेनातो इधर उधर भागगई और सूर्य्यप्रभ आकाश से उतरकर अपने पिताकेपास आया मन्त्रियों समेत सूर्य्यप्रभको शत्रुओं को जीतकर आकाश से आया देखकर चन्द्रप्रभ तथा अन्य राजालोग उसपर अत्यन्त प्रसन्न होकर उसकी प्रशंसा करनेलगे तदनन्तर प्रसन्नता पूर्व्वक बैठेहुए सब लोगों के पास राजा सुभटके दूतने आकर चन्द्रप्रभ के आगे पत्ररखदिया उस लेखको सिद्धार्थने सभामें बांचा उसमें लिखाथा कि कोंकण देशसे राजासुभट आदर पूर्वक उन्नत चरणोंके मौक्तिकमणि श्रीमान् राजाचन्द्रप्रभसे यह विज्ञापन करताहै कि मेरी कन्याको रात्रिके समय कोई हरलेगयाथा मैंने सुनाहै कि वह आपकाही पुत्रथा इससे मुझे बड़ी प्रसन्नताहुई है सो आपकृपा करके सूर्य्यप्रभको साथ लेकर मेरे यहां भी आइये मैं वहां परलोकमें मानों लौटीहुई अपनी कन्याको देकर और उसका विवाह आपके पुत्रसेकरूं इस पत्रको सुनकर राजाचन्द्रप्रभने दूतका बड़ा सत्कार किया और प्रहस्तसे कहा कि तुम शीघ्रतासे चक्रवर्तीको लेकर कोंकण देशमें जाओ मैं भी वहीं आताहूं प्रातःकाल राजाचन्द्रप्रभ सूर्य्यप्रभ आदिकोंको साथ लेकर उसी विमानपर बैठकर कोंकण

देशमें पहुचा वहा राजासुभटने उन सबका बडा सत्कार करके सूर्य्यप्रभके साथ अपनी कन्याका विवाहोत्सव किया और इतने रत्नादिक चन्द्रिकावतीको दिये जिन्हें देखकर वीरभटादिक सब राजालज्जितहोगये इसके उपरान्त लावाणकसे राजापौरवके दूतने आकर चन्द्रप्रभसे अपने स्वामीके यह वचन कहे कि सूर्य्यप्रभ मेरी सुलोचनानाम कन्याको हरलेगयाहै इसमे मुझे कोई सन्ताप नहीं है अव आप सूर्य्यप्रभको मेरी कन्यासमेत साथलेकर मेरे यहा आइये मैं विवाहका आचार और उत्सव करू दूतके यह वचन सुनकर चन्द्रप्रभने उसका बडा सत्कारकिया और प्रहस्तको शाकलसे सुलोचनाको लेकर लावाणकजाने की आज्ञादी तदनन्तर चन्द्रादिक सम्पूर्णलोग विमानपर चढकर लावाणक देशकोगये वहा राजापौरवने प्रहस्तके साथ आईहुई सुलोचनाका सूर्य्यप्रभके साथ विवाहोत्सव किया और वहुतसे रत्न उन दोनोको दिये इसप्रकार विवाहोत्सवके पीछे उन सम्पूर्ण लोगोंके सुखपूर्व्वक वहा रहनेपर चीन देशके स्वामी राजासुरोहकादूत आकर राजाचन्द्रप्रभसे कहनेलगा कि सूर्य्यप्रभ मेरी विद्युन्मालानाम कन्याको हरलेगया है इससे आपलोग उस कन्यासमेत सूर्य्यप्रभको साथलेकर यहा आइये मैं अपनी कन्याका विवाहोत्सव करूगा दूतके यह वचन सुनके राजाचन्द्रप्रभने उसका वडा सत्कार करके प्रहस्तको विद्युन्मालालेकर चीनदेशमे जानेकी आज्ञादी दूसरे दिन राजाचन्द्रप्रभ सूर्य्यप्रभादिकोको साथलेकर उसी विमानमे बैठके चीनदेशको गया वहा राजासुरोहने इन सब को अपने परकोटेमें लेजाकर अपनी कन्याका विवाहोत्सव किया और असख्य सुवर्ण हाथी घोडे रत्न तथा चीनके अमूल्यवस्त्र दिये सुरोहसे अत्यन्त आदर कियेगये चन्द्रप्रभादि सव लोग वहा सुखपूर्व्वक कई दिन रहे और सूर्य्यप्रभभी घनयौवनसे युक्तहोकर विद्युन्मालाके साथ वर्षाकालके समान शोभित होताहुआ और अपनी सम्पूर्णस्त्रियोंके साथ विहारकरताहुआ अपने श्वशुरके ऐश्वर्य्यको भोगताहुआरहा कुछ दिनों के उपरान्त मन्त्रियों से सलाहकरके राजाचन्द्रप्रभ अपने पुत्रवधू मन्त्री तथापरिकरको साथलेकर विमानपर चढकरचला और वीरभटादिक सव राजालोगोंको वहीं से अपने २ देश जानेकेलिये विदाकरदिया फिर सूर्य्यप्रभ सहित राजाचन्द्रप्रभने शाकलमें पहुचकर अत्यन्त उत्सव करके कहीं नृत्य कहीं सगीत कहीं पान क्रीडा कहीं स्त्रियोका शृगारकरना और कहीं यथेष्टधनपाकर प्रसन्नहुए वन्दियों की प्रशसायुक्त कोलाहल इत्यादिक आनन्द में शाकल देशको मग्न किया तदनन्तर सूर्यप्रभ अपने २ पिताओंके यहा स्थित अपनी प्रियाओंको हाथी घोडे रथ सुवर्ण रत्न तथा ऊट आदिक असख्य ऐश्वर्य्य समेत शाकलमें लेआया उस ऐश्वर्य्यको देखकर सब प्रजाको निश्चयहोताथा कि यह सब दिग्विजयकर आयाहै उससमय वहुतसेवसु (धन और अष्टवसु) तथा निधान (खान) से युक्त वह शाकल नगर उस महाभोगी (वडा सर्प और वडा भोगकरनेवाला) सूर्यप्रभको पाकर स्वर्ग अलका तथा पाताल इन तीनों को मिलाकर वनायागयाहुआसा शोभितहुआ इसप्रकार विवाहों के होजानेपर सूर्यप्रभ मदनसेना आदिक अपनी सम्पूर्ण स्त्रियोंके साथ यथेष्टसुख अनुभवकरताहुआ फिर आनेको कह जानेवाले मयदैत्यके आनेकी बाट देखताहुआ अपने मन्त्रियों समेत सुखपूर्व्वक रहा १८७॥

इसके उपरान्त एकसमय सूर्य्यप्रभ तथा सम्पूर्णमन्त्रियोंसमेत राजा चन्द्रप्रभ सभामें बैठहुआ सिद्धार्थ की कहीहुई कथाकेप्रसंगसे मयासुरकास्मरण करनेलगा उससमय अकस्मात्सभाके बीचहीमें पृथ्वी फट गई और उसमेंसे प्रथम तो शब्दसहित सुगन्धित वायुनिकली और पीछेसे मयासुर निकलआया उसके कृष्णवर्ण ऊंचेशिरमें सींगोंपर तथा केशोंपर दिव्यऔषधी देदीप्यमानहोरहीथीं और वह रक्तवर्ण के वस्त्र पहरेहुएथा इससे रात्रिमें पर्व्वतके समान उसकी शोभाहो रही थी मयासुर राजा चन्द्रप्रभ से योग्यपूजन को ग्रहणकरके रत्नके सिंहासनपर बैठकर बोला कि तुमलोग पृथ्वीके ऐश्वर्य तो भोगचुके अवदूसरा समय आगयाहै उसके लिये उद्योगकरो दूतोंको भेजकर अपने सम्बन्धी तथा बान्धव राजालोगोंको बुलवाओ तब मैं तुम्हें सुमेरुनाम विद्याधरों के स्वामीके पासलेचलूं उससे मिलकर श्रुतशर्म्मानाम विद्याधर को जीतलेंगे तब विद्याधरोंकाराज्य मिलेगा विद्याधरोंका राजासुमेरु हमलोगोंका सहायकहै क्योंकि श्री शिवजी ने उसे प्रथमही यह आज्ञादेरक्खी है कि तुम अपनी कन्याकी रक्षाकरो इसका विवाहसूर्य्यप्रभ से करना मयासुरके यह वचन सुनकर चन्द्रप्रभ ने प्रहस्तादिक आकाशमें चलनेवाले मन्त्रियोंको सम्बन्धीतथा बान्धवोंके पास बुलानेकेलिये भेजा और सूर्य्यप्रभ ने अपने सपूर्ण मंत्री तथा रानियोंको जिनको कि प्रथम विद्यानहीं बताईथीं बतादी उससमय आकाशसे नारदमुनि अपनी प्रभासे दिशाओं को प्रकाशित करते हुए उतरे और अर्घादिक पूजन ग्रहण करके बोले कि इन्द्रने मुझे तुम्हारे पास भेजाहै और यहकहाहै कि मैंने सुनाहै कि आपलोग श्रीशिवजीकी आज्ञासे मयासुर के साथ मित्रताकरके अज्ञानता से मोहितहोके इसमनुष्य सूर्य्यप्रभ के लिये सपूर्ण विद्याधरोंके [illegible]थों के चक्रवर्ती का अधिकारसिद्ध करना चाहतेहो यह अनुचितहै मैंने यह अधिकार विद्याधरोंके कुलचन्द्र श्रुतशर्म्माको दियाहै क्योंकि यह उसके पुरखों से चलाआताहै हमसेविरुद्ध होकर औरधर्मको छोडकर तुम जो ऐसाकरोगे तो तुम्हारा नाशहोजायगा पहले जब तुम रुद्र यज्ञकरतेथे तब मैंने तुमसेकहाथा कि अश्वमेधयज्ञकरके अन्य यज्ञकरो परन्तु तुमने मेरा वह कहना तबभी नहींस्वीकार कियाथा इससे सपूर्ण देवतालोगोंको तिरस्कारकरके केवल शिवकी ही प्रत्याशासे जो अभिमानकरते हो इसमें तुम्हारा कल्याण नहीं है इन्द्रके इससन्देशको सुनकर मयासुर हँसकरबोला कि इन्द्रकाकहना उचितनहींहैजो उसने सूर्य्यप्रभ को मनुष्य कहाहै सो सत्यहै परन्तु क्या दामोदर के सग्राम में उसका प्रभाव इन्द्र ने नहीं जाना सत्त्वयुक्त मनुष्यहो सपूर्ण सिद्धियोंके अधिकारी होतेहैं देखोपूर्व्वही राजानहुष आदिकों ने क्या इन्द्रकी पदवी नहींपाई है और जो उसनेकहा कि हमने श्रुतशर्म्माको चक्रवर्त्ती की पदवीदीहै क्योंकि उसके वहपदवी कुलपरम्परासे चलीआती है सोभी उचितनहीं है जहां साक्षात् शिवजी देने वालेहैं वहां अन्यप्रमाण देने की क्या आवश्यकताहै इन्द्रने आपही बड़े भाई हिरण्य[illegible]से इन्द्रपदवी क्यों लेली और जो उसने कहा कि तुमहमसे विरुद्धकरते हो और अधर्म्म करतेहो यहभी मिथ्या है क्योंकि वहआपहीहठसे हमारेस्वार्थमें विरोधकरताहै और हम अपने शत्रुको जीतनाचाहते हैं इसमें अधर्म्मही क्याहै हमनमुनिकी भार्य्याको हरते हैं और न ब्रह्महत्याकरते हैं और जो उसने कहा कि तुमने

देशमे पहुचा वहा राजासुभटने उन सबका बडा सत्कार करके सूर्य्यप्रभके साथ अपनी कन्याका विवाहोत्सव किया और इतने रत्नादिक चन्द्रिकावतीको दिये जिन्हें देखकर वीरभटादिक सब राजालज्जितहोगये इसके उपरान्त लावाणकसे राजापौरवके दूतने आकर चन्द्रप्रभसे अपने स्वामीके यह वचन कहे कि सूर्य्यप्रभ मेरी सुलोचनानाम कन्याको हरलेगयाहै इसमे मुझे कोई सन्ताप नहीं है अब आप सूर्य्यप्रभको मेरी कन्यासमेत साथलेकर मेरे यहा आइये मैं विवाहका आचार और उत्सव करू दूतके यह वचन सुनकर चन्द्रप्रभने उसका बडा सत्कारकिया और प्रहस्तको शाकलसे सुलोचनाको लेकर लावाणकजाने की आज्ञादी तदनन्तर चन्द्रादिक सम्पूर्णलोग विमानपर चढकर लावाणक देशकोगये वहा राजापौरवने प्रहस्तके साथ आईहुई सुलोचनाका सूर्य्यप्रभके साथ विवाहोत्सव किया और बहुतसे रत्न उन दोनोंको दिये इसप्रकार विवाहोत्सवके पीछे उन सम्पूर्ण लोगोंके सुखपूर्व्वक वहा रहनेपर चीन देशके स्वामी राजासुरोहकादूत आकर राजाचन्द्रप्रभसे कहनेलगा कि सूर्य्यप्रभ मेरी विद्युन्मालानाम कन्याको हरलेगया है इससे आपलोग उस कन्यासमेत सूर्य्यप्रभको साथलेकर यहा आइये मैं अपनी कन्याका विवाहोत्सव करूगा दूतके यह वचन सुनके राजाचन्द्रप्रभने उसका बडा सत्कार करके प्रहस्तको विद्युन्मालालेकर चीनदेशमे जानेकी आज्ञादी दूसरे दिन राजाचन्द्रप्रभ सूर्य्यप्रभादिकोंको साथलेकर उसी विमानमें बैठके चीनदेशको गया वहा राजासुरोहने इन सब को अपने परकोटेमें लेजाकर अपनी कन्याका विवाहोत्सव किया और असंख्य सुवर्ण हाथी घोडे रत्न तथा चीनके अमूल्यवस्त्र दिये सुरोहसे अत्यन्त आदर कियेगये चन्द्रप्रभादि-सब लोग वहा सुखपूर्व्वक कई दिन रहे और सूर्य्यप्रभभी घनयौवनसे युक्तहोकर विद्युन्मालाके साथ वर्षाकालके समान शोभित होताहुआ और अपनी सम्पूर्णस्त्रियोके साथ विहारकरताहुआ अपने श्वशुरके ऐश्वर्य्यको भोगताहुआरहा कुछ दिनों के उपरान्त मन्त्रियों से सलाहकरके राजाचन्द्रप्रभ अपने पुत्रवधू मन्त्री तथापरिकरको साथलेकर विमानपर चढकरचला और वीरभटादिक सब राजालोगोंको वहीं से अपने २ देश जानेकेलिये बिदाकरदिया फिर सूर्य्यप्रभ सहित राजाचन्द्रप्रभने शाकलमें पहुचकर अत्यन्त उत्सव करके कहीं नृत्य कहीं सगीत कहीं पान क्रीडा कहीं स्त्रियोका शृगारकरना और कहीं यथेष्टधनपाकर प्रसन्नहुए वन्दियो की प्रशसायुक्त कोलाहल इत्यादिक आनन्द में शाकल देशको मग्न किया तदनन्तर सूर्यप्रभ अपने २ पिताओं के यहा स्थित अपनी प्रियाओंको हाथी घोडे रथ सुवर्ण रत्न तथा ऊंट आदिक असख्य ऐश्वर्य्य समेत शाकलमें लेआया उस ऐश्वर्य्यको देखकर सब प्रजाको निश्चयहोगया कि यह सब दिग्विजयकर आयाहै उससमय बहुतसेवसु (धन और अष्टवसु) तथा निधान (खान) से युक्त वह शाकल नगर उस महाभोगी (बडा सर्प और बडा भोगकरनेवाला) सूर्यप्रभको पाकर स्वर्ग अलका तथा पाताल इन तीनों को मिलाकर बनायागयाहुआसा शोभितहुआ इसप्रकार विवाहों केहोजानेपर सूर्यप्रभ मदनसेना आदिक अपनी सम्पूर्ण स्त्रियोंके साथ यथेष्टसुख अनुभवकरताहुआ फिर आनेको कह जानेवाले मयदैत्यकेआनेकी बाट देखताहुआ अपने मन्त्रियों समेत सुखपूर्व्वक रहा १८७॥ इतिश्रीक [illegible] ॥

उत्पन्नहुआ मनुष्य पहले सबको भूल जाताहै तब हमको इससे क्या और इसे हमलोगों से क्या लाभ होगा, सिद्धार्थ के यह वचनसुनकर मयासुरने कहा कि योगकी युक्ति से स्वतन्त्र होकर अपने पूर्व्व शरीरमें प्रवेश करतेहुए इसको तुमलोग भी वहा चलकर देखना यह तुमको भूलेगा नहीं इसमें यह कारणहै कि जो अस्वतन्त्र होके मरकर गर्भ से उत्पन्नहोताहै वह मरणादि क्लेशों से सब भूलजाता है और जो स्वतन्त्र होकर योगकी युक्ति से अन्तःकरण तथा इन्द्रियों में प्रवेशकरके द्वितीय शरीर मे जाताहै, उसके मन, तथा बुद्धिमें कोई विकार नहीं होता वह एक घरसे दूसरे घरमें गयेहुए के समान कुछ भी नहीं भूलताहै इससे तुम सन्देह न करो इसे वृद्धावस्था और रोगोंसे रहित दिव्य शरीर प्राप्त होगा तुम सबलोगभी पूर्वजन्म के दैत्यहो पातालमें चलकर अमृत पीने से तुम्हारे भी शरीर नीरोग तथा दिव्य होजायँगे मयके यह वचनसुनकर सबको विश्वास होगया और सबके सन्देह दूरहोगये ६४ दूसरे दिन मय के कहने से राजा चन्द्रप्रभ अपने सम्पूर्ण परिकर समेत चन्द्रभागा तथा इरावतीनदी के सगमपर गया वहा सम्पूर्ण राजालोगों को तटपर बैठालकर और उन्हीं को सूर्य्यप्रभकी सब रनिया सौंपकर जलमें मयके बतायेहुए बिरमें चन्द्रप्रभ ने सूर्य्यप्रभ कीर्त्तिमती तथा सिद्धार्थ आदिक मन्त्रियों समेत प्रवेश किया उस बिवर के भीतर कुछदूर चलकर एक देवमन्दिर उन्हें दिखाई दिया और उसमें वह सबलोगगये इस बीच में जो राजालोग बाहर रहगये थे उनके पास बहुतसी विद्याधरों की सेना ने आकर माया से, उन्हें स्तंभितकरदिया और सूर्य्यप्रभकी सम्पूर्ण रानिया हरलीनी उससमय यह आकाशवाणीहुई कि अरे पापी श्रुतशर्म्मा जो चक्रवर्त्ती की इनस्त्रियों का तू स्पर्शभी करेगा तो सेना समेत तेरी मृत्युहोजायगी इससे माताके समान गौरवसे इनकी रक्षाकरना अभी तुझे मारकर जो मैंने यह नहीं छुडालीनी इसमें कोईकारणहै इससे कुछकाल यह तेरेही यहारहें इस आकाशवाणी को सुन-कर सम्पूर्ण विद्याधर अन्तर्द्धान होगये और वीर भटादिक राजा कन्याओं को हरीहुई देखकर परस्पर युद्धकरके शरीरत्याग करनेका विचार करनेलगे उससमय फिर आकाशवाणी हुई कि हे राजालोगो तुम साहस मतकरो इन कन्याओंका कोई बिगाड न होगा यह फिर तुमको मिलजायँगी और तुम्हारा कल्याणहोगा इस आकाशवाणी को सुनकर सम्पूर्ण राजालोग मरनेका उद्योग त्यागकर वहीं उनकी प्रतीक्षा करनेलगे इस बीचमें उस देवमन्दिर में सबकेसाथ बैठेहुए राजा चन्द्रप्रभसे मयासुरने कहा कि हे राजा तुम सावधान होकर सुनो इससमय अन्य शरीर में प्रवेश करनेका बडा श्रेष्ठ योग मे तुमको बताताहू यह कहकर उसने सांख्य तथा योगका उपदेशकिया और योगने अन्यशरीरमें प्रवेशकरने की युक्ति बताकर कहा कि यह वहसिद्धि और ज्ञानहै जिससे स्वतन्त्रता ऐश्वर्य्य तथा अणिमादिकसिद्धिया प्राप्तहोती है इस ऐश्वर्य्य को पाकर मोक्षकी भी अभिलापा नहीं रहती है इसीकेलिये बडे २ ऋषिमुनि जप तप आदिक क्लेशोंको सहते हैं और इसके प्राप्त होनेके पीछे स्वर्गको भी नहींचाहते हैं इसविषय पर मैं तुमको एककथा सुनाताहू कि व्यतीतहुए कल्पमें कालनाम एक ब्राह्मणथा वह पुष्कर तीर्थपर रात्रि दिन जप करनेलगा उसे जप करते २ दोसौ दिव्य वर्ष व्यतीतहुए तब उसके शिरमें अनड महा-

अश्वमेध यज्ञ नहीं किया और देवतालोगों का तिरस्कार किया यहभी कहना उनका ठीकनहीं है क्योंकि रुद्रयज्ञकरने पर अन्ययज्ञोसे क्याप्रयोजनहै और सपूर्ण देवताओंके स्वामी श्रीशिवजी के पूजनमे किस देवताका पूजननहीं होगया और जो उसने कहा कि केवल श्रीशिवजीकी प्रत्याशासे तुम्हारा कल्याण नहीं होगा यहभी महाही अनुचितहै जिसकार्य्य में साक्षात् श्रीशिवजीउद्यतहैं उसमें अन्य देवताओका क्या प्रयोजनहै क्या सूर्य्य भगवान् के उदयहोनेपर और कोईभी तेज चमकताहै हे नारदजी आप इन्द्रसे यह सब हमारा उत्तर कह दीजिये हम अपने कार्य्यको करतेहैं उनको जैसा उचित समझपडे सो करें मयासुर के यहवचन सुनकर नारदमुनि प्रतिसंदेश लेकर इन्द्रके पास चले गये नारदके चलेजानेपर इन्द्रके सदेशे से कुछ सदेह युक्त राजाचन्द्रप्रभ को देखकर मयासुर बोला कि इन्द्रसे आपलोगोको भयनहीकरना चाहिये वहहमारे द्वेषसे सपूर्ण देवतालोगों को साथ में लाकर युद्ध में श्रुतशर्म्मा का पक्षकरेगा और आपके पक्षमे प्रह्लादकी आज्ञा से असख्य दैत्य दानव होंगे और हमारे ऊपर श्री शिवजी कृपाकरेगे इससे तीनो लोको में ऐसा कौनहै जो बिचारा हमारे सन्मुख आवेगा इससे हे वीरलोगो इस कार्य्य मे उद्योग करो मयके यह वचनसुनकर सम्पूर्ण लोग प्रसन्न हो कर उसके कहने से युद्धकेलिये तैयारहोगये इसके उपरान्त मन्त्रियो के सन्देशे से सबबीरभटादि राजा लोग अपनी २ सेनासमेत वहा आये उन सबका यथायोग्य सत्कारकरके सावधान हुए चन्द्रप्रभसेमय दैत्य फिर बोला कि हे राजा आज तुम रुद्रकी महाबलि करो तदनन्तर जो मैं कहूगा सो करना मया सुरके यह वचनसुनकर चन्द्रप्रभने बलिकी सम्पूर्ण सामग्री इकट्ठी करवाई और रात्रिके समयबनमें जाकर मयदैत्यके उपदेश से बलिप्रदान किया और जब राजा भक्तिपूर्व्वक हवन करनेलगा तब सा क्षात् नन्दीगण प्रकटहुआ और राजाके पूजनको ग्रहण करके बोला कि श्रीशिवजी ने कहा है कि हमारी कृपासे तुम सैकडों इन्द्रोमे भी मतडरो सूर्य्यप्रभ अवश्य विद्याधरोका चक्रवर्ती होगा इसप्रकार श्री शिवजीका सन्देशा कहकर और अपना बलिका भागलेकर नदीश्वर अन्तर्द्धान होगया तब राजा चन्द्रप्रभ अपने पुत्रके उदयमे विश्वासयुक्त होकर बलिको समाप्त करके मयसमेत अपने पुरकोगया प्रातःकाल एकान्तमें रानी पुत्र मन्त्री तथा अपने मित्रराजा लोगो समेत बैठेहुए राजा चन्द्रप्रभ से मयने कहा कि हे राजा तुमसे आज मैं एक गुप्तबात कहताहू तुम मेरे पुत्र महाबलवान् सुनीथनाम दैत्य हो और सूर्य्यप्रभ सुमुण्डीकनाम तुम्हारा छोटाभाई है तुम दोनों देवता लोगो के युद्धमे मारेगये थे मैंने तुम्हारा शरीर दिव्य ओषधियों से लिप्तकर रक्खा है इससे बिलमें घुसके पाताल में जाके मेरी बताईहुई युक्तिसे अपने पूर्व शरीरमे प्रवेश करो उस शरीरमे प्रवेश करनेसे तुम्हारा तेजवीर्य्य तथाबल इतना बढेगा जिससे तुम देवता लोगोंको जीतलोगे और सुमुण्डीकका अवतार यह सूर्य्यप्रभ इसी शरीरसे विद्याधरों का चक्रवर्ती होगा मयासुरके यह वचन चन्द्रप्रभने प्रसन्नता पूर्व्वक स्वीकार करलिये तब सिद्धार्थने कहा कि हे दानवोत्तम यह अन्य देहमें प्रविष्टहुआ अथवा मृत्युको प्राप्तहुआ इसकी इस भ्रान्तिको कौन मिटावेगा और यह देहान्तर मे जाकर हम लोगोंको भूलजायगा जैसे मरकर फिर

उत्पन्नहुआ मनुष्य पहले सवको भूल जाताहै तव हमको इससे क्या और इसे हमलोगों से क्या लाभ होगा सिद्धार्थ के यह वचनसुनकर मयासुरने कहा कि योगकी युक्ति से स्वतन्त्र होकर अपने पूर्व्व शरीरमें प्रवेश करतेहुए इसको तुमलोग भी वहा चलकर देखना यह तुमको भूलेगा नहीं इसमें यह कारणहै कि जो अस्वतन्त्र होके मरकर गर्भ से उत्पन्नहोताहै वह मरणादि क्लेशों से सव भूलजाता है और जो स्वतन्त्र होकर योगकी युक्ति से अन्त करण तथा इन्द्रियों में प्रवेशकरके द्वितीय शरीर मे जाताहै उसके मन तथा बुद्धिमें कोई विकार नहीं होता वह एक घरसे दूसरे घरमें गयेहुए के समान कुछ भी नहीं भूलताहै इससे तुम सन्देह न करो इसे वृद्धावस्था और रोगोंसे रहित दिव्य शरीर प्राप्त होगा तुम सवलोगभी पूर्वजन्म के दैत्यहो पातालमें चलकर अमृत पीने से तुम्हारे भी शरीर नीरोग तथा दिव्य होजायँगे मयके यह वचनसुनकर सवको विश्वास होगया और सवके सन्देह दूरहोगये ६४ दूसरे दिन मय के कहने से राजा चन्द्रप्रभ अपने सम्पूर्ण परिकर समेत चन्द्रभागा तथा इरावतीनदी के सगमपर गया वहा सम्पूर्ण राजालोगों को तटपर बैठालकर और उन्हीं को सूर्य्यप्रभकी सव रनिया सौंपकर जलमें मयके वतायेहुए विवरमें चन्द्रप्रभ ने सूर्य्यप्रभ कीर्त्तिमती तथा सिद्धार्थ आदिक मन्त्रियों समेत प्रवेश किया उस विवर के भीतर कुछदूर चलकर एक देवमन्दिर उन्हें दिखाई दिया और उसमे वह सवलोगगये इस वीच मे जो राजालोग वाहर रहगये थे उनके पास वहुतसी विद्याधरों की सेना ने आकर माया से उन्हें स्तभितकरदिया और सूर्य्यप्रभकी सम्पूर्ण रानिया हरलीनी उससमय यह आकाशवाणीहुई कि अरे पापी श्रुतशर्म्मा जो चक्रवर्त्ती की इनस्त्रियों का तू स्पर्शभी करेगा तो सेना समेत तेरी मृत्युहोजायगी इससे माताके समान गौरवसे इनकी रक्षाकरना अभी तुझे मारकर जो मैंने यह नहीं छुडालीनी इसमें कोईकारणहै इससे कुछकाल यह तेरेही यहारहे इस आकाशवाणी को सुनकर सम्पूर्ण विद्याधर अन्तर्द्धान होगये और वीर भटादिक राजा कन्याओं को हरीहुई देखकर परस्पर युद्धकरके शरीरत्याग करनेका विचार करनेलगे उससमय फिर आकाशवाणी हुई कि हे राजालोगो तुम साहस मतकरो इन कन्याओंका कोई विगाड न होगा यह फिर तुमको मिलजायँगी और तुम्हारा कल्याणहोगा इस आकाशवाणी को सुनकर सम्पूर्ण राजालोग मरनेका उद्योग त्यागकर वहीं उनकी प्रतीक्षा करनेलगे इस वीचमें उस देवमन्दिर में सवकेसाथ वैठेहुए राजा चन्द्रप्रभसे मयासुरने कहा कि हे राजा तुम सावधान होकर सुनो इससमय अन्य शरीर में प्रवेश करनेका वडा श्रेष्ठ योग मै तुमको वताताहू यह कहकर उसने साख्य तथा योगका उपदेशकिया और योगसे अन्यशरीरमें प्रवेशकरने की युक्ति वताकर कहा कि यह वहसिद्धि और ज्ञानहै जिससे स्वतन्त्रता ऐश्वर्य्य तथा अणिमादिकसिद्धिया प्राप्तहोती है इस ऐश्वर्य्य को पाकर मोक्षकी भी अभिलाषा नहीं रहतीहै इसीकेलिये वडे २ ऋषिमुनि जप तप आदिक क्लेशोंको सहते है और इसके प्राप्त होनेके पीछे स्वर्गको भी नहींचाहते है इसविषय पर मै तुमको एककथा सुनाताहू कि व्यतीतहुए कल्पमे कालनाम एक ब्राह्मणथा वह पुष्कर तीर्थपर रात्रि दिन जप करनेलगा उसे जप करते २ दोसे दिव्य वर्ष व्यतीतहुए तव उसके शिरसे अखड महा-

तेज निकलनेलगा दशहजार सूर्यके समान उस तेजसे आकाशमें सिद्धादि देवताओंकी गति रुक-गई और तीनों लोक जलनेलगे तब ब्रह्मा तथा इन्द्रादिक देवताओंने उसकेपास आकरकहा कि हे विप्रवर जो तुमको अभीष्ट वरमागनाहोय सो मांगो तुम्हारे तेजसे सबसंसार जल रहाहै देवताओंके यह वचन सुनकर उसनेकहा कि जपके सिवाय मेरा चित्त किसी अन्यमें न लगे यही मुझे चाहिये इस के सिवाय और कुछ मैं नहीं मांगताहूं इतने पर भी जब देवताओं ने बड़ा हठकिया तब वह ब्राह्मण उसस्थानको छोड़कर हिमालयके उत्तरीय भागमें जाकर जप करनेलगा वहां जानेपरभी जब उसका तेज बहुत असह्यहुआ तब इन्द्रने विघ्नकेलिये उसकेपास अप्सराभेजी परन्तु उसधीरने अप्सराओंको तृण समान भी न समझा तब इन्द्रने लाचारहोकर मृत्युको उसकेपास भेजा मृत्युने उसकेपास जाकर कहा कि हे ब्राह्मण मनुष्य इतने दिनतक नहींजीते हैं इसमें तुम अपने शरीरको त्यागकरो मर्यादाका उल्लंघनकरना उचितनहीं है मृत्युके यह वचन सुनकर ब्राह्मण बोला कि जो मेरी आयुकी अवधि पूरी होगई होय तो मुझे क्यों नहीं लेचलतेहो किस बातकी प्रतीक्षा करतेहो मैं अपने आपशरीर नहीं त्याग करूंगा क्योंकि अपने आप शरीर त्यागकरने से आत्महत्या लगतीहै इसप्रकार कहतेहुए उसब्राह्मण को मृत्युनहीं लेजासके औरपराङ्मुखहोकर लौटगये तब कालकेभी जीतनेवाले उसकाल ब्राह्मणको इन्द्र अपने हाथों से स्वर्ग में उठालेगया वहां भी वह स्वर्ग के भोगोंको त्यागकर जपही करतारहा यह देखकर इन्द्रादिक देवता उसे फिर हिमालय पर लेआये और वरमागनेकेलिये उसे समझानेलगे उस समय उसीमार्ग से राजा इक्ष्वाकुआया और उस वृत्तान्तको जानकर ब्राह्मण से बोला कि जो देवता लोगों से वर नहीं लेतेहो तो मुझसे मांगो उसके यहवचन सुनकर ब्राह्मण ने हँसकरकहा कि देवता लोगोंसे तो मैं वरलेताही नहीं तुम मुझे क्या दोगे यह सुनकर राजा इक्ष्वाकुनेकहा कि जो मैं तुम्हें वर नहीं देसक्ताहूं तो तुमही मुझे वर दो तब जापकनेकहा कि जोतुमको अभीष्ट होय सो मांगो मैं तुमको अवश्य दूंगा यह सुनकर राजाने अपने चित्तमें शोचा कि मैं इस ब्राह्मणकोदूं यह तो उचित है और यह ब्राह्मण मुझकोदे यह उलटी बात है इसप्रकार उसराजाके शोचतेही शोचते दो ब्राह्मण लड़तेहुए वहां आये और राजाको देखकर न्यायकरानेकेलिये अपना २ पक्ष कहनेलगे एकनेकहा कि इसने द क्षिणा सहित एक गौ मुझे संकल्पकरके दीनीथी अब मैं वही गौ इसे सकल्पकरके देताहूं सो यह नहीं लेताहै फिर दूसरेनेकहा कि मैंने इसे पहले दानदिया और इससे फिर कभी मांगानहीं तो यह क्यों मुझे हठपूर्वक वही मेरी वस्तुदेताहै यह सुनकर राजानेकहा कि दीहुई गौको फिर लेलेनेवाला शुद्धनहीं होसक्ता है इससे प्रथम गौलेके फिर उसीको देना उचित नहीं है राजाके यह वचन सुनकर इन्द्रने अव-सर पाकर कहा कि हे राजा तुम इसप्रकार न्यायको जानकर भी इस ब्राह्मण से वरमांगकर मिलेहुए वरको क्यों नहीं ग्रहण करतेहो यहसुन राजाने निरुत्तरहोकर उस जापक ब्राह्मणसे कहा कि आपमुझे अपने जपका आधाफल देदीजिये यहसुनकर ब्राह्मणनेकहा कि तथास्तु मेरेजपका आधाफल आप को होय उसीसमय उसवरके प्रभाव से राजाकी सब लोकों में जानेकी गतिहोगई और वह जापकभी

देवता लोगोंके लोकको चलागया वहां कई कल्पोंतक रहकर फिर पृथ्वी में उत्पन्नहोके योगके प्रभाव से स्वतन्त्रहोकर निरन्तर सिद्धिको प्राप्तहुआ इसप्रकार विद्वान् लोग स्वर्गादिकों से विमुखहोकर सिद्धियो केही लिये प्रार्थना किया करते हैं वहीसिद्धि तुमको प्राप्त होगई मयदैत्यके यहवचन सुनकर और योग को पाकर राजा चन्द्रप्रभ अपने परिकर सहित बहुत प्रसन्न हुआ तब मयासुर उनसबको दूसरेपाताल मे लेजाकर एक दिव्यगृहमें लगया वहाँ उन सबों ने भीतर जाकरे एकबड़ी उत्तम शय्यापर किसी पुरुषका बड़ाभारी शरीरपड़ाहुआ देखा उसमे अनेकप्रकारकी महौषधियुक्त घृतलगा था आकृतिमें विकारहोनेसे इसकीचेष्टा भयरूप होरहीथी और बहुतसी उदासीन दैत्योंकी स्त्रिया उसेघेरेहुए बैठीथी मयासुरने चन्द्रप्रभको वह शरीरदिखाकर कहाकि यहीतुम्हारा पूर्वका शरीरहै इसमे तुम प्रवेश करो और यहसम्पूर्ण तुम्हारी स्त्रिया हैं उसके यहवचन सुनकर चन्द्रप्रभ ने अपना मनुष्यशरीर त्यागकर उसमें प्रवेशकिया तब वह शरीर जो शय्यापरपड़ाथा वह जभाई लेकर धीरेसे नेत्रखोलकर सोतेसे जगेहुएके समान उठखड़ाहुआ उससमय वह सब दैत्यस्त्रिया प्रसन्नहोके कहनेलगीं कि आज भाग्यवशसे हमारेपति सुनीथ जी उठे और सूर्य्यप्रभादिक चन्द्रप्रभ को पृथ्वी में निर्जीव देखकर उदासीन होगये और सुनीथ ने सुखपूर्वक सोकर जगेहुए के समान उठकर अपने पिता मयासुरकी चरणोंपर गिरकर वन्दनाकी मयासुरनेभी उसका आलिंगन करके सबकेसन्मुख उससेपूछा कि हेपुत्र तुम्हें अपने दोनोजन्मोका स्मरण इससमयहै उसनेकहा कि हाँ यहकहकर सुनीथ और चन्द्रप्रभ अपने दोनोजन्मो का सबवृत्तान्त कहदिया औरराजाकीर्त्तिमती तथा सूर्य्यप्रभादिको को नामलेलेकर सावधानकरके अपने पूर्वजन्मकी स्त्री दैत्यसुताओं को भी सावधानकिया और अपने चन्द्रप्रभ शरीरको महौषधियुक्त घृत से लिहसवाकर रखवादिया कि कदाचित् इसका भी उपयोगपड़े तब सूर्य्यप्रभआदि सम्पूर्ण लोग विश्वासयुक्त होकर उसके पैरोंमें गिरे और बहुत प्रसन्नहुए इसके उपरान्त मयासुर उन सबको वहाँ से सुवर्ण तथा रत्नोंसे जटित किसी अन्यपुरमे लेगया वहाँजाकर उन सबने एक वैडूर्य्यमणि की बनीहुई बावड़ीदेखी उसमे अमृत भराहुआथा उसके तटपर बैठकर विचित्र मणियोंके पात्रोंसे उस बावड़ी का अमृतमय जल सबनेपिया उसके पीतेही उनके शरीर महाबल पराक्रमसेयुक्त दिव्यहोगये तब मयासुर ने सुनीथ से कहा कि हेपुत्र अब अपनी माताके पासचलो उसके यहवचन सुनकर सुनीथ सूर्य्यप्रभादिकोंको साथलेकर मयासुरकेसाथ चौथे पातालमेंगया वहाँ अनेकप्रकारके बहुतसे धातुमयपुरोंकोदेखते हुएवहसबलोग एक सुवर्णमयपुरमें जिसमे कि रत्नोंकेखभेलगेथे पहुचे वहाँ अनेकदैत्यकन्याओंसेयुक्त अपने स्वरूपमे अप्सराओंकाभी तिरस्कारकरनेवाली सम्पूर्ण आभूषणोंको धारणकियेहुए लीलावतीनाम सुनीथकी माता बैठीथी वह सुनीथ को देखतेही एकाएकी उठ खड़ीहुई और सुनीथ भी उसके पैरोंपर गिरपड़ा उसने बहुतकाल के पीछे अपने पुत्रको हृदयसे लगाकर उसकी प्राप्तिके कारण अपने पति मयासुरकी प्रशंसाकरी तब मयासुर ने उससेकहा कि इसका छोटाभाई तुम्हारा दूसरापुत्र सुमुण्डीकभी यह सूर्य्यप्रभ नामसे इसी सुनीथकापुत्र हुआहै इसको श्रीशिवजी ने इसी शरीरसे विद्याधरों का चक्र

तेज निकलनेलगा दशहजार सूर्यके समान उस तेजसे आकाशमें सिद्धादि देवताओंकी गति रुक-गई और तीनों लोक जलनेलगे तब ब्रह्मा तथा इन्द्रादिक देवताओंने उसकेपास आकरकहा कि हे विप्रवर जो तुमको अभीष्ट वरमागनाहोय सो मागो तुम्हारे तेजसे सबसंसार जल रहा है देवताओं के यह वचन सुनकर उसनेकहा कि जपके सिवाय मेरा चित्त किसी अन्यमें न लगे यही मुझे चाहिये इस के सिवाय और कुछ मैं नहीं मांगताहूं इतने पर भी जब देवताओं ने बड़ा हठकिया तब वह ब्राह्मण उसस्थान को छोड़कर हिमालय के उत्तरीय भागमें जाकर जप करनेलगा वहां जानेपर भी जब उसका तेज बहुत असह्यहुआ तब इन्द्रनेविघ्नकेलिये उसकेपास अप्सराभेजीं परन्तु उसधीरने अप्सराओंको तृण समान भी न समझा तब इन्द्रने लाचारहोकर मृत्यु को उसकेपास भेजा मृत्युने उसकेपास जाकर कहा कि हे ब्राह्मण मनुष्य इतने दिनतक नहींजीते हैं इसमें तुम अपने शरीरको त्यागकरो मर्यादाका उल्लंघनकरना उचितनहीं है मृत्युके यह वचन सुनकर ब्राह्मण बोला कि जो मेरी आयुकी अवधि पूरी होगई होय तो मुझे क्यों नहीं लेचलतेहो किस बातकी प्रतीक्षा करतेहो मैं अपने आपशरीर नहीं त्याग करूंगा क्योंकि अपने आप शरीर त्यागकरने से आत्महत्या लगतीहै इसप्रकार कहतेहुए उसब्राह्मण को मृत्युनहीं लेजासके और पराङ्मुखहोकर लौटगये तब कालकोभी जीतनेवाले उसकाल ब्राह्मणको इन्द्र अपने हाथों से स्वर्ग में उठालेगया वहां भी वह स्वर्ग के भोगोंको त्यागकर जपही करतारहा यह देखकर इन्द्रादिक देवता उसे फिर हिमालय पर लेआये और वरमागनेकेलिये उसे समझानेलगे उस समय उसीमार्ग से राजा इक्ष्वाकुआया और उस वृत्तान्तको जानकर ब्राह्मण से बोला कि जो देवता लोगों से वर नहीं लेतेहो तो मुझसे मागो उसके यहवचन सुनकर ब्राह्मण ने हँसकरकहा कि देवता लोगोंसे तो मैं वरलेताही नहीं तुम मुझे क्या दोगे यह सुनकर राजा इक्ष्वाकुनेकहा कि जो मैं तुम्हें वर नहीं देसक्ताहूं तो तुमही मुझे वर दो तब जापकनेकहा कि जो तुमको अभीष्ट होय सो मांगो मैं तुमको अवश्य दूंगा यह सुनकर राजाने अपने चित्तमें शोचा कि मैं इस ब्राह्मणकोदूं यह तो उचित है और यह ब्राह्मण मुझको दे यह उलटी बात है इसप्रकार उसराजाके शोचतेही शोचते दो ब्राह्मण लड़तेहुए वहां आये और राजाको देखकर न्यायकरानेकेलिये अपना २ पक्ष कहनेलगे एकनेकहा कि इसने दक्षिणा सहित एकगौ मुझे संकल्पकरके दीनीथी अब मैं वही गौ इसे संकल्पकरके देताहूं सो यह नहीं लेताहै फिर दूसरेनेकहा कि मैंने इसे पहले दानदिया और इसमें फिर कभी मांगानहीं तो यह क्यों मुझे हठपूर्वक वही मेरी वस्तु देता है यह सुनकर राजानेकहा कि दीहुई गौको फिर लेलेनेवाला शुद्धनहीं होसक्ता है इससे प्रथम गौलेके फिर उसीको देना उचित नहीं है राजाके यह वचन सुनकर इन्द्रने अव-सर पाकर कहा कि हे राजा तुम इसप्रकार न्यायको जानकर भी इस ब्राह्मण से वरमागकर मिलेहुए वरको क्यों नहीं ग्रहण करतेहो यहसुन राजाने निरुत्तरहोकर उस जापक ब्राह्मणसे कहा कि आपमुझे अपने जपका आधाफल देदीजिये यहसुनकर ब्राह्मणनेकहा कि तथास्तु मेरेजपका आधाफल आप को होय उसीसमय उसवरके प्रभाव से राजाकी सब लोकोंमें जानेकी गतिहोगई और वह जापकभी

श्रुतशर्मा इन्द्रका पक्षपाके जो हठ करके हमसे विरोध करताहै इसमें हमारा क्या दोषहै सूर्य्यप्रभके प्रश्न से श्रीशिवजीने उसे विद्याधरोंका भावी चक्रवर्त्ती नियत किया है क्योंकि इसने पहिले उनकी वडी आराधनाकी थी इससे ईश्वरेच्छित कार्य्य में हम लोग क्या करसक्ते हैं इस विषय में इन्द्र निष्कारण अनीति करते हैं प्रह्लाद के यह वचन सुनकर नारदमुनि इन्द्रकी निन्दा करके अन्तर्द्धान होगये नारदमुनिके चलेजाने पर शुक्राचार्य्यने दैत्योंसे कहा कि ज्ञातहोताहै कि इसकार्य्य में इन्द्रसे वैरकरना पडेगा परन्तु हम लोगोपर श्रीशिवजीकी कृपाहै इससे वह हमारा क्या करसक्ताहै और उसकी वैष्णवी उपासना भी हमारा क्या करेगी शुक्राचार्य्यके इन वचनो पर विश्वास करके सम्पूर्ण दैत्य प्रह्लाद तथा वलिसे आज्ञा लेकर अपने २ स्थानको गये और प्रह्लादके भी अपने स्थान चौथे पातालमे चलेजाने पर राजावलि अपनी सभासे उठकर मन्दिर में चलेगये तव मयदैत्यभी वलिको प्रणाम करके सुनीथ तथा सूर्य्यप्रभादिकों को साथ लेकर अपने स्थानको आया वहा आकर उचित भोजन तथा पानके उपरान्त लीलावती ने सुनीथ से कहा कि हे पुत्र तुम जानते हो कि तुम्हारी यह तीन स्त्रिया वडे२ लोगो की पुत्री हैं तेजस्वती कुवेर की पुत्री है मंगलावती तुम्बुरुकी पुत्री है और कीर्त्तिमती जिसके साथ तुमने चन्द्रप्रभ नाम शरीर से विवाह किया था वह प्रभास नाम वसुकी पुत्री है हे पुत्र इन तीनों पर तुम समान दृष्टि रखना यह कहकर उसने उसकी तीनों मुख्य स्त्री उसे सौंपदीनी तदनन्तर उस दिन रात्रि के समय सुनीथ ने अपनी वडी पत्नी तेजस्वती के साथ शयन स्थान में जाकर अत्यन्त उत्कण्ठित उस तेजस्वती के साथ भोगविलास किया यद्यपि वह पहले भी इस सुख का अनुभव करचुके था तथापि वहुत काल व्यतीतहोने के कारण उससमय नवीनसा विदितहुआ और सूर्य्यप्रभ तो अपने मन्त्रियोंको साथलेकर किसी स्त्री के विना अकेलाही शय्यापर लेटा उससमय यह अपनी प्रियाओं को वाहरछोडआया है इससे इस स्नेहरहित के पास न जानाचाहिये इसी कारण से मानों प्रियाओं के विना उसके पास निद्रारूपी स्त्री भी नहींआई और कार्य्यों की चिन्तासे युक्त प्रहस्त के पास भी वह मानों ईर्ष्यासे नहीं आई इन दोनों के सिवाय अन्य सवलोग सुखपूर्वक सोगये १८४ तव सूर्य्यप्रभ और प्रहस्तने सखी समेत एक वडी सुन्दरकन्या वहा आतेहुए देखी वह ऐसी सुन्दरथी कि मानों ब्रह्माने उसे वनाकर पातालमें इसलिये रखछोडा था कि इसके आगे मेरी वनाईहुई सम्पूर्ण देवाङ्गना तुच्छ न होजाय सूर्य्यप्रभ उसे देखनेलगा कि यह कौनहै इतने में वह कन्या सूर्य्यप्रभके सम्पूर्ण मन्त्रियों को देखकर उनमें चक्रवर्त्ती के चिह्न न पाकर उन्हें छोडकर वीचमें सोतेहुए सूर्य्यप्रभको चक्रवर्त्तियोंके चिह्नयुक्त देखकर वोली कि हे सखी यह वही है इसे पैर हिलाकर जगाओ यह सुनकर उसकी सखी ने अपने शीतल हाथों से सूर्य्यप्रभ के कोमल चरणदावे तव सूर्य्यप्रभने व्याज निद्रा को त्यागके नेत्रोंको खोलकर उन दोनोंको देखकर कहा कि तुम कौनहो और यहा कैसे आईहो यहसुनकर उसकी सखी वोली कि सुनिये द्वितीय पातालमें हिरण्याक्षका पुत्र अमीलनाम वलवान् दैत्यराज है उसकी यह प्राणों से भी अधिक प्यारी कलावती नाम कन्या है आज राजावलि के पासमे आकर

वर्ती भावी नियतकियाहै यहसुनकर लीलावती उत्सुकतासे सूर्य्यप्रभको देखनेलगी और सूर्य्यप्रभ अपने मन्त्रियो समेत उसके पैरों पर गिरा सूर्य्यप्रभको पैरोंपरगिरा देखकर लीलावती ने प्रसन्नहोकर कहा कि हे वत्स सुमुण्डीक शरीरसे क्याहै तुम इसीशरीर से शोभित होतेहो उससमय मयासुरने अपनी सुता मन्दोदरी और उसके पति विभीषणका स्मरणकिया स्मरणकरतेही मन्दोदरीसमेत विभीषणने आकर सत्कार ग्रहण करके कहा कि हे दानवेन्द्र मेरा कहना मानो तो मैं कहूं सम्पूर्ण दैत्यों में तुम्हीं पुण्यात्मा तथा सुखी हो इससे देवताओं के साथ अकारण शत्रुता न करना देवताओंके साथ विरोध करने में हानिके सिवाय कुछ लाभ नहीं है देखो युद्धमे देवताओंने दैत्योंको माराहै परन्तु दैत्योंने देवताओंको कभी नही माराहै यह सुनकर मयासुर ने कहा कि मैं हठपूर्व्वक देवताओं से बैर नहीं करताहूं और जो हठपूर्व्वक इन्द्रही बैरकरे तो बताइये मैं कैसेसहू और जिन दैत्यो को देवतालोगों ने युद्ध में माराहै वह प्रमादीथे परन्तु बलिआदिक जो प्रमादी न थे उनको वह नहीं मारसके मयासुरके इत्यादि अनेक वचन सुनकर उससे आज्ञा लेकर मन्दोदरी समेत विभीषण अपनी लंकापुरीको चलागया तदनन्तर मयासुर सुनीथको सूर्य्यप्रभादिकों समेत तृतीय पाताल मे राजा बलिके दर्शन करानेको लेगया स्वर्गसेभी अधिक शोभायमान उसतीसरे पातालमे सबलोगोंने मोतीके हार तथा मुकुट धारण कियेहुए राजा बलिको अनेक दैत्योके बीचमे बैठाहुआ देखा और क्रमसे उसे यथोचित प्रणामकिया राजाबलिने उनसबका यथोचित सत्कार करके और मयासुरसे सबवृत्तान्त सुनकर प्रह्लाद आदिक सब दैत्योंको शीघ्रही वहीं बुलवाया वहां आएहुए उन सबको भी सुनीथादिकों ने यथायोग्य प्रणाम किया और वह सम्पूर्ण लोग उन्हें देखकर प्रसन्नहुए उससमय सबको यथायोग्य बैठाकर राजाबलिने कहा कि सुनीथ पृथ्वी में राजाचन्द्रप्रभहोकर फिर अपने उसी शरीर मे प्रवेश करके जीउठा है और सुमुण्डीक सूर्य्यप्रभनामसे इसीका पुत्र हुआहै इसे श्रीशिवजी ने इसी शरीरसे विद्याधरोंका होनेवाला चक्रवर्त्ती नियत कियाहै सुनीथकेही यज्ञके प्रभावसे मेरे बन्धन शिथिल होगयेहै इससे इन दोनोंको पाकर अवश्य हमलोगो का उदय होगा बलिके यह वचन सुनकर दैत्योंके गुरु शुक्राचार्य्य बोले कि धर्म्मके अनुसार सत्यमार्ग मे चलनेवाले पुरुषोंका सदैव सर्वत्र उदय होता है इससे अबभी हमारा कहना मानकर धर्मानुसार कार्य्यकरो शुक्राचार्य के यह वचन सुनकर सम्पूर्ण दैत्यों ने तबसे धर्म्माचरण करनेका निश्चय किया उस समय वहा सातों पातालों के स्वामी आयेथे उन सबने मिलकर सुनीथकी प्राप्ति के कारण बड़ा उत्सव किया इसी बीच में नारदमुनि वहा आये और अर्घपाद्यादि ग्रहणकर आसनपर सुखपूर्वक बैठके बोले कि इन्द्रने तुमलोगों के पास मुझे भेजाहै और कहाहै कि सुनीथ का जीवन सुनकर मुझे बड़ी प्रसन्नताहुई इससे अब तुम हमलोगों के साथ अकारण बैर न करना और हमारे पक्षके अतमर्म्मा से विरोध न करना नारदजी के मुखसे इन्द्रके यह वचन सुनकर प्रह्लादने कहा कि सुनीथ के जीवन से इन्द्रका प्रसन्न होना योग्यही है हमलोग उनमे अकारण विरोध कभी नहीं करते हैं आजही हमलोगों ने अपने गुरुके सन्मुख इस बातका नियम कियाहै और

करना चाहिये इससे आज सब दैत्यराज मिलकर यहीं भोजनकरें मयासुरने कहा बहुतठीकहै ऐसाही करना चाहिये तब प्रह्लाद ने दूत भेजकर सब दैत्यराज बुलवाये और क्रमसे सम्पूर्ण पातालों से दैत्यों के राजालोग आनेलगे पहले राजाबलि असंख्यदैत्यों को अपने साथ लेकर आया तदनन्तर अमील फिर दुरारोह इसीक्रमसे सुमाय, तन्तुकच्छ, विकटाक्ष, प्रकंपन, धूम्रकेतु, मायाकाय तथा अन्य २ दैत्यराज अपने २ साथ सहस्रो महादैत्यों के लेकर वहा आये दैत्यों से सम्पूर्ण सभा भरगई और वह परस्पर यथायोग्य वन्दना कर २ के बैठे उससमय प्रह्लादने सबका यथायोग्य सन्मानकिया तदनतर भोजनका समय आजानेपर सम्पूर्ण दैत्यराज गंगाजी में स्नानकरके भोजन के निमित्त सो योजन विस्तृत सुवर्ण तथा मणियों की चट्टानसे युक्त रत्नके खंभों से व्याप्त और विचित्र यथायोग्य स्थानों मे रक्खेहुए रत्नके पात्रो से सुशोभित महासभाम गये वहा प्रह्लाद सुनीथ मयासुर और मन्त्रियो सहित सूर्य्यप्रभके साथ सम्पूर्ण दैत्यराजों ने नानाप्रकारके भक्ष्यभोज्य लेह्यादिक षट्रसयुक्त दिव्य अन्न भोजन किया और उत्तम मद्यका पान किया इसप्रकार भोजनकरके वह सम्पूर्ण दैत्यराज दूसरी रत्नमय सभामें जाकर दैत्यों की कन्याओका उत्तम नृत्य देखनेलगे इस प्रसंगसे सूर्य्यप्रभने वहा प्रह्लाद की कन्या महल्लिकाको पिताकी आज्ञासे नाचतेहुए देखा अपनी कान्तिसे दिशाओ को प्रकाशित करतीहुई और दृष्टिमें अमृतकी वृष्टिकरतीहुई वह कन्या ऐसी थी मानों चन्द्रमाकी मूर्तिही पाताल में आगईथी ललाट में तिलक पैरों में नूपुर तथा मनोहर दृष्टिसे वह नृत्यमें अत्यन्त शोभित होती थी घूंघरवालेबाल नुकीलेदात तथा उन्नत गोलस्तनो से नृत्य में उसकी अपूर्व्वही शोभा होती थी उस महल्लिका को इसप्रकार नृत्य करतीहुई देखकर सूर्य्यप्रभका चित्त उसपर अत्यन्त आसक्त होगया और वह भी दैत्योंके बीच में श्रीशिवजीके द्वारा कामके भस्मकिये जानेपर ब्रह्मासे उत्पन्न कियेगये द्वितीय कामदेव के समान सूर्य्यप्रभको देखकर ऐसी उसके वशीभूत होगई कि उससे फिर न भाव व तालेबना और नाच बनाते सभासदों ने उन दोनों के भावको जानकर राजसुता अब थकगई है यह कहकर नृत्य बन्द करवादिया तब महल्लिका सूर्य्यप्रभको तिरछी दृष्टिसे देखतीहुई पितासे आज्ञालेकर सम्पूर्ण दैत्यराजों को वन्दना करके अपने मन्दिर को गई और सम्पूर्ण दैत्यराज अपने २ स्थानको गये सूर्य्यप्रभभी अपने सब मन्त्रियो समेत अपने स्थानको चला आया रात्रिके समय फिर आईहुई कलावतीके साथ सूर्य्यप्रभ तो मन्दिरके भीतर शयन स्थानमें सोरहा और सम्पूर्ण मन्त्रीशयन स्थानके बाहरसोये उस रात्रिमे महल्लिका भी अपनी दो सखियो को साथमें लेकर सूर्य्यप्रभसे मिलने को आई उसे शयन स्थानके भीतरजाते देखकर उसी समय जगेहुए प्रज्ञाढ्यनाम मन्त्रीने उससे कहा कि हे राजपुत्री क्षणभर ठहरजाओ मै भीतर होआऊ तब जाना उसके यह वचनसुनकर महल्लिका ने सन्देह युक्त होकर पूछा कि तुम मुझे भीतर जाने से क्यों रोकतेहो उसने कहा कि हे राजपुत्री एकान्त में सोनेहुए के पास सहसा नहीं जाना चाहिये और यह हमारास्वामी व्रतके कारण अकेला सो रहाहै तब महल्लिकाने कहा अच्छा तुम्हीं जाओ उसके यहवचनसुनकर प्रज्ञाढ्यने भीतर जाकर कला-

इसके पिताने कहा कि आज भाग्यवशसे फिरकर जियेहुए सुनीथको हमने देखा और सुमुण्डीक के अवतार युवावस्थासेयुक्त सूर्य्यप्रभको भी देखा जो शिवजीकी कृपासे विद्याधरोंका चक्रवर्ती होनेवाला है इसहर्षमें सुनीथका मुझे कुछसत्कारकरना चाहिये इससे मैं अपनी यहकन्या कलावती सूर्य्यप्रभको देदूं क्योंकि सुनीथका और मेरा गोत्र एकहै इससे सुनीथको देना योग्य नहीं है और सूर्य्यप्रभ इसका पुत्र तो है परन्तु राजजन्मकाहै इस जन्मका नहीं है इससे इसका और मेरा गोत्र भिन्न २ है और जो मैं इसका सत्कार करूंगा तो सुनीथही का सत्कार समझाजायगा अपने पिताके यह वचन सुनकर मेरी सखी का चित्त तुम्हारे गुणों से आकृष्टहोगयाहै इसी से यह आपके दर्शनको इस समय आई है उस के यह वचन सुनके सूर्य्यप्रभ उसके तात्पर्य्यको जानने के लिये झूठमूठ सोनेलगा तब वह कन्या जागतेहुए प्रहस्तके पास जाकर उससे सखी के द्वारा अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त कहकर बाहर चलीगई और प्रहस्त सूर्य्यप्रभके पास जाके बोला कि हे स्वामी जागतेहो कि नहीं यह सुनकर उसने नेत्र खोलकर कहा कि हे मित्र जागताहूं मुझे अकेले निद्रा नहीं पड़ती और विशेष बात यह है जो तुमसे कहताहूं क्योंकि तुमसे कोई दुरावनहीं है अभी सखी समेत एककन्या जिसके समान त्रैलोक्यमें भी कोई सुन्दर नहीं है यहां आईथी और क्षणभरमेंही मेरेमनको हरकर कहीं चलीगई उसे जाकर शीघ्रही ढूंढलाओ यहीं कहीं खड़ीहोगी सूर्य्यप्रभ के यह वचनसुनके प्रहस्तने बाहरजाके सखी समेत खड़ीहुई उसकन्या से कहा कि मैंने तुम्हारे कहनेसे अपने स्वामीको जगा दिया है तो तुमभी मेरे कहने से उसके पास चलकर नेत्रोंके सफल करनेवाले उसके स्वरूपको देखो और वहभी तुम्हारे स्वरूपको देखे उसने जगकर मुझसे कहाहै कि उसे ढूंढलाओ नहीं तो मेरे प्राण नहीं रहेंगे इससे मैं तुमको लिवाने के लिये आयाहूं तुम्हारे देखनेहीसे वह तुम्हारे वशीभूतहोगया है तुम आपही चलकर उसकी विकलता देखो प्रहस्त के यह वचन सुनकर वह लज्जितहोके नहीं जासकी तब प्रहस्त उसे हाथ पकड़कर सूर्य्यप्रभ के पास लेगया सूर्य्यप्रभने उसे देखकर उससे कहा कि हे सुन्दरी क्या तुमको यह उचितहै कि तुमने यहां आकर मुझ सोतेहुएका चित्त चुरालिया इससे तुम चोट्टीहो मैं आज तुमको नहीं छोड़ूंगा यहसुनकर उसकी चतुरसखीबोली कि इसके पिता ने इसे प्रथमही से चोट्टी जानकर तुमको सौंपनाचाहा है इससे आपको कौन निषेध करसक्ताहै आप इससे चोरीकरानेवाले कामदेवको दण्ड दीजिये यह सुनकर सूर्य्यप्रभने कलावतीका आलिंगन करनाचाहा यह देखकर उसने कहा कि हे आर्य्यपुत्र ऐसा न करो मैं कन्याहूं तब प्रहस्तने उससे कहा कि इसमें कोई अनुचित नहीं है गान्धर्व विवाह सब विवाहों में उत्तम कहाहै यह कहकर प्रहस्त उसकी सखीको लेकर बाहर चलाआया और सूर्य्यप्रभने कलावती के साथ गान्धर्व विवाहकरके मनुष्योंको जो दुर्लभ सुखहै सो उस पातालकन्या के साथ अनुभव किया इसप्रकार सुखसे रात्रिके व्यतीतहोजानेपर कलावती अपने स्थानको चलीगई और सूर्य्यप्रभ अपने सब साथियों समेत सुनीथ तथा मयासुरके पास गया वहां वह सब मिलकर प्रह्लादके पास गये उसने सबका यथायोग्य सत्कारकरके मयासुरसे कहा कि सुनीथके पुनर्जीवन से हमको प्रसन्नहोकर उत्सव

करना चाहिये इससे आज सब दैत्यराज मिलकर यहीं भोजनकरें मयासुरने कहा बहुतठीकहै ऐसाही करना चाहिये तब प्रह्लाद ने दूत भेजकर सब दैत्यराज बुलवाये और क्रमसे सम्पूर्ण पातालों से दैत्यों के राजालोग आनेलगे पहले राजानलि असख्यदैत्यों को अपने साथ लेकर आया तदनन्तर अमील फिर दुरारोह इसीक्रमसे सुमाय, तन्तुकच्छ, विकटाक्ष, प्रकंपन, धूम्रकेतु, मायाकाय तथा अन्य २ दैत्यराज अपने २ साथ सहस्रों महादैत्यों के लेकर वहा आये दैत्यों से सम्पूर्ण सभा भरगई और वह परस्पर यथायोग्य वन्दना कर २ के बैठे उससमय प्रह्लादने सबका यथायोग्य सन्मानकिया तदनतर भोजनका समय आजानेपर सम्पूर्ण दैत्यराज गगाजी में स्नानकरके भोजन के निमित्त सौ योजन विस्तृत सुवर्ण तथा मणियोंकी चट्टानसे युक्त रत्नके खभो से व्याप्त और विचित्र यथायोग्य स्थानों मे रक्खेहुए रत्नके पात्रों से सुशोभित महासभामें गये वहा प्रह्लाद सुनीथ मयासुर और मन्त्रियो सहित सूर्य्यप्रभके साथ सम्पूर्ण दैत्यराजों ने नानाप्रकारके भक्ष्यभोज्य लेह्यादिक षट्रसयुक्त दिव्य अन्न भोजन किया और उत्तम मद्यका पान किया इसप्रकार भोजनकरके वह सम्पूर्ण दैत्यराज दूसरी रत्नमय सभामें जाकर दैत्योंकी कन्याओंका उत्तम नृत्य देखनेलगे इस प्रसंगसे सूर्य्यप्रभने वहा प्रह्लाद की कन्या महल्लिकाको पिताकी आज्ञासे नाचतेहुए देखा अपनी कान्तिसे दिशाओं को प्रकाशित करतीहुई और दृष्टिसे अमृतकी वृष्टिकरतीहुई वह कन्या क्या थी मानो चन्द्रमाकी मूर्तिही पाताल में आगईथी ललाट में तिलक पैरों में नूपुर तथा मनोहर दृष्टिसे वह नृत्यमें अत्यन्त शोभित होती थी घूघरवालेबाल नुकीलेदात तथा उन्नत गोलस्तनो से नृत्य में उसकी अपूर्व्वही शोभा होती थी उस महल्लिका को इसप्रकार नृत्य करतीहुई देखकर सूर्य्यप्रभका चित्त उसपर अत्यन्त आसक्त होगया और वह भी दैत्योंके बीच में श्रीशिवजीके द्वारा कामके भस्मकिये जानेपर ब्रह्मासे उत्पन्न कियेगये द्वितीय कामदेव के समान सूर्य्यप्रभको देखकर ऐसी उसके वशीभूत होगई कि उससे फिर न भाव बतातेबना और नाच बनाते सभासदों ने उन दोनों के भावको जानकर राजसुता अब थकगई है यह कहकर नृत्य बन्दकरवादिया तब महल्लिका सूर्य्यप्रभको तिरछी दृष्टिसे देखतीहुई पितासे आज्ञालेकर सम्पूर्ण दैत्यराजों को वन्दना करके अपने मन्दिर को गई और सम्पूर्ण दैत्यराज अपने २ स्थानको गये सूर्य्यप्रभभी अपने सब मन्त्रियो समेत अपने स्थानको चला आया रात्रिके समय फिर आई हुई कलावतीके साथ सूर्य्यप्रभ तो मन्दिरके भीतर शयन स्थानमें सोरहा और सम्पूर्ण मन्त्रीशयन स्थानके बाहरसोये उस रात्रिमें महल्लिका भी अपनी दो सखियों को साथमें लेकर सूर्य्यप्रभसे मिलने को आई उसे शयन स्थानके भीतरजाते देखकर उसी समय जगेहुए प्रज्ञाढ्यनाम मन्त्रीने उससे कहा कि हे राजपुत्री क्षणभर ठहरजाओ मै भीतर होआऊ तब जाना उसके यह वचनसुनकर महल्लिका ने सन्देह युक्त होकर पूछा कि तुम मुझे भीतर जाने से क्यों रोकतेहो उसने कहा कि हे राजपुत्री एकान्त में सोतेहुए के पास सहसा नहीं जाना चाहिये और यह हमारास्वामी व्रतके कारण अकेला सो रहाहै तब महल्लिकाने कहा अच्छा तुम्हीं जाओ उसके यहवचनसुनकर प्रज्ञाढ्यने भीतर जाके देखा

इसके पिताने कहा कि आज भाग्यवशसे फिरकर जियेहुए सुनीथको हमने देखा और सुमुण्डीक के अवतार युवावस्थासेयुक्त सूर्य्यप्रभको भी देखा जो शिवजीकी कृपासे विद्याधरोंका चक्रवर्ती होनेवाला है इसहर्षमें सुनीथका मुझे कुछसत्कारकरना चाहिये इससे मैं अपनी यहकन्या कलावती सूर्य्यप्रभको देदूं क्योंकि सुनीथका और मेरा गोत्र एकहै इससे सुनीथको देना योग्य नहीं है और सूर्य्यप्रभ इसका पुत्र तो है परन्तु राजजन्मकाहै इस जन्मका नहीं है इससे इसका और मेरा गोत्र भिन्न २ है और जो मैं इसका सत्कार करूंगा तो सुनीथही का सत्कार समझाजायगा अपने पिताके यह वचन सुनकर मेरी सखी का चित्त तुम्हारे गुणों से आकृष्टहोगयाहै इसी से यह आपके दर्शन को इस समय आई है उस के यह वचन सुनके सूर्य्यप्रभ उसके तात्पर्य्यको जानने के लिये झूठमूठ सोनेलगा तब वह कन्या जागतेहुए प्रहस्तके पास जाकर उससे सखीके द्वारा अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त कहकर बाहर चलीगई और प्रहस्त सूर्य्यप्रभके पास जाके बोला कि हे स्वामी जागतेहो कि नहीं यह सुनकर उसने नेत्र खोलकर कहा कि हे मित्र जागताहूं मुझे अकेले निद्रा नहीं पडती और विशेष बात यह है जो तुमसे कहताहूं क्योंकि तुमसे कोई दुरावनहीं है अभी सखी समेत एककन्या जिसके समान त्रैलोक्यमें भी कोई सुन्दर नहीं है यहां आईथी और क्षणभरमेंही मेरेमनको हरकर कहीं चलीगई उसे जाकर शीघ्रही ढूंढलाओ यहीं कहीं खडीहोगी सूर्य्यप्रभ के यह वचनसुनके प्रहस्तने बाहरजाके सखी समेत खडीहुई उसकन्या से कहा कि मैंने तुम्हारे कहनेसे अपने स्वामीको जगा दिया है तो तुमभी मेरे कहने से उसके पास चलकर नेत्रोंके सफल करनेवाले उसके स्वरूपको देखो और वहभी तुम्हारे स्वरूपको देखे उसने जगकर मुझसे कहाहै कि उसे ढूंढलाओ नहीं तो मेरे प्राण नहीं रहेंगे इससे मैं तुमको लिवाने के लिये आयाहूं तुम्हारे देखनेहीसे वह तुम्हारे वशीभूतहोगया है तुम आपही चलकर उसकी विकलता देखो प्रहस्त के यह वचन सुनकर वह लज्जितहोके नहीं जासकी तब प्रहस्त उसे हाथ पकडकर सूर्य्यप्रभ के पास लेगया सूर्य्यप्रभने उसे देखकर उससे कहा कि हे सुन्दरी क्या तुमको यह उचितहै कि तुमने यहां आकर मुझ सोतेहुएका चित्त चुरालिया इससे तुम चोट्टीहो मैं आज तुमको नहीं छोडूंगा यह सुनकर उसकी चतुरसखीबोली कि इसके पिता ने इसे प्रथमही से चोट्टी जानकर तुमको सौंपनाचाहा है इससे आपको कौन निषेध करसक्ताहै आप इससे चोरीकरानेवाले कामदेवको दण्ड दीजिये यह सुनकर सूर्य्यप्रभने कलावतीका आलिंगन करनाचाहा यह देखकर उसने कहा कि हे आर्य्यपुत्र ऐसा न करो मैं कन्याहूं तब प्रहस्तने उससे कहा कि इसमें कोई अनुचित नहीं है गान्धर्व विवाह सब विवाहों में उत्तम कहाहै यहकहकर प्रहस्त उसकी सखीको लेकर बाहर चलाआया और सूर्य्यप्रभने कलावती के साथ गान्धर्व विवाहकरके मनुष्योंको जो दुर्लभ सुखहै सो उस पातालकन्या के साथ अनुभव किया इसप्रकार सुखसे रात्रिके व्यतीतहोजानेपर कलावती अपने स्थानको चलीगई और सूर्य्यप्रभ अपने सब साथियों समेत सुनीथ तथा मयासुर के पास गया वहां वह सब मिलकर प्रह्लादके पास गये उसने सबका यथायोग्य सत्कारकरके मयासुरसे कहा कि सुनीथके पुनर्जीवन से हमको प्रसन्नहोकर उत्सव

करना चाहिये इससे आज सब दैत्यराज मिलकर यहीं भोजनकरें मयासुरने कहा बहुतठीकहै ऐसाही करना चाहिये तब प्रह्लाद ने दूत भेजकर सब दैत्यराज बुलवाये और क्रमसे सम्पूर्ण पातालों से दैत्यों के राजालोग आनेलगे पहले राजाबलि असङ्ख्यदैत्यों को अपने साथ लेकर आया तदनन्तर अमील फिर दुरारोह इसीक्रमसे सुमाय, तन्तुकच्छ, विकटाक्ष, प्रकंपन, धूम्रकेतु, मायाकाय तथा अन्य २ दैत्यराज अपने २ साथ सहस्रों महादैत्यों को लेकर वहां आये दैत्यों से सम्पूर्ण सभा भरगई और वह परस्पर यथायोग्य वन्दना कर २ के बैठे उससमय प्रह्लादने सबका यथायोग्य सन्मानकिया तदनंतर भोजनका समय आजानेपर सम्पूर्ण दैत्यराज गंगाजी में स्नानकरके भोजन के निमित्त सौ योजन विस्तृत सुवर्ण तथा मणियों की चट्टानसे युक्त रत्नके खंभों से व्याप्त और विचित्र यथायोग्य स्थानों में रक्खेहुए रत्नके पात्रों से सुशोभित महासभामें गये वहां प्रह्लाद सुनीथ मयासुर और मंत्रियों सहित सूर्य्यप्रभके साथ सम्पूर्ण दैत्यराजों ने नानाप्रकारके भक्ष्यभोज्य लेह्यादिक षट्रसयुक्त दिव्य अन्न भोजन किया और उत्तम मद्यका पान किया इसप्रकार भोजनकरके वह सम्पूर्ण दैत्यराज दूसरी रत्नमय सभामें जाकर दैत्यों की कन्याओंका उत्तम नृत्य देखनेलगे इस प्रसंगसे सूर्य्यप्रभने वहां प्रह्लाद की कन्या महल्लिकाको पिताकी आज्ञासे नाचतेहुए देखा अपनी कान्तिसे दिशाओं को प्रकाशित करतीहुई और दृष्टिमें अमृतकी वृष्टिकरतीहुई वह कन्या क्या थी मानो चन्द्रमाकी मूर्त्तिही पाताल में आगईथी ललाट में तिलक पैरों में नूपुर तथा मनोहर दृष्टिसे वह नृत्यमें अत्यन्त शोभित होती थी घूंघरवालेबाल नुकीलेदांत तथा उन्नत गोलस्तनों से नृत्य में उसकी अपूर्व्वही शोभा होती थी उस महल्लिका को इसप्रकार नृत्य करतीहुई देखकर सूर्य्यप्रभका चित्त उसपर अत्यन्त आसक्त होगया और वह भी दैत्योंके बीच में श्रीशिवजीके द्वारा कामके भस्मकिये जानेपर ब्रह्मासे उत्पन्न कियेगये द्वितीय कामदेव के समान सूर्य्यप्रभको देखकर ऐसी उसके वशीभूत होगई कि उससे फिर न भाव न तालबना और नाच बनाते सभासदों ने उन दोनों के भावको जानकर राजसुता अब थकगई है यह कहकर नृत्य बन्दकरवादिया तब महल्लिका सूर्य्यप्रभको तिरछी दृष्टिसे देखतीहुई पितासे आनालेकर सम्पूर्ण दैत्यराजों को वन्दना करके अपने मन्दिर कोगई और सम्पूर्ण दैत्यराज अपने २ स्थानको गये सूर्य्यप्रभभी अपने सब मन्त्रियों समेत अपने स्थानको चला आया रात्रिके समय फिर आई हुई कलावतीके साथ सूर्य्यप्रभ तो मन्दिरके भीतर शयन स्थानमें सोरहा और सम्पूर्ण मन्त्रीशयन स्थानके बाहरसोये उस रात्रिमें महल्लिकाभी अपनी दो सखियों को साथमें लेकर सूर्य्यप्रभसे मिलने को आई उसे शयन स्थानके भीतरजाते देखकर उसी समय जगेहुए प्रज्ञाढ्यनाम मन्त्रीने उससे कहा कि हे राजपुत्री क्षणभर ठहरजाओ मैं भीतर होआऊं तब जाना उसके यह वचनसुनकर महल्लिका ने सन्देह युक्त होकर पूछा कि तुम मुझे भीतर जाने से क्यों रोकतेहो उसने कहा कि हे राजपुत्री एकान्त में सोतेहुए के पास सहसा नहीं जाना चाहिये और यह हमारास्वामी व्रतके कारण अकेला सो रहाहै तब महल्लिकाने कहा अच्छा तुम्हीं जाओ उसके यहवचनसुनकर प्रज्ञाढ्यने भीतर जाकर राजा-

वतीको मोते देखकर सूर्य्यप्रभको जगाकर कहा कि महल्लिका आई है यह सुनकर सूर्य्यप्रभ धीरे से उठकर बाहर आया और सखियों समेत महल्लिका को देखकर उससे बोला कि हे सुन्दरी तुमने इस अभ्यागतको कृतार्थ किया अब आसन ग्रहणकर बैठके इस स्थानको भी कृतार्थ करो यह सुनकर महल्लिका अपनी सखियों समेत बैठगई और सूर्य्यप्रभ भी प्रज्ञाढ्य समेत बैठकर बोला कि यद्यपि तुमने सभामें सबके समानही मुझे देखकर मेरा निरादरकिया तथापि हेचपलनेत्रे तुम्हारे दर्शन मात्रसेही तुम्हारे सौन्दर्य्यके समान नृत्यसे मेरे नेत्रसफल होगये सूर्य्यप्रभके यह वचनसुनकर महल्लिका बोली कि हे आर्यपुत्र इसमे मेरा अपराध नहीं है यह अपराध तो उसकाहै जिसने सभामे मेरा नृत्य बिगाड़कर मुझे लज्जित किया यह सुनकर सूर्य्यप्रभने मुस्कुराकर कहा कि मैं हारगया और उसका हाथ अपने हाथसे पकड़ा तब महल्लिकाने कहा कि हे आर्यपुत्र मैं पिताके वशीभूत कन्याहू इससे मानो बलात्कारसे भयभीत मेरे स्वेद युक्त हाथको छोड दो यह सुनकर प्रज्ञाढ्य बोला कि हे राजपुत्री क्या कन्याओंका गान्धर्व विवाह नहीं होताहै तुम्हारेपिता तुम्हारा अभिप्राय जानचुकेहे इससे वह तुमको इनके सिवाय किसी दूसरे को नहीं देंगे और इनका सत्कार भी उनको अवश्य करनाहै इससे भय न करो यह प्रथम समागम व्यर्थ न होना चाहिये २६० इसप्रकार प्रज्ञाढ्यके कहतेही कहते कलावती भीतर जगी और सूर्य्यप्रभको शय्यापर न देखके उद्विग्नहोकर बाहर चलीआई और महल्लिकाके साथ सूर्य्यप्रभको देखकर एकसाथही कुपित लज्जित तथा भयभीत होगई महल्लिका भी उसेदेखकर भीति युक्त होकर लज्जित होगई और सूर्य्यप्रभ चित्रमें लिखाहुआ सा रहगया उससमय कलावतीने यहशोचकर कि इमनेमुझे देखलियाहै अबजाना ठीकनहीं है महल्लिकाके पासजाके ईर्ष्यासे बोली कि हे सखीकुशल तो है आज तुम रात्रि को यहां कहां आईहो यह सुनकर महल्लिका ने कहा कि मेरा तो यह घरही है तुम अन्य पातालमे यहा आईहो इसलिये मेरी अतिथिहो यह सुनकर कलावतीने हँसकर कहा कि ठीक है यह तो मालूमही है कि यहा जो कोई आताहै उसका तुम अतिथि सत्कार करती हो कलावती के यह वचन सुनकर महल्लिका बोली कि मैंने तो प्रेम पूर्वक तुमसे कहा तुम द्वेषसे ऐसे निष्ठुर वचन क्यो कहतीहो हे निर्लज्जे क्या मैभी तुम्हारे समानहू क्या मैंभी बन्धुओंकी आज्ञाके विना अकेली पराये स्थान में जाकर पराई शय्यापर सोती हू मै तो अपने ही स्थानमें अपने पिताके अतिथिको देखने के लिये दो सखियोंको साथ में लेकर अतिथि सत्कार करनेके लिये आईहू जब यह मन्त्री मुझे धोखा देकर भीतरगयाथा तभी मैने जान लियाथा तुमने आप आकर और भी प्रकट करदिया महल्लिकाके यह वचन सुनकर कलावती क्रोधयुक्त तिरछी दृष्टिसे प्रियको देखतीहुई अपने घरको चलीगई और महल्लिका भी हे बहुवल्लभ अब मैं जातीहू ऐसा क्रोध पूर्वक कहकर चलीगई उससमय सूर्य्यप्रभ जो विमन हो गया सो तो उचितही है क्योंकि उसका मन प्रियाओंके साथही चलागया तदनन्तर सूर्य्यप्रभने प्रभास और प्रहस्तको जगाकर कलावती तथा महल्लिकाने यहासे जाकर क्या कियाहै यह वृत्तान्त जाननेको भेजा और आप प्रज्ञाढ्यके साथ बैठकर उनकी प्रतीक्षा करनेलगा कुछ कालके उपरान्त कलावती के

वृत्तान्तको जानकर प्रभास लौटकर आया और कहनेलगा कि यहांसे दूसरे पातालमें कलावतीके स्थान पर जाकर मैंने अपनी विद्यासे अपनेको छिपाकर बाहर दो चेरियोंकी यह वार्त्तालाप सुनी एकनेकहा हे सखी आज कलावती उद्विग्नचित्त क्यों है दूसरीने उत्तरदिया कि हे सखी इसका यह कारणहै कि चौथे पातालमें सुमुण्डीक का अवतार अपने रूपसे कामदेवको भी जीतनेवाला सूर्य्यप्रभ स्थित है उसके पास इसनेजाकर अपना शरीर उसके अर्पण किया आजरात्रिको भी यह उसीके पासगई थी वहां प्रह्लाद की पुत्री महल्लिका भी कुछ रात्रिगये आई थी ईर्ष्यासे उसके साथ कलहकरके यह यहां आकर अपने प्राण देनेको उद्यत हुई तब इसकी सुखावती नाम बहिनने सम्पूर्ण वृत्तान्त पूछकर मृत्यु से इसको निवारण किया इसी से यह अपनी बहिन के साथ शय्या पर जाके लेटरही है चेरियों की इस वार्त्तालापको सुनकर मैंने भीतर जाके कलावती और सुखावतीको पलँग परसोते देखा उन दोनोंकी एक समान आकृति है प्रभासके इसप्रकार कहतेही महस्त भी आगया और पूछने पर कहनेलगा कि मैं जब यहां से महल्लिका के यहां पहुंचा तो वह अपनी दोनों सखियोंके साथ मन्दिर में गई मैंभी विद्या की युक्ति से अलक्षित होकर उसीके साथ चलागया वहां मैंने उसीके समान उसकी बारह सखी देखीं वह बारहों रत्नके पलँगपर महल्लिका को घेरकर बैठगईं और उनमेंसे एक बोली कि हे सखी आज तुम अकस्मात् उदासीन क्यों होरही हो तुम्हारे विवाहकी तैयारी होरही है इससमय में भी विषादका क्या कारणहै यहसुनकर महल्लिकानेकहा कि कैसा मेराव्याह किसकेसाथ मेराव्याह होगा और तुमसेकिसने कहाहै यहसुनकरवह सब बोलीं कि प्रातःकाल सूर्य्यप्रभके साथ तुम्हारेविवाहके होनेका निश्चयहैतुम्हारी माताने तुम्हारे परोक्षमें हमसे यहकहाहै और तुम्हारे शृंगार करनेकी आज्ञादी है हेसखी तुम धन्यहो जिसे सूर्य्यप्रभ पति मिलैगा जिसके स्वरूप से मोहितहोकर स्त्रियां रात्रिको सोती नहीं हैं हम लोगोंको यह विषादहै कि अब कहांतुम और कहांहम ऐसे सुन्दर पतिको पाकर तुम हमारा स्मरणभी नहींकरोगी उनके यह वचन सुनकर महल्लिकाबोली कि क्या तुमने उसे कहीं देखाहै और तुम्हाराचित्त उसपर चलायमान हुआहै तब उन्होंने कहा कि हमने महलपरसे उसे देखाहै और ऐसीकौनस्त्री है जिसकाचित्त उसेदेखकर चलायमान न होय यहसुनकर महल्लिकाबोली मैं अपने पितासेकहकर तुमसबका विवाहभी उसीकेसाथ करवाऊंगी तो हमारा तुम्हारा वियोग नहींहोगा यहसुनकर सखियोंनेकहा कि ऐसानकरना यहउचित नहीं है हमेंइसबातपर लज्जाहोती है उनके यहवचन सुनकर महल्लिकानेकहा कि इसमेंअयोग्य क्याहै केवलमेराही उसकेसाथ विवाह न होगा किन्तुसम्पूर्ण दैत्यराज अपनी२ कन्या उसे देंगे और बहुतसी राजकन्याओं के साथ उसका विवाह भी होचुकाहै जो अब पृथ्वीपर वर्त्तमान है और बहुतसी विद्याधरियों के साथ भी इसका विवाह होगा उनमें जो तुम लोगोंका भी विवाह उसके साथ होजाय तो मेरी क्या हानिहै प्रत्युत (बल्कि) सब सखियोंके साथ रहनेसे बड़ा सुखहोगा और जो अन्य सपत्नी होंगी वह मेरे विपरीतहोंगी क्योंकि उनसे मेरा किसीप्रकारका परिचय नहीं होगा और तुम लोगोंको इसमें लज्जाही क्याहै मैं सब यत्न करलूंगी उन सबकी यहवार्त्तालाप सुनकर मैं आपके पासचलाआया

वतीको सोते देखकर सूर्य्यप्रभको जगाकर कहा कि महल्लिका आई है यह सुनकर सूर्य्यप्रभ धीरे से उठकर वाहर आया और सखियों समेत महल्लिका को देखकर उससे बोला कि हे सुन्दरी तुमने इस अभ्यागतको कृतार्थ किया अब आसन ग्रहणकर बैठके इस स्थानको भी कृतार्थ करो यह सुनकर महल्लिका अपनी सखियो समेत बैठगई और सूर्य्यप्रभ भी प्रज्ञाढ्य समेत बैठकर बोला कि यद्यपि तुमने सभामें सबके समानही मुझे देखकर मेरा निरादरकिया तथापि हेचपलनेत्रे तुम्हारे दर्शन मात्रसेही तुम्हारे सौन्दर्य्यके समान नृत्यसे मेरे नेत्रसफल होगये सूर्य्यप्रभके यह वचनसुनकर महल्लिका बोली कि हे आर्यपुत्र इसमे मेरा अपराध नहीं है यह अपराध तो उसकाहै जिसने सभामे मेरा नृत्य बिगाड़ कर मुझे लज्जित किया यह सुनकर सूर्य्यप्रभने मुस्कुराकर कहा कि मै हारगया और उसका हाथ अपने हाथसे पकड़ा तब महल्लिकाने कहा कि हे आर्यपुत्र मे पिताके वशीभूत कन्याहू इससे मानो बलात्कारमे भयभीत मेरे स्वेद युक्त हाथको छोड दो यह सुनकर प्रज्ञाढ्य बोला कि हे राजपुत्री क्या कन्याओंका गान्धर्व विवाह नहीं होताहै तुम्हारेपिता तुम्हारा अभिप्राय जानचुकेहै इससे वह तुमको इनके सिवाय किसी दूसरे को नहीं देंगे और इनका सत्कार भी उनको अवश्य करनाहै इससे भय न करो यह प्रथम समागम व्यर्थ न होना चाहिये २६० इसप्रकार प्रज्ञाढ्यके कहतेही कहते कलावती भीतर जगीऔर सूर्य्यप्रभको शय्यापरन देखके उद्विग्नहोकर वाहर चलीआई और महल्लिकाके साथ सूर्य्यप्रभको देखकर एकसाथही कुपित लज्जित तथा भयभीत होगई महल्लिका भी उसेदेखकर भीति युक्त होकर लज्जित होगई और सूर्य्यप्रभ चित्रमे लिखाहुआ सा रहगया उससमय कलावतीने यहसोचकर कि इमनेमुझे देखलियाहै अबजाना ठीकनहीं है महल्लिकाके पासजाके ईर्ष्यासे बोली कि हे सखीकुशल तो है आज तुम रात्रि को यहा कहां आईहो यह सुनकर महल्लिका ने कहा कि मेरा तो यह घरही है तुम अन्य पातालमे यहा आईहो इसलिये मेरी अतिथिहो यह सुनकर कलावतीने हँसकर कहा कि ठीक है यह तो मालूमही है कि यहा जो कोई आताहै उसका तुम अतिथि सत्कार करती हो कलावती के यह वचन सुनकर महल्लिका बोली कि मैने तो प्रेम पूर्वक तुमसे कहा तुम द्वेषसे ऐसे निष्ठुर वचन क्यो कहतीहो हे निर्लज्जे क्या मैभी तुम्हारे समानहू क्या मैभी बन्धुओंकी आज्ञाके विना अकेली पराये स्थान में जाकर पराई शय्यापर सोती हू मै तो अपने ही स्थानमे अपने पिताके अतिथिको देखने के लिये दो सखियोंको साथ में लेकर अतिथि सत्कार करनेके लिये आईहू जब यह मन्त्री मुझे धोखा देकर भीतरगयाथा तभी मैने जान लियाथा तुमने आप आकर और भी प्रकट करदिया महल्लिकाके यह बचन सुनकर कलावती क्रोधयुक्त तिरछी दृष्टिसे प्रियको देखतीहुई अपने घरको चलीगई और महल्लिका भी हे बहुवल्लभ अब मै जानीहू ऐसा क्रोध पूर्वक कहकर चलीगई उससमय सूर्य्यप्रभ जो विमन हो गया सो तो उचितनहीं है क्योंकि उसका मन प्रियाओंके साथही चलागया तदनन्तर सूर्य्यप्रभने प्रभास और प्रहस्तको जगाकर कलावती तथा महल्लिकाने यहासे जाकर क्या कियाहै यह वृत्तान्त जाननेको भेजा और आप प्रज्ञाढ्यके साथ बैठकर उनकी प्रतीक्षा करनेलगा कुछ कालके उपरान्त कलावती के

वृत्तान्तको जानकर प्रभास लौटकर आया और कहनेलगा कि यहांसे दूसरे पातालमें कलावतीके स्थान पर जाकर मैंने अपनी विद्यामें अपनेको छिपाकर बाहर दो चेरियोंकी यह वार्त्तालाप सुनी एकनेकहा हे सखी आज कलावती उद्विग्नचित्त क्यों है दूसरीने उत्तरदिया कि हे सखी इसका यह कारणहै कि चौथे पातालमें पुण्डरीकका अवतार अपने रूपसे कामदेवको भी जीतनेवाला सूर्यप्रभ स्थित है उसके पास इसनेजाकर अपना शरीर उसके अर्पण किया आजरात्रिको भी यह उसीके पासगई थी वहां प्रह्लाद की पुत्री महल्लिका भी कुछ रात्रिगये आई थी ईर्ष्यासे उसके साथ कलहकरके यह यहां आकर अपने प्राण देनेको उद्यत हुई तब इसकी सुखावती नाम बहिनने सम्पूर्ण वृत्तान्त पूछकर मृत्यु से इसको निवारण किया इसी से यह अपनी बहिन के साथ शय्या पर जाके लेटरही है चेरियो की इस वार्त्तालापको सुनकर मैंने भीतर जाके कलावती और सुखावतीको पलँग परसोते देखा उन दोनोकी एक समान आकृति है प्रभासके इसप्रकार कहतेही प्रहस्त भी आगया और पूछने पर कहनेलगा कि मैं जब यहां से महल्लिका के यहां पहुंचा तब वह अपनी दोनों सखियोके साथ मन्दिर में गई मैंभी विद्या की युक्ति से अलक्षित होकर उसीके साथ चलागया वहां मैंने उसीके समान उसकी बारह सखी देखीं वह बारहों रत्नके पलँगपर महल्लिका को घेरकर बैठगई और उनमेंसे एक बोली कि हे सखी आज तुम अकस्मात् उदासीन क्यों होरही हो तुम्हारे विवाहकी तैयारी होरही है इससमय में भी विषादका क्या कारणहै यहसुनकर महल्लिकानेकहा कि कैसा मेराब्याह किसकेसाथ मेराब्याह होगा और तुमसेकिसने कहाहै यहसुनकरसब सखी बोलीं कि प्रातःकाल सूर्यप्रभके साथ तुम्हारेविवाहके होनेका निश्चयहै तुम्हारी माताने तुम्हारे परोक्षमें हमसे यहकहाहै और तुम्हारे शृंगार करनेकी आज्ञादी है हेसखी तुम धन्यहो जिसे सूर्यप्रभ पति मिलेगा जिसके स्वरूप से मोहितहोकर स्त्रिया रात्रिको सोती नहीं हैं हम लोगोंको यह विषादहै कि अब कहीं तुम और कहां हम ऐसे सुन्दर पतिको पाकर तुम हमारा स्मरणभी नहींकरोगी उनके यह वचन सुनकर महल्लिकाबोली कि क्या तुमने उसे कहीं देखाहै और तुम्हारा चित्त उसपर चलायमान हुआहै तब उन्होंने कहा कि हमने महलपरसे उसे देखाहै और ऐसीकौनस्त्री है जिसकाचित्त उसेदेखकर चलायमान न होय यहसुनकर महल्लिकाबोली मैं अपने पितासेकहकर तुमसबका विवाहभी उसीकेसाथ करवाऊंगी तो हमारा तुम्हारा वियोग नहींहोगा यहसुनकर सखियोंनेकहा कि ऐसानकरना यहउचित नहीं है हमेंइसबातपर लज्जाहोती है उनके यह वचन सुनकर महल्लिकानेकहा कि इसमेंअयोग्य क्याहै केवलमेराही उसकेसाथ विवाह न होगा किन्तुसम्पूर्ण दैत्यराज अपनी२ कन्या उसे देंगे और बहुतसी राजकन्याओं के साथ उसका विवाह भी होचुकाहै जो अब पृथ्वीपर वर्त्तमान है और बहुतसी विद्याधरियों के साथ भी इसका विवाह होगा उनमें जो तुम लोगोंका भी विवाह उसके साथ होजाय तो मेरी क्या हानिहै प्रत्युत (बल्कि) सब सखियोंके साथ रहनेमें बड़ा सुखहोगा और जो अन्य सपत्नी होंगी वह मेरे विपरीतहोंगी क्योंकि उनसे मेरा किसीप्रकारका परिचय नहीं होगा और तुम लोगोंको इसमें लज्जाही क्याहै मैं सब यत्न करलूंगी उन सबकी यहवार्त्तालाप सुनकर मैं आपके पासचलाआया

प्रहस्तके बचन सुनकर सूर्य्यप्रभ आनन्द से उसरात्रिको सोयानहीं और प्रातःकाल अपने मन्त्रियों समेत सुनीथ तथा मयासुर के साथ दैत्यराज प्रह्लाद के दर्शनोंको सभामें गया वहां प्रह्लादने सबका आदर करके सुनीथ से कहा कि मैं अपनी महल्लिका कन्या सूर्य्यप्रभको दूंगा क्योंकि मुझे इसका अतिथि सत्कार करना और तुमको प्रसन्न करना उचितहै प्रह्लादके यह बचन सुनीथने अंगीकार कर लिये तब वेदी बनवाकर उसके मध्यमें अग्निबलाकर अग्निकी प्रभासे देदीप्यमान रत्नवाले खम्भोंसे युक्त उस वेदीमें प्रह्लादने अपने बडे ऐश्वर्य्य के अनुसार रत्नादि धनसमेत अपनी महल्लिका कन्या सूर्य्यप्रभको सकल्पकरदीनी और देवता लोगोको जीतकर लायेगए सुमेरुके शिखरोंके समान बहुतसे बहुमूल्य रत्न अपनी कन्या तथा जामाताको दिये उससमय विवाह विधिके उपरान्त महल्लिकाने प्रह्लादसे एकान्तमें कहा कि हे तात मेरी उन बारह सखियोंका भी विवाह इसीके साथ करदीजिये क्यों कि वह सब मुझे अत्यन्त प्यारी हैं यह सुनकर प्रह्लादने कहा कि हेपुत्री वह मेरे भाईके आधीनहै क्योंकि वही उन्हें स्वर्गसे लायाथा इससे मुझे उनका देना योग्य नहीं है इसके उपरान्त विवाहके उत्सवसे उसदिन के व्यतीत होजानेपर रात्रिकेसमय सम्पूर्ण कामके उपचारोंसेयुक्त शयनस्थानमें सूर्य्यप्रभ महल्लिकाके साथगया और उसके साथ अपनी इच्छाकेअनुसार दिव्यभोगोंसे रात्रिको व्यतीतकरके प्रातःकाल सम्पूर्ण परिकर समेत प्रह्लादकी सभामें गया वहा अमीलनाम दैत्यने प्रह्लादादिकों से कहा कि आज आप सबलोग मेरे स्थानपर आइये वहा मैं सूर्य्यप्रभका अतिथि सत्कारकरूं और जो आप कहिये तो अपनी कन्याकलावतीका विवाहभी इसके साथकरदू उसके यहवचन सबने स्वीकार करलिये और उसी समय सूर्य्यप्रभादिकोंको लेकर द्वितीयपातालकोगये वहा अमीलने सूर्य्यप्रभको अपनी कलावतीकन्या जिसने कि अपनाशरीर प्रथमहीसे उसके अर्पणकर रक्खाथादी विवाहकरके सूर्य्यप्रभ उसेलेकर भोजनादिकेपीछे प्रह्लादकेयहा जाकररहा औरभोग विलाससे वह रात्रिव्यतीतकी दूसरेदिन दुरारोहनामदैत्य इन सबको इसीप्रकार निमन्त्रणदेकर पचमपातालमें बुलालेगया और वहाँ अपनी कुमुदावती नाम कन्याकाविवाहसूर्य्यप्रभके साथकरादिया क्योंकि उसेभी सूर्य्यप्रभका अतिथि सत्कारकरना उचित था विवाहकरकेसबके साथ सूर्य्यप्रभ उसदिनको व्यतीतकरके रात्रिकेसमय शयनस्थानमें गया वहाँ त्रैलोक्यसुन्दरी नवीनसगममें उत्कण्ठित प्रेमयुक्त मुग्धाकुमुदावतीकेसाथरात्रिभररहा प्रातःकाल तन्तुकच्छ नामदैत्यराजप्रह्लादादिकोंसमेत सूर्य्यप्रभको निमत्रणदेकर सातवेंपातालमें अपनेस्थानपरलेगया वहाँ उसनेसूर्य्यप्रभको तप्तसुवर्णके समान कान्तिवाली रत्नोंकेआभूषणो से युक्त मनोवतीनामकन्या दी तब सर्य्यप्रभ ने उत्सव से उसदिनको व्यतीत करके मनोवती के साथ नवीन सगमका सुखभोग करके वहरात्रिभी व्यतीत की दूसरेदिन सुमायनामदैत्य राजनिमन्त्रण करके सूर्य्यप्रभसमेत सबको छठेपाताल में अपने स्थान मे लेगया वहाँ उसने भी दूर्वाके समान श्यामलाङ्गी कामदेवके बाणोंकी मूर्त्तिके समान अपनी सुभद्रानामकन्या सूर्य्यप्रभको दी सुरतके योग्य षोडशवर्ष की अवस्थावाली सुभद्रा के साथ उसके पूर्णचन्द्रमारूपी म [illegible] ने उसदिन की रात्रिव्यतीत की २३२ दूसरे दिन

राजावलि सूर्य्यप्रभको परिकर समेत अपने तृतीयपातालको लेगया और वहाँ नवीन पल्लवों के समान कोमल अंगवाली माधवी मंजरी के समान शोभायमान अपनी सुन्दरी नाम कन्या सूर्य्यप्रभ को देदी फिर विवाहकरके सूर्य्यप्रभ ने सुन्दरी के साथ उसदिन की रात्रि बड़े आनन्दपूर्वक व्यतीतकी दूसरेदिन मयासुरने भी सूर्य्यप्रभको अपने चौथे पाताल में अपनीमाया से बनाये हुए विचित्र रत्नों से जटित शोभासे प्रतिक्षण नवीन से मालूम होनेवाले अपने मन्दिर में लेजाकर अपनी मूर्त्तिमती शक्ति के समान सुमायानाम कन्या देदी यह मनुष्ययोनि में उत्पन्नहुआ था इसी हेतुसे इमने इमको कन्या देना अयोग्य नहीं समझा सूर्य्यप्रभ उस सुमायाके साथ विवाह करके विद्याके प्रभावसे अनेक स्वरूप धारण करके सम्पूर्ण अपनी स्त्रियोंके साथ एक साथही रमण करताहुआ सुखपूर्वक रहनेलगा परन्तु वह अपने मुख्यशरीर से अत्यन्तप्रिय प्रह्लादकी कन्या महल्लिकाके ही साथ रहता था एकदिन सूर्य्यप्रभ ने महल्लिका से पूछा कि हे प्रिये वे जो दोसखी तुम्हारेसाथ आईं थीं वह अब नहीं दिखाई देती हैं वह कौन थीं और अब कहाँगईं यह सुनकर महल्लिकाने कहा कि आपने मुझे खूब याद दिलाई वह दोही नहीं हैं किन्तु बारह हैं मेरा पितृव्य स्वर्ग से उन्हें हरलाया था उनमें से अमृतप्रभा तथा केशिनी नाम दो मेरी सखी पर्व्वतमुनि की पुत्री हैं कालिन्दी, भद्रिका, तथा दर्पकमाला यह तीनों देवलमुनि की कन्याहैं सौदामिनी तथा उज्ज्वला यह दोनों हाहानाम गन्धर्वकी पुत्रियाँहैं पीवरा,हूहूनाम गन्धर्वकी पुत्रीहै अंजनिका काल की पुत्री है केसरावली पिंगल नाम गणकी पुत्रीहै मालिनी नाम एक सखी कवलनाम देवता की पुत्रीहै और मन्दारमाला वसु देवता की पुत्रीहै यह बारहों मेरी सखियां अप्सराओंसे उत्पन्नहुईहैं मैं इनका विवाहभी तुम्हारेसाथ किया चाहतीहूं जिससे मेरा और इनसबका वियोग कभी न होय मैं उनसे प्रतिज्ञा भी करचुकीहूं क्योंकि उनपर मेरा अत्यन्त स्नेह है मैंने अपने पिता से भी यहबात कही थी परन्तु उन्होंने अपने भाईकी अपेक्षासे रोकरक्खा यह सुनकर सूर्य्यप्रभ ने आश्चर्य्ययुक्तहोकरकहा कि हेप्रिये तुमबड़ी महानुभावहो इससे ऐसाकहतीहो परन्तु मैं इन्हेंकेसेस्वीकार करूंगा सूर्य्यप्रभ के यह वचन सुनकर महल्लिका क्रोधयुक्त होकर बोली कि मेरे सन्मुख ही अन्य स्त्रियों का ग्रहण करते हो और मेरी सखियों से अनिच्छा प्रकटकरतेहो जिनके बिना मुझे क्षणभर भी चैननहीं पड़ता यह सुनकर सूर्य्यप्रभ ने प्रसन्नहोके उसके वचन स्वीकार करलिये तब महल्लिका ने सूर्य्यप्रभ को अपने पहले पातालमें लेजाकर अपनी बारहोसखी सूर्य्यप्रभको देदीं उन अमृतप्रभा आदिक बारहों दिव्यस्त्रियोंकोपाकर वहरात्रिउसने उन्हींकेसाथ आनन्दपूर्वक व्यतीतकी प्रातःकालसूर्य्यप्रभने महल्लिका से पृथक् प्रभासके द्वारा उन बारहो को चौथे पाताल में लाकर छिपारक्खा तदनन्तर प्रह्लादसे मिलने को सभा में गया वहाँ प्रह्लाद ने मयासुर सुनीथ तथा सूर्य्यप्रभादिकों से कहा कि तुम सबलोग दिति और दनुके दर्शन करने को जाओ प्रह्लादकी यहआज्ञा पाकर वह सम्पूर्ण लोग भूतासननाम विमान पर चढ़के सुमेरुपर्व्वत के शिखरपर कश्यप जी के आश्रम को गये वहाँ जाकर मुनिजनों से निवेदन करके आज्ञापाकर उन सबोंने दिति तथा दनुके दर्शन किये और उनकेचरणोंपर गिरकर प्रणामकिया

प्रहस्तके वचन सुनकर सूर्य्यप्रभ आनन्द से उसरात्रिको सोयानहीं और प्रातःकाल अपने मन्त्रियों समेत सुनीथ तथा मयासुर के साथ दैत्यराज प्रह्लाद के दर्शनोंको सभामें गया वहा प्रह्लादने सबका आदर करके सुनीथ से कहा कि मैं अपनी महल्लिका कन्या सूर्य्यप्रभको दूंगा क्योंकि मुझे इसका अतिथि सत्कार करना और तुमको प्रसन्न करना उचितहै प्रह्लादके यह वचन सुनीथने अंगीकार कर लिये तब वेदी वनवाकर उसके मध्यमें अग्निवलाकर अग्निकी प्रभासे देदीप्यमान रत्नवाले खम्भोंसे युक्त उस वेदीमें प्रह्लादने अपने बडे ऐश्वर्य्य के अनुसार रत्नादि धनसमेत अपनी महल्लिका कन्या सूर्य्यप्रभको सकल्पकरदीनी और देवता लोगोको जीतकर लायेगए सुमेरुके शिखरोंके समान बहुतसे बहु मूल्य रत्न अपनी कन्या तथा जामाताको दिये उससमय विवाह विधिके उपरान्त महल्लिकाने प्रह्लादसे एकान्तमें कहा कि हे तात मेरी उन बारह सखियोका भी विवाह इसीके साथ करदीजिये क्यो कि वह सब मुझे अत्यन्त प्यारी हैं यह सुनकर प्रह्लादने कहा कि हेपुत्री वह मेरे भाईके आधीनहै क्योंकि वही उन्हें स्वर्गसे लायाथा इससे मुझे उनका देना योग्य नहीं है इसके उपरान्त विवाहके उत्सवसे उसदिन के व्यतीत होजानेपर रात्रिकेसमय सम्पूर्ण कामके उपचारोसेयुक्त शयनस्थानमें सूर्य्यप्रभ महल्लिकाके साथगया और उसके साथ अपनी इच्छाकेअनुसार दिव्यभोगसे रात्रिको व्यतीतकरके प्रातःकाल सम्पूर्ण परिकर समेत प्रह्लादकी सभामें गया वहा अमीलनाम दैत्यने प्रह्लादादिकों से कहा कि आज आप सबलोग मेरे स्थानपर आइये वहा मैं सूर्य्यप्रभका अतिथि सत्कारकरू और जो आप कहिये तो अपनी कन्याकलावतीका विवाहभी इसके साथकरदू उसके यहवचन सबने स्वीकार करलिये और उसी समय सूर्य्यप्रभादिकोंको लेकर द्वितीयपातालकोगये वहा अमीलने सूर्य्यप्रभको अपनी कलावतीकन्या जिसने कि अपनाशरीर प्रथमहीसे उसके अर्पणकर रक्खाथादी विवाहकरके सूर्य्यप्रभ उसेलेकर भोज नादिकेपीछे प्रह्लादकेयहा जाकररहा औरभोग विलाससे वह रात्रिव्यतीतकी दूसरेदिन दुरारोहनामदैत्य इन सबको इसीप्रकार निमन्त्रणदेकर पचमपातालमे बुलालेगया और वहाँ अपनी कुमुदावती नाम कन्याकाविवाहसूर्य्यप्रभके साथकरदिया क्योंकि उसेभी सूर्य्यप्रभका अतिथि सत्कारकरना उचित था विवाहकरकेसबके साथ सूर्य्यप्रभ उसदिनको व्यतीतकरके रात्रिकेसमय शयनस्थानमें गया वहाँत्रैलोक्यसुन्दरी नवीनसगममे उत्कण्ठित प्रेमयुक्त मुग्धाकुमुदावतीकेसाथरात्रिभररहा प्रातःकाल तन्तुकच्छ नामदैत्यराजमहादादिकोंसमेत सूर्य्यप्रभको निमत्रणदेकर सातवेंपातालमें अपनेस्थानपरलेगया वहाँ उसनेसूर्य्यप्रभको तप्तसुवर्णके समान कान्तिवाली रत्नोंकेआभूषणों से युक्त मनोवतीनामकन्या दी तब सूर्य्यप्रभ ने उत्सव से उसदिनको व्यतीत करके मनोवती के साथ नवीन सगमका सुखभोग करके वहरात्रिभी व्यतीत की दूसरेदिन सुमायनामदैत्य राजनिमन्त्रण करके सूर्य्यप्रभसमेत सबको छठेपाताल में अपने स्थान में लेगया वहाँ उसनेभी दूर्वाके समान श्यामलाङ्गी कामदेवके बाणोंकी मूर्त्तिके समान अपनी सुभद्रानामकन्या सूर्य्यप्रभको दी सुरतके योग्य षोडशवर्ष की अवस्थावाली सुभद्रा के साथ उसके पूर्णचन्द्रमारूपी मुखको पान करके सूर्य्यप्रभ ने उसदिन की रात्रिव्यतीत की ३६४ दूसरे दिन

समय आई और प्रणाम करतेहुए मयासुरादिकोंको आशीर्वाद देकर पतिको आह्निकके समयका स्मरण दिवाकर वहीं उस समर्थ लोकपालों समेत इन्द्र कश्यप मुनि के दर्शन को आया और कश्यप मुनि की वन्दना करके सूर्य्यप्रभको क्रोध सहित देखने लगा और मयासुर से बोला क्या यही बालक विद्याधरों का चक्रवर्ती होना चाहता है यह इतनेही में क्यों सन्तुष्ट होगया इन्द्र पदवी की क्यों नहीं इच्छा करता यह सुनकर मय दैत्यने कहा कि हे देवेश आपको परमेश्वर ने इन्द्र नियत किया है और इसे विद्याधरों का चक्रवर्ती होने के लिये उत्पन्न किया है मयासुर के यह वचन सुनकर इन्द्र ने हँसकर कहा कि इसकी ऐसी सुन्दर आकृति के लिये इतनी अभिलाषा बहुत थोड़ी है तब मयासुर ने उत्तर दिया कि जहां श्रुतशर्म्मा विद्याधरोंके चक्रवर्त्ती होनेके योग्यहै वहां इसकी आकृति इन्द्र पदवी के योग्य अवश्यहै इसप्रकार कहते हुए मयासुर केऊपर क्रोध करके इन्द्र वज्र मारनेके लिये खड़ा हुआ इन्द्रके साहस कोदेखकर कश्यप मुनिने हुंकार किया और उनकी दिति आदिक स्त्रियां धिक्कार कहने लगीं और उनकेमुख भी क्रोधसे रक्त होगये तब इन्द्र शापके भयसे अपने शस्त्रको रोककर बैठ गया और देवता तथा दैत्योंके उत्पन्न करनेवाले कश्यप मुनि तथा उनकी स्त्रियों के चरणों पर गिरकर हाथ जोड़कर यह विज्ञापना करने लगा कि हे भगवन् मैंने श्रुतशर्म्मा को जो विद्याधरों का चक्रवर्त्ती बनायाहै उस अधिकार को यह सूर्य्यप्रभ लेना चाहता है और यह मयासुर उसके सम्बन्ध में सब प्रकार का उद्योग करने को उद्यतहै इन्द्रके यह वचन सुनकर दिति तथा दनु सहित कश्यप मुनि बोले कि हे इन्द्र तुम श्रुतशर्म्माको विद्याधरोंका चक्रवर्त्ती बनाया चाहतेहो और श्रीशिवजी सूर्य्यप्रभ को बनाया चाहते हैं उनकी इच्छाको कौन मिथ्या करसक्ता है उन्हींकी आज्ञासे यह मयासुर भी उद्योग करता है इससे तुम इसके ऊपर क्यों क्रोध करतेहो इसमें इसका कौन अपराधहै यहबड़ा धर्मात्मा ज्ञानी गुणवान् तथा गुरुभक्तहै जो तुम इसको मारते तो हमारी क्रोधाग्नि तुमको भस्म कर देती तुम इसे नहीं मारसक्ते हो क्या तुम्हें इसका प्रभाव नहीं मालूमहै कश्यप मुनि के इसप्रकार कहनेसे इन्द्रके लज्जित तथा भयभीत होनेपर अदिति ने कहा कि वह श्रुतशर्म्मा कैसाहै उसे यहां लाकर दिखाओ यह सुनकर इन्द्रने मातलि को भेजकर श्रुतशर्म्माको बुला भेजा श्रुतशर्म्माको आकर विनय करते देखकर अदिति आदिक स्त्रियों ने कश्यपजीसे कहा कि सूर्य्यप्रभ तथा श्रुतशर्म्मा इन दोनों में कौन रूपवान् तथा अधिक शुभ लक्षणवान्है तब कश्यप मुनिने कहा कि श्रुतशर्म्मा सूर्य्यप्रभ के मन्त्री प्रभास के समान भी नहीं है फिर सूर्य्यप्रभका क्या कहनाहै क्योंकि यह ऐसे दिव्य रूप लक्षणोंसे युक्त है कि जिनसे यह उद्योगकरै तो इन्द्र पदवी भी इसे मिल सक्ती है कश्यप मुनिके इन वचनोंपर सबको विश्वासहोगया तब कश्यपजी ने इन्द्रकेही आगे मयासुरको यह वरदान दिया कि हे पुत्र मारनेके लिये इन्द्रके उद्यत होनेपरभी तुम ने जो क्रोध नहीं किया इससे तुम अजर तथा अमरहोगे तुम्हारा सम्पूर्ण शरीर वज्रमय होजायगा उसमें किसी प्रकारका घाव न होगा और यह सुनीथ तथा सूर्य्यप्रभ भी तुम्हारे समान बड़े बलवान् होंगे कोई शत्रु इनको जीत न सकेगा और आपत्तिके समय जब तुम स्मरण करोगे तब मेरा पुत्र ग-

वह दोनों उन्हे प्रणाम करते देखकर उनके मस्तकोंका चुम्बन करके आनन्दसे मयासुर को आशीर्वाद देनेलगीं और आशीर्वाद देकर कहनेलगीं कि हे पुत्र तुम बडे पुण्यात्माहो तुम्हारे पुत्र सुनीथको आज पुनर्जीवित देखकर हमारे नेत्र सफलहुए और सूर्य्यप्रभके रूपमे उत्पन्न हुए दिव्य आकृतिधारी बडे गुणवान् भावी कल्याणके सूचितकरनेवाले शुभलक्षणोंमेयुक्त सुमुण्डीकको देखकर हमें आनन्दसे अपने चित्तमेंभी नहीं समाती है अब हे वत्स प्रजापति आर्य्यपुत्र कश्यपजीके देखनेकेलिये तुमलोग जाओ उनके दर्शनसे तुम्हारे मनोरथ सिद्ध होंगे और उनकी आज्ञा माननेसे तुम्हारा कल्याण होगा ३६६ उनके यह वचनसुनकर सब लोगों ने दिव्य आश्रम में जाकर कश्यपजीके दर्शन किये पिघलेहुए शुद्ध सुवर्ण के समान कान्तिवाले तेजोमय अग्निकी ज्वालाओं के समान पीलीजटाओं को धारण कियेहुए अग्निके समान दुराधर्ष कश्यप मुनिको दिव्य आश्रममे देखकर मयादिक सम्पूर्ण लोगोंने उनके चरणोंपर गिरकर प्रणाम किया तब कश्यपजी ने उन सबको वेदोक्त उचित आशीर्वाद देकर कहा कि मुझे बडाही आनन्दहै कि मैने एक साथही तुम सबलोगोंको देखा हेमय तुम बडे प्रशंसनीय हो क्योंकि तुमने सन्मार्ग का त्याग नहीं कियाहै इसीसे तुमको सम्पूर्ण विद्या प्राप्त हुई हैं हे सुनीथ तुम धन्यहो तुम्हारा भाग्यवशसे पुनर्जीवन हुआ है हे सूर्य्यप्रभ तुम बडे पुण्यवान्हो क्योंकि तुम विद्याधरोंके चक्रवर्ती होगे अब हे दैत्यलोगो हमारे कहनेसे कभी धर्म्मका त्याग न करना इसीसे तुम परम सम्पत्तियों को पाकर अत्यन्त सुखका भोग करोगे और पहले के समान तुम्हारी शत्रुओं से पराजय नहीं होगी देखो अधर्म्मी दैत्य लोग विष्णुभगवानके चक्रकेद्वारा नाशको प्राप्तहुए हैं हेसुनीथ जो दैत्य देवता लोगो के युद्धमें मारेगये थे वही सब मृत्यु लोकमे उत्पन्नहुए हैं सुमुण्डीक सूर्य्यप्रभ नामसे उत्पन्नहुआ और अन्य सबदैत्यलोग इसीकेबन्धु तथा मित्रहुए हैं देखो जो शम्बरनाम महादैत्य था वह प्रहस्तनाम इसका मन्त्रीहुआ है त्रिशिरानाम दैत्य इसका सिद्धार्थनाम मन्त्रीहुआहै वातापी नाम दैत्य इसका प्रज्ञाढ्य नाम मन्त्रीहुआ है उलूकनाम दैत्य इसका मित्र शुभंकर नाम हुआहै बीतभीतनाम इसका मित्रकाल नाम दैत्य था इसका भासनाम मन्त्री वृषपर्व्वानाम दैत्य था इसका प्रभास नाम मन्त्री प्रबलनाम दैत्य था जिसमहात्माने निपक्षी देवता लोगोंके भी याचना करनेपर अपना रत्नमय शरीर टुकडे २ करके देदिया जिससे कि यह सम्पूर्ण रत्न उत्पन्नहुए हैं इसीबात से प्रसन्न होकर भगवती पार्वतीजी ने इसे यह वरदान दियाहै कि यह दूसरेजन्ममे अत्यन्तबलवान् तथा शत्रुओं को दुराधर्ष होगा इसीसे यह प्रभास ऐसा बलवान् हुआहै जो सुन्द उपसुन्द नाम दो दैत्य थे वही इसके सर्वदमन और भयकर नाम मन्त्रीहुए हैं और हयग्रीव तथा विकटाक्ष नाम जो दो दैत्यथे वही इसके स्थिर बुद्धि तथा महाबुद्धिनाम मन्त्रीहुएहैं और जो इसके अन्यमन्त्री बन्धु तथा मित्रादिकहैं वह सब भी दैत्यों के अवतारहैं जिन्होंने पूर्व्वजन्ममें अनेकबार इन्द्रादि देवताओं को जीताहै इससे तुमलोगों का पक्ष फिर कर वृद्धिको प्राप्तहुआहै धैर्य्यधरो जो धर्मके अनुसार चलेजाओगे तो परम सम्पत्ति को पाओगे कश्यपमुनिके इसप्रकार कहनेपर उनकी अदिति आदिक स्त्रिया मध्याह्न कालिक सोमपानके

समय आई और प्रणाम करतेहुए मयासुरादिकोंको आशीर्वाद देकर पतिको आह्निकके समयका स्मरण दिवाकर यहीं उस समय लोकपालों समेत इन्द्र कश्यप मुनि के दर्शन को आया और कश्यप मुनि की वन्दना करके सूर्य्यप्रभको क्रोध सहित देखने लगा और मयासुर से बोला क्या यही बालक विद्याधरों का चक्रवर्त्ती होना चाहता है यह इतनेही में क्यों सन्तुष्ट होगया इन्द्र पदवी की क्यों नहीं इच्छा करता यह सुनकर मयदैत्यने कहा कि हे देवेश आपको परमेश्वर ने इन्द्र नियत किया है और इसे विद्याधरों का चक्रवर्त्ती होने के लिये उत्पन्न किया है मयासुर के यह वचन सुनकर इन्द्र ने हँसकर कहा कि इसकी ऐसी सुन्दर आकृति के लिये इतनी अभिलाषा बहुत थोड़ी है तब मयासुर ने उत्तर दिया कि जहां श्रुतशर्म्मा विद्याधरोंके चक्रवर्त्ती होने के योग्य है वहां इसकी आकृति इन्द्र पदवी के योग्य अवश्य है इसप्रकार कहते हुए मयासुर के ऊपर कोप करके इन्द्र वज्र मारने के लिये खड़ा हुआ इन्द्रके साहस को देखकर कश्यप मुनिने हुंकार किया और उनकी दिति आदि स्त्रियां धिक्कार२ कहने लगीं और उनके मुख भी क्रोधसे रक्त होगये तब इन्द्र शापके भयसे अपने शस्त्रको रोककर बैठ गया और देवता तथा दैत्योंके उत्पन्न करनेवाले कश्यप मुनि तथा उनकी स्त्रियों के चरणों में गिरकर हाथ जोड़कर यह विज्ञापना करने लगा कि हे भगवन् मैंने श्रुतशर्म्मा को जो विद्याधरोंका चक्रवर्त्ती बनायाहै उस अधिकारको यह सूर्य्यप्रभ लेना चाहता है और यह मयासुर उसके साधन में सब प्रकार का उद्योग करने को उद्यत है इन्द्रके यह वचन सुनकर दिति तथा दनु सहित कश्यप मुनि बोले कि हे इन्द्र तुम श्रुतशर्म्माको विद्याधरोंका चक्रवर्त्ती बनाया चाहतेहो और श्रीशिवजी सूर्य्यप्रभ को बनाया चाहते हैं उनकी इच्छाको कौन मिथ्या करसक्ता है उन्हींकी आज्ञासे यह मयासुर भी उद्योग करता है इससे तुम इसके ऊपर क्यों कोप करतेहो इसमें इसका कौन अपराध है यह बड़ा धर्मात्मा ज्ञानी गुणवान् तथा गुरुभक्त है जो तुम इसको मारते तो हमारी क्रोधाग्नि तुमको भस्म कर देती तुम इसे नहीं मारसक्ते हो क्या तुम्हें इसका प्रभाव नहीं मालूम है कश्यप मुनि के इसप्रकार कहनेसे इन्द्रके लज्जित तथा भयभीत होनेपर अदिति ने कहा कि वह श्रुतशर्म्मा कैसा है उसे यहां लाकर दिखाओ यह सुनकर इन्द्रने मातलि को भेजकर श्रुतशर्म्माको बुला भेजा श्रुतशर्म्माको आकर विनय करते देखकर अदिति आदि स्त्रियों ने कश्यपजीसे कहा कि सूर्य्यप्रभ तथा श्रुतशर्म्मा इन दोनों में कौन रूपवान् तथा अधिक शुभ लक्षणवान् है तब कश्यप मुनिने कहा कि श्रुतशर्म्मा सूर्य्यप्रभ के मन्त्री प्रभास के समान भी नहीं है फिर सूर्य्यप्रभका क्या कहनाहै क्योंकि यह ऐसे दिव्य रूप लक्षणोंसे युक्त है कि जिनसे यह उद्योगकरे तो इन्द्र पदवी भी इसे मिल सक्ती है कश्यप मुनिके इन वचनोंपर सबको विश्वास होगया तब कश्यपजी ने इन्द्रके ही आगे मयासुरको यह वरदान दिया कि हे पुत्र मारने के लिये इन्द्रके उद्यत होनेपरभी तुम ने जो क्रोध नहीं किया इससे तुम अजर तथा अमर होगे तुम्हारा सम्पूर्ण शरीर वज्रमय होजायगा उसमें किसी प्रकारका घाव न होगा और यह सुनीथ तथा सूर्य्यप्रभ भी तुम्हारेही समान बड़े सत्त्ववान् होंगे कोई शत्रु इनको जीत न सकेगा और आपत्तिके समय जब तुम स्मरण करोगे तब मेरा पुत्र ग-

वह दोनों उन्हे प्रणाम करते देखकर उनके मस्तकोका चुम्बन करके आनन्दसे मयासुर को आशीर्वाद देनेलगीं और आशीर्वाद देकर कहनेलगीं कि हे पुत्र तुम बडे पुण्यात्माहो तुम्हारे पुत्र सुनीथको आज पुनर्जीवित देखकर हमारे नेत्र सफलहुए और सूर्य्यप्रभके रूपमे उत्पन्न हुए दिव्य आकृतिधारी बडे गुणवान् भावी कल्याणके सूचितकरनेवाले शुभलक्षणोंसेयुक्त सुमुण्डीक को देखकर हम आनन्दसे अपने चित्तमेभी नहीं समाती हैं अब हे वत्स प्रजापति आर्य्यपुत्र कश्यपजीके देखनेकेलिये तुमलोग जाओ उनके दर्शनसे तुम्हारे मनोरथ सिद्ध होंगे और उनकी आज्ञा माननेसे तुम्हारा कल्याण होगा २६८ उनके यह वचनसुनकर सब लोगो ने दिव्य आश्रम मे जाकर कश्यपजीके दर्शन किये, पिघलेहुए शुद्ध सुवर्ण के समान कान्तिवाले तेजोमय अग्निकी ज्वालाओ के समान पीलीजटाओंको धारण कियेहुए अग्निके समान दुराधर्ष कश्यप मुनिको दिव्य आश्रममे देखकर मयादिक सम्पूर्ण लोगोंने उनके चरणोपर गिरकर प्रणाम किया तब कश्यपजी ने उन सबको बैठालकर उचित आशीर्वाद देकर कहा कि मुझे बडाही आनन्दहै कि मैने एक साथही तुम सबलोगोंको देखा हेमय तुम बड़े प्रशंसनीय हो क्योंकि तुमने सन्मार्ग का त्याग नहीं कियाहै इसीसे तुमको सम्पूर्ण विद्या प्राप्त हुई हैं हे सुनीथ तुम धन्यहो तुम्हारा भाग्यवशसे पुनर्जीवन हुआ है हे सूर्य्यप्रभ तुम बड़े पुण्यवान्हो क्योंकि तुम विद्याधरोंके चक्रवर्त्ती होगे अब हे दैत्यलोगो हमारे कहनेसे कभी धर्म्मका त्याग न करना इसीसे तुम परम सम्पत्तियों को पाकर अत्यन्त सुखका भोग करोगे और पहलेके समान तुम्हारी शत्रुओं से पराजय नहीं होगी देखो अधर्म्मी दैत्य लोग विष्णुभगवानके चक्रकेद्वारा नाशको प्राप्तहुए हैं हेसुनीथ जो दैत्य देवता लोगों के युद्धमें मारेगये थे वही सब मृत्यु लोकमे उत्पन्नहुए हैं सुमुण्डीक सूर्य्यप्रभ नामसे उत्पन्नहुआ और अन्य सबदैत्यलोग इसीके बन्धु तथा मित्रहुए हैं देखो जो शम्बरनाम महादैत्य था वह प्रहस्तनाम इसका मन्त्रीहुआ है त्रिशिरानाम दैत्य इसका सिद्धार्थ नाम मन्त्रीहुआ है वातापी नाम दैत्य इसका प्रज्ञाढ्य नाम मन्त्रीहुआ है उलूकनाम दैत्य इसका मित्र शुभंकर नाम हुआहै बीतभीतनाम इसका मित्रकाल नाम दैत्य था इसका भासनाम मन्त्री वृषपर्व्वानाम दैत्य था इसका प्रभास नाम मन्त्री प्रबलनाम दैत्य था जिसमहात्माने विपक्षी देवता लोगोंके भी याञ्चा करनेपर अपना रत्नमय शरीर टुकडे २ करके देदिया जिससे कि यह सम्पूर्ण रत्न उत्पन्नहुए हैं इसीबात से प्रसन्न होकर भगवती पार्वतीजी ने इसे यह वरदान दियाहै कि यह दूसरेजन्ममे अत्यन्तबलवान् तथा शत्रुओं को दुराधर्ष होगा इसीसे यह प्रभास ऐसा बलवान् हुआहै जो सुन्द उपसुन्द नाम दो दैत्य थे वही इसके सर्वदमन और भयङ्कर नाम मन्त्रीहुए हैं और हयग्रीव तथा विकटाक्ष नाम जो दो दैत्यथे वही इसके स्थिर बुद्धि तथा महाबुद्धिनाम मन्त्रीहुएहैं और जो इसके अन्यमन्त्री बन्धु तथा मित्रादिकहैं वह सब भी दैत्यों के अवतारहैं जिन्होंने पूर्व्वजन्ममे अनेकबार इन्द्रादि देवताओं को जीताहै इसमें तुमलोगों का पक्ष फिर कर वृद्धिको प्राप्तहुआहै धैर्य्यधरो जो धर्मके अनुसार चलेजाओगे तो परम सम्पत्ति को पाओगे कश्यपमुनिके इसप्रकार कहनेपर उनकी अदिति आदिक स्त्रियां मध्याह्न कालिक सोमपानके

नकर सूर्य्यप्रभ ने श्री शिवजी तथा गुरुओं के चरणों में अपनी परमभक्तिमांगी प्रह्लादने वरदानदेके और अतिप्रसन्नहो कर उसको अपनी दूसरी यामिनी नाम कन्या भी देदी और अपने दोनोंपुत्र सहायताको दिये तदनन्तर सूर्य्यप्रभ सेनको साथलेकर अमीलके यहां गया उसने भी वरकी प्राप्तिसुन अति प्रसन्नहोके अपनी सुखावती नाम दूसरी कन्याका भी विवाह उससे करदिया और दो पुत्र उस की सहायताको दिये २४ तदनन्तर अन्य दैत्यराजों को अपनी सहायताकेलिये उद्यत करताहुआ सूर्य्यप्रभ अपनी प्रियाओं समेत वहींरहा उन दिनों में सुनीथकी तीनों रानी तथा सूर्य्यप्रभकी सम्पूर्ण रानी गर्भवतीहुईं यह मयासुर आदिक दैत्यों ने सुना और उनसब रानियों ने गर्भवती होकर यह मनोरथ बताया कि महायुद्धदेखनेकी हमलोगों की इच्छाहै यह सुनकर मयासुरने बहुत प्रसन्नहो कर कहा कि जो दैत्यलोग पहले युद्धमें मारेगये थे वही इनके गर्भों में आये हैं इसी से इनसबको ऐसा अभिलाष हुआ है इसप्रकारसे जब छः दिन व्यतीतहुए तब सातवें दिन सूर्य्यप्रभ अपने सम्पूर्णपरिकरको साथ लेकर रसातलसे पृथ्वीपर आया उससमय उनके शत्रुओंने जो विघ्नकरनेको मायासे उत्पातकिये सो सब स्मरण करने से आयेहुए सुवासकुमारने नष्टकरदिये तदनन्तर चन्द्रप्रभके पुत्र रत्नप्रभको राज्यदेकर सूर्य्यप्रभ अपने सम्पूर्ण मंत्रि मित्र तथा बन्धुआदिकों को साथलेकर भूतासन विमानपर चढ़के मयकी आज्ञासे सुमेरु नाम विद्याधरके स्थान को गंगाजी के तटपर गये सुमेरुने मयासुरसे सब वृत्तान्त सुनकर और श्री शिवजीकी पहली आज्ञाको स्मरण करके उनसबका बड़ा सत्कारकिया वहां उनसबने अपने २ सम्पूर्ण सेना बन्धु तथा मित्रोंसमेत बुलवाई पहले सूर्य्यप्रभके साले राजपुत्र मयकी बताईहुई सम्पूर्ण विद्याओंको सिद्धकरके आये उनसबके साथमें दश २ हजार रथ और तीस २ हजार पैदल सेना थी तदनन्तर सूर्य्यप्रभके श्वशुर साले मित्र तथा बान्धव हृष्टरोमा महाकाय सिंहदंष्ट्र, प्रकम्पन, तन्तुकच्छ, दुरारोह, सुमाय, वज्रपंजर, धूम्रकेतु, प्रमथन और विकटाक्ष इत्यादिक अनेक दैत्य तथा दानव सम्पूर्ण रसातलों से आये किसी के साथमें सत्तर हजार किसी के साथ अस्सी हजार किसी के संग साठहजार और किसी के साथमें तीसहजार रथथे जिसके साथ बहुतही कमथे उसके भी साथ दशहजार से कम रथ नहीं थे किसी के साथमें तीनलाख किसी के दोलाख किसी के एकलाख और कमसेकम किसी के साथ पचासहजार पैदलथे इसीकेही अनुसार हाथी तथा घोड़े भी सबके साथमें थे फिर मयासुर सुनीथ, सूर्य्यप्रभ, सुमेरु, तथा वसुदत्तादिक राजाओं की असंख्य सेना आई तब ध्यान करने से आयेहुए सुवास कुमार से मयासुरने पूछा कि हे भगवन् यहां यह सम्पूर्ण सेना अच्छे प्रकार से एक साथ खड़ी नहीं होसक्ती है इससे आपकोई ऐसा विस्तीर्ण मैदान बताइये जहां यह सबसेना इकट्ठी करके देखी जाय उसने कहा यहां से योजन भरपर एक कलापग्राम नाम बड़ा विस्तीर्ण स्थानहै वहां जाकर अपनी सबसेना इकट्ठी करके देखो सुवासकुमार मुनि के यह वचनसुनकर मयासुरादिक सम्पूर्ण लोग उस सम्पूर्ण सेनाको लेकर कलापकग्राम को गये वहां ऊंचे स्थानपर चढ़के दैत्य और राजा ओंकी सबसेनाको इकट्ठी खड़ी करके सुमेरुने देखी और कहा कि श्रुतशर्मा के पास बहुत सेना

रत्कालके चन्द्रमा के समान सुन्दर यह सुग्रासकुमार तुम्हारी सहायताकरेगा मुनिके इसप्रकार कहनेके उपरात दिति आदिक स्त्रियोंने लोकपालों ने तथा मुनिलोगोंने प्रसन्नहोके मयासुरआदिकोंको वर दानदिये तदनन्तर अदितिने इन्द्रसेकहा कि अविनय छोडकर मयासुरको प्रसन्नकरो तुमने इससमय विनयका फल देखा कि इसको कैसे अवर प्राप्तहुएहैं यह सुनकर इन्द्रने मयासुरका हाथ पकड़कर उसे प्रसन्नकिया और सूर्य्यप्रभ के आगे श्रुतशर्म्मा दिनके चन्द्रमाके समान तेजरहित होगया इसके उपरान्त कश्यपमुनिको प्रणाम करके इन्द्र लोकपालोंसमेत अपने स्थानको गया और मयआदिक भी मुनिसे आज्ञालेके और प्रणामकरके वहां से अपने कार्य्य सिद्धकरनेको चले ४१३॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांसूर्य्यप्रभलम्बकेद्वितीयस्तरंगः॥२॥

कश्यपमुनिके आश्रम से चलकर मयसुनीथ तथा सूर्य्यप्रभ अपने परिकर समेत चन्द्रभागा तथा इरावतीके संगमपरगये जहां सम्पूर्ण मित्र तथा बान्धव लोग उनके लिये प्रतीक्षा करतेथे सूर्य्यप्रभको आया देखकर वह सम्पूर्ण रोतेहुए उसके आगे खडे होगये सूर्य्यप्रभने यह जानकर कि इन्होंने चन्द्रप्रभको नहीं देखाहै इससेही रोरहे हैं उनसे सब वृत्तान्त कहदिया इतनेपर भी जब वह सब उदासीनही बनेरहे तो उसने पूछा कि अब उदासीनताका क्या प्रयोजनहै तब उन लोगोंने आपकेजातेही श्रुतशर्म्मा आपकी स्त्रियोंको हरलेगया यह देखकर हमलोग दुःखसे अपना शरीर त्यागनेको उद्यतहुए तब आकाशवाणीने हमलोगोंको निवृत्तकिया इत्यादि सब वृत्तान्त कहदिया सो सुनकर सूर्य्यप्रभने क्रोध से यह प्रतिज्ञाकी कि जो ब्रह्मादिक सब देवता भी रक्षाकरें तौभी परस्त्रियोंके हरनेवाले महाछली मूर्ख श्रुतशर्म्माको मैं अवश्य निर्मूल करूंगा इसप्रकार प्रतिज्ञा करके उसनेज्योतिषियोंको बुलाकर विजय यात्राकेलिये लग्नपूछी ज्योतिषियोंने सातवें दिन लग्न बताई तब सूर्य्यप्रभको विजयकेलिये निश्चित जानकर और वचनों से फिर उसको दृढ़करके मयासुरने कहा कि जो तुम सत्य २ विजय करनेको उद्यत हो तो मैं कहताहूं कि मैंने मायासे तुम्हारी स्त्रियां हरकर पातालमें रखछोडीहैं इसलिये कि तुम शीघ्रतासे विजयकेलिये उद्योगकरो देखो जैसे वायुसे प्रेरणाकीहुई अग्नि जलती है वैसी वायुके बिना नहीं जलती तो चलो पातालमें मैं तुम्हारी प्रिया तुमको दिखाऊं मयासुरके यह वचन सुनकर सब लोग बड़े प्रसन्न हुए और उसीके साथ उसी प्राचीन गढेमें होकर पातालकोगये वहां मयासुरने शयन स्थानके पास एक मन्दिर से मदनसेनादिक सब स्त्रियां सूर्य्यप्रभको लाकरदीं उन सभोंको तथा उन सब स्त्रियोंको भी जिनके कि साथ पातालमें विवाह हुआथा लेकर सूर्य्यप्रभ मयासुरकी आज्ञासे प्रह्लाद के निकट गया वहां मयासुरसे वरदानकी प्राप्ति सुनकर प्रह्लादने परीक्षा करनेके लिये गर्व लेकर मिथ्या क्रोध प्रकट करके सूर्य्यप्रभ से कहा कि हे दुराचारी मैंने सुनाहै कि तू मेरे भाईकी लाईहुई वारहों कन्याओंको हरलेगया है इससे देख मैं तुझे मारताहूं यह सुनकर विकाररहित सूर्य्यप्रभने उनसे कहा कि मेरा शरीर आपके आधीन है मुझदुष्टको आप शिक्षा दीजिये सूर्य्यप्रभके यह वचन सुनकर प्रह्लादने हँसकर कहा कि मैंने देखलिया तुमको अभिमानका लेशभी नहीं है तुम मुझसे वरदानमांगो मैं तुमपर प्रसन्नहूं यह सु-

नकर सूर्य्यप्रभ ने श्री शिवजी तथा गुरुओं के चरणों में अपनी परमभक्ति मागी प्रह्लादने वरदानदेके और अतिप्रसन्नहोकर उसको अपनी दूसरी यामिनी नाम कन्या भी देदी और अपने दोनोंपुत्र सहायताको दिये तदनन्तर सूर्य्यप्रभ सबको साथलेकर अमीलके यहा गया उसने भी वरकी प्राप्तिसुन अति प्रसन्नहोके अपनी सुखावती नाम दूसरी कन्याका भी विवाह उससे करदिया और दो पुत्र उसकी सहायताको दिये २४ तदनन्तर अन्य दैत्यराजों को अपनी सहायताकेलिये उद्यत करताहुआ सूर्य्यप्रभ अपनी प्रियाओं समेत वहींरहा उन दिनों मे सुनीथकी तीनों रानी तथा सूर्य्यप्रभकी सम्पूर्ण रानी गर्भवतीहुई यह मयासुर आदिक दैत्यों ने सुना और उनसब रानियों ने गर्भवती होकर यह मनोरथ बताया कि महायुद्धदेखनेकी हमलोगों की इच्छाहै यह सुनकर मयासुरने बहुत प्रसन्नहोकर कहा कि जो दैत्यलोग पहले युद्धमे मारेगये थे वही इनके गर्भों में आये हैं इसी से इनसबको ऐसा अभिलाष हुआ है इसप्रकारसे जब छः दिन व्यतीतहुए तब सातवें दिन सूर्य्यप्रभ अपने सम्पूर्ण परिकरको साथ लेकर रसातलसे पृथ्वीपर आया उससमय उनके शत्रुओं ने जो विघ्नकरनेको मायासे उत्पातकिये सो सब स्मरण करने से आयेहुए सुवासकुमारने नष्टकरदिये तदनन्तर चन्द्रप्रभके पुत्र रत्नप्रभको राज्यदेकर सूर्य्यप्रभ अपने सम्पूर्ण मंत्रि मित्र तथा बन्धुआदिकों को साथलेकर भूतासन विमानपर चढके मयकी आज्ञासे सुमेरु नाम विद्याधरके स्थानको गङ्गाजी के तटपर गये सुमेरुने मयासुरसे सब वृत्तान्त सुनकर और श्री शिवजी की पहली आज्ञाको स्मरण करके उनसबका बड़ासत्कारकिया वहां उनसबने अपनी२ सम्पूर्ण सेना बन्धु तथा मित्रोंसमेत बुलवाई पहले सूर्य्यप्रभके साले राजपुत्र मयकी बताईहुई सम्पूर्ण विद्याओंको सिद्धकरके आये उनसबके साथमें दश २ हजार रथ और बीस २ हजार पैदल सेना थी तदनन्तर सूर्य्यप्रभके श्वशुर साले मित्र तथा बान्धव हृष्टरोमा महा काय सिंहदंष्ट्र, प्रकम्पन, तन्तु कच्छ, दुरारोह, सुमाय वज्रपंजर, धूम्रकेतु, प्रमथन और विकटाक्ष इत्यादिक अनेक दैत्य तथा दानव सम्पूर्ण रसातलों से आये किसी के साथमें सत्तर हजार किसी के साथ अस्सी हजार किसी के संग साठहजार और किसी के साथमे तीसहजार रथ थे जिसके साथ बहुतही कमथे उसके भी साथ दशहजार से कम रथ नहीं थे किसी के साथमें तीनलाख किसी के दोलाख किसी के एकलाख और कमसेकम किसी के साथ पचासहजार पैदलथे इसीकेही अनुसार हाथी तथा घोड़े भी सबके साथमें थे फिर मयासुर सुनीथ, सूर्य्यप्रभ, सुमेरु, तथा वसुदत्तादिक राजाओं की असंख्य सेना आई तब ध्यानकरने से आयेहुए सुवास कुमार से मयासुरने पूछा कि हे भगवन् यहा यह सम्पूर्ण सेना अच्छे प्रकार से एक साथ नहीं नहीं होसक्ती है इससे आपकोई ऐसा विस्तीर्ण मैदान बताइये जहा यह सबसेना इकट्ठी करके देखी जाय उसने कहा यहा से योजन भरपर एक कलापकग्राम नाम बड़ा विस्तीर्ण स्थानहै वहा जाकर अपनी सबसेना इकट्ठी करके देखो सुवासकुमार मुनि के यह वचनसुनकर मयासुरादिक सम्पूर्ण लोग उस सम्पूर्ण सेनाको लेकर कलापकग्राम को गये वहा ऊंचे स्थानपर चढके दैत्य और राजा ओंकी सबसेनाको इकट्ठी खड़ी करके सुमेरुने देखी और कहा कि श्रुतशर्मा के पास बहुत सेना

रत्काल के चन्द्रमा के समान सुन्दर यह सुवासकुमार तुम्हारी सहायता करेगा सुनिके इसप्रकार कहनेके उपरान्त दिति आदिक स्त्रियोंने लोकपालों ने तथा मुनिलोगोंने प्रसन्नहोके मयासुर आदिकोंको वरदानदिये तदनन्तर अदितिने इन्द्रसे कहा कि अविनय छोड़ कर मयासुरको प्रसन्नकरो तुमने इससमय विनयका फल देखा कि इसको कैसे अवसर प्राप्तहुए हैं यह सुनकर इन्द्रने मयासुरका हाथ पकड़कर उसे प्रसन्नकिया और सूर्य्यप्रभ के आगे श्रुतशर्म्मा दिनके चन्द्रमाके समान तेजरहित होगया इसके उपरान्त कश्यपमुनिको प्रणाम करके इन्द्र लोकपालोंसमेत अपने स्थानको गया और मयआदिक भी मुनिसे आज्ञालेके और प्रणामकरके वहां से अपने कार्य्य सिद्ध करनेको चले ॥ ४१३ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांसूर्य्यप्रभलम्बकेद्वितीयस्तरंगः २ ॥

कश्यपमुनिके आश्रम से चलकर मयमुनीश्वर तथा सूर्य्यप्रभ अपने परिकर समेत चन्द्रभागा तथा इरावतीके सङ्गमपर गये जहां सम्पूर्ण मित्र तथा बान्धव लोग उनके लिये प्रतीक्षा करतेथे सूर्य्यप्रभको आया देखकर वह सम्पूर्ण रोतेहुए उसके आगे खड़े होगये सूर्य्यप्रभने यह जानकर कि इन्होंने चन्द्रप्रभको नहीं देखाहै इससेही रोरहे हैं उनसे सब वृत्तान्त कहदिया इतनेपरभी जब वह सब उदासीनही बैठेरहे तो उसने पूछा कि अब उदासीनताका क्या प्रयोजनहै तब उन लोगोंने आपके जातेही श्रुतशर्म्मा आपकी स्त्रियोंको हरलेगया यह देखकर हमलोग दुःखसे अपना शरीर त्यागनेको उद्यतहुए तब आकाशवाणीने हमलोगोंको निवृत्तकिया इत्यादि सब वृत्तान्त कहदिया सो सुनकर सूर्य्यप्रभने क्रोध से यह प्रतिज्ञाकी कि जो ब्रह्मादिक सब देवता भी रक्षा करैं तौभी परस्त्रियोंके हरनेवाले महाछली मूर्ख श्रुतशर्म्माको मैं अवश्य निर्मूल करूंगा इसप्रकार प्रतिज्ञा करके उसने ज्योतिषियोंको बुलाकर विजययात्राकेलिये लग्नपूंछी ज्योतिषियोंने सातवें दिन लग्न बताई तब सूर्य्यप्रभको विजयकेलिये निश्चित जानकर और वचनों से फिर उसको दृढ़करके मयासुरने कहा कि जो तुम सत्य ही विजय करनेको उद्यत हो तो मैं कहताहूं कि मैंने मायासे तुम्हारी स्त्रियां हरकर पातालमें रखछोड़ीहैं इसलिये कि तुम शीघ्रतासे विजयकेलिये उद्योगकरो देखो जैसे वायुसे प्रेरणा कीहुई अग्नि जलती है वैसी वायुके बिना नहीं जलती तो चलो पातालमें मैं तुम्हारी प्रिया तुमको दिखादूं मयासुरके यह वचन सुनकर सब लोग बड़े प्रसन्न हुए और उसीके साथ उसी मार्गके गढ़ेमें होकर पातालको गये वहां मयासुरने अपने स्थानके पास एक मन्दिर से मदनसेनादिक सब स्त्रियां सूर्य्यप्रभ को ला करदीं उन सबको तथा उन सब स्त्रियोंको भी जिनके कि साथ पातालमें विवाहहुआथा लेकर सूर्य्यप्रभ मयासुरकी आज्ञासे प्रह्लाद के निकट गया वहां मयासुरसे वरदानकी प्राप्ति सुनकर प्रह्लादने परीक्षा करनेके लिये गर्व्वलेकर मिथ्या क्रोध प्रकट करके सूर्य्यप्रभ से कहा कि हे दुराचार मैंने सुनाहै कि तू मेरे भाईकी लाईहुई बारहों कन्याओंको हरलेगया है इससे देख मैं तुझे मारताहूं यह सुनकर विकाररहित सूर्य्यप्रभने उनसे कहा कि मेरा शरीर आपके आधीन है मुझ दुष्टको आप शिक्षा दीजिये सूर्य्यप्रभके यह वचन सुनकर प्रह्लादने हँसकर कहा कि मैंने देखलिया तुमको अभिमानका लेशभी नहीं है तुम मुझसे वरदानमांगो मैं तुमपर प्रसन्नहूं यह सु-

नकर सूर्यप्रभ ने श्री शिवजी तथा गुरुओंके चरणों में अपनी परमभक्तिमांगी प्रह्लादने वरदानदेके और अतिप्रसन्नहोकर उसको अपनी दूसरी यामिनी नाम कन्या भी देदी और अपने दोनोपुत्र सहायताको दिये तदनन्तर सूर्य्यप्रभ सनको साथलेकर अमीलके यहा गया उसने भी वरकी प्राप्तिसुन अति प्रसन्नहोके अपनी सुखावती नाम दूसरी कन्याका भी विवाह उससे करदिया और दो पुत्र उसकी सहायताको दिये २४ तदनन्तर अन्य दैत्यराजों की अपनी सहायताकेलिये उद्यत करताहुआ सूर्य्यप्रभ अपनी प्रियाओं समेत वहींरहा उन दिनों में सुनीथकी तीनों रानी तथा सूर्य्यप्रभकी सम्पूर्ण रानी गर्भवतीहुईं यह मयासुर आदिक दैत्यों ने सुना और उनसब रानियों ने गर्भवती होकर यह मनोरथ बताया कि महायुद्धदेखनेकी हमलोगों की इच्छाहै यह सुनकर मयासुरने बहुत प्रसन्नहोकर कहा कि जो दैत्यलोग पहले युद्धमे मारेगये थे वही इनके गर्भों में आये हैं इसी से इनसबको ऐसा अभिलाष हुआ है इसप्रकारसे जब छ दिन व्यतीतहुए तब सातवें दिन सूर्य्यप्रभ अपने सम्पूर्ण परिकरको साथ लेकर रसातलसे पृथ्वीपर आया उससमय उनके शत्रुओंने जो विघ्नकरनेको मायासे उत्पातकिये सो सब स्मरण करने से आयेहुए सुवासकुमारने नष्टकरदिये तदनन्तर चन्द्रप्रभके पुत्र रत्नप्रभको राज्यदेकर सूर्य्यप्रभ अपने सम्पूर्ण मंत्रि मित्र तथा बन्धुआदिकों को साथलेकर भूतासन विमानपर चढके मयकी आज्ञासे सुमेरु नाम विद्याधरके स्थानको गंगाजी के तटपर गये सुमेरुने मयासुरसे सब वृत्तान्त सुनकर और श्री शिवजीकी पहली आज्ञाको स्मरण करके उनसबका बडासत्कारकिया वहा उनसबने अपनी २ सम्पूर्ण सेना बन्धु तथा मित्रोंसमेत बुलवाई पहले सूर्य्यप्रभके सोले राजपुत्र मय की बताईहुई सम्पूर्ण विद्याओंको सिद्धकरके आये उनसबके साथमें दश २ हजार रथ और बीस २ हजार पैदल सेना थी तदनन्तर सूर्य्यप्रभके श्वशुर साले मित्र तथा बान्धव हृष्टरोमा महा काय सिंहदंष्ट्र, प्रकम्पन, तन्तुकच्छ, दुरारोह, सुमाय वज्रपंजर, धूम्रकेतु, प्रमथन और विकटाक्ष इत्यादिक अनेक दैत्य तथा दानव, सम्पूर्ण रसातलों से आये किसी के साथमें सत्तर हजार किसी के साथ अस्सी हजार किसी के संग साठहजार और किसी के साथमे तीसहजाररथ थे जिसके साथ बहुतही कमथे उसके भी साथ दशहजार से कम रथ नहीं थे किसी के साथमें तीनलाख किसी के दोलाख किसी के एकलाख और कमसेकम किसी के साथ पचासहजार पैदलथे इसीकेही अनुसार हाथी तथा घोडे भी सबके साथमें थे फिर मयासुर सुनीथ, सूर्य्यप्रभ, सुमेरु, तथा वसुदत्तादिक राजाओं की असंख्य सेना आई तब ध्यान करने से आयेहुए सुवास कुमार से मयासुरने पूछा कि हे भगवन् यहा यह सम्पूर्ण सेना अच्छे प्रकार से एक साथ खडी नहीं होसक्ती है इससे आपकोई ऐसा विस्तीर्ण मैदान बताइये जहा यह सबसेना इकट्ठी करके देखी जाय उसने कहा यहा से योजन भरपर एक कलापकग्राम नाम बडा विस्तीर्ण स्थानहै वहा जाकर अपनी सबसेना इकट्ठी करके देखो सुवासकुमार मुनि के यह वचनसुनकर मयासुरादिक सम्पूर्ण लोग उस सम्पूर्ण सेनाको लेकर कलापकग्राम को गये वहा ऊंचे स्थानपर चढके दैत्य और राजा ओंने सबसेनाको इकट्ठी खडी करके सुमेरुने देखी और कहा कि श्रुतशर्मा के पास बहुत सेना

है उसके पास एकसौ एक विद्याधराधिराज हैं उनमें से एक २ के पास बत्तीस २ विद्याधरराजा हैं उन मेंसे कुछेक लोगोंको तोडकर मैं तुम्हारे साथ मिलाऊंगा इससे प्रातःकाल वल्मीक नाम स्थान को चलो कल फाल्गुणके कृष्णपक्षकी महाअष्टमी है कलके दिन वहां विद्याधरोंके चक्रवर्त्ती का चिह्न एक तरकस उत्पन्न होताहै उसके लिये बहुतसे विद्याधर वहां जातेहैं सुमेरुसे यह वचन सुनकर सेनाके साथ जनेमें उस दिनको व्यतीत करके दूसरेदिन वह सबलोग रथोंपर चढके हिमालयके दक्षिण शिखरपर वल्मीक नाम स्थानमें गये वहां बहुतसे अन्य विद्याधराधिराजभी आयेथे उनमें से कोई तो कुंडों में अग्नि डालकर हवन करनेलगे और कोई जपकरने लगे तब सूर्य्यप्रभ भी एक बडा भारी कुंड बनाकर हवन करने बैठा उसकी विद्याके प्रभावसे उसके कुण्डमें अपने आप अग्नि बलउठी यह देखकर सुमेरु बहुत प्रसन्न हुआ और सम्पूर्ण विद्याधरों को बडा डाहहुआ उनमें से एकने सुमेरु से कहा कि तुम विद्याधरो के राज्यको छोडकर इस मनुष्य सूर्य्यप्रभ के पीछे अपने को सत्यानाश करते हो यह सुन कर सुमेरुने क्रोध से उसे डाटा तब सूर्य्यप्रभ ने सुमेरु से पूछा कि इसका क्या नाम है उसने कहा कि भीमनाम विद्याधरकी स्त्री के साथ ब्रह्माजीने एकान्तमें रमण किया था तब इस विद्याधरका जन्म हुआ था गुप्ततासे ब्रह्माजी से उत्पन्न होनेके कारण इसका नाम ब्रह्मगुप्त हुआहै इसके यह बचन इसकी उत्पत्तिकेही अनुसार हैं यह कहकर सुमेरु भी एक अग्निकुंडबनाकर सूर्य्यप्रभके साथ हवन करनेलगा क्षणभरमें पृथ्वीके विवरसे एक बडाभारी महाभयकर अजगर सर्प अकस्मात् निकला उसे पकडनेके लिये विद्याधरोंका वह स्वामी ब्रह्मगुप्त जिसने सुमेरुकी निन्दाकरीथी दौडा उसे उसअजगरने फूत्कार मेंही सौहाथपर सूखे पत्तेके समान फेंक दिया तदनन्तर तेजप्रभ नाम विद्याधरोंका स्वामी उसे पकडने केलिये चला उसे भी उसने इसीप्रकार फेंकदिया फिर दुष्टदमन नाम विद्याधरोंका राजा उसे पकडने गया उसे भी उसने श्वाससे बहुत दूर फेंकदिया फिर विरूपशक्ति अंगारक तथा विजृम्भक नाम विद्याधरोंके राजा उसे पकडनेकोगये उन सबको भी उसने अपनी फुंकार से तृणके समान बहुतदूर फेंकदिया तब उनसब विद्याधरोंके राजा लोगोंके शरीर पाषाणोंपर गिरनेसे चूर्ण होगये और बडे क्लेश पूर्वक वह लोगउठे तदनन्तर अभिमानसे श्रुतशर्मा उससर्पके पकडनेको चला उसे भी उसने अपने श्वासों से फेंकदिया कुछदूरपर गिरकर वह फिर उठके उसके पकडनेको दौडा तब उससर्पने उसेबहुतही दूर फेंकदिया पृथ्वी में गिरकर शरीरके चूर्णहोजानेसे श्रुतशर्मा लज्जित होकर उठा तब सुमेरुने सूर्य्य प्रभको उससर्पके पकडनेको भेजा उसे जातेदेखकर सम्पूर्ण विद्याधर यह कहकर हँसनेलगे कि देखो यह भी अजगरको पकडने चलाहै यह मनुष्य लोग कैसे निर्विचार बन्दरोंके समान होते हैं जो दूसरों को करते देखते हैं सो आपभी करने लगतेहैं इसप्रकार वह सब तो हँसतेही रहे परन्तु सूर्य्यप्रभके जाने में उससर्पने अपना मुख दबालिया और सूर्य्यप्रभने उसे बिलमें निकालकर खेंचलिया उस समय वह सर्प सुन्दर तरकस होगया और सूर्य्यप्रभ के ऊपर आकाश से पुष्पोंकी वृष्टिहुई हे सूर्य्यप्रभ यह अक्षय तरकस तेरे लिये सिद्ध हुआहै इसेतूले यह आकाशवाणीहुई इसे सुनकर सूर्य्यप्रभने वह तरकस

लेलिया तब सब विद्याधर म्लानहोगये और मयासुर सुनीथ तथा सुमेरु यह तीनों आनन्दितहुये इसके उपरान्त सम्पूर्ण विद्याधरों समेत श्रुतशर्म्माने वहा से जाकर सूर्य्यप्रभके पास अपना दूतभेजा उसने सूर्य्यप्रभके पास आकर कहा कि श्रीमान् श्रुतशर्म्मा मेरे स्वामी तुमको यह आज्ञा देते हैं कि जो तुम अपने प्राणवचाना चाहतेहो तो यह तरकस हमे देदो यह सुनकर सूर्य्यप्रभने कहा कि हेदूत तुम उससे जाकर कहो कि तुम्हे तरकससे क्या प्रयोजन है तुम्हारा शरीरही मेरे बाणोंके लगनेसे तरकस होजा-यगा इस उत्तरको सुनकर दूतके चलेजानेपर सम्पूर्ण लोग श्रुतशर्म्मा के असभ्य वचनोंपर हँसनेलगे तब सुमेरुने आनन्दसे सूर्य्यप्रभसे आलिंगनकरके कहा कि आज श्रीगिरजी का वचन सफलहुआ इसीतरकसके सिद्धहोजानेसे तुम्हारा चक्रवर्तीपना सिद्धहोगया अब चलो धनुषभी सिद्धकरो सुमेरुके यहवचन सुनकर सूर्य्यप्रभादिक उसके साथ हेमकूटनाम पर्वतपरगये और उसके उत्तरओर मानसरोवर पर पहुंचे यहतडाग क्या था मानो ब्रह्माके समुद्र बनाने का नमूनाथा जलमे क्रीडाकरती हुई दिव्य स्त्रियोंके मुखोंको वहवायुसे चंचल सुवर्णमय कमलके पत्रो से मानो इनलोगों को देखकर छुपारहाथा इसप्रकार यहलोग तो तडागकी शोभा देखरहेथे इतनेही मे श्रुतशर्म्मा आदि विद्याधरभी वहाआगये और घृत तथा कमलोंसे हवन करने लगे और सूर्य्यप्रभभी हवनकरने लगा उससमय अकस्मात् उस तड़ागसे निकलकर घोर मेघ आकाशको घेरकर जलवरसनेलगे वरसते वरसते उनमेघोंमेंसे एककाला सर्प वहागिरा सूर्य्यप्रभने सुमेरुके कहनेसे उसे उठालिया उठातेही वहधनुष होगया उससर्पके धनुष हो जानेपर एक और सर्पभी वहा मेघोंमें से आकरगिरा उसकी विषयुक्त कठिन श्वासोंसे सम्पूर्ण विद्या-धर भागनेलगे उसेभी सूर्य्यप्रभने सुमेरुके कहनेसे लेलिया वहलेतेही धनुषकी प्रत्यञ्चा होगया और और सब मेघ उसीसमय नष्टहोगये फिर यहआकाशवाणी हुई कि हे सूर्य्यप्रभ यहअत्यन्त बलिष्ठ धनुष तथा अभेद्य प्रत्यञ्चा सिद्धहुई है तुम इनदोनोंको लेलो इसआकाशवाणीको सुनकर और आकाश मे हुई पुष्पवृष्टिको देखकर सूर्य्यप्रभने वहप्रत्यञ्चा सहित धनुष लेलिया उससमय श्रुतशर्म्मा तो उदा-सीनहोकर अपने परिकर समेत तपोवनको चलागया और सूर्य्यप्रभ तथा मयासुरादिक अत्यन्त प्रसन्न हुए इसके उपरान्त सबने उसधनुषकी उत्पत्तिका कारण सुमेरुसे पूछा उसने कहा कि यहा कीचकनाम बांसोंका बडा दिव्यवनहै उनमेंसे जो बासकाटकर इसतडागमें छोडदिये जाते हैं वह दिव्य धनुष बन जातेहैं उन्हींको देवता दैत्य गन्धर्व तथा विद्याधरोंने सिद्धकियाहै उनके जुदे२ नामहैं देवता लोगोंने प्रथम अमृतवल्लनाम धनुष चक्रवर्तियों के लिये इसमें छोडे हैं वह बडे पुण्यात्मा भावी चक्रवर्त्तियोंको बडे क्लेशोंसे ईश्वरकी इच्छासे सिद्धहोतेहैं उन्हींमेंसे यहधनुष सूर्य्यप्रभको सिद्धहोगयाहै इसकेमित्रभी अपने २ योग्य धनुष सिद्धकरें यहलोग विद्याओंको सिद्धकरचुके हैं इसीसे इन्हें योग्यताहै और यहा आनकर यथायोग्य धनुष सिद्धकरनेमे प्राप्तहोते हैं सुमेरुके यहवचन सुनकर सूर्य्यप्रभके मित्र प्रभासा दिक कीचकवनको गये और वहाके रक्षक राजा चन्द्रगुप्तको जीतकर कीचकवनके उनसबलोगों ने उसी मानसरोवरमें रक्खे और उसीके तटपर बनकरके हवन तथा जपकरनेलगे इसप्रकार करने से सात

है उसके पास एकसौ एक विद्याधराधिराजहैं उनमें से एक २ के पास बत्तीस २ विद्याधरराजा हैं उन मेंसे कुछेक लोगोंको तोडकर में तुम्हारे साथ मिलाऊंगा इसमें भीत स्कालि वल्मीक नाम स्थान को चलो कल फाल्गुणके कृष्णपक्षकी महा अष्टमी है कलके दिन वहां विद्याधरोंके चक्रवर्ती का त्रिह्न एक तरकस उत्पन्न होताहै उसके लिये बहुतसे विद्याधर वहां जातेहैं सुमेरुकेयह वचनसुनकर सेनाके स जनेमे उस दिनको व्यतीत करके दूसरेदिन वह सबलोग रथोंपर चढके हिमालयके दक्षिण शिखरपर वलमीकनाम स्थानमें गये वहां बहुतसे अन्य विद्याधराधिराजभी आयेथे उनमें से कोई तो कुंडों में अग्नि डालकर हवन करनेलगे और कोई जपकरने लगे तब सूर्य्यप्रभ भी एक बडा भारी कुंडबनाकर हवन करने बैठा उसकी विद्याके प्रभावसे उसके कुण्डमें अपने आप अग्नि जल उठी यह देखकर सुमेरु बहुत प्रसन्न हुआ और सम्पूर्ण विद्याधरों को बडा डाहहुआ उनमें से एकने सुमेरु से कहा कि तुम विद्याधरो के राज्यको छोडकर इस मनुष्य सूर्य्यप्रभ के पीछे अपने को सत्यानाश करते हो यह सुन कर सुमेरुने क्रोध से उसेडांटा तब सूर्य्यप्रभ ने सुमेरु से पूछा कि इसका क्या नाम है उसने कहा कि भीमनाम विद्याधरकी स्त्री के साथ ब्रह्माजीने एकान्त में रमण किया था तब इस विद्याधरका जन्म हुआ था गुप्ततासे ब्रह्माजी से उत्पन्न होनेके कारण इसका नाम ब्रह्मगुप्त हुआहै इसके यह वचन इसकी उत्पत्तिकेही अनुसार हैं यह कहकर सुमेरु भी एक अग्निकुंड बनाकर सूर्य्यप्रभके साथ हवन करनेलगा क्षणभरमें पृथ्वीके विवरसे एक बडाभारी महाभयकर अजगर सर्प अकस्मात् निकला उसे पकडनेके लिये विद्याधरोंका वह स्वामी ब्रह्मगुप्त जिसने सुमेरुकी निन्दाकरीथी दौडा उसे उस अजगरने फूत्कार मेंही सौहाथपर सूखे पत्तेके समान फेंक दिया तदनन्तर तेजप्रभ नाम विद्याधरोंका स्वामी उसे पकडने केलिये चला उसे भी उसने इसीप्रकार फेंकदिया फिर दुष्टदमन नाम विद्याधरोंका राजा उसे पकडने गया उसे भी उसने श्वाससे बहुत दूर फेंकदिया फिर विरूपशक्ति, अंगारक, तथा विजृम्भक नाम विद्याधरोंके राजा उसे पकडनेकोगये उन सबको भी उसने अपनी फुंकार से तृणके समान बहुतदूर फेंकदिया तब उन सब विद्याधरोंके राजा लोगोंके शरीर पाषाणोंपर गिरनेसे चूर्ण होगये और बडे क्लेश पूर्वक वह लोगउठे तदनन्तर अभिमानसे श्रुतशर्मा उस सर्पके पकडनेको चला उसे भी उसने अपने श्वासों से फेंकदिया कुछदूरपर गिरकर वह फिर उठके उसके पकडनेको दौडा तब उससर्पने उसे बहुतही दूर फेंकदिया पृथ्वी में गिरकर शरीरके चूर्णहोजानेसे श्रुतशर्म्मा लज्जित होकर उठा तब सुमेरुने सूर्य्य प्रभको उससर्प के पकडनेको भेजा उसे जातेदेखकर सम्पूर्ण विद्याधर अहा कहकर हँसनेलगे कि देखो यह भी अजगरको पकडने चलाहै यह मनुष्य लोग वैसे निर्विचार बन्दरोंकि समान होते हैं जो दूसरों को करते देखते हैं सो आपभी करने लगतेहैं इसप्रकार वह सब तो हँसतेही रहे परन्तु सूर्य्यप्रभके जाने मे उससर्पने अपना मुख दबालिया और सूर्य्यप्रभने उसे बिलमे निकालकर खैंचलिया उस समय वह सर्प सुन्दर तरकस होगया और सूर्य्यप्रभ के ऊपर आकाश से पुष्पोंकी वृष्टिहुई हे सूर्य्यप्रभ यह अक्षर तरकस तेरे लिये सिद्धहुआहै इसेतूले यह आकाशवाणीहुई इसे सुनकर सूर्य्यप्रभने वह तरकस

लेलिया तब सब विद्याधर म्लानहोगये और मयासुर सुनीथ तथा सुमेरु यह तीनो आनन्दितहुये इसके उपरान्त सम्पूर्ण विद्याधरो समेत श्रुतशर्म्माने वहा से जाकर सूर्य्यप्रभके पास अपना दूतभेजा उसने सूर्य्यप्रभके पास आकर कहा कि श्रीमान् श्रुतशर्म्मा मेरे स्वामी तुमको यह आज्ञा देते हैं कि जो तुम अपने प्राणवचाना चाहतेहो तो यह तरकस हमे देदो यह सुनकर सूर्य्यप्रभने कहा कि हेदूत तुम उसमे जाकर कहो कि तुम्हें तरकससे क्या प्रयोजन है तुम्हारा शरीरही मेरे बाणोंके लगनेसे तरकस होजायगा इस उत्तरको सुनकर दूतके चलेजानेपर सम्पूर्ण लोग श्रुतशर्म्मा के असभ्य वचनोपर हँसनेलगे तब सुमेरुने आनन्दसे सूर्य्यप्रभमे आलिंगनकरके कहा कि आज श्रीशिवजी का वचन सफलहुआ इसीतरकसके सिद्धहोजानेसे तुम्हारा चक्रवर्तीपना सिद्धहोगया अब चलो धनुषभी सिद्धकरो सुमेरुके यहवचन सुनकर सूर्य्यप्रभादिक उसके साथ हेमकूटनाम पर्व्वतपरगये और उसकेउत्तरओर मानसरोवर पर पहुचे यहतडाग क्या था मानो ब्रह्माके समुद्र बनाने का नमूनाथा जलमे क्रीडाकरती हुई दिव्य स्त्रियोंके मुखोंको वहवायुसे चचल सुवर्णमय कमलके पत्रो से मानो इनलोगों को देखकर छुपारहाथा इसप्रकार यहलोग तो तडागकी शोभा देखरहेथे इतनेही मे श्रुतशर्म्मा आदि विद्याधरभी वहाआगये और घृत तथा कमलोंसे हवन करने लगे और सूर्य्यप्रभभी हवनकरने लगा उससमय अकस्मात् उस तडागसे निकलकर घोर मेघ आकाशको घेरकर जलबरसनेलगे बरसते बरसते उनमेघोंमेंसे एककाला सर्प वहागिरा सूर्य्यप्रभने सुमेरुके कहनेसे उसे उठालिया उठातेही वहधनुष होगया उससर्पके धनुष हो जानेपर एक और सर्पभी वहा मेघोंमें से आकरगिरा उसकी विषयुक्त कठिन श्वासोंसे सम्पूर्ण विद्याधर भागनेलगे उसेभी सूर्य्यप्रभने सुमेरुके कहनेसे लेलिया वहलेतेही धनुषकी प्रत्यञ्चा होगया और और सब मेघ उसीसमय नष्टहोगये फिर यहआकाशवाणी हुई कि हे सूर्य्यप्रभ यहअत्यन्त बलिष्ठ धनुष तथा अभेद्य प्रत्यञ्चा सिद्धहुई है तुम इनदोनोंको लेलो इसआकाशवाणीको सुनकर और आकाश मे हुई पुष्पवृष्टिको देखकर सूर्य्यप्रभने वहप्रत्यञ्चा सहित धनुष लेलिया उससमय श्रुतशर्म्मा तो उदासीनहोकर अपने परिकर समेत तपोवनको चलागया और सूर्य्यप्रभ तथा मयासुरादिक अत्यन्त प्रसन्न हुए इसके उपरान्त सबने उसधनुषकी उत्पत्तिका कारण सुमेरुसे पूछा उसने कहा कि यहा कीचकनाम बासोंका बड़ा दिव्यवनहै उनमेंसे जो बासकाटकर इसतडागमें छोडदिये जाते हैं वह दिव्य धनुष बन जातेहैं उन्हींको देवता दैत्य गन्धर्व तथा विद्याधरोंने सिद्धकियाहै उनके जुदे२ नामहै देवता लोगोंने प्रथम अमृतबलनाम धनुष चक्रवर्त्तियों के लिये इसमें छोडे हैं वह बडे पुण्यात्मा भारी चक्रवर्त्तियोंको बडे क्लेशोंसे ईश्वरकी इच्छासे सिद्धहोतेहैं उन्हींमेंसे यहधनुष सूर्य्यप्रभको सिद्धहोगयाहै इसकेमित्रभी अपने २ योग्य धनुष सिद्धकरें यहलोग विद्याओंको सिद्धकरचुके है इसीसे इन्हें योग्यताहै और यहा अबतक यथायोग्य धनुष सिद्धकरनेमे प्राप्तहोते हैं सुमेरुके यहवचन सुनकर सूर्य्यप्रभके मित्र प्रभासादिक कीचकवनको गये और वहाके रक्षक राजा चक्रदण्डको जीतकर कीचकनामके उनसब बासो ने उसी मानसरोवरमें रक्खे और उसीके तटपर नतकरके हवन तथा जपकरनेलगे इसप्रकार करने से मान

दिनमें उनसबको यथायोग्य धनुष सिद्ध हुए उनधनुषोंको लेकर वहसब सूर्य्यप्रभके साथ सुमेरुके तपो-वनमें गये १०८ वहां सुमेरुने सूर्य्यप्रभसे कहा कि तुम्हारे मित्रों ने कीचकवनके स्वामी महाअजेय राजा चक्रदण्डको जीतलिया यहबडा आश्चर्य हुआ उसके पास मोहिनीनाम विद्या है इसीसे वहअजेय है मै जानताहूं उसनें वह अपनी विद्या अपने मुख्यशत्रुके लिये रक्खी है इसीसे इनकेऊपर उसने उसका प्रयोग नहीं किया वह विद्या उसे एकहीवार फल देसक्ती है वारम्वार नहीं क्योकि उसने प्रथम अपने गुरुपर उसविद्याका प्रभाव जाननेको प्रयोगकियाथा इसीसे गुरुने उसको शापदियाथा कि यह विद्या तुझे एकही वार सफल होगी वारम्वार न होगी इन विद्याओ का प्रभाव वडा दुरासर्प है इसका कारण तुम मयासुर से पूछो मैं इसके आगे क्या कहसक्ताहूं सूर्य्य के आगे दीपककी क्या गणनाहै सुमेरुके इसप्रकार सूर्य्यप्रभके कहनेपर मयासुर बोला कि सुमेरुने आपसे वहुतही यथार्थ कहाहै मैंभी कुछ सक्षेप मे कहताहूं कि अव्यक्तमे सम्पूर्ण शक्ति तथा अनुशक्ति उत्पन्न होती है उनमेंसे प्राणशक्तिसे उत्पन्नहुआ नाद बिन्दुमार्गमे जाकर तटतत्त्व तथा कलासमेत विद्या आदिक मन्त्रताको प्राप्तहोताहै ज्ञान तप अथवा सिद्धोंकी आज्ञासे सिद्धहुई उनमन्त्र विद्याओका प्रभाव दुर्लंघ्यहोताहै हे पुत्र तुमको सब विद्या तो सिद्ध होगई है परन्तु मोहिनी तथा परिवर्त्तनी इनदोविद्याओ से हीनहो याज्ञवल्क्य महर्षि इन विद्याओंको जानते हैं उनके पास जाकर इनविद्याओ के लिये प्रार्थना करो मयासुरके यहवचन सुनकर सूर्य्यप्रभ महर्षि याज्ञवल्क्यके निकट जाकर प्रणामकरके उनदोनो विद्याओं के लिये प्रार्थनाकी तब याज्ञवल्क्यजी ने उसको सातदिनतक सर्पोंकी वामीमें रक्खा और जब वहसर्पों के विषको सहगया तब उसेमोहिनीनाम विद्यादी फिर तीन दिनतक उसेअग्नि मे रक्खा जब वह अग्निकोभी सहगया तब परिवर्त्तनीनाम विद्या दी इसप्रकार विद्याओको देकर याज्ञवल्क्यजीने उसे फिर अग्निकुण्डमे प्रवेश करनेकी आज्ञादी उसने उनकी आज्ञासे फिर भी अग्निकुण्डमे प्रवेश किया प्रवेशकरतेही उसीसमय सूर्य्यप्रभको आकाश मे चलनेवाला कामचारी महापद्मनाम विमानप्राप्तहुआ उसमें एकसौआठ पत्रथे उनसबमे एक २ पुरथा और वहसब वडे २ विचित्ररत्नोंसे बनाहुआथा उससमय यहआकाशवाणी हुई कि हे सूर्य्यप्रभ यहचक्र-वर्त्तियोका विमान तुम्हारे लिये सिद्ध हुआहै इसके सपूर्ण पुरोमें तुम अपनी सब रानियोको बैठालदेना इससे उनको कोई तुम्हारा शत्रु नहीं पा सकेगा इस आकाशवाणी को सुनकर सूर्य्यप्रभने हाथ जोड कर याज्ञवल्क्यजी से यह विज्ञापनाकी कि हे महर्षिजी मैं आपको क्या गुरुदक्षिणादूं आज्ञाकीजिये यह सुनकर याज्ञवल्क्यने कहा कि अपने अभिषेकके समय मेरा स्मरण करना यही मेरी दक्षिणाहै अब तुम अपनी सेनामेजाओ मुनिसे इसप्रकार आज्ञापाके उसी विमानपरचढके सूर्य्यप्रभ सुमेरुके आश्रम में आया वहां उसके सम्पूर्ण वृत्तान्तको सुनकर और चक्रवर्त्ती विमानको देखकर मयआदिक सब लोग अत्यन्त प्रसन्नहुए उससमय सुनीथने सुवासकुमारका स्मरणकिया स्मरणकरतेही उसने आकर मयासुरादिकों से कहा कि सूर्य्यप्रभको सम्पूर्ण विद्याओंसमेत विमानभी सिद्धहोगया तो अब शत्रुओ के जीतनेमे उदासीन क्यो होरहेहो यह सुनकर मयासुर ने कहा कि आपने बहुत ठीक कहा परन्तु

पहले नीतिके अनुसार दूत भेजना चाहिये यह सुनकर सुवासकुमारने कहा क्या हानि है ऐसाहीकरो परन्तु प्रहस्तको दूत बनाकर भेजो यह बुद्धिमान् वार्त्तालाप करने मे प्रवीण कार्य्य कालका जानने वाला कठोर तथा सहनशीलहै इसमें दूतो के सम्पूर्ण गुणहै इसमे इसीको भेजो उसके इनवचनो को मानकर सबलोगो ने प्रहस्तको दूतबनाकर भेजा प्रहस्तके चलेजानेपर सूर्य्यप्रभने सबके आगे कहा कि मैंने एक अपूर्व स्वप्न देखाहै उसको सुनो आज कुछ रात्रिरहे मुझे स्वप्न मे यह मालूमहुआ कि जल का बडा समूह हम सबलोगोको बहायेलियेजाताहै परन्तु उसमे हमलोग नृत्यकररहे है डूबते नहीं हैं फिर वह जलका समूह उलटी वायुके योगसे लौटा तब किसी तेजस्वी पुरुषने हमलोगोको निकालकर अग्निमें डालदिया उसमे भी हमलोग नहींजले फिर बहुतसे मेघ इकट्ठेहोकर रुधिरकी वृष्टिकरनेलगे उस रुधिरसे सम्पूर्ण दिशा व्याप्तहोगई तब मेरी निद्रा खुलगई और रात्रिभी व्यतीतहोगई इस स्वप्नको सुनकर सुवासकुमारने कहा कि इसस्वप्नसे आपका श्रमपूर्व्वक उदय सूचितहोताहै आपने जो जल का समूह देखा वह युद्धहै जो आपलोग नहींडूबे वह आपलोगोका धैर्य्यहै जो वायु जलके समूह को लौटालाई वह कोई रक्षकहै जिस तेजस्वी पुरुषने आपलोगोको जलसे निकाला वह साक्षात् शिवजी है जो उसपुरुषने अग्निमें फेका वही महायुद्धहै मेघोंका आना भयहै रुधिरकी वृष्टि भयकानाशहैऔर जो दिशाओंका रुधिरसे व्याप्त होनाहै वह आपकी परमसमृद्धिहै स्वप्नकईप्रकारके होते है अन्यार्थ अपार्थ और यथार्थ जिस स्वप्नसे शीघ्रही तात्पर्य्य सूचितहोय वह स्वप्न अन्यार्थ कहलाता है प्रसन्न देवतादिकों की आज्ञारूप स्वप्न यथार्थ कहाताहै और जो दिनमे बहुत चिन्ताकरने से रात्रिमे दिखा देता है उसे अपार्थ कहते है निद्राके वशीभूत मनुष्य वाह्य विषयो से विमुख रजोगुणयुक्त मनसे अनेक २ कारणों से अनेक स्वप्न देखताहै समयकी विशेषता से स्वप्न अतिकाल तथा शीघ्र फलदायक होता है आपने यहस्वप्न रात्रिकेअन्तमें देखाहै इसमे शीघ्रही फलदायकहोगा सुवासकुमारके यह वचन सुनकर सूर्य्यप्रभादिकोने स्नानकरके अपना २ दिनका कृत्यकिया जब सम्पूर्णलोग स्वस्थहोकरबैठे तब उसी समय प्रहस्त श्रुतशर्मा के पासमेआया और मयादिकोंके पूछनेसे वहाका सबवृत्तात कहनेलगा कि यहा से मैं शीघ्रही त्रिकूटाचलपर्वतपर त्रिकूटपताकानाम सुवर्णकी नगरीमें जाकर निवेदनकरके राजसभामे गया वहा श्रुतशर्म्मा विद्याधरोंके अनेक राजा तथा विक्रमशक्ति धुरन्धर तथा दामोदरादिक अनेक शूर और अपने पिता त्रिकूटासेन समेत बैठाथा वहा बैठकर मैने श्रुतशर्म्मा से कहा श्रीमान् सूर्य्यप्रभने मुझे तुम्हारे पासभेजाहै और यह सदेशा कहाहै कि श्रीशिवजीकी कृपासे विद्या, रत्न, सुन्दर स्त्रिया तथा बडे २ सहायक मुझे प्राप्त होगयेहै इससे तुमभी सम्पूर्ण विद्याधरों समेत मेरी सेनामे मिलजाओ मै विरोधियोंका नाशकरताहू परन्तु नम्रपुरुषों की रक्षा करताहू और जो तुम सुनीथकी अज्ञानकाम चूडामणि नाम अगम्य कन्या हरलेगये हो उसे छोडदो क्योंकि उसमे तुम्हारा कल्याण न होगा यह सुन कर सब सभासद क्रोधयुक्त होकर बोले कि वह कौनहै जो अभिमानसे हमारे पास ऐसा सदेशा भेजताहै वह मनुष्यों से ऐसा वचन कहे विद्याधरों से उसे क्या प्रयोजन है मनुष्य होकर भी ऐसा अभिमान

दिनमें उनसबको यथायोग्य धनुप सिद्धहुए उनधनुपोको लेकर वहसब सूर्य्यप्रभके साथ सुमेरुके तपोवनमे गये १०८ वहा सुमेरुने सूर्य्यप्रभसे कहा कि तुम्हारे मित्रो ने कीन्नकबनके स्वामी महाअजेय राजा चक्रदण्डको जीतलिया यहबडा आश्चर्य्य हुआ उसके पास मोहिनीनाम विद्या है इसीसे वहअजेय है मे जानताहू उसनें वह अपनी विद्या अपने मुख्यशत्रुके लिये रक्खी है इसीसे इनकेऊपर उसने उसका प्रयोग नही किया वह विद्या उसे एकहीवार फल देसक्ती है वारम्वार नहीं क्योकि उसने प्रथम अपने गुरुपर उसविद्याका प्रभाव जाननेको प्रयोगकियाथा इसीसे गुरूने उसको शापदियाथा कि यह विद्या तुझ एकही वार सफल होगी वारम्वार न होगी इन विद्याओ का प्रभाव वडा दुराधर्प है इसका कारण तुम मयासुर से पूछो मै इसके आगे क्या कहसक्ताहू सूर्य्य के आगे दीपककी क्या गणनाहै सुमेरुके इसप्रकार सूर्य्यप्रभके कहनेपर मयासुर वोला कि सुमेरुने आपसे वहुतही यथार्थ कहाहै मैभी कुछ सक्षेप मे कहताहू कि अव्यक्तसे सम्पूर्ण शक्ति तथा अनुशक्ति उत्पन्न होती हैं उनमेंसे प्राणशक्तिसे उत्पन्नहुआ नाद विन्दुमार्ग मे जाकर तटतत्त्व तथा कलासमेत विद्या आदिक मन्त्रताको प्राप्तहोताहै ज्ञान तपअथवा सिद्धोंकी आज्ञासे सिद्धहुईउनमन्त्र विद्याओका प्रभाव दुर्लंघ्यहोताहै हे पुत्र तुमको सव विद्या तो सिद्ध होगई है परन्तु मोहिनी तथा परिवर्त्तनी इनदोविद्याओं से हीनहो याज्ञवल्क्य महर्पि इन विद्याओंको जानते हे उनके पास जाकर इनविद्याओ के लिये प्रार्थना करो मयासुरके यहवचन सुनकरे सूर्य्यप्रभ महर्पि याज्ञवल्क्यके निकट जाकर प्रणामकरके उनदोनो विद्याओं के लिये प्रार्थनाकी तब याज्ञवल्क्यजी ने उसको सातदिनतक सर्पोकी वामीमे रक्खा और जब वहसर्पों के विपको सहगया तव उसेमोहिनीनाम विद्यादी फिर तीन दिनतक उसेअग्नि मे रक्खा जव वह अग्निकोभी सहगया तव परिवर्त्तनीनाम विद्या दी इसप्रकार विद्याओंको देकर याज्ञवल्क्यजीने उसे फिर अग्निकुण्डमे प्रवेश करनेकी आज्ञादी उसने उनकी आज्ञासे फिर भी अग्निकुण्डमे प्रवेश किया प्रवेशकरतेही उसीसमय सूर्य्यप्रभको आकाश मे चलनेवाला कामचारी महापद्मनाम विमानप्राप्तहुआ उसमे एकसौआठ पत्रथे उनसबमे एक २ पुरथा और वहसव वडे २ विचित्ररत्नोंसे वनाहुआथा उससमय यहआकाशवाणी हुई कि हे सूर्य्यप्रभ यहचक्रवर्त्तियोंका विमान तुम्हारे लिये सिद्धहुआहै इसके सपूर्ण पुरोमे तुम अपनी सव रानियोको बैठालदेना इससे उनको कोई तुम्हारा शत्रु नहीं पा सकेगा इस आकाशवाणी को सुनकर सूर्य्यप्रभने हाथ जोड कर याज्ञवल्क्यजी से यह विज्ञापनाकी कि हे महर्पिजी मैं आपको क्या गुरुदक्षिणादू आज्ञाकीजिये यह सुनकर याज्ञवल्क्यने कहा कि अपने अभिपेकके समय मेरा स्मरण करना यही मेरी दक्षिणाहै अव तुम अपनी सेनामेंजाओ मुनिसे इसप्रकार आज्ञापाके उसी विमानपरचढके सूर्य्यप्रभ सुमेरुके आश्रम में आया वहा उसके सम्पूर्ण वृत्तान्तको सुनकर और चक्रवर्त्ती विमानको देखकर मयआदिक सब लोग अत्यन्त प्रसन्नहुए उससमय सुनीथने सुवासकुमारका स्मरणकिया स्मरणकरतेही उसने आकर मयासुरादिकों से कहा कि सूर्य्यप्रभको सम्पूर्ण विद्याओंसमेत विमानभी सिद्धहोगया तो अब शत्रुओ के जीतने मे उदासीन क्यों होरहेहो यह सुनकर मयासुर ने कहा कि आपने वहुत ठीक कहा परन्तु

पहले नीतिके अनुसार दूत भेजना चाहिये यह सुनकर सुवासकुमारने कहा क्या हानि है ऐसाहीकरो परन्तु प्रहस्तको दूत बनाकर भेजो यह बुद्धिमान् वार्त्तालाप करने मे प्रवीण कार्य्य कालका जानने वाला कठोर तथा सहनशीलहै इसमें दूतो के सम्पूर्ण गुणहै इससे इसीको भेजो उसके इनवचनों को मानकर सबलोगों ने प्रहस्तको दूतबनाकर भेजा प्रहस्तके चलेजानेपर सूर्य्यप्रभने सबके आगे कहा कि मैंने एक अपूर्व स्वप्न देखाहै उसको सुनो आज कुछ रात्रिरहे मुझे स्वप्न मे यह मालूमहुआ कि जल का बडा समूह हम सबलोगोको बहायेलियेजाताहै परन्तु उसमे हमलोग नृत्यकररहे है डूबते नहीं है फिर वह जलका समूह उलटी वायुके योगसे लौटा तब किसी तेजस्वी पुरुषने हमलोगोको निकालकर अग्निमें डालदिया उसमे भी हमलोग नहींजले फिर बहुतसे मेघ इकट्ठेहोकर रुधिरकी वृष्टिकरनेलगे उस रुधिरसे सम्पूर्ण दिशा व्याप्तहोगई तब मेरी निद्रा खुलगई और रात्रिभी व्यतीतहोगई इस स्वप्नको सुनकर सुवासकुमारने कहा कि इसस्वप्नसे आपका श्रमपूर्व्वक उदय सूचितहोताहै आपने जो जल का समूह देखा वह युद्धहै जो आपलोग नहींडूबे वह आपलोगोका धैर्य्यहै जो वायु जलके समूह को लौटालाई वह कोई रक्षकहै जिस तेजस्वी पुरुषने आपलोगोको जलमे निकाला वह साक्षात् शिवजी है जो उसपुरुषने अग्निमें फेंका वही महायुद्धहै मेघोंका आना भयहै रुधिरकी वृष्टि भयकानाशहैऔर जो दिशाओंका रुधिरसे व्याप्त होनाहै वह आपकी परमसमृद्धिहै स्वप्नकईप्रकारके होते है अन्यार्थ अपार्थ और यथार्थ जिस स्वप्नसे शीघ्रही तात्पर्य्य सूचितहोय वह स्वप्न अन्यार्थ कहलाता है प्रसन्न देवतादिकों की आज्ञारूप स्वप्न यथार्थ कहाताहै और जो दिनमे बहुत चिन्ताकरने से रात्रिमे दिखाईदेता है उसे अपार्थ कहते है निद्राके वशीभूत मनुष्य बाह्य विषयो मे विमुख रजोगुणयुक्त मनसे अनेक २ कारणों से अनेक स्वप्न देखताहै समयकी विशेषता मे स्वप्न अतिकाल तथा शीघ्र फलदायक होता है आपने यहस्वप्न रात्रिकेअन्तमें देखाहै इससे शीघ्रही फलदायकहोगा सुवासकुमारके यह वचन सुनकर सूर्य्यप्रभादिकोने स्नानकरके अपना २ दिनका कृत्यकिया जब सम्पूर्णलोग स्वस्थहोकरबैठे तब उसी समय प्रहस्त श्रुतशर्मा के पाससेआया और मयादिकोंके पूछनेसे वहाका सबवृत्तात कहनेलगा कि यहा से मे शीघ्रही त्रिकूटाचलपर्वतपर त्रिकूटपताकानाम सुवर्णकी नगरीमे जाकर निवेदनकराके राजसभामे गया वहा श्रुतशर्म्मा विद्याधरोंके अनेक राजा तथा विक्रमशक्ति धुरन्धर तथा दामोदरादिक अनेक शूर और अपने पिता त्रिकूटासेन समेत बैठाथा वहा बैठकर मैने श्रुतशर्म्मा मे कहा श्रीमान् सूर्य्यप्रभने मुझे तुम्हारे पासभेजाहै और यह सदेशा कहाहै कि श्रीशिवजीकी कृपासे विद्या, रत्न, सुन्दर स्त्रिया तथा बडे २ सहायक मुझे प्राप्त होगयेहै इससे तुमभी सम्पूर्ण विद्याधरों समेत मेरी सेनामे मिलजाओ मैं विरोधियोंका नाशकरताहू परन्तु नम्रपुरुषों की रक्षा करताहू और जो तुम मुनीन्द्रकी अज्ञानकाम चूडामणि नाम अगम्य कन्या हरलेगये हो उसे छोडदो क्योंकिउससे तुम्हारा कल्याण न होगा यह सुन कर सब सभासद क्रोधयुक्त होकर बोले कि वह कौनहै जो अभिमानसे हमारे पास ऐसा सदेशा भेजताहै वह मनुष्यो से ऐसा वचन कहे विद्याधरो से उसे क्या प्रयोजन है मनुष्य होकरभी ऐसा अभिमान

करने से वह नष्ट होजायगा यह सुनकर मैंने कहा कि क्या कहतेहो कि वह कौनहै सुनो श्रीशिवजीने उसे विद्याधरों का चक्रवर्त्ती बनाया है जो वह मनुष्य भी है तो मनुष्य तो देवता भी होगये हैं और विद्याधरोंने तो उसका पराक्रम देखाही है मैं जानताहूं कि उसका तो नाश न होगा पर उसके यहां आने से तुम्हारा नाश अवश्य होजायगा मेरे इसकहने पर सम्पूर्ण सभा कुपित होगई और श्रुतशर्म्मा तथा धुरन्धर मुझे मारनेको दौड़े उन्हें आते देखकर मैंने खड़े होकर कहा कि आओ मैं तुम्हारा पराक्रम तो देखूं तब दामोदरने उठकर उन दोनोको रोका और कहा कि दूत तथा ब्राह्मण अवध्य होताहै तब विक्रमशक्तिने मुझसे कहा कि हे दूत जाओ तुम्हारे स्वामीके समान हम सब लोग भी ईश्वरके बनाये हुएहैं वह आवे तो हम उसका अतिथि सत्कार करसक्ते हैं देखा जायगा उसके यह अभिमान युक्त वचन सुनकर मैंने हँसकर कहा कि कमलोंके वनमें हंस तभीतक शब्द करते हैं जबतक मेघ आकर आकाशको नहीं आच्छादित करते हैं यह कहकर मैं वहां से चला आया प्रहस्तके यह वचन सुनकर मयासुरादिकों ने प्रसन्न होकर युद्धके उद्योगका निश्चय करके रणदुर्मद प्रभासको अपना सेनापति बनाया और सुवासकुमारसे रणकी दीक्षाकी आज्ञापाकर सब उसदिनसे नियम पूर्वक रहने लगे १७२ तदनन्तर रात्रिके समय गृहकेभीतर व्रतशय्या मे सोयेहुए सूर्य्यप्रभने वहां आई एक श्रेष्ठ कन्या देखी उसे देखकर यह झूठ मूठको सोगया तब वह कन्या उसे और उसके सब मंत्रियोंको सोताहुआ जानकर निकट आकर उसका स्वरूप देखकर अपनी सखी से बोली कि जो सोनेपर भी इसकी ऐसी सुन्दर शोभाहै तो जागनेपर न जानिये कैसीहोगी अब नेत्रोंका कौतुक पूरा होगया इसको जगाओमत इसपर मुझे अपना चित्तभी बहुत न लगाना चाहिये श्रुतशर्म्मा के साथ इसका संग्राम होनेवाला है उसमें न जानें किसको क्या होगा शूरोंके प्राणों के व्ययके निमित्त युद्धका उत्सवहुआ करता है उसमें इसका कल्याण होय फिर जो कुछ होगा सो देखाजायगा और इसने विमानपर चढ़के कामचूडामणि को देखा है मुझ सरीकी स्त्रियोंपर इसको कैसे अनुराग होगा उसके यह वचन सुनकर उसकी सखी बोली कि तुम क्या कहतीहो क्या तुम्हारा हृदय इसपर अत्यन्त आसक्त नहीं होगया है १८० जिसे देखकर कामचूडामणिका भी चित्तचलायमान हुआ उसे देखकर जो साक्षात् अरुन्धतीभी होंय तो उनका भी चित्तचलायमान होजाय तो अन्य साधारण स्त्रियोंकी क्या गणना है और यह क्या तुमको नहीं मालूमहै कि इसे सब विद्या आगई हैं इससे यह युद्धमें अवश्य जीतेगा सिद्धलोगोंने प्रथमही कहाहै कि यह विद्याधरोंका चक्रवर्त्ती होगा और तुम्हें इसकी स्त्री होनाबनायाहै तो क्या सिद्धलोगोंका वचन मिथ्याहोसक्ताहै तुम्हारा काम चूडामणिका और सुप्रभाका एकहीगोत्रहै इनमेंसे सुप्रभाकेसाथ तो इसका विवाहहोचुकाहै जिसका चित्तसुप्रभापर अनुरक्तहुआहै उसका तुमपर क्यों नहींहोगा क्योंकि तुम उससे अधिकरूपवतीहो और तुम्हारे बान्धव नहींमानेंगे इसबातकाभी सन्देह तुमको नहीं करनाचाहिये क्यों कि पतिकेसिवाय स्त्रियोंका कोईबान्धव नहीं है सखीके यहवचनसुनकर वहकन्याबोली कि हेसखी तुम सत्य कहतीहो मुझे अन्यबन्धुओंसे क्या प्रयोजनहै मैंने यद्यपि अपनी विद्यासे जानलियाहै कि इसकी

युद्धमे विजयहोगी क्योंकिइसे सम्पूर्णरत्न तथा विद्यातो सिद्धहोगई हैं परन्तु अभीतक औषधी नहीं सिद्ध हुई है इससे मेरे चित्तमे सन्देहहोताहै वह सम्पूर्ण औषधिया चन्द्रपादनाम पर्व्वतकीगुफामें हैं पुण्यात्मा चक्रवर्त्तियोंकोही सिद्धहोती है जो यह वहाजाकर औषधियोंकोभी सिद्धकरे तो बहुतअच्छाहै क्योंकि प्रातःकालही यहयुद्धकरनेको जायगा इनबातों को सुन सूर्य्यप्रभ झूठीनिद्राको छोडकर उठबैठा और बोला कि हेसुन्दरी तुमने मेरे ऊपर बडापक्षपातदिखाया मैंवहाजाकर औषधियोंको सिद्धकरताहू और बताओ कि तुमकौनहो उसके यहवचनसुनकरवहकन्या जानगई कि इसने मेरीसवबातें सुनली हैं इसी से लज्जितहोगई और उसकी सखीबोली कि यह विद्याधरोंके स्वामी सुमेरुकी भतीजी है इसकाविला-सिनीनामहै आपके दर्शनोंको यहा आईथी इसप्रकार कहतीहुई सखीको अपने साथलेकर विलासिनी चलीगई तब सूर्य्यप्रभने अपने प्रभासादिक सम्पूर्ण मंत्रियोंको जगाकर औषधियों को सिद्धकरनेके लिये सुनीथ सुमेरु तथा मयासुरको बुलाने के लिये प्रहस्तको भेजा प्रहस्तके साथ उन सब लोगोंने आकर कहा कि अच्छीबातहै चलो औषधि सिद्धकरें तब सूर्य्यप्रभ रात्रिहीके समय उन सब लोगोंको साथलेकर चन्द्रपाद पर्व्वतको औषधि सिद्धकरनेको चला मार्गमें अनेक यक्ष गुह्यक तथा कूष्माण्ड अनेक प्रकारके शस्त्रोंकोलेकर विघ्न करनेकोमिले उनमें से कुछोंको शस्त्रोंसे मारकर और कितनोंही को अपनी विद्यासे स्तंभित करके वह चन्द्रपाद पर्व्वतपर पहुचा वहा जिस गुफा में औषधियाँ उसके द्वारपर श्रीशिवजीके गणोंने उसेरोका तब सुवासकुमारने कहा कि इनके साथ युद्ध नहीं करना चाहिये नहीं तो श्रीशिवजी अप्रसन्नहोंगे इससे आठहजारनामों से श्रीशिवजी महाराजहीकी स्तुतिकरो उन्हींकी स्तुतिसे यह लोग भी प्रसन्नहोजायगे सुवासकुमार के यह वचन सुनकर सूर्य्यप्रभादिकों ने वरदायक श्रीशिवजीकी स्तुतिकी स्तुतिको सुनकर वह गणप्रसन्न होकरबोले कि हम गुफाको छोडे देते हैं तुम इसमें से महौषधियालेलो परन्तु इसमे सूर्य्यप्रभको न जाना चाहिये प्रभासको जाना चाहिये क्योंकि यहगुफा इसको सुगम है गणों के यहवचन सुनकर सबने प्रभासको उसगुफामे भेजा प्रभास के जातेही महा अन्धकारसे युक्त वह गुफा प्रकाशित होगई और उसमें बैठे हुए चार घोर राक्षस उठकर प्रणामकरके बोले कि आइये महौषधिया लीजिये तब प्रभासने वहा से सातोंदिव्य महौषधियां लेकर बाहर आकर सूर्य्यप्रभ को देदीं उससमय यह आकाशवाणी हुई कि हे सूर्य्यप्रभ यह सातों दिव्य महौषधी आजतुमको सिद्धहोगई इनमें महा प्रभावहै इस आकाशवाणी को सुनकर सूर्य्यप्रभ अपने सब सा-थियों समेत सुमेरु के आश्रम को चलाआया वहाँ आकर सुनीथने सुवासकुमार से पूछा कि हे मुने सूर्य्यप्रभको छोडकर गणो ने प्रभासहीको गुफामे जानेकी क्यो आज्ञादी और राक्षसों ने क्यो इसका सत्कार किया यह सुनकर सुवासकुमार ने सबके आगे कहा कि प्रभास सूर्य्यप्रभका बडा हितकारी है और आत्मरूपहै इनदोनो मे कोई भेदनहीं है और प्रभास के समान यहां कोई शूर तथा प्रभाववानभी नहीं है पूर्व्वजन्मके पुण्यो से यह गुफा इसीकी है यह पूर्व्वजन्ममें जोथा सो सब मैं तुमसे वर्णन कर ताहू पूर्व्वहो एक नमुचिनाम महादानी दैत्यथा जिसे अपने शत्रुओं को भी कोई पदार्थ अदेय न

करने से वह नष्ट होजायगा यह सुनकर मैंने कहा कि क्या कहतेहो कि वह कौनहै सुनो श्रीशिवजीने उसे विद्याधरों का चक्रवर्ती बनाया है जो वह मनुष्य भी है तो मनुष्य तो देवता भी होगये हैं और विद्याधरोंने तो उसका पराक्रम देखाही है मैं जानताहूं कि उसका तो नाश न होगा पर उसके यहां आने से तुम्हारा नाश अवश्य होजायगा मेरे इसकहने पर सम्पूर्ण सभा कुपित होगई और श्रुतशर्म्मा तथा सुरन्धर मुझे मारनेको दौडे उन्हें आते देखकर मैंने खडे होकर कहा कि आओ मैं तुम्हारा पराक्रम तो देखूं तब दामोदरने उठकर उन दोनोंको रोका और कहा कि दूत तथा ब्राह्मण अवध्य होताहै तब विक्रमशक्तिने मुझसे कहा कि हे दूत जाओ तुम्हारे स्वामीके समान हम सब लोग भी ईश्वरके बनाये हुएहैं वह आवे तो हम उसका अतिथि सत्कार करसक्ते हैं देखा जायगा उसके यह अभिमान युक्त वचन सुनकर मैंने हँसकर कहा कि कमलोंके वनमें हंस तभीतक शब्द करते हैं जबतक मेघ आकर आकाशको नहीं आच्छादित करते हैं यह कहकर मैं वहां से चला आया प्रहस्तके यह वचन सुनकर मयासुरादिकों ने प्रसन्न होकर युद्धके उद्योगका निश्चय करके रणदुर्मद प्रभासको अपना सेनापति बनाया और सुवासकुमारसे रणकी दीक्षाकी आज्ञापाकर सब उसदिनसे नियम पूर्वक रहने लगे १७२ तदनन्तर रात्रिके समय गृहकेभीतर रत्नशय्या में सोयेहुए सूर्यप्रभने वहां आई एक श्रेष्ठ कन्या देखी उसे देखकर यह झूठ मूठको सोगया तब वह कन्या उसे और उसके सब मन्त्रियोंको सोताहुआ जानकर निकट आकर उसका स्वरूप देखकर अपनी सखी से बोली कि जो सोनेपर भी इसकी ऐसी सुन्दर शोभाहै तो जागनेपर न जानिये कैसीहोगी अब नेत्रोंका कौतुक पूरा होगया इसको जगाओमत इसपर मुझे अपना चित्तभी बहुत न लगाना चाहिये श्रुतशर्म्मा के साथ इसका संग्राम होनेवाला है उसमें न जानें किसको क्या होगा शूरोंके प्राणों के व्ययके निमित्त युद्धका उत्सवहुआ करता है उसमें इसका कल्याण होय फिर जो कुछ होगा सो देखाजायगा और इसने विमानपर चढके कामचूडामणि को देखा है मुझ सरीकी स्त्रियोंपर इसको कैसे अनुराग होगा उसके यह वचन सुनकर उसकी सखी बोली कि तुम क्या कहतीहो क्या तुम्हारा हृदय इसपर अत्यन्त आसक्त नहीं होगया है १८० जिसे देखकर कामचूडामणिका भी चित्तचलायमान हुआ उसे देखकर जो साक्षात् अरुन्धतीभी होय तो उनका भी चित्तचलायमान होजाय तो अन्य साधारण स्त्रियोंकी क्या गणना है और यह क्या तुमको नहीं मालूमहै कि इसे सब विद्या आगईहैं इससे यह युद्धमें अवश्य जीतेगा सिद्धलोगोंने प्रथमही कहाहै कि यह विद्याधरोंका चक्रवर्त्ती होगा और तुम्हें इसकी स्त्री होनापड़ताहै तो क्या सिद्धलोगोंका वचन मिथ्याहोसक्ताहै तुम्हारा काम चूडामणिका और सुप्रभाका एकहीगोत्रहै इनमेंसे सुप्रभाकेसाथ तो इसका विवाहहोचुकाहै जिसका चित्तसुप्रभापर अनुरक्तहुआहै उसका तुमपर क्यों नहींहोगा क्योंकि तुम उससे अधिकरूपवतीहो और तुम्हारे बान्धव नहींमानेंगे इसबातकाभी सन्देह तुमको नहीं करनाचाहिये क्यों कि पतिकेसिवाय स्त्रियोंका कोईबान्धव नहीं है सखीके यहवचनसुनकर वहकन्याबोली कि हेसखी तुम सत्यकहतीहो मुझे अन्यबन्धुओंसे क्या प्रयोजनहै मैंने यद्यपि अपनी विद्यासे जानलियाहै कि इसकी

युद्धमें विजयहोगी क्योंकि इसे सम्पूर्णरत्न तथा विद्या तो सिद्धहोगई हैं परन्तु अभीतक औषधी नहीं सिद्ध हुई है इससे मेरे चित्तमें सन्देहहोताहै वह सम्पूर्ण औषधिया चन्द्रपादनाम पर्व्वतकीगुफामें हैं पुण्यात्मा चक्रवर्त्तियोंकोही सिद्धहोती हैं जो यह वहांजाकर औषधियोंकोभी सिद्धकरे तो बहुतअच्छाहै क्योंकि प्रातःकालही यहयुद्ध करनेको जायगा इनबातों को सुन सूर्य्यप्रभ झूठीनिद्राको छोडकर उठबैठा और बोला कि हेसुन्दरी तुमने मेरे ऊपर बडापक्षपातदिखाया मैं वहांजाकर औषधियोंको सिद्ध करताहूं और बताओ कि तुमकौनहो उसके यहवचनसुनकर वहकन्या जानगई कि इसने मेरीसबबातें सुनली हैं इसी से लज्जितहोगई और उसकी सखीबोली कि यह विद्याधरोंके स्वामी सुमेरुकी भतीजी है इसकाविला-सिनीनामहै आपके दर्शनोंको यहां आईथी इसप्रकार कहतीहुई सखीको अपने साथलेकर विलासिनी चलीगई तब सूर्य्यप्रभने अपने प्रभासादिक सम्पूर्ण मंत्रियोंको,जगाकर औषधियों को सिद्धकरनेके लिये सुनीथ सुमेरु तथा मयासुरको बुलाने के लिये प्रहस्तको भेजा प्रहस्तके साथ उन सब लोगोंने आकर कहा कि अच्छीबातहै चलो औषधि सिद्धकरें तब सूर्य्यप्रभ रात्रिहीके समय उन सब लोगोंको साथलेकर चन्द्रपाद पर्व्वतको औषधि सिद्धकरनेको चला मार्गमें अनेक यक्ष गुह्यक तथा कूष्माण्ड अनेक प्रकारके शस्त्रोंकोलेकर विघ्न करनेकोमिले उनमें से कितनोंको शस्त्रोंसे मारकर और कितनोंही को अपनी विद्यासे स्तंभित करके वह चन्द्रपाद पर्व्वतपर पहुंचा वहां जिस गुफा में औषधियीं उसके द्वारपर श्रीशिवजीके गणोंने उसेरोका तब सुवासकुमारने,कहा कि इनके साथ युद्ध नहीं करना चा-हिये नहीं तो श्रीशिवजी अप्रसन्नहोंगे इससे आठहजारनामों से श्रीशिवजी महाराजहीकी स्तुतिकरो उन्हींकी स्तुतिसे यह लोग भी प्रसन्नहोजायंगे सुवासकुमार के यह वचन सुनकर सूर्य्यप्रभादिकों ने वरदायक श्रीशिवजीकी स्तुतिकी स्तुतिको सुनकर वह गणप्रसन्न होकरबोले कि हम गुफाको छोडे देते हैं तुम इसमें से महौषधियालेलो परन्तु इसमें सूर्य्यप्रभको न जाना चाहिये प्रभासको,जाना चाहिये क्योंकि यहगुफा इसको सुगम है गणों के यहवचन सुनकर सबने प्रभासको उसगुफामें भेजा प्रभास के जातेही महा अन्धकारसे युक्त वह गुफा प्रकाशित होगई और उसमें बैठे हुए चार घोर राक्षस उठकर प्रणामकरके बोले कि आइये महौषधियां लीजिये तब प्रभासने वहां से सातोंदिव्य महौषधियां लेकर बाहर आकर सूर्य्यप्रभ को देदीं उससमय यह आकाशवाणी हुई कि हे सूर्य्यप्रभ यह सातों दिव्य महौषधी आजतुमको सिद्धहोगईं इनमें महा प्रभाव है इस आकाशवाणी को सुनकर सूर्य्यप्रभ अपने सब सा-थियों समेत सुमेरु के आश्रम को चलाआया वहाँ आकर सुनीथने सुवासकुमार से पूछा कि हे मुने सूर्य्यप्रभको छोडकर गणों ने प्रभासहीको गुफामें जानेकी क्यों आज्ञादी और राक्षसों ने क्यों इसका सत्कार किया यह सुनकर सुवासकुमार ने सबके आगे कहा कि प्रभास सूर्य्यप्रभका बडा हितकारीहै और आत्मरूपहै इनदोनों में कोई भेदनहीं है और प्रभास के समान यहां कोई शूर तथा प्रभाववानभी नहीं है पूर्व्वजन्मके पुण्यों से यह गुफा इसीकी है यह पूर्व्वजन्ममें जोथा सो सब मैं तुमसे वर्णन कर-ता हूं पूर्व्वही एक नमुचिनाम महादानी दैत्यथा जिसे अपने शत्रुओं को भी कोई पदार्थ अदेय न

था उसने दशहजारवर्ष तपकरके ब्रह्माजीसे यह बरपाया कि लोह काष्ठ तथा पाषाण से न मरे तब कई वार इन्द्र को जीत २ कर युद्धसे उसने भगाया इन्द्रकी यह दुर्दशा देखकर कश्यपमुनिने देवता और दैत्यों से सन्धिकरवादी तदनन्तर वैरके निवृत्तहोजाने से सम्पूर्ण देवता दैत्य मिलकर मन्दराचल की रई बनाकर क्षीरसमुद्र को मथने लगे समुद्र मे से अनेक पदार्थ निकले उनमेंसे उच्चैश्श्रवा नमुचि के भाग मे आया और अन्य सम्पूर्ण पदार्थ ब्रह्माकी आज्ञासे सब दैत्य और देवताओ के भागमे यथा योग्य आये सम्पूर्ण पदार्थों के उपरान्त पीछे से निकलेहुए अमृत को लेकर देवतालोग भागगये इस से उनका और दैत्य लोगोका फिर वैरहोगया और परस्पर युद्धहोनेलगा युद्ध में जिस २ दैत्यको देवतालोग मारते थे उच्चैश्श्रवा उस २ को सूंघ२ कर जिलादेताथा इससे देवतालोग दैत्य और दानवों को युद्ध में नही जीतसके तब इन्द्रको उदासीन देखकर बृहस्पतिने एकान्त मे उससेकहा कि तुम्हारी जयका एक उपायहै उसको तुम बहुत शीघ्रता से करो कि तुम आपही नमुचि के पास जाकर उस से उच्चैश्श्रवामागो वहतुमको शत्रुजानकर भी उच्चैश्श्रवा अवश्य देदेगा और जन्मभरके सचितकिये हुए अपने यशको कभी खडित नहीं करेगा बृहस्पतिजीके यह वचन सुनकर इन्द्रने सब देवताओ को साथ लेजाकर नमुचिसे उच्चैश्श्रवा घोडामागा इन्द्र को मागता देखकर नमुचिने शोचा कि मेरेपाससे कोई भी याचक विमुख नहीं जाताहै फिर इन्द्रको तो विमुख करना मुझे उचित नहीं है इससे इसे उच्चैश्श्रवा घोडा अवश्य देना योग्य है मैंने ससारमें बहुतकाल से जोदानकी कीर्त्ति फैलारक्खी है वह जोनष्ट हो जायगी तो मेरे धन तथा प्राणोंसे भी क्या लाभहै इसप्रकार शोचकर उसने शुक्राचार्य्यके निषेधको भी न मानकर वह उच्चैश्श्रवा घोडा इन्द्रको देदिया तब इन्द्रने घोडापाकर शस्त्रादिको से अवध्य नमुचिको वज्र मे गगाजीका फेन रखकर मारा उससे वह मरगया (अहोदुरन्तासंसारे भोग तृष्णाययाहता । अनौचित्यादकीर्त्तिश्च देवाअपिनविभ्यति) इस ससारमे भोग तृष्णा बडी कठिनहै जिसके वशीभूतहोकर देवता लोग भी अपयश तथा अनुचित कार्य्यों से नही डरते हैं, नमुचिको इस प्रकार मराहुआ जानकर उसकी माता दनु ने अपने तपोबल से शोक के दूरकरनेको यह सकल्प किया कि वही नमुचि मेरे गर्भमें आकर फिर उत्पन्नहोवे और युद्ध में देवताओं से न जीताजाय तब वही नमुचि दनु के गर्भ से सम्पूर्ण रत्नमय शरीरवाला उत्पन्नहुआ और उसका नाम प्रबलहुआ उसजन्म मे भी उसने तपकरके सौवार युद्धमें इन्द्रको जीता और पूर्व्वजन्मकेही समान दान देकर याचक लोग सन्तुष्ट किये तब सम्पूर्ण देवतालोगों ने सलाह करके पुरुष यज्ञ करने के लिये जाकर उससे शरीरमागा उसने उन शत्रुओं को भी अपना शरीर देदिया ठीकहै (प्राणानुदारात्विसृजन्त्यर्थिनोनपराङ्मुखान्) उदारलोग अपने प्राणतलक देदेते हैं परन्तु याचकोंको विमुख नहीं फेरते तब देवतालोगों ने उसका शरीर लेकर उसके खण्ड २ करडाले,वही प्रबल मनुष्यलोकमें प्रभासनामसे उत्पन्नहुआहै इसने नमुचि और प्रबलनाम दोनों जन्मो में बडेभारी पुण्यकिये हैं उन्हीं के प्रभावसे इसको कोई शत्रु इस जन्ममे नहीं जीतसक्ताहै इन औषधियोंकी गुफाका वह प्रबलही स्वामीथा इसी से यह गुफा प्रभास के

आधीन है इसी गुफाके नीचे पातालमे प्रबलका मदिर है जहा इसकी वारह मुख्यस्त्री अनेक प्रकार के रत्न नानाप्रकारके शस्त्र चिन्तामणि एकलक्षयोद्धा और एकलक्षही घोडे यह सब वस्तुहै उन सब वस्तुओका स्वामी अब प्रभामही है क्योंकि इसी ने पूर्व्वजन्ममें यह सब उपार्जन कीथी इससे प्रभास के किसी कार्य्य में भी आश्चर्य्य न करना चाहिये यह बडाही प्रतापी है सुवासकुमारके यहवचनसुनकर सूर्य्यप्रभ, मयासुर प्रभास सुमेरु तथा सुनीथादिकोंको साथ लेकर उन रत्नादिकोंके लानेके निमित्त पातालमें उस मदिरके जानेके विलके द्वारपरगया वहा प्रभास अकेलाही विलके द्वारा अपने मदिरको गया और सम्पूर्ण धन चिन्तामणि घोडे योद्धा तथा अपनी वारहों स्त्रियोंको लेकर वाहरआया तब सूर्य्यप्रभ वहुत प्रसन्नहोके उसको साथलेकर अपने सम्पूर्ण साथियों समेत सुमेरुके आश्रमपर अपनी सेनामें आया वहाआकर सम्पूर्ण राजा तथा दैत्यलोगोंको अपने२ डेरोंपर चले जानेपर उसने कुशासन पर लेटकर जो रात्रि शेपथी सो व्यतीतकी २४६ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायासूर्य्यप्रभलम्बकेतृतीयस्तरंग ३ ॥

इसके उपरान्त प्रातःकाल सूर्य्यप्रभ अपनी सम्पूर्ण सेना समेत सुमेरुके तपोवनसे श्रुतशर्म्मा को जीतनेकेलिये त्रिकूटाचल के निकटगया और वहा से श्रुतशर्म्माकी सेनाको हटाकर वहीं अपनी सेनाका डेराडालकर और वहीं सभाका स्थानवनवाकर सुमेरु, मयासुर तथा सुनीथ आदिकोंकेसाथ सभामें बैठा उससमय श्रुतशर्मा के पिता त्रिकूटाचलके स्वामी के दूतने आकर सुमेरुसे कहा कि श्रुतशर्मा के पिताने आपसे यह सदेशा कहाहै कि मैंने दूरहोने के कारण तुम्हारा कभी सत्कार नहीं किया आज तुम अपने साथियों समेत मेरे देशमें आयेहो इससे अब मैं आपका अतिथि सत्कार यथायोग्य करूगा शत्रुके इस सदेशेको सुनकर सुमेरुने दूतसे कहा कि वहुत ठीक है हमारे समान योग्य अतिथि उसको दूसरा नहीं मिलेगा क्योंकि अन्य अतिथियोंके सत्कारसे परलोकमे फल मिलताहै और हमारे सत्कार का फल इसीलोकमे मिलजायगा इससे हम लोग तैयारहैं वह आकर अतिथि सत्कारकरे सुमेरुके यह वचन सुनकर वह दूत अपने स्वामी के पास चलागया इसके उपरान्त सूर्य्यप्रभादिक सबलोग किसी ऊचे स्थानपर खडे होके अपनी सम्पूर्ण सेनाको देखनेलगे तब सुनीथने अपने पिता मयासुर से कहा कि इससेनामे आपमुझे रथ महारथ और अतिरथ आदिकोंका विभागबताइये मयासुरने कहा कि सुनो यहकहकर वह अगुलीसे बताकर कहनेलगा कि सुवाहु, निर्घात, मुष्टिक, गोहर प्रलब, प्रमाथ, कंकट, पिंगल, तथा वसुदत्तादिक यह सब राजा अर्द्धरथ हैं भ्रुकुटी, सुनिगाल, दडीभूषण, सोमिल, उन्मत्तक, देवशर्म्मा, पितृशर्म्मा, कुमारक तथा हरिदत्तादिक यह सब राजा पूर्णरथहैं, प्रकपन, दर्पित, कुम्भीर, मातृपालित, महाभट, उग्रभट, वीरस्वामी, सुगधर, भडीर, सिंहदत्त, गुणवर्म्मा, कीटक, भीम तथा भयकर यह सब द्विरथहैं विरोचन, वीरसेन, यज्ञसेन, कुञ्जर, इन्द्रवर्म्मा, शवरक, क्रूरकर्मा, तथा निराशक, यह सब त्रिरथहैं सुशर्म्मा, वाहुशाली, विशाख, क्रोधन, तथा प्रचड यह सब राजपुत्र चतुरथहैं, जिजगी, वीरवर्मा, प्रवीर, सुप्रतिज्ञ, अमराराम, चडदत्त, जालिक, सिंहभट, व्याघ्रभट तथा शत्रुभट यह सब राजा

तथा राजपुत्र पत्ररथहै यह उग्रवर्मा नाम राजपुत्र पट्टरथहै, विशाख, सुतन्तु, सुगम तथा नरेन्द्रशर्म यह सब सप्तरथहैं यह राजा सहस्रायुका पुत्र महारथहै यह शतानीक महारथों के यूथका स्वामी सूर्य्यप्रभ के मित्र सुभास, हर्ष, विमल, महाबुद्धि अचल, प्रियकर, शुभकर, यज्ञरुचि तथा धर्मरुचि यह सब महारथहै सूर्य्यप्रभ के मंत्री विश्वरुचि, भास तथा सिद्धार्थ यह तीनों महारथो के यूथपति प्रहस्त तथा महार्थ अतिरथो के यूथपति हैं प्रज्ञाढ्य तथा स्थिरबुद्धि, पूर्णरथो के यूथपहैं सर्वदम प्रमथन, धूमकेतु, प्रवहण, वज्रपञ्जर, कालचक्र तथा मरुद्वेग यह सब रथोंके तथा अतिरथों के अधिपतिहैं प्रकंपन तथा सिंहनाद रथातिरथो के यूथपहैं महाकाय, काम्बलिक, कालकंपनक, तथा प्रहृष्टरोमा, यह चारो दैत्यराज अतिरथों के यूथपो के अधिपति हैं और सूर्य्यप्रभके समान बलवान् सेनाका स्वामी यह प्रभास तथा सुमेरुका पुत्र श्रीकुंजरकुमार यह दोनों महारथों के यूथपोके यूथपहैं यह तथा अन्य बहुत से शूर हमारी सेनामे हैं परन्तु हमारे शत्रुओं की सेनामे इससे भी अधिक हैं तथापि शिवजीकी कृपासे वह लोग हमारा कुछ भी नहीं करसकेंगे मयासुरके इसप्रकार कहतेही कहते श्रुतशर्म्मा के पिताका भेजाहुआ दूत आया और बोला कि त्रिकूटाधिपति ने आपसे कहाहै कि शूरलोगोंकेलिये संग्राम बड़ा उत्सवहै और यहा की पृथ्वी संकेतहै इससे कलापकग्राम नाम स्थानमें चलो वहीं हमलोग भी जातेहैं क्योंकि वहा की पृथ्वी बहुत विस्तृतहै यह सुनकर सुनीथ तथा सूर्य्यप्रभादिक अपनी सम्पूर्ण सेनाको लेकर कलापग्रामको गये श्रुतशर्म्मा भी अपनी सम्पूर्ण विद्याधरोंकी सेनाको लेकर वहीआया श्रुतशर्माकी सेनामें हाथियोंको देखकर सूर्यप्रभनेभी विमानभेजकर अपने हाथी बुलवालिये तदनन्तर श्रुतशर्म्माकी सेनामे सेनाधिपति दामोदरने महाशुचिव्यूह बनाया उसव्यूहके किनारेपर अपने मंत्रियों समेत श्रुतशर्म्मारहा व्यूहके आगे दामोदररहा और अन्यस्थानों में अन्यान्य महारथरहे ४१ और सूर्य्यप्रभकी सेनामें सेनाधिपति प्रभासने अर्द्धचन्द्रव्यूह बनाया उसके मध्यमे वह आपही रहा दोनो कोनेपर कुंजरकुमार तथा प्रहस्तरहा और सूर्य्यप्रभ तथा सुनीथादिक यह सब उसके पीछेरहे और सुवासकुमार तथा सुमेरु उसके पास खड़ेरहे इसप्रकार व्यूहोंकी रचनाकरके दोनों सेनाओं मे रणके बाजे बजने लगे उससमय सम्पूर्ण देवतालोग संग्राम देखने के लिये आकाश में आये उनसे सम्पूर्ण आकाशपूर्ण होगया अप्सराओं तथा लोकपालों समेत इन्द्र आये सम्पूर्ण भूतगण मातृकादेवी तथा पार्वती समेत श्रीशिवजी आये सम्पूर्ण महर्षि मूर्त्तिमान् वेदशास्त्र तथा सावित्री आदि समेत भगवान् ब्रह्माजी आये लक्ष्मी कीर्त्ति तथा जयाआदि देवियोंसे युक्त शख चक्र गदा पद्मधारी श्रीविष्णुभगवान् गरुडपर चढकरआये अपनी स्त्रियोंसमेत महर्षि कश्यपजीआये सूर्य्यआये, वसुआये और यक्ष राक्षस सर्प तथा प्रह्लादादिक दैत्य आये इनसबके आकाशके व्याप्त होजानेपर दोनों सेनाओंका बडा संग्राम होनेलगा अनेक प्रकारके शस्त्र चलनेलगे जयजयकारका महाशब्द होनेलगा उससमय बनेबाणोंके समूहरूपी मेघोंसे सम्पूर्ण दिशा आच्छादित होगई परस्पर बाणोंके चलनेमे अग्निरूपी बिजली चमकनेलगी और शस्त्रोंमे मारेगये हाथी घोड़ोंके रुधिरोंसे पूर्ण वीरोंके शरीररूपी ग्राहों से युक्त रुधिरकी नदिया

नहनेलगीं उसनदीमें नाचतेहुए तैरतेहुए तथा नानाप्रकारके शब्द करतेहुए शूरलोगोको शृगालोंको तथा भूतोको महा आनन्दहुआ इसप्रकार बहुतसी सेनाके मरनेसे तुमुल युद्ध के शान्त होजानेपर और धीरे २ अपनी तथा पराई सेनाके भेद मालूम होनेपर और लडतेहुए प्रतिपक्षियोंके नाम सुमेरुकेद्वारा सूर्य्यप्रभादिकोंको विदित होनेपर पहले राजासुवाहु तथा विद्याधरोंके स्वामी अट्टहासका द्वन्दयुद्धहुआ बहुत कालतक युद्ध होनेपर अट्टहासने सुवाहुको बाणों से वेधकर उसका शिर अर्द्धचन्द्र बाणसे काट डाला सुवाहुको मरा देखकर अत्यन्त क्रोधयुक्त होके मुष्टिक अट्टहाससे लडनेलगा उसेभी अट्टहासने बाणोंसे घेरकर मारा मुष्टिकको इसप्रकार मराहुआ देखकर राजाप्रलव क्रोधित होकर अट्टहाससे लडने लगा अट्टहासने उसेभी मर्मोंमे बाणमारकर यमपुरभेजा और उसकी सम्पूर्ण सेनाभी मारडाली उसेभी मरा देखकर मोहन नाम राजा अट्टहासके साथ द्वन्द्वयुद्ध करनेलगा तब अट्टहासने उसके सारथीको मार धनुपको काट बाणों के दृढप्रहारों से उसे भी मारगिराया अट्टहाससे चार योद्धाओं को मरा देख कर श्रुतशर्म्माकी सेना प्रसन्नता से गर्जनेलगी यह देखकर सूर्य्यप्रभका मित्रहर्ष अपनी सेना लेकर सेना समेत अट्टहाससे लडनेलगा उसने अपने शरोंसे अट्टहासके बाणोंको काटकर सारथीको मार दो तीनबार धनुप काटकर ध्वजागिराकर उसका शिरकाटडाला इससे वह रथपरसे पृथ्वीपर गिरपडा अट्टहासके मरनेसे श्रुतशर्म्माकी सेनामें बडा क्षोभहुआ और सेना आधी दिखाई देनेलगी उससमय क्षणभरमेंही घोरयुद्धसे दोनों सेनाओ केहाथी घोडे तथा पैदल इतने मरे कि युद्धमें केवल कबन्धही कबन्ध दिखाई देनेलगे तब विकृतदंष्ट्र नाम विद्याधर क्रोधमें आकर हर्षसे लडनेलगा हर्षने उसके सारथी ध्वजा रथ तथा घोडोको मारकर अपने बाणोंसे कुडल समेत उसका शिरभी काटकर पृथ्वीमें डालदिया विकृतदंष्ट्रके मरनेपर कुपित होकर चक्रवाल नाम विद्याधरोंके स्वामीने हर्षका धनुपकाटके और युद्धमें उस थकाकर मारडाला तब क्रोधमें राजा प्रमाथ चक्रवालके साथ युद्ध करनेलगा उसे भी उसने मारडाला और फिर क्रोधकरके इकट्ठे आयेहुए कुरूट विशाल प्रचड तथा अकुरी इनचारो राजाओंको भी मार डाला इन सबको मराहुआ देखकर निर्घातनाम राजा चक्रवाल के साथ युद्धकरनेलगा इन दोनों ने बहुत कालतक युद्धकरके परस्पर एक दूसरेका रथ बाणों से चूर्णकरडाला और पदातीहोकर खड्ग तथा चक्रलेकर परस्पर युद्धकरनेलगे युद्ध करते २ वह दोनों एक दूसरे के खड्ग से कटकर पृथ्वीपर गिरपडे उन दोनों वीरों को मराहुआ देखकर दोनों सेनाओं में उदासीनताहुई फिर विद्याधरों का स्वामी कालकपन युद्धकरनेको आया उसके साथ युद्धकरनेको प्रकपननाम राजपुत्रगया कालकपन ने क्षणभरही मे उसे बाण से मारगिराया प्रकपन को मरादेखकर जालिक चण्डदत्त गोपक सोमिल तथा पितृशर्म्मा यह पाचों एक साथही कालकपन से युद्ध करनेलगे उसने इन सबको विरथकरके एक साथही पाच बाण मारकर यमपुरको भेजदिया यह देखकर विद्याधर तो प्रसन्नहुए परन्तु मनुष्य तथा दैत्य बहुत खिन्नहुए तब उन्मत्तक प्रशस्त विलवर तथा धुरन्धर यह चारो रथी कालकपन से युद्धकरनेलगे उसने इन चारो को भी शीघ्रता से मारकर फिर आयेहुए तेजिक गेडक वगिल गासिल भद्रकर तथा दडी यह रथी भी

मारडाले और इन्हे मारकर भीम भीषण कुम्भीर विकट तथा सविलोचन इन पांचों रथियों को भी मारा कालकम्पनसे इसप्रकार बहुत से राजाओं को मारेगये देखकर सुगणनाम राजपुत्र उससे जाकर युद्ध करने लगा परस्पर युद्ध करते २ वह दोनों एक दूसरे के घोडे तथा सारथियों को मार विरथहोगये उससमय वह परस्पर खड्ग युद्धकरनेलगे युद्धकरते २ कालकम्पनने सुगणको पृथ्वीपर गिराकर उसका शिरकाट डाला उससमय मनुष्योंके साथ मानों विद्याधरोंका युद्ध असम्भव जानकर सूर्य्य भगवान् खिन्नहोकर अस्ताचलकोगये तब रुधिरसे भरीहुई युद्धभूमिही रक्तनहींहुई किन्तु आकाशभी सन्ध्यासे रक्तताको प्राप्तहोगया और भूत तथा कबन्ध नृत्यकरने लगे इसप्रकार उसदिनके व्यतीतहोजानेपर दोनों सेना युद्ध बन्दकरके अपने २ डेरोंको चलीगई उसदिन श्रुतशर्म्माकी सेनामें तो तीन वीर और सूर्य्यप्रभकी सेनामें तेतीस वीर मारेगये इससे सूर्य्यप्रभ अपने बांधव तथा मित्रादिकों के वधसे उदासीन होकर मन्त्रियों के साथ युद्धसम्बन्धी वार्त्तालाप करताहुआ रात्रिभर सोया नहीं और इसकी सम्पूर्ण रानियां बन्धुओंके दुःखसे विकलहोके एक दूसरेके समझानेके लिये इकट्ठीहुईं वहां रोनेके अवसरमें भी वहअनेकप्रकारकी वार्त्तालाप करनेलगीं ठीकहै (स्त्रीणांनसक्षणोयत्रनकथास्वपराश्रया) स्त्रियोंका ऐसाकोई भी क्षणनहींहोताहै जिसमे वह अपनी या पराई बात न करें उससमय प्रसंगसे एकराजपुत्रीने कहा कि बडा आश्चर्य्य है आज आर्य्यपुत्र स्त्रियोंके विनाही सोगये यहसुनकर दूसरीने कहा कि युद्धमें बन्धुओं के नाशसे आर्य्यपुत्र दुःखितहोरहे हैं उनका चित्त स्त्रियो मे कैसे लगे यहसुनकर किसी अन्यराजपुत्रीने कहा कि जो अबभी कोई नवीन श्रेष्ठ कन्या मिलजाय तो उन्हें दुःखभूलजाय यहसुनकर कोई और राजपुत्री बोली कि यद्यपि आर्य्यपुत्र स्त्रियोंमें बडे अनुरक्तहैं तथापि वह ऐसेदुःखमें स्त्रियोंपर चित्त नहीं चलावेंगे १०१ उनसबके ऐसे विचारकरनेपर फिर किसी राजपुत्रीने कहा कि बताओ आर्य्यपुत्र ऐसे स्त्रियोंमें अनुरक्त क्यों है बहुतसी स्त्रियोंके होनेपरभी वह निरन्तर नवीन २ स्त्रियोंका संग्रह किया करते हैं और सन्तुष्ट नहीं होतेहैं यहसुनकर बडीचतुर मनोवती नाम राजपुत्री बोली कि मैं तुमको इसबात का कारण बताती हूं कि राजालोग बहुतसी स्त्रियोंसे विवाह क्यों करते हैं, देश रूप अवस्था चेष्टा तथा विज्ञान आदिक भेदोंसे श्रेष्ठ स्त्रियोंमें भिन्न २ गुणहोते हैं एकही में सबगुण नहीं होसक्ते हैं कर्णाट लाट सौराष्ट्र तथा मध्य देशोंमें उत्पन्नहुई स्त्रियां अपने २ देशोंके गुणोंसे पुरुषों के चित्त हरती है कोई शरत्कालके चन्द्रमाके समान अपने २ मुखों से कोई सुवर्ण के कुम्भोंके समान शोभायमान सटेहुए उन्नत स्तनोंसे कोई कामदेवके सिंहासनके समान सुन्दर जंघाओंसे और कोई अन्य २ सुन्दर अंगोंसे पुरुषों के चित्तोंको हरती हैं कोई सुवर्णके समान निर्मल अंगवाली कोई प्रियंगुके समान श्यामांगी और कोई रक्तवर्ण स्त्रियांहोती है उन्हें देखकर मनुष्योंके नेत्र लुभाते हैं कोई स्त्री यौवनके आगमन में कोई सम्पूर्ण यौवनमें और कोई प्रौढावस्थामें अपनी सुन्दरतासे मनोहरहोती हैं कोई हँसनेमें शोभितहोती है कोई क्रोधमें मनोहर लगती है कोई हाथी के समान गंभीरतासे गमनकरती है कोई चलने में हंसके समान शोभितहोती है कोई अमृतके समान मधुर वचनों से कर्णोंको तृप्तकरती है कोई भृकुटियों को

चलाकर देखतीहुई स्वभावहीसे मनोहरहोतीहै कोई नृत्यमें शोभित दीखतीहै कोई अपने मनोहर गान से मनुष्योंके चित्तको आकर्षण करतीहै और कोई वीणा आदिक बजाकर पुरुषोंको अपने ऊपर आ-शक्तकरती है कोई वाह्यरति जानती है कोई आभ्यन्तर रति मे प्रवीण होती है कोई शृंगार से अत्यन्त शोभित होती है कोई चतुरता से चित्त को हरती है और कोई अपने पति को चित्त के अभिप्रायको जानकर उसी के अनुसार कार्य्य करके उसे अपने वशीभूत करती है कहांतक कहें स्त्रियोंमें अलग २ अनेक२प्रकारके गुण होते हैं किसी में कोई गुण किसी मे कोईगुण परन्तु एक स्त्री में सम्पूर्ण गुण नहीं होते हैं इसीसे श्रेष्ठ राजालोग अनेक प्रकार के स्वाद लेने की इच्छासे बहुतसी स्त्रियों के साथ विवाह करतेही जाते हैं और परस्त्रियोंसे सगम करना कभी नहीं चाहते है इससे आर्य्यपुत्रका यह दोष नहीं है और इसमें हमलोगों को ईर्षा भी न करना चाहिये मनोवती के यह वचनसुनकर मदनसेना आदिक अन्यरानी भी उसीप्रकार अनेक बातें कहनेलगीं उससमय अत्यन्त रससे लज्जा रहित होकर उन सब रानियों ने परस्पर सुरत क्रियाकी प्रवीणताका भी उपदेश किया ठीकहै (प्रसगमिलिता कथाप्रसरसक्त चित्ता मिथस्तदस्तित्नकिमप्यहोयदिहनोद्यमन्तिस्त्रिय) प्रसगसे मिलीहुई स्त्रिया कथाके प्रबन्धमे चित्त के लगजाने से ऐसी कौन बातहै जो नहीं कहती हैं इसप्रकार वार्त्तालाप करते २ उन सब रानियों ने जागकर वह रात्रि व्यतीत की और शत्रुवों के जीतने की इच्छासे सूर्य्योदयकी आकाक्षा करते हुए सूर्य्यप्रभको भी वह रात्रि जागतेही जागते व्यतीत हुई १२१ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांसूर्य्यप्रभलम्बकेचतुर्थस्तरङ्गः ४ ॥

इसके उपरान्त प्रात काल सूर्य्यप्रभ अपनी सम्पूर्ण सेनाको लेकर युद्धभूमि मे गया और श्रुतशर्म्मा भी अपनी सबसेनाको साथलेकर आया और इन्द्र ब्रह्मा विष्णु तथा शिव आदिक देवता दैत्य यक्ष राक्षस सर्प तथा गन्धर्व युद्ध देखने को आये श्रुतशर्म्मा की सेनामें दामोदर ने चक्रव्यूह बनाया और सूर्य्यप्रभकी सेनामे प्रभासने वज्रव्यूह बनाया तब दोनों सेनाओं में युद्धके बाजे बजनेलगे सुभटगर्ज-नेलगे और युद्धका प्रारभहुआ शस्त्रोंसे मरेहुए शूर मेरे मण्डलको भेदतेहैं इसीसे मानों भयभीत हो-कर सूर्य्यबाणों के जाल में छुपगये दामोदर के बनायेहुए चक्रव्यूहको कोई दूसरा नहीं भेदसक्ता था इससे सूर्य्यप्रभकी आज्ञासे प्रभासने उसेभेदकर उसमें प्रवेश किया दामोदरने वहीं आकर उसे रोककर उसव्यूहके छिद्रको बन्दकिया और उनदोनोंका युद्धहोनेलगा सूर्य्यप्रभने प्रभासको व्यूहके भीतर अके-लाही गया देखकर उसकेपीछे प्रकम्पन धूमकेतु कालकंपन,महामाय,मरुद्वेग,प्रहस्त,वज्रपंजर,कालचक्र, प्रमथन,सिंहनाद,कम्बल,विकटाक्ष,प्रवहण,कुंजरकुमार, और प्रहृष्टरोमा यह पन्द्रह महारथी व्यूह केद्वारपर भेजे उस समय दामोदरने अपूर्वही पुरुषार्थ दिखाया कि प्रभासको छोड़कर अकेलेही उन पन्द्रहों के साथमें युद्धकिया यहदेखकर इन्द्रने पास खड़ेहुए नारदमुनिसे कहा कि सूर्य्यप्रभादिक यह सबदैत्योंके अवतार है और श्रुतशर्मादिक विद्याधर देवताओं के अंशहैं उनमें से श्रुतशर्मा मेराही अंशहै इससे यह युद्ध देवासुर संग्रामहै देखो विष्णुभगवान् देवताओं के सदैव सहायक होतेहैं इसीसे विष्णुभगवान्

मारडाले और इन्हें मारकर भीम, भीषण, कुम्भीर, विकट तथा सुविलोचन इन पांचो रथियों को भी मारा कालकम्पनसे इसप्रकार बहुत से राजाओं को मारेगये देखकर सुगणनाम राजपुत्र उससे जाकर युद्ध करने लगा परस्पर युद्ध करते २ वह दोनो एक दूसरे के घोडे तथा सारथियों को मार विरथहोगये उससमय वह परस्पर खड्ग युद्धकरनेलगे युद्धकरते २ कालकम्पनने सुगणको पृथ्वीपर गिराकर उसका शिरकाट डाला उससमय मनुष्योंके साथ मानो विद्याधरोका युद्ध असम्भव जानकर सूर्य्य भगवान् खिन्नहोकर अस्ताचलकोगये तब रुधिरसे भरीहुई युद्धभूमिही रक्तनहींहुई किन्तु आकाशभी सन्ध्यासे रक्तताको प्राप्तहोगया और भूत तथा कबन्ध नृत्यकरने लगे इसप्रकार उसदिनके व्यतीतहोजानेपर दोनो सेना युद्ध बन्दकरके अपने २ डेरोंको चलीगई उसदिन श्रुतशर्म्माकी सेनामे तो तीन वीर और सूर्य्यप्रभकी सेनामें तेतीस वीर मारेगये इससे सूर्य्यप्रभ अपने बांधव तथा मित्रादिकों के वधसे उदासीन होकर मन्त्रियों के साथ युद्धसम्बन्धी वार्त्तालाप करताहुआ रात्रिभर सोया नहीं और इसकी सम्पूर्ण रानिया बन्धुओंके दुःखसे विकलहोके एक दूसरेके समझानेके लिये इकट्ठीहुई वहां रोनेके अवसरमें भी वहअनेकप्रकारकी वार्त्तालाप करनेलगीं ठीकहै (स्त्रीणांनसक्षणोयत्रनकथास्वपराश्रया) स्त्रियोका ऐसाकोई भी क्षणनहींहोताहै जिसमे वह अपनी या पराई बात न करें उससमय प्रसगसे एकराजपुत्रीने कहा कि बडा आश्चर्य्य है आज आर्यपुत्र स्त्रियोके विनाही सोगये यहसुनकर दूसरीने कहा कि युद्धमें बन्धुओं के नाशसे आर्यपुत्र दुःखितहोरहे हैं उनका चित्त स्त्रियो मे कैसे लगे यहसुनकर किसी अन्यराजपुत्रीने कहा कि जो अबभी कोई नवीन श्रेष्ठ कन्या मिलजाय तो उन्हें दुःखभूलजाय यहसुनकर कोई और राजपुत्री बोली कि यद्यपि आर्यपुत्र स्त्रियोंमें बड़े अनुरक्तहै तथापि वह ऐसेदुःखमें स्त्रियोपर चित्त नहीं चलावेंगे १०१ उनसबके ऐसे विचारकरनेपर फिर किसी राजपुत्रीने कहा कि बताओ आर्यपुत्र ऐसे स्त्रियोंमें अनुरक्त क्यों है बहुतसी स्त्रियोंके होनेपरभी वह निरन्तर नवीन २ स्त्रियोका संग्रह किया करते है और सन्तुष्ट नहीं होतहै यहसुनकर बडीचतुर मनोवती नाम राजपुत्री बोली कि मैं तुमको इसबात का कारण बनाती हू कि राजालोग बहुतसी स्त्रियोंसे विवाह क्यों करते हैं, देश रूप अवस्था चेष्टा तथा विज्ञान आदिक भेदोंसे श्रेष्ठ स्त्रियोंमें भिन्न २ गुणहोते हैं एकही में सबगुण नहीं होसक्ते हैं कर्णाट लाट सौराष्ट्र तथा मध्य देशोंमें उत्पन्नहुई स्त्रिया अपने २ देशोंके गुणोंसे पुरुषों के चित्त हरती हैं कोई शरत्कालके चन्द्रमाके समान अपने २ मुखों से कोई सुवर्ण के कुम्भोकेसमान शोभायमान सटेहुए उन्नत स्तनोंसे कोई कामदेवके सिंहासनके समान सुन्दर जंघाओंसे और कोई अन्य २ सुन्दर अंगोंसे पुरुषों के चित्तोंको हरती हैं कोई सुवर्णके समान निर्मल अंगवाली कोई प्रियंगुके समान श्यामांगी और कोई रक्तवर्ण स्त्रियाहोती हैं उन्हें देखकर मनुष्योंके नेत्र लुभाते है कोई स्त्री यौवनके आगमन में कोई सम्पूर्ण यौवनमें और कोई प्रौढावस्थामें अपनी सुन्दरतासे मनोहरहोती है कोई हँसनेमे शोभितहोती है कोई क्रोधमें मनोहर लगती है कोई हाथी के समान गम्भीरतासे गमनकरती है कोई चलने में हंसके समान शोभितहोती है कोई अमृतके समान मधुर वचनों से कर्णोको तृप्तकरती है कोई भृकुटियों को

चलाकर देखतीहुई स्वभावहीसे मनोहरहोतीहैं कोई नृत्यमें शोभित दीखतीहैं कोई अपने मनोहर गान से मनुष्योंके चित्तको आकर्षण करतीहै और कोई वीणा आदिक बजाकर पुरुषोंको अपने ऊपर आशक्तकरती है कोई बाह्यरति जानती है कोई आभ्यन्तर रति में प्रवीण होती है कोई शृंगार से अत्यन्त शोभित होती है कोई चतुरता से चित्त को हरती है और कोई अपने पति को चित्त के अभिप्रायको जानकर उसी के अनुसार कार्य्य करके उसे अपने वशीभूत करती है कहांतक कहूं स्त्रियों में अलग २ अनेक२ प्रकारके गुण होते हैं किसी में कोई गुण किसी मे कोईगुण परन्तु एक स्त्री में सम्पूर्ण गुण नहीं होते हैं इसीसे श्रेष्ठ राजालोग अनेक प्रकार के स्वाद लेने की इच्छासे बहुतसी स्त्रियों के साथ विवाह करतेही जाते हैं और परस्त्रियोंसे संगम करना कभी नहीं चाहते हैं इससे आर्य्यपुत्रका यह दोष नहीं है और इसमें हमलोगों को ईर्षा भी न करना चाहिये मनोवती के यह वचनसुनकर मदनसेना आदिक अन्यरानी भी उसीप्रकार अनेक बातें कहनेलगीं उससमय अत्यन्त रससे लज्जा रहित होकर उन सब रानियों ने परस्पर सुरत क्रियाकी प्रवीणताका भी उपदेश किया ठीकहै (प्रसंगमिलिता कथाप्रसरसक्तचित्ता मिथस्तदस्तिनकिमप्यहोयदिहनोद्गमन्तिस्त्रियः) प्रसंगमें मिलीहुई स्त्रियां कथाके प्रबन्धमें चित्त के लगजाने से ऐसी कौन बातहै जो नहीं कहती हैं इसप्रकार वार्त्तालाप करते २ उन सब रानियों ने जागकर वह रात्रि व्यतीत की और शत्रुवों के जीतने की इच्छासे सूर्य्योदयकी आकांक्षा करते हुए सूर्य्यप्रभको भी वह रात्रि जागतेही जागते व्यतीत हुई १२१॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांसूर्य्यप्रभलम्बकेचतुर्थस्तरङ्गः ४॥

इसके उपरान्त प्रातःकाल सूर्य्यप्रभ अपनी सम्पूर्ण सेनाको लेकर युद्धभूमि मे गया और श्रुतशर्म्मा भी अपनी सबसेनाको साथलेकर आया और इन्द्र ब्रह्मा विष्णु तथा शिव आदिक देवता दैत्य यक्ष राक्षस सर्प तथा गन्धर्व युद्ध देखने को आये श्रुतशर्म्मा की सेनामें दामोदर ने चक्रव्यूह बनाया और सूर्य्यप्रभकी सेनामें प्रभासने वज्रव्यूह बनाया तब दोनों सेनाओं में युद्ध के बाजे बजनेलगे सुभटगर्जनेलगे और युद्धका प्रारंभहुआ शस्त्रोंसे मरेहुए शूर मेरे मण्डलको भेदतेहैं इसीसे मानों भयभीत होकर सूर्य्यबाणों के जाल में छुपगये दामोदर के बनायेहुए चक्रव्यूहको कोई दूसरा नहीं भेदसक्ता था इससे सूर्य्यप्रभकी आज्ञासे प्रभासने उसेभेदकर उसमें प्रवेश किया दामोदरने वहीं आकर उसे रोककर उसव्यूहके छिद्रको बन्दकिया और उनदोनोंका युद्धहोनेलगा सूर्य्यप्रभने प्रभासको व्यूहके भीतर अकेलाही गया देखकर उसकेपीछे प्रकंपन धूमकेतु कालकंपन,महामाय,मरुद्वेग,प्रहस्त,वज्रपंजर,कालचक्र, प्रमथन,सिंहनाद,कंबल,विकटाक्ष,प्रवहण,कुंजरकुमार, और प्रहृष्टरोमा यह पन्द्रह महारथी व्यूहके द्वारपर भेजे उस समय दामोदरने अपूर्वही पुरुषार्थ दिखाया कि प्रभासको छोड़कर अकेलेही उन पन्द्रहों के साथमें युद्धकिया यहदेखकर इन्द्रने पास खड़ेहुए नारदमुनिसे कहा कि सूर्य्यप्रभादिक यह सब दैत्योंके अवतार हैं और श्रुतशर्मादिक विद्याधर देवताओं के अंशहैं उनमें से श्रुतशर्मा मेराही अंशहै इससे यह युद्ध देवासुर संग्रामहै देखो विष्णुभगवान् देवताओं के सदैव सहायक होतेहैं इसीसे विष्णुभगवान्

का अंश यह दामोदर इस प्रकार से युद्ध कररहाहै इन्द्रके इसे प्रकार कहतेही दामोदर की सहायता के लिये ब्रह्मगुप्त, वायुवल, यमदष्ट, सुरोपण, रोपावरोह, अतिवल, तेजप्रभ, धुरन्धर, कुवेरदत्त, वरुणशर्मा, कम्बलिक, दुष्टदमन दोहन, और आरोहण यह चौदह महारथआये और दामोदरकी सहायता करके सूर्यप्रभके वीरोको व्यूहके द्वारपर रोककर युद्धकरनेलगे, तब उनलोगोंके परस्पर द्वन्द्वयुद्ध होनेलगे दामोदरकेसाथ प्रकंपन, ब्रह्मदत्तकेसाथ धूमकेतु, महामायकेसाथ अतिवल, तेजप्रभकेसाथ कालकंपन, वायुवलकेसाथ मरुद्वेग, यमदष्ट्रके साथ वज्रपंजर, सुरोपणकेसाथ कालचक्र, कुवेरदत्तकेसाथ प्रमथन, वरुणशर्माकेसाथ सिंहनाद, दुष्टदमनके साथ प्रवहण, रोपावरोहके साथ प्रहृष्टरोमा, धुरन्धरकेसाथ विकटाक्ष, काम्बलिककेसाथ काम्बलिक, आरोहणकेसाथ कुंजरकुमार, और दोहन जिसका कि दूसरानाम महोत्पात भी है उसके साथ प्रहस्त का परस्पर द्वन्द्वयुद्ध होनेलगा व्यूहके आगे इसप्रकार द्वन्द्व युद्धको देखके सुनीथने मयासुरसे कहा कि देखो हमारे नाना प्रकारके युद्धों के जाननेवाले इन शूर महारथियों को प्रतिपक्षियों ने व्यूहमें प्रवेश नहीं करने दियाहै द्वारहीपर रोकरक्खाहै, और प्रभास अकेलाही व्यूह के भीतर चलागया इससे न जानिये किसके लिये क्या होनेवालाहै यह सुनकर सुवासकुमारने कहा कि त्रैलोक्य मे सम्पूर्ण देवता दैत्य तथा मनुष्य प्रभास से युद्ध करने मे नहीं समर्थ होसक्ते हैं फिर इन विद्याधरोंकी क्या गणनाहै इससे जानबूझकर भी तुमको ऐसा सन्देह नहीं करना चाहिये इसप्रकार सुवास कुमारके कहनेपर कालकंपन नाम विद्याधर युद्ध मे प्रभासके सन्मुख आया तब प्रभास ने उससे कहा कि अरे तूनेमेरा बडा अपकार कियाहै आज मैं तेरे पुरुषार्थ को देखूंगा यह कहकर उसने उसके बाण मारे और वह भी प्रभासपर बाण चलाने लगा परस्पर बाणों से उन दोनो का बडा आश्चर्य्यकारी युद्ध बहुत काल तक होतारहा फिर प्रभास ने एक बाण से उसकी ध्वजा एक बाण से सारथी चार बाणो से चारों घोडे एक बाण से धनुष दो बाणो से दोनों हाथ दो बाणों से दोनों कान और एक तीक्ष्ण बाण से उसका शिर काट के अपनी चतुरता दिखाई इसप्रकारसे अनेक वीरों के मारनेवाले कालकम्पन को मारके प्रभास ने अपना बदलालिया कालकम्पन को मरादेखके मनुष्य तथा दैत्य गर्जनेलगे और विद्याधर दुःखितहुए तब कालिंजरगिरिका स्वामी विद्युत्प्रभनाम विद्याधर क्रोध करके प्रभास से युद्धकरनेलगा प्रभास ने उसकी भी ध्वजाकाटकर कईवार उसका धनुषकाटा और कई वार उसने नवीन धनुषलिया तब विद्युत्प्रभ लज्जितहोकर मायामे आकाश मे उडकर गुप्तहोके प्रभास के ऊपर खड्ग तथा गदाआदिक शस्त्रोंकी वृष्टिकरनेलगा प्रभास ने भी अपने बाणोंमे उसके शस्त्रोंको काटकर प्रकाशनास्त्र से उसे प्रकाशितकरके अग्निबाणमारा तब विद्युत्प्रभ उसके तेज से जलकर पृथ्वी पर गिरपडा यह देखकर श्रुतशर्म्मा ने अपने महारथियों से कहा कि देखो इसने महारथों के दो यूथप मारडाले इससे तुम सबलोग मिलकर इसेमारो यह सुनकर क्रोधितहोके वज्रकूटपर्व्वतका निवासी विद्याधरोंका स्वामी रथोंका यूथप ऊर्ध्वरोमा, धरणीधर पर्व्वतका निवासी विद्याधरोंका स्वामी महारथ विक्रोशननाम, लीलापर्वतका निवासी विद्याधरोंका स्वामी अतिरथोका यूथप इन्दुमाली, मलयाचलका

निवासी विद्याधरोंकास्वामी रथोका यूथप काकाडक, निकेतपर्व्वतका निवासी विद्याधरोंकास्वामी अति रथोंका यूथप दर्पगाह, अञ्जनगिरिका निवासी विद्याधरोंका स्वामी अतिरथोका यूथप धूर्त्तपवन, कुमुद पर्व्वतका निवासी विद्याधरोंका स्वामी महारथोंका यूथप गधों के रथपर चलनेवाला वराहस्वामी और दुन्दुभि पर्व्वतका निवासी विद्याधरोंका स्वामी महारथों का यूथप मेधावर यह आठ वीर एकसाथही आकर प्रभासपर शस्त्रचलानेलगे प्रभास ने एकसाथही अपने वाणों से इन सबको वेधा किसी के घोड़े मारे किसीका सारथीमारा किसीकी ध्वजाकाटी किसीका धनुषकाटा और मेधावरके हृदय में चार वाण मारे जिनके लगने से वह निर्जीवहोकर पृथ्वीपर गिरपड़ा फिर अन्य सातों महारथियों के ऐसे वाणमारे कि उनके वाल उन वाणो मे लिपटगये और अजलिकनाम वाणसे ऊर्ध्वरोमाका शिरकाटडाला और शेष छ विद्याधरों को भालों से शिर काट २ कर पृथ्वीपर गिरादिया और उनके सारथी तथा घोड़े भी मारडाले उन आठो महारथियो को मराहुआ देखकर आकाश से प्रभास के ऊपर पुष्पो की वृष्टि हुई उसे देखकर देवता तथा मनुष्य प्रसन्नहुए और विद्याधर उदासीन होगये तब श्रुतशर्म्मा ने कुड़रकपर्व्वत के स्वामी काचरक, पचकाद्रि के स्वामी डिंडिमाली, जयपुराचलके स्वामी विभावसु और भूमितुण्डक गिरि के स्वामी धवल यह चारों महारथियों के यूथप प्रभास से युद्धकरने को भेजे इनसबने जाकर एक साथही प्रभास को पांच २ सौ वाणमारे प्रभास ने उन वाणों को काटकर एक २ वाण से ध्वजा एक २ से धनुष एक २ से सारथी चार २ से घोड़े और एक २ वाण से चारों का शिर काटडाला इस प्रकार आठ २ वाणो से उन चारों को मारकर वह युद्धभूमि में गर्जनेलगा तब श्रुतशर्म्मा की आज्ञा से विश्वावसु के क्षेत्र में बुध से उत्पन्नहुआ कुवलय श्याम भद्रकर, जभकके क्षेत्र में मंगल से उत्पन्न हुआ अग्नि के समान कान्तिवाला नियन्त्रिक, दामोदर के क्षेत्रमें शनैश्चर से उत्पन्न हुआ अत्यन्त कृष्णवर्ण कपिलमूर्धज, और चन्द्रमा के क्षेत्र में बृहस्पति से उत्पन्नहुआ सुवर्ण के समान कान्तिवाला विक्रमशक्ति, यहचारों विद्याधर प्रभाससे युद्धकरने को गये इनमें से पहले तीन अतिरथियों के यूथपोंकेभी यूथपथे और चौथा इनतीनोंसेभी अधिक पराक्रमीथा यहचारों रणभूमि में जाकर दिव्यास्त्रोंके द्वारा प्रभाससे युद्धकरनेलगे प्रभासने उनसब अस्त्रोंका नागपाशास्त्र से निवारण करदिया और शीघ्रतासे उनचारोंके आठ २ वार धनुष काटकर उनको धनुषसे रहित करदिया तब वहगदा खड्ग तथा भाले शक्ति आदिक फेंक २ कर मारनेलगे प्रभासने उनसब शस्त्रोंकोभी काटकर घोड़े तथा सारथियोंको मारकर उनचारोंको विरथकरदिया ७५ यह देखकर श्रुतशर्म्मा ने केतुमालेश्वरके क्षेत्रमे अश्विनीकुमारसे उत्पन्नहुए दम तथा नियम और मकरन्दके क्षेत्र में आठो वसुओं से उत्पन्नहुए विक्रम सक्रम पराक्रम अक्रम सम्मर्द्दन मर्द्दन प्रमर्द्दन विमर्द्दननाम विद्याधर प्रभासके साथ युद्ध करनेको भेजे यहदशोंवीर रथियोंके यूथपोंके यूथपथे इनदशोंको सहायताके लिये आया देखकर वह छ विद्याधरभी रथोंपर चढ़े और इनको साथलेकर सबकेसब एकसाथही प्रभासपर वाणों की वृष्टि करनेलगे प्रभासने अकेलेही निर्भयहोकर उनसबके साथ युद्ध किया तब सूर्य्यप्रभकी आज्ञासे प्रहस्त और कुंजरकुमार

का अंश यह दामोदर इस प्रकार से युद्ध कररहाहै इन्द्रके इस प्रकार कहतेही दामोदर की सहायता के लिये ब्रह्मगुप्त, वायुबल, यमदंष्ट्र, सुरोपण, रोपावरोह, अतिबल, तेजप्रभ, धुरन्धर कुवेरदत्त, वरुणशर्मा, कम्बलिक, दुष्टदमन दोहन, और आरोहण यह चौदह महारथआये और दामोदरकी सहायता करके सूर्यप्रभके वीरोंको व्यूहके द्वारपर रोककर युद्धकरनेलगे तब उनलोगोंके परस्पर द्वन्द्वयुद्ध होनेलगे दामोदरकेसाथ प्रकम्पन, ब्रह्मदत्तकेसाथ धूमकेतु, महामायकेसाथ अतिबल, तेजप्रभकेसाथ कालकम्पन, वायुबलकेसाथ मरुद्वेग, यमदंष्ट्रके साथ वज्रपंजर, सुरोपणकेसाथ कालचक्र, कुवेरदत्तकेसाथ प्रमथन, वरुणशर्माकेसाथ सिंहनाद, दुष्टदमनके साथ प्रग्रहण, रोपावरोहके साथ प्रहृष्टरोमा, धुरन्धरकेसाथ विकटाक्ष, काम्बलिककेसाथ काम्बलिक, आरोहणकेसाथ कुंजरकुमार, और दोहन जिसका कि दूसरानाम महोत्पात भी है उसके साथ प्रहस्त का परस्पर द्वन्द्वयुद्ध होनेलगा व्यूहके आगे इसप्रकार द्वन्द्व युद्धको देखके सुनीथने मयासुरसे कहा कि देखो हमारे नाना प्रकारके युद्धो के जाननेवाले इन शूर महारथियों को प्रतिपक्षियो ने व्यूहमे प्रवेश नहीं करने दियाहै द्वारहीपर रोकरक्खाहै और प्रभास अकेलाही व्यूह के भीतर चलागया इससे न जानिये किसके लिये क्या होनेवालाहै यह सुनकर सुवासकुमारने कहा कि त्रैलोक्य मे सम्पूर्ण देवता दैत्य तथा मनुष्य प्रभास से युद्ध करने में नहीं समर्थ होसक्ते हैं फिर इन विद्याधरोंकी क्या गणनाहै इससे जानबूझकर भी तुमको ऐसा सन्देह नही करना चाहिये इसप्रकार सुवास कुमारके कहनेपर कालकम्पन नाम विद्याधर युद्ध मे प्रभासके सन्मुख आया तब प्रभास ने उससे कहा कि अरे तूनेमेरा बडा अपकार कियाहै आज मैं तेरे पुरुषार्थ को देखूंगा यह कहकर उसने उसके बाण मारे और वह भी प्रभासपर बाण चलाने लगा परस्पर बाणो से उन दोनो का बडा आश्चर्य्यकारी युद्ध बहुत काल तक होतारहा फिर प्रभास ने एक बाण से उसकी ध्वजा एक बाण से सारथी चार बाणों से चारों घोडे एक बाण से धनुष दो बाणो से दोनों हाथ दो बाणों से दोनों कान और एक तीक्ष्ण बाण से उसका शिर काट के अपनी चतुरता दिखाई इसप्रकारसे अनेक वीरों के मारनेवाले कालकम्पन को मारके प्रभास ने अपना बदलालिया कालकम्पन को मरादेखके मनुष्य तथा दैत्य गर्जनेलगे और विद्याधर दुःखितहुए तब कालिंजरगिरिका स्वामी विद्युत्प्रभनाम विद्याधर क्रोध करके प्रभास से युद्धकरनेलगा प्रभास ने उसकी भी ध्वजाकाटकर कईबार उसका धनुषकाटा और कई बार उसने नवीन धनुषलिया तब विद्युत्प्रभ लज्जितहोकर मायामे आकाश में उडकर गुप्तहोके प्रभास के ऊपर खड्ग तथा गदाआदिक शस्त्रोंकी वृष्टिकरनेलगा प्रभास ने भी अपने बाणोंमे उसके शस्त्रोंको काटकर प्रकाशनास्त्र से उसे प्रकाशितकरके अग्निबाणमारा तब विद्युत्प्रभ उसके तेज से जलकर पृथ्वी पर गिरपडा यह देखकर श्रुतशर्म्मा ने अपने महारथियो से कहा कि देखो इसने महारथों के दो यूथप मारडाले इससे तुम सबलोग मिलकर इसेमारो यह सुनकर क्रोधितहोके चक्रकूटपर्व्वतका निवासी विद्याधरोंका स्वामी रथोंका यूथप ऊर्ध्वरोमा, धरणीधर पर्व्वतका निवासी विद्याधरोंका स्वामी महारथ विक्रोशननाम, लीलापर्वतका निवासी विद्याधरोंका स्वामी अतिरथोका यूथप इन्दुमाली, मलयाचलका

को भी आश्चर्यकरानेवाला युद्ध सायङ्कालतकहोतारहा और इस बीच में बहुतसी सेना दोनों ओरकी मरी इसप्रकार दिन के व्यतीतहोजानेपर सायङ्कालकेसमय बहुत से भूत तथा कबन्ध उठ २ कर नाचने लगे तब बहुतसी सेना तथा बन्धुओंके मारेजानेसे दुःखितहुए विद्याधर और शत्रुओंके क्षयसे जयको प्राप्तहुए मनुष्य तथा दैत्य प्रसन्न होकर अपने२ कटकमें आये उससमय श्रुतशर्म्मा के पक्षको छोड़कर महारथियों के यूथपों के अधिपति दो विद्याधर सूर्य्यप्रभके पास आके और प्रणाम करके कहनेलगे कि हम दोनों महायान और सुमाय नाम विद्याधर हैं और हमारा तीसरासाथी सिंहबलथा हम लोग महा श्मशानोंके स्वामी होनेसे सिद्धहैं इससे कोई विद्याधर हमें नहीं जीत सक्ताहै एक समय श्मशान मे सुखपूर्व्वक बैठेहुए हमलोगोंके पास महादिव्यप्रभाववाली सदैव प्रसन्नमुखी शरभाननाम योगिनी आई उससे हम लोगोंने प्रणामकरके पूछा कि तुम कहाथीं और वहा तुमने क्या अपूर्व बातदेखी सो कहो तब उसने कहा कि मैं अपनी सम्पूर्ण योगिनियोंके साथ अपने स्वामी श्रीमहाकाल शिवजीके दर्शन को गईथी वहा मेरे साम्हने एक वेताल पतिने आकर श्रीशिवजीसे विज्ञापनकरी कि हे स्वामी हमारी सेनाके महाअधिपति जिसे विद्याधरों ने मारडालाहै उसकी कन्याको तेजप्रभ नाम विद्याधर हरेलिये जाताहै उसे सिद्धलोगों ने विद्याधरों के चक्रवर्त्तीकी स्त्री होना बनाया था इससे आप कृपाकरके उसे छुड़वादीजिये वेतालके यहवचन सुनकर श्री शिवजी ने हमसेकहा कि उस कन्याको छुड़ालाओ उन की आज्ञासे हमलोगों ने आकाशमें जाकर तेजप्रभके पास उस कन्याको देखा और उसे हाथ पैरों से स्तम्भितकरके कन्याछीनली उससमय उसनेकहा कि मैं इस कन्याको चक्रवर्त्ती श्रुतशर्म्मा के लिये हरे लिये जाताथा, इसप्रकार उससे छीनकर वह कन्या श्रीशिवजीको हमने लाकर सौंपदी फिर कुछ दिन वहा रहकर श्री शिवजीको प्रणामकरके यहा आईहूं उसके यह वचन सुनकर फिर हमने उससे पूछा कि तुम सर्वज्ञहो इससे बताओ कि विद्याधरोंका चक्रवर्त्ती कौनहोगा उसनेकहा कि सूर्य्यप्रभहोगा तब सिंहबलने कहा कि ऐसानहींहोसक्ता है क्योंकि सम्पूर्ण इन्द्रादिक देवता श्रुतशर्म्मा के पक्षमे हैं यहसु- नकर वह फिरबोली जो तुम्हें विश्वासनहीं है तो सुनो कि थोडेही कालमें श्रुतशर्म्माका और सूर्य्यप्रभ का युद्धहोगा उसमे तुम्हारेही सन्मुख यह सिंहबल मनुष्यके हाथसे मारजायगा तब तुम इस परीक्षासे ही जानलेना कि मेरा वचन सत्यहै यह कहकर वह योगिनी चलीगई आज उस योगिनी के वचन के अनुसार हमने अपने नेत्रों से देखलिया कि सिंहबलको मनुष्यने मारा इसी विश्वाससे हमको नि- श्चयहोगया कि आपही सब विद्याधरों के चक्रवर्त्तीहोंगे इसीसे हम आपके चरणकमलों के आश्रय में आये हैं अब आपकी आज्ञाके अनुसार सबकार्य्यकरेंगे उनके यहवचनसुनके सूर्य्यप्रभने शिरनाम करके उन दोनोंका बड़ा सत्कारकिया और शत्रुकी सेनामें भेद देखकर तथा युद्धमें शत्रुओं के पक्षका नाश देखकर बहुत प्रसन्नहोके स्त्रियों के विना अपने मन्त्रियों समेत शयनस्थान मे जाकर लेटा उन दोनों विद्याधरों के चलेजानेका वृत्तान्त सुनकर श्रुतशर्म्माको बहुत दुःखित देखके इन्द्रने उसके पास विश्वावसु के द्वारा यहकहला भेजा कि तुम धैर्य्यधरो प्रातःकाल सम्पूर्ण देवताओं को साथ लेकर मैं

व्यूहके अग्रभागसे युद्धछोडकर शस्त्रलेके गौर तथा श्याम मूर्तिधारी राम तथा कृष्णके समान आकाशमार्ग से प्रभासके पास उसकी सहायताकोगये और दम तथा नियमसे युद्धकरनेलगे यद्यपि दम नियम रथोंपर सवारथे और वह पैदलथे तथापि उन्हों ने इन दोनोंको वाणो से व्याकुल करदिया और सारथियोंको मारकर उनके धनुष काटडाले तब दम और नियम दोनों भयभीतहोकर आकाशमें चले गये और प्रहस्त तथा कुंजरकुमारने भी अपने नेत्रों में दिव्य अजनलगाके आकाशमें पहुचकर दिव्यदृष्टिसे उन्हें देखकर इतने वाणमारे कि वह दोनो विद्याधर युद्धभूमिको छोडकर भागगये उन्हे भगाकर वारह महारथियों से लडतेहुए प्रभास के पास आकर प्रहस्तने उन वारहो के सारथी मारडाले और कुंजरकुमारने उनके घोडे मारडाले तब वह वारहों विद्याधर विरथहोकर उन तीनों महारथियों से युद्ध न करसके और युद्धभूमिसे भागगये तब श्रुतशर्म्मा ने चन्द्रकुल पर्व्वतके स्वामी के क्षेत्रमे चन्द्रमा मे उत्पन्नहुए अतिरथों के यूथप चन्द्रमाके समान सुन्दर चन्द्रगुप्तनाम विद्याधरको और धुरंधराचल के क्षेत्रमे चन्द्रमासे उत्पन्नहुए अतिरथो के यूथप महातेजस्वी नगरगमनाम अपने मन्त्रीको युद्धके लिये भेजा इन दोनोंको भी प्रभासादिकों ने विरथकरके इतने वाणमारे कि यह भी युद्धछोडकर भागगये तब मनुष्य तथा दैत्य प्रसन्नहोकर गर्जनेलगे प्रतिपक्षियो की इसप्रकार जयदेखकर श्रुतशर्म्मा मलयाचलादिकों के निवासी विद्याधरों के स्वामी चित्रपालआदि चार विद्याधरो के क्षेत्रों मे त्वष्टा, भग, अर्य्यमा, तथा पूषासे उत्पन्नहुए महौघ, आरोहण, उत्पात, तथा वेत्रवान् नाम चार महारथियों को साथ लेकर युद्ध करनेको आया प्रभासादिक तीनों इन आयेहुए पांचों के साथ युद्धकरनेलगे तब परस्पर छोडेहुए वाणों के समूह आकाशमें ऐसे शोभितहुए कि मानो रणलक्ष्मी ने धूपके निवृत्तकरने के निमित्त चँदोआटांगाहे उस समय वह विद्याधर जो विरथहोकर भागगये थे सो भी लडनेको आये तब सूर्य्यप्रभने श्रुतशर्म्मा के पास वहुतसे विद्याधरोको देखकर प्रज्ञाढ्य, वीरसेन तथा शतानीक आदिक महारथी प्रभासकी सहायताके लिये भेजे और आकाशमार्ग से गयेहुए उन सबके लिये भूतासन विमानपर रखकर रथभेजे प्रभासादिक सम्पूर्ण वीर उनरथोंपर चढकर युद्धकरनेलगे उससमय श्रुतशर्म्मा के साथी अन्यवहुतसे विद्याधर भी आकर युद्धकरनेलगे तब प्रभासादिको के साथ विद्याधरों का महा घोर संग्रामहुआ और द्वन्द्वयुद्धमें दोनो सेनाओं के वहुतसे महारथी मारेगये वीरसेन ने सेना समेत धूमलोचनको मारा वीरसेनको हरिशर्म्मा ने विरथकरकेमारा वीर विद्याधर हिरण्याक्षको अभिमन्युने मारा अभिमन्यु तथा हरिभटको सुनेत्रनेमारा और सुनेत्रको प्रभासनेमारा ज्वालामाली तथा महायु यह दोनों परस्पर लडकरमरे भवहननाम विद्याधरने कुंभीरकनीरसक खर्व्व सुशर्म्मा उग्रविक्रम,शत्रुभट,व्याघ्रभट, तथा सिंहभटइनसवकोमारा प्रवहणको सुरोह तथा विरोहने मिलकरमारा उनदोनों को श्मशानवासी सिंहलने मारा और सिंहल कपिलक चित्रापीड जगज्ज्वर, कान्तायति, सुवर्ण, कामधन, क्रोधपति, वलदेव तथा विचित्रापीड इन दश विद्याधरों को राजपुत्र शतानीक ने मारा इसप्रकार विद्याधरों को मारतेदेखकर श्रुतशर्म्मा क्रोधकरके शतानीकके साथ आपही युद्धकरनेलगा तब उन दोनोंका देवताओं

को भी आश्चर्य्यकरानेवाला युद्ध सायङ्कालतकहोतारहा और इस बीच मे वहुतसी सेना दोनों ओरकी मरी इसप्रकार दिन के व्यतीतहोजानेपर सायङ्कालकेसमय वहुत से भूत तथा कबन्ध उठ २ कर नाचने लगे तव वहुतसी सेना तथा बन्धुओंके मारेजानेसे दुःखितहुए विद्याधर और शत्रुओंके क्षयसे जयको प्राप्तहुए मनुष्य तथा दैत्य प्रसन्न होकर अपने२ कटकमें आये उससमय श्रुतशर्म्मा के पक्षको छोडकर महारथियों के यूथपों के अधिपति दो विद्याधर सूर्य्यप्रभके पास आकेऔर प्रणाम करके कहनेलगे कि हम दोनों महायान और सुमाय नाम विद्याधर हैं और हमारा तीसरासाथी सिंहवलथा हम लोग महा श्मशानोंके स्वामी होनेसे सिद्धहैं इससे कोई विद्याधर हमें नहीं जीत सक्ताहै एक समय श्मशान मे सुखपूर्व्वक वैठेहुए हमलोगोके पास महादिव्यप्रभाववाली सदैव प्रसन्नमुखी शरभाननाम योगिनी आई उससे हम लोगोंने प्रणामकरके पूछा कि तुम कहाथीं और वहा तुमने क्या अपूर्व वातदेखी सो कहो तव उसने कहा कि मै अपनी सम्पूर्ण योगिनियोंके साथ अपने स्वामी श्रीमहाकाल शिवजीके दर्शन को गईथी वहा मेरे साम्हने एक वेताल पतिने आकर श्रीशिवजीसे विज्ञापनाकरी कि हे स्वामी हमारी सेनाके महाअधिपति जिसे विद्याधरों ने मारडालाहै उसकी कन्याको तेजप्रभ नाम विद्याधर हरेलिये जाताहै उसे सिद्धलोगों ने विद्याधरों के चक्रवर्त्तीकी स्त्री होना वनाया था इससे आप कृपाकरके उसे छुडवादीजिये वेतालके यहवचन सुनकर श्री शिवजी ने हमसेकहा कि उस कन्याको छुडालाओ उन की आज्ञासे हमलोगो ने आकाशमें जाकर तेजप्रभके पास उस कन्याको देखा और उसे हाथ पैरों से स्तम्भितकरके कन्याछीनली उससमय उसनेकहा कि मैं इस कन्याको चक्रवर्त्ती श्रुतशर्म्मा के लिये हरे लिये जाताथा, इसप्रकार उससे छीनकर वह कन्या श्रीशिवजीको हमने लाकर सौंपदी फिर कुछ दिन वहा रहकर श्री शिवजीको प्रणामकरके यहा आईहू उसके यह वचन सुनकर फिर हमने उससे पूछा कि तुम सर्वज्ञहो इससे वताओ कि विद्याधरोंका चक्रवर्त्ती कौनहोगा उसनेकहा कि सूर्य्यप्रभहोगा तव सिंहवलने कहा कि ऐसानहींहोसक्ता है क्योंकि सम्पूर्ण इन्द्रादिक देवता श्रुतशर्म्मा के पक्षमें हैं यहसुनकर वह फिरवोली जो तुम्हें विश्वासनहीं है तो सुनो कि थोडेही कालमें श्रुतशर्म्माका और सूर्य्यप्रभ का युद्धहोगा उसमें तुम्हारेही सन्मुख यह सिंहवल मनुष्यके हाथसे मारा जायगा तव तुम इस परीक्षासे ही जानलेना कि मेरा वचन सत्यहै यह कहकर वह योगिनी चलीगई आज उस योगिनी के वचन के अनुसार हमने अपने नेत्रों से देखलिया कि सिंहवलको मनुष्यने मारा इसी विश्वासंसे हमको निश्चयहोगया कि आपही सव विद्याधरों के चक्रवर्त्तीहोंगे इसीसे हम आपके चरणकमलों के आश्रय में आये हैं अब आपकी आज्ञाके अनुसार सवकार्य्यकरेंगे उनके यहवचनसुनके सूर्य्यप्रभने विश्वास करके उन दोनोंका वडा सत्कारकिया और शत्रुकी सेनामें भेद देखकर तथा युद्धमें शत्रुओं के पक्षका नाश देखकर वहुत प्रसन्नहोके स्त्रियों के विना अपने मन्त्रियों समेत शयनस्थान में जाकर लेटा उन दोनों विद्याधरों के चलेजानेका वृत्तान्त सुनकर श्रुतशर्म्माको वहुत दुःखित देखके इन्द्रने उसके पास विश्वावसु के द्वारा यहकहला भेजा कि तुम धैर्य्यधरो प्रातःकाल सम्पूर्ण देवताओं को साथ लेकर मैं

आप युद्धमें तुम्हारी सहायता करूंगा विश्वावसुके यहवचन सुनकर श्रुतशर्म्माका चित्त कुछ सावधान हुआ १२८ ॥ इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायासूर्य्यप्रभलम्बकेपचमस्तरंग ५॥

रात्रिके समय स्त्रियोंके विनाही अकेला शय्यापर लेटाहुआ रणकेलिये उत्कण्ठित सूर्य्यप्रभ अपने मन्त्री वीतभीतसे बोला कि हे मित्र मुझे निद्रा नहींआती है इससे किसीसत्त्ववान् वीरपुरुषकी कथा तुम मेरे आगेकहो जिससे कि चित्तबहले सूर्य्यप्रभके यहवचन सुनकर बहुत अच्छा जो आज्ञा ऐसाकहकर वीतभीत यहकथा कहनेलगा कि सम्पूर्ण पृथ्वीकी आभूषणरूप समस्तरत्नों से युक्त उज्जयिनी नाम नगरी है उसमें महासेननाम गुणज्ञ सम्पूर्ण कलाओ का जाननेवाला सूर्य्यके समान तेजस्वी और चन्द्रमा के समान कान्तिमान् राजाथा उसके अशोकवतीनाम रानी प्राणोंके समान प्रियथी क्योंकि उसके समान त्रैलोक्यमेभी कोई सुन्दर स्त्री न थीं उसरानी के साथ क्रीडाकरतेहुए और धर्म्मपूर्वक राज्यका पालन करतेहुए राजा महासेनको गुणशर्म्मानाम एकब्राह्मण अत्यन्तप्रिय तथा मान्यहोगया गुणशर्म्मा अत्यन्त रूपवान् शूर वेदविद्याका पारगत और सम्पूर्ण कला अस्त्र तथा शस्त्रादि विद्याओं का जाननेवालाथा वहसदैव राजाकेही पास रहाकरताथा एकसमय अन्तःपुर मे नृत्यकी बातचीत के प्रसगसे राजा तथा रानीने गुणशर्म्मासे कहा कि तुम सर्वज्ञहो इससे जो तुम नाचनाभी जानतेहो तो कृपाकरके अपना नाचहमें दिखाओ यहसुनकर गुणशर्म्मा मुसकुराकरबोला कि में नाचना जानताहू परन्तु सभामें नाचना उचित नहींहै हास्यका कारण नृत्यमूर्खोंका काम है इसीमे शास्त्रोमे बहुधा नाचनेका निषेधहै और फिर राजा रानीके आगे नाचना तो बडी लज्जाकी बातहै गुणशर्म्माके यहवचन सुनकर रानीकी प्रेरणासे राजाबोला कि यहसभा नहींहै जहा नाचनेसे पुरुषोंको लज्जाहोतीहै यह तो मित्रोंकी गोष्ठी है इसमें अपनी २ चतुरता अवश्य दिखावनी चाहिये मैं तुम्हारा राजा नहींहू क्योंकि तुम मेरे परममित्रहो आज जबतक तुम नाचोगे नहीं तबतक मै भोजन नहींकरूंगा राजाके इसप्रकार हठकरनेपर गुणशर्म्माने नाचना स्वीकारकिया ठीकहै (कथंहिलघ्यतेभृत्यैर्ग्रहिकस्यप्रभोर्वच) आग्रही स्वामीके वचनोंको सेवक कैसे टालसक्तेहै तब गुणशर्म्माने ऐसा उत्तम नृत्यकिया कि राजा तथा रानी का चित्तभी उसके साथ नाचनेलगा नाचनेके उपरान्त राजाने उसको वीणा बजानेकोदी उसने उस वीणाको छेड़तेही राजासे कहा कि हे महाराज यहवीणा अच्छी नहीं है मुझे दूसरी वीणा मगवादीजिये इसवीणाकी तातके भीतर कुत्तेका बालहै इसके बजनेसे मुझे यहबात मालूमहोती है यहकहकर उसने राजाको वीणदेदी राजाने उसकी तातको खुलवाकर जो देखा तो उसमे कुत्तेका बालनिकला तब राजाने उसकी बडी प्रशंसाकरके उसेदूसरी वीणा मँगादी उसवीणाको बजाकर गुणशर्म्मा ने मधुर स्वरसे गानकिया उसके मधुरगानको सुनकर तथा वीणामें अति प्रवीणताको देखकर राजा और रानी को बड़ा आश्चर्य्यहुआ तब गुणशर्म्माने राजाको अपनी शस्त्र और अस्त्र विद्याभी दिखाई यहदेखकर राजाने उससे कहा कि जो तुम युद्धविद्याभी जानते हो तो मुझे एकबन्धकर्ण दिखाओ उसने कहा आपशस्त्र लेकर मेरे ऊपरप्रहार कीजिये तब राजाने जो खड्गादिक शस्त्रलेकर गुणशर्म्मापर प्रहार

किये उन सबको बचा २ कर उसने राजाके हाथ पैर बांधदिये तब तो राजाने गुणशर्म्मा की अत्यन्त प्रशंसाकी और उसे राज्य के कार्य्यों में सहायता देने के योग्यजाना उससमय रानी अशोकवती उसके रूप तथा गुणों को देखकर मोहितहोगई और उसने यहशोचके कि जो यहयुवापुरुष मुझे नहीं मिला तो मेरा जीवन व्यर्थ है राजासे कहा कि हे आर्यपुत्र आप कृपाकरके गुणशर्म्मा को आज्ञा दीजिये कि यहमुझे वीणाबजाना सिखलादेवे आज इसे वीणा बजाते देखकर मेरा भी चित्त वीणा जाने को बहुत चाहता है यह सुनकर राजाने गुणशर्म्मा से कहा कि तुम रानी को वीणा बजाना सिखादो राजाकी आज्ञा पाकर उसने कहा कि बहुत अच्छा किसी दिन अच्छा मुहूर्त्त देख के सिखलानेका प्रारम्भकरूंगा यह कहकर और राजा से पूंछकर वह अपने घरको चलागया ३५. तदनन्तर गुणशर्म्मा रानीकी दृष्टि विपरीत देखकर अधर्म की शंकामे बहुत दिनतक वीणा बजानेकी शिक्षा को टालतारहा एकदिन राजाके भोजन के समय गुणशर्म्मा भी बैठाथा उसने रसोइयेको दालपरोसते देखकर कहा कि यह मतपरोसो यह सुनकर राजाने पूछा कि तुमने इसे क्यों निषेध किया उसने कहा कि इसमें विषमिला है इस रसोइये ने परोसते समय भय तथा शंका से चकित होकर मेरा मुख देखाथा और अन्यलक्षणों से भी मुझे मालूम होगया है आप अभी किसी जीवको खिलाकर देख लीजिये अभी मालूम होजायगा मैं पीछेसे उसका विष दूरकरदूंगा उसके यह वचन सुनकर राजाने उसी रसोइयेको वह व्यंजन खिलाया खातेही उसे मूर्च्छा आगई तब गुणशर्म्मा ने मन्त्रसे उसका विषदूर करदिया और राजाने उससे पूछा कि यह क्याबातहै सत्य २ बतलाओ राजाके यह वचन सुनकर उसने भयभीत होकर कहा कि हे स्वामी गौंडदेशके स्वामी राजा विक्रमशक्तिने आपको विष देने के लिये मुझको यहां भेजाथा मैंने यहां विदेशी बनकर आपसे मिलकर रसोईदारोंमें नौकरी करली आजअवसर पाकर मैं इस व्यंजन में मिलाकर आपको विषदेना चाहताथा परन्तु इसबुद्धिमान्ने पहचानलिया अब आप मालिक हैं जो चाहिये सो कीजिये इसप्रकार उस रसोइयेके वचन सुनकर राजाने उसेमरवाडाला और प्रसन्न होकर गुणशर्म्माको हजार गांवदिये दूसरेदिन राजाने रानी के बहुत हठ करनेपर गुणशर्म्मा से वीणाकी शिक्षाका प्रारंभ करवाया रानी अशोकवती वीणा बजानेके समय गुणशर्म्मा के साथ हास विलास करनेलगी एकदिन उसने एकान्तमें निवारण करतेहुए भी गुणशर्म्मासे नखक्षत देकर कामसे व्याकुल होकर कहा कि हे सुन्दर मैंने वीणा सीखनेके बहानेसे तुम्हें अपने पास एकान्त में बुलाना चाहाथा तेरे ऊपर मेरा बड़ाही अनुरागहै मेरेसाथ भोग विलासकरो रानीके यहवचन सुनकर गुणशर्म्माने उससे कहा कि ऐसा कभी न कहो तुम हमारे स्वामीकी स्त्रीहो मुझसरीके मनुष्य अपने स्वामियों से द्रोह नहीं करते हैं इससे इससाहस से तुम अपने चित्तको हटाओ यह सुनकर वह रानी बोली कि तुम्हारा यह रूप और कलाओंकी चतुरता व्यर्थहै हे नीरस प्रार्थना करतीहुई मुझ सुन्दरस्त्रीको तुम कैसे छोड़े देतेहो यहसुनकर गुणशर्म्मा हँसकर बोला (सुष्ठुकान्तस्वरूपस्य वैदग्ध्यस्यच निष्फलम्। परदारापहारेण यन्नाकीर्त्तिमलीमसम्॥ इहामुत्रचयन्नस्यात्पातायनरकार्णवे) तुमने बहुतठीक कहा कि उस

रूप,तथा चतुरताका क्या फलहै जो परस्त्रियों को हरकर इस लोकमें अयशसे कलङ्कित न होय और परलोकमें नरकमें न गिरवे यह सुनकर रानी कुपित होकर बोली कि जो तुम मेरा वचन नहीं मानोगे तो अवश्य मेरी मृत्यु होजायगी परन्तु मैं तुम्हें मारकर मरूंगी यह सुनकर गुणशर्म्माने कहा कि ऐसाही होय क्या हानिहै (वरयद्धर्मपाशेन क्षणमेकंहिजीवितम्। परतपदधर्मेण कल्पकोटिशतान्यपि।) धर्मके अनुसार एकक्षणभरका भी जीवन श्रेष्ठहै परन्तु अधर्म से सौकोटि कल्पतक जीनाभी अयोग्यहै पुण्य करने से मेरी अकलंकित मृत्यु अच्छी परन्तु पाप करने से राजाका निन्दित दण्डनहीं अच्छा है यह सुनकर वह रानी फिर बोली कि देखो मैं तुम्हें समझातीहू तुम अपनी और मेरी दोनोकी हानिमतकरो यह राजा मेरे अशक्य वचनोंको भी नहीं टालताहै इससे कहकर मैं तुमको बहुत से देश दिलवादूंगी और सम्पूर्ण छोटे २ राजा तुम्हारे आधीन करवादूंगी इससे तुम राजा हीके समान होजाओगे तब तुमको किसीका भय नहीं रहेगा और कोई तुम्हें दबा नहीं सकेगा इससे तुम निस्सन्देह होकर मेरे वचन स्वीकारकरो मेरे वचनोंको कुछ मिथ्या मतजानो इसप्रकार हठ पूर्वक कहतीहुई रानी से गुणशर्म्माने उस समय युक्ति पूर्वक टालनेकेलिये कहा कि जो तुम्हें बहुत आग्रहहै तो मैं तुम्हारा कहना करूंगा परन्तु भेदके भयसे ऐसे कार्य्य एकाएकी नहीं करने चाहिये कुछ दिन ठहरजाओ मेरे वचन सत्यजानो मुझे तुमसे विरोध करके अपना सर्वनाश करवाने से क्या प्रयोजनहै इसप्रकार उसे सन्तोष देकर गुणशर्म्मा वहां से किसीप्रकार बचकर चलाआया ६७ तदनन्तर कुछ दिनोंके व्यतीत होनेपर राजामहासेनने चढाई करके सोमदेशके राजाका किला घेरलिया तब गौडदेशके राजा विक्रमशक्तिने पीछेसे आकर राजा महासेनको घेरा राजा महासेनने अपने ऊपर दूसरे शत्रुको आया देखकर गुणशर्म्मासे कहा कि एकशत्रु पर तो हम चढाई करके आयेथे दूसरेने हमको पीछेसे आकर घेरलिया अब इतनी सेना हमारे पास नहींहै जो इन दोनोसे हम लडसके और जो न लडे तो इनदोनोके बीचमें कबतक पडेरहेंगे इससे इस सकट में हमको क्या करना चाहिये सो बताओ यह सुनकर गुणशर्म्माने कहा कि धैर्य्य धरिये मैं ऐसा उपाय करूंगा जिससे सब संकट दूरहोजायगा इसप्रकार राजाको समझाकर गुणशर्म्मा रात्रिको अपने नेत्रोंमें लोपाञ्जन लगाकर अलक्षितहोके राजा विक्रमशक्तिके कटकमेंगया और राजा के निकटजाके सोतेहुए राजाको जगाकर यह वचन बोला कि हे राजा मैं विष्णुभगवान्का दूतहू तुम उनके भक्तहो और वह अपने भक्तोंका सदैव कल्याण करते हैं इसीसे उन्होंने मुझे तुम्हारे पास यह कहनेको भेजाहै कि राजा महासेनसे सन्धिकरके शीघ्रही लौटजाओ नहीं तो सेना समेत तुम्हारा नाशहोजायगा जो तुम उसके पास सन्धिकेलिये दूतभेजोगे तो वह स्वीकारकरलेगा यह कहकर वह चुपहोगया उससमय राजा विक्रमशक्तिने शोचा कि इसकठिन स्थानमें विष्णुदूतके सिवाय और कौन आसक्ताहै और इसकी आकृति भी मनुष्यों कीसी नहींहै यहसमझकर उसने कहा कि मैं धन्यहू जिसके पास विष्णुभगवान्ने अपना दूतभेजाहै उनकी जो आज्ञाहै वही मैं करूंगा राजा के यह वचन सुनकर गुणशर्म्मा अलोपाञ्जन लगाके राजाको विश्वास दिलाने के निमित्त नहीं अलक्षित होकर चलाआया और उसने राजा

महासेन से आकर सम्पूर्ण वृत्तान्त कहा राजा महासेन उस वृत्तान्तको सुनकर बहुत प्रसन्नहुआ और प्राण तथा राज्यकी रक्षा करनेवाले गुणशर्माकी बहुत प्रशंसा करनेलगा, प्रातःकाल राजा विक्रमशक्ति दूतभेजके राजा महासेनसे सन्धिकरके सेना समेत लौटगया और महासेनभी सोमदेशके राजा को जीतकर बहुत से हाथी घोड़े तथा रत्नादिको लेकर अपनी उज्जयिनीपुरी को चलाआया वहां आकर एकदिन गुणशर्माने नदीमें स्नान करतेहुए राजा को ग्राहसे बचाया और एकदिन उपवन में सर्पसे बचाया इसके उपरान्त कुछ दिनों के व्यतीत होनेपर राजा महासेन बहुतसी सेना इकट्ठी करके अपने शत्रु गौडदेशके स्वामी राजा विक्रमशक्तिपर चढ़ाई करके गया वह भी अपनी सम्पूर्ण सेना लेकर लड़ने को नगरके बाहर निकला तब महाघोर युद्ध होनेलगा क्रमसे द्वन्द्व युद्ध होते २ दोनों राजा विरथ होकर खड्गलेके परस्पर युद्ध करनेको चले उससमय राजा महासेन व्याकुल होके पृथ्वी पर गिरपड़ा उसे गिरादेखकर विक्रमशक्तिने खड्ग से उसे मारडालना चाहा तब गुणशर्मा ने चक्रसे खड्ग समेत राजा विक्रमशक्तिका हाथ काटडाला और छाती में परिघमारकर उसे पृथ्वी में गिरादिया गुणशर्मा की इस शीघ्रताको देखकर राजा महासेन उठके बोला कि हे विप्रवर तुमने यह पांचवींवार मेरे प्राणोंकी रक्षाकी है तदनन्तर गुणशर्मा से मारेगये राजा विक्रमसेनके सम्पूर्ण राज्यको विध्वंस करके और वहां के सम्पूर्ण रत्नलेके राजा महासेन गुणशर्माकी सहायतासे सब अपने अन्य शत्रुओं कोजीतकर उज्जयिनी में आकर सुख पूर्वक रहनेलगा ६४ इस बीचमें रानी अशोकवती निरन्तर गुणशर्मा से अपनी प्रार्थना करतीहीगई परन्तु वह उस कुकर्मको स्वीकार न करके उसकोटालताही रहाठीकहै (देहपातमपीच्छन्ति सन्तोनाविनयपुन:) सज्जन लोग अपने शरीर तकको त्याग देते हैं परन्तु अधर्म नहीं करते तब बहुत दिनतक प्रार्थना कर २के रानी अशोकवती गुणशर्माका निश्चय अभिप्राय कुकर्ममें यत्नेही का जानकरके एकदिन शत्रुतासे उसको मरवाने के लिये राजा के आने के समय बैठकर मिथ्या रोदन करनेलगी राजाने मन्दिरमें आकर उसेरोतेहुए देखकर पूछा कि हे प्रिये यह क्याहै किसने तुम्हें कुपित कियाहै कहो किसके प्राण तथा धनहरूं राजाके यह वचनसुनकर रानी बोली कि जिसने मेरे साथ अपकार किया है उसका तुम कुछ नहीं करसके वह ऐसा साधारण पुरुष नहीं है इससे उस बातको प्रकट करने से क्या प्रयोजनहै यह सुनकर राजाके बहुत आग्रह करनेपर रानीने कहा कि जो आपकी इच्छी है तो सुनिये कि राजा विक्रमशक्तिसे सलाह करके धनके लोभसे गुणशर्मा आपको मारना चाहता था इसीसे इसने अपना दूत राजा विक्रमशक्ति के पास इसलिये भेजाया कि वह अपना खजाना आदि इकट्ठा करे उसदूत के वचनसुनकर विश्वासपात्र रसोइये ने राजाने कहा कि आपव्यर्थमन न बिगाड़िये मैं आपका कार्य्य करदूंगा यह कहकर वह रसोइया उस दूतको वहीं बंधवाकर आपको विष देनेके लिये यहां आया और आपके रसोईघर में नौकर होगया इसबीचमें वह दूतभी बन्धनसे छूटगया उसने यहां आकर गुणशर्मा से रसोइयेका वृत्तान्त कहदिया और आपके रसोई में से उसको पकड़वादिया तब गुणशर्मा ने विषदेने को उद्यत उस रसोइये को आपसे

कहकर मरवाडाला इनदिनों उस रसोइयेकी माता स्त्री तथा भाई उसकी खबरलगानेके लिये यहा आये यह जानकर गुणशर्मा ने उसकी माता तथा स्त्रीको तो मरवाडाला परन्तु उसका भाई भागकर प्रारब्ध से मेरे यहां आगया और मुझसे अपनासम्पूर्णवृत्तान्त जैसेही कहचुका वैसेही गुणशर्माभी मेरे यहां आया उसे देखकर वह भयभीत होकर न मालूम कहा भागगया और गुणशर्माभी मेरे यहा उसे देखकर घबराकर कुछ शोचनेसालगा तब मैंने एकान्तमें सबवृत्तान्त जाननेकी इच्छाकरके उससे पूछा कि आज तुम घबरायेहुए से क्यों हो मेरेपूछनेपर वह अपनेभेदके खुलने के भयसे मुझे गाठने की इच्छासे बोला कि हे रानी तुम्हारे अनुरागकी अग्नि से मैं भस्महोरहाहू इससे तुम मेरेसाथ भोग विलास करो नहीं तो मेरेप्राण नहीं बचेंगे मेरीरक्षाकरो यह कहकर वह मेरेपैरोंपर गिरपडा मैंने अपनेपैर हटालिये तब जैसेही उठकर उसने जबरदस्तीसे मेरा आलिंगनकिया वैसेही पल्लविका नाम मेरीचेरी यहा आगई उसेदेखकर गुणशर्मा यहासे भागगया जोउससमय वह पल्लविका यहा न आजाती तो वह पापी मुझेभ्रष्टकरडालता इसप्रकार कहकर रानी रोनेलगी ठीकहै (आदावसत्यवचन पश्चाज्जाताहिकुस्त्रिय) (पहले असत्य वचन उत्पन्नहुएहै और पीछेसे दुष्ट स्त्रिया उत्पन्न हुईहैं) रानीके इसप्रकार वचन सुनकर राजामहासेन क्रोधसे व्याप्तहोगया ठीकहै (स्त्रीवचःप्रत्ययोहन्ति विचारमहतामपि) (स्त्रियों के वचनोंपर विश्वास करने से महात्माओका भी विचार नष्ट होजाताहै) और रानीसे बोला कि धीरजकरो मैं उस दुष्ट को अवश्यमरवाडालूगा परन्तु युक्तिसे यह कामहोगा नहीं तो बडा अपयशहोगा क्योंकि सम्पूर्ण देशमें यहबात प्रसिद्धहै कि उसने पाचबार मेरेप्राणोंकी रक्षाकीहै और यह बात लोकमे प्रसिद्ध करने के योग्य नहीं है कि उसने तुम्हें भ्रष्टकरना चाहाथा राजाके यह वचन सुनकर रानीबोली कि यह दोषतो कहने लायकनहीं है परन्तु क्या यह भी कहने के योग्य नहीं है कि उसने विक्रमशक्ति से मिलकर आपको मरवाना चाहाथा रानीके यह वचन सुनकर राजामहासेन तुमने बहुत अच्छीयुक्ति बताई है यह कहकर अपनी सभामें चलाआया वहा सम्पूर्णमन्त्री राजपुत्र तथा राजाआदिक राजासे मिलने को आये और गुणशर्मा भी अपने घरसे राजाके यहा को चला उसदिन मार्गमें उसको बहुत से दुश्शकुन हुए बाई ओर कौआ मिला कुत्ता बाई ओर से दाहिनी ओर चलागया सर्प दाहिनी ओर से बाई ओर चला गया और कन्धे सहित उसकी बाईभुजा फडकनेलगी इन दुश्शकुनों को देखकर उसने अपने चित्त में कहा कि निस्सन्देह आजकुछ अशुभहोनेवालाहै जोकुछ होय सो मेरेहीलियेहोय राजाको न होय इसप्रकार राजभक्तिसे शोचताहुआ गुणशर्मा सभामें जाकर राजाको प्रणामकरके बैठा उसदिन राजाने उसका सत्कार न करके क्रोधयुक्त दृष्टिसे उसको देखा राजाको क्रोधित देखकर गुणशर्मा शोचनेलगा कि यह क्या बातहै तब राजा अपने सिंहासनपरसे उठकर गुणशर्माके पासजाबैठा और सभासदों को विस्मित देखकर बोला कि यह सिंहासन मेरेयोग्य नहीं है इसपर गुणशर्माको बैठना चाहिये राजा के यह वचन सुनकर गुणशर्मा बोला कि मैं सेवकहू और आप स्वामीहो मेरा आपका ऐसा व्यवहार नहीं होसक्ता आप आसनपर बैठकर जो चाहिये सो कहिये उस धीरके इसप्रकार कहने से और मन्त्रियों के

समझाने से राजा सिंहासनपर बैठकर कहनेलगा कि यह बात आपलोगों को विदितहै कि मैंने अपने प्राचीन मन्त्रियों को छोड़कर इस गुणशर्मा को अपने समान करलिया और देखिये इसने दूतोंको भेजकर गौडदेशके स्वामी विक्रमशक्ति से मिलकर मेरेसाथ कैसा द्रोहकरना चाहाथा यह कहकर उसने जो२ बातें रानी अशोकवतीने कहीथीं सो सब वर्णनकरीं और साधारण पुरुषों को हटाकर विश्वास पात्र लोगों के सन्मुख रानीके भ्रष्टकरने की इच्छा इसकी थी यह भी कहदिया राजा के वचन सुनकर गुणशर्माने कहा कि आपसे यह असत्यबात किसने कही है यह आकाश में चित्र किसने बनाया है तब राजाने कहा कि हे पापी जो यहबात सत्य न होती तो तुम उस दाल में मिलाहुआ विष कैसे जान लेते यह सुनकर गुणशर्माने कहा कि बुद्धिसे सब जाना जासक्ताहै यह सुनकर अन्य मन्त्रियोंने उसके द्वेष से कहा कि यहबात जानना असम्भवहै मन्त्रियों के वचन सुनकर गुणशर्मा फिर बोला कि हे स्वामी तत्त्व को विनाजाने आपको ऐसा न कहना चाहिये नीति के ज्ञातालोग विचार रहित राजा की प्रशंसा नहीं करते हैं गुणशर्माके यह वचन सुनकर राजाने क्रोधमें यह कहके कि तू बड़ा धृष्टहै दौड़कर उसकी पीठपर छुरी मारनी चाही उसने वह प्रहार युक्तिसे बचालिया तब राजाके कहने से अन्य सबलोग उसके मारने को उद्युक्तहुए उसने उन सबके प्रहारों को बचाकर युक्ति से उन सब के बाल एकहीमें गूंददिये इसप्रकार युक्तिपूर्वक अपनेको बचाकर वहसभाके बाहर चलाआया और पीछेसे दौड़ेहुए सौ योद्धाओंको मारकर नेत्रोंमें लोपाञ्जनलगाके अलक्षितहोके वहांसे दक्षिणदिशा को चला मार्गमें चलते २ उसने शोचा कि निस्सन्देह इसकुटिल रानी अशोकवतीनेही इस मूर्खराजाको प्रेरणाकीहै (अहोविषादप्यधिका स्त्रियोरक्तविमानिता। अहोअसेव्यास्साधूनाराजानोऽतत्त्वदर्शिनः) अनुराग युक्त स्त्रिया अनादर करनेपर विषमेंभी अधिक घातकहोजाती हैं सज्जन पुरुषोंको मूर्ख राजाओंका सेवन न करनाचाहिये इसप्रकार विचारकरताहुआ गुणशर्म्मा किसी ग्राम में पहुंचा वहां एक ब्राह्मण बरगदके वृक्षके नीचे अपने शिष्योंको पढ़ारहेथे उसने उनब्राह्मण देवके पास जाकर उनको प्रणामकिया ब्राह्मणने अतिथि सत्कार करके उससे पूछा कि तुम वेदकी कौनसी शाखा पढ़तेहो उसने कहा कि बारहशाखा पढ़ताहूं दो सामवेदकी दो ऋग्वेदकी सात यजुर्वेदकी और एकअथर्ववेदकी यह सुनकर उसब्राह्मणने कहा कि तो तुम देवताहो और भव्य आकृति देखकर पूछा कि तुम किस देशमें रहतेहो किसवंशमें तुम्हारा जन्महै क्या तुम्हारा नामहै और इतना तुमने कहांपढाहै सो बताओ यह सुनकर गुणशर्म्मा बोला कि उज्जयिनीपुरीमें आदित्यशर्म्मा नाम कोई ब्राह्मणका बालकथा बाल्यावस्थाहीमें उसका पिता मरगया और उसकी माता अपने पतिके साथ सतीहोगई तब आदित्यशर्म्मा उसीपुरीमें अपने मामाके यहांरहकर वेद विद्या तथा कला सीखनेलगा ६१ कुछ दिनोंमें सम्पूर्ण विद्याओंको पढ़कर आदित्यशर्म्मा जप तथा व्रतोंमें अपना समय व्यतीत करनेलगा और उसकी एक तपस्वीसे मित्रताहोगई एकसमय वहतपस्वी उसको अपने साथ ले जाकर श्मशानमें यक्षिणी सिद्ध करनेके लिये हवन करनेलगा वहां सुवर्णके विमानपर चढ़ीहुई एक दिव्य कन्या आई उसके साथमें

कहकर मरवाडाला इन दिनों उस रसोइयेकी माता स्त्री तथा भाई उसकी खबरलगानेके लिये यहां आये यह जानकर गुणशर्मा ने उसकी माता तथा स्त्रीको तो मरवाडाला परन्तु उसका भाई भागकर प्रारब्ध से मेरे यहां आगया और मुझसे अपनासम्पूर्णवृत्तान्त जैसेही कहचुका वैसेही गुणशर्माभी मेरे यहां आया उसे देखकर वह भयभीत होकर न मालूम कहा भागगया और गुणशर्माभी मेरे यहा उसे देखकर घबराकर कुछ शोचनेसालगा तब मैंने एकान्तमें सबवृत्तान्त जाननेकी इच्छाकरकेउससे पूछा कि आज तुम घबरायेहुए से क्यों हो मेरेपूछनेपर वह अपनेभेदके खुलने के भयसे मुझे गाठनेकी इच्छासे बोला कि हे रानी तुम्हारे अनुरागकी अग्नि से मैं भस्महोरहाहूं इससे तुम मेरेसाथ भोग विलास करो नहीं तो मेरेप्राण नहीं बचेंगे मेरीरक्षाकरो यह कहकर वह मेरेपैरोंपर गिरपडा मैंने अपनेपैर हटालिये तब जैसेही उठकर उसने जबरदस्तीसे मेरा आलिंगनकिया वैसेही पल्लविका नाम मेरीचेरी यहा आगई उसेदेखकर गुणशर्मा यहासे भागगया जोउससमय वह पल्लविका यहा न आजाती तो वह पापी मुझेभ्रष्टकरडालता इसप्रकार कहकर रानी रोनेलगी ठीकहै (आदावसत्यवचनं पश्चाज्जाताहिकुस्त्रियः) (पहले असत्य वचन उत्पन्नहुएहैं और पीछेसे दुष्ट स्त्रिया उत्पन्न हुईहैं) रानीके इसप्रकार वचन सुनकर राजामहासेन क्रोधसे व्याप्तहोगया ठीकहै (स्त्रीवचःप्रत्ययोहन्ति विचारमहतामपि) (स्त्रियों के वचनोंपर विश्वास करने से महात्माओंका भी विचार नष्ट होजाताहै) और रानीसे बोला कि धीरजकरो मैं उस दुष्ट को अवश्यमरवाडालूगा परन्तु युक्तिसे यह कामहोगा नहीं तो बडा अपयशहोगा क्योंकि सम्पूर्ण देशमें यहबात प्रसिद्धहै कि उसने पाचबार मेरेप्राणोंकी रक्षाकीहै और यह बात लोकमें प्रसिद्ध करने के योग्य नहीं है कि उसने तुम्हें भ्रष्टकरना चाहाथा राजाके यह वचन सुनकर रानीबोली कि यह दोषतो कहने लायकनहीं है परन्तु क्या यह भी कहने के योग्य नहीं है कि उसने विक्रमशक्ति से मिलकर आपको मरवाना चाहाथा रानीके यह वचन सुनकर राजामहासेन तुमने बहुत अच्छीयुक्ति बताई है यह कहकर अपनी सभामें चलाआया वहा सम्पूर्णमंत्री राजपुत्र तथा राजाआदिक राजासे मिलने को आये और गुणशर्मा भी अपने घरसे राजाके यहा को चला उसदिन मार्गमें उसको बहुत से दुश्शकुन हुए बाईं ओर कौआ मिला कुत्ता बाईं ओर से दाहिनी ओर चलागया सर्प दाहिनी ओर से बाईं ओर चला गया और कन्धे सहित उसकी बाईंभुजा फडकनेलगी इन दुश्शकुनों को देखकर उसने अपने चित्त में कहा कि निस्सन्देह आजकुछ अशुभहोनेवालाहै जोकुछ होय सो मेरेहीलियेहोय राजाको न होय इसप्रकार राजभक्ति से शोचताहुआ गुणशर्मा सभामें जाकर राजाको प्रणामकरके बैठा उसदिन राजाने उसका सत्कार न करके क्रोधयुक्त दृष्टिसे उसको देखा राजाको क्रोधित देखकर गुणशर्मा शोचनेलगा कि यह क्या बातहै तब राजा अपने सिंहासनपरसे उठकर गुणशर्माके पासजाबैठा और सभासदों को विस्मित देखकर बोला कि यह सिंहासन मेरेयोग्य नहीं है इसपर गुणशर्माको बैठना चाहिये राजा के यह वचन सुनकर गुणशर्मा बोला कि मैं सेवकहूं और आप स्वामीहो मेरा आपका ऐसा व्यवहार नहीं होसक्ता आप आसनपर बैठकर जो चाहिये सो कहिये उस धीरके इसप्रकार कहने से और मन्त्रियों के

जयिनीमें रहते २ वहा के राजाके साथ मेरी मित्रता होगई यह कहकर उसने रानी अशोक-
जा महासेनका सम्पूर्ण वृत्तान्त युद्ध पर्य्यंत कहके कहा कि वहासे भागकर मै देशान्तरको
बीचमें आपके दर्शन होगये गुणशर्म्मा के यह वचन सुनकर वह ब्राह्मण बोला कि आपके
में धन्यहू मेरे घरपरचलो अग्निदत्त मेरा नामहै और यह ग्राम मेराही है २०० यह कहकर
गुणशर्म्माको गोधनादि अनेक ऐश्वर्य्योंसे युक्त अपने घरमें लेगया वहा उसे स्नानकराके
तथा आभूषण पहराके आह्निकके उपरान्त अग्निदत्तने उसको अति उत्तम भोजन करवाये
सुन्दरी नाम अत्यन्त सुन्दर कन्या लक्षणोंके देखनेके वहानेसे उसे दिखाई गुणशर्म्माने
उत्तम स्वरूप देखकर अग्निदत्तसे कहा कि इसकी नासिकापर तिलहै इससे इसकी छाती
तिलहोगा इन दोनों तिलोंका यह फलहै कि इसके वहुतसी सौतें होंगी उसके यह वचन
सुन्दरीके भाईने अपने पिताकी आज्ञासे सुन्दरीका हृदय खोलकर देखा तो दूसरा भी
ई दिया तब आश्चर्य्य युक्त होकर अग्निदत्तने गुणशर्म्मा से कहा कि तुम सर्वज्ञहो इसके
तिल अशुभ नहीं है भाय धनवान् पति मिलनेपर सौतें होती है क्योंकि दरिद्री तो एकका भी
करसक्ताहै वहुतोंका कैसेकरसकेगा यह सुनकर गुणशर्म्मानेकहा कि ऐसी सुन्दर आकृतिना-
शुभ कैसे होसक्ताहै इसी प्रसगसे गुणशर्म्माने स्त्री पुरुषोंके सम्पूर्ण तिलकादि चिह्न अग्निदत्तसे
य सुन्दरी गुणशर्मा को देखकर चन्द्रमाको चकोरीके समान उसकी शोभाका अपनीदृष्टि से
लगी तदनन्तर एकान्तमें अग्निदत्तने गुणशर्म्मा से कहा कि हे महाभाग आप परदेशको
मैं इस सुन्दरी कन्याका विवाह आपके साथ करदेता हू आप सुखपूर्वक यहा रहिये यह
णशर्माबोला कि आपका कहना वहुत ठीक है ऐसा करने से मुझे वडा सुखहोगा परन्तु
ण्या अपमानसे सतप्तहुए मुझको कुछ अच्छा नहीं मालूमहोता (कान्ताचन्द्रोदयोवीणाप-
रित्यमी। येनन्दयन्तिसुखितान्दुःखितान्व्यथयन्तिते) प्रिया स्त्री चन्द्रोदय तथा वीणाकी पचम
जो सुखीलोगों को प्रसन्न करते हैं उन्हीं मे दुःखितों को दुःखहोता है और देखिये अपने
अनुराग युक्त होकर जो स्त्रिया विवाह करती है वह व्यभिचारिणी नहीं होतीं और जिन विवश
का विवाह पिता किसी के साथ करदेताहै वह वहुधा व्यभिचारिणी होजाती हैं और यहा से
री निकट है जो राजा महासेन जान जायगा तो उपद्रव करेगा इससे मैं सम्पूर्ण तीर्थोंपर
के सम्पूर्ण पातकोंको दूरकरके इस शरीरका त्यागकरूगा जिससे परमसुख की प्राप्तिहोगी
गुणशर्मा के यह वचन सुनकर अग्निदत्तने हँसकर कहा कि जो तुमको भी ऐसा मोह है तो
रों की क्या गणना है वताओ तो सही जब तुम्हारा हृदय शुद्धहै तो मूर्ख के अनादर करनेसे
क्यों करतेहो जो कोई आकाशमें कीचफेंकताहै वह उसी के शिरपर गिरताहै थोडे दिनों मे
महासेन को इसमूर्खताका फल मिलेगा क्योंकि विवेक रहित मूर्खके पास सपत्ति वहुतकाल तक
ती और जो अशोकवती को देखकर तुमको स्त्रियोंपर वैराग्यहुआहै तो सतीस्त्रियोंको देखकर

बहुतसी उत्तम कन्यार्थी वह उसतपस्वी से बडी मधुरवाणी से बोली कि हे तपस्वी मैं विद्युन्मालानाम यक्षिणीहू और यह जो मेरे साथहै सो सबभी यक्षिणी हैं इनमेसे जिसको तुम चाहो उसे लेलो इतनाही तुमको इसमन्त्र साधनसे सिद्धहुआहै तुम्हें मेरे मन्त्रका पूर्णसाधन नहीं मालूमथा इसीसे मैं तुमको सिद्ध नहींहुई अब व्यर्थ क्लेश मतकरो उसयक्षिणीके यहवचन सुनकर उसतपस्वीने उनमेंसे एकयक्षिणी लेली तब विद्युन्माला अन्तर्द्धानहोगई और वहयक्षिणीसे जो उसतपस्वीको सिद्धहोगईथी उससे आदित्यशर्म्माने पूछा कि विद्युन्मालासेभी कोई उत्तम और यक्षिणी है उसनेकहा कि हाँ विद्युन्माला, चन्द्रलेखा तथा सुलोचना यहतीन उत्तम यक्षिणी है इनमेंभी सुलोचना सबसे उत्तमहै यहकहकर वह यक्षिणी अपने समयपर आनेके लिये नियमकरके चलीगई और आदित्यशर्म्मा उसतपस्वी के साथ अपने घरको चलाआया वहयक्षिणी प्रतिदिन समयपर आकर तपस्वीको यथेष्ट ऐश्वर्य्य देकर और उसके साथ सभोगकरके उसको प्रसन्नकरनेलगी एकसमय आदित्यशर्म्माने तपस्वीके द्वारा यक्षिणीसे पूछा कि सुलोचनानाम यक्षिणीके मन्त्रकी विधिको कौन जानताहै उसने कहा कि दक्षिणदिशा में तुंगवन नाम एकस्थानहै वहा वेणा नदीके तटपर भदन्तनाम एकतपस्वी रहताहै वह उसकी सब विधि जानताहै यक्षिणीके वचनसे यहजानकर आदित्यशर्म्मा उत्कण्ठितहोके उसतपस्वीको साथलेके तुंगवनकोगया और वहा भदन्त नाम तपस्वीको ढूढकर तीनवर्षतक उसका सेवन तपस्वीकी यक्षिणीकेद्वारा प्राप्तहुए ऐश्वर्य्य से करतारहा तीनवर्ष के उपरान्त भदन्तने प्रसन्न होकर आदित्यशर्म्मा को सुलोचनाका मन्त्र विधिपूर्वक बतादिया तब आदित्यशर्म्मा ने उसमत्रका जप करके एकान्तमे जाकर विधिपूर्व्वक हवन किया उस समय अत्यन्त आश्चर्य्यकारी रूप से युक्त सुलोचना नाम यक्षिणी विमानपर बैठकर वहा आई और बोली हे ब्राह्मण आओ मैं तुमको सिद्धहोगईहू जो तुम मुझसे समृद्धिमान सुलक्षण सर्वज्ञ तथा महावीर पुत्र प्राप्त करना चाहो तो छ महीनेतक मेरा कन्यका भाव नहीं नष्टकरना उसने कहा बहुत अच्छा मै ऐसाही करूगा तब सुलोचना उसे विमानपर चढाकर अलकाको लेगई वहा आदित्यशर्म्मा उसे देखकर अपने चित्तको रोकताहुआ छ महीनेतक असिधारा व्रत करतारहा जब छ महीने व्यतीत होगये तो कुबेरजी ने प्रसन्न होकर आदित्यशर्म्मा के साथ सुलोचनाका विधिपूर्व्वक विवाह करदिया फिर विवाहके उपरान्त कुछ कालमें उसी सुलोचना में मेरा जन्महुआ पिताने मेरे सद्गुणोंको देखकर मेरा गुणशर्म्मा नाम रक्खा मैने वहीं अलकापुरी में अवस्थापाकर मणिधरनाम यक्षराजसे सम्पूर्ण वेद तथा विद्या पढीं और सम्पूर्ण कलासीखीं एकसमय अलकापुरी में कुबेरकेपास इन्द्रआये उनको देखकर जो लोग वहा बैठेथे वह सब उठे परन्तु मेरापिता आदित्यशर्म्मा उससमय चित्तके कहीं अन्य होनेकेकारण नहीं उठा तबइन्द्रने क्रोधकरके उसे यह शापदिया कि हे जड अपने मृत्युलोकको जा तू यहा रहने के योग्य नहीं है उस घोरशापको सुनकर सुलोचनाने हाथजोडकर इन्द्रसे बडीविनती करी सुलोचनाकी विनती से प्रसन्नहोकर इन्द्रने कहा कि जो यह मृत्युलोकको न जाय तो इसका पुत्र जाय क्योंकि पुत्र आत्मा होताहै इसमे मेरा वचनभी व्यर्थ नहींहोगा तब मेरे पिता मुझे अपने मामाकेयहा उज्जयिनी मे

छोडगये उज्जयिनीमें रहते २ वहा के राजाके साथ मेरी मित्रता होगई यह कहकर उसने रानी अशोकवती तथा राजा महासेनका सम्पूर्ण वृत्तान्त युद्ध पर्यंत कहके कहा कि वहासे भागकर मैं देशान्तरको जाताथा कि बीचमें आपके दर्शन होगये गुणशर्म्मा के यह वचन सुनकर वह ब्राह्मण बोला कि आपके आगमन से मैं धन्यहू मेरे घरपरचलो अग्निदत्त मेरा नामहै और यह ग्राम मेराही है २०० यह कहकर वह ब्राह्मण गुणशर्म्माको गोधनादि अनेक ऐश्वर्य्योंसे युक्त अपने घरमें लेगया वहा उसे स्नानकराके उत्तम वस्त्र तथा आभूषण पहराके आह्निकके उपरान्त अग्निदत्तने उसको अति उत्तम भोजन करवाये और अपनी सुन्दरी नाम अत्यन्त सुन्दर कन्या लक्षणोंके देखनेके वहानेसे उसे दिखाई गुणशर्म्माने उसका वडा उत्तम स्वरूप देखकर अग्निदत्तसे कहा कि इसकी नासिकापर तिलहै इससे इसकी छाती पर भी एक तिलहोगा इन दोनों तिलोंका यह फलहै कि इसके वहुतसी सौतें होंगी उसके यह वचन सुनकर उस सुन्दरीके भाई ने अपने पिताकी आज्ञासे सुन्दरीका हृदय खोलकर देखा तो दूसरा भी तिल दिखाई दिया तव आश्चर्य्य युक्त होकर अग्निदत्तने गुणशर्म्मा से कहा कि तुम सर्वज्ञहो इसके यह दोनों तिल अशुभ नहीं है प्राय धनवान् पति मिलनेपर सौतें होती हैं क्योंकि दरिद्री तो एकका भी पालन नहीं करसक्ता है वहुतोंका कैसेकरसकेगा यह सुनकर गुणशर्म्माने कहा कि ऐसी सुन्दर आकृतिवालीको अशुभ कैसे होसक्ताहै इसी प्रसगसे गुणशर्म्माने स्त्री पुरुषोंके सम्पूर्ण तिलकादि चिह्न अग्निदत्तसे कहे उससमय सुन्दरी गुणशर्मा को देखकर चन्द्रमाको चकोरीके समान उसकी शोभाका अपनीदृष्टि से पानकरने लगी तदनन्तर एकान्तमें अग्निदत्तने गुणशर्म्मा से कहा कि हे महाभाग आप परदेशको न जाओ मैं इस सुन्दरी कन्याका विवाह आपके साथ करेदेता हू आप सुखपूर्वक यहा रहिये यह सुनकर गुणशर्मा बोला कि आपका कहना वहुत ठीक है ऐसा करने से मुझे वडा सुखहोगा परन्तु राजाके मिथ्या अपमानसे सतप्तहुए मुझको कुछ अच्छा नहीं मालूमहोता (कान्ताचन्द्रोदयोवीणापचमध्वनिरित्यमी। येनन्दयन्तिसुखितान्दुःखितान्व्यथयन्तिते) प्रिया स्त्री चन्द्रोदय तथा वीणाकी पचम ध्वनि यह जो सुखीलोगों को प्रसन्न करते हैं उन्हीं से दुःखितों को दुःखहोता है और देखिये अपने चित्तसे अनुराग युक्त होकर जो स्त्रिया विवाह करती हैं वह व्यभिचारिणी नहीं होतीं और जिन विवश कन्याओंका विवाह पिता किसी के साथ करदेताहै वह वहुधा व्यभिचारिणी होजाती है और यहा से उज्जयिनी निकट है जो राजा महासेन जान जायगा तो उपद्रव करेगा इससे मैं सम्पूर्ण तीर्थोंपर भ्रमणकरके सम्पूर्ण पातकोंको दूरकरके इस शरीरका त्यागकरूगा जिससे परमसुख की प्राप्तिहोगी २१८ गुणशर्मा के यह वचन सुनकर अग्निदत्तने हँसकर कहा कि जो तुमको भी ऐसा मोह है तो अन्य मूर्खों की क्या गणना है वताओ तोसही जव तुम्हारा हृदय शुद्धहै तो मूर्ख के अनादर करनेसे ग्लानि क्यों करतेहो जो कोई आकाशमें कीचफेंकताहै वह उसी के शिरपर गिरताहै थोडे दिनों में राजामहासेन को इसमूर्खताका फल मिलेगा क्योंकि विवेक रहित मूर्खके पास सपत्ति वहुतकाल तक नहीं रहती और जो अशोकवती को देखकर तुमको स्त्रियोंपर वैराग्यहुआहै तो सतीस्त्रियोंको देखकर

उनपर विश्वास क्यों नहीं होता और तुम तो उनके लक्षणभी जानतेहो और जो उज्जयिनीके निकट होनेका तुम्हे भयहोय तो मैं तुमको ऐसा स्थानरहने को दूंगा जिसमें तुमको कोई भी न जानसकेगा और जो तीर्थयात्रापर आपको श्रद्धाहै सो तीर्थयात्रा तो उसे करनी चाहिये जो वैदिक कर्म्म न कर सके क्योंकि देवता तथा पितरोंका पूजन अग्निहोत्र व्रत और जपादिकों से जो पुण्य घरमें होसक्ताहै वह मार्गमें भ्रमण करनेसे नहीं होसक्ताहै मुनियोंके समान भुजाओं का तकियावनाके पृथ्वीमें शयन करके भिक्षासे उदरपूर्त्ति करके और अनेक क्लेशोंको सहकर भी यात्रीलोग दुःखोंसे नहीं छूटते हैं और जो तुम शरीरको त्यागकर परम सुख चाहतेहो यह भी तुम्हारा भ्रमहै क्योंकि आत्मघातको को यहां से भी अधिक परलोकमें दुःखहोता है इससे विद्वान्होकर भी आपको ऐसा मोहकरना अनुचित है अपने मनसे विचार करके देखलो हमारा कहना आपको अवश्य मानना चाहिये मैं आपकेलिये बड़ा सुन्दर तहखाना बनवाये देताहूं आप सुन्दरीका विवाह करके उसी में गुप्तता पूर्व्वक रहियेगा अग्निदत्तके इसप्रकार समझानेसे गुणशर्मा उसके वचनोंको स्वीकार करके बोला कि मैं जैसा आप कहतेहैं वैसाही करूंगा क्योंकि सुन्दरी स्त्रीको पाकर कौनछोडसक्ता है परन्तु मैं अभी इसके साथ विवाह नहीं करूंगा पहले किसी देवता का आराधन करके राजामहासेन से बदलालेऊंगा फिर आप जैसा कहेंगे वैसाकरूंगा यह सुनकर अग्निदत्तने कहा बहुत अच्छा ऐसाही करना तदनन्तर गुणशर्मा ने सुखपूर्व्वक वह रात्रि व्यतीतकी दूसरे दिन अग्निदत्तने गुणशर्माके रहनेकेलिये बड़ा उत्तम तहखाना बनवादिया तब गुणशर्म्मा ने अग्निदत्तसे एकान्तमें कहा कि आपबताइये कि किसमन्त्रसे किसदेवताका आराधनकरूं यह सुनकर अग्निदत्तने कहा कि मुझे अपने गुरुका बतायाहुआ स्वामिकार्त्तिकका मन्त्रयादहै वह मैं तुमको बतायेदेताहूं उसीसे स्वामिकार्त्तिकका आराधनकरो जिन स्वामिकार्त्तिककी उत्पत्तिकेलिये देवतालोगो की प्रार्थना से श्रीशिवजीने भस्महुए भी कामको संकल्प से उत्पन्न किया था जिनकी उत्पत्ति प्रथम श्रीशिवजीसे फिर अग्निसे फिर शरवनसे और फिर कृत्तिकाओं से हुई जिन्होंने उत्पन्नहोतेही सम्पूर्ण संसारको अपने तेजसे व्याप्तकरके दुर्जय तारकासुरकोभी जीता उनका मन्त्र तुम मुझसे ग्रहणकरो यह कहकर वह मन्त्र उसे बतादिया तब उसी मन्त्र से गुणशर्मा ने तहखानेमें बैठकर श्रीस्वामिकार्त्तिकजीका आराधन किया और वह सुन्दरी उसका सेवनकरतीरही कुछ दिन आराधना करनेसे प्रसन्नहोकर श्रीस्वामिकार्त्तिकजीने प्रकटहोकर कहा कि हे पुत्र मैं तुम्हारे ऊपर प्रसन्नहूं तुम्हारे पास कभीधन नहीं घटेगा और राजामहासेनको जीतकर तुमसम्पूर्ण पृथ्वीके राजाहोजाओगे यह वरदानदेकर श्रीस्वामिकार्त्तिकजी अन्तर्द्धानहोगये और उनकी कृपासे गुणशर्म्माको अक्षय कोश प्राप्तहुआ तब अग्निदत्तने अपने ऐश्वर्य्यके अनुसार बड़ा उत्सवकरके बहुतकालसे उत्कण्ठित अत्यन्तरूपवती अपनी सुन्दरीनाम कन्या प्राप्तहोनेवाली रूपवती सम्पत्तिके समान गुणशर्म्माको विधिपूर्व्वक दानकरदी इसप्रकार विवाहकरके गुणशर्म्मा अक्षयकोशके प्रभावसे बहुतसेहाथी घोड़े तथा पैदल इकट्ठेकरके और बहुतसाधनदेके अनेक राजालोगोंकीसेना साथलेकर उज्जयिनी नगरीपर चढ़गया वहां

सम्पूर्णलोगोंसे अशोकवतीके दुराचारको कहकर और राजामहासेनको जीतकर आपही राजाहोगया इसप्रकार उज्जयिनीका राज्यलेकर गुणशर्मा वहुतसे राजालोगोंकी अनेककन्याओंकेसाथ विवाहकरके समुद्र पर्यन्त सम्पूर्ण राजालोगों को विजयकरके चक्रवर्त्ती राजाहोके अपनी प्रिया सुन्दरी के साथ वहुतकालतक यथेष्ट राज्यसुखोंको भोगतारहा इसप्रकारसे देखो राजा महासेन मूर्खतासे विचार न करके विपत्तिको प्राप्तहुआ और गुणशर्म्मा केवल धैर्य्यकीही सहायतासे अत्यन्त ऐश्वर्य्यको प्राप्तहुआ इससे हे राजा आपभी धैर्य्यसे शत्रुओंको जीतकर समृद्धिको पाइयेगा वीतभीतके मुखसे इसउदार कथाको सुनकर वीर सूर्य्यप्रभ युद्धरूपी महासमुद्रके पारजानेके लिये अधिक उत्साहीहोकर सोगया २५२ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांसूर्य्यप्रभलम्बकेपञ्चस्तरंग ६॥

प्रातःकाल सूर्य्यप्रभ अपनी सम्पूर्णमनुष्य तथा दैत्यों की सेनालेकर युद्धभूमिमे गया और श्रुतशर्म्मा भी अपनी सम्पूर्ण विद्याधरों की सेना लेकर आया और सम्पूर्ण देवता दैत्य राक्षस तथा सर्प युद्ध देखनेको आये उसदिन दोनो सेनाओं के अधिपतियोंने अर्द्धचन्द्र व्यूह वनाया और परस्पर युद्धका प्रारम्भहुआ उससमय शब्दायमान वाण परस्पर एक दूसरे को काटतेहुए योद्धाओं के समान शोभितहुए म्यानरूपी मुखसे निकलीहुई रुधिर से युक्त चचल लम्बी खड्ग लतायें यमराजकी जिह्वाके समान शोभितहुईं उस युद्धरूपी महातड़ाग मे शूरलोगों के प्रफुल्लित मुखारविन्दों पर अनेक चक्रगिरे और राजारूपी राजहंसों का नाशहुआ कटकर उछलतेहुए और गिरतेहुए शूरोंके मस्तकों से युद्धभूमि यमराजके गेंदखाने के समान शोभितहुई इस प्रकारके युद्धके द्वारा वहुतसी मरीहुई सेनाके रुधिर से धूलरूपी अन्धकारके निवृत्त होजानेपर वडे पराक्रमी महारथियो के द्वन्द्व युद्धहोनेलगे श्रुतशर्माके साथ सूर्य्यप्रभका दामोदरके साथ प्रभासका, महोत्पात के साथ सिद्धार्थका, ब्रह्मगुप्तके साथ प्रहस्तका, संगमकेसाथ वीतभीतका, चन्द्रगुप्तकेसाथ प्रज्ञाढ्यका, अक्रमकेसाथ प्रियंकरका, अतिबलकेसाथ सर्वदमनका, धुरन्धरकेसाथ कुञ्जरकुमारका, तथा अन्य महारथियों के साथ अन्यमहारथियों का परस्पर द्वन्द्वयुद्ध होनेलगा वहां पहले महोत्पातने अपनेवाणों से सिद्धार्थ के वाण तथा धनुषकाटके सारथीसमेत घोडोंको मारके उसे विरथकरदिया तव सिद्धार्थने दौडकर लोहेकेदंडेमे महोत्पातकाभी रथचूर्णकरके सवघोडे मारडाले और वाहुयुद्धकरके उसे पृथ्वी मे गिराके जैसेही मारनाचाहा वैसेही भगवान्‌ देवताने आकर उसे वचालिया प्रहस्त तथा ब्रह्मगुप्तभी दोनो लडतेलडते विरथहोगये और खड्गलेकर परस्पर दाम पेचकरके युद्ध करने लगे प्रहस्तने युक्ति से ब्रह्मगुप्त की ढालकाटडाली और उसे पृथ्वीमे गिराकर जैसेही शिरकाटना चाहा वैसेही उसके पिता ब्रह्माने दूरही से निवारणकिया तव दैत्यलोग देवताओं से यह कहकर हँसने लगे कि तुमलोग अपने पुत्रोंकी रक्षा करनेको आयेहो या युद्ध देखनेको आये हो वीतभीतने संगमका धनुष काटके सारथी को मारकर उसके हृदयमे प्रद्युम्नास्त्रमारा जिसके लगतेही उसके प्राण निकलगये प्रज्ञाढ्य तथा चन्द्रगुप्त दोनो विरथहोकर खड्ग युद्ध करनेलगे और युद्धकरते प्रज्ञाढ्यने चन्द्रगुप्तका शिर अपने खड्गसे काटडाला तव चन्द्रमा अपने पुत्रको मराहुआ देख वडा कुपितहोके प्रज्ञाढ्य

के साथ आपयुद्ध करनेलगा, प्रियकरने विरथहोके अक्रम को भी विरथ करके उसका एकही प्रहार से शिर काटडाला सर्वदमनने धनुष के कटजानेपर अकुश फेंककर अतिवलकेमारा उसके लगतेही वह मरकर पृथ्वी मे गिरपडा, कुजरकुमारने बहुत कालतक युद्धकरके धुरन्धरको कईवार विरथकिया परन्तु विक्रमशक्ति उसकेलिये रथ भेजतागया और अपने अस्त्रों से कुजरकुमारके अस्त्रों को काटकर उसकी रक्षा करतारहा तब कुजरकुमारने दौडकर एक बडी भारी शिला विक्रमशक्ति के रथपर फेंकी विक्रम शक्तितो निकलगया परन्तु उसका रथ चूर्णहोगया फिर कुजरकुमारने उसी शिला से धुरन्धरका चूर्ण करडाला, सूर्य्यप्रभने श्रुतशर्मा से युद्धकरते २ दमसे विरोचन को मारागयादेखके एकही बाण फेंकक‍र दमको मारडाला दमको मरादेखकर क्रोधकरके अश्विनीकुमार युद्धकरने को आये सुनीथ उन्हें बीच-हीमें रोककर उनसे युद्धकरनेलगा स्थिरबुद्धि युद्धमें पराक्रम को मारकर उसके मरनेसे क्रोधित होकर आयेहुए अष्टवसुओं से युद्धकरनेलगा दामोदरके साथ युद्धकरतेहुए प्रभासने मर्द्दनसे भासको विरथ कियाहुआ देखकर एकही बाणसे मर्द्दनको मारगिराया प्रकपन अस्त्रयुद्धसे तेजप्रभको मारकर उसके मरनेसे कुपितहुए अग्नि से युद्धकरनेलगा धूमकेतु यमदंष्ट्रको युद्ध मे मारकर कुपितहुए यमराज के साथ भयकर युद्धकरनेलगा सिंहदंष्ट्र शिलासे सुरोपणको चूर्णकरके उसके वधसे कुपितहुए निर्ऋति के साथ युद्धकरनेलगा कालचक्रने चक्रसे वायुबलका शिरकाटडाला तब कुपितहोकर वायुदेवता उससे युद्धकरनेलगे सर्प वृक्ष तथा पर्वतोंका रूप धारण करके युद्धकरनेवाले कुवेरदत्त को महामायने गरुड अग्नि तथा वज्रकारूप धारणकरके मारा तब कुवेर कुपितहोकर उसके साथ युद्धकरनेलगे इसप्रकारसे अन्यसब देवतालोगभी अपने २ अशोंका वध देखकर कुपितहोके युद्धकरनेलगे और मनुष्य तथा दैत्यों ने बहुत से विद्याधरों के स्वामीमारे इसबीचमें दामोदर के साथ प्रहस्तका परस्पर अस्त्र प्रत्यस्त्रों से महा घोर युद्धहुआ दामोदरने धनुषके कटने और सारथीके मरजानेपर अन्य धनुषलेके और अपनेही हाथ से घोडोंकी बागडोर पकडके युद्धकिया यहदेखकर ब्रह्माने उसकी बडी प्रशसाकी तब इन्द्रने उनसेपूछा कि हे भगवन् आप हारेहुए की प्रशसा क्यों करते हो ब्रह्माजी ने उत्तरदिया कि इसकी प्रशसा क्यों न करें जो इतने कालतक प्रभास के साथ युद्ध कररहाहै विष्णुभगवान् के अश दामोदरके बिना यह काम कौन करसक्ता है इस अकेले प्रभासके साथ सम्पूर्ण देवता मिलकर भी युद्ध नहीं करसक्के हैं नमुचि नाम जो बडा बलवान् दैत्यथा वही प्रबलनाम दैत्यथा जिसका कि शरीर रत्नमयथा वही प्रबलभासका पुत्र प्रभासहुआ है भासभी पहले कालनेमिनाम महादैत्य था फिर हिरण्यकशिपुहुआ और फिर कपिंजल हुआ और सुमुण्डीकनाम दैत्य सूर्य्यप्रभहुआ है और हिरण्यकशिपुका दूसरा भाई हिरण्याक्ष दूसरे जन्ममें सुनीथहुआ है और यह जितने प्रहस्तादिक हैं यह सबभी पूर्वजन्मके दैत्य हैं जिनको कि तुम ने युद्धमें माराथा वही फिर अब उत्पन्नहुए हैं इसीसे मयासुरआदि सबदैत्य उनके पक्षमें होगये हैं देखो सूर्य्यप्रभादिकोंने जो रुद्र यज्ञकियाहै उसीके प्रभावसे बलिके बन्धन शिथिल होगये हैं इसीसे वह भी युद्ध देखनेको आयाहै अपने सत्य वचनोंकी पालना करनेकेलिये पातालही मे रहता है जब तुम्हारे

समय व्यतीत होगा तब यहीइन्द्र होगा इससमय श्रीशिवजीने दैत्योंका पक्ष लियाहै इससे अब तुमलोगों की विजय नहीं होगी तुम आग्रह छोड़कर सन्धिकरलो ब्रह्माजीके इसप्रकार वार्त्तालाप करतेही करते प्रभासने पाशुपत अस्त्र दामोदरपर चलाया उस सर्वसंहारी महारौद्र अस्त्रको देखकर विष्णुभगवान्‌ने अपने पुत्र दामोदरको बचाने के लिये सुदर्शनचक्र चलाया तब उनदोनों अस्त्रोंकापरस्पर महाघोर युद्धहोनेलगा और उनदोनों अस्त्रोंके तेजसे सम्पूर्ण संसारको व्याकुल देखकर विष्णुभगवान् ने प्रभाससे कहा कि तुम अपने अस्त्रका संहारकरलो तो मैं भी अपने अस्त्रका संहारकरलूं यह सुनकर प्रभास ने कहा कि दामोदर युद्धको त्यागकर भागजाय तो मैं अपने अस्त्रका संहारकरलूं क्योंकि यह अस्त्र व्यर्थ नहीं होसक्ता तब भगवान् विष्णुने कहा कि तुम भी हमारे अस्त्रका मानकरो जिसमें दोनों अस्त्रव्यर्थ न होंय भगवान् के यह वचनसुनकर प्रभासने कहा तो आपकाचक्र मेरे रथको नष्टकरे तब विष्णुभगवान् ने दामोदरको रणसे भगादिया उसे भागादेखकर प्रभासने अपने अस्त्रका संहारकरलिया और सुदर्शनचक्रने उसके रथको भस्मकरदिया तब प्रभास दूसरे रथपर चढ़कर सूर्य्यप्रभके पासगया और दामोदर श्रुतशर्मा के निकटगया ६९ उससमय इन्द्रके अंश श्रुतशर्मा और सुमुण्डीक के अवतार सूर्य्यप्रभका बड़ा घोर युद्धहुआ श्रुतशर्माने जिस २ अस्त्रको चलाया सो सब सूर्य्यप्रभने अपने अस्त्रोंसे काटडाले और श्रुतशर्मा ने जोनरसी मायाकरी सूर्य्यप्रभ ने अपनी माया से वह सब नष्टकरदीं तब श्रुतशर्मा ने क्रोधकरके ब्रह्मास्त्रका प्रयोग किया सूर्य्यप्रभ ने उसके निवारण करने को पाशुपत अस्त्र चलाया उस अस्त्रने ब्रह्मास्त्रको नष्टकरके श्रुतशर्माको नष्टकरना चाहा यह देखकर इन्द्रादिक लोकपालों ने अपने२ वज्रादिक अस्त्रचलाये परन्तु वह सब अस्त्र उसके तेजसे नष्टहोगये और श्रुतशर्म्मा उसके तेजसे मरने लगा तब सूर्य्यप्रभ ने उस महाअस्त्र की स्तुति करके कहा कि श्रुतशर्म्मा को मारिये नहीं बांधकर मुझे देदीजिये उसकी प्रार्थनासे श्रुतशर्मा को बँधादेखकर सम्पूर्ण देवतालोग युद्ध करनेको उपस्थित होगये उससमय श्री शिवजी का भेजाहुआ वीरभद्रनाम गण देवताओं से आकर बोला कि तुमलोग युद्ध देखने के लिये आयेहो तुमको युद्ध करने से क्या प्रयोजनहै मर्यादाका उल्लंघन मतकरो नहीं तो और अधिक हानिहोगी यह सुनकर देवतालोग बोले कि हमलोगों के बहुतसे पुत्र मारेगये और बहुत मारेजारहेहैं तो हम कैसे न लड़ें पुत्रोंका स्नेह हमारे छोड़ने से नहींछूटता जो कोई उन्हें मारेगा उन्हें हम लोग यथाशक्ति मारेंगे इसमें मर्यादाका उल्लंघनही क्याहै देवतालोगों के यह वचनसुनकर वीरभद्र के चलेजानेपर देवता तथा दैत्योंका महाघोर युद्धहोनेलगा अश्विनीकुमार के साथ सुनीथ, अष्टवसुके साथ स्थिरबुद्धि, वायुके साथ कालचक्र, अग्निके साथ प्रकंपन, निर्ऋतिके साथ सिंहदंष्ट्र, वरुणके साथ प्रमथन, यमकेसाथ धूमकेतु, और कुबेरकेसाथ महामाय अस्त्रप्रत्यस्त्रोंमेंयुद्ध करनेलगे अन्तमें जो २ देवता जो२ महास्त्र छोड़ताथा श्रीशिवजी अपने हुंकारहीसे उसको नष्टकरदेतेथे महामायपर कुबेरको गदामारनेको उद्यतदेखकर श्रीशिवजीने अपना भक्तजानकर वचनहीसे उसे निवारण करदिया और अन्यसबदेवता अपने महास्त्रोंको नष्ट देखकर युद्ध छोड़ २ कर भागगये तब इन्द्रक्रोधकरके आपही सूर्य्यप्रभके साथ

के साथ आपयुद्ध करनेलगा, प्रियकरने विरथहोके अक्रम को भी विरथ करके उसका एकही प्रहार से शिर काटडाला सर्वदमनने धनुष के कटजानेपर अंकुश फेंककर अतिवलकेमारा उसके लगतेही वह मरकर पृथ्वी में गिरपडा, कुंजरकुमारने वहुत कालतक युद्धकरके धुरन्धरको कईवार विरथकिया परन्तु विक्रमशक्ति उसकेलिये रथ भेजतागया और अपने अस्त्रों से कुंजरकुमारके अस्त्रों को काटकर उसकी रक्षा करतारहा तव कुंजरकुमारने दौडकर एक वडी भारी शिला विक्रमशक्ति के रथपर फेंकी विक्रमशक्तितो निकलगया परन्तु उसका रथ चूर्णहोगया फिर कुंजरकुमारने उसी शिला से धुरन्धरका चूर्ण करडाला, सूर्य्यप्रभने श्रुतशर्मा से युद्धकरते २ दमसे विरोचन को मारागयादेखके एकही वाण फेंककर दमको मारडाला दमको मरादेखकर क्रोधकरके अश्विनीकुमारयुद्धकरने को आये सुनीथ उन्हें वीचहीमें रोककर उनसे युद्धकरनेलगा स्थिरवुद्धि युद्धमें पराक्रम को मारकर उसके मरनेसे क्रोधित होकर आयेहुए अष्टवसुओं से युद्धकरनेलगा दामोदरके साथ युद्धकरतेहुए प्रभासने मर्द्दनसे भासको विरथ कियाहुआ देखकर एकही वाणसे मर्द्दनको मारगिराया प्रकंपन अस्त्रयुद्धसे तेजप्रभको मारकर उसके मरनेसे कुपितहुए अग्नि से युद्धकरनेलगा धूमकेतु यमदंष्ट्रको युद्ध में मारकर कुपितहुए यमराज के साथ भयंकर युद्धकरनेलगा सिंहदंष्ट्र शिलासे सुरोषणको चूर्णकरके उसके वधसे कुपितहुए निर्ऋति के साथ युद्धकरनेलगा कालचक्रने चक्रसे वायुवलका शिरकाटडाला तव कुपितहोकर वायुदेवता उससे युद्धकरनेलगे सर्प वृक्ष तथा पर्वतोंका रूप धारण करके युद्धकरनेवाले कुवेरदत्त को महामायने गरुड अग्नि तथा वज्रकारूप धारणकरके मारा तव कुवेर कुपितहोकर उसके साथ युद्धकरनेलगे इसप्रकारसे अन्यसव देवतालोगभी अपने २ अंशोंका वध देखकर कुपितहोके युद्धकरनेलगे और मनुष्य तथा दैत्यों ने वहुत से विद्याधरों के स्वामीमारे इसवीचमें दामोदर के साथ प्रहस्तका परस्पर अस्त्र प्रत्यस्त्रों से महा घोर युद्धहुआ दामोदरने धनुषके कटने और सारथीके मरजानेपर अन्य धनुषलेके और अपनेही हाथ से घोडोंकी वागडोर पकडके युद्धकिया यहदेखकर ब्रह्माने उसकी वडी प्रशंसाकी तव इन्द्रने उनसेपूछा कि हे भगवन् आप हारेहुए की प्रशंसा क्यों करते हो ब्रह्माजी ने उत्तरदिया कि इसकी प्रशंसा क्यों न करें जो इतने कालतक प्रभास के साथ युद्ध कररहाहै विष्णुभगवान् के अंश दामोदरके विना यह काम कौन करसक्ता है इस अकेले प्रभासके साथ सम्पूर्ण देवता मिलकर भी युद्ध नहीं करसक्ते हैं नमुचि नाम जो वडा वलवान् दैत्यथा वही प्रब्लनाम दैत्यथा जिसका कि शरीर रत्नमयथा वही प्रवलभासका पुत्र प्रभासहुआ है भासभी पहले कालनेमिनाम महादैत्य था फिर हिरण्यकशिपुहुआ और फिर कपिंजल हुआ और सुमुण्डीकनाम दैत्य सूर्य्यप्रभहुआ है और हिरण्यकशिपुका दूसरा भाई हिरण्याक्ष दूसरे जन्ममें सुनीथहुआ है और यह जितने प्रहस्तादिक हैं यह सवभी पूर्वजन्मके दैत्य हैं जिनको कि तुम ने युद्धमें माराथा वही फिर अव उत्पन्नहुए हैं इसीसे मयासुरआदि सवदैत्य उनके पक्षमें होगये हैं देखो सूर्य्यप्रभादिकोंने जो रुद्र यज्ञकियाहै उसीके प्रभावसे वलि के वन्धन शिथिल होगये हैं इसीसे वह भी युद्ध देखनेको आयाहै अपने सत्य वचनोंकी पालना करनेकेलिये पातालही में रहना है जव तुम्हारे

समय व्यतीत होगा तब यहीइन्द्र होगा इससमय श्रीशिवजीने दैत्योंका पक्षलियाहै इससे अब तुमलोगों की विजय नहीं होगी तुम आग्रह छोडकर सन्धिकरलो ब्रह्माजीके इसप्रकार वार्त्तालाप करतेही करते प्रभासने पाशुपत अस्त्र दामोदरपर चलाया उस सर्वसंहारी महारौद्र अस्त्रको देखकर विष्णुभगवान्‌ने अपने पुत्र दामोदरको बचाने के लिये सुदर्शनचक्र चलाया तब उनदोनों अस्त्रोंकापरस्पर महाघोर युद्धहोनेलगा और उनदोनों अस्त्रोंके तेजसे सम्पूर्ण संसारको व्याकुल देखकर विष्णुभगवान् ने प्रभाससे कहा कि तुम अपने अस्त्रका संहारकरलो तो मैं भी अपने अस्त्रका संहारकरलूं यह सुनकर प्रभास ने कहा कि दामोदर युद्धको त्यागकर भागजाय तो मैं अपने अस्त्रका संहारकरलूं क्योंकि यह अस्त्र व्यर्थ नहीं होसक्ता तब भगवान् विष्णुने कहा कि तुम भी हमारे अस्त्रका मानकरो जिसमें दोनों अस्त्रव्यर्थ न होंय भगवान् के यह वचनसुनकर प्रभासने कहा तो आपकाचक्र मेरे रथको नष्टकरे तब विष्णुभगवान् ने दामोदरको रणसे भगादिया उसे भागादेखकर प्रभासने अपने अस्त्रका संहारकरलिया और सुदर्शनचक्रने उसके रथको भस्मकरदिया तब प्रभास दूसरे रथपर चढकर सूर्य्यप्रभके पासगया और दामोदर श्रुतशर्मा के निकटगया ६२ उससमय इन्द्रके अंश श्रुतशर्मा और सुमुण्डीक के अवतार सूर्य्यप्रभका बडा घोर युद्धहुआ श्रुतशर्माने जिस २ अस्त्रको चलाया सो सब सूर्य्यप्रभने अपने अस्त्रोंसे काटडाले और श्रुतशर्मा ने जोनश्सी मायाकरी सूर्य्यप्रभ ने अपनी माया से वह सब नष्टकरदी तब श्रुतशर्मा ने क्रोधकरके ब्रह्मास्त्रका प्रयोग किया सूर्य्यप्रभ ने उसके निवारण करने को पाशुपत अस्त्र चलाया उस अस्त्रने ब्रह्मास्त्रको नष्टकरके श्रुतशर्माको नष्टकरना चाहा यह देखकर इन्द्रादिक लोकपालों ने अपने२ वज्रादिक अस्त्रचलाये परन्तु वह सब अस्त्र उसके तेजसे नष्टहोगये और श्रुतशर्म्मा उसके तेजसे मरने लगा तब सूर्य्यप्रभ ने उस महाअस्त्र की स्तुति करके कहा कि श्रुतशर्म्मा को मारिये नहीं बांधकर मुझे देदीजिये उसकी प्रार्थनासे श्रुतशर्मा को बँधादेखकर सम्पूर्ण देवतालोग युद्ध करनेको उपस्थित होगये उससमय श्री शिवजी का भेजाहुआ वीरभद्रनाम गण देवताओं से आकर बोला कि तुमलोग युद्ध देखने के लिये आयेहो तुमको युद्ध करने से क्या प्रयोजनहै मर्यादाका उल्लंघन मतकरो नहीं तो और अधिक हानिहोगी यह सुनकर देवतालोग बोले कि हमलोगों के बहुतसे पुत्र मारेगये और बहुत मारेजारहे हैं तो हम कैसे न लडें पुत्रोंका स्नेह हमारे छोडने से नहींछूटता जो कोई उन्हें मारेगा उन्हें हम लोग यथाशक्ति मारेंगे इसमें मर्यादाका उल्लंघनहीं क्याहै देवतालोगों के यह वचनसुनकर वीरभद्र के चलेजानेपर देवता तथा दैत्योंका महाघोर युद्धहोनेलगा अश्विनीकुमार के साथ सुनीथ, अष्टवसुके साथ स्थिरबुद्धि, वायुके साथ कालचक्र, अग्निके साथ प्रकंपन, निर्ऋतिके साथ सिंहदंष्ट्र, वरुणके साथ प्रमथन, यमकेसाथ धूमकेतु, और कुबेरकेसाथ महामाय अस्त्रप्रत्यस्त्रोंमेंयुद्ध करनेलगे अन्तमें जो २ देवता जो२ महास्त्र छोडताथा श्रीगिरिजी अपने हुंकारहीसे उसको नष्टकरदेतेथे महामायपर कुबेरको गदामारनेको उद्यतदेखकर श्रीगिरिजीने अपना भक्तजानकर वचनहीसे उसे निवारण करदिया और अन्यसबदेवता अपने महास्त्रोंको नष्ट देखकर युद्ध छोड २ कर भागगये तब इन्द्रक्रोधकरके आपही सूर्य्यप्रभके साथ

युद्ध करनेलगा इन्द्रने, वहुतसे अस्त्र शस्त्र और अनेक वाण सूर्य्यप्रभपर चलाये सूर्य्यप्रभ ने अपने वाणोंसे उन सबको काटकर सौवाण कानतक खेचकर, इन्द्रके मारे उन वाणोंके लगने से अत्यन्त कुपितहोके इन्द्रने अपना वज्र उठाया वज्रको देखकर श्रीशिवजी ने हुकारकरकेही उसे नष्ट करदिया वज्रको नष्ट देखकर इन्द्र पराङ्मुखहोकर युद्ध से भागगये इस बीचमें विष्णु भगवान् आपही प्रभाससे युद्ध करनेलगे युद्ध करते २ प्रभासका रथ काटडाला घोडे मारडाले तब वह दूसरा रथ लेकर अत्यन्त घोरयुद्ध करनेलगा तब भगवान् ने कुपितहोकर अपना सुदर्शनचक्र उसपर चलाया प्रभास ने उसे निवारण करनेके अर्थ अभिमन्त्रित करके खड्ग चलाया उन दोनोंका परस्पर युद्धहोते २ खड्गको हीनहोता देखकर श्रीशिवजीने हुकार किया जिससे खड्ग और सुदर्शनचक्र दोनो अन्तर्द्धानहोगये तब सूर्य्यप्रभकी जयदेखकर और श्रुतशर्माको वॅधादेखकर सम्पूर्ण दैत्य तथा मनुष्य अत्यन्त प्रसन्नहुए और देवतालोग महाविषादयुक्त होगये ९० तदनन्तर देवतालोगो ने स्तुति करके श्रीशिवजी को प्रसन्नकिया तब शीघ्रप्रसाद श्रीशिवजीने प्रसन्नहोकर कहा कि सूर्य्यप्रभके लिये जो मैंने प्रतिज्ञाकी है उसके सिवाय जो चाहो सोमागो यह सुनकर देवतालोगोने कहा कि आपकी प्रतिज्ञाको कौनमेट सक्ताहै परन्तु जो हमलोगोने श्रुतशर्माकेलिये प्रतिज्ञाकी है उसे भी मिथ्या न कीजिये जिसमे हमलोगोंका अंश नष्ट न होय देवताओंके यह वचन सुनकर श्रीशिवजीवोले कि सन्धिकरने से यह बात होसक्ती है और सन्धि इसप्रकारसे करो कि श्रुतशर्मा अपने परिकरसमेत सूर्य्यप्रभको प्रणामकरे तब मैं ऐसा करूंगा जिसमें सबका कल्याणहोगा शिवजीकी यह आज्ञापाकर देवतालोगो ने श्रुतशर्म्मा से परिकर समेत सूर्य्यप्रभको प्रणामकरवाया और वैरको शान्तकरके दोनों को गले मिलवाकर दोनो की सन्धिकरवादीनी तब श्रीशिवजी सब के आगे सूर्य्यप्रभ से वोले कि तुम वेदीके दक्षिण भागमे अपना चक्रवर्त्तीपनेका अधिकारकरो और उत्तरभाग श्रुतशर्म्माकोदेदो हेपुत्र थोडेहीकालमे किन्नरादिक आकाशचारियो के चक्रवर्त्तीहोकर तुम इससे चतुर्गुणित ऐश्वर्य्यको प्राप्तहोगे और उसके प्राप्त होनेपर तुम दक्षिणभाग भी कुंजरकुमारको देदेना यह कहकर फिर श्रीशिवजी वोले कि इस युद्धमें जो देवता दैत्य तथा मनुष्यमरे है वह सब अपने भलेचगे शरीरोसमेतजीउठें यह कहकर श्रीशिवजी तो अन्तर्द्धानहोगये और सम्पूर्ण योद्धा जो कि युद्धमें मरेथे सोकर जगेहुएके समान जीकर उठबैठे तदनन्तर श्रीशिवजीकी आज्ञाको शिरपर रखकर एक वडे सुन्दर मैदान में जाकर सूर्य्यप्रभ बैठा और श्रुतशर्म्माभी वहीं आया उसे सूर्य्यप्रभने अपने सिंहासनपर बैठालिया तब सूर्य्यप्रभ के प्रभासादिक मन्त्री तथा श्रुतशर्म्मा के दामोदरादिक मन्त्री और मय सुनीथादिकदैत्य तथा सम्पूर्ण विद्याधर राजा योग्य आसनोपर बैठे उससमय सातों पातालो के स्वामी प्रह्लादादिक दैत्य लोकपाल तथा वृहस्पति सहित इन्द्र सुमेरु, सुवासकुमार, दनु आदिक कश्यपजी की सबस्त्रिया सूर्य्यप्रभकी सम्पूर्ण रानिया और [illegible] वे सम्पूर्ण राजा यह सबलोग अपने २ स्थानो से वहाँआये और परस्पर यथा-[illegible] [illegible] दनुकी सिद्धिनाम सखी उसकी आज्ञा से यह वचन वोली कि हे

देवता तथा दैत्यलोगो देवीदनु तुमलोगों से कहती है कि इसप्रीति समाजमें जैसासुख होरहाहै वैसा और भी कभी तुमलोगोंने अनुभव कियाहै इससे अब दुःखका कारण परस्पर विरोध कभी मतकरना और जिन हिरण्याक्षादिकों ने ज्येष्ठ होनेके कारण स्वर्ग का राज्यलेनेके निमित्त विरोधकिया था वह अब नहीं रहे अब इन्द्रही ज्येष्ठहै तो विरोधका क्या प्रयोजनहै इससे वैरको त्यागकरके परस्पर स्नेहसे सुखपूर्वक रहो जिससे हमलोगों को सुखहोय और संसारका कल्याणहोवे सिद्धिके मुखसे दनुके यह वचन सुनकर इन्द्रकी ओरसे बृहस्पति जी बोले, कि देवतालोगों को दैत्योंसे कोई वैर नहीं है जो दैत्य लोगही देवतालोगों के साथ विनाकारणके विकार न करें तो वैर कभी न होय बृहस्पतिके यह वचन सुनकर मयासुरबोला कि जो दैत्यलोगही वैर करतेहोते तो नमुचि दैत्य इन्द्रको अपना उच्चैःश्रवा घोडा क्यों देदेता प्रबल अपना शरीर देवतायोंको क्यों देता बलि विष्णुको त्रैलोक्य देकर बन्दीगृह में क्योंजाते और अयोदेह अपना शरीर विश्वकर्माको क्योंदेदेता और कहातक कहें दैत्यलोगों के चित्तमें वैर नहींहै जो उनके साथ छल न कियाजाय तो वह कभी उपद्रव न करें मयासुरके इसप्रकार कहनेपर सिद्धिने ऐसे वचन कहे जिनसे देवता लोगोंने तथा दैत्योंने गलेसे गलामिलाकर परस्पर प्रेमकरलिया इसबीचमें श्री पार्वतीजीकी भेजीहुई जयानाम प्रतिहारी वहाँ आई और सबके पूजनको ग्रहणकरके सुमेरुसे बोली कि श्री पार्वतीजीने तुमसे कहा है कि तुम्हारी कामचूडामणि जो कन्याहैवह मेरी परम भक्तहै इससे उसका विवाह तुम सूर्य्यप्रभ के साथ करदो जयाके यहवचन सुनकर सुमेरु नम्रहोकरबोला कि भगवतीने मेरेऊपर बड़ी दयाकी है जो उनकी आज्ञाहोगी सोई मैं करूंगा श्रीशिवजीभी मुझेप्रथम यही आज्ञादेचुके हैं सुमेरु के यह वचन सुनकर जया सूर्य्यप्रभ से बोली कि तुमसे भी श्रीपार्वतीजीने कहा है कि तुम इसे अपनी सबस्त्रियोंमें पटरानी करना और यह तुमको सबस्त्रियों से अधिक प्रियहोगी जयाके यहवचन सुनकर सूर्य्यप्रभने कहा कि भगवतीकी आज्ञा मेरे शिरपरहै तदनन्तर जयाके चले जानेपर सुमेरुने उसीदिन लग्नका निश्चयकरके रत्नजटित वेदीबनवाई और अपनी कामचूडामणि पुत्रीको वहींबुलवाया उसेदेखकर संपूर्ण देवता तथा दैत्य कहनेलगे कि श्रीपार्वतीजीका जन्म हिमालय से हुआहै और इसका सुमेरुसे हुआहै इसीसे यहपार्वतीजीके समान रूपवती है तब सुमेरुने उसेवेदीपर बैठालकर संकल्प करके उसका हाथ सूर्य्यप्रभके हाथमें देदिया दनुआदिक स्त्रियोंसे बाँधेहुए कङ्कण समेत कामचूडामणिका हाथ ग्रहण करके सूर्य्यप्रभ अत्यन्त प्रसन्नहुआ उससमय पहलीबार लाजाहवनमें पार्वतीजीकी भेजीहुई जयाने आकर दिव्य कभी नाश न होनेवाली माला सूर्य्यप्रभको दी और सुमेरुने अमूल्यरत्नों समेत ऐरावतसे उत्पन्न दिव्यहाथी दिया दूसरीबार लाजाहवनमें जयाने रत्नावलीदी जिसे कण्ठमें धारण करनेसे मृत्यु क्षुधा तथा तृषा नहींबाधाकरसक्ती है और सुमेरुने द्विगुणरत्न तथा उच्चैःश्रवासे उत्पन्नश्रेष्ठघोड़ा औरतीसरीबार लाजाहवनमें जयाने एकलटी मालादी जिसके पहरनेसे युवावस्थाही सदैव बनीरहती है और सुमेरुने त्रिगुण रत्न तथा एकदिव्यगोली दी जिससे सबप्रकारकी सिद्धियां प्राप्त होसक्तीथीं इसप्रकार विवाह विधिके समाप्त होजानेपर सुमेरुने हाथजोडकर देवता दैत्य विद्याधर तथा

युद्ध करनेलगा इन्द्रने, बहुतसे अस्त्र शस्त्र और अनेक बाण सूर्य्यप्रभपर चलाये सूर्य्यप्रभ ने अपने बाणोंसे,उन सबको काटकर सौबाण कानतक खेंचकर इन्द्रके मारे उन बाणोंके लगने से अत्यन्त कुपितहोके इन्द्रने अपना वज्र उठाया वज्रको देखकर श्रीशिवजी ने हुङ्कारकरकेही उसे नष्ट करदिया वज्रको नष्ट देखकर इन्द्र पराङ्मुखहोकर युद्ध से भागगये इस बीचमें विष्णु भगवान् आपही प्रभाससे युद्ध करनेलगे युद्ध करते २ प्रभासका रथ काटडाला,घोडे मारडाले,तब वह दूसरा रथ लेकर अत्यन्त घोरयुद्ध करनेलगा तब भगवान् ने कुपितहोकर अपना सुदर्शनचक्र उसपर चलाया प्रभास ने उसे निवारण करनेके अर्थ अभिमन्त्रित करके खड्ग चलाया उन दोनोंका परस्पर युद्धहोते २ खड्गको हीनहोता देखकर श्रीशिवजीने हुङ्कार किया जिससे खड्ग और सुदर्शनचक्र दोनों अन्तर्द्धानहोगये तब सूर्य्यप्रभकी जयदेखकर और श्रुतशर्माको बँधादेखकर सम्पूर्ण दैत्य तथा मनुष्य अत्यन्त प्रसन्नहुए और देवतालोग महाविषादयुक्त होगये १० तदनन्तर देवतालोगों ने स्तुति करके श्रीशिवजी को प्रसन्नकिया तब शीघ्रप्रसाद श्रीशिवजीने प्रसन्नहोकर कहा कि सूर्य्यप्रभके लिये जो मैंने प्रतिज्ञाकी है उसके सिवाय जो चाहो सोमागो यह सुनकर देवतालोगोंने कहा कि आपकी प्रतिज्ञाको कौनमेट सक्ताहै परन्तु जो हमलोगोंने श्रुतशर्माकेलिये प्रतिज्ञाकी है उसे भी मिथ्या न कीजिये जिसमें हमलोगोंका अंश नष्ट न होय देवताओंके यह वचन सुनकर श्रीशिवजीबोले कि सन्धिकरने से यह बात होसक्ती है और सन्धि इसप्रकारसे करो कि श्रुतशर्मा अपने परिकरसमेत सूर्य्यप्रभको प्रणामकरे तब मैं ऐसा करूंगा जिसमें सबका कल्याणहोगा शिवजीकी यह आज्ञापाकर देवतालोगों ने श्रुतशर्म्मा से परिकर समेत सूर्य्यप्रभको प्रणाम करवाया और वैरको शान्तकरके दोनों को गले मिलवाकर दोनों की सन्धिकरवादीनी तब श्रीशिवजी सब के आगे सूर्य्यप्रभ से बोले कि तुम वेदीके दक्षिण भागमें अपना चक्रवर्त्तीपनेका अधिकारकरो और उत्तरभाग श्रुतशर्म्माकोदेदो हेपुत्र थोडेहीकालमें किन्नरादिक आकाशचारियों केचक्रवर्त्तीहोकर तुम इससे चतुर्गुणित ऐश्वर्य्यको प्राप्तहोगे और उसके प्राप्त होनेपर तुम दक्षिणभाग भी कुञ्जरकुमारको देदेना यह कहकर फिर श्रीशिवजी बोले कि इस युद्धमें जो देवता दैत्य तथा मनुष्यमरे हैं वह सब अपने भलेचगे शरीरोंसमेतजीउठें,यह कहकर श्रीशिवजी तो अन्तर्द्धानहोगये और सम्पूर्ण योद्धा जो कि युद्धमें मरेथे सोकर जगेहुएके समान जीकर उठबैठे तदनन्तर श्रीशिवजीकी आज्ञाको शिरपर रखकर एक बड़े सुन्दर मैदान में जाकर सूर्य्यप्रभ बैठा,और श्रुतशर्म्माभी वहीं आया उसे सूर्य्यप्रभने अपने सिंहासनपर बैठालिया तब सूर्य्यप्रभ के प्रभासादिक मन्त्री तथा श्रुतशर्म्मा के दामोदरादिक मन्त्री और मय सुनीथादिकदैत्य तथा सम्पूर्ण विद्याधर यथा योग्य आसनोंपर बैठे उससमय सातो पातालों के स्वामी प्रह्लादादिक दैत्य लोकपाल तथा बृहस्पति सहित इन्द्र सुमेरु,सुनामकुमार,दनु आदिक कश्यपजी की स्त्रियां सूर्य्यप्रभकी सपूर्ण रानियां और विद्याधरोंके सपूर्ण राजा यह सबलोग अपने २ स्थानों से वहाँआये और परस्पर यथायोग्य शिष्टाचार करके बैठे तब दनुकी सिद्धिनाम सखी उनकी आज्ञा से यह वचन बोली कि हे

सुनकर एकगजमुख पुरुष ने द्वार खोलकर कहा कि आओ तुम्हारे ऊपर भगवान् गणेशजी प्रसन्नहैं यह आज्ञापाके उसने भीतरजाके देखा कि एक बड़ीभारी मणिमय शिलापर बारहसूर्य्यों के समान तेजस्वी एकदन्त लम्बोदर त्रिनेत्र देदीप्यमान परशु तथा मुद्गरधारी भगवान् गणाधिपति बैठे हैं और अनेकगण उनके निकट खड़ेहुएहैं इसप्रकार भगवान् गणपतिके दर्शनकरके उनके चरणोंपर गिरकर उसने प्रणामकिया विघ्नहर्ता भगवान् गणेशजीने उसे प्रणाम करते देखके उससे आगमनका कारण पूछके कहा कि इसमार्गसे चलेजाओ यह आज्ञा पाकर उस मार्गसे पांचयोजन ऊंचेचढके सूर्य्यप्रभने एक मन्निका बड़ाभारी द्वारदेखा और उसमें भी प्रवेश करनेको असमर्थ होकर सहस्रनाम से श्रीशिवजी की स्तुतिकी तब स्वामिकार्त्तिकके पुत्र विशाखने द्वारखोलकर उससेकहा कि भीतरआओ वहां जाकर उसने अग्निके समान तेजस्वी भगवान् स्वामिकार्त्तिकको बालग्रह रूप शाक विशाकादिक पांचपुत्रों से युक्तदेखा और प्रणाम किया स्वामिकार्त्तिकने भी प्रसन्नहोके उसेचढनेका मार्ग बतादिया इसक्रमसे भैरव महाकाली वीरभद्रनन्दी तथा भृङ्गीसेरक्षित पांचरत्नोंके अन्यद्वारोंको उल्लङ्घनकरके वहपर्व्वतके ऊपर स्फटिकके द्वारपर पहुंचा और द्वारको मुद्रित देखकर श्रीशिवजीकी स्तुति करनेलगा तब एकरुद्रने द्वारखोल करउसेआदर पूर्व्वक बुलालिया भीतरजाकर उसने स्वर्गसेभी अधिकमनोहर श्री शिवजीका स्थानदेखा वहां दिव्य सुगन्धयुक्त वायुचलरही थी सदैव पुष्पफलों से युक्त अनेकवृक्ष लगरहेथे गन्धर्व गान करते और अप्सरा नृत्यकररहीं थीं ऐसे मनोहर शुभस्थान में स्फटिकके सिंहासनपर त्रिलोचन शूलपाणि स्फटिकके समान गौरवर्ण पीत जटाजूटधारी चन्द्रशेखर भगवान् श्रीशिवजी को पार्वतीजी समेत देखकर सूर्य्यप्रभने चरणों में गिरकर उनको प्रणाम किया तब श्रीशिवजीने उसकी पीठपर हाथरखके और उठाके पूछा कि हे पुत्र किसनिमित्त आयेहो यह सुनकर सूर्य्यप्रभ हाथ जोड़कर बोला हे स्वामी मेरे अभिषेक का समय निकट आयाहै इससे मैं यह प्रार्थना करने आयाहूं कि आपभी उस समय कृपाकीजिये यह सुनकर श्रीशिवजी ने कहा कि हे पुत्र इतनेही के लिये तुमने इतनाश्रम क्यों किया वहीं से मेरास्मरण क्यों नहीं किया मैं उस समय वहां अवश्य आऊंगा यह कहकर एकगणको बुलाकर कहा कि जाओ इसे अभिषेकके लिये ऋषभपर्व्वतपर पहुंचा आओ क्योंकि विद्याधरों के चक्रवर्त्तियों का अभिषेक वहीं होता है शिवजी की यह आज्ञापाके वह गण सूर्य्यप्रभको गोदी में उठाकर ऋषभपर्व्वतपर ले आया और उसीसमय अपनी सिद्धिसे अन्तर्द्धान होगया उससमय वहां सूर्य्यप्रभके पास प्रभासादिक सम्पूर्ण मन्त्री कामचूडामणि आदिक सम्पूर्ण रानियां इन्द्रादिक देवता मयादिक दैत्य यानवल्क्यादि महर्षि श्रुतशर्मा सुवासकुमार और सुमेरु आदिक विद्याधरों के सब राजा आये सूर्य्यप्रभने उन सबका सत्कार किया और अपने मन्त्री तथा मित्रोंसे श्रीशिवजीके मिलनेका वृत्तान्त कहा तदनन्तर प्रभासादिक मन्त्री सम्पूर्ण औषध तथा सुवर्णके घटोंमें सबनदियोंके जललाये इतनेमें श्रीशिवजीभी पार्वतीजी समेत वहां आगये उन्हें देखकर सम्पूर्ण देवता दैत्य विद्याधर राजा तथा महर्षियोंने उठ २ कर प्रणाम किया तब श्रीशिवजीकी आज्ञासे सम्पूर्ण महर्षियोंने सूर्य्यप्रभको सिंहा

देव मातादिक सबसे कहा कि मैं हाथ जोडकर सबसे प्रार्थना करता हूं कि आज कृपाकरके सब मेरेही यहा भोजनकरो सुमेरुकी इस प्रार्थनाको सबलोगों को ग्रहणकरते न देखकर नन्दीगण ने वहां आकर कहा कि श्री शिवजीकी यह आज्ञाहै कि आज तुम सब लोग सुमेरुकेही यहा भोजनकरो क्योंकि यह हमारा परमभक्त है इसके यहा भोजन करने से तुमलोगों को सदैव तृप्ति बनीरहेगी नन्दीश्वरके यह वचन सबने स्वीकारकरलिये तब शिवजी के भेजेहुए विनायक, महाकाल तथा वीरभद्रादिक गणों ने आकर भोजनकी सम्पूर्णसामग्री इकट्ठीकी और देवता दैत्य तथा मनुष्यों को बैठालकर सुमेरुकी विद्या से प्राप्तहुए तथा श्रीशिवजीकी आज्ञापाकर कामधेनुसे दियेगये भोजन सबके आगे परोसेगये एक२ गण एक२ पुरुषके पास खडारहा जिससें ऐसा न होय कि किसीको कोई बस्तु मांगने पर न मिले और भोजन के समय दिव्य गान तथा दिव्य स्त्रियों का नृत्यभी होतारहा इसप्रकार जब सब भोजन करचुके तब नन्दीश्वरादिक सबको वस्त्र आभूषण तथा हारदेकर और यथायोग्य सबका सत्कारकरके चलेगये तदनन्तर सब देवता; दैत्य देवमाता तथा श्रुतशर्म्मा आदिकोंके भी अपने २ स्थानपर चले जानेपर सूर्य्यप्रभ अपने मन्त्री तथा स्त्रियों समेत सुमेरुके तपोवनमे चला आया वहा आकर उसने अपने मित्रहर्षको सम्पूर्ण राजा लोगोंसे तथा अपने छोटेभाई रत्नप्रभसे अपनी विजय का वृत्तान्त कहनेको भेजा और इसप्रकार उत्सवसे उसदिनके व्यतीत होजानेपर रात्रिकेसमय शयन स्थानमें जाकर नवीन वधू कामचूडामणि को आलिगनादिकों से लज्जारहित करके उसके साथ नवीन सगमका अपूर्व्व सुख अनुभव किया और रतिके उपरान्त उससे यह कहा कि अब मेरी रानीतो बहुतसी हैं परन्तु हृदय मे तुम्हीराही स्थानहै यह कहके उसे आलिगन करके वह सोगया और रात्रि व्यतीत होगई १६० प्रातः काल उठकर सूर्य्यप्रभ अपनी अन्य स्त्रियोको भी प्रसन्न करनेकेलिये उनके पासगया वह सब उसे नवीन वधूसे अनुरक्त जानकर कुटिलता भरेहुए मधुर वचनों से उसकी हँसी करनेलगी इतने में प्रतीहार के द्वारा निवेदन कियेगए सुषेणनाम विद्याधरने आकर कहा कि हे स्वामी त्रिकूटनाथ नामादिक विद्याधरोंने मुझे आपके पास यह प्रार्थना करनेको भेजाहै कि आजके तीसरे दिन ऋषभ पर्व्वतपर आपके अभिषेककी लग्नहै इससें आप सम्पूर्ण लोगोंको निमन्त्रण भिजवाइये और अभिषेककी सम्पूर्ण सामग्री इकट्ठी करवाइये यह सुनकर सूर्य्यप्रभने उस दूतसे कहा कि जाओ त्रिकूटनाथादिकोंसे कहो कि आपही लोग सबसामग्री इकट्ठी कीजिये मैं यहा तैयारहूं और निमन्त्रणभी मैं सबके पासभिजवादूंगा इससदेशको लेकर सुषेण तो चलागया और सूर्य्यप्रभ अपने प्रमासादिक मन्त्रियोंको देवताओंको याज्ञवल्क्यादिक मुनि राजालोग, विद्याधर तथा दैत्य लोगोंको निमन्त्रण देनेकेलिये भेजकर आप श्रीपार्वतीजी तथा श्रीशिवजीको निमन्त्रण देनेकोचला और देवता ऋषि तथा सिद्धलोगोंसे सेवित अत्यन्त श्वेतवर्ण द्वितीय शिवलोकके समान कैलाशपर्व्वतपरं पहुचा वहां मार्गमे अधिक दूरतक चढकर फिर आगे उसके चढने का कोई मार्ग नहीं दिखाई दिया और एक मृगेका बनाहुआ द्वारदिखाई दिया जब उस द्वारमे वह अपनी सिद्धिके द्वारा घुस न सका तब एकाग्रचित्त होकर श्रीशिवजीकी स्तुति करनेलगा स्तुतिको

सुनकर एकगजमुख पुरुष ने द्वार खोलकर कहा कि आओ तुम्हारे ऊपर भगवान् गणेशजी प्रसन्नहैं यह आज्ञापाके उसने भीतरजाके देखा कि एक बड़ीभारी मणिमय शिलापर बारहसूर्य्यों के समान तेजस्वी एकदन्त लम्बोदर त्रिनेत्र देदीप्यमान परशु तथा मुद्गरधारी भगवान् गणाधिपति बैठे हैं और अनेकगण उनके निकट खड़ेहुएहैं इसप्रकार भगवान् गणपतिके दर्शनकरके उनके चरणोंपर गिरकर उसने प्रणामकिया विघ्नहर्त्ता भगवान् गणेशजीने उसे प्रणाम करते देखके उससे आगमन का कारण पूछके कहा कि इसमार्गमें चलेजाओ यह आज्ञा पाकर उस मार्गसे पांचयोजन ऊंचेचढ़के सूर्य्यप्रभने एक पन्नेका बड़ाभारी द्वारदेखा और उसमें भी प्रवेश करनेको असमर्थ होकर सहस्रनाम से श्रीशिवजी की स्तुतिकी तब स्वामिकार्त्तिकके पुत्र विशाखने द्वारखोलकर उससेकहा कि भीतरआओ वहां जाकर उसने अग्निके समान तेजस्वी भगवान् स्वामिकार्त्तिकको बालग्रह रूप शाक विशाकादिक पांचपुत्रों से युक्तदेखा और प्रणाम किया स्वामिकार्त्तिकने भी प्रसन्नहोके उसेचढ़नेका मार्ग बतादिया इसक्रमसे भैरव महाकाली वीरभद्र नन्दी तथा भृङ्गीसेरक्षित पांचरत्नोंके अन्यद्वारोंको उल्लङ्घनकरके वहपर्व्वतके ऊपर स्फटिकके द्वारपर पहुंचा और द्वारको मुद्रित देखकर श्रीशिवजीकी स्तुति करनेलगा तब एकरुद्रने द्वारखोल कर उसेआदर पूर्व्वक बुलालिया भीतरजाकर उसने स्वर्गसेभी अधिकमनोहर श्री शिवजीका स्थानदेखा वहां दिव्य सुगन्धयुक्त वायुचलरही थी सदैव पुष्पफलों से युक्त अनेकवृक्ष लगरहेथे गन्धर्व गान करते और अप्सरा नृत्यकररहीं थीं ऐसे मनोहर शुभस्थान में स्फटिकके सिंहासनपर त्रिलोचन शूलपाणि स्फटिकके समान गौरवर्ण पीत जटाजूटधारी चन्द्रशेखर भगवान् श्रीशिवजी को पार्वतीजी समेत देखकर सूर्य्यप्रभने चरणों में गिरकर उनको प्रणाम किया तब श्रीशिवजीने उसकी पीठपर हाथरखके और उठाके पूछा कि हे पुत्र किसनिमित्त आयेहो यह सुन कर सूर्य्यप्रभ हाथ जोड़कर बोला हे स्वामी मेरे अभिषेक का समय निकट आयाहै इससे मैं यह प्रार्थना करने आयाहूं कि आपभी उस समय कृपाकीजिये यह सुनकर श्रीशिवजी ने कहा कि हे पुत्र इतनेही के लिये तुमने इतना श्रम क्यों किया वहीं मेरास्मरण क्यों नहीं किया मैं उस समय वहां अवश्य आऊंगा यह कहकर एकगणको बुलाकर कहा कि जाओ इसे अभिषेकके लिये ऋषभपर्व्वतपर पहुंचा आओ क्योंकि विद्याधरों के चक्रवर्त्तियों का अभिषेक वहीं होता है शिवजी की यह आज्ञापाके वह गण सूर्य्यप्रभको गोदी में उठाकर ऋषभपर्व्वतपर ले आया और उसीसमय अपनी सिद्धिसे अन्तर्द्धान होगया उससमय वहां सूर्य्यप्रभके पास प्रभासादिक सम्पूर्ण मन्त्री काम चूड़ामणि आदिक सम्पूर्ण राजा इन्द्रादिक देवता मयादिक दैत्य दानवइत्यादि महर्षि श्रुतशर्मा सुवासकुमार और सुमेरु आदिक विद्याधर ये सब राजा आये सूर्य्यप्रभने उन सबका सत्कार किया और अपने मन्त्री तथा मित्रोंसे श्रीशिवजीके मिलनेका वृत्तान्त कहा तदनन्तर प्रभासादिक मन्त्री सम्पूर्ण औषध तथा सुवर्णके घड़ोंमें सबतीर्थोंके जललाये इतनेमें श्रीशिवजीभी पार्वतीजी समेत वहां आगये उन्हें देखकर सम्पूर्ण देवता दैत्य विद्याधर राजा तथा महर्षियोंने उठ २ कर प्रणाम किया तब श्रीशिवजीकी आज्ञासे सम्पूर्ण महर्षियोंने सूर्य्यप्रभको सिंहा

सनपर बैठाके सब तीर्थोंके जलोसे अभिषेक क्रिया,और सम्पूर्ण,देवता दैत्य तथा विद्याधरोंने मिलकर पुण्योहवाचन किया और,मयासुरने उसके शिरपर मुकुट रखकरके पट्टबांधा उस समय सम्पूर्ण महर्षियोंने कामचूडामणिको अभिषेक करके उसकी पटरानी बनादी इसप्रकार अभिषेककी विधिके समाप्तहोजानेपर आकाशमें दुन्दुभी बजनेलगीं और वेश्यानृत्यकरनेलगीं तदनन्तर देवता तथा दैत्योंको अपनेअपने स्थानोपर चलेजानेपर सूर्यप्रभ,ने अपने बन्धु मित्र तथा,मन्त्रियोंसमेत अभिषेकका बड़ा उत्सवकिया और श्रीशिवजीकी आज्ञानुसार वेदीका उत्तरभाग,श्रुतशर्म्माको देदिया फिर अन्यबहुतसी विद्याधरी स्त्रियोंके साथ विवाह करके अपने मन्त्रियोंसमेत विद्याधरोंके चक्रवर्त्तीपनेका भोगकिया इसप्रकार श्रीशिवजीकी कृपासे सूर्य्यप्रभ मनुष्यहोकर भी विद्याधरोका चक्रवर्त्तीहुआ था इसकथाको कहकर,विद्याधरों का,राजा वज्रप्रभ वत्सराज,उदयन् तथा नरवाहनदत्तको प्रणामकरके आकाश को चलागया उसके चलेजाने पर नरवाहनदत्त अपनी प्रिया मदनमचुकासमेत अपने पिताके यहा विद्याधरो के पदकी प्राप्तिके लिये प्रतीक्षा करतारहा २१२॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांसूर्य्यप्रभलम्बकेसप्तमस्तरंग ७॥

सूर्य्यप्रभनामआठवांलम्बकसमाप्तहुआ॥

अलंकारवती नाम नवमो लम्बक

निशुम्भभणनंभ्रोर्वी खर्विताःपर्वताअपि
यन्नमन्तीवन्नृत्यन्तं नमामस्तंविनायकम्॥

इसप्रकार विद्याधरों के राजाओं से पहलेही सत्कार कियागया नरवाहनदत्त कौशाम्बी मे अपने पिताके यहाँ निवास करताहुआ आनन्द से समय व्यतीत करताथा एकसमय नरवाहनदत्त अपनी सेनाको लेकर मंत्रियों समेत शिकार खेलनेको गया वहाँ किसी वनमें सम्पूर्ण सेनाको छोड़के गोमुखको साथ लेकर वनके आनन्द देखने को भ्रमण करताहुआ कुछदूर चलागया,वहाँ उसकी शुभसूचक दाहिनी आख फड़कनेलगी और दिव्यवीणाके बाजे समेत दिव्यगान सुनाईदिया उसीशब्द के अनुसार थोडीदूर जाकर एक शिवजी का मन्दिर उसने देखा और घोडे बांधकर गोमुखको साथ लेकर उसके भीतर जाकर वीणा बजातीहुई एक दिव्यकन्या देखी उसकन्याके साथमें अन्य भी बहुतसी कन्या थीं चन्द्रमाके समान उसकन्याको देखकर समुद्रके समान नरवाहनदत्तका चित्त चलायमान हुआ और वहकन्या भी रसीले भोले नेत्रोंमे उसके स्वरूपको देखकर सम्पूर्ण गानादिको भूलकर उसीमें आसक्तचित्त होगई तब नरवाहनदत्तके चित्तका जाननेवाला गोमुख जैसेही उसकी सखियोंसे पूछने लगा कि यहकौनहै और किसकी कन्याहै वैसेही आकाशसे एक अत्यन्त स्वरूपवती प्रौढा विद्याधरी

उतरकर उसी कन्या के पास बैठगई और उसकन्याने उसे प्रणामकिया तब उस विद्याधरीने उसे यह आशीर्वाददिया कि तुझे निर्विघ्नतापूर्व्वक सपूर्ण विद्याधरोंका चक्रवर्त्ती पति मिले उसके इसआशीर्वादको सुनकर नरवाहनदत्त ने निकटजाके प्रणामपूर्व्वक उससे पूछा कि हे अम्ब यह कन्या कौनहै और तुम्हारा इससे क्यासम्बन्धहै इन विनीत वचनोंको सुनकर वहबोली कि सुनो मैं तुमसे सबकथा कहतीहूं १४ हिमालयपर्व्वतपर श्रीसुन्दरपुरनाम नगरहै वहा विद्याधरोंका स्वामी अलकारशील नाम राजाहै उसकी काचनप्रभा नाम रानी है उसरानी में अलकारशील राजाके एक पुत्रहुआ उस दिन स्वप्न में राजासे श्रीपार्वतीजीने कहा कि यह तुम्हारा पुत्र वडा धर्मात्मा होगा इससे अलकारशीलने अपने पुत्रका नाम धर्मशील रक्खा क्रमसे धर्मशीलको युवावस्था में प्राप्तहुआ देखकर राजा अलकारशीलने उसे सम्पूर्ण विद्या सिखाकर युवराजपदवी देदी तब धर्मशील धर्मसे सम्पूर्ण राज्य कार्य्य करके अपने पिता तथा सब प्रजामात्रको सुख देनेलगा इसबीच में कनकप्रभा फिर गर्भवती हुई और गर्भके दिन पूरे होनेपर एक वडी सुन्दर कन्या उत्पन्नहुई उससमय यह आकाशवाणीहुई कि यहकन्या सम्पूर्ण विद्याधरों के चक्रवर्त्ती नरवाहनदत्तकी स्त्री होगी तब अलकारशीलने अत्यन्त प्रसन्न होकर वडा उत्सव किया और अपनी कन्याका नाम अलकारवती रक्खा चन्द्रमाकी कलाके समान बढतीहुई वह अलकारवती युवावस्थाको प्राप्त होकर और अपने पितासे सम्पूर्ण विद्याओंको पाकर भक्तिसे श्रीशिवजीके अनेक मन्दिरों में दर्शन करनेको जानेलगी इस बीच में धर्मशील ने युवावस्था में भी विरक्त होकर अपने पितासे कहा कि हेतात यह क्षणभगुर विषय मुझे अच्छे नहीं मालूम होते हैं इससंसारमें ऐसी कौन वस्तुहै जो अन्तमें विरस नहीं होजाती क्या आपने व्यासमुनिका यह वचन नहीं सुनाहोगा (सर्वेक्षयान्तानिचया प्रतनान्ता समुच्छ्रया सयोगाविप्रयोगान्तामरणान्तहिजीवितम्) सम्पूर्ण समूहों का अन्तमें क्षयहोताहै सम्पूर्ण वृद्धियोंका अन्तमें पतनहोताहै सम्पूर्ण सयोगोंका अन्तमें वियोग होता है और सम्पूर्ण जीवनों के अन्तमें मृत्यु होती है इससे हे तात बुद्धिमान् लोग इन अनित्य विषयों में स्नेह नहीं करते हैं (परत्रचमहायान्ति नभोगा नार्थसचया । एकस्तुबान्धवोधर्म्मोनजहातिपदात्पदम्) सम्पूर्ण भोग तथा धन परलोकमें साथ नहीं जावे हैं केवल धर्मही ऐसा वान्धवहै जो पदभरभी मनुष्य का साथ नहीं छोडता इससे मैं वनमें जाकर उत्तम तपकरू जिससे नित्य परमपदकी प्राप्ति होय धर्मशीलके यह वचन सुनकर राजाअलकारशील नेत्रोंमें आसूभरकर बोला कि हेपुत्र तुमको इसवाल्यावस्थाही में यह क्या बुद्धिभ्रम हुआहै युवावस्थाके उपरान्त सज्जन लोग तप करना उत्तम समझते हैं इससे विवाह करके धर्मके अनुसार राज्य पालन करनेका और सुख भोगनेका यह तुम्हारा समय है वैराग्यका नहीं है पिताके यह वचन सुनकर धर्मशील फिर बोला कि हेतात वैराग्यमें और विषय लोलुप होनेमें अवस्थाका कोई नियम नहीं है देखो ईश्वरकी कृपासे कोई बाल्यावस्थामें ही शान्त होजाते हैं और कोई विषयी पुरुष वृद्धावस्था में भी शान्तिको नहीं प्राप्त होते हैं न मेरी राज्यमें रुचिहै न विवाह करनेमें है मुझे अपने जीवनका फल यही मालूम होताहै कि तप करके श्रीशिवजीका आराधनकरू

सनपर बैठाके सब तीर्थोंके जलोसे अभिषेक किया और सम्पूर्ण देवता दैत्य तथा विद्याधरोंने पुण्योहवाचन किया और मयासुरने उसके शिरपर मुकुट रखकरके पट्टबांधा उस समय सप्तर्षियोंने कामचूडामणिको अभिषेक करके उसकी पटरानी बनादी इसप्रकार अभिषेककी विधि सहोजानेपर आकाशमे दुन्दुभी बजनेलगीं और वेश्यानृत्यकरनेलगीं तदनन्तर देवता तथा अपनेअपने स्थानोपर चलेजानेपर सूर्य्यप्रभ ने अपने बन्धु मित्र तथा मन्त्रियोंसमेत अभिषे उत्सवकिया और श्रीशिवजीकी आज्ञानुसार वेदीका उत्तरभाग श्रुतशर्म्माको देदिया फिर तसी विद्याधरी स्त्रियोंके साथ विवाह करके अपने मन्त्रियोसमेत विद्याधरोंके चक्रवर्तीपनेका इसप्रकार श्रीशिवजीकी कृपासे सूर्य्यप्रभ मनुष्यहोकर भी विद्याधरोका चक्रवर्त्तीहुआ था कहकर विद्याधरों का राजा वज्रप्रभ वत्सराज उदयन् तथा नरवाहनदत्तको प्रणामकरके चलागया उसके चलेजाने पर नरवाहनदत्त अपनी प्रिया मदनमचुकासमेत अपने पिताके धरों के पदकी प्राप्तिके लिये प्रतीक्षा करतारहा २१२॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायासूर्य्यप्रभलम्बकेसप्तमस्तरग

सूर्य्यप्रभनामआठवालम्बकसमाप्तहुआ ॥

अलंकारवती नाम नवमो लम्बक

निशुम्भमणनंत्रोर्वी खर्विताःपर्वताअपि
यन्नमन्तीवनृत्यन्तं नमामस्तंविनायकम् ॥

इसप्रकार विद्याधरों के राजाओं से पहलेही सत्कार कियागया नरवाहनदत्त कौश पिताके यहाँ निवास करताहुआ आनन्द से समय व्यतीत करताथा एकसमय नरवा सेनाको लेकर मंत्रियों समेत शिकार खेलनेको गया वहाँ किसी वनमें सम्पूर्ण सेनाके स्को साथ लेकर वनके आनन्द देखने को भ्रमण करताहुआ कुछदूर चलागया वह सूचक दाहिनी आख फडकनेलगी और दिव्यवीणाके बाजे समेत दिव्यगान सुनाई के अनुसार थोडीदूर जाकर एक शिवजी का मन्दिर उसने देखा और घोडे बांधकर लेकर उसके भीतर जाकर वीणा बजातीहुई एक दिव्यकन्या देखी उसकन्याके साथमें मी कन्या थीं चन्द्रमाके समान उसकन्याको देखकर समुद्रके समान नरवाहनदत्तका हुआ और वहकन्या भी रसीले भोले नेत्रोंसे उसके स्वरूपको देखकर सम्पूर्ण गानादि में आशक्तचित्त होगई तब नरवाहनदत्तके चित्तका जाननेवाला गोमुख जैसेही उसकी लगा कि यह कौनहे और किसकी कन्याहे वैसेही आकाशसे एक अत्यन्त स्वरूपवती

धर्मशील के यह वचन सुनकर और उसके वैराग्यको दृढ जानकर अलकारशील आसूबहाकर बोला कि हे पुत्र जो युवावस्थाही में तुमको इसप्रकार का वैराग्यहै तो मैं वृद्धावस्था में राज्य करके क्याकरूंगा मैंभी वनको चलूगा यह कहकर अलकारशीलने मृत्युलोकमे जाकर ब्राह्मणोंको तथा दीन लोगोंको वहुतसी असर्फी तथा रत्नदिये और फिर अपने पुरमें जाकर अपनी स्त्री काचनप्रभासे कहा कि तुम हमारी आज्ञा से इसी नगरमें रहौ और इस अलकारवती की रक्षाकरो आजके वर्षवें दिन इसी तिथिमे इसके विवाहकी शुभलग्नहै उसदिन मैं यहा आकर इसकन्याका विवाह नरवाहनदत्तके साथ करदूगा वही मेरे इसपुरकी रक्षा करेगा यह कहके और शपथ दिलाकर राजा अलकारशील विलाप करतीहुई अपनी स्त्रीको छोडकर अपने पुत्र समेत वनको चलागया तब काचनप्रभा अपनी कन्या समेत उसी नगरमें रही क्योंकि सतीस्त्रिया अपने पतिके वचनको उल्लघन नहीं करसक्तीं तदनन्तर अलकारवती श्रीशिवजीके अनेकमन्दिरोंमे जाजाकर दर्शन करनेलगी और उसकी माताभी उमीके साथ२ स्नेहसे घूमतीरही एक समय प्रज्ञप्तिनाम विद्याने अलकारवती से कहा कि कश्मीर देशमे जाकर स्वयभूक्षेत्रमें शिवजीका पूजनकरो उस विद्याके यह वचन सुनकर अलकारवती अपनी माताके साथ कश्मीरमें जाकर नन्दिक्षेत्र, महादेवगिरि, अमर पर्व्वत, सुरेश्वर्यादि, विजय तथा कपटेश्वर आदि महापवित्र क्षेत्रों में श्रीशिवजी का पूजन करके अपने घरको चलीआई है सुभग वही अलकारवती यह है और मैं इसकी माता काञ्चनप्रभाहूं आज यह मुझसे विनाकहे इस शिवालय में चलीआई तब मैं प्रज्ञप्ति विद्या के द्वारा तुम्हारा और इसका दोनों का यहा आगमन जानकर आई हू तुम मेरी इसकन्या के साथ विवाहकरो क्योंकि देवतालोग पहलेही से आज्ञा देचुके हैं प्रात काले वही दिनहै जिस दिनमें इसके पिताने विवाहकी लग्नवताई थी इससे हे पुत्र आज तुम अपनी कौशाम्वी नगरी को जाओ और मैं इसको लेकर अपने स्थानको जातीहू प्रातःकाल राजा अलङ्कारशील वन से आकर इसका विवाह तुम्हारे साथ करदेंगे काचनप्रभाके यहवचन सुनकर रात्रिभरभी एक दूसरे के वियोगके सहने में असमर्थ चक्रवाकोंके समान अलङ्कारवती तथा नरवाहनदत्त दोनो उदासीन होगये इनदोनों को उदासीन देखकर काचनप्रभा बोली क्या एकरात्रि के वियोग मे भी तुम लोगों को धैर्य्य नहीं होता धीर लोग तो अवधिरहित विरहको वहुत कालतक सहते हैं सुनो इसी वातपर मैं तुमको श्रीरामचन्द्र और सीताजी की कथा सुनाती हू अयोध्यापुरी के स्वामी राजा दशरथ के राम भरत लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न यहचार पुत्रथे इनमेंसे रामचन्द्र सवसे वडेथे यहरावणके मारनेके लिये साक्षात् विष्णु भगवान् का अवतारथे राजा जनककी कन्या सीतानाम इनकी परमप्रिय स्त्री थी भाग्यवश से राजा दशरथ ने भरतको राज्यदेकर रामचन्द्रको सीता और लक्ष्मण समेत चौदहवर्ष का वनवास दिया वन में जाकर रामचन्द्रकी प्रिय स्त्री सीताजीको हरकर रावणमार्ग में जटायुको मारकर लङ्कापुरीको लेगया तब विरह से व्याकुल श्री रामचन्द्रजी ने वालि को मार सुग्रीव से मित्रता करके हनुमान् को भेजकर सीताजी की खबर मगवाई और खरपाके समुद्रमें सेतु वाधके रावणको मारके विभीषणको लङ्काका ... सीता

जीको लेकर वहासे गमनकिया जब वनसे लौटकर रामचन्द्रजी अयोध्यापुरीमें आये तब भरतने सपूर्ण राज्य उनको देदिया भरतसे मिलेहुए राज्यका पालन करतेहुए रामचन्द्रकी स्त्री सीताजी गर्भवती हुई उन्हीं दिनोंमें श्रीरामचन्द्रजी अपनी प्रजाकी चेष्टा देखनेकेलिये अकेले छिपकर निकले घूमते२ उन्होंने एक ऐसे पुरुषको देखा जो अपनी स्त्रीको यहदोष लगाकर कि यहपराये घरमें रहीहै अपने घरसे निकाल रहाथा और वह उसकी स्त्री यहकहतीथी कि रामचन्द्रने राक्षसकेभी घरमें रहीहुई सीताको नहीं निकाला परन्तु यह उनसे भी बडाहै जो मुझे अपनी जातिवालेके भी घरमें रहनेसे घरसे निकालरहाहै उस स्त्री के यहवचन सुनके रामचन्द्रजीने अपने मन्दिरमें जाके लोकापवादसे डरकर सीताजीको वनको भिजवादिया ठीकहै (महतेविरहक्लेशयशस्वीनायश५पुन) यशस्वी लोग विरहके क्लेशको सहलेते हैं परन्तु अपयशको नहीं सहसक्ते ७० तब लक्ष्मणके द्वारा वनमें त्यागीगई सीताजी गर्भ से व्याकुल होकर भ्रमण करतीहुई भाग्यवशसे वाल्मीकिजी के आश्रममें पहुचीं वाल्मीकिजी ने उनको पवित्रजानकर अपने आश्रममें रखलिया तब उसआश्रमके रहनेवाले अन्य मुनिलोगों ने यह विचारकिया कि सीतामें कोई दोष अवश्यहै नहीं तो इनके पति इन्हे क्यों निकालदेते इससे इनके देखनेमेभी हमलोगों को पापहोताहै और वाल्मीकिजी दयाके कारण इनको अपने आश्रमसे नहीं निकालते हैं और इनके देखनेसेहुए पापको अपने तपके प्रभावसे नष्टकर देते हैं इससे हम लोगोंको किसी दूसरे आश्रममें चलकर रहना चाहिये मुनि लोगोंका यहविचार जानकर वाल्मीकिजीने उनसे कहा कि हे मुनि लोगो हमने अपने ध्यानसे देखलियाहै कि सीताजी परमशुद्धहै जब वाल्मीकिजीकेभी इतने कहनेपर उनको विश्वास न हुआ तब सीताजी बोलीं कि आप लोग जैसे उचित समझे वैसे मेरी परीक्षा करलीजिये और जो मैं अशुद्ध निकलूं तो मेरा शिरकाट डालिये सीताजीके यहवचन सुनकर मुनि लोगोंके चित्त में दयाआई और सब मुनिबोले कि इसवनमें पूर्वही किसी टिट्टिभ ने अपनी स्त्रीको अन्यमें आसक्त जानकर उसपर मिथ्या दोष लगाया तब उसने अत्यन्त दुःखितहोकर सम्पूर्णलोकपालों से तथा पृथ्वी से पुकारकर अपने शुद्धकरनेको कहा उसके दीन वचनोंको सुनकर लोकपालोंने उसे शुद्धकरने के लिये एकतडाग इसीवनमें बनादिया उसमे वह टिट्टिभी शुद्धहुई उसी टिट्टिभसरनाम तीर्थपर चलकर सीताजी अपनी शुद्धताकी परीक्षादें उनलोगों के यहवचन सुनके श्री जानकीजी उन्हें साथ लेकर उसतीर्थपर आईं और बोलीं कि हे माता पृथ्वी जो मैंने आर्यपुत्र श्री रामचन्द्रजीके सिवाय कभी स्वप्न में भी किसी अन्य पुरुषपर चित्त न चलायाहोय तो मैं इसतडागके पार उतरजाऊं यहकहकर जलमें प्रविष्टहुई जानकीजीको साक्षात् पृथ्वीने प्रकटहोके अपनी गोदीमें बैठालकर पार उतारदिया तब सपूर्ण मुनियोंने महापतिव्रता साध्वी श्री सीताजीको प्रणामकरके उनके त्यागके अपराधसे श्रीरामचन्द्रजी को शापदेनाचाहा तब सीताजी ने हाथ जोडकर उनसे कहा कि आप आर्यपुत्रको शाप न दीजिये मुझ अभागिनीको शापदेना योग्य है परमपतिव्रता सीताजीके यहवचन सुनकर मुनि लोगोंने प्रसन्न होके यहवरदान दिया कि तेरे बड़ावीर सत्पुत्रहोगा इसप्रकार वरदानपाके सीताजीने आश्रममें आ-

कर गर्भमासोंके पूर्णहोनेपर एकसुलक्षण पुत्र उत्पन्नकिया बाल्मीकिजी ने उसकानाम लवरक्खा एक समय सीताजी लवको साथलेकर स्नानकरनेको गई थीं उससमय बाल्मीकिजीने उनकी कुटीको शून्य देखकर शोचा कि बालकको छोडकर सीता स्नानकरनेको जाया करतीहै तो वहबालक कहांगया ऐसा निश्चयहोताहै कि उसबालकको कोई पशु उठा लेगया इससे एकदूसरा बालक बनाना चाहिये नहीं तो जब सीता स्नानकरके लौटेंगी और बालकको न देखेंगी तो प्राण त्यागकरदेंगी यह शोचकर बाल्मीकिजी ने लवके समान एकदूसरा बालक कुशोंका बनाकर कुटी मे सुला दिया तदनन्तर स्नानकरके लौटीहुई सीताजीने बाल्मीकिजीसे कहा कि हे मुने मेरा बालक तो मेरे साथ गयाथा यहदूसरा बालक किसकाहै यहसुनकर बाल्मीकिजी ने सम्पूर्ण वृत्तान्त बताकर कहा कि यहपुत्र बडाभाग्यवान् होगा इसे भी तुम्हीं लेलो मैंने इसेकुशोंसे बनायाहै इसीसे इसकानाम कुशहोगा यहकहकर बाल्मीकिजी ने उन दोनों बालकोंके संस्कार करदिये और सीताजी उनदोनोंका पालन करनेलगीं बाल्यावस्थामें भी उन दोनो बालकोंको बाल्मीकिजीसेही सम्पूर्ण विद्या तथा दिव्य अस्त्र प्राप्तहोगये एकसमय उनदोनों बालकोंने उसआश्रमके मृगको मारकर खाया और बाल्मीकिजी के पूजनका शिवलिंग लेके अपना खिलौना बनाया तब बाल्मीकिजीने खिन्नहोकर सीताजीकी प्रार्थनासे उनदोनोंको यहप्रायश्चित्त बताया कि लवकुबेरके तडागपर जाकर सुवर्णके कमल और उनके उपवनसे मन्दारके पुष्पलावे उन्हीं पुष्पो से यहदोनों भाई मिलकर इसीशिवलिंगका पूजनकरें तो इनकापाप शान्तहोगा यहसुनकर लव कैलाश मे जाकर बहुतसे यक्षोंको मारकर कुबेरके तडाग तथा वनसे सुवर्ण के कमल तथा मन्दारके पुष्पोंको तोडकर लौटे और थककर मार्ग में किसी वृक्षके नीचे सोगये इसबीचमें रामचन्द्रजीकी आज्ञासे नरमेध केलिये लक्ष्मणजी किसी सुलक्षण पुरुषके ढूंढनेको उसीमार्ग होकर निकले उन्होंने लवको जगाकर और उससे युद्धकरके मोहनास्त्रसे मोहित करके उसे अयोध्याजीमें लेगये जब लव बहुत कालतक नहीं आए तब बाल्मीकिजीने सीताजीको समझाकर ध्यानसे सब वृत्तान्त जानके कुशसे कहा कि लक्ष्मण अयोध्यामे लवको पकडलेगयेहैं तुम इन दिव्यास्त्रोंको मुझसे लेकर लक्ष्मणको जीतकर लवको छुडा लाओ इसप्रकार कहके और दिव्यास्त्रदेके बाल्मीकिजीने कुशको अयोध्या भेजा अयोध्यामें पहुंचकर कुशने अपने बाणोंसे यज्ञभूमिको छादिया और यज्ञभूमिकी रक्षाके निमित्त आयेहुए लक्ष्मणजीको अपने दिव्यास्त्रोंसे जीतलिया तब रामचन्द्रने आकर उससे युद्धकिया और जब वह भी बाल्मीकिजी के प्रभावसे उसे न जीतसके तब पूछनेलगे कि तुम कौनहो और यहां क्यों युद्धकर रहेहो उसने कहा कि लक्ष्मण मेरे बडे भाईको पकड लायेहैं उसके छुटानेको मैं आयाहूं हमदोनोंका लवकुश नामहै और रामचन्द्र हमारे पिता हैं यह हमारी माता जानकीजीने कहा है यह कहकर उसने जानकीजीका सब वृत्तान्त कहदिया तब रामचन्द्रने कुशको गोदमें लेकर और लवकोभी बुलाकर गोदमें लेकर कहा कि वह पापी रामचन्द्र मैंहीं हूं तब सम्पूर्ण लोग उन वीर पुत्रोंको देखकर सीताजीकी प्रशंसा करनेलगे और श्रीरामचन्द्रजी सीताजीको बाल्मीकिजी के आश्रमसे बुलाकर और पुत्रों पर राज्यका

रहनेलगे इसप्रकारसे धीरलोग बहुत कालतक विरहको सहते हैं तुमलोग एकरात्रि भी नहीं सहसक्के विवाहके लिये उत्कंठित नरवाहनदत्त और अलङ्कारवती से यहकथा कहकर काञ्चनप्रभा प्रातःकाल आनेकी प्रतिज्ञाकरके अलङ्कारवतीको लेके आकाशमार्गसे अपने पुरकोगई और नरवाहनदत्त उदासीनहोकर कौशाम्बीको गया ११५ कौशाम्बी में जाकर रात्रि के समय नरवाहनदत्तको निद्रा न आवे देखकर गोमुखने कहा कि हे युवराज आपके चित्तके बहलानेके लिये मैं राजा पृथ्वीरूपकी कथा आपसे कहताहूं दक्षिण दिशा में प्रतिष्ठाननाम नगरहै उसनगरमें अत्यन्त रूपवान् पृथ्वीरूपनाम राजाथा एकसमय दो ज्ञानी क्षपणक उसकेपास आये और उसके अद्भुत स्वरूपको देखकर बोले कि हे राजा हमदोनों सम्पूर्ण पृथ्वीपर घूमेहैं परन्तु आपके समान पुरुष अथवा स्त्री रूपयुक्त नहींदेखी किन्तु मुक्तिपुर द्वीपमें राजा रूपधरकी हेमलतानाम रानी मे उत्पन्नहुई रूपलतानाम कन्या आपके सदृशहै और आप उसके सदृशहैं जो आपका उससे संयोगहोय तो बहुत अच्छाहोय क्षपणकोंके इसवचनके सुनतेही कामकेबाण राजाके हृदय में लगे तब राजाने कुमारिदत्तनाम अपने तसवीरउतारनेवालेको बुलाकर कहा कि मेरी तसवीर अच्छेप्रकारसे उतारकर इनदोनों भिक्षुकों के साथ मुक्तिपुरनाम द्वीपको जाओ वहां राजा रूपधरकी कन्या रूपलताको मेरी तसवीर युक्ति पूर्वक दिखाओ और यहजानकर कि वह राजा मुझे अपनी कन्यादेगा अथवा नहीं तुम रूपलताकी तसवीर उतारकर मेरे पास ले आओ यह कहकर और अपनी तसवीर उतरवाके राजाने उसचित्रकारको उनभिक्षुकोंके साथ भेजा वहतीनों क्रम से चलते २ समुद्रके तटपर पत्रपुरनाम नगरमें पहुंचे और वहांसे जहाजमें चढकर पांच दिनमें मुक्तिपुर में पहुंचे वहां उसचित्रकारने राजद्वारपर जाकर कहा कि सम्पूर्ण पृथ्वीमें मेरे समान और कोई चित्रकार नहींहै यहखबर पाकर राजा रूपधरने उसे अपने पास बुलाया वहां उसने राजाको प्रणाम करके कहा कि हे महाराज मैंने सम्पूर्ण पृथ्वी में भ्रमण किया परन्तु अपने समान कोई चित्रकार नहींपाया बनाइये देवता मनुष्य अथवा दैत्यों मेंसे किसकी तसवीरबनाऊं यहसुनकर राजाने अपनी पुत्री रूपलताको बुलाकर चित्रकारसे कहा कि इसकी तसवीर बनाकर मुझे दिखाओ तब कुमारीदत्तने रूपलता की यथावत् तसवीर बनाकर राजाको दिखाई उसे यथावत् बनीहुई देखकर राजा रूपधरने उसचित्रकार को बड़ा चतुर जानके रूपवान् जामाता मिलनेकी इच्छासे उससे पूछा कि तुमने सम्पूर्ण पृथ्वीपर भ्रमणकियाहै तो बताओ तुमने हमारी कन्याके समान कहीं पुरुष अथवा स्त्री देखी है यहसुनकर उसने कहा कि सम्पूर्ण संसारमें इसके समान स्त्री अथवा पुरुष नहींहै किन्तु प्रतिष्ठान नगरमें पृथ्वीरूप राजा इसीके समानहै उसके साथ इसका विवाहहोय तो बहुत अच्छाहै राजा पृथ्वीरूपने अपने समान कन्या कहीं न पाकर युवावस्थामें भी विवाह नहीं कियाहै और मैंने उसकी तसवीर उतारकर अपने पास रखली है यहसुनकर राजाने कहा कि क्या वहतसवीर यहां तुम्हारे पासहै तब उसचित्रकारने वहतसवीर राजाको निकालकर देदी तसवीरमें राजा पृथ्वीरूपके स्वरूपको देखकर राजा रूपधरको बड़ा आश्चर्य हुआ और बोला कि हम धन्यहैं जिन्होंने उसकी तसवीर देखी और जिन्होंने साक्षात् उसके दर्शन

कियेहोंगे वह महाधन्यहैं राजाके यहवचन सुनकर और तसवीरको देखकर रूपलता पृथ्वीरूपपर काम से अत्यन्त मोहितहोगई उसेकामसे मोहित देखकर राजाने उसचित्रकरसे कहा कि तुम्हारी उतारीहुई तसवीरमें जराभी अन्तर नहींहोताहै जिसकी यहतसवीर है वहीं राजा पृथ्वीरूप मेरी कन्याको प्रतिहै इससे तुम इसेमेरी कन्याकी तसवीरको लेजाकर पृथ्वीरूपको दिखाओ जो यह उसे प्रियलगे तो वह यहाआकर शीघ्रही इससे अपना बिंबाहकरे यहकहकर राजाने भिक्षुक समेत चित्रकरको बहुतसाधन देकर एकअपना दूत साथ करके वहासे बिदाकिया वह चारों पुरुष वहा से चलकर समुद्रके पारहोकर प्रतिष्ठान नगरमें आये वहाआकर चित्रकरने राजाके पास जाकर राजा रूपधरका सब वृत्तान्त कहदिया और रूपलताकी तसवीर दिखाई तसवीरको देखतेही सुन्दरताकी नदी उसरूपलतामें राजा पृथ्वीरूप की दृष्टि ऐसी मग्नहोगई कि वह उसे निकाल न सका कान्तिरूपी अमृतकी बरसानेवाली चन्द्रिका के समान उसतसवीरको देखकर चकोरके समान राजा तृप्त नहीं हुआ इसप्रकार उसे देखकर राजाने चित्रकरसे कहा कि रूपलताको बनानेवाला ब्रह्मा और उसकी तसवीर उतारनेवाला तुम्हारा हाथ दोनो वन्दनाकरनेके योग्यहैं मैंने राजारूपधरके वचन स्वीकार करलिये मे मुक्तिपुरद्वीपमें जाकर उसकी कन्या के साथ अवश्य विवाह करूंगा यहकहकर उसने चित्रकरको दूतको तथा भिक्षुकोंको बहुतसाधन देकर विरहसे व्याकुलहोकर वहदिन उपवन आदिकोंमें बिहारकरके व्यतीतकिया और दूसरे दिन लग्नको निश्चय करके बहुतसे हाथी घोडे सेना तथा राजपुत्रोंको लेकर और चित्रकर क्षपणक तथा राजारूपधर के दूत को साथ लेकर मगलघट नाम हाथीपर चढके यात्राकरी दिनभर मे बहुतसा मार्ग्ग उल्लंघन करके सायंकाल के समय विन्ध्याचलके वनके समीप पहुँचकर राजा अपनी सेनासमेत वहीं टिका और दूसरे दिन शत्रुमर्द्दन नाम हाथीपर चढके अपनी सब सेनासमेत विन्ध्याचलके बनमे चला कुछ दूर चलकर राजाने देखा कि मेरी आगे गईहुई सेना लौटी भागीआती है यह देखकर चकितहुए राजा से निर्भयनाम राजपुत्रने आकरकहा कि हे स्वामी आगे भिल्लोंकी बडी सेनाहै उन भिल्लों ने हमारे पचास हाथीमारे हज़ार पैदलमारे तथा तीनसौ घोडेमारे हैं और हमारी सेनावालों ने दोहजार भिल्ल मारे और फिर उन भिल्लो के वाणोसे पीडितहोके भागे यह सुनकर राजा पृथ्वीरूपने कुपितहोके दौ-डकर बहुतसे भिल्लोंकोमारा और एकभाले से भिल्लो के स्वामीका शिरकाटडाला और उसके साथी निर्भयादिकोंने भी बहुतसे भीलोंको मारा उससमय वाणोंके लगने से बहतेहुए रुधिरसे युक्त राजा का शत्रुमर्द्दननाम हाथी धातुओं के झरनोंसे युक्त अजनाचलके समान शोभितहुआ तब सम्पूर्ण भिल्ल भागगये और राजाकी सम्पूर्ण सेना अत्यन्त प्रसन्नहोकर लौटी इसप्रकार भीलो को जीतकर राजा पृथ्वीरूप थकीहुई सेनाके विश्रामके लिये उसी वनमें उसदिनरहा फिर प्रातःकाल वहासे चलकर क्रम से कई दिनमें समुद्रके निकट पत्रपुरनाम नगरमें पहुचा वहा उसनगरके राजा उदारचरितने उसे एक दिन अपने यहा बडेआदरपूर्व्वक टिकाकर दूसरे दिन अपनेही जहाजोंपर चढाके वहासे बिदाकिया तब आठदिनतक समुद्रमें चलकर नवें दिन राजापृथ्वीरूप जहाजोंपरसे उतरकर मुक्तिपुरद्वीपमें पहुँचा

वहां राजारूपधर आगेआकर वडेसत्कारपूर्व्वक उसे नवपुरमें घुमाकर अपने मन्दिरमें लेगया वहा रानी हेमलता अपनी कन्याकेही समान नरको देखकर वडी प्रसन्नहुई और वडेआदरपूर्व्वक अपने जामाता को मन्दिरके भीतरलेगई दूसरे दिन राजारूपधरने वेदी वनवाकर शुभलग्नमें रूपलताका विवाह विधि पूर्व्वक पृथ्वीरूप के साथ करदिया और लाजाहोमनमें वहु मूल्य रत्नदिये फिर विवाह विधिको समाप्त करके उस चित्रकरको तथा क्षपणकोंको वहुतसा धनदेकर सम्पूर्ण परिजनोंको वस्त्र तथा आभूषणदिये तदनन्तर राजा पृथ्वीरूप उसी द्वीपके अनुसार भोजनादि व्यवहारकरके और नृत्य तथा गीतमंगलों से उस दिनको व्यतीतकरके रात्रिकेसमय शयनस्थानमें जाकर रत्नके पलंगपरलेटा उस स्थानमें रत्नके दीपक वलरहेथे रत्नजटित खम्भेलगे थे और रत्नोंसेही जटित पक्कीचट्टानथी वहा रूपलताकी सखी रूप-लताको उसकेपास भेजगई तव उस रूपलताके साथ राजा पृथ्वीरूप वहुतकालसे अभिलाषा कियेगये सुखको अनुभवकरके सुरतके श्रमसे सोगया और प्रातःकाल वन्दी तथा मागधों के जगाने से उठा इसप्रकार दश दिन वडे आनन्दसे वहा रहकर राजा पृथ्वीरूप ज्योतिषियों से पूछकर ग्यारहवें दिन मं-गलाचारकरके रूपलताको साथलेकर अपने परिकरसमेत वहा से चला और समुद्र के तटपरआकर भे-जने के लिये आयेहुए अपने श्वशुरको लौटालकर सम्पूर्ण परिकरसहित जहाजोंपर चढकर आठ दिन मे समुद्रका उल्लंघनकरके पत्रपुरनगरमे आया और वहा राजा उदारचरितके वहुतआग्रहसे कुछदिन टिककर अपनी प्रिया रूपलताको जयमंगलनाम हाथीपर चढाके और कल्याणगिरि नाम हाथीपर आप सवारहोकर वहासे चला मार्ग में कई एक विश्रामोको करके अपने प्रतिष्ठाननाम नगर में पहुचा वहा रूपलताको देखकर पुरकी रूपवती स्त्रियो ने अपने रूपका अभिमान त्यागदिया और राजा तथा रानी पर वहुतसे पुष्पों की वृष्टिकी इसप्रकार नगरमेहोकर राजा पृथ्वीरूपने अपने मन्दिर में आकर उस चित्रकरको वहुतसे गांव तथा धनदेकर उन क्षपणकोंको धनसे पूर्णकरके अपने आधीन राजपुत्रों का और मन्त्रियोंका वहुतसा धनदेकर वडा सत्कारकिया इसप्रकार विवाहोत्सवको समाप्तकरके राजा पृथ्वीरूप अपनी प्रिया रूपलताके साथ मृत्युलोकके सुखको अनुभव करताहुआ वहुतकालतक राज्य करतारहा १६६ इसकथाको कहकर गोमुख नरवाहनदत्तको सावधान करने के लिये फिर वोला कि इस प्रकारसे धीरलोग क्लेश तथा विरहको वहुतकालतक सहते है आपसे एकरात्रिभरभी नहीं रहाजाताहै प्रातःकाल अलंकारवती के साथ आपका विवाह अवश्यहोगा क्योंकि उस विद्याधरी के वचन मिथ्या नहीं होसक्ते गोमुखके यह वचन सुनकर उसीसमय आयेहुए मरुभूतिने कहा कि तुम्हें कभी कामका सन्ताप सहना नहींपडाहै इसी से ऐसा कहरहेहो (तावद्धत्तेपुमान्धैर्य्यं विवेकशीलमेवच,। यावत्पत तिकामस्यशायकानाम् नगोचरे ॥ धन्याःसरस्वतीस्कन्दो जिनश्चजगतित्रय । पटान्तलग्नतृणव त्त्यक्तोयाभ्यांस्मरः) मनुष्यका धैर्य्य विवेक तथा शील तभीतक रहताहै जवतक कामदेव के वाण उसको नहीं वेधते हैं इससंसारमें सरस्वतीस्कन्द तथा जिन यह तीन धन्यहैं जिन्हो ने वस्त्रके कोने में लगेहुए तृण के समान कामदेवको भिटककर दूर फेंकदिया मरुभूतिके इसप्रकार कहने पर गोमुखको

उद्विग्न देखकर नरवाहनदत्त ने उसकी बात का समर्थन (ताईद) करने के लिये कहा कि मेरे बहलाने के लिये गोमुख ने यह बात योग्यही कही थी क्या स्नेही लोग विरह से व्याकुल अपने मित्रको समझाने के सिवाय स्यावासी देते हैं मित्रलोगोंको उचित है कि विरहीलोगों को यथाशक्ति समझावे फिर कामदेव तो जैसा चाहैगा वैसा करेहीगा इत्यादि बातोंको कहकर और अपने मन्त्रियोंसे अनेक कथाओं को सुनकर नरवाहनदत्त ने वह रात्रि व्यतीतकी प्रातःकाल उठकर सम्पूर्ण आवश्यक कार्य्य करके नरवाहनदत्त ने आकाश से काञ्चनप्रभा अलङ्कारशील धर्म्मशील तथा अलङ्कारवती को उतरते देखा वह सब उतरकर नरवाहनदत्त के समीपआये और उनके साथ अन्य बहुतसे विद्याधर सुवर्ण तथा रत्नों के भारके भारलेकर आये नरवाहनदत्त ने उन सबका बडासत्कार किया इतने में इस वृत्तान्तको सुनकर वत्सराज उदयन् भी अपने मन्त्री तथा स्त्रियों समेत वहां आकर उन सबका यथायोग्य अतिथि सत्कारकरके बैठा तब राजा अलङ्कारशील ने उदयन् से कहा कि हे राजा यह अलङ्कारवती कन्या मेरी पुत्री है जब इसका जन्महुआ था तब यह आकाशवाणीहुई थी कि यह कन्या सम्पूर्ण विद्याधरों के भावी चक्रवर्ती नरवाहनदत्तकी स्त्री होगी इससे मैं इस कन्याका विवाह नरवाहनदत्त के साथ कियेदेताहूं आज बडी शुभलग्न है इसीलिये मैं अपने परिकर समेत यहां आयाहूं अलङ्कारशीलके यह वचनसुनकर वत्सराज उदयन् ने कहा कि यह आपका परमअनुग्रह है उदयन् के यह वचन सुनकर अलङ्कारशीलने विद्याओं के प्रभावसे अपने हाथ में जल उत्पन्नकरके वहां की पृथ्वीपर छिडका जल के पडतेही बडी सुन्दर सुवर्णमयवेदी दिव्यवस्त्रों से ढकीहुई उत्पन्नहोगई और अनेक रत्नमय एक अद्भुत स्थानबनगया तब अलङ्कारशील ने नरवाहनदत्त से कहा कि उठो लग्नकासमय आगया स्नानकरो यह आज्ञापाकर स्नानकरके आयेहुए नरवाहनदत्त को वेदीपर बैठालकर अलङ्कारशील ने अपनी अलङ्कारवती कन्या देदी और लाजाहवन में बहुतसी मणि सुवर्ण दिव्य स्त्री वस्त्र तथा आभूषणदिये इसप्रकार विवाहकरके और आदरपूर्व्वक सबसे आज्ञालेके अलङ्कारशील अपने पुत्र तथा स्त्री समेत आकाशमार्ग में होकर अपने स्थानकोगया तब वत्सराज उदयन् ने विद्याधरों के राजाओं से इसप्रकार अपने पुत्र की सेवा कियागया देखकर बहुत प्रसन्नहोके अत्यन्त उत्सवकिया और रसिक नरवाहनदत्त सुन्दर आचरणवाली उदार गुणवती अलङ्कारवती प्रियाको पाकर अत्यन्त आनन्दितहोकर उसके साथ बडे सुख से समय व्यतीत करने लगा २२७॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायाअलङ्कारवतीलम्बकेप्रथमस्तरङ्गः १॥

इसप्रकार नरवाहनदत्त अलङ्कारवती के साथ विवाहकरके अपने पिताके यहां राज्यके सुखों को भोग करताहुआ और अपनी स्त्री की सखी विद्याधरियों के मनोहरगीतों को सुनताहुआ अपने मन्त्रियों के साथ आनन्द से रहनेलगा एकसमय अलङ्कारवती की माता काञ्चनप्रभा ने वहां आकर नरवाहनदत्तसे कहा कि हे पुत्र हमारे सुन्दरपुर नाम नगरकोचलो और वहां के उपवनों में अलङ्कारवती के साथ विहार करो उसके यह वचनसुनके नरवाहनदत्त अपने पितासे आज्ञालेकर वसन्तक को तथा सब अपने मन्त्रियों

को साथलेकर अलङ्कारवती समेत अपनी सासकी विद्याके प्रभावसे बनेहुए विमानपरचढ़कर आकाश मार्गहोकर चला विमानके ऊपरसे नीचेको मुसकरके देखने से मालूमहोताथा कि पृथ्वी एक नगर के समानहै और सम्पूर्ण समुद्रखाईं से हैं इसप्रकार से बहार देखताहुआ नरवाहनदत्त अपने परिकर समेत क्रमसे हिमालयपर्व्वतपर पहुँचा और वहां किन्नरियों के मधुरगीतों को सुनताहुआ और अनेकप्रकारके आश्चर्य्यकारी पदार्थों को देखताहुआ सुन्दरपुर में पहुँचा उसके सुवर्णमय गृह हिमालयपर भी सुमेरुकी भ्रान्तिको उत्पन्नकरते थे चञ्चल पताकाओं से शोभित ऐसे उत्तम उस पुर में विमानपर से उतरकर अपने परिकर समेत अपने श्वशुर अलङ्कारशील के मन्दिरमें गया वहां रानी काञ्चनप्रभा ने बहुत मङ्गलाचार करके अपनी विद्याके प्रभावसे उत्पन्नहुए दिव्य ऐश्वर्य्यों से उसे बड़ासुख दिया इसप्रकार एक दिनके व्यतीतहोजानेपर दूसरे दिन काञ्चनप्रभा ने नरवाहनदत्त से कहा कि इसनगर में श्रीभगवान् स्वयम्भू शिवजीका मन्दिर है उनके दर्शन से मनुष्यों को चारोंपदार्थ प्राप्तहोतेहैं उन्हीं के मन्दिरके निकट तुम्हारे श्वशुर ने बड़ा सुन्दर उपवन लगायाहै और वहीं गङ्गासर नाम बड़ातीर्थ बनवाया है इससे तुम उस वन में जाकर श्रीशिवजीका पूजनकरो और वहीं विहारकरो अपनी सासके यह वचनसुनकर नरवाहनदत्त अलङ्कारवती तथा सब अपने परिकर को लेकर श्रीशिवजी के उस उपवन में गया उस वन के वृक्षों के बड़े २ गुद्दे सुवर्ण के शाखा रत्नोंकी पुष्पों के गुच्छे मोतियों के और पत्ते मूँगों के थे ऐसे सुन्दर उस उपवनको देखकर गङ्गासरनाम तीर्थ में स्नानकर श्रीशिवजीका पूजनकरके रत्नोंकी सीढ़ियों से अलङ्कृत सुवर्ण के कमलों से युक्त बावड़ियों के तटपर भ्रमणकरताहुआ और कल्पलताओं के कुञ्जों में अलङ्कारवती के साथ विहारकरताहुआ विद्याधरों के मनोहरगान को श्रवणकरताहुआ और मरुभूति के मनोहर हास्यकारी वचनों से प्रसन्नहोताहुआ नरवाहनदत्त एक महीने तक उस उपवनमें क्रीड़ा करता रहा तदनन्तर दिव्यवस्त्र तथा बहुतसे दिव्य आभूषण देकर काञ्चनप्रभा नरवाहनदत्त अलङ्कारवती तथा उसके सबपरिकर जनोंको विमानमें चढ़ाकर कौशाम्बी में उदयन्के निकटलेआई और वहां उनसबको विमान में उतारकर वासवदत्ता तथा उदयनके आगे अलङ्कारवती से यहवचन बोली कि हेपुत्री तुम ईर्षा से कोपकरके अपने पतिको कभी दुःख न देना क्योंकि जोस्त्री ऐसाकरती है उन्हें इस पापसे अत्यन्त दुखदाई विरहप्राप्त होताहै देखो मैं ने ईर्ष्या से अपने पतिको बड़ा दुःखदिया था उसी पापसे अब पतिके चलेजानेपर पश्चात्तापसे व्याकुलरहतीहूं यह कहकर और अलङ्कारवती का आलिङ्गनकरके काञ्चनप्रभा आँसूभरके आकाश मार्ग से अपने पुरको चलीगई तदनन्तर उत्सवसे उस दिन के व्यतीत होजानेपर दूसरे दिन प्रातःकाल नरवाहनदत्त अपने नित्यकृत्यों को करके मन्त्रियों समेत अलङ्कारवती के मन्दिर में बैठा उससमय अकस्मात् एकस्त्री मन्दिरमें आकर अलङ्कारवती से बोली कि हे रानी मुझस्त्री की रक्षाकरो रक्षाकरो एक ब्राह्मण मुझे मारे डालताहै उसके भयसे मैं तुम्हारे भीतर भागआईहूं और वह बाहर खड़ाहै यह सुनकर अलङ्कारवतीनेकहा कि डरोमत कहो वह ब्राह्मण कौन है और क्यों तुमको मारना चाहता है तब वह बोली कि इसी पुरी के रहनेवाले वलसेन नाम क्षत्रीकी

अशोकमाला नाम, मैं पुत्री हूं, जब मैं कन्याथी तबरूपके लोभी हठशर्मानाम इस धनवान् ब्राह्मण ने मेरे पितासे मुझे मांगा हठशर्माकी प्रार्थना को सुनकर मैंने अपने पितासेकहा कि मैं इस घोर मुख वाले कुरूप ब्राह्मणकेसाथ अपना विवाहनहीं करूंगी और जो आप करदीजियेगा तो मैं इसके यहां नहीं रहूंगी मेरे इसप्रकार कहनेपर भी मेरे पिताने हठशर्माको धर्ने बैठे देखकर ब्रह्महत्याके भयसे मेरा विवाह इसकेसाथ करदिया और यह जब मेरी अनिच्छासे विवाहकरके अपनेघर मुझे लेगया तब मैं इसे छोड़कर एकक्षत्री के घर चलीगई इसने अपने धनके बलसे उसे बड़ा क्लेशदिया उसने महाक्लेशित होकर मुझे अपने घरसे निकालदिया और मैं एकदूसरे धनवान् क्षत्रीके यहां चलीगई इसने रात्रिके समय ईर्ष्यासे उसकेघरमें आगलगादी तब उसने भी मुझेनिकालदिया और मैं एकअन्य क्षत्रीके चली गई इसने उसकेयहां भी रात्रिकेसमय अग्निलगादी तब उसने भी मेरा त्यागकरदिया और मैं शृगाल से डरीहुई भेड़ी के समान इस हठशर्मा से डरकर आपके सेवक वीरशर्मा नाम बली राजपुत्रकी दासी होगई वीरशर्मा के यहां मुझे देखकर हठशर्मा निराशहोकर विरहसे व्याकुलहोके अत्यन्त दुर्बलहोगया और किसी प्रकार से मेरे मारनेकेलिये मुझे ढूंढनेलगा इसकी यह इच्छाजानकर वीरशर्मा ने मेरी रक्षा करने के अर्थ इसको बंधन में डलवाना चाहा परन्तु मैंने उसे ब्राह्मणजानकर वीरशर्माको इसके कैद करवाने से निषेध करदिया आज भाग्यवशसे मुझे बाहर निकलीहुई देखकर हठशर्मा छुरी निकालकर मेरे मारने को दौड़ा इसीसे मैं भागकर आपके यहां आनेलगी और प्रतीहारीने दयाकरके मुझे भीतर आनेदिया मैं जानती हूं कि हठशर्मा अभी द्वारपर खड़ाहोगा यह सुनकर नरवाहनदत्तने हठशर्मा को अपने आगे बुलवाया और क्रोधसे अशोकमालाको देखतेहुए छुरीको हाथमें लियेहुए तथा कोप से कांपतेहुए हठशर्मा से कहा कि हे ब्राह्मण तुम स्त्री को मारते हो और पराये घरोंको जलातेहो ऐसे घोर पाप तुम क्योंकरते हो ५० यह सुनकर हठशर्मा बोला कि यह मेरी धर्मकीस्त्री है जो यह मेरा त्याग करके अन्यकेपास चलीजाय तो बताइये मैं इसबातको कैसे सहसकूं उसके यहकहनेपर अशोकमाला व्याकुलहोकर बोली कि हे लोकपालो कहो क्या आप लोगोंकी साक्षी में मेरी इच्छाके बिनाही इसने मेरे साथ विवाहनहीं कियाहै और क्या मैंने उससमय नहीं कहदियाथा कि मैं तुम्हारे यहां नहीं रहूंगी उसके इसप्रकार कहनेपर यह आकाश वाणीहुई कि अशोकमाला का कहना बहुत ठीकहै यह मानुषी नहीं है इसका तत्त्व सुनो अशोककर नाम एकवीर विद्याधरों का राजा है उसके कोई पुत्र न था एक अशोकमाला नाम कन्याही बहुत कालमें उत्पन्न हुई थी वह अशोकमाला तरुण अवस्था को पाकर रूपके अभिमानसे अपने पिताके बतायेहुए किसी पतिको न स्वीकारकरके विवाहसे विमुखरही उसके इस अभिमानको देखकर उसके पिता अशोककर ने क्रोधितहोके उसे यह शापदिया कि तू मनुष्य योनिमें इसीनामसे उत्पन्नहोगी वहां एक अत्यन्तकुरूप ब्राह्मण हठसे तेरेसाथ विवाहकरेगा और तू उसे त्यागकर उसीके भयसे तीनपतिकरेगी इतने पर भी जब वह नहीं निवृत्तहोगा तो किसी बलवान् राज पुत्र की दासीहोगी वहां भी वह ब्राह्मण तुझे मारनेकेलिये दौड़ेगा और तू भयभीतहोकर राजाके गृह

में चली जायगी वहा जातेही तेरा शापछूटजायगा इसप्रकार शाप पाकर अपनेही नामसे यह मानुषी हुई है इससमय इसके शापका अन्तहोगया अब यह विद्याधरों के स्थानमें जाके अपने शरीर में प्रवेश करके शापके भयसे अपने पिताके बतायेहुए विद्याधरों के स्वामी अभिरुचितकेसाथ विवाहकरेगी यह कहकर आकाश वाणी निवृत्तहोगई और वह अशोकमाला उसीसमय निर्जीवहोकर पृथ्वी में गिरपड़ी यहदेखकर अलकारवती तथा नरवाहनदत्त अत्यन्तचकित तथा खिन्नहुए और वह हठशर्मा दुःखसे क्रोध रहितहोके अत्यन्त विलाप करते २ अकस्मात् प्रसन्नसाहोगया यह देखकर सबने उससे पूछा कि तुम्हारी प्रसन्नता का क्या कारण है तब वह बोला कि मुझे अपने पूर्व्वजन्मका स्मरण आगया है सो मैं आप को सुनाताहूं हिमालय पर्व्वतपर मदनपुर नाम नगर में प्रलम्बभुजनाम विद्याधरों का राजा है उसके स्थूलभुजनाम पुत्रहुआ वह क्रमसे युवावस्था में प्राप्तहोकर अत्यन्त रूपवान् तथा गुणवान् हुआ तब विद्याधरो के स्वामी सुरभिवत्सनाम विद्याधरने अपनी सुरभिदत्ता नाम कन्यासमेत प्रलम्बभुजके पास आकर कहा कि मैं अपनी यह सुरभिदत्ता नाम कन्या आपकेपुत्र स्थूलभुजको देना चाहताहूं क्योंकि वह बड़ा गुणवान्है सुरभिवत्सके यहवचन प्रलम्बभुजने स्वीकारकरलिये और अपने पुत्र स्थूलभुजको बुलाकर यहसब वृत्तान्तकहा यहसुनकर रूपके अभिमानसे स्थूलभुजबोला कि यहसुरभिदत्ता अत्यन्त रूपवती नहीं है इसहेतुसे मैं उसकेसाथ विवाह न करूंगा तब प्रलम्बभुजने कहा कि हे पुत्र अत्यन्त रूप सेक्याहै देखो यह महाश्रेष्ठवंशमें उत्पन्नहुई है और इसके पिताके कहनेसे मैं इसको स्वीकार भी करचुका हूं इससे तुम मेरा कहना मानकर इसे अंगीकार करो उसके इसप्रकार कहनेपर भी जब स्थूलभुज ने नहीं माना तब उसके पिताने क्रोधकरके उसको यहशापदिया कि तू अपनेरूपके अभिमानसे मनुष्य लोकमें उत्पन्न होगा वहा तू अत्यन्त कुरूप भयकर चेष्टावालाहोगा और शापसे च्युतहुई अशोकमाला नाम स्त्रीको हठसे पाकर अत्यन्त विरहके क्लेशको प्राप्तहोगा क्योंकि वह तुझे छोड़कर अन्य पुरुषों के साथ विषय करेगी और उसीके लिये तू अत्यन्त दुखी तथा दुर्बलहोकर अग्निदाहादिक अनेकपापों को करेगा इसप्रकार शापदेके चुपहुए प्रलम्बभुजसे साध्वी सुरभिदत्ताने विनतीकरके कहा कि मुझे भी आप शाप दीजिये जिससे मेरे अपराधसे केवल इसीको क्लेश न होय मैं भी इसकेसाथमें क्लेशभोगूं उसके यह वचन सुनके प्रलम्बभुजने प्रसन्नहोके अपने पुत्रके शापका यहअन्त बताया कि जब अशोकमाला अपने शापसे छूटेगी उसीसमय यहभी अपने पूर्व्वजन्मका स्मरणकरके शापसे छूटजावेगा और अपने विद्याधर शरीरको पाके अहंकार रहितहोकर तुम्हारे साथ विवाहकरके सुखको प्राप्तहोगा प्रलम्बभुजके यहवचन सुनकर साध्वीसुरभिदत्ता किसीप्रकारसे धैर्य्यको प्राप्तहुई और शापसे भ्रष्टहुआ वहस्थूलदत्त मैंहीहूं मैंने अहंकारके दोषसे बड़ादुःख पाया हे राजा अहंकारी पुरुषोंका कभी कल्याण नहींहोता अब आपकी कृपासे मेरा शापछूटगया यहकहकर हठशर्मा मनुष्य शरीरको छोड़कर विद्याधरहोगया और अपने तथा अशोकमालाके शरीरको गंगाजीमें फेंककर विद्याके प्रभावसे प्राप्तहुए जलसे अलकारवती के गृहको धोकर और अपने भावीचक्रवर्त्ती नरवाहनदत्तको प्रणामकरके आकाशमार्ग में अपने पुरको

चलागया ६०,इसके उपरान्त आश्चर्य्यको प्राप्तहुए उनसबलोगोंके आगे गोमुख प्रसंगपाकर यहकथा कहनेलगा कि,सम्पूर्ण संसारमे,विख्यात शूरपुरनाम नगरमे महावराहनाम राजाथा उसके पार्वतीजी के आराधनसे,पद्मरतिनाम रानीमें अनंगरतिनाम एककन्या उत्पन्नहुईथी रे २ युवावस्थाको प्राप्तहुई अनंगरतिने रूपके अभिमान से बहुतसे राजालोगों के प्रार्थनाकरनेपर भी अपना विवाहनहीं किया और कहा कि जो अत्यन्त रूपवान् शूरपुरुष किसी एक विज्ञानको भलीभांति जानताहोगा उसके साथ में विवाहकरूंगी,कुछकाल मे उसकी इस प्रसिद्धिको सुनकर दक्षिणदिशा से बडे गुणवान् चार वीर पुरुष वहांआये,द्वारपालों से उनका आगमनसुनकर राजा महावराह ने उनको भीतरबुलवाकर अनंगरति के आगे उनसे पूछा कितुमलोगों मे,किसका क्या नाम है क्या जाति है और क्याअपूर्व्वगुण है यह सुनकर उनमें से एक बोला कि मैं पंचपट्टिकनाम शूद्रहूं-प्रतिदिन पांचजोडे वस्त्रों के मैं बुनताहूं उनमे से एक ब्राह्मण को देताहूं,दूसरा परमेश्वरके अर्पणकरताहूं तीसरा आप पहनताहूं चौथा जिस किसी स्त्री के साथ मेरा विवाहहोगा उसकेलिये रखताहूं और पांचवेंको वेचकर अपने शरीरका पोषणादिकरताहूं फिर दूसरा पुरुषबोला कि मैं भाषाज्ञनाम वैश्यहूं मुझे सम्पूर्ण पशु तथा पक्षियों के शब्द समझपडते हैं तीसरे ने कहा मैं खड्गधरनाम,क्षत्रीहूं,मैं केवल खड्गहीसे युद्धकरके अपने शत्रुओंको जीतताहूं फिर चौथे ने कहा कि मैं जीवदत्तनाम ब्राह्मणहूं,मैं श्रीपार्वतीजीकी कृपासे प्राप्तहुई विद्याके द्वारा मरीहुई स्त्री को जिलाताहूं इसप्रकार कहकर उनचारों में से शूद्र वैश्य तथा क्षत्री ने अपने २ रूप बल तथा वीर्य्यकी प्रशंसाकी और ब्राह्मण ने केवल रूपके सिवाय बल तथा वीर्य्यहीकी प्रशंसाकी उनके वचनोंको सुनकर राजा ने अपने सारथी सेकहा कि इन सबको तुम अपने घर मे लेजाकररक्खो राजा की आज्ञापाकर सारथी उन चारोंको अपने घरलेगया तदनन्तर राजा ने अनंगरति से कहा कि हे पुत्री इनचारों वीरों मे से तुम्हारी रुचि किसपर है उसने कहा हे तात इनचारों मे से किसीपर भी मेरी रुचि नहीं है एक जो शूद्रहै वह जुलाहा है उसके गुणों से मुझे क्या दूसरावैश्यहै वह पशु पक्षियोंकी बोली जानताहै उसके भी गुणों से मुझे क्या प्रयोजनहै इन दोनों के साथ मैं,क्षत्रियाहोकर कैसे विवाहकरूं तीसरा मेरे तुल्य वर्णवाला गुणवान् क्षत्री है परन्तु दरिद्रके कारण प्राणों का निश्चयकरके सेवाकी वृत्तिकरताहै मैं राजकन्याहोकर उसके,साथ अपना विवाह कैसेकरूं और चौथा जीवदत्त ब्राह्मण भी मेरे योग्यनहीं है क्योंकि वह कुरूपहै और वेदोंको छोडकर अपने कर्मों से पतितहोगयाहै उसे तो आपको दण्ड देना चाहिये क्योंकि आप वर्ण तथा आश्रमों के रक्षकहैं हे तात खड्गशूर राजामें धर्मशूर राजा अधिक प्रशंसनीयहोताहै क्योंकि हजारों खड्गशूरों का एक धर्मशूर स्वामीहोताहै अपनी पुत्री के यह वचन सुनकर राजा महावराह उसे अन्तःपुरमें भेजवाकर अपने नित्यकर्म्म करनेको चलागया दूसरे दिन,वह चारों वीर सारथी के घरमे निकलकर नगरके भ्रमण करनेको निकले उससमय पद्मकमल नाम मतवाला हाथी गजशालामे जंजीरको तुडाकर लोगोंको मारताहुआ इन चारों वीरों के पास आया और इनको देखकर इनपरदौडा यह चारों भी अपनेशस्त्रलेकर उसके साम्हनेहुए तब सह नर नाम

उन तीनो अपने साथियोंको रोककर अकेलेही ने हाथी के पास जाकर खड्गके एकही प्रहारसे उस गरजतेहुए हाथीकी सूंड़ कमलकी डण्डी के समान काटडाली और शीघ्रतासे हाथी के पैरों के भीतर जाके उछलके एकप्रहार उसकी पीठमें देकर दूसरे प्रहारसे उसके पिछले पैर काटडाले तब वह हाथी चिंघाडमारकर गिरकर मरगया खड्गधर के इस पराक्रमको देखकर सबलोग अत्यन्त आश्चर्यित हुए और इसवृत्तान्तको सुनकर राजा महावराह भी बहुत विस्मित हुआ १३४ दूसरे दिन राजा महावराह हाथीपर चढकर शिकार खेलनेको गया और खड्गधरादिक चारों वीर उसके साथगये वहां व्याघ्रोंको मृगों को तथा अन्य पशुओं को राजा के मारनेपर हाथियों के शब्द सुनके क्रोधित सिंह गुफाओं में से निकलके दौडे उन आतेहुए सिंहो में से खड्गधर ने एक सिंहको एकही खड्गके प्रहारसे मारडाला दूसरेको बायें हाथसे पैर पकडकर पृथ्वीमें पटककर मारडाला और भाषाज्ञ जीवदत्त तथा पंचपट्टिकने भी एक २ सिंहको पृथ्वी में पटक२ करमारा इसप्रकारसे उनचारों वीरों ने राजाके आगे बहुतसे सिंह व्याघ्रादिकजीव मारे तब राजा अत्यन्त आश्चर्ययुक्त होकर शिकार खेलके अपने पुरमें आया और वहचारों वीरभी उसके साथ लौट आकर सारथीके घरचलेगये फिर राजाने उसीसमय अन्त पुरमें जाकर अनगरतिको बुलवाके उनवीरोंका जो २ पराक्रम देखाथा वह सब उसके आगे वर्णनकिया और कहा कि पंचपट्टिक तथा भाषाज्ञ यहदोनो तो वर्णहीनहैं और जीवदत्त ब्राह्मण रूपहीन तथा पतितहै परन्तु अत्यन्त रूपवान् और महापराक्रमी इसखड्गधरमें तो कोई दोषनहीं है जिसने ऐसे पराक्रमी हाथीको मारडाला और सिंहोको खड्गसे तथा पृथ्वी में बायें हाथसेही पटक २ करमारा ऐसे पराक्रमीको क्यों नहीं स्वीकार करतीहो और जोकहो कि वह दरिद्री तथा सेवकहै तो मै उसेबहुतसे ग्राम तथा धनदेकर अपनेही समान करलूगा इससे जोतुम्हारी रुचिहोय तो उसके साथ अवश्य विवाहकरो अपने पिताके यहवचन सुनकर अनगरतिने कहा कि आप उनचारों वीरोंको बुलाकर ज्योतिषीसे पूछिये कि किस के साथ मेरा योगहै उसके यहवचन सुनकर राजाने उनचारोंवीरोंको तथा ज्योतिषीको वहीं बुलाकर ज्योतिषीसे पूछा कि आप विचारिये कि इनचारों में से किसके साथ इसअनगरतिकी विधि मिलतीहै और इसके विवाहकी लग्न कब शुद्धहोती है ज्योतिषी ने उनचारो के जन्म नक्षत्र पूछकर बहुतकाल तक विचारके कहा कि हे राजा मेरे ऊपर क्रोध न करियेगा मै विचारकर यथार्थ कहताहूं इनचारोंमें से किसी के साथभी अनगरतिकी विधि नहीं मिलती है और इसका यहां विवाहभी नहीं होगा क्योंकि यहशापसे भ्रष्टहुई विद्याधरी है तीन महीने के बाद इसका शाप निवृत्त होजायगा इसमे तीन महीने तक इनचारों वीरोंको यहीं रखिये तीनमहीने के पीछे जो यह अपने लोकको न चलीजाय तो इसका विवाह कर दीजियेगा ज्योतिषी के इनवचनोंपर सबने विश्वास किया और वह चारोंवीर उसी सारथी के घरमें तीनमहीनेतक रहे तीनमहीने के व्यतीतहोजानेपर राजा उस ज्योतिषी को तथा चारों वीरों को अनगरति के स्थान में बुलाकर और अकस्मात् उसको अधिक रूपवती देखकर बहुत प्रसन्न हुआ और ज्योतिषी जानगया कि इसके परलोक जाने का समय आगया फिर राजा ने ज्योतिषी से

चलागया ९०,इसके उपरान्त आश्चर्य्यको प्राप्तहुए उनसबलोगोके आगे गोमुख प्रसगपाकर यहकथा कहनेलगा कि सम्पूर्ण ससारमे विख्यात शूरपुरनाम नगरमे महावराहनाम राजाथा उसके पार्वतीजी के आराधनसे,पद्मरतिनाम रानीमें अनगरतिनाम, एककन्या उत्पन्नहुईथी २ युवावस्थाको प्राप्तहुई अनगरतिने रूपके अभिमान से बहुतसे राजालोगों के प्रार्थनाकरनेपर भी अपना विवाहनहीं किया और कहा कि जो अत्यन्त रूपवान् शूरपुरुष किसी एक विज्ञानको भलीभाति जानताहै,गा उसके साथ म विवाहकरूगी कुछकाल,मे उसकी इस प्रसिद्धिको सुनकर दक्षिणदिशा से बडे गुणवान् चार वीर पुरुष वहाआये द्वारपालो से उनका आगमनसुनकर राजा महावराह ने उनको भीतरबुलवाकर अनगरति के आगे उनसे पूछा कि तुमलोगो में किसका क्या नाम है क्या जाति है और क्या अपूर्व्वगुण है यह सुनकर उनमे से एक बोला कि मैं पचपट्टिकनाम शूद्र प्रतिदिन पाचजोडे वस्त्रो के म बुनताहू उनमे से एक ब्राह्मण को देताहू दूसरा परमेश्वरके अर्पणकरताहू तीसरा आप पहनताहू चौथा जिस किसी स्त्री के साथ मेरा विवाहहोगा उसकेलिये रखताहू और पाचवेको वेचकर अपने शरीरका पोषणादिकरताहू फिर दूसरा पुरुषबोला कि मैं भाषाज्ञनाम वैश्यहू मुझे सम्पूर्ण पशु तथा पक्षियो के शब्द समझपडते है तीसरे ने कहा मै,खड्गधरनाम क्षत्रीहू मे केवल खड्गहीसे युद्धकरके अपने शत्रुओंको जीतताहू फिर चौथे ने कहा कि मैं जीवदत्तनाम ब्राह्मणहू मै श्रीपार्वतीजीकी कृपासे प्राप्तहुई विद्याके द्वारा मरीहुई स्त्री को जिलाताहू इसप्रकार कहकर उनचारो मे से शूद्र वैश्य तथा क्षत्री ने अपने २ रूप बल तथा वीर्य्यकी प्रशसाकी और ब्राह्मण ने केवल रूपके सिवाय बल तथा वीर्य्यहीकी प्रशसाकी उनके वचनोको सुनकर राजा ने अपने सारथी से कहा कि इन सबको तुम अपने घर मे लेजाकररक्खो राजा की आज्ञापाकर सारथी उन चारोको अपने घरलेगया तदनन्तर राजा ने अनगरति से कहा कि हे पुत्री इनचारो वीरों मे से तुम्हारी रुचि किसपर है उसने कहा हे तात इनचारो मे से किसीपर भी मेरी रुचि नहीं है एक जो शूद्रहै वह जुलाहा है उसके गुणों से मुझे क्या दूसरा वैश्यहै वह पशु पक्षियोंकी बोली जानताहै उसके भी गुणों से मुझे क्या प्रयोजनहै इन दोनो के साथ मै क्षत्रियाहोकर कैसे विवाहकरू तीसरा मेरे तुल्य वर्णवाला गुणवान् क्षत्रीहै परन्तु दरिद्रके कारण प्राणों का निश्चयकरके सेवाकी वृत्तिकरताहै मै राजकन्याहोकर उसके साथ अपना विवाह कैसेकरू और चौथा जीवदत्त ब्राह्मण भी मेरे योग्यनहीं है क्योंकि वह कुरूपहै और वेदोको छोडकर अपने कर्मों से पतितहोगयाहै उसे तो आपको दण्ड देना चाहिये क्योंकि आप वर्ण तथा आश्रमो के रक्षक हे तात सहस्रशूर राजासे धर्मशूर राजा अधिक प्रशसनीयहोताहै क्योंकि हजारो सहस्रशूरो का एक धर्मशूर स्वामीहोताहै अपनी पुत्री के यह वचन सुनकर राजा महावराह उसे अन्त पुरमे भेजवाकर अपने नित्यकर्म्म करनेको चलागया दूसरे दिन,वह चारो वीर सारथी के घरसे निकलकर नगरके भ्रमण करनेको निकले उससमय पद्मकमल नाम मतवाला हाथी गजशालासे जजीरको तुडाकर लोगोको मारताहुआ इन चारो वीरोंके पास आया और इनको देखकर इनपरदौडा यह चारो भी अपने शस्त्रलेकर उसके साम्हनेहुए तब खड्गधर नाम क्षत्रीने

भागद।समपाप॰पुनस्त्रीणा भर्त्तापापेनसगम) (पापियोंके सम्पर्कसे सबको कुछ२ पापका भाग मिलताहै और स्त्रियोंको तो पापीपतिके सगमसे समानही पाप होताहै) और अपने विद्याधरपनेको भूल कर बहुतसे मनुष्यों को अपने पति करेगी क्योंकि तैंने यहा हठकरके उचित वरसे द्वेष कियाहै अन्तमें जिस मदनप्रभनाम विद्याधरने तेरे लिये प्रार्थनाकी थी वही राजाहोकर तेरापति होगा तब तू शाप से छूटकर अपने लोकमें आके उसी मदनप्रभ विद्याधरको अपनापति करेगी इसप्रकार अपने पितासे शापित हुई अनगप्रभा पृथ्वी में अनगरति नामसे उत्पन्न होकर अपने माता पिताके निकटगई इससे तुम वीरपुरमें जाकर उसके पिताको जीतके उसे लो और यह खड्गलो इसके प्रभावसे तुम्हारीआकाशमें गति होजायगी और तुमको कोई जीत न सकेगा यह कहके और खड्गको देके भगवती अन्तर्द्धान होगई और वह जगकर अपने हाथमें खड्ग देखकर अत्यन्त प्रसन्नहुआ और भगवतीकी कृपा से तपके क्लेशोंसे रहितहोकर हाथमें खड्गलेकर आकाशमार्गमें जाके हिमालयपर्वतपर वीरपुरनामनगर में समरनाम विद्याधरके पास पहुंचा और उसको युद्धमें जीत अनगप्रभा के साथ अपना विवाह करके दिव्यसुखका भोग करनेलगा कुछ कालके पीछे जीवदत्तने अपने श्वशुर समरसे तथा अपनी प्रिया अनगप्रभासे कहा कि अब मनुष्यलोकमें मेरी जानेकी इच्छा होतीहै क्योंकि (प्राणिनाहिनिकृष्टापिजन्मभूमि॰पराप्रिया) प्राणियों को अपनी निकृष्टभी जन्मभूमि अत्यन्तप्यारी होतीहै उसके यह वचन उसके श्वशुर समरने तो स्वीकार करलिये परन्तु अनगप्रभा बहुत हठकरनेपर मनुष्यलोक में आनेको उद्यतहुई क्योंकि वह अपने शापको जानतीथी तबजीवदत्त अनगप्रभाको गोदमें लेकरआकाशमार्ग से मृत्युलोकमें आया वहा एक मनोहर पर्वत देखके अनगप्रभाने जीवदत्तसे कहा कि क्षण भर यहा विश्रामकरो अनगप्रभाके कहनेसे वह वहीं उतरपडा और अनगप्रभाकी विद्याओं के प्रभाव से प्राप्तहुए दिव्य पदार्थोंको भोजन करके बोला कि हे प्रिये कोई मधुरगीतगाओ उसके कहनेसे अनगप्रभा भक्तिसे श्रीशिवजीके भजन गानेलगी गीतोंको सुनते २ उसे निद्राआगई इसबीचमें शिकार से थकाहुआ झिरनेके जलको पीनेकी इच्छासे राजाहरिवर उसी मार्ग होकर निकला वह अनगप्रभा के मनोहर गीतको सुनकर हरिणके समान मोहितहोकर रथको छोडकर उसके पास आया और कामदेवकी प्रभाके समान अनगप्रभाको देखकर कामके बाणोंसे उसका हृदय अत्यन्त जर्जरहोगया और उसे देखकर अनगप्रभाभी कामके वशहोके शोचनेलगी कि क्या यह अपने पुष्पोंके धनुषको छोड कर साक्षात् कामदेवही आयाहै अथवा गीतसे प्रसन्नहुए श्रीशिवजीका मूर्त्तिमान् अनुग्रह है इसप्रकार शोचकर उसने राजासे पूछा कि तुम कौनहो और इस वनमें क्यों आयेहो यह सुनकर राजाने अपने आगमनका कारण तथा अपना सब वृत्तान्त कहकर पूछा कि हेसुन्दरि तुम कौनहो और यह जो सो रहाहै सो तुम्हारा कौनहै उसके यह वचन सुनकर अनगप्रभा बोली कि मैं विद्याधरीहू और यहखड्ग के प्रभावसे सिद्धहुआ मेरा पतिहै अब तुम्हारे देखनेसे मुझे तुमपर अत्यन्त अनुराग होगया है इससे तुम शीघ्रही मुझे अपने नगरको लेचलो जब तक कि यह जगने न पावे उसके यह वचन सुनकर

पूंछा कि तीन महीने तो व्यतीत होगये अब क्या करना चाहिये. इसबात के कहतेही अनगरति ने अपने पूर्व्व जन्म का स्मरण करके डुपट्टेसे अपना मुख ढंककर मानुषी शरीर त्याग दिया १५० तब राजाने यह इसप्रकारसे क्यों बैठी है ऐसाशोचकर जो उसकामुखखोला तो जाना कि यहमरगई है पाले से मारीहुई कमलनी के समान उसके कान्तिरहित मुखारविन्दको देखकर राजा अत्यन्तशोकसे व्याकुलतापूर्व्वक मूर्च्छितहोके पृथ्वीपर गिरपड़ा और दुःखसे व्याकुल रानी पद्मरति भी मूर्च्छितहोके हाथीकी तोड़ीहुई लताके समान पृथ्वीपर गिरपडी और सम्पूर्ण परिजन रोदनकरनेलगे क्षणभरमेंही मूर्च्छा जगनेपर राजाने जीवदत्तसे कहा कि इससमय किसी दूसरेकी सामर्थ्य नहीं है तुम्हाराही अवसर है क्योंकि तुमने प्रतिज्ञाकीथी कि हममरीहुई स्त्रीको जिलातेहैं इससे जो तुममें कुछ विद्याका बलहोय तो तुम मेरी कन्याको जिलाओ इसके जीनेपर मैं तुम्हारे साथ इसका विवाहकरदूंगा राजाके यहवचन सुनकर जीवदत्तने जलका अभिमन्त्रण करके राजपुत्रीपर फेंका और कहा हे अट्टाटहाससे हँसनेवाली हे मनुष्योंके शिरोंकी मालापहरनेवाली हे चामुण्डे हे निकराले शीघ्रही आकर मेरी सहायताकरो इस प्रकार यत्नकरनेपरभी जब वहकन्या नहींउठी तब जीवदत्तने व्याकुलहोकर कहा कि विन्ध्यवासिनीकी दीहुईभी विद्या आज व्यर्थहोगई अब इसहास्यके योग्य मेरे जीवनसे क्या प्रयोजनहै यहकहकर जैसेही उसने अपना शिरकाटनाचाहा वैसेही यहआकाशवाणीहुई कि हेजीवदत्त साहस न करो यह अनगप्रभा विद्याधरों की कन्या है माता पिताके शापसे भ्रष्टहोकर इतने दिन मनुष्यरही अब वह अपनेही लोकको चलीगईहै इससे तुम जाकर विन्ध्यवासिनीकाही आराधनकरो उन्हींकी कृपासे यह विद्याधरी भी तुमको मिलजायगी और इसके लिये राजाकोभी शोकनहीं करनाचाहिये क्योंकि वहदिव्य ऐश्वर्य्योंको भोगकररहीहै इसआकाशवाणीको सुनकर राजाने अपनी कन्याके शरीरका संस्कारकरके शोकका त्यागकरदिया और चारोंवीरोंमें से तीन तो अपने२ स्थानको चलेगये परन्तु जीवदत्त विन्ध्याचल पर जाकर तपस्यासे भगवतीका आराधन करनेलगा कुछदिनमें तपसे प्रसन्नहुई भगवती ने जीवदत्त से स्वप्नमें कहा कि हे जीवदत्त उठो तुम्हारे ऊपर मैं प्रसन्नहूं सुनो हिमालय पर्व्वतपर वीरपुरनाम एक नगरहै वहां विद्याधरों का समरनाम राजाहै उसके अनगवती नाम रानी में अनगप्रभानाम कन्या उत्पन्न हुई उसकन्या ने युवावस्था में प्राप्तहोकर अपने रूप तथा यौवन के अभिमानसे किसीपति का ग्रहण नहीं किया इसीमें उसके मातापिताने क्रोधसे उसको यहशापदिया कि तू मनुष्य जन्ममें उत्पन्नहोगी और वहांभी पतिके सुखको न पाकर सोलहवर्षकी अवस्थामें मानुषीशरीरको त्यागकरके यहां आजायगी और यहां आकर एक खड्गसे सिद्ध हुआ कुरूपपुरुष जो कि मुनिकन्याओं के अभिलाष से शापपाकर मनुष्यहुआहै वह तेरापतिहोगा और तुझे हठपूर्व्वक मनुष्यलोकमें लेजायगा वहां तुझे कोई हरलेजायगा इससे उसके साथ से तेरा वियोगहोगा उस पुरुषने पूर्वजन्म में आठ पराई स्त्रियां हरी हैं इसमें आठजन्मके योग्य दुःखों को भोगकरेगा और तूभी अपनी विद्याओंको भूलकर मानुषी होकर एकही जन्ममें आठ जन्मों के समान दुःखों को भोगेगी ठीकहै (सर्व्वस्यैवहिपापिष्ठसम्पर्कः पाप

भागद समपाप ऽपुनस्त्रीणा भर्त्रापापेनसगम)(पापियोंके सम्पर्कसे सबको कुछ२ पापका भाग मिलताहै और स्त्रियोंको तो पापीपतिके सगमसे समानिही पाप होताहै) और अपने विद्याधरपनेको भूल कर बहुतसे मनुष्यों को अपने पति करेगी क्योंकि तैंने यहा हठकरके उचित वरसे द्वेष कियाहै अन्तमें जिस मदनप्रभनाम विद्याधरने तेरे लिये प्रार्थनाकी थी वही राजाहोकर तेरापति होगा तब तू शाप से छूटकर अपने लोकमें आके उसी मदनप्रभ विद्याधरको अपनापति करेगी इसप्रकार अपने पितासे शापित हुई अनगप्रभा पृथ्वी में अनगरति नामसे उत्पन्न होकर अपने माता पिताके निकटगई इससे तुम वीरपुरमें जाकर उसके पिताको जीतके उसे लो और यह खड्गलो इसके प्रभावसे तुम्हारीआकाशमें गति होजायगी और तुमको कोई जीत न सकेगा यह कहके और खड्गको देके भगवती अन्तर्द्धान होगई और वह जगकर अपने हाथमें खड्ग देखकर अत्यन्त प्रसन्नहुआ और भगवतीकी कृपा से तपके क्लेशोंसे रहितहोकर हाथमें खड्गलेकर आकाशमार्गमें जाके हिमालयपर्वतपर वीरपुरनामनगर में समरनाम विद्याधरके पास पहुंचा और उसको युद्धमे जीत अनगप्रभा के साथ अपना विवाह करके दिव्यसुखका भोग करनेलगा कुछ कालके पीछे जीवदत्तने अपने श्वशुर समरसे तथा अपनी प्रिया अनगप्रभासे कहा कि अब मनुष्यलोकमें मेरी जानेकी इच्छा होतीहै क्योंकि (प्राणिनाहिनिकृष्टापिजन्मभूमिऽपराप्रिया) प्राणियों को अपनी निकृष्टभी जन्मभूमि अत्यन्तप्यारी होती है उसके यह वचन उसके श्वशुर समरने तो स्वीकार करलिये परन्तु अनगप्रभा बहुत हठकरनेपर मनुष्यलोक में आनेको उद्यतहुई क्योंकि वह अपने शापको जानतीथी तबजीवदत्त अनगप्रभाको गोदमें लेकरआकाशमार्ग से मृत्युलोकमें आया वहा एक मनोहर पर्वत देखके अनगप्रभाने जीवदत्तसे कहा कि क्षण भर यहा विश्रामकरो अनगप्रभाके कहनेसे वह वहीं उतरपडा और अनगप्रभाकी विद्याओं के प्रभाव से प्राप्तहुए दिव्य पदार्थोंको भोजन करके बोला कि हे प्रिये कोई मधुरगीतगाओ उसके कहनेसे अनगप्रभा भक्तिसे श्रीशिवजीके भजन गानेलगी गीतोंको सुनते २ उसे निद्राआगई इसबीचमें शिकार से थकाहुआ झिरनेके जलको पीनेकी इच्छासे राजाहरिवर उसी मार्ग होकर निकला वह अनगप्रभा के मनोहर गीतको सुनकर हरिणके समान मोहितहोकर रथको छोडकर उसके पास आया और कामदेवकी प्रभाके समान अनगप्रभाको देखकर कामके बाणोंसे उसका हृदय अत्यन्त जर्जरहोगया और उसे देखकर अनगप्रभाभी कामके वशहोके शोचनेलगी कि क्या यह अपने पुष्पों के धनुषको छोड कर साक्षात् कामदेवही आयाहै अथवा गीतसे प्रसन्नहुए श्रीशिवजीका मूर्त्तिमान् अनुग्रह है इसप्रकार शोचकर उसने राजासे पूछा कि तुम कौनहो और इस वनमें क्यों आयेहो यह सुनकर राजाने अपने आगमनका कारण तथा अपना सब वृत्तान्त कहकर पूछा कि हेसुन्दरि तुम कौनहो और यह जो सो रहाहै सो तुम्हारा कौनहै उसके यह वचन सुनकर अनगप्रभा बोली कि मैं विद्याधरीहू और यहखड्ग के प्रभावसे सिद्धहुआ मेरा पतिहै अब तुम्हारे देखनेसे मुझे तुमपर अत्यन्त अनुराग होगया है इससे तुम शीघ्रही मुझे अपने नगरको लेचलो जब तक कि यह जागने न पावे उसके यह वचन सुनकर

पूंछा कि तीन महीने तो व्यतीत होगये अब क्या करना चाहिये इसबात के कहतेही अनंगरति ने अपने पूर्व जन्म का स्मरण करके डुपट्टे से अपना मुख ढककर मानुषी शरीर त्याग दिया १५० तब राजाने यह इसप्रकारसे क्यों बैठी है ऐसासोचकर जो उसकामुखखोला तो जाना कि यहमरगई है पाले से मारीहुई कमलनी के समान उसके कान्तिरहित मुखारविन्दको देखकर राजा अत्यन्तशोकसे व्याकुलतापूर्वक मूर्च्छितहोके पृथ्वीपर गिरपड़ा और दुःखसे व्याकुल रानी पद्मरति भी मूर्च्छितहोके हाथीकी तोड़ीहुई लताके समान पृथ्वीपर गिरपड़ी और सम्पूर्ण परिजन रोदनकरनेलगे क्षण भरमेंही मूर्च्छा जगनेपर राजाने जीवदत्तसे कहा कि इससमय किसी दूसरेकी सामर्थ्य नहीं है तुम्हाराही अवसर है क्योंकि तुमने प्रतिज्ञाकीथी कि हममरीहुई स्त्रीको जिलातेहैं इससे जो तुममें कुछ विद्याका बलहोय तो तुम मेरी कन्याको जिलाओ इसके जीनेपर मैं तुम्हारे साथ इसका विवाहकरदूंगा राजाके यहवचन सुनकर जीवदत्तने जलका अभिमन्त्रण करके राजपुत्रीपर फेंका और कहा हे अट्टाट्टहाससे हँसनेवाली हे मनुष्योंके शिरोंकी मालापहरनेवाली हे चामुण्डे हे विकराले शीघ्रही आकर मेरी सहायताकरो इस प्रकार यत्नकरनेपरभी जब वहकन्या नहींउठी तब जीवदत्तने व्याकुलहोकर कहा कि विन्ध्यवासिनीकी दीहुईभी विद्या आज व्यर्थहोगई अब इसहास्यके योग्य मेरे जीवनसे क्या प्रयोजनहै यहकहकर जैसेही उसने अपना शिरकाटनाचाहा वैसेही यहआकाशवाणीहुई कि हेजीवदत्त साहस न करो यह अनंगप्रभा विद्याधरों की कन्या है माता पिताके शापसे भ्रष्टहोकर इतने दिन मनुष्यरही अब वह अपनेही लोकको चलीगईहै इससे तुम जाकर विन्ध्यवासिनीकाही आराधनकरो उन्हींकी कृपासे यह विद्याधरी भी तुमको मिलजायगी और इसके लिये राजाकोभी शोकनहीं करनाचाहिये क्योंकि वहदिव्य ऐश्वर्योंको भोगकररहीहै इसआकाशवाणीको सुनकर राजाने अपनी कन्याके शरीरका सस्कारकरके शोक का त्यागकरदिया और चारोंवीरोंमें से तीन तो अपने२ स्थानको चलेगये परन्तु जीवदत्त विन्ध्याचल पर जाकर तपस्यासे भगवतीका आराधन करनेलगा कुछदिनमें तपसे प्रसन्नहुई भगवती ने जीवदत्त से स्वप्नमें कहा कि हे जीवदत्त उठो तुम्हारे ऊपर मैं प्रसन्नहूं सुनो हिमालय पर्व्वतपर वीरपुरनाम एक नगरहै वहां विद्याधरों का समरनाम राजाहै उसके अनंगवती नाम रानी में अनंगप्रभानाम कन्या उत्पन्न हुई उसकन्या ने युवावस्था में प्राप्तहोकर अपने रूप तथा यौवन के अभिमानसे किसीपति का ग्रहण नहीं किया इसीमे उसके मातापिताने क्रोधसे उसको यहशापदिया कि तू मनुष्य जन्ममें उत्पन्नहोगी और वहांभी पतिके सुखको न पाकर सोलहवर्षकी अवस्थामें मानुषीशरीरको त्यागकरके यहां आजायगी और यहां आकर एक खड्गसे सिद्ध हुआ कुरूपपुरुष जो कि मुनिकन्याओं के अभिलाष से शापपाकर मनुष्यहुआहै वह तेरापतिहोगा और तुझे हठपूर्वक मनुष्यलोकमें लेजायगा वहां तुझे कोई हरलेजायगा इससे उसके साथ से तेरा वियोगहोगा उस पुरुषने पूर्वजन्म मे आठ पराई स्त्रियां हरी हैं इसमे आठजन्मके योग्य दुःखों को भोगकरेगा और तूभी अपनी विद्याओंको भूलकर मानुषी होकर एकही जन्ममें आठ जन्मों के समान दुःखों को भोगेगी ठीकहै (सर्वस्यैवहिपापिष्ठसम्पर्कःपाप

इस अवश्य भवितव्य कार्य्य में तुम क्यों मोहकरतेहो हे भाई इसअत्यन्त दुःखदायी पापी कामदेव को त्यागो अब तुम्हें उसपापिन व्यभिचारिणी स्त्रीसे क्या प्रयोजनहै तुम्हारे द्रोहसे वह अपनी सम्पूर्ण विद्या भूलकर मानुषीहोगईहै उसके यहवचन सुनकर जीवदत्त अनगप्रभाकी आशाको छोडकर और उसकी चपलता जानके अत्यन्त विरक्तहोकर बोला कि हे अम्ब तुम्हारे इनसत्यवचनों से मेरा मोह शान्तहोगया ठीकहै (कामनश्रेयसेकस्य भगवत्पुण्यकर्मभि) पुण्यात्माओंकी सङ्गति में किसका कल्याण नहींहोताहै पूर्व्वजन्मके पापों के वशसे मुझे यहदुःख भोगनापडा है इससे उनपापों के दूर करनेके लिये मैं तीर्थोंपर भ्रमणकरूंगा अब मुझे अनगप्रभाके निमित्त दूसरों से वैरकरनेका क्या प्रयोजन है क्योंकि (जितक्रोधेनसर्वंहिजगदेतद्विजीयते) जिसमनुष्यने क्रोधको जीताहै उसने सब संसारको जीताहै उसके इसप्रकार कहतेही प्रियदत्ताका धर्मात्मा अतिथिवत्सल प्रियपतिभी आगया उसने भी जीवदत्तका अतिथि सत्कारकरके उसे बहुत समझाया तब जीवदत्त एकदिन वहां विश्राम करके उनदोनों से आज्ञालेकर तीर्थयात्राकरनेको चला और क्रमसे मार्ग के अनेक कष्टोंको सहताहुआ कन्दमूलफलोंका भोजनकरताहुआ पृथ्वी के सम्पूर्ण तीर्थोंपर भ्रमणकरके विन्ध्यवासिनीजी के मंदिरमें गया और वहां कुशासनपर बैठकर निराहारहोके महाघोर तप करनेलगा तप से प्रसन्नहुई भगवती ने साक्षात् आकर उससे कहा कि हे पुत्र उठो पंचमूल, चतुर्वक्र, महोदर, तथा विकटवदन यह चारों एकसे एक उत्तम मेरे गणहैं इनमेंसे चौथे विकटवदन नाम तुमहो एकसमय तुम चारों विहारकरनेको गङ्गाजी के तटपरगये और वहां कपिलजटनाम मुनिकी चापलेखा नाम कन्या को स्नानकरते देखके कामसे पीडितहोके उससे संभोगकी प्रार्थनाकरनेलगे तब उसने कहा कि मैं कन्याहूं मुझ से ऐसा मतकहो उसके ऐसा कहनेपर तुम्हारे तीनों साथी तो मौनहोगये परन्तु तुमने हठकरके उसकी भुजापकडलीनी तब वह हे तात मुझे बचाओ मुझे बचाओ ऐसा कहकर चिल्लानेलगी उसके शब्दको सुनकर कहीं निकटही तपकरतेहुए कपिलजटमुनि आगये उन्हें देखकर तुमने उस कन्याको छोडदिया और मुनिने कुपितहोके तुमलोगोंको यह शापदिया कि हे पापियो तुम चारों मनुष्ययोनि में उत्पन्नहोगे फिर तुम लोगोंके प्रार्थनाकरनेपर मुनि ने यह शापका अन्तबताया कि जब राजपुत्री अनगप्रभा के लिये तुम लोग उद्योगकरोगे और वह अपने विद्याधरलोक को चलीजायगी तब इन तीनों का उद्धारहोजायगा परन्तु हे विकटवदन तुम उस अनगप्रभा को विद्याधरीहोनेपर भी पाकर किसी राजा के द्वारा उसके हर लियेजानेपर विरहसे व्याकुलहोके अत्यन्त खेदको प्राप्तहोगे और बहुतकालतक श्रीभगवतीका आराधनकरके इस शापसे छूटोगे क्योंकि तुमने इस चापलेखाका हाथपकडलियाहै और अन्यपरस्त्रियों के हरनेका भी तुम्हारा बहुतसा पापहै इसप्रकार उस मुनि से शापदियेगये तुम चारों पंचपट्टिक भाषाज्ञ खड्गधर और जीवदत्तनामसे उत्पन्नहुए वहतीनों तो जब अनगप्रभा अपने स्थानको गईथी तब यहां आकर मेरी कृपा से उस शाप से उद्धारहोगये और तुमने अब मेरी आराधनाकी है इससे तुम्हारे भी शापका अन्तहोगया अब अग्निसम्बन्धिनीधारणाको ग्रहणकरके अपने शरीरको त्यागकरो और आठ

राजा हरिवरको त्रैलोक्यके राज्य मिलनेकीसी प्रसन्नता हुई उससमय अनंगप्रभाने चाहा कि मैं राजा को गोदीमें लेकर आकाशमें उडजाऊं परन्तु वह पतिके द्रोहसे अपनी सम्पूर्ण विद्या भूलगई और अपने पिताके शापका स्मरणकरके वडी खेदितहुई उसे खिन्नदेखकर और खिन्नताका कारण पूछकरराजा ने कहा कि यह विषादका समय नहींहै देर न करो नहीं तो तुम्हारापति जगउठेगा और यह भाग्याधीन वातहै इसके लिये शोककरना व्यर्थ है (कोहिस्वशिरसश्छायां विधेश्चोल्लघयेद्गतिम्) कौन मनुष्य अपने शिरकी छाया तथा ब्रह्माके लिखेको उल्लघन करसक्ता है इससे शीघ्रही चलो यह कहकर राजा हरिवर अनगप्रभाको गोदमे लेकर निधिपाकर प्रसन्नहुये के समान शीघ्रता से अपनी सेना के निकटआके रथपरचढा और वहुतशीघ्र अनंगप्रभाको लेकर अपने नगरमें आके अनगप्रभाकेसाथ दिव्य सुखोंका अनुभव करनेलगा और वह अनगप्रभा भी अपने सम्पूर्ण प्रभावको भूलकर राजाहरिवरसे स्नेह करतीहुई वहीं रही २१६ इसवीच मे जीवदत्तभी उसपर्वतपर जगकर अनगप्रभाको तथा खड्गको न देखकर शोचने लगा कि अनगप्रभा कहागई और खड्ग कहा गया क्या अनगप्रभा तो खड्गको लेकर नहीं चलीगई अथवा उनदोनो कोही कोई हरलेगया इस प्रकार वहुतसे तर्क वितर्क करताहुआ और कामाग्निसे व्याकुल जीवदत्त तीनदिनतक उसपर्वतपर और पर्वतपरसे उतरकर दश दिनतक वनोंमे अनगप्रभाको ढूंढतारहा परन्तु उसका कहींभी पता नहीं लगा तव हायदुर्जन दुष्टभाग्य तूने वडे क्लेशसे मिलीहुई उस प्रियाको खड्ग समेत हरलिया इस प्रकार विलाप करताहुआ निराहार जीवदत्त भ्रमण करते २ एक ग्राम मे किसी धनवान् ब्राह्मणके घरपर पहुँचा वहा उस घरकी स्वामिनी प्रियदत्तानाम ब्राह्मणीने उसे आसनपर वैठालकर अपनी चेरियोसे कहा कि शीघ्रही जीवदत्तके पैरधोओ आज इसे विरहसे तेरहदिन निराहार करते २ व्यतीत हुए हैं यह सुनकर जीवदत्त ने आश्चर्य्यपूर्वक शोचा क्या यहा अनगप्रभा आई है अथवा क्या यह योगिनी है इसप्रकार शोचकर अपने पैर धुलवाकर और उसके दियेहुए दिव्यपदार्थो को भोजन करके नम्रतापूर्वक उस प्रियदत्ता से वोला कि वताओ तुम हमारा वृत्तान्त कैसे जानतीहो और हमारीप्रिया तथा खड्ग कहागया यह सुनकर पतिव्रता प्रियदत्ता वोली कि पतिके सिवाय स्वप्नमे भी किसी अन्यपुरुषपर मेरा चित्त चलायमान नहीं होता है अन्य पुरुषों को मैं अपने पुत्र तथा भाइयों के समान देखतीहूं और मेरे घरसे कभी अतिथि विमुख नहीं जाताहै इसीपुण्यके प्रतापसे मैं भूत भविष्य और वर्त्तमान इनतीनों कालों की वात जानतीहू जव तुम सोगयेथे तव उसीमार्ग्ग से आया हुआ हरिवरपुर का रहनेवाला राजा हरिवर अनगप्रभाके गीतको सुनकर उसके पास आया और उसे अपने रथपर चढाकर अपने पुरको लेगया अव तुम उसे नहीं पासक्तेहो क्योंकि राजा हरिवर महावलवान् है और वहकुलटा उसे भी छोडकर किसी अन्य पुरुषके पास चलीजायगी और वहखड्ग तुमको भगवती ने केवल अनगप्रभा की प्राप्तिके लियेही दियाथा वह अपना कार्य्य करके भगवती के पासही चलागया भगवती ने अनगप्रभाके शापके वर्णनके समय स्वप्नमें जो तुमसे भावीवाते कहींथीं वह तुम क्यों भूल गये

इस अवश्य भवितव्य कार्य्य में तुम क्यों मोहकरतेहो हे भाई इसअत्यन्त दुखदायी पापी कामदेव को त्यागो अब तुम्हें उसपापिन व्यभिचारिणी स्त्रीसे क्या प्रयोजनहै तुम्हारे द्रोहसे वह अपनी सम्पूर्ण विद्या भूलकर मानुषीहोगईहै उसके यहवचन सुनकर जीवदत्त अनगप्रभाकी आशाको छोड़कर और उसकी चपलता जानके अत्यन्त विरक्तहोकर बोला कि हे धर्म्म तुम्हारे इनसत्यवचनों से मेरा मोह शान्तहोगया ठीकहै (कामनश्रेयसेकस्यसगमःपुण्यकर्मभिः) पुण्यात्माओंकी सगति से किसका कल्याण नहींहोताहै पूर्वजन्मके पापों के वशसे मुझे यहदुख भोगनापड़ा है इससे उनपापों के दूर करनेके लिये मैं तीर्थोंपर भ्रमणकरूंगा अब मुझे अनगप्रभाके निमित्त दूसरों से वैरकरनेका क्या प्रयोजन है क्योंकि (जितक्रोधेनसर्वंहिजगदेतद्विजीयते) जिसमनुष्यने क्रोधको जीताहै उसने सब संसारको जीताहै उसके इसप्रकार कहतेही प्रियदत्ताका धर्मात्मा अतिथिवत्सल प्रियपतिभी आगया उसने भी जीवदत्तका अतिथि सत्कारकरके उसे बहुत समझाया तब जीवदत्त एकदिन वहां विश्राम करके उनदोनों से आज्ञालेकर तीर्थयात्राकरनेकोचला और क्रमसे मार्ग के अनेक कष्टोंको सहताहुआ कन्दमूलफलोंका भोजनकरताहुआ पृथ्वी के सम्पूर्ण तीर्थोंपर भ्रमणकरके विन्ध्यवासिनीजी के मंदिरमें गया और वहां कुशासनपर बैठकर निराहारहोके महाघोर तप करनेलगा तप से प्रसन्नहुई भगवती ने साक्षात् आकर उससे कहा कि हे पुत्र उठो पंचमूल, चतुर्वक्र, महोदर, तथा विकटवदन यह चारों एकसे एक उत्तम मेरे गणहैं इनमेंसे चौथे विकटवदन नाम तुमहो एकसमय तुम चारों विहारकरनेको गङ्गाजी के तटपरगये और वहां कपिलजटनाम मुनिकी चापलेखा नाम कन्या को स्नानकरते देखके कामसे पीडितहोके उससे संभोगकी प्रार्थनाकरनेलगे तब उसने कहा कि मैं कन्याहूं मुझ से ऐसा मतकहो उसके ऐसा कहनेपर तुम्हारे तीनों साथी तो मौनहोगये परन्तु तुमने हठकरके उसकी भुजापकड़लीनी तब वह हे तात मुझे बचाओ मुझे बचाओ ऐसा कहकर चिल्लानेलगी उसके शब्दको सुनकर कहीं निकटही तपकरतेहुए कपिलजटमुनि आगये उन्हें देखकर तुमने उस कन्याको छोड़दिया और मुनिने कुपितहोके तुमलोगोंको यह शापदिया कि हे पापियो तुम चारों, मनुष्ययोनि में उत्पन्नहोगे फिर तुम लोगोंके प्रार्थनाकरनेपर मुनि ने यह शापका अन्तबताया कि जब राजपुत्री अनगप्रभा के लिये तुम लोग उद्योगकरोगे और वह अपने विद्याधरलोक को चलीजायगी तब इन तीनों का उद्धारहोजायगा परन्तु हे विकटवदन तुम उस अनगप्रभा को विद्याधरीहोनेपर भी पाकर किसी राजा के द्वारा उसके हर लियेजानेपर विरहमें व्याकुलहोके अत्यन्त खेदको प्राप्तहोगे और बहुतकालतक श्रीभगवतीका आराधनकरके इस शापसे छूटोगे क्योंकि तुमने इस चापलेखाका हाथपकड़लियाहै और अन्यपत्नियों के हरनेका भी तुम्हारा बहुतसा पापहै इसप्रकार उस मुनि से शापदियेगये तुम चारों पचपट्टिक भाषाज्ञ, खड्गधर और जीवदत्तनामसे उत्पन्नहुए वहतीनों तो जब अनगरति अपने स्थानको गईथी तब यहां आकर मेरी कृपा से उस शाप से उद्धारहोगये और तुमने अब मेरी आराधनाकी है इससे तुम्हारे भी शापका अन्तहोगया अब अग्निसम्बन्धिनी धारणाको ग्रहणकरके अपने शरीरको त्यागकरो और आठ

जन्म के भोगने के योग्य दुःखोंको शीघ्रही भस्मकरो यह कहकर और धारणा वताकर भगवती अन्तर्द्धानहोगई २६० भगवती से उस धारणाकोपाकर अपने पापोंसमेत शरीर को भस्मकरके जीमूतदत्त शाप से छूटकर फिर भगवतीका गणहोगया परस्त्री सगमसे उत्पन्नहुए पातक से जव देवताओंकी भी यह दशाहै तो अन्य प्राणियोकी क्या गतिहोगी इस बीच मे वह अनगप्रभा हरिवरपुर में राजा हरिवरकी सम्पूर्ण रानियो मे मुख्य रानीहोगई और राजा हरिवर अपने सुमन्तनाम मत्री को सव राज्यभार सौंप कर रात्रि दिन अनगप्रभा के साथरहनेलगा एकसमय मध्यदेश से लब्धवरनाम नाट्याचार्य्य राजा हरिवरके पासआया राजा ने उसकी चतुरतादेखकर उसको अपनी रानियो का नाट्याचार्य्यवनादिया उसने अनगप्रभाको ऐसा उत्तम नृत्यसिखाया जिसे देखकर उसकी सव सपत्नी ईर्ष्याकरतीथीं कुछ दिनो मे अनगप्रभा साथ रहते २ उस नाट्याचार्य्यपर स्नेहकरनेलगी और वह नाट्याचार्य्य भी उसके रूप तथा नृत्यसे ऐसा वशीभूतहुआ कि कामदेव उसके चित्तको नचानेलगा एकसमय नृत्यशाला के एकान्त स्थान मे अनगप्रभा ने नाट्याचार्य्य को अपने नृत्य से वशीभूतकरके उसके साथ रमणकिया और रति के अन्त में उससे कहा कि तुम्हारे विना मैं क्षणभर भी न रहसकूगी परन्तु राजा हरिवर जो यह जानजायगा तो मुझे और तुम्हे दोनोको दण्डदेगा इससे जहा राजा न जानसके ऐसे स्थान में चलो तुम्हारेपास राजाका दियाहुआ बहुतसा धन है और मेरे पास भी वहुतसे आभूषणहैं इन सवको राजा के दियेहुए घोडे तथा ऊंटोंपरलादके यहा से निकलचलो जिससे निर्भयहोकररहें उसके यह वचन नाट्याचार्य्य ने प्रसन्नहोकर स्वीकारकरलिये तव अनगप्रभा पुरुषका भेषवनाकर अपनी एकचेरी के साथ नाट्याचार्य्य के घरकोगई वहा नाट्याचार्य्य अपने सम्पूर्ण धनको तथा अनगप्रभा के सव आभूषणोंको ऊंटोंपरलादकर और अनगप्रभा को घोडेपर सवारकराके वहासे चला (देखो विद्याधरोंकी लक्ष्मी को छोडके अनगप्रभा राज्यलक्ष्मीको प्राप्तहुई और उसकाभी त्यागकरके नाट्याचार्य्यके साथगई स्त्रियोंके चपलमनको धिक्कार है) और वहा से वहुत दूर जाकर वियोगपुर नाम नगर मे पहुँचकर अनगप्रभा के साथ सुखपूर्वकरहा और अपने लब्धवर नाम को यथार्थहुआ मानके अत्यन्त प्रसन्नहुआ इस बीच में राजा हरिवर अनगप्रभा को कहींचलीगई जानकर देहत्यागकरने को उद्यतहुआ तव सुमन्तनाम मत्रीने उससे कहा कि हे राजा आप विचार तो कीजिये कि जिस स्त्री ने खड्गसिद्धपति को छोडकर आप से अनुरागकिया उसका आपपर भी स्नेह कैसे दृढहोसक्ता है मैं जानताहू कि वह किसी तुच्छ पुरुषके साथ चलीगईहोगी क्योंकि उसको उत्तम अधम का कोई विवेकनहीं है आज वह नाट्याचार्य्य भी नहीं दिखाई देता है कदाचित् वही उसको हरलेगयाहोगा और मैंने सुनाभी है कि प्रातःकाल वहदोनों सगीतगृहमें गयेथे इससे हे राजा उसके लिये आप जानवूझकर भी इतनाशोक क्यो करतेहो सध्याके समान दुष्ट स्त्रिया क्षणभर अनुराग युक्त रहतीहैं मन्त्रीके यहवचन सुनकर और सत्य जानकर राजाने सोचा कि(पर्य्यन्तनिरसाकष्टप्रतिक्षणनिवर्त्तिनी। भवस्थितिरिवानित्यसम्बन्धाहिविलासिनी) (पतित मज्जयन्तीपुदर्शितोत्कलिकासुच। प्राज्ञःपतत्यगाधासु नस्त्रीषुचनदीषुच॥ व्यसनेपुनिरुद्वेगा विभवेस्व

प्यगर्विता। कार्येप्ककातरायेचतेधीरास्तैर्जितंजगत्) अन्तमें विरसकष्ट देनेवाली क्षणभमे बदलनेवाली और नित्यसम्बन्ध नहीं रखनेवाली ससारकी स्थितिके समान स्त्रिया भी होती हैं पतितको डुवानेवाली और उत्कण्ठाकी प्रकट करनेवाली स्त्रियोंसे तथा नदियों से बुद्धिमान् पुरुष सदैव बचता है व्यसनों मे नहीं घबरानेवाले ऐश्वर्य्यमें अभिमान नहीं करनेवाले और समयमें नहीं भयभीत होनेवाले धीर पुरुष सम्पूर्ण ससारको जीततेहैं यहशोचकर राजा हरिवरने अपनीही रानियोंमे सन्तोपकिया और वहअनगप्रभा उस वियोगपुरनाम नगरमें कुछकालतक उसनाट्याचार्य्य के पास रही भाग्यवशसे सुदर्शननाम किसी ज्वारीके साथ उसनाट्याचार्य्यकी सगति होगई उसने थोडेही कालमे अनगप्रभाके सन्मुखही उसनाट्याचार्य्यका सब धन जीतलिया तब अनगप्रभा उसनिर्धन नाट्याचार्य्यको छोडकर उससुदर्शन ज्वारीके साथ भागगई उसके चले जानेपर नाट्याचार्य्य धन तथा स्त्रीसे रहितहोकर अपनेको निराश्रय जानके वैराग्यसे जटा बढाकर गगाजीके तटपर तपकरनेलगा और अनगप्रभा उसीप्रकार सुदर्शन के यहा रहनेलगी एकसमय सुदर्शनके घरमें सेधलगाकर चोर उसका सब धन लेगये धनके अभावसे अनगप्रभाको अत्यन्त दुखित देखकर सुदर्शनने कहा कि चलो हिरण्यगुप्तनाम एकबडा धनवान् मेरा मित्रहै उससे कुछ धन उधारमागें यहकहकर अनगप्रभाको साथ लेकर भाग्यका माराहुआ सुदर्शन ऋणलेने को हिरण्यगुप्तके यहागया वहा अनगप्रभाको देखकर वह वैश्य तथा उस वैश्यको देखकर अनगप्रभा दोनों परस्पर अनुरक्त होगये और उसवैश्यने सुदर्शनसे आदर पूर्वककहा कि मैं प्रातः-काल तुमको धनदूगा आज तुम हमारे यहाही रहकर भोजनकरो यहसुनकर सुदर्शनने उनदोनों का विपरीतभाव देखकर कहा कि आज मैं तुम्हारे यहा भोजन नहीं करसक्ताहू उसके यहवचन सुनकर हिरण्यगुप्तने कहा कि तुम चाहो भोजन न करो परन्तु यहतुम्हारी स्त्री अवश्य भोजनकरे क्योंकि यह पहलेही पहल मेरे यहा आई है यहसुनकर सुदर्शन चुपहोरहा और हिरण्यगुप्त अनगप्रभाको साथ लेके भीतर जाकर भोजन तथा मद्यपान करके उसके साथ आनन्द करनेलगा फिर हिरण्यगुप्तके सेवकोंने बाहर खडेहुए सुदर्शनसे कहा कि तुम्हारी स्त्री भोजन करकेगई अब तुम यहा क्यों खडेहो तुम भी जाओ क्या तुमने उसे निकलतेहुए नहीं देखाथा यहसुनकर उसने कहा कि वह भीतरहीहै मैं उसे लिये विना कभी न जाऊगा तब सेवकोंने उसेमारकर वहासे निकाल दिया वहासे जाकरसुदर्शन महादुखीहोकर शोचनेलगा कि देखो इसवणियेने मित्रहोकर भी मेरी स्त्री हरलीनी अथवा मुझे इसीलोक में अपने पापका फल मिलगया जो मैने एकके साथ कियाथा वही दूसरेने मेरे भी साथ किया इससे किसीपर क्रोध न करनाचाहिये मेरे कर्महीं क्रोधके योग्यहैं उन्हींका नाश करनाचाहिये जिससे फिर ऐसा दुःख मुझे नहीं सहनापडे यहशोचकर सुदर्शनने क्रोध रहितहोके बदरिकाश्रममें जाकर दुखदाई ससारके नष्टकरनेके लिये महाघोर तप किया और वह अनगप्रभा अनेक पुष्पोंपर भ्रमण करती हुई भौंरीके समान हिरण्यगुप्तके साथ रमणकरनेलगी और उसको अत्यन्त प्रियहोगई वहा के राजा वीरबाहुने उसको अत्यन्त सुन्दर जानकर भी धर्मकी मर्य्यादा के रक्षाकरने के लिये उसका ग्रहण नहीं

किया कुछ दिनों मे हिरण्यगुप्तका धन घटगया क्योंकि (म्लायतिश्री कुलस्त्रीवगृहेवन्धक्यास्थिते) पुश्चली युक्त गृहमें कुल स्त्रीके समान लक्ष्मीभी म्लानहोजाती है धनकी न्यूनता देखकर वह वैश्य अनगप्रभा को साथ लेकर रोज़गार करनेको चला और चलते २ समुद्र के तटपर सागरपुरनाम नगरमें पहुचा वहा निषादो का स्वामी सागरवीरनाम एक निपाद वहीं का रहनेवालाथा उससे मिलकर हिरण्यगुप्त उसी के लायेहुए जहाजपर चढकर अपनी प्रिया समेत द्वीपान्तर को चला ३०१ कई दिन तक समुद्रमें चलते २ एकदिन अकस्मात् जाज्वल्यमान विजलीरूपी नेत्रों से युक्त भयकर कालमेघ आकर गर्जनेलगे और पानी वरसनेलगा और वायुके वेग से जहाज डूबनेलगा जहाजको डूबते देख कर सम्पूर्ण लोग हाहाकार शब्दकरनलगे और वह हिरण्यगुप्त वश्य अनगप्रभाको न देखकर हे प्रिये तुम कहागई ऐसा कहकर समुद्रमे कूदपडा और कुछदूर बहकर भाग्यवशसे एकडोगी पाकर उसीपै चढगया उस अनगप्रभाको भी निपादोंके स्वामी सागरवीरने एककाठके टुकडेपर वैठालकर आप भी उसीपर वैठक समुद्र मे वहचला क्षणभरमें जहाजके नष्टहोजानेपर मेघ अदृष्ट हागये और शान्तहुए कोपवाले साधूकेसमान समुद्रभी शान्तहोगया उसडोगीपर चढाहुआ हिरण्यगुप्त पाचदिनमें समुद्र के तटपरपहुचा और तटपर उतरकर प्रियाकेविरहसे दुखितहोके ब्रह्माकेकाममे अपना कुछ वस न जानकर धैर्य्य धरके अपने नगरकोगया और वहा फिर धन उपार्जनकरके सुखपूर्व्वकरहनेलगा और वह अनगप्रभा एकही दिनमें सागरवीरके साथ समुद्रकेतटपर पहुचगई वहा वहसागरवीर उसको समझाकर सागरपुर नगरमे अपने स्थानपर लेआया अनगप्रभा ने उसको धनवान् रूपवान् और युवावस्थावाला जानकर उसीको अपना पति बनालिया (नस्त्रीचलितचारित्र निम्नोन्नतमवेक्षते) (सदाचारसे भ्रष्ट हुई स्त्री ऊचनीचका विचारनहीं करती है) और वह उसी निपाद पतिकेसाथ उसके ऐश्वर्य्यको भोग करतीहुई कुछ दिन वहारही एकसमय उसने महलपरसे विजयवर्मानाम रूपवान् किसी क्षत्रीको जाते देखा और उसके रूपसे लोभितहोकर महलपरसे उतरकर उससकहा कि तुम्हारे दर्शनसेही तुमपर मेरा अनुराग होगयाहै तुम मुझको स्वीकारकरो उसने भी उसको अत्यन्तरूपवती देखकर अपने घरमे ले जाके उसकेसाथ दिव्य सुखोंका अनुभवकिया फिर सागरवीरने उसको कहीगई जानकर अपना सर्वस्व त्यागकरके शरीर त्यागनेकी इच्छासे गगाजीपर जाके तपकिया उसको इतना दुखहोना उचितही था क्योंकि कहा तो निपाद और कहा परमसुन्दर विद्याधरी स्त्री इसकेउपरान्त अनगप्रभा विजयवर्म्मा के साथ सुखपूर्व्वक कुछ दिन तक उसके पासरही एकदिन वहाका राजा सागरवर्मा हथिनीपर चढके नगरके घूमनेको निकला और घूमते२ विजयवर्माके मकानके पासआया राजाको आताजानके उसके देखने के कौतुक मे अनगप्रभा महलपरचढी और राजाको देखतेही उसपर ऐसी अनुरक्तहुई कि राजा की हथिनीके महावतसेबोली कि हे हाथीवान् मैं कभीहथिनीपरनहींचढीहू इससे मुझेभी इसपरचढालो मैं देखू कि इसपर चढने से क्या सुखहोताहै उसके यहवचन सुनकर महावत राजाकी ओर देखनेलगा और राजा आकाशसे गिरीहुई चद्रमाकी कातिकेसमान उसेदेखकर औरचकोरके समान टकटकी दृष्टि

से उसे पानकरके उसके पानेकी आशाकरके महावतसेबोला कि हथिनीको महलके निकटलेजाकर इसे चढाकर इसका मनोरथ पूर्णकरो राजाकी यह आज्ञा पाकर महावत ने उसके महलकेही नीचे हथिनी लगादी हथिनीको निकट देखकर अनंगप्रभा राजाकी गोदमे कूदपडी और गिरनेकेभयसे राजाके कंठ में लिपटगई देखो कहा तो पहले पतियों से ऐसाद्वेष और कहा इसप्रकार पुरुषों से न तृप्तहोना पिताके शापमे उसकास्वभाव अत्यन्त विपरीतहोगया राजाभी उसकेस्पर्शरूपी अमृतसे अपने शरीरके सिचने से अत्यन्त आनन्दको प्राप्तहुआ और युक्तिसे अपने शरीरको अर्पण करके चुम्बन करनेकीइच्छाकरती हुई उस अनगप्रभाको लेकर शीघ्रही अपने मंदिरको चलागया और वहा उससे संपूर्ण वृत्तात पूछकर उसे अपनी पटरानी वनाकर अत्यन्त आनन्दको प्राप्तहुआ इतने में वह विजयवर्मा क्षत्री अपनी स्त्रीको राजासे हरीहुई जानकर राजद्वारमें आकर राजा के सेवकों से युद्ध करनेलगा और युद्धमेंही शरीर का त्यागकरके इसदुष्ट स्त्री से तुम्हें क्या प्रयोजनहै नदनवन में हमारेसाथ चलकर हमसे रमणकरो इसप्रकार मानो कहतीहुई सुरागनाओं के साथ स्वर्गकोगया उसको इसप्रकारसे शरीरका त्यागना उचितही था क्योंकि (नशूराविषहन्तेहिस्त्रीनिमित्तपराभवम्) शूरलोग स्त्री के निमित्तहुए तिरस्कारको नहीं सहते हैं २६१ अनगप्रभाभी राजा सागरवर्म्मा के यहाजाकर समुद्रमे प्राप्तहुई नदी के समान स्थिरहोगई और भावी के वलसे उसीको पाकर अपनेको कृतार्थ माननेलगी और राजा सागरवर्म्मा ने भी उसे पाकर अपना जन्म सफलमाना कुछ दिनोंमे अनगप्रभा गर्भवतीहुई और गर्भमासों के पूर्णहोनेपर सुन्दर पुत्र उत्पन्नहुआ राजाने पुत्रजन्मका बडा महोत्सवकरके पुत्रकानाम समुद्रवर्म्मारक्खा और क्रमसे सपूर्ण विद्याओंको पढकर युवावस्थाको प्राप्तहुए समुद्रवर्म्माको युवराजपदवी देदी और राजासमरवर्म्मा की कमलवती नाम कन्या हरलाकर उसे व्याहदी फिर विवाहके उपरान्त उसके गुणों से अत्यन्त प्रसन्नहोकर अपना सम्पूर्ण राज्य उसे देदिया राज्यकोपाकर क्षत्रियों के धर्म के जाननेवाले पराक्रमी समुद्रवर्म्मा ने नम्रतापूर्वक अपने पितासेकहा कि हे तात मुझे दिग्विजयकरनेकी आज्ञादीजिये क्योंकि जैसे स्त्रीका नपुंसकपति उसीप्रकार विजयकी इच्छासे रहित पृथ्वीका पति राजा भी निंद्यहोताहै (वर्म्यार्थीधिकमिमाच लक्ष्मीरिहमहीभुजाम्। यानित्वापरराष्ट्राणिनिजवाहुवलार्ज्जिता॥किंतेपातातराज्य स्वक्षुद्राणामभिभूतये। स्वप्रजामेवखादन्ति मार्जाराइवलोलुपा) राजालोगोंकी वही लक्ष्मी यशकरने वाली तथा धर्मानुसारिणी होनीहै जो अपनी भुजाओं के वलसे जीतकर अन्य राजालोगों के यहा से लाईजाती है हे तात उन क्षुद्रपुरुषोंका तिरस्कारका कारणरूप राज्य क्याहै जो मार्जारों के समान लोभी होकर अपनी प्रजाओंकोही खाते हैं अपने पुत्रके यह वचन सुनकर सागरवर्म्मा ने कहा कि हे पुत्र तुम्हारा राज्य नवीनहै अभी इसीको पुष्टकरो धर्मके अनुसार प्रजाओंका पालन करनेवाले राजाको न पापहोताहै न अपयशहोता है और अपनी शक्तिको विनादेखे राजालोगोंको युद्ध करना उचित नहीं है है वत्स यद्यपि तुम वडेवीरहो और तुम्हारे पास सेनाभी वहुतहै तथापि युद्धमें चचल जयलक्ष्मी का क्या विश्वासहै पिताके इसप्रकार समझानेपर भी समुद्रवर्म्मा नम्रपूर्वक पितासे आज्ञालेकर दिग्वि-

जयको गया और क्रमसे पूर्वादिक चारों दिशाओंको जीतकर राजालोगोंको अपने वशमेंकरके बहुत से घोडे हाथी तथा रत्नोंको लेकर अपने नगरमें आया २७७ वहा उसने प्रसन्नहुए अपने माता पिता के चरणोंपर अनेक देशों से लायेहुए अमूल्य रत्नरक्खे और माता पिताकी आज्ञालेकर हाथी घोडे सुवर्ण तथा रत्नो के दानब्राह्मणोकोदेकर याचकोंको तथा सेवकोंको इतनाधनदिया कि जिससे वहाकेवल दरिद्र शब्दही अनर्थरहा अपनेपुत्रकी ऐसी उदारतादेखकर राजासागरवर्म्मा तथा अनगप्रभा इनदोनो ने अपनेको कृतकृत्यमाना और कई दिनतक उत्सवकरके मन्त्रियों के सन्मुख समुद्रवर्म्मा से कहा कि हे पुत्र मुझे इसजन्म में जो कुछ करनाथा सो सब मै करचुका राज्यका सुखभोगा, शत्रुओ से तिरस्कार नहींपाया और तुमको चक्रवर्त्ती पदपर बैठे देखा इससे बढकर अबमुझे कौनसी बात प्राप्तहोनेको बाकी रही है इससे अब म तीर्थपर जाकर निवासकरूगा देखो यहवृद्धावस्थाकानके पास आकर मुझसे मानों कहरही है कि यहशरीर नस्वरहै तुमअब घरमेंबैठेहुए क्याकररहेहो यहकहकर राजासागरवर्म्मा अनगप्रभा को साथलेकर प्रयागको गया तव समुद्रवर्म्मा अपने पिताको प्रयागतक पहुचाकर लौटके धर्म के अनुसार राज्यका पालन करनेलगा और राजा सागरवर्माभी प्रयाग में अनगप्रभा के साथ श्री शिवजी को प्रसन्न करनेके लिये तपकरनेलगा कुछदिन तपकरनेसे प्रसन्नहुए श्री शिवजीने सागरवर्मा को यह स्वप्न दिया कि हे पुत्र तुम्हारे ऊपर मै प्रसन्न हू इससे सुनो यह अनगप्रभा और तुम दोनों विद्याधरहो कल प्रात काल शापसे मोक्ष पाके अपने लोकको जाओगे शिवजी के यह वचनसुनकर सागरवर्मा जग पडा और अनगप्रभा भी इसीप्रकार स्वप्न देखकर जगपडी फिर इस स्वप्नको परस्पर कहने के उपरान्त अनगप्रभा प्रसन्नहोकर बोली कि हे आर्यपुत्र आजमुझे अपने पूर्वजन्म का स्मरण आयाहै मैं वीरपुरके स्वामी समरनाम विद्याधरकी पुत्री हू पिताके शापसे मृत्युलोक में आकर सम्पूर्ण विद्याओं को भूलके मुझे अपना विद्याधरत्वभी भूलगया था इससमय एकाएकी स्मरण आया है उसके इसप्रकार कहतेही कहते समरनाम विद्याधर आकाश से उतरकर वहा आया और नमस्कार करतीहुई अनगप्रभासे बोला कि हे पुत्री आओ अपनी विद्याओं को लो क्योंकि तुम्हारा शाप अब शान्तहोगया है तुमने एकही जन्ममे आठजन्मके समान दुखभोगा यह कहकर उसने उसे गोदमें लेकर सब विद्या बता दीं और राजा सागरवर्मा से कहा कि आप विद्याधरों के स्वामी मदनप्रभहो मैं समरनाम विद्याधरहू और यह मेरीकन्या अनगप्रभाहै इसने रूपके अभिमानसे किसीवरका स्वीकार नहीं किया था और तुमने भी इसकेलिये प्रार्थना की थी परन्तु भाग्यवशसे इसने तुम्हारा भी ग्रहण नहीं किया था इसीसे मैंने क्रोधितहोके इसको मृत्युलोकमें उत्पन्न होनेका शापदिया था तव तुमने अपने चित्तमें श्रीशिवजी का ध्यानकरके यह सकल्पकरके कि मृत्युलोक मे भी यही मेरी स्त्री हो अपने शरीरका त्याग कियाथा इसी से तुम मनुष्यहुए और यह तुम्हारी स्त्रीहुई अब तुमदोनों अपने लोकको चलो समरके यह वचनसुनकर राजा सागरवर्मा अपने पूर्वजन्मका स्मरण करके त्रिवेणीजी में अपने मनुष्य शरीरको त्याग करके शीघ्रही मदनप्रभ नाम विद्याधर होगया और वह अनगप्रभा भी विद्याओंको पाके अत्यन्त दी-

सिमती होके उसी शरीरसे अन्यसी मालूम होनेलगी तब मदनप्रभ तथा अनगप्रभा दोनों परस्पर देखके अत्यन्त अनुरक्त होकर समरके साथ आकाशमार्ग से वीरपुरको गये वहा समरने विधिपूर्वक अपनी कन्या अनंगप्रभाका विवाह मदनप्रभके साथकरदिया और मदनप्रभ उसको साथलेके अपने पुरमें जाकर सुखपूर्वक रहा इसप्रकार अपने दुराचारके वशसे दिव्यस्त्रिया भी मनुष्य लोक मे उत्पन्न होकर और अपने कर्म्मोंके अनुसार फलभोगके अपने लोकोंको चलीजाती हैं गोमुख से इस कथाको सुनकर राजा नरवाहनदत्त तथा अलकारवती दोनो अत्यन्त प्रसन्नहुए और उठकर अपने नित्य नैमित्तिक कार्य्य करनेको गये ४१० ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायामलकारवतीलम्बकेद्वितीयस्तरग २ ॥

इसके उपरान्त दूसरे दिन अलंकारवती के पास बैठे हुए नरवाहनदत्त से मरुभूति ने कहा कि हे स्वामी देखिये यह विचारा कार्पटिक एक चमडे के टुकडे को पहने हुए रात्रि दिन शीत मे अथवा धूप में भी आप के फाटक पर से नहीं हटता है परन्तु आप अबतक इसपर नहीं प्रसन्न होते हो समय पर थोडा देना अच्छाहै परन्तु समय व्यतीत होजानेपर बहुतसा देना भी व्यर्थहै इससे जबतक यह मरता नहीं है तभीतक आप कृपा करके जो कुछ देना है सो इसे दीजिये यह सुनकर गोमुख ने कहा कि मरुभूतिका कहना बहुत उचितहै परन्तु इसमे आप का कोई अपराध नहीं है जबतक विघ्नकारी पापका नाश नहीं होता है तबतक स्वामी चाहे दान देने की इच्छा भी करे परन्तु दे नहीं सक्ताहै और पापों के क्षीण होजाने पर स्वामी नाहीं करनेपर भी देता है इसमे यह बात कर्म्माधीन है इस विषय पर मे आपको राजा लक्षदत्त तथा लब्धदत्तनाम कार्पटिक (चिथडे ओढनेवाला) की कथा सुनाताहू पूर्वही लक्षपुरनाम नगरमें लक्षदत्तनाम एक बडा दानी राजाथा वह लाखसे कम किसीको नहीं देताथा जिससे सभाषणकरता था उसे एकलाख देताथा और जिसपर प्रसन्न होताथा उसको दरिद्रसे रहित करदेताथा इसीसे उसका लक्षदत्तनाम प्रसिद्धथा उस राजाके यहा फाटक पर लब्धदत्तनाम एक कार्पटिक चमडेके टुकडेको कमरमें बाधेहुए जटारखाये रात्रि दिन शीत वर्षा तथा धूपमे भी क्षणभरको नहीं हटताथा और राजा नित्य उसे देखताथा बहुत कालतक राजा उसको क्लेशमें देखतारहा परन्तु कुछ देनेको नहीं उद्यतहुआ एक समय राजा अपनी सेनासमेत शिकारखेलने को वनमे गया और वह कार्पटिकभी उसके पीछे २ लाठीलेकर गया वहा राजाने तथा उसकी सेनावालोंने बाणोंसे बहुतसे व्याघ्र शूकर तथा हरिणादिक पशु पक्षी मारे और कार्पटिकने लाठीसेही बहुत से शूकर तथा हरिणमारे उसके पराक्रमको देखकर राजाने अपने मनमें जाना कि यह बडाशूरहै परन्तु कुछ दिया नहीं शिकार खेलकर राजा अपने नगरमे आकर मन्दिरमें चलागया और वह कार्पटिक फाटक पर बैठगया इसके उपरान्त एकसमय राजा लक्षदत्त अपने किसी गोत्री भाई के जीतने को गया और कार्पटिक भी उसके साथ २ पीछे २ चलागया वहा शस्त्रोंकेद्वारा योद्धाओंके युद्ध करनेपर कार्पटिकने लाठीसेही प्रहारसे बहुतसे शत्रुमारे तब शत्रुओंको जीतकर राजाने अपने नगरमें आके बडा उत्स

जयको गया और क्रमसे पूर्वादिक चारों दिशाओंको जीतकर राजालोगोंको अपने वशमेंकरके बहुत से घोडे हाथी तथा रत्नोंको लेकर अपने नगरमें आया ३७७ वहां उसने प्रसन्नहुए अपने माता पिता के चरणोंपर अनेक देशों से लायेहुए अमूल्य रत्नरक्खे और माता पिताकी आज्ञालेकर हाथी घोडे सुवर्ण तथा रत्नों के दानब्राह्मणोंकोदेकर याचकोंको तथा सेवकोंको इतनाधनदिया कि जिससे वहांकेवल दरिद्र शब्दही अनर्थरहा अपनेपुत्रकी ऐसी उदारतादेखकर राजासागरवर्म्मा तथा अनगप्रभा इनदोनो ने अपनेको कृतकृत्यमाना और कई दिनतक उत्सवकरके मन्त्रियों के सन्मुख समुद्रवर्म्मा से कहा कि हे पुत्र मुझे इसजन्म में जो कुछ करनाथा सो सब मैं करचुका राज्यका सुखभोगा, शत्रुओं से तिरस्कार नहींपाया और तुमको चक्रवर्ती पदपर बैठे देखा इससे बढकर अबमुझे कौनसी बात प्राप्तहोनेको बाकी रही है इससे अब मैं तीर्थपर जाकर निवासकरूंगा। देखो यहवृद्धावस्थाकानके पास आकर मुझसे, मानों कहरही है कि यहशरीर नस्वरहै तुम अब घरमेंबैठेहुए क्याकररहेहो यह कहकर राजासागरवर्म्मा अनगप्रभा को साथलेकर प्रयागको गया तब समुद्रवर्म्मा अपने पिताको प्रयागतक पहुंचाकर लौटके धर्म के अनुसार राज्यका पालन करनेलगा और राजा सागरवर्माभी प्रयाग में अनगप्रभा के साथ श्री शिवजी को प्रसन्न करनेके लिये तपकरनेलगा कुछदिन तपकरनेसे प्रसन्नहुए श्री शिवजीने सागरवर्मा को यह स्वप्न दिया कि हे पुत्र तुम्हारे ऊपर मैं प्रसन्न हूं इससे सुनो यह अनगप्रभा और तुम दोनों विद्याधरहो कल प्रातःकाल शापसे मोक्ष पाके अपने लोकको जाओगे शिवजी के यह वचनसुनकर सागरवर्मा जग पडा और अनगप्रभा भी इसीप्रकार स्वप्न देखकर जगपडी फिर इस स्वप्नको परस्पर कहने के उपरान्त अनगप्रभा प्रसन्नहोकर बोली कि हे आर्यपुत्र आजमुझे अपने पूर्वजन्म का स्मरण आयाहै मैं वीरपुरके स्वामी समरनाम विद्याधरकी पुत्री हूं पिताके शापसे मृत्युलोक में आकर सम्पूर्ण विद्याओं को भूलके मुझे अपना विद्याधरत्वभी भूलगया था इससमय एकाएकी स्मरण आया है उसके इसप्रकार कहतेही कहते समरनाम विद्याधर आकाश से उतरकर वहां आया और नमस्कार करतीहुई अनग प्रभासे बोला कि हे पुत्री आओ अपनी विद्याओंको लो क्योंकि तुम्हारा शाप अब शान्तहोगया है तुमने एकही जन्ममे आठजन्मके समान दुखभोगा यह कहकर उसने उसे गोदमें लेकर सब विद्या बता दी और राजा सागरवर्मा से कहा कि आप विद्याधरों के स्वामी मदनप्रभहो मैं समरनाम विद्याधरहूं और यह मेरीकन्या अनगप्रभाहै इसने रूपके अभिमानसे किसीवरका स्वीकार नहीं किया था और तुम ने भी इसकेलिये प्रार्थना की थी परन्तु भाग्यवशासे इसने तुम्हारा भी ग्रहण नहीं किया था इसीसे मैंने क्रोधितहोके इसको मृत्युलोकमें उत्पन्न होनेका शापदिया था तब तुमने अपने चित्तमें श्रीशिवजीका ध्यानकरके यह संकल्पकरके कि मृत्युलोक में भी यही मेरी स्त्री हो अपने शरीरका त्याग कियाथा इसी से तुम मनुष्यहुए और यह तुम्हारी स्त्रीहुई अब तुमदोनों अपने लोकको चलो समरके यह वचनसुनकर राजा सागरवर्मा अपने पूर्वजन्मका स्मरण करके त्रिवेणीजी में अपने मनुष्य शरीरको त्याग करके शीघ्रही मदनप्रभ नाम विद्याधर होगया और वह अनगप्रभा भी विद्याओंको पाके अत्यन्त दी-

फलके सूचक पुष्पकेसमान कुछ सुवर्ण लेकर वेश्याकोदेदिया और सुवर्ण वेचकर उसदिन सुखसे भोजन किया और उस वेश्याने सभामें जाकर वह नींबूराजाको भेटकिया राजा ने उसे पहचानकर उससे पूछा कि यहतुमने कहाँ से पाया उसने भी कहा कि मैंने कार्पटिकसे पाया यहसुनकर राजाने शोचा कि लक्ष्मीजीने अभी इसके ऊपर कृपादृष्टि नहींकी यह बडा मन्दभागी है जो कि मेरी प्रसन्नताको इसप्रकारसे निष्फल जानताहै देखो यह महारत्न वारवार मेरेहीपास लौट२कर आरहे हैं इसप्रकार शोचकर राजाने उसनिबूको रखवाकर सभा समाप्तकरके अपना नित्यका आह्निककिया चौथेदिन फिर राजाने सभाकी और सपूर्ण सभासदोंके आगे कार्पटिकको अपनेपास बुलाके वही आर्यापढवाके वही नींबू देदिया उसदिन राजाके हाथसे कार्पटिकके हाथमें न पहुचके गिरकर वहनींबू फटगया और उसमें से दिव्य महारत्न निकले जिनकी ज्योतिसे सम्पूर्ण सभा जगमगाउठी उनरत्नोंको देखकर सम्पूर्ण सभासदोंने कहा कि तत्वको विनाजाने हमलोगों को तीन दिनतक व्यर्थही भ्रान्ति हुई हमारे स्वामीकी कृपा तो ऐसी है यहसुनकर राजाने कहा कि मैंने युक्तिपूर्व्वक यह परीक्षाकी थी कि लक्ष्मीजी इसको दर्शन देना चाहती है कि नहीं तीन दिनतक इसके पापका नाशनहीं हुआ था इसीसे इसको लक्ष्मी जीके दर्शन नहींहुए और आज इसके पापका क्षयहोगया था इसीसे इसे लक्ष्मीजीने दर्शनदिये यह कहकर राजाने वह सम्पूर्ण रत्न गांव हाथी घोडे तथा वहुतसा सुवर्णदेकर उसे छोटासा राजा वना दिया फिर सम्पूर्ण सभासदों से प्रशंसा होनेपर सभासे उठकर नित्यकृत्य किया और कार्पटिक कृतकृत्य होकर वडा आनन्दितहोके अपने स्थानको गया इसप्रकारसे जबतक पापका अन्त नहीं होताहै तबतक करोडोंयत्न करनेपरभी सेवकोंपर स्वामीकी कृपानहींहोती है इसकथाकोकहके गोमुखने नरवाहनदत्तसे फिर कहा कि मैं जानताहूं कि अभी इसकार्पटिकके पापोंका क्षयनहींहुआहै इसीसे आप इसपर प्रसन्न नहीं होते हो गोमुखके यहवचनसुनकर नरवाहनदत्तने कार्पटिकको वुलाके वहुतसेगाव हाथी घोडे रत्न तथा सुवर्णसमेत वस्त्रादिकदिये उस धनको पाकर वह कार्पटिक राजा के समानहोके कृतार्थहोगया ठीक है (कृतज्ञे सत्परीवारे प्रभौसेवाफलाकुत) सज्जनपरिवारसे युक्त कृतज्ञराजाकी सेवाकभी व्यर्थनहींहोती है इसप्रकारसे अनेक उत्तमकार्य्य करतेहुए नरवाहनदत्तके निकट प्रलम्बबाहुनाम एक दाक्षिणात्यवीर उग्रद्विजआया और वोलाकि हेस्वामी आपकी कीर्त्तिको सुनकर मैं आपके चरणोंकी सेवाको आया हूं हाथी घोडे तथा रथआदिक वाहनोंपर पृथ्वीमें अथवा आकाश मे चलतेहुए आपका मार्गमें पैदलही चलकर एक क्षणभरभी नहींछोडूगा क्योंकि आपविद्याधरो के चक्रवर्तीहोनेवालेहो और सो अमरफी रोज मेरावेतन होगा उसके यह वचन सुनकर नरवाहनदत्तने उसे बडातेजस्वी जानकर उसका वही वेतन नियतकरदिया ८२ इसीप्रसगसे गोमुखने उससेकहाकि हे युवराज इसप्रकार के भी सेवक होते हैं इसवातपर मैं आपको एक कथा सुनाताहूं विक्रमपुर नामनगर में विक्रमतुगनाम एकराजाथा वह राजा वडा वीर न्यायी, विचारपूर्वक दण्डदेनेवाला, धर्मात्मा,स्त्री तथा शिकारआदिकों में नहीं आसक्तहोनेवाला और महादानीथा उस राजाके निकट मालवदेशका निवासी वीरवरनाम एक शूरवीर

व किया परन्तु उस कार्पटिकके पराक्रमको भी देखकर उसे कुछ न दिया इसप्रकार केवल लाठीसेही बडे २ कार्य्य करनेवाले उस कार्पटिकको राजद्वार पर रहते २ पाचवर्ष व्यतीतहोगये जब छठावर्षलगा तो राजाने उसे देखकर दयापूर्वक विचार किया कि इसको बहुत काल क्लेशभोगते होचुके हैं परन्तु मैने इसे कुछ नहीं दिया है इससे युक्तिपूर्व्वक इसको कुछ देकर देखू कि इसका पाप अभी क्षीण हुआ है या नही लक्ष्मीजी अभी इसको दर्शन देती हैं या नहीं यह शोचकर राजाने खजाने मे जाकर एक बिजौरे नीबूमें बहुतसे रत्नभरलिये और उसको बन्दकरके बाहर सभामें आकर सपूर्णपुरवासी मन्त्री तथा छोटे २ राजाओके सन्मुख उस कार्पटिकको अपने पास बुलवाकर बैठाया और वह कार्पटिक बहुत प्रसन्नहोके राजाके समीप बैठा तब राजाने उससे कहा कि कोई अच्छासा श्लोकपढो राजाकी आज्ञापाके कार्पटिक ने यह आर्य्यापढी कि (पूरयतिपूर्णमेपातरगिणीसहतिस्ससुद्रमिवलक्ष्मीरधनस्य पुनर्लोचनमार्गेपिनायाति) जैसे अगाध समुद्रमे सैकडों नदिया जाकरगिरती है उसीप्रकार लक्ष्मीभी धनवान् मनुष्यके पास जाती है और निर्धनको दर्शन भी नहीं देती इस आर्या को सुनकर और फिर पढवाकर राजाने प्रसन्नहोके उसे रत्नोसेभराहुआ बिजौरा नीबूदेदिया यह देखकर सम्पूर्ण सभासदों ने परस्पर धीरे २ कहा कि जिसपर यह राजाप्रसन्नहोता है उसका दरिद्रदूर करदेताहै परन्तु यह कार्पटिक शोचकरनेके योग्यहै जिसे राजाने बुलाकर प्रसन्नहोकर भी एकनीबूदियाठीकहै (कल्पवृक्षोप्यभव्याना प्रायोयातिपलाशताम्) प्राय अभागियोकेलिये कल्पवृक्षभी ढाक होजाताहै ३६ तब कार्पटिक उस बिजौरेको लेकर अत्यन्त दुखीहोके बाहरगया उससमय राजवन्दिनाम एकभिक्षुकने वहांआकर एकधोती देके वह नीबू उससे बदले में मोललेलिया और सभामें जाकर राजाकी भेटकरदिया राजाने उसे पहचानकर उससे पूछा कि यहफल तुम कहांसे लाये उसने कहा कि मैने द्वारपर खडेहुए कार्पटिकसे यह फलपायाहै तब राजाने खेदसे अपने चित्तमे शोचा कि अभी उसका पाप क्षीणनहीं हुआहै इसप्रकार शोचकर सभाका विसर्जनकरके राजाने अपना नित्यनैमित्त कर्मकिया और उस कार्पटिकने भी धोती बेचकर भोजनादिका निर्वाहकरके अपने उसी स्थानपर निवासकिया दूसरेदिन राजाने फिर सम्पूर्ण सभा इकट्ठीकरके कार्पटिकको अपने पास बुलाके वहीआर्या फिर पढवाके वहीनीबूदेदिया तब सब लोगो ने आश्चर्य्य पूर्व्वक कहा कि देखो आजभी राजाने वहीनीबूइसको दिया और कार्पटिक उदासीनहोकर नीबूलेकर बाहर चलागया उससमय वहां आयेहुए किसी राज्याधिकारीने दो वस्त्रदेकर उससे वहनीबूले के सभा में जाकर राजाकी भेटकिया राजाने उसको पहचानकर उससे पूछा कि यहफल कहां से लायेहो उसनेकहा कि मै कार्पटिकसे लायाहू यहसुनकर खिन्नहोके उसको लक्ष्मी अबतक दर्शन नहींदेती है इस प्रकार शोचताहुआ राजा सभासे उठकर अपना नित्यकर्म करनेको चलागया और उसकार्पटिक ने उन दोनो वस्त्रोमेसे एकको बेचकर भोजनादिककी सामग्रीली और दूसरेको फाडकर दो वस्त्र बनाये तीसरे दिन फिर राजाने सभाकरके कार्पटिक को अपने पास बुलाके और वही आर्यापढवा के वही नीबू फिर देदिया उसनीबूको देखकर सबसभासदोके आश्चर्य्य युक्त होनेपर कार्पटिकने बाहरजाकर वहनीबूभार्या

कहा कि मैं तुमको एक उपायबतलाताहूं कि ॐ नमश्शिवाय इसमन्त्रका जपकरके श्री शिवजीकी शरणमे प्राप्तहोजाओ इससे तुम्हारे सम्पूर्ण पापनष्ट होजायगे और पुण्योकी वृद्धिमे शूकरी के गर्भ में नहीं जाओगे और स्वर्गही मे रहोगे इन्द्रके यह वचनसुनकर सुप्रभ ॐ नमश्शिवाय इस मन्त्रका छ दिनतक दत्तचित्तहोकर जपकरता रहा और जपके प्रभावसे वह स्वर्ग के ऊपरवाले लोकमें चलागया सातवेंदिन इन्द्रने उसेस्वर्ग में न देखकर ध्यानधरके देखा कि वह स्वर्ग से भी ऊपरके लोकमे है इस प्रकारसे जैसे सुप्रभने अपने भावी दुःखका शोचकिया था उसीप्रकार मैं भी राजाकी मृत्युका शोचकर रही हूं पृथ्वीके यह वचनसुनकर वीरवरने कहा कि हे अम्ब जैसे इन्द्रके वाक्य से सुप्रभको उपाय मिला था उसीप्रकार राजा के लिये भी कोई उपायहै जो होय तो बताओ तब पृथ्वी बोली कि इसका एकही उपाय है और वह तुम्हारे आधीनहै यह सुनकर वीरवरने प्रसन्न होकर कहा कि हेमाता शीघ्रही बताओ जो मेरे प्राणोंसे स्त्री से अथवा पुत्रसे भी राजाका उपकार होयतो मैं धन्यहूं यह सुनकर पृथ्वी बोली कि राजमंदिरके पास जो चंदिका देवी है उनके आगे अपने सत्त्ववरनाम पुत्रको भेंट चढाओ इस उपायसे राजा जियेगा इसके सिवाय दूसरा उपाय नहीं है पृथ्वीके यह वचनसुनकर वीर वीरवरने कहा कि हे भगवती मैं अभीजाकर अपने पुत्रको भेटकरताहूं उसके यह वचनसुनकर पृथ्वी तुम्हारे समान स्वामीका हितकारी कौनहोगा यह कहकर अन्तर्द्धान होगई और वीरवर अपने घरकोचला तब राजा विक्रमतुङ्गभी इसमम्पूर्ण वार्त्ताकोसुनकर उसके पीछेरचला वीरवरने अपने घरमें जाकर अपनी स्त्रीसे जगाकरकहा कि पृथ्वी के कहने से मुझे राजाकेनिमित्त अपनेपुत्रकी भेट भगवती को करनी है वीरवरके यहवचनसुनकर धर्मवती ने कहा कि स्वामीका हितकरना अवश्य उचितहै इससे तुम सत्त्ववरको जगाकर उससे कहो तब वीरवर ने सत्त्ववरको जगाकर उससे पृथ्वी के कहेहुए सम्पूर्ण वचन कहदिये पिताके यह वचन सुनकर उसबालकनेकहा कि हेतात मैं बडा पुण्यवानहूं जिसके प्राण स्वामी के कार्य में आवेंगे मैंने उसका अन्नखायाहै इससे मुझको उसके ऋणसे अवश्य शुद्धहोना चाहिये अब आप मुझे शीघ्रही लेचलकर भगवती के आगे मेरा बलिदानकरो सत्त्ववरके यह वचन सुनकर वीरवरने कहा कि तुम निस्सन्देह हमारेही पुत्रहो उनसबों के इसप्रकारके वचनोंको सुनकर बाहरखडेहुए राजाने अपने मनमेंकहा कि यहसब बडे सत्त्ववान्हैं तब वीरवर सत्त्ववरको गोदीमेंलेकर और धर्मवती सत्त्ववती कन्याको गोदीमे लेकर दोनों वहासे भगवती के मंदिरको चले और राजाविक्रमतुङ्गभी छिपकर उनके पीछेरचला भगवती के मंदिरमें पहुंचकर वीरवरकी गोदी से उतरकर उस बालक सत्त्ववरने कहा कि हे भगवती मेरे मस्तकके बलिदानसे राजाविक्रमतुङ्ग चिरजीवीहोय और अकण्टकराज्यका भोगकरे पुत्रके यह वचन सुनकर वीरवरने खड्गसे उसका शिर काटकर भगवती के अर्पणकरकेकहा कि इसबलिदानसे राजाकाकल्याणहोय (नास्त्यहोस्वामिभक्तानापुत्रेषात्मनिवास्पृहा) स्वामिभक्तोंको पुत्रमें अथवा अपने शरीरमें स्पृहा नहीं होतीहै उससमय यह आकाशवाणी हुई कि हे वीरवर तू धन्यहै जिसने अपने पुत्र के प्राणों के व्ययसे अपने स्वामीकी रक्षाकी इसआकाशवाणीको सुनकर और वीरवरके सम्पूर्ण का-

ब्राह्मण सेवाकेनिमित्तआया उसकेसाथ मे उसकी धर्मवतीनामस्त्री वीरवतीनामकन्या, और सत्त्ववर नामपुत्र यहतीनकुटुम्बीथे इतनेही कुटुम्बकेलिये उसने राजासेपाचसौ असर्फीरोजवेतनमागी राजा ने उसके विशेषगुण देखनेकी इच्छासे उतना वेतनदेना स्वीकारकरलिया और गुप्तदूतों को बुलाकर यह आज्ञादीकि देखोयह इतनेधनसे क्या काम करताहै वीरवरप्रतिदिन उनअसर्फियों में से सौअसर्फी तो अपनीस्त्रीको भोजनादिके निमित्त नित्यदेताथा, सौअसर्फियोंसे वस्त्रतथा आभूषणादिकलेताथा, सौ असर्फी विष्णुभगवान् तथा शिवजीके पूजनमें लगाताथा और दोसौ असर्फी ब्राह्मणो को तथा दीनों को बाटदेताथा इसप्रकारसे वह पाचसौ असर्फियोंका व्ययकिया करताथा और कमरमें खड्ग एकबगलमे ढालतथा एक दर्पण लेकर मध्याह्नतक राजद्वारपर रहताथा और फिर अपनेघरपर आकर आह्निकादिक करके रात्रिभरभी राजद्वारहीपर जाकर रहताथा उसकी यह दिनचर्या राजासे उन गुप्तदूतो ने आकर बतादी तब राजाने प्रसन्नहोकर दूतो को निवृत्तकरदिया और वह वीरवर शस्त्रको लेकर रात्रि दिन स्नानादिक समयको छोडकर राजद्वारहीपर रहनेलगा १०P इसबीचमें वीरवरको मानोजीतने के लिये सूर्य्य के प्रतापको न सहनेवाली वर्षाऋतुआई उनदिनों मेघोंके घोरधारारूप बाणोकी वृष्टिकरनेपर भी वीरवर स्तभके समान फाटकपरसे हटानहीं एकदिन राजा विक्रमतुग उसकी परीक्षा करनेकेलिये रात्रिके समय महलपरसे बोला कि फाटकपरकौनहै यह सुनकर वीरवरने कहाकि मैं हू वृष्टि के समय मे भी फाटकपर खडेहुए वीरवर को जानकर राजाने शोचा कि यह बडासत्त्ववान्है इसको कोई बडा अधिकार मिलना चाहिये क्योकि यहऐसीवृष्टिमे भी अपने स्थानपरसे नहींहटताहै राजाके इसप्रकार विचारकरतेही दूरसे किसी स्त्रीके रोनेकामा शब्दसुनाईदिया उसेसुनकर मेरेराज्यमे तो कोईदुखी नहीं हैं तो यहकौनरोरही है यह शोचकरराजाने वीरवरसेकहा कि कोई स्त्री दूरपररोरही है उसकेपासजाकरदेखोकि वहकौनहै औरक्यों रोरहीहै यह आज्ञापातेही वीरवर खड्ग लेकर वहासेचला उसको पानीबरसते में जाते देखकर राजाभी खड्गलेके दयायुक्त होके उसीके पीछे २ चला वीरवर नगरके बाहरजाके कुछ दूरपर एकतालाबके पास पहुचा वहा एक स्त्री हेनाथ हेकृपालो हेशूर तुम्हारे विना मैं कैसे रहूगी यह कहकहकर रोरहीथी उससे जाके वीरवरने पूछा कि तू कौन है और कौन तेरानाथहै और क्यों रोरही है उसनेकहा कि हे वीरवर मैं पृथ्वीहू और बडा धर्मात्मा राजा विक्रमतुग मेरा स्वामी है उसकी आजसे तीसरेदिन मृत्युहोगी और ऐसा पतिमुझे मिलेगा नहीं इससे मै उसका और अपना दोनोंका शोक करतीहू मे दिव्यदृष्टि से सम्पूर्ण होनेवाली शुभाशुभ बातोंको जानतीहू जैसे स्वर्ग में स्थित सुप्रभनाम देवपुत्रने जानलिया था उसे यह मालूम होगयाथा कि पुण्यों के क्षीणहोने से सातही दिनमें मेरा स्वर्गसे पतनहोगा और शूकरीके गर्भमें जन्म होगा यह जानकर वह शूकरीके गर्भवासके दुखको शोचकर स्वर्गके दिव्य भोगो का शोच करनेलगा कि हास्वर्ग हाअप्सरा हानन्दन वन हाय मै कैसे शूकरीके गर्भमें रहूगा और गर्भसे निकलकर कैसे कीचमें पडूगा उसके इस विलापको सुनकर इन्द्रने उसके पास आकर कहा कि तुम क्यों रोतेहो इन्द्रके यह वचनसुनकर उसने अपने दुखका सब कारण कहदिया तब इन्द्रने उसमे

कहा कि मैं तुमको एक उपायवताताहूं कि ॐ नमश्शिवाय इसमन्त्रका जपकरके श्री शिवजीकी शरणमें प्राप्तहोजाओ इससे तुम्हारे सम्पूर्ण पापनष्ट होजायगे और पुण्योंकी वृद्धिमे शूकरी के गर्भ में नहीं जाओगे और स्वर्गही में रहोगे इन्द्रके यह वचनसुनकर सुप्रभ ॐ नमश्शिवाय इस मन्त्रको छ दिनतक दत्तचित्तहोकर जपकरता रहा और जपके प्रभावसे वह स्वर्ग के ऊपरवाले लोकमें चलागया सातवेंदिन इन्द्रने उसेस्वर्ग में न देखकर ध्यानधरके देखा कि वह स्वर्ग से भी ऊपरके लोकमे है इस प्रकारसे जैसे सुप्रभने अपने भावी दुःखका शोचकिया था उसीप्रकार मैं भी राजाकी मृत्युका शोचकर रही हूं पृथ्वीके यह वचनसुनकर वीरवरने कहा कि हे अम्ब जैसे इन्द्रके वाक्य से सुप्रभको उपाय मिला था उसीप्रकार राजा के लिये भी कोई उपायहै जो होय तो बताओ तब पृथ्वी बोली कि इसका एकही उपाय है और वह तुम्हारे आधीनहै यह सुनकर वीरवरने प्रसन्न होकर कहा कि हेमाता शीघ्रही बताओ जो मेरे प्राणोंसे स्त्री से अथवा पुत्रसे भी राजाका उपकार होयतो मैं धन्यहूं यह सुनकर पृथ्वी बोली कि राजमंदिरके पास जो चंडिका देवी है उनके आगे अपने सत्त्ववरनाम पुत्रको भेट चढाओ इस उपायसे राजा जियेगा इसके सिवाय दूसरा उपाय नहीं है पृथ्वीके यह वचनसुनकर धीर वीरवरने कहा कि हे भगवती मैं अभीजाकर अपने पुत्रको भेटकरताहूं उसके यह वचनसुनकर पृथ्वी तुम्हारे समान स्वामीका हितकारी कौनहोगा यह कहकर अन्तर्द्धान होगई और वीरवर अपने घरकोचला तब राजा विक्रमतुंगभी इससम्पूर्ण वार्त्ताकोसुनकर उसके पीछेचला वीरवरने अपने घरमें जाकर अपनी स्त्री से जगाकरकहा कि पृथ्वी के कहने से मुझे राजाकेनिमित्त अपनेपुत्रकी भेट भगवती को करनी है वीरवरके यहवचनसुनकर धर्मवती ने कहा कि स्वामीका हितकरना अवश्य उचितहै इससे तुम सत्त्ववरको जगाकर उससे कहो तब वीरवर ने सत्त्ववरको जगाकर उससे पृथ्वी के कहेहुए सम्पूर्ण वचन कहदिये पिताके यह वचन सुनकर उसबालकनेकहा कि हेतात मैं बडा पुण्यवानहूं जिसके प्राण स्वामी के कार्य्य में आवेंगे मैंने उसका अन्नखायाहै इससे मुझको उसके ऋणसे अवश्य शुद्धहोना चाहिये अब आप मुझे शीघ्रही लेचलकर भगवती के आगे मेरा बलिदानकरो सत्त्ववरके यह वचन सुनकर वीरवरने कहा कि तुम निस्सन्देह हमारेही पुत्रहो उनसबों के इसप्रकारके वचनोंको सुनकर बाहरखडेहुए राजाने अपने मनमेंकहा कि यहसब बडे सत्त्ववान्हैं तब वीरवर सत्त्ववरको गोदीमेंलेकर और धर्मवती सत्त्ववती कन्याको गोदी में लेकर दोनों वहासे भगवती के मंदिरको चले और राजाविक्रमतुंगभी छिपकर उनके पीछेचला भगवती के मंदिरमें पहुंचकर वीरवरकी गोदी मे उतरकर उस बालक सत्त्ववरने कहा कि हे भगवती मेरे मस्तकके बलिदानसे राजाविक्रमतुंग चिरजीवीहोय और अकंटकराज्यका भोगकरे पुत्रके यह वचन सुनकर वीरवरने सहसे उसका शिर काटकर भगवती के अर्पणकरके कहा कि इसबलिदानसे राजाकाकल्याणहोय (नास्त्यहोस्वामिभक्तानापुत्रेवात्मनिवास्पृहा) स्वामिभक्तोंको पुत्रमे अथवा अपने शरीरमें स्पृहा नहीं होतीहै उससमय यह आकाशवाणी हुई कि हे वीरवर तू धन्यहै जिसने अपने पुत्र के प्राणों के व्ययसे अपने स्वामीकी रक्षाकी इसआकाशवाणीको सुनकर और वीरवरके सम्पूर्ण का-

र्य्योंको देखकर राजाको बडा आश्चर्य्यहुआ तब वीरवरकी पुत्री वीरवती अपने भाई के शिरको आलिंगनकरके और चूमकर हा भाई यहशब्द कहके हृदयके फटनेसे मरगई कन्याको भी मरीहुई देख कर धर्मवतीने दीनहोके हाथ जोडकर वीरवर से कहा कि राजाका कल्याण तो आपकरचुके अबमुझे यह आज्ञादीजिये कि मैं इनदोनों मरेहुए बालकोंको लेकर अग्निमें भस्महोजाऊं जहाँ यह अज्ञान बालिका भी अपने भाईके शोकसे मरगई वहाँ दो सन्तानोंके नष्टहोजानेपर मेरेजीनेकी क्याशोभाहै उसके यहवचन सुनकर वीरवरने कहा कि ऐसाहीकरो पुत्रके शोकसे इससमय संसारमें तुमको कोई सुखनहीं है मैं तुम्हारे लिये चिताबनाये देताहूं यहकहकर उसने वहीं पडेहुए कुछकाष्ठसे चिताबनाकर और उसपर दोनों बालकोंके शरीर रखकर अग्नि बालदी तब धर्मवतीने वीरवरके चरणों में प्रणामकरके हे आर्यपुत्र दूसरे जन्ममें भी आपही मेरेपति हूजिये यहकहकर और राजाका कल्याण होय यह भी कहकर अग्निसे धकधकाती हुई उस चितामें शीतल तडाग के समान प्रवेश किया इस कृत्यको देख के राजा विक्रमतुंग ने विचारा कि मैं अब इनसे कैसे अनृण होसक्ताहूं तब वीरवर ने शोचा कि स्वामी का कार्य्य तो सिद्ध होगया क्योंकि साक्षात् आकाशवाणीही इसको प्रकट करगई और स्वामी के अन्नसे मेरा उद्धार भी होगया इससे मैं भी अपने बलिदान से भगवतीका पूजन करूं क्योंकि कुटुम्बके पोषणकेलिये सब प्रकारका उद्योगकरना अच्छा मालूमहोता है और अपनेही उदरभरने के लिये अकेलेकाजीना अशोभित मालूमहोता है इसप्रकार शोचकर उसने भगवतीकी यह स्तुति की कि हे भक्तों के अभयदेनेवाली भगवती तुमको नमस्कारहै संसाररूपी कीचमें फँसेहुए मुझ शरणागत का उद्धारकरो तुम सम्पूर्ण जीवोंकी प्राणशक्तिहो तुम्हारेही द्वारा यह सब संसार चेष्टा करताहै सृष्टिके आदिमें आपही उत्पन्नहुईं आपको श्री शिवजीने इसस्वरूपमें देखाथाकि करोडों सूर्य्य के समान देदीप्यमान तुम्हारातेजथा और खड्ग खेटक दंड बाण तथा त्रिशूलादिक शस्त्रधारी तुम्हारी भुजाओंसे सम्पूर्ण संसार व्याप्तहोरहाथा इसप्रकारसे तुम्हारे स्वरूपको देखकर श्री शिवजीने तुम्हारी यह स्तुति की थी कि हे चंडि हे चामुंडे हे मंगले हे त्रिपुरे हे जये हे अनशे हे शिवे हे दुर्गे हे नारायणि हे सरस्वति हे भद्रकालि हे महालक्ष्मि हे सिद्धे हे रुरुविदारिणि तुमको नमस्कारहै तुम्हींगायत्री महाराज्ञी रेवती, विन्ध्यवासिनी, उमाकात्यायनी तथा शर्वपर्व्वतवासिनी हो इत्यादिकनामोंमें श्रीशिवजीको स्तुतिकरते देखकर स्कन्द वशिष्ठ तथा ब्रह्मादिकदेवताओंने भी तुम्हारीस्तुतिकी थी और देवता मनुष्य तथा ऋषियोंको तुम्हारी स्तुतिकरनेसे मनोरथसे अधिक फलप्राप्तहुएथे और प्राप्तहोतेहैं इससे हे भगवती मेरे ऊपर प्रसन्न होकर मेरेशरीर का बलिदानलेकर मेरेस्वामी राजा का कल्याणकरो यह कहकर जैसेही उसने अपना शिरकाटनाचाहा वैसेही यह आकाशवाणीहुई कि हे पुत्र साहस न करो मैं तुम्हारे सत्त्वसे प्रसन्नहूं जोचाहो सो वरमांगो यह सुनकर वीरवर बोला कि हेभगवती जो आपमेरे ऊपर प्रसन्नहो तो राजा विक्रम तुंग सौवर्ष अधिकजिये और मेरी स्त्री कन्या तथा पुत्रजी उठें उसके इसप्रकार कहनेपर एवमस्तु यह शब्द मन्दिरसे सुनाई दिया और धर्मवती वीरवती तथा सत्त्ववर यह तीनों जीउठे तबवीरवर अत्यन्त प्रसन्न

होके उनसबको भगवतीकी कृपा सुनाकर और उनसबकोपरपर पहुंचाकर राजद्वारपरगया और राजा विक्रमतुंग भी इस सम्पूर्ण वृत्तान्तको प्रत्यक्ष देखकर अत्यन्त आश्चर्ययुक्तहोके छिपकर महलपर चढ़कर बोला कि फाटकपर कौनहै यह सुनकर वीरवरने कहा कि मैं हूं और आपकी आज्ञामें मैं उसस्त्रीके देखने को गयाथा परन्तु मुझे देखतेही वह किसी देवता के समान अन्तर्द्धानहोगयी उसके यहवचन सुनकर राजा विक्रमतुंगने अपने चित्तमें कहा कि यह कोई अपूर्व पुरुषहै जो ऐसे श्रेष्ठ अपूर्व कार्य्य को करके भी अपने मुखसे नहीं कहताहै इसने अपनी गंभीरतासे विशालतासे सत्त्वसे तथा स्थिरतासे समुद्रकोभी जीतलियाहै इसने परोक्षमें अपने पुत्रकेप्राणोंका व्ययकरके मेरे प्राणबचाये हैं अब मैं इस के साथ क्या प्रत्युपकारकरूं इसप्रकार से विचार करते २ राजाने वहरात्रि व्यतीतकी और प्रातःकाल सभामें सबके आगे वीरवरकासम्पूर्ण वृत्तान्तकहा और सम्पूर्ण सभासदों से प्रशंसाकियेगये वीरवरको बहुत से देश रत्न हाथी घोड़े तथा दशकरोड़ अशर्फीदेकर उसका रोजका वेतनदश गुणा करदिया और छत्र तथा चमर देकर उसे अपनेही समान राजा बनालिया तब वीरवर उस सम्पूर्ण ऐश्वर्य्यको पाकर और छत्र तथा चमरसेयुक्तहोके अपने कुटुम्बसमेत कृतकृत्यहोगया यह कथा कहकर गोमुखने नरवाहनदत्तसे फिरकहा कि हे स्वामी राजालोगोंको पुण्यके योगसे ऐसे कोई २ सेवक मिलते हैं जो स्वामी के निमित्त शरीरादिककी अपेक्षा न करके अपने सत्त्वसे दोनों लोकों को जीतते हैं यह प्रलम्बबाहु ब्राह्मणभी उसी प्रकारका मालूमहोता है क्योंकि इसकी चेष्टाही से सत्त्व तथा गुण लक्षितहोते हैं बुद्धिमान् गोमुखके यह उदारवचन सुनकर नरवाहनदत्त अपने चित्तमें अत्यन्त प्रसन्नहुआ १६७॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांअलङ्कारवतीलम्बकेतृतीयस्तरंग ३॥

इसप्रकारसे अपने पिताके यहां रहताहुआ गोमुखादिकप्रेमी अपने मन्त्रियों से सेवनकिया गया और मानरूपी विघ्नको न सहनेवाली अत्यन्तप्रेम से ईर्ष्यारहित अलङ्कारवतीके साथ विहारकरता हुआ नरवाहनदत्त एक समय रथपरचढ़के गोमुखादि मन्त्रियोंसमेत शिकारखेलनेको गया और वेगसे दौड़तेहुए रथके आगेही आगे पैदल दौड़ताहुआ प्रलम्बबाहु भी उसके साथगया वनमें नरवाहनदत्त ने तो रथपरसे बाणोंके द्वारा सिंह व्याघ्रादिकोंको मारा परन्तु प्रलम्बबाहुने पैदलही केवल खड्गहीसे अनेक सिंह व्याघ्रादिकमारे प्रलम्बबाहुके इस कृत्यको देखकर नरवाहनदत्त उसके पराक्रमकी और जंघाओंकेवेगकी अत्यन्त प्रशंसा करतारहा इसप्रकार शिकारखेलनेके उपरान्त नरवाहनदत्त शिकार के परिश्रमसे प्यासाहोके रथपरचढ़कर जलके निमित्त गोमुखको साथलेकर वहां से बहुतदूर एक दूसरे वनमें गया और प्रलम्बबाहुभी उसके साथही साथ दौड़ताहुआ चलागया वहां प्रफुल्लितसुवर्णके कमलोंसे युक्त एक दिव्य तड़ागमिला वह तड़ागऐसाथा मानो सूर्य्यके अनेक बिंबोंसे युक्त द्वितीय आकाशही था उस तड़ाग में स्नानकरके और जलपीके स्वस्थहुए नरवाहनदत्त को दिव्यवस्त्र तथा आभूषणपहरेहुए चारदिव्यपुरुष उसतड़ागमें कमलतोड़तेहुए दिखाईदिये और उनकेपास चलागया उन्होंने उसे देखकर प्रसन्नहोकर पूछा कि तुमकौनहो और क्या तुम्हारा नामहै उनके यह वचन सुनकर उसने

ग्योंको देखकर राजाको बडा आश्चर्य्यहुआ तब वीरवरकी पुत्री वीरवती अपने भाई के शिरको आलिंगनकरके और चूमकर हा भाई यहशब्द कहके हृदयके फटनेसे मरगई कन्याकोभी मरीहुई देखकर धर्मवतीने दीनहोके हाथ जोडकर वीरवर से कहा कि राजाका कल्याण तो आपकरचुके अबमुझे यह आज्ञादीजिये कि मैं इनदोनों मरेहुए बालकोंको लेकर अग्निमें भस्महोजाऊ जहाँ यह अज्ञान बालिका भी अपने भाईके शोकसे मरगई वहाँ दो सन्तानोके नष्टहोजानेपर मेरेजीनेकी क्याशोभाहै उसके यहवचन सुनकर वीरवरने कहा कि ऐसाहीकरो पुत्रके शोकसे इसइ समय संसारमे तुमको कोई सुखनहीं है मै तुम्हारे लिये चितावनाये देताहू यहकहकर उसने वहीं पडेहुए कुछकाष्ठसे चिताबनाकर और उसपर दोनो बालकोके शरीर रखकर अग्नि बालदी तब धर्मवतीने वीरवरके चरणों मे प्रणामकरके हे आर्यपुत्र दूसरे जन्ममें भी आपही मेरेपति हूजिये यहकहकर और राजाका कल्याण होय यह भी कहकर अग्निसे धकधकाती हुई उस चितामें शीतल तडाग के समान प्रवेश किया इस कृत्यको देख के राजा विक्रमतुग ने विचारा कि मैं अब इनसे कैसे अनृण होसक्ताहू तब वीरवर ने शोचा कि स्वामी का कार्य्य तो सिद्ध होगया क्योंकि साक्षात् आकाशवाणीही इसको प्रकट करगई और स्वामी के अन्नसे मेरा उद्धार भी होगया इससे मै भी अपने बलिदान से भगवतीका पूजन करू क्योकि कुटुम्बके पोषणकेलिये सब प्रकारका उद्योगकरना अच्छा मालूमहोता है और अपनेही उदरभरने के लिये अकेलेकाजीना अशोभित मालूमहोता है इसप्रकार शोचकर उसने भगवतीकी यह स्तुति की कि हे भक्तो के अभयदेनेवाली भगवती तुमको नमस्कारहै संसाररूपी कीचमे फॅसेहुए मुझ शरणागत का उद्धारकरो तुम सम्पूर्ण जीवोंकी प्राणशक्तिहो तुम्हारेही द्वारा यह सब संसार चेष्टा करताहै सृष्टिके आदिमें आपही उत्पन्नहुई आपको श्री शिवजीने इसस्वरूप में देखाथाकि करोडो सूर्य्य के समान देदीप्यमान तुम्हारातेजथा और खड्ग खेटक दड बाण तथा त्रिशूलादिक शस्त्रधारी तुम्हारी भुजाओसे सम्पूर्ण संसार व्याप्तहोरहाथा इसप्रकारसे तुम्हारे स्वरूपको देखकर श्री शिवजीने तुम्हारी यह स्तुति की थी कि हे चंडि हे चामुंडे हे मंगले हे त्रिपुरे हे जये हे अनगे हे शिवे हे दुर्गे हे नारायणि हे सरस्वति हे भद्रकालि हे महालक्ष्मि हे सिद्धे हे रुरुविदारिणि तुमको नमस्कारहै तुम्हींगायत्री महाराज्ञी रेवती, विन्ध्यवासिनी, उमाकात्यायनी तथा शर्वपर्व्वतवासिनी हो इत्यादिकनामोंमे श्रीशिवजीको स्तुतिकरते देखकर, स्कन्द वशिष्ठ तथा ब्रह्मादिकदेवताओने भी तुम्हारीस्तुतिकी थी और देवता मनुष्य तथा ऋषियोंको तुम्हारी स्तुतिकरनेसे मनोरथसे अधिक फलप्राप्तहुएथे और प्राप्तहोतेहै इससे हे भगवती मेरे ऊपर प्रसन्न होकर मेरेशरीर का बलिदानलेकर मेरेस्वामी राजा का कल्याणकरो यह कहकर जैसेही उसने अपना शिरकाटनाचाहा वैसेही यह आकाशवाणीहुई कि हे पुत्र साहस न करो मै तुम्हारे सत्त्वसे प्रसन्नहू जोचाहो सो वरमागो यह सुनकर वीरवर बोला कि हेभगवती जो आपमेरे ऊपर प्रसन्नहो तो राजा विक्रम तुग सौवर्ष अधिकजिये और मेरी स्त्री कन्या तथा पुत्रजी उठे उसके इसप्रकार कहनेपर एवमस्तु यह शब्द मन्दिरसे सुनाई दिया और धर्मवती वीरवती तथा सत्त्ववर यह तीनों जीउठे तबवीरवर अत्यन्त प्रसन्न

होके उनसबको भगवतीकी कृपा सुनाकर और उनसबकोघरपर पहुँचाकर राजद्वारपरगया और राजा विक्रमतुंग भी इस सम्पूर्ण वृत्तान्तको प्रत्यक्ष देखकर अत्यन्त आश्चर्ययुक्तहोके छिपकर महलपर चढ कर बोला कि फाटकपर कौनहै यह सुनकर वीरवरने कहा कि मैं हूं और आपकी आज्ञासे मैं उसस्त्रीके देखने को गयाथा परन्तु मुझे देखतेही वह किसी देवता के समान अन्तर्द्धानहोगयी उसके यहवचन सुनकर राजा विक्रमतुंगने अपने चित्तमें कहा कि यह कोई अपर्व पुरुषहै जो ऐसे श्रेष्ठ अपूर्व कार्य्य को करके भी अपने मुखसे नहीं कहताहै इसने अपनी गभीरतासे निर्मलतासे सत्त्वसे तथा स्थिरतासे समुद्रकोभी जीतलियाहै इसने परोक्षमें अपने पुत्रकेप्राणोंका व्ययकरके मेरे प्राणबचाये हैं अब मैं इस के साथ क्या प्रत्युपकारकरूं इसप्रकार से विचार करते २ राजाने वहरात्रि व्यतीतकी और प्रातःकाल सभामें सबके आगे वीरवरकासम्पूर्ण वृत्तान्तकहा और सम्पूर्ण सभासदों से प्रशंसाकियेगये वीरवरको बहुत से देश रत्न हाथी घोडे तथा दशकरोड अशर्फीदेकर उसका रोजका वेतनदश गुणा करदिया और छत्र तथा चमर देकर उसे अपनेही समान राजा बनालिया तब वीरवर उस सम्पूर्ण ऐश्वर्य्यको पाकर और छत्र तथा चमरसेयुक्तहोके अपने कुटुम्बसमेत कृतकृत्यहोगया यह कथा कहकर गोमुखने नरवाहनदत्तसे फिर कहा कि हे स्वामी राजालोगोंको पुण्यके योगसे ऐसे कोई २ सेवक मिलते हैं जो स्वामी के निमित्त शरीरादिककी अपेक्षा न करके अपने सत्त्वसे दोनों लोकों को जीतते हैं यह प्रलम्बबाहु ब्राह्मणभी उसी प्रकारका मालूमहोता है क्योंकि इसकी चेष्टाहीसे सत्त्व तथा गुण लक्षितहोते हैं बुद्धिमान् गोमुखके यह उदारवचन सुनकर नरवाहनदत्त अपने चित्तमें अत्यन्त प्रसन्नहुआ १६७॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांअलङ्कारवतीलम्बकेतृतीयस्तरङ्गः ३॥

इसप्रकारसे अपने पिताके यहां रहताहुआ गोमुखादिकप्रेमी अपने मन्त्रियों से सेवनकिया गया और मानरूपी विघ्नको न सहनेवाली अत्यन्तप्रेम से ईर्ष्यारहित अलंकारवतीके साथ विहारकरता हुआ नरवाहनदत्त एक समय रथपरचढके गोमुखादि मन्त्रियोंसमेत शिकारखेलनेको गया और वेगसे दौडतेहुए रथके आगेही आगे पैदल दौडताहुआ प्रलम्बबाहु भी उसके साथगया वनमें नरवाहनदत्त ने तो रथपरसे बाणोंके द्वारा सिंह व्याघ्रादिकोंको मारा परन्तु प्रलम्बबाहुने पैदलही केवल खड्गहीसे अनेक सिंह व्याघ्रादिकमारे प्रलम्बबाहुके इस कृत्यको देखकर नरवाहनदत्त उसके पराक्रमकी और जंघाओंकेवेगकी अत्यन्त प्रशंसा करतारहा इसप्रकार शिकारखेलनेके उपरान्त नरवाहनदत्त शिकार के परिश्रमसे प्यासाहोके रथपरचढकर जलके निमित्त गोमुखको साथलेकर वहां से बहुतदूर एक दूसरे वनमें गया और प्रलम्बबाहुभी उसके साथही साथ दौडताहुआ चलागया वहां प्रफुल्लितसुवर्णके कमलोंसे युक्त एक दिव्य तडागमिला वह तडागऐसाथा मानो सूर्य्यके अनेक बिंबोंसे युक्त द्वितीय आकाशही था उस तडाग में स्नानकरके और जलपीके स्वस्थहुए नरवाहनदत्त को दिव्यवस्त्र तथा आभूषणपहरेहुए चारदिव्यपुरुष उसतडागमें कमलतोडतेहुए दिखाईदिये और उनकेपास वहगया उन्होंने उसे देखकर प्रसन्नहोकर पूछा कि तुमकौनहो और क्या तुम्हारा नामहै उनके यह वचन सुनकर उसने

सब अपना वृत्तान्तकहदिया और उनकेभी नाम तथा उनकासब वृत्तान्तपूछा तब यह बोले कि,समुद्रके बीचमें,नारिकेलिनाम एक महासुन्दरद्वीपहै उसमें मैनाक वृषभ बलाहक तथा चक्रनाम दिव्यपर्व्वत हैं उन्हींचारोंपर हमचारोंरहतेहैं हममें से एकका नाम रूपसिद्धि है जो अनेकप्रकारके रूपधारण करसक्ताहै एकका नाम प्रमाण सिद्धिहै जो वडे तथा सूक्ष्मप्रमाणोंको देखसक्ताहै एकका नाम ज्ञानसिद्धि है जोभूत भविष्य वर्त्तमान तीनों कालोंकी बात जानसक्ताहै और एकका नाम देवसिद्धि है जिसे सम्पूर्ण देवता सिद्धहैं इससमय,हमचारों सुवर्ण के कमलोको लेकर श्वेतद्वीपमें श्रीविष्णुभगवान्का पूजन करनेको जातेहैं हम उन्हीं के भक्तहैं उन्हींकी कृपासे अपने २ पर्व्वतोंपर हमारा राज्यहै और सम्पूर्ण सिद्धि तथा सम्पत्ति हमे प्राप्तहुईहै हे मित्र तुम्हारी इच्छाहोय तो तुमभी चलकर श्वेतद्वीपमें विष्णुभगवान् के दर्शन करो हम तुमको आकाशमार्ग से वहा लेचलेंगे उनके यहवचन सुनकर नरवाहनदत्त उसीक्षण में गोमुखादिकोंको छोडकर देवसिद्धिकी गोदीमें चढकर श्वेतद्वीपकोगया वहा आकाशसे उतरकर दूरहीसे नरवाहनदत्तने विष्णुभगवान्के दर्शन किये उनके निकट वामभागमें लक्ष्मीजी बैठीथीं चरणों के निकट मूर्त्तिमती पृथ्वी विराजमानथी मूर्त्तिधारी शख चक्र गदा तथा पद्म,यहचारो उनका सेवन कररहे थे नारदादिक महर्षि तथा गन्धर्व भक्ति पूर्व्वक उनकी स्तुति गारहेथे देवता सिद्ध तथा विद्याधर लोग उन्हें प्रणाम कररहेथे और गरुड उनके आगे बैठे थे इसप्रकारसे शेष शय्यापर विराजमान विष्णुभगवान्के निकट नरवाहनदत्त उनचारो के साथगया ठीकहै (कस्यनाभ्युदयेहेतुर्भवेत्साधुसमागम) साधुओंके समागमसे किसका कल्याण नहींहोताहै २७ तब देवपुत्रो के पूजनकरने के उपरान्त नरवाहनदत्त ने विष्णुभगवान्की यहस्तुतिकी कि हे भगवन् लक्ष्मीरूपी कल्पलतासे आलिंगन कियेगये भक्तोंके,कल्पवृक्ष अभीष्ट वरदायी आपको नमस्कारहै सज्जनों के मनरूपी मानसमे निवासकरनेवाले पराकाशमें विहार करनेवाले आपको नमस्कारहै सबसे अलग और सबके अभ्यन्तरमें रहनेवाले सर्व्व गुणातीत और सर्वगुणाधार आपको नमस्कारहै आपके नाभिकमलमें मृदुध्वनि से स्वाध्याय करतेहुए ब्रह्माजी भ्रमरके समान शोभितहोते हैं विद्वान् लोग,पृथ्वीको आपके चरण आकाशको शिर दिशाओं को कर्ण सूर्य्य चन्द्रमाको नेत्र और ब्रह्माण्डको उदर वर्णनकरते हैं तेजोमय आपही से जाज्वल्यमान अग्निसे पतगोंके समान सम्पूर्ण भूत उत्पन्नहोते हैं और प्रलयके समय सायंकालमे जैसे सम्पूर्ण पक्षी बसेरेके वृक्षमें जातेहैं उसीप्रकार सम्पूर्ण भूत आपहीमें प्रवेश करते हैं जैसे समुद्रसे लहरें उठती हैं उसी प्रकार आपहीके अशोंसे सम्पूर्ण भुवनों के स्वामी उत्पन्नहोते हैं आप विश्वरूपहोकरभी रूपसे रहितहो आप सम्पूर्ण ससारको उत्पन्नभी करतेहो परन्तु क्रियासे रहितहो आप सम्पूर्ण ससारके आधारहो परन्तु आपका कोई आधार नहींहै आपके तत्त्वको कोई नहीं जानसक्ता है आपहीकी कृपासे सम्पूर्ण देवताओंको अनेकप्रकारके ऐश्वर्य्य प्राप्तहोते हैं इससे प्रसन्नहोकर मुझ शरणागतको भी कृपादृष्टिसे देखिये इसप्रकार उसकी स्तुतिको सुनकर विष्णुभगवान् ने उसे कृपादृष्टिसे देखकर नारद से कहा कि जाओ जो क्षीरसमुद्रमे उत्पन्नहुई श्रेष्ठ अप्सरायें मैने इन्द्रको सौंपीथीं उनसबको मेरे कहने से उसीके रथपर च

ढाकर मेरे पास लेआओ भगवान्की यहआज्ञा पाके नारदजी इन्द्रके पास जाकर सम्पूर्ण अप्सराओंको रथपर चढाकर मातली समेत आये रथसे उतरकर प्रणाम करती हुई उनअप्सराओंको देखकर विष्णु भगवान्ने नरवाहनदत्तसे कहा कि हे पुत्र इनअप्सराओंको तुमलो विद्याधरों के भावी चक्रवर्त्ती तुमको मैंने यहदीहैं तुम इनके योग्य पतिहो और यहतुम्हारे योग्य स्त्री है क्योंकि श्री शिवजीकी कृपा मे उत्पन्न हुए तुम कामदेवके अवतारहो यहसुनकर प्रसन्नहोकर नरवाहनदत्तके प्रणामकरनेपर विष्णुभगवान् ने मातलिसे कहा कि तुम नरवाहनदत्तको इनसब अप्सराओं समेत जिसमार्गसे यहआहे उसी मार्गहोकर इसके स्थानपर भेजआओ भगवान्के इसप्रकार आज्ञा देनेपर नरवाहनदत्त उनको नमस्कारकरके और अप्सराओंको लेकर देवपुत्रोंके साथ इन्द्र के रथपरचढा और उसकी आज्ञासे मातलि नारिकेलि द्वीपमें रथको लाया वहाँ रूप सिद्धादिक चारों देवपुत्रोंने नरवाहनदत्तका तथा मातलिका बडा सत्कार किया तदनन्तर मैनाक वृषभादि चारो पर्व्वतोपर नरवाहनदत्तने उनअप्सराओं के साथ रमण किया और वसन्तके आगमनसे प्रफुल्लित पुष्पोंके उद्यानोमें विहारकिया उनसम्पूर्ण देवपुत्रोंने उसे अपने २ उपवन दिखाकर कहा कि देखिये यहवृक्षोंकी मजरी प्रफुल्लित पुष्परूपी नेत्रोंसे मानो आतेहुए अपने कान्त वसन्तको देखरही हैं देखिये हमारे जन्म क्षेत्रमें सूर्य्यकी किरणोंका सन्ताप न पहुंचे इसीलिये मानो प्रफुल्लित कमलों ने तडागको आच्छादित किया है देखो जैसे नीच धनवान्को साधूलोग त्यागकर देतेहैं उसीप्रकार सुगन्ध रहित कनेरके पास जाकरभी भ्रमर लौट आतेहैं देखिये किन्नरियोंके गीतों से कोकिलाओंके कूजनेसे और भ्रमरोंके गुंजार शब्दोंसे ऋतुराज वसन्तका मङ्गलगान होरहाहै इत्यादि वचन कहकर देवपुत्रों ने नरवाहनदत्तको अपने २ उपवन दिखाके पुरों में लेजाके वसन्तका उत्सव दिखाया और पुरस्त्रियो के चरचरी गीत सुनाये इसप्रकारसे नरवाहनदत्त ने अप्सराओं समेत वहा के दिव्य ऐश्वर्य्यों का भोगकिया ठीक है (सुकृतोयत्रगच्छन्तितत्रैपासृद्धयोगत) पुण्यात्मा लोग जहा२ जाते हैं वहां २ उनके आगे २ समृद्धियाभी जाती हैं इसप्रकार वहाँ तीन चार दिन रहकर नरवाहनदत्त ने अपने मित्र उनचारो देवपुत्रों से कहा कि अब मै अपनी पुरीको जाऊंगा क्योंकि मुझे अपने पिता के देखनेकी बडी उत्कण्ठाहै आप लोगभी चलकर उसपुरी को कृतार्थ कीजिये यहसुनकर उन्होंने कहा कि उसपुरी के साररूप आपकोही जब हमने देखलिया तब और वहां देखने को क्याहै जब आपको विद्या प्राप्तहोय तब हमारा स्मरण कीजियेगा इसप्रकार उनके वचन सुनकर और आज्ञालेकर नरवाहनदत्तने मातलिसे कहा कि जिस दिव्यतडाग के निकट गोमुखादिकहैं उसी मार्ग मे मुझेलेचलो उसकी यह आज्ञापाकर मातलि अप्सराओं समेत नरवाहनदत्त को रथपरचढाकर उसी दिव्यतडागके निकट ले आया वहा नरवाहनदत्त ने गोमुख से कहा कि शीघ्रही रथपरचढके कौशाम्बी को आओ वहीं मै तुम से सब वृत्तान्त कहूंगा उनसे यह कहकर नरवाहनदत्त वहा से शीघ्रही इन्द्रके रथके द्वारा कौशाम्बी मे आया और वहा आकाश से उतरकर मातलिको विदाकरके अप्सराओं को साथलेकर अपने मन्दिर में गया और अप्सराओं को वहीं बैठाकर उसने राजमन्दिर मे जाके अपने

सब अपना वृत्तान्तकहदिया और उनके भी नाम तथा उनकासब वृत्तान्तपूछा तब वह बोले कि,समुद्रके बीचमें,नारिकेलिनाम एक महासुन्दरद्वीपहै उसमें मैनाक वृषभ वलाहक तथा चक्रनाम दिव्यपर्व्वत हैं उन्हींचारोंपर हमचारोंरहतेहैं हममें से एकका नाम रूपसिद्धि है जो अनेकप्रकारके रूपधारण करसक्ताहै एकका नाम प्रमाणसिद्धिहै जो बड़े तथा सूक्ष्मप्रमाणोंको देखसक्ताहै एकका नाम ज्ञानसिद्धि है जो भूत भविष्य वर्त्तमान तीनों कालोंकी बात जानसक्ताहै और एकका नाम देवसिद्धि है जिसे सम्पूर्ण देवता सिद्धहैं इससमय,हमचारों सुवर्ण के कमलोंको लेकर श्वेतद्वीपमें,श्रीविष्णुभगवान्का पूजन करनेको जातेहैं हम उन्हीं के,भक्तहैं उन्हींकी कृपासे अपने २ पर्व्वतोंपर हमारा राज्यहै और सम्पूर्ण सिद्धि तथा सम्पत्ति हमे प्राप्तहुईहै हे मित्र तुम्हारी इच्छाहोय तो तुमभी चलकर श्वेतद्वीपमें विष्णुभगवान्के दर्शन करो हम तुमको आकाशमार्ग से वहां लेचलेंगे उनके यहवचन सुनकर नरवाहनदत्त उसीवन में गोमुखादिकोंको छोड़कर देवसिद्धिकी गोदीमें चढ़कर श्वेतद्वीपकोगया,वहां आकाशसे उतरकर दूरहीसे नरवाहनदत्तने विष्णुभगवान्के दर्शन किये उनके निकट वामभागमें लक्ष्मीजी बैठीथीं चरणों के निकट मूर्त्तिमती पृथ्वी विराजमानथी मूर्त्तिधारी शंख चक्र गदा तथा पद्म,यहचारों उनका सेवन करहे थे नारदादिक महर्षि तथा गन्धर्व भक्ति पूर्व्वक उनकी स्तुति गारहेथे देवता सिद्ध तथा विद्याधर लोग उन्हें प्रणाम कररहेथे और गरुड़ उनके आगे बैठे थे इसप्रकारसे शेष शय्यापर विराजमान विष्णुभगवान्के निकट नरवाहनदत्त उनचारों के साथगया ठीकहै (कस्यनाभ्युदयेहेतुर्भवेत्साधुसमागमः) साधुओंके समागमसे किसका कल्याण नहींहोताहै २७ तब देवपुत्रों के पूजन करनेके उपरान्त नरवाहनदत्त ने विष्णुभगवान्की यहस्तुतिकी कि हे भगवन् लक्ष्मीरूपी कल्पलतामें आलिंगन कियेगये भक्तोंके कल्पवृक्ष अभीष्ट वरदायी आपको नमस्कारहै सज्जनों के मनरूपी मानसमें निवासकरनेवाले पराकाशमें विहार करनेवाले आपको नमस्कारहै सबसे अलग और सबके अभ्यन्तरमें रहनेवाले सर्वगुणातीत और सर्वगुणाधार आपको नमस्कारहै आपके नाभिकमलमें मृदुध्वनि से स्वाध्याय करतेहुए ब्रह्माजी भ्रमरके समान शोभितहोते हैं विद्वान् लोग पृथ्वीको आपके चरण आकाशको शिर दिशाओं को कर्ण सूर्य्य चन्द्रमाको नेत्र और ब्रह्माण्डको उदर वर्णनकरते हैं तेजोमय आपही से जाज्वल्यमान अग्निसे पतंगोंके समान सम्पूर्ण भूत उत्पन्नहोते हैं और प्रलयके समय सायंकालमें जैसे सम्पूर्ण पक्षी बसेरेके वृक्षमें जातेहैं उसीप्रकार सम्पूर्ण भूत आपहीमें प्रवेश करते हैं जैसे समुद्रमें लहरें उठती हैं उसी प्रकार आपहीके अंगोंसे सम्पूर्ण भुवनों के स्वामी उत्पन्नहोते हैं आप विश्वरूपहोकरभी रूपसे रहितहो आप सम्पूर्ण संसारको उत्पन्नभी करतेहो परन्तु क्रियासे रहितहो आप सम्पूर्ण संसारके आधारहो परन्तु आपका कोई आधार नहींहै आपके तत्त्वको कोई नहीं जानसक्ताहै आपहीकी कृपासे सम्पूर्ण देवताओंको अनेकप्रकारके ऐश्वर्य्य प्राप्तहोते हैं इससे प्रसन्नहोकर मुझ शरणागतको भी कृपादृष्टिसे देखिये इसप्रकार उसकी स्तुतिको सुनकर विष्णुभगवान् ने उसे कृपादृष्टिसे देखकर नारद से कहा कि जाओ जो क्षीरसमुद्रमें उत्पन्नहुई श्रेष्ठ अप्सरायें मैंने इन्द्रको सौंपीथीं उनसबको मेरे कहने से इसीके स्वाधीन

वीर तथा सत्त्ववान् एक वैश्य रहताथा वह रोजगारके लिये एकसमय जहाजपर चढकर सुवर्णद्वीप को चला, समुद्र मे चलते २ जब सुवर्णद्वीप कुछ दूर वाकीरहा तब घोर मेघों से सम्पूर्ण आकाश आच्छादित होगया और प्रचण्डवायु चलनेलगी इससे समुद्रकी लहरों के द्वारा जहाज उछलनेलगा और समुद्रकी मछलियों की टक्करों मे टूटगया जहाज के टूटजानेपर समुद्रशूर कमरबांधके समुद्र मे कूदा और जैसेही भुजाओं के बलसे कुछ दूरतक पैरा, वैसेही एक मृतक समुद्र मे बहताहुआ उसे मिलगया उसपर चढकर वह अनुकूल वायु के द्वारा सुवर्णद्वीप मे पहुँचगया वहा उतरकर, उसने उस मरेहुए मनुष्य की कमरमें बँधीहुई सांडी में एक गाठ देखी, उस गाठ के खोलने से उसे एक रत्नजटित कण्ठा मिला उसे देखकर उसने अपने खोयेहुए धनको तुच्छ जाना और प्रसन्नतापूर्वक स्नान करके कलशपुर नाम नगर मे पहुँचकर हाथ में उस कण्ठेको लियेहुए वह एक देवमन्दिर में गया वहा छाया में बैठने से थकेहुए उसको भाग्यवश से निद्रा आगई उस समय अकस्मात् पुर रक्षकों ने वहा आकर उसके हाथमे कण्ठा देखकरकहा, कि राजपुत्रीका जो कण्ठाखोयाथा, वह यही है और इस का चुरानेवाला भी यही है बहुत दिनमे ढूंढनेपर मिलाहै यहकहकर वहलोग उसे नगरके राजाकेपास लेगये वहा राजाके पूछनेपर उस समुद्रशूर वैश्यने सम्पूर्ण सत्य २ वृत्तान्त कहदिया उस वृत्तान्त को सुनकर राजानेकहा कि यह मिथ्याबोलताहै निस्सन्देह यहचोरहै देखो यह वही कण्ठाहै यहकहकर जैसेही राजा सभासदोको वह कण्ठा दिखानेलगा वैसेही उसको चमकताहुआ देखकर एकगिद्ध आकाश से उतरकर उसे लेगया तब अत्यन्त दुखीहोके शिवजीको शरणके लिये पुकारतेहुए उस वैश्यको मारने के लिये क्रोधकरके राजाने आज्ञादेदी उससमय यह आकाशवाणीहुई कि हे राजा इसेमतमारो यह हर्षपुरसे साधु समुद्रशूर नाम वैश्य तुम्हारे देशमें आयाहै, जिसचोरने कण्ठा चुरायाथा वह पुररक्षको के भयसे समुद्रमें गिरकर रात्रिके समय मरगया जहाजके टूटजाने से यह वैश्य उसीपर चढकर यहांआया और उसीकी कमरमें बँधीहुई सांडी में से यहकण्ठा इसको मिलाथा इससे आप इस धर्मात्मा वैश्य को कुछ धनदेकर छोडदीजिये इस आकाशवाणीको सुनकर राजाने उसे धनदेकर छोडदिया उसधनको पाकर समुद्रशूर कुछ अन्य वैश्यों के साथ जहाजमें चढ़के समुद्रके पारआया वहासे कई दिन चलकर एक दिन सायकालके समय वह सम्पूर्ण वणियोके साथ किसी वनमे टिका वहा रात्रिके समय सब के सोजानेपर केवल समुद्रशूरही जागतारहा उससमय बहुतसे डाकूचोर वहाआकर सबको लूटनेलगे तब समुद्रशूर भागकर छिपकर एक वरगदके वृक्षपर चढगया और सब धन लेकर चोरो के चलेजानेपर वह भयसे रात्रिभर उसी वृक्षपर बैठारहा प्रातःकाल उसवृक्षके उपर उसे पत्तों के बीचमे दीपककीसी ज्योति दिखाईदी तब आश्चर्य से वहा चढकर एकगिद्धके घोंसले में बहुतसे रत्नजटित आभूषण उसको मिले उसमें वह कण्ठाभी था जो उसने सुवर्णद्वीपमे पायाथा और जिसे एक गिद्ध हरलेगयाथा उन सम्पूर्ण आभूषणोंको लेकर समुद्रशूर वृक्षसे उतरकर क्रमसे आनन्दपूर्वक अपने हर्षपुरमें पहुंचा और वहा उन आभूषणों के अमितधनमे अन्य धनकी अभिलाषा छोडकर अपने मित्रो के साथ सुखपूर्वकरहा

पिता राजा उदयन् तथा अपनी माता वासवदत्ता और पद्मावती के चरणो मे प्रणामकिया इतनेही में रथपरचढाहुआ गोमुख भी प्रलवबाहु समेत वहा आगया तव नरवाहनदत्त ने अपने पिताकी आज्ञा से सब मन्त्रियों के आगे श्वेतद्वीपका सब वृत्तान्त कहा उस वृत्तान्तको सुनकर सबने कहा (ददातितस्य कल्याण मित्रसयोगमीश्वर इच्छत्यनुग्रहयस्य कर्त्तुसुकृतकर्मण) परमेश्वर जिस पुण्यात्मापर अनुग्रह कियाचाहताहै उसका सन्मित्रो से सयोग करादेताहै इतने मे गोमुख उन अप्सराओ को वत्सराजके आगे प्रणामकराने को लाया देवरूपा, देवरति, देवमाला तथा देवप्रियानाम उन चारों अप्सराओं को देख कर उदयन् ने बहुतप्रसन्नहोके नरवाहनदत्तपर विष्णुभगवान् की कृपाजानकर बडा उत्सवकिया उस समय कहाँ अप्सरा और कहाँ मै नरवाहनदत्त ने मुझे पृथ्वी मे ही स्वर्गबनादिया यह विचारकर मानो आनन्द से कौशाम्बीपुरी चचल पताकारूपी अपने हाथो को फैला २ कर नाचनेलगी इसके उपरान्त नरवाहनदत्त अपने पिताके यहा से अपनी सम्पूर्ण रानियो के पास गया वह चारही दिन में अत्यन्त दुर्बलहोगई थीं उनकी विरहवेदना को सुनकर नरवाहनदत्त उनके प्रेमपर अत्यन्त प्रसन्नहुआ उससमय गोमुख ने वनवास मे घोडे, तथा रथकी रक्षाकरनेवाले प्रलवबाहुकी सिहादि जीवों के मारनेकी बडी प्रशसाकी इत्यादि अन्य अनेक वार्त्ताओ को सुनताहुआ अपनी रानियो के मनोहररूप को देखता हुआ मधुर वचनो से हास्यकरताहुआ और मद्यपान करताहुआ नरवाहनदत्त कुछ दिन सुखपूर्वक वहींरहा ८२ एकसमय अलकारवती के मन्दिर में बैठे हुए नरवाहनदत्त ने बाहर नगाडोंका शब्दसुन कर अपने सेनापति हरिशिख से पूछा कि यह अकस्मात् नगाडोंका शब्द क्यो होरहाहै यह सुनकर उसने बाहरजाके सम्पूर्ण वृत्तान्त जानके भीतरआकर कहा कि रुद्रनाम एक वैश्य इस नगरी मे रहताहै वह यहा से रोजगारकरने के लिये सुवर्णद्वीप मे गयाथा लौटतेसमय जहाज के टूटने से उसका सम्पूर्ण धन नष्टहोगया केवल वही अकेला बचकर समुद्र के किनारे बहकर आगया आज उसे छ दिन इस नगरी में आयेहुए व्यतीतहुए इन दिनो मे भाग्यवश से अत्यन्त दुःखी रुद्र को अपनेही बाग मे बहुतमी निधि मिलगयी यह बात उसके गोत्री भाइयों ने वत्सराज उदयन् से कहदीनी और आज उसने आपही राजद्वार में आकर महाराज से कहा कि मुझे बहुत से रत्नोसमेत चार करोड अशर्फिया अपने बाग में मिली हैं यदि आपकी आज्ञाहोय तो लाकर आप के अर्पणकरू उसके यह वचन सुनकर वत्सराज ने कहा कि परमेश्वर ने तेरा समुद्र में सब धन नष्टहुआ देखके तुझे दीनजानकर यह धन दियाहै इसे कौन मूर्ख लेनाचाहैगा जाओ यथेच्छभोगकरो महाराजकी यह आज्ञापाकर वह वैश्य उनको प्रणामकरके हर्ष से नगाडे बजवाताहुआ अपने घरको जा रहाहै हरिशिख के यह वचन सुनके नरवाहनदत्त ने अपने पिता के धर्मकी प्रशसाकरके आश्चर्य्यपूर्वक अपने मन्त्रियो से कहा कि ब्रह्मा जब धनको हरता है तो पीछे मे उसे देना क्यों है वह मानो मनुष्यों के उदय तथा हानि से क्रीडा किया करताहै यह सुनकर गोमुख ने कहा कि ब्रह्माकी ऐसीही गति है इसबातपर मै आपको समुद्रशूरकी कथा सुनाताहू राजा हर्षवर्मा के बडे सुन्दर हर्षपुर नाम नगर मे समुद्रशूर नाम बडा धनवान् कुलीन धर्मात्मा

उसने यह विचारकरके कि इसनिरर्थक जीतेहुए भी मरेहुएके समान मेरे शरीरसे क्या प्रयोजनहै यातो मैं इस शरीरको भगवतीके आगे त्यागदूंगा वा यथेच्छवरलूंगा यह निश्चय करके वह विन्ध्यवासिनी के आश्रम में कुशाके आसनपर निराहारहोके घोरतप किया तपसे प्रसन्नहुई भगवती ने प्रसन्न होकर स्वप्नमें उससे कहा कि हे पुत्र मैं तुम्हारे ऊपर प्रसन्नहूं बताओ मैं तुमको अर्थश्रीदूं या भोगश्रीदूं यह सुनकर यशोवर्मा ने कहा कि मैं इन दोनोका भेद अच्छीतरहसे नहीं जानताहूं तब भगवतीने कहा कि तुम्हारे देशमे जो अर्थवर्मा और भोगवर्मानाम दो वैश्यहैं उनकीलक्ष्मी जाकर देखो उनमें से जिसकी लक्ष्मी तुम्हें अच्छीलगे वही आकर मुझसे मागना यह सुनकर यशोवर्मा जगकर प्रातःकाल पारण करके कौतुकपुर नाम अपने देशमे आया १६७ वहां आकर वहपहले सुवर्ण तथा रत्नादिके व्यवहारसे असंख्यधनके उपार्जन करनेवाले अर्थवर्मा के घरमे जाकर उसकी सम्पूर्ण संपत्तिको देखताहुआ उसके पास गया अर्थवर्माने उसका बडा आदरसत्कार करके उसे घृत सहित मासके बहुत उत्तम २ भोजन कराये और आप दो तोले घी सत्तू थोडासा भात तथा थोडासा मासका रसखाया उसके बहुत थोडे भोजनको देखकर यशोवर्माने पूछा कि साहजी क्या तुम इतनाही खातेहो यह सुनकर उसने कहा कि आज तुम्हारे साथके कारण थोडासा मास तथा भात और दो तोले घी खालियाहै रोज तो मैं एक तोले घी तथा केवल सत्तू खाताहूं क्योंकि इससे अधिक मुझ मन्दाग्नि वालेको पचताही नहीं है यह सुनकर यशोवर्मा ने अपने चित्तमें अर्थवर्माकी व्यर्थ लक्ष्मीकी बडी निन्दाकी तदनन्तर रात्रिके समय अर्थवर्मा ने यशोवर्माको दूधभात खिलवाया और आप केवल चारपैसेभर दूधपिया इसके उपरान्त अर्थवर्मा और यशोवर्मा दोनों एकही स्थानमें जुदे २ पलंगोपर सोये अर्धरात्रिके समय यशोवर्मा ने स्वप्नमे देखा कि थोडेसे भयंकर पुरुष दंडों को हाथमे लियेहुए वहां आये और तूने एकतोले घी मास भात तथा चार पैसेभर दूध रोजसे अधिक क्यों खाया यह कहके अर्थवर्माके पैरपकडकर सोंनिके लाठियोंसे मारनेलगे और जितना उसने अधिक भोजन कियाथा वह सब उसकेउदरसे निकालकर लेगये यह स्वप्न देखकर जैसेही यशोवर्मा उठा वैसेही अर्थवर्माके पेटमे शूलउठा और सेवकोंके द्वारा उदर मलानेसे उसको वमन होगया वमन से जब उसका शूल शान्त होगया तब यशोवर्माने सोचा कि इस अर्थश्रीको धिक्कारहै जिसका भोग ऐसा कठिनहै इसका तो न होनाही अच्छाहै यह सोचकर यशोवर्मा वह रात्रि वहीं व्यतीत करके प्रातःकाल अर्थवर्मा से पूछकर भोगवर्माके यहां गया भोगवर्मा ने उसका बडा अतिथि सत्कारकरके कहा कि आज आप हमारेही यहां भोजन करियेगा उसके यहां आभूषण वस्त्र तथा गृहके सिवाय और कुछ भी सम्पत्ति नथी उसने उसी समय किसी अन्यसे धन उधार लेकर किसी दूसरेको उधार देदिया उसी व्यवहारमें उसको थोडीसी अशर्फी मिलीं वह अशर्फियां उसनेअपने नौकरके हाथ अपनी स्त्रीके पास भोजनकी सामग्री इकट्ठी करनेको भेजी इतनेही में इन्द्राभरणनाम उसके एक मित्रने आकर उससे कहा कि चलो भोजन तैयार है आज हमारेही यहां भोजन करना होगा सब मित्र बैठेहुए तुम्हारी प्रतीक्षा करहे हैं यह सुनकर भोगवर्मा ने कहा कि आज हमारे यहां

पहले समुद्रमें गिरना, सबधनका नष्टहोजाना, फिर मुर्देपर चढकर समुद्रके पार आकर कण्ठेका मिलना, फिर उसी के द्वारा निष्कारणवधकी आज्ञा फिर आकाशवाणी से प्रसन्नहुए राजासे धनका मिलना वहा से समुद्रपार आकर मार्गमे चोरों के द्वारा सबधनका नाश और अन्तमें वृक्षपरसे अमित धनका मिलना यह ब्रह्माकी विचित्रचेष्टाहै (सुकृतीचानुभूयैवदु खमप्यश्नुतेसुखम्) पुण्यात्मालोग दु ख का अनुभवकरके भी सुखको प्राप्तहोते हैं गोमुखसे इसकथाको सुनकर नरवाहनदत्त ने उठकर स्नानादिक आह्निक किया १३६ दूसरे दिन सभामे बैठेहुए नरवाहनदत्तके पास आकर बाल्यावस्थाके मित्र समरतुङ्गनाम राजपुत्रने कहा कि हे स्वामी सग्रामवर्षनाम मेरे गोत्रीभाईने वीरजितआदिक चार राजपुत्रोको साथलेकर मेरादेश नष्टकरदिया अब मै जाकर उनपांचो को पकडेलाताहू आपको पहलेही से विदित करानेको मै आयाथा यह कहकर वह चलागया तब नरवाहनदत्त ने उसके पास थोडी सेना जानके और उसके शत्रुओ के पास बहुतसी सेनाजानकर अपनी सेना उसकी सहायताके लिये दी उस सहायताको न लेकर वह अपनीही भुजाओं के बलसे उनपाचोको जीतकर बाधके नरवाहनदत्तके पास लाया उस विजयीको देखके नरवाहनदत्तने उसका बडा सत्कारकरकेकहा कि विषयों (देश और लौकिक भोग) के आक्रमण करनेवाली सबल इन्द्रियो के समान पाच शत्रुओको जीतकर इसने अपना पुरुषार्थ सिद्ध किया यह सुनकर गोमुख ने कहा कि जो आपने इसी प्रकारकी राजा चमरवालकी कथा न सुनीहोय तो सुनिये मै कहताहू हस्तिनापुर नाम नगरमें चमरवालनाम एक राजाथा उसके पास बहुतसा खजाना और अत्यन्त सेनाथी उसके समरबलादिक पाचगोत्री राजा शत्रुथे उन सबो ने मिलकर एकसमय यह विचार किया कि यह चमरवाल सदैव हमलोगोंमे से एक २ को क्लेश दिया करताहै इससे हमपाचोंको मिलकर इसे जीतनाचाहिये यह सलाहकरके उन पाचों ने उस अकेले के जीतने के लिये ज्योतिषीको बुलाकर लग्नपूछी ज्योतिषी ने शुभ लग्न न पाकर और बहुतसे अशकुन देखकर उनसेकहा कि इस वर्षमें आपलोगोंके लिये कोई उत्तम लग्न नहीं है और जो साधारण लग्न में जाइयेगा तो आपकी विजयनहींहोगी और चमरवालकी समृद्धि देखकर आपलोगोंको ईर्ष्या क्यों होती है लक्ष्मीका फल भोगहै वह उससे भी अधिक आपलोगोंको प्राप्तहै इससे ईर्ष्या न कीजिये इस विषयपर मैं आपलोगोको दो वैश्योंकी कथासुनाताहू कौतुकपुरनाम नगरमे बहुसुवर्णनाम यथार्थनाम वाला राजाथा उसके एकयशोवर्मानामक्षत्री सेवकथा राजानेदानीहोकरभी उसेकभीकुछ नहींदिया और जब२वह राजासेमागताथा तबतब राजासूर्य्यकीओर हाथकरके कहताथा कि मै तो देनाचाहताहू परन्तु यह भगवान् नहीं चाहते कि मै तुमको कुछदेऊ राजाके यह वचन सुनकर यशोवर्मा अवसर ढूंढतारहा एक दिन सूर्य्यग्रहणके समय दान करतेहुए राजासे उसने कहा कि जो सूर्य्य आपसे मुझे कुछ नहीं लेनेदेते हैं उनको आज वैरीने पकड रक्खाहै इससे आप मुझे जोकुछ चाहिये सो दीजिये यह सुनकर राजाने हँसकर उसे बहुतसा सुवर्ण तथा अनेक वस्त्रदिये थोडे दिनोंमें उस धनको खापीकर और फिर राजासे कुछ न पाकर खिन्नहुआ यशोवर्मा अपनी स्त्रीके मरजानेपर विन्ध्यवासिनीकोगया वहा जाके

उसने यह विचारकरके कि इसनिरर्थक जीतेहुए भी मरेहुएके समान मेरे शरीरसे क्या प्रयोजनहै याती मैं इस शरीरको भगवतीके आगे त्यागदूंगा वा यथेच्छवरलूंगा यह निश्चय करके वह विन्ध्यवासिनी के आश्रम में कुशाके आसनपर निराहारहोके घोरतप किया तपसे प्रसन्नहुई भगवती ने प्रसन्न होकर स्वप्नमे उससे कहा कि हे पुत्र मै तुम्हारे ऊपर प्रसन्नहूं बताओ मैं तुमको अर्थश्रीदूं या भोगश्रीदूं यह सुनकर यशोवर्मा ने कहा कि मैं इन दोनोका भेद अच्छीतरहसे नहीं जानताहूं तब भगवतीने कहा कि तुम्हारे देशमे जो अर्थवर्मा और भोगवर्मानाम दो वैश्यहैं उनकीलक्ष्मी जाकर देखो उनमें से जिसकी लक्ष्मी तुम्हे अच्छीलगै वही आकर मुझसे मागना यह सुनकर यशोवर्मा जगकर प्रातःकाल पारण करके कौतुकपुर नाम अपने देशमें आया १६७ वहा आकर वहपहले सुवर्ण तथा रत्नादिके व्यवहारसे असख्यधनके उपार्जन करनेवाले अर्थवर्मा के घरमे जाकर उसकी सम्पूर्ण सपत्तिको देखताहुआ उसके पास गया अर्थवर्माने उसका वडा आदरसत्कार करके उसे घृत सहित मासके वहुत उत्तम २ भोजन कराये और आप दो तोले घी सत्तू थोडासा भात तथा थोडासा मासका रसखाया उसके वहुत थोडे भोजनको देखकर यशोवर्माने पूछा कि साहजी क्या तुम इतनाही खातेहो यह सुनकर उसने कहा कि आज तुम्हारे साथके कारण थोडासा मास तथा भात और दो तोले घी खालियाहै रोज तो मैं एक तोले घी तथा केवल सत्तु खाताहूं क्योंकि इससे अधिक मुझ मन्दाग्नि वालेको पचताही नहीं है यह सुनकर यशोवर्मा ने अपने चित्तमें अर्थवर्माकी व्यर्थ लक्ष्मीकी वडी निन्दाकी तदनन्तर, रात्रिके समय अर्थवर्मा ने यशोवर्माको दूधभात खिलवाया और आप केवल चारपैसेभर दूधपिया इसके उपरान्त अर्थवर्मा और यशोवर्मा दोनों एकही स्थानमें जुदे २ पलँगोंपर सोये अर्धरात्रिके समय यशोवर्मा ने स्वप्नमें देखा कि थोडेसे भयकर पुरुष दडों को हाथमे लियेहुए वहा आये औरतूने एकतोले घी मास भात तथा चार पैसेभर दूध रोजसे अधिक क्यों खाया यह कहके अर्थवर्माके पैरपकडकर खींचके लाठियोंसे मारनेलगे और जितना उसने अधिक भोजन कियाथा वह सव उसके उदरसे निकालकर लेगये यह स्वप्न देखकर जैसेही यशोवर्मा उठा वैसेही अर्थवर्माके पेटमे शूलउठा और सेवकोंके द्वारा उदर मलवानेसे उसको वमन होगया वमन से जव उसका शूल शान्त होगया तव यशोवर्माने सोचा कि इस अर्थश्रीको धिक्कारहै जिसका भोग ऐसा कठिनहै इसका तो न होनाही अच्छाहै यह सोचकर यशोवर्मा वह रात्रि वहीं व्यतीत करके प्रातःकाल अर्थवर्मासे पूछकर भोगवर्माके यहा गया भोगवर्मा ने उसका वडा अतिथि सत्कारकरके कहा कि आज आप हमारेही यहा भोजन करियेगा उसके यहा आभूषण वस्त्र तथा गृहके सिवाय और कुछ भी सम्पत्ति नथी उसने उसी समय किसी अन्यसे धन उधार लेकर किसी दूसरेको उधार देदिया उसी व्यवहारमें उसको थोडीसी अशर्फी मिलीं वह अशर्फिया उसनेअपने नौकरके हाथ अपनी स्त्रीके पास भोजनकी सामग्री इकट्ठी करनेको भेजी इतनेही मे इन्द्रासगणनाम उसके एक मित्रने आकर उससे कहा कि चलो भोजन तैयार है आज हमारेही यहा भोजन करना होगा सब मित्र बैठेहुए तुम्हारी प्रतीक्षा कररहे है यह सुनकर भोगवर्माने कहा कि आज हमारे यहा

एक महमानआएहैं इससे मैं नहीं आसक्ता यह सुनकर उसने कहा कि आप अपने साथ इनको भी लेचलिये क्या यह हमारे मित्र नहीं है उसके इसप्रकार आग्रह करनेपर भोगवर्मा ने यशोवर्माको साथ लेजाकर वहीं भोजन किया और वहां से आकर सायकालके समये अपने यहा दिव्य भोजन यशोवर्माको कराये और आपभी किये फिर रात्रिके समय उसने अपने सेवकोंसे पूछा कि आज रात्रिभर को हमारे यहा कोई वस्तु जलपानके लिये है कि नहीं सेवकोंने कहा कि नहीं है सेवकोंके वचन सुनकर भोगवर्मा आजपिछली रात्रिमें मैं जलकैसे पियूगा यहकहकर सोरहा और यशोवर्माभी उसीके पाससोया अर्द्धरात्रि के समय यशोवर्माको यह स्वप्न दिखाईदिया कि कुछ पुरुष हाथोंमे डडालियेहुए अन्यपुरुषो को मार २ कर यह कहरहे है कि तुम कहा रहे तुमने आजभोगवर्मा के लिये जलपानको कोई वस्तु क्यो नहीं लाए तब उनपुरुषोने हाथ जोडकेकहा आजक्षमा कीजिये फिर ऐसाअपराध कभी न होगा यहसुन कर वह दडधारी पुरुष उन्हे साथलेकर चलेगये यह स्वप्न देखकर यशोवर्माजगकर शोचनेलगा कि भोगवर्माकी यह भोगश्री बहुतश्रेष्ठहै परन्तु अर्थवर्मा की अत्यन्त बढीहुई भी अर्थश्री भोगके विनाव्यर्थ है इसप्रकार विचारते २ उसने वह रात्रिव्यतीत करके प्रातःकाल भोगवर्मा से आज्ञा लेकर कुछदिन चल के विन्ध्यवासिनी जी के आश्रममे पहुचकर कुशासनपर बैठकर फिर तपकिया तब भगवती ने उससे स्वप्न मे कहा कि तुम भोगश्री लोगे अथवा अर्थश्री, भगवती के वचनसुनकर यशोवर्मा ने भोगश्री मागी और भगवती उसे अभीष्टवर देकर अन्तर्द्धान होगई प्रातःकाल यशोवर्मा उठके पारण करके अपने घरको आया और भगवती की कृपासे प्राप्तहुई भोगश्री का सुखपूर्व्वक भोग करनेलगा इससे भोगके योग्य थोडी लक्ष्मी भी श्रेष्ठहै परन्तु, भोगरहित बहुतभी सम्पत्ति व्यर्थ है तो आपलोग राजा चमरवालकी कृपण सम्पत्तिके लिये क्यो अभिलाषा करतेहो आपलोगो को दान भोग युक्त अपनीही सम्पत्तिमें सन्तोष करना चाहिये यात्राकी कोई शुभलग्न नहीं है इससे आप लोगोको उसपर चढाई करने से जय नहीं प्राप्त होगी उस ज्योतिषी के यह वचनसुनकर भी वह पाचो राजा ईर्षासे सेना समेत चमरवालसे युद्ध करनेको गये उन लोगोको सीमापर आया हुआ सुनकर राजा चमरवालने स्नान करके पापनाशक वरदायक श्रीशिवजी की अडसठ नामोसे स्तुति करके और हे राजा तुम युद्धकरो तुम्हारी जयहोगी इस आकाशवाणी को सुनकर अपनी सेनालेके शत्रुओको आगे जाके रोका शत्रुओकी सेनामे तीसहजार हाथी तीनलाख घोडे तथा एक करोड पैदलथे और इसकी सेनामे दश हजारहाथी एकलाख घोडे तथा बीसलाख पैदल थे दोनों सेनाओं के परस्पर महायुद्ध प्रवृत्तहोनेपर राजा चमरवाल ने आपही युद्धमें जाकर शत्रुओकी इतनी सेनामारी कि जिससे हाथी घोडे तथा सब पैदलोंके ढेरहोगये और इसप्रकारसेनाको मारकर राजा समरवरको शक्तिसेमारके अपने पाशसे बाध लिया फिर युद्ध करने को आयेहुए राजा समरशूरको भी बाणसे मारकर पाशमे बाधलिया और राजा समरजितको वीरनाम प्रतीहार जीतकर पाशमे बाधलाया और देववलनाम सेनापति प्रतापचन्द्रनाम राजा को बाधकर उसके पास लेआया इनचारोंके बन्धनमे पडजानेपर प्रतापसेन नाम पाचवा राजा

क्रोधकरके चमरवालके साथ युद्ध करनेलगा चमरवालने उसके बाणों को काटकर मस्तकमें तीनबाण मारके उसेभी बांधलिया इसप्रकार पांचो राजाओं को बांधकर उनसब की अन्यसेना के भागजानेपर राजा चमरवालने बहुतसे रत्न सुवर्ण तथा बहुतसी रानियां पाईं उन रानियों में राजा प्रतापसेनकी पटरानी यशोलेखा बड़ी स्वरूपवती थी उसको उसने अपने नगरमें आके अपनीरानी बनालीनी क्योंकि उसने उसको युद्धधर्म में जीता था और उस यशोलेखा ने भी इसने मुझे युद्धमें जीतकर पायाहै इस विचारसे उसे स्वीकार करलिया ठीकहै (काममोहप्रवृत्तानां शवलाधर्मवासना) कामसे मोहको प्राप्त हुए प्राणियों की धर्मवासनाभी विचित्र होती है इसके उपरान्त राजाने वीरनाम प्रतीहारको तथा देवबलनाम सेनापति को रत्नोंसे पूर्ण करदिया और यशोलेखा के कहने से उनपांचों राजाओंको छोड़कर उन्हें उनका राज्य देदिया और वह सब नम्र होकर अपने २ देशको गये तब राजा चमरवाल बहुत कालतक अकंटक पृथ्वीका राज्य करतारहा और अप्सराओं से भी अधिक रूपवती शत्रुओं के जय की पताकारूप यशोलेखाके साथ राज्य सुखका भोग करतारहा इसप्रकारसे अपने तथा परायेस्वरूपके नहीं जाननेवाले द्वेषसे व्याकुल क्रोधसे युद्ध करतेहुए बहुतसे शत्रुओं को भी एकही वीरवीर पुरुष युद्ध में विजय करलेताहै गोमुखसे इस यथार्थ कथाको सुनकर नरवाहनदत्तने बहुत प्रसन्नहोके सभासे जाकर अपना नित्यका आह्निक कर्मकिया और वह रात्रि अपनी प्रियाओं के साथ ऐसा मनोहर गान करके व्यतीत की कि जिसे सुनकर आकाशसे स्थित श्री सरस्वती जीने अत्यन्त प्रसन्न होके उसे यह वरदान दिया कि तुम्हारा इनप्रियाओं के साथ बहुत काल तक सम्बन्ध रहैगा २११ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायाअलंकारवतीलम्बकेचतुर्थस्तरंग ४ ॥

इसके उपरान्त दूसरेदिन अलंकारवती के मन्दिर में बैठे हुए नरवाहनदत्त के पास सम्पूर्ण मन्त्रियों के आगे अन्तःपुरके कञ्चुकी (ख्वाजेसराह) का भाई मरुभूतिका सेवक आकर बोला कि हे महाराज मैंने दो वर्ष मरुभूतिकी सेवाकी है उसमें इन्होंने मुझे तथा मेरी स्त्री को भोजनाच्छादन दिया परन्तु जो इन्होंने मुझे पचास अशर्फी वर्षौंडी देना कहा था वह अभी तक नहीं दिया और मैंने जो बहुत मांगा तो मेरे लातेंमारीं इससे मैं आपके फाटकपर धन्ने बैठता हूं जो आप इस में कुछ विचार न करजियेगा तो मैं अग्नि में जलजाऊंगा उसके यह वचन सुनकर मरुभूति ने कहा कि मुझे इसकी अशर्फीदेनी हैं परन्तु अभी मेरे पास नहीं हैं यहसुनकर सबके हँसनेपर नरवाहनदत्त ने मरुभूतिसे कहा कि यह क्या तुम्हारी मूर्खताहै यह बुद्धि तुम्हारी अच्छी नहीं है जाओ अभी इसे सौ अशर्फी देदो स्वामी के यहवचन सुनकर मरुभूति ने उसीसमय लज्जितहोके सौ अशर्फी लाकर उसे देदीनी तब गोमुख ने नरवाहनदत्तसे कहा कि इसमें मरुभूतिका कोई दोष नहीं है ब्रह्माकी सृष्टि में मनुष्यों की विचित्र चित्तकी वृत्तियां होती हैं क्या आपने चिरदाता नामराजा तथा उसके प्रसंगनाम सेवककी कथा नहीं सुनी है कि चिरपुरनाम नगरमें चिरदाता नाम एकराजाथा उस राजाके सम्पूर्ण परिवारवाले महादुष्टथे एकसमय किसीदेशसे आयाहुआ प्रसंगनाम राजपुत्र अपने दो मित्रोंके साथ राजाके

एक महमानआएहैं इससे मैं नहीं आसक्ता यह सुनकर उसने कहा कि आप अपने साथ इनको भी लेचलिये क्या यह हमारे मित्र नहीं हैं उसके इसप्रकार आग्रह करनेपर भोगवर्मा ने यशोवर्माको साथ लेजाकर वहीं भोजन किया और वहां से आकर सायंकालके समय अपने यहां दिव्य भोजन यशोवर्माको कराये और आपभी किये फिर रात्रिके समय उसने अपने सेवकोंसे पूछा कि आज रात्रिभर को हमारे यहां कोई वस्तु जलपानके लिये है कि नहीं सेवकोंने कहा कि नहीं है सेवकोंके वचन सुनकर भोगवर्मा आजपिछली रात्रिमें मैं जलकैसे पियूंगा यहकहकर सोरहा और यशोवर्माभी उसीके पाससोया अर्द्धरात्रि के समय यशोवर्माको यह स्वप्न दिखाईदिया कि कुछ पुरुष हाथोंमें डंडालियेहुए अन्यपुरुषों को मार २ कर यह कहरहे हैं कि तुम कहां रहे तुमने आजभोगवर्मा के लिये जलपानको कोई वस्तु क्यों नहीं लाए तब उनपुरुषोंने हाथ जोडकेकहा आजक्षमा कीजिये फिर ऐसाअपराध कभी न होगा यहसुन कर वह दंडधारी पुरुष उन्हें साथलेकर चलेगये यह स्वप्न देखकर यशोवर्माजगकर शोचनेलगा कि भोगवर्माकी यह भोगश्री बहुतश्रेष्ठहै परन्तु अर्थवर्मा की अत्यन्त बढीहुई भी अर्थश्री भोगके विना व्यर्थ है इसप्रकार विचारते २ उसने वह रात्रिव्यतीत करके प्रातःकाल भोगवर्मा से आज्ञा लेकर कुछदिन चल के विन्ध्यवासिनी जी के आश्रममें पहुंचकर कुशासनपर बैठकर फिर तपकिया तब भगवती ने उससे स्वप्न मे कहा कि तुम भोगश्री लोगे अथवा अर्थश्री भगवती के वचनसुनकर यशोवर्मा नें भोगश्री मांगी और भगवती उसे अभीष्टवर देकर अन्तर्द्धान होगई प्रातःकाल यशोवर्मा उठके पारण करके अपने घरको आया और भगवती की कृपासे प्राप्तहुई भोगश्री का सुखपूर्व्वक भोग करनेलगा इससे भोगके योग्य थोडी लक्ष्मी भी श्रेष्ठहै परन्तु भोगरहित बहुतभी सम्पत्ति व्यर्थ है तो आपलोग राजा चमरवालकी कृपण सम्पत्तिके लिये क्यों अभिलाषा करतेहो आपलोगों को दान भोग युक्त अपनीही सम्पत्तिमें सन्तोष करना चाहिये यात्राकी कोई शुभलग्न नहीं है इससे आप लोगोंको उसपर चढाई करने से जय नहीं प्राप्त होगी उस ज्योतिषी के यह वचनसुनकर भी वह पांचो राजा ईर्षासे सेना समेत चमरवालसे युद्ध करनेको गये उन लोगोंको सीमापर आया हुआ सुनकर राजा चमरवालनें स्नान करके पापनाशक वरदायक श्रीशिवजी की अडसठ नामोंसे स्तुति करके और हे राजा तुम युद्धकरो तुम्हारी जयहोगी इस आकाशवाणी को सुनकर अपनी सेनालेके शत्रुओंको आगे जाके रोका शत्रुओंकी सेनामें तीसहजार हाथी तीनलाख घोडे तथा एक करोड़ पैदलथे और इसकी सेनामें दशहजारहाथी एकलाख घोडे तथा बीसलाख पैदल ये दोनों सेनाओं के परस्पर महायुद्ध प्रवृत्तहोनेपर राजा चमरवाल ने आपही युद्धमे जाकर शत्रुओंकी इतनी सेनामारी कि जिससे हाथी घोडे तथा सब पैदलोंके ढेरहोगये और इसप्रकारसेनाको मारकर राजा समरवरको शक्तिसेमारके अपने पाशसे बांध लिया फिर युद्ध करने को आयेहुए राजा समरशूरको भी बाणसे मारकर पाशमें बांधलिया और राजा समरजितको वीरनाम प्रतीहार जीतकर पाशमें बांधलाया और देवबलनाम सेनापति प्रतापचन्द्रनाम राजा को बांधकर उसके पास लेआया इनचारों के बन्धनमें पडजानेपर प्रतापसेन नाम पांचवां राजा

से जीतेगये सिंहों से मानों भेटकीगई मुट्ठी में समानेवाली सूक्ष्म कमर यौवनरूपी हाथी के बांधने के खंभ के समान सुंदर जघा और अशोक के पल्लवों के समान सुंदरचरण इत्यादिक सम्पूर्ण अगोंको यथायोग्य देखकर सब लोगों ने उस चित्रकरकी बडी प्रशसाकी और कहा कि अकेले राजाकी शोभानहीं होती है इसमें आप इनचित्रों में लिखीहुई स्त्रियों में से जिसे योग्य समझिये उसेभी इन्हीं के साथ लिखिये तो हमलोगों के नेत्र तृप्तहोंय यहसुनकर उसने उसचित्रको देखकरकहा कि इन बहुतसी स्त्रियों में से कोई भी स्त्री राजाके तुल्यनहीं है मैं जानताहूं कि सम्पूर्ण पृथ्वी में इनके समान कोई स्त्री न होगी किन्तु एक राजपुत्री इनके समान है उसका वर्णन मैं आप लोगों से करताहू विदर्भदेश में कुंडिन नाम नगरका देवशक्तिनाम बडा प्रतापी राजाहै उसके अनन्तवतीनाम रानी में मदनसुन्दरी नाम एक कन्याहुई जिसके रूपको वर्णन करने के लिये मुझसरीका एक जिह्वा से कैसे वर्णन करसक्ता है किन्तु इतना मैं कहसक्ताहू कि ब्रह्मा उसे बनाकर उसके समान स्त्री अनेक युगों में भी न बनासकेंगे वही कन्यारूप लावण्य विनय अवस्था तथा कुलसे तुम्हारे राजाके सदृश है एक समय उसने चेरीकेद्वारा मुझे अपने मन्दिरपर बुलाभेजाथा वहा जाकर मैंने उसे कमलपत्रों की शय्या पर सम्पूर्ण शरीरमें चन्दनकालेपकियेहुए देखा उसके पाडु तथा दुर्बल शरीरसे कामज्वर लक्षितहोता था केलेके पत्तोंको डुलानेवाली अपनी सखियोंसे वह कहरहीथी कि हे सखियो चन्दनकेलेप तथा केले केपत्तोंके डुलानेसे कुछ प्रयोजन नहीं है व्यर्थ श्रम न करो यह शीतलहोकर भी मुझ अभागिनीको जलातेहैं इसप्रकारसे सखियोंको निवारण करतीहुई मदनसुन्दरीकी वह दशादेखकर मैं सन्देह युक्तहो कर प्रणाम करके उसके आगे बैठगया ६६ तब उसने कपतेहुए हाथसे पृथ्वीमें एक मनुष्यकी आकृति बनाकर मुझसे कहा कि इसका चित्रबनादो उसकी आज्ञासे मैंने उसका चित्र लिखकर सोचा कि क्या यह साक्षात् कामकाचित्र इसने मुझसे लिखवायाहै अथवा इसके हाथमें पुष्पका धनुष नहीं है इससे कोई युवाराजाहै इसे इसने कहीं देखाहोगा या सुनाहोगा इसीकेलिये यह कामसे पीडितहोरही है अब मुझे यहा से भाग चलना चाहिये क्योंकि इसका पिता देवशक्ति बडा क्रोधी है ऐसा न होय कि मेरे ऊपर कोई अपराधलगादे यह विचारकर उस राजकन्याको प्रणाम करके मैंने बाहरआकर उसके परिजनोंसे सुना कि आपका यश सुनकर उसे अनुराग उत्पन्नहुआहै इससे मैं उस राजकन्याका चित्रलिख कर आपके पास शीघ्रही आयाहू और आपका स्वरूपदेखकर मुझे निश्चयहोगयाहै कि उसने आपही का चित्र मुझसे बनवायाथा उसकाचित्र मैं वारम्वार नहीं लिखसक्ताहू इससे मैं आपके चित्रके पास उसकाचित्र नहीं लिखताहू रोलदेवके यह वचन सुनकर राजाने कहा कि अच्छाजानेदो जो चित्र तुम वहासे लिखलायेहो वही मुझे दिखाओ तब रोलदेवने थैलीमेंसे वह चित्र निकालकर राजाको दिया चित्रमें उस मदनसुन्दरी के रूपको देखतेही राजाकनकवर्ष कामके वशीभूतहोगया और उस चित्रकर को बहुतसाधनदेकर चित्रलेकर अपने मन्दिरमें गया वहा कामदेव अपने रूपसेजीतेने की ईर्ष्यासे मानो उसको पीडादेनेलगा राजाने पहले अपने रूपसेलुब्धहुई स्त्रियोंको काम पीडादीथी उसीका उसको

यहा नौकरहुआ उसे पाचवर्ष सेवा करते २ व्यतीतहुए परन्तु राजाने उत्सवादिक निमित्तों में भी उसे कुछ नहींदिया और उस सेवकने मित्रों के प्रेरणा करनेपरभी परिकरकी दुष्टतासे राजासे विज्ञापन करने का अवसर न पाया एकसमय उस राजाका बालक पुत्र मरगया तबसम्पूर्ण सेवक राजाको दुखीजानके उसके निकटगये उनमें से प्रसगनाम सेवक अपने मित्रोंके निवारण करनेपर भी शोकसे व्याकुलहो कर राजासे बोला कि हे स्वामी हमने बहुत कालतक आपकी सेवाकरी और आपने हमें कुछ न दिया इतने पर भी,आपने नहीं दियाहै तो आपकापुत्रदेगा इस आशासे हमने आपकी सेवकाई नहीं छोडी अब भाग्यवशसे उसको भी परमेश्वरने हरलिया तो अब हमारा यहा कौन है हमजाते हैं यह कहकर और प्रणामकरके प्रसङ्ग अपने मित्रोको साथ लेकर वहासे चला तब राजाने यह बडेदृढ सेवकहैं क्यों कि पुत्रकी आशासे यह इतने दिनतक रहे इससे इनका त्यागनहीं करना चाहिये यह शोचकर उन्हें बुलवाकर इतना धनदिया कि वह दरिद्रसे निर्भयहोगये इसप्रकार से मनुष्यों के विचित्र स्वभावहोते हैं देखिये राजाने समय पर तो नहीं दिया परन्तु असमयपर बहुतसा धनदिया २४ इस कथाको कहके गोमुख नरवाहनदत्तकी आज्ञासे फिर यह कथा कहनेलगा कि पूर्व्वकालमे श्रीगङ्गाजी के तटपर बडा सुन्दर पवित्र एककनकपुर नाम नगरथा उसनगरमें वासुकि नाम नागेन्द्र के प्रियदर्शन नाम पुत्रसे यशोधरानाम राजपुत्रीमें उत्पन्नहुआ महायशस्वी कनकवर्ष नाम राजाथा वह यशकालोभीथा धनका नहीं पापसे डरताथा परन्तु शत्रुओ से नहीं परापवादमें मूर्खथा पर शास्त्रोंमें नहीं थोडा कोपकरनेवाले अधिक दयालु महादानी शूर तथा धीर उसराजाका ऐसा स्वरूपथा जिसे देखतेही स्त्रिया कामसे व्याकुलहोजाती थीं एकसमय शरदऋतु में बडा उत्सव करके राजा कनकवर्ष विहार करनेकेलिये कमलों की सुगन्धिसे सुगन्धित वायुसे शीतल चित्रमहलमेंगया और वहा के चित्रोको देखकर प्रशसा करने लगा उसीसमय प्रतीहारने आकरकहा कि हे स्वामी विदर्भ देशसे आयाहुआ रोलदेवनाम चित्रकर अपने को चित्रकर्म में सबसे श्रेष्ठ बताताहै और यही लिखकर उसने फाटकपर पत्र चिपकादियाहै यह सुनकर राजाने कहा कि उसे मेरेपास बुलालाओ राजाकी यह आज्ञापाकर प्रतीहार उसे लिवालाया रोलदेवने वहा आकर किसी सुन्दर स्त्रीके स्तनोपर शरीर का भारदेकर लेटेहुए और एकहाथमें ताम्बूल लेतेहुए राजा कनकवर्षको देखा औरप्रणामकरके कहा कि हे स्वामीमैंने आपके चरणारविन्दों के दर्शनों की इच्छासे पत्र लिखकरलगाया था चतुरताके अभिमान से नहींलगाया था इससे मेरे अपराध को क्षमाकीजियेगा अब यह आज्ञाकीजिये कि चित्रमें कौनसा रूपलिखकर आपको दिखाऊ जिससे मेरी चित्रशिक्षा सफलहोय यहसुनकर राजानेकहा कि चाहो सो लिखकर मेरे नेत्रोंको आनन्द दो तुम्हारी चतुरतामें मुझे सदेहनहीं है राजाके इसप्रकार कहनेपर उसकेपास बैठीहुई एकस्त्रीनेकहा कि राजा काही चित्रबनाओ अन्यकुरूपों से क्या प्रयोजनहै यहसुनकर चित्रकरने प्रसन्नहोकर राजाकाही चित्र लिखा और सबकोदिखाया उसचित्रमें उन्नतनासिका दीर्घ तथा रक्तनेत्र बड़ाललाट काले तथा घुघरवाले बाल बाणोके व्रणोंसे शोभित विस्तीर्ण वक्षस्थलदिग्गजोंकी सूडकेसमान मनोहर भुजा पराक्रम

से जीतेगये सिंहों से मानों भेटकीगई मुट्ठी में समानेवाली सूक्ष्म कमर यौवनरूपी हाथी के बांधने के खंभ के समान सुंदर जघा और अशोक के पल्लवों के समान सुंदरचरण इत्यादिक सम्पूर्ण अंगोंको यथायोग्य देखकर सब लोगों ने उस चित्रकरकी बडी प्रशसाकी और कहा कि अकेले राजाकी शोभानहीं होती है इससे आप इनचित्रों में लिखीहुई स्त्रियों में से जिसे योग्य समझिये उसेभी इन्हीं के साथ लिखिये तो हमलोगों के नेत्र तृप्तहोंय यहसुनकर उसने उसचित्रको देखकरकहा कि इन बहुतसी स्त्रियों में से कोई भी स्त्री राजाके तुल्यनहीं है मैं जानताहूं कि सम्पूर्ण पृथ्वी में इनके समान कोई स्त्री न होगी किन्तु एक राजपुत्री इनके समान है उसका वर्णन मैं आप लोगों से करताहूं विदर्भदेश में कुंडिन नाम नगरका देवशक्तिनाम बडा प्रतापी राजाहै उसके अनन्तवतीनाम रानी में मदनसुन्दरी नाम एक कन्याहुई जिसके रूपको वर्णन करने के लिये मुझमरीका एक जिह्वा से कैसे वर्णन करसक्ता है किन्तु इतना मैं कहसक्ताहूं कि ब्रह्मा उसे बनाकर उसके समान स्त्री अनेक युगों में भी न बनासकेंगे वही कन्यारूप लावण्य विनय अवस्था तथा कुलसे तुम्हारे राजाके सदृश है एक समय उसने चेरीकेद्वारा मुझे अपने मन्दिरपर बुलाभेजाथा वहा जाकर मैंने उसे कमलपत्रों की शय्या पर सम्पूर्ण शरीरमें चन्दनकालेपकियेहुए देखा उसके पाडु तथा दुर्बल शरीरसे कामज्वर लक्षितहोताथा केलेके पत्तोंको डुलानेवाली अपनी सखियोंसे वह कहरहीथी कि हे सखियो चन्दनकेलेप तथा केलेकेपत्तोंके डुलानेसे कुछ प्रयोजन नहीं है व्यर्थ श्रम न करो यह शीतलहोकर भी मुझ अभागिनीको जलातेहैं इसप्रकारसे सखियोंको निवारण करतीहुई मदनसुन्दरीकी वह दशादेखकर मैं सन्देह युक्तहोकर प्रणाम करके उसके आगे बैठगया ६६ तब उसने कपतेहुए हाथसे पृथ्वीमें एक मनुष्यकी आकृति बनाकर मुझसे कहा कि इसका चित्रबनादो उसकी आज्ञासे मैंने उसका चित्र लिखकर सोचा कि क्या यह साक्षात् कामकाचित्र इसने मुझसे लिखवायाहै अथवा इसके हाथमें पुष्पका धनुष नहीं है इससे कोई युवाराजाहै इसे इसने कहीं देखाहोगा या सुनाहोगा इसीकेलिये यह कामसे पीडितहोरही है अब मुझे यहा से भाग चलना चाहिये क्योंकि इसका पिता देवशक्ति बडा क्रोधी है ऐसा न होय कि मेरे ऊपर कोई अपराधलगादे यह विचारकर उस राजकन्याको प्रणाम करके मैंने बाहरआकर उसके परिजनोंसे सुना कि आपका यश सुनकर उसे अनुराग उत्पन्नहुआहै इससे मैं उस राजकन्याका चित्रलिखकर आपके पास शीघ्रही आयाहूं और आपका स्वरूपदेखकर मुझे निश्चयहोगयाहै कि उसने आपही का चित्र मुझसे बनवायाथा उसकाचित्र मैं वारम्वार नहीं लिखसक्ताहूं इससे मैं आपके चित्रके पास उसकाचित्र नहीं लिखताहूं रोलदेवके यह वचन सुनकर राजाने कहा कि अच्छाजानेदो जो चित्र तुम वहासे लिखलायेहो वही मुझे दिखाओ तब रोलदेवने थैलीमेंसे वह चित्र निकालकर राजाको दिया चित्रमें उस मदनसुन्दरी के रूपको देखतेही राजाक्षणभरमें कामके वशीभूतहोगया और उस चित्रकर को बहुतसाधनदेकर चित्रलेकर अपने मन्दिरमें गया वहा कामदेव अपने रूपकेलेने की ईर्ष्यासे मानो उसको पीडादेनेलगा राजाने पहले अपने रूपसेलुब्धहुईं स्त्रियोंको काम पीडादीथी उसीका उनको

मानों सौगुनाफलमिला तब राजाने विरहसे अत्यन्त पीडितहोके अपने मन्त्रियोंसे सलाहकरके राजा देवशक्तिके पास कन्या मागनेकेलिये सगमस्वामीनाम समय तथा कार्य्यके जाननेवाले कुलीन ब्राह्मणको दूतताके निमित्तभेजा सगमस्वामी ने वहुतसा परिकरलेकर विदर्भदेशके कुडिननाम नगरमें जाकर राजा देवशक्तिसे अपने स्वामीकेलिये उसकी कन्यामागी सगमस्वामी के वचन सुनकर राजा देवशक्ति ने राजाकनकवर्ष वडा कुलीन तथा धनवान् है इससे वह हमारी कन्याके योग्यवरहे ऐसा विचारकर उसे अपनी कन्यादेना स्वीकार करलिया और मदनसुन्दरीको सभामें बुलाकर उसका नृत्य सगमस्वामीको दिखाकर आदर पूर्व्वक उसके साथ अपनादूत करके उसे विदाकिया उसदूतको साथ लेकर सगमस्वामीने राजाकनकवर्ष के पास आकर कहा कि हे स्वामी आपका कार्य्य सिद्धहोगया और उसदूतने कहा कि हेस्वामी लग्नका निश्चयकरके विवाहके निमित्त कुडिननगरको चलिये दूतके यह वचन सुनकर राजा कनकवर्ष लग्नका निश्चयकरके विवाहकरनेकेलिये सम्पूर्ण परिकरसमेत कुडिनपुरको चला और मार्गमें बनोंमें मिलेहुए वहुतसे हिंसकजीव सिंहादिकोंको मारताहुआ विदर्भदेशके कुण्डिनपुर में पहुचा वहा राजा देवशक्ति नगर के बाहर आकर वडे आदर पूर्व्वक सम्पूर्ण नगर में भ्रमण कराताहुआ उसको विवाहकी सम्पूर्ण सामग्रियोंसे भरेहुए राजमन्दिर मे लेगया वहा उसदिन राजा कनकवर्ष अपने सम्पूर्ण परिकर समेत राजा देवशक्तिके ऐश्वर्य्यको भोगताहुआ विश्रामकरता भया दूसरे दिन देवशक्तिने अपनी मदनसुन्दरीनाम कन्याका विवाह कनकवर्षके साथ करदिया और वहुतसा दहेजमे धनदिया विवाहके उपरान्त राजा कनकवर्ष सातदिन वहा रहकर अपनी नवीनस्त्री को लेकर अपने नगरमें आया जगदानन्ददायी कौमुदी सहित चन्द्रमाके समान नवीनवधू सहित राजाके पुरमे आनेपर उस नगरमें वडा उत्सवहुआ तब राजमन्दिरमें आकर राजा कनकवर्ष ने अपने सब सेवकोंको वहुतसाधनदिया और रात्रिके समय शयनस्थानमे जाकर मदनसुन्दरी के साथ अपूर्व आनन्दका अनुभवकिया और उसको अपनी सम्पूर्ण रानियो मे मुख्यकरदिया वह दोनों राजा रानी परस्पर नेत्रों से मुखारविन्दों को देखकर कामदेव के वाणों मे कीलितसे होगये इसप्रकारसे मदनसुंदरी राजा को प्राणो से भी अधिक प्यारीहोगई १०६ एकसमय मानिनी स्त्रियों के मानरूपी मातगका मारने वाला केशरकी पक्तियोंसे युक्त वसन्तरूपी सिंह प्रकटहुआ उपवनो के समान पथिकोंकी स्त्रियों के काम की पीडा मे युक्त चित्तोंको कँपातीहुई मलयाचलकी पवनचलनेलगी वसन्त ने प्रफुल्लित आम्रलता रूपी धनुष में भ्रमरोंकी पक्तिरूपी प्रत्यञ्चालगाकर कामका धनुष तैयारकिया कोकिला अपने मधुर शब्दों से मानो यह कहनेलगी कि नदियों के प्रवाह वृक्षो के पुष्प तथा चन्द्रमाकीकला क्षीणहोकर फिर आजाती है परन्तु मनुष्योंकी युवावस्था क्षीणहोकर फिर नहीं लौटती इससे मान तथा कलहको छोडकर अपनी २ स्त्रियों के साथ विहारकरो उससमय राजा कनकवर्ष अपनी सम्पूर्ण रानियोंको लेकर उपवन मे विहारकरने को [illegible] और वहा रानी मदनसुन्दरी के साथ वहुतकालतक विहार करके पक्षिजनो के [illegible] शोभाको और सुन्दर स्त्रियो के गानो मे कोकिला तथा भ्रमरोंकी ध्वनिको

छीन पटसम्पूर्ण रानियोंकेसाथ गोदावरीमें जलक्रीडाकरनेकोगया उसकी रानियोंने अपनेमुखोंसे उस नदीकेकमलोंको नेत्रोंसे उत्पलोंको स्तनोंसे चक्रवाकोंको और नितवोंसे तटोंको विजयकरके तरङ्गरूपी भृकुटियोंसे क्रोध को प्रकटकरनेवाली उसनदीको अत्यन्त पीडितकिया उससमय जलविहारसे वस्त्रोंमें भी झलकते अंगवाली उनसवरानियोंको देखकर राजाकनकवर्षका चित्त उनमें अत्यन्त आसक्तहुआ वस्त्रोंके गिरपडने के कारण किसी रानीके खुलेहुए सुवर्णकुम्भोंकेसमान स्तनोंपर राजा जलकेछींटेमारने लगा यह देखकर मदनसुन्दरी ईर्ष्या से क्रोधयुक्तहोके बोली कि अभी नदीको कितना क्लेशदोगे और यह कहकर जलसे निकलकर द्वितीयवस्त्र पहनके सखियों से प्रियके अपराधको कहतीहुई अपने म-दिरको गई तव राजा कनकवर्षभी उसके आशयको जानकर जलक्रीडाको छोडकर उसी के मन्दिरको गया वहा पिंजरों में वैठेहुए तोते मैनाओं से भी क्रोधकरके निवारण कियागया राजा भीतर जाकर क्रोधसे पीडित वायें हाथमें मुख कमलको रखकर उदासीनतासे वैठीहुई और निर्मल मोतियों के समान अश्रुओंको वहातीहुई अपभ्रंश भाषा के यह दो श्लोक (जइविरहोणमहिज्जइमाणो परिवज्जणीओ तेंविरहोहिअअसहिज्जइमाणोपरिवड्ढणी ओतेइअजाणिऊणणिउण चिट्ठसुओलंविऊणइक्कदर उहअत डदिण्णपाद्योमज्झणिवडिओधुवगिणिस्सिहसि) हे हृदय जो तुम विरह नहीं सहसक्तेहो तो मान का त्यागकरना चाहिये और जो विरहको सहसक्तेहो तो मानको वढाना चाहिये यह अच्छे प्रकार जानकर दोमेंसे एकका अवलंवन करो नहीं तो दोनों किनारों पर पैररखनेसे वीचमें गिरकर अवश्य नष्टहोजा-ओगे इसप्रकार से कहती हुई और क्रोधमे भी मनोहर प्रियाको देखकर लज्जा तथा भय सहित उसके पासगया और उसे मुख मोडेहुए जानके आलिंगन करके मधुर २ विनय युक्त वचनों से समझाकर प्रसन्न करनेलगा और उसके परिजनों के मुखसे व्यंग वचनोंको सुनकर अपनी निन्दा करके उसके पैरोंपर गिरपडा राजाको पैरोंपडते देखकर वह मानों गलकर वहेहुए क्रोधके समान अश्रुओंसे उसको सींचती हुई उसके गले में लिपटगई तब राजा उसे प्रसन्न जानकर अत्यन्त प्रसन्नहोके वह दिन वहीं व्यतीत करके रात्रिके समय उसके साथ रमण करके सोगया उससमय राजाको यहस्वप्न दिखाई दिया कि कोई भयंकर स्त्री मेरे गलेसे माला तथा शिरसे चूडारत्न लेगई फिर एकअपूर्व वेताल आकर मुझ से वाहुयुद्ध करनेलगा और मैंने उसे पृथ्वी में पटकदिया फिर उसवेतालने मुझको पकड़कर समुद्र में ले जाकर छोडदिया वडे कष्टसे समुद्रके पार जाकर मैं ने फिर अपने गले में माला तथा शिर में अपना चूडामणि पाया इसस्वप्नको देखकर राजाने प्रातःकाल किसी क्षपणक (जैनीसाधू) से इसस्वप्नका फल पूछा तव उसने कहा कि यद्यपि आपसे कहना तो नहीं योग्यहै तथापि मैं कहताहूं कि यह जो आपने माला तथा चूडारत्नका हरणदेखा है सो रानी तथा पुत्रके साथ आपका वियोग है और जो फिर माला तथा चूडारत्न का मिलनाहै वही रानी तथा पुत्रसे आपका समागम होनेवाला है क्षपण-कसे यह सुनकर राजाने कहा कि अभी तो मेरे पुत्र नहीं है प्रथम पुत्र तो मेरे होय फिर जो होगा सो होगा उसीसमय राजाने पुत्रके निमित्त वडे यत्नकरनेवाले राजा दशरथकी कथा किसी ब्राह्मणसे सुनी

मानो सौगुनाफलमिला तब राजाने विरहसे अत्यन्त पीडितहोके अपने मन्त्रियोंसे सलाहकरके राजा देवशक्तिके पास कन्या मागनेकेलिये सगमस्वामीनाम समय तथा कार्य्यके जाननेवाले कुलीन ब्राह्मणको दूतताके निमित्तभेजा सगमस्वामी ने वहुतसा परिकरलेकर विदर्भदेशके कुडिननाम नगरमें जाकर राजा देवशक्तिसे अपने स्वामीकेलिये उसकी कन्यामागी सगमस्वामी के वचन सुनकर राजा देवशक्ति ने राजाकनकवर्ष वडा कुलीन तथा धनवान् है इससे वह हमारी कन्याके योग्यवरहै ऐसा विचारकर उसे अपनी कन्यादेना स्वीकार करलिया और मदनसुन्दरीको सभामे वुलाकर उसका नृत्य सगमस्वामीको दिखाकर आदर पूर्व्वक उसके साथ अपनादूत करके उसे विदाकिया उसदूतको साथ लेकर सगमस्वामीने राजाकनकवर्ष के पास आकर कहा कि हे स्वामी आपका कार्य्य सिद्धहोगया और उसदूतने कहा कि हेस्वामी लग्नका निश्चयकरके विवाहके निमित्त कुडिननगरको चलिये दूतके यह वचन सुनकर राजा कनकवर्ष लग्नका निश्चयकरके विवाहकरनेकेलिये सम्पूर्ण परिकरसमेत कुडिनपुरको चला और मार्गमे वनोमे मिलेहुए वहुतसे हिंसकजीव सिंहादिकोंको मारताहुआ विदर्भदेशके कुण्डिनपुर में पहुचा वहा राजा देवशक्ति नगर के वाहर आकर वडे आदर पूर्व्वक सम्पूर्ण नगर में भ्रमण कराताहुआ उसको विवाहकी सम्पूर्ण सामग्रियोंसे भरेहुए राजमन्दिर मे लेगया वहा उसदिन राजा कनकवर्ष अपने सम्पूर्ण परिकर समेत राजा देवशक्तिके ऐश्वर्य्यको भोगताहुआ विश्रामकरता भया दूसरे दिन देवशक्तिने अपनी मदनसुन्दरीनाम कन्याका विवाह कनकवर्षके साथ करदिया और वहुतसा दहेजमें धनदिया विवाहके उपरान्त राजा कनकवर्ष सातदिन वहा रहकर अपनी नवीनस्त्री को लेकर अपने नगरमे आया जगदानन्ददायी कौमुदी सहित चन्द्रमाके समान नवीनवधू सहित राजाके पुरमे आनेपर उस नगरमें वडा उत्सवहुआ तब राजमन्दिरमें आकर राजा कनकवर्ष ने अपने सब सेवकोंको वहुतसाधनदिया और रात्रिके समय शयनस्थानमे जाकर मदनसुन्दरी के साथ अपूर्व आनन्दका अनुभवकिया और उसको अपनी सम्पूर्ण रानियों में मुख्यकरदिया वह दोनों राजा रानी परस्पर नेत्रों से मुखारविन्दों को देखकर कामदेव के वाणों मे कीलितसे होगये इसप्रकारसे मदनसुंदरी राजा को प्राणो से भी अधिक प्यारीहोगई १०६ एकसमय मानिनी स्त्रियो के मानरूपी मातगका मारने वाला केशरकी पङ्क्तियों से युक्त वसन्तरूपी सिंह प्रकटहुआ उपवनों के समान पथिकोंकी स्त्रियों के काम की पीडा मे युक्त चित्तोंको कॅपातीहुई मलयाचलकी पवनचलनेलगी वसन्त ने प्रफुल्लित आम्रलता रूपी धनुष मे भ्रमरोंकी पङ्क्तिरूपी प्रत्यञ्चालगाकर कामका धनुष तैयारकिया कोकिला अपने मधुर शब्दों से मानों यह कहनेलगीं कि नदियों के प्रवाह वृक्षो के पुष्प तथा चन्द्रमाकी कला क्षीणहोकर फिर आजाती है परन्तु मनुष्योंकी युवावस्था क्षीणहोकर फिर नहीं लौटती इससे मान तथा कलहको छोडकर अपनी २ स्त्रियों के साथ विहारकरो उससमय राजा कनकवर्ष अपनी सम्पूर्ण रानियों को लेकर उपवन मे विहारकरने को गया और वहा रानी मदनसुन्दरी के साथ वहुतकालतक विहार करके परिजनों के तोडेहुए फूलोंसे अशोककी शोभाको और सुन्दर स्त्रियो के गानों मे कोकिला तथा भ्रमरोंकी ध्वनिको

छीन पटसम्पूर्ण रानियोंकेसाथ गोदावरीमें जलक्रीडाकरनेकोगया उसकी रानियोंने अपनेमुखोंसे उस नदीकेकमलोंको नेत्रोंसे उत्पलोंको स्तनोंसे चक्रवाकोंको और नितंबोंसे तटोंको विजयकरके तरङ्गरूपी भृकुटियोंसे क्रोध को प्रकटकरनेवाली उसनदीको अत्यन्त पीडितकिया उससमय जलविहारसे वस्त्रोंमें भी झलकते अंगवाली उनसबरानियोंको देखकर राजाकनकवर्षका चित्त उनमें अत्यन्त आसक्तहुआ वस्त्रोंके गिरपडने के कारण किसी रानीके खुलेहुए सुवर्णकुंभोंकेसमान स्तनोंपर राजा जलकेछींटेमारने लगा यह देखकर मदनसुन्दरी ईर्ष्या से क्रोधयुक्तहोके बोली कि अभी नदीको कितना क्लेशदोगे और यह कहकर जलसे निकलकर द्वितीयवस्त्र पहनके सखियों से प्रियके अपराधको कहतीहुई अपने मन्दिरको गई तब राजा कनकवर्षभी उसके आशयको जानकर जलक्रीडाको छोडकर उसी के मन्दिरको गया वहां पिंजरों में बैठेहुए तोते मैनाओं से भी क्रोधकरके निवारण कियागया राजा भीतर जाकर क्रोधसे पीडित बायें हाथमें मुख कमलको रखकर उदासीनतासे बैठीहुई और निर्मल मोतियों के समान अश्रुओंको बहातीहुई अपभ्रंश भाषा के यह दो श्लोक (जइविरहोणसहिज्जइमाणो परिवज्जणीओ तेविरहोहिअसहिज्जइमाणोपरिवड्ढणीओतेइअजाणिऊणएिउण चिट्ठसुओलंबिऊणएक्कदरउहअतटदिण्णपायोमज्भणिवडियोधुवविणिस्सिहसि) हे हृदय जो तुम विरह नहीं सहसक्तेहो तो मान का त्यागकरना चाहिये और जो विरहको सहसक्तेहो तो मानको बढाना चाहिये यह अच्छे प्रकार जानकर दोमेंसे एकका अवलंबन करो नहीं तो दोनों किनारों पर पैररखनेसे बीचमें गिरकर अवश्य नष्टहोजाओगे इसप्रकार से कहती हुई और क्रोधमें भी मनोहर प्रियाको देखकर लज्जा तथा भय सहित उसके पासगया और उसे मुख मोडेहुए जानके आलिंगन करके मधुर २ विनय युक्त वचनों से समझाकर प्रसन्न करनेलगा और उसके परिजनों के मुखसे व्यंग वचनोंको सुनकर अपनी निन्दा करके उसके पैरोंपर गिरपडा राजाको पैरोंपडते देखकर वह मानों गलकर बहेहुए क्रोधके समान अश्रुओंसे उसको सींचती हुई उसके गले में लिपटगई तब राजा उसे प्रसन्न जानकर अत्यन्त प्रसन्नहोके वह दिन वहीं व्यतीत करके रात्रिके समय उसकेसाथ रमण करके सोगया उससमय राजाको यहस्वप्न दिखाई दिया कि कोई भयंकर स्त्री मेरे गलेसे माला तथा शिरसे चूडारत्न लेगई फिर एकअपूर्व बेताल आकर मुझ से बाहुयुद्ध करनेलगा और मैंने उसे पृथ्वी में पटकदिया फिर उसबेतालने मुझको पकड़कर समुद्र में ले जाकर छोडदिया बडे कष्टसे समुद्रके पार जाकर मैं ने फिर अपने गले में माला तथा शिर में अपना चूडामणि पाया इसस्वप्नको देखकर राजाने प्रातःकाल किसी क्षपणक (जैनीसाधू) से इसस्वप्नका फल पूछा तब उसने कहा कि यद्यपि आपसे कहना तो नहीं योग्यहै तथापि मैं कहताहूं कि यह जो आपने माला तथा चूडारत्नका हरणदेखा है सो रानी तथा पुत्रके साथ आपका वियोग है और जो फिर माला तथा चूडारत्न का मिलनाहै वही रानी तथा पुत्रसे आपका समागम होनेवाला है क्षपणकसे यह सुनकर राजाने कहा कि अभी तो मेरे पुत्र नहीं हैं प्रथम पुत्र तो मेरे होय फिर जो होगा सो होगा उसीसमय राजाने पुत्रके निमित्त बडे यत्नकरनेवाले राजा दशरथकी कथा किसी ब्राह्मणसे सुनी

मानों सौगुनाफलमिला तब राजाने विरहसे अत्यन्त पीड़ितहोके अपने मन्त्रियोंसे सलाहकरके राजा देवशक्तिके पास कन्या मांगनेकेलिये सगमस्वामीनाम समय तथा कार्य्यके जाननेवाले कुलीन ब्राह्मणको दूतताके निमित्तभेजा सगमस्वामी ने बहुतसा परिकरलेकर विदर्भदेशके कुंडिननाम नगरमें जाकर राजा देवशक्तिसे अपने स्वामीकेलिये उसकी कन्यामांगी सगमस्वामी के वचन सुनकर राजा देवशक्ति ने राजाकनकवर्ष बड़ा कुलीन तथा धनवान् है इससे वह हमारी कन्याके योग्यवरहै ऐसा विचारकर उसे अपनी कन्यादेना स्वीकार करलिया और मदनसुन्दरीको सभामें बुलाकर उसका नृत्य सगमस्वामीको दिखाकर आदर पूर्व्वक उसके साथ अपनादूत करके उसे बिदाकिया उसदूतको साथ लेकर सगमस्वामीने राजाकनकवर्ष के पास आकर कहा कि हे स्वामी आपका कार्य्य सिद्धहोगया और उसदूतने कहा कि हेस्वामी लग्नका निश्चयकरके विवाहके निमित्त कुंडिननगरको चलिये दूतके यह वचन सुनकर राजा कनकवर्ष लग्नका निश्चयकरके विवाहकरनेकेलिये सम्पूर्ण परिकरसमेत कुंडिनपुरको चला और मार्गमें वनोंमें मिलेहुए बहुतसे हिंसकजीव सिंहादिकोंको मारताहुआ विदर्भदेशके कुण्डिनपुर में पहुंचा वहां राजा देवशक्ति नगर के बाहर आकर बड़े आदर पूर्व्वक सम्पूर्ण नगर में भ्रमण कराताहुआ उसको विवाहकी सम्पूर्ण सामग्रियोंसे भरेहुए राजमन्दिर में लेगया वहां उसदिन राजा कनकवर्ष अपने सम्पूर्ण परिकर समेत राजा देवशक्तिके ऐश्वर्य्यको भोगताहुआ विश्रामकरता भया दूसरे दिन देवशक्तिने अपनी मदनसुन्दरीनाम कन्याका विवाह कनकवर्षके साथ करदिया और बहुतसा दहेजमें धनदिया विवाहके उपरान्त राजा कनकवर्ष सातदिन वहां रहकर अपनी नवीनस्त्री को लेकर अपने नगरमें आया जगदानन्ददायी कौमुदी सहित चन्द्रमाके समान नवीनवधू सहित राजाके पुरमें आनेपर उस नगरमें बड़ा उत्सवहुआ तब राजमन्दिरमें आकर राजा कनकवर्ष ने अपने सब सेवकोंको बहुतसाधनदिया और रात्रिके समय शयनस्थानमें जाकर मदनसुन्दरी के साथ अपूर्व आनन्दका अनुभवकिया और उसको अपनी सम्पूर्ण रानियों में मुख्यकरदिया वह दोनों राजा रानी परस्पर नेत्रों से मुखारविन्दों को देखकर कामदेव के बाणों से कीलितसे होगये इसप्रकारसे मदनसुंदरी राजा को प्राणों से भी अधिक प्यारीहोगई १०६ एकसमय मानिनी स्त्रियों के मानरूपी मातंगका मारने वाला केशरकी पङ्क्तियोंसे युक्त वसन्तरूपी सिंह प्रकटहुआ उपवनों के समान पथिकोंकी स्त्रियों के काम की पीड़ा में युक्त चित्तोंको कँपातीहुई मलयाचलकी पवनचलनेलगी वसन्त ने प्रफुल्लित आम्रलता रूपी धनुष में भ्रमरोंकी पङ्क्तिरूपी प्रत्यञ्चालगाकर कामका धनुष तैयारकिया कोकिला अपने मधुर शब्दोंसे मानो यह कहनेलगीं कि नदियों के प्रवाह वृक्षों के पुष्प तथा चन्द्रमाकी कला क्षीणहोकर फिर आजाती हैं परन्तु मनुष्योंकी युवावस्था क्षीणहोकर फिर नहीं लौटती इससे मान तथा कलहको छोड़कर अपनी २ स्त्रियों के साथ विहारकरो उससमय राजा कनकवर्ष अपनी सम्पूर्ण रानियों को लेकर उपवन में विहारकरने को गया और वहां रानी मदनसुन्दरी के साथ बहुतकालतक विहार करके परिजनों के [illegible] से अशोक की शोभाको और सुन्दर स्त्रियों के गानों में कोकिला तथा भ्रमरोंकी ध्वनिको

के भयसे स्वामिकार्त्तिकके मंदिरमें नहींजाती हैं, तब राजा सर्पिणी के प्रभावसे रहितहोकर स्वामिकार्त्तिकके मंदिरमें गया स्वामिकार्त्तिकजी ने उसको सर्पिणी के निकलजाने से हीन तेज जानकर विचार कर देखा कि यह क्या बातहै और यह जानकर कि इसने सर्पिणी के बलसे उग्रतपकिया है क्रोधकरके उसे यह शापदिया कि हे दुष्ट तैंने मुझसे छल कियाहै इसमे जब तेरे पुत्रहोगा तब पुत्रसमेत रानी से तेरा वियोग होजायगा इस दारुणशापको सुनकर महाकवि राजा कनकवर्ष ने सुन्दरश्लोकों से स्वामिकार्त्तिकजी की स्तुतिको सुनकर प्रसन्नहुए स्वामिकार्त्तिकजी ने कहा कि स्त्री तथा पुत्रके साथ एक वर्षतक तुम्हारा वियोगरहैगा और फिरतीन अपमृत्युओं से बचकर उनको पाजाओगे यहकहकर स्वामिकार्त्तिकजी के मौनहोजानेपर राजा कनकवर्ष उनको प्रणाम करके और उनकी कृपारूपी अमृत से तृप्तहोकर अपने नगरकोआया वहां कुछ कालके उपरान्त चन्द्रिकामें चन्द्रमाकी अमृत वृष्टि के समान राजा कनकवर्षके मदनसुन्दरी रानी से पुत्र उत्पन्नहुआ पुत्रके मुखको देखकर राजा कनकवर्षने अत्यन्त प्रसन्नहोकर पुत्रके जन्मोत्सव में इतना सुवर्ण दान किया कि जिससे उसका कनकवर्षनाम यथार्थ हुआ उत्सवसे पांच रात्रिके व्यतीतहोनेपर छठी रात्रिमें सम्पूर्ण रक्षा विधिके होनेपर जैसे प्रमादी राजाके राज्यको शत्रु घेरलेते हैं उसीप्रकारसे अकस्मात् मेघों ने आकर आकाश छालिया और वायुरूपी मतवालाहाथी मदके समान वृष्टिकी धाराओंको छोडताहुआ वृक्षोंको उखाडताहुआ दौडनेलगा उससमय कुंडी लगेहुए द्वारको भी खोलकर छुरी हाथमे लियेहुए कोई भयंकर स्त्री सूतिकागृहमें जाके मदनसुन्दरी के स्तनों को पान करते हुए बालकको छीनकर सम्पूर्ण परिजनों को मोहित करके भागी और मदनसुन्दरी विह्वल होके हाय २ मेरे बालकको यह राक्षसी हरेलियेजाती है यह कहतीहुई अन्धकारमें उसी के पीछेदौडी वह स्त्री जाकर बालकको लियेहुए एक तालाबमें कूदपडी और मदनसुन्दरी भी घृणते पुत्रकी चाहमे उसी तालाबमें कूदपडी १६२ तदनन्तर क्षणभरमें मेघ निवृत्तहोगये रात्रि व्यतीतहोगई और सूतिकागृहमें परिजनलोग हाहाकारकरनेलगे उस हाहाकारको सुनकर राजा कनकवर्ष वहांआकर सूतिकागृहमें स्त्री तथा पुत्रको न देखकर मोहितहोगया और मोहसे जगकर हा पुत्र हा देवी इसप्रकार विलाप करते २ उसे स्वामिकार्त्तिकजी के शापकी याद आगई तब शापको यादकरके राजा इसप्रकारसे विलापकरनेलगा कि हे भगवन् स्वामिकार्त्तिकजी आपने मुझ अभागेको विषसे मिलेहुए अमृतके समान शापयुक्त वरदिया प्राणों से भी अधिकप्यारी मदनसुन्दरी के बिना हजार युगके समान एकवर्षमें कैसे व्यतीतकरूंगा इसप्रकार विलापकरताहुआ राजा मन्त्रियों के समझानेपर भी रानीही के साथ गयेहुए धैर्यको नहीं प्राप्तहुआ और कामके वेगसे पीडितहोके अपने नगर से निकलकर विन्ध्याचलके वनमें भ्रमण करनेलगा वहां मृगी के नेत्रोंको देखकर प्रियाके नेत्रोंको मृगांगायोंकी पूंछ देखकर प्रियाके केशोंको तथा हाथियों के मन्दगमनको देखकर प्रियाकी मन्द २ गतिको स्मरणकरके राजा कामाग्नि से और भी अधिक व्याकुलहुआ और भूख तथा तृषासे व्याकुलहोकर भ्रमण करते २ एकस्थानमें झरनेका जल पीकर किसी वृक्षके नीचे बैठगया वहां गुफासे निकलकर वि-

उसकथाको सुनके पुत्रकी चिन्तासे दिनको व्यतीत करके रात्रि के समय एकान्त में शय्यापरलेटेहुए राजाने द्वारको विनाखोलेही भीतर आईहुई एक सौम्य विनीतस्त्री देखी और आश्चर्य्य पूर्व्वक उठकर उसे प्रणामकिया उसने राजाको आशीर्वाददेकर कहा कि हे पुत्र मैं नागराजवासुकि की पुत्री तुम्हारे पिताकी बड़ी बहिन रत्नप्रभाहू तुम्हारी रक्षाके निमित्त सदैव तुम्हारे निकट अलक्षित होकर रहतीहू आज तुम्हे खिन्नदेखकर मैंने दर्शनदिये हैं क्योंकि मै तुम्हें दुःखित नहीं देखसक्ती हू अब तुम अपने दुःखका कारणबताओ उसनागिनके यहवचन सुनकर राजाने कहा कि हे अम्ब मैं धन्यहू जिसपर तुम इतनीदया करतीहो मुझे पुत्र न होनेकादुःखहै जिसकेलिये बड़े २ राजर्षि दशरथादिकोंने स्वर्गके अभिलाषसे अत्यन्त यत्नकियाहै उसकेलिये मुझसरीका क्यों न इच्छाकरे कनकवर्षके यह वचन सुनकर रत्नप्रभा नागिनीने कहा कि इसका यह उपायहै कि तुमजाकर पुत्रके निमित्त स्वामिकार्त्तिकजीका आराधनकरो विघ्नकेलिये तुम्हारेशिरपर कुमार जलधारागिरेगी उसको तुम मेरे प्रभावसे सहलोगी क्योंकि मै तुम्हारे शरीरमें प्रवेश करूगी इससे तुम अन्य विघ्नोकोभी जीतकर तुम अपने मनोरथोंको पाओगे यह कहकर वह सर्पिणी अन्तर्द्धान होगई और राजा प्रसन्नता पूर्व्वक रात्रिको व्यतीत करके प्रातःकाल मंत्रियो पर राज्यका भार सौंपकर स्वामिकार्त्तिकजी के स्थानमें जाकर उनको प्रसन्न करने के लिये घोर तप करनेलगा तब विघ्नके लिये असह्यकुमार जलधारा उसके शिरपर गिरनेलगी उसको उसने शरीरमें प्रविष्टहुई नागिनी के प्रभाव से सहलिया तब स्वामिकार्त्तिकजी ने विघ्नके लिये गणेशजी को भेजा गणेशजी ने उस जलधारासे महाभयकर अजगर सर्पउसके ऊपर छोड़ा उस सर्प्प से भी राजाको निर्भय देखकर गणेशजी आपही आकर उसके हृदयमे दांत मारनेलगे तब राजा कनकवर्ष उनको देवताओं से भी अजेय जानकर उनकी यह स्तुति करनेलगा कि हे विघ्नेश सम्पूर्ण सिद्धियों की निधि के कुंभरूप आपको नमस्कारहै हे लम्बोदर सर्पोंके आभूषण पहरनेवाले आपको नमस्कारहै हे गजानन लीला पूर्व्वक सूड़मार के कमलको हिलाकर ब्रह्माको भी कपायमान करनेवाले आपकी जयहोय हे शंकर प्रिय हे शरणागत वत्सल आपको विना प्रसन्नकिये देवता दैत्य तथा मुनीश्वरोंकोभी सिद्धिया नहीं प्राप्त होतीहै घटोदर सूर्पकर्ण गणाध्यक्ष मदोत्कट पाशहस्त अम्बरीष जम्बक तथा त्रिशिखायुध इत्यादिक पापनाशक छयासठनामों से देवता लोगोंने आपकी स्तुतिकी है हे दयानिधे आपका स्मरण करने तथा स्तुति करने से युद्ध राजा द्यूत चोर अग्नि तथा सिंहआदिकोंकाभी भय नष्टहोजाताहै इत्यादिक वहुतसी स्तुतियोंसे राजापर प्रसन्नहुए गणेशजी ने कहा कि हे पुत्र तुम्हारे ऊपर मैं प्रसन्न हू अब विघ्न नहीं करूगा तुम्हारे पुत्रहोगा यहकहकर श्रीगणेशजी अन्तर्द्धान होगये तब स्वामिकार्त्तिक जीने प्रकटहोकर राजासे कहा कि मै तुमपर प्रसन्नहू वरमागो यह सुनकर राजाने प्रसन्नहोके कहा कि हे महाराज आपकी कृपासे मेरे पुत्र उत्पन्नहो यह सुनकर स्वामिकार्त्तिकजी ने कहा कि मेरेगणके अंश से तुम्हारे पुत्रहोगा और उसका हिरण्यवर्ष नाम होगा यह कहकर स्वामिकार्त्तिकजी ने उसे मंदिर के भीतर अधिक वरदेनेको बुलाया उससमय वह सर्पिणी उसके शरीरसे निकलगई क्योंकि स्त्रिया शाप

के भयसे स्वामिकार्त्तिकके मंदिरमें नहींजाती हैं तब राजा सर्पिणी के प्रभावसे रहितहोकर स्वामिकार्त्तिकके मंदिरमें गया स्वामिकार्त्तिकजी ने उसको सर्पिणी के निकलजाने से हीन तेज जानकर विचार कर देखा कि यह क्या बातहै और यह जानकर कि इसने सर्पिणी के बलसे उग्रतपकिया है क्रोधकरके उसे यह शापदिया कि हे दुष्ट तैंने, मुझसे छल कियाहै इसमे जब तेरे पुत्रहोगा तब पुत्रसमेत रानी से तेरा वियोग होजायगा इस दारुणशापको सुनकर महाकवि राजा कनकवर्ष ने सुन्दरश्लोकों में स्वामिकार्त्तिकजी की स्तुतिको सुनकर प्रसन्नहुए स्वामिकार्त्तिकजी ने कहा कि स्त्री तथा पुत्रके साथ एक वर्षतक तुम्हारा वियोगरहैगा और फिरतीन अपमृत्युओं से बचकर उनको पाजाओगे यहकहकर स्वामिकार्त्तिकजी के मौनहोजानेपर राजा कनकवर्ष उनको प्रणाम करके और उनकी कृपारूपी अमृत से तृप्तहोकर अपने नगरकोआया वहां कुछ कालके उपरान्त चन्द्रिकामें चन्द्रमाको अमृत दृष्टि के समान राजा कनकवर्षके मदनसुन्दरी रानी में पुत्र उत्पन्नहुआ पुत्रके मुखको देखकर राजा कनकवर्षने अत्यन्त प्रसन्नहोकर पुत्रके जन्मोत्सव में इतना सुवर्ण दान किया कि जिससे उसका कनकवर्षनाम यथार्थ हुआ उत्सवसे पांच रात्रिके व्यतीतहोनेपर छठी रात्रिमें सम्पूर्ण रक्षा विधिके होनेपर जैसे प्रमादी राजाके राज्यको शत्रु घेरलेते हैं उसीप्रकारसे अकस्मात् मेघों ने आकर आकाश छा लिया और वायुरूपी मतवालाहाथी मदके समान वृष्टिकी धाराओंको छोडताहुआ वृक्षोंको उखाडताहुआ दौडनेलगा उससमय कुंडी लगेहुए द्वारको भी खोलकर छुरी हाथमें लियेहुए कोई भयकर स्त्री सूतिकागृहमें जाके मदनसुन्दरी के स्तनों को पान करते हुए बालकको छीनकर सम्पूर्ण परिजनों को मोहित करके भागी और मदनसुन्दरी विह्वल होके हाय २ मेरे बालकको यह राक्षसी हरेलियेजाती है यह कहतीहुई अन्धकारमें उसी के पीछेदौडी वह स्त्री जाकर बालकको लियेहुए एक तालावमें कूदपडी और मदनसुन्दरी भी अपने पुत्रकी चाहसे उसीतालावमें कूदपडी १६० तदनन्तर क्षणभरमें मेघ निवृत्तहोगये रात्रि व्यतीतहोगई और सूतिकागृहमें परिजनलोग हाहाकारकरनेलगे उस हाहाकारको सुनकर राजा कनकवर्ष वहांआकर सूतिकागृहमें स्त्री तथा पुत्रको न देखकर मोहितहोगया और मोहसे जगकर हा पुत्र हा देवी इसप्रकार विलाप करते २ उसे स्वामिकार्त्तिकजी के शापकी याद आगई तब शापको यादकरके राजा इसप्रकारसे विलापकरनेलगा कि हे भगवन् स्वामिकार्त्तिकजी आपने मुझ अभागेको विषमें मिलेहुए अमृतके समान शापयुक्त वरदिया प्राणों से भी अधिकप्यारी मदनसुन्दरी के विना हजार युगके समान एकवर्षमें कैसे व्यतीतकरूंगा इसप्रकार विलापकरताहुआ राजा मन्त्रियोंके समझानेपर भी रानीही के साथ गयेहुए धैर्यको नहीं प्राप्तहुआ और कामके वेगसे पीडितहोके अपने नगर से निकलकर विन्ध्याचलके वनमें भ्रमण करनेलगा वहां मृगी के नेत्रोंको देखकर प्रियाके नेत्रोंको मृगगायोंकी पूंछ देखकर प्रियाके केशोंको तथा हाथियों के मन्दगमनको देखकर प्रियाकी मन्द २ गतिको स्मरणकरके राजाकामाग्नि से और भी अधिक व्याकुलहुआ और भूख तथा तृषासे व्याकुलहोकर भ्रमण करते २ एकस्थानमें झरनेका जल पीकर किसी वृक्षके नीचे बैठगया वहां गुफासे निकलकर वि-

उसकथाको सुनके पुत्रकी चिन्तासे दिनको व्यतीत करके रात्रि के समय एकान्त में शय्यापरलेटेहुए राजाने द्वारको विनाखोलेही भीतर आईहुई एक सौम्य विनीतस्त्री देखी और आश्चर्य्य पूर्व्वक उठकर उसे प्रणामकिया उसने राजाको आशीर्वाददेकर कहा कि हे पुत्र मैं नागराजवासुकि की पुत्री तुम्हारे पिताकी वडी वहिन रत्नप्रभाहू तुम्हारी रक्षाके निमित्त सदैव तुम्हारे निकट अलक्षित होकर रहतीहू आज तुम्हे खिन्नदेखकर मैने दर्शनदिये हैं क्योंकि मै तुम्हे दुःखित नहीं देखसक्ती हू अब तुम अपने दुःखका कारणवताओ उसनागिनके यहवचन सुनकर राजाने कहा कि हे अम्ब मैं धन्यहू जिसपर तुम इतनीदया करतीहो मुझे पुत्र न होनेकादुःखहै जिसकेलिये वडे २ राजर्षि दशरथादिकोंने स्वर्गके अभिलाषसे अत्यन्त यत्नकियाहै उसकेलिये मुझसरीका क्यों न इच्छाकरे कनकवर्षके यह वचन सुनकर रत्नप्रभा नागिनीने कहा कि इसका यह उपायहै कि तुमजाकर पुत्रके निमित्त स्वामिकार्त्तिकजीका आराधनकरो विघ्नकेलिये तुम्हारेशिरपर कुमार जलधारागिरेगी उसको तुम मेरे प्रभावसे सहलोगी क्योंकि मैं तुम्हारे शरीरमें प्रवेश करूंगी इससे तुम अन्य विघ्नोंकोभी जीतकर तुम अपने मनोरथोंको पाओगे यह कहकर वह सर्पिणी अन्तर्द्धान होगई और राजा प्रसन्नता पूर्व्वक रात्रिको व्यतीत करके प्रातःकाल मन्त्रियों पर राज्यका भार सौंपकर स्वामिकार्त्तिकजी के स्थानमें जाकर उनको प्रसन्न करने के लिये घोर तप करनेलगा तव विघ्नके लिये असह्यकुमार जलधारा उसके शिरपर गिरनेलगी उसको उसने शरीरमें प्रविष्टहुई नागिनी के प्रभाव से सहलिया तव स्वामिकार्त्तिकजी नें विघ्नके लिये गणेशजी को भेजा गणेशजी ने उस जलधारामे महाभयकर अजगर सर्पउसके ऊपर छोडा उस सर्प्प से भी राजाको निर्भय देखकर गणेशजी आपही आकर उसके हृदयमे दात मारनेलगे तव राजा कनकवर्ष उनको देवताओं से भी अजेय जानकर उनकी यह स्तुति करनेलगा कि हे विघ्नेश सम्पूर्ण सिद्धियो की निधि के कुम्भरूप आपको नमस्कारहै हे लम्बोदर सर्पोंके आभूषण पहरनेवाले आपको नमस्कारहै हे गजानन लीला पूर्व्वक सूडमार के कमलको हिलाकर ब्रह्माको भी कपायमान करनेवाले आपकी जयहोय हे शंकर प्रिय हे शरणागत वत्सल आपको विना प्रसन्नकिये देवता दैत्य तथा मुनीश्वरोंकोभी सिद्धिया नहीं प्राप्त होतीहै घटोदर सूर्पकर्ण गणाध्यक्ष मदोत्कट पाशहस्त अम्बरीप जम्भक तथा त्रिशिखायुध इत्यादिक पापनाशक छयासठनामों से देवता लोगोने आपकी स्तुतिकी है हे दयानिधे आपका स्मरण करने तथा स्तुति करने से युद्ध राजा द्यूत चोर अग्नि तथा सिहआदिकोंकाभी भय नष्टहोजाताहै इत्यादिक वहुतसी स्तुतियोंमे राजापर प्रसन्नहुए गणेशजी ने कहा कि हे पुत्र तुम्हारे ऊपर मैं प्रसन्न हू अव विघ्न नहीं करूगा तुम्हारे पुत्रहोगा यहकहकर श्रीगणेशजी अन्तर्द्धान होगये तव स्वामिकार्त्तिकजीने भक्तहोकर राजासे कहा कि मैं तुमपर प्रसन्नहू वरमागो यह सुनकर राजाने प्रसन्नहोके कहा कि हे महाराज आपकी कृपासे मेरे पुत्र उत्पन्नहो यह सुनकर स्वामिकार्त्तिकजी ने कहा कि मेरेगणके अंशसे तुम्हारे पुत्रहोगा और उसका हिरण्यवर्ष नाम होगा यह कहकर स्वामिकार्त्तिकजी ने उसे मंदिर के भीतर अधिक वरदेनेको बुलाया उससमय वह सर्पिणी उसके शरीरमे निकलगई क्योंकि स्त्रिया शाप

हिरण्यगर्भ को साथलेकर हथिनीपरचढके विदर्भदेश में अपने श्वशुर के कुण्डिनपुरनाम नगर में प्रथम गया वहां अपने श्वशुर के सत्कार से कईदिनरहकर वहां से चलकर कनकपुरनाम अपने नगरमें आया उससमय आनन्द तथा शोभासहित मूर्तिमान उत्सव के समान मदनसुन्दरी तथा हिरण्यवर्ष समेत राजा कनकवर्ष को पुरी में प्रवेश करताजानकर पुरवासियों ने बडीप्रसन्नता प्रकटकी और राजाने सम्पूर्ण नगर में भ्रमणकरके अपने मन्दिर में आकर सम्पूर्ण परिजनों को बहुतसा धन बांटा और बडा उत्सव करके अपनी सब प्रजाओं को बडा आनन्द दिया इसप्रकार शाप से छूटकर राजा कनकवर्ष ने रानी मदनसुन्दरी तथा हिरण्यवर्ष के साथ कभी वियुक्त न होकर निष्कण्टक राज्यका पालनकिया गोमुखसे इस रुचिरकथा को सुनकर अलंकारवती समेत नरवाहनदत्त अत्यन्त प्रसन्नहुआ २३९॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायाअलङ्कारवतीलम्बकेपञ्चमस्तरङ्ग ५॥

इसके उपरान्त गोमुखकी कथा से प्रसन्नहुआ नरवाहनदत्त मरुभूति को ईर्ष्या से कुपितदेखकर उसे प्रसन्नकरनेको बोला कि हे मरुभूति तुमभी कोई कथा कहो तब मरुभूति प्रसन्नहोकर बहुत अच्छा कहताहू यह कहकर कहनेलगा कि राजा कमलवर्म्मा के कमलपुरनाम नगर में चन्द्रस्वामी नाम एक धनवान् सज्जनब्राह्मण रहताथा उस ब्राह्मण के बडीविनीत देवमतिनाम स्त्री में एक ऐसा सुलक्षण पुत्र उत्पन्न हुआ जिसके उत्पन्न होतेही यह आकाशवाणीहुई कि हे चन्द्रस्वामी इस पुत्रकानाम तुम महीपालरखना क्योंकि यह राजाहोकर बहुतकालतक पृथ्वीका पालनकरेगा इस आकाशवाणी को सुनकर चन्द्रस्वामी ने बडा उत्सवकरके अपने पुत्रकानाम महीपालरक्खा वह महीपाल थोडीही अवस्था में सम्पूर्ण शास्त्र शस्त्र अस्त्र तथा कलाओं में प्रवीणहोगया इस बीच में चन्द्रस्वामी के उसी देवमति स्त्री में अत्यन्त सुन्दरी चन्द्रवती नाम एक कन्या उत्पन्नहुई वह महीपाल और चन्द्रवती दोनो अपने पिता के यहा वृद्धि को प्राप्तभए एकसमय उस देशमें सूर्य्यकी किरणों के द्वारा सम्पूर्ण अनाजों के सूखजाने से बडा भारी दुर्भिक्षपडा उस दोष से वहाका राजा सन्मार्गछोडकर अधर्म्म से प्रजाओं का धन लेनेलगा तब देशकी दुर्दशादेखकर देवमति ने चन्द्रस्वामी से कहा कि इस देश को छोडकर तुम हमारे पिता के यहा चलो यहा रहने से कदाचित मेरे सन्तान नष्ट न होजायँ यह सुनकर चन्द्रस्वामी ने कहा कि दुर्भिक्ष में घरको छोडना महापाप है इससे मैं इन दोनों बालकों को लेजाकर तुम्हारे पिता के यहा छोडआताहूं तुम यहींरहो मैं इनको पहुँचाकर लौटआऊगा यह कहकर उसे वहीं छोडकर दोनो बालकों को लेकर चन्द्रस्वामी वहासे चला और मार्ग मे चलते २ तीन चार दिन के उपरान्त सूर्य्यकी किरणों से तप्तबालुका वाले सूखेहुए एक महावन में पहुँचा वहा प्यासेहुए महीपाल तथा चन्द्रवतीको किसीवृक्षकेनीचे बैठाल कर उनके लिये जलढूढताहुआ बहुतदूर चलागया वहां उसे जलतो नहीं मिला परन्तु अकस्मात नि-षादोका स्वामी सिंहदंष्ट्रनाम निषाद मिला उसने उससे सबवृत्तान्त पूछकर और उसको जलार्थी जान कर अपने सेवकों से इशारा करके कहा कि इसे लाकर जल पिलाओ यह वचनसुनकर सेवकों ने उस का आशय जानके चन्द्रस्वामीको अपने गांव में लेजाकर बन्धन में डाला तब चन्द्रस्वामी अपने क।

न्ध्याचलके अट्टहासके समान गर्जताहुआ सिंह राजाके मारनेकोदौड़ा उसीसमय आकाशमार्ग से जातेहुए किसी विद्याधरने देखकर शीघ्रही खड्गसे सिंहके दो टुकड़ेकरडाले और राजा के निकटजाकर पूछा कि हे राजा कनकवर्ष तुम यहां क्यों आयेहो विद्याधरके यह वचन सुनकर राजाने अपना स्मरण करके उससे कहा कि मुझ विरहाग्निसे व्याकुलको तुम क्याजानो तब उसने कहा कि मैं आपही के पुरका रहनेवाला बन्धुमित्रनाम परिव्राजक (सन्यासी) था मैंने सेवाकरके अत्यन्त प्रार्थनापूर्व्वक आपही से सहायताकराके वेतालको सिद्धकरके विद्याधर सिद्धिपाई है इसी से मैंने आपको पहचानकर आपके मारनेको उद्यत सिंहको प्रत्युपकार करनेके निमित्त खड्गसेमारडाला हे राजा अब मेरानाम बन्धुप्रभ होगयाहै उसके यहवचनसुनकर राजानेकहा कि हाँ मुझे तुम्हारी यादहै तुमने उसी मित्रताका आज यहां निर्वाहकियाहै अब हे मित्र बताओ मुझसे स्त्री और पुत्रकासमागम कबहोगा यहसुनकर उसने अपनी विद्याकेप्रभावसे जानकरकहा कि जबतुम भगवती विन्ध्यवासिनी के दर्शनकरोगे तबतुम्हारा अपनीस्त्री और पुत्र से समागमहोगा इससे तुम वहीं जाओ मैं अपने लोककोजाताहूं यह कहकर उसके आकाशमें चलेजानेपर राजा कनकवर्ष धैर्य्यको धारणकरके विन्ध्यवासिनी के दर्शनकोचला मार्ग में एक मतवाला हाथी मस्तककँपाके और सूंडफैलाकर उसके पीछेदौड़ा उसे देखकर राजा गड्ढों के मार्ग से इसरीतिपर भागा कि जिससे वह हाथी गढे मे गिरकरमरगया तब मार्ग के श्रम से थकाहुआ राजा चलते २ उद्दंड पुंडरीक नाम एक बड़े तालावपर पहुँचा और वहां स्नानकरके और कमलकी दंडीखाजलपीकर किसी वृक्ष के नीचे विश्रामकरनेलगा और क्षणभर में ही उसे निद्राआगई २१८ उससमय उसीमार्ग से शिकार खेलकर लौटेहुए निषादो ने राजा को सोतेहुएदेखा और उसके सुन्दर लक्षणदेखकर उसे बांधकर अपने मुक्ताफलनाम स्वामी के पास लेगये मुक्ताफल उसे सुलक्षण पुरुषजानकर बलिदानदेने के लिये विन्ध्यवासिनी के मन्दिर मे लेगया वहां भगवती के दर्शनकरके प्रणामकरतेहुए राजा के बन्धन स्वामिकार्त्तिकजीकी कृपा से शिथिलहोगये यह देखकर निषादों के स्वामी मुक्ताफलने राजापर भगवतीकीकृपा जानकर उसे बन्धनों से छुटादिया इसप्रकार तीसरी अपमृत्यु से बचेहुए राजा के शापकावर्ष पूराहोगया तब वह सर्पिणी राजाके पुत्र तथा स्त्रीको लेकर वहांप्रकटहुई और बोली कि हे राजा मैंने श्रीस्वामिकार्त्तिकजी के शापको जानकर युक्तिपूर्व्वक इन दोनों को लेजाकर अपने स्थानमे रक्षाकीथी अब तुम इन दोनों को लो और पृथ्वीका अकण्टकराज्य भोगकरो यहकहकर वह सर्पिणी अन्तर्द्धानहोगई और राजा भी स्त्री पुत्र के वियोग को स्वप्नके समानमानकर अत्यन्त आनन्दपूर्व्वक रानी से मिला और रानी भी बहुतकाल के वियोग से सन्तप्त अपने अङ्गोंको शीतलकरनेको राजा के गले मे लिपटगई बहुतकालके उपरान्त उन दोनों के मिलने से विरह क्लेश आँसुओं के साथ बहगया तब मुक्ताफल उसे राजा जानकर पैरों में गिरकर अपने अपराध क्षमाकराके उसे अपने ग्राम में लेगया और अपने ऐश्वर्य्य के अनुसार सेवनकरके उसे अपने यहां टिकाया तब राजा ने वहीं से दूतभेजकर अपने श्वशुर देवशक्ति को तथा अपनी सम्पूर्ण सेना को वहीं बुलवाया और उन सब के वहां आजानेपर मदनसुन्दरी तथा अपने पुत्र

हिरण्यगर्भ को साथलेकर हथिनीपरचढके विदर्भदेश में अपने श्वशुर के कुण्डिनपुरनाम नगर में प्रथम गया वहां अपने श्वशुर के सत्कार से कईदिनरहकर वहा से चलकर कनकपुरनाम अपने नगरमें आया उससमय आनन्द तथा शोभासहित मूर्त्तिमान उत्सव के समान मदनसुन्दरी तथा हिरण्यवर्ष समेत राजा कनकवर्ष को पुरी में प्रवेशकरताजानकर पुरवासियों ने वडीप्रसन्नता प्रकटकी और राजाने सम्पूर्ण नगर में भ्रमणकरके अपने मन्दिर में आकर सम्पूर्ण परिजनों को वहुतसा धन बांटा और वडा उत्सव करके अपनी सव प्रजाओं को वडा आनन्द दिया इसप्रकार शाप से छूटकर राजा कनकवर्ष ने रानी मदनसुन्दरी तथा हिरण्यवर्ष के साथ कभी वियुक्त न होकर निष्कण्टक राज्यका पालनकिया गोमुखसे इस रुचिरकथा को सुनकर अलंकारवती समेत नरवाहनदत्त अत्यन्त प्रसन्नहुआ २३९ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायाअलङ्कारवतीलम्बकेपञ्चमस्तरङ्ग ५॥

इसके उपरान्त गोमुखकी कथा से प्रसन्नहुआ नरवाहनदत्त मरुभूति को ईर्ष्या से कुपितदेखकर उसे प्रसन्नकरनेको वोला कि हे मरुभूति तुमभी कोई कथा कहो तव मरुभूति प्रसन्नहोकर वहुत अच्छा कहताहूं यह कहकर कहनेलगा कि राजा कमलवर्म्मा के कमलपुरनाम नगर में चन्द्रस्वामी नाम एक धनवान् सज्जनब्राह्मण रहताथा उस ब्राह्मण के वडीविनीत देवमतिनाम स्त्री में एक ऐसा सुलक्षण पुत्र उत्पन्न हुआ जिसके उत्पन्न होतेही यह आकाशवाणीहुई कि हे चन्द्रस्वामी इस पुत्रकानाम तुम महीपालरखना क्योंकि यह राजाहोकर वहुतकालतक पृथ्वीका पालनकरेगा इस आकाशवाणी को सुनकर चन्द्रस्वामी ने वडा उत्सवकरके अपने पुत्रकानाम महीपालरक्खा वह महीपाल थोडीही अवस्था में सम्पूर्ण शास्त्र शस्त्र अस्त्र तथा कलाओं में प्रवीणहोगया इस वीच में चन्द्रस्वामी के उसी देवमति स्त्री में अत्यन्त सुन्दरी चन्द्रवती नाम एक कन्या उत्पन्नहुई वह महीपाल और चन्द्रवती दोनों अपने पिता के यहां वृद्धि को प्राप्तभए एकसमय उस देशमें सूर्य्यकी किरणों के द्वारा सम्पूर्ण धनाजों के सूखजाने से वडा भारी दुर्भिक्षपडा उस दोप से वहाका राजा सन्मार्गछोडकर अधर्म्म से प्रजाओं का धन लेनेलगा तव देशकी दुर्दशादेखकर देवमति ने चन्द्रस्वामी से कहा कि इस देशको छोडकर तुम हमारे पिता के यहां चलो यहा रहने से कदाचित् मेरे सन्तान नष्ट न होजायें यह सुनकर चन्द्रस्वामी ने कहा कि दुर्भिक्ष में घरको छोडना महापाप है इससे मैं इन दोनों वालकों को लेजाकर तुम्हारे पिता के यहा छोडआताहूं तुम यहींरहो मैं इनको पहुँचाकर लौटआऊंगा यह कहकर उसे वहीं छोडकर दोनो वालकों को लेकर चन्द्रस्वामी वहासे चला और मार्ग में चलते २ तीन चार दिन के उपरान्त सूर्य्यकी किरणों से तप्तवालुका वाले सूखेहुए एक महावन में पहुँचा वहा प्यासेहुए महीपाल तथा चन्द्रवतीको किसीवृक्षकेनीचे वैठाल कर उनके लिये जलढूढताहुआ वहुतदूर चलागया वहां उसे जलतो नहीं मिला परन्तु अकस्मात् निपादोंका स्वामी सिंहदंष्ट्रनाम निपाद मिला उसने उससे सववृत्तान्त पूछकर और उसको जलार्थी जान कर अपने सेवकों से इशारा करके कहा कि इसे लाकर जल पिलाओ यह वचनसुनकर सेवकों ने उस का आशय जानके चन्द्रस्वामीको अपने गांव में लेजाकर वन्धन में डाला तव चन्द्रस्वामी अपने दो

न्ध्याचलके अट्टहासके समान गर्जताहुआ सिंह राजाके मारनेकोदौड़ा उसीसमय आकाशमार्ग से जातेहुए किसी विद्याधरने देखकर शीघ्रही खड्गसे सिंहके दो टुकडेकरडाले और राजा के निकटजाकर पूछा कि हे राजा कनकवर्ष तुम यहा क्यों आयेहो विद्याधरके यह वचन सुनकर राजाने अपना स्मरण करके उससे कहा कि मुझ विरहाग्निसे व्याकुलको तुम क्याजानों तब उसने कहा कि मैं आपही के पुरका रहनेवाला बन्धुमित्रनाम परिव्राजक (सन्यासी) था मैंने सेवाकरके अत्यन्त प्रार्थनापूर्व्वक आपही से सहायताकराके वेतालको सिद्धकरके विद्याधर सिद्धिपाई है इसी से मैंने आपको पहचानकर आपके मारनेको उद्यत सिंहको प्रत्युपकार करनेके निमित्त खड्गसेमारडाला हे राजा अब मेरानाम बन्धुप्रभ होगयाहै उसके यहवचनसुनकर राजानेकहा कि हॉ मुझे तुम्हारी यादहै तुमने उसी मित्रताका आज यहा निर्वाहकियाहै अब हे मित्र वताओ मुझसे स्त्री और पुत्रकासमागम कबहोगा यहसुनकरउसने अपनी विद्याकेप्रभावसे जानकरकहा कि जबतुम भगवती विन्ध्यवासिनी के दर्शनकरोगे तबतुम्हारा अपनीस्त्री और पुत्र से समागमहोगा इससे तुम वहीं जाओ में अपने लोककोजाताहूं यह कहकर उसके आकाशमें चलेजानेपर राजा कनकवर्ष धैर्य्यको धारणकरके विन्ध्यवासिनी के दर्शनकोचला मार्ग में एक मतवाला हाथी मस्तककँपाके और सूंड फैलाकर उसके पीछेदौडा उसे देखकर राजा गढ्ढों के मार्ग से इसरीतिपर भागा कि जिससे वह हाथी गढे मे गिरकरमरगया तब मार्ग के श्रम से थकाहुआ राजा चलते २ उद्दड पुंडरीक नाम एक बडे तालावपर पहुँचा और वहा स्नानकरके और कमलकी दडीखाजलपीकर किसी वृक्ष के नीचे विश्रामकरनेलगा और क्षणभर में ही उसे निद्राआगई २१८ उससमय उसीमार्ग से शिकार खेलकर लौटेहुए निषादो ने राजा को सोतेहुएदेखा और उसके सुन्दर लक्षणदेखकर उसे बाधकर अपने मुक्ताफलनाम स्वामी के पास लेगये मुक्ताफल उसे सुलक्षण पुरुषजानकर बलिदानदेने के लिये विन्ध्यवासिनी के मन्दिर में लेगया वहा भगवती के दर्शनकरके प्रणामकरतेहुए राजा के बन्धन स्वामिकार्त्तिकजीकी कृपा से शिथिलहोगये यह देखकर निषादों के स्वामी मुक्ताफलने राजापर भगवतीकीकृपा जानकर उसे बन्धनों से छुटादिया इसप्रकार तीसरी अपमृत्यु से बचेहुए राजा के शापकावर्ष पूराहोगया तब वह सर्पिणी राजाके पुत्र तथा स्त्रीको लेकर वहाप्रकटहुई और बोली कि हे राजा मैंने श्रीस्वामिकार्त्तिकजी के शापको जानकर युक्तिपूर्व्वक इन दोनों को लेजाकर अपने स्थानमे रक्षाकीथी अब तुम इन दोनों को लो और पृथ्वीका अकण्टकराज्य भोगकरो यहकहकर वह सर्पिणी अन्तर्द्धानहोगई और राजा भी स्त्री पुत्र के वियोग को स्वप्न के समानमानकर अत्यन्त आनन्दपूर्व्वक रानी से मिला और रानी भी बहुतकाल के वियोग से सन्तप्त अपने अङ्गोंको शीतलकरनेको राजा के गले मे लिपटगई बहुतकालके उपरान्त उन दोनों के मिलने से विरह क्लेश आँसुओं के साथ बहगया तब मुक्ताफल उसे राजा जानकर पैरों में गिरकर अपने अपराध क्षमाकराके उसे अपने ग्राम में लेगया और अपने ऐश्वर्य्य के अनुसार सेवनकरके उसे अपने यहां टिकाया तब राजा ने वहीं से दूतभेजकर अपने श्वशुर देवशक्ति को तथा अपनी सम्पूर्ण सेना को वहीं बुलवाया और उन सब के वहां आजानेपर मदनसुन्दरी तथा अपने पुत्र

का विचार किया और रात्रिभर वहा रहकर दूसरेदिन नारिकेलद्वीपके जानेवाले विष्णुवर्मा नाम किसी वैश्यसे मिलकर उसीके साथ जहाजपर चढके पुत्रके स्नेह से नारिकेलद्वीपको गया वहा उसे वहा के वैश्योंके द्वारा मालूमहुआ कि कनकवर्मा वनमें मिलेहुए ब्राह्मणके पुत्र तथा कन्याकोलेकर यहाआ-यातोथा परन्तु अब वह यहासे उनको लेकर कटाहद्वीपको गया यह सुनकर चन्द्रस्वामी कटाहद्वीपको जातेहुए दानवर्मानाम वैश्यकेसाथ जहाजपर चढकर कटाहद्वीपको गया वहा भी उसने सुना कि वह वैश्य यहासे कर्पूरद्वीपको गया इसप्रकारसे वह कर्पूर सुवर्ण तथा सिंहलद्वीप में वणियों के साथ गया परन्तु वह वैश्य न मिला सिंहलद्वीप में उसे यह मालूमहुआ कि वह वणिया अपने देशमें चित्रकूट नाम नगर को गया यह समाचार जानकर चन्द्रस्वामी ने कोटीश्वरनाम वैश्यकेसाथ जहाजपर चढके समुद्र के पार आकर चित्रकूटनाम नगरमें कनकवर्मानाम वैश्यको ढूढकरउससे अपना सब वृत्तान्त कहा तब कनकवर्मा ने उसको दुखित देखकर वह दोनों कन्या तथा बालकलाकर दिखाये शोकका विषयहै कि वह बालक तथा कन्या दोनों उस के न थे उन दोनोंको अपने कन्या और पुत्र न जानके चन्द्र-स्वामी निराश होकर शोकसे व्याकुल होकर कहनेलगा कि हाय मैंने इतनी दूर भ्रमण करके भी न अपना पुत्र पाया और न कन्यापाई दुष्टस्वामीके समान ब्रह्माने मुझे आशादिखाई परन्तु पूर्ण न की और व्यर्थ बहुत दूर भ्रमण कराया इत्यादि अनेक विलाप करतेहुए चन्द्रस्वामीको कनकवर्मा ने बहुत समझाकर सावधान किया तब चन्द्रस्वामीने शोकयुक्त होकर कहा कि जो पृथ्वी में पर्य्यटन करने से एकवर्षके भीतर मेरे कन्या और पुत्र न मिलेंगे तो गंगाजीके तटपर तपकरके मैं अपने शरीरको त्याग दूंगा उसके वह वचन सुनकर वहा बैठेहुए किसी ज्ञानीने उससे कहा कि नारायणीकी कृपासे तुमको कन्या पुत्र दोनों मिलजायँगे तुम जाओ यह सुनकर चन्द्रस्वामी प्रसन्नहोके श्रीसूर्य्य भगवान्की कृपाको स्मरण करके वैश्यों के पूजन सत्कारको ग्रहण करके वहा से चला और अनेक ग्राम तथा नगरोंको ढूढताहुआ भ्रमण करते २ एकदिन सायकालके समय बहुतसे लम्बे २ वृक्षोंसे युक्त किसी बडे घोर वनमें पहुचा वहा फल खाकर जलपीके रात्रिको व्यतीत करनेकेलिये वह किसी वृक्षपर चढके बैठा ७५ अर्द्ध रात्रिके समय उसने उसी वृक्षके नीचे महानारायणी आदिक मातृका आईहुई देखीं वह सब अपनी २ भेटको लियेहुए भैरवनाथकी प्रतीक्षा करनेलगीं और थोडेही कालके पीछे भैरवजीको न आये देखकर सम्पूर्ण मातृका नारायणीजी से पूछनेलगीं कि आज भैरवने क्यों देरकरी है क्यों नहीं आये परन्तु नारायणी कुछ उत्तर न देकर हँसने लगीं फिर उनसबके बहुत हठकरनेपर नारायणीने कहा कि सखियो यद्यपि लज्जाकी बातहै तथापि मैं तुमसे कहतीहूं यहा सुरपुरनाम नगरमें सूरसेन नाम राजाहै उसके विद्याधरीनाम बडी रूपवती कन्या है राजाने उस कन्याको विमलनाम राजाके बडे रूपवान् प्रभाकर नाम पुत्रको देनाचाहा और विमलने उस विद्याधरीकी प्रशसा सुनके अपने पुत्रके लिये दूतभेजकर राजा सूरसेनसे विद्याधरीमागी तब सूरसेनने बहुत प्रसन्नहोके प्रभाकरकेसाथ उस विद्याधरीका विवाह करदिया और उसीके साथउसको बहुतसा धन देकर विदा करदिया तदनन्तर विद्याधरी अपने श्वशुर

बलिदानके लिये बांधागया जानकर अपनीकन्या तथा पुत्रका शोककरके विलाप करनेलगा कि हा महीपाल हा वत्से चन्द्रवती मैंने तुमको अकेलाही वनमें छोडकर सिंह व्याघ्रादिकोंकी भेटकिया और इन चोरोंके हाथ अपने प्राणदिये यहांकोई मेरी रक्षा करनेवाला नहीं है इसप्रकार विलाप करते २ वह आकाशमें सूर्य्य भगवान्को देखकर यह शोचके कि मोहको छोडकर प्रभुकी शरण में जाना चाहिये उनकी यह स्तुति करनेलगा हे विभो पर तथा अपर आकाशमें शयन करनेवाले बाह्य तथा अभ्यन्तर अन्धकारके दूर करनेवाले तेजोमय आपको नमस्कारहै तीनोंलोकों में व्याप्त विष्णु आपहीहो कल्याणों के निधि श्रीशिवजी आपहीहो सोयेहुए संसारको चेष्टा करानेवाले ब्रह्माजी भी आपहीहो यहप्रकाश रहित चन्द्रमा तथा अग्नि प्रकाशितहोवें इसलिये मानों आप रात्रि के समय अन्तर्द्धान होजाते हो आपके उदयहोनेपर राक्षस भागजातेहैं चोर अपने कुकर्ममें असमर्थ होजातेहैं और गुणीलोग प्रसन्नहोते हैं इससे हे त्रैलोक्यके दीपकरूप सूर्य्य भगवान् मुझ शरणागतकी रक्षाकरो दयाकरके इसदुःखरूपी अन्धकारको दूरकरो उसके इसप्रकार स्तुति करनेपर यहआकाशवाणीहुई कि हे चन्द्रस्वामी मैं तुम्हारेऊपर प्रसन्नहूं तुम्हारा वध नहींहोगा मेरीकृपासे तुम्हारापुत्र तथा कन्या मिलजायगी इसआकाशवाणीकोसुनकर धैर्य्ययुक्तहुए चन्द्रस्वामीको निषादराजके सेवकोंने स्नानकराके सुन्दरभोजनकरवाया ३६ इस बीचमें वनमेंअकेले बैठेहुए पिताके न आनेसे रोतेहुए चन्द्रवतीसहित महीपालको उसीमार्गसे आयाहुआ सार्थधर नाम वैश्य उनदोनोंसे संपूर्ण वृत्तान्त पूछकर दयायुक्तहोकर उनदोनोंको अपने नगरमें लेगया और पुत्रके समान स्नेहकरके उनकापालन करनेलगा और वहमहीपाल वहां बाल्यावस्थाही में हवन तथा जपादिक धर्म्मकार्य करनेलगा एकसमय तारापुर के राजा ताराधरका मन्त्री अनन्तस्वामीनाम ब्राह्मण किसीकार्य्यवशसे उसी मार्गमें आकर अपने परिकरसमेत उसी वैश्यके यहां ठहरा वह उस महीपालको जपतथा हवनमें निरतदेखकर संपूर्ण वृत्तान्त पूछके उसे ब्राह्मणका बालक जानकर आप अनपत्य होनेके कारण उसवैश्यसे चन्द्रवती समेत महीपालको मांगकर अपने तारापुर नगरको लेगया और वहां महीपालको अपनापुत्र और चन्द्रवतीको बनाकर बडेसुखसे दोनोंको रखनेलगा इस बीचमें भिल्लोंके स्वामी सिंहदंष्ट्रने चन्द्रस्वामीके पास आकरकहा कि हेब्राह्मण सूर्य्यभगवान् ने मुझसे स्वप्नमें कहाहै कि इसब्राह्मणको मारनानहीं केवल पूजनकरके इसे छोडदेना इससे आपकी जहां इच्छाहोय वहां जाइये यह कहकर उसने चन्द्रस्वामीको बहुतसेमोती तथा कस्तूरी देकर और वन में उसकी रक्षाको अपने सेवकदेकरउसे विदाकिया इसप्रकार वहांसे छुटाहुआ चन्द्रस्वामी वनमें अपने पुत्र तथा कन्याको न पाकर ढूंढताहुआ समुद्रके तटपर जलपुरनाम नगरमें किसी ब्राह्मणके यहां अतिथिहोकर गया वहां भोजन करनेके उपरान्त प्रसंगसे इसका संपूर्ण वृत्तान्त जानकर उसगृहपति ब्राह्मणने कहा कि कुछ दिनहुए कनकवर्षनाम एक वैश्य यहां आयाथा उसने वनमें एक ब्राह्मणकापुत्र तथा कन्या पाईथी वह उन दोनोंको लेकर यहांसे नारिकेलनाम महाद्वीपको गया परन्तु उनका नाम उसने नहीं बतायाथा यह सुनकर चन्द्रस्वामीने उनको अपनेही सन्तान जानके नारिकेलद्वीप में जाने

का विचार किया और रात्रिभर वहां रहकर दूसरेदिन नारिकेलद्वीपके जानेवाले विष्णुवर्मा नाम किसी वैश्यसे मिलकर उसीके साथ जहाजपर चढ़के पुत्रके स्नेह से नारिकेलद्वीपको गया वहां उसे वहां के वैश्योंके द्वारा मालूमहुआ कि कनकवर्मा वनमें मिलेहुए ब्राह्मणके पुत्र तथा कन्याकोलेकर यहांआयाथा परन्तु अब वह यहांसे उनको लेकर कटाहद्वीपको गया यह सुनकर चन्द्रस्वामी कटाहद्वीपको जातेहुए दानवर्मानाम वैश्यकेसाथ जहाजपर चढ़कर कटाहद्वीपको गया वहां भी उसने सुना कि वह वैश्य यहांसे कर्पूरद्वीपको गया इसप्रकारसे वह कर्पूर सुवर्ण तथा सिंहलद्वीप में वणियों के साथ गया परन्तु वह वैश्य न मिला सिंहलद्वीप में उसे यह मालूमहुआ कि वह वणिया अपने देशमें चित्रकूट नाम नगर को गया यह समाचार जानकर चन्द्रस्वामी ने कोटीश्वरनाम वैश्यकेसाथ जहाजपर चढ़के समुद्र के पार आकर चित्रकूटनाम नगरमें कनकवर्मानाम वैश्यको ढूंढकरउससे अपना सब वृत्तान्त कहा तब कनकवर्मा ने उसको दुखित देखकर वह दोनों कन्या तथा बालकलाकर दिखाये शोकका विषयहै कि वह बालक तथा कन्या दोनों उस के न थे उन दोनोंको अपने कन्या और पुत्र न जानके चन्द्रस्वामी निराश होकर शोकसे व्याकुल होकर कहनेलगा कि हाय मैंने इतनी दूर भ्रमण करके भी न अपना पुत्र पाया और न कन्यापाई दुष्टस्वामीके समान ब्रह्माने मुझे आशादिखाई परन्तु पूर्ण न की और व्यर्थ बहुत दूर भ्रमण कराया इत्यादि अनेक विलाप करतेहुए चन्द्रस्वामीको कनकवर्मा ने बहुत प्रेमकरकर सावधान किया तब चन्द्रस्वामीने शोकयुक्त होकर कहा कि जो पृथ्वी में पर्य्यटन करने से एकवर्षके भीतर मेरे कन्या और पुत्र न मिलेंगे तो गंगाजीके तटपर तपकरके मैं अपने शरीरको त्याग दूंगा उसके वह वचन सुनकर वहां बैठेहुए किसी ज्ञानीने उससे कहा कि नारायणीकी कृपासे तुमको कन्या पुत्र दोनों मिलजायँगे तुम जाओ यह सुनकर चन्द्रस्वामी प्रसन्नहोके श्रीसूर्य्य भगवान्की कृपाको स्मरण करके वैश्यों के पूजन सत्कारको ग्रहण करके वहां से चला और अनेक ग्राम तथा नगरोंको ढूंढताहुआ भ्रमण करते २ एकदिन सायंकालके समय बहुतसे लम्बे २ वृक्षोंसे युक्त किसी बड़े घोर वनमें पहुंचा वहां फल खाकर जलपीके रात्रिको व्यतीत करनेकेलिये वह किसी वृक्षपर चढ़के बैठा ७५ अर्द्ध रात्रिके समय उसने उसी वृक्षके नीचे महानारायणी आदिक मातृका आईहुई देखीं वह सब अपनी २ भेंटको लियेहुए भैरवनाथकी प्रतीक्षा करनेलगीं और थोड़ेही कालके पीछे भैरवजीको न आये देखकर सम्पूर्ण मातृका नारायणीजी से पूछनेलगीं कि आज भैरवने क्यों देरकरी है क्यों नहीं आये परन्तु नारायणी कुछ उत्तर न देकर हँसने लगीं फिर उनसबके बहुत हठकरनेपर नारायणीने कहा कि सखियो यद्यपि लज्जाकी बातहै तथापि मैं तुमसे कहतीहूं यहां सुरपुरनाम नगरमें सूरसेन नाम राजाहै उसके विद्याधरीनाम बड़ी रूपवती कन्या है राजाने उस कन्याको विमलनाम राजाके बड़े रूपवान् प्रभाकर नाम पुत्रको देनाचाहा और विमलने उस विद्याधरीकी प्रशंसा सुनके अपने पुत्रके लिये दूतभेजकर राजा सूरसेनसे विद्याधरीमांगी तब सूरसेनने बहुत प्रसन्नहोके प्रभाकरकेसाथ उस विद्याधरीका विवाह करदिया और उसीके साथउसको बहुतसा धन देकर विदा करदिया तदनन्तर विद्याधरी अपने श्वशुर

के गृहमें पहुंचकर रात्रिके समय पतिके साथ शयन स्थानमें गई वहां संभोग विना कियेही सोयेहुए अपने पति प्रभाकरको नपुंसक जानकर हाय २ मुझ अभागिनिको नपुंसक पति मिलाहै यह शोच करतीहुई विद्याधरीने रात्रि व्यतीत करके दूसरे दिन अपने पिताको यह लेख लिखा कि आपने कैसे विना देखेभाले नपुंसकके साथ मेरा विवाह करदिया उस लेखको पढकर उसका पिता राजासूरसेन बहुत क्रोधित हुआ कि विमलने मुझको ठगाहै तब उसने विमलको यह चिट्ठी लिखी कि तुमने छल करके अपने नपुंसकपुत्रके साथ मेरी कन्या का विवाह करवालिया अब तुम इसका फल भोगो मैं आकर तुमको मारूंगा इसलेखको पाकर विमलने व्याकुलहोके अपने मंत्रियों से पूछा कि इस दुर्जेय राजासे बचने का अब कौनसा उपायहै यह सुनकर पिंगदत्तनाम मंत्री ने कहा कि हे स्वामी इसमें एकही उपायहै वह मैं आपको बताताहूं स्थूलशिरायक्ष के आराधनका मंत्र मुझे मालूमहै उस मंत्रको जपकर स्थूलशिराको सिद्धकरके उससे अपने पुत्रके निमित्त लिंगमांगिये तो विग्रहशान्त होजाय मंत्री के यह वचन सुनकर राजाने मंत्र सीखकर जपके द्वारा उसयक्षको सिद्धकरके उससे अपने पुत्रके लिये लिंगमांगा उसने प्रभाकरको थोडे दिनोंकेलिये लिंगदेदिया इससे प्रभाकर तो पुरुष होगया परन्तु यक्ष नपुंसक होगया और वह विद्याधरी प्रभाकरको पुरुष देखकर उसके साथ रमणकरके अपने चित्तमें शोचनेलगी कि मदके दोषसे मुझे भ्रान्ति होगईथी मेरा पति नपुंसक नहींहै यह शोचकर उसने पिताको इसी आशयका पत्र भेजदिया उस पत्रको पाकर राजासूरसेन क्रोधरहित होकर शान्त होगया १०० इसी वृत्तान्तको जानकर भैरवजी ने आज कोप करके स्थूलशिरायक्षको बुलाकर यह शापदिया कि तैंने अपना लिंगदेकर नपुंसकत्व अंगीकार किया इससे तू जन्मभर नपुंसक रहैगा और वह प्रभाकर जन्म भर पुरुष रहैगा इसप्रकार से वह यक्ष तो नपुंसकहोके महादुखी होरहाहै और प्रभाकर पुरुष होकर सुख भोगरहाहै इसी कार्य्य से आज भैरवजी के आने में देरहुई है अब वह आनेही चाहते हैं नारायणी देवी के इसप्रकार कहतेही कहते चक्रके स्वामी भैरवजी वहां आगये और सम्पूर्ण मातृकाओं के पूजन और बलिको ग्रहण करके योगिनियों के साथ ताण्डवनृत्य करने लगे यह सब वृत्तान्त चन्द्रस्वामी वृक्षके ऊपर से देखतारहा और नारायणीकी एक दासीको देखकर उसपर अनुरक्तहुआ और दासी भी उसे देखकर उसपर अनुरक्त होगई उन दोनों का यह परस्पर अनुराग नारायणी ने जान लिया तब नारायणी के सिवाय सम्पूर्ण मातृकाओं समेत भैरवजी के चलेजानेपर नारायणी ने वृक्षपर से चन्द्रस्वामी को नीचे बुलाकर उससे और दासी से पूछा कि क्या तुम दोनों को परस्पर अभिलाष है उन्हों ने कहा कि हां है उनके यह यथार्थ वचनसुनकर भगवती ने क्रोध रहितहोके चन्द्रस्वामी से कहा कि तुम्हारे सत्यवचनोंसे मैं प्रसन्नहूं इससे मैं तुमको शापनहींदूंगी और यह दासी तुम लेलो जिससे तुमदोनोंको सुखहोय यहसुनकर चन्द्रस्वामी ने कहा कि हे देवी यद्यपि यह चंचलमन रोकनेसेभी नहीं रुकताहै तथापि मैं परस्त्रीका स्पर्श नहींकरसक्ता मनकी तो यहप्रकृतिहै इसमें कायिकपापसे बचना अवश्यहै उस धीरके यह वचनसुनकर देवीने प्रसन्नहोकर कहा कि मैं तुम्हारे ऊपर प्रसन्नहोके यह वरदेती

है कि शीघ्रही तुमको पुत्र तथा कन्या मिलजायगी और यह नहीं म्लान होनेवाला विष आदि दोषों का दूरकरनेवाला कमल मुझसे लो यह कहकर और कमल देकर नारायणी अपनी दासियों समेत अन्तर्द्धान होगई और चन्द्रस्वामी उस कमलको लेकर रात्रिके व्यतीत होजानेपर भ्रमण करताहुआ तारापुर नगरमें अनन्तस्वामी नाम मन्त्रीके घरपर जहां उसका महीपाल नाम पुत्र और चन्द्रवतीनाम कन्याथी पहुंचा वहां वह उस मन्त्रीको अतिथिवत्सल सुनकर भोजनके लोभसे उसके द्वारपर वेदका पाठ करनेलगा मन्त्रीने वेदाध्ययन सुनकर उसे प्रतीहारके द्वारा भीतर बुलवाके उसे अपने यहां भोजन का निमन्त्रण दिया निमन्त्रण पाकर चन्द्रस्वामी पापनाशक अनन्तह्रद नाम तडागको सुनकर वहीं स्नानकरने को गया स्नानकरके जब वह लौटा तो नगरमें बड़ा हाहाकार शब्द सुनाई दिया पूछने में लोगोंने उससे कहा कि सार्थधरनाम वैश्य किसी ब्राह्मणके महीपाल नाम पुत्रको उसकी बहिन समेत वनमें लेआयाथा उस वैश्यसे यहाँ के राजाके मन्त्री अपुत्र अनन्तस्वामी ने भगिनी समेत उसबालक को मांगलाकर पुत्रके समान उसका पालनकिया और वह महीपाल अपने सद्गुणों के कारण राजा तारावर्माका तथा सम्पूर्ण राज्यका अत्यन्त प्यारा होगया आज उसी महीपालको कालेसर्प ने काटाहै इसीसे सम्पूर्ण नगर में हाहाकार होरहाहै यह सुनकर चन्द्रस्वामी ने यह जानकर कि यह मेराही पुत्रहै और भगवती के दियेहुए कमलको अपने हाथमें देखके अत्यन्त प्रसन्नहोके शीघ्रही अनन्तस्वामी के घरमें जाकर उस महीपालको वह कमलसुँघाया उसके सूंघतेही महीपाल निर्विषहोकर सोके जगेहुएके समान उठबैठा तब सम्पूर्णपुरमें बड़ाउत्सवहुआ और अनन्तस्वामी राजा तथा पुरवासियोंने चद्रस्वामी को महात्मा जानकर उसे बहुतसा धनदिया उसधनकोपाकर चद्रस्वामी अपनेपुत्र तथा कन्याको देख-ताहुआ उसी मन्त्रीके यहां रहा और उन तीनोंने परस्पर पहचान करके भी अपना वृत्तान्त नहीं प्रकट किया ठीकहै (कुर्वन्त्यकालेभिव्यक्तिं नकार्य्यापेक्षिणोबुधाः) कार्य्यकी अपेक्षा करनेवाले विद्वान्लोग असमयमें अपने वृत्तान्तको प्रकट नहीं करते हैं इसके उपरान्त राजा तारावर्मा ने महीपालके गुणों से प्रसन्न होकर उसके साथ अपनी बन्धुमती नाम कन्याका विवाह करदिया और अपना आधा राज्य उसे देकर सपूर्ण राज्यका भार उसीके सुपुर्द करदिया इसप्रकारसे राज्यपाकर वह महीपाल चन्द्रस्वामी को अपना पिता प्रसिद्ध करके और अपनी बहिनका किसी योग्य पतिके साथ विवाह करके सुखपूर्वक रहनेलगा एकसमय चन्द्रस्वामीने एकान्तमें उससे कहा कि हे पुत्र अपने देशमें चलकर अपनी माताको लेआओ नहीं तो ऐसा न होय कि वह तुम्हें राज्यमें स्थित जानकर वियोग से कुपितहोके शापदेदे और जिसको क्रोधकरके माता पिता शापदेते हैं उसे कभी सुख नहीं होता इस विषयमें तुम को मैं एक वैश्यके पुत्रकी कथा सुनाताहूं धवलनाम पुरमें चक्रनाम एक वैश्यका पुत्र अपने माता पिताकी विना आज्ञालिये स्वर्णद्वीपको व्यवहार करनेको गया वहां पांचवर्ष में बहुतसाधन उपार्जन करके वह अपने देशमें आनेके लिये रत्नोंसे भरेहुए जहाजपर चढ़करचला जब किनारा कुछही दूर रहगया तब आकाशमें जलकी वृष्टि और महाप्रचण्ड वायुचलनेलगी उसीमें वह जहाज टूटगया तब

के गृहमें पहुचकर रात्रिके समय पतिके साथ शयन स्थानमें गई वहा सभोग विना कियेही सोयेहुए अपने पति प्रभाकरको नपुसक जानकर हाय २ मुझ अभागिनिको नपुसक पति मिलाहै यह शोच करतीहुई विद्याधरीने रात्रि व्यतीत करके दूसरे दिन अपने पिताको यह लेख लिखा कि, आपने कैसे विना देखेभाले नपुसकके साथ मेरा विवाह करदिया उस लेखको पढकर उसका पिता राजा सूरसेन बहुत क्रोधित हुआ कि विमलने मुझको ठगाहै तब उसने विमलको यह चिट्ठी लिखी कि, तुमने छल करके अपने नपुसकपुत्रके साथ मेरी कन्या का विवाह करवालिया अब तुम इसका फल भोगो मै आकर तुमको मारूगा इसलेखको पाकर विमलने व्याकुलहोके अपने मन्त्रियों से पूछा कि इस दुर्जेय राजासे बचने का अब कौनसा उपायहै, यह सुनकर पिगदत्तनाम मत्री ने कहा कि हे स्वामी इसमें एकही उपायहै वह मै आपको बताताहू स्थूलशिरायक्ष के आराधनका मत्र मुझे मालूमहै उस मत्रको जपकर स्थूलशिराको सिद्धकरके उससे अपने पुत्रके निमित्त लिगमागिये तो विग्रहशान्त होजाय मत्री के यह वचन सुनकर राजाने मत्र सीखकर जपके द्वारा उसयक्षको सिद्धकरके उससे अपने पुत्रके लिये लिगमागा उसने प्रभाकरको थोडे दिनोंकेलिये लिंगदेदिया इससे प्रभाकर तो पुरुष होगया परन्तु यक्ष नपुसक होगया और वह विद्याधरी प्रभाकरको पुरुष देखकर उसके साथ रमणकरके अपने चित्तमें शोचनेलगी कि मदके दोषसे मुझे भ्रान्ति होगईथी मेरा पति नपुसक नहीं है यह शोचकर उसने पिताको इसी आशयका पत्र भेजदिया उस पत्रको पाकर राजासूरसेन क्रोधरहित होकर शान्त होगया १०० इसी वृत्तान्तको जानकर भैरवजी ने आज कोप करके स्थूलशिरायक्षको बुलाकर यह शापदिया कि तेने अपना लिगदेकर नपुसकत्व अंगीकार किया इससे तू जन्मभर नपुसक रहैगा और वह प्रभाकर जन्म भर पुरुष रहैगा इसप्रकार से वह यक्ष तो नपुसकहोके महादुखी होरहाहै और प्रभाकर पुरुष होकर सुख भोगरहाहै इसी कार्य्य से आज भैरवजी के आने में देरहुई है, अब वह आनेही चाहते है नारायणी देवी के इसप्रकार कहतेही कहते चक्रके स्वामी भैरवजी वहा आगये और संपूर्ण मातृकाओं के पूजन और बलिको ग्रहण करके योगिनियों के साथ ताण्डवनृत्य करने लगे यह सब वृत्तान्त चन्द्रस्वामी वृक्षके ऊपर से देखतारहा और नारायणीकी एक दासीको देखकर उसपर अनुरक्तहुआ और दासी भी उसे देखकर उसपर अनुरक्त होगई उन दोनों का यह परस्पर अनुराग नारायणी ने जान लिया तब नारायणी के सिवाय सम्पूर्ण मातृकाओ समेत भैरवजी के चलेजानेपर नारायणी ने वृक्षपर से चन्द्रस्वामी को नीचे बुलाकर उससे और दासी से पूछा कि क्या तुम दोनों को परस्पर अभिलाष है उन्हो ने कहा कि हॉ है उनके यह यथार्थ वचनसुनकर भगवती ने क्रोध रहितहोके चन्द्रस्वामी से कहा कि तुम्हारे सत्यवचनोंसे मै प्रसन्नहू इससे मै तुमको शापनहींदूगी और यह दासी तुम लेलो जिससे तुमदोनोंको सुखहोय यहसुनकर चन्द्रस्वामी ने कहा कि हे देवी यद्यपि यह चचलमन रोकनेसेभी नहीं रुकताहै तथापि मै परस्त्रीका स्पर्श नहींकरसक्ता मनकी तो यहप्रकृतिहै इसमें कायिकपापसे बचना अवश्यहै उस धीरके यह वचनसुनकर देवीने प्रसन्नहोकर कहा कि मै तुम्हारे ऊपर प्रसन्नहोके यह वरदेती

और माता पिताकी भक्ति कामधेनुके समान फलदायकहोती है इसपरभी मैं तुमको एककथा सुनाताहूं पूर्वसमय किसी वनमें कोई महातपस्वी मुनिथा एकसमय वृक्षकी छायामें बैठेहुए उसमुनिके ऊपर किसी पक्षीने बीठकरदीनी तब मुनिने क्रोधकरके उसे देखा देखतेही वहपक्षी भस्महोगया और मुनि को अपने तपके प्रभावका अहंकारहोगया एकदिन किसी नगरमें उसमुनि ने किसी ब्राह्मणके यहां जाकर उसकी स्त्री से भिक्षामांगी उसने कहा कि कुछ समय ठहरजाइये मैं पतिकी सेवाकरके आपको भिक्षादूंगी उसके यहवचन सुनकर मुनि उसको क्रोधित दृष्टिसे देखनेलगे तब उसने हँसकर कहा कि हे मुने मैं वनकी चिड़िया नहींहूं जो आपकी क्रोधदृष्टि से भस्महोगई यहसुनकर मुनिने आश्चर्य्य में सोचा कि इसने यहवृत्तान्त कैसे जाना तदनन्तर अपने पति के सम्पूर्ण कार्य्योंको करके भिक्षालेकर आई हुई उसपतिव्रतासे मुनिने हाथ जोड़कर पूछा कि तुमने वनके पक्षीका वृत्तान्त कैसे जानलिया पहले यहबतादो तब मैं भिक्षालूंगा मुनि के वचन सुनकर उसने कहा कि मैं पतिकी भक्तिके सिवाय और कुछ नहीं जानतीहूं उसीके प्रभावसे मुझे इतनाज्ञान है तुम इसीनगरके रहनेवाले धर्म्मव्याधके पास जाओ उसके पास जाकर तुम्हारा अहंकार दूरहोजायगा उसके यहवचन सुनकर और भिक्षा लेकर वहमुनि उसे प्रणामकरके वहांसे चलेआये और दूसरे दिन बजारमें मांस बेचनेवाले उसधर्मव्याध के पासगये धर्मव्याधने मुनिको देखकर कहा कि क्या तुमको उसपतिव्रताने भेजाहै यहसुनकर मुनि ने आश्चर्य्य युक्तहोकर कहा कि मांसके बेचनेवाले तुमको ऐसाज्ञान कैसेहुआ तब धर्मव्याधने कहा कि मैं अपने माता पिताका भक्तहूं वही मेरे मुख्य देवता हैं उनको स्नानकराके मैं स्नान करताहूं भोजन कराके भोजन करताहूं और शयनकराके शयनकरताहूं इसीसे मुझको ऐसा ज्ञानप्राप्तहै मैं किसी अन्य व्याधके मारेहुए मृगादिजीवोंका मांसलाकर अपना धर्म जानकर बेचताहूं धनके लोभसे नहीं बेचता हे मुने मुझको और उसपतिव्रताको ज्ञानमें विघ्नकरनेवाला अहंकार नहीं है इसीसे यहज्ञान हमदोनों को प्राप्तहुआ है इसमें तुमभी इसअहंकार को छोड़के स्वधर्म का आचरण करो तो तुमको भी परम तेजोमयज्ञान प्राप्तहोगा उसके यहवचन सुनकर और उसके घर में जाकर उसके सम्पूर्ण कार्य्यों को देखकर वह मुनि प्रसन्नहोके वनकोगये और उसपतिव्रता तथा धर्म्मव्याधके समान सिद्धिको प्राप्तहुए यह पति तथा पिता माता के भक्तों का प्रभाव है इससे तुम अपनी मातासे चलकर मिलो चन्द्रस्वामी के यहवचन सुनकर महीपाल स्वदेश जानेका विचार करके अपने धर्म्म के पिता अनन्त स्वामी से सम्पूर्ण वृत्तान्तकहके और उसीपर सम्पूर्ण राज्यका भाररखकर रात्रिकेसमय अपने पिताके साथ वहां से चला और कुछदिनों में अपने नगरमें अपनी माताके निकटपहुंचा जैसे कोकिला बसन्तको देख कर प्रसन्नहोती है उसीप्रकार महीपालको देखकर उसकी माता देवमति प्रसन्नहुई वहां महीपाल अपने बन्धुओं को आनन्द देताहुआ कुछ कालतक अपने पिताकेसाथ रहा १६७ इस बीच में ताम्रपुर में महीपालकी रानी राजपुत्री बन्धुमती प्रातःकाल उठकर उसको कहींगया जानकर विरहसे अत्यन्त व्याकुलहुई और महल तथा उपवनादिकों में कहीं भी चैनन पाकर अश्रुओं से अपने रागको द्विगुण

जहाज के कुछ लोग तो पानी में बहगये और कितनोंही को मगर मच्छो ने खाडाला और चक्रको आयुर्बल शेष होने के कारण समुद्र ने लहरों से किनारेपर फेंक दिया वहा उसे एककाले वर्णवाला भयकर पुरुष हाथ में पाश लियेहुए दिखाईदिया वह पुरुष उस चक्रको अपने पाशमे बाँधकर सभा में सिंहासन पर बैठे हुए किसी पुरुष के पास लेगया और उसी सिंहासनपर बैठे हुए पुरुष की आज्ञा से उसीने उस वैश्यको लोहमय गृह में लेकर बन्द करदिया वहा चक्रने एक दूसरे पुरुषको देखा जिसके शिरपर तपाहुआ लोहेका चक्र निरन्तर भ्रमण कररहा था उससे चक्रने पूछा कि तुम कौन्हो किस कारण से तुमको यह कष्ट दियागयाहै और तुम कैसे जीतेहो यह सुनकर उसने कहा कि मैं खड्ग नाम वैश्यपुत्रहू मैंने अपने माता पिताके वचन नहीं माने इसीसे उन्होने कुपित होके मुझे यह शाप दिया कि हे दुष्ट तू हमको शिरमे लगेहुए सतप्त लोहेके चक्रके समान दुःखदेताहै इससे तुझे भी ऐसी ही पीडाहोगी यहकहकर उन्होने मुझे रोते देखकर कहा कि रोओ मत एकही महीने तुमको ऐसी पीडाहोगी यहसुनकर मैंने शोकसे वहदिन व्यतीतकरके रात्रिके समय स्वप्नसादेखा कि एकघोर भयकर पुरुष मेरे पास आया उसीने मुझको यहालाकर बन्दकिया और मेरे शिरपर यहचक्ररक्खा पिताके शापके प्रभावसे मेरे प्राण नहीं निकलतेहैं आज मुझे यहाआये महीनाभर व्यतीतहोगया परन्तु अब भी मैं शापसे नहीं छूटाहू खड्गवैश्यके यहवचन सुनकर चक्रने कहा कि परदेश जाने के समय मैंने भी अपने पिताके वचन नहींमानेथे और उन्होंने क्रोधकरके मुझे शापदियाथा कि जो तुझे धनमिलैगा वहसब नष्टहोजायगा इसीसे जोकुछ मैंने धन उपार्जन कियाथा वहसब समुद्रमे नष्टहोगया और यहा किसी पुरुषने मुझे लाकर बन्दकरदिया इससे अब मेरे जीवनसे क्या प्रयोजन है तुम इसचक्रको मेरे शिरपर रखकर अपने शापसे छूटो चक्रके इसप्रकार कहतेही यह आकाशवाणी हुई कि हे खड्ग तू शापसे छूटगया अपने शिरसे इसचक्रको लेकर इसचक्रवैश्य के शिरपर रखदे इसआकाशवाणी को सुनकर खड्गने वहतप्तचक्र उसचक्रनाम वणिक्पुत्रके शिरपर रखदिया और खड्गवैश्यको कोई अदृश्य पुरुष उसके घरको लेगया वहा वह भक्तिसे अपने माता पिताकी आज्ञानुसार सब कार्य्य करता हुआ सुखपूर्वक रहनेलगा और वहचक्रवैश्य अपने शिरपर उसतप्तचक्रको धारण करके बोला कि पृथ्वीमें जितने पापीहोय वहसब इसपापसे छूटजायँ और जबतक सबके सम्पूर्ण पाप क्षीण न होजायँ तबतक यहचक्र मेरे शिरपर घूमतारहै उसके यहवचन सुनकर आकाशवासी देवतालोगोंने प्रसन्नहोके पुष्पोंकी वृष्टिकरके कहा कि हे महासत्त्व तू धन्यहै तेरी इसकरुणासे तेरा सब पाप नष्टहोगया तुझे अक्षय धनमिलैगा देवता लोगों के इसप्रकार कहतेही चक्रवैश्यके शिरसे वहतप्तचक्र नष्टहोगया और प्रसन्न हुए इन्द्रका भेजाहुआ एकविद्याधर उसे बहुमूल्य रत्नदेके गोदी में लेकर धवलनाम नगरमें पहुचाकर अन्तर्द्धानहोगया और वहचक्रवैश्य अपने माता पिताके पास जाकर उन्हे सम्पूर्ण वृत्तान्त सुना के उनको आनन्दित करके सुखसे उनका सेवन करताहुआ आनन्दसे रहनेलगा १६८ इसकथाको कह चन्द्रस्वामी ने महीपालसे फिर कहा कि हे पुत्र माता पितासे विरोधकरने से ऐसाही अरिष्ट प्राप्तहोताहै

और माता पिताकी भक्ति कामधेनुके समान फलदायकहोती है इसपरभी मैं तुमको एककथा सुनाताहूं पूर्व्वसमय किसी वनमें कोई महातपस्वी मुनिथा एकसमय वृक्षकी छायामें बैठेहुए उसमुनिके ऊपर किसी पक्षीने बीटकरदीनी तब मुनिने क्रोधकरके उसे देखा देखतेही वहपक्षी भस्महोगया और मुनि को अपने तपके प्रभावका अहंकारहोगया एकदिन किसी नगरमें उसमुनि ने किसी ब्राह्मणके यहां जाकर उसकी स्त्री से भिक्षामांगी उसने कहा कि कुछ समय ठहरजाइये मैं पतिकी सेवाकरके आपको भिक्षादूंगी उसके यहवचन सुनकर मुनि उसको कोपित दृष्टिसे देखनेलगे तब उसने हँसकर कहा कि हे मुने मैं वनकी चिडिया नहींहूं जो आपकी क्रोधदृष्टि से भस्महोगई यहसुनकर मुनिने आश्चर्य्य से सोचा कि इसने यहवृत्तान्त कैसे जाना तदनन्तर अपने पति के सम्पूर्ण कार्य्योंको करके भिक्षालेकर आई हुई उसपतिव्रतासे मुनिने हाथ जोडकर पूछा कि तुमने वनके पक्षीका वृत्तान्त कैसे जानलिया पहले यहबतादो तब मैं भिक्षालूंगा मुनि के वचन सुनकर उसने कहा कि मैं पतिकी भक्तिके सिवाय और कुछ नहीं जानतीहूं उसीके प्रभावसे मुझे इतनाज्ञान है तुम इसीनगरके रहनेवाले धर्म्मव्याधके पास जाओ उसके पास जाकर तुम्हारा अहंकार दूरहोजायगा उसके यहवचन सुनकर और भिक्षा लेकर वहमुनि उसे प्रणामकरके वहांसे चलेआये और दूसरे दिन बजारमें मांस बेचनेवाले उसधर्मव्याध के पासगये धर्मव्याधने मुनिको देखकर कहा कि क्या तुमको उसपतिव्रताने भेजाहै यहसुनकर मुनि ने आश्चर्य्य युक्तहोकर कहा कि मांसके बेचनेवाले तुमको ऐसाज्ञान कैसेहुआ तब धर्मव्याधने कहा कि मैं अपने माता पिताका भक्तहूं वही मेरे मुख्य देवता हैं उनको स्नानकराके मैं स्नान करताहूं भोजन कराके भोजन करताहूं और शयनकराके शयनकरताहूं इसीसे मुझको ऐसा ज्ञानप्राप्तहै मैं किसी अन्य व्याधके मारेहुए मृगादिजीवोंका मांसलाकर अपना धर्म जानकर बेचताहूं धनके लोभसे नहीं बेचता हे मुने मुझको और उसपतिव्रताको ज्ञानमें विघ्नकरनेवाला अहंकार नहीं है इसीसे यहज्ञान हमदोनो को प्राप्तहुआ है इससे तुमभी इसअहंकार को छोडके स्वधर्म का आचरण करो तो तुमको भी परम तेजोमयज्ञान प्राप्तहोगा उसके यहवचन सुनकर और उसके घर में जाकर उसके सम्पूर्ण कार्य्यों को देखकर वह मुनि प्रसन्नहोके वनकोगये और उसपतिव्रता तथा धर्म्मव्याधके समान सिद्धिको प्राप्तहुए यह पति तथा पिता माता के भक्तों का प्रभाव है इससे तुम अपनी मातासे चलकर मिलो चन्द्रस्वामी के यहवचन सुनकर महीपाल स्वदेश जानेका विचार करके अपने धर्म्म के पिता अनन्त स्वामी से सम्पूर्ण वृत्तान्तकहके और उसीपर सम्पूर्ण राज्यका भाररखकर रात्रिकेसमय अपने पिताके साथ वहां से चला और कुछदिनों में अपने नगरमें अपनी माताके निकटपहुंचा जैसे कोकिला वसन्तको देख कर प्रसन्नहोती है उसीप्रकार महीपालको देखकर उसकी माता देवमति प्रसन्नहुई वहां महीपाल अपने बन्धुओं को आनन्द देताहुआ कुछ कालतक अपने पिताकेसाथ रहा १६७ इस बीच में ताम्रपुर में महीपालकी रानी राजपुत्री चन्द्रमती प्रातःकाल उठकर उसको कहींगया जानकर विरहसे अत्यन्त व्याकुलहुई और महल तथा उपवनादिकों में कहीं भी चैनन पाकर अश्रुओं से अपने हारको द्विगुण

जहाज के कुछ लोग तो पानी में बहगये और कितनोंही को मगर मच्छों ने खाडाला और चक्रको आयुर्बल शेष होने के कारण समुद्र ने लहरों से किनारेपर फेंक दिया वहा उसे एककाले वर्णवाला भयकर पुरुष हाथ में पाश लियेहुए दिखाईदिया वह पुरुष उस चक्रको अपने पाशमें बाँधकर सभा में सिंहासन पर बैठे हुए किसी पुरुष के पास लेगया और उसी सिंहासनपर बैठे हुए पुरुष की आज्ञा से उसीने उस वैश्यको लोहमय गृह मे लेकर बन्द करदिया वहा चक्रने एक दूसरे पुरुषको देखा जिसके शिरपर तपाहुआ लोहेका चक्र निरन्तर भ्रमण कररहा था उससे चक्रने पूछा कि तुम कौन्हो किस कारण से तुमको यह कष्ट दियागयाहै और तुम कैसे जीतेहो यह सुनकर उसने कहा कि मैं खड्ग नाम वैश्यपुत्रहू मैंने अपने माता पिताके वचन नहीं माने इसीसे उन्होंने कुपित होके मुझे यह शाप दिया कि हे दुष्ट तू हमको शिरमें लगेहुए सतप्त लोहेके चक्रके समान दु खदेताहै इससे तुझे भी ऐसी ही पीडाहोगी यहकहकर उन्होने मुझे रोते देखकर कहा कि रोओ मत एकही महीने तुमको ऐसी पीडाहोगी यहसुनकर मैने शोकसे वहदिन व्यतीतकरके रात्रिके समय स्वप्नसादेखा कि एकघोर भय कर पुरुष मेरे पास आया उसीने मुझको यहालाकर बन्दकिया और मेरे शिरपर यहचक्ररक्खा पिताके शापके प्रभावसे मेरे प्राण नहीं निकलतेहैं आज मुझे यहाआये महीनाभर व्यतीतहोगया परन्तु अब भी मैं शापसे नहीं छूटाहू खड्गवैश्यके यहवचन सुनकर चक्रने कहा कि परदेश जाने के समय मैंने भी अपने पिताके वचन नहींमानेथे और उन्होने क्रोधकरके मुझे शापदियाथा कि जो तुझे धनमिलैगा वहसब नष्टहोजायगा इसीसे जोकुछ मैंने धन उपार्जन कियाथा वहसब समुद्रमे नष्टहोगया और यहा किसी पुरुषने मुझे लाकर बन्दकरदिया इससे अब मेरे जीवनसे क्या प्रयोजन है तुम इसचक्रको मेरे शिरपर रखकर अपने शापसे छूटो चक्रके इसप्रकार कहतेही यह आकाशवाणी हुई कि हे खड्ग तू शापसे छूटगया अपने शिरसे इसचक्रको लेकर इसचक्रवैश्य के शिरपर रखदे इसआकाशवाणी को सुनकर खड्गने वहतप्तचक्र उसचक्रनाम वणिक्पुत्रके शिरपर रखदिया और खड्गवैश्यको कोई अदृश्य पुरुष उसके घरको लेगया वहा वह भक्तिसे अपने माता पिताकी आज्ञानुसार सब कार्य्य करता हुआ सुखपूर्वक रहनेलगा और वहचक्रवैश्य अपने शिरपर उसतप्तचक्रको धारण करके बोला कि पृथ्वीमें जितने पापीहोय वहसब इसपापसे छूटजायँ और जबतक सबके सम्पूर्ण पाप क्षीण न होजायँ तबतक यहचक्र मेरे शिरपर घूमतारहे उसके यहवचन सुनकर आकाशवासी देवतालोगोंने प्रसन्नहोके पुष्पोंकी वृष्टिकरके कहा कि हे महासत्त्व तू धन्यहै तेरी इसकरुणासे तेरा सब पाप नष्टहोगया तुझे अक्षय धनमिलैगा देवता लोगों के इसप्रकार कहतेही चक्रवैश्यके शिरसे वहतप्तचक्र नष्टहोगया और प्रसन्न हुए इन्द्रका भेजाहुआ एक विद्याधर उसे बहुमूल्य रत्नदेके गोदी में लेकर वबलनाम नगरमें पहुचाकर अन्तर्द्धानहोगया और वहचक्रवैश्य अपने माता पिताके पास जाकर उन्हे सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनाके उनको आनन्दित करके सुखसे उनका सेवन करताहुआ आनन्दसे रहनेलगा १६८ इसकथाको कह चन्द्रस्वामी ने महीपालसे फिर कहा कि हे पुत्र माता पितासे विरोधकरने से ऐसाही अरिष्ट प्राप्तहोताहै

धमकाया, परन्तु दीनजानके मारा नहीं इसप्रकार उस खड्गको पाकर वहराजा मूर्त्तिमती सिद्धिकेसमान उस असुरकन्याको लेकर उसी मणिमय मन्दिरमें चलागया और वह पाशुपत सिद्धिसे रहितहोकर अत्यन्त कष्टको प्राप्तहुआ ठीकहै (कृतघ्नाश्चिरसिद्धार्था अपिभ्रश्यन्तिहिध्रुवम्) कृतघ्नलोग वहुत कालतक सिद्धहोकर भी भ्रष्टहोजाते हैं यह साक्षात् देखकर मैं भ्रमणकरताहुआ यहां आयाहूं इससे हेरानी जैसे वहुत कालके पीछे उस राजाको वह असुरकी कन्या मिलगई ऐसेही तुमकोभी तुम्हारापति मिलजायगा उस ब्राह्मणसे यह उत्तमकथा सुनकर बन्धुमतीने प्रसन्नहोकर उसे बहुतसा धनदेकर बिदाकिया २३० दूसरे दिन किसी दूरदेशसे एक अपूर्व्व ब्राह्मण बन्धुमतीके यहां आया उससे भी उसने अपने पतिकानाम तथा पहचान बताकर पूछा कि तुमने कहीं ऐसा पुरुषदेखाहै यहसुनकर उस ब्राह्मणने कहा कि हेराजपुत्री मैंने तुम्हारेपतिको कहीं नहीं देखाहै किन्तु आज मैं तुम्हारे यहां आयाहूं और सुमनमेरानामहै इससे मुझे मालूमहोताहै कि शीघ्रही तुमको सौमनस्य (प्रसन्नता) होगा और इसमें तुमको सन्देह न करना चाहिये वहुतकालकेभी वियोगियोंका संयोग अवश्य होताही है इस विषयपर मैं तुमको एक कथा सुनाताहूं पूर्व्वसमयमें निषधदेशमें एक नलनाम राजाथा जिस के रूपसे मानों जीतेगये कामदेवने अपमानको न सहकर शिवजीकी नेत्राग्निमें अपना शरीर भस्म करदिया उस राजानलने विदर्भदेशके स्वामी राजाभीमकीकन्या दमयन्तीको अपनेसमान रूपवती सुना और राजा भीमनेभी सम्पूर्ण पृथ्वीमें ढूंढकर राजानलके सिवाय अपनी कन्याके सदृश कोई वर न पाया इसवीच में दमयन्ती ने जलक्रीड़ाके निमित्त तड़ागमें जाकर एक राजहंस दुपट्टाफेंककर पकड़ा तव वन्धनमें पड़ाहुआ वह दिव्यहंस मनुष्यवाणीसे वोला कि हेराजपुत्री तुम मुझे छोड़दो मैं तुम्हारा उपकार करूंगा निषधदेशका नलनाम राजा जिसे गुणोंसे मोहितहोके दिव्याङ्गनाभी पतिपानेकी अभिलाषा करती हैं उसके योग्य स्त्री तुमहो और तुम्हारे योग्यपति वहहै तुम दोनोंके इसतुल्य संयोगमें मैं कामदूत बनूंगा उसके यह वचन सुनकर दमयन्तीने उसे सत्यभाषी दिव्यहंस जानकर छोड़दिया और कहा कि नलकी प्रशंसा सुनतेही उसपर मेराचित्त अनुरक्त होगया इससे मैं उसके सिवाय किसी अन्यके साथ विवाह नहीं करूंगी दमयन्ती के यह वचन सुनकरवह राजहंस निषधदेशमें जलक्रीड़ा करतेहुए राजा नलके निकटगया उस मनोहर हंसको देखकर राजानलने अपना दुपट्टाफेंककर उसे कौतुकसे पकड़लिया तव उस हंसने उससे कहा कि हेराजा मुझे छोड़दो मैं तुम्हारे उपकारके लिये आयाहूं सुनिये विदर्भदेशके राजाभीमकी दमयन्तीनाम कन्या जिसकी देवतालोग भी अभिलाषाकरतेहैं उसने मुझसे तुम्हारे गुणों को सुनकर तुमपर अनुरक्तहोकर तुम्हारे साथही अपना विवाहकरना स्वीकार किया है यही मैं आपसे कहनेको आयाहूं उस हंसके यह वचन सुनकर राजानल कामके वशीभूत होकर वोला कि हे पक्षिवर मैं धन्यहूं जिसे मूर्त्तिमती मनोरथ सम्पत्ति के समान दमयन्ती ने स्वीकार किया है यह कहकर उसने उसे छोड़दिया तव वह हंस वहां से दमयन्ती के पास जाके और सम्पूर्ण वृत्तान्त उस से कहके अपने मानसरोवरको चलागया २५५ इसके उपरान्त दमयन्ती ने उत्कण्ठितहोके अ

करती हुई रोरोकर प्राण देनेको उद्यतहुई उसकी यह दशा देखकर अनन्तस्वामी ने कहा हे पुत्री शोक नकरो वह मुझसे कहगयाहै कि मैं किसीविशेष कार्य्यके निमित्तजाताहू और शीघ्रही आजाऊगा अनन्तस्वामीके यहवचन सुनकर बन्धुमतीने किसीप्रकारसे धैर्य्यधारण किया और तभी से वह अपने पतिका पतालगानेकेलिये देशान्तरसे आयेहुए ब्राह्मणों का सदैव पूजनकर दान देनेलगी एकदिन इसी प्रसङ्गसे आयेहुए संगमदत्त नामदीन ब्राह्मण से अपने पतिकानाम तथा पहचान बताकर बन्धुमती ने पूछा कि आपने ऐसापुरुष कहीं देखा तो नहीं है तब उसने कहा कि मैंने ऐसा पुरुष देखा तो नहीं है परन्तु तुमको ऐसे कार्य्य मे अधैर्य्य न करना चाहिये पुण्यात्मालोगोंको बहुतकाल में भी अभीष्ट वस्तुका सयोगहोताहै इस बातपर जो मैने आश्चर्य्य अपनी दृष्टिमे देखाहै वह तुमको सुनाताहू एकसमय तीर्थोंकापर्य्यटन करताहुआ मे हिमालय मे मानसरोवर नाम तडागपर पहुचा उसतडागमें मैने दर्पण के समान एकमणिमय गृहदेखा उसगृहसे अकस्मात् एकखड्गधारी पुरुष निकलकर दिव्य स्त्रियो को साथमे लियेहुए तडागके तटपरआया और उपवनमे उनस्त्रियोंकेसाथ विहार करनेलगा इस वृत्तान्तको मे अलक्षितहोकर दूरसे देखतारहा इतनेही मे एकसुन्दर पुरुष कहीं से आकर मुझको वहा मिला मैंने उससे वह आश्चर्य्यकारी सबवृत्तान्त कहकर उसे वह पुरुष स्त्रियोंसहित दिखाया उसे देखकर उसने अपना वृत्तान्त यह मुझसेकहा कि त्रिभुवननाम पुरका त्रिभुवननाम मे राजाहू वहा एकपाशुपत (शैवविशेष) ने बहुत कालतक मेरा सेवनकिया और कारण पूछनेपर उसने मुझसेकहा कि मै विवरमें खड्ग सिद्ध करना चाहता हू उसमे आप मेरी सहायता कीजिये मैंने उसके यह वचन स्वीकार करलिये तब उसने मुझे वनमें लेजाकर रात्रिके समय हवनादिकसे विवर प्रकटकरके मुझसे कहा कि हे वीर इस विवरमे पहले तुमजाओ वहा तुमको एकखड्ग मिलैगा और इसबात की तुम मुझसे प्रतिज्ञा कर जाओ कि खड्ग पाकर तुम मुझेभी विवर के भीतर लेजाना उसके यह वचन सुनकर मे उससे प्रतिज्ञाकरके उस विवर में गया वहा एकरत्नमय गृह मुझे मिला उस घरसे एक असुरकन्या निकलकर मुझे घरके भीतर लेगई और प्रेम से एक खड्ग मुझे देकर यह वचनबोली कि सर्व्वसिद्धिदायी तथा आकाश मे गमनकी शक्ति देनेवाले इस खड्ग की तुम रक्षा करते रहना उसके यह वचन सुन के मैं उस खड्गको लेके उसी के साथ वहा रहा और कुछ कालके उपरान्त अपनी प्रतिज्ञाको स्मरण करके बाहर आकर उस पाशुपतको भी भीतरलेगया वहा मै तो उस पहली असुरकन्याके साथ सुखपूर्व्वक रहनेलगा और वह पाशुपत द्वितीय असुर कन्याके साथ आनन्दसे रहनेलगा एक समय मद्यपानमे उन्मत्तहुए मुझसे उस पाशुपत ने छलसे मेरा वह खड्गलेलिया और उस खड्गके प्रभावमे मुझे उस विवरके बाहर निकालके वह मेरी असुरकन्याभी लेली तबसे बारहवर्ष मुझे उस पाशुपतको विवरोंमे ढूढते २ व्यतीतहुए है आज भाग्यवशसे वह मेरीदृष्टिमें पडाहै और मेरीही असुर कन्याके साथ क्रीड़ा कररहाहै उसके इसप्रकार कहतेही कहते वह पाशुपत मद्यपान करके वहीं सोगया उसेसोया जानकर राजाने वह खड्गलेकर दिव्य प्रभावको प्राप्तहोकर लातमारकर उस पाशुपतको जगाया और उसेबहुत

धमकाया परन्तु दीनजानके मारा नहीं इसप्रकार उस खड्गको पाकर वहराजा मूर्त्तिमती सिद्धिकेसमान उस असुरकन्याको लेकर उसी मणिमय मन्दिरमें चलागया और वह पाशुपत सिद्धिसे रहितहोकर अत्यन्त कष्टको प्राप्तहुआ ठीकहै (कृतघ्नाश्चिरसिद्धार्था अपिभ्रश्यन्तिहिध्रुवम्) कृतघ्नलोग बहुत कालतक सिद्धहोकर भी भ्रष्टहोजाते हैं यह साक्षात् देखकर मैं भ्रमणकरताहुआ यहां आयाहूं इससे हेरानी जैसे बहुत कालके पीछे उस राजाको वह असुरकी कन्या मिलगई ऐसेही तुमकोभी तुम्हारापति मिलजायगा उस ब्राह्मणसे यह उत्तमकथा सुनकर बन्धुमतीने प्रसन्नहोकर उसे बहुतसा धनदेकर बिदाकिया २३२ दूसरे दिन किसी दूरदेशसे एक अपूर्व्व ब्राह्मण बन्धुमतीके यहां आया उससे भी उसने अपने पतिकानाम तथा पहचान बताकर पूछा कि तुमने कहीं ऐसा पुरुषदेखाहै यहसुनकर उस ब्राह्मणने कहा कि हेराजपुत्री मैंने तुम्हारेपतिको कहीं नहीं देखाहै किन्तु आज मैं तुम्हारे यहां आयाहूं और सुमनमेरानामहै इससे मुझे मालूमहोताहै कि शीघ्रही तुमको सौमनस्य (प्रसन्नता) होगा और इसमें तुमको सन्देह न करना चाहिये बहुतकालकेभी वियोगियोंका संयोग अवश्य होताही है इस विषयपर मैं तुमको एक कथा सुनाताहूं पूर्व्वसमयमें निषधदेशमें एक नलनाम राजाथा जिस के रूपसे मानों जीतेगये कामदेवने अपमानको न सहकर शिवजीकी नेत्राग्निमें अपना शरीर भस्म करदिया उस राजानलने विदर्भदेशके स्वामी राजाभीमकीकन्या दमयन्तीको अपनेसमान रूपवती सुना और राजा भीमनेभी सम्पूर्ण पृथ्वीमें ढूंढकर राजानलके सिवाय अपनी कन्याके सदृश कोई वर न पाया इसबीच में दमयन्ती ने जलक्रीड़ाके निमित्त तड़ागमें जाकर एक राजहंस डुपट्टाफेंककर पकडा तब बन्धनमें पडाहुआ वह दिव्यहंस मनुष्यवाणीसे बोला कि हेराजपुत्री तुम मुझे छोड़दो मैं तुम्हारा उपकार करूंगा निषधदेशका नलनाम राजा जिसे गुणोंसे मोहितहोके दिव्याङ्गनाभी पतिपानेकी अभिलाषा करती हैं उसके योग्य स्त्री तुमहो और तुम्हारे योग्यपति वहहै तुम दोनोंके इसतुल्य संयोगमें मैं कामदूत बनूंगा उसके यह वचन सुनकर दमयन्ती ने उसे सत्यभाषी दिव्यहंस जानकर छोड़दिया और कहा कि नलकी प्रशंसा सुनतेही उसपर मेराचित्त अनुरक्त होगया इससे मैं उसके सिवाय किसी अन्यके साथ विवाह नहीं करूंगी दमयन्ती के यह वचन सुनकरवह राजहंस निषधदेशमें जलक्रीडा करतेहुए राजा नलके निकटगया उस मनोहर हंसको देखकर राजानलने अपना डुपट्टाफेंककर उसे कौतुकसे पकड़लिया तब उस हंसने उससे कहा कि हेराजा मुझे छोड़दो मैं तुम्हारे उपकारके लिये आयाहूं सुनिये विदर्भदेशके राजाभीमकी दमयन्तीनाम कन्या जिसकी देवतालोग भी अभिलाषाकरतेहैं उसने मुझसे तुम्हारे गुणों को सुनकर तुमपर अनुरक्तहोकर तुम्हारे साथही अपना विवाहकरना स्वीकार किया है यही मैं आपसे कहनेको आयाहूं उस हंसके यह वचन सुनकर राजानल कामके वशीभूत होकर बोला कि हे पक्षिवर मैं धन्यहूं जिसे मूर्त्तिमती मनोरथ सम्पत्ति के समान दमयन्ती ने स्वीकार किया है यह कहकर उसने उसे छोड़दिया तब वह हंस वहां से दमयन्ती के पास जाके और सम्पूर्ण वृत्तान्त उससे कहके अपने मानसरोवरको चलागया २५५ इसके उपरान्त दमयन्ती ने उत्कण्ठितहोके अ

करती हुई रोरोकर प्राण देनेको उद्यतहुई उसकी यह दशा देखकर अनन्तस्वामी ने कहा हे पुत्री शोक न करो वह मुझसेकहगयाहै कि मैं किसीविशेष कार्य्यके निमित्तजाताहू और शीघ्रही आजाऊंगा अनन्तस्वामीके यहवचन सुनकर वन्धुमतीने किसीप्रकारसे धैर्य्यधारण किया और तभीसे वह अपने पतिको पतालगानेकेलिये देशान्तरसे आयेहुए ब्राह्मणों का सदैव पूजनकर दान देनेलगी एकदिन इसी प्रसङ्गसे आयेहुए संगमदत्त नामदीन ब्राह्मण से अपने पतिकानाम तथा पहचान बताकर वन्धुमती ने पूछा कि आपने ऐसापुरुष कहीं देखा तो नहीं है तब उसने कहा कि मैंने ऐसा पुरुष देखा तो नहीं है परन्तु तुमको ऐसे कार्य्य में अधैर्य्य न करना चाहिये पुण्यात्मालोगोंको बहुतकाल मे भी अभीष्ट वस्तुका संयोगहोताहै इस बातपर जो मैंने आश्चर्य्य अपनी दृष्टिमे देखाहै वह तुमको सुनाताहू एकसमय तीर्थोंकापर्य्यटन करताहुआ मैं हिमालय मे मानसरोवर नाम तडागपर पहुचा उसतडागमे मैंने दर्पण के समान एकमणिमय गृहदेखा उसगृहसे अकस्मात् एकखड्गधारी पुरुष निकलकर दिव्य स्त्रियों को साथमे लियेहुए तडागके तटपरआया और उपवनमे उनस्त्रियोकेसाथ विहार करनेलगा इस वृत्तान्तको मैं अलक्षितहोकर दूरसे देखतारहा इतनेही मे एकसुन्दर पुरुष कही से आकर मुझको वहा मिला मैंने उससे वह आश्चर्य्यकारी सबवृत्तान्त कहकर उसे वह पुरुष स्त्रियोंसहित दिखाया उसे देखकर उसने अपना वृत्तान्त यह मुझसेकहा कि त्रिभुवननाम पुरका त्रिभुवननाम मैं राजाहू वहा एकपाशुपत (शैवविशेष) ने बहुत कालतक मेरा सेवनकिया और कारण पूछनेपर उसने मुझसेकहा कि मैं विवरमे खड्ग सिद्ध करना चाहता हू उसमे आप मेरी सहायता कीजिये मैंने उसके यह वचन स्वीकार करलिये तब उसने मुझे वनमें लेजाकर रात्रिके समय हवनादिकसे विवर प्रकटकरके मुझसे कहा कि हे वीर इस विवरमे पहले तुमजाओ वहा तुमको एकखड्ग मिलैगा और इसबात की तुम मुझसे प्रतिज्ञा कर जाओ कि खड्ग पाकर तुम मुझेभी विवर के भीतर लेजाना उसके यह वचन सुनकर मैं उससे प्रतिज्ञाकरके उस विवर मे गया वहा एकरत्नमय गृह मुझे मिला उस घरसे एक असुरकन्या निकलकर मुझे घरके भीतर लेगई और प्रेम से एक खड्ग मुझे देकर यह वचनबोली कि सर्व्वसिद्धिदायी तथा आकाश में गमनकी शक्ति देनेवाले इस खड्ग की तुम रक्षा करते रहना उसके यह वचन सुनके मैं उस खड्गको लेके उसी के साथ वहा रहा और कुछ कालके उपरान्त अपनी प्रतिज्ञाको स्मरण करके बाहर आकर उस पाशुपतको भी भीतरलेगया वहा मैं तो उस पहली असुरकन्याके साथ सुखपूर्व्वक रहनेलगा और वह पाशुपत द्वितीय असुर कन्याके साथ आनन्दसे रहनेलगा एक समय मद्यपानमे उन्मत्तहुए मुझसे उस पाशुपत ने छलसे मेरा वह खड्गलेलिया और उस खड्गके प्रभावसे मुझे उस विवरके बाहर निकालके वह मेरी असुरकन्याभी लेली तबसे बारहवर्ष मुझे उस पाशुपतको विवरोंमें ढूढते २ व्यतीतहुए है आज भाग्यवशसे वह मेरीदृष्टिमें पडाहै और मेरीही असुर कन्याके साथ क्रीड़ा कररहाहै उसके इसप्रकार कहतेही कहते वह पाशुपत मद्यपान करके वहीं सोगया उसेसोया जानकर राजाने वह खड्गलेकर दिव्य प्रभावको प्राप्तहोकर लातमारकर उस पाशुपतको जगाया और उसेबहुत

कहा कि आप सरीखे देवताओं को छोडकर दमयन्ती ने मनुष्य का ग्रहणकिया है इससे हम उन दोनों का वियोग अवश्य करवावेंगे इसप्रकार प्रतिज्ञा करके वह दोनों उन्हीं के साथ लौटगये और राजा नल सात दिन अपने श्वशुर के घर रहकर दमयन्ती को साथलेकर अपने निषध देशको आया वहाँ उनदोनों का परस्पर प्रेम श्रीशिव तथा पार्वतीजीसे भी अधिक होगया क्योंकि शिवजी के तो पार्वतीजी अर्द्धाङ्गिही है परन्तु दमयन्ती राजानलकी आत्माही होगई कुछकाल के उपरान्त राजानलका दमयन्ती रानी में चन्द्रसेन नाम एक पुत्र तथा इन्द्रसेना नाम एक कन्या उत्पन्नहुई २८६ इस बीच में कलियुग शास्त्रके अनुसार चलनेवाले राजानलका छिद्र बहुत कालतक ढूढतारहा एक समय राजानल मद्यसे उन्मत्त होकर सन्ध्योपासन विना कियेही पैर न धोकर सोगया इस छिद्रको पाकर कलियुगने उसके शरीरमें प्रवेश किया उसके शरीरमें प्रविष्ट होजाने से राजानल धर्मको छोडकर यथारुचि कार्य्य करने लगा द्यूत खेलनेलगा मिथ्या बोलनेलगा दासियों से सम्भोग करनेलगा दिनको सोनेलगा रात्रिको जागनेलगा अकारण कोपकरनेलगा अन्यायसे धन उपार्जन करनेलगा और सज्जनों का अनादर तथा असज्जनों का आदर करनेलगा इसीप्रकार से द्वापरने भी छिद्रपाकर नलकेभाई पुष्कर के शरीर में प्रवेश करके उसे भी अधर्मी करदिया एक समय नलने अपने छोटेभाई पुष्करके यहा दान्ति नाम एक सुन्दर श्वेत बैल देखकर लोभ युक्त होकर उससे वह बैल मागा पुष्करने द्वापरसे मोहितहोकर उसे वह बैल नहीं दिया और कहा कि जो तुम यह बैल लेना चाहते हो तो जुएमें जीनकर लेलो यह सुन कर नलने मोहसे उसकेसाथ द्यूतखेलना प्रारंभकिया तब उनदोनों भाइयों के परस्पर द्यूतमें नलने उस बैलकेलिये हाथी आदिक बडे उत्तम २ वाहन पणमें लगाये पुष्करने वह सब जीतलिये दो तीन दिन मे जब राजानल सेना तथा कोशादिक सबहारगया और निषेध करनेपर भी कलियुगके प्रभावसे द्यूत से नहीं निवृत्तहुआ तब दमयन्ती ने अपने राज्यको नष्टजानकर अपने पुत्र तथा कन्याको रथपर बैठालकर अपने पिताके यहा भेज दिया इतने में राजानल अपनासम्पूर्ण राज्यहारगया और पुष्करने उससे कहा कि तुम और तो सब वस्तुहारगये अब इस बैलके लिये दमयन्ती को पणमें रक्खो उसके यहद्वेषयुक्त अप्रिय वचन सुनकर राजानलने कुसमय जानकर कुछ नहींकहा और दामभी नहीं बदा तब पुष्कर ने उससे कहा कि जो तुम दमयन्ती को पणमें नहीं रखतेहो तो तुम इसे लेकर मेरे राज्यसे निकल जाओ यह सुनकर नल दमयन्ती को साथ लेकर देशसे बाहर चलागया और राज्यके पुरुष उसे अपनी सीमा से बाहरकरआये हाय जब कलियुगने नलकी भी यह दुर्दशाकी तो क्रिमियों के समान अन्यपुरुषों की क्या गणना है धर्म तथा स्नेह रहित इस द्यूतको धिक्कारहै जिसके द्वारा कलियुग तथा द्वापरने ऐसे २ राजर्षियोंको भी ऐसी महा आपत्तियों मे डाला इसके उपरान्त राजानल दमयन्ती के साथ वनमें भ्रमण करताहुआ क्षुधा से व्याकुल होकर एक तडाग के तटपर पहुचा और कुशो से फटे हुए पैरवाली दमयती को विश्राम कराने के लिये वहीं ठहरगया उससमय उसे दो हंस चरते हुए दिखाई दिये उसने भोजनके निमित्त उनको पकडने के लिये उनपर अपना दुपट्टाफेंका वह उस दु

पनी माताके द्वारा अपने पिता से स्वयम्वर करने को कहा राजा भीम ने उसका अभिप्राय जानकर पृथ्वी के सम्पूर्ण राजाओ के पास स्वयम्वरके निमित्त दूत भेजे दूतों से स्वयम्वर का समाचार पाके राजालोग रथोंपर चढके विदर्भदेश को गये और राजानल भी स्वयवर के लिये चला इस बीच में नारदमुनि से सम्पूर्ण लोकपालो ने दमयन्ती का स्वयंवर तथा उसका नलपर प्रेम सुना उनमें से इन्द्र वायु यम अग्नि तथा वरुण यह पाच लोकपाल स्वयवरके लिये जातेहुए राजानलसे मार्ग में आकर मिले और बोले कि हे राजा आप दमयन्ती से जाकर हमारा यह संदेशा कहो कि हम पाचोंलोकपालोमें से किसी एकके साथ वह अपना स्वयवरकरे, मनुष्य नलकेसाथ विवाहकरके वह क्या करेगी क्योंकि देवतालोग अमरहोते हैं और मनुष्य मरणशील होते हैं हेराजा हमारे इस सदेसेको लेकर तुम जाओ हमारे वरदानसे तुमको वहां जानेमें कोई देखेगा नहीं देवता लोगों की यह आज्ञा मानकर नल ने विदर्भदेश में दमयन्ती के यहा जाकर उससे देवतालोगों का संदेसा कहा उस संदेसे को सुनकर दमयन्ती बोली कि यद्यपि देवतालोगों में अनेक गुण हैं तथापि मेरापति नलहीहोगा मुझे देवताओं से कुछ प्रयोजन नहीं है उसके इसप्रकार कहनेपर नलने अपनास्वरूप उसकेआगे प्रकट करके वहा से आकर इन्द्रादिकोंसे उसका सब बृत्तान्त कहदिया इस प्रतिसन्देसको सुनकर देवतालोगोने उससे कहा कि हे सत्यवादी तुम्हारे सत्यवचनोंसे तुम पर हम सब प्रसन्न हैं अब तुम जब हमारा स्मरण करोगे तभी हम तुम्हारे पास आवेंगे देवतालोगो से यह वरपाकर नल प्रसन्नहोके विदर्भदेश में स्वयबरकी सभा में गया और इन्द्रादिक देवताभी दमयन्ती को छलने के लिये राजा नलकास्वरूप धारणकरके स्वयंबर में नलही के पासजाकर बैठे उससमय दमयन्ती अपने भाई के साथ स्वयंबर की सभा में आई और अपने भाई से बतायेगये सम्पूर्ण राजाओं को छोडतीहुई नलके निकट पहुँची वहा एक साथही बैठे हुए एकसेही स्वरूपवाले छ नलों को देखकर उसका भाई तो भ्रम में पडगया और वह व्याकुलहोके शोचनेलगी कि लोकपालो ने मुझे ठगनेके लिये यह मायाकीहै इन छ में पाचतो लोक पालहैं और एक नलहै यह शोचकर उसने सूर्य्य के सन्मुख खडेहोकर कहा कि हे लोकपालो जो स्वप्नमें भी मेरा चित्त नल से न हटाहोय तो इस सत्य से प्रसन्नहोकर आपलोग अपना २ स्वरूप मुझे दिखाइये और मैं तो नलका प्रथमही स्वीकारकरचुकीहू इससे मैं अब परस्त्री होगई आपलोग मेरे लेने का क्यों उद्योगकरते हैं उसके यह वचन सुनकर पाचों लोकपाल अपने २ स्वरूप में होगये और नल अपनेही स्वरूप में बनारहा यह देखकर दमयन्ती ने प्रसन्नहोके प्रफुल्लित नेत्रों से नलको देखकर उसके गले में जयमाल पहरादी और आकाश से पुष्पोंकीवृष्टिहुई तब राजा भीम ने नलकेसाथ दमयन्तीका विवाह करदिया और इन्द्रादिक देवता तथा सम्पूर्ण राजालोगों को सत्कारकरके विदाकिया तदनन्तर इन्द्रादिक देवताओं ने वहा से मार्ग में जातेसमय मे कलियुग तथा द्वापरको आतेदेखा और उनको दमयन्ती के स्वयम्बर के निमित्त आया जानकर कहा कि तुम अब वहा मतजाओ हम सब वहीं से आरहे हैं राजा नल के साथ दमयन्ती का स्वयम्बर होगया यह सुनकर उन दोनों ने क्रोध करके

पढ़ना, (बालाम्बरेनप्रसुप्तानृशंससन्त्यज्यकुमुदिनीकान्ताम् प्राप्यैवाम्बरखण्डंचन्द्रादृश्यः कयातोसि) हे निर्दय चन्द्रानन में सोतीहुई कुमुदिनी रूपी कान्ताको छोडकर एक अम्बर (वस्त्र तथा आकाश) का खण्डपाकर कहां अदृश्य होरहेहो २३६ इसबीच में रात्रिके समय वनमें उस आधे वस्त्रको पहने हुए राजानल को कुछ दूर जाकर दावाग्नि दिखाईदी और यह शब्द सुनाई दिया कि हे महासत्त्व मुझ निर्बल को यह दावाग्नि भस्मकिये देती है मुझे शीघ्रही इससे निकालो यह सुनकर राजानल ने दावाग्निमें दृष्टि करके देखा कि मणिकी प्रभाके समूहसे व्याप्त एक सर्प दावाग्नि के शस्त्रके समान मण्डलबांधे बैठाहुआ है उसे देखकर राजा नलने अपने कन्धेपर उसे चढा के उस दावाग्नि से कुछ दूर लेजाकर छोडनाचाहा तब सर्प ने कहा कि यहांसे गिनकर दशपैर मुझे औरलेचलो उसके यहवचन सुनकर राजानल एक दो तीन आदि गिनता हुआ दशपैरतक उसे और लेगया वहां उस सर्प ने उसके माथेपर काटा इससे उसकी भुजा छोटी होगई वर्ण काला होगया और चेष्टा विगडगई अपनी यह दशा देखकर राजानलने उसे कन्धेपरसे उतारकर पूछा कि तुम कौनहो और यह क्या तुमने प्रत्युपकार मेरेसाथ किया यह सुनकर उस सर्पने कहा कि हेराजा मैं कर्कोटकनाम नागराज हूं मैंने तुम्हारे उपकारके लिये तुमको काटाहै इसका गुण तुम्हें पीछे से मालूम होगा गुप्त निवासमें विरूप होनेसे ही महात्माओंके कार्य्य सिद्धहोते हैं यहअग्निशौचनाम दो वस्त्र मैं तुमको देताहूं इनके पहरतेही तुम्हारा रूप पूर्व्वकासाही होजायगा यहकहकर और वस्त्र देकर कर्कोटकके चलेजानेपर राजा नल उसवनसे चलकर कोशलदेशमें पहुचा वहां राजा ऋतुपर्णके यहां ह्रस्ववाहुनाम रसोइया होकररहा वह वडे दिव्य भोजन राजाके निमित्त वनाताथा इससे और रथ विद्यासे उसका वडाभारी यश उसदेशभरमें फैलगया इसवीचमें राजाभीमका एकदूत वहांभीगया और उसने सुना कि यहां एकह्रस्ववाहुनाम रसोइया नलके समान रथविद्या तथाभोजनविद्याका जाननेवालाहै यहसुनके उसने उसेनलजानके युक्तिपूर्व्वक उसके पासजाके अपनेस्वामीका वनायाहुआ श्लोकपढा उसश्लोकको सुनकर अन्यलोगतो कुछ नहींसमझे परन्तु रसोइयेकेरूपमें स्थित नलने कहा (क्षीणोम्बरैकदेशचन्द्रः प्राप्यान्यमण्डलं प्रविशन्कुमुदिन्यायदृष्टश्योजातस्तत्कानृशंसतातस्य) अम्बरके एकखण्डको लेकर अन्य मण्डल में प्रवेशकरताहुआ क्षीण चन्द्रमा कुमुदिनीमे अदृश्यहोगया इसमें उसकी क्या निर्दयताहै इसउत्तरको सुनकर उसदूतने उसे निस्सन्देह नलही जानकर और विपत्तिसे उसका विगडाहुआ रूप समझकर विदर्भदेश में जाकर राजाभीम तथा दमयन्ती से सब वृत्तान्त कहा तब दमयन्ती ने यहवृत्तान्त जानकर एकान्त में अपने पितासे कहा कि निस्सन्देह वहरसोइयेके रूपमें आर्य पुत्रही हैं इसमें उनके वुलानेके लिये मेरी वनाई हुई यहयुक्ति कीजिये कि राजा ऋतुपर्णके यहांदूत भेजिये वहदूत पहुचतेही राजासे कहै कि राजा नल कहीं चलागयाहै उसकापता नहीं लगता इससे दमयन्ती प्रातःकाल फिर स्वयंवरकरेगी इसलिये आप शीघ्रही विदर्भदेशको चलिये इसवातको सुनकर राजा ऋतुपर्ण आर्यपुत्रके साथ एकही दिनमें अवश्य आवेगा दमयन्तीका यह विचार सुनकर भीमने यही सन्देशा कहकर एकदूत ऋतुपर्णके यहां

पट्टेको भी लेकर उडगये और यह आकाशवाणीहुई कि हे राजा हसरूपसे आकर वह दोनों पाशे तुम्हारा वस्त्र हरलेगये इस आकाशवाणी को सुनकर नलने उदासीनहोके युक्तिपूर्व्वक दमयन्ती को राजा भीमके नगरको मार्गवताने के निमित्त कहा कि हे प्रिये यहमार्ग अगदेशकाहै व्रह दूसरा मार्ग कोशलदेशका है और यह तीसरा मार्ग विदर्भदेश में तुम्हारे पिताके यहा का है यहसुनकर दमयन्ती अपने चित्तमे कुछ शकितसीहुई कि आर्यपुत्र मुझे त्यागकरने के लिये तो मार्ग नहीं बतारहे हैं तद नन्तर रात्रिहोजानेपर कन्दमूल तथा फलखाकर थकेहुए वह दोनों स्त्री पुरुष कुशकी शैयापरलेटे उस समय थकीहुई दमयन्ती तो क्षणहीभरमे सोगई परन्तु कलियुगसे ठगाहुआ राजानल जागताहीरहा और दमयन्तीको सोईहुई जानकर उसका आधा वस्त्रफाडकर धारणकरके वहा से चलदिया तब कुछ रात्रिरहे जगीहुई दमयन्ती अपने पति नलको न देखकर यह विलापकरनेलगी कि हा आर्यपुत्र हा महासत्त्व हे शत्रुओपरभी कृपाकरनेवाले हे प्राणों से भी अधिक मुझे चाहनेवाले किसने मेरे ऊपर तुमको कृपारहित करदिया वनमें अकेले तुम कैसे पैदल २ चलोगे श्रमको दूरकरनेको वहा कौन तु म्हारी सेवाकरेगा जो तुम्हारे चरण राजालोगो के शिरोकी मालाओ के परागसे रजितहोते थे उनको मार्ग्गकी धूल मलिन करेगी जो तुम्हारे कोमल अग चन्दनके लेपको भी नहीं सहसक्के थे वह अग मध्याह्न के समय सूर्य्य के सन्तापको कैसे सहेंगे मुझे उस बालक पुत्रसे कन्यासे तथा अपने शरीर से भी कुछ प्रयोजन नहीं है यदि मै सतीहू तो देवतालोग सदैव तुम्हाराही कल्याण करें इस प्रकारसे विलाप करतीहुई दमयन्ती नलकेही बतायेहुए मार्ग्ग से चली मार्ग्ग मे बहुतसी नदी अनेक पर्व्वत तथा वनोका उसने उल्लघनकिया परन्तु पतिकी भक्तिका उल्लघन उसने मनसे भी नहीं किया इसी से सतीत्वका तेजहीमार्गमें उसकी रक्षाकरतारहा क्योंकि कोई लुब्धक उसके धर्मको नष्ट करना चाहताथा परन्तु उसको किसी सर्पने नष्ट करदिया उस लुब्धकसे बचकर दमयन्ती भाग्यवशसे मार्गमे मिलेहुए वैश्योंके साथ राजा सुबाहुके नगरको गई वहा राजसुताने महलपर से उसेदेखकर उसके रूपसे प्रसन्न होकर उसको अपने पास बुलाके अपनी मातासे जाकर मिलाया और दमयन्ती यह कहकर कि मेरा पतिमुझे छोडगया है उसी राजपुत्रीके पासरही इस बीचमें राजा भीमने नलका वृत्तान्त सुनकर नल तथा दमयन्तीके ढूढनेके निमित्त अपने दूत चारो ओरको भेजे उनमेंसे राजाका सुषेणनाम मत्री ब्राह्मण का रूपधरके सुबाहुकी राजधानी में आया उसने आगन्तुक लोगोंको ढूढतीहुई दमयन्ती को देखा और दमयन्तीने उसे देखा परस्पर पहचानकर वह दोनों ऐसा रोदन करनेलगे कि जिसरोदनको सु- नकर सुबाहुकी रानीने उन्हें बुलाकर रोदनका कारण पूछा और पूछनेसे मालूमहुआ कि यह मेरी बहिन की पुत्री दमयन्ती है तब उसने अपने पतिसे कहकर दमयन्तीको सुषेण समेत रथपर चढाकर विदर्भ देशको भेजदिया वहा दमयन्ती अपने पिता माता पुत्र तथा कन्याको पाकर अपने पतिके ढुढवानेका उद्योग करनेलगी तब राजाभीमने दूतोंको नलके ढूढनेकेलिये भेजा और उनसे यहकहदिया कि जहाँ रसोई तथा स्यन्दनोंकी विद्याके जाननेवाले नलके होनेका सन्देह तुमलोगोंको होय वहां यह श्लोक

देखकर मैं तुम्हारेपास आईहूं चेरीके यहवचनसुनकर दमयन्ती ने यहशोचाकि अग्नितथा वरुणको वशी भूत करनेवाले यहआर्यपुत्रही हैंमेरे वियोग के क्लेशसे इनकारूप बिगड़गयाहै तथापि परीक्षा करनी चाहियेयहनिश्चयकरके उसने युक्तिपूर्वक चेरी के साथ अपनेपुत्र तथा कन्याको उसकेपासभेजा वह अपने उन दोनोबालकोंको देखकर गोदी में बैठालके अश्रुओंकेप्रवाहों को वहाताहुआ चुपचाप बहुत कालतक रोतारहा चेरीने उसे रोते देखकर पूछा कि आप क्यों रोतेहो उसनेकहा कि ऐसेही मेरेबालक अपने नानाके यहा हैं उन्हीं का स्मरणकरके मुझे इससमय दुःखहुआहै उसके यह वचन सुनके चेरीने दोनों बालकोंको लेकर दमयन्ती से आकर सब वृत्तान्तकहा और दमयन्तीको इनसबबातों से निश्चय होगया कि यहनलही है ४०२ इसीसे दूसरे दिन दमयन्ती ने प्रातःकाल अपनी चेरीसे कहा कि तुम राजा ऋतुपर्णके रसोइये से मेरीओरसे यहकहो कि मैंने सुनाहै कि आपके समान कोई पृथ्वीभरमें रसोई करनेवाला नहीं है इससे आप यहाआकर मुझे भोजनबनाके खिलाइये दमयन्तीकी यह आज्ञा पाकर चेरी ने जाकर इसीप्रकार नलसेकहा तब राजा नल ऋतुपर्णसे आज्ञालेकर दमयन्ती के पास गया वहा दमयन्ती ने उससेकहा कि सत्य २ कहिये कि जो आप रसोइये के रूपधारी राजा नलहै तो चिन्तारूपी समुद्रमें डूबतीहुई मुझदीनको पारलगाइये यहसुनकर स्नेह हर्ष दुःख तथा लज्जासे व्याकुल राजा नल नीचेको मुखकरके गद्गद वचनबोला कि वज्रसे भी अधिक कठोर हृदयवाला वह पापी नल मैंहीहूं जिसने मोहसे तुमको सन्तापदेकर अपने को अनलकिया उसके यह वचन सुनकर दमयन्तीने फिरपूछा कि जो आप नलहो तो आपका यह रूप कैसे बिगड़गया तब नलने अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त कर्कोटककी मित्रतासे लेकर कलियुगके शरीरसे निकलनेतकका कहा और उसी समय कर्कोटक के दियेहुए अग्निशौचनाम वस्त्रपहरे उनके धारण करतेही नलका रूप पूर्वकासाहोगया तव नलको अपने पूर्व रूपमें देखकर प्रफुल्लित मुख कमलवाली दमयन्ती अश्रुओं से दुःखरूपी दावानलको शान्त करके अपूर्व अनुपम सुखको प्राप्तहुई उससमय राजा भीमने भी अपने परिजनों से यह सब वृत्तान्त सुनकर वहांआके नलको देखकर आनन्दसे बड़ा उत्सवकिया और राजा ऋतुपर्ण हृदयमें हँसतेहुए राजा भीमसे कियेगये सत्कारको ग्रहणकरके और नलका पूजनकर तथा अपने सब अपराध क्षमाकराके अपने कोशलदेशकोगया उसके चलेजाने पर राजानल अपने श्वसुर से कलियुगकी सम्पूर्ण दुरात्मता कहकर दमयन्ती के साथ कुछ दिन सुखपूर्वक वहां रहकर अपने श्वसुरकी सेनालेकर निषधदेशको गया वहा अपने भाई पुष्करको अक्षविद्याके प्रभावसे जुएमें जीतकर शरीरसे द्वापरके निकलजाने से फिर धर्मको प्राप्तहुए पुष्करको आधा राज्य देकर दमयन्ती के साथ सुखको भोगताहुआ अपने राज्यका पालनकरनेलगा इस सुन्दर नलकी पवित्रकथाको कहकर सुमना ब्राह्मणने राजपुत्री कर्पूरमती से फिर कहा कि हे राजपुत्री इसप्रकारसे महात्मालोग दुःखका अनुभवकरके सुखको भोगते हैं और सूर्य्यादिक देवता भी अस्तको प्राप्तहोकर फिर उदयको प्राप्तहोते हैं इसमे तुम्हारा पति भी तुम को मिलजायगा धैर्यकरो दुःखको त्यागो उस ब्राह्मणके यह उचित वचन सुनकर कर्पूरमती उसे बहु-

भेजा, उसदूतने राजा ऋतुपर्णके पास जाकर राजा भीमका संदेशा कहदिया, दूतके यहवचन सुनकर ऋतुपर्णने पास खड़ेहुए ह्रस्वबाहुरूपी नलसे कहा, कि हे ह्रस्वबाहु तुमने हमसे कहाथा कि मैं रथकी विद्याजानताहूं इससे जोहोसके तो मुझे आजही विदर्भदेशमें पहुंचाओ यहसुनकर नल बहुतअच्छा पहुंचादूंगा, यहकहकर और दमयन्तीने मेरीही प्राप्तिके लिये यहस्वयंवर रचाहै नहीं तो उसकी चित्त वृत्ति स्वप्नमेंभी ऐसी नहींहोसक्ती है अच्छा वहांजाकर देखूं क्याहोताहै यहशोचकर श्रेष्ठ घोड़े जोतकर रथ तय्यार करलाया और राजा ऋतुपर्णको चढ़ाकर गरुड़के समान वेगसे रथको लेचला मार्ग में रथ के वेगसे गिरेहुए वस्त्रको लेनेके लिये ऋतुपर्ण ने उससे कहा कि रथ रोकलो मैं अपना वस्त्रलेआऊं यह सुनकर नलने कहा कि आपका वस्त्र न जाने कहांरहा यहरथ इतनेही क्षण में न जानिये कै योजन पृथ्वी लांघआया यहसुनकर ऋतुपर्ण ने कहा कि हे ह्रस्वबाहु तुम मुझे यह अपनी रथ विद्या देदो तो मैं तुमको अक्ष विद्या देदूं जिसके जाननेसे पाशे वशीभूत होजाते हैं और संख्याका शीघ्र ज्ञान होजाता है अभी मैं तुमको इसका निश्चय कराये देताहूं यह जो आगे वृक्ष दिखाई देरहाहै उस के फल तथा पत्तों की संख्या मैं तुमसे कहताहूं तुम गिनकर इसेदेखलो यहकहकर उसने जितने फल तथा पत्ते बतलाये उतनेही नलके गिनने से भी उसमें निकले तब नल ने राजा ऋतुपर्ण को रथ विद्या बतादी और ऋतुपर्णने उसको अक्षविद्याबतादी फिर नलने दूसरे वृक्षमें जाकर उसकी परीक्षाकी तो परीक्षामें उसे वह विद्या यथार्थ मालूमहुई इसप्रकार अक्षविद्याको पाकर प्रसन्नहुए राजा नलके शरीर से एक कृष्णवर्णका पुरुष निकला उससे नलनेपूछा कि तुम कौनहो उसनेकहा कि मैं कलियुगहूं दमयन्ती के साथ तुम्हारा स्वयंवर देखकर मैंने ईर्ष्या से तुम्हारे शरीर में प्रवेशकरके तुमको द्यूत खिलाकर तुम्हारी सम्पूर्ण लक्ष्मी नष्टकरदी इसी से तुमको काटतेहुए उस कर्कोटक सर्प ने तुम्हारा अपकार नहीं किया देखो मेराही शरीर सब भस्मकरदियाहै ठीकहै (मिथ्यापरापकारोहि कृतः स्यात्कस्यशर्मणे) व्यर्थ पराया अपकार करने से किसका कल्याण होताहै इससे अब मैं जाताहूं अब मुझे तुम्हारे शरीर में रहने का अवकाश नहीं है यहकहकर कलियुगके अन्तर्द्धान होजानेपर राजा नल पहलेही के समान धर्मात्मा तथा तेजस्वी होगया और राजा ऋतुपर्णके पासआकर उसे रथपर चढ़ाकर उसी दिन विदर्भ देशमें पहुंचगया वहां आगमनका कारण पूछनेवाले लोगों से हँसेगये राजा ऋतुपर्णको राजाभीमने आदरपूर्वक राजमंदिरकेही निकटटिकाया और दमयन्तीने रथके आश्चर्यकारीशब्दको सुनकर नल के आगमनका सम्भव जानकर प्रसन्नतासे अपनी चेरी को उसे देखने के लिये भेजा चेरी ने उसे देख कर लौटकर दमयन्तीसे कहा कि हे राजपुत्री तुम्हारे स्वयंवरके मिथ्याप्रवादको सुनकर यह जो राजा ऋतुपर्णआयाहै इसे ह्रस्वबाहुनाम एकरसोइया एकही दिनमें अपनी रथविद्याके प्रभावसे यहांलायाहै मैंने उसरसोइयेको रसोईमेंजाकर देखाहै उसका वर्णकालाहै और नेष्टाकुरूपहै परन्तु उसकाप्रभाव महा-आश्चर्यकारी है क्योंकि उसरसोईमें भोजनकेपात्रों में नितडालेही जलउत्पन्नहोगया अग्निके बिनाही इंधनकीलकड़ी आपसेआप जलनेलगी औरक्षणहीभरमें दिव्यभोजन तैयारहोगया यह महाआश्चर्यको

देखकर मैं तुम्हारेपास आईहूं चेरीके यहवचनसुनकर दमयन्ती ने यहशोचाकि अग्नितथा वरुणके वशी भूत करनेवाले यहआर्यपुत्रहीहैं मेरे वियोग के क्लेशसे इनकारूप बिगड़गयाहै तथापि परीक्षा करनी चाहियेयहनिश्चयकरके उसने युक्तिपूर्वक चेरी के साथ अपनेपुत्र तथा कन्याको उसकेपासभेजा वह अपने उन दोनोबालकोंको देखकर गोदीमें बैठालके अश्रुओंकेप्रवाहों को बहाताहुआ चुपचाप बहुत कालतक रोतारहा चेरीने उसे रोते देखकर पूछा कि आप क्योंरोतेहो उसनेकहा कि ऐसेही मेरेबालक अपने नानाके यहा हैं उन्हीं का स्मरणकरके मुझे इससमय दुःखहुआहै उसके यह वचन सुनके चेरीने दोनों बालकोंको लेकर दमयन्ती से आकर सब वृत्तान्तकहा और दमयन्तीको इन सबबातों से निश्चय होगया कि यहनलही है ४०२ इसीमें दूसरे दिन दमयन्ती ने प्रातःकाल अपनी चेरीसे कहा कि तुम राजा ऋतुपर्णके रसोइये से मेरीओरसे यहकहो कि मैंने सुनाहै कि आपके समान कोई पृथ्वीभरमें रसोई करनेवाला नहीं है इससे आप यहाआकर मुझे भोजनबनाके खिलाइये दमयन्तीकी यह आज्ञा पाकर चेरी ने जाकर इसीप्रकार नलसेकहा तब राजा नल ऋतुपर्णसे आज्ञालेकर दमयन्ती के पास गया वहा दमयन्ती ने उससेकहा कि सत्य २ कहिये कि जो आप रसोइये के रूपधारी राजा नलहै तो चिन्तारूपी समुद्रमें डूबतीहुई मुझदीनको पारलगाइये यहसुनकर स्नेह हर्ष दुःख तथा लज्जासे व्याकुल राजा नल नीचेको मुखकरके गद्गद वचनबोला कि वज्रसे भी अधिक कठोर हृदयवाला वह पापी नल मैंहीहूं जिसने मोहसे तुमको सन्तापदेकर अपनेको धनलकिया उसके यह वचन सुनकर दमयन्तीने फिरपूछा कि जो आप नलहैं तो आपका यह रूप कैसे बिगड़गया तब नलने अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त कर्कोटककी मित्रतासे लेकर कलियुगके शरीरसे निकलनेतकका कहा और उसी समय कर्कोटक के दियेहुए अग्निशौचनाम वस्त्रपहरे उनके धारण करतेही नलका रूप पूर्वकासाहोगया तब नलको अपने पूर्वरूपमें देखकर प्रफुल्लित मुख कमलवाली दमयन्ती अश्रुओं से दुःखरूपी दावानलको शान्त करके अपूर्व अनुपम सुखको प्राप्तहुई उससमय राजा भीमने भी अपने परिजनों में यह सब वृत्तान्त सुनकर वहांआके नलको देखकर आनन्दसे बड़ा उत्सवकिया और राजा ऋतुपर्ण हृदयमें हँसतेहुए राजा भीमसे कियेगये सत्कारको ग्रहणकरके और नलका पूजनकर तथा अपने सब अपराध क्षमाकराके अपने कोशलदेशकोगया उसके चलेजाने पर राजानल अपने स्वसुर से कलियुगकी सम्पूर्ण दुरात्मता कहकर दमयन्ती के साथ कुछ दिन सुखपूर्वक वहां रहकर अपने स्वसुरकी सेनालेकर निषधदेशको गया वहां अपने भाई पुष्करको अक्षविद्या के प्रभावसे जुएमें जीतकर शरीरमें व्यापके निकलजाने से फिर धर्मको प्राप्तहुए पुष्करको आधा राज्य देकर दमयन्ती के साथ सुखको भोगताहुआ अपने राज्यका पालनकरनेलगा इस सुन्दर नलकी पवित्रकथाको कहकर सुमना ब्राह्मणने राजपुत्री कन्दुमती से फिर कहा कि हे राजपुत्री इसप्रकारसे महात्मालोग दुःखका अनुभवकरके सुखको भोगते हैं और सूर्य्यादिक देवता भी अस्तको प्राप्तहोकर फिर उदयको प्राप्तहोते हैं इससे तुम्हारा पति भी तुमको मिलजायगा धैर्यकरो दुःखको त्यागो उस ब्राह्मणके यह उचित वचन सुनकर कन्दुमती उसे बहु-

तसा धनदेके और बिदाकरके अपने पतिकी प्रतीक्षा करनेलगी इसके उपरान्त थोड़ेही दिनोंमें मही पाल अपनी माताको लेकर अपने पिताके साथ आगया उसे देखकर जैसे पूर्णमासी के चन्द्रमा को देखकर समुद्र प्रसन्नहोताहै उसीप्रकार वह बन्धुमती भी प्रसन्नहोतीभई तब महीपाल उससे मिलकर अपने बिनाकहेहुए चलेजाने के अपराधको क्षमाकराके अपने स्वसुर के दियेहुए राज्यको सुखपूर्वक बन्धुमती के साथ भोगनेलगा मरुभूतिके मुखसे इस विचित्र मनोहर तथा अनुपम कथाको सुनकर अलंकारवती समेत नरवाहनदत्त अत्यन्त प्रसन्नहुआ १२४॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायाअलंकारवतीलम्बकेषष्ठस्तरंग ६॥

अलंकारवती नाम नवां लम्बक समाप्तहुआ॥

शक्तियशोनामदशमोलम्बक॥

अवारणीयऋषुभिर्वारणीयनरंनुमः॥
हेरम्बस्यससिन्दूरमसिंदूरमघच्छिदम् १
पायाद्व पुरदाहाय शम्भोस्संदधत शरम्॥
समंव्यग्रेषुनेत्रेषु तृतीयमधिकस्फुरत् २
रक्तारुणान्नृसिंहस्य कुटिलाविद्विषोवधे॥
नखश्रेणीचदृष्टिश्च निहन्तुदुरितानिव ३

इसप्रकार कौशाम्बीमें नरवाहनदत्त अपने मन्त्री तथा स्त्रियोंके साथ सुखपूर्वक रहताथा एक समय उसके आगेही सभामें बैठेहुए वत्सराज उदयनको विज्ञापनकरनेकेलिये उसी पुरीकारहनेवाला रत्नदत्त नाम वैश्यआया और प्रतीहारसे आज्ञापाकर सभाके मध्यमें आके हाथजोड़केबोला कि हे राजा वसुधरनाम एक दरिद्रीभार उठानेवाला इसीपुरी में रहताहै उसको अकस्मात् ऐश्वर्य्यवान् देखकर मैंने उसे अपने घरलेजाके यथेच्छ मद्यपिलाकर उससे ऐश्वर्य्यका कारण पूछा उसने उन्मत्तहोकर मुझसे कहा कि मैंने राजद्वारपर एक जड़ाऊ कंकण पाके उसमेंसे एक रत्न उखाड़कर हिरण्यगुप्त वैश्यके हाथ एक लक्षअशर्फी को बेचा इसी में मैं अब ऐश्वर्य्यवान् होगया हूं यह कहकर उसने आपके नामसे चिह्नित वह कंकण मुझे दिखाया यही विज्ञापन करनेके निमित्त मैं आपके निकट आयाहूं यह सुनकर वत्सराजने वसुधरको तथा हिरण्यगुप्तको बुलवाया राजाकी आज्ञासे कंकणको लेकर वसुधर तथा उसरत्नको लेकर हिरण्यगुप्त यह दोनों सभामें आये राजाने वसुधरके हाथमें वह कंकण देखकर कहा कि पुर भ्रमणके समय यह कंकण मेरेहाथसे गिरपड़ाथा आज इसकी मुझेयादआई हे राजाके यह

वचन सुनकर सभासदोंने वसुधरसे पूछा कि तुमने राजाके नामसे अंकित कङ्कणको पाकर क्यों छिपा रक्खा यह सुनकर उसने कहा कि भारका उठानेवाला मैं राजाके नामके अक्षरोंको क्याजानूं मैंने राज द्वारपर यह कङ्कण पड़ाहुआदेखा और दरिद्रसे दुखीहोनेके कारण उठालिया यह सुनकर सभासदोंने हिरण्यगुप्तसे भी यहीबात पूछी उसने कहा कि मैंने बाजारमें मूल्यदेकर यह रत्नलियाहै जबरदस्ती से नहीं लिया और इसरत्नमें राजाकी कोई पहचान नहीं है जो मूल्य मैंने इसरत्नका दियाहै उसमेंसे पांच हजार अशर्फी तो यह लेगयाहै और बाकी सब मेरे यहां जमाहैं हिरण्यगुप्तके यह वचन सुनकर वहां बैठेहुए यौगन्धरायण ने कहा कि इसमें किसीकाभी अपराध नहीं है लिखनेपढ़ने के ज्ञानसेरहित दरिद्री इस वसुधरका इसमें क्या दोषहै दरिद्रसे तो लोग चोरीभी करतेहैं और फिर पाईहुई वस्तुको कौनछोड़ताहै और मूल्यदेकर रत्नमोललेनेवाले इसवैश्य हिरण्यगुप्तको भी कोई दोषमालूम नहींहोताहै महामन्त्रीयौगन्धरायणके यहवचनसुनकर वत्सराजने हिरण्यगुप्तको पांचहजार अशर्फीदेकर अपना रत्नलेलिया और अपना कङ्कणलेकर उसवसुधरकोभी छोड़दिया तब पहलेमिलीहुई पांचहजार अशर्फियोंको पाकर वसुधर निर्भयहोकर अपनेघरकोगया और हिरण्यगुप्तभी राजाको प्रणामकरके अपनेघरकोगया उनदोनोंके चलेजानेपर महाराज उदयन ने अपने चित्तमें उस रत्नदत्त वैश्यको विश्वासघाती तथा पापी जानकर भी ऊपरसे कार्य्यकेनिमित्त सत्कारकरके उसको विदाकिया तब वसुधरका यहवृत्तान्तदेखकर वसन्तकने कहा कि जिसपर ईश्वरकाकोपहोताहै उसकेपास मिलाहुआभी धन नहींरहताहै इस विचारे वसुधरकी भद्रघट कीसी दशाहोगई पाटलिपुत्रनामनगरमें एकशुभदत्तनाम दरिद्री रहताथा वह प्रतिदिन वनसे काष्ठलाके और बेचकर अपने कुटुम्बका पालनकिया करताथा एक दिन वनमें काष्ठकेलिये बहुतदूरजाकर शुभदत्त ने दिव्यआभूषण तथा वस्त्रधारी चारयक्षदेखे उनयक्षोंने उसे भयभीत देखकर और उसे दरिद्री जानकर कृपापूर्वक कहा कि हे शुभदत्त तुम यहां हमारे पासरहो और हमारी सेवाकरो हम विना क्लेशही के तुम्हारे घरका निर्वाह करदेंगे उनके वचनको स्वीकारकरके शुभदत्तने वहीं रहकर उनको स्नानादिक करवाये भोजनके समय उनयक्षोंने शुभदत्तसे कहा कि हेशुभदत्त इसभद्रघटसे तुम भोजन निकाल॰ कर हमको देतेजाओ शुभदत्त उसघटको शून्य देखकर भोजन देनेमें विलम्ब करनेलगा तब उनयक्षोंने मुस्कुराकर उससे कहा कि हे शुभदत्त तुम इसके माहात्म्यको नहीं जानतेहो इसके भीतर हाथडालकर जो तुम चाहोगे सो सब मिलेगा क्योंकि यह घटकामभद्रहै उनके यह वचन सुनकर जैसेही उसने घटमें हाथडाला वैसेही उसको यथेच्छ सम्पूर्ण पदार्थमिले उससे उसने उनयक्षोंको भोजन करगया और उनके तृप्तहोनेके पीछे आपभी भोजन किया इसप्रकार भक्तिसे तथा भयसे यक्षोंका नित्य सेवन करताहुआ कुटुम्बकी चिन्तामें व्याकुल शुभदत्त वहां रहा और दुःखसे पीडित उसके कुटुम्बको यक्षोंने स्वप्नमें कुछ धन देकर और शुभदत्तका वृत्तान्त कहकर सावधान करदिया तदनन्तर एक महीनेके व्यतीत होजाने पर यक्षों ने शुभदत्तसे प्रसन्न होकर कहा कि हे शुभदत्त हम तुम्हारी भक्तिसे तुमपर प्रसन्नहैं जोचाहो सो मांगो यह सुनकर उसने कहा कि जो आप सत्य २ मुझपर प्रसन्न हैं तो यह भद्रघट मुझको देदीजिये

तसा धनदेके और बिदाकरके, अपने, पतिकी प्रतीक्षा करनेलगी इसके उपरान्त थोडेही दिनोंमें मही पाल अपनी माताको लेकर अपने पिताके साथ आगया उसे देखकर जैसे पूर्णमासी के चन्द्रमा को देखकर समुद्र प्रसन्नहोताहै उसीप्रकार वह बन्धुमती भी प्रसन्नहोतीभई तब महीपाल उससे मिलके अपने बिनाकहेहुए चलेजाने के अपराधको क्षमाकराके अपने स्वसुर के दियेहुए राज्यको सुखपूर्व्वक बन्धुमती के साथ भोगनेलगा मरुभूतिके मुखसे इस विचित्र मनोहर तथा अनुपम कथाको सुनकर अलंकारवती समेत नरवाहनदत्त अत्यन्त प्रसन्नहुआ ४२४॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायाअलंकारवतीलम्बकेषष्ठस्तरंग ६॥

अलंकारवती नाम नवां लम्बक समाप्तहुआ॥

शक्तियशोनामदशमोलम्बक॥

अवारणीयऋषुभिर्वारणीयनरस्तुम॥
हेरम्बस्यससिन्दूरमसिंदूरमघाच्छिदम् १
पायाद्‌ पुरदाहाय शम्भोस्संदधत शरम्॥
समंन्यग्रेषुनेत्रेषु तृतीयमधिकस्फुरत् २
रक्तारुणान्नृसिंहस्य कुटिलाविद्विषोवधे॥
नखश्रेणीचदंष्ट्रिश्च निहन्तुदुरितानिव ३

इसप्रकार कौशाम्बीमे नरवाहनदत्त अपने मन्त्री तथा स्त्रियोंके साथ सुखपूर्व्वक रहताथा एक समय उसके आगेही सभामे बैठेहुए वत्सराज उदयनको विज्ञापनकरनेकेलिये उसी पुरीकारहनेवाला रत्नदत्त नाम वैश्यआया और प्रतीहारसे आज्ञापाकर सभाके मध्यमे आके हाथजोडकेबोला कि हे राजा वसुधरनाम एक दरिद्रीभार उठानेवाला इसीपुरी में रहताहै उसको अकस्मात् ऐश्वर्य्यवान् देखकर मैने उसे अपने घरलेजाके यथेच्छ मद्यपिलाकर उससे ऐश्वर्य्यका कारण पूछा उसने उन्मत्तहोकर मुझसे कहा कि मैंने राजद्वारपर एक जडाऊ कंकण पाके उसमेंसे एक रत्न उखाडकर हिरण्यगुप्त वैश्यके हाथ एक लक्षअशर्फी को बेचा इसी में मैं अब ऐश्वर्य्यवान् होगया हू यह कह कर उसने आपके नामसे चिह्नित वह कंकण मुझे दिखाया यही विज्ञापन करनेके निमित्त मैं आपके निकट आयाहू यह सुनकर वत्सराजने वसुधरको तथा हिरण्यगुप्तको बुलवाया राजाकी आज्ञासे कंकणको लेकर वसुधर तथा उसरत्नको लेकर हिरण्यगुप्त यह दोनों सभामें आये राजाने वसुधरके हाथमे वह कंकण देखकर कहा कि पुर भ्रमणके समय यह कंकण मेरेहाथसे गिरपडाथा आज इसकी मुझेयादआई है राजाके यह

वचन सुनकर सभासदोंने वसुधरसे पूछा कि तुमने राजाके नामसे अंकित कङ्कणको पाकर क्यों छिपा रक्खा यह सुनकर उसने कहा कि भारका उठानेवाला मैं राजाके नामके अक्षरोंको क्याजानूं मैंने राज द्वारपर यह कङ्कण पड़ाहुआदेखा और दरिद्रसे दुखीहोनेके कारण उठालिया यह सुनकर सभासदोंने हिरण्यगुप्तसे भी यहीबात पूछी उसने कहा कि मैंने बाजारमें मूल्यदेकर यह रत्नलियाहै जबरदस्ती से नहीं लिया और इसरत्नमें राजाकी कोई पहचान नहीं है जो मूल्य मैंने इसरत्नका दियाहै उसमेंसे पाच-हजार अशर्फी तो यह लेगयाहै और बाकी सब मेरे यहां जमाहैं हिरण्यगुप्तके यह वचन सुनकर वहां बैठेहुए यौगन्धरायण ने कहा कि इसमें किसीकाभी अपराध नहीं है लिखनेपढने के ज्ञानसेरहित दरिद्री इस वसुधरका इसमें क्या दोषहै दरिद्रसे तो लोग चोरीभी करतेहैं और फिर पाईहुई वस्तुको कौनछोडताहै और मूल्यदेकर रत्नमोललेनेवाले इसवैश्य हिरण्यगुप्तकोभी कोई दोषमालूम नहींहोताहै महामन्त्रीयौ-गन्धरायणके यहवचनसुनकर वत्सराजने हिरण्यगुप्तको पाचहजार अशर्फीदेकर अपना रत्नलेलिया और अपना कङ्कणलेकर उसवसुधरकोभी छोडदिया तब पहले मिलीहुई पाचहजारअशर्फियोंको पाकर वसुधर निर्भयहोकर अपनेघरकोगया और हिरण्यगुप्तभी राजाको प्रणामकरके अपनेघरकोगया उनदोनोंके च-लेजानेपर महाराज उदयन ने अपने चित्तमें उस रत्नदत्त वैश्यको विश्वासघाती तथा पापी जानकर भी ऊपरसे कार्य्यकेनिमित्त सत्कारकरके उसको विदाकिया तब वसुधरका यहवृत्तान्तदेखकर वसन्तकने कहा कि जिसपर ईश्वरकाकोपहोताहै उसकेपास मिलाहुआभी धन नहींरहताहै इस विचारेवसुधरकी भद्रघट कीसी दशाहोगई पाटलिपुत्रनामनगरमें एकशुभदत्तनाम दरिद्री रहताथा वह प्रतिदिन वनसे काष्ठलाके और बेचकर अपने कुटुम्बका पालनकिया करताथा एक दिन वनमें काष्ठकेलिये बहुतदूरजाकर शुभदत्त ने दिव्यआभूषण तथा वस्त्रधारी चारयक्षदेखे उनयक्षोंने उसे भयभीत देखकर और उसे दरिद्री जानकर कृपापूर्वक कहा कि हे शुभदत्त तुम यहां हमारे पासरहो और हमारी सेवाकरो हम विना क्लेशही के तुम्हारे घरका निर्वाह करदेंगे उनके वचनको स्वीकारकरके शुभदत्तने वहीं रहकर उनको स्नानादिक करवाये भोजनके समय उनयक्षोंने शुभदत्तसे कहा कि हेशुभदत्त इसभद्रघटसे तुम भोजन निकाल-कर हमको देतेजाओ शुभदत्त उसघटको शून्य देखकर भोजन देनेमें विलम्ब करनेलगा तब उनयक्षोंने मुस्कुराकर उससे कहा कि हे शुभदत्त तुम इसके माहात्म्यको नहीं जानतेहो इसके भीतर हाथडालकर जो तुम चाहोगे सो सब मिलेगा क्योंकि यह घटकामप्रदहै उनके यह वचन सुनकर जैसेही उसने घड़ेमें हाथडाला वैसेही उसको यथेच्छ सम्पूर्ण पदार्थमिले उससे उसने उनयक्षोंको भोजन कराया और उनके तृप्तहोनेके पीछे आपभी भोजन किया इसप्रकार भक्तिसे तथा भयसे यक्षोंका नित्य सेवन करताहुआ कुटुम्बकी चिन्तासे व्याकुल शुभदत्त वहां रहा और दुःखसे पीड़ित उसके कुटुम्बको यक्षोंने स्वप्नमें कुछ धन देकर और शुभदत्तका वृत्तान्त कहकर सावधान करदिया तदनन्तर एक महीनेके व्यतीत होजाने पर यक्षों ने शुभदत्तसे प्रसन्न होकर कहा कि हे शुभदत्त हम तुम्हारी भक्तिसे तुमपर प्रसन्नहैं जो चाहो सो मांगो यह सुनकर उसने कहा कि जो आप सत्य २ मुझपर प्रसन्न हैं तो यह भद्रघट मुझको देदीजिये

तसा धनदेके और विदाकरके अपने पतिकी प्रतीक्षा करनेलगी इसके उपरान्त थोडेही दिनों में महीपाल अपनी माताको लेकर अपने पिताके साथ आगया उसे देखकर जैसे पूर्णमासी के चन्द्रमा को देखकर समुद्र प्रसन्नहोताहै उसीप्रकार वह बन्धुमती भी प्रसन्नहोतीभई तब महीपाल उससे मिलकर अपने विनाकहेहुए चलेजाने के अपराधको क्षमा कराके अपने स्वसुर के दियेहुए राज्यको सुखपूर्व्वक बन्धुमती के साथ भोगनेलगा मरुभूतिके मुखसे इस विचित्र मनोहर तथा अनुपम कथाको सुनकर अलंकारवती समेत नरवाहनदत्त अत्यन्त प्रसन्नहुआ ४२४॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायाअलंकारवतीलम्बकेषष्ठस्तरंग ६॥

अलंकारवती नाम नवां लम्बक समाप्तहुआ॥

शक्तियशोनामदशमोलम्बक ॥

अवारणीयऋषुभिर्वारणीयनरन्तुम ॥
हेरम्बस्यसमसिन्दूरमासिंदूरमघाच्छिदम् १
पायाद् पुरदाहाय शम्भोस्संदधत शरम्॥
समं व्यग्रेषुनेत्रेषु तृतीयमधिकंस्फुरत् २
रक्तारुणान्नृसिंहस्य कुटिलाविद्विषोवधे ॥
नखश्रेणीचदृष्टिश्च निहन्तुदुरितानिव ३

इसप्रकार कौशाम्बीमे नरवाहनदत्त अपने मन्त्री तथा स्त्रियोंके साथ सुखपूर्व्वक रहताथा एक समय उसके आगेही सभामें बैठेहुए वत्सराज उदयनको विज्ञापनकरनेकेलिये उसी पुरीकारहनेवाला रत्नदत्त नाम वैश्यआया और प्रतीहारसे आज्ञापाकर सभाके मध्यमें आके हाथजोडकेबोला कि हे राजा वसुधरनाम एक दरिद्रीभार उठानेवाला इसीपुरी में रहताहै उसको अकस्मात् ऐश्वर्य्यवान् देखकर मैने उसे अपने घरलेजाके यथेच्छ मद्यपिलाकर उससे ऐश्वर्य्यका कारण पूछा उसने उन्मत्तहोकर मुझसे कहा कि मैने राजद्वारपर एक जडाऊ कंकण पाके उसमेंसे एक रत्न उखाडकर हिरण्यगुप्त वैश्यके हाथ एक लक्षअशर्फी को वेचा इसी में मैं अब ऐश्वर्यवान् होगया हूं यह कह कर उसने आपके नामसे चिह्नित वह कंकण मुझे दिखाया यही विज्ञापन करनेके निमित्त मैं आपके निकट आयाहूं यह सुनकर वत्सराजने वसुधरको तथा हिरण्यगुप्तको बुलवाया राजाकी आज्ञासे कंकणको लेकर वसुधर तथा उसरत्नको लेकर हिरण्यगुप्त यह दोनों सभामें आये राजाने वसुधरके हाथमें वह कंकण देखकर कहा कि पुर भ्रमणके समय यह कंकण मेरेहाथमे गिरपडाथा आज इसकी मुझेयादआई है राजाके यह

उसमे बोला हे आर्य्ये तुम मेरे पुत्रको वेश्याओं की सम्पूर्णकला सिखा दो जिसमे यह चतुर होकर वेश्याओंके जालमें नफसे इस कार्य्यके लिये मैं तुमको एकहजार अशर्फीदूंगा यह सुनकर उस कुट्टिनी ने वह कार्य्य अंगीकार करलिया तब रत्नवर्मा उसे अशर्फी देकर तथा अपने पुत्रको सौंपकर अपने घर चला आया और ईश्वरवर्मा यमजिह्वा के यहां रहा और एकही वर्ष में सम्पूर्ण वेश्याओं की कला सीखकर अपने पिताके यहां चला आया और सोलहवर्षका होकर अपने पितासे बोला कि हे तात धनसेही धर्म तथा कामकी प्राप्तिहोती है और धनही से प्रतिष्ठा तथा यशकी प्राप्ति होती है इससे आप मुझे परदेश जानेकी आज्ञा दीजिये उसके यह वचनसुनकर रत्नवर्माने उसे पांच करोड़ अशर्फी रोज़गार करनेको दीं उन्हेंलेकर ईश्वरवर्मा अपने कुछ सजाती मित्रोंको साथ लेकर स्वर्णद्वीपको चला मार्ग में चलते २ क्रमसे मिलेएहु कांचनपुरनाम नगरके बाहर किसी उपवनमें टिका और उसी उद्यानमें स्नान तथा भोजन करके नगर देखनेको गया उस नगरके किसी देवमन्दिर में जाकर उसने देखा कि युवावस्थारूपी वायुसे उछलीहुई रूपके समुद्रकी लहरके समान सुन्दरीनाम एक वेश्या नृत्य कररही है उसे देखनेही वह उसके वशीभूत ऐसाहुआ कि जिससे कुट्टिनीकी सम्पूर्णशिक्षा मानो कुपित होकर उसकेपाससे भागगई नृत्यकेअन्तमें उसने अपनेएकमित्रको भेजकर सुन्दरी से अपना प्रयोजन कहलवाया सुन्दरी ने मैं धन्यहूं ऐसाकहकर स्वीकारकरलिया तब ईश्वरवर्मा अपनेडेरे पर चतुररक्षकोंको छोडकर सुन्दरीके मकान परगया वहांसुन्दरीकी माता मकरकटीने उसका बड़ासत्कारकिया औररात्रिके समय रत्नोंसे देदीप्यमान जड़ाऊ पलँगसे युक्त शयनस्थानमें सुन्दरीकेसाथ उसको भेजा वहां नृत्यमें में तथा सुरतिमें अत्यन्त निपुण उस सुन्दरीके साथ रमणकरके वह दूसरे दिनभी पाससे नहीं हटतीहुई बड़े प्रेमको प्रकट करतीहुई सुन्दरीको अत्यन्त अनुरागयुक्त देखकर वहां से नहीं आसका और दोदिन के लिये पच्चीसलाख अशर्फी उसे देनेलगा सुन्दरी ने उससे कहा कि धन तो मुझे बहुत मिलचुका है परन्तु आपसरीखा पुरुष नहीं मिलाथा जो आपही मुझे मिलगये तो मैं धनलेकर क्या करूंगी सुन्दरीके इसप्रकार कहनेपर उसकी माताने कहा कि अब जो कुछ हमारे पासका धनहै सो भी इन्हींका है इससे यह भी लेकर उसी मे रखदो तो क्या हानिहै माता के बड़े कहने सुनने से सुन्दरी ने बड़े आग्रहसे वह अशर्फी लीं उसके इस आग्रहको देखमूर्ख ईश्वरवर्मा ने उसके अनुरागको सत्यही जाना और उसके रूपसे नृत्यसे तथा गीतसे वशीभूत होकर दोमहीने वहां व्यतीत किये और इतने दिनोंमें दो करोड़ अशर्फी उसे दीं ईश्वरवर्मा को इसप्रकारसे मोहित देखकर उसकेमित्र अर्थदत्तने उससे आकर एकान्त में कहा कि हे मित्र कातरकी अस्त्रविद्याके समान तुम्हारी वह सम्पूर्ण कुट्टिनी शिक्षा क्या समयपर व्यर्थ होगई यह जो तुम वेश्याके प्रेम में सत्यता समझ रहेहो सो क्याकभी मरुमरीचिकाओं में भी जल मिलताहै इससे जब तक यह तुम्हारा सम्पूर्ण धन नहीं क्षीणहोता है तभीतक यहां से निकलचलो तुम्हारे पिता जो सुनेंगे तो बहुत कुपितहोंगे उसके यह वचनसुनकर ईश्वरवर्मा ने कहा कि वेश्याओंमें विश्वास न करना चाहिये यह तुम्हारा कहना बहुतठीकहै परन्तु यह सुन्दरी ऐसी नहींहै यह

यह सुनकर यक्षोने कहा कि इसकी तुमरक्षा नहीं करसकोगे क्योंकि यह टूटजानेपर भागजाताहै इससे अन्य कोई वरमागो यक्षो के इसप्रकार समझानेपर भी शुभदत्तने अन्यवर नहीं लेनाचाहा तब उन्होंने वह घट उसे देदिया उस भद्रघटकोलेके और यक्षों को प्रणाम करके शुभदत्त अपने घरमें आया और वहाँ उसघटसे प्राप्तहुए भोजनादि पदार्थोंको अन्यपात्रों में रखकर अपने कुटुम्ब सहित सुखपूर्वक रहनेलगा एक समय उसके बन्धुओंने उसे भारढोने से रहित तथा अत्यन्त ऐश्वर्य्यवान् देखकर मद्य पिलाकर उससे पूछा कि तुम्हारे पास यह ऐश्वर्य्य कहा से आया उनके यह वचन सुनकर वह मूर्ख कुछ उत्तर न देकर अभिमान से उस घडेको कन्धेपर रखकर नाचनेलगा नाचने में वह घडा पृथ्वीमें गिरके फूटके उसीसमय अपने स्थानको चलागया और शुभदत्त अपनी पूर्वदशाको प्राप्त होगया इस प्रकारसे मद्यपानादिक दोषोंके प्रमादसे नष्टहुई बुद्धिवाले अभागीलोग प्राप्तहुए धनकी भी रक्षानहीं करसक्तेहैं वसतकसे भद्रघटके इसहास्यकारी वृत्तान्तको सुनकर राजाउदयननेसभासे उठकर स्नानादिक नित्यकर्मकिया और नरवाहनदत्तभी अपने पिताकेही मन्दिरमें स्नान तथा भोजनादिककरके सायंकाल के समय अपने मित्रोंसमेत अपने निजमन्दिरमेंगया ५० वहा रात्रिके समय पलँगपर लेटेहुए नरवाहन दत्तको निद्रा न आते देखकर मरुभूतिने सम्पूर्ण मंत्रियोंके आगे उससे कहा कि हे स्वामी मैं जानताहू आपने दासीकेसाथ रमणकरनेकी इच्छासे आज रानियोंको नहीं बुलवाया और दासीको भी नहीं बुलवाया इसीसे आपको निद्रानहींआती है आप जानबूझकर भी अबतक वेश्याओंसे अनुराग क्यों करते हैं उनके चित्तमें कभी भी सद्भाव नहीं होताहै इसविषयपर मैं आपको एककथा सुनाताहूं चित्रकूटनाम बडे समृद्धिमान् नगरमें रत्नवर्मा नाम बडा धनवान् वैश्य रहताथा उसके श्रीशिवजी के आराधन से ईश्वरवर्मा नाम एक पुत्र उत्पन्नहुआ उस ईश्वरवर्मा को उसने सम्पूर्ण विद्यापढाकर युवाहोने वाला जानकर अपने चित्तमें शोचा कि (रूपिणीकुसृति सृष्टाधनप्राणापहारिणी आढ्यानांयौवनान्धानाम्ग्यानामेहवेश्या) ब्रह्माने यौवनसे अन्धेहुए धनवानों के लिये धन तथा प्राणोंका हरनेवाला वेश्यानाम मूर्तिमानकपटबनायाहै इससे मैं अपने इस पुत्रको वेश्याओं का कपट सिखाने के लिये किसी कुटनी के सुपुर्दकरूं जिससे वेश्यालोग फिर इसे ठग न सकें यह शोचकर रत्नवर्मा ईश्वरवर्मा को साथलेकर यमजिह्वानाम कुटनी के घरगया वहाँ मोटी ठोडीवाली लम्बे दाँतवाली तथा टेढी नाकवाली यमजिह्वा अपनी कन्याको यह शिक्षा देरही थी कि हे पुत्री धनसे सबकी प्रतिष्ठा होती है परन्तु वेश्याओं की विशेष करके और स्नेह करनेसे धनमिल नहींसक्ता इससेवेश्याको किसीसे स्नेह न करना चाहिये सन्ध्या के समान वेश्याओं का रागदोषरूपी अन्धकारका बढानेवाला होताहै इसमें वेश्यासुशिक्षित नटी के समान मिथ्या रागदिखावे वेश्याको चाहिये कि पुरुषके साथ अनुराग प्रकट करके उससे सब धनलेले और धनलेकर निकालदे और जो उसे फिर धन मिले तो उसको स्वीकार करले मुनि के समान जो वेश्या,बालक में युवामें वृद्धमें रूपवान् में तथा कुरूपमें समभाव रखती है उनको परमार्थ प्राप्तहोताहै इस प्रकार अपनी पुत्रीको शिक्षादेतीहुई यमजिह्वाके पास रत्नवर्मा अपने पुत्रको लेकरगया और बैठकर

उससे बोला हे आर्य्ये तुम मेरे पुत्रको वेश्याओं की सपूर्णकला सिखा दो जिससे यह चतुर होकर वेश्याओंके जालमें नफसे इस कार्य्यके लिये मैं तुमको एकहजार अशर्फीदूंगा यह सुनकर उस कुटिनी ने वह कार्य्य अगीकार करलिया तब रत्नवर्मा उसे अशर्फी देकर तथा अपने पुत्रको सौंपकर अपने घर चला आया और ईश्वरवर्मा यमजिह्वा के यहा रहा और एकही वर्ष में सम्पूर्ण वेश्याओं की कला सीखकर अपने पिताके यहा चला आया और सोलहवर्षका होकर अपने पितासे बोला कि हे तात धनसेही धर्म तथा कामकी प्राप्तिहोती है और धनही से प्रतिष्ठा तथा यशकी प्राप्ति होती है इससे आप मुझे परदेश जानेकी आज्ञा दीजिये उसके यह वचनसुनकर रत्नवर्माने उसे पाच करोड़ अशर्फी रोजगार करनेको दीं उन्हेंलेकर ईश्वरवर्मा अपने कुछ सजाती मित्रोंको साथ लेकर स्वर्णद्वीपको चला मार्ग में चलते २ क्रमसे मिलेहुए कांचनपुरनाम नगरके बाहर किसी उपवनमें टिका और उसी उद्यानमें स्नान तथा भोजन करके नगर देखनेको गया उस नगरके किसी देवमन्दिर में जाकर उसने देखा कि युवावस्थारूपी वायुसे उछलीहुई रूपके समुद्रकी लहरके समान सुन्दरीनाम एक वेश्या नृत्य कररही है उसे देखतेही वह उसके वशीभूत ऐसाहुआ कि जिससे कुट्टिनीकी सम्पूर्णशिक्षा मानो कुपित होकर उसकेपाससे भागगई नृत्यकेअन्तमें उसने अपनेएकमित्रको भेजकर सुन्दरी से अपना प्रयोजन कहलवाया सुन्दरी ने मैं धन्यहूं ऐसाकहकर स्वीकारकरलिया तब ईश्वरवर्मा अपनेडेरे पर चतुररक्षकोंको छोडकर सुन्दरीके मकान परगया वहाँसुन्दरीकी माता मकरकटीने उसका बडासत्कारकिया औररात्रिके समय रत्नोंसे देदीप्यमान जड़ाऊ पलँगसे युक्त शयनस्थानमें सुन्दरीकेसाथ उसको भेजा वहा नृत्यमें में तथा सुरतिमें अत्यन्त निपुण उस सुन्दरीके साथ रमणकरके वह दूसरे दिनभी पाससे नहीं हटतीहुई बड़े प्रेमको प्रकट करतीहुई सुन्दरीको अत्यन्त अनुरागयुक्त देखकर वहा से नहीं आसका और दोदिन के लिये पच्चीसलाख अशर्फी उसे देनेलगा सुन्दरी ने उससे कहा कि धन तो मुझे बहुत मिलचुका है परन्तु आपसरीखा पुरुष नहीं मिलाथा जो आपही मुझे मिलगये तो मैं धनलेकर क्या करूगी सुन्दरी के इसप्रकार कहनेपर उसकी माताने कहा कि अब जो कुछ हमारे पासका धनहै सो भी इन्हींका है इससे यह भी लेकर उसी मे रखदो तो क्या हानिहै माता के बडे कहने सुनने से सुन्दरी ने बडे आग्रहसे वह अशर्फी लीं उसके इस आग्रहको देखमूर्ख ईश्वरवर्मा ने उसके अनुरागको सत्यही जाना और उसके रूपसे नृत्यसे तथा गीतसे वशीभूत होकर दोमहीने वहा व्यतीत किये और इतने दिनोंमें दो करोड अशर्फी उसे दीं ईश्वरवर्मा को इसप्रकारसे मोहित देखकर उसकेमित्र अर्थदत्तने उससे आकर एकान्त में कहा कि हे मित्रकातरकी अस्त्रविद्याके समान तुम्हारी वह सम्पूर्ण कुट्टिनी शिक्षा क्या समयपर व्यर्थ होगई यह जो तुम वेश्याके प्रेम में सत्यता समझ रहेहो सो क्याकभी मरुमरीचिकाओं में भी जल मिलताहै इससे जब तक यह तुम्हारा सम्पूर्ण धन नहीं क्षीणहोता है तभीतक यहा से निकल चलो तुम्हारे पिता जो सुनेंगे तो बहुत कुपितहोंगे उसके यह वचनसुनकर ईश्वरवर्मा ने कहा कि वेश्याओंमें विश्वास न करना चाहिये यह तुम्हारा कहना बहुतठीकहै परन्तु यह सुन्दरी ऐसी नहींहै यह

यह सुनकर यक्षोंने कहा कि इसकी तुमरक्षा नहीं करसकोगे क्योंकि यह टूटजानेपर भागजाताहै इससे अन्य कोई वरमागो यक्षों के इसप्रकार समझानेपर भी शुभदत्तने अन्यवर नहीं लेनाचाहा तब उन्होंने वह घट उसे देदिया उस भद्रघटकोलेके और यक्षोंको प्रणाम करके शुभदत्त अपने घरमें आया और वहां उसघटसे प्राप्तहुए भोजनादि पदार्थोंको अन्यपात्रों में रखकर अपने कुटुम्ब सहित सुखपूर्वक रहनेलगा एक समय उसके बन्धुओंने उसे भारढोने से रहित तथा अत्यन्त ऐश्वर्यवान् देखकर मद्य पिलाकर उससे पूछा कि तुम्हारे पास यह ऐश्वर्य्य कहां से आया उनके यह वचन सुनकर वह मूर्ख कुछ उत्तर न देकर अभिमान से उस घड़ेको कन्धेपर रखकर नाचनेलगा नाचने में वह घड़ा पृथ्वीमें गिरके फूटके उसीसमय अपने स्थानको चलागया और शुभदत्त अपनी पूर्वदशाको प्राप्त होगया इस प्रकारसे मद्यपानादिक दोषोंके प्रमादसे नष्टहुई बुद्धिवाले अभागीलोग प्राप्तहुए धनकी भी रक्षानहीं क रसक्तेहैं वसतकसे भद्रघटके इसहास्यकारी वृत्तान्तको सुनकर राजाउदयनने सभासे उठकर स्नानादिक नित्यकर्मकिया और नरवाहनदत्तभी अपने पिताकेही मंदिरमें स्नान तथा भोजनादिककरके सायंकाल के समय अपने मित्रोंसमेत अपने निजमंदिरमेंगया ५० वहां रात्रिके समय पलँगपर लेटेहुए नरवाहन दत्तको निद्रा न आते देखकर मरुभूतिने सम्पूर्ण मंत्रियोंके आगे उससे कहा कि हे स्वामी मैं जानताहूं आपने दासीकेसाथ रमणकरनेकी इच्छासे आज रानियोंको नहीं बुलवाया और दासीको भी नहीं बुल वाया इसीसे आपको निद्रानहींआती है आप जानबूझकर भी अबतक वेश्याओंसे अनुराग क्यों करते हैं उनके चित्तमें कभी भी सद्भाव नहीं होताहै इसविषयपर मैं आपको एककथा सुनाताहूं चित्रकूटनाम बड़े समृद्धिमान् नगरमें रत्नवर्मा नाम बड़ा धनवान् वैश्य रहताथा उसके श्रीशिवजी के आराधन से ईश्वरवर्मा नाम एक पुत्र उत्पन्नहुआ उस ईश्वरवर्मा को उसने सम्पूर्ण विद्यापढ़ाकर युवाहोने वाला जानकर अपने चित्तमें सोचा कि (रूपिणीकुसृति सृष्टाधनप्राणापहारिणी आढ्यानांयौवनान्धानांवे श्यानामेहवेधसा) ब्रह्माने यौवनसे अन्धेहुए धनवानों के लिये धन तथा प्राणोंका हरनेवाला वेश्यानाम मूर्तिमानकपटरचनायाहै इससे मैं अपने इस पुत्रको वेश्याओं का कपट सिखाने के लिये किसी कुटनी के सुपुर्दकरूं जिससे वेश्यालोग फिर इसे ठग न सकें यह सोचकर रत्नवर्मा ईश्वरवर्मा को साथलेकर यमजिह्वानाम कुटनी के घरगया वहां मोटी ठोडीवाली लम्बे दाँतवाली तथा टेढी नाकवाली यमजिह्वा अपनी कन्याको यह शिक्षा देरहीथी कि हे पुत्री धनसे सबकी प्रतिष्ठा होती है परन्तु वेश्याओं की वि शेष करके और स्नेह करनेसे धनमिल नहींसक्ता इससेवेश्याको किसीसे स्नेह न करना चाहिये सन्ध्या के समान वेश्याओं का रागदोषरूपी अन्धकारका बढ़ानेवाला होताहै इसमे वेश्यासुशिक्षित नटी के समान मिथ्या रागदिखावे वेश्याको चाहिये कि पुरुषके साथ अनुराग प्रकट करके उससे सब धनलेले और धनलेकर निकालदे और जो उसे फिर धन मिले तो उसको स्वीकार करले मुनि के समान जो वेश्या बालक में युवामें वृद्धमें रूपवान् में तथा कुरूपमें समभाव रखती है उनको परमार्थ प्राप्तहोताहै इस प्रकार अपनी पुत्रीको शिक्षादेतीहुई यमजिह्वाके पास रत्नवर्मा अपने पुत्रको लेकरगया और बैठकर

उपायं बताऊंगी जिससे वह उसमकरकटीका सर्वस्व हरलावेगा उसकी यह प्रतिज्ञा सुनकर रत्नवर्म्मा ने शीघ्रही ईश्वरवर्म्मा के बुलानेको अर्थदत्तको भेजा अर्थदत्त ने काञ्चनपुरमें जाके ईश्वरवर्म्मा से उसके पिताका संदेशा कहकर कहा कि हे मित्र तुमने मेरा कहना नहीं माना इसीसे वेश्याओंकी सत्यता तुम को प्रत्यक्ष देखनीपडी तुमने पांचकरोड अशर्फी देकर अर्द्धचन्द्रपाया (क प्राज्ञोवाञ्छतिस्नेह वेश्यासु सिकतासुच) कौन बुद्धिमान् वेश्याओंमें तथा वालूमेंसे स्नेहपानेकी इच्छाकरताहै अथवा इसमें तुम्हारा क्या अपराधहै संसारका धर्महीं ऐसाहै तभीतक मनुष्यवीर चतुर तथा कल्याणका भागी रहताहै जबतक कि स्त्रियोंकी चेष्टाओंमें नहीं फसताहै इससे अब तुम अपने पिताकेपासचलकर इसवेश्यासे बदलालेने का यत्नकरो इसप्रकार समझाकर अर्थदत्त ईश्वरवर्म्माको उसके पिताके पास ले आया वहां रत्नवर्म्मा उसे बहुत समझाकर यमजिह्वा कुट्टिनीके पास लेगया और अर्थदत्त से सुन्दरीके कुएमें गिरने आदि का सब वृत्तान्त उसकुट्टिनीके सन्मुख कहलवाया सुन्दरीका कुएमें गिरना सुनकर यमजिह्वा ने कहा इसमें मेराही अपराधहै कि मैंने इसको यहमाया पहलेही नहीं सिखादीथी मकरकटी ने कुए में जाल बँधवादियाहोगा इसीसे वह सुन्दरी उसमें गिरकर नहीं मरी अच्छा कोई हानि नहीं है इसकाभी प्रतीकार मेरे पासहै यह कहकर उसने अपनी दासियोंसे कहा कि मेरे आलनाम वन्दरको लेआओ उसकी आज्ञापाकर एक दासी उस आलको लेआई यमजिह्वाने उस आलको हजार अशर्फी देकर कहा कि हे पुत्र इन अशर्फियोंको निगलजाओ जब वह उसके कहनेसे उनअशर्फियों को निगलगया तब यमजिह्वाने उससे कहा दश इसको दो पचास इसको दो पांच इसको दो इसप्रकार अनेक खर्चों में उसने उस बन्दर से वह अशर्फी दिलवाईं और वह वन्दर उगल २ करदेतागया वन्दरकी इस युक्ति को दिखाकर यमजिह्वाने ईश्वरवर्मा से कहा कि तुम इस वन्दरको लेकर फिर उस सुन्दरी के पासजाओ और इस वन्दरको कहीं एकान्त में अशर्फी निगलवाकर उसके साम्हने इससे अशर्फी खर्च करवाओ तब सुन्दरी इस वन्दरको चिन्तामणिके समान देखकर तुम्हें अपना सर्व्वस्वदेकर यह वन्दर मांगेगी उसके मांगनेपर तुम बडा आग्रह करके उसका सर्व्वस्व लेके इसबन्दरको दो दिन के खर्च के माफिक अशर्फी निगलवाके उसे देकर शीघ्रही वहां से बहुत दूरपर चलेजाना यह कहकर यमजिह्वा ने वह बन्दर ईश्वरवर्म्माको देदिया और रत्नवर्म्मा ने उसे दो करोड अशर्फी देकर सुन्दरी के यहां भेजा वह उन अशर्फियों को तथा बन्दर को लेकर अपने परिकर समेत सुन्दरी के यहां गया सुन्दरी ने उसे फिर बहुतसा धन लायाहुआ जानकर बड़े आदरपूर्वक अपने यहां रक्खा वहां उसने आदर सत्कार के उपरान्त अर्थदत्त से उस आल नाम बन्दर को मँगवाकर उससे कहा कि हे पुत्र तीनसौ अशर्फी भोजनादि के खर्च के निमित्त दोसौ ताम्बूलादि के खर्चको दो और सौ मकरकटी को दो सौ ब्राह्मणों को देने के लिये मुझे दो और हजारमें जो कुछ बाकी हो वह सब सुन्दरी को देदो इसप्रकार ईश्वर-वर्म्मा के कहने से आल ने प्रथम निगलीहुई अशर्फियां उगल २ कर सबको दीं इसी युक्तिसे पन्द्रह दिन तक ईश्वरवर्म्मा को उस बन्दरके द्वारा अशर्फियों का व्यय करवाते देखकर सुन्दरी तथा मकरकटी ने

क्षणभरभी मेरे देखेबिना अपने प्राण त्यागदेगी इससे जो सर्वथा चलनाही है तो उसे जाकर समझाओ उसके यह वचन सुनकर अर्थदत्त उसीके साथ उस सुन्दरी वेश्याके पासगया और उससे बोला कि तुम्हारी प्रीति ईश्वरवर्मापर बहुत अधिकहै परन्तु इसे रोजगारकेलिये स्वर्णद्वीपको अवश्यजानाहै वहां से बहुतसाधन उपार्जन करके लौटकर तुम्हारेही पास सदैव यह सुख पूर्णकरैगा इससे हेसखी इसे जानेकी आज्ञादेदो यह सुनकर आसूभरके ईश्वरवर्माके मुखको देखती हुई सुन्दरी मिथ्याविषाद करके बोली कि आप जानिये मैं इसमें क्याकहू परिणामको बिनादेखे कोई किसी पर विश्वास नहीं करताहै मुझे कुछ कहना सुनना नहीं है मेरे भाग्यमें जो बदाहोगा सोहोगा यह सुनकर उसकी माताने कहा कि हे सुन्दरी दुःख न करो धैर्य्यधारणकरो तुम्हारा प्यारालौटकर तुम्हारे पास अवश्य आवेगा इसप्रकार उसे समझाकर उस कुटिनीने उससे सलाहकरके ईश्वरवर्माके जानेकेमार्गमें एक कुएमें जाललगवादिया तब सुन्दरीशोक प्रकटकरके भोजन बहुतकम करनेलगी और गीत तथा नृत्यादिकोसे विरक्तरही तदनन्तर ईश्वरवर्मा अपने मित्रके बतायेहुए दिनमें सुन्दरीके घरसे परदेशकोचला और वह कुट्टिनी तथा सुन्दरीभी मंगलाचार करके उसे भेजनेकोचली नगरके बाहर जहां कुएमें उसने जालबंधवारक्खाथा वहीं से ईश्वरवर्माको विदाकिया और जैसेही ईश्वरवर्मा वहासे कुछ दूरचला वैसेही सुन्दरी उस कुएमें कूदपडी तब हापुत्री हासखी यह उसकी माताका तथा सखियोंका घोरशब्द ईश्वरवर्मा सुनकर अपने मित्रोंसमेत लौटकर अपनी प्यारीको कुएमें गिरीदेखकर शोकसे विह्वलहोगया और उस मकरकटीने बहुत रोकर जालके जाननेवाले अपनेही नौकरोंको सुन्दरीके निकालनेको उसकुएमें उतारा उन्होंने कुएमें जाकर सुन्दरीजीती है जीती है यह कहकर उसे कुएमेंसे निकाला कुएमेंसे निकलकर सुन्दरी अपनेको मूर्च्छितमा बनाकर उसलौटेहुए ईश्वरवर्मासे बहुत पुकारने पर धीरेसेबोली तब ईश्वरवर्मा बहुत प्रसन्नहोके उसे स्वस्थकरके उसीके साथ उसके घरको लौटआया और सुन्दरीके प्रेमको यथार्थ जानकर इतनेहीमें अपने जन्मको सफलमानकर यात्राका उद्योग छोडकर वहींरहा ११२ तब अर्थदत्तने उसे यात्रासे निवृत्तहुआ जानकर उससे कहा कि हेमित्र मोहसे तुम अपनेको क्योंनष्टकिये देतेहो कुएमें गिरनेसे इस सुन्दरीके स्नेहमें विश्वासनकरो क्योंकि ब्रह्माभी कुटिनियोंकी कूटरचनाको नहीं जानसक्तेहैं तुम अपना सबधन नष्ट करके पितासे जाकर क्याकहोगे और कहां जाओगे इससे जो तुम अपना भलाचाहो तो अब भी इससे बचो अर्थदत्तके इन वचनोंपर ध्यान न देकर महीनेभरमें वह तीनकरोड अशर्फीभी उसने खर्चकरडाली तब सुन्दरीने तथा उसकी माता मकरकटीने उसेनिर्धन जानकर अर्द्धचन्द्र (गर्दनी) देकर घरसे बाहर निकालदिया उसकी यह दशादेखकर अर्थदत्तादिकोंने अपने नगरमें आकर उसके पितासे सब वृत्तान्त कहा अपने पुत्रके वृत्तान्तको सुनकर रत्नवर्मा दुःखित होके उसी यमजिह्वा कुट्टिनी के पास जाकर बोला कि तुमने एक हजार अशर्फी लेकर मेरे पुत्रको अच्छी शिक्षादी कि मकरकटीने थोडेही कालमें उसका सर्वस्व हरलिया यह कहकर उसने अपने पुत्रका सबवृत्तान्त उससेकहा तब यमजिह्वाने कहा कि तुम अपने पुत्रको यहां बुलाओ अब मैं उसे ऐसा

उपाय बताऊंगी जिससे वह उसमकरकटीका सर्वस्व हरलावेगा उसकी यह प्रतिज्ञा सुनकर रत्नवर्म्मा ने शीघ्रही ईश्वरवर्म्मा के बुलानेको अर्थदत्तको भेजा अर्थदत्त ने काचनपुरमें जाके ईश्वरवर्म्मा से उसके पिताका सदेशाकहकर कहा कि हे मित्र तुमने मेरा कहना नहीं माना इसीसे वेश्याओंकी सत्यता तुम को प्रत्यक्ष देखनीपडी तुमने पाचकरोड अशर्फी देकर अर्द्धचन्द्रपाया (क प्राज्ञोवाञ्छतिस्नेह वेश्यासु सिकतासुच) कौन बुद्धिमान् वेश्याओंमें तथा वालूमेंसे स्नेहपानेकी इच्छाकरताहै अथवा इसमें तुम्हारा क्या अपराधहै ससारका धर्मही ऐसाहै तभीतक मनुष्यवीर चतुर तथा कल्याणका भागी रहताहै जबतक कि स्त्रियोंकी चेष्टाओंमें नहीं फसताहै इससे अब तुम अपने पिताकेपासचलकर इसवेश्यासे बदलालेने का यत्नकरो इसप्रकार समझाकर अर्थदत्त ईश्वरवर्म्माको उसके पिताके पास ले आया वहा रत्नवर्म्मा उसे बहुत समझाकर यमजिह्वा कुट्टिनीके पास लेगया और अर्थदत्त से सुन्दरीके कुएमे गिरने आदि का सब वृत्तान्त उसकुट्टिनीके सन्मुख कहलवाया सुन्दरीका कुएमें गिरना सुनकर यमजिह्वा ने कहा इसमें मेराही अपराधहै कि मैंने इसको यहमाया पहलेही नहीं सिखादीथी मकरकटी ने कुए में जाल बँधवादियाहोगा इसीसे वह सुन्दरी उसमें गिरकर नहीं मरी अच्छा कोई हानि नहीं है इसकाभी प्रतीकार मेरे पासहै यह कहकर उसने अपनी दासियों से कहा कि मेरे आलनाम बन्दरको लेआओ उसकी आज्ञापाकर एक दासी उस आलको लेआई यमजिह्वा ने उस आलको हजार अशर्फी देकर कहा कि हे पुत्र इन अशर्फियोंको निगलजाओ जब वह उसके कहनेसे उनअशर्फियों को निगलगया तब यमजिह्वाने उससे कहा दश इसको दो पचास इसको दो पाच इसको दो इसप्रकार अनेक खर्चों में उसने उस बन्दर से वह अशर्फी दिलवाई और वह बन्दर उगल २ करदेतागया बन्दरकी इस युक्ति को दिखाकर यमजिह्वाने ईश्वरवर्मा से कहा कि तुम इस बन्दरको लेकर फिर उस सुन्दरी के पासजाओ और इस बन्दरको कहीं एकान्त मे अशर्फी निगलवाकर उसके साम्हने इससे अशर्फी खर्च करवाओ तब सुन्दरी इस बन्दरको चिन्तामणिके समान देखकर तुम्हें अपना सर्व्वस्वदेकर यह बन्दर मागेगी उसके मागनेपर तुम बडा आग्रह करके उसका सर्व्वस्व लेके इसबन्दरको दो दिन के खर्च के माफिक अशर्फी निगलवाके उसे देकर शीघ्रही वहा से बहुत दूरपर चलेजाना यह कहकर यमजिह्वा ने वह बन्दर ईश्वरवर्म्माको देदिया और रत्नवर्म्मा ने उसे दो करोड अशर्फी देकर सुन्दरी के यहा भेजा वह उन अशर्फियों को तथा बन्दर को लेकर अपने परिकर समेत सुन्दरी के यहा गया सुन्दरी ने उसे फिर बहुतसा धन लायाहुआ जानकर बडे आदरपूर्वक अपने यहा रक्खा वहा उसने आदर सत्कार के उपरान्त अर्थदत्त से उस आल नाम बन्दर को मँगवाकर उससे कहा कि हे पुत्र तीनसौ अशर्फी भोजनादि के खर्च के निमित्त दोसौ ताम्बूलादि के खर्चको दो और सौ मकरकटी को दो सौ ब्राह्मणों को देने के लिये मुझे दो और हजारसे जो कुछ बाकी हो वह सब सुन्दरी को देदो इसप्रकार ईश्वर-वर्म्मा के कहने से आल ने प्रथम निगलीहुई अशर्फिया उगल २ कर सबको दीं इसी युक्तिसे एक पक्ष तक ईश्वरवर्म्मा को उस बन्दरके द्वारा अशर्फियों का व्यय करवाते देखकर सुन्दरी तथा मकरकटी ने

शोचा कि यह बन्दररूपधारी चिन्तामणि इसे सिद्धहुईहै जो कि प्रतिदिन एक हजार अशर्फी देताहै जो यह बन्दर इससे मुझे मिलजाय तो बहुत अच्छाहोय यह शोचकर सुन्दरीने भोजनकरके एकान्त मे बैठेहुए ईश्वरवर्मासे कहा कि जो सत्य २ आप मुझपर स्नेह करतेहो तो यह बाल मुझको देदो यह सुनकर ईश्वरवर्मा हँसकर बोला कि यह तो मेरे पिताका सर्वस्वहै मै इसे कैसे देसक्ताहू यह सुनकर सुन्दरीने कहा कि मै तुम्हारी पाचो करोड अशर्फिया फेरदूगी तुम इसको मुझेदेदो तव ईश्वरवर्माने कहा कि चाहै तुम अपना सर्वस्व अथवा यह नगर भी मुझे देदो तौभी मै तुमको यह बन्दरनहीं देसक्ता यह सुनकर सुन्दरी ने कहा कि मै अपना सर्वस्व तुमको देतीहू तुम मुझे यह बन्दरदेदो अपने पिताको नाराज होनेदो यह कहकर वह उसके पैरोंपर गिरपडी तव अर्थदत्तादिको ने ईश्वरवर्मा से कहा कि अच्छा यह बन्दर इसे देदो जो कुछ होगा सो देखाजायगा मित्रोंके कहनेसे ईश्वरवर्मा ने उसका सर्वस्व लेनेपर वह बन्दरदेना स्वीकारकिया और बदरपानेकी आशासे प्रसन्नहुई सुन्दरीके साथ वह दिन आनन्दसे व्यतीतकिया दूसरे दिन प्रातःकाल फिर प्रार्थना करती हुई सुन्दरीको ईश्वरवर्मा दोहजार अशर्फी निगलवाकर वहबन्दर देकर और उसका सर्वस्व लेकर शीघ्रही वहासे अपने परिकरसमेत स्वर्णद्वीपको रोजगार करनेकेलियेगया उसके चलेजानेपर दो दिनतक उसवदरने हजार२ अशर्फी सुदरीकोदीं और तीसरे दिन बहुत मागनेपरभी सुन्दरीको कुछ नहीदिया तव सुन्दरीने क्रोधकरके उसके एक घूसामारा इससे उसवन्दरने भी क्रोधितहोकर सुन्दरीका मुख अपने दातोंसे और नखो से फाडडाला तव मकरकटीने लाठियो से उसबन्दरको ऐसापीटा कि वहमरगया उसे मराजानके सुन्दरी अपने सर्वस्वको नष्ट हुआ जानकर प्राणदेनेको उद्यतहुई और लोगों के बहुत समझानेपर मृत्युसे निवृत्तहुई इस वृत्तान्त को सुनकर वहा के सव नगरनिवासियों ने हँसकरकहा कि मकरकटी ने जालकरके जिसका धन हर लिया था उसीने आलकरके इसका सर्वस्व हरलिया इसने दूसरे के लिये तो जालकिया परन्तु अपने लिये कियेगये आलको नहीं पहचाना इसबीचमे वह ईश्वरवर्म्मा बहुतसा धन उपार्जनकरके चित्रकूट नगरमें अपने पिताके पास आया रत्नवर्म्मा ने उसे बहुतसा धन उपार्जनकरके आया देखकर बहुतप्रसन्नहोके उस यमजिह्वाको यथेच्छ धनदिया तवसे वह ईश्वरवर्म्मा कुटिनियो की अपार माया जानकर वेश्या प्रसगको त्यागकर विवाहकरके सुखपूर्वक रहनेलगा इसप्रकारसे हे राजा वेश्याओं के हृदय में छलके सिवाय स्नेहका लेशभी नहीं होता है इससे सदैव धनकी अभिलाषा करनेवाली वेश्याओ से अपने शुभाकाक्षी लोगोंको सदैव वचना चाहिये मरुभूति के मुखसे इस आलजालकी कथाको सुनकर गोमुखादि मन्त्रियो समेत नरवाहनदत्त बहुत प्रसन्नहोकर हँसा १७७ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायाशक्तियशोलम्बकेप्रथमस्तरग १ ॥

मरुभूतिके इसप्रकार वेश्याओंकी निन्दाकरनेपर बुद्धिमान् गोमुखने भी इसी विषयमें कुमुदिका की कथाकही वह यहहै कि प्रतिष्ठानदेशमें सिंहके समान पराक्रमी एक विक्रमसिंह नाम राजाथा उस राजाके अत्यन्तसुन्दर शशिलेखानाम रानीथी एकसमय राजाके पाचमहाभट—वीरबाहु,सुभट

तथा प्रतापादित्य नाम गोत्री भाइयों ने मिलकर उसके राज्यको घेरलिया उनकेसाथ सन्धिका विचार करतेहुए अपने मंत्रीका कहना न मानकर राजा विक्रमसिंह उनके साथ युद्ध करनेको गया और अपनी सेनाके साथ शत्रुओं की सेनाका युद्ध देखकर वीरताके अभिमानसे हाथीपर चढ़कर आपही युद्धमें जाकर शत्रुओंकी सेनापर बाणोंकी वृष्टिकरनेलगा युद्धमें उसेआयादेखकर महाभटादिक पाचों राजा अपनी सब सेनालेकर एकसाथही युद्धकरनेकोआये उनलोगोंकी बहुत बडी सेनासे राजा विक्रमसिंहकी सेना हारकर भागी तब पासही बैठेहुए अनन्तगुणनाम मंत्री ने राजा से कहा कि हमारी सेना सबहारगई है इससे अब जयकी सम्भावना नहीं है आपने हमारा कहना न मानकर बलवानों के साथ विरोधकियाहै उसीका यह फलहुआ है अच्छा जो हुआ सो हुआ अबभी जो हमारा कहना मानियेगा तो कल्याणहै इसहाथीपरसे उतरकर घोडेपर चढ़कर किसीअन्यदेशको भागचलिये जो प्राण बचेंगे तो फिर शत्रुओंको जीतलेंगे मंत्री के इनवचनों से राजाविक्रमसिंह हाथीपरसे उतरकर घोडेपर चढ़के उसी मंत्री के साथ उज्जयिनी नगरी में पहुंचकर प्रसिद्ध धनवती कुमुदिकानाम वेश्याकेयहांगया कुमुदिकाने अकस्मात् उसको अपनेघरमें आयाहुआ देखकरशोचा कि यहकोई बडाप्रतापीपुरुष मेरे घर पर आयाहै यह तेज तथा लक्षणोंसे कोई महाराज मालूमहोताहै जो यह मेरे वशीभूत होजाय तो मेरा प्रयोजन सिद्धहोजायगा यह शोचकर उसने उठकर उसका स्वागतकरके बडा अतिथिसत्कार किया और क्षणभर विश्रामकरके स्वस्थहुए राजासे कहा कि मैं धन्यहूं आज मेरा कोई प्राक्तनपुण्य उदयहुआ है क्योंकि आपने अपने आप आकर मेरे घरको पवित्र किया आप की इसकृपासे मैं बिना मोलकी आपकी दासीहूं मेरे जो दोसैहाथी बीसहजार घोडे और रत्नोंसे पूर्ण जो मन्दिरहै वह सब आपहीका है यह कहकर उस कुमुदिकाने मंत्री सहित राजाको स्नानकराके बहुमूल्य रत्नजटित आभूषण तथा वस्त्र पहराये तब राजा अपने मंत्रीसमेत उसके मंदिरमें उसीके ऐश्वर्य्यको भोग करताहुआ रहनेलगा और उसीके साथ भोग करनेलगा कुमुदिकाका जो कुछ धन राजाविक्रमसिंह अपने सुखकेलिये तथा याचकादिकोंके देनेमें व्ययकरताथा उसे देखकर कुमुदिका अप्रसन्ननहीं किन्तु अत्यन्त प्रसन्न होतीथी कुमुदिकाकी यह भक्ति देखकर उसे अपने ऊपर अनुरक्तहुई जानतेहुए राजासे एकान्तमें अनन्तगुण मंत्रीने कहा कि हे स्वामी वेश्याओंके चित्तमें सद्भाव नहींहोता और यह जो कुमुदिका आप में प्रीति करतीहै इसमें कोई कारण अवश्य है उसके यह वचनसुनकर राजाने कहा कि ऐसा नहीं है कुमुदिका मेरे लिये अपने प्राणभी देदेगी जो तुमको विश्वास नहीं है तो मैं तुमको विश्वासकरादूंगा यह कहकर राजाने बहानेसे भोजन घटाकर कुछ दिनोंमें अपना शरीर दुर्बल तथा कृशकिया और एक दिन निश्चेष्टहोकर अपने को मृतकसा बनालिया तब सम्पूर्णलोग अर्थीबनाकर राजाको श्मशानभूमिमें लेगये और वह कुमुदिका शोकसे व्याकुलहोकर अपने भाई बन्धुओंके निषेधको भी न मानकर उसके साथ सतीहोनेके लिये चितापर बैठगई उसे सतीहोने के लिये उद्यतदेखकर जैसेही अग्निलगाने का समय हुआ वैसेही राजा जंभाईलेकर उठबैठा राजाको फिर जियाहुआ देखकर सम्पूर्णलोग उसे कुमुदिका स

शोचा कि यह बन्दररूपधारी चिन्तामणि इसे सिद्धहुई है जो कि प्रतिदिन एक हजार अशर्फी देताहै जो यह बन्दर इससे मुझे मिलजाय तो बहुत अच्छाहोय यह शोचकर सुन्दरीने भोजनकरके एकान्त में बैठेहुए ईश्वरवर्मासे कहा कि जो सत्य २ आप मुझपर स्नेह करतेहो तो यह आल मुझको देदो यह सुनकर ईश्वरवर्मा हँसकर बोला कि यह तो मेरे पिताका सर्वस्वहै मैं इसे कैसे देसक्ताहूं यह सुनकर सुन्दरीने कहा कि मैं तुम्हारी पांचो करोड अशर्फिया फेरदूंगी तुम इसको मुझेदेदो तब ईश्वरवर्माने कहा कि चाहे तुम अपना सर्वस्व अथवा यह नगर भी मुझे देदो तौभी मैं तुमको यह बन्दरनही देसक्ता यह सुनकर सुन्दरी ने कहा कि मैं अपना सर्वस्व तुमको देतीहूं तुम मुझे यह बन्दरदेदो अपने पिताको नाराज होनेदो यह कहकर वह उसके पैरोपर गिरपडी तब अर्थदत्तादिको ने ईश्वरवर्मा से कहा कि अच्छा यह बन्दर इसे देदो जो कुछ होगा सो देखाजायगा मित्रोके कहनेसे ईश्वरवर्मा ने उसका सर्वस्व लेनेपर वह बन्दरदेना स्वीकारकिया और बंदरपानेकी आशासे प्रसन्नहुई सुन्दरीके साथ वह दिन आनन्दसे व्यतीतकिया दूसरे दिन प्रातःकाल फिर प्रार्थना करती हुई सुन्दरीको ईश्वरवर्मा दोहजार अशर्फी निगलवाकर वहबन्दर देकर और उसका सर्वस्व लेकर शीघ्रही वहासे अपने परिकरसमेत स्वर्णद्वीपको रोजगार करनेकेलियेगया उसके चलेजानेपर दो दिनतक उसबंदरने हजार२ अशर्फी सुंदरीकोदीं और तीसरे दिन बहुत मागनेपरभी सुन्दरीको कुछ नहींदिया तब सुन्दरीने क्रोधकरके उसके एकघूंसामारा इससे उसबन्दरने भी क्रोधितहोकर सुन्दरीका मुख अपने दांतोसे और नखोसे फाडडाला तब मकरकटीने लाठियोंसे उसबन्दरको ऐसापीटा कि वहमरगया उसे मराजानके सुन्दरी अपने सर्वस्वको नष्ट हुआ जानकर प्राणदेनेको उद्यतहुई और लोगो के बहुत समझानेपर मृत्युसे निवृत्तहुई इस वृत्तान्त को सुनकर वहा के सब नगरनिवासियो ने हँसकरकहा कि मकरकटी ने जालकरके जिसका धन हर लियाथा उसीने आलकरके इसका सर्वस्व हरलिया इसने दूसरे के लिये तो जालकिया परन्तु अपने लिये कियेगये आलको नहीं पहचाना इसबीचमे वह ईश्वरवर्म्मा बहुतसा धन उपार्जनकरके चित्रकूट नगरमें अपने पिताके पास आया रत्नवर्म्मा ने उसे बहुतसा धन उपार्जनकरके आया देखकर बहुतप्रसन्नहोके उस यमजिह्वाको यथेच्छ धनदिया तबसे वह ईश्वरवर्म्मा कुटिनियोकी अपार माया जानकर वेश्या प्रसंगको त्यागकर विवाहकरके सुखपूर्वक रहनेलगा इसप्रकारसे हे राजा वेश्याओं के हृदय में छलके सिवाय स्नेहका लेशभी नहीं होता है इससे सदैव धनकी अभिलाषा करनेवाली वेश्याओं से अपने शुभाकांक्षी लोगोंको सदैव बचना चाहिये मरुभूति के मुखसे इस आलजालकी कथाको सुनकर गोमुखादि मंत्रियों समेत नरवाहनदत्त बहुत प्रसन्नहोकर हँसा १७७॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशक्तियशोलम्बकेप्रथमस्तरंग १॥

मरुभूतिके इसप्रकार वेश्याओंकी निन्दाकरनेपर बुद्धिमान् गोमुखने भी इसी विषयमें कुमुदिका की कथाकही वह यहहै कि प्रतिष्ठानदेशमें सिंहके समान पराक्रमी एक विक्रमसिंह नाम राजाथा उस राजाके अत्यन्तसुन्दर शशिलेखानाम रानीथी एकसमय राजाके पांचमहाभट—वीरबाहु,सुबाहु, सुभट

स्त्री के दुराचारको नहीं जानते हैं इसके उपरान्त बलवर्माको ज्वर आया और उसीज्वर से वह अन्तिम अवस्था को प्राप्तहुआ उसकी इस दशामें भी चन्द्रश्री नित्य अपनी सखी के यहां जाकर शीलहर के साथ भोगकरतीरही एकदिन वह अपनी सखीकेही यहां थी कि बलवर्माका ज्वरसे देहान्त होगया इस समाचारको पाकर वहअपनी सखीके मकानमें आकर दुराचारके जाननेवाले बन्धुओं के निषेध करने पर भी शोकसे अपने पति के साथ सतीहोगई इसप्रकारसे स्त्रियोंकी चित्तवृत्ति अत्यन्त दुर्ज्ञेय होती हैं अन्य पुरुषके साथ भोगकरती हैं और अपने पति के साथ सतीहोती हैं इस कथाको कहकर तपन्तक के निवृत्त होजानेपर हरिशिखने कहा कि आपने इस विषयपर क्या देवदासका वृत्तान्त नहीं सुनाहै किसी ग्राम में देवदास नाम एक कुटुम्बी वैश्य रहताथा उसकी दुश्शीलानाम बड़ी दुराचारिणी स्त्री थी उसके दुराचार को बहुधा लोग जानगये थे एकसमय देवदास किसी कार्य्यसे राजाके यहां गयाथा उससमय दुश्शीला ने उसके मरवाने की इच्छा से अपने किसी जारको बुलाकर छत्तपर छुपा रक्खा और रात्रि के समय आकर भोजन करके सोगये देवदासको उसके हाथ से मरवाडाला और उस के चले जानेपर कुछ रात्रिरहे यहहाहाकार किया कि चोरों ने मेरे पतिको मारडाला उस के रोवनेको सुनकर भाई बन्धुओंने आकर घरकी सब वस्तु यथास्थित देखकर और जो इसेचोरों ने मारा है तो वहचोर तेरी कोई वस्तु क्यों नहीं लेगये यहकहकर उसके पुत्रसे पूछा कि तुम्हारे तातको किसने माराहै उसने कहा कि कल दिनमें कोई युवापुरुष मेरे यहां आकर छत्तपर बैठरहाथा उसीने ऊपरसे उतर कर रात्रिके समय मेरे पिताको मारा उसबालकके यहवचन सुनकर उनलोगोंने यहजानकर कि इसके जारने देवदासको माराहै उसजारको ढूंढकर उसीसमय मारडाला और उसबालकको लेकर दुश्शीला को निकाल दिया इसप्रकारसे स्त्रियां परपुरुषपर अनुरक्तहोकर अपने पुरुषको मारडालती हैं इसकथा को कहकर हरिशिखके चुपहोजानेपर गोमुखने फिर कहा कि औरोंसे क्याप्रयोजनहै वत्सराज के सेवक वज्रसारकाही हास्यकारी वृत्तान्त सुनिये वत्सराजके सेवक बड़े शूरवीर सुन्दर वज्रसारके मालवदेश में उत्पन्नहुई एकबड़ी स्वरूपवती प्यारी स्त्री थी एकसमय उसस्त्री का पिता तथा भाई उसको लिवाने के लिये मालवदेशसे आये वज्रसारने उनका बड़ासत्कार करके राजासे आज्ञा लेकर अपनी स्त्री समेत उनके साथ जाकर मालवदेशमें निवासकिया और एकमहीनेके बाद अपनी स्त्रीको वहींछोड़कर राजा के सेवनके लिये वह यहां चलाआया कुछ दिनोंके उपरान्त अकस्मात् उसके क्रोधननाम मित्रने आकर उससे कहा कि तुमने अपनी स्त्रीको पिताके यहां छोड़कर अपना घर सत्यानाश करदिया वहां उस पापिनने अन्यपुरुषके साथ स्नेहकरलियाहै आज वहांसे आयेहुये किसी प्रामाणिक पुरुषसे मैंने यह बात सुनी है इससे तुम उसे छोड़कर दूसरा विवाहकरलो यहकहकर क्रोधन के चलेजाने पर वज्रसारने सोचा कि यहबात सत्य मालूमहोतीहै नहीं तो मैंने जो पुरुषबुलाने को भेजाथा उसके साथ वह क्यों नहीं आई इससे मैं आपही उसेबुलाने जाऊंगा देखिये वहां क्याहोताहै यहनिश्चयकरके वज्रसार मालव देशमें जाकर अपने सास श्वशुरकी आज्ञासे अपनी स्त्रीको बिदाकराके घरसे चला और वहां से

मेत कुमुदिका के यहा लेआये वहा आकर कुमुदिकाने वडा उत्सव किया और राजाने एकान्तमेंमत्री से कहा कि तुमने इसका अनुराग देखलिया यह सुनकर मन्त्रीने कहा कि मुझे इतनेपर भी विश्वास नही आता इसमे कोई कारण अवश्यहै अच्छा अव इससे अपनेको प्रकटकरके इसकी सेना तथा अपने मित्र राजाओकी सेनालेकर अपने शत्रुओको मारना चाहिये मंत्रीके इसप्रकार कहतेही गुप्तदूतने आकर राजासे कहा कि शत्रुओंने सब देश अपनेआधीन करलिया और रानी शशिलेखा आपकी मिथ्या मृत्युसुनकर अग्निमें जलकर मरगई दूतके यह वचनसुनकर शोकरूपी वज्र से हृदयमें पीडित हुआ राजा हादेवी हासती यह कहकर विलापकरनेलगा राजाके विलापको सुनकर कुमुदिका ने वहा आकर सब वृत्तान्त पूछकर राजाको समझाकर कहा कि आपने पहलेही मुझसे क्यों नहीं कहा मेरे धन तथा सेनाको लेकर आप अपने शत्रुओंको जीतिये उसके यहवचन सुनकर राजाविक्रमसिंह उसके धनसे वहुतसी सेना इकट्ठी करके अपने मित्र राजावलवानके यहा गया और उसकीभी सेनालेकर अपने पाचो शत्रुओको जीतके उनके देशोका तथा अपने देशोंका स्वामी होगया तब उसने कुमुदिका से कहा कि वताओ तुम्हारा क्या अभीष्टहै वह मै पूराकरूं उसने कहा कि जो सत्य २ आप मेरेऊपर प्रसन्नहै तो एक दुःखरूपी वाण मेरे हृदयसे आप निकालदीजिये, कि उज्जयिनी में मेरे प्रिय श्रीधरनाम ब्राह्मणको राजाने थोडेहीसे अपराधमे वाधरक्खाहै उसेआप छुडादीजिये उत्तम लक्षणोंसे मैंने आपको बडा तेजस्वी जान के इतने दिनतक इसीलिये आपका सेवन किया है और मै जो आपकी चिताके ऊपर भस्महोनेको चढीथी उसका यह कारणथा कि आपकी मृत्युसे मैंने अपने अभिलापको सिद्धहोता न जानकर उस श्रीधरके विना जीवनको व्यर्थ जानकर चितामें भस्महोना चाहाथा उसके यह वचन सुनकर राजा ने कहा कि धैर्य्य धरो मै तुम्हारा कार्य्य सिद्ध करदूगा और अपने चित्त में मन्त्री के वचन स्मरण करके शोचा कि अनन्तगुणने मुझसे ठीक २ यथार्थ वचन कहे थे अच्छा अब इसका मनोरथ तो अवश्य पूर्णकरना चाहिये यह निश्चय करके उसने अपनी सेना समेत उज्जयिनी में जाकर श्रीधरको छुडाके तथा कुमुदिका को वहुतसा धन देके प्रसन्न करदिया और अपने नगर में आकर मन्त्री अनन्तगुण के वचनो के अनुसार राज्यका पालन किया इसप्रकार से वेश्याओं का हृदय अगाध तथा अज्ञेय होताहै ५४ इस कथाको कहकर गोमुख के निवृत्त होजाने पर तपन्तकने नरवाहनदत्त के आगे कहा कि हे युवराज वेश्याओं के समान घरकी स्त्रियों मे भी विश्वास न करना चाहिये क्योंकि सम्पूर्ण स्त्रिया चपल होती है मैने इसी नगरी में जो आश्चर्य्य देखाहै वह मै आपसे कहताहू इसीनगरी में वलवर्म्मा नाम वैश्यकी चन्द्रश्री नाम स्त्री थी उसने एकसमय झरोखे के द्वारा शीलहरनाम युवा वैश्यको देखा और मोहितहोके उसे अपनी सखी के द्वारा सखी के यहा वुलवाकर उससे रमण किया और उसी दिन मे उसपर अत्यन्त स्नेहयुक्त होके उसे नित्य वहीं वुलाकर भोग करानेलगी उसका यह दुराचार सम्पूर्ण भृत्य और वान्धव लोग जानगये परन्तु उसके पति बलवर्म्मा ने नहीं जाना ठीकहै (प्रायेणभार्य्यादोशीत्य स्नेहान्धोनेक्षतेजन) प्राय स्नेहान्ध लोग अपनी

स्त्री के दुराचारको नहीं जानते हैं इसके उपरान्त बलवर्माको ज्वर आया और उसीज्वर से वह अन्तिम अवस्था को प्राप्तहुआ उसकी इस दशामें भी चन्द्रश्री नित्य अपनी सखी के यहा जाकर शीलहर के साथ भोगकरतीरही एकदिन वह अपनी सखीकेही यहा थी कि बलवर्माका ज्वरसे देहान्त होगया इस समाचारको पाकर वहअपनी सखीके मकानमे आकर दुराचारके जाननेवाले बन्धुओं के निषेध करने पर भी शोकसे अपने पति के साथ सतीहोगई इसप्रकारसे स्त्रियोंकी चित्तवृत्ति अत्यन्त दुर्ज्ञेय होती है अन्य पुरुषके साथ भोगकरती हैं और अपने पति के साथ सतीहोती हैं इस कथाको कहकर तपन्तक के निवृत्त होजानेपर हरशिखने कहा कि आपने इस विषयपर क्या देवदासका वृत्तान्त नहीं सुनाहै किसी ग्राम में देवदास नाम एक कुटुम्बी वैश्य रहताथा उसकी दुश्शीलानाम बडी दुराचारिणी स्त्री थी उसके दुराचार को बहुधा लोग जानगये थे एकसमय देवदास किसी कार्य्यसे राजाके यहा गयाथा उससमय दुश्शीला ने उसके मरवाने की इच्छा से अपने किसी जारको बुलाकर छत्तपर छुपा रक्खा और रात्रि के समय आकर भोजन करके सोगये देवदासको उसके हाथ से मरवाडाला और उस के चले जानेपर कुछ रात्रिरहे यहहाहाकार किया कि चोरों ने मेरे पतिको मारडाला उस के रोवनेको सुनकर भाई बन्धुओंने आकर घरकी सब वस्तु यथास्थित देखकर और जो इसेचोरों ने मारा है तो वहचोर तेरी कोई वस्तु क्यों नहीं लेगये यहकहकर उसके पुत्रसे पूछा कि तुम्हारे तातको किसने माराहै उसने कहा कि कल दिनमें कोई युवापुरुष मेरे यहा आकर छत्तपर बैठरहाथा उसीने ऊपरसे उतर कर रात्रिके समय मेरे पिताको मारा उसबालकके यहवचन सुनकर उनलोगोंने यहजानकर कि इसके जारने देवदासको माराहै उसजारको ढूढकर उसीसमय मारडाला और उसबालकको लेकर दुश्शीला को निकाल दिया इसप्रकारसे स्त्रिया परपुरुषपर अनुरक्तहोकर अपने पुरुषको मारडालती हैं इसकथा को कहकर हरिशिखके चुपहोजानेपर गोमुखने फिर कहा कि औरोंसे क्याप्रयोजनहै वत्सराज के सेवक वज्रसारकाही हास्यकारी वृत्तान्त सुनिये वत्सराजके सेवक बडे शूरवीर सुन्दर वज्रसारके मालवदेश में उत्पन्नहुई एकबडी स्वरूपवती प्यारी स्त्री थी एकसमय उसस्त्री का पिता तथा भाई उसको लिवाने के लिये मालवदेशसे आये वज्रसारने उनका बडासत्कार करके राजासे आज्ञा लेकर अपनी स्त्री समेत उनके साथ जाकर मालवदेशमें निवासकिया और एकमहीनेके बाद अपनी स्त्रीको वहींछोडकर राजा के सेवनकेलिये वह यहा चलाआया कुछ दिनोंके उपरान्त अकस्मात् उसके क्रोधननाम मित्रने आकर उससे कहा कि तुमने अपनी स्त्रीको पिताके यहा छोडकर अपना घर सत्यानाश करदिया वहा उस पापिनने अन्यपुरुषके साथ स्नेहकरलियाहै आज वहासे आयेहुये किसी प्रामाणिक पुरुषसे मैंने यह बात सुनी है इससे तुम उसे छोडकर दूसरा विवाहकरलो यहकहकर क्रोधन के चलेजाने पर वज्रसारने सोचा कि यहबात सत्य मालूमहोतीहै नहीं तो मैंने जोपुरुषबुलाने को भेजाथा उसके साथ वह क्यों नहीं आई इससे मैं आपही उसेबुलाने जाऊंगा देखिये वहा क्याहोनाहै यहनिश्चयकरके वज्रसार मालवदेशमें जाकर अपने सास स्वशुरकी आज्ञासे अपनी स्त्रीसे बिदाकराके वहासे चला और वहा से

कुछदूर आकर मार्गमें मिलेहुए किसीवनमे एकान्त स्थानमे जाकर उसने अपनी स्त्रीसे पूछा कि मैंने सुनाहै कि तू परपुरुषसे स्नेहकरतीहै और मुझे निश्चयभी होता है कि जब मैंने तुझे बुलवायाथा तब तू नहींआई इससे सत्य २ कह नहीं तो मैं तुझे मारडालूगा यहसुनकर उसने कहा कि जो तुम्हारा ऐसाही निश्चयहै तो मुझसे क्यों पूछतेहो जोचाहो सोकरो उसके यहवचन सुनकर वज्रसारने उसे वृक्ष में बाधकर बहुत पीटा और उसके सब वस्त्र खोललिये वस्त्र खोलनेसे उसेनग्न देखकर वहमूर्ख कामके वशीभूतहोकर रमणकरनेके लिये उसे आलिगन करनेलगा और रतिके लिये उससे प्रार्थना करनेलगा तब उसकुलटाने कहा कि जैसे तुमने मुझे वृक्षमें बाधकर पीटाहै वैसेही मैंभी तुमको वृक्षमें बाधकर पीटू तो तुम्हें रतिकरनेदूगी नहीं तो नहीं करनेदूगी उसने कामसे मोहितहोकर उसका कहना मानलिया तब उसकुलटाने उसके हाथ पैर बडी दृढतासे बाधकर उसीके शस्त्रसे उसके नाक कान काटलिये और पुरुषकासा भेषबनाके वहीशस्त्र आपलेके वह कहींचलीगई उसके चलेजानेके उपरान्त औषधलेनेके लिये आयाहुआ कोई वैद्य वज्रसारको बँधाहुआ देखकर कृपापूर्व्वक खोलकर उसे अपने घरलेगया वहा उस वैद्यकी औषध से कान नाकके अच्छेहोजानेपर वह अपने घरको आया यहा क्रोधनने उससे सब वृत्तान्त पूछकर सभामें महाराज उदयन् के आगे उसका सब वृत्तान्त कहा उसके इसवृत्तान्तको सुनकर सब सभाके लोग बहुत हँसे वह वज्रसार अभीतक यहीं महाराजके मदिरमे सेवकाई करता है इससे हे स्वामी स्त्रियोंपर किसीको विश्वास न करना चाहिये गोमुखके इसप्रकार कहकर निवृत्तहोजाने पर मरुभूतिने कहा कि हे युवराज स्त्रियोंका चित्तस्थिर नहीं रहताहै इसविषयपर भी मैं आपको एककथा सुनाता हू दक्षिण देशमें सिंहवलनाम राजाकी मालव देशके राजाकी कल्याणवती नामपुत्री पटरानीथी एक समय उस राजाके गोत्री भाइयों ने मिलकर उसको उसके देशसे निकालदिया तब वह अपनी रानी कल्याणवतीको साथलेकर अपने श्वशुर के यहा मालव देशकोचला उसने मार्ग मे मिलेहुए वनमे अकस्मात् आयेहुए सिंहको एकही खड्गके प्रहारसे मारडाला चिंहाड करते वनके हाथीकी सूड खड्गसे काटडाली और बीचमें मिलीहुई चोरोंकी सेनाको अकेलेही मारकर भगादिया इसप्रकार मार्गका उल्लघनकरके मालव देशमें पहुचकर उसने रानीसे कहदिया कि मार्गका वृत्तान्त अपने पिताके घरमें किसी से मत कहना क्योंकि शत्रुओंसे हारकर मुझको यह सब बातें लज्जाकारीहोंगी यह कहकर वह अपने श्वशुरके मन्दिरमें गया और उससे सम्पूर्ण वृत्तान्त कहकर उसकी सेनालेके और रानीको वहीं छोडकर गजानीक नाम अपने मित्रसे भी प्रथम कुछ सेनालेनेकोगया उसके चलेजानेपर एकदिन कल्याणवतीने महलके ऊपर से किसी सुन्दर पुरुषको देखके कामके वशीभूत होकर शोचा कि यद्यपि मैं जानतीहू कि आर्य्यपुत्रसे अधिक स्वरूपवान् और बलवान् दूसरा कोई पुरुष नहीं है तथापि इसपुरुषपर मेरी चित्तकी वृत्तिचलायमान होती है अच्छा जो चाहे सो होय इसकेसाथ अवश्य रमण करूंगी यह शोचकर उसने अपनी प्रिय सखीकेद्वारा अपना अभिप्राय उससे कहकर रात्रिके समय उस [illegible] स्सी के द्वारा अपने महलपर चढालिया वह पुरुष वहा आकर भयसे उसके पलँगपर नहीं बैठसका यह देखकर रानी

को यह जानकर कि यह नीचहै बड़ा खेदहुआ उससमय,एक भयंकर सर्प महलके ऊपर आकर उडने लगा उसे देखकर उस पुरुषने भयभीत होकर धनुषमें बाण चढाकर उसे मारा बाणके लगनेसे वह सर्प मरकर महलपर गिरपडा तब वह पुरुष उस सर्पको झरोखेमें से बाहर फेंककर प्रसन्नहोके नाचनेलगा उसकी इसतुच्छताको देखकर कल्याणवतीने अपने चित्तमें कहा कि इस अधम निस्सत्त्वको लेकर मैं क्याकरूंगी उसके इसअभिप्रायको जानकर उसकी सखीने बाहरजाके और फिर भीतरआके कहा कि हे राजपुत्री तुम्हारा पिताआताहै इससे इसपुरुषको शीघ्रही रस्सी पकडाकर उतरवादो उसके इसप्रकार कहतेही वह भयसे व्याकुलहोके शीघ्रही रस्सी पकडकर उतरगया और भयसे व्याकुलहोके गिरकर मरानहीं यही कुशल होगई उसके चलेजानेपर कल्याणवतीने अपनी सखीसे कहा हेसखी तुमने बहुत अच्छा किया जो इस नीचको युक्तिपूर्व्वक निकाल दिया तुमने मेरे चित्तका अभिप्राय जानलिया देखो मेरापति व्याघ्र सिंहादिकोंको भी मारकर लज्जित होताहै और यह सर्पकोही मारकर नाचताहै इससे ऐसे पराक्रमीको छोडकर इसनिस्सत्त्वपर मेरा प्रेम कैसे होय मेरी स्थिरतारहित इसबुद्धिको धिक्कारहै अथवा कपूरको छोडकर अशुचि वस्तुओंपर जानेवाली मक्षिकाओंके समान सबस्त्रियोंको धिक्कारहै इसप्रकार पश्चात्ताप करके कल्याणवती अपने पतिकी प्रतीक्षा करनेलगी इसबीचमें सिंहबल राजागजानीक से बहुतसी सेनालेकर अपने गोत्री भाइयोंको जीतके अपना राज्यपाके कल्याणवती को अपने श्वशुरके यहासे लेगया और प्रसन्नतापूर्व्वक बहुतसा दानकरके निष्कंटक राज्य करनेलगा हे स्वामी इसप्रकार से चतुरस्त्रियोंका भी चित्त वीर सुन्दर पतिके होनेपर भी परपुरुष पर चलायमान होताहै इससे शुद्धस्त्रिया बहुतही कम होती हैं मरुभूतिसे इसकथाको सुनकर नरवाहनदत्तने सुखपूर्व्वक शयन करके वह रात्रि व्यतीतकी १४१ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशक्तियशोलम्बकेद्वितीयस्तरङ्गः २ ॥

इसके उपरान्त प्रातःकाल अपना आवश्यक कार्य्य करके नरवाहनदत्त मन्त्रियों समेत उपवनमें विहारकरनेकोगया वहां उसने पहले आकाशसे उतरताहुआ तेजका पुंजसादेखा और पीछेसे बहुतसी विद्याधरी उतरी देखीं नक्षत्रों के बीचमें चन्द्रमाकी कलाके समान मनोहर उन विद्याधरियों मे एक अत्यन्त सुन्दर कन्याथी प्रफुल्लित मुखरूपी कमलवाली चञ्चलनेत्ररूपी भ्रमरवाली हंसोंके समान मन्द गमन करनेवाली कमलके समान शरीरकी गन्धवाली लहरों के समान मनोहर त्रिवली से युक्त उदर वाली वह कन्या क्याथी मानों कामके उपवनकी बावडीकी शोभाकी साक्षात् देवीथी कामकी सञ्जीविनी उस कन्याको देखकर नरवाहनदत्तका चित्त चन्द्रमाकी कलाको देखकर समुद्रके समान चलायमानहुआ वाह ब्रह्माकी क्याही विलक्षण कारीगरी है यह अपने मन्त्रियोंसे कहताहुआ वह उसके पास गया और प्रेमयुक्त दृष्टिसे देखतीहुई उस कन्यासे बोला कि हे सुन्दरी तुमकौनहो और किस निमित्त यहां आई हो यह सुनकर उसने कहा कि सुनिये मैं कहतीहूं कि हिमालय पर्व्वतपर काञ्चनशृङ्ग नाम एक सुवर्णमयपुर है उस पुरमें विद्याधरों का स्वामी शरणागतवत्सल धर्मात्मा दीनदयालु स्फटिक

कुछदूर आकर मार्गमें मिलेहुए किसीवनमें एकान्त स्थानमे जाकर उसने अपनी स्त्रीसे पूछा कि मैंने सुनाहै कि तू परपुरुषसे स्नेहकरतीहै और मुझे निश्चयभी होता है कि जब मैंने तुझे बुलवायाथा तब तू नहींआई इससे सत्य २ कह नहीं तो मैं तुझे मारडालूगा यहसुनकर उसने कहा कि जो तुम्हारा ऐसाही निश्चयहै तो मुझसे क्यों पूछतेहो जोचाहो सोकरो उसके यहवचन सुनकर वज्रसारने उसे वृक्ष में बांधकर वहुत पीटा और उसके सब वस्त्र खोललिये वस्त्र खोलनेसे उसेनग्न देखकर वहमूर्ख कामके वशीभूतहोकर रमणकरनेके लिये उसे आलिंगन करनेलगा और रतिके लिये उससे प्रार्थना करनेलगा तब उसकुलटाने कहा कि जैसे तुमने मुझे वृक्षमें बांधकर पीटाहै वैसेही मैंभी तुमको वृक्षमें बांधकर पीटू तो तुम्हें रतिकरनेदूगी नहीं तो नहीं करनेदूगी उसने कामसे मोहितहोकर उसका कहना मानलिया तब उसकुलटाने उसके हाथ पैर बड़ी दृढतासे बांधकर उसीके शस्त्रसे उसके नाक कान काटलिये और पुरुषकासा भेषबनाके वहीशस्त्र आपलेके वह कहींचलीगई उसके चलेजानेके उपरान्त औषधलेनेके लिये आयाहुआ कोई वैद्य वज्रसारको बँधाहुआ देखकर कृपापूर्वक खोलकर उसे अपने घरलेगया वहां उस वैद्यकी औषध से कान नाकके अच्छेहोजानेपर वह अपने घरको आया यहां क्रोधनने उससे सब वृत्तान्त पूछकर सभामें महाराज उदयन् के आगे उसका सब वृत्तान्त कहा उसके इसवृत्तान्तको सुनकर सब सभाके लोग वहुत हँसे वह वज्रसार अभीतक यहीं महाराजके मंदिरमें सेवकाई करता है इससे हे स्वामी स्त्रियोंपर किसीको विश्वास न करना चाहिये गोमुखके इसप्रकार कहकर निवृत्तहोजाने पर मरुभूतिने कहा कि हे युवराज स्त्रियोंका चित्तस्थिर नहीं रहताहै इसविषयपर भी मैं आपको एककथा सुनाता हूं दक्षिण देशमे सिंहबलनाम राजाकी मालव देशके राजाकी कल्याणवती नामपुत्री पटरानीथी एक समय उस राजाके गोत्री भाइयों ने मिलकर उसको उसके देशसे निकालदिया तब वह अपनी रानी कल्याणवतीको साथलेकर अपने श्वशुर के यहां मालव देशकोचला उसने मार्ग मे मिलेहुए वनमे अकस्मात् आयेहुए सिंहको एकही खड्गके प्रहारसे मारडाला चिंघाड करते वनके हाथीकी सूंड खड्गसे काटडाली और बीचमें मिलीहुई चोरोंकी सेनाको अकेलेही मारकर भगादियाइसप्रकार मार्गका उल्लंघनकरके मालव देशमें पहुंचकर उसने रानीसे कहदिया कि मार्गका वृत्तान्त अपने पिताके घरमें किसी से मत कहना क्योंकि शत्रुओंसे हारकर मुझको यह सब बातें लज्जाकारीहोंगी यह कहकर वह अपने श्वशुरके मन्दिरमें गया और उससे सम्पूर्ण वृत्तान्त कहकर उसकी सेनालेके और रानीको वहीं छोडकर गजानीक नाम अपने मित्रसे भी प्रथम कुछ सेनालेनेकोगया उसके चलेजानेपर एकदिन कल्याणवतीने महलके ऊपर से किसी सुन्दर पुरुषको देखके कामके वशीभूत होकर शोचा कि यद्यपि मैं जानतीहू कि आर्य्यपुत्रसे अधिक स्वरूपवान् और बलवान् दूसरा कोई पुरुष नहीं है तथापि इसपुरुषपर मेरी चित्तकी वृत्तिचलायमान होती है अच्छा जो चाहे सो होय इसकेसाथ अवश्य रमण करूंगी यह शोचकर उसने अपनी प्रिय सखीकेद्वारा अपना अभिप्राय उससे कहकर रात्रिके समय उस [illegible] सखी के द्वारा अपने महलपर चढालिया वह पुरुष वहां आकर भयसे उसके पलँगपर नहीं बैठसका यह देखकर रानी

को यह जानकर कि यह नीचहै बडा खेद्हुआ उससमय एक भयकर सर्प महलके ऊपर आकर उडने लगा उसे देखकर उस पुरुषने भयभीत होकर धनुषमें बाण चढाकर उसे मारा बाणके लगनेसे वह सर्प मरकर महलपर गिरपड़ा तब वह पुरुष उस सर्पको झरोखेमें से बाहर फेंककर प्रसन्नहोके नाचनेलगा उसकी इसतुच्छताको देखकर कल्याणवतीने अपने चित्तमें कहा कि इस अधम निस्सत्त्वको लेकर में क्याकरूंगी उसके इसअभिप्रायको जानकर उसकी सखीने बाहरजाके और फिर भीतरआके कहा कि हे राजपुत्री तुम्हारा पिताआताहै इससे इसपुरुषको शीघ्रही रस्सी पकडाकर उतरवादो उसके इसप्रकार कहतेही वह भयसे व्याकुलहोके शीघ्रही रस्सी पकडकर उतरगया और भयसे व्याकुलहोके गिरकर मरानहीं यही कुशल होगई उसके चलेजानेपर कल्याणवतीने अपनी सखीसे कहा हेसखी तुमने बहुत अच्छा किया जो इस नीचको युक्तिपूर्व्वक निकाल दिया तुमने मेरे चित्तका अभिप्राय जानलिया देखो मेरापति व्याघ्र सिंहादिकोंको भी मारकर लज्जित होताहै और यह सर्पकोही मारकर नाचताहै इससे ऐसे पराक्रमीको छोडकर इसनिस्सत्त्वपर मेरा प्रेम कैसे होय मेरी स्थिरतारहित इसबुद्धिको धि-कारहै अथवा कपूरको छोडकर अशुचि वस्तुओंपर जानेवाली मक्षिकाओंके समान सबस्त्रियोंको धि क्कारहै इसप्रकार पश्चात्ताप करके कल्याणवती अपने पतिकी प्रतीक्षा करनेलगी इसबीचमें सिंहल राजागजानीक से बहुतसी सेनालेकर अपने गोत्री भाइयोंको जीतके अपना राज्यपाके कल्याणवती को अपने श्वशुरके यहासे लेगया और प्रसन्नतापूर्व्वक बहुतसा दानकरके निष्कंटक राज्य करनेलगा हे स्वामी इसप्रकार से चतुरस्त्रियोंका भी चित्त वीर सुन्दर पतिके होनेपर भी परपुरुष पर चलायमान होताहै इससे शुद्धस्त्रिया बहुतही कम होती हैं मरुभूतिसे इसकथाको सुनकर नरवाहनदत्तने सुखपूर्व्वक शयन करके वह रात्रि व्यतीतकी १४१ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशक्तियशोलम्बकेद्वितीयस्तरङ्गः २ ॥

इसके उपरान्त प्रातःकाल अपना आवश्यक कार्य्य करके नरवाहनदत्त मंत्रियों समेत उपवनमें विहारकरनेकोगया वहा उसने पहले आकाशसे उतरताहुआ तेजका पुंजसादेखा और पीछेसे बहुतसी विद्याधरी उतरी देखीं नक्षत्रों के बीचमें चन्द्रमाकी कलाके समान मनोहर उन विद्याधरियों मे एक अत्यन्त सुन्दर कन्याथी प्रफुल्लित मुखरूपी कमलवाली चञ्चलनेत्ररूपी भ्रमरवाली हंसोंके समान मन्द गमन करनेवाली कमलके समान शरीरकी गन्धवाली लहरों के समान मनोहर त्रिवली से युक्त उदर वाली वह कन्या क्याथी मानों कामके उपवनकी बावडीकी शोभाकी साक्षात् देवीथी कामकी मजी विनी उस कन्याको देखकर नरवाहनदत्तका चित्त चन्द्रमाकी कलाको देखकर समुद्रके समान चलाय मानहुआ वाह ब्रह्माकी क्याही विलक्षण कारीगरी है यह अपने मन्त्रियोंसे कहताहुआ वह उसके पास गया और प्रेमपूर्वक दृष्टिसे देखतीहुई उस कन्यासे बोला कि हे सुन्दरी तुमकौनहो और किस निमित्त यहां आईहो यह सुनकर उसने कहा कि सुनिये मैं कहतीहूं कि हिमालय पर्व्वतपर काञ्चनशृंग नाम एक सुवर्णमयपुर है उस पुरमें विद्याधरों का स्वामी शरणागतवत्सल धर्मात्मा स्फटिकयश नाम स्फटिक

शानाम राजा है उससे हेमप्रभानाम रानी में पार्वतीजी की कृपा से उत्पन्न हुई शक्तियशा नाम मैं कन्याहू मेरे पाचमुझसे वडेभाई हैं परन्तु मेरे पिता मुझको अपने प्राणोंसे भी अधिक चाहते हैं उन्हीं की आज्ञा से मैंने व्रतों से और स्तोत्रों से श्री पार्व्वतीजी को प्रसन्न किया इससे प्रसन्न हुई भगवती श्रीपार्व्वतीजी ने सम्पूर्ण विद्या देकर मुझसे कहा कि हे पुत्री तुझे अपने पिता से भी दशगुना विद्याओं का वलहोगा और सम्पूर्ण विद्याधरों का भावी चक्रवर्त्ती नरवाहनदत्त तेरा पति होगा यह कह कर श्री पार्वतीजी अन्तर्द्धान होगई और उनकी कृपासे सम्पूर्ण विद्याओं को पाकर मैं क्रम से युवती हुई आज रात्रिके समय भगवतीने स्वप्नमें दर्शन देकर मुझसे कहा कि हे पुत्री प्रात काल तुम जाकर अपने पतिको देखना और उसे देखकर यहीं लौटआना एक महीने के उपरान्त तुम्हारे पिता तुम्हारा विवाह उसी के साथ करदेंगे यह कहकर भगवती अन्तर्द्धान होगई और रात्रिके व्यतीत होजाने से मेरी निद्राभी खुलगई हे आर्यपुत्र भगवतीकी उसी आज्ञासे तुम्हारे दर्शनको मैं यहा आज आईहू और अभीजातीहू यह कहकर वह अपनी सखियों समेत आकाशमार्गसे अपने पुरको चलीगई और नरवाहनदत्त उसके विवाहके लिये उत्कण्ठित होकर एकमहीने को युगके समान देखताहुआ खिन्न होकर मन्त्रियों समेत अपने मन्दिरमें गया २० वहा उसेखिन्न देखकर गोमुखने कहा कि हेयुवराज आपके चित्तके वहलाने के लिये मैं एक कथा कहताहू पूर्वसमयमें काचनपुरी नाम नगरीमें सम्पूर्ण शत्रुओंका जीतनेवाला वडा प्रतापी सुमनानाम राजा था एक समय सभा मे बैठेहुए राजा सुमना से प्रतीहारने यह विज्ञापन किया कि हे स्वामी निषादाधिपकी मुक्तालतानाम कन्यापिंजरे मे एक तोतेको लेकर अपने भाई वीरप्रभ के साथ आकर द्वारपर खडी है और आपके पादारविन्दो का दर्शन किया चाहती है यह सुनकर राजाने कहा कि आने दो तव प्रतीहारसे आज्ञा पाकर वह मुक्तालता सभा में आई उसके अद्भुत रूपको देखकर सम्पूर्ण सभासदोंने अपने चित्तमे कहा कि यह मानुषी नहीं है कोई दिव्य स्त्री है उसने राजाको प्रणाम करके कहा कि हे राजा यह शास्त्रगंज नाम तोता चारोवेदों का जानने वाला और सम्पूर्ण कला तथा विद्याओं मे परम प्रवीणहै मैं इसे आपके योग्य जानकर यहा लाई हू आप इसे ग्रहण कीजिये यहकहकर उसने वह तोता प्रतीहारको देदिया प्रतीहार उसे राजाके पास लेगया वहा उस तोतेने यह श्लोक पढा कि (राजन्युक्तमिदसदैवयदयदेवस्यसधुद्यते धूमश्यामसुखो द्विषद्विरहिणीनिश्वासवातोदगमै । एतत्त्वद्भुतमेवयत्परिभगाद्वाष्पाम्बुपूरप्लवैरासाप्रज्वलतीहदिक्षुदशसु प्राज्य प्रतापानल) हे राजा यह तो योग्यहीहै जो दशोंदिशाओं में आपका प्रतापानल शत्रुओंकी विरहणी स्त्रियों के श्वासरूपी वायुसे धौंका जाकर प्रचण्ड होताहै परन्तु यह अद्भुत वातहै कि जो शत्रुओंकी स्त्रियों के अश्रुओं के प्रवाहों से व्याप्त भी आपका प्रतापानल जाज्वल्यमान होताहै यह श्लोक पढकर और इसकी व्याख्याकरके फिर तोते ने कहा कि किसशास्त्र से कौनसा प्रमेयकहू सो आप आज्ञा कीजिये यह सुनकर राजाके अत्यन्त विस्मित होनेपर उसके मन्त्री ने कहा कि यह पूर्व्वजन्म का कोई ऋषि शाप से तोता होगयाहै पुण्य के प्रतापसे इसे अपने पूर्व्वजन्म के सव शास्त्र स्मरणहैं

मंत्री के यह वचनसुनकर राजाने उससे पूछा कि हे शास्त्रराज तुम्हारा कहा जन्महुआहै पक्षी योनि में भी यह शास्त्रका ज्ञान तुमको कैसे प्राप्तहुआहै और तुम कौनहो यह सब अपना वृत्तान्त मुझसे कहो मुझे बड़ा आश्चर्य होरहाहै यह सुनकर उस तोतेने श्वासलेकर कहा कि यद्यपि यह वृत्तान्त कहने के योग्य नहीं है तथापि मैं आपकी आज्ञाको अनुल्लंघनीय मानकर कहताहूं आप सुनिये हे राजा हिमालय के निकट एक बड़ाभारी कुटकी का वृक्षहै उसकी बड़ी २ शाखाओंपर अनेक पक्षी रहते हैं उसी वृक्षपर एकतोता अपनी तोती समेत घोंसलाबनाकर रहताथा उसी तोतीमें उसतोते से भाग्यवश से मेरा जन्महुआ है मेराजन्महोतेही मेरीमातामरगई इससे अत्यन्त दुःखीहोकर मेरा वृद्धपिता निकट रहनेवाले अन्यतोतों के जूठे बचेहुए फलों को आपखाकर तथा मुझे भी खिलाकर अपने पखों में मुझे रखकर मेरा पालन करनेलगा एकसमय वहां बहुतसे भील शिकारखेलने को आये और दिनभर अनेक प्रकारके पशुतथा पक्षियों को मारतेरहे सायंकालके समय एक वृद्धभील कोई पशुपक्षी न पाकर मेरे निवास के वृक्षके समीप आया और उसमें पक्षियों का शब्द सुनके उसपर चढ़के तोतोंको तथा अन्य पक्षियों को घोंसलों में से निकालकर मार २ कर पृथ्वीपर डालनेलगा इसी क्रम से उसे अपने निकट आया देखकर मैं भयभीतहोकर अपने पिताके पंखोंमें छिपरहा इतने में उसने मेरे घोंसलेमें भी अपना हाथ डालकर मेरे पिताको निकालके मारकर पृथ्वीपर डालदिया और मैं अपने पिताके पखों में ही लिपटाहुआ पृथ्वीपर गिरकर उनके पखोंमें से निकलकर सूखे पत्तों में घुसगया और वह भील सब पक्षियों को मार पृथ्वीपर उतरकर कुछ पक्षियोंको अग्निमें भून २ कर खाकर शेष पक्षियोंको लेके अपने साथियों के साथ अपने गांवको चलागया तब मैं निर्भय होकर बड़े दुःखसे उस रात्रिको व्यतीत करके प्रातःकाल जगन्नेत्र भगवान् सूर्य्यके उदयहोने पर तृपासे व्याकुल होकर अपने पखोंको फैलायेहुए धीरे २ निकटवर्त्ती पद्मसर नाम तडाग के पासगया वहां मेरे मूर्त्तिमान पूर्व्वजन्मके पुण्योंके समान मरीचिनाम मुनि स्नान करनेको आयेथे वह मुझे देखकर कृपासे मेरे मुखमें जलबिन्दु डालकर मुझे दोने में रखकर अपने आश्रममें लेगये वहां मुझे देखकर हँसतेहुए महर्षि कुलपति पुलस्त्यजी से अन्य महर्षियों ने पूछा कि हे महाराज इस तोते को देखकर आपके हास्य करने का क्या कारणहै यह सुनकर महर्षिजी ने कहा कि शापसे उत्पन्नहुए इस तोते को देखकर मुझे हँसी आगई आह्निक के उपरान्त मैं इसकी कथा तुमलोगों से कहूंगा उस कथाको सुनतेही इस तोते को अपने पूर्व्वजन्मका स्मरण आजायगा यहकहकर वह आह्निक करनेकोगये फिर २ आह्निक करने के उपरान्त उनसब मुनियों के प्रार्थना करनेपर त्रिकालदर्शी पुलस्त्यजीने मेरी यहकथा सब मुनियोंसे वर्णनकी कि ज्योतिरनाम नगरमें ज्योतिष्प्रभनाम एक बड़ा प्रतापी चक्रवर्त्ती राजाथा उसके बड़ेतपसे प्रसन्नहुए श्री शिवजीकी कृपासे हर्षवती रानीमें एकपुत्र उत्पन्नहुआ रानीने गर्भके दिनों स्वप्नमें चन्द्रमाको अपने मुख में प्रविष्टहोतेहुए देखाथा इसी से राजाने अपने पुत्रकानाम सोमप्रभ रक्खा वहसोमप्रभ अपनी प्रजाके नेत्रोंको अत्यन्त आनन्द देताहुआ क्रमसे सम्पूर्ण विद्या तथा कलाओं को सीखताहुआ युवा

शानाम राजा है उससे हेमप्रभानाम रानी में पार्वतीजी की कृपा से उत्पन्न हुई शक्तियशा नाम मैं कन्याहू मेरे पाचमुझसे वडेभाई हैं परन्तु मेरे पिता मुझको अपने प्राणोंसे भी अधिक चाहते हैं उन्हीं की आज्ञा से मैंने व्रतों से और स्तोत्रों से श्री पार्व्वतीजी को प्रसन्न किया इससे प्रसन्न हुई भगवती श्रीपार्व्वतीजी ने सम्पूर्ण विद्या देकर मुझसे कहा कि हे पुत्री तुझे अपने पिता से भी दशगुना विद्याओं का वलहोगा और सम्पूर्ण विद्याधरों का भावी चक्रवर्त्ती नरवाहनदत्त तेरा पति होगा यह कहकर श्री पार्वतीजी अन्तर्द्धान होगई और उनकी कृपासे सम्पूर्ण विद्याओं को पाकर मैं क्रम से युवती हुई आज रात्रिके समय भगवतीने स्वप्नमें दर्शन देकर मुझसे कहा कि हे पुत्री प्रात काल तुम जाकर अपने पतिको देखना और उसे देखकर यहीं लौटआना एक महीने के उपरान्त तुम्हारे पिता तुम्हारा विवाह उसी के साथ करदेंगे यह कहकर भगवती अन्तर्द्धान होगई और रात्रिके व्यतीत होजाने से मेरी निद्राभी खुलगई हे आर्यपुत्र भगवतीकी उसी आज्ञासे तुम्हारे दर्शनको मैं यहा आज आईहू और अभीजातीहू यह कहकर वह अपनी सखियों समेत आकाशमार्गसे अपने पुरको चलीगई और नरवाहनदत्त उसके विवाहके लिये उत्कण्ठित होकर एकमहीने को युगके समान देखताहुआ खिन्न होकर मन्त्रियों समेत अपने मन्दिरमे गया २० वहा उसेखिन्न देखकर गोमुखने कहा कि हेयुवराज आपके चित्तके वहलाने के लिये मैं एक कथा कहताहू पूर्वसमयमें काचनपुरी नाम नगरीमें सम्पूर्ण शत्रुओंका जीतनेवाला वडा प्रतापी सुमनानाम राजा था एक समय सभा मे बैठेहुए राजा सुमना से प्रतीहारने यह विज्ञापन किया कि हे स्वामी निषादाधिपकी मुक्तालतानाम कन्यापिंजरे में एक तोतेको लेकर अपने भाई वीरप्रभ के साथ आकर द्वारपर खडी है और आपके पादारविन्दो का दर्शन किया चाहती है यह सुनकर राजाने कहा कि आने दो तब प्रतीहारसे आज्ञा पाकर वह मुक्तालता सभा में आई उसके अद्भुत रूपको देखकर सम्पूर्ण सभासदोंने अपने चित्तमें कहा कि यह मानुषी नहीं है कोई दिव्य स्त्री है उसने राजाको प्रणाम करके कहा कि हे राजा यह शास्त्रगंज नाम तोता चारोंवेदों का जानने वाला और सम्पूर्ण कला तथा विद्याओं में परम प्रवीणहै मैं इसे आपके योग्य जानकर यहा लाई हू आप इसे ग्रहण कीजिये यहकहकर उसने वह तोता प्रतीहारको देदिया प्रतीहार उसे राजाके पास लेगया वहा उस तोतेने यह श्लोक पढा कि (राजन्युक्तमिदसदैनयदयदेवस्यसधुक्ष्यते धूमश्यामसुखो द्विपादिरहिणीनिश्वासवातोद्गमे । एतत्त्वद्भुतमेवयत्परिभवाद्बाष्पाम्बुपूरप्लवैरासाप्रज्वलतीहदिक्षुदशसु प्राज्य प्रतापानल) हे राजा यह तो योग्यहीहै जो दशोंदिशाओं में आपका प्रतापानल शत्रुओं की विरहणी स्त्रियों के श्वासरूपी वायुसे धोंका जाकर प्रचण्ड होताहै परन्तु यह अद्भुत बातहै कि जो शत्रुओंकी स्त्रियों के अश्रुओं के प्रवाहों से व्याप्त भी आपका प्रतापानल जाज्वल्यमान होताहै यह श्लोक पढकर और इसकी व्याख्याकरके फिर तोते ने कहा कि किसशास्त्र से कौनसा प्रमेयकहू सो आप आज्ञा कीजिये यह सुनकर राजाने अत्यन्त विस्मित होनेपर उसके मन्त्री ने कहा कि यह पूर्व्वजन्म का कोई ऋषि शाप से तोता होगयाहै पुण्य के प्रतापसे इसे अपने पूर्व्वजन्म के सब शास्त्र स्मरणहैं

महाभागे तुम कौनहो उसने कहा हे सखी यहांसे थोडीदूरपर तपोवनमें दीधितनाम मुनि रहते हैं एक समय इसीतडागमें स्नानकरनेको आयेहुए ब्रह्मचारी दीधितमुनिको उसीसमय आईहुई लक्ष्मीजीने देखकर अपने मनमें संभोग करनेकी इच्छाकरी इसीसे उनको मानसपुत्र प्राप्तहुआ वहबालक लक्ष्मीजी उनदीधितमुनिको देकर और यहकहकर कि आपहीके दर्शनसे यहउत्पन्नहुआहै अन्तर्द्धानहोगईं मुनिने भी अनायास मिलेहुए उसपुत्रको लेकर उसका नाम रश्मिमान रखकर क्रमसे पालनपूर्वक यज्ञोपवीतादि कर्मकरके उसे सम्पूर्ण विद्या सिखलाई वहीरश्मिमान यह मुनिका पुत्रहै मेरे साथ यहां विहारकरनेको आया है यहकहकर उसने मेरी सखी से मेरानाम तथा वंश पूछा और मेरी सखी ने सब बतादिया १०० तब परस्पर वृत्तान्त जानकर अत्यन्त अनुरागयुक्तहुए उस मुनिपुत्रके पास बैठीहुई मेरे घरसे एकदूसरी सखी ने आकर मुझसे कहा कि हे सखी जल्दी चलो तुम्हारे पिता भोजन के निमित्त तुम्हारी प्रतीक्षाकर रहे हैं यहसुनकर उसमुनिके पुत्रसे शीघ्र आऊंगी यहकहकर और उसे वहीं छोडकर मैं भयभीतहोकर अपने पिताके पास चलीगई वहां कुछ भोजन करके जैसेंही मैं बाहर निकली वैसेंही मेरी पहली सखी ने मुझसे कहा कि हे सखी उस मुनिपुत्रका मित्र आया हुआ द्वारपर खडा है उसने मुझसे कहाहै कि मुझे रश्मिमानने अपने पिताकी बताई हुई आकाशगामिनी विद्या देकर मनोरथप्रभाके पास यहकहनेको भेजाहै कि प्राणेश्वरीके विना कामदेवने मेरी ऐसी दारुणदशाकीहै कि उसके विना अब मैं क्षणभरभी नहीं जीसक्ताहूं यहसुनकर मैं अपनी सखीको लेकर उसके साथ यहां आई परन्तु यहां मेरे आनेसे पहलेही मुनिपुत्र मेरे वियोगसे चन्द्रोदय होतेही इस संसार को त्यागकर परलोकको चलागयाथा उसे मृतकदेखकर मैंने उसका शरीरलेकर अपनेको भस्म करनाचाहा उस समय कोई अत्यन्त तेजस्वीपुरुष आकाशसे उतरके वहशरीर लेकर चलागया उसके शरीरसे भी रहितहोकर मैं अकेलीही अग्निमें भस्महोनेको उद्यतहुई तब यह आकाशवाणीहुई कि हे मनोरथप्रभे ऐसा साहस मतकरो कुछ कालके पीछे इस मुनिपुत्रके साथ तुम्हारा फिर संगमहोगा इस आकाशवाणीको सुनकर मैं मृत्युसे निवृत्तहोकर उसीकी प्रतीक्षा करतीहुई श्रीशिवजी के पूजनमें तत्परहोकर यहीं रहतीहूं और मुनिपुत्रका वह मित्र भी न मालूम कहांचलागया उसके वृत्तान्तको सुनकर सोमप्रभने उससेपूछा कि तुम्हें अकेली छोडकर तुम्हारी वह सखी कहां चलीगई यह सुनकर उसने कहा कि विद्याधरों के स्वामी राजा सिंहविक्रमके मकरन्दिका नाम बड़ीसुन्दर रूपवतीकन्याहै वह प्राणों से भी अधिक मेरीप्रियसखी है और मेरे ही दुःखसेदुखित होकर उसने अबतक अपना विवाह किसी से नहीं कियाहै उसने अपनी सखी मेरे पास कुशल पूछनेको भेजीथी इससे मैंने भी उसीकी सखी के साथ उसे देखनेको अपनी सखी भेजी है इसीसे मैं आज यहां अकेलीहूं इसप्रकार कहतीहुई उस मनोरथप्रभाने उसीसमय आकाश से उतरीहुई अपनी सखी सोमप्रभको दिखाई और उससे मकरन्दिकाका सम्पूर्ण वृत्तान्त पूछकर सोमप्रभ के लिये कोमल २ पत्तोंसे शय्या बिछवाई और उसके घोड़ेको घास दिलवाई तब उन सबलोगों ने यहीं देवमन्दिरमें शयनकर रात्रिव्यतीतकरके प्रातःकाले आयेहुए एक विद्याधरको देखा उस देवजयनाम

वस्थाको प्राप्तहुआ ज्योतिष्प्रभने उसे युवाशूर तथा प्रजाओंका प्यारा देखकर उसे युवराजपदवी देदीनी और अपने प्रभाकरनाम मन्त्री के पुत्र प्रियङ्करको उसका मन्त्रीवना दिया उसीसमय एकघोडा लेकर आकाशसे उतरेहुए मातलिने निकटआकर सोमप्रभसे कहा कि तुम पूर्व्वजन्ममे इन्द्रके मित्र विद्याधर थे उसी स्नेहसे इन्द्रने उच्चैश्श्रवाका पुत्र यह अश्वश्रवानाम घोडा तुम्हारे निमित्त भेजाहै इसपर चढे हुए तुमको कोई शत्रु जीत न सकेगे यहकहकर और घोडादेकर मातलि के चलेजानेपर बडे उत्सवसे वह दिन व्यतीतकरके दूसरे दिन सोमप्रभने अपने पितासे कहा कि हे तात क्षत्रियोंका यह धर्म नहीं है कि विजयकी इच्छासे रहितहोकर स्वस्थहोकर घरहीमें बैठे रहे इससे मुझे आज्ञादीजिये कि मैं दिग्विजयकरनेको जाऊ यहसुनकर ज्योतिष्प्रभने प्रसन्नहोकर दिग्विजयकी सम्पूर्ण तैयारी करके अच्छादिन देखके उसे दिग्विजयके निमित्त भेजा पिताकी आज्ञासे गयेहुए सोमप्रभने उसदिव्य घोड़े के प्रभाव से चारोंदिशाओंके सम्पूर्ण राजा लोगोको जीतलिया और उनसे वहुतसे रत्नपाये फिर दिग्विजय करके लौटते समय वह हिमालयके निकट सेना समेत टिककर उसी दिव्य घोडेपर चढकर किसीवनमें शिकार खेलने को गया वहा भाग्यवशसे एक रत्नजटित किन्नरको देखकर उसे पकडने के लिये उसने अपना घोडा दौडाया वह किन्नर तो पर्व्वतकी कन्दरामें छिपगया परन्तु सोमप्रभको वहघोडा बहुतदूर वनमें लेगया इतनेमे सूर्य्य भगवान्भी अस्ताचलको प्राप्तहुए तव थककर लौटनेकी इच्छा करतेहुए सोमप्रभने एकवडाभारी तडाग देखकर उसीके तटपर रात्रिको व्यतीत करनेका विचार करके घोडेपरसे उतरकर घोडेको दाना चारा और जलसे सन्तुष्ट करके आपभी मधुरफल समेत उसतडागका जल पीकर तडाग के तटपरही कोमल२पत्ते विछाकर विश्रामकिया उससमय अकस्मात् मधुरगीतोंकी ध्वनि उसे सुनाईदी उसशब्दको सुनकर उठके उसी शब्दके अनुसार उसने कुछ दूरजाकर एकमंदिरमें शिवजी के लिंगके आगे गानकरतीहुई एकदिव्य कन्यादेखी और आश्चर्य्यपूर्व्वक अपने चित्तमे कहा कि यहअद्भुत स्वरूपवाली कौन यहा बैठी है उसकन्यानेभी इसकी उदार चेष्टाको देखकर अतिथि सत्कारकरके इससे पूछा कि तुमकौनहो और किसप्रकारसे तथा किस प्रयोजनसे इसदुर्गम पृथ्वीमें आयेहो यहसुनकर सोमप्रभने अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त कहकर उससे पूछा कि अव तुमभी वताओ कि तुम कौनहो और इसवनमें अकेली क्यों रहतीहो यहसुनकर उसकन्याने अश्रुओंकी धारा वहाकर कहा कि हे महाभाग जोआपकी इच्छाहै तो मेरा सव वृत्तान्त सुनिये कि हिमालय पर्व्वतपर काचनाभनाम नगरमें विद्याधरोंका पद्मकूट नाम राजाहै उसपद्मकूटसे हेमप्रभानाम रानीमें उत्पन्नहुई पुत्रों से भी अधिक उसेप्यारी मनोरथप्रभानाम में कन्याहू विद्याओंके प्रभावसे में अपनी सखियोंके साथ आश्रमों में द्वीपों में पर्व्वतों में वनों में तथा उपवनों में क्रीडाकरके भोजनके समय अपने पिताकेपास आजातीथी एकसमय में इसतडागके तटपर विहार करनेको आई उससमय एकमुनिका पुत्र अपने मित्र सहित मुझे यहां दिखाई दिया उसके रूप की शोभाको देखकर उसी के वशीभूतहोकर मे उसके पासगई और उसने भी मुझे प्रेम सहित दृष्टि से देखा तव मेरी सखी ने मेरे तथा उसके दोनों के अभिप्रायको जानकर मुनिपुत्र के मित्रसे पूछा कि हे

महाभागे तुम कौनहो उसने कहा हे सखी यहांसे थोडीदूरपर तपोवनमें दीधितनाम मुनि रहते हैं एक समय इसीतडागमें स्नानकरनेको आयेहुए ब्रह्मचारी दीधितमुनिको उसीसमय आईहुई लक्ष्मीजीने देखकर अपने मनमें सभोग करनेकी इच्छाकरी इसीसे उनको मानसपुत्र प्राप्तहुआ वहबालक लक्ष्मी जी उनदीधितमुनिको देकर और यहकहकर कि आपहीके दर्शनसे यहउत्पन्नहुआहै अन्तर्द्धानहोगई मुनिने भी अनायास मिलेहुए उसपुत्रको लेकर उसका नाम रस्मिमान रखकर क्रमसे पालनपूर्वक यज्ञोपवीतादि कर्मकरके उसे सम्पूर्ण विद्या सिखलाई वहीरस्मिमान यह मुनिका पुत्रहै मेरे साथ यहा विहारकरनेको आया है यहकहकर उसने मेरी सखी से मेरानाम तथा वंश पूछा और मेरी सखी ने सब बतादिया १०० तब परस्पर वृत्तान्त जानकर अत्यन्त अनुरागयुक्तहुए उस मुनिपुत्रके पास बैठीहुई मेरे घरसे एकदूसरी सखी ने आकर मुझसे कहा कि हे सखी जल्दी चलो तुम्हारे पिता भोजन के निमित्त तुम्हारी प्रतीक्षाकर रहे हैं यहसुनकर उसमुनिके पुत्रसे शीघ्र आऊंगी यहकहकर और उसे वहीं छोडकर मैं भयभीतहोकर अपने पिताके पास चलीगई वहा कुछ भोजन करके जैसेही मैं बाहर निकली वैसेही मेरी पहली सखी ने मुझसे कहा कि हे सखी उस मुनिपुत्रका मित्र आया हुआ द्वारपर खडा है उसने मुझसे कहाहै कि मुझे रस्मिमानने अपने पिताकी बताई हुई आकाशगामिनी विद्या देकर मनोरथ-प्रभाके पास यहकहनेको भेजाहै कि प्राणेश्वरीके विना कामदेवने मेरी ऐसी दारुणदशाकीहै कि उसके विना अब मैं क्षणभरभी नहीं जीसक्ताहू यहसुनकर मैं अपनी सखीको लेकर उसके साथ यहा आई परन्तु यहा मेरे आनेसे पहलेही मुनिपुत्र मेरे वियोगसे चन्द्रोदय होतेहीं इस ससार को त्यागकर पर-लोकको चलागयाथा उसे मृतकदेखकर मैंने उसका शरीरलेकर अपनेको भस्म करनाचाहा उस समय कोई अत्यन्त तेजस्वीपुरुष आकाशसे उतरके वहशरीर लेकर चलागया उसके शरीरसे भी रहितहोकर मैं अकेलीही अग्निमें भस्महोनेको उद्यतहुई तब यह आकाशवाणीहुई कि हे मनोरथप्रभे ऐसा साहस मतकरो कुछ कालके पीछे इस मुनिपुत्रके साथ तुम्हारा फिर सगमहोगा इस आकाशवाणीको सुनकर मैं मृत्युसे निवृत्तहोकर उसीकी प्रतीक्षा करतीहुई श्री शिवजी के पूजनमें तत्परहोकर यहीं रहतीहू और मुनिपुत्रका वह मित्र भी न मालूम कहाचलागया उसके वृत्तान्तको सुनकर सोमप्रभने उससेपूछा कि तुम्हें अकेली छोडकर तुम्हारी वह सखी कहा चलीगई यह सुनकर उसने कहा कि विद्याधरों के स्वामी राजा सिंहविक्रमके मकरन्दिका नाम बडीसुन्दर रूपवतीकन्याहै वह प्राणों से भी अधिक मेरीप्रियसखी है और मेरे ही दुःखसेदुखित होकर उसने अबतक अपना विवाह किसी से नहीं कियाहै उसने अपनी सखी मेरे पास कुशल पूछनेको भेजीथी इससे मैंने भी उसीकी सखी के साथ उसे देखनेको अपनी सखी भेजी है इसीसे मैं आज यहा अकेलीहू इसप्रकार कहतीहुई उस मनोरथप्रभाने उसीसमय आकाश से उतरीहुई अपनी सखी सोमप्रभको दिखाई और उससे मकरन्दिकाका सम्पूर्ण वृत्तान्त पूछकर सोमप्रभ के लिये कोमल २ पत्तों से शय्या बिछवाई और उसके घोडेको घास दिलवाई तब उन सबलोगों ने वहीं देवमन्दिरमें शयनकर रात्रिव्यतीतकरके प्रातःकाल आयेहुए एक विद्याधरको देखा उस देवजयनाम

विद्याधरने प्रणामकरके मनोरथप्रभासे कहा कि हे राजपुत्री राजासिंहविक्रमने तुमसे कहा है कि जब तक तुम्हारा विवाह न होगा तबतक तुम्हारी प्रियसखी मकरन्दिका भी अपना विवाह नहीं करना चाहती है इससे तुम यहा आकर इसे समझाओ कि यह अपना विवाहकरलेवे यह सुनकर जानेको उद्यत हुई मनोरथप्रभासे सोमप्रभने कहा कि हे सखी मैं भी विद्याधरोंका लोक देखना चाहताहूं इससे मुझे भी वहा लेचलो घोडे के आगे मैं घास डालेदेताहूं यह यहांही बँधारहैगा यह सुनकर मनोरथप्रभा देवजयकी गोदी में उसे बैठालकर अपने साथ लेकर विद्याधरलोकमें गई और वहा मकरन्दिकाने मनोरथप्रभाका अतिथि सत्कारकरके सोमप्रभको देखकर मनोरथप्रभा से पूछा कि हे सखी यह कौनहै यह सुनकर उसने सोमप्रभका सब वृत्तान्त कहदिया उसके वृत्तान्तको सुनकर मकरन्दिकाका चित्त उसपर आसक्तहोगया और सोमप्रभने भी रूपवती लक्ष्मी के समान उसे देखकर अपने चित्तमेंकहा कि किस पुण्यात्माके साथ इसका पाणिग्रहणहोगा इसके उपरान्त एकान्तमें मनोरथप्रभा ने मकरन्दिकासे कहा कि हे सखी तुम विवाह क्यों नहीं करतीहो यह सुनकर उसनेकहा कि जो अभी तुमने वरका स्वीकार नहीं किया तो मैं कैसेकरू तुम मुझे प्राणों से भी अधिकप्यारीहो मकरन्दिकाके यह प्रेमयुक्त वचनसुनके मनोरथप्रभाबोली कि हे मुग्धे मैंने तो वरका स्वीकार करलियाहै अब उसकी प्रतीक्षा कररही हूं इससे तुमको विवाह करलेना चाहिये यह सुनकर मकरन्दिका ने कहा कि जैसा तुमकहोगी वैसाही करूगी तब मनोरथप्रभाने उसके अभिप्रायको जानकर कहा कि हे सखी पृथ्वी में भ्रमणकरके यहराजपुत्र सोमप्रभ तुम्हारे यहा अतिथि प्राप्तहुआहै इसका तुम सत्कारकरो यह सुनतेही उसनेकहा कि मैंने शरीर पर्य्यन्त अपनी सम्पूर्ण वस्तु इसके अर्पण करदीनी है यह जो चाहै सो लेले उसके यहवचनसुनकर मनोरथप्रभाने राजा सिंहविक्रमसे कहकर सोमप्रभके साथ उसके विवाहका निश्चय किया तब सोमप्रभभी इस वृत्तान्तको जानके अतिप्रसन्नहोकर मनोरथप्रभासे बोला कि अब मैं तुम्हारे आश्रमको जाताहू क्योंकि ऐसा न होय कि मेरा मन्त्री सेनासमेत वहा आकर केवल घोडेहीको देखकर मेरे लिये कुछ अहितशोचके पराङ्मुखहोकर लौटजाय इससे मैं वहा जाकर अपनी सेनाके वृत्तान्तको जानकर लौटके शुभलग्नमें मकरन्दिका के साथ अपना विवाहकरूगा उसके यह वचन सुनकर मनोरथप्रभा देवजय विद्याधरकी गोदी में चढाके अपने आश्रममें उसे लेआई इतनेही में उसका मन्त्री प्रियकर भी उसकी सम्पूर्ण सेनालियेहुए वहींआया उससे मिलकर सोमप्रभ जैसेही अपना वृत्तान्त उससे कहनेलगा वैसेही उसके पिताका एक दूतआकर कहनेलगा कि चलिये आपको बहुत शीघ्र महाराज ज्योतिष्प्रभने बुलायाहै पिताके सदेशेको सुनकर सोमप्रभ मनोरथप्रभासे तथा देवजयसे यह कहकर कि मैं पिताके दर्शनकरके शीघ्रही लौटआऊगा अपनी सेना लेकर अपने नगरको गया तदनन्तर लौटकर गये हुए देवजयके द्वारा इसवृत्तान्तको सुनकर मकरन्दिका विरह से व्याकुलहोकर उपवन में सखियों के साथ क्रीड़ा में गानमें तथा तोते आदि पक्षियों के मनोहर शब्दों में भी अपने चित्त को न बहला सकी उस दिन से उसने भोजन भी नहीं किया फिर शृगार आदिकों की क्या गिनती है वह

कमल के पत्तोंकी शय्याको छोडकर उन्मत्त के समान इधर उधर घूमनेलगी उसकी यहदशा देखकर माता पिताने उसे बहुत समझाया पर समझाने से भी जब उसने धैर्य्य नहीं धारण किया तो उन्होंने क्रोध करके उसे यह शापदिया कि तू कुछ कालतक इसी शरीर से अपनी जातिको भूलकर निषादों के यहा रहेगी माता पिता के इस शाप से मकरन्दिका निषादके यहा जाकर निषादकी कन्या होगई और उसके मातापिता भी शोकसे मरगये उसका पिता मरकर पहले तो सकलशास्त्रोंका ज्ञाता ऋषि हुआ और फिर किसी पूर्वजपापसे तोताहोगया और उसकी स्त्री वनकी शूकरी होगई यह वही तोता है पूर्व जन्मके तपोनलसे इसे अपनी सपूर्ण पढीहुई विद्या यादहै इसकी विचित्र कर्मगति को देखकर मुझे हँसी आगईथी यह इसकथाको राजसभामें कहकर अपने पापोंसे छूटजायगा और सोमप्रभ इस की कन्याको अवश्य पवेगा और मनोरथप्रभा इस समय राजाहुए रस्मिमान नाम मुनिपुत्रको मुनि रूपमें पावेगी इससमय सोमप्रभभी अपने पिताके दर्शन करके लौटकर उसी आश्रममे अपनी मकर-न्दिका प्रियाकी प्राप्तिके लिये श्रीशिवजी की आराधना कररहाहै इस कथाको कहकर पुलस्त्य मुनिके निवृत्तहोजानेपर मैं अपने पूर्वजन्मका स्मरण करके हर्ष तथा शोकसे व्याप्तहोगया तदनन्तर जो मरीचिमुनि मुझको आश्रममें लेगयेथे वही मेरापालन करतेरहे कुछकालमें जब मेरे पख निकलआये तो मै चपलताके कारण वहासे उडकर इधर उधर भ्रमण करके अपनी विद्याओका आश्चर्य्य दिखाताहुआ निषादोंके हाथ पडगया और क्रमसे आपके यहा प्राप्तहुआ इससमय मेरा सपूर्णपाप क्षीणहोगया इस कथाको कहकर उस विद्वान् तोतेके चुपहोजानेपर राजा सुमना अत्यन्त आनन्दित हुआ इस बीचमें श्रीशिवजीने प्रसन्नहोकर सोमप्रभको यह आज्ञादी कि हे पुत्र उठो राजा सुमनाके निकटजाओ वहाम-करन्दिका तुमको मिलजायगी वह मकरन्दिका अपने पिताके शापसे मुक्तालतानाम निषादकन्याहो-कर तोतेके रूपमें उत्पन्नहुए अपने पिताको लेके राजा सुमनाके निकटगई है तुम्हें देखकर वह अपनी जातिका स्मरण करके अपने शापसे छूटजायगी तब परस्पर पहचानकर तुम दोनों का अत्यन्त आ-नन्ददायी समागमहोगा इसप्रकार सोमप्रभसे कहकर भगवान् भक्तवत्सल श्रीशिवजी ने मनोरथप्रभा से कहा कि तुम्हारा प्रियरस्मिमाननामे मुनिपुत्र सुमनानाम राजाहुआहै इससे तुम उसकेपासजाओ वह तुमको देखकर अपने पूर्वजन्मका स्मरणकरके अपने शरीरको पावेगा इस प्रकार स्वप्न में श्रीशिव जीसे आज्ञापाकर सोमप्रभ तथा मनोरथप्रभा दोनों राजासुमनाकी सभामें आये वहा सोमप्रभको देख कर मकरन्दिका अपनी जाति का स्मरण करके शीघ्रही विद्याधरी होकर उसकेगले मे लिपटगई और सोमप्रभभी श्रीशिवजी की कृपा से प्राप्त हुई मूर्त्तिमती दिव्यभोगों की लक्ष्मी के समान मकरन्दिका का आलिंगन करके कृतकृत्य हुआ और राजा सुमना भी मनोरथप्रभा को देखकर अपने पूर्वजन्म का स्मरण करके आकाश से गिरेहुए अपने पूर्व शरीर मे प्रवेश करके मुनि पुत्र रस्मिमान होकर अपनी प्रिया मनोरथप्रभाको साथलेकर अपने आश्रमकोगया और सोमप्रभ भी अपनी प्रिया मक-रन्दिकाको लेकर अपने पुरकोगया और वह तोता भी तोतेके शरीरकोत्यागकर तप के प्रभाव से प्राप्त

विद्याधरने प्रणामकरके मनोरथप्रभासे कहा कि हे राजपुत्री राजासिंहविक्रमने तुमसे कहा है कि जब तक तुम्हारा विवाह न होगा तबतक तुम्हारी प्रियसखी मकरन्दिका भी अपना विवाह नहीं करना चाहती है इससे तुम यहा आकर इसे समझाओ कि यह अपना विवाहकरलेवे यह सुनकर जानेको उद्यत हुई मनोरथप्रभासे सोमप्रभने कहा कि हे सखी मैं भी विद्याधरोंका लोक देखना चाहताहूं इससे मुझे भी वहा लेचलो घोडेके आगे मैं घास डालेदेताहूं यह यहाही बँधारहैगा यह सुनकर मनोरथप्रभा देवजयकी गोदी में उसे बैठालकर अपने साथ लेकर विद्याधरलोकमें गई और वहा मकरन्दिकाने मनोरथप्रभाका अतिथि सत्कारकरके सोमप्रभको देखकर मनोरथप्रभा से पूछा कि हे सखी यह कौनहै यह सुनकर उसने सोमप्रभका सब वृत्तान्त कहदिया उसके वृत्तान्तको सुनकर मकरन्दिकाका चित्त उसपर आसक्तहोगया और सोमप्रभने भी रूपवती लक्ष्मी के समान उसे देखकर अपने चित्तमेंकहा कि किस पुण्यात्माके साथ इसका पाणिग्रहणहोगा इसके उपरान्त एकान्तमें मनोरथप्रभा ने मकरन्दिकासे कहा कि हे सखी तुम विवाह क्यों नहीं करतीहो यह सुनकर उसनेकहा कि जो अभी तुमने वरका स्वीकार नहीं किया तो मैं कैसेकरू तुम मुझे प्राणों से भी अधिकप्यारीहो मकरन्दिकाके यह प्रेमयुक्त वचनसुनके मनोरथप्रभाबोली कि हे मुग्धे मैंने तो वरका स्वीकार करलियाहै अब उसकी प्रतीक्षा कररही हूँ इससे तुमको विवाह करलेना चाहिये यह सुनकर मकरन्दिका ने कहा कि जैसा तुमकहोगी वैसाही करूगी तब मनोरथप्रभाने उसके अभिप्रायको जानकर कहा कि हे सखी पृथ्वी में भ्रमणकरके यहराजपुत्र सोमप्रभ तुम्हारे यहा अतिथि प्राप्तहुआहै इसका तुम सत्कारकरो यह सुनतेही उसनेकहा कि मैंने शरीर पर्य्यन्त अपनी सम्पूर्ण वस्तु इसके अर्पण करदीनी है यह जो चाहे सो लेले उसके यहवचनसुनकर मनोरथप्रभाने राजा सिंहविक्रमसे कहकर सोमप्रभके साथ उसके विवाहका निश्चय किया तब सोमप्रभभी इस वृत्तान्तको जानके अतिप्रसन्नहोकर मनोरथप्रभासे बोला कि अब मैं तुम्हारे आश्रमको जाताहू क्योंकि ऐसा न होय कि मेरा मंत्री सेनासमेत वहा आकर केवल घोडेहीको देखकर मेरे लिये कुछ अहितशोचके पराङ्मुखहोकर लौटजाय इससे मैं वहा जाकर अपनी सेनाके वृत्तान्तको जानकर लौटके शुभलग्नमें मकरन्दिका के साथ अपना विवाहकरूगा उसके यह वचन सुनकर मनोरथप्रभा देवजय विद्याधरकी गोदी में चढ़ाके अपने आश्रममें उसे लेआई इतनेही में उसका मंत्री प्रियंकर भी उसकी सम्पूर्ण सेनालियेहुए वहींआया उससे मिलकर सोमप्रभ जैसेही अपना वृत्तान्त उससे कहनेलगा वैसेही उसके पिताका एक दूतआकर कहनेलगा कि चलिये आपको बहुत शीघ्र महाराज ज्योतिष्प्रभने बुलायाहै पिताके संदेशेको सुनकर सोमप्रभ मनोरथप्रभासे तथा देवजयसे यह कहकर कि मैं पिताके दर्शनकरके शीघ्रही लौटआऊगा अपनी सेना लेकर अपने नगरको गया तदनन्तर लौटकर गये हुए देवजयके द्वारा इसवृत्तान्तको सुनकर मकरन्दिका विरह से व्याकुलहोकर उपवन में सखियों के साथ क्रीड़ा में गानमें तथा तोते आदि पक्षियों के मनोहर शब्दों में भी अपने चित्त को न बहला सकी उस दिन से उसने भोजन भी नहीं किया फिर शृंगार आदिकों की क्या गिनती है वह

अपने २ घरको चलेगये इतने में कोईबन्दर वहा आकर कीलीकेद्वारा फटेहुए काठपर बैठके चपलतासे निष्प्रयोजन उसकीलको उखाडनेलगा एकाएकी कीलके उखडने से उसबन्दरके अंडकोश उसकाठ में दवगये और उसी पीडासे उसकेप्राण निकलगये इसप्रकार जिसका जो काम नहीं है वह करने से उसका नाशहोताहै इससे सिंहके अभिप्रायके जानने से हमको क्या प्रयोजनहै करटकके यहवचन सु-नकर धीरदमनकने कहा कि स्वामीके अभिप्रायको जानकर बुद्धिमान् लोगोंको विशेष लाभहोता है और केवल उदर तो सबही पूर्णकरलेते हैं यह सुनकर करटकने कहा कि स्वेच्छासे बहुत घुसपैठ करना सेवक का धर्म नहीं है यह सुनकर दमनकने कहा कि ऐसा मतकहो अपने २ अनुरूप फल सब लोग चाहते हैं देखो कुत्ता केवल हड्डीही पाकर प्रसन्न होजाताहै परन्तु सिंह हाथीही को मारना चाहता है यह सुनकर करटकने कहा कि जो ऐसा करने से स्वामी कुपितहोय तो विशेष फल कैसे मिले क्योंकि अत्यन्त कठोर राजा लोग पर्व्वतो के समान दुर्गम होते हैं यह सुनकर दमनकनेकहा कि यह ठीकहै परन्तु बुद्धिमान् मनुष्य स्वामी के स्वभाव को जानकर उसीके अनुसार कार्य्यकरके उसे अपने वशी-भूत करलेते हैं तब करटकनेकहा कि अच्छा जैसा उचित समझो सो करो यह सुनकर दमनक सिंहके पास जाकर प्रणामकरके क्षणभर बैठके बोला कि हे स्वामी मैं आपका बहुत प्राचीन तथा हितकारी से-वकहूं (हितःपरोपिस्वीकार्य्योंहियस्स्वोप्यहितःपुन क्रीत्वान्यतोपिमूल्येन मार्जार प्रोष्यतेहित अहितो हन्यतेयत्नाद्गृहजातोपिमूषक श्रोतव्यचहितैपिभ्यो भृत्येभ्योभूतिमिच्छता अपृष्टैरपिकर्त्तव्य तैश्चकाले हितप्रभो) हितकारी अन्यको भी स्वीकार करलेना चाहिये और अहितकारी अपनेको भी त्यागदेना चाहिये देखो बिल्ली हितकारी होती है इससे मोललेकर पाली जाती है और गृहमें उत्पन्नहुआ भी अ-हितकारी मूषा यत्नसे माराजाताहै कल्याण चाहनेवाले स्वामीको हिताभिलाषी सेवकों के वचन सदैव सुनने चाहिये और सेवकों को चाहिये कि समयपर स्वामीके विनापूछेभी उसकाहित करें इससे हे स्वामी जो मेरेऊपर आप विश्वास करते हो और कुछ छिपाना नहीं चाहतेहो और क्रोध न करो तो मैं आपसे कुछपूछूं दमनकके यहवचन सुनकर उस पिंगलक सिंहने कहा कि तुम मेरे विश्वासपात्र और परमभक्त हो इससे निस्सन्देह होकर जो चाहो सो कहो पिंगलककी यहआज्ञापाकर दमनकनेकहा कि हे स्वामी आप प्यासेहोकर जल पीनेकोगये थे सो क्या कारणहुआ कि आप विना जलपियेही उदासीनहोकर लौटआये उसके यहवचन सुनकर सिंहने यह शोचा कि यह मेरे अभिप्राय को जानगया इससे अब कुछ छुपाना न चाहिये यह शोचकर उसने दमनकसेकहा सुनो मैं तुमसे कुछ छुपाना नहीं चाहताहूं मैं जब जलपीनेको गयाथा तो मार्गमें मुझे एक अपूर्व शब्द सुनाईदिया उस शब्दसे मुझे मालूम होताहै कि जिस प्राणी का यह शब्दहै वह मुझसे भी अधिक बलवान्है ब्रह्माकी सृष्टिमें एक से एक अधिक बलवान् हैं जो वह प्राणी यहा आजायगा तो मुझे यहा से निकालदेगा अथवा मारडालेगा इससे मैं इस वनको छोडकर दूसरे वनको चलाजाऊंगा सिंहके यह वचन सुनकर दमनक ने कहा कि आप इतने बडे गम्-भीरहोकर वनको क्या त्यागकरना चाहतेहो जलसे सेतु पिशुनसे स्नेह गुप्त न रखनेसे मन्त्र और शब्द

हुए उच्चस्थानकोगया इसप्रकार से इस ससार में बहुत काल के उपरान्त भी प्राणियोंकाभावी समागम अवश्यहोताहै गोमुख से इस अद्भुत विचित्र रुचिरकथा को सुनकर शक्तियशा के लिये उत्कण्ठित श्री नरवाहनदत्त बहुतप्रसन्नहुआ १७६ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषाया शक्तियशोलम्बके तृतीयस्तरङ्ग ३॥

इसके उपरान्त गोमुखने फिर कहा कि हे स्वामी बुद्धिमान् सामान्यलोग भी दोनों लोकोंके हितके लिये कामादि के वेगको सहते हैं इसबातपर मैं आप को एक कथा सुनाताहू राजा कुलधरका सेवक शूरवर्मा नाम एक कुलीनपुरुष बहुत प्रसिद्ध पराक्रमीथा एकसमय शूरवर्मा ने कुछदिन किसी कार्य्य के लिये एक ग्राम में रहकर लौटकर अपने घर मे आकर अपनी स्त्री को अपने किसी मित्रकेसाथ एकान्त में रमणकरतेदेखा यह देखकर उसने अपना क्रोधरोककर शोचा कि इस मित्रद्रोही पशुके मारनेसे अथवा इस दुश्चारिणी पापिनी स्त्री को मारने से अथवा अपनेही मरजाने से क्या प्रयोजन सिद्धहोगा यह शोच कर उसने उन दोनों से कहा कि तुम दोनों में से अब जिस किसी को देखूगा उसे मारडालूगा इससे मेरे साम्हने अब कभी न आना यह कहकर और उन दोनों को निकालकर वह अन्य विवाह करके सुख पूर्व्वकरहा इसप्रकार से हे स्वामी जो कोई अपने क्रोध को जीततेहैं और बुद्धि से कार्य्यकरते हैं उनको कभी भी विपत्तियों से दुखभोगनानहीं पडताहै पशुओंका भी कल्याण बुद्धिसेही होताहै पराक्रमसे नहीं होता इस विषयपर मैं आपको सिंह तथा बैलआदिक पशुओंकी कथा सुनाताहू किसी नगर में एक बडा धनवान् वैश्यरहता था एकसमय व्यवहार के लिये मथुरा को जातेहुए उस वैश्य के भारका लेचलने वाला सजीवक बैल कीच में फिसलकर गिरपडा और उसके पैर टूटगये गिरने से उस बैलको निश्चेष्ट तथा उठने के लिये असमर्थ देखकर वह वैश्य निराशहोकर चलागया उसके चलेजानेपर भाग्यवश से वह सजीवक बैल धीरे २ कुछ सावधानहोकर उठके कोमल २ दूबचरके अच्छाहोगया और यमुनाजीके तटपरजाकर स्वच्छन्दता से हरेहरे तृणो को चरताहुआ बहुत बलवान्होके श्रीशिवजीके नन्दी के समान गर्जना कर २ के इधर उधर फिरनेलगा उन दिनों वहा से कुछदूरपर पिंगलकनामसिंह वनका राजारहता था उसके दमनक और करटकनाम दो मन्त्रीथे एकदिन उस सिंहने यमुनाजी के तटपर जलपीनेको आतेसमय कुछदूरसे सजीवकका गभीरशब्दसुना उस अपूर्व्वशब्द को सुनकर सिंह ने शोचा कि यह किसकाशब्दहै मैं जानताहू कि कोई बडा भयकर प्राणी इस वनमें आयाहै ऐसा न होय कि वह मुझे देख कर मारडाले या वनसे निकालदेवे यह शोचकर वह पानी विनापियेही लौटआया और सेवकों से अपने अभिप्रायको छिपाकर उदासीनहोके बैठा सिंह को उदासीन देखकर दमनकने करटकसे कहा कि आज यह हमारा स्वामी सिंह पानी पीनेकोगया था परन्तु किसीकारण से यहपानी विनापियेही शीघ्रता से लौटआयाहै इससे पूछना चाहिये कि यह क्या बातहै यह सुनकर करटकनेकहा कि इससे हमें क्या कामहै क्या तुमने कीलोत्पाटी वानरका वृत्तान्त नहीं सुनाहै कि किसीनगरमें किसी वैश्यने देवमन्दिर बनवानेकेलिये बहुतसे काष्ठ इकट्ठेकिये बढई लोग उनकाष्ठों को आधा २ चीरकर उनमेंकील ठोककर

अपने २ घरको चलेगये इतने में कोईबन्दर वहा आकर कीलीकेद्वारा फटेहुए काष्ठपर बैठके चपलतासे निष्प्रयोजन उसकीलको उखाडनेलगा एकाएकी कीलके उखडने से उसबन्दरके अण्डकोश उसकाष्ठ में दबगये और उसी पीडासे उसकेप्राण निकलगये इसप्रकार जिसका जो काम नहीं है वह करने से उसका नाशहोताहै इससे सिंहके अभिप्रायके जानने से हमको क्या प्रयोजनहै करटकके यहवचन सु-नकर धीरदमनकने कहा कि स्वामीके अभिप्रायको जानकर बुद्धिमान् लोगोंको विशेष लाभहोता है और केवल उदर तो सबही पूर्णकरलेते हैं यह सुनकर करटकने कहा कि स्वेच्छासे बहुत घुसपैठ करना सेवक का धर्म नहीं है यह सुनकर दमनकने कहा कि ऐसा मतकहो अपने २ अनुरूप फल सब लोग चाहते हैं देखो कुत्ता केवल हड्डीही पाकर प्रसन्न होजाताहै परन्तु सिंह हाथीही को मारना चाहता है यह सुनकर करटकने कहा कि जो ऐसा करने से स्वामी कुपितहोय तो विशेष फल कैसे मिले क्योंकि अत्यन्त कठोर राजा लोग पर्व्वतों के समान दुर्गम होते हैं यह सुनकर दमनकनेकहा कि यह ठीकहै परन्तु बुद्धिमान् मनुष्य स्वामी के स्वभाव को जानकर उसीके अनुसार कार्य्यकरके उसे अपने वशी-भूत करलेते हैं तब करटकनेकहा कि अच्छा जैसा उचित समझो सो करो यह सुनकर दमनक सिंहके पास जाकर प्रणामकरके क्षणभर बैठके बोला कि हे स्वामी मैं आपका बहुत प्राचीन तथा हितकारी से-वकहूं (हितःपरोपिस्वीकार्य्योहेयस्स्वोप्यहितःपुनः क्रीत्वान्यतोपिमूल्येन मार्जारः प्रोष्यतेहितः अहितो हन्यतेयत्नाद्गृहजातोपिमूषकः श्रोतव्यचहितेपिभ्यो भृत्येभ्योभूतिमिच्छता अपृष्टैरपिकर्त्तव्यं तैश्चकाले हितंप्रभो) हितकारी अन्यको भी स्वीकार करलेना चाहिये और अहितकारी अपनेको भी त्यागदेना चाहिये देखो बिल्ली हितकारी होती है इससे मोललेकर पाली जाती है और गृहमें उत्पन्नहुआ भी अ-हितकारी मूषा यत्नसे माराजाताहै कल्याण चाहनेवाले स्वामीको हिताभिलाषी सेवकों के वचन सदैव सुनने चाहिये और सेवकों को चाहिये कि समयपर स्वामीके विनापूछेभी उसकाहित करें इससे हे स्वामी जो मेरेऊपरआप विश्वास करते हो और कुछ छिपाना नहीं चाहतेहो और क्रोध न करो तो मैं आपसे कुछपूछूंदमनकके यहवचन सुनकर उस पिंगलक सिंहने कहा कि तुम मेरे विश्वासपात्र और परमभक्तहो इसमे निस्सन्देहहोकर जो चाहो सो कहो पिंगलककी यहआज्ञापाकर दमनकनेकहा कि हे स्वामी आप प्यासेहोकर जल पीनेकोगये थे सो क्या कारणहुआ कि आप विना जलपियेही उदासीनहोकर लौटआये उसकेयहवचन सुनकर सिंहने यह शोचा कि यह मेरे अभिप्रायको जानगया इससे अब कुछ छुपाना न चाहिये यह शोचकर उसने दमनकसेकहा सुनो मैं तुमसे कुछ छुपाना नहीं चाहताहूं मैं जब जलपीनेको गयाथा तो मार्गमें मुझे एक अपूर्व शब्द सुनाईदिया उस शब्दसे मुझे मालूम होताहै कि जिस प्राणी का यह शब्दहै वह मुझसे भी अधिक बलवान्है ब्रह्माकी सृष्टिमें एक से एक अधिक बलवान् जीवहैं जो वह प्राणी यहां आजायगा तो मुझे यहां से निकालदेगा अथवा मारडालेगा इससे मैं इस वनको छोडकर दूसरे वनको चलाजाऊंगा सिंहके यह वचन सुनकर दमनकने कहा कि आप इतने बडे गम्-भीरहोकर वनको क्यों त्यागकरना चाहतेहो जलसे सेतु पिशुनसे स्नेह गुप्त न रखनेसे मन्त्र और शब्द

मंत्रसे कातर नष्ट होजाताहै यन्त्रादिकोंके शब्द बड़े भयंकर होतेहैं इससे तत्त्वको विनाजाने भय न करना चाहिये इसबातपर मैं आपको नगाड़े और शृगालकी कथा सुनाताहूं किसी वनमें एक शृगाल रहताथा वह भोजन ढूंढनेकेलिये भ्रमण करताहुआ एक ऐसी पृथ्वी में पहुचा जहां युद्धहोकर समाप्तहोचुकाथा वहां उसे नगाड़ेका बड़ा गभीर शब्द सुनाई दिया उस शब्दको सुनके भयभीतहोकर उसने इधर उधर देखा तो एक अपूर्व नगाड़ा उसे दिखाईदिया तब उसने शोचा कि क्या यह कोईइस प्रकारका जीव है यह शोचकर और उसके पास जाके उसे निश्चल देखकर वह जानगया कि यह प्राणी नहीं है वायुसे कंपितहुए नरकुलके लगनेसे इसमें शब्द होरहाहै ऐसा जानकर उसने निर्भय होकर भोजनके लोभसे उसे फाड़ा और उसके भीतर घुसके जो उसे देखा तो उसमें चमड़े तथा काष्ठ के सिवाय कुछ न पाया इससे केवल शब्दही सुनकर आपसरीखे वीरोंकोडरना न चाहिये जो आप आज्ञादें तो मैं इस शब्द का पता लगानेकोजाऊं यह सुनकर पिंगलकने कहा कि अच्छी बातहै तुम जासक्तेहो तो जाओ उसकी यह आज्ञा पाकर दमनकने शब्द के अनुसार जाकर यमुनाके तट पर चरतेहुए संजीवक बैलकोदेखा और उसके निकटजाकर उससे सब वृत्तान्त पूछकर सिंहसे सब उसका वृत्तान्त कहा उसके वृत्तान्त को सुनके पिंगलकने कहा कि जो तुमने उस बैलको देखाहै और उससे वार्त्तालापभी करीहै तो उसको युक्ति पूर्व्वक यहां लेआओ मैं भी तो देखूं कि वह कैसा बैलहै यह कह कर उसने दमनकको संजीवकके पास भेजा दमनकने उसके पास जाकर उससे कहा कि चलो हमारा स्वामीसिंह प्रसन्नहोकर तुमको बुलारहाहै दमनकके यह वचन सुनकर संजीवकने भयभीत होकर उसके पास जाना स्वीकार नहीं किया तब दमनकने फिर सिंहके पास जाकर और उससे संजीवकके लिये अभयमांगकर लौटकर उसे अभयदान देकर सिंहके पास बुलालाया पिंगलकने आयेहुए उस संजीवकको प्रणाम करते देखकर आदर पूर्व्वक उससे कहा कि तुम निर्भयहोकर मेरे पासरहो सिंहके इन वचनोंको स्वीकार करके संजीवक वहीं रहनेलगा और उसने सिंहको ऐसा प्रसन्नकिया कि वह अपने अन्यसेवकों को छोड़कर केवल उसीके वशीभूतहोगया ७२ तब दमनकने खिन्नहोकर एकान्तमें करटकसे कहा कि देखो यह सिंह संजीवकके वशीभूतहोकर हमसे विमुखहोरहाहै अब अकेलेही मांस भोजनकरताहै हम लोगोंका नहीं देता और इसी बैलहीकी शिक्षामानताहै यह मेराही दोषहै जो मैं इस बैलको यहां ले आया अब मैं ऐसा करूंगा जिससे यह बैल नष्ट होजाय और यह सिंह अनुचित व्यवहारसे निवृत्तहोजाय यह सुनकर करटकने कहा कि हे मित्र अब तुम भी इस कामको नहीं करसक्तेहो यह सुनकर दमनकने कहा कि मैं बुद्धिके बलसे सब कुछ करसक्ताहूं आपत्ति में जिसकी बुद्धि सावधान रहतीहै वह क्या नहीं करसक्ताहै इस विषयमें मैं तुमको बगलेके मारनेवाले गेगटेकी कथा सुनाताहूं पूर्व समयमें अनेक मछलियों से भरेहुए किसी तालाबपर एक बगला रहताथा उसे देखकर सम्पूर्ण मछलियां भयभीत होकर भागजातीथीं उन मछलियोंको न पाकर उस बगलेने उनसे झूठमूठ बनाकर कहा कि इस तड़ागपर कोई मल्लाह जाल लेकरआयाहै वह जालडालकर तुम लोगोंको पकड़ लेजायगा

इससे जो तुम्हारा मेरे ऊपर विश्वास होय तो तुम मेरा कहनाकरो यहा से कुछही दूरपर एक निर्मल तालावहै उसे मछुए लोग नहीं जानते हैं चलो मैं वहा तुम सबको एक २ लेजाकर पहुंचाआऊं यह सुनकर सम्पूर्ण मूर्ख मछलियोंने कहा कि ऐसाहीकरो हमारा तुमपर विश्वासहै तब उस बगलेने एक २ मछली लेजाके और शिलापर रखके खाना प्रारंभकिया और इसीक्रमसे बहुतसी मछलीखाडालीं उसे मछलियोंको लेजाते देखकर उसी तडागके निवासी गेंगटेने उससे पूछा कि तुम इन मछलियोंको कहा लेजातेहो उसने जो मछलियोंसे कहाथा वही उससे भी कहदिया यह सुनकर उसने भी भयभीत होकर उससे कहा कि मुझेभी वहा लेचलो तो वह बगला उसके मासके लोभमे उसे भी उसी शिलापर लेगया वहा उस गेंगटेने मछलियोंकी बहुतसी हड्डियोको देखकर जानलिया कि यह बगला मछलियों पर विश्वास घात करताहै यहजानकर शीघ्रही बगलेके गलेमें लिपटकर उसका शिर उसचतुर गेंगटेने काटडाला और तडागमे आकर सम्पूर्ण मछलियोंसे उसका सब वृत्तान्त कहा इस वृत्तान्तको सुनकर सम्पूर्ण मछलिया अत्यन्त प्रसन्नहुई इससे बुद्धिही जीवोंका मुख्यबलहै और निर्बुद्धि केवल होना भी व्यर्थहै इसी विषयपर मे तुमको सिह तथा खरगोशकी एक और कथा सुनाताहू किसी वनमें एकबडा बलवान् सिंह रहताथा वह जिस प्राणीको देखताथा उसीको मारडालताथा इससे व्याकुल होके वनके सम्पूर्ण पशुओंने उससे कहा कि हे मृगराज आपके भोजनके निमित्त हम एक पशु नित्य भेजेंगे हम सबको एक साथही मारकर आप अपने स्वार्थकी हानि क्यों करतेहो उनके यह वचन उस सिंहने स्वीकार करलिये और उसीदिन से वह सम्पूर्ण पशु उसके निमित्त बारी २ से नित्य एक पशु भेजने लगे एकदिन एक बुड्ढे खरगोशकी वारी आई उसने मार्गमें जाते २ यह शोचा कि (सधीरोयोनस मोहमापत्कालेपिगच्छति) वही धीरहै जो आपत्तिकालमें भी मोहको नहीं प्राप्त होताहै इससे मृत्युके भी आजानेपर युक्तिका विचार करना चाहिये यह शोचकर वह विलम्ब लगाकर उस सिंहके पासगया उसे देरमे आया देखकर सिंहने कहा कि अरे तैंने मेरे भोजनको बडी देरकरदी वधसे भी अधिक मैं तुझको क्या दडदू सिहके यहवचन सुनकर खरगोशने नम्रतापूर्वककहा कि हे स्वामी इसमें मेरा कोई अपराध नहीं है एक दूसरे सिंहने मुझे मार्गमें पकडरक्खाथा उसने लौट आनेकी प्रतिज्ञा कराके बहुत देरमें मुझको छोडा यहसुनकर उस मूर्ख सिहने क्रोधसे पूछ फटकारकर कहा कि वह दूसरा सिंह कहाहै मुझे तो चलकर दिखाओ तब वह खरगोश उसेसाथ लियेहुए दूरपर किसी कुएके तटपर जाकर बोला कि हे स्वामी इसीके भीतर वहहै आप देखलीजिये उसके यह वचन सुनके सिंहने क्रोधकरके गर्जनकर जो कुएमे देखा तो उसे निर्मलजलमें अपनाही प्रतिबिम्ब दीखा और अपनीही गर्जनाका प्रतिशब्द भी सुनाईदिया इससे वहकुएमें दूसरे सिंहकोजानकर क्रोधकरके उसके मारनेको उसीमेंकूदा और उस मे जाकर मरगया और वह खरगोश बुद्धिके बलसे अपनेको तथा सम्पूर्ण पशुओंको मृत्युसे बचाकर सपूर्ण पशुओंसे यहसबवृत्तात कहकर सबकाप्यारहोगया इससे बुद्धि ही सबका परमबलहै जिसके प्रभाव से खरगोशने भी ऐसे पराक्रमी सिंहको मारडाला इसीसे मैं अपनी बुद्धिके बलसे अपना मनोरथ सिद्ध

मंत्रसे कातर नष्ट होजाताहै यन्त्रादिकोंके शब्द बडे भयंकर होतेहैं इससे तत्त्वको विनाजाने भय न करना चाहिये इसबातपर मैं आपको नगाडे और शृगालकी कथा सुनाताहूं किसी बनमें एक शृगाल रहताथा वह भोजन ढूंढनेकेलिये भ्रमण करताहुआ एक ऐसी पृथ्वी में पहुंचा जहां युद्धहोकर समाप्तहोचुकाथा वहां उसे नगाडेका बडा गंभीर शब्द सुनाई दिया उस शब्दको सुनके भयभीतहोकर उसने इधर उधर देखा तो एक अपूर्व नगाडा उसे दिखाईदियो तब उसने शोचा कि क्या यह कोई इस प्रकारका जीव है यह शोचकर और उसके पास जाके उसे निश्चल देखकर वह जानगया कि यह प्राणी नहीं है वायुसे कंपितहुए नरकुलके लगनेसे इसमें शब्द होरहाहै ऐसा जानकर उसने निर्भय होकर भोजनके लोभसे उसे फाडा और उसके भीतर घुसके जो उसे देखा तो उसमें चमडे तथा काष्ठ के सिवाय कुछ न पाया इससे केवल शब्दही सुनकर आपसरीखे वीरोंकोडरना न चाहिये जो आप आज्ञादें तो मैं इस शब्दका पता लगानेकोजाऊं यह सुनकर पिंगलकने कहा कि अच्छी बातहै तुम जासक्तेहो तो जाओ उसकी यह आज्ञा पाकर दमनकने शब्द के अनुसार जाकर यमुनाके तट पर चरतेहुए संजीवक बैलकोदेखा और उसके निकटजाकर उससे सब वृत्तान्त पूछकर सिंहसे सब उसका वृत्तान्त कहा उसके वृत्तान्त को सुनके पिंगलकने कहा कि जो तुमने उस बैलको देखाहै और उससे वार्त्तालापभी करीहै तो उसको युक्ति पूर्व्वक यहां लेआओ मैं भी तो देखूं कि वह कैसा बैलहै यह कहकर उसने दमनकको संजीवकके पास भेजा दमनकने उसके पास जाकर उससे कहा कि चलो हमारा स्वामीसिंह प्रसन्नहोकर तुमको बुलारहाहै दमनकके यह वचन सुनकर संजीवकने भयभीत होकर उस के पास जाना स्वीकार नहीं किया तब दमनकने फिर सिंहके पास जाकर और उससे संजीवकके लिये अभयमांगकर लौटकर उसे अभयदान देकर सिंहके पास बुलालाया पिंगलकने आयेहुए उस संजीवकको प्रणाम करते देखकर आदर पूर्व्वक उससे कहा कि तुम निर्भयहोकर मेरे पासरहो सिंहके इन वचनोंको स्वीकार करके संजीवक वहीं रहनेलगा और उसने सिंहको ऐसा प्रसन्नकिया कि वह अपने अन्यसेवकों को छोड़कर केवल उसीके वशीभूतहोगया ७२ तब दमनकने खिन्नहोकर एकान्तमें करटकसे कहा कि देखो यह सिंह संजीवकके वशीभूतहोकर हमसे विमुखहोरहाहै अब अकेलेही मास भोजनकरताहै हम लोगोंको नहीं देता और इसी बैलहीकी शिक्षामानताहै यह मेराही दोषहै जो मैं इस बैलको यहां ले आया अब मैं ऐसा करूंगा जिससे यह बैल नष्ट होजाय और यह सिंह अनुचित व्यवहारसे निवृत्तहोजाय यह सुनकर करटकने कहा कि हे मित्र अब तुम भी इस कामको नहीं करसक्तेहो यह सुनकर दमनकने कहा कि मैं बुद्धिके बलसे सब कुछ करसक्ताहूं आपत्ति में जिसकी बुद्धि सावधान रहतीहै वह क्या नहीं करसक्ताहै इस विषयमें मैं तुमको बगलेके मारनेवाले गेगटेकी कथा सुनाताहूं पूर्व समयमें अनेक मछलियों से भरेहुए किसी तालाबपर एक बगलारहताथा उसे देखकर सम्पूर्ण मछलियां भयभीत होकर भागजातीथीं उन मछलियोंको न पाकर उस बगलेने उनसे झूठ मूठ बनाकर कहा कि इस तडागपर कोई मछुआ जाल लेकरआयाहै वह जालडालकर तुम लोगोंको पकड़ लेजायगा

इससे जो तुम्हारा मेरे ऊपर विश्वास होय तो तुम मेरा कहनाकरो यहा से कुछही दूरपर एक निर्मल तालाबहै उसे मछुए लोग नहीं जानते है चलो मे वहा तुम सबको एक २ लेजाकर पहुंचाआऊ यह सुनकर सम्पूर्ण मूर्ख मछलियोंने कहा कि ऐसाहीकरो हमारा तुमपर विश्वासहै तब उस बगलेने एक २ मछली लेजाके और शिलापर रखके खाना प्रारंभकिया और इसीक्रमसे बहुतसी मछलीखाडालीं उसे मछलियोंको लेजाते देखकर उसी तडागके निवासी गेंगटेने उससे पूछा कि तुम इन मछलियोंको कहा लेजातेहो उसने जो मछलियोंसे कहाथा वही उससे भी कहदिया यह सुनकर उसने भी भयभीत होकर उससे कहा कि मुझेभी वहा लेचलो तो वह बगला उसके मासके लोभसे उसे भी उसी शिलापर लेगया वहा उस गेंगटेने मछलियोंकी बहुतसी हड्डियोंको देखकर जानलिया कि यह बगला मछलियों पर विश्वास घात करताहै यह जानकर शीघ्रही बगलेके गलेमें लिपटकर उसका शिर उसचतुर गेंगटेने काटडाला और तडागमे आकर सम्पूर्ण मछलियोसे उसका सब वृत्तान्त कहा इस वृत्तान्तको सुनकर सम्पूर्ण मछलिया अत्यन्त प्रसन्नहुई इससे बुद्धिही जीवोंका मुख्यबलहै और निर्बुद्धि केवल होना भी व्यर्थहै इसी विषयपर मे तुमको सिह तथा खरगोशकी एक और कथा सुनाताहू किसी वनमें एकबडा बलवान् सिंह रहताथा वह जिस प्राणीको देखताथा उसीको मारडालताथा इससे व्याकुल होके वनके सम्पूर्ण पशुओंने उससे कहा कि हे मृगराज आपके भोजनके निमित्त हम एक पशु नित्य भेजेंगे हम सबको एक साथही मारकर आप अपने स्वार्थकी हानि क्यों करतेहो उनके यह वचन उस सिहने स्वीकार करलिये और उसीदिन से वह सम्पूर्ण पशु उसके निमित्त वारी २ से नित्य एक पशु भेजने लगे एकदिन एक बुड्ढे खरगोशकी वारी आई उसने मार्गमें जाते २ यह शोचा कि (सधीरोयोनसं मोहमापत्कालेपिगच्छति) वही धीरहै जो आपत्तिकालमें भी मोहको नहीं प्राप्त होताहै इससे मृत्युके भी आजानेपर युक्तिका विचार करना चाहिये यह शोचकर वह विलम्ब लगाकर उस सिंहके पासगया उसे देरमे आया देखकर सिहने कहा कि अरे तैंने मेरे भोजनको बडी देरकरदी वधसे भी अधिक में तुझको क्या दडदू सिहके यहवचन सुनकर खरगोशने नम्रतापूर्वक कहा कि हे स्वामी इसमें मेरा कोई अपराध नही है एक दूसरे सिहने मुझे मार्गमें पकडरक्खाथा उसने लौट आनेकी प्रतिज्ञा कराके बहुत देरमें मुझको छोडा यहसुनकर उस मूर्ख सिंहने क्रोधमे पूछ फटकारकर कहा कि वह दूसरा सिंह कहाहै मुझे तो चलकर दिखाओ तब वह खरगोश उसेसाथ लियेहुए दूरपर किसी कुएके तटपर जाकर बोला कि हे स्वामी इसीके भीतर वहहै आप देखलीजिये उसके यह वचन सुनके सिंहने क्रोधकरके गरजकर जो कुएमे देखा तो उसे निर्मलजलमें अपनाही प्रतिबिम्ब दीखा और अपनीही गर्जनाका प्रतिशब्द भी सुनाईदिया इससे वहकुएमें दूसरे सिंहकोजानकर क्रोधकरके उसके मारनेको उसीमेंकूदा और उस मे जाकर मरगया और वह खरगोश बुद्धिके बलसे अपनेको तथा सम्पूर्ण पशुओंको मृत्युसे बचाकर सपूर्ण पशुओंसे यहसबवृत्तात कहकर सबका प्याराहोगया इससे बुद्धि ही सबका परमबलहै जिसकेप्रभाव से खरगोशने भी ऐसे पराक्रमी सिंहको मारडाला इसीसे मै अपनीबुद्धिके बलसे अपना मनोरथ सिद्ध

मंत्रसे कातर नष्ट होजाताहै यन्त्रादिकोंके शब्द बडे भयंकर होतेहैं इससे तत्त्वको विनाजाने भय न करना चाहिये इसबातपर मैं आपको नगाडे और शृगालकी कथा सुनाताहूं किसी वनमें एक शृगाल रहताथा वह भोजन ढूंढनेकेलिये भ्रमण करताहुआ एक ऐसी पृथ्वी में पहुंचा जहां युद्धहोकर समाप्तहोचुकाथा वहां उसे नगाडेका बडा गंभीर शब्द सुनाई दिया उस शब्दको सुनके भयभीतहोकर उसने इधर उधर देखा तो एक अपूर्व नगाडा उसे दिखाईदिया तब उसने शोचा कि क्या यह कोईइस प्रकारका जीव है यह शोचकर और उसके पास जाके उसे निश्चल देखकर वह जानगया कि यह प्राणी नहीं है वायुसे कंपितहुए नरकुलके लगनेसे इसमें शब्द होरहाहै ऐसा जानकर उसने निर्भय होकर भोजनके लोभसे उसे फाडा और उसके भीतर घुसके जो उसे देखा तो उसमें चमडे तथा काष्ठ के सिवाय कुछ न पाया इससे केवल शब्दही सुनकर आपसरीखे धीरोंकोडरना न चाहिये जो आप आज्ञादें तो मैं इस शब्द का पता लगानेकोजाऊं यह सुनकर पिंगलकने कहा कि अच्छी बातहै तुम जासक्तेहो तो जाओ उसकी यह आज्ञा पाकर दमनकने शब्द के अनुसार जाकर यमुनाके तट पर चरतेहुए संजीवक बैलकोदेखा और उसके निकटजाकर उससे सब वृत्तान्त पूछकर सिंहसे सब उसका वृत्तान्त कहा उसके वृत्तान्तको सुनके पिंगलकने कहा कि जो तुमने उस बैलको देखाहै और उससे वार्त्तालापभी करीहै तो उसको युक्ति पूर्व्वक यहां लेआओ मैं भी तो देखूं कि वह कैसा बैलहै यह कह कर उसने दमनकको संजीवकके पास भेजा दमनकने उसके पास जाकर उससे कहा कि चलो हमारा स्वामीसिंह प्रसन्नहोकर तुमको बुलारहाहै दमनकके यह वचन सुनकर संजीवकने भयभीत होकर उस के पास जाना स्वीकार नहीं किया तब दमनकने फिर सिंहके पास जाकर और उससे संजीवकके लिये अभयमांगकर लौटकर उसे अभयदान देकर सिंहके पास बुलालाया पिंगलकने आयेहुए उस संजीवकको प्रणाम करते देखकर आदर पूर्व्वक उससे कहा कि तुम निर्भयहोकर मेरे पासरहो सिंहके इन वचनोंको स्वीकार करके संजीवक वहीं रहनेलगा और उसने सिंहको ऐसा प्रसन्नकिया कि वह अपने अन्यसेवकों को छोडकर केवल उसीके वशीभूतहोगया ७२ तब दमनकने खिन्नहोकर एकान्तमें करटकसे कहा कि देखो यह सिंह संजीवकके वशीभूतहोकर हमसे विमुखहोरहाहै अब अकेलेही मांस भोजनकरताहै हम लोगोंको नहीं देता और इसी बैलहीकी शिक्षामानताहै यह मेराही दोषहै जो मैं इस बैलको यहां ले आया अब मैं ऐसा करूंगा जिससे यह बैल नष्ट होजाय और यह सिंह अनुचित व्यवहारसे निवृत्तहोजाय यह सुनकर करटकने कहा कि हे मित्र अब तुम भी इस कामको नहीं करसक्तेहो यह सुनकर दमनकने कहा कि मैं बुद्धिके बलसे सब कुछ करसक्ताहूं आपत्ति में जिसकी बुद्धि सावधान रहतीहै वह क्या नहीं करसक्ताहै इस विषयमें मैं तुमसे बगलेके मारनेवाले केंकड़ेकी कथा सुनाताहूं पूर्व समयमें अनेक मछलियों से भरेहुए किसी तालाबपर एक बगलारहताथा उसे देखकर सम्पूर्ण मछलियां भयभीत होकर भागजातीथीं उन मछलियोंको न पाकर उस बगलेने उनसे झूठ मूठ बनाकर कहा कि इस तडागपर कोई मछुआ जाल लेकरआयाहै वह जालडालकर तुम लोगोंको पकड लेजायगा

वह मदविसर्पी,नष्टहुआ इससे सजीवक के साथ में आपका कल्याण नहीं है जो मेरे ऊपर आपको विश्वासनहीं है तो आप स्वय देखलीजियेगा कि जब वह शूलकेसमान तीक्ष्णसींगवाले अपनेशिरको अभिमान से आपके आगे हिलावेगा इसप्रकार कहके दमनकने पिंगलक के चित्तमें ऐसा विकार उत्पन्न कराया कि उसने सजीवकके मारनेका निश्चय करलिया १२६ तब दमनक क्षणभरमें उसका यह आशय जानकर उदासीनसा होकर सजीवक के पासगया सजीवकने उसे उदासीन देखकर पूछा कि हे मित्र तुम्हारे शरीर में कुशलतो है आज तुम उदासीनसे क्यों हो रहेहो यह सुनकर उसने कहा कि (किंमेव कस्थकुशलकश्चराज्ञासदाप्रिय ।कोर्थीनलाघवयात क कालस्यनगोचर) सेवकको कुशल क्याहै राजाओंको कौन सदैव प्रियरहाहै याचक होकर कौनलघुता को प्राप्त नहीं हुआ काल किसका भक्षक नहीं है उसके यह वचनसुनके सजीवकने फिर कहा कि हे मित्र तुम बताओ तो कि तुम्हारी उदासीनता का क्या कारण है दमनकने कहा सुनो मैं स्नेहके कारण तुमसे कहताहू कि यह मृगराज पिंगलक तुमसे विरुद्ध होगयाहै यह स्नेहको छोडकर अब तुमको मारकर खाना चाहताहै और इसके साथी हिंसकजीव सदैव इसको इसी बातकी प्रेरणा करतेहैं दमनक के यह वचनसुनकर सजीवक पहलेके विश्वास से उसके वचनों को सत्यजानकर बोला कि क्षुद्रस्वामी क्षुद्रपरिकर से युक्त होकर भलीभातिसेवा करनेपरभी सेवकोंसे शत्रुता करने लगताहै इसविषयपरमें तुमको एक कथा सुनाताहू कि किसीवनमें मदोत्कट नाम एक सिंहथा और एक कौआ व्याघ्र तथा शृगाल यह तीन उसके मन्त्रीथे एक समय उसवनमें कहीं से आयेहुए एकऊटको देखकर उस सिंहने कौएसे पूछा कि यह कौनजीवहै उसने कहा यह ऊटहै तब सिंहने ऊंटको अभय देकर सेवक बनाके अपने पास रक्खा एक समय हाथियोंके साथ युद्ध करनेसे घायल होकर सिंहने अपने स्वस्थसेवकों समेत कई उपवास किये और फिर एकदिन क्षुधासे व्याकुल होकर सम्पूर्ण वनमें कुछ भोजनके योग्य पदार्थ न पाकर कौआ शृगाल तथा व्याघ्रसे एकान्तमे कहा कि क्या करें कुछ भोजन नहीं मिलता और क्षुधासे बडी व्याकुलता होरही है यहसुनकर वहबोले कि हे स्वामी इसआपत्तिमें जो योग्य और उचितहै वह हम आपसे कहते हैं ऊटकेसाथ हमलोगोंकी क्या मित्रताहै इससे आप इसीको मारकर खाइये क्योंकि तृणों के चरनेवाले जीव मासाशी जीवों के सदैव भक्ष्यहोते हैं और इसके प्राणजाने से बहुतों के प्राण बचेंगे इससे इसके मारने मे कोई हानि नहीं है और जो आप यह कहें कि हम इसे अभय देचुके है कैसे मारें तो हमलोग ऐसा उपायकरेंगे जिससे यह अपने आपही अपना शरीर आपकी भेटकरे यह सुनकर उसने कहा कि अच्छा जैसा उचित समझो सो करो उसकी यह आज्ञा पाकर आपसमें सलाहकरके कौए ने ऊटसे कहा कि यह स्वामी क्षुधासे अत्यन्त व्याकुलहै और हमलोगों मे कुछ नहीं कहना है इससे इसके पास चलकर इसे प्रसन्न करने के लिये हम सबलोग यहकहें कि आप हमेंही खालीजिये उसके यह वचन उस ऊट ने स्वीकार करलिये तब वह चारों मिलकर सिंहके पास गये उनमे से पहले कौए ने कहा कि हे स्वामी आप मुझे खाकर अपनी क्षुधाको मिटाइये यहसुनके सिंहने कहा कि तु-

करलूगा दमनकके यह वचन सुनकर करटक चुपहोरहा तब दमनक पिंगलकके पासजाके उदासीनसा होकर बैठा, और जब सिंहने उसकी उदासीनताका कारण पूछा तब बोला कि हे स्वामी जानबूझकर न कहना उचित नहीं है इससे मैं कहताहू विनापूछे भी स्वामीका हितकहनाचाहिये यहजानकर मैं जो विज्ञापनकरताहू सो आप विश्वासयुक्त होकर सुनिये यहसजीवक आपको मारकर आपही राज्यकरनाचाहताहै क्योंकि इसने आपको बडाभीरु जानलियाहै यहवनमें जाकर सपूर्ण पशुओंसे कहताहै कि जब इस मासाशी सिंहको मारकर मैं राजा होजाऊगा तब तुमलोग निर्भयहोके सुखपूर्वक रहना, और यहकहकर आपके मारनेकी इच्छासे अपने पैने सींगोंको हिलाताहै इससे आप इसबैलका ध्यानरखिये इसके यहा रहनेमें आपका कल्याण नहीं है दमनकके यह वचनसुनकर पिंगलकने कहा कि यह तृणका खानेवाला बैल मेरा क्याकरसकेगा और मैं इसे अभय देचुकाहू इससे इसका मारना उचित नहीं है यह सुनकर दमनकने कहा कि आपको ऐसा न कहनाचाहिये राजा जब किसीको अपने तुल्य बनालेता है तब चचल राजलक्ष्मी बहुतकालतक दो में स्थित न रहकर दोनोंमें से एकको छोडदेती है (प्रभुश्चयो हितद्वेष्टिसेवतेचाहितसदा। सवर्जनीयोविद्वद्भिर्वैद्यैर्दुष्टातुरोयथा॥ अप्रियस्यप्रथमतः परिणामेहितस्यच। वक्ताश्रोताचयत्रस्यात्तत्रश्री कुरुतेपदम्॥ नशृणोतिसतामन्त्रमसताचशृणोतिय। अचिरेणससप्राप्यविपदपरितप्यते) जैसे दुष्टरोगीको वैद्य छोडदेते हैं उसीप्रकार हितसे द्वेष करनेवाले और अहितका सेवन करनेवाले स्वामीका त्यागकरना विद्वान्लोगोंको उचित है जहा प्रथम अप्रिय तथा परिणाम में हित वचनोंके कहनेवाले और सुननेवाले होते हैं वहीं लक्ष्मी निवास करती है जो सज्जनों के मत्रको नहीं सुनताहै और दुष्टोंके मन्त्रको सुनताहै वह थोडेहीकालमें विपत्तिमें पडकर दुःखभोगताहै तो इसबैलसे आपको क्या स्नेहहै और इस द्रोहीको अभयदानका पात्र तथा शरणागत माननेसे क्याप्रयोजनहै देखिये यह सदैव आपकेपास रहताहै और इसके मूत्रपुरीषमें कीट उत्पन्नहोते हैं वहकीट जो मतवालेहाथियोंके दातोंके लगनेसे उत्पन्नहुए आपके शरीरके व्रणों में घुसजायँ तो युक्तिपूर्वक आपका बध सिद्धहोजाय कि नहीं देखिये जो दुष्टमनुष्य चाहे आप कोई दोष न भी करे तो उसकेसगसे दोषउत्पन्न होजाता है इसविषयमें आपको मैं एककथा सुनाताहू किसी राजाकी शय्यामें मदविसर्पीनाम एकजुआ बहुत कालसे रहताथा एकदिन अकस्मात् एकटिटिभनाम खटमलवहाआया उससे मन्दविसर्पीनेकहा कि तू मेरे स्थानपर क्योंआयाहै यहासेचलाजा मन्दविसर्पी के यहवचन सुनकर खटमलनेकहा कि मैंने राजा का रुधिर कभी नहीं पियाहै इससे तुम कृपाकरके मुझे भी यहा रहने दो तो मैं भी इसका स्वादु देखू यह सुनकर मन्दविसर्पी ने फिरकहा कि अच्छा जो यही विचारहै तो तुमरहो परन्तु असमयमें राजाको न काटना जब राजा सोताहोय अथवा रति करताहोय तब धीरे से उसे काटना यह सुनकर और बहुत अच्छा कहकर वहखटमल वहींरहा रात्रिकेसमय जैसेही राजा शय्यापर आकरलेटा वैसेही उसदुष्ट खटमलने उसे वेगसेकाटा तब राजा यह कहकर उठबैठा कि मुझे किसीने काटाहै और उसके सेवकोंने उस खटमल के काटकर भागजानेपर उस मन्दविसर्पी को ढूढकर मारडाला इसप्रकार खटमल के संसर्ग से

वह मदविसर्पी नष्टहुआ इससे सजीवक के साथ मे आपका कल्याण नहीं है जो मेरे ऊपर आपको विश्वासनहीं है तो आप स्वय देखलीजियेगा कि जब वह शूलकेसमान तीक्ष्णसींगवाले अपनेशिरको अभिमान से आपके आगे हिलावेगा इसप्रकार कहके दमनकने पिंगलक के चित्तमें ऐसा विकार उत्पन्न कराया कि उसने सजीवकके मारनेका निश्चय करलिया १३६ तब दमनक क्षणभरमें उसका यह आशय जानकर उदासीनसा होकर सजीवक के पासगया सजीवकने उसे उदासीन देखकर पूछा कि हे मित्र तुम्हारे शरीर में कुशलतो है आज तुम उदासीनसे क्यों हो रहेहो यह सुनकर उसने कहा कि (किमेरकस्यकुशलकश्चराज्ञासदाप्रिय । कोर्थीनलाघवयात कः कालस्यनगोचर) सेवकको कुशल क्याहै राजाओंको कौन सदैव प्रियरहाहै याचक होकर कौनलघुता को प्राप्त नहीं हुआ काल किसकाभक्षक नहीं है उसके यह वचनसुनके सजीवकने फिर कहा कि हे मित्र तुम बताओ तो कि तुम्हारी उदासीनता का क्या कारण है दमनकने कहा सुनो मैं स्नेहके कारण तुमसे कहताहू कि यह मृगराज पिंगलक तुमसे विरुद्ध होगयाहै यह स्नेहको छोडकर अब तुमको मारकर खाना चाहताहै और इसके साथी हिंसकजीव सदैव इसको इसी बातकी प्रेरणा करतेहैं दमनक के यह वचनसुनकर सजीवक पहलेके विश्वास से उसके वचनों को सत्यजानकर बोला कि क्षुद्रस्वामी क्षुद्रपरिकर से युक्त होकर भलीभांतिसेवा करनेपरभी सेवकोंसे शत्रुता करने लगताहै इसविषयपर मैं तुमको एक कथा सुनाताहू कि किसीवनमें मदोत्कट नाम एक सिंहथा और एक कौआ व्याघ्र तथा शृगाल यह तीन उसके मन्त्रीथे एक समय उसवनमे कहीं से आयेहुए एकऊंटको देखकर उस सिंहने कौएसे पूछा कि यह कौनजीवहै उसने कहा यह ऊंटहै तब सिंहने ऊंटको अभय देकर सेवक बनाके अपने पास रक्खा एक समय हाथियोंके साथ युद्ध करनेसे घायल होकर सिंहने अपने स्वस्थसेवकों समेत कई उपवास किये और फिर एकदिन क्षुधासे व्याकुल होकर सम्पूर्ण वनमें कुछ भोजनके योग्य पदार्थ न पाकर कौआ शृगाल तथा व्याघ्रसे एकान्तमें कहा कि क्या करें कुछ भोजन नहीं मिलता और क्षुधासे बडी व्याकुलता होरही है यहसुनकर वहबोले कि हे स्वामी इसआपत्तिमें जो योग्य और उचितहै वह हम आपसे कहते हैं ऊंटकेसाथ हमलोगोंकी क्या मित्रताहै इससे आप इसीको मारकर खाइये क्योंकि तृणों के चरनेवाले जीव मांसाशी जीवों के सदैव भक्ष्यहोते हैं और इसके प्राणजाने मे बहुतो के प्राण बचेंगे इससे इसके मारने में कोई हानि नहीं है और जो आप यह कहें कि हम इसे अभय देचुके हैं कैसे मारें तो हमलोग ऐसा उपायकरेंगे जिससे यह अपने आपही अपना शरीर आपकी भेटकरे यह सुनकर उसने कहा कि अच्छा जैसा उचित समझो सो करो उसकी यह आज्ञा पाकर आपसमें सलाहकरके कौए ने ऊंटसे कहा कि यह स्वामी क्षुधासे अत्यन्त व्याकुलहै और हमलोगों से कुछ नहीं कहता है इससे इसके पास चलकर इसे प्रसन्न करने के लिये हम सबलोग यहकहें कि आप हमेंही खालीजिये उसके यह वचन उस ऊंट ने स्वीकार करलिये तब वह चारों मिलकर सिंहके पास गये उनमें से पहले कौए ने कहा कि हे स्वामी आप मुझे खाकर अपनी क्षुधाको मिटाइये यहसुनके सिंहने कहा कि तु-

म्हारे शरीरमे कितना मासहै जिसको खाकर मेरी तृप्तिहोगी फिर शृगाल तथा व्याघ्रने भी इसीप्रकार कहा और सिंह ने उनसे भी निषेध करदिया इन सबके पीछे ऊँट ने कहा कि हे स्वामी मुझे खाइये उसके यह वचन सुनतेही सिंह ने उसे मारा और अपने मन्त्रियों समेत उसे खाडाला इसी प्रकार से किसी पिशुन ने व्यर्थही इस सिंहको मेरे ऊपर क्रोधित करदिया है अच्छा जो भाग्य में बदा होगा सो होगा (गृध्रोपिहिवरंराजा सेव्योहंसपरिच्छद । नगृध्रपरिवारस्तु हंसोपिकिमुतापर) चाहे राजा गृध्र भी होय परन्तु उसके परिकरमे हंस होय तो उसका सेवन करना चाहिये परन्तु जब परिकर में गृध्र होय तो चाहे राजा हंस भी होय तो उसका सेवनकरना न चाहिये अन्यका तो कहनाही क्या है, संजीवकके यह वचन सुनकर दमनक ने कहा कि घबराओमत धैर्य्यधरो धैर्य्य से सब कार्य्य सिद्धहोते हैं इस विषयपर मै तुमको एक कथा सुनाताहू कि समुद्र के तटपर कोई टिट्टिभपक्षी अपनी स्त्री समेत रहताथा एकसमय टिट्टिभी ने गर्भवतीहोकर टिट्टिभ से कहा कि अब यहां से और कहींकोचलो नहीं तो यहां रहनेसे जो मेरे बच्चेहोगे उनको समुद्र अपनी लहरों से बहालेजायगा टिट्टिभी के यह वचन सुनकर उस टिट्टिभ ने कहा कि समुद्र मेरे साथ विरोध नहींकरसक्ता है यह सुनकर टिट्टिभी फिर बोली कि ऐसा तुम क्या कहतेहो समुद्रकी और तुम्हारी क्या बरोबरी है जो कोई हितकीबातकहे वह मानलेना योग्यहै नहीं तो विनाशहोजाता है इसीबातपर मैं तुम्हें एक कथा सुनाती हू कि किसी तडाग में एक कम्बुग्रीव नाम कछुआरहताथा उसके विकट तथा संकटनाम दो हंस परममित्र थे एकसमय वृष्टिके न होने से तडागमें जल के न्यूनहोजाने के कारण उन दोनों हंसों को किसी दूसरेतडागपर जातेदेखकर वह कछुआ उनसे बोला कि तुम दोनों जहाजानाचाहतेहो वहा मुझे भी लेचलो यह सुनकर हंसों ने कहा कि जिसतडाग पर हम दोनो जानाचाहते हैं वह यहा से बहुतदूरहै जो वहा तुम चलनाचाहतेहो तो हमारा कहनाकरना कि एक लकडी हम दोनो अपनी चोचो में पकडलेगे उसे बीच में से तुम भी अपने दातों से पकडकर लटके रहना परन्तु किसीसे कुछ बोलना नहीं नहीं तो आकाशसे गिरकर मरजाओगे उसकछुएने उनके यह वचन स्वीकार करलिये तब वह दोनो हंस एक लकडीके दोनों छोरोंको दोनो तरफ पकडकर बीचमें दातोसे पकडकर लटकेहुए उस कछुए समेत लेचले वह जब तडाग थोडी दूरबाकीरहा तो मार्गमे चलते हुए किसी नगरके निवासी लोगोंने उसप्रकारसे जातेहुए कछुएको देखकर कहा कि बडे आश्चर्य्यकी बातहै कि हंस इस कछुएको क्यों लियेजारहे है इसकोलाहलको सुनके यह कोलाहल क्यों होताहै यह पूछनेकी इच्छा करताहुआ वह कछुआ उस लकडीको छोडकर जैसेही बोलनेकोहुआ वैसेही लकडी से छूटकर पृथ्वीपरगिरा और लोगोंने उसे भूनकर खालिया इसप्रकार से जैसे वह कछुआ नष्टहुआथा ऐसेही निर्बुद्धी मनुष्य नष्टहुआ करते हैं टिट्टिभीके यह वचन सुनकर टिट्टिभने कहा कि हे प्रिये यह तुम्हारा कहना बहुत ठीकहै परन्तु तुमभी एक कथा मुझसे सुनो किसी नदीके भीतर एकगढ़ेमें अनागतविधाता, प्रत्युत्पन्नमति तथा यद्भविष्य नाम तीन मछलियां रहतीथीं इनतीनों में परस्पर बड़ा स्नेह था एकसमय उसीमार्गमें जातेहुए मछलीमारों ने उसगढेको देखकर कहा कि इसमे बहुतसी मछलियां

हैं उनके यह वचन सुनकर, अनागत विधाता सन्देहयुक्त होके नदी के श्रोतके द्वारा अन्य स्थान को चली गई और प्रत्युत्पन्नमति यह शोचकर कि जब आपत्ति आवेगी तब यत्न कियाजायगा वहींरही और यद्भविष्य भी यह शोचकर कि जो बदाहोगा सो होगा वहींरही इसके उपरान्त मल्लुओं ने आकर वहाजाल लगाया तब बुद्धिमान् प्रत्युत्पन्नमति जालमें फँसकर अपने को मृतकके समान दिखाकर जालमें ठहरी मछुओंने उसे मरीहुई जानकर जालसे निकालकर बाहर रखदिया तब वह शीघ्रतासे वहां से उछल नदी के सोते में जाकर बहगई और मूर्ख यद्भविष्यजालमें फडफडाकर मारीगई इससे मैं यहां से जाऊंगा नहीं और समय पड़नेपर प्रत्युत्पन्नमति के समान यत्न करूंगा यह कहकर वह टिट्टिभ वहींरहा समुद्र ने उसके यह अहंकारयुक्त वचन सुनके जब टिट्टिभी ने अण्डेरक्खे तब अपनी लहरों से बहालिये और अपने चित्तमें कहा कि देखूं यह टिट्टिभ मेरा क्या करताहै तब टिट्टिभीने रोकर टिट्टिभसे कहा कि तुमने मेरा कहना नहींमाना उसीका यह फलहुआ उसके यहवचनसुनकर वह धीर टिट्टिभबोला देखो मैं इसपापी समुद्रकी क्या दशा करताहूं यहकहकर उसने सम्पूर्ण पक्षियों को इकट्ठाकरके उनसे अपनादुःख कहकर उनसबको साथलेकर गरुडजी के पासजाके रुदनकरके कहा कि आप ऐसे नाथहोनेपरभी समुद्र ने अनाथके समान हमलोगोंके अण्डे हरलिये यहसुनकर कुपितहुए गरुडने विष्णुभगवान्से कहकर अग्न्यास्त्र से समुद्रको सुखवाकर टिट्टिभकेअंडे दिलवादिये इससे बुद्धिमान्को विपत्तिमें धैर्य्य न छोड़ना चाहिये अब पिंगलकके साथ तुम्हारा युद्ध उपस्थितहै इससे जब पूंछउठाकर वह चारोंपैरोंसे खड़ाहोवे तब तुम जानना कि यहप्रहार करनाचाहताहै उसके अभिप्रायको जानकर तुमभी शिरझुकाकर उसके पेटमें सींगोंका ऐसा प्रहार करना जिससे उसके पेटकी सब आतें निकलपडें संजीवकसे यह कहकर दमनकने जाकर करटकसे कहदिया कि मैंने उन दोनों में भेदकरा दिया तदनन्तर संजीवक पिंगलकके अभिप्रायके जाननेकेलिये धीरे २ उसके पास गया और उसे पूंछ उठाकर चारोंपैरोंसे बराबर खडाहुआ देखकर भयसे अपना शिर हिलानेलगा उसे शिरहलाते देखकर पिंगलकने उस पर नखोंका प्रहार किया और उसने भी सींगोंसे प्रहार किया इसप्रकार उन दोनोंका युद्ध देखकर साधुकरटकने दमनक से कहा कि तुमने स्वार्थ सिद्धकरनेके लिये स्वामीके साथ यह क्या छलकिया (सम्पत्प्रजानुतापेनमैत्रीशाठ्येनकामिनी । पारुष्येणाहृतामित्रनचिरस्थायिनीभवेत्) हे मित्र प्रजाको क्लेश देकर प्राप्तहुई सम्पत्ति शठतासे हुई मित्रता और कठोरतासे लाईगई कामिनी चिरस्थायिनी नहीं होती जो हितकारी वाक्यके न माननेवाले को बहुत उपदेशकिया करताहै वह उसीसे दोषको प्राप्तहोताहै जैसे कि बन्दर से सूचीमुखको दोषप्राप्तहुआ पूर्वसमय किसीवनमें बहुतसे बन्दर शीतकालमें जुगनूको देखके और उसे अग्निमानके उसपर बहुतसी घास तथा पत्तेरखकर तापनेलगे और उनमेंसे एकबन्दर अपने मुखसे उस जुगनूको फूंकनेलगा यह देखकर एक सूचीमुख नाम पक्षीने उससे कहा कि यह अग्नि नहीं है जुगनू है इसमें व्यर्थ श्रममतकरो यहसुनकरभी वह बन्दर अग्निको फूंकताहीरहा तो उसपक्षीने निकटआकरबड़ी हठसे जो निषेधकिया उसके हठसे कुपितहोकर उसबन्दरने शिला फेंककर उसपक्षीको मारडाला इससे

जोहितकेवचनोंको न माने उससे हितकारी वातकभी न कहे तुमने जो इनदोनोंमें भेदकरवायाहै यहश्रेष्ठ नहीं है क्योंकि (दुष्टयाक्रियतेयच्चबुध्यातत्नशुभभवेत्) जो कार्य्यदुष्टबुद्धिसे किया जाताहै वह शुभ नहीं होता ११० इसविषयपरभी मैं तुमसे एककथा कहताहू पूर्वसमयके बीच किसीनगरमें धर्मबुद्धि और दुष्ट बुद्धिनाम दोभाई रहतेथे वह दोनो परदेशमें जाकर दोहजारअशर्फी कमालाये और अपने देशमे आके किसीवृक्षके नीचे वह अशर्फी गाडकर अपनेघरोंको चलेगये और सौ अशर्फी जो उसमेसे बचारक्खीथीं वहबराबर बाटके अपना २ खर्चकरनेलगे एकसमय दुष्टबुद्धिने अकेलेही उस वृक्षके नीचे जाकर वह सब अशर्फीखोदलीं और घरमे आकर धर्मबुद्धिसेकहा कि हे भाई चलो वहासे वह सबअशर्फीलेआवें क्योंकि मुझे कुछ आवश्यकताहै यह सुनकर धर्मबुद्धि ने उसकेसाथ वहाजाकर वहस्थान जहा अशर्फी गाडीथीं खोदा परन्तु अशर्फी नहीमिलीं तब दुष्टबुद्धिने उससेकहा कि तूनेही अशर्फियाली हैं मेराहिस्सा मुझेदेदे यह सुनकर धर्मबुद्धिने कहा कि तैंनेही लीं हैं मैंने नहींलीं इसप्रकार कलहहोने पर दुष्टबुद्धि पत्थर से अपना शिर पीटताहुआ धर्मबुद्धिको न्यायालय (कचहरी) में लेगया वहा उनदोनोंने अपना २ पक्ष अधिकारियोंके आगेकहा उन दोनों के पक्षको सुनकर राजाके अधिकारियो ने कुछ निर्णय न करके उन्हें दिनभर कचहरी में बैठालरक्खा सायकालके समय दुष्टबुद्धिने उनसे कहा कि जिसवृक्षके नीचे अशर्फी गाडीथीं वेही वृक्ष मेरा साक्षी है वह कहताहै कि धर्मबुद्धि अशर्फी खोदलेगया उसके यह वचनसुनकर उनलोगोंने बहुत आश्चर्य्ययुक्तहोकर कहा कि प्रातःकाल चलकर हम उसे देखेंगे और जामनीलेकर उन दोनोंको छोडदिया दुष्टबुद्धिने अपने घरमें आकर अपने मित्र किसी छलीपुरुषको कुछ धनदेकर रात्रिको जाकर उसीवृक्षके खोलमे बैठालदिया और उससे कहदिया कि तुम राजा के अधिकारियोंसे कहदेना कि धर्मबुद्धि अशर्फी लेगया और यह कहकर अपने घरचलाआया प्रातः-काल राजाके अधिकारियों ने उन दोनों को अपने साथ लेजाकर उसवृक्षसे पूछा कि अशर्फी कौन लेगया तब उसमें से यह शब्दआया कि धर्मबुद्धि अशर्फी लेगया है उस शब्दको सुनकर उन अधि कारियोंने जानलिया कि दुष्टबुद्धिने इस वृक्षमें किसीको बैठायाहै यह समझकर उन्हों ने उस वृक्ष में आगलगानेका विचारकिया तो वह पुरुष भयभीतहोकर उसमेंसे निकलआया और बोला कि इसदुष्ट बुद्धिने मुझे कुछ धनदेकर इस वृक्षमे बैठायाथा यह सुनकर उन लोगो ने धर्मबुद्धिको दुष्टबुद्धिसे अशर्फी दिलवादीं और उसके हाथ काटकर देशसे बाहर निकालदिया और धर्मबुद्धि का बडा सत्कार किया इसप्रकार अन्यायसे कियागया काम अशुभफलदायी होता है इससे न्यायपूर्व्वक कार्य्य करना श्रेष्ठहै जैसे कि बगलेने सर्पकेलिये कियाथा वह मैं तुमसे कहताहू पूर्व्व समयमें कोईसर्प किसी बगलेके बच्चोंको खाजायाकरताथा इससे उसबगलेने बहुत दुःखीहोकर किसी गेंगटेके उपदेशसे मछलियोंका मासलेकर किसीनौलेके बिलसे सर्पके बिलतक बिछादिया तब वहनौला अपने बिलसे निकलकर उसी बिछेहुए मासको खाताहुआ सर्प के बिलपरपहुचा और वहा उसने सर्पके बिलमें घुसकर उसकेबालबच्चों समेत सर्पको मारडाला इसप्रकार उपायसे सब कार्य्य सिद्धहोते हैं इस विषयपर मै एक और कथा तुम

को सुनाताहूं किसी बणियेके पुत्र केपास अपनेपिताके धनमेंसे केवल एकसहस्रमन लोहेकी तराजू बची थी वह उसतराजूको किसी वैश्यके यहांरखकर परदेशको चलागया जबलौटकर उसनेउसवैश्यसे तराजू मांगी तो उसनेकहा कि उसे मूसेखागये यहसुनकर वह अपनेहृदयमें हँसकर बोला कि ठीकहै वह लोहा बडा स्वादिष्टथा इसीसे अवश्य मूसेखागयेहोंगे अच्छा आजमुझे खानेभरका कुछभोजन दीजियेगा यह सुनकर उसबणियेने प्रसन्नहोकर उसेभोजनदेना स्वीकारकरलिया तब वहबणियेकापुत्र उसवैश्यके बालक को साथलेकर स्नानकरनेकोगया औरबालकको किसी मित्रके घरमें छिपाकर अकेलाही उसबणियेके पास लौटकरगया उसे अकेला देखकर उसने पूछा कि वहबालक कहांरहा उसने कहा कि उसे तो बाज उठालेगया यहसुनकर वहवैश्य क्रोधितहोके बोला कि तूने मेरेपुत्रको कहीं छुपादिया और यहकहकर उसने उसे राजाके यहां लेजाकर अपने बालकका वृत्तान्त कहा यहसुनकर सभासद लोग बोले कि यहअसम्भव बातहै बाज बालकको कैसे ले जासक्ता है यहसुनकर वहबणियेकापुत्र बोला कि जिसदेशमें लोहेकी तराजूको मूसे खाजातेहैं उसदेशमें हाथीको भी बाज लेजासकताहै लडकेकी क्या गिनती है यहसुनकर सभासदोंने कौतुकसे सब वृत्तान्तको पूछकर उसवैश्यसे उसकी तराजू दिलवादी और उसने उसका लडका लादिया इसप्रकार उपायोंसे बुद्धिमान् लोग अपने कार्योंको सिद्धकरते हैं तुमने तो साहसकरके स्वामीको सन्देहमें डालदिया करटकके यहवचन सुनकर दमनक हँसकरबोला कि बैलके साथ सिंहके युद्धमें क्या सन्देहहै कहा तो मतवाले हाथियोंके दांतोंके घावोंसे विभूषित सिंह और कहां वधिया बैल उनदोनोंके इसप्रकार वार्त्ताकरते २ सिंहने बैलको मारडाला उसके नष्टहोजानेपर दमनक और करटक पिंगलकके पास सुखपूर्वक रहनेलगे गोमुखसे इसविचित्र बुद्धिवर्द्धिनी कथाको सुनकर नरवाहनदत्त बहुत प्रसन्नहुआ २५४॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशक्तियशोलम्भकेचतुर्थस्तरंग ४॥

इसके उपरान्त शक्तियशा के निमित्त उत्कण्ठित नरवाहनदत्त से गोमुख फिर बोला कि हे स्वामी आपने बुद्धिमानोंकी कथा सुनी अब मूर्खोंकी कथा सुनिये किसी धनवान् वैश्य के मुक्तबुद्धिनाम एक पुत्र था वह एकसमय बहुतसी वस्तु बेचने के लिये कटाहद्वीपकोगया उसके पास बहुत अगरभीथा वहां जाकर उसकी और सब वस्तु तो बिकगईं परन्तु अगर नहीं बिका क्योंकि वहां के निवासी अगरकागुण नहीं जानतेथे तब उसने वहां कोयले बिकनेदेखकर उस अगर को जलाके कोयलेकरके बेचडाले और घर में आकर अपनी यह चतुरता मनमें कही इस से उसकी बड़ी हँसीहुई यह आपने अगर जलाने वालेकी कथासुनी अब तिलबोनेवालेकी कथासुनिये एकसमय किसी ग्रामीण खेतीकरनेवाले ने भुने हुए तिलखाये वह उसे बहुत स्वादिष्टमालूमहुए इससे उसने पृथ्वी में वैसेही तिल उपजनेके लिये भुने हुए तिलबोये तो उनतिलों में से कुछ उत्पन्ननहींहुआ तब लोगों ने उसकी बड़ीहँसीकी यह तिलबोने वालेकी कथाहुई अब जलमें अग्निडालनेवालेकी कथासुनिये एकसमय किसी मूर्ख ने प्रातःकाल देव पूजनकेसमय सोचा कि मुझे स्नान तथा धूपआदि देने के निमित्त अग्नि और जल दोनोंका नित्य

जोहितकेवचनोंको न माने उससे हितकारी बातकभी न कहे तुमने जो इनदोनोंमें भेदकरायाहै यहश्रेष्ठ नहीं है क्योंकि (दुष्टयाक्रियतेयच्चबुध्यातत्रशुभभवेत्) जो कार्य्यदुष्टबुद्धिसे कियाजाताहै वह शुभ नहीं होता ११० इसविषयपरभी में तुमसे एककथा कहताहूं पूर्वसमयके बीच किसीनगरमें धर्मबुद्धि और दुष्टबुद्धिनाम दोभाई रहतेथे वह दोनो परदेशमें जाकर दोहजारअशर्फी कमालाये और अपने देशमे आके किसीवृक्षके नीचे वह अशर्फी गाडकर अपनेघरोको चलेगये और सौ अशर्फी जो उसमेंसे बचारक्खीथी वह वरावर बाटके अपना २ खर्चकरनेलगे एकसमय दुष्टबुद्धिने अकेलेही उस वृक्षके नीचे जाकर वह सव अशर्फीखोदलीं और घरमे आकर धर्मबुद्धिसेकहा कि हे भाई चलो वहासे वह सवअशर्फीलेआवें क्योंकि मुझे कुछ आवश्यकताहै यह सुनकर धर्मबुद्धि ने उसकेसाथ वहाजाकर वहस्थान जहा अशर्फी गाडीथीं खोदा परन्तु अशर्फी नहीमिलीं तब दुष्टबुद्धिने उससेकहा कि तूनेही अशर्फियाली हैं मेराहिस्सा मुझेदेदे यह सुनकर धर्मबुद्धिने कहा कि तैनेही ली हैं मैंने नहींलीं इसप्रकार कलहहोने पर दुष्टबुद्धि पत्थर से अपना शिर पीटताहुआ धर्मबुद्धिको न्यायालय (कचहरी) में लेगया वहा उनदोनोंने अपना २ पक्ष अधिकारियोंके आगेकहा उन दोनो के पक्षको सुनकर राजाके अधिकारियों ने कुछ निर्णय न करके उन्हें दिनभर कचहरी मे बैठालरक्खा सायकालके समय दुष्टबुद्धिने उनसे कहा कि जिसवृक्षके नीचे अशर्फी गाडीथी वेही वृक्ष मेरा साक्षी है वह कहताहै कि धर्मबुद्धि अशर्फी खोदलेगया उसके यह वचनसुनकर उनलोगोने वहुत आश्चर्य्ययुक्तहोकर कहा कि प्रातःकाल चलकर हम उसे देखेंगे और जामनीलेकर उन दोनो को छोडदिया दुष्टबुद्धिने अपने घरमे आकर अपने मित्र किसी छलीपुरुषको कुछ धनदेकर रात्रिको जाकर उसीवृक्षके खोलमें बैठालदिया और उससे कहदिया कि तुम राजा के अधिकारियोंसे कहदेना कि धर्मबुद्धि अशर्फी लेगया और यह कहकर अपने घरचलाआया प्रातःकाल राजाके अधिकारियों ने उन दोनों को अपने साथ लेजाकर उसवृक्षसे पूछा कि अशर्फी कौन लेगया तब उसमें से यह शब्दआया कि धर्मबुद्धि अशर्फी लेगया है उस शब्दको सुनकर उन अधिकारियोंने जानलिया कि दुष्टबुद्धिने इस वृक्षमे किसीको बैठायाहै यह समझकर उन्हों ने उस वृक्ष मे आगलगानेका विचारकिया तो वह पुरुष भयभीतहोकर उसमेंसे निकलआया और बोला कि इसदुष्टबुद्धिने मुझे कुछ धनदेकर इस वृक्षमे बैठायाथा यह सुनकर उन लोगोने धर्मबुद्धिको दुष्टबुद्धिसे अशर्फी दिलवादीं और उसके हाथ काटकर देशसे बाहर निकालदिया और धर्मबुद्धि का बडा सत्कार किया इसप्रकार अन्यायसे कियागया काम अशुभफलदायी होता है इससे न्यायपूर्व्वक कार्य्य करना श्रेष्ठहै जैसे कि वगलेने सर्पकेलिये कियाथा वह में तुमसे कहताहूं पूर्व्व समयमें कोईसर्प किसी बगलेके बच्चोंको खाजायाकरताथा इससे उसबगलेने बहुत दुःखीहोकर किसी केंकड़ेके उपदेशसे मछलियोंका मासलेकर किसीनौलेके विलसे सर्पके विलतक विछादिया तब वहनौला अपने बिलसे निकलकर उसी बिछेहुए मासको खाताहुआ सर्प के विलपरपहुचा और वहा उसने सर्पके बिलमें घुसकर उसकेबालबच्चों समेत सर्पको मारडाला इसप्रकार उपायसे सब कार्य्य सिद्धहोते हैं इस विषयपर में एक और कथा तुम

होगया और सबलोग उसमूर्खमन्त्रीका उपहासकरनेलगे अब आप लवणखानेवालेकी कथासुनिये कि किसी ग्राममें गह्वरनाम एक महामूर्खपुरुष रहताथा एकदिन उसके किसी नगरनिवासी मित्र ने उसे अपने यहा लेजाकर बहुतस्वादिष्ट निमकीन भोजनकरवाये भोजनके उपरान्त गह्वरने अपनेमित्रसे पूछा कि अन्नमें यह किसवस्तुका स्वादथा उसने कहा कि विशेषकरके लवणका स्वादथा यह सुनकर उसने नोनको बड़ा स्वादिष्टजानके मुट्ठीभरपिसाहुआ नोनफाकलिया इससे उसकेहोठ तथा मूछें श्वेत होगई और लोग उसे देखकर बहुतहँसे नोनखानेवालेकी कथा आपनेसुनी अब गौदुहनेवालेकी कथा सुनिये किसीग्रामीणकेपास एकगौथी वह पाचसेरदूध रोजदेतीथी एकसमय उसके यहा कुछउत्सवहोनेकोथा इससे उसने महीनेभर पहलेगौका दोहना इसलिये बन्दकरदिया कि इकट्ठाही सबदुहलूंगा जब उत्सवकादिनआया तो वह उसगौको दोहनेलगा और गौनेपैसाभरभी दूधनहींदिया इससे वह महादुःखीहुआ और लोग उसके वृत्तान्तको सुनकर बहुतहँसे यह गौदुहनेवालेकी कथा आपनेसुनी अब अन्यदोमूर्खोंकी कथासुनिये तांबेकेघड़ेके समान गंजेशिरवाला एक मूर्खमनुष्य किसी वृक्षकेनीचे बैठाथा उसेदेखकर कोई भूखातरुण पुरुष अपने पासकेकैथे उसके शिरपरमारनेलगा और वह मूर्खशिरसे रुधिरबहनेपरभी कुछ न बोला मारते २ जब सब कैथे निबटगये तब वह तरुण पुरुषन्यर्थ क्रीडाकरके कैथोंको भी खोकर भूखा अपनेघरगया और वह मूर्खभी यह कहकर कि स्वादिष्टकैथोंकी मार मैं कैसे न सहू वहा मे रुधिरबहाताहुआ चलागया मूर्खोंके राज्यकी पगड़ीके समान उसके शिरमें रुधिर देखकर सबलोग हँसे इसप्रकारसे हेस्वामी निर्बुद्धिलोग लोकमें उपहासको प्राप्तहोते हैं और उनका कुछ प्रयोजनसिद्ध नहीं होताहै गोमुखसे मूर्खोंकी इनकथाओंको सुनकर नरवाहनदत्तने उठकर अपना आह्निकक्रिया ५६ रात्रिकेसमय फिर उत्कंठितहुए नरवाहनदत्तकी आज्ञासे गोमुख यह अपूर्व बुद्धिमत्ताकी कथा कहनेलगा कि किसी वनमें एक बहुतबड़ा सेमरका वृक्षथा उसपर लघुपातीनाम कौआ रहताथा एकसमय अपने घोंसलेमें बैठेहुए उसकौएनेदेखा कि जाल तथा लाठी हाथमेंलिये कोई भयकरपुरुष वहां आकर जालफैलाके और उसपर चावलडालकर अलगजाके छिपकरबैठा इतनेमें कबूतरोंका स्वामीचित्रग्रीव कबूतर अपने सैकड़ों कबूतरोंसमेत वहा आया और चावलोंको देखकर लोभसे उनके खानेके लिये अपने सबसाथियों समेत जालमें फँसगया तब चित्रग्रीव ने सब कबूतरोंसे कहा कि चोंचोंसे इस जाल को पकड़कर बड़ेवेगसे तुमलोग आकाशमेंउड़ो उसकी इसआज्ञासे सबकबूतर जालकोलेकर उड़चले और बहेलिया इसआशामें कि अब यह कहींगिरेंगे बहुतदूरतक उनके पीछे २ दौड़ा परन्तु जब वह दृष्टिसेभी दूरपर निकलगये तब लाचारहोकर लौटआया उसेलौटाजानकर चित्रग्रीव निर्भयहोकर अपने साथियोंसेबोला कि मेरेमित्र हिरण्यकनाम चूहेकेपासचलो वह हमको इसजालको काटकर छुटावेगा यह कहकर वहउनसबकोलेकर हिरण्यकके बिलकेपासजाके आकाशसेउतरा और बिलकेद्वारपरचिल्लाके बोला कि हे हिरण्यक बाहरनिकलो तुम्हारा मित्र चित्रग्रीव मैं आयाहूं उसके यहवचनसुनके हिरण्यकने अपने सौद्वारवाले बिलमें निकलकर उसका सब वृत्तान्त पूछके उसजालको काटदिया जालके कटजाने

कामपड़ताहै इससे इन दोनोंको एकसाथ रखदियाकरू तो बहुत शीघ्रतासे मिलजायाकरेंगे यह शोच कर वहरात्रिकेसमय पानी के घड़े में अग्निडालकर सोरहा प्रातःकाल जब उठकर उसने देखा तो आग बुझगईथी और जल कोयलोंसे कालाहोगया था यह देखकर वह उदासहोगया और सबलोग उसकी मूर्खतापर हँसनेलगे यह जल में आगडालनेवालेकी कथाहुई अब नाकनढानेवालेकी कथासुनिये कहीं एक बडाही मूर्खपुरुषरहताथा उसकी स्त्रीकी नाक बहुत चपटीथी और गुरूकी नाक बहुत ऊंचीथी एक दिन उसने अपने गुरूको सोते देखकर उनकी नाककाटली और अपनी स्त्रीकी नाककाटकर उसकी जगह गुरूकी लम्बीनाक लगानीचाही परन्तु वह नहीं लगी इसप्रकार से उसने उन दोनों को नकटा करडाला अब आप एक वनवासी पशुपालकी कथासुनिये कि कहीं किसी वन में एक बड़ा धनवान् महामूर्ख पशुपालरहता था उसके साथ कितनेही दगाबाजों ने मित्रताकरके उससे कहा कि किसी नगर वासी धनवान् ने अपनी कन्याका विवाह तुम्हारेसाथ करनेकहाहै यह सुनकर उसने प्रसन्नहोकर उनको थोड़ासा धनदिया कुछदिनों के पीछे उन्हों ने उससे कहा कि तुम्हारा विवाहहोगया यह सुनकर उसने प्रसन्नहोकर उनको बहुतसा धनदिया फिर कुछदिनों के पीछे उन्हों ने उससे कहा कि तुम्हारे पुत्रहुआ है यह सुनकर उसने अत्यन्त प्रसन्नहोके अपना सब धन उनको देदिया और दोदिनके उपरान्त हाय२पुत्र कहा है यह कहकर रोनेलगा धूर्तों से ठगेगये पशुओं के समानजड उस पशुपाल के रोदनको सुनकर सबलोग हँसनेलगे ऐसे पशुपालकी आपने कथासुनी अब आभूषण पहरनेवालेकी कथासुनिये एक समय चोरों ने रात्रिकेसमय राजमन्दिर से कुछ आभूषणचुराकर कहींगाडे थे एक मूर्खग्रामीणने पृथ्वी खोदते २ उन आभूषणोंकोपाकर अपनी स्त्री को जाकर इसप्रकारसे पहराये कि करोंधनी उसके शिर में बाधी, हार कमर में, बिजुए हाथों में और कानों में ककन पहराये यह देखकर हँसतेहुए लोगों से प्रसिद्ध हुए आभूषणोंको जानके राजा ने उससे अपने आभूषणछीनलिये और उसे पशुके समान महामूर्ख जानकर छोड़दिया यह आभूषणवाले की कथा आपने सुनी अब रुईवाले की कथा सुनिये कोई मूर्ख पुरुष अपनी रुई बेचनेको बाजारमें गया वहा लोगों ने रुई बुरी और बिना साफ कहकर नहीं ली तो उस मूर्ख ने किसी सुनारको अग्नि में सुवर्ण तपाकर बेचते हुए देखकर अपनी रुई भी साफ करने के लिये अग्नि में डालदी इससे रुई जलगई और लोग उसकी मूर्खतापर हँसनेलगे यह रुईवालेकी कथा हुई अब आप खजूर काटनेवालोंकी कथासुनिये राजाके सेवकों ने कुछ ग्रामीणों को बुलाकर खजूर के फल लाने की आज्ञादी उन लोगों ने किसी खजूर के वृक्ष में से अपने आप गिरेहुए कुछ खजूर के फल पाकर सब खजूर के वृक्ष काटडाले और उनमें से फल तोडकर उन्हें फिर लगाना चाहा परन्तु वह नहीं लगे तब वह सम्पूर्ण मजूरलेकर राजाके पासआये राजाने खजूरोंका काटनाजानकर उन्हें बहुतसा दण्डदिया यह खजूरकाटनेवालोंकीकथाआपनेसुनी अब पृथ्वीमें गडेहुए धनदेखनेवालेकी कथासुनिये किसी राजाने कहींसे एक पृथ्वीको धनका देखनेवाला बुलवाया राजाके मूर्खमन्त्रीने ऐसा न होय यह भागजाय इसमे उसके नेत्र निकलवालिये इससे वह पृथ्वीके लक्षणों के देखने में असमर्थ

यहवचन सुनकर उसदूसरे सन्यासीने उससे कहा कि लोभ जीवोंका महादोषहै इसविषयपर मैं तुमको एककथा सुनाताहूं एकसमय में तीर्थाटन करते २ एकनगर में जाकर एकब्राह्मण के यहां टिका मेरे आगेही उसब्राह्मणने अपनी स्त्रीसे कहा कि आज पर्वका दिनहै ब्राह्मणोंको खिलाने के लिये कसरा बनाओ यहसुनकर उसने कहा कि तुम निर्धनहो तुम्हारे यहां कसरा कहासे आई तब उसब्राह्मण ने कहा कि हे प्रिये यद्यपि गृहस्थको सचयकरना उचितहै तथापि अति सचय नहीं करनाचाहिये इसवि-षयपर मैं तुमको एककथा सुनाताहूं १०० किसी वन में कोई बहेलिया बहुतसे जीवोंको मारकर उनके मांसको लेके किसी शूकरके पीछे धनुष चढाकर दौडा बाणके लगनेसे उसशूकरने घूमकर उसके अ-ण्डकोशोंमें ऐसी डाढमारी जिससे वहमरगया और वह शूकरभी बाणकी पीडासे मृत्युको प्राप्तहुआ दूरसे उनदोनोंकी यहदशा देखके कोई शृगाल वहांआया और शूकर व्याध तथा मांसको सचयकरनेके लिये छोडकर धनुषकी तांत चबानेलगा इससे वहधनुष टूटकर उसके पेट में ऐसालगा जिससे उसके प्राण निकलगये इससे बहुत सचय नहीं करनाचाहिये ब्राह्मणके यहवचन सुनकर उसकी ब्राह्मणीने सुखाने के लिये धूप में तिल फैलाये और फैलाकर जैसेही वहघरके भीतरगई वैसेही एक कुत्ता उनतिलों को जुठारगया तब वह तिल किसी काम के न रहे इससे लोभ केवल क्लेशही का कारण होताहै यह कह-कर उस दूसरे सन्यासी ने उससे कहा कि तुम्हारे पास कुदाली होय तो दो मैं युक्ति पूर्वक इस उ-पद्रवको दूरकरदूंगा यह सुनकर उसने उसे कुदाली लादी उस कुदाली से उसदूसरे सन्यासी ने मेरा बिल खोदकर वह हारतथा अन्य मेरी इकट्ठी की हुई सबवस्तु निकाललीं और अपने मित्र सन्यासीसे कहा कि इसीहारके तेजसे इसमूसे में इतनाबलथा यह कहके उसने वहहार अपने गलेमें पहनके और मेरा सबधन लेके निस्सन्देहहोकर अपने मित्रकेसाथ सोरहा उनदोनोंके सोजानेपर मैं फिर उसके अन्न के लेनेको उसके यहांगया तब उस सन्यासीने जगकर मेरे शिरमें लाठीमारी उससे मैं घायल होकर अपने बिलमें चलाआया और फिर मुझे यह शक्तिनहुई कि मैं दूसरी बार अन्नलेनेको जाऊं (अर्थोहि यौवनपुंसांतदभावश्चवार्द्धकं तेनास्यौजोबलरूप मुत्साहश्चापिहीयते) धनही मनुष्यों का यौवनहै और धनका अभावही वृद्धावस्था है क्योंकि धनकेविना ओज बल रूप तथा उत्साह यहसब नष्टहोजाते हैं, इसके उपरान्त अपने पेटभरनेमें भी मुझे असमर्थ देखकर सबमूसे मुझे छोडकर चलेगये ठीकहै (अ-वृत्तिकंप्रभुंभृत्या अपुष्पंभ्रमरास्तरुम्। अजलंचसरोहंसा मुंचन्त्यपिचिरोषितम्) जीविका रहित बहुत प्राचीन स्वामीको भी सेवक पुष्परहित वृक्षको भ्रमर और जल रहित तडागको हंस त्यागदेते हैं इसप्र-कारसे मैं वहां दुखितहोकर इसलघुपाती को मित्रपाके तुम्हारेपास आयाहूं हिरण्यक के यहवचन सुन-कर मन्थरने उससेकहा कि हे मित्र यह तुम्हाराही स्थान है यहांरहो और धैर्य्यकरो (गुणिनोनविदे शोऽस्तिनसतुष्टस्यचासुखं धीरस्यचविपन्नास्तिनासाध्यव्यवसायिनः) गुणवान के लिये कोई विदेशनहीं है सन्तोषीको कोई दुःखनहीं है धीरको कोई विपत्तिनहीं है और व्यवसाई को कुछ असाध्यनहीं है उस के इसप्रकार कहतेही व्याधों के भयसे भागाहुआ चित्राङ्गदनाम एक मृग वहां आया उनसबने उसे

परं चित्रग्रीव प्रेम पूर्व्वक उसके साथ वार्त्तालापकरके उसकी आज्ञालेकर अपने सर्व साथियों समेतउ-डगया इस सर्व चरित्रके देखने के लिये कबूतरों के पीछे २ आयाहुआ लघुपाती कौआ हिरण्यक को ऐसा मित्र वत्सल देखकर उसके बिलके द्वारपरजाकर बोला कि मैं लघुपाती नाम कौआ तुमको मित्र वत्सल देखकर और ऐसी २ आपत्तियों से उद्धार करनेवाला जानकर तुमसे मित्रताकरने को आयाहू यह सुनकर उस हिरण्यकने बिलके भीतरही से कहा कि भक्ष्य और भक्षककी मित्रता कैसे होसक्ती है इससे तुमजाओ मेरी तुम्हारी मित्रतानहीं सधैगी यह सुनकर लघुपातीने कहा कि तुम्हें खाकर मुझे क्षणभर तृप्तिहोगी और तुम्हारे साथ मित्रता करनेसे सदैव प्राणों की रक्षाहोगी इससे मैं शपथ खाकर कहताहू कि मै तुम्हारे साथ विश्वासघात कभी न करूंगा उसके इत्यादि बचनसुनकर हिरण्यकने बिलसे बाहर निकलकर उसके साथ मित्रताकी तबसे वह दोनों बडे प्रेम पूर्वक रहनेलगे कौआ तो मासके टुकडे लाकर और हिरण्यक चावलके कण लाकर एकसाथही बैठकर दोनों भोजन करते थे एकसमय लघुपातीने हिरण्यकसे कहा कि हे मित्र यहा से कुछदूरपर वनमें एकनदी है उसमें मन्थरक नाम कछुआ मेरा मित्ररहताहै मैं वहीं जाताहू क्योंकि वहा मासादिक भोजन सुखपूर्व्वक मिलतेहैं और यहां एक तो भोजन बडेकष्टसे मिलताहै दूसरे बहेलियोंका भय नित्य बनारहताहै लघुपातीके यहवचन सुनकर हिरण्यकने कहा कि मुझेभी वहीं लेचलो मैं तुम्हारे साथही रहूगा क्योंकि मुझे भी यहां बडा खेदहै उस खेदका कारण तुमसे वहीं चलकर कहूगा उसके यहवचन सुनके लघुपाती उसको चोंच में पकडकर आकाशमार्गसे वनकी नदीके तटपर लेगया वहा मन्थरकनाम कछुए ने उसका बड़ाअतिथि सत्कारकिया और कुशलपूछी कुशलके प्रसगसे लघुपाती ने उससे अपने आगमनका कारण और हिरण्यककी मित्रताकासबवृत्तान्त कहा तबमन्थरकने लघुपातीसे हिरण्यककी प्रशसा सुनके उसकेसाथ मित्रताकरके उससे देश त्यागनेके खेदका कारणपूछा तब हिरण्यकने मन्थरक और लघुपाती इनदोनों अपने मित्रों से अपनी यहकथा कही कि नगरके निकट अपने बिलमें रहते हुए मैंने रात्रि के समय राजमन्दिरसे एक हारलाकर अपने बिलमें रक्खा उसहारको देखकर मैं बडाबलवान् होगया औरबहुत-सा अन्न लानेलगा इससे बहुतसे मूसे मेरे पास आकर रहनेलगे उनदिनों में मेरे बिलके निकट एक कुटीमें एकसन्यासी रहताथा वहनित्य भिक्षासे बहुतसा अन्न लाकर खाके जो कुछ बचताथा उसेप्रात-कालके भोजनके निमित्त किसीपात्रमें रखकर खूटीमें टागदेताथा और भोजनको रखकर जब वहरात्रि के समय सोजाताथा तब मैं नित्य जाकर उसका सब भोजन उछल २ कर ढो लाताथा एकसमय उस सन्यासीका मित्र एकदूसरा सन्यासी वहांआया रात्रिकेसमय भोजनके उपरान्त वहअपने मित्रके साथ वार्त्तालाप करनेलगा उससमय मुझे अन्न लिये जाते देखकर वह सन्यासी बीच २ में एकबासके टुकडे से उसपात्रको खटखटाता जाताथा उसे बास खटखटाते देखकर दूसरे सन्यासीने उससे पूछा कि तुम मेरी बातको बे सुनी कर २ के यहक्या करतेहो तब उसने कहा कि यहा एकमूसा मेरा शत्रुहोगयाहै बहबहुत ऊंचे स्थानमें भी टॅगेहुए अन्नको उछल २ कर लेजाताहै उसीको मैं यहबास खटखटाकर डराताहूं उसके

यहवचन सुनकर उसदूसरे सन्यासीने उससे कहा कि लोभ जीवोंका महादोषहै इसविषयपर मैं तुमको एककथा सुनाताहूं एकसमय में तीर्थाटन करते २ एकनगरमें जाकर एकब्राह्मण के यहां टिका मेरे आगेही उसब्राह्मणने अपनी स्त्रीसे कहा कि आज पर्वका दिनहै ब्राह्मणोंको खिलाने के लिये कसरा बनाओ यहसुनकर उसने कहा कि तुम निर्धनहो तुम्हारे यहां कसरा कहा से आई तब उसब्राह्मण ने कहा कि हे प्रिये यद्यपि गृहस्थको सचयकरना उचितहै तथापि अति सचय नहीं करनाचाहिये इसविषयपर मैं तुमको एककथा सुनाताहूं १०० किसी वन में कोई बहेलिया बहुतसे जीवोंको मारकर उनके मांसको लेके किसी शूकरके पीछे धनुष चढाकर दौडा बाणके लगनेसे उसशूकरने घूमकर उसके अण्डकोशोंमें ऐसी डाढमारी जिससे वहमरगया और वह शूकरभी बाणकी पीडासे मृत्युको प्राप्तहुआ दूरसे उनदोनोंकी यहदशा देखके कोई शृगाल वहाआया और शूकर व्याध तथा मांसको सचयकरनेके लिये छोडकर धनुषकी तांत चबानेलगा इससे वहधनुष टूटकर उसके पेट में ऐसालगा जिससे उसके प्राण निकलगये इससे बहुत सचय नहीं करनाचाहिये ब्राह्मणके यहवचन सुनकर उसकी ब्राह्मणीने सुखाने के लिये धूप में तिल फैलाये और फैलाकर जैसेही वहघरके भीतरगई वैसेही एक कुत्ता उनतिलों को जुठारगया तब वह तिल किसी काम के न रहे इससे लोभ केवल क्लेशही का कारण होताहै यह कहकर उस दूसरे सन्यासी ने उससे कहा कि तुम्हारे पास कुदाली होय तो दो मैं युक्ति पूर्व्वक इस उपद्रवको दूरकरदूंगा यह सुनकर उसने उसे कुदाली लादी उस कुदाली से उसदूसरे सन्यासी ने मेरा बिल खोदकर वह हारतथा अन्य मेरी इकट्ठी की हुई सबवस्तु निकाललीं और अपने मित्र सन्यासीसे कहा कि इसीहारके तेजसे इसमूसे में इतनाबलथा यह कहके उसने वहहार अपने गलेमें पहनके और मेरा सबधन लेके निस्सन्देहहोकर अपने मित्रकेसाथ सोरहा उनदोनोंके सोजानेपर मैं फिर उसके अन्न के लेनेको उसके यहागया तब उस सन्यासीने जगकर मेरे शिरमें लाठीमारी उससे मैं घायल होकर अपने बिलमें चलाआया और फिर मुझे यह शक्तिनहुई कि मैं दूसरी बार अन्नलेनेको जाऊ (अर्थोहि यौवनपुसातदभावश्चवार्द्धकं तेनास्यौजोबलरूप मुत्साहश्चापिहीयते) धनही मनुष्यों का यौवनहै और धनका अभावही वृद्धावस्था है क्योंकि धनकेबिना ओज बल रूप तथा उत्साह यहसब नष्टहोजाते हैं, इसके उपरान्त अपने पेटभरनेमें भी मुझे असमर्थ देखकर सबमूसे मुझे छोडकर चलेगये ठीकहै (अवृत्तिकप्रभुभृत्या अपुष्पभ्रमरास्तरुम्। अजलचसरोहसा मुचन्त्यपिचिरोषितम्) जीविका रहित बहुत प्राचीन स्वामीको भी सेवक पुष्परहित वृक्षको भ्रमर और जल रहित तडागको हस त्यागदेते हैं इसप्रकारसे मैं वहा दुखितहोकर इसलघुपाती को मित्रपाके तुम्हारेपास आयाहूं हिरण्यक के यहवचन सुनकर मन्थरने उससेकहा कि हे मित्र यह तुम्हाराही स्थान है यहांरहो और धैर्य्यकरो (गुणिनोनविदेशोस्तिनमतुष्टस्यचासुख धीरस्यचनिपन्नास्तिनासाध्यव्यवसायिन) गुणवान् के लिये कोई विदेशनहीं है सन्तोषीको कोई दुःखनहीं है धीरको कोई विपत्तिनहीं है और व्यवसाई को कुछ असाध्यनहीं है उस के इसप्रकार कहनेही व्याधो के भयसे भागाहुआ चित्राङ्गदनाम एक मृग वहा आया उनसबने उसे

परं चित्रग्रीव प्रेम पूर्व्वक उसके साथ वार्त्तालापकरके उसकी आज्ञालेकर अपने सर्व साथियों समेतउ-डगया इस सर्व चरित्रके देखने के लिये कबूतरों के पीछे २ आयाहुआ लघुपाती कौआ हिरण्यक को ऐसा मित्र वत्सल देखकर उसके बिलके द्वारपरजाकर बोला कि मैं लघुपाती नाम कौआ तुमको मित्र वत्सल देखकर और ऐसी २ आपत्तियों से उद्धार करनेवाला जानकर तुमसे मित्रताकरने को आयाहूं यह सुनकर उस हिरण्यकने बिलके भीतरही से कहा कि भक्ष्य और भक्षककी मित्रता कैसे होसक्ती है इससे तुमजाओ मेरी तुम्हारी मित्रतानहीं सधैगी यह सुनकर लघुपातीने कहा कि तुम्हें खाकर मुझे क्षणभर तृप्तिहोगी और तुम्हारे साथ मित्रता करनेसे सदैव प्राणों की रक्षाहोगी इससे मैं शपथ खाकर कहताहूं कि मै तुम्हारे साथ विश्वासघात कभी न करूंगा उसके इत्यादि वचनसुनकर हिरण्यकने बिलसे बाहर निकलकर उसके साथ मित्रताकी तबसे वह दोनों बडे प्रेम पूर्वक रहनेलगे कौआ तो मासके टुकडे लाकर और हिरण्यक चावलके कण लाकर एकसाथही बैठकर दोनों भोजन करते थे एकसमय लघुपातीने हिरण्यकसे कहा कि हे मित्र यहा से कुछदूरपर वनमें एकनदी है उसमें मन्थरक नाम कछुआ मेरा मित्ररहताहै मै वहीं जाताहूं क्योंकि वहा मासादिक भोजन सुखपूर्व्वक मिलतेहैं और यहां एक तो भोजन बडेकष्टसे मिलताहै दूसरे बहेलियोंका भय नित्य बनारहताहै लघुपातीके यहवचन सुनकर हिरण्यकने कहा कि मुझेभी वहीं लेचलो मैं तुम्हारे साथही रहूंगा क्योंकि मुझे भी यहा बडा खेदहै उस खेदका कारण तुमसे वहीं चलकर कहूंगा उसके यहवचन सुनके लघुपाती उसको चोंच में पकडकर आकाशमार्गसे वनकी नदीके तटपर लेगया वहा मन्थरकनाम कछुए ने उसका बड़ाअतिथि सत्कारकिया और कुशलपूछी कुशलके प्रसगसे लघुपाती ने उससे अपने आगमनका कारण और हिरण्यककी मित्रताकासववृत्तान्त कहा तबमन्थरकने लघुपातीसे हिरण्यककी प्रशसा सुनके उसकेसाथ मित्रताकरके उससे देश त्यागनेके खेदका कारणपूछा तब हिरण्यकने मन्थरक और लघुपाती इनदोनों अपने मित्रों से अपनी यहकथा कही कि नगरके निकट अपने बिलमें रहते हुए मैंने रात्रि के समय राजमन्दिरसे एक हारलाकर अपने बिलमें रक्खा उसहारको देखकर मैं बडाबलवान् होगया औरबहुत-सा अन्न लानेलगा इससे बहुतसे मूसे मेरे पास आकर रहनेलगे उनदिनों में मेरे बिलके निकट एक कुटीमें एकसन्यासी रहताथा वहनित्य भिक्षासे बहुतसा अन्न लाकर खाके जो कुछ बचताथा उसेप्रातः-कालके भोजनके निमित्त किसीपात्रमें रखकर खूटीमें टागदेताथा और भोजनको रखकर जब वहरात्रि के समय सोजाताथा तब मैं नित्य जाकर उसका सब भोजन उछल २ कर ढो लाताथा एकसमय उस सन्यासीका मित्र एकदूसरा सन्यासी वहांआया रात्रिकेसमय भोजनके उपरान्त वहअपने मित्रके साथ वार्त्तालाप करनेलगा उससमय मुझे अन्न लिये जाते देखकर वह सन्यासी बीच २ में एकबासके टुकडे से उसपात्रको खटखटाता जाताथा उसे बास खटखटाते देखकर दूसरे सन्यासीने उससे पूछा कि तुम मेरी बातको बे सुनी कर २ के यहक्या करतेहो तब उसने कहा कि यहा एकमूसा मेरा शत्रुहोगयाहै वहबहुत ऊंचे स्थानमें भी टँगेहुए अन्नको उछल २ कर लेजाताहै उसीको मैं यहबास खटखटाकर डराताहूं उसके

यहवचन सुनकर उसदूसरे सन्यासीने उससे कहा कि लोभ जीवोंका महादोषहै इसविषयपर मैं तुमको एककथा सुनाताहूं एकसमय में तीर्थाटन करते २ एकनगर में जाकर एकब्राह्मण के यहां टिका मेरे आगेही उसब्राह्मणने अपनी स्त्रीसे कहा कि आज पर्वका दिनहै ब्राह्मणोंको खिलाने के लिये कसरा बनाओ यहसुनकर उसने कहा कि तुम निर्धनहो तुम्हारे यहां कसरा कहा से आई तब उसब्राह्मण ने कहा कि हे प्रिये यद्यपि गृहस्थको सञ्चयकरना उचितहै तथापि अति सञ्चय नहीं करनाचाहिये इसविषयपर मैं तुमको एककथा सुनाताहूं १०० किसी वन में कोई बहेलिया बहुतसे जीवोंको मारकर उनके मांसको लेके किसी शूकरके पीछे धनुष चढाकर दौडा बाणके लगनेसे उसशूकरने घूमकर उसके अण्डकोशोंमें ऐसी डाढमारी जिससे वहमरगया और वह शूकरभी बाणकी पीडासे मृत्युको प्राप्तहुआ दूरसे उनदोनोंकी यहदशा देखके कोई शृगाल वहांआया और शूकर व्याध तथा मासको सञ्चयकरनेके लिये छोडकर धनुषकी तांत चबानेलगा इससे वहधनुष टूटकर उसके पेट में ऐसालगा जिससे उसके प्राण निकलगये इससे बहुत सञ्चय नहीं करनाचाहिये ब्राह्मणके यहवचन सुनकर उसकी ब्राह्मणीने सुखाने के लिये धूप में तिल फैलाये और फैलाकर जैसेही वहघरके भीतरगई वैसेही एक कुत्ता उनतिलों को जुठारगया तब वह तिल किसी काम के न रहे इससे लोभ केवल क्लेशहीका कारण होताहै यह कहकर उस दूसरे सन्यासी ने उससे कहा कि तुम्हारे पास कुदाली होय तो दो मैं युक्तिपूर्वक इस उपद्रवको दूरकरदूंगा यह सुनकर उसने उसे कुदाली लादी उस कुदाली से उसदूसरे सन्यासी ने मेरा बिल खोदकर वह हारतथा अन्य मेरी इकट्ठी की हुई सबवस्तु निकाललीं और अपने मित्र सन्यासीसे कहा कि इसीहारके तेजसे इसमूसे में इतनाबलथा यह कहके उसने वहहार अपने गलेमें पहनके और मेरा सबधन लेके निस्सन्देहहोकर अपने मित्रकेसाथ सोरहा उनदोनोंके सोजानेपर मैं फिर उसके अन्न के लेनेको उसके यहांगया तब उस सन्यासीने जगकर मेरे शिरमें लाठीमारी उससे मैं घायल होकर अपने बिलमें चलाआया और फिर मुझे यह शक्तिनहुई कि मैं दूसरी बार अन्नलेनेको जाऊं (अर्थोहि यौवनपुंसातदभावश्चवार्द्धकं तेनास्योजोबलरूपमुत्साहश्चापिहीयते) धनही मनुष्यों का यौवनहै और धनका अभावही वृद्धावस्था है क्योंकि धनकेबिना ओज बल रूप तथा उत्साह यहसब नष्टहोजाते हैं, इसके उपरान्त अपने पेटभरनेमें भी मुझे असमर्थ देखकर सबमूसे मुझे छोडकर चलेगये ठीकहै (अवृत्तिकमभुभृत्या अपुष्पंभ्रमरास्तरुम्। अजलञ्चसरोहंसा मुञ्चन्त्यपिचिरोषितम्) जीविका रहित बहुत प्राचीन स्वामीको भी सेवक पुष्परहित वृक्षको भ्रमर और जल रहित तडागको हंस त्यागदेते हैं इसप्रकारसे मैं बड़ा दुखितहोकर इसलघुपाती को मित्रपाके तुम्हारेपास आयाहूं हिरण्यक के यहवचन सुनकर मन्थरकने उससेकहा कि हे मित्र यह तुम्हाराही स्थान है यहांरहो और धैर्य्यकरो (गुणिनोनास्तिदेशोऽस्तिनसन्तुष्टस्यचासुखं धीरस्यचविपन्नास्तिनासाध्यं व्यवसायिनः) गुणवान् के लिये कोई विदेशनहीं है सन्तोषीको कोई दुःखनहीं है धीरको कोई विपत्तिनहीं है और व्यवसाई को कुछ असाध्यनहीं है उसके इसप्रकार कहतेही व्याधा के भयसे भागाहुआ चित्राङ्गदनाम एक मृग वहां आया उनसबने उसे

देखकर और उसकेपीछे व्याधकोआया न देखकर उसे सावधानकरके उसकेसाथ मित्रताकरली तबसे वहचारों परस्पर उपकार करतेहुए सुखपूर्व्वक वहारहनेलगे एकदिन चित्राङ्गदकोआया न देखकर लघुपातीने वृक्षपर चढके देखा कि नदीकेतटपर चित्राङ्गदजालमें फँसाहुआहै यह देखकर उसने हिरण्यक तथा मन्थरकसेकहा कि चित्राङ्गदजालमें फँसाहुआ है तब आपसमें सलाहकरके लघुपाती हिरण्यक को चोंचमे दवाकर चित्राङ्गदकेपासलेगया हिरण्यकने शीघ्रही उसका जालकाटदिया और नदीकेद्वारा मंथरकभी उसकेपास आया इतनेहीमें वह वहेलिया जिसने कि जाललगायाथा वहा आया उसे देखकर चित्राङ्गद हिरण्यक तथा लघुपाती यहतीनों तो भागगये और मथरक न भागसका इससे उस वहेलिये ने मथरकको पकडकर जालमे बाधलिया मथरकको फँसा देखकर आ समें सलाहकरके उसी वहेलियेके मार्गमे चित्राङ्गद मरेकेसमान लेटगया और लघुपाती उसपर वैठकर चोंचसे उसकेनेत्र कुरेदनेलगा यह देखकर वहवहेलिया जैसेही कछुएको नदीके तटपर रखकर मृगको लेनेकेलियेगया वैसेही हिरण्यकने उस मन्थरकके जालको काटदिया इससे वहनदीमे चलागया और उसवहेलियेको निकटआयादेखकर चित्राङ्गदभी उठकर भागगया उसे भगा देखकर वह वहेलिया लौट आया और कछुएको भी वहा न पाकर तथा जालको कटा हुआ देखकर भाग्यकी निन्दा करताहुआ अपने घरको चलागया तब वह चारों मित्र वहुत प्रसन्न होकर एकत्रित हुए और चित्राङ्गदने अपने तीनों मित्रोसे कहा कि मैं बडा पुण्यवान् हू जिसे ऐसे मित्र प्राप्तहुए कि जिन्होंने अपने प्राणोंकी भी उपेक्षा करके मुझे वचाया इसप्रकार प्रशसाकरतेहुए उसमृग के साथ वह तीनों परस्पर स्नेह करतेहुए सुखपूर्व्वक रहे इसप्रकार से पशु पक्षी भी बुद्धिके वलसे अपने मनोरथों को सिद्धकरते हैं और अपने प्राणोंकी भी उपेक्षाकरके आपत्तिकाल मे अपने मित्रोंकी रक्षा करते हैं इससे मित्रो में आसक्त होना अच्छाहै परन्तु ईर्ष्याकी मूल स्त्रियोंमें आसक्त होना अच्छा नहीं है इस विषयपर भी मैं आपको एक कथा सुनाताहू १४१ किसी नगरमें कोई बडा ईर्ष्यावान् पुरुष रहताथा उसकी स्त्री वडी रूपवतीथी वह अविश्वास करके उसे कभी अकेली नहीं छोडताथा एकसमय किसी आवश्यक कार्य्यके निमित्त वह अपनी स्त्रीको साथ लेकर परदेशको चला मार्ग में कुछ दूर चलकर आगे भील लोगोंका गाव जानकर उनके भयसे किसी ग्रामीण वृद्ध ब्राह्मणके यहा वह अपनी स्त्रीको छोडकर चलागया उसके चले जानेपर वह स्त्री उस ब्राह्मणके यहा रहकर एकदिन आयेहुए वहुतसे भिल्लोंमें मे किसी तरुणभिल्ल से स्नेह करके उसके साथ उसके ग्राममें जाकर उसीसे यथेच्छभोग करनेलगी कुछदिनोंके उपरान्त उसईर्ष्यावान् पुरुषने लौटकर उस वृद्धब्राह्मण से अपनीस्त्री मागी तब उस ब्राह्मणने कहा कि मैं नहीं जानताहू वहकहागई हा इतना मे कहसक्ताहू कि यहा वहुतसे भील आयेथे उन्हींके साथ वह चलीगई होगी उन भीलोंका गाव यहांसे निकटही है इससे तुम वहीं जाओ वहा उसका पता लगेगा उसके यह वचन सुनकर वह रोताहुआ भीलोंके गावमेंगया और वहा ढूढके अपनी स्त्रीके पासगया वह भी उसे देखकर भयभीत होकर वोली कि हेस्वामी मेरा कोई अपराध नहीं है मुझे एक भील जवरदस्ती यहा पकडलायाहै यहसुनकर उसने कहा कि अच्छा जो हुआ सो

हुआ अब शीघ्रतासे मेरे साथ भागचलो ऐसा न होय कि फिर कोई भील तुमको देखकर पकड़ले उस के यह वचन सुनकर वह बोली कि शिकार खेलकर उस भीलके आनेका यह समयहै वह आजायगा तो तुमको अवश्य मारडालेगा इससे इसगुफामें जाकर तुम छिपरहो रात्रिके समय जब वह भील सो- जाय तब उसे मारकर मुझे लेकर निर्भय चलेचलना उस कुलटाके यह वचन सुनकर वह मूर्ख उस की बताईहुई गुफामें चलागया ठीक है (कोवकाशोविवेकस्य हृदिकामाधचेतस) कामान्ध पुरुषों के चित्त में विवेकका अवकाश नहीं होताहै तदनन्तर सायकाल के समय आयेहुए भीलको उस कुलटा ने अपना पति दिखलादिया तब उस भीलने उसे गुफामें से निकाल के प्रातःकाल देवीजी के बलिदान के लिये एक वृक्षमें कसकर बाँधदिया और भोजन करके उसीके आगे उसकी स्त्री के साथ भोग करके शयन किया उसे सोया देखकर उस पुरुष ने बहुत व्याकुल होकर भगवती की बड़ी स्तुतिकी इससे भगवतीने प्रसन्न होकर उसे ऐसा वरदान दिया कि जिससे बन्धनों के शिथिल होजानेपर उसने उस भीलकेही खड्गसे उसका शिरकाटके अपनी स्त्री से जगाकर कहा कि चलो मैंने इसपापीको मारडाला उसके यह वचनसुनकर वह कुलटा अत्यन्त दुखित होके उसभील के शिरको छुपाके अपने साथ में लेकर उसके साथ चली और प्रातःकाल नगरमें पहुंचकर वह शिरदिखाकर तथा यहकहके कि इसने मेरे पतिको मारडाला है चिल्ला २ कर रोनेलगी उसको इसप्रकार रोतेदेखके पुरके रक्षक उनदोनों को पकड़कर राजाके पासलेगये राजाने उनदोनों से सब वृत्तान्त पूछकर और अपनी बुद्धिके बलसे तत्त्व को जानकर उस कुलटा स्त्री के नाक कानकटवालिये और उस मूर्खको छोड़दिया तब वह उसदुष्टस्त्री के स्नेहसे रहितहोकर अपने घरकोचलागया इसप्रकारसे हे स्वामी ईर्ष्यासे रोकीगई स्त्री ऐसेही कुकर्मकरती है (शिक्षयत्यन्यपुरुषा सगमीर्प्यैवहिस्त्रिय । तदीर्ष्यामप्रकाश्यैव रक्ष्यानारीसुबुद्धिना) ईर्ष्याही स्त्रियों को अन्य पुरुषोंसे सगकरना सिखाती है इससे ईर्ष्याको न प्रकटकरके बुद्धिमान्पुरुषको चाहिये कि स्त्री की रक्षाकरे और कल्याणचाहनेवाला पुरुष स्त्रियों से गुप्तवार्त्ता कभी न कहे इस विषयपर मैं आप को एक कथासुनाताहूं कोई सर्प गरुड़जी के भयसे भागकर मनुष्यकारूपधरके किसी वेश्याकेयहाआकर रहाथा और अपने प्रभावसे पाचसौ हाथी रोज उसको दियाकरताथा एकदिन उस वेश्याने उससे बहुत हठकरके पूछा कि आप कौनहै और इतने हाथी आपकेपास कहासेआतेहै उसने उसकी बड़ी हठदेखकर काम से मोहितहोकर कहा कि किसी से कहना मत मैं सर्पहूं गरुड़जी के भयसे मैं इसप्रकारका होकर तुम्हारेयहा छिपकर रहताहूं उससे यह बातसुनकर उस वेश्या ने अपनी कुटनी से एकान्त में कहदीनी इसबीचमें गरुड़जी भी पुरुषकारूप धारणकरके सब स्थानों में ढूंढतेहुए वहाआये और उस कुटनी से बोले कि आज मैं इस वेश्याके यहा रहनाचाहताहूं एकदिनका जो तुम्हारा मोल होताहोय सो मुझसे लेलो यह सुनकर उसने कहा कि एकसर्प पाचसौ हाथी रोजदेताहै तुमको एकदिन रखकर यह क्या करेगी उसके इन वचनोसे गरुड़जी ने उससर्पको वहा रहता जानकर अतिथिका स्वरूपधारणकरके उस वेश्याके मन्दिरमें जाकर सर्पको देखा और उसे मारकर खाडाला इससे बुद्धिमान्लोग स्त्रियोंमें अपनी

गुप्तबात नहीं कहते हैं यह कहकर गोमुख एक मूर्ख पुरुषकी कथा कहनेलगा कि किसी नगरमें ताम्बेके घटके समान कोई गंजे शिरवाला महा धनवान् मूर्ख पुरुष रहताथा उसे बालों के विना बड़ी लज्जा रहतीथी एकदिन किसी धूर्त्तने उससे आकरकहा कि एक वैद्यहै उसकेपास बालोंके उत्पन्न करने की औषधहै यहसुनकर उसने कहा कि जो तुम उसको लाओ तो मैं तुमको और उसवैद्यको दोनोंको बहुत सा धनदूंगा यह कहकर उसने उसे थोड़ासा धनदिया तब वह धूर्त्त किसी धूर्त्तही वैद्यको उसकेपासले- आया उस वैद्यने उससे बहुत कालतक अत्यन्त धनलिया और एकदिन अपना शिर खोलकर युक्ति पूर्व्वक उसे दिखादिया उसे देखकर भी उस मूर्खने जब उससे अपने बालोंके लिये औषधमागी तो उस वैद्यने उससे कहा कि मैं तो आपही गंजाहूं मैं दूसरे के शिरमें कैसे बाल उत्पन्न करूं इसीसे मैंने अपना शिर खोलकर तुम्हें दिखलादिया था इतने परभी तुम नहीं समझेहो यह कहकर वह वैद्य चलागया इसप्रकार से धूर्त्तलोग जडबुद्धियोंसे धनलिया करते हैं यह बालोंके मूर्खकी कथा तो आपने सुनी अब तेलके मूर्खकी भी कथा आपसुनिये किसी धनवान् के यहां एक मूर्ख सेवक था एकसमय उस सेवक को उस धनवान्ने तेललेने के लिये बाजारमें भेजा वह किसी बणियेके यहाँ से तेल लेकर लौटा आ ता था मार्गमें किसी पुरुषने उससे कहा कि देखो यह तेलका पात्र नीचेसे टपकताहै इसे बचाओ यह सुनकर उसने उस पात्रकेनीचे के तलेको देखने के लिये उसे उलटकर देखा इसे वह सब तेल गिरपड़ा और सबलोग हँसनेलगे और उसके स्वामीने उसका यह वृत्तान्त सुनकर अपने घरसे उसे निकाल दिया इससे मूर्खका अपनी ही बुद्धिसे कामकरना अच्छा है उपदेश से उलटा फलहोता है यह तेलके मूर्खकी कथाहुई अब अस्थिके मूर्खकी कथा सुनिये किसी मूर्ख पुरुषकी पुश्चली स्त्री थी एक समय उस मूर्खके परदेश चलेजानेपर वह स्त्री अपनी दासीको शिक्षादेकर आनन्दभोगने के लिये किसी जार पुरुषके यहाँ चलीगई जब वह मूर्खपुरुष परदेशसे लौटकर अपने घरआया तो उस दासीने गद्गद वचन करके आसूभरके उससे कहा कि तुम्हारी स्त्री मरगई और उसे मैंने जलादिया यह कहकर उसने उसेश्मशानमें ले जाके किसी चितामें पड़ीहुई हड्डिया दिखादीं उन्हें देखकर वह बहुत रोकर तिलाज- लिदेके और उन हड्डियोंको तीर्थमें फेंकके महीने २ पीछे अपनी स्त्रीका श्राद्ध करनेलगा उस दासीने जिस ब्राह्मणके यहाँ उसकी स्त्री निकलकररही थी उसी ब्राह्मणको उस स्त्री समेत श्राद्धमें भोजनके लिये बुलाकर उस मूर्खसे कहा कि देखो तुम्हारी स्त्री सतीधर्म्मके प्रभावसे सदेह आकर इस ब्राह्मण के साथ भोजन करतीहै उसमूर्खने उसके वहवचन सत्यही मानलिये और वह पुश्चली महीने २ आकर अपनेही यहा उत्तम भोजनकरती रही इसप्रकारसे दुष्टस्त्रिया मूर्खोंको ठगाकरती हैं यह अस्थिके मूर्खकी कथा आपने सुनी अब चाण्डालकी कन्याकी कथा सुनिये २०३ किसी चाण्डालकी अत्यन्त रूपवती कन्याने सबसे श्रेष्ठ पुरुषकेसाथ अपने विवाह करने का निश्चयकिया एकसमय वह नगरके भ्रमणकर- ने के लिये निकलेहुए राजाको देखकर और उसे सबसे श्रेष्ठ जानकर उसीकेसाथ विवाह करने के नि- मित्त उसके पीछे २ चली मार्गमें मिलेहुए किसी मुनिको राजाने हाथीपर से उतरकर प्रणामकिया यह

देखकर वहकन्या राजासे भी मुनिको श्रेष्ठ समझकर उनके पीछे २ चली मुनिने वहासे चलकर मार्गमे मिलेहुए किसी शिवालयमे पृथ्वीपर गिरकर श्रीशिवजीको प्रणामकिया यह देखकर वह मुनिसे भी श्रेष्ठ श्रीशिवजीको जानकर मुनिकोछोडकर श्रीशिवजीको अपना पति बनानेकेलिये वहींरहीं क्षणभर में एककुत्ता वहा आया और जलहरीपर चढके जघा उठाके अपनीजातिके अनुसार काम करनेलगा यह देखकर वह उसकुत्तेको शिवजीसे अधिकजानकर उसीको अपना पति बनानेकेलिये उसके पीछे२ चली वह कुत्ता अपने स्वामीचाण्डालकेयहा जाकर उसके पैरोंपर लोटनेलगा यह देखकर उसचाण्डाल कन्याने कुत्तेसे उसचाण्डालको अधिकजानके उसीकेसाथ अपना विवाह करलिया इसप्रकार से मूर्ख लोग बहुत ऊचे बढकरभी अपनेहीस्थानमे आगिरतेहैं यह चाण्डाल कन्याकी कथाहुई अब आप एक मूर्ख राजाकी कथा सुनिये किसीनगरमें एकबडा धनवान् राजा अत्यन्त मूर्ख तथा कृपणथा एकदिन उसके हितचाहनेवाले मन्त्रियों ने उससेकहा कि हे स्वामी दानसे परलोकमें दुर्दशा नहींहोती है इससे आपभी दानकियाकरिये क्योंकि यह जीव तथा धन क्षणभगुरहै यह सुनकर उसनेकहा कि मै तभी दानदूगा जबकि में मरकर अपने को दुर्दशामें पडा देखूगा यहसुनकर वह मत्री अपनेहृदयमें हँसकर चुपहोरहे इसप्रकार से मूर्खलोग धनको नहीं छोडतेहैं चाहै धनही उनको छोडजाय यह मूर्ख राजाकी कथा आपने सुनी अब दो मित्रोंकी कथा सुनिये कान्यकुब्ज देशमें चन्द्रापीडनाम राजाके एक खल मुखनाम सेवकथा वह सदैव बाहरही भोजनकरके अपने घरमेजाताथा एकदिन उसकीस्त्रीने उससे पूछा कि तुम नित्यकहासे भोजनकरआते हो यह सुनकर उसनेकहा कि हेसुन्दरि मैं अपने मित्रके यहा मे भोजनकर आताहू इससंसारमे मेरे दोमित्रहैं एक कल्याणवर्मा नाम वैश्य वह भोजनादिकसे मेरा उप कार करताहै और दूसरा वीरबाहु अपनेप्राणोंसे भी मेरा उपकार करनेवालाहै यह सुनकर उसकीस्त्रीने उससेकहा कि तुम अपने दोनों मित्रोंको मुझेभी दिखाओ उसके कहनेसे वह अपनी स्त्रीकोसाथ लेकर पहले अपनेमित्र कल्याणवर्माके यहागया उसने उसका बडा सत्कारकिया और बडे उत्तम भोजनकराके बहुमूल्य वस्त्र तथा आभूषण पहराये इसप्रकार वह दिन उसके घरमें व्यतीतकरके खलमुख दूसरे दिन अपनीस्त्रीसमेत अपनेदूसरे मित्र वीरबाहुके यहागया वह उससमय जुआखेलरहाथा उसने जुआखेलतेही खेलतेउससे क्षेमपूछकर उसको बिदाकरदिया तबउसकीस्त्री ने उस अपने खलमुख पतिसे पूछा कि हेआर्य पुत्र कल्याणवर्माने आपका बडासत्कारकिया औरवीरबाहुने केवल आपकीक्षेमपूछकर स्वागतहीकिया तो आप इनदोनोंमें से वीरबाहुको क्यों श्रेष्ठ समझतेहो यह सुनकर उसनेकहा कि तुम मेरेदोनों मित्रों से जाकरकहो कि अकस्मात् राजा मेरे ऊपर कुपितहुआ है इससे तुमको इनदोनोंका भेद मालूमहो-जायगा यह सुनकर उसने प्रथम कल्याणवर्मा से जाकरकहा कि आर्यपुत्रपर राजा अकस्मात् कुपित हुआहै यह सुनकर वह बोला कि मै तो वैश्यहू बनाओ मैं राजाका क्याकरसक्ताहू उसके यहवचन सु-नकर उसने वीरबाहुसेभी यहीबात जाकरकही वह इसबातको सुनतेही ढाल तलवार लेकर दौडताहुआ खलमुखकेपास आया उसे देखकर खलमुखने उससे कहा कि मन्त्रियों ने राजाको शान्तकरदिया है

अब आप जाइये यह सुनकर वीरबाहु के चलेजानेपर उसने अपनी स्त्रीसे कहा कि हे प्रिये तुमने इन दोनों का अन्तर देखलिया उसके यह वचन सुनकर वह स्त्री अत्यन्त प्रसन्नहुई इसप्रकार दिखावे के मित्र और होतेहैं और यथार्थ मित्र अन्यहोते हैं (तुल्येपिस्निग्धतायोगेतैलंतैलघृतघृत) चिकनाई में समान होनेपर भी तेल तेलही है घी घीही है २३५ इस कथाको कहकर गोमुखने फिर कहा कि किसी मूर्ख पथिकने बहुत दूर चलके प्यासाहोकर नदीके किनारे पहुचकर भी जलनहीं पिया वहापर खडेहुए किसी अन्यपुरुषने उससेकहा कि तुम प्यासेहोकर भी जल क्यो नहीं पीतेहो उसनेकहा कि इतना जल मैं कैसे पियू यह सुनके वह हँसकर बोला कि जो तुम सब जलनहीं पियोगे तो क्या राजा तुमकोदड देगा उसके इसप्रकार हँसकर कहनेपर भी उसने जलनहीं पिया इसप्रकारसे मूर्खलोग जो काम सबनहीं करसक्ते हैं यथा शक्ति उसका एक अशभी नहीं करते हैं जलसे डरनेवाले की यहकथा आपने सुनी अब पुत्र घातीकी कथा सुनिये किसी दरिद्री मूर्ख पुरुषके बहुत से पुत्रथे एकसमय उसने एकपुत्रके मरजाने पर दूसरेको भी इसलिये आपही मारडाला कि मेरा एकपुत्र बहुत दूर मार्गमें अकेला कैसे जायगा तब सब लोगोने उसकी मूर्खतापर हँसके उसको अपने देशसे निकालदिया इसप्रकार मूर्ख लोग पशुओं के समान निर्विवेक होते हैं यहपुत्र घातीकी कथा आपने सुनी अब दूसरे एक बडेमूर्खकी कथा सुनिये लोगोंकेसाथ वार्त्तालाप करतेहुए किसी मूर्खने एक सुन्दर पुरुषको देखकर कहा कि यहमेरा भाई लगता है इससे मै इसका धनलेलेताहू और मैं इसका कोई नहीं हू इससे इसका कर्जा मुझे नहीं देना पडेगा उसके यहवचन सुनके वहसब लोग हँसदिये इसप्रकारसे स्वार्थान्ध मूर्खोंकी अत्यन्त विचित्रकथा होती है यह मूर्खकी कथाहुई अब ब्रह्मचारी के पुत्रकी कथा सुनिये किसी मूर्खने अपने मित्रोकेसाथ वार्त्ता लाप करने में अपने पिताकी प्रशसा करते२ कहा कि मेरा पिता बाल्यावस्थासेही बडा ब्रह्मचारीहै उस के समान कोई नहीं है यह सुनकर उसके मित्रोंनेकहा तो तुम्हारा जन्म कैसेहुआ तब उसनेकहा कि मै उसका मानसपुत्रहू यह सुनकर वहसब लोग बहुत हँसे इसप्रकारसे मूर्खलोग असबद्ध महा मिथ्या बातें कहा करते हैं यह ब्रह्मचारीके पुत्रकी कथा आपने सुनी अब एक ज्योतिषीकी कथा सुनिये कोई मूर्ख ज्योतिषी अपने देशमे जीविकासे रहित होकर अपनी स्त्री और पुत्र समेत परदेशको गया और वहा अपना मिथ्याज्ञान प्रकट करनेके लिये लोगोंके आगे अपने बालकको हृदयमे लगाकर रोनेलगा उसे रोते देखकर लोगोंने पूछा कि तुम क्यो रोतेहो उसनेकहा कि मै भूत भविष्य और वर्त्तमान तीनोंकाल की बाते जानताहू इससे मुझे मालूमहुआहै कि आज के सातवेंदिन यह बालक मरजायगा यह कहकर उसने उसदिनके सातवें दिन अपने बालकको मारडाला उस बालकको मरादेखकर लोगोंने विश्वास युक्तहोके उसको बहुतसा धनदिया और वह उसधनकोलेकर अपने घरको आया इसप्रकारसे मूर्खलोग धनकेलिये अपने पुत्रतकको मारडालते हैं परन्तु बुद्धिमान्लोग उनपर प्रसन्न नहीं होतेहैं यह ज्योतिषी की कथाहुई अब आप एक क्रोधी पुरुषकी कथा सुनिये किसी ग्राममें कोई पुरुष किसी मकानके बाहर खडा था और उसस्थानके भीतर कोई अन्यपुरुष अपने मित्रों से उसकी प्रशसाकररहाथा उन

मित्रोंमेसे एकनेकहा कि हे मित्र आपका कहना बहुतठीकहै परन्तु उसमें दो दोषहैं एकसाहस और दूसरा क्रोध यह सबबातें उसने बाहरहीसे सुनकर भीतरजाकर जिसने उसेक्रोधी और साहसी कहाथा उसके गलेमें कपडालपेटकर कहा कि अरेमूर्ख मैंने क्या साहस तथा क्रोधकिया है सो बताओ यह सुनकर सबलोग उससे हँसकरबोले कि इसकेही कहने से क्याहै तुमने तो आपही अपना क्रोध और साहस प्रकट करदिया इसप्रकारसे अपने प्रकटदोषकोभी मूर्खलोग नहीं जानतेहैं यह क्रोधी मूर्खकी कथाहुई अब कन्या बढानेवाले मूर्खराजाकी कथासुनिये किसीराजाके एकबडीस्वरूपवती कन्याउत्पन्नहुई उसने उसका बडासुन्दर रूपदेखकर वैद्योंको बुलाकरकहा कि कोई ऐसीऔषधदो जिससेमेरीकन्या बहुतजल्द बढजाय कि मैं किसीयोग्यवरकेसाथ इसका विवाहकरदूं यहसुनकर वैद्योंने उससेकहा कि हे महाराज औषध तो है परन्तु किसीदूरदेशमें है और उसका यहविधानहै कि जबतक वह औषध न आवे तबतक आप अपनी कन्याको अलक्षित करके रखिये उनके यहवचन सुनके उसराजाने अपनीकन्या उन्हेंसौंपदी कि आपही इसको अलक्षित करके रखिये राजाकी आज्ञापाके वह उस कन्याको अपनेघरलेगये और कईवर्षके उपरान्त जब वहतरुणहुई तो राजाके पासलेआये और बोले कि हेमहाराज औषधके प्रभावसे यह कन्या तरुण होगई उसकन्याको युवती देखकर राजाने उनको बहुतसाधनदिया इसप्रकारसे धूर्त्तलोग मूर्खोंकाधनहरते हैं यह कन्याबढानेवाले राजाकी कथाहुई अबधेलेके पैदाकरनेवाले मूर्खकी कथासुनिये किसी नगरनिवासी धनवान्के यहा एकग्रामीण सेवकथा वह सालभर नौकरीकरके किसी कारणसे नौकरीछोडके अपनेघरको चलागया उसके चलेजानेपर उस धनवान्ने अपनीस्त्रीसे पूछा कि हे प्रिये वह तुमसे कुछलेतो नहीं गयाहै उसने कहा हाँ धेलालेगयाहै यहसुनके वह दशपैसे खर्चकरके सेवकके घरपरजाकर अपना धेलालेआया उसकी इसचतुरता से सबलोग बहुतहँसे इसप्रकार से मूर्खलोग थोडे के निमित्त बहुतसा व्ययकरते हैं यह धेला लानेवालेकी कथाहुई अब पहचानरखनेवाले मूर्खकी कथासुनिये कि जहाजपर चढकर समुद्रमें जातेहुए किसीमूर्खका चाँदीकापात्र समुद्रमेंगिरपडा उसमूर्खने वहा भँवर आदि कीपहँचान देखली और विचारलिया कि जहाँ ऐसे भँवर पडतेहोंगे वहाँ से अपना पात्रनिकाललूंगा यह शोचकर उसने समुद्रके पारजाके किसी नदी में भँवर पडते देखकर कटोरा मिलने के लिये उसमें गोतामारा लोगोंने पूछा कि तुम क्यों गोतालगारहे हो तब उसने अपना सब अभिप्राय कहदिया इससे उसका बडा उपहासहुआ यह पहचानवाले मूर्खकी कथाहुई अब औषधबदले मे मांसदेनेवाले मूर्खकी कथासुनिये किसी मूर्खराजाने अपने महलपरसे दो पुरुषोंको देखा और उनपर प्रसन्नहोके उन्हें बुलाकर अपने यहा नौकर करलिया उनमें से एकने रसोई में से थोडासा मांसचुराया इससे राजाने पावभर मांस उसके शरीर मेंसे कटवालिया और जब मांसके कटनेसे वह पृथ्वीपर गिरकर तडफनेलगा तब अपने प्रतीहारसे कहा कि पावभरसे अधिक मांस इसे दिलवादो इसे बडी व्यथाहोरही है यह सुनकर प्रतीहारने अपने चित्तमें हँसकर कहा कि क्या शिरकाटने से मराहुआ मनुष्य भी शिरके देने से भी जीसक्ताहै और राजासे बहुत अच्छा कहके उसे वैद्योंके यहा लेजाके औषध लगवाके स्वस्थ करवा

अब आप जाइये यह सुनकर वीरवाहु के चलेजानेपर उसने अपनी स्त्रीसे कहा कि हे प्रिये तुमने इन दोनों का अन्तर देखलिया उसके यह वचन सुनकर वह स्त्री अत्यन्त प्रसन्नहुई इसप्रकार दिखावे के मित्र और होतेहैं और यथार्थ मित्र अन्यहोते हैं (तुल्येपिस्निग्धतायोगेतैलंतैलघृतघृत) चिकनाई में समान होनेपर भी तेल तेलही है घी घीही है २३५ इस कथाको कहकर गोमुखने फिर कहा कि किसी मूर्ख पथिकने वहुत दूर चलके प्यासाहोकर नदीके किनारे पहुचकर भी जलनहीं पिया वहांपर खड़ेहुए किसी अन्यपुरुषने उससेकहा कि तुम प्यासेहोकर भी जल क्यों नहीं पीतेहो उसनेकहा कि इतना जल में कैसे पियू यह सुनके वह हँसकर बोला कि जो तुम सब जलनहीं पियोगे तो क्या राजा तुमको दंड देगा उसके इसप्रकार हँसकर कहनेपर भी उसने जलनहीं पिया इसप्रकारसे मूर्खलोग जो काम सबनहीं करसक्ते हैं यथा शक्ति उसका एक अंशभी नहीं करते हैं जलसे डरनेवाले की यहकथा आपने सुनी अब पुत्र घातीकी कथा सुनिये किसी दरिद्री मूर्ख पुरुषके वहुत से पुत्रथे एकसमय उसने एकपुत्रके मरजाने पर दूसरेको भी इसलिये आपही मारडाला कि मेरा एकपुत्र वहुत दूर मार्गमें अकेला कैसे जायगा तब सब लोगोंने उसकी मूर्खतापर हँसके उसको अपने देशसे निकालदिया इसप्रकार मूर्ख लोग पशुओं के समान निर्विवेक होते हैं यहपुत्र घातीकी कथा आपने सुनी अब दूसरे एक वडेमूर्खकी कथा सुनिये लोगोंकेसाथ वार्त्तालाप करतेहुए किसी मूर्खने एक सुन्दर पुरुषको देखकर कहा कि यहमेरा भाई लगता है इससे मैं इसका धनलेलेताहू और मैं इसका कोई नहीं हू इससे इसका कर्जा मुझे नहीं देना पड़ेगा उसके यहवचन सुनके वहसव लोग हँसदिये इसप्रकारसे स्वार्थान्ध मूर्खोंकी अत्यन्त विचित्रकथा होती है यह मूर्खकी कथाहुई अब ब्रह्मचारी के पुत्रकी कथा सुनिये किसी मूर्खने अपने मित्रोंकेसाथ वार्त्तालाप करने में अपने पिताकी प्रशंसा करते२ कहा कि मेरा पिता वाल्यावस्थासेही वड़ा ब्रह्मचारीहै उस के समान कोई नही है यह सुनकर उसके मित्रोंनेकहा तो तुम्हारा जन्म कैसेहुआ तब उसनेकहा कि मैं उसका मानसपुत्रहू यह सुनकर वहसव लोग वहुत हँसे इसप्रकारसे मूर्खलोग असवद्ध महा मिथ्या बातें कहा करते हैं यह ब्रह्मचारीके पुत्रकी कथा आपने सुनी अब एक ज्योतिषीकी कथा सुनिये कोई मूर्ख ज्योतिषी अपने देशमे जीविकासे रहित होकर अपनी स्त्री और पुत्र समेत परदेशको गया और वहां अपना मिथ्याज्ञान प्रकट करनेके लिये लोगोंके आगे अपने वालकको हृदयसे लगाकर रोनेलगा उसे रोते देखकर लोगोंने पूछा कि तुम क्यों रोतेहो उसनेकहा कि मैं भूत भविष्य और वर्त्तमान तीनोंकाल की बातें जानताहू इससे मुझे मालूमहुआहै कि आज के सातवेंदिन यह वालक मरजायगा यह कहकर उसने उसदिनके सातवें दिन अपने वालकको मारडाला उस वालकको मरादेखकर लोगोंने विश्वास युक्तहोके उसको वहुतसा धनदिया और वह उसधनकोलेकर अपने घरको आया इसप्रकारसे मूर्खलोग धनकेलिये अपने पुत्रतकको मारडालते हैं परन्तु बुद्धिमान्लोग उनपर प्रसन्न नहीं होतेहैं यह ज्योतिषी की कथाहुई अब आप एक क्रोधी पुरुषकी कथा सुनिये किसी ग्राममें कोई पुरुष किसी मकानके वाहर खड़ा था और उसस्थानके भीतर कोई अन्यपुरुष अपने मित्रों से उसकी प्रशंसाकररहाथा उन

अजगरने कहा कि जिससे तुम भिक्षा मागोगी जो वह तुम्हें भिक्षा न देगा तो उसके शिरके सौटुकडे होजॉयगे यह सुनकर उस ब्राह्मणीने कहा जो ऐसाहै तो मैं आपही से अपने पतिकी भिक्षामागतीहूं उसके इसप्रकार कहनेपर उस अजगरने यज्ञसोमको जीताहुआही उगलदिया और दिव्यस्वरूप धारण करके उससे कहा कि मैं विद्याधरोंका स्वामी काचनवेगनाम विद्याधरहूं गौतमऋषि के शापसे मैं अजगर होगया था और पतिव्रतास्त्री के साथ वार्त्तालाप करनेतकही इस शापकी अवधिथी इससे मैं आज तुम्हारे साथ वार्त्तालाप करके शापसे छूटगयाहूं यह कहकर और रत्नोंसे उसदियेहुए सुवर्णपात्र को भरकर वह विद्याधर अन्तर्द्धान होगया तब वह दोनो अक्षय धनपाकर अपने घरमें आकर सुख पूर्वक रहनेलगे ठीकहै (सत्त्वानुरूपसर्वस्य धातासर्वंप्रयच्छति) ब्रह्मासबको सत्त्वके अनुसार सब कुछ देतेहैं अब एक और अन्य मूर्खपुरुषकी आप कथा सुनिये कि किसी कर्नाटदेशीने अपने पराक्रम से राजाको प्रसन्नकिया राजाने प्रसन्नहोके उससे कहा कि तुम अभीष्ट वरमागो तब उसने कहा कि आप अपने नपुंसक भाई को मुझे देदो ठीकहै (सर्वश्चित्तप्रमाणेन सदसद्वाभिवाञ्छति) अपने २ चित्तके अनुसार सबलोग अच्छी तथा बुरीवस्तु चाहतेहैं अब कुछ नहीं मागनेवाले मूर्खकी कथा सुनिये कि मार्ग में जातेहुए किसी मूर्खसे गाडीपर चढेहुए किसी पुरुष ने कहा कि जरातुम मेरी गाडीको बराबर कर दो यह सुनकर उसने कहा कि मुझे क्या मजूरी दोगे तब गाडीवालेने कहा कि कुछ नहीं दूंगा तब उसमूर्खने गाडी बराबरकरके कहा कि मुझे कुछनहींदो यहसुनकर वह गाडीवाला हँसनेलगा इस प्रकारसे हे स्वामी मूर्खलोग सदैव उपहास निन्दा तथा विपत्तियोंको प्राप्तहोतेहैं गोमुखसे इन सबकथाओं सुनकर मन्त्रियों समेत प्रसन्नहुए नरवाहनदत्तको तीनोंलोकों के विश्रामकी हेतु भूत निद्राआई ३३०॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशक्तियशोलम्बकेपंचमस्तरंगः ५॥

इसके उपरान्त प्रातःकाल नरवाहनदत्त उठकर अपनेपिता वत्सराज उदयनके दर्शनकरनेको गया वहां मगधराजका पुत्र पद्मावती का भाई सिंहवर्मा आयाहुआथा उसका स्वागत करके और उसीके साथ वार्त्तालाप तथा उसीके सत्कारमें वह दिन व्यतीतकरके और वहीं भोजनादिसे निवृत्तहोकर नरवाहनदत्त अपने मन्दिरमें आया वहां रात्रिके समय उसे शक्तियशा केलिये उत्कंठित देखकर उसके चित्तके प्रसन्नकरनेकेलिये गोमुख यह कथा कहनेलगा कि किसी वनमें बडी सघन छायावाला एक बर्गदका बडा वृक्षथा जो पक्षियोंके शब्दों से पथिकोंको मानो विश्रामकेलिये बुलाया करताथा उस वृक्षपर मेघवर्णनाम कौओंकाराजा रहताथा उस मेघवर्णका अवमर्दनाम उलूकों का राजा महाशत्रुथा एक दिन रात्रिके समय वह अवमर्द बर्गदके वृक्षपर आकर बहुतसे कौओंकोमारगया तब प्रातःकाल मेघवर्णने उड्डीवी आडीवी सडीवी प्रडीवी तथा चिरजीवीनाम मन्त्रियोंसे बुलाकर कहा कि हमारा शत्रु रात्रिके समय आकर रात्रिही में अनेककौओंको मारजाताहै इसमें इसका उपायसोचो ऐसा न होय कि वह आकर हमारा राज्यछीनले क्योंकि वह बडा बलवान् शत्रुहै यह सुनकर पहले उड्डीवीने कहा कि हे स्वामी शत्रुके बलवान् होनेपर केतो देशको त्यागना चाहिये अथवा शत्रुसे नम्रहोकर रहनाचा

दिया इसप्रकारसे मूर्खस्वामी न दण्डदेना जानते हैं और न कृपा करना जानतेहैं यह मूर्खराजाकी कथाहुई अब द्वितीय पुत्र चाहनेवाली मूर्खस्त्री की कथासुनिये किसी स्त्रीके एकही पुत्रथा उसने द्वितीय पुत्रकी अभिलाषा से किसी छलिन् तपस्विनी से कहा कि पुत्रहोनेका कोई उपाय मुझे बताओ उसने कहा कि यह जो तुम्हारा बालक पुत्रहै इसे देवताके आगेमारकर जो बलिचढाओ तो अवश्य तुम्हारे पुत्रहोगा उसके यह बचनसुनकर जब वह ऐसाही करनेको उद्यतहुई तो उसकी हितचाहने वाली किसी वृद्धस्त्री ने उससे कहा कि हे मूर्खनी तू अपने विद्यमान पुत्रकोमारकर अन्य पुत्र पाना चाहतीहै जो इसके मारनेपर भी तेरे पुत्र न हुआ तो क्या करेगी इसप्रकार उसके निषेध करने से वह उस मूर्खतासे निवृत्तहुई इसीप्रकार बहुधा दुष्टस्त्रियोंकी सगतिसे मूर्खस्त्रिया विना विचारे कार्य्य करने लगती हैं परन्तु साध्वी वृद्धास्त्रिया उन्हें निवारण करती है यह मूर्ख स्त्री की कथाहुई अब आवलेलाने वालेकी कथा सुनिये किसी गृहस्थने अपने मूर्खसेवकको यह आज्ञादी कि बागमें जाकर मीठे २ आमले तोडलाओ उसने बागमें जाकर आमले चख २ कर तोडे और सब जूठे आमलेलाकर अपने स्वामीसे कहा कि देखिये मैं आपके लिये चख-२ कर आमलेलायाहू यह सुनकर स्वामीने जूठे आमले देखकर उसे क्रोधकरके अपने घरसे निकालदिया इसप्रकारसे मूर्खलोग स्वामीके कार्य्यको नष्टकरके अपनेको भी नष्ट करतेहैं अब आप इन कथाओंके बीचमे दो भाइयोकी कथाको सुनिये ३६६ पाटलिपुत्र नगर मे यज्ञसोम और कीर्त्तिसोमनाम दो सगेभाई ब्राह्मण रहते थे इन दोनों के पास पिताका सञ्चयकिया हुआ बहुतसाधनथा कीर्त्तिसोम ने व्यवहार करके अपना भाग बहुत बढ़ाया परन्तु यज्ञसोमने भोगमें तथा दानमें अपना सब धनखर्च करडाला और निर्धनहोकर अपनी स्त्री से कहा कि हे प्रिये मैं यहा धनवान् होकररहाहू अब निर्द्धन होकर मुझसे यहा नही रहाजाता इससे परदेश चलना चाहिये यह सुनकर उसने कहा कि मार्गके खर्चविना कहा चलोगे इतने कहनेपर भी जब उसने बहुत हठकिया तब वह बोली कि जो अवश्य चलनाहीहै तो अपने छोटेभाई कीर्त्तिसोमसे कुछ धनमागलाओ उसके यह बचनसुनके वह कीर्त्तिसोमके पासगया और बोला कि हे भाई मैं परदेश जानाचाहताहू मुझे मार्ग के व्ययके निमित्त कुछधन दो यह सुनकर कीर्त्तिसोमकी स्त्रीने अपने पतिसे यह कहा कि इसने अपना सबधन तो खर्चकरडाला अब तुमसे मागनेआयाहै तुम इसे कहातकदोगे और जो तुम इसेदोगे तो जो कोई दरिद्रीहोगा वही तुमसे मागनेआया करेगा उसके यहवचनसुनकर कीर्त्तिसोमने यज्ञसोम को कुछ भी नहीं दिया तब यज्ञसोम वहा से आके अपनी स्त्री से सब वृत्तान्त कहके उसको साथलेकर परदेश को चला मार्गमें चलते२ किसी वनमे उसको किसी अजगरने निगल लिया यह देखकर उसकी स्त्री पृथ्वी में गिरकर रोदन करनेलगी तब उस अजगरने मनुष्य भाषामें उससे कहा कि तुम क्यों रोतीहो उस ब्राह्मणीने कहा कि कैसे न रोऊ यहा विदेशमें तुमने मेरा भिक्षाकापात्र हरलिया यह सुनकर अजगरने अपने मुखसे एक सुवर्णका पात्रनिकालकर उसको देदिया और कहा कि यह भिक्षाकापात्र लो उस पात्रको लेकर उस ब्राह्मणीने फिर कहा कि हे महाभाग मुझ स्त्री को इसमें कौन भिक्षादेगा

अजगरने कहा कि जिससे तुम भिक्षा मागोगी जो वह तुम्हें भिक्षा न देगा तो उसके शिरके सौटुकडे होजायगे यह सुनकर उस ब्राह्मणीने कहा जो ऐसाहै तो में आपही से अपने पतिकी भिक्षामागतीहू उसके इसप्रकार कहनेपर उस अजगरने यज्ञसोमको जीताहुआही उगलदिया और दिव्यस्वरूप धारण करके उससे कहा कि मैं विद्याधरोंका स्वामी काचनवेगनाम विद्याधरहू गौतमऋषि के शापसें मैं अजगर होगया था और पतिव्रतास्त्री के साथ वार्त्तालाप करनेतकही इस शापकी अवधिथी इससें मैं आज तुम्हारे साथ वार्त्तालाप करके शापसे छूटगयाहू यह कहकर और रत्नोंसे उसदियेहुए सुवर्णपात्र को भरकर वह विद्याधर अन्तर्द्धान होगया तब वह दोनो अक्षय धनपाकर अपने घरमें आकर सुख पूर्वक रहनेलगे ठीकहै (सत्त्वानुरूपसर्वस्य धातासर्वंप्रयच्छति) ब्रह्मासबको सत्त्वके अनुसार सब कुछ देते हैं अब एक और अन्य मूर्खपुरुषकी आप कथा सुनिये कि किसी कर्नाटदेशीने अपने पराक्रम से राजाको प्रसन्नकिया राजाने प्रसन्नहोके उससे कहा कि तुम अभीष्ट वरमागो तब उसने कहा कि आप अपने नपुंसक भाई को मुझे देदो ठीकहै (सर्वश्चित्तप्रमाणेन सदसद्वाभिवाञ्छति) अपने २ चित्तके अनुसार सबलोग अच्छी तथा बुरीवस्तु चाहते हैं अब कुछ नहीं मागनेवाले मूर्खकी कथा सुनिये कि मार्ग में जातेहुए किसी मूर्खसे गाडीपर चढेहुए किसी पुरुष ने कहा कि जरातुम मेरी गाडीको बराबर कर दो यह सुनकर उसने कहा कि मुझे क्या मजूरी दोगे तब गाडीवालेने कहा कि कुछ नहीं दूगा तब उसमूर्खने गाडी बराबरकरके कहा कि मुझे कुछनहींदो यहसुनकर वह गाडीवाला हँसनेलगा इस प्रकारसे हे स्वामी मूर्खलोग सदैव उपहास निन्दा तथा विपत्तियोंको प्राप्तहोते हैं गोमुखसे इन सबकथाओं सुनकर मन्त्रियों समेत प्रसन्नहुए नरवाहनदत्तको तीनोंलोकों के विश्रामकी हेतु भूत निद्राआई २३०॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशक्तियशोलम्बकेपंचमस्तरंग ५॥

इसके उपरान्त प्रातःकाल नरवाहनदत्त उठकर अपनेपिता वत्सराज उदयनके दर्शनकरनेको गया वहां मगधराजका पुत्र पद्मावतीका भाई सिंहवर्मा आयाहुआथा उसका स्वागत करके और उसीके साथ वार्त्तालाप तथा उसीके सत्कारमें वह दिन व्यतीतकरके और वहीं भोजनादिसे निवृत्तहोकर नरवाहनदत्त अपने मन्दिरमें आया वहां रात्रिके समय उसे शक्तियशा केलिये उत्कंठित देखकर उसके चित्तके प्रसन्नकरनेकेलिये गोमुख यह कथा कहनेलगा कि किसी वनमें बडी सघन छायावाला एक बर्गदका बडा वृक्षथा जो पक्षियोंके शब्दों से पथिकोंको मानो विश्रामकेलिये बुलाया करताथा उस वृक्षपर मेघवर्णनाम कौओंकाराजा रहताथा उस मेघवर्णका अवमर्दनाम उलूकों का राजा महाशत्रुथा एक दिन रात्रिके समय वह अवमर्द बर्गदके वृक्षपर आकर बहुतसे कौओंकोमारगया तब प्रातःकाल मेघवर्णने उड्डीवी आडीवी सडीवी प्रडीवी तथा चिरजीवीनाम मन्त्रियोंसे बुलाकर कहा कि हमारा शत्रु रात्रिके समय आकर रात्रिही में अनेककाकोंको मारजाताहै इससे इसका उपायसोचो ऐसा न होय कि वह आकर हमारा राज्यछीनले क्योंकि वह बडा बलवान् शत्रुहै यह सुनकर पहले उड्डीवीने कहा कि हे स्वामी शत्रुके बलवान् होनेपर वैसो देशको त्यागना चाहिये अथवा शत्रुसे नम्रहोकर रहनाचा-

हिये तदनन्तर आडीवीने कहा कि अभी कोई वडा भयनहीं है इससे शत्रुके आशयको तथा अपनी शक्तिको जानकर जैसा उचितहोगा सो किया जायगा तदनन्तर सडीवीने कहा कि हे स्वामी मृत्युअच्छीहै परन्तु शत्रुके आगे नम्रहोकर रहना अथवा देशका त्याग करना श्रेष्ठ नहीं है इससे उसके साथ हमलोगोंको युद्ध करनाचाहिये क्योंकि सहायवान् उत्साही वीरराजा सदैव शत्रुओंको जीतताहै तदनन्तर प्रडीवीने कहा कि वह बलवान् शत्रु युद्धमें जीतनेके योग्य नहीं है संधिकरके अवसरपाके उसे मारना चाहिये इन सबकी बातोंको सुनकर चिरंजीवी ने कहा कि कैसादूत और कैसी सन्धि कौओं के साथ उलूकोंका सदैवसे वैरचलाआताहै उसे कौन मिटासक्ता है यह बातमन्त्रसे सिद्धहोसक्ती है क्योंकि मन्त्रही राज्यका मूलहै यह सुनकर मेघवर्ण ने चिरंजीवी से कहा कि तुम वृद्धहो जो तुम्हे काकों के साथ उलूकों के वैर होने का कारण मालूम होय तो कहौ फिर पीछे से मन्त्र भी बताना यह सुनकर चिरंजीवी ने काकराज से कहा कि यह वचन का दोष है क्या आपने एक गधेकी कथा नहीं सुनीहै किसी धोबी ने अपने दुर्बल गधेको शेरका चमडा उढाकर नाज के खेतमे छोडदिया वह गधा बहुत दिनों तक अन्न खाया किया और उसे शेर जानकर किसी ने निवारण नहीं किया एक दिन कोई धनुषधारी खेती करनेवाला उसे देखके और सिंह जानके भयभीत होके कम्बल ओढकर नौहरे नौहरे चला उसे इसप्रकार से जाते देखकर वह गधा उसे भी गधा जानकर उच्चस्वरसे बुलानेलगा उस शब्द को सुनकर खेतीवाले ने उसे गधा जानकर वहां आके उसको मारडाला इसी प्रकार वचनकेही दोषसे उलूकों के साथ हमलोगों का वैर हुआ है पूर्वसमयमें पक्षियों का कोई राजा न था इससे सम्पूर्ण पक्षियोंने मिलकर उलूकको राज्य देनाचाहा इतने में एककौएने यहजानकर पक्षियो से कहा कि हे मूर्खो इसक्रूर पापी कुरूप अमंगलकारी उलूकको क्यों राज्यदेतेहो क्या हंस तथा कोकिलादिक पक्षी नहीं रहे किसी बडे प्रभाववालेको राजा बनानाचाहिये जिसके नामसेही सिद्धिहोय इसबातपर मैं तुमलोगों को एककथा सुनाताहूं कि चन्द्रसरनाम किसी निर्मलजलवाले तडागपर शिलीमुखनाम खरगोशोंका राजा रहताथा एकसमय अनावृष्टिके कारण अन्य जलाशयो के सूख जानेसे चतुर्दन्तनाम हाथियोंका राजा सम्पूर्ण अपने हाथियों समेत वहां जलपीनेको आया इससे हाथियो के पैरों से बहुतसे खरगोश कुचलगये तब उसहाथी के चलेजानेपर उस शिलीमुखने सभाकरके विजयनाम खरगोश से कहा कि यहगजराज जलका स्वाद जानगयाहै अब यह बारम्बार यहां आवेगा इससे सबखरगोशोंका नाशहोजायगा इस हेतुसे इसका कोई उपाय शोचो और उसके पास जाकर कोई युक्तिकरो क्योंकि तुम कार्य्य उपाय तथा कहनेकी युक्ति जानतेहो जहां जहां तुम गयेहो वहां वहां सब कार्य्य सिद्धिहुये हे उसके यह वचन सुनकर वह विजयनाम खरगोश उसहाथीके पास एकऊंचेसे शिखरपर चढकर हाथी से बोला कि मैं चन्द्रमाका भेजाहुआ दूतहूं उन्होंने तुमसे कहाहै कि शीतल चन्द्रसर तडाग मेरे निजरहनेका स्थान है वहां जो खरगोश रहतेहैं उनका मैं राजाहूं और वह मेरे बडेप्रियहैं इसीसे मेरानाम भी शशी होगयाहै देखो तुमने मेरे तडागका नाशकियाहै और मेरे खरगोशोंको माराहै अब जो तुम फिर ऐसाकरोगे तो

मुझसे इसका दण्डपाओगे उसके यहवचन सुनकर हाथियोंके स्वामीने भयभीतहोकर कहा कि अब ऐसा अपराध में नहींकरूंगा यहसुनकर उसने कहा कि अच्छा तुम मेरे साथ चलकर उनके दर्शनकरके अपने अपराधोंको क्षमाकराओ यहकहके उसखरगोशने हाथियोंके राजाको अपने साथ लाकर तडाग में चन्द्रमाका प्रतिबिम्ब दिखाया उसप्रतिबिम्बको देखकर वहगजराज प्रणामकरके भयभीतहोकर अन्य वनको भागगया और फिर वहां कभी न गया विजय खरगोशकी यहयुक्ति देखकर शिलीमुखने उसका बड़ा सत्कारकिया और उसीके बलसे निर्भयहोकर वहांरहा यहकहकर उसकौएने पक्षियों से फिर कहा कि ऐसाही स्वामी होनाचाहिये जिसके कि नामही से सब भय मिटजायँ इससे दिवान्ध क्षुद्र यह उलूक राज्यके योग्य नहींहै देखो क्षुद्रका विश्वास न करनाचाहिये इसबातपर भी मैं तुमको एक इतिहास सुनाता हूं एकसमय किसी वृक्षपर मैं रहताथा उसीवृक्षके नीचे एक कपिञ्जल पक्षीभी घोंसला बनाकर रहता था किसी समय वह कपिञ्जल कहीं चलागया और बहुत दिनतक नहीं आया इतने में एक खरगोश आकर उसके घोंसले में रहनेलगा कुछ दिनों में कपिञ्जलभी आया उससमय कपिञ्जल और खरगोश का परस्पर यह विवाद होने लगा कि यहघोंसला किसका है बहुत विवाद करके वह दोनों निर्णय करनेवाले किसी सभ्यको ढूंढने के लियेचले और मैं भी उनका कौतुक देखने को उनके पीछे २ चला कुछदूर चलकर किसी तडाग के निकट जीवहिंसा के लिये मिथ्याव्रतधारण किये हुए ध्यानसे आधानेत्र बन्दकरके बैठे हुए बिलावको देखकर उसे धर्मात्माजानकर वह दोनों निर्णय करानेकेलिये उसके कुछ समीपगये और उससे बोले कि हे भगवन् आप बड़े धर्मात्मा तपस्वीहो इससे आपही हमारा न्यायकरो यह सुनकर वह बिलाव धीरे से बोला कि तप करते २ मैं बहुत क्षीणहोगयाहूं इससे मुझे अच्छेप्रकार सुनाई नहींदेता अत्यन्त निकटआकरकहो तो मैं निर्णयकरूं क्योंकि अच्छे प्रकार निर्णयकरने से दोनों लोक नष्टहोतेहैं इसप्रकार से कहकर उन दोनोंको बिलाव ने अपने पास बुलाकर मारकेखाडाला इसप्रकार क्षुद्रकार्य्यकरनेवाले दुर्जनका कभी विश्वास न करनाचाहिये इससे इस दुष्ट उल्लूको कभी राजा मतबनाओ ५६ उस कौएके यह वचन सुनकर सम्पूर्णपक्षी उलूकको राज्य देना बन्दकरके इधर उधर चलेगये तब उलूक कौएसे बोला कि आजसे हमारी तुम्हारी शत्रुता है इसे यादरखना मैं जाताहूं यह कहकर वह चलागया और वह कौआ उसके वचन सुनकर अत्यन्त भयभीत होकर दुःखीहुआ ठीकहै (वाङ्मात्रोत्पादितासह्य वैरात्कोनानुतप्यते) वचन मात्र से उत्पन्नकिया गये असह्यवैर से किसको पश्चात्तापनहींहोता इसप्रकार वचनों के दोषसे काकों के साथ उलूकोंका वैरहुआहै यह कहकर चिरजीवी ने फिर कहा कि उलूक बहुतहैं और बलवान् हैं इससे हमलोग उन्हें नहीं जीत सक्ते बहुतोंका जयहोताहै इसबातपर मैं आपको एक दृष्टान्तदेताहूं कि कोईब्राह्मण किसीगांवसे बकरा मोललेकर कन्धेपररखकरचला मार्ग में बहुतसे धूर्तोंने उसे देखकर वह बकरालेनाचाहा उनमेंसे एक ने जाकर उस ब्राह्मणसे कहा कि हे ब्राह्मण यह कुत्ता तुमने अपने कन्धेपर क्यों रक्खाहै इसे छोड़दो उसके इसकहनेको न मानकर वहब्राह्मण उसे कन्धेपर रक्खेहीरहा तब अन्य दोधूर्तों ने ब्राह्मणसेकहा हे ब्राह्मण

हिये तदनन्तर आडीवीने कहा कि अभी कोई वडा भयनहीं है इससे शत्रुके आशयको तथा अपनी शक्तिको जानकर जैसा उचितहोगा सो किया जायगा तदनन्तर सडीवीने कहा कि हे स्वामी मृत्युअच्छीहै परन्तु शत्रुके आगे नम्रहोकर रहना अथवा देशका त्याग करना श्रेष्ठ नहीं है इससे उसके साथ हमलोगोंको युद्ध करनाचाहिये क्योंकि सहायवान् उत्साही वीरराजा सदैव शत्रुओंको जीतताहै तदनन्तर प्रडीवीने कहा कि वह वलवान् शत्रु युद्धमें जीतनेके योग्य नहीं है सन्धिकरके अवसरपाके उसे मारना चाहिये इन सबकी बातोंको सुनकर चिरजीवी ने कहा कि कैसादूत और कैसी सन्धि कौओं के साथ उलूकोंका सदैवसे वैरचलाआताहै उसे कौन मिटासक्ता है यह बातमन्त्रमें सिद्धहोसक्ती है क्योंकि मन्त्रही राज्यका मूलहै यह सुनकर मेघवर्ण ने चिरजीवी से कहा कि तुम वृद्धहो जो तुम्हें काकों के साथ उलूकों के वैर होने का कारण मालूम होय तो कहो फिर पीछे से मन्त्र भी वताना यह सुनकर चिरजीवी ने काकराज से कहा कि यह वचन का दोष है क्या आपने एक गधेकी कथा नहीं सुनीहै किसी धोबी ने अपने दुर्बल गधेको शेरका चमडा उढाकर नाज के खेतमें छोडदिया वह गधा बहुत दिनों तक अन्न खाया किया और उसे शेर जानकर किसी ने निवारण नहीं किया एक दिन कोई धनुषधारी खेती करनेवाला उसे देखके और सिंह जानके भयभीत होके कम्बल ओढकर नौहरे नौहरे चला उसे इसप्रकार से जाते देखकर वह गधा उसे भी गधा जानकर उच्चस्वरसे बुलानेलगा उस शब्द को सुनकर खेतीवाले ने उसे गधा जानकर वहा आके उसको मारडाला इसी प्रकार वचनकेही दोषसे उलूकों के साथ हमलोगों का वैर हुआ है पूर्वसमयमें पक्षियों का कोई राजा न था इससे सम्पूर्ण पक्षियोंने मिलकर उलूकको राज्य देनाचाहा इतनेमें एककौएने यहजानकर पक्षियों से कहा कि हे मूर्खो इसक्रूर पापी कुरूप अमंगलकारी उलूकको क्यों राज्यदेतेहो क्या हंस तथा कोकिलादिक पक्षी नहीं रहे किसी बडे प्रभाववालेको राजा वनानाचाहिये जिसके नामसेही सिद्धिहोय इसवातपर मैं तुमलोगों को एककथा सुनाताहूं कि चन्द्रसरनाम किसी निर्मलजलवाले तडागपर शिलीमुखनाम खरगोशोंका राजा रहताथा एकसमय अनावृष्टिके कारण अन्य जलाशयों के सूख जानेसे चतुर्दन्तनाम हाथियोंका राजा सम्पूर्ण अपने हाथियों समेत वहां जलपीनेको आया इससे हाथियों के पैरों से बहुतसे खरगोश कुचलगये तब उसहाथी के चलेजानेपर उस शिलीमुखने सभाकरके विजयनाम खरगोश से कहा कि यहगजराज जलका स्वाद जानगयाहै अब यह वारम्वार यहां आवेगा इससे सबखरगोशोंका नाशहोजायगा इस हेतुसे इसका कोई उपाय शोचो और उसके पास जाकर कोई युक्तिकरो क्योंकि तुम कार्य्य उपाय तथा कहनेकी युक्ति जानतेहो जहाँ जहाँ तुम गयेहो वहाँ वहाँ सब कार्य्य सिद्धिहुये हैं उसके यह वचन सुनकर वह विजयनाम खरगोश उसहाथीके पास एकऊंचेसे शिखरपर चढकर हाथी से बोला कि मैं चन्द्रमाका भेजाहुआ दूतहूं उन्होंने तुमसे कहाहै कि शीतल चन्द्रसर तडाग मेरे निजरहनेका स्थान है वहां जो खरगोश रहतेहैं उनकामैं राजाहूं और वह मेरे बडेप्रियहैं इसीसे मेरानाम भी शशी होगयाहै देखो तुमने मेरे तडागका नाशकियाहै और मेरे खरगोशोंको माराहै अबजो तुम फिर ऐसाकरोगे तो

मुझसे इसका दण्डपाओगे उसके यहवचन सुनकर हाथियोंके स्वामीने भयभीतहोकर कहा कि अब ऐसा अपराध में नहींकरूंगा यहसुनकर उसने कहा कि अच्छा तुम मेरे साथ चलकर उनके दर्शनकरके अपने अपराधोंको क्षमाकराओ यहकहके उसखरगोशने हाथियोंके राजाको अपने साथ लाकर तडाग में चन्द्रमाका प्रतिबिम्ब दिखाया उसप्रतिबिम्बको देखकर वहगजराज, प्रणामकरके भयभीतहोकर अन्य वनको भागगया और फिर वहां कभी न गया विजय खरगोशकी यहयुक्ति देखकर शिलीमुखने उसका बड़ा सत्कारकिया और उसीके बलसे निर्भयहोकर वहारहा यहकहकर उसकौएने पक्षियों से फिर कहा कि ऐसाही स्वामी होनाचाहिये जिसके कि नामही से सब भय मिटजायँ इससे दिवान्धक्षुद्र यह उलूक राज्यके योग्य नहींहै देखो क्षुद्रका विश्वास न करनाचाहिये इसबातपर भी मैं तुमको एक इतिहास सुनाताहूं एकसमय किसी वृक्षपर मैं रहताथा उसीवृक्षके नीचे एक कपिञ्जल पक्षीभी घोंसला बनाकर रहता था किसी समय वह कपिञ्जल कहीं चलागया और बहुत दिनतक नहीं आया इतने में एक खरगोश आकर उसके घोंसले में रहनेलगा कुछ दिनों में कपिञ्जलभी आया उससमय कपिञ्जल और खरगोश का परस्पर यह विवाद होने लगा कि यहघोंसला किसका है बहुत विवाद करके वह दोनों निर्णय करनेवाले किसी सभ्यको ढूंढने के लियेचले और मैं भी उनका कौतुक देखने को उनके पीछे २ चला कुछदूर चलकर किसी तडाग के निकट जीवहिंसा के लिये मिथ्याव्रतधारण किये हुए ध्यानसे आधानेत्र बन्दकरके बैठे हुए बिलावको देखकर उसे धर्मात्माजानकर वह दोनों निर्णय करानेकेलिये उसके कुछ समीपगये और उससे बोले कि हे भगवन् आप बड़े धर्मात्मा तपस्वीहो इससे आपही हमारा न्यायकरो यह सुनकर वह बिलाव धीरे से बोला कि तप करते २ मैं बहुत क्षीणहोगयाहूं इससे मुझे अच्छेप्रकार सुनाई नहींदेता अत्यन्त निकटआकरकहो तो मैं निर्णयकरूं क्योंकि अच्छे प्रकार निर्णयकरने से दोनों लोक नष्टहोतेहैं इसप्रकार से कहकर उन दोनोंको बिलाव ने अपने पास बुलाकर मारकेखाडाला इसप्रकार क्षुद्रकार्य्यकरनेवाले दुर्जनका कभी विश्वास न करनाचाहिये इससे इस दुष्ट उल्लूको कभी राजा मतबनाओ ५६ उस कौएके यह वचन सुनकर सम्पूर्णपक्षी उलूकको राज्य देना बन्दकरके इधर उधर चलेगये तब उलूक कौएसे बोला कि आजसे हमारी तुम्हारी शत्रुता है इसे यादरखना मैं जाताहूं यह कहकर वह चलागया और वह कौआ उसके वचन सुनकर अत्यन्त भयभीत होकर दुःखीहुआ ठीकहै (वाङ्मात्रोत्पादितासत्य वैरात्कोनानुतप्यते) वचन मात्र से उत्पन्नकिया गये असत्यवैर से किसको पश्चात्तापनहींहोता इसप्रकार वचनोंके दोषसे काकों के साथ उलूकोंका वैरहुआहै यह कहकर निरजीवी ने फिर कहा कि उलूक बहुतहैं और बलवान् है इससे हमलोग उन्हें नहीं जीत सके बहुतोंका जयहोनाहै इसबातपर मैं आपको एक दृष्टान्तदेताहूं कि कोईब्राह्मण किसीगांवसे बकरा मोललेकर कन्धेपररखकरचला मार्ग में बहुतसे धूर्तोंने उसे देखकर वह बकरालेनाचाहा उनमेंसे एक ने जाकर उस ब्राह्मणसे कहा कि हे ब्राह्मण यह कुत्ता तुमने अपने कन्धेपर क्यों रक्खाहै इसे छोड़दो उसके इसकहनेको न मानकर वहब्राह्मण उसे कन्धेपर रक्खेहीरहा तब अन्य दोधूर्तोंने ब्राह्मणसेकहा हे ब्राह्मण

यहकुत्ता तुमने कन्धेपर क्यों चढायाहे यहसुनकर वहब्राह्मण कुछ सन्देहयुक्तहोकर बकरेको कन्धेपर रक्खे हुएहीचला तब अन्य तीनधूर्त्तों ने उससे आगेजाकर कहा कि तुम ब्राह्मणहोके कुत्तेकोक्यों कन्धेपर चढातेहो हमजानते हैं कि तुम ब्राह्मणनहींहो व्याधहो इसीकुत्ते से जीवोंकी हिंसाकरवातेहो यह सुनकर उसब्राह्मणने शोचा कि किसीभूतने मेरीदृष्टिहरकर मुझे सन्देहकरानेको यहकुत्ता देदियाहे क्योंकि इन सबकीदृष्टि में अन्तर नहींहोसक्ताहे यहशोचकर वह उसबकरेको छोड स्नानकरके अपनेघरको चलागया और उनधूर्त्तों ने बकरेकोलेजाके और मारकेखाया यहकहकर उसचिरजीवीने मेघवर्ण से कहा कि हेस्वामी इसी हेतुसे बहुतसे बलवानोंका जीतना कठिनहै इससे अब जो मैं कहूं सो करो मेरेपंख कुछ नोचकर मुझे इसवृक्षके नीचे डालकर तुम सब इसपर्व्वतपर चलेजाओ में कार्य्यसिद्धकरके वहीं आऊंगा यह सुनके काकोंका राजा मेघवर्ण पंखनोचकर उसे वृक्षके नीचे डालकर अपने परिकरसमेत पर्वतपर चलागया इसके उपरान्त रात्रिके समय उलूकोंके राजा अवमर्द ने बहुतसे उलूकों सहित वहांआके वृक्षपर एक कौआ भी न देखा और नीचे चिरजीवी का मन्द २ रोदनसुनके उसकेपास जाकर उससे पूछा कि तुम कौनहो और किसने तुम्हारे पंखनोचे हैं यह सुनकर चिरजीवी धीरे २ बोला कि काकराज मेघवर्णका चिरजीवीनाममंत्रीहूं मेघवर्णने अपने मंत्रियों से सलाहकरके आपकेसाथ युद्धकरना चाहाथा यहदेखकर मैंने उससे कहा कि जो आप मेरीसलाह मानिये तो बलवान् उलूकराज के साथ विग्रह न करिये नम्र होकर उसकेसाथ संधि करलीजिये यह सुनकर काकराज मेघवर्ण मुझे शत्रुओं का पक्षपाती जानकर क्रोधसे मेरी यह दशाकरके अपने संपूर्ण परिकर समेत यहांसे कहीं चलागया यह कहके वह चिरजीवी नीचेको मुखकरके श्वास लेनेलगा और उसके यह वचन सुनकर अवमर्दने अपने मंत्रियोंसे पूछा कि इस चिरजीवीके लिये हमको क्या करना चाहिये यह सुनके दीप्तनयन नाम मंत्रीने कहा कि सज्जनलोग उपकारी चोरकी भी रक्षाकरते हैं पूर्व समय में किसी धनवान् वृद्ध वैश्यने धनके प्रभावसे किसी वैश्यकी युवती कन्यासे अपना विवाह करलिया वहस्त्री सदैव शैयापर उसकी ओर से मुखफेर कर सोया करतीथी क्योंकि वह वृद्धहोनेके कारण उसे अच्छा नहीं मालूमहोताथा एक समय रात्रिमें उसवैश्यके घरमें चोर आया उसे देखकर उसस्त्रीने भयभीत होके अपने पतिका आलिंगन किया उस आश्चर्य्यको जानके वैश्यने इधर उधर देखा तो उसे एक कोने में एक चोर खडाहुआ दिखाई दिया उस चोरसे वैश्यने कहा कि तुम हमारे बडे उपकारीहो इससे मैं तुमको पिटवाऊंगा नहीं तुम इसीसमय यहांसे भागजाओ यह कहकर उसने उस चोरको निकाल दिया इसप्रकारसे इस उपकारी चिरजीवीकी भी रक्षा करनीचाहिये यह कहकर दीप्तनयन के चुप होजानेपर अवमर्द ने वक्रनासनाम मन्त्री से पूछा कि अब तुम बतलाओ कि इस विषय में क्या करना अवश्य है यह सुनकर वक्रनास ने कहा कि इस चिरजीवीकी रक्षा करनी चाहिये क्योंकि यह शत्रुके मर्मको जानताहै इन राजा और मंत्रियोंके बैर से हमारा बडा उपकार होगा इसके दृष्टांतमें मैं आपको एक कथा सुनाता हूं किसी ब्राह्मण ने कहीं से दो गौएं पाई थीं उन गौओंको देखकर किसी चोरने उन्हें चुरालेने का विचार किया और उसीसमय

किसी राक्षस ने उस ब्राह्मण को खाने का विचार किया इसीलिये वह दोनो चोर और राक्षस रात्रि के समय उस ब्राह्मण के यहा चले और मार्ग में मिलकर परस्पर अपना अपना अभिप्राय कहके उस ब्राह्मण के यहा पहुँचे वहा चोरने राक्षससे कहा कि मैं पहले गौओं को लेजाऊ तब तुम इसब्राह्मणको खाना नहीं तो तुम्हारे छूनेसे यह ब्राह्मण जगपडेगा तो मैं गौए कैसेलूगा यह सुनकर राक्षसने कहा कि पहले मैं इस ब्राह्मणको खाऊंगा ऐसा न होय कि जब तुम गौओंको खोलो और ब्राह्मण जग पडे तो मेरा परिश्रम व्यर्थ होजाय,उनके इस कलहको सुनकर ब्राह्मण जगपडा और राक्षसों के नाश करने वाले मन्त्रोंका जप करनेलगा इससे वह चोर और राक्षस दोनों भागगये इसप्रकार जैसे उन दोनोंके कलहसे ब्राह्मणका हितहुआ वैसेही मेघवर्ण और चिरजीवी के वैरसे हमारा हितहोगा वक्रनास के यह वचन सुनके अवमर्दने प्राकारकर्ण नाम मन्त्रीसे पूछा कि इसमें तुम्हारा क्या मतहै उसने कहा कि यह चिरजीवी आपत्तिमें पडाहुआ शरणमें आयाहै इससे इसकी रक्षाकरनी चाहिये देखिये राजा शिबिने शरणागतके लिये अपना मास दियाहै १०० प्राकारकर्णके यह वचन सुनकर उलूकराजने क्रूरलोचन नाम मन्त्रीसे भी उसका मतपूछा उसने भी यहीकहा तदनन्तर रक्ताक्षनाम मन्त्रीसे उलूकराजने पूछा कि तुम्हारा क्या मतहै यह सुनकर उस बुद्धिमान्ने कहा कि हेराजा अन्यायकी बातोंसे यह मन्त्री आपका नाश करवादेंगे नीतिके जाननेवाले लोग शत्रुओंका कभी विश्वास नहीं करते है और मूर्खलोग प्रत्यक्षदोषको देखकर भी थोडेसेही मिथ्या दिखाने से प्रसन्न होजाते है इस विषयपर मैं आपको एककथा सुनाताहू कि किसी बढई को अपनीस्त्री बहुत प्यारीथी उसने लोगोंसेसुना कि यह किसी अन्य पुरुषपर आसक्तहै यह सुनकर तत्त्व जाननेकी इच्छासे उसने अपनीस्त्रीसे कहा कि हे प्रिये राजाकी आज्ञासे मैं किसी दूरदेशको जाऊगा तुम मार्ग में खानेके लिये मुझेसत्तू आदिक देदो यह कहकेसत्तू आदिकलेके वह अपने शागिर्द समेत कहींको चलागया और रात्रि के समय छिपकर घर में आके अपने शागिर्द समेत खाटके नीचे लेटरहा तब उसकीस्त्री उसको चलागया जानके अपने जारको बुलाकर उसी खाट पर भोगकराने लगी भोग करते २ कहीं उसके पैरमें उसका पति छूगया तब वह उसको वहीं स्थित जानके अत्यन्त व्याकुलहुई और उस जारने भी यह बात जानकर व्याकुल होके युक्तिपूर्वक उससे पूछा कि हे प्रिये तुमको मैं अधिक प्रियहू या पति यह सुनके उसने कहा कि पति मुझे अधिक प्याराहै उसके लिये मैं प्राणभी त्यागकर सक्तीहू और जो मैं तुम्हारे साथ भोगकरतीहू यह सबस्त्रियोंकी स्वाभाविक चपलता है इसको क्याकिया जाय स्त्रियोंके जो नाक न होय तो वह विष्ठाभी खालें उस कुलटाकी इन बनावटकी बातोंको सुनकर बढईने अपने शागिर्दसे कहा कि तुमने देखा यह मेरी कैसी भक्तहै इससे मैं अपने शिर पर इसे उठाताहू यह कहकर उस जडने अपने शिरपर उन दोनोंको उठाया इसप्रकार प्रत्यक्ष दोषको देखकर भी मूर्खलोग कपटकी बातों से प्रसन्न होजाते है और पीछे से अपनी हँसीकराते है इससे आप इस शत्रु चिरजीवीकी रक्षा न कीजिये यह उपेक्षा कियेगये रोगकी समान शीघ्रही आपको नष्ट कर देगा रक्ताक्षके यह वचन सुनकर अवमर्दने कहा कि यह साधु हमारेही हित के लिये इस दशाको प्राप्त हुआहै

यहकुत्ता तुमने कन्धेपर क्यों चढायाहै यहसुनकर वहब्राह्मण कुछ सन्देहयुक्तहोकर बकरेको कन्धेपर रक्खे हुएहीचला तब अन्य तीनधूर्त्तों ने उससे आगेजाकर कहा कि तुम ब्राह्मणहोके कुत्तेकोक्यों कन्धेपर चढातेहो हमजानते हैं कि तुम ब्राह्मणनहींहो व्याधहो इसीकुत्ते से जीवोंकी हिंसाकरवातेहो यह सुनकर उसब्राह्मणने शोचा कि किसीभूतने मेरीदृष्टिहरकर मुझे सन्देहकरानेको यहकुत्ता देदियाहै क्योंकि इन सबकीदृष्टि में अन्तर नहींहोसक्ताहै यहशोचकर वह उसबकरेको छोड स्नानकरके अपनेघरको चलागया औरउनधूर्त्तों ने बकरेकोलेजाके और मारकेखाया यहकहकर उसचिरजीवीने मेघवर्ण से कहा कि हेस्वामी इसी हेतुसे बहुतसे बलवानोंका जीतना कठिनहै इससे अब जो मैं कहूं सो करो मेरेपंख कुछ नोचकर मुझे इसवृक्षके नीचे डालकर तुम सब इसपर्व्वतपर चलेजाओ मैं कार्य्यसिद्धकरके वहीं आऊंगा यह सुनके काकोंका राजा मेघवर्ण पंखनोचकर उसे वृक्षके नीचे डालकर अपने परिकरसमेत पर्वतपर चलागया इसके उपरान्त रात्रिके समय उलूकोंके राजा अवमर्द्द ने बहुतसे उलूकों सहित वहांआके वृक्षपर एक कौआ भी न देखा और नीचे चिरजीवी का मन्द २ रोदनसुनके उसकेपास जाकर उससे पूछा कि तुम कौनहो और किसने तुम्हारे पंखनोचे हैं यह सुनकर चिरजीवी धीरे २ बोला कि काकराज मेघवर्णका चिरजीवीनाममन्त्रीहूं मेघवर्णने अपने मन्त्रियों से सलाहकरके आपकेसाथ युद्धकरना चाहाथा यहदेखकर मैंने उससे कहा कि जो आप मेरीसलाह मानिये तो बलवान् उलूकराज के साथ विग्रह न करिये नम्र होकर उसकेसाथ संधि करलीजिये यह सुनकर काकराज मेघवर्ण मुझे शत्रुओं का पक्षपाती जानकर क्रोधसे मेरी यह दशाकरके अपने सपूर्ण परिकर समेत यहांसे कहीं चलागया यह कहके वह चिरजीवी नीचेको मुखकरके श्वास लेनेलगा और उसके यह बचन सुनकर अवमर्द्दने अपने मन्त्रियोंसे पूछा कि इस चिरजीवीके लिये हमको क्या करना चाहिये यह सुनके दीप्तनयन नाम मन्त्रीने कहा कि सज्जनलोग उपकारी चोरकी भी रक्षाकरते हैं पूर्व समय में किसी धनवान् वृद्ध वैश्यने धनके प्रभावसे किसी वैश्यकी युवती कन्यासे अपना विवाह करलिया वहस्त्री सदैव शैयापर उसकी ओर से मुखफेर कर सोया करतीथी क्योंकि वह वृद्धहोनेके कारण उसे अच्छा नहीं मालूमहोताथा एक समय रात्रिमें उसवैश्यके घरमें चोर आया उसे देखकर उसस्त्रीने भयभीत होके अपने पतिका आलिंगन किया उस आश्चर्य्यको जानके वैश्यने इधर उधर देखा तो उसे एक कोने मे एक चोर खडाहुआ दिखाई दिया उस चोरसे वैश्यने कहा कि तुम हमारे बडे उपकारीहो इससे मैं तुमको पिटवाऊंगा नहीं तुम इसीसमय यहांसे भागजाओ यह कहकर उसने उस चोरको निकाल दिया इसप्रकारसे इस उपकारी चिरजीवीकी भी रक्षा करनीचाहिये यह कहकर दीप्तनयन के चुप होजानेपर अवमर्द्द ने वक्रनासनाम मन्त्री से पूछा कि अब तुम बतलाओ कि इस विषय मे क्या करना अवश्य है यह सुनकर वक्रनास ने कहा कि इस चिरजीवीकी रक्षा करनी चाहिये क्योंकि यह शत्रुके मर्मको जानताहै इन राजा और मन्त्रियोंके बैर से हमारा बडा उपकार होगा इसके दृष्टांतमें मैं आपको एक कथा सुनाता हूं किसी ब्राह्मण ने कहीं से दो गौएं पाई थीं उन गौओंको देखकर किसी चोरने उन्हें चुरालेने का विचार किया और उसीसमय

राज मेघवर्ण अत्यन्त प्रसन्नहोके अपने परिकर समेत उसी वर्गदके वृक्षपर आया वहा चिरजीवी ने शत्रुओं के बीचमें अपने रहनेका सब वृत्तान्त कहकर मेघवर्णसे कहा कि हे स्वामी तुम्हारे शत्रुके यहा एकरक्ताक्षही बुद्धिमान् मन्त्रीथा उसीके वचनोंको उसने न माना इसीसे मैंने छलकरके उसका नाश करायाहै जैसे किसी सर्पने मेंढकोंका नाश कियाथा वह यहकथाहै कि कोई वृद्धसर्प सुखपूर्व्वक जीवों के पकडनेमें असमर्थहोकर किसी तडागके तटपर निश्चलहोकर बैठा उसे इसप्रकार निश्चल बैठा देखकर दूरहीसे मेंढकोंने उससे पूछा कि तुम जैसे पहले मेंढकोंको पकड कर खातेथे अब क्यों नहींखातेहो यह सुनकर वह बोला कि मैंने किसी ब्राह्मणके पुत्र मेंढकको काटखायाथा इससे उसके मरजानेसे उसके पिताने क्रोधकरके मुझे यहशापदिया है कि तू मेंढकोंका वाहनहोगा तो अब मैं तुम्हारा वाहनहोगया हूं इससे तुमको कैसे खासक्ताहू यहसुनकर मेंढकोंका राजा जलसे निकलकर अपने मंत्रियों समेत उसकी पीठपर चढगया तब उससर्पने उनको कुछदूर भ्रमणकराके कहा कि अब मैं थकगयाहू मुझे कुछ भोजन दीजिये विनाभोजनके मैं नहींचलसक्ताहू यह सुनकर मेंढकोंकेराजाने कहा कि अच्छा तुम मेरे थोडेसे सेवकोंको रोज खा लियाकरो तब उस सर्पने धीरे २ क्रमपूर्व्वक सब मेंढक खालिये और वाहनके अभिमानसे मेंढकोंका राजा देखताहीरहा इसप्रकारसे बुद्धिमान् लोग मूर्ख शत्रुओं को मारलेतेहैं ऐसेही मैंने भी आपके शत्रुओं को छलसेही मारा है इससे राजा को सदैव नीतिके अनुसार कार्य्य करनाचाहिये क्योंकि जो राजा नीतिको नहीं जानताहे उसके सेवक उसका सब धन खाजाते हैं और शत्रु उसे जीत लेतेहै हे स्वामी यह लक्ष्मी नृतलीलाके समान छलयुक्त जलकी लहरके समान चचल और मदिराके समान मोहिनीहोती है और यही लक्ष्मी धीर अच्छे सलाहलेनेवाले व्यसनरहित विशेषज्ञ राजाके पास बँधीहुईसीरहती है इससे अब आप विद्वानों के वचनों के अनुसार कार्य्यकरके शत्रुओं के नष्टहोजानेमे अकण्टक राज्यभोगिये चिरजीवी के यह वचन सुनकर काकराज मेघवर्ण उसका बडा सत्कारकरके उसीके वचनों के अनुसार राज्यको अकण्टक करके प्रजाका पालन करनेलगा १६७ यह कथा कहकर गोमुख ने नरवाहनदत्त से फिर कहा कि इसप्रकार बुद्धिके बल से पक्षी भी राज्यका भोगकरते हैं और निर्बुद्धिपुरुष लोक मे अपनी हँसीकराके महादुखपाते है किसी धनवान् के एक मूर्ख सेवक था उसने विनाजाने भी मैं जाननेवालाहू इस अभिमानसे स्फारदेकर स्वामीकी त्वचाफारडाली इससे स्वामी ने उसे निकालदिया और वह अत्यन्त दुखी हुआ ठीक है (अजानानोहठात्कुर्वन् प्राज्ञमानीविनश्यति) विनाजाने बुद्धिमानी के अभिमानसे हठ पूर्व्वक कार्य्य करनेवाला नष्टहोजाता है, एकअन्य मूर्खकी कथा आपसुनिये कि मालवदेशमें दो सगे भाई ब्राह्मणोंने अपने पिताका धन बाँटनेका विचारकिया और कमती बढतीका झगडा न होय इसलिये उपाध्यायसे पूछा कि क्याकरें उस वैदिक उपाध्यायने कहा कि हरएक वस्तुके दो २ भागकरके एक २ लेलो जिसमें आपस में बिगाड़ न होय यहसुनकर उन्होंने घर, शैया, पात्र तथा पशुओंको भी दो २ भागकरके बाटा करलिया एकदासी भी उनके यहा थी उसके भी उन्होंने दो भागकिये यह सुनकर राजाने क्रोधकरके उनदोनों का सर्वस्व छीनलिया इस

तो इसकी रक्षा क्यो न करनी चाहिये और यह अकेला हमारा करही क्या सक्ताहै इसप्रकारसे उसने मंत्री के वचन काटकर उस चिरजीवीका बडा सत्कारकिया तब चिरजीवीने उससे कहा कि मैं ऐसी अवस्था में जीकर क्या करूगा इससे आप मुझे काष्ठ दिलवादीजिये कि मैं चिता लगाकर अग्नि भगवान्से यह प्रार्थना करके कि दूसरे जन्ममें मैं उलूक होकर इस काकराजसे बदलालू भस्म होजाऊ उसके यहवचन सुनकर रक्ताक्षने हँसकरकहा कि हमारे स्वामीकी कृपासे तुम स्वस्थहीहो अग्निमें जलकर क्यों भस्म होतेहो जबतक तुमको काकहोनाबदाहै तबतक उलूक नहींहोसक्ते क्योंकि (यादृशोयःकृतोधात्राभवे तादृशएवस) ब्रह्माने जिसको जैसा बनायाहै वह वैसाही रहताहै इस विषयपर मैं तुमको एक कथा सुनाताहूं कि पूर्वसमयमें किसीमुनिने बाजके पंजेसे छूटीहुई एकछोटीभी मूषिकाकोपाकर उसेअपनेतपो बलसे कन्याबनाली और अपने आश्रममें उसका पालनकरके जब वह युवतीहुई तो किसीबलवान् के साथ उसकाविवाहकरनेकी इच्छाकरके सूर्य्यसेकहा कि मैं इसकन्याका किसीबलवान्के साथ विवाहकरना चाहताहू इससे आपही इसको ग्रहणकरलीजिये यहसुनकर सूर्य्य देवताने कहा कि मेघ मुझसे अधिक बलवान्हैं वह क्षणभरही मे मुझे आच्छादित करलेते हैं यहसुनकर मुनिने मेघोंकोबुलाके उसकेसाथ विवाहकरनेकोकहा यहसुनके मेघोंनेकहा कि वायु हमसे अधिक बलवान्है क्योंकि वहहमसबको क्षण भरमेंही चारोदिशाओं मे फेंकदेताहै तब मुनिनेकहा कि तुम इससे अपनाविवाह करलो उसनेभी यहकहा कि पर्व्वत हमसेभी अधिकबलवान हैं क्योंकि हमभी उन्हें नहीं हिलासक्ते यह सुनके मुनि ने एकपर्वत कोबुलाकर उससे कहा कि तुम इसके साथ विवाहकरलो यहसुनकर उसनेकहा कि मूसे हमसेभी अधिक बलवान्होतेहैं क्योकि वह हममेंभी छिद्रकरदेते हैं यह सुनके मुनिने एक मूसेको बुलाकरकहा कि तुम इसके साथ विवाह करो यह सुनकर उसने कहा कि महाराज यह मेरे बिलमें कैसे जायगी तब मुनि ने उसे मूषिकाही बनाकर उस मूषक के साथ उसका विवाह करदिया इसप्रकारसे जो जैसाहै वह वैसाही रहताहै इससे हे चिरजीवी तुम कभी उलूक नहींहोगे उसके यह वचन सुनकर चिरजीवी ने अपने चित्तमें शोचा कि इस राजाने नीतिके जाननेवाले रक्ताक्षके तो वचन मानेनहीं हैं और अन्य सब मंत्री मूर्ख हैं इससे अब मेरा कार्य्य सिद्धही है इसप्रकार शोचतेहुए चिरजीवीकोलेकर अवमर्द अपने परिकरसमेत अपने स्थानकोगया और चिरजीवी वहा उनलोगों से मिलेहुए मासको खाकर थोडेहीकाल में बहुत पुष्टहोगया एकदिन उसने अवमर्द से कहा कि हे स्वामी मैं जाकर उस काकराज मेघवर्ण को विश्वास देकर उसी बरगद के वृक्षपर बुलायेलाताहू आपलोग रात्रिके समय आकर उन सबको मारडालियेगा जिससे मेरा आपकी कृपासे उद्धारहोय इससमय आपलोग अपने घोंसलोंको तृणादिसे बन्दकरलीजिये जिसमे कि वह दिनमें आकर आपको मार न सकें यह कहकर उनके घोंसलों को तृणों से बन्दकरवाके वह अपने स्वामीके पासगया और जाकर उनसब कौओं के मुखों में एक २ बलती हुई लकडी पकडवाके उलूकोंके घोंसलोंपर ले आया वहा आकर उनसबोंने दिवान्ध उल्लुओ के घोंसलोंपर अपनी २ जलतीहुई लकडी लगादी जिससे वहसब उल्लू जलकर मरगये इसप्रकार शत्रुओंको जीतकर काक

तब वह चिल्लाकर रोनेलगा कि हाय मैने यह पुआ पहलेही क्यों न खाया जिससे मेरे यह छ पुए बचजाते उसके रोदनका वृत्तान्त जानकर लोग हँसनेलगे अब आप द्वारके रक्षक मूर्खकी कथासुनिये किसी वणिये ने अपने मूर्ख सेवकसे कहा कि मैं घरमें जाताहूं तुम दुकानका द्वार देखतेरहना यह कह कर उसके चलेजानेपर वह मूर्खसेवक दरवाजा उतारके अपने कंधेपर लादके नटका तमाशा देखनेच-लागया और लौटकर उसनेश्यके क्रोधसे डांट पर बोला कि आपहीने तो द्वारकी रक्षाकरनेको कहाथा इस प्रकारसे तात्पर्य्यको न जानकर केवल शब्दोंकेही जाननेवाले मूर्खलोग विपरीत कार्य्य कियाकरते हैं अब आप भैंसोंके मूर्खोंकी कथासुनिये कुछ ग्रामीण पुरुषोंने किसीका भैंसा लेकर उसीके आगे गांव के बाहर लेजाके किसी बर्गदके वृक्षकेनीचे मारकर खाडाला तब भैंसे के स्वामी ने राजाके यहां जाके उनकी नालिशकी राजाने उनग्रामीणोंको बुलाया उनके आगे भैंसे के मालिकने राजासे कहा कि हे स्वामी इन ग्रामीणोंने तडागके तटपर बर्गदके नीचे मेरा भैंसा मारकर खायाहै यह सुनकर उनमेंसे एक वृद्धमूर्खने कहा कि इसगांवमें न तडागहै न बर्गदका वृक्षहै तो हमने इसका भैंसा कहां खाया यहबडा झूठहै यह सुनके उसने कहा कि तुम्हारे गांवके पूर्वकी ओर क्या तालाबके निकट बर्गदका वृक्ष नहीं है वहीं बैठकर अष्टमीके दिन मेरा भैंसा तुमलोगोंने मारकर खायाहै यहसुनकर उस वृद्धने कहा कि ह-मारे गांवमें न पूर्वदिशाहै न अष्टमी तिथिहै यह सुनकर राजाने हँसके उसके उत्साह बढानेकेलिये उस से कहा कि तुम बडे सत्यवादीहो तुम्हारे कहनेमें कुछ झूठ नहींहै अब तुम सत्य २ कहो कि तुमने भैं-सा खायाहै या नहीं यह सुनके उस वृद्धने कहा कि जब मेरा पिता मरगयाथा उसके तीनवर्ष पीछे मैं पैदा हुआ था उन्होंनेही मुझे यह सबचतुरता सिखाई है इससे मैं कभी झूठ नहीं कहताहूं इसका भैंसा तो मैंने खायाहै परन्तु और सब इसकी बातें झूठहैं यह सुनकर राजाने बहुतहँसके उन ग्रामीणोंको दंड दिया इस प्रकारसे मूर्ख लोग प्रकट करनेकी बातको छिपातेहैं और नहीं प्रकट करनेकी बातको प्रकटकर देतेहैं अब एक अन्यमूर्खकी कथा सुनिये कि किसी दरिद्रीमूर्ख से उसकी स्त्री ने कहा कि प्रातःकाल मेरे पिताके यहां उत्सवहै वहां मैं जाऊंगी इससे जो आप कमलोंकी माला मुझे न लादोगे तो आज से न मैं आपकी स्त्री न आप मेरे पति उसके यह वचन सुनके वहमूर्ख रात्रिके समय राजाके तालाबमें कमल तोड़नेको गया वहां रक्षकोंने उससे पूछा कि तुम कौनहो उसने कहा कि मैं चकवाकहूं यह सुन कर रक्षकलोग प्रातःकाल उसे बांधके राजा के पास लेगये राजाके पासभी जाके वह चकवाककासा शब्द करनेलगा तब राजाने उससे युक्ति पूर्वक सब वृत्तान्त पूछकर उसको मूर्खजानके छोडदिया अब आप एक मूर्ख वैद्यकी कथा सुनिये किसी ब्राह्मणने किसी मूर्खवैद्य से कहा कि तुम मेरे पुत्रका कूबर बैठालदो यह सुनकर उस वैद्यने कहा कि तुम मुझे दशपैसे दो तो मैं इसका कूबर बैठालदूं और जो न बैठालदूं तो इसके दशगुने तुमको फेरदूंगा यह कहके उस वैद्यने दशपैसेलेकर कूबरके बैठानेमें बहुतसा उद्योग किया परन्तु वह न बैठा इससे उसने दशगुने पैसे फेरदिये इसप्रकार असाध्य कार्य्यकी प्रतिज्ञा करनेमें केवल हास्य तथा हानिही होतीहै इससे बुद्धिमान्को चाहिये कि ऐसी २ मूर्खतासे सदैवबचा

प्रकार मूर्खलोग मूर्खोंके उपदेशसे दोनों लोकोंका नाशकरतेहैं इससे बुद्धिमान्को चाहिये कि मूर्खोंको छोड़के सदैव बुद्धिमानों ही का सेवनकरे हे स्वामी असन्तोषसे भी बड़ी हानिहोती है इसपरभी मैं आपको एककथा सुनाताहूं कहीं कुछेकसन्यासी सन्तोषसे भिक्षा माग२ कर खातेथे और इसीसे मोटेताजे बने रहतेथे उन्हें देखकर कुछ मित्रोंने परस्परमें कहा कि भिक्षामागकर भी यह सन्यासी कैसे स्थूलहो रहेहैं उनमे से एकने कहा कि इनको मैं इसप्रकारके भोजन करनेपर भी दुर्बल करदूंगा यह कहकर उसने उन सन्यासियो को निमन्त्रणदेके अपने यहाँ एकदिन बडे २ स्वादिष्ट उत्तम भोजन करवाये इससे उनमूर्खोंको उसस्वादका स्मरणकरके भिक्षाका अन्न नहीं रुचनेलगा इसीसे वहदुर्बलहोगये तब जिसने उन्हे भोजन करवायेथे वह अपने मित्रोंको उनसन्यासियों के पास लेजाकर बोला कि देखो इनसन्यासियोंको भिक्षामें सन्तोषथा इसीसे यहहृष्टपुष्ट बनेरहतेथे अब इनका संतोप नष्टहोगयाहै इसीसे यह दुर्बलहोगयेहैं इससे सुखचाहनेवाला बुद्धिमान् पुरुष अपनेचित्तमे सदैव सन्तोष रक्खे क्योंकि सन्तोष न करनेसे दोनोंलोकोमें दुस्सह दुःखप्राप्तहोताहै उसके यहवचन सुनके उनसब ने उसदुखदाई असन्तोष का त्यागकरदिया ठीकहै सत्सगसे किसका भला नहीं होताहै १८६ अब एक सुवर्ण के लोभीकी कथा आप सुनिये कोई युवापुरुष अपने पिताके साथ तडागपर जल पीनेकोगया वहा उसने सुवर्ण चूडनाम पक्षीका सुवर्ण के वर्णका जलमें प्रतिविम्ब देखकर सुवर्ण जानके तडागमें उतरकर उसको लेनेलगा परन्तु चचल जलके सिवाय उसके हाथमें कुछ न आया और उसे बारम्बार जल पकडते देखकर उसके पिताने ऊपरसे उस सुवर्णचूडको भगादिया और उसे जलके बाहर बुलाकर समझादिया कि यह सुवर्ण न था पक्षीका प्रतिबिम्बथा इसप्रकारसे निर्विचार लोग भ्रांतिसे मोहितहोकर लोगोमें उपहासको प्राप्तहोते हैं अब आप अन्य महामूर्खोंका वृत्तान्त सुनिये कि किसी वणियेका ऊंट भारकेमारे मार्ग में थकगयाथा तब वह अपने सेवकों से बोला कि मै एकऊंट मोललेने जाताहूं इसपरका कुछ बोझ उसपर लादलूंगा और तुम लोग जो यहा पानीबरसे तो इसबातका ध्यानरखना कि इनगठरियोंके चमडेमें जल न लगने पावे यहकहकर उसवैश्यके चलेजानेपर मेघोंसे आकाश घिरगया और जल बरसनेलगा तब उनसेवकों ने यहशोचकर कि हमारे स्वामीने कहाहै कि इनगठरियोंके चमडेमें जल न जानेपावे उन गठरियोंमेंसे कपडे निकालकर उनके चमडोंपर लपेट दिये इसमे सब वस्त्र नष्टहोगये इतने मे उसवणियेने आकर कपडों को भीजते देखके कहा कि हे मूर्खो तुमने सबकपडे नष्टकर दिये यहसुनकर वह बोले कि हे स्वामी आपहीने तो कहाथा कि गठरियोंके चमडे पानी में न भीजनेपावे तब वह वैश्य बोला कि चमडों के गीलेहोने से वस्त्रभी गीले न होजाय इसलिये मैंने तुमसे कहा था कि केवल चमडेही की रक्षाके लिये कहाथा यहकहकर उसने ऊंटोंपर सब असबाब लादकर अपने घरजाके उनमूर्ख सेवकों का सर्वस्व छीनलिया इसप्रकारसे मूर्ख लोग तात्पर्य्य को न समझकर उलटा कामकरके अपने तथा स्वामी के प्रयोजनको नष्टकरते हैं अब आप पुओं के मूर्खकी कथा सुनिये किसी मूर्ख पथिक ने पैसे के आठपुए लिये उनमें से ७ पुए खाने मे उसकी तृप्ति न हुई और सातवें के खाने मे तृप्ति होगई

तब वह चिल्लाकर रोनेलगा कि हाय मैंने यह पुआ पहलेही क्यों न खाया जिससे मेरे यह छ पुए बचजाते उसके रोदनका वृत्तान्त जानकर लोग हँसनेलगे अब आप द्वारके रक्षक मूर्खकी कथासुनिये किसी वणियेने अपने मूर्ख सेवकसे कहा कि मैं घरमें जाताहूं तुम दुकानका द्वार देखतेरहना यह कह कर उसके चलेजानेपर वह मूर्खसेवक दरवाजा उतारके अपने कंधेपर लादके नटका तमाशा देखनेच- लागया और लौटकर उसनेश्यके क्रोधसे डाट पर बोला कि आपहीने तो द्वारकी रक्षाकरनेको कहाथा इस प्रकारसे तात्पर्य्यको न जानकर केवल शब्दोंकेही जाननेवाले मूर्खलोग विपरीत कार्य्य कियाकरते हैं अब आप भैसोंके मूर्खोंकी कथासुनिये कुछ ग्रामीण पुरुषोंने किसीका भैसा लेकर उसीके आगे गाव के बाहर लेजाके किसी वर्गदके वृक्षकेनीचे मारकर खाडाला तब भैंसे के स्वामी ने राजाके यहा जाके उनकी नालिशकी राजाने उनग्रामीणोंको बुलाया उनके आगे भैंसे के मालिकने राजासे कहा कि हे स्वामी इन ग्रामीणोंने तडागके तटपर वर्गदके नीचे मेरा भैसा मारकर खायाहै यह सुनकर उनमेंसे एक वृद्धमूर्खने कहा कि इसगावमें न तडागहै न वर्गदका वृक्षहै तो हमने इसका भैसा कहा खाया यहबडा झूठहै यह सुनके उसने कहा कि तुम्हारे गावके पूर्वकी ओर क्या तालावके निकट वर्गदका वृक्ष नहीं है वहीं बैठकर अष्टमीके दिन मेरा भैसा तुमलोगोंने मारकर खायाहै यहसुनकर उस वृद्धने कहा कि ह- मारे गावमें न पूर्वदिशाहै न अष्टमी तिथिहै यह सुनकर राजाने हँसके उसके उत्साह बढानेकेलिये उस से कहा कि तुम बडे सत्यवादीहो तुम्हारे कहनेमें कुछ झूठ नहींहै अब तुम सत्य २ कहो कि तुमने भै- सा खायाहै या नहीं यह सुनके उस वृद्धने कहा कि जब मेरा पिता मरगयाथा उसके तीनवर्ष पीछे मैं पैदा हुआ था उन्होंनेही मुझे यह सबचतुरता सिखाई है इससे मैं कभी झूठ नहीं कहताहूं इसका भैसा तो मैंने खायाहै परन्तु और सब इसकी बातें झूठहैं यह सुनकर राजाने बहुतहँसके उन ग्रामीणोंको दंड दिया इस प्रकारसे मूर्ख लोग प्रकट करनेकी बातको छिपातेहैं और नहीं प्रकट करनेकी बातको प्रकटकर देतेहैं अब एक अन्यमूर्खकी कथा सुनिये कि किसी दरिद्रीमूर्ख से उसकी स्त्री ने कहा कि प्रातःकाल मेरे पिताके यहा उत्सवहै वहा मैं जाऊंगी इससे जो आप कमलोंकी माला मुझे न लादोगे तो आज से न मैं आपकी स्त्री न आप मेरे पति उसके यह वचन सुनके वहमूर्ख रात्रिके समय राजाके तालावमें कमल तोडनेको गया वहा रक्षकोंने उससे पूछा कि तुम कौनहो उसने कहा कि मैं चक्रवाकहूं यह सुन कर रक्षकलोग प्रातःकाल उसे बाधके राजा के पास लेगये राजाके पासभी जाके वह चक्रवाककासा शब्द करनेलगा तब राजाने उससे युक्ति पूर्वक सब वृत्तान्त पूछकर उसको मूर्खजानके छोडदिया अब आप एक मूर्ख वैद्यकी कथा सुनिये किसी ब्राह्मणने किसी मूर्खवैद्य से कहा कि तुम मेरे पुत्रका कूबर बैठालदो यह सुनकर उस वैद्यने कहा कि तुम मुझे दशपैसे दो तो मैं इसका कूबर बैठालदूं और जो न बैठालदूं तो इसके दशगुने तुमको फेरदूंगा यह कहके उस वैद्यने दशपैसेलेकर कूबरके बैठानेमें बहुतसा उद्योग किया परन्तु वह न बैठा इससे उसने दशगुने पैसे फेरदिये इसप्रकार असाध्य कार्य्यकी प्रतिज्ञा करनेमें केवल हास्य तथा हानिही होतीहै इससे बुद्धिमानको चाहिये कि ऐसी २ मूर्खतासे सदैवबचा

रहे गोमुखसे इन सब कथाओंको सुनकर शक्तियशाके लिये उत्कण्ठितभी नरवाहनदत्त अत्यन्त प्रसन्न होके अपने मन्त्रियोंसमेत सोगया २३७॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशक्तियशोलवकेषष्ठस्तरंग ६॥

इसके उपरान्त प्रातःकाल उठकर नरवाहनदत्त शक्तियशाकी यादकरके बहुत व्याकुलहुआ विवाह के होने में दो चारही दिन बाकीथे कि वही दिन उसे युगके समान मालूमहुए गोमुखके द्वारा उसकी इस विकलताको सुनकर वत्सराजने अपने सम्पूर्ण मन्त्री उसकेपास भेजदिये उन्हें देखकर इनके गौरव से नरवाहनदत्तके कुछ स्वस्थहोनेपर गोमुखने वसन्तकसेकहा कि हे आर्य्यवसंतक युवराजके मन वह लानेकेलिये कोई अपूर्वकथा कहिये उसके कहने से वसन्तक यहकथा कहनेलगा कि मालव देशमें बडा प्रसिद्ध एक श्रीधरनाम ब्राह्मणथा उसके दो पुत्रथे बडे का नाम यशोधर और छोटेकानाम लक्ष्मी धर यह दोनो एकसाथही उत्पन्नहुए थे इसीसे इनकेरूपभी समानथे यहदोनों तरुणहोके विद्या उपार्जन करने के लिये परदेशको चले मार्गमें चलते २ जल तथा वृक्षों से रहित उष्णपृथ्वीवाले बड़े घोर वनमें पहुँचे उसवनमें धूप तथा तृषासे महा व्याकुलहोके वहदोनों कुछ दूर चलके सायंकालके समय एक बावडीपर पहुँचे उस बावडीके तटपर एक फलवान् सघनवृक्ष लगाथा उसवृक्षकेनीचे कुछ देरबैठके श्रमको दूरकरके उन दोनोंने उस बावडी मे स्नानकिया और सन्ध्यावन्दनकर उसीवृक्षके फलखाके बावडीका जलपिया फिर रात्रिहोजानेपर जीवोंकेभयसे वह दोनों उसी वृक्षपर चढके बैठे उससमय उसबावडी के जलमेंसे बहुतसे पुरुषनिकले उनमेसे किसीने उस पृथ्वीपर बुहारीदी किसीने चौकादिया किसीने फूल बखेरे किसीने सुवर्णका पलँगलाकरबिछाया किसीने उसपलँगपर बिछौने बिछाये किसीने दिव्य भोजन किसीने दिव्य आभूषणलाके उसी वृक्षकेनीचे रक्खे और किसीने चन्दन तथा तैलादिक पदार्थ लाके रक्खे इसप्रकार सब सामग्रीके इकट्ठे होजानेपर एक दिव्य पुरुष हाथमें खड्गलियेहुए उस बावडीमेंसे निकला और आकरदिव्य आसनपर बैठा उसके शरीरमें चन्दनादि लगाके और सब आभूषण पहर के वह सब लोग बावडी में चलेगये उनके चलेजाने पर उस दिव्य पुरुषने अपने मुखसे सौभाग्यके आभूषण धारणकियेहुए एक साध्वी स्त्री और दिव्यवस्त्र तथा दिव्य आभूषण पहनेहुई दूसरी अत्यन्त सुन्दर स्त्री निकाली वह दोनों उसकी स्त्रीथीं परन्तु दूसरी उसे बहुत प्यारीथी मुख से निकलकर वह पहलीस्त्री अपने पतिके लिये तथा सपत्नीकेलिये सुवर्णके पात्रों में रखकर भोजनलाई वह दिव्य पुरुष उस दूसरी स्त्रीके साथ उन पदार्थोंको भोजन करके सुवर्णके पलँगपर उसे साथ लेकर लेटा और रति करके सोगया और वह पहलीस्त्री भोजन करके उसके पैरदाबनेलगी और वह दूसरी स्त्रीभी जागतीही रही यह देखकर उस वृक्षपर बैठेहुए वह दोनों ब्राह्मण यह सलाहकरके कि यह कौनहै यह बात इसपैर दाबनेवाली से पूछना चाहिये इसलिये वृक्षसे उतरकर उसके पासगये उसके पास उन्हें जाते देखकर उस दूसरी स्त्रीने अपने पतिके पाससे उठकर यशोधरसे कहा कि तुम मुझसे प्रसंगकरो यह सुनकर यशोधरने कहा कि तुमपरस्त्री हो मैं तुम्हारे साथ रमण नहीं करसक्ता तुमको ऐसा नहींकहना चाहिये

यह सुनकर वह फिर बोली कि डरोमत तुम मरीके सौपुरुषोंके साथ मैं रमणकरचुकीहू जो तुमको विश्वास नहोय तो देखलो मेरे अचलमें सौअगूठी बँधीहुई हैं जिस २ के साथमैंने रमणकियाहै उस २ से एक २ अगूठीलेली है यह कहकर उसने अपने अचलसे खोलके सौअगूठी उसे दिखलादीं तब यशोधरने उससे कहा कि तुम सौकेसाथ अथवा लाखोंकेसाथ रमणकरो परन्तु मैं तुमको माताके समान जानताहू मैं उन पुरुषोंकीसा कामान्ध नहींहू इसप्रकार उसके निषेधको सुनकर उस पुश्चलीने अपने पतिसे जगाकर कहा कि आपके सोजानेपर इस पुरुषने मेराधर्म नष्ट करदिया यह सुनके वह खड्गलेके उसे मारनेकेलिये चला तब पहली स्त्रीने उसके चरण पकडकर उससे कहा कि आपव्यर्थ ब्रह्महत्या न कीजिये इसी पापिनने इससे रमणकरनेको कहाथा परन्तु इसने यह कहके कि तूमेरी माताहै इसका तिरस्कार किया तब इसने तुम्हें जगाकर इसे मरवानाचाहा इसने मेरे आगेही सौ अन्यपुरुषोंसे भोग कियाहै और सबसे एक २ अगूठीलेली है और मैंने आपसे इसलिये कभी नहीं कहा कि शायद आप जानियेगा कि यह द्वेषसे कहरही है परन्तु आज आपको पापसे बचानेकेलिये मुझे कहनाही पडा जो आपको विश्वास न होय तो इसके आंचलमें अगूठीबँधी हैं खोलकर देखलीजिये और मेरा यह सतीधर्म भी नहीं है जो मैं अपने पतिसे मिथ्या वचन कहू अपने पतिव्रतापनके निश्चय करनेको मैं अपनाप्रभाव आपको दिखातीहू यह कहकर उसने क्रोधकी दृष्टिसे देखकर वह वृक्षभस्म करदिया और कृपाकी दृष्टिसे देखकर फिर हराकरदिया उसके इसप्रभावको देखकर उस दिव्य पुरुषने बहुत स्नेहसे उसेअपने हृदयमें लगालिया और उसदूसरीस्त्रीके आंचलमें अगूठियां देखकर उसकीनाक काटकर निकाल बाहरकिया और यशोधरसे अपने अपराधोंको क्षमाकराके कहा कि मैं ईर्ष्यासे इनदोनों स्त्रियों को हृदयमें रखकर इनकी रक्षाकरताथा इतने परभी इसपापिनकी मैं रक्षा न करसका (विद्युतं कः स्थिरीकुर्यात्कोरक्षेच्चपलास्त्रियम्। साध्वीयदिपरंस्वेनशीलेनैवेनरक्ष्यते) बिजलीको कौन स्थिरकरसक्ताहै और चपलास्त्री की कौन रक्षाकर सक्ताहै केवल शीलही पतिव्रता साध्वीस्त्रीकी रक्षाकरताहै शीलवती स्त्री दोनोंलोकों में अपनेपति की रक्षाकरती है जैसे कि आज इसनेमेरी रक्षाकीहै इसीकी कृपासे आज पुंश्चलीकी संगति मुझसे छूटी और ब्रह्महत्याके महापातकसेभी मैं बचा यह कहकर उसनेयशोधर तथा लक्ष्मीधर दोनोंको बैठाकरपूछाकि तुम दोनों कहांसे आतेहो और कहांको जाओगे तब यशोधरने उससे अपना सबवृत्तान्त कहकर विश्राम पाके उससे पूछा कि हे महाभाग जो यह गुप्त बात न होय तो कहिये कि आप कौनहो और इसप्रकारके ऐश्वर्य्य होनेपर भी आपका जलमें निवास क्यों है यह सुनकर वह पुरुष बोला कि हिमालयके दक्षिण ओर कश्मीरनाम देशहै जिसे ब्रह्माने मानो मनुष्योंको स्वर्गका आनन्द दिखानेकेलिये बनाया है जिसमें कैलास तथा श्वेतद्वीपके सुखको भूलकर श्रीशिवजी तथा विष्णुभगवान सैकड़ों स्थानों मे निवास करते हैं शूर तथा विद्वज्जनोंसे व्याप्त वितस्ताके जलसे महापवित्र जिसदेशको कलि आदिक शत्रुरूप महादोषभी नहीं जीतसक्के हैं ऐसे सुन्दर उसदेशमें मैं भवशर्मानाम एक ग्रामीण ब्राह्मणथा और मेरे दो स्त्रियां थीं एक समय अपनी भिक्षुकोंसे मेरी पहचान होगई इससे मैंने उनके शास्त्रमें कहाहुआ

उपोषण नाम नियम किया जब वह व्रतसमाप्त होनेवालाहुआ तो एक मेरी पापिन स्त्री हठपूर्व्वक मेरे साथ आकर सोरही और रात्रिके पिछलेपहर उठकर मैंने निद्रामें अज्ञान होकर उसके साथ रमण किया इसीसे वह मेरा व्रत खण्डित होगया और मैं उसके प्रभावसे जलपुरुष हुआ यहा भी वही दोनो मेरी स्त्रियाहुई हैं जो मेरे शयनपर सोरहीथी वही पापिन पुश्चलीहुई और दूसरी यह पतिव्रताहै उसखडित व्रतका भी इतना प्रभावहै कि मुझे अपने पूर्व्व जन्मका स्मरणबनाहै और रात्रिके समय ऐसा ऐश्वर्य्य प्राप्त होताहै जो मैं उस व्रतको खडित न करदेता तो मुझे यह जन्म नहीं प्राप्तहोता इसप्रकार अपना वृत्तान्त कहकर उसने उन दोनों भाइयोंका वडा सत्कारकिया और स्वादिष्ट भोजन कराके दिव्यवस्त्र उनको दिये तदनन्तर उस पतिव्रतास्त्री ने चन्द्रमाकी ओर देख प्रणाम करके कहा कि हे लोकपालो जो मैं सत्य २ पतिव्रताहू तो मेरापति जलवास से छूटकर स्वर्गकोजाय उसके इस प्रकार कहतेही आकाशसे विमान आया उसपर चढके वह दोनों स्त्री पुरुष स्वर्गको चलेगये ठीकहै (असाध्यसत्यसाध्वी नाकिमस्तिहिजगत्त्रये) सच्ची पतिव्रताओं को त्रैलोक्य में क्या असाध्यहै इसआश्चर्य्य को देखकर वह दोनों भाई शेष रात्रिको वहा व्यतीत करके प्रातःकाल वहासे चले और चलते २ निर्ज्जन बनमें सायकालके समय एक वृक्षके निकट पहुचे और वहा इधर उधर जलकी तलाश करनेलगे उस समय उस वृक्षसे उन्हें यह शब्द सुनाईदिया कि हे ब्राह्मण लोगो ठहरो आज मैं तुम्हारा अतिथि सत्कार करूगा क्योंकि तुम हमारे अतिथि हो यह कहकर वह शब्द तो बन्द होगया और वहापर एक दिव्य बावडी उत्पन्न होगई और दिव्य भोजन भी उसी के तटपर आगये उस आश्चर्य्य को देखकर उन दोनों भाइयों ने उस बावडी में स्नानकर सन्ध्योपासन करके उस भोजनको खाया और उसी वृक्ष के नीचे आकर विश्राम करनेका विचार किया इतनेमें एक सुन्दर पुरुष उस वृक्षपरसे उतरकर उन दोनों के पास आया और स्वागत पूछ के उनके निकट बैठा उसे प्रणाम करके उन दोनों भाइयों ने पूछा कि आप कौनहैं उसने कहा कि पूर्व्व जन्ममें मैं दीन ब्राह्मणथा भाग्यवशसे श्रवणों (जैनी साधू) के साथ मेरी संगति होगई उनके उपदेश से मैंने एक व्रत किया उस व्रत में किसी मूर्ख ने सायकाल के समय मुझे भोजन करवादिया इससे उस व्रतके खण्डित होजाने के कारण मैं यक्ष होगया और जो वह व्रतपूराहोजाता तो मैं स्वर्ग में देवताहोता यहकहकर उसने उनदोनों से पूछा कि तुम कौनहो और किस निमित्त यहा आयेहो यहसुनकर यशोधरने उससे अपना सब वृत्तान्त कहदिया ७८ तब उसयक्षने उनसे फिर कहा कि जो तुम विद्या सीखनेको जातेहो तो मैं अपने प्रभावसे तुमको सम्पूर्ण विद्या देताहू परदेश जाकर क्याकरोगे विद्वानहोकर अपने घरजाओ यहकहकर उसने उनदोनोंको सब विद्या देदीं और उसके प्रभावसे वह दोनों अत्यन्त विद्वानहोगये तब उसने उनसे फिर कहा कि तुम दोनों से हम एकगुरुदक्षिणा मागते हैं हमारे लिये एकदिन तुम दोनों मिलकर सत्य भाषण ब्रह्मचर्य्य देवताओंकी प्रदक्षिणा भिक्षुकों के समयमें भोजन मनका सयम और क्षमा इननियमों समेत उपवास करना और इसका फल हमको देदेना इसीसे मैं स्वर्गको चलाजाऊगा यहसुनकर उनदोनों ने कहा कि

बहुत अच्छा हम ऐसाही करेंगे यह सुनकर वह यक्ष अन्तर्द्धान होगया और उनदोनों भाइयों ने वह रात्रि वहीं व्यतीतकरके प्रातःकाल वहां से चलके कईदिनों में अपने घरपर आकर अपने माता पिता को सब वृत्तान्त सुनाके यक्षका बताया हुआ व्रतकिया और उसकाफल उसको दिया उसफलको पाते-ही वह यक्ष विमानपर चढके वहां आके उनसे बोला कि तुम दोनोंकी कृपासे मैं यक्षयोनि से छूटकर स्वर्गको जाताहूं तुमभी अपने लिये इसव्रतको करना इसके प्रभावसे तुमको इसलोकमें अक्षय धन प्राप्त होगा और अन्त मे स्वर्गको चलेजाओगे यहकहके वहयक्ष चलागया और वह दोनों भाई यशोधर तथा लक्ष्मीधर उसव्रतको करके उसके प्रभावसे अक्षयधनपाके सुखपूर्वक रहनेलगे इसप्रकारसे ओसर पाकर भी धर्म के नहीं त्यागकरनेवाले सत्पुरुषोंपर देवता लोग प्रसन्नहोकर उनके मनोरथों को सिद्ध करतेहैं वसन्तकसे इसअपूर्व कथाको सुनकर नरवाहनदत्त भोजनके समय मन्त्रियों समेत अपने पिता के यहांगया और भोजनकरके वहीं मन्त्रियों समेत दिनको व्यतीतकरके सायङ्कालको अपने मन्दिरमें आया वहां उसे प्रसन्न करनेके लिये गोमुख उससे यहकथा कहनेलगा कि अपने यूथसे भ्रष्टहुआ वली-मुखनाम कोई बन्दर समुद्रके तटपर गूलरोंके वनमें रहताथा एकसमय गूलरखातेहुए उसबन्दरके हाथसे एकगूलर समुद्रमें गिरपड़ा उस गिरेहुए गूलरको वहीं तैरते हुए एक शिशुमारनाम जलके जीवने खा-लिया और उसके स्वादसे प्रसन्नहोके बड़ा मनोहर शब्द किया उसशब्दको सुनकर बन्दरने बहुत से फल उसको दिये इससे उनदोनों की परममित्रताहोगई तबसे वह शिशुमार नित्य दिवसभर समुद्रके तटपर बन्दरही के पास वृक्षके नीचे रहनेलगा और बन्दर उसे नित्य यथेच्छ गूलर के फल देनेलगा शिशुमारकी इसमित्रताको जानकर उसकी स्त्री ने दिनमें विरह को न सहकर उसकी मित्रता छुटाने के लिये यहकहदिया कि मैं एकअवाच्य रोगसे अत्यन्त पीडितहूं शिशुमारने पूछा कि हे प्रिये तुम्हें जो रोगहुआहै उसकी क्या औषधहै यह सुनकर उसकी सखीने कहा कि इसे ऐसा रोगहुआहै जिसकी औषध तुमकर नहीं सक्ते तथापि मैं तुमसे कहतीहूं कि बन्दरके कलेजेके मांसके रसकेविना वह रोग नहीं जासक्ता उसके यह वचन सुनकर शिशुमारने सोचा कि मुझे बन्दरका कलेजा कहांसेमिले उस मित्र बन्दरके साथ तो मुझको द्रोहकरना उचित नहींहै अथवा उस मित्रकोलेकर मैं क्या करूंगा यह स्त्री तो मुझे प्राणोंसेभी अधिक प्यारी है यह शोचकर और अपनी स्त्री से यह कहके कि हे प्रिये मैं तेरे लिये पूरा बन्दरही लियेआताहूं शिशुमार अपने मित्र बन्दरकेपासगया और प्रसङ्गपाकर उससे बोला कि हे मित्र अभीतक तुमने हमारा घर नहीं देखा है इससे आज तुम हमारे घरचलो तुम्हारी भावज तुमको बहुत दिनसे बुलाती है जो मित्र परस्पर एकदूसरेके घरमें साथ बैठकर भोजन नहींकरतेहैं और अपनीः स्त्रियों को छुपातेहैं उनकी मित्रता नहीं है कपटहै इसप्रकार कहकर वह उस बन्दरको जल में बुलाकर अपनी पीठपरचढ़ाकर लेचला चलतेसमय उसे उदासीनसा देखकर बन्दरने पूछा कि हे मित्र आज तुम दुःखी क्यों होरहेहो यह सुनकर उस मूर्ख शिशुमारने उसे अपने आधीनजानकर कहा कि आज तुम्हारी भाभी कुछ रोगग्रस्त है उसे पथ्यके लिये बन्दरका कलेजा चाहिये इसीलिये मुझे उदासीनताहै कि मैं

उपोषण नाम नियम किया जब वह व्रतसमाप्त होनेवालाहुआ तो एक मेरी पापिन स्त्री हठपूर्व्वक मेरे साथ आकर सोरही और रात्रिके पिछलेपहर उठकर मैंने निद्रामें अज्ञान होकर उसके साथ रमणकिया इसीसे वह मेरा व्रत खण्डित होगया और मैं उसके प्रभावसे जलपुरुष हुआ यहां भी व्रही दोनों मेरी स्त्रियाहुई हैं जो मेरे शयनपर सोरहीथी वही पापिन पुंश्चलीहुई और दूसरी यह पतिव्रताहै उसखंडित व्रतका भी इतना प्रभावहै कि मुझे अपने पूर्व्व जन्मका स्मरणबनाहै और रात्रिके समय ऐसा ऐश्वर्य्य प्राप्त होताहै जो मैं उस व्रतको खंडित न करदेता तो मुझे यह जन्म नहीं प्राप्तहोता इसप्रकार अपना वृत्तान्त कहकर उसने उन दोनों भाइयोंका बड़ा सत्कारकिया और स्वादिष्ट भोजन कराके दिव्यवस्त्र उनको दिये तदनन्तर उस पतिव्रतास्त्री ने चन्द्रमाकी और देख प्रणाम करके कहा कि हे लोकपालो जो मैं सत्य २ पतिव्रताहूं तो मेरापति जलवास से छूटकर स्वर्गकोजाय उसके इस प्रकार कहतेही आकाशसे विमान आया उसपर चढके वह दोनों स्त्री पुरुष स्वर्गको चलेगये ठीकहै (असाध्यसत्यसाध्वी नाकिमस्तिहिजगत्त्रये) सच्ची पतिव्रताओं को त्रैलोक्य में क्या असाध्यहै इसआश्चर्य्य को देखकर वह दोनों भाई शेष रात्रिको वहां व्यतीत करके प्रातःकाल वहांसे चले और चलते २ निर्ज्जन बनमें सायकालके समय एक वृक्षके निकट पहुंचे और वहां इधर उधर जलकी तलाश करनेलगे उस समय उस वृक्षसे उन्हें यह शब्द सुनाईदिया कि हे ब्राह्मण लोगो ठहरो आज मैं तुम्हारा अतिथि सत्कार करूंगा क्योंकि तुम हमारे अतिथि हो यह कहकर वह शब्द तो बन्द होगया और वहांपर एक दिव्य बावड़ी उत्पन्न होगई और दिव्य भोजन भी उसी के तटपर आगये उस आश्चर्य्य को देखकर उन दोनों भाइयों ने उस बावड़ी में स्नानकर सन्ध्योपासन करके उस भोजनको खाया और उसी वृक्ष के नीचे आकर विश्राम करनेका विचार किया इतनेमें एक सुन्दर पुरुष उस वृक्षपरसे उतरकर उन दोनों के पास आया और स्वागत पूछ के उनके निकट बैठा उसे प्रणाम करके उन दोनों भाइयों ने पूछा कि आप कौनहैं उसने कहा कि पूर्व्व जन्ममें मैं दीन ब्राह्मणथा भाग्यवशसे श्रवणों (जैनी साधू) के साथ मेरी सगति होगई उनके उपदेश से मैंने एक व्रत किया उस व्रत में किसी मूर्ख ने सायकाल के समय मुझे भोजन करवादिया इससे उस व्रतके खण्डित होजाने के कारण मैं यक्ष होगया और जो वह व्रतपूराहोजाता तो मैं स्वर्ग में देवताहोता यहकहकर उसने उनदोनों से पूछा कि तुम कौनहो और किस निमित्त यहां आयेहो यहसुनकर यशोधरने उससे अपना सब वृत्तान्त कहदिया ७८ तब उसयक्षने उनसे फिर कहा कि जो तुम विद्या सीखनेको जातेहो तो मैं अपने प्रभावसे तुमको सम्पूर्ण दिये देताहूं परदेश जाकर क्याकरोगे विद्वानहोकर अपने घरजाओ यहकहकर उसने उनदोनोंको सब विद्या देदी और उसके प्रभावसे वह दोनों अत्यन्त विद्वानहोगये तब उसने उनसे फिर कहा कि तुम दोनों से हम एकगुरुदक्षिणा मांगते हैं हमारे लिये एकदिन तुम दोनों मिलकर सत्य भाषण ब्रह्मचर्य्य देवताओंकी प्रदक्षिणा भिक्षुकों के समयमें भोजन मनका सयम और क्षमा इननियमों समेत उपवास करना और इसका फल हमको देदेना इसीसे मैं स्वर्गको चलाजाऊंगा यहसुनकर उनदोनों ने कहा कि

बहुत अच्छा हम ऐसाही करेंगे यह सुनकर वह यक्ष अन्तर्द्धान होगया और उनदोनों भाइयों ने वह रात्रि वहीं व्यतीतकरके प्रातःकाल वहां से चलके कईदिनों में अपने घरपर आकर अपने माता पिता को सब वृत्तान्त सुनाके यक्षका बताया हुआ व्रतकिया और उसकाफल उसको दिया उसफलको पाते-ही वह यक्ष विमानपर चढ़के वहां आके उनसे बोला कि तुम दोनोंकी कृपासे मैं यक्षयोनि से छूटकर स्वर्गको जाताहूं तुमभी अपने लिये इसव्रतको करना इसके प्रभावसे तुमको इसलोकमें अक्षय धन प्राप्त होगा और अन्त में स्वर्गको चलेजाओगे यहकहके वहयक्ष चलागया और वह दोनों भाई यशोधर तथा लक्ष्मीधर उसव्रतको करके उसके प्रभावसे अक्षयधनपाके सुखपूर्व्वक रहनेलगे इसप्रकारसे औसर पाकर भी धर्म के नहीं त्यागकरनेवाले सत्पुरुषोंपर देवता लोग प्रसन्नहोकर उनके मनोरथों को सिद्ध करतेहैं वसन्तकसे इसअपूर्व्व कथाको सुनकर नरवाहनदत्त भोजनके समय मंत्रियों समेत अपने पिता के यहांगया और भोजनकरके वहीं मंत्रियों समेत दिनको व्यतीतकरके सायङ्कालको अपने मन्दिरमें आया वहां उसे प्रसन्नकरनेके लिये गोमुख उससे यहकथा कहनेलगा कि अपने यूथसे भ्रष्टहुआ वली-मुखनाम कोई वन्दर समुद्रके तटपर गूलरोंके वनमें रहताथा एकसमय गूलरखातेहुए उसवन्दरके हाथसे एकगूलर समुद्रमें गिरपड़ा उस गिरेहुए गूलरको वहीं तैरते हुए एक शिशुमारनाम जलके जीवने खा-लिया और उसके स्वादसे प्रसन्नहोके बड़ा मनोहर शब्द किया उसशब्दको सुनकर वन्दरने बहुत से फल उसको दिये इससे उनदोनों की परममित्रताहोगई तबसे वह शिशुमार नित्य दिवसभर समुद्रके तटपर वन्दरही के पास वृक्षके नीचे रहनेलगा और वन्दर उसे नित्य यथेच्छ गूलर के फल देनेलगा शिशुमारकी इसमित्रताको जानकर उसकी स्त्री ने दिनमें विरह को न सहकर उसकी मित्रता छुटाने के लिये यहकहदिया कि मैं एकअवाच्य रोगसे अत्यन्त पीड़ितहूं शिशुमारने पूछा कि हे प्रिये तुम्हें जो रोगहुआहै उसकी क्या औषधहै यह सुनकर उसकी सखीने कहा कि इसे ऐसा रोगहुआहै जिसकी औषध तुमकर नहीं सक्ते तथापि मैं तुमसे कहतीहूं कि वन्दरके कलेजेके मांसके रसकेबिना यह रोग नहीं जासक्ता उसके यह वचन सुनकर शिशुमारने सोचा कि मुझे वन्दरका कलेजा कहांसेमिले उस मित्र वन्दरके साथ तो मुझको द्रोहकरना उचित नहींहै अथवा उस मित्रकोलेकर मैं क्या करूंगा यह स्त्री तो मुझे प्राणोंसेभी अधिक प्यारीहै यह सोचकर और अपनी स्त्री से यह कहके कि हे प्रिये मैं तेरे लिये पूरा वन्दरही लियेआताहूं शिशुमार अपने मित्र वन्दरकेपासगया और प्रसंगपाकर उससे बोला कि हे मित्र अभीतक तुमने हमारा घर नहीं देखा है इससे आज तुम हमारे घरचलो तुम्हारी भावज तुमको बहुत दिनसे बुलाती है जो मित्र परस्पर एक दूसरेके घरमें साथ बैठकर भोजन नहींकरते हैं और अपनीर स्त्रियों को छुपातेहैं उनकी मित्रता नहीं है कपटहै इसप्रकार कहकर वह उस वन्दरको जल में बुलाकर अपनी पीठपरचढ़ाकर लेचला चलतेसमय उसे उदासीनसा देखकर वन्दरने पूछा कि हे मित्र आज तुम दुःखी क्यों होरहेहो यह सुनकर उस मूर्ख शिशुमारने उसे अपने आधीनजानकर कहा कि आज तुम्हारी भाभी कुछ रोगग्रस्त है उसे पथ्यके लिये वन्दरका कलेजा चाहिये इसीलिये मुझे उदासीनताहै कि मैं

बन्दरका कलेजा कहापाऊं यह सुनकर उस बुद्धिमान् बन्दरने शोचा कि यह पापी इसीलिये मुझे लिये जाताहै देखो यह स्त्री के कहने में आकर मित्रको भी मारने के लिये उद्यतहोगया अथवा भूतग्रस्त लोग अपनेही दातोंसे क्या अपने मासको नहीं काटते हैं यह शोचकर उसने शिशुमारसे कहा कि हे मित्र जो ऐसाहीथा तो तुमने हमसे पहलेही क्यों न कहा कि जो मैं अपना कलेजा साथलियेआता वह तो गूलरकेवृक्षपरही रक्खा है यह सुनकर वह मूर्ख शिशुमार उससे यह कहकर कि तुम गूलरपरसे कलेजा लेआओ उसे समुद्रके तटपर लेआया वहा यमराजके समान उस शिशुमारसे छूटकर वह अपने वृक्षपर चढके शिशुमारसे बोला कि हे मूर्ख चलाजा क्या कलेजा शरीरसे अलगहोताहै मैंने यह बहानाकरके तुझसे अपने प्राणवचायेहैं अब मैं तेरे पास नहीं आऊंगा क्या इस विषयपर तूने गधेकी कथा नहीं सुनी है कि किसी वन में शृगालसमेत एक सिंहरहता था एकसमय शिकारखेलनेको आयेहुए किसी राजा ने उस सिंहको शस्त्रों से बहुत घायलकिया और सिंह ने घायलहोके किसी गुफामें घुसकर अपने प्राणबचाये तदनन्तर उस राजाके चलेजानेपर शृगाल ने सिंहसे कहा कि अब गुफासे निकलकर आप अपना भोजनढूढिये क्योंकि आपको भी क्षुधालगीहोगी और मैंभी भूखसे व्याकुलहोरहाहूं यह सुनकर उस सिंहने कहा हे मित्र मैं घावोंसे ऐसा पीडितहूं कि मुझे घूमनेकी सामर्थ्य नहीं है जो गधेके कान तथा उसका हृदय मुझेमिले तो शीघ्र मेरे घाव अच्छेहोजायँ और मेरे शरीर मे भी बलआजाय इससे जो कहीं गधामिले तो लाओ यह सुनकर शृगाल गधा ढूढनेको चला और किसी नदीके तटपर किसी धोबी के गधेको चरतेदेखकर बोला कि हे मित्र तुम दुर्बल क्यों हो उसने कहा कि रोज २ इस धोबीका भार ढोते २ मैं दुर्बलहोगयाहूं यह सुनकर उसने कहा कि यहां तुम दुःख क्यों भोगतेहो हमारेसाथ वनमें चलो वहां गधियोंके साथ कोमल २ दूबचरके स्वर्ग के सुखोंको भोगकरना यह सुनकर वह गधा उसके साथ वन में सिंहकी गुफाके निकटगया उस गधे को देखकर सिंह ने गुफासे निकलकर पीछेसेआकर उसकी पीठपर पंजामारा वह पंजा उसकी पीठपर अच्छेप्रकार सेन लगा इससे वह गधा भयभीतहोकर नदी के किनारेपर फिर भागआया और सिंह व्याकुलताके कारण उसके पीछे न दौडकर अपनी गुफामें चलागया तब शृगालने सिंहसे कहा कि जो तुम इस गधेको भी न मारसके तो अन्य जीवों के मारने में तुम्हारी क्या गतिहोगी यह सुनकर सिंहने कहा कि अब तुम जैसेबने तैसे उस गधेको फिर लेआओ मैं अभी से तैयारहोरहूंगा आतेही उसे मारडालूंगा उसके यह वचन सुनकर शृगालने फिर उस गधेके पासजाकर कहा कि तुम क्यों भागआये उसने कहा कि वहां किसी भयङ्कर जीव ने मुझेमारा था उसीसे मैं भाग आया यह सुनकर शृगाल हँसकर बोला कि तुमको भ्रमहोरहा है वहां कोई भयङ्कर जीव नहीं रहताहै नहीं तो मैं महानिर्बल जीव वहां कैसे रहसक्ताथा इससे अब तुम वहां मेरे साथचलो उसके यह वचन सुनकर वह गधा उसके साथ वन में सिंहकी गुफाके समीप फिर गया वहां पहुंचतेही सिंह गुफासे निकलकर उसे मारके और इसके मासकी रक्षाकर उसी शृगालको उसका रक्षक नियतकरके स्नान करनेको चलागया उसके चलेजानेपर शृगाल ने गधेका हृदय तथा कान खाडाले जब स्नानकरके

लौटे हुए सिंहने पूछा कि इसके कान और हृदय कहां हैं उसने कहा कि इसके कान और हृदय प-हलेही से न थे नहीं तो यह आपका पजाखाकर भी फिर लौटकर क्यों आता यह सुनकर सिंहने उसके वचन सत्यमानकर गधेका मांसखाया और जो उसमे बचा वह शृगाल ने खाया इस कथा को कहकर वन्दर ने फिर शिशुमार से कहा कि मैं उस गधे के समान अब फिर तुम्हारे पास कभी न आऊंगा उस वन्दरके यह वचनसुनकर वह शिशुमार अपनी मूर्खताका शोच करताहुआ अपने स्थान को च-लागया और वन्दरके साथ उसकी मित्रता के छूटजानेसे वह स्त्री स्वस्थहोगई इसप्रकार से बुद्धिमान् पुरुषको दुष्टोंपर विश्वास न करना चाहिये ठीकहै (दुर्जनेकृष्णसर्पेच कुतोविश्वासतस्सुखम्) दुष्टोंपर और कालेसर्पपर विश्वास करनेवाले को सुख कैसे होसक्ताहै १५४ इस कथाको कहके नरवाहनदत्तसे फिर गोमुखने कहा कि अब मैं फिर आपको मूर्खोंकी हास्यकारी कथा सुनाताहूं किसी निपुणगाने वालेने मधुरगीत गाकर किसी धनवान् को प्रसन्नकिया तब उसने अपने खजानचीको बुलवाकर कहा कि इस गानेवाले को दोहजार रुपये दो यह सुनकर बहुत अच्छा कहके खजानची चलागया तदन-न्तर उस गानेवालेने खजानची से रुपये मांगे परन्तु उसने कुछ न दिया तब गानेवालेने उस धनवान् से आकर कहा कि वह रुपये नहीं देताहै यह सुनकर वह बोला क्या तुमने मुझे रुपये दियेथे जो तुम को मैं रुपये दिलवाऊं क्षणभर गानकरके तुमने मेरे कानोंको सुखदियाथा इसीसे मैंने रुपया देना कह के तुम्हारे कानोंको भी सुख देदिया यह सुनकर वह गानेवाला निराशहोकर भी हँसकर चलागया अब अन्य दो मूर्खशिष्योंकी कथा सुनिये किसीगुरुके दो शिष्यथे उन दोनों मे परस्पर शत्रुता रहती थी उनमेंसे एकतो गुरुके दक्षिण चरणको धोके नित्यमलताथा और दूसरावायेंको एकदिन दक्षिण चरणका मलनेवाला शिष्य कहीं चलागया था इससे गुरुजीने वायेंचरणके मलनेवाले शिष्यसे कहा कि आज तुम दक्षिण चरणको भी मलदो यहसुनकर उसनेगुरुसे कहा कि यह मेरे शत्रुका पैरहै इसे मैं नहीं मलूंगा यह सुनकर गुरुने उससे बडा आग्रहकिया तब उसने पत्थरलेकर गुरुका वह पैर तोड-डाला इससे गुरुने हाहाकार शब्दमचाया उस शब्दको सुनकर बाहरसे लोगोंने आकर पीटना चाहा परन्तु गुरुने कृपाकरके उसे बचादिया दूसरेदिन दूसरे शिष्यने आकर गुरुसे पैरकी पीडाका वृत्तान्त पूछके महा क्रोधितहोके यह कहा कि क्या मैं उसके पैरको नहीं तोडूंगा यह कहकर उसने गुरुका वा-यां पैर भी तोडडाला यह जानकर लोग उसे पीटनेलगे परन्तु गुरुने कृपाकरके उसे भी छुडादिया उन दोनों का यह वृत्तान्त जिस किसीने सुना वह बहुत हँसा और उनके गुरुकी कृपालुताकी बडी प्रशंसाकी इस प्रकारसे आपसमें विरोधकरके मूर्खसेवक स्वामीके कार्य्यको नष्टकरतेहैं और उनका कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता अब आप दो शिरवाले सर्पकी कथा सुनिये कि किसी सर्प के दो शिरथे उनमें से एकशिरमें तो नेत्रथे और पूंछ की ओर जो शिरथा वह अन्धाथा उनदोनों मे सदैव यहविवाद रहता था कि एक कहता था मैं मुख्य हूं और दूसरा कहता था कि मैं मुख्यहूं परन्तु सर्प अपने मुख्य शिरकी ओर को ही चलताथा एकदिन मार्गमें उस पूंछवाले शिरने एक काष्ठ पकडलिया इससे सर्प

बन्दरका कलेजा कहापाऊं यह सुनकर उस बुद्धिमान् बन्दरने शोचा कि यह पापी इसीलिये मुझे लिये जाताहै देखो यह स्त्री के कहने में आकर मित्रको भी मारने के लिये उद्यतहोगया अथवा भूतग्रस्त लोग अपनेही दातोंसे क्या अपने मासको नहीं काटते हैं यह शोचकर उसने शिशुमारसे कहा कि हे मित्र जो ऐसाहीथा तो तुमने हमसे पहिलेही क्यों न कहा कि जो मैं अपना कलेजा साथलियेआता वह तो गूलरकेवृक्षपरही रक्खा है यह सुनकर वह मूर्ख शिशुमार उससे यह कहकर कि तुम गूलरपरसे कलेजा लेआओ उसे समुद्रके तटपर लेआया वहां यमराजके समान उस शिशुमारसे छूटकर वह अपने वृक्षपर चढ़के शिशुमारसे बोला कि हे मूर्ख चलाजा क्या कलेजा शरीरसे अलगहोताहै मैंने यह बहानाकरके तुझसे अपने प्राणबचाये हैं अब मैं तेरे पास नहीं आऊंगा क्या इस विषयपर तूने गधेकी कथा नहीं सुनी है कि किसी बन में शृगालसमेत एक सिंहरहता था एकसमय शिकारखेलने को आयेहुए किसी राजा ने उस सिंहको शस्त्रों से बहुत घायलकिया और सिंह ने घायलहोके किसी गुफामें घुसकर अपने प्राणबचाये तदनन्तर उस राजाके चलेजानेपर शृगाल ने सिंहसे कहा कि अब गुफासे निकलकर आप अपना भोजनढूंढिये क्योंकि आपको भी क्षुधालगीहोगी और मैंभी भूखसे व्याकुलहोरहाहूं यह सुनकर उस सिंहने कहा हे मित्र मैं घावोंसे ऐसा पीडितहूं कि मुझे घूमनेकी सामर्थ्य नहीं है जो गधेके कान तथा उसका हृदय मुझेमिले तो शीघ्र मेरे घाव अच्छेहोजायँ और मेरे शरीर में भी बलआजाय इससे जो कहीं गधामिले तो लाओ यह सुनकर शृगाल गधा ढूंढनेको चला और किसी नदीके तटपर किसी धोबीके गधेको चरतेदेखकर बोला कि हे मित्र तुम दुर्वल क्यों हो उसने कहा कि रोज २ इस धोबीका भार ढोते २ मैं दुर्वलहोगयाहूं यह सुनकर उसने कहा कि यहां तुम दुःख क्यों भोगतेहो हमारेसाथ बनमें चलो वहां गधियोंके साथ कोमल २ दूबचरके स्वर्ग के सुखोंको भोगकरना यह सुनकर वह गधा उसके साथ बन में सिंहकी गुफाके निकटगया उस गधे को देखकर सिंह ने गुफासे निकलकर पीछेसेआकर उसकी पीठपर पंजामारा वह पंजा उसकी पीठपर अच्छेप्रकार से न लगा इससे वह गधा भयभीतहोकर नदी के किनारेपर फिर भागआया और सिंह व्याकुलताकेकारण उसके पीछे न दौडकर अपनी गुफामें चलागया तब शृगालने सिंहसे कहा कि जो तुम इस गधेको भी न मारसके तो अन्य जीवों के मारने में तुम्हारी क्या गतिहोगी यह सुनकर सिंह ने कहा कि अब तुम जैसेबने तैसे उस गधेको फिर लेआओ मैं अभी से तैयारहोरहूंगा आतेही उसे मारडालूंगा उसके यह वचन सुनकर शृगालने फिर उस गधेके पासजाकर कहा कि तुम क्यों भागआये उसने कहा कि वहां किसी भयङ्कर जीव ने मुझेमाराथा उसीसे मैं भागआया यह सुनकर शृगाल हँसकर बोला कि तुमको भ्रमहोरहा है वहां कोई भयङ्कर जीव नहीं रहताहै नहीं तो मैं महानिर्बल जीव वहां कैसे रहसक्ताथा इससे अब तुम वहां मेरे साथचलो उसके यह वचन सुनकर वह गधा उसके साथ बन में सिंहकी गुफाके समीप फिर गया वहां पहुँचतेही सिंह गुफासे निकलकर उसे मारके और उसके मासको नोचकर उसी शृगालको उसका रक्षक नियतकरके स्नान करनेको चलागया उसके चलेजानेपर शृगाल ने गधेका हृदय तथा कान खाडाले जब स्नानकरके

का चलना बन्दहोगया तब वहसर्प उसी शिरको बलवान् जानके उसी अधेशिरकी ओर से चलने लगा इसीसे मार्गमें किसी जलतेहुए अग्निकुण्ड में गिरकर मरगया इस प्रकारसे जो कोई पुरुष गुणों का अन्तर नहीं जानते हैं वह हीनगुणके सगसे नष्टहोजातेहैं अब आप चावल खानेवाले मूर्खकी कथा सुनिये कोई मूर्खपुरुष अपनी सुसरालगया था वहा उसने भात करनेके लिये रक्खेहुए चावलोंमेंसे मुट्ठी भर चावल मुखमेंभरलिये और उसीसमय सासके आजानेसे वह मूर्ख लज्जितहोके उनमुखके चावलोंको न खासका और नडालसका इससे उसकी सासने उसके गालफूलेहुए देखकर और उसे अप्राच्यहुआ जानकर रोगके सन्देहसे अपने पतिको बुलाके उसे दिखाया उसने भी देखकर किसी वैद्यको बुलाया वैद्यने आनकर उसके मुखको सूजाहुआ जानके उसके जावडे चीरे तब इतने दुःखसे उसके मुखसे वह चावल निकले यह देखकर सब लोग हँसने लगे इसप्रकारसे मूर्खलोग कुकार्य्य करते तो हैं परन्तु उसे छिपा नहीं सक्ते हैं अब मूर्ख बालकों की कथा सुनिये कुछेक अज्ञान बालक गौओं को दुहते देखकर एक गधी पकडकर दुहनेलगे और सबके चित्तमे यह बात उत्पन्नहुई कि पहले मैं दूधपियूं पहले मैं दूध पीयू परन्तु परिश्रम करनेपरभी उन्हे दूध नही मिला ठीकहै(अवस्तुनिकृतक्लेशो मूर्खोंयात्यवहास्यताम्) अवस्तुमे परिश्रम करनेसे मूर्खोंकी हँसी होती है अब एक अन्य मूर्खकी कथा सुनिये किसी ब्राह्मण ने सायंकालके समय अपने मूर्ख पुत्रसे कहा कि कल प्रातःकाल तुमको गाव जानाहोगा यह सुनकर वह अपने पितासे कार्य्यके बिना पूछेही प्रातःकाल गावकोगया और व्यर्थ श्रमकरके सायंकालको लौट कर अपने पितासे बोला कि मैं गाव होआया यह सुनके उसके पितानेकहा कि तुम्हारे जानेसे क्याकार्य्य सिद्धहुआ इसप्रकारसे मूर्खलोग व्यर्थ कार्य्य करके केवल दुःखही पाते हैं और कुछ कार्य्य सिद्ध नहीं होताहै इसी से ससारमें उनकी हँसी होती है गोमुखसे इन शिक्षायुत कथाओंको सुनकर नरवाहनदत्त प्रसन्नहोके रात्रि अधिक व्यतीतहुई जानकर अपने मित्रो समेत शयन स्थानमे गया ॥६४॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशक्तियशोलम्बकेसप्तमस्तरंग ७॥

इसके उपरान्त दूसरे दिन फिर रात्रिके समय शक्तियशा के लिये उत्कण्ठित नरवाहनदत्त से गोमुख यह कथा कहनेलगा कि किसी नगरमे देवशर्म्मा नाम एक ब्राह्मण रहताथा उसके देवदत्ता नाम बडी सुशील स्त्रीथी कुछ कालमे देवदत्ताके एकपुत्र उत्पन्नहुआ उसपुत्रके उत्पन्नहोनेसे दरिद्रीभी देवशर्म्माको एक बडी निधि मिलनेके समान प्रसन्नताहुई एकदिन सूतकके निवृत्तहोजाने पर वह स्त्री नदी स्नानकरनेकोगई और देवशर्म्मा उस बालककी रक्षाकरनेको घरमेंरहा इतनेही में राजाके यहासे स्वस्तिवाचन करवानेके लिये एकचेरी उसके बुलानेकोआई तबवह एक नौलेको जिसे उसने बाल्यावस्थाहीमे पाला था बालककी रक्षाके लिये छोड़कर दक्षिणाके लोभसे चेरीके साथ राजाके यहा चलागया उसके चले जानेपर एक काला सर्प अकस्मात उस बालकके पासआया सर्पको देखकर नौलेने उसे मारडाला और क्षणभरके पीछेही देवशर्म्माको आते देखकर रुधिरसे भरेहुए मुखवाला वह नौला प्रसन्नतासे उसके पैरों पर लोटनेलगा देवशर्म्मा ने उस के मुखमें रुधिरभरा देखके यह जानकर कि यह मेरे बालक को मार

आयाहै उसे पत्थरसे कुचल कर मारडाला और भीतर जाकर बालकको सोताहुआ देखा और उसके पास ही नौलेका माराहुआ सर्प देखा यह देखकर उसके चित्तमें बड़ा दुःखहुआ और देवदत्ताने भी आके वह वृत्तान्त सुनके बहुत दुःखित होके कहा कि तुमने बिना विचारे उस उपकारी नौलेको क्यों मारडाला इस से हे स्वामी बुद्धिमान्को सहसा कोई कार्य्य न करडालना चाहिये सहसा कार्य्य करने से दोनों लोकों में दुःख होताहै और विधिपूर्वक कार्य्य न करनेसे उलटा फल होताहै जैसे कि किसीके शरीरमें बादीका रोगथा उसे वैद्यने औषध देकरकहा कि तुम घरमेंजाकर इनऔषधियोंकोपीसो मैंभी पीछेसे अभी आता हूं उसने घरमें जाकर वैद्यके आने में कुछ देर देखकर सब औषध पीसकर पीडालीं इस से वह व्याकुल होके मरनेसा लगा तब वैद्यने आके उसे वमनकराके स्वस्थ किया और कहा कि हे मूर्ख बस्तिकी औषधी गुदामें दीजाती है या पी जाती है तुमने मेरी प्रतीक्षा क्यों नहीं की इसप्रकारसे इष्टवस्तुभी अविधिसे काम में लानेके हेतुसे अनिष्टफल देती है इससे बुद्धिमान्को चाहिये कि विधिपूर्वक सब कामकरे १९ बिना विचारे कार्य्य करनेवालोंकी निन्दाहोती है इसपरभी मैं आपको एक कथा सुनाताहूं कोई मूर्ख पुरुष अपने पुत्रको साथ लेकर परदेशको चला मार्गके किसी वनमें उसका पुत्र कुछ दूर उससे अलग चलागया वहां रीछोंने उसे फाड़खाया तब उसने अपने किसी प्रकारसे प्राण बचाकर अपने पिताके पास आकर कहा कि मुझे फल खानेवाले बड़े २ बालवाले जीवोंने काट खायाहै यह सुनकर उसका पिता खड्ग लेके वनमेंगया और वहां फल तोड़तेहुए बड़े २ बालवाले तपस्वियोंके मारनेको उद्यतहुआ यह देखकर किसी पथिकने उससे कहा कि मेरे आगेही रीछने तुम्हारे पुत्रको काटखायाहै इन निरपराध विचारे मुनियोंको तुम मतमारो उसके इसप्रकार कहने से वह उस महापातक से निवृत्त हुआ इससे बिना विचारे कोई भी कार्य्य न करना चाहिये मनुष्यको सदैव बुद्धिपूर्वक कार्य्य करना चाहिये नहीं तो लोकमें उपहासहोता है कि किसी निर्धन पुरुषने मार्गमें अशर्फियों से भरीहुई एक थैलीपाई इससे प्रसन्नहोके वह मूर्ख वहीं बैठकर गिननेलगा इतनेमें जिसकी वह थैलीगिरीथी वह याद करके वहांआया और अपनी थैली उससे लेगया इससे वह दरिद्री मूर्ख उदासीन होके अपने घर चलाआया इसप्रकारसे मूर्खलोग प्राप्तहुएभी धन को क्षणभरमें गमा देते हैं द्वितीयाके चन्द्रमाके देखनेकी इच्छाकरतेहुए किसी मूर्खसे किसी पुरुषने कहा कि देखो मेरी उंगलीके सन्मुख चन्द्रमाहै यह सुनकर वह मूर्ख आकाशमें न देखकर उसीकी उंगली में देखनेलगा उसकी इस मूर्खतापर लोग बहुत हँसे बुद्धिके द्वारा असाध्य कार्य्यभी सिद्धहोते हैं इस बात पर मैं आपको एककथा सुनाताहूं कोई स्त्री अकेली किसी गांवको चली मार्ग में उसे किसी बन्दरने आ घेरा तब वह उस बन्दरसे बचनेके लिये एक वृक्षके इधर उधर घूमनेलगी यह देखकर उस मूर्ख बन्दर ने उस वृक्षको अपनी भुजाओंसे पकड़लिया उसकी इस मूर्खताको देखकर उसस्त्रीने उसके दोनों हाथपकड़ लिये इससे वह बन्दर पराधीन होकर अत्यन्त क्रोधितहुआ इतनेमें उसी मार्गमें आतेहुए किसी अहीर से उसस्त्रीने कहा कि हे महाभाग अगर तुम इस बन्दरके आकर हाथ पकड़लो तो मैं अपने वस्त्रसुधारलूं यहसुनकर उस अहीरने कहा कि तुम मेरे साथ रमण करनेको राजीहो तो मैं इसबन्दरके हाथ पकड़लूं उस

का चलना बन्दहोगया तब वहसर्प उसी शिरको बलवान् जानके उसी अधेशिरकी ओर से चलने लगा इसीसे मार्गमें किसी जलतेहुए अग्निकुण्ड मे गिरकर मरगया इस प्रकारसे जो कोई पुरुष गुणों का अन्तर नहीं जानते हैं वह हीनगुणके सगसे नष्टहोजातेहैं अब आप चावल खानेवाले मूर्खकी कथा सुनिये कोई मूर्खपुरुष अपनी सुसरालगया था वहा उसने भात करनेके लिये रक्खेहुए चावलोंमेंसे मुट्ठी भर चावल मुखमेंभरलिये और उसीसमय सासके आजानेसे वह मूर्ख लज्जितहोके उनमुखके चावलोको न खासका और न डालसका इससे उसकी सासने उसके गालफूलेहुए देखकर और उसे अवाच्यहुआ जानकर रोगके सन्देहसे अपने पतिको बुलाके उसे दिखाया उसने भी देखकर किसी वैद्यको बुलाया वैद्यने आनकर उसके मुखको सूजाहुआ जानके उसके जावडे चीरे तब इतने दुःखसे उसके मुखसे वह चावल निकले यह देखकर सब लोग हँसने लगे इसप्रकारसे मूर्खलोग कुकार्य्य करते तो हैं परन्तु उसे छिपा नहीं सक्के हैं अब मूर्ख बालको की कथा सुनिये कुछेक अज्ञान बालक गौओं को दुहते देखकर एक गधी पकडकर दुहनेलगे और सबके चित्तमें यह बात उत्पन्नहुई कि पहले मैं दूधपियू पहले मैं दूध पीयू परन्तु परिश्रम करनेपरभी उन्हे दूध नही मिला ठीकहै (अवस्तुनिकृतक्लेशो मूर्खोयात्यवहास्यताम्) अवस्तुमे परिश्रम करनेसे मूर्खोंकी हँसी होती है अब एक अन्य मूर्खकी कथा सुनिये किसी ब्राह्मण ने सायंकालके समय अपने मूर्ख पुत्रसे कहा कि कल प्रातःकाल तुमको गाव जानाहोगा यह सुनकर वह अपने पितासे कार्य्यके विना पूछेही प्रातःकाल गावकोगया और व्यर्थ श्रमकरके सायकालको लौट कर अपने पितासे बोला कि मैं गाव होआया यह सुनके उसके पितानेकहा कि तुम्हारे जानेसे क्याकार्य्य सिद्धहुआ इसप्रकारसे मूर्खलोग व्यर्थ कार्य्य करके केवल दुःखही पाते हैं और कुछ कार्य्य सिद्ध नही होताहै इसी से ससारमें उनकी हँसी होती है गोमुखसे इन शिक्षायुत कथाओंको सुनकर नरवाहनदत्त प्रसन्नहोके रात्रि अधिक व्यतीतहुई जानकर अपने मित्रों समेत शयन स्थानमें गया ॥६४॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशक्तियशोलम्बकेसप्तमस्तरंग ७॥

इसके उपरान्त दूसरे दिन फिर रात्रिके समय शक्तियशा के लिये उत्कण्ठित नरवाहनदत्त से गोमुख यह कथा कहनेलगा कि किसी नगरमे देवशर्म्मा नाम एक ब्राह्मण रहताथा उसके देवदत्ता नाम बडी सुशील स्त्रीथी कुछ कालमे देवदत्ताके एकपुत्र उत्पन्नहुआ उसपुत्रके उत्पन्नहोनेसे दरिद्रीभी देवशर्म्माको एकबडी निधि मिलनेके समान प्रसन्नताहुई एकदिन सूतकके निवृत्तहोजाने पर वह स्त्री नदी स्नानक रनेकोगई और देवशर्म्मा उस बालककी रक्षाकरनेको घरमेंरहा इतनेंही में राजाके यहासे स्वस्तिवाचन करवानेके लिये एकचेरी उसके बुलानेको आई तबवह एक नोलेको जिसे उसने बाल्यावस्थाहीमे पाला था बालककी रक्षाके लिये छोड़कर दक्षिणाके लोभसे चेरीके साथ राजाके यहा चलागया उसके चले जानेपर एक काला सर्प अकस्मात उस बालकके पासआया सर्पको देखकर नौलेने उसे मारडाला और क्षणभरके पीछेही देवशर्म्माको आते देखकर रुधिरसे भरेहुए मुखवाला वह नौला प्रसन्नतासे उसके पैरों पर लोटनेलगा देवशर्म्मा ने उस के मुखमें रुधिरभरा देखके यह जानकर कि यह मेरे बालकको मार

किसीप्रकारका भयमतकरना क्योंकि मैं कर्परके समान मूर्ख नहीं हूं यह कहकर घट तपस्वीकासा भेष बनाके कर्पर (खपरा) में दही भातलेके पथिकके समान कर्परके शरीरकेपास गया और अकस्मात् गिरकर हाथसे उस खर्परको गिराकर हे अमृतसे भरेहुए खर्पर तुमकहागये इत्यादि वचन कहकर रोने लगा रक्षकों ने उसकारुदन सुनकर यह जाना कि यहअपने खपरेकेलिये रोरहा है इससे कुछ उसके पकडने का विचार नहींकिया तदनन्तर घट क्षणभर शोककरके अपने घर चलाआया और राजपुत्रीके साथ आनन्द पूर्वकरहा दूसरेदिन अपने एक सेवकको स्त्रीकासाभेष बनाके और एक सेवकके शिरपर धतूरेमिलेहुए मिष्टान्नसे भराहुआ पात्ररखाके उनदोनों सेवकों को साथलेके सायंकालके समय मतवाले ग्रामीणकासा भेष बनाके जहां कर्पर का शरीर था वहीं जानिकला उसे देखकर रक्षकों ने पूछा कि हे भाई तुम कौनहो और यहस्त्री तुम्हारी कौनहै और कहां जातेहो यह सुनकर उसने कहा कि मैं ग्रामीण पुरुषहूं यह मेरी स्त्री है इसे लेकर मैं अपने श्वशुरके यहां जारहाहूं यह भोजन मेरेसाथहै जो आपचाहैं तो आधा आप लोगखाय आधा मैं वहां लेजाऊँगा यह कहकर उसने वह मिष्टान्न निकालकर उन सब रक्षकोंको दिया उसके खातेही वह सब बेहोश होगये इससे रात्रिके समय कर्परके शरीरको जलाकर घट अपने घरको चलाआया प्रातःकाल राजाने यह खबरपाके उन मूर्ख सेवकों को निकालके अन्य सेवकोंको उसकी हड्डियों की रक्षाके निमित्त नियत करके कहा कि जो कोई इन हड्डियों को लेनेआवे उसे तुम पकडकर हमारे पास लेआना और जो कोई तुम्हें कुछ खानेकोदे उसे कभी खानानहीं राजा की यह आज्ञापाके सेवक लोग रात्रि दिन बडी सावधानी से हड्डियोंकी रक्षा करनेलगे इस वृत्तान्तको सुनकर घट भगवती के मोहन मन्त्रके जाननेवाले अपने मित्र सन्यासीको साथ लेकर कर्परके शरीरके पासगया और वहां उसके मन्त्रके प्रभावसे रक्षकोंको मोहित कराके सब हड्डी वहांसे ले गंगाजीमें बहाके अपने घर आकर राजपुत्री के साथ सुख पूर्वक रहनेलगा राजाने इसवृत्तान्तको सुनकर जाना कि किसी योगीने यह सब कार्यकियाहै इससे उसने अपने सब नगरमें यह ढंढोरा पिटवाया कि जिस योगीने मेरी पुत्रीका हरण आदि सब विचित्र कर्म कियाहै वह मेरे पास आवे उसको मैं अपना आधा राज्यदूंगा इसढंढोरेको सुनके घटने राजाके पास जानाचाहा परन्तु राजपुत्रीने उसे न जानेदिया और उससे कहा कि छलकरके मारनेवाले इस राजापर तुम कभी विश्वास न करो उसके यह वचन सुनकर भेद खुलजाने के भयसे उस राजपुत्री तथा सन्यासीको साथ लेकर परदेशको चला मार्ग में राजपुत्री ने उस सन्यासी से एकान्तमें कहा कि पहले कर्परनाम चोरने मेरा धर्म नष्टकिया फिर उसके मरजानेपर यह मुझे लेआया इसपर मेरा कुछ स्नेह नहीं है इससे तुम मुझे स्वीकार करो यह कहके वह उस सन्यासी के साथ रमण करके घटको विषदेके मारकर उसी सन्यासी के साथचली मार्ग में रात्रिके समय एक धनदेव नाम वैश्य उसे मिला सन्यासी के सोजाने पर उससे वह राजपुत्री बोली कि इस अशुभ सन्यासीको लेकर मैं क्या करूंगी तुम मुझे स्वीकार करो यह कहकर वह उस सोतेहुए सन्यासी को त्यागकर उस वैश्यके साथ चलीगई प्रातःकाल उस सन्यासी ने राजपुत्रीको न देखकर भार्गा

ने कहा कि बहुत अच्छा तुम इसबन्दरके हाथोंको पकडो मैं तुम्हारेसाथ रमण करूंगी यह कहकर उसने उस बन्दरके हाथ पकड़ाकर चक्षू निकालकर उसबन्दरको मारडाला और उस अहीर से कहा कि चलो एकान्त मे चले यह कहकर वह बहुत दूर अपने साथ उसे लेगई और जिस गावको वह जाना चाहतीथी उसी गाव के रहनेवाले कुछ पुरुषो से मिलकर अपने गावको चलीगई इसप्रकारसे उस स्त्री ने बुद्धिके द्वारा अपने धर्म्म की रक्षा करी इससे इस ससार में बुद्धिही मुख्य वस्तहै चाहे धन का दरिद्री जीजाय परन्तु बुद्धिका दरिद्री नहो जीमक्ता अब हे स्वामी एकविचित्रकथा मे आपको सुनाताहू किसी नगर मे घट और कर्परनाम दो चोर रहतेथे एकसमय रात्रि में कर्परघटको बाहर बैठाल के राजकन्याके महल मे सेंधलगाकर गया वहा उसी समय जगीहुई राजकन्या ने उस कोने में खडाहुआ देखकर कामसे व्याकुलहोके उसी के साथ रमण किया और धन देके उससे कहा कि जो तुम फिर मेरे यहा आओगे तो मैं बहुतसा धन तुमकोदूगी तब कर्पर बाहर निकलकर घटको सबधन देके और उससे सब वृत्तान्त कहके फिरराजकन्याके पासगया ठीकहै (आकृष्टःकामलोभाभ्यामपायकोहिपश्यति) काम तथालोभ के वशीभूत हुआ कौन मनुष्य परिणामको देखताहै वहा राजपुत्रीके पासजाकर कर्परराजपुत्री के साथ फिर रमणकरके थककर उसीके पास सोगया और सोतेही सोते सबरात्रिव्यतीतहोगई प्रातःकाल पुर के रक्षक राजपुत्रीके मन्दिरमें सेंध देखके भीतरजाकर कर्परको बाधके राजाकेपास लेगये राजाने क्रोध करके उसे फासीकी आज्ञादीनी जब उसे राजाकेलोग मारनेके लिये लेचले तो मार्गमें मिलेहुए घटसे कर्परने एकइशारा करके कहा कि राजपुत्रीको राजमन्दिरसे लाकर अपने यहां रखलेना उसका आशयजानकर घटने भी इशारेसे कहदिया कि अच्छा मैं लेआऊगा तदनन्तर बधिकोंने उसे लेजाके वृक्ष पर फासीमें लटकाकर मारडाला और रात्रिके समय घटने अपनेघरसे राजपुत्रीके महलतक सुरगखोद कर राजपुत्रीके महलमेंजाके बन्धनमें पडीहुई राजपुत्रीसे कहा कि तुम्हारेलिये जो आज कर्पर मारा गयाहै उसका मित्र मैं घटहू उसीके वचनोके अनुसार मैं तुमको लेनेके निमित्त यहा आयाहू इससे तुम मेरे साथचलो यह सुनकर राजपुत्री प्रसन्नहोके उसके साथ चलनेको उद्यतहोगई तब घट उसकेबन्धन खोलके सुरग के द्वारा उसे अपनेघर लेआया प्रातःकाल राजाने अपनी कन्याके कहीं चलेजाने का वृत्तान्त सुनकर शोचा कि उसपापी चोरका कोई साहसी मित्र अवश्यहै वही मेरी पुत्रीको हरलेगयाहै यह शोचकर राजाने कर्परके शरीरकी रक्षा करनेके लिये अपने सेवकोंको नियतकरदिया और उनसे कह दिया कि जो कोई पुरुष यहा शोककरके इसका दाहादिक करनेको आवे उसे बाधकर हमारेपासले आना उसीसे कुलमें दाग लगानेवाली उस कुलटापुत्रीका पतालगेगा राजाकी यह आज्ञापाकर सेवक लोग रात्रि दिन कर्परके शरीरकी रक्षा करनेलगे घटने इसबातको जानकर राजपुत्रीसे कहा कि हे प्रिये कर्पर मेरा बड़ा प्रियमित्रथा उसीके उद्योगसे अनेक प्रकारके रत्नोंसमेत तुम मुझको प्राप्तहुई हो उसके स्नेह से विना अनृणहुए मेरे चित्तको शान्तिनहोगी इससे मै युक्तिपूर्व्वक उसकेपास जाकर उसका शोककरूगा और उसके शरीर को जलाके उसकी हड्डिया किसी तीर्थमें डारूगा और इसबातकर तुम

किसीप्रकारका भयमतकरना क्योंकि मैं कर्परके समान मूर्ख नहीं हूं यह कहकर घट तपस्वीकासा भेष बनाके कर्पर (खपरा) में दही भातलेके पथिकके समान कर्परके शरीरकेपास गया और अकस्मात् गिरकर हाथसे उस खर्परको गिराकर हे अमृतसे भरेहुए खर्पर तुमकहागये इत्यादि वचन कहकर रोने लगा रक्षकों ने उसकारुदन सुनकर यह जाना कि यहअपने खपरेकेलिये रोरहा है इससे कुछ उसके पकडने का विचार नहींकिया तदनन्तर घट क्षणभर शोककरके अपने घर चलाआया और राजपुत्रीके साथ आनन्द पूर्वकरहा दूसरे दिन अपने एक सेवकको स्त्रीकासाभेष बनाके और एक सेवकके शिरपर धतूरेमिलेहुए मिष्टान्नसे भराहुआ पात्ररखाके उनदोनों सेवकों को साथलेके सायंकालकेसमय मतवाले ग्रामीणकासा भेष बनाके जहा कर्पर का शरीर था वहीं जानिकला उसे देखकर रक्षकों ने पूछा कि हे भाई तुम कौनहो और यह स्त्री तुम्हारी कौनहै और कहा जातेहो यह सुनकर उसने कहा कि मैं ग्रामीण पुरुषहू यह मेरी स्त्री है इसे लेकर मैं अपने श्वशुरके यहा जारहाहू यह भोजन मेरेसाथहै जो आपचाहें तो आधा आप लोगखाय आधा मैं वहा लेजाऊँगा यह कहकर उसने वह मिष्टान्न निकालकर उन सब रक्षकोंको दिया उसके खातेही वह सब बेहोश होगये इसमें रात्रिके समय कर्परके शरीरको जलाकर घट अपने घरको चलाआया प्रातःकाल राजाने यह खबरपाके उन मूर्ख सेवकों को निकालके अन्य सेवकोंको उसकी हड्डियों की रक्षाके निमित्त नियत करके कहा कि जो कोई इन हड्डियों को लेनेआवे उसे तुम पकडकर हमारे पास लेआना और जो कोई तुम्हें कुछ खानेकोदे उसे कभी खानानहीं राजा की यह आज्ञापाके सेवक लोग रात्रि दिन बडी सावधानी से हड्डियोंकी रक्षा करनेलगे इस वृत्तान्तको सुनकर घट भगवती के मोहन मन्त्रके जाननेवाले अपने मित्र सन्यासीको साथ लेकर कर्परके शरीरके पासगया और वहा उसके मन्त्रके प्रभावसे रक्षकोंको मोहित कराके सब हड्डी वहासे ले गगाजीमें बहाके अपने घर आकर राजपुत्री के साथ सुख पूर्वक रहनेलगा राजाने इसवृत्तान्तको सुनकर जाना कि किसी योगीने यह सब कार्यकियाहै इससे उसने अपने सब नगरमें यह ढंढोरा पिटवाया कि जिस योगीने मेरी पुत्रीका हरण आदि सब विचित्र कर्म कियाहै वह मेरे पास आवे उसको मैं अपना आधा राज्यदूगा इसढंढोरेको सुनके घटने राजाके पास जानाचाहा परन्तु राजपुत्री ने उसे न जानेदिया और उससे कहा कि छलकरके मारनेवाले इस राजापर तुम कभी विश्वास न करो उसके यह वचन सुनकर घटभेद खुलजाने के भयसे उस राजपुत्री तथा सन्यासीको साथ लेकर परदेशको चला मार्ग में राजपुत्री ने उस सन्यासी से एकान्तमें कहा कि पहले कर्परनाम चोरने मेरा धर्म नष्टकिया फिर उसके मर जानेपर यह मुझे लेआया इसपर मेरा कुछ स्नेह नहीं है इससे तुम मुझे स्वीकार करो यह कहके वह उस सन्यासी के साथ रमण करके घटको विषदेके मारकर उसी सन्यासी के साथचली मार्ग में रात्रिके समय एक धनदेव नाम वैश्य उसे मिला सन्यासी के सोजाने पर उससे वह राजपुत्री बोली कि इस अशुभ सन्यासीको लेकर मैं क्या करूगी तुम मुझे स्वीकार करो यह कहकर वह उस सोनेहुए सन्यासी को त्यागकर उस वैश्यके साथ चलीगई प्रातःकाल उस सन्यासी ने राजपुत्रीको न देखकर भार्गी

ने कहा कि वहुत अच्छा तुम इसवन्दरके हाथोंको पकड़ो मैं तुम्हारेसाथ रमण करूंगी यह कहकर उसने उस वन्दरके हाथ पकड़ करके चक्कू निकालकर उसवन्दरको मारडाला और उस अहीर से कहा कि चलो एकान्त में चलें यह कहकरके वहां वहुत दूर अपने साथ उसे लेगई और जिस गांवको वह जाना चाहतीथी उसी गांव के रहनेवाले कुछ पुरुषों से मिलकर अपने गांवको चलीगई इसप्रकारसे उस स्त्री ने बुद्धिके द्वारा अपने धर्म्म की रक्षा करी इससे इस संसार में बुद्धिही मुख्य वस्तुहै चाहै धन का दरिद्री होजाय परन्तु बुद्धिका दरिद्री नहीं होना चाहिये अब हे स्वामी एकविचित्र कथा मैं आपको सुनाताहूं किसी नगर में घट और कर्परनाम दो चोर रहतेथे एकसमय रात्रि में कर्परघटको बाहर बैठाल के राजकन्याके महल में सेंधलगाकर गया वहां उसी समय जगीहुई राजकन्या ने उस कोने में खड़ाहुआ देखकर कामसे व्याकुलहोके उसी के साथ रमण किया और धन देके उससे कहा कि जो तुम फिर मेरे यहां आओगे तो मैं वहुतसा धन तुमको दूंगी तब कर्पर वाहर निकलकर घटको सब धन देके और उससे सब वृत्तान्त कहके फिरराजकन्याके पासगया ठीकहै (आकृष्टः कामलोभाभ्यामपायकोहिपश्यति) काम तथा लोभ के वशीभूत हुआ कौन मनुष्य परिणामको देखताहै वहां राजपुत्रीके पासजाकर कर्परराजपुत्री के साथ फिर रमणकरके थककर उसीके पास सोगया और सोतेहीं सोते सबरात्रिव्यतीतहोगई प्रातःकाल पुर के रक्षक राजपुत्रीके मंदिरमें सेंध देखके भीतरजाकर कर्परको बांधके राजाकेपास लेगये राजाने क्रोध करके उसे फांसीकी आज्ञादीनी जब उसे राजाकेलोग मारनेके लिये लेचले तो मार्गमें मिलेहुए घटसे कर्परने एकइशारा करके कहा कि राजपुत्रीको राजमन्दिरसे लाकर अपने यहां रखलेना उसका आशय जानकर घटने भी इशारेसे कहदिया कि अच्छा मैं ले आऊंगा तदनन्तर वधिकोंने उसे लेजाके वृक्ष पर फांसीमें लटकाकर मारडाला और रात्रिके समय घटने अपनेघरसे राजपुत्रीके महलतक सुरंगखोद कर राजपुत्रीके महलमेंजाके वन्धनमें पड़ीहुई राजपुत्री से कहा कि तुम्हारेलिये जो आज कर्पर मारा गयाहै उसका मित्र मैं घटहूं उसीके वचनोंके अनुसार मैं तुमको लेनेके निमित्त यहां आयाहूं इससे तुम मेरे साथचलो यह सुनकर राजपुत्री प्रसन्नहोके उसके साथ चलनेको उद्यतहोगई तब घट उसकेबन्धन खोलके सुरंग के द्वारा उसे अपनेघर लेआया प्रातःकाल राजाने अपनी कन्याके कहीं चलेजाने का वृत्तान्त सुनकर शोचा कि उसपापी चोरका कोई साहसी मित्र अवश्यहै वही मेरी पुत्रीको हरलेगयाहै यह शोचकर राजाने कर्परके शरीरकी रक्षा करनेके लिये अपने सेवकोंको नियतकरदिया और उनसे कहदिया कि जो कोई पुरुष यहां शोककरके इसका दाहादिक करनेको आवे उसे बांधकर हमारेपासले-आना उसीसे कुलमें दाग लगानेवाली उस कुलटापुत्रीका पतालगेगा राजाकी यह आज्ञापाकर सेवक लोग रात्रि दिन कर्परके शरीरकी रक्षा करनेलगे घटने इसवातको जानकर राजपुत्रीसे कहा कि हे प्रिये कर्पर मेरा वड़ा प्रियमित्रथा उसीके उद्योगसे अनेक प्रकारके रत्नोंसमेत तुम मुझको प्राप्तहुई हो उसके स्नेह से विना अनृणहुए मेरे चित्तको शान्तिनहोगी इससे मैं युक्तिपूर्व्वक उसकेपास जाकर उसका शोककरूंगा और उसके शरीर को जलाके उसकी हड्डियां किसी तीर्थमें डालूंगा और इसवातकर तुम

यहवचनसुनकर रुद्रसोम उससे कम्बल तथा लाठीलेके उसीकासाभेप बनाकर वहा बैठगया और वहअहीर धनदेवको साथ लेके कुछदूरपर अलग जाबैठा तदनन्तर दासी ने वहाआकर अन्धकार में रुद्रसोमको न पहचानके गोपालही जानके स्त्रियोंके वस्त्र पहनाकर उसे उसीके मकानमे लेगई वहा उसकी स्त्रीने उसे गोपजानकर उठके उसका आलिंगनकिया यह देखकर रुद्रसोमने शोचा कि दुष्टस्त्रिया निकृष्टवर्त्ती नीचपरभी अनुरक्त होजाती है देखो यहपापिन पडोसी गोपके ऊपरभी अनुरक्तहोगई यह शोचकर वह कुछ बहानाकरके धनदेवके पासचलाआया और उससे अपने यहाका सम्पूर्ण वृत्तात कहकरउसीकेसाथ वनको चला मार्गमें धनदेवका मित्र शशिमिला वह शशिप्रसगसे उनदोनोंका वृत्तात सुनकर तहखाने में भी बदकीहुई अपनीस्त्री पर सदेह युक्तहुआ क्योंकि वह भी बहुतदिनोंके उपरात परदेशसे आयाथा उन दोनों मित्रोंके साथ वह शशि सायकालके समय अपने ग्राममें पहुचा वहा कुष्ठसे गलेहुए हाथ पैर तथा नखवाले एक पुरुपको शृगारकरके गाते देखके शशिने उससे पूछा कि तुम कौनहो उसने कहा कि मैं कामदेवहू यह सुनकर शशिने कहा कि इसमें क्या सन्देहहै तुम्हारारूपही कहेदेताहै कि तुम कामदेवहो यह सुनकर वह कुष्ठी फिर बोला कि इसग्रामका रहनेवाला एक शशिनामधूर्त्त ईर्ष्यासे अपनी स्त्रीको तहखानेमें बन्दकरके एकदासी उसके पास रखकर परदेशको चलागयाहै उसकी स्त्रीने मुझपर अनुरक्तहोकर अपना शरीर मुझे अर्पण करदियाहै उसकी दासीनित्य यहा आके मुझे अपनी पीठपर चढाके उसके पास लेजाती है इससे बताओ मै कामदेवसचाहू कि नहीं क्योंकि कामदेवके बिना शशिकी महारूपवती स्त्री किससे भोगकरसक्ती है यहसुनकर शशिने अपने दुःखको रोककर कहा कि सत्य २ तुम कामहीहो मैं एक बात तुमसे मागताहू कि तुमसे उस स्त्रीकी प्रशसा सुनकर मेरा भी चित्त उस स्त्रीपर चलायमान हुआहै इससे तुम अपनासाभेप बनाकर मुझे आज उसके पास जानेदो इसमें तुम्हारी कोई हानिभी नहीं है शशीके यहवचन सुनके उस कुष्ठी ने कहा कि अच्छा तुम मेरासा भेपबनाके लत्तोंसे हाथपैर बाधकर यहा बैठो जब खूब अन्धकार होजायगा तब उसकी दासी तुमको अपनी पीठपर चढाके वहा लेजायगी मैं पैरोंसेचल नहीं सक्ताहू इसीसे रोज उसीकी पीठपरचढके वहा जाताहू उस कुष्ठीके यह वचन सुनकर वह शशि उसीकासारूप बनाकर वहा बैठगया और वह कुष्ठी उसके दोनों मित्रोको साथ लेकर वहासे कुछ दूर एकस्थान में जाबैठा इसके उपरान्त कुछ रात्रि व्यतीत होजानेपर दासी वहा आकर शशिको कुष्ठीही जानके उसको अपनी पीठपर चढाके उसकी स्त्रीके पास लेगई वहा अन्धकार में शशिने शरीरके स्पर्शसे अपनी स्त्रीको पहचानकर अपने चित्तमें बडा खेदकिया और जब वह सोगई तब उठके अपने मित्रोंके पास चलाआया वहा आके उसने अपने मित्रो से कहा कि स्त्रिया दूरहीसे मनोहरहोती हैं नीचके साथ ससर्गकरनेमें इनको जराभी ग्लानि नहीं होती है यह बहुत थोडीसीही बातोंमें परायेआधीन होजाती है इससे इनकी रक्षाकरना अशक्यहै देखो तहखानेमें भी बन्द मेरीस्त्री इस कुष्ठीसे अनुरक्तहोगई इससे मैं भी तुम्हारे साथ बनहीको चलूगा घरमें अब क्यारहै यह कहकर वह रात्रिभर उनदोनोंके साथ वहीरहा और प्रातःकाल उन्हींके साथ वनकोचला मार्ग

हुई जानके यह शोचा कि (नस्नेहोस्तिनदाक्षिण्य स्त्रीष्विहोचापलादृते) स्त्रियोंमें चपलताके सिवाय न स्नेह होताहै न सुशीलता होती है देखो यह पापिन मुझे विश्वास देकर भी सबधन लेकर भागगई अथवा यही बडा लाभहै कि जो उसने घटके समान मुझे भी नहीं मारडाला यह शोचकर वह सन्यासी अपने देशको चलागया और राजपुत्रीभी धनदेवके साथ उसके देशमें पहुँची वहा धनदेव यह शोच कर कि मैं इसपुंश्चलीको घर क्योंलेजाऊ सायकाल के समय एक वृद्धास्त्री के घरगया और उस वृद्धा के यहा ठहरकर रात्रिके समय उससे बोला कि हे अम्ब तुम धनदेव वैश्यके घरकी कोई बात जानती हो यह सुनकर उसने कहा कि उसके यहा की बात क्या पूछतेहो उसकी स्त्री नित्य नवीन पुरुष के साथ रमण करती है एक चमडेकी पिटारी रस्सी मे बधीहुई उसकी खिडकी में लटका करती है उस पिटारीमें रात्रिके समय जो कोई पुरुप बैठजाय उसीको वह खैचकर भीतर बुलालेती है और उसकेसाथ रमण करके पिछली रातमें उसको निकाल देती है वह मद्यसे ऐसी उन्मत्त रहती है कि ऊच नीचका उसको जराभी विचार नही रहताहै उसका यह दुराचार सम्पूर्ण नगरमें प्रसिद्ध होगयाहै उसके पतिको गयेहुए बहुतदिन व्यतीत होगए हैं परन्तु अभीतक वह नहीं लौटा उस वृद्धाके यह बचनसुनकर वह वैश्य सन्देह युक्तहोकर अपने घरके निकटगया और वहा पिटारी लटकती हुई देखकर उसमें बैठगया उसे बैठादेखकर दासियोंने रस्सीखैंचकर उसे ऊपर चढालिया वहां उसकी मदान्ध स्त्री ने आलिंगनकरके उसको शय्यापर लिटालिया उसके इस दुराचार को देखकर आलिंगन तथा चुम्बनादि करनेपर भी धन देवको रमण करनेकी इच्छा नहींहुई और वह स्त्री उन्मत्त होकर सोगई पिछली रातको दासियोंने उसे उसी पिटारी में बैठाकर उतारदिया तब उसने शोचा कि मुझे अब घरसे क्या प्रयोजनहै क्योंकि घरका मुख्य बन्धन स्त्री होतीहै और उसकी यहदशा है इससे मुझे अब बनजाना चाहिये यह शोचकर धनदेव उस राजकन्याको भी छोडकर बनको चला १०६ मार्ग में बहुत दिनके पीछे परदेश से लौटेहुए रुद्र सोमनाम ब्राह्मण के साथ धनदेवकी मित्रताहोगई रुद्रसोम धनदेवका सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनकर अपनी स्त्री पर सन्देह युक्त होकर उसीके साथ सायकालके समय अपने ग्राम में पहुचा वहा उसने नदीके तट पर अपने घरके निकट एक उन्मत्त अहीरको गाते देखकर उससे पूछा कि हे गोपाल क्या कोई तरु णी स्त्री तुम्हारे ऊपर अनुराग युक्त होगई है जिससे तुम ससारको तृणके समान जानके उसके उत्साह में ऐसे मदोन्मत्तहोगये हो यह सुनकर वह हँसकर बोला कि सुनो इसमें छिपानेही की क्या बातहै इस गावके स्वामी बहुत दिनोंसे परदेशगयेहुए रुद्रसोमनाम ब्राह्मणकी स्त्रीसे मैं नित्यभोग किया करताहूं उसकीदासी मुझे स्त्रीकासाभेप बनाकर उसकेपास लेजाती है उसगोपालके यहवचन सुनकर रुद्रसोमने तत्त्वजाननेकीइच्छासे अपने क्रोधको रोककर उससेकहा कि मैं तुम्हारा अतिथिहूं इससे अपनाभेष मुझे देदो तो आज तुम्हारेबदले मैंही उससे भोगकरके आनन्दभोगू यहसुनकर उसनेकहा अच्छा तुम मेरा यह कालाकम्बल ओढके लाठीलेके यहा बैठो थोडीदेरमें उसकीदासी आकर तुमको मुझेही जानकर स्त्रीका- साभेप बनाकर उसकेपास लेजायगी आजकी रात्रि तुमहीं आनन्दकरो मैं विश्रामकरूंगा उस गोपालके

यहवचनसुनकर रुद्रसोम उससे कम्वल तथा लाठीलेके उसीकासाभेप वनाकर वहा वैठगया और वहअहीर धनदेवको साथ लेके कुछदूरपर अलग जावैठा तदनन्तर दासी ने वहाआकर अन्धकार में रुद्रसोमको न पहचानके गोपालही जानके स्त्रियोंके वस्त्र पहनाकर उसे उसीके मकानमें लेगई वहा उसकी स्त्रीने उसे गोपजानकर उठके उसका आलिंगनकिया यह देखकर रुद्रसोमने शोचा कि दुष्टस्त्रिया निकटवर्ती नीचपरभी अनुरक्त होजाती हैं देखो यहपापिन पडोसी गोपके ऊपरभी अनुरक्तहोगई यह शोचकर वह कुछ वहानाकरके धनदेवके पासचलाआया और उससे अपने यहाका सम्पूर्ण वृत्तात कहकर उसीकेसाथ वनको चला मार्गमें धनदेवका मित्र शशिमिला वह शशिप्रसंगसे उनदोनोंका वृत्तात सुनकर तहखाने में भी वदकीहुई अपनी स्त्री पर सदेह युक्तहुआ क्योंकि वह भी वहुतदिनोंके उपरात परदेशसे आयाथा उन दोनों मित्रोंके साथ वह शशि सायकालके समय अपने ग्राममें पहुचा वहा कुष्ठसे गलेहुए हाथ पैर तथा नखवाले एक पुरुषको शृंगारकरके गाते देखके शशिने उससे पूछा कि तुम कौनहो उसने कहा कि मैं कामदेवहू यह सुनकर शशिने कहा कि इसमें क्या सन्देहहै तुम्हारारूपही कहेदेताहै कि तुम कामदेवहो यह सुनकर वह कुष्ठी फिर बोला कि इसग्रामका रहनेवाला एक शशिनामधूर्त्त ईर्ष्यासे अपनी स्त्रीको तहखानेमें वन्दकरके एकदासी उसके पास रखकर परदेशको चलागयाहै उसकी स्त्रीने मुझपर अनुरक्तहोकर अपना शरीर मुझे अर्पण करदियाहै उसकी दासीनित्य यहा आके मुझे अपनी पीठपर चढाके उसके पास लेजाती है इससे वताओ मैं कामदेवसचाहू कि नहीं क्योंकि कामदेवके विना शशिकी महारूपवती स्त्री किससे भोगकरसक्ती है यहसुनकर शशिने अपने दुःखको रोककर कहा कि सत्य २ तुम कामहीहो मैं एक वात तुमसे मागताहू कि तुमसे उस स्त्रीकी प्रशसा सुनकर मेरा भी चित्त उस स्त्रीपर चलायमान हुआहै इससे तुम अपनासाभेप वनाकर मुझे आज उसके पास जानेदो इसमें तुम्हारी कोई हानिभी नहीं है शशिके यहवचन सुनके उस कुष्ठी ने कहा कि अच्छा तुम मेरासा भेपवनाके लत्तोंसे हाथपैर वाधकर यहा वैठो जब खूब अन्धकार होजायगा तब उसकी दासी तुमको अपनी पीठपर चढाके वहा लेजायगी मैं पैरोंसेचल नहीं सक्ताहू इसीसे रोज उसीकी पीठपरचढके वहा जाताहू उस कुष्ठीके यह वचन सुनकर वह शशि उसीकासारूप वनाकर वहा वैठगया और वह कुष्ठी उसके दोनों मित्रोंको साथ लेकर वहासे कुछ दूर एकस्थान में जावैठा इसके उपरान्त कुछ रात्रि व्यतीतहोजानेपर दासी वहा आकर शशिको कुष्ठीही जानके उसको अपनी पीठपर चढाके उसकी स्त्रीके पास लेगई वहा अन्धकार में शशिने शरीरके स्पर्शसे अपनी स्त्रीको पहचानकर अपने चित्तमें वडा खेदकिया और जब वह सोगई तब उठके अपने मित्रोंके पास चलाआया वहा आके उसने अपने मित्रो से कहा कि स्त्रिया दूरहीसे मनोहरहोती हैं नीचके साथ ससर्गकरनेमें इनको जराभी ग्लानि नहीं होती है यह वहुत थोडीसीही वातोंमें परायेआधीन होजाती हैं इससे इनकी रक्षाकरना अशक्यहै देखो तहखानेमें भी वन्द मेरीस्त्री इस कुष्ठीसे अनुरक्तहोगई इससे मैं भी तुम्हारे साथ वनहीको चलूगा घरमें अव क्यारहै यह कहकर वह रात्रिभर उनदोनोंके साथ वहारहा और प्रातःकाल उन्हींके साथ वनकोचला मार्ग

मे चलते २ सायकालके समय वहतीनों एक बावडीके किनारे किसी बृक्षकेनीचे पहुचे और उसीबावडीमें स्नानकर कुछफल खाके उसी बृक्षपर चढके बैठे इतनेमें उनतीनोंने देखा कि कोईपथिक आकर उसबृक्ष के नीचे लेटा और क्षणभरमेही एकपुरुष उस बावडीमेंसे निकलकर अपने मुखसे स्त्रीसमेत एक पलँग निकालके स्त्रीके साथ भोगविलास करके उसी पलँगपर सोगया उसके सोजानेपर उसस्त्रीने वहासे उठ के उस सोतेहुए पथिकको जगाकर उसीके साथ रमणक्रिया रति करनेकेपीछे उस पथिकने उसस्त्री से पूछा कि तुम दोनो कौनहो यह सुनकर उसने कहा कि यह नागहै और मै उसकी स्त्रीहू तुमडरो मत म निन्नानवे पुरुषोके साथ इसीप्रकारसे भोग करचुकीहू आज तुम्हारे साथ भोग करनेसे सकडापूर्णहु- आ उन दोनोके इस वार्त्तालापको सुनके उस सर्पने जगकर उनदोनोंको अपने मुखके फूत्कारसे भ- स्मकरदिया इस प्रकार उन दोनोंको जलाकर उस सर्पके चलेजानेपर वह तीनों मित्र आपसमें कहने लगे कि जब शरीरके भीतरभी रक्खीहुई स्त्रिया कुकर्मिणी होजातीहै तो घरमें जो स्त्रिया रहती हैं उन की क्या गणनाहै इन चपल स्त्रियोको सर्वथा धिक्कार है इसप्रकार अनेक वार्त्तालाप करके वह तीनों रात्रिको वहा व्यतीत करके प्रातःकाल तपोवनमें जाके योगाभ्यासके द्वारा चित्तको स्थिरकरके सम्पूर्ण प्राणियोंपर समदृष्टिहोके समाधिमें निरुपम आनन्दका अनुभव करके तमोगुणसे रहितहोके मोक्षपदवी को प्राप्तहुए और उनकी स्त्रिया अपने पापोंके प्रभावसे अत्यन्त क्लेशयुक्त होकर नष्टहोगई इस प्रकार से मोहके द्वारा स्त्रियों में उत्पन्न हुआ अनुराग किसको दुखदायी नहीं होता है और इन्हीं स्त्रियों का त्याग करनेसे मोक्ष प्राप्तहोती है गोमुखसे इस कथा को सुनकर शक्तियशाके लिये उत्कंठित नरवाह नदत्त निद्राको प्राप्तहुआ १६४ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायाशक्तियशोलम्बकेअष्टमस्तरंग ८॥

इसके उपरात फिर दूसरेदिन रात्रिके समय नरवाहनदत्तका चित्त प्रसन्न करने के लिये गोमुख यह कथा कहने लगा कि किसी नगरमें एक धनवान् वैश्यका परमदयालु पुत्रथा उसकी माता मरगई थी इससे उसके पिताने अन्य स्त्रीमें आसक्तहोके उसी स्त्रीके कहने से उसपुत्रको उसकी स्त्रीसमेत अपने घरसे निकाल दिया और उसके छोटेभाई को भी उसीके साथ करदिया मार्ग में उसने अपने भाई को शान्तचित्त न देखकर अपने साथसे छोड़ दिया और क्रमसे चलते २ जल तथा बृक्षोंसे रहित मरुदेश के जगलमें वह पहुँचा वहां उसने सात दिनतक अपनी स्त्रीको अपना मास तथा रुधिरपिलाकर रक्षा की और उस पापिनने उसका रुधिर पीना तथा मासखाना अंगीकार किया आठवेंदिन वह एक शी तलजल युक्त पहाडी नदीवाले और फल पुष्प तथा सघनबृक्षवाले बनमें पहुँचा वहा वह अपनी स्त्री को फल खिलाके तथा शीतलजल पिलाके उसी पहाड़ीनदीमें स्नान करनेको उतरा उस नदी में एक पुरुष जिसके चारों हाथपैर कटेहुएथे वहताहुआ चलाजाताथा उसे देखकर वहुत दिनसे उपवासकरने वाले उस दयालु वैश्यने नदी में तैरकर उसे निकाल लिया और किनारेपर उसे बैठालकर उससे पूछा कि हे भाई तुम्हारी ऐसी दशा किसनेकीहै यह सुनकर उसने कहा कि मेरे शत्रुओंने मेरे हाथपैर का-

कर मुझे नदी में डालदियाथा कि जिससे मैं क्लेशपाकर मरूं परन्तु आपने डूबतेहुए मेरे प्राण रखलिये उसके यह वचन सुनके वह कृपालु वणिकपुत्र उसके शरीर में पट्टी बांधके और उसको भोजन कराके आपभी उसी नदीमें स्नानकरके फल मूलखाके वहीं रहा और वहीं रहकर तप करनेलगा कुछ काल के उपरान्त उस घायल पुरुषके जब घाव भरआये तब एकदिन जब वह वैश्यका दयालु पुत्र फलमूल लेनेको गया तब उसकीस्त्रीने कामातुरहोके उस हाथपैर रहित रुण्डपुरुषके साथ रमण किया और उस-सेही सलाह करके अपने पतिके मारनेकी इच्छाकरी दूसरे दिन उसने रोगका बहाना करके अपनेपति से कहा कि यह जो नदी में गढाहै इसमें जो यह औषध दूरसे दिखाई देती है इस से मेरारोग दूरहोगा जो आप इसेलादें तो मेरे प्राणबचें यह बात स्वप्नमें मुझसे एक देवताने कही है यह सुनकर वह कृपा-लु किसी वृक्षमें रस्सी बांधके उस रस्सीके सहारे उसगढे में उतरा और उतरतेही उसकी स्त्रीने वहरस्सी तोडदी इससे वह उसनदीके गढे में गिरकर बहते २ अपने पुण्योंकेप्रभावसे किसी नगरके निकट नदीके किनारे लगगया और जलके बहनेके श्रमसे व्याकुलहोकर किसी वृक्षके नीचे अपनी स्त्रीके आचरणको ध्यान करताहुआ विश्राम करनेलगा उससमय उस देशका राजामरगयाथा राजाके मरनेपर उसदेशकी यह सनातन रीतिथी कि मंगलनाम हाथी फिरते २ जिसको अपनीसूंडसे उठाके अपनी पीठपर चढाले वही राजा कियाजाताथा दैवयोगसे उसमंगलनाम हाथीने भ्रमणकरते २ उसदयालु वैश्यपुत्रके पास आके उस को अपनीसूंडसे उठाके अपनी पीठपरचढालिया इससे सब नगरनिवासियोंने उसे लेजाकर राज्यदेदिया तब राज्यकोपाकर वह दयालु वैश्य चपल स्त्रियोंका संसर्गछोडके दया तथा क्षमारूपी पवित्रस्त्रियोंके साथ धर्म से राज्यका पालनकरनेलगा इसबीचमें उसकी स्त्री उसे नदी में डूबकर मराजानके निश्शंक होके उस हाथ पैररहित रुण्डपुरुषको अपनी पीठपरचढाके इधर उधर घूमनेलगी और यह कहकर भिक्षामांगने लगी कि शत्रुओं ने मेरे इस पतिके हाथ पैरकाटडाले और मैं पतिव्रताहूं इससे इसको पीठपरचढाये डो-लतीहूं और भिक्षा मांगकर इसका पोषणकरतीहूं इसप्रकार से वह नगरों में तथा ग्रामों में भिक्षामांगती हुई अपने पतिके नगरमेंगई वहां पुरवासियों से उसकी बड़ी प्रशंसा सुनकर राजा ने उसे अपने पासबुलाके और पहचानके उससे कहा कि तूही वह पतिव्रताहै यह सुनकर उसने उसे न पहचानकर कहा कि हे महाराज मैंही वह पतिव्रताहूं तब राजा ने हँसकर उससे कहा कि मैंने तेरा पतिव्रतापन देखा है तूने अपने पतिका रुधिर तथा मांसखाकेभी उससे स्नेह नहीं किया तू स्त्री नहीं है राक्षसी है मैं जानताहूं कि तू उसी पापसे इस रुण्डको अपनी पीठपर चढाये २ फिरती है क्या वह तेरा पति न था जिसे तूने नदी में डालदिया था यह सुनकर वह अपने पति को पहचानकर भयभीतहोकर मूर्च्छितभी तसवीरमें लिखीसी तथा मरीसी होगई उसकी यह दशादेखकर मन्त्रियो ने राजा से पूछा कि हे स्वामी यह क्या बातहै मन्त्रियों के यह वचन सुनकर राजा ने अपना सब वृत्तान्त कहदिया उस वृत्तान्तको जानकर मन्त्रियों ने उसके नाक कान काटकर उसे देश से निकालदिया उससमय ब्रह्मा ने उस नकटी के साथ रुण्डका और राज्यलक्ष्मी के साथ उस कृपालु वैश्यका संयोगकरके संसारमें सदृश समागम बतादिया

में चलते २ सायकालके समय वहतीनों एक बावडीके किनारे किसी बृक्षकेनीचे पहुचे और उसीबावडीमें स्नानकर कुछफल खाके उसी बृक्षपर चढके बैठे इतनेमें उनतीनोंने देखा कि कोईपथिक आकर उसबृक्ष के नीचे लेटा और क्षणभरमेही एकपुरुष उस बावडीमेंसे निकलकर अपने मुखसे स्त्रीसमेत एक पलँग निकालके स्त्रीके साथ भोगविलास करके उसी पलँगपर सोगया उसके सोजानेपर उसस्त्रीने वहासे उठ के उस सोतेहुए पथिकको जगाकर उसीके साथ रमणकिया रति करनेकेपीछे उस पथिकने उसस्त्री से पूछा कि तुम दोनों कौनहो यह सुनकर उसने कहा कि यह नागहै और मैं उसकी स्त्रीहू तमहरा मत म निन्नानबे पुरुषोके साथ इसीप्रकारसे भोग करचुकीहू आज तुम्हारे साथ भोग करनेमे सकडापूर्णहुआ उन दोनोंके इस वार्त्तालापको सुनके उस सर्पने जगकर उनदोनोंको अपने मुखके फूत्कारसे भस्मकरदिया इस प्रकार उन दोनोंको जलाकर उस सर्पके चलेजानेपर वह तीनों मित्र आपसमें कहने लगे कि जब शरीरके भीतरभी रक्खीहुई स्त्रिया कुकर्मिणी होजातीहै तो घरमें जो स्त्रिया रहती हैं उन की क्या गणनाहै इन चपल स्त्रियोंको सर्वथा धिक्कारहै इसप्रकार अनेक वार्त्तालाप करके वह तीनों रात्रिको वहा व्यतीत करके प्रातःकाल तपोवनमें जाके योगाभ्यासके द्वारा चित्तको स्थिरकरके सम्पूर्ण प्राणियोंपर समदृष्टिहोके समाधिमें निरुपम आनन्दका अनुभव करके तमोगुणसे रहितहोके मोक्षपदवी को प्राप्तहुए और उनकी स्त्रिया अपने पापोके प्रभावसे अत्यन्त क्लेशयुक्त होकर नष्टहोगई इस प्रकार से मोहके द्वारा स्त्रियों में उत्पन्न हुआ अनुराग किसको दुखदायी नहीं होता है और इन्हीं स्त्रियों का त्याग करनेसे मोक्ष प्राप्तहोती है गोमुखसे इस कथा को सुनकर शक्तियशाके लिये उत्कंठित नरवाहनदत्त निद्राको प्राप्तहुआ॥१६४॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशक्तियशोलम्बकेअष्टमस्तरंग॥८॥

इसके उपरात फिर दूसरेदिन रात्रिके समय नरवाहनदत्तका चित्त प्रसन्न करने के लिये गोमुख यह कथा कहने लगा कि किसी नगरमें एक धनवान् वैश्यका परमदयालु पुत्रथा उसकी माता मरगई थी इससे उसके पिताने अन्य स्त्रीमें आसक्तहोके उसी स्त्रीके कहने से उसपुत्रको उसकी स्त्रीसमेत अपने घरसे निकाल दिया और उसके छोटेभाई को भी उसीके साथ करदिया मार्ग में उसने अपने भाई को शान्तचित्त न देखकर अपने साथसे छोड दिया और क्रमसे चलते २ जल तथा बृक्षोंसे रहित मरुदेश के जगलमें वह पहुँचा वहां उसने सात दिनतक अपनी स्त्रीको अपना मास तथा रुधिरपिलाकर रक्षा की और उस पापिनने उसका रुधिर पीना तथा मासखाना अगीकार किया आठवेंदिन वह एक शीतलजल युक्त पहाडी नदीवाले और फल पुष्प तथा सघनबृक्षवाले वनमें पहुँचा वहा वह अपनी स्त्री को फल खिलाके तथा शीतलजल पिलाके उसी पहाड़ीनदीमें स्नान करनेको उतरा उस नदी में एक पुरुष जिसके चारों हाथपैर कटेहुएथे बहताहुआ चलाजाताथा उसे देखकर बहुत दिनसे उपवासकरने वाले उस दयालु वैश्यने नदी में तैरकर उसे निकाल लिया और किनारेपर उसे बैठालकर उससे पूछा कि हे भाई तुम्हारी ऐसी दशा किसनेकीहै यह सुनकर उसने कहा कि मेरे शत्रुओंने मेरे हाथपैर काट

निकाला अब मैं जाताहूं जब आपपर कोई आपत्ति पडै तो आप मेरास्मरण कीजियेगा तब आपका उपकार करके मैं इस शापसे छूटूंगा यह कहकर उस सिंहके चलेजानेपर उस तपस्वी के पूछने से यह सुवर्णचूड पक्षी अपना सब वृत्तान्त इसप्रकार कहनेलगा कि ७१ हिमाचल पर्वत पर विद्याधरों का वज्रदंष्ट्र नाम राजाहै उसके लगातार पांच कन्याहुईं इससे उसनें तपकेद्वारा श्री शिवजीका आराधन करके रजतदंष्ट्र नाम अत्यन्त प्रिय पुत्रपाया और अत्यन्त स्नेहसे उसे बाल्यावस्थाही में सब विद्यासिखलादीं एक समय रजतदंष्ट्र अपनी बड़ी बहिन सोमप्रभाको भगवती के आगे झांझ बजाते देखकर उससे हठकरके झांझ मांगनेलगा और जब उसने नहीं दी तबहठसे झांझ छीनकर पक्षीके समान आकाशमें वह उडगया यह देखकर सोमप्रभाने क्रोधकरके उसे यह शापदिया कि तू पक्षीके समान मेरी झांझ लेकर उडगया है इससे तू स्वर्णचूडपक्षी होगा इस शापको सुनकर रजतदंष्ट्रने अपनी बहिन के चरणों में पडकर उसको बहुत मनाया तब उसनें कहा कि हे मूढ तू पक्षीहोकर अन्धे कुए में गिरेगा और कोई कृपालु महा पुरुष तुझको निकालेगा उसका कुछ उपकार करके तू इस शापसे छूटेगा उसके इसप्रकार कहतेही वहरजतदंष्ट्र स्वर्णचूड पक्षी होगया वह स्वर्णचूड मैंहीहूं रात्रिके समय में इसकूप में गिरपडाथा सोआपने इससमय निकालाहै अब मैं जाताहूं जब आपपर कोई आपत्ति आवे तब मेरास्मरण करियेगा उससमय में आपका उपकार करके इसशापसे छूटूंगा यहकहकर उसपक्षी के भी चलेजानेपर उसदयालु तपस्वीसे सर्प अपना वृत्तान्त कहनेलगा कि कश्यपजी के आश्रम में मैं मुनिकुमारथा वहां एक मुनिकुमारके साथ मेरी परम मित्रताथी एकदिन उसमित्रके स्नानकरने के लिये तडागमेंजानेपर मैंने किनारेपर एकतीन फणका सर्प देखा और अपने मित्रको डरानेकेलिये सर्पको किनारे परही मन्त्रके बलसे रोकरक्खा क्षणभर मेंही वह मुनि पुत्र स्नान करके किनारेपर आया और एकाएकी उससर्प को देखकर मूर्च्छित होगया थोड़े कालमें जब उसकी मूर्च्छाजगी तब उसनेअपने ध्यानके द्वारा यह जानकर कि इसनेही सर्पको रोकरक्खाथा क्रोधकरके मुझे यह शापदिया कि तुम भी इसीप्रकारके तीनफणवाले सर्पहोगे और विनयकरनेसे यहशापका अन्तबताया कि जब तुमकुएमें गिरोगे और कोई कृपालु महात्मा तुमको निकालेगा तबउसका प्रत्युपकार करके इसशापसे तुम छूटोगे इसप्रकारसे हे दयालो मैं सर्पहुआ हूं आज भाग्य बशसे मुझकुएमें गिरेहुए को आपने निकालाहै अब मैं जाताहूं जब आप मेरास्मरण करोगे तब मैं आपका उपकार करके इसशापसे छूटूंगा यह कहकर सर्प के भी चलेजानेपर उस स्त्री ने अपना वृत्तान्तकहा कि मैं राजाके सेवक अत्यन्त शूर बडेसुन्दर एक तरुण क्षत्रीकी स्त्री हूं पतिके इस प्रकार गुणवान्‌होनेपर भी मैंने परपुरुषसे संगकिया मेरे इसकुकर्मको जानकर मेरे पति नें मुझे मारडालनेकी इच्छाकी सखी के द्वारा इसबातको जानकर मैं रात्रिके समय बनमें भागआई और इस कुए में गिरपडी इससमय आपने मुझे कुए से निकाला है अब मैं जाकर आपकी कृपा से कहीं इस शरीरका पालन करूंगी ऐसा भी कोई दिनहोगा जब मैं आपका प्रत्युपकार करूंगी यह कहकर वह कुलटा राजा गोत्रवर्द्धनके नगरमें जाकर राजाके सेवकों से परिचयकरके रानीकी दासी होगई और उस कुलटा के

इसप्रकारसे विचार रहितहोकर नीचोपर दयाकरनेवाले दैवके समान स्त्रियोंके चित्तकी गतिको कोई नहीं जानता और इसीप्रकारसे अपने धर्म को नहीं त्यागनेवाले क्रोध को जीतनेवाले सत्त्ववान् पुरुषोंपर मानो कृपाकरके सम्पत्तिया प्रसन्नहोकर अपने आपही उनके पास आती है ४३ इस कथा को कहकर गोमुख ने फिर नरवाहनदत्त से यह कथा कही कि किसी वन में बुद्ध के समान परमदयालु महा सत्त्ववान् एक तपस्वी कुटीबनाकर रहताथा वह वहा विपत्ति मे पडेहुए प्राणियोंका तथा पिशाचोंका उद्धारकिया करताथा और अन्य पथिकलोगोंको भी अपने भंडार से प्राप्तहुए जल तथा अन्नों से तृप्त कियाकरताथा एकदिन परोपकार के निमित्त भ्रमणकरतेहुए उस तपस्वी ने एक बड़ा कूपदेखा और उसमे झाका उसे झाकते देखकर उसमें से एक स्त्री ने कहा कि हे महात्मन् मैं दीन स्त्री, एकसिंह, एक स्वर्णचूडपक्षी और एक सर्प हम चारों जीव रात्रिके समय इस कूप मे गिरपडे हैं इस महाक्लेश से आप हमारा उद्धार कीजिये यह सुनकर तपस्वी ने कहा कि रात्रि के समय अन्धकार में स्त्रीका सिंहका तथा सर्पका गिरना तो कूप मे सभव है परन्तु यह पक्षी कैसे गिरा यह सुनकर उस स्त्री ने कहा कि यह बहेलिये के जाल में फँसकर गिरा है यह सुनकर उस तपस्वी ने अपने तप के बल से उन सबको कूप से निकालनाचाहा परन्तु वह नहीं निकले और तपस्वी के तपकी शक्तिहीनहोगई तपकी हीनताको देखकर तपस्वी ने अपने चित्त में जानलिया कि यह स्त्री पापिनहै क्योंकि इसके साथ सम्भाषणकरतेही मेरी सिद्धि नष्ट होगई यह शोचकर उसने रस्सीडालकर उन सबको कूप से निकाला और उस सिंह को सर्प को तथा पक्षी को मनुष्यभाषा में स्तुतिकरते देखके उनसे पूछा कि तुम सबलोगोका क्या वृत्तान्त है सत्य २ हमसे कहो यहसुनकर सिंह बोला कि हमसबको अपने पूर्वजन्मका स्मरणहै और परस्पर हमबाधाकरनेवाले हैं अब क्रमसे हमसबका वृत्तान्त सुनिये यहकहकर वह सिंह अपना वृत्तान्त कहनेलगा कि हिमाचलपर वैडूर्य्यशृङ्ग नाम बड़ासुन्दर पुरहै उस पुरमें विद्याधरोंका पद्मवेगनाम राजाहै उस पद्मवेगके वज्रवेगनाम पुत्रथा वह वज्रवेग अत्यन्त अभिमानीहोकर शूरता के मदसे सबके साथ विरोधकिया करताथा उसके पिताने उसे बहुतसा समझाया परन्तु उस मूर्ख ने उसका कहना न माना इसी से उसने क्रोधसे उसे यह शापदिया कि तू मृत्युलोकमें उत्पन्नहो शापसे वज्रवेगका सब अभिमान और विद्या नष्टहोगई तब उसने विनयपूर्वक अपने पितासे शापका अन्त पूछा उसे नम्रदेखकर पद्मवेगने ध्यानकरके उससे कहा कि तुम पृथ्वी में किसी ब्राह्मण के यहा उत्पन्नहोके इसीप्रकार से अभिमानकरके पिताकेही शापसे सिंह होकर कूपमेंगिरोगे तब कोई परमकृपालु महासत्त्ववान् तुमको कुंएमें से निकालेगा उसका आपत्तिमें प्रत्युपकार करके तुम इस शापसे छूटोगे इस शापान्तको सुनकर वज्रवेग मालव देशमें हरघोषनाम ब्राह्मणका देवघोषनाम पुत्रहुआ और वहा भी शूरता के अभिमान से सबके साथ वैरकरनेलगा पिता ने उसके अभिमान को देखकर उसे बहुत समझाया जब उसने न माना तब उसने क्रोध करके उसे यह शाप दिया कि हे दुर्बुद्धे तू वन का सिंहहोजा हरघोष के इस शाप से देवघोष इस वन में सिंह हुआ वह सिंह मैंहीहूं गतरात्रिको भ्रमण करते २ में इस कूपमे गिरपडा और आपने कृपाकरके मुझे

निकाला अब मैं जाताहूं जब आपपर कोई आपत्ति पड़े तो आप मेरास्मरण कीजियेगा तब आपका उपकार करके मैं इस शापसे छूटूंगा यह कहकर उस सिंहके चलेजानेपर उस तपस्वी के पूछने से वह सुवर्णचूड पक्षी अपना सब वृत्तान्त इसप्रकार कहनेलगा कि ७१ हिमाचल पर्वत पर विद्याधरों का वज्रदंष्ट्र नाम राजाहै उसके लगातार पांच कन्याहुई इससे उसने तपके द्वारा श्री शिवजीका आराधन करके रजतदंष्ट्र नाम अत्यन्त प्रिय पुत्रपाया और अत्यन्त स्नेहसे उसे बाल्यावस्थाही में सब विद्यासिखलादीं एक समय रजतदंष्ट्र अपनी बड़ी बहिन सोमप्रभाको भगवती के आगे झांझ बजाते देखकर उससे हठकरके झांझ मांगनेलगा और जब उसनेनहीं दी तबहठसे झांझ छीनकर पक्षीके समान आकाशमें वह उडगया यह देखकर सोमप्रभाने क्रोधकरके उसे यह शापदिया कि तू पक्षीके समान मेरी झांझ लेकर उडगया है इससे तू स्वर्णचूडपक्षी होगा इस शापको सुनकर रजतदंष्ट्रने अपनी बहिन के चरणों में पड़कर उसको बहुत मनाया तब उसने कहा कि हे मूढ तू पक्षीहोकर अन्धे कुए में गिरेगा और कोई कृपालु महा पुरुष तुझको निकालेगा उसका कुछ उपकार करके तू इस शापसे छूटेगा उसके इसप्रकार कहतेही वह रजतदंष्ट्र स्वर्णचूड पक्षी होगया वह स्वर्णचूड मैंहीहूं रात्रिके समय में इसकूप में गिरपडाथा सोआपने इससमय निकालाहैअब मैं जाताहूं जब आपपर कोई आपत्ति आवे तब मेरास्मरण करियेगा उससमय में आपका उपकार करके इसशापसे छूटूंगा यहकहकर उसपक्षी के भी चलेजानेपर उसदयालु तपस्वीसे सर्प अपना वृत्तान्त कहनेलगा कि कश्यपजी के आश्रम में मैं मुनिकुमारथा वहां एक मुनिकुमारके साथ मेरी परम मित्रताथी एकदिन उसमित्रके स्नानकरने के लिये तडागमेंजानेपर मैंने किनारेपर एकतीन फणका सर्प देखा और अपने मित्रको डरानेकेलिये सर्पको किनारे परही मन्त्रके बलसे रोकरक्खा क्षणभर मेंही वह मुनि पुत्र स्नान करके किनारेपर आया और एकाएकी उससर्प को देखकर मूर्च्छित होगया थोड़े कालमे जब उसकी मूर्च्छाजगी तब उसनेअपने ध्यानके द्वारा यहजानकर कि इसनेही सर्पको रोकरक्खाथा क्रोधकरके मुझे यह शापदिया कि तुम भी इसीप्रकारके तीनफणवाले सर्पहोगे और विनयकरनेसे यहशापका अन्तवताया कि जब तुमकुएमें गिरोगे और कोई कृपालु महात्मा तुमको निकालेगा तबउसका प्रत्युपकार करके इसशापसे तुम छूटोगे इसप्रकारसे हे दयालो मैं सर्पहुआ हूं आज भाग्य वशसे मुझकुएमें गिरेहुए को आपने निकालाहै अब मैं जाताहूं जब आप मेरास्मरण करोगे तब मैं आपका उपकार करके इसशापसे छूटूंगा यह कहकर सर्प के भी चलेजानेपर उस स्त्री ने अपना वृत्तान्तकहा कि मैं राजाके सेवक अत्यन्त शूर बडेसुन्दर एक तरुण क्षत्रीकी स्त्री हूं पतिके इस प्रकार गुणवान् होनेपर भी मैंने परपुरुषसे संगकिया मेरे इसकुकर्मको जानकर मेरे पति ने मुझे मारडालनेकी इच्छाकी सखी के द्वारा इसबातको जानकरके मैं रात्रिके समय वनमें भागआई और इस कुए में गिरपड़ी इससमय आपने मुझे कुए से निकाला है अब मैं जाकर आपकी कृपा से कहीं इस शरीरका पालन करूंगी ऐसा भी कोई दिनहोगा जब मैं आपका प्रत्युपकार करूंगी यह कहकर वह कुलटा राजा गोत्रवर्द्धनके नगरमें जाकर राजाके सेवकों से परिचयकरके रानीकी दासी होगई और उस कुलटा के

इसप्रकारसे विचार रहितहोकर नीचोपर दयाकरनेवाले दैवके समान स्त्रियोंके चित्तकी गतिको कोई नहीं जानता और इसीप्रकारसे अपने धर्म को नहीं त्यागनेवाले क्रोध को जीतनेवाले सत्त्ववान् पुरुषोंपर मानो कृपाकरके सपत्तिया प्रसन्नहोकर अपने आपही उनके पास आती है ४३ इस कथा को कहकर गोमुख ने फिर नरवाहनदत्त से यह कथा कही कि किसी वन में बुद्ध के समान परमदयालु महा सत्त्ववान् एक तपस्वी कुटीबनाकर रहताथा वह वहा विपत्ति मे पडेहुए प्राणियोंका तथा पिशाचोंका उद्धारकिया करताथा और अन्य पथिकलोगोंको भी अपने प्रभाव से प्राप्तहुए जल तथा अन्नों से तृप्त कियाकरताथा एकदिन परोपकार के निमित्त भ्रमणकरतेहुए उस तपस्वी ने एक बड़ा कूपदेखा और उसमे झाका उसे झाकते देखकर उसमें से एक स्त्री ने कहा कि हे महात्मन् मैं दीन स्त्री, एकसिंह, एक स्वर्णचूडपक्षी और एक सर्प हम चारों जीव रात्रिके समय इस कूप मे गिरपडे हैं इस महाक्लेश से आप हमारा उद्धार कीजिये यह सुनकर तपस्वी ने कहा कि रात्रि के समय अन्धकार में स्त्रीका सिंहका तथा सर्पका गिरना तो कूप मे सभव है परन्तु यह पक्षी कैसे गिरा यह सुनकर उस स्त्री ने कहा कि यह बहेलिये के जाल में फँसकर गिरा है यह सुनकर उस तपस्वी ने अपने तप के बल से उन सबको कूप से निकालनाचाहा परन्तु वह नहीं निकले और तपस्वी के तपकी शक्तिहीनहोगई तपकी हीनताको देखकर तपस्वी ने अपने चित्त में जानलिया कि यह स्त्री पापिनहै क्योंकि इसके साथ सम्भाषणकरतेही मेरी सिद्धि नष्ट होगई यह शोचकर उसने रस्सीडालकर उन सबको कूप से निकाला और उस सिंह को सर्प को तथा पक्षी को मनुष्यभाषा में स्तुतिकरते देखके उनसे पूछा कि तुम सबलोगोका क्या वृत्तान्त है सत्य २ हमसे कहो यहसुनकर सिंह बोला कि हमसबको अपने पूर्वजन्मका स्मरणहै और परस्पर हम बाधाकरनेवाले हैं अब क्रमसे हमसबका वृत्तान्त सुनिये यहकहकर वह सिंह अपना वृत्तान्त कहनेलगा कि हिमाचलपर वैडूर्य्यशृङ्ग नाम बड़ासुन्दर पुरहै उस पुरमें विद्याधरोंका पद्मवेगनाम राजाहै उस पद्मवेगके वज्रवेगनाम पुत्रथा वह वज्रवेग अत्यन्त अभिमानीहोकर शूरता के मदसे सबके साथ विरोधकिया करताथा उसके पिताने उसे बहुतसा समझाया परन्तु उस मूर्ख ने उसका कहना न माना इसी से उसने क्रोधसे उसे यह शापदिया कि तू मृत्युलोकमें उत्पन्नहो शापसे वज्रवेगका सब अभिमान और विद्या नष्टहोगई तब उसने विनयपूर्व्वक अपने पितासे शापका अन्त पूछा उसे नम्रदेखकर पद्मवेगने ध्यानकरके उससे कहा कि तुम पृथ्वी मे किसी ब्राह्मण के यहा उत्पन्नहोके इसीप्रकार से अभिमानकरके पिताकेही शापसे सिंह होकर कूपमेंगिरोगे तब कोई परमकृपालु महासत्त्ववान् तुमको कुएमें से निकालेगा उसका आपत्तिमें प्रत्युपकार करके तुम इस शापसे छूटोगे इस शापान्तको सुनकर वज्रवेग मालव देशमें हरघोषनाम ब्राह्मणका देवघोपनाम पुत्रहुआ और वहा भी शूरता के अभिमान से सबके साथ वैरकरनेलगा पिता ने उसके अभिमान को देखकर उसे बहुत समझाया जब उसने न माना तब उसने क्रोध करके उसे यह शाप दिया कि हे दुर्बुद्धे तू वन का सिंहहोजा हरघोष के इस शाप से देवघोष इस वन में सिंह हुआ वह सिंह मैंहीहू गतरात्रिको भ्रमण करते २ में इस कूपमे गिरपड़ा और आपने कृपाकरके मुझे

कथा आपसे कहताहू कि किसी मूर्ख जैनीभिक्षुकको मार्गमें कुत्तेने काटखाया इससे उसने शोचा कि मैं अपने स्थानमें जाकर सनलोगोंसे कहातक बताऊगा कि कुत्तेने मुझेकाटाहै और सवलोग मुझसे पूछेंगे कि तुम्हारी जघामें क्याहुआ मुझे इस वातके वतानेमें वहुतसा समय व्यतीतकरना पडेगा इसमे सवको यहवात एकही वारमें जतानेका उपायकरना चाहिये यह शोचकर उसने अपने स्थान में जाके मठीके ऊपर चढके एकतुरई वजाई उसशब्दको सुनकर सवभिक्षुक लोगोंने इकट्ठाहोकर उससे पूछा कि असमयमें आप क्यों तुरई वजारहेहो यह सुनकर उसने सवसेकहा कि कुत्तेने मेरे पैरमें काटखायाहै मै सवसे जुदा२ कहातक कहता इसहेतुसे तुरई से मैने सनको इकट्ठाकियाहै जिससे एकहीवार सवसे कहनापडा अव तुमसवलोग जानलो कि इसे कुत्तेनेकाटाहै यहकहकर उसने वहअपनापैर सवकोदिखादिया उसकी इस मूर्खताको देखकर सवभिक्षुक हँसनेलगे—अव एक अन्यमूर्खकी कथा सुनिये वाहीक देश का रहनेवाला एक महाधनवान् अत्यन्त लोभी मूर्खथा वह सदैव अपनी स्त्री समेत लवण रहित सत्तू खाताथा दूसरे अन्नका उसको स्वादभी नहीं मालूमथा एक दिन उसने भाग्यवशहोके अपनी स्त्री से कहा कि आज तुम मेरेलिये तस्मईवनाओ उसकी आज्ञापाके उसकी स्त्री खीर वनानेलगी और वह कृपणकोठरी के भीतरजाकर लेटरहा इसलिये कि कहीं कोई मित्र न आजाय कि उसको भी खीरखिलानी पडे इतने में उसके एक धूर्त्त मित्र ने आकर उसकी स्त्री से कहा कि तुम्हारा पति कहा है यह सुनकर वह स्त्री कुछ उत्तर दिये विनाही भीतर जाकर अपने पति से वोली कि तुम्हारा मित्र आया है यह सुनकर उसने कहा कि अच्छा उसे वैठारहनेदे तू मेरे पैर पकडकर रोदन कर और जो मेरा मित्र पूछे तो कहदेना कि मेरा पति मरगया है इस युक्तिसे जव यह चलाजायगा तो हम तुम दोनों मिल कर खीर खायँगे उसके यह वचन सुनकर वह स्त्री उसके पैरपकडकर रोनेलगी रोदन सुनके वह धूर्त्त भीतर जाकर उससे पूछने लगा कि तू क्यों रोती है उसने कहा कि मेरा पति मरगया है यह सुनकर उसने शोचा कि अभी तो यह आनन्दमें वैठी खीर वनारही थी और अभी यह यहा आनकर रोनेलगी है मालूमहोता है कि इनदोनों ने मुझे पाहुन जानके अपनी खीर वचाने के लिये यह प्रपचरचा है इस से मुझे यहा से नहीं जाना चाहिये यह शोचकर वहधूर्त्त वहा वैठकर हाय मित्र हाय मित्र कहने लगा रोदनको सुनकर उसके सम्पूर्ण वाधव आकर उसे मराहुआसा जानके श्मशान लेजाने के लिये उद्यत हुए तव उसकी स्त्री ने कानमें उससे धीरेसे कहा कि अव उठवैठो नहीं तो यह तुम्हे लेजाकर श्मशान मे जला देंगे यहसुनकर वह धीरे से वोला कि यह धूर्त्त मेरी खीरखाना चाहता है इस से जवतक यह न जायगा तवतक मै नहीं उठूगा क्योंकि मुझे प्राणों सेभी अन्न अधिक प्यारा है तदनन्तर सव मित्र वाधवों ने उसे लेजाकर श्मशान में जलादिया परन्तु उसमूर्ख ने कुछ न कहा इसप्रकार से उसमूर्ख ने अपने प्राण तक देदिये परन्तु खीर न खानेदी अव आप अन्य मूर्खोंकी कथा सुनिये कि उज्जयिनी नगरी मे [illegible] ईमूर्ख उपाध्याय रहताथा उसको रात्रिके समय मूसोंके उपद्रवसे निद्रा नहीं आतीथी उसने अपनी [illegible] व्यथा किसी मित्र से कही यहसुनकर उसके मित्रने कहा कि तुम किसी कहींसे लाकर पालो

साथ भाषण करनेसे उसतपस्वीकी सब सिद्धिनष्टहोगई इससे उसवनमें फल पुष्पआदि कोई वस्तु भी नहीं उत्पन्नहुई तब क्षुधा तथा तृषासे व्याकुलहोकर तपस्वी ने उस सिंहका स्मरणकिया स्मरण करतेही सिंहने आकर मृगमार२कर उनकामांस उसतपस्वीको खिलाया और कुछदिन इसप्रकार सेवनकरके उस से कहा कि अब मेराशाप क्षीणहोगयाहै इससे मैं अपने लोककोजाताहूं यहकहकर सिंहरूपको त्यागके विद्याधर होकर मुनिसे आज्ञालेके वहअपने लोकको चलागया उसके चलेजानेपर तपस्वीने जीविकाके लिये उस स्वर्णचूड पक्षीका स्मरणकिया स्मरण करतेही वह रत्नजटित आभूषणों से भरीहुई एक पिटारी लेकर उनके पास आया और बोला कि इस धनसे आपकी सदैवको जीविका होजायगी और मेरे शाप का अन्त भी अब होगया इससे मैं अपने लोकको जाताहूं यहकहके वह विद्याधर कुमार होकर अपने लोकको चलागया उसके चलेजानेपर वह तपस्वी उन रत्नोंको लेकर बेचनेके लिये उसी नगरमें आया जहां वह स्त्री राजाकी रानीकी दासीहोगई थी वहां किसी वृद्धा ब्राह्मणीके यहां सम्पूर्ण आभूषणोंको रख कर जैसेही वह बाजारकोगया वैसेही वह स्त्री उसको मिली परस्पर वार्त्तालाप होनेपर स्त्री ने कहा कि मैं राजाकी रानीकी नौकरहूं और तपस्वी ने भी अपना सब वृत्तान्त कहकर उसे वृद्धाके स्थानपर लेजाकर वह सब आभूषण दिखादिये उन आभूषणोंको देखकर उस कुलटाने रानीसे जाकरकहा कि तुम्हारे जो आभूषण खोगये थे उन्हें एकभिक्षुक लायाहै रानीने राजासेकहा राजाने सुनकर सेवकोंको भेजकर आभूषणों समेत तपस्वीको बँधवामँगाया और उससे सब वृत्तान्त पूछकर सत्य२ जानकर भी सब आभूषणलेके उसे कैदखाने मे डलवादिया बन्धनमे पड़कर तपस्वीने उस सर्पका स्मरण किया स्मरण करतेही सर्पने आकर उससे सब वृत्तान्त पूछके कहा कि मैं जाकर अपने शरीरसे इस राजाको शिरसे पैरतक लपेटताहूं जबतक तुम वहां आकर छोडनेको न कहोगे तबतक मैं उसे नहीं छोडूंगा और तुमभी लोगों से कहना कि हम राजाको सर्पसे छुटवादेंगे इससे जबतुम राजाके पासआकर कहोगे कि राजाको छोड़ दे तब मैं राजाको छोड़दूंगा और इसके बदले राजा तुमको अपना आधाराज्यदेगा यह कहकर उससर्प ने जाके अपने शरीरसे राजाका सब शरीर लपेट लिया और अपने तीनों फण राजाके शिरपर रखदिये राजाकी यह दशा देखकर बड़ा हाहाकार मचगया कि सर्प राजाको काटना चाहताहै इसहाहाकार को सुनके तपस्वी ने कैदखाने के अधिकारी से कहा कि मैं राजाको सर्प से बचासक्ताहूं सेवको के द्वारा राजाने इसबातको सुनकर तपस्वीको अपनेपास बुलाकरकहा कि जो तुम मुझे इससर्पसे छुटादोगे तो मैं तुमको अपना आधाराज्य देदूंगा इसमें मेरेमंत्री जामिनहैं राजाके यहवचन सुनकर तपस्वी ने सर्प से कहा कि तू राजाको शीघ्रही छोडदे उसके कहतेही सर्पने राजाको छोडदिया और राजाने अपना आधाराज्य तपस्वी के नामलिखदिया और वहसर्प मुनिकुमारहोकर सभामें अपना सबवृत्तान्त कहकर महर्षि कश्यपजी के आश्रमको चलागया इसप्रकार से पुण्यात्मा लोगोंको बीचमें चाहें क्लेशभी होय परन्तु अन्तमें शुभहोताहै और इसीप्रकारसे प्राण दानका उपकारभी स्त्रियों के चित्तमें नहीं रहता है अन्य उपकारोंकी तो क्या गणना है ॥१२० इस कथाको कहकर गोमुखने कहा कि अब मैं कुछ मूर्खोंकी

कथा आपसे कहताहूं कि किसी मूर्ख जैनीभिक्षुकको मार्गमें कुत्तेने काटखाया इससे उसने शोचा कि
मैं अपने स्थानमें जाकर सबलोगोंसे कहांतक बताऊंगा कि कुत्तेने मुझेकाटाहै और सबलोग मुझसे
पूछेंगे कि तुम्हारी जघामें क्याहुआ मुझे इसबातके बतानेमें बहुतसा समय व्यतीतकरना पडेगा इसमे
सबको यहबात एकही बारमें जतानेका उपायकरना चाहिये यह शोचकर उसने अपने स्थान में जाके
मठीके ऊपर चढके एकतुरई बजाई उसशब्दको सुनकर सबभिक्षुक लोगोंने इकट्ठाहोकर उससे पूंछा कि
असमयमें आप क्यों तुरई बजारहेहो यह सुनकर उसने सबसेकहा कि कुत्तेने मेरे पैरमें काटखायाहै मैं
सबसे जुदा२ कहांतक कहता इसहेतुसे तुरई से मैंने सबको इकट्ठाकियाहै जिससे एकहीबार सबमे कह-
नापडा अब तुमसबलोग जानलो कि इसे कुत्तेनेकाटाहै यहकहकर उसने वहअपनापैर सबकोदिखादिया
उसकी इस मूर्खताको देखकर सबभिक्षुक हँसनेलगे—अब एक अन्यमूर्खकी कथा सुनिये वाहीक देश
का रहनेवाला एक महाधनवान् अत्यन्त लोभी मूर्खथा वह सदैव अपनी स्त्री समेत लवण रहित सत्तू
खाताथा दूसरे अन्नका उसको स्वादभी नहीं मालूमथा एक दिन उसने भाग्यवशहोके अपनी स्त्री से
कहा कि आज तुम मेरेलिये तस्मईबनाओ उसकी आज्ञापाके उसकी स्त्री खीर बनानेलगी और वह
कृपणकोठरी के भीतरजाकर लेटरहा इसलिये कि कहीं कोई मित्र न आजाय कि उसको भी खीरखि-
लानी पडे इतने में उसके एक धूर्त्त मित्र ने आकर उसकी स्त्री से कहा कि तुम्हारा पति कहा है यह
सुनकर वह स्त्री कुछ उत्तर दिये विनाही भीतर जाकर अपने पति से बोली कि तुम्हारा मित्र आया है
यह सुनकर उसने कहा कि अच्छा उसे बैठारहनेदे तू मेरे पैर पकडकर रोदन कर और जो मेरा मित्र
पूछे तो कहदेना कि मेरा पति मरगया है इस युक्तिसे जब यह चलाजायगा तो हम तुम दोनों मिल
कर खीर खायँगे उसके यह वचन सुनकर वह स्त्री उसके पैरपकडकर रोनेलगी रोदन सुनके वह धूर्त्त
भीतर जाकर उससे पूछने लगा कि तू क्यों रोती है उसने कहा कि मेरा पति मरगया है यह सुनकर
उसने शोचा कि अभी तो यह आनन्दमें बैठी खीर बनारही थी और अभी यह यहा आनकर रोनेलगी
है मालूमहोता है कि इनदोनों ने मुझे पाहुन जानके अपनी खीर बचाने के लिये यह प्रपञ्चरचा है इस
मे मुझे यहा से नहीं जाना चाहिये यह शोचकर वहधूर्त्त वहां बैठकर हाय मित्र हाय मित्र कहने लगा
रोदनको सुनकर उसके सम्पूर्ण बांधव आकर उसे मराहुआसा जानके श्मशान लेजाने के लिये उद्यत
हुए तब उसकी स्त्री ने कानमें उससे धीरेसे कहा कि अब उठबैठो नहीं तो यह तुम्हे लेजाकर श्मशान
मे जला देंगे यहसुनकर वह धीरे से बोला कि यह धूर्त्त मेरी खीरखाना चाहता है इस से जबतक यह
न जायगा तबतक मैं नहीं उठूंगा क्योंकि मुझे प्राणोंसेभी अन्न अधिक प्यारा है तदनन्तर सब मित्र
बान्धवो ने उसे लेजाकर श्मशान में जलादिया परन्तु उसमूर्ख ने कुछ न कहा इसप्रकार से उसमूर्ख ने
अपने प्राण तक देदिये परन्तु खीर न खानेदी अब आप अन्य मूर्खोंकी कथा सुनिये कि उज्जयिनी
नगरी मे [illegible] कोईमूर्ख उपाध्याय रहताथा उसको रात्रि के समय मूसोंके उपद्रवसे निद्रा नहीं आतीथी उसने
अपनी [illegible] व्यथा किसी मित्र से कही यहसुनकर उसके मित्रने कहा कि तुम किसी जगहसे लाकर पालो

वहमूसोंको जब खाजायगी तब तुम्हारी व्यथादूर होजायगी उपाध्यायने कहा कि बिल्ली कैसीहोती है और कहा रहतीहै मैंने आजतक कभी नहीं देखीहै यहसुनकर वह मित्र बोला कि उसके कंजे नेत्र होतेहैं वर्णधुमैला होताहै और पीठपर रोयेंदार चमडाहोता है इसपहचानसे तुम बिल्ली मगवालो यहकहकर उसके चलेजानेपर उपाध्यायने अपने शिष्योंसे कहा कि तुमने बिल्लीकी पहचान तो सुनहीलीहै कहीं से बिल्ली ले आओ उपाध्यायकी आज्ञापाकर सब शिष्य इधर उधर बिल्ली ढूढनेलगे परन्तु बिल्ली कहीं न मिली तब एककंजेनेत्रवाला तथा धुमैले वर्णवाला विद्यार्थी मृगचर्म ओढे हुए उनको मिला उसे सम्पूर्ण लक्षणोंमे युक्तहोनेके कारण बिल्ली जानकर उपाध्यायके पास शिष्यलोग ले आये और उपाध्यायनेभी उसे अपने मित्रके बताये हुए लक्षण समेत देख बिल्ली जानके अपने मठ में रखलिया वह विद्यार्थी उसी ब्राह्मणका शिष्यथा जिसने उपाध्यायको लक्षण बताये थे प्रातःकाल उसब्राह्मणने वहा आकर उसमठमें अपने विद्यार्थीको देखकर उनसबसे पूछा कि इसे यहा कौनलायाहै यहसुनकर वहमूर्ख उपाध्याय तथा शिष्य बोले कि आपके बतायेहुए लक्षणोंके अनुसार यहबिल्ली हम लायेहैं यहसुनकर वहब्राह्मण हँसकर बोला कि हे मूर्खो कहा तो मनुष्य और कहा पशुबिल्ली उसके तो चारपैर होते हैं और पूछभी होती है यहसुनकर उनमूर्खों ने उसविद्यार्थीको छोडकर कहा कि अब आप जैसी बिल्ली बताइयेगा वैसीही हम लावेंगे उनमूर्खोंके यहवचन सुनकर सब लोग बहुत हँसे ठीक है (अज्ञतानाम कस्येहनोपहासायजायते) मूर्खतासे किसकी हँसी नहींहोतीहै १७६ अब अन्य मूर्खोंकी कथा सुनिये कि किसी मठमें बहुतसे मूर्खोंका प्रधान एकमूर्ख रहताथा एकदिन उसने किसी धर्म्मशास्त्री से तडाग बनवानेका बडा माहात्म्य सुना इससे उसने अपने मठकेही निकट बडा सुन्दर तालाब बनवाया एक दिन वह अपना तालाब देखनेको गया वहा उसतालाबकी सिढ्ढी उसे खुदीहुई मालूमहुई इससे उसने दूसरे दिन फिर जाकरदेखा तो और भी अधिक खुदीहुई सिढ्ढी देखी यहदेखकर उसने अपने चित्तमें कहा कि मैं प्रातःकालसे यहा आनकर देखूगा कि कौन तालाब की सीढिया तोडजाताहै यहशोच कर वह दूसरे दिन जैसेही प्रातःकाल तालाबके किनारे आनकर बैठा वैसेही एकबैल आकाशसेउतर कर अपने सींगोंमे सीढियोंको खोदनेलगा उसे देखके उसने यहशोचकर कि यह दिव्य बैलहै इसके साथ में स्वर्ग को क्यों न चलाजाऊ उसकी पूछ अपने हाथों से जाकर पकडलीनी तब वह बैल उस मूर्ख समेत आकाश मार्गसे उडकर कैलाशपर चलागया वहा मोदकादि दिव्य भोजनपाके वह मूर्ख कुछ दिन सुख पूर्व्वकरहा उस बैलको नित्य आतेजाते देखकर उस मूर्ख ने एकदिन भाग्य से मोहित होके अपने चित्त में शोचा कि इस बैलकी पूछ पकडकर मैं अपने भाई बन्धुओं से मिलआऊ और फिर इसकी पूछ पकडकर चलाआऊगा यह शोचके वह बैलकी पूछ पकडकर पृथ्वीपर आया और अपने अन्य मूर्ख मित्रोंमे मिला उन सबने उससे पूछा कि तुम कहा गयेथे उसने अपना सब वृत्तान्त उनसे कहदिया उस आश्चर्य्यको सुनकर वह सब बोले कि हमें भी वहा लेजाकर मोदक खिलवाओ यह सुनकर वह उन सबको युक्ति बनाकर तालाबपर लेगया वहा जब वह बैल आया तब उसने उसकी

पूछपकडली उसके पैर दूसरे मूर्खने पकडलिये उसके दूसरेने इसी क्रमसे सबने एक २ के पैर पकड लिये इसप्रकारसे एक २ का पैर पकडकर उन मूर्खों ने जजीरसी बनाली इतने में वह बैल उन सब समेत बडे वेगसे उडकर आकाशमें चला, मार्गमे बहुत दूर ऊपरजाके एक मूर्ख ने अपने प्रधान मूर्खसे कहा कि तुमने वहा कितने २ बडे मोदक खायेथे यह सुनकर उस प्रधान मूर्ख ने बैलकी पूछ छोडकर हाथों से लड्डुओं का प्रमाण बताना चाहा इससे वह सब मूर्खों समेत पृथ्वी में गिरकर नष्टहोगया और बैल आकाशको चलागया उन मूर्खोंकी यह दशा देखकर सब लोगहँसे इसप्रकारसे मूर्ख लोगों के प्रश्नोत्तरों में भी दोषही उत्पन्न होताहै १९६ आकाशगामी मूर्खों की कथा आपने सुनी अब अन्य मूर्खकी कथा सुनिये कोई मूर्ख किसी स्थानकोजाते समय मार्ग भूलगया पूछनेपर लोगोंने उसे यह पता बताया कि नदी के किनारेपर जो वृक्ष दिखाई पडताहै इसके ऊपरके मार्गसे चलेजाओ यह सुनकर वह मूर्ख उस वृक्षपर चढगया और उसके ऊपरकी ऐसी पतली शाखापर पहुँचा कि वह शाखा भारसे एकाएकी झुक गई और वह उसी शाखाको पकडकर नदीकी ओर लटकगया इतने में कोई महावत हाथी को जल पिलानेकेलिये उसी मार्गसे नदीपर आया महावतसे उस मूर्खने कहा कि हे महाशय तुम कृपा करके मुझे यहा से उतारलो यह सुनकर उस महावतने उसे उतारनेके लिये उसके पैर पकडलिये इससे वह हाथी निकलगया और महावत उसके पैर पकडे लटका रहगया तब उस मूर्ख ने महावतसे कहा कि जो तुमको गाना आताहो तो शीघ्रता से गाओ गान सुनकर जो कोई यहा आवेगा वही हम दोनों को उतारेगा उसके कहने से महावत ने ऐसा मधुर गान किया कि जिससे उस मूर्खने आनन्दसे मोहित होकर डालीको छोडकर हाथसे तालदेनाचाहा इससे वह महावत समेत नदी में डूबकर मरगया मूर्खकी सगतिसे उस बिचारे महावतके भी प्राणगये ऐसेही मूर्ख की सगतसे किसीका कल्याण नहीं होता इस कथाको कहकर गोमुख नरवाहनदत्त से हिरण्याक्ष राजपुत्रकी कथा कहनेलगा कि सम्पूर्ण देशों के शिरोमणि कश्मीर देशमें विद्वान् तथा धर्मात्मा लोगों से युक्त एक हिरण्यपुर नाम नगरथा उसमें क नकाक्षनाम राजाथा उस राजाके श्रीशिवजी की आराधना से रत्नप्रभा रानीमें उत्पन्नहुआ हिरण्याक्ष नाम एकपुत्रथा एकसमय गेंद खेलते २ हिरण्याक्षका गेंद मार्गमें आई हुई एकतपस्विनी के लगगया गेंदके लगनेपर क्रोधरहित उस तपस्विनी ने उससे कहा कि अभी से तुमको यौवनके मदसे जो इतना अभिमान है तो जब मृगाङ्कलेखा नाम स्त्री को पाओगे तो तुम्हारी क्या दशाहोगी यह सुनकर हिर ण्याक्ष ने अपना अपराध क्षमाकरवाके उससे कहा कि हे भगवति वह मृगाङ्कलेखा कौन है उसे मुझे बताओ यह सुनकर वह तपस्विनी बोली कि हिमालयपर्व्वतपर विद्याधरों का शशितेज नाम राजाहै उसके मृगाङ्कलेखा नाम अत्यन्त रूपवती कन्याहै जिसके रूपमे मोहितहुए विद्याधरोंको रात्रिभर निद्रा नहीं आती है वही तुम्हारे योग्य स्त्री है और तुम उसके योग्य पतिहो तपस्विनी के यह वचन सुनकर हिरण्याक्षने उससे कहा कि आप मुझे मृगाङ्कलेखाके मिलनेका उपाय कृपाकरके बताओ यह सुनकर वह तपस्विनी फिर बोली कि मैं उसके पास जाकर तुम्हारी प्रशसाकरूगी और जब उसका चित्त तुमपर

वहमूसोंको जब खाजायगी तब तुम्हारी व्यथादूर होजायगी उपाध्यायने कहा कि बिल्ली कैसीहोती है और कहा रहतीहै मैंने आजतक कभी नहीं देखीहै यहसुनकर वह मित्र बोला कि उसके कंजे नेत्र होतेहैं वर्णधुमैला होताहै और पीठपर रोयेंदार चमडाहोता है इसपहचानसे तुम बिल्ली मगवालो यहकहकर उसके चलेजानेपर उपाध्यायने अपने शिष्योंसे कहा कि तुमने बिल्लीकी पहचान तो सुनहीलीहै कहीं से बिल्ली ले आओ उपाध्यायकी आज्ञापाकर सब शिष्य इधर उधर बिल्ली ढूढनेलगे परन्तु बिल्ली कहीं न मिली तब एककंजेनेत्रवाला तथा धुमैले वर्णवाला विद्यार्थी मृगचर्म ओढे हुए उनको मिला उसे सम्पूर्ण लक्षणोंसे युक्तहोनेके कारण बिल्ली जानकर उपाध्यायके पास शिष्यलोग ले आये और उपाध्यायनेभी उसे अपने मित्रके बताये हुए लक्षण समेत देख बिल्ली जानके अपने मठ में रखलिया वह विद्यार्थी उसी ब्राह्मणका शिष्यथा जिसने उपाध्यायको लक्षण बताये थे प्रातःकाल उसब्राह्मणने वहा आकर उसमठमें अपने विद्यार्थीको देखकर उनसबसे पूछा कि इसे यहा कौनलायाहै यहसुनकर वहमूर्ख उपाध्याय तथा शिष्य बोले कि आपके बतायेहुए लक्षणोंके अनुसार यहबिल्ली हम लायेहैं यहसुनकर वहब्राह्मण हँसकर बोला कि हे मूर्खो कहा तो मनुष्य और कहा पशुबिल्ली उसके तो चारपैर होते हैं और पूछभी होती है यहसुनकर उनमूर्खों ने उसविद्यार्थीको छोडकर कहा कि अब आप जैसी बिल्ली बताइयेगा वैसीही हम लावेंगे उनमूर्खोंके यहवचन सुनकर सब लोग बहुत हँसे ठीक है (अज्ञतानाम कस्येहनोपहासायजायते) मूर्खतासे किसकी हँसी नहीहोतीहै १७६ अब अन्य मूर्खोंकी कथा सुनिये कि किसी मठमें बहुतसे मूर्खोंका प्रधान एकमूर्ख रहताथा एकदिन उसने किसी धर्म्मशास्त्री से तडाग बनवानेका बडा माहात्म्य सुना इससे उसने अपने मठकेही निकट बडा सुन्दर तालाब बनवाया एक दिन वह अपना तालाब देखनेको गया वहा उसतालाबकी सिढ्ढी उसे खुदीहुई मालूमहुई इससे उसने दूसरे दिन फिर जाकरदेखा तो और भी अधिक खुदीहुई सिढ्ढी देखी यहदेखकर उसने अपने चित्तमें कहा कि मैं प्रातःकालसे यहा आनकर देखूगा कि कौन तालाब की सीढिया तोडजाताहै यहशोच कर वह दूसरे दिन जैसेही प्रातःकाल तालाबके किनारे आनकर बैठा वैसेही एक बैल आकाशसे उतर कर अपने सींगोंसे सीढियोंको खोदनेलगा उसे देखके उसने यहशोचकर कि यह दिव्य बैलहै इसके साथ में स्वर्ग को क्यों न चलाजाऊ उसकी पूछ अपने हाथों से जाकर पकडलीनी तब वह बैल उस मूर्ख समेत आकाश मार्गसे उडकर कैलाशपर चलागया वहा मोदकादि दिव्य भोजनपाके वह मूर्ख कुछ दिन सुख पूर्व्वकरहा उस बैलको नित्य आतेजाते देखकर उस मूर्ख ने एकदिन भाग्य से मोहित होके अपने चित्त में शोचा कि इस बैलकी पूछ पकडकर मैं अपने भाई बन्धुओं से मिलआऊ और फिर इसकी पूछ पकडकर चलाआऊगा यह शोचके वह बैलकी पूछ पकडकर पृथ्वीपर आया और अपने अन्य मूर्ख मित्रोंसे मिला उन सबने उससे पूछा कि तुम कहा गयेथे उसने अपना सब वृत्तान्त उनसे कहदिया उस आश्चर्य्यको सुनकर वह सब बोले कि हमें भी वहा लेजाकर मोदक खिलवाओ यह सुनकर वह उन सबको युक्ति बनाकर तालाबपर लेगया वहा जब वह बैल आया तब उसने उसकी

पूछपकड़ली उसके पैर दूसरे मूर्खने पकडलिये उसके दूसरेने इसी क्रमसे सबने एक २ के पैर पकड़ लिये इसप्रकारसे एक २ का पैर पकडकर उन मूर्खोंने जंजीरसी बनाली इतने में वह बैल उन सब समेत बडे वेगसे उडकर आकाशमें चला मार्ग में बहुत दूर ऊपरजाके एक मूर्खने अपने प्रधान मूर्खसे कहा कि तुमने वहा कितने २ बडे मोदक खायेथे यह सुनकर उस प्रधान मूर्खने बैलकी पूछ छोडकर हाथों से लड्डुओं का प्रमाण बताना चाहा इससे वह सब मूर्खों समेत पृथ्वी में गिरकर नष्टहोगया और बैल आकाशको चलागया उन मूर्खोंकी यह दशा देखकर सब लोगहँसे इसप्रकारसे मूर्ख लोगों के प्रश्नोत्तरों में भी दोषही उत्पन्न होताहै १९६ आकाशगामी मूर्खों की कथा आपने सुनी अब अन्य मूर्खकी कथा सुनिये कोई मूर्ख किसी स्थानकोजाते समय मार्ग भूलगया पूछनेपर लोगोंने उसे यह पता बताया कि नदी के किनारेपर जो वृक्ष दिखाई पड़ताहै इसके ऊपरके मार्गसे चलेजाओ यह सुनकर वह मूर्ख उस वृक्षपर चढगया और उसके ऊपरकी ऐसी पतली शाखापर पहुँचा कि वह शाखा भारसे एकाएकी झुक गई और वह उसी शाखाको पकडकर नदीकी ओर लटकगया इतने में कोई महावत हाथी को जल पिलानेकेलिये उसी मार्गसे नदीपर आया महावतसे उस मूर्खने कहा कि हे महाशय तुम कृपा करके मुझे यहा से उतारलो यह सुनकर उस महावतने उसे उतारनेके लिये उसके पैर पकडलिये इससे वह हाथी निकलगया और महावत उसके पैर पकडे लटका रहगया तब उस मूर्ख ने महावतसे कहा कि जो तुमको गाना आताहो तो शीघ्रता से गाओ गान सुनकर जो कोई यहा आवेगा वही हम दोनों को उतारेगा उसके कहने से महावत ने ऐसा मधुर गान किया कि जिससे उस मूर्खने आनन्दसे मोहित होकर डालीको छोडकर हाथसे तालदेनाचाहा इससे वह महावत समेत नदी में डूबकर मरगया मूर्खकी सगतिसे उस बिचारे महावतके भी प्राणगये ऐसेही मूर्ख की सगतसे किसीका कल्याण नहीं होता इस कथाको कहकर गोमुख नरवाहनदत्त से हिरण्याक्ष राजपुत्रकी कथा कहनेलगा कि सम्पूर्ण देशों के शिरोमणि कश्मीर देशमें विद्वान् तथा धर्मात्मा लोगों से युक्त एक हिरण्यपुर नाम नगरथा उसमें क नकाक्षनाम राजाथा उस राजाके श्रीशिवजी की आराधना से रत्नप्रभा रानीमें उत्पन्नहुआ हिरण्याक्ष नाम एकपुत्रथा एकसमय गेंद खेलते २ हिरण्याक्षका गेंद मार्ग में आई हुई एकतपस्विनी के लगगया गेंदके लगनेपर क्रोधरहित उस तपस्विनी ने उससे कहा कि अभी से तुमको यौवनके मदसे जो इतना अभिमान है तो जब मृगाकलेखा नाम स्त्री को पाओगे तो तुम्हारी क्या दशाहोगी यह सुनकर हिर ण्याक्ष ने अपना अपराध क्षमाकरवाके उससे कहा कि हे भगवति वह मृगाकलेखा कौन है उसे मुझे बताओ यह सुनकर वह तपस्विनी बोली कि हिमालयपर्व्वतपर विद्याधरों का शशितेज नाम राजाहै उसके मृगाकलेखा नाम अत्यन्त रूपवती कन्याहै जिसके रूपसे मोहितहुए विद्याधरोंको रात्रिभर निद्रा नहीं आती है वही तुम्हारे योग्य स्त्री है और तुम उसके योग्य पतिहो तपस्विनी के यह वचन सुनकर हिरण्याक्षने उससे कहा कि आप मुझे मृगाकलेखाके मिलनेका उपाय कृपाकरके बताओ यह सुनकर वह तपस्विनी फिर बोली कि मैं उसके पास जाकर तुम्हारी प्रशसाकरूगी और जब उसका चित्त तुमपर

अनुरक्त जानूंगी तब तुमको उसके पास लेजाऊंगी यह कहके वह तपस्विनी आकाश मार्ग से हिमालय पर मृगाकलेखा के पासगई और वहां जाकर उसने उससे हिरण्याक्षकी ऐसी प्रशंसाकी जिसे सुनकर मृगाकलेखा ने अत्यन्त अनुरक्त होकर उससे कहा कि जो वह मुझे पति न मिला तो मेरा जन्म व्यर्थ है इसप्रकार से मृगाकलेखा को हिरण्याक्ष पर अनुरक्त कराके वह तपस्विनी उस दिनको वहीं व्यतीत करके रात्रि के समय भी मृगाकलेखाकेही पास रही यहां हिरण्याक्ष ने भी मृगाकलेखाके ही चिन्ता मे दिन व्यतीत करके रात्रि के समय किसी प्रकारसे निद्रा युक्त होकर यह स्वप्न देखा कि साक्षात् भगवती श्रीपार्व्वतीजी उससे कहरही है कि हेपुत्र तुम विद्याधर हो मुनि के शापसे तुम्हारा मनुष्य जन्म हुआहै इस तपस्विनी के हाथ के स्पर्श से तुम शाप से छूटकर मृगाकलेखा को पाओगे इसमें कुछ चिन्ता मतकरना यह तुम्हारी पूर्व्वजन्मकी स्त्री है यह कहकर भगवती के अन्तर्द्धान होजानेपर हिरण्याक्ष उठके स्नान करके श्रीअमरेश्वर नाम शिवजी के मन्दिर में गया और वहां हाथ जोड़कर श्रीशिवजीके आगे बैठा इसबीचमें किसी प्रकारसे निद्राको प्राप्तहुई मृगाकलेखासे भी श्रीपार्वतीजीने स्वप्नमें कहा कि तपस्विनीके हाथके स्पर्शसे शापरहित हुए हिरण्याक्षको तुम शीघ्रही पाओगी कुछ चिन्ता न करो यह कहकर भगवतीके अन्तर्द्धान होजानेपर मृगाकलेखाने जगकर तपस्विनी से अपने स्वप्नका सब वृत्तान्त कहा इस स्वप्नको सुनकर वह तपस्विनी श्रीअमरेशनाम शिवजीके मन्दिर में आकर हिरण्याक्षसे बोली कि हे पुत्र तुम विद्याधरोंके लोकको हमारेसाथ चलो और यह कहके उसकी भुजाओंको पकडके उसे आकाशमार्गसे लेचली उसके हाथका स्पर्श होतेही हिरण्याक्ष विद्याधरों का राजाहोके शापके क्षीणहोजानेसे अपने पूर्वजन्मका स्मरण करके उस तपस्विनीसे बोला कि हिमालय पर्वतपर वज्रकूटनाम नगर में विद्याधरों का अमृततेजनाम मैं राजा हूं उल्लघन से कुपितहुए एक मुनिने मुझको मनुष्यहोनेका शाप दियाथा और उसकी अवधि तुम्हारेहाथका स्पर्श बताया था जब मुनिके शापसे मैं मृत्युलोकमे मनुष्यहोगया तब मेरी स्त्री दुःखसे मरगई वही यह मृगाकलेखा है आज मैं तुम्हारी कृपासे उस शापसे छूटकर उसअपनीस्त्री को पाऊंगा इसप्रकार कहताहुआ वहअमृततेज तपस्विनीके साथ हिमालय पर्व्वतपर उपवनमें बैठीहुई मृगाकलेखाके पासगया वहां उस तपस्विनी से निवेदन कियेगये अमृततेजको देखकर मृगाकलेखा अत्यन्त प्रसन्नहुई और उसे देखकर अमृततेजभी अपनी खोईहुई निधिके प्राप्तहुएके समान अत्यन्त प्रसन्नहुआ तब उस तपस्विनीने मृगाकलेखासे कहा कि अब तुम अपने पितासे अपना सबमनोरथ जाकरकहो यहसुनकर मृगाकलेखाने अपनी सखी के द्वारा अपना सब वृत्तान्त अपने पितासे कहा सखीके वचन सुनकर शशितेज ने अमृततेजको बड़े आदर पूर्व्वक अपने मन्दिरमें लेजाके विधिपूर्व्वक मृगाकलेखाका विवाह उसके साथकर लिया क्योंकि पार्वतीजीने स्वप्नमें उसे भी यह आज्ञादेदी थी फिर विवाहके उपरान्त अमृततेज मृगाकलेखाको लेकर अपने वज्रकूटनाम नगरको चलागया और वहां उस तपस्विनी के द्वारा अपने पिता कनकाक्षको [illegible] कर्म बुलाकर बहुतसे रत्नादिदेके फिर मृत्युलोक मे भेजकर मृगाकलेखाके साथ

अपने राज्यका सुख भोगनेलगा इस प्रकारसे पूर्वकर्मके अनुसार मनुष्योंको जो कुछ भावी है वह अवश्य होताहै, विना यत्नकेही बड़े २ असाध्यकार्य्य भी सिद्धहोजातेहैं गोमुख से इस कथाको सुनकर शक्तियशाके लिये उत्कण्ठित नरवाहनदत्त शयनस्थानमें जाकर सोरहा २५६ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशक्तियशोलम्बकेनवमस्तरङ्ग ६ ॥

इसके उपरान्त दूसरे दिन रात्रिके समय नरवाहनदत्तके प्रसन्न करनेकेलिये गोमुख यहकथा कहने लगा कि धारेश्वरनाम शिवजीके सिद्धिक्षेत्रमें एक महामुनि अपने बहुतसे शिष्योंसमेत रहतेथे एक समय उसमुनिने अपने शिष्योंसे कहा कि तुम लोगोंमेंसे जिस किसीने कोई अपूर्व्ववात देखीहो अथवा सुनीहो सो कहै यह सुनकर एक शिष्यने कहा कि मैंने एक अपूर्व बातसुनी है उसको आपके आगे कहताहूं कि कश्मीर देशमें श्रीशिवजीके विजयनाम महाक्षेत्रमें एक बड़ा विद्याभिमानी सन्यासी रहताथा वह यह सङ्कल्प करके कि मेरी कहीं पराजय नहो श्रीशिवजीको प्रणामकरके विवाद करने के लिये पाटलिपुत्र नगरको चला मार्गमें बहुतसी नदी पर्वत तथा वनोंको उल्लङ्घन करके वह एकवनमें थककर किसी वृक्षके नीचे विश्राम करनेलगा उसीसमय एक धार्मिक पथिक एकदण्ड तथा कूंडी हाथ में लियेहुए उसी वृक्षके नीचे आकरबैठा उससे उस सन्यासीने पूछा कि तुम कहांसे आतेहो औरकहां को जाओगे यह सुनकर उस धार्मिकने कहा कि हेमित्र मैं पाटलिपुत्र नगरसे आयाहूं और कश्मीरदेशके सम्पूर्ण पण्डितोंको वादमें जीतनेके लिये वहां जाताहूं उसके यह वचनसुनकर उस सन्यासीने यह सोचकर कि जो मैंने इसको यहां न जीता तो वहां जाकर वहां के बहुत से विद्वानों को कैसे जीतूंगा उससे कहा कि हे धार्म्मिक तुम्हारा कार्य्य बड़ा विपरीतहै कहां तो मोक्ष की इच्छा करनेवाले तुम धार्म्मिक और कहां वाद विवाद करना जो तुम वादके अभिमानरूपी बन्धनके द्वारा संसारमें मुक्त होना चाहते हो तो अग्निमें ऊष्माको और हिमसे शीतको दूरकरना चाहतेहो पत्थरकी नौका पर चढ़कर समुद्रके पार जाना चाहतेहो और प्रज्वलित अग्निको वायुसे निवारण करना चाहतेहो ब्राह्मणोंका क्षमा क्षत्रियों का आपत्ति से रक्षाकरना मुक्तिचाहनेवालों का शम और राक्षसोंका कलह करना शीलहै इससे मुक्ति चाहनेवाले को सदैव शान्त तथा जितेन्द्री रहना चाहिये और सुख दुःखको त्यागकर संसार के क्लेशों से डरना चाहिये इससे तुम शान्तिरूपी कुठारके द्वारा संसाररूपी वृक्षको काटो वादके अभिमान रूपी जलसे उसकी जड़को न सींचो उसके यहवचनसुनकर वह धार्मिक उसे प्रणामकर आप मेरे गुरु हैं ऐसा कहके प्रसन्नता पूर्वक अपने पाटलिपुत्र नगरको लौटगया और वह सन्यासी उसीवृक्षके नीचे हँसताहुआ बैठारहा इतने में अपनी स्त्री के साथ वार्त्तालाप करतेहुए किसी यक्षका शब्द उसे सुनाई दिया उस यक्षने हास्य करके एक पुष्पोंकी माला अपनीस्त्री के मारी उसके लगतेही उसने अपनेको मृतकके समान धनालिया यह देखकर यक्षके सब सेवक रोनेलगे क्षणभरमें वह फिर जीनेसीलगी और नेत्र खोलकर यक्षकी ओर देखनेलगी तो उस यक्षने उससे पूछा कि इतने समयमें तुम्हें क्या दिखाई

अनुरक्त जानूगी तब तुमको उसके पास लेजाऊगी यह कहके वह तपस्विनी आकाश मार्ग से हिमालय पर मृगाकलेखा के पासगई और वहा जाकर उसने उससे हिरण्याक्षकी ऐसी प्रशसाकी जिसे सुनकर मृगाकलेखा ने अत्यन्त अनुरक्त होकर उससे कहा कि जो वह मुझे पति न मिला तो मेरा जन्म व्यर्थ है इसप्रकार से मृगाकलेखा को हिरण्याक्ष पर अनुरक्त कराके वह तपस्विनी उस दिनको वहीं व्यतीत करके रात्रि के समय भी मृगाकलेखाकेही पास रही यहा हिरण्याक्ष ने भी मृगाकलेखाके ही चिन्ता में दिन व्यतीत करके रात्रि के समय किसी प्रकारसे निद्रा युक्त होकर यह स्वप्न देखा कि साक्षात् भगवती श्रीपार्व्वतीजी उससे कहरही है कि हेपुत्र तुम विद्याधर हो मुनि के शापसे तुम्हारा मनुष्य जन्म हुआहै इस तपस्विनी के हाथ के स्पर्श से तुम शाप से छूटकर मृगाकलेखा को पाओगे इसमें कुछ चिन्ता मतकरना यह तुम्हारी पूर्व्वजन्मकी स्त्री है यह कहकर भगवती के अन्तर्द्धान होजानेपर हिरण्याक्ष उठके स्नान करके श्रीअमरेश्वर नाम शिवजी के मन्दिर में गया और वहा हाथ जोडकर श्रीशिवजीके आगे बैठा इसवीचमें किसी प्रकारसे निद्राको प्राप्तहुई मृगाकलेखासे भी श्रीपार्वतीजीने स्वप्नमे कहा कि तपस्विनीके हाथके स्पर्शसे शापरहित हुए हिरण्याक्षको तुम शीघ्रही पाओगी कुछ चिन्ता न करो यह कहकर भगवतीके अन्तर्द्धान होजानेपर मृगाकलेखाने जगकर तपस्विनी से अपने स्वप्नका सव वृत्तान्त कहा इस स्वप्नको सुनकर वह तपस्विनी श्रीअमरेशनाम शिवजीके मन्दिर मे आकर हिरण्याक्षसे वोली किहे पुत्र तुम विद्याधरोके लोकको हमारेसाथ चलो और यह कहके उसकी भुजाओंको पकडके उसे आकाशमार्गसे लेचली उसके हाथका स्पर्श होतेही हिरण्याक्ष विद्याधरो का राजाहोके शापके क्षीणहोजानेसे अपने पूर्वजन्मका स्मरण करके उस तपस्विनीसे बोला कि हिमालय पर्वतपर वज्रकूटनाम नगर में विद्याधरों का अमृततेजनाम मै राजा हू उल्लघन से कुपितहुए एक मुनिने मुझको मनुष्यहोनेका शाप दियाथा और उसकी अवधि तुम्हारेहाथका स्पर्श बताया था जव मुनिके शापसे मै मृत्युलोकमें मनुष्यहोगया तव मेरी स्त्री दुःखसे मरगई वही यह मृगाकलेखा है आज मै तुम्हारी कृपासे उस शापसे छूटकर उसअपनीस्त्री को पाऊगा इसप्रकार कहताहुआ वहअमृततेज तपस्विनीके साथ हिमालय पर्व्वतपर उपवनमें बैठीहुई मृगाकलेखाके पासगया वहा उस तपस्विनी से निवेदन कियेगये अमृततेजको देखकर मृगाकलेखा अत्यन्त प्रसन्नहुई और उसे देखकर अमृततेजभी अपनी खोईहुई निधिके प्राप्तहुएके समान अत्यन्त प्रसन्नहुआ तव उस तपस्विनीने मृगाकलेखासे कहा कि अव तुम अपने पितासे अपना सवमनोरथ जाकरकहो यहसुनकर मृगाकलेखाने अपनी सखी के द्वारा अपना सव वृत्तान्त अपने पितासे कहा सखीके वचन सुनकर शशितेज ने अमृततेजको वडे आदरपूर्व्वक अपने मन्दिरमे लेजाके विधिपूर्व्वक मृगाकलेखाका विवाह उसके साथकर दिया क्योंकि पार्वतीजीने स्वप्नमे उसे भी यह आज्ञादेदी थी फिर विवाहके उपरान्त अमृततेज मृगाकलेखाको लेकर अपने वज्रकूटनाम नगरको चलागया और वहा उस तपस्विनी के द्वारा अपने पिता कनकाक्षको मृत्युलोकमे बुलवाकर वहुतसे रत्नादिदेके फिर मृत्युलोक मे भेजकर मृगाकलेखाके साथ

विश्वास करलिया और अपने मन्त्री आदिको से भी यह वृत्तान्त कह दिया राजाके यह वचन सुनकर वह मूर्खभी अपनी २ स्त्रियों का विष्णुभगवान् से भोग करवाना जानकर चुपहो रहे इसप्रकार से पुंश्चली स्त्रिया असत्य बोलने में चतुरहोती हैं और मूर्खों को ठगती हैं मैं वैसा मूर्ख नहीं हूं ५२ यह कहकर यक्षने अपनी स्त्रीको लज्जित किया यक्षकी इस सब वार्त्तालापको सुनकर वृक्षके नीचेबैठे हुए सन्यासीने हाथ जोडकर यक्षसे कहा कि हेभगवन् आपके आश्रममें आयाहुआ मैं शरणागतहूं इससे मैने जो आपकी वार्त्तालापको सुनाहै उसे क्षमाकीजियेगा उसके यह सत्य वचन सुनकर यक्षने उसके सत्य वचनों से प्रसन्न होकर कहा कि मैं सर्व स्थानगत नाम यक्षहूं मुझसे जो चाहो सो तुम वर मागो मैं तुम्हारे ऊपर अत्यन्त प्रसन्नहूं यह सुनके सन्यासीने कहा कि आप अपनी इस स्त्रीपर क्रोध न कीजियेगा यही वरदान मैं मागताहूं उसके यह गभीर वचन सुनके यक्षने कहा कि अब मैं तुम्हारे ऊपर और भी अधिक प्रसन्नहूं इससे यह वर तो मैने तुमको दिया अब अन्य वर मागो यह सुनकर सन्यासी ने कहा कि जोआप प्रसन्नहै तो मैं अन्यवर यह मागताहूं कि आजसे तुम दोनों मुझे अपना पुत्र करके मानों यह सुनकर वह यक्ष अपनी स्त्री समेत प्रकट होकर बोला कि हे पुत्र तुम हमारे पुत्र हीहो हमारी कृपासे तुम्हारे ऊपर कभी विपत्ति नहीं आवेगी और विवाद कलह तथा द्यूतमें सदैव तुम्हारी विजय होगी यह कहकर उस यक्षके अन्तर्द्धान होजानेपर यक्षको प्रणामकर उस रात्रिको वहीं व्यतीत करके उस सन्यासीने पाटलिपुत्र नगर में आकर राजद्वारमें प्रतीहारके द्वारा राजा सिंहाक्ष से अपना आगमन कहलाभेजा और प्रतीहारकेद्वारा राजाकी आज्ञापाके सभामें जाकर यक्षके माहात्म्य से वहाके सम्पूर्ण पण्डितोंको वाद विवादमें जीतलिया और फिर उनपर आक्षेप करके उनसे यह कहा कि दिवाल से निकलकर शख चक्र गदा और पद्म धारी पुरुष दातोंसे ओठकाटकर और नखोंसे स्तनों में क्षत देकर मेरे साथ भोग करके फिर उसी दीवारमें चला जाताहै यह क्या बातहै इसका उत्तर मैं आपसे पूछताहूं यह सुनकर सब पण्डित कुछ तत्त्व न समझकर एक दूसरेका मुखदेखतेहुए निरुत्तर होगये तब राजा सिंहाक्षने उससे कहा कि यह जो आपने प्रश्न कियाहै इसका उत्तरभी आपही दो यह सुनकर उसने यक्षसे सुनाहुआ उसकी स्त्री का सब वृत्तान्त कहकर कहा कि मनुष्यको पापकी मूल स्त्रियोंका सग कदापि न करना चाहिये उसके यह वचनसुनके राजाने प्रसन्न होकर उसे अपना राज्य देना चाहा परन्तु सन्यासीने अपने देशके स्नेहसे राज्यलेना न चाहा तब राजाने उसे बहुतसे अमूल्य रत्नदिये उन रत्नोंको लेकर वह सन्यासी कश्मीर देशमें जाके यक्षकी कृपासे दीनता रहित होकर सुख पूर्वक रहनेलगा इस वृत्तान्त को कहके शिष्यने मुनिसे कहा कि मैने उस सन्यासी हीके मुखसे यह सब बातेंसुनीहैं इस कथाको सुनकर वह मुनि अपने सब शिष्यों समेत बडे प्रसन्नहुए यह कथा कहकर गोमुखने नरवाहनदत्त से कहा कि इसप्रकारसे कुकर्मिणी स्त्रियोंके चरित्र ब्रह्माके कार्योंके समान विचित्र होते हैं अब ग्यारहपुरुषोंके मागनेवाली स्त्रीकी कथा आपसुनिये मालवदेशमें एक कुटुंबी ग्रामीण नारायणरहताथा उसके तीनपुत्रोंके उपरान्त एककन्या उत्पन्नहुई उसकन्याके उत्पन्नहोनेहीं उसकी माता

दिया उसने मिथ्या बना करके मिथ्या उससे कहा कि आपकी मालाके लगतेही पाशको हाथमे लिये हुए जाज्वल्य नेत्रवाला बडे २ लम्बे बालवाला एक महा भयंकर श्यामवर्ण पुरुष मुझे दिखाई दिया वह मुझे यमराजके मन्दिरमे लेगया तब वहा के अधिकारियों ने उसे धमकाकर मुझे छुडवादिया उसके यह वचनसुनके वह यक्ष हँसकर बोला कि इन्द्रजालसे रहित स्त्रियोंकी कोई भी बात नहीं होती एक तो पुष्पों के लगने से मरनाही असम्भवहै दूसरे यमराजकेलोकसे लौटना और भी असम्भवहै हे मूर्ख तूने तो इससमय पाटलिपुत्र नगरकी स्त्रियों का अनुकरण कियाहै उस नगरमे जो सिंहाक्षनाम राजाहै उसकी रानी एक समय मन्त्री सेनाधिपति पुरोहित तथा वैद्य इनसबकी स्त्रियोंको साथमें लेकर शुक्लपक्षकी त्रयोदशी के दिन उसी नगरके निकट विशाल मन्दिरमे वर्त्तमान सरस्वतीके दर्शनकोगई वहामार्ग में बहुतसे कुनडे अन्धे तथा पशुओं ने उन सब स्त्रियो से यह प्रार्थनाकी कि हम दीन रोगियोंको औषध दिलवाओ जिससे हम इस रोगसे छूटे (समुद्रलहरीलोलो विद्युत्स्फुटितभंगुर। जीवलोकोह्ययात्रा ह्युत्सवक्षणसुन्दर॥ तदसारेत्रससारे सारदीनेषुयादया। कृपणेषुत्रयद्दान गुणवान्कनजीवति॥ आढ्यस्य किंचदानेन सुहितस्याशनेनकिम्। किंचन्दनेनशीतालो क्रिघनेनहिमागमे) समुद्रकी लहरों के समान चचल बिजलीकी चमकके समान भगहोनेवाला और यात्रादिक उत्सवो के समान क्षणभर सुन्दर यह ससारहै इससे इस असार ससारमें दीनोपर दयाकरना और दरिद्रियोको दान देनाही सार है गुणवान्की जीविका तो सबकहींहोती है धनवान्को दानदेने से क्या तृप्तको भोजनसे क्या शीतयुक्तको चन्दनसे क्या और हेमन्तऋतुमें मेघोसे क्या इससे हम दीनलोगोंपर दयाकरो उनके यह वचनसुनकर उनस्त्रियों ने परस्परमें कहा कि यहबहुत उचित कहते हैं इससे इनकी औषध अवश्य करवानी चाहिये यहकहकर वह सब स्त्रिया सरस्वतीजीका पूजनकरके उन रोगियों में से एक २को अपने२ घर लेगई और अपने २ पतियों से कहकर उनकी औषध करवानेलगीं और रात्रिदिन उन्हींकी चिन्तामे रहनेलगीं बहुत काल तक एकसाथ रहनेसे उनरोगियोंपर अनुरक्तहुई उनस्त्रियोको ऐसा कामका वेगहुआ कि वहतन्मयहो गई और उन्हें यहभी विचार न रहा कि कहा तो यहदीन रोगी और कहा यह ऐश्वर्य्यवान् हमारे पति तब उनरोगियों के साथ रमणकरनेसे जो उनस्त्रियोंके नखक्षत तथा दन्तक्षतहोगये वह उनके राजा मन्त्री सेनापति पुरोहित तथा वैद्य पतियोने देखे और सन्देह युक्तहोकर उनसबने परस्परमे यह बातकही तब राजाने उनसबसेकहा तुमलोग अभी ठहरजाओ पहले मैं अपनी रानीसे युक्तिपूर्व्वक पूछलू यह कहके राजाने अपने मंदिरमें जाकर रानीसे स्नेह तथा भयदिखाकर पूछा कि तुम्हारा ओष्ट किसनेकाटा और तुम्हारे स्तनों में किसने नखक्षतलगाये हैं सत्य २ कहो नहीं तो तुम्हारा कल्याण न होगा यह सुनकर रानीने बात बनाकरकहा कि यद्यपि कहनेके योग्य बातनहीं है तथापि मैं आपसे कहती हू रात्रिकेसमय एक शख चक्रधारी पुरुष दीवारमें से निकलकर मेरेसाथ भोगकिया करताहै और भोगकरके इसी दीवार मे गुप्तहोजाताहै मेरे जिन अगोंको चन्द्रमा और सूर्य्यने भी नहींदेखाहै उनकी वह नित्यदुर्द्दशा करता है आपके जीतेही मेरी यह दुर्द्दशाहोतीहै रानीके वचन सुनकर राजा ने स्त्रैणबुद्धिमाया जानकर उसपर

विश्वास करलिया और अपने मंत्री आदिकों से भी यह वृत्तान्त कह दिया राजाके यह वचन सुनकर वह मूर्खभी अपनी २ स्त्रियों का विष्णुभगवान् से भोग करवाना जानकर चुपहो रहे इसप्रकार से पुंश्चली स्त्रियां असत्य बोलने में चतुरहोती हैं और मूर्खों को ठगती है मैं वैसा मूर्ख नहीं हूं ५० यह कहकर यक्षने अपनी स्त्रीको लज्जित किया यक्षकी इस सब वार्त्तालापको सुनकर वृक्षके नीचेबैठे हुए सन्यासीने हाथ जोडकर यक्षसे कहा कि हेभगवन् आपके आश्रममें आयाहुआ मैं शरणागतहूं इससे मैने जो आपकी वार्त्तालापको सुनाहै उसे क्षमाकीजियेगा उसके यह सत्य वचन सुनकर यक्षने उसके सत्य वचनों से प्रसन्न होकर कहा कि मैं सर्व स्थानगत नाम यक्षहूं मुझसे जो चाहो सो तुम वर मांगो मैं तुम्हारे ऊपर अत्यन्त प्रसन्नहूं यह सुनके सन्यासीने कहा कि आप अपनी इस स्त्रीपर कोप न कीजियेगा यही वरदान मैं मांगताहूं उसके यह गंभीर वचन सुनके यक्षने कहा कि अब मैं तुम्हारे ऊपर और भी अधिक प्रसन्नहूं इससे यह वर तो मैने तुमको दिया अब अन्य वर मांगो यह सुनकर सन्यासी ने कहा कि जोआप प्रसन्नहैं तो मैं अन्यवर यह मांगताहूं कि आजसे तुम दोनों मुझे अपना पुत्र करके मानो यह सुनकर वह यक्ष अपनी स्त्री समेत प्रकट होकर बोला कि हे पुत्र तुम हमारे पुत्र हीहो हमारी कृपासे तुम्हारे ऊपर कभी विपत्ति नहीं आवेगी और विवाद कलह तथा द्यूतमें सदैव तुम्हारी विजय होगी यह कहकर उस यक्षके अन्तर्द्धान होजानेपर यक्षको प्रणामकर उस रात्रिको वहीं व्यतीत करके उस सन्यासीने पाटलिपुत्र नगर में आकर राजद्वारमें प्रतीहारके द्वारा राजा सिंहाक्ष से अपना आगमन कहलभेजा और प्रतीहारकेद्वारा राजाकी आज्ञापाके सभामें जाकर यक्षके माहात्म्य से वहाके सम्पूर्ण पण्डितोंको वाद विवादमें जीतलिया और फिर उनपर आक्षेप करके उनसे यह कहा कि दिवाल से निकलकर शंख चक्र गदा और पद्म धारी पुरुष दांतों से ओठकाटकर और नखोंसे स्तनों में क्षत देकर मेरे साथ भोग करके फिर उसी दीवारमें चला जाताहै यह क्या बातहै इसका उत्तर मैं आपसे पूछताहूं यह सुनकर सब पण्डित कुछ तत्त्व न समझकर एक दूसरेका मुखदेखतेहुए निरुत्तर होगये तब राजा सिंहाक्षने उससे कहा कि यह जो आपने प्रश्न कियाहै इसका उत्तरभी आपही दो यह सुनकर उसने यक्षसे सुनाहुआ उसकी स्त्री का सब वृत्तान्त कहकर कहा कि मनुष्यको पापकी मूल स्त्रियोंका संग कदापि न करना चाहिये उसके यह वचनसुनके राजाने प्रसन्न होकर उसे अपना राज्य देना चाहा परन्तु सन्यासीने अपने देशके स्नेहसे राज्यलेना न चाहा तब राजाने उसे बहुतसे अमूल्य रत्नदिये उन रत्नोंको लेकर वह सन्यासी कश्मीर देशमें जाके यक्षकी कृपासे दीनता रहित होकर सुख पूर्वक रहनेलगा इस वृत्तान्त को कहके शिष्यने मुनिसे कहा कि मैंने उस सन्यासी हीके मुखसे यह सब बातेंसुनीहैं इस कथाको सुनकर वह मुनि अपने सब शिष्यों समेत बड़े प्रसन्नहुए यह कथा कहकर गोमुखने नरवाहनदत्त से कहा कि इसप्रकारसे कुकर्मिणी स्त्रियोंके चरित्र ब्रह्माके कार्योंके समान विचित्र होते हैं अब ग्यारहपुरुषोंके मांगनेवाली स्त्रीकी कथा आपसुनिये मालवदेशमें एक कुटुंबी ग्रामीण ब्राह्मणरहताथा उसके तीनपुत्रोंके उपरान्त एककन्या उत्पन्नहुई उसकन्याके उत्पन्नहोनेही उसकी माता

दिया उसने मिथ्या बना करके मिथ्या उससे कहा कि आपकी मालाके लगतेही पाशको हाथमे लिये हुए जाज्वल्य नेत्रवाला बडे २ लम्बे बालवाला एक महा भयकर श्यामवर्ण पुरुष मुझे दिखाई दिया वह मुझे यमराजके मन्दिरमे लेगया तब वहा के अधिकारियों ने उसे धमकाकर मुझे छुडवादिया उसके यह वचनसुनके वह यक्ष हँसकर बोला कि इन्द्रजालसे रहित स्त्रियोंकी कोई भी बात नहीं होती एक तो पुष्पों के लगने से मरनाही असम्भवहै दूसरे यमराजकेलोकसे लौटना और भी असम्भवहै हे मूर्ख तूने तो इससमय पाटलिपुत्र नगरकी स्त्रियों का अनुकरण कियाहै उस नगरमे जो सिंहाक्षनाम राजाहै उसकी रानी एक समय मन्त्री सेनाधिपति पुरोहित तथा वैद्य इनसबकी स्त्रियोंको साथमें लेकर शुक्लपक्षकी त्रयोदशी के दिन उसी नगरके निकट विशाल मन्दिर मे वर्त्तमान सरस्वतीके दर्शनकोगई वहामार्ग में बहुतसे कुबडे अन्धे तथा पगुओं ने उन सब स्त्रियों से यह प्रार्थनाकी कि हम दीन रोगियोंको औषध दिलवाओ जिससे हम इस रोगसे छूटे (समुद्रलहरीलोलो विद्युत्स्फुरितभगुर । जीवलोकोह्यययात्रा द्युत्सवक्षणसुन्दर ॥ तदसारेत्रससारे सारदीनेषुयादया। कृपणेषुचयद्दान गुणवान्कनजीवति ॥ आढ्यस्य किंचदानेन सुहितस्याशनेनकिम् । किंचन्दनेनशीतालो क्रिघनेनहिमागमे) समुद्रकी लहरों के समान चचल बिजलीकी चमकके समान भगहोनेवाला और यात्रादिक उत्सवों के समान क्षणभर सुन्दर यह ससारहै इससे इस असार ससारमें दीनोंपर दयाकरना और दरिद्रियोंको दान देनाही सार है गुणवान्की जीविका तो सबकहींहोती है धनवान्को दानदेने से क्या तृप्तको भोजनसे क्या शीतयुक्तको चन्दनसे क्या और हेमन्तऋतुमें मेघोंसे क्या इससे हम दीनलोगोंपर दयाकरो उनके यह वचनसुनकर उनस्त्रिया ने परस्परमें कहा कि यह बहुत उचित कहते हैं इससे इनकी औषध अवश्य करानी चाहिये यहकहकर वह सब स्त्रिया सरस्वतीजीका पूजनकरके उन रोगियों मे से एक २ को अपने२ घर लेगई और अपने २ पतियों से कहकर उनकी औषध करवानेलगी और रात्रिदिन उन्हींकी चिन्तामे रहनेलगीं बहुत काल तक एकसाथ रहनेसे उनरोगियोंपर अनुरक्तहुई उनस्त्रियोंको ऐसा कामका वेगहुआ कि वहतन्मयहो गईं और उन्हें यहभी विचार न रहा कि कहा तो यहदीन रोगी और कहा यह ऐश्वर्य्यवान् हमारे पति तब उनरोगियों के साथ रमणकरनेसे जो उनस्त्रियोंके नखक्षत तथा दन्तक्षतहोगये वह उनके राजा मत्री सेनापति पुरोहित तथा वैद्य पतियोंने देखे और सन्देह युक्तहोकर उनसबने परस्परमें यह बातकही तब राजाने उनसबसेकहा तुमलोग अभी ठहरजाओ पहले मैं अपनी रानीसे युक्तिपूर्व्वक पूछलू यह कहके राजाने अपने मदिरमें जाकर रानीसे स्नेह तथा भयदिखाकर पूछा कि तुम्हारा ओष्ठ किसनेकाटा और तुम्हारे स्तनों में किसने नखक्षतलगाये हैं सत्य २ कहो नहीं तो तुम्हारा कल्याण न होगा यह सुनकर रानीने बात बनाकरकहा कि यद्यपि कहनेके योग्य बातनहीं है तथापि मैं आपसे कहती हू रात्रिकेसमय एक शख चक्रधारी पुरुष दीवारमें से निकलकर मेरेसाथ भोगकिया करताहै औरभोगकरके इसी दीवार मे गुप्तहोजाताहै मेरे जिन अगोंको चन्द्रमा और सूर्य्यने भी नहींदेखाहै उनकी वह नित्यदुर्दशा करता है आपके जीतेहीमे मेरी यह दुर्दशाहोतीहै रानीके वचन सुनकर राजा ने वैष्णवीमाया जानकर उसपर

विश्वास करलिया और अपने मन्त्री आदिकों से भी यह वृत्तान्त कह दिया राजाके यह वचन सुनकर वह मूर्खभी अपनी २ स्त्रियों का विष्णुभगवान् से भोगकरजाना जानकर चुपहो रहे इसप्रकार से पुश्चली स्त्रिया असत्य बोलने में चतुरहोती हैं और मूर्खों को ठगती हैं मैं वैसा मूर्ख नहीं हूं ५० यह कहकर यक्षने अपनी स्त्रीको लज्जित किया यक्षकी इस सब वार्त्तालापको सुनकर वृक्षके नीचेबैठे हुए सन्यासीने हाथ जोडकर यक्षसे कहा कि हेभगवन् आपके आश्रममें आयाहुआ मैं शरणागतहूं इससे मैने जो आपकी वार्त्तालापको सुनाहै उसे क्षमाकीजियेगा उसके यह सत्य वचन सुनकर यक्षने उसके सत्य वचनों से प्रसन्न होकर कहा कि मैं सर्व स्थानगत नाम यक्षहूं मुझसे जो चाहो सो तुम वर मागो म तुम्हारे ऊपर अत्यन्त प्रसन्नहूं यह सुनके सन्यासीने कहा कि आप अपनी इस स्त्रीपर क्रोध न कीजियेगा यही वरदान मैं मागताहूं उसके यह गभीर वचन सुनके यक्षने कहा कि अब मैं तुम्हारे ऊपर और भी अधिक प्रसन्नहूं इससे यह वर तो मैंने तुमको दिया अब अन्य वर मागो यह सुनकर सन्यासीने कहा कि जोआप प्रसन्नहैं तो मैं अन्यवर यह मागताहूं कि आजसे तुम दोनो मुझे अपना पुत्र करके मानो यह सुनकर वह यक्ष अपनी स्त्री समेत प्रकट होकर बोला कि हे पुत्र तुम हमारे पुत्र हीहो हमारी कृपासे तुम्हारे ऊपर कभी विपत्ति नहीं आवेगी और विवाद कलह तथा द्यूतमें सदैव तुम्हारी विजय होगी यह कहकर उस यक्षके अन्तर्द्धान होजानेपर यक्षको प्रणामकर उस रात्रिको वहीं व्यतीत करके उस सन्यासीने पाटलिपुत्र नगर मे आकर राजद्वारमें प्रतीहारके द्वारा राजा सिंहाक्ष से अपना आगमन कहलाभेजा और प्रतीहारकेद्वारा राजाकी आज्ञापाके सभामें जाकर यक्षके माहात्म्य से वहाके सम्पूर्ण पण्डितोंको वाद विवादमें जीतलिया और फिर उनपर आक्षेप करके उनसे यह कहा कि दिवाल से निकलकर शख चक्र गदा और पद्म धारी पुरुष दातोंसे ओठकाटकर और नखोंसे स्तनो में क्षत देकर मेरे साथ भोग करके फिर उसी दीवारमें चला जाताहै यह क्या बातहै इसका उत्तर मैं आपसे पूछताहूं यह सुनकर सब पण्डित कुछ तत्त्व न समझकर एक दूसरेका मुखदेखतेहुए निरुत्तर होगये तब राजा सिंहाक्षने उससे कहा कि यह जो आपने प्रश्न कियाहै इसका उत्तरभी आपही दो यह सुनकर उसने यक्षसे सुनाहुआ उसकी स्त्री का सब वृत्तान्त कहकर कहा कि मनुष्यको पापकी मूल स्त्रियोंका सग कदापि न करना चाहिये उसके यह वचनसुनके राजाने प्रसन्न होकर उसे अपना राज्य देना चाहा परन्तु सन्यासीने अपने देशके स्नेहसे राज्यलेनान चाहा तब राजाने उसे बहुतसे अमूल्य रत्नदिये उन रत्नोंको लेकर वह सन्यासी कश्मीर देशमें जाके यक्षकी कृपासे दीनता रहित होकर सुख पूर्वक रहनेलगा इस वृत्तान्त को कहके शिष्यने मुनिसे कहा कि मैंने उस सन्यासी हीके मुखसे यह सब बातेंसुनीहैं इस कथाको सुनकर वह मुनि अपने सब शिष्यो समेत बडे प्रसन्नहुए यह कथा कहकर गोमुखने नरवाहनदत्त से कहा कि इसप्रकारसे कुकर्मिणी स्त्रियोंके चरित्र ब्रह्माके कार्योंके समान विचित्र होते हैं अब ग्यारहपुरुषोंके मारनेवाली स्त्रीकी कथा आपसुनिये मालवदेशमे एक कुटुंबी ग्रामीण ब्राह्मणरहताथा उसके तीनपुत्रोंके उपरान्त एककन्या उत्पन्नहुई उसकन्याके उत्पन्नहोनेही उसकी माता

ब्राह्मणकी स्त्री मरगई और दोचारदिनोकेपीछे उसका पुत्रभी मरगया और बैलके मारनेसे उसका एक भाई भी मरगया इसीसे उसब्राह्मणने अपनी कन्याकानाम त्रिमारिका रक्खा जब समयपाकर वहकन्या युवतीहुई तब उसीगावके रहनेवाले एक धनवान् ब्राह्मणने उस ब्राह्मणसे कहा कि इसकन्याका विवाह मेरे साथ करदे उसकी यह प्रार्थना सुनकर उसने अपनी कन्याका विवाह उस के साथ करदिया उस पतिके साथ वह त्रिमारिका कुछ दिन तकरही और थोडेही कालमे वह मरगया तब उसने किसी अन्य को अपनापति बनालिया वह भी थोडेही कालमे मरगया उसके पीछे यौवनसे उन्मत्त उस त्रिमारिका ने तीसरा पतिकिया वह भी थोडेही कालमें मरगया इस क्रमसे उसके दशपतिमरे तब लोगोंने हास्यसे उसकानाम दशमारिका रख दिया दश पतियों के मरनेके उपरान्त अन्यपति करनेकी उसकी इच्छा देखकर उसके पिताने लज्जितहोके उसे अपने घरमे रखलिया और अन्यपति न करनेदिया एकसमय उस ब्राह्मणके यहा एक सुन्दर युवापथिक पुरुष रात्रिभर रहनेकेलिये टिका उसे देखकर दशमारिकाका चित्त उसपर चलायमान हुआ और उस पथिककाभी चित्त दशमारिकापर चलायमान होगया तब काम देवकी पीडासे लज्जारहितहोके दशमारिकाने अपने पितासे कहा कि हे तात अब एक इसपथिकको और मुझे अपना पतिबनालेने दीजिये जो यह भी न रहैगा तो फिर मै सन्यासिनी होजाऊगी यह सुनकर उस ब्राह्मणने कहा कि हे पुत्री ऐसामतकरो तुम्हारे दशपति मरचुकेहै जो यह भी न रहैगा तो लोक में तुम्हारी बडी हँसी होगी यह सुनकर उस पथिक ने कहा कि मैं नहीं मरूगा श्रीशिवजी की शपथ खाकर में कहताहू कि मेरी भी दश स्त्रिया मरचुकी हैं इससे हम यह दोनों समान हैं उस प- थिकके यह वचन सुनकर सब गावके रहनेवालों की सलाहसे दश मारिकाने उसे भी अपना पति ब नाया थोडे काल मे वह भी शीतज्वर से मरगया तब वह व्याकुल होके गगाजी के तटपर सन्यासिनी होगई इसकथाको सुनके हँसतेहुए नरवाहनदत्तसे गोमुखने यहकथाकही कि किसीग्राममें एक निर्धन कुटुम्बी रहताथा एक बधिया बैलही उसके पास धनथा निर्धनताके कारण वह कुटुम्ब समेत उपवास तक करजाताथा परन्तु बैलको नहीं बेचताथा एकसमय वह व्याकुलहोकर विन्ध्यवासिनी के मन्दिर में जाके निराहारहोकर तपकरने लगा तपसे प्रसन्नहोकर भगवती ने रात्रिके समय उसे यहस्वप्न दिया कि एक बैलही तुम्हारे पास सदैव धनरहैगा इससे उसी को बेचकर तुम सुखपूर्व्वकरहो स्वप्नमें यह भग- वतीकी आज्ञा पाके प्रातःकाल पारणकरके वह अपने घरको चलाआया फिर घरमें आकर वह तबभी बैलको न बेचसका कि ऐसा न होय कि में इसेभी बेचकर निपटही निर्धन होजाऊ तब उसके किसी मित्रने उससे स्वप्नमें हुई भगवतीकी आज्ञा सुनकर उसे समझानेके लिये कहा कि तुम्हारे पास एकही बैल धनरूप रहैगा इसको बेचकर तुम सदैव सुखसे रहो भगवती की इसआज्ञाका अर्थ तुम क्या नहीं समझेहो इसका तात्पर्य्य यहहै कि तुम इसबैलको बेचकर अपने कुटुम्बका पालनकरो तो तुमको अन्य बैल मिलजायगा उसेभी बेचकर फिर अपने कुटुम्बका पालनकरो इसीप्रकार सदैव तुमको बैल मिला करेंगे और तुम सुखसे रहोगे मित्रके यहवचन सुनकर उसग्रामीण ने वैसाही किया और सुखपूर्व्वक

उसका जन्म व्यतीतहुआ इसप्रकारसे सबको अपने २ सत्त्वके अनुसार फल मिलताहै इससे मनुष्यको सत्त्ववान् होनाचाहिये क्योंकि निस्सत्त्वके पास लक्ष्मी नहीं रहतीहै १०६ अब आप एकधूर्त्तकी कथा सुनिये दक्षिणदेशके किसी नगरमें पृथ्वीपति नाम एकराजाथा उसके राज्यमें एकमहाधूर्त्त रहताथा वह सदैव नगरवासियोंको ठगा करताथा एकदिन उसने शोचा कि ऐसी धूर्त्ततासे क्या प्रयोजनहै जिसमें केवल भोजन मात्रही प्राप्तहोय ऐसा उपाय करनाचाहिये जिसमें बहुतसा धन मिले यह शोचकर वह धनवान् बणिये का सा भेषबनाकर राजद्वार में गया और प्रतीहारके द्वारा आज्ञा पाके राजा के समीप पहुँचकर भेटदेकर बोला कि हे स्वामी में एकान्त में एकबात आपसे कहनी चाहताहूं राजा ने उसका सुन्दर भेष देख के उसे एकान्त में लेजाकर कहा कि कहो तब उसने कहा कि हे महाराज आप प्रति दिन सभा में सब के आगे एकान्त में मुझ से क्षणभर वार्त्तालाप किया करिये इससे मैं प्रति दिन आपको पांच सौ अशर्फी भेट दिया करूंगा और मेरी प्रार्थना कुछ नहीं है यह सुनकर राजाने शोचा कि इस में मेरी क्या हानि है यह मुझसे कुछ ले तो जायगाही नहीं और उलटी पांच सौ अशर्फी दे जायाकरेगा और धनवान् वैश्य के साथ वार्त्तालाप करने में किसी प्रकारकी लज्जा भी नहीं है इससे इसकी प्रार्थना स्वीकार करलेनी चाहिये यह विचारकर राजाने उससे कहा कि अच्छा ऐसाही करेंगे राजाकी यह आज्ञा पाकर वह धूर्त्त राजा को एकान्त में ले जाकर पांच सौ अशर्फी रोज देनेलगा इस से सम्पूर्ण नगर निवासी तथा अधिकारी लोग उसे राजा का परम स्नेही जानने लगे एक दिन उस धूर्त्त ने राजा के साथ वार्त्तालाप करते समय एक अधिकारी की ओर कईबार दृष्टिकरी इस से जब वह बाहर निकला तब उस अधिकारी ने उससे पूछा कि तुम मेरे ऊपर दृष्टि क्यों करते थे यह सुनकर उस ने कहा कि राजा तुम्हारे ऊपर बहुत कुपित हैं आज वह मुझसे कहते थे कि इसने सब मेरा देश लूट खाया है इसी से मैं बारंबार तुम्हारी ओर देख रहाथा तुम डरो मत मैं राजा को समझा दूंगा यह सुनकर उस अधिकारीने हजार अशर्फी अपने घरसे लाकर उसेदीं दूसरे दिन उसधूर्त्त ने राजाके पाससे लौट कर उससे कहा कि मैंने राजाको समझा दिया है अब वह तुम्हारे ऊपर कुपित नहीं हैं अब तुम कभी मत डरना जब राजाको कुछ तुम्हारे ऊपर सन्देह होगा तब मैं उनको समझादूंगा इसप्रकार से उस धूर्त्त ने उस से तथा अन्य अधिकारियों से युक्तिपूर्वक इतना धन लिया कि पांचकरोड अशर्फी उस के पास होगईं तब उस ने एकान्त में राजा से कहा कि हे महाराज आप को पांचसौ अशर्फी नित्य देकर भी मैं ने आप की कृपासे पांच करोड अशर्फियां इकट्ठी कर लीनीं आप यह सब अशर्फियां मुझसे ले- लीजिये क्योंकि इनमें मेरा क्याहै यह कहकर उसने सब अशर्फी राजाकी भेटकीं राजाने उसके बहुत आग्रह करनेपर उसकी आधी अशर्फी लेलीं और प्रसन्नहोकर उसे अपना महामंत्री बनालिया इससे वह धूर्त्त महाधनवान् होगया इस प्रकारसे बुद्धिमान्लोग अन्याय से भी धन पैदा करते हैं और फल प्राप्तहोनेपर कुआं खुदवानेवाले के समान दोषरहितहोजातेहैं ११० यह कथा कहकर गोमुखने नरवाहन दत्त से कहा कि अब एक सुन्दरकथा में आपको और सुनाताहूं रत्नाकरनाम नगरमें शत्रुओंका जीत-

नेवाला, परमप्रतापी बुद्धिप्रभनाम राजाथा उसके रत्नरेखानाम रानीमें उत्पन्नहुई हेमप्रभानाम सुन्दरकन्याथी वह पूर्वजन्मकी विद्याधरीथी, और शाप के कारण मनुष्यहुई थी इससे पूर्वजन्म में आकाश में चलनेके संसकारसे वह सदैव झूला झूलाकरतीथी बुद्धिप्रभने, उसेबहुधा निषेध किया कि हेपुत्री बहुधा झूला मत झूलाकरो इसमें गिरनेका वडाडर रहताहै परन्तु उसने नहीं माना इसमें राजाने कुपितहोके उसके एक तमाचामारा इस अनादरसे कुपितहुई वह राजपुत्री विहारके बहानेसे उपवनमें आके सेवकों की दृष्टिबचाके किसी दूर बनमें चलीगई और वहा कुटी बनाके बनके फल मूल खाकर श्रीशिवजी का आराधन करनेलगी राजाबुद्धिप्रभने उसके चलेजाने का समाचार पाके बहुत दुःखीहोके उसे ढूंढवाया परन्तु वह कहीं नहीं मिली कुछ कालमें राजा दुःखके न्यूनहोजानेपर चित्तके बहलानेके लिये शिकार खेलनेको गया और भ्रमण करते २ उसी बनमें पहुँचा जहा हेमप्रभा तपकर रही थी राजाने वहा एक कुटी देखकर किसी मुनिका आश्रम जानके उसके भीतर जाकर अपनी कन्याको तप करतेहुए देखा और वहभी राजाको देखकर उठके उसके पैरों पर गिरपडी राजाने उसे पैरोंपरसे उठाके अपने गले से लगाकर गोदमें बैठाल लिया बहुतकालके पीछे मिलनेके कारण वह दोनों ऐसे रोये कि जिस से बन के मृगभी रोनेसे लगे क्षणभर मे राजा ने सावधान होकर हेमप्रभा से कहा कि हे पुत्री राज्य के सुख को त्यागकर तुम इस बनमें क्या करतीहो बनबासको छोड़कर अपनी माताके पास चलो यह सुनकर हेमप्रभाने उससे कहा कि हे तात भाग्याधीन मेरी बुद्धि ऐसी हुई है नहीं तो मेरी क्या शक्तिहै जो बन में रहकर तपकरूं इससे मैं इस तपके सुखको छोडकर घर नहीं जाऊंगी उसके यह निश्चित वचन सुन कर राजा ने उसके लिये वहीं एक बडा सुन्दर मन्दिर बनवादिया और अपने मन्त्रियों को यह आज्ञा देदी कि बन में हेमप्रभाके पास बहुतसा पकान्न तथा धन नित्य भेजाकरो जिस से वह नित्य अतिथि सत्कार कियाकरे राजाकी आज्ञा से मन्त्री ऐसाही करनेलगे और हेमप्रभा आप फल मूल खाके उस धन तथा पकान्न से अतिथियों का पूजन करनेलगी एकसमय एक बाल ब्रह्मचारिणी संन्यासिनी उस के पास वहा आई उसका पूजनकरके हेमप्रभा ने उसके सन्न्यासलेनेका कारण उससे पूछा उसने कहा कि बाल्यावस्था में मैं अपने पिता के पैर दाबते २ ऊंघ गई इससे पिता ने कुपित होकर यह कहकर कि तू क्यों ऊंघती है मेरे एक लात मारी इसी कारण से मैं क्रोधित होकर सन्न्यासिनी होगई सन्न्यासिनी के यह वचन सुनके हेमप्रभा ने उसे अपनेही समान जानकर अपने पास रख लिया एकसमय प्रातःकाल हेमप्रभाने उस सन्न्यासिनी से कहा कि आज स्वप्नमें मैं एक बड़ीनदी के पारजाकर श्वेत हाथीपर चढके एक ऊंचे से पर्वतपर गई और वहा श्रीशिवजी के दर्शनकरके वीणा बजाके उनके आगे गानकरनेलगी तदनन्तर एक दिव्य पुरुष मेरे पास आया उसे देखकर मैं तुम्हारे साथ आकाश को उडगई इतना देखकर मैं जग पडी और रात्रि भी व्यतीत होगई इस स्वप्नको सुनकर उस सन्न्यासिनी ने कहा कि हे सखी तुम शापके कारण उत्पन्नहुई कोई दिव्य स्त्रीहो अब तुम्हारे शापकी अवधि निकट आगई है यही बात इस स्वप्न से विदितहोती है सखी के यहवचन सुनकर हेमप्रभा बहुत प्रसन्नहुई

इसके उपरान्त श्रीसूर्य्य भगवान् के अच्छेप्रकार उदयहोनेपर घोड़े पर सवारहोके एक राजपुत्र वहां आया और तापसीरूप धारिणी हेमप्रभाको देखकर प्रसन्नहोके उसको वन्दनाकरके उसके पास बैठगया हेमप्रभा ने भी उसका बड़ा सत्कारकरके आसन देकर उससेपूछा कि हे महाभाग आप कौनहैं यहसुन-कर राजपुत्रने कहा कि हे महाभागे प्रतापसेन नाम एक बड़ा पुण्यात्मा राजा है उस ने पुत्रके निमित्त श्रीशिवजी की बड़ी आराधनाकी इससे श्रीशिवजी ने प्रकटहोकर उससे कहा कि तुम्हारे विद्याधरका अवतार एक पुत्रहोगा और वह शाप के क्षीणहोनेपर अपने लोकको चलाजायगा दूसरे पुत्रसे तुम्हारा वंशचलेगा यह कहकर श्रीशिवजी के अन्तर्द्धान होजानेपर राजा ने उठके पारण किया उसी राजाका बड़ा पुत्र लक्ष्मीसेन नाम मैंहूं मेरा सूरसेन नाम एक छोटा भाई है आज शिकार खेलनेको मैं आयाथा परन्तु घोड़ेके वेगसे यहां आगयाहूं यहकहकर उसने हेमप्रभासे उसका सबवृत्तान्त पूछा उसके पूछनेपर हेमप्रभा अपना सबवृत्तान्त कहकर एकाएकी अपने पूर्व्वजन्मका स्मरणकरके अत्यन्त प्रसन्नहोके बोली कि आपके दर्शनसे मुझे अपने पूर्व्वजन्मका स्मरण आगयाहै मैं अपनी इससखी समेत शापसे भ्रष्टहुई विद्याधरीहूं और तुमभी अपने मन्त्रीसमेत शापसे च्युतहुए विद्याधरहो तुम मेरे पतिहो और तुम्हारामन्त्री मेरी सखीका पतिहै अब मेरा और मेरी सखी का शाप क्षीणहोगया इससे मैं अपने लोक को जाती हूं वहीं आपका और मेरा समागमहोगा यह कहके दिव्य रूप धारण करके हेमप्रभा अपनी सखी समेत अपने लोकको आकाशमार्ग से चली गई इतने में लक्ष्मीसेनका मन्त्री भी लक्ष्मीसेनको ढूंढ़ताहुआ वहीं आया जैसेही लक्ष्मीसेन अपने मन्त्री से हेमप्रभाका वृत्तान्त कहनेलगा वैसेही हेमप्रभाका पिता राजा बुद्धिप्रभ हेमप्रभा के देखने के लिये वहांआया और हेमप्रभाको वहां न देखकर लक्ष्मीसेन से पूछनेलगा कि वह कहांगई तब लक्ष्मीसेनने जो कुछ देखाथा वह सब उससे कहदिया यहसुनके बुद्धि-प्रभके बहुत उदासीन होनेपर मन्त्री समेत लक्ष्मीसेन अपने पूर्व्वजन्मका स्मरण करके आकाशमार्ग से अपने लोकको चलागया और वहां से हेमप्रभा को साथलेकर उसी वनमें खड़ेहुए बुद्धिप्रभके पास आके उसे समझाकर उसके नगरमें भेज के अपने पिता प्रतापसेनके पासगया और वहां अपने छोटे भाई सूरसेनको राज्य दिलवाकर पितासे आज्ञालेकर फिर हेमप्रभा समेत अपनेही लोक को चलागया और वहां हेमप्रभा तथा अपने मित्रोंसमेत विद्याधरों के ऐश्वर्य्योंका सुखभोगनेलगा इसप्रकार गोमुख से कथाओं को सुनकर शक्तियशाके लिये उत्कण्ठितभी नरवाहनदत्त ने क्षण के समान रात्रि व्यतीत करदी इसरीतिसे एक मास व्यतीतकरके विवाहके दिन वत्सराज उदयन के पास बैठेहुए नरवाहनदत्त ने आकाशसे उतरतेहुए विद्याधरों को देखा उनमें अपनी कन्या शक्तियशाको लियेहुए विद्याधरों के स्वामी स्फटिकयशाको देखकर नरवाहनदत्तने तथा वत्सराजने उसका बड़ा सत्कारकिया स्फटिकयशाने भी अतिथि सत्कारको ग्रहणकरके अपनी सिद्धि के प्रभावसे वहीं वेदी उत्पन्नकरके बहुत से दिव्यरत्नों समेत अपनी शक्तियशा कन्या विधिपूर्व्वक संकल्पकरके नरवाहनदत्तको देदी उस शक्तियशाको पा-कर नरवाहनदत्त ऐसा शोभितहुआ कि जैसे सूर्य्यकी कान्तिको पाकर कमल शोभितहोता है अपनी

नेवाला, परमप्रतापी, बुद्धिप्रभनाम, राजाथा उसके रत्नरेखानाम रानीसे उत्पन्नहुई हेमप्रभानाम सुन्दरक न्याथी, वह पूर्वजन्मकी विद्याधरीथी, और शाप के कारण मनुष्यहुई थी इससे, पूर्वजन्म में आकाश में चलनेके संस्कारसे वह सदैव झूला झूलाकरतीथी बुद्धिप्रभने उसेबहुधा निषेध किया कि हेपुत्री बहुधा झूला मत झूलाकरो इसमें गिरनेका बडाडर रहताहै, परन्तु उसने नहीं माना इससे राजाने कुपितहोके उसके एक तमाचामारा इस अनादरसे कुपितहुई वह राजपुत्री विहारके बहानेसे उपवनमें जाके सेवकों की दृष्टिबचाके किसी दूर वनमें चलीगई और वहां कुटी बनाके वनके फल मूल खाकर श्रीशिवजी का आराधन करनेलगी राजाबुद्धिप्रभने उसके चलेजाने का समाचार पाके बहुत दुःखीहोके उसे ढुंढवाया परन्तु वह कहीं नहीं मिली कुछ कालमें राजा दुःखके न्यूनहोजानेपर चित्तके बहलानेके लिये शिकार खेलनेको गया और भ्रमण करते २ उसी वनमें पहुँचा जहां हेमप्रभा तपकर रही थी राजाने वहां एक कुटी देखकर, किसी मुनिका आश्रम जानके उसके भीतर जाकर अपनी कन्याको तप करतेहुए देखा और वहभी राजाको देखकर उठके उसके पैरों पर गिरपडी राजाने उसे पैरोंपरसे उठाके अपने गले से लगाकर गोदमें बैठाल लिया बहुतकालके पीछे मिलनेके कारण वह दोनों ऐसे रोये कि जिस से वन के मृगभी रोनेसे लगे क्षणभर मे राजा ने सावधान होकर हेमप्रभा से कहा कि हे पुत्री राज्य के सुख को त्यागकर तुम इस वनमें क्या करतीहो वनबासको छोड़कर अपनी माताके पास चलो यह सुनकर हेमप्रभाने उससे कहा कि हे तात भाग्याधीन मेरी बुद्धि ऐसी हुई है नहीं तो मेरी क्या शक्तिहै जो वन में रहकर तपकरूं इससे मैं इस तपके सुखको छोड़कर घर नहीं जाऊंगी उसके यह निश्चित वचन सुन कर राजा ने उसके लिये वहीं एक बडा सुन्दर मन्दिर बनवादिया और अपने मन्त्रियों को यह आज्ञा देदी कि वन में हेमप्रभाके पास बहुतसा पकान्न तथा धन नित्य भेजाकरो जिस से वह नित्य अतिथि सत्कार कियाकरे राजाकी आज्ञा से मन्त्री ऐसाही करनेलगे और हेमप्रभा आप फल मूल खाके वह धन तथा पकान्न से अतिथियों का पूजन करनेलगी, एकसमय एक बाल ब्रह्मचारिणी संन्यासिनी उस के पास वहां आई उसका पूजनकरके हेमप्रभा ने उसके सन्यासलेनेका कारण उससे पूछा उसने कहा कि बाल्यावस्था में मैं अपने पिता के पैर दाबते २ ऊँघ गई इससे पिता ने कुपित होकर यह कहकर कि तू क्यों ऊँघती है मेरे एक लात मारी इसी कारण से मैं क्रोधित होकर सन्यासिनी होगई सन्या सिनी के यह वचन सुनके हेमप्रभा ने उसे अपनेही समान जानकर अपने पास रख लिया एकसमय प्रातःकाल हेमप्रभाने उस सन्यासिनी से कहा कि आज स्वप्नमें मैं एक बड़ीनदी के पारजाकर श्वेत हाथीपर चढके एक ऊंचे से पर्वतपर गई और वहां श्रीशिवजी के दर्शनकरके वीणा बजाके उन के आगे गानकरनेलगी तदनन्तर एक दिव्य पुरुष मेरे पास आया उसे देखकर मैं तुम्हारे साथ आकाश को उडगई इतना देखकर मैं जग पडी और रात्रि भी व्यतीत होगई इस स्वप्नको सुनकर उस संन्या सिनी ने कहा कि हे सखी तुम शापके कारण उत्पन्नहुई कोई दिव्य स्त्रीहो अब तुम्हारे शापकी अवधि निकट आगई है यही बात इस स्वप्न से विदितहोती है सखी के यहवचन सुनकर हेमप्रभा बहुत प्रसन्नहुई

इसके उपरान्त श्रीसूर्य्य भगवान् के अच्छेप्रकार उदयहोनेपर घोड़े पर सवारहोके एक राजपुत्र वहा आया और तापसीरूप धारिणी हेमप्रभा को देखकर प्रसन्नहोके उसको वन्दनाकरके उसके पास बैठगया हेमप्रभा ने भी उसका बडा सत्कारकरके आसन देकर उससेपूछा कि हे महाभाग आप कौनहैं यहसुनकर राजपुत्रने कहा कि हे महाभागे प्रतापसेन नाम एक बडा पुण्यात्मा राजा है उस ने पुत्रके निमित्त श्रीशिवजी की बडी आराधनाकी इससे श्रीशिवजी ने प्रकटहोकर उससे कहा कि तुम्हारे विद्याधरका अवतार एक पुत्रहोगा और वह शाप के क्षीणहोनेपर अपने लोकको चलाजायगा दूसरे पुत्रसे तुम्हारा वंशचलेगा यह कहकर श्रीशिवजी के अन्तर्द्धान होजानेपर राजा ने उठके पारणकिया उसी राजाका बडा पुत्र लक्ष्मीसेन नाम मैंहूं मेरा सूरसेन नाम एक छोटा भाई है आज शिकार खेलनेको मैं आयाथा परन्तु घोडेके वेगसे यहा आगयाहूं यहकहकर उसने हेमप्रभासे उसका सबवृत्तान्त पूछा उसके पूछनेपर हेमप्रभा अपना सबवृत्तान्त कहकर एकाएकी अपने पूर्व्वजन्मका स्मरणकरके अत्यन्त प्रसन्नहोके बोली कि आपके दर्शनसे मुझे अपने पूर्व्वजन्मका स्मरण आगयाहै मैं अपनी इससखी समेत शापसे भ्रष्टहुई विद्याधरीहूं और तुमभी अपने मन्त्रीसमेत शापसे च्युतहुए विद्याधरहो तुम मेरे पतिहो और तुम्हारामन्त्री मेरी सखीका पतिहै अब मेरा और मेरी सखी का शाप क्षीणहोगया इससे मैं अपने लोक को जाती हूं वहीं आपका और मेरा समागमहोगा यह कहके दिव्य रूप धारण करके हेमप्रभा अपनी सखी समेत अपने लोकको आकाशमार्ग से चली गई इतने में लक्ष्मीसेनका मन्त्री भी लक्ष्मीसेनको ढूंढ़ताहुआ वहीं आया जैसेही लक्ष्मीसेन अपने मन्त्री से हेमप्रभाका वृत्तान्त कहनेलगा वैसेही हेमप्रभाका पिता राजा बुद्धिप्रभ हेमप्रभा के देखने के लिये वहाआया और हेमप्रभाको वहा न देखकर लक्ष्मीसेन से पूछनेलगा कि वह कहागई तब लक्ष्मीसेनने जो कुछ देखाथा वह सब उससे कहदिया यहसुनके बुद्धिप्रभके बहुत उदासीन होनेपर मन्त्री समेत लक्ष्मीसेन अपने पूर्व्वजन्मका स्मरण करके आकाशमार्ग से अपने लोकको चलागया और वहा से हेमप्रभा को सायलेकर उसी वनमें खडेहुए बुद्धिप्रभके पास आके उसे समझाकर उसके नगरमें भेज के अपने पिता प्रतापसेनके पासगया और वहा अपने छोटे भाई सूरसेनको राज्य दिलवाकर पितासे आज्ञालेकर फिर हेमप्रभा समेत अपनेही लोक को चलागया और वहा हेमप्रभा तथा अपने मित्रोंसमेत विद्याधरों के ऐश्वर्य्योंका सुखभोगनेलगा इसप्रकार गोमुख से कथाओं को सुनकर शक्तियशाके लिये उत्कण्ठितभी नरवाहनदत्त ने क्षण के समान रात्रि व्यतीत करदी इस रीतिसे एक मास व्यतीतकरके विवाहके दिन वत्सराज उदयन के पास बैठेहुए नरवाहनदत्त ने आकाशसे उतरतेहुए विद्याधरों को देखा उनमें अपनी कन्या शक्तियशाको लियेहुए विद्याधरों के स्वामी स्फटिकयशाको देखकर नरवाहनदत्तने तथा वत्सराजने उसका बड़ा सत्कारकिया स्फटिकयशाने भी अतिथि सत्कारको ग्रहणकरके अपनी सिद्धि के प्रभावसे वहीं वेदी उत्पन्नकरके बहुत से दिव्यरत्नों समेत अपनी शक्तियशा कन्या विधिपूर्व्वक सङ्कल्पकरके नरवाहनदत्तको देदी उस शक्तियशाको पाकर नरवाहनदत्त ऐसा शोभितहुआ कि जैसे सूर्य्यकी कान्तिको पाकर कमल शोभितहोता है अपनी

नेवाला, परमप्रतापी, बुद्धिप्रभनाम, राजाथा उसके रत्नरेखानाम रानीमें उत्पन्नहुई हेमप्रभानाम सुन्दरक-न्याथी, वह पूर्वजन्मकी विद्याधरीथी, और शाप के कारण मनुष्यहुई थी इससे पूर्वजन्म में आकाश में चलनेके संसकारसे वह सदैव झूला झूलाकरतीथी बुद्धिप्रभने उसेवहुधा निषेध किया कि हेपुत्री बहुधा झूला मत झूलाकरो इसमें गिरनेका बड़ाडर रहताहै परन्तु उसने नहीं माना इसमें राजाने कुपितहोके उसके एक तमाचामारा इस अनादरसे कुपितहुई वह राजपुत्री विहारके बहानेसे उपवनमें जाके सेवकों की दृष्टिबचाके किसी दूर बनमें चलीगई और वहा कुटी बनाके बनके फल मूल खाकर श्रीशिवजी का आराधन करनेलगी राजाबुद्धिप्रभने उसके चलेजाने का समाचार पाके बहुत दुखीहोके उसें ढुंढवाया परन्तु वह कहीं नहीं मिली कुछ कालमें राजा दुःखके न्यूनहोजानेपर चित्तके बहलानेके लिये शिकार खेलनेको गया और भ्रमण करते २ उसी बनमें पहुँचा जहा हेमप्रभा तपकर रही थी राजाने वहा एक कुटी देखकर किसी मुनिका आश्रम जानके उसके भीतर जाकर अपनी कन्याको तप करतेहुए देखा और वहभी राजाको देखकर उठके उसके पैरों पर गिरपड़ी राजाने उसे पैरोंपरसे उठाके अपने गले से लगाकर गोदमें बैठाल लिया बहुतकालके पीछे मिलनेके कारण वह दोनों ऐसे रोये कि जिस से बन के मृगभी रोनेसे लगे क्षणभर में राजा ने सावधान होकर हेमप्रभा से कहा कि हे पुत्री राज्य के सुख को त्यागकर तुम इस बनमें क्या करतीहो बनबासको छोड़कर अपनी माताके पास चलो यह सुनकर हेमप्रभाने उससे कहा कि हे तात भाग्याधीन मेरी बुद्धि ऐसी हुई है नहीं तो मेरी क्या शक्तिहै जो बन में रहकर तपकरू इससे मैं इस तपके सुखको छोड़कर घर नहीं जाऊंगी उसके यह निश्चित वचन सुन-कर राजा ने उसके लिये वहीं एक बड़ा सुन्दर मन्दिर बनवादिया और अपने मन्त्रियों को यह आज्ञा देदी कि बन में हेमप्रभाके पास बहुतसा पक्वान्न तथा धन नित्य भेजाकरो जिस से वह नित्य अतिथि सत्कार कियाकरे राजाकी आज्ञा से मन्त्री ऐसाही करनेलगे और हेमप्रभा आप फल मूल खाके वस धन तथा पक्वान्न से अतिथियों का पूजन करनेलगी एकसमय एक बाल ब्रह्मचारिणी संन्यासिनी उस के पास वहा आई उसका पूजनकरके हेमप्रभा ने उसके सन्यासलेनेका कारण उससे पूछा उसने कहा कि बाल्यावस्था में मैं अपने पिता के पैर दाबते २ ऊँघ गई इससे पिता ने कुपित होकर यह कहकर कि तू क्यों ऊँघती है मेरे एक लात मारी इसी कारण से मैं क्रोधित होकर सन्यासिनी होगई सन्या सिनी के यह वचन सुनके हेमप्रभा ने उसे अपनेही समान जानकर अपने पास रख लिया एक समय प्रातःकाल हेमप्रभाने उस सन्यासिनी से कहा कि आज स्वप्नमें मैं एक बड़ीनदी के पारजाकर श्वेत हाथीपर चढके एक ऊंचे से पर्व्वतपर गई और वहा श्रीशिवजी के दर्शनकरके बीणा बजाके उन के आगे गानकरनेलगी तदनन्तर एक दिव्य पुरुष मेरे पास आया उसे देखकर मैं तुम्हारे साथ आकाश को उडगई इतना देखकर मैं जग पड़ी और रात्रि भी व्यतीत होगई इस स्वप्नको सुनकर उस संन्या-सिनी ने कहा कि हे सखी तुम शापके कारण उत्पन्नहुई कोई दिव्य स्त्रीहो अब तुम्हारे शापकी अवधि निकट आगई है यही बात इस स्वप्न से विदितहोती है सखी के यह वचन सुनकर हेमप्रभा बहुत प्रसन्नहुई

कि उसे रात्रिभर निद्रा नहीं आई दूसरे दिन रुचिरदेवकी हथिनीपर चढके नरवाहनदत्तने उसके वेग से पोतक के दोनो घोडे जीतलिये इससे वह दोनों घोडे रुचिरदेव को मिलगये, जैसेही उन घोडों को जीतकर नरवाहनदत्त रुचिरदेव के मन्दिर में जानेलगा वैसेही वत्सराज के भेजेहुए दूत ने पहुँच कर प्रणाम करके उससे कहा कि हे युवराज परिजनों के द्वारा महाराज उदयनने आपका यहा आना सुनकर मुझे आपके पास भेजाहै और यह कहाहै कि मुझसे विना पूछेही तुम उपवन मे इतनी दूर क्यों चलेआये हो मुझे वडा सन्देह होरहाहै इससे तुम शीघ्रही लौट आओ उस दूतके यह वचन सुनकर नरवाहनदत्त जयेन्द्रसेनाका ध्यान करके अत्यन्त सन्देह में पड़गया इतने में एक अत्यन्त प्रसन्न वैश्य दूरहीसे उसे प्रणाम करके निकट आकर बोला कि हे वीर तुम्हारी जयहोय हे पुष्पोंके धनुष से रहित कामदेव तुम्हारी जयहोय हे विद्याधरोंके भावी चक्रवर्त्ती आपकी जयहोय आप इस थोडीसी अवस्था मेंही अपने शत्रुओंको भयकारी होरहेहो आप थोडेही कालमें सम्पूर्ण विद्याधरोंको जीतकर उनके चक्रवर्त्ती होगे इसप्रकार स्तुति करतेहुए उस वैश्यका वडा सत्कार करके नरवाहनदत्तने उससे पूछा कि तुम कौनहो यह सुनकर उसने कहा कि पृथ्वीकी आभूषणरूप लपानाम नगरी मे कुसुमसार नाम एक वडा धर्मात्मा धनवान् वैश्यथा श्रीशिवजी की आराधनासे उत्पन्नहुआ उसी कुसुमसार वैश्यका चन्द्रसार नाम में पुत्रहू एक समय अपने वहुत से मित्रों के साथ मैं किसी देवमन्दिरमें उत्सव देखने के लिये गया वहा वहुतसे धनवानोंको दानकरते देखके मुझेदान करनेके निमित्त धनके उपार्जन करनेकी इच्छाहुई और अपने पिताके वहुतसे धनसे भी असन्तुष्ट होकर मैं जहाजपर चढके द्वीपान्तरको चला भाग्यके समान अनुकूल वायुसे प्रेरणा कियागया वहजहाज थोडेही दिनोंमें एकद्वीप मे पहुचगया वहाँ मुझे रत्नोंका वहुत वडा व्यवहार करतेदेखकर राजाने लोभसे मेरा सवधनलेकर मुझे कैदखानेमें डलवादिया वहाँ प्रेतोंके समान वहुत पापी कैदियोंके साथ मैंने कुछ कालतक नरककासा दुःख भोगा इतनेमें मेरे कुलके जाननेवाले वहीं के वसनेवाले एक वडेधनवान् वैश्यने मेरे लिये राजा से जाकर कहा कि हे स्वामी यह लम्पानगरी के निवासी महाधनवान् वैश्यका पुत्रहै इससे आप इस निरपराधी को छोडदीजिये नहीं तो आपका वडा अपयश होगा उस वैश्यके इसप्रकार समझाने से राजा ने वन्धनसे छुटवा के मुझे अपने पास बुलवाकर वडा आदर करके मेरा सवधन देदिया तव उस राजा की कृपासे और उस मित्रवैश्यके आश्रयसे सुखपूर्वक रहकर मैं वहाँ वडे २ व्यवहार करनेलगा एक समय वसन्तोत्सवकी यात्रा में मैंने शिखरनाम वैश्यकी अत्यन्त रूपवती कन्या देखी कामदेव के अभिमान के समुद्रकी लहरके समान उसे देखकर मेरा चित्त ऐसा चलायमान हुआ कि मैंने आप जाकर शिखर से कहा कि यह कन्या आप मुझे देदीजिये मेरे इस वचनको सुनके शिखर ने क्षणभर शोचकर यह कहा कि मैं इस कन्याको किसी विशेष कारण से अपने आप तो नहीं देसक्ताहू इससे सिंहलद्वीप में इसके मानामह के यहाँ मैं इसे भेजदेताहू वहाँ जाकर तुम उनसे अपनी प्रार्थना करके इसके साथ विवाह करना मैं उनके पास ऐसा सन्देशा भेजदूगा जिससे तुम्हारा मनोरथ सिद्ध होजा-

कन्याका विवाहकरके स्फटिकयशाके चलेजानेपर नरवाहनदत्त कौशाम्बीपुरी मे शक्तियशासमेत सुख पूर्व्वक रहा।१६३॥ इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशक्तियशोलम्बकेदशमस्तरंगः १०॥

शक्तियशानाम दशमो लम्बक समाप्त हुआ॥

वेलानामएकादशोलम्बकः॥

नमत शेषविघ्नौघ वारणं वारणाननं॥
कारणं सर्वसिद्धीनां दुरितार्णवतारणं १॥

इसप्रकार शक्तियशा को पाकर मदनमञ्चुका आदिक सम्पूर्ण रानियों के साथ विहार करताहुआ नरवाहनदत्त कौशाम्बीपुरीमें सुखपूर्वक रहनेलगा एकसमय उद्यानमें गयेहुए नरवाहनदत्त के पास दो परदेशी राजपुत्रआये अतिथि सत्कार ग्रहणकरके उनमें से एक नरवाहनदत्तसे बोला कि हे महाभाग वैशाखनामपुर के राजाकेपुत्र हमदोनों वैमात्रभाई हैं मेरानाम रुचिरदेव और इसकानाम पोतकहे मेरे पास एक जीविनीनाम हथिनी है और इसकेपास दो घोडे हैं इसी निमित्त मेरा और इसका विवाद पडा है अर्थात् मैं कहता हू कि हथिनी अधिक वेगवती है और यह कहता है कि घोडे अधिक वेगवाले हैं जो यह जीतेगा तो मैं अपनी हथिनी इसे देदूगा और जो मैं जीतूगा तो यह अपने दोनों घोडे मुझे देदेगा यही हमदोनों का नियम है उनके वेगका भेद जाननेकेलिये आपके सिवाय और कोई समर्थ नहीं है इससे आप हमारे यहा चलकर उनकी परीक्षा कीजिये हम बहुत दूरसे आपकेपास इसी निमित्त आये हैं रुचिरदेवके इन वचनोंको स्वीकारकरके नरवाहनदत्त उन्हीं के बडे वेगवान् रथपर चढके वैशाखपुरको गया वहा उसे देखकर पुरकी स्त्रियोंने कहा कि क्या यह रतिकेबिना नवीन कामहै अथवा जल में चलनेवाला दूसरा कलंकरहित चन्द्रमाहै अथवा ब्रह्माने सम्पूर्ण सतीस्त्रियोंके चित्त चलायमान करने के निमित्त कामदेव का यह पुरुषरूप बाण बनाया है इसप्रकार पुरकी स्त्रियोंसे वर्णन कियागया नरवाहनदत्त उसपुरके कामदेवके मन्दिरमें प्रथमगया और वहा कामदेवको प्रणामकरके क्षणभर मार्गके श्रमको दूर करके निकटवर्त्ती रुचिरदेव के मन्दिर में गया श्रेष्ठ घोडे तथा हाथियों से युक्त अत्यन्त शोभायमान उस मन्दिरको देखकर अत्यन्त प्रसन्नहुए नरवाहनदत्त ने रुचिरदेव से कियेहुए सम्पूर्ण सत्कारों को ग्रहण करके रुचिरदेवकी बिना व्याहीहुई अत्यन्त रूपवती बहिन देखी उसे देखकर नरवाहनदत्त का चित्त उसपर ऐसा अनुरक्त हुआ कि वह अपने बान्धवों के विरह का क्लेश भूलगया और उस कन्या ने भी प्रेमपूर्वक फूलेहुए प्रफुल्लित नीलकमलों की माला के समान अपनी दृष्टि से उसका स्वयम्बर किया जयेन्द्रसेना नाम उस कन्याको देखकर नरवाहनदत्त ऐसा कामसे पीडित हुआ

कि उसे रात्रिभर निद्रा नहीं आई दूसरे दिन रुचिरदेवकी हथिनीपर चढके नरवाहनदत्तने उसके वेग से पोतक के दोनों घोडे जीतलिये इससे वह दोनो घोडे रुचिरदेव को मिलगये, जैसेही उन घोडों को जीतकर नरवाहनदत्त रुचिरदेव के मन्दिर में जानेलगा वैसेही वत्सराज के भेजेहुए दूत ने पहुँच कर प्रणाम करके उससे कहा कि हे युवराज परिजनों के द्वारा महाराज उदयन्ने आपका यहा आना सुनकर मुझे आपके पास भेजाहै और यह कहाहै कि मुझसे विना पूछेही तुम उपवन मे इतनी दूर क्यों चलेआये हो मुझे वडा सन्देह होरहाहै इससे तुम शीघ्रही लौट आओ उस दूतके यह वचन सुनकर नरवाहनदत्त जयेन्द्रसेनाका ध्यान करके अत्यन्त सन्देह में पडगया इतने में एक अत्यन्त प्रसन्न वैश्य दूरहीसे उसे प्रणाम करके निकट आकर वोला कि हे वीर तुम्हारी जयहोय हे पुष्पोंके धनुप से रहित कामदेव तुम्हारी जयहोय हे विद्याधरोंके भारी चक्रवर्त्ती आपकी जयहोय आप इस थोडीसी अवस्था मेंही अपने शत्रुओंको भयकारी होरहेहो आप थोडेही कालमें सम्पूर्ण विद्याधरोंको जीतकर उनके चक्रवर्त्ती होगे इसप्रकार स्तुति करतेहुए उस वैश्यका वडा सत्कार करके नरवाहनदत्तने उससे पूछा कि तुम कौनहो यहसुनकर उसने कहा कि पृथ्वीकी आभूषणरूप लपानाम नगरी में कुसुमसार नाम एक वडा धर्मात्मा धनवान् वैश्यथा श्रीशिवजी की आराधनासे उत्पन्नहुआ उसी कुसुमसार वैश्यका चन्द्रसार नाम मै पुत्रहूं एक समय अपने वहुत से मित्रों के साथ मै किसी देवमन्दिरमें उत्सव देखने के लिये गया वहा वहुतसे धनवानोंको दान करते देखके मुझेदान करनेके निमित्त धनके उपार्जन करनेकी इच्छाहुई और अपने पिताके वहुतसे धनसे भी असन्तुष्ट होकर मै जहाजपर चढके द्वीपान्तरको चला भाग्यके समान अनुकूल वायुसे प्रेरणा कियागया वहजहाज थोडेही दिनोंमें एकद्वीप में पहुचगया वहाँ मुझे रत्नोंका वहुत वडा व्यवहार करतेदेखकर राजाने लोभसे मेरा सवधनलेकर मुझे कैदखानेमें डलवादिया वहाँ प्रेतोंके समान वहुत पापी कैदियोंके साथ मैने कुछ कालतक नरककासा दुःख भोगा इतनेमें मेरे कुलके जाननेवाले वहीं के वसनेवाले एक वडेधनवान् वैश्यने मेरे लिये राजा से जाकर कहा कि हे स्वामी यह लम्पानगरी के निवासी महाधनवान् वैश्यका पुत्रहै इससे आप इस निरपराधी को छोडदीजिये नहीं तो आपका वडा अपयश होगा उस वैश्यके इसप्रकार समझाने से राजा ने वन्धनसे छुटवा के मुझे अपने पास वुलवाकर वडा आदर करके मेरा सवधन देदिया तव उस राजा की कृपासे और उस मित्रवैश्यके आश्रयसे सुखपूर्वक रहकर मै वहाँ वडे २ व्यवहार करनेलगा एक समय वसन्तोत्सवकी यात्रा में मैने शिखरनाम वैश्यकी अत्यन्त रूपवती कन्या देखी कामदेव के अभिमान के समुद्रकी लहरके समान उसे देखकर मेरा चित्त ऐसा चलायमान हुआ कि मैने आप जाकर शिखर से कहा कि यह कन्या आप मुझे देदीजिये मेरे इस वचनको सुनके शिखर ने क्षणभर शोचकर यह कहा कि मै इस कन्याको किसी विशेष कारण से अपने आप तो नहीं देसकताहूं इससे सिंहलद्वीप में इसके मातामह के यहाँ मै इसे भेजदेताहूं वहाँ जाकर तुम उनसे अपनी प्रार्थना करके इसके साथ विवाह करना मैं उनके पास ऐसा सन्देशा भेजदूंगा जिससे तुम्हारा मनोरथ सिद्ध होजा-

यगा शिखरके यह वचन सुनकर मैं अपने घरको चलाआया और दूसरे दिन शिखरने अपनी कन्या को जहाजपर चढाके सिंहलद्वीपको भेजा ५३ तदनन्तर जब मैं सिंहलद्वीप के जाने को उद्यत हुआ तो यह घोर समाचार सुनाईदिया कि शिखर वैश्यकी कन्या जिस जहाजपर बैठकर गईथी वह जहाज डूबगया और उस जहाज का कोई भी मनुष्य नहीं बचा इस समाचाररूपी वायु से मैं कम्पित होकर शोकरूपी समुद्र मे डूबनेलगा फिर वृद्धलोगों के बहुत समझाने से चित्तमे ढाढस बांधकर मैं सिंहल द्वीपके जाने में उद्यतहुआ और अपना सबधन लेकर जहाजपर चढके समुद्रमे चला कुछदूर चलकर अकस्मात् महाघोर मेघोंसे आकाश आच्छादित होगया घोर मेह बरसनेलगा और प्रचडवायु चलने लगी इससे मेरा जहाज डूबगया जहाजके सम्पूर्ण परिकर समेत डूब जानेपर एक बडाभारी काष्ठ मुझे मिला वह काष्ठ क्याथा मानों ब्रह्मा ने मुझे निरवलम्ब देखकर सहारे के लिये अपनी भुजा फैलाई थी उसीपर चढके मैं धीरे२ समुद्रके तटपर पहुंचा किनारेपर पहुचकर मुझ दीनको एक सुवर्णका टुकडा पडाहुआ मिला उसे मैंने किसी निकटवर्त्ती ग्राममें बेचकर भोजन के पदार्थ तथा दो वस्त्र मोललिये उन वस्त्रों को पहनके और भोजन करके मार्ग को बिना जानेही मैं इधर उधर घूमनेलगा घूमते२ एक स्थानमे मैंने बहुतसेबालूके शिवलिंगदेखे और वहीं एक अत्यन्त स्वरूपवती कन्या श्रीशिवजीकापूजन करतीहुई देखी उसे देखकर मैंने शोचा कि मेरी प्रियाके सदृश यहकौनहै या मेरी प्रियाहीहोय अथवा वह नहीं है क्योंकि मेरे हीनभाग्य ऐसे नहीं हैं इसप्रकार शोचतेहुए मुझको दक्षिण नेत्रके फडकने से निश्चयहुआ कि यह मेरी प्रियाहीहै यह निश्चय करके मैंने उससे पूछा कि हे सुन्दरी महलों में रहनेके योग्य तुम इसवनमें क्यों रहतीहो मेरे यहवचन सुनकर उसने कुछ उत्तर नहींदिया और मैं भी मुनियों के शापके भयसे लताओंकी कुजमें जाकर उसे देखतारहा और वह भी शिवजीका पूजन करके मुझे देखतीहुई कहीं चलीगई उसके चलेजाने पर विरह से अत्यन्त व्याकुल मैं रात्रि में चकवी चकवा के समान दीन होगया इसके उपरान्त क्षणभर में बालब्रह्मचारिणी सूर्य्य के समान तेजोवती तप से कृश शरीरवाली मतगमुनि की दिव्यदृष्टिवाली यमुना नाम कन्या मेरे पास आई और कृपापूर्व्वक मुझसे बोली कि हे चन्द्रसार धैर्य्य धारणकरो और मेरे वचन सुनो कि शिखरनाम जो द्वीपान्तर में महाधनवान् वैश्यहै उसके जब अत्यन्त रूपवती कन्याहुई तो जिनरक्षित नाम एक ज्ञानी भिक्षुक ने उससे कहा कि तुम इस कन्याका स्वय दान न करना उसी भिक्षुकके वचनको मानकर शिखर ने अपनी कन्याको उसके मातामहकेद्वारा तुम्हें देनेकेलिये सिंहलद्वीपको भेजा भाग्यवशसे मार्ग में जहाजके डूब जानेसे वहकन्या समुद्रकी लहरोंकेद्वारा समुद्रके तटपर बहकर आगई इतनेमेमेरे पिता मतगमुनि स्नान करनेको समुद्र के तटपरगये वहा मरीहुईसी उसकन्याको देखकर दया करके अपने आश्रम में लेआये और उसे सावधान करके मुझसे बोले कि हे यमुने इस कन्याकी तुम पालना करो और यह कन्या मुझे समुद्रकी वेला अर्थात् तटपर मिली है इससे इसका वेला नाम है अपने पिताकी यह आज्ञा पा के मैं उसकी पालना करतीरही और उसपर मेरा स्नेह अपनी पुत्री के समान होगया स्नेह के कारण

ब्रह्मचर्य्यसे हटकर मेरा चित्त संसारी बनाजारहाहै उसके नवीन यौवनको देखकर उसके विवाहके निमित्त मेरे चित्तमें सदैव सन्देह लगारहताहै इससे हे चन्द्रसार तुम चलकर उसके साथ विवाहकरो वह तुम्हारी पूर्व्वजन्मकी स्त्री है में ध्यानसे तुम्हारा यहा आगमन जानकर तुमको लिवानेकेलिये आईहू तुम दोनों ने जो महाक्लेश उठायाहै वह अब सफलहोय यह अमृतके समान वचन मुझे सुनाकर भगवती यमुना मुझको अपने पिता मतंगके आश्रममें लेगई और वहा मतंग मुनिसे प्रार्थना करके उसने मेरा विवाह उस वेलाके साथ करवादिया इसप्रकार महाकष्टसे वेलाको पाकर में सुखपूर्व्वक उसके साथ उसी आश्रममें रहनेलगा एकसमय वेलाके साथ तडागमें जलक्रीडा करते २ मेरी छींटें स्नान करनेको आयेहुए मतंगमुनिपर पडगई इससे मतंग मुनिने क्रोधितहोकर मुझे यह शापदिया कि तुम दोनोंका वियोग होगा उस शापको सुनके वेलाने मुनिके चरणोंपर गिरकर बडी प्रार्थनाकी इससे मतंगजीने ध्यानकरके यह शापका अन्तबताया कि हे चन्द्रसार जब विद्याधरोंके भावी चक्रवर्त्ती हथिनीके वेगसे घोडों के जीतनेवाले, महाबली नरवाहनदत्तको तुम देखोगे तब तुम्हारा यह शाप दूरहोगा यह कहके मतंग ऋषि स्नानकरके श्रीविष्णु भगवान्के दर्शनके निमित्त श्वेत द्वीपको चलेगये और यमुनाभी मुझे एकरत्न जटित आम्रका वृक्षदेकर और यह कहकर कि यह वृक्ष एक विद्याधरने श्रीशिवजी से पायाथा उससे बाल्यावस्था मे अपने खेलने को मैने लियाथा अब मै यह तुम्हें देतीहू, श्वेतद्वीपको चलीगई तदनन्तर में वनवासमें रहके महाविकल होकर स्वदेश जानेकेलिये अपनी स्त्रीको लेकर समुद्रके तटपर आया वहा किसी वैश्यके एक जहाजपर मैंने पहले अपनी स्त्रीको चढाया और उसे चढाके जैसेही में चढनेकोहुआ वैसेही वह जहाज वायुकेद्वारा बहुत दूर समुद्र में चलागया प्रियाके बहजाने से मुझे एकाएकी मूर्च्छाआगई इतने में वहा आयेहुए एक तपस्वी मुझे मूर्च्छित देखके कृपापूर्व्वक मेरे ऊपर जल छिडककर मुझे सावधानकर अपने आश्रममें लेगये और वहा मुझसे सब वृत्तान्त पूछकर उन्होने मुझे बहुत धैर्य्यदिया वहा कुछ दिन रहकर जहाज के टूटनेसे किसी प्रकार समुद्र के तटपर आयेहुए एक मित्र वैश्य से मिलकर उसीके साथ अपनी प्रियाको ढूढताहुआ मै अनेक देशोंको उल्लंघन करके इस वैशाखपुरमें आया यहा दूरसेही आपके दर्शन करके मेरा शाप छूटगया और जहाज में नैरयोंके साथ आईहुई मेरीप्रिया वेला मुझे मिलगई आपकी कृपासे यमुना के दियेहुए रत्नमय वृक्षसमेत वेला को पाकर में आपको प्रणाम करनेको आयाहू और आपको प्रणाम करके अपने देशको जाताहू इस प्रकार अपना वृत्तान्त कहके उस चन्द्रसार वैश्यके चलेजानेपर नरवाहनदत्तका प्रभाव देखके अत्यन्त प्रसन्नहुए रुचिरदेव ने अपनी बहिन के साथ उसका विवाहकर दिया और घोडेसमेत हथिनी उसे दे दिया उस नवीन स्त्री घोडे तथा हथिनीको लेकर नरवाहनदत्त अपनी कौशाम्बी नगरी मे आया और वत्सराजसे सबवृत्तान्तकहकर उनको प्रसन्नकरके अपनी मदनमंचुका आदि रानियों समेत सुखपूर्व्वक रहने लगा ११५॥ इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांवेलालम्बकेप्रथमस्तरंग १॥

वेलानामग्यारहवालम्बकसमाप्तहुआ ११॥

यगा शिखरके यह वचन सुनकर मैं अपने घरको चलाआया और दूसरे दिन शिखरने अपनी कन्या को जहाजपर चढाके सिंहलद्वीपको भेजा ५३ तदनन्तर जब मैं सिंहलद्वीप के जाने को उद्यत हुआ तो यह घोर समाचार सुनाईदिया कि शिखर वैश्यकी कन्या जिस जहाजपर बैठकर गईथी वह जहाज डूबगया और उस जहाज का कोई भी मनुष्य नहीं बचा इस समाचाररूपी वायु से मैं कम्पित होकर शोकरूपी समुद्र मे डूबनेलगा फिर वृद्धलोगों के बहुत समझाने से चित्तमे ढाढस बाधकर मैं सिंहल द्वीपके जाने में उद्यतहुआ और अपना सबधन लेकर जहाजपर चढके समुद्रमे चला कुछदूर चलकर अकस्मात् महाघोर मेघोंसे आकाश आच्छादित होगया घोर मेह बरसनेलगा और प्रचडवायु चलने लगी इससे मेरा जहाज डूबगया जहाजके सम्पूर्ण परिकर समेत डूब जानेपर एक बडाभारी काष्ठ मुझे मिला वह काष्ठ क्याथा मानो ब्रह्मा ने मुझे निरवलम्ब देखकर सहारे के लिये अपनी भुजा फैलाई थी उसीपर चढके मैं धीरे२ समुद्रके तटपर पहुचा किनारेपर पहुचकर मुझ दीनको एक सुवर्णका टुकडा पडाहुआ मिला उसे मैंने किसी निकटवर्त्ती ग्राममें बेचकर भोजन के पदार्थ तथा दो वस्त्र मोललिये उन वस्त्रों को पहनके और भोजन करके मार्ग्ग को बिना जानेही मैं इधर उधर घूमनेलगा घूमते२ एक स्थानमे मैंने बहुतसेबालूके शिवलिंगदेखे और वहीं एक अत्यन्त स्वरूपवतीकन्या श्रीशिवजीकापूजन करतीहुई देखी उसे देखकर मैंने शोचा कि मेरी प्रियाके सदृश यहकौनहै या मेरी प्रियाहीहोय अथवा वह नहीं है क्योंकि मेरे हीनभाग्य ऐसे नहीं हैं इसप्रकार शोचतेहुए मुझको दक्षिण नेत्रके फडकने से निश्चयहुआ कि यह मेरी प्रियाहीहै यह निश्चय करके मैंने उससे पूछा कि हे सुन्दरी महलोंमे रहनेके योग्य तुम इसवनमें क्यों रहतीहो मेरे यहवचन सुनकर उसने कुछ उत्तर नहींदिया और मैं भी मुनियों के शापके भयसे लताओंकी कुजमें जाकर उसे देखतारहा और वह भी शिवजीका पूजन करके मुझे देखतीहुई कहीं चलीगई उसके चलेजाने पर विरह से अत्यन्त व्याकुल मैं रात्रि में चकवी चकवा के समान दीन होगया इसके उपरान्त क्षणभरमे बालब्रह्मचारिणी सूर्य्यके समान तेजोवती तप से कृश शरीरवाली मतगमुनि की दिव्यदृष्टिवाली यमुना नाम कन्या मेरे पास आई और कृपापूर्व्वक मुझसे बोली कि हे चन्द्रसार धैर्य्य धारणकरो और मेरे वचन सुनो कि शिखरनाम जो द्वीपान्तर में महाधनवान् वैश्यहै उसके जब अत्यन्त रूपवती कन्याहुई तो जिनरक्षित नाम एक ज्ञानी भिक्षुक ने उससे कहा कि तुम इस कन्याका स्वय दान न करना उसी भिक्षुक्के वचनको मानकर शिखर ने अपनी कन्याको उसके मातामहकेद्वारा तुम्हें देनेकेलिये सिंहलद्वीपको भेजा भाग्यवशसे मार्ग मे जहाजके डूब जानेसे वहकन्या समुद्रकी लहरोंकेद्वारा समुद्रके तटपर बहकर आगई इतनेमेंमेरे पिता मतगमुनि स्नान करनेको समुद्र के तटपरगये वहा मरीहुईसी उसकन्याको देखकर दया करके अपने आश्रम में लेआये और उसे सावधान करके मुझसे बोले कि हे यमुने इस कन्याकी तुम पालना करो और यह कन्या मुझे समुद्रकी वेला अर्थात् तटपर मिली है इससे इसका वेला नाम है अपने पिताकी यह आज्ञा पा-के मैं उसकी पालना करतीरही और उसपर मेरा स्नेह अपनी पुत्री के समान होगया स्नेह के कारण

ब्रह्मचर्य्यसे हटकर मेरा चित्त ससारी वनाजारहाहै उसके नवीन यौवनको देखकर उसके विवाहके निमित्त मेरे चित्तमें सदैव सन्देह लगारहताहै इससे हे चन्द्रसार तुम चलकर उसके साथ विवाहकरो यह तुम्हारी पूर्व्वजन्मकी स्त्री है मैं ध्यानसे तुम्हारा यहा आगमन जानकर तुमको लिवानेकेलिये आईहू तुम दोनों ने जो महाक्लेश उठायाहै वह अव सफलहोय यह अमृतके समान वचन मुझे सुनाकर भगवती यमुना मुझको अपने पिता मतगके आश्रममें लेगई और वहा मतग मुनिसे प्रार्थना करके उसने मेरा विवाह उस वेलाके साथ करवादिया इसप्रकार महाकष्टसे वेलाको पाकर मैं सुखपूर्व्वक उसके साथ उसी आश्रममें रहनेलगा एकसमय वेलाके साथ तडागमें जलक्रीडा करते २ मेरी छींटें स्नान करनेको आयेहुए मतगमुनिपर पडगईं इससे मतग मुनिने क्रोधितहोकर मुझे यह शापदिया कि तुम दोनोंका वियोग होगा उस शापको सुनके वेलाने मुनिके चरणोंपर गिरकर वडी प्रार्थनाकी इससे मतगजीने ध्यानकरके यह शापका अन्तवताया कि हे चन्द्रसार जव विद्याधरोंके भावी चक्रवर्त्ती,हथिनीके वेगसे घोडों के जीतनेवाले, महावली नरवाहनदत्तको तुम देखोगे तव तुम्हारा यह शाप दूरहोगा यह कहके मतग ऋषि स्नानकरके श्रीविष्णु भगवान्के दर्शनके निमित्त श्वेत द्वीपको चलेगये और यमुनाभी मुझे एकरत्न जटित आम्रका वृक्षदेकर और यह कहकर कि यह वृक्ष एक विद्याधरने श्रीशिवजी से पायाथा उसमें वाल्यावस्था में अपने खेलने को मैंने लियाथा अव मैं यह तुम्हें देतीहू, श्वेतद्वीपको चलीगई तदनन्तर मैं वनवासमें रहके महाविकल होकर स्वदेश जानेकेलिये अपनी स्त्रीको लेकर समुद्रके तटपर आया वहा किसी वैश्यके एक जहाजपर मैंने पहले अपनी स्त्रीको चढाया और उसे चढाके जैसेही मैं चढनेकोहुआ वैसेही वह जहाज वायुकेद्वारा वहुत दूर समुद्र में चलागया प्रियाके वहजाने से मुझे एकाएकी मूर्च्छाआगई इतने में वहा आयेहुए एक तपस्वी मुझे मूर्च्छित देखके कृपापूर्व्वक मेरे ऊपर जल छिडककर मुझे सावधानकर अपने आश्रममें लेगये और वहा मुझसे सव वृत्तान्त पूछकर उन्होंने मुझे वहुत धैर्य्यदिया वहा कुछ दिन रहकर जहाज के टूटनेसे किसी प्रकार समुद्र के तटपर आयेहुए एक मित्र वैश्य से मिलकर उसीके साथ अपनी प्रियाको ढूढ़ताहुआ मैं अनेक देशोंको उल्लघन करके इस वैशाखपुरमें आया यहा दूरसेही आपके दर्शन करके मेरा शाप छूटगया और जहाज में वैश्योंके साथ आईहुई मेरीप्रिया वेला मुझे मिलगई आपकी कृपासे यमुना के दियेहुए रत्नमय वृक्षसमेत वेला को पाकर मैं आपको प्रणाम करनेको आयाहू और आपको प्रणाम करके अपने देशको जाताहू इस प्रकार अपना वृत्तान्त कहके उस चन्द्रसार वैश्यके चलेजानेपर नरवाहनदत्तका प्रभाव देखके अत्यन्त प्रसन्नहुए रुचिरदेव ने अपनी वहिन के साथ उसका विवाहकर दिया और घोडेसमेत हथिनी उसे दे दिया उस नवीन स्त्री घोड़े तथा हथिनीको लेकर नरवाहनदत्त अपनी कौशाम्बी नगरी में आया और वत्सराजसे सववृत्तान्तकहकर उनको प्रसन्नकरके अपनी मदनमचुका आदि रानियों समेत सुखपूर्व्वक रहने लगा। १९५॥ इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांवेलालम्वकेप्रथमस्तरङ्ग १॥

वेलानामग्यारहवालम्वकसमाप्तहुआ ११॥

शशांकवतीनामद्वादशोलम्बक ॥

अव्याद्वोविघ्नविध्वंस कीर्त्तिस्तंभमिवोत्क्षिपन् ॥
करंगणपतिक्रीडा लीनभृंगाक्षरावलिम् १ ॥
अरागमपिरागाढ्य रचनाचतुरंपरम् ॥
हरनवनवाश्चर्य्य सर्गचित्रकरन्नुमः २॥
जितंस्मरशरैर्येषु पौष्प्येष्वपिपतात्स्विह ॥
वज्रादीन्यपिजायन्ते कुण्ठितान्येवतद्भृताम् ३॥

इस प्रकारसे अनेक स्त्रियोंको पाकर कौशाम्बीपुरी में सुखपूर्व्वक रहतेहुए नरवाहनदत्तको सम्पूर्ण स्त्रियो मे से रानी मदनमचुका ऐसी अधिक प्रियथी जैसी श्रीकृष्णजी को श्रीरुक्मिणी प्यारीथी एक समय रात्रिमे नरवाहनदत्तने स्वप्नमे देखा कि कोई रूपवती कन्या मुझे आकाशमार्ग से आकर उठाले गई उस स्वप्नको देखकर जब उसकी निद्राखुली तो उसने अपने को एक बडे पर्वत के शिखरपर एक रत्नोंकी शिलापर लेटा देखा और उसी उठालेजानेवाली अत्यन्त रूपवती कन्याको अपने पास खडी हुई देखा उसे देखकर यह जानकर कि यही मुझेलाई है झूठमूठ सोतेहुएके समान बचाकर उसने कहा कि हे प्रिये मदनमचुके तुम कहाँ हो मेरा आलिंगनकरो यह सुनकर उस कन्याने मदनमचुका का रूप धारण करके उसका आलिंगन किया तब नरवाहनदत्तने नेत्रखोल के अपनी प्रियाकीसी आकृति देखके वाहरे तेरे विज्ञान यह कहकर उसे गलेमें लगालिया यह सुनकर उस कन्याने लज्जा छोड के अपना स्वरूप धारण करके नरवाहनदत्तसे कहा कि आप मुझे ग्रहण कीजिये उसकी यह प्रार्थनासुन के नरवाहनदत्तने उससे गान्धर्व विवाह करलिया और उसीके साथ वह रात्रि व्यतीत करके प्रातःकाल युक्तिपूर्व्वक उसका वश जानने के लिये उससे कहा कि हे प्रिये मैं तुम को एक अपूर्व्व कथा सुनाताहूं किसी तपोवनमें ब्रह्मसिद्धिनाम एक मुनि रहते थे उनके आश्रमके निकट किसी खोह में एक वृद्धा शृगाली रहती थी एकदिन उस शृगालीको भोजन के निमित्त निकलीहुई देखकर एक उन्मत्त हाथी उसके मारनेको उद्यतहुआ वह देखकर उस ज्ञानी मुनिने कृपाकरके उस शृगालीको हथिनी बना दिया उस हथिनी को देखकर हाथी वैर रहितहोकर उसपर अनुरक्तहोगया और वहभी मृत्युसे बचगई तदनन्तर उस हथिनी के साथ भ्रमण करताहुआ वह हाथी उसके निमित्त कमल लेनेके लिये एक तडागमें गया और उस तडागकी कीच में फँसकर वज्रसे कटेहुए पक्षवाले पर्व्वतके समान निश्चल होगया उसकी यह दशा देखकर वह हथिनी किसी दूसरे हाथी के साथ चलीगई इतने में उस हाथी की पहली हथिनी उसे ढूंढती २ वहाआई और उसे फँसा देखकर आपभी उसके स्नेहसे उसी कीचमें जाकर फँसगई उस समय उसी मार्ग से अपने शिष्यों समेत आयेहुए ब्रह्मसिद्धिमुनिने कीचमें फँसेहुए

उन दोनोंको देखकर कृपाकरके अपने शिष्योंको महावलदेकर उन दोनोंको उस कीचसे निकलवाया उन्हें निकलवाके मुनिके चलेजानेपर वह दोनों सुखपूर्व्वक वनमें विचरनेलगे इसप्रकारसे हे प्रिये श्रेष्ठ जातिवाले पशु भी अपने स्वामी को तथा मित्रको आपत्तिमें पडाहुआ देखकर छोडते नहीं हैं किन्तु आपत्तिसे निर्द्धारकरतेहैं और हीनजातिमें उत्पन्नहुए चचलजीवों के चित्तमें सत्व तथा स्नेहकालेशभी नहीं होता २० नरवाहनदत्तसे इसकथाको सुनके उसदिव्यस्त्रीने कहा कि आपका कहना ठीकहै इसमें कोई सदेहनहीं है और आपके इसकथाके कहनेका अभिप्रायभी मैंने जानलिया इसमे आपभी मुझसे एककथा सुनिये कान्यकुब्जदेशमें वाहुशक्तिनामराजाका महामान्य सौग्रामोंका स्वामी एकशूरदत्तनाम ब्राह्मणरहताथा उसके वसुमतीनाम पतिव्रतास्त्रीथी उसवसुमतीमें शूरदत्तके वामदत्तनाम अत्यन्तसुशील पुत्र उत्पन्नहुआ वह वामदत्त थोडेहीकालमें सपूर्ण विद्याओंको सीखकर किसी ब्राह्मणकी शशिप्रभा नाम कन्यासे अपना विवाह करके अपने पिताकी आज्ञा पालनकरताहुआ सुखपूर्वक रहनेलगा काल केप्रभावसे शूरदत्तके परलोकवासी होजानेपर वसुमती उसीकेसाथ सतीहोगई इससे वामदत्त वहुतखिन्न होकर अपनी स्त्री समेत गृहस्थीके सपूर्ण काम करनेलगा भाग्यवशसे उसकीस्त्री उसके विनाजानेही कहींसे शाकिनियोंकी सिद्धिपाके पुश्चलीहोगई एकसमय वामदत्त किसी कार्य से राजाके यहा गया वहा उसकेचचाने जाके एकान्तमें उससेकहा कि हेपुत्र हमाराकुल नष्टहोगया क्योंकि मैंने तुम्हारीस्त्री को तुम्हारेही भैंस पालनेवालेके साथ रमणकरतेदेखा यहसुनकर वामदत्त अपने घरमेंआकर खड्गलेकर छुपके वैठरहा रात्रिके समय महिषपाल उसकेयहा आया उसे वहुत उत्तम २ भोजन कराके शशिप्रभा उसीके साथ पलँगपरलेटी यह देखके वामदत्त खड्गलेकर यह कहकर कि अरे पापियो यह क्या करते हो उनके मारनेको दौडा उसे देखकर उसकी स्त्रीने उसके मुखपर धूलडालकर उसेभैंसा वना दिया और लाठियोंसे वहुत पीटकर किसी वैश्यके हाथ वेचडाला वहवैश्य उसपर वहुतसावोझा लादकर गगाजी के तटपर किसी ग्राममें लेगया भैंसे होनेपर भी वामदत्तकी स्मृति नष्ट नहीं हुईथी इससे वहयह शोचकर कि वगलके भीतर घुसीहुई सर्पिणीके समान पुश्चली स्त्रीसे किसनिश्वासित मनुष्यको क्लेश नहीं होता रोया करताथा दैवयोगसे किसी योगिनीने उसे रोते देखकर और वोझेके क्लेशसे उसे वहुत दुर्वल जानके अपने ज्ञानसे उसका सव वृत्तान्त जानकर मन्त्रका जल छिडकके उसको फिर ज्योंका त्यों पुरुष वनादिया और उसे अपने घर लेजाकर कान्तिमतीनाम अपनी कन्याके साथ उसका विवाहकरके थोडीसी मन्त्र पढीहुई सरसों उसेदेदी और कहा कि इनसरसोंको मारकर तुम उस अपनी दुष्ट स्त्रीको घोडी वनादेना उसके वचन सुनकर और उनसरसोंको तथा अपनी नवीन कान्तिमती स्त्रीको साथ लेके वामदत्तने अपने घरमें आकर उस महिषपालको मारके सरसों के प्रभावसे अपनी स्त्री को घोडी वनाके और घुड़साल में वाँधके यह प्रतिज्ञाकी कि प्रतिदिन इसके सातलाठी मारकर भोजन किया करूगा इसप्रकार प्रतिज्ञाकरके कान्तिमतीकेसाथ सुखपूर्व्वक रहनेहुए वामदत्तके घरपर एकसमय एक अतिथि आया जव वहअतिथि भोजन करनेलगा तो वामदत्त भोजन विनाकियेही एकाएकी स्मरण

करके घोडीरूप अपनीस्त्रीके सातलाठी मारने को चलागया और लाठी मारके आकर भोजन करनेलगा तब उसअतिथिने विस्मितहोके उससे पूछा कि तुम भोजन छोडकर एकाएकी कहां चलेगये थे यह सुनकर वामदत्तने अपना सब वृत्तान्त उससे कहदिया उसवृत्तान्तको सुनकर अतिथिने उससे कहा कि जिस तुम्हारी सासने तुमको पशुपनेसे छुटायाहै उसीकी आराधना करके कोई सिद्धि क्यों नहीं प्राप्त करतेहो उस अतिथिका यह उपदेश सुनकर वामदत्तने उस अतिथिको बिदाकरके अकस्मात् आईहुई अपनी सासका बडा सत्कार करके उससे प्रार्थनाकी कि मुझे कोई सिद्धिदो उसकी इस प्रार्थनाको सुनकर योगीश्वरीने उसको और अपनी कान्तिमती कन्याको कालसकर्षिणी नाम विद्यादीनी उस विद्याको पाकर कान्तिमती सहित वामदत्तने श्रीपर्व्वतपर जाकर उस विद्याको सिद्धकिया उसविद्याने सिद्धहोकर उसको एक बडा दिव्यखड्ग दिया खड्गको पातेही वामदत्तने अपनी स्त्री समेत विद्याधर होकर मलयपर्व्वतके रजतकूटनाम शिखरपर अपनी सिद्धिके प्रभावसे एक दिव्यपुर बनाया उसपुरमें रहते हुए उसके एक ललितलोचना नाम कन्या उत्पन्नहुई उस कन्याके उत्पन्न होतेही यह आकाशवाणी हुई कि यह कन्या विद्याधरोंके चक्रवर्त्तीकी स्त्री होगी हे आर्यपुत्र वह ललितलोचना मैंही हूं और मैंही अपनी विद्याके प्रभावसे आपको यहा अपने स्थानमे लाई हू इसप्रकार उसका वृत्तान्त सुनके नरवाहन दत्त उसे विद्याधरी जानके प्रसन्न होकर उसके साथ वहारहा और उसका यह सब वृत्तान्त वत्सराज आदिकोने रत्नप्रभा आदिक उस की विद्याधरी रानियोकी विद्याओंके प्रभावसे जानलिया ७३ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशांकवतीलम्बकेप्रथमस्तरंग १॥

तदनन्तर उस नवीन ललित लोचना स्त्रीकोपाकर नरवाहदत्त मलयाचल पर्व्वतपर पुष्पित वृक्षोंसे शोभितवनोमें उसकेसाथ विहार करनेलगा एकवनमे क्रीडाके निमित्त पुष्प तोडनेकेलिये ललित लोचना के दृष्टि से पृथक् होजानेपर नरवाहनदत्त घूमताहुआ एक निर्मलजलवाले तडागके तटपर पहुँचा वहा उसने यह सोचकर कि जब तक ललितलोचना आवे तब तक मैं स्नानकरलू तडागमें स्नान करलिया और देवताओं का पूजनकरके किसी चन्दनके वृक्षकी छायामें रत्नमय शिलापर बैठकर मन्द २ गमन करतीहुई राजहंसिनी देखी आमके वृक्षोपर बैठीहुई मधुर २ शब्द करनेवाली कोकिलाओ के मनोहर शब्दसुने और मृगियों के चचल नेत्र देखे इससे उसे प्रिया मदनमञ्चुका का स्मरण करके ऐसी कामकी पीडाहुई कि मूर्च्छा आगई इतने मे वहा स्नान करनेको आयेहुए पिशंगजटनाम मुनिने उसे मूर्च्छित देखकर चन्दन का जल उसपर छिडका और जलके छिडकनेसे मूर्च्छासे जगकर प्रणाम करतेहुए नरवाहनदत्त से कहा कि हे पुत्र तुम्हारा अभीष्ट सिद्धहोगा धैर्य्यधारण करो धैर्य्यसेही सब कार्य्य सिद्धहोते है इस विषयपर जो तुमने मृगांकदत्तकी कथा न सुनीहोय तो मेरे आश्रममें चलकर मुझसे सुनों यह कहके वह मुनिस्नानादि करके सम्पूर्ण आह्निकमे निवृत्तहोके नरवाहनदत्तको अपने आश्रममें लेगया और वहा उसे भी तथा आपभी फलखिला खाकर यहकथा कहनेलगा कि तीनों लोकोंमे विख्यात अयोध्या नामी पुरी में अमरदत्तनाम एक बडा प्रतापी राजा था उस राजा के पतिव्रता सुरतप्रभानाम रानी में

उत्पन्नहुआ मृगाङ्कदत्तनाम महागुणवान् पुत्रथा उस मृगाङ्कदत्त के युवा, कुलीन, शूर, स्वामिहितैषी तथा वडे वुद्धिमान् प्रचण्डशक्ति, स्थूलवाहु, विक्रमकेसरी, दृढमुष्टि, मेघवल, भीमपराक्रम, विमलवुद्धि व्याघ्रसेन, गुणाकर और विचित्रकथ नाम दश मन्त्री थे इन दशों मन्त्रियोंसमेत सुखपूर्व्वक रहतेहुए राजपुत्र मृगाङ्कदत्त को अपने सदृश स्त्री नहीं प्राप्तहुई थी एकदिन एकान्तमें भीमपराक्रम नाम मन्त्रीने उससे कहा कि आज मैं रात्रिकेसमयका अपना वृत्तान्त आपको सुनाताहूं आज रात्रिकेसमय महल में सोते २ एकाएकी उठकर मैंने एक सिंहको झपटकर अपने ऊपर आतेहुएदेखा उसे देखकर मैं छुरी हाथ में लेकर उठा इससे वह सिंहभागा और मैं भी उसके पीछे २ दौड़ा भागते २ उस सिंहने नदीके पार जाकर अपनी जीभ मेरी ओरको फैलादी मैंने उसकी उस वहुतवडी जिह्वाको अपनी छुरी से काटके उसी के द्वारा नदीके पारजाकर देखा कि वह सिंह भयङ्कर पुरुषहोगया यह देखकर मैंने उससे पूछा कि तुम कौनहो उसने कहा कि हे वीर मैं वैतालहू तुम्हारे सत्त्व से मैं वहुत प्रसन्नहूं यह सुनकर मैंने उससे कहा कि अच्छा तुम वतलाओ कि मृगाङ्कदत्तकी कौन स्त्री होगी तबउस वैतालनेकहा कि उज्जयिनी नगरी में कर्मसेन नामराजाहै उसके अप्सराओंसे भी अधिक महारूपवती ब्रह्माकी सुन्दरताकी खानरूपी शशाङ्कवतीनाम कन्याहै वही तुम्हारे स्वामीकी स्त्री होगी और उसेपाकर तुम्हारा स्वामी सम्पूर्ण पृथ्वीका राजाहोगा यह कहकर वह वैताल अन्तर्द्धानहोगया औरमैंभी अपने घर चलाआया यही मेरा वृत्तात है ३२ भीमपराक्रमका यह वृत्तान्त सुनकर मृगाङ्कदत्त ने अपने सम्पूर्ण मन्त्रियों को वुलवाकर उन्हें भी यह वृत्तान्त सुनवाकर उनसे कहा कि आज रात्रिको जो मैंने स्वप्न देखाहै उसे सव सुनो आज रात्रिमें स्वप्नदशामें हम तुम सव लोग एकवडे घोर वनमेंगये वहां मार्गके खेदसे सव प्यासेहोकर वडे क्लेश से जलको पाके जैसेही पीनेको तैयार हुए वैसेही शस्त्रधारी पांच पुरुषों ने आकर हम सवको रोंका उन्हें मारकर जैसेही हमने फिर जल पीनाचाहा वैसेही वहां न कहींजलथा न पुरुषथे तव वडेहीक्लेशको प्राप्त हुए हमलोगोंने वृषभपर चढे आतेहुए श्रीशिवजीको देखा शिवजीने हम सवको प्रणाम करते देखकर अपने दक्षिण नेत्रसे एक आंसूकी वूंद पृथ्वीपर गिरादीनी उस वूंदसे महासमुद्र वनगया उस समुद्रमें से एक मोतियोंकी मालापाकर मैंने अपने गलेमें वांधली और अपने सपूर्ण साथियों समेत मनुष्यकी खोपडीसे उस समुद्रका जल पिया इतनादेखकर मेरी निद्रा खुलगई और रात्रिभी व्यतीतहोगई इसस्वप्न को सुनकर विमलवुद्धिनाममन्त्रीने कहा कि हे स्वामी आपधन्यहै जिनपर श्रीशिवजी ऐसी कृपाकरतेहैं आपने जो मोतियोंकी मालापहनकर समुद्रका जलपियाहै उसकायहफलहोगा कि आप शशाङ्कवतीको पाकर सपूर्णपृथ्वीके राजाहूजियेगा और पहलेकी वातोंसे कुछक्लेशभी आपको होगा यहसुनकरमृगाङ्क-दत्तने कहा कि इसस्वप्नका जो कुछफलहै और भीमपराक्रमने जो कुछवैतालसे सुनाहै यद्यपि यहयथार्थ होगा तथापिमैंनातथा कुलके अभिमानी राजा कर्मसेनसे वुद्धिकेवलसे शशाङ्कवतीकी प्राप्तिका उद्योग मैं करूंगा क्योंकि सम्पूर्णवलोंमें वुद्धिहीकावल सवसे श्रेष्ठहै इसविषयपर मैं तुम लोगोंको एक कथा सुनाताहूं मगधदेशमें भद्रवाहुनामएकराजाथा उसके अनन्त वुद्धिमान् मन्त्रगुप्तनाम एक मन्त्रीथा एकसमय

करके घोडीरूप अपनीस्त्रीके सातलाठी मारनेको चलागया और लाठी मारके आकर भोजन करनेलगा तब उसअतिथिने विस्मितहोके उससे पूछा कि तुम भोजन छोडकर एकाएकी कहा चलेगये थे यह सुनकर वामदत्तने अपना सब वृत्तान्त उससे कहदिया उसवृत्तान्तको सुनकर अतिथिने उससे कहा कि जिस तुम्हारी सासने तुमको पशुपनेसे छुटायाहै उसीकी आराधना करके कोई सिद्धि क्यों नहीं प्राप्त करतेहो उस अतिथिका यह उपदेश सुनकर वामदत्तने उस अतिथिको विदाकरके अकस्मात् आईहुई अपनी सासका वडा सत्कार करके उससे प्रार्थनाकी कि मुझे कोई सिद्धिदो उसकी इस प्रार्थनाको सुनकर योगीश्वरीने उसको और अपनी कान्तिमती कन्याको कालसकर्षिणी नाम विद्यादीनी उस विद्याको पाकर कान्तिमती सहित वामदत्तने श्रीपर्व्वतपर जाकर उस विद्याको सिद्धकिया उसविद्याने सिद्धहोकर उसको एक वडा दिव्यखड्ग दिया खड्गको पातेही वामदत्तने अपनी स्त्री समेत विद्याधर होकर मलयपर्व्वतके रजतकूटनाम शिखरपर अपनी सिद्धिके प्रभावसे एक दिव्यपुर बनाया उसपुरमें रहते हुए उसके एक ललितलोचना नाम कन्या उत्पन्नहुई उस कन्याके उत्पन्न होतेही यह आकाशवाणी हुई कि यह कन्या विद्याधरोंके चक्रवर्त्तीकी स्त्री होगी हे आर्यपुत्र वह ललितलोचना मैंही हू और मैंही अपनी विद्याके प्रभावसे आपको यहा अपने स्थानमे लाई हू इसप्रकार उसका वृत्तान्त सुनके नरवाहन दत्त उसे विद्याधरी जानके प्रसन्न होकर उसके साथ वहारहा और उसका यह सब वृत्तान्त वत्सराज आदिकोने रत्नप्रभा आदिक उस की विद्याधरी रानियोंकी विद्याओंके प्रभावसे जानलिया ७३ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायाशशाकवतीलम्बकेप्रथमस्तरग १ ॥

तदनन्तर उस नवीन ललित लोचना स्त्रीकोपाकर नरवाहदत्त मलयाचल पर्व्वतपर पुष्पित वृक्षोंसे शोभितवनोंमें उसकेसाथ विहार करनेलगा एकवनमें क्रीडाके निमित्त पुष्प तोडनेकेलिये ललित लोचना के दृष्टि से पृथक् होजानेपर नरवाहनदत्त घूमताहुआ एक निर्मलजलवाले तडागके तटपर पहुँचा वहा उसने यह शोचकर कि जब तक ललितलोचना आवे तब तक मै स्नानकरलू तडागमें स्नान करलिया और देवताओ का पूजनकरके किसी चन्दनके वृक्षकी छायामें रत्नमय शिलापर बैठकर मन्द २ गमन करतीहुई राजहसिनी देखी आमके वृक्षोंपर बैठीहुई मधुर २ शब्द करनेवाली कोकिलाओ के मनोहर शब्दसुने और मृगियों के चचल नेत्र देखे इससे उसे प्रिया मदनमञ्चुका का स्मरण करके ऐसी कामकी पीडाहुई कि मूर्च्छा आगई इतने मे वहा स्नान करनेको आयेहुए पिशगजटनाम मुनिने उसे मूर्च्छित देखकर चन्दन का जल उसपर छिडका और जलके छिडकनेसे मूर्च्छासे जगकर प्रणामकरतेहुए नरवाहनदत्त से कहा कि हे पुत्र तुम्हारा अभीष्ट सिद्धहोगा धैर्य्यधारणकरो धैर्य्यसेही सब कार्य्य सिद्धहोते है इस विषयपर जो तुमने मृगाकदत्तकी कथा न सुनीहोय तो मेरे आश्रममे चलकर मुझसे सुनो यह कहके वह मुनिस्नानादि करके सम्पूर्ण आह्निकसे निवृत्तहोके नरवाहनदत्तको अपने आश्रममें लेगया और वहा उसेभी तथा आपभी फलखिला खाकर यहकथा कहनेलगा कि तीनों लोकोमे विख्यात अयोध्या नाम पुरी में अमरदत्तनाम एक वडा प्रतापी राजा था उस राजा के पतिव्रता सुरतप्रभानाम रानी मे

उत्पन्नहुआ मृगाङ्कदत्तनाम महागुणवान् पुत्रथा उस मृगाङ्कदत्त के युवा, कुलीन, शूर, स्वामिहितैषी तथा बड़े बुद्धिमान् प्रचण्डशक्ति, स्थूलबाहु, विक्रमकेसरी, दृढमुष्टि, मेघबल, भीमपराक्रम, विमलबुद्धि व्याघ्रसेन, गुणाकर और विचित्रकथ नाम दश मन्त्री थे इन दशों मन्त्रियोंसमेत सुखपूर्वक रहतेहुए राजपुत्र मृगाङ्कदत्त को अपने सदृश स्त्री नहीं प्राप्तहुई थी एकदिन एकान्तमें भीमपराक्रम नाम मन्त्रीने उससे कहा कि आज मैं रात्रिकेसमयका अपना वृत्तान्त आपको सुनाताहूं आज रात्रिकेसमय महल में सोते २ एकाएकी उठकर मैंने एक सिंहको झपटकर अपने ऊपर आतेहुएदेखा उसे देखकर मैं छुरी हाथ में लेकर उठा इससे वह सिंहभागा और मैं भी उसके पीछे २ दौड़ा भागते २ उस सिंहने नदीके पार जाकर अपनी जीभ मेरी ओरको फैलादी मैंने उसकी उस बहुतबड़ी जिह्वाको अपनी छुरी से काटके उसी के द्वारा नदीके पारजाकर देखा कि वह सिंह भयङ्कर पुरुषहोगया यह देखकर मैंने उससे पूछा कि तुम कौनहो उसने कहा कि हे वीर मैं वैतालहूं तुम्हारे सत्त्व से मैं बहुत प्रसन्नहूं यह सुनकर मैंने उससे कहा कि अच्छा तुम बतलाओ कि मृगाङ्कदत्तकी कौन स्त्री होगी तबउस वैतालनेकहा कि उज्जयिनी नगरी में कर्मसेन नामराजाहै उसके अप्सराओंसे भी अधिक महारूपवती ब्रह्माकी सुन्दरताकी खानसी शशाङ्कवतीनाम कन्याहै वही तुम्हारे स्वामीकी स्त्री होगी और उसेपाकर तुम्हारा स्वामी सम्पूर्ण पृथ्वीका राजाहोगा यह कहकर वह वैताल अन्तर्द्धानहोगया और मैंभी अपने घर चलाआया यही मेरा वृत्तान्त है ३२ भीमपराक्रमका यह वृत्तान्त सुनकर मृगाङ्कदत्त ने अपने सम्पूर्ण मन्त्रियों को बुलवाकर उन्हें भी यह वृत्तान्त सुनवाकर उनसे कहा कि आज रात्रिको जो मैंने स्वप्न देखाहै उसे सब सुनो आज रात्रिमें स्वप्नदशामें हम तुम सब लोग एकबड़े घोर वनमेंगये वहां मार्गके खेदसे सब प्यासेहोकर बड़े क्लेश से जलको पाके जैसेही पीनेको तैयार हुए वैसेही शस्त्रधारी पांच पुरुषों ने आकर हम सबको रोंका उन्हें मारकर जैसेही हमने फिर जल पीनाचाहा वैसेही वहां न कहींजलथा न पुरुषथे तब बड़ेहीक्लेशको प्राप्त हुए हमलोगोंने वृषभपर चढ़े आतेहुए श्रीशिवजीको देखा शिवजीने हम सबको प्रणाम करते देखकर अपने दक्षिण नेत्रसे एक आंसूकी बूंद पृथ्वीपर गिरादीनी उस बूंदसे महासमुद्र बनगया उस समुद्रमें मैं एक मोतियोंकी मालापाकर मैंने अपने गलेमें डालली और अपने सम्पूर्ण साथियों समेत मनुष्यकी खोपड़ीसे उस समुद्रका जल पिया इतनादेखकर मेरी निद्रा खुलगई और रात्रिभी व्यतीतहोगई इसस्वप्न को सुनकर विमलबुद्धिनाममन्त्रीने कहा कि हे स्वामी आपधन्यहैं जिनपर श्रीशिवजी ऐसी कृपाकरतेहैं आपने जो मोतियोंकी मालापहनकर समुद्रका जलपियाहै उसकायहफलहोगा कि आप शशाङ्कवतीको पाकर सम्पूर्णपृथ्वीके राजाहूजियेगा और पहलेकी बातोंसे कुछक्लेशभी आपको होगा यहसुनकरमृगाङ्क-दत्तने कहा कि इसस्वप्नका जो कुछफलहै और भीमपराक्रमने जो कुछवैतालसे सुनाहै यद्यपि वह यथार्थ होगा तथापिमैंनानाप्रकार दुर्गके अभिमानी राजा कर्मसेनसे बुद्धिकेबलसे शशाङ्कवतीकी प्राप्तिका उद्योग मैं करूंगा क्योंकि सम्पूर्णबलोंमें बुद्धिहीबल सबसे श्रेष्ठहै इसविषयपर मैं तुम लोगोंको एक कथा सुनाताहूं मगधदेशमें भद्रबाहुनामएकराजाथा उसके अत्यन्त बुद्धिमान् मन्त्रगुप्तनाम एक मन्त्रीथा एकसमय

भद्रवाहुने एकान्तमें अपने मत्रीसे कहा कि काशीके राजा धर्मगोपके जो अनगलीलानाम अत्यन्तसु न्दरीकन्याहै उसे प्रार्थनाकरनेपर भी द्वेषके कारण वह मुझेनहींदेता और भद्रदन्तनाम हाथीके प्रभावसे उसे कोई जीतभी नहीं सक्ता और मैं उस अनगलीलाके विना जी नहींसक्ता इससे तुम अपनी बुद्धि से इस विषयमें कोई उपाय शोचो यह सुनकर मत्रगुप्तने कहा कि हे स्वामी क्या पराक्रमसेही सब कार्य्य सिद्धहोते हैं बुद्धिसे नहीं होते आप किसी प्रकारकी चिन्तामतकरो मैं अपनी बुद्धिके बलसे आपका कार्य्य सिद्धकरूंगा यह कहके वहमत्री दूसरे दिन पाच सात विश्वासित मनुष्यों को साथलेके महाव्रती का वेष बनाकर काशीपुरीकोगया वहा उसके सबसाथी शिष्योंकावेष बनाकेसम्पूर्ण नगरमें कहनेलगे कि यह महासिद्धहै और इस चरचाको सुनकर कुछ लोग उसकेपास आनेभीलगे एकसमय रात्रिमें अ पने कार्य्यकी युक्तिके ढूढनेकेलिये भ्रमणकरतेहुए मत्रीने देखा कि राजाके हाथीवान् की स्त्री तीनचार शस्त्रधारी पुरुषों के साथ जल्दी २ कहीं चलीजारही है यह देखके उसने यह शोचा कि निस्सन्देह यह अपने घरसे निकलकर किसी अन्य पुरुषके यहा जारही है इससे देखना चाहिये कि यह कहा जाती है यह शोचकर वह उसके पीछे २ चुपचाप चलागया और जिसस्थानमें वह गई उस स्थानको दूरसे देखकर लौटआया प्रातःकाल उसने अपने साथियों को युक्ति पूर्व्वक उस राजाके हाथीवान्के मकानपर भेजा उन्होंने वहा जाकर हाथीवान्को अपनी स्त्रीके दुःखसे विषखायेहुए देखकर अपनी विद्यासे उसका विष दूरकरदिया और उससे कहा कि तुम हमारे गुरूके पास चलो वह बडे ज्ञानी हैं तुमको सब बात बतादेंगे यह कहके वह उसे मत्रीके पास लेआये वहा आकर उस हाथीवान्ने उसेप्र णाम करके पूछा कि बताइये मेरी स्त्री सपूर्ण आभूषण लेकर कहा गई है यह सुनकर मत्रीने झूठ मूठ कुछ ध्यानकरके रात्रिके समय जहा वह पुरुष उसकी स्त्री को लेगयेथे वह स्थान उसे बतादिया तबहा थीवान्ने उसको नमस्कारकरके अपने बहुतसे साथियोंको लेजाके उस स्थानको घेर लिया और उन पुरुषोंको मारकर आभूषणों समेत अपनी स्त्री पाई दूसरे दिन हाथीवान्ने मत्रीकेपास आके हाथजोड कर कहा कि आजके दिन आपका मेरे घरमें निमन्त्रणहै यह सुनके मत्रीने कहा कि मैं किसीके घर भोजन नहीं करता और दिनको आहारभी नहीं करता यह सुनकर वहहाथीवान् प्रदोषके समय हाथि योंकी शालामें उसे सब साथियों समेत भोजन करानेके लिये लेगया मत्रीभी एक बासकी पोंगी में मत्रके बलसे एक सर्पको बन्द करके और छुपाके वहा लेगया जब हाथीवान् उसे भोजन कराके चला- गया और वहाके सब लोग सोगये तब उस भद्रदन्तनाम हाथी के कानमें उस सर्पको छोडकर मत्री उसरात्रिको वहीं व्यतीत करके प्रातःकाल अपने मगधदेशको सब साथियों समेत चलाआया इससे वह भद्रदन्त मरगया राजा धर्मगोपके अभिमानके समान उस भद्रदन्तको मराहुआ सुनकर राजा भद्र बाहुने अपने मत्रीपर बहुत प्रसन्नहोके अनग लीलाके मागनेके लिये धर्मगोपके पास अपनादूत भेजा और धर्मगोपने भी [illegible]नीकन्या उसेदेदी ठीकहै (भजन्तिवेतसींवृत्तिम् राजानःकालवेदिन) काल के जान[illegible] नम्रवृत्ति रखतेहैं इसप्रकारसे मत्रगुप्त मत्रीकी बुद्धिके बलसे राजा

भद्रबाहुको अनगलीला प्राप्तहोगई ७४ इससे मैभी अपनी बुद्धिके बलसे शशांकवतीकी प्राप्तिकेलिये उद्योगकरूंगा मृगांकदत्तके यह वचनसुनकर विचित्रकथनाम मन्त्रीने कहा कि श्रीशिवजीकी स्वप्नमें हुई कृपासे आपके सब कार्य्य सिद्धिहोंगे देवताओंके अमोघप्रसादसे कौन कार्य्य सिद्ध नहींहोसक्राहै इस विषयपर मैं आपको एककथा सुनाताहूं कि तक्षशिलानाम पुरी में भद्राक्षनाम एक राजाथा वह पुत्रकी कामनासे नित्य खड्गमें लक्ष्मीजीका आवाहन करके एक सौ आठ कमलों से पूजन करताथा एकवार पूजन करते समय एककमल घटगया इससे राजाने मौन व्रत न त्यागके अपना हृदय कमल निकालकर भगवती पर चढाया इससाहसको देखकर प्रसन्नहुई भगवती प्रकटहोकर बोलीं कि हे पुत्र तुम्हारे चक्रवर्ती पुत्रहोगा यहकहके और राजाको क्षत रहितकरके भगवती अन्तर्द्धानहोगई तदनन्तर राजाके पटरानीमें सुलक्षण पुत्रहुआ उसका नाम राजाने पुष्कराक्ष रक्खा क्रमसे सम्पूर्ण विद्याओं को सीखकर युवावस्थामें प्राप्तहुए पुष्कराक्ष को राज्य देकर राजा भद्राक्ष वनको चलागया और पुष्कराक्ष भी राज्यपाके प्रतिदिन श्री शिवजीका पूजन करनेलगा एक दिनपूजनके उपरान्त उसने शिवजी से यहप्रार्थनाकी कि मुझे योग्य स्त्री दीजिये तब यह आकाशवाणी हुई कि हे पुत्र तुम्हारे सम्पूर्ण कार्य्य सिद्धहोंगे इसआकाशवाणीको सुनकर प्रसन्नहोकर पुष्कराक्ष वनमें शिकार खेलने को चलागया वहां सभोगकरतेहुए सर्पके जोडेको खानेकेलिये उत्सुक्त एकऊंटके बच्चेको देखकर उसने कृपायुक्तहोकर उस ऊंटके एकबाण मारा बाणके लगतेही वह विद्याधर होकर प्रसन्नहोके उससे बोला कि तुमने मेरे साथ बडा उपकार कियाहै इससे जो मैं कहताहूं सो सुनो किसी विद्याधरकी तारावलीनाम कन्याने रश्मिमाली नाम विद्याधरपर अनुरक्तहोकर उसके साथ अपना गान्धर्व विवाह करलिया यहजानकर उसके पिता ने उसे यहशापदिया कि तुमदोनोंका कुछ काल वियोग रहेगा यहशापपाकर वहदोनों सुन्दर उपवनों में आनन्दसे विहारकरनेलगे एकसमय शापके प्रभावसे वह दोनों वनमें विहारकरते २ परस्पर वियुक्त होकर इधर उधर एकदूसरेको ढूंढनेलगे उनमेंसे तारावली अपने पतिको ढूंढते २ पश्चिम समुद्र के पार सिद्ध ऋषियों से सेवित एकवनमें पहुंची वहां एकप्रफुल्लित जामनका वृक्षदेखके भ्रमरीका रूप धारण करके विश्रामके लिये उसके एकपुष्पपर बैठकर मधुपान करनेलगी क्षणभर मेंही भाग्यवश से उसका पतिभी उसे ढूंढताहुआ वहींआया बहुतकालके उपरान्त अपने पतिको देखनेमे बहुत प्रसन्नहुई तारा-वलीका वीर्य्य उसपुष्पपर गिरा और वीर्य्यको त्यागकर वहभ्रमरी के रूपको छोडकर अपना रूपधरके पतिसे जाकर मिली और उसे लेकर अपने लोकको चलीगई उसके चले जानेपर जिसपुष्पपर उसका वीर्य्य गिराया उसमें एकफललगा और उसफलके भीतर काल योग से एककन्या उत्पन्न हुई क्योंकि दिव्य प्राणियोंका वीर्य्य निष्फल नहीं होताहै १०० तदनन्तर एकसमय विजिताश्वनाम मुनि फल मूल के निमित्त वहां आये और उसीसमय वहजामनका फल टूटकर गिरा पृथ्वीमें गिरकर टूटजाने से उस फलमें से एकदिव्य कन्या निकलके मुनिको वन्दना करके उनके आगे हाथ जोड़कर खडीहोगई उस कन्या को देखकर मुनि ने ध्यान से उसका सब तत्त्व जानकर उसे अपने आश्रम में ले जाकर उसका

भद्रबाहुने एकान्तमें अपने मन्त्रीसे कहा कि काशीके राजा धर्मगोपके जो अनगलीलानाम अत्यन्तसु न्दरीकन्याहै उसे प्रार्थनाकरनेपर भी द्वेषके कारण वह मुझेनहींदेता और भद्रदन्तनाम हाथीके प्रभावसे उसे कोई जीतभी नहीं सक्ता और मैं उस अनगलीलाके बिना जी नहींसक्ता इससे तुम अपनी बुद्धि से इस विषयमें कोई उपाय शोचो यह सुनकर मन्त्रगुप्तने कहा कि हे स्वामी क्या पराक्रमसेही सब कार्य्य सिद्धहोते हैं बुद्धिसे नहीं होते आप किसी प्रकारकी चिन्तामतकरो मैं अपनी बुद्धिके बलसे आपका कार्य्य सिद्धकरूंगा यह कहके वहमन्त्री दूसरे दिन पाच सात विश्वासित मनुष्यों को साथलेके महाब्रती का वेष बनाकर काशीपुरीकोगया वहा उसके सबसाथी शिष्योंकावेष बनाकेसम्पूर्ण नगरमें कहनेलगे कि यह महासिद्धहै और इस चरचाको सुनकर कुछ लोग उसकेपास आनेभीलगे एकसमय रात्रिमें अ पने कार्य्यकी युक्तिके ढूढनेकेलिये भ्रमणकरतेहुए मन्त्रीने देखा कि राजाके हाथीवान् की स्त्री तीनचार शस्त्रधारी पुरुषों के साथ जल्दी २ कहीं चलीजारही है यह देखके उसने यह शोचा कि निस्सन्देह यह अपने घरसे निकलकर किसी अन्य पुरुषके यहा जारही है इससे देखना चाहिये कि यह कहा जाती है यह शोचकर वह उसके पीछे २ चुपचाप चलागया और जिसस्थानमें वह गई उस स्थानको दूरसे देखकर लौटआया प्रातःकाल उसने अपने साथियोंको युक्ति पूर्व्वक उस राजाके हाथीवान्के मकानपर भेजा उन्होंने वहा जाकर हाथीवान्को अपनी स्त्रीके दुःखसे विषखायेहुए देखकर अपनी विद्यासे उसका विष दूरकरदिया और उससे कहा कि तुम हमारे गुरुके पास चलो वह बडे ज्ञानी हैं तुमको सब बात बतादेंगे यह कहके वह उसे मन्त्रीके पास लेआये वहा आकर उस हाथीवान्ने उसेप्र णाम करके पूछा कि बताइये मेरी स्त्री सपूर्ण आभूषण लेकर कहा गई है यह सुनकर मन्त्रीने झूठ मूठ कुछ ध्यानकरके रात्रिके समय जहा वह पुरुष उसकी स्त्री को लेगयेथे वह स्थान उसे बतादिया तबहा थीवान्ने उसको नमस्कारकरके अपने बहुतसे साथियोंको लेजाके उस स्थानको घेर लिया और उन पुरुषोंको मारकर आभूषणों समेत अपनी स्त्री पाई दूसरे दिन हाथीवान्ने मन्त्रीकेपास आके हाथजोड- कर कहा कि आजके दिन आपका मेरे घरमें निमन्त्रणहै यह सुनके मन्त्रीने कहा कि मैं किसीके घर भोजन नहीं करता और दिनको आहारभी नहीं करता यह सुनकर वहहाथीवान् प्रदोषके समय हाथि योंकी शालामें उसे सब साथियों समेत भोजन करानेके लिये लेगया मन्त्रीभी एक बासकी पोंगी में मन्त्रके बलसे एक सर्पको बन्द करके और छुपाके वहा लेगया जब हाथीवान् उसे भोजन कराके चला- गया और वहाके सब लोग सोगये तब उस भद्रदन्तनाम हाथी के कानमें उस सर्पको छोड़कर मन्त्री उसरात्रिको वहीं व्यतीत करके प्रातःकाल अपने मगधदेशको सब साथियों समेत चलाआया इससे वह भद्रदन्त मरगया राजा धर्मगोपके अभिमानके समान उस भद्रदन्तको मराहुआ सुनकर राजा भद्र बाहुने अपने मन्त्रीपर बहुत प्रसन्नहोके अनग लीलाके मागनेके लिये धर्मगोपके पास अपनादूत भेजा और धर्मगोपने भी अपनीकन्या उसेदेदी ठीकहै (भजन्तिवैतसींवृत्तिम् राजानःकालवेदिन) काल के जाननेवाले राजालोग वेतकीसी नम्रवृत्ति रखतेहैं इसप्रकारसे मन्त्रगुप्त मन्त्रीकी बुद्धिके बलसे राजा

भद्रबाहुको अनगलीला प्राप्तहोगई ७४ इससे मैंभी अपनी बुद्धिके बलसे शशाङ्कवतीकी प्राप्तिकेलिये उद्योगकरूंगा मृगाङ्कदत्तके यह वचनसुनकर विचित्रकथनाम मन्त्रीने कहा कि श्रीशिवजीकी स्वप्नमें हुई कृपासे आपके सब कार्य्य सिद्धिहोंगे देवताओंके अमोघप्रसादसे कौन कार्य्य सिद्ध नहींहोसक्ताहै इस विषयपर में आपको एककथा सुनाताहूं कि तक्षशिलानाम पुरी में भद्राक्षनाम एक राजाथा वह पुत्रकी कामनासे नित्य खड्गमें लक्ष्मीजीका आवाहन करके एक सौ आठ कमलों से पूजनकरताथा एकबार पूजन करते समय एककमल घटगया इससे राजाने मौन व्रत न त्यागके अपना हृदय कमल निकालकर भगवती पर चढाया इससाहसको देखकर प्रसन्नहुई भगवती प्रकटहोकर बोलीं कि हे पुत्र तुम्हारे चक्रवर्त्ती पुत्रहोगा यहकहके और राजाको क्षत रहितकरके भगवती अन्तर्द्धानहोगईं तदनन्तर राजाके पटरानीमें सुलक्षण पुत्रहुआ उसका नाम राजाने पुष्कराक्ष रक्खा क्रमसे सम्पूर्ण विद्याओं को सीखकर युवावस्थामें प्राप्तहुए पुष्कराक्ष को राज्य देकर राजा भद्राक्ष वनको चलागया और पुष्कराक्ष भी राज्यपाके प्रतिदिन श्री शिवजीका पूजन करनेलगा एक दिनपूजनके उपरान्त उसने शिवजी से यहप्रार्थनाकी कि मुझे योग्य स्त्री दीजिये तब यह आकाशवाणी हुई कि हे पुत्र तुम्हारे सम्पूर्ण कार्य्य सिद्धहोंगे इसआकाशवाणीको सुनकर प्रसन्नहोकर पुष्कराक्ष वनमें शिकार खेलने को चलागया वहां सभोगकरतेहुए सर्पके जोडेको खानेकेलिये उद्युक्त एकऊंटके बच्चेको देखकर उसने कृपायुक्तहोकर उस ऊंटके एकबाण मारा बाणके लगतेही वह विद्याधर होकर प्रसन्नहोके उससे बोला कि तुमने मेरे साथ बडा उपकार कियाहै इससे जो मैं कहताहूं सोसुनो किसी विद्याधरकी तारावलीनाम कन्याने रक्माली नाम विद्याधरपर अनुरक्तहोकर उसके साथ अपना गान्धर्व विवाह करलिया यहजानकर उसके पिता ने उसे यहशापदिया कि तुमदोनोंका कुछ काल वियोग रहेगा यहशापपाकर वहदोनों सुन्दर उपवनों में आनन्दसे विहारकरनेलगे एकसमय शापके प्रभावसे वह दोनों वनमें विहारकरते २ परस्पर वियुक्त होकर इधर उधर एकदूसरेको ढूंढनेलगे उनमेंसे तारावली अपने पतिको ढूंढते २ पश्चिम समुद्र के पार सिद्ध ऋषियों से सेवित एकवनमें पहुंची वहां एकप्रफुल्लित जामनका वृक्षदेखके भ्रमरीका रूप धारण करके विश्रामके लिये उसके एकपुष्पपर बैठकर मधुपान करनेलगी क्षणभर मेंही भाग्यवश से उसका पतिभी उसे ढूंढताहुआ वहींआया बहुतकालके उपरान्त अपने पतिको देखनेमे बहुत प्रसन्नहुई तारावलीका वीर्य्य उसपुष्पपर गिरा और वीर्य्यको त्यागकर वहभ्रमरी के रूपको छोडकर अपना रूपधरके पतिसे जाकर मिली और उसे लेकर अपने लोकको चलीगई उसके चले जानेपर जिसपुष्पपर उसका वीर्य्य गिराथा उसमें एकफललगा और उसफलके भीतर काल योग से एककन्या उत्पन्न हुई क्योंकि दिव्य प्राणियोंका वीर्य्य निष्फल नहीं होताहै १०० तदनन्तर एकसमय विजिताश्वनाम मुनि फल मूल के निमित्त वहां आये और उसीसमय वहजामनका फल टूटकर गिरा पृथ्वीमें गिरकर टूटजाने से उस फलमें से एकदिव्य कन्या निकलके मुनिको वन्दना करके उनके आगे हाथ जोड़कर खड़ीहोगई उस कन्या को देखकर मुनि ने ध्यान से उसका सब तत्त्व जानकर उसे अपने आश्रम में ले जाकर उसका

भद्रबाहुने एकान्तमें अपने मन्त्रीसे कहा कि काशीके राजा धर्मगोपके जो अनगलीलानाम अत्यन्तसु न्दरीकन्याहै उसे प्रार्थनाकरनेपर भी द्वेषके कारण वह मुझेनहींदेता और भद्रदन्तनाम हाथीके प्रभावसे उसे कोई जीतभी नहीं सक्ता और मै उस अनगलीलाके बिना जी नहींसक्ता इससे तुम अपनी बुद्धि से इस विषयमें कोई उपाय शोचो यह सुनकर मन्त्रगुप्तने कहा कि हे स्वामी क्या पराक्रमसेही सब कार्य्य सिद्धहोते हैं बुद्धिसे नहीं होते आप किसी प्रकारकी चिन्तामतकरो मैं अपनी बुद्धिके बलसे आपका कार्य्य सिद्धकरूंगा यह कहके वहमन्त्री दूसरे दिन पाच सात विश्वासित मनुष्यों को सायलेके महाव्रती का वेष बनाकर काशीपुरीकोगया वहा उसके सबसाथी शिष्योकावेष बनाकेसम्पूर्ण नगरमें कहनेलगे कि यह महासिद्धहै और इस चरचाको सुनकर कुछ लोग उसकेपास आनेभीलगे एकसमय रात्रिमें अ पने कार्य्यकी युक्तिके ढूढनेकेलिये भ्रमणकरतेहुए मन्त्रीने देखा कि राजाके हाथीवान् की स्त्री तीनचार शस्त्रधारी पुरुषों के साथ जल्दी २ कहीं चलीजारही है यह देखके उसने यह शोचा कि निस्सन्देह यह अपने घरसे निकलकर किसी अन्य पुरुषके यहा जारही है इससे देखना चाहिये कि यह कहा जाती है यह शोचकर वह उसके पीछे २ चुपचाप चलागया और जिसस्थानमें वह गई उस स्थानको दूरसे देखकर लौटआया प्रातःकाल उसने अपने साथियों को युक्ति पूर्व्वक उस राजाके हाथीवान्के मकानपर भेजा उन्होंने वहा जाकर हाथीवान्को अपनी स्त्रीके दुःखसे विषखायेहुए देखकर अपनी विद्यासे उसका विष दूरकरदिया और उससे कहा कि तुम हमारे गुरूके पास चलो वह बडे ज्ञानी हैं तुमको सब बात बतादेंगे यह कहके वह उसे मन्त्रीके पास लेआये वहा आकर उस हाथीवान्ने उसेप्र णाम करके पूछा कि बताइये मेरी स्त्री सपूर्ण आभूषण लेकर कहा गई है यह सुनकर मन्त्रीने झूठ मूठ कुछ ध्यानकरके रात्रिके समय जहा वह पुरुष उसकी स्त्री को लेगयेथे वह स्थान उसे बतादिया तबहा थीवान्ने उसको नमस्कारकरके अपने बहुतसे साथियोंको लेजाके उस स्थानको घेर लिया और उन पुरुषोंको मारकर आभूषणों समेत अपनी स्त्री पाई दूसरे दिन हाथीवान्ने मन्त्रीकेपास आके हाथजोड कर कहा कि आजके दिन आपका मेरे घरमें निमन्त्रणहै यह सुनके मन्त्रीने कहा कि मैं किसीके घर भोजन नहीं करता और दिनको आहारभी नहीं करता यह सुनकर वहहाथीवान् प्रदोषके समय हाथि योंकी शालामें उसे सब साथियों समेत भोजन करानेके लिये लेगया मन्त्रीभी एक बासकी पोंगी में मन्त्रके बलसे एक सर्पको बन्द करके और छुपाके वहा लेगया जब हाथीवान् उसे भोजन कराके चला- गया और वहाके सब लोग सोगये तब उस भद्रदन्तनाम हाथी के कानमें उस सर्पको छोडकर मन्त्री उसरात्रिको वहीं व्यतीत करके प्रातःकाल अपने मगधदेशको सब साथियों समेत चलाआया इससे वह भद्रदन्त मरगया राजा धर्मगोपके अभिमानके समान उस भद्रदन्तको मराहुआ सुनकर राजा भद्र- बाहुने अपने मन्त्रीपर बहुत प्रसन्नहोके अनग लीलाके मागनेके लिये धर्मगोपके पास अपनादूत भेजा और धर्मगोपने भी अपनीकन्या उसेदेदी ठीकहै (भजन्तिवैतसींवृत्तिम् राजानःकालवेदिनः) काल के जाननेवाले राजालोग बेतकीसी नम्रवृत्ति रखतेहैं इसप्रकारसे मन्त्रगुप्त मन्त्रीकी बुद्धिके बलसे राजा

लिये ने उस हंसी को बाणसे मारडाला यह देखकर वह हंस भय और शोकसे महा व्याकुलहोकर वहांसे भागगया और वह बहेलिया उस मरीहुई हंसिनी को लेकर वहांसेचला मार्ग में कुछ शस्त्रधारी पुरुषोंको आते देखकर उस बहेलिये ने यह जानकर कि ऐसा न होय यह मेरी हंसिनीछीनलें छुरी से तृणों को काटके उन तृणों के भीतर उस हंसिनी को छिपादिया और उन पुरुषों के चलेजानेपर उसने जैसेही तृणों को हटाकर उस हंसिनीको लेनाचाहा वैसेही वह हंसी उन तृणों के साथ कटीहुई मजीविनी औ-षध के रसके संयोगको पाके जीकर आकाशको उड़गई इतने में शोक से मोहित उसका हंस किसी तड़ाग के निकट उसीको ढूंढ़ताहुआ बहुतसे अन्य हंसों में जामिला उन सब हंसों को एक बहेलिये ने अपने जालको फेंककर बांधलिया इतनेमें वह हंसिनी उसे ढूंढ़तीहुई वहीं आई और अपने पति को बँधा देखकर बहुत व्याकुलहुई तदनन्तर वहां स्नानकरनेके निमित्त आयेहुए किसी पुरुषकी रक्खीहुई तड़ागके तटपर रत्नोंकीमाला देखकर वह हंसी उस मालाको अपनी चोंच में दबाके उस बहेलिये को मालादिखातीहुई धीरे २ उड़नेलगी उसे देखकर वह बहेलिया लाठीलेके उसके पीछे २ दौड़ा उसे दौड़ा हुआ देखकर हंसी उसे दिखाके एक शिखरके ऊंचे स्थान में उस मालाको रखके चलीआई और वह बहेलिया लोभ से उसके लेनेका उद्योगकरनेलगा इसप्रकार उस बहेलिये को जालके पाससे हटाकर उसने जालके समीप किसी वृक्षपर सोतेहुए बन्दरकी आंख में अपनी चोंचमारी इससे उस बन्दर ने एकाएकी उठके कुपितहोके वहांसे कूदकर उस जालको तोड़डाला इससे वह सब हंस उसमेंसे निकल भागे इसप्रकार से वह दोनों मिलकर सुखपूर्वक विहारकरनेलगे और मालाको लेकर आयेहुए उस बहेलिये को मालासमेत देखकर जिस पुरुषकी वह मालाथी उसने उसका दाहिना हाथ काटलिया इसके उपरान्त वह दोनों हंस हंसिनी मध्याह्न के समय एक कमलकी छत्रीलगाकर किसी तड़ागके तट से उड़कर किसी नदी के तटपर पहुँचे उस नदीके तटपर बैठे हुए एक मुनि श्रीशिवजीका पूजनकररहे थे वहीं एक बहेलिये ने उन दोनों को उड़ते देखकर एक ऐसा बाणमारा कि वह दोनों मरकर एकसाथही गिरपड़े और उनका वह कमल श्रीशिवजी के लिंगपर आकरगिरा उस बहेलिये ने हंस तो आप लेलिया और हंसिनी मुनि को देकर यह कहदिया कि इसका नैवेद्य आप श्री शिवजी को चढ़ाइये हे पुष्करास वह हंस तुम्हींहो श्रीशिवजीके ऊपर कमल चढ़जाने के प्रभाव से तुम्हारा जन्म राजा के घर में हुआ और वह हंसिनी यह विनयवतीहुई इसके मांस से श्रीशिवजी का पूजनहुआथा इससे इसका जन्म विद्याधरोंके कुल में हुआ इसप्रकार से यह तुम्हारी पूर्वजन्मकी स्त्री है विजितासुमुनि ने यह वचन सुनकर पुष्करासने फिर मुनि से पूछा कि हे महर्षि जी पापनाशक अग्निमें प्रवेशकरनेवाले हम दोनों का पक्षी की योनि में क्यों जन्महुआ यह राजा के वचन सुनकर मुनि ने कहा कि (यद्भावितात्मा म्रियतेजन्तुस्तद्रूपमश्नुते) मरते समय जीव जिसकी भावना करता है उसी रूपको प्राप्तहोता है १५६ इस विषय पर मैं तुमको कथा भी सुनाता हूं उज्जयिनी नाम नगरी में लावण्यमञ्जरी नाम एक बालब्रह्मचारिणी ब्राह्मणी रहती थी एकसमय एक कमलोदय नाम युवा ब्राह्मण को देखकर उसके

नाम विनयवती रक्खा समय पाकर युवावस्था मे प्राप्तहुई उस विनयवती को मैं आकाश से देखकर अपने रूप के अभिमान तथा कामसे मोहित होकर उसकी इच्छा के बिना भी उससे बलात्कार करके रमण करनेको उद्यत हुआ मेरे इस दुराचार से चिल्लाती हुई विनयवती के शब्द को सुनकर विजिताश्वमुनिने वहा आके क्रोधसे मुझे यह शाप दिया कि तुझे अपने रूपका बडा अभिमानहै इससे तू ऊटका महाकुरूप बचाहोगा जब राजा पुष्कराक्ष तुझे मारेगा तब तेरा यहशाप दूरहोगा और वही पुष्कराक्ष इस विनयवतीका पतिहोगा इसप्रकार शाप पाकर मैं यहा ऊटका बचाहोगया आज आपकी कृपासे मेराशाप दूरहोगया अब मैं अपने स्थानको जाताहू और आप पश्चिम समुद्रकेपार सुरभिमारुत नाम वनमें जाकर उसदिव्यस्त्रीको लीजिये यहकहके वहविद्याधर अन्तर्द्धानहोगया और राजा पुष्कराक्ष भी अपनी नगरी मे आकर मन्त्रियोंके सुपुर्द राज्यका भारकरके घोडेपर चढके अकेलाही पश्चिम समुद्रके तटपर पहुचा वहा उसे यह चिन्ताहुई कि मैं समुद्रके पार कैसे जाऊं इस चिन्ताके उत्पन्नहोतेही एकशून्य भगवतीका मन्दिर दिखाईदिया उसमन्दिर में जाके वह भगवतीको प्रणामकरके वहा किसी की रक्खीहुई वीणाको लेकर बजा २ कर भगवती की मधुर २ गानसे स्तुति करनेलगा उस गानको सुनकर प्रसन्नहुई भगवती ने जब वह सोगया तब अपने गणों के द्वारा उसे समुद्रके पार पहुचादिया प्रातःकाल जब राजाकी निद्राखुली तो उसने अपनेको एकवनमें लेटा देखा और उठकर भ्रमण करते २ एक फलवान् वृक्षों से युक्त अति मनोहर आश्रम देखा उसआश्रममें जाके राजाने शिष्यों समेत एक मुनिको देखके उनकी वन्दनाकी तब मुनिनेभी अतिथिसत्कारकरके उससे कहा कि हे पुष्कराक्ष जिस विनयवतीके लिये तुम यहा आयेहो वह समिधलेनेकेलिये वनमेंगई है इससे क्षणभर ठहरो वह आजाय तो मैं आजही उसका विवाह तुम्हारे साथ करदू वह तुम्हारी पूर्व्वजन्मकी भी स्त्री है मुनिके यह वचन सुनकर राजा ने यह शोचा कि यह वही विजिताश्वमुनिहैं और यह वही सुरभिमारुत वन है मैं जानताहू कि भगवती ने कृपाकरके मुझे समुद्र के पारकरदिया है, यह बडा आश्चर्य है कि मुनिने कहा है यह तुम्हारी पूर्व्वजन्मकी भी स्त्री है यह शोचकर उसने मुनि से पूछा कि हे भगवन् यह मेरी पूर्व्वजन्मकी स्त्री कैसे है यह सुनकर मुनि ने कहा कि सुनो ताम्रलिप्ती नाम नगरी में धर्मसेन नाम एक वैश्यथा उसके विद्युल्लेखा नाम परमसुशील स्त्री थी भाग्यवश से उसके घर में चोरों ने आकर उसका सब धनलेके उसे खूबमारा इससे वह दुखीहोकर अग्निजलाके अपनी स्त्री समेत उसमें जलगया मरतेसमय उन दोनों स्त्री पुरुषोंका चित्त आकाश में उडतेहुए राजहंसों को देखकर बहुत प्रसन्नहुआ इससे वह दूसरे जन्ममें राजहंसहुए एकसमय वर्षाऋतु में किसी खजूरके वृक्षपर वह दोनों घोंसलाबनाकर रहतेथे भाग्यवशसे एकदिन रात्रिकेसमय बहुत प्रचण्ड वायुकेकारण उस वृक्ष के टूटजाने से वह दोनों घबराकर परस्पर अलग २ होगये प्रातःकाल वायुके शान्तहोजानेपर वहहंस अपनी प्रियाको ढूंढताहुआ बहुतसे तड़ागों में तथा नदियों में उसेनपाकर मानसरोवरमें गया वहा अपनी उसहंसीकोपाकर वहीं वर्षाऋतुको व्यतीत करके शरदऋतु में उसके साथ विहारकरनेकेलिये एक पर्व्वत के शिखरपरगया उस पर्व्वतपर एक बड़े-

लिये ने उस हसी को बाणसे मारडाला यह देखकर वह हस भय और शोकसे महा व्याकुलहोकर वहासे भागगया और वह वहेलिया उस मरीहुई हसिनी को लेकर वहासेचला मार्ग में कुछ शस्त्रधारी पुरुषोंको आते देखकर उस वहेलिये ने यह जानकर कि ऐसा न होय यह मेरी हसिनीछीनलें छुरी से तृणों को काटके उन तृणों के भीतर उस हसिनी को छिपादिया और उन पुरुषों के चलेजानेपर उसने जैसेही तृणों को हटाकर उस हसिनीको लेनाचाहा वैसेही वह हसी उन तृणों के साथ कटीहुई सजीविनी औषध के रसके सयोगको पाके जीकर आकाशको उडगई इतने में शोक से मोहित उसका हस किसी तडाग के निकट उसीको ढूढताहुआ बहुतसे अन्य हसों में जामिला उन सब हसों को एक वहेलिये ने अपने जालको फेंककर बॉधलिया इतनेमें वह हंसिनी उसे ढूढतीहुई वहीं आई और अपने पति को बॅधा देखकर बहुत व्याकुलहुई तदनन्तर वहा स्नानकरने के निमित्त आयेहुए किसी पुरुषकी रक्खीहुई तडागके तटपर रत्नोंकीमाला देखकर वह हसी उस मालाको अपनी चोंच में दबाके उस वहेलिये को मालादिखातीहुई धीरे २ उडनेलगी उसे देखकर वह वहेलिया लाठीलेके उसके पीछे २ दौड़ा उसे दौडता हुआ देखकर हसी उसे दिखाके एक शिखरके ऊचे स्थान में उस मालाको रखके चलीआई और वह वहेलिया लोभ से उसके लेनेका उद्योगकरनेलगा इसप्रकार उस वहेलिये को जालके पाससे हटाकर उसने जालके समीप किसी वृक्षपर सोतेहुए वन्दरकी आख में अपनी चोंचमारी इससे उस वन्दर ने एकाएकी उठके कुपितहोके वहासे कूदकर उस जालको तोडडाला इससे वह सब हस उसमेंसे निकल भागे इसप्रकार से वह दोनों मिलकर सुखपूर्वक विहारकरनेलगे और मालाको लेकर आयेहुए उस वहेलिये को मालासमेत देखकर जिस पुरुषकी वह मालाथी उसने उसका दाहिना हाथ काटलिया इसके उपरान्त वह दोनों हस हसिनी मध्याह्न के समय एक कमलकी छत्रीलगाकर किसी तडागके तट से उडकर किसी नदी के तटपर पहुँचे उस नदीके तटपर बैठे हुए एक मुनि श्रीशिवजीका पूजनकररहे थे वहीं एक वहेलिये ने उन दोनों को उडते देखकर एक ऐसा बाणमारा कि वह दोनों मरकर एकसाथही गिरपडे और उनका वह कमल श्रीशिवजी के लिंगपर आकरगिरा उस वहेलिये ने हस तो आप लेलिया और हसिनी मुनि को देकर यह कहदिया कि इसका नैवेद्य आप श्री शिवजी को चढाइये हे पुष्कराक्ष वह हस तुम्हींहो श्रीशिवजी के ऊपर कमल चढजाने के प्रभाव से तुम्हारा जन्म राजा के घर मे हुआ और वह हसिनी यह विनयवतीहुई इसके मास से श्रीशिवजी का पूजनहुआथा इससे इसका जन्म विद्याधरों के कुल में हुआ इसप्रकार से यह तुम्हारी पूर्वजन्मकी स्त्री है विजितासुमुनि के यह वचन सुनकर पुष्कराक्षने फिर मुनि से पूछा कि हे महर्षि जी पापनाशक अग्निमें प्रवेशकरनेवाले हम दोनों का पक्षी की योनि मे क्यों जन्महुआ यह राजा के वचन सुनकर मुनि ने कहा कि (यद्भावितात्मा म्रियतेजन्तुस्तद्रूपमश्नुते) मरते समय जीव जिसकी भावना करता है उसी रूपको प्राप्तहोता है १५६ इस विषय पर मे तुमको कथा भी सुनाता हू उज्जयिनी नाम नगरी में लावण्यमञ्जरी नाम एक बालब्रह्मचारिणी ब्राह्मणी रहती थी एकसमय एक कमलोदय नाम युवा ब्राह्मण को देखकर उसके

चित्त कामदेव से अत्यन्त पीडित हुआ इससे उसने बहुत व्याकुलभी होकर अपना नियम छोडकर गंधवती नदीके तटपर जाके भोगकी भावना मेंही अपना शरीर त्यागदिया इसी भावनासे वह एक लव्यानाम नगरी में रूपवती नाम वेश्याहुई तीर्थ तथा व्रतके प्रभावसे उसे अपने पूर्वजन्मका स्मरण बनारहा इससे उसने प्रसगपाकर उडकर्ण नाम एक जापक ब्राह्मणसे अपने पूर्व जन्मका सब वृत्तान्त कहा उस वृत्तान्तको सुनकर उडकर्णने उसे ऐसा उपदेश दिया कि उसका चित्त शुद्धहोगया कि वह वेश्या होकरभी सद्गतिको प्राप्तहोगई इससे हे राजा अन्त समयमें जिसका जिसपर चित्तलगताहै उस को उसीसे संयोग होताहै यह कहके मुनिने स्नान करनेके लिये राजाको भेजा और आप मध्याह्नके समय का आह्निक करनेलगे मुनिकी आज्ञा पाकर राजा पुष्कराक्षने नदीके तटपर जाके विनयवतीको पुष्प तोडते देखा और सूर्य्य की प्रभाके समान उसे देदीप्यमान देखकर अपने चित्तमें शोचा कि यह कौन है उसके इसप्रकार शोचतेही शोचते विनयवती राजा को न देखकर अपनी विश्वास पात्र एक सखी से कहनेलगी कि हे सखी जो विद्याधर मुझे पहलेहरना चाहताथा उसी ने आज मुझसे आकर कहा है कि तुझे शीघ्रही योग्यपति मिलेगा यह सुनकर उस सखीने कहा कि यह बहुत सत्यहै आज मेरे आगेही प्रातःकाल विजिताश्वने अपने मुंजकेश नामशिष्यसे कहा था कि शीघ्रही जाके तारा वली और रक्तमाली को बुलालाओ आज उनकी पुत्री विनयवती का विवाह पुष्कराक्ष नाम राजा से होगा गुरुकी यह आज्ञापातेही मुंजकेश उनके बुलानेको गयाहै इससे हे सखी अब तुम शीघ्र आश्रमको चलो उसके यह वचनसुनकर विनयवती उसके साथ आश्रम को चलीगई और पुष्कराक्षभी उनकी इस वार्त्तालापको सुनकर जाज्वल्यमान कामाग्नि के संतापके दूरकरनेके लिये मानों नदी में स्नानकरके आश्रममें आया वहा मुनिकी आज्ञानुसार तारावली और रक्तमालीने आनकर अपने प्रभाव से वेदी बनाके अग्निप्रज्वलितकर मुनिके आगे पुष्कराक्षको विनयवती संकल्प करके देदी और एक दिव्य आकाश गामी रथ उसे दिया उस समय विजिताश्वमुनि ने भी प्रसन्न होकर पुष्कराक्षको यह बरदान दिया कि तुम इस विनयवती समेत समुद्र पर्य्यन्त पृथ्वीका पालनकरो इसप्रकार विवाहके हो-जानेपर पुष्कराक्ष विनयवतीको लेके और मुनिसे आज्ञापाके आकाशगामी रथपर चढ़के अपनी पुरी को आया वहाँ उसरथके प्रभावसे सम्पूर्णपृथ्वीको जीतकर विनयवतीके साथराज्यके सुखकाभोगकरने लगा इसप्रकार देवताओंके अनुग्रहसे दुष्करकार्य्य भी सिद्धहोतेहैं इससे हे स्वामी स्वप्नमेंहुई श्रीशिवजी की कृपासे तुम्हारा भी सब मनोरथ शीघ्र सिद्धहोगा विचित्रकथ से इस कथाको सुनकर शशाङ्कवती के लिये उत्कण्ठित मृगाङ्कदत्तने अपनेमन्त्रियों समेत उज्जयिनी के जानेका निश्चय किया १८५॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेद्वितीयस्तरंग २॥

इस प्रकारसे राजा कर्मसेनकी पुत्री शशाङ्कवतीके निमित्त मृगाङ्कदत्तने महाव्रतीका वेषधारणकरके छिपकर उज्जयिनी जानेके लिये अपने मन्त्रियोंसे सलाहकी और मनुष्यों के कपाल आदिक सामग्री लानेके लिये भीमपराक्रम नामअपने मन्त्रीको आज्ञादी उसकी आज्ञासे भीमपराक्रमने सबसामग्रीलाके

अपनेघरमें रखछोडीं यहसब वृत्तान्त मृगाङ्कदत्तके पिता राजाअमरदत्तके प्रधानमन्त्रीने चारों(गोयन्दों) के द्वारा जानलिया उन्हीं दिनोमे अकस्मात् मृगाङ्कदत्तके मन्दिरके नीचेसे जातेहुए उसप्रधान मन्त्रीके शिरपर मृगाङ्कदत्तकी पीकविनाजाने गिरपडी पीकके पडने से उसमन्त्री ने यहजानकर कि इसने मेरा तिरस्कार कियाहै अपनेचित्तमे अत्यन्त क्रोधकिया भाग्यवशसे दूसरेदिन मृगाङ्कदत्तके पिताको विशू चिकाहुई इससे मन्त्रीने अमरदत्तके राजासे एकान्तमें कहा कि हे स्वामी मृगाङ्कदत्त भीमपराक्रमके घरमे आपकेलिय मारण करवारहा है यहबात मैंने गोयन्दोंके मुखसेसुनी है और उसकाफलभी प्रत्यक्षदिखाई देरहाहै इससे आप उसे अपने देशमे निकलवादीजिये यह सुनकर राजा ने घवराके अपने सेनापति को भीमपराक्रमके घरमें उस वातके देखनेको भेजा सेनापतिने जाकर उसके घरमें कपालादि चिह्नपा-के राजाको लाकर दिखाये उन चिह्नोको पाके राजाने सेनापतिको यह आज्ञादी कि शीघ्रही मृगाङ्क-दत्तको उसके मन्त्रियों समेत देशसे निकालदो क्योंकि वह मुझे मारकर राज्यलेना चाहताहै राजाकी यह आज्ञापाकर सेनापतिने मन्त्रियों समेत मृगाङ्कदत्तको नगरीसे निकाल दिया मृगाङ्कदत्तभी गणे-शजीका स्मरण करके राज्यकी उपेक्षाकरके अपने मनमें माता पिताको नमस्कार करके अयोध्यासे चला और कुछ दूर चलकर प्रचंड शक्ति आदिक अपने मन्त्रियोंसे बोला कि किरातों का शक्तिरक्षित नाम स्वामी मेरावाल्यावस्थाका परममित्र है हमारे पिताने एकसमय उसके पिताको जीतकर वन्धनमें डालदिया था इससे वह अपने वदले शक्तिरक्षितको कैदकेलिये देकर अपने स्थानको चलागया और जव वह मरगया तव उसके भाइयोंने उसका सव राज्यले लिया उससमय मैंने अपने पितासे कहकर शक्तिरक्षितको कैदसे छुडवाके उसके पिताका राज्य उसे दिलवा दिया इससे उसी मित्रके पास पहले चलो वहा से फिर उज्जयिनी को चलेंगे यह कहके वह अपने मन्त्रियों समेत चलते २ सायकाल के समय किसीजल तथा वृक्षोंसे रहितवनमें पहुंचा वहा वहुत ढूढनेसे एक छोटासा तालावमिला उसता-लावके किनारेपर एक सूखावृक्ष लगाथा वहीं संध्यावन्दना करके मृगाङ्कदत्त अपने मन्त्रियोंसमेत उस सूखेवृक्षके नीचेसोया कुछ रात्रि व्यतीत होजाने पर एकाएकी मृगाङ्कदत्तने जगकर देखा कि उस सूखे वृक्षमें फल फूल तथा पत्रलगेहै और पके २ फल नीचे गिररहेहैं यह आश्चर्य्य देखके उसने अपने मन्त्रियोंको भी जगाकर वह चमत्कार दिखाया और उनके साथ वैठकर वह सुन्दर २ मधुरफलखाये उन सवके भोजन करचुकनेपर सवके देखतेही देखते वह वृक्ष कुमार अवस्था का एक व्राह्मणहोगया यह आश्चर्य्य देखकर मृगाङ्कदत्तने उस व्राह्मणसे पूछा कि आप कौन है उसने कहा कि अयोध्यानाम नगरीमें एक दमनिनाम व्राह्मणरहते थे उनका श्रुतधिनाम पुत्रमैंहूं एकसमय दुर्भिक्ष में मेरी मातामर गई उनका सव कर्म करके मेरे पिता महुत दु खितहोके मुझे लेकर भ्रमण करते २ इस स्थान में आये यहा उनको क्षुधितदेखकर किसीने पाचफल उन्हेंदिये उनमेंसे वह तीनफल मुझे देके और दो अपने लिये रखकर इस तडागमे स्नान करनेकोगये उनके चलेजाने पर मै वह फलभी खाके सोनेका वहाना करके लेटरहा उन्हों ने स्नानकरके लौटकर मुझे छलसे काष्ठके समान पडा देखकर यह शापदिया कि

चित्त कामदेव से अत्यन्त पीडित हुआ इससे उसने बहुत व्याकुलभी होकर अपना नियम छोड़कर गंधवती नदीके तटपर जाके भोगकी भावना मेंही अपना शरीर त्यागदिया इसी भावनासे वह एक लव्यानाम नगरी में रूपवती नाम वेश्याहुई तीर्थ तथा व्रतके प्रभावसे उसे अपने पूर्वजन्मका स्मरण बनारहा इससे उसने प्रसगपाकर उडकर्ण नाम एक जापक ब्राह्मणसे अपने पूर्व जन्मका सब वृत्तान्त कहा उस वृत्तान्तको सुनकर उडकर्णने उसे ऐसा उपदेश दिया कि उसका चित्त शुद्धहोगया कि वह वेश्या होकरभी सद्गतिको प्राप्तहोगई इससे हे राजा अन्त समयमे जिसका जिसपर चित्तलगताहै उस का उसीसे संयोग होताहै यह कहके मुनिने स्नान करनेके लिये राजाको भेजा और आप मध्याह्नके समय का आह्निक करनेलगे मुनिकी आज्ञा पाकर राजा पुष्कराक्षने नदीके तटपर जाके विनयवतीको पुष्प तोडते देखा और सूर्य्य की प्रभाके समान उसे देदीप्यमान देखकर अपने चित्तमें शोचा कि यह कौन है उसके इसप्रकार शोचतेही शोचते विनयवती राजा को न देखकर अपनी विश्वास पात्र एक सखी से कहनेलगी कि हे सखी जो विद्याधर मुझे पहलेहरना चाहताथा उसी ने आज मुझसे आकर कहा है कि तुझे शीघ्रही योग्यपति मिलेगा यह सुनकर उस सखीने कहा कि यह बहुत सत्यहै आज मेरे आगेही प्रातःकाल विजिताश्वने अपने मुजकेश नामशिष्यसे कहा था कि शीघ्रही जाके तार वली और रक्तमाली को बुलालाओ आज उनकी पुत्री विनयवती का विवाह पुष्कराक्ष नाम राजा से होगा गुरुकी यह आज्ञापातेही मुंजकेश उनके बुलानेको गयाहै इससे हे सखी अब तुम शीघ्र आ श्रमको चलो उसके यह वचनसुनकर विनयवती उसके साथ आश्रम को चलीगई और पुष्कराक्षभी उनकी इस वार्तालापको सुनकर जाज्वल्यमान कामाग्नि के सतापके दूरकरनेके लिये मानों नदी में स्नानकरके आश्रममें आया वहा मुनिकी आज्ञानुसार तारावली और रक्तमालीने आनकर अपने प्रभाव से वेदी बनाके अग्निप्रज्वलितकर मुनिके आगे पुष्कराक्षको विनयवती सकल्प करके देदी और एक दिव्य आकाश गामी रथ उसे दिया उस समय विजिताश्वमुनि ने भी प्रसन्न होकर पुष्कराक्षको यह बरदान दिया कि तुम इस विनयवती समेत समुद्र पर्य्यन्त पृथ्वीका पालनकरो इसप्रकार विवाहके हो जानेपर पुष्कराक्ष विनयवतीको लेके और मुनिसे आज्ञापाके आकाशगामी रथपर चढ़के अपनी पुरी को आया वहाँ उसरथके प्रभावसे सम्पूर्णपृथ्वीको जीतकर विनयवतीके साथराज्यके सुखकोभोगकरने लगा इसप्रकार देवताओंके अनुग्रहसे दुष्करकार्य्य भी सिद्धहोते हैं इससे हे स्वामी स्वप्नमेहुई श्रीशिवजी की कृपासे तुम्हारा भी सब मनोरथ शीघ्र सिद्धहोगा विचित्रकथ से इस कथाको सुनकर शशाङ्कवती के लिये उत्कण्ठित मृगाङ्कदत्तने अपनेमन्त्रियों समेत उज्जयिनी के जानेका निश्चय किया १८५॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेद्वितीयस्तरंग २॥

इस प्रकारसे राजा कर्मसेनकी पुत्री शशाङ्कवतीके निमित्त मृगाङ्कदत्तने महाव्रतीका वेषधारणकरके छिपकर उज्जयिनी जानेके लिये अपने मन्त्रियोंसे सलाहकी और मनुष्यों के कपाल आदिक सामग्री लानेके लिये भीमपराक्रम नामअपने मन्त्रीको आज्ञादी उसकी आज्ञासे भीमपराक्रमने सबसामग्रीलाके

अपनेघरमें रक्खेहैं यहसब वृत्तान्त मृगाङ्कदत्तके पिता राजाअमरदत्तके प्रधानमन्त्रीने चारों(गोयन्दों)के द्वारा जानलिया उन्हीं दिनोंमे अकस्मात् मृगाङ्कदत्तके मन्दिरके नीचेमे जातेहुए उसप्रधान मन्त्रीके शिरपर मृगाङ्कदत्तकी पीक बिनाजाने गिरपड़ी पीकके पड़ने से उसमन्त्री ने यहजानकर कि इसने मेरा तिरस्कार कियाहै अपनेचित्तमें अत्यन्त क्रोधकिया भाग्यवशसे दूसरेदिन मृगाङ्कदत्तके पिताको विशूचिकाहुई इसमे मन्त्रीने अवसरपाकेराजासे एकान्तमें कहा कि हे स्वामी मृगाङ्कदत्त भीमपराक्रमके घरमे आपकेलिये मारण करवारहा है यहबात मैंने गोयन्दोंके मुखसे सुनी है और उसकाफलभी प्रत्यक्षदिखाई देरहाहै इसमे आप उसे अपने देशसे निकलवादीजिये यह सुनकर राजा ने घबराके अपने सेनापति को भीमपराक्रमके घरमें उस बातके देखनेको भेजा सेनापतिने जाकर उसके घरमें कपालादि चिह्न पाके राजाको लाकर दिखाये उन चिह्नोंको पाके राजाने सेनापतिको यह आज्ञादी कि शीघ्रही मृगाङ्कदत्तको उसके मन्त्रियों समेत देशसे निकालदो क्योंकि वह मुझे मारकर राज्यलेना चाहताहै राजाकी यह आज्ञापाकर सेनापतिने मन्त्रियों समेत मृगाङ्कदत्तको नगरीसे निकाल दिया मृगाङ्कदत्तभी गणेशजीका स्मरण करके राज्यकी उपेक्षाकरके अपने मनमें माता पिताको नमस्कार करके अयोध्यासे चला और कुछ दूर चलकर प्रचण्ड शक्ति आदिक अपने मन्त्रियोंसे बोला कि किरातों का शक्तिरक्षित नाम स्वामी मेराबाल्यावस्थाका परममित्र है हमारे पिताने एकसमय उसके पिताको जीतकर बन्धनमें डालदिया था इससे वह अपने बदले शक्तिरक्षितको कैदकेलिये देकर अपने स्थानको चलागया और जब वह मरगया तब उसके भाइयोने उसका सब राज्यले लिया उससमय मैंने अपने पितासे कहकर शक्तिरक्षितको कैदसे छुड़वाके उसके पिताका राज्य उसे दिलवा दिया इससे उसी मित्रके पास पहले चला रहा से फिर उज्जयिनी को चलेंगे यह कहके वह अपने मन्त्रियों समेत चलते २ सायङ्काल के समय किसी जल तथा वृक्षोंसे रहितवनमें पहुँचा वहां बहुत ढूंढनेसे एक छोटासा तालाबमिला उसतालाबके किनारेपर एक सूखावृक्ष लगाथा वहीं सन्ध्यावन्दन करके मृगाङ्कदत्त अपने मन्त्रियोंसमेत उस सूखेवृक्षके नीचेसोया कुछ रात्रि व्यतीत होजाने पर एकाएकी मृगाङ्कदत्तने जगकर देखा कि उस सूखे वृक्षमें फल फूल तथा पत्रलगेहैं और पके २ फल नीचे गिररहेहैं यह आश्चर्य देखके उसने अपने मन्त्रियोंको भी जगाकर वह चमत्कार दिखाया और उनके साथ बैठकर वह सुन्दर २ मधुरफलखाये उन सबके भोजन करचुकनेपर सबके देखतेही देखते वह वृक्ष कुमार अवस्था का एक ब्राह्मणहोगया यह आश्चर्य देखकर मृगाङ्कदत्तने उस ब्राह्मणसे पूछा कि आप कौन हैं उसने कहा कि अयोध्यानाम नगरीमें एक दमनिनाम ब्राह्मणरहते थे उनका श्रुतधिनाम पुत्र मैंहूं एकसमय दुर्भिक्ष में मेरी मातामर गई उनका सब कर्म करके मेरे पिता बहुत दुखितहोके मुझे लेकर भ्रमण करते २ इस स्थान में आये रहा उनको क्षुधितदेखकर किसीने पाचफल उन्हेंदिये उनमेंसे वह तीनफल मुझे देके और दो अपने लिये रखकर इस तडागमें स्नान करनेकोगये उनके चलेजाने पर मैं वह फलभी खाके सोनेका बहाना करके लेटरहा उन्हों ने स्नानकरके लौटकर मुझे छलसे काष्ठके समान पड़ा देखकर यह शापदिया कि

में अपने मन्त्रियों समेत तुम्हारी सहायताकरूंगा यह सुनकर वह तपस्वी प्रसन्नहोके मृगाकदत्तादिको को अपने साथलेके मन्त्रके प्रभावसे शीघ्रही उस सर्प के स्थानपर पहुंचा और वहां रात्रिके समय मन्त्रोंके द्वारा मृगाकदत्तादिकों की रक्षाकरके नागदमन मन्त्रों से अग्निमें हवनकरनेलगा उस समय जो २ विघ्नहुए वहभी उसने अपने मन्त्रोंकी शक्तिसे दूर करदिये विघ्नों के दूरहोजानेपर उसवृक्षसे एक दिव्य स्त्री निकली उसे देखते ही तपस्वीका चित्त उसपर चलायमानहोगया तपस्वी को अपने ऊपर आशक्त देखके उस स्त्री ने उसका आलिंगनकरके उसके हाथसे होमका पात्र गिरादिया इसी दोषको देखकर वह पारावत सर्प गर्जताहुआ पृथ्वी से निकला उसके निकलतेही वह दिव्य स्त्री तो अन्तर्द्धान होगई और उसके घोर शब्द को सुनकर तपस्वीका हृदय भयकेमारे फटगया उसे मरादेखके उस सर्प ने अपना क्रोध शान्त करके मृगाकदत्तादिकों को यह शाप दिया कि तुमलोगों ने निष्कारण इसकी सहायता की है इससे कुछ कालतक तुमलोगोंका परस्पर वियोगहोगा यह शापदेके सर्प के अन्तर्द्धान होजानेपर अन्धकार से वह लोग एकदूसरे को देखन सके और ऐसे बधिरहोगये कि परस्परमें एकदूसरे की बातको भी न सुनसके इससे वहसब वियुक्तहोकर इधर उधरको चलेगये रात्रिके व्यतीतहोजानेपर उनमें से मृगाकदत्त उसीवनमें इधर उधर अपने मंत्रियोको ढूंढतारहा और उसके नजाने कहां २ चलेगए तदनन्तर दो तीन महीनों के व्यतीतहो जानेपरअकस्मात् श्रुतधिब्राह्मण मृगाकदत्तको मिला श्रुतधि को देखकर उसने आशूभरके बडे स्नेहसे उससेपूछा कि हे मित्र तुमने मेरे मन्त्रियोंको भी कहींदेखाहै यह सुनकर उसने कहा कि हे स्वामी मैंने उनकोदेखा तो नहीं है परन्तु मैं जानताहूं कि वह सब उज्जयिनी कोही जायँगे क्योंकि वहींजानेका हमसबका विचारथा यहकहके वह मृगाकदत्तको लेके उज्जयिनीको चला कईदिन चलके मार्गमें विमलबुद्धिनाममंत्री मृगाकदत्तको मिलाउसे प्रणामकरते देखके मृगाकदत्त ने उससेस्नेहपूर्वक मिलकरपूछा कितुमने अन्यमन्त्रियोंकोभी देखाहै यहसुनकर उसनेकहा कि हे स्वामी मुझे उनमें से कोई भी नहीं मिला न जाने वह कहांगये परन्तु यह मैं जानताहूं कि वह आपको अवश्य मिलजायँगे यह बात जैसे मैंने जानीहै वहभी आपको सुनाताहूं कि जब सर्पके शापसे आपका संगसग छूटा तो मैं वनके पूर्वकी ओर आप लोगोंके ढूंढनेको पहुंचा वहां एकसाधू मुझे व्याकुल देखकर ब्रह्म दर्डीनाम महर्षि के आश्रममें लेगया उस आश्रममें महर्षि के दियेहुए फल मूलोंको खाकर आश्रमसे कुछदूरजाके मैंने एकगुहा देखी उसगुफामें जाके एकबडा सुन्दर मणिमय मंदिर मुझेदिखाई दिया उस मन्दिरमे जानेका मार्ग न जानकर झरोखे के द्वारा मैं उसमें झांकनेलगा उसमें यह विचित्र चमत्कार मैंने देखा कि एकस्त्री एकचक्र घुमारही है उस चक्रपर एक बैल और गधा बैठाहुआ है उनदोनों पर अलग २ मोरे गुजार कररहे हैं उस बैल तथा गधेके उगलेहुए दूध तथा रुधिरके फेनको पीकर वह मोरे श्वेत तथा कृष्णमकडी होगये उन मकडियों ने अपनी २ विष्ठाओं से अनेक प्रकार के जाल बनाये श्वेत मकडियों के जालमें सुन्दर पुष्प और कालीमकडियों के जालमें विषके पुष्प लटकेहुए थे उन्हीं जालोंपर घूमतीहुई उन मकडियों को श्वेत तथा कृष्ण दो मुखवाले सर्पने आकर काटखाया यह देख

तू इसी तालाबके किनारे पर सूखा वृक्षहोजा चादनी रात्रिको तुझमें फलफूल लगाकरेंगे किसीसमय तू अपनेफलोंसे अतिथियोको तृप्तकरके इस शापसे छूटजायगा उनके इस शापसे मैं उसीसमय सूखावृक्ष होगया और आज आपकीकृपासे शापसे मेरा उद्धारहागया उसका यहवृत्तान्त सुनकर मृगाकदत्त ने अपनाभी सबवृत्तान्त उससेकहा तब नीतिके जाननेवाले श्रुतधिब्राह्मणने उससे कहा कि मैंभी आपही के साथ मे रहूगा उसके यहवचन स्वीकारकरके मृगाकदत्त रात्रिको वहींव्यतीतकरके प्रातःकाल श्रुतधि तथा अपने सबमित्रियोसमेत वहासे चला ३६ चलते२कटिमडित नाम वनमे पहुचके उन्हे बडे२बालवाले पाच पुरुषमिले वह पुरुष उनको देखकर नम्रतापूर्व्वक उनसे बोले कि हे महाशय हम काशीपुरी में गौ चरानेवाले ब्राह्मणथे एकसमय अनावृष्टिके कारण वहा तृण आदिक न पाकर हम अपनी गौओंको लेकर इसवनमे चलेआये यहा एकबावडीका रसायन जल हमको प्राप्तहुआ उस बावडीके तटपर त्रिफला के वृक्षलगेहैं उनके फल बावडीमें गिरते हैं इससे वह जल रसायन होगयाहै उसजलको पीकर दूधआदि भोजनकरतेहुए हमलोगोंको पाचसौवर्ष यहाआये व्यतीतहोगये इसीसे हम लोगोंके बाल बहुतबढगये और चेष्टाभी बदलगई है यहा आपलोग हमारे अतिथिहै इससे आश्रममें चलकर कृपाकीजिये उनकी यहप्रार्थनासुनके मृगाकदत्त अपने साथियोसमेत उन के आश्रममेगया और वहादूध आदिपीके वहदिन वहीं व्यतीतकरके दूसरे दिन प्रातःकाल वहा से चलके अनेकप्रकारके आश्चर्य्योंको देखताहुआ किरातो के देशमे पहुचा वहा उसने अपने मित्र शक्तिरक्षकके पास अपना आगमन कहने के लिये श्रुतधिको भेजा श्रुतधिसे मृगाकदत्तका आगमन सुनकर शक्तिरक्षक पुरके बाहर आकर मृगाकदत्तको सब साथियो समेत अपने स्थानमें लेआया उसके घरमें मृगाकदत्त उसके सत्कारको ग्रहणकरके कुछ दिन रहा और उससे अपनी सहायताके लिये तैयाररहनेको कहकर अच्छा मुहूर्त्त देखकर अपने साथियों समेत उज्जयिनीको चला चलते २ एक शून्य वनमें किसी वृक्षके नीचे एक जटाधारी तपस्वीको देखके मृगाकदत्तने पूछा कि हे भगवन् इस आश्रम रहित वनमें आप अकेले क्यों बैठेहो यह सुनकर तपस्वीने कहा कि शुद्धकीर्त्तिनाम महागुरूका मैं शिष्यहू मुझे अनेकप्रकारके मन्त्र सिद्धहैं एकसमय मैंने शुभ लक्षणयुक्त एक क्षत्री के बालकमें अपने एक मन्त्रका आवेशकिया आवेशके प्रभावसे उस बालकने पूछनेपर अनेक सिद्ध औषधियों के स्थान बताकर कहा कि उत्तरदिशामें विन्ध्याचलके वन में एक सिरसका वृक्षहै उस वृक्षके नीचे बडाभारी सर्पों का स्थान है उस स्थानके ऊपर गीली धूलसी पडी रहती है इससे मध्याह्नके समय बहुतसे हस वहा आनकर बैठते हैं उसी स्थानमें पारावतनाम एक बडा सर्प रहताहै उस सर्पके पास देवासुरसग्राममें मिलाहुआ वैदूर्य्य कान्तिनाम बडा दिव्य खड्गहै वह खड्ग जिसको मिलजाय वह सिद्धाधिपतिहोकर कहीं भी पराजित नहींहोगा परन्तु वह खड्ग उसी को प्राप्तहोसक्ता है जिसके बडे वीरलोग सहायकहोंय उस बालकके यह वचनसुनके मै उसके आवेशको दूरकरके वीर सहायकों को ढूढनेलगा परन्तु सम्पूर्ण पृथ्वीपर भ्रमण करनेपर भी मुझे सहायक नहीं मिले इससे खिन्नहोके मरने के निमित्त मैं यहा आयाहू उसके यह वचन सुनके मृगाकदत्तने कहा कि

में अपने मन्त्रियों समेत तुम्हारी सहायताकरूंगा यह सुनकर वह तपस्वी प्रसन्नहोके मृगाकदत्तादिकों को अपने माथलेके मन्त्रके प्रभावसे शीघ्रही उस सर्प के स्थानपर पहुंचा और वहां रात्रिके समय मन्त्रोंके द्वारा मृगाकदत्तादिकों की रक्षाकरके नागदमन मन्त्रों से अग्निमें हवनकरनेलगा उस समय जो २ विघ्नहुए वहभी उसने अपने मन्त्रोंकी शक्तिसे दूर करदिये विघ्नों के दूरहोजानेपर उसवृक्षसे एक दिव्य स्त्री निकली उसे देखते ही तपस्वीका चित्त उसपर चलायमानहोगया तपस्वी को अपने ऊपर आशक्त देखके उस स्त्री ने उसका आलिगनकरके उसके हाथसे होमका पात्र गिरादिया इसी दोषको देखकर वह पारावत सर्प गर्जताहुआ पृथ्वी से निकला उसके निकलतेही वह दिव्य स्त्री तो अन्तर्द्धान होगई और उसके घोरशब्दको सुनकर तपस्वीका हृदय भयकेमारे फटगया उसे मरादेखके उस सर्प ने अपना क्रोध शान्त करके मृगाकदत्तादिकों को यह शाप दिया कि तुमलोगों ने निष्कारण इसकी सहायता की है इससे कुछ कालतक तुमलोगोंका परस्पर वियोगहोगा यह शापदेके सर्प के अन्तर्द्धान होजानेपर अन्धकार से वह लोग एकदूसरे को देख न सके और ऐसे बधिरहोगये कि परस्परमें एकदूसरे की बातको भी न सुनसके इससे वहसब वियुक्तहोकर इधर उधरको चलेगये रात्रिके व्यतीतहोजानेपर उनमें से मृगाकदत्त उसीवनमें इधर उधर अपने मंत्रियोंको ढूंढतारहा और उसके नजाने कहां २ चलेगए तदनन्तर दो तीन महीनों के व्यतीतहो जानेपर अकस्मात् श्रुतधिब्राह्मण मृगाकदत्तको मिला श्रुतधि को देखकर उसने आंशूभरके बड़े स्नेहसे उससेपूछा कि हे मित्र तुमने मेरे मन्त्रियोंको भी कहींदेखाहै यह सुनकर उसने कहा कि हे स्वामी मैंने उनकोदेखा तो नहीं है परन्तु मैं जानताहूं कि वह सब उज्जयिनी कोही जायेंगे क्योंकि वहींजानेका हमसबका विचारथा यहकहके वह मृगाकदत्तको लेके उज्जयिनीको चला कईदिन चलके मार्गमें विमलबुद्धिनाममंत्री मृगाकदत्तको मिलाउसे प्रणामकरते देखके मृगाकदत्त ने उससेस्नेहपूर्वक मिलकरपूछा कितुमने अन्यमंत्रियोंकोभी देखाहै यहसुनकर उसने कहा कि हे स्वामी मुझे उनमें से कोई भी नहीं मिला न जाने वह कहांगये परन्तु यह मैं जानताहूं कि वह आपको अवश्य मिलजायँगे यह बात जैसे मैंने जानीहै वहभी आपको सुनाताहूं कि जब सर्पके शापसे आपका मेरासंग छूटा तो मैं वनके पूर्वकी ओर आप लोगोंके ढूंढनेको पहुंचा वहां एकसाधू मुझे व्याकुल देखकर ब्रह्म दंडीनाम महर्षि के आश्रममें लेगया उस आश्रममें महर्षि के दियेहुए फल मूलोंको खाकर आश्रमसे कुछदूरजाके मैंने एकगुहा देखी उसगुफामें जाके एकबड़ा सुन्दर मणिमय मंदिर मुझेदिखाई दिया उस मन्दिरमें जानेका मार्ग न जानकर झरोखे के द्वारा मैं उसमें झांकनेलगा उसमें यह विचित्र चमत्कार मैंने देखा कि एकस्त्री एकचक्र घुमारही है उस चक्रपर एक बैल और गधा बैठाहुआ है उनदोनों पर अलग २ भौंरे गुंजार कररहे हैं उस बैल तथा गधेके उगलेहुए दूध तथा रुधिरके फेनको पीकर वह भौंरे श्वेत तथा कृष्णमकड़ी होगये उन मकड़ियों ने अपनी २ विष्ठाओं से अनेक प्रकार के जाल बनाये श्वेत मकड़ियों के जालमें सुन्दर पुष्प और कालीमकड़ियों के जालमें विषके पुष्प लटकेहुए थे उन्हीं जालोंपर घूमतीहुई उन मकड़ियों को श्वेत तथा कृष्ण दो मुखवाले सर्पने आकर काटखाया यह देख

तू इसी तालावके किनारे पर सूखा वृक्षहोजा चादनी रात्रिको तुझमें फलफूल लगाकरेंगे किसीसमय तू अपनेफलोंसे अतिथियोको तृप्तकरके इस शापसे छूटजायगा उनके इस शापसे में उसीसमय सूखावृक्ष होगया और आज आपकीकृपासे शापसे मेरा उद्धारहोगया उसका यहवृत्तान्त सुनकर मृगाकदत्त ने अपनाभी सबवृत्तान्त उससेकहा तब नीतिके जाननेवाले श्रुतधिब्राह्मणने उससे कहा कि मैंभी आपही के साथ मे रहूगा उसके यहवचन स्वीकारकरके मृगाकदत्त रात्रिको वहींव्यतीतकरके प्रातःकाल श्रुतधि तथा अपने सबमित्रियोसमेत वहासे चला ३६ चलते२कटिमडित नाम बनमे पहुचके उन्हे बडे२बालवाले पाच पुरुषमिले वह पुरुष उनको देखकर नम्रतापूर्व्वक उनसे बोले कि हे महाशय हम काशीपुरी में गौ चरानेवाले ब्राह्मणथे एकसमय अनावृष्टिके कारण वहा तृण आदिक न पाकर हम अपनी गौओंको लेकर इसवनमे चलेआये यहा एकबावडीका रसायन जल हमको प्राप्तहुआ उस बावडीके तटपर त्रिफला के वृक्षलगेहैं उनके फल बावडीमें गिरते हैं इससे वह जल रसायन होगयाहै उसजलको पीकर दूधआदि भोजनकरतेहुए हमलोगोंको पाचसौवर्ष यहाआये व्यतीतहोगये इसीसे हम लोगोंके बाल बहुतबढगये और चेष्टाभी बदलगई है यहा आपलोग हमारे अतिथिहै इससे आश्रममे चलकर कृपाकीजिये उनकी यहप्रार्थनासुनके मृगाकदत्त अपने साथियोसमेत उन के आश्रममेगया और वहांदूध आदिपीके वहदिन वहीं व्यतीतकरके दूसरे दिन प्रातःकाल वहा से चलके अनेकप्रकारके आश्चर्य्योंको देखताहुआ किरातो के देशमे पहुचा वहा उसने अपने मित्र शक्तिरक्षकके पास अपना आगमन कहने के लिये श्रुतधिको भेजा श्रुतधिसे मृगाकदत्तका आगमन सुनकर शक्तिरक्षक पुरके बाहर आकर मृगाकदत्तको सब साथियो समेत अपने स्थानमे लेआया उसके घरमें मृगाकदत्त उसके सत्कारको ग्रहणकरके कुछ दिन रहा और उससे अपनी सहायताके लिये तैयाररहनेको कहकर अच्छा मुहूर्त्त देखकर अपने साथियो समेत उज्जयिनीको चला चलते २ एक शून्य बनमें किसी वृक्षके नीचे एक जटाधारी तपस्वीको देखके मृगांकदत्तने पूछा कि हे भगवन् इस आश्रम रहित वनमें आप अकेले क्यों बैठेहो यह सुनकर तपस्वीने कहा कि शुद्धकीर्त्तिनाम महागुरुका मैं शिष्यहू मुझे अनेकप्रकारके मन्त्र सिद्धहैं एकसमय मैंने शुभ लक्षणयुक्त एक क्षत्री के बालकमें अपने एक मन्त्रका आवेशकिया आवेशके प्रभावसे उस बालकने पूछनेपर अनेक सिद्ध औषधियों के स्थान बताकर कहा कि उत्तरदिशामें विन्ध्याचलके वन में एक सिरसका वृक्षहै उस वृक्षके नीचे बडाभारी सर्पों का स्थान है उस स्थानके ऊपर गीली धूलसी पडी रहती है इससे मध्याह्नके समय बहुतसे हस वहा आनकर बैठते हैं उसी स्थानमें पारावतनाम एक बडा सर्प रहताहै उस सर्पके पास देवासुरसग्राममें मिलाहुआ वैदूर्य्य कान्तिनाम बडा दिव्य खड्गहै वह खड्ग जिसको मिलजाय वह सिद्धाधिपतिहोकर कहीं भी पराजित नहींहोगा परन्तु वह खड्ग उसी को प्राप्तहोसक्ता है जिसके बडे वीरलोग सहायकहोंय उस बालकके यह वचनसुनके मैं उसके आवेशको दूरकरके वीर सहायकों को ढूढनेलगा परन्तु सम्पूर्ण पृथ्वीपर भ्रमण करनेपर भी मुझे सहायक नहीं मिले इससे खिन्नहोके मरनेके निमित्त मैं यहा आयाहू उसके यह वचन सुनके मृगांकदत्तने कहा कि

समेत मृगाङ्कदत्तको पालन करकेभी वनरूप अपने देशसे लुब्धकरूप उसके पिता राजाने उसे निकाल दिया वह अन्य वनरूपी उज्जयिनीमें सिंहिनी रूपी शशाङ्कवतीकी प्रशंसा सुनकर उसके लेनेको चला मार्गमें वायुरूपी सर्पके शापने उसके भुजारूपी मन्त्री नष्टकरदिये तब लम्बोदर पुरुषरूपी श्रीगणेशजीने आकर उसके भुजारूपी मन्त्री फिर जोडदिये अर्थात् मन्त्री मिलादिये तदनन्तर सिंहरूपी मृगाङ्कदत्त वहाँ से चलकर अत्यन्त क्लेशभोगके सिंहिनीरूपी शशाङ्कवतीको लेकर अपनेदेशमें आया वहाँ लुब्धकरूपी उसका पिताराजा उसे स्त्रीसहित आया देखकर उसे वनरूपी अपनादेश देके तपोवनको चलागया इस प्रकारसे परमेश्वरने तुमको सम्पूर्णभावीवस्तु दिखलादी इससे तुम्हारे स्वामीको सम्पूर्णमन्त्री और वह स्त्री अवश्य प्राप्तहोंगी महर्षिब्रह्मदंडीके यहवचन सुनकर मैं धैर्य्यधरके उसआश्रमसे चलकर कईदिनोंके पीछे यहाँ आपसे आनमिला इससे आपका मनोरथ सिद्धहोगा और प्रचण्डशक्तिआदिक सम्पूर्णमन्त्री आपको मिलजायँगे क्योंकि आपने प्रस्थानकेसमय विघ्नका हर्ता परमकृपालु भक्तवत्सल श्रीगणाधिपति का पूजन कियाथा इससे वह आपपर प्रसन्नहै विमलबुद्धिसे यह सब वृत्तान्त सुनकर मृगाङ्कदत्त प्रसन्नहोके अपने अन्य मन्त्रियोंको ढूंढताहुआ उज्जयिनी नगरीको चला १३० ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेतृतीयस्तरङ्ग ३ ॥

इसके उपरान्त शशाङ्कवतीके निमित्त श्रुतधि तथा विमलबुद्धिके साथ, उज्जयिनी नगरीको जाता हुआ मृगाङ्कदत्त मार्ग में नर्मदा नदीके तटपर पहुंचा वह नर्मदा इसे देखकर मानों प्रसन्नहोके अपनी चंचल लहररूपी भुजाओंको फैलाकर नृत्यसा कररहीथी वहां मायावटुनाम एक भीलोंका राजा स्नान करनेको आया जैसेही वह स्नान करने लगा वैसेही तीन जल मानुषोंने आकर उसे पकडलिया और उसके सेवक भयभीत होकर भागगये यह देखके मृगाङ्कदत्तने खड्गलेके जलमें जा उनतीनोंको मारकर उसभीलोंके राजाको बचाया उस आपत्तिसे छूट जलके बाहर आके भिल्लराज मायावटुने मृगाङ्कदत्तके चरणोंमें गिरकर पूछा कि आप कौनहैं जिनको परमेश्वर मेरे प्राणोंकी रक्षाकेलिये यहां लाया, किस पुण्यात्माके वंशको आपने अपने जन्मसे सुशोभित किया है और किस देशके पुण्य उदयहुए हैं जहां आप जाइयेगा उसके यह वचन सुनकर श्रुतधिने मृगाङ्कदत्तका सबवृत्तान्त उसे सुनादिया उस वृत्तान्तको सुनकर मायावटुने नम्रतापूर्वक कहा कि आपके अभीष्टकार्य्य में यह दासभी दुर्गपिशाच नाम मातंगपति मित्र समेत यथाशक्ति सहायता करनेकेलिये उद्यत रहैगा हे स्वामी इस दीनके घरको भी चलकर सफलकीजिये इस प्रकार नम्र वचनों से प्रार्थना करके मायावटुने श्रुतधि तथा विमलबुद्धि समेत मृगाङ्कदत्तको अपने ग्राममें लेजाकर अपने ऐश्वर्य्यके अनुसार उसकी बडी सेवा की और उस मातंगपतिनेभी वहां आकर अपने मित्रके प्राणोंकी रक्षाकरनेवाले मृगाङ्कदत्तकी बडी प्रशंसाकी और कहा कि आप मुझे अपना दास समझिये तदनन्तर मायावटुकी प्रार्थनासे मृगाङ्कदत्त कुछदिन वहां रहा एकदिन उसके आगे मायावटु अपने प्रतीहार चंडकेतुकेसाथ चूतसे खेलनेलगा इतनेमें मेघोंकेगर्जनेसे मोर नाचनेलगे उनके देखनेकेलिये मायावटु उठा उसे उठादेखकर चूतके परमरसिक उस प्रतीहारने

कर उस स्त्रीने मकडियोंको अनेक प्रकार के घटोंमें छोडदिया इससे वहमकडिया फिर जीकर उन्हीं जालोंपर घूमनेलगी तब विपके वेगसे कालीमकडियां चिल्लानेलगीं यह देखकर श्वेत मकडिया भी चिल्लानेलगीं उनके इस शब्दसे वहापर बैठेहुए किसी कृपालुमुनिका ध्यान छूटगया तब उन मुनिने अपने मस्तकसे ऐसी ज्वाला छोडी कि जिससे उनमकडियोंके सबजाल जलगये इससे वहसब मकडी जालसे रहितहोकर एक मूंगेके छेददार डंडेमें घुसकर उसडंडेके ऊपर विराजमान तेजमें लीनेहोंगई और वहस्त्री चक्र बैल तथा गधेसमेत कहीं गुप्तहोगई यह चमत्कार देखकर मैं वहीं घूमनेलगा इतने में एक पानीकी तलैया मुझे दिखाई दी उसके किनारेपर बैठके मैंने जलमे एक बडा वनदेखा उसवनमें एकबहे लिये ने सिंहके दशभुजावाले एकबच्चेको पाकर पाला और जब वह बडाहुआ तब क्रोधकरके उसे अपन वनसे निकालदिया वहसिंह किसी वनमें सिंहिनीका शब्द सुनकर उसके ढूंढनेको चला मार्ग में प्रचडवायुसे उसकी दशों भुजाकटगईं तब एकबडे लम्बे पेटवाले पुरुषने आकर उसकी सब भुजा ज्यों की त्यों फिर लगादीं इससे वह सिंह फिर बलवान् होके सिंहिनी की प्राप्ति के लिये दूसरे वनमें गया, वहाँ उसके ढूंढनेमें बहुतसा क्लेश भोगकर उसे पाकर अपने वनमे चलाआया सिंहिनी समेत उसे आयाहुआ देखके वह बहेलिया उसे वह वन सौंपकर कहीं चलागया इसआश्चर्य्य को देखकर मैंने आश्रममें जाके महर्षि ब्रह्मदंडी को यहदोनो आश्चर्य्य सुनाये मेरे वृत्तान्तको सुनकर उन त्रिकालज्ञ मुनिने कहा कि तुम धन्यहो तुमको परमेश्वरने यहसब चमत्कार दिखायाहै जो स्त्री तुमने देखी थी वह मायाहै जो चक्र वह स्त्री घुमारही थी वह संसारहै उस चक्रपर जो भौंरे घूमरहेथे वह जीवहै वह बैल तथा गधा धर्म अधर्म हैं बैल तथा गधेके उगलेहुए दूध तथा रुधिरके फेनके पीनेवाले पाप पुण्यके करनेवाले हैं अपने २ कर्मोंके अनुसार वह श्वेत तथा काले होकर अपने २ कर्म के अनुसार पुत्रादिक जालोंको फैलाकर अच्छे पुष्प तथा विषरूपी सुखदुःखका भोगकरते हैं वह जो सर्प तुमने देखाथा वह कालहै वही उनको अपने शुभ तथा अशुभ मुखमें काटकर मारता है तब वह स्त्री रूपी माया उनको घटरूपी अनेक योनियोमे डालकर फिर उनको उत्पन्न करती है इससे वह फिर अपने २ पुत्रादिक जाल बन्धनोंमें सुख तथा दुःख भोगते हैं तदनन्तर वह जो काली मकडिया तुमने विपसे चिल्लाती देखीथीं वह पापी पुरुष दुःखसे पीडित होकर परमेश्वरको पुकारते थे उन्हें देखकर श्वेत मकडी रूप पुण्यात्मा पुरुष भी वैराग्य युक्तहोके परमेश्वरको ही पुकारनेलगे उनकी पुकारको सुनकर तपस्वी रूप परमेश्वरने ज्वालारूपी ज्ञानमे उनके अज्ञानरूपी सबजाल जलादिये इससे वह सब मुक्तहोकर मूंगेके दंडरूपी सूर्य्य मंडलमें प्रवेशकरके उसके ऊपर स्थित परमधाममें प्राप्तहुए और चक्ररूपी संसार तथा बैल गधे रूपी धर्माधर्म समेत वह मायारूपी स्त्री नष्टहोगई इसप्रकारसे इससंसारमें भ्रमण करतेहुए अपने २ कर्म के अनुसार सुखी तथा दुःखी मनुष्य परमेश्वर के आराधनसे ही मुक्तहोते हैं यहबात तुम्हारे मोह दूरकरने के लिये परमेश्वरने तुमको दिखलाई है अबतलैयाके तटपर जो तुमने देखाहै सो भी सुनो वह सब मृगाङ्कदत्तके वृत्तान्तकी होनेवाली बातकी सूचना है सिंह के दशभुजवाले बच्चे के तुल्य दशमंत्रियों

समेत मृगाङ्कदत्तको पालनकरकेभी वनरूप अपने देशसे लुब्धकरूप उसके पिता राजाने उसे निकाल दिया वह अन्य वनरूपी उज्जयिनीमें सिंहिनी रूपी शशाङ्कवतीकी प्रशंसा सुनकर उसके लेनेको चला मार्गमें वायुरूपी सर्पके शापने उसके भुजारूपी मन्त्री नष्टकरदिये तब लम्बोदर पुरुषरूपी श्रीगणेशजीने आकर उसके भुजारूपी मन्त्री फिर जोड़दिये अर्थात् मन्त्री मिलादिये तदनन्तर सिंहरूपी मृगाङ्कदत्त वहाँ से चलकर अत्यन्त क्लेशभोगके सिंहिनीरूपी शशाङ्कवतीको लेकर अपनेदेशमें आया वहाँ लुब्धकरूपी उसका पिताराजा उसे स्त्रीसहित आया देखकर उसे वनरूपी अपनादेश देके तपोवनको चलागया इस प्रकारसे परमेश्वरने तुमको सम्पूर्णभावीवस्तु दिखलादी इससे तुम्हारे स्वामीको सम्पूर्णमन्त्री और वह स्त्री अवश्य प्राप्तहोंगी महर्षिब्रह्मदंडी के यहवचन सुनकर मैं धैर्यधरके उसआश्रमसे चलकर कईदिनोंके पीछे यहाँ आपसे आनमिला इससे आपका मनोरथ सिद्धहोगा और प्रचण्डशक्तिआदिक सम्पूर्णमन्त्री आपको मिलजायँगे क्योंकि आपने प्रस्थानकेसमय विघ्नोंका हर्ता परमकृपालु भक्तवत्सल श्रीगणाधिपति का पूजन कियाथा इससे वह आपपर प्रसन्नहै विमलबुद्धिसे यह सब वृत्तान्त सुनकर मृगाङ्कदत्त प्रसन्नहोके अपने अन्य मन्त्रियोंको ढूंढताहुआ उज्जयिनी नगरीको चला १३२॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेतृतीयस्तरङ्ग ३॥

इसके उपरान्त शशाङ्कवतीके निमित्त श्रुतधि तथा विमलबुद्धिके साथ उज्जयिनी नगरीको जाता हुआ मृगाङ्कदत्त मार्ग में नर्मदा नदीके तटपर पहुंचा वह नर्मदा इसे देखकर मानों प्रसन्नहोके अपनी चंचल लहररूपी भुजाओंको फैलाकर नृत्यसा करहीथी वहां मायावटुनाम एक भीलोंका राजा स्नान करनेको आया जैसेही वह स्नान करने लगा वैसेही तीन जल मानुषोंने आकर उसे पकड़लिया और उसके सेवक भयभीत होकर भागगये यह देखके मृगाङ्कदत्तने खड्गलेके जलमें जा उनतीनोंको मारकर उसभीलोंके राजाको बचाया उस आपत्तिसे छूट जलके बाहर आके भिल्लराज मायावटुने मृगाङ्कदत्तके चरणोंमें गिरकर पूछा कि आप कौनहैं जिनको परमेश्वर मेरे प्राणोंकी रक्षाकेलिये यहां लाया किस पुण्यात्माके वंशको आपने अपने जन्मसे सुशोभित किया है और किस देशके पुण्य उदयहुए हैं जहां आप जाइयेगा उसके यह वचन सुनकर श्रुतधिने मृगाङ्कदत्तका सबवृत्तान्त उसे सुनादिया उस वृत्तान्तको सुनकर मायावटुने नम्रतापूर्वक कहा कि आपके अभीष्टकार्य्य में यह दासभी दुर्गपिशाच नाम मातङ्गपति मित्र समेत यथाशक्ति सहायता करनेकेलिये उद्यत रहेगा हे स्वामी इस दीनके घरको भी चलकर सफलकीजिये इस प्रकार नम्र वचनों से प्रार्थना करके मायावटुने श्रुतधि तथा विमलबुद्धि समेत मृगाङ्कदत्तको अपने ग्राममें लेजाकर अपने ऐश्वर्य्यके अनुसार उसकी बड़ी सेवा की और उस मातङ्गपतिनेभी वहां आकर अपने मित्रके प्राणोंकी रक्षाकरनेवाले मृगाङ्कदत्तकी बड़ी प्रशंसाकी और कहा कि आप मुझे अपना दास समझिये तदनन्तर मायावटुकी प्रार्थनासे मृगाङ्कदत्त कुछदिन वहां रहा एकदिन उसके आगे मायावटु अपने प्रतीहार चण्डकेतुकेसाथ नृत्यदेखनेलगा इतनेमें मेघोंकेगर्जनेसे मोर नाचनेलगे उनके देखनेकेलिये मायावटु उठा उसे उठादेखकर नृत्यके परमरसिक उस प्रतीहारने

कर उन तीनों मकड़ियों को अनेक प्रकार के घटोंमें छोड़दिया इससे वहमकडियां फिर जीकर उन्हीं जालोंपर घूमनेलगीं तब विषके वेगसे कालीमकडियां चिल्लानेलगीं यह देखकर श्वेत मकडियां भी चिल्लानेलगीं उनके इस शब्दसे वहांपर बैठेहुए किसी कृपालुमुनिका ध्यान छूटगया तब उन मुनिने अपने मस्तकसे ऐसीज्वाला छोड़ी कि जिससे उनमकडियों के सबजाल जलगये इससे वहसब मकड़ी जालसे रहितहोकर एक मूंगेके छेददार डंडेमें घुसकर उसडंडेके ऊपर विराजमान तेजमें लीनहोगईं और वहस्त्री चक्र बैल तथा गधेसमेत कहीं गुप्तहोगई यह चमत्कार देखकर मैं वहीं घूमनेलगा इतने मे एक पानीकी तलैया मुझे दिखाई दी उसके किनारेपर बैठके मैंने जलमे एकबडा वनदेखा उसवनमें एकव्रहे लिये ने सिंहके दशभुजावाले एकबच्चेको पाकर पाला और जब वह बडाहुआ तब क्रोधकरके उसे अपन वनसे निकालदिया वहसिंह किसी वनमें सिंहिनीका शब्दसुनकर उसके ढूंढनेको चला मार्ग मे प्रचण्डवायुसे उसकी दशों भुजाकटगईं तब एकबडे लम्बे पेटवाले पुरुषने आकर उसकी सब भुजा ज्यों की त्यों फिर लगादीं इससे वह सिंह फिर बलवान् होके सिंहिनी की प्राप्ति के लिये दूसरे वनमे गया वहां उसके ढूंढनेमें बहुतसा क्लेश भोगकर उसे पाकर अपने वनमें चलाआया सिंहिनी समेत उसे आयाहुआ देखके वह बहेलिया उसे वह वन सौंपकर कहीं चलागया इसआश्चर्य्य को देखकर मैंने आश्रममें जाके महर्षि ब्रह्मदंडी को यहदोनों आश्चर्य्य सुनाये मेरे वृत्तान्तको सुनकर उन त्रिकालज्ञ मुनिने कहा कि तुम धन्यहो तुमको परमेश्वरने यहसब चमत्कार दिखायाहै जो स्त्री तुमने देखी थी वह मायाहै जो चक्र वह स्त्री घुमारही थी वह संसारहै उस चक्रपर जो भौंरे घूमरहेथे वह जीवहैं वह बैल तथा गधा धर्म अधर्म हैं बैल तथा गधेके उगलेहुए दूध तथा रुधिरके फेनके पीनेवाले पाप पुण्यके करनेवाले हैं अपने २ कर्मोंके अनुसार वह श्वेत तथा काले होकर अपने २ कर्म के अनुसार पुत्रादिक जालोंको फैलाकर अच्छे पुष्प तथा विषरूपी सुखदुःखका भोगकरते हैं वह जो सर्प तुमने देखाथा वह कालहै वही उनको अपने शुभ तथा अशुभ मुखसे काटकर मारता है तब वह स्त्री रूपी माया उनको घटरूपी अनेक योनियोंमे डालकर फिर उनको उत्पन्न करती है इससे वह फिर अपने २ पुत्रादिकजाल बन्धनोंमें सुख तथा दुःख भोगते हैं तदनन्तर वह जो काली मकडियां तुमने विषसे चिल्लाती देखीथीं वह पापी पुरुष दुःखसे पीडित होकर परमेश्वरको पुकारते थे उन्हें देखकर श्वेत मकडी रूप पुण्यात्मा पुरुष भी वैराग्य युक्तहोके परमेश्वरको ही पुकारनेलगे उनकी पुकारको सुनकर तपस्वी रूप परमेश्वरने ज्वालारूपी ज्ञानसे उनके अज्ञानरूपी सबजाल जलादिये इससे वह सब मुक्तहोकर मूंगेके दंडरूपी सूर्य्य मंडलमे प्रवेशकरके उसके ऊपर स्थित परमधाममें प्राप्तहुए और चक्ररूपी संसार तथा बैल गधे रूपी धर्माधर्म समेत वह मायारूपी स्त्री नष्टहोगई इसप्रकारसे इससंसारमें भ्रमण करतेहुए अपने २ कर्म के अनुसार सुखी तथा दुखी मनुष्य परमेश्वर के आराधनसे ही मुक्तहोते हैं यहबात तुम्हारे मोह दूरकरने के लिये परमेश्वरने तुमको दिखलाई हैं अबनलेयाके तटपर जो तुमने देखाहै सो भी सुनो वह सब मृगाङ्कदत्तके वृत्तान्तकी होनेवाली बातकी सूचना है सिंह के दशभुजवाले बच्चे के तुल्य दशमंत्रियों

जहा वह मोर बन्दहै और वहीं शयनके लिये इसको पलँग बिछादो उसकी यह आज्ञापाकर वह सेवक मृगाङ्कदत्तको वहीं लेगया और पलँग बिछाके तथा दीपक बालके द्वारके बाहरकी कुण्डी बन्दकरके अपने स्थानपर चलागया उसके चलेजाने पर मृगाङ्कदत्त ने पिंजरे में बन्दहुए एकमोरको देखा ५२ और उसे देखकर यहशोचके कि जिसमोरकी प्रशंसा प्रतीहारने कीथी वह यही है उसको पिंजरे से खोल दिया वह मोर पिंजरे से निकलकर मृगाङ्कदत्तको देखकर उसके पैरोंपर बारम्बार लोटनेलगा उस लोटते हुए मोरके गले में एक सूत बँधाहुआ देखकर मृगाङ्कदत्त ने सूतसे उसे पीड़ित जानकर उसका वह सूत तोड़डाला सूतके टूटतेही वह मोर उसका भीमपराक्रम मंत्री होकर उसके पैरोंपर गिरा उसे उठाकर गलेमें लगाकर उससे मृगाङ्कदत्त ने पूछा कि हे मित्र कहो तो यह क्या चमत्कारहै यह सुनकर उसने प्रसन्नहोकर कहा कि हे स्वामी आप सुनिये मैं अपना सब वृत्तान्त आपसे कहताहूं सर्पके शापसे जब आपका साथ मुझसे छूटा तो वनमें घूमते २ मुझे एक सेमरकावृक्ष मिला उस वृक्षमें गणेशजीकी एक प्रतिमागडीहुई देखकर मैं प्रणामकरके उस वृक्षकी जड़पर बैठगया और यह शोचनेलगा कि मैंने जो स्वामी से वेतालका वृत्तान्त कहदिया यह बड़ा पापकिया क्योंकि इसी निमित्त स्वामी को इतने दुःख भोगने पड़ेहैं इससे मैं इस अपने पापी शरीरको त्यागदूंगा यह शोचके मैं गणेशजी के आगे निराहार होकर बैठगया मुझे वहां बैठे २ कई दिन व्यतीतहोजाने पर एक वृद्धपथिक उसीमार्ग में आकर वृक्षके नीचे छाया में बैठगया और मुझे म्लान देखकर बोला कि हे पुत्र इस निर्जन वनमें तुम अकेले क्यों बैठेहो उसके यह वचन सुनके मैंने अपना सब वृत्तान्त उससे कहदिया मेरे वृत्तान्तको सुनकर उसवृद्ध ने कहा कि तुम वीरहोकरभी स्त्रियोंकेसमान क्यों प्राणदेनेको उद्यतहुए हो देखो स्त्रियाभी आपत्तिमें धैर्य्य को नहीं छोड़ती हैं इस विषयपर मैं तुमको एककथा सुनाताहूं कोशला नाम नगरी में विमलाकरनाम राजाके कमलाकरनाम पुत्रथा जिसेब्रह्माने मानोंस्वामिकार्त्तिक, कामदेव तथा कल्पवृक्षको जीतनेकेलिये तेजरूप तथा दातृत्वगुण से युक्त कियाथा एकसमय उस कमलाकर के आगे किसी वन्दीजन ने यह श्लोक पढ़ा कि (पद्मासादनसोत्सवनानामुखरद्विजालिपरिगीतम्। कमलाकरमप्राप्य रतिंहंसावली लभताम्) कमलों की प्राप्तिमें प्रसन्न अनेक शब्दायमान पक्षियोंके मनोहर शब्दों से युक्त कमलाकर को न पाकर हंसावली को कहा चैनपड़े इसश्लोकको सुनकर कमलाकरने मनोरथ सिद्धि नाम उस बन्दी से पूछा कि तुम इसश्लोकको बारम्बार क्यों पढ़तेहो उसने कहा कि हे स्वामी सुनिये एक समय परदेशमें पर्य्यटन करताहुआ मैं मेघमाली नाम राजाकी विदीशानाम नगरी में गया वहां दर्दुरक नाम गीताचार्य्य के घरमें टिका एकदिन उसने मुझसेकहा कि यहां राजाकी हंसावलीनाम पुत्री कल प्रातःकाल राजाको अपना नवीन सीखाहुआ नृत्य दिखावेगी यहसुनकर दूसरे दिन मैं भी उसके साथ युक्तिपूर्व्वक नृत्यशालामें चलागया वहां चञ्चल आभूषणरूपी पुष्पवाली चंचल हाथ रूपी पत्रवाली और यौवनरूपी वायुसे कांपतीहुई कामदेवकी लतारूपी उस हंसावलीको देखकर मैंने शोचा कि इस सुन्दरी के लिये कमलाकरके सिवाय और कोई पति योग्य नहीं है जो उसके साथ इसका

कहा कि हेस्वामी इननृत्यकेन जाननेवाले मोरोंको देखकर क्याकरियेगा मेरेघरमें एकऐसामोरहै जैसा ससारभरमें नहींहै यदि आपकी इच्छाहोगी तो प्रातःकाल में आपको दिखाऊंगा यहसुनकर मायावटु यहकहके कि अच्छा मुझेदिखाना दिनकीकृत्यकरनेको चलागया और मृगाकदत्तने भी उसके यहवचन सुनके अपने साथियो समेत स्नान भोजनादि कृत्यकिया इसप्रकार दिनके व्यतीत होजानेपर रात्रिके समय मृगाकदत्त सबलोगों के सोजानेपर नीलेकपडे पहनके खड्गलेकर भ्रमण करनेको निकला मार्ग में आतेहुए विना देखे किसी पुरुषके कन्धे से उसका कन्धा लडगया इससे उसने कुपितहोके उसपुरुष से कहा कि तुम मेरे साथ युद्धकरो यह सुनकर उस बुद्धिमान् पुरुषने कहा कि क्यों विना बिचारे क्रोध करतेहो यदि विचारकरो तो चन्द्रमाको दोष देना चाहिये जिसने इस रात्रिको प्रकाशित नहीं किया अथवा ब्रह्माको दोषदेनाचाहिये जिसने सब रात्रियों में प्रकाशकरनेका चन्द्रमाको अधिकार नहीं दियाहै जिसके कारण इस घने अन्धकार मे अकारण वैरहोते हैं यह सुनकर मृगाकदत्त ने तुम बहुत ठीककहते हो यह कहकर उससे पूछा कि तुम कौनहो उसने मिथ्या कहा कि मैं चोरहू यह सुनकर मृगाकदत्त ने हाथबढाकर उससे कहा कि हाथ मिलाओ मैंभी तुम्हारा साथीहू इसप्रकार उसके साथ मित्रताकरके मृगाकदत्त उसीकेसाथ यह कहाँजायगा यह जाननेके लिये चला और एक तृणों से ढकेहुए जीर्णकूपपर पहुँचके उसीके द्वारा सुरगमें होकर मायावटुके अतःपुरमें पहुँचा वहा मृगाकदत्तने तो दीपकके प्रकाश से उसे पहचानलिया कि यह चण्डकेतुनाम प्रतीहारहै चोर नहीं है परन्तु प्रतीहारने उसे नहीं पहचाना क्योंकि एक तो उसका वेष अन्यथा दूसरे वह कोने मे बैठरहा, उस प्रतीहार को देखकर मायावटुकी रानी मजुमती ने उसे अपने गले में लगालिया और अपने पलँगपर बैठाके पूछा कि आज तुम्हारे साथ दूसरा पुरुष कौनहै यह सुनकर प्रतीहार ने कहा कि मेरा एकमित्रहै सावधानरहो यह सुनकर मञ्जुमती बोली कि मुझ अभागिनीको सावधानता कहाँहै देखो इस राजा को मृत्युके मुखसेभी मृगाकदत्तने बचालिया यह सुनकर प्रतीहारने कहा कि शोक मतकरो मैं थोडेहीकालमें मृगाकदत्त और राजा को मारडालूंगा यह सुनकर वह बोली कि क्या बलबलातेहो जब नर्मदा के जल में राजा को जलमानुषों ने पकडाथा तब अकेले मृगाकदत्तनेही उसकी रक्षाकीथी उस समय तुमने उसे क्यों न मारडाला क्यों डरकरे भाग आये इससे तुम चुपरहो ऐसा न होय कि किसी से यह तुम्हारे वचन सुनकर मृगाकदत्त तुम्हें भी मार डाले यह सुनकर प्रतीहारने क्रोधकरके कहा कि हे पापिन तू अब मृगाकदत्तपर आशक्तहुई है इसी से उसकी प्रशसा कररही है अच्छा ले मैं उसका फल तुझे देताहू यह कहके छुरी लेकर वह उसके मारने को चला उसे मारनेको उद्यत देखकर एकचेरीने अपने हाथमें छुरी रोकली और मजुमती वहा से उठ कर भागगई उसके भागजानेपर वह प्रतीहार चेरी के हाथसे छुरी छीनके मृगाकदत्त के साथ सुरंगसे निकलकर अपने घरपरआया वहा मृगाकदत्तने उससे कहा कि तुम अपने घरपर पहुचगये अब मैं जाताहू यहसुनकर उसने उसकी चेष्टा देखने के लिये कहा कि तुमभी थकगयेहोगे यहीं सोरहो प्रातः-काल चलेजाना उसनेकहा कि अच्छा तब प्रतीहारने अपने एक सेवकसेकहा कि इसको बहलेजाओ

जहा वह मोर बन्दहै और वहीं शयनके लिये इसको पलँग विछादो उसकी यह आज्ञापाकर वह सेवक मृगाङ्कदत्तको वहीं लेगया और पलँग विछाके तथा दीपक वालके द्वारके बाहरकी कुण्डी बन्दकरके अपने स्थानपर चलागया उसके चलेजाने पर मृगाङ्कदत्त ने पिंजरे में बन्दहुए एकमोरको देखा ५२ और उसे देखकर यहशोचके कि जिसमोरकी प्रशसा प्रतीहारने कीथी वह यहीहै उसको पिंजरे से खोल दिया वह मोर पिंजरे से निकलकर मृगाङ्कदत्तको देखकर उसके पैरोंपर वारम्बार लोटनेलगा उस लोटते हुए मोरके गले में एक सूत बँधाहुआ देखकर मृगाङ्कदत्त ने सूतसे उसे पीडित जानकर उसका वह सूत तोडडाला सूतके टूटतेही वह मोर उसका भीमपराक्रम मन्त्री होकर उसके पैरोंपर गिरा उसे उठाकर गलेसे लगाकर उससे मृगाङ्कदत्त ने पूछा कि हे मित्र कहो तो यह क्या चमत्कारहै यह सुनकर उसने प्रसन्नहोकर कहा कि हे स्वामी आप सुनिये मैं अपना सब वृत्तान्त आपसे कहताहूं सर्पके शापसे जब आपका साथ मुझसे छूटा तो वनमें घूमते २ मुझे एक सेमरकावृक्ष मिला उस वृक्षमें गणेशजीकी एक प्रतिमागडीहुई देखकर मैं प्रणामकरके उस वृक्षकी जडपर बैठगया और यह शोचनेलगा कि मैंने जो स्वामी से वेतालका वृत्तान्त कहदिया यह बडा पापकिया क्योंकि इसी निमित्त स्वामी को इतने दुःख भोगने पडेहैं इससे मैं इस अपने पापी शरीरको त्यागदूंगा यह शोचके मैं गणेशजी के आगे निराहार होकर बैठगया मुझे वहा बैठे २ कई दिन व्यतीतहोजाने पर एक वृद्धपथिक उसीमार्ग में आकर वृक्षके नीचे छाया मे बैठगया और मुझे म्लान देखकर बोला कि हे पुत्र इस निर्जन वनमें तुम अकेले क्यों बैठेहो उसके यह वचन सुनके मैंने अपना सब वृत्तान्त उससे कहदिया मेरे वृत्तान्तको सुनकर उसवृद्ध ने कहा कि तुम वीरहोकरभी स्त्रियोंके समान क्यों प्राणदेनेको उद्यतहुए हो देखो स्त्रियाभी आपत्तिमें धैर्य्य को नहीं छोडती हैं इस विषयपर मैं तुमको एककथा सुनाताहूं कोशलो नाम नगरी में विमलाकरनाम राजाके कमलाकरनाम पुत्रथा जिसेब्रह्माने मानोंस्वामिकार्त्तिक, कामदेव तथा कल्पवृक्षको जीतनेकेलिये तेजरूप तथा दातृत्वगुण से युक्त कियाथा एकसमय उस कमलाकर के आगे किसी बन्दीजन ने यह श्लोक पढा कि (पद्मासादनसोत्सवनानामुखरद्विजालिपरिगीतम् । कमलाकरमप्राप्याकर्तिहंसावलीं लभताम्) कमलों की प्राप्तिमे प्रसन्न अनेक शब्दायमान पक्षियोंके मनोहर शब्दो से युक्त कमलाकर को न पाकर हसावली को कहा चैनपडे इसश्लोकको सुनकर कमलाकरने मनोरथ सिद्धि नाम उस बन्दी से पूछा कि तुम इसश्लोकको वारम्वार क्यों पढतेहो उसने कहा कि हे स्वामी सुनिये एक समय परदेशमें पर्य्यटन करताहुआ मैं मेघमाली नाम राजाकी विदीशानाम नगरी मे गया जहा दर्दुरक नाम गीताचार्य्य के घरमें टिका एकदिन उसने मुझसेकहा कि यहा राजाकी हंसावलीनाम पुत्री कल प्रातःकाल राजाको अपना नवीन सीखाहुआ नृत्य दिखावेगी यहसुनकर दूसरे दिन मैं भी उसके साथ युक्तिपूर्वक नृत्यशालामें चलागया वहा चञ्चल आभूषणरूपी पुष्पवाली चचल हाथ रूपी पत्रवाली और यौवनरूपी वायुसे कापतीहुई कामदेवकी लतारूपी उस हंसावलीको देखकर मैंने शोचा कि इस सुन्दरी के लिये कमलाकरके सिवाय और कोई पति योग्य नहीं है जो उसके साथ इसका

विवाह न हुआ तो कामदेवका धनुषधारण करनाही व्यर्थ है इससे मुझे इस विषय में कुछ उपाय करना चाहिये यहशोचकर नृत्यके अन्तमें मैंने वहा से उठके राजद्वारमें जाकर यहपत्र लिखकर चिपका दिया कि यहा जो कोई चित्रकार मेरे समान होय वह मेरे सामने आकर चित्र लिखे मेरे इस पत्रका उत्तर किसी नें न दिया इससे राजाने मुझे बडा गुणवान् जानकर अपनी पुत्री हसावलीके यहां चित्र बनाने को नियतकरदिया उसराजपुत्री के मन्दिर में मैंने दीवारपर आपका चित्र लिखदिया और एक अपने विश्वासपात्र मित्रको उन्मत्तरूप बनाके उससे अपना अभिप्राय कहकर कहदिया कि तुम राजमंदिरकेनिकट घूमो उसेघूमते देखकर राजपुत्रीने खिलौने के समान उसे अपनेपास पकड मँगवाया और वहा से हसावली ने अपने खेलनेकेनिमित्त अपने मंदिरमें बुलवाया वहा आकर उसने आपका चित्र देखकरकहा कि आज भाग्यवशसे शख चक्र तथा कमलादि लक्षणों से युक्त विष्णुके समान अनन्त गुणवान् यह कमलाकर दिखाई दिया है उसके यहवचन सुनकर हंसावलीने मुझसे पूछा कि यह क्या वकरहा है और तुमने किसका यह चित्र लिखाहै उसके यह पूछनेपर मैंनेकहा कि हे राजपुत्री मैं जानता हूं कि इस उन्मत्तने इसराजपुत्रको पहले कहीं देखाहै यह कमलाकर नाम राजपुत्रका चित्रहै यह कहकर मैंने आपके रूप तथा गुणोंकी वडी प्रशसाकी उस प्रशसाको सुनकर आपके प्रेमरूपी रससे सिंचेहुए उसके हृदयमें नवीन कामदेवरूपी वृक्ष उत्पन्नहोगया इतनेही में राजाने वहा आकर उस उन्मत्तको नाचते देखके क्रोधकरके मुझे और उस उन्मत्तको वहां से निकलवादिया तब से कृष्णपक्षमें चन्द्रमाकी कलाके समान प्रतिदिन क्षीणहोती हुई आपकेलिये उत्कण्ठित हसावली रोगका वहाना करके अपने पितासे आज्ञा लेकर पापनाशक श्रीकृष्णजी के मन्दिर मे अकेली रहनेलगी और आपकी चिन्ता से व्याकुलहोकर अत्यन्त खेद से दिनोंको व्यतीत करनेलगी एकदिन श्रीकृष्णभगवान् के दर्शन करने के वहाने में उस मन्दिर में गया वहा उसने मुझे देखकर वहुत वस्त्र तथा आभूषण मुझे दिये उनको लेकर बाहर आके एक वस्त्र के कोने में पद्मासादनसोत्सव इत्यादि श्लोक लिखा देखकर यहां आके आपके आगे पढा लीजिये यह वही वस्त्र है जिसमे श्लोक लिखा है उस बन्दी के यह वचन सुनके और वस्त्रके कोने में लिखेहुए उस श्लोकको पढके कमलाकर हंसावली पर आशक्तहोकर उसके मिलने का उपाय शोचनेलगा इतने मे उसके पिता विमलाकरने उसे बुलाकर कहा कि हे पुत्र मन्त्रसे वँधेहुए सर्पोंके समान आलसी राजा नष्टहोजातेहैं और उनका उदय कभी नहींहोता तुमने सुखमें पडकर अभी तक जीतनेकी इच्छानहींकी इससे आलस्य छोडकर उद्योगकरो पहले अगदेशकेराजाको जाकर जीतो क्योंकि वह हमारे ऊपर चढनेकी इच्छाकरहा है पिताके यह वचन सुनकर अपनी प्रियाकेपास जाने की इच्छा करके कमलाकर वहुत प्रसन्नहोके वहुतसी सेनालेकर अगदेशके राजाके जीतने को चला कई दिनों में अगदेश में पहुचकर उसने अगदेशके राजा की सम्पूर्ण सेना मारकर उसे जीताहुआ ही पकडलिया और बँधकर प्रतीहार के द्वारा अपने पिताके पास भेजदिया और उस प्रतीहारसे कह दिया कि मेरे पितासे कहदेना कि मैं अब अन्य राजाओं के जीतने को जाताहू इसप्रकार अगदेशके

राजाको जीतकर मार्ग में अन्य राजाओंको जीतताहुआ कमलाकर विदिशानाम नगरीके निकट पहुँचा
वहाँ ठहरकर उसने राजामेघमाली केपास हंसावलीके मागनेकेलिये दूतभेजा राजा मेघमाली दूतकेद्वारा
कमलाकर का आगमन सुनकर उसकेपास आया और उसका बडा सत्कार करके बोला कि केवलदूत
के द्वारा सिद्ध होनेवाले इस कार्य्य में आपने इतनाश्रम क्यो किया मे तो आपके साथ हंसावली का
विवाह करना ही चाहताथा इसका कारण यहहै कि बाल्यावस्थामें विष्णु भगवान्का पूजन करतीहुई
इसहंसावलीके कोमल अगोको देखके मुझे यह चिन्ताहुई कि इसके सदृश वर कहा मिलैगा यही चि-
न्ता करते २ मुझको महाज्वर उत्पन्नहुआ उसज्वरकी शान्तिके निमित्त मैने विष्णु भगवान्का पूजन
किया उसपूजनके प्रभावसे रात्रिके समय कुछ निद्रा आनेपर स्वप्नमें विष्णु भगवान्ने आकर मुझसे
कहा कि हे पुत्र जिसहंसावली के लिये तुमको यह ज्वर हुआहै वही तुमको अपने हाथसे स्पर्शकरे तो
ज्वर उतर जायगा क्योंकि मेरे पूजनसे वह ऐसी पवित्र होगई है कि वह जिसको अपने हाथसे स्पर्श
करेगी उसका असाध्य ज्वरभी जातारहैगा इसके विवाहकी भी चिन्ता तुम न करो राजपुत्र कमलाकर
इसका पतिहोगा और कुछकाल इसे थोडा कष्टहोगा कृष्ण भगवान्के यह वचन सुनके रात्रिके अन्त
में मेरी निद्रा खुलगई, और हंसावलीके हाथके स्पर्शसे मेराज्वर उतरगया इससे श्रीविष्णु भगवान्की
आज्ञासे ही में हंसावलीका विवाह तुम्हारे साथ अवश्य करूंगा यहकहके लग्नका निश्चयकरके राजा
मेघमाली अपनी राजधानीको चलागया वहा हंसावलीने अपने पितासे सब वृत्तान्त सुनके अपनी
कनकमंजरी सखीसे कहा कि तुमजाकर देखआओ यह वही राजपुत्रहै जिसका चित्र उस चित्रकारने
लिखाहै ऐसा न होय कि मेरेपिता इसीनामके किसी अन्य राजपुत्रके साथ मेरा विवाह करदे यहसुनकर
कनकमंजरी तपस्विनीका वेष बनाके कमलाकर के डेरे में प्रतीहारके द्वारा उसकी आज्ञापाकर उसके
पासगई वहा कामके मोहनास्त्रके समान उसे देखकर कामसे पीडितहोकर उसने सोचा कि जो इसके
साथ मेरा समागम न हुआ तो मेरे जन्मको धिक्कार है इससे इसकी प्राप्तिका कुछ उपाय करना चाहिये
यह सोचकर उसने एकमणि कमलाकरको भेट करके कहा कि इसमणिके धारण करनेसे शत्रुओं के
शस्त्रस्तम्भित होजाते हैं इसबातका मैने कईवार अनुभव किया है तुम्हारे गुणोंको देखकर मैंने तुमको
यह देदीहै क्योंकि तुम्हें तो इसकी आवश्यकता है मुझ तपस्विनी को इसकी क्या आवश्यकता है
यह कहके और उसकी दी हुई भिक्षाको न ग्रहणकरके कनकमंजरी वहा से निकलकर तपस्विनी का
वेष त्यागकर कुछ उदासीनसी होकर हंसावली के पासगई और यह मिथ्या वचन बोली कि हे राज
पुत्री तुम्हारे स्नेह से मै यहगुप्त बात कहतीहू कि यहा से तपस्विनीका वेष धारणकरके मै कमलाकरके
डेरे में गई वहा एकपुरुषने मुझसे कहा कि हे भगवती तुम भूत उतारना जानतीहो मैने कहा कि हा
यह कौन बड़ी बात है यह सुनकर वह मुझे राजपुत्र कमलाकरके पास लेगया उस समय उसपर भूत
का आवेशथा इस से बहुत से पुरुष उसको पकडेहुए बैठेथे और उसके पास अनेक प्रकार की मणि
तथा औषधि रक्खी थीं यह देखकर मै भी झूठमूठ मन्त्र पढ़के प्रातःकाल इसका दोष दूरकरूंगी यह

बिवाह न हुआ तो कामदेवका धनुषधारण करनाही व्यर्थ है इससे मुझे इस विषय मे कुछ उपाय करना चाहिये यहशोचकर नृत्यके अन्तमें मैंने वहा से उठके राजद्वारमें जाकर यहपत्र लिखकर चिपका दिया कि यहा जो कोई चित्रकार मेरे समान होय वह मेरे सामने आकर चित्र लिखे मेरे इस पत्रका उत्तर किसी नें न दिया इससे राजाने मुझे वडा गुणवान् जानकर अपनी पुत्री हंसावलीके यहां चित्र बनाने को नियतकरदिया उसराजपुत्री के मन्दिर में मैंने दीवारपर आपका चित्र लिखदिया और एक अपने विश्वासपात्र मित्रको उन्मत्तरूप वनाके उससे अपना अभिप्राय कहकर कहदिया कि तुम राजमंदिरकेनिकट घूमो उसेघूमते देखकर राजपुत्रीने खिलौने के समान उसे अपनेपास पकड मँगवाया और वहा से हंसावली ने अपने खेलनेकेनिमित्त अपने मंदिरमें बुलवाया वहा आकर उसने आपका चित्र देखकरकहा कि आज भाग्यवशसे शंख चक्र तथा कमलादि लक्षणों से युक्त विष्णुके समान अनन्त गुणवान् यह कमलाकर दिखाई दिया है उसके यहवचन सुनकर हंसावलीने मुझसे पूछा कि यह क्या बकरहा है और तुमने किसका यह चित्र लिखाहै उसके यह पूछनेपर मैंनेकहा कि हे राजपुत्री मैं जानता हूं कि इस उन्मत्तने इसराजपुत्रको पहले कहीं देखाहै यह कमलाकर नाम राजपुत्रका चित्रहै यह कहकर मैंने आपके रूप तथा गुणोकी वडी प्रशसाकी उस प्रशसाको सुनकर आपके प्रेमरूपी रससे सिंचेहुए उसके हृदयमें नवीन कामदेवरूपी वृक्ष उत्पन्नहोगया इतनेही मे राजाने वहा आकर उस उन्मत्तको नाचते देखके क्रोधकरके मुझे और उस उन्मत्तको वहां से निकलवादिया तब से कृष्णपक्षमें चन्द्रमाकी कलाके समान प्रतिदिन क्षीणहोती हुई आपकेलिये उत्कण्ठित हंसावली रोगका बहाना करके अपने पितासे आज्ञा लेकर पापनाशक श्रीकृष्णजी के मन्दिर मे अकेली रहनेलगी और आपकी चिन्ता से व्याकुलहोकर अत्यन्त खेद से दिनोंको व्यतीत करनेलगी एकदिन श्रीकृष्णभगवान् के दर्शन करने के वहाने में उस मन्दिर में गया वहा उसने मुझे देखकर वहुत वस्त्र तथा आभूषण मुझे दिये उनको लेकर बाहर आके एक वस्त्र के कोने में पद्मासादनसोत्सव इत्यादि श्लोक लिखा देखकर यहां आके आप के आगे पढा लीजिये यह वही वस्त्र है जिसमें श्लोक लिखा है उस बन्दी के यह वचन सुनके और वस्त्रके कोने में लिखेहुए उस श्लोकको पढके कमलाकर हंसावली पर आशक्तहोकर उसके मिलने का उपाय शोचनेलगा इतने मे उसके पिता विमलाकरने उसे बुलाकर कहा कि हे पुत्र मन्त्रसे बँधेहुए सर्पोंके समान आलसी राजा नष्टहोजातेहै और उनका उदय कभी नहींहोता तुमने सुखमें पडकर अभी तक जीतनेकी इच्छा नहींकी इससे आलस्य छोडकर उद्योगकरो पहले अंगदेशकेराजाको जाकर जीतो क्योंकि वह हमारे ऊपर चढनेकी इच्छाकररहा है पिताके यह वचन सुनकर अपनी प्रियाकेपास जाने की इच्छा करके कमलाकर वहुत प्रसन्नहोके वहुतसी सेनालेकर अंगदेशके राजाके जीतने को चला कई दिनों में अंगदेश में पहुंचकर उसने अंगदेशके राजा की सम्पूर्ण सेना मारकर उसे जीताहुआ ही पकडलिया और बांधकर प्रतीहार के द्वारा अपने पिताके पास भेजदिया और उस प्रतीहारसे कह दिया कि मेरे पितासे कहदेना कि मैं अब अन्य राजाओं के जीतने को जाताहूं इसप्रकार अंगदेशके

राजाको जीतकर मार्ग में अन्य राजाओंको जीतताहुआ कमलाकर विदिशानाम नगरीके निकट पहुँचा वहाँ ठहरकर उसने राजामेघमाली केपास हंसावलीके मांगनेकेलिये दूतभेजा राजा मेघमाली दूतकेद्वारा कमलाकर का आगमन सुनकर उसकेपास आया और उसका बड़ा सत्कार करके बोला कि केवलदूत के द्वारा सिद्ध होनेवाले इस कार्य्य में आपने इतनाश्रम क्यों किया मैं तो आपके साथ हंसावली का विवाह करना ही चाहताथा इसका कारण यहहै कि बाल्यावस्थामें विष्णु भगवान्का पूजन करतीहुई इसहंसावलीके कोमल अंगोंको देखके मुझे यह चिन्ताहुई कि इसके सदृश वर कहां मिलेगा यही चिन्ता करते २ मुझको महाज्वर उत्पन्नहुआ उसज्वरकी शान्तिके निमित्त मैंने विष्णु भगवान्का पूजन किया उसपूजनके प्रभावसे रात्रिके समय कुछ निद्रा आनेपर स्वप्नमें विष्णु भगवान्ने आकर मुझसे कहा कि हे पुत्र जिसहंसावली के लिये तुमको यह ज्वर हुआहै वही तुमको अपने हाथसे स्पर्शकरे तो ज्वर उतर जायगा क्योंकि मेरे पूजनसे वह ऐसी पवित्र होगई है कि वह जिसको अपने हाथसे स्पर्श करेगी उसका असाध्य ज्वरभी जातारहैगा इसके विवाहकी भी चिन्ता तुम न करो राजपुत्र कमलाकर इसका पतिहोगा और कुछकाल इसे थोड़ा कष्टहोगा। कृष्ण भगवान्के यह वचन सुनके रात्रिके अन्त में मेरी निद्रा खुलगई, और हंसावलीके हाथके स्पर्शसे मेराज्वर उतरगया, इससे श्रीविष्णु भगवान्की आज्ञासे ही मैं हंसावलीका विवाह तुम्हारे साथ अवश्य करूंगा यहकहके लग्नका निश्चयकरके राजा मेघमाली अपनी राजधानीको चलागया वहां हंसावलीने अपने पितासे सब वृत्तान्त सुनके अपनी कनकमंजरी सखीसे कहा कि तुमजाकर देखआओ यह वही राजपुत्रहै जिसका चित्र उस चित्रकारने लिखाहै ऐसा न होय कि मेरेपिता इसीनामके किसी अन्य राजपुत्रके साथ मेरा विवाह करदें यहसुनकर कनकमंजरी तपस्विनीका वेष बनाके कमलाकर के डेरे में प्रतीहारके द्वारा उसकी आज्ञापाकर उसके पासगई वहां कामके मोहनास्त्रके समान उसे देखकर कामसे पीडितहोकर उसने सोचा कि जो इसके साथ मेरा समागम न हुआ तो मेरे जन्मको धिक्कार है इससे इसकी प्राप्तिका कुछ उपाय करना चाहिये यह सोचकर उसने एकमणि कमलाकरको भेट करके कहा कि इसमणिके धारण करनेसे शत्रुओं के शस्त्रस्तंभित होजाते हैं इसबातका मैंने कईबार अनुभव किया है तुम्हारे गुणोंको देखकर मैंने तुमको यह देदीहै क्योंकि तुम्हें तो इसकी आवश्यकता है मुझ तपस्विनी को इसकी क्या आवश्यकता है यह कहके और उसकी दी हुई भिक्षाको न ग्रहणकरके कनकमंजरी वहां से निकलकर तपस्विनी का वेष त्यागकर कुछ उदासीनसी होकर हंसावली के पासगई और यह मिथ्या वचन बोली कि हे राज-पुत्री तुम्हारे स्नेह से मैं यहगुप्त बात कहतीहूं कि यहां से तपस्विनीका वेष धारणकरके मैं कमलाकरके डेरे में गई वहां एकपुरुषने मुझसे कहा कि हे भगवती तुम भूत उतारना जानतीहो मैंने कहा कि हां यह कौन बड़ी बात है यह सुनकर वह मुझे राजपुत्र कमलाकरके पास लेगया उस समय उसपर भूत का आवेशथा इस से बहुत से पुरुष उसको पकड़ेहुए बैठेथे और उसके पास अनेक प्रकार की मणि तथा ओषधि रक्खी थीं यह देखकर मैं भी झूठमूठ मंत्र पढ़ के प्रातःकाल इसका दोष दूरकरूंगी यह

कहके तुम्हारे पास चली आई हू इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यह वही कमलाकर है अब तुम जैसा उचित समझो सो करो उसके यह वचन सुनकर सरल प्रकृतिवाली हसावलीने बहुत दुखित होकरकहा कि ब्रह्मा अपनी गुणवती सृष्टिमें कोई न कोई दोप अवश्य लगादेते है जैसे चन्द्रमामें कलक, मैं उसे अपना पति तो बनाही चुकीहू इससे दूसरा पति करना तो मुझे योग्य नहीं है परन्तु प्राणदेना अथवा किसी वनमे चलाजाना उचितहै अव तुम वताओ मुझे क्या करना चाहिये यह सुनके उस दुष्ट कनक मजरीने कहा कि विवाहके समय तुम अपनासा वेप बनाके किसी सखीको बैठालके जब सब लोग कामोंमें लगजाय तब तुम मेरे साथ कही चलीचलना यह सुनकर हसावली ने कहा कि तुम्हीं मेरा स्वरूप धारण करके उसके साथ विवाह करना क्योकि तुम्हारे समान और कोई विश्वासपात्र मेरी सखी नहीं है यह सुनकर कनकमजरीने कहा कि धैर्य्यधरो ऐसाही करूगी परन्तु उस समय जैसा मैं तुमसे कहू वैसाही करना उसे इसप्रकार सावधान करके अपनी अशोककरी नाम सखीसे कनकमजरी ने जाकर सब वृत्तान्तकहा और उसे भी हसावलीके पास लेजाकर परिचित करवादिया तदनन्तर विवाह के दिन जब सायकालके समय कमलाकर अपनी सम्पूर्ण सेना लेकर राजमदिरमे आया तो उत्सवमें सब लोगोके लगजानेपर कनकमजरीने युक्ति पूर्व्वक सब सखियोंको हटाके अपना वेष हसावलीकासा बनालिया और अपनासा अशोककरीका वेपबनाकर हसावली से कहा कि इस पुरके पश्चिमद्वार से जाके कोसभरपर एक पुराना सेमरका वृक्षहै वहीं जाकर तुम उसके खोलमें बैठरहो सम्पूर्ण कार्य्य करके मै वहीं तुम्हारे पास आऊगी उसके यहवचन सुनकर हसावली सखीकासा वेपवनाके पुरी के पश्चिम द्वारसे जाके उस सेमरके वृक्षके निकट पहुँची और उसवृक्षके खोलको वहुत अन्धकार युक्त देखके भय भीतहोकर पासके एकवरगदके वृक्षपर चढके अपनी सखी का मार्ग देखनेलगी उस सरल चित्तवाली हसावलीको अनतक उसदुष्ट कनकमञ्जरीका कुछभी अभिप्राय नहीं मालूमहुआ इसबीचमें लग्नकासमय आजानेपर हसावलीका वेपवनायेहुए कनकमञ्जरीका विवाह राजाने कमलाकरके साथ करदिया उस समय रात्रिके और घूघटके कारण उसकारूप किसीने पहचाना नहीं विवाहकरके उसबनीहुई हसावली को कनकमञ्जरी रूपधारिणी अशोककरी समेत लेकर उसी दिन शुभ लग्न और नक्षत्रहोनेके कारण कमलाकरपुरीके पश्चिम द्वारसे अपने डेरेको चला मार्गमे उस सेमरके वृक्षके निकट आकर जहा हसावली वरगदके वृक्षपर बैठीथी कनकमञ्जरी एकाएकी भयभीतसी होकर कमलाकरसे लिपटकर बोली कि हे आर्यपुत्र आज रात्रिको मैंने यहस्वप्नदेखा कि इस सेमरके वृक्षसे निकलकर एकराक्षसी मुझे खानेको दौडी तब किसी ब्राह्मणने दौडकर मुझे बचाया और कहा कि हे पुत्री इसवृक्षको तुम जलवादेना और जो कोई स्त्री इसमेंसे निकलकर भागे उसे इसीमें डलवादेना इसप्रकारसे तेरा कल्याणहोगा यहकहके उस ब्राह्मणके अन्तर्द्धानहोजानेपर मेरी निद्राखुलगई इसीमे इसवृक्षको देखकर मुझे उसराक्षसीका वडा भय मालूमहोताहै उसके यहवचन सुनकर कमलाकरने अपने सेवकोको आज्ञादेके वहवृक्ष जलवादिया उसवृक्षके जलजानेमे कनकमञ्जरीने जाना कि हसावली जलगई क्योंकि वह उसमे से निकली नहीं

तदनन्तर अत्यन्त प्रसन्नहुई कनकमञ्जरीको सत्य हंसावली जानकर कमलाकर उसेलेकर अपने डेरेपर आया और वहासे शीघ्रही अपना डेरा उठाकर कोशलापुरीको आया वहा राजा निमलाकर नत्रुसमेत अपने पुत्रको देखकर उसे राज्य देकर तपोवनको चलागया और कमलाकर कनकमञ्जरीके साथ राज्य के सुखका भोगकरनेलगा उनदिनों वह मनोरथसिद्धिनाम वन्दी किसी कार्य्यमे कहीं दूरचला गयाथा इससे उस कनकमञ्जरीको कोईभी नहीं पहचानसका इसबीचमे वरगदके वृक्षपर बैठीहुई हंसावलीने वह सब वृत्तान्त देखके और सुनकर अपनेको छलीगई जानकर कमलाकरके वहासे चले आनेपर शोचा कि इसदुष्ट सखीने छलकरके मेरा पति छीनलिया यह मुझे जलाकर सुखभोगना चाहती है ठीकहै (अश्रेयसेनकस्यविश्वासोदुर्जनेजने) दुर्जन जनपर विश्वास करनेसे किसको दुःखनहीं होताहै अच्छा अब मैं इसजलते हुए वृक्ष में अपने शरीरको जलाकर इसदुःखसे छूटूं यह शोचके वह उसवरगदपर से उतर के प्राणदेनेको उद्यतहुई भाग्यवशसे उससमय उसके चित्तमें यहविचार उत्पन्नहुआ कि मैं व्यर्थ अपने प्राण क्योंदूं कदाचित् जीतीरहूंगी तो उसदुष्ट सखी से अपना बदला लूंगी क्योंकि मेरे पिता से स्वप्नमें विष्णु भगवान्ने कहाथा कि हंसावली को कमलाकर पति प्राप्तहोगा परन्तु बीच मे इसको कुछ क्लेश प्राप्तहोगा इससे मैं वन मे जाकर कुछकाल व्यतीतकरूं यह निश्चयकरके हंसावली निर्जन वन मे गई कुछ दूर जाने पर मानों दयाकरके मार्ग दिखाने के लिये वह रात्रि व्यतीत होगई और उसको देखकर मानो दुःखितहोके आकाश ओसरूपी अश्रु छोडनेलगा और मानों उसके आंसूपोंछने के लिये सूर्य्यभगवान्ने अपनी किरणरूपी हाथ फैलाये तब दिन होजाने के कारण कुछ सावधानहुई राजपुत्री हंसावली धीरे २ बहुत दूर चलकर कुश तथा कांटों से घायलहोकर एक वनमें पहुँची वह वन पक्षियों के मनोहर शब्दों से मानो उसे बुलारहाथा कि यहा आओ और वृक्षों के वायुके द्वारा चचल बडे २ पत्तों से मानो उसके श्रमको दूर करने के लिये पखे हांकरहाथा प्रफुल्लित ध्यामके वृक्षोंपर बैठी हुई कोकिलाओं के मनोहर शब्दो से युक्त वसन्तकी बहारवाले उस वनको देखकर हंसावली ने दुःखित होकर शोचा कि यद्यपि यहा पुष्पोंकी रजसेयुक्त मलयाचलकी वायुसे मेरे शरीर मे दाहहोताहै और भ्रमरयुक्त वृक्षों से गिरतेहुए यह पुष्प कामके बाणोंकी समान मेरे शरीरमें लगते हैं तथापि मैं यहीं रहकर अपने पापोंको दूर करने के लिये इन्हीं पुष्पोंसे विष्णुभगवान्का पूजनकरूं यह शोचकर वह कमलाकरकी प्राप्तिके निमित्त बावडियों मे स्नानकरके श्रीकृष्णभगवान्का पूजन करतीहुई फल मूल खाकर वहीं रहनेलगी २०१ इसबीचमे भाग्यवशसे कमलाकरको चातुर्थिक ज्वर आनेलगा यह देखकर उस पापिन बनीहुई हंसावलीरूप कनकमजरीने शोचा कि एकभयतो मुझको अशोककरीके कारण बनाही रहताथा कि ऐसा न होय कि यह मन्त्र भेदकरदे उसपर अब यह दूसरा भय उत्पन्नहुआहै कि जो हंसावलीके पिताने इस मेरे पति कमलाकर से कहाथा कि इसके हाथके स्पर्श से ज्वर नाश होनाहै वहबात जो इसे स्मरण आजायगी तो मेरा सब भेद खुलजायगा इसमें किसी योगिनने जो मुझसे ज्वर नाशकी विधिबताई थी वह करनी चाहिये और उसी विधि से उस अशोककरी को भी मारडालना चाहिये क्योंकि

मनुष्योंकी शरीरकी बलि उसमे देनी आवश्यक होती है ऐसा करने से राजाका ज्वर भी जातारहैगा और अशोककरी भी मरजायगी इस उपायसे मेरे दोनों भय निवृत्त होजायगे यह शोचकर वह रात्रिके समय अशोककरी के द्वारा सब सामग्री को मँगाकर उसको साथलेके श्रीशिवजी के मन्दिरमेंगई वहा जाकर उसने खड्गसे एक बकरा मारकर उसके रुधिरसे श्रीशिवजी को अर्घ देकर स्नानकरवाया उसकी आतोंकी मालापहराई उसका हृदयकमल उनके शिरपर चढाया उसके नेत्रोंकी धूपदी और उसके शिर की बलिदीनी फिर इस प्रकार पूजनकरके शिवलिंगके आगे लालचदनसे चौकादेके उस चौकेपर अष्ट दल कमलवनाके उस कमलपर त्रिपाद तथा त्रिमुख ज्वरकी प्रतिमावनाके रक्खी और उसमे परिवारस- हित ज्वरका आवाहनकरके अशोकवती से कहा कि हे सखी श्रीशिवजी के आगे तुम अधोमुखहोके साष्टाङ्ग प्रणामकरो इससे तुम्हारा बडाकल्याणहोगा यह सुनकर अशोककरी के उसीप्रकारसे लेटजाने पर कनकमजरी ने उसपर खड्गका प्रहारकिया परन्तु भाग्यवशसे खड्ग उसके अच्छेप्रकारसे नही लगा इससे वह घायलहोकर उठकेभागी औरकनकमंजरीको पीछेआते देखकर मुझे कोई बचाओ २ यहकह के चिल्लानेलगी उसके चिल्लाने के शब्दको सुनकर पुरके रक्षकों ने दौडकर कनकमजरीको राक्षसी जानकर मारते २ अधमरी करडाला और अशोककरी से सब वृत्तान्त पूछकर कोतवालको साथलेके उन दोनों स्त्रियों को राजाके सन्मुखलेजाकर सबवृत्तान्तकहा वहा कनकमजरी भयके कारण और प्रहारोंकी व्यथासे शीघ्रहीमरगई यह देखकर राजाने अशोककरीसे कहा कि तुम निर्भयहोकर ठीक २ सब वृत्तान्त कहो राजाकी यह आज्ञापाकर उसने कनकमजरीके आदिसे अन्ततक छलकरने का जो २ वृत्तान्तहुआ था वह सब कह दिया उससे सब तत्त्वको सुनकर राजा कमलाकरने शोचा कि इस दुष्टकनकमजरी ने मुझे ऐसा ठगा कि मैंने अपनेही हाथ से हसावली को जलादिया उस दुष्टाको तो अपने कर्मो का फल मिलगया जो रानीहोकर भी इस प्रकारसे मारीगई परन्तु ब्रह्माने बालकके समान मुझको केवलरूप मात्रसे मोहित करके रत्नहीनकर काच क्यों देदिया देखो मैंने अपने ज्वरके दूर करने के लिये विष्णु भगवान् के दियेहुए हसावली के वरकाभी स्मरण नहींकिया इसप्रकार शोचते २ उसे यह विचार आया कि मेघमाली ने मुझसे कहा था कि विष्णु भगवान् ने कहाहै कि हसावली को कमलाकरही पति प्राप्त होगा परन्तु बीचमें कुछ क्लेशहोगा इससे यह विष्णु भगवान्का वचन मिथ्या नही होसक्ता इसीसे वह कहीं न कहीं अवश्यजीती होगी क्योंकि (स्त्रीचित्तस्येवदैवस्यकोवेत्तिगहनांगतिम्) स्त्रियों के चित्त के समान भाग्यकी गहनगतिको कौन जानसक्ता है इससे उस मनोरथ सिद्धिवदी को फिर बुलवाना चाहिये यह शोचके उसने उस मनोरथ सिद्धिको बुलवाकर कहा कि तुम इनदिनों यहा क्यों नहीं दिखाई दिये अथवा जिनको धूर्तठगते हैं वहा मनोरथ सिद्धि कैसे होसक्ती है यह सुनकर मनोरथ सिद्धिने कहा कि हे स्वामी राजद्वारमें मन्त्र भेदकरने से अनेक आपत्ति आनपडती हैं इस भयसे में नहीं आया आप हसावली के निमित्त विषाद न कीजिये क्योंकि विष्णु भगवान् ने ही उसको कुछकाल क्लेशभोगनेको कहाहै इनदिनों वही उसकी रक्षाकररहेहोंगे क्या आपने धर्म्म अधर्मका उदाहरण यहीं नहीं देखलिया

हे स्वामी अब मैं उसका पतालगाने के लिये जाऊंगा बन्दीके यह वचनसुनकर कमलाकर ने कहा कि मैं भी तुम्हारे साथ चलूंगा क्योंकि यहा मेराचित्त क्षणभरभी नहीं लगताहै यह कहकर और अपने प्रज्ञा दृढनाम मन्त्रीको राज्य सौंपकर कमलाकर मनोर्थसिद्धिके साथ चला और क्रमसे अनेक ग्राम वन तथा आश्रमों को ढूढताहुआ उस वन में पहुँचा जहाँ हसावली तप कररहीथी वहा लाल अशोकके नीचे बैठीहुई चन्द्रमाकी अन्तिमकलाके समान हसावलीको देखकर उसने बन्दी से कहा कि यह कौन स्त्री निश्चल बैठे हुए ध्यान कररही है यह तो कोई देवी मालूम होती है क्योंकि इसकारूप मृत्युलोक के योग्य नहीं है यह सुनके बन्दी ने उसे पहचानकर कहा कि हे स्वामी आप बडे भाग्यी हो यह वही हसावली है उन दोनों की यह वार्त्तालाप सुनकर और बन्दी को पहचानकर हसावली का दुःख एकाएकी नवीनसा होगया और वह धैर्य्य छोडकर चिल्लानेलगी कि हे तात हे आर्य्यपुत्र कमलाकर हे मनोर्थ सिद्धि तुम कहाँ हो हाय मेरे विपरीत भाग्य ने यह क्या किया इसप्रकार विलाप करते २ उसे मूर्च्छा आगई और कमलाकरभी उसे रोते देख के बहुत दुखितहोके पृथ्वी मे गिरपडा उन दोनो को मूर्च्छित देखकर मनोर्थसिद्धि ने जल छिडकर दोनों को जगा के परस्पर मिलाया इसप्रकार वियोगरूपी समुद्रको पारकरके वह दोनो अत्यन्त आनन्दको प्राप्तहुए और परस्पर अपना २ वृत्तान्त कहकर वह दोनों मनोर्थसिद्धि समेत कोशलापुरी में आये वहाँआकर कमलाकर ने हसावली के पिता राजा मेघमालीको बुलवाकर उससे सब वृत्तान्त कहके हसावलीके साथ विधिपूर्व्वक विवाह किया इस प्रकार हसावलीको पाकर राजा कमलाकर मनोर्थसिद्धिको बहुतसे ग्राम तथा धन देकर आनन्दपूर्व्वक हसावलीकेसाथ राज्यका सुख भोगनेलगा इसीप्रकारसे जो कोई आपत्तिमें अपने धैर्य्यको नहीं त्यागतेहैं उनके सब कार्य्य सिद्ध होतेहैं इससे हे पुत्र शरीर न त्यागकरो तुम्हारा स्वामी तुमको मिलजायगा इसप्रकार यह कथा कहके वह वृद्ध पथिक मुझे मरनेसे निवारण करके वहां से चलागया २२१ यह वृत्तान्त कहके चडकेतुके घरमें मृगाङ्कदत्तसे भीमपराक्रमने फिर कहा कि उसवृद्धका उपदेशपाकर में आपसे मिलनेको उज्जयिनी नगरीमें गया वहा आपको न पाकर थकके एकस्त्रीके यहा रहने के निमित्तगया वहा उसे भोजनका मूल्य देकर उसकी दीहुई शय्यापर हारा थका होकर सोरहा क्षणभरके बाद मेरी निद्रा खुलगई तब मैंने चुपचाप लेटे २ देखा कि उसस्त्रीने मुट्ठीभर जौ लेकर मन्त्रपढ २ कर बोये बोतेही वह जौ उसी समय पैदाहोके फलकर पकगये उन जवोंको काटकर भूनके तथा पीस के वह स्त्री सत्तूबनाके एक कासेके पात्रमें रखके स्नान करनेको चलीगई यह देखके मैं उसे शाकिनी जानकर जल्दी से उठके वह सत्तू किसी अन्य पात्रमे रखकर और उस पात्रमें अन्य सत्तू रखकर फिर वैसेही लेटरहा तदनन्तर उसस्त्री ने आके मुझे जगाके उसपात्रमें से सत्तू निकालके मुझे खानेको दिये और मेरे कृत्यको विना जाने उसपात्रके सत्तू जो मैंने अलग रक्खे थे आप निकालकर खाये उनके खातेही वह बकरी होगई तब मैंने उसे लेजाके एक वनियेके हाथ बेचडाला उस वनियेकी स्त्रीने उस बकरी को देख बडे क्रोध पूर्व्वक मुझसे कहा कि तुमने मेरी सखी के साथ छल कियाहै इसका फल

रुप मिलाहै जिसने अकेलेही हमारीसेनाके पाचसौ वीर मारडाले उसको वडे उद्योगसे हमलोग लाये हैं यहसुनकर मायावटुने कहा कि अच्छा उसे यहा लाओ मैभी देखूं कि वह कैसा वीरहै उसकी यह आज्ञा पाके सेनापति पाशमें बँधेहुए उसपुरुषको उसके सम्मुख लेगया वहा शस्त्रो से घायल पाशमें बँधे हुए उस वीरको देखकर मृगाकदत्तने एकाएकी उसे अपनागुणाकर मंत्री जान के उठके दौडकर अपने गलेसे लगालिया और वहभी उसके चरणोंपर गिरपडा यहदेखकर मायावटुने विमलबुद्धिसे पूछकर कि यह कौनहै उसे अपनेपास बुलाकर उसका वडा सत्कार किया और वैद्यों को बुलवा घावों में पट्टीनिधशाके उसेपथ्य भोजनकरवाया तदनन्तर मृगाकदत्तने गुणाकरसे पूछा कि हे मित्र तुम इतने दिनोंका अपना सब वृत्तान्त कहो यह सुनकर गुणाकर कहनेलगा कि हे स्वामी सुनिये उस सर्पके शाप से जब मे आपलोगोंसे वियुक्तहोकर चला तो मोहसे मुझे बहुत दूरतक कुछभी नहीं मालूमहुआ वहुत कालमें उसमोहके दूरहोजानेपर दुःखितहोके मैने शोचा किब्रह्माकी विलक्षणगतिहै जिस मृगाकदत्तको एक महलसे दूसरे महलके जानेमें क्लेश होताथा उसकी इसवनमे क्या दशा होतीहोगी और मेरे सब मित्रोंकी क्या गति हुईहोगी इसप्रकार शोचताहुआ मे विन्ध्यवासिनीके मन्दिरपर पहुँचा वहा एकमृतकपुरुषके गले में खड्गलगा देख के यहजानके कि इसने अपना बलिदान कियाहै मुझेभी यह इच्छा हुई कि मैंभी अपनाशिर भगवतीको भेंटकरके भगवतीको प्रसन्नकरू यह शोचकर जैसेही भगवतीको प्रणामकरके मैने उस पुरुषके गलेमेंसे खड्ग निकाला वैसेही एक वृद्धतापसी ने दूरही से मुझे निवारण कर निकट आके मेरा सब वृत्तान्त पूछकेकहा कि हेपुत्र ऐसा मतकरो मरे मनुष्योंकाभी फिर समागमहोजाताहै फिर जीतोंकी क्या कहें इस विषय पर मे तुमको एककथा सुनाती हू अहिच्छत्रानाम एक अतिसुन्दर नगरी में उदयतुगनाम राजा था उस राजाके कमलामति नाम प्रतीहारथा उसके विनीतमति नाम महाउदार वीरपुत्रथा उसने एकसमय अपने महलपर बैठे २ कामरूपी कल्पवृक्षके पत्तेसे बनेहुए पूर्वदिशारूपी स्त्री के कर्णफूलके समान चन्द्रमाको उदितहुआ देखकर और उसकी किरणों से सम्पूर्ण ससारके अन्धकारको दूरहुआ जानकर प्रसन्नहोकर शोचा कि चन्द्रिकासे सम्पूर्ण मार्ग ऐसे उज्वलहोरहेहैं मानों सर्वत्र चूना पुताहुआहै इस समय मे अकेला जाकर जो विहारकरू तो वडा आनन्द होगा यह शोचके वह धनुषलेके घूमनेको निकला एक कोशजाकर अकस्मात् रोनेकासा शब्द उसे सुनाई दिया उस शब्दके अनुसार उसने कुछदूरजाकर एक वृक्षकेनीचे एक दिव्यस्त्रीको रोतेदेखकर पूछा कि हे सुन्दरी तुमकौनहो और अश्रुओंसे इस मुखको कलंकित चन्द्रमाके समान क्योंकरतीहो यह सुनकर वहबोली कि मैं गन्धमालीनाम सर्पकी विजयवतीनाम पुत्रीहू एकसमय रणसे भागजानेके कारण मेरे पिताको वासुकिने यह शापदिया कि हे पापी तू अपनेशत्रुसे पराजितहोके उसका दासहोगा इसशाप से कालजिह्वनाम यक्ष मेरे पिताको जीतकर अपना दासबनाके रोज उसपर फूल लदवानेलगा इस दुःखसे मैने तप करके श्रीभगवतीको प्रसन्नकिया प्रसन्नहुई भगवतीने प्रत्यक्षहोकर मुझसे कहा कि हे पुत्री मानसरोवर तडागके भीतर एक हजार दलों से युक्त स्फटिक पत्थरका कमल है उसपर सूर्य की

पाओगे उसके यह वचन सुनके मैं उज्जयिनी से बाहरजाके एक बर्गदके वृक्ष के नीचे जाके सोरहा सोतेही सोते उसदुष्ट बधिककी स्त्री ने मेरे गले में सूत्र बाधदिया इससे जब मैं जगा तो मैंने अपनेको मोर देखा तदनन्तर वहुत दुखीहोके इधर उधर घूमते हुए मुझको एक बहेलिये ने पकड़कर इसचण्डकेतु को लाकर दिया इसकी स्त्री प्रतिदिन मुझे नचाया करतीरही आज भाग्यवश से आपने यहा आके इस सूत्रको खोलके मुझे मनुष्य बनाया अब यहा से निकल चलिये क्योंकि यह प्रतीहार इसीप्रकार रात्रि के समय मिलेहुए बहुत से पुरुषो को मन्त्रके खुलजाने के भय से मारचुका है वाहरकी कुंडीबन्द है इसकारण द्वारसे तो जानहीं सक्ते हैं इससे आप इस सूत्रको गले मे बाधकर मोरबन के झरोखे के द्वारा बाहर चले जाइये मैं हाथ फैलाकर आपके गलेसे यह सूत्र खोललूगा और इसी को बाधके मोर बनके मैं भी बाहर चलाऊगा तब आप मेरे गले से डोरा खोल दीजियेगा उसके यह वचन सुनकर मृगाकदत्त इसी युक्तिसे बाहर चलागया और भीमपराक्रम भी निकल गया इसप्रकार सकट से छूटकर वह दोनों श्रुतधि तथा बिमलबुद्धि के पासगये और वहा रात्रिभर अपना २ वृत्तान्त कहते सुनते रहे प्रातःकाल भिल्लराज मायाबटु मृगाकदत्त के पास आया और यह पूछकर कि आप रात्रि भर सुख से रहे बोला कि चलिये द्यूत खेलें उसके यह वचन सुनके श्रुतधि ने उसके साथ उस प्रतीहारको देख कर कहा कि द्यूत खेलकर क्या कीजियेगा क्या आपने जो आज प्रतीहार के मोर का नृत्य देखने को कहा था वह आपको स्मरण नहीं है यह सुनके मायाबटु ने प्रतीहार से कहा कि जाकर मोर ले आओ उसकी यह आज्ञापाकर वह प्रतीहार यह शोचकर कि मैं उस चोरको मारना भूलगया अबज ल्दीसे जाके उसे मारकर मोर लेआऊ जल्दीसे अपने घरकोगया वहा उस मोरको तथा चोरको न देख के वह महाभयभीतहोके लौटकर मायाबटुसे बोला कि हे स्वामी रात्रिके समय कोई चोर वह मेरा मोर चुराकर लेगया उसके यह बचनसुनकर श्रुतधिको मुस्कुराते देखके मृगाकदत्तादिक परस्पर देखकर हँसनेलगे यह देखकर मायावटुने बहुत आग्रह करके मृगाकदत्त से पूछा कि आपके हास्यका क्या कारणहै उसके बहुत आग्रह करनेपर मृगाकदत्तने रात्रिके समय जैसे वह प्रतीहार मिलाथा सो सबवृत्तान्त विस्तारपूर्वक कहदिया उस वृत्तान्तको सुनकर अन्त पुरमें चेरीकी उँगली कटीहुई देखकर और भीम-पराक्रमकेगलेमें सूत्रबाधके उसको मोरबनाके फिरमनुष्यरूपहुए भीमपराक्रमसे प्रतीहारका प्रतिदिनका सर्ववृत्तान्त पूछकर मायाबटुने उस दुष्ट प्रतीहारको मरवाडाला और मृगाकदत्तके समझाने से मञ्जुमती रानीको न मारकर त्याग दिया इसप्रकार उसदुष्ट प्रतीहारको मरवाकर मृगाकदत्त अपने अन्य मन्त्रियों के मिलजानेकी आशा करताहुआ शशाकवतीके लियेउत्कण्ठितहोकर भी कुछ दिन वहारहा २०५॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायाशशाकवतीलम्बकेचतुर्थस्तरग ४॥

इसप्रकारसे भिल्लराज मायाबटुके यहा विमलबुद्धि आदिक मन्त्रियोंसमेत मृगाकदत्त जिनदिनों रह-ताथा उन्हीं दिनों एकसमय मृगाकदत्तके आगे मायाबटुके सेनापतिने उससे आकरकहा कि हेस्वामी आपने जो भगवती के बलिदान के निमित्त बीरपुरुष लानेको कहाथा सो आज हमें एक ऐसा बीरपु-

रूप मिलाहै जिसने अकेलेही हमारीसेनाके पाचसौ वीर मारडाले उसको वडे उद्योगसे हमलोग लाये हैं यहसुनकर मायावटुने कहा कि अच्छा उसे यहा लाओ मैंभी देखू कि वह कैसा वीरहै उसकी यह आज्ञा पाके सेनापति पाशमें बँधेहुए उसपुरुषको उसके सम्मुख लेगया वहा शस्त्रों से घायल पाशमें बँधे हुए उस वीरको देखकर मृगाकदत्तने एकाएकी उसे अपनागुणाकर मंत्री जान के उठके दौडकर अपने गलेसे लगालिया और वहभी उसके चरणोंपर गिरपडा यहदेखकर मायावटुने विमलबुद्धिसे पूछकर कि यह कौनहै उसे अपनेपास बुलाकर उसका वडा सत्कार किया और वैद्यों को बुलवा घावों में पट्टीबँधवाके उसेपथ्य भोजनकरवाया तदनन्तर मृगाकदत्तने गुणाकरसे पूछा कि हे मित्र तुम इतने दिनोंका अपना सब वृत्तान्त कहो यह सुनकर गुणाकर कहनेलगा कि हे स्वामी सुनिये उस सर्पके शाप से जब मैं आपलोगोंसे वियुक्तहोकर चला तो मोहसे मुझे बहुत दूरतक कुछभी नहीं मालूमहुआ बहुत कालमें उसमोहके दूरहोजानेपर दुखितहोके मैंने शोचा कि ब्रह्माकी विलक्षणगतिहै जिस मृगाकदत्तको एक महलसे दूसरे महलके जानेमें क्लेश होताथा उसकी इसवनमें क्या दशा होतीहोगी और मेरे सब मित्रोंकी क्या गति हुईहोगी इसप्रकार शोचताहुआ मैं विन्ध्यवासिनीके मन्दिरपर पहुँचा वहा एकमृतकपुरुषके गले में खड्गलगा देख के यहजानके कि इसने अपना बलिदान कियाहै मुझेभी यह इच्छा हुई कि मैंभी अपनाशिर भगवतीको भेंटकरके भगवतीको प्रसन्नकरू यह शोचकर जैसेही भगवतीको प्रणामकरके मैंने उस पुरुषके गलेमेंसे खड्ग निकाला वैसेही एक वृद्धतापसी ने दूरही से मुझे निवारण कर निकट आके मेरा सब वृत्तान्त पूछकेकहा कि हेपुत्र ऐसा मतकरो मरे मनुष्योंकाभी फिर समागमहोजाताहै फिर जीतोंकी क्या कहैं इस विषय पर मैं तुमको एककथा सुनाती हू अहिच्छत्रानाम एक अतिसुन्दर नगरी में उदयतुगनाम राजा था उस राजाके कमलामति नाम प्रतीहारथा उसके विनीतमति नाम महाउदार वीरपुत्रथा उसने एकसमय अपने महलपर बैठे २ कामरूपी कल्पवृक्षके पत्तेसे बनेहुए पूर्वदिशारूपी स्त्री के कर्णफूलके समान चन्द्रमाको उदितहुआ देखकर और उसकी किरणों से सम्पूर्ण ससारके अन्धकारको दूरहुआ जानकर प्रसन्नहोकर शोचा कि चन्द्रिकासे सम्पूर्ण मार्ग ऐसे उज्ज्वलहोरहेहैं मानो सर्वत्र चूना पुताहुआहै इस समय मैं अकेला जाकर जो विहारकरू तो वडा आनन्द होगा यह शोचके वह धनुषलेके घूमनेको निकला एक कोशजाकर अकस्मात् रोनेकासा शब्द उसे सुनाई दिया उस शब्दके अनुसार उसने कुछदूरजाकर एक वृक्षकेनीचे एक दिव्यस्त्रीको रोतेदेखकर पूछा कि हे सुन्दरी तुमकौनहो और अश्रुओंसे इस मुखको कलङ्कित चन्द्रमाके समान क्योंकरतीहो यह सुनकर वहबोली कि मैं गन्धमालीनाम सर्पकी विजयवतीनाम पुत्रीहू एकसमय रणसे भागजानेके कारण मेरे पिताको वासुकिने यह शापदिया कि हे पापी तू अपनेशत्रुसे पराजितहोके उसका दासहोगा इसशाप से कालजिह्वनाम यक्ष मेरे पिताको जीतकर अपना दासबनाके रोज उसपर फूल लदवानेलगा इस दुःखमें मैंने तप करके श्रीभगवतीको प्रसन्नकिया प्रसन्नहुई भगवतीने प्रत्यक्षहोकर मुझसे कहा कि हे पुत्री मानसरोवर तडागके भीतर एक हजार दलों से युक्त स्फटिक पत्थरका कमल है उसपर सुवर्ण की

किरणों के पडनेसे ऐसी शोभाहोती है कि मानो मणियोंकी किरणोंसेयुक्त शेषजीका हजारफणवाला शिरहै एक समय उस कमलको देखकर कुबेरजीने उसमें श्रीशिवजीके पूजनका प्रारम्भकिया और इन के सेवक सम्पूर्ण यक्ष चक्रवाक तथा हंसादि पक्षियोंका रूप धारण करके वहीं विचरनेलगे उनमें तुम्हारे शत्रु कालजिह्वका ज्येष्ठ भाई विद्युज्जिह्वभी चक्रवाकका स्वरूप धारणकरके अपनी प्रियाके साथ विहार कररहाथा भाग्यवशसे उसके पक्षके लगने से कुबेरके हाथसे अर्घपात्र गिरपडा इससे कुबेरने कुपित होके उसे यह शापदिया कि हे दुष्ट तू अपनी स्त्री समेत यहाँ चक्रवाकही रहैगा इस शापसे वह चक्रवाकही होगया उसके स्नेहसे तुम्हारा शत्रु कालजिह्व तुम्हारे पिता समेत वहीं रहताहै इससे तुम अहिच्छत्रा नाम नगरी के प्रतीहारके पुत्रको उससे लडने को भेजो यह घोडा तथा खड्ग उसे देदो इसी के प्रभावसे वह उसे जीतलेगा यह खड्ग जिसके पास होताहै वह शत्रुओं को जीतकर सम्पूर्ण पृथ्वी का राजा होताहै यह कहकर घोडा तथा खड्ग मुझे देकर भगवती अन्तर्द्धान होगई इससे मैं तुमको प्रेरणा करनेके लिये यहाँ आईहू इस समय तुम्हें जाते देखकर मैंने रोदनके शब्दसे यहाँ बुलाया है अब तुम मेरे प्रयोजनको सिद्धकरो यह सुनकर विनीतमति ने उसके वचन स्वीकार करलिये तब उस नागकन्या ने वह श्वेत घोडा तथा दिव्य खड्ग उसे लाकर देदिया ५४ उस खड्ग को लेकर विनीतमति उस कन्यासमेत उसी घोडेपर चढके शीघ्रही मानसरोवरपर प्राप्तहुआ वह मानसरोवर वायुसे कंपित कमलरूपीहाथों से और चक्रवाकोंके कूजित शब्दों से मानो कालजिह्वपर दयाकरके उससे निषेध कररहाथा कि इसे मतमारो वहाँ विनीतमतिने यक्षोंके वशमें गन्धमाली सर्पको देखके उसके छुटाने के लिये बहुतसे यक्षों को खड्गसे मारा यक्षों को मरते देखकर कालजिह्व मेघके समान गर्जकर युद्ध करने के लिये आया उसे देखतेही विनीतमति नें दौडकर उसके बालपकड के जैसेही शिरकाटना चाहा वैसेही उसनें कहा कि मैं शरणागतहू मेरी रक्षाकीजिये यह दीन वचन सुनकर विनीतमतिने उसे छोडदिया छूटकर कालजिह्व ने उसे एक ईतिनाशक अंगूठी दी और उस गन्धमाली सर्पको दासभावसे छोडदिया दासभावसे छूटकर गन्धमालीने अपनी वह विजयवती कन्या उसे देदी और प्रसन्नहोकर अपने घरको चलागया उसके चलेजाने पर विनीतमति खड्ग अंगूठी घोडा तथा विजयवती को लेकर अपनी अहिच्छत्रापुरी को लौट आया और अपने पितासे सब वृत्तान्त कहकर उस नागकन्याके साथ सुख पूर्वक रहनेलगा एक समय विनीतमतिसे उसके पिता कमलमतिने एकान्त मे कहा कि हे पुत्र इस उदयतुंगनाम राजा की उदयवती नाम परम सुन्दरी जो कन्याहै उसने सम्पूर्ण विद्याओं मे बडा अभ्यास कियाहै इससे राजा ने यह प्रणकिया है कि जो ब्राह्मण अथवा क्षत्री इसको वादमें जीतेगा उसीके साथ मे इसका विवाह करूंगा इससे उस कन्याने बहुतसे पुरुषोंको वादमें जीत भी लियाहै अब मैं चाहताहू कि तुम उसके साथ वादकरके उसे जीतकर उसके साथ विवाहकरो क्योंकि तुम भी सम्पूर्ण विद्याओं में बडे निपुण हो यह सुनकर विनीतमतिने कहा कि हे तात यद्यपि मैं ऐसी चतुरस्त्रियों से वाद नहीं करसक्ताहू तथापि आपकी आज्ञा मुझे अवश्य पालनीयहै उसके यह उचित वचनसुनकर कमलमतिने राजाके पास जा

कर कहा कि प्रातःकाल इस दासकापुत्र विनीतमति राजपुत्री के साथ वादकरेगा यह सुनकर राजा ने कहा कि बहुत अच्छा कल प्रातःकाल उसे लाइये राजाके यह वचनसुनके विमलमतिने अपने घरमें जाकर अपने पुत्रसेकहा कि कल प्रातःकाल तुमको राजपुत्रीके साथ वाद करनाहोगा इसके उपरान्त दूसरेदिन प्रातःकाल कमलमतिके साथ विनीतमति अनेक विद्वानोंसे युक्त राजसभामें राजपुत्रीके साथ वाद करनेको गया उसे देखकर राजाने उदयवती को बुलवाभेजा राजाकी आज्ञापाके क्षणभरमें कामदेव की मूर्त्तिमती शक्तिके समान राजपुत्री उदयवती सभामें आकर नीलमणिके आसनपर बैठी जो निर्मल आकाशमें कलंकरहित चन्द्रमा उदयहोय तो नीलमणि के आसनपर बैठीहुई उदयवतीकी उपमा बने उसके रत्नजटित आभूषण ऐसे शब्दायमान होरहेथे कि मानों पहलेही से उसके पूर्व्व पक्षोंका उत्तर देरहेथे उसके अगोंकी शोभा देखकर और विनीतमतिको देखकर राजाने योग्य समागम जानके उससे कहा कि हे पुत्री तुम विनीतमतिसे पूर्व्वपक्षकरो राजाकी यह आज्ञापाकर दांतोंकी किरणरूपी सूत्रोंमें सुन्दर पदरूपी रत्नोंकी माला बनातीहुई विनयवती ने विनीतमतिसे प्रश्नकिया और विनीतमतिने उसके पद २ को काटकर उसे निरुत्तर करदिया विनीतमतिके उत्तरको सुनकर सम्पूर्ण सभासद विनीतमतिकी बड़ी प्रशंसा करनेलगे इस प्रशंसाको सुनकर राजपुत्री ने पराजयहोनेपर भी सत्पतिके मिलनेसे अपनी विजयहीमानी तब राजा उदयतुंगने बहुत प्रसन्नहोकर शुभ लग्न देखके विनीतमति के साथ उदयवतीका विवाह करदिया इसप्रकार राजपुत्री तथा नागपुत्रीको पाकर विनीतमति सुखपूर्व्वक उनके साथ रहनेलगा ८३ एक समय द्यूत खेलतेहुए विनीतमतिसे किसी ब्राह्मणने आके हठ करके भोजनमांगा उस समय द्यूतकी व्यग्रतासे उसने क्रोधकरके अपने किसी सेवकसे कानमें कह दिया कि इसे किसी पात्रमें वालूभरके वस्त्रसे ढककरदेदो उसकी यह आज्ञापाकर सेवकने ऐसाही किया उस ब्राह्मणने उस पात्रको भारी समझ सुवर्ण से भराजानकर एकान्तमें जाकर खोला और उसमें केवल वालू भरीदेखके महादुःखीहोके किसी अन्य गृहस्थके यहां जाकर भोजन किया विनीतमतिभी इस बात का कुछ विचार न करके सुखपूर्वक अपनी प्रियाओं के साथ रहनेलगा इसके उपरान्त कुछकाल व्यतीत होजानेपर राजा उदयतुंग वृद्धावस्थासे शिथिल होकर अपुत्रहोनेके कारण अपना सम्पूर्ण राज्य विनीतमतिको देकर गंगाजीके तटपर तपकरनेको चलागया राज्यको पाकर विनीतमति घोड़े तथा खड्ग के प्रभावसे सम्पूर्ण दिशाओंको जीतकर चक्रवर्त्ती राजाहोगया और विनाशक अगूठीके प्रभावसे उसका सम्पूर्ण राज्य दुर्भिक्ष आदिदोषों से रहितथा एक समय किसी देशसे रत्नचन्द्रमति नाम भिक्षुकने आकर राजासे मिलके अतिथि सत्कार स्वीकार करनेके पीछे कहा कि हे राजा आप हमारेसाथ वाद कीजिये जो मैं आपको जीतलूं तो आप जैनमतको स्वीकार कीजियेगा और जो आप मुझे जीतलीजियेगा तो मैं इस वेषको त्यागकर ब्राह्मणोंकी शुश्रूषा करूंगा उसके यह वचन सुनकर राजा ने उसके साथ वाद करना प्रारम्भकिया वाद करते २ आठवेंदिन भिक्षुकने राजाको जीत लिया इससे राजा विनीतमति भिक्षुककी आज्ञा से जैनी होकर ब्राह्मणोंके लिये तथा भिक्षुकों के लिये सदावर्त्त तथा धर्मशाला

बनवाकर जिनदेवका पूजन करनेलगा कुछकाल पूजनकरके शान्तचित्तहोके राजाने उसभिक्षुकसेकहा कि आप कृपाकरके सम्पूर्ण जीवोका उपकारक बौद्धमत मुझे बतलाइये उसीका अवलम्बन मैं करूगा राजाके यह वचनसुनकर भिक्षुकने कहा कि पापरहित पुरुषोको बौद्धमतका अवलम्बन करना चाहिये यद्यपि कोई आपका प्रकटपाप हमलोगोकी दृष्टिमे नही है तथापि मेरी बताईहुई स्वप्नकी युक्तिसे आप अपने सूक्ष्म पापको देखकर उसकी शान्ति कीजिये यह कहकर उसने वह युक्ति बतादी और राजाने भी उसरात्रिमे उसकी युक्तिसे स्वप्नदेखकर प्रातःकाल उससेकहा कि हे आचार्य्य आज रात्रि के समय स्वप्नमें मै परलोकको गयाथा वहा क्षुधासे बहुतपीडित होकर मैंने अन्नमागा तब दडधारी कुछ पुरुषों ने मुझसे कहा कि बहुतसी तप्तबालू धरीहै उसे तुमखाओ जो तुमने भूखेब्राह्मणको दीथी दशकरोड़ अशर्फियोका दान करके तुम इसपातकसे छूटोगे उनपुरुषोंके वचनसुनकर मेरी निद्रा खुलगई यहकहकर राजाने दशकरोड अशर्फियो का दान करके फिर वही स्वप्न देखनेकी युक्तिकी और स्वप्न देखकर दूसरे दिन प्रातःकाल उस भिक्षुक से कहा कि आजभी मैं स्वप्न में परलोकको गया और वही बालू मुझे भोजन करनेके लिये उन्हीं पुरुषोने दी उस बालूको देखकर मैंने उनसे पूछा कि आपका बतायाहुआ दान करनेपर भी मुझे वह बालू क्यो खाने को मिली, यह सुनकर उन पुरुषों ने कहा कि वह तुम्हारा दान व्यर्थ होगया क्योकि उसमे एक अशर्फी किसी ब्राह्मणकी थी यह स्वप्न देखकर मेरी निद्रा खुल गई यह कहके राजाने फिर दशकरोड अशर्फियोका दान करके रात्रिके समय उसी युक्तिसे स्वप्न देखके प्रातःकाल भिक्षुकसे कहा कि आजभी उन पुरुषोने मुझे बालूही खानेको दी और पूछनेपर कहा कि हे राजा तुम्हारा यह दानभी व्यर्थ होगया क्योकि आज तुम्हारे देशके किसी वनमें चोरों ने एक ब्राह्मण को लूट कर मारडाला है उसकी रक्षा तुम्हारेद्वारा नहीं होसकी इसी से तुम्हारा यह दानव्यर्थ होगया इससे अब तुम द्विगुण दानकरना उनके यहवचन सुनकर मेरी निद्रा खुलगई यहकहके राजाने द्विगुण दानकरके उस भिक्षुक से पूछा कि हे आचार्य्य मुझसरीके मनुष्य इसधर्म का पालन कैसे करसक्ते हैं जिसमे अनेक प्रकारकी बाधालगीही रहती हैं यहसुनकर उसभिक्षुकने कहा कि हे राजा इतने में उकता-कर धर्ममें अनुत्साह न करना चाहिये क्योंकि स्वधर्म्मावलम्बी उत्साहवान् धीर पुरुषोंकी रक्षा देवता लोग आपही करते हैं और उनके मनोरथोको पूर्ण करते हैं इस विषयपर मैं आपको एक बुद्धके अवतार वाराहकी कथा सुनाताहू कि पूर्व्वसमय विन्ध्याचलकी गुहामें एक वाराह अपने मित्र वानरसहित रहताथा और अपनी शक्ति के अनुसार सदैव अतिथियो का सत्कार किया करताथा एक समय वहा लगातार पाच दिनतक जलकी वृष्टिहुई जिससे कोई भी प्राणी अपने २ स्थानको छोडकर बाहर नहीं निकला पाचवें दिन रात्रि के समय वाराह तथा वानर के सोजाने पर एक सिह अपनी सिंहिनी तथा बच्चे समेत उसी गुफा के द्वारपर आकर सिंहिनी से बोला कि इस दुर्दिन में कोई जीव न पाकर हम तीनों अवश्यही भूखों से मरजायगे यह सुनकर सिंहिनीने कहा कि क्षुधासे सबका मरना सभवहै इस से मुझे खाकर आप दो जने अपने २ प्राणों की रक्षा कीजिये क्योंकि आप और यह पुत्र यही मेरे

सर्वस्व है और मुझसरीकी स्त्री आपको पीछे भी मिलजायगी उन दोनोंका यह वार्त्तालाप उस वाराह ने अकस्मात् जगके सुनकर प्रसन्नता पूर्व्वक शोचा कि कहा यह रात्रि कहा यह दुर्दिन और कहा ऐसे अतिथिकी प्राप्ति आज मेरे किसी पूर्व पुण्यका उदय हुआहैइससे शीघ्रहीजाके इस अपने क्षणभ-गुरशरीर से इन अतिथियों को जाकर तृप्तकरू यह शोचकर वह वाराह बाहर आके सिहसे बोला कि तुम खेदमतकरो मुझे खाकर अपने प्राणों की रक्षाकरो उसके यह वचन सुनकर सिह ने प्रसन्नहोके सिंहिनीसे कहा कि पहले यह बचा इसको खाय फिर में खाऊगा तदनन्तर तुम खालेना यह कहकर वह सिह प्रथम थोडासा उसका मास अपने बच्चेको खिलवाकर आपखानेलगा उस खातेहुए सिंहसे महा सत्त्ववान् वाराहने कहा कि प्रथम तुम मेरा रुधिर पीलो क्योंकि यह मट्टी मे मिलाजाताहै फिर मास खाना और जो तुमसे बचेगा वह तुम्हारी प्रियाखायगी उसके यह वचन सुनकर सिंहने रुधिरपीकर उस का मासखाते २ केवल हड्डिया छोडी और इतनेपरभी उसशूकरके प्राण नहीं निकले मानों वह उसके धैर्य्यके देखनेकोही ठहरेहुएथे इतनेमें वह सिंहिनी क्षुधासे अत्यन्त व्याकुलहोकर मरगई तव सिह अपने बचेको लेकरकहीं चलागया और रात्रि व्यतीतहोगई प्रातःकाल उस बन्दरने जगके बाहरआके उसवा-राहकी यह दशादेखके पूछा कि हे मित्र तुम्हारी यहदशा कैसेहुई यह सुनकर उस धीरवाराहने अपनासब वृत्तान्त कहदिया उसवृत्तान्तकोसुनकर वानरने रोकर उसके पैरोंपर गिर के कहा कि तुम किसी देवता का अंशहो नहीं तो तुम्हारी बुद्धि ऐसी नहीं होती अब इसअन्त समय में तुमको कोई अभिलाषहोय सो बताओ उसे में पूर्णकरू उसवानरके वचन सुनकर वाराहने कहा कि जो मेरा अभिलाषहै उसेब्रह्मा भी नहीं पूर्ण करसक्ता मे चाहताहू कि यह जो सिंहिनी मेरे देखतेही देखते क्षुधासे मरगई है वह फिर जी उठे और मेरे शरीर में फिर मासहोजावे उसे खाकर यहतृप्तहोय उसके इसप्रकार कहने पर साक्षात् धर्म ने प्रकटहोकर अपने हाथके स्पर्शसे उसे मुनीश्वर बनाके कहा कि मैनेही सिंहका स्वरूप धरके तुम्हारी परीक्षाकीथी तुमने उसपरीक्षामें मुझे प्रसन्नकरके मुनीश्वरत्व पाया धर्मके यहवचन सुनकर उसमुनिने कहा कि इस अपने मित्रको वानररूपमें देखकर मुझे यह मुनीश्वरत्व अच्छानहीं मालूमहोताहै यह सुन कर धर्मने वानरकोभी मुनिबनादिया ठीकहै (ध्रुवफलायमहते महद्भिस्सहसगमः) महात्माओंकी सग-तिसे अवश्य महाफल प्राप्तहोता है तदनन्तर धर्म अन्तर्द्धान होगया और वह मरीहुई सिंहिनीभी न जाने कहागई इसप्रकारसे सत्त्वकेबलसे धर्म के उत्साहको न छोडकर कार्य्यकरने वाले धर्मात्मा पुरुषों के मनोरथ देवताओंकी सहायतासे सिद्धहोतेहैं १५१ भिक्षुकके यह वचन सुनके विनीतमतिने फिर वही स्वप्नकी युक्तिकरके रात्रिमें स्वप्नदेखकर प्रातःकाल भिक्षुकसे कहा कि हे आचार्य आज स्वप्नमें मुझसे किसी दिव्य मुनिने कहा कि हे पुत्र तुम निष्पापहोगये अब बौद्धमतका अवलम्बन करो उसके यह वचन सुनकर मेरी निद्राखुलगई यह कहकर उसने भिक्षुकसे शुभ मुहूर्त्त में बौद्धधर्मकी शिक्षाली और याचकोंको बहुतसा धनदिया दानके प्रभाव से उसकाधन अक्षयहोगया क्योंकि (धर्ममूलाहिसम्पद) धर्मही सपत्तियोंकामूल कारणहै इसके उपरान्त एक दिन एक अर्थी ब्राह्मणने उसके पास आकर कहा।

कि हे राजा मैं पाटलिपुत्र नगरका रहनेवाला ब्राह्मणहूं मेरी अग्निशालामे एक ब्रह्मराक्षस रहताहै उस ने बहुत दिनोंसे मेरे पुत्रपर अपना आवेश कर रक्खाहै उसपर मेरा कोई भी उपाय नहीं चलता इससे मैं आपके पास याचना करनेको आयाहूं कि आप अपनी सर्वदोष नाशक अंगूठी मुझे देदीजिये उस की यह याञ्चा सुनकर राजा विनीतमतिनें कालजिह्वसे मिलीहुई अपनी अंगूठी उसे हर्षपूर्वकदेदी अंगूठीलेके उस ब्राह्मणके चलेजाने पर राजाकायश सम्पूर्ण दिशाओंमे फैलगया उसके उपरान्त एक समय उत्तर दिशासे एक इन्दुकलशनाम राजपुत्र विनीतमतिके पास आकरबोला कि हे राजा आप इस संसारमे याचकोंके चिन्तामणिहो आपके पाससे कोई भी अर्थी विमुख नहीं जाता मुझे कनककल शनाम मेरे भाईने मेरा सम्पूर्ण राज्यछीनकर निकालदिया है इससे मैं आपके पास याञ्चाकरने को आयाहूं आपके पास जो घोडा और दिव्य खड्ग है वह मुझे देदीजिये तो मैं उसके प्रभाव से अपने शत्रुओंको जीतलूं उसकी यह प्रार्थना सुनके विनीतमतिने मन्त्रियोंके निवारण करनेपरभी वह खड्ग तथा अश्व उस राजपुत्रको देदिये खड्ग तथा घोडेको लेकर उस राजपुत्रने अपने भाईको जीतकर राज्य पाया और राज्यसे भ्रष्टहुआ उसका भाई कनककलश विनीतमति की नगरी मे आकर अग्निमें जलनेको उद्यतहुआ दूतों से यह बात सुनकर विनीतमति ने अपने मन्त्रियों से कहा कि मेरेही अपराध से इस विचारेकी यह दशाहुई है इससे मैं अपना राज्य इसेदेकर इससे अनृणहोजाऊं इस निष्प्रयोजन राज्यसे मेरा क्या प्रयोजनहै मुझ अनपत्यका यही पुत्रके समानहोकर राज्यलेले यह कहके विनीतमति कन ककलशको बुलाके राज्यदेकर अपनी दोनो स्त्रियोंको साथलेके पुरके बाहरचला उसेजाते देखकर हाय २ जगतके तृप्त करनेवाले सम्पूर्ण चन्द्रमाको अकस्मात् मेघने आकर आच्छादित करलिया सबकी आ शाके पूर्णकरनेवाले इस राजारूपी कल्पवृक्षको ब्रह्माने क्यो छीनलिया इत्यादि विलापकरते २ सम्पूर्ण पुरवासी उसके पीछे २ चले उन सबको पीछे आता देखकर विनीतमति उन्हे समझाके और लौटाके वनकोचला चलते २ जल तथा वृक्षोंसे रहित सूर्य्यकी किरणोंसे सतप्त वालुकावाली मरुभूमिमे पहुँचा वहा तृषासे व्याकुलहोके एक स्थानमे बैठकर श्रमको दूरकरनेलगा बैठे २ उसे तथा उसकी स्त्रियों को निद्रा आगई क्षणभर पीछे उसने जगकरदेखा कि एक बडा सुन्दर उपवन लगाहुआहै उसमे हरी २ दूब सर्वत्र कोमल रेशमीवस्त्रोंके समान बिछीहुई है फलोंके भारसे नानाप्रकारके वृक्ष झुकरहे हैं छाया में सुन्दरम णिमय शिलाबिछीहुई है और प्रफुल्लित कमलोंसे आच्छादित निर्मलजलवाली बावडी भरीहुई हैं वह उपवन क्याथा मानो राजाके दानके प्रभावसे नन्दनवनही स्वर्गसे उतर आयाथा उस उपवनको देखकर विनीतमति ने सोचा कि यह स्वप्नहै अथवा मेरा भ्रमहै या मेरे ऊपर किसी देवताका अनुग्रहहै उसके इसप्रकार विचार करनेपर दो सिद्धोने ब्राह्मणोंका स्वरूप धारण करके आकाशमे आकर उससे कहा कि हे राजा अपने सत्त्व के माहात्म्यसे तुमको क्या आश्चर्य होरहाहै इससे सदैव फलने फूलनेवाले इस वनमे तुम स्वेच्छा पूर्वक निवासकरो सिद्धोंके यह वचन सुनकर वह सुखपूर्वक अपनी स्त्रियोसमेत उस वनमें तप करनेलगा एक समय उसने किसी पुरुषको फांसीलगाकर मरनेकेलिये उद्यत देखकर शीघ्रही

उसके पास जाकर प्रियवचन कहके मृत्यु से निवारण करके उससे पूछा कि हे भाई तुम मरने के लिये क्यों उद्यतहुएहो उसने कहा कि सुनिये मैं आपसे अपना सब वृत्तान्त वर्णन करताहूं सोमदेशके नागशूरनाम एक निवासीका सोमसूरनाम मैं पुत्रहूं जिस समय मेराजन्म हुआथा तो ज्योतिषियोंने कहा था कि यह चोरहोगा इस भयसे मेरे पिताने यत्नपूर्वक मुझे धर्मशास्त्र पढाया परन्तु मेरे पिताका यह श्रम व्यर्थहुआ क्योंकि धर्मशास्त्र पढकरभी मैं चोरी करनेलगा ठीकहै (कस्यप्राक्कर्मकेनेह शक्यते कर्तुमन्यथा) किसके प्राक्तनकर्मको कौन झूठ करसक्ताहै एक समय पुरक्षकोंने चोरीकरतेहुए मुझे पकडकर वध करनेके लिये शूली देनेके स्थानमें लेजाकर शूली देनाचाहा उसी समय राजाका उन्मत्त हाथी गजशालासे छूटकर अनेक पुरुषोंको मारताहुआ उसीस्थानमें आया इससे वह वधिक मुझे छोडकर भागगये और मैंभी अपने प्राणबचे जानकर वहांसे भागा वहांसे भागकर मैंने सुना कि जबमुझे मारनेके लिये वधिकलोग वधके स्थानमें लेगये तब शोक से मेरे पिताके प्राण निकलगये और मेरी माताभी शोकके कारण उन्हींके साथ सतीहोगई यह समाचार सुनके मैं शोक से व्याकुलहोके अपने शरीरको त्यागनेके लिये घूमताहुआ इस निर्जनवनमें आया यहां आतेही अकस्मात् एक स्त्री ने आकर मुझसे कहा कि हे पुत्र तुम राजर्षि विनीतमतिके आश्रममें प्राप्तहुएहो इससे तुम्हारा सब पापदूरहो गया और उसी राजर्षिसे तुमको यहां ज्ञान प्राप्तहोगा यह कहकर वह अन्तर्द्धान होगई और मैं उस राजर्षिको बहुत ढूंढकर उसे न पाके शोकसे प्राणदेनेको जैसेही उद्यतहुआ वैसेही आपने देखलिया २०१ सोमसूरके यह वचन सुनकर विनीतमतिने उसे अपने आश्रममें लेजाकर उसका अतिथि सत्कारकरके अपना नाम बताके उससे कहा कि हे वत्स अज्ञानका त्याग करनाचाहिये क्योंकि उससे मनुष्यकीबुद्धि विपरीत होजाती है और दोनों लोकोंकी हानिहोती है इस बातपर मैं तुमको एककथा सुनाताहूं कि पाञ्चालदेशमें देवभूतिनाम एक वैदिकब्राह्मण रहताथा उसके भोगवतीनाम सतीस्त्रीथी एकसमय देवभूति के स्नानकरनेके निमित्त जानेपर भोगवती शाकलेनेके निमित्त शाकवाटिकामें गई वहां धोबीके गधे को शाकखाते देखकर लाठीलेकर उसके मारनेको दौडी इससे वह गधा भागकर एक गढेमें गिरपडा और उसके एक पैरमें चोट आगई यह जानकर गधेकेस्वामी बलासुरनाम धोबीने आकर लातोंसे तथा लाठियोंसे ब्राह्मणीको बहुतपीटा इससे उस गर्भिणी ब्राह्मणी का गर्भ गिरपडा और वह धोबी अपने गधेको लेकर चलागया तदनन्तर देवभूतिने आकर अपनीस्त्रीकी दुर्दशा देखके और सबवृत्तान्त पूछकर पुराध्यक्षसे यह सबवृत्तान्त जाकर कहा पुराध्यक्षने उसका सब वृत्तान्त सुनके धोबी को बुलवाके उनदोनोंकी वार्त्तालाप सुनकर यह न्यायकिया कि इसधोबीके गधेका पैरटूटगया है इससे जबतक इस गधेको आराम न होय तबतक ब्राह्मण इसका भारढोवे और इसब्राह्मणकी स्त्री का गर्भ गिरपडाहै इस से धोबीही उसके फिर गर्भ उत्पन्नकरे इसन्यायको सुनकर स्त्री सहित वहब्राह्मण विष खाके मरगया इस वृत्तान्तको सुनकर राजाने उस मूर्खचारी पुराध्यक्षको मरवाडाला और मरकर वह हत्याग बहुत दिन तक नीचयोनिमें भ्रमण करतारहा अर्थात् जन्मलेतारहा इस प्रकारसे अज्ञानरूपी अन्धकार में मोहित

पुरुष अपने दोषोंसे कुमार्ग मे चलतेहुए, शास्त्ररूपी दीपक के बिना अवश्य भ्रष्टहोते हैं यह कहके विनीतमतिने फिर उससे कहा कि हे पुत्र में तुमको बहुतसी उपदेशकी बातें सुनाताहू पूर्व्व समयके बीच कुरुक्षेत्र देशमे एक मलयप्रभ नाम राजाथा एकसमय दुर्भिक्षमे प्रजाओंको बहुतधन देतेहुए राजामल यप्रभसे मन्त्रियोंने कहा कि आपको ऐसा अधिक दानकरना उचित नहीं है मन्त्रियोंके यह वचनसुनके इन्दुप्रभनाम राजपुत्रने कहा कि हे तात आप इनमन्त्रियोंके कहनेसे दानदेना न छोडिये क्योंकि आप प्रजाओंके निमित्त कल्पवृक्षहै और प्रजा आपकी कामधेनुहै उसके यह वचनसुनके मन्त्रियोंके वशी भूत होनेवाले राजाने कहा क्या मेरेपास अक्षयधनहै, जो धनके बिनाहीं मैं प्रजाओंके लिये कल्पवृक्ष वनसक्ताहू तो तुम्ही कल्पवृक्ष क्यो नही बनतेहो पिताके यह वचन सुनकर इन्दुप्रभ यह निश्चय करके कि यातो मे तपसे कल्पवृक्षही हूगा या मरजाऊगा तपोवनको चलागया तपोवन में उसके घोरतप से प्रसन्नहुए इन्द्रने उससे कहा कि हे पुत्र तुम्हारे ऊपर मैं प्रसन्नहूं तुम अभीष्टवर मागो इन्द्रके यह वचन सुनके उसने कहा कि हे महाराज मैं अपनेही नगरमे कल्पवृक्ष होजाऊ इन्द्रने कहा कि ऐसाही होगा इन्द्रके इसवरदानसे वह अपनेनगरमे वडी २ शाखाओपर वैठेहुए मनोहर पक्षियोसे शब्दायमान कल्पवृक्ष होकेयाचकोंके दुर्लभ मनोरथोंकोभी पूर्णकरनेलगा इससे उसकी सवप्रजा देवताओंके समान सुखभोग नेलगी तदनन्तर कुछ काल व्यतीतहोनेपर इन्द्रने उस कल्पवृक्षके पास आकरकहा कि तुम परोपकार करचुके अव अपना स्वरूप धारणकरके स्वर्गको चलो इन्द्रके यहवचन सुनके कल्पवृक्षरूप राजपुत्रने कहा कि देखिये सामान्य वृक्षभी अपने पुष्पफल तथा पत्तोंसे सदैव उपकारकिया करतेहैं तो कल्पवृक्ष होके मैं इतने लोगोंकी आशाको छुडाकर केवल अपनेही सुखके लिये स्वर्गको कैसे जाऊ उसके यह उदार वचनसुनके इन्द्रने कहा कि अच्छा तुम अपनी सम्पूर्ण प्रजाभी अपने साथ स्वर्ग को ले चलो यहसुनकर उस ने कहा कि जो आप मुझपर प्रसन्नहै तो सम्पूर्ण प्रजाको स्वर्गलेजाइये मुझे स्वर्ग से कुछ प्रयोजन नहीं है मैं मनुष्यहोकर परोपकारके निमित्त महातप करूगा उसके यहवचन सुनके इन्द्र अत्यन्त प्रसन्नहोके उसकी सव प्रजाको लेकर स्वर्गको चलेगये और वह राजपुत्र वृक्षपनको त्यागकर वनमें जाके महातपकरके बुद्धरूपहोगया इसीप्रकारसे दानी लोगोंको महा सिद्धि प्राप्तहोती है यह महा दानी की कथा तो मैंने तुमसे कही अव एक महाशीलवान् की कथा सुनिये विन्ध्याचल पर्व्वतपर तोतोंका वडा शीलवान् हेमप्रभनाम राजाथा उसे अपने पूर्व्वजन्मका स्मरण नथा इसी से वह सदैव धर्मका उपदेश किया करताथा उसके वडा अनुरागी चारुमतिनाम एक तोता प्रतीहारथा एकसमय किसी वहेलियेने चारुमति की स्त्रीको पकडकर मारडाला इससे वह चारुमति वहुत शोकाकुल होकर अत्यन्त दुर्वलहोगया उसकी यहदशा देखके हेमप्रभने युक्ति पूर्व्वक उसके शोक दूरकरनेके लिये कहा कि तुम्हारी स्त्री मरी नहीं है वहेलियेके जाल से निकलकर वह कहीं भागगई है आज मैंने उसे देखा है चलो तुम्हेंभी चलकर दिखादू यहकहके वह उसे अपने साथ में लेजाके एकतडागके ऊपर जाके उसे उसीका प्रतिविम्व दिखाकर वोला कि यही तुम्हारी स्त्री है यहसुनकर वह अपने प्रतिविम्वको देख के

प्रसन्नहोके पानी में जाके प्रतिबिम्बकाही आलिङ्गन तथा चुम्बन करनेलगा और स्पर्श न पाके तथा शब्द न सुनकर यह शोचनेलगा कि यह मेरा आलिङ्गन क्यों नहींकरती और बोलती क्यों नहीं है यह शोचके उसने ऐसा निश्चय करके कि यह मेरे ऊपर कुपितहोगई है एकआवला लाके उसप्रतिबिम्ब के मुखमें रक्खा वह आवला पानीमें बहगया इससे उसने यहजानकर कि इसने आँवला फेंकदियाहै खेद युक्तहोकर राजा हेमप्रभसे जाकर कहा कि हे स्वामी अब वह न मेरा स्पर्श करतीहै और न वार्त्तालाप करती है और मैंने उसे आवला लाकर दियाथा वह भी उसने फेंकदिया यहसुनकर राजाने उससे कहा कि यद्यपि कहनेके योग्य तो नहीहै तथापि मैं तुम्हारे स्नेहसे कहताहूं तुम्हारी स्त्री अब अन्यसे अनु रक्तहोगई है इसीसे वह तुमपर स्नेह नहीं करती है चलो आज चलकर मैं तुमको यह भी दिखाद्ं यह कहके उसने उसे अपने साथलेजाके उसके शरीरमे अपना शरीर जोड़के तडागमे अपना मिलाहुआ प्रतिबिम्ब दिखाया उसप्रतिबिम्बको देखके उसने अपनी स्त्रीको अन्यसे अनुरक्त जानके राजासे कहा कि हे स्वामी मैंने आपका उपदेश नहींमाना इसीका यहफल मुझे प्राप्तहुआ अब जो कुछ मुझे करना उचितहोय सोही आप उपदेश कीजिये उसके यह वचन सुनके राजाने उपदेशका अवसर जानके उससे कहा कि (वरहालाहलभुक्तमहिर्वद्धोगरगले।नपुनः स्त्रीपुनिश्वासोमणिमन्त्राद्यगोचर॥कलङ्कयन्ति सन्मार्गं जुषःपरिभवन्त्यलम्। वात्याइवातिचपला स्त्रियोभूरिरजोभृत॥ तत्तासुनप्रसङ्गव्य धीरसत्त्वैः सुबुद्धिभिः।शीलमभ्यसनीयन्तु वीतरागपदाप्तये) विषखाना अच्छाहै और गलेमें सर्पका बाँधलेना भी अच्छाहै परन्तु मणि मन्त्रादिकों से भी अगोचर स्त्रियोंपर विश्वासकरना उचित नहीं है बहुतरज (रजो-गुण और धूल) युक्त आँधी के समान अत्यन्त चपलस्त्रिया सन्मार्गों में चलनेवाले मनुष्योंको कलङ्कित करके अत्यन्त क्लेश देती है इससे धीरसत्त्ववान् पुरुषोंको स्त्रियों से प्रसङ्ग न करके वैराग्यकी प्राप्ति के लिये शीलका अभ्यासकरना चाहिये राजाका यह उपदेश सुनकर चारुमति स्त्रियोंको त्यागकर बुद्ध के समान ऊर्ध्वरेताहोगया इसप्रकार शीलवान् पुरुष अपने उपदेशों से अन्य को भी तारते हैं यह शी-लवान्‌की कथाहुई अब मैं तुमको बड़े क्षमावान्‌की कथा सुनाताहूं १५६ केदारनाम पर्वतपर सदैव गंगाजी के स्नानकरनेवाले जितेन्द्री बड़े तपस्वी शुभनयननाम एक बड़े मुनिरहतेथे एकसमय चोरों ने उन्हीं के आश्रम के निकट पहलेका गाड़ाहुआ सुवर्ण खोदकर न पाकर यह जानकर कि मुनि ने ही सुवर्ण लेलियाहै कुटीमें जाकर उनसे कहा कि अरेपाखंडी मुनि हमारा सुवर्णदेदे तू चोरोंका भी चोरहै उनके यहवचन सुनकर मुनिने कहा कि हमने न कुछ लियाहै और न देखाहै यहसुनकर चोरों ने मुनि को लाठियों से खूबपीटा इतनेपर भी मुनि ने वही वचनकहे तब चोरों ने उनको बड़ा दुष्टजानके उनके हाथ पैरकाटके दोनों नेत्र फोड़डाले फिरभी मुनि ने वही वचनकहे तब चोर उन्हें छोड़कर कहीं चलेगये दूसरे दिन प्रातःकाल मुनि के शिष्य शेखरज्योति नाम राजा ने यहां आकर अपने गुरुकी यह दशा देखके और सब वृत्तान्तजानके उन चोरों को ढूँढ़वाकर फांसी देनाचाहा यह जानकर मुनि ने राजासे कहा कि हे राजा जो तुम इनको मारोगे तो मैंभी अपने प्राण देदूंगा क्योंकि शस्त्रों से मेरे अङ्ग कटे

है इसमे इनका कौन अपराध है और जो यह कहो कि चोर उन शस्त्रों के प्रेरकथे तो इनका भी प्रेरक क्रोधथा क्रोधका भी प्रेरक सुवर्णका नाश था सुवर्ण नाशका प्रेरक मेरे पूर्वजन्मका पाप था और उस पापका भी प्रेरक मेरा अज्ञान था इससे वही मुख्य अपकारी है उसीका नाशकरना चाहिये और जो इनको अपकारी जानकर मारतेहो तो उपकारीजानके इनकी रक्षा भी करनी चाहिये क्योंकि जो यह मेरे साथ ऐसा उपद्रव न करते तो मैं क्षमा किसपरकरता इससे यह मेरे पूर्णउपकारी हैं इत्यादि अनेक वाक्यों से मुनि ने राजा को समझा के चोरों को वध से बचाया और इसी क्षमाके माहात्म्यसे उनके अंग ज्यों के त्यों होगये और महासिद्धि उनको प्राप्तहुई इसप्रकारसे क्षमावान् पुरुष संसार से छूटजाते हैं यह क्षमावान् की कथा हुई अब महा धैर्य्यवान् की कथा सुनिये २७७ पूर्व समयमे मालाधर नाम एक ब्राह्मण का पुत्र आकाशमें जातेहुए किसी सिद्धकुमारको देखकर उसकी ईर्ष्या से तृणों के पक्ष बाँधके उछल २ के आकाश मे उडना सीखने लगा इस प्रकार से प्रति दिन व्यर्थ परिश्रम करते हुए उसको एक दिन आकाशसे स्वामिकार्त्तिकजी ने देखकर शोचा कि यह धैर्य्ययुक्तहोकर दुर्लभ कार्य्य मे भी कैसा श्रमकररहाहै इससे इस बालकपर मुझे दया करनी चाहिये यह शोचकर उन्हों ने उसबालक को अपना गण बनालिया इसप्रकार धैर्य्यसे देवताभी प्रसन्नहोते हैं यह धैर्य्यवान्की कथाहुई अब ध्यानवान्की कथासुनिये पूर्वकालके बीच कर्नाट देशमें विजयमाली नाम महाधनवान् वैश्यके मलयमाली नाम पुत्रथा एक समय मलयमालीने अपने पिताके साथ राजद्वारमें जाके राजा इन्दुकेशरीकी इन्दुयशानाम कन्याको देखा उसे देखतेही वह ऐसा उसपर आशक्तहोगया कि उसे न रात्रिको निद्रा आई न दिनको कुछ क्षुधालगी और लोगों के पूछनेपर भी वह कुछ न कहके उसीके ध्यानमे मूकसा बनारहा उसे इसप्रकारसे व्याकुल देखके राजाके चित्रकर मन्थरकनाम उसके मित्रने उससेकहा कि हे मित्र क्या कारणहै कि तुम किसी की न सुनतेहो और न अपनी कहतेहो मैं तुम्हारा परममित्रहूं मुझ से अपना सब वृत्तान्तकहो उसके यह वचन सुनकर मलयमालीने अपना सबवृत्तान्त उससे कह दिया यह सुनकर मन्थरकने कहा कि तुम वैश्यके पुत्रहो तुमको राजपुत्रीकी इच्छा न करनी चाहिये अपने २ योग्यही अभिलाषा करनेसे सबका कल्याणहोताहै सामान्य तडागों की कमलनियोंकी इच्छा हंसकरे तो उचित है परन्तु विष्णुभगवान्के नाभि कमलकी उसको इच्छा न करना चाहिये उसके इस प्रकार समझानेपर भी जब मलयमालीको कुछ बोध न हुआ तो उसने राजपुत्रीका एक चित्र उतारके उसे देदिया उस चित्रकोपाके वह उसीको इन्दुयशा राजपुत्री जानके ऐसा उसके ध्यानमे मग्नहोगया कि उसी चित्रका चुम्बन तथा आलिंगनादिक करनेलगा और इसी से उसका क्लेशभी निवृत्तहोगया एक समय वह उस चित्रकोलेके चन्द्रोदयमें वनके विहारकरनेको गया और उस चित्रको किसी वृक्षकी जडपर रखके अपनी प्रियाके लिये वनमें जाकर पुष्पतोडनेलगा उस समय विनयज्योतिनाम मुनि उसे देखके आकाशसे उतरकर उसका उद्धारकरने के लिये अपने प्रभावसे उस चित्रके कोने में एक जीवताहुआ कालासर्प बनाकर अलक्षितहोके वहीं खडेरहे इतने में पुष्पतोडकर लौटेहुए मलयमाली

ने चित्रमें उस सर्पको देखकर शोचा कि यह सर्प यहां कहां से आया क्या ब्रह्माने मेरी प्रियाकी रक्षाके लिये तो इसे नहीं भेजाहै यह शोचकर जैसेही उसने उस चित्रपर फूलआदि रखके चाहा कि मैं इसका आलिंगन करके इसी से पूछूं कि यह सर्प कहां से आयाहै वैसेही मुनि के प्रभावसे उसे मालूमहुआ कि सर्प के काटने से वह मरगई इससे वह हाय २ करके मूर्च्छितहोके गिरपड़ा और क्षणभरमें मूर्च्छा जगनेपर उठके एकऊंचे वृक्षपर चढ़के अपने प्राणदेनेको कूदा उसे गिरते देखके कृपालु मुनि ने बीचही में उसे अपने हाथोंपर रोककर समझाकर उससे कहा कि हेमूर्ख तुम्हें नहीं मालूम है कि वह राजपुत्री अपने घरमें है यह केवल चित्रकी पुतली है तुम किसका आलिंगन करतेहो किसे सर्पने काटा है यह तुम्हारे विचारों की भावनाओं का भ्रमहै जो तुम इतनेही दृढ़ध्यान से तत्त्वका विचार करो तो तुम्हारे मन दु:खदूर हो जाय यह सुनकर मलयमाली मोहसे रहित होके बोला कि हे भगवन् आपकी कृपासे मेरा यह अज्ञान तो दूरहोगया अब ऐसी कृपाकीजिये जिससे इस संसार से मैं छूटूं उसकी यह प्रार्थना सुनकर वह मुनि उसे बुद्धजीके बताथेहुए ज्ञानका उपदेश करके वहीं अन्तर्द्धान होगये उसज्ञान को पाकर वह मलयमाली तपोवनमें जाके तपस्या करके तत्त्वको जानकर बुद्धके समान होगया फिर उसने राजा इन्द्रके शरीकेपास आकर ऐसा ज्ञान उपदेशकिया कि जिससे सम्पूर्ण नगरनिवासी मुक्त होगये इसप्रकारसे ध्यान करनेवाले मोक्षको प्राप्तहोतेहैं यह ध्यानवान्की कथाहुई अब एक बुद्धिमान की कथा सुनिये कि सिंहलद्वीप में सिंह विक्रमनाम एक चोरने परायेधनसे जन्मभर अपना पोषण करके वृद्धावस्था में चोरीका त्याग करके अपने मनमें शोचा कि परलोकमें मेरीकौन रक्षाकरेगा जो मैं विष्णु भगवान् अथवा शिवजीकी शरणमें जाऊं तो वहाँ मुझे कौन पूछेगा क्योंकि उनके तो बड़े २ देवता तथा मुनिलोग सेवकहैं इससे सम्पूर्ण जीवोंके कर्मोंके लिखनेवाले चित्र गुप्तकी सेवाकरनी चाहिये वही मेरी रक्षाकरेंगे यह शोचके वह चित्रगुप्तकी भक्ति करनेलगा और उनकी प्रीतिके लिये नित्य ब्राह्मणों को भोजन करानेलगा उसकी यह भक्ति देखकर चित्रगुप्तजी उसकी परीक्षा करनेके लिये अतिथिका वेषधारण करके उसकेपास आये उसचोरने उनका पूजनकरके भोजन कराके तथा दक्षिणादेकर कहा कि कहो चित्रगुप्त तुमपर प्रसन्नहोंवें यह सुनके चित्रगुप्तने उससे कहा कि शिव विष्णु आदि देवताओं को छोड़कर चित्रगुप्तजीमें ही तुम्हारा क्या प्रयोजन है यह सुनकर उसने कहा कि तुमको इससे क्या प्रयोजनहै मैं अन्य देवताओं को नहीं प्रसन्न करना चाहता यह सुनकर ब्राह्मण रूपधारी चित्रगुप्त ने कहा कि जो तुम अपनी स्त्री मुझे देनेकहो तो मैं ऐसाकहूं यह सुनके उस चोरने प्रसन्नहोके कहा कि अच्छा मैं अपनी स्त्री आपको दूंगा आप कहिये यह सुनकर चित्रगुप्तजी अपना स्वरूप धारण करके बोले कि हे सिंहविक्रम मैं तुमपर प्रसन्नहूं अब बताओ तुम क्या चाहतेहो उसने कहा कि हेस्वामी जिस प्रकार से मेरी मृत्यु न होय वही उपाय बताइये यह सुनकर चित्रगुप्तने कहा कि यद्यपि मृत्युसे कोईभी बचा नहींसकताहै तथापि मैं तुम्हें एक युक्ति बतानाहूं उसे सुनो जबसे श्रीशिवजी ने श्वेत मुनिके लिये कुपित होके कालको भस्मकरके फिर बनाया है तबसे जहां श्वेत मुनिरहतेहैं वहां किसीको भी काल

ह इसमे इनका कौन अपराध है और जो यह कहो कि चोर उन शस्त्रो के,प्रेरकथे तो इनका भी प्रेरक क्रोधथा क्रोधका भी,प्रेरक सुवर्णका नाश था सुवर्ण,नाशका प्रेरक मेरे पूर्व्वजन्मका पाप था और उस पापका भी प्रेरक मेरा अज्ञान,था इससे वही मुख्य अपकारी है उसीका नाशकरना चाहिये और जो इनको अपकारी जानकर मारतेहो तो उपकारीजानके इनकी रक्षा भी करनी चाहिये क्योंकि जो यह मेरे साथ ऐसा उपद्रव न करते तो मैं क्षमा किसपरकरता इससे यह मेरे पूर्णउपकारी हैं इत्यादि अनेक वाक्यो से मुनि ने राजा को,समझा के चोरो को वध से,बचवाया और इसी क्षमाके माहात्म्यसे उनके अङ्ग ज्यो के त्यो होगये और महासिद्धि उनको प्राप्तहुई इसप्रकारसे क्षमावान् पुरुष संसार से छूटजाते है यह क्षमावान् की कथा हुई अब महा,धैर्य्यवान् की,कथा सुनिये २७७,पूर्व्व समयमें,मालाधर नाम एक ब्राह्मण का पुत्र आकाशमे जातेहुए किसी सिद्धकुमारको देखकर उसकी ईर्ष्या से तृणों के पक्ष बॉधके उछल २ के आकाश में उडना सीखने,लगा इस प्रकार से प्रति दिन व्यर्थ परिश्रम करते हुए उसको एक दिन आकाशसे स्वामिकार्त्तिकजी ने देखकर शोचा कि यह धैर्य्ययुक्तहोकर दुर्लभ कार्य्य मे भी कैसा श्रमकररहाहै इससे इस् बालकपर मुझे दया करनी चाहिये यह शोचकर उन्हों,ने उसबालक को अपना गण बनालिया इसप्रकार धैर्य्यसे देवताभी प्रसन्नहोते हैं यह धैर्य्यवान्की कथाहुई अब,ध्या नवान्की कथासुनिये पूर्व्वकालके बीच कर्नाट देशमें विजयमाली नाम महाधनवान् वैश्यके मलय माली नाम पुत्रथा एक समय मलयमाली ने अपने पिताके साथ राजद्वारमें जाके राजा इन्दुकेशरीकी इन्दुयशानाम कन्याको देखा उसे देखतेही वह ऐसा उसपर आशक्तहोगया कि उसे न रात्रिको निद्रा आई न दिनको कुछ क्षुधालगी और लोगो के पूछनेपर भी वह कुछ न कहके उसी के ध्यानमें मूकसा बनारहा उसे इसप्रकारसे व्याकुल देखके राजाके चित्रकर,मन्थरकनाम उसके मित्रने उससेकहा कि हे मित्र क्या कारणहै कि तुम किसी की न सुनतेहो और न अपनी कहतेहो मै तुम्हारा परममित्रहूं मुझ से अपना सब वृत्तान्तकहो उसके यह वचन सुनकर मलयमाली ने अपना सबवृत्तान्त उससे कह दिया यह सुनकर मन्थरकने कहा कि तुम वैश्यके पुत्रहो तुमको राजपुत्रीकी इच्छा न करनी चाहिये अ- पने २ योग्यही अभिलाषा करनेसे सबका कल्याणहोताहै सामान्य तडागो की कमलनियोंकी इच्छा हसकरे तो उचित है परन्तु विष्णुभगवान्के नाभि कमलकी उसको इच्छा न करना चाहिये उसके इस प्रकार समझानेपर भी जब मलयमालीको कुछ बोध न हुआ तो उसने राजपुत्रीका एक,चित्र,उतारके उसे देदिया उस चित्रकोपाके वह उसीको इन्दुयशा राजपुत्री जानके ऐसा उसके ध्यानमें मग्नहोगया कि उसी चित्रका चुम्बन तथा आलिंगनादिक करनेलगा और इसी से उसका क्लेशभी निवृत्तहोगया एक समय वह उस चित्रकोलेके चन्द्रोदयमें वनके विहारकरनेको गया और उस चित्रको किसी वृक्षकी जडपर रखके अपनी प्रियाके लिये वनमे, जाकर पुष्पतोडनेलगा उस समय विनयज्योतिनाम मुनि उसे देखके आकाशमे उतरकर उसका उद्धारकरने के लिये अपने प्रभावसे उस चित्रके कोने में एक जीवताहुआ कालासर्प बनाकर अलक्षितहोके वहीं खडेरहे इतने मे पुष्पतोडकर लौटेहुए मलयमाली

लगा क्रमसे वह दोनों गुरु और शिष्य योग करते २ परमज्ञान को प्राप्तहुए इसबीचमें इन्दुकलशने खड्ग तथा घोड़ेके प्रभाव से कनककलशको विनीतमति की दीहुई आहिच्छत्रानगरी से भी निकाल दिया राज्यसे भ्रष्टहोके कनककलश अपने दो तीन मन्त्रियोंको साथलेके भ्रमण करताहुआ विनीतमतिके आश्रममें आया और जैसेही उसने उसवनके फलोंको खानाचाहा वैसेही विनीतमतिकी परीक्षाकरनेके लिये इन्द्रने उसवनको जलाके मरुभूमिकरदीनी अकस्मात् उसआश्रमको नष्टहुआ देखकर विनीतमति चकितहोके इधर उधर घूमनेलगा और कनककलशको क्षुधासे व्याकुल आया देखकर उसके पासजाके सबवृत्तान्त पूछके बोला कि इसवनमें क्षुधितोंके लिये जीनेका आज एकही उपायहै वह मैं आपको बताताहूं यहांसे आधकोशपर एकगढ़ेमें मृगगिरकर मरगयाहै वहां जाके तुम उसका मांसखाओ यहसुनकर वह वहां जानेको उद्यतहुआ और विनीतमतिने यहकहके योगबलसे वहां जाकर मृगकारूप धारणकरके गढ़ेमें गिरकर अपना प्राण त्यागदिया तदनन्तर कनककलशने अपने साथियों समेत धीरे २ वहां जाके गढ़ेसे मृगको निकालके भूनकरखाया इतनेमें विनीतमतिकी दोनों स्त्रियोंने आश्रमको नष्टहुआ देखके और अपने पतिको ढूंढनेपर भी कहीं न पाकर सोमसूरको समाधि से जगाकर उससे सबवृत्तान्त कहा यहसुनके सोमसूरने ध्यानके द्वारा अपने गुरुका सबकृत्य जानके अपनी गुरुपत्नियों से कहदिया और उनदोनों को अपने साथलेजाके उसगढ़े के निकटही मृगरूप अपने गुरुकी हड्डी देखी उनहड्डियों को लेकर वह दोनों पतिव्रतारानी भस्महोगई और उसवृत्तान्त को जानके कनककलश भी अपने को महापापी मानके अपने साथियों समेत अग्नि में जलगया यह देखकर सोमसूर अपनी कुटी में आके कुशासनपर बैठकर योगबलसे अपने प्राणदेने को उद्यत हुआ उस समय साक्षात् इन्द्रने आकर उससे कहा कि तुम प्राण न दो मैंने तुम्हारे गुरुकी परीक्षाकी थी अबमैंने अमृत छिड़ककर उसे दोनोंरानी तथा कनककलशादि समेत जिलादिया इन्द्रके यहवचन सुनकर सोमसूरने वहांजाकर देखा कि परमदयालु विनीतमति अपनी दोनोंरानी तथा कनककलशादि समेत फिर जी उठे यह देखके उसने प्रसन्न होके अपने गुरुके चरणोंमें नमस्कार किया और कनककलश ने भी विनीतमति को प्रणाम करके उसकी बड़ी प्रशंसाकी उस समय ब्रह्मा विष्णु आदिक सम्पूर्ण देवताओं ने आकर विनीतमतिको परोपकारी दिव्यवरदान दिये फिर उनके अन्तर्द्धान होजाने पर विनीतमति सोमसूरादिकोंको अपने साथलेकर अन्य दिव्य तपोवनको चलागया इसप्रकार नष्ट होजानेवाले मनुष्योंका भी फिर समागम होताहै और जीतेहुओंका तो कहनाही क्याहै इसलिये हे पुत्र तुम शरीरको मत त्यागो तुम वीरहोकर यह क्या अनुचित् कार्य करतेहो जाओ मृगाङ्कदत्तसे तुम्हारा अवश्य समागम होगा उस वृद्ध तपस्विनीके यह वचन सुनके मैं अपने चित्तमें आपके मिलने की आशासे नदुरानेके निश्चयवासिनीको प्रणाम करके वहांसे चला और राहमें चलते २ इसवनमें आया यहां भगवतीके लिये बलिदान ढूंढतेहुये भिल्ल युद्धमें मुझे पकड़के लाकर राजाके पास लेआये भाग्यवशसे यहां दोमन्त्रियों समेत आपके दर्शनसे मेरा मन दुःखरहित होगया इसप्रकार गुणाकरके सम्पूर्ण

की बाधा नहीं होती वह श्वेतमुनि इससमय पूर्व्व समुद्रके उसपार तरंगिणी नाम नदीकेपार तपोवनमें रहतेहैं वहीं तुमको मैं लेजाके छोड़आताहूं तरंगिणीनदीके इसपार तुम न आना कदाचित् तुम आभी जाओगे और तुम्हारी मृत्युहोजायगी तो परलोकमें तुम्हारीरक्षामें करूंगा यहकहकर चित्रगुप्तजी उससिंह विक्रमको साथलेके श्वेतमुनिके आश्रममें पहुँचाकर अन्तर्द्धान होगये इसके उपरान्त कुछकाल व्यतीतहोजानेपर कालने तरंगिणी नदीके इसपारजाकर सिंहविक्रमको लेजानेके निमित्त यहयुक्तिकरी कि एकदिव्य स्त्री बनाके तरंगिणी नदीके उसपार सिंहविक्रमके पास भेजी उसस्त्रीने अपनी सुन्दरतासे उसे अपने वशीभूत करके उसके साथ रमणकिया कुछदिनोंके व्यतीतहोनेपर वहस्त्री अपने भाइयोंके देखने केबहानेसे इसपार आनेके निमित्त नदीमेंघुसी और बीचमें आके बहनेसीलगीहोके चिल्लाकरबोली कि हे आर्य्यपुत्र मुझको मरतेहुए देखरहेहो और मेरी रक्षानहीं करते तुम सिंहविक्रम नहीं हो शृगालविक्रमहो उसके यह वचन सुनकर सिंहविक्रम नदीमें उतरा और वह स्त्री उसेनदीके इसपार बहाके लेआई यहां आतेही कालने उसके गलेमें फांसीडालके कहा (अपायोमस्तकस्थोहि विषयग्रस्तचेतसा) विषयी जीवोंके शिरपरही आपत्तिखड़ी रहती है यह कहकर काल उसको यमराजकी सभामें लेगया वहां चित्रगुप्तने उसे देखकर चुपकेसे उससे कहदिया कि जो तुमसे कोई पूछे कि तुम पहले स्वर्गभोगकरोगे या नरक तो कहदेना कि स्वर्ग फिर स्वर्गमें जाकर स्वर्गकी दृढ़ताकेलिये पुण्य करना और स्वर्गके दृढ़हो जानेपर सम्पूर्ण पापोंके नाश करनेकेलिये तपकरना चित्रगुप्तके यह वचन स्वीकार करके सिंहविक्रम चुपचाप खड़ारहा क्षणभरमें यमराजने चित्रगुप्तसे पूछा क्या इस चोरका कुछ पुण्यभी है चित्रगुप्तने कहा कि हां है इसने अतिथियोंका बहुत सत्कारकियाहै और अपने इष्टदेवताके प्रसन्न करनेको अपनी स्त्री भी ब्राह्मणकोदीहै इससे यह एक दिव्य दिन स्वर्गमें रहसक्ताहै चित्रगुप्तके यह वचन सुनकर यमराज ने सिंहविक्रमकी ओर देखकर कहा कि बताओ तुम पहले पुण्यका भोगकरोगे या पापका सिंहविक्रम ने कहा कि पहले पुण्यका भोगकरूंगा तब यमराजकी आज्ञासे आयेहुए विमानपर चढ़के स्वर्गमें जाके उसने आकाश गंगामें स्नान करके सम्पूर्ण भोगोंको त्यागकर केवल जप किया उस जपके प्रभावसे उसे कई दिव्य दिन तक स्वर्गमें रहनेकी आज्ञामिली तब वह घोरतपसे श्रीशिवजीकी आराधना करके ज्ञानको प्राप्तहोगया और उसके सम्पूर्ण पातक भस्महोगये इससे नरकके दूत उसका फिरमुख भी न देखसके और चित्रगुप्तने अपने सब कागजोंपर से उसके सम्पूर्ण पापकाटदिये इसप्रकारसे चोर होकरभी सिंहविक्रमने अपनी बुद्धिके बलसे सिद्धिपाई यह महा बुद्धिमान्की कथाहुई ऐसेही मनुष्य दान शील आदि छ पदार्थों के द्वारा संसाररूपी समुद्रके पारहोताहै इस प्रकारसे सोमसूर को उपदेश देतेहुए विनीतमति के धर्म्मोपदेशोंको सुनके मानों सूर्य्य भगवान् शान्तहोकर सन्ध्यारूपी गेरुवस्त्रोंको पहरकर अस्ताचलकी कन्दरामें चलेगये सूर्य्य भगवान्को अस्तहुआ देखकर सन्ध्योपासन करके सोमसूर तथा विनीतमतिने वहीं कुटीमें शयनकरके वह रात्रि व्यतीतकी २८५ दूसरेदिन विनीतमतिने सोमसूरको बौद्धमतका उपदेश करदिया उसउपदेशको पाके सोमसूर वहां ... रहने

लगा क्रमसे वह दोनों गुरु और शिष्य योग करते २ परमज्ञान को प्राप्तहुए इसबीचमें इन्दुकलशने खड्ग तथा घोडेके प्रभाव से कनककलशको विनीतमति की दीहुई आहिच्छत्रानगरी से भी निकाल दिया राज्यसे भ्रष्टहोके कनककलश अपने दो तीन मन्त्रियोंको साथलेके भ्रमण करताहुआ विनीतमतिके आश्रममें आया और जसेही उसने उसवनके फलोंको खानाचाहा वैसेही विनीतमतिकी परीक्षाकरनेके लिये इन्द्रने उसवनको जलाके मरुभूमिकरदीनी अकस्मात् उसआश्रमको नष्टहुआ देखकर विनीतमति चकितहोके इधर उधर घूमनेलगा और कनककलशको क्षुधासे व्याकुल आया देखकर उसके पासजाके सबवृत्तान्त पूछके बोला कि इसवनमें क्षुधितोंके लिये जीनेका आज एकही उपायहै वह मैं आपको बताताहूं यहांसे आग्नेयकोणपर एकगढेमें मृगगिरकर मरगयाहै वहां जाके तुम उसका मासखाओ यहसुनकर वह वहां जानेको उद्यतहुआ और विनीतमतिने यहकहके योगबलसे वहां जाकर मृगकारूप धारणकरके गढेमें गिरकर अपना प्राण त्यागदिया तदनन्तर कनककलशने अपने साथियों समेत धीरे २ वहां जाके गढेमें मृगको निकालके भूनकर खाया इतनेमें विनीतमतिकी दोनों स्त्रियोंने आश्रमको नष्टहुआ देखके और अपने पतिको ढूंढनेपर भी कहीं न पाकर सोमसूरको समाधि से जगाकर उससे सबवृत्तान्त कहा यहसुनके सोमसूरने ध्यानके द्वारा अपने गुरुका सबकृत्य जानके अपनी गुरुपत्नियों से कहदिया और उनदोनों को अपने साथलेजाके उसगढे के निकटही मृगरूप अपने गुरुकी हड्डी देखी उनहड्डियों को लेकर वह दोनों पतिव्रतारानी भस्महोगईं और उसवृत्तान्त को जानके कनककलश भी अपने को महापापी मानके अपने साथियों समेत अग्नि में जलगया यह देखकर सोमसूर अपनी कुटी में आके कुशासनपर बैठकर योगबलसे अपने प्राणदेने को उद्यत हुआ उस समय साक्षात् इन्द्रने आकर उससे कहा कि तुम प्राण न दो मैंने तुम्हारे गुरुकी परीक्षाकी थी अबमैंने अमृत छिडककर उसे दोनोंरानी तथा कनककलशादि समेत जिलादिया इन्द्रके यहवचन सुनकर सोमसूरने वहांजाकर देखा कि परमदयालु विनीतमति अपनी दोनों रानीतथा कनककलशादि समेत फिर जी उठेहैं यह देखके उसने प्रसन्न होके अपने गुरुके चरणोंमें नमस्कार किया और कनककलश ने भी विनीतमति को प्रणाम करके उसकी बडी प्रशंसाकी उस समय ब्रह्मा विष्णु आदिक सम्पूर्ण देवताओं ने आकर विनीतमतिको परोपकारी दिव्यवरदान दिये फिर उनके अन्तर्द्धान होजाने पर विनीतमति सोमसूरादिकोंको अपने साथलेकर अन्य दिव्य तपोवनको चलागया इसप्रकार भस्म होजानेवाले मनुष्योंका भी फिर समागम होताहै और जीतेहुओंका तो कहनाही क्याहै इससे हे पुत्र तुम शरीरको मत त्यागो तुम धीरहोकर यह क्या अनुचित कार्य करतेहो जाओ मृगाङ्कदत्तसे तुम्हारा अवश्य समागम होगा उस वृद्ध तपस्विनीके यह वचन सुनके मैं अपने चित्तमें आपके मिलने की आशासे सहगमनके निषेधकरनेवालीको प्रणाम करके वहांसे चला और क्रमसे चलते २ इसवनमें आया यहां भगवतीके लिये बलिदान ढूंढतेहुये भिल्ल युद्धमें मुझे पकडके नारदर मारानदुरे पास लेआये भाग्यवशसे यहां दोमन्त्रियों समेत आपके दर्शनसे मेरा मन द महद्भोगया इसप्रकार गुणाकरके सम्पूर्ण

की बाधा नहीं होती वह श्वेतमुनि इससमय पूर्व्व समुद्रके उसपार तरंगिणी नाम नदीकेपार तपोवनमें रहतेहैं वहीं तुमको मैं लेजाके छोड़ आताहूं तरंगिणीनदीके इसपार तुम न आना कदाचित् तुम आभी जाओगे और तुम्हारी मृत्युहोजायगी तो परलोकमें तुम्हारीरक्षामें करूंगा यह कहकर चित्रगुप्तजी उससिंह विक्रमको साथलेके श्वेतमुनिके आश्रममें पहुँचाकर अन्तर्द्धान होगये इसके उपरान्त कुछकाल व्यतीतहोजानेपर कालने तरंगिणी नदीके इसपारजाकर सिंहविक्रमको लेजानेके निमित्त यहयुक्तिकरी कि एकदिव्य स्त्री बनाके तरंगिणी नदीके उसपार सिंहविक्रमके पास भेजी उसस्त्रीने अपनी सुन्दरतासे उसे अपने वशीभूत करके उसके साथ रमणकिया कुछदिनोंके व्यतीतहोनेपर वहस्त्री अपने भाइयोंके देखने के बहानेसे इसपार आनेके निमित्त नदीमेंघुसी और बीचमें आके नहनेसीलगीहोके चिल्लाकरबोली कि हे आर्यपुत्र मुझको मरतेहुए देखरहेहो और मेरी रक्षानहीं करते तुम सिंहविक्रम नहीं हो शृगालविक्रमहो उसके यह वचन सुनकर सिंहविक्रम नदीमें उतरा और वह स्त्री उसेनदीके इसपार बहाके लेआई यहां आतेही कालने उसके गलेमें फांसीडालके कहा (अपायोमस्तकस्थोहि विषयग्रस्तचेतसा) विषयी जीवोंके शिरपरही आपत्तिखड़ी रहती है यह कहकर काल उसको यमराजकी सभामें लेगया वहां चित्रगुप्तने उसे देखकर चुपकेसे उससे कहदिया कि जो तुमसे कोई पूछे कि तुम पहले स्वर्गभोगकरोगे या नरक तो कहदेना कि स्वर्ग फिर स्वर्गमें जाकर स्वर्गकी दृढताकेलिये पुण्य करना और स्वर्गके दृढहो जानेपर सम्पूर्ण पापोंके नाश करनेकेलिये तपकरना चित्रगुप्तके यह वचन स्वीकार करके सिंहविक्रम चुपचाप खड़ारहा क्षणभरमें यमराजने चित्रगुप्तसे पूछा क्या इस चोरका कुछ पुण्यभी है चित्रगुप्तने कहा कि हां हे इसने अतिथियोंका बहुत सत्कारकियाहै और अपने इष्टदेवताके प्रसन्न करनेको अपनी स्त्री भी ब्राह्मणकोदीहै इससे यह एक दिव्य दिन स्वर्गमें रहसक्ताहै चित्रगुप्तके यह वचन सुनकर यमराजने सिंहविक्रमकी ओर देखकर कहा कि बताओ तुम पहले पुण्यका भोगकरोगे या पापका सिंहविक्रमने कहा कि पहले पुण्यका भोगकरूंगा तब यमराजकी आज्ञासे आयेहुए विमानपर चढके स्वर्गमें जाके उसने आकाश गंगामें स्नान करके सम्पूर्ण भोगोंको त्यागकर केवल जप किया उस जपके प्रभावसे उसे कई दिव्य दिन तक स्वर्गमें रहनेकी आज्ञामिली तब वह घोरतपसे श्रीशिवजीकी आराधना करके ज्ञानको प्राप्तहोगया और उसके सम्पूर्ण पातक भस्महोगये इससे नरकके दूत उसका फिरमुख भी न देखसके और चित्रगुप्तने अपने सब कागजोंपरसे उसके सम्पूर्ण पापकाटदिये इसप्रकारसे चोर होकरभी सिंहविक्रमने अपनी बुद्धिके बलसे सिद्धिपाई यह महा बुद्धिमान्की कथाहुई ऐसेही मनुष्य दान शील आदि छ पदार्थों के द्वारा संसाररूपी समुद्रके पारहोताहै इस प्रकारसे सोमसूर को उपदेश देतेहुए विनीतमति के धर्म्मोपदेशोंको सुनके मानों सूर्य्य भगवान् शान्तहोकर सन्ध्यारूपी गेरुएवस्त्रोंको पहरकर अस्ताचलकी कन्दरामें चलेगये सूर्य्य भगवान्‌को अस्तहुआ देखकर सन्ध्योपासन करके सोमसूर तथा विनीतमतिने वहीं कुटीमें शयनकरके वह रात्रि व्यतीतकी ३६५ दूसरेदिन विनीतमतिने सोमसूरको बौद्धमतका उपदेश करदिया उसउपदेशको पाके सोमसूर वहीं ... रहने

वर्णन करतीहूं दक्षिणदेशमें एकघनेंडाघना तमालका वनहै उसमें पृथूदरनाम यक्षरहताहै उसकी सौदामिनी नाम मैंहीं एककन्याहूं मेरा पिता मुझपर स्नेहकरके मुझे लिये२ पर्वतोंपर फिरताथा एकसमय मैंने कैलाशपर्वतपर अट्टहासनाम यक्षको देखा और उस अट्टहास ने भी मुझे देखा परस्पर देखकर हमदोनों का चित्त एक दूसरेपर चलायमान होगया यह जानके मेरे पिता तुल्यसयोग जानके अट्टहासको बुलाके विवाहका निश्चयकरके और शुभ लग्न ठीककर मुझे लेकर अपने घरचलेआये और अट्टहास भी प्रसन्नहोके अपने मित्रो के साथ अपने घरचलागया दूसरे दिन कपिशभ्रूनाम मेरी सखी कुछ उदासीनसीहोके मेरेपास आई और हठपूर्वक उदासीनता का कारण पूछनेपर कहनेलगी कि हे सखी यद्यपि कहनेके योग्य बात नहीं है तथापि यहदुखदाई बात मैं तुमसे कहतीहूं आज मैंने भ्रमण करते २ हिमालयके चित्रस्थलनाम शिखरपर तुम्हारे प्रिय अट्टहासको देखा कि उसकेमित्रोंने उसे वियोगसे व्याकुल देखके बहलाने के लिये उसे यक्षराज बनाया और उसके भाई को यक्षराज का पुत्र नलकूबर बनाया और आप सब उसकेमन्त्रीबने इसप्रकार क्रीडा करतेहुए उसको अकस्मात् आकाश मार्गसे जातेहुए नलकूबरने देखकर क्रोधकरके यह शापदिया कि हे मूर्ख तू सेवकहोकर स्वामीकीलीला करताहै इससे मनुष्यहोगा यहघोरशाप सुनके अट्टहासने हाथ जोडकेकहा कि हे स्वामी मैंने उत्सुकता के दूर करनेकेलिये यह मूर्खताकी थी अधिकार के अभिमान से नहीं की इससे मेरे इस अपराध को क्षमाकीजिये उसके ऐसे आर्द्रवचन सुनकर नलकूबरनेकहा कि जिस यक्षिणी को तुम चाहतेहो उसी यक्षिणी के साथ तुम्हारा मनुष्यहोकर विवाहहोगा और उसी यक्षिणी मे यह तुम्हारा छोटाभाई पुत्र रूपसे उत्पन्न होगा इसके उत्पन्न होतेही तुम शापसे छूटजाओगे और तुम्हारा यहभाई बहुत कालतक पृथ्वी पर राज्यकरके शापसे छूटेगा नलकूबर के यह वचन सुनके शापके प्रभाव से वह अट्टहास कहीं चलागयायह देखकर मैं बहुत दुखितहोके तुम्हारे पास आईहूं अपनी सखी से यह सुनके मैं अति दुखित होके अपने माता पितासेभी यह वृत्तान्तकहके फिर समागमकी इच्छासे अपना समय व्यतीतकरनेलगी हे स्वामी वह अट्टहास आपहीहो बहुतकालके पीछे हमारा और आपका समागमहुआहै इसमें आप चिन्ता न करिये पुत्र अवश्यहोगा सौदामिनी यक्षिणी के यह वचन सुनके पवित्रधर निश्चयपुत्रहोने बहुत प्रसन्नहुआ कुछकालके उपरान्त उसके यक्षिणी स्त्रीमें पुत्रहुआ जिसके तेजसे सम्पूर्ण घर प्रकाशितहोगया उस पुत्र के मुखको देखतेही पवित्रधर अट्टहासनाम यक्षहोके सौदामिनी नाम अपनी यक्षिणी स्त्री से बोला कि हे प्रिये अब मेरा शाप निवृत्त होगया चलो अपने स्थानको चलें यह सुनकर यक्षिणी ने कहा कि यह तुम्हारा भाईही तुम्हारा पुत्ररूप हुआहै यह अभी अनाथहै इसकी क्या दशाहोगी यह तो सोचलो उसके यह वचन सुनके अट्टहासने ध्यानकरके कहा कि हे प्रिये इसीपुरी में देवदर्शन नाम एक अनपत्य दरिद्री ब्राह्मणरहता है एकसमय धन तथा पुत्रके निमित्त तपकरतेहुए देवदर्शन से भगवान् अग्नि ने स्वप्नमें कहा कि हे ब्राह्मण तुम्हारे औरस पुत्र नहींहोगा परन्तु कृत्रिमपुत्र तुमको प्राप्त होगा उसीके प्रभाव से तुम्हारा दरिद्र दूरहोगा अग्निकी यह आज्ञापाके देवदर्शन अबतक उसी पुत्रकी

वृत्तान्तको सुनकर मृगाङ्कदत्त बड़े आनन्दको प्राप्तहुआ और उसके शरीरमें अच्छे प्रकारसे, पट्टी बँध वाके अपने मन्त्रियों समेत आह्निक करनेकोगया इसप्रकार गुणाकरकोपाकर उसकी ओषधी करवाता हुआ मृगाङ्कदत्त अपने अन्य मन्त्री तथा शशाङ्कवतीकेलिये उत्कण्ठितभी होकर मायावटुके आग्रह से कुछ दिन वहा और रहा ४०७ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेपञ्चमस्तरङ्गः ५ ॥

इसके उपरान्त गुणाकर के स्वस्थ होजानेपरमृगाङ्कदत्त शुभ मुहूर्त्त देखकर मायावटु तथा दुर्गपिशाचसे अपने कार्यके निमित्त सहायता लेनेका निश्चय करके और उनसे आज्ञालेकर श्रुतधि विमलबुद्धि भीम पराक्रम तथा गुणाकर सहित उज्जयिनीको चला मार्ग में अन्य मन्त्रियोंको ढूंढते २ एक दिन विन्ध्याचलके वनमें सायकालके समय किसी वृक्षके नीचे पहुँचकर वहीं अपने मन्त्रियों समेत सोया कुछरात्रि व्यतीत होनेपर अकस्मात् उठके उसने एक अन्य पुरुषको वहीं सोता देखकर यह कौनहै इसके जाननेकेलिये उसका मुख खोलकर देखातो वह उसीका मन्त्री विचित्रकथ था मुख खोलने से विचित्रकथभी जगकर उसे पहचानके उसके पैरोंपर गिरा मृगाङ्कदत्तने उसे पैरोंपर से उठा के गले से लगाकर अन्यमन्त्रियोंको भी जगाके उसे दिखाया उनसबने उठके उससे मिलके अपना २ सबवृत्तान्त कहके उससे पूछा कि तुम इतने दिनतक कहा कैसेरहे और क्या २ वृत्तान्त देखा सोसबको कहो यह सुनकर विचित्रकथने कहा कि उस सर्पके शापसे आप लोगोंसे पृथक्होकर मैं मोहितहोके भ्रमणकरते २ दूसरे दिन अकस्मात् उसीवनके किनारेपर एकदिव्यपुरमें पहुँचा वहादो दिव्यस्त्रियोंसे युक्त एकदिव्य पुरुष ने मुझे बहुतसमझाके शीतल जलसे स्नानकराके मन्दिरमे लेजाके दिव्य भोजनकराया और आप भी भोजनकिया भोजन के उपरान्त मैंने उससेकहा कि आप कौनहैं और क्यो इतनी दया आपने मेरे ऊपरकी मैं अपने स्वामी के विना अवश्य अपना शरीर त्यागना चाहताहू यहकहके मैंने उससे अपना सब वृत्तान्त कहदीना सो सुनके उसनेकहा कि मैं यक्षहू और यहदोनो मेरीस्त्रीहैं तुम मेरे यहा आज अतिथि प्राप्तहुए हो इसीसे मैंने तुम्हारा सत्कारकियाहै क्योंकि यथा शक्ति अतिथियोंका सत्कार करना गृहस्थियों का धर्महै तुम अपने प्राण क्योंदेना चाहतेहो शापके नष्टहोजानेपर तुम्हारा समागम अवश्य अपने स्वामीसेहोगा भला बताओ तो सही इससंसारमें कौन दुःखसे रहितहै देखो यक्षहोकर भी जो २ दुःख मैंने उठाये हैं वहसब तुमको सुनाताहू इसपृथ्वी की आभूषण रूप त्रिगर्त्तानाम नगरी में एक कुलीन कुटुम्बी पवित्रधरनाम दरिद्री ब्राह्मण रहताथा एकदिन उस ने शोचा कि यहा धनवानों के बीचमें रहने मे मेरी कुछ शोभा नहीं है मै यहा मानकेकारण धनवानोकी न सेवाकरसक्ता हू न इनसे दानही लेसक्ताहू इससे कहीं एकान्तमें जाकर यक्षिणीको सिद्ध करू क्योंकि मेरे गुरुने मुझे यक्षिणी के मन्त्रका उपदेश कियाहै यह शोचके उसने वनमे जाके स्त्रीरूप यक्षिणी सिद्धकी और सिद्धहुई सौदामिनीनाम यक्षिणीकेसाथ सुखपूर्वक रहनेलगा एकदिन पुत्रोत्पत्तिके विना पवित्रधरको दुःखित देख के यक्षिणी ने कहा कि हे आर्यपुत्र चिन्ता न करो पुत्र अवश्य होगा इसी विषयका वृत्तान्त मै तुमसे

वर्णन करतीहूं दक्षिणदेशमें एकबडाघना तमालका वनहै उसमें पृथूदरनाम यक्षरहताहै उसकी सौदामिनी नाम मैंहीं एककन्याहूं मेरा पिता मुझपर स्नेहकरके मुझे लिये २ पर्वतोंपर फिरताथा एकसमय मैंने कैलाश पर्वतपर अट्टहासनाम यक्षको देखा और उस अट्टहास ने भी मुझे देखा परस्पर देखकर हमदोनो का चित्त एक दूसरेपर चलायमान होगया यह जानके मेरे पिता तुल्यसयोग जानके अट्टहासको बुलाके विवाहका निश्चयकरके और शुभ लग्न ठीककर मुझे लेकर अपने घरचलेआये और अट्टहास भी प्रसन्नहोके अपने मित्रो के साथ अपने घरचलागया दूसरे दिन कपिशभ्रूनाम मेरी सखी कुछ उदासीनसीहोके मेरेपास आई और हठपूर्वक उदासीनता का कारण पूछनेपर कहनेलगी कि हे सखी यद्यपि कहनेकेयोग्य बात नहीं है तथापि यह दुखदाई बात मैं तुमसे कहतीहूं आज मैंने भ्रमण करते २ हिमालयके चित्रस्थलनाम शिखरपर तुम्हारे प्रिय अट्टहासको देखा कि उसकेमित्रोंने उसे वियोगसे व्याकुल देखके बहलाने के लिये उसे यक्षराज बनाया और उसके भाई को यक्षराज का पुत्र नलकूबर बनाया और आप सब उसकेमन्त्रीबने इसप्रकार क्रीडा करतेहुए उसको अकस्मात् आकाश मार्गसे जातेहुए नलकूबरने देखकर क्रोधकरके यह शापदिया कि हे मूर्ख तू सेवकहोकर स्वामीकीलीला करताहै इससे मनुष्यहोगा यहघोरशाप सुनके अट्टहासने हाथ जोडकेकहा कि हे स्वामी मैंने उत्सुकता के दूर करनेकेलिये यह मूर्खताकी थी अधिकार के अभिमान से नहीं की इससे मेरे इस अपराध को क्षमाकीजिये उसके ऐसे आर्द्रवचन सुनकर नलकूबरनेकहा कि जिस यक्षिणी को तुम चाहतेहो उसी यक्षिणी के साथ तुम्हारा मनुष्यहोकर विवाहहोगा और उसी यक्षिणी मे यह तुम्हारा छोटाभाई पुत्र रूपसे उत्पन्न होगा इसके उत्पन्न होतेही तुम शापसे छूटजाओगे और तुम्हारा यहभाई बहुत कालतक पृथ्वी पर राज्यकरके शापसे छूटेगा नलकूबर के यह वचन सुनके शापके प्रभाव से वह अट्टहास कहीं चलागयायह देखकर मैं बहुत दुखितहोके तुम्हारे पास आईहूं अपनी सखी से यह सुनके मैं अति दुखित होके अपने माता पितासे मन वृत्तान्तकहके फिर समागमकी इच्छासे अपना समय व्यतीतकरनेलगी हे स्वामी वह अट्टहास आपहीहो बहुतकालके पीछे हमारा और आपका समागमहुआहै इससे आप चिन्ता न करिये पुत्र अवश्यहोगा सौदामिनी यक्षिणी के यह वचन सुनके पवित्रधर निश्वासयुक्तहोके बहुत प्रसन्नहुआ कुछकालके उपरान्त उसके यक्षिणी स्त्रीमें पुत्रहुआ जिसके तेजसे सम्पूर्ण घर प्रकाशितहोगया उस पुत्र के मुखको देखतेही पवित्रधर अट्टहासनाम यक्षहोके सौदामिनी नाम अपनी यक्षिणी स्त्री से बोला कि हे प्रिये अब मेरा शाप निवृत्त होगया चलो अपने स्थानको चलें यह सुनकर यक्षिणी ने कहा कि यहतुम्हारा भाईही तुम्हारा पुत्ररूप हुआहै यह अभी अज्ञानहै इसकी क्या दशाहोगी यह तो सोचलो उसके यह वचन सुनके अट्टहासने ध्यानकरके कहा कि हे प्रिये इसीपुरी में देवदर्शन नाम एक अनपत्य दरिद्री ब्राह्मणरहता है एकसमय धन तथा पुत्रके निमित्त तपकरतेहुए देवदर्शन से भगवान् अग्नि ने स्वप्नमें कहा कि हे ब्राह्मण तुम्हारे औरस पुत्र नहींहोगा परन्तु कृत्रिमपुत्र तुमको प्राप्त होगा उसीके प्रभाव से तुम्हारा दरिद्र दूरहोगा अग्निकी यह आज्ञापाके देवदर्शन अबतक उसी पुत्रकी

आशाकररहाहै इससे उसीको यह बालक देदेनाचाहिये क्योंकि ऐसाही होनहारहै यह कहके अट्टहास रात्रिकेसमय एक सुवर्णके घटमें रत्नभरकर उसपर उस बालकको सुलाके बालकके गलेमें एकदिव्य रत्नों की माला पहनाके उस ब्राह्मणके यहा रखकर सौदामिनी समेत अपने स्थानको चलागया उसके चले जानेपर उस ब्राह्मणने जगके रत्नोको चमकतेहुए देखकर उठके उस बालकको जाके देखा और बहुत धनसमेत बालकको पाकर अग्निदेवके वचनको स्मरणकरके अपनी स्त्रीको भी सोतेसे जगाकर प्रसन्नता सुनाके दूसरे दिन प्रातःकाल बडा उत्सव किया और ग्यारहवें दिन अपने नामके अनुसार उस बालकका नाम श्रीदर्शन रक्खा इसप्रकारसे देवदर्शन महाधनवान् होकर यज्ञ आदिक धर्म कार्य्योंको करताहुआ सुख पूर्व्वक रहनेलगा और श्रीदर्शनभी वृद्धिको प्राप्तहोकर सम्पूर्ण वेदोंमें विद्याओं में तथा अस्त्र विद्यामें निपुणहोगया कुछ कालके उपरान्त श्रीदर्शनके तरुणहोनेपर देवदर्शन तीर्थयात्राके प्रसगसे प्रयाग में जाके मृत्युको प्राप्तहोगया यह समाचार सुनकर देवदर्शनकी स्त्रीभी उसका कोई चिह्न लेकर अग्नि में भस्महोगई तब उन दोनों का ऊर्ध्व दैहिककर्म करके श्रीदर्शन विद्वान् होकर भी विवाह न करके कुसगके प्रभावसे द्यूत खेलनेलगा थोडेही कालमे उस दुर्व्यसनसे उसका सम्पूर्ण धन क्षीणहोगया और भोजनभी कष्टसे मिलनेलगा एकसमय द्यूतशाला मे तीन दिनतक निराहार बैठेहुए लज्जासे बाहर निकलनेकी इच्छा न करतेहुए और किसी दूसरेके दियेहुए भोजन न करनेसे दुखित हुए श्री दर्शनसे उसके मुखरकनाम किसी मित्रने कहा कि हे भाई क्यों इतना मोह कररहेहो यह द्यूत का व्यसन ऐसाही होताहै क्या निर्धनताके कटाक्षरूपी पाशोंको तुम पहलेसे नहीं जानतेथे ज्वारी की शय्या धूलहै तकिये भुजाहै चौराहा गृहहै और निर्धनता स्त्री है इससे भोजन क्यों नहीं करतेहो विद्वान् होकर भी क्यों प्राण दिये देतेहो देखो जीतेहुए मनुष्योंके सम्पूर्ण मनोरथ पूर्णहोते हैं इसविषयपर मैं तुम को एकराजा भूनन्दनकी विचित्र कथा सुनाताहू इसपृथ्वीका आभूषण रूप कश्मीरनाम देशहै जिसे ब्रह्माने मानों पुण्यात्मा मनुष्योके सुखके लिये द्वितीय स्वर्ग बनायाहै जिसमें लक्ष्मी और सरस्वती, मैं बडीहू मैं बडीहू इसईर्ष्यासे सदैव निवास करतीहैं धर्म्मद्रोही कलियुगका इसमें प्रवेश न होय इसीलिये मानों हिमालय जिसकी चारोंओर से रक्षाकरता है जिसमें वितस्ता नदी अपनी तरगरूपी हातों से मानों पापोको यहकहकर हटाती है कि इसतीर्थमय देशसे तुम दूरभागजाओ जिसके श्वेत महलोंको देखकर हिमालय के शिखरोंकी भ्रान्ति होती है ऐसे सुन्दर उस देश में वर्णाश्रमकी रक्षा करनेवाला प्रजाओंको आनन्द देनेवाला सम्पूर्ण विद्याओंका जाननेवाला भूनन्दननाम राजाथा जिसकी भुजाओं के बलसे सदैव शत्रु मण्डल भागे २ फिरते थे उसकी प्रजाओं में कभी किसी प्रकारका दुर्भिक्ष नहीं होताथा उसकी प्रजाओंके चित्त सदैव शुद्ध बनेरहते थे वह नित्य विष्णुभगवान्का पूजनकरके नीतिपूर्व्वक प्रजाओंका पालन करताथा एक समय वह राजा द्वादशी के दिन विधिपूर्व्वक विष्णुभगवान्का पूजनकरके रात्रिके समय पलँगपरसोया तब उसने स्वप्नमें देखा कि एक दैत्यकन्याने आकर उमसे सम्भोगकिया यह स्वप्न देखकर जगकर उसने अपने शरीरमें सम्भोगके चिह्नदेखके और

दैत्य कन्याको न पाकर शोचा कि यह स्वप्न तो नहीं है क्योंकि मेरे शरीरमें सम्भोगके चिह्न प्रकटहैं मैं जानताहूं किसी दिव्य स्त्री ने आकर मुझे छलाहै यह शोचकर वह ऐमा विरहातुर हुआ कि सम्पूर्ण राज्य कार्य्य करना भूलगया और उसकी प्राप्तिका कोई उपाय न देखकर विचारनेलगा कि विष्णुभगवान्कीही कृपासे वह मुझे रात्रिके समय प्राप्तहुईथी इससे एकान्तमें जाकर उन्हींका आराधन करना चाहिये उसके बिना यह सब मेरा राज्य व्यर्थ है यह शोचकर सुनन्दननाम अपने छोटेभाईको राज्यदेकर और मन्त्रियोंको सब राज्यके कार्य्य समझाकर वह वामनजी के चरणों से उत्पन्नहुए क्रमसरनाम तीर्थपर चलागया जिस तीर्थ के निकट तीन शिखर ब्रह्मा विष्णु तथा श्री शिवजी के समान शोभित होते हैं जिस तीर्थ ने कश्मीर देशमें विष्णुभगवान् के चरणोंसे द्वितीय गंगाके समान वितस्तानाम नदी उत्पन्नकीहै ऐसे श्रेष्ठ उस तीर्थपर पहुंचकर वह राजा अन्यरसोंसे निस्पृहहोकर ग्रीष्म ऋतुमें वर्षा की चाहना करनेवाले चातककी समान तप करनेलगा तप करते २ बारहवर्ष व्यतीत होजानेपर उसी मार्गसे पीली २ जटाओं को धारण कियेहुए बहुतसे शिष्योंको साथमें लियेहुए एक बड़ेज्ञानी तपस्वी वहाँ आये वह उस राजाको देखके और सब वृत्तान्त पूछ के क्षणभर ध्यान करके बोले कि हेराजा वह आपकी प्रिया दैत्यकन्या पातालकी रहनेवालीहै इससे आप सावधान रहियें मैं आपको वहीं पहुंचाय देताहूं मैं दक्षिण देशके रहनेवाले यज्ञनाम एक याज्ञिक ब्राह्मणका भूतवसु नाम पुत्रहूं मेरे पिता ने पातालशास्त्रसे अनेकप्रकारके मंत्र यन्त्रों की विधि मुझे सिखाई उसे सीखकर श्रीपर्व्वतपर जाके मैंने श्रीशिवजीकी आराधनाका तपकिया उससे प्रसन्न होकर श्री शिवजीने आकर मुझसे कहा कि तुम रसातल में जाकर दैत्यांगनाओंके साथ कुछकाल रहकर मेरे पास चलेआयोगे और पातालमें जाने का यह उपायहै कि इस पृथ्वीपर बहुतसेछिद्र पातालमें जानेकेहैं परन्तु कश्मीर देशमें एकछिद्रहै जो कि मनकीयोद्धेश्रमसे मिलसक्ताहै जिसकेद्वारा ऊषाने अनिरुद्धको दैत्योंके उपवनमेंलेजाके रमणकिया था उससमय प्रद्युम्नने अपने पुत्रकीरक्षाके लिये पर्व्वतके शिखरमेंसे वहां का एकद्वारबनाके शारिका नाम दुर्गादेवीकी आराधनाकरके द्वारकी रक्षाकेलिये स्थापित कियाथा इससे उसस्थानकानाम शारिका कूट तथा प्रद्युम्नशिखर उसदेशमें आजकलप्रकटहै वहींजाकर अपने साथियोंसमेत तुमपातालकोजाओ मेरी कृपासे वहां तुमको सिद्धि प्राप्तहोगी यहकहकर श्री शिवजी के अन्तर्द्धान होजानेपर मैं सम्पूर्ण विज्ञानों से युक्तहोकर इसकश्मीरदेशमें आयाहूं इससे हे राजा तुम मेरे साथ शारिका कूटको चलो वहांसे मैं तुमको तुम्हारी प्रियाके स्थान पातालमें लेजाऊंगा ११२ उसतपस्वीके यहवचन स्वीकारकरके राजा भूनन्दन उसके साथ शारिकाकूटको गया वहां वितस्तानदी में स्नानकरके और विघ्नहरता श्री गणेशजी तथा शारिकादेवीका पूजन करके और सर्षपोंसे दिग्बन्धनकरके वह तपस्वी छिद्रको प्रकट करके अपने शिष्यों तथा राजाभूनन्दन समेत उसी छिद्रमें प्रवेशकरके पातालके मार्गमें पांचदिन रात्रि बराबर चलागया छठेदिन पाताल गंगाका उल्लंघन करके रजतमय पृथ्वीमें उसने एक दिव्यवनदेखा उसवनमें अत्यन्त सुगंधित सुवर्ण के कमल पृथ्वीमेंही लगेहुए थे और मूंगे कपूर चन्दन तथा अगर

के वृक्ष अपनी सुगन्धियों से जीवोंके चित्तोंको तृप्तकरतेथे उनवृक्षोंके बीचमें एकबहुत बड़ा शिवजीका मन्दिरथा उसमे रत्नोंकी सीढियां सुवर्णकी दीवार माणिक्यके खंभे और चन्द्रकान्ति मणिकी चट्टान थी ऐसे अति मनोहर उस मन्दिरको देखके आश्चर्यितहुए अपने शिष्यों से तथा राजा भूनन्दनसे उसने कहा कि यहपातालमें हाटकेश्वर नाम श्री शिवजीका मन्दिरहै तुमसबलोग इनका पूजनकरो तपस्वी के यहवचन सुनके सबने पुष्प तोड के आकाशगंगा मे स्नान करके श्री शिवजी का पूजन किया और क्षणभर विश्रामकरके वहा से चलकर पके फलों से युक्त एक जामन का वृक्ष देखा उसे देखकर तपस्वी ने कहा कि इसवृक्षके फलोंको कोई न खाना जो खाओगे तो बडा विघ्नहोगा यह सुनकर भी उनके एक शिष्य ने फलखालिये और खातेही काष्ठके समान जड होगया उसकी यह दशा देखके सब लोग भयभीत होके उन फलों को छोडकर वहा से चले एककोशभर पृथ्वी चलकर एक बडा सुवर्ण का परकोटा मिला जिसमे रत्नमय द्वार लगाथा उसद्वारपर दो लोहेके मेंढे लोगों के रोकनेको खडेथे मन्त्र पढ़ेहुये डंडेसे उनमेंढों को भगाकर तपस्वी ने अपने साथियोंसमेत भीतर जाके रत्नजटित सुवर्ण के दिव्य गृह देखे उन गृहों के द्वारपर लोहे के डंडे लियेहुए बडे २ रक्षक खड़े थे उन रक्षकों को देखके तपस्वी ने एक वृक्षके नीचे बैठके दुष्टघ्नी योगधारणा की उसके प्रभावसे वह भयंकर रक्षक भागगये और उन गृहोंमें से दैत्य कन्याओंकी बहुतसी दासी निकलीं उन दासियोंने इन सबसे अलग २ आकर कहा कि कृपा करके भीतर चलिये आपको हमारी स्वामिनी बुलाती हैं उनके यह वचन सुनके तपस्वीने अपने साथियो से कहा कि मंदिरो मे जाकर तुम लोग अपनी २ प्रियाओं के वचनोंका उल्लंघन न करना यह कहके वह तपस्वी उन दासियोंके साथ एक दिव्य मंदिरमें जाकर एक उत्तम दिव्य दैत्य कन्याको पाकर अभीष्ट सुखको प्राप्तहुआ और उसके शिष्यभी जुदे २ मंदिरोंमें जाकर दैत्य कन्याओंको पाकर महा सुखीहुये और राजा भूनन्दनभी एक दासीके साथ परम उत्तम दिव्य मन्दिरमें गया उसमन्दिरकी रत्न मयी दीवारों मे स्त्रियों के प्रतिबिम्ब पडनेसे ऐसी शोभा होती थी कि मानों सजीव चित्र बनेहुये हैं उस मन्दिरकी सब चट्टान नीलमणिकी बनीहुई थीं इससे ऐसी शोभाहोतीथी कि मानों यह मन्दिर विमानों के जीतनेकी इच्छासे आकाश में चढगयाहै वहाकी स्त्रियां ऐसी सुकुमारथीं कि प्रातःकालकी धूप के सहनेवाले पुष्प भी उनकी तुल्यता नहींकरसक्ते थे ऐसे सुन्दर उस मन्दिरमें राजा भूनन्दनने अपनी प्रिया दैत्यकन्याको बैठीहुई देखा उसकी कान्तिसेही वह मन्दिर ऐसा देदीप्यमान होरहाथा कि रत्नके दीपकोंकीभी कुछ आवश्यकता न थी उसके परमसुन्दररूपको देखके राजा के आनन्दाश्रु निकलआये वह आंसू क्या निकले मानों राजा ने अन्य स्त्रियों के देखनेसे लगेहुए अपने नेत्रोंके मैलको धोडाला कुमुदिनीनाम उस कन्याने भी राजा को देखके बडे आनन्दसे उठके राजाका हाथ पकडकर आपको मैंने बडा परिश्रम दिया यहकहके आदरपूर्वक दिव्यआसनपर बैठाया क्षणभर विश्रामकरने के उपरान्त वह राजा को स्नानकराके तथा दिव्यभोजन कराके और नवीन वस्त्राभरण पहराके उपवनमें बावडी के तटपर लेगई और एक मणिकी शिलापर बैठगई उस बावडी में

रुधिर तथा चरबीका मद्यभराहुआ था उसीमें से एक पात्रभरके उसने राजाके पीनेको दिया परन्तु राजा ने उसका ग्रहण नहीं किया तब उसने कहा कि जो आप इसका ग्रहण न करोगे तो कल्याण न होगा उसके यह वचन सुनकर राजाने कहा कि जो चाहे सो होय मैं इस निन्दित वस्तुको नहीं पीऊंगा यह सुनके वह उसके शिरपर वह पात्र पटककर वहां से चलीगई और उसकी दासियों ने राजाको लेजाके दूसरी बावडी में डालदिया उसमें पडतेही राजा उसीक्रमसर नाम तीर्थके तपोवनमें आनिकला और बहुत आश्चर्य युक्तहोके शोचने लगा कि कहां तो वह दैत्यकन्याका उपवन और कहां यह क्रमसर तीर्थ यह क्या आश्चर्य्य है क्या यह कोई मायाहै या मेरा कोई बुद्धिभ्रमहै अथवा जो मैंने उस तपस्वी के कहनेका उल्लघन किया उसीका यह फलहै जो उसने मुझे पीनेको मद्यादियी थी वह निन्दित न थी यह मेरी परीक्षाथी देखो वह जो मद्य मेरे शिरपर पडीहै उसमें दिव्य सुगन्धि आरही है मन्दभागी लोग जो महाक्लेश करके कोई कार्य्य करतेभी हैं तो उसका फल उन्हें नहीं प्राप्तहोता क्योंकि उनका भाग्य तो विपरीत ही रहताहै इसप्रकार शोचतेहुए राजाको दैत्यकन्याकी फेंकी हुई मद्यकी गन्धसे सु-गन्धिकेलोभी भ्रमरोंने आकर घेरलिया उन भ्रमरोंको देखके राजाने बहुत घबराके अपने चित्तमें कहा कि अच्छाफलहोना तो दूररहा मुझे उसके बदले अनिष्टफलप्राप्तहुआ कि इन भ्रमरोंकेमारे कहीं सुखसे बैठभी नहींसक्ताहूं इसप्रकारसे विकलहोकर राजा भूनन्दन अपने प्राणदेनेको उद्यतहुआ इतने में उसी मार्ग मे आयेहुए एक ऋषि ने राजा को भ्रमरों से घिराहुआ देखके भ्रमरों को हटाके सब वृत्तान्त पूछ कर राजा से कहा कि हे राजा जबतक यह शरीर है तबतक दुःखका नाश नहींहोसक्ता इससे क्लेश को न मानकर पुरुषार्थ करनाचाहिये जबतक ब्रह्मा विष्णु महेश में अभेदमानकर उपासना नहींकीजातीहै तबतक कोईयथार्थ सिद्ध नहीं होसक्ता इससे अभेद बुद्धिकरके तुम ब्रह्मा विष्णु महेशकी उपासनाकरके बारहवर्ष तक और तप करो तब तुम्हारी प्रिया तुमको प्राप्तहोगी और अन्त में परमसिद्धि प्राप्तहोगी तुम्हारा शरीर सिद्धहोगया है क्योंकि तुम्हारे शरीर से दिव्यगन्धि आरही है अब मैं तुमको एकमन्त्रका उपदेशकरके देताहूं तुम उसीका जप करना और अपना मृगचर्म्म तुम्हें देताहूं जिसके लपेटनेसे भ्रमरों की बाधा न होगी यह कहके वह मुनिमन्त्रका उपदेशकरके तथा मृगचर्म्म देकर वहीं अन्तर्द्धान होगये और राजा भूनन्दन उसी तीर्थ पर तपकरनेलगा बारहवर्ष के उपरान्त परमेश्वरकी कृपासे वह कुमुदि-नीनाम दैत्य कन्या राजाकेपास आई और उसे अपनेसाथमें पातालको लेगई वहांजाके राजाभूनन्दन उसकेसाथ बहुत कालतक दिव्यसुखभोगके अन्तमें परमसिद्धिको प्राप्तहुआ इसप्रकारसे धैर्य्यवान् पुरुष अपने मनोरथों को बहुत कालमें भी प्राप्त करते हैं इससे हे श्रीदर्शन तुमभी भोजनकरो भूखसे अपने प्राणमतत्यागो १७८ मुखरके यहवचन सुनकर श्रीदर्शन ने कहा कि तुम बहुतठीक कहते हो परन्तु इसप्रकारकी दुर्दशामें भ्रमितहोके मैं द्यूतशालाके बाहर इस नगरमें नहीं निकलाचाहताहूं इससे जो तुम आजही रात्रिको परदेशजानेकी मुझेआज्ञादो तो मैं भोजनकरूं इसके यहवचन स्वीकारकरके मुखरकने उसीसमय उसे भोजनकराया और कहा कि हे मित्र मैंभी तुम्हारेही साथचलूंगा उसके यह वचनसुनके

के वृक्ष अपनी सुगन्धियों से जीवोंके चित्तोंको तृप्तकरतेथे उनवृक्षोंके बीचमें एकबहुत बड़ा शिवजीका मन्दिरथा उसमें रत्नोंकी सीढियां सुवर्णकी दीवार माणिक्यके खंभे और चन्द्रकान्ति मणिकी चट्टान थी ऐसे अति मनोहर उस मन्दिरको देखके आश्चर्य्यितहुए अपने शिष्यों से तथा राजा भूनन्दनसे उसने कहा कि यहपातालमें हाटकेश्वर नाम श्री शिवजीका मन्दिरहै तुमसबलोग इनका पूजनकरो तपस्वी के यहवचन सुनके सबने पुष्प तोड के आकाशगंगा में स्नान करके श्री शिवजी का पूजन किया और क्षणभर विश्रामकरके वहां से चलकर पके फलों से युक्त एक जामन का वृक्ष देखा उसे देखकर तपस्वी ने कहा कि इसवृक्षके फलोंको कोई न खाना जो खाओगे तो बड़ा विघ्नहोगा यह सुनकर भी उनके एक शिष्य ने फलखालिये और खातेही काष्ठके समान जड होगया उसकी यह दशा देखके सब लोग भयभीत होके उन फलों को छोडकर वहां से चले एककोशभर पृथ्वी चलकर एक बडा सुवर्ण का परकोटा मिला जिसमें रत्नमय द्वार लगाथा उसद्वारपर दो लोहेके मेंढे लोगों के रोकनेको खडेथे मन्त्र पढ़ेहुये डंडेसे उन मेंढों को भगाकर तपस्वी ने अपने साथियोंसमेत भीतर जाके रत्नजटित सुवर्ण के दिव्य गृह देखे उन गृहों के द्वारपर लोहे के डंडे लियेहुए बडे २ रक्षक खड़े थे उन रक्षकों को देखके तपस्वी ने एक वृक्षके नीचे बैठके दुष्टघ्नी योग धारणा की उसके प्रभावसे वह भयंकर रक्षक भागगये और उन गृहोंमें से दैत्य कन्याओंकी बहुतसी दासी निकलीं उन दासियोंने इन सबसे अलग २ आकर कहा कि कृपा करके भीतर चलिये आपको हमारी स्वामिनी बुलाती हैं उनके यह वचन सुनके तपस्वीने अपने साथियों से कहा कि मंदिरों में जाकर तुम लोग अपनी २ प्रियाओं के वचनोंका उल्लंघन न करना यह कहके वह तपस्वी उन दासियोंके साथ एक दिव्य मंदिरमें जाकर एक उत्तम दिव्य दैत्य कन्याको पाकर अभीष्ट सुखको प्राप्तहुआ और उसके शिष्यभी जुदे २ मंदिरोंमें जाकर दैत्य कन्याओंको पाकर महा सुखीहुये और राजा भूनन्दनभी एक दासीके साथ परम उत्तम दिव्य मन्दिरमें गया उसमन्दिरकी रत्न मयी दीवारों मे स्त्रियों के प्रतिबिम्ब पडनेसे ऐसी शोभा होती थी कि मानों सजीव चित्र बनेहुये हैं उस मन्दिरकी सब चट्टान नीलमणिकी बनीहुई थीं इससे ऐसी शोभाहोतीथी कि मानों यह मन्दिर विमानों के जीतनेकी इच्छासे आकाश में चढगयाहै वहांकी स्त्रियां ऐसी सुकुमारथी कि प्रातःकालकी धूप के सहनेवाले पुष्प भी उनकी तुल्यता नहींकरसक्के थे ऐसे सुन्दर उस मन्दिरमें राजा भूनन्दनने अपनी प्रिया दैत्यकन्याको बैठीहुई देखा उसकी कान्तिसेही वह मन्दिर ऐसा देदीप्यमान होरहाथा कि रत्नके दीपकोंकीभी कुछ आवश्यकता न थी उसके परमसुन्दररूपको देखके राजा के आनन्दाश्रु निकलआये वह आंसू क्या निकले मानों राजा ने अन्य स्त्रियों के देखनेसे लगेहुए अपने नेत्रोंके मैलको धोडाला कुमुदिनीनाम उस कन्याने भी राजा को देखके बड़े आनन्दसे उठके राजाका हाथ पकडकर आपको मैंने बडा परिश्रम दिया यहकहके आदरपूर्वक दिव्यआसनपर बैठाया क्षणभर विश्रामकरने के उपरान्त वह राजा को स्नानकराके तथा दिव्यभोजन कराके और नवीन वस्त्राभरण पहराके उपवनमें बावडी के तटपर लेगई और एक मणिकी शिलापर बैठगई उस बावडी में

था उसका निश्चयकिया तब श्रीदर्शन तो रोगका बहाना करके लेटरहा क्योंकि उसका शरीर लघनों के कारण कृशहोगया था और मुखरक उसके पैरपकडकर रोनेलगा और पल्लिष्ठाने शीघ्रहीजाके चोरोंके स्वामी वसुभूतिसे कहा कि तडागके निकट कोई रोगी पथिकआयाहै उसके साथ एक अन्य पुरुषभी है यह सुनकर उसने कुछ चोरोंको उनके पासभेजा उन्होंने तडागके निकटजाके मुखरकसे पूछा कि तुम क्यों रोरहेहो यह सुनकर मुखरकने कहा कि मैं ब्राह्मणहूं और यह मेरा बडा भाईहै,तीर्थयात्रामें बहुत दिनोंतक भ्रमण करनेके कारण यह रोगी होगयाहै और धीरे २ यहां आकरइसकी सब चेष्टा जातीरही है इससे इसने मुझसे कहाहै कि हे पुत्र तुम मुझे कुशकी शय्यापर लिटाओ और ग्राममे कोई गुणी ब्राह्मण बुलालाओ जिसे मैं अपना सर्वस्वदान करके देदूं क्योंकि आज रात्रिको मेरे प्राण नहीं बचेंगे इसके यह वचन सुनके मैं यहां परदेशमें रात्रिके समय कोई अपना सहायक न देखके दीनहोकर रोने- लगा तुम लोग कृपाकरके कोई गुणी ब्राह्मण बुलालाओ जिसे यह और मैं जो कुछ हमारेपासधनहै संकल्प करकेदेदें आज रात्रिको निस्सन्देह इसकी मृत्युहोजायगी और मैं भी इस दुःखको न सहकर प्रातःकाल अग्निमें जलकर अपने प्राणदेदूंगा इससे तुम इस हमारी प्रार्थनाको स्वीकारकरो क्योंकि तुम लोग हमको यहां अकारण मित्रमिलेहो यह सुनके उनचोरोंने वसुभूतिसे सब वृत्तान्त कहके कहा कि चलो उससे दान लेआओ उनके यह वचन सुनकर वसुभूतिने कहा कि विना मारे धनलेना हम लोगोंको अनुचितहै क्योंकि जिसका धनलेलो और उसे मार न डालो तो इसमें बडा दोष उत्पन्नहोता है यह सुनके चोरों ने कहा कि तुम्हारा सन्देहकरना व्यर्थ है क्योंकि जिसका धनछीनलो उसकेही न मारनेमें दोषहोताहै और जो दानदेताहै उसके मारनेमें क्या फलहै और जो प्रातःकाल तक यह दोनों जीतेरहेंगे तो मारभीडालेंगे नहीं तो व्यर्थ ब्रह्महत्या करनेमे क्या लाभहै उनके यह वचन सुनके वसु- भूति दानलेनेकेलिये श्रीदर्शनके निकटआया और श्रीदर्शनने बहुत विकलता दिखाके अपनी माता के आभूषण उसे देदिये वह लेके वसुभूति अपनेसाथियोंसमेत ग्रामको चलागया इसके उपरान्त सब चोरोंके सोजानेपर पल्लिष्ठा वहांसे उठकर मुखरकके पास चलीआई तब मुखरक तथा श्रीदर्शन उसे अपने साथलेके रात्रिहीके समय मालवदेशकोचले रात्रिभर चलते २ प्रातःकाल एक महावनमें पहुंचे जिसमे कि अनेक प्रकारके कांटोंके वृक्षलगेथे व्याघ्र सिंहादिक भयकरजीव उच्चस्वरसे चिल्लारहेथे और सैकडों मृग इधर उधर घूमरहेथे ऐसे भयङ्कर उस वनमें वहतीनों दिनभर चलतेरहे सायकालके समय मानों उनके क्लेशको देखकर सूर्य्यभगवान् अपनी धूपको खैंचके अस्ताचलकोगये सूर्य्यभगवान् के अस्तहोजाने पर वह तीनोंथककर तथा क्षुधासे व्याकुलहोके एक वृक्षकेनीचे बैठगये वहां थोडीदूरपर एक ज्वालासी उन्हें दिखाईदी उसे देखकर श्रीदर्शनने मुखरकसे कहा कि शायद यहां कोई ग्रामहै मैं जाके उसे देखताहूं यह कहके वह ज्वालाके सन्मुखगया कुछ दूर चलकर एक रत्नमयगृह उसेमिला उनरत्नोंकी प्रभा हीज्वालाके समान दूरसे दीखतीथी उस मन्दिरके भीतरजाके उसने एक अत्यन्त रूपवती यक्षिणी देखी और बहुतसे उन्नतं पेंगाले यक्ष उसके सेवकदेखे और उनका लायाहुआ बहुतसा अन्न भी इकट्ठा

श्रीदर्शन उसे साथलेकर परदेशकोचला भाग्यवशसे मार्ग में जातेहुए श्रीदर्शनको उसके माता पिता सौदामिनी और अट्टहासनामयक्ष यक्षिणी ने देखकर और आपत्ति में ग्रसितजानकर आकाशही से कहा कि हे श्रीदर्शन तुम्हारी माता देवदर्शनकी स्त्री ने अपने रहने के स्थानमे बहुतसे आभूषणगाड़ेथे वह अबतक वहीं गड़ेहुएहैं उन्हे जाकर तुम खोदलो और निश्चिन्तहो के मालवदेश को जाओ वहा श्रीसेननाम बड़ा धनवान् राजा है उस राजा को कुमार अवस्था में जुएकेकारण से महा क्लेशहुआथा इससे उसने अपने राज्य मे एक बड़ाभारी स्थान ज्वारियो के लिये बनवाया है उसमें जो कोई ज्वारी जाकररहते हैं उनको अभीष्ट भोजन मिलता है इससे हे पुत्र तुमभी वहींजाओ तुम्हारा वहा कल्याण होगा यह आकाशवाणी सुनकर श्रीदर्शन अपने घर में मित्रसमेतजाके आभूषणों को खोदके प्रसन्नता पूर्वक मालवदेश को चला बहुत दूरचलकर सायकाल के समय बहुशष्यनाम ग्राम के निकट एक निर्मलजलवाले तड़ाग के तटपरजाके बैठा और हाथ पैर धोकर जलपीके विश्रामकरनेलगा उससमय एक अत्यन्त रूपवती कन्या जलभरनेको वहा आई नीलकमलके समान रूपवाली वह कन्या क्या थी मानों दूसरी रतिहीथी जिसका कि शरीर श्रीशिवजीके क्रोध से भस्महोनेवाले कामदेवके धुएसे श्याम होगयाथा उसकन्याने श्रीदर्शनको प्रेमपूर्व्वक देखके उसके निकटआकर कहा कि तुमदोनो जने यहा प्राणदेनेको क्यों आयेहो पतगके समान अज्ञानसे बलतीहुई अग्निमें क्यों कूदतेहो यह सुनके मुखरक ने घबराकर कहा कि हे सुन्दरी तुम कौनहो और यहतुमने क्या कहा इसका अभिप्राय मै नहींसमझा यह सुनके उसने कहा कि सुनो मैं अपना वृत्तान्त सक्षेपसे कहतीहूं बड़े प्रसिद्ध सुघोषनामग्राम में पद्मगर्भनाम एक वैदिक ब्राह्मण रहताथा उसके शशिकला नाम पतिव्रता स्त्रीथी उस शशिकलामें उस ब्राह्मणसे दो सन्तान उत्पन्नहुई एक मुखरकनाम पुत्र और दूसरी पद्मिष्ठानाम मैं कन्या मेरा भाई मुखरक बाल्या वस्थाहीमें द्यूतके व्यसनसे कहीं परदेशको चलागया उस शोकसे मेरी माता मरगई और उसीके शोक से मेरे पिता घरको त्यागके मुझे अपने साथ लेकर मुखरकके ढूढनेको परदेशको चले अनेक नगर तथा ग्रामोंमे घूमतेहुए भाग्यवशसे इस ग्राममें आये इस ग्राममे अनेक चोरोंका स्वामी वसुभूतिनाम चोर नाममात्रका ब्राह्मणरहता है उस पापीने अपने साथियों समेत मेरे पिताको मारकर सब धनले लिया और मुझे अपने साथ लेजाकर इसलिये रक्खा कि सुभूतिनाम अपने लड़केके साथ मेरा बिवा हकरे उसका वह पुत्र चोरी करनेकेलिये कहीं गयाहै और मेरे पुण्योंके प्रभावसे अभी तक नहीं आयाहै अब जो मेरी भाग्यमें बदाहोगा सो होगा इससे वह चोर जो तुम्हें देखलेगा तो अवश्य मारडालेगा ऐसा उपाय करो जिससे वह तुम्हें न पावे उसके यहवचन सुनके मुखरक उसे गलेसे लगाके रोकरबोला कि हे पद्मिष्ठे तेरा मुखरकनाम् महा अभागी भाईमैंहीहू हाय मेरेही कारण मेरे माता पिताका देहान्त हुआ उसके यह वचन सुनकर पद्मिष्ठाभी उसे पहचानकर रोनेलगी उनदोनोंको रोते देखकर श्रीदर्शन ने उन्हें समझाके कहा कि यह शोकका अवसर नहीं है इस समय अपने शरीरकी रक्षाकरनी उचित है धन देकर भी जो अपने प्राण बचजाय तो अच्छाहै श्रीदर्शनके यह वचन सुनके सबने जो कुछ कर्त्तव्य

था उसका निश्चयकिया तब श्रीदर्शन तो रोगका बहाना करके लेटरहा क्योंकि उसका शरीर लंघनों के कारण कृशहोगया था और मुखरक उसके पैरपकड़कर रोनेलगा और पद्मिष्ठाने शीघ्रहीजाके चोरोंके स्वामी वसुभूतिसे कहा कि तडागके निकट कोई रोगी पथिकआयाहै उसके साथ एक अन्य पुरुषभी है यह सुनकर उसने कुछ चोरोंको उनके पासभेजा उन्होंने तडागके निकटजाके मुखरकसे पूछा कि तुम क्यों रोरहेहो यह सुनकर मुखरकने कहा कि मैं ब्राह्मणहूं और यह मेरा बड़ा भाईहै,तीर्थयात्रामें बहुत दिनोंतक भ्रमण करनेके कारण यह रोगी होगयाहै और धीरे २ यहां आकर इसकी सब चेष्टा जातीरही है इससे इसने मुझसे कहाहै कि हे पुत्र तुम मुझे कुशकी शय्यापर लिटाओ और ग्रामसे कोई गुणी ब्राह्मण बुलालाओ जिसे मैं अपना सर्वस्वदान करके देदूं क्योंकि आज रात्रिको मेरे प्राण नहीं बचेंगे इसके यह वचन सुनके मैं यहां परदेशमें रात्रिके समय कोई अपना सहायक न देखके दीनहोकर रोने-लगा तुम लोग कृपाकरके कोई गुणी ब्राह्मण बुलालाओ जिसे यह और मैं जो कुछ हमारेपासधनहै सङ्कल्प करकेदेदें आज रात्रिको निस्सन्देह इसकी मृत्युहोजायगी और मैं भी इस दुःखको न सहकर प्रातःकाल अग्निमें जलकर अपने प्राणदेदूंगा इससे तुम इस हमारी प्रार्थनाको स्वीकारकरो क्योंकि तुम लोग हमको यहां अकारण मित्रमिलेहो यह सुनके उनचोरोंने वसुभूतिसे सब वृत्तान्त कहके कहा कि चलो उससे दान लेआओ उनके यह वचन सुनकर वसुभूतिने कहा कि बिना मारे धनलेना हम लोगोंको अनुचितहै क्योंकि जिसका धनलेलो और उसे मार न डालो तो इसमें बड़ा दोष उत्पन्नहोता है यह सुनके चोरों ने कहा कि तुम्हारा सन्देहकरना व्यर्थहै क्योंकि जिसका धनछीनलो उसकेही न मारनेमें दोषहोताहै और जो दानदेताहै उसके मारनेमें क्या फलहै और जो प्रातःकाल तक यह दोनो जीतेरहेंगे तो मारभीडालेंगे नहीं तो व्यर्थ ब्रह्महत्या करनेमें क्या लाभहै उनके यह वचन सुनके वसु-भूति दानलेनेकेलिये श्रीदर्शनके निकटआया और श्रीदर्शनने बहुत विकलता दिखाके अपनी माता के आभूषण उसे देदिये वह लेके वसुभूति अपनेसाथियोंसमेत ग्रामको चलागया इसके उपरान्त सब चोरोंके सोजानेपर पद्मिष्ठा वहांसे उठकर मुखरकके पास चलीआई तब मुखरक तथा श्रीदर्शन उसे अपने साथलेके रात्रिहीके समय मालवदेशकोचले रात्रिभर चलते २ प्रातःकाल एक महावनमें पहुंचे जिसमें कि अनेक प्रकारके कांटोंके वृक्षलगेथे व्याघ्र सिंहादिक भयङ्करजीव उच्चस्वरसे चिल्लारहेथे और सैकड़ों मृग इधर उधर घूमरहेथे ऐसे भयङ्कर उस वनमें वहतीनों दिनभर चलतेरहे सायङ्कालके समय मानो उनके क्लेशको देखकर सूर्य्यभगवान् अपनी रूपको खैंचके अस्ताचलकोगये सूर्य्यभगवान् के अस्तहोजाने पर वह तीनोंथककर तथा क्षुधासे व्याकुलहोके एक वृक्षकेनीचे बैठगये वहां थोड़ीदूरपर एक ज्वालासी उन्हें दिखाईदी उसे देखकर श्रीदर्शनने मुखरकसे कहा कि शायद यहां कोई ग्रामहै मैं जाके उसे देख आऊं यह कहके वह ज्वालाके सन्मुखगया कुछ दूर चलकर एक रत्नमयगृह उसेमिला उनरत्नोंकी प्रभा हीज्वालाके समान दृष्टि पड़तीथी उस मन्दिरके भीतरजाके उसने एक अत्यन्त रूपवती यक्षिणी देखी और बहुतसे उसके परिवाले यक्ष उसके सबकहींदेखे और उनका लायाहुआ बहुतसा अन्न भी इकट्ठा

श्रीदर्शन उसे साथलेकर परदेशकोचला भाग्यवशसे मार्ग में जातेहुए श्रीदर्शनको उसके माता पिता सौदामिनी और अट्टहासनामयक्ष यक्षिणी ने देखकर और आपत्ति मे ग्रसितजानकर आकाशही से कहा कि हे श्रीदर्शन तुम्हारी माता देवदर्शनकी स्त्री ने अपने रहने के स्थानमें बहुतसे आभूषणगाड़ेथे वह अबतक वहीं गडेहुएहै उन्हे जाकर तुम खोदलो और निश्चिन्तहो के मालवदेश को जाओ वहा श्रीसेननाम बडा धनवान् राजा है उस राजा को कुमार अवस्था मे जुएकेकारण से महा क्लेशहुआथा इससे उसने अपने राज्य मे एक बड़ाभारी स्थान ज्वारियो के लिये बनवाया है उसमे जो कोई ज्वारी जाकररहते हैं उनको अभीष्ट भोजन मिलता है इससे हे पुत्र तुमभी वहीं जाओ तुम्हारा वहा कल्याण होगा यह आकाशवाणी सुनकर श्रीदर्शन अपने घर में मित्रसमेतजाके आभूषणों को खोदके प्रसन्नता पूर्व्वक मालवदेश को चला बहुत दूरचलकर सायकाल के समय बहुशष्यनाम ग्राम के निकट एक निर्मलजलवाले तडाग के तटपरजाके बैठा और हाथ पैर धोकर जलपीके विश्रामकरनेलगा उससमय एक अत्यन्त रूपवती कन्या जलभरनेको वहा आई नीलकमलके समान रूपवाली वह कन्या क्या थी मानो दूसरी रतिहीथी जिसका कि शरीर श्रीशिवजीके क्रोध से भस्महोनेवाले कामदेवके धुएसे श्याम होगयाथा उसकन्याने श्रीदर्शनको प्रेमपूर्व्वक देखके उसके निकटआकर कहा कि तुमदोनों जने यहा प्राणदेनेको क्यों आयेहो पतगके समान अज्ञानसे बलतीहुई अग्निमें क्यों कूदतेहो यह सुनके मुखरक ने घबराकर कहा कि हे सुन्दरी तुम कौनहो और यहतुमने क्या कहा इसका अभिप्राय मै नहींसमझा यह सुनके उसने कहा कि सुनो मैं अपना वृत्तान्त सक्षेपसे कहतीहू बडे प्रसिद्ध सुघोषनामग्राम में पद्मगर्भनाम एक वैदिक ब्राह्मण रहताथा उसके शशिकला नाम पतिव्रता स्त्रीथी उस शशिकलामे उस ब्राह्मणसे दो सन्तान उत्पन्नहुईं एक मुखरकनाम पुत्र और दूसरी पद्मिष्ठानाम मैं कन्या मेरा भाई मुखरक बाल्यावस्थाहीमें द्यूतके व्यसनसे कहीं परदेशको चलागया उस शोकसे मेरी माता मरगई और उसीके शोक से मेरे पिता घरको त्यागके मुझे अपने साथ लेकर मुखरकके ढूढनेको परदेशको चले अनेक नगर तथा ग्रामोंमे घूमतेहुए भाग्यवशसे इस ग्राममें आये इस ग्राममें अनेक चोरोंका स्वामी वसुभूतिनाम चोर नाममात्रका ब्राह्मणरहता है उस पापीने अपने साथियों समेत मेरे पिताको मारकर सब धनले लिया और मुझे अपने साथ लेजाकर इसलिये रक्खा कि सुभूतिनाम अपने लडकेके साथ मेरा विवाहकरे उसका वह पुत्र चोरी करनेकेलिये कहीं गयाहै और मेरे पुण्योंके प्रभावसे अभी तक नहीं आयाहै अब जो मेरी भाग्यमें बदाहोगा सो होगा इससे वह चोर जो तुम्हें देखलेगा तो अवश्य मारडालेगा ऐसा उपाय करो जिससे वह तुम्हें न पावे उसके यहवचन सुनके मुखरक उसे गलेसे लगाके रोकरबोला कि हे पद्मिष्ठे तेरा मुखरकनाम महा अभागी भाई मैंहीहू हाय मेरेही कारण मेरे माता पिताका देहान्त हुआ उसके यह वचन सुनकर पद्मिष्ठाभी उसे पहचानकर रोनेलगी उनदोनोंको रोते देखकर श्रीदर्शन ने उन्हें समझाके कहा कि यह शोकका अवसर नहीं है इस समय अपने शरीरकी रक्षाकरनी उचित है धन देकरभी जो अपने प्राण बचजाय तो अच्छाहै श्रीदर्शनके यह वचन सुनके सबने जो कुछ कर्तव्य

था उसका निश्चयकिया तब श्रीदर्शन तो रोगका बहाना करके लेटरहा क्योंकि उसका शरीर लघनों के कारण कृशहोगया था और मुखरक उसके पैरपकडकर रोनेलगा और पद्मिष्ठाने शीघ्रहीजाके चोरोंके स्वामी वसुभूतिसे कहा कि तडागके निकट कोई रोगी पथिकआयाहै उसके साथ एक अन्य पुरुषभी है यह सुनकर उसने कुछ चोरोंको उनके पासभेजा उन्होंने तडागके निकटजाके मुखरकसे पूछा कि तुम क्यों रोरहेहो यह सुनकर मुखरकने कहा कि मैं ब्राह्मणहूं और यह मेरा बडा भाई है, तीर्थयात्रामें बहुत दिनोंतक भ्रमण करनेके कारण यह रोगी होगयाहै और धीरे २ यहां आकर इसकी सब चेष्टा जातीरही है इससे इसने मुझसे कहाहै कि हे पुत्र तुम मुझे कुशकी शय्यापर लिटाओ और ग्राममे कोई गुणी ब्राह्मण बुलालाओ जिसे मैं अपना सर्वस्वदान करके देदूं क्योंकि आज रात्रिको मेरे प्राण नहीं बचेंगे इसके यह वचन सुनके मैं यहां परदेशमे रात्रिके समय कोई अपना सहायक न देखके दीनहोकर रोनेलगा तुम लोग कृपाकरके कोई गुणी ब्राह्मण बुलालाओ जिसे यह और मैं जो कुछ हमारेपासधनहै सकल्प करकेदेदें आज रात्रिको निस्सन्देह इसकी मृत्युहोजायगी और मैं भी इस दुःखको न सहकर प्रातःकाल अग्निमें जलकर अपने प्राणदेदूंगा इससे तुम इस हमारी प्रार्थनाको स्वीकारकरो क्योंकि तुम लोग हमको यहां अकारण मित्रमिलेहो यह सुनके उनचोरोंने वसुभूतिसे सब वृत्तान्त कहके कहा कि चलो उससे दान लेआओ उनके यह वचन सुनकर वसुभूतिने कहा कि विना मारे धनलेना हम लोगोको अनुचितहै क्योंकि जिसका धनलेलो और उसे मार न डालो तो इसमें बडा दोष उत्पन्नहोता है यह सुनके चोरोंने कहा कि तुम्हारा सन्देहकरना व्यर्थ है क्योंकि जिसका धनछीनलो उसकेही न मारनेमें दोषहोताहै और जो दानदेताहै उसके मारनेमें क्या फलहै और जो प्रातःकाल तक यह दोनो जीतेरहेंगे तो मारभीडालेंगे नहीं तो व्यर्थ ब्रह्महत्या करनेमे क्या लाभहै उनके यह वचन सुनके वसुभूति दानलेनेकेलिये श्रीदर्शनके निकटआया और श्रीदर्शनने बहुत विकलता दिखाके अपनी माता के आभूषण उसे देदिये वह लेके वसुभूति अपनेसाथियोंसमेत ग्रामको चलागया इसके उपरान्त सब चोरोंके सोजानेपर पद्मिष्ठा वहांसे उठकर मुखरकके पास चलीआई तब मुखरक तथा श्रीदर्शन उसे अपने साथलेके रात्रिहीके समय मालवदेशकोचले रात्रिभर चलते २ प्रातःकाल एक महावनमे पहुंचे जिसमें कि अनेक प्रकारके कांटोंके वृक्षलगेथे व्याघ्र सिंहादिक भयंकरजीव उच्चस्वरसे चिल्लारहेथे और सैकडों मृग इधर उधर घूमरहेथे ऐसे भयंकर उस वनमें वहतीनों दिनभर चलतेरहे सायकालके समय मानो उनके क्लेशको देखकर सूर्य्यभगवान् अपनी धूपको खेंचके अस्ताचलकोगये सूर्य्यभगवान् के अस्तहोजाने पर वह तीनोंथककर तथा क्षुधासे व्याकुलहोके एक वृक्षकेनीचे बैठगये वहां थोडीदूरपर एक ज्वालासी उन्हें दिखाईदी उसे देखकर श्रीदर्शनने मुखरकसे कहा कि शायद यहां कोई ग्रामहै मैं जाके उसे देख आहूं यह कहके वह ज्वालाके सन्मुखगया कुछ दूर चलकर एक रत्नमयगृह उसेमिला उनरत्नोंकी प्रभा ही ज्वालाके समान दूरसे दीखतीथी उस मन्दिरके भीतरजाके उसने एक अत्यन्त रूपवती यक्षिणी देखी और बहुतसे उलटे पैरवाले यक्ष उसके सेवकदेखे और उनका लायाहुआ बहुतसा अन्न भी इकट्ठा

देखा यह देखके उसने यक्षिणीके पास जाके उससे कहा कि हम तीन अतिथि तुम्हारे यहा आयेहैं हम को भोजनदो उसके यह वचन सुनके यक्षिणीने उसके सत्त्वसे प्रसन्नहोकर तीन मनुष्योंके भोजनके योग्य अन्न तथा जल एक यक्षपर लदवाके उसके साथ करदिया उसे लेकर वह पद्मिष्ठा तथा मुखरक के पास आया और यक्षसे अन्न तथा जललेके उसे विदाकरके सन्ध्योपासनादि नित्यकृत्यसे निवृत्तहुआ तदनन्तर मुखरक तथा पद्मिष्ठाके साथ बैठकर उसने दिव्य अन्नखाके निर्मल जल पिया वह दिव्य भोजन करके मुखरकने श्रीदर्शन के सत्त्व तथा प्रभाव को देखकर कहा कि हे मित्र तुम कोई देवांशहो और यह मेरी बहिन पद्मिष्ठाभी पृथ्वीपर एकही सुन्दरीहै इससे मैंने यह तुम्हेदेदी उसके यह वचन सुनके श्रीदर्शन ने प्रसन्नहोकर कहा कि मुझे तुम्हारे वचन स्वीकार हैं क्योंकि पहलेही से मेरी यह इच्छाथी परन्तु किसी योग्य स्थानमें जाकर मैं इसके साथ अपना विधिपूर्वक विवाहकरूंगा इसप्रकार वार्त्तालापकरके वह दोनों रात्रिको वहीं व्यतीतकरके प्रातःकाल पद्मिष्ठासमेत वहासेचलकर क्रमसे मालव-देशके स्वामी राजा श्रीसेनके नगरमें पहुचकर एक वृद्धास्त्रीके घरमें जाकर टिके २५५ वहा प्रसगसे उन दोनोंने अपना वृत्तान्त कहकर उस वृद्धस्त्रीको उदासीनसा देखकर उससे पूछा कि तुम उदासीनसी क्यो होरहीहो यह सुनके उसने कहा कि मै राजाके एक सेवक सत्यव्रतनाम ब्राह्मणकी स्त्रीहू मेरे पतिके मरजानेपर उसके मासिकका चतुर्थांश यह दयालुराजा मुझे देताहै आज कल मेरे अभाग्यसे राजाको राजयक्ष्मा रोग ऐसा होगयाहै जो वैद्योंमे असाध्यहै बडे २ मत्र और औषधिया व्यर्थहोगई हैं एक मत्रवादीने यह प्रतिज्ञाकी है कि जो कोई वीरसहायक मुझे मिले तो मैं वेताल सिद्धकरके इसरोग को दूरकरूगा उसके इसप्रकार कहनेपर राजाने जब कोई वीर न पाया तो अपने मन्त्रियोसे कहा कि जो मैंने ज्वारियोंकेलिये स्थान बनवायाहै उसमें देखतेरहो कि शायद कोई वीर ज्वारी आजाय क्योंकि ज्वारीलोग निर्भय और निरपेक्षहोते हैं राजाकी यह आज्ञापाकर मन्त्रियोंने उस स्थानके स्वामीसे यह बात कहदीनी इससे वहाका स्वामी प्रतिदिन नवीन आयेहुए ज्वारियोमेंसे वीरपुरुषको ढूढता रहताहै तुम दोनों वीरज्वारीहो जो तुममेसे कोई इसकार्य्यको करसके तो मुझसे कहो मै तुमको उसी ज्वारियों के स्थान में लेचलूगी इसमें मेरा बडा उपकारहोगा और तुम्हाराभी राजाके यहा बडा सत्कारहोगा यह सुनकर श्रीदर्शनने कहा कि मैं इसकार्य्यको करसक्ताहू मुझे तुम वहा लेचलो श्रीदर्शन के यहवचन सुनके वहवृद्धामुखरक तथा पद्मिष्ठा समेत श्रीदर्शनको वहा ज्वारियों के स्थानके अधिकारीके पास ले जाकर बोली कि यहज्वारी ब्राह्मण राजाके निमित्त प्रयोगकरनेवाले तांत्रिककी सहायता करनेको उद्यत है उसके यहवचन सुनके वह अधिकारीने श्रीदर्शनको राजाके पास लेजाकर राजा से कहा कि हेमहाराज यहवीर ब्राह्मण उसतान्त्रिककी सहायता करनेको उद्यत है उसके यहवचन सुनके और श्रीदर्शन को देखकर राजाने श्रीदर्शन से कहा कि हे वीर तुम्हारे यत्नसे मेरा रोग अवश्य नष्टहोजायगा क्योंकि तुम्हारे दर्शनमेही मेरे शरीरकी पीडा कमहोगई और मेरे चित्तमें अत्यन्त प्रसन्नताहोगई है इससे तुम अवश्य सहायताकरो यहसुनकर श्रीदर्शनने कहा कि यह कौन बडीबातहै आप जो कहिये सो मैं करू

यह उसके वचन सुनके राजाने उसमान्त्रिकको बुलाके कहा कि यहवीर तुम्हारा सहायक है अब जो तुम करनाचाहतेथे सो करो राजाके यहवचन सुनके उसमान्त्रिकने श्रीदर्शनसे कहा कि जो तुम वेताल के बुलानेमें सहायता करसक्तेहो तो आज कृष्णचतुर्दशीकोही रात्रिके समय श्मशानमें मेरे पासआओ यहकहके वह मान्त्रिक चलागया और श्रीदर्शनभी राजासे आज्ञा लेकर ज्वारियों के स्थान में मुखरक तथा पद्मिष्ठके पासआया और उनके साथ भोजन करके रात्रिके समय खड्ग लेकर अकेलाही अनेक भूत प्रेतोंसे व्याप्त भयकर अधियारे श्मशानमें गया वहा श्मशानके बीचमें सम्पूर्ण शरीरमें भस्मलगाये हुए वालोंका यज्ञोपवीत पहरेहुए प्रेतोंके वस्त्रकी पगडी बाधेहुए और नीलेवस्त्र धारणकिये उसमान्त्रिक को बैठादेखकर उसके पास जाके श्रीदर्शनने उससे कहा कि कहो अब मैं क्या तुम्हारी सहायताकरू उसके यहवचन सुनके मान्त्रिकने प्रसन्नहोकर कहा कि जाओ यहासे पश्चिम दिशामें आधकोसपर एक सीसों का वृक्षहै उसकी जडपर एकमुर्दा रक्खाहुआहै उसे तुम ज्योंका त्यों लेआओ उसके यहवचन सुनके श्रीदर्शनने वहा जाकर यहदेखके कि उसमुर्देको कोई अन्यपुरुष उठाये लिये जाता है दौडकर उससे छीननाचाहा इतनेमें उसमुर्देमें वेतालने प्रवेशकरके महाभयानक शब्दकिया उसशब्दको सुनकर वहमुर्दा लेजानेवाला दूसरा पुरुष भयभीतहोके मरगया और श्रीदर्शन उसे लेके चला इतनेमें वह जो पुरुष मरगयाथा वह वेतालके आवेशसे उठकर श्रीदर्शनसे बोला कि ठहरो मेरे मित्रको कहा लिये जातेहो यह सुनके उसमें भूतका आवेश जानकर श्री दर्शनने कहा कि यहतुम्हारा मित्रहै इसमें क्या प्रमाणहै यह तो मेराही मित्र है यहसुनके उसने कहा कि जिसे तुम लियेजातेहो इसीका कहना यहा प्रमाण होसक्ता है जिसे यह अपना मित्र कहे वही मित्रहै यहसुनकर श्रीदर्शनके कन्धेपर जो मृतकथा उसमें प्रवेशकरके वेतालने कहा कि मुझे क्षुधालगीहै जो कोई मुझे भोजन लाकरदे वही मेरा मित्र है और वही मुझे जहा चाहे वहा लेजाय यहसुनकर उसदूसरे वेतालने कहा कि मेरे पास भोजन नहीं है श्रीदर्शनके पासहोय तो देवे यहसुनकर श्रीदर्शन ने कहा कि मैं भोजनदूगा यहकहके जैसेही उसने उसवेताल युक्त मुर्देको मारनाचाहा वैसेही वह अन्तर्द्धान होगया उसे अन्तर्द्धान हुआ देखके श्री दर्शनके पास जो मुर्दाथा उसमें बैठेहुए वेतालने कहा कि तुमने मुझे भोजन देने कहाथा सो दो उसके यहवचन सुनके श्री दर्शनने और कहीं मास न देखकर अपनाही मास काटकर उसे दिया इसकारण प्रसन्नहोके वह वेताल बोला कि हे महासत्त्व तुम्हारे ऊपर मैं प्रसन्नहू तुमने जो मास काटकर मुझे दिया है वहतुम्हारे शरीरका घाव अभी भरजायगा अब तुम मुझे लेचलो यहमान्त्रिक जो कार्य्य सिद्ध करना चाहताहै सो तुमहीको सिद्धहोगा क्योंकि उसमें कुछ वीरता नहीहै इसमें यह नष्टहोजायगा उसके इस वचनको सुनके श्रीदर्शनने उसे लजाकर उसमान्त्रिक के पास धरदिया उसे देखके वह मान्त्रिक बहुत प्रसन्नहोके मनुष्योंकी हड्डियोंके चूर्णमें लियेहुए चौकेमें उसे रखकर चर्बीका दीपक बालके रक्तपुष्पोंसे उसका पूजनकरके उसकी छातीपर बैठके उसके मुखमें हवनकरनेलगा क्षणभरमेंही उसके मुखसे बडी ज्वाला निकलनेलगी कि जिसे देखतेही वह मान्त्रिक भयभीतहोके भागा यहदेखके उसवेतालने उसके

देखा यह देखके उसने यक्षिणीके पास जाके उससे कहा कि हम तीन अतिथि तुम्हारे यहां आयेहैं हम को भोजनदो उसके यह वचन सुनके यक्षिणीने उसके सत्त्वसे प्रसन्नहोकर तीन मनुष्योंके भोजनके योग्य अन्न तथा जल एक यक्षपर लदवाके उसके साथ करदिया उसे लेकर वह पद्मिष्ठा तथा मुखरक के पास आया और यक्षसे अन्न तथा जललेके उसे विदाकरके सध्योपासनादि नित्यकृत्यसे निवृत्तहुआ तदनन्तर मुखरक तथा पद्मिष्ठाके साथ बैठकर उसने दिव्य अन्नखाके निर्मल जल पिया वह दिव्य भोजन करके मुखरकने श्रीदर्शन के सत्त्व तथा प्रभाव को देखकर कहा कि हे मित्र तुम कोई देवांशहो और यह मेरी बहिन पद्मिष्ठाभी पृथ्वीपर एकही सुन्दरीहै इससे मैंने यह तुम्हेंदेदी उसके यह वचन सुनके श्रीदर्शन ने प्रसन्नहोकर कहा कि मुझे तुम्हारे वचन स्वीकार हैं क्योंकि पहलेही से मेरी यह इच्छाथी परन्तु किसी योग्य स्थानमें जाकर मैं इसके साथ अपना विधिपूर्व्वक विवाहकरूंगा इसप्रकार वार्त्तालापकरके वह दोनों रात्रिको वहीं व्यतीतकरके प्रातःकाल पद्मिष्ठासमेत वहांसेचलकर क्रमसे मालव-देशके स्वामी राजा श्रीसेनके नगरमें पहुंचकर एक वृद्धास्त्रीके घरमें जाकर टिके २५५ वहां प्रसगसे उन दोनोंने अपना वृत्तान्त कहकर उस वृद्धस्त्रीको उदासीनसा देखकर उससे पूछा कि तुम उदासी नसी क्यों होरहीहो यह सुनके उसने कहा कि मैं राजाके एक सेवक सत्यव्रतनाम ब्राह्मणकी स्त्रीहूं मेरे पतिके मरजानेपर उसके मासिकका चतुर्थांश यह दयालुराजा मुझे देताहै आज कल मेरे अभाग्यसे राजाको राजयक्ष्मा रोग ऐसा होगयाहै जो वैद्योंसे असाध्यहै बड़े २ मन्त्र और औषधियां व्यर्थहोगईं हैं एक मन्त्रवादीने यह प्रतिज्ञाकीहै कि जो कोई वीरसहायक मुझे मिले तो मैं वेताल सिद्धकरके इसरोग को दूरकरूंगा उसके इसप्रकार कहनेपर राजाने जब कोई वीर न पाया तो अपने मन्त्रियोंसे कहा कि जो मैंने ज्वारियोंकेलिये स्थान बनवायाहै उसमें देखतेरहो कि शायद कोई वीर ज्वारी आजाय क्योंकि ज्वारीलोग निर्भय और निरपेक्षहोतेहैं राजाकी यह आज्ञापाकर मन्त्रियोंने उस स्थानके स्वामीसे यह बात कहदीनी इससे वहांका स्वामी प्रतिदिन नवीन आयेहुए ज्वारियोंमेंसे वीरपुरुषको ढूंढता रहताहै तुम दोनों वीरज्वारीहो जो तुममेंसे कोई इसकार्य्यको करसके तो मुझसे कहो मैं तुमको उसी ज्वारियों के स्थान में लेचलूंगी इसमें मेरा बड़ा उपकारहोगा और तुम्हाराभी राजाके यहां बड़ा सत्कारहोगा यह सुनकर श्रीदर्शनने कहा कि मैं इसकार्य्यको करसक्ताहूं मुझे तुम वहां लेचलो श्रीदर्शन के यहवचन सुनके वहवृद्धामुखरक तथा पद्मिष्ठा समेत श्रीदर्शनको वहां ज्वारियों के स्थानके अधिकारीके पास ले जाकर बोली कि यहज्वारी ब्राह्मण राजाके निमित्त प्रयोगकरनेवाले तान्त्रिककी सहायताकरनेको उद्यत है उसके यहवचन सुनके यह अधिकारीने श्रीदर्शनको राजाके पास लेजाकर राजा से कहा कि हेमहाराज यहवीर ब्राह्मण उसमान्त्रिककी सहायता करनेको उद्यत है उसके यहवचन सुनके और श्रीदर्शन को देखकर राजाने श्रीदर्शन से कहा कि हे वीर तुम्हारे यत्नसे मेरा रोग अवश्य नष्टहोजायगा क्योंकि तुम्हारे दर्शनसेही मेरे शरीरकी पीडा कमहोगई और मेरे चित्तमें अत्यन्त प्रसन्नताहोगई है इससे तुम अवश्य सहायताकरो यहसुनकर श्रीदर्शनने कहा कि यह कौन बड़ीबातहै आप जो कहिये सो मैं करू

त्काल के मेघों में नेत्रों के आनन्ददेनेवाली चन्द्रमाकी मूर्त्तिके समान देखा और हर्ष विस्मय तथा भ्रम से युक्तहोकर शोचा कि कहाँ मैं सोयाथा और कहाँ आकरजगाहूं यह क्या बातहै और यह स्त्री कौनहै निस्सन्देह यह स्वप्नहै परन्तु ऐसा स्वप्न भी अच्छा है लाओ इसे जगाकरदेखूं कि यह कौनहै यह शोच कर उसने उसका कन्धापकडकर धीरे से जगाया उसके हाथ के स्पर्श से जगकर और उसे देखकर अनगमजरी ने शोचा कि यह दिव्यरूपधारी कौन पुरुषहै मैं जानतीहूं कि यह कोई देवता है नहीं तो ऐसे बन्द स्थान में कैसे आता यह शोचके उसने श्रीदर्शन से पूछा कि तुम कौनहो और यहा कैसे आयेहो यह सुनकर श्रीदर्शन ने अपना सब वृत्तान्त कहके उससे पूछा कि तुम कौनहो और इस देशका क्या नाम है यह सुनके अनगमजरी ने अपना देश नाम तथा वंश सब बतलाया इसप्रकार परस्पर अपना २ वृत्तान्त कहके उन दोनों ने निश्चयके लिये अपने २ आभूषण बदल लिये और गान्धर्व्व विवाह करनाचाहा यह जानकर गणों ने उन दोनों को निद्राके वशीभूतकरके श्रीदर्शन को उसीके शयनस्थानमें लाकर सुलादिया वहा श्रीदर्शनने क्षणमात्रमेंही जगके अपनास्थान देखके और अपने शरीरमें स्त्रीके आभूषण पाकर शोचा कि अरे यह क्याबातहै कहा तो हसद्वीपके स्वामी की कन्या अनगमजरी कहा वह दिव्य स्थान कहा मेरा वहा जाना और कहा फिर यहीं लौटआना यह स्वप्न तोथा नहीं क्योंकि उसके आभूषण मेरे शरीर में वर्त्तमानहैं यह कोई ईश्वरीय बातहै इत्यादि चिन्तवन करतेहुये उसको पद्मिष्ठाने जगकर उसे स्त्रियोंके आभूषण पहरेहुये देखकर पूछा कि यह क्या बातहै उसने सब वृत्तान्त कहदिया इस वृत्तान्तको सुनके पद्मिष्ठाने उसे बहुत समझाया इससे उसने किसी प्रकार वह रात्रि व्यतीत करके प्रातःकाल राजा श्रीसेनसे जाकर सब वृत्तान्त कहा राजाने भी उसके स्नेहसे यह ढंढोरा पिटवाया कि जो कोई हसद्वीपका मार्ग जानताहो वह बतावे उसे मैं बहुतसा धनदूंगा परन्तु हसद्वीपका जाननेवाला कोई भी न निकला तब श्रीदर्शन अनगमजरीकी उत्कण्ठासे ऐसा कामसे पीडित हुआ कि उससे न दिनको भोजन कियागया न रात्रिको निद्रा आई न अन्य विषयोंमें उसका चित्तलगा, इस बीचमें राजपुत्री अनगमजरी प्रातःकाल जगकर रात्रिके वृत्तान्तका स्मरण करके अपने शरीरमें पुरुषके आभूषण देखके शोचने लगी कि स्वप्नकी भ्रान्तिके दूरकरनेवाले और दुर्लभ जनमें प्रेमके बढानेवाले यह आभूषण मुझे अत्यन्त क्लेश देरहे हैं यह क्या बातथी कुछ मेरे विचारमें नहीं आती इतनेहीमें राजा अनगदेव अकस्मात् उसके मन्दिरमें गया और उसे पुरुषोंके आभूषण पहरे देखकर बडा आश्चर्य्यितहुआ और अनगमजरीने भी अपने पिताको देखकर लज्जासे नम्रहोके वस्त्रसे अपने सब अगढकलिये तब राजाने उसे अपनी गोदमें बैठालकर प्रेमसे पूछा कि हे पुत्री तुमने पुरुषकासा वेष क्यो बनायाहै और आज तुम्हें यह लज्जा बहुत क्यों है क्योंहै मुझसे सब ठीक २ कहदो क्योंकि मेरे प्राण तुम्हारेही स्नेहमें बंधेहुये हैं अपने पिताके यह वचन सुनके अनगमजरीने धीरे २ अपना सब वृत्तान्त कहदिया उस वृत्तान्तको जानकर राजा अनगदेव उस स्थान में मनुष्यके आनेकी गति न देखकर इन्द्रजाल सा मानके अपनेही देशके रहनेवाले एक ब्रह्मसोमनाम

पीछे दौडकर उसे समूचाही निगललिया यहदशा देखके श्रीदर्शन खड्ले के उसके पीछे दौडा इससे वह वेताल अत्यन्त प्रसन्नहोकर बोला कि हे श्रीदर्शन तुम्हारे इसधैर्यको देखके मैं तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हूं इससे तुम मेरे मुखसे उत्पन्नहुए इनसरसों के दानोंकोलो इनको शिरमें बांधने से और हाथ में लेने से राजा शीघ्रही नीरोग होजायगा और तुम थोडेही काल में इससम्पूर्ण पृथ्वी के राजा होजाओगे उस वेतालके यहवचन सुनकर श्रीदर्शन ने कहा कि इसमान्त्रिकके विना मैं राजा के पास कैसे जाऊ क्योंकि राजा कदाचित् यहीशोचेगा कि इसीने लोभ से उसको मारडाला है श्रीदर्शन के यहवचन सुनके वेताल ने कहा कि जो राजा तुमपर सन्देह करे तो उसे यहां लाकर इसमुर्दे का जिस में कि मैं हूं पेटचीरकर दिखाना इसमें मान्त्रिकका पूराशरीर मिलेगा यह कहके और सरसोंदेके वह वेताल उस मुर्दे मेंसे निकलगया इससे वह मुर्दा पृथ्वीपर गिरपडा और श्रीदर्शन उन सरसों के दानों को लेकर ज्वारियोंके स्थान में आकर पद्मिष्ठा तथा मुखरकके पास रात्रिभररहा प्रातःकाल राजा के पासजाके उसने सब वृत्तान्तकहके और मन्त्रियोंको श्मशान में लेजाके उस मुर्देका पेटचीरकर उस मान्त्रिकका शरीर दिखाके फिर राजा के पासआकर वह सरसों उसके शिरमें बँधवाये और कुछ उसके हाथमेंभी देदिये वह सरसों बांधतेही राजाका सब दुःख दूरहोगया इससे प्रसन्नहोकर राजा श्रीसेन ने अनपत्यहोने के कारण श्रीदर्शनकोही अपना पुत्र मानके युवराज पदवीदेदी ठीकहै (उप्तसुकृतबीजहि सुक्षेत्रेषुमहाफलम्) अच्छे क्षेत्र में बोयाहुआ पुण्यरूपीबीज महा फलदायकहोताहै इसप्रकार श्रीदर्शन युवराजपदवी को पाकर पद्मिष्ठा के साथ अपना विवाहकरके मुखरक तथा पद्मिष्ठासमेत राज्य के सुखोंका अनुभवकरने लगा ३२४ एकसमय उपेन्द्रशक्ति नाम किसी वैश्य ने समुद्रके तटपर एक श्रीगणाधिपतिकी रत्नमयी प्रतिमापाकर युवराज श्रीदर्शन को लाकरदी युवराज ने उसे अमूल्य देखकर बहुतसा धन खर्चकरके उसकी प्रतिष्ठाकराई और हजारगांव नित्य नैवेद्यादि भोजनादिके खर्चके निमित्त अर्पण किये और प्रतिष्ठाकेदिन रात्रिमें बडाभारी उत्सवकिया इससे प्रसन्नहुए श्रीगणेशजी ने अपने गणों से कहा कि मेरी कृपासे यह श्रीदर्शन चक्रवर्ती राजाहोगा इससे समुद्रकेपार हंसद्वीप में अनंगोदय नाम जो राजाहै उसकी अनंगमंजरी नाम कन्या अद्वितीय रूपवाली है वह मेरी परमभक्त है सदैव मेरा पूजनकरके मुझ से यह प्रार्थना कियाकरती है कि हे भगवन् मुझे सम्पूर्ण पृथ्वीकास्वामी पतिदीजिये इससे श्रीदर्शनके साथ उसका संयोग मैं कराऊंगा जिससे इन दोनों को मेरी भक्तिका फल मिलजाय इससे तुम लोग युक्तिपूर्वक श्रीदर्शन को उस कन्या के पासलेजाके परस्पर दर्शनकराके शीघ्रही लौटालाओ फिर धीरे धीरे क्रमसे उन दोनोंका संयोगहोगा आजही नहीं होसक्ताहै क्योंकि भवितव्यताही ऐसी है और इस प्रकार से मेरी मूर्त्तिके लानेवाले उपेन्द्रशक्ति वैश्यका भी कुछ उपकारहोजायगा श्रीगणेशजी की यह आज्ञापाकर गणों ने रात्रिकेसमय अपनी सिद्धि से श्रीदर्शन को हंसद्वीप में लेजाकर अनंगमंजरी के शयन स्थान में सुलादिया वहां क्षणभरमेंही श्रीदर्शन ने जगकर रत्नों के दीपकोंसे प्रकाशित अमूल्य मणिमय चँदोयोंसे युक्त निर्मल श्वेत रेशमीवस्त्रोंसे बिछेहुए पलँगपर सोतीहुई अनंगमंजरी को शर

त्काल के मेघों में नेत्रों के आनन्ददेनेवाली चन्द्रमाकी मूर्त्तिके समान देखा और हर्ष विस्मय तथा भ्रम से युक्तहोकर शोचा कि कहाँ मैं सोयाथा और कहाँ आकरजगाहूं यह क्या बातहै और यह स्त्री कौनहै निस्सन्देह यह स्वप्नहै परन्तु ऐसा स्वप्न भी अच्छा है लाओ इसे जगाकरदेखूं कि यह कौनहै यह शोच कर उसने उसका कन्धापकडकर धीरे से जगाया उसके हाथ के स्पर्श से जगकर और उसे देखकर अनगमजरी ने शोचा कि यह दिव्यरूपधारी कौन पुरुषहै मैं जानतीहूं कि यह कोई देवता है नहीं तो ऐसे बन्द स्थान में कैसे आता यह शोचके उसने श्रीदर्शन से पूछा कि तुम कौनहो और यहां कैसे आयेहो यह सुनकर श्रीदर्शन ने अपना सब वृत्तान्त कहके उससे पूछा कि तुम कौनहो और इस देशका क्या नाम है यह सुनके अनगमजरी ने अपना देश नाम तथा वंश सब बतलाया इसप्रकार परस्पर अपना २ वृत्तान्त कहके उन दोनो ने निश्चयके लिये अपने २ आभूषण बदल लिये और गान्धर्व्व विवाह करनाचाहा यह जानकर गणों ने उन दोनों को निद्राके वशीभूतकरके श्रीदर्शन को उसीके शयनस्थानमें लाकर सुलादिया वहां श्रीदर्शनने क्षणमात्रमेंही जगके अपनास्थान देखके और अपने शरीरमें स्त्रीके आभूषण पाकर शोचा कि अरे यह क्याबातहै कहां तो हंसद्वीपके स्वामी की कन्या अनगमजरी कहां वह दिव्य स्थान कहां मेरा वहां जाना और रहना फिर यहीं लौटआना यह स्वप्न तोथा नहीं क्योंकि उसके आभूषण मेरे शरीर में वर्त्तमानहैं यह कोई ईश्वरीय बातहै इत्यादि चिन्तवन करतेहुये उसको पद्मिष्ठाने जगकर उसे स्त्रियोंके आभूषण पहरेहुये देखकर पूछा कि यह क्या बातहै उसने सब वृत्तान्त कहदिया इस वृत्तान्तको सुनके पद्मिष्ठाने उसे बहुत समझाया इससे उसने किसी प्रकार वह रात्रि व्यतीत करके प्रातःकाल राजा श्रीसेनसे जाकर सब वृत्तान्त कहा राजाने भी उसके स्नेहसे यह ढंढोरा पिटवाया कि जो कोई हंसद्वीपका मार्ग जानताहो वह बतावे उसे मैं बहुतसा धनदूंगा परन्तु हंसद्वीपका जाननेवाला कोई भी न निकला तब श्रीदर्शन अनगमजरीकी उत्कंठासे ऐसा कामसे पीडित हुआ कि उससे न दिनको भोजन कियागया न रात्रिको निद्रा आई न अन्य विषयोंमें उसका चित्तलगा, इस बीचमें राजपुत्री अनगमजरी प्रातःकाल जगकर रात्रिके वृत्तान्तका स्मरण करके अपने शरीरमें पुरुषके आभूषण देखके शोचने लगी कि स्वप्नकी भ्रान्तिके दूरकरनेवाले और दुर्लभ जनमें प्रेमके बढानेवाले यह आभूषण मुझे अत्यन्त क्लेश देरहे हैं यह क्या बातथी कुछ मेरे विचारमें नहीं आती इतनेहीमें राजा अनगदेव अकस्मात् उसके मंदिरमें गया और उसे पुरुषों के आभूषण पहरे देखकर बडा आश्चर्य्यितहुआ और अनगमजरीने भी अपने पिताको देखकर लज्जासे नम्रहोके वस्त्रसे अपने सब अंगढकलिये तब राजाने उसे अपनी गोदमें बैठाकर प्रेमसे पूछा कि हे पुत्री तुमने पुरुषकासा वेष क्यों बनायाहै और आज तुम्हें यह लज्जा बहुत क्यों क्योंहै मुझसे सब ठीक २ कहदो क्योंकि मेरे प्राण तुम्हारेही स्नेहमें बंधेहुये हैं अपने पिताके यह वचन सुनके अनगमजरीने धीरे २ अपना सब वृत्तान्त कहदिया उस वृत्तान्तको जानकर राजा अनगदेव उस स्थान में मनुष्यके आनेकी गति न देखकर इन्द्रजाल सा मानके अपनेही देशके रहनेवाले एक ब्रह्मसोमनाम

सिद्धयोगीके पासजाके सब वृत्तान्त कहके पूछा कि हे महाराज यह क्यावातहै राजाके वचन सुनकर ब्रह्मसोमने ध्यान से सब जानके कहा कि श्रीगणेशजी महाराज तुम्हारी पुत्रीपर और मालवदेशके राजा श्रीदर्शनपर प्रसन्नहै उन्हींकी कृपासे श्रीदर्शन चक्रवर्ती होगा और उन्हींकी आज्ञासे उनकेगण श्रीदर्शनको तुम्हारी कन्याके पास लायेथे वह तुम्हारी कन्याके योग्य वरहै, योगीके यह वचन सुनके राजाने कहा कि हे भगवन् कहा मालवदेश और कहा हंसद्वीप वहाका मार्गभी किसी को नहीं मालूमहोगा और यह कार्य्य बहुत काल व्यतीत करके करनेके योग्य नहीं है इस विषयमें आपही हमारे गतिहो राजाके,यह नम्र वचन सुनके वह कृपालु,योगी यह कहके कि मैं तुम्हारे कार्य्यको सिद्धकरूगा वहासे अन्तर्द्धानहोके मालवदेशमें आया और श्रीदर्शनके वनवायेहुये,गणेशमन्दिरमें जाकर गणेश जीको प्रणामकरके उनकी यह स्तुति करनेलगा कि हे सुमेरुपर्व्वतके समान कान्तिवाले गणेशजी आपको नमस्कारहै नक्षत्रोंकी मालाओंसे आभूषित शिरवाले आपके वडे शरीरको प्रणामहै मंगलमय आपकी मूर्त्तिको नमस्कारहै नृत्यके उत्सवमे उठीहुई आकाशतक पहुचनेवाली जो आपकी सूंड त्रैलोक्यरूपी मन्दिरके धारण करने वाले स्तभके समान शोभित होती है उसे प्रणामहै हे विघ्नान्तक सम्पूर्ण सिद्धियो के निधिरूप वडे उदरवाले सर्पोंके आभूषणवाले आपके शरीरको नमस्कार है इस प्रकार से स्तुति करतेहुये उस योगीके पास गणेशजीकी प्रतिमा लानेवाले उपेन्द्रशक्ति वैश्यका महेन्द्र शक्ति नाम बहुत कालका उन्मत्तपुत्र आया और उस योगीके पकडनेको दौडा उसे आया देखकर योगीने मंत्रपढकर एक ऐसा थप्पड उसके मारा कि जिससे उसका सब उन्माद नष्टहोगया और वह स्वस्थ होके नग्नहोनेके कारण लज्जितहोके हाथोसे निज गुह्यअगोंको ढकके अपने घरकोचला। ३८३ उस समय उसका पिता उपेन्द्र शक्ति यह समाचार सुनके उसे अपने घर लिवालेगया वहा उसे स्नान कराके तथा वस्त्र पहराके उसे साथलेकर ब्रह्मसोममहर्षि के पासगया और प्रणाम करके बहुतसा धन उन्हें देनेलगा परन्तु उन्होंने नहींस्वीकारकिया इतनेमें इसी वृत्तान्तकोसुनकर राजा श्रीसेनभी श्रीदर्शन को साथलेके तपस्वीके समीप गया और प्रणाम करके तथा उनकी स्तुति करके बोला कि हे भगवन् आपके आगमन से इस वैश्यके पुत्रका बहुत कालका प्राचीन रोग नष्ट होगया इससे अब मेरे ऊपर भी ऐसी कृपा कीजिये जिसमे इस युवराज श्रीदर्शनका भी दु ख दूर होजाय यह सुनके वह योगी हँस कर बोला कि हेराजा इस चोरपर मैं क्या दयाकरू जो हसद्वीपसे राजपुत्री अनगमजरीके आभूषण तथा वस्त्र चुरालाया तथापि आपका कहना मैं अवश्य करूगा यह कहके वह योगी श्रीदर्शन का हाथ पकडके उसे लेकर अन्तर्द्धान होगया और हसद्वीप मे राजा अनगोदयके निकट उसे लेआया उसे देखकर राजा अनगोदयने योगीको प्रणाम करके शुभलग्न दिखाकर उसके साथ अनंगमजरी का विवाह करदिया और उसी योगी के द्वारा उसे अनगमजरी समेत मालवदेश मे भिजवा दिया अनगमजरी समेत श्रीदर्शनको आया देखके राजा श्रीसेनने प्रसन्नतापूर्व्वक वडा उत्सव किया और श्रीदर्शन अपनी दोनो स्त्रियों समेत सुखपूर्व्वक रहनेलगा कुछ कालके उपरान्त राजा श्रीसेनके पर

लोक पधारनेपर उसके राज्य करनेके श्रीदर्शन पृथ्वी के सब राजाओंको जीतके सम्पूर्ण पृथ्वीका चक्रवर्ती राजाहोगया तदनन्तर उसकी दोनों रानियों के दो पुत्रहुए इनमें से एकका नाम पद्मसेन और दूसरेका नाम अनंगसेन उसनेरक्खा उन दोनों बालकों के क्रमसे कुछ बढ़नेपर एक समय राजा श्रीदर्शन ने किसी ब्राह्मणका बाहर रोदनसुनके उसे अपने पास बुलवाके उससे रोदनका कारणपूछा उस ब्राह्मणने कहा कि जो दीप्तशिख अग्नि मेरेपासथी उसे भी ज्योति तथा धूमलेखा सहित, कालमेघने नष्टकरदिया यहकहके वह अन्तर्द्धानहोगया उसे अन्तर्द्धानहुआ देखकर राजा श्रीदर्शन उसके अभिप्रायको न समझकर बहुत चकितहुआ और अपनी रानियों से बोला कि इसने क्याकहाथा और यह कहाचलागया उसके यह वचनसुनके वह दोनों रानिया बहुत रोते २ मरगईं यहदेखके राजा श्रीदर्शन विलापकरके पृथ्वीपर मूर्च्छितहोकर गिरपड़ा तब सेवकलोग उसे तो दूसरे स्थानमें उठाके लेगये और मुखरकने उन दोनों रानियोंका दाहकरदिया तदनन्तर मूर्च्छा से जगकर राजा श्रीदर्शन स्नेहसे उन दोनों रानियोंका वर्ष दिनतक और्ध्वदैहिक कर्मकरके अपने पुत्रोंको आधा २ राज्यदेके तपकरने की इच्छासे वनको चलागया वहीं फल मूल खाके कुछ काल रहते २ एकदिन घूमते २ किसी बरगदके वृक्ष के निकटगया उस वृक्षमें से अकस्मात् दो स्त्रिया हाथमें फलमूल लियेहुए निकलकर उसके पास आकर बोलीं कि हे राजा हमारे साथ चलकर यह फलमूल स्वीकारकरो यह सुनके श्रीदर्शनने पूछा कि तुम दोनों कौनहो तब उन्होंने कहा कि आप कृपाकरके हमारे स्थानपर चलिये वहीं हम अपना सब वृत्तान्त आपसे कहेंगी उनके यह वचन सुनके श्रीदर्शनने उनके साथ उस वृक्षके खोखले में होकर जाकर एक दिव्य सुवर्णमय पुरदेखा वहा उन दोनों स्त्रियोंने उसे दिव्य फलमूल खिलाकर कहा कि हे राजा अब हमारा सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनिये कि प्रतिष्ठानदेशमें कमलगर्भनाम एक धर्मात्मा ब्राह्मण रहताथा उसके पथ्या और वरानाम दो स्त्रियाथीं उन तीनों में परस्पर ऐसा स्नेहथा कि वृद्धावस्था में उन्होंने अग्निभगवान्से यह वरमागकर कि भविष्यजन्ममें भी हमारा सबका इसीप्रकार रहा समागम होय अग्निमें जलके अपना २ शरीर त्यागदिया इससे वह कमलगर्भ यक्षयोनिमें प्रदीप्ताक्षनाम यक्ष का पुत्र और अट्टहास नाम यक्षका छोटाभाई दीप्तशिखहुआ और उसकी दोनों स्त्रिया दूसरे दु नाम यक्षराजकी ज्योतिर्लेखा और धूमलेखानाम कन्याहुईं समयपाके यह दोनों कन्या युवतीहोके योग्य पति पाने के लिये वनमें जाकर तपकरनेलगीं उस तपसे प्रसन्नहोके श्रीशिवजी ने प्रत्यक्षहोकर उनसे कहा कि पूर्वजन्ममें तुमने जिसको सम्पूर्ण जन्मों में पतिपाने के लिये अग्निमें अपना शरीर भस्म कियाथा वह अट्टहासका छोटाभाई दीप्तशिख नलकूबरके शापसे फिर मृत्युलोकमें आके श्रीदर्शननाम से उत्पन्नहुआहै इससे तुम दोनों भी मृत्युलोकमें जाके उसीकी स्त्रीहो जब उसका शाप क्षीणहोगा तब फिर तुम तीनों यक्षत्वभावको प्राप्तहोजाओगे श्रीशिवजी के इस वचनसे वह दोनों यक्ष कन्या पृथ्वी में पद्मिष्ठा और अनंगमंजरी नामसे श्रीदर्शनकी स्त्रीहुईं वहां नगरमें ब्राह्मणरूपी अट्टहासने आकर युक्तिपूर्वक व्यर्थ वचनकहके उन दोनों स्त्रियोंको पूर्वजन्मका स्मरणकरवादिया इससे वह दोनों अ-

सिद्धयोगीके पासजाके सव वृत्तान्त कहके पूछा कि हे महाराज यह क्या बातहै राजाके वचन सुनकर ब्रह्मसोमने ध्यान से सव जानके कहा कि श्रीगणेशजी महाराज तुम्हारी पुत्रीपर और मालवदेशके राजा श्रीदर्शनपर प्रसन्नहै उन्हींकी कृपासे श्रीदर्शन चक्रवर्ती होगा और उन्हींकी आज्ञासे उनकेगण श्रीदर्शनको तुम्हारी कन्याके पास लायेथे वह तुम्हारी कन्याके योग्य वरहै, योगीके यह वचन सुनके राजाने कहा कि हे भगवन् कहा मालवदेश और कहा हसद्वीप वहाका मार्गभी किसी को नहीं मालूमहोगा और यह कार्य्य वहुत काल व्यतीत करके करनेके योग्य नहीं है इस विषयमें आपही हमारे गतिहो राजाके यह नम्र वचन सुनके वह कृपालु योगी यह कहके कि मैं तुम्हारे कार्य्यको सिद्धकरूगा वहासे अन्तर्द्धानहोके मालवदेशमें आया और श्रीदर्शनके वनवायेहुये गणेशमन्दिरमें जाकर गणेशजीको प्रणामकरके उनकी यह स्तुति करनेलगा कि हे सुमेरुपर्व्वतके समान कान्तिवाले गणेशजी आपको नमस्कारहै नक्षत्रोकी मालाओंसे आभूषित शिरवाले आपके वडे शरीरको प्रणामहै मगलमय आपकी मूर्त्तिको नमस्कारहै नृत्यके उत्सवमें उठीहुई आकाशतक पहुचनेवाली जो आपकी सूड त्रैलोक्यरूपी मन्दिरके धारण करने वाले स्तभके समान शोभित होती है उसे प्रणामहै हे विघ्नान्तक सम्पूर्ण सिद्धियों के निधिरूप वडे उदरवाले सर्पोंके आभूषणवाले आपके शरीरको नमस्कार है इस प्रकार से स्तुति करतेहुये उस योगीके पास गणेशजीकी प्रतिमा लानेवाले उपेन्द्रशक्ति वैश्यका महेन्द्रशक्ति नाम वहुत कालका उन्मत्तपुत्र आया और उस योगीके पकडनेको दौडा उसे आया देखकर योगीने मत्रपढकर एक ऐसा थप्पड उसके मारा कि जिससे उसका सब उन्माद नष्टहोगया और वह स्वस्थ होके नग्नहोनेके कारण लज्जितहोके हाथोसे निज गुह्यअगोंको ढकके अपने घरकोचला ३८३ उस समय उसका पिता उपेन्द्र शक्ति यह समाचार सुनके उसे अपने घर लिवालेगया वहा उसे स्नान कराके तथा वस्त्र पहराके उसे साथलेकर ब्रह्मसोममहर्षि के पासगया और प्रणाम करके वहुतसा धन उन्हें देनेलगा परन्तु उन्होने नहींस्वीकारकिया इतनेमें इसी वृत्तान्तकोसुनकर राजा श्रीसेनभी श्रीदर्शनको साथलेके तपस्वीके समीप गया और प्रणाम करके तथा उनकी स्तुति करके वोला कि हे भगवन् आपके आगमन से इस वैश्यके पुत्रका वहुत कालका प्राचीन रोग नष्ट होगया इससे अव मेरे ऊपर भी ऐसी कृपा कीजिये जिससे इस युवराज श्रीदर्शनका भी दुःख दूर होजाय यह सुनके वह योगी हँसकर वोला कि हेराजा इस चोरपर मैं क्या दयाकरू जो हसद्वीपसे राजपुत्री अनगमजरीके आभूषण तथा वस्त्र चुरालाया तथापि आपका कहना मैं अवश्य करूगा यह कहके वह योगी श्रीदर्शन का हाथ पकडके उसे लेकर अन्तर्द्धान होगया और हसद्वीप मे राजा अनगोदयके निकट उसे लेआया उसे देखकर राजा अनगोदयने योगीको प्रणाम करके शुभलग्न दिखाकर उसके साथ अनंगमजरी का विवाह करदिया और उसी योगी के द्वारा उसे अनगमजरी समेत मालवदेश में भिजवा दिया अनगमजरी समेत श्रीदर्शनको आया देखके राजा श्रीसेनने प्रसन्नतापूर्व्वक वडा उत्सव किया और श्रीदर्शन अपनी दोनो स्त्रियों समेत सुखपूर्व्वक रहनेलगा कुछ कालके उपरान्त राजा श्रीसेनके पर-

कोई देवता मालूम होतेहैं उसके इसप्रकार कहनेपर मृगाङ्कदत्तने अपने मन्त्रियोंसे कहा कि यह प्रचण्ड शक्तिनाम मेरा मन्त्रीही है इस समय इससे बोलना नहीं चाहिये क्योंकि कदाचित् यह हाथी इसकी अ-न्धताभी दूरकरदे और हमलोगोंकोदेखकर ऐसा न होय कि यहहाथी कहीं चलाजाय इससे यहीं खडे २ देखना चाहिये कि क्या होताहै यह कहके मृगाङ्कदत्त चुपचाप वहीं खडारहा इतने में प्रचण्ड शक्ति ने हाथीसे पूछा कि आपकौनहैं और यह हाथीका स्वरूप आपका कैसेहुआ और यह मनुष्योंकीसी वाणी आपकी कैसे है यह सुनके उस हाथीने बडी श्वासलेके कहा कि सुनो मैं अपना सबवृत्तान्त कह-ताहूं कि एक लव्यानाम नगरी में श्रुतधरनाम राजा के दो रानियों में शीलधर और सत्यधरनाम दो पुत्रथे कालके प्रभावसे राजा श्रुतधरके मरजानेपर सत्यधरने अपने बडे भाई शीलधरको निकालकर आपही सब राज्य लेलिया इससे शीलधरने वनमें जाके घोर तपकरके श्री शिवजी को प्रसन्न किया और प्रसन्नहुए साक्षात् आयेहुए श्री शिवजीसे यह वरमागा कि हे स्वामी मैं गन्धर्व होजाऊं जिससे उस अपने दुष्टभाईको मैं शीघ्रही मारडालूं यह सुनकर श्री शिवजीने कहा कि ऐसाही होगा परन्तु वह तुम्हारा शत्रु इससमय आपही मरगयाहै अब वह राढानगरीमें उग्रभटनाम राजाका समरभटनाम पुत्र होगा और तुम उसके भीमभटनाम सौतेले बडेभाई होकर उसेमारके राज्यकरोगे तुमने क्रोध युक्त हो-कर यह तपकियाहै इससे तुम किसी मुनिके शापसे अपने राज्यसे च्युतहोकर वनके हाथी होगे परन्तु तुम्हें अपने पूर्वजन्मका स्मरण बनारहेगा और तुम्हारी वाणी मनुष्यों कीसी रहेगी जब तुम किसी थके हुये अतिथिको सावधान करके उससे अपना वृत्तान्त कहोगे तब हाथीपनेसे छूटकर गन्धर्व होजाओगे और उस अतिथि का भी उपकार होगा यहकहके श्री शिवजी के अन्तर्द्धान होजाने पर शीलधरने गंगाजी में डूबकर अपना शरीर त्यागकरदिया इस बीच में राढ़ापुरी के उग्रभटनाम राजा के अपने तुल्य मनोरमानाम रानीके साथ सुख पूर्वक रहताथा एकसमय देशान्तर से लासकनाम एक नर्त्तक उसके पास आया उसने राजाको अपना नृत्य दिखाकर अपनी लास्यवती नाम कन्या का भी नृत्य दिखाया उस कन्याको देखतेही राजाने कामके वशीभूतहोकर उसके पिताको बहुतसा धनदेके उसके साथ अपना विवाह करलिया इसके उपरान्त एकसमय राजा उग्रभटने अपने यज्ञस्वामीनाम पुरोहित से कहा कि मेरेपुत्र नहीं है इससे तुम मेरे निमित्त पुत्रेष्ठीनाम यज्ञकरो राजाकी यह आज्ञापाके पुरोहित ने विद्वान् ब्राह्मणों समेत पुत्रेष्ठी करके मन्त्रसे पवित्रचरुका प्रथम भाग मनोरमा रानीकोदिया और शेष भाग उस दूसरी लास्यवती रानीकोदिया इससे उनदोनों रानियों के उदरमें वह शीलधर और सत्य-धर दोनोंभाई आकर प्राप्तहुए समयपाकर मनोरमा रानीमें शीलधर पुत्रहुआ उसके उत्पन्नहोनेही यह आकाश वाणीहुई कि यह भीमभटनाम बडा यशस्वी राजाहोगा तदनन्तर दूसरे दिन लास्यवती रानी में सत्यधर पुत्र उत्पन्नहुआ उसकानाम राजाने समरभट रक्खा समय पाकर जब वहदोनों बालक स-यानेहुए तो समरभटकी अपेक्षा भीमभट अधिक गुणवान् तथा बलवान् हुआ इसीसे उनदोनोंका पर-स्पर बडा द्वेषहोगया एकसमय बाहुयुद्धके खेलमें समरभटने दृढपूर्वक भीमभटके गले में बडे पराक्रम

पने मनुष्य शरीरको त्यागकर यक्षिणीहोगई हे राजा वह दोनों हमहीं हैं और आपही दीप्तशिख नाम यक्षहो उनके यह वचन सुनकर श्रीदर्शन अपने पूर्व्वजन्मका स्मरणकरके दीप्तशिखनाम यक्षहोगया और अपनी दोनों यक्षिणी स्त्रियोंको पाकर बहुत प्रसन्नहुआ हे विचित्रकथ वहयक्ष मैंही हूं और यही दोनों मेरी प्रियाहैं इसप्रकारसे देवयोनिमें उत्पन्नहुए हमलोगोंको भी ऐसे २ दुःख प्राप्तहोते हैं फिर मनुष्योंकी क्या गणनाहै हे पुत्र थोडेही कालमें मृगाङ्कदत्तसे तुम्हारा संयोगहोगा विषादमतकरो मैं तुम्हारा यहां अतिथि सत्कारकरूंगा क्योंकि मेरा पृथ्वीपरका यही स्थानहै और तुम्हारा मनोरथ सिद्ध करके फिर अपने मुख्य स्थान कैलाशको चलाजाऊंगा यह अपनी कथाकहके उस यक्षने कुछ दिन तक अपने पास मुझे रक्खा और आज रात्रिमें आपलोगोंको यहां आया जानके वह मुझ सोतेहुएहीको यहां छोडगया उसीकी कृपासे आपलोगों के दर्शन मुझे हुएहैं यही आपके वियोगमें मेरा वृत्तान्तहै विचित्रकथसे इस सब कथाको सुनकर मृगाङ्कदत्त अपने सब मन्त्रियों समेत बहुत प्रसन्नहुआ और उस रात्रिको वहीं व्यतीतकरके प्रातःकाल अपने अन्य मन्त्रियोंको ढूंढताहुआ शशाङ्कवतीकी प्राप्तिके निमित्त मन्त्रियों समेत उज्जयिनीपुरीको चला ४४१ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेषष्ठस्तरंगः ६ ॥

इसके उपरान्त श्रुतधि तथा गुणाकर आदि चारमन्त्रियों समेत विन्ध्याचलके बनों में भ्रमण करता हुआ मृगाङ्कदत्त अनेक प्रकारके सफलवृक्षोंसे युक्त एक तडागके निकट पहुँचा उस तडागमें मन्त्रियों समेत स्नान करके और सुन्दर २ फलखाके उसने एक लताओंकी कुंजमें कुछ वार्तालापसी सुनी और जैसे ही वहां जाकर देखा तो एक बडाभारी हाथी किसी अन्धे पथिकको अपनी सूंडसे जल छिड़कके और कानों से उसपर पखाकरके सावधान कररहा था और बारम्बार मनुष्यो कीसी स्पष्टवाणी से पूछता था कि क्या तुम कुछ सावधानहुए यह देखकर मृगाङ्कदत्त ने अपने अन्य मन्त्रियों को भी बुलाकर कहा कि देखो कहां तो बनकाहाथी और कहां मनुष्योंके समान आचार निस्सन्देह किसी कारणसे यह कोई अन्यजीव इस शरीरमें है और यह पुरुष मेरे मन्त्री प्रचण्डशक्ति के समानहै किन्तु वह अन्धा न था और यह अन्धाहै अच्छा थोडीदेर यहां ठहरकर देखना चाहिये कि यह दोनों क्याकरतेहैं यह कहकर मृगाङ्कदत्त वहीं छिपाहुआ खडारहा इतने में सावधानहुए उस अन्धपुरुषसे हाथी ने पूछा कि तुमकौनहो और अन्धेहोकर किसप्रकार यहां आये हो यह सुनके उस अन्धपुरुषने कहा कि अयोध्या नाम पुरीमें अमरदत्त नाम राजाहै उसके मृगाङ्कदत्त नाम बडा गुणवान् पुत्रहै उसीका प्रचण्डशक्तिनाम मैं मन्त्री हूं मृगाङ्कदत्तको किसी कारण से दशमन्त्रियों समेत उसके पिताने अपने देशसे निकाल दिया फिर वनमें सर्पके शापसे हम सबका परस्पर वियोग होगया और मैं अन्धाहोकर भ्रमण करते २ यथा कथंचित् मिलेहुए फलमूलखाके यहां आया यद्यपि मैं चाहताथा कि कहीं गढ़ेमें गिरकर या क्षुधासे मेरे प्राणनिकलजायँ परन्तु मुझ अभागीका यह मनोरथभी ब्रह्माने पूर्ण नहीं किया आज मैं जानताहूं कि आपकी कृपासे जैसे मेराश्रम दूरहुआ है वैसेही यह अन्धता भी दूर होजायगी मुझेआप

कोई देवता मालूम होतेहैं उसके इसप्रकार कहनेपर मृगाङ्कदत्तने अपने मन्त्रियोंसे कहा कि यह प्रचण्ड शक्तिनाम मेरा मन्त्रीही है इस समय इससे बोलना नहीं चाहिये क्योंकि कदाचित् यह हाथी इसकी अन्यताभी दूरकरदे और हमलोगोंकोदेखकर ऐसा न होय कि यहहाथी कहीं चलाजाय इससे यहीं खडे २ देखना चाहिये कि क्या होताहै यह कहके मृगाङ्कदत्त चुपचाप वहीं खडारहा इतने में प्रचण्ड शक्ति ने हाथीसे पूछा कि आपकौनहैं और यह हाथीका स्वरूप आपका कैसेहुआ और यह मनुष्योंकीसी वाणी आपकी कैसे है यहसुनके उस हाथीने बडी श्वासलेके कहा कि सुनो मैं अपना सबवृत्तान्त कहताहूं कि एक लब्यानाम नगरी मे श्रुतधरनाम राजा के दो रानियों में शीलधर और सत्यधरनाम दो पुत्रथे कालके प्रभावसे राजा श्रुतधरके मरजानेपर सत्यधरने अपने वडे भाई शीलधरको निकालकर आपही सब राज्य लेलिया इससे शीलधरने वनमे जाके घोर तपकरके श्री शिवजी को प्रसन्न किया और प्रसन्नहुए साक्षात् आयेहुए श्री शिवजीसे यह वरमागा कि हे स्वामी मैं गन्धर्व होजाऊं जिससे उस अपने दुष्टभाईको मैं शीघ्रही मारडालूं यह सुनकर श्री शिवजीने कहा कि ऐसाही होगा परन्तु वह तुम्हारा शत्रु इससमय आपही मरगयाहै अब वह राढानगरीमें उग्रभटनाम राजाका समरभटनाम पुत्र होगा और तुम उसके भीमभटनाम सौतेले वडेभाई होकर उसेमारके राज्यकरोगे तुमने क्रोध युक्त होकर यह तपकियाहै इससे तुम किसी मुनिके शापसे अपने राज्यसे च्युतहोकर वनके हाथी होगे परन्तु तुम्हें अपने पूर्वजन्मका स्मरण वनारहेगा और तुम्हारी वाणी मनुष्यों कीसी रहैगी जब तुम किसी थके हुये अतिथिको सावधान करके उससे अपना वृत्तान्त कहोगे तब हाथीपनेसे छूटकर गन्धर्व होजाओगे और उस अतिथि का भी उपकार होगा यहकहके श्री शिवजी के अन्तर्द्धान होजाने पर शीलधरने गंगाजी में डूबकर अपना शरीर त्यागकरदिया इस बीच में राढापुरी के उग्रभटनाम राजा के अपने तुल्य मनोरमानाम रानीके साथ सुख पूर्वक रहताथा एकसमय देशान्तर से लासकनाम एक नर्त्तक उसके पास आया उसने राजाको अपना नृत्य दिखाकर अपनी लास्यवती नाम कन्या का भी नृत्य दिखाया उस कन्याको देखतेही राजाने कामके वशीभूतहोकर उसके पिताको बहुतसा धनदेके उसके साथ अपना विवाह करलिया इसके उपरान्त एकसमय राजा उग्रभटने अपने यज्ञस्वामीनाम पुरोहित से कहा कि मेरेपुत्र नहीं है इससे तुम मेरे निमित्त पुत्रेष्टीनाम यज्ञकरो राजाकी यह आज्ञापाके पुरोहित ने विद्वान् ब्राह्मणों समेत पुत्रेष्टी करके मन्त्रसे पवित्रचरुका प्रथम भाग मनोरमा रानीकोदिया और शेष भाग उस दूसरी लास्यवती रानीकोदिया इससे उनदोनों रानियों के उदरमें वह शीलधर और सत्यधर दोनोंभाई आकर प्राप्तहुए समयपाकर मनोरमा रानीमें शीलधर पुत्रहुआ उसके उत्पन्नहोनेही यह आकाश वाणीहुई कि यह भीमभटनाम बडा यशस्वी राजाहोगा तदनन्तर दूसरे दिन लास्यवती रानी में सत्यधर पुत्र उत्पन्नहुआ उसकानाम राजाने समरभट रक्खा समय पाकर जब वहदोनो बालक सयानेहुए तो समरभटकी अपेक्षा भीमभट अधिक गुणवान् तथा बलवान् हुआ इसीसे उनदोनोंका परस्पर बडा द्वेषहोगया एकसमय बाहुयुद्धके खेलमें समरभटने हठपूर्वक भीमभटके गले मे बडे पराक्रम

से प्रहारकिया इससे भीमभटने क्रोधितहोके समरभटको उठाके पृथ्वीपर शीघ्रतासे पटकदिया इससे उस के ऐसी चोटलगी कि उसके मुखसे रुधिर गिरनेलगा तो उसके सेवक उसकी लास्यवती नाम माता के पास उसे लेगये उसे देखकर और उसके वृत्तान्त को जानके लास्यवती उसके गिरमें अपना शिर लगाके बहुत रोनेलगी इतने मे राजाने वहा आकर उसे रोता देखके पूछा कि तुम्हारे रोनेका क्या कारण है उसने कहा कि देखिये आज भीमभटने खेलमें समरभटकी यह दशाकरदी है यह सदैव इसकी दुर्दशाकिया करताहै परन्तु मैं आपसे नहीं कहतीहूं और मुझे इसके उपद्रवों से मालूमहोताहै कि ऐसे दुष्ट पुत्रसे आपका भी क्या कल्याणहोगा अथवा आप अपनेही चित्तसे विचारसक्ते हो मेरे कहने की क्या आवश्यकताहै उसके यह वचन सुनकर राजा उग्रभटने क्रोधकरके भीमभटको अपने राजमंदिर से निकलवादिया और उसे जो कुछ खर्च करने को धनमिला करताथा सो भी बन्दकरवाके समरभटकी रक्षाकेलिये सौ राजपुत्र रक्खे और समरभटको भाडागार का अधिकारी बनादिया तब रानी मनोरमा ने भीमभटको अपने पास बुलाकेकहा कि हे पुत्र तुम्हारे पिताने लास्यकी के कहने से तुमको घरसे निकलवादिया है इससे तुम पाटलिपुत्रमें अपने नानाके यहाजाओ मेरे कोई भाई नहीं है इससे वह अपना राज्य तुमकोदेदेंगे और जो तुम यहा रहोगे तो यहसमरभट तुम्हारा वैरी है तुमको मरवाडालेगा माताके यहवचन सुनकर भीमभटने कहा कि हे माता धैर्य्यधरो मुझको कौन मारसक्ताहै मै क्षत्रीहोके नपुसकों के समान अपना देशनहीं छोडूंगा यह सुनकर मनोरमाने कहा कि अच्छा तुम अपनी रक्षा के लिये मुझसे धनलेके बहुत से सहायक करलो यह सुनके भीमभटने फिर कहा कि हे अम्ब यहभी मुझे शोभा नहींदेता क्योंकि ऐसा करनेसे मैं अपने पिताकेसाथ बराबरी करने का अपराधीहूंगा, तुम कुछ सन्देह मतकरो तुम्हारे केवल आशीर्वादही से मेरा कल्याणहोगा इसप्रकार अपनी माताको समझाके वह राजमंदिर के बाहर चलागया इतने मे पुरवासियों ने यहवृत्तान्त सुनकर शोचा कि राजाने यह बडा अनुचित कार्य्य किया भीमभटके आगे समरभटको राज्य देना योग्य नहींहै इससमय भीमभट के गुणोंके कारण हमसब लोगोंको उसकी सहायता करनीचाहिये यह निश्चयकरके सम्पूर्ण पुरवासी उसे गुप्तधन देनेलगे जिससे वह अपने सेवकों समेत सुखपूर्व्वक रहनेलगा और समरभट युक्ति पूर्व्वक उसके मारनेकी इच्छाकरनेलगा और इसीनिमित्त उसने बहुतसा धनभी खर्च किया इतनेमें भीमभट और समरभट दोनोंका मित्र शखदत्तनाम युवाशूर तथा धनवान् एकब्राह्मण समरभटके पास आकर बोला कि तुमको अपने बडेभाई के साथ वैर नहीं करनाचाहिये यह बडा अधर्म्म है और तुम उसे मारभी न सकोगे क्योंकि वह तुमसे अधिक बलवान् और गुणवान् है इससे तुम केवल अयशमात्रही के भागी होगे उसके यहवचन सुनकर समरभटने उसके श्रेष्ठ वचनोंको स्वीकार न करके उसका बडा तिरस्कार किया ठीकहै (हितोपदेशोमूर्खस्यकोपायैवनशान्तये) मूर्खको हितका उपदेश करनेसे कोपही होताहै शान्ति नहीं होतीहै इससे शखदत्तने कुपितहोकर इसदुष्टके जीतनेकी इच्छासे भीमभटके साथ जाकर परम मित्रता करली ७५ इसके उपरान्त देशान्तरसे आयाहुआ मणिदत्तनाम वैश्य समान

श्वेत और शख आदिके समान सुन्दर शब्दवाला एक अत्युत्तम घोडालाया उसघोडेको शखदत्तके कहनेसे भीमभटने मोल ले लिया यहसमाचार पाकर समरभट उसवैश्यसे जाकर बोला कि दूना मोल लेकर वह घोडा मुझे देदे परन्तु वह वैश्य घोडा बेचचुकाथा इससे वहघोडा न देसका तब समरभट वलात्कारसे घोडा लेनेकेलिये अपने सहायकों समेत भीमभटके यहांगया और वहा उनदोनों भाइयों का परस्पर युद्धहोनेलगा युद्धमें भीमभटसे हारकर समरभट भागनेलगा उसको भागते देखके शखदत्त ने उसके पीछेसे वाल पकडकर जैसेही उसे मारनाचाहा वैसेही भीमभट ने उससे निषेधकरके कहा कि इसको जानेदो इसके मरनेसे पिता को वडा क्लेशहोगा उसके यह वचन सुनकर शखदत्त ने उसे छोड दिया और वह अपने पिता के पास भागगया इसके क्षणभर पीछेही एक ब्राह्मण ने आकर एकान्त में भीमभट से कहा कि तुम्हारी माता मनोरमा यज्ञस्वामी पुरोहित और सुमतिमन्त्री ने कहा है कि हे पुत्र यह तो तुम जानतेहीहो कि राजा तुमपर कैसा रुष्टहै और इस समाचार को पाकर और भी रुष्ट क्या पूरा शत्रुही होजायगा इससे जो तुम अपने शरीर धर्म तथा यशकी रक्षा करना चाहतेहो और कुछ भविष्यका विचारकरसक्तेहो और हमलोगोंको अपना हितकारी जानतेहो तो सूर्य्यास्तहोने के पहलेही यहा से निकलकर अपनी ननसाल चलेजाओ यह उन लोगों ने कहा है और यह रत्नोंसे भरा हुआ डिब्बा रानी ने आप को दिया है उस सँदेसे को मानकर और उस डिब्बेको लेकर भीमभट सगमें शखदत्तको लेकर घोडेपर चढके वहा से चला चलते २ एक वडे घोर पतावरके वन में पहुँचा वहां घोडों के पैरके शब्दको सुनकर दो सिंहोंने अपने वच्चोंसमेत आकर अपने नखोंसे घोडोंके पेटोंको फाडडाला और उन दोनों वीरों ने खड्गकेप्रहारसे दोनों सिंहोंको मारडाला और जैसेही घोडोंपर से दोनों उतरे वैसेही उन दोनों घोडोंकी आतेंगिरपडीं और पृथ्वीमेंगिरकर मरगये यह देखके भीमभट ने बहुत दुखित होकर शखदत्त से कहा कि हे मित्र भाइयोंके विरोधसे तो भागकर हम यहा आये अब बताओ इसविपरीत भाग्यसे भागकर कहाजाय जिसने यहा भी घोडोंको मारकर हमें अत्यन्त दुखदिया जिस घोडे के निमित्त हमने अपना देश त्यागा था वह घोडा भी मरगया अब पैदल इसवनमें कैसेचलेंगे उसके यह वचन सुनके शखदत्त ने कहा (नैतन्नवजयतियत्पौरुषनिधुरोविधि निमर्गएवतस्याय धैर्येणतुसजीयते वातैरिवद्रिर्नकुर्य्याद्धीरस्याकम्पितस्यस) यह वात कुछ नवीन नहीं है कि कुटिल भाग्य पुरुषार्थ को जीतलेताहै यह तो उसका स्वभावही है परन्तु धैर्य्य उसे जीतताहै जैसे पर्वतको वायु नहीं कपा सक्ती है वैसेही नहीं कम्पायमान होनेवाले धीर पुरुषका भाग्य क्या करसक्ताहै इससे धैर्य्यरूपी घोडेपर चढकर चलोचले शखदत्तके यहवचन सुनके भीमभट उसकेसाथ चला और रात्रिभरमें उसवनको उल्लघन करके प्रातःकाल चलते २ तपस्वियों की कुटियों से व्याप्त श्रीगगाजीके तटपरपहुँचा वहां श्रीगिरजीके शिरमें रहनेके कारणमानो चन्द्रमा के अमृतसे युक्त गगाजीके मधुर शीतलजलमें स्नानकरके उनदोनों ने विश्रामकिया और मार्गमें आयेहुए व्याधोंसे हिरणोंका मास लेकर खानेलगा तदनन्तर गगाजीके पारजानेको असमर्थ होकर वह शखदत्त समेत गगाजीके किनारे २ चला मार्गमें परयुना

से प्रहारकिया इससे भीमभटने क्रोधितहोके समरभटको उठाके पृथ्वीपर शीघ्रतासे पटकदिया इससे उस के ऐसी चोटलगी कि उसके मुखसे रुधिर गिरनेलगा तो उसके सेवक उसकी लास्यवती नाम माता के पास उसे लेगये उसे देखकर और उसके वृत्तान्त को जानके लास्यवती उसके शिरमें अपना शिर लगाके बहुत रोनेलगी इतने में राजाने वहां आकर उसे रोता देखके पूछा कि तुम्हारे रोनेका क्या कारण है उसने कहा कि देखिये आज भीमभटने खेलमें समरभटकी यह दशाकरदी है यह सदैव इसकी दुर्दशाकिया करताहै परन्तु मै आपसे नहीं कहतीहूं और मुझे इसके उपद्रवों से मालूमहोताहै कि ऐसे दुष्ट पुत्रसे आपका भी क्या कल्याणहोगा अथवा आप अपनेही चित्तसे विचारसक्ते हो मेरे कहने की क्या आवश्यकताहै उसके यह वचन सुनकर राजा उग्रभटने क्रोधकरके भीमभटको अपने राजमंदिर से निकलवादिया और उसे जो कुछ खर्च करने को धनमिला करताथा सो भी बन्दकरवाके समरभटकी रक्षाकेलिये सौ राजपुत्र रक्खे और समरभटको भांडागार का अधिकारी बनादिया तब रानी मनोरमा ने भीमभटको अपने पास बुलाकेकहा कि हे पुत्र तुम्हारे पिताने लास्यकी के कहने से तुमको घरसे निकलवादिया है इससे तुम पाटलिपुत्रमें अपने नानाके यहांजाओ मेरे कोई भाई नहीं है इससे वह अपना राज्य तुमकोदेदेंगे और जो तुम यहां रहोगे तो यहसमरभट तुम्हारा वैरी है तुमको मरवाडालेगा माताके यहवचन सुनकर भीमभटने कहा कि हे माता धैर्य्यधरो मुझको कौन मारसक्ताहै मैं क्षत्रीहोके नपुंसकों के समान अपना देशनहीं छोड़ूंगा यह सुनकर मनोरमाने कहा कि अच्छा तुम अपनी रक्षा के लिये मुझसे धनलेके बहुत से सहायक करलो यह सुनके भीमभटने फिर कहा कि हे अम्ब यहभी मुझे शोभा नहींदेता क्योंकि ऐसा करनेसे मैं अपने पिताकेसाथ बराबरी करने का अपराधीहूंगा, तुम कुछ सन्देह मतकरो तुम्हारे केवल आशीर्वादही से मेरा कल्याणहोगा इसप्रकार अपनी माताको समझाके वह राजमंदिर के बाहर चलागया इतने में पुरवासियों ने यहवृत्तान्त सुनकर शोचा कि राजाने यह बड़ा अनुचित कार्य्य किया भीमभटके आगे समरभटको राज्य देना योग्य नहींहै इससमय भीमभट के गुणोंके कारण हमसब लोगोंको उसकी सहायता करनीचाहिये यह निश्चयकरके सम्पूर्ण पुरवासी उसे गुप्तधन देनेलगे जिससे वह अपने सेवकों समेत सुखपूर्वक रहनेलगा और समरभट युक्तिपूर्वक उसके मारनेकी इच्छाकरनेलगा और इसीनिमित्त उसने बहुतसा धनभी खर्च किया इतनेमें भीमभट और समरभट दोनोंका मित्र शङ्खदत्तनाम युवाशूर तथा धनवान् एकब्राह्मण समरभटके पास आकर बोला कि तुमको अपने बड़ेभाई के साथ बैर नहीं करनाचाहिये यह बड़ा अधर्म्म है और तुम उसे मारभी न सकोगे क्योंकि वह तुमसे अधिक बलवान् और गुणवान् है इससे तुम केवल अयशमात्रही के भागी होगे उसके यहवचन सुनकर समरभटने उसके श्रेष्ठ वचनोंको स्वीकार न करके उसका बड़ा तिरस्कार किया ठीकहै (हितोपदेशोमूर्खस्यकोपायैवनशान्तये) मूर्खको हितका उपदेश करनेसे कोपही होताहै शान्ति नहीं होतीहै इसमें शङ्खदत्तने कुपितहोकर इसदुष्टके जीतनेकी इच्छासे भीमभटके साथ जाकर परम मित्रता करली ७५ इसके उपरान्त देशान्तरसे आयाहुआ मणिदत्तनाम वैश्य चन्द्रमाके समान

मैं इस धनको लेकर क्याकरूंगा मैं तो धनलेकर अपने मित्रोंकोही दूंगा क्या तुम मेरे मित्र नहींहो तुम्हारे समान और मित्र मुझको कहा मिलेंगे उसके वचन सुनकर कुछ लोगोंको धन लेनेसे निषेध करते देखकर अक्षक्षपणक नाम एकजुवारीने कहा कि ज्वारियोंका यह सिद्धान्त होताहै कि जीताहुआ धन वह नहीं देते परन्तु यह जो हमलोगोंको मित्र मानकरदेताहै तो लेलेनेमें क्या हानिहै यहसुनकर अन्य सबलोगोंने कहा कि जो यह सदैवकेलिये हम लोगों के साथ मित्रताकरे तो हम धनलेलें उनके यह वचन सुनकर भीमभटने उनके साथ सदैवकेलिये मित्रताकरके उनका सब धन उन्हें देदिया और उनलोगोंके साथ उपवनमें जाकर भोजनादिसे निवृत्तहोके उनसे सब अपना वृत्तान्त कहके उनकाभी सब वृत्तान्त पूछा उनमें से अक्षक्षपणक ने पहले अपना वृत्तान्त कहा कि हस्तिनापुरमें शिवदत्तनाम एक महाधनवान् ब्राह्मणरहताथा उसका मैं वसुदत्तनाम पुत्रहूं बाल्यावस्था मे मेरे पिताने मुझे शस्त्र विद्या और शास्त्रविद्या दोनों सिखाकर एक कुलीन ब्राह्मणकी कन्याके साथ मेरा विवाहकरदिया मेरी माता बड़ी कर्कसाथी इससे मेरे पिता बहुत क्लेशितहोकर घरछोड़कर न जाने कहा चलेगये इससे मैंने भयभीत होकर अपनी स्त्रीको माताकी आज्ञापालन में नियुक्त किया और वह भी भयभीतहोकर मेरी और मेरी माताकी आज्ञापालनकरने लगी परन्तु इतने पर भी मेरी माताको सतोष नहीं हुआ वह सदैव कलह करतीही रही जो मेरी स्त्री चुपचाप रहतीथी तो मेरी माता कहतीथी कि यह मेरा अनादर करतीहै और जब वह दीन वचन बोलतीथी तो माता कहतीथी कि यह छलकरती है और जब वह समझातीथी तो माता कहतीथी कि यह मुझसे लड़ाई लड़तीहै ठीकहै (कोहित्याजयितुशक्तोनिद्धेस्स्वान्दहनात्मताम्) अग्निकी स्वाभाविक दाहशक्तिको कौन छुटासक्ताहै मेरी माताके इसप्रकार बहुतकालतक कलहकरने पर मेरी स्त्रीभी घर त्यागकर न जाने कहा चलीगई उसके चलेजाने पर बन्धुओंने मिलकर हठकरके मेरा दूसरा विवाहकरवादिया मेरी दूसरी स्त्री कोभी मेरी माताने ऐसा क्लेशदिया कि वह भी फासी लगाकर मरगई तब मैं अत्यन्त खिन्नहोकर परदेश जानेको उद्यतहुआ और परदेशजानेको निषेधकरतेहुए बन्धुओंसे मैंने अपनी माताकी सब दुष्टता कहदी परन्तु उनलोगों को मेरी बात पर विश्वास न हुआ इसलिये मैंने उन्हें विश्वास दिलानेकेलिये एक काठकी स्त्री बनवाकर उसके साथ झूठमूठ ब्याहकरके घरमें लाकर उसे एक बैठकमें बन्दकर दिया और एक काठकी दासी भी बनवाके उसेभी उसीके साथ बन्दकरके अपनी मातासे कहा कि मैंने यह नवीन स्त्री लाकर अलगकरदी है न तुम उसके पास जाना न वह तुम्हारे पास आवे क्योंकि वह अभी इतनी चतुर नहीं है कि तुम्हारा कार्यकरसके इसीसे मैंने उसे तालेमें बन्दकरदियाहै मेरे इसप्रकार कहनेके दो चार दिन व्यतीत होजाने पर मेरी माता उसकाठकी स्त्रीको किसी प्रकारसे न पाकर एक दिन पत्थरसे अपना सिर फोड़कर आगनमें बैठके रोनेलगी उसरोदनको सुनके मैंने और मेरे बन्धुओंने आकर पूछा कि यह क्या बातहै उसने कहा कि इसनई बहूने कमरेमेंसे आकर विना कारण मेरी यह दशाकी है इससे मैं अपने प्राणदेदूंगी यह सुनकर उन सबने कुपितहोकर उस कमरेमें जाके काठकी पुतली पड़ीहुई देखी तब उन सब

ब्राह्मण किसी निर्जन स्थानमे बैठाहुआ अपना स्वाध्याय कर रहाथा यह देखकर भीमभटने उससे पूछा कि तुम कौनहो और इस निर्जन स्थानमे अकेले आकर क्यो बैठेहो उसनेकहा कि मैं काशीके निवासी श्रीकंठनाम ब्राह्मण का नीलकंठनाम पुत्रहूं यज्ञोपवीत संस्कारके उपरान्त मैं गुरुके यहा जाकर विद्या ध्ययन करनेलगा और जब तक मैं विद्याध्ययनकरके लौटूं तबतक मेरा सबकुटुम्ब नष्टहोगया इससे मैं अनाथहोकर गृहस्थी के भारके धारण करने को असमर्थहोके गंगाजी के तटपर आकर तपकरनेलगा तपसे प्रसन्नहोके श्रीगंगाजीने स्वप्नमें कुछ फलदे के मुझसेकहा कि इनफलोंको खाकर तुम यहाही तब तक रहो जबतक कि तुम्हारा मनोरथ सिद्ध न होय यह स्वप्न देख मैंने प्रातःकाल उठके स्नान के निमित्त जाके श्रीगंगाजीमे बहतेहुए फलपाये और अमृतकेसमान स्वादिष्ट उनफलोको अपनी कुटी में लाकर खाया इसप्रकार से प्रतिदिन फलोंको पाकर उन्हें ही खाके मैं यहा रहता हूं उसके वचन सुनके भीमभटने शंखदत्त से कहा कि मैं अपना धन इसे देदूं तो यह सुख पूर्व्वक अपना गृहस्था श्रम करे उसने कहा कि बहुत अच्छा आप ऐसाही कीजिये यह सुनतेही भीमभटने अपनी माताका भेजाहुआ सब धन उसे देदिया (अलुप्तसत्त्वकोषाणामहत्त्वमहतांहिकिम् आकर्णितापरस्यार्त्तिनचे च्छिदन्तुतत्क्षणम्) जिनका कि सत्त्वरूपी खजाना नहीं नष्टहुआहै ऐसे महात्माओका महत्त्वही क्या होय जो वह पराई विपत्तिको सुनकर उसी समय न दूरकरे उस ब्राह्मण को धनदेकर शंखदत्त सहित भीमभट गंगाजीके पारजानेका कोई उपाय न देखकर शिरमे खड्गको बाँधके पारजानेके लिये गंगाजी मे उतरकर तैरनेलगा बीच में पहुंचकर जल के वेगसे शंखदत्त कहीं दूर बहगया और भीमभट जैसे तैसे पारआया पारआके अपने मित्रको न देखकर वहदिनभर उसे गंगाजी के तटपर ढूंढतारहा साय- कालके समयतक उसे न पाके निराश होके हा मित्र हा मित्र इसप्रकार पुकारकर गंगाजी मे डूबने को उद्यत हुआ और जैसेही उसने हे भगवती गंगा तुमने मेरे मित्रको लेलिया है इससे इस शून्य शरीर को भी तुम लेलो यह कहकर डूबनाचाहा वैसेही साक्षात् गंगाजी जलमे प्रकट होकर उससे बोलीं कि हे पुत्र सहसा मत करो तुम्हारा मित्र जीताहै थोडेही कालमे तुम्हारा समागम उससे होगा अब तुम प्रातिलोमा और अनुलोमा नाम विद्या हमसे लो अनुलोमा विद्या के पढने से मनुष्य अदृश्य हो- जाता है और प्रतिलोमा विद्या के पढने से जैसा चाहै वैसा रूप होजाता है हे पुत्र यह सात २ अक्षर की विद्या है इनके प्रभावसे तुम सम्पूर्ण पृथ्वी के राजा होजाओगे यह कहके विद्या देकर श्रीगंगाजी के अन्तर्द्धान होजाने पर भीमभट विश्वास युक्त होकर मरण से निवृत्तहुआ और उस रात्रि को व्य- तीतकरके प्रातःकाल शंख दत्तको ढूंढनेकेलिये चला १३७ चलते २ वह अकेला लाटदेशमें पहुंचा वहा बहुत से स्थानोंको देखताहुआ एक द्यूतशाला में गया वहा लंगोटी पहनेहुए बहुतसे ज्वारीद्यूत खेलरहेथे यह भी उनके साथ वार्त्तालाप करके द्यूत खेलने लगा उन लोगों ने तो इसे आभूषण पहरे देखकर जाना कि इसे जीतकर हम बहुतसा धन पावेंगे परन्तु उसने अपनी प्रवीणतासे उन सबका धन जीतलिया और हारके उन्हें जाता देखके उनसे कहा कि कहा जातेहो यह अपना धनलेतेजाओ

में इस धनको लेकर क्याकरूंगा मैं तो धनलेकर अपने मित्रोंकोही दूंगा क्या तुम मेरे मित्र नहींहो तुम्हारे समान और मित्र मुझको कहां मिलेंगे उसके वचन सुनकर कुछ लोगोंको धन लेनेसे निषेध करते देखकर अक्षक्षपणक नाम एकजुवारीने कहा कि ज्वारियोंका यह सिद्धान्त होताहै कि जीताहुआ धन वह नहीं देते परन्तु यह जो हमलोगोंको मित्र मानकरदेताहै तो लेलेनेमें क्या हानिहै यहसुनकर अन्य सबलोगोंने कहा कि जो यह सदैवकेलिये हम लोगों के साथ मित्रताकरे तो हम धनलेलें उनके यह वचन सुनकर भीमभटने उनके साथ सदैवकेलिये मित्रताकरके उनका सब धन उन्हें देदिया और उनलोगोंके साथ उपवनमे जाकर भोजनादिसे निवृत्तहोके उनसे सब अपना वृत्तान्त कहके उनकाभी सब वृत्तान्त पूछा उनमें से अक्षक्षपणक ने पहले अपना वृत्तान्त कहा कि हस्तिनापुरमें शिवदत्तनाम एक महाधनवान् ब्राह्मणरहताथा उसका मैं वसुदत्तनाम पुत्रहूं बाल्यावस्था मे मेरे पिताने मुझे शस्त्र विद्या और शास्त्रविद्या दोनों सिखाकर एक कुलीन ब्राह्मणकी कन्याके साथ मेरा विवाहकरदिया मेरी माता बडी कर्कसाथी इससे मेरे पिता बहुत क्लेशितहोकर घरछोडकर न जाने कहां चलेगये इससे मैंने भयभीत होकर अपनी स्त्रीको माताकी आज्ञापालन में नियुक्त किया और वह भी भयभीतहोकर मेरी और मेरी माताकी आज्ञापालनकरने लगी परन्तु इतने पर भी मेरी माताको संतोष नहीं हुआ वह सदैव कलह करतीही रही जो मेरी स्त्री चुपचाप रहतीथी तो मेरी माता कहतीथी कि यह मेरा अनादर करतीहै और जब वह दीन वचन बोलतीथी तो माता कहती थी कि यह छलकरती है और जब वह समझातीथी तो माता कहतीथी कि यह मुझसे लडाई लडतीहै ठीकहै (कोहित्याजयितुंशक्तोवह्नेस्स्वान्दहनात्मताम्) अग्निकी स्वाभाविक दाहशक्तिको कौन छुटासक्ताहै मेरी माताके इसप्रकार बहुतकालतक कलहकरने पर मेरी स्त्रीभी घर त्यागकर न जाने कहां चलीगई उसके चलेजाने पर बन्धुओंने मिलकर हठकरके मेरा दूसरा विवाहकरवादिया मेरी दूसरी स्त्रीकोभी मेरी माताने ऐसा क्लेशदिया कि वह भी फांसी लगाकर मरगई तब मैं अत्यन्त खिन्नहोकर परदेश जानेको उद्यतहुआ और परदेशजानेको निषेधकरतेहुए बन्धुओंसे मैंने अपनी माताकी सब दुष्टता कहदी परन्तु उनलोगों को मेरी बात पर विश्वास न हुआ इसलिये मैंने उन्हें विश्वास दिलानेकेलिये एक काष्ठकी स्त्री बनवाकर उसके साथ झूठमूठ ब्याहकरके घरमें लाकर उसे एक बैठकमें बन्दकर दिया और एक काष्ठकी दासी भी बनवाके उसेभी उसीके साथ बन्दकरके अपनी मातासे कहा कि मैंने यह नवीन स्त्री लाकर अलगरक्खी है न तुम उसके पास जाना न वह तुम्हारे पास आवै क्योंकि वह अभी इतनी चतुर नहीं है कि तुम्हारा कार्य्यकरसके इसीसे मैंने उसे तालेमें बन्दकरदियाहै मेरे इसप्रकार कहनेके दो चार दिन व्यतीत होजाने पर मेरी माता उसकाष्ठकी स्त्रीको किसी प्रकारसे न पाकर एक दिन पत्थरसे अपना शिर फोडकर आंगनमें बैठके रोनेलगी उसरोदनको सुनके मैंने और मेरे बन्धुओंने आकर पूछा कि यह क्या बातहै उसने कहा कि इसनई बहूने कमरेमेंसे आकर विना कारण मेरी यह दशाकी है इससे मैं अपने प्राणदेदूंगी यह सुनकर उन सबने कुपितहोकर उस कमरेमें जाके काष्ठकी पुतली पडीहुई देखी तब उन सब

ब्राह्मण किसी निर्जन स्थानमे बैठाहुआ अपना स्वाध्याय कर रहाथा यह देखकर भीमभटने उससे पूछा कि तुम कौनहो और इस निर्जन स्थानमें अकेले आकर क्यो बैठेहो उसनेकहा कि मैं काशीके निवासी श्रीकठनाम ब्राह्मण का नीलकंठनाम पुत्रहू यज्ञोपवीत संस्कारके उपरान्त मे गुरूके यहा जाकर विद्याध्ययन करनेलगा और जब तक मैं विद्याध्ययनकरके लौटू तबतक मेरा सबकुटुम्ब नष्टहोगया इससे मैं अनाथहोकर गृहस्थी के भारके धारण करने को असमर्थहोके गंगाजी के तटपर आकर तपकरनेलगा तपसे प्रसन्नहोके श्रीगगाजीने स्वप्नमें कुछ फलदे के मुझसेकहा कि इनफलोको खाकर तुम यहाही तब तक रहो जबतक कि तुम्हारा मनोरथ सिद्ध न होय यह स्वप्न देख मैंने प्रातःकाल उठके स्नान के निमित्त जाके श्रीगगाजीमें वहतेहुए फलपाये और अमृतकेसमान स्वादिष्ट उनफलोको अपनी कुटी में लाकर खाया इसप्रकार से प्रतिदिन फलोंको पाकर उन्हें ही खाके मैं यहा रहता हू उसके वचन सुनके भीमभटने शखदत्त से कहा कि मैं अपना धन इसे देदू तो यह सुख पूर्व्वक अपना गृहस्थाश्रम करे उसने कहा कि बहुत अच्छा आप ऐसाही कीजिये यह सुनतेही भीमभटने अपनी माताका भेजाहुआ सब धन उसे देदिया (अलुप्तसत्त्वकोषाणामहत्त्वमहतांहिकिम् आकर्णितापरस्यार्त्तिनवेच्छिदन्तुतत्क्षणम्) जिनका कि सत्त्वरूपी खज़ाना नहीं नष्टहुआहै ऐसे महात्माओंका महत्त्वही क्या होय जो वह पराई विपत्तिको सुनकर उसी समय न दूरकरें उस ब्राह्मण को धनदेकर शखदत्त सहित भीमभट गगाजीके पारजानेका कोई उपाय न देखकर शिरमे खड्गको बॉधके पारजानेके लिये गगाजी मे उतरकर तैरनेलगा बीच में पहुचकर जल के वेगसे शखदत्त कहीं दूर बहगया और भीमभट जैसे तैसे पारआया पारआके अपने मित्रको न देखकर वहदिनभर उसे गगाजी के तटपर ढूढतारहा सायकालके समयतक उसे न पाके निराश होके हा मित्र हा मित्र इसप्रकार पुकारकर गगाजी मे डूबने को उद्यत हुआ और जैसेही उसने हे भगवती गगा तुमने मेरे मित्रको लेलिया है इससे इस शून्य शरीर को भी तुम लेलो यह कहकर डूबनाचाहा वैसेही साक्षात् गगाजी जलमे प्रकट होकर उससे बोलीं कि हे पुत्र सहसा मत करो तुम्हारा मित्र जीताहै थोडेही कालमें तुम्हारा समागम उससे होगा अब तुम प्रातिलोमा और अनुलोमा नाम विद्या हमसे लो अनुलोमा विद्या के पढने से मनुष्य अदृश्य होजाता है और प्रतिलोमा विद्या के पढने से जैसा चाहे वैसा रूप होजाता है हे पुत्र यह सात २ अक्षर की विद्या हैं इनके प्रभावसे तुम सम्पूर्ण पृथ्वी के राजा होजाओगे यह कहके विद्या देकर श्रीगगाजी के अन्तर्द्धान होजाने पर भीमभट विश्वास युक्त होकर मरण से निवृत्तहुआ और उस रात्रि को व्यतीतकरके प्रातःकाल शख दत्तको ढूढनेकेलिये चला १३७ चलते २ वह अकेला लाटदेशमें पहुचा वहा बहुत से स्थानोंको देखताहुआ एक द्यूतशाला में गया वहा लगोटी पहनेहुए बहुतसे ज्वारीद्यूत खेलरहेथे यह भी उनके साथ वार्त्तालाप करके द्यूत खेलने लगा उन लोगों ने तो इसे आभूषण पहरे देखकर जाना कि इसे जीतकर हम बहुतसा धन पावेंगे परन्तु उसने अपनी प्रवीणतासे उन सबका धन जीतलिया और हारके उन्हें जाता देखके उनसे कहा कि कहा जातेहो यह अपना धनलेतेजाओ

मे इस धनको लेकर क्याकरूगा मैं तो धनलेकर अपने मित्रोंकोही दूगा क्या तुम मेरे मित्र नहींहो तुम्हारे समान और मित्र मुझको कहा मिलेंगे उसके वचन सुनकर क्षुब्ध लोगोंको धन लेनेसे निषेध करते देखकर अमक्षपणक नाम एकज्वारीने कहा कि ज्वारियोंका यह सिद्धान्त होताहै कि जीताहुआ धन वह नहीं देते परन्तु यह जो हमलोगोंको मित्र मानकरदेताहै तो लेलेनेमें क्या हानिहै यहसुनकर अन्य सबलोगोंने कहा कि जो यह सदैवकेलिये हम लोगों के साथ मित्रताकरे तो हम धनलेले उनके यह वचन सुनकर भीमभटने उनके साथ सदैवकेलिये मित्रताकरके उनका सब धन उन्हे देदिया और उनलोगोंके साथ उपवनमे जाकर भोजनादिसे निवृत्तहोके उनसे सब अपना वृत्तान्त कहके उनका भी सब वृत्तान्त पूछा उनमें से अक्षक्षपणक ने पहले अपना वृत्तान्त कहा कि हस्तिनापुरमे शिवदत्तनाम एक महाधनवान् ब्राह्मणरहताथा उसका मैं वसुदत्तनाम पुत्रहू बाल्यावस्था में मेरे पिताने मुझे शस्त्र विद्या और शास्त्रविद्या दोनों सिखाकर एक कुलीन ब्राह्मणकी कन्याके साथ मेरा विवाहकरदिया मेरी माता बडी कर्कशाथी इससे मेरे पिता बहुत क्लेशितहोकर घरछोडकर न जाने कहां चलेगये इससे मैंने भयभीत होकर अपनी स्त्रीको माताकी आज्ञापालन में नियुक्त किया और वह भी भयभीतहोकर मेरी और मेरी माताकी आज्ञापालनकरने लगी परन्तु इतने पर भी मेरी माताको सतोष नहीं हुआ वह सदैव कलह करतीही रही जो मेरी स्त्री चुपचाप रहतीथी तो मेरी माता कहतीथी कि यह मेरा अनादर करतीहै और जब वह दीन वचन बोलतीथी तो माता कहती थी कि यह छलकरती है और जब वह समझातीथी तो माता कहतीथी कि यह मुझसे लडाई लडतीहै ठीकहै (कोहित्याजयितुशक्तोनह्वेस्स्वान्दहनात्मताम्) अग्निकी स्वाभाविक दाहशक्तिको कौन छुटासक्ताहै मेरी माताके इसप्रकार बहुतकालतक कलहकरने पर मेरी स्त्रीभी घर त्यागकर न जाने कहा चलीगई उसके चलेजाने पर बन्धुओंने मिलकर हठकरके मेरा दूसरा विवाहकरवादिया मेरी दूसरी स्त्री कोभी मेरी माताने ऐसा क्लेशदिया कि वह भी फासी लगाकर मरगई तब मैं अत्यन्त खिन्नहोकर परदेश जानेको उद्यतहुआ और परदेशजानेको निषेधकरतेहुए बन्धुओंसे मैंने अपनी माताकी सब दुष्टता कहदी परन्तु उनलोगों को मेरी बात पर विश्वास न हुआ इसलिये मैंने उन्हे विश्वास दिलानेकेलिये एक काष्ठकी स्त्री बनवाकर उसके साथ झूठमूठ ब्याहकरके घरमें लाकर उसे एक बैठकमें बन्दकर दिया और एक काष्ठकी दासी भी बनवाके उसेभी उसीके साथ बन्दकरके अपनी मातासे कहा कि मैंने यह नवीन स्त्री लाकर अलगरक्खदी है न तुम उसके पास जाना न वह तुम्हारे पास आवै क्योंकि वह अभी इतनी चतुर नहीं है कि तुम्हारा कार्यकरसके इसीसे मैंने उसे तालेमें बन्दकरदियाहै मेरे इसप्रकार कहनेके दो चार दिन व्यतीत होजाने पर मेरी माता उसकाष्ठकी स्त्रीको किसी प्रकारसे न पाकर एक दिन पत्थरसे अपना शिर फोडकर आगनमें बैठके रोनेलगी उसरोदनको सुनके मैंने और मेरे बन्धुओंने आकर पूछा कि यह क्या बातहै उसने कहा कि इसनई बहूने कमरेमेंसे आकर बिना कारण मेरी यह दशाकी है इससे मैं अपने प्राणदेदूगी यह सुनकर उन सबने कुपितहोकर उस कमरेमें जाके काष्ठकी पुतली पडीहुई देखी तब उन सब

ब्राह्मण किसी निर्जन स्थानमें बैठाहुआ अपना स्वाध्याय कर रहाथा यह देखकर भीमभटने उससे पूछा कि तुम कौनहो और इस निर्जन स्थानमे अकेले आकर क्यो बैठेहो उसनेकहा कि मैं काशीके निवासी श्रीकंठनाम ब्राह्मण का नीलकंठनाम पुत्रहू यज्ञोपवीत संस्कारके उपरान्त मैं गुरूके यहा जाकर विद्याध्ययन करनेलगा और जब तक मैं विद्याध्ययनकरके लौटू तबतक मेरा सबकुटुम्ब नष्टहोगया इससे मैं अनाथहोकर गृहस्थी के भारके धारण करने को असमर्थहोके गंगाजी के तटपर आकर तपकरनेलगा तपसे प्रसन्नहोके श्रीगंगाजीने स्वप्नमें कुछ फलदे के मुझसेकहा कि इनफलोंको खाकर तुम यहाही तब तक रहो जबतक कि तुम्हारा मनोरथ सिद्ध न होय यह स्वप्न देख मैंने प्रातःकाल उठके स्नान के निमित्त जाके श्रीगंगाजीमें बहतेहुए फलपाये और अमृतके समान स्वादिष्ट उनफलोको अपनी कुटी में लाकर खाया इसप्रकार से प्रतिदिन फलोंको पाकर उन्हें ही खाके मैं यहा रहता हू उसके वचन सुनके भीमभटने शखदत्त से कहा कि मैं अपना धन इसे देदू तो यह सुख पूर्व्वक अपना गृहस्थाश्रम करे उसने कहा कि बहुत अच्छा आप ऐसाही कीजिये यह सुनतेही भीमभटने अपनी माताका भेजाहुआ सब धन उसे देदिया (अलुप्तसत्त्वकोषाणामहत्त्वमहतांहिकिम् आकर्णितापरस्यार्त्तिनच्छिदन्तुतत्क्षणम्) जिनका कि सत्त्वरूपी खजाना नहीं नष्टहुआहै ऐसे महात्माओका महत्त्वही क्या होय जो वह पराई विपत्तिको सुनकर उसी समय न दूरकरें उस ब्राह्मण को धनदेकर शखदत्त सहित भीमभट गंगाजीके पारजानेका कोई उपाय न देखकर शिरमें खड्गको बाँधके पारजानेके लिये गंगाजी मे उतरकर तैरनेलगा बीच में पहुचकर जल के वेगसे शखदत्त कहीं दूर बहगया और भीमभट जैसे तैसे पारआया पारआके अपने मित्रको न देखकर वहदिनभर उसे गंगाजी के तटपर ढूढतारहा सायकालके समयतक उसे न पाके निराश होके हा मित्र हा मित्र इसप्रकार पुकारकर गंगाजी मे डूबने को उद्यत हुआ और जैसेही उसने हे भगवती गंगा तुमने मेरे मित्रको लेलिया है इससे इस शून्य शरीर को भी तुम लेलो यह कहकर डूबनाचाहा वैसेही साक्षात् गंगाजी जलमें प्रकट होकर उससे बोलीं कि हे पुत्र सहसा मत करो तुम्हारा मित्र जीताहै थोडेही कालमें तुम्हारा समागम उससे होगा अब तुम प्रातिलोमा और अनुलोमा नाम विद्या हमसे लो अनुलोमा विद्या के पढने से मनुष्य अदृश्य होजाता है और प्रतिलोमा विद्या के पढने से जैसा चाहै वैसा रूप होजाता है हे पुत्र यह सात २ अक्षर की विद्या है इनके प्रभावसे तुम सम्पूर्ण पृथ्वी के राजा होजाओगे यह कहके विद्या देकर श्रीगंगाजी के अन्तर्द्धान होजाने पर भीमभट विश्वास युक्त होकर मरण से निवृत्तहुआ और उस रात्रि को व्यतीतकरके प्रातःकाल शख दत्तको ढूढनेकेलिये चला १३७ चलते २ वह अकेला लाटदेशमें पहुचा वहा बहुत से स्थानोंको देखताहुआ एक द्यूतशाला में गया वहा लगोटी पहनेहुए बहुतसे ज्वारीद्यूत खेलरहेथे यह भी उनके साथ वार्त्तालाप करके द्यूत खेलने लगा उन लोगों ने तो इसे आभूषण पहरे देखकर जाना कि इसे जीतकर हम बहुतसा धन पावेंगे परन्तु उसने अपनी प्रवीणतासे उन सबका धन जीतलिया और हारके उन्हें जाता देखके उनसे कहा कि कहा जातेहो यह अपना धनलेतेजाओ

मानों वासुकीके कणोंकी मणियोंकी प्रभाके पुजथे नीलकमल क्या लगेथे मानो उननागराजके विष युक्त फूत्कारहीथे किनारेपर लगेहुए वृक्षोंके जो पुष्प टूट २ कर गिरतेथे वह मानों नागराजका पूजनही होरहाथा ऐसे सुन्दर उस तडागकी शोभाको देखकर जैसेही भीमभट वहासे चलना चाहताथा वैसेही लाटदेशके राजा चन्द्रादित्य से कुवलयावती रानी में उत्पन्नहुई हंसावली नाम कन्या अपनी सखियों समेत वहा स्नानकरनेको आई वह ऐसी सुन्दरथी कि केवल उसके पलकोंहीके देखनेसे मालूमहोताथा कि यहमानुषी है उसने तिरछी दृष्टिसे देखके नेत्ररूपी बाणोंसे हृदयमें मारकर भीमभटको मोहित कर दिया और भीमभट भी नेत्रोंके द्वारा उसके हृदयमें घुसकर उसका धैर्य्य हरलाया तब वहकन्या अपनी सखीके द्वारा भीमभटके मित्रोंसे उसकानाम तथा स्थान पूछकर स्नानादिसे निवृत्तहोकर अपने स्थान को चलीगई और प्रियाके प्रेमरूपी पाशोंसे बँधाहुआ भीमभटभी अपने मित्रों समेत जिस किसीतरह निज स्थानपर आया वहा क्षणभरमेंही राजकन्याकी भेजीहुई दूतीने आकर उससे एकान्तमे कहा कि हे महाभाग राजपुत्री हंसावली आपसे यहप्रार्थना करतीहै कि कामरूपी प्रवाहमें वहतेहुए प्रेमीजनको देखकर उसपर कुछभी ध्यान न देके आपको किनारा करना उचित नहींहै दूतीके यहअमृतमय वचन सुनकर बहुत प्रसन्नहोकर भीमभटने कहा कि मैंभी कामही के प्रवाह में वहरहाहू यह क्या प्रिया नहीं जानती इससे में अवश्य उसकी आज्ञाका पालनकरूगा आज रात्रि के समय अन्त पुर में आकर मैं उसे प्रसन्नकरूगा और मुझे वहा आतेहुए कोईभी नहीं देखसकेगा क्योंकि मैं विद्याके बलसे अपना शरीर अदृश्य करलूगा उसके यहवचन सुनकर दासी ने जाके हंसावली से रात्रि में उसके आनेका वृत्तान्त कहदिया इससे हंसावली बहुतही प्रसन्नहोके उसके आगमनकी प्रत्याशा करके बैठी सायकाल के समय भीमभट भी दिव्य आभूषण पहनकर गंगाजीकी दीहुई विद्याका अनुलोम पाठकरके अदृश्य होकर राजपुत्रीके अगरसे सुगंधित मन्दिरमें गया राजपुत्रीने पहलेहीसे वहा सब सखियों को हटाकर एकान्तकर रक्खाथा कामके उपवनरूप उसमन्दिरमें गंगाजीकी विद्याकी लतारूपी राजपुत्रीको देखकर विद्याका प्रतिलोम पाठकरके भीमभट उसके सन्मुखही जाके प्रकटहोगया उसे देखतेही आनन्द पुलक कम्प तथा भययुक्त राजपुत्री लज्जाके कारण नीचेको मुखकरके बैठगई वहमानों अपने हृदय मे पूंछ रहीथी कि बताओ अब क्याकरें यहदेखकर भीमभटने उसके निकट बैठके कहा कि हे सुन्दरी प्रकट बात कोभी तुम लज्जासे क्यों छुपातीहो चाहे अपने चित्तको तुम छुपालो परन्तु पुलककोया रोमाचकोया पहुंचीकी ढीली गाठोंको कौन छुपावेगा इत्यादि वचनोंसे उसकी लज्जाको छुड़ाकर भीमभट उसके साथ गान्धर्व विवाहकरके उसीके साथ वहरात्रि व्यतीत करके और फिर आनेका नियमकरके अपने स्थानको चलाआया २४० वहा प्रातःकाल हंसावलीको नखक्षतआदि संभोगके चिह्नों से युक्त देखकर अन्तःपुरके रक्षकोंने राजाके पास जाके यहखबरदी राजाने इसबातको जाननेके लिये अपने चार लोगोंको यहआज्ञा देदीनी कि तुम देखो कि यह कौन पुरुषहै वहा भीमभट दिनको अपने मित्रों के साथ व्यतीतकरके रात्रिके समय फिर अपनी प्रियाके पासगया वहा चारोंने उसे अलक्षित आया देखकर

लोगोंको मेरे कहनेका विश्वासहोगया इससे वह हँसतेहुए तथा मेरी माताकी निन्दाकरतेहुए अपने२ घरको चलेगये और मैंभी अपनी माताको छोडकर नगरसे बाहर आके भ्रमण करते २ इसलाटदेशमें आया और यहां इस द्यूतशाला में आकर चण्डभुजग, पाशुपट, श्मशान वेताल, कालवराटक और शारिप्रस्तरनाम इन पाचोंशूरों को द्यूतखेलते देखकर जो हारेगा वह सेवक होजायगा यह प्रणकरके इनके साथ द्यूतखेलनेलगा द्यूतखेलते २ मैंने इन पाचोंको जीतलिया इससे यह पाचों मेरे दासहोगये परन्तु इन लोगोंमें ऐसे गुण हैं कि मैंही इनका दास बनाहुआहू इनके साथ यहां रहनेसे मैं सब दुःख भूलगया अब इस अवस्थाके अनुसार मेरा अक्षक्षपणक नामहै आज भाग्यवशसे आपभी हमलोगों को यहां प्राप्तहुए अब आपही हम छओंके स्वामीहो इसप्रकार अक्षक्षपणकके अपने सब वृत्तान्त कहने पर उन पाचोंनेभी अपना २ सब वृत्तान्त कहा उन सबके वृत्तान्तको सुनकर भीमभट उन सबको वीर जानकर उसी उपवनमें वह दिन व्यतीतकरके सायकाल के समय उन्हीं अक्षक्षपणकादि अपने छओं मित्रो के साथ उन्हींके स्थानको गया इसप्रकार उन मित्रोंको पाकर उनके साथ रहतेहुए भीमभटको वर्षा ऋतु प्राप्तहुई उनदिनों वहाकी विपाशानामे नदी समुद्रके जलसे पूर्णहोकर उलटी बहनेलगी उसीके जलमें एकबहुतबडी तिमिनाम मछली बहकर उसनदीके किनारेपर आकरलगी और शीघ्रही पानीके न्यूनहोजानेके कारण वह वहा से बहनसकी उसे देखकर वहाके निवासियोंने उसका पेट फाडा उसमें से एकयुवा ब्राह्मण निकला यह अद्भुत वार्त्ता नगरभरमे फैलगई इससे भीमभटनेभी अपने मित्रोंसमेत वहा जाकरदेखा कि वहउसका मित्र शखदत्तही मछलीके पेटसे निकलाथा उसेदेखतेही भीमभटने दौडकर उसे अपने हृदयमें लगालिया और मानों मछलीके पेटमें रहनेके कारण लगेहुए मैलके धोनेकेलिये बहुतसे आसूबहाये शखदत्तभी बहुतकालके उपरान्त उससेमिलकर अत्यन्तप्रसन्नहुआ तदनन्तरभीमभटकेपूछने पर शखदत्तने कहा कि उससमय गगाजीके वेगसे जो मैं आपके पाससे अलगहोकर बहा तो मुझेइसमछलीने निगललिया बडे महलके समान इसके पेटमें जाकर मै छुरीसे इसके पेटके मासको काटकर बहुत दिनतकखातारहा आजभाग्यवशसे यहमछली यहाआई सो लोगोंनेइसका पेटफाडके मुझे निकाललिया यही मेरा सब वृत्तान्तहै शखदत्तके यहवचन सुनकर भीमभटने तथा अन्य सब लोगों ने कहा कि कहा तो गगामें बहना कहा मछलीके द्वारा समुद्रमें जाना कहा समुद्रसेभी विपाशानदी मे आना कहा उस मछलीका माराजाना और कहा उसमेंसेभी जीता निकलना अद्भुत कार्य्य करनेवाले ब्रह्मकी भी अचिन्त्य गतिहै इत्यादि अनेकप्रकारकी अनेकवार्त्ता कहते हुए उनसब मित्रों समेत भीमभट शखदत्त को लेकर अपने स्थानको गया और वहा उसे स्नानकराके तथा वस्त्र पहराके भोजनादि सत्कारकरके मछलीके पेटसे मानों पुनर्जन्मको पानेवाले अपने मित्रको पाकर अत्यन्त प्रसन्नहुआ। २०७ इसके उपरान्त वहीं आनन्द पूर्वक रहताहुआ भीमभट एकदिन नागराज वासुकि के मदिरमें उत्सव देखने को गया वह उत्सव उसदेशमें बहुत प्रसिद्धथा वहा जाकरै नागराजको प्रणामकरके उनके मन्दिरके दक्षिणओर उसने अपने मित्रों समेत एकतडाग देखा उसतडागमें जो लाल कमल लगेथे वही

मानों वासुकीके फणोंकी मणियोंकी प्रभाके पुञ्जसे नीलकमल क्या लगेथे मानो उननागराजके विष युक्त फूत्कारहीथे किनारेपर लगेहुए वृक्षोंके जो पुष्प टूट २ कर गिरतेथे वह मानो नागराजका पूजनही होरहाथा ऐसे सुन्दर उस तडागकी शोभाको देखकर जैसेही भीमभट वहासे चलना चाहताथा वैसेही लाटदेशके राजा चन्द्रादित्य से कुवलयावती रानी में उत्पन्नहुई हंसावली नाम कन्या अपनी सखियों समेत वहां स्नानकरनेको आई वह ऐसी सुन्दरथी कि केवल उसके पलकोंहीके देखनेसे मालूमहोताथा कि यहमानुषी है उसने तिरछी दृष्टिसे देखके नेत्ररूपी बाणोंसे हृदयमें मारकर भीमभटको मोहित कर दिया और भीमभट भी नेत्रोंके द्वारा उसके हृदयमें घुसकर उसका धैर्य हरलाया तब वहकन्या अपनी सखीके द्वारा भीमभटके मित्रोंसे उसकानाम तथा स्थान पूछकर स्नानादिसे निवृत्तहोकर अपने स्थान को चलीगई और प्रियाके प्रेमरूपी पाशोंसे बँधाहुआ भीमभटभी अपने मित्रों समेत जिस किसीतरह निज स्थानपर आया वहा क्षणभरमेंही राजकन्याकी भेजीहुई दूतीने आकर उससे एकान्तमे कहा कि हे महाभाग राजपुत्री हंसावली आपसे यहप्रार्थना करतीहै कि कामरूपी प्रवाहमें वहतेहुए प्रेमीजनको देखकर उसपर कुछभी ध्यान न देके आपको किनारा करना उचित नहींहै दूतीके यहअमृतमय वचन सुनकर वहुत प्रसन्नहोकर भीमभटने कहा कि मैंभी कामही के प्रवाह मे वहरहाहूं यह क्या प्रिया नहीं जानती इससे मैं अवश्य उसकी आज्ञाका पालनकरूंगा आज रात्रि के समय अन्त पुर में आकर मैं उसे प्रसन्नकरूंगा और मुझे वहा आतेहुए कोईभी नहीं देखसकेगा क्योंकि मैं विद्याके बलसे अपना शरीर अदृश्य करलूंगा उसके यहवचन सुनकर दासी ने जाके हंसावली से रात्रि में उसके आनेका वृत्तान्त कहदिया इसमे हंसावली वहुतही प्रसन्नहोके उसके आगमनकी प्रत्यासा करके बैठी सायकाल के समय भीमभट भी दिव्य आभूषण पहनकर गंगाजीकी दीहुई विद्याका अनुलोम पाठकरके अदृश्य होकर राजपुत्रीके अगरसे सुगंधित मन्दिरमें गया राजपुत्रीने पहलेहीसे वहा सब सखियो को हटाकर एकान्तकर रक्खाथा कामके उपवनरूप उसमन्दिरमें गंगाजीकी विद्याकी लतारूपी राजपुत्रीको देखकर विद्याका प्रतिलोम पाठकरके भीमभट उसके सन्मुखही जाके प्रकटहोगया उसे देखतेही आनन्द पुलक कम्प तथा भययुक्त राजपुत्री लज्जाके कारण नीचेको मुखकरके बैठगई वहमानों अपने हृदय से पूछ रहीथी कि बताओ अब क्याकरें यहदेखकर भीमभटने उसके निकट बैठके कहा कि हे सुन्दरी प्रकट वात कोभी तुम लज्जासे क्यों छुपातीहो चाहे अपने चित्तको तुम छुपालो परन्तु पुलकको या रोमाचको या कंचुकीकी ढीली गांठोंको कौन छुपावेगा इत्यादि वचनोंसे उसकी लज्जाको छुडाकर भीमभट उसके साथ गान्धर्व विवाहकरके उसीके साथ वहरात्रि व्यतीत करके और फिर आनेका नियम करके अपने स्थानको चलाआया २५० वहा प्रातःकाल हंसावलीके नख क्षतआदि सभोगके चिह्नों से युक्त देखकर अन्तःपुरके रक्षकोंने राजाके पास जाके यहसबकहदी राजाने इसवातको जाननेके लिये अपने चार लोगोंको यहआज्ञा देदीनी कि तुम देखो कि यह कौन पुरुषहै वहा भीमभट दिनको अपने मित्रों के साथ व्यतीतकरके रात्रिके समय फिर अपनी प्रियाके पासगया वहा चारोंने उसे अलक्षित आया देखकर

लोगोंको मेरे कहनेका विश्वासहोगया इससे वह हँसतेहुए तथा मेरी माताकी निन्दाकरतेहुए अपने२ घरको चलेगये और मैंभी अपनी माताको छोडकर नगरसे बाहर आके भ्रमण करते २ इसलाटदेशमें आया और यहां इस द्यूतशाला में आकर चण्डभुजग, पासुपट, श्मशान वेताल, कालवराटक और शारिप्रस्तरनाम इन पाचोंशूरों को द्यूतखेलते देखकर जो हारेगा वह सेवक होजायगा यह प्रणकरके इनके साथ द्यूतखेलनेलगा द्यूतखेलते २ मैंने इन पाचोंको जीतलिया इससे यह पाचों मेरे दासहोगये परन्तु इन लोगोंमें ऐसे गुण हैं कि मैंही इनका दास बनाहुआहूं इनके साथ यहां रहनेसे मैं सब दुःख भूलगया अब इस अवस्थाके अनुसार मेरा अक्षक्षपणक नामहै आज भाग्यवशसे आपभी हमलोगों को यहां प्राप्तहुए अब आपही हम छओंके स्वामीहो इसप्रकार अक्षक्षपणकके अपने सब वृत्तान्त कहने पर उन पाचोंनेभी अपना २ सब वृत्तान्त कहा उन सबके वृत्तान्तको सुनकर भीमभट उन सबको वीर जानकर उसी उपवनमें वह दिन व्यतीतकरके सायकाल के समय उन्हीं अक्षक्षपणकादि अपने छओं मित्रों के साथ उन्हींके स्थानको गया इसप्रकार उन मित्रोंको पाकर उन के साथ रहतेहुए भीमभटको वर्षा ऋतु प्राप्तहुई उनदिनो वहाकी विपाशानाम नदी समुद्रके जलसे पूर्णहोकर उलटी बहनेलगी उसीके जलमें एकबहुतवडी तिमिनाम मछली बहकर उसनदीके किनारेपर आकरलगी और शीघ्रही पानीके न्यूनहोजानेके कारण वह वहां से वहनसकी उसे देखकर वहाके निवासियोंने उसका पेट फाडा उसमें से एकयुवा ब्राह्मण निकला यह अद्भुत वार्त्ता नगरभरमे फैलगई इससे भीमभटनेभी अपने मित्रोंसमेत वहां जाकरदेखा कि वहउसका मित्र शखदत्तही मछलीके पेटसे निकलाथा उसेदेखतेही भीमभटने दौडकर उसे अपने हृदयमें लगालिया और मानों मछलीके पेटमें रहनेके कारण लगेहुए मैलके धोनेकेलिये बहुतसे आसूनहाये शखदत्तभी बहुतकालके उपरान्त उससेमिलकर अत्यन्तप्रसन्नहुआ तदनन्तरभीमभटकेपूछने पर शखदत्तने कहा कि उससमय गगाजीके वेगसे जो मैं आपके पाससे अलगहोकर बहा तो मुझेइसमछलीने निगललिया बडे महलके समान इसके पेटमें जाकर मैं छुरीसे इसके पेटके मासको काटकर बहुत दिनतकखातारहा आजभाग्यवशसे यहमछली यहाआई सो लोगोंनेइसका पेटफाडके मुझे निकाललिया यही मेरा सब वृत्तान्तहै शखदत्तके यहवचन सुनकर भीमभटने तथा अन्य सब लोगों ने कहा कि कहां तो गगामें वहना कहा मछलीके द्वारा समुद्रमें जाना कहा समुद्रसेभी विपाशानदी मे आना कहां उस मछलीका माराजाना और कहा उसमेसेभी जीता निकलना अद्भुत कार्य्य करनेवाले ब्रह्माकी भी अचिन्त्य गतिहै इत्यादि अनेकप्रकारकी अनेकवार्त्ता कहते हुए उनसब मित्रो समेत भीमभट शखदत्त को लेकर अपने स्थानको गया और वहा उसे स्नान कराके तथा वस्त्र पहराके भोजनादि सत्कारकरके मछलीके पेटसे मानों पुनर्जन्मको पानेवाले अपने मित्रको पाकर अत्यन्त प्रसन्नहुआ २०७ इसके उपरान्त वहीं आनन्द पूर्व्वक रहताहुआ भीमभट एकदिन नागराज वासुकि के मदिरमें उत्सव देखने को गया वह उत्सव उसदेशमें बहुत प्रसिद्धथा वहा जाकर नागराजको प्रणामकरके उनके मन्दिरके दक्षिणकी ओर उसने अपने मित्रो समेत एकतडाग देखा उसतडागमें जो लाल कमल लगेथे वही

मानों वासुकीके फणोंकी मणियोंकी प्रभाके पुंजथे नीलकमल क्या लगेथे मानो उननागराजके विष युक्त फूत्कारहीथे किनारेपर लगेहुए वृक्षोंके जो पुष्प टूट २ कर गिरतेथे वह मानों नागराजका पूजनही होरहाथा ऐसे सुन्दर उस तडागकी शोभाको देखकर जैसेही भीमभट वहासे चलना चाहताथा वैसेही लाटदेशके राजा चन्द्रादित्य से कुवलयावती रानी में उत्पन्नहुई हंसावली नाम कन्या अपनी सखियों समेत वहां स्नानकरनेको आई वह ऐसी सुन्दरथी कि केवल उसके पलकोंहीके देखनेमे मालूमहोताथा कि यहमानुषी है उसने तिरछी दृष्टिसे देखके नेत्ररूपी वाणोंसे हृदयमें मारकर भीमभटको मोहित कर दिया और भीमभट भी नेत्रोंके द्वारा उसके हृदयमें घुसकर उसका धैर्य हरलाया तब वहकन्या अपनी सखीके द्वारा भीमभटके मित्रोंसे उसकानाम तथा स्थान पूछकर स्नानादिसे निवृत्तहोकर अपने स्थान को चलीगई और प्रियाके प्रेमरूपी पाशोंसे बँधाहुआ भीमभटभी अपने मित्रों समेत जिस किसीतरह निज स्थानपर आया वहा क्षणभरमेंही राजकन्याकी भेजीहुई दूतीने आकर उससे एकान्तमे कहा कि हे महाभाग राजपुत्री हंसावली आपसे यहप्रार्थना करतीहै कि कामरूपी प्रवाहमें वहतेहुए प्रेमीजनको देखकर उसपर कुछभी ध्यान न देके आपको किनारा करना उचित नहींहै दूतीके यहअमृतमय वचन सुनकर वहुत प्रसन्नहोकर भीमभटने कहा कि मैंभी कामही के प्रवाह में वहरहाहूं यह क्या प्रिया नहीं जानती इससे मैं अवश्य उसकी आज्ञाका पालनकरूंगा आज रात्रि के समय अन्तःपुर में आकर मैं उसे प्रसन्नकरूंगा और मुझे वहा आतेहुए कोईभी नहीं देखसकेगा क्योंकि मैं विद्याके वलसे अपना शरीर अदृश्य करलूंगा उसके यहवचन सुनकर दासी ने जाके हंसावली से रात्रि में उसके आनेका वृत्तान्त कहदिया इससे हंसावली वहुतही प्रसन्नहोके उसके आगमनकी प्रत्याशा करके बैठी सायंकाल के समय भीमभट भी दिव्य आभूषण पहनकर गंगाजीकी दीहुई विद्याका अनुलोम पाठकरके अदृश्य होकर राजपुत्रीके अगरसे सुगंधित मन्दिरमें गया राजपुत्रीने पहलेहीसे वहा सव सखियों को हटाकर एकान्तकर रक्खाथा कामके उपवनरूप उसमन्दिरमे गंगाजीकी विद्याकी लतारूपी राजपुत्रीको देखकर विद्याका प्रतिलोम पाठकरके भीमभट उसके सन्मुखही जाके प्रकटहोगया उसे देखतेही आनन्द पुलक कम्प तथा भययुक्त राजपुत्री लज्जाके कारण नीचेको मुखकरके बैठगई वहमानों अपने हृदय से पूछ रहीथी कि वताओ अव क्याकरे यहदेखकर भीमभटने उसके निकट बैठके कहा कि हे सुन्दरी प्रकट वात कोभी तुम लज्जासे क्यों छुपातीहो चाहे अपने चित्तको तुम छुपालो परन्तु पुलकोंको या रोमाञ्चोंको या वक्षुकीकी ढीली गाठोंको कौन छुपावेगा इत्यादि वचनोंसे उसकी लज्जाको छुड़ाकर भीमभट उसके साथ गान्धर्व विवाहकरके उसीके साथ वहरात्रि व्यतीत करके और फिर आनेका नियमकरके अपने स्थानको चलाआया २२० वहा प्रातःकाल हंसावलीको नखक्षतआदि सभोगके चिह्नोंसे युक्त देखकर अन्तःपुरके रक्षकोंने राजाके पास जाके यहकहा तब वन्दी राजाने इसवातको जाननेके लिये अपने चार लोगोंको यहआज्ञा देदीनी कि तुम देखो कि वह कौन पुरुषहै यहा भीमभट दिनको अपने मित्रों के साथ व्यतीतकरके रात्रिके समय फिर अपनी प्रियाके पासगया वहा चारोंने उसे अदृश्य आता देखकर

सिद्धजानके चारोंने राजासे आकर कहा कि हे स्वामी वहकोई सिद्धमालूमहोता है क्योंकि जो ऐसे गुप्त स्थानमें अलक्षितहोके चलाआवे वहमनुष्य कैसेहोसक्काहै यहसुनकर राजाने उनसेकहा कि उसको तुम अभीजाकर यहीं बुलालाओ मैं देखूं तो वह कौन है और मेरे वचनसे सरलता पूर्व्वक उससे कहना कि आपने मुझीसे आकर मेरीकन्या क्यों नहीं मागी इसके छिपानेकी क्या आवश्यकता थी आप सरी के गुणवान् वरकहां मिलसक्केहै यह कहके राजाके भेजेहुए चारोंने राजपुत्रीकेद्वारपर जाके पुकारकरके भीम भटसे राजाके कहेहुए सब वचनकहे यहसुनकर भीमभटने यहजानकर कि राजाने मुझेजानलियाहै कहा कि राजासे जाके कहो कि मैं प्रातःकालआपकीसभामें आकर सबतत्त्वकहूंगा यहरात्रिकासमय मेरेआने के योग्य नहीं है यह सुनके उनलोगोंने राजासे वैसाही जाकरकहदिया और राजाभी चुपहोरहा प्रातः-काल भीमभट राजपुत्री के स्थानसे अपने मित्रों के पास जाकर उन्हें साथलेके राजाकी सभा में गया राजाने उसके तेज धैर्य्य तथा सौन्दर्य्य को देखकर योग्य आसनपर मित्रों समेत बैठाया सबके बैठजाने पर शखदत्तने राजासे कहा कि हे राजा राढानगरीके राजा उग्रभटका यह पुत्रहै यह ऐसी विद्याओंको जानता है जिनके प्रभावसे इसे कोई जीत नहींसक्का इसका भीमभटनाम है आपकी कन्याके निमित्त यह यहां आयाहै यह सुनकर राजाने योग्य जानकर मैं धन्यहूं यह कहके विवाहका अत्यन्त उत्सवकरके अनेक रत्नोंसमेत हंसावली भीमभटको देदी इसप्रकार हंसावलीको पाकर भीमभट हंसावली तथा अपने मित्रों समेत राज्यके सुखोंका अनुभव करनेलगा कुछदिनोंके उपरान्त राजा चन्द्रादित्य अपुत्रहोनेके कारण वृद्धावस्थापाके अपना राज्य भीमभटको देकर तपस्या करनेचलागया उस राज्यको पाके भीमभट अपने मित्रोंको बड़े २ अधिकार देकर धर्मपूर्व्वक प्रजाओं का पालन करनेलगा कुछ कालके उपरान्त दूतोंके द्वारा उसने सुना कि उसका पिता उग्रभट प्रयागमें आकर मरगया और वह मरतेसमय अपने छोटे पुत्र समरभटको राढापुरी का राज्य देगया यह समाचार पाकर भीमभटने अपने पिताका शोककरके और उसकी ऊर्ध्व दैहिक क्रियाकरके एक पत्रमें यह लिखवाकर कि हे मूर्ख नर्त्तकीके पुत्र पिताके सिंहासनपर बैठनेकी तेरी कोई योग्यता नहीं है इसमें मेरा अधिकारहै इससे तू उस आसनपर न बैठ यह पत्रदेके समरभटके पास दूतभेजा दूतने जाकर सभामें बैठेहुए समरभटको वहपत्र देदिया समरभटने उस पत्रको पढवाकर कुपितहोके कहा कि जिसे पिताने अयोग्य जानके अपने देशसे निकलवा दिया ऐसे मूर्खको इतना अभिमान करना उचितही है अपनी गुफामें बैठाहुआ शृगालभी सिंहके समान गर्जता और उछलता कूदताहै परन्तु सिंहके आगेजाकर उसका सबअभिमान मिटजाताहै इत्यादि वचन कहके और यहीपत्रमें लिखवाकर भीमभटके पास अपना दूतभेजा उसदूतके पहुंचनेपर भीमभटने उस पत्रको बचवाकर हँसकर दूतसे कहा कि हे दूत तुम उसनर्त्तकीके पुत्रसे मेरे यह वचन कहना कि घोड़ा छीनने के समयमें मैंने तुमको शखदत्तसे बचालियाथा इसलिये कि तुम्हारे मरनेसे पिताको बड़ा खेदहोता अब मैं निस्सन्देह तुमको अपने पिताकेही पास भेजदूंगा तुम तैयार रहना थोड़ेही दिनों में मैं आताहूं यह कहके उसदूतको भेजकर भीमभट अपनी सम्पूर्ण सेनालेकर हाथीपर चढके चला उस

समय उसकी सहायताके लिये आयेहुए सेना सहित राजपुत्रोंसे सम्पूर्ण पृथ्वी व्याप्तहोगई और घोडे तथा हाथियोंके शब्दोंसे मानो पृथ्वी भयभीतहोके रोनेसी लगी उन सबको साथलेकर भीमभट राढा-नगरी के निकट पहुचा और समरभटभी अपनी सेनाको लेके लडने के लिये नगरी के बाहर निकला उनदोनों सेनाओंके परस्पर मिलनेसे महाघोर युद्ध होनेलगा कुपित यमराजकी जिह्वाके समान खड्ग चमकनेलगे वीरोंके देखनेको आईहुई अप्सराओं की दृष्टिके समान तीक्ष्णबाण चलनेलगे चंदोओंके समान धूल आकाशमें छागई सेनाके शब्दरूपी बाजेबजनेलगे कबंध नाचनेलगे और मनुष्योंके मुड तथा कबन्धों सहित रुधिरकी नदी बहनेलगी क्षणभरमें शखदत्त तथा अक्षक्षपण आदिक महाबलवान् वीर मित्रो समेत भीमभटने शत्रुकी सम्पूर्ण सेनानष्ट करदी सब सेनाके नष्टहोजानेपर समरभट रण मे आके अपने आप रथपर चढके युद्ध करनेलगा उसे देखकर हाथीपर चढेहुए भीमभटने उसका धनुष काटके घोडोंको मारकर उसेविरथ करदिया विरथहोके भी समरभटने दौडके भीमभटके हाथीके मस्तक पर ऐसा तोमरमारा जिसके लगनेसे वह हाथी पृथ्वीपर गिरकर मरगया इससे वह दोनों पैदलही होके ढाल तलवारों से परस्पर युद्ध करनेलगे भीमभटने विद्याओं के प्रभावसे अलक्षित होके उसके मारने में समर्थ होकर भी धर्म समझकर उसे न मारके बहुत कालतक युद्ध करके बलात्कार से उसके शिरके बाल पकडके खड्गके द्वारा उसका शिरकाटलिया समरभटके मरजानेपर युद्धको समाप्त करके भीमभट अपने मित्रों समेत राढापुरी में जाके अपनी माताके निकटगया और माताको प्रणाम करके सम्पूर्ण प्रजाओं का सत्कारकर सम्पूर्ण मंत्रियों को प्रसन्न करके अपने पिताके सिंहासनपर बैठा इसप्रकार शत्रुओंकोमार अपने पिताके राज्यको पाके उसने राढदेशका राज्य अपने मित्रशखदत्तको दे दिया और अक्षक्षप-णादि अपने मित्रों को बहुतसे ग्राम तथा अमूल्य रत्नदिये क्रमसे थोडेही दिनो में वह सम्पूर्ण पृथ्वीको जीतकर बहुतसी राजकन्याओंको लाकर चक्रवर्त्तीराजाहोगया और मंत्रियोंपर राज्यका भाररखके ऐसा विषयमें तत्परहुआ कि रात्रिदिन अन्तःपुरही मे बनारहा एकसमय भाग्यवशसे उत्तकनाम मुनि उससे मिलने को राजद्वारपरआये प्रतीहारोंके मुनिकाआगमन निवेदनकरनेपर भी वह मदान्ध होनेके कारण मुनि से मिलने कोभी न आया इससे मुनि ने कुपितहोके उसे यह शापदिया कि हे मदान्ध तू राज्यसे भ्रष्टहोकर वनका हाथीहोजा इस शापको सुनकर राजा भीमभट भयसे मदहीनहोकर मुनि के निकट आके उनके चरणोंपर गिरकर दीनवचन कहनेलगा इससे वह मुनि क्रोधरहित होकर बोले कि हे राजा तुम हाथी तो अवश्यहोगे परन्तु मृगाङ्कदत्त के प्रचण्डशक्तिनाम मंत्री को सर्प के शापसे अन्धाहुआ जब पाओगे तो तुम अपना सब वृत्तान्त उससे कहके शाप से छूटकर शिवजीकी आज्ञा के अनुसार गन्धर्वहोजाओगे और प्रचण्डशक्ति के नेत्रभी अच्छेहोजायगे यहकहके वह उत्तकमुनि चलेगये और भीमभट राज्यसे च्युतहोके हाथीहोगया हे मित्र वह हाथी मैंहीहू मै जानताहू कि वह प्रचण्डशक्ति भी तुमहीहो इससे अब मेरे शापका अन्तआगया यह कहकर वह हाथीका स्वरूप त्यागकर दिव्य रूपधारी गन्धर्वहोगया और प्रचण्डशक्तिके नेत्रखुलगये यह कथा सुनके और उन दोनोंका यह चरित्रदेखके

सिद्धजानके चारोने राजासे आकर कहा कि हे स्वामी वहकोई सिद्धमालूमहोता है क्योंकि जो ऐसे गुप्त स्थानमें अलक्षितहोके चलाआवे वहमनुष्य कैसेहोसक्ताहै यहसुनकर राजाने उनसेकहा कि उसको तुम अभीजाकर यहीं बुलालाओ मै देखू तो वह कौन है और मेरे वचनसे सरलता पूर्वक उससे कहना कि आपने मुझीसे आकर मेरीकन्या क्यों नही मागी इसके छिपानेकी क्या आवश्यकता थी आप सरीके गुणवान् वरकहा मिलसक्तेहै यहकहके राजाके भेजेहुए चारो ने राजपुत्रीकेद्वारपर जाके पुकारकरकेभीम भटसे राजाके कहेहुए सब वचन कहे यहसुनकर भीमभटने यहजानकर कि राजाने मुझेजानलियाहै कहा कि राजासे जाकेकहो कि मै प्रातःकालआपकीसभामे आकर सबतत्त्वकहूंगा यहरात्रिकासमय मेरेआने के योग्य नहींहै यह सुनके उनलोगोने राजासे वैसाही जाकरकहदिया और राजाभी चुपहोरहा प्रातः-काल भीमभट राजपुत्री के स्थानसे अपने मित्रों के पास जाकर उन्हे साथलेके राजाकी सभा मे गया राजाने उसके तेज धैर्य्य तथा सौन्दर्य्य को देखकर योग्य आसनपर मित्रो समेत बैठाया सबके बैठजाने पर शखदत्तने राजासे कहा कि हे राजा राढानगरीके राजा उग्रभटका यह पुत्रहै यह ऐसी विद्याओंको जानता है जिनके प्रभावसे इसे कोई जीत नहींसक्ता इसका भीमभटनाम है आपकी कन्याके निमित्त यह यहा आयाहै यह सुनकर राजाने योग्य जानकर मैं धन्यहू यह कहके विवाहका अत्यन्त उत्सवकरके अनेक रत्नोंसमेत हसावली भीमभटको देदी इसप्रकार हसावलीको पाकर भीमभट हसावली तथा अपने मित्रो समेत राज्यके सुखोका अनुभव करनेलगा कुछदिनोके उपरान्त राजा चन्द्रादित्य अपुत्रहोनेके कारण वृद्धावस्थापाके अपना राज्य भीमभटको देकर तपस्या करनेचलागया उस राज्यको पाके भीमभट अपने मित्रोंको बड़े २ अधिकार देकर धर्मपूर्व्वक प्रजाओं का पालन करनेलगा कुछ कालके उपरान्त दूतोके द्वारा उसने सुना कि उसका पिता उग्रभट प्रयागमे आकर मरगया और वह मरतेसमय अपने छोटे पुत्र समरभटको राढापुरी का राज्य देगया यह समाचार पाकर भीमभटने अपने पिताका शोककरके और उसकी ऊर्ध्व दैहिक क्रियाकरके एक पत्रमे यह लिखवाकर कि हे मूर्ख नर्त्तकीके पुत्र पिताके सिहासनपर बैठनेकी तेरीकोई योग्यता नहीं है इसमें मेरा अधिकारहै इससे तू उस आसनपर न बैठ यह पत्रदेके समरभटके पास दूतभेजादूतने जाकर सभामे बैठेहुए समरभटको वहपत्र देदिया समर भटने उस पत्रको पढवाकर कुपितहोके कहा कि जिसे पिताने अयोग्य जानके अपने देशसे निकलवा दिया ऐसे मूर्खको इतना अभिमान करना उचितही है अपनी गुफामें बैठाहुआ शृगालभी सिहके समान गर्जता और उछलता कूदताहै परन्तु सिंहके आगेजाकर उसका सबअभिमान मिटजाताहै इत्यादि वचन कहके और यहीपत्रमें लिखवाकर भीमभटके पास अपना दूतभेजा उसदूतके पहुंचनेपर भीमभट ने उस पत्रको बचवाकर हॅसकर दूतसे कहा कि हे दूत तुम उसनर्त्तकीके पुत्रसे मेरे यह वचन कहना कि घोडा छीनने के समयमें मैंने तुमको शखदत्तसे बचालियाथा इसलिये कि तुम्हारे मरनेसे पिताको बडा खेदहोता अब मै निस्सन्देह तुमको अपने पिताकेही पास भेजदूगा तुम तैयार रहना थोड़ेही दिनों में मैं आताहू यह कहके उसदूतको भेजकर भीमभट अपनी सम्पूर्ण सेनालेकर हाथीपर चढ़के चला उस

समय उसकी सहायताके लिये आयेहुए सेना सहित राजपुत्रोंसे सम्पूर्ण पृथ्वी व्याप्तहोगई और घोड़े तथा हाथियोंके शब्दोंसे मानो पृथ्वी भयभीतहोके रोनेसी लगी उन सबको साथलेकर भीमभट राढा-नगरी के निकट पहुंचा और समरभटभी अपनी सेनाको लेके लडने के लिये नगरी के बाहर निकला उनदोनों सेनाओंके परस्पर मिलनेसे महाघोर युद्ध होनेलगा कुपित यमराजकी जिह्वाके समान खड्ग चमकनेलगे वीरोंके देखनेको आईहुई अप्सराओं की दृष्टिके समान तीक्ष्णबाण चलनेलगे चंदोओंके समान धूल आकाशमें छागई सेनाके शब्दरूपी बाजेबजनेलगे कबन्ध नाचनेलगे और मनुष्योंके मुंड तथा कबन्धों सहित रुधिरकी नदी बहनेलगी क्षणभरमें शखदत्त तथा अक्षक्षपण आदिक महाबलवान् वीर मित्रों समेत भीमभटने शत्रुकी सम्पूर्ण सेनानष्ट करदी सब सेनाके नष्टहोजानेपर समरभट रण में आके अपने आप रथपर चढके युद्ध करनेलगा उसे देखकर हाथीपर चढेहुए भीमभटने उसका धनुष काटके घोडोंको मारकर उसेविरथ करदिया विरथहोके भी समरभटने दौडके भीमभटके हाथीके मस्तक पर ऐसा तोमरमारा जिसके लगनेसे वह हाथी पृथ्वीपर गिरकर मरगया इससे वह दोनों पैदलही होके ढाल तलवारों से परस्पर युद्ध करनेलगे भीमभटने विद्याओं के प्रभावसे अलक्षित होके उसके मारने में समर्थ होकर भी धर्म समझकर उसे न मारके बहुत कालतक युद्ध करके बलात्कार से उसके शिरके बाल पकडके खड्गके द्वारा उसका शिरकाटलिया समरभटके मरजानेपर युद्धको समाप्त करके भीमभट अपने मित्रों समेत राढापुरी में जाके अपनी माताके निकटगया और माताको प्रणाम करके सम्पूर्ण प्रजाओं का सत्कारकर सम्पूर्ण मंत्रियों को प्रसन्न करकेअपने पिताके सिंहासनपर बैठा इसप्रकार शत्रुओंकोमार अपने पिताके राज्यको पाके उसने लाटदेशका राज्य अपने मित्रशखदत्तको दे दिया और अक्षक्षप-णादि अपने मित्रों को बहुतसे ग्राम तथा अमूल्य रत्नदिये क्रमसे थोडेही दिनों में वह सम्पूर्ण पृथ्वीको जीतकर बहुतसी राजकन्याओंको लाकर चक्रवर्त्तीराजाहोगया और मंत्रियोंपर राज्यका भाररखके ऐसा विषयमें तत्परहुआ कि रात्रिदिन अन्तःपुरही में बनारहा एकसमय भाग्यवशसे उत्तकनाम मुनि उससे मिलने को राजद्वारपरआये प्रतीहारोंके मुनिकाआगमन निवेदनकरनेपर भी वह मदान्ध होनेके कारण मुनि से मिलने कोभी न आया इससे मुनि ने कुपितहोके उसे यह शापदिया कि हे मदान्ध तू राज्यसे भ्रष्टहोकर वनका हाथीहोजा इस शापको सुनकर राजा भीमभट भयसे मदहीनहोकर मुनि के निकट आके उनके चरणोंपर गिरकर दीनवचन कहनेलगा इससे वह मुनि क्रोधरहित होकर बोले कि हे राजा तुम हाथी तो अवश्यहोगे परन्तु मृगाङ्कदत्त के प्रचण्डशक्तिनाम मंत्री को सर्प के शापसे अन्धाहुआ जब पाओगे तो तुम अपना सब वृत्तान्त उससे कहके शाप से छूटकर शिवजीकी आज्ञा के अनुसार गन्धर्वहोजाओगे और प्रचण्डशक्ति के नेत्रभी अच्छेहोजायगे यहकहके वह उत्तकमुनि चलेगये और भीमभट राज्यसे च्युतहोके हाथीहोगया हे मित्र वह हाथी मैंहीहूं मैं जानताहूं कि वह प्रचण्डशक्ति भी तुमहीहो इससे अब मेरे शापका अन्तआगया यह कहकर वह हाथीका स्वरूप त्यागकर दिव्य रूपधारी गन्धर्वहोगया और प्रचण्डशक्तिके नेत्रखुलगये यह कथा सुनके और उन दोनोंका यह चरित्रदेखके

मृगाकदत्त दौडकर प्रचण्डशक्तिके गलेसे लिपटगया और प्रचण्डशक्तिभी अकस्मात् उसे देखके उसके चरणोपर गिरपडा उससमय बहुतकालके दुःखको मानो धोनेकेलिये वहदोनों रो २ कर बहुतआसूबहाने लगे यह देखकर उस गन्धर्व ने इन दोनो को शान्त किया तव मृगाकदत्त ने नम्रहोके उस गन्धर्व से कहा कि जो मुझे यह मित्र प्राप्तहुआहै और जो इसके नेत्र फिर अच्छेहोगयेहै यह आपहीका माहात्म्यहै इससे मै आपको प्रणामकरताहू यह सुनकर गन्धर्व ने कहा कि हे राजा थोडेहीकाल में सम्पूर्ण मन्त्रियो को पाकर तुम शशाकवती को पाओगे और सम्पूर्ण पृथ्वीपर तुम्हारा राज्यहोगा इससे धैर्य धरो मै अव जाताहू जब तुम मेरा स्मरणकरोगे तब मै फिर आऊगा यह कहके वह गन्धर्व आकाशको चलागया और मृगाकदत्त ने भी प्रचण्डशक्ति को पाकर अपने अन्य मन्त्रियो समेत सुखपूर्वक वह दिन उसी वनमें व्यतीतकिया ३२६ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेसप्तमस्तरङ्ग ७ ॥

वेतालपच्चीसी ॥

जितविघ्नजितायस्य पुष्पवृष्टिरिवाम्वरात् ॥
तारावलीकराघातच्च्युतापततिन्टत्यतः १ ॥

इसके उपरान्त उस रात्रि को भी वहीं व्यतीतकरके प्रातःकाल मृगाकदत्त अपने प्रचण्डशक्ति आदिक मन्त्रियोसमेत उस वन से अपने अन्य मन्त्रियों को ढूढताहुआ फिर शशाकवती के निमित्त उज्जयिनी को चला कुछदूरचलकर उसने देखा कि उसका विक्रमकेसरी नाम मंत्री एक भयकर पुरुष पर चढाहुआ आकाश में चलाजाताहै यह देखकर जैसेही उसने उसे अपने अन्य मन्त्रियोको दिखाया वैसेही वह आकाश से नीचेआके उस पुरुपपर से उतरकर उसके पैरोपर गिरा और अपने अन्य सब मित्रों से मिलकर उस पुरुप से वोला कि तुम जाओ जब मै स्मरणकरू तव आना उसके यह वचन सुनके उस पुरुष के चलेजानेपर मृगाकदत्त मन्त्रियों समेत एक वृक्षके नीचे बैठकर विक्रमकेसरी से वोला कि हे मित्र तुम इतने दिनका अपना सब वृत्तान्तकहो यह सुनके उसने कहा कि सर्प के शापसे आपलोगों से वियुक्तहोके बहुत दिनोतक इधर उधर भ्रमणकरते २ मैंने शोचा कि मुझे उज्जयिनीको चलनाचाहिये क्योंकि वहीं वह सबलोग आवेंगे यह निश्चयकरके मै उज्जयिनीनगरी को चला और क्रमसे उज्जयिनी के निकट ब्रह्मस्थलनाम ग्राम मे पहुँचकर बावडी के किनारेपर एक वृक्षकेनीचे बैठाया रहा सर्पके काटनेसे माहान्याकुल एक वृद्धब्राह्मण आकर मुझसे वोला कि हे पुत्र यहा से उठजाओ नहीं तो मेरीसी दशा तुम्हारी भी होगी यहा एक बडा विषधर सर्परहताहै उसीके काटनेमें मै व्याकुल

होकर इस वावडी में डूबकर शरीरत्यागने को उद्यतहूं उसके यह वचन सुनके मैंने विषविद्या से उसका विष दूरकरदिया इससे वह ब्राह्मण प्रसन्नहोके मेरा सब वृत्तान्त पूछके बोला कि तुमने मेरे प्राणोंकी रक्षाकीहै इससे मेरे पिताका बतायाहुआ वेतालका मन्त्र तुम मुझसे सीखलो तुमसरीके वीरोंकोही उसके सिद्धकरनेकी योग्यताहै मुझ सरीके नपुंसकों को उससे क्या होसक्ताहै उसके यह वचन सुनके मैंने कहा कि मृगाङ्कदत्त के विना मैं वेताल सिद्धकरके क्या करूंगा मेरा यह वचन सुनके वह ब्राह्मण हँसकर बोला कि तुमको नहीं मालूम है कि वेताल के सिद्धकरने से सम्पूर्ण मनोरथ सिद्धहोते हैं देखो वेतालहीकी कृपा से राजा त्रिविक्रमसेन को विद्याधरोंका ऐश्वर्य प्राप्तहुआ उसकी कथा में तुमको सुनाताहूं कि गोदावरी के तटपर प्रतिष्ठाननाम एक देशहै वहां पूर्व्वसमय में विक्रमसेनका पुत्र त्रिविक्रमसेन नाम इन्द्रके समान पराक्रमी राजा था उस राजा के निकट सभा में क्षान्तिशील नाम एक भिक्षुक प्रतिदिन एकफललाके राजाको देताथा और राजा अपने समीप बैठे हुए खजानचीको वहफल देदिया करता था इस प्रकार दश वर्ष व्यतीत होजानेपर एक समय फल देकर उस भिक्षुक के चलेजाने पर एक पालतू बन्दर सेवकों के हाथ से छूटकर राजा के पास चलाआया राजा ने वह फल उस बन्दरको देदिया जैसेही बन्दर ने वह फलखाया वैसेही एक अमूल्य रत्न उसमें से निकला उसे देखके राजाने खजानची से पूछा कि भिक्षुक के लायेहुये जो फल मैंने तुमको दिये हैं वह कहां हैं यह सुनकर खजानची ने भयभीत होकर कहा कि हे स्वामी मैंने वहफल झरोखे के द्वारा कोठरीमें डालदिये हैं जो आप आज्ञा दीजिये तो वहां जाकर देखूं यह कहके उसने राजाकी आज्ञापाकर क्षणभरही में खजाना देखके लौटकर राजासे आकर कहा कि हे स्वामी वह फल तो बहुत दिन होने के कारण सडगये परन्तु वहां एक रत्नोंका ढेरलगाहै यह सुनकर राजाने प्रसन्न होके वह सब रत्न खजानचीकोही देदिये और दूसरे दिन फिर आयेहुए उस भिक्षुकसे पूछा कि हे भिक्षुक तुम अपना धन खर्च करके मेरासेवन क्यों करतेहो अब तुम अपना प्रयोजन बताओ नहीं तो मैं तुम्हारे फल नहीं लूंगा यह सुनकर भिक्षुक ने राजाको एकान्तमें लेजाकर कहा कि मैं एकमन्त्र सिद्ध करना जानताहूं उसमें वीर सहायक की आवश्यक्ताहै मैं चाहताहूं कि आपही उसमें सहायताकरो यह सुनकर राजाने कहा कि अच्छा मैं तुम्हारी सहायताकरूंगा यह सुनकर उस भिक्षुकने प्रसन्नहोके कहा कि अच्छा तो आनेवाली कृष्ण चतुर्दशी के दिन तुम रात्रिके समय श्मशानमें बरगदके वृक्षके नीचे मेरे पास आना राजाने कहा कि बहुतअच्छा यह सुनकर वह क्षान्तिशील प्रसन्नहोके अपने स्थानको चलागया इसके उपरान्त कृष्ण चतुर्दशी के दिन भिक्षुकके वचन स्मरण करके राजा त्रिविक्रमसेन सायंकाल के समय नीले वस्त्र पहनके खड्ग हाथमें लेकर श्मशानमें गया वहां घोर अन्धकारके कारण अपना हाथभी फैलानेसे नहीं मालूम होताथा कहीं २ चिताकी भयंकर अग्नि दिखाई देतीथी मनुष्योंके अनेक कपाल तथा पांजर पैरों में लगतेथे भूत तथा वेताल प्रसन्नता पूर्वक इधरउधर घूमरहेथे और शृगाल भयंकरशब्द कररहे थे ऐसे भयंकर उसश्मशानमें बरगदके नीचे भिक्षुक के पास पहुँचकर राजाने कहा कि हे भिक्षुक मैं आगया

मृगाङ्कदत्त दौड़कर प्रचण्डशक्तिके गलेसे लिपटगया और प्रचण्डशक्तिभी अकस्मात् उसे देखके उसके चरणोंपर गिरिपडा उससमय बहुतकालके दुःखको मानों धोनेकेलिये वहदोनों रो २ कर बहुतआंसूबहाने लगे यह देखकर उस गन्धर्व ने इन दोनो को शान्त किया तब मृगाङ्कदत्त ने नम्रहोके उस गन्धर्व से कहा कि जो मुझे यह मित्र प्राप्तहुआहै और जो इसके नेत्र फिर अच्छेहोगयेहैं यह आपहीका माहात्म्यहै इससे मैं आपको प्रणामकरताहूं यह सुनकर गन्धर्व ने कहा कि हे राजा थोडेहीकाल में सम्पूर्ण मन्त्रियों को पाकर तुम शशाङ्कवती को पाओगे और सम्पूर्ण पृथ्वीपर तुम्हारा राज्यहोगा इससे धैर्य धरो मैं अब जाताहूं जब तुम मेरा स्मरणकरोगे तब मैं फिर आऊंगा यह कहके वह गन्धर्व आकाशको चलागया और मृगाङ्कदत्त ने भी प्रचण्डशक्ति को पाकर अपने अन्य मन्त्रियो समेत सुखपूर्वक वह दिन उसी वनमें व्यतीतकिया ३२६ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेसप्तमस्तरङ्गः ७ ॥

वेतालपच्चीसी ॥

जितविघ्नजितायस्य पुष्पवृष्टिरिवाम्बरात् ॥
तारावलीकराघातच्च्युतापततिनृत्यतः १ ॥

इसके उपरान्त उस रात्रि को भी वहीं व्यतीतकरके प्रातःकाल मृगाङ्कदत्त अपने प्रचण्डशक्ति आदिक मन्त्रियोंसमेत उस वन से अपने अन्य मन्त्रियो को ढूंढताहुआ फिर शशाङ्कवती के निमित्त उज्जयिनी को चला कुछदूरचलकर उसने देखा कि उसका विक्रमकेसरी नाम मंत्री एक भयंकर पुरुष पर चढाहुआ आकाश मे चलाजाताहै यह देखकर जैसेही उसने उसे अपने अन्य मन्त्रियोको दिखाया वैसेही वह आकाश से नीचेआके उस पुरुषपर से उतरकर उसके पैरोंपर गिरा और अपने अन्य सब मित्रों से मिलकर उस पुरुष से बोला कि तुम जाओ जब मैं स्मरणकरूं तब आना उसके यह वचन सुनके उस पुरुष के चलेजानेपर मृगाङ्कदत्त मन्त्रियों समेत एक वृक्षके नीचे बैठकर विक्रमकेसरी से बोला कि हे मित्र तुम इतने दिनका अपना सब वृत्तान्तकहो यह सुनके उसने कहा कि सर्प के शापसे आपलोगों से वियुक्तहोके बहुत दिनोंतक इधर उधर भ्रमणकरते २ मैंने सोचा कि मुझे उज्जयिनीको चलनाचाहिये क्योंकि वहीं वह सबलोग आवेंगे यह निश्चयकरके मैं उज्जयिनीनगरी को चला और क्रमसे उज्जयिनी के निकट ब्रह्मस्थलनाम ग्राम मे पहुंचकर बावडी के किनारेपर एक वृक्षकेनीचे बैठगया तहां सर्पके काटनेसे महाव्याकुल एक वृद्धब्राह्मण आकर मुझसे बोला कि हे पुत्र यहां से उठजाओ नहीं तो मेरीसी दशा तुम्हारी भी होगी यहां एक बडा विषधर सर्परहताहै उसीके काटनेसे मैं व्याकुल

क्योंमुझे झूठमूठ बहलातेहो यह सुनकर मंत्रीके पुत्रनेकहा कि क्या उसने जो २ सज्ञाकीथीं वह तुमने नहीं देखीं उसनें कानमें कमलरखकर यहसूचित कियाथा किमैं कर्णोत्पल राजाके राज्यमें रहतीहू और जो दांत उसने मलेथे उसका यह अभिप्रायथा कि मैं दन्तघाटककी पुत्रीहूं और उसने जो शिरपरकमल रक्खाथा उसका यह प्रयोजनथा कि पद्मावती मेरा नामहै और हृदयमें हाथ रखकर उसने यह प्रकट किया कि तुम्हारे आधीन मेरे प्राणहैं, कलतो आपने सुनाभीहै कि कलिंगदेश में राजाकर्णोत्पल का महामान्य जो दन्तघाटक मंत्री है उसके प्राणों से भी प्यारी अत्यन्त रूपवती पद्मावतीनाम कन्या है इसीसे मैंने उसकी सब सज्ञा जानली हैं मंत्री के पुत्र के यह वचन सुनकर राजपुत्र बहुत प्रसन्न होके परिकर समेत शिकार खेलने के बहाने से उसी दिशा को चला कुछदूर जाके मार्गमेंही सेनाको छोड़कर मंत्री के पुत्रके साथ कलिंगदेश को गया वहां राजाकर्णोत्पल के नगर में पहुंचकर दन्तघाटक के स्थान के समीप एक वृद्ध स्त्री के यहां जाकर टिका और घोड़ों को घास खिला पानी पिलाकर सावधान होकरबैठा उससमय मंत्री के पुत्रने उस वृद्धासे पूछा कि हे अम्ब तुम यहां राजाके प्रिय दन्तघाटक को जानतीहो यहसुनकर वह वृद्धा बोली कि हे पुत्र जानती क्यों नहींहू मैं तो उसकी धात्री (धाय) हूं आज कल उसने मुझे अत्यन्त वृद्ध जानके अपनी कन्या पद्मावती के पास रखदियाहै परन्तु मैं उसके पास नित्य नहीं जाती क्योंकि मेरे वस्त्र ऐसे फटेहुएहैं कि जिनको पहरकर मैं बाहर नहीं निकलसक्ती मेरा पुत्र ऐसा जुआरी है कि मैं जो नवीन वस्त्र निकालती हूं उसे वह उठालेजाताहै यह सुनकर मन्त्री के पुत्रने अपना दुपट्टा देकर उससे कहा कि तुम मेरी माता के समान हो जो मैं तुमसे कोई कामकहूं वह मेरा करदो उसनेकहा कि करदूंगी तब मन्त्री के पुत्रनेकहा कि तुम पद्मावती के पास जाकर कहदो कि जिस राजपुत्रको तुमने तालावपर देखाथा वह यहां आयाहै उसी ने मुझको तुम्हारे पास भेजाहै यह सुनकर वह वृद्धा पद्मावती के पासजाके क्षणभरही में लौटके उससे बोली कि मैंने एकान्तमें उससे जाकर तुम्हारे आगमनका वृत्तान्त कहा यह सुनके उसने अपने दोनों हाथों में कपूर लगाकर मेरे दोनों गालों में दो थप्पड़मारे देखो अभीतक उसका चिह्न बनाहै वृद्धाके यह वचन सुनकर मन्त्री के पुत्रने एकान्तमें राजपुत्रसे कहा कि कुछ सन्देह मतकरो उसने जो इसके गालों में थप्पड़मारके दश उंगलियों के चिह्नबनाये हैं उसका यह अभिप्रायहै कि शुक्लपक्षकी जो दश रात्रि बाकी हैं उनमें अभी ठहरजाओ यह समागमके योग्यनहीं है यह कहकर मन्त्री के पुत्रने एक आभूषण उस वृद्धाकेही हाथों बिकवाके बहुत उत्तम भोजन बनवाकर राजपुत्रसमेत आपखाये और वृद्धाकोभी खिलाये इसप्रकार दश दिन व्यतीतकरके उसने उस वृद्धाको फिर पद्मावती के पास भेजा, भोजन के लोभसे वह वृद्धा फिरभी उसके पास जाके लौटकर बोली कि आज मैं उसके पास जाकर चुपचापखड़ीरही परन्तु उसने यह कहकर कि तू ने राजपुत्रके आनेका वृत्तान्त मुझसे क्यों कहाथा तीन उंगलियों में महावर लगाकर मेरी छाती में थप्पड़मारा इससे मैं खिन्नहोकर आपके पास चलीआई हूं यह सुनकर मन्त्री के पुत्रने एकान्तमें राजपुत्रसे कहा कि महावर लगीहुई तीन उंगलियों के चिह्नका यह

अब तुमकहो मैं क्याकरू यहसुनके भिक्षुक राजाकोदेखके प्रसन्नहोकरबोला कि हे राजा इससमय आपने मेरे ऊपर बडी कृपाकी यहासे दक्षिणदिशामें कुछ दूरपर एक सीसमका वृक्षहै उसपर एक मराहुआ पुरुष रस्सीमे बँधा हुआ लटकरहाहै उसे तुम खोलके मेरे पास लेआओ यह सुनकर सत्यसिन्धु राजा त्रिविक्रमसेन बहुतअच्छा कहकर चिताओंके उजयाले से मार्गको देखताहुआ उस सीसम के वृक्षके नीचे पहुँचा उसपर रस्सियोमें बँधाहुआ एक भूतकासा मुर्दा लटकरहाथा उसे देखके राजाने उस वृक्ष पर चढके रस्सी काटकर उस मुर्देको पृथ्वीपर गिरादिया गिरने से उसने बहुत चोट लगनेके समान अकस्मात् शब्द किया इससे राजाने यहसन्देह करके कि यह जीताहोगा कृपापूर्वक वृक्षसे उतरकर जैसे ही उसका स्पर्श किया वैसेही वह उच्चस्वरसे हँसनेलगा तब राजाने उसमे वेतालका आवेश जान के कहा कि क्यों हँसतेहो चलो चले यह कहतेही वह फिर उसी वृक्षपर जालटका यह देखकर राजा फिर उसे वृक्षसे उतारकर कन्धेपर रखकेलेचला ठीकहै (वज्रादपिहिवीराणा चित्तरत्नमखण्डितम्) बीरोंके चित्तरूपी रतवज्रसे भी अधिकपुष्ट होतेहै मार्गमें उसवेतालसे युक्त मुर्देने राजासे कहा कि हेराजा मार्गमें आपका चित्त बहलानेके निमित्त मैं एककथा कहताहू उसे आप सुनिये ५८ अनेक विद्वान् पुण्यात्मा जनोंसे सेवित काशीनाम् नगरीमें अपने प्रतापसे शत्रुओंका नाशकरनेवाला प्रतापमुकुट नाम राजा पूर्व्व समयमे था उसके वज्रमुकुटनाम अत्यन्त रूपवान् वीरपुत्रथा उसराजपुत्रके बुद्धिशरीर नाम महा बुद्धिमान्मात्रिपुत्र परममित्रथा एकसमय उस मन्त्रीके साथ राजपुत्र शिकार खेलने के लिये जगलको गया वहा वीरलक्ष्मीके चामरोके समान सिंहोंके मस्तकोंको काटताहुआ क्रमसे एक महाबनमे प्राप्तहुआ उसवनमें कामदेवके वन्दीके समान कोकिला मधुरशब्द कररहीथीं सुगन्धितपुष्पोमे लगकर शीतल मदसुगंध पवन चलरहीथी ऐसे मनोहर उस वनको देखके मन्त्री समेत वह राजपुत्र एककमलों से व्याप्त निर्मल तडागपर पहुँचा उससमय उसी तडागपर एक दिव्य स्वरूपवती कन्या अपने परिकर समेत स्नानकरनेको आई वह कन्या अपनी दृष्टिसे मानो तडागमें नवीन कमलों की पक्ति लगारही थी और अपने सौन्दर्य्य रससे उसतडागके जलको मानो बढारहीथी ऐसी सुन्दर उसकन्या को देखतेही राजपुत्रका चित्त उसपर आशक्त होगया और वह कन्याभी उसे देखके ऐसी उसके आधीन हुई कि स्त्रियोंके मुख्य आभूषण लज्जाकाभी उसे ध्यान न रहा इससे उसने राजपुत्रको दिखाकर यहसंज्ञा (इशारह) किया कि पहले एक कमललेके कानमें रक्खा फिर बहुतकाल तक अपने दातमले तदनन्तर एककमललेके अपने शिरपर रक्खा फिर बहुत प्रेमपूर्व्वक हृदयमे हाथ रक्खा यह संज्ञा करके वह परिकर समेत अपनेस्थानको चलीगई और वहा पलँगपर लेटके अपनीसंज्ञाके कारण राजपुत्रके आने का विश्वासकरके उसीका ध्यान करनेलगी किन्तु राजपुत्रने उसकी वह संज्ञानहीं जानी परन्तु परम बुद्धिमान् मन्त्रिपुत्र ने जानली इसमे जब अपनी नगरीमें जाके वह राजपुत्र उसकन्याका स्मरणकरके बहुत व्याकुल हुआ तब मन्त्रिपुत्रने उससे कहा कि घबराओ मत वह तुमको मिलजायगी यह सुनकर राजपुत्रने कहा कि जिसका नाम ग्राम तथा वर्ण कुछभी नहीं मालूमहै वह कैसे प्राप्तहोसकतीहै तुम

क्योंमुझे झूठमूठ बहलातेहो यह सुनकर मंत्रीके पुत्रनेकहा कि क्या उसने जो २ सञ्ज्ञाकीथीं यह तुमने नहीं देखीं उसने कानमें कमलरखकर यह सूचित कियाथा किमैं कर्णोत्पल राजाके राज्यमें रहतीहूं और जो दांत उसने मलेथे उसका यह अभिप्रायथा कि मैं दन्तघाटककी पुत्रीहूं और उसने जो शिरपरकमलरखाथा उसका यह प्रयोजनथा कि पद्मावती मेरा नामहै और हृदयमें हाथ रखकर उसने यह प्रकट किया कि तुम्हारे आधीन मेरे प्राणहैं, कलतो आपने सुनाभीहै कि कलिंगदेश मे राजाकर्णोत्पल का महामान्य जो दन्तघाटक मंत्री है उसके प्राणों से भी प्यारी अत्यन्त रूपवती पद्मावतीनाम कन्या है इसीसे मैंने उसकी सब सञ्ज्ञा जानली है मंत्री के पुत्र के यह वचन सुनकर राजपुत्र बहुत प्रसन्न होके परिकर समेत शिकार खेलने के बहाने से उसी दिशा को चला कुछदूर जाके मार्गमेंही सेनाको छोडकर मंत्री के पुत्रके साथ कलिंगदेश को गया वहां राजाकर्णोत्पल के नगर मे पहुचकर दन्तघाटक के स्थान के समीप एक वृद्ध स्त्री के यहां जाकर टिका और घोडों को घास खिला पानी पिलाकर सावधान होकरबैठा उससमय मंत्री के पुत्रने उस वृद्धासे पूछा कि हे अम्ब तुम यहां राजाके प्रिय दन्तघाटक को जानतीहो यहसुनकर वह वृद्धा बोली कि हे पुत्र जानती क्यो नहींहूं मैं तो उसकी धात्री (धाय) हूं आज कल उसने मुझे अत्यन्त वृद्ध जानके अपनी कन्या पद्मावती के पास रखदियाहै परन्तु मैं उसके पास नित्य नहीं जाती क्योंकि मेरे वस्त्र ऐसे फटेहुएहैं कि जिनको पहरकर मैं बाहर नहीं निकलसकी मेरा पुत्र ऐसा जुवारी है कि मैं जो नवीन वस्त्र निकालती हूं उसे वह उठालेजाताहै यह सुनकर मन्त्री के पुत्रने अपना दुपट्टा देकर उससे कहा कि तुम मेरी माता के समान हो जो मैं तुमसे कोई कामकहूं वह मेरा करदो उसनेकहा कि करदूंगी तब मन्त्री के पुत्रनेकहा कि तुम पद्मावती के पास जाकर कहदो कि जिस राजपुत्रको तुमने तालावपर देखाथा वह यहां आयाहै उसी ने मुझको तुम्हारे पास भेजाहै यह सुनकर वह वृद्धा पद्मावती के पासजाके क्षणभरही मे लौटके उससे बोली कि मैंने एकान्तमें उससे जाकर तुम्हारे आगमनका वृत्तान्त कहा यह सुनके उसने अपने दोनो हाथो मे कपूर लगाकर मेरे दोनों गालों में दो थप्पडमारे देखो अभीतक उसका चिह्न बनाहै वृद्धाके यह वचन सुनकर मन्त्री के पुत्रने एकान्तमें राजपुत्रसे कहा कि कुछ सन्देह मतकरो उसने जो इसके गालों मे थप्पडमारके दश उँगलियों के चिह्नबनाये हैं उसका यह अभिप्रायहै कि शुक्लपक्षकी जो दश रात्रि बाकी हैं उनमें अभी ठहरजाओ यह संगमके योग्यनहीं है यह कहकर मन्त्री के पुत्रने एक आभूषण उस वृद्धासेही हाथों बिकवाके बहुत उत्तम भोजन बनवाकर राजपुत्रसमेत आपखाये और वृद्धाकोभी खिलाये इसप्रकार दश दिन व्यतीतकरके उसने उस वृद्धाको फिर पद्मावती के पास भेजा,भोजन के लोभसे वह वृद्धा फिरभी उसके पास जाके लौटकर बोली कि आज मैं उसके पास जाकर चुपचापही गईरही परन्तु उसने यह कहकर कि तूने राजपुत्रके आनेका वृत्तान्त मुझसे क्यों कहाथा तीन उँगलियों मे महावर लगाकर मेरी छाती मे थप्पडमारा इससे मैं खिन्नहोकर आपके पास चलीआई हूं यह सुनकर मन्त्री के पुत्रने एकान्तमें राजपुत्रसे कहा कि महावर लगीहुई तीन उँगलियों के चिह्नका यह

अभिप्रायहै कि मैं रजस्वला होगईहूं अभी तीन रात्रि ठहरजाओ यह कहके तीन दिनके उपरान्त उस ने उसवृद्धाको फिर पद्मावती के पास भेजा उस दिन पद्मावती ने उस वृद्धाको भोजन कराके दिनभर अपने यहा रक्खा और सायकालके समय जब वह चलनेको तैयारहुई वैसेही बाहर यह कोलाहल सुनाई दिया कि गजशालासे छूटाहुआ मतवालाहाथी लोगोंको मारताहुआ इधरआताहै तब पद्मावती ने उस वृद्धासे कहा कि तुमको द्वारके मार्ग से जाना योग्यनहीं है क्योंकि वहा हाथी के आनेका सन्देहहै इससे मै तुमको पटरेपर बैठाकर रस्सी बांधके झरोखे में से उपवनमे लटकाये देतीहू वहा वृक्षपर चढके ब्यालदीवारीको लाघकर दूसरे वृक्षसे उतरकर अपने घरको चलीजाना यह कहके उसने अपनी चेरियों के द्वारा उसे उपवनमे लटकादिया और उसने उसीमाग से अपने घरमे आकर राजपुत्र तथा मन्त्री के पुत्रसे वह सब वृत्तान्त कहदिया यह सुनकर मन्त्री के पुत्रने राजपुत्रसे एकान्त मे कहा कि तुम्हारा मनोरथ सिद्धहोगया उसने युक्तिपूर्व्वक अपने पास आनेका मार्ग तुम्हें दिखायाहै इससे तुम इसी मार्ग से सायकाल के समय अपनी प्रियाके पास जाओ उसके यह वचन सुनके राजपुत्र रात्रि के समय मन्त्री के पुत्रको साथलेके वृद्धाके बतायेहुए मार्ग से उपवनमे गया वहा पहलेही से चेरियों ने झरोखे में से एक पटरा नीचे लटकारक्खा था उसपर जैसेही राजपुत्र बैठा वैसेही चेरियो ने उसे खैचकर भीतर करलिया और मन्त्रीका पुत्र अपने स्थानको चलाआया वहा राजपुत्रको देखतेही पद्मावती ने उठकर बहुत आदरकरके उसे अपने पलँगपर बैठाया तब राजपुत्र उसके साथ गान्धर्व विवाहकरके कुछ दिन सुखपूर्व्वक उसके यहा रहा एकदिन उसने रात्रिके समय पद्मावती से कहा कि मेरा मित्र मन्त्रीका पुत्रभी मेरे साथ आयाहै वह उसी वृद्धाके यहा ठहराहै मै उसके पास होआऊ तब फिर लौट कर तुम्हारे पास आजाऊगा यह सुनकर उस चालाक पद्मावती ने कहा कि हे आर्य्यपुत्र मैंने जो सञ्ज्ञा कीथी वह तुम ने जान लींथीं या तुम्हारे मित्र नेजानीथीं उसनेकहा कि मैंने नहींजानी थीं मेरे मित्र नेही जानीथीं यह सुनकर पद्मावती ने कहा कि तुमने यह बात बहुत अनुचितकी जो पहलेही से उस के आने का वृत्तान्त मुझसे नहीं कहा तुम्हारा जो मित्र है वह मेरे भाई के समान है उसका पहलेही ताम्बूलादिसे सत्कार करना मुझे उचितहै उसके यह वचन सुनके राजपुत्रने उससे आज्ञालेकर मन्त्री के पुत्रके पास आकर सब वृत्तान्त कहा मन्त्री के पुत्रने यह सुनके कि इसने मेराभी वहा नाम लियाहै कहा कि यह बात आपने उचित नहींकी इत्यादि वार्त्तालाप करते २ वह रात्रि व्यतीतहोगई प्रातः काल पद्मावतीकी सखी पकान्न तथा ताबूललेकर आई और मन्त्री के पुत्रको देकर युक्तिपूर्व्वक राजपुत्र से उस भोजनके खाने का निषेध करने के लिये बोली कि आप वहीं चलके भोजन कीजियेगा। क्योंकि पद्मावती आपकी प्रतीक्षा कररही है यह कहकर उसके चलेजानेपर मन्त्री के पुत्रने राजपुत्र से कहा कि आइये मै आपको एक आश्चर्य्य दिखाता हू यह कहकर उसने एक कुत्ते को वह पकान्न खिलाया उसेखातेही कुत्तामरगया यहदेखकर राजपुत्रने उससेपूछा कि यह क्या बातहै उसनेकहा कि पद्मावतीने मुझेछलीजानकर विषदेकर इसलिये मारनाचाहाथा कि जबतक यहरहेगा तबतक राजपुत्र

मेरे वशीभूत न होगा और मुझे छोड़कर इसीकेसाथ अपनी नगरीको चलाजायगा इससे अब तुम मेरी बताईहुई युक्तिसे इसे यहांसे लेकर अपनी नगरी को चलेचलो यह सुनके राजपुत्रने उसकी बड़ी प्रशंसाकी कि तुमबड़ेही बुद्धिमान् हो इतने में बाहर लोगोंका दुःख युक्त यह कोलाहल सुनाई दिया कि हाय २ राजाका बालकपुत्र मरगया उस शब्दको सुनकर मन्त्रीकेपुत्रने प्रसन्नहोके राजपुत्रसेकहा कि आज तुम रात्रिकेसमय पद्मावती के यहांजाकर पद्मावती को इतनी मद्यपिलाओ कि वह अत्यन्त बेहोशहोजाय तब उसकी कमरमें तपाहुआ त्रिशूल दागके उसकेसम्पूर्ण आभूषण लेके मेरेपास चलेआओ तदनन्तर जो उचितहोगा सो मैं करूंगा यह कहके मंत्रीके पुत्रने रात्रिकेसमय उसे त्रिशूलदे के पद्मावतीकेपास भेजा वहभी त्रिशूललेके उसके वचन स्वीकार करके पद्मावतीकेपास गया ठीकहै (अविचार्य्यप्रभूणांहिशुचेर्वाक्यसुमन्त्रिणः) स्वामीको शुद्ध मन्त्रीके वाक्यपर विचार न करना चाहिये वहां जाके राजपुत्रने पद्मावतीको बहुतसी मद्यसे बेहोश करके उसकी कमरमें त्रिशूल दागके उसके सबआभूषणलेके वहांसे आकर मन्त्रीके पुत्रको लाके सब आभूषण देदिये उन आभूषणोंको पाके मन्त्रीकेपुत्रने अपने मनोरथको सिद्धजानके श्मशानमें,जाकर अपना तपस्वीकासा वेषबनालिया और राजपुत्रको अपना शिष्य बनाकर उससेकहा कि इन आभूषणोंमें से तुम इस मोतीकी मालाको लेके बाजार में वेचनेकोजाओ और वहां इसका ऐसाभारी मोलकहो जिससे कोई भी इसको मोलनलेसके और सब लोग इसे देखलें और जो पुरकेरक्षक तुमको पकड़ें तो उनसेकहो कि हमारे गुरूने यह हमको बेचने के लिये दीहै उसके यह वचन सुनकर राजपुत्र उसमोतीकी मालाको लेके बेचने के लिये बाजारमें घूमने लगा मालाको देखके पुरकेरक्षक उसे पकड़कर कोतवालकेपास लेगये कोतवालने उसका तपस्वीकासा वेष देखकर सरलता पूर्वक पूछा कि हे तपस्वी यह मोतियोंकीमाला तुम कहांसेलाये हो क्या तुम्हींने रात्रिकेसमय दन्तघाटककी कन्याके आभूषण चुरायेहैं यह सुनकर राजपुत्रनेकहा कि मैं नहीं जानताहूं मेरे गुरूने मुझे बेचनेको यहदीहै उन्हींसे चलकर पूछो यह सुनकर कोतवालने मन्त्रीके पुत्रकेपास जाके प्रणामकरके पूंछा कि हे भगवन् यह मोतियोंकीमाला आपके शिष्यकेपास कहांसेआई यह सुनकर उसने एकान्तमें कोतवालसेकहा कि मैं तो तपस्वीहूं सदैव वनोंमें घूमाही करताहूं भाग्य वशसे जो इस श्मशानमें मैं आकर टिका तो रात्रिकेसमय बहुतसी योगिनी यहां आईं उनमें से एकयोगिनी राजपुत्रको लाके उसका कलेजा भैरोंजीकी भेटकरके रुधिरपीके मतवाली होकर मेरे हाथसे माला छीनने लगी इससे मैंने कोप युक्तहोकर उसकी कमरमें एक त्रिशूल दागदिया और उसीके गलेसे यहमाला उतारली अब मैं इसमालाको बेचनाचाहताहूं क्योंकि इसमालासे मेरा कोई प्रयोजन नहीं है उसके यह वचन सुनके कोतवालने राजासे यहसब वृत्तान्तकहा और राजा उसकानिश्चय करनेकेलिये वृद्धास्त्रियों के द्वारा पद्मावती की कमरका त्रिशूल दिखवाकर उस वृत्तान्तको सत्यजानके यह जानकर कि इसीने मेरे पुत्रको माराहै आपही उस तपस्वी रूपधारी मन्त्रीके पुत्रकेपासगया और वहां उसने उससे पूछा कि इस पद्मावतीको क्यादंडदेना योग्यहै उसनेकहा कि इसे पुरसे निकलवा देना चाहिये उसके यहवचन

अभिप्रायहै कि मैं रजस्वला होगईहूं अभी तीन रात्रि ठहरजाओ यह कहके तीन दिनके उपरान्त उस ने उसवृद्धाको फिर पद्मावती के पास भेजा उस दिन पद्मावती ने उस वृद्धाको भोजन कराके दिनभर अपने यहा रक्खा और सायकालके समय जब वह चलनेको तैयारहुई वैसेही बाहर यह कोलाहल सुनाई दिया कि गजशालासे छूटाहुआ मतवालाहाथी लोगोको मारताहुआ इधरआताहै तब पद्मावती ने उस वृद्धासे कहा कि तुमको द्वारके मार्ग से जाना योग्यनहीं है क्योंकि वहा हाथी के आनेका सदेहहै इससे म तुमको पटरेपर बैठाकर रस्सी बांधके झरोखे मे से उपवनमें लटकाये देतीहू वहा वृक्षपर चढके छालदीवारीको लाघकर दूसरे वृक्षसे उतरकर अपने घरको चलीजाना यह कहके उसने अपनी चेरियो के द्वारा उसे उपबनमे लटकवादिया और उसने उसीमार्ग से अपने घरमें आकर राजपुत्र तथा मन्त्री के पुत्रसे वह सब वृत्तान्त कहदिया यह सुनकर मन्त्री के पुत्रने राजपुत्रसे एकान्त मे कहा कि तुम्हारा मनोरथ सिद्धहोगया उसने युक्तिपूर्वक अपने पास आनेका मार्ग तुम्हे दिखायाहै इससे तुम इसी मार्ग से सायकाल के समय अपनी प्रियाके पास जाओ उसके यह वचन सुनके राजपुत्र रात्रि के समय मन्त्री के पुत्रको साथलेके वृद्धाके बतायेहुए मार्ग से उपवनमे गया वहा पहलेही से चेरियों ने झरोखे में से एक पटरा नीचे लटकारक्खा था उसपर जैसेही राजपुत्र बैठा वैसेही चेरियो ने उसे खैंचकर भीतर करलिया और मन्त्रीका पुत्र अपने स्थानको चलाआया वहा राजपुत्रको देखतेही पद्मावती ने उठकर बहुत आदरकरके उसे अपने पलँगपर बैठाया तब राजपुत्र उसके साथ गान्धर्व विवाहकरके कुछ दिन सुखपूर्वक उसके यहा रहा एकदिन उसने रात्रिके समय पद्मावती से कहा कि मेरा मित्र मन्त्रीका पुत्रभी मेरे साथ आयाहै वह उसी वृद्धाके यहा ठहराहै मैं उसके पास होआऊ तब फिर लौट कर तुम्हारे पास आजाऊगा यह सुनकर उस चालाक पद्मावती ने कहा कि हे आर्य्यपुत्र मैंने जो सज्ञा कीथी वह तुम ने जान लींथीं या तुम्हारे मित्र नेजानीथीं उसनेकहा कि मैंने नहींजानी थीं मेरे मित्र नेही जानीथीं यह सुनकर पद्मावती ने कहा कि तुमने यह बात बहुत अनुचितकी जो पहलेही से उस के आने का वृत्तान्त मुझसे नहीं कहा तुम्हारा जो मित्र है वह मेरे भाई के समान है उसका पहलेही ताम्बूलादिसे सत्कार करना मुझे उचितहै उसके यह वचन सुनके राजपुत्रने उससे आज्ञालेकर मन्त्री के पुत्रके पास आकर सब वृत्तान्त कहा मन्त्री के पुत्रने यह सुनके कि इसने मेराभी वहा नाम लियाहै कहा कि यह बात आपने उचित नहींकी इत्यादि वार्त्तालाप करते २ वह रात्रि व्यतीतहोगई प्रातः-काल पद्मावतीकी सखी पकान्न तथा ताम्बूललेकर आई और मन्त्री के पुत्रको देकर युक्तिपूर्वक राज-पुत्र से उस भोजनके खाने का निषेध करने के लिये बोली कि आप वहीं चलके भोजन कीजियेगा क्योंकि पद्मावती आपकी प्रतीक्षा कररही है यह कहकर उसके चलेजानेपर मन्त्री के पुत्रने राजपुत्र से कहा कि आइये मे आपको एक आश्चर्य दिखाता हू यह कहकर उसने एक कुत्ते को वह पकान्न खिलाया उसेखानेही कुत्तामरगया यहदेखकर राजपुत्रने उससेपूछा कि यह क्या बातहै उसनेकहा कि पद्मावतीने मुझेछलीजानकर विषदेकर इसलिये मारनाचाहाथा कि जबतक यहरहेगा तबतक राजपुत्र

स्मात् वह कन्या ज्वरसे पीडितहोके मृत्युको प्राप्तहुई तब उन तीनोंने उसे लेजाकर श्मशान भूमिमें अग्निसे भस्मकरदिया फिर उनमें से एक तो वहीं कुटी बनाके उसकी भस्मकी शय्या बनाकर विना याचनाकिये मिलेहुए अन्नको खाकर रहनेलगा दूसरा उसकी हड्डी गंगाजीमें फेंकने लेगया और तीसरा तपस्वी होकर देशान्तरों में भ्रमण करनेलगा वह भ्रमण करते २ वक्रोलकनाम ग्राममें पहुचकर किसी ब्राह्मणका अतिथिहुआ और ज्योंहीं भोजन करनेलगा वैसेही एक बालक रोनेलगा जब बहुत पुचकारनेपर भी वह बालक न चुपहुआ तो ब्राह्मणकी स्त्रीने उसे बलतीहुई अग्निमें छोड़ दिया इससे वह बालक भस्महोगया यह देखकर उस तपस्वीने कहा कि यह ब्राह्मणका घरनहीं है यह तो किसी ब्रह्मराक्षसका गृहहै इससे मैं मूर्तिमान पापरूप इस अन्नको नहीं खाऊंगा उसके यह वचन सुनकर उस ब्राह्मणने कहा कि तुम मेरी शक्ति देखो मैं अभी इस बालकको जिलाये देताहूं यह कहकरके उसने मन्त्रोंकी पुस्तक लेकर मन्त्रपढ़कर अग्नि में धूल डालदीनी इससे जीताहुआ बालक उस अग्निमें से निकल आया यह देखके उस तपस्वीने प्रसन्न होकर भोजन किया और वह ब्राह्मणभी खूंटीपर पुस्तक रखके भोजन करके अपनी स्त्रीसमेत सोरहा उसे सोया देखकर वह तपस्वी अपनी प्रियाके जिलाने के निमित्त खूंटीपरसे उसपुस्तकको उतारके वहांसे चलके उसी श्मशानमें आया जहां उसकी प्रिया भस्म हुईथी उससमय जो उसकी हड्डीफेंकनेगयाथा वहभी आगया तब उसतपस्वीने कुटीमेंरहनेवाले ब्राह्मण से कहा कि तुम भस्मको छोड़दो मैं मन्त्रके प्रभावसे अपनी प्रिया इसमेंसे जिलाऊंगा यहसुनकर वह ब्राह्मण हटगया तब उसने मन्त्रपढ़के जैसेही उसभस्ममें धूलडाली वैसेही मंदारवती ज्योंकीत्यों जीकर खड़ीहोगई इसको देखकर वहतीनों कामातुरहोके उसके लेनेकेलिये परस्पर कलहकरनेलगे एकनेकहा कि यह मेरीही स्त्री है क्योंकि मैंनहीं इसे मन्त्रके बलसे जिलायाहै दूसरे ने कहा कि मैं तीर्थपर गयाथा उसीके प्रभावसे यह जी उठीहै इससे यह मेरी स्त्रीहै तीसरे ने कहा कि मैंनेही इसकी भस्मकी रक्षाकरके अपने तप से इसे जिलायाहै इससे यह मेरी स्त्रीहुई उनतीनों के विवादमें हे राजा मैं आपसे पूछताहूं कि वह उनतीनों में से किसकी स्त्री हुई जो आप जानकरभी इसप्रश्नका उत्तर न दोगे तो आपका शिर फट जायगा वेतालके वचन सुनकर राजाने कहा कि जिसने क्लेश भोगकर मन्त्रकेद्वारा उसे जिलायाथा वह उसका पिताहुआ इससे वह उसकापति नहींहोसक्ता और जो उसकी हड्डी गंगाजी लेगयाथा वहउसका पुत्रहुआ इससे वहभी पति नहींहोसक्ता और जो उसकी भस्मको लेकर प्रेमसे उसी श्मशानमें तप करता रहा वही उसका पतिहै क्योंकि उसीने पतिके प्रेमके अनुसार कार्य्य कियाहै राजा त्रिविक्रमसेन के यह वचन सुनकर फिर वेताल राजा के कन्धेपर से उसी वृक्षपर जा लटका और राजाने फिर उसे लाने केलिये इच्छाकी ठीक है (प्राणात्ययेपिप्रतिपन्नमर्थम् निर्वाहयन्तिनिर्व्यसनधीरसत्त्वाः) धीरसत्त्ववान् लोग निज कार्य्यकेलिये प्रतिज्ञाकरते हैं उसको वह प्राणोंके कष्टमें भी बिनाकिये नहीं मानते २२॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशांकवतीलम्बकेनवमस्तरंगः ९॥

सुनके राजाने पद्मावतीको वनमें भिजवादिया वनमें जाकर अत्यन्त व्याकुलहोकर भी पद्मावतीने अपना शरीर नहींत्यागा क्योंकि-उसके चित्तमें यह अनुमानथा कि कदाचित् मंत्रीके पुत्रनेही यहकोई उपाय कियाहै पद्मावती को वनमें गई जानकर मंत्रीकापुत्र तथा राजपुत्र तपस्वियोंका वेष छोड़ घोड़ों पर चढ़के पद्मावतीके निकटपहुंचे, और उसे समझाके अपनेसाथलेके काशीपुरीको लेगये वहां पहुंचकर राजपुत्र उसकेसाथ सुखपूर्व्वक रहनेलगा, यहां दन्तघाटक वनमें अपनी कन्याको ढूंढकर उसे न पाके यह जानकर कि उसे किसी जीवनेखालिया, शोकसे मरगया और उसकी स्त्रीभी उसीकेसाथ सती होगई यहकथा कहकर वेतालने राजा त्रिविक्रमसेनसेकहा कि हे राजा तुम बड़े बुद्धिमान् हो इससे मेरे सन्देहको दूरकरो कि इनदोनो स्त्री पुरुषोंके मरनेसे किसको पापहुआ मन्त्रीके पुत्रको पद्मावतीको अथवा राजपुत्रको जो जानकर भी तुम इसका उत्तर न दोगे तो तुम्हारे शिरके सौ टुकड़े होजायँगे वेताल के यहवचन सुनकर राजा त्रिविक्रमसेन शापसे डरकर बोला कि हे योगेश्वर इनतीनोंमें से किसीकोभी पापनहीं हुआ यह पाप राजा कर्णोत्पलकोही हुआ यह सुनकर वेतालने कहा कि इसमें राजाका क्या अपराध है इसका मूलकारण तो वही तीनों हैं क्या हसनाजखाजायं तो कौओंको अपराध लगाया जाताहै यह सुनके राजानेकहा कि उनतीनोंका कोईदोष नहीं हैं क्योंकि मन्त्रीके पुत्रने तो अपने स्वामी का कार्य्य किया इसमें वह निष्पापहै और पद्मावती तथा राजपुत्र यहदोनो कामाग्निसे व्याकुलहोकर विचार करने में असमर्थथे इससे वहभी निष्पापहैं परन्तु नीतिशास्त्रके नहीं जाननेवाले राजाकर्णोत्पल ने दूतोंकेद्वारा अपनी प्रजाओं के बिना तत्त्वके जाने और छली लोगोंके चरित्रोंको बिना विचारे यह जो अन्याय किया इसीसे वह पापका भागी है मौन छोड़कर राजासे कहेहुए इस ठीक २ उत्तरको सुनकर वह वेताल राजाकी दृढ़ताको देखने के लिये अपनी मायाके बलसे राजाके कन्धेपरसे फिर उसी वृक्षपर चलागया और राजा भी उसे लानेकेलिये फिरतैयारहुआ॥ १८६॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेअष्टमस्तरंगः ॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेनने उस मुर्दे के लानेकेलिये उस सीसोंके वृक्षके नीचे जाकर देखा कि वह मुर्दा पृथ्वीपर पड़ाहुआ चिल्लारहाहै इससे उसमें वेतालका आवेश जानकर राजा उसे कन्धे पर चढ़ाकर फिर लेचला तब वह वेताल बोला हे राजा तुम इस महाअनुचित क्लेशमें पड़ेहो इससे तुमको प्रसन्न करनेकेलिये मैं एक कथा कहताहूं कि कालिन्दीके तटपर ब्रह्मस्थलनाम एक ग्रामहै उसमें ब्रह्मस्वामी नाम एक वैदिक ब्राह्मण रहताथा उसके एक मन्दारवती नाम अतिरूपवती कन्याथी जिसे बनाकर ब्रह्माने अपनीही बनाईहुई स्वर्गकी स्त्रियोंकी भी अवश्य निन्दाकरी होगी जब वह कन्या युवतीहुई तो कान्यकुब्ज देशसे आयेहुए समान गुणवान् तीन ब्राह्मणों ने अपने २ निमित्त उस ब्राह्मणसे वह कन्या मांगी परन्तु उसके पिताने उन तीनोंमें से किसीको भी वह कन्या नहीं दी क्योंकि वह जानतया कि जो मैं एकको दूंगा तो दो निराश होकर मरजायंगे इससे वह तीनों उस कन्याके मुखरूपी चन्द्माको रात्रि दिन चकोरके समान देखतेहुए वहीं रहनेलगे कुछ कालके उपरान्त अक-

स्मात् वह कन्या ज्वरसे पीडितहोके मृत्युको प्राप्तहुई तब उन तीनोंने उसे लेजाकर श्मशान भूमिमें अग्निसे भस्मकरदिया फिर उनमें से एकतो वहीं कुटी बनाके उसकी भस्म की शय्या बनाकर विना याचनाकिये मिलेहुए अन्नको खाकर रहनेलगा दूसरा उसकी हड्डी गंगाजीमें फेंकने लेगया और तीसरा तपस्वी होकर देशान्तरों में भ्रमण करनेलगा वह भ्रमण करते २ वक्रोलकनाम ग्राममें पहुंचकर किसी ब्राह्मणका अतिथिहुआ और जैसेही भोजन करनेलगा वैसेही एक बालक रोनेलगा जब बहुत पुच-कारनेपर भी वह बालक न चुपहुआ तो ब्राह्मणकी स्त्रीने उसे जलतीहुई अग्निमें छोड़दिया इससे वह बालक भस्महोगया यह देखकर उस तपस्वीने कहा कि यह ब्राह्मणका घरनहीं है यह तो किसी ब्रह्म-राक्षसका गृहहै इससे मैं मूर्त्तिमान पापरूप इस अन्नको नहीं खाऊंगा उसके यह वचन सुनकर उस ब्राह्मणने कहा कि तुम मेरी शक्ति देखो मैं अभी इस बालकको जिलाये देताहूं यह कहकरके उसने मन्त्रोंकी पुस्तक लेकर मंत्रपढ़कर अग्नि में धूलडालदीनी इसमें जीताहुआ बालक उस अग्निमें से निकल आया यह देखके उस तपस्वीने प्रसन्न होकर भोजन किया और वह ब्राह्मणभी खूंटीपर पुस्तक रखके भोजन करके अपनी स्त्रीसमेत सोरहा उसे सोया देखकर वह तपस्वी अपनी प्रियाके जिलाने के निमित्त खूंटीपरसे उसपुस्तकको उतारके वहांसे चलके उसी श्मशानमें आया जहां उसकी प्रिया भस्म हुईथी उससमय जो उसकी हड्डीफेंकनेगयाथा वहभी आगया तब उसतपस्वीने कुटीमेंरहनेवाले ब्राह्मण से कहा कि तुम भस्मको छोड़दो मैं मन्त्रके प्रभावसे अपनी प्रिया इसमेंसे जिलाऊंगा यहसुनकर वह ब्राह्मण हटगया तब उसने मन्त्रपढ़के जैसेही उसभस्ममें धूलडाली वैसेही मदारवती ज्योंकीत्यों जीकर खड़ीहोगई उसको देखकर वहतीनों कामातुरहोके उसके लेनेकेलिये परस्पर कलहकरनेलगे एकनेकहा कि यह मेरीही स्त्री है क्योंकि मैंनेही इसे मन्त्रके बलसे जिलायाहै दूसरेने कहा कि मैं तीर्थपर गयाथा उसीके प्रभावसे यह जी उठीहै इससे यह मेरी स्त्रीहै तीसरे ने कहा कि मैंनेही इसकी भस्मकी रक्षाकरके अपने तप से इसे जिलायाहै इससे यह मेरी स्त्रीहुई इनतीनोंके विवादमें हे राजा मैं आपसे पूछताहूं कि वह उनतीनोंमें से किसकी स्त्री हुई जो आप जानकरभी इसप्रश्नका उत्तर न दोगे तो आपका शिर फट जायगा वेतालके वचन सुनकर राजाने कहा कि जिसने क्लेश भोगकर मन्त्रकेद्वारा उसे जिलायाथा वह उसका पिताहुआ इससे वह उसकापति नहींहोसक्ता और जो उसकीहड्डी गंगाजी लेगयाथा वहउसका पुत्रहुआ इससे वहभी पति नहींहोसक्ता और जो उसकी भस्मको लेकर प्रेमसे उसी श्मशानमें तपकरता रहा वही उसका पतिहै क्योंकि उसीने पतिके प्रेमके अनुसार कार्य कियाहै राजा त्रिविक्रमसेन के यहवचन सुनकर फिर वेताल राजा के कन्धेपरसे उसी वृक्षपर जा लटका और राजाने फिर उसे लाने केलिये इच्छाकी ठीक है (प्राणात्ययेपिप्रतिपन्नमर्थम् निष्ठत्यनिर्वाह्यनधीरसत्त्वाः) धीरसत्त्ववान् लोग जिस कार्य्यके लिये प्रतिज्ञाकरते हैं उसको वह प्राणोंके कष्टमें भी विनाकिये नहीं मानते ४२॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेत्रयस्त्रिंशस्तरङ्गः ६॥

इसके उपरान्त फिर राजा त्रिविक्रमसेन सीसों के वृक्षसे उतारकर उसमुर्देको लेकर चला तब बेताल ने उससे कहा कि हे राजा महा रात्रि के समय तुमको वारम्वार आने में बड़ा खेदहोताहोगा इससे आपके प्रसन्नकरनेके निमित्त एक कथा मैं कहताहूं कि पाटलिपुत्र नाम नगरमें विक्रमकेसरी नाम एक गुणवान् तथा धनवान् राजाथा उस राजाके यहां शापसे उत्पन्नहुआ विदग्ध चूडामणि नाम सम्पूर्ण शास्त्रोकाज्ञाता महाविज्ञानी तोताथा उसी तोतेके उपदेशसे राजाने मगधदेशके राजाकी पुत्री चन्द्रप्रभा के साथ अपना विवाहकिया था उस चन्द्रप्रभाके पास भी सोमिकानाम मैना सम्पूर्ण शास्त्र तथा विज्ञानोंकी जानने वालीथी राजाके यहां वह दोनोंपक्षी एकही पिंजरे में रहतेथे और अपने मधुर शब्दों से राजा रानी दोनों को प्रसन्नकिया करतेथे एक समय उस तोतेने कामसे पीड़ितहोके मैनासे कहा कि हे सुभगे तुम मुझे अपना पति बनालो यह सुनकर मैनाने कहा कि मैं पुरुषका सङ्ग नहीं करना चाहतीहूं क्योंकि पुरुष बडे दुष्ट और कृतघ्नहोते हैं यह सुनके तोतेनें कहा कि पुरुष दुष्ट नहीं होते स्त्रियाही बडी दुष्टा तथा कठोरहोती हैं इसप्रकार उत्तर प्रत्युत्तरसे उन दोनोंका बडा विवादबढ़गया और उन दोनों ने यह प्रणकरके कि जो तोता हारेगा तो मैनाकादास होजायगा और मैना हारेगी तो तोतेकी स्त्री होजायगी राज पुत्रसे कहा कि आप हमारे विवादका निर्णय कीजिये विवादको सुन कर राज पुत्रने उस मैनासे कहा कि पुरुष कैसे कृतघ्नहोते हैं उसने कहा कि सुनिये कामन्दिकानाम नगरीमें अर्थदत्त नाम एक महाधनवान् वैश्यथा उसके धनदत्तनाम पुत्रथा कालके प्रभावसे अर्थदत्त के मरजानेपर धूर्तोंने मिलके धनदत्तको द्यूतआदिक व्यसनोंमें लगाया ठीकहै (कामव्यसनवृक्षस्य मूलंदुर्जनसंगतिः) दुष्टोंकासंग व्यसनरूपी वृक्षका मूलहै थोडे कालमे व्यसनके कारण धनदत्तनिर्धन होकर लज्जासे अपने देशमें न रहकर परदेशको चला चलते २ चन्दनपुरनाम नगरमें पहुँचकर एक वैश्यके घर भोजनके निमित्तगया उस वैश्यने उसे सुकुमार देखके उससे नाम तथा कुल पूछके कुलीन जानके बहुतसा धन देकर अपनी रत्नावली नाम कन्यासे उसका विवाहकर दिया इससे वह धनदत्त प्रसन्नहोकर वहीं रहनेलगा कुछ दिनों के उपरान्त सुखसे अपनी दुर्दशाको भूलकर वह अपने श्वशुरसे आज्ञालेकर अपनी रत्नावली स्त्री तथा उसकी एक वृद्धादासी और सम्पूर्ण धनलेकर अपने देशको चला क्रमसे एकवन में आकर उसने अपनी स्त्री से सम्पूर्ण आभूषण लेलिये और उसे उस वृद्धादासी समेत एकगहरे गढेमें ढकेलदिया (दृश्यताद्यूतवेश्यादि कष्टव्यसनसंगिनांहृदयंहाकृतघ्नानांपुंसानिस्त्रिंशकर्कशम्) देखो द्यूतवेश्या आदिक दुर्व्यसनों में आसक्त कृतघ्न पुरुषों का हृदय खड्गके समान कर्कश होताहै उन्हें गढेमें डालके उसके चलेजानेपर वह वृद्धातो गिरते ही मरगई परन्तु उसकी स्त्री आयुर्दाय शेषहोने के कारण नहीं मरी और कुछ चोटखाकर लता आदि के सहारेसे उस गढेमें से ऊपर आके पथिक लोगोंसे मार्ग पूछ २ कर धीरे २ अपने पिताके यहां आगई वहां उसे अकस्मात रोती हुईआई देखकर उसके माता पिताने पूछा कि हे पुत्री तुम क्यों रोती हो औरक्यों इतनी जल्दी अकेली ही लौट आईहो माता पिताके यह वचनसुनकर उसनेकहा कि मार्ग में बहुतसे चोर आके सब धनलेके

मेरे पतिको बाँधलेगये और में उस वृद्धासमेत भयभीत होकर एक गढेमें गिरपडी वह वृद्धा तो गिरते ही मरगई परन्तु मे भाग्यवश से जीतीरही तब उसी मार्ग मे आए हुए एक दयालु पथिकने मुझे उस गढेसे निकाला गढेसे निकलकर मैं धीरे २ मार्ग पूछतीहुई यहा चलीआई उसके यह वचनसुनके उस के माता पिताने उसे बहुत समझाके सुखपूर्वक रक्खा कुछकाल के उपरान्त धनदत्तने द्यूतमे वह सब धनभी नष्टकरके शोचा कि मै अपने श्वशुरके यहा जाकर धनलाऊ और जो वह अपनी पुत्रीको पूछेगा तो कहदूगा कि तुम्हारी पुत्री मेरे घरमें है यह शोचके वह अपने श्वशुरके यहा गया वहा उसेदूरही से देखकर उसकी स्त्रीने दौडकर उसके पैरोंपर गिरके जो कुछ अपने पितासे हालकहा था वह उससे भी कह दिया जिससे कि वह झूठा न पडे ठीकहै (दुष्टेपिपत्यौसाध्वीनानान्यथावृत्तिमानसम्) सतीस्त्रियोंका चित्त दुष्टपति से भी नहीं बदलताहै) उससे इस वृत्तान्त को जानकर धनदत्त निर्भयहोकर अपने श्वशुर के पासगया और उसने भी उसे देखकर भाग्यवशसे मेरा जामाता चोरोंके हाथसे बचगया यह कहके बडा उत्सवकिया और उसे आदरपूर्वक अपने घर में रक्खा तब धनदत्त अपने श्वशुर के धनको भोगता हुआ सुखपूर्वक रत्नावली के साथ रहनेलगा इसके उपरान्त एकदिन रात्रिकेसमय जो पाप उस दुष्टने किया वह यद्यपि कहने के योग्य नहींहै तथापि कथाके प्रसगसे कहतीहू कि वह दुष्ट गोदी में सोईहुई उस पतिव्रता स्त्री को मारके उसके आभूषणलेके छुपकर अपने देश को चलागया इसप्रकार से पुरुष महापापी तथा दुष्टहोते है मैनाके यह वचन सुनके राजपुत्र ने तोते से कहा कि अब तुमकहो यह सुनकर तोतेनेकहा कि हे स्वामी स्त्रिया बडी दुष्ट पापिनी तथा सहसा करनेवाली होती हैं इसविषयमें मै आपको एक कथा सुनाताहू कि हर्षवती नाम नगरीमें कई करोड अशर्फियोंका धनी धर्मदत्तनाम वैश्य रहता था उसके वसुदत्तानाम एक अत्यन्त रूपवती प्राणोंसे भी प्यारी कन्याथी उस कन्याका विवाह उसने ताम्रलिप्तीनाम नगरीके निवासी समुद्रदत्तनाम तरुणरूपवान् एकवैश्यकेसाथ करदिया एक समय वह वसुदत्ताने अपने पिताके यहा दूरसे किसी सुन्दर युवा पुरुषको देखकर उसपर आसक्तहोके उसे अपनी सखी के द्वारा बुलवाके उसके साथ रमण किया और उसी दिनसे रात्रिके समय किसी सकेत स्थानमे उसीके साथ वह नित्य रमण करतीरही एक दिन वसुदत्ताका पति समुद्रदत्त अपने देशसे उसके यहा गया इससे वसुदत्ताके माता पिताने उसका बडा आदर सत्कारकिया और रात्रिके समय वसुदत्ताकी माताने वसुदत्ताको समुद्रदत्तके साथ शयन करनेकोभेजा परन्तु उस दुष्टाने समुद्रदत्तकेपास शयनकरके भी उससे सोनेका मिथ्या बहानाकरके उसके साथ रमणनहीं किया और समुद्रदत्तभी मार्गका थका हुआथा इससे शीघ्रही सोगया तब सबके सो जानेपर एकचोर सेधलगाके उसके शयन स्थानमे घुसा उससमय वसुदत्ता उसचोरको न देखकर अपने पति को सोयाजानके उसी सेंधके द्वारा अपने जार पतिके पास चली यह देखकर उसचोरने शोचा कि जिन आभूषणोंके लिये मै आयाथा उन्हींको पहने हुए यह जारही है इससे देखनाचाहिये कि यहकहाजाती है यह शोचकर वह उसीके पीछेचला और वसुदत्ता नगरके बाहर एकउपवनमेंगई वहा एक वृक्षमें उसकाजार फासीमें लटकरहाथा क्योंकि रात्रिके

इसके उपरान्त फिर राजा त्रिविक्रमसेन सीसों के वृक्षसे उतारकर उसमुर्देको लेकरचला तब वेतालने उससे कहा कि हे राजा यहां रात्रि के समय तुमको बारम्बार आने में बडा खेदहोताहोगा इससे आपके प्रसन्नकरनेके निमित्त एक कथा मैं कहताहू कि पाटलिपुत्र नाम नगरमें विक्रमकेसरी नाम एक गुणवान् तथा धनवान् राजाथा उस राजाके यहा शापसे उत्पन्नहुआ विदग्ध चूडामणिनाम सम्पूर्ण शास्त्रोंकाज्ञाता महाविज्ञानी तोताथा उसी तोतेके उपदेशसे राजाने मगधदेशके राजाकी पुत्री चन्द्रप्रभा के साथ अपना विवाहकिया था उस चन्द्रप्रभाके पास भी सोमिकानाम मैना सम्पूर्ण शास्त्र तथा विज्ञानोंकी जानने वालीथी राजाके यहा वह दोनोपक्षी एकही पिंजरे में रहतेथे और अपने २ मधुर शब्दो से राजा रानी दोनों को प्रसन्नकिया करतेथे एक समय उस तोतेने कामसे पीडितहोकर मैनासे कहा कि हे सुभगे तुम मुझे अपना पति बनालो यह सुनकर मैनाने कहा कि मैं पुरुषका संसर्ग नहीं करना चाहतीहू क्योंकि पुरुष बडे दुष्ट और कृतघ्नहोते हैं यह सुनके तोतेने कहा कि पुरुष दुष्ट नहीं होते स्त्रियाही बडी दुष्टा तथा कठोरहोती हैं इसप्रकार उत्तर प्रत्युत्तरसे उन दोनोंका बडा विवादबढगया और उन दोनों ने यह प्रणकरके कि जो तोता हारेगा तो मैनाकादास होजायगा और मैना हारेगी तो तोतेकी स्त्री होजायगी राज पुत्रसे कहा कि आप हमारे विवादका निर्णय कीजिये विवादको सुनकर राज पुत्रने उस मैनासे कहा कि पुरुष कैसे कृतघ्नहोते हैं उसने कहा कि सुनिये कामन्दिकानाम नगरीमें अर्थदत्त नाम एक महाधनवान् वैश्यथा उसके धनदत्तनाम पुत्रथा कालके प्रभावसे अर्थदत्त के मरजानेपर धूर्त्तोंने मिलके धनदत्तको द्यूतआदिक व्यसनोंमें लगाया ठीकहै (कामव्यसनवृक्षस्य मूलंदुर्जनसंगतिः) दुष्टोंकासंग व्यसनरूपी वृक्षका मूलहै थोडे कालमे व्यसनके कारण धनदत्तनिर्धन होकर लज्जासे अपने देशमें न रहकर परदेशको चला चलते २ चन्दनपुरनाम नगरमें पहुंचकर एक वैश्यके घर भोजनके निमित्तगया उस वैश्यने उसे सुकुमार देखके उससे नाम तथा कुल पूछके कुलीन जानके बहुतसा धन देकर अपनी रत्नावली नाम कन्यासे उसका विवाहकर दिया इससे वह धनदत्त प्रसन्नहोकर वहीं रहनेलगा कुछ दिनों के उपरान्त सुखसे अपनी दुर्दशाको भूलकर वह अपने श्वशुरसे आज्ञालेकर अपनी रत्नावली स्त्री तथा उसकी एक वृद्धादासी और सम्पूर्ण धनलेकर अपने देशको चला क्रमसे एकवन में आकर उसने अपनी स्त्री से सम्पूर्ण आभूषण लेलिये और उसे उस वृद्धादासी समेत एकगहरे गढेमें ढकेलदिया (दृश्यताद्यूतवेश्यादि कष्टव्यसनसंगिनाहृदयंहाकृतघ्नानांपुंसांनिस्त्रिंशकर्कशम्) देखो द्यूतवेश्या आदिक दुर्व्यसनों मे आसक्त कृतघ्न पुरुषों का हृदय खड्गके समान कर्कश होताहै उन्हें गढेमें डालके उसके चलेजानेपर वह वृद्धातो गिरते ही मरगई परन्तु उसकी स्त्री आयुर्दाय शेषहोने के कारण नहीं मरी और कुछ चोटखाकर लता आदि के सहारेसे उस गढेमें से ऊपर आके पथिक लोगोंसे मार्ग पूछ २ कर धीरे २ अपने पिताके यहा आगई वहा उसे अकस्मात् रोती हुईआई देखकर उसके माता पिताने पूछा कि हे पुत्री तुम क्यों रोती हो और क्यों इतनी जल्दी अकेली ही लौट आईहो माता पिताके यह वचनसुनकर उसनेकहा कि मार्ग में बहुतसे चोर आके सब धनलेके

मेरे पतिको बाँधलेगये और मैं उस वृद्धासमेत भयभीत होकर एक गढेमें गिरपडी वह वृद्धा तो गिरते ही मरगई परन्तु मैं भाग्यवश से जीतीरही तब उसी मार्ग से आए हुए एक दयालु पथिकने मुझे उस गढेसे निकाला गढेसे निकलकर मैं धीरे २ मार्ग पूछतीहुई यहां चलीआई उसके यह वचनसुनके उस के माता पिताने उसे बहुत समझाके सुखपूर्व्वक रक्खा कुछकाल के उपरान्त धनदत्तने द्यूतमें वह सब धनभी नष्टकरके शोचा कि मैं अपने श्वशुरके यहां जाकर धनलाऊं और जो वह अपनी पुत्रीको पूछेगा तो कहदूंगा कि तुम्हारी पुत्री मेरे घरमें है यह शोचके वह अपने श्वशुरके यहां गया वहां उसेदूरही से देखकर उसकी स्त्रीने दौडकर उसके पैरोंपर गिरके जो कुछ अपने पितासे हालकहा था वह उससे भी कह दिया जिससे कि वह झूठा न पडे ठीकहै (दुष्टेपिपत्यौसाध्वीनानान्यथावृत्तिमानसम्) सतीस्त्रियोंका चित्त दुष्टपति से भी नहीं बदलताहै) उससे इस वृत्तान्त को जानकर धनदत्त निर्भयहोकर अपने श्वशुर के पासगया और उसने भी उसे देखकर भाग्यवशसे मेरा जामाता चोरोंके हाथसे बचगया यह कहके बडा उत्सवकिया और उसे आदरपूर्व्वक अपने घर में रक्खा तब धनदत्त अपने श्वशुर के धनको भोगता हुआ सुखपूर्व्वक रत्नावलीके साथ रहनेलगा इसके उपरान्त एकदिन रात्रिकेसमय जो पाप उस दुष्टने किया वह यद्यपि कहने के योग्य नहीं है तथापि कथाके प्रसंगसे कहतीहूं कि वह दुष्ट गोदी में सोईहुई उस पतिव्रता स्त्री को मारके उसके आभूषणलेके छुपकर अपने देश को चलागया इसप्रकार से पुरुष महापापी तथा दुष्टहोते हैं मैनाके यह वचन सुनके राजपुत्र ने तोते से कहा कि अब तुमकहो यह सुनकर तोतेनेकहा कि हे स्वामी स्त्रियां बडी दुष्टा पापिनी तथा सहसा करनेवाली होती हैं इसविषयमें मैं आपको एक कथा सुनाताहूं कि हर्षवती नाम नगरीमें कई करोड अशर्फियोंका धनी धर्मदत्तनाम वैश्य रहता था उसके वसुदत्तानाम एक अत्यन्त रूपवती प्राणोंसे भी प्यारी कन्याथी उस कन्याका विवाह उसने ताम्रलिप्तीनाम नगरीके निवासी समुद्रदत्तनाम तरुणरूपवान् एकवैश्यके साथ करदिया एकसमय वह वसुदत्ताने अपने पिताके यहां दूरसे किसी सुन्दर युवा पुरुषको देखकर उसपर आसक्तहोके उसे अपनी सखी के द्वारा बुलवाके उसके साथ रमण किया और उसी दिनसे रात्रिके समय किसी सकेत स्थानमें उसीके साथ वह नित्य रमण करतीरही एक दिन वसुदत्ताका पति समुद्रदत्त अपने देशसे उसके यहां गया इससे वसुदत्ताके माता पिताने उसका बडा आदर सत्कारकिया और रात्रिके समय वसुदत्ताकी माताने वसुदत्ताको समुद्रदत्तके साथ शयन करनेकोभेजा परन्तु उस दुष्टाने समुद्रदत्तकेपास शयनकरके भी उससे सोनेका मिथ्या बहानाकरके उसके साथ रमणनहीं किया और समुद्रदत्तभी मार्गका थका हुआथा इसमे शीघ्रही सोगया तब सबके सो जानेपर एकचोर सधलगाके उसके शयन स्थानमें घुसा उससमय वसुदत्ता उसचोरको न देखकर अपने पति को सोयाजानके उसी समयमें जाग अपने जार पतिके पास चली यह देखकर उसचोरने शोचा कि जिन आभूषणोंके लिये मैं आयाथा उन्हींको पहने हुए यह जारहीहै इससे देखनाचाहिये कि यहकहांजाती है यह शोचकर वह उसीके पीछे चला और वसुदत्ता नगरके बाहर एकउपवनमेंगई वहां एकघरमें उसकाजार फांसीसे लटकरहाथा क्योंकि रात्रिके

इसके उपरान्त फिर राजा त्रिविक्रमसेन सीसों के वृक्षसे उतारकर उसमुर्देको लेकरचला तब वेताल ने उससे कहा कि हे राजा महा रात्रि के समय तुमको बारम्बार आने में बड़ा खेदहोताहोगा इससे आपके प्रसन्नकरनेके निमित्त एक कथा मैं कहताहू कि पाटलिपुत्र नाम नगरमें विक्रमकेसरी नाम एक गुणवान् तथा धनवान् राजाथा उस राजाके यहा शापसे उत्पन्नहुआ विदग्ध चूडामणिनाम सम्पूर्ण शास्त्रोकाज्ञाता महाविज्ञानी तोताथा उसी तोतेके उपदेशसे राजाने मगधदेशके राजाकी पुत्री चन्द्रप्रभा के साथ अपना विवाहकिया था उस चन्द्रप्रभाके पास भी सोमिकानाम मैना सम्पूर्ण शास्त्र तथा विज्ञानोंकी जानने वालीथी राजाके यहा वह दोनोपक्षी एकही पिंजरे में रहतेथे और अपने २ मधुर शब्दो से राजा रानी दोनो को प्रसन्नकिया करतेथे एक समय उस तोतेने कामसे पीडितहोकर मैनासे कहा कि हे सुभगे तुम मुझे अपना पति बनालो यह सुनकर मैनानें कहा कि मैं पुरुषका संसर्ग नहीं करना चाहतीहू क्योंकि पुरुष बडे दुष्ट और कृतघ्नहोते हैं यह सुनके तोतेनें कहा कि पुरुष दुष्ट नहीं होते स्त्रियाही बडी दुष्टा तथा कठोरहोती हैं इसप्रकार उत्तर प्रत्युत्तरसे उन दोनोंका बडा विवादबढगया और उन दोनों ने यह प्रणकरके कि जो तोता हारेगा तो मैनाकादास होजायगा और मैना हारेगी तो तोतेकी स्त्री होजायगी राज पुत्रसे कहा कि आप हमारे विवादका निर्णय कीजिये विवादको सुन-कर राज पुत्रने उस मैनासे कहा कि पुरुष कैसे कृतघ्नहोते हैं उसने कहा कि सुनिये कामन्दिकानाम नगरीमें अर्थदत्त नाम एक महाधनवान् वैश्यथा उसके धनदत्तनाम पुत्रथा कालके प्रभावसे अर्थदत्त के मरजानेपर धूर्तोंने मिलके धनदत्तको द्यूतआदिक व्यसनोंमें लगाया ठीकहै (कामव्यसनवृक्षस्य मूलंदुर्जनसंगतिः) दुष्टोंकासग व्यसनरूपी वृक्षका मूलहै थोडे कालमे व्यसनके कारण धनदत्तनिर्धन होकर लज्जासे अपने देशमें न रहकर परदेशको चला चलते २ चन्दनपुरनाम नगरमें पहुंचकर एक वैश्यके घर भोजनके निमित्तगया उस वैश्यने उसे सुकुमार देखके उससे नाम तथा कुल पूछके कुलीन जानके बहुतसा धन देकर अपनी रत्नावली नाम कन्यासे उसका विवाहकर दिया इससे वह धनदत्त प्रसन्नहोकर वहीं रहनेलगा कुछ दिनों के उपरान्त सुखसे अपनी दुर्दशाको भूलकर वह अपने श्वशुरसे आज्ञालेकर अपनी रत्नावली स्त्री तथा उसकी एक वृद्धादासी और सम्पूर्ण धनलेकर अपने देशको चला क्रमसे एकवन में आकर उसने अपनी स्त्री से सम्पूर्ण आभूषण लेलिये और उसे उस वृद्धादासी समेत एकगहरे गढेमें ढकेलदिया (दृश्यताद्यूतवेश्यादि कष्टव्यसनसंगिनाहृदयंहाकृतघ्ना नांपुंसानिस्त्रिंशकर्कशम्) देखो द्यूतवेश्या आदिक दुर्व्यसनों में आसक्त कृतघ्न पुरुषों का हृदय खड्गके समान कर्कश होताहै उन्हें गढेमें डालके उसके चलेजानेपर वह वृद्धातो गिरते ही मरगई परन्तु उसकी स्त्री आयुर्दाय शेषहोने के कारण नहीं मरी और कुछ चोटखाकर लता आदि के सहारेसे उस गढेमें से ऊपर आके पथिक लोगोंसे मार्ग पूछ २ कर धीरे २ अपने पिताके यहा आगई वहा उसे अकस्मात् रोती हुईआई देखकर उसके माता पितानेपूछा कि हे पुत्री तुम क्यों रोती हो औरक्यों इतनी जल्दी अकेली ही लौट आईहो माता पिताके यह वचनसुनकर उसनेकहा कि मार्ग में बहुतसे चोर आके सब धनलेके

मेरे पतिको बाँधलेगये और में उस वृद्धासमेत भयभीत होकर एक गढेमें गिरपडी वह वृद्धा तो गिरते ही मरगई परन्तु मैं भाग्यवश से जीतीरही तब उसी मार्ग से आए हुए एक दयालु पथिकने मुझे उस गढेसे निकाला गढेसे निकलकर मैं धीरे २ मार्ग पूछतीहुई यहां चलीआई उसके यह वचनसुनके उस के माता पिताने उसे बहुत समझाके सुखपूर्व्वक रक्खा कुछकाल के उपरान्त धनदत्तने द्यूतमें वह सब धनभी नष्टकरके शोचा कि मैं अपने श्वशुरके यहां जाकर धनलाऊं और जो वह अपनी पुत्रीको पूछेगा तो कहदूंगा कि तुम्हारी पुत्री मेरे घरमें है यह शोचके वह अपने श्वशुरके यहां गया वहां उसेदूरही से देखकर उसकी स्त्रीने दौडकर उसके पैरोंपर गिरके जो कुछ अपने पितासे हालकहा था वह उससे भी कह दिया जिससे कि वह झूठा न पडे ठीकहै (दुष्टेपिपत्यौसाध्वीनानान्यथावृत्तिमानसम्) सतीस्त्रियोंका चित्त दुष्टपति से भी नहीं बदलताहै) उससे इस वृत्तान्त को जानकर धनदत्त निर्भयहोकर अपने श्वशुर के पासगया और उसने भी उसे देखकर भाग्यवशसे मेरा जामाता चोरोंके हाथसे बचगया यह कहके बडा उत्सवकिया और उसे आदरपूर्व्वक अपने घर में रक्खा तब धनदत्त अपने श्वशुर के धनको भोगता हुआ सुखपूर्व्वक रत्नावलीके साथ रहनेलगा इसके उपरान्त एकदिन रात्रिकेसमय जो पाप उस दुष्टने किया वह यद्यपि कहने के योग्य नहीं है तथापि कथाके प्रसंगसे कहतीहूं कि वह दुष्ट गोदी में सोईहुई उस पतिव्रता स्त्री को मारके उसके आभूषणलेके छुपकर अपने देश को चलागया इसप्रकार से पुरुष महापापी तथा दुष्टहोते हैं मैनाके यह वचन सुनके राजपुत्र ने तोते से कहा कि अब तुमकहो यह सुनकर तोतेनेकहा कि हे स्वामी स्त्रियां बडी दुष्टा पापिनी तथा सहसा करनेवाली होती हैं इसविषयमें मैं आपको एक कथा सुनाताहूं कि हर्षवती नाम नगरीमें कई करोड अशर्फियोंका धनी धर्मदत्तनाम वैश्य रहता था उसके वसुदत्तानाम एक अत्यन्त रूपवती प्राणोंसे भी प्यारी कन्याथी उस कन्याका विवाह उसने ताम्रलिप्तीनाम नगरीके निवासी समुद्रदत्तनाम तरुणरूपवान् एकवैश्यकेसाथ करदिया एकसमय वह वसुदत्ताने अपने पिताके यहां दूरसे किसी सुन्दर युवा पुरुषको देखकर उसपर आसक्तहोके उसे अपनी सखी के द्वारा बुलवाके उसके साथ रमण किया और उसी दिनसे रात्रिकेसमय किसी संकेत स्थानमें उसीके साथ वह नित्य रमण करतीरही एक दिन वसुदत्ताका पति समुद्रदत्त अपने देशसे उसके यहां गया इससे वसुदत्ताके माता पिताने उसका बडा आदर सत्कारकिया और रात्रिके समय वसुदत्ताकी माताने वसुदत्ताको समुद्रदत्तके साथ शयन करनेकोभेजा परन्तु उस दुष्टाने समुद्रदत्तकेपास शयनकरके भी उससे सोनेका मिथ्या बहानाकरके उसके साथ रमणनहीं किया और समुद्रदत्तभी मार्गका थका हुआथा इससे शीघ्रही सोगया तब सबके सो जानेपर एकचोर सेंधलगाके उसके शयन स्थानमें घुसा उससमय वसुदत्ता उसचोरको न देखकर अपने पति को सोयाजानके उसी सेंधके द्वारा अपने जार पतिके पास चली यह देखकर उसचोरने शोचा कि जिन आभूषणोंके लिये मैं आयाथा उन्हींको पहने हुए यह जारही है इससे देखनाचाहिये कि यहकहांजाती है यह शोचकर वह उसीके पीछे चला और वसुदत्ता नगरके बाहर एकउपवनमेंगई वहां एकस्थानमें उसकाजार फांसीमें लटकरहाथा क्योंकि रात्रिके

इसके उपरान्त फिर राजा त्रिविक्रमसेन सीसों के वृक्षसे उतारकर उसमुर्देको लेकरचला तब वेताल ने उससे कहा कि हे राजा यहां रात्रि के समय तुमको वारम्बार आने में बड़ा खेदहोताहोगा इससे आपके प्रसन्नकरनेके निमित्त एक कथा मैं कहताहू कि पाटलिपुत्र नाम नगरमें विक्रमकेसरी नाम एक गुणवान् तथा धनवान् राजाथा उस राजाके यहां शापसे उत्पन्नहुआ विदग्ध चूडामणिनाम सम्पूर्ण शास्त्रोंकाज्ञाता महाविज्ञानी तोताथा उसी तोतेके उपदेशसे राजाने मगधदेशके राजाकी पुत्री चन्द्रप्रभा के साथ अपना विवाहकिया था उस चन्द्रप्रभाके पास भी सोमिकानाम मैना सम्पूर्ण शास्त्र तथा विज्ञानोंकी जानने वालीथी राजाके यहां वह दोनोपक्षी एकही पिंजरे में रहतेथे और अपने २ मधुर शब्दों से राजा रानी दोनो को प्रसन्नकिया करतेथे एक समय उस तोतेने कामसे पीडितहोकर मैनासे कहा कि हे सुभगे तुम मुझे अपना पति बनालो यह सुनकर मैनाने कहा कि मैं पुरुषका ससर्ग नहीं करना चाहतीहू क्योंकि पुरुष वडे दुष्ट और कृतघ्नहोते हैं यह सुनके तोतेने कहा कि पुरुष दुष्ट नहीं होते स्त्रियाही वडी दुष्टा तथा कठोरहोती हैं इसप्रकार उत्तर प्रत्युत्तरसे उन दोनोंका बडा विवादवढगया और उन दोनों ने यह प्रणकरके कि जो तोता हारेगा तो मैनाकादास होजायगा और मैना हारेगी तो तोतेकी स्त्री होजायगी राज पुत्रसे कहा कि आप हमारे विवादका निर्णय कीजिये विवादको सुन कर राज पुत्रने उस मैनासे कहा कि पुरुष कैसे कृतघ्नहोते हैं उसने कहा कि सुनिये कामन्दिकानाम नगरीमें अर्थदत्त नाम एक महाधनवान् वैश्यथा उसके धनदत्तनाम पुत्रथा कालके प्रभावसे अर्थदत्त के मरजानेपर धूर्तोंने मिलके धनदत्तको द्यूतआदिक व्यसनोंमें लगाया ठीकहै (कामव्यसनवृक्षस्य मूलंदुर्जनसंगतिः) दुष्टोंकासग व्यसनरूपी वृक्षका मूलहै थोडे कालमे व्यसनके कारण धनदत्तनिर्धन होकर लज्जासे अपने देशमें न रहकर परदेशको चला चलते २ चन्दनपुरनाम नगरमें पहुँचकर एक वैश्यके घर भोजनके निमित्तगया उस वैश्यने उसे सुकुमार देखके उससे नाम तथा कुल पूछके कुलीनजानके बहुतसा धन देकर अपनी रत्नावली नाम कन्यासे उसका विवाहकर दिया इससे वह धनदत्त प्रसन्नहोकर वहीं रहनेलगा कुछ दिनों के उपरान्त सुखसे अपनी दुर्दशाको भूलकर वह अपने श्वशुरसे आज्ञालेकर अपनी रत्नावली स्त्री तथा उसकी एक वृद्धादासी और सम्पूर्ण धनलेकर अपने देशको चला क्रमसे एकवन में आकर उसने अपनी स्त्री मे सम्पूर्ण आभूषण लेलिये और उसे उस वृद्धादासी समेत एकगहरे गढेमें ढकेलदिया (दृश्यताद्यूतवेश्यादि कष्टव्यसनसंगिनाहृदयंहाकृतघ्नानांपुंसानिस्त्रिंशकर्कशम्) देखो द्यूतवेश्या आदिक दुर्व्यसनों में आसक्त कृतघ्न पुरुषों का हृदय खड्गके समान कर्कश होताहै उन्हें गढेमें डालके उसके चलेजानेपर वह वृद्धातो गिरते ही मरगई परन्तु उसकी स्त्री आयुर्दाय शेषहोने के कारण नहीं मरी और कुछ चोटखाकर लता आदि के सहारेसे उस गढेमें से ऊपर आके पथिक लोगोंसे मार्ग पूछ २ कर धीरे २ अपने पिताकेयहां आगई वहां उसे अकस्मात् रोती हुईआई देखकर उसके माता पिताने पूछा कि हे पुत्री तुम क्योंरोती हो और क्यों इतनी जल्दी अकेली ही लौट आईहो माता पिताके यह वचनसुनकर उसनेकहा कि मार्ग में बहुतसे चोर आके सब धनलेके

वचन सुनके वह वेताल फिर राजाके कन्धेपरसे उसीवृक्षपर जा लटका और राजा उसके लानेके लिये फिर उद्यतहुआ ६५॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशांकवतीलम्बकेदशमस्तरङ्गः १०॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर वेतालके लेनेकेलिये उसीशीशोंके वृक्षके निकटगया और उस मुर्देको हँसते देखकर निर्भयहोके उसे अपने कन्धेपर रखकर लेचला तब वेतालने उससेकहा कि हे राजा इस दुष्ट भिक्षुककेलिये आप क्यों इतना परिश्रम करतेहो इस निष्फल कार्य्य करने में आपको जराभी विवेक नहीं होता अब मार्गमें आपका चित्त बहलानेके निमित्त मैं एककथा आपसे कहताहूं शोभावती नाम नगरीमें शूद्रकनाम एक बडा वीर राजाथा उसके प्रतापसे उसके सम्पूर्ण शत्रु अपने-देशोंको छोड सदैव वनोंहीमें बनेरहतेथे वह ऐसा धर्म्म करताथा कि जिससे सब प्रजामात्रको रामादिक राजाओंपर भी अनिच्छा होगईथी एक समय मालवदेशसे वीरवर नाम एक ब्राह्मण सेवा करने के निमित्त शोभावती नगरीमें आया उसके साथमें उसकी धर्म्मवती नाम स्त्री सत्त्ववर नाम पुत्र तथा वीरवती नाम कन्याथी यही उसका सब कुटुम्बथा और उसकी कमर में खड्ग और हाथमें ढालथी उसने राजासे आकर पांचसौ अशर्फी रोज वेतनकेलिये कही राजाने भी उसकी चेष्टासे उसके पुरुषार्थ का अनुमान करके वह वेतनदेना स्वीकार करलिया और अपने दूतोंको यह आज्ञादी कि छिपकर देखो यह इतनाधन सत्कार्य्यों में व्यय करताहै या असत्कार्य्यमें वीरवर प्रातःकाल राजाके दर्शनकरके फाटक पर जाके मध्याह्नतक वहीं खडारहताथा फिर उन अशर्फियोंकोलेके घरमें जाकर उनमेंसे सौ अशर्फी अपनी स्त्री को भोजनादिके खर्चको देताथा सौ अशर्फिया वस्त्र ताम्बूलादिमें खर्चकरताथा सौ अशर्फी स्नानके पीछे विष्णुभगवान्के पूजनमें लगाताथा और दोसौ अशर्फी दीन तथाब्राह्मणोंको बांटदेताथा इसप्रकार उन पांचोंसौ अशर्फियों को व्ययकरके और नित्य नैमित्तिक कार्योंसे निवृत्तहोकर राजा के फाटकपर जाकर रात्रिभर वहीं खडा रहता था दूतों के मुखसे उसकी यह नित्यचर्य्या सुनके राजा ने अपने दूतोंसे कहदिया कि अब उसकेसाथ न रहाकरो इसके उपरान्त कुछदिन व्यतीत होनेपर मानों वीरवरके धैर्यकी परीक्षा करनेकेलिये वर्षाऋतु प्राप्तहुई मेघोंने सम्पूर्ण आकाश घेरलिया बिजलीचमकने लगी और घोर जलकी वृष्टिहोनेलगी ऐसे घोर समयमें भी वीरवर नित्यके समान फाटकपरसे जरा भी नहींहटा एकदिन राजा शूद्रक उसकी परीक्षा करनेके लिये फाटकपर चढके ऊपरसे बोला कि फाटकपर कौनहै वीरवरने कहा कि मैंहूं उसके यह वचनसुनके राजाने सोचा कि यह बडावीरहै और मेरा परमभक्तहै इससे इसको कोई बड़ा अधिकार देना चाहिये यह सोचकर राजा फाटकपर से उतरकर अन्तःपुरमें जाके सोया दूसरेदिन फिर रात्रिके समय बडी वृष्टिहोनेपर अन्धकारसे सम्पूर्ण दिशाओंके ढकजानेपर राजा शूद्रकने फिर उसकी परीक्षा करने के लिये ऊपर चढके पूछा कि फाटकपर कौनहै वीरवरने कहा कि मैंहूं उसके यह वचनसुनके राजा को बडा आश्चर्य्य हुआ कि यह बड़ा निर्भय पुरुष है इतने में दूरसे किसी स्त्री के रोदनकासा शब्द राजाको सुनाई दिया रोदनको सुनके राजाने सोचा

समय पुररक्षकोंने उसे वहा खडा देखकर चोर जानकर फासीपर चढादियाथा उसे मराहुआ लटका देख कर वसुदत्ता हाय २ करके बहुत रोई और वृक्षपरसे उसे उतारके अपनी गोदी में लिटाके शोकके कारण मोहितहोके उसका आलिंगन करके जैसेही उसका मुख उठाके चुम्बन करनेलगी वैसेही उस मृतक पुरुष में वेतालने प्रवेशकरके उसकी नाककाटली इससे वह विह्वलहोकर उसे छोडके कुछदूर चली और यह शोचकर कि शायद यहजीता है उसे देखनेको फिर लौटआई परन्तु उसमेंसे वेताल निकल गयाथा इस से उसे निश्चेष्टपडा देखके वह धीरे २ वहासे रोतीहुई अपने,घरको चली उसका यह सब कर्म उस छिपेहुए चोरने देखकर शोचा कि हाय इसपापिनने क्याकिया अरे स्त्रियोंकाहृदय वडे भयकर अन्धकूपके समान अगाधहोताहै इसमें जो कोई गिरतेहैं उनका निकलना वहुत कठिनहै अव फिर चलकर देखनाचाहिये कि यहदुष्टा क्याकरतीहै यह शोचकर वह ,फिर उसीके पीछे २ चला और वह भी अपने घरमें जाकर रोके चिल्लानेलगी कि हाय २ मुझे बचाओ इसपतिरूपशत्रुने मुझ निरपराधिनीकी नाककाटली उसशब्द को सुनकर उसका पति पिता माता तथा सम्पूर्ण परिजन वहा इकट्ठे होगये और उसके पिताने अपनी कन्याकी नाककटी हुई देखकर अपने जामाताको क्रोधकरके वंधवाया परन्तु समुद्रदत्तने मूकके समान कुछ भी नहीं कहा तदनन्तर इसकोलाहलको सुनके चोरके चले जानेपर और रात्रिके व्यतीतहोजाने पर प्रात काल वसुदत्ताका पिता समुद्रदत्तको और उसनकटी वसुदत्ताको लेकर राजद्वारपरगया वहा राजा ने सम्पूर्ण अभियोग (मुकद्दमह) को सुनकर समुद्रदत्तके मारनेकी आज्ञादेदी तब राजाकी आज्ञासे समुद्रदत्तको मारनेके निमित्त लिये जातेहुए राजपुरुषोंसे मार्गमें उसचोरने आकर कहा कि इस निर पराधको मतमारो मैं इसका सब वृत्तान्त जानताहू राजाके पास मुझे लेचलो वहा मैं सब कहूगा उसके यहवचन सुनके वहराजपुरुष उसे राजाके पास लेगये वहा उसने राजाके आगे रात्रि का सब वृत्तान्त निवेदन करके कहा कि हे स्वामी जो आपको मेरे वचनों पर विश्वास न होय तो उसमृतक पुरुषके मुख में अभीतक नाकहै उसे आप किसी को भेजकर दिखवालीजिये उसके यहवचन सुनके राजाने अपने सेवकोंको भेजके उसमुर्देके मुखमें नाकको दिखवाकर उसचोरके वचने सत्य जानके समुद्रदत्त को वन्धनसे छुडवादिया, उसकी स्त्री वसुदत्ताके कानभी कटवाके अपने देशसे निकलवादिया वसु दत्ताके पिताका,सब मालधन छीनलिया और उसचोरपर प्रसन्नहोके उसे नगरका कोतवाल बनादिया इसप्रकारसे स्त्रिया स्वभावहीसे कठोरहृदय तथा दुष्टा होती हैं यहकहके वहतोता शापके क्षीणहोजानेके कारण चित्ररथनाम दिव्यरूप गन्धर्वहोकर आकाशको चलागया और वह मैनाभी शापके क्षीणहो जानेके कारण तिलोत्तमानाम अप्सराहोकर स्वर्गको चली गई और उनदोनों के विवादका सभा में कुछभी निर्णय नहींहुआ इससे हे राजा मैं आपसे पूछताहू कि आपही कहिये कि बहुधा पुरुष पापी होतेहैं या स्त्रिया पापिनी होतीहैं जो आप जानकेभी उत्तर न देंगे तो आपका शिरफट जायगा वेताल के यहवचन सुनकर राजा त्रिविक्रमसेनने मौन छोडकरकहा कि हे योगेश्वर स्त्रिया पापिनी होती हैं पुरुष तो कहीं २ कोई ऐसा दुराचारी होताहै परन्तु स्त्रिया प्राय सर्वत्र सदैव ऐसीही होती हैं राजाके यह

वचन सुनके वह वेताल फिर राजाके कन्धेपरसे उसीवृक्षपर जा लटका और राजा उसके लानेके लिये फिर उद्यतहुआ ६५॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांगंगाकरतीनम्बकेदशमस्तरङ्गः १०॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर वेतालके लेनेकेलिये उसीशीशोंके वृक्षके निकटगया और उस मुर्देको हँसते देखकर निर्भयहोके उसे अपने कन्धेपर रखकर लेचला तब वेतालने उससेकहा कि हे राजा इस दुष्ट भिक्षुककेलिये आप क्यों इतना परिश्रम करतेहो इस निष्फल कार्य्य करने में आपको जराभी विवेक नहीं होता अब मार्गमें आपका चित्त बहलानेके निमित्त में एककथा आपसे कहताहूं शोभावती नाम नगरीमें शूद्रकनाम एक बड़ा वीर राजाथा उसके प्रतापसे उसके सम्पूर्ण शत्रु अपने-देशोंको छोड़ सदैव वनोंहीमें बनेरहतेथे वह ऐसा धर्म्म करताथा कि जिससे सब प्रजामात्रको रामादिक राजाओंपर भी अनिच्छा होगईथी एक समय मालवदेशसे वीरवर नाम एक ब्राह्मण सेवा करने के निमित्त शोभावती नगरीमें आया उसके साथमें उसकी धर्म्मवती नाम स्त्री सत्त्ववर नाम पुत्र तथा वीरवती नाम कन्याथी यही उसका सब कुटुम्बथा और उसकी कमर में खड्ग और हाथमें ढालथी उसने राजासे आकर पांचसौ अशर्फी रोज वेतनकेलिये कही राजाने भी उसकी चेष्टासे उसके पुरुषार्थ का अनुमान करके वह वेतनदेना स्वीकार करलिया और अपने दूतोंको यह आज्ञादी कि छिपकर देखो यह इतनाधन सत्कार्य्यों में व्ययकरताहै या असत्कार्य्यमें वीरवर प्रातःकाल राजाके दर्शनकरके फाटक पर जाके मध्याह्नतक वहीं खड़ारहताथा फिर उन अशर्फियोंकोलेके घरमें जाकर उनमेंसे सौअशर्फी अपनी स्त्री को भोजनादिके खर्चको देताथा सौ अशर्फिया वस्त्र ताम्बूलादिमें खर्चकरताथा सौ अशर्फी स्नानके पीछे विष्णुभगवान्के पूजनमें लगाताथा और दोसौ अशर्फी दीन तथाब्राह्मणोंको बांटदेताथा इसप्रकार उन पांचोंसौ अशर्फियों को व्ययकरके और नित्य नैमित्तिक कार्योंसे निवृत्तहोकर राजा के फाटकपर जाकर रात्रिभर वहीं खड़ा रहता था दूतों के मुखसे उसकी यह नित्यचर्य्या सुनके राजा ने अपने दूतोंसे कहदिया कि अब उसकेसाथ न रहाकरो इसके उपरान्त कुछदिन व्यतीत होनेपर मानों वीरवरके धैर्यकी परीक्षा करनेकेलिये वर्षाऋतु प्राप्तहुई मेघोंने सम्पूर्ण आकाश घेरलिया बिजलीचमकने लगी और घोर जलकी वृष्टिहोनेलगी ऐसे घोर समयमें भी वीरवर नित्यके समान फाटकपरसे जरा भी नहींहटा एकदिन राजा शूद्रक उसकी परीक्षा करनेके लिये फाटकपर चढ़के ऊपरसे बोला कि फाटकपर कौनहै वीरवरने कहा कि मैंहूं उसके यह वचनसुनके राजाने सोचा कि यह बड़ावीरहै और मेरा परमभक्तहै इससे इसको कोई बड़ा अधिकार देना चाहिये यह सोचकर राजा फाटकपरसे उतरकर अन्तःपुरमें जाके सोया दूसरेदिन फिर रात्रिके समय बड़ी वृष्टिहोनेपर अन्धकारसे सम्पूर्ण दिशाओंके ढकजानेपर राजा शूद्रकने फिर उसकी परीक्षा करने के लिये ऊपर चढ़के पूछा कि फाटकपर कौनहै वीरवरने कहा कि मैंहूं उसके यह वचनसुनके राजा को बड़ा आश्चर्य्य हुआ कि यह बड़ा निर्भय पुरुष है इतने में दूरसे किसी स्त्री के रोदनकासा शब्द राजाको सुनाई दिया रोदनको सुनके राजाने सोचा

समय पुररक्षकोंने उसे वहा खडा देखकर चोर जानकर फासीपर चढादियाथा उसे मराहुआ लटका देख कर वसुदत्ता हाय २ करके बहुत रोई और वृक्षपरसे उसे उतारके अपनी गोदी में लिटाके शोकके कारण मोहितहोके उसका आलिंगन करके जैसेही उसका मुख उठाके चुम्बन करनेलगी वैसेही उस मृतक पुरुष में वेतालने प्रवेशकरके उसकी नाककाटली इससे वह विह्वलहोकर उसे छोडके कुछदूर चली और यह शोचकर कि शायद यहजीता है उसे देखनेको फिर लौटआई परन्तु उसमेंसे वेताल निकल गयाथा इस से उसे निश्चेष्टपडा देखके वह धीरे २ वहासे रोतीहुई अपने घरको चली उसका यह सब कर्म उस छिपेहुए चोरने देखकर शोचा कि हाय इसपापिनने क्याकिया अरे स्त्रियोंकाहृदय बडे भयरूर अन्धकूपके समान अगाधहोताहै इसमें जो कोई गिरतेहैं उनका निकलना बहुत कठिनहै अब फिर चलकर देखनाचाहिये कि यहदुष्टा क्याकरतीहै यह शोचकर वह फिर उसीके पीछे २ चला और वह भी अपने घरमें जाकर रोके चिल्लानेलगी कि हाय २ मुझे बचाओ इसपतिरूप शत्रुने मुझ निरपराधिनीकी नाककाटली उसशब्द को सुनकर उसका पति पिता माता तथा सम्पूर्ण परिजन वहा इकट्ठे होगये और उसके पिताने अपनी कन्याकी नाककटी हुई देखकर अपने जामाताको क्रोधकरके बधराया परन्तु समुद्रदत्तने मूकके समान कुछ भी नहीं कहा तदनन्तर इसकोलाहलको सुनके चोरके चले जानेपर और रात्रिके व्यतीतहोजाने पर प्रात काल वसुदत्ताका पिता समुद्रदत्तको और उसनकटी वसुदत्ताको लेकर राजद्वारपरगया वहा राजा ने सम्पूर्ण अभियोग (मुकद्दमह) को सुनकर समुद्रदत्तके मारनेकी आज्ञादेदी तब राजाकी आज्ञासे समुद्रदत्तको मारनेके निमित्त लिये जातेहुए राजपुरुषोंसे मार्गमें उसचोरने आकर कहा कि इस निर पराधको मतमारो मैं इसका सब वृत्तान्त जानताहू राजाके पास मुझे लेचलो वहा मैं सब कहूगा उसके यहवचन सुनके वहराजपुरुष उसे राजाके पास लेगये वहा उसने राजाके आगे रात्रि का सब वृत्तान्त निवेदन करके कहा कि हे स्वामी जो आपको मेरे वचनों पर विश्वास न होय तो उसमृतक पुरुषके मुख में अभीतक नाकहै उसे आप किसी को भेजकर दिखवालीजिये उसके यहवचन सुनके राजाने अपने सेवकोंको भेजके उसमुर्दके मुखमें नाकको दिखवाकर उसचोरके वचन सत्य जानके समुद्रदत्त को बन्धनसे छुडवादिया, उसकी स्त्री वसुदत्ताके कानभी कटवाके अपने देशसे निकलवादिया वसु दत्ताके पिताका, सब मालधन छीनलिया और उसचोरपर प्रसन्नहोके उसे नगरका कोतवाल बनादिया इसप्रकारसे स्त्रिया स्वभावहीसे कठोरहृदय तथा दुष्टा होती हैं यहकहके वहतोता शापके क्षीणहोजानेके कारण चित्ररथनाम दिव्यरूप गन्धर्वहोकर आकाशको चलागया और वह मैनाभी शापके क्षीणहो जानेके कारण तिलोत्तमानाम अप्सराहोकर स्वर्गको चली गई और उनदोनों के विवादका सभा में कुछभी निर्णय नहींहुआ इससे हे राजा मैं आपसे पूछताहू कि आपही कहिये कि बहुधा पुरुष पापी होतेहैं या स्त्रिया पापिनी होतीहैं जो आप जानकेभी उत्तर न देंगे तो आपका शिरफट जायगा वेताल के यहवचन सुनकर राजा त्रिविक्रमसेनने मौन छोडकरकहा कि हे योगेश्वर स्त्रिया पापिनी होती हैं पुरुष तो कहीं २ कोई ऐसा दुराचारी होताहै परन्तु स्त्रिया प्राय सर्वत्र सदैव ऐसीही होती हैं राजाके यह

वचन सुनके वह वेताल फिर राजाके कन्धेपरसे उसीवृक्षपर जा लटका और राजा उसके लानेके लिये फिर उद्यतहुआ ६५॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेदशमस्तरङ्गः १०॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर वेतालके लेनेकेलिये उसीशीशोंके वृक्षके निकटगया और उस मुर्देको हँसते देखकर निर्भयहोके उसे अपने कन्धेपर रखकर लेचला तब वेतालने उससेकहा कि हे राजा इस दुष्ट भिक्षुकेलिये आप क्यों इतना परिश्रम करतेहो इस निष्फल कार्य्य करने में आपको जराभी विवेक नहीं होता अब मार्गमें आपका चित्त बहलानेके निमित्त मैं एककथा आपसे कहताहूं शोभावती नाम नगरीमें शूद्रकनाम एक बडा वीर राजाथा उसके प्रतापसे उसके सम्पूर्ण शत्रु अपने-देशोंको छोड सदैव वनोंहीमें बनेरहतेथे वह ऐसा धर्म्म करताथा कि जिससे सब प्रजामात्रको रामादिक राजाओंपर भी अनिच्छा होगईथी एक समय मालवदेशसे वीरवर नाम एक ब्राह्मण सेवा करने के निमित्त शोभावती नगरीमें आया उसके साथमें उसकी धर्म्मवती नाम स्त्री सत्त्ववर नाम पुत्र तथा वीरवती नाम कन्याथी यही उसका सब कुटुम्बथा और उसकी कमर में खड्ग और हाथमें ढालथी उसने राजासे आकर पाचसौ अशर्फी रोज वेतनकेलिये कही राजाने भी उसकी चेष्टासे उसके पुरुषार्थ का अनुमान करके वह वेतनदेना स्वीकार करलिया और अपने दूतोंको यह आज्ञादी कि छिपकर देखो यह इतनाधन सत्कार्य्यों में व्ययकरताहै या असत्कार्य्यमें वीरवर प्रातःकाल राजाके दर्शनकरके फाटक पर जाके मध्याह्नतक वहीं खडारहताथा फिर उन अशर्फियोंकोलेके घरमें जाकर उनमेंसे सौ अशर्फी अपनी स्त्री को भोजनादिके खर्चको देताथा सौ अशर्फिया वस्त्र ताम्बूलादिमें खर्चकरताथा सौ अशर्फी स्नानके पीछे विष्णुभगवान्‌के पूजनमें लगाताथा और दोसौ अशर्फी दीन तथाब्राह्मणोंको बाटदेताथा इसप्रकार उन पाचोंसौ अशर्फियों को व्ययकरके और नित्य नैमित्तिक कार्योंसे निवृत्तहोकर राजा के फाटकपर जाकर रात्रिभर वहीं खडा रहता था दूतों के मुखसे उसकी यह नित्यचर्य्या सुनके राजा ने अपने दूतोंसे कहदिया कि अब उसकेसाथ न रहाकरो इसके उपरान्त कुछदिन व्यतीत होनेपर मानो वीरवरके धैर्यकी परीक्षा करनेकेलिये वर्षाऋतु प्राप्तहुई मेघोंने सम्पूर्ण आकाश घेरलिया बिजलीचमकने लगी और घोर जलकी वृष्टिहोनेलगी ऐसे घोर समयमें भी वीरवर नित्यके समान फाटकपरसे जरा भी नहींहटा एकदिन राजा शूद्रक उसकी परीक्षा करनेके लिये फाटकपर चढके ऊपरसे बोला कि फाटकपर कौनहै वीरवरने कहा कि मैंहूं उसके यह वचनसुनके राजाने सोचा कि यह बडावीरहै और मेरा परमभक्तहै इससे इसको कोई बड़ा अधिकार देना चाहिये यह सोचकर राजा फाटकपरसे उतरकर अन्तःपुरमें जाके सोया दूसरेदिन फिर रात्रिके समय बडी वृष्टिहोनेपर अन्धकारसे सम्पूर्ण दिशाओंके ढकजानेपर राजा शूद्रकने फिर उसकी परीक्षा करने के लिये ऊपर चढके पूछा कि फाटकपर कौनहै वीरवरने कहा कि मैंहूं उसके यह वचनसुनके राजा को बड़ा आश्चर्य्य हुआ कि यह बड़ा निर्भय पुरुष है इतने में दूरसे किसी स्त्री के रोदनकासा शब्द राजाको सुनाई दिया रोदनको सुनके राजाने सोचा

समय पुररक्षकोंने उसे वहा खडा देखकर चोर जानकर फासीपर चढादियाथा उसे मराहुआ लटका देख कर वसुदत्ता हाय २ करके बहुत रोई और वृक्षपरसे उसे उतारके अपनी गोदी में लिटाके शोकके कारण मोहितहोके उसका आलिंगन करके जैसेही उसका मुख उठाके चुम्बन करनेलगी वैसेही उस मृतक पुरुष में वेतालने प्रवेशकरके उसकी नाककाटली इससे वह विह्वलहोकर उसे छोडके कुछदूर चली और यह शोचकर कि शायद यहजीता है उसे देखनेको फिर लौटआई परन्तु उसमेंसे वेताल निकल गयाथा इस से उसे निश्चेष्टपडा देखके वह धीरे २ वहासे रोतीहुई अपने घरको चली उसका यह सब कर्म उस छिपेहुए चोरने देखकर शोचा कि हाय इसपापिनने क्याकिया अरे स्त्रियोंकाहृदय बडे भयङ्कर अन्धकूपके समान अगाधहोताहै इसमें जो कोई गिरतेहैं उनका निकलना बहुत कठिनहै अब फिर चलकर देखनाचाहिये कि यहदुष्टा क्याकरतीहै यह शोचकर वह फिर उसीके पीछे २ चला और वह भी अपने घरमें जाकर रोके चिल्लानेलगी कि हाय २ मुझे बचाओ इसपतिरूप शत्रुने मुझ निरपराधिनीकी नाककाटली उसशब्द को सुनकर उसका पति पिता माता तथा सम्पूर्ण परिजन वहा इकट्ठे होगये और उसके पिताने अपनी कन्याकी नाककटी हुई देखकर अपने जामाताको क्रोधकरके बंधवाया परन्तु समुद्रदत्तने मूकके समान कुछ भी नहीं कहा तदनन्तर इसकोलाहलको सुनके चोरके चले जानेपर और रात्रिके व्यतीतहोजाने पर प्रात काल वसुदत्ताका पिता समुद्रदत्तको और उसनकटी वसुदत्ताको लेकर राजद्वारपरगया वहा राजा ने सम्पूर्ण अभियोग (मुकद्दमह) को सुनकर समुद्रदत्तके मारनेकी आज्ञादेदी तब राजाकी आज्ञासे समुद्रदत्तको मारनेके निमित्त लिये जातेहुए राजपुरुषोंसे मार्गमें उसचोरने आकर कहा कि इस निर पराधको मतमारो मैं इसका सब वृत्तान्त जानताहू राजाके पास मुझे लेचलो वहा मैं सब कहूगा उसके यहवचन सुनके वहराजपुरुष उसे राजाके पास लेगये वहा उसने राजाके आगे रात्रि का सब वृत्तान्त निवेदन करके कहा कि हे स्वामी जो आपको मेरे वचनों पर विश्वास न होय तो उसमृतक पुरुषके मुख में अभीतक नाकहै उसे आप किसी को भेजकर दिखवालीजिये उसके यहवचन सुनके राजाने अपने सेवकोंको भेजके उसमुर्देके मुखमें नाकको दिखवाकर उसचोरके वचन सत्य जानके समुद्रदत्त को बन्धनसे छुडवादिया, उसकी स्त्री वसुदत्ताके कानभी कटवाके अपने देशसे निकलवादिया वसु दत्ताके पिताका सब मालधन छीनलिया और उसचोरपर प्रसन्नहोके उसे नगरका कोतवाल बनादिया इसप्रकारसे स्त्रिया स्वभावहीसे कठोरहृदय तथा दुष्टा होती हैं यहकहके वहतोता शापके क्षीणहोजानेके कारण चित्ररथनाम दिव्यरूप गन्धर्वहोकर आकाशको चलागया और वह मैनाभी शापके क्षीणहो जानेके कारण तिलोत्तमानाम अप्सराहोकर स्वर्गको चली गई और उनदोनों के विवादका सभा में कुछभी निर्णय नहींहुआ इससे हे राजा में आपसे पूछताहू कि आपही कहिये कि बहुधा पुरुष पापी होतेहैं या स्त्रिया पापिनी होतीहैं जो आप जानकेभी उत्तर न देंगे तो आपका शिरफटजायगा वेताल के यहवचन सुनकर राजा त्रिविक्रमसेनने मौन छोडकरकहा कि हे योगेश्वर स्त्रिया पापिनी होती हैं पुरुष तो कहीं २ कोई ऐसा दुराचारी होताहै परन्तु स्त्रिया प्राय सर्वत्र सदैव ऐसीही होती हैं राजाके यह

वचन सुनके वह वेताल फिर राजाके कन्धेपरसे उसीवृक्षपर जा लटका और राजा उसके लानेके लिये फिर उद्यतहुआ ६५॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेदशमस्तरङ्ग १०॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर वेतालके लेनेकेलिये उसीशीशोंके वृक्षके निकटगया और उस मुर्देको हँसते देखकर निर्भयहोके उसे अपने कन्धेपर रखकर लेचला तब वेतालने उससेकहा कि हे राजा इस दुष्ट भिक्षुककेलिये आप क्यों इतना परिश्रम करतेहो इस निष्फल कार्य्य करने में आपको जराभी विवेक नहीं होता अब मार्गमें आपका चित्त बहलानेके निमित्त मैं एककथा आपसे कहताहूं शोभावती नाम नगरीमें शूद्रकनाम एक बडा वीर राजाथा उसके प्रतापसे उसके सम्पूर्ण शत्रु अपने-देशोंको छोड सदैव वनोंहीमें बनेरहतेथे वह ऐसा धर्म्म करताथा कि जिससे सब प्रजामात्रको रामादिक राजाओंपर भी अनिच्छा होगईथी एक समय मालवदेशसे वीरवर नाम एक ब्राह्मण सेवा करने के निमित्त शोभावती नगरीमें आया उसके साथमें उसकी धर्म्मवती नाम स्त्री सत्त्ववर नाम पुत्र तथा वीरवती नाम कन्याथी यही उसका सब कुटुम्बथा और उसकी कमर में खड्ग और हाथमें ढालथी उसने राजासे आकर पांचसौ अशर्फी रोज वेतनकेलिये कही राजाने भी उसकी चेष्टासे उसके पुरुषार्थ का अनुमान करके वह वेतनदेना स्वीकार करलिया और अपने दूतोंको यह आज्ञादी कि छिपकर देखो यह इतनाधन सत्कार्य्योंमें व्ययकरताहै या असत्कार्य्यमें वीरवर प्रातःकाल राजाके दर्शनकरके फाटक पर जाके मध्याह्नतक वहीं खडारहताथा फिर उन अशर्फियोंकोलेके घरमें जाकर उनमेंसे सौ अशर्फी अपनी स्त्री को भोजनादिके खर्चको देताथा सौ अशर्फिया वस्त्र ताम्बूलादिमें खर्चकरताथा सौ अशर्फी स्नानके पीछे विष्णुभगवान्के पूजनमें लगाताथा और दोसौ अशर्फी दीन तथाब्राह्मणोंको बांटदेताथा इसप्रकार उन पांचोंसौ अशर्फियों को व्ययकरके और नित्य नैमित्तिक कार्योंसे निवृत्तहोकर राजा के फाटकपर जाकर रात्रिभर वहीं खडा रहता था दूतों के मुखसे उसकी यह नित्यचर्य्या सुनके राजा ने अपने दूतोंसे कहदिया कि अब उसकेसाथ न रहाकरो इसके उपरान्त कुछदिन व्यतीत होनेपर मानों वीरवरके धैर्यकी परीक्षा करनेकेलिये वर्षाऋतु प्राप्तहुई मेघोंने सम्पूर्ण आकाश घेरलिया बिजलीचमकने लगी और घोर जलकी वृष्टिहोनेलगी ऐसे घोर समयमें भी वीरवर नित्यके समान फाटकपरसे जरा भी नहींहटा एकदिन राजा शूद्रक उसकी परीक्षा करनेके लिये फाटकपर चढके ऊपरसे बोला कि फाटकपर कौनहै वीरवरने कहा कि मैंहूं उसके यह वचनसुनके राजाने शोचा कि यह बडावीरहै और मेरा परमभक्तहै इससे इसको कोई बडा अधिकार देना चाहिये यह शोचकर राजा फाटकपर से उतरकर अन्तःपुरमें जाके सोया दूसरेदिन फिर रात्रिके समय बडी वृष्टिहोनेपर अन्धकारसे सम्पूर्ण दिशाओंके ढकजानेपर राजा शूद्रकने फिर उसकी परीक्षा करने के लिये ऊपर चढके पूछा कि फाटकपर कौनहै वीरवरने कहा कि मैंहूं उसके यह वचनसुनके राजा को बडा आश्चर्य्य हुआ कि यह बडा निर्भय पुरुष है इतने में दूरसे किसी स्त्री के रोदनकासा शब्द राजाको सुनाई दिया रोदनको सुनके राजाने शोचा

कि मेरे राज्यमें न कोई दरिद्री है न कोई दुःखितहै और न कोई किसीको दुःखदेताहै तो यह कौन अकेली रोरही है यह शोचकर उसने वीरवरसे कहा कि हे वीरवर जाकर तुम देखो कि यह कौनस्त्री रोरही है राजा के वचनसुनतेही वीरवर खड्ग लेकर अकेलाही उस अन्धकारमें चला उसे जाते देखकर राजा भी दया युक्त होके फाटकसे उतरकर उसके पीछे २ चला वीरवर उस रोदन के शब्दके अनुसार नगरी के बाहर जाके एक तडाग के निकट पहुचा उस तडागके जलमें एक स्त्री हा शूर हा कृपालो हा त्यागी तुम्हारे विना मैं कैसे रहूंगी यह कह २ कर रोदनकररहीथी उसे देखके वीरवरने उससे पूछा कि तुम कौनहो और क्यों रोरहीहो यह सुनकर उसने कहा कि हे वीरवरमें पृथ्वीहू इस समय परमधार्मिक शूद्रकही मेरा राजा है आजसे तीसरे दिन उसकी मृत्यु होजायगी फिर मुझे ऐसा धर्म्मात्मा पति कहा मिलैगा इसीसे मै रोरहीहू उसके यह वचन सुनके वीरवरने कहा कि हे भगवती ऐसा कोई उपायहै जिससे इस धर्म्मात्मा राजाकी मृत्यु न होय यह सुनके पृथ्वीने कहा कि इसका एकही उपाय है और वह तुम्हीं करसक्ते हो दूसरा नहीं करसक्ता यह सुनके वीरवरने कहा कि हे भगवती जल्दी बताओ मैं अभी जाकरकरू नहीं तो मेरा जीवनही व्यर्थ है यह सुनकर पृथ्वी ने कहा कि हे वीरवर तुम बडेशूरहो और अपने स्वामीके बडेभक्तहो इससे उपायको सुनों यह जो राजमन्दिर के निकट राजा ने चण्डिका देवीकी स्थापनाकी है उनके आगे तुम अपने सत्त्ववर पुत्रको जाके भेटकरोगे तो यह राजा सौवर्ष जीवेगा जो आजही तुम इसकार्य्यको करोगे तो कल्याणहै नहींतो आजसे तीसरेही दिन राजाकीमृत्यु अवश्य होजायगी पृथ्वी के यहवचनसुनके वीरवरने कहा कि मै अभीजाके इसकार्य्यको करताहू उसके यहवचनसुनके तुम्हारा कल्याणहोय यहकहके पृथ्वी के अन्तर्द्धान होजानेपर वीरवर अपने घरको चलागया और राजाशूद्रक भी पृथ्वी के तथा वीरवरके इस वार्त्तालापको सुनकर वीरवरके पीछेही पीछे छिपाहुआ उसके घरतक गया अपने घरमे पहुचके वीरवरने अपनी स्त्रीको जगाके पृथ्वीका कहाहुआ सब वृत्तान्त उससे कहा यह सुनकर धर्म्मवती ने कहा कि हे आर्य्यपुत्र स्वामीका कार्य्य तो अवश्य करनाचाहिये इससे आप सत्त्ववरको जगाके यह सब वृत्तान्त कहिये यहसुनके वीरवरने सत्त्ववरको जगाके उससे यह सबवृत्तात कहदिया यह सुनकर सत्त्ववरने दृढचित्तहोकर कहा कि हे तात मै धन्यहू जो मेरे प्राणके व्ययसे राजा के जीवकी रक्षाहोय और मैंने जो राजाका धान्यखायाहै उससे भी मेरा उद्धार होजायगा अब आप क्यों देर करतेहो मुझे लेचलो और जल्दी से भगवती के भेटकरो जिससे राजाका कल्याणहोय सत्त्ववरके यह वचन सुनके वीरवरने कहा कि हे पुत्र स्यावासहै तुम मेरेही वीर्य्य से उत्पन्नहुएहो उनसबकी यह वार्त्तालाप सुनकर बाहर खडेहुए राजाने अपने चित्तमें कहा कि इन सबका सत्त्व समानहै तब वीरवर सत्त्ववरको कन्धेपर चढाके और धर्म्मवती अपनी वीरवती नाम कन्याको गोदमे लेके दोनों भगवती के मन्दिरको चले राजा शूद्रक भी छिपाहुआ उन्हींके पीछे २ चला ६६ भगवती के मन्दिर में पहुचके सत्त्ववर वीरवरके कन्धेपर से उतरकर भगवती के आगे हाथजोडके बोला कि हे भगवती मेरे शिरकी भेटसे राजा शूद्रक और सौ वर्ष जीकर अकटक राज्यकरे उसके यहवचन सुनके वीरवरने खड्ग

से सत्त्ववरका शिरकाटके भगवती के आगे रखदिया और कहा कि हे भगवती मेरेपुत्रकी भेटमे राजा शूद्रक चिरजीवीहोय उस समय यह आकाशवाणीहुई कि हे वीरवर तुम्हारे समान और कौन स्वामि भक्तहै जिसने अपने पुत्रकेप्राणो के व्ययसे भी राजा शूद्रकके प्राण तथा राज्यकी रक्षाकी, सत्त्ववरको मरा देखकर वीरवरकी कन्या वीरवती भाई के स्नेह से ऐसी व्याकुलहुई कि उसका हृदय फटकर प्राण निकलगये तब धर्म्मवती ने वीरवरसे कहा कि राजाका कल्याण तो आप करचुके अब मे एकप्रार्थना करतीहू उसे आप स्वीकार कीजिये कि जब यह अज्ञानकन्याभी भाईके शोकसे मरगई तो कन्या तथा पुत्र दोनों के नष्टहोजानेपर मे जीकर क्या करूगी मैने पहलेही राजाके कल्याणके निमित्त अपना शिर नहीं चढादिया यहमेरी बडी मूर्खताहुई अब आपआज्ञादीजिये तो मे अपने कन्या पुत्र दोनोंका शरीरलेकर अग्निमे भस्महोजाऊ उसके यह वचन सुनके वीरवरने कहा कि अच्छाहै ऐसाहीकरो सन्तानकेशोकसे इसदु समय ससारमें अब तुम्हे क्यासुखहै परतु यहपश्चात्ताप मतकरो कि मैंने पहलेही राजाके कल्याण के निमित्त अपना शिर भगवती के अर्थ नहीं भेटकिया क्योकि जो यह कार्य्य अन्य से सिद्धहोनेके योग्यहोता तो मैंही अपना शिर भगवती के अर्पण क्यों न करता इसमे सन्तोषकरो मे तुम्हारे लिये चिता लगायेदेताहू यहकहके वीरवरने काष्ठ इकट्ठा कर चितालगाकर उसपर अपने पुत्र तथा कन्याके शरीरको रखके अग्निलगादी तब धर्म्मवती वीरवरके चरणो में गिरकर तथा भगवती को प्रणामकरके बोली कि हे भगवती जन्मान्तरमें भी यही आर्य्यपुत्र मेरे पतिहोयँ और मेरेइस शरीर से स्वामीका कल्याणहो यह कहके वह भी चितामे कूदकर भस्महोगई तब वीरवरने शोचा कि राजा का कार्य्य तो सिद्धहोचुका क्योकि आकाशवाणीही कहगई इसमे राजाका जो अन्न मैंने खायाहै उससे मेरा उद्धारहोगया तो अब मुझ अकेलेको प्राणोंका लोभकरने से क्या प्रयोजनहै अनेकप्रकारके क्लेश सहकर कुटुम्बका पालन करना तो मनुष्यका धर्म्म है परन्तु जब कुटुम्बही नहींहै तो मुझ सरीखे का अकेला जीना शोभित नहींहोता इससे मे भी अपने शिरको भगवती के अर्पणकरके क्यों न भगवती को प्रसन्न करू यह शोचकर प्रथम भगवती की उसने यह स्तुति की कि हे महिषासुर के मारनेवाली रुरु दानवोंको विदीर्ण करनेवाली त्रिशूल धारण करनेवाली भगवती तुम्हारी सदैव जयहोय हे सम्पूर्ण देवताओं को आनन्द देनेवाली हे त्रैलोक्य की धारण करनेवाली हे जगन्माता तुम्हारी जयहोय हे जगत्पूजितचरणारविन्दे हे त्रैलोक्यशरणे हे भक्तभयहारिणि तुम्हारी जय होय हे कोटि सूर्य्य के समान प्रभाववाली हे पापरूप अन्धकारको दूर करनेवाली तुम्हारी जय होय हे काली हे कपालिनी हे कङ्कालिनी तुम्हारी जयहोय हे भगवती तुमको बारबार नमस्कारहै मेरे मस्तक की भेटमे तुम राजा शूद्रकपर प्रसन्न होओ यह कहकर वीरवर ने खड्ग से अपना शिरकाटडाला यह देखकर राजा शूद्रक दुःखित तथा आश्चर्य्य मे युक्त होकर शोचने लगा कि सकुटुम्ब इस वीरवर ने मेरे लिये यह बडा दुष्कर कार्य्य किया इस विचित्र ससार में ऐसा वीर पुरुष कहा मिलसकता है जो बिना कहे सुनेही परोक्ष मे अपने स्वामी के निमित्त सकुटुम्ब अपने प्राणोको देदे जो इस उपकारका मै कुछ प्रत्युपकार न कर

कि मेरे राज्यमें न कोई दरिद्री है न कोई दुःखितहै और न कोई किसीको दुःखदेताहै तो यह कौन अकेली रोरही है यह शोचकर उसने वीरवरसे कहा कि हेवीरवर जाकर तुम देखो कि यह कौनस्त्री रोरहीहै राजा के वचनसुनतेही वीरवर खड्ग लेकर अकेलाही उस अन्धकारमें चला उसे जाते देखकर राजा भी दया युक्त होके फाटकसे उतरकर उसके पीछे २ चला वीरवर उस रोदन के शब्दके अनुसार नगरी के बाहर जाके एक तडाग के निकट पहुचा उस तडागके जलमें एक स्त्री हा शूर हा कृपालो हा त्यागी तुम्हारे विना मैं कैसे रहूंगी यह कह २ कर रोदनकररहीथी उसे देखके वीरवरने उससे पूछा कि तुम कौनहो और क्यों रोरहीहो यहसुनकर उसने कहा कि हे वीरवरमैं पृथ्वीहूं इस समय परमधार्मिक शूद्रकही मेरा राजा है आजसे तीसरे दिन उसकी मृत्यु होजायगी फिर मुझे ऐसा धर्म्मात्मा पति कहा मिलैगा इसीसे मैं रोरहीहूं उसके यह वचन सुनके वीरवरने कहा कि हे भगवती ऐसा कोई उपायहै जिससे इस धर्म्मात्मा राजाकी मृत्यु न होय यह सुनके पृथ्वीने कहा कि इसका एकही उपाय है और वह तुम्हीं करसक्ते हो दूसरा नही करसक्ता यह सुनके वीरवरने कहा कि हे भगवती जल्दी बताओ मैं अभी जाकरकरूं नहीं तो मेरा जीवनही व्यर्थ है यह सुनकर पृथ्वी ने कहा कि हे वीरवर तुम बडेशूरहो और अपने स्वामीके बडेभक्तहो इससे उपायको सुनो यह जो राजमन्दिर के निकट राजा ने चण्डिका देवीकी स्थापनाकी है उनके आगे तुम अपने सत्त्ववर पुत्रको जाके भेटकरोगे तो यह राजा सौवर्ष जीवेगा जो आजही तुम इसकार्य्यको करोगे तो कल्याणहै नहींतो आजसे तीसरेही दिन राजाकीमृत्यु अवश्य होजायगी पृथ्वी के यहवचनसुनके वीरवरने कहा कि मैं अभीजाके इसकार्य्यको करताहूं उसके यहवचनसुनके तुम्हारा कल्याणहोय यहकहके पृथ्वी के अन्तर्द्धान होजानेपर वीरवर अपने घरको चलागया और राजाशूद्रक भी पृथ्वी के तथा वीरवरके इस वार्त्तालापको सुनकर वीरवरके पीछेही पीछे छिपाहुआ उसके घरतक गया अपने घरमे पहुचके वीरवरने अपनी स्त्रीको जगाके पृथ्वीका कहाहुआ सब वृत्तान्त उससे कहा यह सुनकर धर्म्मवती ने कहा कि हे आर्य्यपुत्र स्वामीका कार्य्य तो अवश्य करनाचाहिये इससे आप सत्त्ववरको जगाके यह सब वृत्तान्त कहिये यहसुनके वीरवरने सत्त्ववरको जगाके उससे यह सबवृत्तात कहदिया यह सुनकर सत्त्ववरने दृढचित्तहोकर कहा कि हे तात मैं धन्यहूं जो मेरेप्राणके व्ययसे राजा के जीनकी रक्षाहोय और मैंने जो राजाका धान्यखायाहै उससे भी मेरा उद्धार होजायगा अब आप क्यों देर करतेहो मुझे लेचलो और जल्दी से भगवती के भेटकरो जिससे राजाका कल्याणहोय सत्त्ववरके यह वचन सुनके वीरवरने कहा कि हे पुत्र स्याबासहै तुम मेरेही वीर्य्य से उत्पन्नहुएहो उनसबकी यह वार्त्तालाप सुनकर बाहर खडेहुए राजाने अपने चित्तमें कहा कि इन सबका सत्त्व समानहै तब वीरवर सत्त्ववरको कन्धेपर चढाके और धर्म्मवती अपनी वीरवती नाम कन्याको गोदमें लेके दोनों भगवती के मन्दिरको चले राजा शूद्रक भी छिपाहुआ उन्हीं के पीछे २ चला ६६ भगवती के मन्दिर मे पहुंचके सत्त्ववर वीरवरके कन्धेपर से उतरकर भगवती के आगे हाथजोडके बोला कि हे भगवती मेरे शिरकी भेटसे राजा शूद्रक और सौ वर्ष जीकर अकण्टक राज्यकरे उसके यहवचन सुनके वीरवरने खड्ग

से सत्ववरका शिरकाटके भगवती के आगे रखदिया और कहा कि हे भगवती मेरेपुत्रकी भेटमे राजा शूद्रक चिरजीवीहोय उस समय यह आकाशवाणीहुई कि हे वीरवर तुम्हारे समान और कौन स्वामिभक्तहै जिसने अपने पुत्रकेप्राणो के व्ययसे भी राजा शूद्रकके प्राण तथा राज्यकी रक्षाकी, सत्ववरको मरा देखकर वीरवरकी कन्या वीरवती भाई के स्नेह से ऐसी व्याकुलहुइ कि उसका हृदय फटकर प्राण निकलगये तब धर्म्मवती ने वीरवरसे कहा कि राजाका कल्याण तो आप करचुके अब मैं एकप्रार्थना करतीहू उसे आप स्वीकार कीजिये कि जब यह अज्ञानकन्याभी भाई के शोकसे मरगई तो कन्या तथा पुत्र दोनों के नष्टहोजानेपर म जीकर क्या करूगी मैंने पहलेही राजाके कल्याणके निमित्त अपना शिर नहीं चढादिया यहमेरी बडी मूर्खताहुई अब आपआज्ञादीजिये तो मैं अपने कन्या पुत्र दोनोका शरीरलेकर अग्निमे भस्महोजाऊ उसके यह वचन सुनके वीरवरने कहा कि अच्छाहै ऐसाहीकरो सन्तानकेशोकसे इसदु खमय ससारमें अब तुम्हें क्यासुखहै परतु यहपश्चात्ताप मतकरो कि मैंने पहलेही राजाके कल्याण के निमित्त अपना शिर भगवती के अर्थ नहीं भेटकिया क्योंकि जो यह कार्य्य अन्य से सिद्धहोनेके योग्यहोता तो मैंही अपना शिर भगवती के अर्पण क्यों न करता इससे सन्तोषकरो मैं तुम्हारे लिये चिता लगायेदेताहू यहकहके वीरवरने काठ इकट्ठाकर चितालगाकर उसपर अपने पुत्र तथा कन्याके शरीरको रखके अग्निलगादी तब धर्म्मवती वीरवरके चरणों में गिरकर तथा भगवती को प्रणामकरके बोली कि हे भगवती जन्मान्तरमे भी यही आर्य्यपुत्र मेरे पतिहोयें और मेरे इस शरीर से स्वामीका कल्याणहो यह कहके वह भी चितामे कूदकर भस्महोगई तब वीरवरने शोचा कि राजा का कार्य्य तो सिद्धहोचुका क्योंकि आकाशवाणीही कहगई इससे राजाका जो अन्न मैंने खायाहै उससे मेरा उद्धारहोगया तो अब मुझ अकेलेको प्राणोंका लोभकरने मे क्या प्रयोजनहै अनेकप्रकारके क्लेश सहकर कुटुम्बका पालन करना तो मनुष्यका धर्म्म है परन्तु जब कुटुम्बही नहींहै तो मुझ सरीके का अकेला जीना शोभित नहींहोता इससे मैं भी अपने शिरको भगवती के अर्पणकरके क्यों न भगवती को प्रसन्न करू यह शोचकर प्रथम भगवती की उसने यह स्तुति की कि हे महिषासुर के मारनेवाली रुरु दानवोंको विदीर्ण करनेवाली त्रिशूल धारण करनेवाली भगवती तुम्हारी सदैव जयहोय हे सम्पूर्ण देवताओं को आनन्द देनेवाली हे त्रैलोक्य की धारण करनेवाली हे जगन्माता तुम्हारी जयहोय हे जगत्पूजित चरणारविन्दे हे त्रैलोक्यशरणे हे भक्तभयहारिणि तुम्हारी जय होय हे कोटि सूर्य्य के समान प्रभावाली हे पापरूप अन्धकारको दूर करनेवाली तुम्हारी जय होय हे काली हे कपालिनी हे कङ्कालिनी तुम्हारी जयहोय हे भगवती तुमको वारवार नमस्कारहै मेरे मस्तक की भेटमे तुम राजा शूद्रकपर प्रसन्न होओ यह कहकर वीरवर ने खड्ग से अपना शिरकाटडाला यह देखकर राजा शूद्रक दुःख तथा आश्चर्य मे युक्त होकर शोचने लगा कि सकुटुम्ब इस वीरवर ने मेरे लिये यह बडा दुष्कर कार्य्य किया इस विचित्र ससार में ऐसा वीर पुरुष कहा मिलसक्ता है जो विना कहे सुनेही परोक्ष मे अपने स्वामी के निमित्त सकुटुम्ब अपने प्राणोंको देदे जो इस उपकारका मैं कुछ प्रत्युपकार न करू

तो मेरा प्रभुत्वही क्या है और पशुओं के समान इस जीवन को धिक्कारहै यह शोचकर राजा ने खड्ग निकालके भगवती के निकट जाके कहा कि हे भगवती मेरे मस्तककी भेटसे प्रसन्न होकर यह अनुग्रहकरो कि यह वीरवर अपने सब कुटुम्ब समेत जीउठे यह कहके जैसेही उसने अपना शिर काटना चाहा वैसेही यह आकाशवाणी हुई कि हे पुत्र सहसा न करो मै तुम्हारे सत्त्वसे प्रसन्न हू यह सकुटुम्ब वीरवर जीउठेगा इस आकाशवाणी को सुनकर राजा अलग छिपकर खडाहोगया और सकुटुम्ब वीरवर जीउठा उससमय वीरवर ने अपने स्त्री पुत्र तथा कन्याको जीवित देखकर चकित होके बोला कि लोग भस्म होकर भी कैसे जीउठे और मैने भी अपना शिर काटडालाथा मै भी कैसे जीउठा यह भ्रम है अथवा भगवती की कृपा है उसके वचन सुनके उन्होने कहा कि भगवतीकीही कृपाहै जो हम सब लोग जीउठे उनके यह वचन सत्य जानकर वीरवर भगवती को प्रणामकर सबको साथ लेके अपने घरगया और उनको घर मे पहुँचाके फिर आकर राजाके फाटकपर खडाहोगया और राजा शूद्रकभी इस सब वृत्तान्तको देखकर ऊपर छिपाहुआही जाकर वहासे बोला कि फाटकपर कौनहै वीरवरनेकहा कि मैं हू आपकी आज्ञासे मै उस स्त्रीको देखनेगयाथा परन्तु वह मेरे देखतेही देखते राक्षसी के समान न जानिये कहाचलीगई यह सुनके राजाने चकितहोके शोचा कि देखो सत्त्ववान् मनुष्य कैसे समुद्र के समान गभीरहोते है जो ऐसे २ कार्य्यों को करकेभी नहीं कहते यह शोचकर उसने अन्तःपुर मे जाके वह रात्रि व्यतीतकरके प्रातःकाल सभामें वीरबरके आगे अपने मन्त्रियोंसे रात्रिका सबवृत्तान्त कहा और प्रसन्नहोकर वीरवरको लाट तथा कर्नाटदेशका राज्य देदिया तब वीरवर शूद्रककेही समान ऐश्वर्य्यवान् होकर उसका उपकार करताहुआ सुखपूर्व्वक रहनेलगा इस अद्भुत कथाको कहकर वेतालने राजासे कहा कि हे राजा बताओ इन सबमें कौनअधिक वीरथा जानकर भी जो आप उत्तर न देंगे तो आपका शिर फटजायगा राजानेकहा कि इन सबमे राजाशूद्रक अधिक वीरथा यह सुनकर वेतालने कहा कि वीरवर क्योनहीं अधिकहै जिसकेसमान इस पृथ्वी में होतेहीनही अथवा उसकी स्त्री क्योंनहीं अधिकहै जिसने स्त्री होकरभी अपनेआगेही अपनेपुत्रका बलिदान करवाया अथवा उसका पुत्र सत्त्ववरही क्योंनहीं अधिकवीरहै जो बाल्यावस्थाही में ऐसा सत्त्ववान्था यह सुनके राजा ने कहा कि ऐसा तुम सन्देह न करो क्योंकि वीरवर एक सत्कुलमें उत्पन्नहुआ पुरुषथा उसको प्राणो से पुत्रों से तथा स्त्रियोंसे स्वामीकी रक्षाकरनी आवश्यकथी उसकी स्त्री भी सत्कुलमें उत्पन्नहुई वडी पतिव्रता थी इससे पतिकेअनुसार कार्य्य करनेके सिवाय उसका अन्य धर्म्मही क्याथा और इन दोनोंसे उत्पन्न हुआ सत्त्ववरभी इन्हींके समानथा क्योंकि (यादृशास्तन्तव काम तादृगोजायतेपट) जैसे सूत्र होतेहै वैसाहीवस्त्र बनताहै परन्तु जिनसेवकोंके प्राणोंकेव्ययसे राजालोग अपनी रक्षाकरतेहैं उन्हींके निमित्त शरीर त्यागनेकी इच्छा करनेवाला राजा शूद्रकही सबसे अधिकथा राजाके यह वचनसुनके वह वेताल राजाके कन्धे से उतरकर फिर उसी अपने वृक्षपर जालटका और राजा फिर उसके लानेके लिये उद्यत हुआ १३२ ॥ इतिश्रीकथासरित्सागरभाषाया शशाङ्कवतीलम्बकेएकादशस्तरग ११ ॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर उसी सीसमके वृक्षके नीचे जाकर उस मृतकको कन्धे पर रखकर चला मार्ग्ग में वेताल बोला कि हेराजा आप बडे क्लेश मे पडेहो और मेरे बडे प्रियहो इससे आप के प्रसन्न करनेको एककथा कहताहू उसे आप सुनिये उज्जयिनी के पुण्यसेन नाम राजाके हरिस्वामी नाम एक गुणवान्ब्राह्मण मन्त्रीथा उसके देवस्वामी नाम एकपुत्र और अत्यन्तरूपवती सोमप्रभानाम कन्याथी जब वह कन्या विवाह के योग्य हुई तब उसने अपनी माताके द्वारा अपने पिता तथा भाई से कहलवाया कि किसी शूर ज्ञानी अथवा विज्ञानी के साथ मेरा विवाह करना नहीं तो मैं अपने प्राण देदूगी यह सुनकर उसका पिता ऐसाहीवर ढूढनेलगा इतने में राजा पुण्यसेनने उसे दक्षिण में किसी राजासे सन्धि करनेके लिये भेजा वहा जाकर उसने वहाके दाक्षिणात्य राजासे सधि करवादी वहीं एकब्राह्मणने उसकी कन्याकी प्रशसा सुनके उससेकहा कि आप अपनी कन्याका विवाह मेरे साथ करदीजिये यह सुनकर उसनेकहा कि मेरीपुत्री ज्ञानी विज्ञानी तथा शूरसे अपना विवाह करना चाहती है इनमें से कौनसा गुण तुममें है वह मुझसे कहो हरिस्वामी के यह वचन सुनकर उस ब्राह्मण ने कहा कि मै विज्ञानीहू यह सुनके हरिस्वामी ने कहा कि अच्छा अपना विज्ञान मुझेदिखाओ तब वहब्राह्मण एक आकाशगामी रथबनाकर उसपर हरिस्वामीको बैठालके स्वर्गादिक लोक दिखालाया इससे हरिस्वामी ने प्रसन्नहोके उसे अपनी कन्या देनी स्वीकारकियी और उसदिनसे सातवा दिन लग्नका निश्चयकिया उसीसमय उज्जयिनीमें देवस्वामीकेपास आकर किसी ब्राह्मणनेकहा कि तुम अपनी बहिनकाविवाह मेरेसाथ करदो यह सुनकर देवस्वामीने कहा कि मेरी बहिन शूरज्ञानी अथवा विज्ञानी के साथ अपना विवाहकरेगी इनमें से आपमें कौनसागुणहै वह मुझसेकहिये उसने कहा कि मै शूरहू यह सुनके देवस्वामीने उसके शस्त्र अस्त्रादि विद्याकी परीक्षा करके उसे अपनी बहिनका देना स्वीकार करलिया और सातवेंहीदिन लग्नका निश्चयकिया उसीसमय उसकी माताकेपास देवस्वामी के परोक्षमें आकर एक ब्राह्मण ने कहा कि तुम अपनी कन्याका विवाह मेरेसाथकरदो यहसुनके उसने कहा कि तुम शूरज्ञानी अथवा विज्ञानी इनमें से कौनहो क्योंकि ऐसेही पतिकेसाथ मेरी कन्या अपना विवाह करना चाहती है यह सुनकर उस ब्राह्मणने कहा कि मै ज्ञानीहू तब उसने उसका भूतभविष्य तथा वर्त्तमान तीनों कालोंका ज्ञान देखकर उसे अपनी कन्यादेनी अगीकारकियी और सातवें दिन लग्नका निश्चयकिया इसके उपरान्त दूसरे दिन हरिस्वामीने अपनी स्त्री तथा पुत्रसे घरमे आकर कहा कि मैं अपनी कन्याकेलिये वरढूढआया हू यह सुनकर उनदोनोंने भी कहा कि हमने भी वरढूढा है यह सुनके वह हरिस्वामी बहुत चिन्ता युक्तहुआ कि मैं इन तीनोवरोंमे से किसकेसाथ अपनी कन्याका विवाहकरूगा इसके उपरान्त विवाहकेदिन ज्ञानी विज्ञानी तथा शूर यह तीनोवर हरिस्वामीके घरपरआये और वह सोमप्रभा न जाने कहाचलीगई बहुत ढूढनेपरभी उसका पता न लगा इससे हरिस्वामी ने घबराके ज्ञानीसे पूछा कि बताओ इससमय मेरी कन्या कहा चलीगईहै उसनेकहा कि धूम्रशिखनाम राक्षस उसे वनमें हरलेगया है ज्ञानीके यहवचन सुनकर हरिस्वामी हाय हाय करके रोनेलगा उसे रोते

तो मेरा प्रभुत्वही क्या है और पशुओं के समान इस जीवन को धिक्कारहै यह शोचकर राजा ने खड्ग निकालके भगवती के निकट जाके कहा कि हे भगवती मेरे मस्तककी भेटसे प्रसन्न होकर यह अनुग्रहकरो कि यह वीरवर अपने सब कुटुम्ब समेत जीउठे यह कहके जैसेही उसने अपना शिर काटना चाहा वैसेही यह आकाशवाणी हुई कि हे पुत्र सहसा न करो मैं तुम्हारे सत्त्वसे प्रसन्न हूं यह सकुटुम्ब वीरवर जीउठेगा इस आकाशवाणी को सुनकर राजा अलग छिपकर खडाहोगया और सकुटुम्ब वीरवर जीउठा उससमय वीरवर ने अपने स्त्री पुत्र तथा कन्याको जीवित देखकर चकित होके बोला कि लोग भस्म होकर भी कैसे जीउठे और मैंने भी अपना शिर काटडालाथा मैं भी कैसे जीउठा यह भ्रम है अथवा भगवती की कृपा है उसके वचन सुनके उन्होंने कहा कि भगवतीकीही कृपाहै जो हम सब लोग जीउठे उनके यह वचन सत्य जानकर वीरवर भगवती को प्रणामकर सबको साथ लेके अपने घरगया और उनको घर में पहुँचाके फिर आकर राजाके फाटकपर खडाहोगया और राजा शूद्रकभी इस सब वृत्तान्तको देखकर ऊपर छिपाहुआही जाकर वहांसे बोला कि फाटकपर कौनहै वीरवरनेकहा कि मैं हूं आपकी आज्ञासे मैं उस स्त्रीको देखनेगयाथा परन्तु वह मेरे देखतेही देखते राक्षसी के समान न जानिये कहांचलीगई यह सुनके राजाने चकितहोके शोचा कि देखो सत्त्ववान् मनुष्य कैसे समुद्र के समान गंभीरहोते हैं जो ऐसे २ कार्य्यों को करकेभी नहीं कहते यह शोचकर उसने अन्तःपुर में जाके वह रात्रि व्यतीतकरके प्रातःकाल सभामें वीरवरके आगे अपने मन्त्रियोंसे रात्रिका सबवृत्तान्त कहा और प्रसन्नहोकर वीरवरको लाट तथा कर्नाटदेशका राज्य देदिया तब वीरवर शूद्रककेही समान ऐश्वर्य्यवान् होकर उसका उपकार करताहुआ सुखपूर्व्वक रहनेलगा इस अद्भुत कथाको कहकर वेतालने राजासे कहा कि हे राजा बताओ इन सबमें कौनअधिक वीरथा जानकर भी जो आप उत्तर न देंगे तो आपका शिर फटजायगा राजानेकहा कि इन सबमें राजाशूद्रक अधिक वीरथा यह सुनकर वेतालने कहा कि वीरवर क्योंनहीं अधिकहै जिसकेसमान इस पृथ्वी में होतेहीनहीं अथवा उसकी स्त्री क्योंनहीं अधिकहै जिसने स्त्री होकरभी अपनेआगेही अपनेपुत्रका बलिदान करवाया अथवा उसका पुत्र सत्त्ववरही क्योंनहीं अधिकवीरहै जो बाल्यावस्थाही में ऐसा सत्त्ववान्था यह सुनके राजा ने कहा कि ऐसा तुम सन्देह न करो क्योंकि वीरवर एक सत्कुलमें उत्पन्नहुआ पुरुषथा उसको प्राणों से पुत्रों से तथा स्त्रियोंसे स्वामीकी रक्षाकरनी आवश्यकथी उसकी स्त्री भी सत्कुलमें उत्पन्नहुई बडी पतिव्रता थी इससे पतिकेअनुसार कार्य्य करनेके सिवाय उसका अन्य धर्म्मही क्याथा और इन दोनोंसे उत्पन्न हुआ सत्त्वरभी इन्हींके समानथा क्योंकि (यादृशास्तन्तव काम तादृशोजायतेपट) जैसे सूत्र होतेहैं वैसाहीवस्त्र बनताहै परन्तु जिनसेवकोंके प्राणोंकेव्ययसे राजालोग अपनी रक्षाकरतेहैं उन्हींके निमित्त शरीर त्यागनेकी इच्छा करनेवाला राजा शूद्रकही सबसे अधिकथा राजाके यह वचनसुनके वह वेताल राजाके कन्धे से उतरकर फिर उसी अपने वृक्षपर जालटका और राजा फिर उसके लानेके लिये उद्यत हुआ १३२ ॥ इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायां शशाङ्कवतीलम्बकेएकादशस्तरंग ११ ॥

मदनसुन्दरी को साथलेके अपने पिता के घरमें आकर सुखपूर्वक रहनेलगी। एकसमय मदनसुन्दरी का भाई वहा आया और कुशल प्रश्न तथा सत्कार ग्रहण करनेके पीछे बोला कि मै मदनसुन्दरी तथा धवलके लिवानेके लिये आयाहू क्योंकि मेरे यहां देवी पूजाका मेला होनेवालाहै उसके यह वचन सुनके उस दिन उसे अपने यहा रखके सुन्दर भोजनादि करवाके दूसरे दिन धवल मदनसुन्दरी समेत उसके साथ अपने श्वशुरके घरको चला चलते २ उस शोभावतीरी नाम पुरी में पहुचकर धवलने भगवतीका मन्दिर देखके अपने सालेसे कहा कि चलो भगवतीके दर्शन करें उसने कहा कि खाली हाथ देवताके दर्शन न करना चाहिये इससे अभी न चलो उसके यह वचन सुनकर तुम ठहरो मै जाताहू यह कहके धवलभगवतीके मन्दिरमें चलागया वहा अष्टादशभुजवाली महिषासुरपर चढीहुई भगवतीको देखके प्रणाम करके उसने शोचा कि बहुधा लोग जीवोंका बलिदेकर भगवतीका पूजनकिया करतेहैं जो मै अपनाही शिरभगवतीके अर्पणकरू तो बहुत अच्छाहै यह शोचके उसने वहीं किसीसे खड्ग मागकर घंटेकी जञ्जीरमें अपने शिरके बालोंको बाधके खड्ग से अपना शिर काटडाला इससे उसका धड पृथ्वीमें गिरपडा और उसकाशिर घंटेमें लटकारहा उसे गयेहुए बहुत देरजानके उसका सालामदनसुन्दरीको बाहरही छोडके उसे देखनेको मन्दिर मे गया वहा उसको शिरकटाहुआ देखके उसनेभी शोकसे मोहित होके अपना शिर खड्गसे काटडाला जब उसे भी बहुत देरलगी तो मदनसुन्दरी भी देवीके मन्दिरमेंगई और वहा अपनेपति तथा भाईको मरादेखकर व्याकुल होकर पृथ्वीमें गिरपडी और क्षणभरमें उठके बहुत रोदन करके उसने शोचा कि मैं भी अब इस पापी शरीरको धारण करके क्या करूगी यह शोचके उसने भगवतीसे हाथ जोडके विनयकरी कि हेभगवती हेसम्पूर्ण ससारके विधान करनेवाली हे अपने पतिके अर्द्धांगमें निवास करनेवाली हे दुःखहारिणी हे शरण मे आईहुई सम्पूर्ण स्त्रियोंकी रक्षा करनेवाली आपने एकसाथही किस अपराधसे मेरे पति औरभाईको हरलिया मुझ दीनके साथ आपको ऐसी कठोरता करनी उचित न थी अब अन्त समयमें मेरे यह दीनवचन कृपा करके सुनिये मै इसअभागी शरीरको यहा त्यागतीहू इसके उपरान्त जहा कहीं मेराजन्महोय वहां यही दोनों मेरे भाई और पतिहोवें इसप्रकार विज्ञापना करके और प्रणाम करके उसने अशोक वृक्षमे फासी लगा कर जैसेही अपना शिर उसमे डालनाचाहा वैसेही यह आकाशवाणीहुई कि हे पुत्री साहस न करो तुम्हारे इस सत्त्वसे मै प्रसन्नहू तुम अपने पति तथा भाई के शिरोंको उनके धडोंमे जोडदो तो वह जी उठेंगे यह आकाशवाणी सुनके उसने जल्दीसे जाके अपने पतिकाशिर भाईके धडपर और भाई का शिर अपने पतिके धडपर रखकर जोड दिया शिरोंके जोडनेही वहदोनो जीउठे और प्रसन्नहोके भगवतीको प्रणामकरके अपना २ वृत्तान्त कहतेहुए मदनसुन्दरीको साथलेके चले चलते २ मदनसुदरी उन दोनोंके शिरोंकी अदल बदल देखके बहुत व्याकुलहोकर शोचनेलगी कि मै क्या करू हे राजा अब तुम्हीं बताओ कि उनदोनोंमेंसे उसका कौनपति होनाचाहिये जानकरभी जो उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फटजायगा यहसुनकर राजानेकहा कि जिसधडपर उसके पतिकाशिरहै वही उसकापतिहै

देखकर विज्ञानी ने कहा कि धैर्य्यधरो मैं तुमको उसीकेपास पहुंचाये देताहूं यह कहकर वह आकाशगामी रथपर हरिस्वामी ज्ञानी तथा शूरको चढाके विन्ध्याचलके वनमें जहा वहकन्याथी लेगया वहा शूरने उसराक्षसकेसाथ वडा युद्धकरके अर्धचन्द्रवाणसे उसका शिरकाटडाला राक्षसके मरजानेपर सोमप्रभाको लेकर हरिस्वामी उनसबसमेत अपने घरचलाआया यहा लग्नकेसमय ज्ञानी विज्ञानी तथा शूरका महाविवादहोनेलगा ज्ञानीने कहा कि जो मैं अपने ज्ञानसे न जानता कि यहकन्या कहाहै तो यह कैसे आती इससे इसका विवाह मेरेही साथ होना चाहिये विज्ञानी ने कहा कि जो मैं आकाशगामी विमान न वनाता तो यहकन्या कैसे आती इससे मेरेही साथ इसका विवाह होना चाहिये तब शूरने कहा जो मैं राक्षसको न मारता तो तुम लोगोंका यत कैसे सिद्धहोता इससे इसका विवाह मेरेसाथ होना योग्य है उनतीनोंका यह विवाद सुनकर हरिस्वामी घवराके चुपहोकर बैठरहा इससे हे राजा अब तुम बताओ कि वह कन्या किसको मिलनी चाहिये जो जानकर भी इसका ठीक २ उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिरफटजायगा यह सुनके राजानेकहा कि शूरकेसाथ उसका विवाह होना चाहिये क्योंकि उसने अपने बाहुबलसे राक्षसको जीतकर कन्यापाई है और ज्ञानी विज्ञानी तो केवल उसकेसहायकथे क्योंकि ज्योतिषी और वढई यह दोनों सदैव पराया कार्य्य कियाही करते हैं राजाके यह वचन सुनके वह वेताल फिर उसके कन्धेपरसे उतरकर उसी वृक्षपर जालटका और राजा उसके लेने के लिये फिरचला ५० ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशांकवतीलम्बके द्वादशस्तरंग १२ ॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर उस वेतालको सीसमके वृक्षसे उतारकर कन्धेपर रखकेलेचला मार्ग में वेतालने उससे कहा कि हे राजा तुम वडे बुद्धिमान् और सत्त्ववान्हो इससे मैं तुम्हारे स्नेहसे तुमको प्रसन्न करनेकेलिये एक कथा कहताहूं उसे सुनों कि शोभावती नाम नगरीमे यशकेतु नाम एक राजाथा उसके राज्यमे एक पार्वतीजीका मन्दिरथा उस मन्दिरके दक्षिणकी ओर गौरीतीर्थ नाम एक तडागथा आषाढकी शुक्लाचतुर्दशीके दिन बहुत दूर २ से बहुतसे लोग वहा स्नान करनेको आया करतेथे एक समय उसी चतुर्दशीके दिन ब्रह्मस्थलनाम् ग्रामसे धवलनाम एक युवा धोबी उस तीर्थपर स्नान करनेको आया वहा शुद्धपट नाम धोबीकी मदनसुन्दरी नाम कन्याको देखकर वह बहुत कामसे पीडित होगया और उसका नाम तथा कुल पूछकर अपने घरमें जाके विना कुछ खायेहुए ही व्याकुलहोके पलँगपर लेटा उसकी यह दशा देखके उसकी माताने उससे सब वृत्तान्त पूछके अपने विमलनाम पतिसे कहा यह सुनकर विमल धवलकेपास जाकर बोला कि हे पुत्र इससाधारण कार्य्यके निमित्त तुम क्यों व्याकुल होतेहो मैं शुद्धपटसे जो तुम्हारे निमित्त कन्या मागूंगा तो वह अवश्य देदेगा क्योंकि हम कुल धन तथा कर्म्म आदि किसी बातमें भी उससे कम नहीं है वह मुझे जानताहै और मैं उसे जानताहूं इससे यह काम कुछ दुष्कर नहीं है इसप्रकार उसे समझाकर और भोजन कराके दूसरे दिन विमलने अपने साथ धवलको भी लेजाकर उस शुद्धपटसे कन्यामागी इससे शुद्धपटने वहुत प्रसन्न होकर शुभलग्नदेखके धवलकेसाथ अपनी मदनसुन्दरी कन्याका विवाह करादिया विवाहकरके धवल

मदनसुन्दरीको साथलेके अपने पिता के घरमें आकर सुखपूर्व्वक रहनेलगी, एकसमय मदनसुन्दरी का भाई वहा आया और कुशल प्रश्न तथा सत्कार ग्रहण करनेके पीछे बोला कि मै मदनसुन्दरी तथा धवलके लिवानेके लिये आयाहू क्योंकि मेरे यहा देवी पूजाका मेलाहोनेवालाहै उसके यह वचन सुनके उस दिन उसे अपने यहा रखके सुन्दर भोजनादि करवाके दूसरे दिन धवल मदनसुन्दरी समेत उसके साथ अपने श्वशुरके घरको चला चलते २ उस शोभावतीरी नाम पुरी में पहुंचकर धवलने भगवतीका मन्दिर देखके अपने सालेसे कहा कि चलो भगवतीके दर्शनकरें उसने कहा कि खाली हाथ देवताके दर्शन न करना चाहिये इससे अभी न चलो उसके यह वचन सुनकर तुम ठहरो मै जाताहू यह कहके धवलभगवतीके मन्दिरमें चलागया वहा अष्टादशभुजवाली महिषासुरपर चढीहुई भगवतीको देखके प्रणाम करके उसने सोचा कि बहुधा लोग जीवोंका बलिदेकर भगवतीका पूजनकिया करतेहै जो मै अपनाही शिरभगवतीके अर्पणकरू तो बहुत अच्छाहै यह सोचके उसने वहीं किसीसे खड्ग मागकर घंटेकी जञ्जीरमें अपने शिरके बालोंको बाधके खड्ग से अपना शिर काटडाला इससे उसका धड पृथ्वीमें गिरपडा और उसकाशिर घंटेमें लटकारहा उसे गयेहुए बहुत देरजानके उसका सालामदनसुन्दरीको बाहरही छोडके उसे देखनेको मन्दिर मे गया वहा उसको शिरकटाहुआ देखके उसनेभी शोकसे मोहित होके अपना शिर खड्गसे काटडाला जब उसे भी बहुत देरलगी तो मदनसुन्दरी भी देवीके मन्दिरमेंगई और वहा अपनेपति तथा भाईको मरादेखकर व्याकुल होकरपृथ्वीमें गिरपडी और क्षणभरमें उठके बहुत रोदन करके उसने सोचा कि मै भी अब इस पापी शरीरको धारण करके क्या करुगी यह सोचके उसने भगवतीसे हाथ जोडके विनयकरी कि हेभगवती हेसम्पूर्ण संसारके विधान करनेवाली हे अपने पतिके अर्द्धांगमें निवास करनेवाली हे दुःखहारिणी हे शरण में आईहुई सम्पूर्ण स्त्रियोंकी रक्षा करनेवाली आपने एकसाथही किस अपराधसे मेरे पति औरभाईको हरलिया मुझ दीनके साथ आपको ऐसी कठोरता करनी उचित न थी अब अन्त समयमें मेरे यह दीनवचन कृपा करके सुनिये मै इसअभागी शरीरको यहा त्यागतीहू इसकेउपरान्त जहा कहीं मेराजन्महोय वहा यही दोनों मेरे भाई और पतिहोवें इसप्रकार विज्ञापना करके और प्रणाम करके उसने अशोक वृक्षमें फासी लगा कर जैसेही अपना शिर उसमे डालनाचाहा वैसेही यह आकाशवाणीहुई कि हे पुत्री साहस न करो तुम्हारे इस सत्त्वसे मै प्रसन्नहू तुम अपने पति तथा भाई के शिरोंको उनके धडोमे जोडदो तो यह जी उठेंगे यह आकाशवाणी सुनके उसने जल्दीमे जाके अपने पतिकाशिर भाईके धडपर और भाई का शिर अपने पतिके धडपर रखकर जोड दिया शिरोंके जोडतेही वहदोनों जीउठे और प्रसन्नहोके भगवतीको प्रणामकरके अपना २ वृत्तान्त कहतेहुए मदनसुन्दरीको साथलेके चले चलते २ मदनसुदरी उन दोनोंके शिरोंकी अदल बदल देखके बहुत व्याकुलहोकर सोचनेलगी कि मै क्या करू हे राजा अब तुम्हीं बताओ कि उनदोनोंमेंसे इसका कौनपति होनाचाहिये जानकरभी जो उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फटजायगा यहसुनकर राजानेकहा कि जिसधडपर उसके पतिका शिरहै वही उसकापतिहै

देखकर विज्ञानी ने कहा कि धैर्य्यधरो मैं तुमको उसीकेपास पहुचाये देताहू यह कहकर वह आकाशगामी रथपर हरिस्वामी ज्ञानी तथा शूरको चढाके विन्ध्याचलके वनमे जहा वहकन्याथी लेगया वहा शूरने उसराक्षसकेसाथ वडा युद्धकरके अर्धचन्द्रबाणसे उसका शिरकाटडाला राक्षसके मरजानेपर सोमप्रभाको लेकर हरिस्वामी उनसवसमेत अपने घरचलाआया यहा लग्नकेसमय ज्ञानी विज्ञानी तथा शूर का महाविवादहोनेलगा ज्ञानीनेकहा कि जो मैं अपने ज्ञानसे न जानता कि यहकन्या कहाहै तो यह कैसे आती इससे इसका विवाह मेरेही साथ होना चाहिये विज्ञानी ने कहा कि जो मै आकाशगामी विमान न बनाता तो यहकन्या कैसे आती इससे मेरेही साथ इसका विवाह होना चाहिये तब शूरने कहा जो मैं राक्षसको न मारता तो तुम लोगोका यत कैसे सिद्धहोता इससे इसका विवाह मेरेसाथ होना योग्य है उनतीनोंका यह विवाद सुनकर हरिस्वामी घवराके चुपहोकर बैठरहा इससे हे राजा अब तुम वताओ कि वह कन्या किसको मिलनी चाहिये जो जानकर भी इसका ठीक २ उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिरफटजायगा यह सुनके राजानेकहा कि शूरकेसाथ उसका विवाह होना चाहिये क्योकि उसने अपने वाहुवलसे राक्षसको जीतकर कन्यापाई है और ज्ञानी विज्ञानी तो केवल उसकेसहायकथे क्योकि ज्योतिषी और वढई यह दोनो सदैव पराया कार्य्य कियाही करते हैं राजाके यह वचन सुनके वह वेताल फिर उसके कन्धेपरसे उतरकर उसी वृक्षपर जालटका और राजा उसके लेने के लिये फिरचला ५० ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाकवतीलम्बके द्वादशस्तरंग १२॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर उस वेतालको सीसमके वृक्षसे उतारकर कन्धेपर रखके लेचला मार्ग में वेतालने उससे कहा कि हे राजा तुम वडे बुद्धिमान् और सत्त्ववान्हो इससे मैं तुम्हारे स्नेहसे तुमको प्रसन्न करनेकेलिये एक कथा कहताहू उसे सुनों कि शोभावती नाम नगरीमे यशःकेतु नाम एक राजाथा उसके राज्यमे एक पार्वतीजीका मन्दिरथा उस मन्दिरके दक्षिणकी ओर गौरीतीर्थ नाम एक तडागथा आषाढकी शुक्लाचतुर्दशीके दिन वहुत दूर २ से वहुतसे लोग वहा स्नान करनेको आया करतेथे एक समय उसी चतुर्दशीके दिन ब्रह्मस्थलनाम् ग्रामसे धवलनाम एक युवा धोबी उस तीर्थपर स्नान करनेको आया वहा शुद्धपट नाम धोवीकी मदनसुन्दरी नाम कन्याको देखकर वह वहुत कामसे पीडित होगया और उसका नाम तथा कुल पूछकर अपने घरमे जाके विना कुछ खायेहुए ही व्याकुलहोके पलॅगपर लेटा उसकी यहदशा देखके उसकी माताने उससे सववृत्तान्त पूछके अपने विमलनाम पतिसे कहा यह सुनकर विमल धवलकेपास जाकर वोला कि हे पुत्र इससाधारण कार्य्यके निमित्त तुम क्यों व्याकुल होतेहो मैं शुद्धपटसे जो तुम्हारे निमित्त कन्या मागूगा तो वहअवश्य देदेगा क्योकि हम कुल धन तथा कर्म्म आदि किसी काममें भी उससे कम नहीं है वह मुझे जानताहै और मैं उसे जानताहू इससे यह काम कुछ दुष्कर नहीं है इसप्रकार उसे समझाकर और भोजन कराके दूसरे दिन विमलने अपने साथ धवलको भी लेजाकर उस शुद्धपटसे कन्यामागी इससे शुद्धपटने वहुत प्रसन्न होकर शुभलग्नदेखके धवलकेसाथ अपनी मदनसुन्दरी कन्याका विवाह करदिया विवाहकरके धवल

मदनसुन्दरी को साथलेके अपने पिता के घरमें आकर सुखपूर्व्वक रहनेलगी । एकसमय मदनसुन्दरी का भाई वहां आया और कुशल प्रश्न तथा सत्कार ग्रहण करनेके पीछे बोला कि मैं मदनसुन्दरी तथा धवलके लिवानेको लिये आयाहूं क्योंकि मेरे यहां देवी पूजाका मेला होनेवालाहै उसके यह वचन सुनके उस दिन उसे अपने यहां रखके सुन्दर भोजनादि करवाके दूसरे दिन धवल मदनसुन्दरी समेत उसके साथ अपने श्वशुरके घरको चला चलते २ उस शोभावतीरी नाम पुरी में पहुंचकर धवलने भगवतीका मन्दिर देखके अपने सालेसे कहा कि चलो भगवतीके दर्शनकरें उसने कहा कि खाली हाथ देवताके दर्शन न करना चाहिये इससे अभी न चलो उसके यह वचन सुनकर तुम ठहरो मैं जाताहूं यह कहके धवल भगवतीके मन्दिरमें चलागया वहां अष्टादशभुजवाली महिषासुरपर चढीहुई भगवतीको देखके प्रणाम करके उसने शोचा कि बहुधा लोग जीवोंका बलिदेकर भगवतीका पूजनकिया करतेहैं जो मैं अपनाही शिर भगवतीके अर्पणकरूं तो बहुत अच्छाहै यह शोचके उसने वहीं किसीसे खड्ग मांगकर घंटेकी जञ्जीरमें अपने शिरके बालोंको बांधके खड्ग से अपना शिर काटडाला इससे उसका धड पृथ्वीमें गिरपडा और उसकाशिर घंटेमें लटकारहा उसे गयेहुए बहुत देरजानेके उसका सालामदन-सुन्दरीको बाहरही छोडके उसे देखनेको मन्दिर मे गया वहां उसको शिरकटाहुआ देखके उसनेभी शोकसे मोहित होके अपना शिर खड्गसे काटडाला जब उसे भी बहुत देरलगी तो मदनसुन्दरी भी देवीके मन्दिरमेंगई और वहां अपनेपति तथा भाईको मरादेखकर व्याकुल होकर पृथ्वीमें गिरपडी और क्षणभरमें उठके बहुत रोदन करके उसने शोचा कि मैं भी अब इस पापी शरीरको धारण करके क्या करूंगी यह शोचके उसने भगवतीसे हाथ जोडके विनयकरी कि हेभगवती हेसम्पूर्ण संसारके विधान करनेवाली हे अपने पतिके अर्द्धांगमें निवास करनेवाली हे दुःखहारिणी हे शरण में आईहुई सम्पूर्ण स्त्रियोंकी रक्षा करनेवाली आपने एकसाथही किस अपराधसे मेरे पति और भाईको हरलिया मुझ दीनके साथ आपको ऐसी कठोरता करनी उचित न थी अब अन्त समयमें मेरे यह दीनवचन कृपा करके सुनिये मैं इसअभागी शरीरको यहां त्यागतीहूं इसकेउपरान्त जहां कहीं मेराजन्महोय वहां यही दोनों मेरे भाई और पतिहोवें इसप्रकार विज्ञापना करके और प्रणाम करके उसने अशोक वृक्षमें फांसी लगा कर जैसेही अपना शिर उसमें डालनाचाहा वैसेही यह आकाशवाणीहुई कि हे पुत्री साहस न करो तुम्हारे इस सत्त्वसे मैं प्रसन्नहूं तुम अपने पति तथा भाई के शिरोंको उनके धडोंमें जोडदो तो वह जी उठेंगे यह आकाशवाणी सुनके उसने जल्दीसे जाके अपने पतिकाशिर भाईके धडपर और भाई का शिर अपने पतिके धडपर रखकर जोड दिया शिरोंके जोडतेही वहदोनों जीउठे और प्रसन्नहोके भगवतीको प्रणामकरके अपना २ वृत्तान्त कहतेहुए मदनसुन्दरीको साथलेके चले चलते २ मदनसुंदरी उन दोनोंके शिरोंकी अदल बदल देखके बहुत व्याकुलहोकर शोचनेलगी कि मैं क्या करूं हे राजा अब तुम्हीं बताओ कि उनदोनोंमेंसे इसका कौनपति होनाचाहिये जानकरभी जो उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फटजायगा यहसुनकर राजानेकहा कि जिसधडपर उसके पतिकाशिरहै वही उसकापतिहै

देखकर विज्ञानी ने कहा कि धैर्य्यधरो मैं तुमको उसीकेपास पहुचाये देताहू यह कहकर वह आकाशगामी रथपर हरिस्वामी ज्ञानी तथा शूरको चढाके विन्ध्याचलके वनमे जहा वहकन्याथी लेगया वहा शूरने उसराक्षसकेसाथ वडा युद्धकरके अर्धचन्द्रवाणसे उसका शिरकाटडाला राक्षसके मरजानेपर सोम प्रभाको लेकर हरिस्वामी उनसवसमेत अपने घरचलाआया वहा लग्नकेसमय ज्ञानी विज्ञानी तथा शूर का महाविवादहोनेलगा ज्ञानीने कहा कि जो मैं अपने ज्ञानसे न जानता कि यहकन्या कहाहै तो यह कैसे आती इससे इसका विवाह मेरेही साथ होना चाहिये विज्ञानी ने कहा कि जो मैं आकाशगामी विमान न वनाता तो यहकन्या कैसे आती इससे मेरेही साथ इसका विवाह होना चाहिये तब शूरने कहा जो मैं राक्षसको न मारता तो तुम लोगोंका यत्न कैसे सिद्धहोता इससे इसका विवाह मेरेसाथ होना योग्य है उनतीनोका यह विवाद सुनकर हरिस्वामी घवराके चुपहोकर बैठरहा इससे हे राजा अब तुम वताओ कि वह कन्या किसको मिलनी चाहिये जो जानकर भी इसका ठीक २ उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिरफटजायगा यह सुनके राजानेकहा कि शूरकेसाथ उसका विवाह होना चाहिये क्योंकि उसने अपने वाहुवलसे राक्षसको जीतकर कन्यापाई है और ज्ञानी विज्ञानी तो केवल उसकेसहायकथे क्योंकि ज्योतिषी और वढई यह दोनो सदैव पराया कार्य्य कियाही करते हैं राजाके यह वचन सुनके वह वेताल फिर उसके कन्धेपरसे उतरकर उसी वृक्षपर जालटका और राजा उसके लेने के लिये फिरचला ५० ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बके द्वादशस्तरंग १२ ॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर उस वेतालको सीसमके वृक्षसे उतारकर कन्धेपर रखके ले चला मार्ग में वेतालने उससे कहा कि हे राजा तुम वडे बुद्धिमान् और सत्त्ववान्हो इससे मैं तुम्हारे स्नेहसे तुमको प्रसन्न करनेकेलिये एक कथा कहताहू उसे सुनो कि शोभावती नाम नगरीमे यश केतु नाम एक राजाथा उसके राज्यमे एक पार्वतीजीका मन्दिरथा उस मन्दिरके दक्षिणकी ओर गौरीतीर्थ नाम एक तडागथा आषाढकी शुक्लाचतुर्दशीके दिन वहुत दूर २ से वहुतसे लोग वहा स्नान करनेको आया करतेथे एक समय उसी चतुर्दशीके दिन ब्रह्मस्थलनाम ग्रामसे धवलनाम एक युवा धोबी उस तीर्थपर स्नान करनेको आया वहा शुद्धपट नाम धोबीकी मदनसुन्दरी नाम कन्याको देखकर वह वहुत कामसे पीडित होगया और उसका नाम तथा कुल पूछकर अपने घरमे जाके विना कुछ खायेहुए ही व्याकुलहोके पलँगपर लेटा उसकी यह दशा देखके उसकी माताने उससे सववृत्तान्त पूछके अपने विमलनाम पतिसे कहा यह सुनकर विमल धवलकेपास जाकर वोला कि हे पुत्र इससाधारण कार्य्यके निमित्त तुम क्यों व्याकुल होतेहो मैं शुद्धपटसे जो तुम्हारेनिमित्त कन्या मांगूंगा तो वहअवश्य देदेगा क्योंकि हम कुल धन तथा कर्म्म आदि किसी काममें भी उससे कम नहीं हैं वह मुझे जानताहै और मैं उसे जानताहू इससे यह काम कुछ दुष्कर नहीं है इसप्रकार उसे समझाकर और भोजन कराके दूसरे दिन विमलने अपने साथ धवलको भी लेजाकर उस शुद्धपटसे कन्यामांगी इससे शुद्धपटने वहुतप्रसन्न होकर शुभलग्नदेखके धवलकेसाथ अपनी मदनसुन्दरी कन्याका विवाह करादिया विवाहकरके धवल

के पास जानेकी आज्ञादी राजाकी आज्ञासे सत्त्वशील बहुत से ब्राह्मण तथा क्षत्रियों को साथ लेकर जहाजपर चढ़केचला जब जहाज समुद्रके बीचमें पहुंचा तो जलमें से एक बड़ी भारी सुवर्ण की ध्वजा निकली आकाशमें बादल घिरके जलकी वृष्टि करनेलगे और तीनवायु चलनेलगी इससे वह जहाज उस ध्वजामें टक्करखाकर डूबनेलगा यह देखके जहाजमें बैठेहुए ब्राह्मण तथा क्षत्रीराजा चंडसेनकानाम लेलेकर हाय २ करके चिल्लानेलगे उनसबका यह शब्द सुनकर वीर सत्त्वशील कमर बांध हाथमें खड्ग ले समुद्रकाही वह अपराध जानके मानों उसकेसाथ युद्धकरने को समुद्रमें कूदपड़ा वह जहाज वायुके वेगसे टूटगया और जहाजपर जो लोग बैठेथे उन्हें जलजन्तुखागये परन्तु सत्त्वशील समुद्रमें जातेही एक दिव्यपुरीमें पहुंचगया उसपुरीमें सुवर्ण के बड़े २ महलबनेथे और उपवनोंमें बहुतसी मनोहर बावडी भरीहुईथीं जिनकी रत्नजटित सीढ़ियाथीं ऐसीसुन्दर उसपुरीमें अनेकध्वजाओंसेयुक्त भगवतीका एकसुमेरुके समान ऊंचामंदिर उसनेदेखा उसमें जाकर भगवतीको प्रणामकरके और उनकीस्तुति करके वह आश्चर्यपूर्वक शोचनेलगा कि यह क्या इन्द्रजालहै ४६ इतने में उसी मंदिरके एकभमामंडलमें से एकदिव्यकन्या किवाडखोलकर आई जिसके नेत्र नीलकमलके समान मुखप्रफुल्लित पंकज के समान तथा हास्य पुष्पोंके समान था और उसके सम्पूर्ण अंगकमलकी दंडीके समान कोमलथे उसकन्याको देखकर सत्त्वशीलकाचित्त उसपरआसक्तहोगया भगवतीका पूजनकरके वहकन्या फिर उसीभमामंडलमें चलीगई और सत्त्वशील भी उसीके पीछे २ चलागया वहांजाके उसने एक अन्य उत्तमपुरदेखा उसपुर के एकअत्युत्तम मंदिरमें वहकन्या एकअतिउत्तम मणिमय पलँगपरजाके बैठी उसे बैठीदेखके सत्त्वशील भी उसीके पास जाकर बैठगया और उसीके मुखको टकटकी बांधके देखनेलगा देखते २ उसके रोमांच आगये और यह इच्छाहुई किमैं इस कन्याका आलिंगनकरूं उसका यह अभिप्राय जानकर उसकन्या ने अपनी चेरियोंकी ओर देखा चेरियोंने अपनी स्वामिनी के अभिप्रायको जानकर सत्त्वशीलसे कहा कि आप हमारे अतिथि हैं इससे प्रथम चलके स्नान भोजन कीजिये फिर यहां आकर बैठियेगा उन के यह वचनसुनके सत्त्वशीलने उनकी बताईहुई बावड़ीमें जैसेही गोतामारा वैसेही ताम्रलिप्ती नगरीमें राजा चंडसेनके उपवनकी बावडीमें आनिकला यह विचित्रलीला देखके उसने शोचा कि यह क्या बातहै कहां वह दिव्यपुर और कहां यह उपवन कहां दिव्य कन्याका अमृतसमान दर्शन और कहां उसका विषके समान वियोग यह स्वप्न तो है नहीं क्योंकि मुझे निद्राही नहीं आईथी मैं जानताहूं कि उन कन्याओंनेही मुझे छला है यह शोचके वह उसी कन्याका ध्यान करके उसीउपवनमें उन्मत्त के समान भ्रमण तथा विलाप करनेलगा उद्यान पालकोंने उसकी यह सब दशा राजाचंडसेन से जाकर कही यह सुनकर राजाने वहां आके उसे सावधान करके पूछा कि हे मित्र यह क्याबातहै तुम कहांगये थे औरकहां आनिकले राजाके यह वचनसुनके सत्त्वशीलने अपना सब वृत्तान्त कहदिया उसवृत्ता न्तको सुनके राजाने शोचा कि मेरेही पुण्योंसे यह कामसे पीडित हुआहै अब इससे उद्धार होने का मुझे अवसर मिलाहै यह शोचके राजाने उससे कहा कि व्यर्थ शोक मतकरो मैं तुमको उसी मार्गसे

क्योंकि सपूर्ण अगोंमें शिरप्रधानहै और उसीसे मनुष्य पहचानाजाताहै राजाके यहवचन सुनके वेताल उसके कन्धेपरसे उतरकर फिर उसी वृक्षपर चलागया और राजा फिर उसे लेनेकेलियेगया ५१॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशांकवतीनामलम्बकेत्रयोदशस्तरंग १३॥

इसके उपरान्त फिर राजा त्रिविक्रमसेन शीशमके वृक्षपरसे वेतालको उतार कन्धेपर रखके लेचला मार्गमें वेतालनेकहा कि हे राजा आपके चित्तके वहलानेके निमित्त मैं एककथा कहताहूं उसे सुनो पूर्व समुद्रके तटपर ताम्रलिप्तीनाम नगरीमें चन्द्रसेननाम बडाप्रतापी शूर यशस्वी और धर्मात्मा एकराजा था एकसमय दक्षिण देशका सत्वशीलनाम एकराजपुत्र राजा चन्द्रसेनके द्वारपर आके निर्धनता के कारण चिथडे लपेटकर बैठा वहुत वर्षोंतक इसीप्रकार वह राजद्वारपर बैठारहा परन्तु राजासे उसे कुछ फल नहीं प्राप्तहुआ एकदिन उसने शोचा कि जो राजाके यहां मेरा परमेश्वरने जन्मदिया था तो इतना निर्धन मुझे क्योंकिया और जो निर्धनभी किया तो मुझे इतनामानी क्यों वनाया देखो यहराजा मुझे इतने दिनोंसे क्लेशित देखकरभी कुछ भी ध्याननहींदेता उसके इसप्रकार शोचतेही शोचते वह राजा घोडेपर चढके शिकार खेलनेकोचला और वह राजपुत्रभी हाथमें लाठी लेकर उसी के आगे २ दौडा वनमें पहुचके राजाने वहुत से जीवोंका शिकारकरके एक मतवाले शूकरका पीछाकिया उसके पीछे दौडते २ राजा वनमें वहुत दूर निकलगया वहां वहसूकर तो तृण तथा लताओं से आच्छादित एक मार्गमें चलागया और राजा उससे निराशाहोकर लौटनेका विचार करनेलगा परन्तु उसे वहां दिशाओं का भ्रमहोगया इससे वह वहुत व्याकुलहोगया एक वह अकेला राजपुत्रही उसे वहां सहायक दिखाई दिया उसे अपनेसाथ आया जानकर राजाने उससे पूंछा क्या तुमको यहांसे ताम्रलिप्तीका मार्गमालूम है उसने हाथ जोडकेकहा कि हां मैं जानताहूं परन्तु मध्याह्नकासमय है इससे आप कुछ विश्रामकर लीजिये उसके यह वचन सुनके राजाने उससे कहा कि अच्छा देखो यहां कहीं जलमिलसक्ताहै यह सुनके उसने एकऊंचे वृक्षपर चढ़के कुछ दूरपर एकनदी देखकर वृक्षपरसे उतरके राजाको नदीकेतटपर लेजाकर घोडेके आगे घासनोचकरडाली और स्नानसे निवृत्तहुए राजाको अपने चिथडेमें से खोल कर सुन्दर आमले धोकरदिये उन आमलोंको देखके राजाने पूंछा कि यह आमले तुम यहां कहां से लायेहो उसनेकहा कि हे स्वामी इन्हीं आमलोंको खा२कर मैंने आपके द्वारपर दशवर्ष व्यतीतकियेहैं इसीसे आजभी यह मेरे वस्त्रमेंबंधेहैं उसके यहवचनसुनके राजानेकहा कि सत्वशील तुम्हारानाम यथार्थ है और शोचा कि उन राजालोगोंको धिक्कारहै जो दीनोंपर दया नहींकरते और उसके परिकरवालों कोभी धिक्कारहै जो उसे उत्तम शिक्षानहीं देते यह शोचके उसने दो आमले खाके जलपीकर विश्राम किया और क्षणभर विश्रामकरके घोडेपर चढके उसी राजपुत्रके वतायेहुए मार्गसे अपनी नगरी में आकर उसे वहुतसे रत्न तथा ग्रामदेकर अपने मन्त्रियों से उसकी बड़ी प्रशंसाकी इसप्रकार अपने योग्य धनपाकर सत्वशील कृतार्थ होकर राजा चण्डसेनकेपास सुखपूर्वक रहनेलगा एकसमय राजा चण्डसेनने उस सत्वशीलको सिंहलद्वीपके राजाकी कन्या अपने लिये मागनेको भेजा सिंहलद्वीपके राजा

के पास जानेकी आज्ञादी राजाकी आज्ञासे सत्त्वशील बहुत से ब्राह्मण तथा क्षत्रियों को साथ लेकर जहाजपर चढकेचला जब जहाज समुद्रके बीचमें पहुचा तो जलमें से एक बडीभारी सुवर्ण की ध्वजा निकली आकाशमें बादल घिरके जलकी वृष्टि करनेलगे और तीव्रवायु चलनेलगी इससे वह जहाज उस ध्वजामें टक्करखाकर डूबनेलगा यह देखके जहाजमें बैठेहुए ब्राह्मण तथा क्षत्रीराजा चंडसेनकानाम लेलेकर हाय २ करके चिल्लानेलगे उनसबका यह शब्द सुनकर वीर सत्त्वशील कमर बांध हाथमें खड्ग ले समुद्रकाही वह अपराध जानके मानों उसकेसाथ युद्धकरने को समुद्रमें कूदपडा वह जहाज वायुके वेगसे टूटगया और जहाजपर जो लोग बैठेथे उन्हें जलजन्तुखागये परन्तु सत्वशील समुद्रमें जातेही एक दिव्यपुरीमें पहुचगया उसपुरीमें सुवर्ण के बडे २ महलबनेथे और उपवनोंमें बहुतसी मनोहर बावडी भरीहुईथीं जिनकी रत्नजटित सीढियांथीं ऐसीसुन्दर उसपुरीमें अनेकध्वजाओंसेयुक्त भगवतीका एकसुमेरुके समान ऊंचामंदिर उसनेदेखा उसमें जाकर भगवतीको प्रणामकरके और उनकीस्तुति करके वह आश्चर्यपूर्वक शोचनेलगा कि यह क्या इन्द्रजालहै ४६ इतने में उसी मंदिरके एकप्रभामंडलमें से एकदिव्यकन्या किवाडखोलकर आई जिसके नेत्र नीलकमलके समान मुखप्रफुल्लित पंकज के समान तथा हास्य पुष्पोंके समान था और उसके सम्पूर्ण अंगकमलकी दंडीके समान कोमलथे उसकन्याको देखकर सत्त्वशीलकाचित्त उसपर आशक्तहोगया भगवतीका पूजनकरके वहकन्या फिर उसीप्रभामंडलमें चलीगई और सत्त्वशील भी उसीके पीछे २ चलागया वहांजाके उसने एक अन्य उत्तम पुरदेखा उसपुर के एकअत्युत्तम मंदिरमें वहकन्या एकअतिउत्तम मणिमय पलँगपरजाके बैठी उसे बैठीदेखके सत्त्वशील भी उसीके पास जाकर बैठगया और उसीके मुखको टकटकी बांधके देखनेलगा देखते २ उसके रोमांच आगये और यह इच्छाहुई किमैं इस कन्याका आलिंगनकरू उसका यह अभिप्राय जानकर उसकन्या ने अपनी चेरियोंकी ओर देखा चेरियोंने अपनी स्वामिनी के अभिप्रायको जानकर सत्त्वशीलसे कहा कि आप हमारे अतिथि हैं इससे प्रथम चलके स्नान भोजन कीजिये फिर यहां आकर बैठियेगा उन के यह वचनसुनके सत्त्वशीलने उनकी बताईहुई बावडीमें जैसेही गोतामारा वैसेही ताम्रलिप्ती नगरीमें राजा चंडसेनके उपवनकी बावडीमें आनिकला यह विचित्रलीला देखके उसने शोचा कि यह क्या बातहै कहां वह दिव्यपुर और कहां यह उपवन कहां दिव्य कन्याका अमृतसमान दर्शन और कहां उसका विषके समान वियोग यह स्वप्न तो है नहीं क्योंकि मुझे निद्राही नहीं आईथी मैं जानताहूं कि उन कन्याओंनेही मुझे छला है यह शोचके वह उसी कन्याका ध्यान करके उसीउपवनमें उन्मत्त के समान भ्रमण तथा विलाप करनेलगा उद्यान पालकोंने उसकी यह सब दशा राजाचंडसेन से जाकर कही यह सुनकर राजाने वहां आके उसे सावधान करके पूछा कि हे मित्र यह क्याबातहै तुम कहांगये थे और कहां आनिकले राजाके यह वचनसुनके सत्त्वशीलने अपना सब वृत्तान्त कहदिया उसवृत्तान्तको सुनके राजाने शोचा कि मेरेही पुण्योंसे यह कामसे पीडित हुआहै अब इसके उद्धार होने का मुझे अवसर मिलाहै यह शोचके राजाने उससे कहा कि व्यर्थ शोक मतकरो मैं तुमको उसी मार्गसे

तुम्हारी प्रियाके पास पहुँचादूंगा यह कहकर राजाने स्नानकराके उसे भोजनकरवाया दूसरेदिन मंत्रियोंको राज्यसौंपकर राजाचंडसेन सत्त्वशीलको जहाजपर चढ़ाके समुद्रमें लेचला जब समुद्रके बीचमें जहाज पहुँचा तो वह ध्वजा जलमेंसे फिर निकली उसे देखके सत्त्वशीलने राजासे कहा कि हे स्वामी यह वही ध्वजाहै जब यह जहाज ध्वजासे टक्करखाके टूटनेलगेगा तबमें इसपरसे कूदूंगा और आपभी मेरे पीछे कूदियेगा यह कहके उसध्वजाके निकट पहुँचके जहाजको टूटते देखिके सत्त्वशील जल में कूदा उसके पीछे राजाभी कूदपड़ा कूदतेंही वह दोनों उस दिव्यपुरमेंपहुँचे वहां राजा भगवती के दर्शनकरके आश्चर्य पूर्वक एक स्थानमे सत्त्वशील समेत बैठगया इतनेमे प्रभामंडलसे निकलकर वह कन्या भगवतीके पूजनको आई उसे देखकर सत्त्वशीलने राजासे कहा कि यह वही कन्याहै उसके वचन सुनके और उसकन्याके स्वरूपको देखके राजाने अपने चित्तमें कहा कि इसपर आशक्तहोना इसको उचितही है और राजाको देखकर वह कन्याभी यह कोई बड़ा तेजस्वी पुरुष है यहजानके उसको देखतीहुई भगवतीका पूजनकरके अपने स्थानको लौटगई परन्तु राजाउससे कुछभी न कहके उसबन की शोभा देखनेको चलागया क्षणभरमें उसकन्याने अपनी सखीसे कहा कि तुम जाकर देखो कि वह महात्मा जो इस मंदिरमे बैठाथा सो कहा है उससे जाके कहो कि मेरी स्वामिनी आप को अतिथि सत्कार ग्रहण करनेको बुलावतीहै उसके यह वचनसुनके सखीने उपवनमें जाके राजासे अपनी स्वामिनीके वचनकहे उसके वचनसुनकर राजाने निरपेक्षहोके कहा कि इतनाकहनाही बहुतहै आतिथ्य का क्याप्रयोजनहै राजाके यहवचन उसने अपनी स्वामिनीसे जाकर कहदिये यहसुनकेवहकन्या राजाको बड़ा धैर्यवान् जानकर आपही उपवनमें राजाके निकटआके बोली कि हे महाभाग मेरे स्थानपरचलके अतिथि सत्कारको ग्रहणकीजिये यह सुनके राजाने उससे कहा कि सत्त्वशीलके कहनेसे मैं यहां भगवतीके दर्शन करनेको आयाथा सो भगवतीके दर्शनके उपरान्त तुम्हारेभी दर्शन हुए इससे अधिक और क्या अतिथि सत्कारहोगा राजाके यह वचन सुनके उसकन्याने कहा कि अच्छा आपकृपाकरके चलकर मेरा दूसरा पुरही अवलोकनकीजिये यह सुनके राजाने हँसकर कहा कि वही पुरहै जहां वह स्नान करनेकी बावडी है यह सुनके उसने कहा ऐसा न कहिये मैं छलिन नहींहूं और आपमेरे पूज्य हो आपकेसाथ मैं क्या छलकरूंगी उसके इसवचनको मानकर राजा चण्डसेन सत्त्वशील समेत उसीके साथ द्वितीयपुरमें गया उसपुरके सबगृह सुवर्णमयथे और उसके उपवनों में ऐसे वृक्षलगेथे जिनमें सब ऋतुओंके फलफूल सदैव लगेरहतेथे ऐसे सुन्दर उसपुरके मध्यवर्त्ती एकदिव्य मंदिरमें राजाको सत्त्वशील समेत लेजाकर रत्नजटित आसनपर बैठालके अर्घ पाद्यादि यथायोग्य पूजनकरके उसकन्याने कहा कि मैं कालनेमिनाम दैत्यकी पुत्रीहूं विष्णुभगवान्ने मेरे पिताको मारडाला है यह दोनों मेरे बापके पुर विश्वकर्माके बनायेहुएहैं इनके निवासी न कभी वृद्ध होते हैं न मरते हैं अब आपही मेरे पिताहो सम्पूर्णपुर समेत मैं आपके वशीभूतहूं उसके यह वचनसुनके राजाने कहा कि हे पुत्री मैंने अपने मित्र इस सत्त्वशीलको तुम्हें देदिया उसने कहा कि जो आपकी आज्ञा तब राजाने सत्त्वशीलके

साथ उसका विवाह करवाके सत्त्वशीलसे कहा कि मैंने तुम्हारे दो आमले खायेथे उनमेंसे एकके ऋण मे तो मेरा उद्धारहुआ अब एककाही ऋण बाकीरहा इसमे यह कहके उस दैत्यकन्यासे कहा कि मुझे अपनी पुरीजानेका मार्ग बताओ उसके यह वचनसुनकर उस कन्या ने अपराजितनाम एकखड्ग और जरामृत्यु नाशक एक फलदेकर बावड़ी के किनारेपर राजाको लेजाकर कहा कि आप इस में गोता मारियेगा तो अपनी पुरीमें पहुँच जाइयेगा उसके यह वचनसुनके राजाने जैसेही बावडीमें गोतामारा वैसेही अपनीपुरीमें आनिकला और उसखड्गके प्रभावसे राजाकी सम्पूर्ण कामना सिद्धहोगई औरसत्त्वशीलभी उस दैत्यकन्याको पाकर सुखपूर्वक उनदोनो पुरोमें विहार करनेलगा अब हे राजातुम बताओ कि सत्त्वशील और राजा चन्द्रसेन इनदोनोंमे से समुद्रके कूदनेमें कौन अधिक सत्त्ववान्था जो जानकर तुम उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फटजायगा वेतालके यह वचनसुनके राजा त्रिविक्रमसेन ने कहा कि इन दोनोंमें से सत्त्वशीलही अधिक सत्त्ववान्था क्योंकि वह बिना तत्त्वजानेही निरपेक्षहोकर समुद्र में कूदाथा और राजा तत्त्वजानकर कूदाथा इससे उसके समान नहीं होसक्ता राजाके यहवचन सुनकर वेताल फिर अपने स्थानको चलागया और राजा उसके लेनेके लिये फिरचला ठीकहै (प्रारब्धसमाप्तेकार्येशिथिलीभवन्तिकिसुधियः) क्या बुद्धिमान्लोग प्रारम्भ कियेहुए कार्य्यको बिना समाप्त कियेही शिथिल होते हैं ११५॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेचतुर्दशस्तरङ्गः १४॥

इसके उपरान्त फिर शीशमके वृक्षके पास जाकर राजा त्रिविक्रमसेन वेतालको पकड़के कन्धे पर रखकर ले चला मार्ग में वेतालने कहा कि हे राजा आपके श्रम दूर करनेको मैं एक कथा कहताहूं उसे आप सुनिये कि अंगदेशमें वृक्षघट नाम एक ग्रामहै उसमें विष्णु स्वामी नाम एकयाज्ञिक ब्राह्मणरहता था उसके बड़े चतुर तीन पुत्रथे एकसमय विष्णु स्वामी ने यज्ञका आरम्भ करके अपने तीनों पुत्रों को समुद्रमें से कछुआ लानेके लिये भेजा पिताकी आज्ञासे समुद्रके तटपर जाके बड़े भाई ने अपने दोनों छोटे भाइयोंसे कहा कि तुम दोनोंमें से कोई इस कछुएको लेलो यह सुनकर छोटे भाइयोंने कहा कि जो तुम नहीं लेतेहो तो हम क्यों लेलें यह सुनके बड़ा भाई बोला कि तुम दोनों मे से कोई इस कछुए को अवश्य लेलो नहीं तो तुमको पिताके यज्ञ भंग करनेका पाप होगा और इसी पापसे अन्तमें नरक होगा यह सुनके उन दोनोंने कहा कि हमारेहीलिये धर्मजानतेहो अथवा अपनेलिये भी पापकाभय तो हम तीनोंको समानही है यह सुनके उसनेकहा कि मैं भोजनचतुरहूं इससे इस निन्द्य वस्तुको नहीं छुऊंगा यह सुनके मझले भाईने कहा कि मैं तुमसे अधिकहूं क्योंकि मैं नारीचतुरहूं तुम दोनों भाई चाहे इसको लेलो यह सुनकर छोटाभाई भृकुटी कुटिल करके बोला कि मैं तुमसे भी अधिकहूं क्योंकि मैं शय्याचतुरहूं इसप्रकार विवाद करके वह तीनों कछुएको छोड़के चतुरताका निर्णय करानेके लिये विटङ्कपुरमें राजा प्रसेनजितके पास गये वहां उन तीनों ने राजासे अपना सब वृत्तान्त कहा उस वृत्तान्तको सुनके राजा ने कहा ठहरो मैं तुम्हारा निर्णय करूंगा यह कहके भोजनके समय राजाने अपनेही भोजन में से उन

तुम्हारी प्रियाके पास पहुँचादूंगा यह कहकर राजाने स्नानकराके उसे भोजनकरवाया दूसरेदिन मंत्रियोंको राज्यसौंपकर राजाचंडसेन सत्त्वशीलको जहाजपर चढाके समुद्रमें लेचला जब समुद्रके बीचमें जहाज पहुँचा तो वह ध्वजा जलमेंसे फिर निकली उसे देखके सत्त्वशीलने राजासे कहा कि हे स्वामी यह वही ध्वजाहै जब यह जहाज ध्वजासे टक्करखाके टूटनेलगेगा तब मैं इसपरसे कूदूंगा और आपभी मेरे पीछे कूदियेगा यह कहके उसध्वजाके निकट पहुँचके जहाजको टूटते देखके सत्त्वशील जल में कूदा उसके पीछे राजाभी कूदपडा कूदतेंही वह दोनों उस दिव्यपुरमें पहुँचे वहां राजा भगवतीके दर्शनकरके आश्चर्य पूर्वक एक स्थानमें सत्त्वशील समेत बैठगया इतनेमें प्रभामंडलसे निकलकर वह कन्या भगवतीके पूजनको आई उसे देखकर सत्त्वशीलने राजासे कहा कि यह वही कन्याहै उसके वचन सुनके और उसकन्याके स्वरूपको देखके राजाने अपने चित्तमें कहा कि इसपर आशक्तहोना इसको उचितही है और राजाको देखकर वह कन्याभी यह कोई बडा तेजस्वी पुरुष है यहजानके उसको देखतीहुई भगवतीका पूजनकरके अपने स्थानको लौटगई परन्तु राजा उससे कुछभी न कहके उसबनकी शोभा देखनेको चलागया क्षणभरमें उसकन्याने अपनी सखीसे कहा कि तुम जाकर देखो कि वह महात्मा जो इस मंदिरमें बैठाथा सो कहा है उससे जाके कहो कि मेरी स्वामिनी आपको अतिथि सत्कार ग्रहण करनेको बुलावतीहै उसके यह वचनसुनके सखीने उपवनमें जाके राजासे अपनी स्वामिनीके वचनकहे उसके वचनसुनकर राजाने निरपेक्षहोके कहा कि इतनाकहनाही बहुतहै आतिथ्य का क्याप्रयोजनहै राजाके यहवचन उसने अपनी स्वामिनीसे जाकर कहदिये यहसुनकेवहकन्या राजाको बडा धैर्यवान् जानकर आपही उपवनमें राजाके निकटआके बोली कि हे महाभाग मेरे स्थानपरचलके अतिथि सत्कारको ग्रहणकीजिये यह सुनके राजाने उससे कहा कि सत्त्वशीलके कहनेसे मैं यहां भगवतीके दर्शन करनेको आयाथा सो भगवतीके दर्शनके उपरान्त तुम्हारेभी दर्शन हुए इससे अधिक और क्या अतिथि सत्कारहोगा राजाके यह वचन सुनके उसकन्याने कहा कि अच्छा आपकृपाकरके चलकर मेरा दूसरा पुरही अवलोकनकीजिये यह सुनके राजाने हँसकर कहा कि वही पुरहै जहां वह स्नान करनेकी बावडी है यह सुनके उसने कहा ऐसा न कहिये मैं छलिन नहींहूं और आपमेरे पूज्य हो आपकेसाथ में क्या छलकरूंगी उसके इसवचनको मानकर राजा चण्डसेन सत्त्वशील समेत उसीके साथ द्वितीयपुरमें गया उसपुरके सबगृह सुवर्णमयथे और उसके उपवनों में ऐसे वृक्षलगेथे जिनमें सब ऋतुओंके फलफूल सदैव लगेरहतेथे ऐसे सुन्दर उसपुरके मध्यवर्ती एकदिव्य मंदिरमें राजाको सत्त्वशील समेत लेजाकर रत्नजटित आसनपर बैठालके अर्घ पाद्यादि यथायोग्य पूजनकरके उसकन्याने कहा कि मैं कालनेमिनाम दैत्यकी पुत्रीहूं विष्णुभगवानने मेरे पिताको मारडाला है यह दोनों मेरे आसुरके पुर विश्वकर्माके बनायेहुएहैं इनके निवासी न कभी वृद्ध होते हैं न मरते हैं अब आपही मेरे पिताहो सम्पूर्णपुर समेत मैं आपके वशीभूतहूं उसके यह वचनसुनके राजाने कहा कि हे कुमारि मैंने अपने मित्र इस सत्त्वशीलको तुम्हें देदिया उसने कहा कि जो आपकी आज्ञा तब राजाने सत्त्वशीलके

भूतोंसे व्याप्त इस श्मशान में आपको भयनहीं मालूमहोता उस भिक्षुकके कहने से आपने यह बडा कठिन कार्य्य स्वीकारकिया है इससे आपके चित्तके बहलाने के लिये मैं एक कथा आपसे कहताहूं कि अवन्ति देशमें जो उज्जयिनीनाम नगरीहै उसे ब्रह्माने सृष्टिके आदिमें बनायाथा इसका सतयुग में पद्मावती त्रेतामें भोगवती और द्वापरमें हिरण्यवतीनाम था अब कलियुगमें यह उज्जयिनी कहाती है ऐसी प्राचीन इस नगरीमें वीरदेवनाम एक राजाथा उसके पद्मरतिनाम रानीथी एक समय राजा वीरदेवपद्मरति रानीको साथ लेकर पुत्रकी प्राप्तिकेलिये श्रीशिवजीके प्रसन्न करनेको गंगाजीके तटपर तपस्या करनेलगा बहुत कालतक तप करनेमे प्रसन्नहुए श्रीशिवजीकी कहीहुई यह आकाशवाणी उसे सुनाईदी कि हे राजा तुम्हारे बड़ा शूरवीर पुत्र होगा और अप्सराओं से भी अधिक रूपवती एक कन्या होगी इस आकाशवाणीको सुनके राजा वीरसेन प्रसन्नहोके रानी समेत अपनी नगरीमें चला आया वहा प्रथम उसके शूरदेव नाम एक पुत्र उत्पन्न हुआ फिर अत्यन्त रूपवती कन्या उत्पन्नहुई उसका नाम राजाने अनगरति रक्खा जब वह अनगरति तरुणहुई तो राजा वीरदेवने उसके समान वर मिलनेकेलिये पृथ्वीके सम्पूर्ण राजाओं के चित्र मगवाये परन्तु उनमें से कोई भी अनगरतिके समान रूपवान् नहीं निकला इससे राजाने अनगरतिसे कहा कि हे पुत्री मुझे तुम्हारे समान कोई वर नहीं मिलताहै इससे तुम स्वयंवर करके जिस राजाके साथ चाहो उसके साथ अपना विवाह करलो अपने पिताके यह वचन सुनके अनगरतिने कहा कि हे तात लज्जाके कारण मैं स्वयंवर नहीं करना चाहतीहूं किन्तु मेरी यह इच्छाहै कि जो कोई सुन्दर युवा पुरुष एक अपूर्व विज्ञान जानताहो उसके साथ आप मेरा विवाहकर दीजिये अनगरतिके यह वचन सुनकर राजा वीरदेव ऐसाही वर ढूंढनेलगा इतने में इस समाचारको सुनके दक्षिण दिशामे चारवीर विज्ञानी पुरुष राजाके यहा आये उनमे से एकने कहा कि हेराजा मैं पचपट्टिक नाम शूद्रहू मैं अकेलाही श्रेष्ठवस्त्रोंके पाच जोडे नित्य बुनलेताहू उनमें से एक ब्राह्मणको देताहू एक देवताओंको अर्पण करताहू एक अपने शरीरमें धारण करताहू एक जो कोई मेरी स्त्री होगी उसके लिये रखताहू और एक बेचकर भोजनादिके काममें लगाताहू इससे हे राजा यह अनगरति आप मुझे देदीजिये उसके इसकहनेपर दूसरेने कहा कि मैं भाषाज्ञ नाम वैश्यहू सम्पूर्ण पशुपक्षियोंकी बोली मैं जानताहू इससे आप अपनी पुत्री मुझे देदीजिये उसके इसप्रकार कहनेपर तीसरेने कहा कि मैं खड्गधर नाम क्षत्रीहू सम्पूर्ण पृथ्वीमें मेरे समान कोई खड्ग विद्याका जाननेवाला नहीं है इससे आप अपनी कन्या मुझे देदीजिये उसके ऐसे कहनेपर चौथेने कहा कि मैं जीवदत्तनाम ब्राह्मणहू मैं मरेहुए मनुष्योंको भी जिलाके दिखा देताहू इससे आप अपनी कन्या मुझे देदीजिये उन चारोंके यह वचन सुनकर तथा उनके दिव्य स्वरूपोंको देखकर राजा वीरदेव तथा अनगरति दोनों विचारके महासागरमे गोते खानेलगे इससे हे राजा तुम बताओ कि अनगरतिके योग्य इनमेंसे कौन पतिथा यह सुनके राजा त्रिविक्रमसेनने वेतालसे कहा कि तुम कालक्षेप करनेके लिये बारम्बार मेरा मौन छुटातेहो नहीं तो यह कौन कठिन प्रश्न है शूद्रसे क्षत्रिया कैसे भी नहीं जाती है और

तीनोंको अपनेही आगे पट्रस भोजन दिलवाया भोजन पाके दोनों छोटे भाइयो ने तो खाया परन्तु वडेभाई भोजनचगने भोजन न करके उसओरसे अपना मुख फेरलिया यहदेखके राजाने उससेकहा कि यह स्वादिष्ट पदार्थ आप क्यो नहीं खातेहो राजाके वचन सुनके उसने कहा कि यद्यपि यह भोजन बहुत स्वादिष्टहै तथापि इसमे मृतकोंके धुएकी गन्धि आती है इससे मै इसे नहीं खासक्ता उसके यहवचन सुनकर राजाने वहा वैठेहुए सव लोगोंको भोजन सुघाया परन्तु किसीको उसमें दुर्गन्धि नहीं मालूमहुई फिर राजाने भोजनके अधिकारियोंसेपूछा तो मालूमहुआ कि श्मशान भूमिके निकटहोनेवाले चावल का भात उस भोजनमेथा यहजानके राजाने बहुतप्रसन्नहोके उसे दूसरा भोजनदिलवाया और कहा कि तुम यथार्थ भोजनचगहो इसके उपरान्त रात्रिकेसमय मझलेभाई नारीचगके पास शयनस्थानमें राजा ने अत्यन्त रूपवती वेश्या अपने सेवकोंकेसाथ भेजी जैसेही वहवेश्या उसके निकटपहुची वैसेही उसने अपनी नाक बन्दकरके राजाके सेवकोंसे कहा कि इसे जल्दी मेरे पाससे लेजाओ नहीं तो मेरेप्राण निकल जायँगे क्योंकि इसके शरीरसे बकरेकी दुर्गंधि आरही है उसके यहवचनसुनके राजाके सेवकोने उस वेश्याको लेजाके राजासे उसका सबवृत्तान्त कहा तब राजाने नारीचगको अपने पास बुलाके कहा कि जिसके शरीरमें अगर चन्दन तथा कपूरलगाहुआहै उसमें बकरेकी दुर्गंधि कैसे आसक्ती है उसनेकहा कि नहीं मेरे कहनेमें आप सन्देह न समझिये उसके यहवचनसुनके राजाने युक्तिपूर्वक उस वेश्यासे पूछकरजाना कि बाल्यावस्थामें उसवेश्याकी पालना बकरीकेही दूधसे हुईथी यहजानके राजाने बहुतआश्चर्यित होके नारीचगकी बडी प्रशसाकी तदनन्तर छोटे भाई शय्याचगको बडे सुन्दर मंदिरमें सोने के लिये सात तोसकोका बिछाहुआ पलँग राजाने दिवाया उस शय्यापर घडीभर सोके शय्याचग अपनी पीठको दवाताहुआ महा चिल्लाकर उठा उसके शब्दको सुनकर राजाके सेवकोने उसकी पीठमें बालकासा लाल चिह्न देखकर राजासे जाकर सब वृत्तान्त कहा यह सुनकर राजाने उनसे कहा कि जाकर देखो पलँगमें कुछहै तो नहीं यह आज्ञापाके सेवकोंने सात तोसकोंके नीचे पलगपर बालको पाकर राजाको लाकर दिखाया उसे देखके राजाने आश्चर्य्य पूर्व्वक उस रात्रिको व्यतीत करके उन तीनोंको बडा चतुर जानके प्रातःकाल एक २ लाख अशर्फी उन्हेंदी इससे वह सुखी होकर अपने पिताके यज्ञको भूलकर वहीं रहनेलगे यह कथा कहके वेतालने राजासे पूछा कि हे राजा आपके विचारमें इनतीनों चगोंमें से कौन अधिकथा जो जानकर भी उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फटजायगा यह सुनके राजाने कहा कि इन में शय्याचग सबमे अधिकथा क्योंकि उसके शरीरमें बालका चिह्न प्रत्यक्ष दिखाई दिया और उन दोनोंमें यह सन्देहहै कि कदाचित् उन्होंने वह बात किसी से पूछ भी लीहों राजाके यहवचन सुनकर वेताल फिर अपने वृक्षपर जालटका औरराजा भी उसे लेनेको फिर चला ५२॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेपञ्चदशस्तरंग १५॥

इसके उपरान्त फिर राजा त्रिविक्रमसेन उसी शीशमके वृक्षपरसे वेतालको उतार कन्धेपर रखकर लेचला मार्ग में वेतालने कहा कि हे राजा कहा तो राज्य कहा रात्रिके समय श्मशानमें घूमना क्या

भूतोंसे व्याप्त इस श्मशान में आपको भयनहीं मालूमहोता उस भिक्षुकके कहने से आपने यह बडा कठिन कार्य्य स्वीकारकिया है इससे आपके चित्तके बहलाने के लिये मैं एक कथा आपसे कहताहूं कि अवन्ति देशमें जो उज्जयिनीनाम नगरी है उसे ब्रह्माने सृष्टिके आदिमें बनायाथा इसका सतयुग में पद्मावती त्रेतामें भोगवती और द्वापरमें हिरण्यवतीनाम था अब कलियुगमें यह उज्जयिनी कहा-तीहै ऐसी प्राचीन इस नगरीमें वीरदेवनाम एक राजाथा उसके पद्मरतिनाम रानीथी एक समय राजा वीरदेवपद्मरति रानीको साथ लेकर पुत्रकी प्राप्तिकेलिये श्रीशिवजीके प्रसन्न करनेको गंगाजीके तटपर तपस्या करनेलगा बहुत कालतक तप करनेमे प्रसन्नहुए श्रीशिवजीकी कहीहुई यह आकाशवाणी उसे सुनाईदी कि हे राजा तुम्हारे बडा शूरवीर पुत्र होगा और अप्सराओं से भी अधिक रूपवती एक कन्या होगी इस आकाशवाणीको सुनके राजा वीरसेन प्रसन्नहोके रानी समेत अपनी नगरीमें चला आया वहा प्रथम उसके शूरदेव नाम एक पुत्र उत्पन्न हुआ फिर अत्यन्त रूपवती कन्या उत्पन्नहुई उसका नाम राजाने अनगरति रक्खा जब वह अनगरति तरुणहुई तो राजा वीरदेवने उसके समान वर मिलनेकेलिये पृथ्वीके सम्पूर्ण राजाओं के चित्र मगवाये परन्तु उनमें से कोई भी अनगरतिके समान रूपवान् नहीं निकला इससे राजाने अनगरतिसे कहा कि हे पुत्री मुझे तुम्हारे समान कोई वर नहीं मिलताहै इससे तुम स्वयंवर करके जिस राजाके साथ चाहो उसके साथ अपना विवाह करलो अपने पिताके यह वचन सुनके अनगरतिने कहा कि हे तात लज्जाके कारण मैं स्वयंवर नहीं करना चाहतीहूं किन्तु मेरी यह इच्छाहै कि जो कोई सुन्दर युवा पुरुष एक अपूर्व विज्ञान जानताहो उसके साथ आप मेरा विवाहकर दीजिये अनगरतिके यह वचन सुनकर राजा वीरदेव ऐसाही वर ढूंढनेलगा इतने में इस समाचारको सुनके दक्षिण दिशासे चारवीर विज्ञानी पुरुष राजाके यहां आये उनमें से एकने कहा कि हेराजा मैं पञ्चपट्टिक नाम शूद्रहूं मैं अकेलाही श्रेष्ठवस्त्रोंके पांच जोडे नित्य बुनलेताहूं उनमें से एक ब्राह्मणको देताहूं एक देवताओंको अर्पण करताहूं एक अपने शरीरमें धारण करताहूं एक जो कोई मेरी स्त्री होगी उसके लिये रखताहूं और एक बेचकर भोजनादिके काममें लगाताहूं इससे हे राजा यह अनगरति आप मुझे देदीजिये उसके इसकहनेपर दूसरेने कहा कि मैं भाषाज्ञ नाम वैश्यहूं सम्पूर्ण पशुपक्षियोंकी बोली मैं जानताहूं इससे आप अपनी पुत्री मुझे देदीजिये उसके इसप्रकार कहनेपर तीसरेने कहा कि मैं खड्गधर नाम क्षत्रीहूं सम्पूर्ण पृथ्वीमें मेरे समान कोई खड्ग विद्याका जाननेवाला नहीं है इससे आप अपनी कन्या मुझे देदीजिये उसके ऐसे कहनेपर चौथेने कहा कि मैं जीवदत्तनाम ब्राह्मणहूं मैं मरेहुए मनुष्योंको भी जिलाके दिखा देताहूं इससे आप अपनी कन्या मुझे देदीजिये उन चारोंके यह वचन सुनकर तथा उनके दिव्य स्वरूपोंको देखकर राजा वीरदेव तथा अनगरति दोनों विचारके महासागरमें गोते खानेलगे इससे हे राजा तुम बताओ कि अनगरतिके योग्य इनमेंसे कौन पतिथा यह सुनके राजा त्रिविक्रमसेनने वेतालसे कहा कि तुम कालक्षेप करनेके लिये वारम्वार मेरा मौन छुड़ाते हो नहीं तो यह कौन कठिन प्रश्न है शूद्रको क्षत्रिया कैसे दी जाती है और

तीनोंको अपनेही आगे षट्रस भोजन दिलवाया भोजन पाके दोनों छोटे भाइयों ने तो खाया परन्तु बडेभाई भोजनचगने भोजन न करके उस ओरसे अपना मुख फेरलिया यहदेखके राजाने उससेकहा कि यह स्वादिष्ट पदार्थ आप क्यों नहीं खातेहो राजाके वचन सुनके उसने कहा कि यद्यपि यह भोजन ब हुत स्वादिष्टहै तथापि इसमे मृतकोंके धुएकी गन्धि आती है इससे मैं इसे नहीं खासक्ता उसके यहवचन सुनकर राजाने वहा बैठेहुए सब लोगोंको भोजन सुघाया परन्तु किसीको उसमें दुर्गन्धि नहीं मालूमहुई फिर राजाने भोजनके अधिकारियोंसेपूछा तो मालूमहुआ कि श्मशान भूमिके निकटहोनेवाले चावल का भात उस भोजनमेथा यहजानके राजाने बहुतप्रसन्नहोके उसे दूसरा भोजनदिलवाया और कहा कि तुम यथार्थ भोजनचगहो इसके उपरान्त रात्रिकेसमय मझलेभाई नारीचगके पास शयनस्थानमे राजा ने अत्यन्त रूपवती वेश्या अपने सेवकोंकेसाथ भेजी जैसेही वहवेश्या उसके निकटपहुंची वैसेही उसने अपनी नाक बन्दकरके राजाके सेवकोंसे कहा कि इसे जल्दी मेरेपाससे लेजाओ नहीं तो मेरे प्राण नि कल जायँगे क्योंकि इसके शरीरसे बकरेकी दुर्गंधि आरही है उसके यहवचनसुनके राजाके सेवकोंने उस वेश्याको लेजाके राजासे उसका सबवृत्तान्त कहा तब राजाने नारीचगको अपने पास बुलाके कहा कि जिसके शरीरमें अगर चन्दन तथा कपूरलगाहुआहै उसमें बकरेकी दुर्गंधि कैसे आसक्ती है उसनेकहा कि नहीं मेरे कहनेमें आप सन्देह न समझिये उसके यहवचनसुनके राजाने युक्तिपूर्वक उस वेश्यासे पूछ करजाना कि बाल्यावस्थामें उसवेश्याकी पालना बकरीकेही दूधसे हुईथी यहजानके राजाने बहुतआ श्चर्यित होके नारीचगकी बडी प्रशसाकी तदनन्तर छोटे भाई शय्याचगको बडे सुन्दर मन्दिरमे सोने के लिये सात तोसकों का बिछाहुआ पलँग राजाने दिवाया उस शय्यापर घडीभर सोके शय्याचग अपनी पीठको दबाताहुआ महा चिल्लाकर उठा उसके शब्दको सुनकर राजाके सेवकोंने उसकी पीठमें बालकासा लाल चिह्न देखकर राजासे जाकर सब वृत्तान्त कहा यह सुनकर राजाने उनसे कहा कि जा कर देखो पलँगमें कुछहै तो नहीं यह आज्ञापाके सेवकोंने सात तोसकोंके नीचे पलगपर बालको पाकर राजाको लाकर दिखाया उसे देखके राजाने आश्चर्य्य पूर्व्वक उस रात्रिको व्यतीत करके उन तीनोंको बडा चतुर जानके प्रातःकाल एक २ लाख अशर्फी उन्हेंदी इससे वह सुखी होकर अपने पिताके यज्ञ को भूलकर वहीं रहनेलगे यह कथा कहके वेतालने राजासे पूछा कि हे राजा आपके विचारमें इनतीनो चगोंमें से कौन अधिकथा जो जानकर भी उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फटजायगा यह सुनके राजाने कहा किइनमें शय्याचग सबसे अधिकथा क्योंकि उसके शरीरमें बालका चिह्न प्रत्यक्ष दिखाई दिया और उन दोनोंमें यह सन्देहहै कि कदाचित् उन्होंने वह बात किसी से पूछ भी लीहो राजाके यहवचन सुनकर वेताल फिर अपने वृक्षपर जालटका औरराजा भी उसे लेनेको फिर चला ५२॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेपञ्चदशस्तरंग १५॥

इसके उपरान्त फिर राजा त्रिविक्रमसेन उसी शीशमके वृक्षपरसे वेतालको उतार कन्धेपर रखकर लेचला मार्ग में वेतालने कहा कि हे राजा कहा तो राज्य कहा रात्रिके समय श्मशानमें घूमना क्या

अपने घरको आई और लग्नके दिन विवाह होनेके उपरान्त अपने पतिके घर जाकर उत्सवसे दिनके व्यतीत होजानेपर रात्रिके समय पतिके साथ शयन स्थानमें गई वहां समुद्रदत्त नाम अपने पतिके प्रार्थना करनेपरभी उसने उसका आलिंगन नहीं किया और बहुत आग्रह करनेपर आंसू भरलिये इस से समुद्रदत्तने यह जानकर कि मैं इसे नहीं रुचताहूं उससे कहा कि हे सुन्दरी जो मुझसे तुमको स्नेह नहीं है तो मुझे तुमसे कुछ प्रयोजन नहीं है तुम्हारा जो कोई प्रियहोय उसके पास तुम जाओ समुद्रदत्त के यह वचन सुनके वह नम्रतापूर्वक धीरेसे बोली कि हे आर्यपुत्र आप मुझे प्राणोंसेभी अधिक प्यारेहो किन्तु मेरी एक प्रार्थनाको सुनके स्वीकार कीजे और मुझे अभयदान दीजिये तो मैं कहूं उसने कहा कि अच्छा कहो तब वह लज्जा खेद तथा भययुक्त होकर बोली कि एक समय उद्यानमें मेरे भाईके धर्मदत्त नाम मित्रने मुझे अकेली देखकर कामसे पीडित होके मेरे संग बलात्कारसे रमण करनाचाहा इस से मैंने अपने पिताको कन्यादानका फल प्राप्त होनेके निमित्त और अपवाद से बचनेके लिये उस से यह प्रतिज्ञा करी कि विवाहके उपरान्त पहले मैं तुम्हारे पास आऊंगी तब अपने पतिके पास जाऊंगी इस सत्यवचन के पालन करनेके लिये आप मुझे आज्ञा दीजिये कि मैं उसके पास होके क्षणभरही में आपके पास लौट आऊं बाल्यावस्थाही मे पालन कियेहुए सत्यको मैं नहीं त्यागसक्तीहूं उसके यह वज्ररूपी वचन सुनकर समुद्रदत्तने सोचा कि यह अन्य पुरुषपर अनुरक्तहै इससे यह अवश्य चली जायगी तो मैं सत्यनाश करनेका पापी क्यों होऊं व्यर्थ आग्रह करनेसे क्या फलहोगा यह शोचकर उसने उस से कहा कि अच्छा जहां चाहो वहां जाओ उसके यह वचन सुनके मदनसेना अपने पति के घर से निकलकरचली चन्द्रमाकी चन्द्रिकासे प्रकाशित मार्गोंमें उसे जातीहुई देखकर एक चोरने उसका वस्त्र पकडकर रोककर उससे पूछा कि तुम कौनहो और कहां जातीहो यह सुनके वह डरतीहुई बोली कि मुझे छोडदो तुमको क्या प्रयोजन है मैं अपने एक कामको जातीहूं यह सुनके चोर ने कहा कि मैं चोरहूं तुझे नहीं छोडूंगा यह सुनके उसने कहा कि जो तुम चोरहो तो मेरे आभूषणलेलो यह सुनके चोर बोला कि इन पाषाणोंको लेकर मैं क्या करूंगा नीलमणिके समान केशवाली वज्रके समान कटि वाली सुवर्ण के समान अंगवाली पद्मराग मणिके समान मनोहर चरणवाली जगतके आभूषणरूप तुमको मैं नहीं छोडूंगा चोरके यह वचनसुनकर विवशहुई मदनसेना अपना सब वृत्तान्त कहकर उससे बोली कि क्षणभर क्षमाकरो मैं अपने सत्यका पालन करके शीघ्रही तुम्हारे पास यहां आऊंगी इससत्य वचनका मैं कदापि उल्लंघन नहींकरूंगी उसके यह वचन सुनकर वहचोर उसे सच्चीजानके उसे छोड के वहीं बैठरहा और मदनसेना धर्मदत्त वैश्यके पास पहुंची उसे आई देखके और उससे सब वृत्तान्त पूछकर धर्मदत्तने क्षणभर शोचके उससेकहा कि तुम्हारे सत्यसे मैं प्रसन्नहूं तुम पराई स्त्रीहोगईहो अब तुमसे मुझे क्या प्रयोजनहै यहांसे शीघ्रही चलीजाओ ऐसा न होय कि कोई तुमको देखले उसके यह वचन सुनकर मदनसेना वहां से चलकर प्रतीक्षा करतेहुए उस चोरके पास आई उस चोरने उसे शीघ्रही लौटी देखकर पूछा कि कहो वहां तुमसे क्या वार्तालापहुई यह सुनके उसने धर्मदत्तने जैसे

वैश्यको भी नहीं दीजासक्ती और उसवैश्यका गुणभी व्यर्थ है क्योंकि पशु पक्षियोंकी भाषाजानने से क्या प्रयोजन निकलसक्ताहै और उस ब्राह्मणको भी अनंगरतिकी योग्यता नहीं है क्योंकि वह अपने कर्म से च्युतहोजानेके कारण पतितहै क्योंकि इन्द्रजालियोंके समान उसका गुण उसके योग्य नहीं है इससे मेरी बुद्धिसे वह क्षत्रीही उसके योग्य पतिथा मौनछोड़कर राजा से कहेहुए इस उत्तरको सुनकर वेताल फिर उसके कन्धे से उतरकर उसी वृक्षपर चलागया और राजाभी उसे लानेकेलिये फिर लौटा ठीक है (उत्साहैकघनेहि वीरहृदये नाप्नोतिखेदोन्तरम्) उत्साहसे भरेहुए वीरों के हृदयमें खेदको स्याननहीं मिलता है ३९॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेषोडशस्तरंग १६॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर शीशमके वृक्षकेनिकट जाके वेतालको पकड़कर कन्धेपर रखके लेचला मार्ग में वेतालने कहा कि हे राजा तुमश्रमसे थकगयेहोगे इससे तुम्हारे चित्तके बहलाने के लिये मैं एककथा कहताहूं उसे सुनिये कि सम्पूर्ण राजाओं के जीतनेवाले राजा वीरबाहुके अनंग पुरनाम नगरमें अर्थदत्त नाम एक महाधनवान् वैश्य रहताथा उसके धनदत्तनाम एकपुत्र और धनदत्त से छोटी एक अत्यन्त रूपवती मदनसेना नाम कन्याथी एकसमय अपने उपवन में क्रीडाकरती हुई मदनसेनाको लावण्यरूपी जलसेपूर्ण त्रिवली रूपी लहरोंसे युक्त कुछ लक्षित कुचरूपी कुंभवाली यौवनरूपी हाथीकी क्रीडाकी बावड़ीके समान देखकर धनदत्तका मित्र धर्मदत्त वैश्य अत्यन्त कामसे पीडितहुआ और सोचनेलगा कि कामदेवने मेरेहृदयको भेदने के लिये अत्यन्त रूपवती यह बरछी बनाई है इसप्रकार उसके शोचते २ वहदिन व्यतीतहोगया और मदनसेना अपने गृहमें चलीगई मानों उसके न देखने की दुःखाग्निमें सतप्तहोकर सूर्य्य भगवान् पश्चिम समुद्र में डूबगये और उसे भीतर चलीगई जानकर उसके मुखारविन्दसे जीतागया चन्द्रमा धीरे २ उदितहुआ इसप्रकार रात्रिहोजानेपरध र्मदत्त अपने घरमेंजाके मदनसेनाकाही ध्यान करते२सोगया और प्रातःकाल उठकर फिर उसी उपवन में जाकर मदनसेनाको एकान्तमें अकेली खड़ीदेखकर उसकेपास जाके पैरोंपरगिरके मधुर२ वचनकह- के उससे रति करनेकी प्रार्थना करनेलगा उसके वचनसुनकर मदनसेनाने कहा कि मैं कन्याहूं और अ- भीसे पराई स्त्री होचुकीहूं क्योंकि मेरे पिताने समुद्रदत्तनाम वैश्यके साथ मेरा विवाह करना विचारा है कुछ दिनोंमें मेरा विवाह होनेवाला है इससे तुम यहां से चलेजाओ कोई देखलेगा तो बड़ा दोषहोगा उसके यह वचन सुनके धर्मदत्तने कहा कि मेरे लिये चाहै जैसा दोषहोय परन्तु मैंतो तुम्हारे विना जी नहीं सक्ताहूं यह सुनके बलात्कारसे डरी हुई मदनसेनाबोली कि पहले मेरा विवाहहोजाय और मेरे पि- ताको कन्यादानका फल मिलचुके तब मैं तुम्हारेपास आऊंगी यह सुनकर धर्मदत्तने कहा कि मैं अन्य भुक्त प्रियाके साथ भोग नहीं किया चाहताहूं (परभुक्तेहिकमलेकिमलेजायतेरतिः) क्या पराये उच्छिष्ट कमल में भ्रमर रमण करताहै यह सुनकर वह बोली कि अच्छा विवाहके उपरान्त मैं प्रथम तुम्हारेपास आऊंगी फिर अपने पतिके पास जाऊंगी इसप्रकार कहके और शपथखाकर मदनसेना उस से बचकर

अपने घरको आई और लग्नके दिन विवाह होनेके उपरान्त अपने पतिके घर जाकर उत्सवसे दिनके व्यतीत होजानेपर रात्रिके समय पतिके साथ शयन स्थानमें गई वहां समुद्रदत्त नाम अपने पतिके प्रार्थना करनेपरभी उसने उसका आलिंगन नहीं किया और बहुत आग्रह करनेपर आंसू भरलिये इस से समुद्रदत्तने यह जानकर कि मैं इसे नहीं रुचताहूं उससे कहा कि हे सुन्दरी जो मुझसे तुमको स्नेह नहीं है तो मुझे तुमसे कुछ प्रयोजन नहीं है तुम्हारा जो कोई प्रियहोय उसके पास तुम जाओ समुद्रदत्त के यह वचन सुनके वह नम्रतापूर्वक धीरेसे बोली कि हे आर्यपुत्र आप मुझे प्राणोंसेभी अधिक प्यारेहो किन्तु मेरी एक प्रार्थनाको सुनके स्वीकार कीजे और मुझे अभयदान दीजिये तो मैं कहूं उसने कहा कि अच्छा कहो तब वह लज्जा खेद तथा भययुक्त होकर बोली कि एक समय उद्यानमें मेरे भाईके धर्म दत्त नाम मित्रने मुझे अकेली देखकर काममे पीडित होके मेरे संग बलात्कारसे रमण करनाचाहा इस से मैंने अपने पिताको कन्यादानका फल प्राप्त होनेके निमित्त और अपवाद से बचनेके लिये उस से यह प्रतिज्ञा करी कि विवाहके उपरान्त पहले मैं तुम्हारे पास आऊंगी तब अपने पतिके पास जाऊंगी इस सत्यवचन के पालन करनेके लिये आप मुझे आज्ञा दीजिये कि मैं उसके पास होके क्षणभरही मैं आपके पास लौट आऊं बाल्यावस्थाही से पालन कियेहुए सत्यको मैं नहीं त्यागसक्तीहूं उसके यह वज्र रूपी वचन सुनकर समुद्रदत्तने शोचा कि यह अन्य पुरुषपर अनुरक्तहै इससे यह अवश्य चली जायगी तो मैं सत्यनाश करनेका पापी क्यों होऊं व्यर्थ आग्रह करनेसे क्या फलहोगा यह शोचकर उसने उस से कहा कि अच्छा जहां चाहो वहां जाओ उसके यह वचन सुनके मदनसेना अपने पति के घर से निकलकरचली चन्द्रमाकी चन्द्रिकासे प्रकाशित मार्गोंमें उसे जातीहुई देखकर एक चोरने उसका वस्त्र पकडकर रोककर उससे पूछा कि तुम कौनहो और कहां जातीहो यह सुनके वह डरतीहुई बोली कि मुझे छोडदो तुमको क्या प्रयोजन है मैं अपने एक कामको जातीहूं यह सुनके चोर ने कहा कि मैं चोरहूं तुझे नहीं छोडूंगा यह सुनके उसने कहा कि जो तुम चोरहो तो मेरे आभूषणलेलो यह सुनके चोर बोला कि इन पाषाणोंको लेकर मैं क्या करूंगा नीलमणिके समान केशवाली वज्रके समान कान्ति वाली सुवर्ण के समान अंगवाली पद्मराग मणिके समान मनोहर चरणवाली जगत्के आभूषणरूप तुमको मैं नहीं छोडूंगा चोरके यह वचन सुनकर विवशहुई मदनसेना अपना सब वृत्तान्त कहकर उससे बोली कि क्षणभर क्षमाकरो मैं अपने सत्यका पालन करके शीघ्रही तुम्हारे पास यहां आऊंगी इससत्य वचनका मैं कदापि उल्लंघन नहींकरूंगी उसके यह वचन सुनकर वहचोर उसे सच्चीजानके उसे छोड के वहीं बैठारहा और मदनसेना धर्मदत्त वैश्यके पास पहुंची उसे आई देखके और उससे सब वृत्तान्त पूछकर धर्मदत्तने क्षणभर शोचके उससे कहा कि तुम्हारे सत्यसे मैं प्रसन्नहूं तुम पराई स्त्रीहोगईहो अब तुमसे मुझे क्या प्रयोजनहै यहां से शीघ्रही चलीजाओ ऐसा न होय कि कोई तुमको देखले उसके यह वचन सुनकर मदनसेना वहां से चलकर प्रतीक्षा करतेहुए उस चोरके पास आई उस चोरने उसे शीघ्रही लौटी देखकर पूछा कि कहो वहां तुमसे क्या वार्त्तालापहुई यह सुनके उसने धर्मदत्तने जैसे

वैश्यको भी नहीं दीजासक्ती और उसवैश्यका गुणभी व्यर्थ है क्योंकि पशु पक्षियोंकी भाषाजानने से क्या प्रयोजन निकलसक्ताहै और उस ब्राह्मणको भी अनगरतिकी योग्यता नहीं है क्योंकि वह अपने कर्म से च्युतहोजानेके कारण पतितहै क्योंकि इन्द्रजालियो के समान उसका गुण उसके योग्य नहीं है इससे मेरी बुद्धिसे वह क्षत्रीही उसके योग्य पतिथा मौनछोडकर राजा से कहेहुए इस उत्तरको सुनकर वेताल फिर उसके कन्धे से उतरकर उसी वृक्षपर चलागया और राजाभी उसे लानेकेलिये फिर लौटा ठीक है (उत्साहैकघनेहि वीरहृदये नाप्नोतिखेदोन्तरम्) उत्साहसे भरेहुए वीरों के हृदयमे खेदको स्थाननहीं मिलता है ३९॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशांकवतीलम्बकेषोडशस्तरंग १६॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर शीशमके वृक्षकेनिकट जाके वेतालको पकडकर कन्धेपर रखके लेचला मार्ग में वेतालने कहा कि हे राजा तुमश्रमसे थकगयेहोगे इससे तुम्हारे चित्तके बहलाने के लिये मैं एककथा कहताहूं उसे सुनिये कि सम्पूर्ण राजाओं के जीतनेवाले राजा वीरबाहुके अनग पुरनाम नगरमे अर्थदत्त नाम एक महाधनवान् वैश्य रहताथा उसके धनदत्तनाम एकपुत्र और धनदत्त से छोटी एक अत्यन्त रूपवती मदनसेना नाम कन्याथी एकसमय अपने उपवन मे क्रीडाकरती हुई मदनसेनाको लावण्यरूपी जलसेपूर्ण त्रिवली रूपी लहरोंमे युक्त कुछ लक्षित कुचरूपी कुम्भवाली यौवनरूपी हाथीकी क्रीडाकी बावडीके समान देखकर अर्थदत्तका मित्र धर्मदत्त वैश्य अत्यन्त कामसे पीडितहुआ और शोचनेलगा कि कामदेवने मेरेहृदयको भेदने के लिये अत्यन्त रूपवती यह बर्छी बनाई है इसप्रकार उसके शोचते २ वहदिन व्यतीतहोगया और मदनसेना अपने गृहमे चलीगई मानो उसके न देखने की दुःखाग्निसे सन्तप्तहोकर सूर्य्य भगवान् पश्चिम समुद्र में डूबगये और उसे भीतर चलीगई जानकर उसके मुखारविन्दमे जीतागया चद्रमा धीरे २ उदितहुआ इसप्रकार रात्रिहोजानेपर धर्मदत्त अपने घरमेजाके मदनसेनाकाही ध्यान करते२सोगया और प्रातःकाल उठकर फिर उसी उपवन मे जाकर मदनसेनाको एकान्तमे अकेली खडीदेखकर उसकेपास जाके पैरोंपरगिरके मधुर२ वचनकहके उससे रति करनेकी प्रार्थना करनेलगा उसके वचनसुनकर मदनसेनाने कहा कि मैं कन्याहूं और अभीसे पराई स्त्री होचुकीहूं क्योंकि मेरे पिताने समुद्रदत्तनाम वैश्यके साथ मेरा विवाह करना विचारा है कुछ दिनोमे मेरा विवाह होनेवाला है इससे तुम यहा से चलेजाओ कोई देखलेगा तो बडा दोषहोगा उसके यह वचन सुनके धर्मदत्तने कहा कि मेरे लिये चाहे जैसा दोषहोय परन्तु मैंतो तुम्हारे विना जी नहीं सक्ताहूं यह सुनके बलात्कारसे डरी हुई मदनसेनाबोली कि पहले मेरा विवाहहोजाय और मेरे पिताको कन्यादानका फल मिलचुके तब मैं तुम्हारेपास आऊंगी यह सुनकर धर्मदत्तने कहा कि मैं अन्य भुक्त प्रियाके साथ भोग नहीं किया चाहताहूं (परभुक्तेहिकमलेकिमलेजायतेरतिः) क्या पराये उच्छिष्ट कमल मे भ्रमण रमण करताहै यह सुनकर वह बोली कि अच्छा विवाहके उपरान्त मैं प्रथम तुम्हारेपास आऊंगी फिर अपने पतिके पास जाऊंगी इसप्रकार कहके और शपथखाकर मदनसेना उस से छूटकर

अपने घरको आई और लग्नके दिन विवाह होनेके उपरान्त अपने पतिके घर जाकर उत्सवमें दिनके व्यतीत होजानेपर रात्रिके समय पतिके साथ शयन स्थानमें गई वहां समुद्रदत्त नाम अपने पतिके प्रार्थना करनेपरभी उसने उसका आलिंगन नहीं किया और बहुत आग्रह करनेपर आंसू भरलिये इस से समुद्रदत्तने यह जानकर कि मैं इसे नहीं रुचताहूं उससे कहा कि हे सुन्दरी जो मुझसे तुमको स्नेह नहीं है तो मुझे तुमसे कुछ प्रयोजन नहीं है तुम्हारा जो कोई प्रियहोय उसके पास तुम जाओ समुद्रदत्त के यह वचन सुनके वह नम्रतापूर्वक धीरेसे बोली कि हे आर्यपुत्र आप मुझे प्राणोंसेभी अधिक प्यारेहो किन्तु मेरी एक प्रार्थनाको सुनके स्वीकार कीजे और मुझे अभयदान दीजिये तो मैं कहूं उसने कहा कि अच्छा कहो तब वह लज्जा खेद तथा भययुक्त होकर बोली कि एक समय उद्यानमें मेरे भाईके धर्मदत्त नाम मित्रने मुझे अकेली देखकर काममे पीडित होके मेरे संग बलात्कारसे रमण करनाचाहा इस मे मैंने अपने पिताको कन्यादानका फल प्राप्त होनेके निमित्त और अपवाद से बचनेके लिये उस से यह प्रतिज्ञा करी कि विवाहके उपरान्त पहले मैं तुम्हारे पास आऊंगी तब अपने पतिके पास जाऊंगी इस सत्यवचन के पालन करनेके लिये आप मुझे आज्ञा दीजिये कि मैं उसके पास होके क्षणभरही में आपके पास लौट आऊं बाल्यावस्थाही से पालन कियेहुए सत्यको मैं नहीं त्यागसक्तीहूं उसके यह वज्र रूपी वचन सुनकर समुद्रदत्तने सोचा कि यह अन्य पुरुषपर अनुरक्त है इससे यह अवश्य चली जायगी तो मैं सत्यनाश करनेका पापी क्यों होऊं व्यर्थ आग्रह करनेसे क्या फलहोगा यह सोचकर उसने उस से कहा कि अच्छा जहां चाहो वहां जाओ उसके यह वचन सुनके मदनसेना अपने पति के घर से निकलकरचली चन्द्रमाकी चन्द्रिकासे प्रकाशित मार्गोंमें उसे जातीहुई देखकर एक चोरने उसका वस्त्र पकडकर रोककर उससे पूछा कि तुम कौनहो और कहां जातीहो यह सुनके वह डरतीहुई बोली कि मुझे छोडदो तुमको क्या प्रयोजन है मैं अपने एक कामको जातीहूं यह सुनके चोर ने कहा कि मैं चोरहूं तुझे नहीं छोडूंगा यह सुनके उसने कहा कि जो तुम चोरहो तो मेरे आभूषणलेलो यह सुनके चोर बोला कि इन पाषाणोंको लेकर मैं क्या करूंगा नीलमणिके समान केशवाली वज्रके समान कटि वाली सुवर्ण के समान अंगवाली पद्मराग मणिके समान मनोहर चरणवाली जगतके आभूषणरूप तुमको मैं नहीं छोडूंगा चोरके यह वचन सुनकर विवशहुई मदनसेना अपना सबवृत्तान्त कहकर उससे बोली कि क्षणभर क्षमाकरो मैं अपने सत्यका पालन करके शीघ्रही तुम्हारे पास यहां आऊंगी इससत्य वचनको मैं कदापि उल्लंघन नहींकरूंगी उसके यह वचन सुनकर वहचोर उसे सच्चीजानके उसे छोड के वहीं बैठारहा और मदनसेना धर्मदत्त वैश्यके पास पहुंची उसे आई देखके और उससे सब वृत्तान्त पूछकर धर्मदत्तने क्षणभर सोचके उससेकहा कि तुम्हारे सत्यसे मैं प्रसन्नहूं तुम परपुरुषकीहोगईहो अब तुमसे मुझे क्या प्रयोजनहै यहांसे शीघ्रही चलीजाओ ऐसा न हो कि कोई तुमको देखले उसके यह वचन सुनकर मदनसेना वहां से चलकर प्रतीक्षा करतेहुए उस चोरके पास आई उस चोरने उसे सामने लौटी देखकर पूछा कि कहो वहां तुमने क्या वार्त्तालापकई यह सुनके उसने धर्मदत्तने जैसे

वैश्यको भी नही दीजासक्ती और उसवैश्यका गुणभी व्यर्थ है क्योंकि पशु पक्षियोंकी भाषाजानने से क्या प्रयोजन निकलसक्ता है और उस ब्राह्मणको भी अनगरतिकी योग्यता नहीं है क्योंकि वह अपने कर्म से च्युतहोजानेके कारण पतितहै क्योंकि इन्द्रजालियों के समान उसका गुण उसके योग्य नहीं है इससे मेरी बुद्धिसे वह क्षत्रीही उसके योग्य पतिथा मौनछोडकर राजा से कहेहुए इस उत्तरको सुनकर वेताल फिर उसके कन्धे से उतरकर उसी वृक्षपर चलागया और राजाभी उसे लानेकेलिये फिर लौटा ठीक है (उत्साहैकघनेहि वीरहृदये नाप्नोतिखेदोन्तरम्) उत्साहसे भरेहुए वीरो के हृदयमें खेदको स्थाननहीं मिलता है २९ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशांकवतीलम्बकेषोडशस्तरंग १६ ॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर शीशमके वृक्षकेनिकट जाके वेतालको पकड़कर कन्धेपर रखके लेचला मार्ग में वेतालने कहा कि हे राजा तुमश्रमसे थकगयेहोगे इससे तुम्हारे चित्तके बहलाने के लिये मैं एककथा कहताहूं उसे सुनिये कि सम्पूर्ण राजाओं के जीतनेवाले राजा वीरबाहुके अनग पुरनाम नगरमे अर्थदत्त नाम एक महाधनवान् वैश्य रहताथा उसके धनदत्तनाम एकपुत्र और धनदत्त से छोटी एक अत्यन्त रूपवती मदनसेना नाम कन्याथी एकसमय अपने उपवन मे क्रीडाकरती हुई मदनसेनाको लावण्यरूपी जलसेपूर्ण त्रिवली रूपी लहरोंमे युक्त कुछ लक्षित कुचरूपी कुम्भवाली यौवनरूपी हाथीकी क्रीडाकी बावडीके समान देखकर अर्थदत्तका मित्र धर्मदत्त वैश्य अत्यन्त कामसे पीडितहुआ और शोचनेलगा कि कामदेवने मेरेहृदयको भेदने के लिये अत्यन्त रूपवती यह बरछी बनाई है इसप्रकार उसके शोचते २ वहदिन व्यतीतहोगया और मदनसेना अपने गृहमे चलीगई मानो उसके न देखने की दुःखाग्निसे सतप्तहोकर सूर्य्य भगवान् पश्चिम समुद्र मे डूबगये और उसे भीतर चलीगई जानकर उसके मुखारविन्दसे जीतागया चन्द्रमा धीरे २ उदितहुआ इसप्रकार रात्रिहोजानेपर धर्मदत्त अपने घरमेजाके मदनसेनाकाही ध्यान करतेरसोगया और प्रातःकाल उठकर फिर उसी उपवन मे जाकर मदनसेनाको एकान्तमे अकेली खडीदेखकर उसकेपास जाके पैरोंपरगिरके मधुर२ वचनकहके उससे रति करनेकी प्रार्थना करनेलगा उसके वचनसुनकर मदनसेनाने कहा कि मै कन्याहूं और अभीसे पराई स्त्री होचुकीहूं क्योंकि मेरे पिताने समुद्रदत्तनाम वैश्यके साथ मेरा विवाह करना विचारा है कुछ दिनोंमे मेरा विवाह होनेवाला है इससे तुम यहां से चलेजाओ कोई देखलेगा तो बडा दोषहोगा उसके यह वचन सुनके धर्मदत्तने कहा कि मेरे लिये चाहै जैसा दोषहोय परन्तु मैंतो तुम्हारे विना जी नहीं सक्ताहूं यह सुनके बलात्कारसे डरी हुई मदनसेनाबोली कि पहले मेरा विवाहहोजाय और मेरे पिताको कन्यादानका फल मिलचुके तब मैं तुम्हारेपास आऊंगी यह सुनकर धर्मदत्तने कहा कि मैं अन्य भुक्त प्रियाके साथ भोग नहीं किया चाहताहूं (परभुक्तेहिकमलेकिमलेर्जायतेरतिः) क्या पराये उच्छिष्ट कमल मे भ्रमण रमण करताहै यह सुनकर वह बोली कि अच्छा विवाहके उपरान्त मैं प्रथम तुम्हारेपास आऊंगी फिर अपने पतिके पास जाऊंगी इसप्रकार कहके और शपथखाकर मदनसेना उस से बचकर

अपने घरको आई और लग्नके दिन विवाह होनेके उपरान्त अपने पतिके घर जाकर उत्सवसे दिनके व्यतीत होजानेपर रात्रिके समय पतिके साथ शयन स्थानमें गई वहा समुद्रदत्त नाम अपने पतिके प्रार्थना करनेपरभी उसने उसका आलिंगन नहीं किया और बहुत आग्रह करनेपर आंसू भरलिये इस से समुद्रदत्तने यह जानकर कि मैं इसे नहीं रुचताहूं उससे कहा कि हे सुन्दरी जो मुझसे तुमको स्नेह नहीं है तो मुझे तुमसे कुछ प्रयोजन नहीं है तुम्हारा जो कोई प्रियहोय उसके पास तुम जाओ समुद्रदत्त के यह वचन सुनके वह नम्रतापूर्वक धीरेसे बोली कि हे आर्यपुत्र आप मुझे प्राणोंसेभी अधिक प्यारेहो किन्तु मेरी एक प्रार्थनाको सुनके स्वीकार कीजे और मुझे अभयदान दीजिये तो मैं कहूं उसने कहा कि अच्छा कहो तब वह लज्जा खेद तथा भययुक्त होकर बोली कि एक समय उद्यानमें मेरे भाईके धर्मदत्त नाम मित्रने मुझे अकेली देखकर कामसे पीडित होके मेरे संग बलात्कारसे रमण करनाचाहा इस से मैंने अपने पिताको कन्यादानका फल प्राप्त होनेके निमित्त और अपवाद से बचनेके लिये उस से यह प्रतिज्ञा करी कि विवाहके उपरान्त पहले मैं तुम्हारे पास आऊंगी तब अपने पतिके पास जाऊंगी इस सत्यवचन के पालन करनेके लिये आप मुझे आज्ञा दीजिये कि मैं उसके पास होके क्षणभरही मैं आपके पास लौट आऊं बाल्यावस्थाही से पालन कियेहुए सत्यको मैं नहीं त्यागसक्तीहूं उसके यह वज्ररूपी वचन सुनकर समुद्रदत्तने सोचा कि यह अन्य पुरुषपर अनुरक्तहै इससे यह अवश्य चली जायगी तो मैं सत्यनाश करनेका पापी क्यों होऊं व्यर्थ आग्रह करनेसे क्या फलहोगा यह सोचकर उसने उस से कहा कि अच्छा जहां चाहो वहा जाओ उसके यह वचन सुनके मदनसेना अपने पति के घर से निकलकरचली चन्द्रमाकी चन्द्रिकासे प्रकाशित मार्गोंमें उसे जातीहुई देखकर एक चोरने उसका वस्त्र पकडकर रोककर उससे पूछा कि तुम कौनहो और कहा जातीहो यह सुनके वह डरतीहुई बोली कि मुझे छोडदो तुमको क्या प्रयोजन है मैं अपने एक कामको जातीहूं यह सुनके चोर ने कहा कि मैं चोरहूं तुझे नहीं छोडूंगा यह सुनके उसने कहा कि जो तुम चोरहो तो मेरे आभूषणलेलो यह सुनके चोर बोला कि इन पाषाणोंको लेकर मैं क्या करूंगा नीलमणिके समान केशवाली वज्रके समान कटिवाली सुवर्ण के समान अंगवाली पद्मराग मणिके समान मनोहर चरणवाली जगत्के आभूषणरूप तुमको मैं नहीं छोडूंगा चोरके यह वचन सुनकर विवशहुई मदनसेना अपना सब वृत्तान्त कहकर उससे बोली कि क्षणभर क्षमाकरो मैं अपने सत्यका पालन करके शीघ्रही तुम्हारे पास यहा आऊंगी इससत्य वचनका मैं कदापि उल्लंघन नहींकरूंगी उसके यह वचन सुनकर वहचोर उसे सच्चीजानके उसे छोड के वहीं बैठारहा और मदनसेना धर्मदत्त वैश्यके पास पहुंची उसे आई देखके और उससे सब वृत्तान्त पूछकर धर्मदत्तने क्षणभर सोचके उससे कहा कि तुम्हारे सत्यसे मैं प्रसन्नहूं तुम परस्त्री होगईहो अब तुमसे मुझे क्या प्रयोजनहै यहासे शीघ्रही चलीजाओ ऐसा न होय कि कोई तुमको देखले उसके यह वचन सुनकर मदनसेना वहा से चलकर प्रतीक्षा करतेहुए उस चोरके पास आई उस चोरने उसे शीघ्रही लौटी देखकर पूछा कि कहो वहा तुमसे क्या वार्तालापहुई यह सुनके उसने धर्मदत्तने जैसे

उसे छोडाथा वह सब सत्य २ कहदिया यह सुनके वह चोर बोला कि जो ऐसाहै तो मैंनेभी तुम्हारे सत्य से प्रसन्नहोके तुमको छोडा यह कहके वह चोर उसको उसी के घरभेजगया इसप्रकार धर्म से नहींभ्रष्ट हुई मदनसेना बहुत प्रसन्नतापूर्व्वक अपने पति समुद्रदत्तके पास गई उसे आई देखकर उसके सब वृत्तान्तको पूछके उसके मुखकी कान्तिको नही नष्टहुई देखकर कोई सम्भोगके चिह्न उसमें न पाकर उसे नहीं भ्रष्ट हुई जानके समुद्रदत्त प्रसन्नहोकर अत्यन्त सत्यव्रती सती मदनसेनाके साथ सुखपूर्व्वक रहा इस कथाको कहकर वेतालने राजा त्रिविक्रमसेनसे फिर पूछा कि हे राजा बताइये धर्मदत्त समुद्रदत्त तथा चोर इन तीनो में से कौन त्यागी है जो जानकर भी सत्य २ उत्तर न दोगे तो तुम्हारे शिरके सौ टुकडे होजायँगे वेतालके यह वचन सुनकर राजा त्रिविक्रमसेन मौन छोडकर बोला कि इन तीनों में से चोर त्यागी है वह दोनों वैश्य नहीं जो उसके पतिने विवाहकरके भी उसे त्यागकिया सो उचित है क्योंकि वह कुलीनहोकर अपनी स्त्रीको अन्यमे आशक्त जानकर कैसे ग्रहणकरता और जो उसद्वितीय धर्मदत्त वैश्यने उसका त्याग किया उसका यह कारणथा कि एक तो काल अधिक व्यतीतहोने के कारण उसका कामका वेग शान्तहोगयाथा और दूसरे उसे यहभयथा कि जो इसका पति जानलेगा तो प्रातःकाल राजासे जाकर कहैगा, परन्तु चोरने पापी होकर भी और राजदण्डसे निरपेक्षहोकरभी उस आभूषण सहित अत्यन्त रूपवती स्त्रीका जो त्यागकिया इससे वही पक्कात्यागी है राजा के यह वचन सुनकर वह वेताल फिर अपने वृक्षपर चलागया और राजा फिर उसे लेनेके लिये लौटा ६८॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशांकवतीलम्बकेसप्तदशस्तरंग १७॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर उसी शीशम के वृक्षके नीचे जाकर वेतालको पकडके ले चला मार्ग में वेतालने राजासेकहा कि हे राजा एक बडी विचित्र कथा मैं आपसे कहताहू उज्जयिनी नगरी मे राजा धर्मध्वजके इन्दुलेखा, तारावली, तथा मृगाङ्कवती नाम अत्यन्त प्यारी तीन रानीथीं उन तीनोंके साथ राजासुखपूर्व्वक विहार कियाकरताथा एकसमय वसन्तके उत्सवमे राजा धर्मध्वज तीनों रानियों समेत उपवनमे क्रीडाकरनेको गया वहा भ्रमरोंकी पङ्क्तिरूप प्रत्यचावाली पुष्पों के भारसे नम्र कामदेवके धनुषके समान लताओंको देखताहुआ कोकिलाओ के मधुरशब्दोंको सुनताहुआ उत्तम सुगन्धित मद्यको पीताहुआ राजा धर्मध्वज अपनी प्रियाओं के साथ क्रीडाकरनेलगा क्रीडा करते २ राजाने जो रानी इन्दुलेखाके केशपकडे तो उसके कानका कमल उसकी जघापर गिरपडा इससे उसकी जघामें घावहोगया और वह हायहायकरके पृथ्वी मे मूर्च्छितहोकर गिरपडी यह देखके राजाने बहुत विह्वलहोकर शीतल जल तथा वायुसे उसे सावधानकरके वहा से राजमन्दिरमे लेजाके वैद्यों को बुलवाके उसकी औषधकरवाई कुछदिनोंमें उसे नीरोगदेखकर राजा दूसरी रानी तारावलीको सायलेके रात्रिके समय महलपरगया वहा वह रानी तारावली राजाकी गोदीमेंही सोगई और वायुकेद्वारा उसके वस्त्र उडनेमे उसके शरीरमें चन्द्रमाकी किरणेंलगीं इससे क्षणभरमे वह जगकर हाय २ मैं जलगई यह कहके अगको हाथसे दाबनेलगी उसके यह वचन सुनके और अगमें छाले देखके राजाने उससे पूछा

कि यह क्या बातहै उसनेकहा कि कपडोंके उडने से जो मेरे शरीरमें चन्द्रमाकी किरणेंलगीं उनसे मेरी यह दशा होगई है यह सुनके राजाने उसके शरीरमें चन्दनका लेप लगवाया तारावलीकी इस व्यथाको सुनकर तीसरी रानी मृगाकवती उसे देखनेको अपने स्थानसे चली मार्ग में कहीं नाज कूटा जारहाथा इससे मूसलके शब्दको सुनकर हाय में मरी यह कहके रानी मृगाकवती वहीं बैठगई और अपने हाथ पटकनेलगी इससे उसके सेवकलोग उसीके स्थानमें उसे लौटालेगये वहां वह शय्यापर लेटकर रोनेलगी उसके हाथमें नीले २ दाग देखकर सेवकों ने जाकर राजासे यह वृत्तान्तकहा राजाने सुनके महा विह्वलहोके वहां आकर पूछा कि हे रानी तुम्हारी विकलताका क्या कारण है यह सुनके उसने अपने हाथ दिखाकर कहा कि मैंने मूसलका शब्द सुनाथा इससे मेरे हाथों में यहदाग पडगये हैं दागोंको देखकर राजाने उसके हाथों में चन्दनका लेप लगवादिया और शोचा कि एकके तो कमल गिरने से घावहोगया दूसरी का अंग चन्द्रमाकी किरणों से जलगया और तीसरी के हाथों में मूसलका शब्द सुनने से नीले दागपडगये हाय मेरी प्रियाओंका यह गुण भी दोषकारी होगया इस प्रकार शोचते २ राजाकी वह रात्रि व्यतीतहोगई प्रातःकाल उसने वैद्योंको बुलाकर रानियोंकी ऐसी उत्तम औषध कराई जिससे वह शीघ्रही नीरोगहोगई इस अद्भुत कथाको कहके वेतालने राजासेपूछा कि बताइये इन तीनो में कौन अधिक सुकुमारहै जो जानकर भी उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फट जायगा यह सुनके राजाने कहा कि इन तीनों रानियों में वह अधिक सुकुमारहै जिसके हाथों में मूसल का शब्द सुनकरही नीले दागहोगये और उन दोनों रानियोंके तो कमल तथा चन्द्रमाकी किरणों के स्पर्श से घाव और विस्फोटकहुएथे इससे वह दोनों इसके समान नहीं होसक्तीं राजा के यह वचनसुनके वेताल फिर अपने स्थानको चलागया और दृढ निश्चयवान् राजा त्रिविक्रमसेन भी उसके लेनेको फिर लौटा ३६॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशांकवतीलम्बकेअष्टादशस्तरंगः १८॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर शीशमके वृक्षके समीपजाके वेतालको पकडकर कन्धेपर रखकर लेचला मार्ग में वेताल बोला हे राजा इतना श्रम करनेपर भी तुमको खेद नहीं है इससे तुम मेरे बडे प्यारेहो इसीसे तुम्हें प्रसन्न करनेको मैं एक बडी उत्तम कथा कहताहूं उसको तुम ध्यानदेके सुनो कि अंगदेशमें एक महा प्रतापी अत्यन्तरूपवान् यशःकेतु नाम राजा था उसके दीर्घदर्शी नाम बडा बुद्धिमान् मन्त्रीथा वह राजा उस मन्त्रीपर राज्यका भाररखके ऐसा विषयों में तत्परहुआ कि रात्रि दिन अन्तःपुरही में रहनेलगा और नृत्य गानआदि विषयोंहीमें अपना मन समय व्यतीत करनेलगा राज्यके कार्यों में दृष्टिदेना तथा सभामें जाकर विचारादिक करना उसने छोडदिया परन्तु दीर्घदर्शी ने रात्रि दिन राज्यके कार्यों को करके ऐसा श्रमकिया कि राज्यमें किसीप्रकारकी हानि नहीं होनेपाई तथापि लोकमें उसका यह अपयशहुआ कि दीर्घदर्शी राजाको व्यसनों में डालके आपही राज्यका भोगताहै इससे दीर्घदर्शी ने एक दिन अपनी मेधावती नाम स्त्रीसे एकान्तमें कहा कि हे प्रिये राज्य

उसे छोडाथा वह सब सत्य २ कहदिया यह सुनके वह चोर बोला कि जो ऐसाहै तो मैंनेभी तुम्हारे सत्य से प्रसन्नहोके तुमको छोडा यह कहके वह चोर उसको उसी के घरभेजगया इसप्रकार धर्म से नहींभ्रष्ट हुई मदनसेना बहुत प्रसन्नतापूर्व्वक अपने पति समुद्रदत्तके पास गई उसे आई देखकर उसके सब वृत्तान्तको पूछके उसके मुखकी कान्तिको नही नष्टहुई देखकर कोई सम्भोगके चिह्न उसमे न पाकर उसे नहीं भ्रष्ट हुई जानके समुद्रदत्त प्रसन्नहोकर अत्यन्त सत्यवती सती मदनसेनाके साथ सुखपूर्व्वक रहा इस कथाको कहकर वेतालने राजा त्रिविक्रमसेनसे फिर पूछा कि हे राजा बताइये धर्मदत्त समुद्रदत्त तथा चोर इन तीनो में से कौन त्यागी है जो जानकर भी सत्य २ उत्तर न दोगे तो तुम्हारे शिरके सौ टुकडे होजायँगे वेतालके यह वचन सुनकर राजा त्रिविक्रमसेन मौन छोडकर बोला कि इन तीनों में से चोर त्यागी है वह दोनों वैश्य नही जो उसके पतिने विवाहकरके भी उसे त्यागकिया सो उचित है क्योंकि वह कुलीनहोकर अपनी स्त्रीको अन्यमे आशक्त जानकर कैसे ग्रहणकरता और जो उसद्वितीय धर्मदत्त वैश्यने उसका त्यागकिया उसका यह कारणथा कि एक तो काल अधिक व्यतीतहोने के कारण उसका कामका वेग शान्तहोगयाथा और दूसरे उसे यहभयथा कि जो इसका पति जानलेगा तो प्रातःकाल राजासे जाकर कहैगा, परन्तु चोरने पापी होकर भी और राजदण्डसे निरपेक्षहोकरभी उस आभूषण सहित अत्यन्त रूपवती स्त्रीका जो त्यागकिया इससे वही पक्कात्यागी है राजा के यह वचन सुनकर वह वेताल फिर अपने वृक्षपर चलागया और राजा फिर उसे लेने के लिये लौटा ६८॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेसप्तदशस्तरंग १७॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर उसी शीशम के वृक्षके नीचे जाकर वेतालको पकडके ले चला मार्ग में वेतालने राजासेकहा कि हे राजा एक बडी विचित्र कथा मै आपसे कहताहूं उज्जयिनी नगरी मे राजाधर्मध्वजके इन्दुलेखा, तारावली, तथा मृगाङ्कवती नाम अत्यन्त प्यारी तीन रानीथीं उन तीनोके साथ राजासुखपूर्व्वक विहार कियाकरताथा एकसमय वसन्तके उत्सवमे राजाधर्मध्वज तीनों रानियो समेत उपवनमें क्रीडाकरनेको गया वहा भ्रमरोंकी पङ्क्तिरूप प्रत्यञ्चावाली पुष्पोके भारसे नम्र कामदेवके धनुषके समान लताओंको देखताहुआ कोकिलाओ के मधुरशब्दोंको सुनताहुआ उत्तम सुगन्धित मद्यको पीताहुआ राजा धर्मध्वज अपनी प्रियाओं के साथ क्रीडाकरनेलगा क्रीडा करते २ राजाने जो रानी इन्दुलेखाके केशपकडे तो उसके कानका कमल उसकी जघापर गिरपडा इसमे उसकी जघामे घावहोगया और वह हायहायकरके पृथ्वी मे मूर्च्छितहोकर गिरपडी यह देखके राजाने बहुत विह्वलहोकर शीतल जल तथा वायुसे उसे सावधानकरके वहा से राजमन्दिरमें लेजाके वैद्यो को बुलवाके उसकी औषधकरवाई कुछदिनोंमे उसे नीरोगदेखकर राजा दूसरी रानी तारावलीको साथलेके रात्रिके समय महलपरगया वहा वह रानी तारावली राजाकी गोदीमेंही सोगई और वायुकेद्वारा उसके वस्त्र उडने मे उसके शरीरमें चन्द्रमाकी किरणेंलगीं इससे क्षणभरमे वह जगकर हाय २ मै जलगई यह कहके अगले हाथसे दाबनेलगी उसके यह वचन सुनके और अगमें छाले देखके राजाने उससे पूछा

कि यह क्या बातहै उसनेकहा कि कपडों के उटने से जो मेरे शरीरमें चन्द्रमाकी किरणेंलगीं उनसे मेरी यह दशा होगई है यह सुनके राजाने उसके शरीरमें चन्दनका लेप लगवाया तारावलीकी इस व्यथाको सुनकर तीसरी रानी मृगाकवती उसे देखनेको अपने स्थानसे चली मार्ग में कहीं नाज कूटा जारहाथा इसमे मूसलके शब्दको सुनकर हाथ मे मरी यह कहके रानी मृगाकवती वहीं बैठगई और अपने हाथ पटकनेलगी इससे उसके सेवकलोग उसीके स्थानमें उसे लौटालेगये वहा वह शय्यापर लेटकर रोनेलगी उसके हाथमें नीले २ दाग देखकर सेवकों ने जाकर राजासे यह वृत्तान्तकहा राजाने सुनके महा विह्वलहोके वहा आकर पूछा कि हे रानी तुम्हारी विकलताका क्या कारण है यह सुनके उसने अपने हाथ दिखाकर कहा कि मैने मूसलका शब्द सुनाथा इससे मेरे हाथों में यहदाग पडगये हैं दागोंको देखकर राजाने उसके हाथों में चन्दनका लेप लगवादिया और शोचा कि एकके तो कमल गिरने से घावहोगया दूसरी का अंग चन्द्रमाकी किरणों से जलगया और तीसरी के हाथों में मूसलका शब्द सुनने से नीले दागपडगये हाय मेरी प्रियाओंका यह गुण भी दोषकारी होगया इस प्रकार शोचते २ राजाकी वह रात्रि व्यतीतहोगई प्रातःकाल उसने वैद्योंको बुलाकर रानियोंकी ऐसी उत्तम औषध कराई जिससे वह शीघ्रही नीरोगहोगई इस अद्भुत कथाको कहके वेतालने राजासेपूछा कि बताइये इन तीनों में कौन अधिक सुकुमारहै जो जानकर भी उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फट जायगा यह सुनके राजाने कहा कि इन तीनों रानियों में वह अधिक सुकुमारहै जिसके हाथों में मूसल का शब्द सुनकरही नीले दागहोगये और उन दोनों रानियोंके तो कमल तथा चन्द्रमाकी किरणों के स्पर्श से घाव और विस्फोटकहुएथे इससे वह दोनो इसके समान नहीं होसकीं राजा के यह वचनसुनके वेताल फिर अपने स्थानको चलागया और दृढ निश्चयवान् राजा त्रिविक्रमसेन भी उसके लेनेको फिर लौटा २६ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेअष्टादशस्तरङ्गः १८ ॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर शीशमके वृक्षके समीपजाके वेतालको पकडकर कन्धेपर रखकर लेचला मार्ग मे वेताल बोला हे राजा इतना श्रम करनेपर भी तुमको धैर्य बना है इससे तुम मेरे बडे प्यारेहो इसीसे तुम्हें प्रसन्न करनेको मैं एक बडी उत्तम कथा कहताहूं उसको तुम ध्यानदेके सुनो कि अंगदेशमें एक महा प्रतापी अत्यन्तरूपवान् यशःकेतु नाम राजा था उसके दीर्घदर्शी नाम बडा बुद्धिमान् मन्त्रीथा वह राजा उस मन्त्रीपर राज्यका भारधरके ऐसा विषयों मे तत्परहुआ कि रात्रि दिन अन्तःपुरही मे रहनेलगा और नृत्य गानआदि विषयोंहीमे अपना मन समय व्यतीत करनेलगा राज्यके कार्यों मे दृष्टिदेना तथा सभामें जाकर विचारादिक करना उसने छोडदिया परन्तु दीर्घदर्शी ने रात्रि दिन राज्यके कार्यों को करके ऐसा श्रमकिया कि राज्यमें किसीप्रकारकी हानि नहीं होनेपाई तथापि लोकमें उसका यह अपयशहुआ कि दीर्घदर्शी राजाको व्यसनों मे डालके आपही राज्यको भोगताहै इससे दीर्घदर्शी ने एक दिन अपनी मेधावती नाम स्त्री से एकान्तमे कहा कि हे प्रिये राज्य

उसे छोडाथा वह सब सत्य २ कहदिया यह सुनके वह चोर बोला कि जो ऐसाहै तो मैंनेभी तुम्हारे सत्य से प्रसन्नहोके तुमको छोडा यह कहके वह चोर उसको उसी के घरभेजगया इसप्रकार धर्म से नहींभ्रष्ट हुई मदनसेना बहुत प्रसन्नतापूर्व्वक अपने पति समुद्रदत्तके पास गई उसे आई देखकर उसके सब वृत्तान्तको पूछके उसके मुखकी कान्तिको नहीं नष्टहुई देखकर कोई सम्भोगके चिह्न उसमे न पाकर उसे नही भ्रष्ट हुई जानके समुद्रदत्त प्रसन्नहोकर अत्यन्त सत्यवती सती मदनसेनाके साथ सुखपूर्व्वक रहा इस कथाको कहकर वेतालने राजा त्रिविक्रमसेनसे फिर पूछा कि हे राजा बताइये धर्मदत्त समुद्रदत्त तथा चोर इन तीनो मे से कौन त्यागी है जो जानकर भी सत्य २ उत्तर न दोगे तो तुम्हारे शिरके सौ टुकडे होजायँगे वेतालके यह वचन सुनकर राजा त्रिविक्रमसेन मौन छोडकर बोला कि इन तीनों में से चोर त्यागी है वह दोनो वैश्य नही जो उसके पतिने विवाहकरके भी उसे त्यागकिया सो उचित है क्योंकि वह कुलीनहोकर अपनी स्त्रीको अन्यमे आशक्त जानकर कैसे ग्रहणकरता और जो उसद्वितीय धर्मदत्त वैश्यने उसका त्यागकिया उसका यह कारणथा कि एक तो काल अधिक व्यतीतहोने के कारण उसका कामका वेग शान्तहोगयाथा और दूसरे उसे यहभयथा कि जो इसका पति जानलेगा तो प्रातःकाल राजासे जाकर कहैगा, परन्तु चोरने पापी होकर भी और राजदण्डसे निरपेक्षहोकरभी उस आभूषण सहित अत्यन्त रूपवती स्त्रीका जो त्यागकिया इससे वही पक्कात्यागी है राजा के यह वचन सुनकर वह वेताल फिर अपने वृक्षपर चलागया और राजा फिर उसे लेने के लिये लौटा ६८॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेसप्तदशस्तरंग १७॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर उसी शीशम के वृक्षके नीचे जाकर वेतालको पकडके ले चला मार्ग मे वेतालने राजासेकहा कि हे राजा एक बडी विचित्र कथा मे आपसे कहताहू उज्जयिनी नगरी में राजाधर्मध्वजके इन्दुलेखा, तारावली, तथा मृगाङ्कवती नाम अत्यन्त प्यारी तीन रानीथीं उन तीनो के साथ राजासुखपूर्व्वक बिहार कियाकरताथा एकसमय वसन्तके उत्सवमे राजा धर्मध्वज तीनों रानियो समेत उपवनमे क्रीडाकरनेको गया वहा भ्रमरोकी पङ्क्तिरूप प्रत्यञ्चावाली पुष्पो के भारसे नम्र कामदेवके धनुषके समान लताओंको देखताहुआ कोकिलाओ के मधुरशब्दोको सुनताहुआ उत्तम सुगन्धित मद्यको पीताहुआ राजा धर्मध्वज अपनी प्रियाओ के साथ क्रीडाकरनेलगा क्रीडा करते २ राजाने जो रानी इन्दुलेखाके केशपकडे तो उसके कानका कमल उसकी जघापर गिरपडा इससे उसकी जघामे घावहोगया और वह हायहायकरके पृथ्वी मे मूर्च्छितहोकर गिरपडी यह देखके राजाने बहुत विह्वलहोकर शीतल जल तथा वायुसे उसे सावधानकरके वहा से राजमन्दिरमे लेजाके वैद्यो को बुलवाके उसकी औषधकरवाई कुछदिनोंमे उसे नीरोगदेखकर राजा दूसरी रानी तारावलीको सायलेके रात्रिके समय महलपरगया वहा वह रानी तारावली राजाकी गोदीमेंही सोगई और वायुकेद्वारा उसके वस्त्र उडने मे उसके शरीरमे चन्द्रमाकी किरणेंलगीं इससे क्षणभरमे वह जगकर हाय २ मे जलगई यह कहके अगको हाथसे दाबनेलगी उसके यह वचन सुनके और अगमे छाले देखके राजाने उससे पूछा

कि यह क्या बातहै उसनेकहा कि कपडों के उडने से जो मेरे शरीरमें चन्द्रमाकी किरणेंलगीं उनसे मेरी यह दशा होगई है यह सुनके राजाने उसके शरीरमें चन्दनका लेप लगवाया तारावलीकी इस व्यथाको सुनकर तीसरी रानी मृगाङ्कवती उसे देखनेको अपने स्थानसे चली मार्ग मे कहीं नाज कूटा जारहाथा इससे मूसलके शब्दको सुनकर हाय मैं मरी यह कहके रानी मृगाङ्कवती वहीं बैठगई और अपने हाथ पटकनेलगी इससे उसके सेवकलोग उसीके स्थानमें उसे लौटालेगये वहा वह शय्यापर लेटकर रोनेलगी। उसके हाथमें नीले २ दाग देखकर सेवकों ने जाकर राजासे यह वृत्तान्तकहा राजाने सुनके महा विह्वलहोके वहा आकर पूछा कि हे रानी तुम्हारी विकलताका क्या कारण है यह सुनके उसने अपने हाथ दिखाकर कहा कि मैंने मूसलका शब्द सुनाथा इससे मेरे हाथों में यहदाग पडगये हैं दागोंको देखकर राजाने उसके हाथों में चन्दनका लेप लगवादिया और सोचा कि एकके तो कमल गिरने से घावहोगया दूसरी का अङ्ग चन्द्रमाकी किरणों मे जलगया और तीसरी के हाथों में मूसलका शब्द सुनने से नीले दागपडगये हाय मेरी प्रियाओंका यह गुण भी दोषकारी होगया इस प्रकार सोचते २ राजाकी वह रात्रि व्यतीतहोगई प्रातःकाल उसने वैद्योंको बुलाकर रानियोंकी ऐसी उत्तम औषध कराई जिससे वह शीघ्रही नीरोगहोगई इस अद्भुत कथाको कहके वेतालने राजासेपूछा कि बताइये इन तीनों में कौन अधिक सुकुमारहै जो जानकर भी उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फट जायगा यह सुनके राजाने कहा कि इन तीनों रानियों में वह अधिक सुकुमारहै जिसके हाथों में मूसल का शब्द सुनकरही नीले दागहोगये और उन दोनों रानियोंके तो कमल तथा चन्द्रमाकी किरणों के स्पर्श से घाव और विस्फोटकहुएथे इससे वह दोनों इसके समान नहीं होसकीं राजा के यहवचनसुनके वेताल फिर अपने स्थानको चलागया और दृढ निश्चयवान् राजा त्रिविक्रमसेन भी उसके लेनेको फिर लौटा ३६॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेअष्टादशस्तरङ्गः १८॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर शीशमके वृक्षके समीपजाके वेतालको पकडकर कन्धेपर रखकर लेचला मार्ग में वेताल बोला हे राजा इतना श्रम करनेपर भी तुमको धैर्य बना है इससे तुम मेरे बडे प्यारेहो इसीसे तुम्हें प्रसन्न करनेको मैं एक बडी उत्तम कथा कहताहूं उसको तुम ध्यानदेकर सुनो कि अङ्गदेशमें एक बडा प्रतापी अत्यन्तरूपवान् यशःकेतु नाम राजा था उसके दीर्घदर्शी नाम बडा बुद्धिमान् मन्त्रीथा वह राजा उस मन्त्रीपर राज्यका भाररखके ऐसा विषयों मे तत्परहुआ कि रात्रि दिन अन्तःपुरही में रहनेलगा और नृत्य गानआदि विषयोंही मे अपना सब समय व्यतीत करनेलगा राज्यके कार्यों मे दृष्टिदेना तथा सभामें जाकर विचारादि करना उसने छोडदियापरन्तु दीर्घदर्शी ने रात्रि दिन राज्यके कार्यों को करके ऐसा श्रमकिया कि राज्यमें किसीप्रकारकी हानि नहीं होनेपाई तथापि लोकमें उसका यह अपयशहुआ कि दीर्घदर्शी राजाको व्यसनों मे डालके आपही राज्यका भोगताहै इससे दीर्घदर्शी ने घर आकर अपनी मेधाविनी नाम स्त्रीसे एकान्तमें कहा कि है प्रिय राजा

उसे छोडाथा वह सब सत्य २ कहदिया यह सुनके वह चोर बोला कि जो ऐसाहै तो मैंनेभी तुम्हारे सत्य से प्रसन्नहोके तुमको छोडा यह कहके वह चोर उसको उसी के घरभेजगया इसप्रकार धर्म से नहींभ्रष्ट हुई मदनसेना बहुत प्रसन्नतापूर्व्वक अपने पति समुद्रदत्तके पास गई उसे आई देखकर उसके सब वृत्तान्तको पूछके उसके मुखकी कान्तिको नही नष्टहुई देखकर कोई सम्भोगके चिह्न उसमे न पाकर उसे नहीं भ्रष्ट हुई जानके समुद्रदत्त प्रसन्नहोकर अत्यन्त सत्यवती सती मदनसेनाके साथ सुखपूर्व्वक रहा इस कथाको कहकर वेतालने राजा त्रिविक्रमसेनसे फिर पूछा कि हे राजा बताइये धर्मदत्त समुद्रदत्त तथा चोर इन तीनो में से कौन त्यागी है जो जानकर भी सत्य २ उत्तर न दोगे तो तुम्हारे शिरके सौ टुकडे होजायँगे वेतालके यह वचन सुनकर राजा त्रिविक्रमसेन मौन छोडकर बोला कि इन तीनों में से चोर त्यागी है वह दोनों वैश्य नही जो उसके पतिने विवाहकरके भी उसे त्यागकिया सो उचित है क्योंकि वह कुलीनहोकर अपनी स्त्रीको अन्यमे आशक्त जानकर कैसे ग्रहणकरता और जो उसद्वितीय धर्मदत्त वैश्यने उसका त्याग किया उसका यह कारणथा कि एक तो काल अधिक व्यतीतहोने के कारण उसका कामका वेग शान्तहोगयाथा और दूसरे उसे यहभयथा कि जो इसका पति जानलेगा तो प्रातःकाल राजासे जाकर कहैगा, परन्तु चोरने पापी होकर भी और राजदण्डसे निरपेक्षहोकरभी उस आभूषण सहित अत्यन्त रूपवती स्त्रीका जो त्यागकिया इससे वही पक्कात्यागी है राजा के यह वचन सुनकर वह वेताल फिर अपने वृक्षपर चलागया और राजा फिर उसे लेने के लिये लौटा ६८॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायाशशाकवतीलम्बकेसप्तदशस्तरग १७॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर उसी शीशम के वृक्षके नीचे जाकर वेतालको पकडके ले चला मार्ग मे वेतालने राजासेकहा कि हे राजा एक बडी विचित्र कथा मै आपसे कहताहू उज्जयिनी नगरी मे राजाधर्मध्वजके इन्दुलेखा, तारावली, तथा मृगाकवती नाम अत्यन्त प्यारी तीन रानीथी उन तीनोंके साथ राजासुखपूर्व्वक बिहार कियाकरताथा एकसमय वसन्तके उत्सवमे राजाधर्मध्वज तीनों रानियों समेत उपवनमे क्रीडाकरनेको गया वहा भ्रमरोंकी पङ्क्तिरूप प्रत्यचावाली पुष्पोंके भारसे नम्र कामदेवके धनुषके समान लताओंको देखताहुआ कोकिलाओ के मधुरशब्दोको सुनताहुआ उत्तम सुगन्धित मद्यको पीताहुआ राजा धर्मध्वज अपनी प्रियाओं के साथ क्रीडाकरनेलगा क्रीडा करते २ राजाने जो रानी इन्दुलेखाके केशपकडे तो उसके कानका कमल उसकी जघापर गिरपडा इससे उसकी जघामे घावहोगया और वह हायहायकरके पृथ्वी में मूर्च्छितहोकर गिरपडी यह देखके राजाने बहुत विह्वलहोकर शीतल जल तथा वायुसे उसे सावधानकरके वहा से राजमन्दिरमें लेजाके वैद्यों को बुलवाके उसकी औषधकरवाई कुछदिनोंमे उसे नीरोगदेखकर राजा दूसरी रानी तारावलीको साथलेके रात्रिके समय महलपरगया वहा वह रानी तारावली राजाकी गोदीमेंही सोगई और वायुकेद्वारा उसके वस्त्र उडने मे उसके शरीरमे चन्द्रमाकी किरणेंलगीं इससे क्षणभरमे वह जगकर हाय २ मै जलगई यह कहके अगको हाथसे दाबनेलगी उसके यह वचन सुनके और अगमे छाले देखके राजाने उससे पूछा

उसे दिखाई पडा उसवृक्षकी मोटी शाखाओं में रत्नोंके पलँगपर एकअत्यन्त रूपवती कन्या बैठीथी उसे देखकर दीर्घदर्शी जैसेही सोचनेलगा कि यह क्याबात है वैसेही वह कन्या वीणा बजाकर यह गान करनेलगी कि (यत्कर्मबीजमुप्तयेनपुरानिश्चितमतत्फलं। पूर्वकृतस्यहिशक्योनैवविनापिनकर्त्तुमन्यथा भाव) जिसने पूर्वजन्ममें जैसा कर्मरूपी बीज बोयाहै उसे उसका भोग अवश्य करना पडता है ब्रह्मा भी प्राक्तनकर्मोंको नहीं बदल सक्तेहैं यहगान करके वह कन्या क्षणभरमेंही वृक्ष समेत जलमें डूबगई यहदेखके दीर्घदर्शीने सोचा कि आज यह बडी अद्भुतबात मैंने देखी कहा यहसमुद्र और कहा अकस्मात् कल्पवृक्षपर उत्पन्नहोकर दिव्य कन्याका फिर डूबजाना अथवा यह क्या आश्चर्यकी बात है क्योंकि समुद्र तो ऐसी वस्तुओंकी खानिही है क्या लक्ष्मी पारिजात तथा चन्द्रमा आदिक पदार्थ इसमें से नहीं निकलेहैं इसप्रकार सोचतेहुए दीर्घदर्शीसे कर्णधार (मल्लाह) आदिकोंने कहा कि इसीप्रकार यहकन्या नित्य दिखाई देकर डूबजाया करती है आपने पहलेही पहल इसे देखाहै इसीसे आश्चर्यसा मालूमहोताहै उनके यहवचन सुनके दीर्घदर्शी समुद्रके किनारे पहुंचके जहाजसे उतरकर निधिदत्तके साथ उसके घरगया वहा कुछदिन सुखपूर्वक रहकर निधिदत्तसे बोला कि हे मित्र मैं तुम्हारे यहा बहुत दिन सुखपूर्वकरहा अब आज्ञादीजिये तो मै अपने घरको जाऊं यहकहके उससे आज्ञा लेकर दीर्घदर्शी धीरे २ चलके पुण्ड्रदेशसे अपने अंग देशमेंपहुचा वहा उसीके ढूढनेको आयेहुए राजा यशःकेतुके दूतो ने उसे देखकर उसके आनेका समाचार राजा से जाकर कहा इससमाचार को पाकर राजा नगरके बाहरजाकर उससे मिलके बहुत आदरपूर्वक उसे अपने राजमन्दिर मे ले आया वहा उससे कुशल वृत्तान्त पूछके राजाने कहा कि आपने हम लोगोंको छोडकर इतने दिन परदेशमें भ्रमण करके कौन २ देशदेखे और कौन २ सी नवीन बात देखी यहसुनके दीर्घदर्शीने सुवर्णद्वीप पर्यन्त अपनी यात्राका वर्णनकरके समुद्रमें कल्पवृक्षपर निकलीहुई उस दिव्यकन्याकाभी सब वृत्तान्त कहा उसकन्याके वृत्तान्तको सुनकर राजाने अत्यन्त कामके वशीभूतहोकर दीर्घदर्शीको एकान्त मे लेजाकर उससे कहा कि मै उसकन्याके देखनेको तुम्हारे बतायेहुए मार्गसे अवश्य जाऊंगा क्योंकि उसके बिना देखे मेरे प्राणही नहीं रहसक्तेहैं इससे तुम मुझे रोकना नहीं न मेरे साथ चलना मै अकेलाही छिपकर जाऊंगा तुम मेरे राज्यकी रक्षाकरना तुम्हें मेरी शपथहै तुम मेरे इनवचनोंको मिथ्या न करना यहकहके राजाने उसे उसके घर भेजा वहा अत्यन्त उत्सवहोनेपरभी दीर्घदर्शी अत्यन्त उदासही रहा क्योंकि (स्वामिन्यसाध्यव्यसनेगुणवन्मन्त्रिणाकुतः) स्वामीको असाध्य व्यसनमे आसक्त देखकर मन्त्रीलोगको सुख कहांहोसक्ताहै दूसरे दिन राजा यशःकेतु दीर्घदर्शीको अपना राज्य सौंपकर तपस्वी का रूप धारणकरके चला मार्ग मे कुशनाभनाम मुनिको देखके उसने प्रणाम किया उसे प्रणामकरते देखके मुनिने कहा हे पुत्र लक्ष्मीदत्तनाम वैश्यके साथ जहाजपर चढके समुद्रमे जाकर तुम अपनी प्रियाको पाओगे उसके यहवचन सुनकर राजा यशःकेतु प्रसन्नहोके अनेकदेश पर्वत तथा नदियोंका उल्लंघन करके समुद्रके तटपर पहुचा वहा स्वर्णद्वीपको जानेकी इच्छाकरतेहुए लक्ष्मीदत्तनाम वैश्यसे मि

तो सुखमें आशक्तहोगया और मै रात्रि दिन राज्यहीकी चिन्तामे अपना समय व्यतीत करताहू इतने पर भी मेरा यह अपयश हुआहै कि मन्त्री राजाको व्यसनमें डालके आपही राज्यको भोगताहै और मिथ्या लोकापवादभी बडा हानिकारक होताहै देखो लोकापवादही से क्या रामचन्द्रजी ने जानकीका त्याग नहीं करदिया इससे तुम बताओ मै अब क्या उपायकरू दीर्घदर्शी के यह वचन सुनके परमन्तर मेधावती ने कहा कि आप राजासे पूछकर कुछ काल तीर्थयात्राके बहाने से परदेशको चलेजाइये इससे आपका अपयश मिटजायगा क्योंकि लोग आपको निस्पृह जानेंगे और आपके यहा न होने से राजाभी अपने राज्यके कार्य्योंको करेगा इससे उसके व्यसन छूटजायँगे मेधावती के यह वचन सुनकर दीर्घदर्शी ने राजा यशःकेतुके पास जाके प्रसगपाकर कहा कि हे राजा कुछ दिन मुझे तीर्थ यात्रा करनेकी आज्ञादीजिये मेरी धर्मकरनेकी इच्छाहै यह सुनके राजानेकहा कि क्या तीर्थों के बिना घरमेही दानादिक धर्म नही होसक्ते यह सुनके मन्त्री ने कहा कि हे राजा दानादिकधर्म में अर्थ शुद्धि आदिकी आवश्यकता होती है परन्तु तीर्थ नित्य शुद्धहोते हैं बुद्धिमान्को उचितहै कि युवावस्थाही में तीर्थयात्राकरे नहीं तो इस नश्वर शरीरका वृद्धावस्थामे क्या विश्वासहै उन दोनो के इसप्रकार उत्तर प्रत्युत्तरहोनेपर प्रतीहारने आकर राजा से कहा कि हे स्वामी मध्याह्नका समयहै इससे उठिये अब आपके स्नानका अवसर आया उसके यह वचन सुनके राजा स्नानकोगया और मन्त्री अपने घरको चला आया वहा वह अपनी स्त्रीको सग चलने से रोककर अपने घरही में रखके अपने सेवकों से भी बिना कहे अकेलाही तीर्थयात्रा को चला अनेक देशो में तथा तीर्थों मे भ्रमण करता हुआ पुण्ड्रदेश में पहुचा वहा समुद्र के तट पर एक नगर में जाके एक शिवजी के मन्दिर में शिवजी को प्रणाम करके बैठा वहा दर्शन करनेके लिये आयाहुआ निधिदत्तनाम वैश्य उसे यज्ञोपवीत धारण किये तथा सूर्य्यकी किरणोसे व्याकुल देखके उत्तम ब्राह्मण जानके अतिथि सत्कार करनेके लिये अपने घरको लेगया और वहा उसे स्नानकरवाके तथा उत्तम २ भोजनकराके निधिदत्तने उससे पूछा कि तुम कौन हो कहासे आयेहो और कहाको जाओगे यहसुनके दीर्घदर्शी ने कहा कि मै अगदेशका रहनेवाला दीर्घदर्शीनाम ब्राह्मणहू तीर्थयात्राके निमित्त अपने देशसे यहा आयाहूं दीर्घदर्शीके यहवचन सुनकर निधिदत्तने कहा कि मैं व्यापारके निमित्त सुवर्णद्वीप जायाचाहताहू इससे कुछ दिन तुम यहा विश्राम करो जब मैं लौटूगा तब जहा चाहना वहाजाना यहसुनकर दीर्घदर्शीने कहा कि जो तुम जातेहो तो मैंभी यहा रहकर क्या करूगा मैंभी तुम्हारे साथ स्वर्णद्वीपको चलूगा यहकहके वह उसदिनको व्यतीत करके दूसरे दिन जहाजपर चढके निधिदत्तके साथ स्वर्णद्वीप को चला देखो कहा तो महामन्त्रीपन और कहा दूसरेके आश्रितहोके परदेशजाना (अयशोभीरवः किन्नकुर्वतेरतमाधव) अयशसे डरने वाले साधू लोग क्या नहीं करतेहैं क्रमसे समुद्रका उल्लघन करके दीर्घदर्शी स्वर्णद्वीपमें पहुचके कुछ दिन उसके साथ वहा रहा कुछकालके उपरान्त जहाजपर चढके उसीके साथ लौटा मार्गमें समुद्रकी तरगोंमें से अकस्मात् उठाहुआ मूगेकी शाखावाला और मणिमय पुष्प तथा फलवाला एककल्पवृक्ष

उसे दिखाई पडा उसवृक्षकी मोटी शाखाओं में रत्नोंके पलँगपर एकअत्यन्त रूपवती कन्या बैठीथी उसे देखकर दीर्घदर्शी जैसेही शोचनेलगा कि यह क्याबात है वैसेही वह कन्या वीणा बजाकर यह गान करनेलगी कि (यत्कर्म्मबीजमुप्तयेनपुरानिश्चितसतद्भुङ्क्ते। पूर्व्वकृतस्यहिशक्योविधिनापिनकर्त्तुमन्यथा भाव) जिसने पूर्वजन्ममें जैसा कर्मरूपी बीज बोयाहै उसे उसका भोग अवश्य करना पडता है ब्रह्मा भी प्राक्तनकर्मोंको नहीं बदल सक्तेहैं यहगान करके वह कन्या क्षणभरमेंही वृक्ष समेत जलमें डूबगई यहदेखके दीर्घदर्शीने शोचा कि आज यह बडी अद्भुतबात मैंने देखी कहा यहसमुद्र और कहा अकस्मात् कल्पवृक्षपर उत्पन्नहोकर दिव्य कन्याका फिर डूबजाना अथवा यह क्या आश्चर्य्यकी बात है क्योंकि समुद्र तो ऐसी वस्तुओंकी खानिही है क्या लक्ष्मी पारिजात तथा चन्द्रमा आदिक पदार्थ इसमेंसे नहीं निकलेहं इसप्रकार शोचतेहुए दीर्घदर्शीसे कर्णधार (मल्लाह) आदिकोंने कहा कि इसीप्रकार यहकन्या नित्य दिखाई देकर डूबजाया करती है आपने पहलेही पहल इसे देखाहै इसीसे आश्चर्य्यसा मालूमहोताहै उनके यहवचन सुनके दीर्घदर्शी समुद्रके किनारे पहुंचके जहाजसे उतरकर निधिदत्तके साथ उसके घरगया वहा कुछदिन सुखपूर्वक रहकर निधिदत्तसे बोला कि हे मित्र मैं तुम्हारे यहा बहुत दिन सुखपूर्वकरहा अब आज्ञादीजिये तो मै अपने घरको जाऊ यहकहके उससे आज्ञा लेकर दीर्घदर्शी धीरे २ चलके पुण्ड्रदेशसे अपने अंग देशमेंपहुचा वहा उसीके ढूढनेको आयेहुए राजा यशःकेतुके दूतो ने उसे देखकर उसके आनेका समाचार राजा से जाकर कहा इससमाचार को पाकर राजा नगरके बाहरजाकर उससे मिलके बहुत आदरपूर्वक उसे अपने राजमन्दिर मे ले आया वहा उससे कुशल वृत्तान्त पूछके राजाने कहा कि आपने हम लोगोंको छोडकर इतने दिन परदेशमे भ्रमणकरके कौन २ देशदेखे और कौन २ सी नवीन बात देखी यहसुनके दीर्घदर्शीने सुवर्णद्वीप पर्य्यन्त अपनी यात्राका वर्णनकरके समुद्रमे कल्पवृक्षपर निकलीहुई उस दिव्यकन्याकाभी सब वृत्तान्त कहा उसकन्याके वृत्तान्तको सुनकर राजाने अत्यन्त कामके वशीभूतहोकर दीर्घदर्शीको एकान्त मे लेजाकर उससे कहा कि मै उसकन्याके देखनेको तुम्हारे बतायेहुए मार्गसे अवश्य जाऊंगा क्योंकि उसके बिना देखे मेरे प्राणही नहीं रहसक्ते हैं इससे तुम मुझे रोकना नहीं न मेरे साथ चलना मैं अकेलाही छिपकर जाऊगा तुम मेरे राज्यकी रक्षाकरना तुम्हे मेरी शपथहै तुम मेरे इनवचनोंको मिथ्या न करना यहकहके राजाने उसे उसके घर भेजा वहा अत्यन्त उत्सवहोनेपरभी दीर्घदर्शी अत्यन्त उदासही रहा क्योंकि (स्वामिन्यसाध्यव्यसनेसुखमन्मन्त्रिणाकुतः) स्वामीको असाध्य व्यसनमे आसक्त देखकर मन्त्रियों को सुख कैसेहोसक्ताहै दूसरे दिन राजा यशःकेतु दीर्घदर्शीको अपना राज्य सौंपकर तपस्वी का रूप धारणकरके चला मार्ग में कुशनाभनाम मुनिको देखके उसने प्रणाम किया उसे प्रणामकरते देखके मुनिने कहा हे पुत्र लक्ष्मीदत्तनाम वैश्यके साथ जहाजपर चढके समुद्रमे जाकर तुम अपनी प्रियाको पाओगे उनके यहवचन सुनकर राजा यशःकेतु प्रसन्नहोके अनेकदेश पर्वत तथा नदियोंको उल्लंघन करके समुद्रके तटपर पहुंचा वहा सुवर्णद्वीपको जानेकी इच्छाकरतेहुए लक्ष्मीदत्तनाम वैश्यसे मि

तो सुखमे आशक्तहोगया और मैं रात्रि दिन राज्यहीकी चिन्तामें अपना समय व्यतीत करताहू इतने पर भी मेरा यह अपयश हुआहै कि मन्त्री राजाको व्यसनमे डालके आपही राज्यको भोगताहै और मिथ्या लोकापवादभी वडा हानिकारक होताहै देखो लोकापवादही से क्या रामचन्द्रजी ने जानकीका त्याग नहीं करदिया इससे तुम वताओ मैं अब क्या उपायकरू दीर्घदर्शी के यह वचन सुनके परमच तुर मेधावती ने कहा कि आप राजासे पूछकर कुछ काल तीर्थयात्राके वहाने से परदेशको चलेजाइये इससे आपका अपयश मिटजायगा क्योंकि लोग आपको निष्पृह जानेंगे और आपके यहा न होने से राजाभी अपने राज्यके कार्य्योंको करेगा इससे उसके व्यसन छूटजायँगे मेधावती के यह वचन सु नकर दीर्घदर्शी ने राजा यशःकेतुके पास जाके प्रसगपाकर कहा कि हे राजा कुछ दिन मुझे तीर्थ यात्रा करनेकी आज्ञादीजिये मेरी धर्मकरनेकी इच्छाहै यह सुनके राजानेकहा कि क्या तीर्थों के विना घरमेही दानादिक धर्म नहीं होसक्ते यह सुनके मन्त्री ने कहा कि हे राजा दानादिकधर्म में अर्थशुद्धि आदिकी आवश्यकता होती है परन्तु तीर्थ नित्य शुद्धहोते हैं बुद्धिमान्को उचितहै कि युवावस्थाही में तीर्थयात्राकरे नहीं तो इस नश्वर शरीरका वृद्धावस्थामे क्या विश्वासहै उन दोनो के इसप्रकार उत्तर प्र त्युत्तरहोनेपर प्रतीहारने आकर राजा से कहा कि हे स्वामी मध्याह्नका समयहै इससे उठिये अब आप के स्नानका अवसर आया उसके यह वचन सुनके राजा स्नानकोगया और मन्त्री अपने घरको चला आया वहा वह अपनी स्त्रीको सग चलने से रोककर अपने घरही में रखके अपने सेवकों से भी विना कहे अकेलाही तीर्थयात्रा को चला अनेक देशो में तथा तीर्थों में भ्रमण करता हुआ पुण्ड्रदेश में पहुचा वहा समुद्र के तट पर एक नगर में जाके एक शिवजी के मन्दिर मे शिवजी को प्रणाम कर के वैठा वहा दर्शन करनेके लिये आयाहुआ निधिदत्तनाम वैश्य उसे यज्ञोपवीत धारण किये तथा सूर्य्यकी किरणोंसे व्याकुल देखके उत्तम ब्राह्मण जानके अतिथि सत्कार करनेके लिये अपने घरको लेगया और वहा उसे स्नानकराके तथा उत्तम २ भोजनकराके निधिदत्तने उससे पूछा कि तुम कौन हो कहासे आयेहो और कहाको जाओगे यहसुनके दीर्घदर्शी ने कहा कि मैं अगदेशका रहनेवाला दीर्घदर्शीनाम ब्राह्मणहू तीर्थयात्राके निमित्त अपने देशसे यहा आयाहूँ दीर्घदर्शीके यहवचनसुनकर निधिदत्तने कहा कि मैं व्यापारके निमित्त सुवर्णद्वीप जायाचाहताहू इससे कुछ दिन तुम यहा विश्राम करो जब मैं लौटूगा तब जहा चाहना वहाजाना यहसुनकर दीर्घदर्शीने कहा कि जो तुम जातेहो तो मैंभी यहा रहकर क्या करूगा मैंभी तुम्हारे साथ स्वर्णद्वीपको चलूगा यहकहके वह उसदिनको व्यतीत करके दूसरे दिन जहाजपर चढके निधिदत्तके साथ स्वर्णद्वीप को चला देखो कहा तो महामन्त्रीपन और कहा दूसरेके आश्रितहोके परदेशजाना (अयशोभीरवःकिन्नकुर्वतेवतसाधव) अयशसे डरने वाले साधू लोग क्या नहीं करतेहैं क्रमसे समुद्रका उल्लघन करके दीर्घदर्शी स्वर्णद्वीपमें पहुचके कुछ दिन उसके साथ वहा रहा कुछकालके उपरान्त जहाजपर चढके उसीके साथ लौटा मार्गमें समुद्रकी तरगोंमें से अकस्मात् उठाहुआ मूगेकी शाखावाला और मणिमय पुष्प तथा फलवाला एककल्पवृ

करतीहूं उसके यहवचन सुनके राजाने प्रेमयुक्त वचनकहकर उसे ऐसा अनुरक्तकिया कि जिसअनुरागसे निश्शङ्कहोकर उसने राजाकी स्त्रीहोना स्वीकार करके यह नियमकिया कि कृष्ण तथा शुक्लपक्षकी दोनों चतुर्द्दशी तथा दोनों अष्टमीके चारदिन मैं महीनेमे स्वाधीनरहूंगी इनदिनोंमें मैं जहाजाऊं वहा आपमुझे न रोकना और न पूछना कि तुम कहा जातीहो इसमें कोई विशेष कारणहै उसके यहवचन स्वीकार करके राजाने उसकेसाथ गान्धर्वविवाहकरके अपूर्व्वदिव्य सुखका अनुभवकिया एकदिन मृगाङ्कवतीने राजा से कहा कि हे आर्यपुत्र आज कृष्णचतुर्द्दशीहै इससे मैं किसी कार्य्यकोजातीहूं तुम यहाहीरहना और इस स्फटिकके गृहमें न जाना नहीं तो बावडीमें गिरकर पृथ्वीपरचलेजाओगे यहकहके वह उससे आज्ञा लेकर पुरके बाहरगई राजाभी खड्गलेके छिपकर उसीके पीछे पीछे चलागया वहा एक अत्यन्त श्याम वर्ण राक्षस आकर मृगाङ्कवती को निगलगया यह देखके राजाने क्रोधकरके अपने खड्गसे उसराक्षस का शिरकाटडाला और मृगाङ्कवती उस राक्षसका पेटफाडके जीतीहुई निकल आई उसे देखके राजा ने दौडके उसका आलिंगन करके उससे पूछा कि हे प्रिये यह स्वप्नथा अथवा कोई मायाथी राजाके वचन सुनके मृगाङ्कवतीने स्मरणकरके कहा कि हे आर्य्यपुत्र न यहस्वप्नथा न मायाथी यहमेरे पिताका शापथा मेरेपिता बहुत पुत्रोंकेहोनेपरभी मेरे ऊपर बहुत स्नेहकरतेथे इसीसे मेरेबिना कभी भोजन नहीं करतेथे मैं सदैव शिवजीके पूजनके निमित्त चतुर्द्दशी तथा अष्टमी के दिन इसनिर्जन स्थान मे आया करतीथी एकसमय चतुर्द्दशी के दिन यहा श्रीपार्वतीजीका बडेअनुरागसे पूजन करते२ मेरा सपूर्णदिन व्यतीतहोगया तब मेरेपिताने दिनभर न भोजन किया न जलपिया जब मैं रात्रिके समयगई तो उन्हों ने मुझे क्रोधकरके यह शापदिया कि अष्टमी तथा चतुर्द्दशीकेदिन शिवजीका पूजन करने के निमित्त पुरसे बाहर जातीहुई तुझको कृतान्तसन्त्रास नाम राक्षस सदैव निगललियाकरेगा और उसका पेटफाड२ कर तू जीतीहुई निकलआयाकरेगी तुझेन इसशापका स्मरणरहेगा न राक्षसके निगलनेकी पीडाहोगी और इसी पुरमें तू अकेली रहेगी इस घोर शापको सुनके जब मैंने उनसे बडी प्रार्थनाकी तब उन्हों ने ध्यान करके यह शापका अन्त बनाया कि जब अनङ्गदेशका राजा यशःकेतु तेरे साथ विवाह करके उस राक्षसको मारेगा तब उसी राक्षसके पेटसे निकलकर तेरा शाप निवृत्तहोगा और तभी तुझे सम्पूर्ण विद्याओंका तथा शापका स्मरण आवेगा इसप्रकार शापका अन्त बनाके मुझे यहा अकेली छोड के वह अपने सब परिकर समेत निषध पर्वतपर चलेगये १४२ और शापके मोहसे मैं यहींरही अब वह मेरा शाप क्षीण होगया इससे सम्पूर्ण विद्या तथा शापका मुझे स्मरण आगया अब मैं अपने पिता के पास निषध पर्वतपर जातीहूं क्योंकि हम लोगोंका यह नियमहै कि शापके अन्तमें अपने स्थान को चलेजातेहैं तुम चाहे यहा रहो चाहे अपने राज्यको जाओ उसके वचन सुनके राजाने दुःखित होकेकहा कि हे सुन्दरी एक सप्ताह तुम और ठहरजाओ इतने दिनो मे और तुम्हारे साथ उपवनो मे क्रीडा करके सुख भोगलू फिर तुम अपने स्थानको चलीजाना और मैं अपने राज्यको चलाजाऊंगा इस बात को मृगाङ्कवती के स्वीकार करलेनेपर राजा छः दिन तक उपवनो मे उसके साथ विहार करके सातवें दिन

लकर उसके साथ जहाजपर चढके समुद्रमें चला समुद्रके बीच मे जब वह जहाज पहुचा तो जलमेंसे कल्पवृक्षपर बैठीहुई वहकन्या निकली और वीणा बजाकर यह गानेलगी कि (यत्कर्मबीजमुप्त येनपुरा निश्चितसतदश्नुक्ते। पूर्व्वकृतस्यहिशक्योनिविनापिनकर्त्तुमन्यथाभाव ॥तस्माद्यत्रयथायद्भवितव्ययस्यदैव योगेन। तत्रतथातत्प्राप्त्यैविवशोसौनीयतेत्रनभ्रांति) जिसने पूर्व्वजन्ममे जो कर्मरूपी बीजबोयाहै वह उसका अवश्य भोगकरताहै ब्रह्माभी प्राक्तन सस्कारको नहीं मेटसक्ते इससे भाग्यवशसे जहा जिसको जो होनाहै वेहा उसीप्रकारसे उसकी प्राप्तिकेलिये विवशहोकर वह लेजाया जाताहै इसमे कोई भ्रांति नहींहै उसके इसभावी अर्थके सूचितकरनेवाले गानको सुनकर कामके बाणोंसे पीडित राजा यशःकेतु बोला कि हेरत्नाकर आपको नमस्कारहै आपने इसकन्याको छिपाकर लक्ष्मीदेके विष्णुभगवान्‌कोठगा आपके अन्तको देवता लोगोंनेभी नहीं जानाहै मैं आपकी शरणमे आयाहू मेरे मनोरथको सिद्धकीजिये उसके इसप्रकार कहतेही कहते वहकन्या जलमे डूबगई यहदेखकर राजा यशःकेतुभी मानों कामाग्निके शान्ति करनेको समुद्रमें कूदपडा उसेडूबाजानके लक्ष्मीदत्त वैश्य दुःखसे प्राणदेनेको उद्यतहुआ तबयह आकाशवाणीहुई कि हे पुत्र साहस मतकरो यह तपस्वीरूपधारी राजा यशःकेतुहै इसेसमुद्रमें डूबनेसे कुछ भयनहीं है यह इसी कन्याके निमित्त यहा आयाथा यह इसकी पूर्वजन्मकी स्त्रीहै इसे लेकर यह फिर अपने अग देशका राज्यकरेगा इस आकाशवाणीको सुनकर लक्ष्मीदत्त वैश्य सावधानहोके व्यापार के निमित्त स्वर्णद्वीपको चलागया ८६ और राजा यशःकेतुभी समुद्रके भीतरजाके अकस्मात् एक दिव्य नगरमे पहुंचा उसपुरके मदिर सुवर्णमयथे उनमें मणियो के खभेलगेथे और मोतियोकी जालियों के झरोखेथे अनेक प्रकारकी मणियो से जटित सीढियोंवाली बावडियो से शोभितसम्पूर्ण कामनाओं के पूर्ण करनेवाले कल्पवृक्षोके उपवनलगे थे ऐसे सुन्दर उसपुरमे राजाने अनेक गृहो में ढूढते २ एक अत्युत्तम मणिमय मन्दिरमे जाकर रत्नजटित पलगपर एकस्त्री सोतीहुई देखी और क्या यही मेरी प्रिया है ऐसा जानकर ज्योंहीं उसका मुखखोला तो वह उसकी प्रियाही थी उसके देखने से राजाकी ऐसी दशाहुई जो ग्रीष्मऋतुमें मध्याह्नकेसमय मरुदेशके पथिक की नदीके देखने से होती है वहकन्याभी मुख खोलके उसे देखकर एकाएकी उस शय्यापरसे उठकर नीचेको मुखकरके मानो अपने नेत्र कमलो से उसके चरणों का पूजनकरके बोली कि हे महाभाग आप कौनहो किसनिमित्त इस अगम्य रसातल मे आये हो और राजाओंके चिह्नोंसे युक्तहोकर भी यह तपस्वियोंका वेष क्योधारणकिये हो उसके यह वचन सुनके राजानेकहा कि अगदेशका यशःकेतुनाम मैं राजाहू अपने मत्रीसे तुम्हारी प्रशसा सुन कर मै राज्य छोडके तपस्वी का रूपधारणकरके समुद्रमे आकर तुम्हे देखके तुम्हारेही पीछे समुद्रमें कूद के यहा आयाहू अब तुम यह बताओ कि तुम कौनहो यह सुनके लज्जा अनुराग तथा आनन्दयुक्त होकर वहकन्या बोली कि विद्याधरोंके राजा मृगाकसेनकी मृगाकवती नाम मै पुत्रीहू मेरे पिता मुझे इसनगरमें अकेली छोडकर न जानिये किसकारण से सम्पूर्ण पुरवासियों समेत कहीं चलेगये इससे मैं इस शून्यपुरमें रहकर नित्ययन्त्रके कल्पवृक्षपर चढके समुद्रके ऊपर जाकर भवितव्यताका गानकिया

करतीहूं उसके यह वचन सुनके राजाने प्रेमयुक्त वचन कहकर उसे ऐसा अनुरक्त किया कि जिसअनुरागसे विवशहोकर उसने राजाकी स्त्रीहोना स्वीकार करके यह नियमकिया कि कृष्ण तथा शुक्लपक्षकी दोनों चतुर्द्दशी तथा दोनो अष्टमीके चारदिन मैं महीनेमें स्वाधीनरहूंगी इनदिनोंमें मैं जहांजाऊं वहां आपमुझे न रोकना और न पूछना कि तुम कहां जातीहो इसमें कोई विशेष कारणहै उसके यह वचन स्वीकार करके राजाने उसकेसाथ गान्धर्वविवाहकरके अपूर्व्वदिव्य सुखका अनुभवकिया एकदिन मृगाङ्कवतीने राजा से कहा कि हे आर्यपुत्र आज कृष्णचतुर्द्दशीहै इससे मैं किसी कार्य्यकोजातीहूं तुम यहांहीरहना और इस स्फटिकके गृहमें न जाना नहीं तो बावडीमें गिरकर पृथ्वीपरचलेजाओगे यहकहके वह उससे आज्ञा लेकर पुरके बाहरगई राजाभी खड्गलेके छिपकर उसीके पीछे पीछे चलागया वहां एक अत्यन्त श्याम वर्ण राक्षस आकर मृगाङ्कवती को निगलगया यह देखके राजाने क्रोधकरके अपने खड्गसे उसराक्षस का शिरकाटडाला और मृगाङ्कवती उस राक्षसका पेटफाडके जीतीहुई निकल आई उसे देखके राजा ने दौडके उसका आलिंगन करके उससे पूछा कि हे प्रिये यह स्वप्नथा अथवा कोई मायाथी राजाके वचन सुनके मृगाङ्कवतीने स्मरणकरके कहा कि हे आर्य्यपुत्र न यहस्वप्नथा न मायाथी यह मेरे पिताका शापथा मेरेपिता बहुत पुत्रोंकेहोनेपरभी मेरे ऊपर बहुत स्नेहकरतेथे इसीसे मेरेबिना कभी भोजन नहीं करतेथे मैं सदैव शिवजीके पूजनके निमित्त चतुर्द्दशी तथा अष्टमी के दिन इसनिर्जन स्थान में आया करतीथी एकसमय चतुर्द्दशी के दिन यहां श्रीपार्वतीजीका बडेअनुरागसे पूजन करते॰ मेरा सपूर्णदिन व्यतीतहोगया तब मेरेपिताने दिनभर न भोजन किया न जलपिया जब मैं रात्रिके समयगई तो उन्हों ने मुझे क्रोधकरके यह शापदिया कि अष्टमी तथा चतुर्द्दशीकेदिन शिवजीका पूजन करने के निमित्त पुरसे बाहर जातीहुई तुझको कृतान्तसन्त्रास नाम राक्षस सदैव निगललियाकरेगा और उसका पेटफाड॰ कर तू जीतीहुई निकलआयाकरेगी तुझेनइसशापका स्मरणरहेगा नराक्षसके निगलनेकी पीडाहोगी और इसी पुरमें तू अकेली रहेगी इस घोर शापको सुनके जब मैंने उनसे बडी प्रार्थनाकी तब उन्होंने ध्यान करके यह शापका अन्त बताया कि जब अनंगदेशका राजा यशःकेतु तेरे साथ विवाह करके उस राक्षसको मारेगा तब उसी राक्षसके पेटसे निकलकर तेरा शाप निवृत्तहोगा और तभी तुझे सम्पूर्ण विद्याओंका तथा शापका स्मरण आवेगा इसप्रकार शापका अन्त बताके मुझे यहां अकेली छोड के वह अपने सब परिवार समेत निषध पर्व्वतपर चलेगये १५० और शापके मोहसे मैं यहांरही अब वह मेरा शाप क्षीण होगया इससे सम्पूर्ण विद्या तथा शापका मुझे स्मरण आगया अब मैं अपने पिता के पास निषध पर्व्वतपर जातीहूं क्योंकि हम लोगोंका यह नियमहै कि शापके अन्तमें अपने स्थान को चलेजातेहैं तुम चाहे यहां रहो चाहे अपने राज्यको जाओ उसके वचन सुनके राजाने दुःखित होकेकहा कि हे सुमुखी एक सप्ताह तुम और ठहरजाओ इतने दिनों में और तुम्हारे साथ उपवनों में क्रीडा करके सुख भोगलूं फिर तुम अपने स्थानको चलीजाना और मैं अपने राज्यको चलाजाऊंगा इस बात को मृगाङ्कवती के स्वीकार करलेनेपर राजा छः दिन तक उपवनों में उसके साथ विहार करके सातवें दिन

लकर उसके साथ जहाजपर चढके समुद्रमें चला समुद्रके बीच मे जब वह जहाज पहुचा तो जलमेंसे कल्पवृक्षपर बैठीहुई वहकन्या निकली और बीणा बजाकर यह गानेलगी कि (यत्कर्मबीजमुप्त येनपुरा निश्चितसतद्भुङ्क्ते। पूर्व्वकृतस्यहिशक्योनिविनापिनकर्त्तुमन्यथाभाव ॥तस्माद्यत्रयथायद्भवितव्ययस्यदैव योगेन। तत्रतथातत्प्राप्त्यैविवशोसौनीयतेत्रनभ्राति) जिसने पूर्वजन्ममें जो कर्मरूपी बीजबोयाहै वह उसका अवश्य भोगकरताहै ब्रह्माभी प्राक्तन सस्कारको नहीं मेटसक्ते इससे भाग्यवशसे जहा जिसको जो होनाहै वेहा उसीप्रकारसे उसकी प्राप्तिकेलिये विवशहोकर वह लेजाया जाताहै इसमें कोई भ्राति नहींहै उसके इसभावी अर्थके सूचितकरनेवाले गानको सुनकर कामके बाणोंसे पीडित राजा यशःकेतु बोला कि हेरत्नाकर आपको नमस्कारहै आपने इसकन्याको छिपाकर लक्ष्मीदेके विष्णुभगवान्कोठगा आपके अन्तको देवता लोगोंनेभी नहीं जानाहै मै आपकी शरणमे आयाहू मेरे मनोरथको सिद्धकीजिये उसके इसप्रकार कहतेही कहते वहकन्या जलमेडूबगई यहदेखकर राजा यशःकेतुभी मानों कामाग्निके शान्ति करनेको समुद्रमें कूदपडा उसेडूबाजानके लक्ष्मीदत्त वैश्य दुःखसे प्राणदेनेको उद्यतहुआ तबयह आकाशवाणीहुई कि हे पुत्र साहस मतकरो यह तपस्वीरूपधारी राजा यशःकेतुहै इसेसमुद्रमें डूबनेसे कुछ भयनही है यह इसी कन्याके निमित्त यहा आयाथा यह इसकी पूर्वजन्मकी स्त्रीहै इसे लेकर यह फिर अपने अग देशका राज्यकरेगा इस आकाशवाणीको सुनकर लक्ष्मीदत्त वैश्य सावधानहोके व्यापार के निमित्त स्वर्णद्वीपको चलागया ८६ और राजा यशःकेतुभी समुद्रके भीतरजाके अकस्मात् एक दिव्य नगरमें पहुचा उसपुरके मदिर सुवर्णमयथे उनमे मणियो के खभेलगेथे और मोतियोकी जालियो के झरोखेथे अनेक प्रकारकी मणियो से जटित सीढियोंवाली बावडियों से शोभितसम्पूर्ण कामनाओं के पूर्ण करनेवाले कल्पवृक्षोके उपवनलगे थे ऐसे सुन्दर उसपुरमें राजाने अनेक गृहो में ढूढते २ एक अत्युत्तम मणिमय मन्दिरमे जाकर रत्नजटित पलगपर एकस्त्री सोतीहुई देखी और क्या यही मेरी प्रिया है ऐसा जानकर ज्योंहीं उसका मुखखोला तो वह उसकी प्रियाही थी उसके देखने से राजाकी ऐसी दशाहुई जो ग्रीष्मऋतुमें मध्याह्नकेसमय मरुदेशके पथिक की नदीके देखने से होती है वहकन्याभी मुख खोलके उसे देखकर एकाएकी उस शय्यापरसे उठकर नीचेको मुखकरके मानों अपने नेत्र कमलों से उस केचरणों का पूजनकरके बोली कि हे महाभाग आप कौनहो किसनिमित्त इस अगम्य रसातल मे आये हो और राजाओंके चिह्नोसे युक्तहोकर भी यह तपस्वियोका वेष क्योधारणकिये हो उसके यह वचन सुनके राजानेकहा कि अगदेशका यशःकेतुनाम मे राजाहू अपने मत्रीसे तुम्हारी प्रशसा सुन कर मे राज्य छोडके तपस्वी का रूपधारणकरके समुद्रमें आकर तुम्हें देखके तुम्हारेही पीछे समुद्रमें कूद के यहा आयाहू अब तुम यह बताओ कि तुम कौनहो यह सुनके लज्जा अनुराग तथा आनन्दयुक्त होकर वहकन्या बोली कि विद्याधरके राजा मृगाकसेनकी मृगाकवती नाम मे पुत्रीहू मेरे पिता मुझे इसनगरमें अकेली छोडकर न जानिये किसकारण से सम्पूर्ण पुरवासियों समेत कहीं चलेगये इससे मे इस शून्यपुरमें रहकर नित्ययन्त्रके कल्पवृक्षपर चढके समुद्रके ऊपर जाकर भवितव्यताका गानकिया

करतीहूं उसके यह वचन सुनके राजाने प्रेमयुक्त वचनकहकर उसे ऐसा अनुरक्तकिया कि जिसअनुरागसे विवशहोकर उसने राजाकी स्त्रीहोना स्वीकार करके यह नियमकिया कि कृष्ण तथा शुक्लपक्षकी दोनों चतुर्द्दशी तथा दोनों अष्टमीके चारदिन मैं महीनेमें स्वाधीनरहूंगी इनदिनोंमें मैं जहांजाऊं वहां आपमुझे न रोकना और न पूछना कि तुम कहां जातीहो इसमें कोई विशेष कारणहै उसके यह वचन स्वीकार करके राजाने उसकेसाथ गान्धर्वविवाहकरके अपूर्व्वदिव्य सुखका अनुभवकिया एकदिन मृगाङ्कवतीने राजा से कहा कि हे आर्यपुत्र आज कृष्णचतुर्द्दशीहै इससे मैं किसी कार्य्यकोजातीहूं तुम यहांहीरहना और इस स्फटिकके गृहमें न जाना नहीं तो बावडीमें गिरकर पृथ्वीपरचलेजाओगे यह कहके वह उससे आज्ञा लेकर पुरके बाहरगई राजाभी खड्गलेके छिपकर उसीके पीछे पीछे चलागया वहां एक अत्यन्त श्याम वर्ण राक्षस आकर मृगाङ्कवती को निगलगया यह देखके राजाने क्रोधकरके अपने खड्गसे उसराक्षस का शिरकाटडाला और मृगाङ्कवती उस राक्षसका पेटफाडके जीतीहुई निकल आई उसे देखके राजा ने दौडके उसका आलिङ्गन करके उससे पूछा कि हे प्रिये यह स्वप्नथा अथवा कोई मायाथी राजाके वचन सुनके मृगाङ्कवतीने स्मरणकरके कहा कि हे आर्य्यपुत्र न यहस्वप्नथा न मायाथी यहमेरे पिताका शापथा मेरेपिता बहुत पुत्रोंकेहोनेपरभी मेरे ऊपर बहुत स्नेहकरतेथे इसीसे मेरेबिना कभी भोजन नहीं करतेथे मैं सदैव शिवजीके पूजनके निमित्त चतुर्द्दशी तथा अष्टमी के दिन इसनिर्जन स्थान में आया करतीथी एकसमय चतुर्द्दशी के दिन यहां श्रीपार्वतीजीका बडेअनुरागसे पूजन करते२ मेरा सम्पूर्णदिन व्यतीतहोगया तब मेरेपिताने दिनभर न भोजन किया न जलपिया जब मैं रात्रिके समयगई तो उन्हों ने मुझे क्रोधकरके यह शापदिया कि अष्टमी तथा चतुर्द्दशीकेदिन शिवजीका पूजन करने के निमित्त पुरसे बाहर जातीहुई तुझको कृतान्तसन्त्रास नाम राक्षस सदैव निगललियाकरेगा और उसका पेटफाड२ कर तू जीतीहुई निकलआयाकरेगी तुझेन इसशापका स्मरणरहेगा न राक्षसके निगलनेकी पीडाहोगी और इसी पुरमें तू अकेली रहेगी इस घोर शापको सुनके जब मैंने उनसे बडी प्रार्थनाकी तब उन्होंने ध्यान करके यह शापका अन्त बताया कि जब अनङ्गदेशका राजा यशःकेतु तेरे साथ विवाह करके उस राक्षसको मारेगा तब उसी राक्षसके पेटसे निकलकर तेरा शाप निवृत्तहोगा और तभी तुझे सम्पूर्ण विद्याओंका तथा शापका स्मरण आवेगा इसप्रकार शापका अन्त बताके मुझे यहां अकेली छोड के वह अपने सब परिवार समेत निषध पर्व्वतपर चलेगये १४२ और शापके मोहसे मैं यहांरही अब वह मेरा शाप क्षीण होगया इससे सम्पूर्ण विद्या तथा शापका मुझे स्मरण आगया अब मैं अपने पिता के पास निषध पर्व्वतपर जातीहूं क्योंकि हम लोगोंका यह नियमहै कि शापके अन्तमें अपने स्थान को चलेजानेहैं तुम चाहे यहां रहो चाहे अपने राज्यको जाओ उसके वचन सुनके राजाने दुःखित होकेकहा कि हे सुन्दरी एक सप्ताह तुम और ठहरजाओ इतने दिनों मैं और तुम्हारे साथ उपवनों में क्रीडा करके सुख भोगलूं फिर तुम अपने स्थानको चलीजाना और मैं अपने राज्यको चलाजाऊंगा इस बात को मृगाङ्कवती के स्वीकार करनेपर राजा छः दिन तक उपवनों में उसके साथ विहार करके सातवें दिन

उसे युक्तिपूर्व्वक उस बावडीके पास लेगया जिसमें गिरनेसे मनुष्य पृथ्वीपर पहुच जाताथा वहा उसको पकड उस समेत वह बावडी मे कूदपडा और कूदतेही अपने उपवनकी बावडी में आ निकला उसेदिव्यस्त्री समेत देखकर उद्यानपालकों ने प्रसन्न होकर दीर्घदर्शी से जाकर कहा राजाका आगमन सुन के दीर्घदर्शी प्रसन्न होके उपवनमें आकर राजाको मृगाकवती समेत राजमदिर में लेगया और मृगाकवती को देखकर आश्चर्य्यपूर्व्वक शोचने लगा कि जिस दिव्यस्त्रीको मैंने बिजलीके समान आकाश मे क्षणभर देखाथा वह इसे कैसे मिलगई अथवा (यद्यस्यलिखितंधात्राललाटाक्षरपङ्क्तिपु। तदवश्यमसभाव्यमपितस्योपतिष्ठते) ब्रह्माने जिसके ललाटमें जो लिखदियाहै उसे वह असम्भव होनेपरभी अवश्य प्राप्त होताहै उसके इसप्रकार विचार करते २ वह मृगाकवती राजाको अपने देश में आया देखके और सप्ताहको पूराहुआ जानके निषध पर्व्वतपर जानेकी इच्छा करनेलगी परन्तु आकाशगामी विद्या का उसे स्मरण न आया इससे वह महाखेदको प्राप्तहुई उसे उदासीन देखकर राजाने पूछा कि हे प्रिये तुम अकस्मात् उदासीन क्यों होगईहो राजाके यह वचन सुनके उसने कहा कि शापके नष्टहोजाने पर भी जो आपके कहनेसे मैं यहा रहगई इसीमे मेरी सम्पूर्ण विद्या नष्टहोगई यह सुनके राजाने उसको अपने आधीन जानकर बहुत प्रसन्नहोके बडा उत्सवकिया उस महोत्सवको देखकर वह दीर्घदर्शी मन्त्री अपने घरमे जाकर रात्रिके समय पलगपर लेटे २ हृदय फटकर मरगया मन्त्रीका मरण सुनके राजा यशःकेतु बहुत विषाद करके आपही राज्यका पालन करनेलगा इतनी कथा कहकर वेतालने राजासेपूछा कि हे राजा स्वामीके मनोरथके सिद्ध होजानेपर भी मन्त्रीका हृदय क्यों फटगया क्या उसने वह दिव्यस्त्री नही पाई इससे उसका हृदय फटा अथवा वह राज्य लेना चाहताथा राजाके आजाने से निराश होनेके कारण उसका हृदय फटा जो जानकर भी इसका उत्तर न दोगे तो आपका शिर फटजायगा वेतालका यह प्रश्न सुनके राजाने कहा कि ऐसे श्रेष्ठ मन्त्रीमे आपकी कहीहुई दोनो बातें नहीं होसक्तीं किन्तु यह शोच कर उसका हृदय फटगया कि जो राजा साधारण स्त्रियोंमेही आसक्तहोके राज्य कार्य्य नहीं करताथा वह अब इस दिव्यस्त्रीको पाकर न जाने क्या करेगा इससे जो मैंने बडा कष्ट भोगकर उपाय कियाथा उस मे और भी अधिकतर दोष बढगया राजाके यह वचन सुनके वह वेताल् फिर अपने वृक्षपर चलागया और राजाभी उसके लेनेको फिर चला १७१॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेएकोनविंशस्तरङ्गः १९॥

इसके उपरान्त फिर राजा त्रिविक्रमसेन शीशम के वृक्षके समीपजाके वेतालको पकडकंधेपर रखके लेचला मार्ग में वेतालने कहा कि हे राजा एक सक्षिप्तकथा मै तुम से कहताहू उसको सुनो कि काशीपुरी में राजा का महामान्य एक देवस्वामी नाम महाधनवान् ब्राह्मण रहता था उसके हरिस्वामी नाम एक पुत्रथा हरिस्वामी के लावण्यवती नाम अत्यन्त सुन्दर स्त्री थी मानों ब्रह्माने तिलोत्तमा आदिक अप्सराओंके बनाने मे प्रवीणताका अभ्यासकरके उसका स्वरूप बनायाथा एकसमय हरिस्वामी अपने महलके ऊपर लावण्यवतीके साथ भोगकरके सोगया उससमय मदनवेग नाम विद्याधरने उसी मार्गसे

आकाशमें आकर लावण्यवतीको अपने पतिकेपास सोतीदेखके उसकी सुन्दरताके वशीभूत होकर उस सोतीहुईकोही हरलेगया क्षणभरमें हरिस्वामी जगकर अपने समीप लावण्यवतीको न देखकर एकाएकी उठबैठा और यह शोचकर कि कहीं वह मेरी परीक्षाके लिये छिपरही है सम्पूर्ण गृह तथा उपवनमें ढूढके कहीं भी उसे न पाके विलाप करनेलगा कि हा चन्द्रवदने हाप्रिये हा प्राणेश्वरी तुम्हारे साथमें जिस चन्द्रमा की किरणें मुझे सुखदेती थीं वहीं चन्द्रमा कामके बाणों की समान अपनी किरणोंसे अब मुझे दुःख देरहाहै इसप्रकार उसके विलाप करते२ रात्रि व्यतीतहोगई परन्तु उसकी विरहव्यथा नहीं दूरहुई प्रातःकाल सूर्य्यकी किरणोंसे सम्पूर्ण संसारभरका अन्धकार दूरहोगया परन्तु उसके चित्तका मोहरूपी अन्धकार नहीं दूरहुआ यहा वह बैठीथी यहा उसने स्नान किया था यहा उसने अपना शृंगार किया और यहा उसने विहार कियाथा इस प्रकार कहता और रोताहुआ वह सब ओरको घूमनेलगा उसकी यह दशा देखकर उसके मित्रोंने उससे कहा कि तुम्हारी प्रियामरी तो है नहीं तो क्यों तुम अपने प्राण दिये देतेहो जो जीतेरहोगे तो अवश्य तुमको वह मिलजायगी इससे धैर्य्य धारणकरके उसेढूंढो (अप्राप्यनामनेहास्तिधीरस्यव्यवसायिन)उद्योगी धीर पुरुषको इस संसारमें कोईवस्तु अलभ्य नहीं है मित्रोंके इसप्रकार समझानेसे हरिस्वामीने धैर्य्यधरके शोचा कि मैं अपना सर्वस्व ब्राह्मणों को देकर तीर्थों पर भ्रमण करू इससे मेरे पाप नष्टहोजायँगे और पापोंके नष्ट होनेपर कदाचित् भ्रमण करते २ मेरी प्रिया भी मुझे मिल जायगी यह शोचकेउसने उसदिन यथावत् स्नानभोजनादि करके दूसरे दिन ब्राह्मणों का निमंत्रण करके अपना सबधन उन्हें देदिया इसप्रकार अकिंचन होके वह भ्रमण करनेकोचला भ्रमण करते २ उसे ग्रीष्म ऋतु प्राप्तहुई मानों प्रियाओंके विरहसे संतप्त पथिकों के श्वासोंमे मिलकर अत्यन्त उष्ण वायु चलनेलगी धूपसे जलरूपी सम्पत्ति के नष्टहोजाने के कारण तडागोंकी सूखीहुई तथा चिटकीहुई कीचड ऐसी शोभित होतीथीं मानों शोकसे उनके हृदय फटगये हैं झींगरों के झंकारसे शब्दायमान, धूपसे म्लान ओष्ठ रूपी पत्तोंवाले वृक्ष वसन्त लक्ष्मी के विरहसे मानों रोनेलगे उससमय धूप से वियोगसे क्षुधासे तथा नित्यमार्ग चलनेसे अत्यन्त व्याकुल हरिस्वामी एक दिन भ्रमण करते २ एक ग्राममें सदावर्त्त देनेवाले पद्मनाभि नाम एक ब्राह्मणकेस्थानपर भोजन करनेके निमित्तगया वहा भीतर बहुतसे ब्राह्मणोंको भोजन करते देखकर वह द्वारहीपर चुपचाप नीचा मुख करके खडारहा उसेखडा देखकर पद्मनाभिकी स्त्री ने शोचा कि (अहोक्षुन्नामगुर्वेपानकुर्यात्कस्यलाघवम्) अरे यहक्षुधा बडी कठिनहै यह किसको तुच्छ नहीं करदेती है देखो यहकोई अन्नार्थी ब्राह्मण कैसी दीनतासे मेरे द्वारपर खडाहै मालूम होताहै कि यह कहीं दूरसे आयाहै इसमे इससमय इसको अवश्य अन्न देनाचाहिये यह शोचकर उसने एकपात्रमें घृत शर्करायुक्त खीर भरके हरिस्वामी को लाकरदी और उससेकहा कि कहीं बावडी के किनारे जाकर इसे खाओ क्योंकि यहा ब्राह्मण खानेलगे हैं इसमे यहस्थान उच्छिष्ट होगया है खीरके पात्रको लेकर हरिस्वामी वहा से थोडीदूर पर किसी बावडीके किनारे एक बरगदके वृक्षके नीचे उस खीरके पात्रको रखकर बावडी में हाथ पैर धोनेको गया इतनेमें एक बाज चोंचमें सर्पको पकडे

उसे युक्तिपूर्व्वक उस वावडीके पास लेगया जिसमें गिरनेसे मनुष्य पृथ्वीपर पहुच जाताथा वहा उसको पकड उस समेत वह वावडी मे कूदपडा और कूदतेही अपने उपवनकी वावडी में आ निकला उसेदिव्यस्त्री समेत देखकर उद्यानपालकों ने प्रसन्न होकर दीर्घदर्शी से जाकर कहा राजाका आगमन सुनके दीर्घदर्शी प्रसन्न होके उपवनमे आकर राजाको मृगाकवती समेत राजमदिर में लेगया और मृगाकवती को देखकर आश्चर्य्यपूर्व्वक शोचने लगा कि जिस दिव्यस्त्रीको मैंने बिजलीके समान आकाश मे क्षणभर देखाथा वह इसे कैसे मिलगई अथवा (यद्यस्यलिखितंधात्राललाटाक्षरपङ्क्तिपु। तदवश्यमसभाव्यमपितस्योपतिष्ठते) ब्रह्माने जिसके ललाटमें जो लिखदियाहै उसे वह असम्भव होनेपरभी अवश्य प्राप्त होताहै उसके इसप्रकार विचार करते २ वह मृगाकवती राजाको अपने देश मे आया देखके और सप्ताहको पूराहुआ जानके निपध पर्व्वतपर जानेकी इच्छा करनेलगी परन्तु आकाशगामी विद्या का उसे स्मरण न आया इससे वह महाखेदको प्राप्तहुई उसे उदासीन देखकर राजाने पूछा कि हे प्रिये तुम अकस्मात् उदासीन क्यों होगईहो राजाके यह वचन सुनके उसने कहा कि शापके नष्टहोजाने पर भी जो आपके कहनेसे मैं यहा रहगई इसीसे मेरी सम्पूर्ण विद्या नष्टहोगई यहसुनके राजाने उसको अपने आधीन जानकर वहुत प्रसन्नहोके वडा उत्सवकिया उस महोत्सवको देखकर वह दीर्घदर्शी मत्री अपने घरमे जाकर रात्रिके समय पलगपर लेटे २ हृदय फटकर मरगया मत्रीका मरण सुनके राजा यशःकेतु बहुत विपाद करके आपही राज्यका पालन करनेलगा इतनी कथा कहकर वेतालने राजासेपूछा कि हे राजा स्वामीके मनोरथके सिद्ध होजानेपर भी मत्रीका हृदय क्यों फटगया क्या उसने वह दिव्यस्त्री नही पाई इससे उसका हृदय फटा अथवा वह राज्य लेना चाहताथा राजाके आजाने से निराश होनेके कारण उसका हृदय फटा जो जानकर भी इसका उत्तर न दोगे तो आपका शिर फटजायगा वेतालका यह प्रश्न सुनके राजाने कहा कि ऐसे श्रेष्ठ मत्रीमे आपकी कहीहुई दोनो वातें नहीं होसक्तीं किन्तु यह शोचकर उसका हृदय फटगया कि जो राजा साधारण स्त्रियोंमेही आसक्तहोके राज्य कार्य्य नही करताथा वह अब इस दिव्यस्त्रीको पाकर न जाने क्या करेगा इससे जो मैंने वडा कष्ट भोगकर उपाय कियाथा उसमे और भी अधिकतर दोप वढगया राजाके यह वचन सुनके वह वेताल् फिर अपने वृक्षपर चलागया और राजाभी उसके लेनेको फिर चला १७१॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभापायाशशाङ्कवतीलम्बकेएकोनविंशस्तरङ्गः १९॥

इसके उपरान्त फिर राजा त्रिविक्रमसेन शीशम के वृक्षके समीपजाके वेतालको पकडकधेपर रखके लेचला मार्ग मे वेतालने कहा कि हे राजा एक सक्षिप्तकथा मैं तुम से कहताहू उसको सुनो कि काशीपुरी में राजा का महामान्य एक देवस्वामी नाम महाधनवान् ब्राह्मण रहता था उसके हरिस्वामी नाम एक पुत्रथा हरिस्वामी के लावण्यवती नाम अत्यन्त सुन्दर स्त्री थी मानों ब्रह्माने तिलोत्तमा आदिक अप्सराओंके वनाने मे प्रवीणताका अभ्यासकरके उसका स्वरूप वनायाथा एकसमय हरिस्वामी अपने महलके ऊपर लावण्यवतीके साथ भोगकरके सोगया उससमय मदनवेग नाम विद्याधरने उसी मार्गसे

आकाशमें आकर लावण्यवतीको अपने पतिकेपास सोतीदेखके उस की सुन्दरताके वशीभूत होकर उस सोतीहुईकोही हरलेगया क्षणभरमें हरिस्वामी जगकर अपने समीप लावण्यवतीको न देखकर एकाएकी उठबैठा और यह शोचकर कि कहीं वह मेरी परीक्षाके लिये छिपरही है सम्पूर्ण गृह तथा उपवनमें ढूढके कहीं भी उसे न पाके विलाप करनेलगा कि हा चन्द्रवदने हाप्रिये हा प्राणेश्वरी तुम्हारे साथमें जिस चन्द्रमा की किरणें मुझे सुखदेती थीं वही चन्द्रमा कामके बाणोंकी समान अपनी किरणोंसे अब मुझे दुःख देरहाहै इसप्रकार उसके विलाप करते२ रात्रि व्यतीतहोगई परन्तु उसकी विरहव्यथा नहीं दूरहुई प्रातःकाल सूर्य्यकी किरणोंसे सम्पूर्ण ससारभरका अन्धकार दूरहोगया परन्तु उसके चित्तका मोहरूपी अन्धकार नहीं दूरहुआ यहा वह बैठीथी यहा उसने स्नान किया था यहा उसने अपना शृगार किया और यहा उसने विहार कियाथा इस प्रकार कहता और रोताहुआ वह सब ओरको घूमनेलगा उसकी यह दशा देखकर उसके मित्रोने उससे कहा कि तुम्हारी प्रियामरी तो है नहीं तो क्यों तुम अपने प्राण दिये देतेहो जो जीतेरहोगे तो अवश्य तुमको वह मिलजायगी इससे धैर्य्य धारण करके उसेढूढो (अप्राप्यनामनेहास्तिधीरस्यव्यवसायिन)उद्योगी धीर पुरुषको इस ससारमें कोईवस्तु अलभ्य नहीं है मित्रोंके इसप्रकार समझानेसे हरिस्वामीने धैर्य्यधरके शोचा कि मैं अपना सर्वस्व ब्राह्मणों को देकर तीर्थों पर भ्रमण करू इससे मेरे पाप नष्टहोजायँगे और पापोंके नष्ट होनेपर कदाचित् भ्रमण करते २ मेरी प्रिया भी मुझे मिल जायगी यह शोचकेउसने उसदिन यथावत्स्नानभोजनादि करके दूसरे दिन ब्राह्मणों का निमत्रण करके अपना सबधन उन्हें देदिया इसप्रकार अकिंचन होके वह भ्रमण करनेकोचला भ्रमण करते २ उसे ग्रीष्म ऋतु प्राप्तहुई मानों प्रियाओंके विरहसे सतप्त पथिकों के श्वासोंसे मिलकर अत्यन्त उष्ण वायु चलनेलगी धूपसे जलरूपी सम्पत्ति केनष्टहोजानेके कारण तडागोंकी सूखीहुई तथा चिटकी हुई कीचड ऐसी शोभित होतीथीं मानों शोकसे उनके हृदय फटगये है झींगरों के झकारसे शब्दायमान, धूपसे म्लान ओष्ठ रूपी पत्तोंवाले वृक्ष वसन्त लक्ष्मी के विरहसे मानो रोनेलगे उससमय धूप से वियोगसे क्षुधासे तथा नित्यमार्ग चलनेसे अत्यन्त व्याकुल हरिस्वामी एक दिन भ्रमण करते २ एक ग्राममें सदावर्त्त देनेवाले पद्मनाभि नाम एक ब्राह्मणके स्थानपर भोजन करनेके निमित्तगया वहा भीतर बहुतसे ब्राह्मणोंको भोजन करते देखकर वह द्वारहीपर चुपचाप नीचा मुख करके खडारहा उसेखडा देखकर पद्मनाभिकी स्त्री ने शोचा कि (अहोक्षुन्नामगुर्व्येषानकुर्य्यात्कस्यलाघवम्) अरे यहक्षुधा बडी कठिनहै यह किसको तुच्छ नहीं करदेती है देखो यहकोई अन्नार्थी ब्राह्मण कैसी दीनतासे मेरे द्वारपर खडाहै मालूम होताहै कि यह कहीं दूरसे आयाहै इससे इससमय इसको अवश्य अन्न देनाचाहिये यह शोचकर उसने पक्वपात्रमें घृत शर्करायुक्त खीर भरके हरिस्वामी को लाकरदी और उससेकहा कि यहां बावडी के किनारे जाकर इसे खाओ क्योंकि यहा ब्राह्मण खानेलगे हैं इससे यहस्थान उच्छिष्ट होगया है खीरके पात्रको लेकर हरिस्वामी वहा से थोडीदूर पर किसी बावड़ीके किनारे एक बरगदके वृक्षके नीचे उस खीरके पात्रको रखकर बावडी में हाथ पैर धोनेको गया इतनेमें एक बाज चोंचमें सर्पको पकडके

उसी वृक्षपर बैठकर खानेलगा इससे उस मरेहुए सर्पके मुखसे विपकी लार टपककर उसखीरमें गिरी इस बातको न जानकर हरिस्वामी ने हाथ पैर धोके आकर उस वृक्षके नीचे बैठके वह सब खीर खाडाली खाते ही उसके शरीरमें विपकी वेदना उत्पन्न हुई इससे वह यह कहताहुआ कि हाय भाग्यके विपरीत होनेपर क्या नहीं विपरीत होताहै देखो यह घृत शर्करा सहित खीरभी मेरे लिये विष होगई, उस ब्राह्मणी के पास गया और बोला कि तुम्हारे दियेहुए अन्नकेखानेसे मेरे शरीरमें विपआगया इससे किसीमन्त्रके जा-ननेवाले को बुलाओ नहीं तो तुम्हें ब्रह्महत्या होगी इसप्रकार कहतेही कहते हरिस्वामी के नेत्र लौटगये और प्राण निकलगये हरिस्वामी को मरादेखके पद्मनाभि ब्राह्मणने अपनी उस स्त्रीको ब्रह्महत्यालगाके अपने घरसे बाहर निकाल दिया इस मिथ्या अपवादसे वह साध्वी तीर्थोंपर जाके तपकरनेलगी उस समय यमराजके यहां यह वादहुआ कि इस ब्राह्मणके मारनेकी हत्या किसकोहुई सर्पको बाजको अथवा अन्नदेनेवाली ब्राह्मणीको परन्तु कुछ निर्णय नहीहुआ इससे हेराजा त्रिविक्रमसेन तुम्हीं बताओ यह ब्रह्महत्या किसको हुई जो जानकर भी उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फटजायेगा वेतालके यह वचन सुनके राजाने कहा कि इसमें पराधीन सर्पका अपराधही क्या था और बाजका भी क्या दोष था जो अकस्मात् मिलेहुए अपने भक्ष्यपदार्थको भोजन कररहाथा और उस बिचारी ब्राह्मणीका भी क्या अपराधथा वह तो धर्म्मही करतीथी इससे मेरी बुद्धिसे यह ब्रह्महत्या उस मूर्खको है जो बिनाविचारे ही इनमें से किसीको भी ब्रह्महत्याका दोप लगावे राजाके यह वचन सुनके वेताल फिर अपने उसी वृक्षपर चलागया और राजा भी उसके लेनेको फिरचला ६० ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाकवतीलम्बकेविन्शस्तरंग २० ॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर उसीशीशमके वृक्षसे वेतालको उतार कन्धेपर रखके लेचला मार्ग में वेतालने राजासे कहा कि हेराजा एक विचित्र कथा मैं आपसे कहताहू उसे आप सुनिये कि श्रीरामचन्द्रजीकी राजधानी अयोध्या नगरीमें राजा वीरकेतुके समय में रत्नदत्तनाम एक महाधनवान् वैश्य रहताथा उसके देवताओंके आराधन करनेसे नन्दयन्तीनाम स्त्रीमे रत्नवतीनाम अत्यन्त रूपवती कन्या उत्पन्नहुई जिब वह रत्नवती युवतीहुई तब केवल महाधनवान् वैश्योनेही नहीं किन्तु राजालोगों नेभी उस कन्याकी याचनाकी परन्तु रत्नवतीको ऐसा पुरुषोंसे द्वेषथा कि जो इन्द्रभी आते तो उनके साथ भी वह अपना विवाह नहीं करती वह विवाहकी बात सुनकर भी प्राणदेनेको उद्यत होजातीथी अपनी कन्याका यह हठ देखके रत्नदत्त चुपहोकर बैठरहा उसका यह हठ सम्पूर्ण अयोध्या नगरीमें प्रकट होगया इस बीचमे सम्पूर्ण पुरवासियोंने जाकर राजा वीरकेतु से यह प्रार्थनाकी कि हेस्वामी रात्रिके समय चोर हम सबोंका धन चुरा लेजाते हैं और पकड़े नहीं जाते हैं आप जैसा उचित समझिये वैसा कीजिये पुरवासियोंकी यह विज्ञापना सुनके राजाने बहुतसे रक्षकोंको छिपकर चोरोंके ढूंढनेकी आज्ञादी परन्तु उनको भी चोर न मिले और नगरमें चोरी बराबर होतीरही इससे रात्रिके समय एकदिन राजा आपही खड्ग लेकर पुरीमें भ्रमण करनेलगा भ्रमण करते २ उसने एक पुरुषको ---- बाहर

जाते देखा वह इसप्रकार से चलताथा कि उसके चलने में जराभी शब्द नहीं होताथा और वह पीछे फिर २ कर वारम्वार देखता जाताथा उसे चोर जानके राजा उसके निकट गया राजाको देखकर उसने पूछा कि तुम कौनहो राजाने कहा कि मैं चोरहूं यह सुनके उसने कहा कि अच्छा तुम हमारे मित्रहो हमारे घर चलो और सत्कार ग्रहणकरो उसके वचन स्वीकार करके राजा उसीके साथ वनमें पृथ्वीके गढेके भीतर उसके घरमें गया अनेक प्रकारके रत्नोंसे दीप्यमान वह घर क्याथा मानों दूसरा पातालथा वहा वह चोर राजाको आसनपर बैठालके आप भीतर चलागया उस समय एक दासीने राजाको देख-कर कहा कि हे महाभाग तुम इस मृत्युके मुखमे कहा आयेहो यह चोर बड़ा विश्वास घाती है अभी आकर आपको मारडालेगा इसमे आप यहा से भागजाओ उसके वह वचन सुनके राजा ने अपनी पुरी में आके बहुतसी सेनालेकर उस चोरका घर घेरलिया सेनाका शब्द सुनकर उस चोर ने अपना भेद खुलाजानके मृत्युका निश्चय करके बाहर आके अपना बड़ा पराक्रम दिखलाया खड्गके प्रहारों से उसने हाथियोंकी सूंडे घोड़ोंके पैर तथा हजारों योद्धाओंके शिरकाटडाले यह देखकर राजाने आपही उसके सन्मुख जाकर पेचकरके उसकेहाथसे खड्गछीनलिया और अपने हाथसे भी खड्गफेंककर बाहु युद्धमे उसे जीतकर उसे जीवता हुआही बाधलिया और उसे अपनी नगरी में लाकर प्रातःकाल उसको शूलीदेनेकी आज्ञादी उसे वध्यस्थानमें लेजाते देखके उसरत्नवतीने अपने रत्नदत्त नाम पितासे कहा कि यह जो पुरुष फासी लगनेको जारहाहै इसको मैंने अपना पति स्वीकार कियाहै इसको आप राजासे कहके शूलीसे बचवाइये नहीं तो मैंभी इसके साथ सती होजाऊगी यह सुनकर रत्नदत्तने उससे कहा कि हे पुत्री तुमने तो बड़े २ राजा लोगोंको भी नहीं स्वीकार कियाहै अब इस महापापी चोरपर तुम्हारा चित्त क्यों चलायमान हुआहै इस प्रकार समझानेपर भी जब वह नहीं मानी तब रत्नदत्तने राजाके पास जाकर अपनासर्वस्व देकर राजासे उसचोरको छुड़वानाचाहा परन्तु राजाने सौकरोड़अशर्फी लेकर भी उसको न छोड़नाचाहा तब रत्नदत्त विमुखहोके लौटआया उसके लौटआनेपर रत्नवती बन्धुओं के निवारण करनेपर भी पालकीपरचढ़के रोतेहुए माता पिता समेत उस वध्यस्थानमेंगई वहा वधिकोंसे शूलीपर चढ़ायागया वह चोर लोगोंसे रत्नवतीका वृत्तान्तसुनके और उसे देखके क्षणभर रोकर हँसता २ मरगया उसे मरादेखकर रत्नवती ने शूलीपरसे उसे उतारके चिता लगाके जैसेही उसकेसाथ भस्महोना चाहा वैसेही आकाशसे अलक्षित श्रीभैरवजी ने कहा कि हे पतिव्रते तेरी इस पति भक्तिको देखकर मैं तुझपर प्रसन्नहूं तू वरमाग यहसुनकर उसने कहाकि मेरेपिताके कोईपुत्रनहीं है इससे इनके सौपुत्रहोंय जिससे यह मेरे वियोगमे मरैनहीं यहसुनकर औरभीअधिक प्रसन्नहोके भैरवजीनेकहा कि तेरे पिताके तो सौपुत्रहोंगे इससे विशेष तू औरभी वरमाग यहसुनके वहबोलीकि हेप्रभु जो आपमुझपर प्रसन्नहैं तो यहमेरापतिजीउठे और यह सदैव धर्मात्मावनारहै यहसुनके भैरवजीने कहा कि ऐसाहीहोय यहजीउठे धर्मात्माहोय और राजावीरकेतु इसपरप्रसन्नहोय भैरवजी के इसप्रकारकहतेही वहचोर शरीरसमेत ज्यों कात्योंजीउठा यहदेखके रत्नदत्तने बहुत प्रसन्नहोके रत्नवती तथा उसचोरको अपनेघरलेजाके बड़ाउत्सव

उसी वृक्षपर बैठकर खानेलगा इससे उस मरेहुए सर्पके मुखसे विपकी लार टपककर उसखीरमें गिरी इस बातको न जानकर हरिस्वामी ने हाथ पैर धोके आकर उस वृक्षके नीचे बैठके वह सब खीर खाडाली खाते ही उसके शरीरमें विपकी वेदना उत्पन्न हुई इससे वह यह कहताहुआ कि हाय भाग्यके विपरीत होनेपर क्या नहीं विपरीत होताहै देखो यह घृत शर्करा सहित खीरभी मेरे लिये विष होगई, उस ब्राह्मणी के पास गया और बोला कि तुम्हारे दियेहुए अन्नकेखानेसे मेरे शरीरमें विपआगया इससे किसीमन्त्रके जाननेवाले को बुलाओ नहीं तो तुम्हें ब्रह्महत्या होगी इसप्रकार कहतेही कहते हरिस्वामी के नेत्र लौटगये और प्राण निकलगये हरिस्वामी को मरादेखके पद्मनाभि ब्राह्मणने अपनी उस स्त्रीको ब्रह्महत्यालगाके अपने घरसे बाहर निकाल दिया इस मिथ्या अपवादसे वह साध्वी तीर्थोंपर जाके तपकरनेलगी उस समय यमराजके यहां यह वादहुआ कि इस ब्राह्मणके मारनेकी हत्या किसकोहुई सर्पको बाजको अथवा अन्नदेनेवाली ब्राह्मणीको परन्तु कुछ निर्णय नहींहुआ इससे हेराजा त्रिविक्रमसेन तुम्हीं बताओ यह ब्रह्महत्या किसको हुई जो जानकर भी उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फटजायगा वेतालके यह वचन सुनके राजाने कहा कि इसमें पराधीन सर्पका अपराधही क्या था और बाजका भी क्या दोष था जो अकस्मात् मिलेहुए अपने भक्ष्यपदार्थको भोजन कररहाथा और उस विचारी ब्राह्मणीका भी क्या अपराधथा वह तो धर्म्मही करतीथी इससे मेरी बुद्धिसे यह ब्रह्महत्या उस मूर्खको है जो बिनाविचारे ही इनमें से किसीको भी ब्रह्महत्याका दोप लगावे राजाके यह वचन सुनके वेताल फिर अपने उसी वृक्षपर चलागया और राजा भी उसके लेनेको फिरचला ६० ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेविन्शस्तरंग २० ॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर उसीशीशमके वृक्षसे वेतालको उतार कन्धेपर रखके लेचला मार्ग में वेतालने राजासे कहा कि हेराजा एक विचित्र कथा मैं आपसे कहताहूं उसे आप सुनिये कि श्रीरामचन्द्रजीकी राजधानी अयोध्या नगरीमें राजा वीरकेतुके समय में रत्नदत्तनाम एक महाधनवान् वैश्य रहताथा उसके देवताओंके आराधन करनेसे नन्दयन्तीनाम स्त्रीमें रत्नवतीनाम अत्यन्त रूपवती कन्या उत्पन्नहुई जब वह रत्नवती युवतीहुई तब केवल महाधनवान् वैश्योंनेही नहीं किन्तु राजालोगों नेभी उस कन्याकी याचनाकी परन्तु रत्नवतीको ऐसा पुरुषोंसे द्वेपथा कि जो इन्द्रभी आते तो उनके साथ भी वह अपना विवाह नहीं करती वह विवाहकी बात सुनकरके भी प्राणदेनेको उद्यत होजातीथी अपनी कन्याका यह हठ देखके रत्नदत्त चुपहोकर बैठरहा उसका यह हठ सम्पूर्ण अयोध्या नगरीमें प्रकट होगया इस बीचमें सम्पूर्ण पुरवासियोंने जाकर राजा वीरकेतु से यह प्रार्थनाकी कि हेस्वामी रात्रिके समय चोर हम सबोंका धन चुरा लेजाते हैं और पकडे नहीं जाते हैं आप जैसा उचित समझिये वैसा कीजिये पुरवासियोंकी यह विज्ञापना सुनके राजाने बहुतसे रक्षकोंको छिपकर चोरोंके ढूंढनेकी आज्ञादी परन्तु उनको भी चोर न मिले और नगरमें चोरी बराबर होतीरही इससे रात्रिके समय एकदिन राजा आपही खड्ग लेकर पुरीमें भ्रमण करनेलगा भ्रमण करते २ उसने एक पुरुषको परकोटेसे बाहर

जाते देखा वह इसप्रकार से चलताथा कि उसके चलने में जराभी शब्द नहीं होताथा और वह पीछे फिर २ कर वारम्बार देखता जाताथा उसे चोर जानके राजा उसके निकट गया राजाको देखकर उसने पूछा कि तुम कौनहो राजाने कहा कि मैं चोरहूं यह सुनके उसने कहा कि अच्छा तुम हमारे मित्रहो हमारे घर चलो और सत्कार ग्रहणकरो उसके वचन स्वीकार करके राजा उसीके साथ वनमें पृथ्वीके गढेके भीतर उसके घरमें गया अनेक प्रकारके रत्नोंसे दीप्यमान वह घर क्याथा मानों दूसरा पातालथा वहां वह चोर राजाको आसनपर बैठालके आप भीतर चलागया उस समय एक दासीने राजाको देखकर कहा कि हे महाभाग तुम इस मृत्युके मुखमें कहां आयेहो यह चोर बड़ा विश्वास घाती है अभी आकर आपको मारडालेगा इससे आप यहां से भागजाओ उसके वह वचन सुनके राजा ने अपनी पुरी में आके बहुतसी सेनालेकर उस चोरका घर घेरलिया सेनाका शब्द सुनकर उस चोर ने अपना भेद खुलाजानके मृत्युका निश्चय करके बाहर आके अपना बड़ा पराक्रम दिखलाया खड्गके प्रहारों से उसने हाथियोंकी सूंडें घोडोंके पैर तथा हजारों योद्धाओंके शिरकाटडाले यह देखकर राजाने आपही उसके सन्मुख जाकर पेचकरके उसकेहाथसे खड्गछीनलिया और अपने हाथसे भी खड्गफेंककर बाहु युद्धमें उसे जीतकर उसे जीतता हुआही बांधलिया और उसे अपनी नगरी में लाकर प्रातःकाल उसको शूलीदेनेकी आज्ञादी उसे वध्यस्थानमें लेजाते देखके उसरत्नवतीने अपने रत्नदत्त नाम पितासे कहा कि यह जो पुरुष फांसी लगनेको जारहाहै इसको मैंने अपना पति स्वीकार कियाहै इसको आप राजासे कहके शूलीसे बचवाइये नहीं तो मैंभी इसके साथ सती होजाऊंगी यह सुनकर रत्नदत्तने उससे कहा कि हे पुत्री तुमने तो बड़े २ राजा लोगोंको भी नहीं स्वीकार कियाहै अब इस महापापी चोरपर तुम्हारा चित्त क्यों चलायमान हुआहै इस प्रकार समझानेपर भी जब वह नहीं मानी तब रत्नदत्तने राजाके पास जाकर अपनासर्वस्व देकर राजासे उसचोरको छुड़वानाचाहा परन्तु राजाने सौकरोडअशर्फी लेकर भी उसको न छोड़नाचाहा तब रत्नदत्त विमुखहोके लौटआया उसके लौटआनेपर रत्नवती बन्धुओं के निवारण करनेपर भी पालकीपरचढके रोतेहुए माता पिता समेत उस वध्यस्थानमेंगई वहां वधिकोंने शूलीपर चढायागया वह चोर लोगोंसे रत्नवतीका वृत्तान्तसुनके और उसे देखके क्षणभर रोकर हँसता २ मरगया उसे मरादेखकर रत्नवती ने शूलीपरसे उसे उतारके चिता लगाके जैसेही उसकेसाथ भस्महोना चाहा वैसेही आकाशमें अलक्षित श्रीभैरवजी ने कहा कि हे पतिव्रते तेरी इस पति भक्तिको देखकर मैं तुझपर प्रसन्नहूं तू वरमाग यहसुनकर उसने कहाकि मेरेपिताके कोईपुत्रनहींहै इससे इनके सौपुत्रहोंय जिससे यह मेरे वियोगसे मरेंनहीं यहसुनकर औरभीअधिक प्रसन्नहोके भैरवजीनेकहा कि तेरे पिताके तो सौपुत्रहोंगे इससे विशेष तू औरभी वरमाग यहसुनके वहबोलीकि हेप्रभु जो आपमुझसे प्रसन्नहो तो यहमेरापतिजीउठे और यह सदैव धर्मात्मावनारहै यहसुनके भैरवजीने कहा कि ऐसाहीहोय यहजीउठे धर्मात्माहोय और राजावीरकेतु इसपरप्रसन्नहोय भैरवजीके इसप्रकारकहनेहीसे वहचोर उसीसमय उठा आलोंजीउठा यहदेखके रत्नदत्तने बहुत प्रसन्नहोके रत्नवती तथा उसचोरको अपनेसाथलेजाके वहांउत्सव

उसी वृक्षपर बैठकर खानेलगा इससे उस मरेहुए सर्पके मुखसे विषकी लार टपककर उसखीरमें गिरी इस बातको न जानकर हरिस्वामी ने हाथ पैर धोके आकर उस वृक्षके नीचे बैठके वह सब खीर खाडाली खाते ही उसके शरीरमें विषकी वेदना उत्पन्न हुई इससे वह यह कहताहुआ कि हाय भाग्यके विपरीत होनेपर क्या नहीं विपरीत होताहै देखो यह घृत शर्करा सहित खीरभी मेरे लिये विष होगई, उस ब्राह्मणी के पास गया और बोला कि तुम्हारे दियेहुए अन्नकेखानेसे मेरे शरीरमें विषआगया इससे किसीमन्त्रके जा- ननेवाले को बुलाओ नहीं तो तुम्हें ब्रह्महत्या होगी इसप्रकार कहतेही कहते हरिस्वामी के नेत्र लौटगये और प्राण निकलगये हरिस्वामी को मरादेखके पद्मनाभि ब्राह्मणने अपनी उस स्त्रीको ब्रह्महत्यालगाके अपने घरसे बाहर निकाल दिया इस मिथ्या अपवादसे वह साध्वी तीर्थोंपर जाके तपकरनेलगी उस समय यमराजके यहां यह वादहुआ कि इस ब्राह्मणके मारनेकी हत्या किसकोहुई सर्पको बाजको अ थवा अन्नदेनेवाली ब्राह्मणीको परन्तु कुछ निर्णय नहीहुआ इससे हेराजा त्रिविक्रमसेन तुम्हीं बताओ यह ब्रह्महत्या किसको हुई जो जानकर भी उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फटजायगा वेतालके यह बचन सुनके राजाने कहा कि इसमें पराधीन सर्पका अपराधही क्या था और बाजका भी क्या दोष था जो अकस्मात् मिलेहुए अपने भक्ष्यपदार्थको भोजन कररहाथा और उस विचारी ब्राह्मणीका भी क्या अपराधथा वह तो धर्म्मही करतीथी इससे मेरी बुद्धिसे यह ब्रह्महत्या उस मूर्खको है जो बिनाविचारे ही इनमे से किसीको भी ब्रह्महत्याका दोष लगावे राजाके यह वचन सुनके वेताल फिर अपने उसी वृक्षपर चलागया और राजा भी उसके लेनेको फिरचला ६० ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायाशशाङ्कवतीलम्बकेविंशस्तरंग २० ॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर उसीशीशमके वृक्षसे वेतालको उतार कन्धेपर रखके लेचला मार्ग में वेतालने राजासे कहा कि हेराजा एक विचित्र कथा मैं आपसे कहताहू उसे आप सुनिये कि श्रीरामचन्द्रजीकी राजधानी अयोध्या नगरीमें राजा वीरकेतुके समय में रत्नदत्तनाम एक महाधनवान् वैश्य रहताथा उसके देवताओंके आराधन करनेसे नन्दयन्तीनाम स्त्रीमें रत्नवतीनाम अत्यन्त रूपवती कन्या उत्पन्नहुई जब वह रत्नवती युवतीहुई तब केवल महाधनवान् वैश्योनेही नहीं किन्तु राजालोगों नेभी उस कन्याकी याचनाकी परन्तु रत्नवतीको ऐसा पुरुषोसे द्वेषथा कि जो इन्द्रभी आते तो उनके साथ भी वह अपना विवाह नहीं करती वह विवाहकी बात सुनकर भी प्राणदेनेको उद्यत होजातीथी अपनी कन्याका यह हठ देखके रत्नदत्त चुपहोकर बैठरहा उसका यह हठ सम्पूर्ण अयोध्या नगरीमें प्रकट होगया इस बीचमें सम्पूर्ण पुरवासियोंने जाकर राजा वीरकेतु से यह प्रार्थनाकी कि हेस्वामी रात्रिके समय चोर हम सबोंका धन चुरा लेजाते हैं और पकडे नहीं जाते हैं आप जैसा उचित समझिये वैसा कीजिये पुरवासियोंकी यह विज्ञापना सुनके राजाने बहुतसे रक्षकोंको छिपकर चोरोंके ढूढनेकी आ- ज्ञादी परन्तु उनको भी चोर न मिले और नगरमें चोरी बराबर होतीरही इससे रात्रिके समय एकदिन राजा आपही खड्ग लेकर पुरीमें भ्रमण करनेलगा भ्रमण करते २ उसने एक पुरुषको परकोटेसे बाहर

कहां चलागयाहै मैं उसीको ढूंढनेकेलिये जाताहूं इससे जबतक मैं उसे ढूंढकरलाऊं तबतक आप इस कन्याकी रक्षाकीजिये उसके यह वचनसुनके राजाने शापकेभयसे शशिप्रभाको बुलवाकर कहा कि हे पुत्री इसकन्याको लेजाकर तुम अपने मंदिरमेंरक्खो अपनेहीसाथ इसेभोजन करवाना और अपनेही साथ इसे सुलाना अपने पिता के यह वचनसुनके शशिप्रभा कन्यारूपधारी मनस्वामीको साथलेकर अपने मंदिरकोचली और वह मूलदेवराजा से आज्ञालेकर अपने स्थानको चलागया इसके उपरान्त कन्यारूप मनस्वामी अपनी प्रियाकेपास रहकर कुछदिनोंमें उसका बडाविश्वासपात्र होगया एक दिन उसने रात्रिकेसमय विरहसे क्षीणहोनेवाली अपनी प्रियासेपूछा कि हेसखी तुम दिन२ क्यों क्षीणहोती जातीहो तुम्हारामुख क्यों पीलापडगयाहै कृष्णपक्षके चन्द्रमाके समान तुम को क्षीण देखकर मुझ को महादुःखहोताहै इससे तुम अपना वृत्तान्त मुझसेकहो मेरेऊपर अविश्वास न करो जबतक तुम अपना वृत्तांत मुझसेनहीं कहोगी तबतक मैं भोजन नहींकरूंगी उसके यहवचनसुनके शशिप्रभा दीर्घश्वास लेकरबोली कि हेसखी तुमपर क्या अविश्वासहै सुनोएकसमय मैं वसन्तोत्सव देखनेको उपवनमेंगई वहां द्वितीयकामदेवके समान एकयुवाब्राह्मणको देखकर मेराचित्त उसपर चलायमानहुआ इतनेमें एक मतवालाहाथी गर्जताहुआ वहींआया उसहाथीको देखकर मेरे सबसेवकतो भागगये परंतु वहब्राह्मण मुझे गोदीमेंउठाके उसहाथीसे बचाकर दूरलेगया चंदनकेसमान शीतल उसके हाथोंके स्पर्शसे जो मेरीदशा हुई उसे क्याकहूं क्षणभरमें मेरे सेवक वहांजाके उसब्राह्मणकी बडीप्रशंसाकरके मुझेयहांलेआये तबसे मैं उसीका ध्यानकरके अनेकप्रकारके मनरूप अपने चित्तमें कियाकरतीहूं और स्वप्नमें भी मैं उसीको देखतीहूं उसकेनाम आदिक मुझे नहींमालूमहैं इसीसे मुझ अभागिनीको उसकी प्राप्ति नहींहोती इसी कारणसे मैं प्रतिदिन क्षीणहोती चलीजाती हूं शशिप्रभाके यह वचन सुनकर मनस्वामी अपनेप्रकट करने का अवसर जानकर मुखसे गुटिका निकालके पुरुष रूपहोके बोला कि हे प्यारी वह मैंहीहूं जिस को तुमने उपवनमें दर्शन मात्रसेही अपनादास बनाया था उससमय तुमसे वियुक्तहोकर मुझको ऐसा क्लेशहुआ जिससे कि मुझे कन्याका वेष धारण करके तुम्हारेपास आनाही पडा यहवचन सुनके तथा पहचानकर स्नेह आश्चर्य्य तथा लज्जासे युक्त शशिप्रभाको देखकर मनस्वामी ने उसका आलिंगन करके उसकेसाथ गान्धर्वविवाह करलिया तबसे मनस्वामी दिनमें मुखमें गुटिकारखकर कन्यारूप और रात्रिमें पुरुषरूपहोके उसकेसाथ रहनेलगा इसके उपरान्त कुछ दिन व्यतीत होजानेपर राजायशःकेतु के शाले मृगाङ्कदत्तने अपनी मृगाङ्कदत्तानाम कन्या प्रज्ञासागर नाममंत्रीके पुत्रकोदी सालाकी कन्या के विवाह में शशिप्रभाभी कन्या रूपधारी मनस्वामी समेत अपने मामाके यहां निमन्त्रण में गई वहां मंत्रीकापुत्र कन्या रूपधारी मनस्वामीको देखकर उसपर आशक्तहोगया और मृगाङ्कदत्ताकेसाथ विवाह करके उसे लेकर वह अपने घरमें जाके कन्यारूपधारी मनस्वामीका ध्यानकरके कामसे अति व्याकुल हुआ उसे व्याकुल देखकर प्रज्ञासागर उससे सबवृत्तान्त पूछके उसकन्यारूप मनस्वामीको अपने आधीन न जानकर अत्यन्त विकलहुआ इससमाचारको सुनके राजा यशःकेतु भी वहां आकर मंत्रीके

किया इसवृत्तान्तको सुनकर राजावीरकेतुने प्रसन्नहोके उसचोरको अपनासेनापति बनालिया उसअ-धिकारकोपाके वहचोर चोरी से निवृत्तहोके रत्नवतीकेसाथ विवाहकरके सुखपूर्व्वक रहनेलगा यहकथा कहके वेतालने राजात्रिविक्रमसेन से पूछाकि शूलीपर चढाहुआ वहचोर क्यों रोया और हँसाथा जो जानकरभी उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिरफटजायगा वेतालके वचनसुनके राजाने कहा कि वहचोर इस दुःखसे रोयाथा कि मैं, अकारणबन्धु इसरत्नदत्तवैश्यका कुछउपकार न करसका और इस आश्चर्य से हँसाथा कि यहकन्या राजालोगों कोभी छोडकर मेरेऊपर क्यों अनुरक्तहुई वाह स्त्रियोंकाचित्त विचित्र होताहै मौनछोडके राजासे कहेहुए इसउत्तरको सुनके वेतालफिर अपनेस्थानको चलागया और राजा भी उसके लानेको फिरउद्युक्तहुआ ६१ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशांकवतीलम्बकेएकविंशस्तरंग २१॥

इसके उपरान्तफिर राजात्रिविक्रमसेन शीशमके वृक्षसे वेतालको उतार कन्धेपररखके लेचला मार्ग में वेतालने राजासे कहाकि मैं आपसे एक रमणीक कथा कहता हूं उसे आपसुनियेकि नेपालदेशके शिवपुरनगरमें यशःकेतुनाम एक राजाथा वह अपने प्रज्ञासागरनाम मन्त्रीपर राज्यका भाररखके रानी चन्द्रप्रभाकेसाथ विषयोंका सुखभोगताथा कुछकालमें उसकी चन्द्रप्रभा रानीमें अत्यन्तरूपवती एककन्या उत्पन्न हुई उसका नाम राजा ने शशिप्रभा रक्खा क्रम से युवा अवस्था में प्राप्तहुई वह शशिप्रभा एक समय चैत्रकेमहीनेमें वसन्तोत्सवदेखने केलिये सखियोंकेसाथ उपवनमेंगई वहा उसे पुष्पतोडते देखकर किसी धनवान् ब्राह्मणका मनस्वामीनामपुत्र कामके वशीभूतहोकर शोचनेलगाकि क्या यह साक्षात् रतिही तोनहींहै जोकामदेवके बाणोंकेलिये पुष्पतोडतीहो अथवा यह वनदेवी है वसन्तकापूजनकरनेको पुष्पतोडती है इसप्रकार शोचतेहुए मनस्वामीको देखकर राजपुत्री शशिप्रभाभी कामके वशीभूत हुई इतनेमें महा हाहाकार सुनाईदिया और जैसेही वह उसके निश्चयकरनेको ग्रीवाउठाकर देखनेलगे वैसेही एकहाथी मार्गके वृक्षोंको तोडताहुआ दौडता उसीओरको आया तब हाथीको देखकर राजपुत्री के सब सेवकोंके भागजानेपर मनस्वामी राजपुत्रीको गोदीमें उठाकर हाथीके पाससे दूरलेगया वहा राज-पुत्रीके सेवकआके मनस्वामीकी बडीप्रशंसाकरके राजपुत्रीको अन्तःपुरमें लेगये अन्तःपुरमें जाकर शशिप्रभा उसीमनस्वामीका स्मरणकरके कामाग्निसे अत्यन्त सतप्तहुई और वह मनस्वामीभी राज-पुत्रीको अन्तःपुरमें गईदेख के इसकेबिना मैं नहीं जीसकूंगा इससे इसविषयमें धूर्त्तसिद्ध मूलदेव मेरी सहायता करसक्ताहै इससे उसीकेपास चलनाचाहिये यहशोचके उसदिनको व्यतीतकरके प्रातःकाल मूलदेवके पासगया वहां शशिनाम मित्रसमेत मूलदेवको देखकर उसने अपना सब वृत्तान्तकहा उस वृत्तान्तकोसुन मूलदेवने उसका मनोरथ सिद्धकरनेका निश्चयकरके अपने मुखमें एकगुटिका डालकर अपना स्वरूप वृद्धब्राह्मणकासा बनालिया और मनस्वामी के मुखमेंभी एक गुटिका डालकर उसेसु-न्दरकन्या रूपबनालिया और उसे अपनेसाथलेजाकर शशिप्रभाकेपिता राजा यशःकेतुसे कहा कि हे राजा मेरे एकहीपुत्रहै उसकेलिये मैं बहुतदूरसे यह कन्या मागकर लायाहू वहमेरापुत्र न जाने इनदिनों

कहा चलागयाहै मैं उसीको ढूंढनेकेलिये जाताहूं इससे जबतक मैं उसे ढूंढकरलाऊं तबतक आप इस कन्याकी रक्षाकीजिये उसके यह वचनसुनके राजाने शापकेभयसे शशिप्रभाको बुलवाकर कहा कि हे पुत्री इसकन्याको लेजाकर तुम अपने मंदिरमेंरक्खो अपनेहीसाथ इसेभोजन करवाना और अपनेही साथ इसे सुलाना अपने पिता के यह वचनसुनके शशिप्रभा कन्यारूपधारी मनस्वामीको साथलेकर अपने मंदिरकोचली और वह मूलदेवराजा से आज्ञालेकर अपने स्थानको चलागया इसके उपरान्त कन्यारूप मनस्वामी अपनी प्रियाकेपास रहकर कुछदिनोंमें उसका बडाविश्वासपात्र होगया एक दिन उसने रात्रिकेसमय विरहमें क्षीणहोनेवाली अपनी प्रियासेपूछा कि हेसखी तुम दिन२ क्यों क्षीणहोती जातीहो तुम्हारासुख क्यों पीलापडगयाहै कृष्णपक्षके चन्द्रमाके समान तुम को क्षीण देखकर मुझ को महादुःखहोताहै इससे तुम अपना वृत्तान्त मुझसेकहो मेरेऊपर अविश्वास न करो जबतक तुम अपना वृत्तांत मुझसेनहीं कहोगी तबतक मैं भोजन नहींकरूंगी उसके यहवचनसुनके शशिप्रभा दीर्घश्वास लेकरबोली कि हेसखी तुमपर क्या अविश्वासहै सुनोएकसमय मैं वसन्तोत्सव देखनेको उपवनमेंगई वहां द्वितीयकामदेवके समान एकयुवाब्राह्मणको देखकर मेराचित्त उसपर चलायमानहुआ इतनेमें एक मतवालाहाथी गर्जताहुआ वहींआया उसहाथीको देखकर मेरे सबसेवकतो भागगये परन्तु वहब्राह्मण मुझे गोदीमेंउठाके उसहाथीसे बचाकर दूरलेगया चंदनकेसमान शीतल उसके हाथोंके स्पर्शसे जो मेरीदशा हुई उसे क्याकहूं क्षणभरमें मेरे सेवक वहांआके उसब्राह्मणकी बडीप्रशंसाकरके मुझेयहांलेआये तबसे मैं उसीका ध्यानकरके अनेकप्रकारके संकल्प अपने चित्तमें कियाकरतीहूं और स्वप्नमें भी मैं उसीको देखतीहूं उसकेनाम आदिक मुझे नहींमालूमहैं इसीसे मुझ अभागिनीको उसकी प्राप्ति नहींहोती इसी कारणसे मैं प्रतिदिन क्षीणहोती चलीजाती हूं शशिप्रभाके यह वचन सुनकर मनस्वामी अपनेप्रकट करने का अवसर जानकर मुखसे गुटिका निकालके पुरुष रूपहोके बोला कि हे प्यारी वह मैंहीहूं जिस को तुमने उपवनमें दर्शन मात्रसेही अपनादास बनाया था उससमय तुमसे वियुक्तहोकर मुझको ऐसा क्लेशहुआ जिससे कि मुझे कन्याका वेष धारण करके तुम्हारेपास आनाही पडा यहवचन सुनके तथा पहचानकर स्नेह आश्चर्य्य तथा लज्जासे युक्त शशिप्रभाको देखकर मनस्वामी ने उसका आलिंगन करके उसकेसाथ गान्धर्वविवाह करलिया तबसे मनस्वामी दिनमें मुखमें गुटिकारखकर कन्यारूप और रात्रिमें पुरुषरूपहोके उसकेसाथ रहनेलगा इसके उपरान्त कुछ दिन व्यतीत होजानेपर राजायशःकेतु के शाले मृगांकदत्तने अपनी मृगांकवतीनाम कन्या प्रज्ञासागर नाममंत्रीके पुत्रकोदी मामाकी कन्या के विवाह में शशिप्रभाभी कन्या रूपधारी मनस्वामी समेत अपने मामाके यहां निमंत्रण में गई वहां मंत्रीकापुत्र कन्या रूपधारी मनस्वामीको देखकर उसपर आसक्तहोगया और मृगांकवतीकेसाथ विवाह करके उसे लेकर वह अपने घरमें जाके कन्यारूपधारी मनस्वामीका ध्यानकरके कामसे अति व्याकुल हुआ उसे व्याकुल देखकर प्रज्ञासागर उससे सबवृत्तान्त पूछके उसकन्यारूप मनस्वामीको अपने आधीन न जानकर अत्यन्त विकलहुआ इससमाचारको सुनके राजा यशःकेतु भी वहां आकर मंत्रीके

किया इसवृत्तान्तको सुनकर राजावीरकेतुने प्रसन्नहोके उसचोरको अपनासेनापति बनालिया उसअ-धिकारकोपाके वहचोर चोरी से निवृत्तहोके रत्नवतीकेसाथ विवाहकरके सुखपूर्व्वक रहनेलगा यहकथा कहके वेतालने राजात्रिविक्रमसेन से पूछाकि शूलीपर चढाहुआ वहचोर क्यों रोया और हँसाथा जो जानकरभी उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिरफटजायगा वेतालके वचनसुनके राजाने कहा कि वहचोर इस दुःखसे रोयाथा कि मैं, अकारणबन्धु इसरत्नदत्तवैश्यका कुछउपकार न करसका और इस आश्चर्य से हँसाथा कियहकन्या राजालोगों कोभी छोडकर मेरेऊपर क्यों अनुरक्तहुई वाह स्त्रियोंकाचित्त विचित्र होताहै मौनछोडके राजासे कहेहुए इसउत्तरको सुनके वेतालफिर अपनेस्थानको चलागया और राजा भी उसके लानेको फिरउद्युक्तहुआ ६१ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेएकविंशस्तरङ्ग २१ ॥

इसके उपरान्तफिर राजात्रिविक्रमसेन शीशमके वृक्षसे वेतालको उतार कन्धेपररखके लेचला मार्ग मे वेतालने राजासे कहाकि मैं आपसे एक रमणीक कथा कहता हूं उसे आपसुनियेकि नेपालदेशके शिवपुरनगरमें यशःकेतुनाम एक राजाथा वह अपने प्रज्ञासागरनाम मन्त्रीपर राज्यका भाररखके रानी चन्द्रप्रभाकेसाथ विषयोंका सुखभोगताथा कुछकालमें उसकी चन्द्रप्रभा रानीमें अत्यन्तरूपवती एककन्या उत्पन्न हुई उसका नाम राजा ने शशिप्रभा रक्खा क्रम से युवा अवस्था में प्राप्तहुई वह शशिप्रभा एक समय चैत्रकेमहीनेमें वसन्तोत्सवदेखने केलिये सखियोंकेसाथ उपवनमेंगई वहां उसे पुष्पतोडते देखकर किसी धनवान् ब्राह्मणका मनस्वामीनामपुत्र कामके वशीभूतहोकर शोचनेलगाकि क्या यह साक्षात् रतिही तोनहींहै जोकामदेवके बाणोंकेलिये पुष्पतोडतीहो अथवा यह वनदेवी है वसन्तकापूजनकरनेको पुष्पतोडती है इसप्रकार शोचतेहुए मनस्वामीको देखकर राजपुत्री शशिप्रभाभी कामके वशीभूत हुई इतनेमें महा हाहाकार सुनाईदिया और जैसेही वह उसके निश्चयकरनेको ग्रीवाउठाकर देखनेलगे वैसेही एकहाथी मार्गके वृक्षोंको तोडताहुआ दौडता उसीओरको आया तब हाथीको देखकर राजपुत्री के सब सेवकोंके भागजानेपर मनस्वामी राजपुत्रीको गोदीमें उठाकर हाथीके पाससे दूरलेगया वहां राज-पुत्रीके सेवकआके मनस्वामीकी बडीप्रशंसाकरके राजपुत्रीको अन्तःपुरमें लेगये अन्तःपुरमें जाकर शशिप्रभा उसीमनस्वामीका स्मरणकरके कामाग्निसे अत्यन्त सन्तप्तहुई और वह मनस्वामीभी राज-पुत्रीको अन्तःपुरमें गईदेख के इसकेविना मैं नहीं जीसकूंगा इससे इसविषयमें धूर्त्तसिद्ध मूलदेव मेरी सहायता करसक्ताहै इससे उसीकेपास चलनाचाहिये यहशोचके उसदिनको व्यतीतकरके प्रातःकाल मूलदेवके पासगया वहां शशिनाम मित्रसमेत मूलदेवको देखकर उसने अपना सब वृत्तान्तकहा उस वृत्तान्तकोसुन मूलदेवने उसका मनोरथ सिद्धकरनेका निश्चयकरके अपने मुखमें एकगुटिका डालकर अपना स्वरूप वृद्धब्राह्मणकासा बनालिया और मनस्वामी के मुखमेंभी एक गुटिका डालकर उसेसु-न्दरकन्या रूपबनालिया और उसे अपनेसाथलेजाकर शशिप्रभाकेपिता राजायशःकेतुसे कहाकि हे राजा मेरे एकहीपुत्रहै उसकेलिये मैं बहुतदूरसे यह कन्या मांगकर लायाहूं वहमेरापुत्र न जाने इनदिनों

मनस्वामी रात्रिके समय मृगाङ्कदत्ताको लेकर वहा से निकलगया तदनन्तर इस सब वृत्तान्तको जान कर मूलदेव वृद्ध ब्राह्मणका स्वरूप बनाके और अपने मित्र शशिको अपना युवापुत्रबनाके यश:केतु के पास आकर बोला कि हे राजा मैं अपने पुत्रको दूढलाया अब मेरीबहू मुझे आप देदीजिये उसके यह वचन सुनके राजाने शापके भयसे अपने मन्त्रियों से सलाहकरके उससे कहा कि हे ब्राह्मण मैं नहीं जानताहू कि तुम्हारी बहू कहा चलीगई इसमे मेरे अपराधको क्षमाकीजिये मैं अपनी कन्या आपके पुत्रको दिये देताहू यह कहके राजाने ब्राह्मणको समझाके अपनी कन्याका विवाह शशि के साथ करदिया इसप्रकार मूलदेव शशिप्रभाको साथलेकर अपने स्थानको गया वहा मनस्वामी और शशिका परस्पर बडा विवादहुआ मनस्वामी ने कहा कि शशिप्रभा मुझे देदो क्योंकि गुरुकी कृपासे मैंने प्रथमही इसके मन्दिरमे जाके इसकेसाथ गान्धर्व विवाहकियाहै और शशिनेकहा कि हे मूर्ख तू इसका कौनहै यह मेरी धर्मकी स्त्री है क्योंकि इसके पिताने अग्नि भगवान्को साक्षी करके इसके साथ मेरा विवाह कियाहै इसप्रकार विवाद करतेहुए उन दोनोंका निर्णय कुछ भी नहीं हुआ इससे हे राजा तुम्हीं बताओ वह राजपुत्री किसकी स्त्री होनेको योग्यथी जो जानके भी उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फटजायगा वेतालके यह वचन सुनके राजाने कहा कि वह शशिकी स्त्रीहोने के योग्यथी क्योंकि राजाने विधिपूर्वक शशिकेही साथ उसका विवाहकियाथा और मनस्वामी ने तो चोरी से उसके साथ गान्धर्व विवाहकियाथा इससे वह उसकी स्त्री नहीं होसकी क्योंकि पराये धन मे चोरका कभी स्वत्व नहीं होसकता राजाके यह वचन सुनके वहवेताल फिर उसी वृक्षपर जालटका और राजा फिर उसे लेनेको गया ९५॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेद्वाविंशस्तरङ्ग २२॥

इसके उपरान्त फिर राजा त्रिविक्रमसेन शिशपाके वृक्षपरसे वेतालको अपने कन्धेपर रखकर ले चला मार्ग में वेतालने उससे कहा कि हे राजा एक अत्यन्त मनोहर कथा मैं तुमसे कहताहू उसे सुनो पार्वती तथा गगाके पिता हिमवान्नाम पर्वतपर काचनपुरनाम एक अत्यन्त रमणीक नगरहै उसपुर मे जीमूतकेतुनाम विद्याधरोंका राजा पूर्वकालमें था उस राजाके यहा उपवनमें पुरखो के समयसे एक कल्पवृक्षथा उससे प्रार्थनाकरके राजा ने महादानी महाकृपालु सत्त्ववान् जीमूतवाहननाम पुत्र पाया और क्रमसे उसे युवावस्थामे प्राप्तहुआ जानकर अपने मन्त्रियों के कहने से उसे युवराज पदवी देदी एकसमय जीमूतकेतु के मन्त्रियों ने जीमूतवाहनसे कहा कि हे युवराज यह जो सम्पूर्ण कामनाओंका देनेवाला तुम्हारे यहा कल्पवृक्षहै इसका तुम सदैव पूजन कियाकरो इसकेप्रभावसे इन्द्रभी तुम्हारा कुछ नहीं करसक्ते हैं तो अन्य राजाओंकी क्या गणना है मन्त्रियो के यह वचन सुनकर जीमूतवाहनने सोचा कि इस महाप्रभाववाले कल्पवृक्षको भी पाकर हमारे पुरखा ने कोई उत्तमफल नहीं पाया केवल अपनाही पालनकिया इसने अपने को और इसको दोनोंकोही तुच्छ किया अब मैं इससे अपना मनोरथ सिद्धकरूगा यह सोचकर उसने अपने पिताके पास जाकर शुश्रूषासे प्रसन्नकरके एकान्तमें उन

पुत्रको काम की पीडासे मूर्च्छित देखके वहां बैठेहुए सब लोगोंसे बोला कि ब्राह्मण की रक्खीहुई उस कन्याको मैं कैसे इसेदेदू परन्तु उसके विना यह जीनहीं सक्ताहै इसके नष्टहोनेसे इसका पिता मेरामन्त्री भी नष्टहोजायगा, और मन्त्रीके मरनेसे साराराज्य नष्टहोजायगा इससे बताओ अब क्या करना चाहिये ६६ राजाके यह वचन सुनकर सब लोगोने कहा कि प्रजाओं के धर्मकी रक्षाकरना राजाओं का परम धर्म है यहबात मन्त्रके आधीनहै और मन्त्र मन्त्रीके आधीनहै इससे जो मन्त्रीका नाशहुआ तो मानो मूलही का नाशहोगया इससे आपको धर्मकी रक्षा अवश्य करनी चाहिये देखिये जो पुत्र समेत मन्त्री मरजायगा तो उस ब्राह्मणको भी बडा पापहोगा यह जानकर आप मन्त्रीकेपुत्रको यहकन्या देदीजिये जब कुछ कालमें वह ब्राह्मण आवेगा उससमय जैसा होगा वैसा देखा जायगा उनलोगोंके यहवचन सुनके राजाने लग्नका निश्चयकरके शशिप्रभा के यहांसे कन्यारूप मनस्वामीको बुलवाके उस मन्त्रीके पुत्रकेसाथ उसका विवाह करना चाहा तब मनस्वामीने राजासे कहा कि वह ब्राह्मण मुझे अन्यकेलिये लायाथा और आप मुझे अन्यको देतेहो इसमें जो कुछ पुण्य पापहोय उसके भागी आपही होगे परन्तु मैं इसनियम से विवाह करूंगी कि मेरापति तबतक मेरेसाथ शयनकरे जबतक कि वह छ महीने की तीर्थयात्रा न करआवे जो इस नियम का भंगहोगा तो मैं अपने प्राणदेदूंगी उसके इसनियमको सुन कर राजाने मन्त्रीके पुत्रसे इसनियमके पालनकरने का निश्चयकराके उसकेसाथ कन्यारूपी मनस्वामी का विवाह करदिया मन्त्रीका पुत्र विवाहकरके मनस्वामी को मृगाङ्कदत्ताकेसाथ रखकर तीर्थयात्रा कर ने को चलागया और मनस्वामी मृगाङ्कदत्ता के साथ रहनेलगा एकसमय रात्रिमें सम्पूर्ण परिजनो के सो जानेपर साथही लेटेहुए मनस्वामीसे मृगाङ्कदत्ताने कहा कि हे सखी कोई कथा कहो आज मुझे निद्रा नहीं आती यह सुनकर मनस्वामीने सूर्य्यवंशी राजा इलका पार्वतीजीके शापसे स्त्री होना और वन में बुधसे मिलकर संयोगहोने से पुरूरवाका उत्पन्न होना यह सब कथा कही यह कथा कहके फिर कहा कि हे सखी देवताओं की आज्ञासे अथवा मन्त्रौषधि के प्रभाव से कभी पुरुषस्त्री होजाता है और स्त्री पुरुष होजाती है ऐसे संयोग बहुधाहुआ करते हैं यह सुनके मृगाङ्कवती उससे बोली कि हे सखी इसकथाको सुनकर मेरे सम्पूर्ण अंगसनसनाते हैं और हृदय धड़कता है यह क्या बातहै यह सुनके मनस्वामीने कहा कि हे सखी यह कामके चिह्न हैं तुमको कभी काम बाधा नहींहुई है इससे तुम इ- सको नहीं जानसक्ती हो मैंने इनका बहुधा अनुभव किया है उसके यह वचनसुनके मृगाङ्कवती ने धीरे से कहा कि हे सखी तुम मुझे प्राणो से भी प्यारीहो इससे मैं कहती हूं क्या किसी उपाय से यहां कोई पुरुष आसक्ताहै यह सुनकर मनस्वामी बोला कि विष्णुभगवान् के वरदानसे मैं रात्रि के समय पुरुषभी होसक्तीहूं इससे तुम्हारे लिये आज मैं पुरुषका रूप धारणकरूंगा यह कहके उसने अपने मुखसे गुटिका निकालकर पुरुषहोके उसके साथ रमण किया और तभी से वह दिन में मुख में गुटिका रखकर कन्या होजाताथा और रात्रिको गुटिका निकालकर पुरुषहोकर मन्त्री के पुत्रकी स्त्रीके साथ सम्भोग किया करताथा कुछ दिनों के उपरान्त मन्त्री के पुत्रके आनेका समय निकट जानकर

मनस्वामी रात्रिके समय मृगाङ्कदत्ताको लेकर वहा से निकलगया तदनन्तर इस सन वृत्तान्तको जान कर मूलदेव वृद्ध ब्राह्मणका स्वरूप बनाके और अपने मित्र शशिको अपना युवाएब्रबनाके शना यशःकेतु के पास आकर बोला कि हे राजा मैं अपने पुत्रको ढूंढलाया अब मेरीबहू मुझे आप देदी-जिये उसके यह वचन सुनके राजाने शापके भयसे अपने मन्त्रियों से सलाहकरके उससे कहा कि हे ब्राह्मण मैं नहीं जानताहू कि तुम्हारी बहू कहा चलीगई इससे मेरे अपराधको क्षमाकीजिये मैं अपनी कन्या आपके पुत्रको दिये देताहू यह कहके राजाने ब्राह्मणको समझाके अपनी कन्याका विवाह शशि के साथ करदिया इसप्रकार मूलदेव शशिप्रभाको साथलेकर अपने स्थानको गया वहा मन-स्वामी और शशिका परस्पर बडा विवादहुआ मनस्वामी ने कहा कि शशिप्रभा मुझे देदो क्योंकि गुरुकी कृपासे मैंने प्रथमही इसके मन्दिरमें जाके इसकेसाथ गान्धर्व विवाहकियाहै और शशिनेकहा कि हे मूर्ख तू इसका कौनहै यह मेरी धर्मकी स्त्री है क्योंकि इसके पिताने अग्नि भगवान्को साक्षी करके इसके साथ मेरा विवाह कियाहै इसप्रकार विवाद करतेहुए उन दोनोंका निर्णय कुछ भी नहीं हुआ इससे हे राजा तुम्हीं बताओ वह राजपुत्री किसकी स्त्री होनेको योग्यथी जो जानके भी उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फटजायगा वेतालके यह वचन सुनके राजाने कहा कि वह शशिकी स्त्रीहोने के योग्यथी क्योंकि राजाने विधिपूर्व्वक शशिकेही साथ उसका विवाहकियाथा और मनस्वामी ने तो चोरी से उसके साथ गान्धर्व विवाहकियाथा इससे वह उसकी स्त्री नहीं होसक्की क्योंकि पराये धन में चोरका कभी स्वत्व नहीं होसक्ता राजाके यह वचन सुनके वहवेताल फिर उसी वृक्षपर जालटका और राजा फिर उसे लेनेको गया ११५॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेद्वाविंशस्तरङ्गः २२॥

इसके उपरान्त फिर राजा त्रिविक्रमसेन शीशमके वृक्षपरसे वेतालको अपने कन्धेपर रखकर ले चला मार्ग में वेतालने उससे कहा कि हे राजा एक अत्यन्त मनोहर कथा मैं तुमसे कहताहू उसे सुनो पार्वती तथा गङ्गाके पिता हिमवान्नाम पर्वतपर काञ्चनपुरनाम एक अत्यन्त रमणीक नगरहै उसपुर मे जीमूतकेतुनाम विद्याधरोंका राजा पूर्व्वकालमें था उस राजाके यहा उपवनमें पुरखों के समयसे एक कल्पवृक्षथा उससे प्रार्थनाकरके राजा ने महादानी महाकृपालु सत्त्ववान् जीमूतवाहननाम पुत्र पाया और क्रमसे उसे युवावस्थामे प्राप्तहुआ जानकर अपने मन्त्रियों के कहने से उसे युवराज पदवी देदी एकसमय जीमूतकेतु के मन्त्रियों ने जीमूतवाहनसे कहा कि हे युवराज यह जो सम्पूर्ण कामनाओंका देनेवाला तुम्हारे यहा कल्पवृक्षहै इसका तुम सदैव पूजन कियाकरो इसकेप्रभावसे इन्द्रभी तुम्हारा कुछ नहीं करसक्ते हैं तो अन्य राजाओंकी क्या गणना है मन्त्रियों के यह वचन सुनकर जीमूतवाहनने सोचा कि इस महाप्रभाववाले कल्पवृक्षको भी पाकर हमारे पुरखा ने कोई उत्तमफल नहीं पाया केवल अपनाही पालनकिया इससे अपने को और इसको दोनोंकोही तुच्छ किया अब मैं इससे अपना म-नोरथ सिद्धकरूंगा यह सोचके उसने अपने पिताके पास जाकर शुश्रूषासे प्रसन्नकरके एकान्तमें उन

पुत्रको काम की पीडासे मूर्च्छित देखके वहा बैठेहुए सब लोगोंसे बोला कि ब्राह्मण की रक्खीहुई उस कन्याको मैं कैसे इसेदेदूं परन्तु उसके बिना यह जीनहीं सक्ताहै इसके नष्टहोनेसे इसका पिता मेरामन्त्री भी नष्टहोजायगा और मन्त्रीके मरनेसे साराराज्य नष्टहोजायगा इससे बताओ अब क्या करना चाहिये ६६ राजाके यह वचन सुनकर सब लोगोंने कहा कि प्रजाओं के धर्मकी रक्षाकरना राजाओं का परम धर्म है यहबात मन्त्रके आधीनहै और मन्त्र मन्त्रीके आधीनहै इससे जो मन्त्रीका नाशहुआ तो मानो मूलही का नाशहोगया इससे आपको धर्मकी रक्षा अवश्य करनी चाहिये देखिये जो पुत्र समेत मन्त्री मरजायगा तो उस ब्राह्मणको भी बडा पापहोगा यह जानकर आप मन्त्रीकेपुत्रको यहकन्या देदीजिये जब कुछ कालमे वह ब्राह्मण आवेगा उससमय जैसा होगा वैसा देखा जायगा उनलोगोंके यहवचन सुनके राजाने लग्नका निश्चयकरके शशिप्रभा के यहासे कन्यारूप मनस्वामीको बुलवाके उस मन्त्रीके पुत्रकेसाथ उसका विवाह करना चाहा तब मनस्वामीने राजासे कहा कि वह ब्राह्मण मुझे अन्यकेलिये लायाथा और आप मुझे अन्यको देतेहो इसमें जो कुछ पुण्य पापहोय उसके भागी आपही होंगे परन्तु मैं इसनियम से विवाह करूंगी कि मेरापति तबतक मेरेसाथ शयनकरे जबतक कि वह छ महीने की तीर्थयात्रा न करआवे जो इस नियम का भंगहोगा तो मैं अपने प्राणदेदूंगी उसके इसनियमको सुन कर राजाने मन्त्रीके पुत्रसे इसनियमके पालनकरने का निश्चयकराके उसकेसाथ कन्यारूपी मनस्वामी का विवाह करदिया मन्त्रीका पुत्र विवाहकरके मनस्वामी को मृगाकदत्ताकेसाथ रखकर तीर्थयात्रा करने को चलागया और मनस्वामी मृगाकदत्ता के साथ रहनेलगा एकसमय रात्रिमे सम्पूर्ण परिजनों के सो जानेपर साथही लेटेहुए मनस्वामीसे मृगाकदत्ताने कहा कि हे सखी कोई कथा कहो आज मुझे निद्रा नहीं आती यह सुनकर मनस्वामीने सूर्य्यवंशी राजा इलका पार्वतीजीके शापसे स्त्री होना और वन मे बुधसे मिलकर संयोगहोने से पुरूरवाका उत्पन्न होना यह सब कथा कही यह कथा कहके फिर कहा कि हे सखी देवताओं की आज्ञासे अथवा मन्त्रौषधि के प्रभाव से कभी पुरुषस्त्री होजाता है और स्त्री पुरुष होजाती है ऐसे संयोग बहुधाहुआ करते हैं यह सुनके मृगाकवती उससे बोली कि हे सखी इसकथाको सुनकर मेरे सम्पूर्ण अंगसनसनाते हैं और हृदय धडकता है यह क्या बातहै यह सुनके मनस्वामीने कहा कि हे सखी यह कामके चिह्न हैं तुमको कभी काम बाधा नहींहुई है इससे तुम इसको नही जानसक्ती हो मैंने इनका बहुधा अनुभव किया है उसके यह वचनसुनके मृगाकवती ने धीरे से कहा कि हे सखी तुम मुझे प्राणो से भी प्यारीहो इससे मैं कहती हूं क्या किसी उपाय से यहा कोई पुरुष आसक्ताहै यह सुनकर मनस्वामी बोला कि विष्णुभगवान् के बरदानसे मैं रात्रि के समय पुरुषभी होसक्तीहूं इससे तुम्हारे लिये आज मैं पुरुषका रूप धारणकरूंगा यह कहके उसने अपने मुखसे गुटिका निकालकर पुरुषहोके उसके साथ रमण किया और तभी से वह दिन में मुख मे गुटिका रखकर कन्या होजाताथा और रात्रिको गुटिका निकालकर पुरुषहोकर मन्त्री के पुत्रकी स्त्रीके साथ सम्भोग किया करताथा कुछ दिनों के उपरान्त मन्त्री के पुत्रके आनेका समय निकट जानकर

मनस्वामी रात्रिके समय मृगाङ्कदत्ताको लेकर वहा से निकलगया तदनन्तर इस सब वृत्तान्तको जान कर मूलदेव वृद्ध ब्राह्मणका स्वरूप बनाके और अपने मित्र शशिको अपना युवापुत्र बनाके राजा यशःकेतु के पास आकर बोला कि हे राजा मैं अपने पुत्रको ढूढलाया अब मेरीबहू मुझे आप देदीजिये उसके यह वचन सुनके राजाने शापके भयसे अपने मन्त्रियों से सलाहकरके उससे कहा कि हे ब्राह्मण मैं नहीं जानताहूं कि तुम्हारी बहू कहा चलीगई इससे मेरे अपराधको क्षमाकीजिये मैं अपनी कन्या आपके पुत्रको दिये देताहूं यह कहके राजाने ब्राह्मणको समझाके अपनी कन्याका विवाह शशि के साथ करदिया इसप्रकार मूलदेव शशिप्रभाको साथलेकर अपने स्थानको गया वहा मनस्वामी और शशिका परस्पर बडा विवादहुआ मनस्वामी ने कहा कि शशिप्रभा मुझे देदो क्योंकि गुरुकी कृपासे मैंने प्रथमही इसके मन्दिरमें जाके इसकेसाथ गान्धर्व विवाहकियाहै और शशिनेकहा कि हे मूर्ख तू इसका कौनहै यह मेरी धर्मकी स्त्री है क्योंकि इसके पिताने अग्नि भगवान्को साक्षी करके इसके साथ मेरा विवाह कियाहै इसप्रकार विवाद करतेहुए उन दोनोंका निर्णय कुछ भी नहीं हुआ इससे हे राजा तुम्हीं बताओ वह राजपुत्री किसकी स्त्री होनेको योग्यथी जो जानके भी उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फटजायगा वेतालके यह वचन सुनके राजाने कहा कि वह शशिकी स्त्रीहोने के योग्यथी क्योंकि राजाने विधिपूर्वक शशिकेही साथ उसका विवाहकियाथा और मनस्वामी ने तो चोरी से उसके साथ गान्धर्व विवाहकियाथा इससे वह उसकी स्त्री नहीं होसकी क्योंकि पराये धन भ चोरका कभी स्वत्व नहीं होसक्ता राजाके यह वचन सुनके वहवेताल फिर उसी वृक्षपर जालटका और राजा फिर उसे लेनेको गया ११५॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेद्वाविंशस्तरङ्गः २२॥

इसके उपरान्त फिर राजा त्रिविक्रमसेन शिंशपके वृक्षपरसे वेतालको अपने कन्धेपर रखकर ले चला मार्ग में वेतालने उससे कहा कि हे राजा एक अत्यन्त मनोहर कथा मैं तुमसे कहताहूं उसे सुनो पार्वती तथा गंगाके पिता हिमवान्नाम पर्वतपर काचनपुरनाम एक अत्यन्त रमणीक नगरहै उसपुर में जीमूतकेतुनाम विद्याधरोंका राजा पूर्वकालमें था उस राजाके यहा उपवनमें पुरखों के समयसे एक कल्पवृक्षथा उससे प्रार्थनाकरके राजा ने महादानी महाकृपालु सत्त्ववान् जीमूतवाहननाम पुत्र पाया और क्रमसे उसे युवावस्थामें प्राप्तहुआ जानकर अपने मन्त्रियों के कहने से उसे युवराज पदवी देदी एकसमय जीमूतकेतु के मन्त्रियों ने जीमूतवाहनसे कहा कि हे युवराज यह जो सम्पूर्ण कामनाओंका देनेवाला तुम्हारे यहा कल्पवृक्षहै इसका तुम सदैव पूजन कियाकरो इसकेप्रभावसे इन्द्रभी तुम्हारा कुछ नहीं करसक्ते हैं तो अन्य राजाओंकी क्या गणना है मन्त्रियों के यह वचन सुनकर जीमूतवाहनने सोचा कि इस महाप्रभाववाले कल्पवृक्षको भी पाकर हमारे पुरखा ने कोई उत्तमफल नहीं पाया केवल अपनाही पालनकिया इससे अपने को और इसको दोनोंकोही तुच्छ किया अब मैं इससे अपना म नोरथ सिद्धकरूंगा यह सोचके उसने अपने पिताके पास जाकर शुश्रूषासे प्रसन्नकरके एकान्तमें उन

से कहा कि हे तात आप जानतेहीहो कि इम समाररूपी समुद्रमे शरीर पर्य्यन्त सम्पूर्ण पदार्थ लहरों के समान चचलहै और विशेपकरके थोडेही कालतक प्रकाश करनेवाली सन्ध्या विजली तथा लक्ष्मी को किसने कन और कहा स्थिर देखाहै एक परोपकारही इस ससारमे स्थिरहै जो सैकडों युगोंतक रह-नेवाले धर्म और यशको उत्पन्न करताहै इससे क्षणिक भोगों के लिये इस कल्पवृक्षको व्यर्थ रखके क्या करनाहै हमारे जिन पूर्वजो ने ममत्वकरके इसे रक्खाथा वह अव कहा है और यह कहां है वह सब इमके कोनह और यह उनका कौनहै इससे हेतात जो आपकी आज्ञाहोय तो मै इसे परोपकारके नि-मित्त नियुक्तकरू यह कहके अपने पितासे आज्ञालेकर जीमूतवाहन ने कल्पवृक्ष के पास जाके हाथ जोडकर कहा कि हे देव आपने हमारे पूर्वजो के सदैव मनोरथ पूर्ण किये हैं अव एक मेरी यह का मनाभी पूर्ण कीजिये कि जिसप्रकार से मै इस सम्पूर्ण पृथ्वी को दरिद्र से रहित देखू ऐसा उपाय की जिये मैने आपको सम्पूर्ण याचकों के अर्पण करदिया अव आपजाइये उसके इसप्रकार कहने पर उस वृक्षमे से यह शब्द सुनाई दिया कि तुमने मेरा त्यागकिया अव मै जाताहूं यह शब्द होतेही उस वृक्षने आकाश मे जाकर इतना धन वरसाया जिमसे सम्पूर्ण पृथ्वी मे कोई भी दरिद्री न रहा इससे जीमूतवाहनका त्रैलोक्य में यश फैलगया और उमके गोत्री भाइयो ने उसे कल्पवृक्ष से रहित जान के यह शोच के कि अव इसे हम जीतलेगे आपस मे मिलकर उमसे युद्धकरने के लिये उसपर च ढाई की उनको लडने के लिये उद्यत जानके जीमूतवाहन ने अपने पितासे कहा कि हे तात यद्यपि आपके आगे कोई युद्ध नही करसक्ता है तथापि इमपापी शरीर के लिये वन्धुओं को मारकर कौन राज्य लेनाचाहै इससे हमको राज्यसे क्या प्रयोजनहै हम लोग किसी अन्य स्थान में चलकर धर्मकरें जिम से दोनो लोको का हितहोय यहा यह दीन बाधवलोगही राज्यके सुखको भोगें जीमूतवाहन के वचनसुनके जीमूतकेतुने कहा कि हे पुत्र मैं तो तुम्हारेही लिये राज्य चाहताहू जो तुम्हीं इसे त्यागना चाहतेहो तो मुझ वृद्धको इससे कौन प्रयोजन है पिताके यह वचन सुनके जीमूतवाहन अपने माता पिताको लेके मलयाचल पर्वतपरजाके चन्दनके वृक्षोसे आच्छादित झरनोसे युक्त स्थानमे आश्रमव नाके अपने माता पिताकी सेवा करताहुआ रहनेलगा वहां सिद्धराज विश्वावसु के पुत्र मित्रावसुके साथ उसकी वडी मित्रताहोगई,३९ एकसमय जीमूतवाहन उपवनमें भ्रमण करते २ श्रीपार्वतीजी के मंदिरके देखनेको गया वहा एककन्या अपनी सखियोंसमेत वीणावजाकर पार्वतीजीकी स्तुतिकररही थी कमलोके समान वडे२ नेत्रवाली उन्नतस्तनवाली और पतली कटिवाली उसकन्याको देखकर जी मूतवाहनका चित्त उसपर आशक्तहोगया और जीमूतवाहनको देखके वह कन्याभी कामके वाणों से ऐसी विह्वलहुई कि उससे वीणाभी न वजसकी तव जीमूतवाहनने उसकी सखीसेपूछा कि इसका क्या नामहै और किस वंशमें इसका जन्महै यह सुनकर उसकी सखी ने कहा कि इसका मलयवतीनाम है सिद्धराज विश्वावसुकी यह पुत्री है और मित्रावसुकी वहिनहै यह कहकर उससखीने जीमूतवाहनके साथ आयेहुए मुनिपुत्र से जीमूतवाहन का नाम तथा वशपूछकर मलयवती से कहा कि हे सखी क्या

विद्याधरों के स्वामी जगत्पूज्य इस अतिथिका सत्कार नहीं करोगी यह सुनके मलयवती ने लज्जासे अपनामुख नीचेको करलिया यह देखकर एक सखीने यह बडीलज्जावती है इससे मेंहीं आपकापूजन करतीहूं यह कहके एकमाला जीमूतवाहनको पहरादी जीमूतवाहनने अपने गलेसे वहमाला निकाल के मलयवतीको पहरादी मलयवतीने भी तिरछीदृष्टिसे देखकर मानों उसकेगलेमें नीलकमलोंकी माला डाली इतनेमें एक चेरीने आकर मलयवतीसे कहा कि हेराजपुत्री माता तुमको याद करती है इस से शीघ्रही चलो यह सुनकर मलयवती जीमूतवाहनको तिरछीदृष्टिसे देखतीहुई अपने स्थानको चलीगई और अपनीमातासे मिलकर कामाग्निसे व्याकुलहोके पलँगपरलेटी उससमय सखियों के चन्दनालेप सेभी उसको जराभी चैन नहींपडी और जीमूतवाहनभी मलयवतीकाही ध्यान करताहुआ अपनेआश्रममें आया वहा काममे अत्यन्त विकलहोकर लज्जाके कारण किसीसे कुछ न कहकर वह पुटपाक केसे सतापको प्राप्तहुआ और बडे कष्टसे उस दिन रात्रिको व्यतीत करके प्रातःकाल उत्कण्ठितहोके मुनिपुत्रसमेत फिर उसी पार्वतीजीके मन्दिरमेंगया इतनेमें मलयवतीभी विरहके सहने में असमर्थहोकर अकेलीही प्राणदेनेको वहाआई और वृक्षोंमें छिपेहुए अपने प्रियको न देखकर हाथजोडके पार्वतीजीके आगेबोली कि हे भगवती जो इसजन्ममें जीमूतवाहन मेरापति न हुआ तो द्वितीयजन्ममें आपकीकृपा से यही मेरापति अवश्यहोय यहकहके अशोकवृक्षमें अपने डुपट्टेसे फासीलगाकर उसने हे नाथ जीमूतवाहन तुमने परमदयालुहोकरभी मेरी रक्षा न की यहकहके जैसेही गलेमें फासी लगाई वैसेही यह आकाशवाणी हुई कि हेपुत्री साहस मतकरो विद्याधरोंका चक्रवर्ती जीमूतवाहन तुम्हारापति अवश्य होगा इसआकाशवाणीको सुनकर जीमूतवाहन मुनिपुत्र समेत अपनी प्रियाकेपासगया मुनिपुत्रने मलयवतीसे कहा कि देखो भगवतीका दियाहुआ वर प्रत्यक्ष तुम्हारे समीप आगया और जीमूतवाहनने प्रेमपूर्वक वचनकहके अपनेही हाथोंसे उसके गलेकी फासीखोली इतनेमें ढूढतीहुई एकचेरीने आकर मलयवती से कहा कि हे सखी तुम बडी भाग्यवतीहो तुम्हारा मनोरथ सिद्धहुआ आजही महाराज विश्वावसुने मित्रावसुनेकहा कि हे तात कल्पवृक्षका भी दानकरनेवाला जो विद्याधरोंका स्वामी जीमूतवाहन यहा आयाहै वहहमारा अतिथिहुआ इससे कन्यारत्नरूपी मलयवती इसको देनीचाहिये क्योंकि इसके समान और कोई वर नहीं मिलेगा मित्रावसुके यह वचन महाराज विश्वावसुने स्वीकारकरलिये इसीसे मित्रावसु जीमूतवाहनके आश्रमको तुम्हारे विवाहकी प्रार्थनाकरने को गयाहै मैं जानतीहू कि शीघ्रही तुम्हारा विवाहहोनेवालाहै इससे शीघ्रही अपने मन्दिरको चलो और यह भी अपने आश्रमको जायँ चेरीके यहवचन सुननेही मलयवती उसकेसाथ अपने मन्दिरको चलीगई और जीमूतवाहनने भी अपने आश्रममें जाकर वहा आयेहुए मित्रावसुसे अपने विवाहकी प्रार्थना सुनकर स्वीकार करके अपने उसके तथा मलयवतीके पूर्वजन्मका सबवृत्तान्त वर्णनकिया अपने पूर्वजन्मके वृत्तान्तको सुनकर मित्रावसुने बहुत प्रसन्नहोकर जीमूतवाहनके माता पितासे भी उसके विवाहकी आज्ञालेके उसे अपने घरलेजाके मलयवतीके साथ उसका विवाह विधिपूर्वक करदिया इसप्रकार मलयवतीको पाकर जी

मूतवाहन अपने माता पिताकी सुश्रूषा करताहुआ उसी आश्रम में सुखपूर्व्वक रहनेलगा। ६३ एक समय जीमूतवाहन मित्रावसुके साथ मलयाचलपर भ्रमण करताहुआ समुद्रकेतटपर पहुँचा वहां हड्डियों के वहुत ढेर देखकर उसने मित्रावसुसे पूछा कि यह हड्डिया किसकी हैं तव मित्रावसुने कहा कि सुनो सक्षेपसे मैं तुम्हारे आगे कहताहू कि पूर्व्वसमयमे नागोंकी माता कद्रूने गरुड़की माता विनताको छल से जीतकर अपनी दासी वनालियाथा इसीवैरसे गरुडजीने अपनी माताको छुडाकरकेभी सर्पोंका खाना प्रारम्भ किया वह सदैव पातालमें जाकर कुछ सर्पोंको खातेथे कुछेकोंको व्यर्थ मारडालतेथे और कुछ उनके भयसे आपही मरजातेथे इससे सर्पों का एकसाथही सर्वनाश होते देखकर नागराज वासुकिने प्रार्थना पूर्व्वक गरुडजीसे यहनियम किया कि हे खगेन्द्र मैं प्रतिदिन एकसर्प आपके भोजनके निमित्त दक्षिण समुद्रकेतटपर भेजाकरूंगा तुम अव इसपातालमें न आना यहां तुम्हारे आनेसे सम्पूर्णसर्प नष्ट हुए जातेहैं इसमें तुम्हारे स्वार्थकीभी हानिहोतीहै वासुकीके यहवचन स्वीकार करके गरुडजी तब से वासुकिका भेजाहुआ एकसर्प यहां नित्य खातेहैं उन्हींके खायेहुए सर्पोंकी हड्डियों के यह ढेर हैं मित्रा-वसुके यहवचन सुनकर दयालु जीमूतवाहनने कहा कि नागराजवासुकी कैसे अपनी प्रजाओंको शत्रुके लिये प्रतिदिन भेटकरते हैं उनके हजार मुखोंमेंसे एकमुखसेभी यह नहीं निकला कि हे गरुड़ मुझे खालो वह कैसे अपनेही हाथसे अपने वंशका नाशकरतेहैं और कैसे सर्पिणियोंके रोदनको सुनते हैं और कृष्ण भगवान्के वाहन कश्यपजीके पुत्र गरुडभी यह क्या महापाप करते हैं यहकहके उसने अपने चित्तमें शोचा कि जो मैं अपनेको गरुडजीके अर्पणकरके एकसर्पकीभी रक्षाकरूं तो मेरा यह असारदेह सफलहोजाय इतनेमें एकप्रतीहारने आकर मित्रावसुसे कहा कि चलो तुम्हें राजा बुलाते हैं प्रतीहारके वचन सुनके जीमूतवाहनने मित्रावसुसे कहा कि तुम चलो मैं पीछे से आताहू उसके यह वचन सुनके मित्रावसु के चलेजाने पर उसे रोदनकासा शब्द दूरसे सुनाई दिया उसशब्दको सुनकर उसने उसी शब्दके अनुसार जाके देखा कि एक ऊंची शिलाके पास एकसुन्दर युवा पुरुषको एकराज सेवकने लाकर छोडा और वह युवापुरुष एक रोतीहुई वृद्धस्त्रीको समझारहाहै उसे देखके यह कौनहै यहजाननेके लिये जीमूतवाहन वृक्षोंकीआडमें खडाहोगया इतने में वहवृद्धास्त्री उसयुवापुरुषको देख देखकर यह विलापकरने लगी कि हा शंखचूड हा गुणिन् हा पुत्र तुम अनेक दुःखोंसे मुझे प्राप्तहुएथे तुम्हीं मेरे कुलके एक अवलम्वहो तुम्हें अव मैं कहां देखूंगी हे वत्स तुम्हारे मुखरूपी चन्द्रमाके अस्त होजानेपर शोकरूपी अन्धकारमें पडेहुए तुम्हारे वृद्धपिताकी क्यादशाहोगी सूर्य्यकी किरणोंके स्पर्श से भी जो तुम्हारे अगपीडितहोतेथे वह गरुडकी चोंचोंके आघातको कैसे सहेंगे इसविस्तीर्ण नागलोक में नागराजको गरुडके लिये मुझ अभागिनीकाही पुत्र मिला इसप्रकार विलाप करतीहुई उसवृद्धासे युवापुरुषने कहा कि हे अम्वमुझ दुःखीको भी तुम अधिक दुःख क्योंदेतीहो घरको लौटजाओ अब मैं तुमको अन्तिम प्रणामकरताहू गरुडजी आनेही चाहतेहोंगे उसके यहवचन सुनकर वह वृद्धा हाय हाय मेरे पुत्रको अव कौन वचावेगा यहकहके चारोंओर देखनेलगी उसवृद्धाके इसविलापको सुनकर

कृपालु जीमूतवाहनने शोचा कि यह शंखचूडनाम सर्पहै इसे वासुकीने गरुडके भोजनके निमित्त भेजा है और यह वृद्धा इसकी माताहै स्नेहसे इसीके पीछे २ चली आईहै जो मैं अपने इसनश्वर शरीरसे इसदुःखितनागकी रक्षा न करूं तो मेरे इसनिष्फलजन्मको धिक्कारहै यहशोचके उसने उस वृद्धाके पास जाकरकहा कि हेमाता मैं तुम्हारेपुत्रकी रक्षाकरूंगा उसके यहवचनसुनकर गरुडको आयाजानकेवहवृद्धा डरकरबोली कि हेगरुड तुम मुझेही खालो तब शंखचूडनेकहा कि हेमाता डरोमत यहगरुड नहीं है कहा यहचन्द्रमाकेसमान आनन्ददायी और कहाभयकर वहगरुड शंखचूडके ऐसा कहनेपर जीमूतवाहनने कहा कि अवमें विद्याधरहूं तुम्हारे पुत्रकी रक्षाकरनेको आयाहूं मैंवस्त्रसे अपनेशरीरको ढकके गरुडके अर्पण करूंगा तुम इसेलेके अपनेघरको चलीजाओ यहसुनकर उसवृद्धानेकहा कि ऐसा न कहो तुमइसमेभी मुझेअधिकप्यारेहो क्योंकि तुमने ऐसे समयपर मेरेऊपर यहकृपाकी है यह सुनकर जीमूतवाहन ने फिर कहा कि हे अम्ब तुम मेरे इस मनोरथको भंग मतकरो उसकेइस आग्रहको देखकर शंखचूड बोला कि हे महासत्त्व तुमने तो यह महा कृपालुता दिखाई परन्तु मैं तुम्हारे शरीरके व्ययसे अपने शरीरकी रक्षा नहीं करना चाहताहूं (रत्नव्ययेनपाषाणकोहिरक्षतुमर्हति) रत्नका व्यय करके कौन पाषाण की रक्षा करना चाहताहै मुझसरीके स्वार्थियोंसे तो सम्पूर्ण संसार भराहुआहै परन्तु आप सरीके कृपालु कहां मिलते हैं मैं शंखपालके चन्द्रमाके समान निर्मल कुलमें कलंक नहीं लगाना चाहताहूं उससे इसप्रकार कहके उसने अपनी मातासे कहा कि हे अम्ब अब तुम इसवनसे चलीजाओ मैं समुद्रके तटपर श्रीगोकर्ण नाम शिवजी के दर्शन करके शीघ्रही यहां लौटा आताहूं क्योंकि गरुड आयाही चाहतेहैं यह कहके और रोतीहुई माताको प्रणाम करके शंखचूड गोकर्ण महादेवके दर्शनको चलागया तब जीमूतवाहनने अपने चित्तमें शोचा कि इस बीचमें जो गरुडजी आजायँ तो मेरा मनोरथ सिद्ध होजाय इतनेमें गरुडजी के निकट आनेके कारण उनके पक्षोंकी वायुसे हिलतेहुए मानो निवारण करतेहुए वृक्षोंको देखके जीमूतवाहन गरुडको आया जानके उसवध्य शिलापर चढगया और गरुडआके शिलापरसे उसेउठाकर शिरपरसे उसके मुकुटको रत्नके धोखेसे उखाड फेंकके चोंचके लगनेसे बहतेहुए रुधिरवाले उसजीमूतवाहनको मलयाचलके शिखरपर लेजाके खानेलगे १५१ उससमय जीमूतवाहनने अपने चित्तमेंशोचा कि इसीप्रकारसे प्रतिजन्ममें मेरे शरीरसे पराया उपकारहोय परोपकारसे रहित स्वर्ग अथवा मोक्षकी भी मुझे इच्छा नहीं है उसके इसप्रकार शोचतेही आकाशसे उसपर पुष्पोंकी वृष्टि हुई इसबीचमें गरुडका फेंकाहुआ उसका मुकुट मलयवतीके आगे जाकर गिरा उसने उसे देख पहचानके महा विकल होकर अपने सास श्वशुरको दिखलाया अपने पुत्रके मुकुटको देखकर वह दोनोंभी अति विकलहोके अपनी विद्याओंके प्रभावसे सब वृत्तान्त जानके मलयवतीको साथलेके जहां गरुडथे वहांको चले इतनेमें गरुडभी गोकर्णेश्वरको नमस्कार करके लौटकर उसवध्य शिलापर रुधिर पडा देखके बोला कि हाय मैं बडा पापीहूं मेरे लिये उस महात्माने गरुडको अपना शरीर देदिया इससे चलकर देखूं कि गरुड उसे कहां लेगये हैं जो वह जीता मुझे मिलजाय तो मैं इस अयशसे बचजाऊं यहकहके वह रुधिरकीधार

मूतवाहन अपने माता पिताकी सुश्रूषा करताहुआ उसी आश्रम में सुखपूर्वक रहनेलगा। ६३। एक समय जीमूतवाहन मित्रावसुके साथ मलयाचलपर भ्रमण करताहुआ समुद्रकेतटपर पहुँचा वहां हड्डियों के बहुत ढेर देखकर उसने मित्रावसुसे पूछा कि यह हड्डिया किसकी हैं तब मित्रावसुने कहा कि सुनो सक्षेपसे मैं तुम्हारे आगे कहताहू कि पूर्व्वसमयमें नागोंकी माता कद्रूने गरुडकी माता विनताको छल से जीतकर अपनी दासी बनालियाथा इसीबैरसे गरुडजीने अपनी माताको छुडाकरकेभी सर्पोंका खाना आरम्भ किया वह सदैव पातालमें जाकर कुछ सर्पोंको खातेथे कुछेकोंको व्यर्थ मारडालतेथे और कुछ उनके भयसे आपही मरजातेथे इससे सर्पों का एकसाथही सर्वनाश होते देखकर नागराज वासुकिने प्रार्थना पूर्व्वक गरुडजीसे यहनियम किया कि हे खगेन्द्र मैं प्रतिदिन एकसर्प आपके भोजनके निमित्त दक्षिण समुद्रकेतटपर भेजाकरूंगा तुम अब इसपातालमें न आना यहां तुम्हारे आनेसे सम्पूर्णसर्प नष्ट हुए जातेहैं इसमें तुम्हारे स्वार्थकीभी हानिहोतीहै वासुकीके यहवचन स्वीकार करके गरुडजी तब से वासुकिका भेजाहुआ एकसर्प यहा नित्य खातेहैं उन्हींके खायेहुए सर्पोकी हड्डियों के यह ढेर हैं मित्रावसुके यहवचन सुनकर दयालु जीमूतवाहनने कहा कि नागराजवासुकी कैसे अपनी प्रजाओंको शत्रुके लिये प्रतिदिन भेटकरते हैं उनके हजार मुखोंमेंसे एकमुखसेभी यह नहीं निकला कि हे गरुड मुझे खालो वह कैसे अपनेही हाथसे अपने वंशका नाशकरतेहैं और कैसे सर्पिणियोंके रोदनको सुनते हैं और कृष्ण भगवान्के वाहन कश्यपजीके पुत्र गरुडभी यह क्यों महापाप करते हैं यहकहके उसने अपने चित्तमें शोचा कि जो मैं अपनेको गरुडजीके अर्पणकरके एकसर्पकीभी रक्षाकरू तो मेरा यह असारदेह सफलहोजाय इतनेमे एकप्रतीहारने आकर मित्रावसुसे कहा कि चलो तुम्हें राजा बुलातेहैं प्रतीहारके वचन सुनके जीमूतवाहनने मित्रावसुसे कहा कि तुम चलो मैं पीछे से आताहू उसके यह वचन सुनके मित्रावसु के चलेजाने पर उसे रोदनकासा शब्द दूरसे सुनाई दिया उसशब्दको सुनकर उसने उसी शब्दके अनुसार जाके देखा कि एकऊंची शिलाके पास एकसुन्दर युवा पुरुषको एकराज सेवकने लाकर छोडा और वह युवापुरुष एक रोतीहुई वृद्धस्त्रीको समझारहाहै उसे देखके यह कौनहै यहजाननेके लिये जीमूतवाहन वृक्षोंकीआडमें खडाहोगया इतने में वहवृद्धास्त्री उसयुवापुरुषको देख देखकर यह विलापकरने लगी कि हा शंखचूड हा गुणिन् हा पुत्र तुम अनेक दुःखोंसे मुझे प्राप्तहुएथे तुम्हीं मेरे कुलके एक अवलम्बहो तुम्हें अब मैं कहा देखूगी हे वत्स तुम्हारे मुखरूपी चन्द्रमाके अस्त होजानेपर शोकरूपी अन्धकारमें पडेहुए तुम्हारे वृद्धपिताकी क्यादशाहोगी सूर्य्यकी किरणोंके स्पर्श से भी जो तुम्हारे अंगपीडितहोतेथे वह गरुडकी चोंचोंके आघातको कैसे सहेंगे इसविस्तीर्ण नागलोक में नागराजको गरुडके लिये मुझ अभागिनीकाही पुत्र मिला इसप्रकार विलाप करतीहुई उसवृद्धासे युवापुरुषने कहा कि हे अम्बमुझ दुःखीको भी तुम अधिक दुःख क्योंदेतीहो घरको लौटजाओ अब मैं तुमको अन्तिम प्रणामकरताहू गरुडजी आनेही चाहतेहोंगे उसके यहवचन सुनकर वह वृद्धा हाय हाय मेरे पुत्रको अब कौन बचावेगा यहकहके चारोंओर देखनेलगी उसवृद्धाके इसविलापको सुनकर

दो गरुडके वचनसुनके जीमूतवाहन ने कहा कि हे गरुड तुम अपने पूर्वपापों का पश्चात्ताप करके अब सर्पोंको न खाना यह तो शिक्षाहुई और यह वर मैं मांगताहूं कि यह जो सर्प मरेहुए पडेहैं वह सब जीउठें उसके यहवचनसुनके गरुडनेकहा कि आजसे मैं अब सर्पोंको नहीं खाऊंगा और जो सर्प मैंने पहलेखायेहैं वह सब भी जीउठें गरुड के इसप्रकार कहतेही सब सर्प जी उठे इससे उस मलयाचलपर बडा आनन्द हुआ उस समय जीमूतवाहनके इसवृत्तान्त को सुनकर भगवती की कृपासे सम्पूर्ण विद्याधरों के राजा मलयाचलपर आकर सम्पूर्ण परिकर सहित जीमूतवाहनको चक्रवर्त्ती करनेके लिये हिमालय परलेगये वहां पिता माता मित्रावसु तथा मलयवती समेत जीमूतवाहन संसारमें अपने यशको फैलाके विद्याधरों के चक्रवर्त्ती के पदकोपाकर राज्य सुखको भोगनेलगा इसउदार सरसकथाको कहकर वेताल ने राजासे पूछा कि हे राजा शंखचूड और जीमूतवाहन इन दोनोंमेंसे कौनअधिक सत्त्ववान् था जान कर भी जो तुम यथार्थ उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिरफटजायगा वेतालके वचनसुनकर राजाने कहाकि बहुत जन्मोंसे इसीदयाका अभ्यास करतेहुए जीमूतवाहनको यह क्या बडीबातहै वह शंखचूड प्रशंसा करनेके योग्यहै जिसने मरणसे बचकर भी बहुतदूर गरुडके पासजाकर उनसे कहा कि तुम मुझेखाओ इसे छोडदो, राजाके यह वचनसुनकर वेतालफिर अपने स्थानको चलागया और राजाभी उसके पीछे ही उसके लानेको वहांगया २०७॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेत्रयोविंशस्तरंगः २३॥

इसके उपरान्त फिर राजा त्रिविक्रमसेन शीशमके वृक्षपरसे वेतालको पकडकर कन्धेपर रखकर ले चला मार्ग में वेतालनेकहा कि हेराजा एककथा मैं तुमसे कहताहूं उसेसुनो गंगाजीके तटपर कनकपुर नाम एकनगरथा उसनगरमें यशोधननाम बडाप्रतापी धर्मात्मा यशस्वीशूर तथा उदारराजाथा उसराजा के नगरमें एकधनवान् वैश्यकी उन्मादनीनाम कन्याथी उसउन्मादनीको जो कोई पुरुष देखताथा वह उसके रूपसे वशीभूत होकर उन्मत्तहोजाता था उसउन्मादनीको युवावस्थामें प्राप्त देखकर उसके पिता ने राजा यशोधनसे जाकर कहा कि हे स्वामी उन्मादनीनाम मेरी कन्या अबविवाहके योग्यहुई आप से विनाकहे मैं उसका विवाह नहीं करना चाहताहूं क्योंकि वह अत्यन्त रूपवती होनेके कारण आपही के योग्यहै जो आप उसे स्वीकार कीजिये तो मैं कृतार्थ होजाऊं उसवैश्यके यह वचन सुनकर राजा यशोधनने उसके लक्षण देखनेको अपने ब्राह्मणों को भेजा ब्राह्मणों ने जाके उस अत्यन्तसुन्दरी त्रैलोक्यमोहिनी कन्याको देखके बडे यत्नसे अपने चित्तके विकारको रोककर सोचा कि जो राजा के साथ इसका विवाहहोगा तो राजा इसके रूपसे मोहित होकर इसीके साथ रात्रि दिन रहेगा तो इससे राज्यकी बडी हानिहोगी और प्रजाका पालन नहीं होगा इसकारणसे राजासे यहकहना चाहिये कि उसकन्याके लक्षण अच्छे नहीं हैं यहसलाहकरके ब्राह्मणोंने जाकर राजासे कहदिया कि उसकन्याके लक्षण अच्छे नहीं हैं इससे राजाने उसको स्वीकार नहींकिया तब राजासे आज्ञालेकर उसवैश्यने राजा के सेनापति बलधरनाम वैश्यसे उसकन्याका विवाह करदिया उन्मादनी उस सेनापति के यहां जाकर

को देखताहुआ चला इसबीच में गरुडने जीमूतवाहनको खाते २ उसे प्रसन्न होता देखके, खाना छोड़कर शोचा कि यह कोई अपूर्व महासत्त्ववान् जीवहै मैं इसको खाभी रहाहूं पर इसके प्राण नहीं निकले और यहप्रसन्नसा होरहाहै और मुझको उपकारीके समान देखताहै इससे यहसर्प नहीं है कोईसाधूहै इसलिये इससे पूछूं कि यह कौनहै इसप्रकार शोचतेहुए गरुडजीसे जीमूतवाहननें कहा कि हे पक्षिराज मेरे शरीरमें अभी मास तथा रुधिरहै और तुम अभी तृप्तभी नहीं हुएहो इससे भोजनकरो उसके यहवचन सुनकर गरुडने आश्चर्य करके उससे पूछा कि हे महात्मा तुम सर्प तो नहीं हो कौनहो यह बताओ गरुडके यह वचन सुनके जीमूतवाहनने कहा कि मैं सर्पहीहूं इस पूछनेसे आपको क्या प्रयोजनहै आप अपना काम कीजिये बुद्धिमान् लोग निष्प्रयोजन बात नहीं करते हैं जीमूतवाहनके ऐसा कहतेही शखचूडने दूरहीसे गरुडको देखकर पुकारकरकहा कि हेगरुड यहमहापाप न करो यहसर्प नहीं है सर्प मैहूं यहकहके और निकटआकर गरुडको भ्रमयुक्त देखके फिर उसने कहा कि हेगरुड तुमको बडाभ्रमहुआहै क्या तुम मेरे फण तथा दोजिह्वाओं को नहीं देखते हो क्या तुमको इसविद्याधरकी सौम्य आकृति नहीं पहचान पडती उसके इसप्रकार कहतेहीकहते मलयवतीसमेत जीमूतवाहनके मातापिताभी आगये और जीमूतवाहनके अगकटेहुए देखकर यहविलाप करनेलगे कि हा जीमूतवाहन हा कारुणिक हा परार्थप्राणप्रद तुम्हारी क्या दशाहोगई हा गरुड तुमने यह विना विचारे क्याकिया उनका यह विलाप सुनकर गरुडने अत्यन्त पश्चात्तापयुक्तहोकर शोचा कि हाय मैंने अज्ञानसे परम कृपालु इस जीमूतवाहन को खा डाला जिसके यशरूपी वस्त्रसे त्रैलोक्य ढकाहुआ है जो यह मरजायगा तो मैंभी इस पापकी शान्तिके निमित्त अग्नि मे प्रवेश करजाऊंगा (अधर्मविषवृक्षस्यपच्यतेस्वादुकिंफल), अधर्मरूपी विषके वृक्षमें और कौन स्वादिष्ट फललगताहै इसप्रकार गरुडके विचार करतेही करते जीमूतवाहन अपनें माता पिताको देखकर घावोंकी व्यथासे मरगया यह देखके उसके माता पिता महाविलाप करनेलगे शखचूड बहुत विलापकर अपनी निन्दा करनेलगा और मलयवती आकाशकी ओर मुखकरके नेत्रों में आसू भरके बोली कि हे भगवती गौरी आपने मुझको यहवर दियाथा कि विद्याधरो का भावी चक्रवर्ती तेरा पति होगा हाय आज मुझ अभागिनिके विषयमे आप भी मिथ्यावादिनी होगई उसके इसप्रकार कहतेही पार्वतीजीने प्रकटहोकर कहा कि हे पुत्री मेरे वचन मिथ्या नहीं हैं और यह कहके अपने कमण्डलसे अमृतनिकालके जीमूतवाहनको सींचा अमृतके पडतेही जीमूतवाहन पहलेसेभी अधिकदीप्तिमान् होकर जीउठा उठकर प्रणाम करतेहुए जीमूतवाहनसे भगवतीनें कहा कि हेपुत्र मैं तुम्हारी कृपालुताको देखकर तुमपर प्रसन्नहूं इससे अपनेही हाथसे मैं विद्याधरों के चक्रवर्त्ती होनेको तुम्हारा अभिषेक करतीहूं तुम एक कल्प पर्य्यन्त विद्याधरोंके चक्रवर्त्ती रहोगे यह कहके भगवती जीमूतवाहनपर अभिषेक करके और उसकी कीहुई पूजाको ग्रहण करके अन्तर्द्धान होगई और आकाशसे पुष्पोंकी वृष्टिहुई तदनन्तर गरुडने नम्रतापूर्व्वक जीमूतवाहनसे कहा कि तीनों लोकोंमें आश्चर्यकारी तुम्हारे इस पुरुषार्थको देखकर मैं अत्यन्त प्रसन्नहूं इससे तुम मुझसे कोई वरमागो और मुझको उत्तम शिक्षा

दो गरुड़के वचनसुनके जीमूतवाहन ने कहा कि हे गरुड़ तुम अपने पूर्वपापों का पश्चात्ताप करके अब सर्पोंको न खाना यह तो शिक्षाहुई और यह वर मैं मांगताहूं कि यह जो सर्प मरेहुए पड़ेहैं वह सब जीउठें उसके यहवचनसुनके गरुड़ने कहा कि आजसे मैं अब सर्पोंको नहीं खाऊंगा और जो सर्प मैंने पहलेखाये हैं वह सब भी जीउठें गरुड़ के इसप्रकार कहतेही सब सर्प जी उठे इससे उस मलयाचलपर बड़ा आनन्द हुआ उस समय जीमूतवाहनके इसवृत्तान्त को सुनकर भगवती की कृपासे सम्पूर्ण विद्याधरों के राजा मलयाचलपर आकर सम्पूर्ण परिकर सहित जीमूतवाहनको चक्रवर्त्ती करनेके लिये हिमालय परलेगये वहाँ पिता माता मित्रावसु तथा मलयवती समेत जीमूतवाहन संसारमें अपने यशको फैलाके विद्याधरों के चक्रवर्त्ती के पदकोपाकर राज्य सुखको भोगनेलगा इसउदार सरसकथाको कहकर वेताल ने राजासे पूछा कि हे राजा शंखचूड़ और जीमूतवाहन इन दोनोंमेंसे कौनअधिक सत्त्ववान् था जान कर भी जो तुम यथार्थ उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिरफटजायगा वेतालके वचनसुनकर राजाने कहाकि बहुत जन्मोंसे इसीदयाका अभ्यास करतेहुए जीमूतवाहनको यह क्या बड़ीबातहै वह शंखचूड़ प्रशंसा करनेके योग्यहै जिसने मरणसे बचकर भी बहुतदूर गरुड़के पासजाकर उनसे कहा कि तुम मुझेखाओ इसे छोड़दो, राजाके यह वचनसुनकर वेतालफिर अपने स्थानको चलागया और राजाभी उसके पीछे ही उसके लानेको वहांगया २०७॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेत्रयोविंशस्तरङ्गः २३॥

इसके उपरान्त फिर राजा त्रिविक्रमसेन शीशमके वृक्षपरसे वेतालको पकड़कर कन्धेपर रखकर ले चला मार्ग में वेतालनेकहा कि हेराजा एककथा मैं तुमसे कहताहूं उसेसुनो गंगाजीके तटपर कनकपुर नाम एकनगरथा उसनगरमें यशोधननाम बड़ाप्रतापी धर्मात्मा यशस्वीशूर तथा उदारराजाथा उसराजा के नगरमें एकधनवान् वैश्यकी उन्मादनीनाम कन्याथी उसउन्मादनीको जो कोई पुरुष देखताथा वह उसके रूपसे वशीभूत होकर उन्मत्तहोजाता था उसउन्मादनीको युवावस्थामें प्राप्त देखकर उसके पिता ने राजा यशोधनसे जाकर कहा कि हे स्वामी उन्मादनीनाम मेरी कन्या अबविवाहके योग्यहुई आप से विनाकहे मैं उसका विवाह नहीं करना चाहताहूं क्योंकि वह अत्यन्त रूपवती होनेके कारण आपही के योग्यहै जो आप उसे स्वीकार कीजिये तो मैं कृतार्थ होजाऊं उसवैश्यके यह वचन सुनकर राजा यशोधनने उसके लक्षण देखनेको अपने ब्राह्मणों को भेजा ब्राह्मणों ने जाके उस अत्यन्तसुन्दरी त्रैलोक्यमोहिनी कन्याको देखके बड़े यत्नसे अपने चित्तके विकारको रोककर शोचा कि जो राजा के साथ इसका विवाहहोगा तो राजा इसके रूपसे मोहित होकर इसीके साथ रात्रि दिन रहेगा तो इससे राज्यकी बड़ी हानिहोगी और प्रजाका पालन नहीं होगा इसकारणसे राजासे यहकहना चाहिये कि उसकन्याके लक्षण अच्छे नहीं हैं यहसलाहकरके ब्राह्मणोंने जाकर राजासे कहदिया कि उसकन्याके लक्षण अच्छे नहीं हैं इससे राजाने उसका स्वीकार नहींकिया तब राजासे आज्ञालेकर उसवैश्यने राजा के सेनापति बलधरनाम वैश्यसे उसकन्याका विवाह करदिया उन्मादनी उस सेनापति के यहाँ जाकर

को देखताहुआ चला इसबीच मे गरुडने जीमूतवाहनको खाते २ उसे प्रसन्न होता देखके, खाना छोड़कर शोचा कि यह कोई अपूर्व महासत्त्ववान् जीवहै मैं इसको खाभी रहाहू पर इसके प्राण नहीं निकले और यहप्रसन्नसा होरहाहै और मुझको उपकारीके समान देखताहै इससे यहसर्प नहीं है कोईसाधूहै इसलिये इससे पूछू कि यह कौनहै इसप्रकार शोचतेहुए गरुडजीसे जीमूतवाहनने कहा कि हे पक्षिराज, मेरे शरीरमें अभी मास तथा रुधिरहै और तुम अभी तृप्तभी नहीं हुएहो इससे भोजनकरो उसके यहवचन सुनकर गरुडने आश्चर्य्य करके उससे पूछा कि हे महात्मा तुम सर्प तो नहीं हो कौनहो यह बताओ गरुडके यह वचन सुनके जीमूतवाहनने कहा कि मैं सर्पहीहू इस पूछनेसे आपको क्या प्रयोजनहै आप अपना काम कीजिये बुद्धिमान् लोग निष्प्रयोजन बात नहीं करते हैं जीमूतवाहनके ऐसा कहतेही शङ्खचूडने दूरहीसे गरुडको देखकर पुकारकरकहा कि हेगरुड यहमहापाप न करो यहसर्प नहीं है सर्प मैहू यहकहके और निकटआकर गरुडको भ्रमयुक्त देखके फिर उसने कहा कि हेगरुड तुमको बडाभ्रम हुआहै क्या तुम मेरे फण तथा दोजिह्वाओं को नहीं देखते हो क्या तुमको इसविद्याधरकी सौम्य आकृति नहीं पहचान पडती उसके इसप्रकार कहतेहीकहते मलयवतीसमेत जीमूतवाहनके मातापिताभी आगये और जीमूतवाहनके अगकटेहुए देखकर यहविलाप करनेलगे कि हा जीमूतवाहन हा कारुणिक हा परार्थप्राणप्रद तुम्हारी क्या दशाहोगई हा गरुड तुमने यह बिना विचारे क्याकिया उनका यह विलाप सुनकर गरुडने अत्यन्त पश्चात्तापयुक्तहोकर शोचा कि हाय मैने अज्ञानसे परम कृपालु इस जीमूतवाहन को खाडाला जिसके यशरूपी वस्त्रसे त्रैलोक्य ढकाहुआ है जो यह मरजायगा तो मैंभी इस पापकी शान्तिके निमित्त अग्नि मे प्रवेश करजाऊगा (अधर्मविषवृक्षस्यपच्यतेस्वादुकिंफल), अधर्मरूपी विषके वृक्षमें और कौन स्वादिष्ट फललगताहै इसप्रकार गरुडके विचार करतेही करते जीमूतवाहन अपने मातापिताको देखकर घावोंकी व्यथासे मरगया यह देखके उसके माता पिता महाविलाप करनेलगे शङ्खचूड बहुत विलापकर अपनी निन्दा करनेलगा और मलयवती आकाशकी ओर मुखकरके नेत्रों में आसू भरके बोली कि हे भगवती गौरी आपने मुझको यहवर दियाथा कि विद्याधरों का भावी चक्रवर्त्ती तेरा पति होगा हाय आज मुझ अभागिनिके विषयमें आप भी मिथ्यावादिनी होगई उसके इसप्रकार कहतेही पार्वतीजीने प्रकटहोकर कहा कि हे पुत्री मेरे वचन मिथ्या नहीं हैं और यह कहके अपने कमण्डलसे अमृतनिकालके जीमूतवाहनको सींचा अमृतके पडतेही जीमूतवाहन पहलेसेभी अधिकदीप्तिवान् होकर जीउठा उठकर प्रणाम करतेहुए जीमूतवाहनसे भगवतीने कहा कि हेपुत्र मैं तुम्हारी कृपालुताको देखकर तुमपर प्रसन्नहू इससे अपनेही हाथ से मैं विद्याधरों के चक्रवर्त्ती होनेको तुम्हारा अभिषेक करतीहू तुम एक कल्प पर्य्यन्त विद्याधरोंके चक्रवर्त्ती रहोगे यह कहके भगवती जीमूतवाहनपर अभिषेक करके और उसकी कीहुई पूजाको ग्रहण करके अन्तर्द्धान होगई और आकाशसे पुष्पोंकी वृष्टिहुई तदनन्तर गरुडने नम्रतापूर्व्वक जीमूतवाहनसे कहा कि तीनों लोकोंमें आश्चर्य्यकारी तुम्हारे इस पुरुषार्थको देखकर मैं अत्यन्त प्रसन्नहू इससे तुम मुझसे कोई वरमागो और मुझको उत्तम शिक्षा

दो गरुडके वचनसुनके जीमूतवाहन ने कहा कि हे गरुड तुम अपने पूर्वपापों का पश्चात्ताप करके अब सर्पोंको न खाना यह तो शिक्षाहुई और यह वर मैं मागताहूं कि यह जो सर्प मरेहुए पडेहैं वह सब जीउठें उसके यहवचनसुनके गरुडने कहा कि आजसे मैं अब सर्पोंको नहीं खाऊंगा और जो सर्प मैंने पहलेखाये हैं वह सब भी जीउठें गरुड के इसप्रकार कहतेही सब सर्प जी उठे इससे उस मलयाचलपर बडा आनन्द हुआ उस समय जीमूतवाहनके इसवृत्तान्त को सुनकर भगवती की कृपासे सम्पूर्ण विद्याधरों के राजा मलयाचलपर आकर सम्पूर्ण परिकर सहित जीमूतवाहनको चक्रवर्त्ती करनेके लिये हिमालय परलेगये वहाँ पिता माता मित्रावसु तथा मलयवती समेत जीमूतवाहन संसारमें अपने यशको फैलाके विद्याधरों के चक्रवर्त्ती के पदकोपाकर राज्य सुखको भोगनेलगा इसउदार सरसकथाको कहकर वेताल ने राजासे पूछा कि हे राजा शंखचूड और जीमूतवाहन इन दोनोंमें से कौनअधिक सत्त्ववान् था जान कर भी जो तुम यथार्थ उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिरफटजायगा वेतालके वचनसुनकर राजाने कहाकि बहुत जन्मोंसे इसीदयाका अभ्यास करतेहुए जीमूतवाहनको यह क्या बडीबातहै वह शंखचूड प्रशंसा करनेके योग्यहै जिसने मरणसे बचकर भी बहुतदूर गरुडके पासजाकर उनसे कहा कि तुम मुझेखाओ इसे छोडदो, राजाके यह वचनसुनकर वेतालफिर अपने स्थानको चलागया और राजाभी उसके पीछे ही उसके लानेको चलागया २०७॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेत्रयोविंशस्तरंगः २३॥

इसके उपरान्त फिर राजा त्रिविक्रमसेन शीशमके वृक्षपरसे वेतालको पकडकर कन्धेपर रखकर ले चला मार्ग में वेतालनेकहा कि हेराजा एककथा मैं तुमसे कहताहूं उसेसुनो गंगाजीके तटपर कनकपुर नाम एकनगरथा उसनगरमें यशोधननाम बडाप्रतापी धर्मात्मा यशस्वीशूर तथा उदारराजाथा उसराजा के नगरमें एकधनवान् वैश्यकी उन्मादनीनाम कन्याथी उसउन्मादनीको जो कोई पुरुष देखताथा वह उसके रूपसे वशीभूत होकर उन्मत्तहोजाता था उसउन्मादनीको युवावस्थामें प्राप्त देखकर उसके पिता ने राजा यशोधनसे जाकर कहा कि हे स्वामी उन्मादनीनाम मेरी कन्या अबविवाहके योग्यहुई आप से बिनाकहे मैं उसका विवाह नहीं करना चाहताहूं क्योंकि वह अत्यन्त रूपवती होनेके कारण आपही के योग्यहै जो आप उसे स्वीकार कीजिये तो मैं कृतार्थ होजाऊं उसवैश्यके यह वचन सुनकर राजा यशोधनने उसके लक्षण देखनेको अपने ब्राह्मणों को भेजा ब्राह्मणों ने जाके उस अत्यन्तसुन्दरी त्रैलोक्यमोहिनी कन्याको देखके बडे यत्नसे अपने चित्तके विकारको रोककर सोचा कि जो राजा के साथ इसका विवाहहोगा तो राजा इसके रूपसे मोहित होकर इसीके साथ रात्रि दिन रहेगा तो इससे राज्यकी बडी हानिहोगी और प्रजाका पालन नहीं होगा इसकारणसे राजासे यहकहना चाहिये कि उसकन्याके लक्षण अच्छे नहीं हैं यहसलाहकरके ब्राह्मणोंने जाकर राजासे कहदिया कि उसकन्याके लक्षण अच्छे नहीं हैं इससे राजाने उसका स्वीकार नहींकिया तब राजासे आज्ञालेकर उसवैश्यने राजा के सेनापति बलधरनाम वैश्यसे उसकन्याका विवाह करदिया उन्मादनी उस सेनापति के यहाँ जाकर

राजाने मुझे कुलक्षणा कहके त्यागदिया है इसबातको चित्तमें रखकर सुखपूर्व्वक रहनेलगी एकसमय राजा यशोधन वसन्तोत्सव देखने के लिये हाथीपर चढ़के निकला और नगर में यह ढंढोरा पिटगया कि कोई सती स्त्री घरसे वाहर न निकले क्योंकि राजाके रूपको देखके उनके पतिव्रत धर्मके लोप होजानेका सन्देह है ढंढोरेको सुनकर उन्मादनी राजाको आते जानके अपने महलपर चढ़कर खड़ीहोगई वसन्तसे वालीगई कामाग्निकी ज्वालाके समान उसे देखकर राजा कामसे अत्यन्त मोहित होगया और अपने सेवकोसे यहजानकर कि मैंने इसका पहले त्याग कियाहै राजमंदिरमें आके उन मिथ्यावादी ब्राह्मणोको अपने देशसे निकलवाके उसी उन्मादनीका ध्यानकरके शोचनेलगा कि यह चन्द्रमा वड़ा निर्लज्ज है जो जगदानन्ददायी उसके निष्कलंक मुखको देखकर भी प्रतिदिन उदित होताहै कठोर सुवर्ण के घट तथा कर्कश हाथीके मस्तक उसके उन्नत बड़े स्तनोंकी उपमाको नहीं पासक्ते हैं कामरूपी हाथीके मस्तकके समान उसके नितम्बो को देखकर कौन नहीं मोहित होताहै इसप्रकार उसका ध्यानकरके राजा प्रतिदिन क्षीणहोनेलगा और लज्जाके कारण किसीसे कुछकह नहीं सका जव मन्त्रियोंने तथा मित्रोंने वड़े आग्रहसे खेदका कारण उससे पूछा तव उसने अपने खेदका कारण वतलाया उसे जानकर मन्त्रियोंने कहा कि हे स्वामी आप खेद क्यो करतेहे वह तो आपके आधीनही है उसे आप ले लीजिये उनके वचन राजाने नहीं स्वीकार किये तदनन्तर सेनापति वलधर भी राजा के कष्टको जानकर राजाके पास आके नम्रतापूर्व्वक वोला कि हे स्वामी दासकी स्त्री आपकी दासीही है उसे आप ग्रहण कीजिये मैं आप उसको आपके अर्पणकिये देताहू इसमें आपको परस्त्रीगमनका दोप नहींहोगा अथवा मैं देवमंदिरमें जाकर उसका त्यागकरे देताहू उसे आप वहाँसे लेलीजिये क्योंकि आप देवमन्दिरमे त्यागकीहुई स्त्रियो के मालिकहे सेनापतिके यहवचन सुनके राजाने क्रोधकरके कहा कि मैं राजा होकर भी यहअधर्म कैसे करसक्ताहू जव मैंही मर्य्यादाका त्यागकरूगा तो फिर अन्यलोग अपने धर्मोमे कैसेरहेंगे तुममेरे भक्तहोकरभी क्षण भर सुखदेनेवाले परलोकमें महादुखदायी पापमे मुझको क्यो लगातेहो जो तुम उसपतिव्रता स्त्री का त्याग करोगे तो मैं तुमको दंडदूगा क्योंकि मुझसरीके लोग ऐसे अधर्मको नहीं सहसक्तेहै इससे इसकामाग्निमे मेरा भस्महोना अच्छाहै परन्तु अधर्म करना उचितनहीं क्योंकि (त्यजत्युत्तमसत्त्वाहिप्राणानपिनसत्पथम्) श्रेष्ठसत्त्ववान्पुरुप प्राणोकात्यागकरतेहैं परन्तु सन्मार्गका त्याग नहीं करते है इस प्रकार सेनापतिसे निपेध करके कामाग्निसे अत्यन्त पीडित होकर राजा यशोधन मृत्युको प्राप्त होगया और वह सेनापति भी राजाको मरादेखकर स्नेहसे उसी के साथ भस्महोगया इसकथाको कहकर वेतालने राजासे पूछा कि हेराजा वह सेनापति वलधर और यशोधन राजा इन दोनोंमें कौन अधिक सत्ववान्था जानकर भी जो उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिरफट जायगा वेतालके यह वचन सुनके राजाने कहा कि राजा यशोधन अधिक सत्ववान्था यह सुनकर वेतालनेकहा कि सेनापति क्यों नहीं अधिकथा जिसने ऐसी सुन्दर स्त्री पाकर भी राजाको देनीचाही और अन्तमें अपना शरीर भी उसके साथ भस्म करदिया और राजाने तो केवल उस स्त्रीका त्याग

मात्रही कियाथा वेतालके यह वचन सुनकर राजाने फिर कहा कि यद्यपि आपका कहना ठीकहै तथापि यह क्या आश्चर्यकी बातहै कि सत्कुलमें उत्पन्नहुए सेनापतिने अपने स्वामीकेलिये जो प्राणदेदिये क्योंकि प्राण देकर भी स्वामीकी रक्षा करना सेवकोंका परमधर्म है परन्तु राजा लोग मदोन्मत्त हाथियों के समान निरंकुशहोकर धर्म मर्य्यादारूपी जञ्जीरको तोडकर विषयोंकी ओर दौड़ते हैं अभिषेकके जल के साथही उनका सब विवेक मानों वहजाताहै वृद्धों के उपदेश कियेहुए शास्त्ररूपी मच्छर मानों चमरकी वायुके भयसे उनके पाससे भागजाते हैं ऐश्वर्य्यरूपी तीक्ष्ण वायुसे घबराईहुई उनकी दृष्टि सन्मार्गों को नहीं देखती है देखो जगतविजयी नहुषआदिक राजाभी कामकेवशीभूत होकर अनेक आपत्तियोंको प्राप्त हुएहैं इसपृथ्वीमें यही एक राजा यशोधन ऐसाहुआ जिसे चपललक्ष्मी के समान वह उन्मादनी मोहित नहीं करसकी इसने प्राणोंका भी त्याग करदिया परन्तु अधर्म में पैर नहीं रक्खा इससे मेरी बुद्धिमें यह राजाही अधिक सत्त्ववान् है राजाके यह वचन सुनके वह वेताल फिर अपने स्थानको चलागया और राजाभी उसके लेनेकेलिये फिरचला ठीकहै (आरब्धेहिसुदुष्करेऽपिमहताम ध्येविरामःकुत)दुष्कर भी कार्य्यका आरंभ करके महात्मालोगोंको मध्यमें विश्राम कैसेमिलसक्ताहै९१॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशांकवतीलम्बकेचतुर्विंशस्तरंग २४॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेनने फिर उसी शीशमके वृक्षके पास जाकर देखा कि उस वृक्षमें वेतालके समान बहुतसे मुर्दे लटकरहेहैं यह देखकर उसने सोचा कि यह क्या बातहै अथवा यह वेताल माया करके समय मेरा व्यतीत कररहाहै मुझे नहीं मालूम होताहै किमैं इनमेंसे किसको लेजाऊं जो इसी प्रकारसे यह रात्रि व्यतीत होगई तो मैं प्रातःकालही अग्निमें प्रवेश करके अपने प्राण देदूंगा परन्तु लोकमें हास्यनहीं कराऊंगा राजाका यह निश्चय जानके वेतालने प्रसन्न होके अपनी मायादूर करदी तब राजा वहां एकही मुर्देको देख उसे अपने कन्धेपर रखकरलेचला मार्गमें वेतालने फिर कहा कि हे राजा तुम बडे धीरहो इससे एक विचित्र कथा मैं तुमको सुनाताहूं उज्जयिनी नाम नगरी में चन्द्रप्रभ नाम राजाके देवस्वामी नाम महाधनवान्मन्त्रीथा उसके चन्द्रस्वामीनाम एकपुत्रथा वह चन्द्रस्वामी सम्पूर्ण विद्याओंको पढकर भी युवावस्थामें बडा जुवारी होगया एक समय चन्द्रस्वामी द्यूतखेलनेकेलिये ज्वारियोंके स्थानमें गया वह गृह मानो पासेरूपी नेत्रोंसे यह देखरहाथा कि किसको मैं विपत्तियों से युक्त करूं और ज्वारियोंकी कलहसे मानो यह कहरहाथा कि चाहे कुबेर भी आवें तो मैं उनको भी निर्धनकरके यहांसे जानेदूंगा वहां क्रमसे जुवा खेलते२ चन्द्रस्वामी वस्त्रपर्यन्त अपने पासका सब धन हारकर कुछ उधारकरके भी हारा औरउन लोगोंके मांगनेपर दे न सका इससे वहांके पचनेइसे व ज्वारोंके लाठियोंसे खूबपीटा लाठियोंके प्रहारसे उसने पाषाणकेसमान अपने शरीरको निश्चलकरके अपनेको मरासा बनालिया इसीसे उस पचनें उसे मरासा समझकर छोड़दिया दोतीनदिनतक उसे उसीप्रकार पडाहुआ देखकर पचने क्रोधकरके ज्वारियोंसे कहा कि इसे लेजाकर किसी अन्धकूपमें छोड़आओ मैं तुम्हारा धन अपने पाससे देदूंगा उसकेयहवचनसुनके ज्वारीलोग उसे वनमें लेगये वहां एक बूढ़े ज्वारी

राजाने मुझे कुलक्षणा कहके त्यागदिया है इसबातको चित्तमें रखकर सुखपूर्वक रहनेलगी एकसमय राजा यशोधन वसन्तोत्सव देखने के लिये हाथीपर चढ़के निकला और नगर में यह ढढोरा पिटगया कि कोई सती स्त्री घरसे बाहर न निकले क्योंकि राजाके रूपको देखके उनके पतिव्रत धर्मके लोप होजानेका सन्देह है ढढोरेको सुनकर उन्मादनी राजाको आते जानके अपने महलपर चढकर खडीहोगई वसन्तसे बालीगई कामाग्निकी ज्वालाके समान उसे देखकर राजा कामसे अत्यन्त मोहित होगया और अपने सेवकोंसे यहजानकर कि मैंने इसका पहले त्याग कियाहै राजमंदिरमें आके उन मिथ्यावादी ब्राह्मणोंको अपने देशसे निकलवाके उसी उन्मादनीका ध्यानकरके शोचनेलगा कि यह चन्द्रमा वडा निर्लज्ज है जो जगदानन्ददायी उसके निष्कलंक मुखको देखकर भी प्रतिदिन उदित होताहै कठोर सुवर्ण के घट तथा कर्कश हाथीके मस्तक उसके उन्नत बडे स्तनोंकी उपमाको नहीं पासक्ते हैं कामरूपी हाथीके मस्तकके समान उसके नितम्बों को देखकर कौन नहीं मोहित होताहै इसप्रकार उसका ध्यानकरके राजा प्रतिदिन क्षीणहोनेलगा और लज्जाके कारण किसीसे कुछकह नहीं सका जब मंत्रियोंने तथा मित्रोंने वडे आग्रहसे खेदका कारण उससे पूछा तब उसने अपने खेदका कारण बतलाया उसे जानकर मंत्रियोंने कहा कि हे स्वामी आप खेद क्यों करतेहैं वह तो आपके आधीनहीं है उसे आप ले लीजिये उनके वचन राजाने नहीं स्वीकार किये तदनन्तर सेनापति बलधर भी राजा के कष्टको जानकर राजाके पास आके नम्रतापूर्वक बोला कि हे स्वामी दासकी स्त्री आपकी दासीही है उसे आप ग्रहण कीजिये मैं आप उसको आपके अर्पणकिये देताहूं इसमें आपको परस्त्रीगमनका दोष नहींहोगा अथवा मैं देवमंदिरमें जाकर उसका त्यागकरे देताहूं उसे आप वहांसे लेलीजिये क्योंकि आप देवमन्दिरमें त्यागकीहुई स्त्रियों के मालिकहैं सेनापतिके यहवचन सुनके राजाने क्रोधकरके कहा कि मैं राजा होकर भी यहअधर्म कैसे करसक्ताहूं जब मैंही मर्यादाका त्यागकरूंगा तो फिर अन्यलोग अपने धर्मोंमें कैसेरहैंगे तुममेरे भक्तहोकरभी क्षणभर सुखदेनेवाले परलोकमें महादुखदायी पापमें मुझको क्यों लगातेहो जो तुम उसपतिव्रता स्त्री का त्याग करोगे तो मैं तुमको दंडदूंगा क्योंकि मुझसरीके लोग ऐसे अधर्मको नहीं सहसक्तेहैं इससे इसकामाग्निमें मेरा भस्महोना अच्छाहै परन्तु अधर्म करना उचितनहीं क्योंकि (त्यजत्युत्तमसत्त्वाहिप्राणानपिनसत्पथम्) श्रेष्ठसत्त्ववान्पुरुष प्राणोंकात्यागकरतेहैं परन्तु सन्मार्गका त्याग नहीं करते हैं इस प्रकार सेनापतिसे निषेध करके कामाग्निसे अत्यन्त पीडित होकर राजा यशोधन मृत्युको प्राप्त होगया और वह सेनापति भी राजाको मरादेखकर स्नेहसे उसी के साथ भस्महोगया इसकथाको कहकर वेतालने राजासे पूछा कि हेराजा वह सेनापति बलधर और यशोधन राजा इन दोनोंमें कौन अधिक सत्त्ववान्था जानकर भी जो उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिरफट जायगा वेतालके यह वचन सुनके राजाने कहा कि राजा यशोधन अधिक सत्त्ववान्था यह सुनकर वेतालने कहा कि सेनापति क्यों नहीं अधिकथा जिसने ऐसी सुन्दर स्त्री पाकर भी राजाको देनीचाही और अन्तमें अपना शरीर भी उसके साथ भस्म करदिया और राजाने तो केवल उस स्त्रीका त्याग

मात्रही कियाथा वेतालके यह वचन सुनकर राजाने फिरकहा कि यद्यपि आपका कहना ठीकहै तथापि यह क्या आश्चर्यकी बातहै कि सत्कुलमें उत्पन्नहुए सेनापतिने अपने स्वामीकेलिये जो प्राणदेदिये क्योंकि प्राण देकर भी स्वामीकी रक्षा करना सेवकोंका परमधर्म हैपरन्तु राजा लोग मदोन्मत्त हाथियों के समान,निरंकुशहोकर धर्म मर्य्यादारूपी जञ्जीरको तोडकर विषयोंकी ओर दौड़ते हैं अभिषेकके जल के साथही,उनका सब विवेक मानों बहजाताहै वृद्धों के उपदेश कियेहुए शास्त्ररूपी मच्छर मानो चमरकी वायुके भयसे उनके पाससे भागजाते हैं ऐश्वर्य्यरूपी तीक्ष्ण वायुसे घबराईहुई उनकी दृष्टि सन्मार्गों को नहीं देखती है देखो जगत्विजयी नहुषआदिक राजाभी कामकेवशीभूत होकर अनेक आपत्तियोंको प्राप्त हुएहैं इसपृथ्वीमें यही एक राजा यशोधन ऐसाहुआ जिसे चपललक्ष्मी के समान वह,उन्मादनी मोहित नहीं करसकी इसने प्राणोंका भी त्याग करदिया परन्तु अधर्म में पैर नहीं रक्खा इसमे मेरी बुद्धिमें यह राजाही अधिक सत्त्ववान् है राजाके यह वचन सुनके वह वेताल फिर अपने स्थानको चलागया और राजाभी उसके लेनेकेलिये फिरचला,ठीकहै (आरब्धेहिसुदुष्करेऽपिमहतामध्येविरामःकुत)दुष्कर भी कार्य्यका आरंभ करके महात्मालोगोंको मध्यमें विश्राम कैसेमिलसक्ताहै६१॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशांकवतीलम्बकेचतुर्विंशस्तरंग २४॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेनने फिर उसी शीशमके वृक्षके पास जाकर देखा कि उस वृक्षमें वेतालके समान बहुतसे मुर्दे लटकरहेहैं यह देखकर उसने सोचा कि यह क्या बातहै अथवा यह वेताल माया करके समय मेरा व्यतीत कररहाहै मुझे नहीं मालूम होताहै किमैं इनमेंसे किसको लेजाऊं जो इसी प्रकारसे यह रात्रि व्यतीत होगई तो मैं प्रातःकालही अग्निमें प्रवेश करके अपने प्राण देदूंगा परन्तु लोकमें हास्यनहीं कराऊंगा राजाका यह निश्चय जानके वेतालने प्रसन्न होके अपनी मायादूर करदी तब राजा वहां एकही मुर्देको देख उसे अपने कन्धेपर रखकरलेचला मार्गमें वेतालने फिर कहा कि हे राजा तुम बडे धीरहो इससे एक विचित्र कथा मैं तुमको सुनाताहूं उज्जयिनी नाम नगरी में चन्द्रप्रभ नाम राजाके देवस्वामी नाम महाधनवान्मंत्रीथा उसके चन्द्रस्वामीनाम एकपुत्रथा वह चन्द्रस्वामी सम्पूर्ण विद्याओंको पढकर भी युवावस्थामें बडा ज्वारी होगया एक समय चन्द्रस्वामी द्यूतखेलनेकेलिये ज्वारियोंके स्थानमें गया वह गृह मानो पासेरूपी नेत्रोंसे यह देखरहाथा कि किसको मैं विपत्तियों से युक्तकरूं और ज्वारियोंकी कलहसे मानो यह कहरहाथा कि चाहे कुबेर भी आवे तो मैं उनको भी निर्धनकरके यहांसे जानेदूंगा वहां क्रमसे द्यूत खेलते२ चन्द्रस्वामी वस्त्रपर्यंत अपने पासका सब धन हारकर कुछ उधारकरके भी हारा और उन लोगोंके मांगनेपर दे न सका इससे वहांके पचनेडने व सभाके लाठियोंसे चूर्नपीटा लाठियोंके प्रहारसे उसने पाषाणकेसमान अपने शरीरको निश्चलकरके अपनेको मरासा बनालिया इसीसे उस पचनेने उसे मारना बन्दकरदिया दोतीनदिनतक उसे उसीप्रकार पड़ाहुआ देखकर पचनेने क्रोधकरके ज्वारियोंसे कहा कि इसे लेजाकर किसी अंधकूपमें डालआयो मैं तुम्हाराधन अपने पाससे देदूंगा उसकेयहवचनसुनके ज्वारीलोग उसे वनमें लेगये वहां परन्तु ज्वारी

राजाने मुझे कुलक्षणा कहके त्यागदिया है इसबातको चित्तमें रखकर सुखपूर्वक रहनेलगी एकसमय राजा यशोधन वसन्तोत्सव देखने के लिये हाथीपर चढ़के निकला और नगर में यह ढंढोरा पिटगया कि कोई सती स्त्री घरसे बाहर न निकले क्योंकि राजाके रूपको देखके उनके पतिव्रत धर्मके लोप होजानेका सन्देह है ढंढोरेको सुनकर उन्मादनी राजाको आते जानके अपने महलपर चढकर खड़ीहोगई वसन्तसे वालीगई कामाग्निकी ज्वालाके समान उसे देखकर राजा कामसे अत्यन्त मोहित होगया और अपने सेवकोंसे यहजानकर कि मैंने इसका पहले त्याग कियाहै राजमंदिरमें आके उन मिथ्यावादी ब्राह्मणोंको अपने देशसे निकलवाके उसी उन्मादनीका ध्यानकरके शोचनेलगा कि यह चन्द्रमा बडा निर्लज्ज है जो जगदानन्ददायी उसके निष्कलंक मुखको देखकर भी प्रतिदिन उदित होताहै कठोर सुवर्ण के घट तथा कर्कश हाथीके मस्तक उसके उन्नत बडे स्तनोंकी उपमाको नहीं पासक्ते हैं कामरूपी हाथीके मस्तकके समान उसके नितम्बों को देखकर कौन नहीं मोहित होताहै इसप्रकार उसका ध्यानकरके राजा प्रतिदिन क्षीणहोनेलगा और लज्जाके कारण किसीसे कुछकह नहीं सका जब मन्त्रियोंने तथा मित्रोंने बडे आग्रहसे खेदका कारण उससे पूछा तब उसने अपने खेदका कारण बतलाया उसे जानकर मन्त्रियोंने कहा कि हे स्वामी आप खेद क्यो करतेहैं वह तो आपके आधीनही है उसे आप ले लीजिये उनके वचन राजाने नहीं स्वीकार किये तदनन्तर सेनापति बलधर भी राजा के कष्टको जानकर राजाके पास आके नम्रतापूर्वक बोला कि हे स्वामी दासकी स्त्री आपकी दासीही है उसे आप ग्रहण कीजिये मैं आप उसको आपके अर्पणकिये देताहू इसमें आपको परस्त्रीगमनका दोष नहींहोगा अथवा मैं देवमंदिरमें जाकर उसका त्यागकरे देताहू उसे आप वहाँसे लेलीजिये क्योकि आप देवमन्दिरमें त्यागकीहुई स्त्रियों के मालिकहैं सेनापतिके यहवचन सुनके राजाने क्रोधकरके कहा कि मैं राजा होकर भी यहअधर्म कैसे करसक्ताहू जब मैंही मर्य्यादाका त्यागकरूंगा तो फिर अन्यलोग अपने धर्मोंमे कैसेरहेंगे तुममेरे भक्तहोकरभी क्षणभर सुखदेनेवाले परलोकमें महादुखदायी पापमें मुझ को क्यो लगातेहो जो तुम उसपतिव्रता स्त्री का त्याग करोगे तो मैं तुमको दण्डदूंगा क्योंकि मुझसरीके लोग ऐसे अधर्मको नहीं सहसक्तेहैं इससे इसकामाग्निमें मेरा भस्महोना अच्छाहै परन्तु अधर्म करना उचितनहीं क्योंकि (त्यजत्युत्तमसत्त्वाहिप्राणानपिनसत्पथम्) श्रेष्ठसत्त्ववान्पुरुष प्राणोंकात्यागकरतेहैं परन्तु सन्मार्गका त्याग नहीं करते हैं इस प्रकार सेनापतिसे निषेध करके कामाग्निसे अत्यन्त पीडित होकर राजा यशोधन मृत्युको प्राप्त होगया और वह सेनापति भी राजाको मरादेखकर स्नेहसे उसी के साथ भस्महोगया इसकथाको कहकर वेतालने राजासे पूछा कि हेराजा यह सेनापति बलधर और यशोधन राजा इन दोनोंमें कौन अधिक सत्त्ववान्था जानकर भी जो उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिरफट जायगा वेतालके यह वचन सुनके राजाने कहा कि राजा यशोधन अधिक सत्त्ववान्था यह सुनकर वेतालनेकहा कि सेनापति क्यों नहीं अधिकथा जिसने ऐसी सुन्दर स्त्री पाकर भी राजाको देनीचाही और अन्तमें अपना शरीर भी उसके साथ भस्म करदिया और राजाने तो केवल उस स्त्रीका त्याग

मात्रही कियाथा वेतालके यह वचन सुनकर राजाने फिरकहा कि यद्यपि आपका कहना ठीकहै तथापि यह क्या आश्चर्यकी बातहै कि सत्कुलमें उत्पन्नहुए सेनापतिने अपने स्वामीकेलिये जो प्राणदेदिये क्योंकि प्राण देकर भी स्वामीकी रक्षा करना सेवकोंका परमधर्म है परन्तु राजा लोग मदोन्मत्त हाथियो के समान निरंकुशहोकर धर्म मर्य्यादारूपी जंजीरको तोडकर विषयोंकी ओर दौड़ते हैं अभिषेकके जल के साथही, उनका सब विवेक मानो बहजाताहै वृद्धों के उपदेश कियेहुए शास्त्ररूपी मच्छर मानों चमरकी वायु के भयसे उनके पासमे भागजाते हैं ऐश्वर्य्यरूपी तीक्ष्ण वायुमे घबराईहुई उनकी दृष्टि सन्मार्गों को नहीं देखती है देखो जगत्विजयी नहुषआदिक राजाभी कामकेवशीभूत होकर अनेक आपत्तियोंको प्राप्त हुएहै इसपृथ्वीमें यही एक राजा यशोधन ऐसाहुआ जिसे चपललक्ष्मी के समान वह उन्मादनी मोहित नहीं करसकी इसने प्राणोंका भी त्याग करदिया परन्तु अधर्म में पैर नहीं रक्खा इसमे मेरी बुद्धिमें यह राजाही अधिक सत्त्ववान् है राजाके यह वचन सुनके वह वेताल फिर अपने स्थानको चलागया और राजाभी उसके लेनेकेलिये फिरचला ठीकहै (आरब्धेहिसुदुष्करेऽपिमहताम ध्येविरामः कुतः) दुष्कर भी कार्य्यका आरंभ करके महात्मालोगोंको मध्यमें विश्राम कैसेमिलसक्ताहै ९१॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशांकवतीलम्बकेचतुर्विंशस्तरंग २४ ॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेनने फिर उसी शीशमके वृक्षके पास जाकर देखा कि उस वृक्षमें वेतालके समान बहुतसे मुर्दे लटकरहेहैं यह देखकर उसने सोचा कि यह क्या बातहै अथवा वह वेताल माया करके समय मेरा व्यतीत कररहाहै मुझे नहीं मालूम होताहै कि मैं इनमेंसे किसको लेजाऊं जो इसी प्रकारसे यह रात्रि व्यतीत होगई तो मैं प्रातःकालही अग्निमें प्रवेश करके अपने प्राण देदूंगा परन्तु लोकमें हास्यनहीं कराऊंगा राजाका यह निश्चय जानके वेतालने प्रसन्न होके अपनी मायादूर करदी तब राजा वहा एकही मुर्देको देख उसे अपने कन्धेपर रखकरलेचला मार्गमें वेतालने फिर कहा कि हे राजा तुम बडे धीरहो इसमे एक विचित्र कथा मैं तुमको सुनाताहूं उज्जयिनी नाम नगरी में चन्द्रप्रभ नाम राजाके देवस्वामी नाम महाधनवान्मंत्रीथा उसके चन्द्रस्वामीनाम एकपुत्रथा वह चन्द्रस्वामी सम्पूर्ण विद्याओंको पढकर भी युवावस्थामें बडा ज्वारी होगया एक समय चन्द्रस्वामी द्यूतखेलनेकेलिये ज्वारियोंके स्थानमें गया वह गृह मानो पासेरूपी नेत्रोंसे यह देखरहाथा कि किसको मैं विपत्तियों से युक्तकरूं और ज्वारियोंकी कलहमे मानो यह कहरहाथा कि चाहै कुबेर भी आवैं तो मैं उनको भी निर्धनकरके यहांसे जानेदूंगा वहां क्रमसे खूब खेलतेहुए चन्द्रस्वामी वस्त्रपर्यंत अपने पासका सब धन हारकर कुछ उधारकरके भी हारा और उन लोगोंके मांगनेपर दे न सका इससे वहांके पचनेहसे बड़ाके लाठियोंसे खूबपीटा लाठियोंके प्रहारसे उसने पाषाणके समान अपने शरीरको निश्चलकरके अपनेको मरासा बनालिया इसीसे उस पचने उसे मारना बन्दकरदिया दोतीनदिनतक उसे उसीप्रकार पड़ाहुआ देखकर पचने क्रोधकरके ज्वारियोंसे कहा कि इसे लेजाकर किसी अंधकूपमें डालआओ मैं तुम्हाराधन अपने पाससे देदूंगा उसके यहवचनसुनके ज्वारीलोग उसे वनमें लेगये वहां एकबुड्ढे ज्वारी

ने कहा कि यह मरनाही चाहताहै तो इसी स्थानमे इसे छोडदो पचसे कहदेंगे कि हम उसे कुएमें डाल आये उसके वचनमानके वहसब उसे वहीं छोडकर अपने२स्थानोंको चलेगये उनलोगोंके चलेजानेपर चन्द्रस्वामी उठकर एकशून्य शिवालयमे चलागया और वहापर सावधान होकर शोचनेलगा कि मैं इसदशामें कहाजाऊ मुझे नग्न देखके मेरे माता पिता भाई आदि सब क्याकहेंगे इससमय तो मैं नग्न होने के कारण बाहर कैसे निकलू और रात्रिकेसमय भोजनकहासे ढूढू उसके इसप्रकार शोचतेही शोचते वहदिन व्यतीतहोगया रात्रिकेसमय त्रिशूललियेहुए एकजटाधारी तपस्वी वहाआये और चन्द्र स्वामीको देखके उससे सबवृत्तान्त पूछके बोले कि तुम मेरे आश्रममे आयेहुए अतिथि हो इससे उठो स्नान करके जो कुछ मैं भिक्षामागलायाहू उसे भोजनकरो यह सुनकर चन्द्रस्वामीनेकहा कि हे तपस्वी जी मैं ब्राह्मणहू इससे आपकीभिक्षामेंसे लेकर भोजननहीं करसक्ताहू उसके यहवचनसुनके उसतपस्वीने अपनी कुटी में जाकर इष्टसपादिनी विद्याका स्मरणकिया स्मरण करतेही उसविद्याने आकर कहा कि क्या आज्ञाहै उसने कहा कि इस अतिथिका सत्कारकरो उसके इसप्रकार कहतेही एकबडा सुवर्ण का पुर चन्द्रस्वामीको दिखाई दिया उसपुरमे से कुछ स्त्रियोंने आकर उससेकहा कि चलो स्नानकरो और भोजनकरो यह कहके वहस्त्रिया उसे एकमंदिरमें लेजाके स्नान करवाके तथा उत्तम वस्त्र पहनाके एक दूसरे मंदिरमें लेगई वहा एक अत्यन्त रूपवती स्त्रीने अपने आसनसे उठकर उसे अपनेपास बैठाया और अपनेहीसाथ भोजन करवाके पलगपर लेटाके उसकेसाथ सभोगभी किया इसप्रकार सुख भोगके सोयेहुए चन्द्रस्वामीने प्रातःकाल उठकर वही सूना शिवालय देखा तब तपस्वीने उससे पूछा कि तुम रात्रिभर सुखसेरहे उसनेकहा कि हा मैं आपकी कृपासे बडे सुखसेरहा परन्तु अब उस दिव्यस्त्रीके बिना मेरेप्राण नहीं बचेंगे यह सुनकर तपस्वीने हसकर कहा कि अच्छा यहींरहो रात्रिमें वही सुख तुमको फिर मिलेगा तपस्वी के यहवचन सुनकर चन्द्रस्वामी वहींरहकर रात्रिकेसमय दिव्य सुख भोगनेलगा कुछ दिन वहा रहके यह जानके कि यह विद्याका प्रभावहै एकदिन उस तपस्वी से चन्द्रस्वामीने कहा कि हे भगवन् जो आप सत्य २ मुझदीनपर कृपाकरतेहो तो यह विद्या मुझे दो जिसका कि ऐसा अद्भुतप्रभावहै उसके वचन सुनकर तपस्वीने कहा कि यहविद्या बडी असाध्यहै इसका साधन जलके भीतरहोताहै वहा यहविद्या जापकपर ऐसीमाया करतीहै जिससे वह सिद्धनहींहोता उसे यहमालूमहोताहै कि मेरा फिर जन्महुआ मैं फिर युवाहुआहू मेरा विवाहहुआहै मेरे स्त्री पुरुष तथा मित्रहै इस मिथ्या मोहसे वह अपने पहले जन्मको तथा विद्याके साधनको भूलजाताहै जो अपने गुरुकी विद्याके प्रभाव से उसमाया को जानकर उसी जन्ममें मायाकी अग्निमे प्रवेश करताहै उसी धीरको यह विद्या सिद्धहोती है और जो यह विद्या शिष्यको नहीं सिद्धहोती है तो गुरुको भी भूलजाती है इससे तुम इसविद्याको न सीखो ऐसानहोय कि तुमभी सिद्धनहो और मेरीभी विद्या नष्टहोजाय जिससे तुम्हारा यहसुखभी जातारहै तपस्वी के इसप्रकार कहनेपर भी चन्द्रस्वामी ने बडा आग्रहकरके कहा मैं सब कर लूगा आप सन्देह न कीजिये उसके यहवचनसुनके दयालु तपस्वीने उसे एक नदीके तटपर लेजाकर

आचमन कराके विद्याका उपदेश करदिया और कहा कि हे पुत्र जब इस विद्याका जपकरते २ माया से मोहितहोगे तो मेरी विद्याके प्रभावसे उस मायाको जानकर मायाकीही अग्निमें तुम प्रवेश करना और मैं तुम्हारे लिये इसी नदी के तटपर बैठारहूंगा तपस्वीके यह वचन सुनके चन्द्रस्वामी नदी में जाकर जलके भीतर उस विद्याका जपकरनेलगा उससमय मायासे मोहितहोके उसे यह मालूमहुआ कि मैं अन्य किसीपुरमें ब्राह्मणके यहां उत्पन्नहोकर धीरे २ सम्पूर्ण विद्याओंको पढके युवाहुआहूं और किसी ब्राह्मणी स्त्री से मेरा विवाहहोकर मेरे बहुतसे पुत्रहुएहैं उन पुत्रों के स्नेहसे वहगृहस्थी के कार्य्य करनेलगा और अपने माता पिताका सेवनकरनेलगा इसप्रकारसे उसे मिथ्या जन्मका अनुभव करते जानकर तपस्वी ने प्रबोधिनी विद्याका प्रयोगकिया उस विद्याके प्रभावसे वह मोहरहितहोके मायाको जानकर अग्निमें भस्महोनेको उद्यतहुआ यह जानकर उसके मिथ्या माता पिता तथा स्त्री पुत्रादिक उसे निषेध करनेलगे उनके निषेधको न मानकर वह नदीके तटपर भस्महोने को आया वहां वृद्ध माता पिता रोते और स्त्रीको सती होनेको उद्यत तथा बालकों को रोते देखकर उसने मोहित होके शोचा कि देखो मेरे मरनेसे यह सब कुटुम्बीभी मरेजाते हैं और न जाने गुरुके वचन सत्यहैं या मिथ्याहैं इस से अग्निमें प्रवेशकरूं या न करूं अथवा गुरुके वचन मिथ्या नहीं होसक्ते इससे अग्नि में अवश्य प्रवेश करना चाहिये यह शोचकर उसने अग्निमें प्रवेशकिया और उसे वह अग्नि शीतल मालूमहुई इतनेमें सब माया नष्ट होगई और उसने नदीके भीतरसे निकलकर किनारेपर बैठेहुए गुरुतपस्वीको प्रणामकर के अपना सबवृत्तान्त कहा उसवृत्तान्तको सुनकर तपस्वी ने उससे कहा कि मैं जानताहूं कि तुमसे कुछ बननहीं पडा नहीं तो अग्नि शीतल कैसे होगई इसविद्याके साधनमें कभीअग्नि शीतल नहीं होती तपस्वीके यह वचनसुनके चन्द्रस्वामी ने कहा कि हे भगवन् मैंने अपनी जानमें कोईभी दोष नहीं किया तब तपस्वीने दोषके जानने के लिये उस विद्याका स्मरणकिया परन्तु वह विद्यास्मरण नहीं आई और चन्द्रस्वामी को भी भूलगई इससे वह दोनों बहुतखिन्न होकर चलेगये इस कथाको कहकर उस बेताल ने राजासे कहा कि हे राजा यथावतसाधन करनेपर भी उन दोनों की विद्या किस दोषसे नष्टहोगई बे तालके यहवचनसुनके राजानेकहा कि हेयोगेश्वर यद्यपि मैं जानताहूं कि तुम मेरे समयको व्यर्थ नष्ट करतेहो तथापि मैं कहताहूं सुनो जबतक मनुष्यका चित्त विकल्परहितहोकर निर्मल नहींहोताहै तबतक उसेदुष्कर शुद्धकर्मसेभी सिद्धि नहीं प्राप्त होतीहै चन्द्रस्वामी के चित्तमें मोहरहित होकरभी विकल्प आ गयाथा इसीसे उसे वह विद्या नहीं प्राप्तहुई और कुपात्रमें देनेसे उसतपस्वीकीभी विद्यानष्टहोगई राजाके यह वचनसुनके बेताल फिर अपनेस्थानको चलागया और राजाभी उसके लेनेको फिरचला ८७ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेपञ्चविंशस्तरङ्गः २५ ॥

इसके उपरान्त फिर राजाविक्रमसेन शीशमके वृक्षकेपास जाके बेतालको उतार कन्धेपर रखकर लेचला मार्गमें फिर बेतालने कहा कि हेराजा एकमनोहर कथा मैं तुमको सुनाताहूं कि स्वर्गके समान बहुत रत्नोंवाले नाम नगरमें इन्द्र के समान प्रतापी सूर्य्यप्रभनाम राजाथा उसराजाको सर्वगुणसे पन्न

ने कहा कि यह मरनाही चाहताहै तो इसी स्थानमे इसे छोडदो पचसे कहदेगे कि हम उसे कुएमें डाल आये उसके वचनमानके वहसव उसे वहीं छोडकर अपने२स्थानोंको चलेगये उनलोगोंके चलेजानेपर चन्द्रस्वामी उठकर एकशून्य शिवालयमे चलागया और वहापर सावधान होकर शोचनेलगा कि मैं इसदशामें कहाजाऊ मुझे नग्न देखके मेरे माता पिता भाई आदि सव क्याकहेंगे इससमय तो मैं नग्न होने के कारण वाहर कैसे निकलू और रात्रिकेसमय भोजनकहासे ढूढू उसके इसप्रकार शोचतेही शोचते वहदिन व्यतीतहोगया रात्रिकेसमय त्रिशूललियेहुए एकजटाधारी तपस्वी वहाआये और चन्द्रस्वामीको देखके उससे सबवृत्तान्त पूछके वोले कि तुम मेरे आश्रममे आयेहुए अतिथि हो इससे उठो स्नान करके जो कुछ मैं भिक्षामागलायाहू उसे भोजनकरो यह सुनकर चन्द्रस्वामीनेकहा कि हे तपस्वीजी मैं ब्राह्मणहू इससे आपकीभिक्षामेसे लेकर भोजननहीं करसक्ताहू उसके यहवचनसुनके उसतपस्वीने अपनी कुटी मे जाकर इष्टसपादिनी विद्याका स्मरणकिया स्मरण करतेही उसविद्याने आकर कहा कि क्या आज्ञाहै उसने कहा कि इस अतिथिका सत्कारकरो उसके इसप्रकार कहतेही एकवडा सुवर्ण का पुर चन्द्रस्वामीको दिखाई दिया उसपुरमे से कुछ स्त्रियोंने आकर उससेकहा कि चलो स्नानकरो और भोजनकरो यह कहके वहस्त्रिया उसे एकमदिरमें लेजाके स्नान करवाके तथा उत्तम वस्त्र पहनाके एक दूसरे मदिरमें लेगईं वहा एक अत्यन्त रूपवती स्त्रीने अपने आसनसे उठकर उसे अपनेपास बैठाया और अपनेहीसाथ भोजन करवाके पलगपर लेटाके उसकेसाथ सभोगभी किया इसप्रकार सुख भोगके सोयेहुए चन्द्रस्वामीने प्रात काल उठकर वही सूना शिवालय देखा तव तपस्वीने उससे पूछा कि तुम रात्रिभर सुखसेरहे उसनेकहा कि हा मैं आपकी कृपासे वडे सुखसेरहा परन्तु अब उस दिव्यस्त्रीके विना मेरेप्राण नहीं वचेंगे यह सुनकर तपस्वीने हसकर कहा कि अच्छा यहींरहो रात्रिमें वही सुख तुमको फिर मिलेगा तपस्वी के यहवचन सुनकर चन्द्रस्वामी वहींरहकर रात्रिकेसमय दिव्य सुख भोगनेलगा कुछ दिन वहा रहके यह जानके कि यह विद्याका प्रभावहै एकदिन उस तपस्वी से चन्द्रस्वामीने कहा कि हे भगवन् जो आप सत्य २ मुझदीनपर कृपाकरतेहो तो यह विद्या मुझे दो जिसका कि ऐसा अद्भुतप्रभावहै उसके वचन सुनकर तपस्वीने कहा कि यहविद्या वडी असाध्यहै इसका साधन जलके भीतरहोताहै वहा यहविद्या जापकपर ऐसीमाया करतीहै जिससे वह सिद्धनहींहोता उसे यहमालूमहोताहै कि मेरा फिर जन्महुआ मैं फिर युवाहुआहू मेरा विवाहहुआहै मेरे स्त्री पुरुष तथा मित्रहैं इस मिथ्या मोहसे वह अपने पहले जन्मको तथा विद्याके साधनको भूलजाताहै जो अपने गुरूकी विद्याके प्रभाव से उसमाया को जानकर उसी जन्ममे मायाकी अग्निमे प्रवेश करता है उसी धीरको यह विद्या सिद्धहोती है और जो यह विद्या शिष्यको नहीं सिद्धहोती है तो गुरूको भी भूलजाती है इससे तुम इसविद्याको न सीखो ऐसानहोय कि तुमभी सिद्धनहो और मेरीभी विद्या नष्टहोजाय जिससे तुम्हारा यहसुखभी जातारहै तपस्वी के इसप्रकार कहनेपर भी चन्द्रस्वामी ने वडा आग्रहकरके कहा मैं सब करलूगा आप सन्देह न कीजिये उसके यहवचनसुनके दयालु तपस्वीने उसे एक नदीके तटपर लेजाकर

वह उसका कहना कहदिया चेरी के वचन सुनके हिरण्यवती ने उसी चेरी के हाथ उसके पास पांचसौ अशर्फी भेजदीं उन अशर्फियोंको लेकर उसब्राह्मणने आकर धनवतीको देखके अत्यन्त प्रसन्नहोकर धनवती के साथ सम्भोगकरके वह रात्रि व्यतीतकी इसी से धनवती गर्भवती होगई समयपाकर राज्य लक्षणों से युक्त एक पुत्रहुआ उस पुत्रको देखके प्रसन्नहुई धनवती तथा हिरण्यवतीको रात्रिके समय स्वप्नमें श्री शिवजी ने दर्शन देकर कहा कि प्रातःकाल इस बालकको हजार अशर्फियों समेत राजा सूर्य्यप्रभके द्वारपर रखआओ इससे इसबालकका बड़ा कल्याणहोगा इस स्वप्नको देखके उन दोनो मा बेटियों ने परस्पर कहके प्रातःकाल उस बालकको हजार अशर्फियों समेत लेजाके राजा सूर्य्यप्रभ के द्वारपर रखदिया और अपने घरमें आके श्री शिवजीकी आज्ञाको यथार्थ मानकर अपने चित्तमें सन्तोषकिया उसी रात्रिको राजा सूर्य्यप्रभसे भी स्वप्नमें श्री शिवजी ने कहा कि हे राजा उठो तुम्हारे द्वार पर कोई हजार अशर्फियों समेत बालकको रखगयाहै उसे तुमलेलो स्वप्नमें श्री शिवजीकी यह आज्ञा पाके राजाने प्रातःकाल उठकर द्वारपरसे अशर्फियों समेत उस बालकको लाकर बड़ा उत्सव किया और बारहवें दिन उसका चन्द्रप्रभ नाम रक्खा वह चन्द्रप्रभ धीरे २ सम्पूर्ण विद्याओंको सीखकर युवा हुआ उसे युवा देखके राजा सूर्य्यप्रभ उसका विवाहकरके उसे राज्यदेके काशीजी में जाके तपकरके परलोकको गया ६२ पिताका मरण सुनकर चन्द्रप्रभने बड़ाशोककरके उसकी क्रियासे निवृत्तहोके अपने मन्त्रियों से कहा कि यद्यपि मैं अपने तातसे अनृण नहीं होसक्ताहूं तथापि मैं उनकेहाड़लेकर विधिपूर्वक श्री गंगाजी में फेंकूंगा और गयाजी में जाकर सम्पूर्ण पितरोंको पिण्डदूंगा और इसी प्रसंग से पूर्व समुद्र पर्य्यन्त तीर्थयात्रा भी करूंगा उसके यहवचनसुनके मन्त्रियोंने कहा कि हे स्वामी आपको तीर्थयात्रा करना उचितनहीं है क्योंकिक्षणभरमेंही राजाके विनाराज्यमें बड़ाअंतरपड़जाताहै प्रजाओंकी रक्षाकरनाही आपकी तीर्थ यात्राहै इससे आप ब्राह्मण द्वाराही यहसब कार्य्य करवादीजिये मन्त्रियोंके वचन सुनकर राजाने कहा कि मैं अपने पिताके निमित्त अवश्य गया करूंगा और तीर्थ यात्राभी अवश्य करूंगा पीछे कोई जानता है कि क्याहोगा इसक्षण भंगुर शरीरका क्या विश्वास है इससे मैं अवश्य जाऊंगा तुम लोग हमारे राज्यकी रक्षाकरना राजाके यहवचन सुनके मंत्री चुपहोगये और राजा शुभमुहूर्त्त देखकर अनेक ब्राह्मण, सेवक तथा अपने पुरोहित समेत चला क्रमसे श्रीगंगाजी के तटपर पहुँचकर वहां राजा सूर्य्यप्रभके हाड़ोंको पधराके और श्राद्धकरके प्रयागको चला क्रमसे प्रयाग जीमें पहुँचकर वहाभी श्राद्ध तथा अनेकदान करके काशीजीको गया वहाभी तीनदिन रहके श्राद्ध करके वहांसे चलकर अनेकप्रकारके देश नदी वन तथा पर्व्वतोंको देखताहुआ गयाजीमें पहुँचा वहां गयाशिर में विधिपूर्वक श्राद्धकरके बहुतसी दक्षिणा देके गयाकूप में जाके जैसेही वह अपने पिता के नामसे पिण्डदेनेलगा वैसेही उसमेंसे तीन हाथ निकले उनहाथों को देखकर राजा चन्द्रप्रभने भ्रम युक्तहोकर ब्राह्मणोंसे कहा कि मैं किस हाथमें पिण्डदूं ब्राह्मणोंने कहा कि इनमेंसे एकहाथ तो चोरका है जिसमें लोहेका दण्ड है दूसरा हाथ ब्राह्मणका है जिसमें पवित्रा है और तीसरा राजा का है जिसमें

एक यही दुखथा कि उसके सन्तान नहींथी उन्हीं दिनोंमें ताम्रलिप्तीनाम पुरी में धर्मपालनाम एकमहा धनवान् वैश्यथा उसवैश्य के धनवतीनाम एक बडीसुन्दर कन्याथी जब धनवती तरुणहुई तो धर्मपाल मरगया इससे उसका सबधन उसके भाइयोंने लेलिया तब उसकी हिरण्यवती नाम स्त्री अपनी धनवतीकन्याको साथलेकर रत्नजटित आभूपणोंको छिपाक बाधकर रात्रिके समय अन्धकार में पुरके बाहर चलीगई वहाअन्धकारमे भाग्यवशसे शूलीपर चढेहुए एकचोरके उसका धक्कालगगया इससे जीताहुआ वहचोर बोला किहायकटेपर यह निमक किसने छोडा उसके यह वचनसुनकर हिरण्यवती ने पूछा कि तुमकौनहो उसने कहा किमै चोरहू शूलीपरभी मुझपापीके प्राण नहीं निकले आतेहैं हे आर्ये तुम कौनहो और इससमय कहाचलीहो यह सुनकर हिरण्यवती ने अपना सब वृत्तान्त उससेकहा इतने में चन्द्रोदयहोने के कारण सम्पूर्ण दिशाओ मे उजयाला फैलगया इससे उस चोरने धनवतीको देखकर हिरण्यवती से कहा कि जो तुम मुझे यह अपनी कन्यादेदो तो मै तुम्हें हजार अशर्फी देदू यह सुनकर हिरण्यवती ने हँसकर कहा कि तुम इसे लेकर क्या करोगे उसने कहा कि सुनो मेरे कोई पुत्र नहीं है और अपुत्रकी परलोकमे गति नहीं होती इससे जो यह कहीं मेरी आज्ञासे किसी के भी योगसे जो पुत्र उत्पन्न करेगी तो वह मेराही क्षेत्रज पुत्रहोगा इसीलिये मै इसे चाहताहू तुम मेरा मनोरथ पूर्णकरो चोरके यह वचन सुनकर हिरण्यवती ने कहीं से जललाके अपनी कन्या उसे सकल्प करदी तब वह चोर प्रसन्नहोकर बोला कि इस वर्गदके नीचे से तुम हजार अशर्फी खोदलो और जब मैं मरजाऊ तो युक्तिपूर्व्वक मेरा दाहकराके मेरी हड्डी किसी तीर्थ मे छोडवाके राजा सूर्य्यप्रभके वक्रोलकनाम नगर में जाके सुखपूर्व्वकरहो यह कहके वहचोर उसी के लायेहुए जलको पीकर मरगया तब हिरण्यवती वर्गद के नीचे से अशर्फी खोदकर अपने पति के एक मित्रके घरमे जाकर उसके द्वारा युक्तिपूर्व्वक उस चोर का दाह तथा उसकी हड्डी किसी तीर्थ में फिकवाके वहा से वक्रोलकनगरको चलीआई और वसुदत्त नाम वैश्य से एक मकान मोललेके अपनी कन्या समेत वहा रही उन दिनों वहा विष्णुस्वामी नाम उपाध्यायका मनस्वामी नाम एक बडा रूपवान् ब्राह्मण शिष्य रहताथा वह विद्वान् होकर भी यौवन के मदसे हंसावली नाम एक वेश्याको चाहताथा वह वेश्या पाच सौ अशर्फी प्रति दिन अपना मूल्य लियाकरती थी उस ब्राह्मणके पास इतना धन न था इसी से वह विकल रहाकरताथा एक समय धनवती ने अपने महलपरसे उस ब्राह्मणको देखा और उसपर आसक्तहोके युक्तिपूर्व्वक अपनी माता से कहा कि हे अम्ब देखो इस युवा ब्राह्मणका कैसा सुन्दर आनन्ददायी रूपहै उसके यह वचन सुनके उसकी माताने उसे उस ब्राह्मणपर अनुरक्त जानके शोचा कि मेरी इसपुत्रीको चोरकी आज्ञासे पुत्रोत्पत्तिकेलिये कोई वर तो अवश्य करनाहीचाहिये इससे इसी युवा ब्राह्मणको बुलाके इसमें पुत्र उत्पन्न कराना चाहिये यह शोचके उसने अपनी एक चेरी के द्वारा उस ब्राह्मणसे अपना मनोरथ कहलवाया चेरी के द्वारा उसकी बात को जानके उस ब्राह्मण ने कहा कि जो हसावली के लिये मुझे पांचसौ अशर्फी दे तो मैं एक दिन उसकी पुत्री सेभी सम्भोग करूगा उसके वचन सुनके चेरी ने जाके उससे

वह उसका कहना कहदिया चेरी के वचन सुनके हिरण्यवती ने उसी चेरी के हाथ उसके पास पांचसौ अशर्फी भेजदीं उन अशर्फियोंको लेकर उसब्राह्मणने आकर धनवतीको देखके अत्यन्त प्रसन्नहोकर धनवती के साथ सम्भोगकरके वह रात्रि व्यतीतकी इसी से धनवती गर्भवती होगई समयपाकर राज्य लक्षणों से युक्त एक पुत्रहुआ उस पुत्रको देखके प्रसन्नहुई धनवती तथा हिरण्यवतीको रात्रिके समय स्वप्नमें श्री शिवजी ने दर्शन देकर कहा कि प्रातःकाल इस बालकको हजार अशर्फियों समेत राजा सूर्य्यप्रभके द्वारपर रखआओ इससे इसबालकका बडा कल्याणहोगा इस स्वप्नको देखके उन दोनों मा बेटियों ने परस्पर कहके प्रातःकाल उस बालकको हजार अशर्फियों समेत लेजाके राजा सूर्य्यप्रभ के द्वारपर रखदिया और अपने घरमें आके श्री शिवजीकी आज्ञाको यथार्थ मानकर अपने चित्तमें सन्तोषकिया उसी रात्रिको राजा सूर्य्यप्रभसे भी स्वप्नमें श्री शिवजी ने कहा कि हे राजा उठो तुम्हारे द्वार पर कोई हजार अशर्फियों समेत बालकको रखगयाहै उसे तुमलेलो स्वप्नमें श्री शिवजीकी यह आज्ञा पाके राजाने प्रातःकाल उठकर द्वारपरसे अशर्फियों समेत उस बालकको लाकर बडा उत्सव किया और बारहवें दिन उसका चन्द्रप्रभ नाम रक्खा वह चन्द्रप्रभ धीरे २ सम्पूर्ण विद्याओंको सीखकर युवा हुआ उसे युवा देखके राजा सूर्य्यप्रभ उसका विवाहकरके उसे राज्यदेके काशीजी में जाके तपकरके परलोकको गया ६२ पिताका मरण सुनकर चन्द्रप्रभने बडाशोककरके उसकी क्रियासे निवृत्तहोके अपने मन्त्रियों से कहा कि यद्यपि मैं अपने तातसे अनृण नहीं होसक्ताहूं तथापि मैं उनकेहाड लेकर विधिपूर्व्वक श्री गंगाजी में फेकूंगा और गयाजी में जाकर सम्पूर्ण पितरोंको पिण्डदूंगा और इसी प्रसंग से पूर्व्व समुद्र पर्य्यन्त तीर्थयात्रा भी करूंगा उसके यहवचनसुनके मन्त्रियोंने कहा कि हे स्वामी आपको तीर्थयात्रा करना उचितनहीं है क्योंकिक्षणभरमेंही राजाके विनाराज्यमें बडाअंतरपडजाताहै प्रजाओंकी रक्षाकरनाही आपकी तीर्थ यात्राहै इससे आप ब्राह्मण द्वाराही यहसब कार्य्य करवादीजिये मन्त्रियोंके वचन सुनकर राजाने कहा कि मैं अपने पिताके निमित्त अवश्य गया करूंगा और तीर्थ यात्राभी अवश्य करूंगा पीछे कोई जानता है कि क्याहोगा इसक्षण भंगुर शरीरका क्या विश्वास है इससे मैं अवश्य जाऊंगा तुम लोग हमारे राज्यकी रक्षाकरना राजाके यहवचन सुनके मंत्री चुपहोगये और राजा शुभमुहूर्त्त देखकर अनेक ब्राह्मण, सेवक तथा अपने पुरोहित समेत चला क्रमसे श्रीगंगाजी के तटपर पहुँचकर वहां राजा सूर्य्यप्रभके हाडोंको पधराके और श्राद्धकरके प्रयागको चला क्रमसे प्रयाग जीमें पहुँचकर वहांभी श्राद्ध तथा अनेकदान करके काशीजीको गया वहांभी तीनदिन रहके श्राद्ध करके वहांसे चलकर अनेकप्रकारके देश नदी वन तथा पर्व्वतोंको देखताहुआ गयाजीमें पहुँचा वहां गयाशिर में विधिपूर्व्वक श्राद्धकरके बहुतसी दक्षिणा देके गयाकूप में जाके जैसेही वह अपने पिता के नामसे पिण्डदेनेलगा वैसेही उसमेंसे तीन हाथ निकले उनहाथों को देखकर राजा चन्द्रप्रभने भ्रम युक्तहोकर ब्राह्मणोंसे कहा कि मैं किस हाथमें पिण्डदूं ब्राह्मणोंने कहा कि इनमेंसे एकहाथ तो चोरका है जिसमें लोहेका दण्ड है दूसरा हाथ ब्राह्मणका है जिसमें पवित्रा है और तीसरा राजा का है जिसमें

एक यही दुखथा कि उसके सन्तान नहींथी उन्हीं दिनोंमें ताम्रलिप्तीनाम पुरी में धर्मपालनाम एकमहा धनवान् वैश्यथा उसवैश्यके धनवतीनाम एक बडीसुन्दर कन्याथी जब धनवती तरुणहुई तो धर्मपाल मरगया इससे उसका सवधन उसके भाइयोंने लेलिया तब उसकी हिरण्यवती नाम स्त्री अपनी धनव तीकन्याको साथलेकर रत्नजटित आभूषणोंको छिपाके वाधकर रात्रिके समय अन्धकार में पुरके बाहर चलीगई वहाअन्धकारमे भाग्यवशसे शूलीपर चढेहुए एकचोरके उसका धकालगगया इससे जीताहु- आ वहचोर बोला किहायकटेपर यह निमक किसने छोडा उसके यह वचनसुनकर हिरण्यवती ने पूछा कि तुमकौनहो उसने कहा किमै चोरहू शूलीपरभी मुझपापीके प्राण नहीं निकले आतेहै हे आर्ये तुम कौनहो और इससमय कहाचलीहो यह सुनकर हिरण्यवती ने अपना सब वृत्तान्त उससेकहा इतने मे चन्द्रोदयहोने के कारण सम्पूर्ण दिशाओं मे उजयाला फैलगया इससे उस चोरने धनवतीको देखकर हिरण्यवती से कहा कि जो तुम मुझे यह अपनी कन्यादेदो तो मै तुम्हें हजार अशर्फी देदू यह सुन कर हिरण्यवती ने हँसकर कहा कि तुम इसे लेकर क्या करोगे उसने कहा कि सुनो मेरे कोई पुत्र नहीं है और अपुत्रकी परलोकमे गति नही होती इससे जो यह कही मेरी आज्ञासे किसी के भी योगसे जो पुत्र उत्पन्न करेगी तो वह मेराही क्षेत्रज पुत्रहोगा इसीलिये मैं इसे चाहताहू तुम मेरा मनोरथ पूर्णकरो चोरके यह वचन सुनकर हिरण्यवती ने कही से जललाके अपनी कन्या उसे सकल्प करदी तब वह चोर प्रसन्नहोकर बोला कि इस वर्गदके नीचे से तुम हजार अशर्फी खोदलो और जब मैं मरजाऊ तो युक्तिपूर्व्वक मेरा दाहकराके मेरी हड्डी किसी तीर्थ मे छोडवाके राजा सूर्य्यप्रभके वक्रोलकनाम नगर मे जाके सुखपूर्व्वकरहो यह कहके वहचोर उसी के लायेहुए जलको पीकर मरगया तब हिरण्यवती वर्गद के नीचे से अशर्फी खोदकर अपने पति के एक मित्रके घरमे जाकर उसके द्वारा युक्तिपूर्व्वक उस चोर का दाह तथा उसकी हड्डी किसी तीर्थ में फिकवाके वहा से वक्रोलकनगरको चलीआई और वसुदत्त नाम वैश्य से एक मकान मोललेके अपनी कन्या समेत वहा रही उन दिनों वहा विष्णुस्वामी नाम उपाध्यायका मनस्वामी नाम एक वडा रूपवान् ब्राह्मण शिष्य रहताथा वह विद्वान् होकर भी यौवन के मदसे हसावली नाम एक वेश्याको चाहताथा वह वेश्या पाच सौ अशर्फी प्रति दिन अपना मूल्य लियाकरती थी उस ब्राह्मणके पास इतना धन न था इसी से वह विकल रहाकरताथा एक समय धन वती ने अपने महलपरसे उस ब्राह्मणको देखा और उसपर आसक्तहोके युक्तिपूर्व्वक अपनी माता से कहा कि हे अम्ब देखो इस युवा ब्राह्मणका कैसा सुन्दर आनन्ददायी रूपहै उसके यह वचन सुनके उसकी माताने उसे उस ब्राह्मणपर अनुरक्त जानके शोचा कि मेरी इसपुत्रीको चोरकी आज्ञासे पुत्रो- त्पत्तिकेलिये कोई वर तो अवश्य करनाहीचाहिये इससे इसी युवा ब्राह्मणको बुलाके इसमे पुत्र उत्पन्न कराना चाहिये यह शोचके उसने अपनी एक चेरी के द्वारा उस ब्राह्मणसे अपना मनोरथ कहलवाया चेरी के द्वारा उसकी बात को जानके उस ब्राह्मण ने कहा कि जो हसावली के लिये मुझे पांचसौ अशर्फी दे तो मै एक दिन उसकी पुत्री सेभी सम्भोग करूगा उसके वचन सुनके चेरी ने जाके उससे

वह उसका कहना कहदिया चेरी के वचन सुनके हिरण्यवती ने उसी चेरी के हाथ उसके पास पाचसौ अशर्फी भेजदीं उन अशर्फियोंको लेकर उसब्राह्मणने आकर धनवतीको देखके अत्यन्त प्रसन्नहोकर धनवती के साथ सम्भोगकरके वह रात्रि व्यतीतकी इसी से धनवती गर्भवती होगई समयपाकर राज्य लक्षणों से युक्त एक पुत्रहुआ उस पुत्रको देखके प्रसन्नहुई धनवती तथा हिरण्यवतीको रात्रिके समय स्वप्नमें श्री शिवजी ने दर्शन देकर कहा कि प्रातःकाल इस वालकको हजार अशर्फियों समेत राजा सूर्य्यप्रभके द्वारपर रखआओ इससे इसवालकका वडा कल्याणहोगा इस स्वप्नको देखके उन दोनों मा वेटियों ने परस्पर कहके प्रातःकाल उस वालकको हजार अशर्फियों समेत लेजाके राजा सूर्य्यप्रभ के द्वारपर रखदिया और अपने घरमें आके श्री शिवजीकी आज्ञाको यथार्थ मानकर अपने चित्तमें सन्तोषकिया उसी रात्रिको राजा सूर्य्यप्रभसे भी स्वप्नमें श्री शिवजी ने कहा कि हे राजा उठो तुम्हारे द्वार पर कोई हजार अशर्फियों समेत वालकको रखगयाहै उसे तुमलेलो स्वप्नमें श्री शिवजीकी यह आज्ञा पाके राजाने प्रातःकाल उठकर द्वारपरसे अशर्फियों समेत उस वालकको लाकर वडा उत्सव किया और वारहवें दिन उसका चन्द्रप्रभ नाम रक्खा वह चन्द्रप्रभ धीरे २ सम्पूर्ण विद्याओंको सीखकर युवा हुआ उसे युवा देखके राजा सूर्य्यप्रभ उसका विवाहकरके उसे राज्यदेके काशीजी में जाके तपकरके परलोकको गया ६२ पिताका मरण सुनकर चन्द्रप्रभने वडाशोककरके उसकी क्रियासे निवृत्तहोके अपने मन्त्रियों से कहा कि यद्यपि मैं अपने तातसे अनृण नहीं होसक्ताहू तथापि मैं उनकेहाडलेकर विधिपूर्व्वक श्री गगाजी में फेंकूगा और गयाजी में जाकर सम्पूर्ण पितरोंको पिण्डदूगा और इसी प्रसग से पूर्व्व समुद्र पर्य्यन्त तीर्थयात्रा भी करूगा उसके यहवचनसुनके मन्त्रियोंने कहा कि हे स्वामी आपको तीर्थयात्रा करना उचितनहीं है क्योंकिक्षणभरमेंही राजाके विनाराज्यमें वडाअतरपडजाताहै प्रजाओंकी रक्षाकरनाही आपकी तीर्थ यात्राहै इससे आप ब्राह्मण द्वाराही यहसब कार्य्य करवादीजिये मन्त्रियोंके वचन सुनकर राजाने कहा कि मैं अपने पिताके निमित्त अवश्य गया करूगा और तीर्थ यात्राभी अवश्य करूगा पीछे कोई जानता है कि क्याहोगा इसक्षण भगुर शरीरका क्या विश्वास है इससे मैं अवश्य जाऊगा तुम लोग हमारे राज्यकी रक्षाकरना राजाके यहवचन सुनके मत्री चुपहोगये और राजा शुभमुहूर्त्त देखकर अनेक ब्राह्मण, सेवक तथा अपने पुरोहित समेत चला क्रमसे श्रीगगाजी के तटपर पहुँचकरवहा राजा सूर्य्यप्रभके हाडोंको पधराके और श्राद्धकरके प्रयागको चला क्रमसे प्रयाग जीमें पहुँचकर वहाभी श्राद्ध तथा अनेकदान करके काशीजीको गया वहाभी तीनदिन रहके श्राद्ध करके वहासे चलकर अनेकप्रकारके देश नदी वन तथा पर्व्वतोंको देखताहुआ गयाजीमें पहुँचा वहा गयाशिर में विधिपूर्व्वक श्राद्धकरके वहुतसी दक्षिणा देके गयाकूप मे जाके जैसेही वह अपने पिता के नामसे पिण्डदेनेलगा वैसेही उसमेंसे तीन हाथ निकले उनहाथों को देखकर राजा चन्द्रप्रभने प्रसन्नहोकर ब्राह्मणोंसे कहा कि मैं किस हाथमें पिण्डदू ब्राह्मणोंने कहा कि इनमेंसे एकहाथ तो चोरका है जिसमें लोहेका दण्ड है दूसरा हाथ ब्राह्मणका है जिसमें पवित्रा है और तीसरा राजा का है जिसमें

एक यही दुखथा कि उसके सन्तान नहीथी उन्ही दिनोमें ताम्रलिप्तीनाम पुरी में धर्मपालनाम एकमहा धनवान् वैश्यथा उसवैश्यके धनवतीनाम एक बडीसुन्दर कन्याथी जब धनवती तरुणहुई तो धर्मपाल मरगया इससे उसका सबधन उसके भाइयोंने लेलिया तब उसकी हिरण्यवती नाम स्त्री अपनी धनव तीकन्याको साथलेकर रत्नजटित आभूपणोंको छिपाक वाधकर रात्रिके समय अन्धकार में पुरके बाहर चलीगई वहाअन्धकारमे भाग्यवशसे शूलीपर चढेहुए एकचोरके उसका धक्कालगगया इससे जीताहु-आ वहचोर बोला कि हायकटेपर यह निमक किसने छोडा उसके यह वचनसुनकर हिरण्यवती ने पूछा कि तुमकौनहो उसने कहा किमैं चोरहू शूलीपरभी मुझपापीके प्राण नहीं निकले आतेहैं हे आर्ये तुम कौनहो और इससमय कहाचलीहो यह सुनकर हिरण्यवती ने अपना सब वृत्तान्त उससेकहा इतने में चन्द्रोदयहोने के कारण सम्पूर्ण दिशाओ मे उजयाला फैलगया इससे उस चोरने धनवतीको देखकर हिरण्यवती से कहा कि जो तुम मुझे यह अपनी कन्यादेदो तो मै तुम्हें हजार अशर्फी देदू यह सुन कर हिरण्यवती ने हँसकर कहा कि तुम इसे लेकर क्या करोगे उसने कहा कि सुनो मेरे कोई पुत्र नहीं है और अपुत्रकी परलोकमे गति नहीं होती इससे जो यह कहीं मेरी आज्ञासे किसी के भी योगसे जो पुत्र उत्पन्न करेगी तो वह मेराही क्षेत्रज पुत्रहोगा इसीलिये मैं इसे चाहताहू तुम मेरा मनोरथ पूर्णकरो चोरके यह वचन सुनकर हिरण्यवती ने कहीं से जललाके अपनी कन्या उसे सकल्प करदी तब वह चोर प्रसन्नहोकर बोला कि इस वर्गदके नीचे से तुम हजार अशर्फी खोदलो और जब मैं मरजाऊ तो युक्तिपूर्व्वक मेरा दाहकराके मेरी हड्डी किसी तीर्थ में छोडवाके राजा सूर्य्यप्रभके वक्रोलकनाम नगर में जाके सुखपूर्व्वकरहो यह कहके वहचोर उसी के लायेहुए जलको पीकर मरगया तब हिरण्यवती वर्गद के नीचे से अशर्फी खोदकर अपने पति के एक मित्रके घरमे जाकर उसके द्वारा युक्तिपूर्व्वक उस चोर का दाह तथा उसकी हड्डी किसी तीर्थ में फिकवाके वहा से वक्रोलकनगरको चलीआई और वसुदत्त नाम वैश्य से एक मकान मोललेके अपनी कन्या समेत वहा रही उन दिनों वहा विष्णुस्वामी नाम उपाध्यायका मनस्वामी नाम एक बडा रूपवान् ब्राह्मण शिष्य रहताथा वह विद्वान् होकर भी यौवन के मदसे हंसावली नाम एकवेश्याको चाहताथा वह वेश्या पाच सौ अशर्फी प्रति दिन अपना मूल्य लियाकरती थी उस ब्राह्मणके पास इतना धन न था इसीसे वह विकल रहाकरताथा एक समय धन वती ने अपने महलपरसे उस ब्राह्मणको देखा और उसपर आसक्तहोके युक्तिपूर्व्वक अपनी माता से कहा कि हे अम्ब देखो इस युवा ब्राह्मणका कैसा सुन्दर आनन्ददायी रूपहै उसके यह वचन सुनके उसकी माताने उसे उस ब्राह्मणपर अनुरक्त जानके शोचा कि मेरी इसपुत्रीको चोरकी आज्ञासे पुत्रो-त्पत्तिकेलिये कोई वर तो अवश्य करनाहीचाहिये इससे इसी युवा ब्राह्मणको बुलाके इसमें पुत्र उत्पन्न कराना चाहिये यह शोचके उसने अपनी एक चेरी के द्वारा उस ब्राह्मणसे अपना मनोरथ कहलवाया चेरी के द्वारा उसकी बात को जानके उस ब्राह्मण ने कहा कि जो हसावली के लिये मुझे पांचसौ अशर्फी दे तो मैं एक दिन उसकी पुत्री सेभी सम्भोग करूगा उसके वचन सुनके चेरी ने जाके उससे

वह उसका कहना कहदिया चेरी के वचन सुनके हिरण्यवती ने उसी चेरी के हाथ उसके पास पांचसौ अशर्फी भेजदीं उन अशर्फियोंको लेकर उसब्राह्मणने आकर धनवतीको देखके अत्यन्त प्रसन्नहोकर धनवती के साथ सम्भोगकरके वह रात्रि व्यतीतकी इसी से धनवती गर्भवती होगई समयपाकर राज्य लक्षणों से युक्त एक पुत्रहुआ उस पुत्रको देखके प्रसन्नहुई धनवती तथा हिरण्यवतीको रात्रिके समय स्वप्नमें श्री शिवजी ने दर्शन देकर कहा कि प्रातःकाल इस बालकको हजार अशर्फियों समेत राजा सूर्य्यप्रभके द्वारपर रखआओ इससे इसबालकका बडा कल्याणहोगा इस स्वप्नको देखके उन दोनो मा बेटियों ने परस्पर कहके प्रातःकाल उस बालकको हजार अशर्फियों समेत लेजाके राजा सूर्य्यप्रभ के द्वारपर रखदिया और अपने घरमें आके श्री शिवजीकी आज्ञाको यथार्थ मानकर अपने चित्तमें सन्तोषकिया उसी रात्रिको राजा सूर्य्यप्रभसे भी स्वप्नमें श्री शिवजी ने कहा कि हे राजा उठो तुम्हारे द्वार पर कोई हजार अशर्फियों समेत बालकको रखगयाहै उसे तुमलेलो स्वप्नमें श्री शिवजीकी यह आज्ञा पाके राजाने प्रातःकाल उठकर द्वारपरसे अशर्फियों समेत उस बालकको लाकर बडा उत्सव किया और बारहवें दिन उसका चन्द्रप्रभ नाम रक्खा वह चन्द्रप्रभ धीरे २ सम्पूर्ण विद्याओंको सीखकर युवा हुआ उसे युवा देखके राजा सूर्य्यप्रभ उसका विवाहकरके उसे राज्यदेके काशीजी में जाके तपकरके परलोकको गया ६२ पिताका मरण सुनकर चन्द्रप्रभने बडाशोककरके उसकी क्रियासे निवृत्तहोके अपने मन्त्रियों से कहा कि यद्यपि मैं अपने तातसे अनृण नहीं होसक्ताहूं तथापि मैं उनकेहाडलेकर विधिपूर्व्वक श्री गंगाजी में फेंकूंगा और गयाजी में जाकर सम्पूर्ण पितरोंको पिण्डदूंगा और इसी प्रसंग से पूर्व्व समुद्र पर्य्यन्त तीर्थयात्रा भी करूंगा उसके यहवचनसुनके मन्त्रियोंने कहा कि हे स्वामी आपको तीर्थयात्रा करना उचितनहीं है क्योंकिक्षणभरमेंही राजाके विनाराज्यमें बडाअंतरपडजाताहै प्रजाओंकी रक्षाकरनाही आपकी तीर्थ यात्राहै इससे आप ब्राह्मण द्वाराही यहसब कार्य्य करवादीजिये मन्त्रियोंके वचन सुनकर राजाने कहा कि मैं अपने पिताके निमित्त अवश्य गया करूंगा और तीर्थ यात्राभी अवश्य करूंगा पीछे कोई जानता है कि क्याहोगा इसक्षण भंगुर शरीरका क्या विश्वास है इससे मैं अवश्य जाऊंगा तुम लोग हमारे राज्यकी रक्षाकरना राजाके यहवचन सुनके मंत्री चुपहोगये और राजा शुभमुहूर्त्त देखकर अनेक ब्राह्मण, सेवक तथा अपने पुरोहित समेत चला क्रमसे श्रीगंगाजी के तटपर पहुँचकर वहां राजा सूर्य्यप्रभके हाडोंको पधराके और श्राद्धकरके प्रयागको चला क्रमसे प्रयाग जीमें पहुँचकर वहांभी श्राद्ध तथा अनेकदान करके काशीजीको गया वहांभी तीनदिन रहके श्राद्ध करके वहांसे चलकर अनेकप्रकारके देश नदी वन तथा पर्व्वतोंको देखताहुआ गयाजीमें पहुँचा वहां गयाशिर में विधिपूर्व्वक श्राद्धकरके बहुतसी दक्षिणा देके गयाकूप में जाके जैसेही वह अपने पिता के नाममें पिण्डदेनेलगा वैसेही उसमेंसे तीन हाथ निकले उनहाथों को देखकर राजा चन्द्रप्रभने भ्रम युक्तहोकर ब्राह्मणोंसे कहा कि मैं किस हाथमें पिण्डदूं ब्राह्मणोंने कहा कि इनमेंसे एकहाथ तो चोरका है जिसमें लोहेका दण्ड है दूसरा हाथ ब्राह्मणका है जिसमें पवित्रा है और तीसरा राजा का है जिसमें

सुन्दर चिह्न तथा उँगली में अंगूठी है इससे हमलोग नहीं जानसक्ते कि इनमेंसे किसको पिण्ड देना चाहिये उनब्राह्मणों के वचन सुनके राजा कुछभी निश्चय नहीं करसका इतनी कथा कहके वेतालने राजासे पूछा कि हे राजा तुम बतलाओ कि वह पिण्डा किसके हाथमें देनाचाहिये था जानकरभी जो उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फटजायगा वेतालके वचन सुनके राजाने मौन छोड़कर कहा कि चोर के हाथमें पिण्डा देना उचितथा क्योंकि राजा चन्द्रप्रभ उसीका क्षेत्रजपुत्रथा यद्यपि उसब्राह्मणने उसे उत्पन्न कियाथा तथापि वह उसका पिता नहींहोसक्ता है क्योंकि ब्राह्मणने केवल एकही रात्रिके निमित्त अपना शरीर बेचडालाथा और राजा सूर्य्यप्रभ भी पालन तथा लाडकरनेसे उसका पिता नहींहोसक्ता क्योंकि शिवजीकी आज्ञासे उसकी माताने उसके पालनके निमित्त हजार अशर्फी उसके पास रख दीथीं इससे जिसे उसकी माता संकल्पकरके दी गईथी जिसकी आज्ञा से उसे उत्पन्न कियाथा और जिसका वह धनथा उसीका वहचन्द्रप्रभ राजा क्षेत्रजपुत्रहुआ इससे उसी के हाथमें पिण्डदेना उचितथा राजाके यहवचन सुनकर वेताल फिर उसी वृक्षपर चलागया और राजा भी फिर उसके लाने में उद्युक्त हुआ १०२॥ इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशांकवतीलम्बकेषड्विंशस्तरंग २६॥

इसके उपरान्त फिर राजा त्रिविक्रमसेन उसशीशमके वृक्षपरसे वेतालको लेके कन्धेपर रखकर ले चला मार्ग में वेतालने कहा कि हे राजा तुम यह क्यों आग्रहकरतेहो अपने घरजाओ रात्रिका सुख भोगो उसदुष्ट भिक्षुकके पास तुम मुझे न लेचलो जो तुमको बड़ा आग्रहहै तो मेरी यहकथा सुनो त्रिकूटनाम नगरमें चन्द्रावलोकनाम बड़ा शूर और धर्म्मात्मा एकराजाथा उसकेसम्पूर्ण सम्पत्तियोंके होने परभी एक यही चिन्ताथी कि उसके योग्य कोई स्त्री न थी एकसमय वह राजा अपनी सेना समेत घोड़े पर चढ़के शिकार खेलनेको वनमें गया वहां बहुतसे शूकर सिंह तथा मृगोंको मारताहुआ अकेलाही घोड़ेको दौड़ाकर दशयोजन पृथ्वी निकलगया वहां श्रमसे घोड़े के ठहरजानेपर राजाने दिग्मोह में प्राप्तहोकर एक तालाब निकटदेखा वायुके द्वारा हिलतेहुए कमलरूपी हाथोंसे वह तड़ाग मानों अपने पास उसे बुलारहाथा उसतड़ागके तटपर आके राजाने घोड़ेकी काठी खोलकर उसे घास और जलसे तृप्तकरके वृक्षकी जड़से बांधदिया और आपभी उसी तालाबमें स्नानकरके और वनके परार्थी वृक्षों से फल तोड़के खाके जल पिया इसप्रकार सावधानहोकर राजाने उसी तालाबपर घूमते २ एक अशोक वृक्षके नीचे सखी सहित एकतपस्विनी कन्यादेखी उसे देखकर कामके वशीभूतहोकर राजाने सोचा कि क्या यहसाक्षात् सावित्रीही यहां स्नानकरनेको आई है या श्री शिवजीसे वियुक्तहोकर श्रीपार्वती जीही फिर तपकररही हैं अथवा दिनमें अस्तहुए चन्द्रमाकी कान्तिहै अच्छा इसके पास चलके सखी से पूछूं कि यह कौनहै यह सोचकर राजा उसके पासगया वहांवह कन्याभी उसेदेखकर उसपर आसक्त होके सोचनेलगी कि इसवनमें ऐसा रूपवान् मनुष्य कहांसे आया यह कोई सिद्धहै अथवा विद्याधर रूप जगतभरके नेत्रोंको आनन्द देनेवालाहै यह सोचके वह लज्जापूर्वक उसे तिरछी दृष्टि [illegible] देखकर राजाने उससे कहा कि हे सुन्दरी पहलेहीपहल बहुत दूरसे आये हुए

अतिथिका सत्कार तो दूररहा क्या यह भी तपस्वियों का धर्म्म है कि उसके पाससे भागजाना राजाके यह वचन सुनकर उसकी चतुर सखी ने उसे वहीं बैठालकर राजाका अतिथि सत्कार किया तब राजा ने सखी से पूछा कि किस पुण्यवान् वंश मे तुम्हारी सखीका जन्महुआ है कानों को अमृतके समान आनन्द देनेवाला इसका क्या नामहै पुष्पके समान अपने सुकुमार शरीरको यह क्यों तपसे क्लेशित करती है राजाके यह वचन सुनके उसकी सखी ने कहा कि यह मेनिका नाम अप्सराकी इन्दीवरप्रभा नाम पुत्री है महर्षि कण्व ने इसे अपने आश्रममें पालाहै उन्हींकी आज्ञा से यह यहाँ तडाग मे स्नान करने को आई है यहाँ से कुछेकही दूरपर उनका आश्रम है उसके यह वचन सुनके राजा प्रसन्न होके घोडेपर चढके कण्व महर्षि के आश्रमपर गया और आश्रम के बाहर घोडा बाँधकर आश्रम के भीतर जाके अनेक मुनियों के मध्य में बैठे हुए कण्व मुनिको प्रणाम करके बैठा महर्षि कण्व ने उसका अतिथि सत्कार करके कहा कि हे वत्स चन्द्रावलोक मैं तुमसे कुछ हितकारी वचन कहताहूं उसे सुनों यह तो तुमजानतेही हो कि इस संसारमें प्राणियोंको मृत्युमे कैसा भयहै तो फिर तुम निष्कारण इन दीनपशुओं को क्यों मारतेहो परमेश्वर ने क्षत्रियों को भीतोंकी रक्षाके ही निमित्त शस्त्र दियाहै इससे धर्म्मपूर्व्वक प्रजाओं का पालन करो हाथी घोडे आदि वाहनोंपर चढके शस्त्र अस्त्र आदिकों का अभ्यास करो राज्यका सुख भोगो दीन और ब्राह्मणों को धन दो दिशाओं में अपना यश फैलाओ यमराज की क्रीडा के समान इस शिकार को त्यागो इसमे बडे अनर्थ हैं क्या तुमने राजा पाण्डु का वृत्तान्त नहीं सुनाहै कण्वमुनिके यह वचनसुनकर राजा चन्द्रावलोक नम्रतापूर्व्वक बोला कि हे भगवन् आपने कृपा करके मुझे बड़ी उत्तम शिक्षादी है आज से मैंने शिकार का खेलना त्याग दिया सम्पूर्ण पशुपक्षी निर्भय होकररहें उसके यह वचनसुनके महर्षि कण्वमुनिने कहा कि हे राजा तुम्हारी इस प्रतिज्ञासे मैं बहुत प्रसन्नहुआ अब तुम अपनी इच्छाके समान वरमांगो मुनि के यह वचनसुनके राजाने कहा कि हे भगवन् जो आप मुझसे प्रसन्नहैं तो यह इन्दीवरप्रभा कन्या मुझे दीजिये राजा के यह वचनसुनके कण्वमुनि ने इन्दीवर प्रभाका विवाह राजाके साथ करदिया तब मुनिकी आज्ञा से इन्दीवरप्रभा को घोडेपर बैठाके और आपभी चढ़के राजा चन्द्रावलोक वहां से चला चलते २ वनमें ही उसे सायंकाल होगया मानो उसके सम्पूर्ण कार्य्योंको देखके सूर्य्य भगवान् श्रमितहोकर अस्ताचलपर बैठगये और रात्रिहोगई उससमय एक बावडी के तटपर एक घना बरगदका वृक्ष देखकर राजा ने वहीं रात्रि व्यतीत करनेका विचारकर घोडेपरसे उतरकर घोडेको घासडाल तथा जलपिलाके आप भी कुछ जलपान करके उसी वृक्षके नीचे पुष्पोंको बिछाके अपनी प्रिया समेत लेटा उससमय अपनी किरणों से अन्धकाररूपी वस्त्रको हटाकर पूर्व्व दिशारूपी स्त्रीके मुखको चुम्बन करताहुआ चन्द्रमा उदित हुआ उसकी किरणों से सम्पूर्ण दिशा प्रकाशित होगई और उस वृक्षके नीचे भी कुछ २ उजयाला आगया तब राजा चन्द्रावलोकने भी अपनी प्रिया इन्दीवर प्रभाके साथ भोग विलास किया उस सुखमे क्षणके समान रात्रिको व्यतीत करके उसी बावडी मे स्नान पूर्व्वक सन्ध्या वन्दनादि करके राजा अपनी प्रिया

सुन्दर चिह्न तथा उँगली में अगूठी है इससे हमलोग नहीं जानसक्ते कि इनमेंसे किसको पिण्ड देना चाहिये उनब्राह्मणो के वचन सुनके राजा कुछभी निश्चय नही करसका इतनी कथा कहके वेतालने राजासे पूछा कि हे राजा तुम बतलाओ कि वह पिण्डा किसके हाथमें देनाचाहिये था जानकरभी जो उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फटजायगा वेतालके वचन सुनके राजाने मौन छोडकर कहा कि चोर के हाथमे पिण्डा देना उचितथा क्योंकि राजा चन्द्रप्रभ उसीका क्षेत्रजपुत्रथा यद्यपि उसब्राह्मणने उसे उत्पन्न कियाथा तथापि वह उसका पिता नहीहोसक्ता है क्योकि ब्राह्मणने केवल एकही रात्रिके निमित्त अपना शरीर वेचडालाथा और राजा सूर्य्यप्रभ भी पालन तथा लाडकरनेसे उसका पिता नहींहोसक्ता क्योंकि शिवजीकी आज्ञासे उसकी माताने उसके पालनके निमित्त हजार अशर्फी उसके पास रख दीथीं इससे जिसे उसकी माता सकल्पकरके दी गईथी जिसकी आज्ञा से उसे उत्पन्न कियाथा और जिसका वह धनथा उसीका वहचन्द्रप्रभ राजा क्षेत्रजपुत्रहुआ इससे उसी के हाथमें पिण्डदेना उचितथा राजाके यहवचन सुनकर वेताल फिर उसी वृक्षपर चलागया और राजा भी फिर उसके लाने में उद्युक्त हुआ १०२॥ इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायाशशाकवतीलम्बकेपड्विंन्शस्तरग २६ ॥

इसके उपरान्त फिर राजा त्रिविक्रमसेन उसशीशमके वृक्षपरसे वेतालको लेके कन्धेपर रखकर ले चला मार्ग मे वेतालने कहा कि हे राजा तुम यह क्यो आग्रहकरतेहो अपने घरजाओ रात्रिका सुख भोगो उसदुष्ट भिक्षुकके पास तुम मुझे न लेचलो जो तुमको बडा आग्रहहै तो मेरी यहकथा सुनो त्रिकूटनाम नगरमें चन्द्रावलोकनाम बडा शूर और धर्म्मात्मा एकराजाथा उसकेसम्पूर्ण सम्पत्तियोंके होने परभी एक यही चिन्ताथी कि उसके योग्य कोई स्त्री न थी एकसमय वह राजा अपनी सेना समेत घोडे पर चढके शिकार खेलनेको वनमें गया वहा बहुतसे शूकर सिंह तथा मृगोंको मारताहुआ अकेलाही घोडेको दौडाकर दशयोजन पृथ्वी निकलगया वहा श्रमसे घोडे के ठहरजानेपर राजाने दिग्मोह में प्राप्तहोकर एक तालाव निकटदेखा वायुके द्वारा हिलतेहुए कमलरूपी हाथोसे वह तडाग मानो अपने पास उसे बुलारहाथा उसतडागके तटपर जाके राजाने घोडेकी काठी खोलकर उसे घाम और जलसे तृप्तकरके वृक्षकी जडसे बाधदिया और आपभी उसी तालावमे स्नानकरके और वनके परार्थी वृक्षो से फल तोडके खाके जल पिया इसप्रकार सावधानहोकर राजाने उसी तालावपर घूमते २ एक अशोक वृक्षके नीचे सखी सहित एकतपस्विनी कन्यादेखी उसे देखकर कामके वशीभूतहोकर राजाने शोचा कि क्या यहसाक्षात् सावित्रीही यहा स्नानकरनेको आई है या श्री शिवजीसे वियुक्तहोकर श्रीपार्वती जीही फिर तपकररही है अथवा दिनमें अस्तहुए चन्द्रमाकी कान्तिहै अच्छा इसके पास चलके सखी से पूछू कि यह कौनहै यह शोचकर राजा उसके पासगया वहावह कन्याभी उसेदेखकर उसपर आसक्त होके शोचनेलगी कि इसवनमें ऐसा रूपवान् मनुष्य कहासे आया यह कोई सिद्धहै अथवा विद्याधर है इसका रूप जगत्भरके नेत्रोको आनन्द देनेवालाहै यह शोचके वह लज्जापूर्व्वक उसे तिरछी दृष्टि से देखतीहुई चली यह देखकर राजाने उससे कहा कि हे सुन्दरी पहलेहीपहल न्हत दूरसे आये हुए

अतिथिका सत्कार तो दूररहा क्या यह भी तपस्वियों का धर्म्म है कि उसके पाससे भागजाना राजाके यह वचन सुनकर उसकी चतुर सखी ने उसे वहीं बैठालकर राजाका अतिथि सत्कार किया तब राजा ने सखी से पूछा कि किस पुण्यवान् वंश में तुम्हारी सखीका जन्महुआ है कानों को अमृतके समान आनन्द देनेवाला इसका क्या नामहै पुष्पके समान अपने सुकुमार शरीरको यह क्यों तपसे क्लेशित करती है राजाके यह वचन सुनके उसकी सखी ने कहा कि यह मेनिका नाम अप्सराकी इन्दीवरप्रभा नाम पुत्री है महर्षि कण्व ने इसे अपने आश्रममें पालाहै उन्हींकी आज्ञा से यह यहाँ तडाग में स्नान करने को आई है यहाँ से कुछेकही दूरपर उनका आश्रम है उसके यह वचन सुनके राजा प्रसन्न होके घोडेपर चढके कण्व महर्षि के आश्रमपर गया और आश्रम के बाहर घोडा बाँधकर आश्रम के भीतर जाके अनेक मुनियों के मध्य मे बैठे हुए कण्व मुनिको प्रणाम करके बैठा महर्षि कण्व ने उसका अतिथि सत्कार करके कहा कि हे वत्स चन्द्रावलोक मैं तुमसे कुछ हितकारी वचन कहताहूं उसे सुनो। यह तो तुमजानतेही हो कि इस ससारमें प्राणियोंको मृत्युसे कैसा भयहै तो फिर तुम निष्कारण इन दीनपशुओं को क्यों मारतेहो परमेश्वर ने क्षत्रियों को भीतोंकी रक्षाके ही निमित्त शस्त्र दियाहै इससे धर्म्मपूर्व्वक प्रजाओं का पालन करो हाथी घोडे आदि वाहनोंपर चढके शस्त्र अस्त्र आदिकों का अभ्यास करो राज्यका सुख भोगो दीन और ब्राह्मणों को धन दो दिशाओं में अपना यश फैलाओ यमराज की क्रीडा के समान इस शिकार को त्यागो इसमें बडे अनर्थ हैं क्या तुमने राजा पाण्डु का वृत्तान्त नहीं सुनाहै कण्वमुनिके यह वचनसुनकर राजा चन्द्रावलोक नम्रतापूर्व्वक बोला कि हे भगवन् आपने कृपा करके मुझे बड़ी उत्तम शिक्षादी है आज से मैंने शिकार का खेलना त्याग दिया सम्पूर्ण पशुपक्षी निर्भय होकररहें उसके यह वचनसुनके महर्षि कण्वमुनिने कहा कि हे राजा तुम्हारी इस प्रतिज्ञासे मैं बहुत प्रसन्नहुआ अब तुम अपनी इच्छाके समान वरमागो मुनि के यह वचनसुनके राजाने कहा कि हे भगवन् जो आप मुझसे प्रसन्नहैं तो यह इन्दीवरप्रभा कन्या मुझे दीजिये राजा के यह वचनसुनके कण्वमुनि ने इन्दीवर प्रभाका विवाह राजाके साथ करदिया तब मुनिकी आज्ञा से इन्दीवरप्रभा को घोडेपर बैठाके और आपभी चढके राजा चन्द्रावलोक वहा से चला चलते २ वनमें ही उसे सायकाल होगया मानो उसके सम्पूर्ण कार्य्योंको देखके सूर्य्य भगवान् अमितहोकर अस्ताचलपर बैठगये और रात्रिहोगई उससमय एक बावडी के तटपर एक घना वरगदका वृक्ष देखकर राजा ने वहीं रात्रि व्यतीत करनेका विचारकर घोडेपरसे उतरकर घोडेको घासडाल तथा जलपिलाके आप भी कुछ जलपान करके उसी वृक्षके नीचे पुष्पोंको बिछाके अपनी प्रिया समेत लेटा उससमय अपनी किरणों से अन्धकाररूपी वस्त्रको हटाकर पूर्व्व दिशारूपी स्त्रीके मुखको चुम्बन करताहुआ चन्द्रमा उदित हुआ उसकी किरणों से सम्पूर्ण दिशा प्रकाशित होगई और उस वृक्षके नीचे भी कुछ २ उजयाला आगया तब राजा चन्द्रावलोकने भी अपनी प्रिया इन्दीवर प्रभाके साथ भोग विलास किया उस सुखसे क्षणके समान रात्रिको व्यतीत करके उसी बावडी मे स्नान पूर्व्वक सन्ध्या वन्दनादि करके राजा अपनी प्रिया

सुन्दर चिह्न तथा उँगली में अगूठी है इससे हमलोग नहीं जानसक्के कि इनमेंसे किसको पिण्ड देना चाहिये उनब्राह्मणों के वचन सुनके राजा कुछभी निश्चय नहीं करसका इतनी कथा कहके वेतालने राजासे पूछा कि हे राजा तुम बतलाओ कि वह पिण्डा किसके हाथमें देनाचाहिये था जानकरभी जो उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फटजायगा वेतालके वचन सुनके राजाने मौन छोडकर कहा कि चोर के हाथमे पिण्डा देना उचितथा क्योकि राजा चन्द्रप्रभ उसीका क्षेत्रजपुत्रथा यद्यपि उसब्राह्मणने उसे उत्पन्न कियाथा तथापि वह उसका पिता नहींहोसक्ता है क्योकि ब्राह्मणने केवल एकही रात्रिके निमित्त अपना शरीर वेचडालाथा और राजा सूर्य्यप्रभ भी पालन तथा लाडकरनेसे उसका पिता नहींहोसक्ता क्योकि शिवजीकी आज्ञासे उसकी माताने उसके पालनके निमित्त हजार अशर्फी उसके पास रख दीथीं इससे जिसे उसकी माता सकल्पकरके दी गईथी जिसकी आज्ञा से उसे उत्पन्न कियाथा और जिसका वह धनथा उसीका वहचन्द्रप्रभ राजा क्षेत्रजपुत्रहुआ इससे उसी के हाथमें पिण्डदेना उचितथा राजाके यहवचन सुनकर वेताल फिर उसी वृक्षपर चलागया और राजा भी फिर उसके लाने में उद्युक्त हुआ १०२॥ इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाकवतीलम्बकेषड्विन्शस्तरग २६॥

इसके उपरान्त फिर राजा त्रिविक्रमसेन उसशीशमके वृक्षपरसे वेतालको लेके कन्धेपर रखकर ले चला मार्ग मे वेतालने कहा कि हे राजा तुम यह क्यो आग्रहकरतेहो अपने घरजाओ रात्रिका सुख भोगो उसदुष्ट भिक्षुकके पास तुम मुझे न लेचलो जो तुमको बडा आग्रहहै तो मेरी यहकथा सुनों त्रिकूटनाम नगरमें चन्द्रावलोकनाम बडा शूर और धर्म्मात्मा एकराजाथा उसकेसम्पूर्ण सम्पत्तियोंके होने परभी एक यही चिन्ताथी कि उसके योग्य कोई स्त्री न थी एकसमय वह राजा अपनी सेना समेत घोडे पर चढके शिकार खेलनेको वनमे गया वहा बहुतसे शूकर सिंह तथा मृगोको मारताहुआ अकेलाही घोडेको दौडाकर दशयोजन पृथ्वी निकलगया वहा श्रमसे घोडे के ठहरजानेपर राजाने दिग्मोह मे प्राप्तहोकर एक तालाब निकटदेखा वायुके द्वारा हिलतेहुए कमलरूपी हाथोंसे वह तडाग मानों अपने पास उसे बुलारहाथा उसतडागके तटपर जाके राजाने घोडेकी काठी खोलकर उसे घास और जलसे तृप्तकरके वृक्षकी जडसे बाधदिया और आपभी उसी तालावमे स्नानकरके और वनके परार्थी वृक्षो से फल तोडके खाके जल पिया इसप्रकार सावधानहोकर राजाने उसी तालावपर घूमते २ एक अशोक वृक्षके नीचे सखी सहित एकतपस्विनी कन्यादेखी उसे देखकर कामके वशीभूतहोकर राजाने शोचा कि क्या यहसाक्षात् सावित्रीही यहा स्नानकरनेको आई है या श्री शिवजीसे वियुक्तहोकर श्रीपार्वती जीही फिर तपकररही हैं अथवा दिनमे अस्तहुए चन्द्रमाकी कान्तिहै अच्छा इसके पास चलके सखी से पूछूं कि यह कौनहै यह शोचकर राजा उसके पासगया वहा वह कन्याभी उसेदेखकर उसपर आसक्त होके शोचनेलगी कि इसवनमे ऐसा रूपवान् मनुष्य कहासे आया यह कोई सिद्धहै अथवा विद्याधर है इसका रूप जगत्भरके नेत्रोंको आनन्द देनेवालाहै यह शोचके वह लज्जापूर्वक उसे तिरछी दृष्टि से देखतीहुई चली यह देखकर राजाने उससे कहा कि हे सुन्दरी पहलेहीपहल बहुत दूरसे आये हुए

अतिथिका सत्कार तो दूररहा क्या यह भी तपस्वियों का धर्म्म है कि उसके पाससे भागजाना राजाके यह वचन सुनकर उसकी चतुर सखी ने उसे वहीं बैठालकर राजाका अतिथि सत्कार किया तब राजा ने सखी से पूछा कि किस पुण्यवान् वश में तुम्हारी सखीका जन्महुआ है कानों को अमृतके समान आनन्द देनेवाला इसका क्या नामहै पुष्पके समान अपने सुकुमार शरीरको यह क्यों तपसे क्लेशित करती है राजाके यह वचन सुनके उसकी सखी ने कहा कि यह मेनिका नाम अप्सराकी इन्दीवरप्रभा नाम पुत्री है महर्षि कण्व ने इसे अपने आश्रममें पालाहै उन्हींकी आज्ञा से यह यहाँ तडाग में स्नान करने को आई है यहाँ से कुछेकही दूरपर उनका आश्रम है उसके यह वचन सुनके राजा प्रसन्न होके घोडेपर चढके कण्व महर्षि के आश्रमपर गया और आश्रम के बाहर घोडा बाँधकर आश्रम के भीतर जाके अनेक मुनियों के मध्य मे बैठे हुए कण्व मुनिको प्रणाम करके बैठा महर्षि कण्व ने उसका अतिथि सत्कार करके कहा कि हे वत्स चन्द्रावलोक मैं तुमसे कुछ हितकारी वचन कहताहूं उसे सुनो यह तो तुमजानतेही हो कि इस संसारमें प्राणियोंको मृत्युसे कैसा भयहै तो फिर तुम निष्कारण इन दीनपशुओं को क्यों मारतेहो परमेश्वर ने क्षत्रियों को भीतोंकी रक्षाके ही निमित्त शस्त्र दियाहै इससे धर्मपूर्वक प्रजाओं का पालन करो हाथी घोडे आदि वाहनोंपर चढके शस्त्र अस्त्र आदिकों का अभ्यास करो राज्यका सुख भोगो दीन और ब्राह्मणों को धन दो दिशाओं में अपना यश फैलाओ यमराज की क्रीडा के समान इस शिकार को त्यागो इसमे बडे अनर्थ है क्या तुमने राजा पाण्डु का वृत्तान्त नहीं सुनाहै कण्वमुनिके यह वचनसुनकर राजा चन्द्रावलोक नम्रतापूर्वक बोला कि हे भगवन् आपने कृपा करके मुझे बड़ी उत्तम शिक्षादी है आज से मैंने शिकार का खेलना त्याग दिया सम्पूर्ण पशुपक्षी निर्भय होकररहें उसके यह वचनसुनके महर्षि कण्वमुनिने कहा कि हे राजा तुम्हारी इस प्रतिज्ञासे मैं बहुत प्रसन्नहुआ अब तुम अपनी इच्छाके समान वरमागो मुनि के यह वचनसुनके राजाने कहा कि हे भगवन् जो आप मुझसे प्रसन्नहै तो यह इन्दीवरप्रभा कन्या मुझे दीजिये राजा के यह वचनसुनके कण्वमुनि ने इन्दीवर प्रभाका विवाह राजाके साथ करदिया तब मुनिकी आज्ञा से इन्दीवरप्रभा को घोडेपर बैठाके और आपभी चढके राजा चन्द्रावलोक वहा से चला चलते २ वनमें ही उसे सायकाल होगया मानो उसके सम्पूर्ण कार्य्योंको देखके सूर्य्य भगवान् श्रमितहोकर अस्ताचलपर बैठगये और रात्रिहोगई उससमय एक बावडी के तटपर एक घना वरगदका वृक्ष देखकर राजा ने वहीं रात्रि व्यतीत करनेका विचारकर घोडेपरसे उतरकर घोडेको घासडाल तथा जलपिलाके आप भी कुछ जलपान करके उसी वृक्षके नीचे पुष्पोंको बिछाके अपनी प्रिया समेत लेटा उससमय अपनी किरणों से अन्धकाररूपी वस्त्रको हटाकर पूर्व दिशारूपी स्त्रीके मुखको चुम्बन करताहुआ चन्द्रमा उदित हुआ उसकी किरणों से सम्पूर्ण दिशा प्रकाशित होगई और उस वृक्षके नीचे भी कुछ २ उजयाला आगया तब राजा चन्द्रावलोकने भी अपनी प्रिया इन्दीवर प्रभाके साथ भोग विलास किया उस सुखसे क्षणके समान रात्रिको व्यतीत करके उसी बावडी मे स्नान पूर्वक सन्ध्या वन्दनादि करके राजा अपनी प्रिया

सुन्दर चिह्न तथा उँगली मे अगूठी है इससे हमलोग नहीं जानसके कि इनमेंसे किसको पिण्ड देना चाहिये उनब्राह्मणो के वचन सुनके राजा कुछभी निश्चय नही करसका इतनी कथा कहके वेतालने राजासे पूछा कि हे राजा तुम बतलाओ कि वह पिण्डा किसके हाथमें देनाचाहिये था जानकरभी जो उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फटजायगा वेतालके वचन सुनके राजाने मौन छोडकर कहा कि चोर के हाथमे पिण्डा देना उचितथा क्योकि राजा चन्द्रप्रभ उसीका क्षेत्रजपुत्रथा यद्यपि उसब्राह्मणने उसे उत्पन्न कियाथा तथापि वह उसका पिता नहींहोसक्ता है क्योकि ब्राह्मणने केवल एकही रात्रिके निमित्त अपना शरीर वेचडालाथा और राजा सूर्य्यप्रभ भी पालन तथा लाडकरनेसे उसका पिता नहींहोसक्ता क्योंकि शिवजीकी आज्ञासे उसकी माताने उसके पालनके निमित्त हजार अशर्फी उसके पास रख दीथीं इससे जिसे उसकी माता सकल्पकरके दी गईथी जिसकी आज्ञा से उसे उत्पन्न कियाथा और जिसका वह धनथा उसीका वहचन्द्रप्रभ राजा क्षेत्रजपुत्रहुआ इससे उसी के हाथमें पिण्डदेना उचितथा राजाके यहवचन सुनकर वेताल फिर उसी वृक्षपर चलागया और राजा भी फिर उसके लाने में उद्युक्त हुआ १०२॥ इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशांकवतीलम्बकेषड्विन्शस्तरग २६॥

इसके उपरान्त फिर राजा त्रिविक्रमसेन उसशीशमके वृक्षपरसे वेतालको लेके कन्धेपर रखकर ले चला मार्ग में वेतालने कहा कि हे राजा तुम यह क्यो आग्रहकरतेहो अपने घरजाओ रात्रिका सुख भोगो उसदुष्ट भिक्षुकके पास तुम मुझे न लेचलो जो तुमको वडा आग्रहहै तो मेरी यहकथा सुनो त्रिकूटनाम नगरमें चन्द्रावलोकनाम वडा शूर और धर्म्मात्मा एकराजाथा उसकेसम्पूर्ण सम्पत्तियोंके होने परभी एक यही चिन्ताथी कि उसके योग्य कोई स्त्री न थी एकसमय वह राजा अपनी सेना समेत घोडे पर चढके शिकार खेलनेको वनमे गया वहा बहुतसे शूकर सिंह तथा मृगोंको मारताहुआ अकेलाही घोडेको दौडाकर दशयोजन पृथ्वी निकलगया वहा श्रमसे घोडे के ठहरजानेपर राजाने दिग्मोह में प्राप्तहोकर एक तालाव निकटदेखा वायुके द्वारा हिलतेहुए कमलरूपी हाथोंसे वह तडाग मानों अपने पास उसे बुलारहाथा उसतडागके तटपर जाके राजाने घोडेकी काठी खोलकर उसे घास और जलसे तृप्तकरके वृक्षकी जडसे बाधदिया और आपभी उसी तालावमें स्नानकरके और वनके परार्थी वृक्षों से फल तोडके खाके जल पिया इसप्रकार सावधानहोकर राजाने उसी तालावपर घूमते २ एक अशोक वृक्षके नीचे सखी सहित एकतपस्विनी कन्यादेखी उसे देखकर कामके वशीभूतहोकर राजाने शोचा कि क्या यहसाक्षात् सावित्रीही यहा स्नानकरनेको आई है या श्री शिवजीसे वियुक्तहोकर श्रीपार्वती जीही फिर तपकररही है अथवा दिनमें अस्तहुए चन्द्रमाकी कान्तिहै अच्छा इसके पास चलके सखी से पूछू कि यह कौनहै यह शोचकर राजा उसके पासगया वहावह कन्याभी उसेदेखकर उसपर आसक्त होके शोचनेलगी कि इसवनमे ऐसा रूपवान् मनुष्य कहासे आया यह कोई सिद्धहै अथवा विद्याधर है इसका रूप जगत्भरके नेत्रोको आनन्द देनेवालाहै यह शोचके वह लज्जापूर्वक उसे तिरछी दृष्टि से देखतीहुई चली यह देखकर राजाने उससे कहा कि हे सुन्दरी पहलेहीपहल बहुत दूरसे आये हुए

समेत घोडेपर चढके जहा उसने अपनी सेनाछोडी थी वहीं जानेको उद्यतहुआ इतनेमें मानो रात्रि के समय कमलोकी शोभाको बिगाडकर अस्ताचलकी कन्दरामे छिपेहुए चन्द्रमाको मारने के लिये प्रचंड किरणरूपी हाथों को फैलायेहुए अत्यन्त रक्तवर्ण सूर्य्य भगवान् के उदित होनेपर अकस्मात् विजली के समान पीले केशवाला काजलके समान श्याम वर्णवाला आतोंकी मालाओं को पहनेहुए बालों के यज्ञोपवीत को धारण कियेहुए मनुष्यके शिरके मासको खाताहुआ और कपालसे रुधिरको पीता हुआ एक ब्रह्मराक्षस आया और क्रोधसे अग्निकी ज्वाला मुखसे छोडता हुआ बहुत गर्जकर राजा से बोला कि हे पाप मै ज्वालामुख नाम ब्रह्मराक्षसहू यह बरगद मेरे निवासका स्थानहै देवतालोग भी इसका उल्लघन नहीं करतेहे तुमने स्त्री समेत इस आश्रम मे रहकर इसे भ्रष्टकियाहे इसका फल तुम को अभी मिलाजाताहै मै तुमको मारके तुम्हारे हृदयका मास खाकर तुम्हारे रुधिरको पियूगा उसके यह घोर बचनसुनकर और उसे अवध्य जानकर राजाने नम्रता पूर्व्वक कहा कि मैने अज्ञानसे जो अपराध कियाहै उसे आप क्षमाकीजिये मे इस आश्रममे आयाहुआ शरणागत अतिथिहू इससे मुझे न मारो आप जैसा पुरुष अथवा पशु बताओ उसे मै लाऊ जिससे आपकी तृप्ति होय राजा के यह वचन सुनके वह ब्रह्मराक्षस शान्त होके बोला कि जो ब्राह्मण का पुत्र सात वर्षकीही अवस्था मे महा सत्त्ववान् विवेकीहोय और तुम्हारे लिये स्वेच्छा से अपने प्राण देना चाहै और जब वह माराजाय तब उसके माता पिता अपनेही हाथसे उसके हाथ पैर पकडे ऐसे पुरुष को जो तुम सात दिन के बीच में अपने हाथसेही बलिदान करो तो मै तुम्हारे प्राण छोडदू नहीं तो तुमको परिकर समेत मारडालूगा उसके यह वचन राजाने भयभीत होनेकेकारण स्वीकार करलिये और वह उसी समय अन्तर्द्धान हो गया ८२ इसके उपरान्त राजा चन्द्रावलोक उस राक्षसकोगया देखके अपने घोडेपर प्रियासमेत सवार होकर अपनी सेना को ढूढनेको चला कुछ दूर चल के अपनी सेनाको पाकर सब सेना समेत नगरमें आया वहा बडे उत्सवसे उसदिनको व्यतीतकरके दूसरे दिन उसने एकान्तमे अपने मंत्रियो से उसरा क्षसका सबवृत्तान्त कहा उस वृत्तान्तको सुनकर उनमे से एक बुद्धिमान् मंत्रीनेकहा कि आप शोकन करिये मैं ब्रह्मराक्षसकेलिये वैसाही पुरुष लादूगा इसपृथ्वीमें अनेक प्रकारके पुरुष हैं इसप्रकार राजासे कहकर उसने सातवर्षके बालककीसी प्रतिमा बनाकर उसमे अनेक रत्न जडवाके गाडीपर रखवाके ग्राम तथा नगरो मे घुमाई और उसकेसाथ २ यह कहलवाया कि जो सातवर्षका ब्राह्मण का पुत्र अपने माता पिताकी आज्ञासे अपना शरीर ब्रह्मराक्षस के अर्पणकरे और जिससमय वह माराजाय उससमय उसके माता पिता उसके हाथ पैर पकडे उसे उसके माता पिताके उपकारकेलिये राजा चन्द्रावलोक इसप्रतिमा समेत सौगावदेगा एक ग्राममें इस ढढोरेको सुनकर किसी ब्राह्मणके सातवर्षके महासत्त्ववान् पुत्रने ढढोरेवालोंसे कहा कि मै तुम्हारे राजाकेलिये राक्षसको अपना शरीरदूगा और अपने माता पितासे कहकर अभी आताहू यह कहके वह बालक अपने घरमेंजाके हाथ जोडकर अपने माता पितासे बोला कि मै राजाके हितकेलिये अपना यह नस्वरशरीर दिये देताहू और सौग्राम सहित सुवर्णकी प्रतिमा

राजासे लेकर तुम्हेंदिये देताहूं इसप्रकारसे मैं आपसे अनृण होजाऊंगा और परोपकार भी सिद्धहोगा और आप भी दरिद्र रहित होजाओगे उसके यह वचन सुनकर उसके माता पिता बोले कि हे पुत्र तुम क्या बकरहेहो क्या तुम्हारे कोई प्रेत तो नहीं लगाहै ऐसा कौनहै जो अपने पुत्रको धनके निमित्त मरवाडाले और कौन ऐसा बालक होगा जो अपने आप अपने प्राण देगा उनके वचन सुनके वह बालक फिर बोला कि सुनों मैं यथार्थ वचन कहताहूं (अवाच्याशुचिसम्पूर्णमुत्पत्त्यैवजुगुप्सितद स क्षेत्रविनाश्येव शरीरमचिरादिदम् तदनेनात्यसारेण सुकृतयदुपार्ज्यते तदेवसारमसारेकृतबुद्धिभिरुच्य ते) अवाच्य अपवित्र वस्तुओं से पूर्ण उत्पत्तिसेही निन्दित दुःखों का क्षेत्र यह शरीर शीघ्रही नष्ट होनेवालाहै इससे इस असार शरीरके द्वारा संसार मे जो कुछ धर्मोपार्जन कियाजाय बुद्धिमान् लोग उसीको सार कहते हैं और प्राणियोंका उपकार करने से अधिक कोई पुण्य नहीं है उसमे भी जो माता पिताकी भक्तिहोय तो क्याही बातहै इत्यादि वचन कहकर वह बालक अपने माता पिताको वह बात स्वीकार कराके राजपुरुषों से वह प्रतिमा तथा सौग्रामोंका पट्टा लिखवालेके और माता पिताकोदेके उन्हे साथ लेकर राजाके यहां आया राजाभी उस बालकको देखके बहुत प्रसन्न होकर उसे तथा उसके माता पिताको हाथीपर चढाके उस राक्षसके पास लेगया वहां चौका लीपकर जैसेही पुरोहितने यथो-चित पूजनकिया वैसेही वह महाभयंकर राक्षस प्रकट होगया उसे देखके राजा चन्द्रावलोक नम्रहोकर बोला कि हे भगवन् आपके निमित्त मैं इस बालकको लायाहूं इसे आप प्रसन्न होकर ग्रहणकीजिये राजाके यह वचन सुनकर वह ब्रह्मराक्षस उस बालकको देखकर जिह्वासे अपने ओष्ठ चाटनेलगा उस समय उस बालकने सोचा कि इस शरीरके देनेमे मुझे जो कुछ पुण्यहुआहो उससे मुझे स्वर्ग तथा मोक्षकी प्राप्ति न होय किन्तु प्रति जन्ममे मेरे शरीरसे परोपकारहो उसके यह विचार करतेही आकाश से पुष्पोंकी वृष्टि होनेलगी तब जैसेही ब्रह्मराक्षसके आगे उसके माता पिता उसके हाथ पैर पकडके खडेहुए और राजाने उसको मारना चाहा वैसेही वह बालक इतने जोरसे हँसा कि जिससे ब्रह्मराक्षसा-दिक सम्पूर्ण लोग अपने २ कार्य्यको छोडके चकितहोके उसके आगे हाथजोड २ के खड़ेहोगये इतनी कथाको कहके वेतालने राजासे कहा कि हे राजा अन्त समयमे भी वह बालक क्यों हँसा जोजानकर भी इसका उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिरफटजायगा वेतालके यह वचन सुनके राजाने कहा कि सुनो भय उपस्थित होनेपर दुर्बलजीव अपने प्राणोंकी रक्षाकेलिये अपने माता पिताको पुकारतेहैं जो माता पिता न होंय तो राजाको और जो राजाभी न होय तो वहांके देवताको पुकारते हैं इस बालकके पास यह सब सामग्रीथी परन्तु उसका फल विपरीतथा धनके लोभसे उसके माता पिताने तो उसके हाथ पैरही पकडरक्खे थे राजा अपने शरीरके बचानेकेलिये उसे मारनेहीको उद्यतथा और वहांका देवता जो ब्रह्मराक्षसथा वह उसका भक्षकहीथा, देखो नहीं स्थिर रहनेवाले अन्तमे निस्सार आधि व्याधिसे युक्त इस शरीरकेलिये मूर्खोंको ऐसा लोभ होताहै ब्रह्मा विष्णु तथा महेशका भी यह शरीर अवश्य नष्ट होगा परन्तु यह प्राकृत लोग अपने शरीरको स्थिरही मानते हैं इसलिये मोहको देखकर और अपने

समेत घोड़ेपर चढ़के जहां उसने अपनी सेनाछोड़ी थी वहीं जानेको उद्यतहुआ इतनेमें मानो रात्रि के समय कमलोंकी शोभाको बिगाड़कर अस्ताचलकी कन्दरामें छिपेहुए चन्द्रमाको मारने के लिये प्रचंड किरणरूपी हाथों को फैलायेहुए अत्यन्त रक्तवर्ण सूर्य्य भगवान् के उदित होनेपर अकस्मात् बिजली के समान पीले केशवाला काजलके समान श्याम वर्णवाला आंतोंकी मालाओं को पहनेहुए बालों के यज्ञोपवीत को धारण कियेहुए मनुष्यके शिरके मांसको खाताहुआ और कपालसे रुधिरको पीता हुआ एक ब्रह्मराक्षस आया और क्रोधसे अग्निकी ज्वाला मुखसे छोड़ता हुआ बहुत गर्जकर राजा से बोला कि हे पाप मैं ज्वालामुख नाम ब्रह्मराक्षसहूं यह बरगद मेरे निवासका स्थानहै देवतालोग भी इसका उल्लंघन नहीं करतेहैं तुमने स्त्री समेत इस आश्रम में रहकर इसे भ्रष्टकियाहै इसका फल तुम को अभी मिलाजाताहै मैं तुमको मारके तुम्हारे हृदयका मांस खाकर तुम्हारे रुधिरको पियूंगा उसके यह घोर बचनसुनकर और उसे अवध्य जानकर राजाने नम्रता पूर्व्वक कहा कि मैंने अज्ञानसे जो अपराध कियाहै उसे आप क्षमाकीजिये मैं इस आश्रममें आयाहुआ शरणागत अतिथिहूं इससे मुझे न मारो आप जैसा पुरुष अथवा पशु बताओ उसे मैं लाऊं जिससे आपकी तृप्ति होय राजा के यह वचन सुनके वह ब्रह्मराक्षस शान्त होके बोला कि जो ब्राह्मण का पुत्र सात वर्षकीही अवस्था में महा सत्त्ववान् विवेकीहोय और तुम्हारे लिये स्वेच्छा से अपने प्राण देना चाहै और जब वह माराजाय तब उसके माता पिता अपनेही हाथसे उसके हाथ पैर पकड़ें ऐसे पुरुष को जो तुम सात दिन के बीच में अपने हाथसेही बलिदान करो तो मैं तुम्हारे प्राण छोड़दूं नहीं तो तुमको परिकर समेत मारडालूंगा उसके यह वचन राजाने भयभीत होनेकेकारण स्वीकार करलिये और वह उसी समय अन्तर्द्धान हो गया ८२ इसके उपरान्त राजा चन्द्रावलोक उस राक्षसकोगया देखके अपने घोड़ेपर प्रियासमेत सवार होकर अपनी सेना को ढूंढनेको चला कुछ दूर चल के अपनी सेनाको पाकर सब सेना समेत नगरमें आया वहां बड़े उत्सवसे उसदिनको व्यतीतकरके दूसरे दिन उसने एकान्तमें अपने मंत्रियों से उसरा क्षसका सबवृत्तान्त कहा उस वृत्तान्तको सुनकर उनमें से एक बुद्धिमान् मंत्रीनेकहा कि आप शोकन करिये मैं ब्रह्मराक्षसकेलिये वैसाही पुरुष लादूंगा इसपृथ्वीमें अनेक प्रकारके पुरुष हैं इसप्रकार राजासे कहकर उसने सातवर्षके बालककीसी प्रतिमा बनाकर उसमें अनेक रत्न जड़वाके गाड़ीपर रखवाके ग्राम तथा नगरों में घुमाई और उसकेसाथ २ यह कहलवाया कि जो सातवर्षका ब्राह्मण का पुत्र अपने माता पिताकी आज्ञासे अपना शरीर ब्रह्मराक्षस के अर्पणकरे और जिससमय वह माराजाय उससमय उसके माता पिता उसके हाथ पैर पकड़ें उसे उसके माता पिताके उपकारकेलिये राजा चन्द्रावलोक इसप्रतिमा समेत सौगांवदेगा एक ग्राममें इस ढंढोरेको सुनकर किसी ब्राह्मणके सातवर्षके महासत्त्ववान् पुत्रने ढंढोरेवालोंसे कहा कि मैं तुम्हारे राजाकेलिये राक्षसको अपना शरीरदूंगा और अपने माता पितासे कहकर अभी आताहूं यह कहके वह बालक अपने घरमेंजाके हाथ जोड़कर अपने माता पितासे बोला कि मैं राजाके हितकेलिये अपना यह नस्वरशरीर दिये देताहूं और सौग्राम सहित सुवर्णकी प्रतिमा

कारण कहके बोली कि हे सखी मुझे प्रियका समागम बहुत दुर्लभहै इससे रोज २ के सन्तापसे एक दिनका मरनाही अच्छाहै यहकहकर वह मूर्च्छित होगई तब मालतिकाने शीतल जल तथा वायुसे उसे स्वस्थकरके कमलके पत्तोंकी उसके लिये शय्या बिछादी और हिमके समान शीतल पुष्पोंकाहार उसके गलेमें पहराया इतनेपर भी सन्तापको दूरहोते न देखकर अनगमजरी आंसूभरकर बोली कि हे सखी इनहारादिकों से मेरा यह दाह नहीं शान्त होसक्ताहै जो तुम मेरे प्राण बचाना चाहतीहो तो मेरे प्रियको किसीप्रकारसे लाओ उसके यहवचन सुनके मालतिका बोली कि हेसखी आजरात्रि बहुत व्यतीत होचुकी है प्रातःकाल में उद्योग करके रात्रिके समय यहीं तुम्हारे प्रियको लाऊगी इससे धैर्य्य धरके अपने मंदिरको जाओ उसके वचनसुनकर अनगमजरीने अपने गले से हार उतारकर उसे पहनादिया और उसी के साथ अपने शयन स्थानमें जाके उससे कहा कि तुम अपने घरको जाओ प्रातःकाल मेरे कार्य्य के लिये यत्नकरना उसके यहवचन सुनके मालतिका अपने घरमें आकर प्रातःकाल कमलाकरके घरगई वहाँ उसे ढूंढकर उपवनमें एक वृक्षके नीचे कमलकी शय्यापर लेटाहुआ देखकर और उसके मित्रको उसे समझाते देखके वह यह किसके लिये कामातुर होरहाहै यह जाननेके लिये वृक्षोंकी आड़में छिपकर खड़ी होरही इतने में उस मित्रने कमलाकर से कहा कि हे मित्र क्षणभर इस मनोहर उपवनको देखकर अपने चित्तको बहलाओ बहुत विकल न होना चाहिये यहसुनकर कमलाकरने कहा कि मेरे जिस चित्तको वणिक पुत्री अनगमजरी ने हरलियाहै उसे मैं कैसे बहलाऊ कामदेव तरकसके समान मुझमें अपने बाण भरताही जाताहै इससे ऐसा उपायकरो जिससे मेरे मनकी चुरानेवाली जो अनगमजरी है वह मुझे मिले उसके यहवचन सुनके मालतिकाने उसके निकट जाके कहा कि हे सुभग अनगमजरी ने मुझे आपके पास भेजा है यह कौनसी शिष्टताहै जो आप उस मुग्धाका चित्त चुराकर चलेआयेहो परन्तु यह बड़ाआश्चर्य्य है कि वह आपको प्राणोंसमेत अपना शरीर भी देनाचाहतीहै रात्रिदिन हृदयमें जलतीहुई कामाग्निके धूमके समान उष्णश्वासोंको वहछोड़ा करतीही है अंजनसे कालेहुये उसके आंसू मुखारविन्दकी सुगन्धिके लोभसे आयेहुये भ्रमरोंके समान शोभितहोतेहैं इससे जो तुममेरा कहनामानों तो तुम दोनोंका जिससे कल्याणहोय वह उपायमैं बताऊं उसके वचन सुनके कमलाकरबोला कि हे सखी तुम्हारे मुखसे प्रिया के खेद तथा स्नेहको सुनकर मुझे भय तथा हर्ष दोनो होते हैं तुम जैसा उचित समझो सो करो यह सुनकर मालतिकाबोली कि आज रात्रिके समय मैं अनगमजरीको उसी के उपवनमें छिपाकर लाऊगी तुम बाहर खड़े रहना मैं युक्तिपूर्वक तुम्हें भी उसके भीतर लेजाऊगी इसप्रकारसे तुम दोनोंका समागमहोगा उससे यह कहकर मालतिकाने अनगमजरी के पास आकर सब वृत्तान्तकहा तदनन्तर दिनके व्यतीतहोजानेपर रात्रि के समय कमलाकर उस उपवनके बाहर आकर खड़ाहोगया और मालतिका युक्तिपूर्वक अनगमजरीको उपवनमें लाकर लताओं के कुञ्ज में बैठाकर कमलाकरको वहीं बुलालाई वैसेही वह अनगमजरी आनन्द पाया वैसेही अनगमजरी सामने देखके बहुत दिनहीके दौड़कर उसकेगले में लिपटगई और

मनोरथको सिद्धजानकर वह बालक आश्चर्य्य तथा हर्ष से हँसाथा राजाके यह वचन सुनके वेताल अपनी माया से अन्तर्द्धानहोके उसी वृक्षपर चलागया और समुद्रके समान गभीर चित्तवाला राजा त्रिविक्रमसेन फिर उसे लेनेको चला १३७ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाकवतीलम्बकेसप्तविंशस्तरंग २७ ॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन फिर शीशमके वृक्षकेपासजाके वेतालको पकड़कर कन्धेपररखके लेचला मार्ग में वेतालने कहा कि हे राजा एकबड़ी कामोद्दीपक कथा में आपको सुनाताहूं कि विशालानामपुरी मे सम्पूर्ण शत्रुओंका जीतनेवाला पद्मनाभ नाम राजाथा उसी राजाके समयमे उस नगरी में कुवेरके समान धनवान् अर्थदत्तनाम एक वैश्य रहताथा उस वैश्यके अनंग मंजरीनाम अत्यन्त रूपवती एक कन्याथी उसका विवाह अर्थदत्त ने ताम्रलिप्ती नगरी के निवासी मणिवर्म्मानाम वैश्यके साथ कियाथा और अर्थदत्त के वह एकही कन्याथी इससे वह कन्या समेत अपने जामाताको अपने घरही मे रखताथा उस अनंग मंजरीको अपने पतिपर ऐसी अरुचि थी जैसे रोगीको कडवी औषधिपर होती है परन्तु वह अपने पतिको ऐसी प्यारी थी जैसी कि लोभीको सम्पत्ति प्यारी होती है एकसमय उसकापति मणिवर्मा अपने माता पिता के देखने को अपने घर चलागया तदनन्तर कुछ दिनों के उपरान्त सूर्य्यकी तीक्ष्ण किरणोंसे पथिको के मार्गोंको रोकताहुआ उष्णकाल आया वसन्त के विरह से दिशाओ के उष्णश्वासों के समान उष्णवायु चलनेलगी वायुके द्वारा उड़ीहुई धूल आकाश में व्याप्तहोगई मानों सतप्त पृथ्वीने वर्षाकाल के बुलाने के लिये अपनी दूती भेजी कठोर धूपसे सन्तप्त वृक्षोकी छायाकी आकांक्षा करनेवाले पथिको के समान दिन भी धीरे २ जानेलगे हेमन्तऋतुके वियोगसे रात्रियां अत्यन्त दुर्बल होगईं ऐसे समयमें सम्पूर्ण शरीरमे चन्दन लगायेहुए रेशमी वस्त्रों को पहनेहुए उसअनंग मंजरीने अपनी सखी समेत अपने घरके ऊंचे झरोखेसे राजाके पुरोहित के कमलाकरनाम अत्यन्त रूपवान् युवा पुत्रको देखा उसकमलाकर ने भी चन्द्रमाकी कला के समान उस अनंग मंजरीको देखा परस्पर देखनेसे प्रेमरूपी रस्सी मे उनदोनोंका चित्त बँधगया कमलाकरको कामके वशीभूत देखकर उसका मित्र उसे अपने घरपर लिवालेगया और अनंग मंजरी भी उसे गया देखकर शयन स्थानमें जाके कामसे पीडित होकर पलंगपर लेटगई दो तीनदिनके उपरान्त विरहके सन्तापके सहने मे असमर्थ होकर अनंग मंजरी रात्रिके समय सम्पूर्ण लोगों के सोजाने पर मरनेके लिये अपने घरके उपवनकी बावडी के निकटगई वहाँ अपने पितासे स्थापन की गई कुलदेवता भगवती चंडिकाको प्रणाम करके बोली कि हे भगवती जो इसजन्ममें मुझे कमलाकर पति नहीं मिला है तो द्वितीय जन्ममें अवश्य मिले यहकहके वह अशोकके वृक्षमें अपने डुपट्टेसे फाँसी लगाके मरने को उद्यतहुई इतने में उसकी मालतिकानाम सखी उसे शयन स्थानमें न देखकर ढूंढतीहुई वहीं आई वहां उसने उसे अपने गले में फांसी लगाते देखकर हा हा कहके और दौड़ के वह फांसी काटडाली उसे आई देखके अनंग मंजरी बहुत दुःखसे पृथ्वी में गिरकर उसके बहुत समझाने से अपने दुःखका

कारण कहके बोली कि हे सखी मुझे प्रियका समागम बहुत दुर्लभहै इससे रोज २ के सन्तापसे एक दिनका मरनाही अच्छाहै यहकहकर वह मूर्च्छित होगई तब मालतिकाने शीतल जल तथा वायुसे उसे स्वस्थकरके कमलके पत्तोंकी उसके लिये शय्या बिछादी और हिमके समान शीतल पुष्पोंकाहार उसके गलेमें पहराया इतनेपर भी सन्तापको दूरहोते न देखकर अनगमजरी आसूभरकर बोली कि हे सखी इनहारादिकों से मेरा यह दाह नहीं शान्त होसक्ताहै जो तुम मेरे प्राण बचाना चाहतीहो तो मेरे प्रियको किसीप्रकारसे लाओ उसके यहवचन सुनके मालतिका बोली कि हेसखी आजरात्रि बहुत व्यतीत होचुकी है प्रातःकाल मै उद्योग करके रात्रिके समय यहीं तुम्हारे प्रियको लाउंगी इससे धैर्य्य धरके अपने मंदिरको जाओ उसके वचनसुनकर अनगमजरीने अपने गले से हार उतारकर उसे पहनादिया और उसी के साथ अपने शयन स्थानमें जाके उससे कहा कि तुम अपने घरको जाओ प्रातःकाल मेरे कार्य्य के लिये यत्नकरना उसके यहवचन सुनके मालतिका अपने घरमें आकर प्रातःकाल कमलाकरके घरगई वहाँ उसे ढूंढकर उपवनमें एक वृक्षके नीचे कमलकी शय्यापर लेटाहुआ देखकर और उसके मित्रको उसे समझाते देखके वह यह किसके लिये कामातुर होरहाहै यह जाननेके लिये वृक्षोंकी आडमें छिपकर खडी होरही इतने में उस मित्रने कमलाकर से कहा कि हे मित्र क्षणभर इस मनोहर उपवनको देखकर अपने चित्तको बहलाओ बहुत विकल न होना चाहिये यहसुनकर कमलाकरने कहा कि मेरे जिस चित्तको वणिक पुत्री अनगमजरी ने हरलियाहै उसे मैं कैसे बहलाऊ कामदेव तरकसके समान मुझमें अपने बाण भरताही जाताहै इससे ऐसा उपायकरो जिससे मेरे मन की चुरानेवाली जो अनगमजरी है वह मुझे मिले उसके यहवचन सुनके मालतिकाने उसके निकट जाके कहा कि हे सुभग अनगमजरी ने मुझे आपके पास भेजा है यह कौनसी शिष्टताहै जो आप उस मुग्धाका चित्त चुराकर चलेआयेहो परन्तु यह बडाआश्चर्य है कि वह आपको प्राणोंसमेत अपना शरीरभी देनाचाहतीहै रात्रिदिन हृदयमें जलतीहुई कामाग्निके धूमके समान उष्णश्वासोंको वहछोडा करतीहै है अजनसे कालेहुये उसकेआसू मुखारविन्दकी सुगन्धिके लोभसे आयेहुये भ्रमरोंके समान शोभितहोतेहै इससे जो तुममेरा कहनामानो तो तुम दोनोंका जिसमें कल्याणहोय वह उपायमै बताऊ उसके वचन सुनके कमलाकरबोला कि हे सखी तुम्हारे मुखसे प्रिया के खेद तथा स्नेहको सुनकर मुझे भय तथा हर्ष दोनो होतेहैं तुम जैसा उचित समझो सो करो यह सुनकर मालतिकाबोली कि आज रात्रिके समय मै अनगमजरीको उसी के उपवनमें छिपाकर लाऊंगी तुम बाहर पडे रहना मैं युक्तिपूर्वक तुम्हें भी उसके भीतर लेजाऊंगी इसप्रकारसे तुम दोनोंका समागमहोगा उससे यह कहकर मालतिकाने अनगमजरी के पास आकर सब वृत्तान्तकहा तदनन्तर दिनके व्यतीतहोजानेपर रात्रि के समय कमलाकर उस उपवनके बाहर आकर खडाहोगया और मालतिका युक्तिपूर्वक अनगमजरीको उपवनमें लाकर लताओं के कुञ्ज में बैठाकर कमलाकरको वहां बुलानेगई तबतक वह अनगमजरी के निकट आता देखकर अनगमजरी हाथसे मेरा स्वामी दिवसके डरके कसने पर निकट है और

यहाँ अनादरहोने लगा इससे उन चारोंने एकान्तमें बैठकर विचार किया उनमें से सबसे बड़े भाई ने कहा कि पुरुष अपने आप कुछ नहीं करसक्ता है सब बात भाग्यके आधीनहै आज मैंने बहुत दुःखित होके श्मशानमें जाकर देखा कि एक पुरुष मराहुआ पृथ्वीमें पडा था उसे देखकर मैंने शोचा कि यह धन्य है जो दुःखके भारको छोड़कर यहा आनन्दसे विश्रामकर रहाहै यह शोचकर मैंने वृक्षमें फासी लगाके उस में अपना गला फासदिया मेरे प्राणनिकलने ही कोथे कि वह फासीटूटगई और मैं मूर्च्छितहोके पृथ्वी में गिरपडा और मूर्च्छाजगनेपर मैंने देखा कि एक कृपालु पुरुष मेरे मुखपर अपना वस्त्रहिला रहेहैं मुझे स्वस्थहुआ देखकर उस कृपालु पुरुषने कहा कि हे मित्र तुम विद्वान होकर भी ऐसा खेद क्यों करतेहो (सुखहिसुकृताद्दुःखदुष्कृतादेतिनान्यत) पुण्यसे सुख और पापसे दुःख प्राप्त होताहै अन्य कारणसे नहीं जो तुम्हें दुःखसे भयहै तो पुण्य करो आत्महत्या करके नरकके घोर दुःखों को क्यों भोगना चाहतेहो यह कहके मुझे सावधान करके वह पुरुष कहीं चलागया और मैं यहा चला आया इससे जो भाग्यमें न बदाहोय तो मनुष्य मरभी नहींसक्ता अब मैं किसी तीर्थपर जाकर अपने शरीरको भस्म करूंगा जिससे फिर कभी निर्धन न होऊं उसकेयह वचनसुनकर छोटे भाइयोंने कहा कि हे आर्य्य आपविद्वान् होकर भी धनके विना इतनाखेद क्यों करतेहो क्या आप नहीं जानतेहो कि शरत्कालके मेघोंके समानधन चञ्चलहोताहै अच्छे प्रकारसे रक्षाकीगई भी अन्त में त्याग करनेवाली दुष्टोंकी मित्रता वेश्या तथा लक्ष्मी कबस्थिरहुई है इससे बुद्धिमान् पुरुषको किसी ऐसे गुणका उपार्जन करनाचाहिये जिसमें बँधेहुए धनरूपी हरिण वारम्वार चले आवें छोटे भाइयोंके यहवचनसुनकर वड़ेभाईने कहा अच्छा कौनसा गुण उपार्जन करना चाहिये तब उन सबने विचार करके यह निश्चय किया कि पृथ्वी मे घूमकर कोई अपूर्व विज्ञान सीखना चाहिये यह निश्चय करके और लौटकर आनेका एक स्थान नियतकरके वह चारों एक २ दिशाको चलेगये कुछकालके उपरान्त उसीनियत स्थानपर आये हुए चारों भाइयोंने परस्पर कहा कि किसने कौनसा विज्ञानसीखा उनमें से एकने कहा कि मैंने यह विज्ञानसीखा है कि जो मुझे किसी प्राणी की हड्डिया मिलें तो मैं उनमें उसी के अनुसार मास उत्पन्न करसक्ताहूं उसके वचनसुनकर दूसरेने कहा कि मैं उसी मासपर उसी प्राणीके योग्य रोम तथा त्वचा उत्पन्न करसक्ताहूं तीसरेने कहा कि मैं उसपर उसीप्राणीके योग्यसम्पूर्ण अगउत्पन्न करसक्ताहूं यहसुनकर चौथेने कहा कि मैं उसमें प्राण उत्पन्न करसक्ताहूं यह कहके वह चारो अपने २ विज्ञानको प्रकट करने के लिये जगलमें जाके भाग्य वशसे सिंहकी हड्डिया ले आये एकने उसमें मास उत्पन्न किया दूसरेने त्वचा तथा रोम उत्पन्न किये तीसरेने उसके सम्पूर्ण अगउत्पन्न करदिये और चौथेने सिंहके शरीरको देखकरभी उसमें प्राण उत्पन्न करदिये इससे वह भयङ्करसिंह उठके उन चारोंको मारकर वनमें चलागया इसप्रकार सिंहको उत्पन्न करके वह चारोंभाई नष्टहोगये ठीकहै (दुष्टहिजन्तुमुत्पाद्यकस्यात्मनिसुखम्भवेत्) दुष्टजीवको उत्पन्नकरके किसकी आत्माको सुखहोताहै (इत्यचोपार्जितोयत्नाद्गुणोपिविद्गुणेविधेः। सम्पत्तयेननपर्जायतेत्वविपत्तये॥ मूलेरविद्गुनेदेवेसितेप्रज्ञानरागिणा। नयाउत्तानरूपन्नीनिमायःपौरुष

अब कहा जाओगे यह कहकर बडे हर्षको न सहकर मरकर पृथ्वी में गिरपडी यह देखकर कमलाकर हाय २ करके पृथ्वी मे मूर्च्छितहोकर गिरपडा चणभरमें मूर्च्छासे उठकर प्रियाका आलिंगन चुम्बनकरके बहुत विलाप करते २ ऐसा दुःखितहुआ कि उसका भी हृदय फटगया और प्राणनिकलगये उनदोनों की यह दशा देखकर मानो शोकसे रात्रिक्षीणहोगई प्रातःकाल उद्यानपालों ने जाके उसके माता पिता तथा भाईबन्धुओं से यह वृत्तातकहा इससे उसके माता पिता रोतेहुए लज्जासे नीचे मुख किये हुए अपने भाईबन्धुओंसमेत वहा आये ठीकहै (कष्टा कुलखलीकार हेतवोऽसत्कुस्त्रिय) कुलमें कलंक लगानेवाली कुत्सित स्त्रिया बडी कष्टदायिनी होती है इतने में ताम्रलिप्ती से उसका पति मणिवर्मा भी अपने श्वशुरके घरआया और वहा इस वृत्तातको सुनकर उपवनमे आकर परपुरुषके साथ मरीहुई अपनी स्त्रीको देखकर शोकसे व्याकुलहोके मरगया यह देखके वहा बैठेहुए सबलोग बडा कोलाहलकरके रोनेलगे और सम्पूर्ण पुरवासी इस आश्चर्य्यको सुन देखने के लिये वहाआये उस अवसर मे अनंगमंजरी के पिताकी स्थापन कीहुई भगवतीसे गणों ने कहा कि हे देवी यह अर्थदत्त तुम्हारा परमभक्त है इसके दुःख मे दयाकरो गणोंके यह वचनसुनकर परम कृपालु भगवतीने कहा कि यह तीनों कामकी व्यथासे रहित होकर जी उठें भगवती के इसप्रकार कहतेही वह तीनो जी उठे उस आश्चर्य्य को देखकर सबलोग अचंभा करनेलगे तब कमलाकर लज्जासे नीचा मुख करके अपनेघर चलागया और अर्थदत्त भी लज्जित अनंगमंजरी तथा जमाईको लेकर अपनेघर चलागया यह कथा कहके वेतालने राजासे पूछा कि हेराजा इन तीनोंमें से कौन अधिक अनुरागसे अन्धाथा जानकरभी जो उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिरफट जायगा वेतालके यह बचनसुनके राजाने कहा कि इन तीनोंमें से मणिवर्मा अधिक अनुरागान्धाथा क्योंकि वह दोनों तो बहुत काल से परस्पर वियोगसे पीडित होरहे थे परस्पर के एकाएकी मिलने से जो उनके प्राणहर्ष से निकल गये इसमें कोई आश्चर्य्य नहीं परन्तु मणिवर्मा बडाही मूर्खथा जो पर पुरुषके साथ अपनी स्त्रीको मरी हुई देखकर क्रोधके समय में भी अनुराग युक्तहोके शोकसे मरगया राजाके यह वचन सुनके वेताल फिर अपने स्थानको चलागया और राजाभी उसे लेनेको फिरचला ९७॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशांकवतीलम्बकेअष्टाविंशस्तरंग २८॥

इसके उपरान्त फिर राजात्रिविक्रमसेन शीशमके वृक्षके पासजाके वेतालको लेकर चला मार्गमें वेतालने कहा हे राजा तुम बडेसाधु तथा सत्त्ववान् हो इससे एक अपूर्व्व कथा मैं तुम्हें सुनाताहूं कि कुसुमपुरके धरणी वाराहनाम राजाके राज्यमे ब्रह्मस्थलनाम एकग्राम था उसमें विष्णुस्वामीनाम एक ब्राह्मण रहताथा उसके चारपुत्रथे सम्पूर्ण वेदोंको पढकर उनचारों पुत्रोंके युवाहोनेपर वह विष्णुस्वामी मरगया और उसकी स्त्री उसके साथ सतीहोगई इससे वह चारों अनाथ होकर अपने ग्राम में जीविका रहित रहने को असमर्थ होकर यज्ञस्थलनाम ग्राममें रहनेवाले अपने नानाके यहा भिक्षा मागतेहुए गये वहा नाना तो उनका मरगया था इसलिये मामाओं ने उन्हें रक्खा कुछ उनका

कमण्डलुलो यहकहके वहदण्डकमण्डलु रखकर चलागया और वह तपस्वी वहांपरगया जहां सबलोग उसब्राह्मणके पुत्रको जलाने लायेथे और उसे देखकर उसके शरीरमें प्रवेशकरनेकी इच्छासे एकान्तमें जाकर रोदनकरके नाचताहुआ अपने उसवृद्ध शरीरको त्यागकर उसब्राह्मणके पुत्रके शरीरमें प्रवेश करगया इससे वह ब्राह्मणका पुत्र जी उठा उसे जियाहुआ देखके लोगोंने बड़े हर्षसे कहा कि भाग्यवश से ब्राह्मणका पुत्र जी आया तब उसतपस्वीने तपको न छोड़नेकी इच्छासे उनलोगोंसे यहबचन कहे कि श्रीशिवजी ने मुझको यहकहकर फिर जिलाया है कि तुम मृत्युलोक में जाकर पाशुपत व्रतका ग्रहणकरो इससे मैं अभी एकान्तमें जाकर उस पाशुपतव्रतका ग्रहणकरताहूं नहीं तो मेरे प्राण निकल जायँगे यहकहके वह उनलोगोंको श्मशानसे भेजकर और अपने पुराने वृद्ध शरीरको किसी गढ़े में डालकर किसी अन्य स्थानमें जाकर तपकरनेलगा यह कथा कहकर बेतालने राजासे कहा कि हे राजा उससमय वह योगी क्यों रोया औ क्यों नाचाथा जानकर भी जो उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फट जायगा बेतालके बचन सुनके राजाने कहा कि वह तपस्वी इसलिये रोयाथा कि इस मेरे शरीरको माता पिताने बड़े लाडप्यारसे पालाथा और इसीके द्वारा मुझे सम्पूर्ण सिद्धियां प्राप्तहुईं अब मैं इसका त्यागकरताहूं और इसहर्ष से वह नाचाथा कि इसतरुण शरीरको पाकर मैं अन्य बहुतसी सिद्धियांभी प्राप्तकरलूंगा राजाके यहबचन सुनके वह बेताल फिर अपने वृक्षपर चलागया और कल्पान्तमेंभी नहीं चलायमान होनेवाले कुल पर्वतोंके समान स्थिर चित्तवाला राजा फिर उसके लेनेको चला ८८ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशांकवतीलम्बकेत्रिन्शस्तरंग ३० ॥

इसके उपरान्त फिर राजा त्रिविक्रमसेन उसी शीशमके वृक्षकेपास जाकर बेतालको पकड़कर कंधेपर रखकेलेचला मार्ग में बेताल फिर बोला कि हे राजा तुम्हारे बारम्बार आनेसे मैं तो थकगया परन्तु तुम नहीं थकगये इससे मैं तुमसे एक महाकठिन प्रश्न करताहूं उसको सुनो दक्षिणदेशमें धर्मनाम एक बड़ा धर्मात्मा राजाथा उसके चन्द्रवतीनाम अत्यन्त रूपवती स्त्रीथी उसी चन्द्रवती में उसके एक लावण्यवती नाम कन्याहुई जब वह लावण्यवती विवाहकेयोग्य हुई तो राजा धर्म के गोत्रीभाइयों ने राजाको जीत कर बाहर निकालदिया तब राजा धर्म अपनीकन्या तथा स्त्री को साथलेकर मालवदेश को चला मार्ग में चलते २ विन्ध्याचलके वनमें भिल्लोंके ग्रामके निकट पहुंचा वहां राजाको आभूषण पहिने देखकर बहुतसे भिल्ल उसे मारनेके लिये अपने २ शस्त्रलेकर दौड़े उन्हें आते देखकर राजाने अपनी रानी तथा कन्यासे कहा कि तुम वन में भागजाओ नहीं तो यह तुम्हें भ्रष्टकरडालेंगे राजाके बचन सुनकर वह दोनों वनमें जाकर छिपीं और वह भिल्ल आकर राजाके साथ घोरयुद्धकरके उसेमारकर भूषणादिकलेकर अपनेग्रामको चलेगये भिल्लोंके चलेजानेपर राजाको मराहुआ देखके वह दोनों मा बेटी वहां से भागकर एक दूसरेवनमें चलीगईं और मध्याह्नकी धूपसे बहुत व्याकुल होकर एकतड़ागके तटपर अशोकवृक्षके नीचे बैठ कर रोनेलगीं इतनेमें उसीवनके निकटका रहनेवाला एक चण्डसिंह नाम क्षत्री अपने सिंहपराक्रम नाम पुत्रसहित घोड़ापर चढ़के भाग्यवशसे जिस मार्ग में वह दोनों मा बेटी गईं थीं उसीमार्गमें आया वह।

पादप*) इसप्रकारयत्नपूर्व्वक उपार्जन कियाहुआ गुणभीभाग्यके विपरीतहोनेपर सम्पत्तिको नहीं किन्तु विपत्तिको उत्पन्न करताहै ज्ञानरूपी जलसे सींचेगये भाग्यरूपी मूलके पुष्टहोनेपर नीतिरूप थावले में पुरुषार्थरूपी वृक्ष भाय×फलित होताहै यह कथा कहके वेतालने राजासे पूछा कि वताओ इन चारोंमें से सिंहके वनाने मे किसके अपराधसे वह चारो मारेगये जानकर भी जो उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फटजायगा वेतालके वचनसुनके राजाने यह मेरा मौन छुडाकर जाना चाहताहै अच्छा मैं इसे फिर लाऊँगा यह निश्चयकरके कहा कि जिसने सिंहके प्राणदियेथे वहीअपराधी है अन्यतीनोंने तो सिंह को विनाजाने ही युक्तिके वलसे मांस लोम त्वचा तथा अंगउत्पन्न कियेथे इससे उनका कोई दोष नहीं है परन्तु जिसने सिंहका आकार देखकरभी अपनी विद्याको प्रकट करनेके लिये उसमें प्राण दिये उसी को यह ब्रह्महत्या हुई राजाके यहवचन सुनकर वेताल फिर अपने स्थानको चलागया और राजाभी उसके लेनेको फिर चला ५१॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेएकोनत्रिंशस्तरंग २६॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन उसी शीशमके वृक्षके पासजाके वेतालको पकडकर कन्धेपर रखके लेचला मार्गमें वेतालने कहा कि हे राजा आपके श्रमके दूरकरनेको मैं एककथा कहताहूं उसे सुनो स्वर्गके समान शोभायमान शोभावतीनाम नगरीके राजा प्रद्युम्नके राज्यमे उसीका पुण्यकिया हुआ यज्ञस्थलनाम एकग्रामथा उसमें यज्ञसोमनाम एकवैदिक महाधनवान् अग्निहोत्री ब्राह्मणरहता था उसके वृद्धावस्थामें वहुत यत्नोंसे एकपुत्रहुआथा उसकानाम उसने देवसोम रक्खाथा वह देवसोम विद्या तथा विनय आदि गुणोंसे युक्तहोकर सोलह वर्षकी अवस्थामें ज्वरसे पीडितहोकर मरगया उस को मृतकहुआ देखके यज्ञसोमने वडा विलाप किया और वहुत कालतक उसने उसे श्मशानमे नहीं जाने दिया तब सम्पूर्ण ब्राह्मणोंने उससे कहा कि हे विद्वन् तुम शास्त्रोंको पढकरभी जलके बुलबुले के समान इससंसारकी गतिको क्या नहीं जानतेहो देखो वडे २ राजा लोग जिनकी सेनाओंसे सम्पूर्ण पृथ्वी पूर्णथी जो अपनेको अमरसा मानकर संसारके भोगों में पडे रहतेथे वह भी चिताकी अग्निमें भस्महोगये उन्हें भी कोई रोक न सका इससे तुम इस प्रेतको क्यों आलिंगन करतेहो अव इसे घरमें रखकर क्याकरोगे इसप्रकार समझानेसे उसने वडे कष्टसे उसे छोडा तब उसे वांधकर लोग श्मशान में लगये उसश्मशानमें एकपाशुपत वृद्धयोगी कुटीमें रहताथा वामशिव उसकानामथा बिजलीके समान पीली उसकी जटाथी और दुर्व्वलताके कारण सब शरीरकी नसें उसकी दिखलाई देतीथीं उसतपस्वीने उसब्राह्मणके वालकको लेकर दाहकरनेके लिये आयेहुए लोगों का कोलाहल सुनकर अपने एकमूर्ख अभिमानी शिष्यसे कहा कि वाहर जाकर देखो यह कोलाहल क्यों होरहा है गुरुके यहवचन सुनके शिष्यने कहा कि मैं नहीं जाता तुम्हीं जाकर देखो मेरी भिक्षाका समय आता है यहसुनकर गुरुने कहा कि हे मूर्ख अभी आधाप्रहर दिन चढा है तेरी भिक्षाका कैसे समय आगया यहसुनके शिष्यने कहा कि हे वृद्ध आज से न तू मेरा गुरु है और न मैं तेरा शिष्यहूं अव मैं जाताहूं तू अपना दरस

इसको ठग नहीं सकूंगा वह दुष्टभिक्षुक मुझे बहुत पीडितकिया करताहै इससे उस दुष्टको मारनाके जो कुछ सिद्धि उसे होनेवाली है वह इसराजाकोही देनीचाहिये यह शोचकर उसने राजा से कहा कि हे राजा इस अँधेरीरातमें तुम निर्भयहोकर श्मशानमे वारम्वार घूमरहेहो इससे मैं तुम्हारे ऊपर प्रसन्नहूं इस मुर्देमेंसे निकलकर अन्य में जाताहूं तुम इसे लेकर उस भिक्षुकके पास जाओ एक हितकारी बात मैं तुमको बताये जाताहूं उसे तुम अवश्य करना कि जिस भिक्षुककेलिये तुम इस मृतकको लायेहो वह इस मुर्देमें मेरा आवाहन करके पूजनकरेगा और पूजनके अन्तमें तुम्हे बलिदेनेकेलिये तुमसे कहेगा कि तुम इसको साष्टाग प्रणामकरो उसके यह वचन सुनकर तुम उससे कहना कि पहले तुम मुझे प्रणाम करके दिखाओ तब मैं इसीप्रकारसे प्रणामकरूंगा तुम्हारे कहनेसे जब वह प्रणाम करे तब तुम उसका शिर खड्गसे काटडालना इससे जो विद्याधरोंका ऐश्वर्य्य वह चाहता है सो सब तुम्हींको प्राप्त होगा और सम्पूर्ण पृथ्वीका राज्य तुमको मिलेगा और जो तुममेरा कहना न मानोगे तो वह भिक्षुक तुमको मारडालेगा इसीलिये मैने इतनी देरतक विघ्न किया है अब तुम जाओ तुमको सिद्धि प्राप्त होगी यहकहके वह वेताल उस मुर्देमेंसे निकलगया और राजा वेतालके वाक्यसे उस भिक्षुकको अपना अहितकारी जानके उसी मुर्देकोलेकर प्रसन्नता पूर्वक उसी भिक्षुकके पास चला ७५ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेएकत्रिंशस्तरङ्गः ३१ ॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन उस मृतकको कन्धेपर रक्खेहुए क्षान्तिशीलनाम उसभिक्षुकके पास गया रुधिरसे लिपेहुए चौकेमें हड्डियोंके चूर्णका मंडल बनाकर चारों कोनोंमें रुधिरके घटभरेहुए रखकर चरबीका दीपकबालके अग्निमे हवनकरताहुआ वहभिक्षुक राजाको देखके उठकरबोला कि हे महाराज आपने मुझपर बडा अनुग्रह किया कहा आप सरीखे राजा और कहा यह श्मशान कार्य्य आप बडे परोपकारीहो (एतदेवमहत्त्वञ्च महतामुच्यतेबुधैः। प्रतिपन्नादचलनम्प्राणानामत्ययेपियत्) प्राणोंके सन्देहमें भी प्रतिज्ञा करेहुए कार्य्यको न छोडनाही महात्मा लोगोंका महत्त्वबुद्धिमान् लोगोंने कहाहै यह कहकर उसने राजाके कन्धेपर से उस मुर्देको उतारकर मंडल में रखके उसमें वेताल का आवाहन करके विधिपूर्वक क्रमसे पूजनकिया कपाल मे अर्घदिया मनुष्यके दातों के पुष्प चढाये मनुष्यके नेत्रोंकी धूपदी और मनुष्य मांसहीका नैवेद्यलगाया इस प्रकार पूजन करके उसने राजासे कहा कि हेराजा तुम इस वेतालके आगे पृथ्वीपर गिरकर साष्टाग प्रणामकरो यह तुम्हारे सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण करेगा राजाने कहा कि हे भिक्षुक पहले तुम प्रणाम करके मुझे दिखाओ तब उसी प्रकारसे मैभी प्रणाम करूंगा यह सुनकर जैसेही उसने प्रणाम किया वैसेही राजाने खड्गसे उसका शिरकाट डाला और उसका हृदय निकालकर वेतालके अर्पणकिया तब सम्पूर्ण भूतोंने उसकी बडी प्रशंसाकी और वेतालने प्रसन्न होकर कहा कि हे राजा जो विद्याधरोंका चक्रवर्त्तीहोना यह भिक्षुक चाहताथा वह तुमको अन्तमें प्राप्त होगा और प्रथम तुम सब पृथ्वीभरके चक्रवर्त्ती राजाहोगे और मैने तुमको बहुतक्लेशदियाहै इससे तुम अभीष्ट वरमागो यह सुनकर राजाने कहा कि जो आप मेरेऊपर प्रसन्नहै

चंडसिंहने उन दोनोंस्त्रियों के पैरों के चिह्नोंको देखकर सिंह पराक्रमसे कहा कि जो चलते २ यह दोनों स्त्रिया हमें मिलजायँ तो इनमेसे जिसकेसाथ तुम चाहना उसीकेसाथ अपना विवाह करना। अपनेपिता के यह वचन सुनके सिंहपराक्रमने कहा कि इनमेसे जिसके छोटे पैर हैं उसकी कमअवस्था होगी उसके साथ मैं विवाह करलूंगा और जिसके बडे पैरहैं उसकी अवस्था बडी होगी इससे उसकेसाथ तुम विवाह करलेना। यह सुनकर चंडसिंहने कहा कि हेपुत्र अब मैं विवाह नहीं करूंगा तुम्हारीमाता अभी थोडेही दिन हुये तब मरी है ऐसी पतिव्रता स्त्री के मरजाने पर किसको पुनर्विवाहकी इच्छाहोगी यह सुनकर सिंहपराक्रम बोला कि हेतात ऐसा न कहो स्त्रीकेबिना गृह शून्य मालूम होताहै क्या आपने मूलदेवका कहाहुआ यह श्लोक नहींसुनाहै (यत्रवनस्तनजघना नास्तिमार्गावलोकिनी कान्ताअजड कस्तदनि गडप्रविशतिगृहमज्ञकदुर्गम्) जहा घनेस्तन तथा जघावाली मार्गके देखनेवाली कान्ता न होय उस गृहसंज्ञक जजीर रहित दुर्ग में कौनमूर्ख जाय इसमे हेतात तुमको मेरीशपथहै कि तुम बडेपैरवाली दूसरी स्त्रीकेसाथ अवश्य विवाह करलेना उसके यहवचन स्वीकार करके चंडसिंह उसके साथ उनदोनों स्त्रियों के चरणचिह्न देखताहुआ उस तडागपर पहुचा उन दोनोपिता पुत्रोको देखकर रानी चन्द्रवती उन्हेचोर जानकर डरकेमारे खडीहोगई तब लावण्यवतीने उससे कहा कि हे माता डरोमत यह चोर नहीं हैंइन की चेष्टा सौम्य मालूम होतीहै लावण्यवतीके यहवचन सुनकर चन्द्रवती सन्देहसे निवृत्त न होकर चुप चाप खडीरही इतनेमें चंडसिंह घोडेपरसे उतरकर उनसे बोला कि डरोमत सावधान होकर बताओ कि तुमदोनों कौनहो तुम्हारा शरीर रत्नजटित महलों के रहनेके योग्यहै तुम इस काटोंके वनमें क्यों आईहो तुम्हारी इस दीनताको देखकर हमारे चित्तमें खेदहोताहै तुम्हारे शरीरमें जो तीक्ष्ण सूर्य्यकी किरणलग तीहैं इससे हमारे शरीरमे सन्ताप होताहै इससे शीघ्रही अपना वृत्तान्त वर्णनकरो चण्डसिंहके यह वचन सुनकेरानीचन्द्रवती बडी श्वासलेके अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त वर्णन किया उस वृत्तान्तको सुन के चण्डसिंहने उसे पतिरहित जानके मधुर २ वचन कहके उन दोनोको घोडोपर बैठाकर अपने पुत्र समेत घरको गया वहा जाकर सिंहपराक्रमने छोटे पैरहोनेके कारण रानीचन्द्रवतीके साथ अपना सयो गकिया और चण्डसिंहने बडे पैरहोनेके कारण लावण्यवतीके साथ अपना विवाह किया क्योंकि मार्ग मे उन दोनोंने छोटे बडे पैर देखकर ऐसीही परस्पर प्रतिज्ञाकीथी इसप्रकार वह दोनों मा बेटी क्रमसे पुत्र तथा पिताकी स्त्री होकर बहू और सासहोगई समयपाकर उन दोनों के उन्हीं पतियो से बहुत से कन्या पुत्र उत्पन्नहुए इसप्रकार लावण्यवती तथा चन्द्रवतीको पाकर पुत्र और पिता सुखपूर्व्वक रहने लगे यह कथा कहके वेतालने राजासे पूछा कि हे राजा उन दोनो पुत्र और पिताके सयोगासे जो उन मा बेटियोंकी सन्ततिहुई उनका परस्पर क्या सम्बन्धहुआ जो जानकर भी उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फटजायगा वेतालके यह वचन सुनकर राजा त्रिविक्रमसेन बहुत विचार करके भी कुछ उत्तर न जानके चुपचाप चलतारहा तब उस मुर्देमें प्रविष्ट वेतालने हँसकर अपने चित्तमें शोचा कि राजा इस प्रश्नका उत्तर नहीं देसक्ताहै इसीसे प्रसन्नता पूर्व्वक चुपचाप चलरहाहै यह बडा सत्त्ववान् है इससे मैं

इसको ठग नहीं सकूंगा वह दुष्टभिक्षुक मुझे बहुत पीडित किया करताहै इससे उस दुष्टको मराके जो कुछ सिद्धि उसे होनेवाली है वह इसराजाकोही देनीचाहिये यह शोचकर उसने राजा से कहा कि हे राजा इस अँधेरीरातमें तुम निर्भयहोकर श्मशानमें वारम्वार घूमरहेहो इससे मैं तुम्हारे ऊपर प्रसन्नहूं इस मुर्देमें से निकलकर अब मैं जाताहूं तुम इसे लेकर उस भिक्षुकके पास जाओ एक हितकारी बात मैं तुमको बताये जाताहूं उसे तुम अवश्य करना कि जिस भिक्षुककेलिये तुम इस मृतकको लायेहो वह इस मुर्देमें मेरा आवाहन करके पूजनकरेगा और पूजनके अन्तमें तुम्हें बलिदेनेकेलिये तुमसे कहेगा कि तुम इसको साष्टाग प्रणामकरो उसके यह वचन सुनकर तुम उससे कहना कि पहले तुम मुझे प्रणाम करके दिखाओ तब मैं उसीप्रकारसे प्रणामकरूंगा तुम्हारे कहनेसे जब वह प्रणामकरे तब तुम उसका शिर खड्गसे काटडालना इससे जो विद्याधरोंका ऐश्वर्य वह चाहता है सो सब तुम्हींको प्राप्त होगा और सम्पूर्ण पृथ्वीका राज्य तुमको मिलेगा और जो तुममेरा कहना न मानोगे तो वह भिक्षुक तुमको मारडालेगा इसीलिये मैंने इतनी देरतक विघ्न किया है अब तुम जाओ तुमको सिद्धि प्राप्त होगी यहकहके वह वेताल उस मुर्देमेंसे निकलगया और राजा वेतालके वाक्यसे उस भिक्षुकको अपना अहितकारी जानके उसी मुर्देकोलेकर प्रसन्नता पूर्वक उसी भिक्षुकके पास चला ७५ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेएकत्रिंशस्तरङ्गः ३१ ॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन उस मृतकको कन्धेपर रक्खेहुए क्षांतिशीलनाम उसभिक्षुकके पास गया रुधिरसे लिपेहुए चौकेमें हड्डियोंके चूर्णका मंडल बनाकर चारों कोनोंमें रुधिरके घटभरेहुए रखकर चरबीका दीपकवालके अग्निमें हवनकरताहुआ वहभिक्षुक राजाको देखके उठकरबोला कि हे महाराज आपने मुझपर बडा अनुग्रह किया कहां आप सरीके राजा और कहां यह श्रमका कार्य आप बडे परोपकारीहो (एतदेवमहत्त्वञ्च महतामुच्यतेबुधैः । प्रतिपन्नादचलनम्प्राणानामत्ययेपियत्) प्राणोंके सन्देहमें भी प्रतिज्ञा करेहुए कार्यको न छोडनाही महात्मा लोगोंका महत्त्व बुद्धिमान् लोगोंने कहाहै यह कहकर उसने राजाके कन्धेपर से उस मुर्देको उतारकर मंडल में रखके उसमें वेताल का आवाहन करके विधिपूर्वक क्रमसे पूजनकिया कपाल मे अर्घदिया मनुष्यके दांतों के पुष्प चढ़ाये मनुष्यके नेत्रोंकी धूपदी और मनुष्य मांसहीका नैवेद्यलगाया इस प्रकार पूजन करके उसने राजासे कहा कि हेराजा तुम इस वेतालके आगे पृथ्वीपर गिरकर साष्टाग प्रणामकरो यह तुम्हारे सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण करेगा राजाने कहा कि हे भिक्षुक पहले तुम प्रणाम करके मुझे दिखाओ तब उसी प्रकारसे मैंभी प्रणाम करूंगा यह सुनकर जैसेही उसने प्रणाम किया वैसेही राजाने खड्गसे उसका शिरकाट डाला और उसका हृदय निकालकर वेतालके अर्पणकिया तब सम्पूर्ण भूतोंने उसकी बड़ी प्रशंसाकी और वेतालने प्रसन्न होकर कहा कि हे राजा जो विद्याधरोंका चक्रवर्त्तीहोना यह भिक्षुक चाहताथा वह तुमको अन्तमें प्राप्त होगा और प्रथम तुम सब पृथ्वीभरके चक्रवर्त्ती राजाहोगे और मैंने तुमको बहुत क्लेशदियाहै इससे तुम अभीष्ट वरमांगो यह सुनकर राजाने कहा कि जो आप मेरे ऊपर प्रसन्नहैं

चंडसिहने उन दोनोंस्त्रियों के पैरों के चिह्नोंको देखकर सिंह पराक्रमसे कहा कि जो चलते २ यह दोनों स्त्रिया हमे मिलजायँ तो इनमेंसे जिसकेसाथ तुम चाहना उसीकेसाथ अपना विवाह करना अपनेपिता के यह वचन सुनके सिहपराक्रमने कहा कि इनमेसे जिसके छोटे पैर हैं उसकी कमअवस्था होगी उसके साथ मैं विवाह करलूगा और जिसके बडे पैरहै उसकी अवस्था बडी होगी इमसे उसकेसाथ तुम विवाह करलेना यह सुनकर चडसिहने कहा कि हेपुत्र अब मै विवाह नहीं करूगा तुम्हारीमाता अभी थोडेही दिन हुये तब मरी है ऐसी पतिव्रता स्त्री के मरजाने पर किसको पुनर्विवाहकी इच्छाहोगी यह सुनकर सिंहपराक्रम बोला कि हेतात ऐसा न कहो स्त्रीकेबिना गृह शून्य मालूम होताहै क्या आपने मूलदेवका कहाहुआ यह श्लोक नहींसुनाहै (यत्रघनस्तनजघना नास्तेमार्गावलोकिनी कान्ताअजड़ कस्तदनिगडप्रविशतिगृहमज्ञकदुर्गम्) जहा घनेस्तन तथा जघावाली मार्गके देखनेवाली कान्ता न होय उस गृहसज्ञक जजीर रहित दुर्ग मे कौनमूर्ख जाय इसमे हेतात तुमको मेरीशपथहै कि तुम बडेपैरवाली दूसरी स्त्रीकेसाथ अवश्य विवाह करलेना उसके यहवचन स्वीकार करके चडसिह उसके साथ उनदोनों स्त्रियो के चरणचिह्न देखताहुआ उस तडागपर पहुचा उन दोनोंपिता पुत्रोंको देखकर रानी चन्द्रवती उन्हेचोर जानकर डरकेमारे खडीहोगई तब लावण्यवतीने उससे कहा कि हे माता डरोमत यह चोर नहीं है इनकी चेष्टा सौम्य मालूम होतीहै लावण्यवतीके यहवचन सुनकर चन्द्रवती सन्देहसे निवृत्त न होकर चुप चाप खडीरही इतनेमें चडसिह घोडेपरसे उतरकर उनसे बोला कि डरोमत सावधान होकर बताओ कि तुमदोनों कौनहो तुम्हारा शरीर रत्नजटित महलो के रहनेके योग्यहै तुम इस काटोंके वनमे क्यो आईहो तुम्हारी इस दीनताको देखकर हमारे चित्तमें खेदहोताहै तुम्हारे शरीरमें जो तीक्ष्ण सूर्यकी किरणलगती है इससे हमारे शरीरमे सन्ताप होताहै इससे शीघ्रही अपना वृत्तान्त वर्णनकरो चण्डसिहके यह वचन सुनकेरानीचन्द्रवती बडी श्वासलेके अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त वर्णन किया उस वृत्तान्तको सुनके चण्डसिहने उसे पतिरहित जानके मधुर २ वचन कहके उन दोनोको घोडोपर बैठाकर अपने पुत्र समेत घरको गया वहा जाकर सिहपराक्रमने छोटे पैरहोनेके कारण रानीचन्द्रवतीके साथ अपना सयोगकिया और चण्डसिंहने बडे पैरहोनेके कारण लावण्यवतीके साथ अपना विवाह किया क्योंकि मार्ग में उन दोनोंने छोटे बडे पैर देखकर ऐसीही परस्पर प्रतिज्ञाकीथी इसप्रकार वह दोनों मा बेटी क्रमसे पुत्र तथा पिताकी स्त्री होकर बहू और सासहोगई समयपाकर उन दोनों के उन्हीं पतियो से बहुत से कन्या पुत्र उत्पन्नहुए इसप्रकार लावण्यवती तथा चन्द्रवतीको पाकर पुत्र और पिता सुखपूर्वक रहने लगे यह कथा कहके वेतालने राजासे पूछा कि हे राजा उन दोनो पुत्र और पिताके सयोगोसे जो उन मा बेटियोंकी सन्ततिहुई उनका परस्पर क्या सम्बन्धहुआ जो जानकर भी उत्तर न दोगे तो तुम्हारा शिर फटजायगा वेतालके यह वचन सुनकर राजा त्रिविक्रमसेन बहुत विचार करके भी कुछ उत्तर न जानके चुपचाप चलतारहा तब उस मुर्देमें प्रविष्टवेतालने हँसकर अपने चित्तमें शोचा कि राजा इस प्रश्नका उत्तर नहीं देसक्ताहै इसीसे प्रसन्नता पूर्वक चुपचाप चलरहाहै यह बडा सत्त्ववान् है इससे मैं

इसको ठग नहीं सकूंगा यह दुष्टभिक्षुक मुझे बहुत पीड़ितकिया करताहै इससे उस दुष्टको मराके जो कुछ सिद्धि उसे होनेवाली है वह इसराजाकोही देनीचाहिये यह सोचकर उसने राजा से कहा कि हे राजा इस अँधेरीरातमें तुम निर्भयहोकर श्मशानमें,वारम्वार भ्रमरहेहो इससे मैं तुम्हारे ऊपर प्रसन्नहूं इस मुर्देमें से निकलकर अब मैं जाताहूं तुम इसे लेकर उस भिक्षुकके पास जाओ एक हितकारी बात मैं तुमको बताये जाताहूं उसे तुम अवश्य करना कि जिस भिक्षुकके लिये तुम इस मृतकको लायेहो वह इस मुर्देमें मेरा आवाहन करके पूजनकरेगा और पूजनके अन्तमें तुम्हें बलिदेनेके लिये तुमसे कहेगा कि तुम इसको साष्टाङ्ग प्रणामकरो उसके यह वचन सुनकर तुम उससे कहना कि पहले तुम मुझे प्रणाम करके दिखाओ तब मैं इसीप्रकारसे प्रणामकरूंगा। तुम्हारे कहनेसे जब वह प्रणामकरे तब तुम उसका शिर खड्गसे काटडालना इससे जो विद्याधरोंका ऐश्वर्य्य वह चाहता है सो सब तुम्हींको प्राप्त होगा और सम्पूर्ण पृथ्वीका राज्य तुमको मिलेगा और जो तुममेरा कहना न मानोगे तो वह भिक्षुक तुमको मारडालेगा इसीलिये मैंने इतनी देरतक विघ्न किया है अब तुम जाओ तुमको सिद्धि प्राप्त होगी यहकहके वह वेताल उस मुर्देमेंसे निकलगया और राजा वेतालके वाक्यसे उस भिक्षुकको अपना अहितकारी जानके उसी मुर्देकोलेकर प्रसन्नता पूर्वक उसी भिक्षुकके पास चला ७५॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेएकत्रिंशस्तरङ्गः ३१॥

इसके उपरान्त राजा त्रिविक्रमसेन उस मृतकको कन्धेपर रक्खेहुए क्षान्तिशीलनाम उसभिक्षुकके पास गया रुधिरसे लिपेहुए चौकेमें हड्डियोंके चूर्णका मंडल बनाकर चारो कोनोंमें रुधिरके घटभरेहुए रखकर चरबीका दीपजालके अग्निमें हवनकरताहुआ वहभिक्षुक राजाको देखके उठकरबोला कि हे महाराज आपने मुझपर बड़ा अनुग्रह किया कहां आप सरीखे राजा और कहां यह श्रमका कार्य आप बड़े परोपकारीहो (एतदेवमहत्त्वं महतामुच्यतेबुधैः। प्रतिपन्नादचलनंप्राणानामत्ययेपियत्) प्राणोंके सन्देहमें भी प्रतिज्ञा करेहुए कार्यको न छोड़नाही महात्मा लोगोंका महत्त्वबुद्धिमान् लोगोंने कहाहै यह कहकर उसने राजाके कन्धेपर से उस मुर्देको उतारकर मंडल में रखके उसमें वेताल का आवाहन करके विधिपूर्वक क्रमसे पूजनकिया कपाल में अर्घदिया मनुष्यके दांतों के पुष्प चढ़ाये मनुष्यके नेत्रोंकी धूपदी और मनुष्य मांसहीका नैवेद्यलगाया इस प्रकार पूजन करके उसने राजासे कहा कि हेराजा तुम इस वेतालके आगे पृथ्वीपर गिरकर साष्टाङ्ग प्रणामकरो यह तुम्हारे सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण करेगा राजाने कहा कि हे भिक्षुक पहले तुम प्रणाम करके मुझे दिखाओ तब उसी प्रकारसे मैंभी प्रणाम करूंगा यह सुनकर जैसेही उसने प्रणाम किया वैसेही राजाने खड्गसे उसका शिरकाट डाला और उसका हृदय निकालकर वेतालके अर्पणकिया तब सम्पूर्ण भूतोंने उसकी बड़ी प्रशंसाकरी और वेतालने प्रसन्न होकर कहा कि हे राजा जो विद्याधरोंका चक्रवर्त्तीहोना यह भिक्षुक चाहताथा वह तुमको अन्तमें प्राप्त होगा और प्रथम तुम सब पृथ्वीभरके चक्रवर्त्ती राजाहोगे और मैंने तुमको बहुतक्लेशदियेहैं इससे तुम अभीष्ट वरमांगो यह सुनकर राजाने कहा कि जो आप मेरेऊपर प्रसन्नहै

तो मेरा कौनसा अभीष्ट सिद्धनहीं है तथापि मै आपसे एक यह वर मागताहू कि आपने जो चौबीस कथा मुझसे कही है और यह जो आपकी प्रसन्नताकी कथाहै यह पचीसो कथा ससार मे प्रसिद्धहोवे राजाके यह वचन सुनकर वेतालने कहा कि यह पचीसों कथा ससारमे वेताल पचविंशतिका नामसे प्रसिद्ध होगी और कल्याणकारिणीहोंगी जो कोई इनका एक श्लोकभी पढेगा अथवा सुनेगा उसके सब पाप छूटजायँगे जहा इनका पाठ कियाजायगा वहां यक्षवेताल कूष्माण्ड डाकिनी तथा राक्षसादिकों का भयनहीं होगा यह कहकर वह वेताल मुर्दे मे से निकलगया तदनन्तर सम्पूर्ण देवताओसमेत श्री शिवजी साक्षात् प्रकटहुए और राजा त्रिविक्रमसेन से बोले कि हे वत्स तुमने बहुत अच्छा किया जो इसदुष्ट भिक्षुकको मारडाला यह हठ करके विद्याधरोका चक्रवर्ती होना चाहताथा मैने पहले म्लेच्छरूपमे उत्पन्नहुए दैत्योके नाशकरनेके अर्थ विक्रमादित्य नामसे तुमको अपनेही अशसे उत्पन्नकियाथा अब दुष्टोके दमन करनेको मैने तुम्हे त्रिविक्रमसेन नाममे उत्पन्नकिया है इससे सम्पूर्ण पृथ्वीको जीतके अपने वशमे करके थोडेही कालमे तुम विद्याधरोके चक्रवर्त्तीहोगे और बहुत कालतक उस ऐश्वर्य्यको भोगकरके अन्तमें मेरेही शरीरमे लीनहोजाओगे यह अपराजित नाम खड्ग तुमलो इसके प्रभाव से तुम्हारे सब मनोरथ पूर्णहोगे यह कहके और खड्ग देकर श्रीशिवजी अन्तर्द्धान होगये श्रीशिवजीके चलेजानेपर रात्रि व्यतीतहुई जानके राजाने अपने प्रतिष्ठानपुरमें आकर बडा उत्सवकिया थोडे ही कालमे राजा त्रिविक्रमसेन श्रीशिवजीके दियेहुए खड्गके प्रभावसे पाताल समेत सब पृथ्वीको जीतके निष्कण्टक राज्य करके थोडेही दिनोमे विद्याधरोका चक्रवर्त्ती होगया और बहुत कालतक विद्याधरोंके ऐश्वर्य्यको भोगकर अन्तमे श्रीशिवजीकेही शरीर मे लयहोगया ४१ ॥ इतिवेतालपचविंशतिका ॥

यह कथा कहकर विक्रमकेशरी मत्री ने मृगाकदत्तसे कहा कि हे स्वामी उसवृद्ध ब्राह्मणने मुझसे इसप्रकार वेताल पचविंशतिका कहके फिर यह कहा कि हे पुत्र देखो राजा त्रिविक्रमसेनको वेताल की कृपासे कैसा ऐश्वर्य्य प्राप्तहुआ इससे तुमभी मुझसे मत्र सीखके वेतालको प्रसन्न करके अपने स्वामी मृगाकदत्तको पाओगे हे पुत्र उत्साही मनुष्योको कोई वस्तु अप्राप्य नहीं है और जिन्हें उत्साह नहीं है उनसे कुछ भी नहीं होसक्ता इससे जो कुछ मैं तुम से कहताहू वह तुमकरो तुमने मेरे सर्पका विष दूरकियाहै इससे तुममेरे परम उपकारी हो इसप्रकार कहते हुए उसब्राह्मणसे वेतालका मत्र सीखकर मैने उज्जयिनीमे जाके रात्रिके समय श्मशानमें मुर्दा लाके उसीमत्रसे वेतालका पूजन किया और मनुष्यका मास उसको भोजन करनेको दिया उसमासको खाकर उसने मुझसे कहा कि अभी मै तृप्त नहीं हुआहू मुझे और मास खानेको दे तब मैंने और कहीं मास न पाकर अपनाही मासकाटके उसे भोजन को दिया इसमे वह वेताल प्रसन्न होकर बोला कि हे वीर तुमसे मै बहुत प्रसन्न हू तुम्हारा यह घाव अभी अच्छा होकर भरजायगा अब तुम अभीष्ट वरमागो यहसुनके मैने उससे कहा कि जहाँ मेरे स्वामी मृगाकदत्तहै वहाँ मुझे ले चलो मेरे वचन सुनके वह कन्धेपर मुझे चढाके आकाश मार्ग से ले चला और यहाँ आपको देख वह मुझे उतारकर चलागया हे स्वामी आपके वियोग

में मेरा यही वृत्तान्तहै विक्रमके शरीका यहवृत्तान्त सुनकर मृगाकदत्त अपने बाकी मन्त्रियो के इसी प्रकार मिलनेकी आशाकरके बहुत प्रसन्न हुआ ५८ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायाशशाकवतीलम्बकेद्वात्रिंशस्तरंग ३२ ॥

नमोविघ्नजितेयस्यजानुदेशेविवर्त्तते॥कुंभस्स्तेवनक्षत्रमालारात्रिपुन्टत्यतः १

इसके उपरान्त विक्रमकेशरी गुणाकर निमलबुद्धि, विचित्रकथ, भीमपराक्रम, प्रचण्डशक्ति तथा श्रुतधि ब्राह्मण सहित मृगाकदत्त अपने शेष मन्त्रियोको ढूढताहुआ उज्जयिनीको चला मार्गमें बडे भयकर मरुस्थलको उल्लघन करके एक बडे सुन्दर तडागके तटपर पहुचा उसतडागका निर्मल जल क्या था मानों दिनमें सूर्य के सन्ताप से पिघलेहुए चन्द्रमाका रसही था वह तडाग क्या था मानों त्रैलोक्यकी लक्ष्मी ने अपना प्रतिबिम्ब देखने के लिये मणिका दर्पण बनायाथा नानाप्रकारके सुन्दर कमल उसमें प्रफुल्लितहोरहेथे अनेकप्रकारके सुन्दर २ पक्षी उसके तटपरबैठे शब्द कररहेथे उस तडाग के पश्चिम तटपर एक बहुतबडा दिव्यवृक्ष लगाथा अत्यन्त उन्नत आकाशगामी शाखाओंसे वह ऐसा शोभित होताथा कि मानों कौतुकसे नन्दनवनकी शोभा देखने को उद्यतहै अमृतके समान स्वादिष्ट फल उसकी शाखाओंमें लटकरहेथे पत्तेरूपी हाथोंको हिला २ कर पक्षियोंके शब्दों से वह मानों यह कहताथा कि कोई जैसे तैसे आकर मुझे नहींछुए ऐसे सुन्दर उसवृक्षको मृगाङ्कदत्त तो देखनेलगा परन्तु उसके छओमन्त्री क्षुधासे व्याकुलहोके उसके फलखानेको उसपर चढगये और चढतेही फल रूप होगये तब मृगाकदत्त अपने उन मन्त्रियों को न देखकर उनका नाम लेलेकर पुकारनेलगा और कुछ प्रत्युत्तर न पाकर बहुत विह्वलहोके पृथ्वीपर मूर्च्छितहोके गिरपडा उसे मूर्च्छित देखके श्रुतधि ब्राह्मण ने तडागका शीतलजल उसपर छिडकके मूर्च्छासे जगाकर कहा कि हे स्वामी तुम बुद्धिमान् होकर भी क्यों अधैर्य्य होकर दुःखितहोतेहो (अभ्नुतेहिसकल्याण व्यसनेयोनमुह्यति) जो आपत्ति में मोहित नहींहोता है उसे अवश्य कल्याण प्राप्तहोता है जैसे सर्प के शापसे छूटकर यह सब मन्त्री आप को मिलेथे वैसेही यह तथा अन्य मन्त्री भी आपको फिर मिलजायँगे और थोडेहीकालमें शशाकवती भी आपको मिलजायगी श्रुतधिके यह वचन सुनकर मृगाङ्कदत्तने कहा कि हे मित्र ब्रह्माने हमलोगों के नाशहीके लिये यह रचनाकी है नहीं तो कहा रात्रिमें भीमपराक्रम से वेतालका मिलना कहा उस से शशाङ्कवती का ज्ञानहोना कहा अयोध्या से शशाङ्कवती के निमित्त चलना कहा विन्ध्याचल में सर्पके शापसे हमलोगों का परस्पर वियोग होना फिर कहा क्रमसे तुम्हारा का मिलजाना और कहा वृक्षमें उनका फिर नष्ट होजाना किसी भूतने इसवृक्षपर इन्हें नष्ट करदियाहै उनके बिना मैं शशाङ्कवतीको लेकर क्या करूंगा यहकहकेवह श्रुतधिके निवारण करनेपर भी उसतडागमें अपने प्राण देनेको उद्यतहुआ तब यह आकाशवाणी हुई कि हे पुत्र साहस न करो अन्तमें तुम्हारा कल्याणही होगा इस वृक्षपर साक्षात् गणेशजीका निवासहै तुम्हारे मन्त्रियोंने अज्ञानसे उनका निरादर कियाहै यह सब बिना

तो मेरा कौनसा अभीष्ट सिद्धनही है तथापि मै आपमे एक यह वर मागताहू कि आपने जो चौबीस कथा मुझसे कही हैं और यह जो आपकी प्रसन्नताकी कथाहै यह पच्चीसों कथा ससार में प्रसिद्धहोयँ राजाके यह वचन सुनकर वेतालने कहा कि यह पच्चीसों कथा ससारमे वेताल पचविंशतिका नामसे प्रसिद्ध होगी और कल्याणकारिणीहोगी जो कोई इनका एक श्लोकभी पढेगा अथवा सुनेगा उसके सब पाप छूटजायँगे जहा इनका पाठ कियाजायगा वहाँ यक्षवेताल कूष्माण्ड डाकिनी तथा राक्षसादिकों का भयनहीं होगा यह कहकर वह वेताल मुर्दे मेसे निकलगया तदनन्तर सम्पूर्ण देवताओंसमेत श्री शिवजी साक्षात् प्रकटहुए और राजा त्रिविक्रमसेन से बोले कि हे वत्स तुमने बहुत अच्छा किया जो इसदुष्ट भिक्षुकको मारडाला यह हठ करके विद्याधरोंका चक्रवर्ती होना चाहताथा मैने पहले म्लेच्छरूपसे उत्पन्नहुए दैत्योंके नाशकरनेके अर्थ विक्रमादित्य नामसे तुमको अपनेही अशसे उत्पन्नकियाथा अब दुष्टोंके दमन करनेको मैने तुम्हे त्रिविक्रमसेन नामसे उत्पन्नकिया है इससे सम्पूर्ण पृथ्वीको जीतके अपने वशमे करके थोडेही कालमे तुम विद्याधरोके चक्रवर्तीहोगे और बहुत कालतक उस ऐश्वर्य्यको भोगकरके अन्तमे मेरेही शरीरमे लीनहोजाओगे यह अपराजित नाम खड्ग तुमलो इसके प्रभाव से तुम्हारे सब मनोरथ पूर्णहोगे यह कहके और खड्ग देकर श्रीशिवजी अन्तर्द्धान होगये श्रीशिवजीके चलेजानेपर रात्रि व्यतीतहुई जानके राजाने अपने प्रतिष्ठानपुरमे आकर बडा उत्सवकिया थोडे ही कालमे राजा त्रिविक्रमसेन श्रीशिवजीके दियेहुए खड्गके प्रभावसे पाताल समेत सब पृथ्वीको जीतके निष्कण्टक राज्य करके थोडेही दिनोमें विद्याधरोका चक्रवर्ती होगया और बहुत कालतक विद्याधरोंके ऐश्वर्य्यको भोगकर अन्तमे श्रीशिवजीकेही शरीर मे लयहोगया ४१ ॥ इतिवेतालपचविन्शतिका ॥

यह कथा कहकर विक्रमकेशरी मन्त्री ने मृगाकदत्तसे कहा कि हे स्वामी उसवृद्ध ब्राह्मणने मुझसे इसप्रकार वेताल पचविन्शतिका कहके फिर यह कहा कि हे पुत्र देखो राजा त्रिविक्रमसेनको वेताल की कृपासे कैसा ऐश्वर्य्य प्राप्तहुआ इससे तुमभी मुझसे मन्त्र सीखके वेतालको प्रसन्न करके अपने स्वामी मृगाकदत्तको पाओगे हे पुत्र उत्साही मनुष्योंको कोई वस्तु अप्राप्य नहीं है और जिन्हें उत्साह नहीं है उनसे कुछ भी नहीं होसक्ता इससे जो कुछ मैं तुम से कहताहू वह तुमकरो तुमने मेरे सर्पका विष दूरकियाहै इससे तुममेरे परम उपकारी हो इसप्रकार कहते हुए उसब्राह्मणसे वेतालका मन्त्र सीखकर मैने उज्जयिनीमें जाके रात्रिके समय श्मशानमें मुर्दा लाके उसीमन्त्रसे वेतालका पूजन किया और मनुष्यका मास उसको भोजन करनेको दिया उसमासको खाकर उसने मुझसे कहा कि अभी मैं तृप्त नहीं हुआहू मुझे और मास खानेको दे तब मैने और कहीं मास न पाकरअपनाही मासकाटके उसे भोजन को दिया इससे वह वेताल प्रसन्न होकर बोला कि हे वीर तुमसे मै बहुत प्रसन्न हू तुम्हारा यह घाव अभी अच्छा होकर भरजायगा अब तुम अभीष्ट वरमागो यहसुनके मैने उससे कहा कि जहाँ मेरे स्वामी मृगाकदत्तहैं वहाँ मुझे ले चलो मेरे वचन सुनके वह कन्धेपर मुझे चढाके आकाश मार्ग से ले चला और यहाँ आपको देख वह मुझे उतारकर चलागया हे स्वामी आपके वियोग

में मेरा यही वृत्तान्तहै विक्रमकेशरीका यहवृत्तान्त सुनकर मृगाकदत्त अपने बाकी मन्त्रियों के इसी प्रकार मिलनेकी आशाकरके बहुत प्रसन्न हुआ ५८ ॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशांकवतीलम्बकेद्वात्रिंशस्तरंग ३२ ॥

नमोविघ्नजितेयस्यजानुदेशेविवर्त्तते॥कुम्भस्स्तेवनक्षत्रमालारात्रिपुन्नृत्यतः १

इसके उपरान्त विक्रमकेशरी गुणाकर विमलबुद्धि, विचित्रकथ, भीमपराक्रम, प्रचण्डशक्ति तथा श्रुतधि ब्राह्मण सहित मृगाकदत्त अपने शेष मन्त्रियोंको ढूंढताहुआ उज्जयिनीको चला मार्गमें बड़े भयङ्कर मरुस्थलको उल्लंघन करके एक बड़े सुन्दर तडागके तटपर पहुंचा उसतडागका निर्मल जल क्या था मानों दिनमें सूर्य के सन्ताप से पिघलेहुए चन्द्रमाका रसही था वह तडाग क्या था मानों त्रैलोक्यकी लक्ष्मी ने अपना प्रतिबिम्ब देखने के लिये मणिका दर्पण बनायाथा नानाप्रकारके सुन्दर कमल उसमें प्रफुल्लितहोरहेथे अनेकप्रकारके सुन्दर २ पक्षी उसके तटपरबैठे शब्द कररहेथे उस तडाग के पश्चिम तटपर एक बहुतबड़ा दिव्यवृक्ष लगाथा अत्यन्त उन्नत आकाशगामी शाखाओंसे वह ऐसा शोभित होताथा कि मानों कौतुकसे नन्दनवनकी शोभा देखने को उद्यतहै अमृतके समान स्वादिष्ट फल उसकी शाखाओंमें लटकरहेथे पत्तेरूपी हाथोंको हिला २ कर पक्षियोंके शब्दों से वह मानों यह कहताथा कि कोई जैसे तैसे आकर मुझे नहींछुए ऐसे सुन्दर उसवृक्षको मृगाकदत्त तो देखनेलगा परन्तु उसके छओमन्त्री क्षुधासे व्याकुलहोके उसके फलखानेको उसपर चढगये और चढतेही फल रूप होगये तब मृगाकदत्त अपने उन मन्त्रियों को न देखकर उनका नाम लेलेकर पुकारनेलगा और कुछ प्रत्युत्तर न पाकर बहुत विह्वलहोके पृथ्वीपर मूर्च्छितहोके गिरपडा उसे मूर्च्छित देखके श्रुतधि ब्राह्मण ने तडागका शीतलजल उसपर छिडकके मूर्च्छासे जगाकर कहा कि हे स्वामी तुम बुद्धिमान् होकर भी क्यों अधैर्य्य होकर दुखितहोतेहो (अत्नुतेहिसकल्याण व्यसनेयोनमुह्यति) जो आपत्ति में मोहित नहींहोता है उसे अवश्य कल्याण प्राप्तहोता है जैसे सर्प के शापसे छूटकर यह सब मन्त्री आप को मिलेथे वैसेही यह तथा अन्य मन्त्री भी आपको फिर मिलजायँगे और थोडेहीकालमें शशांकवती भी आपको मिलजायगी श्रुतधिके यह वचन सुनकर मृगाकदत्तने कहा कि हे मित्र ब्रह्माने हमलोगों के नाशहीके लिये यह रचनाकी है नहीं तो कहां रात्रिमें भीमपराक्रम से वेतालका मिलना कहां उस से शशांकवती का ज्ञानहोना कहां अयोध्या से शशांकवती के निमित्त चलना कहां विन्ध्याचल में सर्पके शापसे हमलोगों का परस्पर वियोग होना फिर कहां क्रमसे कुछेकों का मिलजाना और कहां वृक्षमें उनका फिर नष्ट होजाना किसी भूतने इसवृक्षपर इन्हें नष्ट करदियाहै उनके बिना मैं शशांकवतीको लेकर क्या करूंगा यहकहकेवह श्रुतधिके निवारण करनेपर भी उसतडागमें अपने प्राण देनेको उद्यतहुआ तब यह आकाशवाणी हुई कि हे पुत्र साहस न करो अन्तमें तुम्हारा कल्याणही होगा इस वृक्षपर साक्षात् गणेशजीका निवासहै तुम्हारे मन्त्रियोंने अज्ञानसे उनका निरादर कियाहै यह सब बिना

हाथ पैर धोये और आचमन किये विनाही फल लेनेकेलिये इस वृक्षपर चढगये इससे गणेशजीके इस शापसे कि तुम फल लेनेको आयेहो इसीसे फल होजाओ, फलरूप होगये और जो तुम्हारे चारमंत्री अभी नहीं मिले हैं वह भी इसीप्रकारसे इसमें फल होकर लटकरहे हैं इससे तुम तप करके परम कृपालु श्रीगणेशजी की आराधना करो उनकी कृपा से तुम्हारे सर्वकार्य्य-सिद्धहोंगे इस आकाशबाणी को सुनकर मृगाकदत्त वहुत प्रसन्नहोके उस तडागमें स्नान करके उसी वृक्षमें गणेशजीका पूजन करके हाथजोडके उनकी यह स्तुति करनेलगा कि हे गणेशजी आपकी जयहोय जिस समय आप ताडव नृत्यमे अपने चरणों से पृथ्वीको दवाते हों तव पृथ्वी के टेढे होजानेसे ऐसी शोभा होती है कि मानों सम्पूर्ण पृथ्वी वन तथा पर्वत आपको प्रणाम कररहे हैं देवता दैत्य तथा मनुष्योंसे पूजन कियेहुए चरण कमलवाले हे गणेशजी आपकी सदैव जयहोय हे अनेक प्रकारकी सिद्धियोंकी निधिके कुभरूप गणेशजी आपकी जयहोय हे एकसाथही उदित होनेवाले वारह सूर्य्यों के समान तेजवाले आपकी जयहोय इन्द्र विष्णु तथा शिव आदिक देवताओं से भी दुर्जय दैत्यों के नाश करनेवाले भक्तोंके पापों को दूरकरके सदैव दयाकरनेवाले हे गणेशजी आपकी सदैव जयहोय अग्निकी दीप्तिमान ज्वालाके समान जाज्वल्यमान परशुके धारणकरनेवाले हे गणेशजी आपकी जयहोय हे गणेशजी त्रिपुर युद्धमें श्री शिवजीकी जयके लिये पार्वतीजीने भी आपका पूजन कियाहै मैं आपकी शरणमे प्राप्तहोके आपको वारवार नमस्कार करताहूं इसप्रकार स्तुतिकरके मृगाकदत्त ग्यारह दिनतक उसी वृक्षके नीचे निराहार होकर तपकरतारहा वारहवेंदिन रात्रिके समय स्वप्नमें श्रीगणेशजीने उससे कहा कि हे पुत्र मैं तुमपर प्रसन्नहूं तुम्हारे मंत्री शापसे छूटकर तुम्हे मिलजायँगे उनके साथ जाकर तुम शशाकवती को पाकर फिर अपनी नगरीमें आकर सम्पूर्ण पृथ्वीका राज्यकरोगे गणेशजीके यह वचन सुनकर मृगाकदत्त प्रातःकाल उठके श्रुतधि से यहसव स्वप्नका वृत्तान्त कहके स्नान पूर्वक श्रीगणेशजीका पूजन करके जैसेही उसवृक्षकी प्रदक्षिणा करनेलगा वैसेही उसके दशों मंत्री व्याघ्रसेन, स्थूलवाहु, मेघबल तथा दृढमुष्टि और छ वह जो पहिले मिलचुके थे वृक्षपरसे उतरकर उसके पैरोंपर गिरे वह दशों मंत्री एकसाथही मिले देखकर मृगाकदत्तने वहुत प्रसन्न होकर उनसवका आलिंगनकरके सबसे कुशलपूछी और वह सब भी श्रुतधिसे मृगाकदत्तकी विकलता तथा उसके वारह दिनतक निराहार रहनेका वृत्तान्त सुनके वहुत प्रसन्न होकर अपने को सनाथ मानते भये इसके उपरान्त तडागमें स्नानकर सन्ध्या आदिसे निवृत्तहुए उनसव मंत्रियों के साथ मृगाकदत्तने सुखपूर्वक व्रतका पालन किया ५९॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशांकवतीलम्बकेत्रयस्त्रिंशस्तरंग ३३॥

इसके उपरान्त उसीतडागके तटपर पारण करके सुखपूर्वक वैठेहुए मृगाकदत्तने उसीदिन मिलेहुए अपने चारों मन्त्रियोंसे अपनेसे वियोगहोनेके उपरान्तका सव वृत्तान्तपूछा उनमेंसे व्याघ्रसेनने कहा सुनिये मैं सव वृत्तान्त कहताहूं जिससमय पारावत सर्पके शापसे मैं आपलोगोंसे वियुक्तहुआ तव मोहितहोकर कुछ देरतक उसी वनमें घूमा किया कुछ देरके वाद मोहसे निवृत्तहोकर भी मुझे रात्रिमें

अन्धकारके कारण मार्गादिक कुछभी नहीं दिखाई दिया बडे कष्टसे उसरात्रि के व्यतीत होनेपर सूर्य्य भगवान्के तेजमे दिशाओं को प्रकाशित देखकर मैंने शोचा कि हाय हमारा स्वामी कहागया होगा हम लोगों के विना अब उसकी क्या दशाहोगी मै उसे कैसे कहापाऊं अच्छा उज्जयिनी कोही चलना चाहिये कदाचित् वह भी वहीं गयाहोगा यह शोचकर महाघोर वनमें चलते २ बडे क्लेशसे मैं एक तडागके निकट पहुचा वह तडाग अपने प्रफुल्लित कमलरूपी नेत्रोंसे मानों देखकर तरगरूपी हाथोंको हिलाकर हसादि पक्षियोंके मनोहर शब्दों से पथिकोंको बुलारहा था सत्पुरुषके समान उस तडागको देखकर मेरा सन्ताप जातारहा उसमें स्नान करके कमल की हडियालाकर जलको पीकर जैसेही मैं बैठा वैसेही दृढमुष्ठि, स्थूलवाहु तथा मेघवल यह तीनों भी वहीं आये हम चारों आपके वृत्तान्तको परस्पर पूछके और कुछ भी न जानके आपके वियोग से शरीर त्यागने को उद्यतहुए इतने में दीर्घतप नाम महर्षिका महातपनाम पुत्र कालेमृगचर्मको ओढेहुए वायें हाथमे कमण्डललिये और दहने हाथ में मालालियेहुए वहुत से छोटे२ मृगों के वच्चे तथा मुनि पुत्रों को साथ में लियेहुए वहीं स्नानकरने को आया वह हम लोगों को तडागमें गिरनेको उद्यत देखकर हमारे निकटआके वोला कि हे महापुरुषो यह पापमतकरो कातरलोग दुःखसे अन्धेहोकर विपत्तिमे पडते हैं और धीरपुरुष विवेकरूपी दृष्टि से सन्मार्गको देखकर कभी आपत्तिरूपी गर्टोमें नहीं गिरतेहैं और निस्सन्देह अपने कार्य्यको सिद्धकरतेहैं तुमलोगों की भव्यआकृतिहै तुम्हारा कल्याणहोगा कहो तुमको क्या दुःखहै उसके वचन सुनके मैंने सब वृत्तान्त कहदिया तब उसने हम लोगोंको समझाके मरनेसे निवृत्तकरके तडागमें जाके अपने साथियों समेत स्नान पूर्व्वक सन्ध्यावन्धनादिक कर्मकिया उसकृत्यको समाप्त करके वह मुनिपुत्र हम लोगोंको अतिथि सत्कारकेलिये अपने आश्रमको लेगया वहा हम लोगोंको एक स्थानमें वैठाल कर उसने भिक्षापात्रलेकर आश्रम वृक्षोंके पासजाके उनसे भिक्षामागी क्षणभरही मे उन वृक्षोंसे गिरेहुए फलोंसे उसका भिक्षापात्र भरगया वह फललाकर उसने हमलोगोंको दिये अमृतके समान उनस्वादिष्ट फलोंको खाकर हमलोगोंने वह दिन वहीं व्यतीत किया रात्रिके समय आकाशमें नक्षत्र व्याप्तहोगये मानों सूर्यके समुद्रमे गिरनेसे समुद्रकी छींटे उडकर आकाशमें गई थीं सूर्य्य को अस्त देखके चन्द्रमा मानों वैराग्यसे चन्द्रिकारूपी धौतवस्त्रको पहनकर उदयाचलके तपोवनमे प्राप्तहुआ उस समय अपने २ कार्य्योंको करके एकस्थान में बैठेहुए सपूर्ण मुनियोंके दर्शनों के निमित्त हमलोगगये और उनको प्रणामकरके उन्हींके निकट बैठगये मुनियोंने हमलोगोंसे पूछा कि तुम कहासे आयेहो तब उस मुनिकुमारने हमलोगोंका सब वृत्तान्त उनसे कहदिया हमलोगोंके वृत्तान्तको जानके कण्वमुनिने कहा कि तुम वीरहोकरभी ऐसे अधीर क्यों होतेहो (आपद्यमग्नधैर्य्यत्व सम्पद्यनभिमानिता यदुत्साहस्यत्यागस्तद्धिसत्पुरुषव्रतम् महान्तश्चमहान्त्येव कृच्छ्राण्युत्तीर्य्यधैर्य्यत महतोर्थान्समासाद्यमहत्त्वन्दद्रश्नुवान् वन्) आपत्ति में धैर्य्य का न छोडना सम्पत्तिमें अभिमान न करना और उत्साहको न त्यागना यह सत्पुरुषोंका व्रतहै महात्मालोग धैर्य्यसे महाक्लेशों को उल्लघन करके और महासम्पत्तियों को पाकरके

हाथ पैर धोये और आचमन किये बिनाही फल लेनेकेलिये इस वृक्षपर चढ़गये इससे गणेशजीके इस शापसे कि तुम फल लेनेको आयेहो इसीसे फल होजाओ, फलरूप होगये और जो तुम्हारे चारमंत्री अभी नहीं मिले हैं वह भी इसीप्रकारसे इसमें फल होकर लटकरहे हैं इससे तुम तप करके परम कृपालु श्रीगणेशजी की आराधना करो उनकी कृपा से तुम्हारे सर्वकार्य्य सिद्धहोंगे इस आकाशवाणी को सुनकर मृगाकदत्त बहुत प्रसन्नहोके उस तडागमें स्नान करके उसी वृक्षमें गणेशजीका पूजन करके हाथजोडके उनकी यह स्तुति करनेलगा कि हे गणेशजी आपकी जयहोय जिस समय आप ताडव नृत्यमे अपने चरणों से पृथ्वीको दबाते हो तब पृथ्वी के टेढे होजानेसे ऐसी शोभा होती है कि मानो सम्पूर्ण पृथ्वी वन तथा पर्वत आपको प्रणाम कररहे हैं देवता दैत्य तथा मनुष्योंसे पूजन कियेहुए चरण कमलवाले हे गणेशजी आपकी सदैव जयहोय हे अनेक प्रकारकी सिद्धियोंकी निधिके कुम्भरूप गणेशजी आपकी जयहोय हे एकसाथही उदित होनेवाले बारह सूर्य्यों के समान तेजवाले आपकी जयहोय इन्द्र विष्णु तथा शिव आदिक देवताओं से भी दुर्जय दैत्यों के नाश करनेवाले भक्तोंके पापों को दूरकरके सदैव दयाकरनेवाले हे गणेशजी आपकी सदैव जयहोय अग्निकी दीप्तिमान ज्वालाके समान जाज्वल्यमान परशुके धारण करनेवाले हे गणेशजी आपकी जयहोय हे गणेशजी त्रिपुर युद्धमें श्री शिवजीकी जयके लिये पार्वतीजीने भी आपका पूजन कियाहै मैं आपकी शरणमें प्राप्तहोके आपको बारबार नमस्कार करताहूं इसप्रकार स्तुतिकरके मृगाकदत्त ग्यारह दिनतक उसी वृक्षके नीचे निराहार होकर तपकरतारहा बारहवेदिन रात्रिके समय स्वप्नमे श्रीगणेशजीने उससे कहा कि हे पुत्र मैं तुमपर प्रसन्नहूं तुम्हारे मंत्री शापसे छूटकर तुम्हें मिलजायँगे उनके साथ जाकर तुम शशाङ्कवती को पाकर फिर अपनी नगरीमें आकर सम्पूर्ण पृथ्वीका राज्यकरोगे गणेशजीके यह वचन सुनकर मृगाकदत्त प्रातःकाल उठके श्रुतधि से यहसब स्वप्नका वृत्तान्त कहके स्नान पूर्वक श्रीगणेशजीका पूजन करके जैसेही उसवृक्षकी प्रदक्षिणा करनेलगा वैसेही उसके दशों मंत्री व्याघ्रसेन, स्थूलबाहु, मेघबल तथा दृढमुष्टि और छ वह जो पहिले मिलचुके थे वृक्षपरसे उतरकर उसके पैरोंपर गिरे वह दशों मंत्री एकसाथही मिले देखकर मृगाकदत्तने बहुत प्रसन्न होकर उनसबका आलिंगनकरके सबसे कुशलपूछी और वह सब भी श्रुतधिसे मृगाकदत्तकी विकलता तथा उसके बारह दिनतक निराहार रहनेका वृत्तान्त सुनके बहुत प्रसन्न होकर अपने को सनाथ मानते भये इसके उपरान्त तडागमें स्नानकर सन्ध्या आदिसे निवृत्तहुए उनसब मन्त्रियों के साथ मृगाकदत्तने सुखपूर्वक व्रतका पालन किया ५९॥

इतिश्रीकथासरित्सागरभाषायांशशाङ्कवतीलम्बकेत्रयस्त्रिंशस्तरंगः ३३॥

इसके उपरान्त उसीतडागके तटपर पारण करके सुखपूर्वक बैठेहुए मृगाकदत्तने उसीदिन मिलेहुए अपने चारों मन्त्रियोंसे अपनेसे वियोगहोनेके उपरान्तका सब वृत्तान्तपूछा उनमेंसे व्याघ्रसेनने कहा सुनिये मैं सब वृत्तान्त कहताहूं जिससमय पारावत सर्पके शापसे मैं आपलोगों से वियुक्तहुआ तब मोहितहोकर कुछ देरतक उसी वनमें घूमा किया कुछ देरके बाद मोहसे निवृत्तहोकर भी मुझे रात्रिमे

पछी तेने अनेक क्षुद्र पाखंमीरूप जे ढंकपक्षीउं ते पोताने वसगामी जाणता थका तेने विप्रतारीने संयमरूप जीवितव्य थकी चुकावे (दियस्सछावचअपत्तजाय के०) पाखरहित एवो जे पक्षीनो बालक तेनी पेरे ते अगीतार्थ शिष्यने (हरिंसुणपावधम्माअ णेगे के०) ते पापधर्मि एवा अनेक पाखंमी तेने संयम थकी हरण करे ॥ ३ ॥ ए माटे चारित्रवान साधुए सर्वकाल गुरुपासे रहेवो ते कहेछे (उसाणमिछेमणुएसमाहि के०) जावजीव सुधी गुरुनी पासे रहेवानी वांछा करे जे सुसाधु छे ते एवीज सन्मार्गरूप समाधिनी वांछा करे एटले परमार्थथकी मनुष्य तेनेज कहिए के ज गुरुकुलवासे वसतो थको पोताना नापेला अंगीकार करेला सन्मार्गनो निर्वाह करे (अणोसिएणंतकरितिणच्चा के०) गुरुकुलवासे अणवसतो एटले स्वछंदाचारी छतो संसारनो अंत नकरे उलटो अनंत संसारी थाय संसारनी वृद्धि करे एवु जाणीने (उनासमाणेदवियस्सवित्त के०) सर्वकाल गुरुकुलवासे वसे गुरुनी सेवा करे एम मुक्तिगमन योग्य साधुना आचारने अत्यंत दीपावतो थको जिनजाषित धर्मने दीपावे एवु जाणीने (णिक्कसेबहिया आसुपन्ने के०) आसुप्रज्ञ एटले जे पंमित होय ते गछथकी बाहेर नीकले नही अर्थात् स्वछंदी नथाय ॥ ४ ॥

॥ दीपिका—दृष्टांतयोजनामाह । एवमुक्तप्रकारेण शिक्षकं नवदीक्षितं सूत्रार्थविकलमगीतार्थमपुष्टधर्माणं पाखंडिका प्रतारयंति प्रतार्यच गछान्निःसारयंति निःसारितंच संतमस्माकं वश्यमित्येव मन्यमानाअजातपक्षं द्विजशावं पक्षिपोतमिव ढंकादयः पापकर्माणः कुतीर्थिकाः स्वजनाराजादयोवाऽनेके हृतवंतोहरंति हरिष्यंति चेति कालत्रयोपलक्षणार्थं जूतनिर्देशः ॥ ३ ॥ अवसानं गुरोरंतिके स्थानं समाधिसन्मार्गानुष्ठानरूपं यावज्जीवमिछेन्मनुजः साधुर्यावज्जीवं गुरुकुलवासी स्यादित्यर्थः । गुरोरंतिकेऽनुषितोऽव्यवस्थितः कर्मणोऽनंतकरोऽतकारी नस्यादिति ज्ञात्वा गुरुं सेवेत तद्हितस्य विज्ञानमुपहासोजवेत् । यतः । नहि जवति निर्विगोपकमनुपासितगुरुकुलस्य विज्ञानं ॥ प्रकटितपश्चाद्भागं, पश्यत नृत्यं मयूरस्य ॥ १ ॥ ड्व्यस्य मुक्तियोग्यस्य साधोर्वृत्तमनुष्ठानमुद्भासयन्ननुतिष्ठन् ननिष्कसेन्ननिर्गछेद्गछाद्बहिराशुप्रज्ञः पंडितः ॥ ४ ॥

॥ टीका—एवं दृष्टांतं प्रदर्श्य दार्ष्टांतिकं प्रदर्शयितुमाह । (एवंतुसेहपीत्यादि) एवमित्युक्तप्रकारेण । तुशब्दः पूर्वस्माद्विशेषं दर्शयति । पूर्वं ह्यसजातपक्षत्वादव्यक्तता प्रतिपादिता इहत्वपुष्टधर्मतयेति । अयं विशेषोयथा द्विजपोतमसंजातपक्षं स्वनीडान्निर्गतं क्षुद्रसत्वाविनाशयंति एवं शिष्यकमभिनवप्रव्रजितं सूत्रार्थानिष्पन्नमगीतार्थमपुष्टधर्माणं सम्यगपरिणतधर्मपरमार्थं संतमनेकपापधर्माणः पाषंडिकाः प्रकारयंति प्रतार्यच गछस

मुद्रान्नि सारयति नि सारितच सत विषयोन्मुखतामापादितमपगतपरलोकनयमस्माक
वश्यमित्येव मन्यमाना । यदिवा (वुसित्ति) चारित्र तदसदनुष्ठानतोनि सार मन्यमा
नाअजातपक्ष द्विजशावकमिव पक्षिपोतमिव ढकादय पापधर्माणोमिथ्यात्वाविरति
प्रमादकषायकलुषितातरात्मान कुतीर्थिका स्वजनाराजादयोवाऽनेके वहवोहृतवतोहर
ति हरिष्यति चेति कालत्रयोपलक्षणार्थं नूतनिर्देशइति । तथाहि । पाषडिकाएवमगीता
र्थं प्रतारयति । तद्यथा । युष्मदर्शनेनाग्निप्रज्वालनविषापहारशिखाछेदादिका प्रत्यया
दृश्यते तथाऽणिमाद्यष्टगुणमैश्वर्यंच नास्ति तथा न राजादिनिर्बहुनिराश्रित । याप्यहि
सोच्यते नवदागमे सापि जीवाकुलत्वाल्लोकस्य दु साध्या नापि नवता स्नानादिक शौच
मस्तीत्यादिकानि शठोक्तिनिरिंद्रजालकल्पानिर्मुग्धजन प्रतारयति स्वजनादयश्चैव विप्र
लनयति । तद्यथा । न नवतमतरेणास्माक कश्चिदस्ति पोषक पोष्योवा त्वमेवास्माक
सर्वस्व त्वया विना शून्यमानाति तथा शब्दादिविषयोपनोगामत्रणेन सद्धर्माद्यावयति।
एव राजादयोपि द्रष्टव्यास्तदेवमपुष्टधर्माणमेकाकिन वहुनि प्रकार प्रतार्यापहरेयुरिति।
॥ ३ ॥ तदेवमेकाकिन सार्थोर्यतावहवोदोषा प्राडुर्नवत्यत सदा गुरुपादमूले स्थातव्य
मित्येतद्दर्शयितुमाह । (उसाणमिछेइत्यादि) अवसान गुरोरतिके स्थान तथावज्जीव
समाधि सन्मार्गानुष्ठानरूपमिछेदनिलषेन्मनुजोमनुष्य साधुरित्यर्थ । सएव परमार्थ
तोमनुष्योयोयथाप्रतिज्ञात निर्वाहयति । तच्च सदागुरोरतिके व्यवस्थितेन सदनुष्ठान
रूप समाधिमनुपालयता निर्वाह्यते नान्यथेत्येतद्दर्शयति । गुरोरतिकेऽनुषितोव्यवस्थि
त स्वछदविधायी समाधि सदनुष्ठानरूपस्य कर्मणोयथाप्रतिज्ञातस्य वा नातकरोनव
तीति ज्ञात्वा सदा गुरुकुलवासोऽनुसर्तव्यस्तद्रहितस्य विज्ञानमुपहास्यप्राय नवतीति ।
उक्तंच । नहि नवति निर्विगोपकमनुपासितगुरुकुलस्य विज्ञान ॥ प्रकटितपश्चाद्भाग प
श्यत नृत्य मयूरस्य ॥ १ ॥ तथा जागलविलग्नवालुका पार्ष्णिप्रहारेण प्रगुणा दृष्ट्वाऽपरो
ऽनुपासितगुरुरश्वोराज्ञी सजातगलगडा पार्ष्णिप्रहारेण व्यापादितवानित्यादयोऽनुपासि
तगुरोर्वहवोदोषा ससारवर्धनाद्यानवतीत्यवगम्यानया मर्यादया गुरोरतिके स्थातव्यमि
ति दर्शयति । अवनासयन्नुद्भासयन् सम्यगनुतिष्ठन् द्रव्यस्य मुक्तिगमनयोग्यस्य सत्सा
धोरागद्वेषरहितस्य सर्वज्ञस्य व्यावृत्तमनुष्ठान तदसदनुष्ठानतोऽवनासयेद्धर्मकथिक कथ
नतोगोनासयेदिति । तदेव यतोगुरुकुलवासोवहूना गुणानामाधारोनवत्यतान निष्कसे
न्निर्गछेत गछाद्गुरोतिकाद्वा वहि स्वछदाचारी नवेदाशुप्रज्ञइति क्षिप्रप्रज्ञस्तदतिके निव
सन् विषयकषायाभ्यामात्मान ह्रियमाण ज्ञात्वा क्षिप्रमेवाचार्योपदेशान्मतएव वा निव
र्तयति सत्समाधौ व्यवस्थापयतीति ॥ ४ ॥

जे ठाणउ य सयणासणे य, परक्कमे यावि सुसाहुजुत्ते॥समितीसु गुत्तीसु य आयपन्ने, वियागरिते य पुढो वएज्जा ॥५॥ सद्दाणि सोच्चा अदु भेरवाणि, अणासवे तेसु परिवएज्जा॥ निद्दं च भिक्खू न पमाय कुज्जा, कहकह वा वितिगिच्छ तिन्ने ॥ ६ ॥

अर्थ-(जेके०) जे वैराग्य आदरी चारित्रवंत थको (ठाणउंय के०) स्थान श्री कायोत्सर्गादिकने विषे (सयणासणेय के०) तथा शयन अने आशनने विषे च कार शब्दथकी गमनने विषे (परक्कमेयावि के०) पराक्रम एटले बल फोरवे ते केवो थको फोरवे तोके (सुसाहुजुत्ते के०) रुडा आचारसहित एवो छतो (समितीसुगुत्ती सुयआयपन्ने के०) पांच समिति अने त्रण गुप्तिने विषे आयपन्न एटले सम्यक् जाण (वियागरितेयपुढोवएज्जो के०) अथवा अन्यने उपदेश देतो ते उपदेशने गुरु प्रासाद थकी जाणीने तेने जुदो जुदो विचार कहे ॥५॥ (सद्दाणिसोच्चाअदुभेरवाणि के०) शब्द ते वशना वीणादिक कर्णने सुखना करनार तथा भैरव एटले कर्णने दुःखना करनार एवा शब्द सांभलीने (अणासवे के०) ते शब्दादिकने विषे राग द्वेष रहित एवो छतो (सुप रिवएज्जा के०) सुधो संयम पाले (निद्दचनिक्खूनपमायकुज्जा के०) तथा निद्रारूप जे प्रमाद ते पण भिक्षु नकरे ए प्रकारे प्रवर्त्ततो (कहकहवावितिगिछतिन्ने के०) कोई पण प्रकारे वितिगिछ एटले संदेह तेथकी नि क्रांत थाय एटलेसंदेह रहित थाय ॥६॥

॥ दीपिका-प्रव्रज्यां प्रति उद्यतोनित्यं गुरुकुलवासतः स्थानतश्च स्थानमाश्रित्य तथा शयनतआसनतः । चकाराद्गमनमाश्रित्य तथा तपश्चरणादौ पराक्रमतश्च साधोरुद्यतविहा रिणोये समाचारास्तैः समायुक्तः स्थानशयनासनादावुपयुक्तइत्यर्थः । समितिषु गुप्तिषु चागताउत्पन्ना प्रज्ञा यस्य सआगतप्रज्ञः संजातकृत्याऽकृत्यविवेकः स्वतः स्यात् ।' परस्या पि व्याकुर्वन् कथयन् पृथक् समितिगुप्तीनां पालनं तत्फलंच वदेत् ॥५॥ शब्दान् मनो हरान् श्रुत्वाऽथवा भैरवान् कर्णकटून् श्रुत्वा तेषु शब्देष्वनाश्रवोमध्यस्थोभूत्वा परिव्रजे त्संयमानुष्ठायी स्यात् । तथा निद्रां प्रमादरूपां भिक्षुर्नकुर्यात् । तदेव गुरूपदेशात् कथं कथमपि विचिकित्सा विप्लुतिरूपा वितीर्णोनिष्क्रांतः स्यात् ॥ ६ ॥

॥ टीका-तदेवं प्रव्रज्यामभ्युद्यतोनित्यं गुरुकुलमावसन् सर्वत्र स्थानशयनासनादावु पयुक्तोभवति तदुपयुक्तस्य च गुणमुद्भावयन्नाह । (जेठाणउ यइत्यादि) योहि निर्वि ण्णसंसारतया प्रव्रज्यायामभ्युद्यतोनित्यं गुरुकुलवासतः स्थानतश्च स्थानमाश्रित्य तथा

शयनतश्चासनत । एकश्चकार समुच्चये द्वितीयोऽनुक्तसमुच्चयार्थे । चकाराज्जमनमाश्रि त्यागमनच तथा तपश्चरणादौ पराक्रमतश्च साधोरभ्युक्तविहारिणोये समाचारास्तै समा युक्त सुसाधुर्हि यत्र स्थान कायोत्सर्गादिक विधत्ते तत्र सम्यक्प्रत्युपेक्षणादिका क्रिया करोति कायोत्सर्गं च मेरुरिव निष्प्रकंपशरीरोनिस्पृहोविधत्ते तथा शयन च कुर्वन् प्रत्युपे क्ष्यत संस्तारक तन्नुव काय वोचितकाले गुरुभिरनुज्ञात स्वपेत्तत्रापि जाग्रदिव नात्यर्त नि सहइति । एवमासनादिष्वपि तिष्ठता पूर्ववत्संकुचितगात्रेण स्वाध्यायध्यानपरायणे न सुसाधुना नवितव्यमिति । तदेवमादिसुसाधुक्रियायुक्तोगुरुकुलनिवासी सुसाधुर्नव तीति स्थित । अपिच गुरुकुलवासे निवसन् पचसु समितिष्वीर्यासमित्यादिषु प्रविचा राऽप्रविचाररूपासु तथा तिसृषु च गुप्तिषु प्रविचाराप्रविचाररूपासु आगतोत्पन्ना प्रज्ञा य स्यासावागतप्रज्ञ सजातकर्तव्याकर्तव्यविवेक स्वतोनवति परस्यापिच व्याकुर्वन् कथय न् पृथक्पृथग्गुरो प्रसादात्परिज्ञातस्वरूप समितिगुप्तीना यथावस्थितस्वरूपप्रतिपालन तत्फलच वदेत्प्रतिपादयेदिति ॥ ५ ॥ ईर्यासमित्याद्युपेतेन यद्विधेय तद्दर्शयितुमाह । (सद्दाणीत्यादि) शब्दान् वेणुवीणादिकान् मधुरान् श्रुतिपेशलान् श्रुत्वा समाकर्ण्याऽथ नैरवान् नयावहान् कर्णकटूनाकर्ण्य शब्दानाश्रवति तान् शोननत्वेनाशोननत्वेनवा गृह्णातीत्याश्रवोनाश्रवोऽनाश्रवस्तेष्वनुकूलेषु प्रतिकूलेषु श्रवणपथमुपगतेषु शब्देष्वना श्रवोमध्यस्थारागद्वेषरहितोनूत्वा परिसमताद् व्रजेत्परिव्रजेत् सयमानुष्ठायी नवेत्तथा निद्राच निद्राप्रमादच निक्षु सत्साधु प्रमादागत्वान्न कुर्यात् । एतडुक्तनवति । शब्दा श्रवनिरोधेन विषयविषयप्रमादोनिषिद्धोनिद्रानिरोधेन निद्राप्रमादश्चशब्दादन्यमपि प्रमा द विकथाकषायादिक न विदध्यात् । तदेव गुरुकुलवासात् स्थानशयनासनसमितिगुप्ति ष्वागतप्रज्ञ प्रतिषिद्धसर्वप्रमाद सञ्गुरोरुपदेशादेव कथकथमपि विचिकित्सां चित्तविप्लुति रूपा वितीर्णाऽतिक्रांतोनवति। यदिवा मगृहीतोय पचमहाव्रतनारोऽतिदुर्वह कथकथमर्प्य र्त गच्छेदित्येवनूता विचिकित्सा गुरुप्रसादाद्वितीर्णोनवति।अथवा या काचिच्चित्तविप्लुतिं देश सर्वगता ता रुत्स्ना गुर्वतिके वसन् वितीर्णोनवत्यन्येषामपि तदपनयनसमर्थ स्यादितिह

डहरेण वुड्ढेण णुसासिए उ, रातिणिएणावि समव्वएण ॥ स
म्म तय थिरतो णाभिगच्छे, णिज्जतए वा वि अपारएसे॥ ७॥
विउट्ठितेण समयाणुसिट्ठे. डहरेण वुड्ढेणउ चोइएय ॥ अच्चु
ट्ठियाए घडदासिए वा, अगारिण वा समयाणुसिट्ठे ॥ ८॥

अर्थ–डहरेणवुड्ढेणणुसासिएउराके०) ते साधु गुरु सन्मुख वसतो काइ कारणे प्र

गच्छेत् प्रतिपद्यते चोदितश्च प्रतिचोदयेदसम्यक्प्रतिपाद्यमानश्चासौ संसारस्रोतसा नीय मानउह्यमानोऽनुशास्यमान कुपितोसौ न संसारार्णवस्य पारगोभवति । यदिवाऽऽचा र्यादिना सडपदेशदानत प्रमादस्खलितनिवर्तनतोमोक्षं प्रति नीयमानोप्यसौ संसारस मुड्स्य तदकरणतोऽपारगएव भवतीति ॥ ७ ॥ सांप्रतं स्वपक्षचोदनानंतरत स्वपरचोद नामधिकृत्याह । (विउठ्ठिएणमित्यादि) विरुद्धोत्थानेनोत्थितोव्युत्थित परतीर्थिकोगृह स्थोवा मिथ्यादृष्टिस्तेन प्रमादस्खलितोचोदित स्वसमयेन तद्यथा नैवंविधमनुष्ठानं भव तामागमे व्यवस्थितं येनाभिप्रवृत्तोसि । यदिवा व्युत्थित सयमाद्भ्रष्टस्तेनापर साधु स्खलित सन् स्वसमयेनार्हत्प्रणीतागमानुसारेणानुशासितोमूलोत्तरगुणाचरणे स्खलित सचोदितआगम प्रदर्शयाभिहित । तद्यथा । नैतत्त्वरितगमनादिक भवतामनुज्ञातमि ति । तथान्येन वा मिथ्यादृष्ट्यादिना क्षुल्लकेन लघुतरेण वयसा वृद्धेन वा कुत्सिताचा रप्रवृत्तश्चोदितस्तुल्यात्समानवयसावा तथातीवाकार्यकरण प्रति उत्थिता अत्युत्थिता । यदि वा दासीत्वेन अत्यंतमुत्थिता दास्याअपि दासीति । तामेव विशिनष्टि । घटदास्या जल वाहिन्यापि चोदितोन क्रोध कुर्यात् । एतदुक्तंभवति । उत्थितयापि कुपितयापि चोदि त स्वहितं मन्यमान सुसाधुर्नकुप्येत् किंपुनरन्येनेति । तथा अगारिणा गृहस्थानां य समयोनुष्ठान तत्समयेनानुशासितोगृहस्थानामपि एतन्नयुज्यते कर्तुं यदारब्ध भवतेत्ये वमात्मावमेनापि चोदितोममैवतच्छ्रेयइत्येवमन्यमानोमनागपि न मनोदूषयेदिति ॥ ८ ॥

ण तेसु कुज्झे ण य पव्वहेज्जा,ण यावि किंची फरुस वदेज्जा ॥तहा करिस्सति पडिस्सुणेज्जा, सेय खु मेय ण पमाय कुज्जा ॥९॥ व णसि मूढस्स जहा अमूढा,मग्गाणुसासति हित पयाण ॥ तेणे व मज्झ इणमेव सेय, जमे वुहा समणुसासयंति ॥ १० ॥

अर्थ–(णतेसुकुज्झेणयपव्वहेज्जा के०) ते शीखामण आपनारना उपर ते साधु क्रो ध नकरे तथा तेने व्यथे नही एटले दंडादिके प्रहार करीने तेने पीडा उत्पन्न करे न ही तथा (णयाविकिंचीफरुसवदेज्जा के०) तथा किंचित् मात्र कठार वचन बोले नही परंतु तेमना वचन सांभळीने आवीरीते कहे के(तहाकरिस्सतिपडिस्सुणेज्जाके०) जेम तमे कहाग छ तेमज करीश एम तेना वचन मान्य करे (सेयखुमेयणपमायकु ज्जा के०) मनमा एम विचारेजे मने एहिज शिक्षारूप श्रेयकारी दान आपेछे एवु जा णीने प्रमाद नकरे ॥ ९ ॥ (वणसिमूढस्सजहाअमूढा के०) जेम वन एटले गहन अटवीने विषे कोइएक मूर्ख दिशिमूढ थइ भूले पडया तने कोइक अमूढ पुरुष मार्गनु देखाडनार (मग्गाणुसासतिहितपयाण के०) प्रजानाऽने हितकारी एवा मार्ग देखाडे

ए दृष्टाते शिष्य पण एम जाणे जे (तेणेवमज्झइणमेवसेय के०) मुजने एह्जि शि क्षानो मार्ग श्रेयकारी कहेछे (जमेबुहासमणुसासयति के०) जे मुजने बुद्ध पडित गुरु आचार्यादिक सम्यक् रीते पुत्रनीपरे शिखामण शिक्षा आपेछे ते शिखामणने श्रेयकारी मानीने आदरे ॥ १० ॥

॥दीपिका–तेषु स्खलितनोदकेषु न क्रुध्येत्। यत ।आक्रुष्टेनमतिमतातत्वार्थविचारणे मति कार्या। यदि सत्य क कोप स्यादनृतं किन्तु कोपेन ॥ १ ॥ तथा तं नोदक न प्रव्यथेत न दमादिप्रहारेण पीमयेत् । नचापि किंचित्परुष पीडाकारि वदेत् नोदितश्च तथा करिष्यामीति प्रतिशृणुयादगीकुर्यात् इद नोदन ममश्रेयोयतएतद्भयात्कचित्प्रमाद न कुर्यात् ॥ ए ॥ वने मूढस्य दिग्भ्रातस्य कस्यचिद्यथाऽमूढामार्गज्ञामार्गमनुशासति कथयति । किंभूत मार्ग प्रजाना हितं । एव तेनाप्यसदनुष्ठायिना नोदिते न कुपितव्यं किंतु ममैव श्रेयइति मतव्य । यदेतद्बुधा सम्यगनुशासयति सन्मार्गे प्रापयति ॥ १० ॥

॥ टीका–एतदेवाह् । (एतेसुकुक्सेइत्यादि) तेषु स्वपरपक्षेषु स्खलितचोदकेष्वात्महितं मन्यमानोन क्रुध्येदन्यस्मिन् वा डर्वचनेऽनिहिते न कुप्येदेव चितयेत् । आक्रुष्टेन मतिमता तत्वार्थविचारणे मति कार्या ॥ यदि सत्य क कोप स्यादनृतं किंतु कोपेन ॥ १ ॥ तथा नाप्यपरेण स्वतोऽधमेनापि चोदितोऽर्हन्मार्गानुसारेण लोकाचारगत्या वाऽनिहित परमार्थ पर्यालोच्य तं चोदक प्रकर्षेण व्यथेद्दडादिप्रहारेण पीमयेन्नचापि किंचित्परुष तत्पीडादिकारि वदेत् ब्रूयात् । ममैवायमसदनुष्ठायिनोदोषोयेनायमपि मामेव चोदयति चोदितश्चैवविध जवता असदाचरण न विधेय । एवविधे च पूर्वर्षिनिरनुष्ठितमनुष्ठेयमित्येवविधवाक्य तथा करिष्यामीत्येव मध्यस्थवृत्त्या प्रतिशृणुयादनुतिष्ठेच्च मिथ्याडुष्कृतादिना निवर्तेत । यदेतच्चोदन नामैतन्ममैवश्रेयोयतएतद्भयात्कचित्पुन प्रमाद न कुर्यान्नैवासदाचरणमनुतिष्ठेदिति ॥ ए ॥ अस्यार्थस्य दृष्टातं दर्शयितुमाह् । (वणसीत्यादि) वने गह्ने महाटव्या दिग्भ्रमेण कस्यचिद्व्याकुलितमतेर्नष्टसत्पथस्य यथा केचिदपरे कृपाकृष्टमानसाअमूढा सदसन्मार्गज्ञा कुमार्गपरिहारेण प्रजानां हितमशेषापायरहितमीप्सितस्थानप्रापक मार्ग पथानमनुशासति प्रतिपादयति।सच तै सदसद्विवेकिभि सन्मार्गावतरणमनुशासितआत्मन श्रेयोमन्यते । एव तेनाप्यसदनुष्ठायिना चोदितेन नकुपितव्यमपितु ममायमनुग्रहइत्येव मतव्य । यदेतद् बुद्धा सम्यगनुशासयति सन्मार्गेऽवतारयति पुत्रमिव पितरस्तन्ममैवश्रेय इति मतव्य ॥ १० ॥

अह तेण मूढेण अमूढगस्स, कायव्व पूया सविसेसजुत्ता ॥ एत्र
वम तत्र उदाहु वीरे, अणुगम्म अत्र उवणेति सम्म ॥ ११ ॥

णेता जहा अंधकारंसि राओ, मग्गं ण जाणाति अपस्समाणे॥
से सूरिअस्स अब्भुग्गमेणं, मग्गं वियाणाइ पगासियंसि ॥१२॥

अर्थ-(अहतेणमूढेण अमूढगस्स के० हवे ते मूर्ख पुरुषे मार्ग पामे उते मार्गनो देखाडनार जे अमूढ पुरुष तेनो उपकार जाणीने (कायवपूयासविसेसजुत्ता के०) तेनी सविशेष विस्तार युक्त पूजा करवी (एअंवमतअवदाहुवीरे के०) उपमा त्या कही को णे कही तोके श्रीवीरपरमेश्वरे कही (अणुगम्मअह्नं उवणेतिसम्म के०) ते पुरुष अ र्थ एटले परमार्थ जाणी सम्यक् प्रकारे पोताने तेनो करेलो उपकार जाणी एम वि चारे जे आ पुरुषे मने मिथ्यात्वरूप गहन वनना डुःख थकी रुडो उपदेश आपीने बोडाव्योडे तेमाटे एनी नक्ति करवी ॥ ११ ॥ (णेताजहाअंधकारंसिराओ के०) जेम णेता एटले मार्गनो जाण पुरुष चक्षु सहित उतां पण अत्यंत अंधकारमय रात्रीने विषे (मग्गणजाणातिअपस्समाणे के०) मार्गने नजाणे केमके अंधकारमा दृष्टी पडे नही माटे अणदेखतो उतो मार्गनजाणे (सेसूरिअस्सअब्भुग्गमेण के०) परंतु तेज पु रुष सूर्योदय थयाथी अंधकार विनाश पामे तेवारे (मग्गवियाणातिपगासियंसि के०) सर्व जगतमा विशेष प्रकाश थयो उता वली सम्यक् प्रकारे तेमार्गने जाणे ॥ १२ ॥

॥ दीपिका-यथा तेन मूढेन सन्मार्गे प्रापितेन तस्यामूढस्य सन्मार्गोपदेष्टुः पुलिंदा देरपि पूजा विशेषयुक्ता कर्तव्या । एतामुपमामुदाहृतवान् कथितवान् वीरस्तीर्थकृत् अ नुगम्य ज्ञात्वार्थं परमार्थं सम्यगात्मन्युपनयति परमोपकारं । कोर्थः । अहमनेन मिथ्या त्ववनाज्जन्ममरणाद्यनेकोपद्रवबहुलात्सडुपदेशदानेनोत्तारितस्ततोमयाऽस्य परमोपकारि णोविनयादिभिः पूजा कर्तव्येति । यथा । गेहम्मि अग्गिजालाउलम्मि जहाण मडज्झ माणम्मि ॥ जो बोहेइ सुयंतं, सो तस्स जणो परमबंधूत्ति ॥११॥ यथा महांधकारा यां रात्रौ नेता नायकोऽटव्यादौ स्वभ्यस्तप्रदेशोपि मार्गं न जानाति स्वहस्तादिकमप्यपश्य न् । सएव नेता सूर्यस्याभ्युद्गमेनोदयेन प्रकाशिते दिक्चक्रे मार्गं विशेषेण जानाति॥१२

॥टीका-पुनरप्यस्यार्थस्य पुष्टयर्थमाह ।(अहतेणेत्यादि) अथेत्यानंतर्यार्थे वाक्योपन्या सार्थेवा । यथा तेन मूढेन सन्मार्गावतारितेन तदनंतरं तस्यामूढस्य सत्पथोपदेष्टुः पुलिं दादेरपि परमुपकारं मन्यमानेन पूजा विशेषयुक्ता कर्तव्या । एवमेतामुपमामुदाहृतवा नभिहितवान् वीरस्तीर्थकरोन्योवा गणधरादिकोऽनुगम्य बुध्वाऽर्थं परमार्थं चोदनारूपं पर मोपकारं सम्यगात्मन्युपनयति । तद्यथाऽहमनेन मिथ्यात्ववनाज्जन्मजरामरणाद्यनेको पद्रवबहुलात्सडुपदेशदानेनोत्तारितस्ततोमयाऽस्य परमोपकारिणोऽभ्युत्थानविनयादिभिः

पूजा विधेयेति ॥ अस्मिन्नर्थे बह्वोदृष्टाता सति । तथा । गेहमि अग्गिजाला, उलमि ज हणामवज्झमाणमि । जो बोहेइ सुयतं सो तस्स जणो परमबधू ॥१॥ जह्वा विसज छु तं, नतमिह्मिह्नोनुकामस्स ॥ जोवि सदोस साहइ, सो तस्स जणो परमबधू ॥ २ ॥ ॥ ११ ॥ अयमपर सूत्रेणैव दृष्टातोऽनिधीयते । (णेयाजहेत्यादि) यथाहि सजलज लधराद्यादितबहलाधकाराया रात्रौ नेता नायकोऽटव्यादौ स्वन्यस्तप्रदेशेपि मार्ग पंथानम धकारावृतत्वात्स्वहस्तादिकमपश्यन्न जानाति न सम्यक् परिछिनत्ति। सएव प्रणेता सूर्यस्या दित्यस्याभ्युद्गमेनापनीते तमसि प्रकाशिते दिक्चक्रे सम्यगाविर्भूते पापाणदरीनिम्नोन्नता दिके मार्ग जानाति विवक्षितप्रदेशप्रापक पथानमभिव्यक्तचक्षु परिछिनत्ति दोषगुणवि चारणत सम्यगवगछतीति ॥ १२ ॥

एव तु सेहेवि अपुठधम्मे, धम्म न जाणाइ अवुज्झमाणे ॥ से
कोविए जिणवयणेण पछा, सूरोदए पासति चक्खुणे वा ॥१३॥
उड्ढ अहेय तिरिय दिसासु, तसा य जे थावरा जे य पाणा ॥
सया जए तेसु परिव्वएज्जा, मणप्पउंस अविकपमाणे ॥ १४ ॥

अर्थ–(एवतुसेहेविअपुठधम्म के०) एरीते नवदीक्षित शिष्य पण प्रथमतो धर्मने अण फरसवाने लीधे अपडित (धम्मनजाणातिअवुज्झमाणे के०) अगीतार्थ अबुझ थको धर्मने नजाणे सुद्ध सिद्धातना जे अर्थ ते थकी रहित होय पछी (सेके०) ते हिज शिष्य गुरुकुल वासे वसतो थको (जिणवयणेणपछा के०) जिनवचन थकी सम स्त सूत्रार्थ विचारने समजीने (कोविए के०) पडित थाय (सूरोदएपासतिचक्खुणेवा के०) जेम सूर्योदय थकी निर्मल नेत्र वालो पुरुष सर्व मार्गने जाणे तेम सुशिष्य प ण हृदयरूप नेत्रे करी आगमरूप सूर्य प्रकाशित थयाथी निर्मल धर्मरूप मार्गने जा णे ॥ १३ ॥ ते शिष्य जाण थयो थको शु देखे ते कहेछे (उड्ढअहेयतिरियदिसासुके०) उचो नीचो अने तिर्छो एतावता सर्व लोकमाहे (तसायजेथावराजेयपाणा के०) त्रस अने स्थावर जे जीवोछे तेने विषे (सयाजएतेसुपरिव्वएज्जा के०) ते सर्वकाल यत्नकरतो सयम पाले रूडी क्रिया करे तेने विषे (मणप्पउंसअविकपमाणेके०) मने करी प्रद्वेष न करे अविकप एटले) शुद्ध सयमने विषे अमोल निश्चल एकाग्रभावसहित एवो रहे॥१४

॥ दीपिका–एव पूर्वोक्तप्रकारेण शिष्यकोप्यपुष्टधर्मा अगीतार्थ सूत्रार्थमबुध्यमानोधर्म न जानाति सएव पश्चाद्गुरुकुलवासाज्जिनवचनेन कोविद स्यात् । यथा सूर्योदये गता

वतरणश्चक्षुषा घटादीन् पश्यति जनस्तथा जिनागमेनापि जीवादय पदार्थाल्लक्ष्यतइ त्यर्थ ॥ १३ ॥ ऊर्ध्वमधस्तिर्यक्च दिक्षु त्रसाश्च ये स्थावरा सूक्ष्मबादरादिभेदाश्च ये प्राणिनस्तेषु सदायत्त परिव्रजेत् संयमानुष्ठायी भवेत् तथाऽविकंपमान संयमादविचलन् तेषु प्राणिषु मनसापि प्रद्वेष न गच्छेत् ॥ १४ ॥

॥ टीका—एव दृष्टांत प्रदर्श्य दार्ष्टांतिकमधिकृत्याह । (एवतुसेहेत्यादि) यथा ह्यसा वधकारावृताया रजन्यामतिगहनायामटव्या मार्ग न जानाति सूर्योद्गमेनापनीते तमसि पश्चाज्जानात्येव तु शिष्यकोऽभिनवप्रव्रजितोपि सूत्रार्थानिष्पन्नोऽपुष्टो ऽपुष्कल सम्यगपरिज्ञातोधर्म श्रुतचारित्राख्योदुर्गतिप्रसृतजंतुधरणस्वभावोयेनासावपुष्टधर्मा सचाऽगीतार्थसूत्रानभिज्ञत्वादवुध्यमानोधर्म जानातीति नसम्यक् परिछिनत्ति । सएव तु पश्चाद्गुरुकुलवासाज्जिनवचनेन कोविदोऽभ्यस्तसर्वज्ञप्रणीतागमत्वान्निपुण सूर्योदयेऽपगतावरणश्चक्षुषेव यथावस्थितान् जीवादीन् पदार्थान् पश्यति । इदमुक्तंभवति । यथाहि इंद्रियार्थसंपर्कात्साक्षात्कारितया परिस्फुटाघटपटादय पदार्था प्रतीयते एव सर्वज्ञप्रणीतागमेनापि सूक्ष्मव्यवहितविप्रकृष्टस्वर्गापवर्गदेवतादय परिस्फुटानि शक्य प्रतीयतइति । अपिच कदाचिच्चक्षुषान्यथाभूतोप्यर्थोऽन्यथा परिछिद्यते । तद्यथा । मरुमरीचिकानिचयोजलभ्रांत्या किंशुकनिचयोग्न्याकारेणापीति । नच सर्वज्ञप्रणीतागमस्य कचिदपि व्यभिचार । तद्व्यभिचारे हि सर्वज्ञत्वहानिप्रसंगात् तत्संभवस्य चासर्वज्ञत्वेन प्रतिषेद्धुमशक्यत्वादिति ॥१३॥ शिक्षकाहि गुरुकुलवासितया जिनवचनाभिज्ञोभवति तत्कोविदश्च सम्यक् मूलोत्तरगुणान् जानाति । तत्र मूलगुणानधिकृत्याह । (उड्ढमहेयमित्यादि) ऊर्ध्वमधस्तिर्यक् दिक्षु विदिक्षु चेत्यनेन क्षेत्रमंगीकृत्य प्राणातिपातविरतिरभिहिता । द्रव्यतस्तु दर्शयति । त्रस्यतीति त्रसास्तेजोवायुर्द्वींद्रियादयश्च तथा ये च स्थावरा स्थावरनामकर्मोदयवर्तिन पृथिव्यव्वनस्पतयस्तथाचैतभेदा सूक्ष्मबादरपर्याप्तकापर्याप्तकरूपादशविधप्राणधारणात्प्राणिनस्तेषु सदा सर्वकालमनेन तु कालमधिकृत्य विरतिरभिहिता । यत्त परिव्रजेत्परिसमंता द्व्रजेत् संयमानुष्ठायी भवेत् । भावप्राणातिपातविरतिं दर्शयति । स्थावरजंगमेषु प्राणिषु तदपकारे उपकारेवा मनागपि मनसा प्रद्वेष नगच्छेदास्तांतावद्दुर्वचनदंडप्रहारादिक तेष्वपकारिष्वपि नामगल चिंतयेदविकंप्यमान संयमादचलन सदाचारमनुपालयेदिति । तदेव योगत्रिककरणत्रिकेण द्रव्यक्षेत्रकालभावरूपा प्राणातिपातविरतिं सम्यगरक्षितया ऽनुपालयेदेव शेषाण्यपि महाव्रतान्युत्तरगुणांश्च ग्रहणासेवनाशिक्षासमन्वित सम्यगनुपालयेदिति ॥ १४ ॥

कालेण पुच्छे समिय पयासु, आइक्कमाणो दवियस्स वित्त ॥ त सोय कारी पुढो पवेसे, सखा इम केवलिय समाहि ॥ १५ ॥ अस्सि सुठि च्चा तिविहेण तायी, एएसु या सति निरोहमाहु ॥ ते एवमक्कति तिलो गदसी, ए नुज्जमेयति पमायसग ॥ १६ ॥

अर्थ-(कालेण के०) ते साधु काल प्रस्तावे एटले अवशर लइने जे आचार्य (पयासु के०) प्रजा एटले जीवोने विषे (समिय के०) सम परिणामे वर्त्तता होय तेवा आचार्यनी पासे सूत्र अने अर्थ (पुच्छे के०) पूछे (आइक्कमाणोदवियस्सवि त्त के०) अने ते आचार्य पण मुक्तिगमनयोग्य जे पुरुष एवा पुरुषना शुद्ध व्रत आचा रने जाणतो थको वदनीक पूजनीक होय पचाचारनो पालनार होय (तंसोयकारीपुढोपवे से के०) तेवा आचार्य गुरुना वचन श्रवण करतो थको जुदा जुदा अर्थ विचार हृद यने विषे धारण करी राखे (सखाइमकेवलियसमाहि के०) सन्मार्ग रूप केवली ना षित सम्यक् ज्ञानादि लक्षण धर्म तद्रूप समाधि ने पोताना हृदयने विषे स्थापन करे ॥ १५ ॥ (अस्सिसुठिच्चातिविहेणतायी के०) एरीते गुरुकुल वासे वसतो एवो चारि त्रिउ ते पूर्वोक्त श्रुतरूप धर्म मार्ग सांभलीने मोक्ष मार्ग ग्रहण करीने त्रिविध प्रकारे त्रायी थाय एटले मन वचन अने कायाये करी छकायनो रक्षपाल थाय (एएसुयास तिनिरोहमाहु के०) ए समिति गुप्तिने विषे स्थित रहिने शांति तथा निरोध एटले समस्त कर्मनो क्षय करे एम कहेछे (तेएवमक्कतितिलोगदसी के०) ते कोण कहेछे तोके त्रैलोक दर्शि एटले सर्वज्ञ पुरुषो एम कहेछे (एनुज्जमेयतिपमायसग के०) व ली ते साधु कदापि क्षण मात्र पण प्रमादनो सग करेनही तथा ए प्रमाद करवो ए वो उपदेश पण करे नही ते पंमित साधु जाणवो ॥ १६ ॥

॥ दीपिका-सम्यगित सदाचारानुष्ठायिन कश्चिदाचार्यादिक प्रजासु जतुविषये चतुर्दश भूतग्रामविषय किंचित् कालेनावसर ज्ञात्वा पृच्छेत् । सच तेन पृष्टआचार्यादिराचक्षाण सेव्य स्यात् । किमाचक्षाणइत्याह । द्रव्यस्य वीतरागस्य वृत्तमनुष्ठान सयम वाऽचक्षा णोमान्य स्यात् । आचार्यवचन श्रोत्रे कर्णे कर्तु शीलमस्य श्रोत्रकारी आज्ञाविधायी सन् पृथगुपन्यस्तमादरेण हृदये प्रवेशयेत् । केवलिक केवलिना कथितं समाधि सन्मार्ग मिम वक्ष्यमाण सख्याय सम्यक् ज्ञात्वा यथोपदेश प्रवर्तक सम्यक् चेतसि धारयेदिति ॥ १० ॥ अस्मिन् गुरुकुलवासे सुष्ठु स्थित्वा त्रिविधेन मनोवाक्काये कृतकारितानुमति निर्वा जतूना त्रायी रक्षक । एतासु समितिगुप्तिषु स्थितस्य शाति सर्वद्वद्वविनाश

स्यात् । तथा च निरोध कर्मक्षयमाहुस्तदिद । एव त्रिलोकदर्शिनस्तीर्थंकरास्ते आख्यांति कथयति न पुनर्भूय एतं प्रमादसग विषयादिक विधेयत्वेन कथितवत ॥ १६ ॥

॥ टीका—गुरोरतिके वसतो विनयमाह । (कालेणेत्यादि) सूत्रमर्थं तडुनय वा विशिष्टे न प्रष्टव्यकालेनार्यादेरवसर ज्ञात्वा प्रजायतइति प्रजाजतवस्तासु जतुषु विषये चतुर्दश नूतग्रामसबध कचिदाचार्यादिक सम्यगितं सदाचारानुष्ठायिन सम्यक् वा समताद्वा जतु गतं पृच्छेदिति । सच तेन पृष्टआचार्यादिराख्याण शुश्रूषयितव्योनवति । यदाचक्षाणस्तद र्शयति । मुक्तिगमनयोग्योनव्योऽव्यरागद्वेषविरहाद्वा द्रव्य तस्य द्रव्यस्य वीतरागस्य तीर्थंकरस्य वा वृत्तमनुष्ठान सयम ज्ञान वा तत्प्रणीतमागम वा सम्यगाचक्षाण सपर्यया ऽय माननीयोनवति । कथमित्याह । तदाचार्यादिना कथित श्रोत्रे कर्णे कर्तु शीलमस्य श्रोत्रकारी यथोपदेशकारी सदाज्ञाविधायी सन् पृथक्पृथगुपन्यस्तमादरेण हृदये प्रवेश येच्चेतसि व्यवस्थापयेत् । व्यवस्थापनीय दर्शयति । सख्याय सम्यक् ज्ञात्वा इममिति वक्ष्यमाण केवलिनइद कैवलिक केवलिना कथित सन्मार्ग सम्यक् ज्ञानादिक मोक्षमार्ग माचार्यादिना कथित यथोपदेश प्रवर्तक पृथग्विविक्त हृदये पृथग्व्यवस्थापयेदिति ॥ ॥ १७ ॥ किंचान्यत् । (अस्सिइत्यादि) अस्मिन् गुरुकुलवासे निवसता यत्नुत श्रुत्वा च सम्यक् हृदयव्यवस्थापनद्वारेणावधारितं तस्मिन् समाधिभूते मोक्षमार्गे सुष्ठुस्थित्वा त्रिविधेनेति मनोवाक्कायगुप्तिभि कृतकारितानुमतिभिर्वाऽऽत्मान त्रातु शीलमस्येति त्रा यी जतूना सडुपदेशदानतस्त्राणकरणशीलोवा तस्य स्वपरत्रायिणएतेषु च समितिगु प्त्यादिषु समाधिमार्गेषु स्थितस्य शातिर्नवत्यशेषद्वोपरमोनवति । तथा निराधमशेष कर्मक्षयरूपमाहुस्तदिद प्रतिपादितवत । कएवमाहुरित्यादि । त्रिलोकमूर्ध्वाधस्तिर्यग् लक्षण द्रष्टु शील येषांते त्रिलोकदर्शिनस्तीर्थंकृत सर्वज्ञास्ते एवमनतरोक्तया नीत्या सर्व नावान् केवलालोकेन दृष्ट्वाचक्षते प्रतिपादयतीति । एतदेव समितिगुप्त्यादिक ससारो त्तारणसमर्थं ते त्रिलोकदर्शिन कथितवतोन पुनर्भूयएव प्रमादसग मद्यविषयादिक स बधविषयत्वेन प्रतिपादितवत ॥ १६ ॥

निसम्म से भिक्खु समीहियठ, पडिभाणव होई विसारए य ॥
आयाणअठी वोदाणमोण, उवेच्च सुद्धेण उवेति मोक्ख ॥ १७ ॥
सखाइ धम्म च वियागरति, बुद्धा हु ते अतकरा नवति ॥
ते पारगा दोएहवि मोयणाए, ससोधित पण्ह मुदाहरति ॥ १८ ॥

अर्थ—(सेभिक्खु के०) ते गुरुकुलवासी साधु (निसम्मसमीहियठ के०) मुक्तिग

मन योग्यनो आचार जे मोक्ष मार्ग एटले समिहित अर्थ एवो सांजलीने तेने सम्य क् प्रकारे हृदयने विषे अवधारीने (पडिजाणवहोईविसारएय के०) प्रतिजावत एट ले बुद्धिवत थाय तथा विशारद एटले सांजलनारने ते मोक्षमार्गनो अर्थ प्रकाशे ए वो (आयाणअठी के०) मोक्षार्थी तथा (वोदाण के०) बार प्रकारनो तप तथा (मोण के०) संयम तेने (उवेच्च के०) प्राप्त करीने (सुद्धेणउवेतिमोरक के०) शुधो निर्दोष एवा आहारे करी अवशाने मोक्षने पामे ॥१७॥ हवे गुरुकुलवासे वसतांजे करे ते देखाडेछे (संखाइधम्मचवियागरंति के०) ते साधु गुरु पाशेथी सांजलीने पछी ते ने सम्यक् प्रकारे जाणीने अन्य जनोने धर्म प्रकाशे (बुद्धाहुतेअंतकराजवंति के०) एवा बुद्ध एटले तत्वना जाण ते जन्मांतरे संचितजे कर्म तेना अंतना करनार थाय (तेपारगादोएहविमोयणाए के०) ते यथावस्थित धर्मना प्रकाशक बन्नेने एटले पोता ने तथा परने कर्म थकी मुकाववे करीने संसारना पारगामी थाय (ससोधितंपएहमु दाहरंति के०) जे सम्यक् सोधी पूर्वापर अविरोध द्रव्य क्षेत्र काल जाव जाणी ने प्र श्न कहे एतावता ते गीतार्थ सत्य धर्म प्रकाशता थका पोताना जीवने अने परना जीवने तारनार थाय पुढनारने समाधिना करनार थाय ॥ १८ ॥

॥ दीपिका—सगुरुकुलवासी भिक्षु साध्वाचारं निशम्य ज्ञात्वा स्वतः समाहितं वार्थं मोक्षं ज्ञात्वा प्रतिजानवानुत्पन्नबुद्धिर्विशारदश्च जवति । आदीयते मोक्षार्थिभिरित्यादा नं ज्ञानादि सएवार्थः सविद्यते यस्य स आदानार्थी ज्ञानादिप्रयोजनवान् व्यवदानं त प । मौनं संयमं । तौ तपःसंयमौ उपेत्य प्राप्य शुद्धेन निर्दोषाहारेणात्मानं यापयं न मोक्षमुपैति । (नउवेइमारंकचिरपाठ) मारं संसारं न उपैति न भ्रमतीति ॥ १७ ॥ संख्या सद्बुद्धिस्तया धर्मं ज्ञात्वा परेषां ये व्यागृणंति कथयंति ते बुद्धाज्ञाततत्वा कर्म णामंतकराजवंति । ते शुद्धधर्मप्ररूपका द्वयोरपि परात्मनोः कर्मपाशमोचनेनपार गाः स्युः । ते च सम्यक् शोधितं पूर्वापरविरुद्धं प्रश्नशब्दमुदाहरंति । कोर्थः परेण कचिदर्थं पृष्टस्तं प्रश्नं सम्यक् परीक्ष्य कथयेत् ॥ १८ ॥

॥ टीका—किंचान्यत् । (णिसम्मेत्यादि) सगुरुकुलवासी भिक्षु द्रव्यस्य वृत्तं निश म्यावगम्य स्वतः समीहितं चार्थं मोक्षार्थं बुध्वा हेयोपादेयं सम्यक् परिज्ञाय नित्यं गुरुकु लवासतः प्रतिजानवानुत्पन्नप्रतिजोजवति । तथा सम्यक् स्वसिद्धांतपरिज्ञानाच्छ्रोतॄणां य थावस्थितार्थानां विशारदोजवति प्रतिपादकोजवति । मोक्षार्थिनाऽऽदीयत इत्यादानं सम्यक् ज्ञानादिकं तेनार्थः सएवार्थः आदानार्थः विद्यते यस्यासावादानार्थी सएवभूतो

ज्ञानादिप्रयोजनवान् । इत्यादान द्वादशप्रकार तपोमौन संयमश्राश्रवनिरोधरूपस्तदेवमे तौतप संयमावुपेत्य प्राप्य ग्रहणसेवनरूपया द्विविधयापि शिक्षया समन्वित सर्वत्र प्रमाद रहित प्रतिज्ञावान् विशारदश्च शुद्धेन निरुपाधिना उद्गमादिदोषशुद्धेन चाहारेणात्मान यापयन्नशेषकर्मक्षयलक्षण मोक्षमुपेति। न उवेइमारतिक्कचित्पाव ।बहुशोम्रियते स्वकर्मपर वशा प्राणिनोयस्मिन् समार ससारस्त जातिजरामरणरोगशोकाकुल शुद्धेन मार्गे णात्मान वर्तयन् उपैति । यदिवा मरण प्राणत्यागलक्षण मारस्त बहुशोनोपैति। तथा हि । अप्रतिपतितसम्यक्त्वउत्कृष्टत सप्ताष्टैवा नवान् म्रियतेनोर्ध्वमिति ॥१७॥ तदेव गुरुकुलनिवासितया धर्मे सुस्थितावहुश्रुता प्रतिभानवतोऽर्थेविशारदाश्च यत्कुर्वति त दर्शयितुमाह । (संखाइत्यादि) सम्यक् ख्यायते परिज्ञायते यया सा संख्या सद्बुद्धिस्त या स्वतोधर्म परिज्ञायापरेषा यथावस्थितं धर्म श्रुतचारित्राख्य व्यागृणति प्रतिपादयति। यदिवा स्वपरशक्ति परिज्ञाय पर्षद वा प्रतिपाद्य चार्थे सम्यगवबुध्य धर्म प्रतिपादयति । ते चैवविधाबुद्धा कालत्रयवेदिनोजन्मातरसंचिताना कर्मणामतकराभवति । अन्येषा कर्मापनयनसमर्थाभवतीति दर्शयति । ते यथावस्थितधर्मप्ररूपकात् द्वयोरपि परा त्मनो कर्मपाशविमोचनया स्नेहादिनिगडविमोचनया वा करणभूतया ससारसमुद्रस्य पारगाभवति। ते चैवभूता सम्यक्शोधित पूर्वोत्तराविरुद्ध प्रश्नशब्दमुदाहरति । तथाहि। पूर्वं बुध्वा पर्यालोच्य कोप पुरुष कस्य चार्थस्य ग्रहणसमर्थोऽहवा किंभूतार्थप्रति पादनशक्तइत्येव सम्यक् परीक्ष्य व्याकुर्यादित्यथवा परेण किचिदर्थ पृष्टस्त प्रश्न सम्यक्परीक्ष्योदाहरेत्सम्यगुत्तर दद्यादिति । तथाचोक्त ।श्रायरियसयाधारि एण श्रद्वेण सरियमुणिएण ॥ तोसघमक्खयारे, ववहरिउजेसुह्होति ॥ १ ॥ गीतार्थायथावस्थितं धर्मं कथयत स्वपरतारकाभवतीति ॥ १८ ॥

णोछायए णो विय लूसएज्जा, माण ण सेवज्ज पगासण च ॥ ण
यावि पन्ने परिहास कुज्जा, ण या सियावाय वियागरेज्जा ॥ १९ ॥
भूताभिसकाइ डुगुछमाणे, ण णिव्वहे मतपदेण गोय ॥ ण कि
चिमिछे मणुए पयासु, असाहुधम्माणि ण सवएज्जा ॥ २० ॥

अर्थ– ते प्रश्न कहेता थका कदापि अन्यथा पण केवाय ते माटे तेनु निषेध कहे छे ते धर्मनु प्ररूपक पुरुष पूछता सूत्रना अर्थने (णोछायए के०) ढाके नही एटले अन्यथा नवखाणे (णोवियलूसएज्जा के०) तथा पारका गुण लूसे नही एटले पोता ने अभिमाने करी अन्यने विटंबना करे नही तथा (माणणसेवज्जपगासणच के०) मा

न नसेवे एटले अहकार नकरे पोतानी मोहोटाइ प्रकाशे नही तथा हु बहुश्रुतछु एम पण नकहे (णयाविपन्नेपरिहासकुज्जा के०) तथा पोताने प्रज्ञावत जाणीने परनो परिहास्य एटले उपहास्य नकरे एटले कोइने अज्ञानी जाणीने तेने हास्यना वचन बोले नही (णयासियावायवियागरेज्जा के०) तथा काइने आशीर्वादना वचन नवोले एटले तमे बहु धनवान् बहु पुत्रवान् दीर्घायुष्यवान् हो इत्यादिक वचन नकहे ॥ १९ ॥ तथा (भूताभिसकाए के०) भूत एटले प्राणी तेनी हिसानी शकाये सावद्य वचन जाणीने आशीर्वाद न आपे (डुगुछमाणे के०) पापने निंदतो थको (णणिव्वहेमतपदेणगोयं के०) तथा मत्रपद एटले विद्यामत्रे करीने गोत्र एटले सयम तेने नि सार नकरे (ण किंचिमिछेमणुएपयासु के० वली धर्मनो प्ररूपक साधु ते धर्मनो प्रकाश करतो थको साभलनार पुरुषोनी पाशेथी वस्त्रादिकना लाभनी इछा करे नहि निरीह छतो धर्म प्रकाशे तथा (असाहुधम्माणि के०) असाधुनो हिंसारूप वस्तुदान तर्पणादिक एवो जे धर्म तेने सेवे नही एटले (णसवएज्जा के०) एवो सावध धर्म नबोले ॥ २० ॥

॥ दीपिका–सप्रश्नस्योदाहर्ता कुतश्चिन्निमित्तात् श्रोतु कुपितोपि सूत्रार्थं न छादयेत् स्वाचार्य वा नापलपेत् परगुणान् वा न छादयेत् । शास्त्रार्थं नोलूपयेत् न विडबयेत् मौन न सेवेत नाप्यात्मगुणाना प्रकाशन कुर्यात् न च प्रज्ञावान् परिहास कुर्यात् न चाशीर्वाद बहुपुत्रोबहुधान्योदीर्घायुस्त्व भूयाइत्यादि व्यागृणीयात ॥ १९ ॥ भूतेषु प्राणिषु भूताभिशका उपमर्दशका तयाऽऽशीर्वाद सावद्य जुगुप्सा न ब्रूयात् तथा गोत्र मौन मत्रपदेन विद्यासाधनविधिना ननिर्वाहयेत् न नि सार कुर्यात् । प्रजासु जीवेषु मनुजोव्याख्या कुर्वन्नकिमपि लाभमिछेत् तथाऽसाधूना धर्मान्स्नानतर्पणादिकान् न सवदेन्न ब्रूयात् ॥ २० ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

॥ टीका–सच प्रश्नमुदाहरन् कदाचिदन्यथापि ब्रूयादतस्तत्प्रतिषेधार्थमाह । (णो छायएइत्यादि) सप्रश्नस्योदाहर्ता सर्वार्थाश्रयत्वाद्रत्नकरडकल्प कुत्रापि कुत्तिकापणकल्पोवा चतुर्दशपूर्विणामन्यतरोवा कश्चिदाचार्यादिभि प्रतिभानवानर्थविशारदस्तदेवभूत कुतश्चिन्निमित्तात् श्रोतु कुपितोपि सूत्रार्थं न छादयेन्नान्यथा व्याख्या नयेत्स्वाचार्यं वा नापलपेद्धर्मकथा वा कुर्वन्नार्थं छादयेदात्मगुणोत्कर्षाभिप्रायेण वा परगुणान्नछादयेत्तथा परगुणान्नलूषयेन्नविडबयेच्छास्त्रार्थं वा नापसिद्धातेन व्याख्यानयेत्तथा समस्तशास्त्रवेत्ताह सर्वलोकविदित समस्तसशयापनेता न मत्तुल्योहेतुयुक्तिभिरर्थप्रतिपादयितेति एवमात्मक मानमभिमान गर्वं नसेवेत नाप्यात्मनोबहुश्रुतत्वेन तपस्वित्वेन वा प्रकाश न कुर्याच्चशब्दादन्यदपि पूजासत्कारादिक परिहरेत्तथा नचापि प्रज्ञावान् सश्रुतिक परि

हास केवलिप्राय ब्रूयाद्यदिवा कथंचिदवबुध्यमाने श्रोतरि तडुपहासप्राय परिहास न विदध्यान्नापि चाशीर्वाद बहुपुत्रोबहुधनोबहुधर्मोदीर्घायुस्त्व ब्रूयाइत्यादिव्यागृणीयात् नापासमितियुक्तेन नाव्यमिति ॥ १ए ॥ किंनिमित्तमाशीर्वादोन विधेयइत्याह । (ब्रूया निसकाइइत्यादि) ब्रूतेपु जतुप्रपमर्दशका तयाशीर्वाद सावद्य सपाप जुगुप्समानोन ब्रूयात्तथा गात्रायतइति गोत्र मोन वाक्संयमस्तं मन्त्रपदेन विद्यापमार्जनविधिना न निर्वाहयेन्न नि सार कुर्यात् । यदिवा गोत्र जतूना जीवित मन्त्रपदेन राजादिगुप्तनापणपदेन राजादीनामुपदेशदानतोन निर्वाहयेन्नापनयेत् । एतडुक्त नवति । नराजादिना सार्धं जतुजीवितोपमर्दक मन्त्र कुर्यात्तथा प्रजायतइति प्रजाजतवस्तासु प्रजासु मनुजोमनुष्यो व्याख्यान कुर्वन् धर्मकथा वा नकिमपि लाजपूजासत्कारादिकमिच्छेदनिजपेत्तथा कुत्सितानामसाधूना धर्मान् वस्तुदानतर्पणादिकान्नसंवदेन्नब्रूयाद्यदिवा नासाधुर्धर्मान् ब्रुवन् सवादयेदथवा धर्मकथा व्याख्यानवा कुर्वन् प्रजासात्मश्लाघारूपा कीर्तिं नेच्छेदिति ॥ २०॥

> हास पि णो संधति पावधम्मे, उए तहीय फरुस वियाणे ॥
> णो तुछए णो य विकथइज्जा, अणाइले या अकसाइ निक्कू ॥२१॥
> संकेज्ज या संकितनाव निक्कू, विनज्जवाय व वियागरेज्जा ॥ ना
> साडय धम्म समुठ्ठितेहिं, वियागरेज्जा समया सुपन्ने ॥ २२ ॥

अर्थ-(हासपिणोसधति के०) तथा जे थकी पोताने अने परने हास्य उपजे ते नकहे तथा (पावधम्मे के०) पापधर्म एटले सावद्य धर्म नबोले (उएतहीयं के०) तथा राग द्वेष रहित अकिंचन एवो उतो साधु सत्य वचनज बोले अनेजे (फरुसवियाणे के०) परुप एटले कवण निठुर वचन होय तेने ज्ञ परिज्ञायें जाणीने प्रत्याख्यान परिज्ञाये परिहरे तथा (णोतुछए के०) पूजा सत्कारादिकने पामतो थको उन्माद न करे तथा (णोयविकथइज्जा के०) पोतानी यश कीर्ति देखीने श्लाघा नकरे तथा (अणाइलेया के०) अणाकुल होय एटले धर्म करतो थको आकुल नथाय तथा (अकसाइनिक्कू के०) कपाय रहित एवो साधु जाणवो ॥ २१॥ (संकेज्जयासंकित नावनिक्कू के०) साधु सूत्र अर्थने विपे नि शकित उतो पण शका राखे एटले सगर्व नथाय ए अर्थ जेरीते हु जाणुडु तेरीते बीजो कोइ जाणतो नथी एम नकहे एकात वाद टाले तथा (विनज्जवाय ववियागरेज्जा क०) स्याद्वादवचन बोले सिद्धातनो सर्व प्रथक् प्रथक् अर्थ वेचीने व्याख्या करे तथा (नासाडय धम्मसमुठ्ठितेहिं के०) सयमने विपे सम्यक् प्रकारे उठ्या एवा साधु धर्म कथाने अवसरे वे नापा बोले एकता सत्या नाषा अने

न नसेवे एटले अहंकार नकरे पोतानी मोहोटाइ प्रकाशे नही तथा हुं बहुश्रुतछुं एम पण नकहे (णयाविपन्नेपरिहासकुज्जा के०) तथा पोताने प्रज्ञावंत जाणीने परनो परिहास्य एटले उपहास्य नकरे एटले कोइने अज्ञानी जाणीने तेने हास्यना वचन बोले नही (णयासियावायवियागरेज्जा के०) तथा कोइने आशीर्वादना वचन नबोले एटले तमे बहु धनवान् बहु पुत्रवान् दीर्घायुष्यवान् थाो इत्यादिक वचन नकहे ॥ १९ ॥ तथा (नूतानिसंकाए के०) नूत एटले प्राणी तेनी हिंसानी शंकायें सावद्य वचन जाणीने आशीर्वाद न आपे (डुगुंछमाणे के०) पापने निंदतो थको (णणिव्वहेमंतपदेणगोयं के०) तथा मंत्रपद एटले विद्यामंत्रे करीने गोत्र एटले संयम तेने निःसार नकरे (ण किंचिमिछेमणुएपयासु के० वली धर्मनो प्ररूपक साधु ते धर्मनो प्रकाश करतो थको सांजलनार पुरुषोनी पासेथी वस्त्रादिकना लाजनी इछा करे नहि निरीह थतो धर्म प्रकाशे तथा (असाहुधम्माणि के०) असाधुनो हिंसारूप वस्तुदान तर्प्पणादिक एवो जे धर्म तेने सेवे नही एटले (णसंवएज्जा के०) एवो सावद्य धर्म नबोले ॥ २० ॥

॥ दीपिका–सप्रश्नस्योदाहर्ता कुतश्चिन्निमित्तात् श्रोतुं कुपितोपि सूत्रार्थं न बादयेत् स्वाचार्यं वा नापलपेत् परगुणान् वा न बादयेत् । शास्त्रार्थं नोच्चूपयेत् न विडंबयेत् मौनं न सेवेत नाप्यात्मगुणानां प्रकाशनं कुर्यात् न च प्रज्ञावान् परिहासं कुर्यात् न चाशीर्वादं बहुपुत्रोबहुधान्योदीर्घायुस्त्वं नूयाइत्यादि व्यागृणीयात् ॥ १९ ॥ नूतेषु प्राणिषु नूतानिशंका उपमर्दशंका तयाऽऽशीर्वादं सावद्यं जुगुप्सा न ब्रूयात् तथा गोत्रं मौनं मंत्रपदेन विद्यासाधनविधिना ननिर्वाहयेत् न निःसारं कुर्यात् । प्रजासु जीवेषु मनुजोऽव्याख्यां कुर्वन्नकिमपि लाजमिछेत् तथाऽसाधूनां धर्मान्स्नानतर्पणादिकान् न संवदेन्न ब्रूयात् ॥ २० ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

॥ टीका–सच प्रश्नमुदाहरन् कदाचिदन्यथापि ब्रूयादतस्तत्प्रतिषेधार्थमाह । (णो छायएइत्यादि) सप्रश्नस्योदाहर्ता सर्वार्थाश्रयत्वाइत्नकरंडकल्प कुत्रापि कुत्तिकापणकल्पोवा चतुर्दशपूर्विणामन्यतरोवा कश्चिदाचार्यादिनिः प्रतिजानवानर्थविशारदस्तदेवंजूतः कुतश्चिन्निमित्तात् श्रोतुः कुपितोपि सूत्रार्थं न छादयेन्नान्यथा व्याख्यां नयेत्स्वाचार्यं वा नापलपेद्धर्मकथां वा कुर्वन्नार्थं बादयेदात्मगुणोत्कर्षाभिप्रायेण वा परगुणान्नबादयेत्तथा परगुणान्नलूषयेन्नविडंबयेच्छास्त्रार्थं वा नापसिद्धांतेन व्याख्यानयेत्तथा समस्तशास्त्रवेत्ताहं सर्वलोकविदितः समस्तसंशयापनेता न मनुल्योहतुयुक्तिनिरर्थप्रतिपादयितेति एवमात्मकं मानजनिमानं गर्वं नसेवेत नाप्यात्मनोबहुश्रुतत्वेन तपस्वित्वेन वा प्रकाशनं कुर्याच्चशब्दादन्यदपि पूजासत्कारादिकं परिहरेत्तथा नचापि प्रज्ञावान् सश्रुतिकः परि

सिद्ध वदेदथवासम्यगर्थान् विनज्य पृथक्कृत्वा तद्वाद वदेत्तथथा नित्यं वाद द्रव्यार्थत या पर्यायार्थतया त्वनित्यवाद वदेत्तथा स्वद्रव्यक्षेत्रकालनावै सर्वेपि पदार्था सति पर द्रव्यादिनिस्तु न सति। तथाचोक्त । सदैव सर्व कोनेछेत्स्वरूपादिचतुष्टयात् । असदे व विपर्यासान्नचेन्न व्यवतिष्ठतइत्यादिक विनज्यवाद वदेदिति । विनज्यवादमपि नापा द्वितयेनैव ब्रूयादित्याह । नापयोराद्यचरमयो सत्यासत्यामृपयोर्द्विक नापाद्विक त न्नापा द्वय क्वचित्पृष्टोऽपृष्टोवा धर्मकथावसरेऽन्यदावा सदा वा व्यागृणीयात् नापेत। किंनू त सन् सम्यक् सत्सयमानुष्ठानेनोछिता समुछिता सत्साधवउद्युक्तविहारिणोन पुन रुदायिनृपमारकवत्कृत्रिमास्तै सम्यगुछितै सह विहरश्चक्रवर्तिद्रमकयो समतया रागद्वेष रहितोवा शोजनप्रज्ञोनापा द्वयोपेत सम्यग्धर्मं व्यागृणीयादिति ॥ २२ ॥

अणुगह्माणे वि तहवि जाणे, तहातहा साहु अ कक्कसेण ॥
ण कुवईनास विहसइज्जा, निरुद्धग वावि न दीहइज्जा॥ २३ ॥
समालवेज्ञा पडिपुन्ननासी, निसामिया समिया अठ्ठदसी ॥
आणाइसुद्ध वयण निउजे अनिसधए पावविवेगनिक्कु ॥ २४ ॥

अर्थ–(अणुगह्माणे वि तहवि जाणेके०) हवे तेने बे नापायेंकरी धर्म कहेता थका कोइ एक पमित होय ते सम्यग् रीते समजे अने कोइएक मूर्ख होय ते विपरीत पणे समजे एटले तेने अर्थनी पूरे पूरी समजण न पडे तो (तहातहा साहुअकक्कसेण के०) तेम तेम साधु ते श्रोताने मधुर नापाये करी सम्यक् समजावे सत्यमार्ग देखाडे परंतु (णकुवईनासविहसइज्ञा के०) तेनी नापाने अवहिले नही तथा तेने ति रस्कार नकरे तथा तेनी नापाने निंदे नही (निरुद्धगवाविनदीहइज्ञा के०) थोडो सूत्रा र्थ थोडा काल सुधी कहे पण व्याकरण तर्क करी घणो काल सुधी आलजाल कही विस्तारे नही यत सोयत्तोवत्तवो, जोनणई अरकरेहि थोवेहि। जाउण थोवोबहु थरक रेहि सोहोईनिस्सारो ॥ १ ॥ इतिवचनात् ॥ २३ ॥ (समालवेज्ञापडिपुन्ननासीके०) जे अत्यत विषम अर्थ होय ते सम्यक् प्रकारे विस्तारीने बोले जेम श्रोता पुरुष सुखे स मजे तेम प्रतिपूर्ण नापाये करी बोले अरकजिर्प अविच्चामेलिउं इत्यादिक पूरण नापे (निसामियासमिया अठ्ठदसी के०) तथा गुरुने समीपे सानलीने सम्यक् प्रकारे अर्थ देखीने नलीरीते ते अर्थने विचारीने (आणाइसुद्ध वयण निउजे के०) आज्ञा विशुद्ध वचन प्रयुंजे एम उत्सर्ग अपवाद मार्गने दर्शावनारि एवि शुद्ध वाणी कहेतो थको (अ निसधए पावविवेगनिक्कुके०) साधु पापनु विवेक करे एटले पापनु परिहार करे ॥२४

बीजी असत्यामृषा एटले एकतो सत्य जाषा अने बीजी व्यवहारारिक ए रीते बे जाषा बोले (वियागरेज्जा समयासुपन्ने के०) तथा राजाये अने रांके पुढयो थको प्रज्ञावंत महानुनाव एवो साधु बन्नेने समनावे धर्म कहे ॥ २२ ॥

॥ दीपिका–हास्य न स ग्येन्नकुर्यान्नकारयेत् । तथा पापधर्मान् सावद्यरूपान्नकुर्यात् तथा उंजानिष्किचन सन् तथ्यमपि परुष उच कठिन वाक्य ज्ञपरिज्ञया विजानीय प्रत्याख्यानपरिज्ञया च परिहरेत् । तथा पूजासत्कारादिकमवाप्य न तुन्नोन्नवेनोन्माद गछेत् । तथा नविकछयेन्नात्मान श्लाघयेत् तथा व्याख्यानावसरेऽनाविलोलोनादिनिरपेक्ष स्यात्तथाऽकषायोनिक्षु स्यात् ॥ २१ ॥ साधुर्व्याख्यान कुर्वन्नशकितनावोप्यर्थनिर्णयवेत्तापि शकेत औछत्य परिहरेत् तथा विजज्यवाद स्याद्वाद व्यागृणीयात् कथयेत् । सत्या असत्या मृषावेति जाषाद्वय वदेत् समुछिते साधुनि सह विहरन् सुप्रज्ञ सन्मतिर्नृपतिडमकयो समतया रागद्वेषरहितोधर्म व्यागृणीयात् ॥ २२ ॥

॥ टीका–किचान्यत् । (हासपीत्यादि) यया परात्मनोर्हास्यमुत्पद्यते तथा शब्दादिक शरीरावयवमन्यान् वा पापधर्मान् सावद्यान्मनोवाक्कायव्यापारान्नसधयेन्नविदध्यात् । तद्यथा । इद छिंदि जिंधि तथा कुप्रावचनिकान् हास्यप्राय नोत्प्रासयेत्तद्यथा शोजनीय जवदीय व्रतं । तद्यथा । मृद्वी शय्या प्रातरुन्नाय पेया, मध्ये जक्त पानक चापराह्णे । डाक्षाखड शर्करा चार्धरात्रे, मोक्षश्चाते शाक्यपुत्रेण दृष्टइत्यादिक परदोषोद्भावनप्राय पापबधकमिति कृत्वा हास्येनापि नवक्तव्य । तथा उंजारागद्वेषरहित सबाह्याज्यतरग्रथत्यागाद्वा निष्किचन सत्तथ्यमिति परमार्थत सत्यमपि परुष वचोपरचेतोविकारि ज्ञपरिज्ञया विजानीयात्प्रत्याख्यानपरिज्ञया च परिहरेत् । यदिवा रागद्वेषविरहादोजास्तथ्य परमार्थजूतमकृत्रिममप्रतारक परुष कर्म सश्लेषाजावान्निर्ममत्वादत्पसत्वैर्दुरनुष्ठेयत्वाद्वा कर्कशमतप्रातादारोपजोगाद्वा परुष सयम विजानीयात्तदनुष्ठानत सम्यगवगछेत्तथा स्वत किचिदर्थविशेष परिज्ञाय पूजासत्कारादिकमवाप्य न तुन्नोन्नवेन्नोन्माद गछेत्तथा नविकछयेन्नात्मान श्लाघयेत् पर वा सम्यगवबुध्यमानोनोविकछयेन्नात्यर्त च मदयेत् तथा नाकुलोव्याख्यानावसरे धर्मकथनावसरे वा नाविलोलानादिनिरपेक्षोनवेत् । तथा सर्वदा अकषाय कषायरहितोजवेन्निक्षु साधुरिति ॥ २१ ॥ सांप्रत व्याख्यानविधिमधिकृत्याह । (सकेज्जेत्यादि) निक्षु साधुर्व्याख्यान कुर्वन्नर्वाग्दर्शित्वादर्थनिर्णय प्रति अशकितजावोपि शकेत औछत्यपरिहरन्नहमेवार्थस्य वेत्ता नापर कश्चिदित्येव न गर्व कुर्वीत किंतु विषममर्थ प्ररूपयन् साशकमेव कथयेद्यदिवा विनज्यवाद स्याद्वादस्त सर्वत्रास्खलित लोकव्यवहाराविसवादितया सर्वव्यापिन स्वानुनव

शीलमस्य सन्नवति सम्यगर्थदर्शी सएवनूत सत्तीर्थकराज्ञया सर्वज्ञप्रणीतागमानुसारे ण शुद्धमवदातं पूर्वापराविरुद्ध निरवद्य वचनमनियुजीतोत्सर्गविपयेसति उत्सर्गमवाद विपये वा ऽपवाद तथा स्वपरसमययोर्यथास्व वचनमनिवदेत् । एव चानियुजन् निक्षु पापविवेकलान्न सत्कारादि निरपेक्षतया काङ्क्षमाणोनिर्दोष वचनमनिसधयेदिति ॥ २४ ॥

अहावुइयाइ सुसिक्खएज्जा, जइज्जया णातिवेल वदेज्जा ॥ से दिठिम दिठिण लूसएज्जा, से जाणई नासिउ त समाहिं ॥ २५ ॥ अलूसए णो पछन्ननासी, णो सुत्तमछ च करेज्ज ताई ॥ सछारनत्ती अणुवीइ वाय सुय च सम्म पडिवाययति ॥ २६ ॥ से सुद्धसुत्ते उवहाणव च, धम्म च जे विदति तछतछ ॥ आदेज्जवक्के कुसले वियत्ते, स अरिहइ नासिउ तं समाहित्तिवेमि ॥ २७ ॥ इतिग्रयनामा चउदसमज्ञयण सम्मत्त ॥

अर्थ– (अहावुइयाइसुसिक्खएज्जा के०) श्रीतीर्थंकरादिके जेम वचन कह्याछे तेम ज नलीरीते शीखे (जइज्जयाणातिवेलवदेज्जा के०) तेमज पाले तेमज मुखथी नाषे एटले प्रकाशे तथा वेल एटले मर्यादा उल्लवे नही वली सावद्य वचन बोले नही (सेदिठिमदिठिणलूसएज्जा के०) एवो ते दिठिम एटले सम्यक् दृष्टीवत ते पोतानो स म्यक् दर्शन लूसाए नही तेवी रीते प्ररूपणा करे (सेजाणईनासिउतंसमाहिं के०) ते पुरुष श्रीतीर्थंकरनाषित समाधि मार्ग बोली जाणे ॥ २५ ॥ (अलूसएणोपछन्नना सी के०) आगमार्थ कहेतो थको लूसे नही एटले अपशब्द बोली सूत्रार्थ डुषवेनही तथा प्रछन्ननाषी नथाय एटले सूत्रार्थ गोपवे नही सूत्रनो नलो अर्थ प्रकाशे (णोसु त्तमछच करेज्जताई के०) तथा त्राई एटले छकायनो रक्षपाल एवो साधु सूत्र अर्थ अन्यथा नकरे (सछारनत्तीअणुवीइवायके०) गुरुनी नक्तियालोचीने बोले पण गुरुनी अनक्ति थाय तेम नबोले (सुयचसम्मपडिवाययतिके०) जेरीते श्रुतने सम्यक् प्रकारे करीने गुरुसमीपेसानल्यु होय तेरीतेज अर्थ बोले अन्यथाक्षणानहोनवति ॥ २६ ॥ (सेसुद्धसुत्ते के०) ते साधुनु ए रीते उपदेशादिक अवसरे प्रकाशतो सूत्र शुद्ध कहेवाय (उवहाणवचके०) तथा उपधानवत एटले जे सूत्रनो जे तप सिद्धांतोमां कह्योछे तेने उपधान कहियें तेनो करनार (धम्मचजेविदतितछतछके०) जेजे धर्म सम्यक् जाणे तेते धर्म त्या त्या अगीकार करे जेम जेम श्रीवीतरागनी आज्ञा मले तेम तेम धर्मनाषे पण श्रीवीतरागनी आज्ञा विरुद्ध नबोले (आदेज्जवक्ककुसलेवियत्तके०) एवो जेथाय ते आदेय वचन एटले समस्त लोकने ग्राह्य माननीक वचन बाले तथा कुशल

॥ दीपिका–तस्यैव नाषाद्वयेन वदत कश्चिन्मेधावी तथैव तमर्थमाचार्यादिना कथितमनुगछन् सम्यगवबुध्यते । अन्यस्तु मदमतिर्वितथमन्यथैव विजानीयात् । तंच सम्यगनवबुध्यमान तथातथा तेन प्रकारेण कर्कशवचनेन वदेत् । यथाऽसौ तमर्थं बुध्यते न कुत्रचित्कुत्सुखोनादरेण कथयेन्मन पीडामुत्पादयेत् । तथा प्रश्नकर्तुर्नाषां नविहिंस्यान्नतिरस्कुर्यात् निरुद्ध स्तोकमर्थं न दीर्घयेत् अन्योन्यकथनेन दीर्घं कुर्यात् । तथा चोक्त । सोअछो वत्तवो, जो नसइ अस्करेहिं थोवेहिं ॥ जो पुण थोवा बहु अ,स्करेहिं सो होइ नि सारोइति ॥ २३ ॥ य स्तोकाक्षरैर्नावबुध्यते त प्रतिपूर्णनाषी पर्यायशब्दैर्नावार्थकथनश्च समालपेत् समतान्नापेत यथा सम्यवबुध्यते तथा कुर्यादित्यर्थ । तथाऽचार्यादे सकाशादर्थं निशम्य श्रुत्वा सम्यगर्थदर्शी सत्पदार्थवेत्ता तीर्थकृताज्ञया निरवद्य शुद्ध वचनमनियुंजीत वदेत् । एव वाऽनियुंजन् निक्षु पापविपाक लानसत्कारादि निरपेक्षतया काङ्क्षमाणोनिर्दोष वचनमनिसधयेत् ॥ २४ ॥

॥ टीका–(किंचान्यत् । (अणुगछमाणेइत्यादि) तस्यैव नाषाद्वयेन कथयत कश्चिन्मेधावितया तथैव तमर्थमाचार्यादिना कथितमनुगछन् सम्यगवबुध्यते । अपरस्तु मदमेधावितया वितथमन्यथैवानिजानीयात्तच सम्यगनवबुध्यमान तथातथा तेन हेतूदाहरणसद्युक्तिप्रकटनप्रकारेण मूर्खस्त्वमसि तथा डुर्डुरूढ खसूचिरित्यादिना कर्कशवचनेनानिनर्त्सयन् यथातथासौ बुध्यते तथा साधु सुष्टु बोधयेन्न कुत्रचित्कुत्सुखहस्तौष्ठनेत्रविकारैरनादरेण कथयन् मन पीडामुत्पादयेत्तथा प्रश्नयतस्तन्नाषामपशब्दादिदोषडुष्टामपि धिग्मूर्खासंस्कृतमते किंवाऽनेन संस्कृतेन पूर्वोत्तरव्याहृतेन वोच्चारितेनेत्येव नविहिंस्यान्न तिरस्कुर्यादसबद्धोद्घट्टनस्तं प्रश्नयितार न विडंबयेदिति । तथा निरुद्धमर्थं स्तोक दीर्घवाक्यैर्महता शब्दर्दर्डुरेणार्कविटपिकोट्टिकान्यायेन नकथयेन्निरुद्ध वा स्तोककालीन व्याख्यान व्याकरणतर्कादिप्रवेशनद्वारेण प्रसक्त्यानुप्रसक्त्या नदीर्घयेन्नदीर्घकालिक कुर्यात् । तथाचोक्त । सो अछो वत्तवो, जो नसइ अस्करेहिं थोवेहिं ॥ जो पुण थोवो बहु अ, स्करेहिं सो होइ नि सारो ॥ तथा ॥ किंचित्सूत्रमल्पाक्षरमल्पार्थं वा इत्यादि चतुर्नंगिका तत्र यदल्पाक्षर महार्थं तदिह प्रशस्यतइति ॥ २३ ॥ अपिच । (समालवेज्जाइत्यादि) यत्पुनरतिविषमत्वादल्पाक्षरैर्न सम्यगवबुध्यते तत्सम्यक् शोननेन प्रकारेण समतात्पर्यायशब्दोच्चारणतोनावार्थकथनतश्चालपेन्नापेत समालपेन्नाल्पैरेवाक्षरैरुक्त्वा कृतार्थोनवेदपितु क्षेयगहनार्थनाषणे सद्धेतुयुक्त्यादिनि श्रोतारमुपेक्ष्य प्रतिपूर्णनाषी स्यादस्खलिताहीनाक्षरार्थवादी नवेदिति । तथाचार्यादे सकाशाद्यथावदर्थं श्रुत्वा ऽवगम्य निशम्य च यथावस्थितमर्थं यथागुरुसकाशादवधारितमर्थं प्रतिपाद्य इष्ट

व्यवस्थानाख्य वा त सर्वज्ञोक्त समाधि सम्यगवगछतीति ॥ २५ ॥ किंचान्यत् (अलू सएइत्यादि) सर्वज्ञोक्तमागम कथयन्नोलूपयेन्नान्यथापसिद्धातव्याख्यानेन दूषयेत्तथा न प्रछन्ननापी नवेत् सिद्धातार्थमविरुद्धमवदात सार्वजनीन तत्प्रछन्ननापणेन न गोपये त्। यदिवा प्रछन्न वाऽर्थपरिणताय न नापेत नसिद्धातरहस्यमपरिणतशिष्यविध्वसनेन दोपायैव सपद्यते । तथाचोक्त । अप्रशातमतौ शास्त्र , सद्भावप्रतिपादन ॥ दोषायानि नवोदीर्णे शमनीयमिव ज्वरेऽत्यादि । नच सूत्रमन्यत् स्वमतिविकल्पनत स्वपरत्रायी कुर्वीतान्यथा सूत्र तदर्थवा ससारत्रायी त्राणशीलोजतूना नविदधीत । किमित्यन्यथा सूत्र नकर्तव्यमित्याह । परहितैकरत शास्ता तस्मिन् शास्तरि या व्यवस्थिता नक्तिर्बहु मानस्तया तद्भक्त्या ऽनुविचिन्त्यमानेनोक्तेन न कदाचिदागमबाधा स्यादित्येव पर्यालो च्य वाच वदेत्तथातया तछ्रुतमाचार्यादिन्य सकाशात्तत्तथैव सम्यक्त्वाराधनामनुवर्तमानो ऽन्येन्यकृणमोक्ष प्रतिपद्यमान प्रतिपादयेत् प्ररूपयेन्न सुखशीलता मन्यमानोयथाकथ चित्तिष्ठेदिति ॥ २६ ॥ अध्ययनोपसहारार्थमाह । (सेसुद्धसुत्तेइत्यादि) ससम्यग्दर्श नस्यालूपकोयथावस्थितागमस्यप्रणेता ऽनुविचिन्त्य नापक शुद्धमवदात्त यथावस्थित वस्तुप्ररूपणतो ऽध्ययनतश्च सूत्र प्रवचन यस्यासौ शुद्धसूत्र । तथोपधान तपश्चरण यद्यस्य सूत्रस्यानिहितमागमे तद्विद्यते यस्यासावुपधानवान् तथा धर्म श्रुतचारित्राख्य य सम्यक् वेत्ति विदतेवा सम्यक् लनते तत्र तत्रेति यद्याज्ञाग्राह्योर्थे सद्याज्ञयैव प्रति पत्तव्योहेतुतस्तु सम्यग्वेतुना । यदिवा स्वसमयसिद्धोर्थे स्वसमये व्यवस्थापनीय पर सिद्धश्च परस्मिन्नथवोत्सर्गापवादयोर्व्यवस्थितोर्थस्ताभ्यामेव यथास्वप्रतिपादयितव्यए तद्गुणसपन्नवादेयवाक्योग्राह्यवाक्योनवति । तथा कुशलोनिपुणआगमप्रतिपादने स दनुष्ठाने च व्यक्त परिस्फुटोनासमीक्ष्यकारी । यश्चैतद्गुणसमन्वित सोर्हति योग्योनव ति तं सर्वज्ञोक्त ज्ञानादिक वा नावसमाधि नावितु प्रतिपादयितु नापर कश्चिदिति । इति परिसमाप्त्यर्थे । ब्रवीमीति पूर्ववत् । गतोनुगमोनया प्राग्वद्याख्येया ॥ २७ ॥ समाप्त चतुर्दश ग्रथाख्यमध्ययनमिति ॥

हवे पदरमु आदान नामे अध्ययन प्रारनिये ठैयें आदान एटले ग्रहण करवु एटले रूडी शिक्षारुप चारित्रानुष्ठानने ग्रहण करवु तेनु इव्ये करी तथा नावे करी शुद्ध स्वरुप कहेने

जमतीत पडुप्पन्न, आगमिस्स च णायर्त्त ॥ सवमन्नति त ताई,
दसणावरण तए ॥ १ ॥ अतए वितिगिछाए, जे जाणति अ
णेलिस ॥ अणेलिसस्स अरकाया, ण से होइ तहि तहि ॥२॥

निपुण तथा व्यक्त स्पष्ट ते अविमास्यो नकरे (सअरिहइनासितंतसमाहिंत्तिबेमिके०)ते साधु श्रीवीतराग प्रणीत सुधो समाधि धर्म मार्ग नापवाने योग्य थाय त्तिबेमिनो अर्थ पूर्ववत् जाणवो ॥ २७ ॥ एरीते ग्रथनामा चौदमा अध्ययननो अर्थ समाप्त थयो

॥ दीपिका–(यथोक्तानि जिनैस्तानि सुष्ठु शिक्षेत शिक्षितश्च देशनायां यतते । देश नोद्यतोपि योयस्य कर्तव्यस्य कालस्ता वेलामतिक्रम्य न वदेत् कर्तव्यमर्यादा नातिलघये दित्यर्थ । सद्दृष्टिमान् यथावस्थितपदार्थान् श्रद्धधानोदृष्टि सम्यक्दर्शन नलूषयेन्नदूष येत् । कोर्थ । देशना व्याख्यान वा कुर्वन् तथा कथयेद्यथाश्रोतु सम्यक्त्व स्थिरीभव ति । यश्चैवभूत सजानाति नापितु तं सर्वज्ञोक्त समाधिं ज्ञानदर्शनचारित्राख्य २५ सर्वज्ञोक्त नलूपयेन्नदूषयेत्प्रच्छन्नभापी नवेत्सिद्धातार्थं शुद्ध प्रच्छन्नवा न गोपयेदथ प्रच्छ न्नमर्थमपरिणताय न भाषेत । तथाचोक्त । अप्रशातमतौ शास्त्रसद्भावप्रतिपादन ॥ दो षायाभिनवोदीर्णे,शमनीयमिव ज्वरे ॥ १ ॥ त्रायी स्वपररक्षकोन सूत्रमतिकल्पनया कुर्वीत । परहितकर शास्ता तस्मिन् शास्तरि याभक्तिर्बहुमानस्तयाऽनुविचिन्त्य वाद वदेत् । अनेनोक्तेनागमबाधा कापि न स्यादिति । तथा श्रुतं सम्यगाराधयन् प्रतिपादये त् सुखशील स्यादित्यर्थ ॥ २६ ॥ शुद्ध सूत्र प्रवचन यस्य सशुद्धसूत्र उपधानवान् तपश्चरणयुक्तोयोधर्म सम्यक् वेत्ति तत्रतत्रोत्सर्गापवादादौ आदेयवाक्योग्राह्यवचन स्यात् तथा कुशलोनिपुणोव्यक्तोनासमीक्ष्यकारी समाधि ज्ञानादिक भाषितुमर्हति योग्य स्यादिति । ब्रवीमीति पूर्ववत् ॥ २७ ॥ इति चतुर्दश ग्रथाध्ययन समाप्त ॥ ६ ॥

॥ टीका–पुनरपि भाषाविधिमधिकृत्याह । (अहोबुहियाइत्यादि) यथोक्तानि तीर्थंकरगणधरादिभिस्तान्यहर्निश सुष्ठु शिक्षेत ग्रहणशिक्षया सर्वज्ञोक्तागम सम्यक् गृह्णी यादासेवनाशिक्षया त्वनवरतमुद्युक्तविहारितया सेवेताऽन्येषाच तथैव प्रतिपादयेदिति । प्रसक्तलक्षणनिवृत्तये त्वपदिश्यते सदा ग्रहणासेवनाशिक्षयोर्देशनाया यतेत सदा यतमानो पि योयस्य कर्तव्यस्य कालोऽध्ययनकालोवा ता वेलामतिलघ्य नातिवेल वदद्ध्ययनकर्त व्यमर्यादा नातिलघयेत्सदनुष्ठान प्रतिव्रजेद्धा यथावसर परस्पराबाधया सर्वा क्रिया कु र्यादित्यर्थ । सएवगुणजातीयोयथाकालवादी यथाकालचारी च सम्यक् दृष्टिमान् यथाव स्थितार्थान् पदार्थान् श्रद्धधानोदेशनां व्याख्यान वा कुर्वन् दृष्टि सम्यक्दर्शन नलूपयेन्नदूष येत् । इदमुक्तभवति । पुरुषविशेष ज्ञात्वा तथातथा कथनीयमपसिध्धातदेशनापरि हारेण यथायथा श्रोतु सम्यक्त्व स्थिरीभवति । नपुन शकोत्पादनतोदूष्यते यश्चै वविध सजानात्यवबुध्यते भाषितु प्ररूपयितु समाधि सम्यक्दर्शनचारित्राख्य सम्यक्

व्यवस्थानाख्य वा त सर्वज्ञोक्त समाधि सम्यगवगच्छतीति ॥ २५ ॥ किंचान्यत् (अजू सएइत्यादि) सर्वज्ञोक्तमागम कथयन्नोजूपयेन्नान्यथापसिद्धातव्याख्यानेन दूषयेत्तथा न प्रच्छन्नजापी जवेत् सिद्धातार्थमविरुद्धमवदात सार्वजनीन तत्प्रच्छन्नजापणेन न गोपये त्। यदिवा प्रच्छन्न वाऽर्थपरिणताय न जापेत नसिद्धातरहस्यमपरिणतशिष्यविध्वसनेन दोषायैव सपद्यते । तथाचोक्त । अप्रशातमतौ शास्त्र , सद्भावप्रतिपादन ॥ दोषायाजि नवोदीर्णे शमनीयमिव ज्वरेऽत्यादि । नच सूत्रमन्यत् स्वमतिविकल्पनत स्वपरत्रायी कुर्वीतान्यथा सूत्र तदर्थवा ससारत्रायी त्राणशीजोजतूना नविदधीत । किमित्यन्यथा सूत्र नकर्तव्यमित्याह । परहितैकरत शास्ता तस्मिन् शास्तरि या व्यवस्थिता जक्तिर्बहु मानस्तया तद्भक्त्या ऽनुविचिन्त्यमानेनोक्तेन न कदाचिदागमबाधा स्यादित्येव पर्याजो च्य वाच वदेत्तथातया तच्छ्रुतमाचार्यादिन्य सकाशात्तत्तथैव सम्यक्त्वाराधनामनुवर्तमानो ऽन्येन्यक्षणमोक्ष प्रतिपद्यमान प्रतिपादयेत् प्ररूपयेन्न सुखशीजता मन्यमानोयथाकथ चित्तिष्ठेदिति ॥ २६ ॥ अध्ययनोपसहारार्थमाह । (सेसुद्धसुत्तेइत्यादि) ससम्यग्दर्शी नस्याजूपकोयथावस्थितागमस्यप्रणेता ऽनुविचित्य जापक शुद्धमवदात्त यथावस्थित वस्तुप्ररूपणतो ऽ ध्ययनतश्च सूत्र प्रवचन यस्यासै शुद्धसूत्र । तथोपधान तपश्चरणं यदस्य सूत्रस्याभिहितमागमे तद्विद्यते यस्यासावुपधानवान् तथा धर्म श्रुतचारित्राख्य य सम्यक् वेत्ति विदतेवा सम्यक् जजते तत्र तत्रेति यद्याज्ञाग्राह्योर्थे सद्याज्ञयेव प्रति पत्तव्योहेतुतस्तु सम्यग्घेतुना । यदिवा स्वसमयसिद्धोर्थे स्वसमये व्यवस्थापनीय पर सिद्धश्च परस्मिन्नयथोत्सर्गापवादयोर्व्यवस्थितोर्थस्ताभ्यामेव यथास्वप्रतिपादयितव्यए तद्गुणसपन्नश्चादेयवाक्योग्राह्यवाक्योजवति । तथा कुशलोनिपुणश्चागमप्रतिपादने स दनुष्ठाने च व्यक्त परिस्फुटोनासमीक्ष्यकारी । यश्चैतद्गुणसमन्वित सोर्हति योग्योजव ति तं सर्वज्ञोक्त ज्ञानादिक वा जावसमाधि जापितु प्रतिपादयितु नापर कश्चिदिति । इति परिसमाप्त्यर्थे । ब्रवीमीति पूर्ववत् । गतोनुगमोनया प्राग्वद्याख्येया ॥ २७ ॥ समाप्त चतुर्दश ग्रथाख्यमध्ययनमिति ॥

हवे पदरमु आदान नामे अध्ययन प्रारजिये वैयें आदान एटले ग्रहण करवु एटले रूडी शिक्षारूप चारित्रानुष्ठानने ग्रहण करवु तेनु द्रव्ये करी तथा जावे करी शुद्ध सरूप कहेले

जमतीत पडुप्पन्न, आगमिस्स च णायर्ग ॥ सव्वमन्नति त ताई,
दसणावरण तए ॥ १ ॥ अतए वितिगिछाए, जे जाणति अ
णेलिस ॥ अणेलिसस्स अक्खाया, ण से होइ तहि तहि ॥२॥

अर्थ-(जमतीतंपडुप्पन्नं के०) जे द्रव्यादिक पदार्थ अतीतकाले थया तथा जे व र्त्तमान काले वर्त्तेछे (अगमिस्स चणायउं के०) तथा अगमिक कालें जे थशे तेना यथावस्थित स्वरूपनो प्ररूपवो तेथी प्ररूपणाना अधिकारी पणा माटे नायक कहियें (सव्वमन्नतितंताई के०) ते सर्व द्रव्यादिक चतुष्क संपूर्ण जाणे ते जाणतो बतो सर्व प्राणीउंनो रक्षपाल (दंसणावरणंतए के०) ते दर्शनावरणीय कर्मनो अंतकरनार जाणवो अर्थात् ते दर्शनावरणादिक घातीकर्म चतुष्कने खपावे ॥ १ ॥ (वितिगिन्नाए के०) संदेह एटले मिथ्याज्ञान तेनो (अंतए के०) अंतकारक (जे जाणतिअणेलिसं के०) जे घातीकर्मनो खपावनार ते सर्व निरुपम जाणे एटले तेना जेवो ज्ञानवंत बीजो कोइ नहीं (अणेलिसस्स अस्काया के०) एम जे निरुपम ज्ञानेकरी पदार्थनो प्रकाश करनार (णसेहोइतहितहिं के०) ते तिहां तिहां बौद्धादि दर्शनीने विषे न प्रवर्त्ते एटले ते प्राणी जिनमत टालीने अन्य दर्शनीने विषे तत्व न जाणे ॥ २ ॥

॥ दीपिका-अथ पंचदशमादानीयाध्ययनमारभ्यते । तस्येदमादिसूत्रं । (जमतीत्यादि) यदतीतं प्रत्युत्पन्नं वर्तमानं यदनागतमेष्यत्कालनाविद्रव्यं तस्य सर्वस्यापि यथावस्थितस्वरूपनिरूपणतोनायकः प्रणेता त्रायी सर्वप्राणिरक्षकः सर्वं मन्यते जानाति यो दर्शनावरणांतकोमध्यग्रहणादघातिकर्मचतुष्कस्यांतरुद्रष्टव्यः सएव सर्वज्ञइति ॥१॥ विचिकित्साया संशयस्यांतकः क्षयकृत् सअनीदृशं जगज्जानाति । यादृशं कर्मक्षयतः सर्वज्ञः सामान्यविशेषात्मकं जगज्जानाति तादृशमन्योबौद्धादिर्न जानातीत्यनीदृशमित्युक्तं । अनीदृशस्य च यथाख्याता प्ररूपकोनासौ तत्र तत्र बौद्धादिके दर्शने स्यात् । किंतु जिनप्रवचनेऽर्हन्नेव त्रिकालवर्तिवस्तूनामाख्यातेति ॥ २ ॥

॥ टीका-अथ चतुर्दशाध्ययनानंतरं पंचदशमारभ्यते । अस्य चायमभिसंबंधः । इहानंतराध्ययने सबाह्याभ्यंतरस्य ग्रंथस्य परित्यागोविधेयइत्यभिहितं । ग्रंथपरित्यागाच्चायतचारित्रोनवति साधुस्ततोयादृगसौ यथासंपूर्णामायतचारित्रता प्रतिपाद्यते तदनेनाध्ययेन संबंधेनायातस्यास्याध्ययनस्य चत्वार्यनुयोगद्वाराण्युपक्रमादीनि नवंति । तत्रोपक्रमांतर्गतोर्थाधिकारोयं । तद्यथा । आयतचारित्रेण साधुना नाव्यं । नामनिष्पन्नेतु निक्षेपे आदानीयमिति नाम।मोक्षार्थिनाऽशेषकर्मक्षयार्थं यज्ज्ञानादिकमादीयते तदत्र प्रतिपाद्यतइति कृत्वा आदानीयमिति नाम संवृत्तं। पर्यायद्वारेणच प्रतिपादितं सुग्रहं नवतीत्यतआदानशब्दस्य तत्पर्यायस्य च ग्रहणशब्दस्यच निक्षेपं कर्तुकामोनिर्युक्तिकृदाह । "आदाणे गहणंमि य णिरकेवो होति दोन्नवि चउक्को । एगठ नाणठ, च होज्ज पगयं तु आदाणे" ॥ ३४ ॥ (आदाणेइत्यादि) अथवा (जमतीयंति) अस्याध्ययनस्य नाम

तच्चादानपदेनादावादीयते इत्यादानं तच्च ग्रहणमित्युच्यते। तत्रादानग्रहणयोर्निक्षेपार्थं निर्युक्तिरुदाह। (आदाणेइत्यादि) आदीयते कार्यार्थिना तदित्यादानं। कर्मणिल्युट् प्रत्यय करणेवा। दीयते गृह्यते स्वीक्रियते विवक्षितमनेनेति कृत्वा आदानं च पर्यायतोग्रहणमित्युच्यते॥ तत आदानग्रहणयोर्निक्षेपोभवति द्वौचतुष्कौ। तद्यथा। नामादानं स्थापनादानं द्रव्यादानं भावादानंच। तत्र,नामस्थापने क्षुण्णे। द्रव्यादानं वित्तं यस्माल्लौकिकैः परित्यक्तान्यकर्तव्यमेहता क्लेशेन तदादीयते तेन वाऽपरद्विपदचतुष्पदादिकमादीयतइति कृत्वा। भावादानंतु द्विधा प्रशस्तमप्रशस्तं क्रोधाद्युदयमिथ्यात्वाविरत्यादिकं वा। प्रशस्त तूत्तरोत्तरगुणश्रेण्या विशुद्धाध्यवसायकंडकोपादानं सम्यक् ज्ञानादिकं वेत्येतदर्थप्रतिपादनपरमेतदेव चाध्ययनं द्रष्टव्यमित्येव ग्रहणेपि नामादिकश्चतुर्धा निक्षेपोद्रष्टव्य । भावार्थोप्यादानपदस्येव द्रष्टव्यस्तत्पर्यायत्वादस्येति। एतच्च ग्रहणं नैगमसंग्रहव्यवहारर्जुसूत्राख्यनयाभिप्रायेणादानपदेन सहालोच्यमानं शक्रेंद्रादिवदेकार्थमभिन्नार्थं भवेत् शब्दसमभिरूढेत्थंभूतशब्दनयाभिप्रायेण च नानार्थं भवेत्। इहतु प्रकृत प्रस्तावश्चादाने आदानविषये आदानपदमाश्रित्यास्याभिधानमाकार्यादानीयं वा ज्ञानादिकमाश्रित्य नाम कृतमिति आदानीयाभिधानस्यान्यथा वा प्रवृत्तिनिमित्तमाह। " जं पढमस्सतिमए, बितियस्स उ तह वेज्जआदिम्मि॥ एतेणादाणिज्जं, एसो अन्नोवि पज्जाउ " ॥ ३५ ॥ (जपढमस्सेत्यादि) यत्पदं प्रथमश्लोकस्य तदर्धस्य चांते पर्यंते तदेव पद शब्दतोर्थतश्चयतश्च द्वितीयश्लोकस्यादौ तदर्धस्य वादौ भवत्येतेन प्रकारेणाद्यपदसदृशत्वेनादानीयं भवत्येव आदानीयाभिधानप्रवृत्ते पर्यायोऽन्योवा विशिष्टज्ञानाद्यादानीयोपादानादिति। केचित्तु पुनरस्याध्ययनस्यांतादिपदयोः संकलनात्संकलिकेति नाम कुर्वते। तस्याअपि नामादिकश्चतुर्धानिक्षेपोविधेय। तत्रापि द्रव्यसंकलिका निगडादौ भावसंकलनातूत्तरोत्तरविशिष्टावसायसंकलनमिदमेव वा ऽध्ययनमाद्यंतपदयोः संकलनादिति। येषामादानपदेनाभिधानं तन्मतेनादौ यत्पदं तदादानपदमतस्यादेर्निक्षेपं कर्तुकामआह । " णामादी ठवणादी, दव्वादी चेव होति भावादी॥ तं दव्वादी पुण दव्वस्स जो सब्भावो सएठ्ठाणे ३६ (णामादी इत्यादि) आदेर्नामादिकश्चतुर्धा निक्षेप । नामस्थापने सुगमत्वादनादृत्य द्रव्यादिं दर्शयति। द्रव्यादि' पुनर्द्रव्यस्य परमाण्वादेर्यः स्वभावः परिणतिविशेष स्वके स्थाने स्वकीये पर्याये प्रथममादौ भवति सद्रव्यादिर्द्रव्यस्य दध्यादेर्यथाद्य परिणतिविशेष क्षीरस्य विनाशकालसमकालीनएवमन्यस्यापि परमाण्वादेर्द्रव्यस्य योय परिणतिविशेष प्रथममुत्पद्यते ससर्वोपिद्रव्यादिर्भवति। ननुच कथं क्षीरविनाशसमयएव दध्युत्पाद। तथाहि। उत्पादविनाशौ भावाभावरूपौ वस्तुधर्मौ वर्तते। न च धर्माधर्मिणमंतरेण भवितुमर्हत्यतएकस्मिन्नेव क्षणे तद्धर्मिणोर्दधिक्षीरयो सत्तामाप्नोत्येतच्च दृष्टं

बाधितमिति नैषदोषः । यस्य हि वादिनः क्षणमात्रं वस्तु तस्यायं दोषोयस्यतु पूर्वोत्त रक्षणानुगतमन्वयि द्रव्यमस्ति अस्यायं दोषएव न भवति । तथाहि । तत्परिणामि द्रव्य मेकस्मिन्नेव क्षणे एकेन स्वभावेनोत्पद्यते परेण विनश्यत्यनंतधर्मत्वाद्वस्तुनइति । य त्किंचिदेतत् । तदेव द्रव्यस्य विवक्षितपरिणामेन परिणमतोयश्चाद्यः समयः सङ्घ्यादि रिति स्थितं द्रव्यस्य प्राधान्येन विवक्षितत्वादिति । सांप्रतं भावादिमधिकृत्याह । " आ गमणो आगमओ भावादी तं बुहा उवदिसंती ॥ णो आगमओ भावो, पंचविहो होइ णायव्वो ॥ ३७ ॥ आगमओ पुण आदी, गणिपिडग होइ बारस गंतु । गंथसि लोगो पदपादअरकराइं चेव तत्थादी " ॥ ३८ ॥ (आगमइत्यादि) भावोंत करणस्य परिणति विशेषस्तं बुधास्तीर्थंकरगणधरादयोव्यपदिशंति प्रतिपादयंति । तद्यथा आगमतोनोआगम तश्च । तत्र नोआगमतः प्रधानपुरुषार्थतया चिंत्यमानत्वात्पंचविधः पंचप्रकारोभवति । तद्यथा । प्राणातिपातविरमणादीनामाद्यः प्रतिपत्तिसमयइति । तथा (आगमओइत्यादि) आगममाश्रित्य पुनरादिरेव द्रष्टव्यः । तद्यथा । यदेतद्गणिनआचार्यस्य पिटकं सर्व समाधारोवा तद्द्वादशांगं भवति । तुशब्दादन्यदप्युपांगादिकं द्रष्टव्यं । तस्य प्रवचनस्यादि भूतोयोग्रंथस्तस्याप्याद्यः श्लोकस्तत्राप्याद्यं पदं तस्यापि प्रथममक्षरमेवंविधोबहुप्रकारो भावादिर्द्रष्टव्यइति । तत्र सर्वस्यापि प्रवचनस्वसामायिकमादिस्तस्यापि करोमीति पदं तस्यापि ककारो द्वादशानां त्वंगानामाचारांगमादिस्तस्यापि शास्त्रपरिज्ञाध्ययनमस्यापि च जीवोद्देशकस्तस्यापि सुयंतिपदं तस्यापि सुकारइति पदमादिरित्यस्य च प्रकृतांगस्य सम याध्ययनमादिस्तस्यापि उद्देशकश्लोकपादपदवर्णादिर्द्रष्टव्यइति । गतोनामनिष्पन्नोनिक्षे पस्तदनंतरमस्खलितादिगुणोपेतं सूत्रमुच्चारयितव्यं । तच्चेदं । (जमतीयमित्यादि) अ स्य चानंतरसूत्रेण संबंधोवक्तव्यः सचायं । तद्यथा । आदेयवाक्यः कुशलोव्यक्तोर्हति त थोक्तं समाधिं भाषितुं यश्च यदतीतं प्रत्युत्पन्नमागामिच सर्वमवगच्छति सएव भाषितुमर्ह ति नान्यइति । परंपरसूत्रसंबंधस्तु यएवातीतानागतवर्तमानकालत्रयवेदी सएवाशेषबंधना नां परिज्ञानात्त्रोटयिता वेत्त्येतद्बुध्येतेत्यादिकः संबंधोऽपरसूत्रैरपि स्वबुध्या लगनीयइ ति । तदेवं प्रतिपादितसंबंधस्यास्य सूत्रस्य व्याख्या प्रस्तूयते । यत्किमपि द्रव्यजातमती तं यच्च प्रत्युत्पन्नं यच्चानागतमेष्यत्काले भावि तस्यासौ सर्वस्यापि यथावस्थितस्वरूपनि रूपणतोनायकः प्रणेता । यथावस्थितवस्तुस्वरूपप्रणेतृत्वं च परिज्ञानेसति भवत्यत स्तदपदिश्यते सर्वमतीतानागतवर्तमानकालत्रयभावतोद्रव्यादिचतुष्कस्वरूपतोद्रव्यपर्या यनिरूपणतश्च मनुतेऽसौ जानाति सम्यक् परिछिनत्ति तत्सर्वमवबुध्यते जानानश्च विशि ष्टोपदेशदानेन संसारोत्तारणतः सर्वप्राणिनां त्रायतेऽसौ त्राणकरणशीलः । यदिवा अयव यपयमयतयणयगतावित्यस्य धातोर्दण्डुट् प्रत्ययः । तयनं तायः सविद्यते यस्यासौ तायी ।

सर्वं गत्यर्थाज्ञानार्थाइति कृत्वा सामान्यस्य परिछेदकोमनुते इत्यनेकविशेषस्य तदनेकसर्वज्ञ सर्वदर्शी चेत्युक्त नवति । नच कारणमंतरेण कार्यं नवतीत्यतइदमपदिश्यते । दर्शनावरणीयस्य कर्मणोंतकोमध्यग्रहणेतु घातिचतुष्टयस्यांतकृद्द्रष्टव्यइति ॥ १ ॥ यश्च घातिचतुष्टयांतरुत्सईदृग्नवतीत्याह । (अतएइत्यादि) विचिकित्सा चित्तविप्लुति संशयज्ञान तस्यांतो तदावरणक्षयादंतरुत् संशयविपर्ययमिथ्याज्ञानानामविपरीतार्थपरिछेदादंते वर्तते । इदमुक्तनवति । तव दर्शनावरणक्षयप्रतिपादनात् ज्ञानाद् निन्नं दर्शनमित्युक्त नवति । ततश्च येषामेव सर्वज्ञस्य ज्ञानं वस्तुगतयो सामान्यविशेषयोरचित्यशक्त्युपेतत्वात्परिछेदकमित्येषोयेषामन्युपगम सोऽनेन पृथगावरणप्रतिपादनेन निरस्तोनवतीति । यश्च घातिकर्मांतरुदतिक्रांतसंशयादिज्ञान सोऽनीदृशमनन्यसदृशं जानीते नतत्तुल्योवस्तुगतसामान्यविशेषांशपरिछेदकउनयरूपेणैव विज्ञानेन विद्यतइत्तीदमुक्त नवति । न तज्ज्ञानमितरजनज्ञानतुल्यमतोयडुक्तं मीमांसकैः सर्वज्ञस्य सर्वपदार्थपरिछेदकत्वेऽन्युपगम्यमाने स र्वदा स्पर्शरूपरसगंधवर्णशब्दपरिछेदादनिमतइव्यरसास्वादनमपि प्राप्नोति तदनेन व्युदस्तं इष्टव्यं । यदप्युच्यते सामान्येन सर्वज्ञसन्नावेपि शेषहेतोरनावादर्हत्येव सम्प्रत्ययोनोपपद्यते । तथा चोक्तं । अर्हन्न यदि सर्वज्ञो, बुद्धोनेत्यत्र का प्रमा । अथोनावपि सर्वज्ञौ मत नेदस्तयो कथमित्यादि । एतत्परिहारार्थमाह । अनीदृशस्यानन्यसदृशस्य य परिछेदकव्याख्याताच नामासौ तत्र तत्र दर्शने बौद्धादिकोनवति तेषां इव्यपर्याययोरनन्युपगमादिति । तथाहि । शाक्यमुनि सर्वं क्षणिकमिछन् पर्यायानेवेछति न इव्यं । इव्यमंतरेण च निर्बीजत्वात् पर्यायाणामप्यनाव प्राप्नोत्यत पर्यायानिछताऽवश्यमकामेनापि तदाधारनूतं परिणामिइव्यमेष्टव्यं तदनन्युपगमाच्च नासौ सर्वज्ञइति । तथा अप्रच्युतानुत्पन्नस्थिरैकस्वनावस्य इव्यस्यैवैकस्यान्युपगमादध्यक्षावसीयमानानामर्थक्रियासमर्थानां पर्यायाणामनन्युपगमान्निष्पर्यायस्य इव्यस्याप्यनावात्कपिलोपि न सर्वज्ञइति तथा क्षीरोदकवद् निन्नयोर्इव्यपर्याययोरनेदेनान्युपगमाडुलूकस्यापि न सर्वज्ञत्वाच्च तीर्थांतरीयाणां मध्ये न कश्चिदप्यनीदृशस्यानन्यसदृशस्यार्थस्य इव्यपर्यायोनयरूपस्याख्याता नवतीत्यर्हन्नेवातीतानागतवर्तमानत्रिकालवर्तिनोर्थस्य स्वाख्यातेति न तत्रतत्रेति स्थितं ॥ २ ॥

तहिं तहिं सुयरकाय, से य सच्चे सुआहिए ॥ सया सच्चेण संपन्ने, मित्तिं नूएसु कप्पए ॥ ३ ॥ नूएहिं न विरुन्नेज्जा, एस धम्मे वुसीमउ ॥ साहू जगं परिन्नाय, अस्सिं जीवितनावणा ॥ ४ ॥

अर्थ-(तहिंतहिंसुयरकायके०) जे जे नाव श्रीवीतरागे ज्यां ज्यां नजीपेरे कह्यां वे एटले मिथ्यात्व अविरत प्रमदादिकते संसारनुं कारणछे अने ज्ञान दर्शन चारित्र ते

मोक्ष मार्गछे त्यां त्यां (सेयसवेसुआहिए के०) तेहिज नावने सत्यकरी जाणवा (स यासच्चेणसपन्नेके०) जे सदा एटले सर्वकाल एवा सत्य वचने करी सपन्न होय ते श्रु करे तेकहेछे (मित्तिनूएसुकप्पएके०) नूत एटले प्राणी मात्रने विषे मैत्रीनाव कल्पे सर्व जीव आत्मा मात्रने समान करी लेखवे एटले जेवो पोतानो आत्मा तेवो परनो आत्मा जाणे ॥३॥ (नूएहिंनविरुस्सेज्जाके०) त्रस अने स्थावर जेनूत एटले प्राणीसाथे विरोध न करे एटले प्राणी मात्रनेहणे नही (एसधम्मेवुसीमउके०) एवो धर्म वुसीमउ एटले सयमवतनो जाणवो (साहूजगपरिन्नायके०) साधु सर्व लोकमाहे त्रस अने स्थाव र जीवोने रुडीपेरे जाणीने (अस्सिजीवितनावणाके०) शुद्ध धर्मनेविषे नावना नावे ॥४॥

॥ दीपिका—तत्र तत्र यद्यत्तेनार्हता जीवाजीवादिवस्तु स्वाख्यातं तत्र तत्र न विरोध । सच सर्वज्ञ सत्य स्वाख्याता । तथाचोक्त । वीतरागाहि सर्वज्ञा, न मिथ्या व्रुवते वच ॥ यस्मात्तस्माद्वचस्तेषा, तथानूतार्थदर्शिना ॥१॥ सदा सर्वकाल सत्येन सपन्न ससर्वज्ञो नूतेषु प्राणिषु मैत्री कल्पयेत् कुर्यात् । यत मातृवत्परदाराणि, परद्रव्याणि लोष्टवत् ॥ आत्मवत्सर्वनूतानि, य पश्यति सपश्यतीति ॥३॥ नूतै प्राणिनि सह न विरुध्येत । न विरोध कुर्यात् एष धर्म (वुसीमउत्ति) तीर्थकस्य साधोर्वा तथा वुसीम साधुस्तीर्थरु द्वा जग द्विश्व परिज्ञाय आगमत स्वयंच ज्ञात्वा यस्मिन् नावना पचविंशतिर्द्वादशवा ताजी वितनावनाजीवसमाधानकारिणीर्नावयेत् ॥ ४ ॥

॥ टीका—साप्रतमेतदेव कुतीर्थिकानामसर्वज्ञत्वमर्हतश्च सर्वज्ञत्व यथानवति तथा सोपपत्तिक दर्शयितुमाह । (तहितहिमित्यादि) तत्रतत्रेति वीप्सापद । यद्यत्तेनार्हता जी वाजीवादिक पदार्थजात तथा मिथ्यात्वाविरतिप्रमादकषाययोगाबन्धहेतवइति कृत्वा ससारकारणत्वेन तथा सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गइति मोक्षागतयेत्येतत्सर्व पूर्वोत्तराविरोधितया युक्तिनिरुपपन्नतया सुष्टाख्यातं स्वाख्यात तीर्थिकवचन तु नहि स्या नूतानीति नणित्वा तदुपमर्दकारन्नान्यनुज्ञानात्पूर्वोत्तराविरोधितया तत्रतत्र चित्यमान निर्युक्तिकत्वान्नस्वाख्यात नवति । सचाविरुद्धार्थस्याख्याता रागद्वेषमोहानामनृतकारणा नामसन्नवात्सद्भ्योहितत्वाच्च सत्य स्वाख्यातस्तत्स्वरूपविज्ञ प्रतिपादित ॥ रागादयो ह्यनृतकारण ते च तस्य न सत्यत कारणानावात्कार्यानावइति कृत्वा तद्वचोनूतार्थप्र तिपादक ॥ तथा चोक्त । वीतरागाहि सर्वज्ञा, मिथ्यान व्रुवते वच । यस्मात्तस्माद् चस्तेषा, तथानूतार्थदर्शिना । ननु च सर्वज्ञत्वमतरेणापि हेयोपादेयमात्रपरिज्ञानादपि सत्यता नवत्येव । तथा चोक्त । सर्व पश्यतु वा मावा, तत्वमिष्ट तु पश्यति । कीट

सख्यापरिज्ञान, तस्य नक्कोपयुज्यते इत्याशक्याह । सदा सर्वकाल सत्येनावितथनाप णेन सपन्नोसौ । अवितथनापणत्व च सर्वज्ञे सति नवति नान्यथा । तथाहि । की टसख्यापरिज्ञानासनवे सर्वत्रापरिज्ञानमाशकेत । तथा चोक्त । सदृशे बाधासनवे त ल्लक्षणमेव दूषितं स्यादिति सर्वत्रानाश्वासस्तस्मात्सर्वज्ञत्व तस्य नगवतोऽष्टव्यमन्यथा त ६च सत्यता न स्यात् । सत्योवाऽसयम सत प्राणिनस्तेन्योहितत्वादतस्तेन तप प्रधानसयमेन नूतार्थेहितकारिणा सदा सर्वकाल सपन्नोयुक्तएतद्गुणसपन्नश्चासौ नूतेषु जतुषु मत्री तद्रक्षणपरतया नूतदया कल्पयेत् कुर्यात् । इदमुक्त नवति । परमार्थत सर्वज्ञस्तत्त्वदर्शितया योनूतेषु मैत्रीं कल्पयेत् । तथा चोक्त। मातृवत्परदाराणि परद्रव्या णि लोष्टवत्॥ आत्मवत्सर्वनूतानि य पश्यति सपश्यति॥३॥ यथा नूतेषु मैत्री सपूर्णनाव मनुनवति तथा दर्शयितुमाह । (नूएहिइत्यादि) नूतै स्थावरजगमै सह विरोध नकुर्यात्त डुपघातकारिणमारन तद्विरोधकारण दूरत परिवर्जयेदित्यर्थ । सएपोऽनतरोक्तोनूताविरो धकारी धर्म स्वनाव पुरुषाख्योरा (वुसीमउत्ति) तीर्थरुतोय सत्सयमवतोवेति । तथा सत्स यमवान् साधुस्तीर्थरुज्जगच्चराचरनूतग्रामाख्य केवलालोकेन सर्वज्ञप्रतीतागमपरिज्ञाने न वा परिज्ञाय सम्यगवबुध्यास्मिन् जगति मौनींडिवा धर्मे नावना पचविंशतिरूपा६। दशप्रकारावा या अनिमतास्ताजीवितनावनाजीवसमाधानकारिणी सत्सयमागतया मोक्षकारिणीर्नावयेदिति ॥ ४ ॥

नावणा जोगसुद्धप्पा, जलेणावाव आहिया ॥ नावाव तीरसपन्ना,
सवडुक्खा तिउट्टइ ॥ ५ ॥ तिउट्टई उ मेधावी, जाण लोगसि
पावग ॥ तुट्टति पावकम्माणि, नव कम्ममकुवए ॥ ६ ॥

अर्थ—जे नावनानावे तेने जे होय ते देखाडेठे (नावणाजोगसुद्धप्पा के०) नाव नाना योगेकरी जेनो विशुद्ध निर्मल आत्माठे (जलेणावावयाहिया के०) ते पुरुष ससार रूप समुड्रने विषे नौका समान कह्याठे ते उपर दृष्टात कहेठे (नावावतीरस पन्ना के०) जेम नावा समुड्रने तीरे पोहोचाडे तेम ते पुरुषना उपदेश थकी जीव चारित्ररूप प्रवहणे करीने (सवडुक्खातिउट्टइ के०) ससारना सर्व डु ख थकी मुकाए अने मोक्षरूप कांठे पोहोचे ॥ ५ ॥ (मेधावी के०) पमित (तिउट्टईउ के०) सर्व डु ख थकी मूकाए ते पमित केवो होय तोके (जाणलोगसिपावगके०) सर्वलोकने विषे जे पाप एटले सावद्यानुष्ठान तेनो जाण होय एवाने (तुट्टतिपावकम्माणिके०) पूर्वना स चित सर्व पाप कर्म त्रूटे (नवकम्ममकुवएके०) वली नवा कर्म नकरे एटले नबाधे एटले तेजीव अकर्मि थाय सर्व कर्मोना क्षय युक्त थाय ॥ ६ ॥

॥ दीपिका–जावनानिर्योग सध्यानरूपोजावनायोगस्तेन शुद्धआत्मा यस्य सतथा एवंविध सन् त्यक्तसंसारस्वजावोनौरिव जलोपरि तिष्ठति । एवमाख्याता नौरिवानु कूलवातप्रेरिता तीरं प्राप्ता स्यादेव चारित्रवान् जीवपोतस्तपोवायुवशात्सर्वडुःखात्मक संसारोत्रुटयत्यपगच्छति ॥ ५ ॥ मेधावी मर्यादावान् त्रुटयति मुच्यते सर्वबंधनेन्य । किंकुर्वन् पापकं सावद्यकार्यं लोके ज्ञपरिज्ञया जानन् प्रत्याख्यानपरिज्ञया परिहरेत् ॥ तस्य नवं कर्म अकुर्वत पूर्वसंचितानि पापकर्माणि त्रुटयति ॥ ६ ॥

॥ टीका–सद्भावनाजावितस्य यद्भवति तद्दर्शयितुमाह । (जावणाइत्यादि) जावना निर्योग सम्यक् प्रणिधानलक्षणोजावनायोगस्तेन शुद्धआत्मा अंतरात्मा यस्य सतथा । सच जावनायोगशुद्धात्मा परित्यक्तसंसारस्वजावोनौरिव जलोपर्यवतिष्ठते संसारोदन्व तइति नौरिव यथा जले निमज्जनत्वेन प्रत्याख्याता एवमसावपि संसारोदन्वति न नि मज्जतीति । यथा चासौ नियामकाधिष्ठाताऽनुकूलवातेरिता समस्तद्वंद्वापगमात्तीरमास्कं दत्येवमायतचारित्रवान् जीवपोत सदागमकर्णधाराधिष्ठितस्तपोमारुतवशात्सर्वडुःखा त्मकात्संसारात्त्रुटयत्यपगच्छति मोक्षाख्यं तीरं सर्वद्वंद्वोपरमरूपमवाप्नोतीति ॥ ५ ॥ अपिच । (तिउट्टइत्यादि) सहि जावनायोगशुद्धात्मा नौरिव जले संसारे परिवर्तमा नस्त्रिन्योमनोवाक्कायेन्योऽशुनेन्यस्त्रुटयति यदिवातीव सर्वबंधनेन्यस्त्रुटयति मुच्यते। अतित्रुटयति संसारादतिवर्तेत मेधावी मर्यादाव्यवस्थित सदसद्विवेकी वाऽस्मिन् लोके चतुर्दशरज्ज्वात्मके जूतस्य ग्रामलोकेवा यत्किमपि पापकं कर्म सावद्यानुष्ठानरूपं तत्कार्यंवा अष्टप्रकारं कर्म तत् ज्ञपरिज्ञया जानन् प्रत्याख्यानपरिज्ञया च तडुपादानं प रिहरन् ततस्त्रुटयति तस्यैव लोकं कर्मवा जानतोनवानि कर्माण्यकुर्वतोनिरुद्धाश्रवद्वार स्य विप्रकृष्टतपश्चरणवत- पूर्वसंचितानि कर्माणि त्रुटयति निवर्ततेवा नवं च कर्माकुर्वतो ऽशेषकर्मक्षयोजवतीति ॥ ६ ॥

> अकुव्वउ णवं णत्थि, कम्मं नाम वि जाणइ ॥ विन्नाय से महावीरे, जेण जाइ ण मिज्जइ ॥ ७ ॥ णमिज्जइ महावीरे, जस्स नत्थि पुरे कडं ॥ वा उव्व जालमच्चेति, पिया लोगंसि इत्थिउ ॥ ८ ॥

अर्थ–(अकुव्वउणवणत्थि के०) कारण के जे समस्त क्रिया रहित होय एवा अण करताने नवा कर्मनो बंध नथी (कम्मनामविजाणइ के०) तेवारे अष्ट प्रकारना जे कर्म तेना विपाकनुं निर्जरवो ते सम्यक् जाणे (विन्नायसेमहावीरे के०) ते कर्म रूप शत्रुनो विदारण करवा थकी श्रीमहावीरदेव कर्मना बंधने तथाकर्मनी निर्जराने जाणी

ने ते प्रमाणे करे (जेणजाइणमिज्जइ के०) जे करे थके फरी संसारमा नउपजे अने उपजवाने अनावे फरी मरण पण न पामे ॥ ७ ॥ (णमिज्जइमहावीरे के०) ए महा सुनट तुल्य श्रीमहावीर संसार चक्रमा मरण पामे नही (जस्सनत्थिपुरेकड के०) जेने पूर्वना करेला कर्म रह्या नथी तो ते नवाकर्म बाधवानी वांछा नकरे ए कारण जाणवो जे कारण माटे आ संसारमाहे स्त्रीनो संग प्रधानछे परंतु तेने स्त्री पराजवी नशके दृष्टांत कहेछे (वाउव्वजालमच्चेति के०) जेम वायु अग्नीनी ज्वालामा प्रवेश करीने तेने अतिक्रमि जाय परंतु वायु पोते प्रज्वले नही (पियालोगंसिइच्छिउ के०) तेम लोकने विषे स्त्री प्रियछे ते स्त्री अग्नि ज्वाला समानछे परंतु वायु सरखा साधुने जीपी नशके तेमाटे महावीर सुनटने कर्मनो बंध नथी ॥ ८ ॥

॥ दीपिका—कामपि क्रियामकुर्वतोयोगप्रत्ययानावान्नव कर्म नास्ति न नवति । एतगुणोपेतश्च नमन नाम कर्मनिर्जरण कर्मच जानाति ज्ञात्वाच कर्मबंध समहावीर कर्मदारणक्षमस्तत्करोति येन कृतेन न पुनर्जायते जन्मानावाच्च नम्रियते ॥ ७ ॥ महावीररस्त्यक्ताशेषकर्मा न म्रियते जन्ममरणे न प्राप्नोति यस्य नास्ति पुरस्कृत कर्म वायुर्यथाग्निज्वालामत्येति अतिक्रामति न तया जीयते एव लोके प्रियावल्लनास्त्रियोडुरतिक्रमणीयास्ताअतिक्रामति न तानिर्जीयते। यडुक्त। स्मितेन नावेन मदेन लज्जया पराङ्मुखैरर्धकटाक्षवीक्षणे ॥ वचोनिरीर्ष्याकलहेन लीलया, समस्तपाश खलु बंधन स्त्रिय ॥१॥ स्त्रीणा कृते भ्रातृयुगस्य नेद संबधिनेदे स्त्रियएव मूल ॥ अप्राप्तकामाबहवोनरेंड्रानारीनिरुत्सादितराजवंशाइत्यादि ॥ ८ ॥

॥ टीका—केषाचित्सत्यामपि कर्मक्षयानंतर मोक्षावाप्तौ तथापि स्वतीर्थनिकारदर्शनत पुनरपि संसारानिगमन नवतीदमाशंक्याह । (अकुव्वउ इत्यादि) तस्याऽशेषक्रियारहितस्य योगप्रत्ययानावात्किमप्यकुर्वतोपि नव प्रत्यग्र कर्म ज्ञानावरणीयादिक नास्ति ननवति कारणानावात्कार्यानावइति कृत्वा कर्मनावे च कुत संसारानिगमन कर्मकार्यत्वात्ससारस्य तस्य चोपरताशेष६६स्य स्वपरकल्पनानावाड्रागद्वेषरहिततया स्वदर्शननिकारानिनिवेशोपि ननवत्येव । स चैतज्जुणोपेत कर्माष्टप्रकारमपि कारणतस्तद्विपाकतश्च जानाति नमन नाम कर्मनिर्जरण तच्च सम्यक् जानाति । यदिवा कर्म जानाति तन्नामास्य चोपलक्षणार्थत्वात्तद्भेदाश्च प्रकृतिस्थित्यनुनावप्रदेशरूपान्सम्यगवबुध्यते । सनावनाया वा नामशब्द । सनाव्यते चास्य नगवत कर्मपरिज्ञान विज्ञायच कर्मबंधनतत्संचरणनिर्जरणोपाय चासौ महावीर कर्मदारणसहिष्णुस्तत्करोति येन कृतेनास्मि

... ...रे नपुनर्जायते नपरिछियते तदनावाच्च नम्रियते । यदिवा जात्या नारकोयं ...ग्योनिकायमिति । एवं नमीयते न परिछियते ऽनेनच कारणानावात्संसाराविर्नाव ... । यत्कैश्चिदुच्यते । ज्ञानमप्रतिघं यस्य वैराग्यं च जगत्पते ॥ ऐश्वर्यं चैव धर्मश्च सह सिद्ध चतुष्टयमित्येतदपि व्युदस्तं नवति । संसारस्वरूपं विज्ञाय तदनावः क्रियते नपुनः सांसिद्धिकः कश्चिदनादिसिद्धोस्ति तत्प्रतिपादकायायुक्तेरसंनवादिति ॥ ७ ॥ किंपुनः कारणमसौन जात्यादिना मीयते इत्याशंक्याह । (णमिज्जतीत्यादि) असो महावीरः परित्यक्ताशेषकर्मा न जात्यादिना मीयते परिछियते न म्रियते वा जातिजरामरणरोगशोकैर्वा संसारचक्रवाले पर्यटन् न म्रियते न पूर्यते किमिति । यतस्तस्यैव जात्यादिकं नवति यस्य पुरस्कृतं जन्मशतोपात्तं कर्म विद्यते यस्य तु नगवतोमहावीरस्य निरुद्धाश्रवद्वारस्य नास्ति न विद्यते पुरस्कृतं पुरस्कृतकर्मोपादानानावाच्च न तस्य जातिजरामरणैर्नरणं संनाव्यते । तदाश्रवद्वारनिरोधाश्रयाणां च प्रधानं स्त्रीप्रसंगस्तमधिकृत्याह । वायुर्यथा सततगतिरस्खलिततयाऽग्निज्वाला दहनात्मकामप्येत्यतिक्रामति परानवति न तया परानूयते । यएव लोके मनुष्यलोके हावनावप्रधानत्वात्प्रियाद यितास्तत्प्रियत्वाच्च डुरतिक्रमणीयाअत्येत्यतिक्रामतिनताभिर्जीयते तत्स्वरूपावगमात्तज्जयविपाकदर्शनाच्चेति । तथाचोक्तं । स्मितेन नावेन मदेन लज्जया, पराङ्मुखैरर्धकटाक्षवीक्षितै ॥ वचोनिरीर्ष्याकलहेन लीलया, समस्तनावे खलु बंधनं स्त्रियः ॥ १ ॥ स्त्रीणां कृते भ्रातृयुगस्य नेद, संबंधिनेदे स्त्रियएव मूलं ॥ अप्राप्तकामाबहवोनरेंद्रा, नारीभिरुत्सादितराजवंशा ॥२ इत्येवं तत्स्वरूपं परिज्ञाय तज्जयं विधत्ते नैताभिर्जीयतइति स्थितं । अथ किंपुनः कारणं स्त्रीप्रसंगाश्रवद्वारेण शेषाश्रवद्वारोपलक्षणं क्रियते नप्राणातिपातादिनेति । अत्रोच्यते । केषांचिद्दर्शनिनामंगनोपनोगआश्रवद्वारमेव नवति । तथाचोचुः । न मांसनक्षणे दोषो, न मद्ये न च मैथुने ॥ प्रवृत्तिरेषा नूतानां, निवृत्तिस्तु महाफला इत्यादि तन्मतव्युदासार्थमेवमुपन्यस्तमिति । यदिवा मध्यमतीर्थकृतांचतुर्यामिएव धर्मइहतु पंचयामोधर्मइत्यस्यार्थस्याविर्नावनायानेनोपलक्षणमकारि । अथवा पराणि व्रतानि सापवादानीहतु निरपवादमित्यस्यार्थस्याविर्नावनाय प्रकटनायैवमकारि । अथवा सर्वाण्यपि व्रतानि तुल्यानि एकखंडेन सर्वविराधनमिति कृत्वा येन केनचिन्निर्देशोन दोषायेति॥८॥

इत्थिर्जे जे ण सेवंति, आइमो ... जणा ॥ ते जणा बंधणुम्मुक्का,
नावकंखंति जीवियं ॥ ए ... पिठंकिच्चा, अंत पावंति

के०) ते पुरुषोने आदि एटले प्रथम मोक्षगामी जाणवा (तेजणावंधणुम्मुक्का के०) तेपुरुषो स्त्रीना बंधन थकी मूकाणा थका (नावकंखतिजीवियंके०) जीवित श ब्दे बीजो असंयमपणोकांइ पण वांछे नही कारणके परिग्रहादिकनुं मूल कारण सर्व स्त्रीजछे ॥ ए ॥ (जिवितंपिठउकिच्चाके०) ते पुरुष असंयमने निषेधिने (अंतपाव तिकम्मुणंके०) सर्व कर्मनो अंत करे (कम्मुणासमुहीभूताके०) ते रुडा अनुष्ठाने करी मोक्षने सन्मुख थका (जेमग्गमणुसासईके०) जे श्रीवीतराग प्रणीत मार्गछे तेमार्गने लोकोना हितने अर्थे प्रकाशे अने पोते पण तेहिज समाचरे ॥ १० ॥

॥ दीपिका–ये नरा स्त्रियोनासेवते स्त्रीप्रसंग त्यजंति ते जनाआदि प्रधानोमोक्षो येषां ते आदिमोक्षा प्रधानभूतमोक्षपुरुषार्थसाधका स्युः । तथा ते जना कर्मबंधनो न्मुक्ताजीवितं नावकांक्षंति ॥ ए ॥ जीवितमसंयमजीवितं पृष्ठत कृत्वा निराकृत्य कर्म णामंत प्राप्नुवंति मोक्षमप्राप्ताअपि कर्मणाविशिष्टानुष्ठानेन मोक्षस्य सन्मुखीभूताये मार्गम नुशासति अन्येभ्योवदति स्वयच कुर्वति ॥ १० ॥

॥ टीका–अधुना स्त्रीप्रसंगाश्रवनिरोधफलमाविर्भावयन्नाह । (इत्थिउइत्यादि) येम हामत्वा कटुविपाकोयं स्त्रीप्रसंगइत्येवमवधारणतया स्त्रियं सुगतिमार्गार्गला संसारवी थीभूता सर्वाविनयराजधान्य कपटजालशताकुलामहामोहनशक्तयोन सेवते नतत्प्रसंग मभिलपति । तएवभूताजनाइतरजनातीता साधवआदौ प्रथमं मोक्षोऽशेषद्वंद्वोपरमरू पोयेषांते आदिमोक्षा । हुरवधारणे । आदिमोक्षाएव तेऽवगतव्या । इदमुक्तं भवति । सर्वाऽविनयास्पदभूतं स्त्रीप्रसंगंये परित्यक्तस्तएवादिमोक्षा प्रधानभूतमोक्षाख्यपुरुषा र्थोद्यता । आदिशब्दस्य प्रधानवाचित्वान्न केवलमुद्यतास्तेजना स्त्रीपाशबंधनोन्मुक्त तयाऽशेषकर्मबंधनोन्मुक्ता संतोनावकांक्षंति नाभिलपति असंयमजीवितमपरमपि परि ग्रहादिकं नाभिलपते । यदिवा परित्यक्तविषयेच्छा सदनुष्ठानपरायणामोक्षैकताना जीवित दीर्घकालजीवितं नाभिकांक्षंतीति ॥ए॥ किंचान्यत् । (जीवियमित्यादि) जीवितमसंयमजी वितं पृष्ठत कृत्वाऽनादृत्य प्राणधारणलक्षणं वा जीवितमनादृत्य सदनुष्ठानपरायणा कर्म णां ज्ञानावरणादीनामंतं पर्यवसानं प्राप्नुवंति । अथवा कर्मणा सदनुष्ठानेन जीवितनिरपे क्षा संसारोदन्वतास्तं सर्वद्वंद्वोपरमरूपं मोक्षाख्यमाप्नुवंति । तथेउ खविमोक्षलक्षणं मोक्षमप्राप्ताअपि कर्मणा विशिष्टानुष्ठानेन मोक्षस्य संमुखीभूताघातिचतुष्टयक्षयेण उत्प न्नदिव्यज्ञाना शाश्वतपदस्याभिमुखीभूता । कएवभूता इत्याह । ये विपच्यमानतीर्थक ृन्नामकर्माण समासादितदिव्यज्ञानामोक्षं मोक्षमार्गं ज्ञानदर्शनचारित्ररूपमनुशासति स त्वहिताय प्राणिनां प्रतिपादयंति स्वतश्चानुतिष्ठतीति ॥ १० ॥

न्ससारोदरे नपुनर्जायते नपरिच्छिद्यते तदनावाच्च नम्रियते । यदिवा जात्या नारकोयं तिर्यग्योनिकायमिति । एवं नमीयते न परिच्छिद्यते ऽनेनच कारणाजावात्संसाराविर्नाव नेन । यत्कैश्चिदुच्यते । ज्ञानमप्रतिघं यस्य वैराग्यं च जगत्पते ॥ ऐश्वर्यं चैव धर्मश्च सह सिद्धं चतुष्टयमित्येतदपि व्युदस्तं नवति । संसारस्वरूपं विज्ञाय तदनावं क्रियते नपुनः सांसिद्धिकं कश्चिदनादिसिद्धोस्ति तत्प्रतिपादकायायुक्तेरसनवादिति ॥ ७ ॥ किंपुनः कारणमसौन जात्यादिना मीयते इत्याशंक्याह । (णमिज्जतीत्यादि) असौ महावीरः परित्यक्ताशेषकर्मा न जात्यादिना मीयते परिच्छिद्यते न म्रियते वा जातिजरामरणरोगशोकैर्वा संसारचक्रवाले पर्यटन् न म्रियते न पूर्यते किमिति । यतस्तस्यैव जात्यादिकं नवति यस्य पुरस्कृतं जन्मशतोपात्तं कर्म विद्यते यस्य तु नगवतोमहावीरस्य निरुद्धाश्रवद्वारस्य नास्ति न विद्यते पुरस्कृतं पुरस्कृतकर्मोपादानानावाच्च न तस्य जातिजरामरणैर्नरणसनाव्यते । तदाश्रवद्वारनिरोधाश्रयाणां च प्रधानं स्त्रीप्रसंगस्तमधिकृत्याह । वायुर्यथा सततगतिरस्खलिततयाऽग्निज्वालां दहनात्मकामप्येत्यतिक्रामति परानवति न तया परानूयते । यएव लोके मनुष्यलोके हावनावप्रधानत्वात्प्रियादयितास्तत्प्रियत्वाच्च दुरतिक्रमणीयाग्त्येत्यतिक्रामतिनतानि जीयते तत्स्वरूपावगमात्तज्जयविपाकदर्शनाच्चेति । तथाचोक्तं । स्मितेन नावेन मदेन लज्जया, पराङ्मुखैरर्धकटाक्षवीक्षितैः ॥ वचोनिरीर्ष्याकलहेन लीलया, समस्तनावैः खलु बंधनं स्त्रियः ॥ १ ॥ स्त्रीणां कृते च्रातृयुगस्य नेदः, संबंधिनेदे स्त्रियएव मूलं ॥ अप्राप्तकामाबहवोनरेंद्रा, नारीनिरुत्सादितराजवंशा ॥ २ इत्येवं तत्स्वरूपं परिज्ञाय तज्जयं विधत्ते नैतानिर्जीयतइति स्थितं । अथ किंपुनः कारणं स्त्रीप्रसंगाश्रवद्वारेण शेषाश्रवद्वारोपलक्षणं क्रियते नप्राणातिपातादिनेति । अत्रोच्यते । केषांचिद्दर्शनिनामंगनोपनोगश्चाश्रवद्वारमेव नवति । तथाचोचुः । न मांसनक्षणे दोषो, न मद्ये न च मैथुने ॥ प्रवृत्तिरेषा नूतानां, निवृत्तिस्तु महाफला इत्यादि तन्मतव्युदासार्थमेवमुपन्यस्तमिति । यदिवा मध्यमतीर्थकृतांचतुर्यामएव धर्मइहतु पंचयामोधर्मइत्यस्यार्थस्याविर्नावनायानेनोपलक्षणमकारि । अथवा पराणि व्रतानि सापवादानीहतु निरपवादमित्यस्यार्थस्याविर्नावनाय प्रकटनायैवमकारि । अथवा सर्वाण्यपि व्रतानि तुल्यानि एकखंडेन सर्वविराधनमिति कृत्वा येन केनचिन्निर्देशोन दोषायेति॥ ८।

इत्थिजे ण सेवंति, आइमोक्खा हु ते जणा ॥ ते जणा बंधणुम्मुक्का, नावकंखंति जीवियं ॥ ए ॥ जीवितं पिठ्ठकिच्चा, अंतं पावंति कम्मुणं ॥ कम्मुणा संमुहीनूता, जे मग्गमणुसासई ॥ १० ॥

अर्थ-(इत्थिजेणसेवंति के०) जे पुरुषो स्त्रीने नथी सेवता (आइमोक्खाहुतेजणा

ज्येत । किंनूत छिन्नानि स्रोतांसि आश्रवद्वाराणि येन सछिन्नस्रोता । अनाविलोऽक लुष । एवंनूतोऽनाविल सन् सदा दांत स्यात् । एवंविधश्च कर्मविदररूप नावसंधिम नीदृशमनन्यसदृश प्राप्त स्यात् ॥ १२ ॥

॥ टीका–अनुशासनप्रकारमधिकृत्याह । (अणुसासणमित्यादि) अनुशास्यते सन्मार्गे ऽवतार्यते सदसद्विवेकत प्राणिनोयेन तदनुशासन धर्मदेशनया सन्मार्गावतारण तत्पृथ क् पृथक् नव्यादिषु प्राणिषु क्षित्युदकवत्स्वाशयवशादनेकधा नवति । यद्यपि च अनव्ये तदनुशासन न सम्यक् परिणमति तथापि सर्वोपायज्ञस्यापि नसर्वज्ञस्य दोष । तेषामेव स्वनावपरिणतिरियं यया तद्वाक्यममृतनूतमेकांतपथ्य समस्तद्वंद्वोपघातकारि न य थावत् परिणमति । तथा चोक्त । सद्धर्मबीजवपनानघकौशलस्य, यल्लोकबांधवतयाप्य खिलान्यनूवन् । तन्नाद्भुत खगकुलेष्विह तामसेषु, सूर्याशवोमधुकरीचरणावदाता ॥१॥ किंनूतोसावनुशासकइत्याह । वसु द्रव्य सच मोक्षप्रति प्रवृत्तस्य संयमस्तद्विद्यते यस्यासौ वसुमान् पूजन देवादिकृतमशोकादिकमास्वादयत्युपनुक्तइति पूजनास्वादक । ननु चाश्र कर्मणोदेवादिकृतस्य समवसरणादेरुपनोगात्कथमसौ सत्संयमवानित्याशंक्याह । न वि द्यते आशय पूजानिप्रायोयस्यासावनाशय । द्रव्यतोनियमानेपि समवसरणादिके नाव तोनास्वादकोसौ तद्गतगार्ध्यानावात् सत्यप्युपनोगे । यत सत्संयमवानेवासावेकांते स यमपरायणत्वात्कुतोयतइंद्रियनोइंद्रियाभ्यां दांत । एतद्गुणोपि कथमित्याह । दृढ संयमे । आरतमुपरतमपगत मैथुन यस्यसआरतमैथुनोऽपगतेछामदनकाम । इछामद नकामानावाच्च संयमे दृढोसौ नवति आयतचारित्रत्वाच्च दांतोसौ नवति । इंद्रियनोइंद्रि यदमाच्च प्रयत प्रयत्नवत्त्वाच्च देवादिपूजनास्वादकस्तदनास्वादनाच्च सत्यपि द्रव्यत परि नोगे सत्संयमवानेवासाविति ॥११॥ अथकिमित्यसावुपरतमैथुनइत्याशंक्याह । (णीवारे इत्यादि) नीवार सूकरादीनां पशूनां वध्यस्थानप्रवेशननूतोनक्ष्यविशेषस्तत्कल्पमेतन्मैथु न । यथाहि असौ पशुर्नीवारेण प्रलोन्य वध्यस्थानमतिनीयमानोनानाप्रकारावेदना प्राप्यते एवमसावप्यसुमान् नीवारकल्पेनानेन स्त्रीप्रसंगेन वशीकृतोबहुप्रकारायातना प्राप्नोत्यतोनीवारप्रायमेतन्मैथुनमवगम्य न तस्मिन् ज्ञाततत्त्वोजीयेत न स्त्रीप्रसंग कु र्यात् । किंनूत सन्नित्याह । छिन्नान्यपनीतानि स्रोतांसि संसारावतरणद्वाराणि यथावि षयमिंद्रियवर्तनानि प्राणातिपातादीनि वा आश्रवद्वाराणि येन सछिन्नस्रोता । यथाऽ नाविलोकलुषोरागद्वेषासंपृक्ततया मलरहितानाकुलोवा विषयाप्रवृत्ते स्वस्थचेताएवंनूत श्चानाकुलोवा सदा सर्वकालमिंद्रियनोइंद्रियाभ्यां दांतोनवति ईदृग्विधश्च कर्म विदारक ण नावसंधिमनीदृशमनन्यतुल्य प्राप्तोनवतीति ॥ १२ ॥

अणुसासण पुढो पाणी, वसुम पूयणासुते ॥ अणासए जते द ते, दढे आरयमेहुणे ॥ ११ ॥ णीवारे व ण लीएज्जा, छिन्नसोए अणाविले ॥ अणाइले सया दते, सधि पत्ते अणेलिस ॥१२॥

अर्थ-(अणुसासण पुढोपाणी के०) जेनो अनुशासन एटले उपदेश दान ते सर्व प्राणिने विषे पृथक् पृथक् जुदो जुदो परणमे कोनी पेरे तोके पृथ्वीने विषे जेम उदक जुदो जुदो परणमे तेनी पेरे जेनो उपदेश परणमेछे तथा (पूयणासु के०) पूजानेविषे (वसुम के०) द्रव्यवत एनो भावार्थ कहेछे जे देवतादिक समवसरणादिक पूजा करे छे त्या त्या तेने द्रव्य थकी भोगछे परतु ते भाव थकी भोग नथी तेकारण माटे सय मवत (ते के०) तेहिज जाणवा ए वचन श्रीतीर्थंकर देव आश्री कह्याछे वली (अ णासएजतेदते के०) आश्रव रहित जयणावत तथा इंद्रियनो दमन करनार (दढे आरयमेहुणे क०) सयमने विषे दृढ अने मैथुन थकी विरत एटले विषय रहित ॥ ११ ॥ (णीवारेवणलीएज्जा के०) मैथुनने नीवार समान जाणे जेम सूकरादिकने खावानी वस्तु आपी लोभावीने मारी नाखीये अथवा दु ख आपीये तेम मैथुनने एवो जाणीने स्त्रीनो सग नकरे ते केवो पुरुष जाणवो तोके (छिन्नसोए अणाविले के०) स्रोत एटले जे ससार तेमां अवतरवाना द्वारजे विषय कषायादिकछे ते जेणे छेद्याछे वली राग द्वेष थकी रहित तथा (अणाइलेसयादते के०) अनाकुल एटले अक्षोभ सदा दात गुणवान् एवोछतो (सधिपत्ते अणेलिस के०) कर्म विवर लक्षणनी सिद्धि पामे एवी बीजी वस्तु कोइ जगतमा नथी तेमाटे ए सिद्धिने कोइ उपमा नथी ॥१२॥

॥ दीपिका-अनुशासन देशनाकरण पृथक् पृथक् भव्याभव्यप्राणिषु सर्वज्ञ करोति। भव्येषु देशना न सम्यक् परिणमति तथापि न सर्वज्ञस्य दोष । तदुक्त । सद्धर्मबीजव पनानघकौशलस्य सल्लोकबांधव तवापि खिलान्यभूवन् ॥ तन्नाद्भुत खगकुलेष्विहतामसे षु, सूर्याशवोमधुकरीचरणावदाताइति । किंभूत सर्वज्ञोवसुमान् चारित्री । पुन किंभूत पूजन देवादिकृताशोकादिकमास्वादयति उपभुक्ते पूजनास्वादक । ननु देवादिकृतस्या धाकर्मण समवसरणादेरुपभोगात्कथमसौ चारित्रीत्याशक्याह । (अणासएत्ति) न विद्यते आशय पूजाभिप्रायोयस्य स अनाशय द्रव्यत समवसरणादिके विद्यमानेपि भावतोसौ नास्वादकोगार्ध्याभावात् । यस्मादसौ यतोयत्नवान् दांत सवृतेंद्रिय दृढ सयमे आरतमपगतं मैथुन यस्य सतथा गतकामाभिलाप ॥ ११ ॥ नीवार पशूनां व ध्यस्थानप्रापणीयभूतोभक्ष्यविशेषस्ततुल्यं मैथुन ततोनीवारे मैथुन न लीयेत न प्रस

अंताणि धीरा सेवंति, तेण अंतकरा इह ॥ इह माणुसए ठाणे,
धम्ममाराहिउं णरा ॥ १५ ॥ णिठियठा व देवावा, उत्तराए इ
मं सुयं ॥ सुत्तं च मेयमेगेसिं, अमणुस्सेसु णो तहा ॥ १६ ॥

अर्थ- (अंताणिधीरासेवंतिके०) तेम धीर पुरुष पण अंत सेवे एटले विषयनो अंत करे तथा अंत प्रांत आहार सेवे (तेणअंतकराइहके०) ते कारणे आ संसारने विषे अंतना करनार जाणवा (इहमाणुसएठाणेके०) आमनुष्य लोक रूप स्थानकने पाम्या थका (धम्ममाराहिउंणराके०) एवा मनुष्य धर्मजे सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्ररूप तेने आराधीने मुक्ति गामी थाय ॥ १५ ॥ (णिठियठावदेवावाके०) एवा संयमना पालनार पुरुषो निष्ठितार्थ एटले सिद्धिने पामे अथवा प्रचुर कर्मने सद्भावे देवत्व पणाने विषे सौधर्मादिक विमाने उपजे (उत्तराएइमंसुयंके) ए वचन उत्तरा एटले लोकोत्त र प्रवचने में सांजलुंछे एरीते श्रीसुधर्मा स्वामी श्रीजंबूस्वामि प्रत्ये कहेछे (सुत्तंचमेय मेगेसिंके०) में श्रीतीर्थंकरादिक समीपे सांजलुंछे जे (अमणुस्सेसुणोतहाके०) ए मोक्षनी प्राप्ति ते मनुष्यनी गति टालीने अन्यत्र नथी ते कारण माटे मनुष्य पणे संय म पालवाने विषे प्रमाद नकरवो ॥ १६ ॥

॥ दीपिका-अंतान् अंतप्रांताहारान् सेवते वीरास्तेन संसारस्यांतकरास्ते इहार्यक्षे त्रे स्युः । यतइह मनुष्यलोके स्थाने नराधर्ममाराध्य निष्ठितार्था स्युः ॥ १५ ॥ केचि न्निष्ठितार्थाः कृतकृत्याः स्युः केचिद्देवाः । एतल्लोकोत्तरीये प्रवचने श्रुतं मयेति सुधर्मस्वा मी जंबूस्वामिनमाह । एतच्च मया तीर्थंकरांते श्रुतं । गणधरः स्वशिष्याणामेकेषामिद माह । अमनुष्येषु मनुष्यवर्जितेषु नतथा नमोक्षावाप्तिः स्यादित्यर्थः ॥ १६ ॥

॥ टीका-अमुमेवार्थमाविर्जावयन्नाह । (अंताणीत्यादि) अंतान् पर्यंतान् विषय कषायतृष्णायास्तत्परिकर्मणार्थमुद्यानादीनामाहारस्य वांतप्रांतादीनि धीरामहासत्वाविष यसुखनिस्पृहाः सेवते ऽभ्यस्यंति तेन चांतप्रांताभ्यसनेनांतकराः संसारस्य तत्कारणस्य वा कर्मणः क्षयकारिणोजवंति । इहेति मनुष्यलोके आर्यक्षेत्रे न केवलं तएव तीर्थंकराद योऽन्येऽपीह मानुष्यलोके स्थाने प्राप्ताः सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रात्मकं धर्ममाराध्य न रामनुष्याः कर्मभूमिगर्जव्युत्क्रांतिजसंख्येयवर्षायुषः संतः सदनुष्ठानसामग्रीमवाप्य नि ष्ठितार्थाउपरतसर्वद्वंद्वाजवंति ॥ १५ ॥ इदमेवाह । (णिठियठाइत्यादि) निष्ठितार्थाः कृतकृत्याजवंति केचन प्रचुरकर्मतया सत्यामपि सम्यक्त्वादिकायां सामग्र्यां न तद्भवएव मोक्षमास्कंदंति । अपितु सौधर्माद्या पंचोत्तरविमानावसानादेवाजवंतीति । एतल्लोको

अणे लिसस्स खेयन्ने, ण विरुज्झिज्ज केणइ ॥ मणसा वयसा चेव, कायसा चेव चक्खुम ॥ १३ ॥ से हु चक्खू मणुस्साण, जे कखाए य अतए ॥ अतेण खुरो वहती, चक्क अतेण लोट्टती ॥१४॥

अर्थ-(अणेलिसस्सखेयन्नेके०) अणेलिस एटले संयम तेने विषे जे खेदज्ञ एटले निपुण होय ते (णविरुज्झिज्जकेणइके०) कोइजीवनी साथे विरोध नकरे सर्वजीवोनी साथे मैत्री नाव थाणे (मणसावयसाचेवके०) मन वचन पुन । (कायसाचेव चक्खुमके०) कायाए करी त्रिकरण शुद्धे जे एम करे तेनेज परमार्थ थकी चक्षुवंत निर्मल दृष्टीवालो जाणवो ॥ १३ ॥ (सेहुचक्खूमणुस्साणके०) हुइति निश्चे तेहिज पुरुष संयमी मनुष्योनी चक्षु जेवो जाणवो (जेकखाएयअतएके०) जे पुरुष कांक्षा एटले विषय तृष्णानो अंतकरे ते संसार अने कर्मनो अंतकारी जाणवो तेनाउपर दृष्टांत कहेछे (अतेणखुरोवहतीके०) बेहेडे जेम बुरी कोइ पदार्थ बेदवाने अर्थ अत्यंत तीक्ष्ण धारायें वहे धारने अंते बेदन क्रियामां समर्थ होय (चक्कअतेणलोट्टतीके०) जेम गाडानोपइडो पण अंते प्रवर्त्ते तेम मोहादिकने अंते मुक्तिरूप कार्य सिद्ध थाय ॥ १४ ॥

॥ दीपिका-अनीदृश संयमस्तस्य खेदज्ञोनिपुण केनचित्सार्द्ध नविरोध कुर्वीत मनोवच काये सएव परमार्थतश्चक्षुष्मान् नवति ॥ १३ ॥ सएव संयमी मनुष्याणां चक्षुर्नूतोय काङ्क्षायानोगेछायाअंतकोतवर्ती । यथा क्षुरोनापितोपकरणमतेन वहति चक्र रथागमतेनैव मार्गे वर्तते तथा साधुरपि विषयाद्यंतवर्ती मोक्षसाधक ॥ १४ ॥

॥ टीका-किंच । (अणेलिसस्सेत्यादि) अनीदृशोऽनन्यसदृश संयमोमौनींद्रधर्मो वा तस्य तस्मिन् वा खेदज्ञोनिपुणोऽनीदृशखेदज्ञश्च केनचित्सार्धं न विरोध कुर्वीत सर्वेषु प्राणिषु मैत्रीं नावयेदित्यर्थ । योगत्रिककरणत्रिकेणेति दर्शयति । मनसाऽत करणेन प्रशांतमनास्तथावाचोहितमितनापी तथा कायेन निरुद्धोडुष्प्रणिहितसर्वकायचेष्टोदृष्टिपूतपादचारी परमार्थतश्चक्षुष्मान् नवतीति ॥ १३ ॥ अपिच । (सेहुचक्खूइत्यादि) हुरवधारणे । सएव प्राप्तकर्मविवरोऽनीदृशस्य खेदज्ञोनव्यमनुष्याणा सदसत्पदार्थाविर्नावनान्नेत्रनूतोवर्त्तते । किंनूतोसौ य काङ्क्षायानोगेछायाअंतकोविषयतृष्णाया पर्यंतवर्ती । किमंतवर्तीति विवक्षितमर्थं साधयत्येवेत्यमुमर्थं दृष्टांतेन साधयन्नाह । अतेन पर्यंतेन क्षुरोनापितोपकरण तदतेन वहति तथा चक्रमपि रथांगमतेनैव मार्गे प्रवर्तते । इदमुक्तनवति । यथा क्षुरादीना पर्यंतएवार्थकार्येव विषयकषायात्मकोमोहनीयांतएवापसदससारक्षयकारीति ॥ १४ ॥

॥ टीका–इदमेव स्वनामग्राहमाह । (अतकरेतीत्यादि) नह्यमनुष्याश्चशेषड खानाम त कुर्वंति तथाविधसामग्र्याभावाद्यथैकेषां वादिनामाख्यात । तद्यथा । देवाएवोत्तरोत्त र स्थानमास्कदतोऽशेषक्लेशप्रहाण कुर्वंति न तथेहार्हते प्रवचने इति । इदमन्यत् पुन रेकेषां गणधरादीना स्वशिष्याणां वा गणधरादिभिराख्यातं । तद्यथा । युगसमिलादिन्या यावाप्त कथचित्कर्मविवरात् योय शरीरसमुच्छ्रय सोऽकृतधर्मोपायैरप्यसुमद्भिर्महासमुद्र प्रभ्रष्टरत्नवत्पुनर्दुर्लभोभवति । तथाचोक्त । ननु पुनरिदमतिदुर्लभ,मगाधससारजलधिविभ्र ष्ट ॥ मानुष्य खद्योतक,तडिल्लताविलसितप्रतिममित्यादि ॥१७॥ अपिच (इवविद्धसेइत्या दि) इतोऽमुष्मात् मानुष्यभवात्सद्धर्मतोवा विध्वसनस्याऽकृतपुण्यस्य पुनरस्मिन् संसारे पर्यटतोबोधि सम्यक्दर्शनावाप्ति सुदुर्लभोत्कृष्टत अपार्धपुद्गलपरावर्तकालेन यतोभवति तथा दुर्लभा डुरापा तथाभूता सम्यक्दर्शनप्राप्तियोग्यर्चा लेश्यात परिणतिरकृतधर्माणा मिति । यदि वाऽर्चा मनुष्यशरीर तदप्यकृतधर्मबीजानामार्यक्षेत्रसुकुलोत्पत्तिसकलेंद्रिय सामग्र्यादिरूप दुर्लभ भवति । जतूना धर्मरूपमर्थं व्याकुर्वति ये धर्मप्रतिपत्तियोग्याऽस्य र्थो । तेषां तथाभूतार्चा सुदुर्लभा भवतीति ॥ १८ ॥

जे धम्म सुद्धमक्खति, पडिपुन्नमणेलिस ॥ अणेलिसस्स जं ठाण, तस्स जम्मकहा कउ ॥१ए॥ कउ कयाइ मेधावी, उप्प ज्जति तहागया ॥ तहागया अप्पडिन्ना, चक्खू लोगस्सणुत्तरा ॥२०॥

अर्थ–(जेधम्मसुद्धमक्खतिके०) जे श्रीवीतरागादिक महापुरुषो शुद्ध निर्मल ध र्म कहे अने पोते पण तेजरीते समाचरे (पडिपुन्नके०) प्रतिपूर्ण (अणेलिसके०) अनीदृश एटले सम्यक् चारित्रिउ (अणेलिसस्सजंठाणके०) जेनो ज्ञान दर्शन अने चारित्ररूप मोक्ष स्थानकछे परंतु बीजो स्थानक नथी (तस्सजम्मकहाकउके०) ते ने जन्मकथा क्याथी होय एटले कर्मने क्षये जन्म मरणनो अभाव होय ॥ १९ ॥ (कउकयाइमेधावीके०) कदाचित् मेधावी एटले सम्यक् ज्ञानवत क्याथकी थावीने (उप्पज्जतिके०) उपजे खरा परतु ते केवा होय तोके (तहागयाके०) तेमज कर्म खपावीने गया (तहागयाअप्पडिन्नाके०) जे कर्मखपावीने गया जेने निदान प्र तिज्ञा नही ते अप्रतिज्ञ निराशस एवा होय तेने ससार माहे उत्पत्ति अने मरण नथी जे कारणे तथागत श्रीतीर्थंकरादिक निदान रहित निराशस (चक्खूलोगस्सणुत्तराके०) तथा लोकने अनुत्तर सर्वोत्तम प्रधान ज्ञानथकी चक्षुभूत जाणवा ॥ २० ॥

॥ दीपिका–ये सर्वज्ञा शुद्ध धर्ममाख्याति परिपूर्णमनन्यसदृश । तदेवमनन्यसदृश

त्तरीये प्रवचने श्रुतमागमे । एवभूत सुधर्मस्वामी वा जंबूस्वामिनमुद्दिश्यैवाह । यथा मयैतल्लोकोत्तरीये भगवत्पर्हत्युपलब्ध तद्यथा अवाप्तसम्यक्त्वादिसामग्रीक सिध्यति वै मानिकोवा भवतीति । मनुष्यगतावेवैतन्नान्यत्रेति दर्शयितुमाह ॥ सुयमेइत्यादि पश्चार्द्ध । तच्च मया तीर्थंकरांतिके श्रुतमवगतं । गणधर स्वशिष्याणामेकेषामिदमाह । यथा म नुष्यएवाशेषकर्मक्षयात्सिद्धिगतिर्भाग्भवति नामनुष्यइति । एतेन यच्छाक्यैरभिहितं । त द्यथादेवएवाशेषकर्मप्रहाण कृत्वा मोक्षभाग्भवति तदपास्त भवति । नह्यमनुष्येषु ग तित्रयवर्तिषु सच्चारित्रपरिणामाभावाद्यथा मनुष्याणा तथामोक्षावाप्तिरिति ॥ १६ ॥

अंत करंति दुक्खाण, इहमेगेसि आहियं ॥ अघाय पुण ए
गेसि, दुल्लभे य समुस्सए ॥ १७ ॥ इउविद्धसमाणस्स, पुणो
संबोहि दुल्लभा ॥ दुल्लहाउ तहच्चाउ, जे धम्मठ वियागरे ॥ १८ ॥

अर्थ–(अतंकरतिदुक्खाण के०) मनुष्य सर्व दु खनो अत करे पण मनुष्यनी जा ति विना अन्य जातीने मुक्ति नथी (इहमेगेसिआहियके०) एम कोइएके कह्योछे त था गणधरादिके एम कह्योछेके (आघायपुणएगेसिके०) ए मनुष्य संबधी देह पाम वो एक एक बहुल कर्मिजीवोने अत्यत (दुल्लभेयसमुस्सएके०) दुर्लभछे वली वली मनुष्य जन्म पामवो दुर्लभछे चुलग पासके इत्यादिक दृष्टाते दुर्लभछे ॥ १७ ॥ (इउवि द्धसमाणस्सके०) ए मनुष्य देह थकी विध्वस एटले भ्रष्ट थयलाने एटले जे मनुष्य जन्म हार्या एवाने (पुणोसबोहिदुल्लभाके०) अन्यगतीने विषे बोधी एटले सम्यक्त्व ला भ पामवो दुर्लभछे (तहच्चाउके०) तथार्चा एटले लेश्या चित्तना परिणाम अथवा अर्चा एटले मनुष्यनु शरीर ते (दुल्लहाउके०) दु प्राप्यछे (जेधम्मठवियागरेके०) वली धर्म नो अर्थजे वियागरे एटले शुधो प्रकाशे एवो शरीर धारी मनुष्य पणु पण दुर्लभछे ॥ १८ ॥

॥ दीपिका–इह एकेषा वादिनामाख्यात यत् देवाएवातकरामोक्षगामिन स्युरिति न तथा इहार्हते प्रवचने । इदमन्यत् पुनरेकेषा गणधरादीनामाख्यातं यदय मानुष्य श रीरसमुच्छ्रयोदुर्लभ । यत । ननु पुनरिदमतिदुर्लभ, मगाधससारजलधिविभ्रष्ट ॥ मा नुष्य खद्योतक,तडिल्लताविलसितप्रतिममित्यादि ॥ १७ ॥ इतोमनुष्यभवाद्विध्वसमान स्य जीवस्य पुन सबोधिधर्मप्राप्तिर्दुर्लभा तथाभूता सम्यक्त्वप्राप्तियोग्याऽर्चा लेश्या दु र्लभा । भवूना ये धर्मरूपमर्थ व्याकुर्वंति ये धर्मप्रतिपत्तियोग्याइत्यर्थ । तेषा तथाभू तार्चा दुर्लभा स्यात् ॥ १८ ॥

॥ दीपिका—अनुत्तरं स्थानं संयमरूपं काश्यपेन श्रीवीरेण प्रवेदितं कथितं यत्संयम स्थानं कृत्वाऽनुपाल्यैके निर्वृतामोक्षं गतानिष्ठां नवपर्यंतं प्राप्नुवंति पंडिता ॥ २१ ॥ पंडित्तं संयमवीर्यं लब्ध्वा पूर्वकृतं कर्म धुनीयादपनयेत् । वीर्यं किंभूतं निर्घाताय निर्जरणाय प्रवर्तकं । नवं च कर्म न कुर्यात् ॥ २२ ॥

॥ टीका—किंचान्यत् (अणुत्तरेयइत्यादि) न विद्यते उत्तरं प्रधानं यस्मादनुत्तरं तच्च तत्संयमाख्यं काश्यपेन काश्यपगोत्रेण श्रीमन्महावीरवर्धमानस्वामिना प्रवेदितमाख्यातं । तदस्य चानुत्तरत्वमाविर्भावयन्नाह । यदनुत्तरं संयमस्थानं एके महासत्वाः सदनुष्ठायिनः कृत्वाऽनुपाल्य निर्वृतानिर्वाणमनुप्राप्ताः । निर्वृताश्च संतः संसारचक्रवालस्य निष्ठां पर्यवसानं पंडिताः पापाड्डीनाः प्राप्नुवंति । तदेव भूतं संयमस्थानं काश्यपेन प्रवेदितं सदनुष्ठायिनः संतः सिद्धिं प्राप्नुवंतीति तात्पर्यार्थः ॥२१॥ अपिच (पंडिएइत्यादि) पंडितः सदसद्विवेकज्ञोवीर्यं कर्मोद्दलनसमर्थं सत्संयमवीर्यं तपोवीर्यंवा लब्ध्वाऽवाप्य । तदेव वीर्यं विशिनष्टि । निःशेषकर्मणोनिर्घातायनिर्जरणाय प्रवर्तकं पंडितवीर्यं तच्च बहुभवशतदुर्लभं कथंचित्कर्मविवरादवाप्य धुनीयादपनयेत् । पूर्वभवेष्वनेकेषु यत्कृतमुपात्तं कर्माष्टप्रकारं तत्पंडितवीर्येण धुनीयात् नवं चाभिनवं चाश्रवनिरोधान्नकरोत्यसाविति ॥ २२ ॥

> ण कुव्वती महावीरे, अणुपुव्वकडं रयं ॥ रयसा संमुहीभूता, कम्मं हेच्चाण जं मयं ॥ २३॥ जं मयं सव्वसाहूणं, तं मयं सल्लगत्तणं॥ साहइत्ताण तं तिन्ना, देवावा अभविंसु ते ॥ २४ ॥ अभविंसु पुरा धीरा, आगमिस्सावि सुव्वता ॥ दुन्निबोहस्स मग्गस्स, अंतं पाउकरातिन्नेतिबेमि ॥२५॥ इतिपनरसमजमइयनामझयणं सम्मत्तं॥

अर्थ—(णकुव्वतीमहावीरेके०) श्रीमहावीर उत्तम साधु ते नकरे शुं नकरे तोके (अणुपुव्वकडरयंके०) आनुपूर्वी मिथ्यात्व अविरति प्रमाद अनुक्रमे कीधुं जे पापरूप रज ते नकरे (रयसासंमुहीभूताके०) पापरूप रजेकरी संमुहीभूत एटले एकठां कीधां जे अष्टप्रकारनां कर्म (कम्मंहेच्चाणजंमयंके०) ते कर्मने हिंसा एटले हणीने सत्य संयम पालीने मोक्षने संमुख थाय ॥ २३ ॥ (जंमयंसव्वसाहूणंके०) जे संयम रूप स्थानक ते सर्व साधु चारित्रियानो मनो वांछित स्थानक जाणवो (तंमयंसल्लगत्तणंके०) वलीते संयमानुष्ठान केहेवो तोके शल्यकर्तन एटले शल्यनो छेदनार (साहइत्ताणतंतिन्नाके०) एवा संयमने सम्यक् प्रकारे आराधीने घणा प्राणी सर्वथा कर्मने अभावे संसार

स्याज्ञानक्रियोपेतस्य यत् स्थान तत्प्राप्तस्य जन्मकथा कुत । तस्य जन्ममरणे न भव तइत्यर्थ ॥ १९ ॥ मेधाविनोज्ञानिनस्तथा भवभ्रमणेन गतास्तथागता कुत कदाचि इत्पद्यते भवेनोत्पद्यतएवेत्यर्थ । तथागताअर्हज्गणधरादयोऽप्रतिज्ञाअनिदानाअनुत्तरा सर्वज्ञत्वात्ते लोकस्य चक्षुर्भूता स्यु ॥ २० ॥

॥ टीका–किंचान्यत् (जेधम्ममित्यादि) ये महापुरुषावीतरागा करतलामलकवत्स कलजगद्द्रष्टारस्तएवभूता परहितैकरता शुद्धमवदातं सर्वोपाधिविशुद्धं धर्ममाख्यांति प्र तिपादयंति स्वत समाचरंति च प्रतिपूर्णमायतचारित्रसद्भावात्सपूर्णं यथाख्यातचारित्र रूप वाऽनीदृशमनन्यसदृश धर्ममाख्यात्युपतिष्ठति । तदेवमनीदृशस्यानन्यसदृशस्य ज्ञा नचारित्रोपेतस्य यत् स्थान सर्वद्वंद्वोपरमरूप तदवाप्तस्य कुतोजन्मकथा जातोमृतोवे त्येवरूपा कथा स्वप्नांतरेपि तस्य कर्मबीजाभावात् कुतोविद्यतइति । तथोक्त । दग्धे बीजे यथाऽत्यंतं, प्रादुर्भवति नांकुर ॥ कर्मबीजे तथा दग्धे, न रोहति भवांकुरइत्यादि ॥ १९ ॥ किंचान्यत् । (कउकयाइत्यादि) कर्मबीजाभावात्कुत कस्मात्कदाचिदपि मेधा विनोज्ञानात्मकास्तथा पुनरावृत्त्याऽगतास्तथागता पुनरस्मिन् ससारेऽशुचिगर्भाधाने स मुत्पद्यते न कथचित्कदाचित्कर्मोपादानाभावाडुत्पद्यतइत्यर्थ । तथा तथागतास्तीर्थकृग णधरादयोन विद्यते प्रतिज्ञा निदानबधनरूपा येषां तेऽप्रतिज्ञानिदानानिराशसा सत्वहि तकरणोद्यताअनुत्तरज्ञानत्वादनुत्तरालोकस्य जतुगणस्य सदसदर्थनिरूपणकारणतश्चक्षुर्भू ताहिताहितप्राप्तिपरिहार कुर्वंत सकललोकलोचनभूतास्तथागता सर्वज्ञानवतीति॥२०॥

अणुत्तरे य ठाणे से, कासवेण पवेदिते। ज किच्चा णिव्वुडा एगे,
निठ पावति पंडिया ॥ २१ ॥ पंडिए वीरिय लद्धु, निग्घायाय
पवत्तग ॥ धुणे पुव्वकड कम्म, णव वा वि ण कुव्वती ॥ २२ ॥

अर्थ–(अणुत्तरेयठाणेसेके०) अनुत्तर एटले प्रधान सयमरूप स्थानक ते (कास वेणपवेदितेके०) काश्यप श्रीमहावीर देवे कह्यो (जकिच्चाके०) जे सयम स्थानक पा लीने (णिव्वुडाएगेके०) एक महापुरुष उपशात कषायवत एवा छता (निठपावतिपंडिया के०) पंडित विवेकना जाण ससारनो अत पामे ॥ २१ ॥ (पंडिएवीरियंलद्धुके०) पंडित एटले सदसद्विवेकना जाण ते सयमनो वीर्य बल पामीने नि शेष समस्त कर्मनो (निग्घायायके०) निर्घातन करवाने अर्थे (पवत्तगके०) प्रवर्त्तक ए पंडित वी र्य घणा भवे पामवो दुर्लभ तेने पामीने (धुणेपुव्वकडकम्मके०) पूर्वकृत कर्मने धुणे एटले खपावे (णववाविणकुव्वतीके०) कोइ नवा कर्मने नकरे ॥ २२ ॥

वडुष्प्रापकस्य ज्ञानदर्शनचारित्राख्यस्यात परमकाष्ठामवाप्य तस्यैव मार्गस्य प्राडु प्राका श्य तत्करणशीला प्राडुष्करा स्वत सन्मार्गानुष्ठायिनोऽन्येपाच प्राडुर्नावका सत स साराणेव तीर्णास्तरति तरिष्यतिचेति । गतोऽनुगम । साप्रत नयास्तेच प्राग्वत् इष्ट व्या । इतिरध्ययनपरिसमाप्तौ । ब्रवीमीति पूर्ववत् ॥ १५ ॥ इति आदानीयाख्य पच दशाध्ययन समाप्त ॥

हवे सोलमु गाहा नामे अध्ययन प्रारनिये ठेए पदरमा अध्ययनमा जे विधिरूप तथा प्रति निपेधरूप नाव कह्या ते यथोक्त विधि आचरतो सुसाधु कहेवाय एवा नावे आ सोलमो अध्ययन कहेठे

> अहाह नगव एव, से दंते दविए, वोसठ्ठकाएत्ति वच्चे, माहणे
> त्ति वा, समणेत्तिवा निक्खूत्तिवा, णिग्गथेत्तिवा, पडिआह नंते
> कह तु दंते दविए वोसठ्ठकाएत्ति वच्चे माहणेत्तिवा समणेत्ति
> वा निक्खूत्तिवा णिग्गथेत्तिवा तनो बूहि महामुणी ॥ १ ॥

अर्थ-(अहाहनगव एव के०) यथाह नगवान् हवे श्री नगवत महावीरदेव सना माहे एम कहेठे (सेदते दविए के०) ते साधु इंडियोने दमवे करी दांत तेणे करी मुक्तिगमन योग्य तथा (वोसठ के०) नि प्रतिकर्म एवो (काएत्तिवच्चे के०) शरीरछे जेहनो तेने एम कहेवो (माहणेत्तिवा के०) त्रस अने स्थावर जीवोने माहणो एवो जेनो उपदेशछे ते माहण कहिये अथवा नव विध ब्रह्मचर्यनी गुप्ति यकी माहण एटले ब्राह्मण कहिए (समणेत्तिवा के०) तथा श्रमण एटले तपस्वी शुद्ध क्रिया अनुष्ठान ना करनार (निक्खूत्तिवा के०) आरंननो त्याग करे निर्दोष निक्षार्ये प्रवर्ते अथवा अष्ट प्रकारना कर्मने नेदे तेमाटे निक्षु कहिए (णिग्गथेत्तिवा के०) तथा बाह्य अन्यतर परिग्रह रहित माटे निग्रथ कहिए (एम श्री नगवाने कहे थके शिष्य पूछे ठे के केवीरी ते (दंतेदविए के०) दांत मुक्तिगमन योग्य (वोसठ्ठकाएत्ति के०) तथा शरीरनी शा ना शुश्रूषा रहित तेने (वच्चे के०) कहिये शु कहियें तोके (माहणेत्तिवा के०) माह ण कहिये तथा (समणेत्तिवा के०) श्रमण कहिए तथा (निक्खूत्तिवा के०) निक्षु क हिए (णिग्गथेत्तिवा के०) तथा निग्रथ कहिए (तंनोबूहिमहामुणी के०) ते हे महा मुनि ए चार शब्दना अर्थ अमने कहो ॥ १ ॥

॥ दीपिका-अधुना गाथापोडशाख्य पोडशाध्ययनमारन्यते । तस्येदमादिसूत्र । (अ हेति) । अथाह नगवान् सर्वज्ञ । एवमसौ साधुर्दांत सवृतेंडिय । इव्य मुक्तिगमन

समुद्र थकी तर्या (देवावाअनविसुतेकें०) अथवा सर्वथा कर्मना क्षयना अनावे दे वत्व पणे वैमानिकमां जइ उपना एकावतारी प्रमुख थया ॥ २४ ॥ (अनविसुपुराधी राके०) पूर्वे अतीतकाले घणा चारित्रिया थया अने वर्त्तमान काले पणछे तथा (आ गमिस्सावितुव्वताके०) आगमिक काले पण घणा सुव्रत संयमानुष्ठानी थशे ते केवा थशे तोके (डुन्निबोहस्समग्गस्सके०) डुर्निबोध एटले डुर्लन एवोजे ज्ञान दर्शन अने चारित्ररूप मार्ग ते (अंतंपाउकरातिन्नेकें०) परम उत्कृष्टो पामीने तेहिज मार्गना प्रका शक बता संसार समुद्रने पूर्वे तर्या वर्त्तमाने तरेछे अने आगमिक काले तरशे तिबेमिनो अर्थ पूर्ववत् जाणवो ॥ २५ ॥ एरीते पदरमा यतिनामा अध्ययननो अर्थ समाप्त थयो

॥ दीपिका–अन्यजविर्यदनुपूर्वं कर्म आश्रित्य संयमात्समुखीनूतोयन्मतमष्टनेदं तत् कर्म हित्वा मोक्षस्यानिमुखीनूतः ॥ २३ ॥ सर्वसाधूनां यन्मतमनिप्रेतं तत्संयमस्थानं श ल्यकर्तनं कर्मछेदकं । तत्संयमस्थानं साधयित्वा बहव संसारं तीर्णामोक्षं प्राप्ताः । अ थवा देवाअनूवन् नवंति नविष्यंतिच ॥ २४ ॥ पुरा पूर्वं बहवोधीराअनूवन् अनागते काले सुव्रतानविष्यंति च वर्तमानकाले तथानूताः संतिच। ये डुर्निबोधस्य डुष्प्रापस्य मा र्गस्य दर्शनचारित्राख्यस्यांतं परमकाष्ठामवाप्य तस्यैव प्राडुष्कराः स्वतः सन्मार्गसेविनोऽ न्येषां च प्राडुर्नावकाः संतः संसारं तीर्णास्तरंति तरिष्यंति चेति ॥ २५ ॥ इति आदा नीयाख्यं पंचदशमध्ययनं समाप्तं ॥

॥ टीका–किंच (नकुव्वतीत्यादि) महावीरः कर्मदारणसहिष्णुः सन्नानुपूर्व्येण मिथ्या त्वविरतिप्रमादकषाययोगैर्यत्कृतं रजोऽपरजंतुनिस्तदसौ न करोति न विधत्ते । यतस्तत्प्रा क्तनोपात्तरजसैवोपादीयते सच तत्प्राक्तनं कर्मावष्टन्य सत्संयमात्समुखीनूतस्तदनिमुखी नूतश्च यन्मतमष्टप्रकारं तत्सर्वं हित्वा त्यक्त्वा मोक्षस्य सत्संयमस्य वा सम्मुखीनूतोऽ सावितिः ॥ २३ ॥ अन्यच्च (जम्मयमित्यादि) सर्वसाधूनां यन्मतमनिमेतं तदेतत्संयम स्थानं । तद्विशिनष्टि। शल्यं पापानुष्ठानं तज्जनितं वा कर्म तत्कर्तयति छिनत्ति तच्छल्यक र्तनं तच्च सदनुष्ठानं तद्युक्तविहारिणः साधयित्वा सम्यगाराध्य बहवः संसारकांतारं ती र्णाः । अपरे तु सर्वकर्मक्षयानावात् देवाअनूवन् ते चाप्तसम्यक्त्वाः सच्चारित्रिणोवैमानि कत्वमवापुः प्राप्नुवंति प्राप्स्यंतिचेति ॥ २४ ॥ सर्वोपसंहारार्थमाह । (अनविसुइत्यादि) पुरा पूर्वस्मिन्ननादिके काले बहवोमहावीराः कर्मविदारणसहिष्णव अनूवन् नूतास्तथा वर्तमाने च काले कर्मनूमौ तथानूतानवंति तथागामिनि चानंते काले तथानूताः सत्सं यमानुष्ठायिनोनविष्यंति । किंनूतवंतः कुर्वंति करिष्यंतिचेत्याह । यस्य डुर्निबोधस्याती

वस्तुप्रापकस्य ज्ञानदर्शनचारित्राख्यस्यात परमकाष्ठामवाप्य तस्यैव मार्गस्य प्राडु प्राका श्य तत्करणशीला प्राडुष्करा स्वत सन्मार्गानुष्ठायिनोऽन्येषाच प्राडुर्भावका सत स साराणेव त्तीर्णास्तरति तरिष्यतिचेति । गतोऽनुगम । साप्रत नयास्तेच प्राग्वत् द्रष्ट व्या । इतिरध्ययनपरिसमाप्तौ । ब्रवीमीति पूर्ववत् ॥ १५ ॥ इति आदानीयाख्य पंच दशाध्ययन समाप्त ॥

हवे सोलमु गाहा नामे अध्ययन प्रारंनिये ठेए पदरमा अध्ययनमा जे विधिरूप तथा प्रति निषेधरूप नाव कह्या ते यथोक्त विधि आचरतो सुसाधु कहेवाय एवा नावे आ सोलमो अध्ययन कहेले

> अहाह नगवं एव, से दंते दविए, वोसठकाएत्ति वच्चे, माहणे त्ति वा, समणेत्तिवा निरकूत्तिवा, णिग्गथेत्तिवा, पडिआह नंते कह नु दंते दविए वोसठकाएत्ति वच्चे माहणेत्तिवा समणेत्ति वा निरकूत्तिवा णिग्गथेत्तिवा तनो बूहि महामुणी ॥ १ ॥

अर्थ-(अहाहनगव एव के०) यथाह नगवान् हवे श्री नगवंत महावीरदेव सना माहे एम कहेले (सेदंते दविए के०) ते साधु इंद्रियोने दमवे करी दांत तेणे करी मुक्तिगमन योग्य तथा (वोसठ के०) नि प्रतिकर्म एवो (काएत्तिवच्चे के०) शरीरले जेहनो तेने एम कहेवो (माहणेत्तिवा के०) त्रस अने स्थावर जीवोने माहणो एवो जेनो उपदेशले ते माहण कहिये अथवा नव विध ब्रह्मचर्यनी गुप्ति थकी माहण एटले ब्राह्मण कहिए (समणेत्तिवा के०) तथा श्रमण एटले तपस्वी शुद्ध क्रिया अनुष्ठान ना करनार (निरकूत्तिवा के०) आरंनना त्याग करे निर्दोष निक्षाये प्रवर्ते अथवा अष्ट प्रकारना कर्मने नेदे तेमाटे निक्षु कहिए (णिग्गथेत्तिवा के०) तथा बाह्य अन्यतर परिग्रह रहित माटे निग्रंथ कहिए (एम श्री नगवाने कहे थके शिष्य पूछे ठे के केवीरी ते (दंतेदविए के०) दांत मुक्तिगमन योग्य (वोसठकाएत्ति के०) तथा शरीरनी शो ना शुश्रूषा रहित तेने (वच्चे के०) कहिये शु कहिये तोक (माहणेत्तिवा के०) माह ण कहिये तथा (समणेत्तिवा के०) श्रमण कहिए तथा (निरकूत्तिवा के०) निक्षु क हिए (णिग्गथेत्तिवा के०) तथा निग्रंथ कहिए (तंनोबूहिमहामुणी के०) ते हे महा मुनि ए चार शब्दनो अर्थ अमने कहो ॥ १ ॥

॥ दीपिका-अधुना गाथाषोडशाख्य षोडशाध्ययनमारभ्यते । तस्येदमादिसूत्र । (अ हेति) । अथाह नगवान् सर्वज्ञ । एवमर्ता साधुर्दांत सद्वृत्तइंद्रिय । द्रव्य मुक्तिगमन

योग्योव्युत्सृष्टकायोनिष्प्रतिकर्मशरीर समाहनइति श्रमणइति निक्षुरिति निग्रथइति नगवतोक्ते शिष्य प्रत्याह। हेनगवन् योऽसौ पूर्वोक्तपचदशाध्ययनार्थानुष्ठायी साधुर्माह नादिशब्दवाच्यइति तत्कथ स्यादिति नोऽस्माक ब्रूहि हेमहामुने ॥ १ ॥

॥ टीका—उक्त पंचदशमध्ययन सांप्रतं षोडशमारभ्यते। अस्य चायमनिसबध । ई हानंतरोक्तेषु पचदशस्वप्यध्ययनेषु येऽर्थाअनिहिताविधिप्रतिषेधद्वारेण तान् तथैवाच रन् साधुर्नवतीत्येतदनेनाध्ययनेनोपदिश्यते। ते चामी अर्था । तद्यथा। प्रथमाध्य यने स्वसमयपरसमयपरिज्ञानेन सम्यक्त्वगुणावस्थितोनवति। द्वितीयाध्ययने ज्ञाना दिनि कर्मविदारणहेतुनिरष्टप्रकारक कर्म विदारयन् साधुर्नवति। तथा तृतीयाध्ययने य थानुकूलं प्रतिकूलोपसर्गान् सहमान साधुर्नवति। चतुर्थे तु स्त्रीपरीषहस्य डुर्जयत्वात्त ज्ञयकारीति। पचमेतु नरकवेदनाभ्य समुद्विजमानस्तत्प्रायोग्यकर्मणोविरत सन्साधुत्व मवाप्नुयात्। षष्ठेतु यथा श्रीवीरवर्धमानस्वामिना कर्मक्षयोद्यतेन चतुर्ज्ञानिनापि सयम प्र ति प्रयत्न कृतस्तथान्येनापि छद्मस्थेन विधेयमिति। सप्तमे तु कुशीलदोषान् ज्ञात्वा त त्परिहारोद्यतेन सुशीलावस्थितेन नाव्य। अष्टमेतु बालवीर्यपरिहारेण पडितवीर्योद्यतेन सदा मोक्षानिलाषिणा नाव्य। नवमे तु यथोक्त क्षान्त्यादिक धर्ममनुचरन् ससारान्मुच्य तइति। दशमे तु सपूर्णसमाधियुक्त सुगतिनाग्नवत्येकादशेतु सम्यक्दर्शनज्ञानचारित्रा ख्य सन्मार्ग प्रतिपन्नोऽशेषक्लेशप्रहाण विधत्ते। द्वादशेतु तीर्थिकदर्शनानि सम्यग्गुणदोषवि चारणतोविजानन्न तेषु श्रद्धान विधत्ते। त्रयोदशे तु शिष्यगुणदोषविज्ञ सङ्गुणेषु वर्तमा न कल्याणनाग्नवति। चतुर्दशे तु प्रशस्तनावग्रथितनावितात्मा विस्रोतसिकारहितोन वति। पचदशेतु यथावदायतचरित्रोनवति निक्षुस्तदुपदिश्यतइति। तदेवमनंतरोक्तेषु प चदशस्वध्ययनेषु येऽर्था प्रतिपादितास्तेत्र सक्षेपत प्रतिपाद्यतइत्यनेन सबधेनायातस्या स्याध्ययनस्य चत्वार्युपक्रमादीन्यनुयोग द्वाराणि नवति । तत्रोपक्रमातर्गतोऽर्थाधिकारो ऽनतरमेव सबधप्रतिपादनेनैवानिहित। नामनिष्पन्नेतु निक्षेपे गाथाषोडशकमिति नाम। तत्र गाथानिक्षेपार्थं निर्युक्तिरुदाह। "णाम ठवणा गाहा, दवगाहा य नावगाहा य॥ पोत्थगपत्तगलिहिया, सो होइ दवगाहाउ ॥ १३९ ॥ (णामठवणेत्यादि) तत्र गाथा यानामादिकश्चतुर्धा निक्षेपस्तत्रापि नामस्थापने क्षुण्णत्वादनादृत्य द्रव्यगाथामाह। तत्र ज्ञशरीरनव्यशरीरव्यतिरिक्ता द्रव्यगाथा पत्रकपुस्तकादिन्यस्ता । तद्यथा। जयतिणवण लिणकुवलयवियसियसरावत्तपत्तलदलच्छो॥वीरोगयदमयगल सुललियगयविक्कमो नगव ॥ १ ॥ अथ चेयमेव गाथा षोडशाध्ययनरूपा पत्रकपुस्तकन्यस्ता द्रव्यगाथेति। नावगा थामधिकृत्याह। "होंति पुण नावगाहा, सागारुवउगनावणिप्पन्ना ॥ महुरानिलाणश्च

ना, तेण गाहाति ण बिंति "॥ ४० ॥ (होंतिपुणइत्यादि) नावगाथा पुनरपि नवति। तद्यथा। योऽसौ साकारोपयोग क्षायोपशमिकनावनिष्पन्नोगाथा प्रति व्यवस्थित सा नावगाथेत्युच्यते। समस्तस्यापि च श्रुतस्य क्षायोपशमिकनावे व्यवस्थितत्वात् । तत्र चानाकारोपयोगस्यासनवादेवमनिधीयते इति। पुनरपि तामेव विशिनष्टि। मधुर श्रुति पेशलमनिधानमुच्चारण यस्या सा मधुरानिधानगाथा युक्ता । गाथा ठदसोपनिबद्धस्य प्राकृतस्य मधुरत्वादित्यनिप्रायोगीयते पठ्यते मधुराक्षरप्रवृत्त्या गायति वा तामिति गाथा। यतएवमतस्तेन कारणेन गाथामिति ता ब्रुवते। णमिति वाक्यालंकारे। एनां वा गाथामिति। अन्यथावा निरुक्तमधिकृत्याह । " गाहीकयावअत्था,अहवणसामुदएण ठ देण ॥ एएण होंति गाहा, एसो अन्नोवि पज्जाउ,, ॥ ४१ ॥ (गाहीकयावइत्यादि) गाथीकृता पिंडीकृताविक्षिप्ता सतएकत्र मीलिताअर्थायस्या सा गाथेत्यथवा सामुद्रेण छदसा वा निबद्धा सा गाथेत्युच्यते। तच्चेद छदोऽनिबद्ध च यल्लोकेगाथेति तत्पंडितै प्रोक्त। एषोऽनतरोक्तोगाथाशब्दस्य पर्यायोनिरुक्तस्तात्पर्यार्थोंऽद्रष्टव्य । तद्यथा। गीयतेऽसौ गायत्ति वा तामिति गाथीकृतावार्था सामुद्रेण वा छदसेति गाथेत्युच्यते। अन्योवास्वयमन्यूह्य निरुक्तविधिना विधेयइति। पिंडितार्थग्राहित्वमधिकृत्याह।,, पन्नरससुअज्ञयणे,पिंडित हेसुजो अवितहत्ति ॥ पिंडियवयणेणह गेहेतिम्हा ततो गाहा,, ॥४२॥ (पन्नरससुइत्यादि) पचदशस्वप्यध्ययनेषु अनतरोक्तेषु पिंडितार्थानि तेषु सर्वेष्वपि यएव व्यवस्थितोऽर्थस्तमवितथ यथावस्थितपिंडितार्थवचनेन यस्माद्ग्रथ्नात्येतदध्ययन षोडश तत पिंडितार्थग्रथनाद्गाथेत्युच्यतइति । तत्त्वनेदपर्यायैर्व्याख्येति कृत्वा सूत्रार्थमधिकृत्याह। "सोलसमे अज्ञयणे, अणगारगुणाणवणण नणिया ॥ गाहा सोलसणाम, अज्ञयणमिण उवदिसति ॥ ४३ ॥ (सोलसमेइत्यादि) षोडशाध्ययने ऽनगारा साधवस्तेषा गुणा क्षांत्यादयस्तेषामनगारगुणाना पचदशस्वप्यध्ययनेष्वनिहितानामिहाध्ययने पिंडितार्थवचनेन यतोवर्णनानिहिताऽतोगाथाषोडशानिधानमध्ययनमिद व्यपदिशति प्रतिपादयति। उक्तोनामनिष्पन्नोनिक्षेपोनिर्युक्त्यानुगमस्तदनतर स्पर्शिकनिर्युक्त्याऽनुगमस्यावसर सच सूत्रे सति नवति सूत्र च सूत्रानुगमेऽसावप्यवसरप्राप्तएवातोऽस्खलितादिगुणोपेत सूत्रानुगमे सूत्रमुच्चारणीय। तच्चेद। (अहाहनगवमित्यादि) अथेत्यय शब्दोऽवसानमंगलार्थ । आदिमगल तु बुध्यतेत्यनेनानिहित । तेनाद्यतयोर्मंगलत्वात्सर्वोपि श्रुतस्कंधोमंगलमित्येतदनेनावेदित नवति। आनतर्येवा शब्द । पचदशाध्ययनानतर तदर्थसंग्राहीद षोडशमध्ययन प्रारभ्यते। अथानतरमाह नगवानुत्पन्नदिव्यज्ञान सदेवमनुजायां पर्षदि द वक्ष्यमाणमाह। तद्यथा। एवमसौ पचदशाध्ययनोक्तार्थयुक्त ससाधुर्दांतइंद्रियदमनेन द्रव्यनूतोमुक्तिगमनयोग्यत्वात् द्रव्यच नव्येइति वचनात् रागद्वेषकालिकायद्व्यरहित

योग्योव्युत्सृष्टकायोनिष्प्रतिकर्मशरीर समाहनऽति श्रमणइति भिक्षुरिति निग्रथइति नगवतोक्ते शिष्य प्रत्याह। हेनगवन् योऽसौ पूर्वोक्तपचदशाध्ययनार्थानुष्ठायी साधुर्माह नादिशब्दवाच्यइति तत्कथ स्यादिति नोऽस्माक ब्रूहि हेमहामुने ॥ १ ॥

॥ टीका–उक्त पंचदशमध्ययन सांप्रतं षोडशमारभ्यते। अस्य चायमभिसबध । इहानतरोक्तेषु पचदशस्वप्यध्ययनेषु येऽर्थाअभिहिताविधिप्रतिषेधद्वारेण तान् तथैवाचरन् साधुर्नवतीत्येतदनेनाध्ययनेनोपदिश्यते । ते चामी अर्था । तद्यथा । प्रथमाध्ययने स्वसमयपरसमयपरिज्ञानेन सम्यक्त्वगुणावस्थितोभवति । द्वितीयाध्ययने ज्ञानादिभि कर्मविदारणहेतुभिरष्टप्रकारक कर्म विदारयन् साधुर्नवति । तथा तृतीयाध्ययने यथानुकूलं प्रतिकूलोपसर्गान् सहमान साधुर्नवति । चतुर्थे तु स्त्रीपरीषहस्य डुर्जयत्वात्तज्जयकारीति । पचमेतु नरकवेदनाभ्य समुद्विजमानस्तत्प्रायोग्यकर्मणोविरत सन्साधुत्वमवाप्नुयात् । षष्ठेतु यथा श्रीवीरवर्धमानस्वामिना कर्मक्षयोद्यतेन चतुर्ज्ञानिनापि सयम प्रति प्रयत्न कृतस्तथान्येनापि छद्मस्थेन विधेयमिति । सप्तमे तु कुशीलदोषान् ज्ञात्वा तत्परिहारोद्यतेन सुशीलावस्थितेन भाव्यं । अष्टमेतु बालवीर्यपरिहारेण पडितवीर्योद्यतेन सदा मोक्षाभिलाषिणा भाव्य । नवमे तु यथोक्त क्षान्त्यादिक धर्ममनुचरन् ससारान्मुच्यतइति । दशमे तु सपूर्णसमाधियुक्त सुगतिभाग्भवत्येकादशेतु सम्यक्दर्शनज्ञानचारित्राख्य सन्मार्ग प्रतिपन्नोऽशेषक्लेशप्रहाण विधत्ते। द्वादशेतु तीर्थिकदर्शनानि सम्यग्गुणदोषविचारणतोविजानन्न तेषु श्रद्धान विधत्ते । त्रयोदशे तु शिष्यगुणदोपविज्ञ सद्गुणेषु वर्तमान कल्याणभाग्भवति । चतुर्दशे तु प्रशस्तभावग्रथितभावितात्मा विस्रोतसिकारहितोनवति । पचदशेतु यथावदायतचरित्रोभवति भिक्षुस्तदुपदिश्यतइति । तदेवमनतरोक्तेषु पचदशस्वध्ययनेषु येऽर्था प्रतिपादितास्तेत्र सक्षेपत प्रतिपाद्यतइत्यनेन सवधेनायातस्यास्याध्ययनस्य चत्वार्युपक्रमादीन्यनुयोगद्वाराणि नवति । तत्रोपक्रमातर्गतोर्थाधिकारोऽनतरमेव सबधप्रतिपादनेनैवाभिहित । नामनिष्पन्नेतु निक्षेपे गाथाषोडशकमिति नाम। तत्र गाथानिक्षेपार्थं निर्युक्तिकृदाह। "णाम ठवणा गाहा, दव्वगाहा य भावगाहा य॥ पोत्थगपत्तगलिहिया, सो होइ दव्वगाहाउ ॥ १३९ ॥ (णामठवणेत्यादि) तत्र गाथायातामादिकश्चतुर्धा निक्षेपस्तत्रापि नामस्थापने क्षुण्णत्वादनादृत्य द्रव्यगाथामाह । तत्र ज्ञशरीरनव्यशरीरव्यतिरिक्ता द्रव्यगाथा पत्रकपुस्तकादिन्यस्ता । तद्यथा । जयतिणवणलिणकुवलयवियसियसरावत्तपत्तलदलच्छो ॥ वीरोगयदमयगल सुललियगयविक्कमो भगव ॥ १ ॥ अथ चेयमेव गाथा षोडशाध्ययनरूपा पत्रकपुस्तकन्यस्ता द्रव्यगाथेति। भावगाथामधिकृत्याह । "होंति पुण भावगाहा, सागारुवउगभावणिप्पन्ना ॥ महुराभिहाणजुत्ता

ता, तेण गाहाति ण बिंति"॥ ४०॥ (होंतिपुणइत्यादि) भावगाथा पुनरपि भवति। तद्यथा। योऽसौ साकारोपयोग क्षायोपशमिकभावनिष्पन्नोगाथा प्रति व्यवस्थित सा भावगाथेत्युच्यते। समस्तस्यापि च श्रुतस्य क्षायोपशमिकभावे व्यवस्थितत्वात्। तत्र चानाकारोपयोगस्यासंभवादेवमभिधीयते इति। पुनरपि तामेव विशिनष्टि। मधुर श्रुति पेशलमभिधानमुच्चारणं यस्याः सा मधुराभिधानगाथा युक्ता। गाथा छंदसोपनिबद्धस्य प्राकृतस्य मधुरत्वादित्यभिप्रायोगीयते पठ्यते मधुराक्षरप्रवृत्त्या गायति वा तामिति गा था। यतएवमतस्तेन कारणेन गाथामिति ता ब्रुवते। णमिति वाक्यालंकारे। एनां वा गाथामिति। अन्यथावा निरुक्तमधिकृत्याह। "गाहीकयावयत्था,अहवणसामुद्दएण छ देण॥ एएण होंति गाहा, एसो अन्नोवि पज्जाउ,,॥ ४१॥ (गाहीकयावइत्यादि) गा थीकृता पिंडीकृताविक्षिप्ता सतएकत्र मीलिताअर्थायस्या सा गाथेत्यथवा सामुद्रेण छंदसा वा निबद्धा सा गाथेत्युच्यते। तच्चेद छंदोऽनिबद्धं च यल्लोकेगाथेति तत्पंडितैः प्रो क्त। एषोऽनंतरोक्तोगाथाशब्दस्यः पर्यायोनिरुक्तस्तात्पर्यार्थोद्रष्टव्य। तद्यथा। गीयतेऽसौ गायति वा तामिति गाथीकृतार्था सामुद्रेण वा छंदसेति गाथेत्युच्यते। अन्योवास्वयमभ्यू ह्य निरुक्तविधिना विधेयइति। पिंडितार्थयाहित्वमधिकृत्याह।,, पन्नरससुअज्झयणे,पिंडित त्थेसुजो अवितहत्ति॥ पिंडियवयणेणछ गेहेतिम्हा ततो गाहा,, ॥४२॥ (पन्नरससुइत्या दि) पंचदशस्वप्यध्ययनेषु अनंतरोक्तेषु पिंडितार्थानि तेषु सर्वेष्वपि यएव व्यवस्थितोऽर्थ स्तमवितथ यथावस्थितपिंडितार्थवचनेन यस्माद्ग्रथ्नात्येतदध्ययन षोडश ततः पिंडि तार्थग्रथनाद्गाथेत्युच्यतइति। तत्त्वभेदपर्यायैर्व्याख्येति कृत्वा सूत्रार्थमधिकृत्याह। "सो लसमे अज्झयणे, अणगारगुणाणवण्णण भणिया॥ गाहा सोलसणाम, अज्झयणमिण ववदिसंति॥ ४३॥ (सोलसमेइत्यादि) षोडशाध्ययने ऽनगाराः साधवस्तेषां गुणाः क्षां त्यादयस्तेषामनगारगुणानां पंचदशस्वप्यध्ययनेष्वभिहितानामिहाध्ययने पिंडितार्थवचने न यतोवर्णनाभिहिताऽतोगाथाषोडशाभिधानमध्ययनमिद व्यपदिशंति प्रतिपादयंति। उ क्तोनामनिष्पन्नोनिक्षेपोनिर्युक्त्यानुगमस्तदनंतर स्पर्शिकनिर्युक्त्याऽनुगमस्यावसरः सच सूत्रे सति भवति सूत्रं च सूत्रानुगमेऽसावप्यवसरप्राप्तएवातोऽस्खलितादिगुणोपेतं सूत्रा नुगमे सूत्रमुच्चारणीय। तच्चेद। (अहाहभगवमित्यादि) अथेत्यय शब्दोऽवसानमंगला र्थः। आदिमंगलं तु वुच्यतेत्यनेनाभिहितं। तेनाद्यंतयोर्मंगलत्वात्सर्वोऽपि श्रुतस्कंधोमंग लमित्येतदनेनावेदितं भवति। आनंतर्यवा शब्दः। पंचदशाध्ययनानंतर तदर्थसंग्राहीद षोडशमध्ययन मारभ्यते। अथानंतरमाह भगवानुत्पन्नदिव्यज्ञान सदेवमनुजाया पर्षदी द वक्ष्यमाणमाह। तद्यथा। एवमसौ पंचदशाध्ययनाक्तार्थयुक्तः ससाधुर्दांतइंद्रियदमने न द्रव्यभूतोमुक्तिगमनयोग्यत्वात् द्रव्यंच भव्येइति वचनात् रागद्वेषकालिकायद्यरहित

योग्योव्युत्सृष्टकायोनिष्प्रतिकर्मशरीर समाहनइति श्रमणइति निक्षुरिति निर्ग्रथइति नगवतोक्ते शिष्य प्रत्याह। हेनगवन् योऽसौ पूर्वोक्तपंचदशाध्ययनार्थानुष्ठायी साधुर्माह नादिशब्दवाच्यइति तत्कथं स्यादिति नोऽस्माकं ब्रूहि हेमहामुने ॥ १ ॥

॥ टीका–उक्तं पंचदशमध्ययनं सांप्रतं षोडशमारन्यते। अस्य चायमनिसंबंध। ई ह्यानंतरोक्तेषु पंचदशस्वप्यध्ययनेषु येऽर्थास्ञनिहिता विधिप्रतिषेधद्वारेण तान् तथैवाच रन् साधुर्नवतीत्येतदनेनाध्ययनेनोपदिश्यते। ते चामी अर्था। तद्यथा। प्रथमाध्य यने स्वसमयपरसमयपरिज्ञानेन सम्यक्त्वगुणावस्थितोनवति। द्वितीयाध्ययने ज्ञाना दिनि कर्मविदारणहेतुनिरष्टप्रकारकं कर्म विदारयन् साधुर्नवति। तथा तृतीयाध्ययने य थानुकूलं प्रतिकूलोपसर्गान् सहमान साधुर्नवति। चतुर्थे तु स्त्रीपरीषहस्य डुर्जयत्वात्त ऊयकारीति। पंचमेतु नरकवेदनान्य समुद्विजमानस्तत्प्रायोग्यकर्मणोविरत सन्साधुत्व मवाप्नुयात्। षष्ठेतु यथा श्रीवीरवर्धमानस्वामिना कर्मक्ष्योद्यतेन चतुर्ज्ञानिनापि संयमं प्र ति प्रयत्न कृतस्तथान्येनापि छद्मस्थेन विधेयमिति। सप्तमे तु कुशीलदोषान् ज्ञात्वा त त्परिहारोद्यतेन सुशीलावस्थितेन नाव्य। अष्टमेतु बालवीर्यपरिहारेण पंडितवीर्योद्यतेन सदा मोक्षानिलाषिणा नाव्य। नवमे तु यथोक्तं क्षात्यादिकं धर्ममनुचरन् संसारान्मुच्य तइति। दशमे तु संपूर्णसमाधियुक्त सुगतिनाग्नवत्येकादशेतु सम्यक्दर्शनज्ञानचारित्रा रव्यं सन्मार्गं प्रतिपन्नोऽशेषक्लेशप्रहाणं विधत्ते। द्वादशेतु तीर्थिकदर्शनानि सम्यग्गुणदोषवि चारणतोविजानन्न तेषु श्रद्धानं विधत्ते। त्रयोदशे तु शिष्यगुणदोषविज्ञ सद्गुणेषु वर्तमा न कल्याणनाग्नवति। चतुर्दशे तु प्रशस्तनावग्रथितनावितात्मा विस्रोतसिकारहितोन वति। पंचदशेतु यथावदायतचरित्रोनवति निक्षुस्तडुपदिश्यतइति। तदेवमनंतरोक्तेषु पं चदशस्वध्ययनेषु येऽर्था प्रतिपादितास्तेत्र संक्षेपत प्रतिपाद्यतइत्यनेन संबंधेनायातस्या स्याध्ययनस्य चत्वार्युपक्रमादीन्यनुयोगद्वाराणि नवति। तत्रोपक्रमांतर्गतोर्थाधिकारो ऽनंतरमेव संबंधप्रतिपादनेनैवानिहित। नामनिष्पन्नेतु निक्षेपे गाथाषोडशकमिति नाम। तत्र गाथानिक्षेपार्थं निर्युक्तिरुदाह। "णाम ठवणा गाहा, दव्वगाहा य नावगाहा य॥ पोछगपत्तगलिहिया, सो होइ दव्वगाहाउ ॥ १३ए ॥ (णामठवणेत्यादि) तत्र गाथा यात्तामादिकश्चतुर्धा निक्षेपस्तत्रापि नामस्थापने क्षुण्णत्वादनादृत्य ड्व्यगाथामाह। तत्र ज्ञशरीरनव्यशरीरव्यतिरिक्ता ड्व्यगाथा पत्रकपुस्तकादिन्यस्ता। तद्यथा। जयतिणवण लिणकुवलयवियसियसरावत्तपत्तलदलछो ॥ वीरोगयंदमयगल सुललियगयविक्कमो नगव ॥ १ ॥ अथ चेयमेव गाथा षोडशाध्ययनरूपा पत्रकपुस्तकन्यस्ता ड्व्यगाथेति। नावगा थामधिकृत्याह। "होंति पुण नावगाहा, सागारुवउगनावणिप्पन्ना ॥ महुरानिलाणछ

ता, तेण गाहाति ए बिंति "॥ ४० ॥ (होतिपुंणइत्यादि) भावगाथा पुनरपि भवति। तद्यथा । योऽसौ साकारोपयोग क्षायोपशमिकभावनिष्पन्नोगाया प्रति व्यवस्थित सा भावगायेत्युच्यते । समस्तस्यापि च श्रुतस्य क्षायोपशमिकभावे व्यवस्थितत्वात् । तत्र चानाकारोपयोगस्यासंभवादेवमभिधीयते इति । पुनरपि तामेव विशिनष्टि । मधुर श्रुति पेशलमभिधानमुच्चारण यस्या सा मधुराभियानगाथा युक्ता । गाथा छदसोपनिबद्धस्य प्राकृतस्य मधुरत्वादित्यभिप्रायोगीयते पठ्यते मधुराक्षरप्रवृत्त्या गायति वा तामिति गाथा । यतएवमतस्तेन कारणेन गाथामिति ता ब्रुवते । णमिति वाक्यालकारे । एनां वा गाथामिति । अन्यथावा निरुक्तमधिकृत्याह । " गाहीकयावअच्छा,अहवणसामुदएण छ देण ॥ एएण होति गाहा, एसो अन्नोवि पज्जाउ,, ॥ ४१ ॥ (गाहीकयावइत्यादि) गाथीकृता पिंडीकृताविक्षिप्ता सतएकत्र मीलिताअर्थायस्या सा गाथेत्यथवा सामुद्रेण छदसा वा निबद्धा सा गाथेत्युच्यते । तच्चेद छदोऽनिबद्ध च यल्लोकेगाथेति तत्पडितै प्रोक्त । एपोऽनतरोक्तोगाथाशब्दस्य पर्यायोनिरुक्तस्तात्पर्यार्थोऽद्रष्टव्य. । तद्यथा । गीयतेऽसौ गायति वा तामिति गाथीकृतावार्था सामुद्रेण वा छदसेति गाथेत्युच्यते। अन्योवास्वयमभ्यूह्य निरुक्तविधिना विधेयइति। पिंडितार्थग्राहित्वमधिकृत्याह।,, पन्नरससुअज्झयणे,पिंडित्तेसुजो अवितहत्ति ॥ पिंडियवयणेणछ गेहेतिम्हा ततो गाहा,, ॥४२॥ (पन्नरससुइत्यादि) पचदशस्वप्यध्ययनेपु अनतरोक्तेपु पिंडितार्थानि तेपु सर्वेष्वपि यएव व्यवस्थितोऽर्थस्तमवितथ यथावस्थितपिंडितार्थवचनेन यस्माद्ग्रथ्नात्येतदध्ययन षोडश तत पिंडितार्थग्रथनाद्गाथेत्युच्यतइति । तत्त्वचेदपर्यायैर्व्याख्येति कृत्वा सूत्रार्थमधिकृत्याह । "सोलसमे अज्झयणे, अणगारगुणाणवणण भणिया ॥ गाहा सोलसणाम, अज्झयणमिण ववदिसति ॥ ४३ ॥ (सोलसमेइत्यादि) पोडशाध्ययने ऽनगारा साधवस्तेपा गुणा क्षांत्यादयस्तेपामनगारगुणाना पचदशस्वप्यध्ययनेष्वभिहितानामिहाध्ययने पिंडितार्थवचनेन यतोवर्णनाभिहिताऽतोगाथाषोडशाभिधानमध्ययनमिद व्यपदिशति प्रतिपादयति। उक्तोनामनिष्पन्नोनिक्षेपोनिर्युक्त्यानुगमस्तदनतर स्पर्शिकनिर्युक्त्याऽनुगमस्यावसर सच सूत्रे सति भवति सूत्र च सूत्रानुगमेऽसावप्यवसरप्राप्तएवातोऽस्खलितादिगुणोपेत सूत्रानुगमे सूत्रमुच्चारणीय । तच्चेद । (अहाहभगवमित्यादि) अथेत्यय शब्दोऽवसानमगलार्थे । आदिमगल तु वुध्यतेत्यनेनाभिहित । तेनाद्यतयोर्मगलत्वात्सर्वोपि श्रुतस्कधोमगलमित्येतदनेनावेदित भवति । आनतर्येवा शब्द । पचदशाध्ययनानतर तदर्थसग्राहीद पोडशमध्ययन मारभ्यते । अथानतरमाह भगवानुत्पन्नदिव्यज्ञान सदेवमनुजाया पर्षदि द वक्ष्यमाणमाह । तद्यथा । एवमसौ पचदशाध्ययनोक्तार्थयुक्त ससाधुर्दातइंद्रियदमनेन द्रव्यभूतोमुक्तिगमनयोग्यत्वात् द्रव्यच भव्येइति वचनात् रागद्वेपकालिकापङ्करहित

योग्योव्युत्सृष्टकायोनिष्प्रतिकर्मशरीर समाहनइति श्रमणइति भिक्षुरिति निग्रंथइति भगवतोक्ते शिष्य प्रत्याह। हेभगवन् योऽसौ पूर्वोक्तपंचदशाध्ययनार्थानुष्ठायी साधुर्माह नादिशब्दवाच्यइति तत्कथ स्यादिति नोऽस्माक ब्रूहि हेमहामुने ॥ १ ॥

॥ टीका—उक्त पंचदशमध्ययन सांप्रतं षोडशमारभ्यते। अस्य चायमभिसंबंध। ई हानंतरोक्तेषु पंचदशस्वप्यध्ययनेषु येऽर्थाअभिहिताविधिप्रतिषेधद्वारेण तान् तथैवाच रन् साधुर्भवतीत्येतदनेनाध्ययनेनोपदिश्यते। ते चामी अर्था। तद्यथा। प्रथमाध्य यने स्वसमयपरसमयपरिज्ञानेन सम्यक्त्वगुणावस्थितोभवति। द्वितीयाध्ययने ज्ञाना दिभि कर्मविदारणहेतुभिरष्टप्रकारक कर्म विदारयन् साधुर्भवति। तथा तृतीयाध्ययने य थानुकूलं प्रतिकूलोपसर्गान् सहमान साधुर्भवति। चतुर्थे तु स्त्रीपरीषहस्य दुर्जयत्वात्त ज्जयकारीति। पंचमेतु नरकवेदनाभ्य समुद्विजमानस्तत्प्रायोग्यकर्मणोविरत सन्साधुत्व मवाप्नुयात्। षष्ठेतु यथा श्रीवीरवर्धमानस्वामिना कर्मक्षयोद्यतेन चतुर्ज्ञानिनापि संयम प्र ति प्रयत्न कृतस्तथान्येनापि छद्मस्थेन विधेयमिति। सप्तमे तु कुशीलदोषान् ज्ञात्वा त त्परिहारोद्यतेन सुशीलावस्थितेन भाव्य। अष्टमेतु बालवीर्यपरिहारेण पंडितवीर्योद्यतेन सदा मोक्षाभिलाषिणा भाव्य। नवमे तु यथोक्त क्षात्यादिक धर्ममनुचरन् संसारान्मुच्य तइति। दशमे तु संपूर्णसमाधियुक्त सुगतिभाग्भवत्येकादशेतु सम्यक्दर्शनज्ञानचारित्रा ख्य सन्मार्ग प्रतिपन्नोऽशेषक्लेशप्रहाण विधत्ते। द्वादशेतु तीर्थिकदर्शनानि सम्यग्गुणदोषवि चारणतोविजानन्न तेषु श्रद्धान विधत्ते। त्रयोदशे तु शिष्यगुणदोषविज्ञ सद्गुणेषु वर्तमा न कल्याणभाग्भवति। चतुर्दशे तु प्रशस्तभावग्रथितभावितात्मा विस्रोतसिकारहितोभ वति। पंचदशेतु यथावदायतचरित्रोभवति भिक्षुस्तदुपदिश्यतइति। तदेवमनंतरोक्तेषु प चदशस्वध्ययनेषु येऽर्था प्रतिपादितास्तेत्र संक्षेपत प्रतिपाद्यतइत्यनेन संबंधेनायातस्या स्याध्ययनस्य चत्वार्युपक्रमादीन्यनुयोगद्वाराणि भवति। तत्रोपक्रमांतर्गतोर्थाधिकारो ऽनंतरमेव संबंधप्रतिपादनेनैवाभिहित। नामनिष्पन्नेतु निक्षेपे गाथाषोडशकमिति नाम। तत्र गाथानिक्षेपार्थं निर्युक्तिकृदाह। "णाम ठवणा गाहा, दवगाहा य भावगाहा य॥ पोत्थगपत्तगलिहिया, सो होइ दव्वगाहाउ ॥ १३९ ॥ (णामठवणेत्यादि) तत्र गाथा यास्तामादिकश्चतुर्धा निक्षेपस्तत्रापि नामस्थापने क्षुण्णत्वादनादृत्य द्रव्यगाथामाह। तत्र ज्ञशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्ता द्रव्यगाथा पत्रकपुस्तकादिन्यस्ता। तद्यथा। जयतिणवण लिणकुवलयवियसियसरावत्तपत्तलदलच्छो ॥ वीरोगयदमयगल सुललियगयविक्कमो भगव ॥ १ ॥ अथ चेयमेव गाथा षोडशाध्ययनरूपा पत्रकपुस्तकन्यस्ता द्रव्यगाथेति। भावगा थामधिकृत्याह। "होंति पुण भावगाहा, सागारुवउगभावणिप्फन्ना ॥ महुराभिलाणच्छ

॥ दीपिका–इति पृष्टे भगवान् माहनादीनां चतुर्णामभिधानानामर्थमाचष्टे। इत्येव पूर्वोक्ताध्ययनार्थवृत्तिर्विरत सर्वपापकर्मभ्यस्तथा प्रेम राग द्वेषोऽप्रीतिरूप कलहोराटि अभ्याख्यानमसदभियोग पैशुन्य परगुणमत्सरेण तद्दोषोद्घट्टन । परपरिवाद काक्का परदोषापादन अरति संयमे रतिर्विषयेषु । माया परवचन मृषावादोऽसदर्थाभिधान मिथ्यादर्शन तत्वेऽतत्त्वमतत्वेच तत्वमिति मति । तदेव शल्य एतेभ्योविरत । तथा समित समगत पंचसमितिभि सहितोज्ञानादिभि सदा यत्त संयमे कस्यापि न कुप्येत नापि मानी । उपलक्षणात् मायालोभाभ्यामपि निवृत्तइत्यादि गुणकदंपित साधुर्माहनइति वाच्य ॥ २ ॥

॥ टीका–इत्येव पृष्टोभगवान् ब्राह्मणादिना चतुर्णामप्यभिधानाना कथंचिद्भेदाभिन्नानां यथाक्रम प्रवृत्तिनिमित्तमाह । इत्येव पूर्वोक्ताध्ययनार्थवृत्ति सन् विरतोनिवृत्त सर्वेभ्य पापकर्मभ्य सावद्यानुष्ठानरूपेभ्य सतथा तथा प्रेम रागाभिष्वगलक्षण द्वेषोऽप्रीतिलक्षण कलहो द्वद्वाधिकरणमभ्याख्यानमसदभियोग पैशुन्य परगुणासहनतया तद्दोषोद्घट्टनमितियावत्। परस्य परवाद काक्कापरदोषापादन अरतिश्चित्तोद्वेगलक्षणा संयमे तथा रतिर्विषयाभिष्वगोमाया परवचनतया कुटिलमतिर्मृषावादोऽसदर्थाभिधान गामश्व ब्रुवतोभवति मिथ्यादर्शनमतत्त्वे तत्त्वाभिनिवेशस्तत्वेवा तत्त्वमिति । यथा । णत्थिणत्थिो कुणइकय वेइ णत्थि णिव्वाण ॥ णत्थिय मोक्को वाउं ठमिच्छत्तस्सगणाइइत्यादि । एतदेव शल्य तस्मिंस्ततोवा विरतइति । तथा सम्यगित समितईर्यासमित्यादिभि पंचभि समितिभि समितइत्यर्थ । तथा सह हितेन परमार्थभूतेन वर्ततइति सहित । यदि वा सहितोयुक्तोज्ञानादिभिस्तथा सर्वकाल यत प्रयत सत्संयमानुष्ठानेन तदनुष्ठानमपि न कषायैर्भि सारी कुर्यादित्याह । कस्यचिदप्यपकारिणोपि न कुप्येत आक्रुष्ट सन्न क्रोधवशगोभूयात् नापि मानी भवेत् दुष्करतपोयुक्तोपि न गर्व विदध्यात्। तथा चोक्त। जइ सो वि निज्जरमउ, पडिसिद्धो अठमाणमहाणेहि ॥ अवसेसमयठाणा परिहरियव्वा पयत्तेण । अस्य चोपलक्षणार्थत्वाइगोपि मायालोभात्मकोन विधेयइत्यादिगुणकलित साधुर्माहनइति नि शक वाच्यइति ॥ २ ॥

एत्थवि समणे अणिस्सिए, अणियाणे, आदाणच, अतिवाय च, मुसावायच वहिद्धच,कोहच,माणच मायच,लोहच, पिज्जच, दोसच,इच्चेव जउंजउं आदाण अप्पणोपदेसेहेऊ तउंतउं आदाणतो पुव्व पडिविरते,पाणाइवायाए दंते दविए वोसठकाए समणेत्ति वच्चे ॥३

त्वाद्वा जात्यसुवर्णवत् शुद्धद्रव्यनूतस्तथा व्युत्सृष्टोनिष्प्रतिकर्मशरीरतया काय शरीरं येन सनवति व्युत्सृष्टकाय । तदेवनूत सन् पूर्वोक्ताध्ययनार्थेषु वर्तमान प्राणिन स्था वरजगमसूक्ष्मबादरपर्याप्तकापर्याप्तकनेदनिन्नान् (माहणत्ति) प्रवृत्तिर्यस्यासौ माहनोनव ब्रह्मचर्यगुप्तिगुप्तोब्रह्मचर्यधारणाद्वा ब्राह्मणइत्यनतरोक्तगुणकदवकयुक्त साधुमहितोब्राह्म णइति वा वाच्य । तथा श्राम्यति तपसा खिद्यतइति कृत्वा श्रमणोवाच्योऽथवा सम तुल्य मित्रादिषु मनोत करण यस्य ससमना सर्वत्रवासी चदनकल्पइत्यर्थ । तथाचोक्त । ण त्थियसिकोइवेसो, इत्यादि । तदेव पूर्वोक्तगुणकलित श्रमण सममनावा इत्येव वाच्य सा धुरिति । तथा निक्षणशीलोनिक्षुर्निनत्ति वा ऽष्टप्रकार कर्मेति निक्षु ससाधुर्दातादिगुणोपे तोनिक्षुरिति । तथा सबाह्याभ्यतरग्रथानावान्निग्रथ । तदेवमनतरोक्तपचदशाध्ययनोक्ता र्थाऽनुष्ठायी दातोद्रव्यनूतोव्युत्सृष्टकायश्च सनिग्रथइति वाच्यइति । एव नगवतोक्ते सति प्र त्याह तच्छिष्योनगवन् नदत नयात नवात इति वा योऽसौ दातोद्रव्यनूतोव्युत्सृष्टकाय सन् ब्राह्मण श्रमणोनिक्षुर्निग्रथइति वाच्य । तदेतत्कथ यन्नगवतोक्त ब्राह्मणादिशब्दवा च्यत्व साधोरित्येतन्नोऽस्माक ब्रूहि आवेदय महामुने यथावस्थितत्रिकालवेदिन् ॥ १ ॥

इतिविरए सवपावकम्मेहि, पिज्जदोसकलह, अप्नक्खाण, पेसु न्न, परपरिवाय, अरतिरति, मायामोस, मिछादसणसल्ल, विरए, समिए सहिए, सयाजए, णो कुज्झे, णो माणी, माहणेत्ति, वच्चे॥२॥

अर्थ—एम शिष्य पूछे थके हवे नगवत ब्राह्मणादिक चार नामनो यथाक्रमे नेद सहित अर्थ कहेछे (इतिविरएसवपावकम्मेहिके०) जेणे प्रकारे सर्व पाप कर्मारनक्रिया थकी निवर्त्यो (पिज्जके०) प्रेम ते राग अने (दोसके०) द्वेष ते अप्रीति (कलहके०) कुवचननु बोलवु (अप्नक्खाणके०) अन्याख्यान एटले अछता दोपनु प्रकाशवु (पेसुन्नके०) पर ना गुणनु अण सहेवु अने पारका दोपने प्रकाशवु (परपरिवायके०) पारका दोष बी जा आगल प्रकाशवा (अरतिके०) सयमने विषे अरति (रतिके०) असयम विषया दिकने विषे रति (मायामोसके०) परवचना मृषा अलिक नापानु बोलवु (मिछाद सणसल्लके०) मिथ्यादर्शन शल्य एटले अतत्वने विषे तत्वनी बुद्धि तेनेज शल्य कहिए ए सर्व थकी (विरएके०) विरत एटले निवर्त्योछे वली (समिएसहिएके०) पाच समिति ए समिता थका ज्ञान दर्शन अने चारित्र सहित प्रवर्ते (सयाजएके०) सदा सयमने विषे प्रयत्न करे एटले सावधान थको रहे एवो छतो (णोकुज्झेके०) कोइना उपर क्रोध नकरे तथा (णोमाणीके०) अनिमान रहित होय उपलक्षणथकी माया तथा लोनरहित एवा गुणे सहितजे होय ते (माहणेत्तिवच्चेके०) माहण एटले ब्राह्मण जाणवा ॥ २ ॥

त्यात् । क्रोधमप्रीतिलक्षण मान स्तंभात्मक माया च परवचनात्मका लोभ मूर्छास्व तथा प्रेमाभिष्वंगलक्षण तथा द्वेष स्वपरात्मनोर्बाधारूपमित्यादिक संसारावतरणमा नोक्षाध्वनोपध्वंसक सम्यक् परिज्ञाय परिहरेदिति । एवमन्यस्मादपि यतोयत कर्मोपाद दिहामुत्र चानर्थहेतोरात्मनोपाय पश्यति प्रद्वेषहेतूंश्च ततस्तत प्राणातिपातादिकादन डदानात् पूर्वमेवानागतमेवात्महितमिच्छन् प्रतिविरतोभवेत् सर्वस्मादनर्थहेतुभूताड यल्लोकविरुद्धा वा सावद्यानुष्ठानान्मुमुक्षुर्विरतिं कुर्यात् । यश्चैवभूतोदात शुद्धोऽव्यभू निष्प्रतिकर्मतया व्युत्सृष्टकाय सश्रमणोवाच्य ॥ ३ ॥

एछवि भिरकू अणुन्नए, विणीए, नामए दंते दविए, वोसठका ए, संविधुणीय विरूवरूवे, परीसहोवसग्गे, अप्पज्जोगसुद्धा दाणे, उवठिए, ठिअप्पा, संखाए परदत्तभोई भिरकूत्ति वच्चे ॥४॥

अर्थ–हवे भिक्षु शब्दनो विशेष कहेछे (एछवि भिरकू के०) अहींया भिक्षुने विषे पण जे पूर्वे ब्राह्मण श्रमणना गुण कह्या ते सर्व जाणवा अने वली अनेरा विशेष कहेछे (अणुन्नए के०) अभिमान रहित (विणीए के०) विनीत एटले विनयवंत (ना मए के०) संयमने विषे आत्मानो नमाडनार (दंतेदविएवोसठकाए के०) ए त्रण श ब्दना अर्थ पूर्ववत् जाणवा (संविधुणीय के०) सम्यक् प्रकारे सहन करे शु सहन करे ते कहेछे (विरूवरूवे के०) विरूपरूप एटले अनुकूल प्रतिकूल एवा नाना प्रकार ना (परीसहोवसग्गे के०) उपसर्ग परीसहने सहन करे तथा (अप्पज्जोगसुद्धादाणे के०) अध्यात्मयोगे करी निर्मल चित्तने परिणामे शुद्ध चारित्रवंत थको (उवठिए के०) उपस्थित एटले चारित्रने विषे उठ्यो सावधान थयो (ठिअप्पाके०) परीसह उपसर्गे करी अगजीतछे जेहनो आत्मा (संखाए के०) संसारनी असारता बोधिनु डुर्लभ पणु जाणतो (परदत्तभोई के०) पारका दीधेला आहारनु जमनार एटले नि र्दोष आहारी (भिरकूत्तिवच्चे के०) एवाने भिक्षु कहेवो ॥ ४ ॥

॥ दीपिका–अत्रापि पूर्वोक्तमाहनशब्दप्रवृत्तिहेतवोत्रापि भिक्षुशब्दप्रवृत्तिहेतवस्तएव ज्ञेया । अमी चान्ये अनुन्नतोमदरहितोनावनीतोनदीन दांतोविनयेन नामकोगुर्वादी प्रह्वोऽव्यभूतव्युत्सृष्टकाय सम्यक् विधूयापनीय विरूपान् नानाविधान् परीषहोपसर्गा न् । परीषहा द्वाविंशति उपसर्गादेवादिकृतास्तद्विधूनन सम्यक् सहन अध्यात्मयोगेन शुद्धचेतसा ‾ आदान चारित्र यस्य सतथा सम्यगुत्थित संयमोद्यत स्थितोमोक्ष

अर्थ-(एवंविसमणे के०) जे माहणना लक्षण कह्या ते अहीं सर्व जाणवा वली श्रमणना विशेष कहेछे जे (अणिस्सिए के०) अनाश्रित अप्रतिबंध विहारी तथा (अणियाणे के०) नियाणा रहित (आदाणच के०) कषाय थकी रहित (अतिवायं च के०) अतिपातंच एटले जीवहिंसा तथा (मुसावायचके०) मृषावाद (बहिद्धंचके०) मैथुन परिग्रह ए सर्वने ज्ञ परिज्ञाये जाणीने प्रत्याख्यान परिज्ञायें परिहरे एटले मूलगुण कह्या हवे उत्तर गुण कहेछे (कोहंचमाणंचमायंचलोहंच के०) क्रोध मान, माया तथा लोभ अने (पिज्जंच के०) प्रेम शब्दे राग (दोसंच के०) द्वेष एने पण सम्यक् प्रकारे संसारना कारण जाणीने परिहरे (इच्चेव के०) एरीते (जउंजउं के०) जे जे (आदाणाउ के०) कर्मनो बंध (अप्पणोपदेसेहेऊ के०) जे थकी पोताना आत्माने प्रदोष हेतु एटले अ वगुणना कारण देखे (तउंतउंआदाणतो के०) ते ते सावद्यानुष्टान थकी चारित्रिउं (पुव्वपडिविरते के०) पूर्वेज एटले आगल थकीज आत्म हित वांछतो थको विरति करे (पाणाइवायाए के०) प्राणातिपात नकरे एवो छतो (दंते के०) दांत एटले इंद्रि यनो दमनार (दविए के०) द्रविक एटले मुक्तिगमन योग्य (वोसठ्ठकाए के०) निष्प्र तिकर्म शरीरवालो एटले शरीरनी शुश्रूषाये रहित (समणेतिवच्चे के०) एवा गुणे स हित विशिष्ट श्रमण कहेवो ॥ ३ ॥

॥ दिपीका-अत्रापि पूर्वोक्तगुणसमूहे वर्तमान श्रमणोपि वाच्य । एतद्गुणयुक्तेना पि नाव्यमित्याह । अनिश्रितोऽप्रतिबद्धशरीरादौ अनिदानोनिराकांक्ष । आदान कषाय परिग्रहोवा अतिपातोहिंसा मृषावाद बहिद्ध मैथुन । उक्तामूलगुणा । उत्तरगुणानाह । क्रोध मान माया लोभ च प्रेम द्वेष च इत्यादिक सम्यक् परिज्ञाय परिहरेदिति । एवं यतो यत कर्मोपादानादपाय पश्यति प्रद्वेषहेतूंश्च ततस्ततोहिंसादिकादानात्पूर्वमेव प्रतिविरतो भवेत् विरतिं कुर्यादित्यर्थ । एवंभूतोदांत शुद्धोऽव्यभूतोव्युत्सृष्टकाय श्रमणोवाच्य ॥३॥

॥ टीका-सांप्रतं श्रमणशब्दस्य प्रवृत्तिनिमित्तमुद्भावयन्नाह । अत्राप्यनंतरोक्ते विरत्या दिके गुणसमूहे वर्तमान श्रमणोपि वाच्य । एतद्गुणयुक्तेनापि भाव्यमित्याह । निश्चये नाधिक्येन चाश्रितोनिश्रित ननिश्रितोऽनिश्रित क्वचिच्छरीरादावप्यप्रतिबद्धस्तथा न वि द्यते निदानमस्येत्यनिदानोनिराकांक्षोऽशेषकर्मक्षयार्थी संयमानुष्ठाने प्रवर्तेत तथा दीय ते स्वीक्रियते ऽष्टप्रकारं कर्म येन तदादानं कषाय परिग्रह सावद्यानुष्ठानं वा तथाऽ तिपातनमतिपात प्राणातिपातइत्यर्थ । तं च प्राणातिपातं ज्ञपरिज्ञया ज्ञात्वा प्रत्याख्या नपरिज्ञया परिहरेदेवमन्यत्रापि क्रिया योजनीया। तथा मृषावादोऽलीकवादस्तं च तथा बहिद्धंति मैथुनपरिग्रहौ तौच सम्यक् परिज्ञाय परिहरेत् । उक्तामूलगुणा । उत्तरगुणान

धिरुद्धात् । क्रोधमप्रीतिलक्षणं मानं स्तंभात्मकं माया च परवंचनात्मका लोभं मूर्छास्वभावं तथा प्रेमाभिष्वंगलक्षणं तथा द्वेषं स्वपरात्मनोर्बाधारूपमित्यादिकं संसारावतरणमार्गं मोक्षाध्वनोपध्वंसकं सम्यक् परिज्ञाय परिहरेदिति । एवमन्यस्मादपि यतोयतः कर्मोपादनादिहामुत्र चानर्थहेतोरात्मनोपायं पश्यति प्रद्वेषहेतूंश्च ततस्ततः प्राणातिपातादिकादनर्थदंडदानात् पूर्वमेवानागतमेवात्महितमिच्छन् प्रतिविरतोभवेत् सर्वस्मादनर्थहेतुभूताडभयलोकविरुद्धाद्धा सावद्यानुष्ठानान्मुमुक्षुर्विरतिं कुर्यात् । यश्चैवंभूतोदांतः शुद्धोऽव्यभूतोनिष्प्रतिकर्मतया व्युत्सृष्टकायः सश्रमणोवाच्य ॥ ३ ॥

एछवि भिक्खू अणुन्नए, विणीए, नामए दंते दविए, वोसठ्ठकाए, संविधुणीय विरूवरूवे, परीसहोवसग्गे, अप्पज्जोगसुद्धादाणे, उवठिए, ठिअप्पा, संखाए परदत्तभोई भिक्खूत्ति वच्चे ॥४॥

अर्थ—हवे भिक्षु शब्दनो विशेष कहेछे (एछवि भिक्खू के०) अहींया भिक्षुने विषे पण जे पूर्वे ब्राह्मण श्रमणना गुण कह्या ते सर्व जाणवा अने वली अनेरा विशेष कहेछे (अणुन्नए के०) अभिमान रहित (विणीए के०) विनीत एटले विनयवंत (नामए के०) संयमने विषे आत्मानो नमाडनार (दंतेदविएवोसठ्ठकाए के०) ए त्रण शब्दना अर्थ पूर्ववत् जाणवा (संविधुणीय के०) सम्यक् प्रकारे सहन करे शुं सहन करे ते कहेछे (विरूवरूवे के०) विरूपरूप एटले अनुकूल प्रतिकूल एवा नाना प्रकारना (परीसहोवसग्गे के०) उपसर्ग परीसहने सहन करे तथा (अप्पज्जोगसुद्धादाणे के०) अध्यात्मयोगे करी निर्मल चित्तने परिणामे शुद्ध चारित्रवंत थको (उवठिए के०) उपस्थित एटले चारित्रने विषे उद्यो सावधान थयो (ठियप्पाके०) परीसह उपसर्गे करी अगजीतछे जेहनो आत्मा (संखाए के०) संसारनी असारता बोधिनु डुर्लभ पणु जाणतो (परदत्तभोई के०) पारका दीधेला आहारनु जमनार एटले निर्दोष असहारी (भिक्खूत्तिवच्चे के०) एवाने भिक्षु कहेवो ॥ ४ ॥

॥ दीपिका—अत्रापि पूर्वोक्तमाहनशब्दप्रवृत्तिहेतवोत्रापि भिक्षुशब्दप्रवृत्तिहेतवस्तएव ज्ञेया । अमी चान्ये अनुन्नतोमदरहितोनावनीतोनदीनः दांतोविनयेन नामकोगुर्वादौ प्रह्वोऽव्यभूतव्युत्सृष्टकायः सम्यक् विधूयापनीय विरूपान् नानाविधान् परीषहोपसर्गान् । परीषहा द्वाविंशति उपसर्गादेवादिकृतास्तद्विधूननं सम्यक् सहनं अध्यात्मयोगेन शुभचेतसा शुद्ध आदानं चारित्रं यस्य सतथा सम्यगुत्थितः संयमोयतः स्थितोमोक्ष

मार्गे आत्मा यस्य संस्थितात्मा संख्याय ज्ञात्वा संसारासारतां परदत्तभोजी एवंगुण युतोभिक्षुर्वाच्य ॥ ४ ॥

॥ टीका- सांप्रत भिक्षुशब्दस्य प्रवृत्तिनिमित्तमधिकृत्याह । अत्रापीति । ये ते पूर्वमु क्ता पापकर्मविरत्यादयोमाहनशब्दप्रवृत्तिहेतवोऽत्रापि भिक्षुशब्दस्य प्रवृत्तिनिमित्ते तए वावगतव्या । अमी चान्ये । तद्यथा । न उन्नतोऽनुन्नत शरीरेणोच्छ्रित भावोन्नतस्त्वभि मानग्रहग्रस्तस्तत्प्रतिषेधात्तपोनिर्जरामदमपि न विधत्ते । विनीतात्मतया प्रश्रयवान् यतएतदेवाह । विनयालंकृतोगुर्वादावादेशदानोद्यतोऽन्यदा वात्मानं नामयतीति नामक सदा गुर्वादौ प्रह्वोभवति । विनयेन चाष्टप्रकारं कर्म नामयति वैयावृत्त्योद्य तोऽशेषमप्यपनयतीत्यर्थः । तथा दांतइंद्रियनोइंद्रियाभ्यां तथा शुद्धात्मा शुद्धद्रव्यभू तोनिष्प्रतिकर्मतया व्युत्सृष्टकायश्च परित्यक्तदेहश्च । यत्करोति तद्दर्शयति । सम्यक् विधूया पनीय विरूपरूपान् नानारूपाननुकूलप्रतिकूलानुच्चावचान् द्वाविंशतिपरीषहान् तथा दिव्यादिकानुपसर्गांश्चेति । तद्विधूननं तु यत्तेषां सम्यक् सहनं तैरपराजितता परीषहोप सर्गांश्च विधूयाध्यात्मयोगेन सुप्रणिहितांत करणतया धर्मध्यानेन शुद्धमवदातमादान चरित्रं यस्य सशुद्धादानोभवति । तथा सम्यगुत्थानेन सच्चारित्रोद्यमेनोत्थितस्तथा स्थि तोमोक्षाध्वनि व्यवस्थित परीषहोपसर्गैरप्यधृष्यआत्मा यस्य संस्थितात्मा तथा सं ख्याय परिज्ञायाऽसारतां संसारातस्य दुष्प्रापतां कर्मभूमेर्बोधे सुदुर्लभत्वं चावाप्य च सक लां संसारोत्तरणसामग्रीं सत्संयमकरणोद्यत परैर्गृहस्थैरात्मार्थं निर्वर्तितमाहारजातं तैर्दत्तं भोक्तुं शीलमस्य परदत्तभोजी सएव गुणकलितोभिक्षुरिति वाच्य ॥ ४ ॥

एत्थवि णिग्गंथे, एगे, एगविऊ बुद्धे, संछिन्नसोए सुसंजते सु समिते, सुसामाइए, आयवायपत्ते, विऊ दुहओवि सोयपलि छिन्ने, णोपूयणसक्कारलाभट्ठी, धम्मट्ठी धम्मविऊ णियोगपडि वन्ने, समियचरे, दंते दविए, वोसठ्ठकाए निग्गंथेत्ति वच्चे,॥ ५ ॥

अर्थ-(एत्थविणिग्गंथेके०) हवे निग्रंथनो विशेष कहेछे अहींया पण पूर्वला गुण सर्व लेवा वलीजे विशेष गुणछे ते कहेछे (एगेके०) एकलो राग द्वेष रहित तथा (ए गविऊबुद्धेके०) पोताने एकलोज जाणे एटले संसारमां म्हारो कोइ संबंधी नथी ए वो बुद्ध एटले तत्वनो जाण (संछिन्नसोएके०) सम्यक् प्रकारे जेणे आश्रवने छेद्योछे तथा (सुसंजतेके०) सुसंयत एटले काचबानी पेरे गुप्तेंद्रिय (सुसमितेके०) रुडी स मितिए करी समितो (सुसामाइएके०) सुसामायिकवंत एटले जेने शत्रु मित्र समानछे

(आयवायपत्तेके०) आत्म वादे पहोतो एटले आत्माने वादे उपयोग लक्षण जीव असंख्य प्रदेशी जीव संकोच विकाशनो नजनार द्रव्य पर्यायरूप नित्यानित्य नेद निन्न पोताना करेला कर्मनु नोगवनार इत्यादिक आत्मवादे पहोतो एटले आत्म तत्वनो जाण (विक्रके०) तथा विद्वान् पमित शुद्धमार्गनो जाण (डुहवविसोयप लिछिन्नेके०) तथा द्रव्य अने नावना नेदे करी बन्ने प्रकारना आश्रव रूपिया स्रोत जेणे परिछेद्याले तथा (णोपूयणसक्कारलानछीके०) पूजा सत्कारना लाननो अर्थी न थाय किंतु निर्जरानो अर्थी थाय (धम्मछीके०) धर्मनो अर्थी (धम्मविऊके०) धर्मनो जाण शुद्धमार्गनो गवेषण हार (णियोगपडिवन्नेके०) नियोगप्रतिपन्न एटले मोक्षमार्गे पहोतो एवो छतो (समियचरेके०) समता आचरे एवो थको (दंतेदविएवोस ठ्ठकाएके०) दांत द्रविक वोसट्ठकाए तेने (निग्गथेत्तिवच्चेके०) निग्रंथ कहेवो ॥ ५ ॥

॥ दीपिका–अत्रापि गुणगणे वर्तमानोनिग्रंथोवाच्य । अमी चान्ये गुणा । एकोरागद्वेषरहित । एकमेव परलोकगामितयात्मानं वेत्तीत्येकवित् बुद्धस्तत्त्वज्ञ सम्यक् छिन्नानि नावस्रोतांसि आश्रवद्वाराणि येन सछिन्नस्रोता सुसंयत सुसमित समितिनि सुष्ठु सामायिक समनावोयस्य स तथा आत्मवादप्राप्त सम्यगात्मस्वरूपवेदी विद्वान् ज्ञातसर्वपदार्थ द्विधा द्रव्यतोनावतश्च स्रोतांसि परिछिन्नानि येन सतथा द्रव्यस्रोतांसि विषयेंद्रियप्रवृत्तय । नावस्रोतांसि तु शब्दादिषु शुनाशुनेषु रागद्वेषोत्पत्ति । तानि येन त्यक्तानि तथा नोपूजासत्कारार्थी तथा धर्मार्थी धर्मवित् नियोगोमोक्षस्तं प्रतिपन्न समता चरेत् कुर्यात् दांतोद्रव्यनूतोव्युत्सृष्टकाय । एवनूत पूर्वोक्तमाहनादिगुणयुतश्च निग्रंथोवाच्य ॥ ५ ॥

॥ टीका–तथाऽत्रापि गुणगणे वर्तमानोनिग्रंथइति वाच्य । अमी चान्ये अपदिश्यते । तद्यथा । एकोरागद्वेषरहिततया उंजा । यदिवाऽस्मिन् संसारचक्रवाले पर्यटन्नसुमान् स्वकृतसुखदुःखफलनाक्त्वेनैकस्यैव परलोकगमनतया सदैकएव नवति । तत्राद्यत विहारी द्रव्यतोप्येककोनावतोपि गन्नातर्गतस्तु कारणिकोद्रव्यतोनाज्योनावतस्त्वेककए व । तथैकमेवात्मानं परलोकगामिनं वेत्तीत्येकवित् न मे कश्चिदु खपरित्राणकारी सहायोस्तीत्येवमेकवित् । यदिवैकांतेन विदितसंसारस्वनावतया मौनींद्रमेव शासनं तथ्यं नान्यदित्येवं वेत्तीत्येकांतवित् अथवैकोमोक्ष संयमोवा तं वेत्तीति । तथा च बुद्धोऽवगत तत्त्व सम्यक् छिन्नान्यपनीतानि नावस्रोतांसि संवृतत्वात्कर्माश्रवद्वाराणि येन सतथा सुष्ठु संयत कूर्मवत्संयतगात्रोनिरर्थककायक्रियारहित सुसंयतस्तथा सुष्ठु पचनि समितिनि सम्यगितं प्राप्तोज्ञानादिकं मोक्षमार्गमसौ सुसमितस्तथा सुष्ठु समनावतया सामा

मार्गे आत्मा यस्य सस्थितात्मा सख्याय ज्ञात्वा ससारासारता परदत्तभोजी एवगुण युतोभिक्षुर्वाच्य ॥ ४ ॥

॥ टीका– साप्रतं भिक्षुशब्दस्य प्रवृत्तिनिमित्तमधिकृत्याह । अत्रापीति । ये ते पूर्वमुक्ता पापकर्मविरत्यादयोमाहनशब्दप्रवृत्तिहेतवोऽत्रापि भिक्षुशब्दस्य प्रवृत्तिनिमित्ते तएवावगतव्या । अमी चान्ये। तद्यथा । न उन्नतोऽनुन्नत शरीरेणोछ्रित नावोन्नतस्तस्त्वभिमानग्रहग्रस्तस्तत्प्रतिषेधात्तपोनिर्जरामदमपि न विधत्ते । विनीतात्मतया प्रश्रयवान् यतएतदेवाह । विनयालकृतोगुर्वादावादेशदानोद्यतोऽन्यदा वात्मान नामयतीति नामक सदा गुर्वादौ प्रह्वोभवति । विनयेन चाष्टप्रकार कर्म नामयति वैयावृत्त्योद्यतोऽशेषमप्यपनयतीत्यर्थ । तथा दातइंद्रियनोइंद्रियाभ्या तथा शुद्धात्मा शुद्धद्रव्यभूतोनिष्प्रतिकर्मतया व्युत्सृष्टकायश्च परित्यक्तदेहश्च । यत्करोति तद्दर्शयति । सम्यक् विधूयापनीय विरूपरूपान् नानारूपाननुकूलप्रतिकूलानुच्चावचान् द्वाविंशतिपरीषहान् तथा दिव्यादिकानुपसर्गांश्चेति । तद्विधूनन तु यत्तेषा सम्यक् सहन तैरपराजितता परीषहोपसर्गांश्च विधूयाध्यात्मयोगेन सुप्रणिहितात करणतया धर्मध्यानेन शुद्धमवदातमादान चरित्र यस्य सशुद्धादानोभवति । तथा सम्यगुत्थानेन सच्चारित्रोद्यमेनोत्थितस्तथा स्थितोमोक्षाध्वनि व्यवस्थित परीषहोपसर्गैरप्यधृष्यआत्मा यस्य सस्थितात्मा तथा सख्याय परिज्ञायाऽसारता ससारातस्य दुष्प्रापता कर्मभूमेर्बोधि सुदुर्लभत्व चावाप्य च सकला ससारोत्तरणसामग्री सत्सयमकरणोद्यत परैर्गृहस्थैरात्मार्थं निर्वर्तितमाहारजातं तैर्दत्त भोक्तु शीलमस्य परदत्तभोजी सएव गुणकलितोभिक्षुरिति वाच्य ॥ ४ ॥

एत्थवि णिग्गथे, एगे, एगविऊ बुद्धे, सछिन्नसोए सुसजते सुसमिते, सुसामाइए, आयवायपत्ते, विऊ डुहओवि सोयपलिछिन्ने, णोपूयणसक्कारलाभठ्ठी, धम्मठ्ठी धम्मविऊ णियोगपडिवन्ने, समियचरे, दते दविए, वोसठ्ठकाए निग्गथेत्ति वच्चे,॥ ५ ॥

अर्थ–(एत्थविणिग्गथेके०) हवे निग्रथनो विशेष कहेछे अहींया पण पूर्वला गुण सर्व लेवा वलीजे विशेष गुणछे ते कहेछे (एगेके०) एकलो राग द्वेष रहित तथा (एगविऊबुद्धेके०) पोताने एकलोज जाणे एटले ससारमा महारो कोइ सबधी नथी एवो बुद्ध एटले तत्वनो जाण (सछिन्नसोएके०) सम्यक् प्रकारे जेणे आश्रवने छेद्योछे तथा (सुसजतेके०) सुसयत एटले काछबानी पेरे गुप्तेंद्रिय (सुसमितेके०) रूडी समितिए करी समितो (सुसामाइएके०) सुसामायिकवत एटले जेने शत्रु मित्र समानछे

(आयवायपत्तेके०) आत्म वादे पहोतो एटले आत्माने वादे उपयोग लक्षण जीव असंख्य प्रदेशी जीव संकोच विकाशनो भजनार द्रव्य पर्यायरूप नित्यानित्य भेद भिन्न पोताना करेला कर्मनु भोगवनार इत्यादिक आत्मवादे पहोतो एटले आत्म तत्वनो जाण (विऊके०) तथा विद्वान् पंमित शुद्धमार्गनो जाण (दुहउविसोयप लिछिन्नेके०) तथा द्रव्य अने भावना भेदे करी बन्ने प्रकारना आश्रव रूपिया स्रोत जेणे परिछेद्याछे तथा (णोपूयणसक्कारलाभट्ठीके०) पूजा सत्कारना लाभनो अर्थी न थाय किंतु निर्ज्जरानो अर्थी थाय (धम्मट्ठीके०) धर्मनो अर्थी (धम्मविऊके०) धर्मनो जाण शुद्धमार्गनो गवेषण हार (णियोगपडिवन्नेके०) नियोगप्रतिपन्न एटले मोक्षमार्ग पहोतो एवो छतो (समियचरेके०) समता आचरे एवो थको (दंतेदविएवोस ट्ठकाएके०) दांत द्रविक वोसट्ठकाए तेने (निग्गंथेत्तिवच्चेके०) निग्रंथ कहेवो ॥ ५ ॥

॥ दीपिका–अत्रापि गुणगणे वर्तमानोनिग्रंथोवाच्य । अमी चान्ये गुणा । एकोरागद्वेषरहित । एकमेव परलोकगामितयात्मानं वेत्तीत्येकवित् बुद्धस्तत्त्वज्ञ सम्यक् छिन्नानि भावस्रोतांसि आश्रवद्वाराणि येन ससछिन्नस्रोता सुसंयत सुसमित समितिभि सुष्ठु सामायिक समभावोयस्य स तथा आत्मवादप्राप्त सम्यगात्मस्वरूपवेदी विद्वान् ज्ञातसर्वपदार्थ द्विधा द्रव्यतोभावतश्च स्रोतांसि परिछिन्नानि येन सतथा द्रव्यस्रोतांसि विषयेंद्रियप्रवृत्तय । भावस्रोतांसि तु शब्दादिषु शुभाशुभेषु रागद्वेषोत्पत्ति । तानि येन त्यक्तानि तथा नोपूजासत्कारार्थी तथा धर्मार्थी धर्मवित् नियोगोमोक्षस्तं प्रतिपन्न समतां चरेत् कुर्यात् दांतोद्रव्यभूतोव्युत्सृष्टकाय । एवंभूत पूर्वोक्तमाहनादिगुणयुतश्च निग्रंथोवाच्य ॥ ५ ॥

॥ टीका–तथाऽत्रापि गुणगणे वर्तमानोनिग्रंथइति वाच्य । अमी चान्ये अपदिश्यते। तद्यथा। एकोरागद्वेषरहिततया ऊंवा । यदिवाऽस्मिन् संसारचक्रवाले पर्यटन्नसुमान् स्वकृतसुखदुःखफलभाक्त्वेनैकस्यैव परलोकगमनतया सदैककएव भवति । तत्रोद्यत विहारी द्रव्यतोप्येककोभावतोपि गच्छांतर्गतस्तु कारणिकोद्रव्यतोभाज्योभावतस्त्वेककएव । तथैकमेवात्मानं परलोकगामिनं वेत्तीत्येकवित् न मे कश्चिद्दुःखपरित्राणकारी सहायोस्तीत्येवमेकवित् । यदिवैकांतेन विदितसंसारस्वभावतया मौनींद्रमेव शासनं तथ्यं नान्यदित्येव वेत्तीत्येकांतवित् अथवैकोमोक्ष संयमोवा तं वेत्तीति । तथा च बुद्धोऽवगततत्त्व सम्यक् छिन्नान्यपनीतानि भावस्रोतांसि संवृतत्वात्कर्माश्रवद्वाराणि येन सतथा सुष्ठु संयत कूर्मवत्संयतगात्रोनिरर्थककायक्रियारहित सुसंयतस्तथा सुष्ठु पंचभि समितिभि सम्यगित प्राप्तोज्ञानादिक मोक्षमार्गमसौ सुसमितस्तथा सुष्ठु समभावतया सामा

यिक समशत्रुमित्रभावोयस्य ससुसामायिक । तथात्मनउपयोगलक्षणस्य जीवस्यासंख्ये यप्रदेशात्मकस्य सकोचविकाशभाज स्वकृतफलभुज प्रत्येकसाधारणतया व्यवस्थितस्य द्रव्यपर्यायतया नित्यानित्याद्यनतधर्मात्मकस्य वा वादआत्मवादस्त प्राप्तआत्मवादप्राप्तः सम्यग्यथावस्थितात्मस्वतत्त्ववेदीत्यर्थ । तथा विद्वानवगतसर्वपदार्थस्वभावोन व्यत्ययेन पदार्थानवगच्छति । यतोयत् कैश्चिदभिधीयते तद्यथैकएवात्मा सर्वस्वभावतया विश्वव्या पी श्यामाकतडुलमात्रोऽगुष्ठपर्वपरिमाणोवेत्यादिकोसद्भूताभ्युपगम परिहृतोभवति । तथा विधात्मसद्भावप्रतिपादकस्य प्रमाणस्याभावादित्यभिप्राय । तथा छिधापीति द्रव्यतोभाव तश्च । तत्र द्रव्यस्रोतासि यथा स्वविषयेष्विन्द्रियप्रवृत्तय । भावस्रोतासि तु शब्दादिष्वेवा नुकूलप्रतिकूलेषु रागद्वेषोद्भवस्तान्युभयरूपाण्यपि स्रोतासि सवृतेन्द्रियतया रागद्वेषाभावा च्च परिछिन्नानि स्रोतासि येन परिछिन्नस्रोतास्तथानपूजासत्कारलाभार्थी किंतु निर्ज रापेक्षी सर्वास्तपश्चरणादिका क्रियाविदधति । एतदेव दर्शयति । धर्म श्रुतचारित्राख्यस्ते नार्थी सएवार्थोधर्मार्थ सविद्यते यस्यासौ धमार्थीति । किमिति । इदमुक्त भवति । नपूजा द्यर्थ क्रियासु प्रवर्तते अपितु धर्मार्थीति । किमिति । यतो धर्म यथावत्तत्फलानि च स्वर्गा वाप्तिलक्षणानि सम्यक् वेत्ति धर्म च सम्यक् ज्ञानत । यत्करोति तद्दर्शयति । नियोगो मोक्षमार्ग सत्सयमोवा त सर्वात्मना भावत (प्रतिपन्ननियोगपडिवन्नोत्ति) तथाविधश्च यत्कुर्यात् तदाह । (समियति) समता समभावरूपा वा शीतचदनकल्पा चरेत् सतत मनुतिष्ठेत् । किभूत सन्नाह । दातोद्रव्यभूतोव्युत्सृष्टकायश्चैतद्गुणसमन्वित सन् यत्पूर्वो क्तमाहनश्रमणभिक्षुशब्दाना प्रवृत्तिनिमित्त तत्समन्वितश्च निग्रथइति वाच्य । तेपि मा हनादय शब्दानिग्रथशब्दप्रवृत्तिनिमित्ताअविनाभाविनोभवति । सर्वेप्येते भिन्नव्यजनाअ पि कथचिदेकार्थाइति ॥ ५ ॥

से एवमेव जमह जाणह भयतारो त्तिबेमि ॥ ६ ॥ इतिसोडस
म गाहानामज्झयण सम्मत ॥ पढमो सुअक्खधो सम्मत्तो ॥ १ ॥

अर्थ—हवे श्रीसुधर्म स्वामी जबू प्रभृति साधु प्रत्ये कहेछे के (सेएवमेवजाणहजम ह के०) तमे एम जाणोके जे मे कह्यो ते निश्चे करी सत्य छे एम जाणो कारणके हु सर्वज्ञनी आज्ञाये कहुछु ते सर्वज्ञ भगवत तीर्थकर देव परोपकारी केवाछे तोके (भ यतारो के०) महाभय थकी राखनारछे माटे तेमना कहेला वचन हु तमने कहुछु त्तिबे मिनो अर्थ पूर्ववत् जाणवो एरीते श्रीसुधर्म स्वामिये जबूस्वामि प्रत्ये कह्यो ए गाहाना मे सोलमा अध्ययननो अर्थ समाप्त थयो इति श्रीसुयगडांग सूत्रना प्रथम श्रुतस्कधनो बालावबोध लेश्यार्थ समाप्त ॥

॥ दीपिका—एते चत्वारोभिन्नाअपि कथचिदेकार्थाइति। सुधर्मस्वामी जम्बूस्वामिनमाह। सेतत् यन्मयोक्त एवमेव जानीत यूय यस्मादह सर्वज्ञाज्ञया वच्मि। नच भगवन्नयात्रातारोवा सर्वज्ञाअन्यथा वदति अतोमडुक्तमेवमेवावगछतेति। इति समाप्तौ। ब्रवीमीति पूर्ववत् ॥ ६ ॥ ॥ इति श्रीतपागच्छाधिराजश्रीहेमविमलसूरीश्वरशिष्य हर्षकुलपडितप्रणीतायां सूत्रकृतागदीपिकाया गाथाषोडशाख्य षोडशमध्ययन समाप्त ॥

॥ टीका—साम्प्रतमुपसंहारार्थमाह। (सेएवमेवजाणहइत्यादि) सुधर्मस्वामी जम्बूस्वामिप्रभृतीनुद्दिश्येदमाह। सेइति। तद्यन्मया कथितमेव जानीत यूय। नान्योमच्चसि विकल्पोविधेय। यस्मादह सर्वज्ञाज्ञया ब्रवीमि। नच सर्वज्ञाभगवत परहितैकरता भयात्रातारोरागद्वेषमोहान्यतरकारणाभावादन्यथा ब्रुवते। अतोयन्मयाऽऽदित प्रभृति कथितं तदेवमेवावगच्छेदिति। इति परिसमाप्त्यर्थे। ब्रवीमीति पूर्ववत्। उक्तोनुगम सांप्रतं नयास्ते च नैगमादय सप्त। नैगमस्य सामान्यविशेषात्मतया सग्रहव्यवहारप्रवेशात्सग्रहादय षट्। समभिरूढेवभूतयो शब्दनयप्रवेशान्नैगमसग्रहव्यवहारर्जुसूत्रशब्दा पच। नैगमनस्याप्यतर्भावाच्चत्वारोव्यवहारस्यापि। सामान्यरूपविशेषतया सामान्यविशेषात्मनो सग्रहर्जुसूत्रयोरतर्भावात्सग्रहर्जुसूत्रशब्दास्त्रयस्तेपि च द्रव्यास्तिकपर्यायास्तिकात र्भावाद्द्रव्यास्तिकपर्यायास्तिकाभिधानौ द्वौ नयौ। यदि वा सर्वेषामेव ज्ञानक्रिययोरतर्भावात् ज्ञानक्रियाभिधानौ द्वौ तत्रापि ज्ञाननयोज्ञानमेव प्रधानमाह क्रियानयश्च क्रियामिति। नयानाच प्रत्येक मिथ्यादृष्टित्वाज्ज्ञानक्रियाश्च परस्परापेक्षतया मोक्षागत्वाडुभयमात्रप्रधान। तच्चोभय सत्क्रियोपेते साधौ भवतीति। तथाचोक्त। णायम्मिगिण्हियव्वे, अगिण्हियव्वम्मि चेव अत्थम्मि॥ जइ यव्वमेव इति जो उवएसो सो नउ नाम ॥ १ ॥ सव्वेसिं पि णयाण, बहुविहवत्तव्वय णिसामेत्ता॥ तं सव्वनयविसुद्ध ज चरणगुणट्ठीउ साहुत्ति॥ ६॥ समाप्त षोडशाख्यं षोडशमध्ययन तत्समाप्तौ च समाप्त प्रथम श्रुतस्कधइति ॥

॥ इति श्रीद्वितीये सूत्रकृतांगे, गुर्जरभाषासहित श्रीहर्षकुलकृतदीपिकायुक्त शीलंगाचार्यकृतटीकासयुतश्च, प्रथम श्रुतस्कध समाप्त ॥

ॐ नमो श्री वीतरागाय

अथश्री द्वितीय सूत्रकृतांगे द्वितीय श्रुतस्कंधस्य बालावबोध दीपिकासहितस्य टीकायुतस्य प्रारम्भ

मूल गद्य--सुय मे आउसंतेण नगवया एव मक्खाय इह खलु पोंमरीए णामज्झयणे तस्सण अयमढे पण्णत्ते ॥१॥से जहा णामए पुक्करिणी सिया बहुउदगा बहुसेया बहुपुक्कला लद्धठा पुम्मरिकिणी पासादिया दरिस णिया अभिरूवा पडिरूवा ॥२॥ तीसेण पुक्करिणीए तत्थ तत्थ देसे देसे त हि तहि बहवे पउमवरपोंमरीया वुइया अणुपुब्बुठिया ऊसिया रुइला वन्न मता गधमता रसमता फासमता पासादिया दरिसणिया अभिरूवा पडि रूवा॥३॥तीसेण पुक्करिणीए बहुमज्झदेसभाए एगेमह पउमवरपोंमरीए वु इए अणुपुब्बुठिए उस्सिते रुइले वन्नमते गधमते रसमते फासमते पासा दीए जावपडिरूवे ॥ ४ ॥ सब्बावतिचण तीसेणं पुक्करिणीए तत्थ तत्थ देसे देसे तहि तहि बहवे पउमवरपोंमरीया वुइया अणुपुब्बुठिया ऊसिया रुइ ला जावपडिरूवा सब्बावतिचण तीसेण पुक्करिणीए बहुमज्झदेसभाए ए ग मह पउमवरपोंमरीए वुइए अणुपुब्बुठिए जावपडिरूवे॥५॥अह पुरिसे पुरिच्छिमाउ दिसाउ आगम्म त पुक्करिणी तीसे पुक्करिणीए तीरे ठिच्चा पास ति त मह एग पउमवरपोंमरीय अणुपुब्बुठिय ऊसिय जावपडिरूव तएण से पुरिसे एव वयासि अहमसी पुरिसे खेयन्ने कुसले पण्डिते वियत्ते मेहा वी अबाले मग्गत्थे मग्गविऊ मग्गस्सगतिपराकमण्णू अहमेय पउमव रपोंमरीय उन्निक्खिस्सामित्ति कट्टु इतिवच्चा से पुरिसे अभिक्कमेति त पुक्क रिणी जावजावचण अभिक्कमेइ तावतावचण महते उदए महते सेए पहीणे तीर अपत्ते पउमपरपोंमरीय णोहव्वाए णोपाराए अतरा पोक्क रिणीए सेयसि निसणे पढमे पुरिसजाए ॥ ६ ॥

अर्थ--हवे श्री सुधर्म स्वामि जबू स्वामि प्रत्ये कहेछे (सुयमेआउसतेण के०)

रूवा सव्वावतिचण इत्यादिक उपमायें जाणवा (तीसेणपुक्करिणीएवहुमज्झदेसनाएके०) ते पुष्करणीना बहु मध्यदेश नागने विषे (एगमहं के०) एक महोटु (पउमवरपोमरि एवुइए के०) प्रधान पौमरिक कमळ बोल्योछे अणुपुवुठिए जावपडिरूवे सुधी अर्थ पूर्वे लखाइ गयुछे ॥५॥ (अहपुरिसेके०) अथ हवे एक पुरुष (पुरिछिमाउदिसाउके०) पूर्वदिशा थकी (आगम्मके०) आवीने (तंके०) ते (पुक्करिणीके०) पुष्करणी (तीसे पुक्करिणीएके०) तेपुष्करणीना (तीरेठिच्चाके०) तीरने विषे उनो रहीने (तंमहएगपउमवर पोमरीयके०) ते महोटु एक पौमरीक कमल पूर्वोक्त गुण सहित तेने (पासतिके०)देखे ते क मलकेवो तोके अणुपुवुठिय उस्सिय जावपडिरूव इत्यादिकना अर्थ पूर्वे लखाइ गयाछे एवी शोना सहित ते पौमरीक कमलने देखीने (तत्तेण के०) तेवारे (सेपुरिसे के०) ते पुरुष (एववयासि के०) एम बोल्यो शु बोल्यो ते कहेछे (अहमसीपुरिसे के०) हु पुरुषछु परतु केवोछु तोके (खेयन्ने के०) परपीडानो जाण तथा अवसरनो जाण छु (कुसलेपमिते के०) डाह्यो पमितछु (वियत्ते के०) विवेक युक्त (मेहावी के०) परिणत बुद्धिवालो छु (अबाले के०) बाल पणा रहित (मग्गछे के०) मार्गस्थ ए टले मार्गने विषे स्थित रह्यो (मग्गविऊ के०) रुडा मार्गनो जाण (मग्गस्सगति के०) मार्गनी गतिना (परक्कमरसू के०) पराक्रम तेनो जाणछु (अहमेयके०) तेन

णी हु ए (पउमवरपोंमरीयके०) प्रधान पौमरीक कमलने ए पुष्करणी थकी (उन्नि क्खिस्सामित्ति के०) उद्धरीश (कट्टु के०) एम करीने (इतिवच्चा के०) ए पूर्वो क्त वचन बोलतो जेटले (सेपुरिसे के०) ते पुरुष (अनिक्कमेति के०) पुष्करणी मांहे प्रवेश करेछे (तंपुक्करिणीके०) ते पुष्करिणी मांहे (जावजावचणअनिक्कमेइके०) जेम जेम जायछे अतिक्रमेछे (तावतावचणके०)तेम तेम ते पुरुष पुष्करणी माहे (महते उदए के०) महोटा अगाध पाणीने विषे (महतेसेए के०) घणा कादवने विषे (प हीणेतीर के०) एक कांठो मूकी बीजे कांठे (अपत्तेके०) अण पहोतों एटले न पहो तो अने (पउमवरपोमरीयके०) पौमरीक कमले पण पहोतो नही तेने उद्धरी पण शक्यो नही (णोहच्चाए के०) कांठे रह्यो नही (णोपाराएके०) पार पण पाम्यो नही कमलपण लइ नशक्यो (अतरापोक्करिणीए के०) विचाले पुष्करणी मांहेज (सेपसि के०) का दवने विषे (निसण्णे के०) खुची रह्यो एटले वेहु तीर थकी भ्रष्ट थयो अने कम लने पण उद्धरी न शक्यो अने पोते पण कादवमां खुची रह्यो नीकली शक्यो नही (पढमेपुरिसजाए के०) एटले प्रथम पुरुष जात जाणवो ॥ ६ ॥

॥ दीपिका–श्रीसूत्ररुतांगस्य प्रथम श्रुतस्कंधउक्त ॥ अथ द्वितीय प्रारभ्यते । त

सांजल्युं ठे मे आयुष्यवंत एवा (जगवया के०) जगवंते (एवमरकाय के०) एम कह्यु ठे (इह के०) ए वचन थकी सुयगडांगने बीजे श्रुतस्कंधे (खलु) ए शब्द वाक्यालंकारने अर्थे (पोंमरीएणामज्ञयणे के०) पुंमरीक नामे अध्ययन ते पुंमरीक कमलनी उपमाये थशे (तस्सण के०) ते कारणे एवो नाम कह्यो तेनु (अयमठेपन्नुते के०) एजे आगल कहेशे ते अर्थ जाणवो ॥ १ ॥ (सेजहाणामए के०) ते जेमठे तेम कहेवो. नाम इति सजावनाने अर्थेठे जेम कोइ एक (पुरकरिणीसिया के०) पुष्करणी एटले कमल सहित वावडीठे ते केवीठे तोके (बहुउदगाके०) घणो अगाध जेमां पाणीठे (बहुसेयाके०) घणो जेमां कर्दमठे (बहुपुरकलालध्दा के०) घणो पुष्करणी पणो संपूर्णठे अर्थात् पुष्करणीनो अर्थ जेणे लाधोठे एटले जेवो नाम तेवा परिणामे एवी (पुंमरिकिणी के०) पुंमरिकिणी एटले श्वेत कमल सहित वावडीठे (पासादिया के०) निर्मल जले करीने प्रसन्न चित्त कारणीठे (दरिसणिया के०) घणा लोकने देखवा योग्यठे (अनिरूवा के०) जेने विषे सर्व काल हंस चक्रवाक गजमहिषादि रूपठे ते कारणे अनिरूपठे (पडिरूवा के०) स्वजाव थकी सर्व रूप प्रत्ये वचेठे ते माटे प्रतिरूपठे ॥ २ ॥ (तीसेणपुरकरिणीए के०) ते पुष्करणीने विषे (तन्नतन्नदेसेदेसे के०) त्यां त्यां ते ते प्रदेशे (तहितहिंबहवेपउमरपोमरीयाबुइया के०) त्यां त्यां घणा प्रधान पुंमरीक नामे पद्म एटले कमल जगवंत श्रीमहावीर देवे कह्याठे (अणुपुव्वुठिया के०) ते कमल आनुपूर्विये उठ्या (ऊसियाके०) पाणी थकी उपर वर्त्तेठे (रुइलाके०) दीपता (वन्नमंताके०) प्रधान वर्णवाला कमलठे (गधमता के०) सुगधवाला (रसमता के०) रसवाला (फासमता के०) सुकोमल स्पर्श सहित ठे (पासादिया के०) प्रासादनीक प्रसन्नचित्तकारणीक (दरिसणिया के०) लोकने देखवा योग्य (अनिरूवा के०) अनिरूप (पडिरूवा के०) प्रतिरूप ॥ ३ ॥ (तीसेणपुरकरिणीए के०) ते पुष्करणीने विषे (बहुमश्नदेसजाए के०) घणा मध्य प्रदेशना जागने विचाले (एगेमहपउमवरपोमरीएबुइए के०) एक महोटु प्रधान पोंमरीक नामा कमल बोल्युठे (अणुपुव्वुठिए के०) ते आनुपूर्विये चडती चडती पाखडीये करी उग्योठे उस्सिते रुइले वन्नमंते गधमते रसमते फासमते पासादीए जाव पडिरूवे एम यावत् प्रतिरूप सुधीना अर्थ पूर्ववत् जाणवा ॥ ४ ॥ (सव्वावंतिचण के०) इत्यादिक सर्व समग्र जाव ण एवे वाक्यालंकारे जाणवा (तीसेणपुरकरिणीए के०) ते पुष्करणीने विषे (तन्नतन्नदेसेदेसे के०) त्यां त्यां प्रदेशे एटले एवा समग्रजागोने विषे (तहितहिंबहवेपउमवरपोमरीयाबुइयाके०) त्यां त्यां पूर्वोक्त गुण सहित एवा घणा पुंमरीक कमल बोल्याठे ते सर्व अणुपुव्वुठिया ऊसिया रुइला जावपडि

रूवा सवावतिचण इत्यादिक उपमायें जाणवा (तीसेणपुरकरिणीएवहुमझदेसनाएके०) ते पुष्करणीना बहु मध्यदेश नागने विषे (एगमह के०) एक महोटु (पउमवरपोंमरि एवुइए के०) प्रधान पौंमरिक कमल बोल्योछे अणुपुव्वुठिए जावपडिरूवे सुधी अर्थे पूर्वे लखाइ गयुछे ॥५॥ (अहपुरिसेके०) अथ हवे एक पुरुष (पुरिछिमाउदिसाउके०) पूर्वदिशा थकी (आगम्मके०) आवीने (तंके०) ते (पुरकरिणीके०) पुष्करणी (तीसे पुरकरिणीएके०) तेपुष्करणीना (तीरेठिच्चाके०) तीरने विषे उनो रहीने (तंमहएगपउमवर पोंमरीयके०) ते महोटु एक पौंमरीक कमल पूर्वोक्त गुण सहित तेने (पासतिके०)देखे ते क मलकेवो तोके अणुपुव्वुठिय उस्सिय जावपडिरूव इत्यादिकना अर्थ पूर्वे लखाइ गयाछे एवी शोना सहित ते पौंमरीक कमलने देखीने (तत्तेण के०) तेवारे (सेपुरिसे के०) ते पुरुष (एववयासि के०) एम बोल्यो शु बोल्यो ते कहेछे (अहमसीपुरिसे के०) हु पुरुषछु परतु केवोछु तोके (खेयन्ने के०) परपीडानो जाण तथा अवसरनो जाण छु (कुसलेपंमिते के०) डाह्यो पंमितछु (वियत्ते के०) विवेक युक्त (मेहावी के०) परिणत बुद्धिवालो छु (अवाले के०) बाल पणा रहित (मग्गछे के०) मार्गस्थ ए टले मार्गने विषे स्थित रह्यो (मग्गविक के०) रुडा मार्गनो जाण (मग्गस्सगति के०) मार्गनी गतिना (पराक्कमण्णू के०) पराक्रम तेनो जाणछु (अहमेयके०) तेज णी हु ए (पउमवरपोंमरीयके०) प्रधान पौमरीक कमलने ए पुष्करणी थकी (उन्नि क्खिस्सामित्ति के०) उध्दरीश (कट्टु के०) एम करीने (इतिवच्चा के०) ए पूर्वो क्त वचन बोलतो जेटले (सेपुरिसे के०) ते पुरुष (अनिक्कमेति के०) पुष्करणी मांहे प्रवेश करेछे (तंपुरकरिणीके०) ते पुष्करिणी मांहे (जावजावचणअनिक्कमेइके०) जेम जेम जायछे अतिक्रमेछे (तावतावचणके०)तेम तेम ते पुरुष पुष्करणी माहे (महते उदए के०) महोटा अगाध पाणीने विषे (महतेसेए के०) घणा कादवने विषे (प हीणेतीर के०) एक कांठो मूकी बीजे कांठे (अपत्तेके०) अण पहोतों एटले न पहो तो अने (पउमवरपोंमरीयके०) पौंमरीक कमले पण पहोतो नही तेने उध्दरी पण शक्यो नही (णोहव्वाए के०) कांठे रह्यो नही (णोपाराएके०) पार पण पाम्यो नही कमलपण लइ नशक्यो (अतरापोक्करिणीए के०) विचाले पुष्करणी मांहेज (सेयंसि के०) का दवने विषे (निसन्ने के०) खुची रह्यो एटले बेहु तीर थकी भ्रष्ट थयो अने कम लने पण उध्दरी न शक्यो अने पोते पण कादवमा खुची रह्यो नीकली शक्यो नही (पढमेपुरिसजाए के०) एटले प्रथम पुरुष जात जाणवो ॥ ६ ॥

॥ दीपिका—श्रीसूत्रकृतांगस्य प्रथम श्रुतस्कंधउक्त ॥ अथ द्वितीय प्रारभ्यते । त

स्य सप्ताध्ययनानि । तेषु प्रथम पुंडरीकाध्ययन तस्येदमादिसूत्र । (सुअमेइति) श्रुतं मया आयुष्मता जगवता एवमाख्यातं । इह प्रवचने । खलुशब्दोवाक्यालंकारे । पौंड रीकाख्यमध्ययन पुंडरीकेण श्वेतपद्मेन उपमा यत्र तत्पौंडरीक । तस्यायमर्थ प्रज्ञप्त । ण वाक्यालंकारे ॥ १ ॥ तद्यथा । नामशब्द संजावनाया । संजाव्यते पुष्करिणीदृष्टांत पुष्कराणि पद्मानि यस्या सा पुष्करिणी वापी स्यात् । किंनूता । बहूदका बहूदकप्रचुरा । सीयंते यस्मिन्नसौ सेय कर्दम सयस्या बहुसेया बहुपुष्कला बहुसंपूर्णा लब्धोनामानु गतोर्थोयया सा लब्धार्था पुंडरीकिणी श्वेतपद्मप्रचुरा प्रासादिका निर्मला दर्शनीया शो जना । अजित सर्वतोरूपाणि हंसचक्रादीनि यस्यां सा तथा प्रतिरूपा प्रतिबिंबवती नि र्मलत्वात्तस्या सर्वत्र प्रतिबिंबानि वीक्ष्यंते ॥ २ ॥ तस्या पुष्करिण्या । तत्रतत्रेति पुंडरी कैर्व्याप्तिमाह । देशेदेशे इत्यनेन तु एकैकप्रदेशे प्राचुर्यमाह । तस्मिंस्तस्मिन्नित्यनेन तु नास्त्येवासौ प्रदेशोयत्र तानि न संतीति । अथवा अत्यादरज्ञापनाय एकार्थान्येवैता नि त्रीणि पदानि । तेषु पुष्करिण्या सर्वप्रदेशेषु बहूनि पद्मान्येव वराणि पौंडरीकाणि श्वेतशतपत्राण्युक्तानि आनुपूर्व्येण विशिष्टरचनया स्थितानि उच्छ्रितानि पंकजले अति लंघ्य उपरि व्यवस्थितानि रुचिं कांतिं लातीति रुचिलानि दीप्तिमंति शोजनवर्णगंधरस स्पर्शवंति प्रासादीयानि दर्शनीयानि अजिरूपाणि प्रतिरूपाणि ॥ ३ ॥ तस्यां पुष्करि ण्या । ण वाक्यालंकारे । मध्यदेशे एकं पद्मवरमेव पुंडरीकमुक्तं शेषव्याख्या पूर्ववत् ॥४॥ (सव्वावंतित्ति) सर्वस्याअपि तस्या पुष्करिण्या सर्वप्रदेशेषु बहूनि पद्मानि तथा सर्व स्याश्च तस्याबहुमध्यदेशे पूर्वोक्तविशेषणविशिष्टं महदेकं पौंडरीकं विद्यतइति ॥ ५ ॥ अ थ पूर्वस्यादिश कश्चिदेक पुरुष समागम्य तां पुष्करिणीं तस्याश्च तीरे तटे स्थित्वा त तत्पद्म प्रासादीयादिविशेषण सपुरुषएव वक्ष्यमाण वदेत् । (अहमंसित्ति) अहमस्मि पुरुष कुशल पंडित क्षेत्रज्ञोव्यक्तोबाल्यादतिक्रांतोमेधावी अबालोमध्यमवयामार्ग स्थ सज्जिराचीर्णमार्गस्थोमार्गवित् मार्गस्य या गतिर्गमन तया पराक्रम विवक्षितदेश गमन तज्जानातीति मार्गस्य गतिपराक्रमज्ञ एवंविधोऽहमेतत्पद्मवरपुंडरीक पुष्करिणी मध्यस्थ उत्क्षेप्स्यामि उत्खनिष्यामीति कृत्वा इहागतइत्युक्त्वा सपुरुषस्तां पुष्करिणीम निक्रामेत् संमुख गच्छेत् । यावच्च यावच्च तदवतरणेच्छु संमुख गच्छेत्तावत्तावच्च । ण वा क्यालंकारे । तस्या पुष्करिण्यामहदगाधमुदकं महांश्च सेय कर्दम । तत समहाकर्दमोद कान्यामाकुल प्रहीणस्तीर विजक्तिव्यत्ययात्तीराद्भ्रष्ट । अप्राप्तश्च पद्मवरपुंडरीक । तस्या सेय कर्दमस्तस्मिन्निपसोनिमग्नस्तीरपद्मयोरंतरंतरालएव तिष्ठति (नोहव्वाएत्ति) नार्वाक् तटवर्ती (नोपाराएत्ति) नापि पारगमनाय समर्थ । एवमसावुजयभ्रष्ट प्रथम पुरु षजात पुरुषजातीय ॥ ६ ॥

टीका–प्रथमश्रुतस्कधानंतर द्वितीय समारभ्यते । अस्य चायमभिसंबंध । इहान तरश्रुतस्कधे योर्थ समासतोऽभिहितोऽसावेवानेन श्रुतस्कधेन सोपपत्तिकोव्यासेनाभि धीयते । तएव विधय सुसगृहीताभवति येषा समासव्यासाभ्यामभिधानमिति । यदि वा पूर्वश्रुतस्कधोक्तएवार्थोऽनेन दृष्टांतद्वारेण सुखावगमार्थं प्रतिपाद्यतइत्यनेन संबधे नायातस्यास्य श्रुतस्कधस्य सबधीनि सप्त महाध्ययनानि प्रतिपाद्यते । महांति च ता न्यध्ययनानि च पूर्वश्रुतस्कधाध्ययनेभ्योमहत्वादेतेषामिति । तत्र महच्छब्दाध्ययनशब्दयो र्निक्षेपार्थं निर्युक्तिरुदाह । णामठवणा दविए खेत्ते काले तहेव भावेय ॥ एसो खलु म ह तंमि निक्खेवो छव्विहो होति ॥ १ ॥ (णामठवणेत्यादि) नामस्थापनाद्रव्यक्षेत्रका लभावात्मकोमहति षड्विधोनिक्षेपोभवति । तत्र नामस्थापने सुज्ञाते द्रव्यमहदागमतो नोआगमतश्च । आगमतोज्ञाता तत्र चानुपयुक्त । नोआगमतस्तु ज्ञशरीरभव्यशरीरव्य तिरिक्त सचित्तमिश्रभेदात्त्रिधा । तत्रापि सचित्तद्रव्यमहत्वऔदारिक शरीर तत्रौदारिक योज नसहस्रपरिमाण मत्स्यशरीर वैक्रिय तु योजनशतसहस्रपरिमाण । तैजसकार्मणे तु लोका काशप्रमाणे । तदेतदौदारिकवैक्रियतैजसकार्मणरूप चतुर्विध द्रव्य सचित्तमहदचित्तमहत् समस्तलोकव्याप्यचित्तमहास्कध· । मिश्र तु तदेव मत्स्यादिशरीर क्षेत्रमहत् लोकाकाश कालमहत्सर्वाद्धाभावमहदौदयिकादिभावरूपतया षोढा । तत्रौदयिकोभाव सर्वससा रिषु विद्यतइति कृत्वा बह्वाश्रयत्वान्महान् भवति । कालतोप्यसौ त्रिविध । तद्यथा । अनाद्यपर्यवसितोऽभव्यानामनादिसपर्यवसितोभव्याना सादिसपर्यवसितोनारकादीनामि ति । क्षायिकस्तु केवलज्ञानदर्शनात्मक साद्यपर्यवसितत्वात्कालतोमहान् क्षायोपशमि कोप्याश्रयबहुत्वादनाद्यपर्यवसितत्वाच्च महानिति । औपशमिकोपि दर्शनचारित्रमोहनी यानुदयतया शुभभावत्वेन च महान् भवति । पारिणामिकस्तु समस्तजीवाजीवाश्रयम हत्वान्महानिति । सान्निपातिकोप्याश्रयबहुत्वादेव महानिति उक्त । महदध्ययनस्यापि नामादिक षोढानिक्षेप दर्शयितु निर्युक्तिरुदाह । “ णामठवणा दविए खेत्ते काले तहेव भावेय ॥ एसो खलु अज्झयणे निक्खेवो छव्विहो होति ” ॥ २ ॥ (नामठवणेत्यादि) अध्ययनस्य नामादिक षोढा निक्षेप । सचान्यत्र न्यक्षेण प्रतिपादितइति नेह प्रतन्य ते । अत्रच श्रुतस्कधे सप्त महाध्ययनानि तेषामाद्यमध्ययन पौण्डरीकाख्य तस्य चोपक्र मादीनि चत्वार्यनुयोगद्वाराणि प्ररूपणीयानि । तत्रोपक्रमथानुपूर्वी,नाम,प्रमाण,वक्त व्यता,र्थाधिकार, समवतार, भेदात्षोढा । तत्र पूर्वानुपूर्व्या प्रथममिद पश्चानुपूर्व्या स प्तमगच्छगताया श्रेण्याअन्योन्याभ्यासोने द्विरूपोने सति पचाशच्छतान्यष्टात्रिंशदधिकानि भ वति नाम्नितु षट् । तत्रापि क्षायोपशमिके भावे सर्वस्यापि च श्रुतस्य क्षायोपशमिकत्वा त्प्रमाणचिताया जीवगुणप्रमाणे वक्तव्यताया सामान्येन सर्वेष्वध्ययनेषु स्वसमयवक्तव्य

७२

स्य सप्ताध्ययनानि । तेषु प्रथम पुडरीकाध्ययन तस्येदमादिसूत्र । (सुअमेइति) श्रुतं मया आयुष्मता भगवता एवमाख्यातं । इह प्रवचने । खलुशब्दोवाक्यालकारे । पौंड रीकाख्यमध्ययन पुडरीकेण श्वेतपद्मेन उपमा यत्र तत्पौडरीक । तस्यायमर्थ प्रज्ञप्त । ण वाक्यालकारे ॥ १ ॥ तद्यथा । नामशब्द सभावनाया । सभाव्यते पुष्करिणीदृष्टांत पुष्कराणि पद्मानि यस्या सा पुष्करिणी वापी स्यात् । किंभूता । बहूदका बहूदकप्रचुरा । सीयते यस्मिन्नसौ सेय कर्दम सयस्या बहुसेया बहुपुष्कला बहुसपूर्णा लब्धोनामानु गतोर्थोयया सा लब्धार्था पुडरीकिणी श्वेतपद्मप्रचुरा प्रासादिका निर्मला दर्शनीया शो भना । अभित सर्वतोरूपाणि हसचक्रादीनि यस्यां सा तथा प्रतिरूपा प्रतिबिंबवती नि र्मलत्वात्तस्या सर्वत्र प्रतिबिंबानि वीक्ष्यंते ॥ २ ॥ तस्या पुष्करिण्या । तत्रतत्रेति पुडरी कैर्व्याप्तिमाह । देशेदेशे इत्यनेन तु एकैकप्रदेशे प्राचुर्यमाह । तस्मिंस्तस्मिन्नित्यनेन तु नास्त्येवासौ प्रदेशोयत्र तानि न सतीति । अथवा अत्यादरज्ञापनाय एकार्थान्येवैता नि त्रीणि पदानि । तेषु पुष्करिण्या सर्वप्रदेशेषु बहूनि पद्मान्येव वराणि पौडरीकाणि श्वेतशतपत्राण्युक्तानि आनुपूर्व्येण विशिष्टरचनया स्थितानि उच्छ्रितानि पकजले अति लघ्य उपरि व्यवस्थितानि रुचि काति लातीति रुचिलानि दीप्तिमति शोभनवर्णगधरस स्पर्शवति प्रासादीयानि दर्शनीयानि अभिरुपाणि प्रतिरूपाणि ॥ ३ ॥ तस्यां पुष्करि ण्या । ण वाक्यालकारे । मध्यदेशे एक पद्मवरमेव पुडरीकमुक्त शेषव्याख्या पूर्ववत् ॥४॥ (सव्वावतित्ति) सर्वस्याअपि तस्या पुष्करिण्या सर्वप्रदेशेषु बहूनि पद्मानि तथा सर्व स्याश्च तस्याबहुमध्यदेशे पूर्वोक्तविशेषणविशिष्टं महदेक पौडरीक विद्यतइति ॥ ५ ॥ अ थ पूर्वस्यादिश कश्चिदेक पुरुष समागम्य ता पुष्करिणी तस्याश्च तीरे तटे स्थित्वा त तत्पद्म प्रासादीयादिविशेषण सपुरुषएव वक्ष्यमाण वदेत् । (अहमसित्ति) अहमस्मि पुरुष कुशल पडित क्षेत्रज्ञोव्यक्तोबाल्यादतिक्रातोमेधावी अबालोमध्यमवयामार्ग स्थ सद्भिराचीर्णमार्गस्थोमार्गवित् मार्गस्य या गतिर्गमन तया पराक्रम विवक्षितदेश गमन तज्जानातीति मार्गस्य गतिपराक्रमज्ञ एवविधोऽहमेतत्पद्मवरपुडरीक पुष्करिणी मध्यस्थ उत्क्षेप्स्यामि उत्खनिष्यामीति कृत्वा इहागतइत्युक्त्वा सपुरुषस्ता पुष्करिणीम भिक्रामेत् समुख गच्छेत् । यावच्च यावच्च तदवतरणेछु समुख गच्छेत्तावत्तावच्च । ण वा क्यालकारे । तस्या पुष्करिण्यामहदगाधमुदक महाश्च सेय कर्दम । तत समहाकर्दमोद काभ्यामाकुल प्रहीणस्तीर विभक्तिव्यत्ययात्तीराद्भ्रष्ट । अप्राप्तश्च पद्मवरपुडरीक । तस्या सेय कर्दमस्तस्मिन्निषण्णोनिमग्नस्तीरपद्मयोरतरतराजएव तिष्ठति (नोहव्वाएत्ति) नार्वाक्त तटवर्ती (नोपाराएत्ति) नापि पारगमनाय समर्थ । एवमसावुभयभ्रष्ट प्रथम पुरु षजात पुरुषजातीय ॥ ६ ॥

त्वादन्येपीन्द्रवाक्कादय परिगृह्यते । एतदेव दर्शयति । ये चान्ये महर्धिमतोमहेन्य को टीश्वरास्ते सर्वेपि पौंडरीकानवति । तु शब्दस्यानुक्तसमुच्चयार्थत्वात् । येचान्ये विपाक लापोपेतास्ते पौंडरीकाइति । साम्प्रत देवगतो प्रधानस्य पौंडरीकत्व प्रतिपादयन्नाह । जव णवइयाणमतर, जोतिसवेमाणियाणि देवाण ॥ जे तेसि पवरा खलु, ते होंति पुंडरीयाउं ॥ ए ॥ जवनपतिव्यतरज्योतिष्कवैमानिकाना चतुर्णा देवनिकायाना मध्ये ये प्रवरा प्रधानाइड्रसामानिकादयस्ते प्रधानाइति रुत्वा पाडरीकाजिधानाजवति । साम्प्रतमचित्त इव्याणा यत्प्रधान तत्पौंमरीकत्वप्रतिपादनायाह । " कसाण दूसाण, मणिमोत्तियसि लप्पवालमादीण ॥ जे तेसि पवरा खलु ते होंति पोंमरीयाउं ॥ १० ॥ कास्याना म ध्ये जयवटादीनि दूष्याणा चीनांशुकादीनि मणीनामिड्नीलवैडूर्यपद्मरागादीनि रत्नानि मौक्तिकाना यान्यनेकवर्णसस्थानप्रमाणाधिकानि । तथा शिलाना मध्ये पाडुकवला दय शिलास्तीर्थकृज्जन्माभिषेकसिंहासनाधारनूतास्तथा प्रवालानां यानि वर्णादिगुणोपे तान्यादिग्रहणाज्जात्यचामीकर तद्विकाराश्चानरणविशेषा परिगृह्यते । तदेवमनतरोक्ता नि कास्यादीनि प्रवराणि तानि चित्तपौंमरीकाण्यनिधीयतइति । मिश्रद्रव्यपोंमरीक तु ती र्थकृच्चक्रवर्त्यादयएव प्रधानकटककेयूराद्यलकारालकृताइति । द्रव्यपौंडरीकानतर क्षेत्र पोंमरीकानिधित्सयाह । " जाइ खेत्ताइ खलु, सुहाणुनावाइ होंति लोगमि ॥ देवकु रुमादियाइ, ताइ खेत्ताइ पवराइं " ॥ ११ ॥ (जाइमित्यादि) यानि कानिचिदिह देव कुर्वादीनि शुनानुनावानि क्षेत्राणि तानि प्रवरणानि पौंडरीकाभिधानानि नवति । सां प्रतं कालपौंडरीकप्रतिपादनायाह । " जीवा जवठितीए, कायठितीए य होंति जे पवरा॥ ते होंति पोंमरीया, अवसेसा कंडरीयाउं ॥ १२ ॥ (जीवाइत्यादि) जीवा प्राणिनोन वस्थित्या च ये प्रवरा प्रधानास्ते पौंडरीकाजवति शेषास्त्वप्रधाना कंमरीकाइति । तत्र नवनस्थित्या देवाअनुत्तरोपपातिका प्रधानाजवति । तेषा यावद्भव शुनानुनावत्वात्का यस्थित्या तु मनुष्या शुनकर्मसमाचारा सप्ताष्टनवप्रमाणानि मनुष्येषु पूर्वकोटयायुष्के ष्वनुपरिवर्त्यानतरनवे त्रिपल्योपमायुष्केषूत्पादमनुनूय ततोदेवेषूत्पद्यतइति रुत्वा ततस्ते कायस्थित्या पौंमरीकाजवत्यवशिष्टास्तु कंडरीकाइति । कालपौंडरीकानतर गणनासस्था नपौंडरीकद्वयप्रतिपादनायाह । " गणणाए रज्जू खलु सगण चेव होंति चउरस । ए याइ पोंमरीगाइ होंति सेसाइ इयराइ " ॥ १३ ॥ (गणणाएइत्यादि) गणनया सख्य या पोंमरीक चिंत्यमान दशप्रकारस्य गणितस्य मध्ये रज्जुगणितं प्रधानत्वात्पोंमरीक । दशप्रकार तु गणितमिद । परिकम्मुरज्जुरासी, ववहारे तह कलासवण्णे य ॥ पुग्गलजाव तावे घणे य घणवग्ग वग्गेय । एषां सस्थानाना मध्ये समचतुरस्र सस्थान प्रवर त्वात्पोंमरीकमित्येवमेते द्वे अपि पोंमरीके शेषाणि तु परिकर्मादीनि गणितानि न्यग्रो

ता। अर्थाधिकार पौडरीकोपमया स्वसमयगुणव्यवस्थापन । समवतारेतु यत्र यत्र स मवतरति तत्रतत्र लेशत समवतारितमेवेति। उपक्रमानतर निक्षेप सच नामनिष्पन्ने निक्षेपे पौडरीकमित्यस्याध्ययनस्य नाम तन्निक्षेपार्थं निर्युक्तिरुदाह् । " णामठवणा द विए, खेत्ते कालेय गणणसठाणे ॥ भावेय अठमे खलु, णिरकेवो पुडरीयस्य " ॥ ३ ॥ (णामठवणेत्यादि) पौडरीकस्य नामस्थापनाद्व्यक्षेत्रकालगणनासस्थापननावात्म कोऽष्टधा निक्षेप । तत्र नामस्थापने क्षुण्णत्वादनादृत्य द्रव्यपौमरीकमभिधित्सुराह् । " जो जीवो भविउ खलु, उववज्जि कामो पुडरीयस्य ॥ सोदवपुडरीउ, भावमि विजा णउ भणिउ " ॥४॥ (जोजीवोऽत्यादि) य कश्चित्प्राणधारणलक्षणोजीवोनविष्यतीति भव्यस्तदेव दर्शयति। उत्पत्तितुकाम समुत्पित्सुस्तथाविधकर्मोदयात्पौडरीकेषु श्वेतपद्मेषु वनस्पतिकायविशेषेष्वनतरभवे भावी सद्व्यपौमरीक । खलुशब्दोवाक्यालकारे। भावपौ मरीक त्वागमत । पौडरीकपदार्थज्ञस्तत्र चोपयुक्तइति । एतदेव द्रव्यपौडरीक विशेषत र दर्शयितुमाह् । " एगभविएयबद्धा, उएय अभिमुह्रिय नामगोएय ॥ एते त्तिन्न देसा, दवमिय पोमरीयस्स " ॥ ५ ॥ एकेन भवेन गतेनानतरभवएव पौडरीकेपूत्पत्स्यते स एकभविकस्तथा तदासन्नतर पौडरीकेषु बद्धायुष्कस्ततोप्यासन्नतमोभिमुखनामगोत्रोऽ नतरसमयेषु य पौडरीकेपूत्पद्यते । अनतरोक्ताएते त्रयोदेशविशेषाद्व्यपौमरीकेऽवगत व्याइति । भूतस्य भाविनोवा भावस्य हि कारण तु यल्लोके । तद्द्रव्य तत्त्वज्ञै सचेतना चेतन कथितमिति वचनात् । इह्च पुडरीककडरीकयोर्भ्रात्रोर्महाराजपुत्रयो सदसदनुष्ठा नपरायणतया शोभनत्वमवगम्य तदुपमयाऽन्यदपि यच्छोभन तत्पौडरीकमितरत्तु कमकमि ति । तत्र च नरकवर्जासु तिसृष्वपि गतिषु ये शोभना पदार्थास्ते पौमरीका शेषास्तु कामरीकाइत्येतत्प्रतिपादयन्नाह् । " तेरिछिया मणुस्सा, देवगणा चेव होति जेय व रा ॥ ते होति पुमरीया, सेसा पुण कमरीयाउ " ॥ ६ ॥ (तेरिछियाइत्यादि) कठ्या तत्र तिर्यक्षु प्रधानस्य पौमरीकत्वप्रतिपादनार्थमाह् । " जलयर थलयर खयरा, जे पवराचेव होति कताय । जे वसभावमणुमया,ते होति पुमरीयाउ " ॥ ७ ॥ जलचरेषु मत्स्यकरिमकरादय स्थलचरेषु सिहादयोबलवर्णरूपादिगुणयुक्ताभर परिसर्पे मणिफणि भोज्जुजपरिसर्पेषु नकुलादय खचरेषु हसमयूरादय इत्येवमन्येपि स्वभावेन प्रकृत्या लो कानुमतास्ते च पौमरीकाइव प्रधानाभवति । मनुष्यगतौ प्रधानाविष्करणायाह् । " अ रिह्त चक्कवट्टी जारणविज्जाहरा दसाराय ॥ जे अन्ने इतिमता, तेहोति पोमरीया उ ॥ ८ ॥ सर्वातिशायिनी पूजामर्हतीत्यर्हत । ते निरुपमरूपादिगुणोपेतास्तथा चक्रव र्तिन षट्खडभरतेश्वरास्तथाचारश्रमणाबहुविधैश्वर्यभूतलब्धिकलापोपेतामहातपस्विनस्त था विद्याधरावैताढ्यपुराधिपतयस्तथा दाशार्हाहरिवशकुलोद्भवा । अस्य चोपलक्षणार्थे

त्वादन्येपीक्ष्वाकादय परिगृह्यते । एतदेव दर्शयति । ये चान्ये महर्धिमतोमहेन्य को टीश्वरास्ते सर्वेपि पौंडरीकाभवंति । तु शब्दस्यानुक्तसमुच्चयार्थत्वात् । येचान्ये विद्याक लापोपेतास्ते पौंडरीकाइति । सांप्रत देवगतौ प्रधानस्य पौंडरीकत्व प्रतिपादयन्नाह । जव णवइयाणमंतर, जोतिसवेमाणियाणि देवाण ॥ जे तेसिं पवरा खलु, ते होंति पुंडरीयाउं ॥ ९ ॥ नवनपतिव्यंतरज्योतिष्कवैमानिकाना चतुर्णा देवनिकायाना मध्ये ये प्रवरा प्रधानाइंइंद्रसामानिकादयस्ते प्रधानाइति कृत्वा पौंडरीकानियानाभवंति । सांप्रतमचित्त इव्याण। यत्प्रधान तत्पौंमरीकत्वप्रतिपादनायाह । " कसाण दूसाण, मणिमोत्तियसिं लप्पवालमादीण॥ जे तेसिं पवरा खलु ते होंति पोंमरीयाउं ॥ १० ॥ कास्यानां म ध्ये जयघटादीनि दूष्याणा चीनांशुकादीनि मणीनामिंड्नीलवैदूर्यपद्मरागादीनि रत्नानि मौक्तिकाना यान्यनेकवर्णसस्थानप्रमाणाधिकानि । तथा शिलाना मध्ये पांडुकंवला दय शिलास्तीर्थकृज्जन्माभिषेकसिंहासनाधारनूतास्तथा प्रवालाना यानि वर्णादिगुणोपे तान्यादिग्रहणाज्जात्यचामीकर तद्विकाराश्चानरणविशेषा परिगृह्यते । तदेवमनंतरोक्ता नि कास्यादीनि प्रवराणि तानि चित्तपौंमरीकाण्यनिर्यीपतइति। मिश्रइव्यपोंमरीक तु ती र्थकृच्चक्रवर्त्यादयएव प्रधानकटककेयूराद्यलंकारालंकृताइति । इव्यपौंडरीकानंतर क्षेत्र पोंमरीकाभिधित्सयाह । " जाइं खेत्ताइं खलु, सुहाणुनावाइं होंति लोगंमि ॥ देवकु रुमादियाइं, ताइं खेत्ताइं पवराइं " ॥ ११ ॥ (जाइमित्यादि) यानि कानिचिदिह देव कुर्वादीनि शुनानुनावानि क्षेत्राणि तानि प्रवरणानि पौंडरीकाभिधानानि नवति । सां प्रतं कालपौंडरीकप्रतिपादनायाह । " जीवा नवट्ठितीए, कायठितीए य होंति जे पवरा॥ ते होंति पोंमरीया, अवसेसा कंडरीयाउं ॥ १२ ॥ (जीवाइत्यादि) जीवा प्राणिनोन वस्थित्या च ये प्रवरा प्रधानास्ते पौंडरीकाभवंति शेषास्त्वप्रधाना कंमरीकाइति । तत्र नवनस्थित्या देवाअनुत्तरोपपातिका प्रधानाभवंति । तेषा यावद्भव शुनानुनावत्वात्का यस्थित्या तु मनुष्या शुनकर्मसमाचारा सप्ताष्टनवप्रमाणानि मनुष्येषु पूर्वकोटयायुष्के ष्वनुपस्थित्यांनंतरनवे त्रिपल्योपमायुष्केषूत्पादमनुनूय ततोदेवेषूत्पद्यतइति कृत्वा ततस्ते कायस्थित्या पौंमरीकाभवत्यवशिष्टास्तु कंडरीकाइति । कालपौंडरीकानंतर गणनासंस्था नपौंडरीकद्वयप्रतिपादनायाह । " गणणाए रज्जू खलु संठाण चेव होंति चउरंस । ए याइं पोंमरीगाइं होंति सेसाइं इयराइं " ॥ १३ ॥ (गणणाएइत्यादि) गणनया सख्य या पौंमरीक चिंत्यमान दशप्रकारस्य गणितस्य मध्ये रज्जुगणितं प्रधानत्वात्पौंमरीकं । दशप्रकारं तु गणितमिदं । परिकम्मुरज्जुरासी, ववहारे तह कलासवणे य ॥ पुग्गलजाव तावं घणे य घणवग्ग वग्गेय । एषा संस्थानाना मध्ये समचतुरस्र संस्थानं प्रवर त्वात्पौंमरीकमित्येवमेते द्वे अपि पौंमरीके शेषाणि तु परिकर्मादीनि गणितानि न्यग्रो

धपरिमंमलादीनि च संस्थानानि इतराणि कंमरीकाण्यप्रवराणि नवंतीति यावत् । सांप्रतं नावपौंमरीकप्रतिपादनानिधित्सयाह । " उदएयउं वसमिए खलु, खइए य तहा खउं वसमिएय ॥ परिणामसन्निवाए, जे पवरा ते वि ते चेव ॥ १४ ॥ (उदयेत्यादि) औदयिके नावे तथौपशमिके क्षायिकक्षायोपशमिके पारिणामिके सान्निपातिकेच नावे चिंत्यमानेषु तेषु वा मध्ये ये प्रवराः प्रधानास्तेप्यौदयिकादयोनावास्तएव पौंडरीकाएवावगंतव्यास्तत्रौदयिके नावे तीर्थंकराअनुत्तरोपपातिकसुरास्तथान्येपि सितशतपत्रादय पौंमरीका औपशमिके समस्तोपशांतमोहा क्षायिके केवलज्ञानिनः क्षायोपशमिके विपुलमतिश्चतुर्दशपूर्वविदपरमावधयोन्यस्ता समस्तावा पारिणामिके नावे नव्या सान्निपातिके नावे द्विकादिसंयोगा सिद्धादिषु स्वबुध्या पौंडरीकत्वेन योजनीया शेषास्तु कांडरीका इति । सांप्रतमन्यथानावपौंडरीकप्रतिपादनायाह । " अहवावि नाणदंसण, चरित्तविणए तहेव अप्पे ॥ जे पवरा होंति मुणी, ते पवरा पुंडरीयाउ ॥ १५ ॥ (अहवेत्यादि) अथवापि नावपौंडरीकमिदं । तद्यथा । सम्यक्ज्ञाने तथा सम्यग्दर्शने सम्यक्चारित्रज्ञानादिके विनये तथाऽध्यात्मनि च धर्मध्यानादिके प्रवरा श्रेष्ठामुनयोनवंति ते पौंमरीकत्वेनावगंतव्यास्ततोऽन्ये कंमरीकाइति । तदेव संनविनमष्टधा पौंडरीकस्य निक्षेप प्रदर्श्याधुनेह येनाधिकारस्तमाविर्नावयन्नाह । " एब पुण अहिगारो, वणस्सतीकायपुंमरीएण ॥ नावंमि य समणेण, अप्सयणे पुंमरीए य " ॥ १६ ॥ (एबपुणेत्यादि) अत्र पुनर्दृष्टांतप्रस्तावे ऽधिकारोव्यापार सचित्ततिर्यग्योनिकैकेंद्रियवनस्पतिकायद्रव्यपौंडरीकेन जलरुहेणवा औदयिकनाववर्तिना वनस्पतिकायपौंडरीकेण सितशतपत्रेण तथा नावे श्रमणेन सम्यग्दर्शनचारित्रविनयाध्यात्ममूर्तिना सत्साधुनाऽस्मिन्नध्ययने पौंडरीकाख्ये ऽधिकारइति । गता निक्षेपनिर्युक्तिरधुनासूत्रस्पर्शिकनिर्युक्तेरवसर । साच सूत्रे सति नवति । सूत्रच सूत्रानुगमे सचावसरप्राप्तोऽतोऽस्खलितादिगुणोपेतं सूत्रमुच्चारयितव्य । तच्चेद । (सुयंमेआउसतेणमित्यादि) अस्य चानंतर सह सूत्रेण संबधोवाच्य । सचाय । (सेएवमेव जाणह जमहं नयंतारोत्ति) तमेव देव जानीत नयस्य त्रातार । तद्यथा । श्रुतं मयाऽऽयुष्मता नवतैवमाख्यातमादिसूत्रेण च सह संबंधोय । तद्यथा । यद्भगवताख्यातं मया च श्रुत तद्बुध्येतेत्यादि । किं तद्भगवताख्यातमित्याह । इह प्रवचने सूत्रकृत् द्वितीयश्रुतस्कंधे वा । खलुशब्दो वाक्यालंकारे । पौंडरीकानिधानमध्ययनं पौंडरीकेण सितशतपत्रेणात्रोपमा नविष्यतीतिकृत्वाऽतोस्याध्ययनस्यपौंडरीकमिति नाम कृतं तस्य चायमर्थ । णमिति वाक्यालंकारे । प्रज्ञप्त प्ररूपित ॥ १ ॥ (सेजहत्ति) तद्यथार्थ सच वाक्योपन्यासार्थ । नामशब्द संनावनायां । संनाव्यते पुष्करिणी दृष्टांत । पुष्कराणि पद्मानि तानि विद्यते यस्यामसौ पुष्करिणी स्याद्भवेदेवनूता । तद्यथा बहुप्रचुरमगाधमुदकं यस्यां सा बहूदका बहूदकप्रचुरा

तथा सीयतेऽवबध्यते यस्मिन्नसौ सेय कर्दम सयस्या सा बहुसेया प्रचुरकर्दमा च व हुश्वेतपद्मसद्भावात् स्वछोदकसनवाच्च बहुश्वेता वा तथा बहुपुष्कला बहुसपूर्णा प्रचु रोदकनृतेत्यर्थ । तथा लब्ध प्राप्त पुष्करिणीशब्दान्वर्थतयार्थोयया सा लब्धार्थाऽथवाऽऽ स्थानमास्था प्रतिष्ठा सा लब्धा यया सा लब्धास्था तथा पौडरीकाणि श्वेतशतपत्राणि विद्यते यस्यां सा पौडरीकिणी। प्रचुरार्थेन मत्वर्थीयोत्पत्तेर्बहुपद्मेत्यर्थ । तथा प्रसाद प्र सन्नता निर्मलजलता सा विद्यते यस्या सा प्रसादिका प्रासादावा देवकुलसन्निवेशा स्ते विद्यते यस्या समतत प्रासादिका दर्शनीया शोजना सत्सनिवेशतोऽष्टव्या दर्शन योग्या तथाऽनिमुख्ये च सदावस्थितानि रूपाणि राजहसचक्रवाकसारसादीनि गजमहि षमृगयूथादीनि वा जलातर्गतानि वा करिमकरादीनि वा यस्या साऽनिरूपेति तथा प्र तिरूपाणि प्रतिबिंबानि विद्यते यस्या सा प्रतिरूपा। एतडुक्त नवति । स्वछत्वात्तस्या सर्वं प्रतिबिंबानि समुपलन्यते तदतिशयरूपतया वा लोकेन तत्प्रतिबिंबानि क्रियते सा प्र तिरूपेति । यदिवा (पासादीयादरिसणीयाअनिरूवापडिरूपत्ति) पर्यायाइत्येते चत्वारो प्यतिशयरमणीयत्वख्यापनार्थमुपात्ता ॥ २ ॥ तस्याश्च पुष्करिण्या । णमिति वाक्याल कारे । तत्र तत्रेत्यनेन वीप्सापदेन पौमरीकैर्व्यापकत्वमाह । देशेदेशे इत्यनेन त्वेकेकप्रदे शे प्राचुर्यमाह् । तस्मिंस्तस्मिन्नित्यनेन तु नास्त्येवासौ पुष्करिण्या प्रदेशोयत्र तानि न सतीति । यदिवा देशेदेशइत्येतत्प्रत्येकमनिसबध्यते । तत्रतत्रेति । कोर्थोदेशेदेशे तस्मिंस्त स्मिन्निति चार्थोदेशेकदेशइति । यदिवा थ्यस्यादरख्यापनायैकार्थान्येवैतानि त्रीण्यपि पदा नि । तेषु च पुष्करिण्या सर्वप्रदेशेषु बहूनि प्रचुराणि पद्मान्येव वराणि श्रेष्ठानि पौडरी काणि पद्मवरपौडरीकाणि । पद्मग्रहण नत्रव्याघ्रव्यवच्छेदार्थं । पौडरीकग्रहण श्वेतशतपत्र प्रतिपत्त्यर्थं । वरग्रहणमप्रधाननिवृत्त्यर्थं । तदेवनूतानि बहूनि पद्मवरपौडरीकाणि (वुइय त्ति) उक्तानि प्रतिपादितानि विद्यतइत्यर्थं । आनुपूर्व्येण विशिष्टरचनया स्थितानि त थोच्छ्रितानि पंकजले अतिलघ्योपरि व्यवस्थितानि तथा रुचिर्दीप्तिस्तां लात्याददति रुचि लानि सद्दीप्तिमति तथा शोजनवर्णगधरसस्पर्शवति तथा प्रसादीयानि अनिरूपाणि प्र तिरूपाणि ॥ ३ ॥ तस्याश्च पुष्करिण्या सर्वत पद्मावृताया । णमिति वाक्यालकारे । ब हुदेशमध्यनागे निरुपचरितमध्यदेशे एक महत्पद्मवरपौडरीकमुक्तमानुपूर्व्येण व्यवस्थित मुच्छ्रितं रुचिलवर्णगधरसस्पर्शवत् तथा प्रासादीयं दर्शनीय अनिरूपतर प्रतिरूपतरमि ति ॥ ४ ॥ सांप्रतमेवानतरोक्त सूत्रद्वयं सव्वावन्तिचणतीत्यनेन विशिष्टमपर सूत्रद्वय मष्टव्य । अस्यायमर्थ (सव्वावतिति) सर्वस्याअपि तस्या पुष्करिण्या सर्वप्रदेशेषु यथो क्तविशेषणविशिष्टानि बहूनि पद्मानि तथा सर्वस्याश्च तस्याबहुमध्यदेशनागे यथोक्तवि शेषणविशिष्ट महदेक पौडरीक विद्यतइति । उनयत्रापि च समुच्चये । णमिति वाक्यालका

धपरिमंडलादीनि च संस्थानानि इतराणि कंडरीकान्यप्रवराणि नवतीति यावत् । सांप्रतं नावपौंडरीकप्रतिपादनानिधित्सयाह । " उदएयउं वसमिए खलु, खइए य तहा खउं वसमिएय ॥ परिणामसन्निवाए, जे पवरा ते वि ते चेव ॥ १४ ॥ (उदयेइत्यादि) औदयिके नावे तथौपशमिके क्षायिकक्षायोपशमिके पारिणामिके सान्निपातिकेच नावे चिंत्यमानेषु तेषु वा मध्ये ये प्रवरा प्रधानास्तेप्यौदयिकादयोनावास्तएव पौंडरीकाएवावगतव्यास्तथौदयिके नावे तीर्थंकराद्यनुत्तरोपपातिकसुरास्तथान्येपि सितशतपत्रादय पौंमरीका औपशमिके समस्तोपशांतमोहा क्षायिके केवलज्ञानिन क्षायोपशमिके विपुलमतिश्चतुर्दशपूर्वविदपरमावधयोन्यस्ता समस्तावा पारिणामिके नावे नव्या सान्निपातिके नावे द्विकादिसंयोगा सिद्धादिषु स्वबुध्या पौंडरीकत्वेन योजनीया शेषास्तु कांडरीका इति । सांप्रतमन्यथानावपौंडरीकप्रतिपादनायाह । " अहवावि नाणदंसण, चरित्तविणए तहेव अज्झप्पे ॥ जे पवरा होंति मुणी, ते पवरा पुंडरीयाउ ॥१५॥ (अहवेत्यादि) अथवापि नावपौंडरीकमिदं । तद्यथा । सम्यक्ज्ञाने तथा सम्यग्दर्शने सम्यक्चारित्रज्ञानादिके विनये तथाऽध्यात्मनि च धर्मध्यानादिके प्रवरा श्रेष्ठामुनयोनवति ते पौंमरीकत्वेनावगतव्यास्ततोऽन्ये कंमरीकाइति । तदेवं संनविनमष्टधा पौंडरीकस्य निक्षेप प्रदर्श्याधुनेह येनाधिकारस्तमाविर्नावयन्नाह । " एळ पुण अहिगारो, वणस्सतीकायपुंमरीएण ॥ नावंमि य समणेण, अज्झयणे पुंमरीए य " ॥१६॥ (एळपुणेत्यादि) अत्र पुनर्दृष्टांतप्रस्तावे ऽधिकारोव्यापार सचित्ततिर्यग्योनिकैकेंद्रियवनस्पतिकायद्रव्यपौंडरीकेन जलरुहेणवा औदयिकनाववर्तिना वनस्पतिकायपौंडरीकेण सितशतपत्रेण तथा नावे श्रमणेन सम्यग्दर्शनचारित्रविनयाध्यात्ममूर्तिना सत्साधुनाऽस्मिन्नध्ययने पौंडरीकाख्ये ऽधिकारइति । गता निक्षेपनिर्युक्तिरधुनासूत्रस्पर्शिकनिर्युक्तेरवसर । साच सूत्रे सति नवति । सूत्रंच सूत्रानुगमे सचावसरप्राप्तोऽतोऽस्खलितादिगुणोपेतं सूत्रमुच्चारयितव्यं । तच्चेदं । (सुयमेआउसतेणमित्यादि) अस्य चानंतर सह सूत्रेण संबंधोवाच्य । सचायं । (सेएवमेव जाणह जमहं नयतारोत्ति) तमेव देव जानीत नयस्य त्रातारं । तद्यथा । श्रुतं मयाऽऽयुष्मता नवतैवमाख्यातमादिसूत्रेण च सह संबंधोयं । तद्यथा । यद्भगवताख्यातं मया च श्रुतं तद्बुध्येतेत्यादि । किं तद्भगवताख्यातमित्याह । इह प्रवचने सूत्रकृत् द्वितीयश्रुतस्कंधे वा । खलुशब्दो वाक्यालंकारे । पौंडरीकानिधानमध्ययनं पौंडरीकेण सितशतपत्रेणात्रोपमा नविष्यतीति कृत्वाऽतोस्याध्ययनस्यपौंडरीकमिति नाम कृतं तस्य चायमर्थं । णमिति वाक्यालंकारे । प्रज्ञप्तं प्ररूपितं ॥१॥ (सेजहत्ति) तद्यथार्थे सच वाक्योपन्यासार्थे । नामशब्द संनावनाया । संनाव्यते पुष्करिणी दृष्टांत । पुष्कराणि पद्मानि तानि विद्यते यस्यामसौ पुष्करिणी स्याद्भवेदेवंनूता । तद्यथा बहुप्रचुरमगाधमुदकं यस्या सा बहूदका बहूदकप्रचुरा

तथा सीयतेऽवबध्यते यस्मिन्नसौ सेय कर्दम सयस्या सा बहुसेया प्रचुरकर्दमा च ब
हुश्वेतपद्मसन्नावात् स्वच्छोदकसजवाच्च बहुश्वेता वा तथा बहुपुष्कला बहुसपूर्णा प्रचु
रोदकनृतेत्यर्थः । तथा लब्ध प्राप्त पुष्करिणीशब्दान्वर्थतयार्थोययया सा लब्धार्थाऽथवाऽऽ
स्थानमास्था प्रतिष्ठा सा लब्धा यया सा लब्धास्था तथा पौंडरीकाणि श्वेतशतपत्राणि
विद्यते यस्यां सा पौंडरीकिणी। प्रचुरार्थेन मत्वर्थीयोत्पत्तेर्बहुपद्मेत्यर्थः । तथा प्रसाद प्र
सन्नता निर्मलजलता सा विद्यते यस्या सा प्रसादिका प्रासादावा देवकुलसन्निवेशा
स्ते विद्यते यस्या समतत प्रासादिका दर्शनीया शोनना सत्सन्निवेशतोद्रष्टव्या दर्शन
योग्या तथाऽनिमुख्ये च सदावस्थितानि रूपाणि राजहंसचक्रवाकसारसादीनि गजमहि
षमृगयूथादीनि वा जलांतर्गतानि वा करिमकरादीनि वा यस्या साऽनिरूपेति तथा प्र
तिरूपाणि प्रतिबिंबानि विद्यते यस्यां सा प्रतिरूपा। एतदुक्तं नवति । स्वच्छत्वात्तस्या सर्वे
प्रतिबिंबानि समुपलन्यते तदतिशयरूपतया वा लोकेन तत्प्रतिबिंबानि क्रियते सा प्र
तिरूपेति । यदिवा (पासादीयादरिसणीयाअनिरूवापडिरूपत्ति) पर्यायाइत्येते चत्वारो
प्यतिशयरमणीयत्वख्यापनार्थमुपात्ता ॥ २ ॥ तस्याश्च पुष्करिण्या । णमिति वाक्याल
कारे । तत्र तत्रेत्यनेन वीप्सापदेन पोंमरीकैर्व्यापकत्वमाह। देशेदेशे इत्यनेन त्वेकैकप्रदे
शे प्राचुर्यमाह । तस्मिंस्तस्मिन्नित्यनेन तु नास्त्येवासौ पुष्करिण्या प्रदेशोयत्र तानि न
सतीति । यदिवा देशेदेशइत्येतत्प्रत्येकमनिसंबध्यते । तत्रतत्रेति । कोर्थोदेशेदेशे तस्मिंस्त
स्मिन्निति चार्थोदेशैकदेशइति । यदिवा अत्यादरख्यापनायैकार्थान्येवैतानि त्रीण्यपि पदा
नि । तेषु च पुष्करिण्या सर्वप्रदेशेषु बहूनि प्रचुराणि पद्मान्येव वराणि श्रेष्ठानि पौंडरी
काणि पद्मवरपौंडरीकाणि । पद्मग्रहण छत्रव्याप्रव्यवच्छेदार्थं । पौंडरीकग्रहण श्वेतशतपत्र
प्रतिपत्त्यर्थं । वरग्रहणमप्रधाननिवृत्त्यर्थं । तदेवनूतानि बहूनि पद्मवरपौंडरीकाणि (वुइय
त्ति) उक्तानि प्रतिपादितानि विद्यतइत्यर्थः । आनुपूर्व्येण विशिष्टरचनया स्थितानि त
थोच्छ्रितानि पंकजले अतिलंघ्योपरि व्यवस्थितानि तथा रुचिर्दीप्तिस्तां लात्याददति रुचि
लानि सद्दीप्तिमंति तथा शोननवर्णगंधरसस्पर्शवंति तथा प्रसादीयानि अनिरूपाणि प्र
तिरूपाणि ॥ ३ ॥ तस्याश्च पुष्करिण्या सर्वत पद्मावृताया । णमिति वाक्यालंकारे । ब
हुदेशमध्यनागे निरुपचरितमध्यदेशे एकं महत्पद्मवरपौंडरीकमुक्तमानुपूर्व्येण व्यवस्थित
मुच्छ्रितं रुचिलवर्णगंधरसस्पर्शवत् तथा प्रासादीयं दर्शनीयं अनिरूपतरं प्रतिरूपतरमि
ति ॥ ४ ॥ सांप्रतमेवेवानंतरोक्तं सूत्रद्वयं सव्वावंतिचणंतीत्यनेन विशिष्टमपरं सूत्रद्वय
द्रष्टव्यं। अस्यायमर्थः (सव्वावंतित्ति) सर्वस्याअपि तस्या पुष्करिण्या सर्वप्रदेशेषु यथो
क्तविशेषणविशिष्टानि बहूनि पद्मानि तथा सर्वस्याश्च तस्याबहुमध्यदेशनागे यथोक्तवि
शेषणविशिष्टं महदेकं पौंडरीकं विद्यतइति। उनयत्रापि च समुच्चये। णमिति वाक्यालंका

धपरिमन्नजादीनि च सस्थानानि इतराणि कन्दरीकान्यप्रवराणि नवतीति यावत् । सांप्रतं नावपौन्दरीकप्रतिपादनानिधित्सयाह् । " उदएयउं वसमिए खलु, खइए य तहा खउं वसमिएय ॥ परिणामसन्निवाए, जे पवरा ते वि ते चे व ॥ १४ ॥ (उदयेइत्यादि) औदयिके नावे तथौपशमिके क्षायिकक्षायोपशमिके पारिणामिके सान्निपातिकेच नावे चिंत्यमानेषु तेषु वा मध्ये ये प्रवरा प्रधानास्तेष्वौदयिकादयोनावास्तएव पौंडरीकाएवावगतव्यास्तथौदयिके नावे तीर्थकराअनुत्तरोपपातिकसुरास्तथान्येपि सितशतपत्रादय पौन्दरीका औपशमिके समस्तोपशांतमोहा क्षायिके केवलज्ञानिन क्षायोपशमिके विपुलमतिश्चतुर्दशपूर्वविदपरमावधयोन्यस्ता समस्तावा पारिणामिके नावे नव्या सान्निपातिके नावे द्विकादिसयोगा सिद्धादिषु स्वबुध्या पौंडरीकत्वेन योजनीया शेषास्तु कांडरीका इति । साप्रतमन्यथानावपौंडरीकप्रतिपादनायाह् । " अहवावि नाणदसण, चरित्तविणए तहेव अज्झप्पे ॥ जे पवरा होंति मुणी, ते पवरा पुंडरीयाउं ॥१५॥ (अहवेत्यादि) अथवापि नावपौंडरीकमिद । तद्यथा । सम्यक्ज्ञाने तथा सम्यग्दर्शने सम्यक्चारित्रज्ञानादिके विनये तथाऽध्यात्मनि च धर्मध्यानादिके प्रवरा श्रेष्ठामुनयोनवंति ते पौन्दरीकत्वेनावगतव्यास्ततोऽन्ये कन्दरीकाइति । तदेव सन्नविनमष्टधा पौंडरीकस्य निक्षेप प्रदर्श्याधुनेह येनाधिकारस्तमाविर्नावयन्नाह् । " एढ पुण अहिगारो, वणस्सतीकायपुन्दरीएण ॥ नावमि य समणेण, अज्झयणे पुन्दरीए य " ॥१६॥ (एढपुणेत्यादि) अत्र पुनर्दृष्टांतप्रस्तावे ऽधिकारोव्यापार सचित्ततिर्यग्योनिकैकेंद्रियवनस्पतिकायद्रव्यपौंडरीकेन जलरुहेणवा औदयिकनाववर्तिना वनस्पतिकायपौंडरीकेण सितशतपत्रेण तथा नावे श्रमणेन सम्यग्दर्शनचारित्रविनयाध्यात्ममूर्तिना सत्साधुनाऽस्मिन्नध्ययने पौंडरीकाख्ये ऽधिकारइति । गता निक्षेपनिर्युक्तिरधुनासूत्रस्पर्शितकनिर्युक्तेरवसर । साच सूत्रे सति नवति । सूत्रच सूत्रानुगमे सचावसरप्राप्तोऽतोऽस्खलितादिगुणोपेतं सूत्रमुच्चारयितव्य । तच्चेद । (सुयमेआउसतेणमित्यादि) अस्य चानतर सह सूत्रेण सबधोवाच्य । सचाय । (सेएवमेव जाणह जमह नयतारोत्ति) तमेव देव जानीत नयस्य त्रातार । तद्यथा । श्रुतं मयाऽऽयुष्मता नवतैवमाख्यातमादिसूत्रेण च सह सबधोय । तद्यथा । यद्भगवताख्यात मया च श्रुत तद्बुध्येतेत्यादि । किं तद्भगवताख्यातमित्याह् । इह प्रवचने सूत्रकृत् द्वितीयश्रुतस्कधे वा । खलुशब्दो वाक्यालकारे । पौंडरीकाभिधानमध्ययन पौंडरीकेण सितशतपत्रेणात्रोपमा नविष्यतीति कृत्वाऽतोस्याध्ययनस्यपौंडरीकमिति नाम कृतं तस्य चायमर्थ । णमिति वाक्यालकारे । प्रज्ञस प्ररूपित ॥१॥ (सेजहत्ति) तद्यथार्थे सच वाक्योपन्यासार्थ । नामशब्द सनावनायां । सनाव्यते पुष्करिणी दृष्टांत । पुष्कराणि पद्मानि तानि विद्यते यस्यामसौ पुष्करिणी स्याद्भवेदेवन्नूता । तद्यथा बहुप्रचुरमगाधमुदक यस्या सा बहूदका बहूदकप्रचुरा

एस पुरिसे मन्ने॥ ७॥ अहमसि पुरिसे खेयन्ने कुसले पभिए वियत्ते मेहावी अबाले मग्गडे मग्गविऊ मग्गस्सगतिपरक्कमण्णू अहमेय पउमवरपोमरीयं उन्निक्खिस्सामित्ति कट्टु इति वच्चा से पुरिसे अभिक्कमे त पुक्करिणिं जावजावचण अभिक्कमेइ तावतावचण महते उदए महते सेए पहीणे तीर अपत्ते पउमवरपोमरीय णोहव्वाए णोपाराए अ तरा पोक्करिणीए सेयसि णिसन्ने दोच्चे पुरिसजाते अहावरे तच्चे पुरिस जाते अह पुरिसे पच्छिमाउ दिसाउ आगम्म त पुक्करिणिं तीसे पुक्करिणी ए तीरे ठिच्चा पासति त एग मह पउमवरपोमरीय अणुपुव्वुठिय जाव प डिरूव ते तछ दोन्नि पुरिसजाते पासति पहीणे तीर अपत्ते पउमवरपो मरीय णोहव्वाए णोपाराए जाव सेयसि णिसन्ने तएणसे पुरिसे एव वया सी अहो ण इमे पुरिसा अखेयन्ना अकुसला अपभिया अवियत्ता अ मेहावी बाला णोमग्गडा णोमग्गविऊ णोमग्गस्सगतिपरक्कमण्णू जन्न एते पुरिसा एव मन्ने अम्हे त पउमवरपोमरीय उणिक्खिस्सामो नोय खलु एय पउमवरपोमरीय एव उन्निक्खेतव्व जहाण एए पुरिसा मन्ने अह मसि पुरिसे खेयन्ने कुसले पभिए वियत्ते मेहावी अबाले मग्गडे मग्ग विऊ मग्गस्सगतिपरक्कमण्णू अहमेय पउमवरपोमरीय उन्निक्खिस्सामित्ति कट्टु इतिवच्चा सेपुरिसे अभिक्कमे त पुक्करिणिं जाव जावचण अभिक्कमे तावतावचण महते उदए महते सेए जावअतरा पोक्करिणीए सेयसि णि सन्ने तच्चे पुरिसजाए॥ ८॥ अहावरे चउत्थे पुरिसजाए अह पुरिसे उत्त राउ दिसाउ आगम्म त पुक्करिणिं तीसे पुक्करिणीए तीरे ठिच्चा पासति त मह एग पउमवरपोमरीय अणुपुव्वुठिय जावपडिरूव ते तछ तिन्नि पुरिस जाते पासति पहीणे तीर अपत्ते जाव सेयसि णिसन्ने तएण से पुरिसे ए व वयासी अहो ण इमे पुरिसा अखेयन्ना जावणोमग्गस्सगतिपरिक्कम ण्णू जन्न एते पुरिसा एव मन्ने अम्हे त पउमवरपोमरीय उन्निक्खिस्सामि

रे ॥ ५ ॥ अथानंतरमेवंभूतपुष्करिण्याः पूर्वस्यादिशः कश्चिदेकः पुरुषः समागत्य तां पुष्करिणीं तस्याश्च तीरे तटे स्थित्वा तदेतत्पद्मप्रासादादिप्रतिरूपांतविशेषणकलापोपेतं स पुरुषः पूर्वदिग्भागव्यवस्थितएवमिति वक्ष्यमाणनीत्या वदेत् ब्रूयात् । (अहमंसेत्ति) अहमस्मि पुरुषः । किंभूतः कुशलोहिताहितप्रवृत्तिनिपुणस्तथा पापाद्धीनः पंडितोधर्मज्ञो देशकालज्ञः क्षेत्रज्ञोव्यक्तोबालभावान्निष्क्रांतः परिणतबुद्धिमेधावी प्लवनोत्प्लवनयोरुपायज्ञस्तथा बालोमध्यमवयाः षोडशवर्षोपरिवर्ती मार्गस्थः सद्भिराचीर्णमार्गव्यवस्थितस्तथा सन्मार्गज्ञस्तथा मार्गस्य या गतिर्गमनं वर्तते तथा यत्पराक्रमणं विवक्षितदेशगमनं तज्जानातीति पराक्रमज्ञः । यदिवा पराक्रमः सामर्थ्यं तज्ज्ञोहमात्मज्ञइत्यर्थः । तदेवंभूतविशेषणकलापोपेतोऽहमेतत्पूर्वोक्तविशेषणकलापोपेतं पद्मवरपौंडरीकं पुष्करिणीमध्यदेशावस्थितमहमुत्क्षेप्स्यामीति कृत्वेहागतइत्येतत्पूर्वोक्तं तत्प्रीत्योक्त्वाऽसौपुरुषस्तां पुपुष्करिणीमभिमुखं क्रामेत् अभिमुखं गच्छेद्यावद्यावच्चासौ तदवतरणाभिप्रायेणाभिमुखं क्रामेत्तावत्तावच्च । णमिति वाक्यालंकारे । तस्याश्च पुष्करिण्यामहदगाधमुदकं तथा महांश्च सेयः कर्दमस्ततोऽसौ महाकर्दमोदकाभ्यामाकुलीभूतः प्रहीणस्तद्विवेकेन रहितस्त्यक्त्वा तीरं सुब्व्यत्ययाद्वा तीरात्प्रहीणः प्रभ्रष्टोऽप्राप्तश्च विवक्षितं पद्मवरपौंडरीकं तस्याः पुष्करिण्यास्तस्या वा यः सेयः कर्दमस्तस्मिन्निषण्णोनिमग्नआत्मानमुद्धर्तुमसमर्थस्तस्माच्च तीरादपि प्रभ्रष्टस्ततस्तीरपद्मयोरंतरालएवावतिष्ठते । यतएवमतः (नोहव्वाएत्ति) नार्वाक्तटवर्त्यसौ भवति (नोपाराएत्ति) नापि विवक्षितप्रदेशप्राप्त्या पारगमनाय समर्थोभवति । एवमसावुभयभ्रष्टोमुक्तमुक्तोभीवदनर्थायैव प्रभवतीत्ययं प्रथमः पुरुषएव पुरुषजातः पुरुषजातीयइति ॥ ६ ॥

अहावरे दोच्चे पुरिसजाए अह पुरिसे दक्खिणाउ दिसाउ आगम्म तं पुक्खरिणिं तीसे पुक्खरिणीए तीरे ठिच्चा पासति तं महं एगं पउमवरपोंमरीयं अणुपुव्वुठियं पासादीयं जाव पडिरूवं तच एछ एगं पुरिसजातं पासति तं पहीणे तीरं अपत्ते पउमवरपोंमरीयं णोहव्वाए णोपाराए अंतरा पोक्खरिणीए सेयंसि णिसन्ने तएणं से पुरिसे तं पुरिसं एवं वयासी अहो णं इमे पुरिसे अखेयन्ने अकुसले अपंमिए अवियत्ते अमेहावी बाले णोमग्गठे णोमग्गविऊ णोमग्गस्सगतिपरक्कमण्णू जन्नं एस पुरिसे अहखेयन्ने अहकुसले जाव पउमवरपोंमरीयं उन्निक्खिस्सामि णो खलु एयं पउमवरपोंमरीयं एवं उन्निक्खेयव्वं जहा णं

के०) ते पुरुष (अनिक्कमेतंपुक्करिणिके०) ते पुष्करणीमां चाल्यो (जावजावचणंअ निक्कमेइके०) जेम जेम ते कमल सामो आवीने माहे प्रवेश कस्यो (तावतावचण के०) तेमतेम (महंतेउदएके०) अगापाणी माहे (महंतेसेएके०) महोटा कादवमा हे खूतो (पहीणेतीरके०) वाव्यनातीर थकी पण भ्रष्ट थयो (अपत्तेपउमवरपोंमरीय के०) अने प्रधान पुंमरीक कमलने पण अण पाम्यो (णोहव्वाएके०) एक कांगा थकी भ्रष्ट (णोपाराएके०) अने बीजा कांगने पण नपाम्यो तथा कमल पण उद्धरी नशक्यो (अंतरापोरकरिणीएके०) पुष्करणीने विचाले ज (सेयसिके०) कादव माहे (णिसन्ने के०) खूची रह्यो (दोच्चेपुरिसजातेके०) एटले बीजो पुरुष जात कह्यो ॥ अथ हवे ए बीजो पुरुष कह्यानंतर त्रीजो पुरुष कहेछे ए त्रीजो पुरुष पश्चिमदिशा थकी आवी पुष्करणीने कांठे उनो रहीने आगला पुरुषनी पेरे समस्त वचन बोली कमल उद्धरवा ने अर्थ पुष्करणीमा प्रवेश कस्युं पण ते कमलने उद्धरी नशक्यो पोते पुष्करणीने अं तराले पाणी अने कादव माहे खूतो एटले त्रीजो पुरुष जात कह्यो॥ ८ ॥ हवे चोथो पुरुष उत्तर दिशा थकी आवीने पुष्करणीने तीरे उनो रही आगला त्रण पु रुषनी रीतेज वचन बोली तेमनी पेरेज कमल उद्धरवाने पुष्करणी माहे प्रवेश कस्यो परंतु तेपण कमल उद्धरी नशक्यो अने वाव्यने अंतराले ते त्रण पुरुषोनीपेरे कादव माहेज खूची रह्यो एटले चोथो पुरुष जात कह्यो ॥ ए ॥

॥ दीपिका–अथापरोद्वितीयः पुरुषजातः पुरुषइति । अथ कश्चित्पुरुषोदक्षिणदिग्भा गादागत्य तां पुष्करिणीं तस्याश्च तीरे स्थित्वा पश्यति पद्मं तीरस्थश्च तं पूर्वस्थितं पुरु षमेकं पश्यति । तीराद्भ्रष्टं पद्ममप्राप्तं उनयभ्रष्टं दृष्ट्वा सद्वितीयः पुरुषस्तमेवं वदेत् अहोखेदे । णं वाक्यालंकारे । योयं कर्दमे निमग्नः पुरुषः सोग्वेदज्ञोऽकुशलोऽपंडितोऽ व्यक्तोमेधावी बालोन मार्गस्थोनोमार्गज्ञानोमार्गस्य गतिपराक्रमज्ञः । यस्मादेषपुरुषः कुश लइत्युक्त्वा पद्ममुत्क्षेप्स्यामीत्येवं प्रतिज्ञां कृतवान् । नचैतत् पद्ममेवमुत्क्षेप्तव्यं यथायं पुरु षोमन्यतइति नावः । शेषं सुगमं ॥ ७ ॥ ततः (अहमसीत्यादि) अहमेवास्य पुंडरी कस्योत्क्षेपणे कुशलइतिनावः । शेषं सुगमं (अहावरेतच्चेत्ति) सुगमं । ॥ ८ ॥ (अहा वरंचउछेत्ति) सुगमं ॥ ए ॥

॥ टीका–अथ प्रथमपुरुषादनंतरमपरोद्वितीयः पुरुषजातः पुरुषइति । अथेति वा क्योपन्यासार्थे । अथ कश्चित्पुरुषोदक्षिणदिग्भागादागत्य तां पुष्करिणीं तस्याश्च पुष्करि ण्यास्तीरे स्थित्वा तत्रस्थश्च पश्यति । महदेकं पद्मवरपौंडरीकमानुपूर्व्येण व्यवस्थितं प्रा सादीयं यावत्प्रतिरूपमत्र चास्मिंश्च प्रतीते तीरे व्यवस्थितस्तच पूर्वस्मिन्व्यवस्थितमेकं पुरुषं

णो खलु एय पउमवरपोंमरीयं एव उन्निक्खेयव्व जहाण एते पुरिसा मन्ने अहम सि पुरिसे खेयन्ने जाव मग्गस्सगतिपरक्कमण्णू अहमेय पउमवरपोंमरीय उन्नि क्खिस्सामित्ति कट्टु इतिवच्चा से पुरिसे त पुक्खरिणि जावजावचण अभिक्कमे ताव तावचण महते उदए महते सेए जाव णिसन्ने चउत्थे पुरिसजाए ॥ ए ॥

अर्थ- (अहावरे के०) अथ हवे प्रथम पुरुष अनततर (दोच्चेपुरिसजाए के०) बीजो पुरुष जात कहेठे (अहपुरिसेके०) अथ हवे ए बीजो पुरुष (दक्खिणाउदिसाउ आगम्म के०) दक्षिण दिशा थकीआव्यो (तंपुक्खरिणिके०) ते पुष्करणीने विषे (ती सेपुक्खरिणीएतीरेठिच्चा के०) ते पुष्करणीने कांठे उनो रहीने (तंमहएगपउमवरपोंमरी यके०) ते महोटो प्रधान पोंमरीक कमलने (पासति के०) दीठो ते कमल केवोठे लो के अणुपुव्वुठिय पासादीय जावपडिरूव) इत्यादिक पूर्ववत् शोनाये करी सहित ठे (तंच के०) त्या ते पुरुषे (एडके०) अहीया (एगपुरिसजातपासतिके०) एक पुरुष जा त दीठो (तपहीणेतीरेके०) ते पुरुष वावडीना कांठाथी च्रष्ट (पउमवरपोंमरीयंके०) प्रधान पुमरीक कमलने (अपत्तेके०) अण पाम्यो थको (णोहव्वाएके०) वावडीनो बीजो कांठो अणपाम्यो (णोपाराएके०) कमल उद्धरवाने पण असमर्थ (अतरापोक्ख रिणीएके०) पुष्करणीने विचाले (सेयसिके०) कादवमाहे (णिसन्नेके०) खुतोठे (तए णसेपुरिसेके०) तेवार पठी ते पुरुष (तपुरिसके०) ते कादवमा खुचेला पुरुष प्रत्ये (ए ववयासीके०) एम कहेवा लागो के (अहोणइमेपुरिसेके०) अहो हे पुरुष अखेयन्ने अकुसले अपमिए अवियत्ते अमेहावी बाले णोमग्गन्ने णोमग्गविऊ णोमग्गस्स गति परक्कमण्णू ए नव पदनु अर्थ सुलनठे (जन्नएसपुरिसेके०) जे कारणे ए पुरुष पोला ना आत्माने (अहखेयन्नेके०) हु खेदज्ञु (अहकुसलेके०) हुकुसलठु (जावपउम वरपोमरीयउन्निक्खिस्सामिके०) इत्यादिक जाणतो यावत् प्रधान पुमरीक कमल हु उ द्धरीश एवा नावे अही आव्यो परतु (णोखलुएयंपउमवरपोंमरीय के०) निश्चे थकी पु मरीक कमल उद्धरी शक्यो नथी अने कादवमाज खूतोठे (एवउन्निक्खेयव्व जहाणएसपुरि सेमन्नेके०) जेम तेपुरुष पोताने महोटो माह्यो मानीने कमल उद्धरवा गयो तेज विधिये ए बीजो पुरुष पण पोताने माने ॥३॥ (अहमसिपुरिसेके०) हु पुरुष खेयन्ने कुसले पंमिए वियत्ते मेहावी अबाले मग्गन्ने मग्गविऊ मग्गस्सगतिपरिक्कमण्णू इत्यादिक पोतामा मा ह्या पणो मानतो (अहमेयंके०) हु ए (पउमवरपोंमरीयउन्निक्खिस्सामित्तिके०) प्रधान पु मरीक कमलने उद्धरीश (कट्टुके०) एमकरी (इतिवच्चा के०) एवु कहीने (सेपुरिसे

के०) ते पुरुष (अनिक्कमेतपुक्करिणिके०) ते पुष्करणीमां चाल्यो (जावजावचणञ्च निक्कमेइके०) जेम जेम ते कमल सामो आवीने माहे प्रवेश कस्यो (तावतावचण के०) तेमतेम (महतेउदएके०) उंडापाणी माहे (महतेसेएके०) महोटा कादवमा हे खूतो (पहीणेतीरके०) वाव्यनातीर थकी पण ज्रष्ट थयो (अपत्तेपउमवरपोमरीय के०) अने प्रधान पुमरीक कमलने पण अण पाम्यो (णोहव्वाएके०) एक कांग थकी ज्रष्ट (णोपाराएके०) अने बीजा कांगने पण नपाम्यो तथा कमल पण उद्धरी नशक्यो (अंतरापोक्करिणीएके०) पुष्करणीने विचाले ज (सेयसिके०) कादव माहे (णिसन्ने के०) खूची रह्यो (दोच्चेपुरिसजातेके०) एटले बीजो पुरुष जात कह्यो ॥ अथ हवे ए बीजो पुरुष कह्यानंतर त्रीजो पुरुष कहेछे ए त्रीजो पुरुष पश्चिमदिशा थकी आवी पुष्करणीने कांठे उनो रहीने आगला पुरुषनी पेरे समस्त वचन बोली कमल उद्धरवा ने अथ पुष्करणीमां प्रवेश कस्यु पण ते कमलने उद्धरी नशक्यो पोते पुष्करणीने अं तराले पाणी अने कादव माहे खूतो एटले त्रीजो पुरुष जात कह्यो॥ ७ ॥ हवे चोथो पुरुष उत्तर दिशा थकी आवीने पुष्करणीने तीरे उनो रही आगला त्रण पु रुषनी रीतेज वचन बोली तेमनी पेरेज कमल उद्धरवाने पुष्करणी माहे प्रवेश कस्यो परंतु तेपण कमल उद्धरी नशक्यो अने वाव्यने अंतराले ते त्रण पुरुषोनीपेरे कादव माहेज खूची रह्यो एटले चोथो पुरुष जात कह्यो ॥ ए ॥

॥ दीपिका—अथापरोद्वितीयः पुरुषजातः पुरुषइति । अथ कश्चित्पुरुषोदक्षिणदिग्भा गादागत्य तां पुष्करिणीं तस्याश्च तीरे स्थित्वा पश्यति पद्मं तीरस्थश्च तं पूर्वस्थितं पुरु षमेकं पश्यति । तीराद्भ्रष्टं पद्ममप्राप्तं उभयभ्रष्टं दृष्ट्वा सद्वितीयः पुरुषस्तमेवं वदेत् अहोखेदे । ण वाक्यालंकारे । योयं कर्दमे निमग्नः पुरुषः सोखेदज्ञोऽकुशलोऽपंडितोऽ व्यक्तोमेधावी बालोन मार्गस्थोनोमार्गज्ञोनोमार्गस्य गतिपराक्रमज्ञः । यस्मादयंपुरुषः कुश लइत्युक्त्वा पद्ममुत्क्षेप्स्यामीत्येव प्रतिज्ञां कृतवान् । नचैतत् पद्ममेवमुत्क्षेप्तव्यं यथायं पुरु षोमन्यतइति भावः । शेषं सुगमं ॥ ७ ॥ ततः (अहमसीत्यादि) अहमेवास्य पुंडरी कस्योत्क्षेपणे कुशलइतिभावः । शेषं सुगमं (अहावरेतच्चेत्ति) सुगमं । ॥ ७ ॥ (अहा वरेचउत्थेत्ति) सुगमं ॥ ए ॥

॥ टीका—अथ प्रथमपुरुषादनंतरमपरोद्वितीयः पुरुषजातः पुरुषइति । अथयेति वा क्योपन्यासार्थे । अथ कश्चित्पुरुषोदक्षिणदिग्भागादागत्य तां पुष्करिणीं तस्याश्च पुष्करि ण्यास्तीरे स्थित्वा तत्रस्थ एव पश्यति । महदेकं पद्मवरपौंडरीकमानुपूर्व्येण व्यवस्थितं प्रा सादीयं यावत्प्रतिरूपमत्र चास्मिंश्च प्रतीते तीरे व्यवस्थितस्तत्र पूर्वव्यवस्थितमेकं पुरुषं

णो खलु एय पउमवरपोंमरीयं एवं उन्निक्खेयव जहा ण एते पुरिसा मन्ने अहमं सि पुरिसे खेयन्ने जाव मग्गस्सगतिपरक्कमण्णू अहमेय पउमवरपोंमरीय उन्नि क्खिस्सामित्ति कट्टु इतिवच्चा से पुरिसे त पुक्खरिणि जावजावचणं अन्निक्कमे ताव तावचणं महंते उदए महंते सेए जाव णिसन्ने चउछे पुरिसजाए ॥ ए ॥

अर्थ– (अहावरे के०) अथ हवे प्रथम पुरुष अनंतर (दोच्चेपुरिसजाए के०) बीजो पुरुष जात कहेछे (अहपुरिसेके०) अथ हवे ए बीजो पुरुष (दक्खिणाउदिसाउ आगम्म के०) दक्षिण दिशा थकीआव्यो (तंपुक्खरिणिके०) ते पुष्करणीने विषे (ती सेपुक्खरिणीएतीरेठिच्चा के०) ते पुष्करणीने कांठे उनो रहीने (तंमहएगपउमवरपोंमरी यंके०) ते महोटो प्रधान पोंमरीक कमलने (पासति के०) दीठो ते कमल केवोछे तो के अणुपुव्वुठिय पासादीयं जावपडिरूव) इत्यादिक पूर्ववत् शोनाये करी सहित छे (तंच के०) त्यां ते पुरुषे (एबके०) अहीयां (एगपुरिसजातपासतिके०) एक पुरुष जा त दीठो (तपहीणेतीरेके०) ते पुरुष वावडीना कांठाथी च्रष्ट (पउमवरपोंमरीयंके०) प्रधान पुंमरीक कमलने (अपत्तेके०) अण पाम्यो थको (णोहव्वाएके०) वावडीनो बीजो कांठो अणपाम्यो (णोपाराएके०) कमल उद्धरवाने पण असमर्थ (अंतरापोक्ख रिणीएके०) पुष्करणीने विचाले (सेयसिके०) कादवमांहे (णिसन्नेके०) खुतोछे (तए णसेपुरिसेके०) तेवार पछी ते पुरुष (तपुरिसके०) ते कादवमा खुचेला पुरुष प्रत्ये (ए ववयासीके०) एम कहेवा लागो के (अहोणइमेपुरिसेके०) अहो हे पुरुष अखेयन्ने अकुसले अपमिए अवियत्ते अमेहावी बाले णोमग्गछे णोमग्गविक णोमग्गस्स गति परक्कमण्णू ए नव पदनु अर्थ सुगमछे (जन्नएसपुरिसेके०) जे कारणे ए पुरुष पोता ना आत्माने (अहखेयन्नेके०) हुं खेदज्ञछुं (अहकुसलेके०) हुंकुसलछुं (जावपउम वरपोंमरीयउन्निक्खिस्सामिके०) इत्यादिक जाणतो यावत् प्रधान पुंमरीक कमल हुं उ द्धरीश एवा नावे अहीं आव्यो परंतु (णोखलुएयपउमवरपोंमरीयं के०) निश्चे थकी पुं मरीक कमल उद्धरी शक्यो नथी अने कादवमाज खूतोछे (एवउन्निक्खेयव जहाणएसपुरि सेमन्नेके०) जेम तेपुरुष पोताने महोटो माह्यो मानीने कमल उद्धरवा गयो तेज विधिये ए बीजो पुरुष पण पोताने माने ॥७॥ (अहमसिपुरिसेके०) हुं पुरुष खेयन्ने कुसले पमिए वियत्ते मेहावी अबाले मग्गछे मग्गविक मग्गस्सगतिपरिक्कमण्णू इत्यादिक पोतामा मा ह्या पणो मानतो (अहमेयंके०) हुं ए (पउमवरपोंमरीयउन्निक्खिस्सामित्तिके०) प्रधान पुं मरीक कमलने उद्धरीश (कट्टुके०) एमकरी (इतिवच्चा के०) एवुं कहीने (सेपुरिसे

मतेत्ता एव वयासी ह नोसमणाउसो ते आइक्कामि विन्नावेमि किट्टेमि पवेदेमि सअठ सहेउ सनिमित्त भुज्जोभुज्जो उवदसेमि सेवेमि ॥ ११ ॥

अर्थ–(अहके०) हवे चोथा पुरुष नतर पाचमो पुरुष कहेछे ते केवोछे तोके (निरकू के०) भिक्षुण शील पचन पाचनादिक सावद्यानुष्ठान रहित निर्दोष आहार नो ली (लूहे के०) राग द्वेष रहित (तीरठी के०) ससार समुद्रना तीरनो अर्थी (खेयन्ने के०) खेदज्ञ एटले समस्त जीवोना खेदनो जाण (जावपरक्कमस्सू के०) यावत् मार्गेनी गतिना पराक्रमनु जाण अहीबीजो आगलनो वर्णन सर्व करवो एवो जाण पुरुषते (अन्नतराउदिसाउवाअणुदिसाउवा के०) अन्य कोइएक दिशा थकी अथवा विदिशा थकी (आगम्म के०) आवीने (तपुरकरिणि के०) ते पुष्करणी (तीसेपुरकरिणीएतीरेठिच्चा के०) ते पुष्करणीने काठे रहीने (तएगमहतपउमवरपोमरीयके०) ते एक महोटु प्रधान पुमरीक कमलने (पासति के०) दीठो (जावपडिरूव के०) ते कमल ज्यालगे प्रतिरूप सुधी पूव वर्णन करेलुछे तेवो कमल दीठो (तेतछचत्तारिपुरिसजाएपासति के०) तेणे त्या चार पुरुषजात पूर्वोक्त चारदिशाना आवेला दीठा ते चारे पुरुष (पहीणेतीर के०) वाव्यना तीर थकी भ्रष्ट अन (अपत्तेजावपउमवरपोमरीयंणो हव्वाएणोपाराए के०) पुमरीक कमलने पण यावत् नथी पाम्या (अतरापुरकरिणीएके०) वाव्यने विचाले (सेयसि के०) कादव माहे (णिसन्ने के०) खुताछे तेने देखीने (तएणसे निरकू के०) तेवार पछी ते भिक्षु साधु (तं के०) ते चार पुरुषोने (एववयासि के०) एम बोल्यो (अहोणइमेपुरिसा के०) अहो ए पुरुष बापडा (अखेयन्ना के०) अखेदज्ञ (जावणोमग्गस्सगतिपरक्कमण्णू के०) यावत् मार्गेनी गतिना पराक्रमना अजाण (जन्नएतेपुरिसाके०) जेम ए पुरुष (एवमन्नेके०) एम जाणे जे (अम्हेतंपउमवरपोमरीयउन्निकिस्सामो के०) अमे ए कमल उद्धरी सु तेवा निश्चये उद्धरवाने अर्थ गया परतु (णोखलु के०) निश्चे थकी नहील (एयपउमवरपामरीयके०) ए पोमरीक कमलने (एयउन्निरकेतव के०) एम उद्धरी शके नही (जहाणएतेपुरिसामन्ने के०) जेम ए चार पुरुष जाणेछे ते विचिये कमल उद्धरी शकाय नही (अहमसिनिरकुलूहे के०) जेमाटे हु साधु राग द्वेष रहित (तीरठी के०) ससारना तीरनो अर्थी (खेयन्नेके०) खेदज्ञ (जावमग्गस्सगतिपरक्कमण्णूके०) यावत् मार्गेनी गतिना पराक्रमनु जाण (अहमेपउमवरपोमरीयउन्निकिस्सामित्ति के०) हु ए पुमरीक कमल निश्चे थकी उद्धरीश (कट्टु के०) एम करीने (इतिवच्चा के०) एवु वचन कहीने (सेनिरकु के०) तेसाधु (णाअभिक्कमे तं पुरक

पश्यति। किंनूत । तीरात्परिभ्रष्टमनवाप्तपद्मवरपौंडरीकमुत्तयभ्रष्टमतरालएवावसीदंतं च दृष्ट्वा तमेवमवस्थ पुरुप ततोसौ द्वितीय पुरुपस्तं प्राक्तन पुरुपमेव वदेत् ॥ अहोइति खेदे। सर्वत्र णमिति वाक्यालंकारे। इत्यव्योयोय कर्दमे निमग्न पुरुप सोखेदज्ञोऽकुशलोऽ पंडितोव्यक्तोमेधावी बालोनमार्गस्थोनोमार्गज्ञोनोमार्गस्य गतिपराक्रमज्ञ । अकुशलत्वा दिके कारणमाह् । यद्यस्मादेपपुरुषएतत्कृतवान् । यदाह खेदज्ञ कुशलइत्यादि नणित्वा पद्मवरपौंडरीकमुत्क्षेप्स्यामीत्येव प्रतिज्ञातवान् । नचैतत्पद्मवरपौंडरीकमेवमनेन प्रकारेण यथाऽनेनोत्क्षेप्तुमारब्ध नेवमुन्क्षेप्तव्य यथाय पुरुपोमन्यतइति ॥७॥ ततोह्मेवा स्योत्क्षेप णे कुशलइति दर्शयितुमाह् । (अहमसीत्यादि) जावदोच्चेपुरिसाजाएत्ति। सुगम ॥ ८ ॥ तृतीय पुरुपमधिकृत्याह् । (अहावरेतच्चेइत्यादि) सुगम यावच्चतुर्थ पुरुप जातइति ॥ ९ ॥

अह भिक्खू लूहे तीरठी खेयन्ने जाव परक्कमस्स अन्नतराउ दिसाउ वा अणुदिसाउ वा आगम्म त पुक्करिणि तीसे पुक्करिणीए तीरे ठिच्चा पासति त एग महत पउमवरपोंमरीय जावपडिरूव ते तउ चत्तारि पुरिसजाए पासति पहीणे तीर अपत्ते जाव पउमवर पोंमरीय णोहव्वाए णोपाराए अतरापुक्करिणीए सेयसि णिसन्ने तएणं से भिक्खू त एव वयासी अहो ण इमे पुरिसा अखेयन्ना जाव णो मग्गस्स गति परक्कमस्स जन्न एते पुरिसा एव मन्ने अम्हे त पउमवरपोंमरीय उन्निक्खिस्सामो णो खलु एय पउमवपोंमरीय एय उन्निखेतव्व जहा ण एते पुरिसा मन्ने अहमसि भिक्खू लूहे तीरठी खेयन्ने जाव मग्गस्स गतिपरक्कमस्स अहमेय पउमवरपोंमरीयं उन्निक्खिस्सामित्ति कट्टु इतिवच्चा से भिक्खू णो अभिक्कमे त पुक्करिणिं तीसे पुक्करिणीए तीरे ठिच्चा सद्दं कुज्जा उप्पयाहि खलु भो पउमवरपोंमरीया उप्पयाहि अहसे उप्पति ते पउमवरपोंमरीए ॥ १० ॥ किट्टिए नाए समणाउसो अट्ठे पुण से जाणितव्वे भवति भंतेति समण भगव महावीर वदंवे निग्गथाय निग्गथीउय वदति नमसति वदेत्ता नमसित्ता एव वयासि किट्टिए नाए समणाउसो अट्ठ पुण से ण जाणामो स मणाउसोत्ति समणे भगव महावीरे तेय वदंवे निग्गथेय निग्गथीउय आ

तिपराक्रमज्ञोऽहमेवैतत्पुंडरीकमुत्खनिष्यामीत्युक्त्वा सनिक्षुर्नातिक्रामेत्तां पुष्करिणीं न प्रविशेत्तस्यास्तीरे स्थित्वा तटस्थएव शब्दंकुर्यात् । तद्यथा । उत्पत हेपुंडरीक उत्पत इति शब्दश्रवणात्तदुत्पतितं पुंडरीकं ॥ १० ॥ दार्ष्टांतिकं योजयन् श्रीवीर शिष्यानाह । कीर्तिते कथिते ज्ञाते दृष्टांते हेश्रमणाआयुष्मतोऽर्थं पुनरस्य ज्ञातव्योनवति जत्र ज्ञि । एवमुक्ते नगवता बहवोनिर्ग्रथानिर्ग्रथ्यश्र श्रमणं नगवंतं महावीरं वदंति कायेन नमस्यति शब्दें स्तुवति । वदित्वा नमस्कृत्वाच एवं वदेयु । तद्यथा । कीर्तितं ज्ञातमुदाहरणं नगवता । अर्थं पुनरस्य न जानीमस्ति पृष्टोनगवान् तान् बहून्निर्ग्रथादीनेव वदेत् । हंतेति आमंत्रणे । हेश्रमणाआयुष्मतोयन्नवन्निरहं पृष्टस्तदाख्यामि आविर्नावयामि प्रकटयामि कीर्तयामि पर्यायैं प्रवेदयामि हेतुदृष्टांतै । एकार्थिकान्येव वा एतानि कथमाख्यामीत्याह । सार्थं सहेतुरन्वयव्यतिरेकरूपं कारणं कार्यसाधनं तेन युतं नूयोनूयउपदर्शयामि ॥ ११ ॥

॥ टीका–सांप्रतमपरं पंचमं तद्विलक्षणं पुरुपजातमधिकृत्याह । (अहनिरकूजूहे इत्यादि) अथेत्यानंतर्यें । चतुर्थपुरुपादयमनंतरं पुरुपस्तस्यामूनि विशेपणानि । निक्षणशीलोनिक्षुः पचनपाचनसावद्यानुष्ठानरहिततया निर्दोपाहारनोजी तथा रूक्षोरागद्वेपरहितः । तौहि कर्मबंधहेतुतया स्निग्धौ । यथाहि स्नेहानावाद्रजोन लगति तथा रागद्वेपान्नावात्कर्मरेणुर्नलगत्यतस्तद्रहितोरूक्षऽत्युच्यते । तथा संसारसागरस्य तीरार्थी तथा क्षेत्रज्ञः खेदज्ञोवा । पूर्वं व्याख्यातान्येव विशेपणानि । यावन्मार्गस्य गतिपराक्रमज्ञः सचान्यतरस्यादिशोनुदिशोवाऽऽगत्य तां पुष्करिणीं तस्याश्च तीरे स्थित्वा समंतादवलोकयेत्ता बहुमध्यदेशनागे तन्महदेकं पद्मवरपौंमरीकं पश्यति तांश्चतुर पुरुपान् पश्यति यत्र च व्यवस्थितानिति । किंनूतास्त्यक्ततीरानप्राप्तपद्मवरपुंमरीकान् पंकजलावमग्नान् पुनस्तीरमप्यागंतुमसमर्थान् दृष्ट्वाच तांस्तदवस्थान् ततोसौ निक्षुरेवमिति वक्ष्यमाणं नीत्या वदेत् । तद्यथा । अहोइति खेदे णमितिवाक्यालंकारे । इमे पुरुपाश्चत्वारोपि अखेदज्ञायावन्नोमार्गस्य गतिपराक्रमज्ञायस्मात्ते पुरुपाएव ज्ञातवंतोयथा वयं पद्मवरपौंडरीकमेवमनेन प्रकारेण यथैते मन्यते तथोत्क्षेप्तव्यं । अपि त्वहमस्मिन् निक्षुरूपोयानगतिपराक्रमज्ञएतद्गुणविशिष्टोऽहमेतत्पौंडरीकमुत्क्षेप्स्यामि उत्खनिष्यामि समुद्धरिष्यामीत्येवमुक्त्वाऽसौ नातिक्रामेत् तां पुष्करिणीं न प्रविशेत् । तत्रस्थएव यत्कुर्यात्तद्दर्शयति । तस्यास्तीरे स्थित्वा तथाविधं शब्दं कुर्यात्तद्यथा ऊर्ध्वमुत्पतोत्पत । खलुशब्दोवाक्यालंकारे । हे पद्मवरपौंडरीक तस्या पुष्करिण्यामध्यदेशात्त्वमुत्पतोत्पत । अथ तच्छब्दश्रवणानंतरं तदुत्पतितमिति ॥ १० ॥ तदेव दृष्टांतं प्रदर्श्य दार्ष्टांतिकं दर्शयितुकाम श्रीमन्म

रिणि के०) ते पुष्करणी माहे पेगो नहीं (तीसेपुक्करिणीएतीरेठिच्चा के०) ते पु ष्करणीने काठे रहीनेज (सद्दकुज्जा के०) शब्द करेछे (उप्पयाहिखलुनोपउमव पोमरीयाउप्पयाहि के०) अहोपुन्हरीक कमल ए पुष्करणी मांहेथी उपडीने बाहेर आव वाहेर आव एम बे चार कह्यो (अहसेउप्पतितेपउमवरपोमरीएके०) हवे ते पुन्हरीक कम ल त्याथी उपड्यो ॥१०॥ (किट्टिए के०) हवे ए दृष्टात देखाडीने (नाएसमणाउसोके०) श्रीमहावीर देव शिष्य आगले अतर नाव मेलवेछे के अहो आयुष्मत श्रमण महात्मा उ तमने ए दृष्टात कह्यो तेना (अठे के०) अर्थने (पुण के०) वली (से के०) ते (जाणितव्वे नवति के०) जाणोवो एम कहे थके तेवारे (नतेति के०) हे नगवान् एवो शब्द कहीने (समणनगवमहावीर के०) तपस्वी नगवत श्रीमहावीरदेवने (बह वेनिग्गथाय के०) घणानिर्ग्रंथ (निग्गथीउयवदति के०) घणी साधवी ते श्रीमहावीर देवने वादे (नमसति के०) नमस्कार करे (वदेत्ता के०) वदना करीने (नमसित्ता के०) नमस्कार करीने (एववयासि के०) एम बोल्या (किट्टिएनाएसमणाउसो के०) के हे नगवत श्रमणआयुष्मत तमे जे दृष्टात कह्यो तेना (अठ के०) अर्थने (पुण के०) वली (से के०) ते (णजाणामो के०) अमे नथी जाणता तेवारे श्रीमहावीर देव (समणाउसोत्ति के०) हे श्रमणो आयुष्मत साधुउ एवो शब्द कहीने (समणेन गवमहावीरे के०) श्रमण नगवत श्रीमहावीर देव (तेयबहवेनिग्गथेय के०) ते घणा निग्रथ (निग्गथीउय के०) घणी साधवीने (आमत्तेता के०) आमत्रण करीने (एवव यासी के०) एम कहेछे (हनोसमणाउसोते के०) अहो साधुउ तमे पुछ्यो ते (आइ क्खामि के०) हु तमने कहुछु (विनावेमि के०) प्रगटार्थे कहुछु (किट्टेमि के०) तेना प र्याय कहुछु (पवेदेमिके०) हेतु दृष्टाते करी तमारे चित्तने सुगम थाय तेम कहुछु (सअठ के०) अर्थ सहित (सहेउके०) हेतुये सहित (सनिमित्तके०) कारण सहित (नुज्जोनुज्जो के०) वली वली (उवदसेमिके०) देखाडीश (सेबेमिके०) ए हु कहुछुते तमे सानलो॥११॥

॥ दीपिका–अथ पचम पुरुपमाश्रित्याह । अथ निक्षुर्निर्दोषाहारनोजी रूक्षोरागद्वे परहितस्तीरार्थी ससाराब्धितीरानिलापी । खेदज्ञइत्यादिविशेपणानि पूर्व व्याख्यातानि । यावन्मार्गस्य गतिपराक्रमज्ञ सचान्यतरस्यादिशोवा आगत्य ता पुष्करिणी तस्याश्च तीरे स्थित्वा तन्मध्येक पद्मवरपौंडरीक पश्यति ताश्चतुर पुरुषान्पश्यति पकनीरमग्नान् । दृ ष्ट्वा च सनिक्षुरेव वदेत् अहो इमे चत्वारोपि पुरुपाअक्षेत्रज्ञाअकुशलान मार्गस्य गतिप राक्रमज्ञा । यस्मात्ते पुरुपाएव ज्ञातवतोयथा वय पुडरीकमुन्निक्षेप्स्यामउत्खनिष्याम । नच तत्पुडरीकमेवमुत्क्षेप्तव्य यथैते मन्यते । किंतु अहमस्मि निक्षुरूक्षोयावन्मार्गस्य ग

मे (अप्पाहट्टुकें०) पोतायकी जाणीने (समणाउसोके०) हेसाधुउ (सेउदएके०) ते पाणी (वुइएके०) कह्यो (कामभोगेयके०) कामभोगने खलुइति वाक्यालंकारे (म एके०) मे (अप्पाहट्टुके०) पोता थकी जाणीने (समणाउसोके०) हेसाधुउ (सेके०) तेने (सेएके०) कर्दम (वुइएके०) कह्यो जेकर्दममाहे खुता थका जीव पोते पोताने उध्धरी नशके अने (जणके०) सामान्यलोक ते (जाणवयचके०) जनपद एटले आर्य देशना उपना एवा अनेक लोक तेने (खलु मएके०) मे निश्चेकरी (अप्पाहट्टुके०) पोतायकीजाणीने (समणाउसोके०) हे आयुष्यमंत श्रमणो (तेवहवेके०) तेवा घणा एक (पउमवरपोंमरीएवुइए के०) पद्मकमलो कह्या तथा (रायाणचसेखलुमएअप्पा हट्टुसमणाउसोके०) राजा जे सामान्य लोकना अधिपति केवायछे तेने मे पोता थकी जाणीने हे श्रमणो (एगेमहपउमवरपोंमरीएवुइएके०) एक महोटु पुंमरीक कमल क ह्यो अने जे (अन्नउत्थियायके०) अन्यतीर्थिक क्रियावादि अक्रियावादि प्रमुख (तेके०) तेने (खलुमएअप्पा हट्टुसमणाउसो के०) मे पोता थकी जाणीने हे श्रमणो (चत्ता रिपुरिसजायावुइया के०) चार पुरुष जात कह्या तेउ राजारूपमहोटो कमल तेने उ ध्धरवाने असमर्थ कह्या अने (धम्मचखलुमएअप्पाहट्टुसमणाउसोसेभिक्खूवुइए के०) जे श्रुतचारित्ररूप धर्म तेने मे पोता थकी जाणीने हेश्रमणो भिक्षु एटले अणगार कह्यो जेमा पुंमरीक कमलरूप राजाने उध्धरवानी समर्थाइ कही (धम्मतित्थचखलुम एअप्पाहट्टुसमणाउसो सेतीरेवुइए के०) तथाजे धर्मतीर्थते निश्चे मे पोता थकी जा णीने तीर एटले कांठो कह्यो (धम्मकहचखलुमएअप्पाहट्टुसमणाउसोसेसद्देवुइएके०) तथा जेधर्म कथा ते निश्चे मे पोता थकी जाणीने हे श्रमणो तेने में शब्द कह्यो (नि व्वाणचखलुमएअप्पाहट्टुसमणाउसोसेउप्पाएवुइए के०) तथा जे मोक्षपद ते निश्चे मे पोता थकी जाणीने हे श्रमणो तेने मे कमलनो उध्धरवा कह्यो (एवमेयच के०) ए पूर्वोक्त सर्व लोकादिकपदार्थ ते खलु शब्दवाक्यालंकारेंने (मएके०) में (आप्पाहट्टु के०) आप थकी जाणीने (समणाउसो के०) हेश्रमणो आयुष्यमंतो (सेएवमेयवु इयके०) तेने पुष्करणी कमल प्रमुख एरीते मे कह्या एटले सामान्य प्रकार दृष्टांत क ह्यो हवे विशेष थकी राजा उध्धरणादिकभाव कहेछे ॥ १२ ॥

॥ दीपिका—लोक मनुष्यक्षेत्र । चशब्द समुच्चये । खलुर्वाक्यालंकारे । मया (अप्पा हट्टुत्ति) आत्मनि आहृत्य व्यवस्थाप्य अथवा आत्मना स्वयमाहृत्या ज्ञात्वा न परोपद शत सा पुष्करिणी उक्ता । कर्म चाष्टप्रकार खलु मयात्मनि आहृत्य आत्मना वा आ हृत्य हेश्रमण आयुष्मन् तद्वदकमुक्त पुंडरीकात्पत्तिकारण । कामइछारूपा भोगामदन

हावीरवर्धमानस्वामी स्वशिष्यानाह । कीर्तिते कथिते प्रतिपादिते मयास्मिन् ज्ञाते उदाहरणे श्रमणाआयुष्मतोऽर्थे पुनरस्य ज्ञातव्योनवति नवद्भिरेतडुक्त नवति । नास्योदाहरणस्य परमार्थ यूय जानीथैवमुक्ते नगवता ते बहवोनिर्ग्रथानिर्ग्रथ्यश्च तं श्रमण नगवतं महावीर ते निर्ग्रथादयोवदति कायेन नमस्यति तत्प्रह्वे शब्दे स्तुवति वदित्वा चैव वक्ष्यमाण वदेयु । तद्यथा । कीर्तितं प्रतिपादितं ज्ञातमुदाहरण नगवता अर्थ पुनरस्य न सम्यक् जानीमहत्येव पृष्टोनगवान् श्रमणोमहावीरस्तान्निर्ग्रथादीनेव वदेत् । हतेति सप्रेषणे । हेश्रमणाआयुष्मतोयन्नवद्भिरह पृष्टस्तत्सोपपत्तिकमाख्यामि नवता तथा विज्ञावयाम्याविर्नावयामि प्रकटार्थ करोमि तथा कीर्तयिष्यामि पर्यायकथन द्वारेणेति । तथा प्रवेदयामि प्रकर्षेण हेतुदृष्टांतैश्चित्तसततावारोपयामि । अथ चैकार्थिकानि चैतानि कथ प्रतिपादयामीति दर्शयति । सहार्थेन दार्ष्टांतिकेन सार्थ वर्ततइति पुष्करिणीदृष्टांतस्त तथा सह हेतुना अन्वयव्यतिरेकरूपेण वर्ततइति सहेतुस्त तथानूतमार्गं प्रतिपादयिष्यामि यथा ते पुरुषाअप्राप्तप्रार्थितार्था पुष्करिणीकर्दमे डुरुत्तारे निमग्नाएव वक्ष्यमाणास्तीर्थिकाअपारगा ससारसागरस्य तत्रैव निमज्जतीत्येवरूपोर्थ सोपपत्तिक प्रदर्शयिष्यते । तथा सह निमित्तेन उपादानकारणेन सहकारिकारणेन वा वर्ततइति सनिमित्त सकारण दृष्टांतार्थ नूयोऽपरैर्हेतुदृष्टांतेरुपदर्शयामि सोह साप्रतमेव ब्रवीमि शृणुत यूयमिति ॥ ११ ॥

लोयच खलु मए अप्पाहट्टु समणाउसो पुक्करिणीबुइया कम्मच खलु मए अप्पाहट्टु समणाउसो सेउदए बुइए कामन्नोगेय खलु मए अप्पाहट्टु समणाउसो से सेए बुइए जण जाणावयच खलु मए अप्पाहट्टु समणाउसो तेबहवे पउमवरपोंमरीए बुइए रायाणच से खलु मए अप्पाहट्टु समणाउसो से एगे महपउमवरपोंमरीए बुइए अन्नउत्थियाय खलु मए अप्पाहट्टु समणाउसो ते चत्तारि पुरिसजाया बुइया धम्मच खलु मए अप्पाहट्टु समणाउसो से न्निकू बुइए धम्मतिब्रच खलु मए अप्पाहट्टु समणाउसो सेतीरे बुइए धम्मकहच खलुमए अप्पाहट्टु समणाउसो से सद्दे बुइए निवाणच खलु मए अप्पाहट्टु समणाउसो से उप्पाए बुइए एवमेयच खलु मए अप्पाहट्टु समणाउसो से एवमेय बुइय ॥ १२ ॥

अर्थ–खलु इति वाक्यालंकारे (लोयचमएके०) एलोक जे मनुष्य खेत्र ते मे (अप्पाहट्टु के०) पोता थकी जाणीने (समणाउसो के०) अहोआयुष्मत श्रमणो (पुक्करिणीबुइयाके०) पुष्करणी कही अने (कम्मचखलुमएके०) अष्ट प्रकारना कर्म ते

मे (अप्पाहट्टुके०) पोतायकी जाणीने (समणाउसोके०) हेसाधुउं (सेउदएके०) तें पाणी (वुइएके०) कह्यो (कामजोगेयके०) कामजोगने खलुइति वाक्यालंकारे (म एके०) मे (अप्पाहट्टुके०) पाता थकी जाणीने (समणाउसोके०) हेसाधुउं (सेके०) तेने (सेएके०) कर्दम (वुइएके०) कह्यो जेकर्दममाहे खुता थका जीव पोते पोताने उद्धरी नशके अने (जणके०) सामान्यलोक ते (जाणवयचके०) जनपद एटले आर्य देशना जपना एवा अनेक लोक तेने (खलु मएके०) मे निश्चेकरी (अप्पाहट्टुके०) पोतायकी जाणीने (समणाउसोके०) हे आयुष्यमत श्रमणो (तेवहवेके०) तेवा घणा एक (पउमवरपोंमरीएवुइए के०) पद्मकमलो कह्या तथा (रायाणचसेखलुमएआप्पा हट्टुसमणाउसोके०) राजा जे सामान्य लोकना अधिपति केवायछे तेने मे पोता थकी जाणीने हे श्रमणो (एगेमहपउमवरपोंमरीएवुइएके०) एक महोटु पुंमरीक कमल क ह्यो अने जे (अन्नउच्छियायके०) अन्यतीर्थिक क्रियावादि अक्रियावादि प्रमुख (तेके०) तेने (खलुमएअप्पा हट्टुसमणाउसो के०) मे पोता थकी जाणीने हे श्रमणो (चत्ता रिपुरिसजायावुइया के०) चार पुरुष जात कह्या तेउं राजारूपमहोटो कमल तेने उ द्धरवाने असमर्थ कह्या अने (धम्मचखलुमएअप्पाहट्टुसमणाउसोमेभिक्खूवुइए के०) जे श्रुतचारित्ररूप धर्म तेने मे पोता थकी जाणीने हेश्रमणो भिक्षु एटले अणगार कह्यो जेमा पुंमरीक कमलरूप राजाने उद्धरवानो समर्थाइ कह्यो (धम्मतित्थचखलुम एअप्पाहट्टुसमणाउसो सेतीरेवुइए के०) तथाजे धर्मतीर्थते निश्चे में पोता थकी जा णीने तीर एटले कांठो कह्यो (धम्मकहचखलुमएअप्पाहट्टुसमणाउसोसेसद्देवुइएके०) तथा जेधर्म कथा ते निश्चे मे पोता थकी जाणीने हे श्रमणो तेने म शब्द कह्यो (नि व्वाणचखलुमएअप्पाहट्टुसमणाउसोसेउप्पाएवुइए के०) तथा जे मोक्षपद ते निश्चे मे पोता थकी जाणीने हे श्रमणो तेने मे कमलनो उद्धरवा कह्यो (एवमेयच के०) ए पुर्वोक्त सर्व लोकादिकपदार्थ ते खलु शब्दवाक्यालंकारछे (मएके०) में (आप्पाहट्टु के०) आप थकी जाणीने (समणाउसो के०) हेश्रमणो आयुष्यमतो (सेएवमेयवु इयके०) तेने पुष्करणी कमल प्रमुख एरीते म कह्या एटले सामान्य प्रकार दृष्टांत क ह्यो हवे विशेष थकी राजा उद्धरणादिकनाव कहेछे ॥ १२ ॥

॥ दीपिका–लोक मनुष्यक्षेत्र । चशब्द समुच्चये । खलुर्वाक्यालंकारे । मया (अप्पा हट्टुत्ति) आत्मनि आहृत्य व्यवस्थाप्य अथवा आत्मना स्वयमाहृत्या ज्ञात्वा न परोपदे शत सा पुष्करिणी उक्ता । कर्म चाष्टप्रकार खलु मयात्मनि आहृत्य आत्मना वा आ हृत्य हेश्रमण आयुष्मन् तडुदकमुक्त पुंडरीकात्पत्तिकारण । कामइच्छारूपा जोगाश्मदन

व्यापारा । सकर्दम । यथा पंकेमग्नमात्मानमुद्धर्तुं ड शक्य । एवविषयेष्वपीति विषय पकयो साम्य । जन सामान्यलोक जानपदा आर्यदेशजातास्तानाश्रित्य तानिबहूनि पु डरीकाणि उक्तानि राजान चक्रवर्त्यादिकमाश्रित्य पद्मवरपुडरीकमुक्त । अन्यतीर्थिकानाश्रि त्य ते चत्वार पुरुषाउक्ता । तेषा राजपुडरीकोद्धरणे सामर्थ्यानावाद्धर्मं चाऽऽत्मन्याश्रित्य सनिक्षुरुक्त । तस्यैव राजपुडरीकोद्धरणेसमर्थत्वात् धर्मतीर्थं च खल्वाश्रित्य मया तत्ती रमुक्त धर्मदेशना चाश्रित्य मया सनिक्षो सवधी शब्दउक्त । निर्वाण मोक्षचाश्रित्य पु डरीकस्योत्पातउक्त । एवमेतल्लोकादिक च खल्वात्मन्याश्रित्य मया श्रमणायुष्मन् से ए तत्पुंष्करिण्यादिक दृष्टांतत्वेनकिंचित्साधर्म्यादेवमुक्त ॥ १२ ॥

॥ टीका–तदधुना नगवान् पूर्वोक्तस्य दृष्टांतस्य यथास्व दार्ष्टांतिके दर्शयितुमाह ॥ (लोगचेत्यादि) लोकमिति मनुष्यक्षेत्र । चशब्दउत्तरापेक्षया समुच्चयार्थं । खलुरिति वाक्यालकारे । मयेत्यात्मनिर्देश । योयं लोकोमनुष्याधारस्तमात्मन्याहृत्य व्यवस्थाप्य अपाहृत्य वा आयुष्मन् श्रमण आत्मनावा मयाऽऽहृत्य न परोपदेशत सा पुंष्करिणी प द्माधारनूतोक्ता । तथा कर्म चाष्टप्रकार यद्बलेन पुरुषपौंडरीकाणि नवति । तदेवनूतं क र्मं मयात्मन्याहृत्य आत्मनावा आहृत्यअपाहृत्य वा । एतडुक्त नवति । हेश्रमण आयु ष्मन् सर्वावस्थाना निमित्तनूतं कर्माश्रित्य तडुदक दृष्टांतत्वेनोपन्यस्तं कर्मचात्र दार्ष्टां तिक नविष्यति । तत्रेच्छामदनकामा शब्दादयोविषयास्ते एव नुज्यतइतिनोगा । यदि वा कामाइच्छारूपामदनकामास्तु नोगास्तान् मयात्मन्याहृत्य सेय कर्दमोऽनिहितस्तथा पके निमग्नोडुखेनात्मानमुद्धरत्येव विषयेष्वासक्तोनात्मानमुद्धर्तुमलमित्येतत्कर्दमविष ययो साम्यमिति । यथा जन सामान्येन लोक तथा जनपदे नवाजानपदाविशिष्टार्यदे शोत्पन्नागृह्यते । ते चार्द्धषड्विंशतिजनपदोनवाइति ताश्च समाश्रित्य मया दार्ष्टांतिकत्वे नागीकृत्य तानि तानि बहूनि पद्मवरपौंडरीकाणि दृष्टांतत्वेनानिहितानि । तथा राजा नमात्मन्याहृत्य तदेक पद्मवरपौंडरीक दृष्टांतत्वेनानि हित तथान्यतीर्थिकान् समाश्रित्य ते चत्वार पुरुषजाताअनिहितास्तेषा राजपौंडरीकोद्धरणे सामर्थ्यवैकल्यात् । तथा धर्मंच खल्वात्मन्याहृत्य श्रमणायुष्मन् सनिक्षु रूक्षवृत्तिरहितस्तस्यैव चक्रवर्त्यादिराज पद्मवरपौंडरीकोद्धरणसामर्थ्यसद्भावाद्धर्मं तीर्थंच खल्वाश्रित्य मया तत्तीरमुक्त । तथा सद्धर्म देशना चाश्रित्य मया सनिक्षुसवधी शब्दोऽनिहितस्तथा निर्वाण मोक्षपदशेष कर्मक्षयरूपमीषत् प्राग्नाराख्य नूनागोपर्यवस्थितक्षेत्रखम चात्मन्याहृत्य सपद्मवरपौ डरीकस्योत्पातोऽनिहितइति । साप्रत समस्तोपसहारार्थमाह । एव पूर्वोक्तप्रकारेण एत ल्लोकादिकच खल्वात्मन्याहृत्याश्रित्य मया श्रमणायुष्मन् से एतत्पुष्करि ण्यादिक दृष्टातत्वे न किंचित्साधर्म्यादेवमेतडुक्तमिति ॥ १२ ॥

इह खलु पाईणवा पडीणवा उदीणवा दाहिणवा संतेगतिया मणुस्सा भवंति अणुपुव्वेण लोगं उववन्ना तं जहा आरियावेगे अणारियावेगे उच्चागोत्तावेगे णीयागोयावेगे कायमंतावेगे रहस्समंतावेगे सुवन्नावेगे दुवन्नावेगे सुरूवावेगे दुरूवावेगे तेसिंचणं मणुयाणं एगे राया भवइ महयाहिमवंतमलयमंदरमहिंदसारे अच्चंतविसुद्धरायकुलवंसप्पसूते निरंतररायलक्खणविराइयंगमंगे बहुजणबहुमाणपूइए सव्वगुणसमिद्धे खत्तिए मुदिए मुद्धाभिसित्ते माउपिउसुजाए दयप्पिए सीमंकरे सीमंधरे खेमंकरे खेमंधरे मणुस्सिंदे जणवयपिया जणवयपुरोहिए सेउकरे केउकरे नरपवरे पुरिसपवरे पुरिससीहे पुरिसआसीविसे पुरिसवरपोंडरीए पुरिसवरगंधहत्थी अड्ढे दित्ते वित्ते विच्छिन्नविउलभवणसयणासणजाणवाहणाइन्ने बहुधणबहुजातरूवरतए आउगपउगसंपउत्ते विच्छड्डियपउरभत्तपाणे बहुदासीदासगोमहिसगवेलगप्पभूते पडिपुन्नकोसकोठागाराउहागारे बलवं दुब्बलपच्चामिए उहयकंटयं मलियकंटयं उद्धियकंटयं निहयकंटयं अकंटयं उहयसत्तू निहयसत्तू मलियसत्तू उद्धियसत्तू निज्जियसत्तू पराइयसत्तू ववगयदुभिक्खमारिभयविप्पमुक्कं रायवन्नउ जहाउववाइए जावपसंतडिंबडमररज्जं पसाहेमाणे विहरति तस्सणं रन्नो परिसा भवइ उग्गा उग्गपुत्ता भोगा भोगपुत्ता इक्खागाइ इक्खागाइ नायना नायना कोरवा कोरवा भट्टा भट्टपुत्ता माहणा माहणपुत्ता लेच्छइ लेच्छइपुत्ता पसत्थारो पसत्थारोपुत्ता सेणावइ सेणावइपुत्ता ॥ १३ ॥ तेसिंचणं एगतीए सड्ढीभवइ कामंतं समणावा माहणावा संपहारिंसु गमणाए तत्थ अन्नतरेणं धम्मेणं पन्नत्तारोवयं धम्मेणं धम्मेणं पन्नवइस्सामो सेएवमायाणह भयतारो जेहामए एस धम्मे सुयक्खाए सुपन्नते भवइ ॥ १४ ॥

अर्थ—(इहखलुके०) ए मनुष्य लोक माहे खलुइति वाक्यालंकारे (पाईणवाके०) पूर्वदिशि (पडीणवाके०) पश्चिमदिशि (उदीणवाके०) उत्तरदिशि (दाहिणवाके०) दक्षणदिशि ए चार दिशि अथवा विदिशिए (संतेगतियामणुस्साभवंतिके०) कोइ एक मनुष्य होय ते (अणु

पुव्वेण के०) अनुक्रमे (लोग के०) लोकपणे (उववन्नाके०) उपना छे (तंजहा के०) ते देखाडेछे (आरियावेगे के०) एक आर्य मनुष्यते साढा पचीश देशना उपना (अणा रियावेगे के०) एक अनार्य देशना उपना ते सग यवन सबर बब्बरादिक जाणवा (उच्चागोत्तावेगे के०) एक उचगोत्रना उपना (णीयागोयावेगे के०) एक नीचगोत्रना उपना (कायमतावेगे के०) एक लाबा दीर्घ काय वाला (रहस्समतावेगे के०) एक न्हस्व न्हानी काय वाला (सुवन्नावेगे के०) एक रुडा वर्ण वाला (डुवन्नावेगे के०) एक माठा वर्ण वाला (सुरूवावेगे के०) एक नला रुपवाला (डुरूवावेगेके०) एक माठा रूप वाला (तेसिचणमणुयाण के०) ते मनुष्य माहे वली (एगेरायानवइ के०) एक राजा होय ते राजा केवोहोय तोके (महयाहिमवत के०) महोटो हिमवत (मलय के०) मलयाचल (मदरके०) मेरुपर्वत (महिंद के०) महेंद्र एनी पेरे जेनु (सारेके०) सामर्थ्यपणुछे (अच्चतविसुद्धरायकुलवसप्पसूतेके०) अत्यत निर्मल दोष रहित राजा नु कुल उत्तम क्षत्रीयनो कुल तेने विषे जन्म पाम्याछे (निरतररायलरकण के०) आ तरा रहितजे राजाना लक्षण तेणेकरी (विराइयगमगे के०) विराजमान एटले शोना यमानछे शरीरना अगोपाग जेना (बहुजण के०) घणालोक (बहुमाण के०) घणो मान आपीने (पूइए के०) पूजेछे (सव्वगुणसमिद्धे के०) समस्त राजाना जे गुणछे तेणेकरी समृद्धिवान एटले सपूर्णछे (खत्तिएके०) क्षत्रिय जातवत (मुदिए के०) स र्वकाल प्रमोद सहित (मुद्धाभिसित्ते के०) मातापितादिक परिवार मलीने राजाभिषे क कीधोछे (माउपिउसुजाए के०) माता पिता सुजातवतछे अथवा माता पितानो सुविनीत सुपुत्रछे (देयप्पिए के०) वछन तथा करुणाना गुणे करी सहित (सीमकरे के०) मर्यादानोकरनार (सीमधरे के०) मर्यादानो धरनार (खेमकरे के०) कल्याण नो करनार उपद्रवनो टालनार (खेमधरे के०) कल्याणनो धरनार (मणुस्सिदे के०) मनुष्यनु इद्र (जणवयपिया के०) जनपद एटले देशना लोकने पिता समान (जण वयपुरोहिए के०) जनपद एटले देशना लोकने शातिनु करनार उपद्रवनु निवारक (से उकरे के०) मार्गनो देखाडनार (केउकरे के०) अद्भुत कार्यनो करनार (नरपवरेके०) मनुष्य माहे प्रधान (पुरिसपवरे के०) पुरुषमाहे प्रधान (पुरिससीहे के०) पुरुष माहे सिंह समान (पुरिसआसीविसे के०) पुरुष माहे आशीविष सर्प समान अ पराध खमे नही (पुरिसवरपोंमरीए के०) पुरुष माहे प्रधान पुंमरीक कमल समान (पुरिसवरगधहत्थी के०) पुरुष माहे प्रधान गध हस्ति समान (अढे के०) धन धा न्यादिके परिपूर्ण (दित्ते के०) दीपता (वित्ते के०) पहोला (विछिन्न के०) विस्तीर्ण एवा (विउल के०) विपुल एटले घणा (नवण के०) घर (सयणासण के०) पल्यका

दिक आशन नद्रासन (जाण के०) पालखीप्रमुख (वाहणाइस्रे के०) गाडी घोडादिक तेणेकरीने आकीर्ण (बहुधण के०) घणो धन (बहुजातरूव के०) घणो सु वर्ण (रतए के०) घणो रजत एटले रुपु (आउगपउगसपउत्ते के०) अर्थ लान वम णा वमणादिक तेहवो उपाय व्यापारादिक तेणे करी सयुक्तछे (विछडियपउरजत्तपाणे के०) घणा जात पाणी लोक जमेछे विशेषे देवरावेछे (बहुदासीदास के०) घणा दासी तथा दासछे (गोके०) वृषन (महीस के०) नेंस (गवेलग के०) गाय गेटी गाम रा बकरी ते (प्पनूते के०) प्रनूत एटले घणाछे वली (पडिपुस्स के०) प्रतिपूर्णछे (कोसके०) लक्ष्मीना नमार (कोठागारा के०) धानना नमार (उक्षागारे के०) खड्ग त्रिसूल नालादिकना नमार (बलव के०) पोते बलवतछे (डुब्बल के०) डुर्ब लछे (पव्वामिए के०) वैरी जेना (उहतकंटय के०) विणास्याछे समस्त गोत्री जेणे (मलियकंटय के०) ऋद्धि अपहारीने मान नग कीधाछे गोत्री जेणे (उद्धयकंटय के०) उद्देश थकी काढयाछे गोत्री जेणे (निहयकंटय के०) जेणे गोत्रीने हराव्याछे (अकंटयके०) प्रतिमल वैरीये रहितछे (उहयसत्तूके०) विणास्याछे शत्रू जेणे (निहियस त्तूके०) जेणे शत्रुने हराव्याछे (मलियसत्तूके०) ऋद्धि अपहरीने मान नग कर्याछे वैरी जेणे (उद्धियसत्तुके०) उद्देश थकी कढाव्याछे वैरी जेणे (निज्जियसत्तुके०) विशेष थकी जीत्याछे वश कर्याछे वैरी जेणे (पराइयसत्तू के०) तेना राज्यने लेने करी पराजय प माड्याछे शत्रु जेणे वली (ववगय के०) वपगत एटले गयाछे जेना राज्यने विषे शु ग याछे ते कहेछे (डुप्निरकके०) डुकाल डुर्निक्ष (मारिके०) देवादिकना करेला मारी मर कीना नय (नयके०) वैरीना नय थकी (विप्पमुक्कके०) रहितछे (रायवन्नउके०) एरीते रा जानु वर्णन (जहाउववाइए के०) जेम उववाइ सूत्रमा वर्णन कर्योछे तेना सरिखो (जा वपसंत के०) ज्यांलगे उपशमाव्याछे (फिंबमरक्क के०) स्वचक्र परचक्रना नय ज्या नथी एवो राज्य (पसाहेमाणे के०) पालतो थको (विहरति के०) विचरेछे (त स्सणरन्नो के०) हवे तेराजानी (परिसाजवति के०) परषदा केवी होए ते कहेछे (उग्गाउग्गपुत्ता के०) उग्रकुलना उपना ते उग्रकुलना पुत्र (नोगानोगपुत्ता के०) नोगकुलना उपना ते नोगकुलना पुत्र (इरकागाइरकागाड के०) श्रीयादीश्वरनो वंश जे इक्ष्वाग तेना उपना ते इक्ष्वागवंशना पुत्र (नायानानायानाके०) ज्ञातकुलना उपना ते ज्ञातकुलना पुत्र (कोरवाकोरवा के०) कौरवकुलना उपना ते कौरवकुलना पुत्र (नट्टान टपुत्ताके०) सुनटकुलना उपना ते सुनटना पुत्र (माहणामाहणपुत्ताके०) ब्राह्मणकुलना उपना ते ब्राह्मणना पुत्र (लेठइलेछइपुत्ताके०) लक्षाधिपति वणिक् जाति विशेष तेना पुत्र (पसठारापसठारापुत्ता के०) घणो जेने घरे लक्ष्मीनो विस्तार होय तेने घेर उपना ते

पुव्वेण के०) अनुक्रमे (लोग के०) लोकपणे (उववन्नाके०) उपना छे (तंजहा के०) ते देखाडेछे (आरियावेगे के०) एक आर्य मनुष्यते साढा पचीश देशना उपना (अणारियावेगे के०) एक अनार्य देशना उपना ते सग यवन सबर बब्बरादिक जाणवा (उच्चागोत्तावेगे के०) एक उचगोत्रना उपना (णीयागोयावेगे के०) एक नीचगोत्रना उपना (कायमतावेगे के०) एक लावा दीर्घ काय वाला (रहस्समतावेगे के०) एक न्हस न्हानी काय वाला (सुवन्नावेगे के०) एक रुडा वर्ण वाला (दुवन्नावेगे के०) एक माठा वर्ण वाला (सुरूवावेगे के०) एक भला रूपवाला (दुरूवावेगेके०) एक माठा रूप वाला (तेसिंचणमणुयाण के०) ते मनुष्य मांहे वली (एगेरायाभवइ के०) एक राजा होय ते राजा केवोहोय तोके (महयाहिमवंत के०) महोटो हिमवंत (मलय के०) मलयाचल (मंदरके०) मेरुपर्वत (महिंद के०) महेंद्र एनी पेरे जेनु (सारेके०) सामर्थ्यपणुछे (अच्चंतविसुद्धरायकुलवंसप्पसूतेके०) अत्यंत निर्मल दोष रहित राजानु कुल उत्तम क्षत्रीयनो कुल तेने विषे जन्म पाम्याछे (निरंतररायलक्खण के०) अंतरा रहितजे राजाना लक्षण तेणेकरी (विराइयंगमंगे के०) विराजमान एटले शोभायमानछे शरीरना अंगोपांग जेना (बहुजण के०) घणालोक (बहुमाण के०) घणो मान आपीने (पूइए के०) पूजेछे (सव्वगुणसमिद्धे के०) समस्त राजाना जे गुणछे तेणेकरी समृद्धिवान एटले संपूर्णछे (खत्तिएके०) क्षत्रिय जातवंत (मुदिए के०) सर्वकाल प्रमोद सहित (मुद्धाभिसित्ते के०) मातापितादिक परिवार मलीने राजाभिषेक कीधोछे (माउपिउसुजाए के०) माता पिता सुजातवंतछे अथवा माता पितानो सुविनीत सुपुत्रछे (दयप्पिए के०) वल्लभ तथा करुणाना गुणे करी सहित (सीमंकरे के०) मर्यादानोकरनार (सीमंधरे के०) मर्यादानो धरनार (खेमंकरे के०) कल्याणनो करनार उपद्रवनो टालनार (खेमंधरे के०) कल्याणनो धरनार (मणुस्सिंदे के०) मनुष्यनु इंद्र (जणवयपिया के०) जनपद एटले देशना लोकने पिता समान (जणवयपुरोहिए के०) जनपद एटले देशना लोकने शांतिनु करनार उपद्रवनु निवारक (सेउकरे के०) मार्गनो देखाडनार (केउकरे के०) अद्भुत कार्यनो करनार (नरपवरेके०) मनुष्य मांहे प्रधान (पुरिसपवरे के०) पुरुषमांहे प्रधान (पुरिससीहे के०) पुरुष मांहे सिंह समान (पुरिसआसीविसे के०) पुरुष मांहे आशीविष सर्प समान अपराध खमे नही (पुरिसवरपोंमरीए के०) पुरुष मांहे प्रधान पुंमरीक कमल समान (पुरिसवरगंधहत्थी के०) पुरुष मांहे प्रधान गंध हस्ति समान (अड्ढे के०) धन धान्यादिके परिपूर्ण (दित्ते के०) दीपता (वित्ते के०) पहोला (विच्छिन्न के०) विस्तीर्ण एवा (विउल के०) विपुल एटले घणा (भवण के०) घर (सयणासण के०) पल्यका

राजवार्त्तिक तदुद्धरणार्थत्वात्सर्वप्रयासस्येति दर्शयितुमाह । (इहखलुइत्यादि) इहास्मिन्मनुष्यलोके । खलु वाक्यालंकारे । इहास्मिन् लोके प्राच्या प्रतीच्या दक्षिणायामुदीच्यामन्यतरस्या वा दिशि सति विद्यते एके केचन तथाविधामनुष्या आनुपूर्व्येण लोकमाश्रित्योत्पन्नाभवंति तानेवानुपूर्व्येण दर्शयति । तद्यथेत्युपन्यासार्थे । आरा द्याता सर्वहेयधर्मेभ्यइत्यार्यास्तत्र क्षेत्रार्याअर्धषड्विंशतिजनपदोत्पन्नास्तद्व्यतिरिक्तास्त्वनार्याएके केचन भवंति । ते चानार्या क्षेत्रोत्पन्नाअमी द्रष्टव्या ॥ सगजगण सवरबव्वर,कायमुरुंडोड्डगोंडपक्किणिया ॥ आवगाहो णरोमय पारसरवसरवासिया चेव ॥ १ ॥डोंबिलयलउसबोकुस,भिल्लंधपुलिंदकोवंचमररुया ॥ कोंचाय चीण चचुय,मालव दमिलाकुलग्घाय ॥ २ ॥ कैकयकिरीयह्यमुह,खरमुह तह तुरगमेढयमुहाय ॥ ह्यकन्ना गयकन्ना, अन्ने य अणारिया बहवो ॥ ३ ॥ पावायचंडदंडा,अणारिया णिग्घिणा णिरणुकंपा ॥ धम्मोत्ति अक्खराइं, जे सुण णज्जंतिसुमिणेविइत्यादि । तथोच्चैर्गोत्रमिक्ष्वाकुवंशादिकं येषां ते तथाविधाएके केचन तथाविधकर्मोदयवर्तिन । वाशब्दउत्तरापेक्षया विकल्पार्थ ।तथा नीचैर्गोत्रं सर्वजनावगीतं येषांते तथा एके केचन नीचैर्गोत्रोदयवर्तिनोन सर्वे । वाशब्द पूर्ववदेव । ते चोच्चैर्गोत्रानीचैर्गोत्रा वा । कायोमहाकाय प्रांशुत्वं तद्विद्यते येषां ते कायवतस्तथा ह्रस्ववतोवामनककुब्जवडभादयएके केचन तथाविधनामकर्मोदयवर्तिनस्तथाशोभनवर्णा सुवर्णा प्रतप्तचामीकरचारुदेहास्तथा दुर्वर्णा रुक्मरूक्षादिवर्णाएके केचन तथा सुरूपा सुविभक्तावयवचारुदेहास्तथा दुष्टरूपाइरूपाबीभत्सदेहास्तेषां चोच्चैर्गोत्रादिविशेषणविशिष्टाना महान् कश्चिदेवैकस्तथाविधकर्मोदयाद्राजा भवति सविशेष्यते महाहिमवन्मलयमंदरमहेंद्राणामिव सारं सामर्थ्यं निजवोवा यस्य सतथा इत्येवं राजवर्णकोयावत्प्रशांतडिंबडमरं राज्यं प्रसाधयंस्तिष्ठतीति । तत्र डिंबं परानीकस्तृगालिकोडमरं स्वराष्ट्रक्षोभ । पर्यायान्तेतावत्यादरख्यापनार्थमुपात्तौइति । तस्य चैवंविधगुणसंपदुपेतराज्ञएवंविधा पर्षद्भवतीति । तद्यथा । उग्रास्तत्कुमाराश्चोग्रपुत्रा । एवं भोगपुत्रादयोपि द्रष्टव्या ॥ शेषंसुगमं । यावत्सेनापतिपुत्रइति । णवरंलेउइत्ति । लिप्सुकसवणिगादिस्तथा प्रशास्तारोबुध्युपजीविनोमंत्रिप्रभृतय ॥ १३ ॥ तेषां च मध्ये कश्चिदेवैक श्रद्धावान् धर्मलिप्सु काममित्येवधृतार्येऽवधृतमेतद्यथाप धर्मश्रद्धालुरवधार्य च तं धर्मलिप्सुतया श्रमणाब्राह्मणावा संप्रधारितवंत समालोचितवंतोधर्मप्रतिबोधनिमित्तं तदंतिकगमनाय तत्र चान्यतरेण धर्मेण स्वसमयप्रसिद्धेन प्रज्ञापयितारोऽयमित्येवं नाम संप्रधार्य तं राजानं स्वकीयेन धर्मेण प्रज्ञापयिष्यामएवं संप्रधार्य राज्ञोंतिकं गत्वैवमूचु ।तद्यथा।एतद्यथाह कथयिष्यामि एवमितिच वक्ष्यमाणनीत्या भवतोयूयं जानीत भयात्रातारोवा यथा येन प्रकारेण मयैषधर्म स्वाख्यात सुप्रज्ञप्तोभवतीत्येवं तीर्थक

तेना पुत्र (सेणावइसेणावइपुत्ताकें०) सेनाधिपतिना पुत्र इत्यादिक सनावर्णन थकी जा णवो ॥१३॥(तेसिंचण के०) तेमांहे (एगतीएके०) कोइ एक पुरुष (सड्ढीनवइके०) धर्म करवाने श्रद्धावत धर्मार्थी होय तेने एवो (कामतं के०) धर्मार्थी जाणीने (समणावा माहणावाके०) श्रमण ब्राह्मण मली (सके०) सम्यक् प्रकारे पोतानो धर्मप्रतिबोधवानि मित्त (पहारिंसुगमणाए के०) तेना समीपे आलोचवो चितवे ते केवो (तइअन्नतरेणध म्मेणपन्नत्तारोवय के०) त्यां अमे अमारा धर्मना प्ररूपणहार आपणो धर्म प्ररूपशु एवो आलोची राजाने समुख आवी बोल्या (इम्मेणधम्मेणपन्नवइस्सामो के०) ए आगल कहे छे ते धर्म परूपशु तेज कहेछे (सेएवमायाणह के०) अमे धर्म कहीशु ते एम जाणो (नयतारो के०) अहो नय थकी राखनार (जेहामए के०) जेम ए प्रकारे अमारो (एसधम्मेसुयरकाएसुपन्नत्तेनवइ के०) ए धर्म स्वाख्यात सप्रज्ञप्तछे ॥१४॥

॥ दीपिका–एवसामान्येन दृष्टांतयोजनामुक्त्वा विशेषेण तामाह । (इहेति) इहा स्मिन् लोके । खलुर्वाक्यालंकारे । प्राच्या प्रतीच्या दक्षिणायामुदीच्यामन्यतरस्यां वा दिशि सति वियते एके केचन मनुष्याभवंति । आनुपूर्व्येणेम लोकमाश्रित्योत्प न्ना । तद्यथा । आर्याआर्यदेशोत्पन्नास्तदन्येऽनार्याएके उच्चैर्गोत्रानीचैर्गोत्राएके कायो महाकाय प्रांशुत्व तद्विद्यते येषा ते कायवतोऽन्हस्ववतोवामनकुब्जादय सुव र्णा शोभनकांतयोऽवर्णा कृष्णरूक्षादिवर्णाएके सुरूपाएके दुष्टरूपास्तेषामध्ये म हान् कश्चिदेकोराजा भवति । किंभूत । महाहिमवन्मलयमंदरमहेंद्राणामिव सा र सामर्थ्य धन वा यस्य सतथा । इत्येव राजवर्णकोयावदुपशातडिंबडमर राज्यं प्र साधयन् तिष्ठति । तत्र डिंब परानीकभय डमर स्वराष्ट्रक्षोभ । तस्य च राज्ञ पर्षत् स भा भवति । तद्यथा । उग्रातत्कुमाराश्च उग्रपुत्रा । एव भोगपुत्रादयोपि ज्ञेया । (ले च्छइत्ति) लिप्सुकोवणिगित्यर्थ । प्रशास्तारोबुध्युपजीविनोमंत्र्यादय सेनापतयश्च एके ॥ १३ ॥ तेषा मध्ये कश्चिदेवैक श्रद्धावान् धर्मलिप्सुर्भवति । काम निश्चितं तं श्रद्धाव तं श्रमणावा तदंतिकगमनाय प्रधारितवतस्तत्प्रतिबोधाय तत्समीपे गमन चिंतितवत । तत्रान्यतरेण धर्मेण स्वसमयप्रसिद्धेन प्रज्ञापयितारोवयमिति विचिंत्य त राजान स्वकीये न धर्मेण प्रज्ञापयिष्यामएव सप्रधार्य राजांतिक गत्वा एवमूचु । यथाह वदामि एव भ वंतोयूय जानीत यथा येन प्रकारेण मयैषधर्म स्वाख्यात सुप्रज्ञप्तोभवतीत्येव तीर्थिक स्वमतानुरागी राजादे स्वाभिप्रायेणोपदेश ददाति । तत्राद्य पुरुषस्तज्जीवतच्छरीरवादी रा जानमुद्दिश्यैव धर्मदेशना चक्रे ॥ १४ ॥

॥ टीका–तदेव सामान्येन दृष्टांतदार्ष्टांतिकयोर्योजना कृत्वाऽधुना विशेषणप्रधानभूत

राजदार्थातिक तडुद्धरणार्थत्वात्सर्वप्रयासस्येति दर्शयितुमाह । (इहखलुइत्यादि) इहास्मिन्मनुष्यलोके । खलु वाक्यालंकारे । इहास्मिन् लोके प्राच्यां प्रतीच्यां दक्षिणायामुदीच्यामन्यतरस्यां वा दिशि सति विद्यते एके केचन तथाविधामनुष्या आनुपूर्व्येणेमं लोकमाश्रित्योत्पन्नाभवंति तानेवानुपूर्व्येण दर्शयति । तद्यथेत्युपन्यासार्थं । आर्याता सर्वहेयधर्मेभ्यइत्यार्यास्तत्र क्षेत्रार्यार्धषड्विंशतिजनपदोत्पन्नास्तद्व्यतिरिक्तास्त्वनार्याएके केचन भवति । ते चानार्या क्षेत्रोत्पन्नाअमी द्रष्टव्या ॥ सगजगणसवरबव्बर,कायमुरंडोडगोडपक्किणिया ॥ आवगाहो पणरोमय,पारसरवसरवासिया चेव ॥ १ ॥डोंबिलयलउसवोक्कस,भिल्लंधपुलिंदकोंचभमररुया ॥ कोचाय चीण चचुय,मालव दमिलाकुलघाय ॥ २ ॥ केकयकिरीयहयमुह,खरमुह तह तुरगमेढयमुहाय ॥ हयकरणा गयकण्णा, अन्ने य अणारिया बहवो ॥ ३ ॥ पावायचंडदंडा,अणारिया णिग्घिणा णिरणुकंपा ॥ धम्मोत्ति अरकराइ, जे सुण णञ्जतिसुमिणेविइत्यादि । तयोच्चैर्गोत्रमिक्ष्वाकुवंशादिकं येषां ते तथाविधाएके केचन तथाविधकर्मोदयवर्तिन । वाशब्दउत्तरापेक्षया विकल्पार्थं ।तथा नीचैर्गोत्रं सर्वजनावगीतं येषांते तथा एके केचन नीचैर्गोत्रोदयवर्तिनोन सर्वे । वाशब्द पूर्ववदेव । ते चोच्चैर्गोत्रानीचैर्गोत्रा वा । कायोमहाकाय प्रांशुत्वं तद्विद्यते येषां ते कायवतस्तथा र्हस्वतोवामनककुब्जवडभादयएके केचन तथाविधनामकर्मोदयवर्तिनस्तथाशोभनवर्णा सुवर्णा प्रतप्तचामीकरचारुदेहास्तथा डुर्वर्णा कृष्णरूक्षादिवर्णाएके केचन तथा सुरूपा सुविभक्तावयवचारुदेहास्तथा डुष्टरूपाडुरूपाबीभत्सदेहास्तेषां चोच्चैर्गोत्रादिविशेषणविशिष्टानां महान् कश्चिदेवैकस्तथाविधकर्मोदयाद्राजा भवति सविशेष्यते महाहिमवन्मलयमंदरमहेंद्राणामिव सारं सामर्थ्यं विभवोवा यस्य सतथा इत्येवं राजवर्णकोयावडुपशांतडिंबडमरं राज्यं प्रसाधयंस्तिष्ठतीति । तत्र डिंब परानीकसगालिकोडमरं स्वराष्ट्रक्षोभ । पर्यायावेतावत्यादरख्यापनार्थमुपात्तौइति । तस्य चैवंविधगुणसंपडुपेतराज्ञएवंविधा पर्षद्भवतीति । तद्यथा । उग्रास्तत्कुमारा श्चोग्रपुत्रा । एवं भोगपुत्रादयोपि द्रष्टव्या ॥ शेषंसुगमं । यावत्सेनापतिपुत्रइति । णवरलेछइत्ति । लिप्सुकसवणिगादिस्तथा प्रशास्तारोबुध्युपजीविनोमंत्रिप्रभृतय ॥ १३ ॥ तेषां च मध्ये कश्चिदेवैक श्रद्धावान् धर्मलिप्सु काममित्येवंभूतार्थेऽवभृतमेतद्यथाप धर्मश्रद्धानुरवधार्यं च तं धर्मलिप्सुतया श्रमणाब्राह्मणावा संप्रधारितवंत समालोचितवंतोधर्मप्रतिबोधनिमित्तं तदंतिकगमनाय तत्र चान्यतरेण धर्मेण स्वसमयप्रसिद्धेन प्रज्ञापयितारोवयमित्येवं नाम संप्रधार्य तं राजानं स्वकीयेन धर्मेण प्रज्ञापयिष्यामएवं संप्रधार्य राज्ञोंतिकं गत्वैव मूचु ।तद्यथा।एतद्यथाह कथयिष्यामि एवमितिभ वदयमाणनीत्या भयतोयूयं जानीत भयात्रातारोवा यथा येन प्रकारेण मयैपधर्म स्वाख्यात सुप्रज्ञप्तोभवतीत्येवं तीर्थिक

स्वदर्शनानुरजितोन्यस्यापि राजादे स्वाभिप्रायेणोपदेश ददाति । तत्राद्य पुरुषजातस्त जीवतच्छरीरवादी राजानमुद्दिश्येव धर्मदेशना चक्रे ॥ १४ ॥

त जहा उड्ढपादतला अहे केसग्गमत्थया तिरियतेयपरियते जीवे एस आयापज्जवे कसिणे एसजीवे जीवति एसमय णोजीवइ सरीरे धरमाणे धरइ विणठमिय णोधरइ एय त जीविय भवति अदहणाए परेहिं निज्जइ अगणिज्जामिए सरीरे कवोतवन्नाणि अट्ठीणि भवति आसदीप चमापुरिसा गाम पच्चागच्छति एव असते असविज्जमाणे जेसित अस ते असविज्जमाणे तेसित सुयस्काय भवति अन्नोभवति जीवो अन्न सरीर तम्हा तेएव नोविपडिवेदेति अयमाउसो आयादीहेतिवा हस्सेतिवा परिमण्डलेतिवा वट्टेतिवा तसेतिवा चउरसेतिवा आयतेतिवा छलसिए तिवा अठसेतिवा किण्हेतिवा णीलेतिवा लोहियहालिद्दे सुक्किलेतिवा सुब्भिगधेतिवा डुब्भिगधेतिवा तित्तेतिवा कडुएतिवा कसाएतिवा अबि लेतिवा महुरेतिवा कक्खडेतिवा मउएतिवा गुरुएतिवा लहुएतिवा सि एतिवा उसिणेतिवा निद्धेतिवा लुक्खेतिवा एव असते असविज्जमाणे जे सित सुयस्काय भवति अन्नोजीवो अन्नसरीर तम्हा तेणो एव उवलब्भति १५

अर्थ—हवे त्या आदि पुरुषजात ते तज्जीव तच्छरीरवादी जीव छे ते राजाने उद्देशी पोताना धर्मनी देशना आपेछे (तजहा के०) ते जेमछे तेम कहेछे (उड्ढपादतला के०) पगना तलीआ थकी उपरे अने (अहेकेसग्गमत्थया के०) मस्तकना केशाग्र थकी नीचे त था (तिरियंतेयपरियते जीवेके०) तिर्छो त्वचा जे चामडी ते पर्यंत जीव जाणवो एटला सी म शरीर थकी निकलतो जीव जुदो देखातो नथी तेथीज जणायछे के तेज शरीर अने तेज जीव एटले एशरीर तेहज जीवछे परतु ए शरीर थकी आत्मा जुदोछे एम न जाणवु (एसआयापज्जवेकसिणे के०) ए जे शरीरछे तेहिज आत्मानु सपूर्ण पर्याय अवस्था विशेष जाणवो (एसजीवेजीवति के०) जेटलो काल ए काया जीवे तेटलो काल ए जीव पण जीवे (एसमयणोजीवइ के०) ए शरीर मरण पामे तेवारे जीव पण म रण पामे पण णोजीवइ एटले जीवे नही (सरीरेधरमाणेधरइ के०) ए शरीर ज्यां सुधी पांचभूतने धरे त्या सुधी आत्माने पण धरे (विणिठमिय णोधरइके०) ए शरीर विणठे

छते जीवनो पण विनाश थाय एोथरइ एटले पछी जीवने धरी न शके (एयतजीवियनवति के०) ए जीवनो जीवितव्य छे तेथी शरीर विणशे थके आत्मा पण विणगे एवो करीने (अद ह णाएपरेहिनिज्जइके०) अन्यलोक बालवाने अर्थे स्मशानादिकने विषे लेइजाय (अगणि झामिएसरीरे के०)तेवारे अग्नीये करी शरीर प्रज्वाले छते त्या नि केवल(कवोतवन्नाणिके०) कपोत वर्णे (अठीणिनवति के०) अस्थि एटले हाम देखायछे परंतु तेथकी अन्य आ त्मादिक पदार्थ कोइ देखाय नही के जे थकी आत्मानु अस्तिपणु अमे जाणीये (आ सदीपचमापुरीसागामपच्चागछंति के०) तथा पाचमो जेनो माचोछे एवा चार पुरुष ते मुवेलाने प्रज्वालीने पोताने गामे आवे माटे जो आत्मा शरीर थकी जुदो होय तो श रीर थकी निकलतो देखाय अने ते जेवारे नथी देखातो तो जाणिये छेए जे तेहिज शरीर अने तेहीज जीवछे (एवके०) एरीते (असतेके०) जीव अछतोछे (असविज्जमाणे के०) अविद्यमान जातो थको जाणवामा नथी आवतो (जेसितअसते के०) जेनो ए पक्षछे के जीव अछतोछे (असविज्जमाणे के०) अविद्यमानछे जेनो एवो पक्षछे (तेसितं के०) तेनो ए पूर्वोक्त वचन (सुयक्खायनवति के०) स्वाख्यातछे एम जाण वो अने जेनो (अन्नोजवतिजीवो के०) जीव अन्यछे अने (अन्नसरीर के०) शरीर पण अन्यछे एवु जे कहेछे ते गामरी प्रवाहे पड्या थका (तम्हा के०) तस्मात् (ते एव के०) ते एवो (नोविपडिवेदति के०) जे आगल कहेशे ते नथी जाणता तेज कहेछे (अयमाउसो के०) अहो आयुष्मंत ए जीव शरीर थकी जुदो गणीए तो एनो शो प्रमाणछे (आयादीहेतिवा के०) आत्मा शु दीर्घ एटले लांबोछे (हस्से तिवा के०) किंवा ऱ्हस्व एटले अंगुल अथवा तदुल प्रमाण न्हानोछे (परिमंमलेति वा के०) किंवा चुडी अथवा चंद्र मंमलने आकारेछे (वट्टेतिवा के०) किंवा वाटला लाडुने आकारेछे (तंसेतिवा के०) किंवा त्रिखूणा सींगोडाने आकारेछे (चउरंसेति वा के०) चौखूणोछे (आयतेतिवा के०) थाला सरीखो लांबोछे (छलंसिएतिवाके०) छखूणा छहाशनोछे (अठ्ठंसेतिवा के०) आठहांसनो आठ खूणोछे (किण्हेतिवाके०) काले वर्णछे (णीलेतिवा के०) नीले वर्णछे (लोहियहालिद्देसुक्किलेतिवा के०) लाल वर्णछे किंवा हलदर जेवा पीले वर्णछे किंवा उज्वले वर्णछे (सुब्भिगंधेतिवा के०) सु रभिगंध कपूर समानछे (दुब्भिगंधेतिवा के०) दुर्गंध लसणादि समानछे अथवा रस आश्री (तित्तेतिवा के०) तीखा रस मिरची समानछे (कडुएतिवा के०) कडवुरस नीमडा समानछे (कसाएतिवा के०) कसायलो काचाफल समान रसवालोछे (अंबिलेति वा के०) खाटा रस समानछे (महुरेतिवा के०) मिसरी समान मधुर रसेछे तथा स्पर्शआश्री (कक्कडेतिवा के०) कर्कश खरखरो फरशछे (मउएतिवा के०)

आकतुल समान सुहालो फरशछे (गुरुएतिवा के०) लोहवत् नारी फरशछे (लहुएति वा के०) अर्कतुलवत् हलगो फरशछे (सिएतिवा के०) शीतल फरशछे (उसिणेति वा के०) उष्ण फरशछे (निद्धेतिवा के०) चीकणो फरशछे (लुरकेतिवा के०) लुखो फरशछे एटला फरश मांथी आत्मानो कयो फरशछे (एवअसतेअसविज्ञमाणेजेसिं के०) ए कारण माटे जे आत्माने अछतो अविद्यमान कहे (तंसुयरकार्यनवति के०) तेनो पक्ष नलो स्वाख्यात जाणवो वली जे (अन्नोजीवो के०) अन्य जीव (अन्नस रीर के०) अने शरीर पण अन्यछे एम कहेछे (तम्हाके०) तस्मात् (तेणो एवअवलभ ति के०) ते एवातना अजाण पणाने लीधे नथी जाणता माटे ते नास्तिकछे ॥ १५ ॥

॥ दीपिका-तद्यथा । ऊर्ध्वं पादतलादधश्च केशाग्रमस्तकात्तिर्यक्च त्वक्पर्यंतो जीव । कोर्थ । यदेव शरीर सएव जीव । न शरीरादन्य कश्चिदात्मास्ति । अयं कायएवात्मन पर्यंतोऽवस्थाविशेष कृत्स्न सपूर्णं शरीरोपलक्षे जीवएवोपलब्धइत्य र्थ । एषकायोयावज्जीवति तावज्जीवोपि जीवतीत्युच्यते । एषकायोयदा मृतस्तदा जीवोपिमृतइति व्यपदिश्यते । यावच्छरीरमव्यग धरति तिष्ठति तावज्जीवोपि विनष्टे शरी रे जीवोपि न धरति विनष्टइत्यर्थ । तदेव यावदेतच्छरीरमच्युतं तावदेव जीवस्य तज्जीवि तं नवति विनष्टे शरीरे तद्रूपोजीवोपि विनष्टइति कृत्वाऽऽदहनायासमताद्दहनार्थं श्म शानादौ नीयतेऽसौतस्मिश्च शरीरेऽग्निना ध्मापिते कपोतवर्णान्यस्थीनि केवलमुपलभ्यते न कश्चित्तदपरोजीव । ते च तद्वाधवाजघन्यतोपिच चत्वार । आसदी मचक सपचमो येषाते आसदीपचमा पुरुषास्त कायमग्निना ध्मापयित्वा स्व ग्राम प्रत्यागच्छति । यदि पुन रात्मा कायाद्भिन्न स्यात्तदा निर्गच्छन् दृश्येत नच दृश्यते तस्मात्तज्जीवस्तदेव शरीरमिति स्थितं । एवमुक्तनीत्याऽसौ जीवोऽसन्नविद्यमानोयेषामय पक्षोयत्काये तिष्ठन् गछश्च सवे द्यमानोऽननुभूयमानोजीवइति तेषा तत् स्वाख्यातं नवति । येषां पुनरन्योजीवोऽन्यच्छरीर मेवभूतोऽप्रमाणकएवागीकारस्तस्मात्ते मूढतया प्रवर्तमानाएव वक्ष्यमाण न विप्रतिवेदयति जानति । यथा हे आयुष्मन् अयमात्मा शरीराद्भिन्न स्वीक्रियमाण किपरिमाण स्या दिति वाच्य । किदीर्घ किन्ह्स्वइत्यादि सस्थानेषु किपरिमडलइत्यादि वर्णेषु किकृष्णइ त्यादि गधयो किं सुरभिगधइत्यादि । रसेषु किं तिक्तइत्यादि स्पर्शेषु किकर्कशइत्यादि । तदेव सस्थानवर्णगधरसस्पर्शानामनावादसन्नविद्यमानोऽसवेद्यमानोपि येषा तत् स्वा ख्यातं नवति यथान्योजीवोन्यच्छरीरमिति पक्षस्तस्मात्पृथगविद्यमानत्वात् ते जीववादि नोनैवात्मानमुपलभते ॥ १५ ॥

॥टीका-तद्यथोर्ध्वमुपरि पादतलादधश्च केशाग्रमस्तकात्तिर्यक् च त्वक्पर्यंतोजीव । एत

डुक्त नवति। यदेवेतच्छरीर सएव जीवोनैतस्माच्छरीरा व्यतिरिक्तोस्त्यात्मेत्यतस्तत्प्रमाणएव नवत्यसाविल्येवच रुत्वेपञ्चात्मायोय कायोऽयमेव च तस्यात्मन पर्यव रुत्स्न सपूर्ण पर्यायोऽवस्थाविशेप तस्मिश्च कायात्मन्यवाप्ते तदव्यतिरेकाज्जीवोप्यवाप्तएव नवति । ए पच कायोयावर्त्त काल जीवेदविरुतस्थास्ते तावतमेव काल जीवोपि जीवतीत्युच्यते । तदव्यतिरेकात्तयेव कायोयदा मृतोविकारनाग्नवति तदा जीवोपि न जीवति जीवशरीर योरेकात्मकत्वात् । यावदिद शरीर पचनूतात्मकमव्यग चरति तावदेव जीवोपीति । त स्मिश्च विनष्टे सत्येकस्यापि नूतस्यान्ययानावे विकारे सति जीवस्यापि तदात्मनोविनाश स्तदेव यावदेतच्छरीर वातपित्तश्लेप्माधार पूर्वस्वनावादप्रच्युतं तावदेव तज्जीवस्य जीवित न वति । तस्मिश्च विनष्टे तदात्मा जीवोपि विनष्टइतिकृत्वा श्रादहनायासमतादहनार्थं श्मशानादौ नीयते यतोऽसौ तस्मिश्च शरीरेऽग्निध्मापिते कपोतवर्णान्यस्थीनि केवलमुप लन्यते न तदतिरिक्तोऽपर कश्चिद्विकार समुपलन्यते यतआत्मास्तित्वशकास्यात् । ते च तद्वाधवाजघन्यतोपि चत्वार । श्रासदी मचक सपचमोयेपाते श्रासदीपचमा पुरु पास्तं कायमग्निनाध्मापयित्वा पुन स्वग्राम गछति। यदि पुनस्तत्रात्मा निजशरीराद्भिन्न स्याचत शरीरान्निर्गछन्दश्येत नचोपलन्यते तस्माज्जीवस्तदेव शरीरमिति स्थितं। तदेव मुक्तनीत्याऽसौ जीवोऽसन्नविद्यमानस्तत्र तिष्ठन् गढश्चासवेद्यमानायेपामय पक्षस्तेपा त त्स्वाख्यातं नवति । येपां पुनरन्योजीवोन्यच्छरीरमेवनूतोऽप्रमाणकएवान्युपगमस्तस्माते स्वयमूह्याप्रवर्तमानाएवमिति वक्ष्यमाण तेनेव विप्रतिवेदयति जानति । तद्यथा । श्रा युष्मन् शरीराद्वहिरन्युपगम्यमान किंप्रमाणक स्यादितिवाच्य । तत्र किं दीर्घ शरीरा त्प्राग्नुतर उत न्हस्वोंगुष्ठश्यामाकतंडुलादिपरिमाणोवा । तथा सस्थानाना परिमडलादी ना मध्ये किंसस्थानस्तथा रुष्णादीना वर्णानां मध्ये कतमवर्णवर्ती तथा किंगध पञ्चा र साना मध्ये कतमरसवर्ती तथा ऽष्टाना स्पर्शाना मध्ये कतमोयस्पर्शोवर्तते। तदेव सस्था नवर्णगधरसस्पर्शान्यरूपतया कथमप्यसावगृह्यमाणोऽसन्नर्ता तथापि केनापि प्रकारेण सवेद्यमानोपि येपा तत्स्वाख्यात नवति यथान्योजीवोन्यच्छरीरकमित्यय पक्षस्तस्मात्पृथ गविद्यमानत्वात्ते शरीरात्पृथगात्मवादिनोनेव वक्ष्यमाणनीत्यात्मानमुपलनते ॥ १५ ॥

से जहा णाम एकेइ पुरिसे कोसीउ असि अनिनिव्वटित्ताण उवदसेज्जा अयमाउसो असी अय कोसी एवमेव णत्थि केइपुरिसे अनिनिव्वटित्ता ण उवदसेत्तारो अयमाउसो आया इय सरीर से जहा णाम एकेइ पुरिसे मुजाउ इसिय अनिनिव्वटित्ताण उवदसेज्जा अयमाउसो मुजे इय इ सिय एव मेव नत्थि केइपुरिसे उवदसेत्तारो अयमाउसो आया इय

आकतुल समान सुंहालो फरशछे (गुरुएतिवा के०) लोहवत् नारी फरशछे (लहुएति वा के०) अर्कतुलवत् हलवो फरशछे (सिएतिवा के०) शीतल फरशछे (उसिणेति वा के०) उष्ण फरशछे (निद्धेतिवा के०) चीकणो फरशछे (लुक्खेतिवा के०) लुखो फरशछे एटला फरश मांथी आत्मानो कयो फरशछे (एवअसतेअसविज्जमाणेजेसिं के०) ए कारण माटे जे आत्माने अछतो अविद्यमान कहेछे (तंसुयक्खायंनवति के०) तेनो पक्ष नलो स्वाख्यात जाणवो वली जे (अन्नोजीवो के०) अन्य जीव (अन्नस रीर के०) अने शरीर पण अन्यछे एम कहेछे (तम्हाके०) तस्मात् (तेणो एवउवलभं ति के०) ते एवातना अजाण पणाने लीधे नथी जाणता माटे ते नास्तिकछे ॥ १५ ॥

॥ दीपिका-तद्यथा । ऊर्ध्वं पादतलादधश्च केशाग्रमस्तकात्तिर्यक्च त्वक्पर्यंतो जीव । कोर्थ । यदेव शरीरं सएव जीव । न शरीरादन्य कश्चिदात्मास्ति । अयं कायएवात्मन पर्यतोऽवस्थाविशेष कृत्स्न संपूर्णं शरीरोपलब्धे जीवएवोपलब्धइत्य र्थ । एषकायोयावज्जीवति तावज्जीवोपि जीवतीत्युच्यते । एषकायोयदा मृतस्तदा जीवोपिमृतइति व्यपदिश्यते । यावच्छरीरमभ्यग धरति तिष्ठति तावज्जीवोपि विनष्टे शरी रे जीवोपि न धरति विनष्टइत्यर्थ । तदेव यावदेतच्छरीरमच्युतं तावदेव जीवस्य तज्जीवि तं नवति विनष्टे शरीरे तद्रूपोजीवोपि विनष्टइति कृत्वाऽऽदहनायासमंतादहनार्थं श्म शानादौ नीयतेऽसौतस्मिंश्च शरीरेऽग्निना ध्मापिते कपोतवर्णान्यस्थीनि केवलमुपलभ्यते न कश्चित्तदपरोजीव । ते च तद्वाधवाजधन्यतोपिच चत्वार । आसंदी मचक सपंचमो येषाते आसंदीपंचमा पुरुषास्त कायमग्निना ध्मापयित्वा स्व ग्राम प्रत्यागच्छति । यदि पुन रात्मा कायाद्भिन्न स्यात्तदा निर्गच्छन् दृश्येत नच दृश्यते तस्मात्तज्जीवस्तदेव शरीरमिति स्थितं । एवमुक्तनीत्याऽसौ जीवोऽसन्नविद्यमानोयेषामय पक्षोयत्काये तिष्ठन् गठश्च संवे द्यमानोऽननुभूयमानोजीवइति तेषां तत् स्वाख्यातं नवति । येषां पुनरन्योजीवोऽन्यच्छरीर मेवभूतोऽप्रमाणकएवांगीकारस्तस्मात्ते मूढतया प्रवर्तमानाएव वक्ष्यमाण न विप्रतिवेदयंति जानंति । यथा हे आयुष्मन् अयमात्मा शरीराद्भिन्न स्वीक्रियमाण किंपरिमाण स्या दिति वाच्य । किंदीर्घ किंन्ह्स्वइत्यादि संस्थानेषु किंपरिमंडलइत्यादि वर्णेषु किंकृष्णइ त्यादि गंधयो किं सुरनिगंधइत्यादि । रसेषु किं तिक्तइत्यादि स्पर्शेषु किंकर्कशइत्यादि । तदेव संस्थानवर्णगंधरसस्पर्शानामनावादसन्नविद्यमानोऽसंवेद्यमानोपि येषां तत् स्वा ख्यातं नवति यथान्योजीवोन्यच्छरीरमिति पक्षस्तस्मात्पृथगविद्यमानत्वात् ते जीववादि नोनैवात्मानमुपलभंते ॥ १५ ॥

॥टीका-तद्यथोर्ध्वमुपरि पादतलादधश्च केशाग्रमस्तकात्तिर्यक् च त्वक्पर्यंतोजीव । एत

नथी (सेजहाणामए के०) ते वली यथा दृष्टाते करी देखाडेछे (केइपुरिसेमसाउअठी अनिनिवटित्ताणउवदसेज्जा के०) कोइक पुरुष मास थकी हाड जुदा काढीने देखाडेके (अयमाउसो के०) अहो आयुष्यमतो (मसेअयअठीके०) आ मास अने ए हाड (एवामेवणत्थिकेइपुरिसेउवदसेत्तारोअयमाउसोआयाइयसरीर के०) एम आ आत्मा अने ए शरीर एने जुदो जुदो देखाडनार कोइ पुरुष नथी (सेजहाणामएकेइपुरिसेकरयलाउ आमलकअनिनिवटित्ताणउवदसेज्जा के०) यथा दृष्टाते कोइ एक पुरुष करतल एटले हथेली थकी आमलो जुदो करी देखाडे (अयमाउसोकरतलेअयआमलए के०) हे आयुष्यमतो आ हथेली अने आ आमलो (एवमेवनत्थिकेइपुरिसेउवदसेत्तारोअयमाउसोआयाइयसरीरके०) एम आ आत्मा अने आ शरीर एरीते जुदा जुदा करी देखाडनार कोइ पुरुष नथी (सेजहाणामएकेइपुरिसेदहीउनवनीयअनिनिवटित्ताणउवदसेज्जाअयमाउसोनवनीय अय तुदहीएवामेवनत्थिकेइपुरिसेजावसरीर के०) यथा दृष्टाते केइ एक पुरुष दही थकी माखण जुदो काढीने देखाडे के अहो आयुष्यमतो आ माखण अने आ दही एम आ आत्मा अने आ शरीर एरीते जुदा जुदा करी देखाडनार कोइ पुरुष नथी एमज यथा दृष्टाते कोइ एक पुरुष तिल थकी तेलने जुदो काढीने देखाडे के अहो आयुष्यमतो आ तेल अने आ खल एम आत्मा अने शरीरने कोइ पुरुष जुदो करी देखाडनार नथी एमज यथा दृष्टांते कोइ एक परुष सेलडी थकी सेलडीनो रश जुदो काढीने देखाडे के अहो आयुष्यमतो आ इक्षुरस अने आ छोतरा एम आत्मा अने शरीरने जुदो करी देखाडनार कोइ पुरुष नथी यथादृष्टाते कोइ एक पुरुष अरणी थकी अग्नी जुदो काढीने देखाडे के हे आयुष्यमतो आ अग्नि अने आ अरणी एम शरीर अने अत्माने जुदो करी देखाडनार कोइ पुरुष नथी ॥ (एवअसतेके०) एम अछतो अने (असविज्जमाणे के०) अविद्यमान जे आत्माछे तेने पूर्वोक्त पदार्थोने जेम जुदा जुदा करी देखाडे तेम ए आत्मा अने शरीरने जुदो जुदो करी देखाडनार जगतमा कोइ पुरुष नथी (जेसितंसुयखायपन्नवतितंके०) ते कारण माटे तेहिज जीव अने तेहिज शरीर ए पक्ष सत्य स्वाख्यात जाणवो (तम्हाके०) तस्मात् (अन्नोजीवोके०) अन्य जीव अने (अन्नसरीरके०) शरीर पण अन्यछे ए वचन (तेमिछाके०) तेमिथ्याछे ॥१६॥

॥ दीपिका–आत्मनास्तित्व दृष्टांतराह । (सेजहा इत्यादि) तद्यथा नाम कश्चित्पुरुष कोशत प्रत्याकारादसि खड्गमनिनिवृत्य समारुप्यान्येषामुपदर्शयेत् । तद्यथा । अयमायुष्मन् असि खड्ग । अय च कोशप्रत्याकार । एवमेव जीवशरीरयोर्नास्त्युपदर्शयिता तथाय जीवश्च शरीरमिति नास्त्येवमुपदर्शयिता कश्चिदतोन

सरीर से जहा णाम एकेइ पुरिसे मसाउअसि अभिनिवट्टित्ताए उवद सेज्जा अयमाउसो मसे अय अठी एवमेव नत्थि केइ पुरिसे उवदसे त्तारो अयमाउसो आया इय सरीरं से जहा णाम एकेइ पुरिसे करय लाउ आमलक अभिनिवट्टित्ताए उवदसेज्जा अयमाउसो करतले अय आमलए एवमेव णत्थि केइपुरिसे उवदसेत्तारो अयमाउसो आया इय सरीर से जहा णाम एकेइ पुरिसे दहिउ नवनीय अभिनिव ट्टित्ताए उवदसेज्जा अयमाउसो नवनीय अयतु दही एवमेव णत्थि केइपुरिसे जाव सरीर से जहा णाम एकेइ पुरिसे तिलेहितो तिल्ल अभि निवट्टित्ताए उवदसेज्जा अयमाउसो तेल्ल अय पिन्नाए एवमेव जाव स रीर से जहा णाम एकेइपुरिसे इक्कूतोखोतरस अभिनिवट्टित्ताए उवद सेज्जा अयमाउसो खोतरसे अय गेए एवमेव जाव सरीर से जहा णाम एकेइ पुरिसे अरणीतोअग्गि अभिनिवट्टित्ताए उवदसेज्जा अयमाउसो अरणी अय अग्गी एवमेव जाव सरीर एव असते असविज्जमाणे जेसिं त सुयक्खाय नवति त अन्नोजीवो अन्न सरीर तम्हा ते मिछा ॥ १६ ॥

अर्थ–(सेजहाणामए के०) ते जेम यथा दृष्टांते छे तेम कही देखाडे छे नाम इति सनावनायेछे (केइपुरिसे के०) कोइ एक पुरुष (कोसीउ के०) पडीयार थकी (असिके०) खड्ग काढीने (अनिनिवट्टित्ताएके०) देखाडे अने (उवदसेज्जा के०) कहे (अयमाउसो के०) हे आयुष्मतो आ (असी के०) तलवार (अयकोसी के०) ए पडियार एम जुदा जुदा देखाडी आपे (एवमेवणत्थिकेइपुरिसेअनिनिवट्टित्ताणउवदसे त्तारोअयमाउसोआयाइयसरीर के०) जेम ए पडिहार अने ए खड्ग एम बन्ने जुदा जु दा करी देखाडे तेम एवो कोइ पुरुष शरीर अने जीवने जुदो जुदो करी देखाडनार जगत मांहे नथी (सेजहाणामए के०) ए वचन यथा दृष्टाते करी देखाडेछे नाम इति सनाव नायेछे (केइपुरिसेमुजाउइसिय के०) जेम कोइ एक पुरुष मुज एटले तृण थकी तेनो गर्न नूत जे शली तेने (अनिनिवट्टित्ताए के०) जुदा जुदा काढीने (उवदसेज्जा के०) देखाडे जे ए तृण अने ए शली एम देखाडे के (अयमाउसोके०) अहो आयुष्मत (मु जेइयइसिय के०) ए तृण अने ए शली (एवामेवनत्थिकेइपुरिसेउवदसेत्तारोअयमाउ सोआयाइयसरीर के०) एम आत्मा अने शरीरने जुदो जुदो करी देखाडनार कोइ पुरुष

नथी (सेजहाणामए के०) ते वली यथा दृष्टांते करी देखाडेछे (केइपुरिसेमसाउथ्रही अनिनिव्वटित्ताणउवदसेज्जा के०) कोइक पुरुष मास थकी हाम जुदा काढीने देखाडेके (अयमाउसो के०) अहो आयुष्यमतो (मसेअयअठीके०) आ मास अने ए हाड (ए वामेवणत्थिकेइपुरिसेउवदसेत्तारोअयमाउसोआयाइयसरीर के०) एम आ आत्मा अने ए शरीर एने जुदो जुदो देखाडनार कोइ पुरुष नथी (सेजहाणामएकेइपुरिसेकरयलाउ आमलकअनिनिव्वटित्ताणउवदसेज्जा के०) यथा दृष्टाते कोइ एक पुरुष करतल एटले हथेली थकी आमलो जुदो करी देखाडे (अयमाउसोकरतलेअयआमलए के०) हे आयुष्यमतो आ हथेली अने आ आमलो (एवमेवनत्थिकेइपुरिसेउवदसेत्तारोअयमा उसोआयाइयसरीरके०) एम आ आत्मा अने आ शरीर एरीते जुदा जुदा करी देखाडनार कोइ पुरुष नथी (सेजहाणामएकेइपुरिसेदहीउनवनीयअनिनिव्वटित्ताणउवदसेज्जाअयमा उसोनवनीय अय तुदहीएवामेवनत्थिकेइपुरिसेजावसरीर के०) यथा दृष्टाते केइ एक पुरुष दही थकी माखण जुदो काढीने देखाडे के अहो आयुष्यमतो आ माखण अने आ दही एम आ आत्मा अने आ शरीर एरीते जुदा जुदा करी देखाडनार कोइ पुरुष नथी एमज यथा दृष्टाते कोइ एक पुरुष तिल थकी तेलने जुदो काढीने देखाडे के अहो आयुष्यमतो आ तेल अने आ खल एम आत्मा अने शरीरने कोइ पुरुष जुदो करी देखाडनार नथी एमज यथा दृष्टांते कोइ एक परुप सेलडी थकी सेलडीनो रश जुदो काढीने देखाडे के अहो आयुष्यमतो आ इक्षुरस अने आ छोतरा एम आत्मा अने शरीरने जुदो करी देखाडनार कोइ पुरुष नथी यथादृष्टाते कोइ एक पुरुष अरणी थकी अग्नी जुदो काढीने देखाडे के हे आयुष्यमतो आ अग्नि अने आ अरणी एम शरीर अने आत्माने जुदो करी देखाडनार काइ पुरुष नथी ॥ (एवअसतेके०) एम अछतो अने (असविज्जमाणे के०) अविद्यमान जे आत्माछे तेने पूर्वोक्त पदार्थोने जेम जुदा जुदा करी देखाडे तेम ए आत्मा अने शरीरने जुदो जुदो करी देखाडनार जगतमा कोइ पुरुष नथी (जेतितंसुयखायनवतितंके०) ते कारण माटे तेहिज जीव अने तेहिज शरीर ए पक्ष सत्य स्वाख्यात जाणवो (तम्हाके०) तस्मात् (अन्नोजीवोके०) अन्य जीव अने (अन्नसरीरके०) शरीर पण अन्यछे ए वचन (तेमिछाके०) तेमिथ्याछे ॥१६॥

॥ दीपिका—आत्मनास्तित्व दृष्टांतेराह । (सेजहा इत्यादि) तद्यथा नाम कश्चित्पुरुष कोशत प्रत्याकारादसि खड्गमनिनिवृत्य समारुप्यान्येपामुपदर्शयेत् । तद्यथा । अयमायुष्मन् असि खड्ग । अय च कोशप्रत्याकार । एवमेव जीवशरीरयोर्नास्त्युपदर्शयिता तथाय जीवश्च शरीरमिति नास्त्येवमुपदर्शयिता कश्चिदतोन

सरीर से जहा णाम एकेइ पुरिसे मसाउअर्हि अन्निनिवटित्ताए उवद सेज्जा अयमाउसो मंसे अय अठी एवमेव नत्थि केइ पुरिसे उवदसे त्तारो अयमाउसो आया इय सरीरं से जहा णाम एकेइ पुरिसे करय लाउ आमलक अन्निनिवटित्ताए उवदसेज्जा अयमाउसो करतले अय आमलए एवमेव णत्थि केइपुरिसे उवदसेत्तारो अयमाउसो आया इय सरीर से जहा णाम एकेइ पुरिसे दहिउ नवनीय अन्निनिव टित्ताए उवदसेज्जा अयमाउसो नवनीय अयतु दही एवमेव णत्थि केइपुरिसे जाव सरीर से जहा णाम एकेइ पुरिसे तिलेहितो तिल्ल अन्नि निवटित्ताए उवदसेज्जा अयमाउसो तेल्ल अय पिन्नाए एवमेव जाव स रीर से जहा णाम एकेइपुरिसे इक्कूतोखोतरस अन्निनिवटित्ताए उवद सेज्जा अयमाउसो खोतरसे अय गेए एवमेव जाव सरीर से जहा णाम एकेइ पुरिसे अरणीतोअग्गि अन्निनिवटित्ताए उवदसेज्जा अयमाउसो अरणी अय अग्गी एवमेव जाव सरीर एव असते असविज्जमाणे जेसि त सुयरकाय न्नवति त अन्नोजीवो अन्न सरीर तम्हा ते मिछा ॥ १६ ॥

अर्थ–(सेजहाणामए के०) ते जेम यथा दृष्टांते छे तेम कही देखाडे छे नाम इति सन्नावनायेछे (केइपुरिसे के०) कोइ एक पुरुष (कोसीउ के०) पडीयार थकी (असिके०) खड्ग काढीने (अन्निनिवटित्ताणके०) देखाडे अने (उवदसेज्जा के०) कहे (अयमाउसो के०) हे आयुष्मंतो आ (असी के०) तलवार (अयकोसी के०) ए पडियार एम जुदा जुदा देखाडी आपे (एवमेवणत्थिकेइपुरिसेअन्निनिवटित्ताणउवदसे त्तारोअयमाउसोआयाइयसरीर के०) जेम ए पडिहार अने ए खड्ग एम बन्ने जुदा जु दा करी देखाडे तेम एवो कोइ पुरुष शरीर अने जीवने जुदो जुदो करी देखाडनार जगत मांहे नथी (सेजहाणामए के०) ए वचन यथा दृष्टाते करी देखाडेछे नाम इति सन्नाव नायेंछे (केइपुरिसेमुजाउइसिय के०) जेम कोइ एक पुरुष मुज एटले तृण थकी तेनो गर्न नूत जे शली तेने (अन्निनिवटित्ताण के०) जुदा जुदा काढीने (उवदसेज्जा के०) देखाडे जे ए तृण अने ए शली एम देखाडे के (अयमाउसोके०) अहो आयुष्मत (मु जेइयइसिय के०) ए तृण अने ए शली (एवामेवनत्थिकेइपुरिसेउवदसेत्तारोअयमाउ सोआयाइयसरीर के०) एम आतमा अने शरीरने जुदो जुदो करी देखाडनार कोइ पुरुष

नथी (सेजहाणामए के०) ते वली यथा दृष्टांते करी देखाडेछे (केइपुरिसेमसाउअछी अनिनिव्वट्टित्ताणउवदसेज्जा के०) कोइक पुरुष मास थकी हाड जुदा काढीने देखाडेके (अयमाउसो के०) अहो आयुष्यमतो (मसेअयअछीके०) आ मास अने ए हाड (ए वामेवणत्थिकेइपुरिसेउवदसेत्तारोअयमाउसोआयाइयसरीर के०) एम आ आत्मा अने ए शरीर एने जुदो जुदो देखाडनार कोइ पुरुष नथी (सेजहाणामएकेइपुरिसेकरयलाउ आमलकयनिनिव्वट्टित्ताणउवदसेज्जा के०) यथा दृष्टाते कोइ एक पुरुष करतल एटले हथेली थकी आमलो जुदो करी देखाडे (अयमाउसोकरतलेअयआमलए के०) हे आयुष्यमतो आ हथेली अने आ आमलो (एवमेवनत्थिकेइपुरिसेउवदसेत्तारोअयमा उसोआयाइयसरीरके०) एम आ आत्मा अने आ शरीर एरीते जुदा जुदा करी देखाडनार कोइ पुरुष नथी (सेजहाणामएकेइपुरिसेदहीउंनवनीयअनिनिव्वट्टित्ताणउवदसेज्जाअयमा उसोनवनीय अय तुदहीएवामेवनत्थिकेइपुरिसेजावसरीर के०) यथा दृष्टाते केइ एक पुरुष दही थकी माखण जुदो काढीने देखाडे के अहो आयुष्यमतो आ माखण अने आ दही एम आ आत्मा अने आ शरीर एरीते जुदा जुदा करी देखाडनार कोइ पुरुष नथी एमज यथा दृष्टाते कोइ एक पुरुष तिल थकी तेलने जुदो काढीने देखाडे के अहो आयुष्यमतो आ तेल अने आ खल एम आत्मा अने शरीरने कोइ पुरुष जुदो करी देखाडनार नथी एमज यथा दृष्टांते कोइ एक परुष सेलडी थकी सेलडीनो रश जुदो काढीने देखाडे के अहो आयुष्यमतो आ इक्षुरस अने आ गेतरा एम आत्मा अने शरीरने जुदो करी देखाडनार कोइ पुरुष नथी यथादृष्टाते कोइ एक पुरुष अरणी थकी अग्नी जुदो काढीने देखाडे के हे आयुष्यमतो आ अग्नि अने आ अरणी एम शरीर अने अत्माने जुदो करी देखाडनार कोइ पुरुष नथी ॥ (एवअसतेके०) एम अछ तो अने (असविज्जमाणे के०) अविद्यमान जे आत्माछे तेने पूर्वोक्त पदार्थोने जेम जुदा जुदा करी देखाडे तेम ए आत्मा अने शरीरने जुदो जुदो करी देखाडनार जगत मा कोइ पुरुष नथी (जेसितंसुयखायनवतितंके०) ते कारण माटे तेहिज जीव अने तेंहिज शरीर ए पक्ष सत्य स्वाख्यात जाणवो (तम्हाके०) तस्मात् (अन्नोजीवोके०) अन्य जीव अने (अन्नसरीरके०) शरीर पण अन्यछे ए वचन (तेमिछाके०) तेमिथ्याछे ॥१६॥

॥ दीपिका–आत्मनास्तित्व दृष्टांतेराह । (सेजहा इत्यादि) तद्यथा नाम कश्चित्पुरुष कोशात प्रत्याकारादसि खड्गमनिनिवृत्य समाकृष्यान्येपामुपदर्शयेत् । तद्यथा । अयमायुष्मन् असि खड्ग । अय च कोशप्रत्याकार । एवमेव जीवशरीरयोर्नास्त्युपदर्शयिता तथाय जीवश्च शरीरमिति नास्त्येवमुपदर्शयिता कश्चिदतोन

कायाभिन्नोजीवइति । अत्रार्थे बहून् दृष्टांतानाह । तद्यथा । कश्चित्पुरुषोमुंजात्तृणविशेपात् (इसिअति) तज्जनूता शलाकां पृथक् कृत्य दर्शयेत् तथा मांसादस्थि करतलादामलक दध्नोनवनीतं तिलेन्यस्तैलं इक्षोरसमरणितोऽग्निमभिनिवृत्य पृथक् कृत्य दर्शयेदेव शरीरादपि जीव नास्त्येवमुपदर्शयिता कश्चिदतोसन्नात्मा शरीरात्पृथगसवेद्यमानश्चेति । येषां च स्वमतानुरागादेतत्स्वाख्यातं नवति । यदन्योजीवोन्यच्च शरीरमिति । एव मात्मा च पृथक् नोपलन्यते तस्मात्तन्मिथ्या ॥ १६ ॥

॥टीका—तद्यथा नाम कश्चित्पुरुष कोशत परिवारादसि खड्गमभिनिर्वर्त्य समाकृष्यान्येषा मुपदर्शयेत्तद्यथाऽयमायुष्मानसि खड्गोयं च कोश परिवारएवमेव जीवशरीरयोरपिनास्त्यु पदर्शयिता। तद्यथाऽय जीवइदच शरीरमिति। नचास्त्येवमुपदर्शयिता कश्चिदत कायाभ्र भिन्नोजीवइति । अस्मिंश्चार्थे बह्वोदृष्टांता सतीत्यतोदर्शयितुमाह । तद्यथा वा कश्चि त्पुरुषोमुंजात् तृणविशेषात् (इसियति) तज्जनूता शलाकां पृथक्कृत्य दर्शयेत् । तथा मांसादस्थि तथा करतलादामलक तथा दध्नोनवनीतं तिलेन्यस्तैलमिति । तथेक्षोरस त थाऽरणितोऽग्निमभिनिर्वर्त्य दर्शयेदेवमेव शरीराददि जीवमिति । नचास्त्येवमुपदर्शयिता तोऽसन्नात्माशरीरात्पृथगसवेद्यमानश्चेति । प्रयोगश्चात्र सुखड खनाक् परलोकायायीना स्त्यात्मा तिलशश्छिद्यमानोपि शरीरकेपृथगनुपलब्धेर्घटात्मवत् व्यतिरेकेणच कोशखड्ग वत्तदेवयुक्तिभि प्रतिपादितोप्यात्मान्नवेत् । येषा पृथगात्मदिना स्वदर्शनानुरागादेत त्स्वाख्यातं नवति । तद्यथा । अन्योजीव परलोकानुयायी अमूर्तोऽन्यच्च तन्नवल्तिमूर्तिमच्छरीरमेतच्च पृथङ्नोपलन्यते तस्मात्तन्मिथ्या ये कैश्चिडुच्यते यथास्त्यात्मा पर लोकानुयायीति ॥ १६ ॥

सेहता तहणह खणह हणह महह पयह आलुपह विलुपह सहसा कारेह विपरामुसह एतावतावजीवे णत्थि परलोएवा ते णो एव विप्प डिवेदेति तकिरियाइवा अकिरियाइवा सुक्कडेइवा डुक्कडेइवा कल्लाणे इवा पावएइवा साहुइवा असाहुइवा सिद्धाइवा असिद्धाइवा निरएइवा अनिरएइवा एवतेविरूवरूवेहि कम्मसमारम्नेहि विरू वरूवाइ कामन्नोगाइ समारम्नति नोयणाए ॥ १७ ॥ एव एगेपागब्भि या णिस्कम्म मामग धम्म पन्नवेति तसद्दहमाणा तपत्तियमाणा तरो यमाणा साहु सुयस्काए समणेतिवा माहणेतिवा काम खलु आउसो तुम पूययामि त जहा असणेणवा पाणेणवा खाइमेणवा साइमेणवा

वज्जेणवा पडिग्गहेणवा कवलेणवा पायपुच्छणेणवा तहेगे पूयणाए समाउट्टिसु तहेगेपूयणाए निकाइसु ॥ १८ ॥

अर्थ—हवे ए पक्ष ग्रहण करनार नास्तिकहे ते देखाडेछे एवा अध्यवसाये प्रवर्त्ततो एवो नास्तिकवादि (सेहंताके०) ते पोते पण प्राणीओने हणे केमके ते प्राणातिपातने विषे दोष ने अण जाणतो थको हे माटे बीजानें पण जीवघात करवानो उपदेश आपे ते उपदेश क हेछे (तंहणहके०) ते खङ्गादिके करी प्राणीउंने हणो एमां दोष नथी (खणहके०) पृथिव्यादिकने खणो (छणहके०) छेदो (डहहके०) बालो दहन करो (पयहके०) पचावो रसोइ करो (आलुपहके०) लूटो (विलुपहके०) विशेषे लूटो (सहसाक्कारे हके०) वस्त्र पात्रादिक सर्व अण विमास्या करो (विपरामुसहके०) इत्यादिक विपरी त मतिनु उपदेश आपे (एतावतावजीवेणत्थिके०) एटले जीव नथी जेटले शरीर ते टलेज जीवछे (परलोएवाके०) परलोक पण नथी तो परलोकने अनावे पोतानी इछा प्रमाणे खाउं पीउं लाड करो (तेणोएवविप्पडिवेदेतिके०) अहीं श्री सुधर्म स्वामि श्रीजंबू स्वामिने कहेछे केपरलोकनें अनावे पुण्य पाप पण नथी जेनो एवो पक्षछे ते बापडा नास्ति क मतिना धणी एवाछे ते आगल वक्ष्यमाण एटले जे आगल हु कहीश तेने नथी जा णता (तकिरियाइवाके०) ते क्रिया एटले रुडा अनुष्ठानने नथी जाणता (अकिरिया इवाके०) माठा अनुष्ठानने नथी जाणता (सुक्कडेइवाडुक्कडेइवाके०) रुडुकयु नथी जाणता तथा माठुकयु नथी जाणता (कल्लाणेइवापावएइवा के०) पुण्यने नजा णे पाप नजाणे (साहुइवाअसाहुइवा के०) साधु तथा असाधुने नथी जाणता (सिद्धाइवाअसिद्धाइवा के०) सिद्धने नजाणे असिद्ध एटले संसारने नजाणे (निरए इवाअनिरएइवाके०) नारकी अने अनारकी जे तिर्यंच मनुष्य अने देवता तेने पण नजा णे (एवतेविरूवरूवेहिं के०) एरीतें ते नास्तिकवादि विरूपरूप आत्मानो अनाव पडिवजीने (कम्मसमारंनेहिंके०) नाना प्रकारना कर्मने समारंने ते नाना प्रकारना कर्म ने करवे करीने (विरूवरूवाइंकामनोगाइंसमारंनतिनोयणाएके०) नाना प्रकारना काम नोगने समारंने नोजननेअर्थेनोगवे ॥ १७ ॥ (एवएगेपागब्भियाके०) एरीते एक नास्तिक वादि अत्यंत धृष्ट थका एम कहे छे के (णिरकम्मके०) ए आत्मा शरीर थकी जुदो नथी एटले तेहिज शरीर अने तेहिज जीव एवा धृष्ट पणे प्रवर्त्ते तथा पोताना दर्शन ने अनुसारे प्रवज्या ग्रहण करीने (मामगधम्मपन्नवेंतिके०) महारो धर्म सत्यछे एवी प्ररूपणा करे (तंसद्दहमाणाके०) तेनास्तिकवादिनो नापलो जे धर्म तेने सद्दहता (त पत्तियमाणा के०) तथा तेने सत्य करीमानता (तंरोयमाणा के०) तेने विषे रुचि करता

कायाभिन्नोजीवइति । अत्रार्थे बहून् दृष्टांतानाह । तद्यथा । कश्चित्पुरुषोमुंजात्तृणविशेषात् (इसिअति) तज्जनूता शलाकां पृथक् रुत्य दर्शयेत् तथा मांसादस्थि करतलादामलक दध्नोनवनीतं तिलेन्यस्तैलं इक्षोरसमरणितोऽग्निमनिनिवृत्य पृथक् रुत्य दर्शयेदेव शरीरादपि जीव नास्त्येवमुपदर्शयिता कश्चिदतोसन्नात्मा शरीरात्पृथगसवेद्यमानश्चेति । येषा च स्वमतानुरागादेतत्स्वाख्यातं नवति । यदन्योजीवोन्यच्च शरीरमिति । एव मात्मा च पृथक् नोपलन्यते तस्मात्तन्मिथ्या ॥ १६ ॥

॥टीका–तद्यथा नाम कश्चित्पुरुष कोशत परिवारादसि खड्गमनिनिर्वर्त्य समाकृष्यान्येषामुपदर्शयेत्तद्यथाऽयमायुष्मानसि खड्गोयं च कोश परिवारएवमेव जीवशरीरयोरपिनास्त्युपदर्शयिता। तद्यथाऽय जीवइदच शरीरमिति।नचास्त्येवमुपदर्शयिता कश्चिदत कायान्निन्नोजीवइति । अस्मिंश्चार्थे बहवोदृष्टाता सतीत्यतोदर्शयितुमाह । तद्यथा वा कश्चित्पुरुषोमुंजात् तृणविशेषात् (इसियति) तज्जनूता शलाका पृथक्रुत्य दर्शयेत् । तथा मांसादस्थि तथा करतलादामलक तथा दध्नोनवनीतं तिलेन्यस्तैलमिति । तथेक्षोरस तथाऽरणितोऽग्निमनिनिर्वर्त्य दर्शयेदेवमेव शरीरादपि जीवमिति । नचास्त्येवमुपदर्शयिता तोऽसन्नात्माशरीरात्पृथगसवेद्यमानश्चेति । प्रयोगश्चात्र सुखदु खनाक् परलोकायायीनास्त्यात्मा तिलशश्छिद्यमानोपि शरीरकेपृथगनुपलब्धेर्घटात्मवत् व्यतिरेकेणच कोशखड्गवत्तदेवयुक्तिनि प्रतिपादितोप्यात्मानवेत् । येषा पृथगात्मदिना स्वदर्शनानुरागादेतत्स्वाख्यातं नवति । तद्यथा । अन्योजीव परलोकानुयायी अमूर्तोऽन्यच्च तन्नवदृत्तिमूर्तिमच्छरीरमेतच्च पृथङ्नोपलन्यते तस्मात्तन्मिथ्या यै कैश्चिदुच्यते यथास्त्यात्मा परलोकानुयायीति ॥ १६ ॥

सेहंता तहणह खणह हणह मुहह पयह आलुपह विलुपह सहसा कारेह विपरामुसह एतावतावजीवे णत्थि परलोएवा ते णो एव विप्पडिवेदेति तकिरियाइवा अकिरियाइवा सुक्कडेइवा दुक्कडेइवा कल्लाणेइवा पावएइवा साहुइवा असाहुइवा सिद्धाइवा असिद्धाइवा निरएइवा अनिरएइवा एवतेविरूवरूवेहिं कम्मसमारंनेहिं विरूवरूवाइ कामनोगाइ समारनंति नोयणाए ॥ १७ ॥ एव एगेपागन्निया णिक्कम्म मामग धम्म पन्नवेति तसद्दहमाणा तपत्तियमाणा तरोयमाणा साहु सुयक्खाए समणेतिवा माहणेतिवा काम खलु आउसो तुम पूययामि त जहा असणेणवा पाणेणवा खाइमेणवा साइमेणवा

वत्थेणवा पडिग्गहेणवा कवलेणवा पायपुछणेणवा तत्थेगे पूयणाए समाउद्दिसु तत्थेगेपूयणाए निकाइसु ॥ १८ ॥

अर्थ—हवे ए पक्ष ग्रहण करनार नास्तिकछे ते देखाडेछे एवा अध्यवसाये प्रवर्त्ततो एवो नास्तिकवादि (सेहंताके०) ते पोते पण प्राणीओने हणे केमके ते प्राणातिपातने विषे दोष ने अण जाणतो थको छे माटे बीजाने पण जीवघात करवानो उपदेश आपे ते उपदेश क हेछे (तंहणहके०) ते खड्गादिके करी प्राणीउने हणो एमां दोष नथी (खणहके०) पृथिव्यादिकने खणो (छणहके०) छेदो (महहके०) बालो दहन करो (पयहके०) पचावो रसोइ करो (आलुपहके०) लूटो (विलुपहके०) विशेषे लूटो (सहसाकारे हके०) वस्त्र पात्रादिक सर्व अण विमास्या करो (विपरामुसहके०) इत्यादिक विपरी त मतिनु उपदेश आपे (एतावतावजीवेणत्थिके०) एटले जीव नथी जेटले शरीर ते टलेज जीवछे (परलोएवाके०) परलोक पण नथी तो परलोकने अणभावे पोतानी इछा प्रमाणे खाउ पीउ लाड करो (तेणोएवविप्पडिवेदेतिके०) अहीं श्री सुधर्म स्वामि श्रीजंबू स्वामिने कहेछे केपरलोकने अणभावे पुण्य पाप पण नथी जेनो एवो पक्षछे ते बापडा नास्ति क मतिना धणी एवाछे ते आगल वक्ष्यमाण एटले जे आगल हु कहीश तेने नथी जा णता (तकिरियाइवाके०) ते क्रिया एटले रुडा अनुष्ठानने नथी जाणता (अकिरिया इवाके०) माठा अनुष्ठानने नथी जाणता (सुक्कडेइवाडुक्कडेइवाके०) रुडुकस्यु नथी जाणता तथा माठुकस्यु नथी जाणता (कल्लाणेइवापावएइवा के०) पुण्यने नजा णे पाप नजाणे (साहुइवाअसाहुइवा के०) साधु तथा असाधुने नथी जाणता (सिद्धाइवाअसिद्धाइवा के०) सिद्धने नजाणे असिद्ध एटले ससारने नजाणे (निरए इवाअनिरएइवाके०) नारकी अने अनारकी जे तिर्यंच मनुष्य अने देवता तेने पण नजा णे (एवतेविरूवरूवेहि के०) एरीते ते नास्तिकवादि विरूपरूप आत्मानो अनाव पडिवजीने (कम्मसमारम्भेहिंके०) नाना प्रकारना कर्मने समारम्भे ते नाना प्रकारना कर्म ने करवे करीने (विरूवरूवाइकामभोगाइसमारम्भंतिभोयणाएके०) नाना प्रकारना काम भोगने समारम्भे भोजननेअर्थेभोगवे॥१७॥ (एवएगेपागब्भियाके०) एरीते एक नास्तिक वादि अत्यंत धृष्ट थका एम कहे छे के (णिक्खम्मके०) ए आत्मा शरीर थकी जुदो नथी एटले तेहिज शरीर अने तेहिज जीव एवा धृष्ट पणे प्रवर्त्ते तथा पोताना दर्शन ने अनुसारे प्रवज्या ग्रहण करीने (मामगधम्मपन्नवेंतिके०) म्हारो धर्म सत्यछे एवी प्ररूपणा करे (तसद्दहमाणाके०) तेनास्तिकवादिनो भाषेलो जे धर्म तेने सर्दहता (त पत्तियमाणा के०) तथा तेने सत्य करीमानता (तंरोयमाणा के०) तेने विषे रुचि करता

कायाद्भिन्नोजीवइति । अत्रार्थे बहून् दृष्टातानाह । तद्यथा । कश्चित्पुरुपोमुंजात्तृणविशेपात् (इसिअति) तज्जनूता शलाकां पृथक् कृत्य दर्शयेत् तथा मांसादस्थि करतलाद्यामलक दध्नोनवनीतं तिलेन्यस्तैल इक्षोरसमरणितोऽग्निमभिनिवृत्य पृथक् कृत्य दर्शयेदेव शरीरादपि जीव नास्त्येवमुपदर्शयिता कश्चिदतोऽसन्नात्मा शरीरात्पृथगसवेद्यमानश्चेति । येषा च स्वमतानुरागादेतत्स्वाख्यातं नवति । यदन्योजीवोन्यच्च शरीरमिति । एव मात्मा च पृथक् नोपलन्यते तस्मात्तन्मिथ्या ॥ १६ ॥

॥टीका—तद्यथा नाम कश्चित्पुरुप कोशत परिवारादसि खड्गमनिनिर्वर्त्य समाकृष्यान्येषामुपदर्शयेत्तद्यथाऽयमायुष्मानसि खड्गोय च कोश परिवारएवमेव जीवशरीरयोरपिनास्त्युपदर्शयिता। तद्यथाऽय जीवइदच शरीरमिति।नचास्त्येवमुपदर्शयिता कश्चिदत कायाद्भिन्नोजीवइति । अस्मिंश्चार्थे बह्वोदृष्टांता सतीत्यतोदर्शयितुमाह । तद्यथा वा कश्चित्पुरुषोमुंजात् तृणविशेपात् (इसियति) तज्जनूता शलाका पृथक्कृत्य दर्शयेत् । तथा मांसादस्थि तथा करतलादामलक तथा दध्नोनवनीतं तिलेन्यस्तैलमिति । तथेक्षोरस तथाऽरणितोऽग्निमभिनिर्वर्त्य दर्शयेदेवमेव शरीराददि जीवमिति । नचास्त्येवमुपदर्शयितातोऽसन्नात्माशरीरात्पृथगसवेद्यमानश्चेति । प्रयोगश्चात्र सुखड खनाक् परलोकायायीनास्त्यात्मा तिलशश्छिद्यमानोपि शरीरकेपृथगनुपलब्धेर्घटात्मवत् व्यतिरेकेणच कोशखड्गवत्तदेवयुक्तिभि प्रतिपादितोप्यात्मानवेत् । येपा पृथगात्मदिना स्वदर्शनानुरागादेतत्स्वाख्यातं नवति । तद्यथा । अन्योजीव परलोकानुयायी अमूर्तोऽन्यच्च तन्नवत्तिमूर्तिमच्छरीरमेतच्च पृथङ्नोपलन्यते तस्मात्तन्मिथ्या ये कैश्चिदुच्यते यथास्त्यात्मा परलोकानुयायीति ॥ १६ ॥

सेहता तहणह खणह नणह मद्दह पयह आलुपह विलुपह सहसाकारेह विपरामुसह एतावताव जीवे णत्थि परलोएवा ते णो एव विप्पडिवेदेति तकिरियाइवा अकिरियाइवा सुक्कडेइवा डुक्कडेइवा कल्लाणेइवा पावएइवा साहुइवा असाहुइवा सिद्धाइवा असिद्धाइवा निरएइवा अनिरएइवा एवतेविरूवरूवेहि कम्मसमारंनेहि विरूवरूवाइ कामनोगाइ समारनंति नोयणाए ॥ १७ ॥ एव एगेपागप्रिया णिक्कम्म मामग धम्म पन्नवेति तसद्दहमाणा तपत्तियमाणा तरोयमाणा साहु सुयक्खाए समणेतिवा माहणेतिवा काम खलु आउसो तुम पूययामि त जहा असणेणवा पाणेणवा खाइमेणवा साइमेणवा

ज्य पश्चान्नास्तिकीभूते संभवति प्रव्रज्या। अथवा नीलपटाद्यंगीकृत कश्चिदस्त्येव प्रव्रज्या विशेषइति। त नास्तिकधर्मं श्रद्दधानारोचयंत स्वमतौ प्रतिपतोऽवितथभावेन गृण्हंत साधुशोभनमेतद्यथा स्वाख्यातोभवता धर्म। हेश्रमण ब्राह्मण शोभन कृतं यदय तज्जीव तच्छरीरधर्मोऽस्माकमुक्त काममिष्टमेतदस्माक। खलुर्वाक्यालंकारे। हे आयुष्मन् उप कारिण त्वा पूजयाम्यहमिति तच्छिष्यावदति। पूजामेवाह। (असणेत्यादि) सुगम। यावत् पादपुंछनकमिति। तत्रेके पूजाया (समाउट्टिंसु) समावृत्ता प्रव्हीभूताराजाद य। एके तत्र स्वमतस्थित्या निकाचितवतस्त नृपादिक स्वधर्मे नियमितवतइत्यर्थ १७

॥टीका–एतदध्यवसायीच सलोकायतिक स्वत प्राणिनामेकेंद्रियादीना हता व्यापादको भवति प्राणातिपाते दोषाभावमभ्युपगम्यान्येषामपि प्राण्युपघातकारिणामुपदेश ददाति। तद्यथा। प्राणिन खड्गादिना घातयत पृथिव्यादिक खनतेत्यादिसुगम। यावदेतावानेव शरीरमात्रएव जीवस्तत परलोकिनोऽभावान्नास्ति परलोकोऽतस्तदभावाच्च यथेष्टमासत। तथाचोक्त। पिब खादच साधु शोभने यदतीत वरगात्रि तन्न ते॥ नहि भीरुगत निवर्त ते समुदयमात्रमिदकलेवर। तदेव परलोकयायिनोजीवस्याभावान्नपुण्यपापे स्तोनापि पर लोकइत्येव येषा पक्षस्ते लोकायतिकास्तज्जीवतच्छरीरवादिनोनैवैत वक्ष्यमाण प्रतिवेदयति अभ्युपगच्छति। तद्यथा। क्रियावा सदनुष्ठानात्मिकामक्रियावा असदनुष्ठानरूपा एव नच ते विप्रतिवेदयति। यदिहि आत्मा तत्क्रियावान्नकर्मणोभोक्ता स्याचतोपापभयात्सदनुष्ठान चिता स्यात्तदभावाच्च सत्क्रियादिचितापि दूरोत्सादितैव। तथा सुकृतं दुष्कृत वा कल्या णमिति पापमिति वा साधुकृतमसाधुकृतमित्यादिका चितैव नास्ति। तथाहि। सुकृता नां कल्याणविपाकिना साधुतया ऽवस्थान दुष्कृताना च पापविपाकिनामसाधुत्वेनावस्था नमेतद्द्वयमपि सत्यात्मनि तत्फलभुजि संभवति तदभावाच्च कुतोनर्थकौ हिताहितप्रा तिपरिहारौ स्याता। तथा सुकृतेन कल्याणेन साध्वनुष्ठानेनाशेषकर्मक्षयरूपासिद्धिस्तथा दुष्कृतेन पापानुबंधिना असाध्वनुष्ठानेन नरकोनरकेवा तिर्यङ्नरामरगतिलक्षण स्यादित्ये वमात्मिका चितैव न भवेत्तदाधारस्यात्मसद्भावस्यानभ्युपगमादिति भाव। पुनरपि लोकाय तिकानुष्ठानदर्शनायाह। (एवतेइत्यादि) एवमनंतरोक्तेन प्रकारेण ते नास्तिकाआत्माभाव प्रतिपाद्य विरूप नानाप्रकारं रूप स्वरूप येषाते तथा कर्मसमारंभा सावद्यानुष्ठानरूपा पशुघातमासभक्षणसुरापाननिर्लांछनादिकास्तैरेवंभूतेर्नानाविधै कर्मसमारंभै रूपीभलानु ष्ठानादिनिर्विरूपकान् कामभोगान् समारंभतेसमाददति तदुपभोगार्थमिति॥ १७॥ साम्प्रतं तज्जीवतच्छरीरवादिमतमुपसंजिघृक्षु प्रस्तावमारचयन्नाह। (एवचेगइत्यादि)

थका तथा (साहुसुयरकाएके०) ए अमारो धर्म नलो रुडो स्वाख्यातछे अने अनेरा दर्शनी वापडा मुगध लोकने परलोकनो नय देखाडी आ लोकना सुख थकी वचेछे ते कारणे (समणेतिवाके०) अहो श्रमणो (माहणेतिवाके०) अहो ब्राह्मणो तेहिज जीव अने तेहिज शरीर ए धर्मने घणोज सारो कहीने (कामखलुके०) निश्चे थकी ए धर्मने इह्वो (आउसोके०) अहो आयुष्मतो अमे तमने उन्दस्था नहीका क्यां एक कपटी दर्शनीये तमने वेच्यो हतो तेकारणे अमे तमारा उपकारी छैए माटे अमने (तुमपूययामि के०) तुमे पूजो प्रत्युपकार करो (तंजहाके०) तेहिज कहेछे (असणेणवा पाणेणवा खाइमेणवा साइमेणवाके०) अशने करी पाने करी खादिमे करी स्वादिमे करी ए चतुर्विध आहारे करी पूजो (वत्थेणवाके०) वस्त्रे करी (पडिग्गहेणवाके०) पात्रादिके करी (कवलेणवाके) कवले करी (पायपुछणेणवाके०) पायपुछणे करी पूजो प्रतिजाणो (तछेगेपूयणाएके०) त्या कोइ एक एवी पूजाने विपे (समाउहिसुके०) गृन्द थया अथवा (तछेगेपूयणाएनिकाइसु के०) त्या कोइ एक पूजाने विपे प्रवर्त्तमान थका एवा राजादिक लोकने ते नास्तिको पोताना धर्मने विपे निश्चल करे अने तेने कहेके ए अमारो उपदेश्यो धर्म टालीने अनेरो धर्म आदरशो नही॥ १८ ॥

॥ दीपिका—एतदध्यवसायी सनास्तिक स्वत प्राणिना हता व्यापादक स्यात् अन्येपामपिवक्ति । हणहइत्यादि । घातयत क्षणत क्षणन हिसा दहत पचत आलुपत विलुपत सहसा कारयत विपरामृशत एतावान् शरीरमात्रएव तावज्जीवोजीवाजावाच्च नास्ति परलोक । ततस्तेन न तज्जीवतच्छरीरवादिनोनास्तिकाए तन्न विप्रतिवेदयते नागीकुर्वति । तद्यथा । क्रियां सदनुष्ठानात्मिकामक्रिया वाऽसदनुष्ठानरूपा सुकृतं वा डुष्कृत वा कल्याणवा पापकवा साधुकृतमसाधुकृतंवा इत्यादिका चितैव नास्ति । कोर्थ । सुकृतानि साधुत्वात्कल्याणफलानि डुष्कृतान्यसाधुत्वाद्विरूप फलानीति । आत्मान विनाऽसौ चिता न युज्यतइत्यर्थ । तथा सुकृतेन सिद्धिर्डुष्कृते नासिद्धिस्तथा डुष्कृतेनैव नरक अनरकस्तिर्यङ्नरामरगतिरूप स्यादित्यादिका चिता न युक्ता।जीवस्यैवाजावात् (एवतेत्ति) एवमुक्तप्रकारेण ते नास्तिकाविरूपरूपै कर्मसमारंजै सावद्यानुष्ठानैर्विरूपान् कामजोगान् समारजते समाददति तडुपजोगार्थ ॥ १७ ॥ एवमुक्तप्रकारेणैके नास्तिका प्रागल्जिका प्रागल्न्येन चरति धृष्टता प्राप्ताआत्मा नास्तीति वदति । तथा निष्क्रम्य स्वतानुगता प्रव्रज्या गृहीत्वा मामक धर्म मदीयोऽय धर्मइत्यंगीकृत्य परेन्य प्रज्ञापयंति । यद्यपि नास्तिकाना नास्ति दीक्षा तथापि बौद्धादिमते प्रव्र

ज्य पश्चान्नास्तिकीनूते सनवति प्रव्रज्या। अथवा नीलपटाद्यंगीकृत कश्चिदस्त्येव प्रव्रज्या विशेषइति। त नास्तिकधर्मं श्रद्दधानारोचयत. स्वमतं प्रतियतोऽवितथनावेन गृएहृत साधुशोननमेतद्यथा स्वाख्यातोनवता धर्मं। हेश्रमण ब्राह्मण शोनन रुतं यदय तज्जीव तच्छरीरधर्मोऽस्माकमुक्त कामंमिष्टमेतदस्माक। खलुर्वाक्यालंकारे। हे आयुष्मन् उप कारिण त्वा पूजयाम्यहमिति तच्छिष्यावदति। पूजामेवाह। (असणेत्यादि) सुगम। यावत् पादपुंछनकमिति। तत्रैके पूजाया (समाउंहिंसु) समावृत्ता प्रव्हीनूताराजाद य। एके तत्र स्वमतस्थित्या निकाचितवतस्त नृपादिक स्वधर्मे नियमितवतइत्यर्थः १७

॥टीका–एतदध्यवसायीच सलोकायतिक स्वत प्राणिनामेकेंद्रियादीना हता व्यापादको नवति प्राणातिपाते दोषानावमन्युपगम्यान्येषामपि प्राण्युपघातकारिणामुपदेश ददाति। तद्यथा। प्राणिन खड्गादिना घातयत पृथिव्यादिक खनतेत्यादिसुगम। यावदेतावानेव शरीरमात्रएव जीवस्तत परलोकिनोऽनावान्नास्ति परलोकोऽतस्तदनावाच्च यथेष्टमासत। तथाचोक्त। पिब खादच साधु शोननं यदतीत वरगात्रि तन्न ते॥ नहि नीरुगत निवर्त ते समुदयमात्रमिदंकलेवर। तदेव परलोकयायिनोजीवस्यानावान्नपुण्यपापे स्तोनापि पर लोकइत्येव येषा पक्षस्ते लोकायतिकास्तज्जीवतच्छरीरवादिनोनैवेत वक्ष्यमाण प्रतिवेदयति अन्युपगच्छति। तद्यथा। क्रियावा सदनुष्ठानात्मिकामक्रियावा असदनुष्ठानरूपा एव नैव ते विप्रतिवेदयति। यदिहि आत्मा तत्क्रियावान्नकर्मणोनोक्ता स्यात्ततोपापनयात्सदनुष्टान चिंता स्यात्तदनावाच्च सत्क्रियादिचितापि दूरोत्सादितैव। तथा सुरुतं डुप्कृत वा कल्या णमिति पापमिति वा साधुरुतमसाधुकृतमित्यादिका चितैव नास्ति। तथाहि। सुरुता नां कल्याणविपाकिना साधुतया ऽवस्थान डुप्कृताना च पापविपाकिनामसाधुत्वेनावस्था नमेतडुनयमपि सत्यात्मनि तत्फलनुजि सनवति तदनावाच्च कुतोनर्थका हिताहितप्रा प्तिपरिहारौ स्याता। तथा सुरुतेन कल्याणेन साध्वनुष्टानेनाशेषकर्मक्षयरूपासिद्धिस्तथा डुप्कृतेन पापानुबंधिना असाध्वनुष्ठानेन नरकोनरकेवा तिर्यङ्नरामरगतिलक्षण स्यादित्ये वमात्मिका चिंतैव न नवेत्तदाधारस्यात्मसनावस्यानन्युपगमादिति नाव। पुनरपि लोकाय तिकानुष्ठानदर्शनायाह। (एवंतेइत्यादि) एवमनंतरोक्तेन प्रकारेण ते नास्तिकाश्रात्मानाव प्रतिपाद्य विरूप नानाप्रकारं रूप स्वरूप येषांते तथा कर्मसमारना सावद्यानुष्ठानरूपा पशुघातमासनक्षणसुरापाननिर्लांछनादिकास्तैरेवनूतैर्नानाविधैः कर्मसमारंनै रुपीवलानु ष्ठानादिनिर्विरूपकान् कामनोगान् समारंनतेसमाददति तडुपनोगार्थमिति॥ १७ ॥ सांप्रतं तज्जीवतच्छरीरवादिमतमुपसंजिहीर्षु प्रस्तावमारचयन्नाह। (एवंचेगइत्यादि)

मूर्तिमत शरीरादन्यदमूर्तं ज्ञानमात्मन्यनुनूयते तस्य चामूर्तेनैव गुणिना नाव्यमत श रीरात्पृथग्नूतश्चात्माऽमूर्तोज्ञानवत्तदाधारनूतोस्तीति । नचात्मान्युपगममंतरेण तज्जीव तच्छरीरवादिन किंचिद्विचार्यमाण मरणमुपपद्यते । दृश्यते च तथानूतएवशरीरे म्रिय माणामृताश्च । कुत समागतोहं कुत्र चेद शरीर परित्यज्य यास्यामि तथेद मे शरीर पुराण कर्मेत्यवमादिका शरीरात्पृथग्नावेनात्मनि सप्रत्ययाश्चनुनूयंते । तदेवमपि स्वा नुनवसिद्धेप्यात्मनि एके केचन नास्तिका पृथक्जीवास्तित्वमश्रद्दधाना प्रागल्निका प्रागल्भ्येन चरंति धृष्टतामापन्नाश्चनिदधति । तद्यथा । श्रयमात्मा शरीरात्पृथग्नूत स्यात्तत सस्थानवर्णगंधरसस्पर्शान्यतमगुणोपेत स्यात् । नच ते वराका स्वदर्शनानु रागाधतमसावृतदृष्टयएतद्विदंति । तथा मूर्तस्यायं धर्मोनामूर्तस्य । नहि ज्ञानस्य स स्थानादयोगुणा सनाव्यते । नच तत्तदनावेपि नास्तीत्येवमात्मापि सस्थानादिगुणरहि तोपि विद्यतइति । एव युक्तियुक्तमप्यात्मान धाष्टर्यान्नान्युपगच्छति तथा निष्क्रम्यच स्व दर्शनविहिता प्रव्रज्या गृहीत्वा नान्योजीव शरीराद्विद्यतइत्येव योधर्मोमदीयोयमित्येव मन्युपगम्य स्वतोऽपरेषा च त तथानूतं धर्मं प्रतिपादयंति । यद्यपि लोकायतिकाना ना स्ति दीक्षादिक तथाप्यपरेण शाक्यादिना प्रव्रज्याविधानेन प्रव्रज्य पश्चाल्लोकायतिकमधी यानस्य तथाविधपरिणतेस्तदेवाभिरुचितमतोमामकोय धर्म स्वयमन्युपगच्छत्यन्येषां च प्रज्ञापयति । यदिवा नीलपटाद्यन्युपगतु कश्चिदस्त्येव प्रव्रज्याविशेषइत्यदोषइति । सा प्रत तत्प्रतिज्ञापितशिष्यव्यापारमधिकृत्याह । (तसद्दहमाणेत्यादि) तं नास्तिकवाद्यु पन्यस्त धर्मं विषयिणामनुकूल श्रद्दधाना स्वमतावतिशयेन रोचयतस्तथा प्रतिपादयंतो वितथनावेन गृह्णतस्तथा तत्र रुचिं कुर्वतस्तथा साधुशोननमेतद्यथास्वाख्यातोयथाव स्थितोनवतोधर्मोन्यथा सति हिंसादिष्ववर्तमान परलोकनयात्सुखसाधनेषु मासम द्यादिष्वप्रवृत्ति कुर्वतोमनुष्यजन्मफलवर्जितानवेयु । तत शोननमकारि नवता हेश्र मण व्राह्मण इतिवा यदय तज्जीवतच्छरीरधर्मोऽस्माकमावेदित काममिष्टे तदस्माक ध र्मकथन । खलुशब्दोवाक्यालकारे । हेश्चायुष्मस्त्वया वयमन्युद्धृता कार्पटिकैस्तीर्थिकै र्वंचिता स्युरिति । तस्माडुपकारिण त्वा नवतं पूजयामोहमपि कंचिदायुष्मतोनगवत प्रत्युपकार करोमि । तदेव दर्शयति । तद्यथा । (श्रसणेत्यादि) सुगम यावत्पादपुछन कमिति । तत्रैके पूर्वोक्तया पूजया पूजाया वा (समाउट्टिसुत्ति) समावृता प्रव्हीनू तास्ते राजान पूजा प्रति प्रवृत्तास्तडपदेष्टारोवा पूजामन्युपपन्ना सतस्त राजादिक स्वद र्शनप्रतिपन्नमेके केचन स्वदर्शनस्थित्या हिताहितप्राप्तिपरिहारेषु निकाचितवतोनियमि तवत । तथाहि । नवतेद तच्छरीरमित्यन्युपगतव्यमन्योजीवोन्यच्च शरीरमित्येतत् परि त्याज्यमनुष्ठानमपि एतदनुरूपमेतद्विधेयमित्येव निकाचितवतइति ॥ १८ ॥

पुव्वमेव तेसिं णाय नवति समणा नविस्सामो अणगारा अकिंचणा अपुत्ता अपसू परदत्तनोइणो निक्खुणोपाव कम्म णोकरिस्सामि समुठीए ते अप्पणो अप्पडिविरया नवति सयमाइयति अन्नेवि आदियावेति अन्नपि आयत त समणुजाणंति एवमेव ते इत्थिकामनोगेहिं मुछिया गिध्धा गढिया अज्झोववन्ना लुध्धा रागदोसवसट्टा ते णोअप्पाण समुछेदेति ते णोपर समुछेदेति णोअणाइ पाणाइ नूताइ जीवाइ सत्ताइ समुछेदेति पहीणा पुव्वसजोग आयरिय मग्ग असपत्ता इति ते णोहव्वाए णोपाराए अंतराकामनोगेसु विसन्ना इति पढमे पुरिसजाए तज्जीव तच्छरीरएति आहिए ॥ १९ ॥

अर्थ-(पुव्वमेवके०) एरीते पहेलोज (तेसिंके०) तेनास्तिक मतिओने (णायनवति के०) एवो विपरीत ज्ञान होय के (समणानविस्सामोके०) अमे श्रमण यति थइशु (अणगाराके०) घर रहित थइशु (अकिंचणाके०) परिग्रह रहित थइशु (अपुत्ता के०) पुत्र मित्र कलत्रादिथी रहित थइशु (अपसूके०) गोमहिषादिकथी रहित थइशु (परदत्तनोइणोके०) अन्यनो दीधेलो आहार नोगवीशु पोते पचन पाचनादिक क्रियाथी रहित थइशु (निस्कुके०) निक्षाचर छता (णोपावकम्मणोकरिस्सामिके०) पाप कर्म सावद्यानुष्ठान करीशु नहीं (समुठीएके०) ऐवो नाव पडिवजीने सम्यक्प्रकारे उठी सावधान थइने पछी नास्तिक नाव प्राप्त करे लोकायतिक मार्गे आव्या थका (तेअप्पणोअप्पडिविरया नवतिके० (ते आप पोते पापकर्म थकी अविरत थाय पोतानीज प्रतिज्ञा थकी नृष्ट थाय एवा थका जे करे ते कहेछे (सयमाइयतिके०) सावद्यानुष्ठान हिंसा मृषावादादिक स्वय पोते आदरे (अन्नेविआदियावेतिके०) अन्यने आदरावे (अन्नपिआयतं के०) अन्यकोइ आदरतो होय (तसमणुजाणंतिके०) तेने अनुमोदे (एवमेवतेके०) एरीते ते (इत्थिकामनोगेहिंमुछियाके०) स्त्री सबधी काम नोगने विषे मूर्छित (गिध्धा के०) गृद्ध एटले तेना अनिलाषी (गढियाके०) अधिक काम नोगने विषे बधाणा (अज्झोववन्ना के०) कामनोगने विषे एकाग्र चित्ते थया (लुध्धा के०) लुब्ध थया (रागदोसवसट्टा के०) राग द्वेषने विषे पहोता (तेणोअप्पाणसमुछेदेति के०) ते पोताना आत्माने कर्म पास थकी न छोडावे (तेणोपरसमुछेदेति के०) ते अन्यने पण कर्म बध थकी नछोडावे (णोअणाइ पाणाइ नूताइ जीवाइ सत्ताइ समुछेदेतिके०) ते अन्य प्राणी नूत जीव सत्व तेने पण कर्म पास थकी छोडावी नशके एवा नास्तिक

वादि (पहीणपुव्वसंजोग के०) पूर्व संयोगजे पुत्र कलत्रादिक ते थकी पण भ्रष्ट थया अने (आयरियंमग्ग के०) आर्य मार्गनेपण (असंपत्ता के०) अणपाम्या एटले नपाम्या (इतिके०) एम उनय भ्रष्ट थया थका (तेणोहव्वाएके०) ते एवा प्रकारे पुष्करणीने तीरे पण रह्या नहीं अने (णोपाराएके०) पार पण पहोता नहीं (अंतराकामजोगेसुविसन्ना के०) विचाले कामजोगरूप कादवने विषेज खूता थका रह्या ते पुंमरीक कमल सरखा राजा ने उद्धरी नशके (इतिपढमपुरुषजाएतज्जीवतच्छरीरएतिआहिएके०) इति तज्जीव तच्छरी रवादिनामा एम प्रथम पुरुष जात कह्यो ॥ १ए ॥

॥ दीपिका—ये जागवतादिलिंगमंगीकृत्य पश्चान्नास्तिका संवृतास्तेषां पूर्वमादौ प्रव्रज्याग्रहणावसरएतत् परिज्ञात जवति । यत् श्रमणायतयोजविष्यामोऽनगारा किंचन इव्य तद्रहितानिष्किंचनाअपुत्राअपशव परदत्तजोजिनोजिक्षव किंचित्पाप कर्म सावद्य नकरिष्यामइति समुह्वाय पश्चान्नास्तिकतां प्राप्तास्ते आत्मना स्वयं सावद्यादप्रतिविरताअनिवृत्ताजवति । स्वयं सावद्यमाददते स्वीकुर्वंति अन्यानप्यादापयंति ग्राहयत्यादान समनुजानंति । एवमेव स्त्रीप्रधाना कामजोगा स्त्रीकामजोगास्तेषु मूर्छितागृद्धाअध्युपपन्नाआधिक्येन जोगेषु लुब्धारागद्वेषार्ता संतोनात्मानं संसारात्समुच्छेदयंति । नापि परं समुच्छेदयंति नाप्यन्यान् प्राणिनोजूतानि जीवान् सत्वान् समुच्छेदयत्यसदजिप्रायप्रवृत्तत्वात् । ते चैवंविधालोकायतिका पूर्वसंयोगात्पुत्रादिकात्प्रहीणाभ्रष्टाआर्यमार्गं सदनुष्ठानरूपमसंप्राप्ताइति लोकद्वयसदनुष्ठानभ्रष्टाअंतरालएव जोगेषु विषण्णास्तिष्ठंति न पुंडरीकोत्क्षेपादिकार्यं साधयतीत्ययं तज्जीवतच्छरीरवादीप्रथम पुरुष समाप्त ॥ १ए ॥

॥ टीका—तत्र ये जागवतादिकं लिंगमभ्युपगता पश्चाल्लोकायतग्रंथश्रवणेन लोकायता संवृतास्तेषामादौ प्रव्रज्याग्रहणकालएवैतत्परिज्ञातं जवति । तद्यथा । परित्यक्तपुत्रकलत्रा श्रमणायतयोजविष्यामोऽनगारागृहरहितास्तथा निष्किंचना किंचनद्रव्यं तद्रहितास्तथाऽपशवोगोमहिष्यादिरहिता परदत्तजोजिन स्वत पचनपाचनादिक्रियारहितत्वात् निक्षणशीलाजिक्षव किंच द्वयतेऽन्यदपि यत्किंचित्पापं सावद्यं कर्मानुष्ठानं तत्सर्वं नकरिष्यामीत्येवं सम्यगुह्वानेनोह्वाय पूर्वं पश्चाल्लोकायतिकमुपगताआत्मन स्वत कर्मज्योऽप्रतिविरताजवति । विरत्यजावेपि यत्कुर्वंति तद्दर्शयति । पूर्वं सावद्यारंजान्निवृत्ति विधाय नीलपटादिकं च लिंगमास्थाय च स्वयमात्मना सावद्यमनुष्ठानमाददते स्वीकुर्वंति अन्यान्यप्यादापयंति ग्राहयत्यन्यमप्यादानं परिग्रहं स्वीकुर्वंतं समनुजानंति । एवमेव पूर्वोक्तप्रकारेण स्त्रीप्रधाना स्त्रियोपलक्षितावा काम्यंतइति कामाभुज्यंतइति जोगास्तेषु सातबहु

लतया ऽजितेंड्रिया सतस्तेषु कामनोगेषु मूर्छिताएकीनावतामापन्नागृध्दा काङ्क्षावतो ग्रथिताअववध्दाअध्युपपन्नाआधिक्येन नोगेषु लुब्धारागद्वेषार्तारागद्वेषवशगा काम नोगाधावा तएव कामनोगेषु आश्रवबध्दा सतोनात्मान ससारात्कर्मपाशाद्वा समुच्छे दयति मोचयति नापि पर सडुपदेशदानत कर्मपाशावपाशित समुच्छेदयंति कर्मबधाच्चोट यति नाप्यन्यान् दशविधप्राणवर्तिन प्राणान् प्राणिनस्तथा वानूवन् नवति नविष्य तिच नूतानि तथा वा आयुष्कधारणाज्जीवास्तास्तथा सत्वास्तथाविधवीर्यांतरायक्षयोप शमापादितवीर्यगुणोपेतास्तान्नसमुच्छेदयति । असदनिप्रायप्रवृत्तत्वात् । ते चैवविधास्त ज्जीवतच्छरीरवादिनोलोकायतिकाअजितेंड्रियतया कामनोगावसक्ता पूर्वसयोगात्पुत्रदा रादिकात्प्रहीणा प्रभ्रष्टाआराद्याता सर्वहेयधर्मेन्यइत्यार्योमार्गे सदनुष्ठानरूपस्तमस प्राप्ताइत्येव पूर्वोक्तया नीत्या ऐहिकामुष्मिकलोकद्वयसदनुष्ठानभ्रष्टाअतरालएव नोगे षु विषण्णास्तिष्ठति । न विवक्षित पौंमरीकोत्क्षेपणादिक कार्य प्रसाधयतीति । अय च प्रथम पुरुषस्तज्जीवतच्छरीरवादी परिसमाप्तइति ॥ १९ ॥

अहावरे दोच्चे पुरिसजाए पचमहब्भूतिएति आहिज्जइ इह खलु पाइ णवा सतेगतियामणुस्सा नवति अणुपुव्वेण लोय उववन्ना त जहा आरि यावेगे अणारियावेगे एव जाव डुरूवावेगे तेसिचण महएगे राया नव इ महाएवचेव णिरविसेस जाव सेणावइपुत्ता तेसिचण एगेतिए सड्ढा न वति कामत समणाय माहणाय पहारिंसु गमणाए तञ्च अन्नयरेण धम्मे ण पन्नत्तारो वय इमेण धम्मेण पन्नवइस्सामो सेएव मायाणहनयतारो जहाए एसधम्मे सुअरकाए सुपन्नत्ते नवति ॥ २० ॥

अर्थ-(अहावरेदोच्चेपुरिसजाए के०) अथ हवे अपर एटले वीजो पुरुषजात को णछे ते हु कहुछु माटे हे श्रमणो तमे सानलो (पचमहब्भूतिएति के०) जे पुरुष पृथ व्यादिक पाच महानूत तत्वे करी माने ते पाच महानूतिक पुरुष साख्यमति (आहिज्ज इ के०) कहिए ते प्रथम पुरुषनी परे ज्यालगे राजसनामा आवी राजा प्रत्ये पोतानो धर्म रुडो करी प्रकाशे तेनी पेरे कहेछे (इहखलुपाइणवाके०) निश्चे आ ससारमा पूर्वा दिक दिशिने विषे (सतेगतियामणुस्सानवतिके०) कोइएक मनुष्य पचमहानूतिक साख्य मतिछे (अणुपुव्वेणलोयउववन्ना के०) ते अनुक्रमे लोकमाहे उपना (तंजहाके०) ते क हेछे (आरियावेगेके०) एक आर्य मनुष्यते साडा पचीश आर्य देशना उपना (अणा रियावेगे के०) एक अनार्य मनुष्यते अनार्य देशना उपना (एवजावडुरूवावेगे के०)

वादि (पहीणापुव्वसंजोग के०) पूर्व संयोगजे पुत्र कलत्रादिक ते थकी पण भ्रष्ट थया अने (आयरियंमग्ग के०) आर्य मार्गनेपण (असंपत्ता के०) अणपाम्या एटले नपाम्या (इतिके०) एम उजय भ्रष्ट थया थका (तेणोदव्वाएके०) ते एवा प्रकारे पुष्करणीने तीरे पण रह्या नहीं अने (णोपाराएके०) पार पण पहोता नहीं (अंतराकामजोगेसुविसन्ना के०) विचाले कामजोगरूप कादवने विषेज खूता थका रह्या ते पुंमरीक कमल सरखा राजा ने उध्दरी नशके (इतिपढमपुरुषजाएतज्जीवतच्चरीरएतिआहिएके०) इति तज्जीव तच्चरी रवादिनामा एम प्रथम पुरुष जात कह्यो ॥ १ए ॥

॥ दीपिका—ये जागवतादिलिंगमंगीकृत्य पश्चान्नास्तिका संवृतास्तेषां पूर्वमादौ प्र व्रज्याग्रहणावसरएतत् परिज्ञातं नवति । यत् श्रमणायतयोजविष्यामोऽनगारा किंच न ड्व्य तद्रहितानिष्किंचनाअपुत्राअपशव परदत्तजोजिनोजिक्षव किंचित्पापं कर्म सा वद्य नकरिष्यामइति समुछाय पश्चान्नास्तिकता प्राप्तास्ते आत्मना स्वयं सावद्यादप्रतिवि रताअनिवृत्तानवति । स्वयं सावद्यमाददते स्वीकुर्वंति अन्यानप्यादापयंति ग्राहयत्यादान समनुजानंति । एवमेव स्त्रीप्रधानाः कामजोगा स्त्रीकामजोगास्तेषु मूर्छिताग्रध्दाअध्युपप न्नाआधिक्येन जोगेषु लुब्धारागद्वेषार्ता संतोनात्मानं संसारात्समुछेदयंति । नापि परं समुछेदयंति नाप्यन्यान् प्राणिनोजूतानि जीवान् सत्वान् समुछेदयत्यसदजिप्रायप्रवृत्त त्वात् । ते चैवंविधालोकायतिका पूर्वसंयोगात्पुत्रादिकात्प्रहीणाभ्रष्टाआर्यमार्गं सदनु ष्ठानरूपमसंप्राप्ताइति जोकद्वयसदनुष्ठानभ्रष्टाअंतरालएव जोगेषु विषण्णास्तिष्ठंति न पुंडरीकोत्क्षेपादिकार्यं साधयतीत्ययं तज्जीवतच्चरीरवादीप्रथमः पुरुषः समाप्तः ॥ १ए ॥

॥ टीका—तत्र ये जागवतादिकं लिंगमन्युपगता पश्चाल्लोकायतग्रंथश्रवणेन लोकाय ता संवृतास्तेषामादौ प्रव्रज्याग्रहणकालएवैतत्परिज्ञातं नवति । तद्यथा । परित्यक्तपुत्रक लत्रा श्रमणायतयोजविष्यामोऽनगारागृहरहितास्तथा निष्किंचना किंचनड्व्यं तद्रहिता स्तथाऽपशवोगोमहिष्यादिरहिता परदत्तजोजिन स्वतः पचनपाचनादिक्रियारहितत्वात् निक्षणशीलाजिक्षव किंच छद्यतेऽन्यदपि यत्किंचित्पापं सावद्यं कर्मानुष्ठानं तत्सर्वं नक रिष्यामीत्येवं सम्यगुछानेनोछाय पूर्वं पश्चाल्लोकायतिकमुपगताआत्मनः स्वतः कर्मज्योऽप्र तिविरतानवति । विरत्यजावेपि यत्कुर्वंति तद्दर्शयति । पूर्वं सावद्यारम्जान्निवृत्तिं विधाय नीलपटादिकं च लिंगमास्थाय च स्वयमात्मना सावद्यमनुष्ठानमाददते स्वीकुर्वंति अन्या न्यप्यादापयति ग्राहयत्यन्यमप्यादानं परिग्रहं स्वीकुर्वंतं समनुजानंति । एवमेव पूर्वोक्तप्र कारेण स्त्रीप्रधाना स्त्रियोपलक्षितावा काम्यतइति कामाजुज्यंतइति जोगास्तेषु सातबहु

अर्थ-(इहखलु के०) निश्चे आससारने विषे (पचमहभूता के०) पाच महोटा नूत सर्व जगतमा व्यापी रह्याछे (जेहिंनोकज्जइकिरियातिवाअकिरियातिवा के०) ते हिज पाच नूते अमे क्रिया अक्रिया सर्व करियें परतु जेहि एटले जे ठगो आत्मा ए वे नामे पदार्थछे ते क्रिया अक्रिया नोकज्जइ एटले नथी करतो तथा सुकडेतिवा डुक डेतिवा कल्लाणेतिवा पावएतिवा साहुतिवा सिद्धितिवा असिद्धितिवा णिरएतिवा अणि रएतिवा एटले सुकृत करणी डुष्कृत करणी कल्याण कारी क्रिया पापकारी क्रिया साधु एटले नली क्रिया असाधु एटले माठी क्रिया सिद्धि एटले मोक्ष जवा योग्य क्रिया असिद्धि एटले मोक्ष न जवा योग्यक्रिया नरक जवा योग्य क्रिया नरके नजवा योग्य क्रिया ए सर्व आत्मा नथी करतो (अतसोतणमायमवि के०) ए कारणे सा ख्यने मते जे काइ सूक्ष्म तृणनु नमाववो तेनो पण उपदेश पाच नूतज करेछे पण आत्मा सर्वथा काइ पण नथी करतो ॥ २१ ॥

॥ दीपिका–साख्यनास्तिकयोर्मतमाह । इह मते पच महानूतानि यैर्नोऽस्माक क्रिया व्यापारता वा नक्रियते सुकृतं डुष्कृतवा कल्याण पापकमिति या साध्वितिवा सिद्धिर्मु क्तिरसिद्धि ससारोनरकोऽनरकस्तिर्यङ्नरामरगति । एतत्सर्व सत्वरजस्तमोरूपा प्रकृ तिरेव नूतरूपा करोति । आत्मा केवलमुपजुक्ते नतु करोति किंचित् । नास्तिकानिप्राये णापि इहैव सुखडुःखे स्वर्गनरकौ इत्युच्यतइति । एवमतशस्तृणमात्रमपि यत्कार्य तन्नूते रेव प्रकृतिरूपापन्नै क्रियते । एव साख्यमते आत्मा किंचित्कर । नास्तिकमतेतु आ त्मन सर्वथाप्यनावस्ततो द्वयोरपि नूतान्येव सर्वकार्यकर्तृणीति ॥ २१ ॥

॥ टीका–सांप्रतं सांख्यस्य लोकायतिकस्य चान्युपगम दर्शयितुमाह । (इहखलुपच महभूताइत्यादि) इहास्मिन् ससारे द्वितीयपुरुषवक्तव्यताधिकारे वा । खलुशब्दोवाक्या लकारे । पृथिव्यादीनि पचमहानूतानि विद्यते महांति च तानिच महानूतानि सर्व व्यापितयान्युपगमात् महत्त्व । तानिच पचैव। परस्य षष्ठस्य क्रियाकर्तृत्वेनानन्युपगमाद्यैर्हि पचनिर्नूतैरप्युपगम्यमानैर्नोऽस्माक क्रिया परिस्पदात्मिका चेष्टारूपा क्रियते क्रिया वा नि र्व्यापारतया स्थितिरूपा क्रियते । तथाहि । तेषा दर्शन सत्वरजस्तमोरूपा प्रकृतिर्नूता त्मनूता सर्वाअर्थक्रिया करोति पुरुष केवलमुपजुक्तेऽध्यवसितमर्थ पुरुषश्चेतयतीति व चनात् । बुद्धिश्च प्रकृतिरेव तद्विकारत्वात् । तस्याश्च प्रकृतेर्नूतात्मिकाया सत्वरजस्तम सां चयापचयान्या क्रियाक्रिये स्यातामिति कृत्वा नूतेन्यएव क्रियादीनि प्रवर्तते तद्व्यति रेकेणापरस्यानावादिति नाव । तथा सुष्टु कृतं सुकृतमेतच्च सत्वगुणाधिक्येन नवति ।

एम यावत् कोइएक मनुष्य कुरूपवंत ने इत्यादिक अर्थ आगल लखाइ गयाछे (ते सिंचण के०) ते मनुष्य माहे (महएगेरायाजवइ के०) एक महोटो राजा होय तेके वो तोके (महाएवचेव के०) महोटो हिमवंत पर्वतादिक समान होय (णिरविसेस के०) एमज पूर्ववत निरविशेष (जावसेणावइपुत्ता के०) यावत् सेनापतिना पुत्र केवा (तेसिंचण के०) तेमाहे (एगेतिएसड्डाजवति के०) कोइ एकने धर्म करवानी श्रद्धा होय एटले धर्मार्थी होय (कामतं के०) तेने धर्मार्थी जाणीने (समणा य माहणाय के०) श्रमण अने ब्राह्मण मलीने तेना समीपे धर्म प्रतिबोधवा निमित्ते (पहारिंसुगमणाए के०) आलोचवो चिंतवीने आवे (तन्न के०) त्यां (अन्नयरेणध म्मेणपन्नत्तारोवय के०) अनेरो पोतानो धर्म प्ररूपण हार एटले धर्मोपदेशक थइने (इमेण के०) ए आगल कहेशे तेरीते (धम्मेणपन्नवइस्सामो के०) राजानी आगल धर्म कहीशु एम आलोचीने (सेएव के०) तेएम (मायाणहजयतारो के०) माहरो धर्म क हुं अहो जयपकी राखनार ते (जहाए के०) जेम (एलधम्मे के०) महारो एधर्म (सुअक्खाए के०) स्वाख्यात (सुपन्नत्तेनवति के०) रुडो प्ररूपवो होय ॥२०॥ हवे ते राजा आगल जेवी रीते धर्म प्ररूपे तेवी रीते आगल कहेछे

॥ दीपिका–अथापरोद्वितीय पुरुषजात पंचनिर्वृत्तैः पृथिव्यप्तेजोवायुव्योमाख्यैरि ति पांचभौतिक । साख्याजीवस्य तृणमोटनेप्यसामर्थ्यं । भूतरूपाया प्रकृतेरेव सर्वकर्तृ त्वमिति तन्मतं । नास्तिकविशेषोवा पंचभूतव्यतिरिक्तनास्तित्वांगीकारात् । (आहिज्जइ) आख्यायते । अत्र च प्रथमपुरुषगमेन इह खलु पाईणवा इत्यादिकोग्रंथ सुपन्नत्ते भ वतीत्येतदतोज्ञेय ॥ २० ॥

॥टीका–प्रथमपुरुषानंतर द्वितीय पुरुषजातमधिकृत्याह । (अहावरेदोच्चे इ त्यादि) अथशब्दआनंतर्यार्थे । प्रथमपुरुषानंतरमपरोद्वितीय पुरुषएव पुरुषजात पंचभि पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशाख्यैश्चरति पांचभौतिक । पंचवा भूतानि अभ्युपगम द्वारे ण विद्यते यस्यसपंचभूतिको मत्वर्थीयष्ठन् । सच साख्यमतावलंब्यात्मनस्तृणकुब्जीकर णेप्यसामर्थ्याभ्युपगमात् इदृश्योलोकायतमतावलंबी नास्तिकोभूतव्यतिरिक्तत्वाभ्युपगमा दाख्यायते प्रथमपुरुषानंतरमथ पंचभूतात्मवाद्यभिधीयते चेति । अत्र च प्रथमपुरुषगम ने (इहखलुपाईण) चेत्यादिकोग्रंथ सुपन्नत्तेभवतीत्येतत्पर्यवसानोवगतव्यइति ॥ २० ॥

इहखलु पंचमहब्भूता जेहिं नोकज्जइ किरियातिवा अकिरियातिवा सु कडेतिवा दुक्कडेतिवा कल्लाणेतिवा पावएतिवा साहुतिवा सिद्धितिवा असिद्धितिवा णिरएतिवा अणिरएतिवा इति अतसो तणमायमवि ॥२१॥

अर्थ-(इहखलु के०) निश्चे आससारने विषे (पचमहभूता के०) पाच महोटा नूत सर्व जगतमा व्यापी रह्याछे (जेहिनोकज्जइकिरियातिवाअकिरियातिवा के०) ते हिज पाच नूते अमे क्रिया अक्रिया सर्व करियें परतु जेहि एटले जे ठगो आत्मा ए वे नामे पदार्थछे ते क्रिया अक्रिया नोकज्जइ एटले नथी करतो तथा सुक्कडेतिवा डुक्कडेतिवा कल्लाणेतिवा पावएतिवा साहुतिवा सिध्धितिवा असिध्धितिवा णिरएतिवा अणिरएतिवा एटले सुकृत करणी डुष्कृत करणी कल्याण कारी क्रिया पापकारी क्रिया साधु एटले नली क्रिया असाधु एटले मातो क्रिया सिध्धि एटले मोक्ष जवा योग्य क्रिया असिध्धि एटले मोक्ष न जवा योग्यक्रिया नरक जवा योग्य क्रिया नरके नजवा योग्य क्रिया ए सर्व आत्मा नथी करतो (अतसोतणमायमवि के०) ए कारणे सांख्यने मते जे काइ सूक्ष्म तृणनु नमाववो तेनो पण उपदेश पाच नूतज करेछे पण आत्मा सर्वथा काइ पण नथी करतो ॥ २१ ॥

॥ दीपिका–सांख्यनास्तिकयोर्मतमाह । इह मते पच महानूतानि यैर्नोऽस्माक क्रिया व्यापारता वा नक्रियते सुकृतं डुष्कृतवा कल्याण पापकमिति या साध्वितिवा सिध्धिर्मुक्तिरसिध्धि ससारोनरकोऽनरकस्तिर्यङ्नरामरगति । एतत्सर्व सत्वरजस्तमोरूपा प्रकृतिरेव नूतरूपा करोति । आत्मा केवलमुपनुक्ते नतु करोति किंचित् । नास्तिकाभिप्रायेणापि इहैव सुखडु खे स्वर्गनरकौ इत्युच्यतइति । एवमतशस्तृणमात्रमपि यत्कार्य तन्नूतेरेव प्रकृतिरूपापन्नै क्रियते । एव सांख्यमते आत्मा किंचित्कर । नास्तिकमतेतु आत्मन सर्वथाप्यनावस्ततो ध्योरपि नूतान्येव सर्वकार्यकर्तृणीति ॥ २१ ॥

॥ टीका–सांप्रतं सांख्यस्य लोकायतिकस्य चान्युपगम दर्शयितुमाह । (इहखलुपच महभूताइत्यादि) इहास्मिन् ससारे द्वितीयपुरुषवक्तव्यताधिकारे वा । खलुशब्दोवाक्यालकारे । पृथिव्यादीनि पचमहानूतानि विद्यते महांति च तानिच महानूतानि सर्वव्यापितयान्युपगमात् महत्व । तानिच पचैव। परस्य पष्ठस्य क्रियाकर्तृत्वेनानन्युपगमाद्यैर्हि पचनिर्नूतैरप्युपगम्यमानैर्नोऽस्माक क्रिया परिस्पदात्मिका चेष्टारूपा क्रियते क्रिया वा निर्व्यापारतया स्थितिरूपा क्रियते । तथाहि । तेषा दर्शन सत्वरजस्तमोरूपा प्रकृतिर्नूतात्मनूता सर्वार्थक्रिया करोति पुरुष केवलमुपनुक्तेऽध्यवसितमर्थं पुरुषश्चेतयतीति वचनात् । बुद्धिश्च प्रकृतिरेव तद्विकारत्वात् । तस्याश्च प्रकृतेर्नूतात्मिकाया सत्वरजस्तमसां चयापचयाभ्या क्रियाक्रिये स्याताामिति कृत्वा नूतेभ्यएव क्रियादीनि प्रवर्तते तद्व्यतिरेकेणापरस्याजावादिति नाव । तथा सुष्ठु कृतं सुकृतमेतच्च सत्वगुणाधिक्येन नवति ।

एम यावत् कोइएक मनुष्य कुरूपवंत छे इत्यादिक अर्थ आगल जणाइ गयाछे (ते सिंचणं के०) ते मनुष्य माहे (महएगेरायाजवइ के०) एक महोटो राजा होय तेके वो तोके (महाएवचेव के०) महोटो हिमवंत पर्वतादिक समान होय (णिरविसेस के०) एमज पूर्ववत निरविशेष (जावसेणावइपुत्ता के०) यावत् सेनापतिना पुत्र केवा (तेसिंचणं के०) तेमाहे (एगेतिएसड्ढाजवति के०) कोइ एकने धर्म करवानी श्रद्धा होय एटले धर्मार्थी होय (कामंत के०) तेने धर्मार्थी जाणीने (समणा य माहणाय के०) श्रमण अने ब्राह्मण मलीने तेना समीपे धर्म प्रतिबोधवा निमित्ते (पहारिंसुगमणाए के०) आलोचवो चिंतवीने आवे (तछ के०) त्यां (अन्नयरेणध म्मेणपन्नत्तारोवय के०) अनेरो पोतानो धर्म प्ररूपण हार एटले धर्मोपदेशक थइने (इमेण के०) ए आगल कहेशे तेरीते (धम्मेणपन्नवइस्सामो के०) राजानी आगल धर्म कहीशु एम आलोचीने (सेएव के०) तेएम (मायाएहजयतारो के०) माहरो धर्म क हुं अहो जयथकी राखनार ते (जहाए के०) जेम (एसधम्मे के०) महारो एधर्म (सुअरकाए के०) साख्यात (सुपन्नत्तेनवति के०) रुडो प्ररूपवो होय ॥२०॥ हवे ते राजा आगल जेवी रीते धर्म प्ररूपे तेवी रीते आगल कहेछे

॥ दीपिका–अथापरोद्वितीय पुरुषजात पंचनिर्वृते पृथिव्यप्तेजोवायुव्योमाद्यैश्वर ति पांचनौतिक । साख्याजीवस्य तृणमोटनेप्यसामर्थ्य । जूतरूपाया प्रकृतेरेव सर्वकर्तृ त्वमिति तन्मतं । नास्तिकविशेषोवा पंचजूतव्यतिरिक्तनास्तित्वांगीकारात् । (आहिज्जइ) आख्यायते । अत्र च प्रथमपुरुषगमेन इह खलु पाईणंवा इत्यादिकोग्रंथ सुपन्नत्ते ज वतीत्येतदतोज्ञेय ॥ २० ॥

॥टीका–प्रथमपुरुषानंतर द्वितीय पुरुषजातमधिकृत्याह । (अहावरेदोच्चे इ त्यादि) अथशब्दआनंतर्यार्थे । प्रथमपुरुषानंतरमपरोद्वितीय पुरुषएव पुरुषजात पंचजि पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशाख्यैश्वरति पांचनौतिक । पंचवा जूतानि अन्युपगम द्वारे ण विद्यते यस्यसपंचजूतिको मत्वर्थीयष्ठन् । सच साख्यमतावलंब्यात्मनस्तृणकुब्जीकर णेप्यसामर्थ्यान्युपगमात् इष्टव्योलोकायतमतावलंबी नास्तिकोजूतव्यतिरिक्तत्वान्युपगमा दाख्यायते प्रथमपुरुषानंतरमय पंचजूतात्मवाद्यनिधीयते चेति । अत्र च प्रथमपुरुषगम ने (इहखलुपाईणं) चेत्यादिकोग्रंथ सुपन्नत्तेनवतीत्येतत्पर्यवसानोवगतव्यइति ॥ २० ॥

इहखलु पंचमहब्भूता जेहिं नोकजइ किरियातिवा अकिरियातिवा सु कडेतिवा डुक्कडेतिवा कल्लाणेतिवा पावएतिवा साढुतिवा सिद्धितिवा असिद्धितिवा णिरएतिवा अणिरएतिवा इति अतसो तणमायमवि ॥२१॥

सता के०) शाश्वता छे (आयछ्ठा के०) आत्माछे जेने छठो एवा ए पाचमहाभूत जाणवा (पुणएगेएवमाहु के०) एक वली एम कहेछे (सतोणछिविणासोके०) छतो विद्यमान पदार्थ तेनो विनाश नथी (असतोणछिसंभवो के०) अविद्यमान शशशृगादिकनो उत्पत्तिनो संभव नथी ए कारणे सांख्य दर्शनवालो आत्माने कर्त्ता नथी मानतो जो आत्मा कर्त्ता होय तो अछति वस्तु उपजावे ते कारणे आत्मा कर्त्ता नथी ॥१५॥

॥ दीपिका–त च भूताना समवाय पृथग्भूतपदोद्देशेन जानीयात् । तद्यथा । पृथिव्येका महाभूतमित्यादि । एषा कायाकारतया य समवाय सएकत्वे लक्ष्यते । इत्येतानि पच महाभूतान्यनिर्मितानि कालेश्वरादिना केनचिदकृतानि परेणाऽनिर्मापयितव्यानि अकृतानि विश्रसापरिणामेन निष्पन्नत्वात् । तथा न घटवत्कृत्रिमाणि अनादीनि अनिधनानि आद्यतरहितानि अवध्यान्यवश्यकार्यकर्तॄणि नविद्यते पुरोहित कार्यं प्रतिवर्तयिता येषा तान्यपुरोहितानि स्वतत्राणि शाश्वतानि नित्यानि आत्मषष्ठानि पच महाभूतानीत्येकआहु । सांख्यानामात्मा किंचित्कर । नास्तिकानातु कायाकारपरिणतानि भूतान्येवानिव्यक्तचैतन्यान्यात्मव्यपदेश लभते । तदेव सांख्यमते सतोविद्यमानस्य प्रधानादेर्नास्तिविनाशोऽसत शशविषाणादेर्नास्ति संभव । यदुक्त । नासतोजायतेभावो नाभावोजायतेसतइति ॥ १५ ॥

॥ टीका–तंच तेषां समवाय पृथग्भूतपदोद्देशेन जानीयात् । तद्यथा । पृथिव्येका काविन्यलक्षणा महाभूतं । तथापोद्रवलक्षणामहाभूतं तथा तेजउष्णोद्योतलक्षण तथा वायुर्धृतिकपलक्षणस्तथावगाहदानलक्षण सर्वद्रव्याधारभूतमाकाशमित्येव पृथग्भूतपदोद्देशेनकायाकारतया यस्तेषा समवाय सएकत्वेपि लक्ष्यते इत्येतानि पूर्वोक्तानि पृथिव्यादीनि संख्याद्युपादीयमाना संख्यांतर निवर्तयतीति कृत्वा नन्यूनानि नाप्यधिकानि विश्वव्यापितया महांति त्रिकालभवनाभूतानि । तदेवमेतान्येव पच महाभूतानि प्रकृतेर्महान् महतोहंकारस्तस्माच्च गण षोडशकस्तस्मादपि षोडशकात्पचभ्य पचभूतानीत्येव क्रमेण व्यवस्थितान्यपरेण लोकेश्वरादिना केनचिदनिर्मितान्यनिष्पादितानि । तथा परेणानिर्मापयितव्यानि तथा कृतानि न केनचित्तानि क्रियते । अन्नेऽधनुरादिवद्विस्रसा परिणामेन निष्पन्नत्वात्तथा नघटवत्कृत्रिमाणि कर्तृकरणव्यापारसाध्यानि नभवतीत्यर्थ । तथा पराभावतया नोनैव कृतकानि । अपेक्षितपरव्यापारस्वभावनिष्पत्तौ भाव कृतकइतिव्यपदिश्यते । तानि च विस्रसापरिणामेन निष्पन्नत्वात्कृतकव्यपदेशभांजि न भवति तथा नाद्यनिधनानि अवध्यान्यवश्यकार्यकर्तॄणि तथा न विद्यते पुरोहित कार्य

तथा दुष्ट कृतं दुष्कृतमेतदपि रजस्तमसोरुत्कटतया प्रवर्तते । एव कल्याणमिति वा पापकमितिवा साध्वितिवा असाध्वितिवा इत्येतत्सत्वादीनां गुणानामुत्कर्षानुत्कर्षतया यथा सनवमायोजनीय । तथेप्सितार्थनिष्पादन सिद्धिविपर्यय स्वसिद्धिर्निर्वाण वा सिद्धि स सार ससारिणा तथा नरक पापकर्मिणा यातनास्थानमनरकस्तिर्यङ्मनुष्यामराणामेतत्सर्वं सत्वादिगुणाधिष्ठिता नूतात्मिका प्रकृतिर्विधत्ते । लोकायतानिप्रायेणापीहैव तथाविधसुखदुःखावस्थाने स्वर्गनरकावितीत्येवमतशस्तृणमात्रमपि यत्कार्यं तद्भूतैरेव प्रधानरूपापन्नै क्रियते । तथा चोक्त । सत्व लघुप्रकाशकमिष्टमुपष्टनक चलच रज ॥ गुरुचरणकमेव तम प्रदीपवच्चार्थतोवृत्तिरित्यादि । तदेव सांख्यानिप्रायेणात्मनस्तृणकुब्जीकरणेप्यसामर्थ्याल्लोकायतिकानिप्रायेण त्वात्मनएवानावाद्भूतान्येव सर्वकार्यत्वात्कर्तृणीत्येवमन्युपगमस्तानिच समुदायरूपापन्नानि नानास्वनाव कार्यं कुर्वंति ॥ २१ ॥

त च पिढुद्देसेण पुढोनूतसमवात जाणेज्जा त जहा पुढवी एगे महब्भूते आऊ दुच्चे महब्भूते तेऊतच्चेमहब्भूते वाऊचउत्थेमहब्भूते आगासे पचमे महब्भूते इच्चेते पचमहब्भूया अणिम्मिया अणिम्माविता अकडा णोकित्तिमा णोकडगा अणाइया अणिहणा अवझा अपुरोहिता सतता सासता आयछट्ठा पुण एगे एवमाहु सतो णत्थि विणासो असतो णत्थि सन्नवो ॥ २२ ॥

अर्थ–(तंचपिढूदेसेणपुढोनूतसमवातंजाणेज्जाके०) ते पाचनूतनो समवाय पृथक् एटले जुदो जुदो जाणवो (तंजहाके०) ते कहेछे (पुढवीएगेमहब्भूते के०) पृथवी पर्वतादिक ए एक महानूत जाणवो (आऊदुच्चेमहब्भूते के०) पाणी नदी सरोवर समुद्रादिकनो ए बीजो महानूत जाणवो (तेऊतच्चेमहब्भूते के०) अग्नि ते उष्ण अजवालानो कारण ए त्रीजो महानूत जाणवो (वाऊचउत्थेमहब्भूते के०) वायु वृक्ष कपननो लक्षण ए चोथो महानूत जाणवो (आगासेपचमेमहब्भूते के०) आकाश अवकाश लक्षण ए पाचमो महानूत जाणवो (इच्चेतेपचमहब्भूया के०) ए पाच महानूत ते (अणिम्मिया के०) ईश्वरादिके नीपजाव्या नथी (अणिम्माविता के०) हवे नीपजाववा पण नथी (अकडा के०) कोइना करेला नथी (णोकित्तिमा के०) घटादिकपदार्थनी पेरे कृत्रिम नथी (णोकडगा के०) तेनी निष्पत्तिने विषे अन्य कोइनी अपेक्षा नथी (अणाइया के०) तेनी आदि नथी (अणिहणा के०) तेनो अत नथी (अवझा के०) अवध्यते समस्त कार्यना करनार जाणवा (अपुरोहिता के०) तेओने कार्यने विषे प्रवर्त्तावनार कोइ नथी (सतता के०) स्वाधीनछे (सा

सता के०) शाश्वता छे (आयछ्ठा के०) आत्मा छे जेने छठो एवा ए पांचमहाभूत जाणवा (पुणएगेएवमाहु के०) एक वली एम कहेछे (सतोणच्छिविणासोके०) छतो विद्यमान पदार्थ तेनो विनाश नथी (असतोणच्छिसंभवो के०) अविद्यमान शशशृंगादिकनो उत्पत्तिनो संभव नथी ए कारणे सांख्य दर्शनवालो आत्माने कर्त्ता नथी मानतो जो आत्मा कर्त्ता होय तो अछति वस्तु उपजावे ते कारणे आत्मा कर्त्ता नथी ॥२२॥

॥ दीपिका–तं च भूतानां समवायं पृथग्भूतपदोद्देशेन जानीयात् । तद्यथा । पृथिव्येका महाभूतमित्यादि । एषां कायाकारतया यः समवायः सएकत्वे लक्ष्यते । इत्येतानि पंच महाभूतान्यनिर्मितानि कालेश्वरादिना केनचिदकृतानि परेणाऽनिर्मापयितव्यानि अकृतानि विश्रसापरिणामेन निष्पन्नत्वात् । तथा न घटवत्कृत्रिमाणि अनादीनि अनिधनानि आद्यंतरहितानि अवध्यान्यवश्यकार्यकर्तॄणि नविद्यते पुरोहितं कार्यं प्रतिवर्तयिता येषां तान्यपुरोहितानि स्वतंत्राणि शाश्वतानि नित्यानि आत्मषष्ठानि पंच महाभूतानीत्येकआहु । सांख्यानामात्मा किंचित्कर । नास्तिकानांतु कायाकारपरिणतानि भूतान्येवाभिव्यक्तचैतन्यान्यात्मव्यपदेशं लभंते । तदेव सांख्यमते सतोविद्यमानस्य प्रधानादेर्नास्तिविनाशोऽसतः शशविषाणादेर्नास्ति संभवः । यदुक्तं । नासतोजायतेभावो नाभावोजायतेसतइति ॥ २२ ॥

॥ टीका–तंच तेषां समवायं पृथग्भूतपदोद्देशेन जानीयात् । तद्यथा । पृथिव्येका काठिन्यलक्षणा महाभूतं । तथापोद्रवलक्षणामहाभूतं तथा तेजउष्णोद्योतलक्षणं तथा वायुर्धृतिकंपलक्षणस्तथावगाहदानलक्षणं सर्वद्रव्याधारभूतमाकाशमित्येव पृथग्भूतपदोद्देशेनकायाकारतया यस्तेषां समवायः सएकत्वेपि लक्ष्यते इत्येतानि पूर्वोक्तानि पृथिव्यादीनि संख्याह्युपादीयमाना संख्यांतरं निवर्तयतीति कृत्वा नन्यूनानि नाप्यधिकानि विश्वव्यापितया महांति त्रिकालभवनाद्भूतानि । तदेवमेतान्येव पंच महाभूतानि प्रकृतेर्महान् महतोहंकारस्तस्माच्च गणः षोडशकस्तस्मादपि षोडशकात्पंचभ्यः पंचभूतानीत्येव क्रमेण व्यवस्थितान्यपरेण लोकेश्वरादिना केनचिदनिर्मितान्यनिष्पादितानि । तथा परेणानिर्मापयितव्यानि तथा कृतानि न केनचित्तानि क्रियंते । अत्रेऽधनुरादिवदिच्छता परिणामेन निष्पन्नत्वात्तथा नघटवत्कृत्रिमाणि कर्तृकरणव्यापारसाध्यानि नभवतीत्यर्थः । तथा पराभावतया नोनैव कृतकानि । अपेक्षितपरव्यापारस्वभावनिष्पत्तौ भावः कृतकइतिव्यपदिश्यते । तानि च विस्त्रसापरिणामेन निष्पन्नत्वादकृतकव्यपदेशभाजि न भवति तथा नाद्यनिधनानि अवध्यान्यवश्यकार्यकर्तॄणि तथा न विद्यते पुरोहितः कार्यं

प्रति प्रवर्तयिता येषा तान्यपुरोहितानि स्वतंत्राणि स्वकार्यकर्तृत्व प्रत्यपरनिरपेक्षाणि शा श्वतानि नित्यानि वा नकदाचिदनीदृश जगदिति वचनात्तदेवभूतानि पंच महाभूतान्यात्म षष्ठानि। पुनरेके एवमाहुरात्मावा किंचित्कार साख्याना लोकायतिकानां पुन कायाकार परिणतान्येव भूतान्यभिव्यक्तचेतनानि आत्मव्यपदेश भजतइति । तदेव सांख्याभिप्राये ण सतोविद्यमानस्य प्रधानादेर्नास्ति विनाशोऽत्यताभावरूपोनाप्यसत शशविषाणादे सन्नव समुत्पत्तिरस्ति कार्यस्य विद्यमानस्येवोत्पत्तिरिष्टा नासत सर्वस्मात्सर्वस्योत्पत्तिप्र सगात् । तथाचोक्त । नासतोजायते भावोऽनाभावोजायते सतइत्यादि तथा असत खरविषाणादेरकरणाडुपादानकारणस्यच मृत्पिंडादेर्घटार्थिनोपादानादिन्यश्च हेतुभ्य का रणे सत्कार्यवाद ॥ २२ ॥

एतावतावजीवकाए एतावतावअत्थिकाए एतावतावसव्वलोए ए
त मुह लोगस्स करणयाए अवियतसो तणमायमवि ॥ २३ ॥

अर्थ-(एतावतावजीवकाए के०) ते साख्य एम कहेछे के जीवकाय जे छे एटलोज पाच भूत जाणवो कार्यनो करनार पण एटलोज जाणवो (एतावतावअत्थिकाए के०) वली एटलोज अस्तिकाय टाली बीजो पदार्थ पण कोइ नथी (एतावतावसव्वलोए के०) एटलोज सर्वलोक पाचभूत आत्मिक जाणवो (एतमुहलोगस्सकरणयाए के०) लोकने करवे एहिज मुख्य प्रधान कारण जाणवो (अवियतसोतणमायमवि के०) तृ ण मात्र कार्यनु करनार पण ए पाचभूत टाली बीजो कोइ नथी ॥ २३ ॥

॥ दीपिका-एतावानेव भूतमात्रएव जीवकाय । एतावानेवास्तिकायोनापर कश्चित्पदा र्थ एतावानेव सर्वलोक । तथा एतदेव पचभूतास्तित्व मुख्य कारण लोकस्य साख्यस्य हि प्रधानात्मन्यासृष्टेरुत्पत्तिर्नास्तिकस्यतु भूतान्येवातश्शस्तृणमात्रमपि कार्यं कुर्वंति ॥ २३ ॥

॥ टीका-तदेवमेतावानेव तावदिति साख्योलोकायतिकोवा माध्यस्थ्यमवलंब्यमानएव मेवाह । तद्यथा । निर्युक्तिनिर्विचार्यमाणस्तावदेतावानेव जीवकायोयडुत पचमहाभूता नि यतस्तान्येव साख्याभिप्रायेण प्रधानरूपतापन्नानि सत्वादिगुणोपचयापचयाभ्या सर्व कार्यकर्तृण्यात्मा वा किंचित्करत्वादसत्कल्पएव लोकायतस्यतु सनास्त्येवेत्यतएतावानेव भूतमात्रएव जीवकायस्तथा एतावानेव भूतास्तित्वमात्रएवास्तिकायोनापर कश्चित्तीर्थि काभिप्रेत पदार्थोस्तीति । तथा एतावानेव सर्वलोकोयडुत पचमहाभूतानि प्रधानरूपा पन्नान्यात्मा चाकर्ता निर्गुण साख्यस्य लोकायतिकस्यतु पचभूतात्मकाएव लोकास्तद तिरिक्तस्यापरस्य पदार्थस्याभावादिति । तथा एतदेव पचभूतास्तित्व मुख्य कारण लोक

स्यैतदेव चरणकरणतया सर्वकार्येषु व्याप्रियते । तथाहि । सांख्यस्य प्रधानात्मन्या सृष्टिरुपजायते । लोकायतिकस्यतु भूतान्येवातस्तृणमात्रमपि कार्यं कुर्वंति तदतिरिक्तस्याऽपरस्याभावादिति भाव ॥ २३ ॥

से किणकिणावेमाणे हणघायमाणे पयपयावेमाणे अविअतसो पुरिसमविक्किणित्ता घायइत्ता एछपि जाणाहि णत्थिदोसो ते णोएव विप्पडिवेदेति तजहा किरियाइवा जाव णिरएइवा एवते विरूवरूवेहि कम्मसमारंभेहि विरूवरूवाइ कामभोगाइ समारभंति भोयणाए एवमेव ते अणारिया विप्पडिवन्ना त सद्दहमाणा त पत्तियमाणा जावइति ते णो हव्वाए णोपाराए अतरा कामभोगेसु विसण्णा दोच्चे पुरिसजाए पचमहभूतिएत्ति आहिए ॥ २४ ॥

अर्थ–हवे एक वादी एम कहेछे के आत्मा सर्वव्यापि नथी वली एक वादी एम कहेछे के आत्माछे परतु क्रिया काइ करतो नथी तो तेने मते आत्माने शुभाशुभ कर्मनो बंध नथी एवो देखाडेछे (सेकिणकिणावेमाणे के०) ते क्रियानो अर्थी पुरुष कोइएक जातनो क्रियाणो लेतो अथवा अन्य पासे लेवरावतो (हणघायमाणे के०) तथा प्राणीईने हणतो अथवा अनेरा पासे हणावतो (पयपयावेमाणे के०) पचन पाचनादि क्रिया पोते करतो अथवा अनेरा पासे करावतो थको (अविअतके०) पण निश्चेकरी जाणे (सोपुरिसमविक्किणित्ताके०) अथवा ते पुरुष पचेंद्रीने मोले वेचातु लेइने (घायइत्ताके०) हणतो थको (एछपिजाणाहिके०) अहींया पण ते एवु जाणे के (णत्थिदोसाके०) ते हिंसाना दोषनो विभागी न थाय एवो जाणी यथाछंदे हिंसादिक सावद्य व्यापारमा प्रवर्त्ते (तेणोएवविप्पडिवेदेतिके०) ते बापडा मूर्ख एटलो न जाणे शु नजाणे (तजहाके०) ते कहेछे (किरियाइवाके०) क्रिया एटले रूडो अनुष्ठान ते नजाणे (जावणिरएइवाके०) ज्यां शुधी नरक नजाणे एम सर्व पूर्ववत् जाणवो (एवतेविरूवरूवेहि के०) एम ते नाना प्रकारना (कम्मसमारंभेहिके०) कर्मनो समारंभ करता (विरूवरूवाइकामभोगाइसमारभंति के०) नाना प्रकारना कामभोगने समारंभे (भोयणाए के०) आहारने अर्थ भोगवता (एवमेवतेअणारियाविप्पडिवन्ना के०) एरीते ते अनार्य पोतानो धर्म रूडो करी प्ररूपता कामभोगने विषेमुर्छाणा थका (तसद्दहमाणा के०) ते पाखंडी धर्म ने सर्द्दहता थका (तपत्तियमाणा के०) तेनी प्रतीत करता थका (जावइतिते के०) ज्यां शुधी ए प्रकारे ते (णोहव्वाए के०) तीरे पण रह्या नहीं

प्रति प्रवर्तयिता येषां तान्यपुरोहितानि स्वतंत्राणि स्वकार्यकर्तृत्व प्रत्यपरनिरपेक्षाणि शा श्वतानि नित्यानि वा नकदाचिदनीदृश जगदिति वचनात्तदेवभूतानि पंच महाभूतान्यात्म षष्ठानि। पुनरेके एवमाहुरात्मावा किंचित्कार साख्याना लोकायतिकानां पुन कायाकार परिणतान्येव भूतान्यभिव्यक्तचेतनानि आत्मव्यपदेश भजतइति । तदेव सांख्याभिप्राये ण सतोविद्यमानस्य प्रधानादेर्नास्ति विनाशोऽस्यतानावरूपोनाप्यसत शशविषाणादे सभव समुत्पत्तिरस्ति कार्यस्य विद्यमानस्यैवोत्पत्तिरिष्टा नासत सर्वस्मात्सर्वस्योत्पत्तिप्र सगात् । तथाचोक्त । नासतोजायते भावोऽनाभावोजायते सतइत्यादि तथा असत खरविषाणादेरकरणाडुपादानकारणस्यच मृत्पिडादेर्यदार्थिनोपादानादिभ्यश्च हेतुभ्य का रणे सत्कार्यवाद ॥ २२ ॥

एतावतावजीवकाए एतावतावअत्थिकाए एतावतावसव्वलोए ए
त मुह लोगस्स करणयाए अवियतसो तणमायमवि ॥ २३ ॥

अर्थ–(एतावतावजीवकाए के०) ते सांख्य एम कहेछे के जीवकाय जे छे एटलोज पाच भूत जाणवो कार्यनो करनार पण एटलोज जाणवो (एतावतावअत्थिकाए के०) वली एटलोज अस्तिकाय टाली बीजो पदार्थ पण कोइ नथी (एतावतावसव्वलोए के०) एटलोज सर्वलोक पाचभूत आत्मिक जाणवो (एतमुहलोगस्सकरणयाए के०) लोकने करवे एहिज मुख्य प्रधान कारण जाणवो (अवियतसोतणमायमवि के०) त ण मात्र कार्यनु करनार पण ए पाचभूत टाली बीजो कोइ नथी ॥ २३ ॥

॥ दीपिका–एतावानेव भूतमात्रएव जीवकाय । एतावानेवास्तिकायोनापर कश्चित्पदा र्थ एतावानेव सर्वलोक । तथा एतदेव पचभूतास्तित्व मुख्य कारण लोकस्य साख्यस्य हि प्रधानात्मन्यासृष्टेरुत्पत्तिर्नास्तिकस्यतु भूतान्येवातशस्तृणमात्रमपि कार्य कुर्वति ॥ २३ ॥

॥ टीका–तदेवमेतावानेव तावदिति साख्योलोकायतिकोवा माध्यस्थ्यमवलंब्यमानएव मेवाह । तद्यथा । निर्युक्तिनिर्विचार्यमाणस्तावदेतावानेव जीवकायोयद्डत पचमहाभूता नि यतस्तान्येव साख्याभिप्रायेण प्रधानरूपतापन्नानि सत्वादिगुणोपचयापचयाभ्या सर्व कार्यकर्तृण्यात्मा वा किंचित्करत्वादसत्कल्पएव लोकायतस्यतु सनास्त्येवेत्यतएतावानेव भूतमात्रएव जीवकायस्तथा एतावानेव भूतास्तित्वमात्रएवास्तिकायोनापर कश्चित्तीर्थि कानिप्रेत पदार्थोस्तीति । तथा एतावानेव सर्वलोकोयड्त पचमहाभूतानि प्रधानरूपा पन्नान्यात्मा चाकर्ता निर्गुण साख्यस्य लोकायतिकस्यतु पचभूतात्मकाएव लोकास्तद तिरिक्तस्यापरस्य पदार्थस्याभावादिति । तथा एतदेव पचभूतास्तित्व मुख्य कारण लोक

स्यैतदेव चरणकरणतया सर्वकार्येषु व्याप्रियते । तथाहि । सांख्यस्य प्रधानात्मन्या सृ ष्टिरुपजायते । लोकायतिकस्यतु नूतान्येवातस्तृणमात्रमपि कार्य कुर्वंति तदतिरिक्तस्या परस्यानावादिति नाव ॥ १३ ॥

से किणकिणावेमाणे हणघायमाणे पयपयावेमाणे अविअतसो पुरिस मविक्किणित्ता घायइत्ता एडपि जाणाहि णत्थिदोसो ते णोएव विप्पडिवे देति तजहा किरियाइवा जाव णिरएइवा एवते विरूवरूवेहि कम्म समारंनेहि विरूवरूवाइ कामनोगाइ समारंनति नोयणाए एवमेव ते अणारिया विप्पडिवन्ना त सद्दहमाणा त पत्तियमाणा जावइति ते णो हव्वाए णोपाराए अतरा कामनोगेसु विसण्णा दोच्चे पुरिसजाए पचम हप्नूतिएत्ति आहिए ॥ १४ ॥

अर्थ–हवे एक वादी एम कहेछे के आत्मा सर्वथापि नथी वली एक वादी एम क हेछे के आत्माछे परतु क्रिया काइ करतो नथी तो तेने मते आत्माने शुनाशुन कर्म नो वध नथी एवो देखाडेछे (सेकिणकिणावेमाणे के०) ते क्रियानो अर्थी पुरुष कोइएक जातनो क्रियाणो लेतो अथवा अन्य पाशे लेवरावतो (हणघायमाणे के०) तथा प्राणीउने हणतो अथवा अनेरा पाशे हणावतो (पयपयावेमाणे के०) पचन पाच नादि क्रिया पोते करतो अथवा अनेरा पाशे करावतो थको (अवियतके०) पण निश्चेकरी जाणे (सोपुरिसमविक्किणित्ताके०) अथवा ते पुरुष पचेइीने मोले वेचातु लेइने (घायइ त्ताके०) हणतो थको (एडपिजाणाहिके०) अहींया पण ते एवु जाणे के (णत्थिदोसो के०) ते हिसाना दोषनो निजागी न थाय एवो जाणी यथारुचे हिंसादिक सावद्य व्यापा रमा प्रवर्त्ते (तेणोएवविप्पडिवेदेतिके०) ते वापडा मूर्ख एटलो न जाणे शु नजाणे (तंज हाके०) ते कहेछे (किरियाइवाके०) क्रिया एटले रूडो अनुष्ठान ते नजाणे (जावणिरए इवाके०) ज्या शुधी नरक नजाणे एम सर्व पूर्ववत् जाणवो (एवतेविरूवरूवेहि के०) एम ते नाना प्रकारना (कम्मसमारंनेहिके०) कर्मनो समारंन करता (विरूवरूवाइका मनोगाइसमारंनति के०) न्हाना प्रकारना कामनोगने समारंने (नोयणाए के०) आहारने अर्थे नोगवता (एवमेवतेअणारियाविप्पडिवन्ना के०) एरीत ते अनार्य पो तानो धर्म रुडा करी प्ररूपता कामनोगने विषेमूर्च्छाणा थका (तसद्दहमाणा के०) ते पासमी धर्म ने सर्दहता थका (तपत्तियमाणा के०) तेनी प्रतीत करता थका (जाव इतिते के०) ज्या शुधी ए प्रकारे ते (णोहव्वाए क०) तीरे पण रह्या नही

..

प्रति प्रवर्तयिता येषा तान्यपुरोहितानि स्वतंत्राणि स्वकार्यकर्तृत्व प्रत्यपरनिरपेक्षाणि शा श्वतानि नित्यानि वा नकदाचिदनीदृश जगदिति वचनात्तदेवभूतानि पंच महाभूतान्यात्म षष्ठानि। पुनरेके एवमाहुरात्मावा किंचित्कार साख्याना लोकायतिकानां पुन कायाकार परिणतान्येव भूतान्यभिव्यक्तचेतनानि आत्मव्यपदेश भजतइति । तदेव सांख्याभिप्राये ण सतोविद्यमानस्य प्रधानादेर्नास्ति विनाशोऽत्यताभावरूपोनाप्यसत शशविषाणादे सभव समुत्पत्तिरस्ति कार्यस्य विद्यमानस्यैवोत्पत्तिरिष्टा नासत सर्वस्मात्सर्वस्योत्पत्तिप्र सगात् । तथाचोक्त । नासतोजायते भावोऽनाभावोजायते सतइत्यादि तथा असत खरविषाणादेरकरणादुपादानकारणस्यच मृत्पिडादेर्घटार्थिनोपादानादिभ्यश्च हेतुभ्य का रणे सत्कार्यवाद ॥ २२ ॥

एतावतावजीवकाए एतावतावअत्थिकाए एतावतावसव्वलोए ए त मुहं लोगस्स करणयाए अवियंतसो तणमायमवि ॥ २३ ॥

अर्थ–(एतावतावजीवकाए के०) ते साख्य एम कहेछे के जीवकाय जे छे एटलोज पाच भूत जाणवो कार्यनो करनार पण एटलोज जाणवो (एतावतावअत्थिकाए के०) वली एटलोज अस्तिकाय टाली बीजो पदार्थ पण कोइ नथी (एतावतावसव्वलोए के०) एटलोज सर्वलोक पाचभूत आत्मिक जाणवो (एतमुहंलोगस्सकरणयाए के०) लोकने करवे एहिज मुख्य प्रधान कारण जाणवो (अवियंतसोतणमायमवि के०) तृ ण मात्र कार्यनु करनार पण ए पाचभूत टाली बीजो कोइ नथी ॥ २३ ॥

॥ दीपिका–एतावानेव भूतमात्रएव जीवकाय । एतावानेवास्तिकायोनापर कश्चित्पदा र्थ एतावानेव सर्वलोक । तथा एतदेव पचभूतास्तित्व मुख्य कारण लोकस्य साख्यस्य हि प्रधानात्मन्यासृष्टेरुत्पत्तिर्नास्तिकस्यतु भूतान्येवातशस्तृणमात्रमपि कार्य कुर्वति ॥ २३ ॥

॥ टीका–तदेवमेतावानेव तावदिति साख्योलोकायतिकोवा माध्यस्थ्यमवलब्यमानएव मेवाह । तद्यथा । निर्युक्तिभिर्विचार्यमाणस्तावदेतावानेव जीवकायोयदुत पचमहाभूता नि यतस्तान्येव साख्याभिप्रायेण प्रधानरूपतापन्नानि सत्वादिगुणोपचयापचयाभ्या सर्व कार्यकर्तृण्यात्मा वा किंचित्करत्वादसत्कल्पएव लोकायतस्यतु सभास्त्येवेत्यतएतावानेव भूतमात्रएव जीवकायस्तथा एतावानेव भूतास्तित्वमात्रएवास्तिकायोनापर॰ कश्चित्तीर्थि काभिप्रेत पदार्थोस्तीति । तथा एतावानेव सर्वलोकोयदुत पचमहाभूतानि प्रधानरूपा पन्नान्यात्मा चाकर्ता निर्गुण साख्यस्य लोकायतिकस्यतु पचभूतात्मकाएव लोकास्तद तिरिक्तस्यापरस्य पदार्थस्याभावादिति । तथा एतदेव पचभूतास्तित्व मुख्यं कारण लोक

स्याच्चैतन्य पुरुषस्य स्वरूपमिति वचनात् आत्मैव प्रतिबिंबोदयन्यायेन करिष्यतीति चेत्त दपि न युक्तिसंगतं । यतोऽकर्तृत्वादात्मनो नित्यत्वाच्च प्रतिबिंबोदये न युज्यते । किंचानि त्यत्वात्प्रकृतेर्महदादिविकारतया नोत्पत्तिः स्यात् । अपिच । नासतोजायते भावोनाभा वोजायते सतइत्याद्यन्युपगमात्प्रधानात्मनोरेव विद्यमानत्वान्महदहंकारादेरनुत्पत्तिरेवैक त्वाच्च प्रकृतेरेकात्मवियोगेसति सर्वात्मना वियोगः स्यादेकसबंधेवा सर्वात्मना प्रकृतिसंयो गेन पुनः कस्य चित्तत्त्वपरिज्ञानात् प्रकृतिवियोगे मोक्षोऽपरस्य तु विपर्ययात्संसारइत्येव जगद्वैचित्र्यं नस्यादात्मनश्चाकर्तृत्वे तत्कृतौ बंधमोक्षौ नस्यातामेतच्च दृष्टेष्टबाधितं नापि कारणे सत्कार्यवादोयुक्तिभिरनुपपाद्यमानत्वात् । तथाहि । मृत्पिंडावस्थायां घटोत्पत्तेः प्रागघटसबंधाना कर्मगुणव्यपदेशानामभावादर्थार्थिना च क्रियासु प्रवृत्तेर्न कारणे कार्यमि ति लोकायतिकस्यापि भूतानामचेतनत्वात्कर्तृत्वानुपपत्तिः । कायाकारपरिणतानां चै तन्याभिव्यक्तयन्युपगमेच मरणाभावप्रसंगः स्यात्तस्मान्न पंचभूतात्मकं जगदिति स्थितं । अपि चेदं ज्ञानं स्वसंवित्तिसिद्धमनात्मधर्मिणमुपस्थापयति । नच भूतान्येव धर्मित्वेन परिकल्पयितुं युज्यते तेषामचेतनत्वादथ कायाकारपरिणतानां चैतन्यधर्मोभविष्यती त्येतदप्ययुक्तं । यतः कायाकारपरिणामएव तेषामात्मानमधिष्ठातारमंतरेण न भवितुम र्हति निर्हेतुकत्वप्रसंगान्निर्हेतुकत्वेच नित्यं सत्वमसत्वंवा स्यादिति । तदेवंभूतव्यतिक्त आत्मा तस्मिंश्च सति सदनुष्ठानतः पुण्यपापे ततश्च जगद्वैचित्र्यसिद्धिरिति । एवं व्यवस्थि ते तेऽनार्याः सांख्यालोकायतिकावा पंचमहाभूतप्रधानान्युपगमेन विप्रतिपन्नायत्कुर्यु स्तदर्शयितुमाह । (तसदहमाणाइत्यादि) तमात्मीयमन्युपगमं ये चोकया नीत्या निर्युक्ति कत्वमपि श्रद्धानाः पंचमहाभूतात्मप्रधानस्य सर्वकार्याणि उपगतंति । तदेवंच सत्य मित्येवं प्रतिपादयतः प्रतिपद्यमानास्तदेव चात्मीयमन्युपगमं रोचयतस्तद्धर्मस्याख्यातारं प्रशंसयतः । तद्यथा । स्वाख्यातोभवता धर्मोऽस्माकमयमत्यंतमभिप्रेतइत्येवं ते तदध्यव साया सावद्यानुष्ठानेनाप्यधर्मोन भवतीत्यध्यवसायिनः स्त्रीकामेषु मूर्छिताइत्येवं पूर्ववज्ज्ञे यं । यावत्तदंतरे कामभोगेषु विषण्णाऐहिकामुष्मिकोभयकार्यभ्रष्टानात्मत्राणाय नापि परेषा मिति । भवत्येवं द्वितीयः पुरुषजातः पंचमहाभूतान्युपगमिकाव्याख्यातइति ॥ २४ ॥

अहावरे तच्चे पुरिसजाए ईसरकारणिए इति आहिज्जइ इह खलु पाईणं वा संतेगतिया मणुस्सा भवंति अणुपुव्वेणं लोयं उववन्ना तं आरि यावेगे जाव तेसिंचणं महंते एगे राया भवइ जाव सेणावइपुत्ता तेसिं चणं एगतीए सड्ढा भवइ कामं तं समणाय माहणाय पहारिंसुगमणाए जाव जहा मए एसधम्मे सुअक्खाए सुपन्नत्ते भवइ ॥ २५ ॥

अने (णोपाराए के०) पार पण पाम्या नही इहलोक परलोकथी भ्रष्ट थया थका (अ तराकामभोगेसुविसरणा के०) विचाले कामभोगने विषे ससार माहेज खूता रहे पण पुमरक कमल सरखा राजाने उद्धरी शके नही (दोचेपुरिसजाए के०) ए बीजो पुरुष जात (पचमहभूतिएतिआहिए के०) ए पचमहाभूतिक नामे कह्यो ॥ २४ ॥

॥ दीपिका–आत्मनोऽकिंचित्करत्वात्साख्यमतेऽसत्वान्नास्तिकमते न कर्मनिर्बंधइत्याह। सक्रयार्थी पुरुष क्रीणन् किंचिद्वस्तु मूल्येन गृण्हन् पर क्रीणयन् मूल्येन ग्राहयन् तथा प्राणिनोघ्नन् हिंसन् परैर्घातयन् तथा पचन् पाचयन् एतानि कुर्वतोन्यानप्यनुजानन्नप्य तश पुरुषमपि पचेंद्रिय विक्रीय हत्वा घातयित्वाऽत्रापि पचेंद्रियवधे नास्ति दोष । अत्रेव जानीहि किंपुनरेकेंद्रियवधइत्यपिशब्दार्थ । ततस्ते नैवैतद्विप्रतिवेदयति जानति । तद्यथा। क्रिया वलनात्मिका सावद्यानुष्ठानरूपा अक्रिया स्थानरूपा यावदेवमेव विरूपविरूपैर्नाना रूपै कर्मसमारंभै सावद्यानुष्ठानैर्विरूपरूपान्नानाप्रकारान् कामोपभोगान् समारभते स्वयं अन्याश्च कारयति नास्त्यत्र दोषइति प्रतार्य एवमेव तेऽनार्याविप्रतिपन्नाविरुद्ध मार्ग प्रति पन्नात्तमात्मीय धर्म श्रद्दधानाआत्मीयागीकार रोचयतस्तद्धर्मस्याख्यातार प्रशसयत ।त द्यथा । स्वाख्यातोनवता धर्मइत्यादितावन्नेय ।यावदतरा कामभोगेषु विषण्णाइह परलोकभ्र ष्टानात्मत्राणाय नापि परेषामिति द्वितीय पुरुषजात पचमहाभौतिकोव्याख्यात ॥२४॥

॥ टीका– सचैववाद्येकत्रात्मनोऽकिंचित्करत्वादन्यत्र वात्मनोसत्वादसदनुष्ठानैरप्या त्मा पापे कर्मनिर्न बध्यतइति दर्शयितुमाह (सेकिणमित्यादि) सेतिय कश्चित्पुरुष क्रयार्थी क्रीणन् किंचित् क्रयेण गृण्हस्तथापर क्रापयस्तथाहि प्राणिनोघ्नन् हिंसन् तथा परैर्घातयन् व्यापादयन् तथा पचन् पाचनादिका क्रिया कुर्वस्तथाऽपरैश्च पाचयन् ।अस्य चोपलक्षणार्थत्वात् क्रीणत क्रयतोघ्नतोघातयत पचत पाचयतश्चापरास्तथाप्यतश पुरुष मपि पचेंद्रिय विक्रीय घातयित्वापि पचेंद्रियघाते नास्ति दोषोत्रैवजानीहि अवगच्छ किंपुन रेकेंद्रियवनस्पतिघातइत्यपिशब्दार्थ । ततश्चैववादिन साख्याबार्हस्पत्यावा नोनैवैतद्बुध्य माण विप्रतिवेदयति जानति । तद्यथा । क्रिया परिस्पदात्मिका सावद्यानुष्ठानरूपाएवम क्रिया स्थानादिलक्षणा यावदेवमेव विरूपरूपैरुच्चावचैर्नानाप्रकारैर्जलस्नानावगाहनादिकै स्तथा प्राण्युपमर्दकारिभि कर्मसमारंभैर्विरूपरूपान्नानाप्रकारान् सुरापानमासभक्षणाग म्यागमनादिकान् कामोपभोगान् समारभते स्वत पराश्चोदयति नास्त्यत्र दोषइत्येव प्रता र्यासत्कारणाय प्रेरयत्येव च तेऽनार्याअनार्यकर्मकारित्वादार्यान्मार्गाद्विरुद्ध मार्ग प्रतिप न्ना । तथाहि । साख्यानामचेतनत्वात्प्रकृते कार्यकर्तृत्व नोपपद्यते । अचेतनत्व तु त

स्याश्चैतन्य पुरुषस्य स्वरूपमिति वचनात् आत्मेव प्रतिविवोदयन्यायेन करिष्यतीति चेत्त दपि न युक्तिसंगतं । यतोऽकर्तृत्वादात्मनोनित्यत्वाच्च प्रतिविवोदये न युज्यते । किंचानि त्यत्वात्प्रकृतेर्महदादि विकारतया नोत्पत्ति स्यात् । अपिच । नासतोजायते नावोनाना वोजायते सतइत्याद्यन्युपगमात्प्रधानात्मनोरेव विद्यमानत्वान्महदहंकारादेरनुत्पत्तिरेवैक त्वाच्च प्रकृतेरेकात्मवियोगेसति सर्वात्मना वियोग स्यादेकसबंधेवा सर्वात्मना प्रकृतिसयो गोन पुन कस्य चित्तत्त्वपरिज्ञानात् प्रकृतिवियोगे मोक्षोऽपरस्य तु विपर्ययात्संसारइत्येव जगद्वैचित्र्य नस्यादात्मनश्चाकर्तृत्वे तत्कृतौ बंधमोक्षौ नस्यातामेतच्च दृष्टेष्टबाधितं नापि कारणे सत्कार्यवादोयुक्तिनिरनुपपाद्यमानत्वात् । तथाहि । मृत्पिंडावस्थाया घटोत्पत्ते प्राग्घटसबंधाना कर्मगुणव्यपदेशानामनावाद्घटार्थिना च क्रियासु प्रवृत्तेर्न कारणे कार्यमि ति लोकायतिकस्यापि नूतानामचेतनत्वात्कर्तृत्वानुपपत्ति । कायाकारपरिणताना चै तन्याभिव्यक्त्यन्युपगमेच मरणानावप्रसंग स्यात्तस्मान्न पंचनूतात्मक जगदिति स्थितं । अपि चेद ज्ञान स्वसंवित्तिसिद्धमनात्मधर्मिणमुपस्थापयति । नच नूतान्येव धर्मित्वेन परिकल्पयितु युज्यते तेषामचेतनत्वादथ कायाकारपरिणताना चैतन्यधर्मोनविष्यती त्येतदप्ययुक्त । यत कायाकारपरिणामएव तेषामात्मानमधिष्ठातारमंतरेण न नवितुम र्हति निर्हेतुकत्वप्रसंगान्निर्हेतुकत्वेच नित्य सत्त्वमसत्त्ववा स्यादिति । तदेवनूतव्यतिक्त आत्मा तस्मिंश्च सति तदनुष्ठानत पुण्यपापे ततश्च जगद्वैचित्र्यसिद्धिरिति । एव व्यवस्थि ते तेऽनार्या सांख्यालोकायतिकावा पंचमहानूतप्रधानान्युपगमेन विप्रतिपन्नायत्कुर्यु स्तद्दर्शयितुमाह । (तत्तदहमाणाइत्यादि) तमात्मीयमन्युपगम ये चोक्तया नीत्या निर्युक्ति कत्वमपि श्रद्दधाना पंचमहानूतात्मप्रधानस्य सर्वकार्याणि उपगच्छति । तदेवच सत्य मित्येव प्रतिपादयत प्रतिपद्यमानास्तदेव चात्मीयमन्युपगम रोचयतस्तत्धर्मस्याख्यातार प्रशंसयत । तद्यथा । स्वाख्यातोनवता धर्मोऽस्माकमयमत्यंतमनिप्रेतइत्येव ते तदध्यव साया सावद्यानुष्ठानेनाप्यधर्मोन नवतीत्यध्यवसायिन स्त्रीकामेषु मूर्छिताइत्येव पूर्ववज्ज्ञे य । यावत्तदंतरे कामनोगेषु विषस्साऐहिकामुष्मिकोनयकार्यन्रष्टानात्मत्राणाय नापि परेषा मिति । नवत्येव द्वितीय पुरुषजात पंचमहानूतान्युपगमिकोव्याख्यातइति ॥ २४ ॥

अहावरे तच्चे पुरिसजाए ईसरकारणिए इति आहिज्जइ इह खलु पासा ईणवा संतेगतिया मणुस्सा नवंति अणुपुव्वेण लोय उववन्ना त आरि यावेगे जाव तेसिंचण महंते एगे राया नवइ जाव सेणावइपुत्ता तेसिं चण एगतीए सङ्घा नवइ काम त समणाय माहणाय पहारिंसुगमणाए जाव जहा मए एसधम्मे सुअक्खाए सुपन्नत्ते नवइ॥ २५ ॥

अर्थ–हवे अपर त्रीजो पुरुष जात कहेछे जे ईश्वर लोकनो करनार छे एवुं मानेछे ते मते एने ईश्वर कारणिक कहेछे खलु इति निश्चे आ मनुष्य लोकने विषे पूर्वोक्तरीते पूर्वादिक चार दिशिये कोइएक मनुष्य होय ते अनुक्रमे लोक माहे उपना तेमां कोइ एक आर्य देशना उपना ते ज्यां सुधी महोटो राजा होय तेने परषदा होय ते वली ज्यां सुधी सेनापतिना पुत्र इत्यादिक परखदा सुधी कहेवुं तेमाहे कोइ एक धर्मनी श्रद्धावान होय धर्मार्थी होय तेने धर्मार्थी जाणीने श्रमण ब्राह्मण मली धर्म प्रतिबोधवा निमित्ते आलोचीने ते पूर्वोक्त राजादिकने सन्मुख जइने अहीं यावत् पूर्वोक्त रीते सनादिकनुं प्रस्ताव सर्व कहेवो पछीते राजादिकने तेईश्वरकारणिक पुरुष आवी पोतानो स्वाख्यात सुप्रज्ञ धर्म वर्णवेछे ॥ २५ ॥

॥ दीपिका–अथापरस्तृतीयः पुरुषजातईश्वरोजगतः कारणं यस्य सईश्वरकारणिक आत्माऽद्वैतवादी व्याख्यायते । (इहखलुइत्यादि) प्राच्यादिषु दिक्षु एकस्यां दिशि स्थितः कश्चिदेव ब्रूयात् । यथा राजानमुद्दिश्य तावद्यावत्स्वाख्यातः सुप्रज्ञप्तोधर्मोभवति॥२५॥

॥ टीका–सांप्रतमीश्वरकारणिकमधिकृत्याह । (अहावरेइत्यादि) अथ द्वितीयपुरुषानंतरं तृतीयईश्वरकारणिकआख्यायते । समस्तस्यापि चेतनाचेतनरूपस्य जगतईश्वरः कारणं। प्रमाणं चात्र तनुभुवनकरणादिकं धर्मित्वेनोपादीयते ईश्वरकर्तृकमिति साध्योधर्मः संस्थानविशेषत्वात्कूपदेवकुलादिवत्तथा स्थित्वा प्रवृत्तेर्वास्यादिवत्। उक्तंच। अज्ञोजंतुरनीशः स्या,दात्मनः सुखदुःखयो ॥ ईश्वरप्रेरितोगच्छे,त्स्वर्गं वा श्वभ्रमेव वा इत्यादि। तथा पुरुष एवेदं यद्भूतं यच्च भव्यमित्यादि । तथा चोक्तं। एकएव हि भूतात्मा भूते भूते प्रतिष्ठितः॥ एकधा बहुधाचैव दृश्यते जलचंद्रवदित्यादि । तदेवमीश्वरकारणिकआत्मा द्वैतवादी वा तृतीयः पुरुषजातआख्यायते । (इहखलुइत्यादि) इहैव पुरुषजातप्रस्तावे । खलुशब्दोवाक्यालंकारे । प्राच्यादिषु दिक्ष्वन्यतमस्यां व्यवस्थितः कश्चिदेव ब्रूयात् । तद्यथा। राजानमुद्दिश्य तावद्यावत्स्वाख्यातः सुप्रज्ञप्तोधर्मोभवति ॥ २५ ॥

इह खलु धम्मा पुरिसादिया पुरिसोत्तराया पुरिसप्पणीया पुरिससंभूया पुरिसपज्जोतिता पुरिसअभिसमण्णागया पुरिसमेव अभिभूय चिठति सेजहाणामए गंडेसिया सरीरे जाए सरीरे संवुड्ढे सरीरे अभिसमण्णागए सरीरमेव अभिभूय चिठति एवमेव धम्मा पुरिसादिया जाव पुरिसमेव अभिभूय चिठति [illegible] ए अरईसिया सरीरे जाया सरीरे संवुड्ढा सरीरे अ

भिसमणागया सरीरमेव अभिभूय चिठति एवमेव धम्मावि पुरिसादिया जाव पुरिसमेव अभिभूय चिठति सेजहा णामए वम्मिएसिया पुढविजाए पुढविसवुड्ढे पुढविअभिस्समणागए पुढविमेव अभिभूय चिठइ एवमेव धम्मावि पुरिसादिया जाव पुरिसमेव अभिभूय चिठति सेजहा णामए रुक्खे सिया पुढविजाए पुढविसवुड्ढे पुढविअभिसमणागए पुढविमेव अभिभूय चिठति एवमेव धम्मावि पुरिसादिया जाव पुरिसमेव अभिभूय चिठति सेजहा णामए पुक्करिणी सिया पुढविजाया जाव पुढविमेव अभिभूय चिठति एवमेव धम्माविपुरिसादिया जाव पुरिसमेव अभिभूय चिठति से जहा णामए उदगपुक्खलेसिया उदगजाए जाव उदगमेव अभिभूय चिठ ति एवमेव धम्मावि पुरिसादिया जाव पुरिसमेव अभिभूय चिठति सेजहा णामए उदगवुब्बुएसिया उदगजाए जाव उदगमेव अभिभूय चिठति एव मेव धम्मावि पुरिसादिया जाव पुरिसमेव अभिभूय चिठति ॥ २६ ॥

अर्थ-(इहखलुधम्मापुरिसादियाके०) आ ससारने विषे खलु एवे वाक्यालंकारे धर्म जे सचेतना अचेतनारूप स्वभाव ते पुरुषादिक जाणवा एटले एम कहुजे एनी आदितु करनार पुरुष शब्दे ईश्वरछे तेकारणे पुरुषादिक एम पाठ कह्यो तथा (पुरिसोत्तरायाके०) पुरुषज जेने उत्तर एटले प्रधानछे तथा (पुरिसप्पणीया के०) पुरुष प्रणीत एटले ए नो अधिष्ठाता पण पुरुष ईश्वरजछे तथा (पुरिससंभूयाके०) पुरुष थकीज उपना (पुरिस पज्जोतिता के०) पुरुषजे ईश्वर तेणेज प्रगट कस्या जेम प्रदीप मणी अने सूर्यादिके घटपटादिक पदार्थ प्रगट कस्या तेनी पेरें जाणी लेवु (पुरिसअभिसमणागया के०) जीवने जन्म जरा मरण रोग शोक वर्ण गध रस स्पर्श मूर्त्तिपणो ए अनागतादिक धर्म ते सर्व पदार्थ ईश्वरना अनुगामीछे (पुरिसमेवअभिभूयचिठति के०) किंबहुना ए सर्व पुरुषनेज व्यापीने रहेछे (सेजहाणामए के०) ए अर्थ उपर दृष्टात देखाडेछे जेम णाम एवे संभावनाये (गमेसिया सरीरेजाएके०) पुरुषने शरीरे गम एटले गुमडो रोग विशेष थाय ते तेज शरीरने विषे उपनो (सरीरेसवुड्ढे के०) तेज शरीरने विषे वृद्धि पाम्यो (सरीरे अभिसमणागए के०) शरीरने पठवाडेज अनुगत गामिछे (सरीरमेवअ भिभूयचिठति के०) शरीरने विषेज व्यापि रहेछे पण तेनो अवयव शरीर थकी बाहेर नथी (एवमेव के०) एमज (धम्मावि के०) ए पदार्थ मात्रजेछे ते पण (पुरिसादिया

अर्थ–हवे अपर त्रीजो पुरुष जात कहेछे जे ईश्वर लोकनो करनार छे एवु मानेछे ते मते एने ईश्वर कारणिक कहेछे खलु इति निश्चें आ मनुष्य लोकने विषे पूर्वोक्तरीते पूर्वादिक चार दिशिये कोइएक मनुष्य होय ते अनुक्रमे लोक माहे उपना तेमां कोइ एक आर्य देशना उपना ते ज्या सुधी महोटो राजा होय तेने परषदा होय ते वली ज्या सुधी सेनापतिना पुत्र इत्यादिक परखदा सुधी कहेवु तेमाहे कोइ एक धर्मनी श्रद्धावान होय धर्मार्थी होय तेने धर्मार्थी जाणीने श्रमण ब्राह्मण मली धर्म प्रतिबोधवा निमित्ते आलोचीने ते पूर्वोक्त राजादिकने समुख जइने अहीं यावत् पूर्वोक्त रीते सन्नादिकनु प्रस्ताव सर्व कहेवो पछीते राजादिकने तेईश्वरकारणिक पुरुष आवी पोतानो स्वाख्यात सुप्रज्ञ धर्म वर्णवेछे ॥ २५ ॥

॥ दीपिका–अथापरस्तृतीय पुरुषजातईश्वरोजगत कारण यस्य सईश्वरकारणिक आत्माऽद्वैतवादी व्याख्यायते । (इहखलुइत्यादि) प्राच्यादिषु दिक्षु एकस्या दिशि स्थित कश्चिदेव ब्रूयात् । यथा राजानमुद्दिश्य तावद्यावत्स्वाख्यात सुप्रज्ञप्तोधर्मोभवति॥२५॥

॥ टीका–साम्प्रतमीश्वरकारणिकमधिकृत्याह । (अहावरेइत्यादि) अथ द्वितीयपुरुषानंतर तृतीयईश्वरकारणिकआख्यायते । समस्तस्यापि चेतनाचेतनरूपस्य जगतईश्वर कारण। प्रमाण चात्र तनुभुवनकरणादिक धर्मित्वेनोपादीयते ईश्वरकर्तृकमिति साध्योधर्मः सस्थानविशेषत्वात्कूपदेवकुलादिवत्तथा स्थित्वा प्रवृत्तेर्वास्यादिवत्। उक्तच। अज्ञोजतुरनीश स्या,दात्मन सुखदु खयो ॥ ईश्वरप्रेरितोगच्छे,त्स्वर्ग वा श्वभ्रमेव वा इत्यादि। तथा पुरुष एवेद यद्भूत यच्च भव्यमित्यादि । तथा चोक्त। एकएव हि भूतात्मा भूते भूते प्रतिष्ठित॥ एकधा बहुधाचैव दृश्यते जलचन्द्रवदित्यादि । तदेवमीश्वरकारणिकआत्मा द्वैतवादी वा तृतीय पुरुषजातआख्यायते । (इहखलुइत्यादि) इहैव पुरुषजातप्रस्तावे । खलुशब्दोवाक्यालकारे । प्राच्यादिषु दिक्ष्वन्यतमस्या व्यवस्थित कश्चिदेव ब्रूयात् । तद्यथा। राजानमुद्दिश्य तावद्यावत्स्वाख्यात सुप्रज्ञप्तोधर्मोभवति ॥ २५ ॥

इह खलु धम्मा पुरिसादिया पुरिसोत्तराया पुरिसप्पणीया पुरिससभूया पुरिसपज्जोतिता पुरिसअभिसमण्णागया पुरिसमेव अभिभूय चिठति सेजहा णामए गण्डेसिया सरीरे जाए सरीरे सवुड्ढे सरीरे अभिसमण्णागए सरीरमेव अभिभूय चिठति एवमेव धम्मा पुरिसादिया जाव पुरिसमेव अभिभूय चिठति सेजहा णाम ए अरईसिया सरीरे जाया सरीरे सवड्ढा सरीरे अ

भिसमण्णागया सरीरमेव अभिभूय चिठति एवमेव धम्मावि पुरिसादिया जाव पुरिसमेव अभिभूय चिठति सेजहा णामए वम्मिएसिया पुढविजाए पुढविसंवुढे पुढविअभिस्समण्णागए पुढविमेव अभिभूय चिठइ एवमेव धम्मावि पुरिसादिया जाव पुरिसमेव अभिभूय चिठति सेजहा णामए रुक्खे सिया पुढविजाए पुढविसंवुढे पुटविअभिसमण्णागए पुढविमेव अभिभूय चिठति एवमेव धम्मावि पुरिसादिया जाव पुरिसमेव अभिभूय चिठति सेजहा णामए पुक्करिणी सिया पुढविजाया जाव पुढविमेव अभिभूय चिठति एवमेव धम्माविपुरिसादिया जाव पुरिसमेव अभिभूय चिठति से जहा णामए उदगपुक्खलेसिया उदगजाए जाव उदगमेव अभिभूय चिठ ति एवमेव धम्मावि पुरिसादिया जाव पुरिसमेव अभिभूय चिठति सेजहा णामए उदगवुब्बुएसिया उदगजाए जाव उदगमेव अभिभूय चिठति एव मेव धम्मावि पुरिसादिया जाव पुरिसमेव अभिभूय चिठति ॥ २६ ॥

अर्थ-(इहखलुधम्मापुरिसादियाके०) आ संसारने विषे खलु एवे वाक्यालंकारे धर्म जे सचेतना अचेतनारूप स्वभाव ते पुरुषादिक जाणवा एटले एम कहुजे एनी आदितु करनार पुरुष शब्दे ईश्वरछे तेकारणे पुरुषादिक एम पाठ कह्यो तथा (पुरिसोत्तरायाके०) पुरुषज जेने उत्तर एटले प्रधानछे तथा (पुरिसप्पणीया के०) पुरुष प्रणीत एटले ए नो अधिष्ठाता पण पुरुष ईश्वरजछे तथा (पुरिससंभूयाके०) पुरुष थकीज उपना (पुरिस पज्जोतिता के०) पुरुषजे ईश्वर तेणेज प्रगट कस्या जेम प्रदीप मणी अने सूर्यादिके घटपटादिक पदार्थ प्रगट कस्या तेनी पेरें जाणी लेवु (पुरिसअभिसमण्णागया के०) जीवने जन्म जरा मरण रोग शोक वर्ण गंध रस स्पर्श मूर्त्तिपणो ए अनागतादिक धर्म ते सर्व पदार्थ ईश्वरना अनुगामीछे (पुरिसमेवअभिभूयचिठति के०) किंबहुना ए सर्व पुरुषनेज व्यापीने रहेछे (सेजहाणामए के०) ए अर्थ उपर दृष्टांत देखाडेछे जेम णाम एवे संभावनाये (गंमेसिया सरीरेजाएके०) पुरुषने शरीरे गंम एटले गुवडो रोग विशेष थाय ते तेज शरीरने विषे उपनो (सरीरेसंवुढे के०) तेज शरीरने विषे वृद्धि पाम्यो (सरीरे अभिसमण्णागए के०) शरीरने पठवाडेज अनुगत गामिछे (सरीरमेवअ भिभूयचिठति के०) शरीरने विषेज व्यापि रहेछे पण तेनो अवयव शरीर थकी बाहेर नथी (एवमेव के०) एमज (धम्मावि के०) ए पदार्थ मात्रजेछे ते पण (पुरिसादिया

के०) पुरुष जे ईश्वर ते थकी उत्पन्न थया ते (जावअनिनूयचिठति के०) यावत् ईश्वरनेज व्यापि रहेले परतु ईश्वर थकी काइ जुदा नथी

वली बीजो दृष्टात कहेले जेम (अरइसियाके०) अरति एटले चित्तनो उद्वेग पणो ते शरीर थकीज उपजे अने शरीर थकीज वृद्धि पामे अने शरीर माहेज व्यापि रहेले तेम ए धर्म जे पदार्थ ते पण पुरुष थकीज उपजे पुरुष थकीज वृद्धि पामे अने पुरुष माहेज व्यापिरहेले वली त्रीजो दृष्टात कहेले (वम्मिएसियाके०) जेम वम्मिजे पृथवी तेनो विकार होय ते पृथवीने विषेज उपजे पृथवी थकीज वृद्धि पामे अने पृथवीने विषेज व्यापिने रहे तेम ए धर्म अने पुरुषादिक पण जाणी लेवा वली चोथो दृष्टात कहेले जेम कोइएक वृक्ष होय ते पृथवी थकी उपजे पृथवीने विषेज वृद्धि पामे अने पृथवीनेज व्यापि रहे तेम ए धर्म अने पुरुषादिक पण जाणी लेवा वली पाचमो दृष्टात कहेले जेम पुष्करिणी होय ते पृथवी थकी उपजे पृथवी थकी वृद्धि पामे अने पृथवीने विषेज व्यापि रहे तेम ए पदार्थ अने पुरुषादिक पण जाणी लेवा वली ठो दृष्टात कहेले जेम घणा पाणी माहे कमल होय ते कमल जल थकी नीपजे जल थकीज वृद्धि पामे अने जल माहेज व्यापि रहे तेमज ए पदार्थ पण ईश्वर थकीज नीपजे ईश्वर थकीज वृद्धि पामे अने ईश्वरनेज व्यापि रहे वली सातमो दृष्टात कहेले जेम पाणीनु बुदबुदो होय ते जल थकीज नीपजे जल थकीज वृद्धि पामे अने जल माहेज व्यापि रहे तेम ए पदार्थो सर्व ईश्वर थकीज उपजेले इत्यादिक सर्व जाणी लेवु ॥ २६ ॥

॥ दीपिका–इह खलु धर्मा स्वनावाश्चेतनाचेतनरूपा पुरुषईश्वरआत्मा वा कारणमादिर्येषा ते पुरुषादिकाईश्वरकारणिकाआत्मकारणिकावा तथा पुरुषएव उत्तर कार्यं येषाते पुरुषोत्तरास्तथा पुरुषेण प्रणीता पुरुषेण द्योतिता प्रकाशीकृतायथा सूर्येण घटादय । ते च धर्माजीवाना जन्ममरणरोगशोकादय । अजीवधर्मास्तु मूर्तद्रव्याणा वर्णगधरसस्पर्शा । अमूर्तद्रव्याणा धर्माधर्माकाशाना गत्यादिकाधर्मा सर्वेपीश्वरकृता । आत्माद्वैतवादे चात्मविवर्ता । सर्वेऽप्येते पुरुषमेवाजिनूय व्याप्य तिष्ठति । अत्रार्थे दृष्टातान् बहूनाह । (सेजहानामएइत्यादि) सेजहा तद्यथा । नामेति सनावनाया । गड स्यात् । सनाव्यते हि प्राणिना कर्मवशगाना गडादिरोगइति । गड च शरीरे जातं शरीरावयवनूतं तथा शरीरे वृद्धिमुपगतं शरीरवृध्या तस्य वृद्धिरिति। शरीरेऽनिसमत्वागतं न तदवयवोपि शरीरात्पृथक्नूतइति । शरीरमेवाजिनूय पीडयित्वा तिष्ठति । एवमेव येऽमी धर्माश्चेतनाचेतनरूपास्ते सर्वेपीश्वरकर्तृका । न ते ईश्वरात्पृथकर्तु न शक्यते यथा गड शरीरविकारनूतं तद्विनाशेच शरीरमेव तिष्ठति एव धर्मा पुरुषादिका पुरुषवि

काररूपान् पुरुषात् पृथग्भवति तद्विकारापगमे चात्मानमेवाश्रित्य तिष्ठति । एवम न्यदृष्टांताअपि भाव्या । (सेजहेत्यादि) अरतिश्चित्तोद्वेगरूपा साच शरीरजातेत्यादि। यथावा वल्मीकं पृथिवीविकाररूपं पृथिव्यां जातमित्यादि । एवं सर्वमीश्वरकारणिक मात्मविवर्तरूपं वा । यथा वा वृक्षोऽशोकादि पृथिवीजातं । यथा वा पुष्करिणी तडा गरूपा पृथिव्यामेव जातेत्यादि प्राग्वत् । तथा उदकपुष्कलमुदकप्राचुर्य मुदकजातमि त्यादि यथावा उदकबुद्बुदइत्यादि सुगमं ॥ २६ ॥

॥ टीका-सचार्य । इह खलु धर्मा स्वभावाश्चेतनाचेतनरूपा पुरुषईश्वरआत्मावा कारणमादिर्येषांते पुरुषादिकाईश्वरकारणिकाआत्मकारणिकावा तथा पुरुषएवोत्तर का र्यं येषांते पुरुषोत्तरास्तथा पुरुषेण प्रणीता सर्वस्य तदधिष्ठितत्वात् तदात्मकत्वाच्च त था पुरुषेण द्योतिता प्रकाशीकृता प्रदीपमणिसूर्यादिनेव घटपटादयइति । तेच धर्मा जीवानां जन्मजरामरणव्याधिरोगशोकसुखदुःखजीवनादिका । अजीवधर्मास्तु मूर्तिमतां द्रव्याणां वर्णगंधरसस्पर्शाद्यमूर्तिमतां द्रव्याणां धर्माधर्माकाशानां गत्यादिकाधर्मा । स र्वेपीश्वरकृताआत्माद्वैतवादेवाऽऽत्मविवर्ता सर्वेप्येते पुरुषमेवाभिभूय व्याप्य तिष्ठति । अ स्मिन्नर्थे दृष्टांतानाविर्भावयन्नाह । (सेजहाणामएइत्यादि) सेशब्दस्तच्छब्दार्थे । नामश ब्दः संभावनायां । तद्यथा । नाम गंड स्याद्भवेत्संभाव्यते च शरीरिणां संसारांतर्गता नां कर्मवशगानां गंडादिसमुद्भवस्तच्च शरीरे जातं शरीरावयवभूतं तथा शरीरे वृद्धिमुप गतं शरीराभिवृद्धौ च तस्याभिवृद्धिस्तथा शरीरेऽभिसंबधागतं शरीरमाभिमुख्येन व्याप्य व्यवस्थितं न तदवयवोपि शरीरात्पृथग्भूतइति भावः । तथा शरीरमेवाभिभूयाभिमुख्येन पीडयित्वा तिष्ठति । यदिवा तदुपशमे शरीरमे वाश्रित्य तद्गंड तिष्ठति न शरीराद्बहिर्भव ति । एतदुक्तं भवति । यथा तत्पिटकं शरीरैकदेशभूतं नयुक्तिशतेनापि शरीरात्पृथग्दर्श यितु शक्यते एवमेवामी धर्माश्चेतनाचेतनरूपास्ते सर्वेपीश्वरकर्तृकान ते शरीरात्पृथक्कर्तुं पार्यंते। यदिवा सर्वव्यापिनआत्मनस्त्रैलोक्योदरविवरवर्तिपदार्थात्मनोये केचन धर्मा प्रा दुष्षंति ते पृथक्कर्तुं नशक्यंते तथा तद्गंड शरीरविकारभूतं तदपृथग्भूतं तद्विनाशेच शरीरमेवा वतिष्ठते । एवमेव सर्वेपि धर्मा पुरुषादिका पुरुषकारणिका पुरुषविकाररूपा नपुरुषा त्पृथग्भवितुमर्हंति तद्विकारापगमेवाऽऽत्मानमेवाश्रित्यावतिष्ठंति न तस्माद्बहिर्भवंतीति शास्त्रेच दृष्टांतप्राचुर्यमविरुद्ध। यदिवाऽस्मिन्नर्थे बहवोदृष्टांता ।संभवतीश्वरकर्तृत्ववादस्या द्वैतवादस्यच सुप्रसिद्धत्वाद्दृष्टांतबहुत्वमित्याह । (सेजहाइत्यादि) तद्यथा नामारतिश्चि त्तोद्वेगलक्षण स्याद्भवेत् । साच शरीरजाताइत्यादि गंडवन्नेया । दार्ष्टांतिकेप्येवमेव सर्वे धर्मा पुरुषादिका पुरुषप्रभवाइत्यादिपूर्ववन्नेय । तथा यथा नाम वल्मीकं पृथ्वीविकार

के०) पुरुष जे ईश्वर ते थकी उत्पन्न थया ते (जावअनिजूयचिठति के०) यावत् ईश्वरनेज व्यापि रहेले परतु ईश्वर थकी काइ जुदा नथी

वली बीजो दृष्टांत कहेले जेम (अरइसियाके०) अरति एटले चित्तनो उद्वेग पणो ते शरीर थकीज उपजे अने शरीर थकीज वृद्धि पामे अने शरीर माहेज व्यापि रहेले तेम ए धर्म जे पदार्थ ते पण पुरुष थकीज उपजे पुरुष थकीज वृद्धि पामे अने पुरुष माहेज व्यापिरहेले वली त्रीजो दृष्टांत कहेले (वम्मिएसियाके०) जेम वम्मिजे पृथवी तेनो वि कार होय ते पृथवीने विषेज उपजे पृथवी थकीज वृद्धि पामे अने पृथवीने विषेज व्या पिने रहे तेम ए धर्म अने पुरुषादिक पण जाणी लेवा वली चोथो दृष्टांत कहेले जेम कोइएक वृक्ष होय ते पृथवी थकी उपजे पृथवीने विषेज वृद्धि पामे अने पृथवीनेज व्यापि रहे तेम ए धर्म अने पुरुषादिक पण जाणी लेवा वली पाचमो दृष्टांत कहेले जेम पुष्करिणी होय ते पृथवी थकी उपजे पृथवी थकी वृद्धि पामे अने पृथवीने वि षेज व्यापि रहे तेम ए पदार्थ अने पुरुषादिक पण जाणी लेवा वली ठो दृष्टांत कहे ले जेम घणा पाणी माहे कमल होय ते कमल जल थकी नीपजे जल थकीज वृद्धि पामे अने जल माहेज व्यापि रहे तेमज ए पदार्थ पण ईश्वर थकीज नीपजे ईश्वर थ कीज वृद्धि पामे अने ईश्वरनेज व्यापि रहे वली सातमो दृष्टांत कहेले जेम पाणीनु बुदबुदो होय ते जल थकीज नीपजे जल थकीज वृद्धि पामे अने जल माहेज व्यापि रहे तेम ए पदार्थो सर्व ईश्वर थकीज उपजेले इत्यादिक सर्व जाणी लेवु ॥ २६ ॥

॥ दीपिका—इह खलु धर्मा स्वनावाश्चेतनाचेतनरूपा पुरुषईश्वरआत्मा वा कारण मादिर्येषा ते पुरुषादिकाईश्वरकारणिकाआत्मकारणिकावा तथा पुरुषएव उत्तर कार्य येषाते पुरुषोत्तरास्तथा पुरुषेण प्रणीता पुरुषेण द्योतिता प्रकाशीकृतायथा सूर्येण घ टादय । ते च धर्माजीवाना जन्ममरणरोगशोकादय । अजीवधर्मास्तु मूर्तद्व्याणा व र्णगधरसस्पर्शा । अमूर्तद्व्याणा धर्माधर्माकाशाना गत्यादिकाधर्मा सर्वेपीश्वरकृता । आत्माद्वैतवादे चात्मविवर्ता । सर्वेऽप्येते पुरुषमेवानिजूय व्याप्य तिष्ठति । अत्रार्थे दृष्टातान् बहूनाह । (सेजहानामएइत्यादि) सेजहा तद्यथा । नामेति संजावनाया । ग ड स्यात् । संजाव्यते हि प्राणिना कर्मवशगाना गडादिरोगइति । गड च शरीरे जातं श रीरावयवजूतं तथा शरीरे वृद्धिमुपगतं शरीरवृध्या तस्य वृद्धिरिति । शरीरेऽनिसमत्वागतं न तदवयवोपि शरीरात्पृथक्नूतइति । शरीरमेवानिजूय पीडयित्वा तिष्ठति । एवमेव येऽमी धर्माश्चेतनाचेतनरूपास्ते सर्वेपीश्वरकर्तृका । न ते ईश्वरात्पृथकर्तु न शक्यते य था गड शरीरविकारजूतं तद्विनाशेच शरीरमेव तिष्ठति एव धर्मा पुरुषादिका पुरुषवि

काररूपान पुरुषात् पृथग्भवति तद्विकारापगमे चात्मानमेवाश्रित्य तिष्ठति । एवम न्यदृष्टांताअपि भाव्या । (सेजहेत्यादि) अरतिश्चित्तोद्वेगरूपा साच शरीरजातेत्यादि । यथावा वल्मीक पृथिवीविकाररूप पृथिव्या जातमित्यादि । एव सर्वमीश्वरकारणिक मात्मविवर्तरूप वा । यथा वा वृक्षोऽशोकादि पृथिवीजात । यथा वा पुष्करिणी तडा गरूपा पृथिव्यामेव जातेत्यादि प्राग्वत् । तथा उदकपुष्कलमुदकप्राचुर्य मुदकजातमि त्यादि यथावा उदकबुद्बुदइत्यादि सुगम ॥ २६ ॥

॥ टीका–सचाय । इह खलु धर्मा स्वभावाश्चेतनाचेतनरूपा पुरुषईश्वरआत्मावा कारणमादियेषाते पुरुषादिकाईश्वरकारणिकाआत्मकारणिकावा तथा पुरुषएवोत्तर का र्य येषाते पुरुषोत्तरास्तथा पुरुषेण प्रणीता सर्वस्य तदधिष्ठितत्वात् तदात्मकत्वाद्वा त था पुरुषेण द्योतिता प्रकाशीकृता प्रदीपमणिसूर्यादिनेव घटपटादयइति । तेच धर्मा जीवाना जन्मजरामरणव्याधिरोगशोकसुखदु खजीवनादिका । अजीवधर्मास्तु मूर्तिमता द्रव्याणा वर्णगंधरसस्पर्शाअमूर्तिमता द्रव्याणा धर्माधर्माकाशाना गत्यादिकाधर्मा । स र्वेपीश्वरकृताआत्माद्वैतवादेवाऽत्मविवर्ता सर्वेप्येते पुरुषमेवाभिभूय व्याप्य तिष्ठति । अ स्मिन्नर्थे दृष्टांतानाविर्भावयन्नाह । (सेजहाणामएइत्यादि) सेशब्दस्तच्छब्दार्थे । नामश ब्द संभावनाया । तद्यथा । नाम गंड स्याद्भवेत्संभाव्यते च शरीरिणा ससारांतर्गता ना कर्मवशगाना गडादिसमुद्भवस्तच्च शरीरे जातं शरीरावयवसभूतं तथा शरीरे वृद्धिमुप गतं शरीराभिवृद्धौ च तस्याभिवृद्धिस्तथा शरीरेऽभिसबधागतं शरीरमाभिमुख्येन व्याप्य व्यवस्थित न तदवयवोपि शरीरात्पृथग्भूतइति भाव । तथा शरीरमेवाभिभूयाभिमुख्येन पीडयित्वा तिष्ठति । यदिवा तदुपशमे शरीरमे वाश्रित्य तद्गड तिष्ठति न शरीराद्बहिर्भव ति । एतदुक्त भवति । यथा तत्पिटक शरीरैकदेशभूतं नयुक्तिशतेनापि शरीरात्पृथग्दर्श यितु शक्यते एवमेवामी धर्माश्चेतनाचेतनरूपास्ते सर्वेपीश्वरकर्तृकान ते शरीरात्पृथक्कर्तुं पार्यते। यदिवा सर्वव्यापिनआत्मनस्त्रैलोक्योदरविवरवर्तिपदार्थात्मनोये केचन धर्मा प्रा दु पति ते पृथक्कर्तु नशक्यते तथा तद्गड शरीरविकारभूत तदपृथग्भूतं तद्विनाशेच शरीरमेवा वतिष्ठते । एवमेव सर्वेपि धर्मा पुरुषादिका पुरुषकारणिका पुरुषविकाररूपा नपुरुषा त्पृथग्भवितुमर्हंति तद्विकारापगमेवाऽत्मानमेवाश्रित्यावतिष्ठति न तस्माद्बहिर्भवतीति शास्त्रेच दृष्टांतप्राचुर्यमविरुद्ध। यदिवाऽस्मिन्नर्थे बहवोदृष्टांता ।संभवतीश्वरकर्तृत्ववादस्या द्वैतवादस्यच सुप्रतिष्ठत्वाद्दृष्टांतबहुत्वमित्याह । (सेजहाइत्यादि) तद्यथा नामारतिश्चि त्तोद्वेगलक्षण स्याद्भवेत्। साच शरीरजाताइत्यादि गडवन्नेया । दार्ष्टांतिकेप्येवमेव सर्वे धर्मा पुरुषादिका पुरुषप्रभवाइत्यादिपूर्ववन्नेय । तथा यथा नाम वल्मीक पृथ्वीविकार

के०) पुरुष जे ईश्वर ते थकी उत्पन्न थया ते (जावअनिनूयचिठति के०) यावत् ईश्वरनेज व्यापि रहेछे परतु ईश्वर थकी काइ जुदा नथी

वली बीजो दृष्टांत कहेछे जेम (अरइसियाके०) अरति एटले चित्तनो उद्वेग पणो ते शरीर थकीज उपजे अने शरीर थकीज वृद्धि पामे अने शरीर माहेज व्यापि रहेछे तेम ए धर्म जे पदार्थ ते पण पुरुष थकीज उपजे पुरुष थकीज वृद्धि पामे अने पुरुष मांहेज व्यापिरहेछे वली त्रीजो दृष्टांत कहेछे (वम्मिएसियाके०) जेम वम्मिजे पृथवी तेनो विकार होय ते पृथवीने विषेज उपजे पृथवी थकीज वृद्धि पामे अने पृथवीने विषेज व्यापिने रहे तेम ए धर्म अने पुरुषादिक पण जाणी लेवा वली चोथो दृष्टांत कहेछे जेम कोइएक वृक्ष होय ते पृथवी थकी उपजे पृथवीने विषेज वृद्धि पामे अने पृथवीनेज व्यापि रहे तेम ए धर्म अने पुरुषादिक पण जाणी लेवा वली पाचमो दृष्टांत कहेछे जेम पुष्करिणी होय ते पृथवी थकी उपजे पृथवी थकी वृद्धि पामे अने पृथवीने विषेज व्यापि रहे तेम ए पदार्थ अने पुरुषादिक पण जाणी लेवा वली छठो दृष्टांत कहेछे जेम घणा पाणी माहे कमल होय ते कमल जल थकी नीपजे जल थकीज वृद्धि पामे अने जल माहेज व्यापि रहे तेमज ए पदार्थ पण ईश्वर थकीज नीपजे ईश्वर थकीज वृद्धि पामे अने ईश्वरनेज व्यापि रहे वली सातमो दृष्टांत कहेछे जेम पाणीनु बुदबुदो होय ते जल थकीज नीपजे जल थकीज वृद्धि पामे अने जल माहेज व्यापि रहे तेम ए पदार्थो सर्व ईश्वर थकीज उपजेछे इत्यादिक सर्व जाणी लेवु ॥ २६ ॥

॥ दीपिका–इह खलु धर्मा स्वनावाश्चेतनाचेतनरूपा पुरुषईश्वरआत्मा वा कारणमादिर्येषा ते पुरुषादिकाईश्वरकारणिकाआत्मकारणिकावा तथा पुरुषएव उत्तर कार्य येषाते पुरुषोत्तरास्तथा पुरुषेण प्रणीता पुरुषेण द्योतिता प्रकाशीकृतायथा सूर्येण घटादय । ते च धर्माजीवाना जन्ममरणरोगशोकादय । अजीवधर्मास्तु मूर्तद्व्याणा वर्णगधरसस्पर्शा । अमूर्तद्व्याणा धर्माधर्माकाशाना गत्यादिकाधर्मा सर्वेपीश्वरकृता । आत्माद्वैतवादे चात्मविवर्ता । सर्वेऽप्येते पुरुषमेवानिनूय व्याप्य तिष्ठति । अत्रार्थे दृष्टांतान् बहूनाह । (सेजहानामएइत्यादि) सेजहा तद्यथा । नामेति सनावनाया । गड स्यात् । सनाव्यते हि प्राणिना कर्मवशगाना गडादिरोगइति । गड च शरीरे जातं शरीरावयवनूतं तथा शरीरे वृद्धिमुपगत शरीरवृध्या तस्य वृद्धिरिति। शरीरेऽनिसमत्वागतं न तदवयवोपि शरीरात्पृथक्नूतइति । शरीरमेवानिनूय पीडयित्वा तिष्ठति । एवमेव येऽमी धर्माश्चेतनाचेतनरूपास्ते सर्वेपीश्वरकर्तृका । न ते ईश्वरात्पृथक्कर्तु न शक्यते यथा गड शरीरविकारनूतं तद्विनाशेच शरीरमेव तिष्ठति एव धर्मा पुरुषादिका पुरुषवि

काररूपान पुरुपात् पृथग्भवति तद्विकारापगमे चात्मानमेवाश्रित्य तिष्ठति । एवम न्यदृष्टांताअपि भाव्या । (सेजहेत्यादि) अरतिश्चित्तोद्वेगरूपा साच शरीरजातेत्यादि। यथावा वल्मीकं पृथिवीविकाररूपं पृथिव्या जातमित्यादि । एवं सर्वमीश्वरकारणिक मात्मविवर्तरूपं वा । यथा वा वृक्षोऽशोकादि पृथिवीजातं । यथा वा पुष्करिणी तडा गरूपा पृथिव्यामेव जातेत्यादि प्राग्वत् । तथा उदकपुष्कलमुदकप्राचुर्यं मुदकजातमि त्यादि यथावा उदकबुद्बुदइत्यादि सुगमं ॥ २६ ॥

॥ टीका–सचार्थं । इह खलु धर्मा स्वभावाश्चेतनाचेतनरूपा पुरुषईश्वरआत्मावा कारणमादिर्येषांते पुरुषादिकाईश्वरकारणिकाआत्मकारणिकावा तथा पुरुषएवोत्तरं का र्यं येषांते पुरुषोत्तरास्तथा पुरुषेण प्रणीता सर्वस्य तदधिष्ठितत्वात् तदात्मकत्वाद्वा त था पुरुषेण द्योतिता प्रकाशीकृता प्रदीपमणिसूर्यादिनेव घटपटादयइति । तेच धर्मा जीवानां जन्मजरामरणव्याधिरोगशोकसुखदुःखजीवनादिका । अजीवधर्मास्तु मूर्तिमतां द्रव्याणां वर्णगंधरसस्पर्शाअमूर्तिमतां द्रव्याणां धर्माधर्माकाशानां गत्यादिकाधर्मा । स र्वेपीश्वरकृताआत्माद्वैतवादेवाऽत्मविवर्ता सर्वेप्येते पुरुषमेवाभिभूय व्याप्य तिष्ठति । अ स्मिन्नर्थे दृष्टांतानाविर्भावयन्नाह । (सेजहाणामएइत्यादि) सेशब्दस्तद्वदार्थे । नामश ब्द संभावनाया । तद्यथा । नाम गंड स्याद्भवेत्संभाव्यते च शरीरिणा संसारांतर्गता नां कर्मवशगानां गंडादिसमुद्भवस्तच्च शरीरे जातं शरीरावयवसंभूतं तथा शरीरे वृद्धिमुप गतं शरीराभिवृद्धौ च तस्याभिवृद्धिस्तथा शरीरेऽभिसंबधागतं शरीरमाभिमुख्येन व्याप्य व्यवस्थित न तदवयवोपि शरीरात्पृथग्भूतइति भाव । तथा शरीरमेवाभिभूयाभिमुख्येन पीडयित्वा तिष्ठति । यदिवा तदुपशमे शरीरमे वाश्रित्य तद्गंड तिष्ठति न शरीराद्बहिर्भव ति । एतदुक्तं भवति । यथा तत्पिटकं शरीरैकदेशभूतं नयुक्तिशतेनापि शरीरात्पृथग्दर्शी यितुं शक्यते एवमेवामी धर्माश्चेतनाचेतनरूपास्ते सर्वेपीश्वरकर्तृकास्ते शरीरात्पृथक्कर्तुं पार्यंते। यदिवा सर्वव्यापिनआत्मनस्त्रैलोक्योदरविवरवर्तिपदार्थात्मनोये केचन धर्मा प्रा दुःषंति ते पृथक्कर्तुं नशक्यंते तथा तद्गंड शरीरविकारभूतं तदपृथग्भूतं तद्विनाशेच शरीरमेवा वतिष्ठते । एवमेव सर्वेपि धर्मा पुरुषादिका पुरुषकारणिका पुरुषविकाररूपा नपुरुषा त्पृथग्भवितुमर्हति तद्विकारापगमेवाऽत्मानमेवाश्रित्यावतिष्ठति न तस्माद्बहिर्भवतीति शास्त्रेच दृष्टांतप्राचुर्यमविरुद्ध। यदिवाऽस्मिन्नर्थे बहवोदृष्टांता ।संभवतीश्वरकर्तृत्ववादस्या द्वैतवादस्यच सुप्रतिष्ठत्वाद्दृष्टांतबहुत्वमित्याह । (सेजहाइत्यादि) तद्यथा नामारतिश्चि त्तोद्वेगलक्षण स्याद्भवेत्। साच शरीरजाताइत्यादि गंडवन्नेया । दार्ष्टांतिकेप्येवमेव सर्वे धर्मा पुरुषादिका पुरुषप्रभवाइत्यादिपूर्ववन्नेय । तथा यथा नाम वल्मीकं पृथ्वीविकार

रूप स्यात्तच्च पृथिव्या जात पृथिवीसंबद्ध पृथिव्यनिसंबंधागत पृथिवीमेवाभिसमूय ति
ष्ठत्येव दार्ष्टांतिकेप्यायोज्य । एवमेव यदेतच्चेतनरूप तत्सर्वमीश्वरकारणिकमात्मविवर्त
रूप वा नात्मन पृथग्भवितुमर्हति पृथिव्या वल्मीकवत्तथा तद्यथा नाम वृक्षोऽशोका
दिक स्यात्सच पृथिवीजातइति दृष्टांतदार्ष्टांतिके पूर्ववदायोज्ये । तद्यथा । नामपुष्क
रिणी स्यात्तडागरूपा भवेत्साच पृथिव्यामेव जातेत्यादि प्राग्वच्चर्च्यस्तथा तद्यथा नामपु
ष्कल प्रचुरमुदक पुष्कलमुदकप्राचुर्य तच्च तद्धर्मत्वादुदकमेव यावदुदकमेवाभिभूय तिष्ठ
त्येव दार्ष्टांतिकेप्यायोज्य । तथा तद्यथा नामोदकबुद्बुद स्यादत्रापि दृष्टांतदर्ष्टांतिके
न तस्मादवयविन, पृथग्भूतइति सुगम ॥ २६ ॥

जंपिय इमं समणाणं णिग्गंथाणं उद्दिठं पणियं वियं जियं डुवालसंग
गणिपिडयं तंजहा आयारो सूयगडो जाव दिठिवातो सव्वमेव मिछा ण
एयं तहियं णएयं आहातहियं इमं सच्चं इमं तहियं इमं आहात
हियं एवं सन्नं कुव्वंति ते एवं सन्नं सठवेंति तेएवं सन्नं सोवठवयंति तमेव
ते तज्जाइयं डुक्खं णातिउट्टंति सउणी पंजरं जहा ॥२७॥ ते णो एवं विप्पडि
वेदेंति तंजहा किरियाइवा जाव अणिरएइवा एवमेव ते विरूवरूवेंहिं
कम्मसमारंभेंहिं विरूवरूवाइं कामभोगाइं समारंभंति भोयणाए एव
मेव ते अणारिया विप्पडिवन्ना एवं सद्दहमाणा जावइति ते णोहव्वाए
णोपाराए अंतरा कामभोगेसु विसएंति तच्चे पुरिसजाए ईसरकारणि
एत्ति आहिए ॥ २८ ॥

अर्थ–हवे जे ईश्वरे कर्यो ते सर्व सत्यछे अने बीजो सर्व मिथ्या छे एवो भाव कहेछे
(जंपियइमके०) जे ए प्रत्यक्ष लक्षण (समणाणणिग्गथाणके०) श्रमण निग्रथनो (उ
दिठ्के०) उद्देस्यो एटले ते निग्रथने अर्थे भाख्यो (पणियवियजिय के०) तेने अर्थे प्रग
ट कर्यो (डुवालसंगगणिपिडय के०) द्वादशांगी गणि पिटक एटले आचार्यनो भंडा
र (तंजहा के०) तेना नाम कहेछे (आयारो के०) आचारांग (सूयगडो के०) सू
त्रकृतांग इत्यादिक (जावदिठ्ठिवातो के०) ज्यांसुधी दृष्टिवाद लोक बिंदुसार नामा
पूर्व पर्यंत (सव्वमेवमिछा के०) ए सर्व मिथ्याछे कारण के ए कांइ ईश्वरकृत नथी
एतो सर्व पोतानी इछाये कल्पितछे माटे मिथ्याछे जेम कोइ छताने अछतो कहे अछताने
छतो कहे जेम कोइ साधुने चोर कहे अने चोरने साधु कहे तथा गायने घोडो कहे अने
घोडाने गाय कहे तेमज आत्मा कर्त्ता नथी तेने जे कर्त्ता कहेछे अने जे ईश्वर कर्त्ताछे

तेने अकर्त्ता कहेछे तेमाटे (णएयतह्यिके०) ए तथ्य नथी (णएयआहातहियके०) ए यथातथ्य नथी हवे ए दर्शनी जेने सत्य करी माने ते कहेछे (इमके०) ए ईश्वर कारणिक छे एमजे मानीये तेहिज (सच्चके०) सत्यछे (इमतहियके०) तेहिज तथ्य जाणवो (इमआहातहियके०) एन यथा तथ्यविशेषे जाणवो एरीते ते ईश्वर कारणिक पोताना दर्शनने अनुरागे (एवसन्नंकुव्वति के०) एवी संज्ञा करे (तेएवसन्नंसव्वेति के०) ते बीजा आगल पण एवीज संज्ञा स्थापन करे यद्यपि एवात युक्तिशून्यछे तथापि (तेएव सन्नं सोवठ्ठयतिके०) ते एवी संज्ञाने अनेक हेतु युक्ति दृष्टांते करी स्थापेछे (तमेवते तज्जाइयदुक्ख के०) ते कारणे ते उत्सूत्रने स्थापवे करी उत्पन्न थाय जे डुःख ते डुःखने (णातिउट्टंति के०) त्रोडी नशके तेना उपर दृष्टांत कहेछे (सउणीपंजरजहा के०) जेम शकुनी एटले पक्षी ते पांजराने त्रोडी नशके त्रमण करी करीने वली तेहिज पांजरा माहे रहे तेम ते पूर्वोक्त अन्य दर्शनीउ पण संसार रूप पांजरा माहेज रहे परंतु मोक्षे जइ शके नही अने बीजाने पण मोक्षे पोचाडी नशके ॥ २७ ॥ (तेणोएव विप्पडिवेदेंति के०) ते अन्य दर्शनी पाखंमी बापडा आटली वात नथी जाणता शु नथी जाणता (तजहा के०) ते कहेछे (किरियाइवा के०) रुडो अनुष्ठान नथी जाणता (जावअणिरएतिवा के०) यावत् अनरक पर्यंत नथी जाणता (एवमेव के०) एम अणजाणता थका (तेविरूवरूवेहिकम्मसमारंजेहिं के०) ते नाना प्रकारना सावद्यकर्मने करवे करी (विरूवरूवाइंकामजोगाइंसमारंजंति के०) अनेक प्रकारना कामजोग समारंजे जोगवे (जोयणाए के०) जोजनने अर्थे एरीते ते अनार्य पोताना धर्मने रुडो देखाडी प्ररूपता छता कामजोगने विषे मूर्छाणा थका एमते पाखंमी धर्मे राजादिकने सदावता थका ज्यालगे ते तीरे पण रह्या नही अने पारपण पाम्या नही एम आलोक थकी चूका अने परलोके पण पोता नही विचाले संसार माहे कामजोग रूप कादवने विषेज खुता थका रहे ते राजारूप पुंमरीक कमलने उद्धरी शके नही ए त्रीजो पुरुष जात ईश्वर कारणिक कह्यो ॥ २८ ॥

॥ दीपिका–ईश्वरकृतं सत्यमन्यन्मिथ्येत्याह । यदपि चेदं श्रमणना यतीनां निग्रथानां निष्किंचनानामुद्दिष्टं प्रणीतं व्यक्तीकृतं द्वादशांगं गणिपिटकं । तद्यथा । आचारं सूत्रकृतागमित्यादि यावद्दृष्टिवादं । सर्वमेतन्मिथ्याऽनीश्वरप्रणीतत्वात् नैतत्तथ्यं नैतद्यायातथ्यं न यथास्थितार्थकथकं । इदं पुनरीश्वरकर्तृत्वं आत्माद्वैतंच सत्यं इदमेव तथ्यं इदमेव याथातथ्यं । तदेव ते पूर्वोक्तनीत्या संज्ञां कुर्वंति ज्ञानं दधते अन्येन्यश्च संज्ञां संस्थापयंति । ते एव संज्ञामुपस्थापयंति सुष्टु उपसामीप्येन युक्तिभि स्थापयंति । ते च

रूपं स्यात्तच्च पृथिव्या जातं पृथिवीसंवद्धं पृथिव्यनिसंवंधागतं पृथिवीमेवानिसनूय ति ष्ठत्येव दार्ष्टांतिकेप्यायोज्यं । एवमेव यदेतच्चेतनरूपं तत्सर्वमीश्वरकारणिकमात्मविवर्त रूपं वा नात्मनः पृथग्नवितुमर्हति पृथिव्या वल्मीकवत्तथा तद्यथा नाम वृक्षोऽशोका दिकः स्यात्सच पृथिवीजातइति दृष्टांतदार्ष्टांतिके पूर्ववदायोज्ये । तद्यथा । नामपुष्क रिणी स्यात्तडागरूपा नवेत्साच पृथिव्यामेव जातेत्यादि प्राग्वच्चर्च्यस्तथा तद्यथा नामपु ष्कलं प्रचुरमुदकं पुष्कलमुदकप्राचुर्यं तच्च तद्धर्मत्वादुदकमेव यावदुदकमेवाभिनूय तिष्ठ त्येव दार्ष्टांतिकेप्यायोज्यं । तथा तद्यथा नामोदकबुद्बुदः स्यादत्रापि दृष्टांतदार्ष्टांतिके न तस्मादवयविनः पृथग्नूतइति सुगमं ॥ २६ ॥

जंपियं इमं समणाणं णिग्गंथाणं उद्दिठं पणियं वियं जियं डुवालसंगं गणिपिमयं तंजहा आयारो सूयगडो जाव दिठिवातो सव्वमेवं मिछा ण एयं तहियं णएयं आहातहियं इमं सच्चं इमं तहियं इमं आहात हियं एवं सन्नं कुव्वंति ते एवं सन्नं सठवेंति तेएवं सन्नं सोवठवयंति तमेवं ते तज्जाइयं डुक्कं णातिउट्टंति सउणी पंजरं जहा ॥२७॥ ते णो एवं विप्पडि वेदेंति तंजहा किरियाइवा जाव अणिरएइवा एवमेव ते विरूवरूवेहिं कम्मसमारंनेहिं विरूवरूवाइं कामनोगाइं समारनंति नोयणाए एव मेव ते अणारिया विप्पडिवन्ना एवं सद्दहमाणा जावइति ते णोहव्वाए णोपाराए अंतरा कामनोगेसु विसण्णेति तच्चे पुरिसजाए ईसरकारणि एत्ति आहिए ॥ २८ ॥

अर्थ–हवे जे ईश्वरे कर्‍यो ते सर्व सत्यछे अने बीजो सर्व मिथ्या छे एवो नाव कहेछे (जंपियंइमंके०) जे ए प्रत्यक्ष लक्षण (समणाणंणिग्गंथाणंके०) श्रमण निग्रंथनो (उ दिठंके०) उद्देस्यो एटले ते निग्रंथने अर्थे नाख्यो (पणियवियजियं के०) तेने अर्थे प्रग ट कर्‍यो (डुवालसंगंगणिपिमयं के०) द्वादशांगी गणि पिटक एटले आचार्यनो नंमा र (तंजहा के०) तेना नाम कहेछे (आयारो के०) आचारांग (सूयगडो के०) सू त्रकृतांग इत्यादिक (जावदिठिवातो के०) ज्यांसुधी दृष्टिवाद लोक बिंदुसार नामा पूर्व पर्यंत (सव्वमेवमिछा के०) ए सर्व मिथ्याछे कारण के ए काइ ईश्वरकृत नथी एतो सर्व पोतानी इछायें कल्पितछे माटे मिथ्याछे जेम कोइ छताने अछतो कहे अछताने छतो कहे जेम कोइ साधुने चोर कहे अने चोरने साधु कहे तथा गायने घोडो कहे अने घोडाने गाय कहे तेमज आत्मा कर्त्ता नथी तेने जे कर्त्ता कहेछे अने जे ईश्वर कर्त्ताछे

तेने अकर्त्ता कहेछे तेमाटे (णएयतहियके०) ए तथ्य नथी (णएयआहातहियके०) ए यथातथ्य नथी हवे ए दर्शनी जेने सत्य करी माने ते कहेछे (इमके०) ए ईश्वर कारणिक छे एमजे मानीये तेहिज (सच्चके०) सत्यछे (इमतहियके०) तेहिज तथ्य जाणवो (इमआहातहियके०) एज यथा तथ्यविशेषे जाणवो एरीते ते ईश्वर कारणिक पोताना दर्शनने अनुरागे (एवन्नकुव्वति के०) एवी संज्ञा करे (तेएवसन्नसव्वेति के०) ते बीजा आगल पण एवीज संज्ञा स्थापन करे यद्यपि एवात युक्ति शून्यछे तथापि (तेएव सन्न सोवठ्ठयतिके०) ते एवी संज्ञाने अनेक हेतु युक्ति दृष्टांते करी स्थापेछे (तमेवते तज्जाइयडुक्ख के०) ते कारणे ते उत्सूत्रने स्थापवे करी उत्पन्न थाय जे डुःख ते डुःखने (णातिउट्टति के०) छोडी नशके तेना उपर दृष्टांत कहेछे (सउणीपंजरजहा के०) जेम शकुनी एटले पक्षी ते पांजराने छोडी नशके भ्रमण करी करीने वली तेहिज पांजरा माहे रहे तेम ते पूर्वोक्त अन्य दर्शनीउं पण संसार रूप पांजरा माहेज रहे परंतु मोक्षे जइ शके नही अने बीजाने पण मोक्षे पोंचाडी नशके ॥ २७ ॥ (तेणोएव विप्पडिवेदेंति के०) ते अन्य दर्शनी पाखंमी बापडा आटली वात नथी जाणता ग्रु नथी जाणता (तजहा के०) ते कहेछे (किरियाइवा के०) रुडो अनुष्ठान नथी जाणता (जावअणिरएतिवा के०) यावत् अनरक पर्यंत नथी जाणता (एवमेव के०) एम अणजाणता थका (तेविरूवरूवेहिकम्मसमारंभेहि के०) ते नाना प्रकारना सावद्यकर्मने करवे करी (विरूवरूवाइकामभोगाइसमारभंति के०) अनेक प्रकारना कामभोग समारंभे भोगवे (भोयणाए के०) भोजनने अर्थे एरीते ते अनार्य पोताना धर्मने रुडो देखाडी प्ररूपता छता कामभोगने विषे मूर्छाणा थका एमते पाखंमी धर्मे राजादिकने सदावता थका ज्यालगे ते तीरे पण रह्या नही अने पारपण पाम्या नही एम आलोक थकी चूका अने परलोके पण पोता नही विचाले संसार माहे काम भोग रूप कादवने विषेज खुता थका रहे ते राजारूप पुंमरीक कमलने उद्धरी शके नही ए त्रीजो पुरुष जात ईश्वर कारणिक कह्यो ॥ २८ ॥

॥ दीपिका–ईश्वरकृतं सत्यमन्यन्मिथ्येत्याह । यदपि चेदं श्रमणना यतीनां निर्ग्रथानां निष्किंचनानामुद्दिष्टं प्रणीतं व्यक्तीकृतं द्वादशांगं गणिपिटकं । तद्यथा । आचारं सूत्रकृतांगमित्यादि यावद्दृष्टिवादं । सर्वमेतन्मिथ्याऽनीश्वरप्रणीतत्वात् नैतत्तथ्यं नैतद्याथातथ्यं न यथास्थितार्थज्ञापकं । इदं पुनरीश्वरकर्तृत्वं आत्माद्वैतं च सत्यं इदमेव तथ्यं इदमेव याथातथ्यं । तदेवं ते पूर्वोक्तनीत्या संज्ञां कुर्वंति ज्ञानं दधते अन्येभ्यश्च संज्ञां संस्थापयंति । ते एवं संज्ञामुपस्थापयंति सुष्टु उपसामीप्येन युक्तिभिः स्थापयंति । ते च

व वादिनस्तदगीकारजातीय दु ख दु खहेतुत्वान्नातिवर्तते न त्रोटयति । यथा शकुनि पक्षी पजर न त्रोटयति एव तेपि तडुपदेशात्कर्मबधन नातिवर्तते ॥ २७ ॥ ते कदाग्र हग्रस्ताएत द्वक्ष्यमाण नविप्रतिवेदयति न जानति । तद्यथा । इयक्रियाइत्यादि यावदन रकइत्येव निर्विवेकत्वान्न जानति । एवमेव यथाकथचित्ते विरूपरूपै कर्मसमारंभैर्वि रूपरूपान् कामभोगान् समारभते भोजनाय उपभोगाय । एव ते अनार्याविप्रतिपन्ना स्वपक्ष प्रतियति श्रद्दधतीति पूर्ववत् । यावत्ते कामभोगेषु विपन्ना । इत्ययमीश्वरकार णिकआत्माद्वैतवादी तृतीय पुरुषजात सपूर्ण ॥ २८ ॥

॥ टीका–तदेव यदीश्वरकृतत्वेनाभ्युपगम्यते तत्सर्व तथ्यमपर मिथ्या इत्येतदाविर्भाविय न्नाह । (जपियेत्यादि) यदपि चेद सव्यवहारत प्रत्यक्षासन्नभूत श्रमणाना यतीना निर्ग्र थाना निष्किचनानामुद्दिष्ट तदर्थ प्रणीत व्यजित तेषामभिव्यक्तीकृत द्वादशाग गणिपिटक तद्यथाचारइत्यादि यावद्दृष्टिवाद सर्वमेतन्मिथ्या अनीश्वरप्रणीतत्वात्स्वरुचिविरचितरथ्या पुरुषवाक्यवत्तथ्य नैतत्तथ्यमिथ्येत्यनेनोद्भूतोद्भावनमाविष्कृतमचौरत्ववत् । नेतत्तथ्यमित्य नेन तु सद्भूतार्थनिन्हवोयथानास्त्यात्मेति तथा नैतद्याथातथ्यमवस्थितोर्थ । तथावस्थि तमिति भावोनेन सद्भूतार्थनिन्हवेनासद्भूतार्थारोपणमाविष्कृत । तद्यथा । गामश्व ब्रुवतो श्व वा गामित्येकार्थिकानि चैतानि शक्रेन्द्रादिवद्द्रष्टव्यानि । तदेव यदि तद्द्वादशाग गणि पिटक तदनीश्वरप्रणीतत्वान्मिथ्येति स्थितमिद तु पुनरीश्वरकर्तृकत्व नामात्माद्वैत वा सत्य यथावस्थितार्थप्रतिपादनात् । तथेदमेव तथ्य सद्भूतार्थोद्भासनात्तदेव ते ईश्वरकार णिकाआत्माद्वैतवादिनोवा । एव मनतरोक्तया नीत्या सर्व तनुभुवनकारणादिकमीश्वर कारणिक तथा सर्व चेतनमचेतन वाऽऽत्मनि निवर्तितस्वभावमात्मनएव सर्वाकारतयोत्प त्तेरित्येव सज्ञान सज्ञा तामेव कुर्वत्यन्येषाच ते स्वदर्शनानुरक्तमनस सज्ञा स्थापयति तथा एवभूता सज्ञा वक्ष्यमाणेन न्यायेन निर्युक्तिकामपि सुष्ठूपसामीप्येन तदाग्राहितया तदाभिमुख्यायुक्तीर्निर्णायव स्थापयति प्रतिष्ठापयति । ते चैव वादिनस्तमीश्वरकर्तृत्ववाद मात्माद्वैतवादवा नातिवर्तते तदभ्युपगमजातीय च दु ख दु खहेतुत्वाद्दु ख नातिवर्तते न त्रोटयति । अस्मिन्नर्थे दृष्टातमाह । यथा शकुनि पक्षिविशेषोलावकादिक पजर ना तिवर्तते पौन पुन्येन भ्रात्वा तत्रैव वर्तते एव तेप्येवभूताभ्युपगमवादिनस्तदापादितक र्मबध नातिवर्तते नवा त्रोटयति ॥२७॥ तेच स्वाभिमानग्रहग्रस्तानैत द्वक्ष्यमाण विप्रतिवे दयति न सम्यक् जानति । तद्यथेय क्रियासदनुष्ठानरूपेय चाक्रिया तद्विपरीतेत्येव स्वाग्रहि णोनान्यत् शोभनमशोभन वा यावदयमनरकइत्येव सद्विवेकरहितत्वान्नावधारयत्येवमेव य थाकथचित्ते विरूपरूपै कर्मसमारभैर्नानाप्रकारै सावद्यानुष्ठानैर्द्रव्योपार्जनोपायभूतैर्द्रव्य मुपादाय विरूपरूपान्कामभोगानुच्चावचान्समाचरति भोजनायोपभोगार्थमित्येवमनार्यास्ते

विरुद्ध मार्ग विप्रतिपन्नान सम्यग्वादिनोनवति । तथाहि । सर्वमीश्वरकर्तृकमित्यत्राभ्यु पगमे किमसावीश्वर स्वतएवापरान् क्रियासु प्रवर्तयेडुतापरेण प्रेरितस्तत्र यद्याद्य पक्षस्त द्वदन्येपामपि स्वतएव क्रियासु प्रवृत्तिर्नविष्यति कियतगेडुनेश्वरकल्पनेन । अथासावप्यपर प्रेरित्त सोप्यपरेणेत्येवमनवस्थालता नन्नोमडलमालिनी प्रसर्पति । किंचासावीश्वरोमहा पुरुपतया वीतरागोपेत सन्ननेकान्नरकयोग्यासु क्रियासु प्रवर्तयत्यपरास्तु स्वर्गापवर्गयोग्या स्वित्यथ ते पूर्वशुनाशुनचरितोदयादेव तथाविधासु तासु क्रियासु प्रवर्तते सतु निमित्त मात्रमेतदपि नयुक्तिसगत । यत प्राक्तनाशुनाशुनप्रवर्तनमपि तदायत्तमेव । तथा चो क्त' । अज्ञोजतुरित्यादि । अथ तदपि प्राक्तनमन्येन प्राक्तनतरेण कारितमित्येवमनादिहे तुपरपरेत्येव च सति ततएव शुनाशुने स्थाने नविष्यत किमीश्वरपरिकल्पनेन । तथा चो क्त । शास्त्रोपधादिसबधाच्चैत्रस्य व्रणरोहणे ॥ असबद्धस्य क स्थाणो कारणत्व नक ल्पतइत्यादि । यच्चोक्त । सर्वं तनुनुवनकरणादिक बुद्धिमत्कारणपूर्वक सस्थानविशेपत्वा त् देवकुलवदित्येतदपि नयुक्तिसगत । यतएतदपि साधन नजवदन्निप्रेतमीश्वर साधयति तेन सार्ध व्याप्त्यसिद्ध । देवकुलादिके दृष्टातेऽनीश्वरस्यैव कर्तृत्वेनाभ्युपगमात् । नच स स्थानशब्दप्रवृत्तिमात्रेण सर्वस्य बुद्धिमत्कारणपूर्वकत्व सिध्यति । अन्यथानुपपत्तिलक्षण स्य साध्यसाधनयो प्रतिबधस्यान्नावात् । अथाविनानावमतरेणैव सस्थानमात्रदर्शना त्साध्यसिद्धि स्यादेवच सत्यतिप्रसग स्यात् । उक्तच । अन्यथा कुनकारेण मृद्धिकारस्य कस्यचित् ॥ घटादे कारणात्सिद्धेर्वल्मीकस्यापि तत्कृतिरित्यादि । नचेश्वरकर्तृत्वे जगद्वै चित्र्य सिध्यति तस्यैकरूपत्वादित्युक्तप्रायमिति । आत्माद्वैतपक्षस्त्वत्यतमयुक्तिसगतत्वा न्नाश्रयणीय । तथाहि । तत्र न प्रमाण न प्रमेय नप्रतिपाद्य न प्रतिपादकोन हेतुर्न दृष्टातोन तदानासोन्नेदेनावगम्यते । सर्वस्यैव जगतएकत्व स्यादात्मनोनिन्नत्वात् तदन्ना वेच क केन प्रतिपाद्यते इत्यप्रणयनमेव शास्त्रस्यात्मनश्चैकत्वात्तत्कार्यमप्येकाकारमेव स्यादित्यतोनिर्हेतुक जगद्वैचित्र्य । तथाच सति । नित्य सत्वमसत्व वा, हेतोरन्यानपेक्ष णात् ॥ अपेक्षातोहिनावाना, कादाचित्कत्वसनवइत्यादि । तदेवमीश्वरकर्तृत्वमात्माद्वैतप क्षश्च युक्तिविचार्यमाणोन कथचिद्घटा प्राचति । तथा ते स्वदर्शनमाहमहितास्तज्जातीया दु खात् शकुनि पजरादिव नातिमुच्यते विप्रतिपन्नाश्च तत्प्रातिपादिकानिर्युक्तिनिस्तदेव स्वपक्ष प्रतियति श्रद्दधतीति पूर्ववन्नेय । (यावत् णोहव्वाएणोपाराएअतराकामनोगेसु विसपुत्ति) इत्यप तृतीय पुरुपजातईश्वरकारणिकइति । सहैवमाह । यस्य बुद्धि र्न लिप्येत हत्वा सर्वमिद जगत् ॥ आकाशमिव पकेन नासौ पापेन लिप्यतइत्याद्यसमज सन्नापितया त्यक्त्वा पूर्वसयोगमप्राप्तोविवक्षितं स्थानमतरालएव कामन्नागेपु मूर्छितोवि पएणइत्यवगतव्यमिति ॥ २० ॥

अहावरे चउत्थे पुरिसजाए णियतिवाइएत्ति आहिज्जइ इह खलु पाई णवा तहेव जावसेणावईपुत्तावा तेसिंचणं एगतीए सड्ढी नवइ कामं तं समणाय माहणाय संपहारिं सुगमणाए जाव मए एस धम्मे सुअक्खाए सुपन्नत्ते नवइ ॥ २७ ॥

अर्थ–अथ हवे अनेरो चोथो पुरुषजात नियतवादि कहिये छेयें जे कार्य सिद्धिने विषें नवितव्यता टालीने बीजो कारण काइ पण न माने ते नियतवादि कहिए खलु एवे वाक्यालंकारे ए मनुष्य लोकने विषे पूर्वादिक चारदिशि माहेलो कोइएक पुरुष होय ते ज्यां सुधी सेनापतिना पुत्र इत्यादिक परषदा कहेवी तेमाहे कोइएकने धर्मनी श्रद्धा होय धर्मार्थी होय एवो धर्मार्थी जाणीने ब्राह्मण श्रमण मली तेने धर्म प्रति बोधवा निमित्ते आलोची राजादिकने संमुख जइने पोतानो धर्म प्ररूपे ते नियतवादि राजादिकनी पाशे पोताना धर्मनी स्थापना जे रीते करे तेरीते कहेछे ॥ २७ ॥

॥ दीपिका–अथापरश्चतुर्थः पुरुषजातोनियतिवादी आख्यायते । इह खलुपाईण इत्यादिप्राग्वत् । यावदेषधर्मः स्वाख्यातोनवतीति ॥ २७ ॥

॥ टीका–सांप्रतं चतुर्थपुरुषजातमधिकृत्याह । (अहावरेइत्यादि) अथ तृतीयपुरुषानंतरमपरश्चतुर्थः पुरुषएव पुरुषजातोनियतिवादिकआख्यायते प्रतिपाद्यते सचैवमाह । नात्र कश्चित्कालेश्वरादिकं कारणं नापि पुरुषकारः समानक्रियाणामपि कस्यचिदेव नियतिवादबलादर्थसिद्धेरतोनियतिरेव कारणं । उक्तंच । प्राप्तव्योनियतिबलाश्रयेण योर्थः सोवश्यं नवति नृणां शुनोऽशुनोवा ॥ नूतानां महति कृतेपि हि प्रयत्ने नाजाव्यं नवति न नाविनोस्ति नाशइत्यादि ॥ २७ ॥

इह खलु डुवे पुरिसा नवंति एगे पुरिसे किरियामाइक्खइ एगे पुरिसे णो किरियामाइक्खइ जेयपुरिसे किरियामाइक्खइ जेपुरिसे णोकिरियामाइक्खइ दोवि ते पुरिसा तुल्ला एगठा कारणमावन्ना ॥ ३० ॥

अर्थ–(इहखलुडुवेपुरिसानवंति के०) आ संसार माहे खलु एवे वाक्यालंकारे बे पुरुष होय तेमाहे (एगेपुरिसेकिरियामाइक्खइ के०) एक पुरुष क्रिया बोले (एगेपुरिसेणोकिरियामाइक्खइ के०) अने एक पुरुष अक्रिया बोले त्यां एक देश थकी बीजे देशे जइये ते क्रिया जाणवी अनेजे देशांतरने विषे नजावु एम उपक्रम विना कार्य प्रा

त्रि थाय तेने अक्रिया कहिए (जेयपुरिसेकिरियामाइरकइ के०) जे पुरुष क्रिया कहेछे अने (जेपुरिसेणोकिरियामाइरकइ के०) जेपुरुष अक्रिया कहेछे (दोवितेपुरिसातुल्ला के०) ए क्रियावादि अने अक्रियावादि बने पुरुष तुल्य एटले सरखा जाणवा (एगठा कारणमावन्ना के०) ए बेनु एकज अर्थछे कारणके ते नियतने वशें वर्त्ते जो ते पोताने वशे होय तो सरखा नकहेवाय ॥ ३० ॥

॥ दीपिका—नियतिवादी स्वमतमाह । इह द्वौ पुरुषौ नवत । एक क्रियामाख्याति । देशाद्देशांतरप्राप्ति क्रिया सा नियतेरेवस्यात् एवमक्रियापि । द्वावेतौ नरौ तुल्यौ नियतिवशवर्तित्वात् एकार्थौ एककारणापन्नत्वात् क्रियाक्रिये नियत्येककारणाधीनेइत्यर्थ ॥ ३० ॥

॥ टीका—इह खलु (डुवेपुरिसानवतीत्यादि) इहास्मिन् जगति । खलुशब्दोवाक्यालंकारे । द्वौ पुरुषौ नवतस्तत्रैक क्रियामाख्याति । क्रिया हि देशाद्देशांतरावाप्तिलक्षणा पुरुषस्य नवतीति न कालेश्वरादिना चोदितस्य नवत्यपितु नियतिप्रेरितस्यैवमक्रियापि । यदि तावत्तत्रौ नवत । तत क्रियावादमक्रियावादच समाश्रितौ द्वावपि नियत्यधीनत्वात्तुल्यौ । यदि पुनस्तौ स्वतत्रौ नवतस्तत क्रियाक्रियानेदान्नतुल्यौ स्यातामित्यत एकार्थावेककारणापन्नत्वादिति नियतिवशेनैव तौ नियतिवादमनियतिवाद चाश्रिताविति नाव । उपलक्षणार्थत्वाच्चान्योपि य कश्चित्कालेश्वरादिपक्षांतरमाश्रयति । सोपि नियतिचोदितएव इष्टव्यइति ॥ ३० ॥

वाले पुण एव विप्पडिवेदेति कारणमावन्ने अहमसि डुक्कामिवा सोयामिवा जूरामिवा तिप्पामिवा पीडामिवा परितप्पामिवा अहमेयमकासिपरोवा ज डुक्कइवा सोयाइवा जूराइवा तिप्पाइवा पीडाइवा परितप्पाइवा परोएवमकासि एव सेवाले सकारणवा एव विप्पडिवेदेति कारणमावन्ने॥ ३१ ॥

अर्थ—हवे ए नियतवादी परमतने विचावेछे (वालेपुणएव विप्पडिवेदेतिके०) ते परमतवादी वाल एटले अज्ञाने करी वली शुजाणे ते कहेछे (कारणमावन्ने के०) सुख डुःखादिकने उपजवे ईश्वरादिकनु कारण माने ते कहेछे (अहमसि डुक्कामिवा के०) डुःख्या जगत मांहे शारीरिक तथा मानसिक डुःख अनुनवुछु (सोयामिवाके०) इष्ट वियोग अने अनिष्ट सयोगनो करेलो शोक अनुनवुछु (जूरामिवा के०) अनर्थनी प्राप्तियें स्मरणाये जुरुछु अथवा अर्थ प्राप्तियें विचरुछु (तिप्पामिवा के०) शरीरना बल उंडु थायछे (पीडामिवाके०) वाह्याज्यंतर पीडा अनुजवुछु (परितप्पामिवाके०) परितापना

अनुनवुङु (अहमेय मकासिके०) ए सुख डु खादिक अनुनवुङु ते माहाराज करेलाछे (परोवा के०) अथवा पर एटले बीजो पण (ज के०) जे डु ख अनुनवेछे शोक अनु नवेछे जूरेछे तेना शरीरनो बल उंछु थायछे पीडा अनुनवेछे परितापना अनुनवेछे ते (परोएवमकासिके०) तेणेज अनरे एम कीधोछे अथवा माहारे विषे बीजो कोइ सुख डु खादिक उपजावे तेपण माहाराज करेलाछे (एवके०) एम (सेबालेके०) ते बाल अ ज्ञानी (सकारणवा के०) स्वकारण अथवा (परकारणवाके०) पर कारण सर्व डु खादिक जे छे ते पुरुषकार कारणकरी मानेछे (एव के०) एम (विप्पडिवेदेंति के०) जाणेछे (कारणमावन्ने के०) ए जे पुरुषकार कारणने मानेछे ते बाल जाणवा ॥ ३१ ॥

॥ दीपिका–बालोज्ञ पुनरेव विप्रतिवेदयति जानीते कारणमापन्न कारणमुद्दिश्य । तद्यथा । योहमस्मि (डु खामित्ति) डु खमनुनवामि (सोयामित्ति) शोकमनुनवामि (जूरामित्ति) डुष्कृतप्रवृत्तमात्मान गर्हामि अनर्थावासौ विस्तरयामीत्यर्थ । तिप्पामि शरीरबलात्क्षरामि पीडामि पीडामनुनवामि परितापमनुनवामि । एव यत्सुखडु खादि कमनुनवामि तदहमेवाकार्ष परोवा य डुखादिकमनुनवति मयिवाऽऽपादयति तत्स्वयमेव कृतमिति । एव सपुरुषकारणमापन्न स्वकृत परकृत वा डु खादि सर्व पुरुषकारकृतमिति जानीते बालइत्यर्थ ॥ ३१ ॥

॥ टीका–नियतिवादी परमतोद्विनावयिषयाह । (बालेपुणइत्यादि) बालोज्ञ पुरुष कालेश्वरवादीत्यादिक । पुनरिति विशेषणार्थस्तदेव दर्शयति । एवमिति । वक्ष्यमाणनी त्या विप्रतिवेदयति जानीते कारणमापन्न सुखडु खयो स्वकृतएव पुरुष कालेश्वरादि र्वा कारणमित्येवमन्युपपन्नोनान्यन्नियत्यादिक कारणमस्तीति । तदेवाह । तद्यथा । यो हमस्मिन् डु खमिति शारीर मानस डु खमनुनवामि तथा शोचामीष्टानिष्टवियोगसप्रयो गकृत शोकमनुनवामि तथा (तिप्पामित्ति) शारीरबल क्षरामि तथा (पीडामित्ति) सबा ह्यान्यतरया पीडया पीडामनुनवामि तथा (परितप्पामित्ति) परितापमनुनवामि तथा (जूरामित्ति) अनार्यकर्मणि प्रवृत्तमात्मान गर्हामि अनर्थावासौ विस्तरयामीत्यर्थ । तदेव यदह डु खमनुनवामि तदहमेवाकार्ष परपीडया कृतवानस्मीत्यर्थ । तथा परोपि यडु ख शोकादिकमनुनवति मयि चापादयति तत्स्वयमेव कृतमिति । तदेव दर्शयति । परोवेत्या दि । तथा परोपि यन्मा डु खयति शोचयतीत्यादि प्राग्वन्नेय । तत्सर्वमहमकार्षमित्येव द्वान्यामाकलितोऽज्ञोज्ञोवा बालएव विप्रतिवेदयते जानीते स्वकारणवा परकारणवा सर्व डु खादिपुरुषकारणमिति जानीते एव पुरुषकारकारणमापन्नइति ॥ ३१ ॥

मेहावि पुण एवं विप्पडिवेदेति कारणमावन्ने अहमसि डुक्खामिवा सो यामिवा जूरामिवा तिप्पामिवा पीडामिवा परितप्पामिवा णोअह एव मकासि परोवा ज डुक्खाइवा जाव परितप्पाइवा णोपरो एवमकासि एव से मेहावि सकारणवा परकारणवा एवविप्पडिवेदेति कारणमावन्ने से बे मि पाईणवा जे तसथावरा पाणा तेएव सघायमागच्छति ते एवं विपरिया समावज्जति तेएव विवेगमागच्छति तेएव विहाणमागच्छति तेएव सगतिय ति उवेहाए णोएव विप्पडिवेदेति तजहा किरियातिवा जावणिरएतिवा अणिरएतिवा एवते विरूवरूवेहि कम्मसमारम्भेहि विरूवरूवाइ काम भोगाइ समारम्भति भोयणाए ॥ ३२ ॥

अर्थ–हवे ए नियतवादी लोक ते पूर्वोक्त पुरुषकार कारणने बालत्व पणो मानीने पोताना मतनी स्थापना करेछे (मेहाविपुणएवविप्पडिवेदेति के०) वली पन्डित एवा नियत पक्ष ग्राह्ही एम जाणेछे शु जाणेछे ते कहेछे (कारणमावन्ने के०) सुख डुख जे उपजेछे तेने नियतटाली बीजो कारण काइ जाणवो नही ते उपर कहेछे डुक्खामिवा सोयामिवा इत्यादि पाठनो अर्थ पूर्व प्रमाणे लखेछे हु सुख डुख अनुभवुछु हु शोक अनुभवुछु जुरुछु शरीरनो बल ओछु थायछे पीडा अनुभवुछु परितापना अनुभवुछु (णो अहएवमकासि के०) ते मे नथी कर्यु किंतु नियतने भवितव्यताना बलथकी माहारे विषे आव्योछे परतु पुरुषकारादिक प्रमाण काइ नथी जे कारण माटे कोइपुरुष पोता ना आत्माने अनिष्ट नथाय एम वाछेछे तो शावास्ते ते शु करवाने एवो करे के जे थ की ते डुखी थाय परतु अहींया नियतज प्रमाणछे (परोवा के०) अथवा पर एटले बी जो (जडुक्खाइवा के०) जे काइ डुख अनुभवेछे (जावपरितप्पाइवा के०) यावत् परितापना अनुभवेछे ते पण (णोपरोएवमकासि के०) तेणे कीधो नथी परतु नियति अने भवितव्यताने योगेज सर्व उपजेछे)एवसेमेहाविके०) एम ते मेधावि एटले पन्डित पुरुष (सकारणवापरकारणवा के०) पोताने डुखनो कारण अथवा परने डुखनु का रण भवितव्यता छे परतु भवितव्यता टाली बीजो कोइ पण कारण नथी (एवविप्प डिवेदेति के०) एम ते नियतवादि जाणेछे के जगत माहे कोइ एक पापना कर नारने पण डुख उपजतु नथी अने कोइएक सुकृतना करनारने डुख उपजेछे माटे अ हींया पुरुषजे ईश्वर तेनु कारण काइपण नथी देखातु किंतु (कारणमावन्न के०) निय तज कारण देखायछे एमाटे भवितव्यता बलीष्टछे हवे बीजो पण जे काइ जगत माहे

अनुनवुं (अहमेय मकासिके०) ए सुख दुःखादिक अनुनवुं ते माहाराज करेलाछे (परोवा के०) अथवा पर एटले बीजो पण (ज के०) जे दुःख अनुनवेछे शोक अनुनवेछे जूरेछे तेना शरीरनो बल ऊंबुं थायछे पीडा अनुनवेछे परितापना अनुनवेछे ते (परोएवमकासिके०) तेणेज अनरे एम कीधोछे अथवा माहारे विषे बीजो कोइ सुख दुःखादिक उपजावे तेपण माहाराज करेलाछे (एवके०) एम (सेबालेके०) ते बाल अज्ञानी (सकारणवा के०) स्वकारण अथवा (परकारणवाके०) पर कारण सर्व दुःखादिक जे छे ते पुरुषकार कारणकरी मानेछे (एव के०) एम (विप्पडिवेदेंति के०) जाणेछे (कारणमावन्ने के०) ए जे पुरुषकार कारणने मानेछे ते बाल जाणवा ॥ ३१ ॥

॥ दीपिका—बालोज्ञ पुनरेव विप्रतिवेदयति जानीते कारणमापन्न कारणमुद्दिश्य । तद्यथा । योहमस्मि (दुःखामित्ति) दुःखमनुनवामि (सोयामित्ति) शोकमनुनवामि (जूरामित्ति) दुष्कृतप्रवृत्तमात्मान गर्हामि अनर्थावासौ विस्तरयामीत्यर्थ । तिप्पामि शरीरबलात्क्षरामि पीडामि पीडामनुनवामि परितापमनुनवामि । एव यत्सुखदुःखादिकमनुनवामि तदहमेवाकार्षं परोवा य दुःखादिकमनुनवति मयिवाऽऽपादयति तत्स्वयमेव कृतमिति । एव सपुरुपकारणमापन्न स्वकृतं परकृतं वा दुःखादि सर्वं पुरुषकारकृतमिति जानीते बालऽइत्यर्थ ॥ ३१ ॥

॥ टीका—नियतिवादी परमतोद्भिनावयिषयाह । (बालेपुणइत्यादि) बालोज्ञ पुरुष कालेश्वरवादीत्यादिक । पुनरिति विशेषणार्थस्तदेव दर्शयति । एवमिति । वक्ष्यमाणनीत्या विप्रतिवेदयति जानीते कारणमापन्न सुखदुःखयो स्वकृतएव पुरुष कालेश्वरादिर्वा कारणमित्येवमन्युपपन्नोनान्यन्नियत्यादिक कारणमस्तीति । तदेवाह । तद्यथा । योहमस्मिन् दुःखमिति शारीर मानस दुःखमनुनवामि तथा शोचामीष्टानिष्टवियोगसप्रयोगकृत शोकमनुनवामि तथा (तिप्पामित्ति) शारीरबल क्षरामि तथा (पीडामित्ति) सबाह्याभ्यतरया पीडया पीडामनुनवामि तथा (परितप्पामित्ति) परितापमनुनवामि तथा (जूरामित्ति) अनार्यकर्मणि प्रवृत्तमात्मान गर्हामि अनर्थावासौ विस्तरयामीत्यर्थ । तदेव यदह दुःखमनुनवामि तदहमेवाकार्ष परपीडया कृतवानस्मीत्यर्थ । तथा परोपि यद्दुःख शोकादिकमनुनवति मयि चापादयति तत्स्वयमेव कृतमिति । तदेव दर्शयति । परोवेत्यादि । तथा परोपि यन्मा दुःखयति शोचयतीत्यादि प्राग्वन्नेय । तत्सर्वमहमकार्षमित्येव ह्यान्यामाकलितोऽज्ञोज्ञोवा बालएव विप्रतिवेदयते जानीते स्वकारणवा परकारणवा सर्वं दुःखादिपुरुपकारणमिति जानीते एव पुरुषकारकारणमापन्नइति ॥ ३१ ॥

॥ टीका–तदेव नियतिवादी पुरुषकारकारणवादिनोवालत्वमापाद्य स्वमतमाह । (मेहावीत्यादि) मेधा मर्यादा प्रज्ञा वा तद्वान् मेधावी नियतिवादपक्षाश्रय्येव विप्रतिवेदयति जानीते कारणमापन्नइति नियतिरेव कारणं सुखाद्यनुभवस्य । तद्यथा योहमस्मिन् दुःखयामि शोचयामि तथा (तिप्पामित्ति) कूरामि (पीडामित्ति) पीडामनुभवामि (परितप्पामित्ति) परितापमनुभवामि नाहमेवाकार्षं दुःखमपि तु नियतितएवेतन्मय्यागतं न पुरुषकारादिकृतं । यतोनहि कस्यचिदात्मानिष्टोयेनानिष्टादुःखोत्पादिता क्रिया समारभते नियत्यैवासावनिच्छन्नपि तत्कार्यते येन दुःखपरंपराभाग्भवति कारणमापन्नइति परेष्येवमेव योजनीयं । एवं सति नियतिवादी मेधावीति सोल्लुंठमेतत्सकिल नियतिवादी दृष्टं पुरुषकारं परित्यज्यादृष्टनियतिवादाश्रयेण महाविवेकीत्येवमुल्लंघ्यते स्वकारणं परकारणं च दुःखादिकमनुभवन्नियतिकृतमेतदेव विप्रतिवेदयति जानाति कारणमापन्नं नियतिकारणं चात्रैकस्यासदनुष्ठानरतस्यापि नदुःखमुत्पद्यते परस्य तु सदनुष्ठायिनोपि तद्भवति यतोनियतिरेव कर्त्रीति । तदेवं नियतिवादे स्थिते परमपि यत्किंचित्तत्सर्वं नियत्यधीनमिति दर्शयितुमाह (सेबेमीत्यादि) सोहं नियतिवादी युक्तितोनिश्चित्य ब्रवीमीति प्रतिपादयामि । ये केचन प्राच्यादिषु दिक्षु त्रस्यतीति त्रसाद्वीन्द्रियादयः स्थावराश्च पृथिव्यादयः प्राणिनस्ते सर्वेप्येव नियतितएवौदरिकादिशरीरवधमागच्छति नान्येन केनचित्कर्मादिना शरीरं ग्राह्यते तथा बालकौमारयौवनस्थविरवृद्धावस्थादिकं विविधपर्यायं नियतितएवानुभवति तथा विवेकं शरीरात्पृथग्भावमनुभवति । तथा नियतितएव विविधं विधानमवस्थाविशेषं कुब्जकाणखजवामनकजरामरणरोगशोकादिकं वीभत्समागच्छति । तदेवं ते प्राणिनस्त्रसाः स्थावराएव पूर्वोक्तनीत्या संगतिं याति नियतिमापन्नानानाविधविधानभाजोभवति । तएव वा नियतिवादिनः संगच्छति नियतिमाश्रित्य तदुत्प्रेक्ष्या नियतिवादोत्प्रेक्ष्या यत्किंचन कारितया परलोकभीरवोनो नैव तद्वक्ष्यमाणं विप्रतिवेदयति । तद्यथा । क्रिया सदनुष्ठानरूपा अक्रियाऽसदनुष्ठानरूपाइत्यादि यावदेव ते नियतिवादिनस्तदुपरि सर्वं दोषजातं प्रक्षिप्य विरूपरूपैः कर्मसमारंभैर्विरूपरूपान् कामभोगान्भोजनायोपभोगार्थं समारभतइति ॥ ३२ ॥

एवमेव ते अणारिया विप्पडिवन्नाइं तसद्दहमाणा जावइति ते णोहव्वाए णोपाराए अंतरा कामभोगेसु विसण्णा चउत्थे पुरिसजाए णियइवाइ एत्ति आहिए ॥ ३३ ॥

अर्थ–एरीते ते अनार्य पुरुष कामभोगने विषे गृद्ध थता पोतानो धर्म रुडो करी प्ररूपता ते पाखंडी धर्म राजादिकने सर्दावता थका ज्यां सुधी एम ते काठे पण रह्या

छे ते सर्वे नियतनेज वशेंछे एवो देखाडेछे (सेबेमि के०) ते नियतवादी युक्तियें निश्चे करी बोलेछे (पाईणवा के०) पूर्वादिक चार दिशिने विषे (जे तसथावरापाणाके०) जे काइ त्रस अने स्थावर प्राणीछे (ते एवसघायमागछति के०) ते एम जे कांइ शरीरादिक सबध पामेछे ते नियतिनेज वशे पामेछे परतु बीजो कर्मादिक कारण तेने कांइ नथी (ते एवविपरियासमावज्जति के०) ते एम बाल कुमार यौवन अने वृद्धा अवस्थादिक *नानाप्रकारना पर्याय पामेछे ते सर्वे नियति थकीज अनुनवेछे* (ते एवविवेगमागछतिके०) तथा ते एम नियति थकीज विवेक एटले शरीर ते थकी पृथक् नाव पामेछे (ते एवविहाणमागछति के०) तथा ते एम नियति थकीज विधान एटले अवस्था विशेष अर्थात् कुब्ज काणो खज वामन जरा मरण रोग शोकादिक पामेछे (ते एवसगतियतिनवेहाए के०) एरीते ते त्रस अने स्थावर प्राणी नियतने बले एटला नावने अनुनवेछे हवे श्रीसुधर्म स्वामि श्रीजंबूस्वामि प्रत्ये कहे छे के एवा नियतवादि पुरुषो मात्र एक नियतनोज पक्ष अनुसरीने परलोकनी बीक नराखता सावद्यानुष्ठान करेछे परतु (णोएवविप्पडिवेदेंतिके०) ते एवो नथी जाणता शु नथी जाणता (तंजहा के०) ते कहेछे (किरियातिवा जाव अणिरएतिवा के०) क्रिया अक्रिया सिद्धि असिद्धि इत्यादिक यावत् नरक अनरक पर्यंतने नथी जाणता (एवते के०) एम ते सर्वे दोष एक नियत उपरे स्थापन करीने (विरूवरूवे हिकम्मसमारनेहि विरूवरूवाइकामनोगा इसमारनति नोयणाए के०) नानाप्रकारना कर्म समारंने नोजननेअर्थे अने नोगने अर्थे नाना प्रकारना कामनोगने समारंने ॥ ३१ ॥

॥ दीपिका—मेधावी नियतिवादी कारणमापन्न स्वकारण परकारण वा उद्दिश्य प्रवृत्तिर्न पुरुषकारकृता यतोनहि कस्यचिदात्माऽनिष्टोयेनानिष्टाडु खोत्पादिका क्रिया समारनते *कितुनियत्यैवायमनिन्नन्नपि तत्कार्यते येन डु खनाग्नवति । एवमसौ कारण* मापन्नोवेत्तीति कारण वात्र एकस्याऽसदनुष्ठानपरस्यापि न डु खमुत्पद्यते ततोनियतिरेव कर्त्रीति। एतदेवाह । (सेबेमित्ति) सोह नियतिवादी ब्रवीमि ये केचित्त्रसा स्थावराश्च प्राणिनस्ते नियतितएव औदारिकादिशरीरसबधमागछति बालकुमारादिक विविध पर्याय नियतितएवानुनवति नियतितएव विवेक शरीरात्पृथग्नाव प्राप्नुवति । विधानमवस्थाविशेष कुब्जकाणाधत्वजरामरणादिकमागछति तदेव ते प्राणिनोनियत्यैव सगतिं याति नानाविधसुखडु खनाज स्यु । एव नियतिवादोत्प्रेक्ष्या एतद्वक्ष्यमाण न विप्रतिवेदयंति न जानति । तद्यथा । क्रियाअक्रियाइत्यादि यावद्विरूपरूपान् कामान् नोगान् नोजनायोपनोगार्थं समारनते ॥ ३१ ॥

अर्थ-(इच्चेतेचत्तारिपुरिसजाया के०) एरीते ते पूर्वोक्त चार पुरुष जात तेमा एक जीव तच्छरीरवादी बीजो पचमहाभूतिक त्रीजो ईश्वरकारणी अने चोथो नियतवादी ए चार पुरुषते (णाणापन्ना के०) नानाप्रकारनी प्रज्ञा एटले बुद्धिवाला तथा नाना प्रकारना अभिप्राय वाला नाना प्रकारना शील एटले आचार वाला नाना प्रकारनी दृष्टी वाला नाना प्रकारनी रुची वाला नाना प्रकारना आरंभना करनार नाना प्रकारना अध्यवसाय तेणे करी (संजुत्ता के०) संयुक्त थता पोताना धर्मनेविषे सावधान थया (पहीणपुव्वसंजोगा के०) पूर्व संयोगजे माता पिता पुत्र कलत्रादिकनो संबंध तेनेत्यागीने (आरियमग्गअसंपत्ता के०) आर्य मार्गने अण पाम्या एमते काठे पण न रह्या पार पण नपाम्या विचाले कामभोगने विषे खूता एटले परतीर्थिक चार पुरुष कह्या॥ २४ ॥

॥ दीपिका-इत्येते चत्वारः पुरुषानानाप्रज्ञानानामतयोनानाछंदानानाभिप्रायानानाशीलाअनेकाचारानानादृष्टयोऽनेकदर्शनानानारुचयोनानाप्रकारआरंभोधर्मानुष्ठानं येषां ते तथा नानाप्रकारेणाध्यवसायेन संयुक्ताधर्मार्थमुद्यता प्रहीणपूर्वसंयोगामातापितृकलत्रादिसंबंधरहिताआर्यं निर्दोषं मार्गमसंप्राप्ता (णोहव्वाएत्ति) ऐहिकसुखभाजः (णोपराएत्ति) नापि भवपारगा स्युः किंतु अंतरालएव कामभोगेषु विषण्णा ॥ २४ ॥

॥ टीका-सांप्रतमुपसंजिघृक्षुराह । (इच्चेतेइत्यादि) इत्येते पूर्वोक्तास्तज्जीवतच्छरीरपंचमहाभूतेश्वरकर्तृनियतिवादपक्षाश्रयिणश्चत्वारः पुरुषानानाप्रकारा प्रज्ञा मतिर्येषां ते तथा नानाभिन्नश्छंदोऽभिप्रायोयेषां ते तथा नाना प्रकारं शीलमनुष्ठानं येषां तथा नानारूपा दृष्टिर्दर्शनं येषां ते तथा नानारूपा रुचिश्चेतोभिप्रायोयेषां ते तथा नानाप्रकारआरंभो धर्मानुष्ठानं येषां ते तथा नानाप्रकारेण परस्परभिन्नेनाध्यवसायेन संयुक्ताधर्मांधर्मार्थमुद्यता प्रहीणं परित्यक्तं पूर्वसंयोगोमातृपितृकलत्रपुत्रसंबंधोयेस्ते तथा । आराद्यातं सर्वहेयधर्मेभ्यइत्यार्योमार्गोनिर्दोषः पापलेश्यासंपृक्तस्तमार्यं मार्गमसंप्राप्ताइति पूर्वोक्तया नीत्या ते चत्वारोपि नास्तिकादयो (णोहव्वाएइत्ति) परित्यक्तत्वान्मातृपित्रादिसंबंधस्य धनधान्यहिरण्यादिसंचयस्य च नैहिकसुखभाजोभवंति । तथा (णोपाराएत्ति) असंप्राप्तत्वादार्यस्य मार्गस्य सर्वोपाधिविशुद्धस्य प्रगुणमोक्षपद्धतिरूपस्य न संसारपारगामिनोभवंति न परलोकसुखभाजोभवंतीति किंत्वंतरालएव गृहवासार्यमार्गयोर्मध्यवर्तिनएव कामभोगेषु विषण्णाअध्युपपन्नाउप्पारपंकमग्नाइव करिणोविषीदंतीति स्थितं ॥ २४ ॥

सेबेमि पाईणवा संतेगतिया मणुस्सा भवंति तंजहा आयरियावेगे अणारियावेगे उच्चागोयावेगे णीयागोयावेगे कायमंतावेगे हस्समंतावेगे सुव

नही अने पार पण पोता नही विचाले कामभोगने विषे खूता रहे ते पोताने पण उ
द्धरी शके नही अने राजारूप पुण्डरीक कमलने पण उद्धरी शके नही ते आ लोक थ
की पण भ्रष्ट थया अने मुक्तिये पण पोचे नही परतु विचाले ससार माहेज खुची रहे
ए चोथो पुरुषजात नियत वादी कह्यो ॥ ३३ ॥

॥ दीपिका—तदेव ते नियतिवादिनोऽनार्याविप्रतिपन्नास्त निर्युक्तिक नियतिवाद श्रद्धधा
नाइत्यादि तावन्नेय यावदतरा कामभोगेषु विषण्णा इति चतुर्थ पुरुषजात सपूर्ण ॥३३॥

॥ टीका—तदेवमेव पूर्वोक्तया नीत्या तेऽनार्याविरूप नियतिमार्ग प्रतिपन्नाविप्रतिपन्ना ।
अनार्यत्व पुनस्तेषा निर्युक्तिकस्यैव नियतिवादस्य समाश्रयणात् । तथा ह्यसौ नियति
किं स्वतएव नियतिस्वभावा उतान्यया नियत्या नियम्यते किंवाऽतस्तत्र यद्यसौ स्वयमेव
तथा स्वभाव सर्वपदार्थानामेव तथा स्वभावत्व किं न कल्प्यते किं बहुदोषया नियत्या
समाश्रितया । अथान्यया नियत्या तथा नियम्यते साप्यन्ययेत्येवमनवस्था । तथा नियते
स्वभावत्वान्नियतिस्वभावया तथा भवितव्य न नानास्वभावयेति । एकत्वाच्च नियतेस्तत्का
र्येणाप्येकाकारेणैव भवितव्य । तथाच सति जगद्वैचित्र्याभाव । नचैतद्दृष्टमिष्टवा । त
देव युक्तिनिर्विचार्यमाणा नियतिर्नकथचिद्घटते । यदप्युक्त । द्वावपि तौ पुरुषो क्रियाक्रि
यावादिनौ तुल्यो एतदपि प्रतीतिबाधित । यतस्तयोरेक क्रियावाद्यपरस्त्वक्रियावादीति
कथमनयोस्तुल्यत्वमथैकया नियत्या तथा नियतित्वात्तुल्यता अनयोरेतच्च निरतरा सुल्ह
द प्रत्येष्यति । नियतेरप्रमाणत्वात् । अप्रमाणत्व च प्राग्लेशत प्रदर्शितमेव । यदप्युक्त ।
यद्दु खादिकमहमनुभवामि तन्नाहमकार्पमित्यादि तदपि बालवचनप्राय । यतोजन्मातरकृ
त शुभमशुभवा तदिहोपभुज्यते स्वकृतकर्मफलेश्वरत्वादसुमता । तथा चोक्त । यदिह क्रिय
ते कर्म, तत्परत्रोपभुज्यते । मूलसिक्तेषु वृक्षेषु, फल शाखासु जायते । तथा यदुपात्तमन्य
जन्मनि शुभाशुभ वा स्वकर्मपरिणत्या तच्छक्यमन्यथा नोकर्तु देवासुरैरपि हि । तदेव ते निय
तिवादिनोनार्याविप्रतिपन्नास्तमेव निर्युक्तिक नियतिवाद श्रद्धधानास्तमेव च प्रतीयते इत्यादि
तावन्नेय यावदतरा कामभोगेषु विषण्णाइति । चतुर्थ पुरुषजात समाप्त ॥ ३३ ॥

इच्चेते चत्तारि पुरिसजाया णाणापन्ना णाणाछदा णाणासीला
णाणादिट्ठी णाणारुई णाणारम्भा णाणाअज्झवसाणा सजुत्ता प
हीणपुव्वसजोगा आरिय मग्ग असपत्ता इति ते णोहव्वाए णो
पाराए अतरा कामभोगेसु विसण्णा ॥ ३४ ॥

अर्थ—(इच्चेतेचत्तारिपुरिसजाया के०) एरीते ते पूर्वोक्त चार पुरुष जात तेमा एक जीव तच्छरीरवादी बीजो पंचमहाभूतिक त्रीजो ईश्वरकारणी अने चोथो नियतवादी ए चार पुरुषते (णाणापन्ना के०) नानाप्रकारनी प्रज्ञा एटले बुद्धिवाला तथा नाना प्रकारना अभिप्राय वाला नाना प्रकारना शील एटले आचार वाला नाना प्रकारनी दृष्टी वाला नाना प्रकारनी रुची वाला नाना प्रकारना आरंभना करनार नाना प्रकारना अध्यवसाय तेणे करी (संजुत्ता के०) संयुक्त छता पोताना धर्मनेविषे सावधान थया (पहीणपुव्वसंजोगा के०) पूर्व संयोगजे माता पिता पुत्र कलत्रादिकनो संबंध तेने त्यागीने (आरियमग्गअसंपत्ता के०) आर्य मार्गने अण पाम्या एमते काठे पण न रह्या पार पण नपाम्या विचाले कामभोगने विषे खूता एटले परतीर्थिक चार पुरुष कह्या॥ ३४ ॥

॥ दीपिका—इत्येते चत्वारः पुरुषानानाप्रज्ञानानामतयोनानाछंदानानाभिप्रायानानाशीलाअनेकाचारानानादृष्टयोऽनेकदर्शनानानारुचयोनानाप्रकारआरंभोधर्मानुष्ठानं येषां ते तथा नानाप्रकारेणाध्यवसायेन संयुक्ताधर्मार्थिमुद्यताः प्रहीणपूर्वसंयोगामातापितृकलत्रादिसंबंधरहिताआर्यं निर्दोषं मार्गमसंप्राप्ताः (णोहव्वाएत्ति) ऐहिकसुखभाज (णोपराएत्ति) नापि भवपारगाः स्युः किंतु अंतरालएव कामभोगेषु विषण्णाः ॥ ३४ ॥

॥ टीका—सांप्रतमुपसंजिघृक्षुराह । (इच्चेतेइत्यादि) इत्येते पूर्वोक्तास्तज्जीवतच्छरीरपंचमहाभूतेश्वरकर्तृनियतिवादपक्षाश्रयिणश्चत्वारः पुरुषानानाप्रकारा प्रज्ञा मतिर्येषां ते तथा नानाभिन्नश्छंदोऽभिप्रायोयेषां ते तथा नाना प्रकारं शीलमनुष्ठानं येषां तथा नानारूपा दृष्टिर्दर्शनं येषां ते तथा नानारूपा रुचिश्चेतोभिप्रायोयेषां ते तथा नानाप्रकारआरंभो धर्मानुष्ठानं येषां ते तथा नानाप्रकारेण परस्परभिन्नेनाध्यवसायेन संयुक्ताधर्मांधर्मार्थिमुद्यताः प्रहीणः परित्यक्तः पूर्वसंयोगोमातृपितृकलत्रपुत्रसंबंधायैस्ते तथा । आराद्यातः सर्वहेयधर्मेभ्यइत्यार्योमार्गोनिर्दोषः पापलेश्यासंपृक्तस्तमार्यं मार्गमसंप्राप्ताइति पूर्वोक्तया नीत्या ते चत्वारोपि नास्तिकादयो (णोहव्वाएइत्ति) परित्यक्तत्वान्मातृपित्रादिसंबंधस्य धनधान्यहिरण्यादिसंचयस्य च नैहिकसुखभाजोभवंति । तथा (णोपाराएत्ति) असंप्राप्तत्वादार्यस्य मार्गस्य सर्वोपाधिविशुद्धस्य प्रगुणमोक्षपद्धतिरूपस्य न संसारपारगामिनोभवंति न परलोकसुखभाजोभवंतीति किंत्वंतरालएव गृहवासार्यमार्गयोर्मध्यवर्तिनएव कामभोगेषु विषण्णाअध्युपपन्नाःदुष्पारपंकमग्नाइव करिणोभिपीड्यंतीति स्थितं ॥ ३४ ॥

सेबेमि पाईणवा संतेगतिया मणुस्सा भवंति तंजहा आयरियावेगे अणारियावेगे उच्चागोयावेगे णीयागोयावेगे कायमंतावेगे हस्समंतावेगे सुव

न्नावेगे उवन्नावेगे सुरूवावेगे डुरूवावेगे तेसिंचणं खेत्तवत्थूणि परिग्गहिया णि नवंति तं अप्पयरोवा नुज्जयरोवा तेसिंचणं जणं जाणवयाइं परिग्ग हियाइं नवंति तं अप्पयरोवा नुज्जयरोवा तहप्पगारेहिं कुलेहिं आगम्म अनिनूय एगे निरकायरियाए समुठिता सतोवावि एगे णाय उय उवग रणच विप्पजहाय निरकायरियाए समुठिता असतोवा वि एगे णाय उय उवगरणच विप्पजहाय निरकायरियाए समुठिता जेते सतोवा असतोवा णाय उय अणाय उय उवगरणच विप्पजहाय निरकायरियाए समुठिता॥३५

अर्थ–हवे पांचमो पुरुष स्वतीर्थिक कहियेंछैये (सेवेमि के०) जे पुरुष कामनोगने विषे अनासक्तछतो अंतराले नखुंचे पुंमरीक कमलने उद्धारवा समर्थ ते हुं कहुंछु (पाईणवासतेगतियामणुस्सा के०) पूर्वादिक दिशिये कोइ एक मनुष्य होय ते कहे वो होय (तंजहा के०) ते कहेछे एक आर्य एक अनार्य एक उंचगोत्रना उपना ए क नीचगोत्रना उपना एक महोटी कायाना धणी एक न्हानी कायाना धणी एक सा रावर्ण वाला एक मागवर्ण वाला एक स्वरूपवान् एक कुरूपवान् (तेसिंचणं के०) ते पूर्वोक्त आर्यादिक पुरुषने (खेत्तवत्थूणिपरिग्गहियाणिनवंति के०) क्षेत्रते उघाडी नूमिका शाली क्षेत्रादिक तथा वस्तु ते घर हाट प्रमुख ढाकेली नूमिका ए परिग्रह होय (तंअप्प यरोवानुज्जयरोवा के०) तेअल्पतर एटले थोडा होय अथवा प्रनूततर एटले घणा होय वली (तेसिंचणंजणंजाणवयाइंपरिग्गहियाइंनवंति के०) तेने जन एटले लोक जानपद एटले देश ए परिग्रह होय (तंअप्पयरोवानुज्जयरोवा के०) तेपण अल्पतर एटले थोडा होय अथवा प्रनूततर एटले घणा होय (तहप्पगारेहिंकुलेहिं आगम्मअनिनूय के०) तथा ते आर्यादिक तथा प्रकारना कुलने विषे आगम्म एटले जन्म पामीने कोइ एक महास त्ववंत पुरुष विषय कषायने जीपीने (एगेनिरकायरियाए के०) कोइएक निक्षाचर्याने विषे (समुठिता के०) सम्यक् प्रकारे उठ्या सावधान थया (सतोवाविएगेणायउयउ वगरणच के०) कोइएक महा सत्ववंत पुरुष विद्यमान एवा णायउय एटले ज्ञाति स्व जनादिक तथा उपकरण ते धन धान्य सुवर्ण रूपादिक अनेक प्रकारनाछे तेने (विप्प जहाय के०) त्यागीने (निरकायरियाए के०) निक्षाचर्याने विषे (समुठिता के०) सम्यक् प्रकारे उठ्या एटले चारित्रिया थया (असतोवाविएगेणायउवगरणचविप्पजहा यनिरकायरियाएसमुठिता के०) कोइ एक महा सत्ववंत पुरुष ते अछता ज्ञाति स्वजन उपकरणादिक अनेक प्रकारनाछे तेने त्यागीने निक्षाचर्याने विषे सम्यक् प्रकारे सावधान

थया (जेते के०) हवे जे तें (सतोवा असतोवा के०) छतो अथवा अछतो एवो (णा यउय के०) ज्ञाति स्वजनादिक नोपरिग्रह (अणायउय के०) ज्ञाति स्वजनादिकथी रहित पणानोपरिग्रह (उवगरणच के०) तथा धन धान्य सुवर्णादिक नोपरिग्रह तेने (वि प्पजहाय के०) त्यागीने (निरकायरियाए के०) निक्षाचर्याने विषे एटले चारित्रने वि षे (समुछिला के०) सम्यक् प्रकारे उठ्या सावधान थया ॥ ३५ ॥

॥ दीपिका–अथलोकोत्तर पंचम निक्षु पुरुषमाह । तदहं ब्रवीमि । यत्प्राच्यादिदिशमु द्दिश्य एके केचन मनुजा संति नवंति । तद्यथा आर्याआर्यदेशोत्पन्नास्तद्विपरीताअना र्याउच्चैर्गोत्रोन्नवानीचैर्गोत्रोन्नवा कायवंतउच्चशरीराह्स्वावामनादय सुवर्णाडुर्वर्णा सुरू पाडुरूपास्तेषां वाऽऽर्यादीनां क्षेत्राणि शालिक्षेत्रादीनि वस्तूनि गृहाणि परिगृहीतानि स्वीकृ तानि नवंति । किंनूतानि अल्पतराणि प्रनूततराणि वा । तथा तेषां जनपदा स्वीकृता नवंति तेष्वल्पतरा प्रनूततरावा । तेष्वार्यादिषु तथा प्रकारेषु कुलेषु आगम्य जन्म ल ब्ध्वा ऽनिनूय विषयादीन प्रव्रज्या गृहीत्वा एके केचन सत्ववतोनिक्षाचर्यायां समुत्थि ताउद्यता । तथा सतोविद्यमानान् ज्ञातीन् स्वजनानुपकरणं च धनधान्यादिकं विप्रहा य त्यक्त्वा असतोवा ज्ञातीनुपकरणंच त्यक्त्वा समुत्थिता प्रव्रज्योद्यता ॥ ३५ ॥

॥ टीका–उक्ता परतीर्थिका सांप्रतं लोकोत्तरं निक्षावृत्तिं निक्षु पंचमं पुरुषजातमधि कृत्याह । (सेवेमीत्यादि) योहंक्षामन्नोगेष्वसक्त सन्नतरां नोवसीदति पद्मवरपौंडरीको धरणाय च समर्थोनवति तदेतदहं ब्रवीमीति । अस्य चार्थस्योपदर्शनाय प्रस्तावमारच यन्नाह । प्राच्यादिकामन्यतरां दिशमुद्दिश्यैके केचन मनुष्या संति नवंति । तद्यथा । आ र्यदेशोत्पन्नामगधादिजनपदोन्नवास्तथाऽनार्या शकयवनादिदेशोन्नवास्तथा चोच्चैर्गोत्रोन्न वाइक्ष्वाकुहरिवंशादिकुलोन्नवास्तथा नीचैर्गोत्रोन्नवावर्णापसदसंनूतास्तथा कायवंत प्रां शवस्तथा ह्स्वावामनकादयस्तथा सुवर्णाडुर्वर्णा सुरूपा कुरूपावा एके एव केचन पर वशान्नवंति तेषां चार्यादीनां । णमितिवाक्यालंकारे । क्षेत्राणि शालिक्षेत्रादीनि वस्तूनि खातोछ्रितादीनि तानि परिगृहीतानि स्वीकृतानि नवंति । तान्येव विशिनष्टि । अल्पतराणि स्तोकतराणि वा प्रनूततराणिवा नवंति । तथा तेषामेव च जानपदा परिगृहीतान्नवंति तेऽल्पतरा प्रनूततरावा नवेयुस्तेषु चार्यादिविशिष्टेषु तथाप्रकारेषु कुलेष्वागम्यैवंनूतानि गृहाणि गत्वा तथा प्रकारेषु वा कुलेष्वागम्य जन्म लब्ध्वाऽनिनूयच विषयकषायादीन् प रीषहोपसर्गान् वा सम्यगुत्थानेनोत्थाय प्रव्रज्या गृहीत्वैके केचन तथाविधसत्वयतोनिक्षा चर्यायां सम्यगुत्थितास्तथा सतोविद्यमानानपिवा एके केचन महासत्वोपेताज्ञातीन् स्वज

नास्तथोपकरण च कामनोगाग धनधान्यहिरण्यादिक विविध प्रकर्षेण हित्वा त्यक्त्वा निक्षाचर्यायां सम्यगुब्बितात्र्पसतोवा ज्ञातीनुपकरणाच विप्रहाय निक्षाचर्यायामेके केच नापगतस्वजनविनवा समुब्बिता ॥ ३५ ॥

पुवमेव तेहि णाय नवइ त जहा इह खलु पुरिसे अन्नमन्नं ममघाए एव विप्पडिवेदेति त जहा खेत्तमे वत्थूमे हिरणमे सुवन्नमे धणमे धणमे कसमे दूसमे विपुलधणकणगरयणमणिमोत्तियसखसिलप्पवालरत्तरय णसतसारसावतेयमे सद्दामे रूवामे गधामे रसामे फासामे एते खलु मम कामनोगा अहमवि एतेसि ॥ ३६ ॥ सेमेहावि पुवमेव अप्पणो ए व समन्निजाणेज्जा त जहा इह खलु मम अन्नयरे डुक्खे रोयातके समुप्प ज्जेज्जा अणिठे अकते अप्पिए असुने अमणुन्ने अमणामे डुक्खे णोसु हे सेहता नयतारो कामनोगाइ मम अन्नयर डुक्ख रोयातक परियाइय ह अणिठ अकते अप्पिय असुन्न अमणुन्न अमणाम डुक्ख णोसुह त हि डुक्खामिवा सोयामिवा जूरामिवा तप्पामिवा पीडामिवा परितप्पामि वा इमाउ ममे अण्णयराउ डुक्खाउ रोगातकाउ पडिमोयउ अणिठाउ अ कताउ अप्पियाउ असुनाउ अमणुन्नाउ अमणामउ डुक्खाउ णोसुहाउ एवमेव णोलद्धपुव नवइ ॥ ३७॥

अर्थ–(तेहि के०) ते पुरुषने (पुवमेव के०) प्रथम चारित्र लेवाना वखतेज एवो (णायनवइ के०) जाणवुंछे (तजहा के०) ते कहेछे (इह के०) आ जगत माहे खलु इति वाक्यालकारे (पुरिसे के०) ते पुरुषे (अन्नमन्न के०) अनेरी अनेरी वस्तु एटले अमुक अमुक जुदी जुदी वस्तु (ममघाए के०) महारा उपनोगने अर्थे थशे (एव के०) एम (विप्पडिवेदेति के०) वेद प्रवितियति एटले जाणुछे (तजहा के०) ते वस्तुना नाम कहेछे (खेत्तमे के०) आ क्षेत्र महारुछे (वत्थूमे के०) ए घर हाट महाराछे (हिरणुमे के०) आ रूपु महारुछे (सुवणमे के०) आ सोनु महारु छे (धणमे के०) आ धन महारुछे (धन्नमे के०) आ धान्य महारुछे (कसमे के०) आ कासाना नाजन महाराछे (दूसमे के०) आ डुष्य एटले वस्त्र महाराछे (विपुल, ध ण, कणग, रयण, मणि, मोत्तिय, सख, सिल, प्पवाल, रत्त, रयण, सत सार साव तेयमे के०) एम विस्तीर्ण धन कनक सोलजातिना रत्न सात जातना मणी मोक्तिको सख

ते दक्षिणावर्त्त प्रमुख शीजते कशवटी प्रवाला रक्तरत्न तथा सत एटले ठतो सार एटले प्रधान एवो सावतेय एटले धन ए सर्व महारा उपन्नोगने अर्थे थशे (सद्दामे के०) शब्द वशादिकना (रूवामे के०) रूप स्त्रियादिकना (गंधामे के०) गंध ते कस्तूरी कर्पूरादिक वस्तुना (रसामे के०) रसमधुरादिक वस्तुना (फासामे के०) स्पर्श मृडु कवणादिक वस्तुना (एते के०) ए समस्त वस्तु ते खलु इति निश्चे (ममकामन्नोगा के०) ए कामन्नोग ते माहाराठे अने (अहमवि के०) हुपण (एतेसि के०) एनोठु ॥३६॥ हवे (से मेहावि के०) ते पंमित (पुव्वमेव के०) पूर्वे (अप्पणो के०) पोताना हृदय साथे (एव के०) एवु (समन्निजाणेज्जा के०) सम्यक् प्रकारे जाणे आलोचे एटले प्रथम थीज पोताना हृदयसाथे विचारे के ए महाराठे किंवा नथी एवो विचारे ते शु विचारे (तजहा के०) ते कहेठे (इहखलु के०) आ संसारनेविषे निश्चे (ममअन्नयरे के०) महारा शरीरने विषे अन्य कोइ एक (डुरके के०) डुःख मस्तक पीडादिक (रोयातके के०) रोगातक एटले असाध्य रोग शूलादिक (समुप्पज्जेज्जा के०) उपजे ते रोग केवोहोय ते कहेठे (अणिठे के०) अनिष्टकारी (अकाते के०) आक्रातकारी (अप्पिए के०) अप्रिय कारी (असुन्ने के०) अशुन्नकारी (अमणुन्ने के०) अमनोज्ञ एटले मनने गमे नही (अमणामे के०) विशेष प्रकारे पीडानो करनार (डुक्के के०) डुःख रूप (णोसुहेसेहता के०) नथी ज्या लवलेशमात्र सुख, एवो डुःख उपने थके ते पूर्वोक्त कामन्नोगादि योग्य जे वस्तुठे ते प्रत्ये एवु कहे के (नयतारो के०) अहो नय थकी राखनाराउ (कामन्नोगाइ के०) धन धान्यादिक तथा शब्दादिक कामन्नोगो तुमे (मम के०) महारे शरीरे (अन्नयरडुःख के०) अनेरा डुःख जे (रोयातक के०) रोगातक शूलादिक उपनाठे (परियाइयह के०) तेने तमे वेहेंची ल्यो महारे अथ (अणिठ के०) अनिष्ट कारी (अकत के०) अक्रात कारी (अप्पियं के०) अप्रियकारी (असुन्न के०) असुन्नकारी (अमणुन्न के०) अमनोज्ञ (अमणाम क०) विशेषे अमनोज्ञ पीडाकारी (डुरक के०) डुःखरूप (णोसुह के०) नथी ज्या लव लेश मात्र सुख (तहि के०) तेणेकरी (डुक्कामिवा के०) आकरो डुःखी ठु (सोयामिवा के०) शोक अनुन्नवुठु (जूरामिवा के०) जुरुठु (तप्पामिवा के०) महारो हृदय तपेठे ठीजायठे (पीडामिवा के०) पीडा अनुन्नवुठु (परितप्पामिवा के०) विशेषे पीडा अनुन्नवुठु इत्यादिक (इमाउ के०) ए (ममे के०) मने (अणयराउ के०) अनेरा (डुक्काउ के०) डुःख जे पूर्वोक्त मस्तक पीडादिक असाध्य (रोगातकाउपडीमोहय के०) रोग आतक शूलादिक जे थकी तत्काल प्राणनो नाश थाय ते थकी तमे मने मूकावो एवा (अणिठाउ के०) अनिष्टकारी (अकताउ के०) आक्रा

नास्तथोपकरण च कामजोगाग धनधान्यहिरण्यादिक विविध प्रकर्षेण हित्वा त्यक्त्वा निक्षाचर्यायां सम्यगुत्थितास्रसतोवा ज्ञातीनुपकरणच विप्रहाय निक्षाचर्यायामेके केच नापगतस्वजनविजवा समुत्थिता ॥ ३५ ॥

पुव्वमेव तेहिं णाय नवइ त जहा इह खलु पुरिसे अन्नमन्नं ममठाए एव विप्पडिवेदेति त जहा खेत्तमे वत्थूमे हिरन्नमे सुवन्नमे धणमे धन्नमे कसमे दूसमे विपुलधणकणगरयणमणिमोत्तियसखसिलप्पवालरत्तरय णसतसारसावतेयमे सद्दामे रूवामे गधामे रसामे फासामे एते खलु मम कामजोगा अहमवि एतेसिं ॥ ३६ ॥ सेमेहावि पुव्वमेव अप्पणो ए व समनिजाणेज्जा त जहा इह खलु मम अन्नयरे डुक्के रोयातके समुप्प ज्जेज्जा अणिठे अकते अप्पिए असुने अमणुन्ने अमणामे डुक्के णोसु हे सेहता नयतारो कामजोगाइ मम अन्नयर डुक्क रोयातक परियाइय ह अणिठ अकते अप्पिय असुन अमणुन्न अमणाम डुक्क णोसुह त हिं डुक्कामिवा सोयामिवा जूरामिवा तप्पामिवा पीडामिवा परितप्पामि वा इमाउ ममे अन्नयराउ डुक्काउ रोगातकाउ पडिमोयउ अणिठाउ अ कताउ अप्पियाउ असुनाउ अमणुन्नाउ अमणामउ डुक्काउ णोसुहाउ एवमेव णोलद्धपुव्व नवइ ॥ ३७ ॥

अर्थ–(तेहिं के०) ते पुरुषने (पुव्वमेव के०) प्रथम चारित्र लेवाना वखतेज एवो (णायनवइ के०) जाणवुंछे (तजहा के०) ते कहेछे (इह के०) आ जगत माहे खलु इति वाक्यालकारे (पुरिसे के०) ते पुरुषे (अन्नमन्न के०) अनेरी अनेरी वस्तु एटले अमुक अमुक जुदी जुदी वस्तु (ममठाए के०) म्हारा उपजोगने अर्थे थशे (एव के०) एम (विप्पडिवेदेति के०) वेद प्रविनियति एटले जाणवुंछे (तजहा के०) ते वस्तुना नाम कहेछे (खेत्तमे के०) आ क्षेत्र म्हारुंछे (वत्थूमे के०) ए घर हाट म्हाराछे (हिरन्नमे के०) आ रूपु म्हारुंछे (सुवन्नमे के०) आ सोनु म्हारुंछे (धणमे के०) आ धन म्हारुंछे (धन्नमे के०) आ धान्य म्हारुंछे (कसमे के०) आ कासाना नाजन म्हाराछे (दूसमे के०) आ डुष्य एटले वस्त्र म्हाराछे (विपुल, धण, कणग, रयण, मणि, मोत्तिय, सख, सिल, प्पवाल, रत्त, रयण, सत सार साव तेयमे के०) एम विस्तीर्ण धन कनक सोलजातिना रत्न सात जातना मणी मोतिको सख

दिका शिला प्रवाल विद्रुम । यदिवा (शिलप्पवालत्ति) श्रियायुक्त प्रवाल श्रीप्रवाल वर्णादिगुणोपेत तथा (रत्तरयणत्ति) रक्तरत्न पद्मरागादिक तथा सत्सार शोनन सारमित्यर्थ । शूलमण्यादिक तथा स्वापतेय शुद्ध इव्यजात सर्वमेतत्पूर्वोक्त मे ममोपन्नोगाय नविष्यति । तथा शब्दावेणवादयोरूपाण्यगनादीनि, गधा कोष्टपुटाद योरसामधुरादयोमासरसादयोवा, स्पर्शामृद्धादयएते सर्वेपि खलु मे कामन्नोगायाहमप्ये पा योगक्षेमार्थ प्रनविष्यामीत्येव सप्रधार्य, ॥ ३६ ॥ समेधावी पूर्वमेवात्मान विजानीया देव पर्यालोचयेत् । तद्यथा । इह ससारे । खलुशब्दोऽवधारणे । इहैवास्मिन्नेव जन्मनि म नुष्यनवे ममान्यतरद्दुःख शिरोवेदनादिक आतंकोवाऽऽशु जीवितापहारी शूलादिक समु त्पाद्यते । तमेव विशिनष्टि । अनिष्टोऽकांतोऽप्रियोऽशुनोऽमनोज्ञोऽवनामयतीत्यवनाम पीडाविशेषकारी दुःखरूपोयदि वा नमनागमनाक् मे मम नितरामित्यर्थ । दुःखयतीति दुःख पुनरपि दुःखोत्पादन अत्यंतदुःखप्रतिपादनार्थं सुखलेशस्यापि परिहारार्थं च नोनै व शुनकर्मविपाकोदितत्वादिति । अत्रच यदुक्त पुनरुच्यते तदत्यादरख्यापनार्थं तद्विशे पप्रतिपादनार्थ वेति । तदेवनूत दुःख रोगातंक वा हतइतिखेदे नयात्रातारोयूय क्षेत्रवस्तु हिरण्यसुवर्णधनधान्यादिका परिग्रहविशेषा शब्दादयोवा विषयास्तथा हे नगवत ! कामन्नोगायूय मया पालिता परिगृहीताश्च ततोयूयमपीद दुःख रोगातंक वा (परि याइयहत्ति) विनागश परिगृह्णीत यूय। अत्यंतपीडयोद्विग्न पुनस्तदेव दुःख रोगातंक वा विशेषणद्वारेणोच्चारयति । अनिष्टमप्रियमकातमशुनममनोज्ञममनाग्नूतमवनामक वा दुःखमेवैतन्नोशुनमित्येवनूत ममोत्पन्न यूय विनजताहमनेनातीव दुःखामीति दुःखि तइत्यादि पूर्ववन्नेयमित्यतोऽमुष्मान्ममान्यतरस्माद्दुःखाद्रोगातंकाद्वा प्रतिमोचयत यूयं । अनिष्टादिविशेषणानि तु पूर्ववद्व्याख्येयानि । प्रथम प्रथमातानि पुनर्द्वितीयातानि सा प्रतं पचम्यतानीति । नचायमर्थस्तेन दुःखितेनैवमेवेति यथाप्रार्थितस्तथैव लब्धपूर्वोन्न वति । इदमुक्तनवति । नहि ते क्षेत्रादय परिग्रहविशेषानापि शब्दादय कामन्नोगास्त दुःखितं दुःखाद्विमोचयतीति ॥ ३७ ॥

इह खलु कामन्नोगा णोताणाएवा णोसरणाएवा पुरिसेवा एगता पुव्विं कामन्नोगे विप्पजहति कामन्नोगावा एगता पुव्विं पुरिसं विप्पजहति अन्ने खलु कामन्नोगा अन्नो अहमसि से किमगपुण वय अन्नमन्नेहिं काम न्नोगेहिं मुह्यामो इति सखाएण वयच कामन्नोगेहिं विप्पजहिस्सामो से मेहावि जाणेज्जा बाहिरगमेत्तं ॥ ३८ ॥

त कारी (अप्पियाउ के०) अप्रियकारी (असुनाउ के०) असुनकारी (अमणुन्नाउ के०) अमनोज्ञ (अमणामउके०) अरुचता विशेषे अमनोज्ञ पीडाकारी एवा (डुक्काउ के०) डु ख (णोसुहाउ के०) नथी जेमांहे लेश मात्र शुख एवा जे डु ख ते थकी हे काम जोगादिको तमे मने मूकावो (एवमेव के०) एवीरीते जे कामजोगादिकने प्रार्थना करेछे तोपण (णोलद्धेपुव्वनवइ के०) ते कामजोगापूर्वेलब्धोननवति एटले ते काम जोगादिक जेछे तेणे कोइ मनुष्यने पूर्वोक्त डु ख थकी मूकाव्यो छे एवो पूर्वे क्यां जाणवामा आव्यु नथी ॥ ३७ ॥

॥ दीपिका–ये निक्षाचर्योद्यतास्तै पूर्वमेव प्रव्रज्याग्रहणकालएतज्ज्ञात स्यात् । तद्यथा । अन्य द्वस्तूद्दिश्य पुरुष प्रव्रजित प्रव्रज्या ग्रहीतुकामोवा एव विप्रतिवेदयति जानाति । तद्यथा । क्षेत्र वास्तुगृह हिरण्य सुवर्ण कनक धनगोमहिष्यादि धान्य शा ल्यादि कास्य कास्यपात्रादि दूष्य वस्त्रादि । तथा विपुलानि धनकनकादीनि शखादक्षि णावर्ता मुक्तशैलादिका शिला प्रवालविद्रुम रक्तरत्न पद्मरागादि सत्सार शोजनसार शूलमण्यादि स्वापतेय इव्य सर्वमेतन्ममोपजोगाय जविष्यति । तथा शब्दरूपगधरसस्प र्शामे कामजोगाअहमप्येतेषा जोगाना सबधी ॥ ३६ ॥ अयमपि जोगसबधीति विचा र्य समेधावी पूर्वमेवात्मना एव समनिजानीयात् । तद्यथा । इह जन्मनि ममान्यत् डु ख शिरोवेदनादिक आतकोवा आशु जीवितापहारी शूलादिक । सकिंनूत । अनिष्टो ऽकातोऽशुनोऽमनोज्ञ । अवनामयतीत्यवनाम पीडाविशेषकारी डु खरूप । नशुनो ऽशुनकर्मकृतत्वात् । पुनर्डुखोत्पादनमत्यंतडु खज्ञापनार्थं । तदेवनूतं डु ख रोगातंक वा हतइति खेदे हेनगवत कामजोगायूय मया पालितास्ततोयूयमपीद डु ख रोगातंक वा (परियाइयह) विनज्य गृएहीत । अत्यतडु खपीडित पुनस्तान्येव विशेषणान्याह । अनिष्टादिविशेषणानि पूर्व प्रथमातानि पुनर्द्वितीयातानि सांप्रतं पचम्यतानि । सचायमर्थ पूर्वं लब्धोन नवति । कोर्थ । नहि ते जोगादयोनर डु खान्मोचयतीतिपूर्व नज्ञातं॥३७॥

॥ टीका –ते पूर्वोक्तविशिष्टानिक्षाचर्यायामन्युद्यता पूर्वमेव प्रव्रज्याग्रहणकालएव तैरेतज्ज्ञातं नवति । तद्यथा (इहेत्यादि) इह जगति । खलुवाक्यालंकारे । अन्यदन्य द्वस्तू द्दिश्य ममैतद्भोगाय नविष्यतीत्येवमसौ प्रव्रज्या प्रतिपन्न प्रवव्रजिषुर्वा प्रवेदयति जाना त्येव परिछिनत्ति । तद्यथा । क्षेत्र शालिक्षेत्रादिक वास्तु खातोछ्रितादिक हिरण्य धर्मला जादिक सुवर्णकनक धनगोमहिष्यादिक धान्यगोधूमादिक कार्स्यकास्यपात्रादिक तथा विपुलानि प्रनूततराणि धनकनकरत्नमणिमौक्तिकानि (शखशिलति) मुक्तशैला

दिका शिला प्रवाल विद्रुम । यदिवा (शिलप्पवालति) श्रियायुक्त प्रवाल श्रीप्रवाल वर्णादिगुणोपेत तथा (रत्तरयणति) रक्तरत्न पद्मरागादिक तथा सत्सार शोनन सारमित्यर्थ । शुन्नमण्यादिक तथा स्वापतेय शुद्ध इव्यजात सर्वमेतत्पूर्वोक्त मे ममोपन्नोगाय नविष्यति । तथा शब्दावेण्वादयोरूपाण्यगनादीनि, गधा कोष्ठपुटाद योरसामधुरादयोमासरसादयोवा, स्पर्शाम्रृद्वादयएते सर्वेपि खलु मे कामन्नोगायाहमप्ये पा योगक्षेमार्थ प्रन्नविष्यामीत्येव सप्रधार्य, ॥ ३६ ॥ समेधावी पूर्वमेवात्मान विजानीया देव पर्यालोचयेत् । तद्यथा । इह ससारे । खलुशब्दोऽवधारणे । इहैवास्मिन्नेव जन्मनि म नुष्यनवे ममान्यतरद्दु ख शिरोवेदनादिक आर्तकोवाऽऽशु जीवितापहारी शूलादिक समु त्पाद्यते । तमेव विशिनष्टि । अनिष्टोऽकातोऽप्रियोऽशुन्नोऽमनोज्ञोऽवनामयतीत्यवनाम पीडाविशेषकारी डु खरूपोयदि वा नमनागमनाक् मे मम नितरामित्यर्थ । डु खयतीति डु ख पुनरपि डु खोत्पादन अत्यतडु खप्रतिपादनार्थं सुखलेशस्यापि परिहारार्थं च नोनै व शुनकर्मविपाकोदितत्वादिति । अत्रच यडुक्त पुनरुच्यते तदत्यादरख्यापनार्थं तद्विशे षप्रतिपादनार्थं वेति । तदेवनूत डु ख रोगातंक वा हतइतिखेदे नयात्त्रातारोयूयं क्षेत्रवस्तु हिरण्यसुवर्णधनधान्यादिका परिग्रहविशेषा शब्दादयोवा विषयास्तथा हे नगवत ! कामन्नोगायूय मया पालिता परिगृहीताश्च ततोयूयमपीद डु ख रोगातंक वा (परि याइयहत्ति) विन्नागश परिगृण्हीत यूय । अत्यतपीडयोद्विग्न पुनस्तदेव डु ख रोगातंक वा विशेषण द्वारेणोच्चारयति । अनिष्टमप्रियमकातमशुन्नममनोज्ञममनाग्नूतमवनामक वा डु खमेवैतन्नोशुन्नमित्येवनूत ममोत्पन्न यूय विन्नजताहमनेनातीव डु खामीति डु खि तइत्यादि पूर्ववन्नेयमित्यतोऽमुष्मान्मामन्यतरस्माद्दु खाद्रोगातंकाद्वा प्रतिमोचयत यूयं । अनिष्टादिविशेषणानि तु पूर्ववद्व्याख्येयानि । प्रथम प्रथमातानि पुनर्द्वितीयातानि सा प्रतं पचम्यतानीति । नचायमर्थस्तेन डु खितेनैवमेवेति यथाप्रार्थितस्तथैव लब्धपूर्वोन्न वति । इदमुक्तनवति । नहि ते क्षेत्रादय परिग्रहविशेषानापि शब्दादय कामन्नोगास्त द्दु खित डु खाद्विमोचयतीति ॥ ३७ ॥

इह खलु कामन्नोगा णोताणाएवा णोसरणाएवा पुरिसेवा एगता पुव्विं कामन्नोगे विप्पजहति कामन्नोगावा एगता पुव्विं पुरिसं विप्पजहति अन्ने खलु कामन्नोगा अन्नो अहमसि से किमगपुण वय अन्नमन्नेहिं काम न्नोगेहिं मुछामो इति सखाएण वयच कामन्नोगेहिं विप्पजहिस्सामो से मेहावि जाणेज्जा बहिरगमेत ॥ ३८ ॥

॥ अर्थ-(इहखलु के०) आ जगत् माहे निश्चे थकी (कामभोगा के०) ते काम भोगादिकजेहे ते, पूर्वोक्त दु खिया जीवने (णोताणाएवाके०) त्राणभणी नथाय (णोसर णाएवा के०) अथवा शरण भणी नथाय (पुरिसेवा के०) ते पूर्वोक्त दु खी पुरुषने पूर्वोक्त रोगादिक उपने थके त्राण शरण भणी नथाय हवे रुडा कामभोगनी लीलानो अत देखाडे छे (एगता के०) एकदा (पुव्विं के०) प्रथम व्याधि उत्पन्न कालें, अथवा जरा जीर्ण कालें, अथवा राजादिकना उपद्रवने कालें पुरुष, (कामभोगेविप्पजहति के०) ए कामभोगने मूके छे (कामभोगावाएगतापुव्वपुरिसविप्पजहतिके०) अथवा ए काम भोग पोतेंज एकदा द्व्यादिकने अभावे विषयाभिलाषी पण छतांज ते पुरुषने त्यागी मूकेछे, ते कारण माटे जे पण्डित पुरुष होय ते एवी रीते अवधारण करे के, (अन्नेखलुकामभोगा के०) निश्चे करी ए कामभोगादिक जेछे ते, महारा थकी अन्यछे जुदाछे (अन्नोअहमसि के०) हु पण ए कामभोगथकी अन्यछु जुदोछु जो एमछे तो, (सेकिमगपुणवयं के०) ते शा अर्थें वली अमे (अन्नमन्नेहिकामभोगेहि मुच्छामो के०) अनित्य अशाश्वत एवा जे ए कामभोग, तेने विषे मूर्छा एटले ममत्व करिये, केमके एवु ए ममत्व करवु तेतो अर्थछे (इतिसखाएणके०) एरीते कोइ महा सत्ववत पुरुष ते कामभोगादिकने पूर्वोक्त रीते अर्थ जाणीने, (वयचकामभोगेहिविप्पजहिस्सामो के०) अमे ए कामभोगादिकनो त्याग करशु एवो अध्यवसाय करे ते महापुरुष जाणवो वली अन्य बीजु वैराग्यनु कारण कहेछे (सेमेहाविजाणेज्जा के०) ते पण्डित एम जाणे जे,(बाहिरगमेत्त के०) ए नव विध परिग्रह तथा शब्दादिक विषय जे छे ते दु खथकी राखनार नथी, एतो सर्व बाहिरग सयोगि छे एटले बाह्यरूपछे, एवु पण्डित जाणेछे ॥ ३७ ॥

॥ दीपिका-एतदेवाह । इह भवे खलु कामभोगान त्राणाय वा स्यु । पुरुष प्राणी एकदा पूर्व कामभोगान् त्यजति कामभोगावा एकदा कदाचित्पुरुष त्यजति । सचैव जानाति अन्ये भिन्ना खलु मत्त कामभोगाएतेभ्यश्च भिन्नोऽह एव सति वयमेतेषु अन्यनू तेषु कामभोगेषु मूर्छा कुर्मइत्येव केचिन्महापुरुषा परिसख्याय सम्यक् ज्ञात्वा, कामभोगान् वय विप्रजहिष्यामस्त्यक्ष्यामइत्यध्यवसायिन स्यु । पुनर्वैराग्यकारणमाह । समेधावी एतत्क्षेत्रादिक बाह्याग वर्ततइति जानीयात् ॥ ३७ ॥

॥ टीका-एतदेव लेशतोदर्शयति (इहखलुइत्यादि) इहास्मिन् । खलुवाक्यालकारे । ते कामभोगाअत्यतमन्यस्तान तस्य दु खितस्य त्राणाय शरणाय वा भवति । सुलालितानामपि कामभोगाना पर्यवसान दर्शयितुमाह । (पुरिसेवाइत्यादि) पुरिशयनात्पुरुष एकदा व्याध्युत्पत्तिकाले वाऽन्यस्मिन्वा राजाद्युपद्रवे तान्कामभोगान् परित्यजति। सवा पुरुषोद्व्याद्यभावे

तै कामन्नोगैर्विपयोन्मुखोपि त्यज्यते । सचैवमवधारयति अन्ये मत्तोन्निन्ना खल्वमी का मन्नोगास्तेन्यश्चान्योहमस्मि । तदेवं व्यवस्थिते "किमिति वयं पुनरेतेष्वनित्येपु परन्नूतेष्व न्येपु कामन्नोगेपु मूर्गं कुर्म" इत्येवं केचन महापुरुषा परिसंख्याय सम्यक् ज्ञात्वा, कामन्नो गान्वयं विप्रजहिप्यामस्त्यक्ष्यामइत्येवमध्यवसायिनोन्नवंति । पुनरपरं वैराग्योत्पत्तिका रणमाह । (सेमेहावी) समेधावी श्रुतिकं एतज्जानीयात् । यदेतत्क्षेत्रवास्तुहिरण्यसुव र्णशब्दादिविपयादिकं डुःखपरित्राणाय न न्नवतीत्युपन्यस्तं तदेतद्बाह्यतरं वर्तते ॥ ३७ ॥

इणमेव उवणीयतरागं तं जहा मायामे पितामे न्नायामे न्नगिणीमे न्नज्जामे पुत्तामे धूतामे पेसामे नत्तामे सुएहामे सुहामे पियामे सहामे सयणसंगथस थुयामे एते खलु मम णायउ अहमवि एतेसिं एवं से मेहावि पुव्वमेव अ प्पणाएवं समन्निजाणेज्जा इह खलु मम अन्नयरे डुक्के रोयातंके समुप्पज्जे ज्जा अणिठे जाव डुक्के णोसुहे सेहंता न्नयतारो णायउ इमं मम अन्नयरं डुक्कं रोयातकं परियाइयह अणिठं जाव णोसुहं ताहिं डुक्कामिवा सो यामिवा जाव परितप्पामिवा इमाउमे अन्नयरातो डुक्कातो रोयातको प रिमोएह अणिठाउ जाव णोसुहाउ एवमेव णोलद्धपुव्वं न्नवइ ॥ ३ए॥ ते सिंवावि न्नयताराणं मम णाययाणं अन्नयरे डुक्के रोयातके समुपज्जेज्जा अणिठे जाव णोसुहे सेहंता अहमेतेसिं न्नयताराणं णाययाणं इमं अन्नयरं डुक्कं रोयातकं परियाइयामि अणिठं जाव णोसुहं मामे डुक्कं तुवा जाव मामे परितप्पतुवा इमाउणं अस्रयराउ डुक्कातो रोयातकाउ परिमोएमि अणिठाउ जाव णोसुहाउ एवमेव णोलद्धपुव्वं न्नवइ अन्न स्स डुक्कं अन्नोन परियाइयति अन्नेन कडं अन्नो नोपडिसवेदेति॥ ४०॥ पत्तेयं जायतिय पत्तेयं मरइ पत्तेयं चयइ पत्तेयं उववज्जइ पत्तेयं ऊंऊा पत्ते यं सन्ना पत्तेयं मन्ना एवं विन्नू वेदणाइति खलु णातिसंजोगा णोताणाएवा णोसरणाएवा पुरिसेवा एगता पुव्विं णातिसंजोए विप्पजहति णातिसं जोगावा एगता पुव्विं पुरिसं विप्पजहति अन्ने खलु णातिसंजोगा अन्नो अहमंसि सेकिमंग पुणवयं अन्नमन्नेहिं णातिसंजोगेहिं मुछामो इति सं खाएण वयं णातिसंजोगं विप्पजहिस्सामो ॥ ४१ ॥

॥ अर्थ-(इहखलु के०) आ जगत् माहे निश्चे थकी (कामजोगा के०) ते काम जोगादिकजेठे ते, पूर्वोक्त डु खिया जीवने (णोताणाएवाके०) त्राणजणी नथाय (णोसर णाएवा के०) अथवा शरण जणी नथाय (पुरिसेवा के०) ते पूर्वोक्त डु खी पुरुषने पूर्वोक्त रोगादिक उपने थके त्राण शरण जणी नथाय हवे रुडा कामजोगनी लीलानो अत देखाडे ठे (एगता के०) एकदा (पुवि के०) प्रथम व्याधि उत्पन्न कालें, अथवा जरा जीर्ण कालें, अथवा राजादिकना उपद्रवने कालें पुरुष, (कामजोगेविप्पजहंति के०) ए कामजोगने मूके ठे (कामजोगावाएगतापुवपुरिसविप्पजहंतिके०) अथवा ए काम जोग पोतेंज एकदा द्रव्यादिकने अजावे विषयाजिलाषी पणुं ठतांज ते पुरुषने त्यागी मूकेठे, ते कारण माटे जे पंमित पुरुष होय ते एवीरीते अवधारण करे के, (अन्नेखलुकामजोगा के०) निश्चे करी ए कामजोगादिक जेठे ते, महारा थकी अन्यठे जुदाठे (अन्नोअहमसि के०) हु पण ए कामजोगथकी अन्यछु जुदोछु जो एमठे तो, (सेकिमगपुणवयं के०) ते शा अर्थें वली अमे (अन्नमन्नेहिकामजोगेहि मुछामो के०) अनित्य अशाश्वत एवा जे ए कामजोग, तेने विषे मूर्छा एटले ममत्व करिये, केमके एवु ए ममत्व करवु तेतो व्यर्थठे (इतिसखाएएके०) एरीते कोइ महा सत्ववत पुरुष ते कामजोगादिकने पूर्वोक्त रीते व्यर्थ जाणीने, (वयचकामजोगेहिविप्पजहिस्सामो के०) अमे ए कामजोगादिकनो त्याग करशु एवो अध्यवसाय करे ते महापुरुष जाणवो वली अन्य बीजु वैराग्यनु कारण कहेठे (सेमेहाविजाणेज्जा के०) ते पंमित एम जाणे जे,(बाहिरगमेत्त के०) ए नवविध परिग्रह तथा शब्दादिक विषय जे ठे ते डु खथकी राखनार नथी, एतो सर्व बाहिरग सयोगि ठे एटले बाह्यरूपठे, एवु पंमित जाणेठे ॥ ३७ ॥

॥ दीपिका-एतदेवाह । इह जवे खलु कामजोगान त्राणाय वा स्यु । पुरुष प्राणी एकदा पूर्व कामजोगान् त्यजति कामजोगावा एकदा कदाचित्पुरुष त्यजति । सचैव जानाति अन्ये जिन्ना खलु मत्त कामजोगाएतेन्यश्च जिन्नोऽह एव सति वयमेतेषु अन्यनूतेषु कामजोगेषु मूर्छा कुर्मइत्येव केचिन्महापुरुषा परिसख्याय सम्यक् ज्ञात्वा, कामजोगान् वयं विप्रजहिष्यामस्त्यक्ष्यामइत्यध्यवसायिन स्यु । पुनर्वैराग्यकारणमाह । समेधावी एतत्क्षेत्रादिक बाह्याग वर्ततइति जानीयात् ॥ ३७ ॥

॥ टीका-एतदेव लेशतोदर्शयति (इहखलुइत्यादि) इहास्मिन् । खलुवाक्यालकारे । ते कामजोगाअत्यतमन्यस्तान तस्य डु खितस्य त्राणाय शरणाय वा जवति । सुलालितानामपि कामजोगाना पर्यवसान दर्शयितुमाह । (पुरिसेवाइत्यादि) पुरिशयनात्पुरुष एकदा व्याध्युत्पत्तिकाले वाऽन्यस्मिन्वा राजाद्युपद्रवे तान्कामजोगान् परित्यजति । सवा पुरुषोद्रव्याद्यजावे

तै कामनोगैर्विषयोन्मुखोपि त्यज्यते । सचैवमवधारयति अन्ये मत्तोभिन्ना खल्वमी का मनोगास्तेन्यश्चान्योहमस्मि। तदेव व्यवस्थिते "किमिति वयं पुनरेतेष्वनित्येषु परनूतेष्व न्येषु कामनोगेषु मूर्छा कुर्म" इत्येवं केचन महापुरुषा परिसंख्याय सम्यक् ज्ञात्वा, कामनो गान्वयं विप्रजहिष्यामस्त्यक्ष्यामइत्येवमध्यवसायिनोनवति । पुनरपरं वैराग्योत्पत्तिका रणमाह । (सेमेहावी) समेधावी श्रुतिकं एतज्जानीयात् । यदेतत्क्षेत्रवास्तु हिरण्यसुव र्णशब्दादिविषयादिकं डुःखपरित्राणाय न नवतीत्युपन्यस्तं तदेतद्बाह्यातरं वर्तते ॥ ३० ॥

इणमेव जवणीयतरागं तं जहा मायामे पितामे जायामे जगिणीमे जज्ञामे पुत्तामे धूतामे पेसामे नत्तामे सुण्हामे सुहामे पियामे सहामे सयणसंगथसं थुयामे एते खलु मम णायउ अहमवि एतेसिं एवं से मेहावि पुव्वमेव अ प्पणाएवं समभिजाणेज्जा इह खलु मम अन्नयरे डुक्के रोयातंके समुप्पज्जे ज्जा अणिठे जाव डुक्के णोसुहे सेहंता जयतारो णायउ इमं ममं अन्नयरं डुक्कं रोयातंकं परियाइयह अणिठं जाव णोसुहं तहिं डुक्कामिवा सो यामिवा जाव परितप्पामिवा इमाउमे अन्नयरातो डुक्कातो रोयातंको प रिमोएह अणिघाउ जाव णोसुहाउ एवमेव णोलद्ध पुव्वं जवइ ॥३९॥ ते सिंवावि जयताराण मम णाययाणं अन्नयरे डुक्के रोयातंके समुपज्जेज्जा अणिठे जाव णोसुह सेहंता अहमेतेसिं जयताराण णाययाण इमं अन्नयरं डुक्कं रोयातंकं परियाइयामि अणिठं जाव णोसुहं मामे डुक्कं तुवा जाव मामे परितप्पतुवा इमाउण अण्यराउ डुक्कातो रोयातंकाउ परिमोएमि अणिघाउ जाव णोसुहाउ एवमेव णोलद्धपुव्वं जवइ अन्न स्स डुक्कं अन्नोन परियाइयति अन्नेन कडं अन्नो नोपडिसंवेदेति॥४०॥ पत्तेयं जायतियं पत्तेयं मरइ पत्तेयं चयइ पत्तेयं उववज्जइ पत्तेयं जजा पत्ते यं सन्ना पत्तेयमन्ना एवं विन्नू वेदणाइति खलु णातिसंजोगा णोताणाएवा णोसरणाएवा पुरिसेवा एगता पुव्विं णातिसंजोए विप्पजहति णातिसं जोगावा एगता पुव्विं पुरिसं विप्पजहति अन्ने खलु णातिसंजोगा अन्नो अहमंसि सेकिमंग पुणवयं अन्नमन्नेहिं णातिसंजोगेहिं मुञ्चामो इति सं खाएण वयं णातिसंजोगं विप्पजहिस्सामो ॥ ४१ ॥

॥ अर्थ-(इहखलु के०) आ जगत् माहे निश्चे थकी (कामनोगा के०) ते काम नोगादिकजेठे ते, पूर्वोक्त दु खिया जीवने (णोताणाएवाके०) त्राणनणी नथाय (णोसर णाएवा के०) अथवा शरण नणी नथाय (पुरिसेवा के०) ते पूर्वोक्त दु खी पुरुषने पूर्वोक्त रोगादिक उपने थके त्राण शरण नणी नथाय हवे रुडा कामनोगनी लीलानो अंत देखाडे छे (एगता के०) एकदा (पुव्विं के०) प्रथम व्याधि उत्पन्न कालें, अथवा जरा जीर्ण कालें, अथवा राजादिकना उपद्रवने कालें पुरुष, (कामनोगेविप्पजहति के०) ए कामनोगने मूके छे (कामनोगावाएगतापुव्वपुरिसविप्पजहतिके०) अथवा ए काम नोग पोतेंज एकदा द्रव्यादिकने अनावे विषयानिलाषी पण छतांज ते पुरुषने त्यागी मूकेछे, ते कारण माटे जे पंमित पुरुष होय ते एवी रीते अवधारण करे के, (अन्नेखलुकामनोगा के०) निश्चे करी ए कामनोगादिक जेठे ते, महारा थकी अन्यछे जुदाछे (अन्नोअहमंसि के०) हु पण ए कामनोगथकी अन्यछु जुदोछु जो एमछे तो, (सेकिमगपुणवयं के०) ते शा अर्थे वली अमे (अन्नमन्नेहिंकामनोगेहिं मुछामो के०) अनित्य अशाश्वत एवा जे ए कामनोग, तेने विषे मूर्छा एटले ममत्व करिये, केमके एवु ए ममत्व करवु तेतो व्यर्थछे (इतिसंखाएणके०) एरीते कोइ महा सत्ववंत पुरुष ते कामनोगादिकने पूर्वोक्त रीते व्यर्थ जाणीने, (वयचकामनोगेहिंविप्पजहिस्सामो के०) अमे ए कामनोगादिकनो त्याग करशु एवो अध्यवसाय करे ते महापुरुष जाणवो वली अन्य बीजु वैराग्यनु कारण कहेछे (सेमेहाविजाणेज्जा के०) ते पंमित एम जाणे जे,(बाहिरगमेत्त के०) ए नव विध परिग्रह तथा शब्दादिक विषय जे छे ते दु खथकी राखनार नथी, एतो सर्व बाहिरग संयोगि छे एटले बाह्यरूपछे, एवु पंमित जाणेछे ॥ ३७ ॥

॥ दीपिका-एतदेवाह । इह नवे खलु कामनोगान त्राणाय वा स्यु । पुरुष प्राणी एकदा पूर्वं कामनोगान् त्यजति कामनोगावा एकदा कदाचित्पुरुष त्यजति । सचैव जानाति अन्ये निन्ना खलु मत्त कामनोगाएतेन्यश्च निन्नोऽह एव सति वयमेतेषु अन्यनूतेषु कामनोगेषु मूर्छा कुर्मइत्येव केचिन्महापुरुषा परिसंख्याय सम्यक् ज्ञात्वा, कामनोगान् वयं विप्रजहिष्यामस्त्यक्ष्यामइत्यध्यवसायिन स्यु । पुनर्वैराग्यकारणमाह । समेधावी एतत्क्षेत्रादिक बाह्याग वर्ततइति जानीयात् ॥ ३७ ॥

॥ टीका-एतदेव लेशतोदर्शयति (इहखलुइत्यादि) इहास्मिन् । खलुवाक्यालकारे । ते कामनोगाअत्यतमन्यस्तान तस्य दु खितस्य त्राणाय शरणाय वा नवति । सुलालितानामपि कामनोगाना पर्यवसान दर्शयितुमाह । (पुरिसेवाइत्यादि) पुरिशयनात्पुरुष एकदा व्याध्युत्पत्तिकाले वाऽन्यस्मिन्वा राजाद्युपद्रवे तान्कामनोगान् परित्यजति । सवा पुरुषोद्रव्याद्यनावे

महारा ज्ञाति विशेषे पीडा अनुभवे माटे एने पण अनेरा कोइ डुःख थकी, रोगातंक थकी, मुकावशुं एवुं यद्यपि ते पोताना मन मांहे जाणे परंतु ते अनिष्टकारी जेमा लेश मात्र सुख नथी एवा डुःख ते ज्ञाती गोत्रीने उपने थके ते माहेथी वहेंची नशके, एट ले तेमनुं डुःख पोते लइ शके नही कारणके, (अन्नस्सडुरकअन्नोनपरियाइयतिके०) अनेरानुं डुःख अनेरो वहेंची लइ शके नही, एटले एकनुं डुःख बीजो वहेंची लइ शके नही (अन्नेनकड के०) अनेरानुं करेलुं कर्म (अन्नोनोपडिसेवेदेति के०) अनेरो भोगवे नही जेणे जे कीधुं होय ते तेहिज भोगवे ॥४०॥ (पत्तेयजायतियके०) जीव प्रत्येक प्रत्येक उपजेछे (पत्तेयमरइ के०) प्रत्येक प्रत्येक मरण पामेछे (पत्तेयचयइ के०) प्रत्येक प्रत्येक धन धान्यादिक ने छांमेछे (पत्तेयउववज्जइ के०) प्रत्येक प्रत्येक उपार्ज न करेछे संग्रहेछे (पत्तेयऊंजा के०) प्रत्येक प्रत्येक ऊंझायक कलह लहेछे (पत्तेयसन्ना के०) प्रत्येक प्रत्येकने संज्ञा एटले पदार्थनुं परिज्ञानछे, ते कोइएकने अल्पछे, कोइएकने घणुंछे एम तरतम योग ज्ञान उपजेछे (पत्तेयमन्ना के०) प्रत्येक प्रत्येक चित्तनो चिं तवनछे (एवविन्नूवेदणाइतिके०) एरीते विन्नू एटले जाणवुं प्रत्येक प्रत्येक सुख डुःखरूप वेदनानो अनुभव थायछे, एतावता एकनुं करेलुं बीजो न भोगवे (एव के०) ए कारणे खलु इति निश्चे (णातिसंजोगा के०) ज्ञातिनो जे संयोगछे ते जीवने (णोताणाएवा के०) त्राण भणी नथाय (णोसरणाएवा के०) जीवने शरण भणी न थाय (पुरिसेवाएगतापुविंणातिसंजोएविप्पजहति के०) एकदा प्रस्तावे ज्ञाति संयोगने ते पुरुष प्रथम छांमे (णातिसंजोगावाएगतापुविंपुरिसविप्पजहति के०) अथवा एकदा प्रस्तावे ज्ञाति संयोग ते पुरुषने प्रथमथीज छांमे ते कारणे, (अन्नेखलुणातिसंजोगाके०) निश्चे ए ज्ञातिना संयोग जे छे, ते मुज थकी अन्यछे (अन्नोअहमसि के०) अने हुं एना थकी अन्यछुं एटले जुदोछुं जो एमछे तोपण (सेकिमंगपुणवयंके०) किशोर कोमल वचने करी वली अम्हे ते (अनमन्नेहिं के०) माहो माहे (णातिसयोगेहिं के०) ज्ञातिना संयोग साथे (मुछामो के०) मूर्छा कीधीछे ते मूर्छा करवी योग्य नथी (इतिसंखाएण के०) एवुं जाणीने (वयणातिसंजोगविप्पजहिस्सामो के०) अमे ज्ञाति संयोग छांमशुं एवो अध्यवसाय जेनो होय तेने पंमित जाणवो ॥४१॥

॥ दीपिका–इदमेव च वक्ष्यमाणमुपनीततरमासन्नतरं वर्तते । तद्यथा । माता, पिता, भ्राता, भगिनी, भार्या, पुत्र , सुता, स्नुषा, प्रिय , सखा सुहृत्, इत्यादि ज्ञातयः पूर्वापरसंस्तुताएते खलु ज्ञातयोममोपकाराय भविष्यंति अहमप्येतेषां ज्ञातीनामुपकरिष्यामीत्येव समेधावी पूर्वमेवात्मना एव समभिजानीयाद्विचारयेत् । इह भवे ममानिष्टा

अर्थ—(इणमेवउवणीयतराग के०) आ जे आगल कहेशे ते घणाज आसन्न ढुकडा व र्तेछे (तंजहा के०) ते कहेछे (मायामे के०) माता महारी, पिता महारो, नाइ म हारो, बहेन महारी,नार्या एटले स्त्री महारी,पुत्र महारा धूता एटले बेटी महारी, पेसा एटले दास महारा, (नत्तामे के०) मित्र महारा सखाइ महारा, अथवा पोत्रा तथा न्यातमहारी (सुन्हामेके०) सुषा एटले पुत्रनी वहु महारी, (पियामेके०) प्रिय (सहामे के०) सखा (सुहामेके०) सुहृत् एटले सज्जन महारा, (सयणसगथसथुयामेके०) स्वजन संस्तुत श्वशुरकुलादिक पितरियादिक ए सर्व महारा,तथा जेनी साथे घणो आलाप सला प परिचय थाय ते सर्व महारा, (एतेखलुममणायउके०) ए सर्व निश्चे थकी महारा ज्ञाति ना घणाज ढूकडा संबंधीछे अने (अहमवि के०) हुंपण (एतेसि के०) एहोनो हु ए मने उपकार करशे, हु एने उपकार करीश (एवं के०) एरीते (सेमेहावि के०) ते पंमित (पुव्वमेव के०) पूर्वे (अप्पणा के०) पोताना आत्माने विषे (एवसमनि जाणेज्ज्ञा के०) एम समस्त प्रकारे जाणे मनमाहे विचारे जे, (इहखलुमम के०) आ नवने विषे निश्चे मुजने (अन्नयरे के०) अनेरो कोइ (डुक्केरोयातकेसमुप्पज्जेज्ञाअ णिठेजावडुक्केणोसुहे के०) डुःख शूलादिक असाध्य रोग अनिष्ट यावत् डुःख कारी, अने नथी जेमा लेशमात्र सुख एवा रोगादिक उपने थके तेवारे ते पुरुष ते डुःखे डुःखित ठतो, (सेहंताके०) माता पितादिक ज्ञाति गोत्री स्वजनादिकने प्रार्थना करे के, (नयतारोके०) अहो नय थकी राखनारा एवा (णायउ के०) ज्ञाति गोत्रीउ ! (इम के०) एम (म म के०) मने (अन्नयरं के०) अनेरो डुःख रोगातंक शूलादिक उपनुठे ते तमो वहें ची ल्यो केमके ए अनिष्टकारी ज्यासुधि लवलेश मात्र सुख नही (तहिडुक्कामिवा के०) तेवा डुःखे करी अत्यंत डुःखीछु सोचुछु, यावत् पीडा अनुनवुछु (इमाउणअन्न यरातोडुक्कातो के०) एमज अनेरे डुःखे अत्यंत डुःखीछु, शोक परिताप पीडा अनुनवु छु, ते कारणे ए डुःख तथा रोग आतंक थकी मुजने (परिमोएह के०) मूकावो प रंतु अनिष्टकारी ज्यासुधि जेमाहे लेश मात्र सुख नथी एवा डुःख थकी मूकाववाने (एवमेवणो लध्धपुव्वनवइके०) एरीते ते अर्थ मागतो लीये नही एटले ते डुःखने वहेंचीलीये नही, अर्थात् ते ज्ञाती, गोत्री, तेने डुःख थकी मूकववाने समर्थ नथाय ॥२ए॥ (तेसिवावि नयताराण के०) अथवा ते नयथकी राखनारा एवा जे (ममणाययाण के०) महा रा ज्ञाति, गोत्री, तेने पण अनेरो कोइएक डुःख रोगातंक उपजे ते केवो उपजे तोके अनिष्टकारी यावत् नथी जेमा लेशमात्र सुख एवो रोग उपने थके हुपण ते नयथकी राखनार थइश ज्ञाती गोत्रीयोनो डुःख रोगातंक वहेंची लइश, कारणके तेवा अनिष्टकारी जेमाहे लेशमात्र सुख नथी एवा डुःख थकी महारा ज्ञाती गोत्री डुःखी थाय यावत्

मद्वारा ज्ञाति विशेषे पीडा अनुनवे माटे एने पण अनेरा कोइ डुःख थकी, रोगातंक थकी, मुकावशु एवुं यद्यपि ते पोताना मन माहे जाणे परंतु ते अनिष्टकारी जेमां लेश मात्र सुख नथी एवां डुःख ते ज्ञाती गोत्रीने उपने थके ते माहेथी वहेंची नशके, एट ले तेमनुं डुःख पोते लइ शके नही कारणके, (अन्नस्सडुरकअन्नोनपरियाइयति के०) अनेरानुं डुःख अनेरो वहेंची लइ शके नही, एटले एकनुं डुःख बीजो वहेंची लइ शके नही (अन्नेनकड के०) अनेरानुं करेलुं कर्म (अन्नोनोपडिसंवेदेति के०) अनेरो नो गवे नही जेणे जे कीधुं होय ते तेहिज नोगवे ॥४०॥ (पत्तेयजायतियके०) जीव प्रत्येक प्रत्येक उपजेठे (पत्तेयमरइ के०) प्रत्येक प्रत्येक मरण पामेठे (पत्तेयचयइ के०) प्रत्येक प्रत्येक धन धान्यादिक ने ठाम्डेठे (पत्तेयउववज्जइ के०) प्रत्येक प्रत्येक उपार्ज न करेठे संग्रहेठे (पत्तेयऊंजा के०) प्रत्येक प्रत्येक ऊंजायक कलह जहेठे (पत्तेयसन्ना के०) प्रत्येक प्रत्येकने संज्ञा एटले पदार्थनुं परिज्ञानठे, ते कोइएकने अल्पठे, कोइएकने घणुंठे एम तरतम योग ज्ञान उपजेठे (पत्तेयमन्ना के०) प्रत्येक प्रत्येक चित्तनो चिं तवनठे (एवंविन्नूवेदणाइतिके०) एरीते विन्नू एटले जाणवुं प्रत्येक प्रत्येक सुख डुःखरूप वेदनानो अनुनव थायठे, एतावता एकनुं करेलुं बीजो न नोगवे (एव के०) ए कारणे खलु इति निश्चे (णातिसंजोगा के०) ज्ञातिनो जे संयोगठे ते जीवने (णोताणाएवा के०) त्राण नणी नथाय (णोसरणाएवा के०) जीवने शरण नणी न थाय (पुरिसेवाएगतापुव्विंणातिसंजोएविप्पजहति के०) एकदा प्रस्तावे ज्ञाति संयोगने ते पुरुष प्रथम ठाम्डे (णातिसंजोगावाएगतापुव्विंपुरिसंविप्पजहति के०) अथवा एकदा प्रस्तावे ज्ञाति संयोग ते पुरुषने प्रथमथीज ठाम्डे ते कारणे, (अन्नेखलुणातिसंजोगाके०) निश्चे ए ज्ञातिना संयोग जे छे, ते मुज थकी अन्यठे (अन्नोअहमंसि के०) अने हुं एना थकी अन्यछु एटले जुदोलुं जो एमठे तोपण (सेकिमंगपुणवयके०) किशोर कोमल वचने करी वली अम्हे ते (अनमनेहिं के०) माहो माहे (णातिसंयोगेहिं के०) ज्ञातिना संयोग साथे (मुच्छामो के०) मूर्छा कीधीठे ते मूर्छा करवी योग्य नथी (इतिसंखाएण के०) एवुं जाणीने (वयणातिसंजोगविप्पजहिस्सामो के०) अमे ज्ञाति संयोग ठामशुं एवो अध्यवसाय जेनो होय तेने पंमित जाणवो ॥४१॥

॥ दीपिका—इदमेव च वक्ष्यमाणमुपनीततरमासन्नतरं वर्तते । तद्यथा । माता, पिता, न्राता, नगिनी, नार्या, पुत्र , सुता, स्नुषा, प्रिय , सखा सुहृत्, इत्यादि ज्ञातयः पूर्वापरसंस्तुताएते खलु ज्ञातयोममोपकाराय नविष्यन्ति अहमप्येतेषां ज्ञातीनामुपकरिष्यामीत्येवं समेधावी पूर्वमेवात्मना एव समनिजानीयाद्विचारयेत् । इह नवे ममानिष्टा

दिविशेषणोड खातंक समुत्पद्यते, ततोऽसौ तद्धु खडखितोज्ञातीन् एवमन्यर्थयेत् । यथा ममान्यतर डु खमुत्पन्न परिगृह्णीत यूय अहमनेनोत्पन्नेन डु खातंकेन पीडयिष्यामीति ततोऽस्माडु खान्मा परिमोचयत यूयमिति॥३९॥इद सर्व प्राग्वत् योज्य। यावदेव नोपलब्ध पूर्व नवति। यत अन्यस्य डु खमन्योन पर्याददाति न गृह्णाति अन्येन कृतं कर्म अन्यो न प्रतिसवेदयति,नानुनवति ॥ ४० ॥ यत,यस्मात्प्रत्येक जीवोजायते, प्रत्येक म्रियते, प्रत्येक त्यजति परिग्रह प्रत्येकमुत्पद्यते । यडुक्त । एकस्य जन्ममरणे, गतयश्च शुनाशु नानवावर्ते ॥ तस्मादाकालिकहितमेकेनैवात्मन कार्य ॥ १ ॥ तथा प्रत्येक ऊफा कल ह । तद्ग्रहणात्कपायागृह्यते प्रत्येकमेव जीवाना कपायोदय स्यादित्यर्थ । सज्ञापदा र्थपरिछित्ति सापि प्रत्येक (मन्नत्ति) मनन चितन पर्यालोचनमिति यावत् । प्रत्येकमे व विछान् प्रत्येक वेदना (इतिखलुत्ति) इति पूर्वोक्तप्रकारेण खलु अमी ज्ञातिसयोगा न त्राणाय न शरणाय। उत्पन्नपीडार्तिनिवारण त्राण, अनागतार्तिसरक्षण शरण । यत पुरुपएकदा ज्ञातिसयोगान् विप्रजहाति, ज्ञातिसयोगावा पुरुप परित्यजति तस्मादन्ये ज्ञा तिसयोगाअहमन्योस्मीति नावनीय । एव सति किमिति पुनर्वयमन्यैरन्यैर्ज्ञातिसयोगै मूर्छा कुर्म । मूर्छाकरण न युक्तमित्यर्थ । इति सख्याय ज्ञात्वा, वय "ज्ञातिसयोगान् त्य क्ष्याम परिहरिष्याम" इति कृताध्यवसायाज्ञानतत्त्वा स्यु ॥ ४१ ॥

॥ टीका—इदमेव चान्य वक्ष्यमाणमुपनीततरमापन्नतर वर्तते। तद्यथा। माता, पिता, भ्रा ता, नगिनीत्यादयोज्ञातय पूर्वापरसस्तुताएते खलु ममोपकाराय ज्ञातयोजविष्यति, अह म"प्येतेषास्नानजोजनादिनोपकरिष्यामी" त्येव समेधावीपूर्वमेवात्म नैवसमनिजानीयादि त्यादि।एव पर्यालोचयेत्कल्पितवानिति वा।एतदध्यवसायी चासौ स्यादिति दर्शयितुमाह । (इहखलुइत्यादि) इहास्मिन्नवे मम वर्तमानस्यानिष्टादिविशेपणविशिष्टोड खातक स मुत्पद्येत ततोऽसौ तडु खडखितोजानीते । तमेवमन्यर्थयेत् । तद्यथा । ममान्यतरं डु खातकमुत्पन्न परिगृह्णीत यूयमहमनेनोत्पन्नेन डु खातकेन पीडयिष्यामीत्यतोमुष्मान्मां परिमोचयत यूयमिति। नचैतत्तेन डु खितेन लब्धपूर्व नवति नहि ताज्ञातयस्तं डु खान्मोच यितुमलमितिनाव ॥३९॥ नासौ तेषां डु खमोचनायालमिति दर्शयितुमाह (तेसिवावीत्या दि) सर्व प्राग्वद्योजनीय यावदेवमेव नो लब्धपूर्व नवतीति । किमित्येव नोपलब्धपूर्व नवतीत्याह । (अन्नस्सडु खमित्यादि) सर्वस्यैव ससारोदरविवरवर्तिनोऽसुमत स्वकृतक र्मोदयाद्डु खमुत्पद्यते तदन्यस्य सबधि डु खमन्योमातापित्रादिकोनप्रत्यापिधत्ते न तस्मा त्पुत्रादेर्डु खेनासह्येनात्यतपीडिता स्वजना नापि डु खमात्मनि कर्तुमल । किमित्येवमा शक्याह । (अन्नेणकडमित्यादि) अन्येन जतुना कपायवशगेन इन्द्रियानुकूलतयाऽनिजा

पिणा ज्ञानावृतेन मोहोदयवर्तिना यत्कृतं कर्म तडुदयमन्य प्राणी नोप्रतिसंवेदय ति, नानुनवति तदनुनवने ह्यरुतागमरुतनाशौ स्याता । नचेमौ युक्तिसंगतावतोयथेन रुत तत्सर्व सएवानुनवति । तथाचोक्त । परकृतकर्मणि यस्मान्नाक्रामति संक्रमोविना गोवा ॥ तस्मात्सत्वाना कर्म यस्य यत्तेन तद्वेद्य ॥१॥४०॥ यस्मात्स्वरुतकर्मफलेश्वराजतव स्तस्मात्तदेतन्नवतीत्याह् । (पत्तेयमित्यादि) एकमेक प्रत्येक सर्वोप्यसुमान् जायते, त था क्षीणे चायुषि प्रत्येकमेव म्रियते । उक्तंच । एकस्य जन्ममरणे, गतयश्च शुनाशुना नवावर्ते ॥ । तस्मादाकालिकहितमेकेनैवात्मन कार्यमिति ॥१॥ तथा प्रत्येक क्षेत्रवस्तु हिरण्यसुवर्णादिक परिग्रह शब्दादींश्च विषयान्माता पितृकलत्रादिक च त्यजति, यथा प्रत्ये कमुपपद्यते युज्यते, परिग्रहस्वीकरणतया तथा प्रत्येक ऊंकाकलहस्तद्ग्रहणात्कषाया प रिगृह्यते । तत प्रत्येकमेवासुमता मदतीव्रतया कषायोन्नवोनवति । तथा संज्ञान संज्ञा पदार्थपरिच्छित्ति । सापि मदमदतरपटुपटुतरन्नेदात्प्रत्येकमेवोपजायते । सर्वज्ञादारतस्तरत मयोगेन मतेर्व्यवस्थितत्वात् । तथा प्रत्येकमेव । (मन्नत्ति) मनन चिंतन पर्यालोचन मिति यावत् । तथा प्रत्येकमेव (विन्नुत्ति) विद्वांस्तथा प्रत्येकमेव सातासातरूपवेद ना सुखडुखानुनव । उपसंजिघृक्षुराह । (इतिखलुइत्यादि) इत्येव पूर्वोक्तेन प्रकारे ण यतोनान्येन रुतमन्य प्रतिसंवेदयते प्रत्येक जातिजरामरणादिक । तत खल्वमी ज्ञा तिसंयोगा स्वजनसंबधा संसारचक्रवाले पर्यटतोत्यतपीडितस्य तडुद्धरणेन त्राणाय न त्राण कुर्वंति, नाप्यनागतसरक्षणत शरणाय नवति । किमिति । यत पुरुषएकदा क्रो धोदयादिकाले ज्ञातिसंयोगान् विप्रजहाति परित्यजति, स्वजनाश्च न बाधवाइति व्यवहा रदर्शनात् ज्ञातिसंयोगादेकदा तदसदाचारदर्शनत पूर्वमेव तं पुरुष परित्यजति स्वसंब धाडुत्तारयति । तदेव व्यवस्थिते एतन्नावयेत्तद्यथान्ये खल्वमी ज्ञातिसंयोगामत्तोनिन्ना एन्यश्चान्योहमस्मि । तदेव व्यवस्थिते किमिति पुनर्वयमन्यैरन्यैर्ज्ञातिसंयोगैर्मूर्छा कु र्मोन तेषु मूर्छा क्रियमाणा न्याय्यैव संख्याय ज्ञात्वा, प्रत्याकजय्य वयमुत्पन्नवैराग्याज्ञाति संयोगास्त्यक्ष्यामइत्येव कृताध्यवसायिनोविदितवेद्यानवतीति ॥ ४१ ॥

से मेहावि जाणेज्जा बाहिरगमेय इणमेव उवणियतराग त जहा हत्थामे पा यामे बाहामे ऊरूमे उदरमे सीसमे सीलम्मे आउमे बलमे वण्णमे तयामे छायामे सोयमे चक्खूमे घाणमे जिप्नामे फासामे ममाइजसि वयाउपडि जूरइ तजहा आउउ बलाउ वण्णाउ तयाउ गयाउ सोयाउ जाव फा साउ सुसंधिता संधीविसंधी नवइ वलितरंगेगाए नवइ किण्हा केसा प लिया नवति तजहा जंपिय इमं सरीरगं उराल आहारोवइय एयपिय

अणुपुव्वेण विप्पजहियव्व नविस्सति एय सखाए सेन्निक्खू निक्खायरियाए स मुठ्ठिए डुहउ लोग जाणेज्जा त जीवाचेव अजीवाचेव तसाचेव थावराचेव॥४२॥

अर्थ–हवे वली बीजु विशेष वैराग्यनु कारण कहेछे (सेमेहाविजाणेज्जाबाहिरंग मेय के०) ते पण्डित एवु जाणेजे ए आगल कहेशे ते सर्व बाह्यछे ए स्वजनादिक स र्व बाह्यछे एवु पूर्वे कह्यु, वली (इणमेव के०) ए थकी (उवणीयतरागके०) आस न ढुकडा एटले घणा नजीक जे छे (तंजहा के०) ते देखाडेछे (हत्थामे के०) हाथ महारा अशोक पल्लव सरखा अनेक शत्रुउना विनाश करनार, तथा स्वजन जनोना म नोरथ पूरणहार, एवा हस्त बीजाना नथी एम चितवना करे (पायामे के०) पग म हारा काछवा सरखा उचा, तथा पद्म जेवा सुवालाछे एवा बीजाना नथी (बाहामे के०) तथा बाहू महारा नोगल समान अनेक शत्रुना विनाश करनाराछे एवा बी जाना नथी (ऊरूमे के०) साथल महारा केलना गर्भ समानछे (उदरमे के०) पेट महारु अत्यत सुवालु माछला समानछे (सीसमे के०) मस्तक महारु अत्यत सुद रछे (सीलम्मे के०) आचार महारो बहुज रूडोछे (आउमेके०) आयुष्य महारु लब लछे एटले घणुछे (बलमे के०) शरीरनु बल महारु घणुछे (वण्णोमेके०) वर्ण मा हारो गौर छे (तयामे के०) त्वचा महारी शीघ्रछे (छायामे के०) कांती महारी सुदर छे (सोयमे के०) श्रोत्र एटले कान महारा नलाछे (चक्कूमे के०) चक्षु महारी नि र्मलछे (घाणमे के०) नासिका महारी नली तीक्ष्ण छे (जिह्वामे के०) जिव्हा महा री रुडीछे (फासामेके०) स्पर्शेन्द्रिय महारी सुदरछे (ममातिक्कतिके०) एटला ए वाना महारा घणाज साराछे एवी शरीरनी ममता करे के, जेवा महारा शरीरना अवयव छे तेवा बीजाना नथी एम जाणे (वयाउपडिजूरत्ति के०) परतु ते हस्तादिक शरीरना अवयव जे छे ते केवाछे तोके, वयना परिणाम थकीज जीर्ण थायछे ते जीर्ण थवाथी ते प्राणी पूर्वोक्त सुदर अवयवो थकी भ्रष्ट थाय (तजहा के०) जे थकी भ्रष्ट थाय तेना नाम कहेछे आयुष्य थकी, बल थकी, वर्ण थकी, त्वचा थकी, कांति थकी, श्रोत्र एटले कान थकी, यावत् स्पर्शेन्द्रियादिक पाचेइन्द्रिय थकी, उंचु थाय (सुसधितासधीवि सधीनवइके०) जेरुडी रीते जानु कूर्प्परादिकनी सधि मलीछे ते विसधि एटले विपरित सधि थाय (वलितरंगेगाएनवतिके०) शरीर सर्व वलिया रूप तरग तेणे करी आकुल थाय, शरीर एवु थाय जे, पोतानेज उद्वेग करे तो पछी बीजाने उद्वेग करे तेमां केवुजशु? (किण्हाके सापलियानवति के०) काला केशछे ते सपेत थाय (तंजहाके०) ते कहेछे किबहुना (जपियइमसरीरग के०) जे ए शरीर सारु मनोहर (उरालआहारोवइय के०) उदा

र रुडा आहारे करी वृद्धिने पमाड्यु (एयपिय के०) एने पण (अणुपुवेणं के०) अ नुक्रमे वयने परिणामे (विप्पजहियवइवविस्सति के०) गमवु थशे (एयंसरकाए के०) एवु जाणीने (सेन्हिकू के०) ते साधु पमित समस्त धन धान्यादिक बाह्य परिग्रह गमीने तथा राग द्वेषादिक अंतरंग परिग्रह गमीने (निस्कायरियाएसमुठिए के०) निक्षाचर्याने विषे सावधान थाय (डुहुवलोगजाणेज्जा के०) ते साधु बे प्रकारे लोक ने जाणे (तके०) ते बे प्रकार कहेछे (जीवाचेवके०) एक जीवते जीवास्तिकाय प्राणि मात्र जाणवा बीजो (अजीवाचेव के०) धर्मास्तिकायादिक पांचद्रव्य अजीव जाण वा हवे ए निक्षु चारित्रियाने दया जाणवाने अर्थे जीवना नेद कहेछे (तसाचेवथाव राचेव के०) एक त्रस ते बेइंद्रियादिक जाणवा बीजा स्थावरते पृथ्वी कायादिक जाण वा ते वली सूक्ष्म बादर पर्याप्ता अपर्याप्ताना नेदकरी घणा प्रकारे जाणवा ॥ ४२ ॥

॥ दीपिका–वैराग्योत्पत्तिकारणमेवाह । समेधावी जानीयात । तद्यथा । बाह्यतरमे तत् यज्ज्ञातिसंबंधन इदमन्यडुपनीततरमासन्नतरं ज्ञातिन्यः शरीरावयवानामासन्नतरत्वा त् । तद्यथा । हस्तौमे मनोहरौ एवं पादौ बाहू ऊरू शीर्षमुदरमायुर्बलं वर्णस्त्वक् ग या श्रोत्रं चक्षुर्घ्राणं जिह्वास्पर्शइति सर्वं ममाति ममीकरोति यादृक् मे, न तादृगन्यस्येति नाव । एतच्च हस्तपादादिकं वयसः परिणामात् (परिजूरइत्ति) परिजीर्णतां याति । तद्यथा । आयुषः सकाशाद्धीयते बलात् वर्णात् त्वचश्गायात श्रोत्रात् यावत्स्पर्शाद्धीयते । अ त्रच सनत्कुमारचक्रिदृष्टांतोवाच्यः । शरीरे हीयमाने श्रोत्रादीनींद्रियाण्यपि हीयंते । य डुक्तं । वाचं वृद्धिर्वयोमेधा,त्वक्चक्षुः शुक्रविक्रमाः ॥ दशकेषु निवर्तते मनः सर्वेंद्रियाणि च । तथा सुसंधितं सुबद्धं संधिजानुकूर्परादिकोविसंधिर्नवति । गात्रं शरीरं वलितरंगा कुलं शिराजालवेष्टितं नवति । यतः । वलिसंततमस्थिशेषितं,शिथिलस्नायुवृतं कलेवरं ॥ स्वयमेव पुमान् जुगुप्सते किमुकांता कमनीयविग्रहाइति । तथा कृष्णा केशाः पलिता श्वेता स्युः । यदपीदं शरीरमुदारं शोनन विशिष्टाहारोपचितं एतदपि मयाऽवश्यं वि प्रहातव्यं त्यक्तव्यं नविष्यति इत्यवगम्य संसारासारतां संख्याय ज्ञात्वा संनिक्षुर्निक्षाच र्यायां समुत्थितः सन् द्विधा लोकं जानीयात् । तद्यथा । जीवाअजीवाश्च । जीवाद्विवि धा त्रसा स्थावराश्च । एतेषामुपरि बहुधा व्यापारः प्रवर्तते ॥ ४२ ॥

॥ टीका–सांप्रतमन्येन प्रकारेण वैराग्योत्पत्तिकारणमाह । (समेहावीत्यादि) सनु तिकएतद्वक्ष्यमाणं जानीयात् । तद्यथा । बाह्यतरमेतद्यज्ज्ञातिसंबधनमिदमेवान्यडुपनी ततरमासन्नतरं शरीरावयवानां निन्नज्ञातिन्यआसन्नतरत्वात् । यथा हस्तौ ममाशोनन

छत्रसदृशौ तथा स्तुजौ करिकराऽकारौ परपुरजयौ प्रणयिजनमनोरथपूरकौ शत्रुशतजीवि तातकरौ यथा मम न तथान्यस्य कस्यापीत्येव पादावपि पद्मगर्भसुकुमारावित्यादि सु गम । यावत्स्पर्शा स्पर्शनेंद्रिय ममाति ममीकरोति । यादृङ् मे, न तादृगन्यस्येति ना व । एतच्च हस्तपादादिक स्पर्शनेंद्रियपर्यवसान शरीरावयवसबधित्वेन विवक्षितं यत्किम पि वयस परिणामात्कालकृतावस्थाविशेषात् (परिजूरइत्ति) जीर्णता याति प्रतिक्षण विशरारुता याति तस्मिश्च प्रतिशरीर विशीर्यति शरीरे प्रतिसमयमसौ प्राणी एतस्माद्धूय ते । तद्यथा । आयुष पूर्वनिबद्धात्समयादिहान्याऽपचीयते आवीचीमरणाभ्युपगमात् । तथा बलादपचीयते तथा वयसोयौवनावस्थायाश्चवमाने शरीरे प्रतिक्षण शिथिलीभव त्सु सधिबधनेषु बलादवश्य भ्रश्यते । तथा वर्णात्त्वचश्छायातोऽपचीयते तत्र च सन त्कुमारदृष्टातोवाच्य तथा जीर्यति शरीरे श्रोत्रादीनींद्रियाणि सम्यक् स्वविषयं परिछे त्तुमल । तथाचोक्त । बाल्य वृद्धिर्वयोमेधा, त्वक्चक्षु शुक्रविक्रमा ॥ दशकेषु निवर्तंते म न सर्वेंद्रियाणि च ॥ १ ॥ विशिष्टवयोहान्या सुसधित सुबद्ध सधिर्जानुकूर्परादिकोविस धिर्भवति विगलितबधनोभवतीत्यर्थ । तथा वलितरगाकुल सर्वत शिराजालवेष्टितमा त्मनोपि शरीरमिदमुद्वेगकृद्भवति किंपुनरन्येषा । तथाचोक्त । वलिसततमस्थिशेषितं शिथिलस्नायुवृत कलेवर ॥ स्वयमेव पुमान् जुगुप्सते, किमु काता कमनीयविग्रहा ॥ १ ॥ तथा कृष्ण केशावय परिणामे जलप्रक्षालिताधवलता प्रतिपद्यते । तदेव वय परिणा मापादितसन्मतिरेतद्भावयेत् । तद्यथा । यदपीद शरीरमुदार शोभनावयवरूपोपेतं विशि ष्टाहारोपचितमेतदपि मयावश्य प्रतिक्षण विशीर्यमाणमायुष क्षये विप्रहातव्यं भविष्य तीत्येतदवगम्य शरीरानित्यतया ससारासारता सख्यायावगम्य परित्यक्तसमस्तगृहप्रपंचो निष्किंचनतामुपगम्य सन्निकुर्वेद्दहदीर्घसयमयात्रार्थ भिक्षाचर्याय समुत्थित सन् द्विधा लोक जानीयादिति । तदेव लोकद्वैविध्य दर्शयितुकामआह । तद्यथा । जीवाश्च प्राणधारणा ल्लक्षितरिताश्चाजीवाधर्माधर्माकाशादय । तत्र तस्य भिक्षोरहिंसाप्रसिद्धये जीवान् विभा गेन दर्शयितुमाह । जीवाअप्युपयोगलक्षणा द्विधा । तद्यथा । त्रस्यंतीति त्रसाद्वींद्रि यादय तथा तिष्टतीति स्थावरा पृथिवीकायादय । तेपि सूक्ष्मबादरपर्याप्तकापर्याप्तकादि भेदेन बहुधाऽदृष्टव्या । एतेषु चोपरि बहुधा व्यापार प्रवर्तते ॥ ४२ ॥

इह खलु गारत्था सारंभा सपरिग्गहिया संतेगतिया समणा माहणावि सारंभा सपरिग्गहावि जेइमे तसा थावरा पाणा ते सय समारभंति अ न्नेणावि समारभावेंति अण्णपि समारभ त समणुजाणंति ॥ ४३ ॥ इह खलु गारत्था सारंभा सपरिग्गहा संतेगतिया समणा माहणावि सा

रंन्ना सपरिग्गहा जेइमे कामन्नोगा सचित्तावा अचित्तावा ते सयं परि गिण्हंति अन्नेणवि परिगिण्हावेंति अन्नंपि परिगिण्हंतं समणुजाणंति ॥ ४४ ॥ इह खलु गारत्था सारंन्ना सपरिग्गहा संते गतिया समणा माहणावि सारंन्ना सपरिग्गहा अहं खलु अणारंन्ने अपरिग्गहे जे खलु गारत्था सारंन्ना सपरिग्गहा संतेगतिया समणा माहणावि सारंन्ना स परिग्गहा एते चेव निस्साए बंन्नचेरवा सवसिस्सामो कस्सणं त हेउ जहा पुव्वं तहा अवरं जहा अवरं तहा पुव्वं अजू एते अणुवरया अणुवट्ठिया पुणरवि तारिसगा चेव ॥ ४५ ॥

अर्थ–हवे ए जीवोना उपमर्दक देखाडेले (इहखलु के०) आ संसारने विषे नि श्चे थकी (गारत्थासारंन्ना के०) ग्रहस्थ जेले ते सारंन्नी, तथा (सपरिग्गहिया के०) स परिग्रहिया जाणवा (संतेगतियासमणामाहणावि के०) तथा कोइ एक श्रमण अने ब्राह्मणले तेपण (सारंन्नासपरिग्गहावि के०) सारंन्नी अने सपरिग्रहीले ते सारंन्नी स परिग्रही केवाले ते कहेले (जेइमेतसाथावरापाणा के०) जे कोइ ए त्रस अने स्थावर प्राणीले (तेसयंसमारंन्नंति के०) तेनो स्वयं पोते समारंन्न करेले (अन्नेणाविसमारंन्ना वेंति के०) अन्य बीजापासें आरंन्न करावेले (अन्नंपिसमारंन्नंतंसमणुजाणंति के०) बीजो कोइ आरंन्न करतो होय तेने अनुमोदन आपेले ॥४३॥ हवे ए सारंन्नी सपरिग्रहिने प्राणातिपात देखाडीने नोगागनूत परिग्रह देखाडेले अही इहखलु इत्यादिकनो अर्थ ल खेले आ जगत् माहे निश्चे थकी ग्रहस्थ सारंन्नी सपरिग्रही होयले अने कोइएक श्रमण ब्राह्मण पण सारंन्नी सपरिग्रहीले (जेइमेकामन्नोगासचित्तावाअचित्तावाके०) जे ते स्त्रिया दिकना नोगने अर्थे पुष्प, चंदन, गीत, वाजित्रादिक करावे ते सचित्त अने अचित्त परिग्रह जाणवो (तेसयंपरिगिण्हंतिके०) ते स्वयं पोते कामन्नोगना अर्थी थका सचित्ताचित्तरूप परिग्रह अंगीकार करे (अन्नेणविपरिग्गिण्हावेंतिके०) बीजा पास परिग्रहावे (अन्नंपिपरि ग्गिण्हंतंसमणुजाणंतिके०) बीजोजे परिग्रहे तेने अनुमोदन आपे ॥ ४४ ॥ एम आ जगत् मा ग्रहस्थ सारंन्नी सपरिग्रहीले अने केटलाएक श्रमण ब्राह्मण पण सारंन्नी सपरिग्रही ले एवु जाणीने निक्षु चारित्रिउ एवु चिंतवे जे (अहं के०) हुं खलु इति निश्चे निरारं न्नी निःपरिग्रहीवु तो जे ए ग्रहस्थ तथा श्रमण ब्राह्मण सारंन्नी सपरिग्रहीले एनी नि श्रायें अमे ब्रह्मचर्य आदरशु एतावता निरारंन्न निःपरिग्रही थका धर्माधारनूत देहने प्रतिपालवा निमित्ते आहारादिकने अर्थे सारंन्नी सपरिग्रही एवा ग्रहस्थनी निश्रायें

प्रवज्यां पालशु इत्यर्थः । (कस्सणंतंहेउ के०) वली तेनी निश्रायें विचरवुं ते नु कारण शुं? एवा संदेहे शिष्ये पूछे थके तदनंतर आचार्य ते शिष्यनो अभि प्राय जाणीने तेने उत्तर आपेछे (जहापुव्वंतहाअवरं के०) जेम ग्रहस्थने सारं नि सपरिग्रही पणु प्रथम होय तेम पछी पण होय (जहाअवरंतहापुव्वं के०) अने कोइ एकश्रमण ब्राह्मण पण ग्रहस्थने नावे होय तेवारे सारंनि सपरिग्रही होय तेमज पछी प्रवज्र्याना अवसरे पण तेवाज सारंनी सपरिग्रही थका वर्त्ते तो ते पण ग्रहस्थ सरखाज जाणवा केमके जेम पछी प्रवज्र्याने अवसरेछे तेम प्रथम ग्रहस्थने नावे पण तेवाज ह ता ए कारणे निरारंनि थका चारित्रियाये सारंनिनो आश्रय ग्रहण करवो जेम ए गृह स्थ सारंनि सपरिग्रही प्रत्यक्ष देखायछे तेम देखाडेछे (अजूएतेअणुवरयाअणुवछिया के०) ए वात प्रगट पणेछे के ए गृहस्थादिक सावद्यानुष्ठान थकी अनुपरत एटले नि वर्त्या नथी जे कारण माटे ते सारंनी, सपरिग्रही प्रत्यक्ष पणेछे अने जे कोइ चारित्र ल हिने पछी सावद्यानुष्ठानने विषे प्रवर्त्ते आधाकर्मादिक आहार लिये तेपण (पुणरवि के०) वली पण (तारिसगाचेवके०) तादृश तेवाज जाणवा जेम पछी प्रवज्र्याने अव सरे वर्त्तेछे तेम प्रथम गृहस्थने नावे पण वर्त्तता हता ॥ ४५ ॥

॥ दीपिका–तमेवाह । इह संसारे खलु गृहस्था सारंना सपरिग्रहा संति विद्यते। एके केचन श्रमणा शाक्यादयोब्राह्मणाश्च सारंना सपरिग्रहा । यतोयइमे त्रसा स्था वरा प्राणिनएतान् स्वयं समारंनते अन्याश्च समारंनयंति समारंनं कुर्वतश्चान्यान् सम नुजानंति॥४३॥ एवं प्राणातिपातं प्रदर्श्य परिग्रहमाह । इह खलु गृहस्था सारंना सप रिग्रहा संति श्रमणाब्राह्मणाअपि तादृशा । यइमे कामनोगा कामा स्त्रीसंगादयो नोगा स्रक्चंदनगीतादय । एते सचित्ताअचित्तावा तान् स्वयं परिगृह्णंति अन्यान् प रिग्राहयंति परंच परिगृह्णंत समनुजानंति ॥४४॥ उपसंहारमाह । इह खलु गृहस्था श्रम णाब्राह्मणाश्च सारंना सपरिग्रहाइति ज्ञात्वा सनिक्षुरेवं चिंतयेत् अहमेव खलु अनारं नोऽपरिग्रहश्च । ये चामी गृहस्थादय सारंना सपरिग्रहास्तदेतन्निश्रयाब्रह्मचर्यं श्राम ण्यं वत्स्यामआचरिष्यामोऽनारंनाअपरिग्रहा सतोधर्माधारदेहधारणार्थमाहारादिकृते सारंनसपरिग्रहगृहस्थनिश्रयां प्रव्रज्यां करिष्यामइत्यर्थः । शिष्य प्राह । कस्य हेतोर्गृह स्थस्य श्रमणादिनिश्राकरणं? आचार्यआह । यथा पूर्वमादौ सारंनपरिग्रहत्वं तेषां तथा पश्चादपि सर्वकालमपि गृहस्था सारंनादिदोषदुष्टा श्रमणाश्च पूर्वं गृहस्थत्वे सारंनास्त था परस्मिन्नपि प्रव्रज्याकाले तथाविधाएव ते यथा परमपरस्मिन् प्रव्रज्याकाले तथा पूर्वं गृहस्थत्वेपीति । तत साधुनिरनारंनै सारंनाश्रयणं कार्यं । गृहस्थासारंनत्वमाह(अजू

इति) व्यक्तमिदं ये गृहस्था सावद्यादनुपस्थितताअनुद्यता । येपि शाक्यादय प्रव्रजिता स्तेप्युद्दिष्टनोजित्वात्सावद्यानुष्ठानपरत्वात्पुनरपि तादृशाएव गृहस्थतुल्याएव ॥ ४५ ॥

॥ टीका–सांप्रतं तडुपमर्दकव्यापारकर्तॄन् दर्शयन्नाह । (इहखलुइत्यादि) इहास्मि न्संसारे । खलुवाक्यालंकारे । गृहमागारं तत्र तिष्ठतीति गृहस्थास्तेच सहारंनेण जीवो पमर्दकारिणा वर्तंते सारंनास्तथा सहपरिग्रहेण द्विपदचतुष्पदधनधान्यादिना वर्तंतइति स परिग्रहा । न केवलं तएवान्येपि संति विद्यते एके केचन श्रमणा शाक्यादयस्तेच पच नंपाचनाद्यनुमते सारंनादास्यादिपरिग्रहाच्च सपरिग्रहास्तथा ब्राह्मणाश्चैवविधाएव । ए तेषां च सारंनकत्वं स्पष्टतरं सूत्रेणैव दर्शयति । यइमे प्राग्वर्णितास्त्रसा स्थावराश्च प्रा णिनस्तावत्स्वयमेवापरप्रेरिताएव समारंनते तडुपमर्दकं व्यापारं स्वतएव कुर्वंतीत्यर्थः । त थान्यांश्च समारंनं कुर्वंतश्चान्यान् समनुजानते ॥४३॥ तदेवप्राणातिपातं प्रदर्श्य नोगागनूतं परिग्रहं दर्शयितुमाह । यइमे प्रत्यक्षा कामप्रधानानोगा कामनोगा काम्यंतइति कामा स्त्रीगात्रपरिष्वंगादयोनुज्यतइति नोगा स्रक्चंदनवादित्रादयस्तएते सचित्ता सचेतनाश्च चेतनावा नवेयुस्तडुपादानजूतार्थास्ताश्च सचित्तानचित्तान्वाऽर्थास्तेकामनोगार्थिनोगृहस्था दयस्तएव परिगृह्ण्हंति अन्येनच परिग्राहयंति अपरंच परिगृह्ण्हंतं समनुजानतइति ॥४४॥ सांप्रतमुपसंजिघृक्षुराह । इहास्मिन् जगति विद्यते गृहस्थास्तथाविधश्रमणाब्राह्मणाश्च सा रंना सपरिग्रहाइत्येवं ज्ञात्वा सनिक्षुरेवमवधारयेदहमेवात्र खल्वनारंनोऽपरिग्रहश्च । ये चामी गृहस्थादय सारंनादिगुणयुक्तास्तदेतन्निश्रयास्तदाश्रयेणच ब्रह्मचर्यं श्रामण्यमाचरि ष्यामोऽनारंनाद्यपरिग्रहा सतोधर्माधारदेहप्रतिपालनार्थमाहारादिकृते सारंनपरिग्रहस्य निश्रया प्रव्रज्या करिष्यामइत्यर्थः । ननु च यदि तन्निश्रयापुनरपि विहर्तव्यं किमर्थं ? ते त्यज्यतइति जाताशंक पृछति । कस्य हेतो केन कारणेन तदेतद्गृहस्थश्रमणब्राह्मणत्यज नमनिहितमित्याचार्योपि विदिताभिप्रायउत्तरं ददाति । यथा पूर्वमादौ सारंनपरिग्रहत्वं तेषां तथा पश्चादपि सर्वकालमपि गृहस्था सारंनादिदोषडुष्टा श्रमणाश्च केचन यथा पू र्वं गृहस्थानावे सारंना सपरिगृहास्तथा परस्मिन्नपि प्रव्रज्याकाले तथाविधाएव तइति । अधुनोनयपदाव्यनिचारित्वप्रतिपादनार्थमाह । यथा परमपरस्मिन् प्रव्रज्याप्रतिपत्तिका ले तथा पूर्वमपि गृहस्थनावादावपीति । यदि वा कस्य हेतोस्तद्गृहस्थाद्याश्रयणं क्रियते यतिनेत्याह । यथा पूर्वं प्रव्रज्यारंनकाले सर्वमेव निक्षादिकं गृहस्थायत्तं तथा पश्चादप्य त कथंनु नामानवद्यावृत्तिर्नविष्यतीत्यतः साधुनिरनारंनै सारंनाश्रयणं विधेयं । तथा चैते गृहस्थादय सारंना सपरिग्रहाश्च । तथा प्रत्यक्षेणैवोपलन्यतइति दर्शयितुमाह । (अ जूइति) व्यक्तमेतदेते गृहस्थादयोयदि वाजुइति प्रगुणेन न्यायेन सरसप्रव्रज्यासावद्यानु

ष्ठानेन्योऽनुपरता परिग्रहारंनाच्च सत्संयमानुष्ठानेन चानुपस्थिता सम्यगुष्ठानमकृतवतो पि कथंचिद्धर्मकरणायोत्थितास्तेप्युदिष्टभोजित्वात्सावद्याऽनुष्ठानपरत्वाच्च गृहस्थाजावेऽनुष्ठानमनतिवर्तमाना पुनरपि तादृशाएव गृहस्थकल्पाएवेति ॥ ४५ ॥

जे खलु गारत्था सारंजा सपरिग्गहा संतेगतिया समणा माहणावि सारंजा सपरिग्गहा इहतो पावाइं कुव्वंति इति संखाए दोहिंवि अंतेहिं अदिस्समाणो इति जिक्खू रीएज्जा ॥ ४६ ॥ सेबेमि पाईणंवा जाव एवं से परिण्णायकम्मे एवं से ववेयकम्मे एवं सेविअंतकारए जवतीति मक्खायं॥४७॥

अर्थ–(जेखलुगारत्थासारंजासपरिग्गहा के०) जे निश्चे थकी ग्रहस्थ सारंजी सपरिग्रहीछे (संतेगतियासमणामाहणाविसारंजासपरिग्गहा के०) अने कोइ एक श्रमण ब्राह्मण पण सारंजी अने सपरिग्रहीछे (इहतोपावाइंकुव्वंति के०) ए कारणे ए बन्ने पापना करनारा जाणवा (इतिसंखाए के०) एवुं जाणीने (दोहिंविअंतेहिं के०) आरंज अने परिग्रह ए बेउ थकी अंत एटले दूर रहे (अदिस्समाणो के०) आरंज अने परिग्रह थकी अदृश्य मान उतो (इतिनिक्खूरीएज्जा के०) एम चारित्रवान् साधु निरवद्य आहारनुं जोजन करनार थको संयमानुष्ठानने विषे प्रवर्ते ॥४६॥ (सेबेमिके०) वली तेज अर्थ विशेषे करी कहुंछुं (पाईणंवा के०) पूर्व पश्चिम उत्तर अने दक्षण दिशि थकी आव्यो एवो साधु निरारंजी नि परिग्रही संयमने विषे प्रवर्त्तमान थको (जावएवंसेपरिण्णायकम्मे के०) ज्यां सुधी एम ते साधु ज्ञपरिज्ञाये जाणीने प्रत्याख्यान परिज्ञायें पच्चरकीने (एवंसेववेयकम्मे के०) एम ते कर्मना अंतनो करनार थाय (एवंसेविअंतकारएजवतीतिमक्खायं के०) ए प्रकारे ते योगनिरोधे करी विशेष अंतकारी थाय एम श्री तीर्थंकर गणधरे कह्युंछे ॥ ४७ ॥

॥ दीपिका–उपसंहारमाह । (जेखलुत्ति) येऽमी गृहस्थादयस्ते द्विधापि रागद्वेपान्यामुजान्यां पापानि कुर्वंति इति संख्याय ज्ञात्वा द्वयोरप्यंतयोरागद्वेषयोरनुपलज्यमान सन् इत्येवंजूतोनिक्षु संयमे रीयेत प्रवर्तेत । कोर्थः । यइमे ज्ञातिसंयोगायश्चार्थं धनादिपरिग्रह यच्चेदं हस्ताद्यवयवयुक्तं शरीरं यच्चायुर्बलवर्णादिकं तत्सर्वमसारमनित्यं । गृहस्थश्रमणब्राह्मणाश्च सारंजपरिग्रहा एतत्सर्वं ज्ञात्वा निक्षु संयमे रीयेत तिष्ठेदितिस्थितं ॥४६॥(सेबेमि) सोहं ब्रवीमि प्राच्यादिशोन्यतरस्या समागत सनिक्षुर्द्वयोरपि रागद्वेपयोरदृश्यमान संयमे रीयमाण सन् एवं पूर्वोक्तप्रकारेण परिज्ञातकर्मा स्यात् ज्ञपरिज्ञया परिज्ञाय प्रत्याख्यानपरिज्ञया प्रत्याख्यातकर्मा स्यादित्यर्थः । एवं सयोगनिरोधेन व्यंतकारक विशेषेणकर्मणामंतकारक स्यादिति तीर्थकृद्गणधरादिजिराख्यातं ॥ ४७ ॥

॥टीका–सांप्रतमुपसंहरति । (जेखलुइत्यादि) यइमे गृहस्थादयस्ते द्विधापि सारंनसपरि ग्रहत्वान्यामुनान्यामपि पापान्युपाददते । यदिवा रागद्वेषान्यामुनान्यामपि पापान्युपाददते यदिवा गृहस्थप्रव्रज्यापर्यायान्यामुनान्या पापानि कुर्वंतइत्येव संख्याय परिज्ञाय द्वयोरप्येत योरारंनपरिग्रहयोरागद्वेषयोर्वा दृश्यमानोनुपलन्यमानोयदिवा रागद्वेषयोर्यावन्नावन्नावौ तयोरादिश्यमाने रागद्वेषान्नावलृत्तित्वेनापदिश्यमान सन्निर्त्येवंनूतोनिष्क्रणशीलोऽनवद्या द्दारंनोजी सत्संयमानुष्ठाने रीयेत प्रवर्तेत । एतडुक्तं नवति । ये इमे जातिसंयोगायश्चाय ध नधान्यादिकं परिग्रहोयच्चेदं हस्तपादाद्यवयवयुक्तं शरीरं यच्च सदायुर्बलवर्णादिकं तत्सर्वम शाश्वतमनित्यं स्वप्नेंद्रजालसदृशमसारं । गृहस्थश्रमणब्राह्मणाश्च सारंना सपरिग्रहाश्चे तत्सर्वं परिज्ञाय सत्संयमानुष्ठाने निष्क्रुरीयेतेति स्थितं ॥ ४६ ॥ सपुनरप्यहमविकृतमेवार्थं विशेषिततरं सोपपत्तिकं ब्रवीमीति । तत्र प्रज्ञापकापेक्षया प्राच्यादिकायादिशोन्यतरस्या स मायात सनिष्क्रुर्द्वयोरप्यतयोरदृश्यमानतया सत्संयमे रीयमाण सन् एवमनंतरोक्तेन प्रका रेण ज्ञपरिज्ञया परिज्ञाय प्रत्याख्यानपरिज्ञया परिज्ञातकर्मा नवति । पुनरप्येवमिति परि ज्ञातकर्मत्वाद्व्यपेतकर्मा नवति अपूर्वस्यावधकोनवतीत्यर्थः । पुनरेवमित्यवधकयोगनिरो धोपायतः पूर्वोपचितस्य कर्मणोविशेषेणातकारकोनवतीत्येतच्च तीर्थंकरगणधरादिनि र्ज्ञातज्ञेयैर्व्याख्यातमिति ॥ ४७ ॥

तत्र खलु नगवता ठजीवनिकायहेउ पण्णत्ता तंजहा पुढवीकाए जाव त सकाए से जहा णामए मम असायं दंमेणवा अठीणवा मुठीणवा लेलू णवा कवालेणवा आउट्टिज्जमाणस्सवा हम्ममाणस्सवा तज्जिज्जमाणस्स वा ताडिज्जमाणस्सवा परियाविज्जमाणस्सवा किलाविज्जमाणस्सवा उद्द विज्जमाणस्सवा जावलोमुक्कणणमायमवि हिंसाकारगं डुक्खं नयपडिसं वेदेमि इच्चेव जाण सव्वे जीवा सव्वेनूता सव्वेपाणा सव्वेसत्ता दंमेणवा जाव कवालेणवा आउट्टिज्जमाणावा हम्ममाणावा तज्जिज्जमाणावा ताडिज्ज माणावा परियाविज्जमाणावा किलाविज्जमाणावा उद्दविज्जमाणावा जाव लोमुक्कणणमायमवि हिंसाकारगं डुक्खं नयं पडिसंवेदेति एवं नच्चा स व्वेपाणा जाव सत्ता णहंतव्वा णअज्जावेयव्वा णपरिघेतव्वा णपरितावेयव्वा णउद्दवेयव्वा ॥ ४८ ॥ सेबेमि जेयअतिता जेयपडुप्पन्ना जेयआगमिस्सा मि अरिहंता नगवंता सव्वे ते एवमाइक्खंति एवंनासंति एवंपण्णवेंति एवं

परूवेति सव्वेपाणा जावसत्ता णहतव्वा णअज्जावेयव्वा णपरिघेतव्वा ण परितावेयव्वा णउद्दवेयव्वा एसधम्मे धुवे णीतिए सासए समिञ्च लोग खे यन्नेहि पवेदेति एवसे भिक्खू विरते पाणातिवायतो जाव विरते परिग्गहा तो णोदतपरकालणेण दतपरकालेज्जा णोअजण णोवमण णोधूवणे णोत परिआविएज्जा ॥ ४ए ॥

अर्थ–(तव के०) त्या कर्मबधने प्रस्तावे खलु इति वाक्यालंकारे (भगवता के०) भगवंत श्रीतीर्थंकरदेवे (छ जीवनिकायहेउ के०) छजीवनिकाय कर्मबधना कारण (पन्नत्ता के०) कह्याछे (तजहा के०) ते छ कायना नाम कहेछे (पुढवीकाएजा वतसकाए के०) पृथ्वी कायथी मांडीने यावत् त्रसकाय पर्यंत छ जीव निकाय जाणवा तेने पीडता पीडावता जेम दुःख उपजे तेम दृष्टांते करी देखाडेछे (सेजहाणामए के०) ते जेम नाम एवी संभावनाये (मम के०) मुजने (अस्साय के०) असाता उपजे शा थकी असाता उपजे ते कहेछे (दंमेणवा के०) दंमादिकेकरी हणता थका (अट्ठीणवा के०) अस्थिखंमे करी हाडकाये करी (मुट्ठीणवा के०) मुष्टीये करी (लेलूणवा के०) पाषाणे करी (कवालेणवा के०) ठीकरीये करी (आउट्टिज्जमाणस्सवा के०) आक्रोश करताथका तथा सन्मुख नाखता थका (हम्ममाणस्सवा के०) अथवा हणता थका (तज्जिज्जमाणस्सवा के०) तर्जना करता थका (ताडिज्जमाणस्सवा के०) ताडना करता थका (परियाविज्जमाणस्सवा के०) परितापना करता थका (किलाविज्जमाणस्सवा के०) किलामणाकरताथका (उद्दविज्जमाणस्सवा के०) उद्वेग करता थका तथा जीवने काया थकी रहित करताथका (जावलोमुक्खणण मायमवि के०) यावत् शरीर माहेथी एक रोम उखेडवा मात्र एवु पण (हिंसाकारग के०) हिंसानु कारण तेथी पण (दुक्खभयपडिसवेदेंमि के०) दुःख अने भय हु वेदु अनुभवु (इच्चेवजाण के०) ए प्रकारे तेजाणे के (सव्वेजीवा के०) सर्वे जीवते सर्वे पचेंद्रियजीव जाणवा (सव्वेभूता के०) सर्वे भूतते सर्वे वनस्पति प्रमुखना जीव जाणवा (सव्वेपाणा के०) सर्वे प्राणी ते सर्वे बे इंद्रियादिक विकलेंद्रि जीव जाणवा (सव्वेसत्ता के०) सर्वेसत्व ते पृथिव्यादिक सर्वेजीव जाणवा ते जीवोने (दंमेकरी हणता थका (जावकवालेणवा के०) यावत् ठीकरीये करी हणता थका (आउट्टिज्जमाणावा के०) आक्रोश करता थका (हम्ममाणावा के०) हणता थका (तज्जिज्जमाणावा के०) तर्जना करता थका (ताडिज्जमाणावा के०) ताडना करता थका (परि [illegible] वा के०) परितापना करता थका (किलाविज्जमाणावा

के०) किलामणा करता थका, (उद्दविज्जमाणावा के०) उद्वेग करता थका, तथा जीव ने काया थकी रहित करता थका, (जावलोमुक्खणणमायमवि के०) यावत् एक रोम उखेडवा मात्र एवु पण (हिंसाकारग के०) हिंसानु कारण ते थकी पण, (डुक्ख नयंपडिसंवेदेति के०) ते जीवो डुःख अने नय एवुज वेदे अनुनवे एटले जेवु डुःख मने वेदवु पडे, तेवु डुःख सर्व जीवने वेदवु पडे एम सर्व जीवोने पोता सरखु डुःख देखाडीने अन्य जीवोने शिक्षानो उपदेश आपेछे (एवनच्चा के०) एवु जाणीने (सव्वेपाणाजावसत्ता के०) सर्व प्राणी, सर्वनूत, सर्वजीव अने सर्व सत्वने (एहंतव्वा के०) हणवा नही, (णअज्जावेयव्वा के०) दमादिके करी ताडवा नही, (णपरिघेतव्वा के०) बलात्कारे करी दासनी पेठें परिग्रहवा नही, एटले बलात्कारे करी चाकरनी पेठे कोइ कार्यने विषे प्रेरवा नही (णपरितावेयव्वा के०) शारीरिक मानसी पीडाने उपजावीने परितापवा नही (किलवियमाणवा णउद्दवेयव्वा के०) किलामणा करी करी उपड्रववा नही, तथा काया थकी रहित करवा नही ॥४७॥ हवे सुधर्म स्वामी कहेछे (सेबेमिके०) ए वचन जे हु कहु छु, ते पोतानी मतिये नथी कहेतो पण एम सर्व तीर्थंकरनी आज्ञाछे, ते देखाडेछे, (जेयअतीता के०) जे अतीत काले तीर्थंकर थया, (जेयपडुप्पन्ना के०) जे वर्त्तमान कालें तीर्थंकर वर्त्तेछे, (जेयआगमिस्सामि के०) जे आगमिक कालें थशे ते (अरिहंत के०) पूजा सत्कार योग्य (नगवंता के०) ज्ञानवंतआश्चर्यादिक गुणे करी संयुक्त एवा (सव्वेते के०) समस्त श्री अरिहंत नगवंत ते (एवमाइक्खंति के०) एम सामान्य थकी कहेछे (एवनासंति के०) एम अर्धमागधीनाषाये नाखेछे (एवपन्नवेंति के०) एम शिष्यने देशना आपेछे (एवपरूवेंति के०) एम सम्यक् प्रकारे प्ररूपे छे के, (सव्वेपाणा जावसत्ता के०) सर्वे प्राणीथी मांडीने यावत् सर्व सत्व ने (एहंतव्वा के०) हणवा नही, दमादिके करी ताडवा नही, वली बलात्कारे दासनी पेठें परिग्रहवा नही, शारीरिक मानसी पीडा उत्पन्न करीने, परितापवा नही उपड्रववा नही, जीव काया थकी रहित करवा नही, (एसधम्मेधुवे के०) ए धर्म प्राणीनी दया लक्षण डुर्गतियें जाता जीवने राखनार ते धर्म केवोछे तोके, ध्रुव एटले निश्चल (णीतिए के०) नित्य सदा सर्वकालछे, कोइ काले जेनो क्षय नथी (सासएके०) शाश्वतछे, तेने (समिच्चके०) केवल ज्ञाने करी आलोचीने शु आलोचीने ? तो के, (लोग के०) चौद रज्वात्मक लोक एटले षट् जीव निकायरूप लोक तेने डुःखरूप समुड्रमाहे पड्यो देखीने (खेयन्नेहिं के०) खेदज्ञ एटले बीजा जीवोना डुःखोना जाणनार, एवा श्रीतीर्थंकर नगवंते (पवेदंति के०) पूर्वोक्त जीवदयालक्षण धर्म नाख्या (एव के०) ए प्रकारे जाणीने (सेनिरकूनिरते के०) ते साधु निवर्त्यां (पाणातिवायतो के०) प्राणातिपात एटले हिंसा थकी, तेमज मृषा

वाद थकी, तथा अदत्तादान थकी, तथा मैथुन एटले कुशील थकी, (जावविरतेपरिग्ग हातो के०) यावत् परिग्रह थकी, विरति करतो थको जेवा आचारे प्रवर्त्ते, ते आचार कहेछे (णोदंतपरकालणेण दंतपरकालेज्जा के०) दंत पक्षालने करी दंत धोवे नही, एतावता जावजीव सुधी दातण न करे (णोअंजण के०) जावजीव सुधी सौजाग्यने अर्थें आखमा अंजन नाखे नही (णोवमण के०) वमन विरेचनादिक क्रिया न करे, (णोधूवणे के०) शरीर वस्त्रादिकनु धूपन न करे (णोतंपरिआविएज्जा के०) कासादि रोगने मटाडवा माटे धूम पान पण न करे, ते भिक्षु एटला वाना पोते आचरे नही ॥४९॥

॥ दीपिका–प्राणातिपातेन कर्मबंधप्रस्तावे खलु भगवता षड्जीवनिकायाहेतुत्वेनो क्ता । तद्यथा । पृथिवीकायोयावत्त्रसकाय । एतेषां दुःख दृष्टांतेनाह् । तद्यथा नाम ममासातं दुःख दंडेन अस्थ्ना मुष्टिना लेलुना लोष्टेन कर्परेण आकोटयमानस्य सको च्यमानस्य हन्यमानस्य कशादिनिस्ताडयमानस्य कुड्यादावभिघातादिना परिताप्यमान स्याग्न्यादावन्येन प्रकारेण परिक्लम्यमाणस्यापद्राव्यमानस्य मार्यमाणस्य यावल्लोमोत्खन नमात्रमपि हिंसाकरं दुःख भयं च यन्मयि क्रियते तत्सर्वमहं संवेदयामि इत्येवं जानी हि । तथा सर्वे प्राणाजीवाभूतानि सत्वाइत्येकार्थिका कथंचिद्भेदेन वा व्याख्येया । तथाहि । प्राणाद्वित्रिचतुःखा स्युर्भूतानि तरवः स्मृता ॥ जीवा पंचेंद्रिया प्रोक्ता शेषा सत्वाइतीरिताइति । एषां दंडादिना कोटयमानानां यावल्लोमोत्खननमात्रमपि दुःख प्रतिसंवेदयता । एतच्च हिंसाकरं दुःखं भयं चोत्पन्नं ते सर्वेपि प्राणिन साक्षादनुभव न्त्यत सर्वेपि प्राणिनोन हंतव्यान आज्ञापयितव्याबलान्न कार्ये प्रयोक्तव्यान परिग्राह्या न परितापयितव्यानापद्रावयितव्या ॥४८॥ सोहं साधुर्ब्रवीमि न स्वमत्या किंतु तीर्थकृदाज्ञ येत्याह् । येअतीतार्ये च प्रत्युत्पन्नावर्तमाना सीमंधरादयोये चागमिष्याअनागता पद्मनाभादयोऽर्हंतोभगवंत सर्वेप्येवमाख्यांति एवं भाषंते स्वत एव प्रज्ञापयंति हेतुभिरेव प्ररूपयंति नामादिभिर्यथा सर्वेप्राणा न हंतव्याइत्यादि । एषधर्मो ध्रुवोनित्य शाश्वत समे त्य ज्ञात्वा, लोक खेदज्ञैस्तीर्थकरैं प्रवेदित । एवं ज्ञात्वा सभिक्षुर्विरत प्राणातिपाताद्या वत्परिग्रहान्महाव्रतपालनार्थमुत्तरगुणा कथ्यंते । (नोदंतइत्यादिना) निष्किंचन सन् साधुर्नो दंतप्रक्षालनेन काष्ठेन दंतान् प्रक्षालयेत् नोअंजनं नेत्रयोर्विभूषार्थं कुर्यात्, वमन विरेचनादि न कुर्यात्, वस्त्राणां धूपनं न कुर्यात् कासाद्यपनोदनार्थं धूमं न पिबेत् ॥४९॥

॥ टीका–कथं पुन प्राणातिपातविरतिव्रतादिव्यवस्थितस्य कर्मापगमोभवतीत्युक्त यतस्तत्प्रवृत्तस्यात्मौपम्येनप्राणिनां पीडोत्पद्यते तया च कर्मबंधइत्येवं सर्वं मनस्याधा

याह । (तत्रखलुइत्यादि) तत्रेति कर्मबंधप्रस्तावे । खलुवाक्यालंकारे । भगवतोत्पन्न ज्ञानेन तीर्थकृता षड्जीवनिकायाहेतुत्वेनोपन्यस्ता । तद्यथा । पृथिवीकायोयावत्त्रसका योपीति । तेषांच पीड्यमानानां यथा दुःखमुत्पद्यते तथा स्वसंवित्तिसिद्धेन दृष्टांतेन द र्शयितुमाह । तद्यथाच मे ममासातं दुःखं वक्ष्यमाणैः प्रकारैरुत्पद्यते तथान्येषामपीति तद्यथा । दंडेनास्थ्ना मुष्टिना लेलुनालोष्ठेन कपालेन कर्परेण आकोटयमानस्य संकोच्यमा नस्य हन्यमानस्य कशादिभिस्तर्जमानस्याशुत्यादिभिस्ताडयमानस्य कुड्यदावभिघातादिना परितप्यमानस्याग्न्यादावन्येन प्रकारेण वा परिक्लाम्यमानस्य तथापद्राव्यमाणस्य मार्यमा णस्य यावल्लोमोत्खननमात्रमपि हिंसाकरं दुःखं नयं च यन्मयि क्रियते तत्सर्वमहं संवेद यामीत्येवं जानीहि । यथा सर्वे प्राणाजीवाभूतानि सत्वाइत्येते एकार्थिकाः कथंचिद्भेद माश्रित्य व्याख्येयास्तत्रैतेषां दंडादिना कुटयमानानां यावल्लोमोत्खननमात्रमपि दुःखं प्रतिसंवेदयतामेतच्च हिंसाकरं दुःखं नयं चोत्पन्नं ते सर्वे प्राणिनः प्रतिसंवेदयंति सा क्षादनुभवंतीत्येवमात्मोपमया पीड्यमानानां जंतूनां यतोदुःखमुत्पद्यतेऽतः सर्वे प्राणि नोन हंतव्यान व्यापादयितव्याबलात्कारेण व्यापारे न प्रयोक्तव्यास्तथा न परिग्राह्यान परितापयितव्यानापद्रावयितव्या ॥ ४८ ॥ सोहं ब्रवीम्येतन्न स्वमनीषिकतया किंतु सर्वे तीर्थकराज्ञयेति दर्शयति (येअतीएइत्यादि) ये केचन तीर्थकृतकृषभादयोऽतीतायेच विदेहेषु वर्तमानाः सीमधरादयोये चागामिन्यामुत्सर्पिण्यां भविष्यंति ब्रह्मनाभादयोऽर्हं तोऽमरासुरनरेश्वराणां पूजार्हाभगवतऐश्वर्यादिगुणकलापोपेताः सर्वेप्येवं ते व्यक्तवाचा आख्यांति प्रतिपादयंति । एवं सदेवमनुजायां पर्षदि भाषंते स्वतएव न यथा बौद्धानां बोधिसत्वप्रभावात् कुड्यादिदेशनतइत्येवं प्रकर्षेण ज्ञापयंति हेतूदाहरणादिभिः । एवं प्ररूपयंति नामादिभिर्यथा सर्वे प्राणान हंतव्याइत्यादि । एषधर्मः प्राणिरक्षणलक्षण प्राग्व्यावर्णितस्वरूपोध्रुवोऽवश्यभावी नित्यः क्षात्यादिरूपेण शाश्वतइत्येवं चाभिसमेत्य केवलज्ञानेनावलोक्य, लोकं चतुर्दशरज्ज्वात्मकं खेदज्ञैस्तीर्थकृद्भिः प्रवेदितं कथितइत्ये वं सर्वं ज्ञात्वा, सभिक्षुर्विदितवेद्योविरतः प्राणातिपाताद्यावत्परिग्रहादिति । एतदेव दर्शयितुमाह । (णोदंतइत्यादि) इह पूर्वोक्तमहाव्रतपालनार्थमनेनोत्तरगुणाः प्रतिपा द्यते । तत्रापरिग्रहोनिष्किंचनः ससाधुर्नो दंतप्रक्षालनेन कदंबादिकाष्ठेन दंतान् प्रक्षाल येत्तथा नो अंजनं सौवीरादिकं विभूषार्थमक्ष्णोर्दद्यात्तथा नो वमनविरेचनादिकां क्रि यां कुर्यात्तथा नो शरीरस्य स्वीयवस्त्राणां वा धूपनं कुर्यान्नापि कासाद्यपनयनार्थं तं धू मं योगवर्तिनिष्पादितमापिबेदिति ॥ ४९ ॥

सेभिक्खू अकिरिए अलूसए अकोहे अमाणे अमाए अलोहे उवसं ते परिनिव्वुडे णोआसंसं पुरतोकुज्जा इमेणमे दिठेणवा सुएणवा मुएण

वाद थकी, तथा अदत्तादान थकी, तथा मैथुन एटले कुशील थकी, (जावविरतेपरिग्गहातो के०) यावत् परिग्रह थकी, विरति करतो थको जेवा आचारे प्रवर्त्ते, ते आचार कहेछे (णोदंतपक्खालणेण दंतपक्खालेज्जा के०) दंत पखालने करी दंत धोवे नही, एतावता जावजीव सुधी दातण न करे (णोअंजण के०) जावजीव सुधी सौभाग्यने अर्थे आंखमा अंजन नाखे नही (णोवमण के०) वमन विरेचनादिक क्रिया न करे, (णोधूवणे के०) शरीर वस्त्रादिकनुं धूपन न करे (णोतंपरिआविएज्जा के०) कासादि रोगने मटाडवा माटे धूम पान पण न करे, ते भिक्षु एटला वाना पोते आचरे नही ॥४९॥

॥ दीपिका–प्राणातिपातेन कर्मबंधप्रस्तावे खलु भगवता षड्जीवनिकाया हेतुत्वेनोक्ता । तद्यथा । पृथिवीकायोयावत्त्रसकाय । एतेषां दुःख दृष्टांतेनाह । तद्यथा नाम ममासातं दुःख दंडेन अस्थ्ना मुष्टिना लेष्टुना लोष्ठेन कर्परेण आकोटयमानस्य संकोच्यमानस्य हन्यमानस्य कशादिभिस्ताड्यमानस्य कुड्यादावभिघातादिना परिताप्यमानस्याग्न्यादावन्येन प्रकारेण परिक्रम्यमाणस्यापद्राव्यमानस्य मार्यमाणस्य यावल्लोमोत्खननमात्रमपि हिंसाकर दुःख भयं च यन्मयि क्रियते तत्सर्वमहं संवेदयामि इत्येव जानीहि । तथा सर्वे प्राणाजीवाभूतानि सत्वाइत्येकार्थिका कथंचिद्भेदेन वा व्याख्येया । तथाहि । प्राणाद्वित्रिचतुःखा स्युर्भूतानि तरवः स्मृता ॥ जीवाः पंचेंद्रिया प्रोक्ताः शेषाः सत्वाइतीरिताइति । एषां दंडादिना कोटयमानानां यावल्लोमोत्खननमात्रमपि दुःख प्रतिसंवेदयतां । एतच्च हिंसाकरं दुःखं भयं चोत्पन्नं ते सर्वेपि प्राणिन साक्षादनुभवंत्यत सर्वेपि प्राणिनोन हंतव्यान आज्ञापयितव्याबलान्न कार्ये प्रयोक्तव्यान परिग्राह्या न परितापयितव्यानापद्रावयितव्या ॥४८॥ सोहं साधुर्ब्रवीमि न स्वमत्या किंतु तीर्थंकदाज्ञयेत्याह । येऽतीतायें च प्रत्युत्पन्नावर्तमाना सीमंधरादयोये चागमिष्याअनागता पद्मनाभादयोऽर्हंतोभगवंत सर्वेप्येवमाख्याति एवं भाषते स्वत एव प्रज्ञापयति हेतुभिरेव प्ररूपयंति नामादिभिर्यथा सर्वेप्राणा न हंतव्याइत्यादि । एषधर्मो ध्रुवोनित्य शाश्वत समेत्य ज्ञात्वा, लोक खेदज्ञैस्तीर्थंकरै प्रवेदित । एवं ज्ञात्वा सभिक्षुर्विरत प्राणातिपाताद्यावत्परिग्रहान्महाव्रतपालनार्थमुत्तरगुणा कथ्यंते । (नोदंतइत्यादिना) निष्किंचन सन् साधुर्नो दंतप्रक्षालनेन काष्ठेन दंतान् प्रक्षालयेत् नोअंजनं नेत्रयोर्विभूषार्थं कुर्यात्, वमनविरेचनादि न कुर्यात्, वस्त्राणां धूपनं न कुर्यात् कासाद्यपनोदनार्थं धूमं न पिबेत् ॥४९॥

॥ टीका–कथं पुन प्राणातिपातविरतिव्रतादिव्यवस्थितस्य कर्मापगमोभवतीत्युक्त यतस्तत्प्रवृत्तस्यात्मौपम्येनप्राणिनां पीडोत्पद्यते तया च कर्मबंधइत्येव सर्व मनस्याधा

थाऽमुना सुचरितेन तपोनियमब्रह्मचर्यवासेन तयाऽमुना यात्रामात्रावृत्तिना धर्मेण इतोऽस्माद्भवात् च्युतस्य प्रेत्य, जन्मांतरे देव स्यामहं तत्रस्थस्यच कामभोगावशवर्तिन स्युः । सिद्धोवाऽदुःख अशुभ शुभाशुभकर्मापेक्षया एवभूतोहं स्यामिति एवमाशंसा न विदध्यात् । अत्रापि तपश्चरणे सत्यपि दुर्ध्यानसद्भावात्कदाचित्सिद्धिर्मुक्तिरणिमादिसिद्धिर्वा स्यात्कदाचिन्न न स्यात् एवं सति साधोराशंसा कर्तुं न युक्तेति इहलोकार्थं परलोकार्थं कीर्तिवर्णश्लोकाद्यर्थं च तपोन विधेयमिति स्थितं ॥ ५० ॥

॥ टीका–सांप्रतं मूलगुणोत्तरगुणप्रस्तावमुपसंजिघृक्षुराह । (सेभिक्खूइत्यादि) समूलोत्तरगुणव्यवस्थितोभिक्षुर्नास्य क्रिया सावद्या विद्यतेइत्यक्रियः संवृतात्मकतया सांपराथिककर्माबंधकइत्यर्थः । कुतएवभूतोयतः प्राणिनामलूषकोऽहिंसकोऽनुपमर्दकइत्यर्थः । तथा न विद्यतेक्रोधोयस्येत्यक्रोधएवममानोऽमाय्यलोभ कषायोपशमाच्चोपशांतः शीतीभूतस्तदुपशमाच्च परिनिर्वृतइव परिनिर्वृत । एवं तावदैहिकेभ्य कामभोगेभ्योविरतः पारलौकिकेभ्योपि विरतइति दर्शयति ।(नोआससइत्यादि) नो नैवाशंसा पुरस्कृत्य ममानेन विशिष्टतपसा जन्मांतरे कामभोगावाप्तिर्भविष्यतीति।एवभूतामाशंसा न पुरस्कुर्यादित्येतदेव दर्शयितुमाह । (इमेणमेइत्यादि) अस्मिन्नेव जन्मन्यमुना विशिष्टतपश्चरणफलेन दृष्टेनामर्षोषध्यादिना पारलौकिकेन च श्रुतेनाईकधम्मिल्लब्रह्मदत्तादीना तथा (सुएणवत्ति) मननज्ञान जातिस्मरणादिना ज्ञानेन तथाऽचार्यादेः सकाशाद्विज्ञानेनावगतेन ममापि विशिष्टं भविष्यतीत्येवं नाशंसा विदध्यात् । तयाऽमुना सुचरित्रतपोनियमब्रह्मचर्यवासेन तथाऽमुना वा यात्रावृत्तिना धर्मेणानुष्ठितेनातोस्माद्भवाच्च्युतस्य प्रेत्य जन्मांतरे स्यामहं देवस्तत्रस्थस्यच मे वशवर्तिन कामभोगाभवेयुरशेषकर्माऽवियुतोवा सिद्धोऽदुःखोशुभाशुभकर्मप्रकृत्यपेक्षयेत्येवं भूतोहं स्यामागामिकालइत्येवमाशंसा न विदध्यादिति । यदिवा विशिष्टतपश्चरणादिनाऽऽगामिनि काले ममाणिमा लघिमेत्यादिकाऽष्टप्रकारा सिद्धिर्भविष्यतीत्यनया च सिद्ध्या सिद्धोहमदुःखोऽशुभोवामध्यस्थइत्येवंरूपामाशंसा न कुर्यात् । तदकरणे च कारणमाह । (एत्थविइत्यादि) अत्रापि विशिष्टतपश्चरणे सत्यपि कुतश्चिन्निमित्ताद्दुष्प्रणिधानसद्भावे सति कदाचित्सिद्धिः स्यात्कदाचिन्न नैवाशेषकर्मक्षयलक्षणा सिद्धिः स्यात् । तथाचोक्तं । जे जत्तियाअहेऊ भविस्स ते चेव तत्तिया मोक्खेइत्यादि । यदिवाऽत्राप्यणिमाद्यष्टगुणकारणे तपश्चरणादौ सिद्धिः स्यात्कदाचिन्न न स्यात् तद्विपर्ययोपि वा स्यादित्येवं व्यवस्थिते प्रेक्षापूर्वकारिणा कथमाशंसा कर्तुं युज्यते इति । सिद्धिश्चाष्टप्रकारेयं । अणिमा १ गरिमा २ लघिमा ३ महिमा ४ प्राप्ति ५ प्राकाम्य ६ ईशित्व ७ वशित्व ८ यत्र कामावसायित्वमिति।तदेवमहिकार्थमामुष्मिकार्थं च कीर्तिवर्णश्लोकाद्यर्थं च तपोन विधेयमिति स्थितं ॥ ५० ॥

वा णाएणवा विन्नाएणवा इमेणवा सुचरिय तवनियमबन्नचेरवासेण इमेणवा जायामायावुत्तिएण धम्मेण इउवए पेच्चा देवेसिया कामन्नोगा वसवत्ति सिद्धेवा अडुक्खमसुन्ने एछविसिया एछविणोसिया ॥ ५० ॥

अर्थ–(सेनिरकू के०) ते चारित्रियो (अकिरिए के०) सावद्य क्रिया रहित, (अलूसए के०) जीवनो अहिंसक, (अकोहे के०) क्रोधरहित (अमाणे के०) मानरहित (अमाए के०) मायारहित (अलोहे के०) लोनरहित (उवसतेपरिनिवुडे के०) एकारणे उपशात परिनिवृत समाधिवत एवो ठतो, (णोआससपुरतोकुज्जा के०) आ शसा न करे एटले जन्मातरे कामनोगनी प्रार्थना न करे (इमेणमेदिट्ठेणवा के०) वली आ जन्मने विषे आमोसही इत्यादिक लब्धि पाम्या तेथी तपश्यानु फल प्रत्यक्ष दीतु तथा वली (सुएणवा के०) सिद्धात नणवा थकी (मुएणवा के०) मनन कर वाना (णाएणवा के०) ज्ञानेकरी (विन्नाएणवा के०) विज्ञानेकरी, (इमेणवा के०) एवा धर्मेकरी (सुचरिय के०) सुरुतरूप आचरण (तव के०) तप अनशनादिक (नि यम के०) नियम अनिग्रहादिक (बन्नचेर के०) ब्रह्मचर्यने विषे (वासेण के०) वसवा थकी (इमेणवा के०) ए धर्मकरी (जायामायावुत्तिएण के०) सयमयात्रामात्रा वृत्तिरूप एटले मानोपेत आहार लेवे करी (धम्मेणइउवएपेच्चादेवेसिया के०) एवा धर्मेकरी अहीया थकी चवीने परनवातरे देवत्व पणु पामु एवी आशसा पण न करे (कामन्नोगावसवत्ति के०) अथवा नाना प्रकारना कामनोग महारे वशवर्ति थाउ एवी प्रार्थना पण नकरे (सिद्धि के०) अष्ट प्रकारनी अणिमा महिमादिकजे सिद्धि ठे ते सिद्धिये करी सिद्धिये सहित थाउ, एवी आशसा नकरे (अडुक्खमसुने के०) दुःख रहित थाउ, शुनाशुन कर्मरहित थाउ, तथा मध्यस्थ थाउ, एवी आशसा पण न करे एवी आशसाने न करवानु कारण कहेठे (एछविसियाएछविणोसिया के०) तपश्चरण करता मन प्रार्थितसिद्धि होय अथवा न होय ए कारणे वाछा न करे ॥ ५०॥

॥ दीपिका–मूलोत्तरगुणसग्रहमाह। सन्निकु नविद्यते सावद्या क्रिया यस्य सोऽक्रिय सापरायिककर्माबधकइत्यर्थः । यत प्राणिनामलूपकोऽहिंसकस्तथाऽक्रोधोऽमायोऽलोनउ पशात परिनिर्वृत शीतीनूतआशसा जन्मातरे कामनोगावाप्तिवाछा न पुरस्कुर्यात् । (इमेणत्ति) अमुना तपश्चरणफलेन दृष्टेनामर्षौपध्यादिना श्रुतेन पारलौकिकेनार्ईकधम्मि लब्रह्मदत्तादीना तपश्चरणफलेन (मएणत्ति) मनन च जातिस्मरणादिज्ञानेन आचार्या दे सकाशाद्विज्ञातेनावगतेन ममापि विशिष्ट फल नविष्यतीत्येव नाशसा विदध्यात्। त

अचित्त (तेणोसयंपरिगिएहति के०) ते कामभोगने पोते परिग्रहे नही अंगीकार करे नही (णोअन्नेणपरिगिएहावेति के०) बीजा पासे परिग्रहावे नही (अन्नपरिगिएहतं पि णसमणुजाणइ के०) बीजो परिग्रहतो होय तेने अनुमोदे नही (इतिसेमहतो के०) एवोते चारित्रिउं महोटा (आयाणाउ के०) कर्मबंधना कारण थकी (उवसते के०) उपशम्यो (उवट्ठिए के०) सावधान थयो (पडिविरए के०) विशेषे निवर्त्यो (सेनिक्खू के०) ते चारित्रिउं ॥ ५३ ॥

॥ दीपिका–अथ रागद्वेषाभावमाह । (सेभिक्खूइत्यादि) सभिक्षु शब्देषु शुभाशुभेष्व मूर्छितोऽद्विष्टश्च । एवं रूपगंधरसस्पर्शेष्वपि वाच्यं । तथा विरत. क्रोधमानमायालोभेभ्य स्तथा प्रेमतोदोषात् कलहादभ्याख्यानात् पैशुन्यात् परपरिवादात् अरतिलोरतितोमाया मृषातोमिथ्यादर्शनशल्याद्विरत सभिक्षुर्योमहत कर्मोपादानाडुपशांतसंयमे उपस्थित सावद्येभ्य प्रतिविरत सभिक्षु स्यात् ॥५१॥ येइमे त्रसा स्थावरा प्राणिनोभवंति तान् स्वयं न समारभते नैवान्यैं समारंभयते अन्यं समारंभमाणं न समनुजानाति इत्येवं म हत कर्मोपादानाडुपशांत प्रतिविरत सभिक्षु स्यात् ॥५२॥ येमी कामभोगा सचित्ताश्च चित्तावा तान् स्वयं न परिगृएहाति नान्येन परिग्राहयति अन्यं परिगृएहतं न समनुजा नाति इत्येवं कर्मोपादानाद्विरत सभिक्षु स्यात् ॥ ५३ ॥

॥ टीका–सांप्रतमनुकूलप्रतिकूलेषु शब्दादिषु विषयेषु रागद्वेषाभाव दर्शयितुमाह । (सेभिक्खूइत्यादि) सभिक्षु सर्वांशसारहितोवेणुवीणादिषु शब्देष्वमूर्छितोऽगृद्धोऽनध्युप पन्नस्तथा रासभादिशब्देषु कर्कशेषु द्विष्ट एवं रूपरसगंधस्पर्शेष्वपि वाच्यमिति । पुनरपि सामान्येन क्रोधाद्युपशमं दर्शयितुमाह (विरएकोहाउइत्यादि) क्रोधमानमायालोभेभ्यो विरतइत्यादिसुगमं । यावदिति । (सेमहयाआयाणाउउवसंतेउवट्ठिएपडिविरएसेभिक्खू त्ति) सभिक्षुर्भवति योमहत कर्मोपादानाडुपशांत सन्स्वयमेवोपस्थित सर्वपापेभ्यश्च विर तइति ॥५१॥ एतदेवमहत कर्मोपादनाद्विरमण साक्षाद्दर्शयितुमाह । (जेइमेइत्यादि) ये केचन त्रसा स्थावराश्च प्राणिनोभवंति तान् सर्वानपि नोनैव स्वयं सत्साधव समारभ ते प्राएयुपमर्दकमारभतइतियावत् ।तथा नान्यैं समारंभयंते नचान्यान् समारंभमाणान् समनुजानतइत्येवं महत कर्मोपादानाडुपशांत प्रतिविरतोभिक्षुर्भवतीति ॥५२॥ सांप्रतं सामान्यत सांपरायिककर्मोपादानकामभोगनिवृत्तिमधिकृत्याह । (जेइमेइत्यादि) ये केच नामी काम्यंतइति कामाश्रुज्यंत इतिभोगास्तेच सचित्ताश्चचित्तावा भवेयुस्तांश्च नस्वतो गृएहीयान्नाप्यन्येन ग्राहयेत् नाप्यपरं गृएहतं समनुजानीयादित्येवं कर्मोपादानाद्विरतो भिक्षुर्भवतीति ॥ ५३ ॥

सेन्निक्खू सद्देहिं अमुच्छिए रूवेहिं अमुच्छिए रसेहिं अमुच्छिए गंधेहिं अमुच्छि
ए फासेहिंअमुच्छिए विरए कोहाउ माणाउ मायाउ लोनाउ पेज्जाउ दोसा
उ कलहाउ अप्नक्काणाउ पेसुन्नाउ परपरिवायाउ अरइरइउ मायामोसा
उ मिच्छादंसणसल्लाउ इति सेमहतो आयाणाउ उवसते उवठिए पडिवि
रते सेन्निक्खू ॥ ५१ ॥ जेइमे तसथावरा पाणा नवंति ते णो सयं समारंनइ
णोवऽमेहिं समारंनावेति अन्नं समारंनंतं नसमणुजाणति इति सेमहतो
आयाणाउ उवसते उवठिए पडिविरते सेन्निक्खू ॥ ५२ ॥ जेइमे कामनोगा
सचित्तावा अचित्तावा ते णो सयं परिगिण्हति णोअन्नेण परिगिण्हावेति
अन्नं परिगिण्हतंपि णसमणुजाणइ इति सेमहतो आयाणाउ उवसते
उवठिए पडिविरतो सेन्निक्खू ॥ ५३ ॥

अर्थ-(सेन्निक्खू के०) ते साधु (सद्देहिंअमुच्छिए के०) शब्दने विषे अमूर्छित (रू वेहिंअमुच्छिएके०) रूपने विषे अमूर्छित (रसेहिंअमुच्छिए के०) रस मधुरादिकने विषे अ मूर्छित (गंधेहिंअमुच्छिए के०) सुरन्निगंधादिकने विषे अमूर्छित (फासेहिंअमुच्छिएके०) स्पर्शने विषे अमूर्छित (विरएके०) निवर्त्यो, शा थकी निवर्त्यो ? ते कहेछे क्रोध थकी, मान थकी, माया थकी, लोन थकी, राग थकी, द्वेष थकी, कलह थकी, अन्याख्यान एटले जुटुं आल देवा थकी, चाडी करवा थकी, परना अवर्णवाद बोलवा थकी, अरति थकी, रति थकी, माया सहित मृषावाद बोलवा थकी, अने मिथ्यात्वदर्शन शल्य ए थकी निवर्त्यो (इतिसेमहतोआयाणाउके०) एवो ते चारित्रिउ महोटा कर्मबंधना कारण थकी, (उवस तेके०) उपशम्यो (उवठिएके०) उपस्थित एटले सावधान थयो (पडिविरतेके०) विशेषे निवर्त्यो (सेन्निक्खू के०) ते चारित्रिउ ॥५१॥ (जेइमेतसथावरापाणानवंति के०) जे ए त्रस अने स्थावर प्राणीउंछे (तेणोसयंसमारंनति के०) तेनो पोते समारंन करे नही (णोवसेहिंसमारंनावेति के०) बीजा पासे समारंन करावे नही (अन्नंसमारंन तंनसमणुजाणति के०) बीजा समारंन करता होय तेने अनुमोदे नही (इतिसे के०) एवो ते चारित्रिउ (महतो के०) महोटा (आयाणाउ के०) कर्मबंधना कारण थकी (उवसते के०) उपशम्यो (उवठिएके०) उपस्थित एटले सावधान थयो (पडिविरते के०) विशेषे निवर्त्यो (सेन्निक्खूके०) ते चारित्रिउ ॥५२॥ (जेइमेकामनोगा के०) जे आ जगत् मांहे काम नोगछे ते कहेछे (सचित्तावा के०) सचित्त (अचित्तावा के०)

अचित्त (तेणोसयंपरिगिएहति के०) ते कामजोगने पोते परिग्रहे नही अंगीकार करे नही (णोअन्नेणपरिगिएहावेति के०) बीजा पासे परिग्रहावे नही (अन्नपरिगिएहंतं पि णसमणुजाणइ के०) बीजो परिग्रहतो होय तेने अनुमोदे नही (इतिसेमहतो के०) एवोते चारित्रिउं महोटा (आयाणाउ के०) कर्मबंधना कारण थकी (उवसते के०) उपशम्यो (उवठिए के०) सावधान थयो (पडिविरए के०) विशेषे निवर्त्यो (सेभिक्खू के०) ते चारित्रिउं ॥ ५३ ॥

॥ दीपिका–अथ रागद्वेषाजावमाह । (सेजिक्खूइत्यादि) सजिक्षु शब्देषु शुजाशुजेष्व मूर्छितोऽद्विष्टश्च । एवं रूपगंधरसस्पर्शेष्वपि वाच्यं । तथा विरत क्रोधमानमायालोजेज्य स्तथा प्रेमतोदोषात् कलहादज्याख्यानात् पैशुन्यात् परपरिवादात् अरतितोरतितोमाया मृषातोमिथ्यादर्शनशल्याद्विरत सजिक्षुर्योमहत कर्मोपादानाडुपशांतसंयमे उपस्थित सावद्येज्य प्रतिविरत सजिक्षु स्यात् ॥५१॥ येऽमे त्रसा स्थावरा प्राणिनोजवंति तान् स्वयं न समारजते नैवान्यैः समारजयते अन्यं समारजमाणं न समनुजानाति इत्येव म हत कर्मोपादानाडुपशांत प्रतिविरत सजिक्षु स्यात् ॥५२॥ येमी कामजोगा सचित्ताअ चित्तावा तान् स्वयं न परिगृएहाति नान्येन परिग्राहयति अन्यं परिगृएहंतं न समनुजा नाति इत्येव कर्मोपादानाद्विरत सजिक्षु स्यात् ॥ ५३ ॥

॥ टीका–सांप्रतमनुकूलप्रतिकूलेषु शब्दादिषु विषयेषु रागद्वेषाजावं दर्शयितुमाह । (सेजिक्खूइत्यादि) सजिक्षु सर्वांशसारहितोवेणुवीणादिषु शब्देष्वमूर्छितोऽगृध्धोऽनध्युप पन्नस्तथा रासजादिशब्देषु कर्कशेषु द्विष्ट एवं रूपरसगंधस्पर्शेष्वपि वाच्यमिति । पुनरपि सामान्येन क्रोधाद्युपशमं दर्शयितुमाह (विरएकोहाउइत्यादि) क्रोधमानमायालोजेज्यो विरतइत्यादिसुगमं । यावदिति । (सेमहयाआयाणाउउवसतेउवठिएपडिविरएसेजिक्खू त्ति) सजिक्षुर्जवति योमहत कर्मोपादानाडुपशांत सन्संयमेवोपस्थित सर्वपापेज्यश्च विर तइति ॥५१॥ एतदेवमहत कर्मोपादनाद्विरमणं साक्षाद्दर्शयितुमाह । (जेइमेइत्यादि) ये केचन त्रसा स्थावराश्च प्राणिनोजवंति तान् सर्वानपि नोनैव स्वयं सत्साधवः समारंज ते प्राण्युपमर्दकमारजंतइतियावत् । तथा नान्यैः समारंजयंते नचान्यान् समारजमाणान् समनुजानतइत्येव महत कर्मोपादानाडुपशांत प्रतिविरतोजिक्षुर्जवतीति ॥५२॥ सांप्रतं सामान्यत सांपरायिककर्मोपादानकामजोगनिवृत्तिमधिकृत्याह । (जेइमेइत्यादि) ये केच नामी काम्यंतइति कामाजुज्यंत इतिजोगास्तेच सचित्ताअचित्तावा जवेयुस्तांश्च नस्वतो गृएहीयान्नाप्यन्येन ग्राहयेत् नाप्यपरं गृएहंतं समनुजानीयादित्येवं कर्मोपादानाद्विरतो जिक्षुर्जवतीति ॥ ५३ ॥

जपियं इमं संपराइय कम्म कज्जइ णो त सय करेति णोअणेण कारवेति अन्नपिकरे त णसमणुजाणइ इति सेमहतो आयाणाउ उवसते उवठिए पडिविरते ॥५४॥ से भिक्खूजाणेज्जा असणवा असिंस पडियाए एग साहम्मिय समुदिस्स पाणाइ भूताइ जीवाइ सत्ताइ समारभ समुद्दिस्स कीतं पामिच्च अछिज्ज अणिसठ अभिहड आहट्टुदेसिय तचेतियसियात णो सय भुजइ णोअणेण भुजावेति अन्नपि भुजत णसमणुजाणइ इति से महतो अयाणाउ उवसते उवठिए पडिविरते ॥ ५५ ॥

अर्थ–(सेभिक्खू के०) ते चारित्रिउ (जपियं के०) जे (इम के०) ए (सपराइयं कम्मकज्जइ के०) सापरायिक एटले जे कर्मे करी ससार माहे परिभ्रमण करिये ते सांपरायिक कर्म कहिए जे कारणे करी बधाय ते कारण प्रद्वेप निन्हव मात्सर्य अतराय आशातना उपघातादिक ए कर्मबधना कारणछे (णोतंसयंकरेति के०) ते स्वय पोते नकरे (णोअसाणकारवेति के०) बीजा पासे करावे नही (अन्नपिकरेतं णसमणुजाणइके०) बीजो करतो होय तेने अनुमोदे नही (इतिसेमहतोआयाणाउ के०) एवो ते मोहोटा कर्मबधना कारण थकी (उवसते के०) उपशम्यो (उवठिए के०) सावधान थयो (पडिविरतेके०) विशेपे निवर्त्यो ते भिक्षु कहिए ॥५४॥ हवेचारित्रियानी आहार विशुद्धि कहेछे (सेभिक्खूजाणेज्जा के०) ते चारित्रिउ एम जाणे ते कहेछे जे (असणवाके० एवभूत आहार अशन पान खादिम स्वादिम जाणे (अस्सिपडियाए के०) साधुने निमित्ते कोइएक प्रकृति भद्रक श्रावक गृहस्थ ते (एगसाहम्मियं समुदिस्स के०) एक साधर्मिक साधुने समुद्देशीने (पाणाइ भूताइ जीवाइ सत्ताइ समारभ के०) प्राणी भूत जीव सत्वनो आरभ करे मर्दन करे (समुद्दिस्स के०) तथा साधुने निमित्ते उद्देशीने (कीतं के०) वेचातु लीये (पामिच्च के०) उछीनु लावे (अछिज्ज के०) बीजानु पाडीलीए (अणिसठ के०) बीजानी वस्तु होय ते तेना धणीने कह्या विना साधुने आपे (अभिहडआहट्टुदेसियं के०) ग्रामादिक थकी साधुने सन्मुख लावे एवो आहार आधाकर्मादिक दोपें करी दुष्ट (तंचेतियसिया के०) ते आहार साधुने दीधो अने साधुए पण अजाणता लीधो परतु एवो दोष दुष्ट आहार जाणीने (तेणोसयंभुजइ के०) ते आहार साधु पोते जमे नही (णोवअसेणभुजावेति के०) तथा वीजाने तेवो आहार जमाडे नही अने (अन्नपिभुजतंणसमणुजाणइ के०) बीजो कोइ एवो आहार जमतो होए तेने अनुमोदे नही (इतिसेमहतोआ

याणाउंडवसतेडवट्ठिए पडिविरतेके०) एरीते ते महोटा कर्मबंधना कारण एवा जे आहारना दोष ते थकी उपशम्यो सावधान थयो विशेषें निवर्त्यो तेने साधु कहिए ॥५५॥

॥ दीपिका—यदपीदं सांपरायिकं कर्म तच्च प्रद्वेषनिन्ह्वमात्सर्यांतरायासातनोपघातैर्वध्यते तत्कर्म कारणंवा न कृतकारितानुमतिभिः करोति सभिक्षुः कथ्यते ॥५४॥ सभिक्षुर्यत्पुनरेवंजूतमाहारं जानीयात् (अस्सिंपडियाए) एतत्प्रतिज्ञया एकं साधुं साधर्मिकं समुद्दिश्य कश्चित्प्रकृतिभद्रकः श्रावकः साध्वाहारदानार्थं प्राणिनः समारभ्य प्राणिघातं कमारंभं कृत्वा समुद्दिश्य तत्पीडां सम्यगुद्दिश्य क्रीतं (पामिच्चं) उच्छिन्नकमाछिद्यमन्यस्मादाछिद्य गृहीतमनिसृष्टं परेणाननुमतमभ्याहृतं साधुसमुखमानीतमाहृत्य उपेत्य ज्ञात्वा साध्वर्थं कृतमुद्देशिकमेवंजूतमाहारं साधवे दत्तं स्यात्साधुनावाऽकामेन गृहीतं स्यात्तदोषदुष्टं ज्ञात्वा स्वयं न भुंजीत अन्येन न भोजयेत् नच भुंजानमन्यं समनुजानीयात् एवं दुष्टाहारान्निवृत्तोभिक्षुः स्यात् ॥ ५५ ॥

॥ टीका—सांप्रतं सामान्यतः सांपरायिककर्मोपादाननिषेधमधिकृत्याह । (जमियंइय इत्यादि) यदपीदं संपर्येति तासुतासु गतिष्वनेककर्मणेति सांपरायिकं तच्च तत्प्रद्वेषनिन्ह्वमात्सर्यांतरायासातनोपघातैर्वध्यते तत्कर्म तत्कारणं वा न कृतकारितानुमतिभिः करोति सभिक्षुरभिधीयतइति ॥५४॥सांप्रतं भिक्षाविशुद्धिमधिकृत्याह । (सेभिक्खूइत्यादि) स भिक्षुर्यत्पुनरेवंजूतमाहारजातं जानीयात् (अस्सिंपडियाएत्ति) एतत्प्रतिज्ञयाऽऽहारदानप्रतिज्ञया यदि वास्मिन्पर्याये साधुपर्याये व्यवस्थितमेकं साधुं साधर्मिकं समुद्दिश्य कश्चिच्छ्रावकः प्रकृतिभद्रकोवा साध्वाहारदानार्थं प्राणिनः प्रव्यक्तेंद्रियान् जूतानि त्रिकालभावीनि जीवानायुष्कधरणलक्षणान्सत्वान्सदा सत्वोपेतान्समारभ्य तदुपमर्दकमारंभं विधाय समुद्दिश्य तत्पीडां सम्यगुद्दिश्य, क्रीतं क्रयेण द्रव्यविनिमयेन (पामिच्चंति) उद्यतकमाछेद्यमित्यन्यस्मादाछिद्य निसृष्टमिति परेणानुत्सकजितमभ्याहृतमिति साध्वभिमुखं ग्रामादेरानीतमाहृत्योपेत्य साध्वर्थं कृतमुद्देशिकमित्येवंजूतमाहारजातं साधवे दत्तं स्यात्तच्चाकामेन तेन परिगृहीतं स्यात्। तदेवं दोषदुष्टं च ज्ञात्वा स्वयं न भुंजीत नाप्यपरेण भोजयेन्नच भुंजानमपरं समनुजानीयादित्येवं दुष्टाहारदोषान्निवृत्तोभिक्षुर्भवतीत्यर्थः ॥ ५५ ॥

सेभिक्खू अह पुणेवं जाणेज्जा तं विज्जति तेसिं परक्कमे जस्सट्ठा तेवेइय सियातं जहा अप्पणो से पुत्ताणं धूयाणं सुण्हाणं धातीणं णातीणं राईणं दासाणं दासीणं कम्मकराणं कम्मकरीणं आदेसाणं पुटोपदेणाए सामासाए पातरासाए सन्निहीसंचएकज्जति इहमेगेसिं माणवाणं भोयणा

एतं भिक्खू परकडं परणिट्ठितं उग्गमुप्पायणेसणासुद्धं सत्थाइयं सत्थ परिणामियं अविहिंसियं एसियं वेसियं सामुदाणियं पन्नमसणं कारणं ठा पमाणजुत्तं अक्खोवंजणवणलेवणभूयं संजमजायामायावत्तियं बिलमिव पन्नगभूतेणं अप्पाणेणं आहारं आहारेज्जा अन्नं अन्नकाले पाणं पाणकाले वत्थं वत्थकाले लेणं लेणकाले सयणं सयणकाले ॥ ५६ ॥

अर्थ-(सेभिक्खू के०) ते चारित्रिउ (अह के०) हवे (पुणेवजाणेज्जा के०) व ली एवु जाणे ते कहेछे (तंविज्जतितेसिपरक्कमे के०) ते गृहस्थने एवो पराक्रम आ हार करवानोछे के जे पराक्रमे करी (जस्सट्ठातेवेइयसिया के०) जेने अर्थे ते आहार नीपजाव्यो होए (तंजहा के०) ते कहेछे (अप्पणोसेपुत्ताण के०) पोताने अर्थे त था पुत्रने अर्थे (धूयाण के०) दीकरीने अर्थे (सुण्हाण के०) छोकरानी वहुने अ र्थे (धातीण के०) धाव्यने अर्थे (णातीण के०) ज्ञातीने अर्थ (राईण के०) राजा ने निमित्ते (दासाण के०) दासने अर्थे (दासीण के०) दासीने अर्थे (कम्मकराण के०) कर्म करने अर्थे (कम्मकरीण के०) परोणाने अर्थे (आदेसाणपुढोपेहेणाए सामासाए के०) अन्यत्र स्थानके बीजाने मोकलवाने अर्थे नीपजाव्याछे रात्रे जमवाने निमित्ते तथा लोकोक्तिए व्यालुने अर्थे (पातरासाए के०) कलेवा निमित्ते (स न्निहिसचएकज्जति के०) एप्रकारे आहारनो सनिधि सचय करे एटले दही उद. नादिक विनाशी द्रव्य, अने हरडे शर्करादिक अविनाशी द्रव्यनो सचय करे (इहमेगेसि माणवाणभोयणाए के०) आ मनुष्य लोक माहे कोइएक मनुष्यने एवो आहार भोज नने अर्थे थाय (तत्थभिक्खू के०) त्या चारित्रिउ (परकडं के०) परनो करेलो (पर णिट्ठितं के०) परनिष्ठित एटले अन्यने अर्थे नीपजाव्यो (उग्गमुप्पायणेसणासुद्ध के०) उद्गमना सोल दोषने दातार अजाणतो लगावे, अने उत्पादनना सोल दोष ते साधु लगा वे, वली एषणाविशुद्धना दश दोष रहित एटले सर्वमली बेतालीश दोष रहित (सत्थाईयं के०) शस्त्रातीत एटले अग्न्यादिकें करी अचित कीधो (सत्थपरिणामियं के०) शस्त्रें क री वर्ण गंध रसादिके करी परिणामाव्यो (अविहिंसिय) निर्जीव एटले जीव रहित तेपण (एसियं के०) गवेष्यु भिक्षाचर्या करतां पाम्यो तेपण वली (वेसियं के०) नि केवलसाधुने वेषे प्राप्त थयो तेपण वली (सामुदाणियं के०) माधुकरी वृत्तिए घणा घ र फरता प्राप्त थयो तथा (पन्नमसण के०) गीतार्थनो आणेलो, एवो आहार अशना दिक तेवली (कारणट्ठा के०) वैयावच्चादिक कारणने अर्थे तेवली (पमाणजुत्त के०) प्रमाणयुक्त एटले प्रमाणोपेत आहार जाणवो तेवली वर्णवलादिकने अर्थे नही किंतु

जेटले आहारे करी शरीर क्रियाने विषे प्रवर्ते तेटलोज आहार लेवो ते उपर दृष्टांत कहेछे (अरकोवंजण के०) जेटलो गाडानी धरीने जोइए तेटलो किल आपिए चोपडीए तेटलुज गाडु पण चाले तथा (वण के०) व्रण एटले गुंवडा उपर (लेवणनूयके०) जेटलो लेप लागे तेटलोज लगाडीए ए उपमाये चारित्रिउं पण आहार लीए (संजमजायामायावत्तियके०) जेटले आहारे संयम जात्राये प्रवृत्ताय तेटली मात्राये तेटलो आहारलीए, ते वली तेटली मात्रा टालीने अधिक आहार न लेवो (बिलमिवपन्नग नूतेणके०) ते आहार वली बिलप्रवेश सर्पनी पेठें (अप्पाणेण के०) पोते (आहारआहारेङ्काके०) आहार आहारे,एटले जेम सर्प बिल माहे प्रवेश करे तेवारे उतावलो प्रवेश करे तेम साधु पण, आहार करतो सुस्वाद निरास्वाद अण जोतो आहार लीए (अन्नअन्नकाले के०) ते अन्न अन्नने काले लीए, उत्सर्गे मार्गे सूत्र अर्थ पौरसीनु अनतर अहार काल जाणवो (पाणपाणकालेके०) एवीज रीते पाणी, पाणीने कालें पीए एटले तृषा लागे थके जमवु नही, अने क्षुधातुर थके पाणी पीवु नही इत्यर्थ (वच्चवच्चकाले के०) तथा वस्त्र वस्त्रने काले लेवु उंटवु (लेणलेणकाले के०) उपाश्रय उपाश्रयने काले लीये, एटले वर्षादिकाल समये अवश्य उपाश्रयने विषे रहे बीजाकालने विषे नियम नथी (सयणसयणकालेके०) शयन कालें शयन करे त्यां अगीतार्थने बे पहोर निद्रा जाणवी अने निद्रा थकी विमुक्त गीतार्थने एक पहोर निद्रा जाणवी॥५६॥

॥ दीपिका–संनिकुरय पुरेव जानीयात् । तद्यथा । तेषां गृहस्थानां वक्ष्यमाणः पराक्रमः सामर्थ्यं आहारकरणारंभइति यावत् । यस्य चार्थाय यत्कृतं तच्चेति तं दत्तं निष्पादितं स्यात् । तद्यथा । आत्मनः कृते से तदाहारजातं कृतस्यात्तथा पुत्राणां सुतानां स्नुषाणां वधूनां धात्रीणां राज्ञां दासीनां कर्मकरीणामादेशकः प्राघूर्णकस्तस्यार्थं तथा पृथक् प्रग्रहणार्थं (सामासाएत्ति) श्यामारात्रिस्तत्राशनं श्यामाशोरात्रिभोजनायं प्रातरशनं प्रातराशस्तदर्थं संनिचयोविशिष्टाहारनिष्पादनं क्रियते । अनेन चैतत्सूच्यते यद्बालवृद्धग्लानादिनिमित्तं प्रभातादिसमयेष्वपि भिक्षाटनं क्रियते तस्यायमुक्तः संनव ससंनिधिसंनवइहैकेषां मानवानां भोजनाय स्यात् । तत्र भिक्षुः परकृतपरनिष्ठितमुद्गमोत्पादनैषणाशुद्धमाहारमाहरेत् । अत्र परकृतपरनिष्ठिते चत्वारोभंगा । तद्यथा । तस्यकृतं तस्यैवनिष्ठितं १ तस्य कृतमन्यस्यनिष्ठितं २ अन्यस्य कृतं तस्य निष्ठितं ३ अन्यस्य कृतमन्यस्यनिष्ठितं ४ । तत्र चतुर्थभंगः सूत्रोपात्तः शुद्धः । द्वितीयोपिशुद्धः । उद्गमदोषाः १६ उत्पादनादोषा अपि १६ एषणादोषा १० इतिद्विचत्वारिंशता दोषैः शुद्धः शास्त्रातीतः प्रासुकीकृतः शस्त्रपरिणामितः सकायपरकायादिशस्त्रेण निर्जीवीकृतः वर्णगंधरसादिभिः

परिणामितमविद्दिसितं सम्यक् निर्जीवमित्यर्थ । एषितं निक्षाचर्याविधिप्राप्त वेषिक केवलसाधुवेषप्राप्त नपुनर्निमित्तादिनोत्पादितं सामुदानिक मधुकरवृत्त्यास्तोक स्तोक गृहीतं प्रज्ञस्येद प्राज्ञ गीतार्थोपात्तमशन तदपि वेदनावेयावृत्त्यादिकारणे सति । यडुक्त । वेयण १ वेयावच्चे, २ इरियछाएय ३ सजमछाए ४ । तह पाणवत्तियाए ५ छठ पुण धम्मचिंताए ।६। एषु कारणेष्वाहार गृह्णीयात्। तदपि प्रमाणयुक्त नातिमात्र । यडुक्त । अद्धमसणस्स सवंजणस्स कुक्षादवस्सदोनाए ॥ वायपवियारणछा, ठन्नाग ऊणग कुक्षाइति ॥१॥ अक्षस्य शकटस्य उपाजनमन्यग व्रणस्यच लेपन तडुपमयाऽहारमाहरेत् । यत । अप्पगे एवसगम एतरइविणाउजो साहू ॥ सो रागदोसरहिउं, मत्ताइविहीइ तंसेवे ॥१॥ एतदेवाह । सयमयात्राया मात्रा सयमयात्रामात्रा यावत्याहारमात्रया सयमयात्रा प्रवर्तते तया सयमयात्रामात्रया वृत्तिर्यस्य तत्तथा । तदपि विलप्रवेशपन्नगनूतेनात्मनाऽऽहारमाहरेत् । कोर्थ । यथा बिल प्रविशन् सर्पस्तूर्ण प्रविशति एव साधुनापि स्वादमगृह्हताऽहार शीघ्र प्रवेशयितव्य । अथवा सर्वेणेवाहारोऽलब्धास्वाद नक्षणीयइति । तद्यथा । अन्नमन्नकाले सूत्रार्थपौरुषीकरणोत्तरकाल पानक पानकाले न तृषितोन्नुजीत न बुन्नुक्षित पानक पिबेत् । वस्त्र वस्त्रकाले ग्राह्य लयन गुहादिकमाश्रयस्तस्य वर्षास्वव्यवश्यमुपादानमन्यदात्वनियम । शयन सस्तारक शयनकाले तत्रागीतार्थाना प्रहरद्वयं निद्राविमोक्षोगीतार्थाना तु प्रहरमेकमिति ॥ ५६ ॥

॥ टीका—पुनरेव जानीयादित्यादि । तद्यथा । गृह विद्यते येषा तेषा गृहस्थानामेव नूतोवक्ष्यमाण पराक्रम सामर्थ्यमाहारनिवर्तन प्रत्यारनस्तेनच यदाहारजात निवर्तित यस्य चार्थाय यत्कृते तच्चेति तमिति दत्त निष्पादित स्यान्नवेत् । यत्कृते च निष्पादित तत्स्वनामग्राहमाह । तद्यथा । आत्मन स्वनिमित्तमेवाहारादिपाकनिर्वर्तन कृतमिति तथा पुत्रार्थ यावदादेशायादिश्यते यस्मिन्नागते सन्नमेण परिजनस्तदातदाशनदानादिव्यापार सआदेशक प्राघूर्णकस्तदर्थंवा पृथक् प्रग्रहणार्थ विशिष्टाहारनिर्वर्तन क्रियते तथा श्यामा रात्रिस्तस्यामशनमाश श्यामाशस्तदर्थ प्रातरशन प्रातराश प्रत्यूषस्येव नोजन तदर्थ सन्निधि सनिचयोविशिष्टाहारस्यद्दस्य सचय क्रियते । अनेन चैतत्प्रतिपादितं नवति । बालवृद्धग्लानादिनिमित्त प्रत्यूषादिसमयेष्वपि निक्षाटन क्रियते तस्य चाप्यमनिहित सनव । सच (सनिहिति) सचयइहैकेषां मानवाना नोजनार्थ नवति तत्र निक्षुरुद्यतविहारी परकृतपरनिष्ठितमुद्गमोत्पादनैषणाशुद्धमाहारमाहरेत् । अत्र च परकृतपरनिष्ठिते चत्वारोनगा । तद्यथा । तस्य कृतं तस्यैव च निष्ठितं तस्य कृतमन्यस्य निष्ठितमन्यस्य कृतं तस्यैव निष्ठितमन्यस्य कृतमन्यस्य निष्ठितमित्यय चतुर्थोनग सूत्रे

णोपात्तोऽय च ग्रुद्धोद्वितीयश्चान्यस्य निष्ठितत्वात्तत्राधाकर्मौद्देशिकादयउजमदोपा पोड श तथोत्पादनादोपाधात्रीदूत्यादिका पोडशैव तथैपणादोपा शंकितादयोदश । एवमेनि र्द्विचत्वारिंशद्दोपैरहितत्वाच्छु६ । यथाशस्त्रमग्न्यादिक तेनानीतं प्रासुकीकृतं शस्त्रपरिणा मितमिति शस्त्रेण स्वकायपरकायादिना निर्जीवीकृतं वर्णगंधरसादिनिश्च परिणमितं हि सांप्राप्त हिंसितं विरूप हिंसितं विहिंसितं नसम्यक् निर्जीवीकृतमित्यर्थ । तत्प्रतिपेधाद विहिंसितं निर्जीवमित्यर्थ ।तदप्येषितमन्वेपितं निक्षाचर्याविधिना प्राप्त वैपिकमिति केवल साधुवेपावाप्त नपुनर्जात्याद्याजीवनतोनिमित्तादिना चोत्पादितं तदपि सामुदानिक समुदा न निक्षासमूहस्तत्र नव सामुदानिक । एतडुक्त नवति । मधुकरवृत्त्यावाप्त सर्वत्र स्तोकस्तोक गृहीतमित्यर्थ ।तथा प्राज्ञस्येद प्राज्ञ गीतार्थेनोपात्तमशनमाहारजातं तदपि वेदनावैय्या वृत्त्यादिके कारणेसति तत्रापि प्रमाणयुक्त नातिमात्र। प्रमाण चेद । श्रद्धमसणस्स स व्व जणस्स कुक्षादवस्स दोनाए । वाउपवियारणहाठ्नाग कणय कुज्जान्ति । एतदपि न व र्णबलाद्यर्थं किंतु यावन्मात्रेणाहारेण देह क्रियासु प्रवर्तते । तत्र दृष्टांतद्वयमाह । त द्यथा । श्रक्षस्योपांजनमन्यगोव्रणस्य च लेपन प्रलेपस्तडुपमया श्राहारमाहरेत् । तथाचो क्त । श्रप्पंगेण वसगम णतरइ विगइ विणाइ जो साहू । सो रागदोसरहिउं मत्तादविही इउं सेवे । एतदेव दर्शयति । सयमयात्रायामात्रा सयमयात्रामात्रा यावत्याहारमात्रया सयमयात्रा प्रवर्तते सा तथा तया सयमयात्रामात्रया वृत्तिर्यस्य तत्तथा तदपि विलप्रवे शपन्नगनूतेनात्मनाऽऽहारमाहरेत् । एतडुक्त नवति । यथाहिर्बिल प्रविशन् तूर्णं प्रविश त्येवसाधुनाप्याहारस्तत्स्वादमनास्वादमन्यवहार्यतइति । तदेवाहारजातं दर्शयितुमाह । श्रन्न नक्तमन्नकाले सूत्रार्थपौरुष्युत्तरकाल निक्षाकाले प्राप्ते पुर पश्चात्कर्मपरिहृत नव ति। यथोक्तनिक्षाटनेन ग्रहणकालावाप्त नैक्ष परिनोगकाले नुजीत । तथा पानक पान काले नातितृपितोन्नुजीत नाप्यतिवुन्नुक्षित पानक पिवेदिति । तथा वस्त्र वस्त्रकाले गृ एहीयाडुपनोगवा कुर्यात्तथा लयन गुहादिकमाश्रयस्तस्य वर्षास्ववश्यमुपादानमन्यदाल नियमस्तथा शय्यतेऽस्मिन्निति शयन सस्तारक सच शयनकाले । तत्राप्यगीतार्थाना प्र हरद्वय निद्राविमोक्षोगीतार्थाना प्रहरमेकमिति ।॥ ५६ ॥

सेनिक्खू मायन्ने अन्नयर दिस अणुदिसवा पडिवन्ने धम्म आ इक्खे विन्नए किट्टे उवठिएसुवा अणुवठिएसुवा सुस्सूसमाणेसु प वेदए सतिविरति उवसम निवाण सोयविय अज्जविय मद्दवि य लाघविय अणतिवातिय सवेसि पाणाण सवेसि नूताण जा व सत्ताण अणुवाइ किट्टिए धम्म ॥ ५७ ॥

परिणामितमविहिंसितं सम्यक् निर्जीवमित्यर्थं । एपितं निक्षाचर्याविधिप्राप्त वैषिकं केवलसाधुवेषप्राप्त नपुनर्निमित्तादिनोत्पादितं सामुदानिक मधुकरवृत्त्यास्तोक स्तोक गृहीतं प्रज्ञस्येद प्राज्ञ गीतार्थोपात्तमशन तदपि वेदनावैयावृत्त्यादिकारणे सति । यडुक्त । वेयण १ वेयावच्चे, २ इरियट्ठाएय ३ सजमट्ठाए ४ । तह पाणवत्तियाए ५ छठ पुण धम्म चिंताए ।६। एपु कारणेष्वाहार गृह्णीयात् । तदपि प्रमाणयुक्त नातिमात्र । यडुक्त । अध्म सणस्स सवजणस्स कुच्छादवस्सदोनाए ॥ वायपवियारणट्ठा, छन्नाग ऊणग कुच्छाइति ॥१॥ अक्षस्य शकटस्य उपाजनमन्यग व्रणस्यच लेपन तडुपमयाऽहारमाहरेत् । यत । अप्पगे एवसगम एतरइविणाउजो साहू ॥ सो रागदोसरहिउं, मत्ताइविहीइ तंसेवे ॥१॥ एतदेवाह । सयमयात्राया मात्रा सयमयात्रामात्रा यावत्याहारमात्रया सयमयात्रा प्रवर्तते तया सयमयात्रामात्रया वृत्तिर्यस्य तत्तथा । तदपि विलप्रवेशपन्नगजूतेनात्मनाऽऽहारमाहरेत् । कोर्थ । यथा विल प्रविशन् सर्पस्तूर्णं प्रविशति एव साधुनापि स्वादमगृण्हताऽहार शीघ्र प्रवेशयितव्य । अथवा सर्पेणेवाहारोऽलब्धास्वाद नक्षणीयइति । तद्यथा । अन्नमन्नकाले सूत्रार्थपौरुपीकरणोत्तरकाल पानक पानकाले न तृपितोच्नुजीत न बुभुक्षित पानक पिबेत् । वस्त्र वस्त्रकाले ग्राह्य लयन गुहादिकमाश्रयस्तस्य वर्षास्वत्यवश्यमुपादानमन्यदात्वनियम । शयन सस्तारक शयनकाले तत्रागीतार्थाना प्रहरद्वयं निद्राविमोक्षोगीतार्थाना तु प्रहरमेकमिति ॥ ५६ ॥

॥ टीका–पुनरेव जानीयादित्यादि । तद्यथा । गृह विद्यते येपा तेपा गृहस्थानामेव जूतोवक्ष्यमाण पराक्रम सामर्थ्यमाहारनिवर्तन प्रत्यारजस्तेनच यदाहारजात निवर्तित यस्य चार्थाय यत्कृते तच्चेति तमिति दत्त निष्पादित स्याङ्गवेत् । यत्कृते च निष्पादितं तत्स्वनामग्राहमाह । तद्यथा । आत्मन स्वनिमित्तमेवाहारादिपाकनिर्वर्तन कृतमिति तथा पुत्रार्थं यावदादेशायादिश्यते यस्मिन्नागते सत्रमेण परिजनस्तदातदाशनदानादिव्यापार सआदेशक प्राघूर्णकस्तदर्थंवा पृथक् प्रग्रहणार्थं विशिष्टाहारनिर्वर्तन क्रियते तथा श्यामा रात्रिस्तस्यामशनमाश श्यामाशस्तदर्थं प्रातरशन प्रातराश प्रत्यूषस्येव जोजन तदर्थं सन्निधि सनिचयोविशिष्टाहारसग्रहस्य सचय क्रियते । अनेन चैतत्प्रतिपादितं नवति । बालवृद्धग्लानादिनिमित्त प्रत्यूपादिसमयेष्वपि निक्षाटन क्रियते तस्य चायमनिहित सनव । सच (सनिहिति) सचयइहैकेपां मानवाना जोजनार्थं नवति तत्र निकुरुद्यतविहारी परकृतपरनिष्ठितमुद्गमोत्पादनैपणाशुद्धमाहारमाहरेत् । अत्र च परकृतपरनिष्ठिते चत्वारोजगा । तद्यथा । तस्य कृतं तस्यैव च निष्ठितं तस्य कृतमन्यस्य निष्ठितमन्यस्य कृतं तस्यैव निष्ठितमन्यस्य कृतमन्यस्य निष्ठितमित्यय चतुर्थोजग सूत्रे

॥ टीका–सनिक्कुराहारोपधिशयनस्वाध्यायादीना मात्रा जानातीति तद्विधिज्ञ सन् अन्यतरा दिशमनुदिशवा प्रतिपन्न समाश्रितोधर्ममाख्यापयेत् यद्येन विधेयस्तद्यथा नो ग विन्नजेत्कर्मफलानि च कीर्तयेदाविर्नावयेत्तच्चेकार्थप्रवृत्तेन साधुना सम्यगुपस्थितेपु वा कौतुकादिप्रवृत्तेपु शुश्रूषमाणेपु श्रोतु प्रवृत्तेपु स्वपरानिप्राय वेदयेदावेदयेत्प्रकथयेदितिया वत्। श्रोतुमुपस्थितेपु यत्कथयेत्तदर्शयितुमाह। (सतिविरइइत्यादि) शातिरुपशम क्रोधजयस्तत्प्रधाना प्राणातिपातिन्योविरति शातिविरति। यदिवा शातिरशेपक्लेशापग मरूपा तस्यै तदर्थं विरतिस्ता कथयेत्तथोपशममिन्द्रियोपशमरूप रागद्वेपानावजनित तथा निर्वृतिं निर्वाणमशेपद्वन्द्वोपरमरूप तथा (सोयवियति) शौच तदपि नावशौच सर्वोपाधिशुद्धता व्रतामालिन्य। (अज्जवियति) आर्जवममायित्व तथा मार्दव मृडुनाव सर्वत्र प्रश्रयवत्व विनयनम्रतेति यावत्। तथा (लाघवियति) कर्मणा लाघवापादन कर्मगुरोर्वात्मन कर्मापनयनतोलघ्ववस्थासजनन। साप्रतमुपसहारद्वारेण सर्वशुनानुष्ठा नाना मूलकारणमाह। अतिपतनमतिपात प्राण्युपमर्दन तद्विद्यते यस्यासावतिपातिक स्तत्प्रतिपेधादनतिपातिकस्त सर्वेपा प्राणिना नूताना यावत्सत्वाना धर्ममनुविधिमनुवि चिन्त्य, वा कीर्तयेत्कथयेत्। इदमुक्त नवति सर्वप्राणिना रक्षानूतं धर्म कथयेदिति ॥ ५७ ॥

सेनिक्कू धम्म किट्टमाणे णो अन्नस्स हेउ धम्म माइक्खेज्जा णोपाणस्स हेउ धम्ममाइक्खेज्जा णोवत्थस्सहेउ धम्ममाइक्खेज्जा णोलेणस्स हेउ ध म्ममाइक्खेज्जा णोसयणस्सहेउ धम्ममाइक्खेज्जा णोअन्नेसिं विरूवरूवा ण कामनोगाण हेउ धम्ममाइक्खेज्जा अगिलाए धम्ममाइक्खेज्जा नन्नत्थ कम्मनिज्जरठाए धम्ममाइक्खेज्जा ॥५८॥ इहखलु तस्स निक्कुस्स अंति ए धम्म सोच्चा णिसम्म नुठाणेण उठाय वीरा अस्सिं धम्मे समुठिया जे तस्सनिक्कू अतिए धम्म सोच्चा णिसम्म सम्म उठाणेण उठायवीरा अ स्सिंधम्मे समुठिया तेएव सव्वोवगता तेएव सव्वोवरता तेएव सव्वोवस ता तेएव सव्वताए परिनिवुमेत्तिवेमि ॥ ५ए ॥

अर्थ–(सेनिक्कू के०) ते साधु (धम्मकिट्टमाणे के०) धर्म कहेतो थको (णो अन्नस्सहेउ धम्ममाइक्खेज्जा के०) अन्न एटले आहारने हेतुयें धर्म न कहे ते आवी रीते के आ अमुक मनुष्य धनवंतछे माटे महारी पासेथी धर्म सानळीने म ने मनो वांछित आहार आपशे, एवो विचार करे नही तथा वळी (णापाणस्सहेउध

अर्थ–(सेनिरकूके०) ते चारित्रिउं आहार, उपधी, शयन, स्वाध्याय, अने ध्यानादि कना (मायन्नेके०) मात्रा एटले विधिनो जाण उतो (अन्नयरदिसअणुदिसवाके०) अन्य दिशि अथवा विदिशि प्रत्यें (पडिवन्ने के०) आश्रित होतो एटले अंगीकार क रतो उतो (धम्मआइक्खे के०) धर्म कहे जे धर्म जेने करवा योग्य होय तेने तेवो उ पदेश आपे (विन्नए के०) धर्म अने अधर्मना फल जुदा जुदा करी देखाडे (किट्टे के०) धर्मनी कीर्त्ति करे, प्रशंसा करे वली परना हितने अर्थे साधु चारित्रिउं (उवट्टि एसुवा के०) उपस्थित एटले उद्यमवंत एवा शिष्यने विषे तथा (अणुवट्टिएसुवा के०) अनुपस्थित एटले कौतुकार्थी शिष्यने विषे (सुस्सूसमाणेसु के०) सांजलवा वांउताने विषे पोताना आत्माना तथा परना हित जणी (पवेदए के०) धर्म कहे जे धर्म कहे ते देखाडेले (संति के०) उपशम ते कषायनुं जीपवुं तथा (विरति के०) विरति ते प्राणातिपातादिक थकी निवर्त्तवुं एवो धर्म प्ररूपे (उवसमके०) इंद्रिय तथा नोइंद्रि यनुं उपशमाववुं एटले राग द्वेषनो अजाव करवो (निव्वाण के०) तथा निरवाणते सर्व जीवोने समाधिरूप एटले मोक्ष कहे तथा (सोयविय के०) शौचते व्रतनुं निर्म ल पणुं एटले जेम व्रतने मल नलागे तेवीरीते धर्म कहे (अज्जविय के०) आर्जव एटले सरलता मायानो अजाव (मद्दविय के०) कोमल मृडुजावयुक्त तेवा विधिये धर्म कहे (लाघविय के०) तथा कर्म हलवा थाय तेवा विधिये धर्म कहे हवे सर्व शुजानुष्ठाननुं मूल कारण कहेले (अणतिवातिय के०) अहिं सा आदरवानो उपदेश आपे ते कोनी अहिंसा ? ते कहेले (सव्वेसिपाणाणके०) सर्व प्राणीनी (सव्वेसिजूताण के०) सर्वजूत सर्वजीव (जावसत्ताण के०) यावत् सर्व स त्वनी अहिंसाने (अणुवाइकिट्टिएधम्म के०) विचारीने धर्मोपदेश आपे एटले समस्त जीवमात्रनी जे प्रकारे हिंसा नथाय ते प्रकारे धर्म कहे ॥ ५७ ॥

॥ दीपिका–आहारादिमात्रज्ञः सनिक्षुः अन्यतरां दिशमनुदिशंवा प्रतिपन्नोधर्ममा ख्यापयेत् कथयेत् यथेन साधुना गृहस्थेन वा विधेयं तद्यथायोगं विनजेत् धर्मफलानि कीर्तयेत् उपस्थितेषूद्यतेषु अनुपस्थितेषु कौतुकादिप्रवृत्तेषु शुश्रूषमाणेषु श्रोतुं प्रवृत्तेषु प्रवेदयेत् । यत्कथयेत्तदाह । शांतिं क्षमा तत्प्रधाना विरतिस्तां कथयेत् । उपशममिं इयिदमं निर्वाणं मोक्षं (सोयविय) शौचं जावशौचमित्यर्थः । आर्जवं निर्मायत्वं मार्द वं मृडुजावोविनीतत्वमितिजावः । लाघवं कर्मलघुत्वक्रिया । अतिपातोहिंसा सविद्यते यस्यसोतिपातिकस्तन्निषेधादनतिपातिकस्तं सर्वेषां प्राणिनां यावत्सत्वानां धर्ममनुविवि च्य विचित्य, कीर्तयेत् । कोर्थः । सर्वप्राणिरक्षानूतं धर्मं कथयेदित्यर्थः ॥ ५७ ॥

स्तेचैव सर्वात्मतया सर्वसामर्थ्येन सदनुष्ठाने उद्यता परिनिर्वृतानिर्वाण प्राप्ताइ ति ब्रवीमीति ॥ ५९ ॥

॥ टीका—सांप्रतं धर्मकीर्त्तनं यथा निरुपधि नवति तथा दर्शयितुमाह। (सेनिक्खूइत्या दि) सनिक्षु परकृतपरनिष्ठिताहारनोजी यथाक्रियाकालानुष्ठायी शुश्रूषन् सुधर्म कीर्तय न्नान्नस्य हेतोर्ममायमीश्वरोधर्मकथाप्रश्रवणे विशिष्टमाहारजातं दास्यतीति। एतन्निमित्तं न धर्ममाचक्षीत तथा पानवस्त्रलयनशयननिमित्तं न धर्ममाचक्षीत । नान्येषां विरूपरूपा णामुच्चावचानां कार्याणां कामनोगानां वा निमित्तं तथा धर्ममाचक्षीत ग्लानिमनुपगछन् न धर्ममाचक्षीत कर्मनिर्जरायाश्चान्यत्र न धर्मं कथयेदपरप्रयोजननिरपेक्षएव धर्मकथयेदिति ॥५८॥ धर्मकथाश्रवणफलदर्शन द्वारेणोपसंजिघृक्षुराह। (इहखलुतस्सेत्यादि) इहास्मिन् ज गति। खलु वाक्यालंकारे। तस्य निक्षोर्गुणवतोंतिके समीपेपूर्वोक्तविशेषणविशिष्टं धर्मं श्रुत्वा निशम्यावगम्य सम्यगुत्थानेनोत्थाय धीरा कर्मविदारणसहिष्णवोये चैवंनूतास्ते एवं पूर्वोक्तविशेषणविशिष्टानुष्ठानतया सर्वस्मिन्नपि मोक्षकारणसम्यग्दर्शनादिके उपसामीप्ये न गता सर्वोपगतास्तथैव सर्वेन्य उपरता सर्वोपरतास्तथा तएव सर्वोपशांताजितकषायत या शीतलीनूतास्तथा एवं सर्वात्मतया सर्वसामर्थ्येन सदनुष्ठानेनोद्यमं कृतवंतोये चैवंनूता स्तेऽशेषकर्मक्षयं कृत्वा परि समंतान्निर्वृताप्यशेषकर्मक्षयं कृतवंतइति ब्रवीमीति पूर्ववत्५८

एवं सेन्निक्खू धम्मठी धम्मविऊ णियागपडिवण्णे से जहेयं बुत्तियं अदु वा पत्ते पउमवरपोंमरीयं अडुवा अपत्ते पउमवरपोंमरीयं एवं सेन्निक्खू परिण्णायकम्मे परिण्णायसंगे परिण्णायगेहवासे उवसंते समिए सहिए स याजए सेवं वयणिज्जे तंजहा समणेतिवा माहणेतिवा खंतेतिवा दंतेतिवा गुत्तेतिवा मुत्तेतिवा इसीतिवा मुणीतिवा कतीतिवा विऊतिवा न्निक्खूतिवा लूहेतिवा तीरठीतिवा चरणकरणपारविउत्तिबेमि॥ ॥ इति वितिय सु यक्खंधस्स पोंमरीयं नाम पढमज्झयणं सम्मत्तं ॥ ६० ॥

अर्थ—हवे अध्ययन परिसमाप्ति नणी कहेबे (एवसेन्निक्खूधम्मठीके०) एम पूर्वोक्त गुण युक्त ते साधु धर्मनो अर्थी (धम्मविऊ के०) धर्मनो जाण, (णियागपडिवण्णे के०) मोक्ष अथवा संयमने विषे प्रतिपन्न एवो पांचमो पुरुष, (सेजहेयंबुत्तियं के०) ते आश्रीने जेम पूर्वे कह्युं (अडुवापत्तेपउमवरपोंमरीयं के०) ते अथवा प्रधान पोंमरी क कमले पहोतो (अडुवाअपत्तेपउमवरपोंमरीयं के०) अथवा प्रधान पोंमरीक कम

म्ममाइक्खेज्जा के०) पाणीने हेतुये पण धर्म नकहे एवो सयति होए (णोवत्थस्सहे उधम्ममाइक्खेज्जा के०) तथा वस्त्रने हेतुये धर्म न कहे (णोलेणस्सहेउधम्ममाइक्खेज्जा के०) उपाश्रय वस्ति पामवाने हेतुये धर्म न कहे (णोसयणस्सहेउधम्ममाइक्खेज्जा के०) तथा पाट पाटलादिक सयनने हेतुये धर्म नकहे (णोअन्नेसिविरूवरूवाणकाम नोगाणहेउधम्ममाइक्खेज्जा के०) नाना प्रकारना कामनोगने हेतुये धर्म नकहे (अ गिलाएधम्ममाइक्खेज्जा के०) अग्लान पणे धर्मकहे एटले पूछ्यो थको धर्म कहेवानो प्रमाद नकरे (नन्नत्थकम्मनिज्जरछाएधम्ममाइक्खेज्जा के०) एक कर्मनिर्ज्जरानु कारण टाली, अनेरे अर्थे धर्म नकहे ॥५७॥ हवे एवी रीते धर्म कहेवा थकी जे फल थाय ते देखा डेछे (इहखलुतस्सनिक्खुस्स के०) आ जगत् मांहे खलु इति वाक्यालंकारे ते गुणव त साधुने (अंतिए के०) समीपे (धम्मसोच्चा के०) धर्म सांनलीने (णिसम्मउ छाएण के०) सम्यक् हृदयने विषे धारण करीने, सयमने विषे सावधान थइने, (उ छायवीरा के०) धर्ममार्गे प्रवर्त्तता वीर एटले कर्म विदारवाने समर्थ (अस्सिधम्मे समुट्ठियाके०) एवो धर्मजे सम्यक् ज्ञान दर्शन अने चारित्ररूप तेने विषे पहोता (जेत स्सनिक्खू के०) जे ते साधुने समीपे धर्म सांनलीने ते साधु केवाछे तोके सम्यक् हृ दय धरीने सयमने विषे सावधान थइ धर्म मार्गे प्रवर्त्तता कर्मविदारवाने समर्थ ए स म्यक् ज्ञानादिक ने विषे सावधान थया (तेएवसव्वोवगता के०) ते एम सर्व कर्म खपावीने मोक्षे पहोता (तेएवसव्वोविरता के०) ते एम सर्व अढारे पापस्थानक थकी निवर्त्त्या (तेएवसव्वोवसता के०) ते एम सर्व प्रकारे उपशांत एटले कषा य जीपीने (तेएवसव्वताएपरिनिवुमे के०) ते एम सर्व प्रकारे समर्थ पणे करीने शी तलीनूत थइ मोक्षे पहोता (त्तिबेमि के०) श्रीसुधर्मस्वामि श्रीजंबूस्वामि प्रत्ये कहे छे के साधुने समीपे धर्म सांनल्यानु फल मे कह्यु ते जेवीरीते श्रीनगवंत श्रीमहावीर देव पासेथी मे सांनल्युछे तेवीरीते तमने कह्यु ॥ ५९ ॥

॥ दीपिका—सनिक्षुर्धर्मं कीर्तयन्नान्नस्य हेतोर्धर्ममाचक्षीत । तथा पानवस्त्रलयनशय ननिमित्तं न धर्ममाख्याति । विरूपरूपाणा शुनाशुनाना कामनोगाना हेतोर्न धर्ममाख्या ति । अग्लानतया धर्ममाख्याति । निर्जरा विनाऽन्यकार्यार्थं न धर्मं वदेत् ॥५७॥ अथोप सहारमाह । इह जगति खलु तस्य निक्षोरंतिके समीपे धर्मं श्रुत्वा निशम्यावगम्य सम्य गुज्ञानेनोत्थाय वीरा समर्थाये ते चैवनूता सर्वस्मिन् मोक्षकारणे उपगता प्राप्ता स र्वोपगतास्तेचैव सर्वेन्य पापस्थानेन्यउपरतानिवृत्ता सर्वोपरतास्तेचैव सर्वोपशांता

स्तेचैव सर्वात्मतया सर्वसामर्थ्येन सदनुष्ठाने उद्यता परिनिर्वृतानिर्वाणं प्राताइ ति ब्रवीमीति ॥ ५९ ॥

॥ टीका–सांप्रतं धर्मकीर्त्तनं यथा निरुपधि भवति तथा दर्शयितुमाह । (सेभिरकूइत्या दि) सभिक्षुः परकृतपरनिष्ठिताहारभोजी यथाक्रियाकालानुष्ठायी शुश्रूषन् सुधर्मं कीर्तय न्नान्नस्य हेतोर्ममायमीश्वरोधर्मकथाप्रश्रवणे विशिष्टमाहारजातं दास्यतीति । एतन्निमित्तं न धर्ममाचक्षीत तथा पानवस्त्रलयनशयननिमित्तं न धर्ममाचक्षीत । नान्येषां विरूपरूपा णामुच्चावचानां कार्याणां कामभोगानां वा निमित्तं तथा धर्ममाचक्षीत ग्लानिमनुपगच्छन् न धर्ममाचक्षीत कर्मनिर्जरायाश्चान्यत्र न धर्मं कथयेदपरप्रयोजननिरपेक्षएव धर्मकथयेदिति ॥५८॥ धर्मकथाश्रवणफलदर्शनं द्वारेणोपसंजिघृक्षुराह ।(इहखलुतस्सेत्यादि) इहास्मिन् ज गति । खलु वाक्यालंकारे । तस्य भिक्षोर्गुणवतोंतिके समीपेपूर्वोक्तविशेषणविशिष्टं धर्मं श्रुत्वा निशम्यावगम्य सम्यगुत्थानेनोत्थाय वीरा कर्मविदारणसहिष्णवोये चैवभूतास्ते एव पूर्वोक्तविशेषणविशिष्टानुष्ठानतया सर्वस्मिन्नपि मोक्षकारणसम्यग्दर्शनादिके उपसामीप्ये न गता सर्वोपगतास्तथैव सर्वेभ्य उपरता सर्वोपरतास्तथा तएव सर्वोपशाताजितकषायत या शीतलीभूतास्तथा एव सर्वात्मतया सर्वसामर्थ्येन सदनुष्ठानेनोद्यम कृतवतोये चैवभूता स्तेऽशेषकर्मक्षयं कृत्वा परि समंतान्निर्वृताअशेषकर्मक्षयं कृतवतइति ब्रवीमीति पूर्ववत्५८

एवं सेभिक्खू धम्मठ्ठी धम्मविऊ णियागपडिवन्ने से जहेयं वुत्तियं अदु वा पत्ते पउमवरपोंमरीयं अदुवा अपत्ते पउमवरपोंमरीयं एवं सेभिक्खू परिणायकम्मे परिणायसंगे परिणायगेहवासे उवसंते समिए सहिए स याजए सेवं वयणिज्जं तंजहा समणेतिवा माहणेतिवा खंतेतिवा दंतेतिवा गुत्तेतिवा मुत्तेतिवा इसीतिवा मुणीतिवा कतीतिवा विऊतिवा भिक्खूतिवा लूहेतिवा तीरठ्ठीतिवा चरणकरणपारविउत्तिबेमि ॥ ॥ इति बितिय सु यक्खंधस्स पोंमरीयं नाम पढमज्झयणं सम्मत्तं ॥ ६० ॥

अर्थ–हवे अध्ययन परिसमाप्ति भणी कहेछे (एवसेभिक्खूधम्मठ्ठीके०) एम पूर्वोक्त गुण युक्त ते साधु धर्मनो अर्थी (धम्मविऊ के०) धर्मनो जाण, (णियागपडिवणे के०) मोक्ष अथवा संयमने विषे प्रतिपन्न एवो पांचमो पुरुष, (सेजहेयंवुत्तियं के०) ते आश्रीने जेम पूर्वे कह्युं (अदुवापत्तेपउमवरपोंमरीयं के०) ते अथवा प्रधान पोंमरी क कमलें पहोतो (अदुवाअपत्तेपउमवरपोंमरीयं के०) अथवा प्रधान पोंमरीक कम

म्ममाइक्केज्ञा के०) पाणीने हेतुये पण धर्म नकहे एवो सयति होए (णोवत्थस्सहे उधम्ममाइक्केज्ञा के०) तथा वस्त्रने हेतुये धर्म न कहे (णोलेणस्सहेउधम्ममाइक्केज्ञा के०) उपाश्रय वस्ति पामवाने हेतुये धर्म न कहे (णोसयणस्सहेउधम्ममाइक्केज्ञा के०) तथा पाट पाटलादिक सयनने हेतुये धर्म नकहे (णोअन्नेसिविरूवरूवाणकाम नोगाणहेउ धम्ममाइक्केज्ञा के०) नाना प्रकारना कामनोगने हेतुये धर्म नकहे (अ गिलाएधम्ममाइक्केज्ञा के०) अग्लान पणे धर्मकहे एटले पूछ्यो थको धर्म कहेवानो प्रमाद नकरे (नन्नत्थकम्मनिज्जरघाएधम्ममाइक्केज्ञा के०) एक कर्मनिर्जरानुं कारण टाली, अनेरे अर्थे धर्म नकहे ॥५७॥ हवे एवी रीते धर्म कहेवा थकी जे फल थाय ते देखा डेछे (इहखलुतस्सनिक्कुस्स के०) आ जगत् मांहे खलु इति वाक्यालंकारे ते गुणव त साधुने (अतिए के०) समीपे (धम्मसोच्चा के०) धर्म सांजलीने (णिसम्मउ घाणेण के०) सम्यक् हृदयने विषे धारण करीने, संयमने विषे सावधान थइने, (उ घायवीरा के०) धर्ममार्गे प्रवर्त्तता वीर एटले कर्म विदारवाने समर्थ (अस्सिधम्मे समुट्ठियाके०) एवो धर्मजे सम्यक् ज्ञान दर्शन अने चारित्ररूप तेने विषे पहोता (जेत स्सनिक्कू के०) जे ते साधुने समीपे धर्म सांजलीने ते साधु केवाछे तोके सम्यक् हृ दय धरीने संयमने विषे सावधान थइ धर्म मार्गे प्रवर्त्तता कर्मविदारवाने समर्थ ए स म्यक् ज्ञानादिक ने विषे सावधान थया (तेएवसव्वोवगता के०) ते एम सर्व कर्म खपावीने मोक्षे पहोता (तेएवसव्वोविरता के०) ते एम सर्व अढारे पापस्थानक थकी निवर्त्त्या (तेएवसव्वोवसंता के०) ते एम सर्व प्रकारे उपशांत एटले कषा य जीपीने (तेएवसव्वताएपरिनिव्वुमे के०) ते एम सर्व प्रकारे समर्थ पणे करीने शी तलीनूत थइ मोक्षे पहोता (त्तिबेमि के०) श्रीसुधर्मस्वामि श्रीजंबूस्वामि प्रत्ये कहे छे के साधुने समीपे धर्म सांजल्यानुं फल मे कह्युं ते जेवीरीते श्रीनगवंत श्रीमहावीर देव पासेथी में सांजल्युंछे तेवीरीते तमने कह्युं ॥ ५ए ॥

॥ दीपिका–सनिक्षुर्धर्मं कीर्तयन्नान्नस्य हेतोर्धर्ममाचक्षीत । तथा पानवस्त्रलयनशय ननिमित्त न धर्ममाख्याति । विरूपरूपाणां शुनाशुनानां कामनोगानां हेतोर्न धर्ममाख्या ति । अग्लानतया धर्ममाख्याति । निर्जरां विनाऽन्यकार्यार्थं न धर्मं वदेत् ॥५७॥ अथोप सहारमाह । इह जगति खलु तस्य निक्षोरंतिके समीपे धर्मं श्रुत्वा निशम्यावगम्य सम्य गुत्थानेनोत्थाय वीरा समर्थास्ते चैवंनूता सर्वस्मिन् मोक्षकारणे उपगता प्राप्ता स र्वोपगतास्तेचैव सर्वेन्य पापस्थानेन्यउपरतानिवृत्ता सर्वोपरतास्तेचैव सर्वोपशांता

सएवजूतगुणएतद्वचनीयएतेनामनिर्वाच्य- स्यात् । तद्यथा । श्रमणोवा माहनोवा ब्रह्मचारित्वाद्ब्राम्हणोवा, क्षांतोवा, दांतोवा, गुप्तिनिर्गुप्तोवा, निर्लोभित्वान्मुक्तोवा, ऋषिर्वा, कृतमस्यास्तीति कृती पुण्यवान् वित् विद्योपेतोनिक्षुर्वा, अंतप्रांताहारत्वेन रुक्षोवा, संसाराद्धेस्तीरार्थीवा, चरण मूलगुणा, करणमुत्तरगुणास्तेषां पारं पर्यंतगमनं वेत्तीति चरणकरणपारवित् । इति समाप्तौ । ब्रवीमीति सुधर्मस्वामी जंबूस्वामिनमाह ॥ ॥ इतिद्वितीयश्रुतस्कंधस्य पुंडरीकाध्ययनं प्रथमं समाप्तम् ॥ ६० ॥

॥ टीका–सांप्रतमध्ययनोपसंहारार्थमाह । (एवसेनिरक्कृइत्यादि) एवमिति पूर्वोक्तविशेषणकलापविशिष्टः सनिक्षुः पुनरपि सामान्यतोविशिष्यते । धर्मं श्रुतचारित्राख्यस्तेनार्थी यथावस्थितं परमार्थतोधर्मं सर्वोपाधिविशुद्धं जानातीति धर्मवित्तथा नियागं संयमोमोक्षोवा कारणे कार्योपचारं कृत्वा तं प्रतिपन्नोनियागप्रतिपन्नः सचैवभूतः पंचमं पुरुषजातस्तं चाश्रित्य यथेदं प्राक् प्रदर्शितं तत्सर्वमुक्तं । सच प्राप्तोवा स्यात्पद्मवरपौंडरीकमनुप्राह्य पुरुषविशेषं चक्रवर्त्यादिकं । तत्प्राप्तिश्च परमार्थतः केवलज्ञानावाप्तौ सत्यां नवति । साक्षाद्यथावस्थितवस्तुस्वरूपपरिच्छित्तेरप्राप्तोवास्यान्मतिश्रुतावधिमनःपर्यायज्ञानैर्यस्तैः समस्तैर्वा समन्वितः सचैवभूतः प्राग्व्यावर्णितगुणकलापोपेतोनिक्षुः परि समंतात् ज्ञातं कर्म स्वरूपतोविपाकतस्तडुपादानतश्च येन सज्ञातकर्मा तथा परिज्ञातः संगः संबंधः सबाह्याभ्यंतरोयेन सतथा परिज्ञातोनिःसारतया गृहवासोयेन सतथोपशांतइंद्रियनोइंद्रियोपशमात्तथा समितः पंचनिः समितिनिस्तथा सह हितेन वर्ततइति सहितोज्ञानादिनिर्वा सहितः समन्वितः सदा सर्वकालं यतः संयतः एतद्वचनीयस्तद्यथा श्राम्यतीति श्रमणः समनावा तथा मा प्राणिनोजहि व्यापादयेत्येवं प्रवृत्तिरुपदेशोयस्य समाहनः सब्रह्मचारीवा ब्राम्हणः क्षांतः सक्षमोपेतोदांतइंद्रियनोइंद्रियदमनेन तथा तिसृनिर्गुप्तिनिर्गुप्तः तथा मुक्तइवमुक्तस्तथाविशिष्टचरणोपेतामहर्षिस्तथा । मनुते जगतस्त्रिकालावस्थामिति मुनिस्तथा कृतमस्यास्तीति कृती पुण्यवान् परमार्थपंडितोवा तथा विद्वान् सद्विद्योपेतस्तथा निक्षुर्निरवद्याहारतया निक्षणशीलस्तथाऽतप्रांताहारत्वेन रुक्षस्तथा संसारतीरभूतोमोक्षस्तदर्थी तथा चर्यतइति चरणं मूलगुणाः क्रियतइति करणमुत्तरगुणास्तेषां पारं तीरं पर्यंतगमनं तद्वेत्तीति करणचरणविदिति । इतिशब्दः परिसमाप्तौ । ब्रवीमीतितीर्थंकरवचनादार्यं सुधर्मस्वामी जंबूस्वामिनमुद्दिश्य एवं नणति तथाह न स्वमनीषिकया ब्रवीमीति ॥ सांप्रतं समस्ताध्ययनोपात्तदृष्टांतदार्ष्टांतिकयोस्तात्पर्यार्थं गाथानिर्निर्युक्तिकृद्दर्शयितुमाह । उवमयपुंडरीए, तस्सेवपउववएणनिक्कुत्ती । अधिगारो पुण नणिउं, जिणोवन्नेसेण सिद्धित्ति ॥ १ ॥ सुरमणुयतिरियनिरउ, वगेसुमणुया पहूचरित्तम्मि ॥ अवियमहाजणनेयत्तिचक्कवट्टिम्मि

लें न पहोतो परमार्थथकी प्रधान पौमरीक कमल समान चक्रवर्त्यादिक पुरुष जाणवा तेनी प्राप्ति केवलज्ञानीने होय, अथवा न होय किंतु केवलज्ञान विना पण चारित्रिउ कहे वाय तेकारणे पत्ते अपत्ते एवु स्याद्वाद पद कह्यु (एवसेनिरक्परिण्णायकम्मेपरिण्णायसगे के०) एरीतें ते साधुये परिज्ञाये करी जाण्यु अने प्रत्याख्यान परिज्ञायें करी पच्चख्यु ने एवा कर्मबधना कारणने तथा बाह्याभ्यतर सगने जेणे वर्ज्या (परिण्णायगेहवासेके०) परिज्ञात गृहवास जेणे असार करी जाण्यो तथा (उवसते के०) इंद्रिय अने नोइंद्रिय जेणे उप शमाव्या (समिएके०) पाच समितिए समित (सहिएके०) ज्ञान, दर्शन अने चारित्रे करी सहित (सयाजएके०) सर्वकाल सयत यत्नवत (सेववयणिज्जके०) एवो ते चारित्रिउ सर्व गुणेयुक्त होय ते केवो होय? (तंजहा के०) ते कहेछे (समणेतिवा के०) श्रमण तप स्वी सममन एटले शत्रु मित्र उपर समनाव होय ते श्रमण जाणवो (माहणेतिवाके०) कोइपण प्राणीमात्रने महणो एवो जेनो उपदेश होय तेने माहण ब्राह्मण कहिए (खते तिवा के०) क्षमावत (दतेतिवाके०) दात एटले इंद्रियोनो दमनार (गुत्तेतिवा के०) त्रणगुप्ते गुप्तो (मुत्तेतिवा के०) मुक्ति एटले निर्लोभी (इसीतिवा के०) ऋषी विशिष्ट तपश्चर्या सहित जीवनो रक्षा करनार (मुणीतिवा के०) जगत्नी त्रिकालावस्थाना स्व रूपनो ज्ञाता (कतीतिवा के०) परमार्थ थकी पंमित जेनु सर्व कोइ कीर्त्तन करे तेजा णवो (विऊतिवा के०) रूडी विद्यासहित विद्वान् सद्विद्योपेत तथा (निरूतिवा के०) निरवद्याहारनो लेनार (लूहेतिवा के०) लूक्ष अतप्रात आहारी (तीरट्ठीति वा के०) तथा ससारनो तीररूपजे मोक्ष तेनो अर्थी (चरणकरणपारविउ के०) च रण एटले मूलगुण, अने करण एटले उत्तरगुण, तेनो पारपर्यंत गमन जाणे एटले च रण करनो पारगामि जाणवो तेमाटे चरणकरण पारविउ एम कह्यु (इतिबेमि के०) श्रीसुधर्मस्वामी श्रीजबूस्वामि प्रत्ये कहेछे के ए वचन हु श्रीतीर्थकरना वचनने अनुसा रे कहुछु एरीतें श्री सूयगडागसूत्रना बीजा श्रुतस्कधने विषे प्रथम पौमरीकनामा अध्य यननो बालावबोध समाप्त थयो ॥ ६० ॥

॥ दीपिका–एव पूर्वोक्तगुण सन्भिक्षुर्धर्मार्थी धर्मवित् नियाग सयमोमोक्षोवा तं प्रतिपन्न सचैवभूत पचमपुरुषस्तं वाऽश्रित्य तदर्थेद प्राग्दर्शित तत्सर्वमुक्त । सच प्राप्तो वा स्यात्पद्मवरपुंडरीक राजादिपुरुष । तत्प्राप्तिश्च तत्त्वत केवलज्ञानावाप्तौसत्या स्यात् अप्राप्तोवा स्यात् मतिश्रुतावधिमन पर्यायज्ञानैर्व्यस्तै समस्तैर्वा युत सचैवभूतोभिक्षु परिज्ञातकर्मविपाक परिज्ञातसगस्त्यक्तसबध परिज्ञातोनि सारतया गृहवासोयेन सतथा उपशातोवातेंद्रिय समित समितिभि सह हितेन वर्ततेय ससहित सदायत सयत

॥ अथ द्वितीयक्रियास्थानाख्याध्ययनस्य प्रारंभ ॥

हवे बीजुं अध्ययन प्रारंभिये ठैये पहेला अध्ययनमा पोंमरीक कमलने दृष्टांते अन्यतीर्थिकने कर्मना बंधक कह्या, तथा साधुने कर्मथी मूकावनारा कह्या हवे ते कर्म बार क्रिया स्थानके करी बांधीये अने तेरमे क्रिया स्थानके मूकीये तेकारणे बीजा अध्ययनमां क्रियास्थानक कहेछे

सुयमे आउसतेणं भगवया एवमक्खायं इह खलु किरियाठाणे णामज्झयणे पण्णत्ते तस्सणं अयमठे इह खलु संजूहेणं डुवे ठाणे एवमाहिज्जंति तंजहा धम्मेचेव अधम्मेचेव उवसंतेचेव अणुवसंतेचेव ॥१॥ तत्र णं जेसे पढमस्स ठाणस्स अहम्मपक्खस्स विभंगे तस्स णं अयमठे पण्णत्ते इह खलु पाईणंवा संतेगतिया मणुस्सा भवंति तं जहा आरियावेगे अणारियावेगे उच्चागोयावेगे णीयागोयावेगे कायमंतावेगे हस्समंतावेगे सुवन्नावेगे डुवन्नावेगे सुरूवावेगे डुरूवावेगे॥२॥ तेसिंचणं इमं एतारूवं दंमसमादाणं सपेहाए तं जहा णेरइएसुवा तिरिक्खजोणिएसुवा मणुस्सेसुवा देवेसुवा जेयावन्ने तहप्पगारा पाणाविन्नू वेयणं वेयंति॥३॥तेसिं पियणं इमाइं तेरसकिरियाठाणाइं भवंतीति मक्खायं तंजहा अठादंमे अणठादंमे हिंसादंमे अकम्मादंमे दिठीविपरियासियादंमे मोसवत्तिए अदिन्नादाणवत्तिए अज्झत्तवत्तिए माणवत्तिए मित्तदोसवत्तिए मायावत्तिए लोभवत्तिए इरियावहिए ॥ ४ ॥

अर्थ-(सुयमे के०) श्रीसुधर्मस्वामी जंबूस्वामि प्रत्ये कहेछे के, में सांभल्युंछे (आउसतेणंभगवयाएवमक्खायं के०) आयुष्यवंत भगवंते मने एम कह्युं छे ते में जेम सांभल्युंछे तेम हुं तुज प्रत्ये कहुंछुं (इहखलु के०) निश्चेकरी आ जिनशासनने विषे (किरियाठाणेणामज्झयणेपण्णत्ते के०) क्रियास्थान नामे अध्ययन प्ररूप्युं (तस्सणंअयमठे के०) तेनो ए अर्थछे (इहखलु के०) अहिंया खलु एवी संभावनायें (संजूहेणं के०) संक्षेपें करी (डुवेठाणेएवमाहिज्जंति के०) एकग्रुन, बीजोग्रुन एम बे स्थानक, कहिये (तंजहा के०) तेना नाम कहेछे (धम्मेचेवअधम्मेचेव के०) एक धर्मस्थानक अने बीजो अधर्मस्थानक, (उवसंतेचेवअणुवसंतेचेव के०) एक उपशां

अधिगारो ॥ २ ॥ अवियहुनारियकम्मा, नियमा उक्कस्स निरयठितिगामी । ते विहुजि णोवदेसेण तेणेव नवेण सिज्झति ॥ ३ ॥ जलमालकदमाल, बहुविहवल्लिगहण च पु क्खरणी । जघाहिव बाहाहिव नावाहिवतं डुरवगाहा ॥ ४ ॥ पउम उल्लघेतु, उपरमाण स्सहोनवावत्ती । किनहिसेउवाउ, जेणुल्लघेज्ज अविवन्नो ॥ ५ ॥ विज्जावदेव कम्म, अ हवा आगासियाविउवणया । पउम उल्लघेतु नएसइणमोजिणुरकाउ ॥ ६ ॥ सुद्धप्पउग विज्जासिद्धाउ जिणस्स जाणणेविज्जा । नवियजणपोडरीयाउ जाए सिद्धिगतिमुवेति ॥ ॥ ७ ॥ (उवमाइत्यादि) इहोपमा दृष्टात पौंडरीकेण श्वेतशतपत्रेण कृतस्तस्येहान्य र्हितत्वात् तस्यैव चोपचयेन सर्वावयवनिष्पत्तिर्याव द्विशिष्टोपायेनोद्धरण । दार्ष्टांतिकाधिका रस्तु पुनरत्र नणितोनिहितश्चक्रवर्त्यादि निर्नव्यस्य जिनोपदेशेन सिद्धिरिति तस्यैव पूज्य मानत्वादिति । पूज्यमेव दर्शयितुमाह । (सुरमणुएइत्यादि) सुरादिषु चतुर्गतिकेषु जतु षु मध्ये मनुजाश्चरित्रस्य सर्वसवररूपस्य प्रनव शक्तावर्तते न शेषा सुरादय । ते ष्वपि मनुजेषु महाजननेतारश्चक्रवर्त्यादयोवर्तते तेषु प्रवोधितेषु प्रधानानुगामि त्वात् इतरजन सुप्रतिबोधएव नवतीत्यतोत्र चक्रवर्त्यादिना पौंडरीककल्पेनाधिकारइ ति । पुनरप्यन्यथामनुजप्राधान्य दर्शयितुमाह । (अविपहुइत्यादि) गुरुकर्माणोपि म नुजाश्चासकलितनरकायुपोपि नरकगमनयोग्याअपि तेष्वेवनूतजिनोपदेशात्तेनैव नवेन समस्तकर्मक्षयात् सिद्धिगामिनोनवतीति । तदेव दृष्टातदार्ष्टांतिकयोस्तात्पर्यार्थं प्रदर्श्य दृ ष्टातनूतपौंडरीकाऽधाराया पुष्करिण्याडुरवगाहत्व सूत्रालापकोपात्तनिर्युक्तिकृद्दर्शयितुमा ह । (जलमालेत्यादि) जलमालामित्यर्थप्रचुरजला तथा कर्दममालामप्रतिष्ठितलत या प्रनूततरपका तथा बहुविधवल्लिगहना च पुष्करिणी जघान्या वा बाहुन्या नावा वा डुस्तरा पुष्करिर्णी दृष्टेति क्रियाध्याहार –किचान्यत् । (पउमइत्यादि) तन्मध्ये पद्मवरपौंडरीक गृहीत्वा समुत्तरतोऽवश्य व्यापत्ति प्राणाना नवेत् कि तत्र कश्चिडुपा य सनास्ति येनोपायेन गृहीतकमल सन् ता पुष्करिणीमुल्लघयेन्नविपन्नइति । तडुल्लघ नोपाय दर्शयितुमाह । (विद्यावेत्यादि) विद्या वा काचित्प्रज्ञप्त्यादिका देवता कर्मवा ऽथवाऽकाशगमनलब्धिर्वा कस्यचिन्नवेत्तेनासावविपन्नोगृहीतपौंडरीक सन्नुल्लघयेत्ता पुष्करिणीमेषच जिनैरुपाय समाख्यात । सर्वोपसहारार्थ माह । (सुद्धप्पेत्यादि) शुद्धप्रयोगविद्यासिद्धा जिनस्यैव विज्ञानरूपा नान्यस्य कस्यचिद्यया विद्यया तीर्थकरद र्शितया नव्यजनपौंडरीका सिद्धिमुपगच्छतीति । गतोनुगम सांप्रत नयास्तेच पूर्ववद्र ष्टव्याइति ॥ समाप्त पौंडरीकाख्य द्वितीयश्रुतस्कधप्रथमाध्ययनमिति ॥ ६० ॥ ॥

॥ अथ द्वितीयक्रियास्थानाख्याध्ययनस्य प्रारम्भ ॥

हवे बीजु अध्ययन प्रारंजिये ठेये पहेला अध्ययनमा पोमरीक कमलने दृष्टांते अन्यतीर्थिकने कर्मना बधक कह्या, तथा साधुने कर्मथी मूकावनारा कह्या हवे ते कर्म बार क्रिया स्थानके करी बाधीयें अने तेरमे क्रिया स्थानके मूकीये तेकारणे बीजा अध्ययनमां क्रियास्थानक कहेठे

सुयमे आउसतेण जगवया एवमस्काय इह खलु किरियाठाणे णामज्ञयणे पणत्ते तस्सण अयमठे इह खलु सजूहेण डुवे ठाणे एवमाहिज्जति तजहा धम्मेचेव अधम्मेचेव उवसतेचेव अणुवसतेचेव ॥१॥ तञ ण जेसे पढमस्स ठाणस्स अहम्मपरकस्स विजंगे तस्स णं अयमठे पणते इह खलु पाईणवा सतेगतिया मणुस्सा जवति त जहा आरियावेगे अणारियावेगे उच्चागोयावेगे णीयागोयावेगे कायमतावेगे हस्समतावेगे सुवन्नावेगे डुवन्नावेगे सुरूवावेगे डुरूवावेगे॥२॥ तेसिंचण इम एतारूव ढमसमादाण सपेहाए त जहा णेरइएसुवा तिरिक्कजोणिएसुवा मणुस्सेसुवा देवेसुवा जेयावन्ने तहप्पगारा पाणाविन्नू वेयण वेयति॥३॥तेसिं पियण इमाइ तेरसकिरियाठाणाइ जवतीति मस्काय तजहा अठादंमे अणठादंमे हिंसादंमे अकम्मादंमे दिठीविपरियासियादंमे मोसवत्तिए अदिन्नादाणवत्तिए अज्ञत्तवत्तिए माणवत्तिए मित्तदोसवत्तिए मायावत्तिए लोजवत्तिए इरियावहिए ॥ ४ ॥

अर्थ–(सुयमे के०) श्रीसुधर्मस्वामी जंबूस्वामि प्रत्ये कहेठे के, में सांजल्युठे (आउसतेणजगवयाएवमस्काय के०) आयुष्यवंत जगवते मने एम कह्यु ठे ते में जेम सांजल्युठे तेम हु तुज प्रत्ये कहुडु (इहखलु के०) निश्चेकरी आ जिनशासनने विषे (किरियाठाणेणामज्ञयणेपणत्ते के०) क्रियास्थान नामे अध्ययन प्ररूप्यु (तस्सणअयमठे के०) तेनो ए अर्थठे (इहखलु के०) अहिया खलु एवी तजावनायें (सजूहेण के०) सक्षेपें करी (डुवेठाणेएवमाहिज्जति के०) एकशुज, बीजोअशुज एम बे स्थानक, कहियें (तजहा के०) तेना नाम कहेठे (धम्मेचेवअधम्मेचेव के०) एक धर्मस्थानक अने बीजो अधर्मस्थानक, (उवसतेचेवअणुवसतेचेव के०) एक उपशा

स्थानक, अने बीजो अनुपशांत स्थानक ॥१॥ (तह्मण के०) त्यां (जेसे के०) जे कहेशे ते (पढमहाणस्सञ्रहम्मपरकस्सविनंगेके०) प्रथम स्थानक अधर्म पक्षनो विनंग एटले विचार (तस्सणअयमठेपसुतेके०) तेनो ए अर्थ कहेछे (इहखलुपाईणवाके०) ए संसार माहे पूर्वादिक दिशिमाहे अनेरी दिशायें (संतेगतियामणुस्साजवंति के०) केटलाएक मनुष्यछे ते केवाछे (तंजहाके०) तें कहेछे एक आर्य, एक अनार्य, एक उचगोत्रना उपना, एक नीचगोत्रना उपना, एक महोटी कायावाला, एक न्हानी काया वाला, एक शुनवर्णना शरीरवाला, एक माठावर्णवाला, एक सुरूपवान् अने एक कुरूपवान् ॥२॥ (तेसिंचणंइमए तारूवके०) ते आर्यादिक मनुष्यने एवो एतादृशरूपजे आगल कहेशे (दंमसमादाण के०) दंम समादान एटले पापरूप संकल्पनु ग्रहणते, (सपेहाए के०) आलोचवु ते चतुर्गतिक, जीवने होय (तंजहा के०) ते चारगतिना नाम कहेछे (णेरइएसुवा के०) एक नारकीमां हे (तिरिरकजोणिएसुवाके०) तिर्यंचनी योनी माहे (मणुस्सेसुवाके०) मनुष्य माहे (देवेसुवाके०) देवतामाहे ए चतुर्गतिक जीव जाणवा तेमाहे (जेयावन्नेके०) जे अनेरा (तहप्पगारा के०) तथा प्रकारना (पाणाविन्नू के०) प्राणि जाणवा (वेयणवेयंति के०) ते प्राणी एवा ठता वेदना जे साता असातारूप तेने वेदे एटले अनुनवे अत्र चतुर्नंगी कहेछे एक सन्नियां जीवजेछे ते वेदनाने अनुनवे तथा जाणे पण, अने बीजा सिद्धना जीव जेछे ते वेदनाने मात्र जाणे, पण अनुनवे नहीं तथा त्रीजा असन्नियां जीव जेछे ते वेदनाने अनुनवे, पण जाणे नही चोथा अजीव जेछे ते वेदनाने अनुनवे पण नहीं, अने जाणे पण नहीं, तेमाहें अहीं पहेला अने त्रीजा नंगनो अधिकारछे ॥३॥ (तेसिंपियणं इमाइ के०) ते नारकियादिकने एजे आगल कहेशे ते (तेरसकिरियाठाणाइ नवंतीतिमरकाय के०) तेर क्रियाना स्थानक होय, ते श्रीतीर्थंकर गणधरे एम कह्या (तंजहा के०) तेना नाम कहेछे एक (अठादंमे के०) अर्थ दंम, बीजो (अणठादंमे के०) अनर्थदंम, त्रीजो (हिंसादंमेके०) हिंसादंम, चोथो (अकम्मादंमे के०) अकस्मात् दंम, पांचमो (दिठीविपरियासियादंमे के०) दृष्टि विपर्यास दंम, ठठो (मोसवत्तीए के०) मृषावाद प्रत्ययिक दंम, सातमो (अदिन्नादाणवत्तिए के०) अदत्तादान प्रत्ययिक दंम, आठमो (अज्ञ वत्तिएके०) अध्यात्मिक ते मननु डुर्ध्यान प्रत्ययिक तेरूप दंम, नवमो (माणवत्तिएके०) मान प्रत्ययिक दंम, दशमो (मित्तदोसवत्तिए के०) मित्र उपर द्वेष करवो ते मित्रदोष प्रत्ययिक दंम, अगीयारमो (मायावत्तिए के०) परने वचवु ते मायाप्रत्ययिक दंम, बारमो (लोनवत्तिए के०) लोन प्रत्ययिक दंम, तेरमो (इरियावहिए के०) इरियापथिक प्रत्ययिक दंम हवे अनुक्रमे ए तेर क्रिया स्थानकोनो विचार कहेछे ॥ ४ ॥

॥ दीपिका–अथ द्वितीय क्रियास्थानाध्ययनमारन्यते तस्येदमादिसूत्र (सुयमेऽइत्यादि) सुधर्मस्वामी जंबूस्वामिनमाह् । श्रुतं मया आयुष्मता नगवतैवमाख्यात । इह खलु क्रियास्थान नामाध्ययन नवति । अस्य चायमर्थ ।(सजूहेण) सामान्येन सक्षेपेण द्वे स्थाने नवत । ये केचन क्रियावतस्तेऽनयोरेव स्थानयोराख्यायते । तद्यथा । धर्मे चैव अधर्मेचैव । उपशांतं धर्मस्थानमनुपशांतमधर्मस्थान ॥१॥ तत्र णमितिवाक्यालंकारे । योऽसौ प्रथमानुष्ठेयतया प्रथमस्याधर्मपक्षस्य विनगोविचार । तस्यायमर्थ । इह जगति प्राच्यादिषु दिक्षु मध्येऽन्यतरस्या दिशि सति विद्यते एके केचन मनुष्या । तद्यथा । आर्याअनार्या उच्चैर्गोत्रानीचैर्गोत्रा कायवतउन्नतान्ह्स्ववतोनीचशरीरा सुवर्णा सुकांतयोडुर्वर्णानिस्तेजस सुरूपाकूरूपाश्च ॥२॥ तेषामार्यादीनामिद वक्ष्यमाणमेतद्रूपं दडसमादान पापोपादान (सपेहाए त्ति) संप्रेक्ष्य तद्यथा नारकेषु तिर्यग्योनिषु मनुष्येषु ये चान्ये तथा प्रकारा सुवर्णडुर्वर्णा प्राणिनोविद्वांसोवेदना सातासातरूपां विदति अनुनवति । अत्र चत्वारोनंगा । तथाहि । सज्ञिनोवेदनामनुनवति जानतिच १ सिद्धास्तु वेदनाजानति नानुनवति २ असज्ञिनोऽनुनवति न पुनर्जानंति ३ अजीवास्तु न जानति नाप्यनुनवति ४ इह प्रथमतृतीयाभ्यामधिकारोद्वितीयचतुर्थाववस्तुनूताविति ॥३॥ तेषा नारकादीनामिमानि वक्ष्यमाणानि त्रयोदश क्रियास्थानानि नवतीत्याख्यातं तीर्थकृदादिनि । तद्यथा । स्वार्थायदड पापोपादानमर्थेदड १ निष्प्रयोजन सावद्यक्रियानर्थेदड २ हिंसा प्राणिघातस्तयादडोहिंसादड ३ अकस्मादनुपयुक्तस्य दडोऽकस्माद्दड । अन्यस्य क्रिययाऽन्यस्य घातइत्यर्थ ४ दृष्टेविपर्यासोरज्जुविषये यथा सर्पबुद्धिस्तया दडो दृष्टिविपर्यासदड यथा शरादिक्षेपेण लेष्टुकादिबुध्या चटकादिहनन ५ मृषावादप्रत्ययिक ६ अदत्तादानप्रत्ययिक ७ अध्यात्मिकोदडोयथा निर्निमित्तमेव डुर्मनाश्चितातुरस्तिष्ठति ८ मानप्रत्ययिकोदडोयथाऽष्टमदस्थानोपगत पर हीन मन्यते ९ मित्राणामुपतापेन दोषोमित्रदोषस्तत्प्रत्ययिकोदड १० माया परवचनबुद्धिस्तयादड ११ लोनप्रत्ययिक. १२ ईर्याप्रत्ययिकोदड समितिगुप्तियुतस्य दोषयुक्तस्य सामान्येन कर्मबंध स्यात्॥ ४ ॥

॥ टीका–व्याख्यातं प्रथमाध्ययन सांप्रतं द्वितीयमारन्यते । अस्य चायमनिसबंध । इहानंतराध्ययने पुष्करिणीपौंडरीकदृष्टांतेन तीर्थिका सम्यङ्मोक्षोपायानावात्कर्मणां बंधका प्रतिपादिता सत्साधवश्च सम्यग्दर्शनादिमोक्षमार्गप्रवृत्तत्वान्मोचका सडुपदेशदानतोपरेषामपीति । तदिहापि यथा कर्म द्वादशनि क्रियास्थानैर्बध्यते यथाच त्रयोदशेन मुच्यते तदेतत्पूर्वोक्तमेव बंधमोक्षयो प्रतिपादन क्रियते । अनंतरसूत्रेण चाय सबंध । तद्यथा । निक्षुणा चरणकरणविदा कर्मक्षपणायोद्यतेन द्वादश क्रियास्थानानि कर्मबं

स्थानक, अने बीजो अनुपशात स्थानक ॥१॥ (तत्तण के०) त्यां (जेसे के०) जे कहेशे ते (पढमहाणस्सअहम्मपरकस्सविजगेके०) प्रथम स्थानक अधर्म पक्षनो विजग एटले विचार (तस्सणअयमठेपण्णत्ते के०) तेनो ए अर्थ कहेछे (इहखलुपाईणवाके०) ए ससार माहे पूर्वादिक दिशिमाहे अनेरी दिशायें (सतेगतियामणुस्साजवति के०) केटलाएक मनुष्यछे ते केवाछे (तजहाके०) तें कहेछे एक आर्य, एक अनार्य, एक उचगोत्रना उपना, एक नीचगोत्रना उपना,एक महोटी कायावाला,एक न्हानी काया वाला,एक शुजवर्णना शरीरवाला, एक मागवर्णवाला, एक सुरूपवान् अने एक कुरूपवान् ॥२॥ (तेसिंचणइमए तारूवके०) ते आर्यादिक मनुष्यने एवो एतादृशरूपजे आगल कहेशे (दमसमादाण के०) दम समादान एटले पापरूप सकदपनु ग्रहणते,(सपेहाए के०) आलोचवु ते चतुर्गतिक, जीवने होय (तंजहा के०) ते चारगतिना नाम कहेछे (णेरइएसुवा के०) एक नारकीमां हे (तिरिस्कजोणिएसुवाके०) तिर्यंचनी योनी माहे (मणुस्सेसुवाके०) मनुष्य मांहे (देवेसुवाके०) देवतामाहे ए चतुर्गतिक जीव जाणवा तेमाहे (जेयावन्नेके०) जे अनेरा (तहप्पगारा के०) तथा प्रकारना (पाणाविन्नू के०) प्राणि जाणवा (वेयणवेयति के०) ते प्राणी एवा छता वेदना जे साता असातारूप तेने वेदे एटले अनुजवे अत्र चतुर्नगी कहेछे एक सज्ञिया जीवजेछे ते वेदनाने अनुजवे तथा जाणे पण, अने बीजा सिद्धना जीव जेछे ते वेदनाने मात्र जाणे, पण अनुजवे नहीं तथा त्रीजा असज्ञिया जीव जेछे ते वेदनाने अनुजवे, पण जाणे नही चोथा अजीव जेछे ते वेदनाने अनुजवे पण नहीं,अने जाणे पण नही, तेमाहें अहीं पहेला अने त्रीजा जगनो अधिकारछे ॥३॥ (तेसिंपियण इमाइ के०) ते नारकियादिकने एजे आगल कहेशे ते (तेरसकिरियाठाणाइ नवतीतिमरकाय के०) तेर क्रियाना स्थानक होय, ते श्रीतीर्थंकर गणधरे एम कह्या (तजहा के०) तेना नाम कहेछे एक (अठादमे के०) अर्थ दम, बीजो (अणठादमे के०) अनर्थदम, त्रीजो (हिसादमेके०) हिसादम, चोथो (अकम्मादमे के०) अकस्मात् दम, पाचमो (दिठीविपरियासियादमे के०) दृष्टि विपर्यास दम, छठो (मोसवत्तीए के०) मृषावाद प्रत्ययिक दम, सातमो (अदिन्नादाणवत्तिए के०) अदत्तादान प्रत्ययिक दम, आठमो (अज्जत्र वत्तिएके०) अध्यात्मिक ते मनन्नु ध्यान प्रत्ययिक तेरूप दम, नवमो (माणवत्तिएके०) मान प्रत्ययिक दम, दशमो (मित्तदोसवत्तिए के०) मित्र उपर द्वेप करवो ते मित्रदोष प्रत्ययिक दम, अगीयारमो (मायावत्तिए के०) परने वचवु ते मायाप्रत्ययिक दम, बारमो (लोजवत्तिए के०) लोज प्रत्ययिक दम, तेरमो (इरियावहिए के०) इरियापथिक प्रत्ययिक दम हवे अनुक्रमे ए तेर क्रिया स्थानकोनो विचार कहेछे ॥ ४ ॥

ङ्गगहृजोहे, अचल गणण सधणा नावे, ॥ १६० ॥ (नामठवणेत्यादि) इयंच गाथा ऽऽचारप्रथमश्रुतस्कधे द्वितीयाऽध्ययने लोकविजयाख्ये (जेगुणे से मूलगणे) इत्यत्र स्थानशब्दस्य सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्त्या प्रबधेन व्याख्यातेति नेह प्रतन्यते । इह पुनर्यया क्रियया येन च स्थानेनाधिकारस्तद्दर्शयितुमाह । " समुदाणियाणिह तउं, सम पउत्तेय नावगणमि ॥ किरियाहि पुरिस वावा, इएउ सवेपरिक्खेवो,, ॥ १६१ ॥ (समुदाणीत्यादि) क्रियाणा मध्ये समुदानिकाक्रिया व्याख्याता, तस्याश्च कषायानुगतत्वात् बहवो नेदा यतस्ततस्तासा सामुदानिकाना क्रियाणामिह प्रकारे (एणउत्ति) अधिकारो व्यापार सम्यक्प्रयुक्तेच नावस्थाने । तच्चेह विरतिरूप सयमस्थान प्रशस्तनावसधान रूपच गृह्यते । सम्यक्प्रयुक्तनावस्थानग्रहणसामर्थ्यादीर्यापथिका क्रियापि गृह्यते । सामुदानिका क्रियाग्रहणाच्चाप्रशस्तनावस्थानान्यपि गृहीतान्यानिश्च पूर्वोक्तानि क्रियाचि पूर्वोक्तान् पुरुषान् तद्द्वारायातान्प्रावाडुकाश्च परीक्षते सर्वानपीति । यथा चैव तथा स्वतएव सूत्रकारस्तं (जहासे एगइयामणुस्साजवतीत्यादि) तथा प्रावाडुकपरिक्षायामपि (णायउ उगरणचविप्पजहा निरकायरियाए समुधिया) इत्यादिना वक्ष्यतीति गतोनिर्युक्त्यनुगम । साम्प्रत सूत्रानुगमेऽस्खलितादिगुणोपेतं सूत्रमुच्चारयितव्यं । तच्चेद । (सुयंमे आउसतेणमित्यादि) सुधर्मस्वामी जबूस्वामिनमुद्दिश्येदमाह । तद्यथा । श्रुतं मयाऽऽयुष्मता जगवतेव माख्यातमिह खलु क्रियास्थान नामाध्ययन तस्यचायमर्थ । (इह खलु सजूहेणति) सामान्येन सक्षेपेण समासतो द्वे स्थाने जवत । ये क्रियावतस्ते सर्वेप्यनयो स्थानयोरेवमाख्यायते । तद्यथा धर्मेचेवाधर्मेचैव । इदमुक्त जवति धर्मस्थानमधर्मस्थानच । यदिवा धर्मादनपेतं धर्म विपरीतमधर्म । कारणशुद्ध्या च कार्यशुद्धिर्जवतीत्याह । उपशातं यत्तद्धर्म स्थानमनुपशात वाऽधर्मस्थान तत्रोपशाते उपशमप्रधाने धर्मस्थाने ऽधर्मस्थानेवा केच न महासत्वा समासन्नोत्तरगुनादयोवर्तते । परेच तद्विपर्यस्ते विपर्यस्तमतय ससारानिष्वगिणोऽधोऽधोगतयोवर्तते । इहच यद्यप्यनादिजवाभ्यासादिडियानुकूलतया प्रायश पूर्वमधर्मप्रवृत्तोजवति पश्चात्तडुपदेशयोग्याचार्यससर्गाद्धर्मस्थाने प्रवर्तते । तथाप्यभ्यर्हितत्वात्पूर्व धर्मस्थानमुपशमस्थानच प्रदर्शितं पश्चात्तद्विपर्यस्तमिति ॥ १ ॥ साम्प्रतं तु यत्र प्राणिनामनुपदेश स्वपरप्रवृत्त्यादावेव स्थान जवति तदभिरुत्याह । (तहउणइत्यादि) तत्रेति वाक्योपन्यासार्थे । णमिति वाक्यालकारे । योऽसौ प्रथमानुष्ठेयतया प्रथम स्याधर्मपक्षस्य स्थानस्य विविधोजगोविजगोविचारस्तस्यायमर्थइति । इहास्मिन् जगति प्राच्यादिषु दिक्षु मध्येऽन्यतरस्या दिशि सति विद्यते एके केचन मनुष्या पुरुषास्तेचैव नूतानजवतीत्याह । तद्यथा । आरायाता सर्वहेयधर्मेभ्यइत्यार्यास्तद्विपरीताश्चाऽनार्याएके केचन जवति यावद्रूपा सुरूपाश्चेति । तेषा चाऽऽर्यादीनामिद वक्ष्यमाणमेतद्रूप । दडय

धकारणानि सम्यकपरिहर्तव्यानि तद्विपरीतानि च मोक्षसाधनानि आसेवितव्यानि इत्यनेन सबधेनायातस्याध्ययनस्योपक्रमादीनि चत्वार्यनुयोग द्वाराणि नवति । तत्राप्युपक्रमांतर्ग तोऽर्थाधिकारोय । तद्यथा कर्मणा बधयोऽनेन प्रतिपाद्यते तद्विमोक्षश्चेति । नामनिष्पन्नेतु निक्षेपे क्रियास्थानमिति द्विपद नाम। तत्रापि क्रियापदनिक्षेपार्थं प्रस्तावमारचयन्निर्युक्तिक दाह । "किरियाउनणियाउ, किरियागणत्ति तेण अज्ञयण ॥ अहिगारो पुण नणिउ, बधे तह मोरकमग्गेय" ॥ १५७ ॥ (किरियाउ इत्यादि) तत्र क्रियतइति क्रियास्ताश्च कर्म बधकारणत्वेनावश्यकातर्वर्तिनि प्रतिक्रमणाध्ययने (पडिक्कमामितेरसहिकिरियागणेहि ति) अस्मिन्सूत्रेऽनिहिता । यदि वेहिकक्रियानणिताअनिहितास्तेनेदमध्ययन क्रिया स्थानमित्युच्यते । तच्च क्रियास्थान क्रियावत्स्वेव नवति नाक्रियावत्सु । क्रियावतश्च के चिद्बध्यते केचिन्मुच्यतेऽतोध्ययनार्थाधिकार पुनरनिहितोबधे तथा मोक्षमार्गेचेति । तत्र नामस्थापने सुगमत्वादनादृत्य द्रव्यादिका क्रिया प्रतिपादयितुमाह । " दवे किरिए अवणय, पयोगुवायकरणिज्ज समुदाणे ॥ इरियावहसमत्तो, सम्मत्तेचैव मिछत्ते " ॥ १५७ ॥ दवेइत्यादि) तत्र द्रव्यविषये या क्रिया एजनता । एजृकपने । जीवस्याजीव स्य वा कपनरूपा चलनस्वनावा सा द्रव्यक्रिया। सापि प्रयोगाद्विस्रसया वा नवेत् । तत्रा प्युपयोगपूर्विका वाऽनुपयोगपूर्विका वाऽक्षिनिमेषमात्रादिका वा सा सर्वा द्रव्यक्रियेति । नावक्रियात्विय । तद्यथा प्रयोगक्रिया उपायक्रिया करणीयक्रिया समुदानक्रिया ईर्यापथ क्रिया सम्यक्त्वक्रिया मिथ्यात्वक्रिया चेति । तत्र प्रयोगक्रिया मनोवाक्कायलक्षणा त्रिधा । तत्र स्फुरद्भिर्मनोद्रव्यैरात्मनउपयोगोनवत्येव वाक्काययोरपि वक्तव्य । तत्र श ब्दे निष्पाद्ये वाक्काययोर्द्वयोरप्युपयोग । तथा चोक्त । गिएहइ य काइएण, णिसि रइ तहवा इएण जोगेण ॥ गमनादिका तु कायक्रियैव। उपायक्रियातु घटादिक द्रव्य ये नोपायेन क्रियते । तद्यथा । मृत्खननमर्दनचक्रारोपणदडचक्रसलिलकुनकारव्यापा रैर्योविन्निरुपायै क्रियते सा सर्वोपायक्रिया । करणीयक्रियातु यद्येन प्रकारेण करणी य तत्तेनैव क्रियते नान्यथा । तथाहि । घटोमृत्पिंडादिकयैव क्रियते न पाषा णसिकतादिकयेति ३ समुदानक्रियातु यत्कर्म प्रयोगगृहीतं समुदायावस्थ सत्प्रकृति स्थित्यनुनावप्रदेशरूपतया यया व्यवस्थाप्यते सा समुदानक्रिया । साच मिथ्यादृष्टेरा रभ्य सूक्ष्मसपराय यावत् नवति । ४ ईर्यापथक्रिया तूपशांतमोहादारभ्य सयोगिके वलिनं यावदिति ५ सम्यक्त्वक्रिया तु सम्यग्दर्शनयोग्या कर्मप्रकृती सप्तसप्ततिसख्या यया बध्नाति साऽनिधीयते । मिथ्यात्वक्रिया तु सर्वा प्रकृतीर्विंशत्युत्तरसख्यास्तीर्थंक राहारकशरीरतदगोपागत्रिकरहिता यया बध्नाति सामिथ्यात्वक्रियेत्यनिधीयते । सांप्र त स्थाननिक्षेपार्थमाह । " नाम ठवणा दविए, खेत्ते छाउद्ध उवरवीवसहि । सजम प

ङ्गगहजोहे, अचल गणण सवणा नावे, ॥ १६० ॥ (नामठवणेत्यादि) इयंच गाथा ऽऽचारप्रथमश्रुतस्कंधे द्वितीयाऽध्ययने लोकविजयाख्ये (जेगुणे से मूलगणे) इत्यत्र स्थानशब्दस्य सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्त्या प्रबंधेन व्याख्यातेति नेह प्रतन्यते । इह पुनर्यया क्रियया येन च स्थानेनाधिकारस्तद्दर्शयितुमाह । " समुदाणियाणिह तउ, सम पउत्तेय नावगाणमि ॥ किरियाहि पुरिस यावा, इएउ सव्वपरिक्खेवो,, ॥ १६१ ॥ (समुदाणीत्यादि) क्रियाणां मध्ये समुदानिकाक्रिया व्याख्याता, तस्याश्च कषायानुगतत्वात् बहवो नेदा यतस्ततस्तासां सामुदानिकानां क्रियाणामिह प्रकारे (एणउत्ति) अधिकारो व्यापार सम्यक्प्रयुक्तेच नावस्थाने । तच्चेह विरतिरूपं संयमस्थानं प्रशस्तनावसंधानरूपच गृह्यते । सम्यक्प्रयुक्तनावस्थानग्रहणसामर्थ्यादीर्यापथिका क्रियापि गृह्यते । सामुदानिका क्रियाग्रहणाच्चाप्रशस्तनावस्थानान्यपि गृहीतान्यानिश्च पूर्वोक्तानि क्रियानि पूर्वोक्तान् पुरुषान् तद्द्वारायातान्प्रावाडुकाश्च परीक्षते सर्वानपीति । यथा चैव तथा स्वतएव सूत्रकारस्तं (जहासे एगइयामणुस्सानवतीत्यादि) तथा प्रावाडुकपरिक्षायामपि (णायउ डगरणचविप्पजहा निक्कायरियाए समुठिया) इत्यादिना वक्ष्यतीति गतोनिर्युक्त्यनुगमः । सांप्रतं सूत्रानुगमेऽस्खलितादिगुणोपेतं सूत्रमुच्चारयितव्यं । तच्चेदं । (सुयंमे आउसतेणमित्यादि) सुधर्मस्वामी जंबूस्वामिनमुद्दिश्येदमाह । तद्यथा । श्रुतं मयाऽऽयुष्मता नगवतैवमाख्यातमिह खलु क्रियास्थानं नामाध्ययनं तस्यचायमर्थः । (इह खलु संजूहेणंति) सामान्येन संक्षेपेण समासतो द्वे स्थाने नवतः । ये क्रियावतस्ते सर्वेप्यनयो स्थानयोरेवमाख्यायते । तद्यथा धर्मेचैवाधर्मेचैव । इदमुक्तं नवति धर्मस्थानमधर्मस्थानच । यदिवा धर्मादनपेतं धर्म्यं विपरीतमधर्म्यं । कारणशुद्ध्या च कार्यशुद्धिर्नवतीत्याह । उपशांतं यत्तद्धर्मस्थानमनुपशांतं वाऽधर्मस्थानं तत्रोपशांते उपशमप्रधाने धर्मस्थाने ऽधर्मस्थानेवा केचन महासत्वाः समासन्नोत्तरशुनादयोवर्तंते । परेच तद्विपर्यस्ते विपर्यस्तमतयः संसाराजिप्वंगिणोऽधोऽधोगतयोवर्तंते । इहच यद्यप्यनादिनवाभ्यासादिंद्रियानुकूलतया प्रायशः पूर्वमधर्मप्रवृत्तोनवति पश्चात्सदुपदेशयोग्याचार्यसंसर्गाद्धर्मस्थाने प्रवर्तते । तथाप्यन्यर्हितत्वात्पूर्वं धर्मस्थानमुपशमस्थानच प्रदर्शितं पश्चात्तद्विपर्यस्तमिति ॥ १ ॥ सांप्रतं तु यत्र प्राणिनामनुपदेशः स्वपरप्रवृत्त्यादावेव स्थानं नवति तदधिकृत्याह । (तउणंइत्यादि) तत्रेति वाक्योपन्यासार्थे । णमिति वाक्यालंकारे । योऽसौ प्रथमानुष्ठेयतया प्रथमस्याधर्मपक्षस्य स्थानस्य विविधोनंगोविनंगोविचारस्तस्यायमर्थइति । इहास्मिन् जगति प्राच्यादिषु दिक्षु मध्येऽन्यतरस्यां दिशि सति विद्यते एके केचन मनुष्याः पुरुषास्तेचैव नूतानवतीत्याह । तद्यथा । आरायाता सर्वहेयधर्मेन्यइत्यार्यास्तद्विपरीताश्चाऽनार्याएके केचन नवति यावद्रूपाः सुरूपाश्चेति । तेषां चाऽऽर्यादीनामिदं वक्ष्यमाणमेतद्रूपं । दडय

धकारणानि सम्यक्परिहर्तव्यानि तद्विपरीतानि च मोक्षसाधनानि आसेवितव्यानि इत्यनेन संबंधेनायातस्याध्ययनस्योपक्रमादीनि चत्वार्यनुयोगद्वाराणि जवति । तत्राप्युपक्रमांतर्गतोऽर्थाधिकारोयं । तद्यथा कर्मणा बंधोऽनेन प्रतिपाद्यते तद्विमोक्षश्चेति । नामनिष्पन्नेतु निक्षेपे क्रियास्थानमिति द्विपद नाम। तत्रापि क्रियापदनिक्षेपार्थं प्रस्तावमारचयन्निर्युक्तिकृदाह । "किरियाउन्नणियाउं, किरियाठाणति तेण अज्झयणं ॥ अहिगारो पुण जणिउं, बंधे तह मोरकमग्गेय" ॥ १५७ ॥ (किरियाउ इत्यादि) तत्र क्रियतइति क्रियास्ताश्च कर्मबंधकारणत्वेनावश्यकातर्वर्तिनि प्रतिक्रमणाध्ययने (पडिक्कमामितेरसहिंकिरियाठाणेहिंति) अस्मिन्सूत्रेऽजिहिता । यदि वैदिकक्रियाजणिताश्चजिहितास्तेनेदमध्ययनं क्रियास्थानमित्युच्यते । तच्च क्रियास्थानं क्रियावत्स्वेव जवति नाक्रियावत्सु । क्रियावतश्च केचिद्बध्यते केचिन्मुच्यतेऽतोध्ययनार्थाधिकारः पुनरजिहितोबंधे तथा मोक्षमार्गेचेति । तत्र नामस्थापने सुगमत्वादनादृत्य इव्यादिका क्रिया प्रतिपादयितुमाह । " दवे किरिए अवणय, पयोगुवायकरणिज्ज समुदाणे ॥ इरियावहसमत्तो, सम्मत्तेचैव मिछत्ते" ॥ १५८ ॥ दवेइत्यादि) तत्र इव्यविपये या क्रिया एजनता । एजृकंपने । जीवस्याजीवस्य वा कंपनरूपा चलनस्वजावा सा इव्यक्रिया। सापि प्रयोगाद्विस्रसया वा जवेत् । तत्राप्युपयोगपूर्विका वाऽनुपयोगपूर्विका वाऽक्षिनिमेपमात्रादिका वा सा सर्वा इव्यक्रियेति । जावक्रियात्विय । तद्यथा प्रयोगक्रिया उपायक्रिया करणीयक्रिया समुदानक्रिया ईर्यापथक्रिया सम्यक्त्वक्रिया मिथ्यात्वक्रिया चेति । तत्र प्रयोगक्रिया मनोवाक्कायलक्षणा त्रिधा । तत्र स्फुरन्निर्मनोइव्यैरात्मनउपयोगोजवत्येव वाक्काययोरपि वक्तव्य । तत्र शब्दे निष्पाद्ये वाक्काययोर्द्वयोरप्युपयोग । तथा चोक्त । गिण्हइ य काइएणं, णिसिरइ तहवा इएण जोगेण ॥ गमनादिका तु कायक्रियेव। उपायक्रियातु घटादिकं इव्यं येनोपायेन क्रियते । तद्यथा । मृत्खननमर्दनचक्रारोपणदंडचक्रसलिलकुंजकारव्यापारैर्यावन्निरुपायै क्रियते सा सर्वोपायक्रिया । करणीयक्रियातु यद्येन प्रकारेण करणीय तत्तेनैव क्रियते नान्यथा । तथाहि । घटोमृत्पिंडादिकयैव क्रियते न पाषाणसिकतादिकयेति ३ समुदानक्रियातु यत्कर्म प्रयोगगृहीतं समुदायावस्थं सत्प्रकृतिस्थित्यनुजावप्रदेशरूपतया यया व्यवस्थाप्यते सा समुदानक्रिया । साच मिथ्यादृष्टेरारभ्य सूक्ष्मसंपरायं यावत् जवति । ४ ईर्यापथक्रिया तूपशांतमोहादारभ्य सयोगिकेवलिनं यावदिति ५ सम्यक्त्वक्रिया तु सम्यग्दर्शनयोग्या कर्मप्रकृती सप्तसप्ततिसंख्या यया बध्नाति साऽजिधीयते । मिथ्यात्वक्रिया तु सर्वा प्रकृतीर्विंशत्युत्तरसंख्यास्तीर्थंकराहारकशरीरतदंगोपांगत्रिकरहिता यया बध्नाति सामिथ्यात्वक्रियेत्यजिधीयते । सांप्रत स्थाननिक्षेपार्थमाह । " नाम ठवणा दविए, खेत्ते द्धाउद्ध उवरवीवसहि । संजम प

अर्थ-(पढमे दमसमादाणे के०) त्यां पहेलोजे क्रिया स्थानक ते (अट्ठादमवत्तिएत्ति आहिज्जइ के०) अर्थ दम प्रत्ययिक एवे नामे कहियेंछेये (सेजहाणामए के०) ते यथा दृष्टांते कहेछे णाम एवी संनावनाये छे (केइपुरिसे के०) कोइएक पुरुष, (आयहेउवा के०) पोताने अर्थ, अथवा (णाइहेउवा के०) ज्ञाति स्वजनादिकने अर्थे, (आगारहेउवा के०) घरने अर्थे, (परिवारहेउवा के०) दास दासी कुमारादिक परिवारने अर्थे, (मित्तहेउवा के०) मित्रने अर्थे, (णागहेउवा के०) नागकुमार देवताने अर्थे, (नूतहेउवा के०) नूत देवताने अर्थे, (जखहेउवा के०) यक्ष देवताने अर्थे, (तंदमतसथावरेहिंपाणेहिं के०) ते दम, त्रस अने स्थावर प्राणीउने विषे (सयमेवणिसिरिंति के०) स्वयमेव एटले पोतेंज उपघात करे (अमुेणविणिसिरावेति के०) अनेरा बीजा पासे उपघात करावे (अणुविणिसिरिंतंसमणुजाणइ के०) अनेरो बीजो कोइ उपघात करतो होय तेने अनुमोदे (एवखलु के०) एरीतें निश्चे थकी (तस्सतप्पत्तियसावज्जंति के०) करण करावण अने अनुमतियें करी करे, तेहने तत्प्रत्ययिक सावद्य पाप कर्म (आहिज्जइ के०) बधाय (पढमेदमसमादाणेअट्ठादमवत्तिएत्तियाहिए के०) एटले प्रथम क्रिया स्थानक अर्थदम प्रत्यविक एवे नामे कह्यु ॥ ५ ॥

॥ दीपिका-प्रथम दंडसमादानमर्थदंडप्रत्ययइत्याख्यायते। तद्यथा नाम कश्चित्पुरुष आत्महेतुमात्मार्थं ज्ञातिहेतु स्वजनाद्यर्थं आगारहेतु गृहार्थं परिवारार्थं मित्रनागनूतयक्षाद्यर्थं तं दंड त्रसस्थावरेषु प्राणिषु स्वयं निसृजति निक्षिपति अन्येनापि कारयति अन्यं निसृजतं समनुजानीते एवं तस्य तत्प्रत्ययिकं सावद्य कर्म आधीयते संबध्यते एतत्प्रथमं दंडसमादानमर्थदंडप्रत्ययिकमित्याख्यातं ॥ ५ ॥

॥ टीका-यथोद्देशस्तथा निर्देशइतिकृत्वा प्रथमक्रियास्थानादारभ्य व्याचिख्यासुराह। (पढमे इत्यादि) यत्प्रथममुपात्तं दंडसमादानमर्थायदंडमित्येवमाख्यायते। तस्यायमर्थः। तद्यथा नामकश्चित्पुरुषः। पुरुषग्रहणमनुक्तमुपलक्षणं। सर्वोपि चातुर्गतिकः प्राण्यात्मनिमित्तमात्मार्थं तथाज्ञिज्ञातिनिमित्तं स्वजनाद्यर्थं तथाऽगारं गृहं तन्निमित्तं तथा परिवारोदासीकर्मकरादिकः परिकरोवा गृहादेर्वृत्त्यादिकस्तन्निमित्तं तथा मित्रनागनूतयक्षाद्यर्थं तथानूतं स्वपरोपघातरूपं दंड त्रसस्थावरेषु स्वयमेव निसृजति निक्षिपति दंडमिव दंडमुपरि पातयति प्राण्युपमर्दकारिणीं क्रियां करोतीत्यर्थः। तथाऽन्येनापि कारयत्यपरं दंडं निसृजतं समनुजानीते। एवं कृतकारितानुमतिभिरेव तस्याऽनात्मज्ञस्य तत्प्रत्ययिकं सावद्यक्रियापात्तं कर्माधीयते संबध्यतेइति। एतत्प्रथमं दंडसमादानमर्थदंड प्रत्ययिकमित्याख्यातमिति ॥ ५ ॥

तीति दंड पापोपादानसंकल्पस्तस्य समादानं ग्रहणं (सपेहाएत्ति) सप्रेक्ष्य । तच्चतुर्गति कानामन्यतमस्य नवतीति दर्शयति । (तंजहेत्यादि) तद्यथा नारकादिषु ये चान्ये त थाप्रकारास्तद्देदवर्तिनः सुवर्णदुर्वर्णादयः प्राणाः प्राणिनोविद्यासोवेदनाज्ञानं तद्देदयं त्यनुनवति । यदिवा सातासातरूपां वेदनामनुनवतीत्यत्र चत्वारोनंगाः । तद्यथा । संज्ञि नोवेदनामनुनवति विदंतिच १ सिद्धास्तु विदंति नानुनवति २ असंज्ञिनोऽनुनवति न पुनर्विदंति ३ अजीवास्तु न विदंति नाप्यनुनवंतीति ४ इह पुनः प्रथमतृतीयान्यामधि कारोद्दितीयचतुर्थावेवस्तुनूताविति । तेषांच नारकतिर्यङ्मनुष्यदेवानां तथाविधज्ञानव तामिमानि वक्ष्यमाणलक्षणानि त्रयोदशस्थानानि नवंतीत्येवमाख्यातं तीर्थकरगणधरा दिनिरिति । कानि पुनस्तानीति दर्शयितुमाह । (तंजहेत्यादि) तद्यथेत्ययमुदाहरणवा क्योपन्यासार्थः । आत्मार्थाय स्वप्रयोजनकृते दंडोऽर्थदंडः पापोपादानं १ तथाऽनर्थदं डइति निष्प्रयोजनमेव सावद्यक्रियानुष्ठानमनर्थदंडः । तथा हिंसनं हिंसा प्राण्युपमर्दरूपा तया सैव वा दंडोहिंसादंडः तथा ऽकस्मादनुपयुक्तस्य दंडो ऽकस्माद्दंडोऽन्यस्य क्रिययान्यस्य व्यापादनमिति ४ तथा दृष्टेर्विपर्यासोरज्जुमिव सर्पबुद्धिस्तया दंडोदृष्टिविपर्यासोऽबुद्धिदं डस्तद्यथा लेष्टुकादिबुध्या शराद्यनिघातेन चटकादिव्यापादनं । तथा मृषावादप्रत्ययिकः सच सद्भूतनिन्हवासद्भूतारोपणं ६ तथा अदत्तस्य परकीयस्यादानं स्वीकरणमदत्तादानं स्तेयं तत्प्रत्ययिकोदंडइति ७ तथाऽत्मन्यध्यध्यात्मं तत्र नव आध्यात्मिकोदंडस्तद्यथा नि र्निमित्तमेव डुर्मनाउपहतमनः संकल्पोहृदयेन म्ल्हियमाणश्चिंतासागरावगाढः संतिष्ठते ८ तथा जात्याद्यष्टमदस्थानोपहतमनाः परावमदर्शी तस्य मानप्रत्ययिकोदंडोनवति ९ तथा मित्राणामुपतापेन दोषोमित्रदोषस्तत्प्रत्ययिकोदंडोनवति १० तथा माया पर वचनबुद्धिस्तया दंडोमायाप्रत्ययिकः ११ तथा लोनप्रत्ययिकोलोननिमित्तोदंडइति १२ तथा एवं पंचनिः समितिनिः समितस्य तिसृनिर्गुप्तिनिर्गुप्तस्य सर्वोपयुक्तस्येर्याप्रत्ययिकः सामान्येन कर्मबंधोनवति । एतच्च त्रयोदशं १३ क्रियास्थानमिति ॥ ४ ॥

पढमे दंमसमादाणे अट्ठादंमवत्तिएत्ति आहिज्जइ सेजहा णामए केइ पुरिसे आयहेउंवा णाइहेउंवा आगारहेउंवा परिवारहेउंवा मित्तहेउंवा णागहेउंवा नूतहेउंवा जस्कहेउंवा तं दंमं तसथावरेहिं पाणेहिं सयमे व णिसिरिति अस्सेणविणिसिरावेति अस्मंपि णिसिरंतं समणुजाण इ एवं खलु तस्स तप्पत्तियं सावज्जंति आहिज्जइ पढमे दंमसमादाणे अट्ठादंमवत्तिएत्ति आहिए ॥ ५ ॥

अर्थ-(पढमे दमसमादाणे के०) त्या पहेलोजे क्रिया स्थानक तें (अहादमवत्तिएत्ति आहिज्जइ के०) अर्थ दम प्रत्ययिक एवे नामे कहियेछेये (सेजहाणामए के०) ते यथा दृष्टाते कहेछे णाम एवी सनावनाये छे (केइपुरिसे के०) कोइएक पुरुष, (आयहेउवा के०) पोताने अर्थे, अथवा (णाइहेउवा के०) ज्ञाति स्वजनादिकने अर्थे, (आगारहेउवा के०) घरने अर्थे, (परिवारहेउवा के०) दास दासी कुमारादिक परिवारने अर्थे, (मित्तहेउवा के०) मित्रने अर्थे, (णागहेउवा के०) नागकुमार देवताने अर्थे, (जूतहेउवा के०) जूत देवताने अर्थे, (जक्कहेउवा के०) यक्ष देवताने अर्थे, (तंदमतसथावरेहिपाणेहिं के०) ते दम, त्रस अने स्थावर प्राणीउने विषे (सयमेवणिसिरिंति के०) स्वयमेव एटले पोतेंज उपघात करे (अखेणविणिसिरावेति के०) अनेरा बीजा पासे उपघात करावे (अन्नपिणिसिरितंसमणुजाणइ के०) अनेरो बीजो कोइ उपघात करतो होय तेने अनुमोदे (एवखलु के०) एरीते निश्चे थकी (तस्सतप्पत्तियसावज्जति के०) करण करावण अने अनुमतिये करी करे, तेहने तत्प्रत्ययिक सावद्य पाप कर्म (आहिज्जइ के०) बधाय (पढमेदमसमादाणेअहादमवत्तिएत्तियाहिए के०) एटले प्रथम क्रिया स्थानक अर्थदम प्रत्ययिक एवे नामे कह्यु ॥ ५ ॥

॥ दीपिका-प्रथम दंडसमादानमर्थदंडप्रत्ययइत्याख्यायते । तद्यथा नाम कश्चित्पुरुष आत्महेतुमात्मार्थं ज्ञातिहेतु स्वजनाद्यर्थं आगारहेतु गृहार्थं परिवारार्थं मित्रनागजूतयक्षाद्यर्थं तं दंड त्रसस्थावरेषु प्राणिषु स्वयं निसृजति निक्षिपति अन्येनापि कारयति अन्य निसृजत समनुजानीते एव तस्य तत्प्रत्ययिक सावद्य कर्म आधीयते सबध्यते एतत्प्रथम दंडसमादानमर्थदंडप्रत्ययिकमित्याख्यातं ॥ ५ ॥

॥ टीका-यथोद्देशस्तथा निर्देशइतिकृत्वा प्रथमाक्रियास्थानादारन्य व्याचिख्यासुराह । (पढमे त्यादि) यत्प्रथममुपात्त दंडसमादानमर्थायदंडमित्येवमाख्यायते । तस्यायमर्थः । तद्यथा नामकश्चित्पुरुष । पुरुषग्रहणमनुक्तमुपलक्षण । सर्वोपि चातुर्गतिक प्राण्यात्मनिमित्तमात्मार्थं तथानिज्ञातिनिमित्त स्वजनाद्यर्थं तथाऽगार गृह तन्निमित्त तथा परिवारोदासीकर्मकरादिक परिकरोवा गृहादेर्वृत्त्यादिकस्तन्निमित्त तथा मित्रनागजूतयक्षाद्यर्थं तथाजूतं स्वपरोपघातरूप दंड त्रसस्थावरेषु स्वयमेव निसृजति निक्षिपति दंडमिव दंडमुपरि पातयति प्राण्युपमर्दकारिणीं क्रिया करोतीत्यर्थः । तथाऽन्येनापि कारयत्यपरं दंड निसृजतं समनुजानीते । एव कृतकारितानुमतिनिरेव तस्याऽनात्मज्ञस्य तत्प्रत्ययिक सावद्यक्रियोपात्त कर्माधीयते सबध्यतेइति । एतत्प्रथम दंडसमादानमर्थदंडप्रत्ययिकमित्याख्यातमिति ॥ ५ ॥

तीति दंड पापोपादानसंकल्पस्तस्य समादान ग्रहण (सपेहाएत्ति) संप्रेक्ष्य । तच्चतुर्गति कानामन्यतमस्य जवतीति दर्शयति । (तंजहेत्यादि) तद्यथा नारकादिषु ये चान्ये त थाप्रकारास्तद्देदवर्तिन सुवर्णकुर्वर्णादय प्राणा प्राणिनोविद्यासोवेदनाझान तद्देवर्य त्यनुजवति । यदिवा सातासातरूपा वेदनामनुजवतीत्यत्र चत्वारोजंगा । तद्यथा । सझि नोवेदनामनुजवति विदतिच १ सिद्धास्तु विदति नानुजवति २ असझिनोऽनुजवति न पुनर्विदति ३ अजीवास्तु न विदति नाप्यनुजवतीति ४ इह पुन प्रथमतृतीयान्यामधि कारोद्वितीयचतुर्थाववस्तुनूताविति । तेषाच नारकतिर्यङ्मनुष्यदेवाना तथाविधझानव तामिमानि वक्ष्यमाणलक्षणानि त्रयोदशस्थानानि जवतीत्येवमाख्यात तीर्थकरगणधरा दिनिरिति । कानि पुनस्तानीति दर्शयितुमाह । (तंजहेत्यादि) तद्यथेत्ययमुदाहरणवा क्योपन्यासार्थ । आत्मार्थाय स्वप्रयोजनकृते दंडोऽर्थदंड पापोपादान १ तथाऽनर्थद डइति निष्प्रयोजनमेव सावद्यक्रियानुष्ठानमनर्थदंड । तथा हिंसन हिंसा प्राण्युपमर्दरूपा तया सैव वा दंडोहिंसादंड तथा ऽकस्मादनुपयुक्तस्य दंडो ऽकस्माद्दंडोऽन्यस्य क्रिययान्यस्य व्यापादनमिति ४ तथा दृष्टेर्विपर्यासोरज्जुमिव सर्पबुद्धिस्तया दंडोदृष्टिविपर्यासोऽबुद्धिद डस्तद्यथा लेष्टुकादिबुध्या शराद्यनिघातेन चटकादिव्यापादन । तथा मृषावादप्रत्ययिक सच सद्भूतनिन्ह्वासद्भूतारोपण ६ तथा अदत्तस्य परकीयस्यादान स्वीकरणमदत्तादान स्तेय तत्प्रत्ययिकोदंडइति ७ तथाऽत्मन्यध्यध्यात्म तत्र जव अत्ध्यात्मिकोदंडस्तद्यथा नि र्निमित्तमेव डुर्मनाउपहतमन संकल्पोहृदयेन न्हियमाणश्चितासागरावगाढ संतिष्ठते ७ तथा जात्याद्यष्टमदस्थानोपहतमना परावमदर्शी तस्य मानप्रत्ययिकोदंडोजवति ए तथा मित्राणामुपतापेन दोषोमित्रदोषस्तत्प्रत्ययिकोदंडोजवति १० तथा माया पर वचनबुद्धिस्तया दंडोमायाप्रत्ययिक ११ तथा लोजप्रत्ययिकोलोजनिमित्तोदंडइति १२ तथा एव पचनि समितिजि समितस्य तिसृनिर्गुप्तिनिर्गुप्तस्य सर्वोपयुक्तस्येर्याप्रत्ययिक सामान्येन कर्मबंधोजवति । एतच्च त्रयोदश १३ क्रियास्थानमिति ॥ ४ ॥

पढमे दंम समादाणे अट्ठादंम वत्तिएत्ति आहिज्जइ सेजहा णामए केइ पुरिसे आयहेउवा णाइहेउवा आगारहेउवा परिवारहेउवा मित्तहेउवा णागहेउवा जूतहेउवा जक्खहेउवा त दंम तसथावरेहिं पाणेहिं सयमे व णिसिरिति असेणविणिसिरावेति अस्मपि णिसिरित समणुजाण इ एव खलु तस्स तप्पत्तिय सावज्जति आहिज्जइ पढमे दंमसमादाणे अट्ठादंमवत्तिएत्ति आहिए॥ ५ ॥

अर्थ–(पढमे दंमसमादाणे के०) त्यां पहेलोजे क्रिया स्थानक तें (अट्ठादंमवत्तिएत्ति आहिज्जइ के०) अर्थ दंम प्रत्ययिक एवे नामे कहियेछेये (तेजहाणामए के०) ते यथा दृष्टांते कहेछे णाम एवी संभावनायें छे (केइपुरिसे के०) कोइएक पुरुष, (आयहेउवा के०) पोताने अर्थ, अथवा (णाइहेउवा के०) ज्ञाति स्वजनादिकने अर्थे, (आगारहेउवा के०) घरने अर्थे, (परिवारहेउवा के०) दास दासी कुमारादिक परिवारने अर्थे, (मित्तहेउवा के०) मित्रने अर्थे, (णागहेउवा के०) नागकुमार देवताने अर्थे, (नूतहेउवा के०) नूत देवताने अर्थे, (जरकहेउवा के०) यक्ष देवताने अर्थे, (तंदंमतसथावरेहिंपाणेहिं के०) ते दंम, त्रस अने स्थावर प्राणीउंने विषे (सयमेवणिसिरिंति के०) स्वयमेव एटले पोतेंज उपघात करे (अएणेणविणिसिरावेति के०) अनेरा बीजा पासे उपघात करावे (अएणंपिणिसिरितंसमणुजाणइ के०) अनेरो बीजो कोइ उपघात करतो होय तेने अनुमोदे (एवखलु के०) एरीतें निश्चे थकी (तस्सतप्पत्तियसावज्जंति के०) करण करावण अने अनुमतियें करी करे, तेहने तत्प्रत्ययिक सावद्य पाप कर्म (आहिज्जइ के०) बधाय (पढमेदंमसमादाणेअट्ठादंमवत्तिएत्तिआहिए के०) एटले प्रथम क्रिया स्थानक अर्थदंम प्रत्ययिक एवे नामे कह्यु ॥ ५ ॥

॥ दीपिका–प्रथम दंडसमादानमर्थदंडप्रत्ययइत्याख्यायते । तद्यथा नाम कश्चित्पुरुष आत्महेतुमात्मार्थं ज्ञातिहेतु स्वजनाद्यर्थं आगारहेतु गृहार्थं परिवारार्थं मित्रनागनूतयक्षाद्यर्थं तं दंड त्रसस्थावरेषु प्राणिषु स्वयं निसृजति निक्षिपति अन्येनापि कारयति अन्यं निसृजंत समनुजानीते एवं तस्य तत्प्रत्ययिकं सावद्यं कर्म आधीयते संबध्यते एतत्प्रथमं दंडसमादानमर्थदंडप्रत्ययिकमित्याख्यातं ॥ ५ ॥

॥ टीका–यथोद्देशस्तथा निर्देशइतिकृत्वा प्रथमाक्रियास्थानादारभ्य व्याचिख्यासुराह । (पढमे त्यादि) यत्प्रथममुपात्तं दंडसमादानमर्थायदंडमित्येवमाख्यायते। तस्यायमर्थः । तद्यथा नामकश्चित्पुरुषः । पुरुषग्रहणमनुक्तमुपलक्षणं। सर्वोपि चातुर्गतिकः प्राण्यात्मनिमित्तमात्मार्थं तथान्निज्ञातिनिमित्तं स्वजनाद्यर्थं तथाऽगारं गृहं तन्निमित्तं तथा परिवारोदासीकर्मकरादिकः परिकरोवा गृहादेर्वृत्त्यादिकस्तन्निमित्तं तथा मित्रनागनूतयक्षाद्यर्थं तथानूतं स्वपरोपघातरूपं दंडं त्रसस्थावरेषु स्वयमेव निसृजति निक्षिपति दंडमिव दंडमुपरि पातयति प्राण्युपमर्दकारिणीं क्रियां करोतीत्यर्थः । तथाऽन्येनापि कारयत्यपरं दंडं निसृजंतं समनुजानीते । एवं कृतकारितानुमतिन्निरेव तस्याऽनात्मज्ञस्य तत्प्रत्ययिकं सावद्यक्रियोपात्तं कर्माधीयते संबध्यतेइति । एतत्प्रथमं दंडसमादानमर्थदंडप्रत्ययिकमित्याख्यातमिति ॥ ५ ॥

अहावरे दोच्चे दंमसमादाणे अणट्ठादंमवत्तिएत्ति आहिज्जइ से जहा णा मए केइ पुरिसे जे इमे तसा पाणा नवंति ते णो अच्चाए णोअजिणाए णो मसाए णोसोणियाए एव हिययाए पित्ताए वसाए पिछाए पुछाए वालाए सिंगाए विसाणाए दंताए दाढाए णहाए एहारुणिए अठीए अठिमजा ए णोहिंससुमेत्ति णोहिंसितिमेत्ति णोहिंसिस्सतिमेत्ति णोपुत्तपोसणाए णोपसुपोसणयाए णोआगारपरिवूहणताए णोसमणमाहणवत्तणाहेउ णोतस्स सरीरगस्स किंचिविप्परियादित्ता नवंति सेहंता छेत्ता नेत्ता लुंपइ त्ता विलुंपइत्ता उद्दवइत्ता उज्झिउ बाले वेरस्स आनागी नवति अणट्ठा दंमे ॥ ६ ॥ से जहा णामए केइ पुरिसे जे इमे थावरा पाणा नवंति तंजहा इक्कडाइवा कडिणाइवा जंतुगाइवा परगाइवा मोक्खाइवा तणाइवा कु साइवा कुछगाइवा पप्पगाइवा पलालाइवा ते णोपुत्तपोसणाए णोपसु पोसणाए णोआगारपडिवूहणयाए णोसमणमाहणपोसणयाए णोतस्स सरीरगस्स किंचिविपरियाइ नवंति सेहंता छेत्ता नेत्ता लुंपइत्ता विलु पइत्ता उद्दविइत्ता उज्झिउ बाले वेरस्स आनागी अणट्ठादंमे ॥ ७ ॥ सेजहा णामए केइ पुरिसे कछसिवा दहसिवा उदगसिवा दवियसिवा वलय सिवा णूमसिवा गहणसिवा गहणविडुग्गसिवा वणसिवा वणविडुग्ग सिवा पव्वयसिवा पव्वयविडुग्गसिवा तणाइ ऊसविय सयमेव अगणि काय णिसिरिंति अणेणवि अगणिकाय णिसिरावेति अणपि अगणिकाय णिसिरिंत समणुजाणइ अणट्ठादंमे एव खलु तस्स तप्पत्तियसावज्जेति आहिज्जइ दोच्चे दंमसमादाणे अणट्ठादंमवत्तिएत्ति आहिए ॥ ८ ॥

अर्थ–(अहावरेदोच्चेदंमसमादाणेअणट्ठादंमवत्तिएत्तिआहिज्जइ के०) हवे अपर बीजो क्रिया स्थानक अनर्थदंम, प्रत्ययिक कहिये बैये (सेजहाणामए के०) ते यथादृष्टांते नाम एवी सनावनाये जेम (केइपुरिसे के०) कोइएक पुरुष, नि कारणे, निर्विवेक पणे, जीवहिंसा करे, तें कहेबे (जेइमेतसापाणानवंति के०) जे ए संसार मांहे प्रत्यक्ष ल क्षण त्रस प्राणी, ढागादिक बे ते प्राणीने निरर्थक हणे, ते केवीरीते हणे तोके (तेणोअ च्चाए के०) तेजीवोने शरीरने अर्थे न हणे, (णोअजिणाए के०) चर्मने अर्थे न ह

णे, (णोमसाए के०) मांसने अर्थे न हणे, (णोसोणियाए के०) शोणितने अर्थे न हणे, (एवहियियाए के०) एमज हियो एटले हृदयना मास ने अर्थे न हणे, (पित्ता ए के०) पित्तने अर्थे न हणे, (वसाए के०) वसाने अर्थे न हणे, (पिछाए के०) पिछने अर्थे न हणे, (पुछाए के०) पुछने अर्थे न हणे, (वालाए के०) वाल रोमने अर्थे न हणे, (सिंगाए के०) सिंगडाने अर्थे न हणे, (विसाणाए के०) वृषण प्रताल पोइसने अर्थे न हणे, (दंताए के०) दांतने अर्थे न हणे, (दाढाए के०) दाढने अर्थे नहणे (णहा ए के०) नखने अर्थे न हणे, (ण्हारुणिए के०) नसा नाडीने अर्थे न हणे, (अछिए के०) अस्थिने अर्थे न हणे, (अछिमजाए के०) हाडकानी मिजाने अर्थे न हणे, एटला ए कार णने अर्थे कोइ जीवने हणे नहीं, परंतु कारण विना जीवने हणे, (णोहिंससुमित्ति के०) अतीतकाले पण एटला कारण जणी जीव हण्या नथी, तथा (णोहिंसितिमे त्ति के०) वर्त्तमान काले पण हणे नहीं (णोहिंसिस्सतिमेत्ति के०) आगमिक काले पण हणशे नहीं, (णोपुत्तपोसणाए के०) एवु पण न जाणे जे ए जीवनो विनाश क रीने म्हारा पुत्रनु पोषण करीश (णोपसुपोसणयाए के०) पशुनु पोषण कर शु, एम पण न जाणे, (णोआगारपरिवूहणताए के०) ग्रह घरनी वृद्धि शांतिक पुष्टि कादिक निमित्ते पण हणे नहीं (णोसमणमाहणवत्तणाहेउ के०) श्रमण ब्राह्मणनु पोष ण करवा निमित्ते पण न हणे (णोतस्ससरीरगस्सकिंचिविप्परियादित्तानवति के०) तथा पोताना शरीरना परित्राणने अर्थे एटले पोषणनेअर्थे पण न हणे किंतु? क्रीडा निमित्ते, अ थवा व्यसने करी निरर्थक पणे (सेहंता के०) ते जीवनो हणनार थाय दंडादिक ना प्रहारे करी जीवने हणे, (छेत्ता के०) जीवोना कर्ण नासिकादिक छेदे, (नेत्ता के०) नेदे, शूलिकारोपण करे (लुपइत्ता के०) अंगना अवयव कापी नाखे (विलुपइत्ता के०) चामडी उपाडी उखेडी नाखे, (उद्दवइत्ता के०) नाना प्रकारना पीडाकारी उप द्रव उपजावे, (उज्झिउबालेवेरस्सआजागीनवति के०) एतावत्ता तेबाल विवेक रहितने नि केवल वैरनो विभागी थाय (अणछादंम के०) एटले त्रस जीव आश्रित अनर्थ दंम कह्यो ॥६॥ (हवे स्थावर जीव आश्रित अनर्थ दंम कहेछे (सेजहाणामए के०) ते यथा दृष्टांते जेम (केइपुरिसे के०) कोइएक पुरुष मार्गे जतो थको निरर्थक निर्विवेक पणे वृक्षना पल्लवने दंमादिके करी कापकी नाखे, परंतु लेवानी वांछा कांइ न होय, वली (जेइमेथावरापाणानवति के०) जे ए स्थावर प्राणी होय (तंजहा के०) ते देखाडेछे (इक्कडा इवा के०) तृण विशेष प्रसिद्धछे (कडिणाइवाजंतुगाइवापरगाइवा के०) वांसथकी उपनु जे तृण विशेष, जेणे करी फूल गुथाय ते जाणवु (मोरकाइवा के०) नदीमां थायछे ते, (त णाइवा के०) तृण प्रसिद्ध (कुसाइवा के०) मान, (कुछगाइवा के०) वनस्पति विशेष, (प

अहावरे दोच्चे दंमसमादाणे अणठादंमवत्तिएत्ति आहिज्जइ से जहा णा मए केइ पुरिसे जे इमे तसा पाणा भवति ते णो अच्चाए णोअजिणाए णो मंसाए णोसोणियाए एव हिययाए पित्ताए वसाए पिछाए पुछाए वालाए सिंगाए विसाणाए दंताए दाढाए णहाए एहारुणिए अट्ठीए अठिमजा ए णोहिंससुमेत्ति णोहिंसितिमेत्ति णोहिंसिस्सतिमेत्ति णोपुत्तपोसणाए णोपसुपोसणयाए णोआगारपरिवूहणताए णोसमणमाहणवत्तणाहेउ णोतस्स सरीरगस्स किंचिविप्परियादित्ता भवति सेहंता छेत्ता भेत्ता लुंपइ त्ता विलुंपइत्ता उद्दवइत्ता उज्जिउ बाले वेरस्स आभागी भवति अणठा दंमे ॥ ६ ॥ से जहा णामए केइ पुरिसे जे इमे थावरा पाणा भवति तंजहा इक्कडाइवा कडिणाइवा जंतुगाइवा परगाइवा मोक्खाइवा तणाइवा कु साइवा कुच्चगाइवा पप्पगाइवा पलालाइवा ते णोपुत्तपोसणाए णोपसु पोसणाए णोआगारपडिवूहणयाए णोसमणमाहणपोसणयाए णोतस्स सरीरगस्स किंचिविपरियाइ भवति सेहंता छेत्ता भेत्ता लुंपइत्ता विलुं पइत्ता उद्दविइत्ता उज्जिउ बाले वेरस्स आभागी अणठादंमे ॥ ७ ॥ सेजहा णामए केइ पुरिसे कच्छंसिवा दहंसिवा उदगंसिवा दवियंसिवा वलय सिवा णूमंसिवा गहणंसिवा गहणविडुग्गंसिवा वणंसिवा वणविडुग्ग सिवा पव्वयंसिवा पव्वयविडुग्गंसिवा तणाइ ऊसविय सयमेव अगणि काय णिसिरिंति अलेणवि अगणिकाय णिसिरावेति अएपि अगणिकाय णिसिरित समणुजाणइ अणठादंमे एव खलु तस्स तप्पत्तियसावज्जेति आहिज्जइ दोच्चे दंमसमादाणे अणठादंमवत्तिएत्ति आहिए ॥ ८ ॥

अर्थ-(अहावरेदोचेदंमसमादाणेअणठादंमवत्तिएत्तिआहिज्जइ के०) हवे अपर बीजो क्रिया स्थानक अनर्थदंम, प्रत्ययिक कहिये छेये (सेजहाणामए के०) ते यथादृष्टांते नाम एवी संभावनाये जेम (केइपुरिसे के०) कोइएक पुरुष, नि कारणे, निर्विवेक पणे, जीवहिंसा करे, तें कहेछे (जेइमेतसापाणाभवति के०) जे ए संसार मांहे प्रत्यक्ष ल क्षण त्रस प्राणी, छागादिक छे ते प्राणीने निरर्थक हणे, ते केवीरीते हणे तोके (तेणोअ चाए के०) तेजीवोने शरीरने अर्थे न हणे, (णोअजिणाए के०) चर्मने अर्थे न ह

णे, (णोमसाए के०) मासने अर्थे न हणे, (णोसोणियाए के०) शोणितने अर्थे न हणे, (एवहियियाए के०) एमज हियो एटले ऋदयना मास ने अर्थे न हणे, (पित्ता ए के०) पित्तने अर्थे न हणे, (वसाए के०) वसाने अर्थे न हणे, (पिछाए के०) पिछने अर्थे न हणे, (पुछाए के०) पुछने अर्थे न हणे, (वालाए के०) वाल रोमने अर्थे न हणे, (सिगाए के०) सिगडाने अर्थे न हणे, (विसाणाए के०) वृषण प्रताल पोइसने अर्थे न हणे, (दताए के०) दातने अर्थे न हणे, (दाढाए के०) दाढने अर्थे नहणे (णहा ए के०) नखने अर्थे न हणे, (एहारुणिए के०) नसा नाडीने अर्थे न हणे, (अछिए के०) अस्थिने अर्थे न हणे, (अछिमजाए के०) हाडकानी मिजाने अर्थे न हणे, एटला ए कारणने अर्थे कोइ जीवने हणे नहीं, परंतु कारण विना जीवने हणे, (णोहिंसंसुमिति के०) अतीतकाले पण एटला कारण नणी जीव हण्या नथी, तथा (णोहिंसितिमे त्ति के०) वर्त्तमान काले पण हणे नही (णोहिंसिस्सतिमेत्ति के०) आगमिक काले पण हणशे नही, (णोपुत्तपोसणाए के०) एवु पण न जाणे जे ए जीवनो विनाश क रीने महारा पुत्रनु पोषण करीश (णोपसुपोसणयाए के०) पशुनु पोषण करं छु, एम पण न जाणे, (णोआगारपरिवूहणताए के०) अह घरनी वृद्धि ज्ञातिक पुष्टि कादिक निमित्तें पण हणे नहीं (णोसमणमाहणवत्तणाहेउ के०) श्रमण ब्राह्मणनु पोष ण करवा निमित्ते पण न हणे (णोतस्ससरीरगस्सकिंचिविप्परियादित्तानवति के०) तथा पोताना शरीरना परित्राणने अर्थे एटले पोषणनेअर्थें पण न हणे किंतु क्रीडा निमित्ते, अ थवा व्यसने करी निरर्थक पणे (सेहंता के०) ते जीवनो हणनार थाय दमादिक ना प्रहारे करी जीवने हणे, (छेत्ता के०) जीवोना कर्ण नासिकादिक छेदे, (नेत्ता के०) नेदे, शूलिकारोपण करे (लुपइत्ता के०) अंगना अवयव कापी नाखे (विलुपइत्ता के०) चामडी उपाडी उखेडी नाखे, (उद्दवइत्ता के०) नाना प्रकारना पीडाकारी उप इव उपजावे, (उज्जिउवालेवेरस्सआनागीनवति के०) एतावता तेबाल विवेक गर्भीने नि केवल वैरनो विनागी थाय (अणठादमे के०) एटले त्रस जीव आश्रित अनर्थ दम कह्यो ॥६॥ (हवे स्थावर जीव आश्रित अनर्थ दम कहेछे (सेजहाणामए के०) ते यथा दृष्टांते जेम (केइपुरिसे के०) कोइएक पुरुष मार्ग जतो थको निरर्थक निर्विवेक पणे वृक्षना पल्लवने दमादिके करी ऊाटकी नाखे, परतु लेवानी वाग काइ न होय, वली (जेइमेथावरापाणानवति के०) जे ए स्थावर प्राणी होय (तजहा के०) ते देखाडेछे (इक्कडा इवा के०) तृण विशेष प्रसिद्धछे (कडिणाइवाजतुगाइवापरगाइवा के०) वासथकी उपनु जे तृण विशेष, जेणे करी फूल गुथाय ते जाणवु (मोरकाइवा के०) नदीमा थायछे ते, (त णाइवा के०) तृण प्रसिद्ध (कुसाइवा के०) मान, (कुच्चगाइवा के०) वनस्पति विशेष, (प

प्पगाइवा के०) प्रसिद्ध तृण विशेष, एटला मांहें सर्वकाष्ट जाणवा (पलालएइवा के०) पलाल इत्यादि अनेक जगत् मांहेछे ते, पुत्र पोषवाने निमित्ते नहीं, तथा पशु पोषण करवाने अर्थे पण नहीं, आगार समारवाने अर्थे पण नहीं, श्रमण ब्राह्मणना पोष ण करवाने अर्थे पण नही, पोताना शरीरना पोषण करवाने अर्थे पण नही, एटले आत्मा ना त्राणने अर्थे पण नहीं किंतु? क्रीडा निमित्ते अथवा व्यसने करी निरर्थक ते जीव नो हणनार थाय ते दम्मादिके प्रहार करी छेदे, भेदे, अनेरा अंगनो अवयव कापे, ग ल उतारे, नाना प्रकारना पीडा कारी उपद्रव करे, एरीते ते बाल अविवेकी नि केवल वैरनो विभागी थाय एम वनस्पतिकाय आश्रि अनर्थ दंम कह्यो ॥७॥ (हवे अग्निकाय आ श्रि अनर्थ दंम कहेछे ते यथा दृष्टांते नाम एवी संभावनाये जेम कोइएक पुरुष विवे क विकल थको (कच्छसिवा के०) कच्छादिकने विषे, (उदगसिवा के०) पाणीने विषे, (दहसिवा के०) द्रहने विषे, (दवियंसिवा के०) समुद्र तथा नदीने विषे, (वलयंसि वा के०) नदियें वेष्टित भूमिकाने विषे, णूमसिवा के०) गर्त्तादिक तथा नीचीभूमिका ने विषे, (गहणसिवा के०) जल रहित स्थानक तथा अटवी माहेला क्षेत्रने विषे, (गहणविडुग्गसिवा के०) गहन अटवीमां वली विषम स्थानकने विषे (वण सिवा के०) वनने विषे, (वणविडुग्गसिवा के०) वनमांहे विषम स्थानकने वि षे, (पव्वयसिवा के०) पर्वतने विषे, (पव्वयविडुग्गसिवा के०) पर्वतमाहे विषम स्था नकने विषे, इत्यादिक देशस्थानकनेविषे, वर्त्ततो (तणाइकसविय के०) तृण दर्भादिक ए कठा करी करीने (सयमेवअगणिकायणिसिरति के०) वलीवली पोते अग्नि करवाने अ र्थे अग्निकायने तेमां प्रक्षेपे (असेणविअगणिकायणिसिरावेति के०) अन्य पासेअग्नि प्र क्षेपावे एटले बीजा पासे जलावे, (असुपिअगणिकायंणिसिरितंसमणुजाणइ के०) बीजो कोइ अग्निकायने तेमांहे प्रक्षेपतो होय तेने अनुमोदे,(अणछादमेएवखलु के०) अनर्थ दंम एम निश्चे तेने (तस्सतप्पत्तिय के०) तत्प्रत्ययिक एटले ते आश्रित (सावज्जेति के०) साव द्य कर्म (आहिज्जइ के०) बधाय एटले (दोच्चेदंमसमादाणेअणछादंमवत्तिएतिआहिए के०) ए बीजो क्रियास्थानक अनर्थ दंम समादान प्रत्ययिक कह्यो ॥ ८ ॥

॥ दीपिका—अथापरं द्वितीयं दंडसमादानमनर्थदंडप्रत्ययिकमित्यभिधीयते । तद्य थानाम कश्चित्पुरुषोनिर्निमित्तमेव प्राणिनोहंति । तदेवाह । ये इमे त्रसा प्राणिनस्तान् अर्चाशरीरं तदर्थं नहंति । अजिनं चर्म नापि तदर्थं । एवं मांसशोणितहृदयपित्तव सापिच्छपुच्छवालशृंगविषाणदंतदंष्ट्रानखस्नाय्वस्थिमज्जाइत्यादिनिमित्तमुद्दिश्य नैवाऽहिंसि पुर्नापि हिंसति नापि हिंसयिष्यति मां मदीयं चेति तथा नो पुत्रपोषणाय नापि पशु

पोषणाय अगार गृह तस्य परिबृंहण वृद्धिस्तदर्थं नोहिनस्ति तथा श्रमणब्राह्मणवर्तनहे तु यत्पाल्यते तस्य शरीरस्य किमपि परित्राणाय तत्प्राणिहिंसन न स्यात् इत्यादिहेतून् विनाऽसौ क्रीडया हंता भवति दंडादिभिश्छेत्ता कर्णादीनां भेत्ता शूलादिना लुंपयिता अंगा वयवकर्तनतोविलुंपयिता नेत्रोत्पाटनचर्मकर्तनादितोजीवितादपद्रावयिता स च सद्वि वेकमुज्झित्वा बालोऽज्ञोवैरस्य भागी भवति। पंचेंद्रियजीवपीडातोऽनर्थदंडउक्त ॥६॥ अथ स्थावरानाश्रित्याह। यथा कश्चित्पुरुष पथि गछन् निर्निमित्तमेव वृक्षादे पल्लवादिक दंडादिना प्रध्वंसयति। एतदेवाह। येऽमी स्थावरावनस्पतिकाया प्राणिन स्यु। त द्यथा। इक्कडादयोवनस्पतिविशेषास्तान् पत्रपुष्पफलादि निरपेक्ष क्रीडया छिनत्ति न पु त्रपोषणायेत्यादि पूर्ववत्। यावज्जन्मांतरानुबंधिनोवैरस्य भागी भवति। अयमनर्थदंडो वनस्पत्याश्रयउक्त ॥७॥ सांप्रतमग्न्याश्रितमाह। तद्यथानाम कश्चित्पुरुष कछे नदीजल वेष्टिते वृक्षादिमति प्रदेशे ह्रदेप्रतीते उदकेजलाशयमात्रे (दविर्यसि) तृणादिद्रव्यसमु दाये वलये वृत्ताकारनद्यादिजलकुटिलगतियुक्तप्रदेशे तमे अवतमसे गहने वृक्षवल्लीसमु दाये गहनविदुर्गे पर्वतैकदेशावस्थितवृक्षवल्लीसमुदाये वनविदुर्गे नानाविधवृक्षसमूहे एतेषु कछादिषु दशस्थानेषु तृणानि उत्सर्प्य ऊर्ध्वीकृत्य, स्वयमेवाऽग्निकायं निसृजति निक्षिपति अन्येन वाऽग्निकाय निसर्जयति निक्षेपयति अन्यमप्यग्निकाय निसृजंतं समनु जानीते अयमनर्थदंड। तदेव खलु तस्य तत्प्रत्ययिक दवदाननिमित्त सावद्य कर्मव्या ख्यातं। एतच्च द्वितीयमनर्थदंडसमादानमाख्यातमिति ॥ ८ ॥

॥ टीका–अथापरं द्वितीय दंडसमादानमनर्थदंडप्रत्ययिकमित्यभिधीयते तदधुना व्या ख्यायते। तद्यथानाम कश्चित्पुरुषोनिर्निमित्तमेव निर्विवेकतया प्राणिनोहिनस्ति। तदे व दर्शयितुमाह। (जेइमेइत्यादि) ये केचनामी संसारांतर्वर्तिन प्रत्यक्षावष्टादय प्राणि नस्ताश्चासौ हिंसन्नर्चाशरीर नो नैवार्चायै हिनस्ति तथाऽजिन चर्म नापि तदर्थमेव मा सशोणितहृदयपित्तवसापिछपुछवालशृंगविषाणनखस्नाय्वस्थिमज्जा इत्येवमादिक कार णमुद्दिश्य नैवाहिंसिषिपुर्नापि हिंसयिष्यंति मां मदीयं चेति तथा नो पुत्रपोषणायेति पुत्रा दिक पोषयिष्यामीत्येतदपि कारणमुद्दिश्य न व्यापादयति तथा नापि पशूनां पोषणाय तथाऽगार गृह तस्य परिबृंहणमुपचयस्तदर्थंवा न हिनस्ति तथा न श्रमणब्राह्मणवर्तनाहे तु तथा यत्नेन पालयितुमारब्ध नोत स्य शरीरस्य किमपि परित्राणाय तत्प्राणव्यपरो पण भवति इत्येवमादिक कारणमनपेक्ष्यैवासौ क्रीडया तच्छीलतया व्यसनेन वा प्राणिनां हंता भवति दंडादिभि। तथा छेत्ता भवति कर्णनासिकाविकर्तनतस्तया भेत्ता शूला दिना तथा लुंपयितान्यतरांगावयवविकर्तनतस्तया विलुंपयिताऽक्ष्युत्पाटनचर्मविकर्त्तनक

प्पगाइवा के०) प्रसिद्ध तृण विशेष, एटला मांहे सर्वकाष्ट जाणवा (पलालएइवा के०) पलाल इत्यादि अनेक जगत् मांहेछे ते, पुत्र पोषवाने निमित्ते नहीं, तथा पशु पोषण करवाने अर्थे पण नहीं, आगार समारवाने अर्थे पण नहीं, श्रमण ब्राह्मणना पोष ण करवाने अर्थे पण नहीं, पोताना शरीरना पोपण करवाने अर्थे पण नही, एटले आत्मा ना त्राणने अर्थे पण नहीं किंतु? क्रीडा निमित्ते अथवा व्यसने करी निरर्थक ते जीव नो हणनार थाय ते दमादिके प्रहार करी छेदे, भेदे, अनेरा अगनो अवयव कापे, ग ल उतारे, नाना प्रकारना पीडा कारी उपद्रव करे, एरीते ते बाल अविवेकी नि केवल वैरनो विनाशी थाय एम वनस्पतिकाय आश्रि अनर्थ दम कह्यो ॥७॥ (हवे अग्निकाय आ श्रि अनर्थ दम कहेछे ते यथा दृष्टाते नाम एवी संभावनाये जेम कोइएक पुरुष विवे क विकल थको (कछसिवा के०) कछादिकने विषे, (उदगसिवा के०) पाणीने विषे, (दहसिवा के०) इहने विषे, (दवियसिवा के०) समुद्र तथा नदीने विषे, (वलयसि वा के०) नदियें वेष्टित भूमिकाने विषे, णूमसिवा के०) गर्त्तादिक तथा नीचीभूमिका ने विषे, (गहणसिवा के०) जल रहित स्थानक तथा अटवी माहेला क्षेत्रने विषे, (गहणविडुग्गसिवा के०) गहन अटवीमा वली विषम स्थानकने विषे (वण सिवा के०) वनने विषे, (वणविडुग्गसिवा के०) वनमांहे विषम स्थानकने वि षें, (पव्वयंसिवा के०) पर्वतने विषे, (पव्वयविडुग्गसिवा के०) पर्वतमाहे विषम स्था नकने विषे, इत्यादिक देशस्थानकनेविषे, वर्त्ततो (तणाइऊसविय के०) तृण दर्भादिक ए कठा करी करीने (सयमेवअगणिकायणिसिरति के०) वलीवली पोते अग्नि करवाने अ र्थे अग्निकायने तेमां प्रक्षेपे (अस्सेणविअगणिकायणिसिरावेति के०) अन्य पासेअग्नि प्र क्षेपावे एटले बीजा पासे जलावे, (अस्सुपिअगणिकायंणिसिरितंसमणुजाणइ के०) बीजो कोइ अग्निकायने तेमाहे प्रक्षेपतो होय तेने अनुमोदें,(अणठादमेएवखलु के०) अनर्थ दम एम निश्चें तेने (तस्सतप्पत्तिय के०) तत्प्रत्ययिक एटले ते आश्रित (सावज्जेति के०) साव द्य कर्म (आहिज्जइ के०) बधाय एटले (दोच्चेदमसमादाणेअणठादमवत्तिएतिआहिए के०) ए बीजो क्रियास्थानक अनर्थ दम समादान प्रत्ययिक कह्यो ॥ ८ ॥

॥ दीपिका—अथापरं द्वितीयं दडसमादानमनर्थदंडप्रत्ययिकमित्यभिधीयते । तद्य थानाम कश्चित्पुरुषोनिर्निमित्तमेव प्राणिनोहंति । तदेवाह । ये इमे त्रसा प्राणिनस्तान् अर्चाशरीरं तदर्थं नहति । अजिनं चर्म नापि तदर्थं । एवं मांसशोणितहृदयपित्तव सापिछपुछवालशृंगविषाणदंतदंष्ट्रानखस्नाय्वस्थिमज्जाइत्यादिनिमित्तमुद्दिश्य नैवाऽहिंसि पुर्नापि हिंसति नापि हिंसयिष्यति मा मदीयं चेति तथा नो पुत्रपोषणाय नापि पशु

स्वजनादिकने हणशे (अन्निवा के०) अथवा तेना कोइएक बीजाने (हिंससुवा के०) अतीतकालें हण्योंते (हिंसइवा के०) वर्तमान कालें हणेछे (हिंसिस्सइवा के०) आग मिक कालें हणशे (तंदम्तसथावरेहिंपाणेहिंसयमेवणिसिरिंतिके०) एम जाणीने दमेक रीत्रसस्थावर प्राणीनो पोते घात करे, बीजानी पासे घात करावे, अथवा अन्य कोइ घात करतो होए तेने अनुमोदन आपे ए हिंसादम, एम निश्चे एने प्रत्यये एटले ते आश्रित सावद्यकर्म बधाय, एटले त्रीजो क्रिया स्थानक हिंसादम प्रत्ययिक एवे नामे कह्यो ॥ए॥

॥ दीपिका–अथ तृतीयमाह । अथापरं तृतीयं दंडसमादानं हिंसादंडप्रत्ययिक माख्यायते । तद्यथानाम कश्चित्पुरुषोमामयं घातयिष्यतीति मत्वा, सर्पादिकं हंति यथा कंसोदेवकीसुतान् परशुरामोवा यथा कार्तवीर्यं जघान । मदीयं पितरमन्यदीयस्य वा कस्यचित्सुवर्णपशुप्रभृतेरयमुपद्रवकारीति मत्वा, तत्र दमं निसृजति तदेव मा मदीयं अन्यमन्यदीयं वा हिंसितवान् हिनस्ति हिंसिष्यतीत्येवं संभाविते त्रसे स्थावरे वा तं दमं स्वयं निसृजति अन्येन निसर्जयति अन्यं निसृजतं समनुजानीते । एतत्तृतीयं दंड समादानं हिंसादंडप्रत्ययिकमाख्यातम् ॥ ए ॥

॥ टीका–तृतीयमधुना व्याचिख्यासुराह । (अहावरे इत्यादि) अथापरं तृतीयं दंडसमादानं हिंसादंडप्रत्ययिकमाख्यायते । तद्यथानाम कश्चित्पुरुष पुरस्कारं वहन् स्वतोमरणभीरुतया वा मामयं घातयिष्यतीत्येवं मत्वा, कंसवद्देवकीसुतान् जावतो जघान मदीयं वा पितरमन्यं वा मामकं ममीकारोपेतं परशुरामवत्कार्तवीर्यं जघाना न्यं वा कंचनायं सर्पसिंहादिकं व्यापादयिष्यतीति मत्वा सर्पादिकं व्यापादयति अन्यदीय स्य वा कस्यचिद्धिरण्यपश्वादेरयमुपद्रवकारीति कृत्वा तत्र दंडं निसृजति । तदेवमयं मा मदीयमन्यदीयं वा हिंसितवान् हिनस्ति हिंसिष्यतीतिवेत्येवं संभाविते त्रसे स्थावरे वा तं दंडं प्राणव्यपरोपणलक्षणं स्वयमेव निसृजति अन्येन निसर्जयति निसृजतं वाऽन्यं स मनुजानीते । इत्येतत्तृतीयं दंडसमादानं हिंसाप्रत्ययिकमाख्यातमिति ॥ ए ॥

अहावरे चउत्थे दम्समादाणे अकम्मादम्वत्तिएत्ति आहिज्जइ से जहा णामए केइ पुरिसे कच्छंसिवा जाव वणविदुग्गंसिवा मियवत्तिए मियसंक प्पे मियपणिहाणे मियवहाए गंता एए मियत्तिकाउं अन्नयरस्स मियस्स वहाए उसुआयामेत्ताणं णिसिरेज्जा स मियं वहिस्सामित्ति कट्टु तित्तिरंवा वट्टगंवा चडगंवा लावगंवा कवोयगंवा कविंवा कविंजलंवा निंधित्ता ज

रपादादिछेदनत परमाऽधार्मिकवत्प्राणिना निर्निमित्तमेव नानाविधोपायै पीडोत्पादको नवति तथा जीवितादप्यपद्रावयिता नवति सच सद्विवेकमुज्झित्वात्मान वा परित्यज्य बालवद्बालोऽज्ञोऽसमीक्षितकारितया जन्मांतरानुबधिनोवैरस्य नागी नवति ॥ ६ ॥ तदेव निर्निमित्तमेव पचेंद्रियप्राणिपीडनतोयथानर्थदडोजवति तथा प्रतिपादितं । अधुना स्थाव वरानधिकृत्योच्यते । (सेजहेत्यादि) यथाकश्चित्पुरुषोनिर्विवेक पथि गछन् वृक्षादे प ल्लवादिक दडादिना प्रध्वसयन् फलनिरपेक्षस्तछीलतया व्रजति । एतदेव दर्शयति (जे इमेइत्यादि) ये केचनामी प्रत्यक्षा स्थावरावनस्पतिकाया प्राणिनोनवति तद्यथेक डादयोवनस्पतिविशेषास्तानार्थास्तदिहेक्कडा ममानया प्रयोजनमित्येवमनिसधाय न छिनत्ति केवल तत्पत्रपुष्पादिनिरपेक्षस्तछीलतया छिनत्तीत्येतत्सर्वत्र योजनीयमिति । त था न पुत्रपोषणाय नो पशुपोषणाय नागारप्रतिबृंहणाय नश्रमणब्राह्मणप्रवृत्तये नापि शरीरस्य किंचित्त्राण नविष्यतीति केवलमेवासौ वनस्पतिहताछेत्तेत्यादियावज्जन्मांतरानु बधिनोवैरस्य नागी नवति । अथ वनस्पत्याश्रयोऽनर्थदडोऽनिहित ॥७॥ सांप्रतमग्न्याश्रि तमाह । (सेजहेत्यादि) तद्यथानाम कश्चित्पुरुष सदसद्विवेकविकलतया कछादिकेषु दशसु स्थानेषु वनदुर्गपर्वतेषु तृणानि कुशइषीकादीनि पौन पुन्येनोर्ध्वाधस्थानि कृत्वा ऽग्निकाय हुतनुज निसृजति प्रक्षेपयत्यन्येन वाग्निकाय बहुसत्वापकारी दवार्थ निसर्जय ति प्रक्षेपयत्यन्यच निसृजतं समनुजानीते । तदेव योगत्रिकेण कृतकारितानुमतिनिस्तस्य यत्किंचनकारिणस्तत्प्रत्ययिक दवदाननिमित्तं सावद्य कर्म महापातकमाख्यातं द्वितीय मनर्थदडसमादानमाख्यातमिति ॥ ८ ॥

आहावरे तच्चे दमसमादाणे हिंसादमवत्तिएत्ति आहिज्जइ से जहा णाम ए केइ पुरिसे ममवा ममिवा अन्नवा अन्निवा हिंससुवा हिंसइवा हिंसि स्सइवा तदम तसथावरोहिं पाणेहिं सयमेव णिसिरिति असेणवि णिसि रावेति अन्नपि णिसिरित समणुजाणइ हिंसादमे एव खलु तस्स तप्पत्तिय सावज्जति आहिज्जइ तच्चे दमसमादाणे हिंसादमवत्तिएत्ति आहिए॥ ए॥

अर्थ–हवे अपर त्रीजो क्रियास्थानक हिंसादम प्रत्ययिक कहेछे ते जेम नाम एवी सन्नावनाये कोइएक पुरुष (ममवा के०) मुजने (ममिवा के०) महारा पिताने ह णेछे, हण्योछे, हणशे, एम पुरुषाकार वहेतो पोताना मरण थकी मरतो बीकरात तोके, ए महारो विनाश करशे एवु जाणीने सर्प्प सिंहादिक जीवोने हणे, जेम कंसे देवकीना पुत्रने हण्या तेनी पेठे जाणी लेवु (अन्नवाके०) अथवा अन्य महारा गोत्री

स्वजनादिकने हणशे (अन्निवा के०) अथवा तेना कोइएक बीजाने (हिंससुवा के०) अतीतकालें हण्योठे (हिंसइवा के०) वर्तमान कालें हणेठे (हिंसिस्सइवा के०) आगमिक कालें हणशे (तंदम्तसथावरेहिपाणेहिसयमेवणिसिरिरतिके०) एम जाणीने दंमेकरी त्रसस्थावर प्राणीनो पोते घात करे, बीजानी पासे घात करावे, अथवा अन्य कोइ घात करतो होए तेने अनुमोदन आपे ए हिंसादम, एम निश्चे एने प्रत्यये एटले ते आश्रित सावद्यकर्म बधाय, एटले त्रीजो क्रिया स्थानक हिंसादम प्रत्ययिक एवे नामे कह्यो ॥ए॥

॥ दीपिका–अथ तृतीयमाह । अथापरं तृतीयं दंडसमादानं हिंसादंडप्रत्ययिकमाख्यायते । तद्यथानाम कश्चित्पुरुषोमामयं घातयिष्यतीति मत्वा, सर्पादिकं हंति यथा कंसोदेवकीसुतान् परशुरामोवा यथा कार्तवीर्यं जघान । मदीयं पितरमन्यदीयस्य वा कस्यचित्सुवर्णपशुप्रभृतेरयमुपद्रवकारीति मत्वा, तत्र दंमं निसृजति तदेव मां मदीयं अन्यमन्यदीयं वा हिंसितवान् हिनस्ति हिंसिष्यतीत्येव संभाविते त्रसे स्थावरे वा तं दंमं स्वयं निसृजति अन्येन निसर्जयति अन्यं निसृजतं समनुजानीते । एतत्तृतीयं दंडसमादानं हिंसादंडप्रत्ययिकमाख्यातम् ॥ ए ॥

॥ टीका–तृतीयमधुना व्याचिख्यासुराह । (अहावरे इत्यादि) अथापरं तृतीयं दंडसमादानं हिंसादंडप्रत्ययिकमाख्यायते । तद्यथानाम कश्चित्पुरुषः पुरुषकारं वहन् स्वतोमरणभीरुतया वा मामयं घातयिष्यतीत्येव मत्वा, कंसदेवकीसुतान् जावतो जघान मदीयं वा पितरमन्यं वा मामकं ममीकारोपेतं परशुरामवत्कार्तवीर्यं जघानान्यं वा कंचनायं सर्पसिंहादिकं व्यापादयिष्यतीति मत्वा सर्पादिकं व्यापादयति अन्यदीयस्य वा कस्यचिद्धिरण्यपश्वादेरयमुपद्रवकारीति कृत्वा तत्र दंडं निसृजति । तदेवमयं मां मदीयमन्यदीयं वा हिंसितवान् हिनस्ति हिंसिष्यतीतिवेत्येव संभाविते त्रसे स्थावरे वा तं दंडं प्राणव्यपरोपणलक्षणं स्वयमेव निसृजति अन्येन निसर्जयति निसृजतं वाऽन्यं समनुजानीते । इत्येतत्तृतीयं दंडसमादानं हिंसाप्रत्ययिकमाख्यातमिति ॥ ए ॥

अहावरे चउत्थे दंमसमादाणे अकम्मादंमवत्तिएत्ति आहिज्जइ से जहा णामए केइ पुरिसे कच्छंसिवा जाव वणविडुग्गंसिवा मियवत्तिए मियसंकप्पे मियपणिहाणे मियवहाए गंता एए मियत्तिकाउं अन्नयरस्स मियस्स वहाए उसुआयामेत्ताणं णिसिरज्जा स मियं वहिस्सामित्ति कट्टु तित्तिरवा वट्टगवा चडगवा लावगवा कवोयगवा कविंवा कविंजलंवा विंधित्ता भ

रपादादिछेदनत परमाऽधार्मिकवत्प्राणिना निर्निमित्तमेव नानाविधोपायै पीडोत्पादको नवति तथा जीवितादप्यपड्डावयिता नवति सच सद्विवेकमुज्झित्वात्मान वा परित्यज्य बालवद्बालोऽज्ञोऽसमीक्षितकारितया जन्मांतरानुबंधिनोवैरस्य नागी नवति ॥ ६ ॥ तदेव निर्निमित्तमेव पचेंद्रियप्राणिपीडनतोयथानर्थदंडोजवति तथा प्रतिपादितं । अधुना स्थाव वरानधिकृत्योच्यते । (सेजहेत्यादि) यथाकश्चित्पुरुषोनिर्विवेक पथि गच्छन् वृक्षादे प ल्लवादिक दंडादिना प्रध्वंसयन् फलनिरपेक्षस्तच्छीलतया व्रजति । एतदेव दर्शयति (जे इमेइत्यादि) ये केचनामी प्रत्यक्षा स्थावरावनस्पतिकाया प्राणिनोनवति तद्यथेक्ष डादयोवनस्पतिविशेषाउत्तानार्थास्तदिदेक्कडा ममानया प्रयोजनमित्येवमनिसधाय न छिनत्ति केवल तत्पत्रपुष्पादिनिरपेक्षस्तच्छीलतया छिनत्तीत्येतत्सर्वत्र योजनीयमिति । त था न पुत्रपोषणाय नो पशुपोषणाय नागारप्रतिवृंहणाय नश्रमणब्राह्मणप्रवृत्तये नापि शरीरस्य किंचित्राण नविष्यतीति केवलमेवासौ वनस्पतिहताछेत्तेत्यादियावज्जन्मांतरानु बंधिनोवैरस्य नागी नवति । अथ वनस्पत्याश्रयोऽनर्थदंडोऽनिहित ॥७॥ सांप्रतमग्न्याश्रि तमाह । (सेजहेत्यादि) तद्यथानाम कश्चित्पुरुष सदसद्विवेकविकलतया कच्छादिकेषु दशसु स्थानेषु वनडुर्गपर्वतेषु तृणानि कुशइषीकादीनि पौन पुन्येनोर्ध्वाधस्थानि कृत्वा ऽग्निकाय हुतभुज निसृजति प्रक्षेपयत्यन्येन वाग्निकाय बहुसत्वापकारी दवार्थे निसर्जय ति प्रक्षेपयत्यन्यच निसृजतं समनुजानीते । तदेव योगत्रिकेण कृतकारितानुमतिनिस्तस्य यत्किंचनकारिणस्तत्प्रत्ययिक दवदाननिमित्त सावद्य कर्म महापातकमाख्यातं द्वितीय मनर्थदंडसमादानमाख्यातमिति ॥ ८ ॥

आहावरे तच्चे दम्मसमादाणे हिंसादम्मवत्तिएत्ति आहिज्जइ से जहा णाम ए केइ पुरिसे ममवा ममिवा अन्नवा अन्निवा हिंससुवा हिंसइवा हिंसि स्सइवा तदम्म तसथावरेहिं पाणेहिं सयमेव णिसिरिति असेणवि णिसि रावेति अन्नपि णिसिरित समणुजाणइ हिंसादम्मे एव खलु तस्स तप्पत्तिय सावज्जति आहिज्जइ तच्चे दम्मसमादाणे हिंसादम्मवत्तिएत्ति आहिए॥ ए॥

अर्थ–हवे अपर त्रीजो क्रियास्थानक हिंसादंम प्रत्ययिक कहेछे ते जेम नाम एवी सनावनाये कोइएक पुरुष (ममवा के०) मुजने (ममिवा के०) महारा पिताने ह णेछे, हण्योछे, हणशे, एम पुरुषाकार वहेतो पोताना मरण थकी मरतो बीकराख तोके, ए महारो विनाश करशे एवु जाणीने सर्प सिंहादिक जीवोने हणे, जेम कंसे देवकीना पुत्रने हण्या तेनी पेठे जाणी लेवु (अन्नवाके०) अथवा अन्य महारा गोत्री

ले चलावे. (सेसामगतणगकुमुडुग के०) ते मनमाहे एवु जाणे छेजे हु ए श्यामादिक ककुमु द तृणविशेषने छेदिश पछी (वीहीऊसियकलेसुय के०) व्रीहीकलेसुकादिक धान्य,उंचु करीने ए धान्यमाहेलु (तणछिदिस्सामितिकट्टु के०) तृण छेदीश एप्रकारे करीने,पछी ते तृणा छेद तो थको शाली, व्रीही, कोद्रवा, कगुणी, वटी, रालो, इत्यादिक धान्यनो (छिदित्तान्नवति के०) छेदनारो थाय (इतिखलुसे के०) एप्रकारे निश्चे ते (अन्नस्सअठ्ठाए के०) अन्यना घातनो अर्थी चितवतो थको (अन्नफुसति के०) अन्यनो घात उपजावे एटले तृणोने छे दतो थको धान्यने छेदे, ते कारणे (अकम्मादंडे के०) एने अकस्मात् दंडकहिए, एम निश्चे तेने ते निमित्ते एटले तत्प्रत्ययिक सावद्य कर्म बधाय एप्रकारे ए चोथो क्रिया स्थानक अकस्मात् दंड प्रत्ययिक एवे नामे कह्यो ॥ ११ ॥

॥ दीपिका–अथापरं चतुर्थं दंडसमादानमकस्माद्दंडप्रत्ययिकमाख्यायते । अकस्मा दित्ययंशब्दोमगधदेशे लोके संस्कृतएवोच्चार्यते ततइहापि तथैवोक्तं । तद्यथानाम क श्चित्पुरुषोलुब्धकादिः कच्छादिषु गत्वा मृगैर्वृत्तिर्जीविका यस्य समृगवृत्तिकोमृगेषु संकल्पो यस्यसतथा मृगेषु प्रणिधानं चित्तवृत्तिर्यस्यसतथा मृगवधार्थं कच्छादिषु गंता व्रजति तत्रच गतः सएते मृगाइति कृत्वा ऽन्यतरस्य मृगस्य वधार्थमिषुं शरमायामेन समारुप्य, निसृजति सच मृगं हनिष्यामीति कृत्वा इषुं क्षिप्तवान् सच तेनेषुणा तित्तिरं, वर्तकवा ला वकवा,कपोतकवा,कपिंजा,कपिंजलवा,पक्षिविशेषं व्यापादयिता नवति । इह खल्वसा वन्यस्यार्थाय निक्षिप्तोदंडोयदाऽन्यं स्पृशति घातयति सोऽकस्माद्दंडइत्युच्यते॥१०॥ अथ व नस्पतिमुद्दिश्येममेव दंडमाह । तद्यथानामकश्चित्पुरुषः कृषीवलादिः शालिव्रीहिकाद्रक गुरालादिधान्यस्य श्यामतृणककुमुदकलेसुकतृणानि तृणविशेषास्तानि (णिजिक्कमा णे) अपनयन् धान्यशुद्धिं कुर्वाणोऽन्यतरस्य तृणस्य छेदाय शस्त्रं दात्रादिकं निसृजेत् । सच श्यामादिकं तृणं छेत्स्यामीति कृत्वाऽकस्माच्छालिं वा यावद्रालादिकं वा छिंद्यात् । र क्षणीयस्यैवाऽकस्मादसौ छेत्ता स्यादित्यन्यस्य कृतेऽन्यं स्पृशति छिनत्ति । एवं खलु तस्य तत्प्रत्ययिकमकस्माद्दंडनिमित्तं सावद्यं पापमाधीयते संबध्यते । एतच्चतुर्थं दंडसमादान मकस्माद्दंडप्रत्ययिकमाख्यातमिति ॥ ११ ॥

॥ टीका–अथापरं चतुर्थं दंडसमादानमकस्माद्दंडप्रत्ययिकमाख्यायते । इह चाक स्मादित्ययंशब्दोमगधदेशे सर्वेणाप्यागोपालांगनादिना संस्कृतएवोच्चार्यतइति तदिहा पि तथाभूतएवोच्चारितइति । तद्यथा नामकश्चित्पुरुषोलुब्धकादिकः कच्छं वा यावद्वनं दुर्गंवा गत्वा मृगैर्हरिणैराटव्यपशुभिर्वृत्तिर्वर्त्तनं यस्यस मृगवृत्तिकः सर्वचमृतामृगेषु संक

वइ इहखलु से अन्नस्स अठाए अण्ण फुसंति अकम्माढम्े॥१०॥से जहा णा मए केइ पुरिसे सालीणिवा वीहीणिवा कोद्दवाणिवा कगूणिवा परगाणिवा रालाणिवा णिलिज्जमाणे अन्नयरस्स तणस्स वहाए सच्छ णिसिरेज्जा से सामग तणग कुमुदग वीहीऊसिय कलेसुय तण छिंदिस्सामित्ति कट्टु सा लिवा वीहिवा कोद्दववा कगुवा परगवा रालयवा छिंदित्ता नवइ इति खलु से अन्नस्स अठाए अन्न फुसति अकम्माढम्े एव खलु तस्स तप्पत्ति य सावज्ज आहिज्जइ चउछे दम्सयमादाणे अकम्मादम्वत्तिए आहिए॥११॥

अर्थ–हवे चोथो क्रिया स्थानक अकस्मात् प्रत्ययिक दम्ड कहियेंछेये, जेम कोइएक लुब्धकादिक पुरुष कछने विषे, अथवा यावत् वन गहन पर्वतादिकने विषे, (मियव त्तिए के०) मृगे करी जेनी आजीविका वर्त्तेछे ते मृगवर्त्तिक (मियसकप्पे के०) तथा मृ गने विषे, जेनो सकल्पछे (मियपणिहाणे के०) मृगनेविषे जेनो प्रणिधान एटले अत क रणछे एवो छतो (मियवहाएगता के०) मृगना वधने अर्थे वन पर्वतादिकने विषे जइने, (एएमियत्तिकाउ के०) आ अमुक मृग नजीक देखायछे एमकरीने (अन्नयरस्समिय स्सवहाए के०) ते अन्य मृगना वधने अर्थे (उसुआयामेत्ताणणिसिरेज्जा के०) धनुष्य बाण ताकीने मूके चलावे (सेमियंवहिस्सामित्तिकट्टु के०) ते मृगनो वध करीश, एम करीने एटले ते मृगने वेधशु एवा नावे बाण मूके थके वचालें अन्य जीव हणाए ते कहेछे (तित्तिरवा के०) तित्तर, (वट्टगवा के०) वर्त्तक, (चडगवा के०) चकलो, (लाव गवा के०) लावक, (कवोयगवा के०) कपोत, (कविवा के०) होलो, (कविंजलवा के०) कपिंजल, ए माहेला जीवोने (विधित्तानवइ के०) विधनारो होयछे (इहख लुसेअन्नस्सअठाए के०) अही निश्चे ते अन्यने अर्थे प्राणघात चितव्यो, अने वचमा (अ ण्णफुसति के०) अन्यनो घात करे एटले एकने हणवानो प्रयोग कयो तेनी वचमा बी जा प्राणीनो घात करे, ते कारणे एने (अकम्मादम्े के०) अकस्मात् दम्ड कहियें॥१०॥

हवे वनस्पति आश्रित अकस्मात् दम्ड कहेछे जेम नाम एवी सनावनाये कोइएक करसणी पुरुष (सालीणिवा के०) सालधान (वीहीणिवा के०) व्रीहीधान्य (कोद्दवा णिवा के०) कोद्राधान्य, (कगूणिवा के०) कागणीधान्य, (परगाणिवा के०) बटीधा न्य, (रालाणिवा के०) रालो धान्य, इत्यादिक सर्व चोवीश जातना धान्यछे, ते धान्यनुं (णिलिज्जमाणे के०) निदान करता थका (अन्नयरस्सतणस्सवहाए के०) ते धान्य माहेलु शाल्यादिक तृण कापवाने अर्थे (सछणिसिरेज्जा के०) दात्रादिक शस्त्र, वाहे एट

ले चलावे. (सेसामगतणगकुमुडुग के०) ते मनमांहे एवुं जाणे छेजे द्दु ए श्यामादिक ककुमु द तृणविशेषने छेदिश पछी (वीहीऊसियकलेसुय के०) व्रीहीकलेसुकादिक धान्य,ऊंचु करीने ए धान्यमांहेलु (तणछिंदिस्सामित्तिकट्टु के०) तृण छेदीश एप्रकारे करीने,पछी ते तृणो छेद तो थको शाली, व्रीही, कोद्रवा कगुणी, वटी,रालो, इत्यादिक धान्यनो (छिंदित्ताभवति के०) छेदनारो थाय (इतिखलुसे के०) एप्रकारे निश्चे ते (अन्नस्सअठाए के०) अन्यना घातनो अर्थे चिंतवतो थको (अन्नफुसति के०) अन्यनो घात उपजावे एटले तृणोने छे दतो थको धान्यने छेदे, ते कारणे (अकम्मादंमे के०) एने अकस्मात् दंमकहिए, एम निश्चे तेने ते निमित्ते एटले तत्प्रत्ययिक सावद्य कर्म बंधाय एप्रकारे ए चोथा क्रिया स्थानक अकस्मात् दंम प्रत्ययिक एवे नामे कह्यो ॥ ११ ॥

॥ दीपिका—अथापरं चतुर्थं दंडसमादानमकस्माद्दंडप्रत्ययिकमाख्यायते । अकस्मा दित्ययंशब्दोमगधदेशे लोके संस्कृतएवोच्चार्यते ततइहापि तथैवोक्तं । तद्यथानाम क श्चित्पुरुषोलुब्धकादिः कच्छादिषु गत्वा मृगैर्वृत्तिर्जीविका यस्य समृगवृत्तिकोमृगेषु संकल्पो यस्यसतथा मृगेषु प्रणिधानं चित्तवृत्तिर्यस्यसतथा मृगवधार्थं कच्छादिषु गंता भवति तत्रच गतः सएते मृगाइति कृत्वा ऽन्यतरस्य मृगस्य वधार्थमिषुं शरमायामेन समारुप्य, निसृजति सच मृगं हनिष्यामीति कृत्वा इषुं क्षिप्तवान् सच तेनेषुणा तित्तिरं, वर्तकंवा ला वकंवा,कपोतकंवा, कपिंवा, कपिंजलंवा, पक्षिविशेषं व्यापादयिता भवति । इह खल्वसा वन्यस्यार्थाय निक्षिप्तोदंडोयदा ऽन्यं स्पृशति घातयति सोऽकस्माद्दंडइत्युच्यते ॥१०॥ अथ व नस्पतिमुद्दिश्येममेव दंडमाह । तद्यथानामकश्चित्पुरुषः कृषीवलादिः शालिव्रीहिकाद्रवक गुरालादिधान्यस्य श्यामतृणककुमुदकलेसुकतृणानि तृणविशेषास्तानि (णिजिक्कमा णे) अपनयन् धान्यशुद्धिं कुर्वाणोऽन्यतरस्य तृणस्य छेदाय शस्त्रं दात्रादिकं निसृजेत् । सच श्यामादिकं तृणं छेत्स्यामीति कृत्वाऽकस्माच्छालिं वा यावद्रालादिकं वा छिंद्यात् । र क्षणीयस्यैवाऽकस्मादसौ छेत्ता स्यादित्यन्यस्य कृतेऽन्यं स्पृशति छिनत्ति । एवं खलु तस्य तत्प्रत्ययिकमकस्माद्दंडनिमित्तं सावद्यं पापमाधीयते संबध्यते । एतच्चतुर्थं दंडसमादान मकस्माद्दंडप्रत्ययिकमाख्यातमिति ॥ ११ ॥

॥ टीका—अथापरं चतुर्थं दंडसमादानमकस्माद्दंडप्रत्ययिकमाख्यायते । इह चाक स्मादित्ययंशब्दोमगधदेशे सर्वेणाप्यागोपालांगनादिना संस्कृतएवोच्चार्यतइति तदिहा पि तथाभूतएवोच्चारितइति । तद्यथा नामकश्चित्पुरुषोलुब्धकादिकः कच्छे वा यावद्वन दुर्गेवा गत्वा मृगैर्हरिणैराटव्यपशुभिर्वृत्तिर्वर्त्तनं यस्यस मृगवृत्तिकः सचैवंभूतोमृगेषु सं

ल्पोयस्यासौ मृगसकल्प । एतदेव दर्शयति । मृगेषु प्रणिधानमत करणवृत्तिर्यस्यासौ मृगप्रणिधान क मृगान्हनिष्यामीत्येतदध्यवसायी सन् मृगवधार्थं कच्छादिषु गता नवति तत्रच गत सदृष्ट्वा मृगानेते मृगाइत्येव कृत्वा तेषा मध्येऽन्यतरस्य मृगस्य वधार्थमिषु श र (आयामेतत्ति) आयामेन समारुष्य मृगमुद्दिश्य निसृजति सचेवसकल्पोनवति । तथा ऽह मृग हनिष्यामीति इषु क्षिप्तवान् सच तेनेषुणा तित्तिरादिक पक्षिविशेष व्यापादयि ता नवति । तदेव खल्वसावन्यस्यार्थाय निक्षिप्तो दडो यदाऽन्य स्पृशति घातयति तदा ऽकस्माद्दडइत्युच्यते ॥१०॥ अधुना वनस्पतिमुद्दिश्याकस्माद्दडउच्यते (सेजहेत्यादि) तद्य थानाम कश्चित्पुरुष कृषीवलादि शाल्यादेर्धान्यजातस्य श्यामादिक तृणजातमपनयन् धान्यशुद्धिकुर्वाण सन्नन्यतरस्य तृणजातस्यापनयनार्थं शस्त्र दात्रादिक निसृजेत्सच श्या मादिक तृण छेत्स्यामीति कृत्वाऽकस्माच्छालिंवा रालकवा छियाद्कृणीयस्यैवासावकस्मा च्छेत्ता नवति इत्येवमन्यस्यार्थायान्यकृते ऽन्यवा स्पृशति छिनत्ति । यदिवा स्पृशतीत्य नेनापि परिताप करोतीति दर्शयति । तदेव खलु तस्य तत्कर्तुस्तत्प्रत्ययिकमकस्माद्दड निमित्त सावद्यमिति पापमाधीयते सबध्यते । तदेतच्चतुर्थदडसमादानमकस्माद्दडप्रत्य यिकमाख्यातमिति ॥ ११ ॥

अहावरे पचमे दम्समादाणे दिठिविपरियासियादम्वत्तिएत्ति आहिज्ज इ से जहा णामए केइ पुरिसे माइहिवा पिइहिवा नाइहिवा नगिणीहिवा नज्जाहिवा पुत्तेहिवा धूताहिंवा सुण्हाहिवा सद्धि सवसमाणे मित्तं अमि त्तमेव मन्नमाणे मित्तेहयपुव्वे नवइ दिठि विपरियासियादम्मे ॥१२॥ से ज हा णामए केइपुरिसे गामघायसिवा णगरघायसिवा खेडकव्वडमम्बघा यसिवा दोणमुहघायसिवा पट्टणघायसिवा आसमघायसिवा सन्नि वेसघायसिवा निग्गमघायसिवा रायहाणिघायसिवा अतेण तेणमि त्ति मन्नमाणे अतेण हयपुव्वे नवइ दिठिविपरियासियादम्मे एव खलु त स्स तप्पत्तिय सावज्जति आहिज्जइ पचमे दम्समादाणे दिठिविपरिया सिया दम्वत्तिएत्ति आहिए ॥१३॥

*अर्थ–*हवे अपर पाचमो दृष्टिविपर्यास नामे क्रिया स्थानक कहियें छैए ते जेम नाम एवी सनावनाये कोइएक पुरुष माता, पिता नाइ,बेन, नार्या,पुत्र,दीकरी, पुत्रनी वहु, प्रमुख परिवार (सद्धिसवसमाणे के०) सहित वसतो थको ज्ञाति पालवाने अर्थे (मित्तअमित्तमेवमन्नमाणे के०) पोताना मित्रने दृष्टिना विपर्यास थकी " ए महारो

शत्रुछे " एम जाणतो थको (मित्तेहयपुव्वेनवइ के०) मित्रने हणे एटले ए पुरुष शत्रुनो विनाश करवा वाछतो मित्रनेज हणे तेने मित्रज हत पूर्व थाय (दिठिविपरिया सियादमे के०) एने दृष्टि विपर्यास दम कहिये ॥ १२ ॥

वली बीजी रीतें देखाडेछे, ते जेम कोइएक पुरुष (गामघायसिवा के०) गामनी घातें प्रवर्त्ततो थको, (णगरघायसिवा के०) नगरनी घातें प्रवर्त्ततो थको, (खेडकब्बडमम्बघायसिवा के०) खेड कबड ममपनी घातें प्रवर्त्ततो थको, (दोणमुहघायसिवा के०) द्रोणमुखनी घातें प्रवर्त्ततो थको, (पट्टणघायसिवा के०) पट्टणनी घातें प्रवर्त्ततो थको, (आसमघायसिवा के०) आश्रमनी घातें प्रवर्त्ततो थको, (सन्निवेसघायसिवा के०) सन्निवेशनी घाते प्रवर्त्ततो थको, (निग्गमघायसिवा के०) निगमनी घाते प्रवर्त्ततो थको, रायहाणिघायसिवा के०) राजधानीनी घातें प्रवर्त्ततो थको, (अतेणतेणमिति मन्नमाणेके०) अचोरने चोर करी जाणतो थको, (अतेणहयपुव्वेनवति के०) अचोर एटले साधुनेज हणे तेथी साधुज हत पूर्वथाय, तेथी ए दृष्टि विपर्यास दम कहिए एम निश्चें तेने तत्प्रत्ययिक सावद्य कर्म बधाय। ए पाचमो क्रियास्थानक दृष्टिविपर्यास नामे दम समादान कह्यो ॥१३॥

॥ दीपिका–अथापर पचम दडसमादान दृष्टिविपर्यासप्रत्ययिकमित्याख्यायते । तद्यथानाम कश्चित्पुरुषश्चारजट्टादिर्मातृपितृभ्रातृभगिनीनार्यापुत्रदुहितृस्नुषादिभि सार्धं वसन् ज्ञातिपालनाय मित्रमेव दृष्टिविपर्यासादमित्रोयमिति मन्यमानोहन्यात्तेनच दृष्टिविपर्यासान्मित्रमेव हतपूर्व स्यादतोदृष्टिविपर्यासदडोऽय॥ १२ ॥ पुनरन्यथा तमेवाह । यथावा कश्चित्पुरुषोग्रामघातादिके विभ्रांतचेतादृष्टिविपर्यासादचौरमेव चौरोयमिति मन्यमानोहन्यात् । एव तेन भ्रांतेनाचौरएव हतपूर्व स्यात् । ग्रामादिलक्षण चेद । ग्रामो वृत्त्यावृत स्यान्नगरमुरुचतुर्गोपुरोद्भासिशोभ । खेट नद्याद्रिवेष्ट परिवृतमभित खर्वट पर्वतेन ॥ ग्रामैर्युक्त मट वदजितदशशते पत्तन रत्नयोनि द्रोणाख्य सिधुवेलावलयितमथ सवाधनवाऽद्रिशृगेइति । आश्रमस्तापसस्थान । सन्निवेश सार्थकटकादिवास । निगमोवहुवणिग्वास । राजधानी राजकुलस्थान । सोय दृष्टिविपर्यासदड । तदेव खलु तस्य दृष्टिविपर्यासप्रत्ययिक सावद्य कर्माधीयते । इद पचम दडसमादान दृष्टिविपर्यासप्रत्ययिकमाख्यातमिति ॥ १३ ॥

॥ टीका–अथापर पचम दडसमादान दृष्टिविपर्यासदडप्रत्ययिकमित्याख्यायते । तद्यथानाम कश्चित्पुरुषश्चारजट्टादिकोमातृपितृभ्रातृभगिनीनार्यापुत्रदुहितृस्नुषादिभि सार्धं वसस्तिष्ठन् ज्ञातिपालनकृते मित्रमेव दृष्टिविपर्यासादमित्रोयमित्येव मन्यमानोहन्या

दपोयस्यासौ मृगसंकल्प । एतदेव दर्शयति । मृगेषु प्रणिधानमंतःकरणवृत्तिर्यस्यासौ मृगप्रणिधानः क मृगान्हनिष्यामीत्येतदध्यवसायी सन् मृगवधार्थं कच्छादिषु गतो जवति तत्रच गतः सन्दृष्ट्वा मृगानेते मृगाइत्येव कृत्वा तेषां मध्येऽन्यतरस्य मृगस्य वधार्थमिषुं शरं (आयामेतत्ति) आयामेन समारोप्य मृगमुद्दिश्य निसृजति सचैवसंकल्पोजवति। तथा ऽहं मृगं हनिष्यामीति इषुं क्षिप्तवान् सच तेनेषुणा तित्तिरादिकं पक्षिविशेषं व्यापादयिता जवति । तदेवं खल्वसावन्यस्यार्थाय निक्षिप्तो दंडो यदाऽन्यं स्पृशति घातयति तदा ऽकस्माद्दंडइत्युच्यते ॥१०॥ अधुना वनस्पतिमुद्दिश्याकस्माद्दंडउच्यते (सेजहेत्यादि) तद्यथानाम कश्चित्पुरुषः कृषीवलादिः शाल्यादेर्धान्यजातस्य श्यामादिकं तृणजातमपनयन् धान्यशुद्धिंकुर्वाणः सन्नन्यतरस्य तृणजातस्यापनयनार्थं शस्त्रं दात्रादिकं निसृजेत्सच श्यामादिकं तृणं छेत्स्यामीति कृत्वाऽकस्माच्छालिंवा रालकंवा छिंद्याद्भूणीयस्यैवासावकस्माच्छेत्ता जवति इत्येवमन्यस्यार्थायान्यकृते ऽन्यंवा स्पृशति छिनत्ति । यदिवा स्पृशतीत्यनेनापि परितापं करोतीति दर्शयति । तदेवं खलु तस्य तत्कर्तुस्तत्प्रत्ययिकमकस्माद्दंडनिमित्तं सावद्यमिति पापमाधीयते संबध्यते । तदेतच्चतुर्थंदंडसमादानमकस्माद्दंडप्रत्ययिकमाख्यातमिति ॥ ११ ॥

अहावरे पंचमे दंमसमादाणे दिठिविपरियासियादंमवत्तिएत्ति आहिज्जइ से जहा णामए केइ पुरिसे माइहिंवा पिइहिंवा नाइहिंवा नगिणीहिंवा नज्जाहिंवा पुत्तेहिंवा धूताहिंवा सुण्हाहिंवा सद्धिं संवसमाणे मित्तं अमित्तमेव मन्नमाणे मित्तेहयपुव्वे नवइ दिठिविपरियासियादंमे ॥१२॥ से जहा णामए केइपुरिसे गामघायंसिवा णगरघायंसिवा खेडकवडमंमबघायंसिवा दोणमुहघायंसिवा पट्टणघायंसिवा आसमघायंसिवा सन्निवेसघायंसिवा निग्गमघायंसिवा रायहाणिघायंसिवा अतेणं तेणमित्ति मन्नमाणे अतेणं हयपुव्वे नवइ दिठिविपरियासियादंमे एवं खलु तस्स तप्पत्तियं सावज्जंति आहिज्जइ पंचमे दंमसमादाणे दिठिविपरियासियादंमवत्तिएत्ति आहिए ॥१३॥

अर्थ—हवे अपर पांचमो दृष्टिविपर्यास नामे क्रिया स्थानक कहिये छैए ते जेम नाम एवी संजावनाये कोइएक पुरुष माता, पिता, नाइ, बेन, नार्या, पुत्र, दीकरी, पुत्रनी वहु, प्रमुख परिवार (सद्धिंसंवसमाणे के०) सहित वसतो थको ज्ञाति पालवाने अर्थे (मित्तअमित्तमेवमन्नमाणे के०) पोताना मित्रने दृष्टिना विपर्यास थकी " ए महारो

शत्रुछे " एम जाणतो थको (मित्तेहयपुव्वेनवइ के०) मित्रने हणे एटले ए पुरुष श त्रुनो विनाश करवा वाछतो मित्रनेज हणे तेने मित्रज हत पूर्व थाय (दिछिविपरिया सियादंमे के०) एने दृष्टि विपर्यास दंम कहियें ॥ १२ ॥

वली बीजी रीतें देखाडेछे, ते जेम कोइएक पुरुष (गामघायसिवा के०) गामनी घा तें प्रवर्त्ततो थको, (णगरघायसिवा के०) नगरनी घातें प्रवर्त्ततो थको, (खेडकब्बडम ंबघायसिवा के०) खेड कब्बड मंमपनी घातें प्रवर्त्ततो थको, (दोणमुहघायसिवा के०) डो णमुखनी घातें प्रवर्त्ततो थको, (पट्टणघायसिवा के०) पट्टणनी घातें प्रवर्त्ततो थको, (थ्या समघायसिवा के०) थ्याश्रमनी घातें प्रवर्त्ततो थको, (सन्निवेसघायसिवा के०) सन्नि वेशनी घाते प्रवर्त्ततो थको, (निग्गमघायसिवा के०) निगमनी घाते प्रवर्त्ततो थको, रा यहाणिघायसिवा के०) राजधानीनी घातें प्रवर्त्ततो थको, (थ्यतेणतेणमितिमन्नमाणेके०) थ्यचोरने चोर करी जाणतो थको, (थ्यतेणहयपुव्वेनवति के०) थ्यचोर एटले साधुनेज हणे तेथी साधुज हत पूर्वथाय, तेथी ए दृष्टि विपर्यास दंम कहिए एम निश्चें तेने तत्प्रत्ययिक सा वद्य कर्म बंधाय। ए पाचमो क्रियास्थानक दृष्टिविपर्यास नामे दंम समादान कह्यो ॥१३॥

॥ दीपिका–थ्यथापरं पंचमं दंडसमादानं दृष्टिविपर्यासप्रत्ययिकमित्याख्यायते । तं यथानाम कश्चित्पुरुषश्चारनट्टादिर्मातृपितृनगिनीनार्यापुत्रडुहितृस्नुषादिभिः सार्धं वस न् ज्ञातिपालनाय मित्रमेव दृष्टिविपर्यासादमित्रोयमिति मन्यमानोहन्यात्तेनच दृष्टिवि पर्यासान्मित्रमेव हतपूर्वं स्यादतोदृष्टिविपर्यासदंडोऽयं॥ १२॥ पुनरन्यथा तमेवाह । य थावा कश्चित्पुरुषोग्रामघातादिके विभ्रातचेताद्दृष्टिविपर्यासादचौरमेव चौरोयमिति म न्यमानोहन्यात् । एवं तेन भ्रांतेनाचौरएव हतपूर्वं स्यात् । ग्रामादिलक्षणं चेदं । ग्रामो वृत्यावृतः स्यान्नगरमुरुचतुर्गोपुरोद्भासिशोभं । खेटं नद्यद्रिवेष्टं परिवृतमभितः खर्वटं प र्वतेन ॥ ग्रामैर्युक्तं मटं वदलितदशशतैः पत्तनं रत्नयोनि र्डोणाख्यं सिंधुवेलावलयितम थ संवाधनवाऽद्रिशृंगेइति । थ्याश्रमस्तापसस्थानं । सन्निवेशः सार्थकटकादिवासः । निग मोवहुवणिग्वासः । राजधानी राजकुलस्थानं । सोयं दृष्टिविपर्यासदंडः । तदेवं खलु तस्य दृष्टिविपर्यासप्रत्ययिकं सावद्यं कर्माधीयते । इदं पंचमं दंडसमादानं दृष्टिविपर्या सप्रत्ययिकमाख्यातमिति ॥ १३ ॥

॥ टीका–थ्यथापरं पंचमं दंडसमादानं दृष्टिविपर्यासदंडप्रत्ययिकमित्याख्यायते । तं यथानाम कश्चित्पुरुषश्चारनट्टादिकोमातृपितृभ्रातृनगिनीनार्यापुत्रडुहितृस्नुषादिभिः सार्धं वसन्तिष्ठन् ज्ञातिपालनकृते मित्रमेव दृष्टिविपर्यासादमित्रायमित्येवं मन्यमानोहन्या

त् व्यापादयेत्तेन च दृष्टिविपर्यासवता मित्रमेव हतपूर्वं नवतीति अतोदृष्टिविपर्यासद डोय ॥१२॥ पुनरप्यन्यथा तमेवाह। (सेजहेत्यादि) तद्यथानाम कश्चित्पुरुष पुरुष कारमुद्दहन् ग्रामघातादिके विभ्रमे भ्रांतचेतादृष्टिविपर्यासादचौरमेव चौरोयमित्येव म न्यमानोव्यापादयेत्। तदेव तेन भ्रांतमनसा विभ्रमाकुलेनाचौरएव हतपूर्वोनवति सोऽय दृष्टिविपर्यासदड। तदेव खलु तस्य दृष्टिविपर्यासवत् तत्प्रत्ययिक सावद्य कर्मा धीयते। तदेव पचम दडसमादान दृष्टिविपर्यासप्रत्ययिकमाख्यातमिति ॥ १३ ॥

अहावरे छठे किरियाठाणे मोसावत्तिएत्ति आहिज्जइ से जहा णामए केइ पु रिसे आयहेउवा णाइहेउवा अगारहेउवा परिवारहेउवा सयमेव मुसंवय ति असेणवि मुसवयावेति मुसवयतपि अण्ण समणुजाणइ एव खलुतस्स त प्पत्तिय सावज्जति आहिज्जइ छठे किरियाठाणे मोसावत्तिएत्ति आहिए॥१४॥

अर्थ–हवे छठो क्रिया स्थानक मृषावादप्रत्ययिक कहेछे पूर्वोक्त पाचने दमसमादान पणे कह्या कारण के, तेमाहे प्राय परनो उपघात थायछे, अने अहींथी हवे क्रिया जछे माटे एने क्रियास्थान एवी सज्ञा करवी अने हवे एयकी आगलजे क्रिया स्थान क कहेशे ते थकी प्राय परजीवनो विनाश नथी, तेमाटे तेने क्रियास्थान सज्ञा कहेवा य अने पूर्वेना पाच स्थानने दमसमादान एवी सज्ञाछे एटलु विशेष जाणवु

हवे छठो क्रिया स्थानक विचारिये छैये ते जेम नाम एवी सनावनाये कोइएक पुरु ष (आयहेउवा के०) पोताने अर्थे (णाइहेउवा के०) ज्ञाति गोत्रीने अर्थे (अगा रहेउवा के०) घरने अर्थे (परिवारहेउवा के०) परिवार जे दास दासी तेने अर्थे (सयमेवमुसवयति के०) स्वयमेव मृषावाद बोले एटले जेम हु कोइ प्रकारे चोर नथी अथवा महारो परिवार कोइ चोर नथी एवो मृषावाद बोले (असेणविमुसवयावेति के०) अन्य पासे मृषावाद बोलावे, (मुसवयतपिअसमणुजाणइत्ति के०) अन्य कोइ मृषावा द बोले तेने अनुमोदे, एरीते निश्चें करण करावण अनुमोदन थकी मृषावाद बोले तेने तत्प्रत्ययिक सावद्यकर्म बधाय ए छठो क्रियास्थानक मृषावाद प्रत्ययिक कह्यो ॥१४॥

॥ दीपिका–अथापर षष्ठ क्रियास्थान मृषावादप्रत्ययिकमाख्यायते। तद्यथानाम कश्चित्पुरुषआत्मनिमित्त ज्ञातिपरिवारनिमित्तवा स्वयमेव मृषावाद वदति नाय मदीयइत्या दि तथाऽचौर चौर वदति तथाऽन्येन मृषावाद वादयति अन्य मृषावाद वदत समनुजानी ते।एव खलु तस्य तत्प्रत्ययिक सावद्य कर्माधीयते बध्यते। एतत्षष्ठ क्रियास्थान मृषावा दप्रत्ययिकमाख्यात। पूर्वोक्ताना पचाना क्रियास्थानाना सत्यपि क्रियास्थानत्वे प्राय

परोपघातित्वाद्दडसमादानसंज्ञा कृता । पश्चादिषु च प्रायोन परघात स्यादत क्रियास्या नसंज्ञोच्यते ॥ १४ ॥

॥ टीका–अपर षष्ठ क्रियास्थान मृषावादप्रत्ययिकमाख्यायते । तत्रच पूर्वोक्ताना क्रियास्थानत्वे प्रायश परोपघातोनवतीति कृत्वा दडसमादानकृता पश्चादिषुच बाहुल्येन न परव्यापादान नवतीत्यत क्रियास्थानमित्येषा संज्ञोच्यते । तद्यथानाम कश्चित्पुरुष स्वपक्षावेशादाग्रहादात्मनि कृतं निमित्त यावत्परिवारनिमित्त वा सद्भूतार्थनिन्हवरूप मसद्भूतोद्भावनस्वनाव स्वयमेव मृषावाद ववति । तद्यथा नाह मदीयोवा कश्चिच्चोर सच चौरमपि सद्भूतमप्यर्थमपलपति तथा परमचौर चौरमिति वदति तथान्येन मृषावाद नाणयति तथान्याश्च मृषावाद वदत समनुजानीते । तदेव खलु तस्य योगत्रिककारणत्रिकेण मृषावाद वदतस्तत्प्रत्ययिक सावद्य कर्माधीयते संवध्यते । तदेतत्पष्ठ क्रियास्थान मृषावादप्रत्ययिकमाख्यातमिति ॥ १४ ॥

अहावरे सत्तमे किरियाठाणे अदिन्नादाणवत्तिएत्ति आहिज्जइ से जहा णामए केइ पुरिसे आयहेउवा जाव परिवारहेउवा सयमेव अदिन्न आदियइ अन्नेणवि अदिन्न आदियावेति अदिन्न आदियत अन्नं समणुजाणइ एव खलु तस्स तप्पत्तिय सावज्जति आहिज्जइ सत्तमे किरियाठाणे अदिन्नादाणवत्तिएत्ति आहिए ॥ १५ ॥

अर्थ–हवे अपर सातमो क्रिया स्थानक अदत्तादान प्रत्ययिक कहेछे ते जेम नाम एवी स्वनावनायें कोइ एक पुरुष पोताना आत्माने अर्थे ज्ञातिगोत्रीने अर्थे यावत् परिवारने अर्थे पोते अदत्तादान ग्रहण करे, बीजाने अदत्तादान लेवरावे, अदत्तादान बीजो कोइ लेतो होय तेने अनुमोदन आपे, एरीते निश्चे थकी तेने अदत्तादान तत्प्रत्ययिक कर्म बधाय, एटले सातमो क्रियास्थानक अदत्तादान प्रत्ययिक कह्यो ॥ १५ ॥

॥ दीपिका–अथाऽपर सप्तम क्रियास्थान अदत्तादानप्रत्ययिकमाख्यायते । इद प्राग्वत् ॥ १५ ॥

॥ टीका–अथापर सप्तम क्रियास्थान अदत्तादानप्रत्ययिकमाख्यायते । एतदपि प्राग्वज्ज्ञेय । तद्यथानाम कश्चित्पुरुषश्चात्मनिमित्त यावत्परिवारनिमित्त परद्रव्यमदत्तमेव गृण्हीयादपरच ग्राहयेद्गृण्हतमप्यपर समनुजानीयादित्येव तस्यादत्तादानप्रत्ययिक कर्म संवध्यत । इति सप्तम क्रियास्थानमाख्यातमिति ॥ १५ ॥

तु व्यापादयेत्तेन च दृष्टिविपर्यासवता मित्रमेव हतपूर्वं नवतीति अतोदृष्टिविपर्यासद डोय ॥१२॥ पुनरप्यन्यथा तमेवाह । (सेजहेत्यादि) तद्यथानाम कश्चित्पुरुष पुरुष कारमुद्वहन् ग्रामघातादिके विभ्रमे भ्रांतचेतादृष्टिविपर्यासादचौरमेव चौरोयमित्येव म न्यमानोव्यापादयेत् । तदेव तेन भ्रांतमनसा विभ्रमाकुलेनाचौरएव हतपूर्वोनवति सोऽय दृष्टिविपर्यासदंड । तदेव खलु तस्य दृष्टिविपर्यासवत् तत्प्रत्ययिक सावद्य कर्मा धीयते । तदेव पचम दडसमादान दृष्टिविपर्यासप्रत्ययिकमाख्यातमिति ॥ १३ ॥

अहावरे छठे किरियाठाणे मोसावत्तिएत्ति आहिज्जइ से जहा णामए केइ पुरिसे आयहेउवा णाइहेउवा अगारहेउवा परिवारहेउवा सयमेव मुसंवयति असेणवि मुसवयावेति मुसवयतपि अस समणुजाणइ एव खलुतस्स तप्पत्तिय सावज्जति आहिज्जइ छठे किरियाठाणे मोसावत्तिएत्ति आहिए ॥१४॥

अर्थ–हवे छठो क्रिया स्थानक मृपावादप्रत्ययिक कहेछे पूर्वोक्त पाचने दमसमादान पणे कह्या कारण के, तेमाहे प्राय परनो उपघात थायछे, अने अहींथी हवे क्रिया जछे माटे एने क्रियास्थान एवी सज्ञा करवी अने हवे एथकी आगलजे क्रिया स्थानक कहेशे ते थकी प्राय परजीवनो विनाश नथी, तेमाटे तेने क्रियास्थान सज्ञा कहेवाय अने पूर्वना पाच स्थानने दमसमादान एवी सज्ञाछे एटलु विशेष जाणवु

हवे छठो क्रिया स्थानक विचारिये छैये ते जेम नाम एवी सनावनाये कोइएक पुरुप (आयहेउवा के०) पोताने अर्थे (णाइहेउवा के०) ज्ञाति गोत्रीने अर्थे (अगारहेउवा के०) घरने अर्थे (परिवारहेउवा के०) परिवार जे दास दासी तेने अर्थे (सयमेवमुसवयति के०) स्वयमेव मृपावाद बोले एटले जेम हु कोइ प्रकारे चोर नथी अथवा महारो परिवार कोइ चोर नथी एवो मृपावाद बोले (असेणविमुसवयावेति के०) अन्य पासे मृपावाद बोलावे, (मुसवयतपिअससमणुजाणइत्ति के०) अन्य कोइ मृपावाद बोले तेने अनुमोदे, एरीते त्रिर्थे करण करावण अनुमोदन थकी मृपावाद बोले तेने तत्प्रत्ययिक सावद्यकर्म बधाय ए छठो क्रियास्थानक मृपावाद प्रत्ययिक कह्यो ॥१४॥

॥ दीपिका–अथापर पष्ठ क्रियास्थान मृपावादप्रत्ययिकमाख्यायते । तद्यथानाम कश्चित्पुरुषआत्मनिमित्त ज्ञातिपरिवारनिमित्तवा स्वयमेव मृपावाद वदति नाय मदीयइत्यादि तथाऽचौर चौर वदति तथाऽन्येन मृपावाद वादयति अन्य मृपावाद वदत समनुजानीते। एव खलु तस्य तत्प्रत्ययिक सावद्य कर्माधीयते बध्यते। एतत्पष्ठ क्रियास्थान मृपावादप्रत्ययिकमाख्यात । पूर्वोक्ताना पचाना क्रियास्थानाना सत्यपि क्रियास्थानत्वे प्राय

परोपघातित्वाद्दंडसमादानसंज्ञा कृता । षष्ठादिषु च प्रायोन परघात स्यादत क्रियास्या नसंज्ञोच्यते ॥ १४ ॥

॥ टीका–अपर षष्ठ क्रियास्थान मृषावादप्रत्ययिकमाख्यायते । तत्रच पूर्वोक्ताना क्रियास्थानत्वे प्रायश परोपघातोजवतीति कृत्वा दंडसमादानकृता षष्ठादिषुच बाहुल्येन न परव्यापादान नवतीत्यत क्रियास्थानमित्येषा संज्ञोच्यते । तद्यथानाम कश्चित्पुरुष स्वपक्षावेशादाग्रहादात्मनि कृतं निमित्त यावत्परिवारनिमित्त वा सद्भूतार्थनिन्हवरूप मसद्भूतोद्भावनस्वनाव स्वयमेव मृषावाद ववति । तद्यथा नाह मदीयोवा कश्चिच्चौर सच चौरमपि सद्भूतमप्यर्थमपलपति तथा परमचौर चौरमिति वदति तथान्येन मृषा वाद नाणयति तथान्याश्च मृषावाद वदत समनुजानीते । तदेव खलु तस्य योगत्रि ककारणत्रिकेण मृषावाद वदतस्तत्प्रत्ययिक सावद्य कर्माधीयते संवध्यते । तदेतत्षष्ठ क्रियास्थान मृषावादप्रत्ययिकमाख्यातमिति ॥ १४ ॥

अहावरे सत्तमे किरियाठाणे अदिन्नादाणवत्तिएत्ति आहिज्जइ से जहा णामए केइ पुरिसे आयहेउवा जाव परिवारहेउवा सयमेव अदिन्न आदियइ अन्नेणवि अदिन्न आदियावेति अदिन्न आदियत अन्न समणुजाणइ एव खलु तस्स तप्पत्तिय सावज्जति आहिज्जइ सत्तमे किरियाठाणे अदिन्नादाणवत्तिएत्ति आहिए ॥ १५ ॥

अर्थ–हवे अपर सातमो क्रिया स्थानक अदत्तादान प्रत्ययिक कहेछे ते जेम नाम एवी संनावनायें कोइ एक पुरुष पोताना आत्माने अर्थे ज्ञातिगोत्रीने अर्थे यावत् परिवारने अर्थे पोते अदत्तादान ग्रहण करे, बीजाने अदत्तादान लेवरावे, अदत्तादान बीजो कोइ लेतो होय तेने अनुमोदन आपे, एरीते निश्चे थकी तेने अदत्तादान तत्प्रत्ययिक कर्म बधाय , एटले सातमो क्रियास्थानक अदत्तादान प्रत्ययिक कह्यो ॥ १५ ॥

॥ दीपिका–अथाऽपर सप्तम क्रियास्थान अदत्तादानप्रत्ययिकमाख्यायते । इद प्राग्वत् ॥ १५ ॥

॥ टीका–अथापर सप्तम क्रियास्थान अदत्तादानप्रत्ययिकमाख्यायते । एतदपि प्राग्व ज्ज्ञेय । तद्यथानाम कश्चित्पुरुषआत्मनिमित्त यावत्परिवारनिमित्त परद्रव्यमदत्तमेव गृण्हीयादपरच माहयेद्गृण्हतमप्यपर समनुजानीयादित्येव तस्यादत्तादानप्रत्ययिक कर्म संवध्यते । इति सप्तम क्रियास्थानमाख्यातमिति ॥ १५ ॥

अहावरे अठमे किरियाठाणे अज्जत्तवत्तिएत्ति आहिज्जइ से जहा णाम ए केइ पुरिसे णत्थिण केइकिविसवादेति सयमेव हीणे दीणे दुठे दुम्मणे उहयमणसकप्पे चितासोगसागरसंपविठे करतलपल्लदहमुहे अट्टझा णोवगए नूमिगयदिठिएज्झियाइ तस्सणं अज्जत्तया आसंसइया चत्तारि ठाणा एवमाहिज्जइ त कोहे माणे माया लोहे अज्जत्तमेव कोहमाणमा यालोहे एव खलु तस्स तप्पत्तिय सावज्जति आहिज्जइ अठमे किरिया ठाणे अज्जत्तवत्तिएत्ति आहिए ॥ १६ ॥

अर्थ–हवे अपर आठमो क्रिया स्थानक अध्यात्मिकप्रत्ययिक नामे कहेछे अध्या त्मिक केहेता जे कर्म बधनु कारण एवो जाव चित्त थकी उपजे, तेमाटे अध्यात्मिक क हिये ते जेम नाम एवी सजावनाये कोइएक पुरुषछे तेने (णत्थिण केइकिविसवादेति के०) कोइ विखवादनु कारण नथी विखवाद एटले पराजव तेने कोइ करे नही, तथापि ते पुरुष, (सयमेवके०) पोतेज (हीणेदीणेदुठेदुम्मणेके०) हीन, दीन, दुष्ट अने दुर्मन एटले जुन्हा मन वालो थाय (उहयमणसकप्पे के०) अनवस्थित चित्त सकल्प एवो थको, (चितासोगसागरसपविठे के०) चिता शोक रूप समुद्रमाहे पेठो एवो थको, जे अव स्था करे, ते देखाडेछे (करतलपल्लहहमुहे के०) हाथना तलाने विषे स्थाप्युछे मुख जेणे एटले गालने विषे हाथ देइने (अट्टज्जाणोवगए के०) आर्त्तध्यान सहित (नू मिगयदिठिएवियाइ के०) जूमिनी सन्मुख एकाग्रचित्ते जोतो निर्विवेक पणे आर्त्त, रौ ड, ध्यान ध्यावे (तस्सणअज्जत्तया के०) तेने अध्यात्मनी (आसंसइया के०) आ शसा मिश्रित (चत्तारिठाणाएवमाइज्जइर्त के०) चार स्थानक कहिए ते कहेछे पेहे लो क्रोध, बीजु मान, त्रीजी माया, अने चोथो लोन (अज्जत्तमेव के०) ते पोताना मनथीज उत्पन्नथाय ए क्रोध, मान, माया, अने लोन, ए चारे करी जीवनो मन दोष दुष्ट थाय एरीते निश्चे तेने तत्प्रत्ययिक सावद्य कर्म वधाय तेमाटे ए आठमो क्रिया स्थानक आध्यात्मिक प्रत्ययिक एवे नामे कह्यो ॥ १६ ॥

॥ दीपिका–अथापरमष्टम क्रियास्थानमाध्यात्मिकमत करणोद्भवमाख्यायते । य था कश्चिन्नरस्तस्य नास्ति कश्चिद्विसवादयिता पराजवकरस्तथाप्यसौ स्वयमेव हीनोदीनो दुष्टोदुर्मनाअपहतमन सकल्प चिताप्रधान शोकश्चिताशोकस्तत्र प्रविष्ट करतले पर्यस्त स्थित मुख यस्य सतथा आर्तध्यानोपगतोजूमिगतदृष्टिर्ध्यायति तस्यैवमाध्यात्मिकानि चित्तोद्भवानि असशयितानि नि सशयानि चत्वारि स्थानानिस्यु । तानि चैवम

ख्यायते । तद्यथा । क्रोधमानमायालोभस्थानानि । तेच क्रोधमानमायालोभाआत्मोन्न वा । एभिरेव मनोडुष्ट स्यात् । एव तस्य तत्प्रत्ययिकमध्यात्मनिमित्त सावद्य कर्माधी यते । तदेवमष्टममाध्यात्मिकाख्य क्रियास्थानमाख्यात ॥ १६ ॥

॥ टीका–अथापरमष्टम क्रियास्थानमाध्यात्मिकमित्यत करणोद्भवमाख्यायते । तद्य था नामकश्चित्पुरुषश्चित्तोपेक्षाप्रधानस्तस्य च नास्ति कश्चिद्विसवादयिता । न तस्य कश्चि द्विसवादेन परिभावेनवा सद्भूतोद्भावनेनवा चित्तडुखमुत्पादयति तथाप्यतौ स्वयमेव वर्णापसदवद्दीनोडुर्गतवद्दीनोडुश्चित्ततया डुष्टोडुर्मनास्तथोपहतोऽस्वस्थतया मन सकल्पो यस्य सतथा चिंतैव शोकइति सागरश्चिताप्रधानोवा शोकश्चिताशोकसागरप्रविष्ट । तथाभू तश्च यदवस्थोभवति तद्दर्शयति । करतले पर्यस्त मुख यस्य सतथाऽहर्निश भवति तथा र्तध्यानोपगतोऽपगतसद्विवेकतया धर्मध्यानदूरवर्त्ती निर्निमित्तमेव ढ्ढोपहतवद्ध्यायति । तस्यैव चिताशोकसागरावगाढस्य सतश्राध्यात्मिकान्यत करणोद्भवानि मन सश्रितान्यस शयितानि वा नि सशयितानि चत्वारि वक्ष्यमाणानि स्थानानि भवति । तानि चैव समा ख्यायते । तद्यथा क्रोधस्थान, मानस्थान, मायास्थान, लोभस्थानमिति । ते चावश्य क्रो धमानमायालोभाआत्मनोऽधिभवत्याध्यात्मिकाएभिरेव सन्निर्दिष्ट मनोभवति । तदेव तस्य डुर्मनस क्रोधमानमायालोभवतएवमेवोपहतमन सकल्पस्य तत्प्रत्ययिकमध्यात्मनिमि त्त सावद्य कर्माधीयते सवध्यते । तदेवमेतक्रियास्थानमाध्यात्मिकाख्यमाख्यातमिति॥ १६॥

अहावरे णवमे किरियाठाणे माणवत्तिएत्ति आहिज्जइ से जहा णामए के इ पुरिसे जातिमएणवा कुलमएणवा बलमएणवा रूवमएणवा तवमएण वा सुयमएणवा लाभमएणवा ईस्सरियमएणवा पन्नामएणवा अन्नतरे णवा मयठाणेण मत्ते समाणे पर हिलेति निंदेति खिसति गरहति परिभ वइ अवमणेति इत्तरिए अय अहमसि पुण विसिठे जाइकुलबलाइगुणो ववेए एव अप्पाण समुक्कसे देहाचुए कम्मबित्तिए अवसेपयाइ तजहा गभाउगभ जम्माउजम्म माराउमार णरगाउणरग चमे थद्धे चवले माणियावि भवइ एव खलु तस्स तप्पत्तिय सावज्जति आहिज्जइ णवमे किरियाठाणे माणवत्तिएत्ति आहिए ॥ १७ ॥

अर्थ–अथ हवे अपर नवमो क्रियास्थानक मान प्रत्ययिक नामे कहिए बेए ते जेम नाम एवी सभावनायें कोइएक पुरुष (जातिमएणवा के०) जाति एटले माता

अहावरे अठमे किरियाठाणे अज्झत्थवत्तिएत्ति आहिज्जइ से जहा णाम ए केइ पुरिसे णत्थिण केइकिंविसंवादेति सयमेव हीणे दीणे दुठे दुम्मणे उहयमणसकप्पे चिंतासोगसागरसंपविठे करतलपल्लत्थमुहे अट्टज्झाणोवगए नूमिगयदिठिएझियाइ तस्सण अज्झत्थया आससइया चत्तारि ठाणा एवमाहिज्जइ तं कोहे माणे माया लोहे अज्झत्थमेव कोहमाणमायालोहे एव खलु तस्स तप्पत्तिय सावज्जति आहिज्जइ अठमे किरिया ठाणे अज्झत्थवत्तिएत्ति आहिए ॥ १६ ॥

अर्थ–हवे अपर आठमो क्रिया स्थानक अध्यात्मिकप्रत्ययिक नामे कहेछे अध्यात्मिक केहेता जे कर्म बंधनु कारण एवो नाव चित्त थकी उपजे, तेमाटे अध्यात्मिक कहिये ते जेम नाम एवी संभावनाये कोइएक पुरुषछे तेने (णत्थिण केइकिंविसंवादेति के०) कोइ विखवादनु कारण नथी विखवाद एटले परानव तेने कोइ करे नही, तथापि ते पुरुष, (सयमेवके०) पोतेज (हीणेदीणेदुठेदुम्मणेके०) हीन, दीन, दुष्ट अने दुर्मन एटले माठा मन वालो थाय (उहयमणसकप्पे के०) अनवस्थित चित्त संकल्प एवो थको, (चिंतासोगसागरसंपविठे के०) चिंता शोक रूप समुद्रमाहे पेठो एवो थको, जे अवस्था करे, ते देखाडेछे (करतलपल्लत्थमुहे के०) हाथना तलाने विषे स्थाप्युछे मुख जेणे एटले गालने विषे हाथ देइने (अट्टज्झाणोवगए के०) आर्त्तध्यान सहित (नूमिगयदिठिएझियाइ के०) नूमिनी सन्मुख एकाग्रचित्ते जोतो निर्विवेक पणे आर्त्त, रौद्र, ध्यान ध्यावे (तस्सणअज्झत्थया के०) तेने अध्यात्मनी (आससइया के०) आशंसा मिश्रित (चत्तारिठाणाएवमाहिज्जइत के०) चार स्थानक कहिए ते कहेछे पेहेलो क्रोध, बीजु मान, त्रीजी माया, अने चोथो लोन (अज्झत्थमेव के०) ते पोताना मनथीज उत्पन्नथाय ए क्रोध, मान, माया, अने लोन, ए चारे करी जीवनो मन दोषदुष्ट थाय एरीते निश्चे तेने तत्प्रत्ययिक सावद्य कर्म बंधाय तेमाटे ए आठमो क्रिया स्थानक आध्यत्मिक प्रत्ययिक एवे नामे कह्यो ॥ १६ ॥

॥ दीपिका–अथापरमष्टम क्रियास्थानमाध्यात्मिकमंत करणोद्भवमाख्यायते । यथा कश्चिन्नरस्तस्य नास्ति कश्चिद्विसंवादयिता परानवकरस्तथाप्यसौ स्वयमेव हीनोदीनो दुष्टोदुर्मनाअपहतमन संकल्प चिंताप्रधान शोकश्चिंताशोकस्तत्र प्रविष्ट करतले पर्यस्तं स्थित मुख यस्य सतथा आर्तध्यानोपगतोनूमिगतदृष्टिर्ध्यायति तस्यैवमाध्यात्मिकानि चित्तोद्भवानि असंशयितानि निःसंशयानि चत्वारि स्थानानिस्यु । तानि चैवमा

ख्यायते । तद्यथा । क्रोधमानमायालोभस्थानानि । तेच क्रोधमानमायालोभाद्यात्मोभ वा । एभिरेव मनोदुष्ट स्यात् । एव तस्य तत्प्रत्ययिकमध्यात्मनिमित्त सावद्य कर्माधी यते । तदेवमष्टममाध्यात्मिकाख्य क्रियास्थानमाख्यात ॥ १६ ॥

॥ टीका–अथापरमष्टम क्रियास्थानमाध्यात्मिकमित्यत करणोन्नवमाख्यायते । तद्य था नामकश्चित्पुरुषश्चित्तोपेक्षाप्रधानस्तस्य च नास्ति कश्चिद्विसवादयिता । न तस्य कश्चि द्विसवादेन परिभावेनवा सद्भूतोन्नावनेनवा चित्तदु खमुत्पादयति तथाप्यसौ स्वयमेव वर्णापसदवद्दीनोदुर्गतवद्दीनोदुश्चिततया दुष्टोदुर्मनास्तथोपहतोऽस्वन्नतया मन सकल्पो यस्य सतथा चिंतैव शोकइति सागरश्चिताप्रधानोवा शोकश्चिताशोकसागरप्रविष्ट । तथाभू तश्च यदवस्थोभवति तद्दर्शयति । करतले पर्यस्त मुख यस्य सतथाऽहर्निश भवति तथा र्तध्यानोपगतोऽपगतसद्विवेकतया धर्मध्यानदूरवर्ती निर्निमित्तमेव ह्लोपहतवद्ध्यायति । तस्यैव चिंताशोकसागरावगाढस्य सतश्चाध्यात्मिकान्यत करणोन्नवानि मन सश्रितान्यस शयितानि वा नि सशयितानि चत्वारि वक्ष्यमाणानि स्थानानि भवति । तानि चैव समा ख्यायते । तद्यथा क्रोधस्थान, मानस्थान, मायास्थान, लोभस्थानमिति । ते चावश्य क्रो धमानमायालोभाद्यात्मनोऽभिन्नत्वात्याध्यात्मिकाएभिरेव सन्निर्दिष्ट मनोभवति । तद्व तस्य दुर्मनस क्रोधमानमायालोभवतएवमेवोपहतमन सकल्पस्य तत्प्रत्ययिकमध्यात्मनिमि त्त सावद्य कर्माधीयते सवध्यते । तदेवमेतक्रियास्थानमाध्यात्मिकाख्यमाख्यातमिति॥१६॥

अहावरे णवमे किरियाठाणे माणवत्तिएत्ति आहिज्जइ से जहा णामए के इ पुरिसे जातिमएणवा कुलमएणवा बलमएणवा रूवमएणवा तवमएण वा सुयमएणवा लाभमएणवा ईस्सरियमएणवा पन्नामएणवा अन्नतरे णवा मयठाणेण मत्ते समाणे पर हिलेति निंदति खिसति गरहति परिभ वइ अपमणेति इत्तरिए अय अहमसि पुण विसिठे जाइकुलबलाइगुणो ववेए एव अप्पाण समुक्कसे देहाचुए कम्मवित्तिए अवसेपयाइ तजहा गप्भाउगप्भ जम्माउजम्म माराउमार णरगाउणरग चंडे थद्धे चवले माणियावि भवइ एव खलु तस्स तप्पत्तिय सावज्जति आहिज्जइ णवमे किरियाठाणे माणवत्तिएत्ति आहिए ॥ १७ ॥

अर्थ–अथ हवे अपर नवमो क्रियास्थानक मान प्रत्ययिक नामे कहिए छैए ते जेम नाम एवी संभावनायें कोइएक पुरुष (जातिमएणवा के०) जाति एटले माता

नो पक्ष, तेना मदें करीने, (कुलमएणवा के०) कुल एटले पितानो पक्ष, तेना मदें करीने, (बलमएणवा के०) शरीरनु बल, तेना मद करीने, (रूवमएणवा के०) रूपने मदें करीने, (तवमएणवा के०) तपने मदें करीने, (सुयमएणवा के०) श्रुतज्ञानने मदे करीने, (लाभमएणवा के०) लाभने मदे करीने, (ईस्सरियमएणवा के०) ऐश्वर्य एटले ठकुराइने मदें करीने, (पन्नामएणवा के०) प्रज्ञाना मदे करीने, एटलाना मद (अन्नतरेणवा के०) अथवा अन्य एटले बीजा कोइ (मयट्ठाणेण के०) मदना स्थानके करीने (मत्तेसमाणे के०) मातो थतो (परहिलेंति के०) बीजानी हेलना करे, (निंदेति के०) निंदा करे, (खिसति के०) खष्ट करे, (गरहति के०) गर्हा करे, (परिभवइ के०) पराभव करे, (अवमन्नेति के०) अपमान करे, (इत्तरिएअ य के०) ए बापडो जघन्य एटले जातिकुलादिके हीनछे (अहमसिपुणविसिठ्ठेजाइकु लबलाइगुणोववेए के०) हु वली विशेष जाति, कुल, बलादिकगुणेकरी सहितछु (एवअप्पाणसमुक्कस्से के०) एम पोताना आत्माने उत्कर्षे एटले अहकार करे हवे एवा मद करनारने विपाक देखाडेछे (देहाचुए के०) ते पुरुष आ लोक माहे पण निंदा अने गर्हानु स्थानक थाय, अने परलोके पण निंदा अने गर्हानु स्थानक थाय देहाचुए एटले आ शरीरथकी चवीने परभवे (कम्मबितिए के०) कर्मद्वितीय (अवसेपयाइ के०) एतावता कर्मने वश वर्त्ततो चतुर्गतिक ससार माहे परिभ्रमण करे (तंजहा के०) ते कहेछे (गब्भाउगब्भ के०) एक गर्भ थकी मरण पा मिने, वली बीजा गर्भ माहे उपजे (जम्माउजम्म के०) एक जन्म थकी बीजु ज न्म पामे, (माराउमार के०) मरण थकी मरण पामे, (णरगाउणरग के०) नरक थकी निकलीने वली नरकातरे नरकमा जइने तीव्र दु ख भोगवे, एटले ते नरकमाहे थी निकलीने, सिंह मत्स्यादिक माहे उत्पन्न थाय, फरी त्याथी मरण पामीने तीव्रतर नरकातरे जाय एतावता ते (चण्डे के०) रौद्र अहकारी (थद्धे के०) स्तब्ध अनम्र शील (चवले के०) चपल एवा लक्षणेयुक्त (माणियाविभवइ के०) ते अभिमानी पुरुष होय एम निश्चे तेने तत्प्रत्ययिक सावद्य कर्म बधाय, ए नवमो क्रिया स्थानक मान प्रत्ययिक नामे कह्यो ॥ १७ ॥

॥ दीपिका—अथापर नवम क्रियास्थान मानप्रत्ययिकमाख्यायते । तद्यथा कश्चित्पुरुषो जात्यादिगुणोपेत सन् जातिकुलबलरूपतप श्रुतलाभैश्वर्यप्रज्ञामदाख्यैरष्टभिर्मदस्थानैर न्यतरेण वा मत्त पर हीनबुद्ध्या हीलयति, निंदति, जुगुप्सते, गर्हति, परिभवति । यथाय मितरोजघन्योहीनोमत्त कुलादिभि । अह पुनर्विशिष्टकुलादिगुणोपेतएवमात्मानमुत्क

र्पयेत् । एव जात्यादिमदमत्त सन् इहैव निंद्य स्यात् । अत्रच जात्यादिमद द्व्यादिसयोगैर्भंगाज्ञेया । तथाहि । जातिमद कस्यचिन्न कुलमद , १ कस्यचित्कुलमदएव, न जातिमद २ कस्यचिद्द्वयं ३ कस्यचिद्नयमपि न ४ एव पदद्वयेन चत्वारोजगा । पदत्रयेणाष्टौ, पदचतुष्टयेन पोडश, पचनि पदै द्वात्रिंशत् पड्निश्चतु पष्टि सप्तनि १२८ अष्टनि २५६ सर्वत्र मदानावरूपश्चरमजग शुद्धइति । समानी देहाच्च्युतोमृत सन् कर्मद्वितीय कर्मसहायोऽवश परवश प्रयाति नवातर । तद्यथा गर्नाद्गर्न जन्मनएकस्मात्पर जन्म, मारान्मरणान्मार मरणातर व्रजति नरकतुल्याच्चडालादिवासान्नरक रत्नप्रनादिक याति । अथवा नरकाडुद्धृत्य सिंहमत्स्यादावुत्पद्य पुनरतितीव्र नरकातर याति । तदेव मानी परपरिनवे सति चडोरौद्रोऽन्य हति तदनावे आत्मानमेव हति स्तब्धश्चपलो यत्किचनकारी स्यात् मानी सन् एव खलु तस्य तत्प्रत्ययिक माननिमित्त सावद्य कर्माधीयते बध्यते । नवममेतक्रियास्थानमाख्यातमिति ॥ १७ ॥

॥ टीका—अथापर नवम क्रियास्थान मानप्रत्ययिकमाख्यायते । तद्यथानाम कश्चित्पुरुषोजात्यादिगुणोपेत सन् जातिकुलवलरूपतप श्रुतलानैश्वर्यप्रज्ञामदाख्यैरष्टनिर्मदस्थानैरन्यतरेणवा मत्त परमवबुध्या हीलयति तथा निंदति, जुगुप्सते, गर्हति, परिनवति, एतानि चैकार्थिकानि कथचिद्भेद चोत्प्रेक्ष्य व्याख्येयानीति । यथा परिनवति तथा दर्शयति । इतरोय जघन्योहीनजातिक कुलवलरूपादिनिर्दूरमपभ्रष्ट सर्वजनावगीतोयमिति । अह पुनर्विशिष्टजातिकुलवलादिगुणोपेतएवमात्मान समुत्कर्पयेदिति । साम्प्रतं मानोत्कर्पविपाकमाह । (देहाच्चुएइत्यादि) तदेव जात्यादिमदोन्मत सन्निहैव लोके गर्हितोनवति । अत्र जात्यादिपद द्व्यादिसयोगाङ्गव्यास्ते चेव नवति । जातिमद , कस्य चिन्न कुलमदोऽपरस्य कुलमदो,न जातिमद परस्योनयमपरस्यानुनयमित्येव पदत्रयेणाष्टा चतुर्नि पोडशेत्यादि यावदष्टनि पद पट्पचाशदधिक शत द्वयमिति । सर्वत्र मदानावरूपचरमजग शुद्धइति । परलोकेऽपिच मानी डु खनाग्नवतीत्यनेन प्रदर्श्यते । स्वायुप क्षये देहाच्च्युतोनवातर गर्वेशुनाशुनकर्मा द्वितीय कर्मपरायत्तत्वादवश परतंत्र प्रयाति । तद्यथा गर्नाद्गर्न पचेंद्रियापेक्ष तथा गर्नाद्गर्न विकलेंद्रियेपूत्पद्यमान पुनर्गर्नाद्गर्नमेव गर्नादगर्नमेतच्च नरककल्पगर्नेडु खापेक्षायामनिहितमुत्पद्यमानडु खापेक्षया त्विदमनिधीयते । जन्मनएकस्मादपर जन्मातर व्रजति । तथा मरण मारस्तस्मान्मारातर व्रजति तथा नरकदेश्या त्कृपाकादिवासाद्रत्नप्रनादिक नरकातर व्रजति । यदिवा नरकात्सीमतकादिकाडुद्धृत्य सिंहमत्स्यादावुत्पद्य पुनरपि तीव्रतर नरकातर व्रजति । तदेव नटवद्गनूर्मा ससारचक्रवाले स्त्रीपुनपुसकादीनि बहून्यवस्थातराण्यनुनवति । तदेव मा

नो पक्ष, तेना मर्दे करीने, (कुलमएणवा के०) कुल एटले पितानो पक्ष, तेना मर्दे करीने, (बलमएणवा के०) शरीरनु बल, तेना मर्द करीने, (रूवमएणवा के०) रूपने मर्दे करीने, (तवमएणवा के०) तपने मर्दे करीने, (सुयमएणवा के०) श्रुतज्ञानने मदे करीने, (लाजमएणवा के०) लाजने मदे करीने, (ईस्सरियमएणवा के०) ऐश्वर्य एटले ठकुराइने मर्दे करीने, (पन्नामएणवा के०) प्रज्ञाना मदे करीने, एटलाना मद (अन्नतरेणवा के०) अथवा अन्य एटले बीजा कोइ (मयघाणेण के०) मदना स्थानके करीने (मत्तेसमाणे के०) मातो छतो (परहिलेति के०) बीजानी हेलना करे, (निदेति के०) निदा करे, (खिसति के०) खष्ट करे, (गरहति के०) गर्हा करे, (परिजवइ के०) पराजव करे, (अवमन्नेति के०) अपमान करे, (इत्तरिएअ य के०) ए बापडो जघन्य एटले जातिकुलादिके हीनछे (अहमसिपुणविसिट्ठजाइकु लबलाइगुणोववेए के०) हु वली विशेष जाति, कुल, बलादिकगुणेकरी सहितछु (एवअप्पाणसमुक्कस्से के०) एम पोताना आत्माने उत्कर्षे एटले अहकार करे हवे एवा मद करनारने विपाक देखाडेछे (देहाचुए के०) ते पुरुष आ लोक माहे पण निदा अने गर्हानु स्थानक थाय, अने परलोके पण निदा अने गर्हानु स्थानक थाय देहाचुए एटले आ शरीरथकी चवीने परजवे (कम्मबित्तिए के०) कर्मद्वितीय (अवसेपयाइ के०) एतावता कर्मने वश वर्त्ततो चतुर्गतिक ससार मांहे परिज्रमण करे (तंजहा के०) ते कहेछे (गप्नाउगप्न के०) एक गर्न थकी मरण पा मिने, वली बीजा गर्न माहे उपजे (जम्माउजम्म के०) एक जन्म थकी बीजु ज न्म पामे, (माराउमार के०) मरण थकी मरण पामे, (णरगाउणरग के०) नरक थकी निकलीने वली नरकातरे नरकमा जइने तीव्र दु ख जोगवे, एटले ते नरकमाहे थी निकलीने, सिह मत्स्यादिक माहे उत्पन्न थाय, फरी त्याथी मरण पामीने तीव्रतर नरकातरे जाय एतावता ते (चमे के०) रौद्र अहकारी (थद्धे के०) स्तब्ध अनम्र शील (चवले के०) चपल एवा लक्षणेयुक्त (माणियाविजवइ के०) ते अजिमानी पुरुष होय एम निश्चे तेने तत्प्रत्ययिक सावद्य कर्म बधाय, ए नवमो क्रिया स्थानक मान प्रत्ययिक नामे कह्यो ॥ १७ ॥

॥ दीपिका—अथापर नवम क्रियास्थान मानप्रत्ययिकमाख्यायते । तद्यथा कश्चित्पुरुषो जात्यादिगुणोपेत सन् जातिकुलबलरूपतप श्रुतलाजैश्वर्यप्रज्ञामदाख्यैरष्टजिर्मदस्थानैर न्यतरेण वा मत्त पर हीनबुध्या हीलयति, निदति, जुगुप्सते, गर्हति, परिजवति । यथाय मितरोजघन्योहीनोमत्त कुलादिजि । अह पुनर्विशिष्टकुलादिगुणोपेतएवमात्मानमुत्क

र्षयेत् । एव जात्यादिमदमत्त सन् इहैव निंद्य स्यात् । अत्रच जात्यादिमद द्व्यादिसंयोगैर्भंगाज्ञेया । तथाहि । जातिमद कस्यचिन्न कुलमद , १ कस्यचित्कुलमदएव, न जातिमद २ कस्यचिद्वय ३ कस्यचिदुनयमपि न ४ एव पदद्वयेन चत्वारोनंगा । पदत्रयेणाष्टौ, पदचतुष्टयेन षोडश, पचभि पदैर्द्वात्रिंशत् षड्भिश्चतु षष्टि सप्तभि १२८ अष्टनि २५६ सर्वत्र मदाभावरूपश्चरमभंग शुद्धइति । समानी देहाच्च्युतोमृत सन् कर्मद्वितीय कर्मसहायोऽवश परवश प्रयाति भवांतर । तद्यथा गर्भाद्गर्भं जन्मनएकस्मात्पर जन्म, मारान्मरणान्मार मरणांतर व्रजति नरकतुल्याच्चडालादिवासान्नरक रत्नप्रभादिक याति । अथवा नरकादुद्धृत्य सिंहमत्स्यादावुत्पद्य पुनरतितीव्र नरकांतर याति । तदेव मानी परपरिभवे सति चडोरौद्रोऽन्य हंति तदभावे आत्मानमेव हंति स्तब्धश्चपलो यत्किंचनकारी स्यात् मानी सन् एव खलु तस्य तत्प्रत्ययिक माननिमित्त सावद्य कर्माधीयते बध्यते । नवममेतत्क्रियास्थानमाख्यातमिति ॥ १७ ॥

॥ टीका–अथापर नवम क्रियास्थान मानप्रत्ययिकमाख्यायते । तद्यथानाम कश्चित्पुरुषोजात्यादिगुणोपेत सन् जातिकुलबलरूपतप श्रुतलाभैश्वर्यप्रज्ञामदाख्यैरष्टभिर्मदस्थानैरन्यतरेणवा मत्त परमवबुध्या हीलयति तथा निंदति, जुगुप्सते, गर्हति, परिभवति, एतानि चैकार्थिकानि कथंचिद्भेद चोत्प्रेक्ष्य व्याख्येयानीति । यथा परिभवति तथा दर्शयति । इतरोय जघन्योहीनजातिक कुलबलरूपादिनिर्दूरमपभ्रष्ट सर्वजनावगीतोयमिति । अह पुनर्विशिष्टजातिकुलबलादिगुणोपेतएवमात्मान समुत्कर्षयेदिति । साप्रत मानोत्कर्षविपाकमाह । (देहाच्चुएइत्यादि) तदेव जात्यादिमदोन्मत्त सन्निहैव लोके गर्हितोभवति । अत्र जात्यादिपद द्व्यादिसंयोगाइष्टव्यास्ते चैव भवति । जातिमद , कस्य चिन्न कुलमदोऽपरस्य कुलमदो,न जातिमद परस्योभयमपरस्यानुभयमित्येव पदत्रयेणाष्टौ चतुर्भि षोडशेत्यादि यावदष्टभि पदै षट्पचाशदधिक शतद्वयमिति । सर्वत्र मदाभावरूपचरमभंग शुद्धइति । परलोकेऽपिच मानी दु खभाग्भवतीत्यनेन प्रदर्श्यते । साधुप क्षये देहाच्च्युतोभवांतर गतेशुभाशुभकर्मा द्वितीय कर्मपरायत्तत्वादवश परत्र प्रयाति । तद्यथा गर्भाद्गर्भं पचेंद्रियापेक्ष तथा गर्भाद्गर्भं विकलेंद्रियेषूत्पद्यमान पुनरगर्भाद्गर्भमेव गर्भादगर्भमेतच्च नरककल्पगर्भदु खापेक्षायामभिहितमुत्पद्यमानदु खापेक्षया त्विदमभिधीयते । जन्मनएकस्मादपर जन्मांतर व्रजति । तथा मरण मारस्तस्मान्मारांतर व्रजति तथा नरकदेश्यान्नूपाकादिवासाद्रत्नप्रभादिक नरकांतर व्रजति । यदिवा नरकात्सीमतकादिकादुद्धृत्य सिंहमत्स्यादावुत्पद्य पुनरपि तीव्रतर नरकांतर व्रजति । तदेव नटवद्रगभूमौ ससारचक्रवाले स्त्रीपुनपुसकादीनि बहून्यवस्थांतराण्यनुभवति । तदेव मा

नी परपरिज्ञवेसति चंडरौद्रोनवति परस्यापकरोति तदनावे ह्यात्मानं व्यापादयति। तथा स्तब्धश्चपलोयत्किंचनकारी मानी सन्सर्वोप्येतदवस्थोनवतीति। तदेव तत्प्रत्ययिकं माननिमित्तं सावद्यं कर्माधीयते संबध्यते। नवममेतत्क्रियास्थानमाख्यातमिति॥१७॥

अहावरे दसमे किरियाठाणे मित्तदोसवत्तिएत्ति आहिज्जइ से जहा णामए केइ पुरिसे माइहिंवा पिताहिंवा नाईहिंवा नइणीहिंवा नज्जाहिंवा धूयाहिंवा पुत्तेहिंवा सुएहाहिंवा सद्धिं संवसमाणे तेसिं अन्नयरेंसि अहालहुगंसि अवराहंसि सयमेव गरुयं दंमं निवत्तेति तं जहा सीतोदगवियडंसि वा कायं उब्बोलित्तानवति उसिणोदगवियडेणवा कायं उसिंचित्ता नवति अगणिकाएण कायं उवडहित्तानवति जोतेणवा वेतेणवा णेतेणवा तयाइवा कसेणवा ठियाएवा लयाएवा पासाइं उद्दालित्तानवति दंमेणवा अट्ठीणवा मुठीणवा लेलूणवा कवालेणवा कायंआउडित्ता नवति तहप्पगारे पुरिसजाए संवसमाणे डुम्मणा नवति पवसमाणे सुमणा नवति तहप्पगारे पुरिसजाए दंमपासी दंमगुरुए दंमपुरक्कडे अहिए इमंसि लोगंसि संजलणे कोहणे पिठिमंसियावि नवति एवं खलु तस्स तप्पत्तियं सावज्जंति आहिज्जति दसमे किरियाठाणे मित्तदोसवत्तिएत्ति आहिए॥१८॥

॥ अर्थ—अथ हवे अपर दशमो क्रिया स्थानक मित्र दोष प्रत्ययिक कहियेछेये ते जेम नाम एवी संनावनाये कोइएक पुरुष माता, पिता, नाइ, बेन, स्त्री, बेटी, पुत्र, पुत्रनीस्त्री, तेवहु जाणवी (सद्धिंसंवसमाणे के०) एटला साथे वसतो थको (तेसिंअन्नयरेंसि के०) ते मातापितादिकथी कोइ अनेरो अजाण पणे अनानोग थकी (अहालहुगंसि के०) यथा कथंचित् न्हानो डुर्वचन प्रमुखनो अथवा काय थकी हस्त पादादिकनो संघट्ट प्रमुख एवो (अवराहंसि के०) अपराध थये छते (सयमेव के०) पोतेंज क्रोधें करी धमतो थको तेने (गुरुयदंमनिवत्तेति के०) महोटो दंम करे (तंजहा के०) ते कहेछे (सीतोदगवियडंसिवा के०) सीतल पाणीये करी सीतकालने विषे (कायउब्बोलित्तानवति के०) ते अपराधीनु शरीर तमापाणी माहे बोले एवा अकार्यनो करनार थाय तथा (उसिणोदगवियडेणवाकायउसिंचित्तानवति के०) उष्णकालें अत्यंत उष्ण पाणीयें करीने उष्ण तेले करीने तेना शरीरनेसिंचे शरीरनु शोषण करनार थाय, (अगणिकाएणकायउवडहित्तानवति के०) अग्निकाये करीने तेना शरीरनु दहन करनार

थाय, (जोत्तेणवा के०) जोत्रे करी, (वेत्तेणवा के०) वेत्रे करी, अथवा (णेत्तेणवा के०) नेतरे करी, (तयाइवाके०) त्वचाये करी, अथवा (कसेणवाके०) ताजणे चाबुके करी, (छियाएवा के०) नाडाये करी, (लयाएवा के०) लता एटले वेलुये करी, दोरडीयेकरी (पासाइंउद्दालित्ताभवति के०) तेना पार्श्वभागना चामडाने उखेडनार थाय, (दंमेणवा के०) दंमे करी लाकडीये करी, (अठीणवा के०) हाडकायें करी, (मुठीणवा के०) मुष्टिये करी, (लेलूणवा के०) पाषाणने कटके करी, (कवालेणवा के०) ठीकरीये करी, कपालादिकेकरी, (कायंआउडित्ताभवति के०) तेना शरीरने ताडनार थाय, किंबहुना (तहप्पगारे के०) तथा प्रकारना दंमना करनार एवा (पुरिसजाए के०) पुरुष जाति जे तथा प्रकारना कुकर्मना करनार होए तेनी साथे (संवसमाणे के०) एकठा रहेता छता सज्जन पुरुष जे माता पितादिक ते पण (डुम्मणाभवति के०) डुर्मन थइने देशांतर जता रहे पछी (पवसमाणे के०) ते थकी अलगा रहेवाथी (सुमणाभवति के०) सुमन थाय, एटले तेने छोडयाथी हर्षित थाय एवा (तहप्पगारे के०) तथा प्रकारना (पुरिसजाए के०) पुरुष जाति जे थोडा अपराधीने पण दंमना देनार, (दंमपासीके०) अल्पापराधने विषे अति कोपकरनार, ते दंडपार्श्वी (दंमगुरुएके०) दंमेंकरी आकरो दंम करे, (दंमपुरेक्कडेके०) तेने सर्व काल दंमज अग्रेसर छे ते पुरुष (अहिएइमंसिलोगंसिके०) आलोकने विषे पण पोताना जीवने अहित कारी अने (अहिएपरंसिलोगंसि के०) परलोकने विषे पण पोताना जीवने अहित कारीछे तेनुं कारण शुं? तोके तेजीव, (संजलणे के०) क्षणे क्षणे ज्वले, (कोहणे के०) क्षणेक्षणे क्रोध करे, (पिठिमंसियाविभवति के०) पृष्ठ मांस भक्षण करनार होय, पुठे पाछल अवर्णवादनो बोलनार होय, एम निश्चे तेहने तत्प्रत्ययिक एटले ते निमित्ते सावद्य कर्म बंधाय ए दशमो क्रिया स्थानक मित्र दोष प्रत्ययिक नामे कह्यो ॥ १० ॥

॥ दीपिका–अथापरं दशमं क्रियास्थानं मित्रदोषप्रत्ययिकमाख्यायते । तद्यथानाम कश्चित्पुरुषः प्रभुकल्पोमातापितृसुहृत्स्वजनादिभिः सार्धं संवसन् तेषां मातापित्रादीनामन्यतमेनाऽनाभोगतोयथाकथंचिल्लघुतमेप्यपराधे स्वयमेवात्मनाक्रोधतोगुरुतरं दंडं वर्तयति कराति । तद्यथा शीतोदकविकटे शिशिरादावतिशीतोदके काय शरीरमपराधिनोऽववोलयिता भवति तथा उष्णोदकविकटेन कायमपसिंचयिता भवति । विकटग्रहणाडुष्णतेलकांजिकादिना अग्निकायेन उल्मुकेन तप्तलोहेनवा कायमुपदाहयिता भवति । (जोएणत्ति) जोत्रेण वेत्रेणवा नेत्रोवृक्षविशेषस्तेन कशादिनावा लतयावा शरीरपार्श्वाणि उद्दालयितु चर्माणि लुपयितु भवति । दंडेन अस्थ्ना मुष्टिना लेष्टुना कपालेन नाडखंडेन कायमु

नी परपरिज्ञवेसति चंडरौद्रोनवति परस्यापकरोति तदनावे ह्यात्मान व्यापादयति। तथा स्तब्धश्चपलोयत्किंचनकारी मानी सन्सर्वोप्येतदवस्थोनवतीति। तदेव तत्प्रत्यपि क मानंनिमित्त सावद्य कर्माधीयते सबध्यते। नवममेतत्क्रियास्थानमाख्यातमिति॥१७॥

अहावरे दसमे किरियाठाणे मित्तदोसवत्तिएत्ति आहिज्जइ से जहा णाम ए केइ पुरिसे माइहिंवा पिताहिंवा नाईहिंवा नइणीहिंवा नज्जाहिंवा धूयाहिंवा पुत्तेहिंवा सुएहाहिंवा सद्धिं संवसमाणे तेसिं अन्नयरेसि अहालहुगंसि अवराहंसि सयमेव गरुयं दंमं निवत्तेति त जहा सीउदगवियडंसि वा कायं उब्बोलित्तानवति उसिणोदगवियडेणवा कायं उसिचित्ता नवति अगणिकाएण कायं उवडहित्तानवति जोतेणवा वेतेणवा णेतेणवा तयाइ वा कसेणवा छियाएवा लयाएवा पासाइं उद्दालित्तानवति दंमेणवा अठीणवा मुठीणवा लेलूणवा कवालेणवा कायंआउडित्ता नवति तहप्पगारे पुरिसजाए संवसमाणे डुम्मणा नवति पवसमाणे सुमणा नवति तहप्पगारे पुरिसजाए दंमपासी दंमगुरुए दंमपुरक्कडे अहिए इमंसि लोगंसि संजलणे कोहणे पिठिमंसियावि नवति एवं खलु तस्स तप्पत्तियं सावज्जंति आहिज्जति दसमे किरियाठाणे मित्तदोसवत्तिएत्ति आहिए॥१८॥

॥ अर्थ—अथ हवे अपर दशमो क्रिया स्थानक मित्र दोष प्रत्ययिक कहियेंबैये ते जेम नाम एवी संनावनाये कोइएक पुरुष माता, पिता, नाइ, बेन, स्त्री, बेटी, पुत्र, पुत्रनीस्त्री, तेवढु जाणवी (सद्धिंसंवसमाणे के०) एटला साथे वसतो थको (तेसिंअन्नयरेसि के०) ते मातापितादिकथी कोइ अनेरो अजाण पणे अनानोग थकी (अहालहुगंसि के०) यथा कथंचित् न्हानो डुर्वचन प्रमुखनो अथवा काय थकी हस्त पादादिकनो संघट्ट प्रमुख एवो (अवराहंसि के०) अपराध थये बते (सयमेव के०) पोतेंज क्रोधें करी धमतो थको तेने (गुरुयदंमनिवत्तेति के०) मह्योटो दंम करे (तजहा के०) ते कहेबे (सीउदगवियडंसिवा के०) सीतल पाणीये करी सीतकालने विषे (कायउब्बोलित्तानवति के०) ते अपराधीनु शरीर ठंमापाणी माहे बोले एवा अकार्यनो करनार थाय तथा (उसिणोदगवियडेणवाकायउसिचित्तानवति के०) उस्नकालें अत्यंत उस्न पाणीये करीने उस्न तेले करीने तेना शरीरनेसिंचे शरीरनु शोषण करनार थाय, (अगणिकाएणकायउवडहित्तानवति के०) अग्निकाये करीने तेना शरीरनु दहन करनार

थाय, (जोतेणवा के०) जोत्रे करी, (वेतेणवा के०) वेत्रे करी, अथवा (णेतेणवा के०) नेतरे करी, (तयाइवाके०) त्वचाये करी, अथवा (कसेणवाके०) ताजणे चाबुकें करी, (ठियाएवा के०) नाडायें करी, (लयाएवा के०) लता एटले वेलुयें करी, दोरडीयेंकरी (पासाइंवद्दालित्ताजवति के०) तेना पार्श्वनागना चामडाने उखेडनार थाय, (दम्मेणवा के०) दम्मे करी लाकडीये करी, (अठीणवा के०) हाडकायें करी, (मुठीणवा के०) मुष्टिये करी, (लेलूणवा के०) पाषाणने कटके करी, (कवालेणवा के०) ठीकरीये करी, कपालादिकेकरी, (कायआउडित्ताजवति के०) तेना शरीरने ताडनार थाय, किंबहुना (तहप्पगारे के०) तथा प्रकारना दमना करनार एवा (पुरिसजाए के०) पुरुष जाति जे तथा प्रकारना कुकर्मना करनार होए तेनी साथे (सवसमाणे के०) एकठा रहेता ठता सज्ञान पुरुष जे माता पितादिक ते पण (डुम्मणाजवति के०) डुर्मन थइने देशांतर जता रहे पठी (पवसमाणे के०) ते थकी अलगा रहेवाथी (सुमणाजवति के०) सुमन थाय, एटले तेने ठोडयाथी हर्षित थाय एवा (तहप्पगारे के०) तथा प्रकारना (पुरिसजाए के०) पुरुष जाति जे थोडा अपराधीने पण दमना देनार, (दमपासीके०) अल्पापराधने विषे अति कोपकरनार, ते दंडपार्श्वो (दमगुरुएके०) दमेंकरी आकरो दम करे, (दमपुरेक्कडेके०) तेने सर्व काल दमज अग्रेसर ठे ते पुरुष (अहिएइमसिलोगसिकें०) आलोकने विषे पण पोताना जीवने अहित कारी अने (अहिएपरसिलोगसि के०) परलोकने विषे पण पोताना जीवने अहित कारीठे तेनु कारण शुं? तोके तेजीव, (सजलणे के०) क्षणे क्षणे ज्वले, (कोहणे के०) क्षणेक्षणे क्रोध करे, (पिठिमसियाविजवति के०) पृष्ठ मांस नक्षण करनार होय, पुठे पाठल अवर्णवादनो बोलनार होय, एम निश्चे तेहने तत्प्रत्ययिक एटले ते निमित्ते सावद्य कर्म बंधाय ए दशमो क्रिया स्थानक मित्र दोष प्रत्ययिक नामे कह्यो ॥ १० ॥

॥ दीपिका–अथापरं दशमं क्रियास्थानं मित्रदोषप्रत्ययिकमाख्यायते । तद्यथानाम कश्चित्पुरुषः प्रचुरुषोमातापितृसुहृत्स्वजनादिनिः सार्धं संवसन् तेषां मातापित्रादीनामन्यतमेनाऽनानोगतोयथाकथंचिल्लघुतमेप्यपराधे स्वयमेवात्मनाक्रोधतोगुरुतरं दंडं वर्त्तयति करोति । तद्यथा शीतोदकविकटे शिशिरादावतिशीतोदके कायं शरीरमपराधिनोऽवबोलयिता नवति तथा उष्णोदकविकटेन कायमपसिंचयिता नवति । विकटग्रहणाडुष्णतैलकांजिकादिना अग्निकायेन उल्मुकेन ततलोदेनवा कायमुपदाहयिता नवति । (जोएणत्ति) जोत्रेण वेत्रेणवा नेत्रोवृद्धविशेषस्तेन कशादिनावा लतयावा शरीरपार्श्वाणि उद्दालयितुं चर्माणि लुपयितुं नवति । दंडेन अस्थ्ना मुष्टिना लेष्टुना कपालेन नाडखडेन कायमु

नी परपरिनवेसति चंडरोड़ोनवति परस्यापकरोति तदनावे ह्यात्मानं व्यापादयति। तथा लब्धश्चपलोयत्किंचनकारी मानी सन्सर्वोप्येतदवस्थोनवतीति। तदेव तत्प्रत्ययिक माननिमित्तं सावद्यं कर्माधीयते सबध्यते। नवममेतत्क्रियास्थानमाख्यातमिति॥१७॥

अहावरे दसमे किरियाठाणे मित्तदोसवत्तिएत्ति आहिज्जइ से जहा णामए केइ पुरिसे माइहिंवा पिताहिंवा नाईहिंवा नइणीहिंवा नज्जाहिंवा धूयाहिंवा पुत्तेहिंवा सुएहाहिंवा सद्धिं संवसमाणे तेसिं अन्नयरेसिं अहालहुगंसि अवराहंसि सयमेव गरुयं दंमं निवत्तेति तं जहा सीतंदगवियडंसि वा कायं उबोलित्तानवति उसिणोदगवियडेणवा कायं उसिचित्ता नवति अगणिकाएणं कायं उवडहित्तानवति जोतेणवा वेतेणवा णेतेणवा तयाइ वा कसेणवा छियाएवा लयाएवा पासाइं उद्दालित्तानवति दंमेणवा अठीणवा मुठीणवा लेलूणवा कवालेणवा कायंआउडित्ता नवति तहप्पगारे पुरिसजाए संवसमाणे डुम्मणा नवति पवसमाणे सुमणा नवति तहप्पगारे पुरिसजाए दंमपासी दंमगुरुए दंमपुरक्कडे अहिए इमंसि लोगंसि संजलणे कोहणे पिठिमंसियावि नवति एवं खलु तस्स तप्पत्तियं सावज्जंति आहिज्जति दसमे किरियाठाणे मित्तदोसवत्तिएत्ति आहिए॥१८॥

॥ अर्थ—अथ हवे अपर दशमो क्रिया स्थानक मित्र दोष प्रत्ययिक कहियेछेये ते जेम नाम एवी संनावनाये कोइएक पुरुष माता, पिता, नाइ, बेन, स्त्री, बेटी, पुत्र, पुत्रनीस्त्री, तेवहु जाणवी (सिद्धिंसंवसमाणे के०) एटला साथे वसतो थको (तेसिंअन्नयरेसिं के०) ते मातापितादिकथी कोइ अनेरो अजाण पणे अनानोग थकी (अहालहुगंसि के०) यथा कथंचित् न्हानो डुर्वचन प्रमुखनो अथवा काय थकी हस्त पादादिकनो संघट्ट प्रमुख एवो (अवराहंसि के०) अपराध थये छते (सयमेव के०) पोतेंज क्रोधें करी धमतो थको तेने (गुरुयदंमनिवत्तेति के०) महोटो दंम करे (तंजहा के०) ते कहेछे (सीतंदगवियडंसिवा के०) सीतल पाणीये करी सीतकालने विषे (कायउबोलित्तानवति के०) ते अपराधीनु शरीर ठमापाणी माहे बोले एवा अकार्यनो करनार थाय तथा (उसिणोदगवियडेणवाकायंउसिचित्तानवति के०) उष्णकालें अत्यंत उष्ण पाणीये करीने उष्ण तेलें करीने तेना शरीरनेसिंचे शरीरनु शोषण करनार थाय, (अगणिकाएणकायंउवडहित्तानवति के०) अग्निकाये करीने तेना शरीरनु दहन करनार

थाय, (जोतेणवा के०) जोत्रे करी, (वेतेणवा के०) वेत्रे करी, अथवा (णेतेणवा के०) नेतरे करी, (तयाइवाके०) त्वचाये करी, अथवा (कसेणवाके०) ताजणे चाबुके करी, (छियाएवा के०) नाडायें करी, (लयाएवा के०) लता एटले वेलुये करी, दोरडीयेकरी (पासाइंउद्दालित्तान्नवति के०) तेना पार्श्वनागना चामडाने उखेडनार थाय, (दमेणवा के०) दमे करी लाकडीये करी, (अठीणवा के०) हाडकायें करी, (मुठीणवा के०) मुष्टियें करी, (लेलूणवा के०) पाषाणने कटके करी, (कवालेणवा के०) ठीकरीये करी, कपालादिकेकरी, (कायआउडित्तान्नवति के०) तेना शरीरने ताडनार थाय, किंबहुना (तहप्पगारे के०) तथा प्रकारना दमना करनार एवा (पुरिसजाए के०) पुरुष जाति जे तथा प्रकारना कुकर्मना करनार होए तेनी साथे (संवसमाणे के०) एकठा रहेता उता सज्जन पुरुष जे माता पितादिक ते पण (डुम्मणान्नवति के०) डुर्मन थइने देशांतर जता रहे पछी (पवसमाणे के०) ते थकी अलगा रहेवाथी (सुमणान्नवति के०) सुमन थाय, एटले तेने छोडयाथी हर्षित थाय एवा (तहप्पगारे के०) तथा प्रकारना (पुरिसजाए के०) पुरुष जाति जे थोडा अपराधीने पण दमना देनार, (दमपासीके०) अल्पापराधने विषे अति कोपकरनार, ते दंडपार्श्वी (दमगुरुएके०) दमेंकरी आकरो दम करे, (दमपुरेकडेके०) तेने सर्व काल दमज अग्रेसर छे ते पुरुष (अहिएइमसिलोगसिके०) आलोकने विषे पण पोताना जीवने अहित कारी अने (अहिएपरसिलोगसि के०) परलोकने विषे पण पोताना जीवने अहित कारीछे तेनुं कारण शुं? तोके तेजीव, (संजलणे के०) क्षणे क्षणे ज्वले, (कोहणे के०) क्षणेक्षणे क्रोध करे, (पिठिमंसियाविन्नवति के०) पृष्ठ मांस नक्षण करनार होय, पुठे पाछल अवर्णवादनो बोलनार होय, एम निश्चे तेहने तत्प्रत्ययिक एटले ते निमित्ते सावद्य कर्म बंधाय ए दशमो क्रिया स्थानक मित्र दोष प्रत्ययिक नामे कह्यो ॥ १० ॥

॥ दीपिका–अथापरं दशमं क्रियास्थानं मित्रदोषप्रत्ययिकमाख्यायते । तद्यथानाम कश्चित्पुरुषः प्रभुकल्पोमातापितृसुहृत्स्वजनादिभिः सार्धं संवसन् तेषां मातापित्रादीनामन्यतमेनाऽनाभोगतोयथाकथंचिल्लघुतमेप्यपराधे स्वयमेवात्मनाक्रोधतोगुरुतरं दंडं वर्तयति करोति । तद्यथा शीतोदकविकटे शिशिरादावतिशीतोदके कायं शरीरमपराधिनोऽवबोलयिता नवति तथा उष्णोदकविकटेन कायमपसिंचयिता नवति । विकटग्रहणाङ्गमतेलकांजिकादिना अग्निकायेन उल्मुकेन तप्तलोहेनवा कायमुपदाहयिता नवति । (जोएणत्ति) जोत्रेण वेत्रेणवा नेत्रांवृक्षविशेषस्तेन कशादिनावा लतयावा शरीरपार्श्वाणि उद्दालयितुं चर्माणि लुंपयितुं नवति । दंडेन अस्थ्ना मुष्टिना लेष्टुना कपालेन नाडखंडेन कायमु

पताडयिता नवति । तथाविधे पुरुषे स्वल्पापराधेपि महादंडकारिणि एकत्र वास कुर्वति मातापित्रादयोऽदुर्मनस स्यु । तस्मिन् प्रवसति दूरं गच्छति सति सहवासिन सुमनस सुखिन स्यु । तथाप्रकारस्तादृश पुरुषोदंडस्य पार्श्वं दंडपार्श्वं तद्विद्यते यस्यासौ, दंडप्रव तोदंड पुरस्कृतोयेन सदंडपुरस्कृतोऽस्मिन् लोके स्वस्य परेषा चाऽहित परलोकेप्यहित सज्वलन क्रोधकारी क्रोधनोवधबधादिषु अविमृश्य प्रवृत्तिकृत् पृष्ठिमांसखादक परम मर्मोद्घट्टनत । एव तस्य स्वल्पापराधेपि महादंडकर्तुस्तद्दंडप्रत्ययिक सावद्य कर्माधीयते बध्यते । तदेतद्दशम क्रियास्थानमाख्यातमिति । अन्ये पुनरष्टम क्रियास्थानमात्मदोषप्रत्ययिकमाचक्षते । नवमतु परदोषप्रत्ययिक । दशम पुन प्राणवृत्तिकमिति ॥ १७ ॥

॥ टीका–अथापर दशम क्रियास्थान मित्रदोषप्रत्ययिकमाख्यायते । तद्यथानाम कश्चित्पुरुष प्रज्ञुकल्पोमातापितृसुहृत्स्वजनादिभि सार्धं परिवसन्स्तेषाच मातापित्रादीनामन्यतमे नानाभोगतया यथाकथचिल्लघुतमेप्यपराधे वाचिके दुर्वचनादिके तथा कायिके हस्तपादादिके संघट्टरूपे कृते सति स्वयमेवात्मना क्रोधध्मातोगुरुतर दंड दुःखोत्पादक 'निवर्तयति करोति । तद्यथा शीतोदके विकटे प्रभूते शीतेवा शिशिरादौ तस्यापराधकर्तुः काय मधोबोलयिता नवति तथोष्णोदकविकटेन काय शरीरमपसिंचयिता । तत्र विकटग्रह णाद्दुष्णतैलेन कांजिकादिनावा कायमुपतापयिता नवति तथाऽग्निकायेनाल्मुकेन तप्तायसावा कायमुपदाहयिता नवति तथा जोत्रेणवा वेत्रेणवा नेत्रेणवा त्वचा वासनादिक पालनतया वाऽन्यतरेण वा दवरकेण ताडनतस्तस्यापराधकर्तुः शरीरपार्श्वाणि उद्दालयितु चर्माणि लुपयितु नवति तथा दंडादिना कायमुपताडयिता नवति । तदेवमल्पापराधिन्यपि महाक्रोधदंडवति तथा प्रकारे पुरुषजाते एकत्र वसति सति तत्सहवासिनोमातापित्रादयोऽदुर्मनसस्तदनिष्टाशंकया नवति तस्मिश्च प्रवसति देशांतरे गच्छति गतेवा तत्सहवासिन सुमनसोनवति । तथाप्रकारश्च पुरुषजातोऽल्पेप्यपराधे महांतं दंड कल्पयतीत्येतदेव दर्शयितुमाह । दंडस्य पार्श्वं दंडपार्श्वं तद्विद्यते यस्यासौ दंडपार्श्वी स्वल्पतया स्तोकापराधे कुप्यति दंड च पातयति । तमप्यतिगुरुमिति दर्शयितुमाह । दंडेन गुरुकोदंड गुरु । यस्यच महान् दंडोनवति असौ दंडेन गुरुर्नवति । तथा दंड पुरस्कृत सदा पुरस्कृतदंडइत्यर्थं । सचैवभूत स्वस्य परेषा चास्मिन् लोकेऽस्मिन्नेव जन्मनि अहित प्राणिनामहितदंडपातनात् तथा परस्मिन्नपि जन्मन्यसावहितस्तच्छीलतया चासौ यस्य कस्यचिदेव येन केनचिदेव निमित्तेन क्षणेक्षणे सज्वलयतीति सज्वलन सचाल्पतक्रोधनोवधबधनविच्छेदादिषु शीघ्रमेव क्रियासु प्रवर्तते तदनावेप्युत्कटद्वेषतया मर्मोद्घट्टनत पृष्ठिमांसमपिखादेत्तत्तदसौ ब्रूयात् । येनासावपि पर सज्वलयेत् ज्वलितश्चान्येषामपकुर्यात् त

देव खलु तस्य महादडं प्रवर्तयितुस्तदंडप्रत्ययिक सावद्य कर्माऽधीयते । तदेतद्दशम क्रिया स्थान मित्रद्रोहप्रत्ययिकमाख्यातमिति । अपरे पुनरष्टम क्रियास्थानमात्मदोपप्रत्ययि कमाचक्षते नवमतु परदोपप्रत्ययिकच दशम पुन प्राणवृत्तिक क्रियास्थानमिति ॥ १७॥

अहावरे एक्कारसमे किरियाठाणे मायावत्तिएत्ति आहिज्जइ जे इमे भव ति गूढायारा तमोकसिया उलुगपत्तलहुया पव्वयगुरुया ते आयरियावि सता अणारियाउ भासाउवि पउज्जति अन्नहासत अप्पाण अन्नहामन्न ति अन्नपुठा अन्नवागरति अन्न आइक्खियव अन्न आइक्खते॥१८॥से ज हा णामए केइ पुरिसे अतोसल्ले त सल्ल णोसय णिहरति णोअन्नेण णि हरावेति णोपडिविद्धसेइ एवमेव निएह्वेइ अविउट्टमाणे अतोअतोरि याइ एवमेव माई माय कट्टु णोआलोएइ णोपडिक्कमेइ णोणिदइ णोगर हइ णोविउट्टइ णोविसोहेइ णोअकरणाए अब्भुठेइ णोअहारिह तवो कम्म पायच्छित्त पडिवज्जइ माइ अस्सिलोए पच्चायाइ माइ परसिलोए पच्चायाइ निंदइ गरहइ पससइ णिच्चरइ णनियट्टइ णिसिरिय दम्हा एति माइ अममाहड सुहलेस्सेयावि भवइ एव खलु तस्स तप्पत्तिय सा वज्जति आहिज्जइ एक्कारसमे किरियाठाणे मायावत्तिएत्ति आहिए॥ २०॥

अर्थ—हवे अपर अगिआरमो क्रिया स्थानक मायाप्रत्ययिक कहिये छेयें (जेंइमे नवति के०) जे आ जगत्माहे पुरुषछे ते कया पुरुप तोके, (गूढायारा के०) गूढा चारी एटले धूतारा, ठगारा, गठीछोडा प्रमुखछे ते नाना प्रकारना उपाये करीनें लोक ने विश्वास उपजावीने वचे (तमोकसिया के०) अधारानें विपे विचरनारा, अर्थात् लोक यकी छाना क्रियाना करनारा, (उलुगपत्तलहुयाके०) ते पोतें जातें घूवडनी पांख थकी पण हलकाछे परतु (पव्वयगुरुया के०) पोताने पर्वत यकी पण महोटा माने, (तेआयरियाविसता के०) ते आर्य देशमा उत्पन्न यया होय तेम छता पण परने वचवाने अर्थे शठ पणे, पोताने गोपववा भणी (अणारियाउभासाउविपउज्जति के०) अनार्य देशनी भापा बोले, अथवा पोतानी कल्पित भापा जे बीजाथी अजा णी होय तेवी भापा बोले, (अन्नहासत के०) लिपी पण तेवी अजाणी अन्य लखे (अप्पाणअन्नहामन्नति के०) पोतें वली बीजी रीतें माने, (अन्नपुठा के०) अन्य कांइ पुछे थके (अन्नवागरति के०) अन्य कहे, (अन्नआइक्खियव के०) अन्य कांहि

पताडयिता नवति । तथाविधे पुरुषे स्वल्पापराधेपि महादडकारिणि एकत्र वास कुर्वति मातापित्रादयोडुर्मनस स्यु । तस्मिन् प्रवसति दूर गच्छति सति सहवासिन सुमनस सुखिन स्यु । तथाप्रकारस्तादृश पुरुषोदडस्य पार्श्वे दडपार्श्वे तद्विद्यते यस्यासौ, दडप्रह तोदड पुरस्कृतोयेन सदडपुरस्कृतोऽस्मिन् लोके स्वस्य परेषा चाऽहित परलोकेप्यहित सज्वलन क्रोधकारी क्रोधनोवधवधादिषु अविमृश्य प्रवृत्तिरुत् पृष्ठिमासखादक परम र्मोद्घट्टनत । एव तस्य स्वल्पापराधेपि महादडकर्तुस्तद्दडप्रत्ययिक सावद्य कर्माधीयते बध्यते । तदेतद्दशम क्रियास्थानमाख्यातमिति । अन्ये पुनरष्टम क्रियास्थानमात्मदोषप्रत्ययिकमाचक्षते । नवमतु परदोषप्रत्ययिक । दशम पुन प्राणवृत्तिकमिति ॥ १७ ॥

॥ टीका–अथापर दशम क्रियास्थान मित्रदोषप्रत्ययिकमाख्यायते । तद्यथानाम कश्चित्पुरुष प्रभुकल्पोमातापितृसुहृत्स्वजनादिनि सार्धं परिवसन्तेषाच मातापित्रादीनामन्यतमे नानाजोगतया यथाकथचिल्लघुतमेप्यपराधे वाचिके डुर्वचनादिके तथा कायिके हस्तपादादिके सघट्टरूपे कृते सति स्वयमेवात्मना क्रोधध्मातोगुरुतर दड डुःखोत्पादक 'निवर्तयति करोति । तद्यथा शीतोदके विकटे प्रभूते शीतेवा शिशिरादौ तस्यापराधकर्तु काय मधोबोलयिता नवति तथोष्णोदकविकटेन काय शरीरमपसिचयिता । तत्र विकटग्रहणाडुष्णतैलेन काजिकादिनावा कायमुपतापयिता नवति तथाऽग्निकायेनाल्मुकेन तप्तायसावा कायमुपदाहयिता नवति तथा जोत्रेणवा वेत्रेणवा नेत्रेणवा त्वचा वासनादिकपाललतया वाऽन्यतरेण वा दवरकेण ताडनतस्तस्यापराधकर्तु शरीरपार्श्वाणि उद्दालयितु चर्माणि लुपयितु नवति तथा दडादिना कायमुपताडयिता नवति । तदेवमल्पापराधिन्यपि महाक्रोधदडवति तथा प्रकारे पुरुषजाते एकत्र वसति सति तत्सहवासिनोमातापित्रादयोडुर्मनसस्तदनिष्टाशकया नवति तस्मिश्च प्रवसति देशातरे गच्छति गतेवा तत्सहवासिन सुमनसोनवति । तथाप्रकारश्च पुरुषजातोऽल्पेप्यपराधे महांत दड कल्पयतीत्येतदेव दर्शयितुमाह । दडस्य पार्श्वे दडपार्श्वं तद्विद्यते यस्यासौ दडपार्श्वी स्वल्पतया स्तोकापराधे कुप्यति दड च पातयति । तमप्यतिगुरुमिति दर्शयितुमाह । दडेन गुरुकोदड गुरु । यस्यच महान् दडोनवति असौ दडेन गुरुर्नवति । तथा दड पुरस्कृत सदा पुरस्कृतदडइत्यर्थ । सचैवनूत स्वस्य परेषा चास्मिन् लोकेऽस्मिन्नेव जन्मनि अहित प्राणिनामहितदडपातनात् तथा परस्मिन्नपि जन्मन्यसावहितस्तच्छीलतया चासौ यस्य कस्यचिदेव येन केनचिदेव निमित्तेन क्षणेक्षणे सज्वलयतीति सज्वलन सचात्यतक्रोधनोवधवधनविच्छेदादिषु शीघ्रमेव क्रियासु प्रवर्तते तदनावेप्युत्कटद्वेषतया मर्मोद्घट्टनत पृष्ठिमासमपिखादेत्तत्तदसौ ब्रूयात् । येनासावपि पर सज्वलयेत् ज्वलितश्चान्येषामपकर्षात त

देव खलु तस्य महादंड प्रवर्तयितुस्तद्दंडप्रत्ययिक सावद्य कर्माऽधीयते। तदेतद्दशम क्रिया स्थान मित्रद्रोहप्रत्ययिकमाख्यातमिति । अपरे पुनरष्टम क्रियास्थानमात्मदोषप्रत्ययि कमाचक्षते नवमतु परदोषप्रत्ययिकच दशम पुन प्राणवृत्तिक क्रियास्थानमिति ॥१८॥

अहावरे एक्कारसमे किरियाठाणे मायावत्तिएत्ति आहिज्जइ जे इमे नव ति गूढायारा तमोकसिया उलुगपत्तलहुया पव्वयगुरुया ते आयरियावि सता अणारियाउ नासाउवि पउजति अन्नहासत अप्पाण अन्नहामन्न ति अन्नपुठ अन्नवागरति अन्न आइक्खियव्व अन्नआइक्खते॥१९॥से ज हा णामए केइ पुरिसे अतोसल्ले त सल्ल णोसय णिहरति णोअन्नेण णि हरावेति णोपडिविद्धसेइ एवमेव निएहवेइ अविउट्टमाणे अतोअतोरि याइ एवमेव माई माय कट्टु णोआलोएइ णोपडिक्कमेइ णोणिदइ णोगर हइ णोविउट्टइ णोविसोहेइ णोअकरणाए अब्भुट्ठेइ णोअहारिह तवो कम्म पायच्छित्त पडिवज्जइ माइ अस्सिलोए पच्चायाइ माइ परसिलोए पच्चायाइ निंदइ गरहइ पससइ णिच्चरइ णनियट्टइ णिसिरिय दम्ड्ढा एति माइ अममाहड सुहलेस्सेयावि नवइ एव खलु तस्स तप्पत्तिय सा वज्जति आहिज्जइ एक्कारसमे किरियाठाणे मायावत्तिएत्ति आहिए ॥ २० ॥

अर्थ—हवे अपर अगियारमो क्रिया स्थानक मायाप्रत्ययिक कहिये ठेयें (जेइमे नवति के०) जे आ जगत्माहे पुरुषठे ते कया पुरुष लोके, (गूढायारा के०) गूढा चारी एटले धूतारा, ठगारा, गवीठोडा प्रमुखठे ते नाना प्रकारना उपायें करीने लोक ने विश्वास उपजावीने वचे (तमोकसिया के०) अधाराने विषे विचरनारा, अर्थात् लोक थकी ठाना क्रियाना करनारा, (उलुगपत्तलहुयाके०) ते पोते जाते घूवडनी पांख थकी पण हलकाठे परतु (पव्वयगुरुया के०) पोताने पर्वत थकी पण महोटा माने, (तेआयरियाविसता के०) ते आर्य देशमा उत्पन्न थया होय तेम ठता पण परने वचवाने अर्थे शठ पणे, पोताने गोपववा नणी (अणारियाउनासाउविपउजति के०) अनार्य देशनी नाषा बोले, अथवा पोतानी कल्पित नाषा जे बीजाथी अजा णी होय तेवी नाषा बोले, (अन्नहासत के०) जिपी पण तेवी अजाणी अन्य लखे (अप्पाणअन्नहामन्नति के०) पोते वली बीजी रीते माने, (अन्नपुठा के०) अन्य काइ पुछे थके (अन्नवागरति के०) अन्य कहे, (अन्नआइक्खियव्व के०) अन्य कांहि

एक प्ररूपवुछे तेने ठेकाणे (अन्नआइस्कते के०) अन्य बीजु काइक जुदूज प्ररूपे ॥ १ए॥ (सेजहाणामए के०) ते यथादृष्टाते नाम एवी सनावनायें जेम (केइपुरिसे के०) कोइ एक पुरुष सग्राम थकी निकल्यो, (अतोसल्ले के०) तीर जालादिकना शल्यें क री सशल्य छतो (तंसल्ल के०) ते शल्यने (णोसपणिहरति के०) वेदना थकी बीहि तो थको पोते पोताने हाथे काढे नही, (णोअन्नेणणिहरावेतिके०) बीजाने हाथे पण कढावे नही, (णोपडिविद्धसेइ के०) तथा वैद्यने उपदेशें औषधादिक प्रयोगें करीने पण ते शल्यनो विध्वस थशे नही (एवमेव के०) एम जाणीने, (निएहवेइ के०) ते शल्यने गोपवी राखे (अविउट्टमाणे के०) पुछ्यो थको कहे नही, (अतोअतो रियाइके०) ते डुखें पीड्यो थको माहोमाहे डुखी थाय, (एवमेव के०) एम ते (माइमायकट्टु के०) मायावी पुरुष, माया शट्ये करीने तेणे जे काइ अकार्य कस्या हो य ते (णोआलोएइ के०) गुरु समक्ष आलोवे नही (णोपडिक्कमेइके०) पडिकमे नही (णोणिदइ के०) आत्मानी साखे निंदे नहीं, (णोगरहइ के०) परसाक्षीक गर्हे न ही (णोविउट्टइ के०) तेवा अकार्य करवा थकी निवृत्तिपामे नहीं (णोविसोहेइ के०) शुनन्नाव रूप पाणीये करी ते अतिचारनु कलक पखाले नही, (णोअकरणाएअब्भुट्टेइ के०) तेवा अकार्यने अणकरवाने उठे नहीं एटले अण करवानो उद्यम न करे,(णो अहारिहतवोकम्मपायच्छित्तपडिवज्जइ के०) यथायोग्य तप कर्म रूप प्रायश्चित पडिव जे नहीं एरीतें (माइ के०) ते मायावी पुरुष (अस्सिलोएपच्चायाइके०) आ लोक माहे पण अविश्वासनी प्रसिद्धि पामे (माइपरसिलोएपच्चायाइ के०) मायावी पुरुष परलोके नरकादिक पीडाना स्थानकने विषे वली वली अरहट्ट घटिकाने न्याये गतिआ गति करे, तथा मायावी पुरुष परनी (निंदइ के०) निंदा करे, (गरहइ के०) गर्हा करे (पससइ के०) अने पोतानी पोते प्रशसा करे, (णिच्चरइ के०) अकार्यने वि षे रती करे, (णनियट्टइ के०) अकार्य थकी निवर्त्ते नहीं (णिसिरियदम्ब्राएति के०) अकार्य करीने पोत्तानो अपराध ढाकी राखे एरीते (माइअसमाहड के०) माया वी पुरुष अपहारे एटले त्यागकरे , शेनो त्यागकरें ? ते कहेछे (सुहलेस्सेयाविनवइ के०) शुन लेश्यानो त्याग करे अने सर्व कालें अशुन लेश्याये करी प्रवर्त्तमान थको होए एरीते निश्चे तेने तत्प्रत्ययिक एटले ते निमित्त सावद्य कर्मबधाय एटले अगी आरमो क्रिया स्थानक मायाप्रत्ययिक नामे कह्यो ॥ २० ॥

॥ दीपिका–अथापरमेकादश क्रियास्थानमाख्यायते । तद्यथा । ये केचनामी नवति पुरुषा । किंनूता । गूढाचारागलकर्तकग्रन्थिछेदकादयस्ते बहूपायैर्विश्वासमुत्पाद्य, विरू

प कुर्वंति चंडप्रद्योतादेरभयकुमारादिवत् तमसि कषितु शील येषांते तम कषिणस्तएव तम काषिका पराविज्ञाता क्रिया कुर्वंतीत्यर्थ । तेच उलूकपिच्छवल्लघवोपि पर्वतवगु रुमात्मान मन्यते आर्याअपि संतस्ते परव्यामोहार्थमनार्यजाषा (विउवंति) प्रयुजते अन्यथा स्थितमात्मानमन्यथा साध्वाचारेण मन्यते व्यवस्थापयति अन्यत् पृष्टामायया ऽन्यदेव वदति आम्रान् पृष्टा निंबान् वदति । व्याकरण पृष्टस्तदङ्गस्तर्कमवतारयति । यथा वा शरदि राजपेयेन यजेतइत्यस्य वाक्यस्यार्थे पृष्टस्तदर्थानभिज्ञ कालविलंबार्थे शर त्कालमेव वर्णयति (अन्नमाऽख्यियवति) अन्यस्मिन्नर्थे कथयितव्येऽन्यमेवाख्याति ॥ १७॥ (सेजहेति) तद्यथानाम कश्चित्पुरुष संग्रामान्निर्गतेऽतर्मध्ये शल्य यस्य सोंत शल्य सवे दनाजीत स्वय शल्य ननिर्हरति नरुपति नाप्यन्येन कर्पयति । नापि वैद्योपदेशादोपध प्रयोगे प्रतिध्वसयति विनाशयति अन्येन दृष्टस्तच्छल्य निन्हुतेऽपलपति तेन शल्येन (अ भिउट्टमाणेत्ति) पीड्यमान (अतोअति) मध्ये पीड्यमानोपि रीयते व्रजति वेदना स हमानोपि क्रियासु प्रवर्त्ततऽत्यर्थ । दृष्टांत योजयति (एवमेव मायीति) यथा सशल्यो दुःखनाग्नवति एवमेव मायी, कृत कार्य निगूहयन् माया कृत्वाऽन्यस्म नालोचयति नकथयति न तस्मात्स्थानात्प्रतिक्रमति न निवर्त्तते न आत्मसाक्षिक निंदति नापिपरसा क्षिक गर्हति आलोचनार्हसमीपे गतोनापि च जुगुप्सते (नविउट्टइत्ति) न त्रिोटयत्यपन यति मायाशल्य नविशोधयति नापि पुनस्तदाकरणतयाऽन्युत्तिष्ठते नापि यथार्ह तप क मैरुप प्रायश्चित्त प्रतिपद्यते । तदेव मायावी अस्मिन् लोकेऽविश्वासतया प्रत्याख्याति याति । यउक्त । मायाशील पुरुषोयद्यपि, नकरोति कंचिदपराध ॥ सर्पइवाऽविश्वास्या जवति तथाप्यात्मदोपहतइति ॥ तथा मायावी परस्मिन् लोके नरकतिर्यगादिषु प्रत्या याति नूयोनूयोयाति (निंदगाहयति) पर निंदयित्वा आत्मप्रशंसया तुष्यति । एवचा सौ लब्धप्रसरोऽधिक निश्चरति तथाविधानुष्ठायी जवति । तत्रच गृद्धस्तस्मान्मातृस्थाना न्ननिवर्त्तते दंड निसृज्य हिंसा कृत्वा प्रछादयत्यपलपति अन्यस्यचा मस्तके क्षिपति समाया वी असमाहृतशुनलेश्योऽनगीकृतशुनध्यानश्चापि जवति । एव खलु तस्य तत्प्रत्ययि क मायाशल्यप्रत्ययिक सावद्य कर्माधीयते । एतदेकादशक्रियास्थान मायाप्रत्ययिकमा ख्यातमिति ॥ २० ॥

॥ टीका–अथापरमेकादश क्रियास्थानमाख्यायते । तद्यथा ये केचनामी जवंति पु रुषा । किंविशिष्टा । गूढाआचारायेषा ते गूढाचारागलकर्तकग्रंथिछेदादयस्तेच ना नाविधैरुपायैर्विश्रंभमुत्पाद्य पश्चादपकुर्वंति प्रद्योतादेरभयकुमारादिवत् । तथा माया शीलत्वेनाप्रकाशकचारिणस्तमसि कषितु शील येषांते तमसिकाषिणस्तएवच तम

काषिका पराऽविज्ञाता क्रिया कुर्वंतीत्यर्थः । तेच स्वचेष्टयैवोलूकपत्रवल्लघव कौशिक पिच्छवल्लघीयासोपि पर्वतवद्गुरुमात्मान मन्यते । यदिवा कार्यप्रवृत्ते पर्वतवन्नो स्तंभ यितु शक्यते ते चाऽऽर्यदेशोत्पन्नाश्चपि सत शाठ्यादात्मप्रच्छादनार्थमपरजयोत्पादनार्थं चाऽनार्यभाषा प्रयुजते परव्यामोहार्थं स्वमतिपरिकल्पितभाषाभिरपराऽविदिताभिर्भाष ते तथाऽन्यथाऽव्यवस्थितमात्मानमन्यथासाध्वाकारेण मन्यते व्यवस्थापयति तथाऽ न्यत्पृष्टामातृस्थानतोऽन्यदाचक्षते । यथाम्रान् पृष्टा कोविदारकानाचक्षते । वादकालेवा कश्चिन्नाथवादितया व्याकरणे प्रवीणस्तर्कमार्गमवतारयति । यथावा शरदि वाजपेयेन यजेतेत्यस्य वाक्यस्यार्थं पृष्टस्तदर्थानभिज्ञ कालातिपातार्थं शरद्काल व्यावर्णयति । तथा ऽन्यस्मिश्चार्थे कथयितव्येऽन्यमेवार्थमाचक्षते । तेषा सर्वार्थविसवादिना कपटप्रपंचचतु राणा विपाकोद्भवनाय दृष्टात दर्शयितुमाह ॥ २१ ॥ (सेजहेत्यादि) यथानाम कश्चित्पुरु ष सग्रामादपक्रातोंऽतर्मध्ये शल्य तोमरादिक यस्य सोऽत शल्य सच शल्यघट्टनवेदनाभी रुतया तच्छल्य न स्वतोनिर्हरत्यपनयति उद्धरति तथाप्यन्येन नोद्धारयति नापि तच्छल्य वै द्योपदेशेनोपधोपयोगादिभिरुपायै प्रतिध्वसयति विनाशयति अन्येन केनचित्पृष्टोवाऽपृष्टो वातच्छल्यं निष्प्रयोजनमेव निन्हुतेऽपलपति तेन च शल्येनासावतर्वर्तिना (अविउट्ट माणेत्ति) पीड्यमान (अतोत्ति) मध्येमध्ये पीड्यमानोपि रीयते व्रजति तत्कृता वेदनाम सहमान क्रियासु प्रवर्ततइत्यर्थ । साप्रतं दार्ष्टातिकमाह । (एवमेवेत्यादि) यथाऽसौ स शल्योदु खभाग्भवत्येवमेवासौ मायी मायाशल्यवानन्यत्कृतमकार्य तन्मायया गूहयन् माया कृत्वा न ता मायामन्यस्मै आलोचयति कथयति नापि तस्या स्थानात्प्रतिक्रामति न ततोनिवर्तते नाप्यात्मसाक्षिक तन्मायाशल्य निंदति । तद्यथा धिङ्मा यदहमेवभूत मकार्यं कर्मोदयात्कृतवास्तथा नापि परसाक्षिक गर्हति आलोचनार्हसमीपे गतोनापि च जुगुप्सते तथा (नोविउट्टत्ति) नापि तन्मायाख्य शल्यमकार्यकरणात्मक विविधमने कप्रकार त्रोटयत्यपनयति । यद्यस्यापराधस्य प्रायश्चित्त तत्तेन पुनस्तदकरणतया निवर्त्त यतीत्यर्थ ।नापि तन्मद्यादिकमकार्य सेवित्वा लोचनार्हायात्मान निवेद्य,तदकार्यकरणतया ऽभ्युत्तिष्ठते प्रायश्चित्त प्रतिपद्यापि नोद्युक्तविहारी भवतीत्यर्थ । तथा नापि गुर्वादिभि रभिधीयमानोपि यथार्हमकार्यनिर्वहणयोग्य प्रायश्चित्त शोधयतीति । प्रायश्चित्त तप कर्मविशिष्ट चाद्रायणाद्यात्मक प्रतिपद्यते ऽभ्युपगच्छति । तदेव मायया सत्कार्यप्रच्छादको ऽस्मिन्नेव लोके मायावीत्येव सर्वकार्येष्वेवाविश्वसनत्वेन प्रत्यायाति प्रख्याति याति त थाभूतश्च सर्वस्यापि विश्वास्योभवति । तथाचोक्त । मायाशील पुरुषइत्यादि । तथाति मायावित्वादसौ प[illegible] लोके जन्मातराऽवासौ सर्वाऽधमेषु यातनास्थानेषु नरकतिर्य गादिषु [illegible] प्रत्यागच्छतीति

तथा नानाविधैः प्रपंचैर्वंचयित्वा परं निंदति जुगुप्सते । तद्यथाऽयमज्ञः पशुकल्पोनानेन किमपि प्रयोजनमित्येवं परं निंदयित्वाऽत्मानं प्रशंसयति । तद्यथा ह्यसावपि मया वंचितइत्येवमात्मप्रशंसया तुष्यति । तथा चोक्तं । येनापत्रपते साधुरसाधुस्तेन तुष्यतीति । एवं चासौ लब्धप्रसरोऽधिकं निश्चयेन वा चरतीति तथाविधानुष्ठायी नवतीति निश्चरति । तत्रच गृह्ध् सत्तस्मान्मातृस्थानान्न निवर्तते तथासौ मायावलेपेन दंडं प्राण्युपमर्दकारणं निसृज्य पातयित्वा पश्चान्नादयत्यपलपति अन्यस्य चोपरि प्रक्षिपतिसच मायावी सर्वदा वचनपरायणः सत्तन्मना सर्वानुष्ठानेष्वेवंनूतोनवति । असमाहृताऽनंगीकृता शोननाः लेश्या येन सतथार्त्तध्यानोपहततयाऽसावशोननलेश्यइत्यर्थः । तदेवमपगतधर्मध्यानोसमाहितोशुद्धलेश्यश्चापि नवति । तदेवं खलु तस्य तत्प्रत्ययिकं मायाशल्यप्रत्ययिकं सावद्यं कर्माऽधीयते । तदेकादशं क्रियास्थानं मायाप्रत्ययिकं व्याख्यातं ॥ २० ॥

अहावरे बारस्समे किरियाठाणे लोनवत्तिएत्ति आहिज्जइ जे इमे नवंति तंजहा आरन्निया आवसहिया गामंतिया कण्हुईरहस्सिया णो बहुसंजया णोबहुपडिविरया सवपाणनूतजीवसत्तेहिं ते अप्पणो सच्चामोसाइं एवं विउंजंति अहं ण हंतवो अन्ने हंतवा अहं ण अज्जावेयवो अन्ने अज्जावेयवा अहं ण परिघेतवो अन्ने परिघेतवा अहं ण परितावेयवो अन्ने परितावेयवा अहं ण उद्दवेयवो अन्ने उद्दवेयवा एवमेव ते इत्थिकामेहिं मुछिया गिद्धा गढिया गरहिया अज्झोववन्ना जाव वासाइं चउपंचमाइं छद्दसमाइं अप्पयरोवा नुज्जयरोवा नुंजित्तुनोगनोगाइं कालमासे कालं किच्चा अन्नयरेसु आसुरिएसु किव्विसिएसु ठाणेसु उववत्तारो नवंति ततोविप्पमुच्चमाणे नुज्जोनुज्जो एलमूयत्ताए तमूयत्ताए जाइमूयत्ताए पच्चायंति एवं खलु तस्स तप्पत्तियं सावज्जंति आहिज्जइ डुवालसमे किरियाठाणे लोनवत्तिएत्ति आहिए ॥ २१ ॥

अर्थ–हवे अपर बारमो क्रियास्थानक लोनप्रत्ययिक कहिए हैयें (जेइमेनवंति के०) जे आगल कहेशे ते पुरुष कोण? (तंजहा के०) ते कहेछे (आरन्निया के०) अरण्यमां वसनारो, कंदमूलफलाहारी, वृक्षने मूले वसनारो, वली (आवसहिया के०) कोइएक पानडानी पर्णकूटी करीने तेमां रहे, (गामंतिया के०) तथा कोइएक आजीविका निमित्तें ग्रामने समीपें निवास करी रहे, (कण्हुईरहस्सिया के०) कोइएक का

काषिका पराऽविज्ञाता क्रिया कुर्वतीत्यर्थ । तेच स्वचेष्टयैवोलूकपत्रवल्लघव कौशिक पिच्छवल्लघीयासोपि पर्वतवद्गुरुमात्मान मन्यते । यदिवा कार्यप्रवृत्ते पर्वतवन्नो लंघ यितु शक्यते ते चाऽऽर्यदेशोत्पन्नाअपि सत शाठ्यादात्मप्रच्छादनार्थमपरजयोत्पादनार्थ चाऽनार्यभाषा प्रयुजते परव्यामोहार्थ स्वमतिपरिकल्पितभाषाभिरपराऽविदिताभिर्भाष ते तथाऽन्यथाऽव्यवस्थितमात्मानमन्यथासाध्वाकारेण मन्यते व्यवस्थापयति तथाऽ न्यत्पृष्ठामातृस्थानतोऽन्यदाचक्षते । यथाम्रान् पृष्टा कोविदारकानाचक्षते । वादकालेवा कश्चिन्न्यायवादितया व्याकरणे प्रवीणस्तर्कमार्गमवतारयति । यथावा शरदि वाजपेयेन यजेतेत्यस्य वाक्यस्यार्थ पृष्टस्तदर्थानभिज्ञ कालातिपातार्थ शरत्काल व्यावर्णयति । तथा ऽन्यस्मिश्चार्थे कथयितव्येऽन्यमेवार्थमाचक्षते । तेषा सर्वार्थविसवादिना कपटप्रपंचचतु राणा विपाकोद्भावनाय दृष्टात दर्शयितुमाह ॥ २१ ॥ (सेजहेत्यादि) यथानाम कश्चित्पुरु ष सग्रामादपक्रातोंऽतर्मध्ये शल्य तोमरादिक यस्य सोऽत शल्य सच शल्यघट्टनवेदनाभी रुतया तच्छल्य न स्वतोनिर्हरत्यपनयति उद्धरति तथाप्यन्येन नोद्धारयति नापि तच्छल्य वै द्योपदेशेनौषधोपयोगादिनिरुपायै प्रतिध्वसयति विनाशयति अन्येन केनचित्पृष्टोवाऽपृष्टो वातच्छल्य निष्प्रयोजनमेव निन्हुतेऽपलपति तेन च शल्येनासावतर्वर्तिना (अविउट्ट माणेत्ति) पीड्यमान (अतोत्ति) मध्येमध्ये पीड्यमानोपि रीयते व्रजति तत्कृता वेदनाम सहमान क्रियासु प्रवर्ततइत्यर्थ । साप्रतं दार्ष्टांतिकमाह । (एवमेवेत्यादि) यथाऽसौ स शल्योदु खभाग्भवत्येवमेवासौ मायी मायाशल्यवानन्यत्कृतमकार्य तन्मायया गूहयन् माया कृत्वा न ता मायामन्यस्मै आलोचयति कथयति नापि तस्या स्थानात्प्रतिक्रामति न ततोनिवर्तते नाप्यात्मसाक्षिक तन्मायाशल्य निदति । तद्यथा धिङ्मा यदहमेवभूत मकार्य कर्मोदयात्कृतवास्तथा नापि परसाक्षिक गर्हति आलोचनार्हसमीपे गतोनापि च जुगुप्सते तथा (नोविउट्टत्ति) नापि तन्मायाख्य शल्यमकार्यकरणात्मक विविधमने कप्रकार त्रोटयत्यपनयति । यद्यस्यापराधस्य प्रायश्चित्त तत्तेन पुनस्तदकरणतया निवर्त यतीत्यर्थ ।नापि तन्मयादिकमकार्य सेवित्वा लोचनार्हायात्मान निवेद्य,तदकार्यकरणतया ऽभ्युत्तिष्ठते प्रायश्चित्त प्रतिपद्यापि नोद्युक्तविहारी भवतीत्यर्थ । तथा नापि गुर्वादिभि रभिधीयमानोपि यथार्हमकार्यनिर्वहणयोग्य प्रायश्चित्त शोधयतीति । प्रायश्चित्त तप कर्मविशिष्ट चाद्रायणाद्यात्मक प्रतिपद्यते ऽभ्युपगच्छति । तदेव मायया सत्कार्यप्रच्छादको ऽस्मिन्नेव लोके मायावीत्येव सर्वकार्येष्वेवाविश्रभणत्वेन प्रत्यायाति प्रख्याति याति त थाभूतश्च सर्वस्यापि विश्वास्योभवति । तथाचोक्त । मायाशील पुरुषइत्यादि । तथाति मायाविखादसौ परस्मिन् लोके जन्मातराऽवासा सर्वाऽधमेषु यातनास्थानेषु नरकतिर्य गादिषु पौन पुन्येन प्रत्यायाति भूयोभूयस्तेष्वेवारघट्टघटीयत्रन्यायेन प्रत्यागच्छतीति

तथा नानाविधं प्रपंचैर्वचयित्वा परं निंदति जुगप्सते । तद्यथाऽयमज्ञः पशुकल्पोनानेन किमपि प्रयोजनमित्येवं परं निंदयित्वाऽत्मानं प्रशंसयति । तद्यथा ह्यसावपि मया वंचितइत्येवमात्मप्रशंसया तुष्यति । तथा चोक्तं । येनापत्रपते साधुरसाधुस्तेन तुष्यतीति । एवं चासौ लब्धप्रसरोऽधिकं निश्चयेन वा चरतीति तथाविधानुष्ठायी नवतीति निश्चरति । तत्रच गृ६ सत्तस्मान्मातृस्थानान्न निवर्तते तथासौ मायावलेपेन दंडं प्राण्युपमर्दकारणं निसृज्य पातयित्वा पश्चाच्छादयत्यपलपति अन्यस्य चोपरि प्रक्षिपतिसच मायावी सर्वदा वचनपरायणः सत्तन्मना सर्वानुष्ठानेष्वेवंनूतोजवति । असमाहृताऽनंगीकृता शोजना लेश्या येन सतथार्त्तध्यानोपहततयाऽसावशोजनलेश्यइत्यर्थः । तदेवमपगतधर्मध्यानोसमाहितोशु६लेश्यश्चापि नवति । तदेवं खलु तस्य तत्प्रत्ययिकं मायाशल्यप्रत्ययिकं सावद्यं कर्माऽधीयते । तदेकादशं क्रियास्थानं मायाप्रत्ययिकं व्याख्यातं ॥ २० ॥

अहावरे बारस्समे किरियाठाणे लोनवत्तिएत्ति आहिज्जइ जे इमे नवंति तंजहा आरन्निया आवसहिया गामंतिया कण्हुईरहस्सिया णो बहुसंजया णोबहुपडिविरया सवपाणनूतजीवसत्तेहिं ते अप्पणो सच्चामोसाइं एवं विउंजंति अहं ण हंतवो अन्ने हंतवा अहं ण अज्जावेयवो अन्ने अज्जावेयवा अहं ण परिघेतवो अन्ने परिघेतवा अहं ण परितावेयवो अन्ने परितावेयवा अहं ण उद्दवेयवो अन्ने उद्दवेयवा एवमेव ते इत्थिकामेहिं मुच्छिया गिद्धा गढिया गरहिया अशोववन्ना जाव वासाइं चउपंचमाइं छद्दसमाइं अप्पयरोवा नुज्जयरोवा नुंजित्तुनोगनोगाइं कालमासे कालं किच्चा अन्नयरेसु आसुरिएसु किब्बिसिएसु ठाणेसु उववत्तारो नवंति ततोविप्पमुच्चमाणे नुज्जोनुज्जो एलमूयत्ताए तमूयत्ताए जाइमूयत्ताए पच्चायंति एवं खलु तस्स तप्पत्तियं सावज्जंति आहिज्जइ डुवालसमे किरियाठाणे लोनवत्तिएत्ति आहिए ॥ २१ ॥

अर्थ—हवे अपर बारमो क्रियास्थानक लोनप्रत्ययिक कहिए बैयें (जेइमेनवंति के०) जे आगल कहेशे ते पुरुष कोण ? (तंजहा के०) ते कहेजे (आरन्निया के०) अरण्यमां वसनारो, कंदमूलफलाहारी, वृक्षने मूले वसनारो, वली (आवसहिया के०) कोइएक पानडानी पर्णकूटी करीने तेमां रहे, (गामंतिया के०) तथा कोइएक आजीविका निमित्तें ग्रामने समीपें निवास करी रहे, (कण्हुईरहस्सिया के०) कोइएक का

यने विषे रहस्यना करनार, ए सर्व प्राय त्रसजीवोनी विराधना नकरे परतु एकेंद्रियनी विराधनाये उपजीवन करे, (णोबहुसजया के०) ते घणा सयत नही, (णोबहुपडि विरया के०) घणी हिंसा थकी निवर्त्त्या नथी, एटले सर्व प्राणातिपात विरमणव्रतादि कने विषे न प्रवर्त्ते, कितु? द्रव्य थकी केटलाएक व्रत पाले, अने सर्व विरतिनु कारण जे सम्यक् दर्शनछे, ते गुण तेमाहे नथी ते कारणे, (सव्वपाणभूतजीवसत्तेहिं के०) सर्व प्राणी, भूत, जीव, अने सत्वथकी अविरत, हिंसा थकी अविरत (तेअप्पणो के०) ते पाखमी पोते, (सच्चामोसाइ के०) घणा सत्यामृषावचन (एवविउजति के०) एम आगल केशे जेरीतें बोले तेज कहेछे (अहणहतव्वो के०) हु ब्राह्मण पणा थकी मने दमादिके हणवो नही, (अन्नेहतव्वा के०) अन्य कुद्रादिकने हणवा (अ हणअज्जावेयव्वो के०) तथा हु वर्णोत्तम छु, माटे मने आज्ञा करवी नही एटले मने काइ आदेश आपवो नही तथा (अन्नेअज्जावेयव्वा के०) कुद्रादिक आज्ञापयितव्यछे एट ले तेमने आदेश आपवो (अहणपरिघेतव्वो के०) हु वर्णोत्तमछु, माटे मने बला त्कारे ग्रहण करवो नही, (अन्नेपरिघेतव्वा के०) अन्य कुद्रादिकने बलात्कारें ग्रह ण करवा (अहणपरितावेयव्वो के०) तथा मने परितापवो नही, (अन्नेपरितावेय व्वा के०) अन्य कुद्रादिकने परितापवा (अहणउद्दवेयव्वो के०) तथा मने उपद्रव करवो नही, तथा जीव, काया थकी रहित करवो नही, (अन्नउद्दवेयव्वा के०) अन्य कुद्रादिकने उपद्रवो करवा एम ते परपीडाना उपदेशना करनार मूढ, असबध प्रला पी (एवमेवतेइत्थिकामेहिमुच्छिया के०) एरीते पूर्वोक्त प्रकारे ते मूढ परमार्थना अजाण थका स्त्रियादिकना कामभोगने विषे मूर्छित थका (गिद्धा के०) गृद्ध एटले ते कामभोगना अभि लाषी छता, (गढिया के०) कामभोगने विषे आसक्त छता (गरहिया के०) निंदवा योग्य, अत्यत आसक्त छता (अज्झोववन्ना के०) अध्युपपन्न एटले कामभोगने विषे एकाग्र चित्त थया छता (जाववासाइचउपचमाइ के०) यावत् चार पाच वर्ष सुधी अथवा (छदसमाइ के०) छ अथवा दश वर्ष एटलो काल तेमाहे ते तीर्थिक (अप्पयरोवा के०) अल्पतर एटले अल्प काल सुधी (भुज्जयरोवाके०) अथवा घणा काल सुधी घर वास छांमीने (भुजित्तुभोगभोगाइ के०) वली काम भोग जे शब्दादिक विषयछे तेने धर्मने पाखमे भोगवीने, (कालमासे कालकिच्चा के०) मरण प्रस्तावे काल करीने काइ एक बालतपना प्रभावथी (अन्नयरेसु आसुरिएसु किब्बिसिएसु ठाणेसु उववत्तारो भव तिके०) तेने अनेरा आसुरिक किल्बिषीने स्थानके उपजवु थाय, (ततोविप्पमुच्चमाणे के०) ते स्थानकथी आयुष्यनें क्षये चवीने (भुज्जोभुज्जोएलमूयत्ताए के०) वलीवली मनुष्य भव पामे, तोपण एल एटले बोडा, काणा, अथवा मूयत्ता एटले मुगा तथा

(तमूयत्ताएजाइमूयत्ताएपच्चायंति के०) ते जात्यंध एटले जन्म थकी अंध, तथा जन्म थकी बहेरा, एवा थाय एम प्रत्यागच्छति एटले फरीने आ लोकमा आवेछे एरीते निश्चें थकी तेने तत्प्रत्ययिक एटले ते निमित्ते सावद्य कर्म बंधाय ए बारमो लोभप्रत्ययिक नामे क्रिया स्थानक कह्यो ॥ २१ ॥

॥ दीपिका—एतान्येकादश क्रियास्थानानि सामान्येनाऽसंयतानां भवंति । इदंतु द्वादशं क्रियास्थानं पाखंडिकानुद्दिश्य कथ्यते ॥ अथापरं द्वादशं क्रियास्थानं लोभप्रत्ययिकमाख्यायते । तद्यथा । यइमे भवंत्यारण्यकाअरण्यवासिनआवसथिकावटजवासिनोग्रामांतिकाग्रामादिकमुपजीवतोग्रामस्यांते समीपे वसंतीति (कएहुई) कचित्कार्ये मंडलप्रवेशादिके रहस्यं येषां ते कचिद्राहसिकास्तेच न बहुसंयतानं सर्वसावद्यनिवृत्ताश्च प्रायइत्यर्थ । एतएव न बहुविरताः सर्वव्रतपालका किंतु? द्रव्यतः कतिपयव्रताभावत संम्यक्त्वाभावात् । एतदेवाह । (सव्वपाणेत्ति) ते आरण्यकादयः सर्वप्राणिभूतजीवसत्त्वेभ्यआत्मना स्वतोविरता सत्यामृषाभूतानि वाक्यान्येव वक्ष्यमाणनीत्या वियुंजंति विशेषेण प्रयुंजंति कथयतीत्यर्थ । तद्यथाहं ब्राह्मणत्वाद्दंडादिभिर्न हंतव्योऽन्येशूद्रत्वाद्धंतव्या । तथा च तद्वाक्यं शूद्रं व्यापाद्य प्राणायामं जपेत् । तथा कुद्रसत्वानामनस्थिकानां शकटभारमपि व्यापाद्य ब्राह्मणं भोजयेदित्यादि । तथाहं न आज्ञापयितव्योऽन्येतु मत्तोऽधमा समापयितव्या । नाहं परितापयितव्योऽन्ये परितापयितव्या । अहं मूल्येन कर्मकरणाय न ग्राह्योऽन्ये ग्राह्या । नाहमपद्रावयितव्योजीवितादपरोपयितव्योऽन्येत्वपद्रावयितव्या । तदेवं तेषां परपीडोपदेशान्न प्राणातिपातविरतिव्रतमस्ति । उपलक्षणान्मृषावादादत्तादानविरतिव्रताभावोपि ज्ञेय । तुर्यव्रतमाश्रित्याह । (एवमेवत्ति) एवं पूर्वोक्तप्रकारेण स्त्रीषु कामेषु च मूर्छिताग्रद्धाग्रथिताअध्युपपन्ना । कियंतं कालमासक्ताइत्याह । (जाववासाइत्ति) यावद्वर्षाणि चतुः पंचषड्दशकानि । अप च मध्यम कालः । एतावत्कालग्रहणं च साभिप्रायं । प्रायस्तीर्थिकाअतिक्रांतवयसएव व्रजति तेषां च एतावानेव कालः संभाव्यते । यदिवा मध्यग्रहणात्ततऊर्ध्वमधश्च गृह्यतइत्याह । तस्माच्च उपाभत्कालादल्पतरं प्रभूततरंवापि कालं स्यात् । तत्रच ते त्यक्त्वापि गृहवासं भुक्त्वापि भोगान् स्त्रीभोगान् स्त्रीभोगे सत्यवश्यं शब्दादयोभोगभागास्तान् भुक्त्वा ते हि वयं प्रव्रजिताइति नच भोगेभ्योनिवृत्ताअज्ञानित्वाचे एवंभूतपरिणामा कालमासे स्वायुःक्षये कालंकृत्वा विरुष्टतपसोपि आसुरिकेषु किल्बिषिकेषु स्थानेषूत्पादयितारोभवंति । तस्मादपि स्थानाद्विप्रमुच्यमानाच्युताएडमूकत्वेनोत्पद्यते । यथा एडकोव्यक्तवाक् तथायमपि । (तमूयत्ताएत्ति) तमस्त्वेन जात्यंधतयाऽल्पताज्ञानावृततया वा जातिमूकत्वेनापगतवा

येने विषे रहस्यना करनार, ए सर्व प्राय' त्रसजीवोनी विराधना नकरे परंतु एकेंद्रियनी विराधनाये उपजीवन करे, (णोबहुसंजया के०) ते घणा संयत नहीं, (णोबहुपडि विरया के०) घणी हिंसा थकी निवर्त्या नथी, एटले सर्व प्राणातिपात विरमणव्रतादि कने विषे न प्रवर्त्ते, किंतु? द्रव्य थकी केटलाएक व्रत पाले, अने सर्व विरतिनुं कारण जे सम्यक् दर्शनछे, ते गुण तेमाहे नथी ते कारणे (सवपाणनूतजीवसत्तेहिं के०) सर्व प्राणी, नूत, जीव, अने सत्वथकी अविरत, हिंसा थकी अविरत (तेअप्पणो के०) ते पाखंमी पोते, (सच्चामोसाइ के०) घणा सत्यामृषावचन (एवविउंजंति के०) एम आगल केहे जेरीतें बोले तेज कहेछे (अहंणहंतवो के०) हुं ब्राह्मण पणा थकी मने दंमादिके हणवो नही, (अन्नेहंतवा के०) अन्य शुद्रादिकने हणवा (अहंणअज्जावेयव्वो के०) तथा हुं वर्णोत्तम छुं, माटे मने आज्ञा करवी नहीं एटले मने कांइ आदेश आपवो नही तथा (अन्नेअज्जावेयव्वा के०) शुद्रादिक आज्ञापयितव्यछे एट ले तेमने आदेश आपवो (अहंणपरिघेतवो के०) हुं वर्णोत्तमछुं, माटे मने बला त्कारे ग्रहण करवो नही, (अन्नेपरिघेतवा के०) अन्य शुद्रादिकने बलात्कारें ग्रह ण करवा (अहंणपरितावेयव्वो के०) तथा मने परितापवो नही, (अन्नेपरितावेय व्वा के०) अन्य शुद्रादिकने परितापवा (अहंणउद्दवेयव्वो के०) तथा मने उपद्रव करवो नही, तथा जीव, काया थकी रहित करवो नही, (अन्नउद्दवेयव्वा के०) अन्य शुद्रादिकने उपद्रवो करवा एम ते परपीडाना उपदेशना करनार मूढ, असंबंध प्रला पी (एवमेवतेइत्थिकामेहिंमुच्छिया के०) एरीते पूर्वोक्त प्रकारे ते मूढ परमार्थना अजाण थका स्त्रियादिकना कामनोगने विषे मूर्छित थका (गिद्धा के०) गृद्ध एटले ते कामनोगना अभि लाषी छता, (गढिया के०) कामनोगने विषे आसक्त छता (गरहिया के०) निंदवा योग्य, अत्यंत आसक्त छता (अज्झोववन्ना के०) अध्युपपन्न एटले कामनोगने विषे एकाग्र चित्त थया छता (जाववासाइंचउपंचमाइं के०) यावत् चार पांच वर्ष सुधी अथवा (छद्दसमाइं के०) छ अथवा दश वर्ष एटलो काल तेमाहे ते तीर्थिक (अप्पयरोवा के०) अल्पतर एटले अल्प काल सुधी (जुज्जयरोवाके०) अथवा घणा काल सुधी घर वास छामीने (नुंजित्तुनोगनोगाइं के०) वली काम नोग जे शब्दादिक विषयछे तेने धर्मने पाखंमे नोगवीनें, (कालमासे कालकिच्चा के०) मरण प्रस्तावे काल करीने कांइ एक बालतपना प्रनावथी (अन्नयरेसु आसुरिएसु किब्बिसिएसु ठाणेसु उववत्तारो नव तिके०) तेने अनेरा आसुरिक किल्बिषीने स्थानके उपजवु थाय, (ततोविप्पमुच्चमाणे के०) ते स्थानकथी आयुष्यनें क्षये चवीने (नुज्जोनुज्जोएलमूयत्ताए के०) वलीवली मनुष्य नव पामे, तोपण एल एटले बोडा, काणा, अथवा मूयत्ता एटले मुंगा तथा

स्तयमित्यादि । स्त्रीसंगासक्तस्यावश्यभाविनी शब्दादिविषयासक्तिरित्यत स्त्रीकामग्रहण। तत्र चासक्तायावत कालमासते तत्सूत्रेणैव दर्शयति । याव६र्षाणि चतु पचषड्दशका नि । अयच मध्यमकालोगृहीत । एतावत्कालोपादान च साभिप्राय प्रायस्तीर्थिकाअति क्रातवयसएव प्रव्रजति तेषा चतावानेव काल सभाव्यते । यदिवा मध्यग्रहणात्ततऊर्ध्व मधश्च गृह्यते इति दर्शयति । तस्माच्चोपात्तादल्पतर प्रभूततरोवापि कालोभवति । त त्रच ते त्यक्त्वापि गृहवास भुक्त्वा भोगभोगान् इति स्त्रीभोगे सति अवश्य शब्दादयोभोगा भोगभोगास्तान्भुक्त्वा तेच किल वय प्रव्रजिताइति नच भोगेभ्योविनिवृत्ता । यतोमिथ्या दृष्टितया ज्ञानाधत्वात्सम्यग्विरतिपरिणामरहितास्तेचैवभूतपरिणामा स्वायुष काल मासे काल कृत्वा निकृष्टतपसोपि सतोऽन्यतरेष्वासुरिकेषु किल्बिषिकेषु स्थानेषूत्पादयि तारोभवति । ते ह्यज्ञानतपसा मृताअपि किल्बिषिकेषु स्थानेषूत्पत्स्यते तस्मादपि स्था नादायुष क्षयाद्विप्रमुच्यमानाश्च्युता किल्बिषिकबहुलास्तत्कर्मशेषेणैलवन्मूकाएलमूका स्तद्भावेनोत्पद्यते । किल्बिषिकस्थानाच्च्युत सन्ननतरभवे वा मानुषत्वमवाप्य यथैलमूकोऽ व्यक्तवाक् समुत्पद्यतइति । तथा (तमभूयत्ताये त्ति) तमस्त्वेन जात्यधतया अल्पताऽज्ञा नावृततया वा तथा जातिमूकत्वेनापगतवाचश्च प्रत्यागच्छतीति । तदेवभूत खलु ते षां तीर्थिकाना परमार्थत सावद्यानुष्ठानादनिवृत्तानामाधाकर्मादिप्रवृत्तेस्तत्प्रायोग्यभोग भाजां तत्प्रत्ययिक सावद्य कर्माधीयते । तदेतद्भोगप्रत्ययिक द्वादश क्रियास्थान माख्यातमिति ॥ २१ ॥

इच्चेयाइ डुवालस किरियाठाणाइ दविएण समणेणवा माहणे णवा सम्म सुपरिजाणिअव्वाइ भवंति ॥ २२ ॥

अर्थ–एरीते ए बारे क्रिया स्थानक तेने (दविएण के०) मुक्ति गमन योग्य एवा जे श्रमण तथा ब्राह्मणो होय तेणे (सम्मसुपरिजाणिअव्वाइभवंति के०) सम्यक् प्रकारे ससारना कारण जाणीने प्रत्याख्यान परिज्ञायें परिहरवा ॥ २२ ॥

॥ दीपिका–उपसहारमाह । (इच्चेइत्यादि) इत्येतान्यनर्थदडादीनि द्वादश क्रियास्था नानि कर्मग्रथिद्रावणाद्रव्य सयम सविद्यते यस्यासौ द्रविकस्तेन श्रमणेन साधुना मा वधीरिति प्रवृत्तिर्यस्य समाहनस्तेन सम्यक् सुपरिज्ञातव्यानि ससारकारणानीति ज्ञात्वा, परिहर्तव्यानि भवति ॥ २२ ॥

॥ टीका–सांप्रतमेतेषां द्वादशानामप्युपसहारार्थमाह । (इच्चेयाइत्यादि) इतिरुपप्रद

चइह प्रत्यायाति । तदेव तेषां तीर्थिकानां तत्प्रत्ययिकं सावद्यानुष्ठाननिमित्तं सावद्य कर्माधीयते । तदेतल्लोभप्रत्ययिकं द्वादशं क्रियास्थानमाख्यातमिति ॥ ११ ॥

॥ टीका–एतानि चानर्थदंडादीनि एकादश क्रियास्थानानि सामान्येनाऽसंयतानां भवति। इदंतु द्वादशं क्रियास्थानं पाखंडिकानुद्दिश्याऽभिधीयते (अहावरेइत्यादि) एकादशात् क्रियास्थानादनंतरमथापरं द्वादशं क्रियास्थानं लोभप्रत्ययिकमाख्यायते । तद्यथा । य इमे वक्ष्यमाणाअरण्ये वसंत्यरण्यकास्ते च कंदमूलफलाहारा संत केचन वृक्षमूले वसंति, केचनावसथेषूटजाकारेषु गृहेषु, तथापरे ग्रामादिकमुपजीवंतोग्रामस्यांते समीपे वसंतीति ग्रामांतिकास्तथा क्वचित्कार्ये मंडलप्रवेशादिके रहस्यं येषांते क्वचिद्राहसिकास्तेच न बहुसंयतान सर्वसावद्यानुष्ठानेभ्योनिवृत्ता । एतडुक्तं भवति । नबाहुल्येन त्रसेषु दंडसमारंभं विदधति एकेंद्रियोपजीविनस्त्वविगानेन तापसादयोभवंतीति तथा न बहुविरता न सर्वेष्वपि प्राणातिपातविरमणादिषु व्रतेषु प्रवर्तंते किंतु? द्रव्यतः कतिपयव्रतव्रतिनोन भावतोमनागपि तत्करणस्य सम्यग्दर्शनस्याभावादित्यभिप्रायः । इत्येतदाविर्भावयितुमाह । (सव्वपाणेत्यादि) ते ह्यारण्यादयः सर्वप्राणिभूतजीवसत्त्वेभ्यआत्मना स्वतोविरता स्तदुपमर्दकारंभादविरताइत्यर्थः । तथा पाषंडिकाआत्मना स्वतोबहूनि सत्यामृषाभूतानि वाक्यान्येव वक्ष्यमाणनीत्या विशेषेण युंजंति प्रयुंजंति ब्रुवतइत्यर्थः । यदि वासत्यान्यपि तानि प्राण्युपमर्दकत्वेन मृषाभूतानि सत्यामृषाण्येव ते प्रयुंजंतीति दर्शयति । तद्यथाऽहं ब्राह्मणत्वाद्दंडादिभिर्न हंतव्योऽन्येतु शूद्रत्वाद्धंतव्या । तथाहि । त द्वाक्यं।शूद्रं व्यापाद्य प्राणायामं जपेत् किंचिद्वा दद्यात् तथा क्षुद्रसत्वानामनस्थिकानां शकटभारमपि व्यापाद्य ब्राह्मणं भोजयेदित्यादि । अपरं चाह वर्णोत्तमत्वात् नाज्ञापयितव्योन्येतु मत्तोऽधमा समाज्ञापयितव्यास्तथा नाहं परितापयितव्योऽन्येतु परितापयितव्यास्तथाहं वेतनादिना कर्मकरणाय न ग्राह्योऽन्येतु शूद्रायाह्याइति । किंबहुनोक्तेन नाहमुपद्रावयितव्योजीवितादपरोपयितव्योऽन्येतु अपरोपयितव्याइति । तदेवं तेषां परपीडोपदेशनतोऽतिमूढतयाऽसबद्धप्रलापिनामज्ञानावृतानामात्मंभरीणां विषमदृष्टीनां न प्राणातिपातविरतिरूपं व्रतमस्त्यस्य चोपलक्षणार्थत्वात् मृषावादादत्तादानविरमणाभावोप्यायोज्यः । अधुना स्त्वनादिभावाभ्यासाद्दुस्त्यजत्वेन प्राधान्यात् सूत्रेणैवाब्रह्माधिकृत्याह । (एवमेवेत्यादि) एवमेव पूर्वोक्तेनैव कारणत्वेनातिमूढत्वादिना परमार्थमजानास्ते तीर्थिका स्त्रीप्रधाना कामा स्त्रीकामा । यदिवा स्त्रीषु कामेषु च शब्दादिषु मूर्छितागृद्धाग्रथिताअध्युपपन्ना । अत्र चात्यादरख्यापनार्थं प्रभूतपर्यायग्रहणं । एतच्च स्त्रीषु शब्दादिषुच प्रवर्तनं प्रायः प्राणिनां प्रधानं संसारकारणं । तथा चोक्तं । मूलमेयमहम्मस्स महादोससमु

स्सयमित्यादि । स्त्रीसगासक्तस्यावश्यनाविनी शब्दादिविपयासक्तिरित्यत स्त्रीकामग्रहण। तत्र चासक्तायावत कालमासते तत्सूत्रेणैव दर्शयति । याव द्वर्षाणि चतु पचपड्दशका नि । अथच मध्यमकालोगृहीत । एतावत्कालोपादान च साजिप्राय प्रायस्तीर्थिकाअ्पति क्रातवयसएव प्रव्रजति तेषा चैतावानेव काल सनाव्यते । यदिवा मध्यग्रहणात्ततऊर्ध्व मधश्च गृह्यते इति दर्शयति । तस्माच्चोपात्तादल्पतर प्रनूततरोवापि कालोनवति । त त्रच ते त्यक्त्वापि गृहवास जुक्त्वा जोगजोगान् इति स्त्रीजोगे सति अवश्य शब्दादयोजोगा जोगजोगास्तान्जुक्त्वा तेच किल वय प्रव्रजिताइति नच जोगेन्योविनिवृत्ता । यतोमिथ्या दृष्टितया ज्ञानाधत्वात्सम्यग्विरतिपरिणामरहितास्तेचैवनूतपरिणामा स्वायुप काल मासे काल रुत्वा निरुष्टतपसोपि सतोऽन्यतरेष्वासुरिकेषु किल्बिषिकेषु स्थानेपूत्पादयि तारोनवति । ते ह्यज्ञानतपसा मृताअपि किल्बिषिकेषु स्थानेपूत्पत्स्यते तस्मादपि स्था नादायुष क्षयाद्विप्रमुच्यमानाश्च्युता किल्बिषिकबहुलास्तत्कर्मशेषेणैलवन्मूकाएलमूका स्तन्नावेनोत्पद्यते । किल्बिषिकस्थानाच्च्युत सन्ननतरजवे वा मानुपत्वमवाप्य यथैलमूकोऽ व्यक्तवाक् समुत्पद्यतइति । तथा (तममूयत्ताये त्ति) तमस्त्वेन जात्यधतया अत्यताऽज्ञा नावृततया वा तथा जातिमूकत्वेनापगतवाचइह प्रत्यागच्छतीति । तदेवचूर्तं खलु ते षां तीर्थिकाना परमार्थत सावद्यानुष्ठानादनिवृत्तानामाधाकर्मादिप्रवृत्तेस्तत्प्रायोग्यजोग जाजां तत्प्रत्ययिक सावद्य कर्माधीयते । तदेतल्लोजप्रत्ययिक द्वादश क्रियास्थान माख्यातमिति ॥ २१ ॥

इच्चियाइ डुवालस किरियाठाणाइ दविएण समणेणवा माहणे णवा सम्म सुपरिजाणिअव्वाइ नवति ॥ २२ ॥

अर्थ–एरीते ए बारे क्रिया स्थानक तेने (दविएण के०) मुक्ति गमन योग्य एवा जे श्रमण तथा ब्राह्मणो होय तेणे (सम्मसुपरिजाणिअव्वाइनवति के०) सम्यक् प्रकारे ससारना कारण जाणीने प्रत्याख्यान परिज्ञायें परिहरवा ॥ २२ ॥

॥ दीपिका–उपसहारमाह । (इच्चेइत्यादि) इत्येतान्यनर्थदडादीनि द्वादश क्रियास्था नानि कर्मग्रथिद्रावणाद्रव्य सयम सविद्यते यस्यासौ द्रविकस्तेन श्रमणेन साधुना मा वधीरिति प्रवृत्तिर्यस्य समाहनस्तेन सम्यक् सुपरिज्ञातव्यानि ससारकारणानीति ज्ञात्वा, परिहर्तव्यानि नवति ॥ २२ ॥

॥ टीका–सांप्रतमेतेषा द्वादशानामप्युपसहारार्थमाह । (इच्चेयाइत्यादि) इतिरूपप्रद

र्ईने । एतान्यनर्थदंडादीनि लोजप्रत्ययिकक्रियास्थानपर्यवसानानि द्वादश क्रियास्था नानि । कर्मग्रथिद्रावणाद्रूव सयम सविद्यते यस्यासौ द्रविकोमुक्तिगमनयोग्यतया वा द्रव्यन्नूत श्रमण साधु ।तमेव विशिनष्टि । मावधीरित्येव प्रवृत्तिर्यस्यासौ माहनस्तेनैवंत ग्रुणविशिष्टेनेतानि सम्यग्यथारस्थितवस्तुस्वरूपनिरूपणतोमिथ्यादर्शनाश्रितानि ससारका रणानीति कत्वा ज्ञपरिज्ञया ज्ञातव्यानि प्रत्याख्यानपरिज्ञया परिहर्तव्यानि नवतीति ॥१२॥

अहावरे तेरसमे किरियाठाणे इरियावहिएत्ति आहिज्जइ इह खलु अ त्तताए सवुम्स्स अणगारस्स इरियासमियस्स नासासमियस्स एम णासमियस्स आयाणनमत्तणिक्खेवणासमियस्स उच्चारपासवणखे लसिघाण जल्लपारिठावणियासमियस्स मणसमियस्स वयसमिय स्स कायसमियस्स मणगुत्तस्स वयगुत्तस्स कायगुत्तस्स गुत्तिदियस्स गुत्तबनयारिस्स आउत्तगवमाणस्स आउत्तचिठमाणस्स आउत्तणि सियमाणस्स आउत्ततुयट्टमाणस्स आउत्तभुजमाणस्स आउत्तनास माणस्स आउत्तवत्र पडिग्गह कवल पायपुठण गिरहमाणस्सवा णि क्खिवमाणस्सवा जाव चक्खुपम्हणिवायमवि अत्थिविमाया सुहुमा किरि या इरियावहिया नाम कज्जइ सापढमसमए बद्धा पुठा बितीयसमए वेइया तइयसमए णिज्जिन्ना सावद्धा पुठा उदीरिया वेइया णिजिन्ना से य काले अकम्मयावि नवति एव खलु तस्स तप्पतिय सावज्जति आहि ज्जइ तेरसमे किरियाठाणे इरियावहिएति आहिज्जइ ॥ से बेमि जेयअ अतीता जेयपडुपन्ना जेयआगमिस्सा अरिहता नगवता सवेते एया इ चेव तेरसकिरियाठाणाइ नासिसुवा नासेतिवा नासिस्सतिवा पन्न विसुवा पन्नवितिवा पन्नविस्सिवा एवचेव तेरसम किरियाठाण सेविसु वा सेवतिवा सेविस्सतिवा ॥ १३ ॥

अर्थ–हवे अपर तेरमो क्रिया स्थानक इरिया पथिक नामे कहिए बैए (इहखलुअ त्तताए के०) निश्वे आ जगत्माहे आत्म नाव पामवाने अर्थे (सवुम्स्स के०) मन, वचन, अने कायायें करी सवृत एटले सवर सहित एवा (अणगारस्स के०) साधुने इरियावहि क्रिया कहिये ते साधुना गुण कहेछे ईर्यासमितिए समिता, नापासमिति ए समितो, एषणासमितिए समितो, आदान नाम मात्रा निक्षेपण समितिए समि

तो, उच्चार एटले वडीनीत, अने पासवण एटले लघुनीत, खेलसिंघाणजल्ल एटले थूक, वडखो, नाकनो मेल, श्लेष्म, शरीरनो मेल, तेने पारिष्ठापन एटले परठववा रूप समितिए समितो, (मणसमियस्स के०) मनसमितवत, (वयसमियस्स के०) वचनसमितवत, (कायसमियस्स के०) कायसमितवत, (मणगुत्तस्स के०) मनगुप्ते गुप्तो, (वयगुत्तस्स के०) वचनगुप्ते गुप्तो, (कायगुत्तस्स के०) कायगुप्ते गुप्तो, (गुत्तिंदियस्स के०) गुप्तेंद्रिय एटले इंद्रियोनो गोपवनार, (गुत्तबंभयारिस्स के०) गुप्त ब्रह्मचारी, एटले नववाडे विशुद्ध, ब्रह्मचर्यनो पालनार, (आउत्तगच्छमाणस्स के०) उपयोग सहित सावधान पणे चालनार, (आउत्तचिठ्ठमाणस्सके०) सावधान पणे उनो रहेनार, (आउत्तणिसियमाणस्स के०) सावधान पणे वेसनार, (आउत्ततुयट्टमाणस्स के०) सावधान पणे शयन करनार, (आउत्तभुंजमाणस्स के०) सावधान पणे नोजन करनार, (आउत्तभासमाणस्स के०) सावधान पणे वोलनार, (आउत्तवत्थपडिग्गहकंवलपायपुंछणगिण्हमाणस्सवा के०) सावधान पणे वस्त्र, पात्र, कांवल, पायपुंछणने लेतो, तथा (णिक्खिवमाणस्सवा के०) निक्षेप एटले तेने सावधान पणे मूकता, तथा (जावचक्खूपम्हणिवायमवि के०) किंवहुना यावत् चक्षुनी पांपण एटले निपोन्मिप मात्र, ते पण उपयुक्त पणे करतो, एवो जे साधु तेने एने (सुहुमाकिरियाइरियावहियानामकज्जइ के०) सूक्ष्मकिरिया इरियावहि नामे ने, परंतु ते क्रिया केवी ने, तोके (अविविमायाके०) विविध प्रकार जेनी मात्राने एवी क्रियाने ते लागे, ए क्रिया केवलीने पण लागे, कारणके केवली पण सयोगीने ते सयोगी जीव तो एक क्षणवार पण अग्निना ताप माहे पाणीनी पेरें निश्चल रही शके नही, ते कारणे इरियावहि क्रिया लागे (साके०) ते क्रिया कपाय विना (पढमसमए के०) पहेला समयने विपे (वद्धा के०) वधाय (पुट्ठा के०) फरशे, तथा (वितीयसमएवेइया के०) वीजा समयने विपे वेदाय एटले एनु वेदवु थाय, अने (तइयसमएणिज्जिन्ना के०) त्रीजा समयने विपे निर्जराय एटले एनु निर्जरवु थाय, ते कहे ने (सावद्धा पुट्ठाउदीरियावेइयाणिज्जिन्ना के०) ते क्रिया वधाए, फरशाए, उदिराए, वेदाय, अने निर्जराए, जे कारण माटे कर्मवंधनी स्थिति कपायितने ते इरियावहिना धणी होय तेने ते नथी. केमके, कपाय वालाने सांपरायिक कर्म वधायने परंतु ते कपाय, इरियावहियाला ने नथी ए कारणे ते इरियावहि क्रिया (सेयकाले के०) ते आगमिककालें त्रीजा समयने विपे (अकम्मयावियभवति के०) अकर्मता पणे होय, एटले कर्म रहितपणे होय तेथी वीतरागनेज इरियावहि क्रिया लागे एरीतें निश्चे तेहने तत्प्रत्ययिक एटले ते निमित्त सावद्य कर्म वंधाय ए तेरमो क्रिया स्थानक इरियावहि एवे नामे कह्या ॥ २२ ॥

र्शने । एतान्यनर्थदंडादीनि लोजप्रत्ययिकक्रियास्थानपर्यवसानानि द्वादश क्रियास्थानानि । कर्मग्रथिद्रावणाद्रव्य संयम संविद्यते यस्यासौ द्रविकोमुक्तिगमनयोग्यतया वा द्रव्यनूत श्रमण साधु । तमेव विशिनष्टि । मावधीरित्येव प्रवृत्तिर्यस्यासौ माहनस्तेनैवंत गुणविशिष्टेनैतानि सम्यग्यथावस्थितवस्तुस्वरूपनिरूपणतोमिथ्यादर्शनाश्रितानि संसारकारणानीति कृत्वा ज्ञपरिज्ञया ज्ञातव्यानि प्रत्याख्यानपरिज्ञया परिहर्तव्यानि नवतीति ॥ १२ ॥

अहावरे तेरसमे किरियाठाणे इरियावहिएत्ति आहिज्जइ इह खलु अत्तत्ताए संवुडस्स अणगारस्स इरियासमियस्स नासासमियस्स एसणासमियस्स आयाणनंडमत्तणिक्खेवणासमियस्स उच्चारपासवणखेलसिंघाण जल्लपारिठावणियासमियस्स, मणसमियस्स वयसमियस्स कायसमियस्स मणगुत्तस्स वयगुत्तस्स कायगुत्तस्स गुत्तिंदियस्स गुत्तबंनयारिस्स आउत्तगच्छमाणस्स आउत्तचिठमाणस्स आउत्तणिसियमाणस्स आउत्ततुयट्टमाणस्स आउत्तनुंजमाणस्स आउत्तनासमाणस्स आउत्तवत्थ पडिग्गह कंबल पायपुंठण गिण्हमाणस्सवा णिक्खिवमाणस्सवा जाव चक्खुपम्हणिवायमवि अत्थिविमाया सुहुमा किरिया इरियावहिया नाम कज्जइ सापढमसमए बद्धा पुठा, वितीयसमए वेइया तइयसमए णिज्जिन्ना सावद्धा पुठा उदीरिया वेइया णिज्जिन्ना सेय काले अकम्मयावि नवति एवं खलु तस्स तप्पतियं सावज्जंति आहिज्जइ तेरसमे किरियाठाणे इरियावहिएति आहिज्जइ ॥ से बेमि जेयअतीता जेयपडुपन्ना जेयआगमिस्सा अरिहंता नगवंता सवेते एयाइ चेव तेरसकिरियाठाणाइ नासिसुवा नासेंतिवा नासिस्संतिवा पन्नविंसुवा पन्नवितिवा पन्नविस्सिवा एवंचेव तेरसमं किरियाठाणं सेविंसुवा सेवंतिवा सेविस्संतिवा ॥ १३ ॥

अर्थ–हवे अपर तेरमो क्रिया स्थानक इरिया पथिक नामे कहिए ढैए (इहखलुअत्तत्ताए के०) निश्चे आ जगत्माहे आत्म नाव पामवाने अर्थे (संवुडस्स के०) मन, वचन, अने कायाये करी संवृत एटले संवर सहित एवा (अणगारस्स के०) साधुने इरियावहि क्रिया कहिये ते साधुना गुण कहेछे ईर्यासमितिए समितो, नाषासमितिए समितो, एषणासमितिए समितो, आदान नाम मात्रा निक्षेपण समितिए समि

बंध बहुव्ययच ४ । तदेव सारक्रिया प्रथमसमये बद्धस्पृष्टा द्वितीयसमये उदिता निर्जी र्णा स्यात् । (सेयकालेत्ति) एष्यत्काले आगामिनि तृतीयसमये तत्कर्मापेक्षया कर्मतापि नवति । एव खलु तस्य वीतरागस्य तत्प्रत्ययिकमीर्याप्रत्ययिकं कर्माधीयते बध्यते । एतत्त्रयोदश क्रियास्थानमाख्यातं । ये पुनस्तस्मादन्ये प्राणिनस्तेषा मिथ्यात्वाविरतिप्र मादकषाययोगनिमित्त सांपरायिकोबंध स्यात् । केवलयोगनिमित्तस्तु वीतरागस्यैव । सच द्विसमयस्थितिकइति ॥२३॥ सोहं ब्रवीमि येऽतीतायेच प्रत्युत्पन्नाये चागामिनोर्हतो नगवंत सर्वे ते एतान्येव त्रयोदश क्रियास्थानानि अनापिपुर्नापते नापिष्यतेच विपाक त प्रज्ञापितवंत प्रज्ञापयंति प्रज्ञापयिष्यंतिच । तथेतदेव त्रयोदश क्रियास्थानं सेवित वंत सेवंति सेविष्यंते च ॥ २४ ॥

॥ टीका—अथापरं त्रयोदशं क्रियास्थानमीर्यापथिकं नामाख्यायते । ईरणमीर्या त स्यास्तया वा पथाऽर्यापथस्तत्र नवमीर्यापथिकमेतच्च शब्दव्युत्पत्तिनिमित्तं । प्रवृत्तिनिमि त्त त्विद सर्वत्रोपयुक्तस्य निरुपायस्य समीक्षितमनोवाक्कायक्रियस्य या क्रिया तया यत्कर्म तदीर्यापथिकं सैव वा क्रिया ईर्यापथिकेत्युच्यते । सा कस्य नवति किंनूता वा कीदृक्कर्मफ लाचा इत्येतद्दर्शयितुमाह । (इहखलुइत्यादि) इह जगति प्रवचने संयमेवा वर्तमान स्य । खलुशब्दोऽवधारणेऽलंकारेवा । आत्मनोनावआत्मत्वं तदर्थमात्मत्वार्थं संवृतस्य मनोवाक्काये परमार्थतएवनूतस्यैवात्मनावोऽपरस्य त्वसंवृतस्यात्मतत्त्वमेव नास्ति सद्नूतात्मकार्यकारणात् । तदेवमात्मार्थं संवृतस्यानगारस्यैर्यापथिकादिभि पंचभि समितिभिर्मनोवाक्काये समितस्य तथा तिसृभिर्गुप्तिस्य । पुनर्गुप्तिग्रहणमेताभिरेव गुप्तिभिर्गुप्तोनवतीत्यस्यार्थस्याविर्नावनायात्यादरख्यापनाय वेति । तथा गुप्तेन्द्रियस्य नवब्रह्मचर्यगुप्त्युपेतब्रह्मचारिणश्च सततस्तथोपयुक्त गछतस्तिष्ठतोनिषीदतोमुनेस्त्वक्वर्तं ना कुर्वाणस्य तथोपयुक्तमेव वस्त्र पतद्ग्रहं कंबलंवा पादपुंछनकं वा गृह्णतानि क्षिपतोवा यावच्चक्षु पक्ष्मनिपातमप्युपयुक्त कुर्वत सताऽप्यत्यप्रमुपयुक्तस्याप्यस्ति विद्य ते विविधा मात्रा विमात्रा तदेवविधा सूक्ष्माक्षिपक्ष्मसंचलनरूपादिकेर्यापथिकानाम क्रिया केवलिनापि क्रियते । तथाहि । सयोगी जीवान शक्नोति क्षणमप्येकं निश्चल स्थातुमग्निना ताप्यमानोदकवत्कार्मणशरीरानुगत सदा परिवर्तयन्नेवास्ते । तथा चाक्त । केवलीण नंते अस्सिंसमय सिजेसु आगासयएसेसु इत्यादि । तदेव केवलिनापि सूक्ष्मगात्रसंचारान्नवतीहच कारणे कार्योपचारात्तया क्रियया यद्बध्यते कर्म तस्य कर्मणो याऽवस्थास्ता क्रिया । ताएव दर्शयितुमाह । (सापढमसमयेइत्यादि) यासाव कार्यिण क्रिया तया यद्बध्यते कर्म तत्प्रथमसमयएव बद्ध स्पृष्टंचेति कृत्वा तत्क्रियैव बद्ध

ए तेर जे क्रियाना स्थानक छे ते मात्र एक श्रीवर्द्धमान स्वामियेंज नथी कह्या, किंतु अन्य बीजा पण सर्वे तीर्थंकरे कह्याछे एवो भाव देखाडेछे (सेबेमि के०) श्री सुधर्मस्वामि जंबूस्वामि प्रत्ये कहेछे के, मे श्री महावीर पासेथी सांभळ्याछे जे पूर्वोक्त अर्थ, ते तुजने कह्या ते अर्थ (जेयअतीता के०) अतीतकालें जे तीर्थंकर थया (जेयपडुपन्ना के०) तथा जे तीर्थंकर हमणा वर्त्तमान कालेंछे, वली (जेआगमिस्सा के०) जे आगमिककाले तीर्थंकर थशे, (अरिहता के०) ते श्री अरिहंत पूजा सत्कार करवा योग्य, (भगवता के०) ऐश्वर्यादिकगुण युक्त, (सव्वेतेएयाइंचेव के०) ते सर्वे तीर्थंकरे निश्चे थकी, ए (तेरसकिरियाठाणाइ के०) तेर क्रियाना स्थानक जेछे ते अतीतकाले भाख्या, वर्त्तमान काले भाखेछे,अने आगमिक काले भाखशे विशेषे प्ररूप्या विशेषें प्ररूपेछे, अने विशेपे प्ररूपशे एम निश्चे ए तेरमो क्रिया स्थानक अतीतकाले सेव्यो, वर्त्तमान काले सेवेछे, अने आगमिक कालें सेवशे जेम जंबूद्वीपने विपे बे सूर्य सरखो प्रकाश करेछे, तथा जेम प्रदीप सरखु अजवालु करेछे, तेम तीर्थंकर पण त्रणेकालें वर्त्तमान छता, सरखो उपदेश आपेछे ॥ २४ ॥

॥ दीपिका–अथापर त्रयोदश क्रियास्थानमीर्यापथिक नाम आख्यायते । ईरण ईर्या तस्यास्तया वा पथाईर्यापथ सविद्यते यस्य तदीर्यापथिक । एतच्च शब्दव्युत्पत्तिनिमित्त । प्रवृत्तिनिमित्तंतु इद । सर्वत्रोपयुक्तस्य निकपायस्य समीक्षितमनोवाक्कायक्रियस्य या क्रिया तया यत्कर्म तदीर्यापथिक सैव वा क्रिया ईर्यापथिका । तस्या स्वरूपमाह । (इहखलु इत्यादि) आत्मनावार्थ संवृतस्याऽनगारस्य ईर्यादिकानि पंचभि समितिभिर्मनोवाक्काये समितस्य तिसृभिर्गुप्तिभिर्गुप्तस्य गुप्तेंद्रियस्य नवब्रह्मचर्यगुप्तिसहितब्रह्मचारिणश्च उपयुक्त गच्छतस्तिष्ठतोनिषीदतस्त्वग्वर्तनां कुर्वाणस्य तथा उपयुक्तमेव वस्त्र पतद्ग्रह कंबल पादपुंछनवा गृह्णतोनिक्षिपतोवा यावच्चक्षु पक्ष्मनिपातमपि उपयुक्त कुर्वत सतो प्यस्ति विद्यते विमात्रा विविधा मात्रा सूक्ष्मा क्रिया ईर्यापथिकानाम केवलिनापि क्रियते । यत सयोगी जीव क्षणमप्येक निश्चल स्थातु नशक्नोऽतिवह्निताप्यमानजलवत्कार्मणशरीरानुगत सदा परिवर्तमानएवास्ते । तत केवलिनोपि सूक्ष्मगात्रसचारास्सुस्तेश्च कर्म बध्यते तदीर्यापथिक तस्य याऽवस्था सा क्रिया । (सापढमेति) निकषायिणा यत्कर्म बध्यते तत्प्रथमसमये बद्ध स्पृष्ट चेति तत्क्रियैव बद्धस्पृष्टेत्युक्ता । द्वितीय समये वेदिताऽनुभूता तृतीयसमये निर्जीर्णा । केवलयोगनिमित्त यत्कर्म बध्यते तस्य न सांपरायिकस्येव स्थिति किंतु प्रकृतित सातावेदनीय तत् १ स्थितितोद्विसमया स्थितिक २ अनुभावत शुभानुभावमनुत्तरसुरसुखातिशायि ३ प्रदेशतो बहुप्रदेशमस्थि

णिलक्खणं कागिणिलक्खणं ॥ २६ ॥ सुभगाकरं दुब्भगाकरं गब्भाकरं मोहणकरं आहव्वणिं पागसासणिं दव्वहोमं खत्तियविज्जं चंदचरियं सूरचरियं सुक्कचरियं वहस्सइचरियं उक्कापायं दिसादाहं मियचक्कं वायसपरिमंडलं पंसुवुट्ठिं केसवुट्ठिं मंसवुट्ठिं रूहिरवुट्ठिं वेतालिं अद्धवेतालिं उसोवणिं तालुग्घाडणिं सोवागिं सोवरिं दामिलिं कालिंगिं गोरिं गंधारिं उवतिणिं उप्पयणिं जंभणिं थंभणिं लेसणिं आमयकरणिं विसल्लकरणिं पक्कमणिं अंतद्धाणिं आयमिणिं एवमाइआउ विज्जाउ अन्नस्स हेउ पउंजंति पाणस्स हेउ पउंजंति वत्थस्स हेउ पउंजंति लेणस्स हेउ पउंजंति सयणस्स हेउ पउंजंति अन्नेसिवा विरूवरूवाणं कामभोगाणं हेउ पउंजंति तिरिच्छं तेविज्जं सेवेंति ते अणारिया विप्पडिवन्ना कालमासे कालं किच्चा अन्नयराइं आसुरियाइं किव्विसियाइं ठाणाइं उववत्तारो भवंति ततोवि विप्पमुच्चमाणा भुज्जोएलं मूयताए तमअंधयाए पच्चायंति ॥ २७ ॥

अर्थ—हवे जे काइ ए तेरमा क्रियास्थानकने विषे पाप न कह्यु, ते कहेछे (अडुत्तरं च णं के०) जे काइ तेरमा क्रियास्थानकने विषे नकेवाणु ते आगले ग्रंथे कहिए छए (पुरिसविजयविभंगेमाइक्खिस्सामि के०) हवे पुरुषविचय अथवा पुरुषविजय एटले केटला एक अपसत्ववंत पुरुषनो विभंग एटले ज्ञानक्रियाविशेष कहीशु (इहखलु के०) आ मनुष्य क्षेत्रने विषे निश्चे थकी (णाणापन्नाणं के०) नाना प्रकारनी जेनी प्रज्ञाछे तथा (णाणाछंदाणं के०) नाना प्रकार जेनो अभिप्रायछे (णाणासीलाणं के०) नाना प्रकार जेनो आचारछे (णाणादिट्ठीणं के०) नाना प्रकार जेनी दृष्टीछे एतावता त्रणगने त्रेसठ जेनु प्रमाणछे तेकारणे नाना दृष्टिना जाणवा (णाणारूईणं के०) आहार, विहार, शयन, आभरण, यान, वाहन, गीत, अने वाजित्रादिकनेविषे जुदी जुदी जेनी रुचिछे (णाणारंभाणं के०) तथा नाना प्रकारना जेना आरंभ एटले कर्षण, पशुपालन, शिल्पकर्म, इत्यादिक जेने आरंभछे (णाणाज्झवसाणं के०) नाना प्रकारना शुभाशुभ अध्यवसाय तेणेकरी (संजुत्ताणं के०) सहित जे वर्त्तेछे (णाणाविहपावसुयज्झयणं के०) तेना ए आगळजे केहेशे ते प्रमाणे, नाना प्रकारे पापश्रुताध्ययन (एवंभवइ के०) एम होय ॥२५॥ (तंजहा के०) ते कहेछे (भोमं के०) भूमिनिर्यांत एटले भूमिकंपादिक जे ग्रंथ

स्पृष्टेत्युक्ता तथा द्वितीयसमये वेदितेत्यनुभूततृतीयसमयेऽतिजीर्णा । एतदुक्तं भवति । कर्मयोगनिमित्त बध्यते तत्स्थितिश्च कषायायत्ता तदभावाच्च न तस्य सांपरायिकस्येव स्थिति किंतु योगसद्भावाद्बध्यमानमेव स्पृष्टता सश्लेष याति । द्वितीयसमये त्वनुभूय ते तच्च प्रकृतित सातावेदनीय स्थितितोद्विसमयस्थितिकमनुभावत शुभानुभाव अनुत्तरोपपातिकदेवसुखातिशायि देशतोबहुप्रदेशमस्थिरबंध बहुव्ययच । तदेव सेर्या पथिका क्रिया प्रथमसमये बद्धस्पृष्टा द्वितीयसमये उदिता वेदिताऽतिजीर्णा भवति (सेयकालेत्ति) आगामिनि तृतीयसमये तत्कर्मापेक्षया कर्मतापि च भवति । एव ताव द्वीतरागस्येर्याप्रत्ययिकं कर्माधीयते सबध्यते । तदेतत्त्रयोदश क्रियास्थान व्याख्या तं । ये पुनस्तेभ्योऽन्ये प्राणिनस्तेषा सांपरायिकोबधस्तेतु यानि प्रागुक्तानीर्यापथवर्ज्यानि द्वादश क्रियास्थानानि तेषु वर्तते तेषा तद्वर्तिनामसुमता मिथ्यात्वाविरतिप्रमादकषा ययोगनिमित्त सांपरायिकोबधोभवति । तत्रच प्रमादस्तत्र कषायायोगाश्च नियमाद्भव ति । कषायिणश्च योगायोगिनस्त्वेते भाज्या । तत्र प्रमादकषायप्रत्ययिकोबधोऽनेक प्रकारा स्थिति । तद्रहितस्तु केवलयोगप्रत्ययिकोद्विसमयस्थितिरेवेर्याप्रत्ययिकइति स्थित ॥ २३ ॥ एतानि त्रयोदश क्रियास्थानानि भगवद्वर्धमानस्वामिनैवोक्तान्यपि त्वन्यै रपीत्येतद्दर्शयितुमाह । (सेबेमीत्यादि) सोह ब्रवीमीति यत्प्रागुक्त तद्वा ब्रवीमीति । तद्यथा । ये तेऽतिक्रातादृषभादयस्तीर्थकृतोयेच वर्तमाना क्षेत्रांतरे सीमधरस्वामि प्रभृतयोये चागामिन पद्मनाभादयोऽर्हतोभगवत सर्वेपि ते पूर्वोक्तान्येतानि त्रयोदश क्रियास्थानान्यभाषतभाषते भाषिष्यतेच । तथा तत्स्वरूपतस्तद्विपाकतश्च प्ररूपितवत प्ररूपयति प्ररूपयिष्यतिच । तथैतदेव त्रयोदश क्रियास्थान सेवितवत सेवते सेविष्य तेच । तथाहि जंबूद्वीपे सूर्यद्वय तुल्यप्रकाश भवति । यथा वा सदृशापकरणा प्रदीपास्तु ल्यप्रकाशाभवत्येव तीर्थकृतोपि निरावरणत्वात् कालत्रयवर्तिनोपि तुल्योपदेशाभवति॥ २४

अदुत्तरचण पुरिसविजय विभगमाइक्खिस्सामि इह खलु णाणापन्ना ण णाणाछदाण णाणासीलाण णाणादिट्ठीण णाणारूईण णाणारभा ण णाणाज्झवसाण सजुत्ताण णाणाविहपावसुयज्झयण एव भवइ॥२५॥ तजहा भोम उप्पाय सुविण अंतलिक्ख अग सर लक्खण वज ण इत्थिलक्खण पुरिसलक्खण हयलक्खण गयलक्खण गोणलक्खण मिढलक्खण कुक्कडलक्खण तित्तिरलक्खण वट्टगलक्खण लावयलक्ख ण चक्कलक्खण छत्तलक्खणं चम्मलक्खण दण्डलक्खण असिलक्खण म

णिलक्खण कागिणिलक्खण ॥ २६ ॥ सुन्नगाकर डुन्नगाकर गन्नाकर मो
हणकर आहव्वाणि पागसासणि दवहोम खत्तियविज्ज चदचरिय सूरच
रिय सुक्कचरिय वहस्सइचरिय उक्कापायं दिसादाह मियचक्क
वायसपरिमंमल पसुवुठि केसवुठि मसवुठि रुहिरवुठि वेतालि अद्ध
वेतालि उसोवणि तालुघाडणि सोवागि सोवरि दामिलि कालिंगि गो
रि गधारि उवतिणि उप्पयणि जन्नणि थन्नणि लेसणि आमयकरणि
विसल्लकरणि पक्कमणि अतद्धाणि आयमिणि एवमाइआउ विज्जाउ
अन्नस्स हेउ पउजति पाणस्स हेउ पउजति वत्थस्स हेउ पउजति लेण
स्स हेउ पउजति सयणस्स हेउ पउजति अन्नेसिवा विरूवरूवाण का
मन्नोगाण हेउ पउजति तिरिछ तेविज्ज सेवेति ते अणारिया विप्पडि
वन्ना कालमासे काल किच्चा अन्नयराइ आसुरियाइ किब्बिसियाइ ठा
णाइ उववत्तारो भवति ततोवि विप्पमुच्चमाणा भुज्जोएल मूयताए तम
अधयाए पच्चायति ॥ २७ ॥

अर्थ—हवे जे काइ ए तेरमां क्रियास्थानकने विषे पाप न कह्यु, ते कहेछे (अहुत्तरच
ण के०) जे काइ तेरमा क्रियास्थानकने विषे नकेवाणु ते थागले अर्थे कहिए ठेए (पुरि
सविजयविभंगेमाइक्खिस्सामिके०) हवे पुरुषविचय अथवा पुरुषविजय एटले केटला एक
अल्पसत्ववत पुरुषनो विभग एटले ज्ञानक्रियाविशेष कहीशु (इहखलु के०) आ मनुष्य
क्षेत्रने विषे निश्चे थकी (णाणापन्नाण के०) नाना प्रकारनी जेनी प्रज्ञाछे तथा (णाणाछदाण
के०) नाना प्रकार जेनो अभिप्रायछे (णाणासीलाण के०) नाना प्रकार जेनो आचा
रछे (णाणादिठीण के०) नाना प्रकारे जेनी दृष्टीछे एतावता त्रणशने त्रेसठ जेनु प्रमा
णछे तेकारणे नाना दृष्टिना जाणवा (णाणारूईण के०) आहार, विहार, शयन, आ
भरण, यान, वाहन, गीत, अने वाजित्रादिकनेविषे जुदी जुदी जेनी रुचिछे (णाणार
भाण के०) तथा नाना प्रकारना जेना आरभ एटले कर्षण, पशुपालन, शिल्पकर्म,
इत्यादिक जेने आरभछे (णाणाज्झवसाण के०) नाना प्रकारना शुभाशुभ अध्यवसाय
तेणेकरी (सजुत्ताण के०) सहित जे वर्त्तेछे (णाणाविहपावसुयाज्झयण के०) तेना ए
आगळजे केहेशे ते प्रमाणे, नाना प्रकार पापश्रुताध्ययन (एवमाइ के०) एम थाय
॥२५॥ (तंजहा के०) ते कहेछे (भोम के०) भूमिनिर्घात एटले भूमिकपादिक जे ग्रथ

स्पृष्टेत्युक्ता तथा द्वितीयसमये वेदितेत्यनुनूततृतीयसमयेऽतिजीर्णा । एतडुक्तं नवति। कर्मयोगनिमित्तं बध्यते तत्स्थितिश्च कषायायत्ता तदनावाच्च न तस्य सांपरायिकस्येव स्थिति किंतु योगसद्भावाद्बध्यमानमेव स्पृष्टता सश्लेषं याति । द्वितीयसमये त्वनुनूय ते तच्च प्रकृतितः सातावेदनीयं स्थितितोद्विसमयस्थितिकमनुनावतः शुनानुनाव अनुत्तरोपपातिकदेवसुखातिशायि देशतोवहुप्रदेशमस्थिरबंधं बहुव्ययंच । तदेवं तेर्या पथिका क्रिया प्रथमसमये बद्धस्पृष्टा द्वितीयसमये उदिता वेदिताऽतिजीर्णा नवति (सेयकालेत्ति) आगामिनि तृतीयसमये तत्कर्मापेक्षया कर्मतापि च नवति । एवं ताव द्वीतरागस्येर्याप्रत्ययिकं कर्माधीयते संबध्यते । तदेतत्त्रयोदशं क्रियास्थानं व्याख्या तं। ये पुनस्तेन्योऽन्ये प्राणिनस्तेषां सांपरायिकोबंधस्तेतु यानि प्रागुक्तानीर्यापथवर्ज्यानि द्वादश क्रियास्थानानि तेषु वर्तंते तेषां तद्वर्तिनामसुमतां मिथ्यात्वाविरतिप्रमादकषा ययोगनिमित्तं सांपरायिकोबंधोनवति । तत्रच प्रमादस्तत्र कषाययोगाश्च नियमाद्भव ति । कषायिणश्च योगायोगिनस्त्वेते नाज्या । तत्र प्रमादकषायप्रत्ययिकोबंधोऽनेक प्रकारा स्थिति । तद्रहितस्तु केवलयोगप्रत्ययिकोद्विसमयस्थितिरेवेर्याप्रत्ययिकइति स्थितं॥ २३ ॥ एतानि त्रयोदश क्रियास्थानानि नगवद्वर्धमानस्वामिनैवोक्तान्यपि त्वन्यै रपीत्येतद्दर्शयितुमाह । (सेबेमीत्यादि) सोहं ब्रवीमीति यत्प्रागुक्तं तद्वा ब्रवीमीति। तद्यथा । ये तेऽतिक्रांताऋषनादयस्तीर्थकृतोयेच वर्तमाना क्षेत्रांतरे सीमंधरस्वामि प्रनृतयोये चागामिनः पद्मनानादयोऽर्हंतोनगवंतः सर्वेपि ते पूर्वोक्तान्येतानि त्रयोदश क्रियास्थानान्यनाषतनाषंते नाषिष्यंतेच । तथा तत्स्वरूपतस्तद्विपाकतश्च प्ररूपितवंतः प्ररूपयंति प्ररूपयिष्यंतिच । तथैतदेव त्रयोदशं क्रियास्थानं सेवितवंतः सेवंते सेविष्य तेच। तथाहि जंबूद्वीपे सूर्यद्वय तुल्यप्रकाशं नवति । यथा वा सदृशोपकरणा प्रदीपास्तु ल्यप्रकाशानवंत्येवं तीर्थकृतोपि निरावरणत्वात् कालत्रयवर्तिनोपि तुल्योपदेशानवंति॥२४

अदुत्तरंचणं पुरिसविजयं विन्नंगमाइक्खिस्सामि इह खलु णाणापण्णा णं णाणाछंदाणं णाणासीलाणं णाणादिठीणं णाणारूईणं णाणारंना णं णाणाश्वसाणं संजुत्ताणं णाणाविहपावसुयाज्झयणं एवं नवइ॥२५॥ तंजहा नोमं उप्पायं सुविणं अंतलिक्खं अंगं सरं लक्खणं वंजं णं इत्थिलक्खणं पुरिसलक्खणं हयलक्खणं गयलक्खणं गोणलक्खणं मिढलक्खणं कुक्कडलक्खणं तित्तिरलक्खणं वट्टगलक्खणं लावयलक्ख णं चक्कलक्खणं छत्तलक्खणं चम्मलक्खणं दंमलक्खणं असिलक्खणं मं

(उसोवणिके०) उपस्वापिनी विद्या, (तालुघाडणिके०) ताला उघाडवानी विद्या, तालो द्घट्टनी (सोवागि के०) चाम्डालिणीज्ञापकी विद्या, (सोवरिके०) शाबरी विद्या (दा मिलिके०) डाविडीविद्या (कालिंगिके०) कालिंगी विद्या, (गोरिके०) गोरी विद्या (गधारि के०) गाधारी विद्या, (उवतिणि के०) अवपतनी नीचे पाडवानी विद्या, (उप्पयणि के०) उत्पतनी एटले उचे जवानी विद्या (जनणिके०) जृनणी विद्या, (यनणिके०) स्तंजनी विद्या (लेसणि के०) श्लेषनी विद्या (आमयकरणि क०) आमय करणी विद्या (विसल्लकरणि के०) विशल्य करणी विद्या (पक्कमणि के०) प्रक्रामणी फेर चडा वानी विद्या (अतद्धाणि के०) अदृश्य करणि विद्या (आयमणि के०) आत्मणी वि द्या, (एवमाइआउविज्जाउ के०) इत्यादिक विद्याउ आदि शब्दथकी प्रज्ञप्त्यादिक वि द्याउ लेवी ते विद्याउने जे शास्त्रो थकी जाणीये तेवा शास्त्रो नणीने पाखमी, परद र्शनी अथवा गृहस्थ, अथवा स्वपक्षीक इव्यलिंगी साधु ते ए पूर्वोक्त विद्याउने (अन्नस्सहेउ के०) अन्नने अर्थे (पउजति के०) प्रयुजे (पाणस्सहेउपउजति के०) पाणीने अर्थे प्रयुजे (वज्रस्सहेउपउजति के०) वस्त्रने अर्थे प्रयुजे (लेण स्सहेउपउजति के०) उपाश्रयने अर्थे प्रयुजे (सयणस्सहेउपउजति के०) शयनने अर्थे प्रयुजे (अन्नेसिवाविरूवरूवाणकामनोगाणहेउपउजति के०) अथवा बीजा नाना प्रकारना कामनोगने अर्थे प्रयुजे ते पुरुष (तिरिच्छ तेविज्जासेवति के०) तिरछि एटले रुडा अनुष्ठाननी हणनारी एवी ते विद्याने सेवे (तेअणारियाविप्पडिवन्ना के०) ते अनार्य जाणवा यद्यपि क्षेत्र करी अने नाषाये करी ता आर्यछे तथापि, मिथ्यात्व ना आसेवन थकी, अनार्य कर्मना करनार, अनार्य, अनाचारी, केवाय ते (काल मासे कालकिच्चा के०) आयुष्यने क्षये कालने अवसरे काल करीने अज्ञान तपने प्र माणे यद्यपि देवलोके जाय तथापि ते (अन्नयराइ आसुरियाइ किव्विसियाइ ठाणाइ उ ववत्तारा नवति के०) तेउनु अनेरा आसुरी किल्विषिकादिक स्थानकोने विषे उपजतु थाय (तताविविप्पमुच्चमाणाके०) त्या थकी चवीने (नुज्जाके०) वली मनुष्यमा उपज तो केवा थाय ताके (एल के०) बेरा थाय (मूयताए के०) मुगा थाय, (तम अधयाए के०) आधला एवा ते जीव थाय त्यार पठी (पच्चायति के०) नरक तिर्य चादिक गतिने विषे परिभ्रमण करे, अधर्मपक्ष आश्री एटले व्रत धरीने पापना विपाक कह्यो हवे गृहस्थ उद्देशिने अधर्म पक्ष कहेछे ॥ २० ॥

॥ दीपिका—साप्रतं त्रयोदशसु क्रियास्थानेषु यन्नोक्त पापस्थान तदाह । इहमुत्तर अस्मात्क्रियास्थानप्रतिपादनादुत्तर यदत्र नोक्त तदुत्तरग्रथेनाच्यते । चसमुच्चये । ए

फल्लाडे, तथा (उप्पाय के०) उत्पातिक, कपिहसितादिक, तथा आकाश थकी रुधिरवृष्ट्यादिक (सुविण के०) स्वप्नते रात्रीने विषे गजवृषनादिक दर्शन, (अंतलिक्ख के०) उल्कापात मेघ वृष्ट्यादिक तथा (अंग के०) अंग नेत्र बाहु स्फुरणादिक, (सर के०) काकशिवादिक स्वर विचारणा, (लक्खण के०) पद्म, यव, शंख, चक्रादिक लक्षण, (वंजण के०) मस तिलकादिक, (इत्थिलक्खणपुरिसलक्खण के०) स्त्रीलक्षण, तथा पुरुषना लक्षण, ते सामुद्रिकादिक प्रसिद्धजे (हयलक्खण के०) घोडाना लक्षण, (गयलक्खणके०) हाथीना लक्षण, (गोणलक्खण के०) गौ वृषनना लक्षण, (मिढलक्खण के०) मिढाना लक्षण, (कुक्कडलक्खणके०) कुकडाना लक्षण, (तित्तिरलक्खण के०) तित्तिरपक्षीना लक्षण, (वट्टगलक्खण के०) वर्तकना लक्षण,(लावयलक्खण के०) लावकना लक्षण, (चक्कलक्खण के०) चक्रना लक्षण, (छत्तलक्खणके०) छत्रना लक्षण, (चम्मलक्खण के०) चर्मना लक्षण, (दमलक्खण के०) दमना लक्षण (असिलक्खण के०) खड्गना लक्षण, (मणिलक्खण के०) मणि चंद्र सूर्यकांतादिकना लक्षण, (कागिणिलक्खण के०) कागिणिना लक्षण, एवीरीते एना प्ररूपक शास्त्र जाणवा ॥ २६ ॥ हवे मंत्रविद्या कहेछे (सुभगाकर के०) जे थकी दुर्भाग्य वंत प्राणी सौभाग्य वंत थाय (डुब्भगाकर के०) जेथकी सौभाग्य वंत प्राणी दौर्भाग्यवंत थाय (गब्भाकर के०) जे विद्याने बले गर्भाधान ऊपजे तेवी विद्या, (मोहणकर के०) लोकने व्यामोह ऊपजे तथा वेदनो उदय दीपे, (आहव्वणि के०) आथर्वणीविद्या एटले तत्काल अनर्थनी करनारी विद्या, (पागसासणि के०) इंद्रजाल विद्या, (दव्वहोम के०) मधु घृतादिक द्रव्य, उच्चाटनादिक कार्य निमित्ते होमीए ते द्रव्यहोम जाणवो (खत्तियविज्ज के०) क्षत्रीनी धनुर्वेद्यादिक विद्या, (चंदचरिय के०) चंद्रमानु चरित्र चंद्रमानोवार जाणे (सूरचरियके०) सूर्यनु चरित्र सूर्यनो वार जाणे,(सुक्कचरियं के०) शुक्रनु चरित्र शुक्रनो वार जाणे, (वहस्सइचरियके०) बृहस्पतिनु चरित्र बृहस्पतिनो वार जाणे, एवं नवग्रह चरित्र ते ज्योतिष शास्त्र प्रसिद्ध जाणवु तथा (उक्कापाय के०) उल्कापात, (दिसादाह के०) दिग्दाह (मियचक्क के०) आरण्यक जीव तेनो ग्राम नगरने विषे प्रवेश करता दर्शनथाय, अथवा शब्द शुनाशुन चितवियेते मृगचक्र कहिए (वायसपरिमंडल के०) काकादिक पक्षीना शब्दादिकनो विचार कहे एवीविद्या (पंसुवुट्ठि के०) पंसु धूल वृष्टि, (केसवुट्ठि के०) केश वृष्टि, (मंसवुट्ठिं के०) मांस वृष्टि, (रूहिरवुट्ठि के०) रुधिरवृष्टि, तेनु शुनाशुन फल, जे शास्त्रने विषे चितविये ते शास्त्रो (वेतालि के०) वेतालि नामे विद्या केटला एक अक्षर प्रमाणछे ते केटलाएक दिवस जपता अचेतन काष्ठ माहे चेतन उठाडे (अद्धवेतालि के०) ते दमने उपशमावे,

(उसोवणिके०) उपस्वापिनी विद्या, (तालुघाडणिके०) ताला उघाडवानी विद्या, तालो दूघट्टनी (सोवागि के०) चामालिणीश्वापकी विद्या, (सोवरिके०) शाबरी विद्या (दा मिलिके०) डाविडीविद्या (कालिगिके०) कालिगी विद्या, (गोरिके०) गोरी विद्या (गधारि के०) गांधारी विद्या, (उवतिणि के०) अवपतनी नीचे पाडवानी विद्या, (उप्पयणि के०) उत्पतनी एटले उंचे जवानी विद्या (जंनणिके०) जृनणी विद्या, (थंनणिके०) स्तंजनी विद्या (लेसणि के०) श्लेपनी विद्या (आमयकरणि क०) आमय करणी विद्या (विसल्लकरणि के०) विशल्य करणी विद्या (पक्कमणि के०) प्रकामणी फेर चडा वानी विद्या (अतद्धाणि के०) अदृश्य करणि विद्या (आयमणि के०) आत्मणी वि द्या, (एवमाइआउविक्काउ के०) इत्यादिक विद्याउं आदि शब्दथकी प्रज्ञप्त्यादिक वि द्याउं लेवी ते विद्याउंने जे शास्त्रो थकी जाणीये तेवा शास्त्रो जणीने पाखंमी, परद र्शनी अथवा गृहस्थ अथवा स्वपक्षीक इव्यलिंगी साधु ते ए पूर्वोक्त विद्याउंने (अन्नस्सहेउ के०) अन्नने अर्थे (पउंजति के०) प्रयुंजे (पाणस्सहेउपउंजति के०) पाणीने अर्थे प्रयुंजे (वत्थस्सहेउपउंजति के०) वस्त्रने अर्थे प्रयुंजे (लेण स्सहेउपउंजति के०) उपाश्रयने अर्थे प्रयुंजे (सयणस्सहेउपउंजति के०) शयनने अर्थे प्रयुंजे (अन्नेसिवाविरूवरूवाणकामनोगाणहेउपउंजति के०) अथवा बीजा नाना प्रकारना कामनोगने अर्थे प्रयुंजे ते पुरुप (तिरिछं तेविज्जामेवंति के०) तिरछि एटले रुडा अनुष्ठाननी हणनारी एवी ते विद्याने सेवे (तेअणारियाविप्पडिवन्ना के०) ते अनार्य जाणवा यद्यपि क्षेत्र करी अने नाषाये करी ता आर्यछे तथापि, मिथ्यात्व ना आसेवन थकी, अनार्य कर्मना करनार, अनार्य, अनाचारी, केवाय ते (कालमासे कालंकिच्चा के०) आयुष्यने क्षये कालने अवसरे काल करीने अज्ञान तपने प्र माणे यद्यपि देवलोके जाय तथापि ते (अन्नयराइ आसुरियाइ किव्विसियाइ ठाणाइ न्उववत्तारा नवति के०) तेउंनु अनेरा आसुरी किल्विपिकादिक स्थानकोने विपे उपजनु थाय (ततोविविप्पमुच्चमाणाके०) त्या थकी चवीने (नुज्जोके०) वली मनुष्यमा उपज तो केवा थाय ताके (एल के०) बेरा थाय (मूयताए के०) [illegible] ाय, (तम अधयाए के०) आंधला एवा ते जीव थाय त्यार पढी (पज्ञापति [illegible] नरक तिर्य चादिक गतिने विप परिन्रमण करे, अधर्मपक्ष आश्री एटले व्रतध [illegible] नो विपाक कह्यो हवे गृहस्थ उद्देशिने अधर्म पक्ष कहेछे ॥ २० ॥

॥ दीपिका–साम्प्रतं त्रयोदशसु क्रियास्थानेषु यन्नोक्तं पापस्था [illegible] । इदमुत्तर अस्मात्क्रियास्थानप्रतिपादनाडुत्तरं यदत्र नोक्तं तडुत्तरग्रंथेनान [illegible] मुच्यते । ण

कह्याछे, तथा (उप्पाय के०) उत्पातिक, कपिहसितादिक, तथा आकाश थकी रुधिरवृष्ट्यादिक (सुविण के०) स्वप्नते रात्रीने विषे गजवृषनादिक दर्शन, (अंतलिक्ख के०) उल्कापात मेघ वृष्ट्यादिक तथा (अंग के०) अंग नेत्र बाहु स्फुरणादिक, (सर के०) काकशिवादिक स्वर विचारणा, (लख्कण के०) पद्म, यव, शंख, चक्रादिक लक्षण, (वंजण के०) मस तिलकादिक, (इत्थिलख्कणपुरिसलख्कण के०) स्त्रीलक्षण, तथा पुरुषना लक्षण, ते सामुद्रिकादिक प्रसिद्धछे (हयलख्कण के०) घोडाना लक्षण, (गयलख्कणके०) हाथीना लक्षण, (गोणलख्कण के०) गौ वृषनना लक्षण, (मिढलख्कण के०) मिढाना लक्षण, (कुक्कडलख्कणके०) कुकडाना लक्षण, (तित्तिरलख्कण के०) तित्तिरपक्षीना लक्षण, (वट्टगलख्कण के०) वर्तकना लक्षण, (लावयलख्कण के०) लावकना लक्षण, (चक्कलख्कण के०) चक्रना लक्षण, (छत्तलख्कणके०) छत्रना लक्षण, (चम्मलख्कण के०) चर्मना लक्षण, (दंमलख्कण के०) दंमना लक्षण (असिलख्कण के०) खड्गना लक्षण, (मणिलख्कण के०) मणि चंद्र सूर्यकांतादिकना लक्षण, (कागिणिलख्कण के०) कागिणिना लक्षण, एवीरीते एना प्ररूपक शास्त्र जाणवा ॥ २६ ॥ हवे मंत्रविद्या कहेछे (सुनगाकर के०) जे थकी दुर्भाग्य वंत प्राणी सौनाग्य वंत थाय (डुप्नगाकर के०) जेथकी सौनाग्य वंत प्राणी दौर्नाग्यवंत थाय (गप्नाकर के०) जे विद्याने बले गर्नाधान ऊपजे तेवी विद्या, (मोहणकर के०) लोकने व्यामोह ऊपजे तथा वेदनो उदय दीपे, (आहव्वणि के०) आथर्वणीविद्या एटले तत्काल अनर्थनी करनारी विद्या, (पागसासणि के०) इंद्रजाल विद्या, (दव्वहोम के०) मधु घृतादिक द्रव्य, उच्चाटनादिक कार्य निमित्ते होमीए ते द्रव्यहोम जाणवो (खत्तियविज्ज के०) क्षत्रीनी धनुर्विद्यादिक विद्या, (चंदचरिय के०) चंद्रमानु चरित्र चंद्रमानोवार जाणे (सूरचरियके०) सूर्यनु चरित्र सूर्यनो वार जाणे,(सुक्कचरियं के०) शुक्रनु चरित्र शुक्रनो वार जाणे, (वहस्सइचरियके०) बृहस्पतिनु चरित्र बृहस्पतिनो वार जाणे, एव नवग्रह चरित्र ते ज्योतिष शास्त्र प्रसिद्ध जाणवु तथा (उक्कापाय के०) उल्कापात, (दिसादाह के०) दिग्दाह (मियचक्क के०) आरण्यक जीव तेनो ग्राम नगरने विषे प्रवेश करता दर्शनथाय, अथवा शब्द शुनाशुन चितविये ते मृगचक्र कहिए (वायसपरिमंमल के०) काकादिक पक्षीना शब्दादिकनो विचार कहे एवीविद्या (पंसुवुट्ठि के०) पंसु धूल वृष्टि, (केसवुट्ठि के०) केश वृष्टि, (मंसवुट्ठिके०) मांस वृष्टि, (रूहिरवुट्ठि के०) रुधिरवृष्टि, तेनु शुनाशुन फल, जे शास्त्रने विषे चितविये ते शास्त्र (वेतालि के०) वेतालि नामे विद्या केटला एक अक्षर प्रमाणछे ते केटला एक दिवस जपता अचेतन काष्ठ माहे चेतन उगाडे (अद्धवेतालि के०) ते दंमने उपशमावे,

॥ टीका–सांप्रतं त्रयोदशसु क्रियास्थानेषु यन्नाभिहितं पापस्थानं तद्भिणिषुराह । (अदुत्तरमित्यादि) अस्मात्त्रयोदशक्रियास्थानप्रतिपादनादुत्तरं यत्र न प्रतिपादितं त दधुनोत्तरभूतेनानेन सूत्रसंदर्भेण प्रतिपाद्यते । यथाऽऽचारे प्रथमश्रुतस्कंधे यन्नाभिहितं तदुत्तरभूतानिश्चूलिकानि प्रतिपाद्यते । तथा चिकित्साशास्त्रे मूलसंहितायां श्लोक स्थाननिदानशारीरचिकित्सितकल्पसंज्ञकायां काय यन्नाभिहितं तदुत्तरेऽभिधीयते एवमन्य त्रापि वद स्वित्यादावुत्तरसद्भावोऽवगंतव्य । तदिहापि पूर्वेण यन्नाभिहितं तदनेनोत्तरग्र थेन प्रतिपाद्यतइति । च समुच्चये । णमितिवाक्यालंकारे । पुरुषाविचीयते मृग्यते वि ज्ञान द्वारेणान्वेष्यते येन सपुरुषविचयः पुरुषविजयोवा केषांचिदल्पसत्वानां तेन ज्ञानव लेनावधिप्रयुक्तेनानर्थानुबंधेनाविजयादिति । सच विभंगवदवधिविपर्ययवद्भिनगोज्ञानवि शेष पुरुषविचयश्चासो विभंगश्च पुरुषविचयविभंगस्तमेवंभूतं ज्ञानविशेषमाख्यास्यामि प्र तिपादयिष्यामि । यादृशानां चासौ भवति तांल्लेशत प्रतिपादयितुमाह । (इह खलुइ त्यादि) इह जगति मनुष्यक्षेत्रे प्रवचने वा नानाप्रकाराविचित्रक्षयोपशमात् प्रज्ञायतेऽन येति प्रज्ञा सा विचित्रा येषां ते नानाप्रज्ञास्तया वाऽल्पाल्पतराल्पतमया चिंत्यमाना पुरुषा षट्स्थानपतिताभवंति । यथा छंदोऽभिप्रायः सनानायेषां ते तथा तेषां नानाशी लानां तथा नानारूपा दृष्टिरंतःकरणप्रवृत्तिर्येषां ते तथा तेषामिति । तेषांच त्रीणि श तानि षष्ठ्यधिकानि प्रमाणमवगंतव्यं । तथा नाना रुचिर्येषां त नानारुचयः । तथा हि । आहारविहारशयनासनाछादनाभरणयानवाहनगीतवादित्रादिषु मध्ये ऽन्यस्यान्यारु चिर्भवति तेषां नानारुचीनामिति । तथा नानारंभाणां कृषिपाशुपाल्यविपणिशिल्पिक मैसेवादिष्वन्यतरमारंभेणेति । तथा नानाध्यवसायसंयुतानां शुभाध्यवसायभाजां इह लोकमात्रप्रतिबद्धानां परलोकनिष्पिपासानां विषयतृषितानामिदं नानाविधं पापश्रुताध्य यनं भवति ॥२५॥ तद्यथा भूमौ भवं निर्घातभूकंपादिकं, तथोत्पातं कपिहसितादिकं, त था स्वप्नं गजवृषभसिंहादिकं, तथाऽतरिक्षं मेघादिकं, तथांगे भवमांगं अक्षिबाहुस्फुर णादिकं, तथा स्वरलक्षणं काकस्वरगंभीरस्वरादिकं तथा लक्षणं यवमत्स्यपद्मशंखच क्रश्रीवत्सादिकं व्यंजनं तिलकमाषादिकं, तथा स्त्रीलक्षणं रक्तकरचरणादिकं, एवंपुरुषा दीनां काकिणीरत्नपर्यंतानां लक्षणप्रतिपादकशास्त्रपरिज्ञानमवगंतव्यं ॥२६॥ तथा मंत्रवि शेषरूपाविद्या तद्यथा। दुर्भगमपि सुभगमाकरोमि सुभगकारा, तथा सुभगमपि दुर्भगमा करोमि दुर्भगकारा, तथा गर्भकरा गर्भाधानविधायिनीं तथा मोहनवेदादयोरा तत्करण शीलामाथर्वणाभिधानां सद्योऽनर्थकारिणीं विद्यामभिधीयते तथा पाकशासनीमिंद्रजाल संज्ञिका तथा नानाविधैर्द्रव्यैः कणवीरपुष्पादिभिर्मधुघृतादिभिरोघटनादिक कार्यहो मात्मकं यस्यां सा द्रव्यहवनां तां तथा क्षत्रियाणां धनुर्वेदादिकांपरां या या स्वगोत्रकर्मे

वाक्यालकारे । पुरुषाविचीयते मृग्यते येन सपुरुषविचय पुरुषविजयोवा अभ्यसता ना केषाचित्पुरुषाणा ज्ञानलवेनार्थानुबधिना विजयस्तस्य विभग ज्ञानविशेष चाख्या स्यामि । यादृशाना चासौ विभग स्यात्तानाह । (इहखलुइत्यादि) इह जगति नानाप्र ज्ञाविचित्रमतय पुरुषानानाछदाविचित्राभिप्रायानानाशीलानानारूपादृष्टिरत करणप्र वृत्तिर्येषा ते तथा तेषाच त्रीणि शतानि त्रिषष्ठ्यधिकानीति प्रमाण ज्ञेय । तथा नानारुची ना नानारभाणा नानाध्यवसायसयुताना इह लोकप्रतिबद्धाना परलोकपराङ्मुखानां तेषां नानाविध पापश्रुताध्ययन भवति॥२५॥तद्यथा । भूमौ भव भौम निर्घातभूकपादिक उत्पात कपिहसितादि स्वप्न गजादि, अंतरिक्ष मेघादि, अाग बाहुनेत्रस्फुरणादि, स्वरलक्षण काकस्व रादिलक्षण, मत्स्ययवश्रीवत्सादि व्यजन तिलमाषादि स्त्रीलक्षण रक्तपाणिपादादिक । ए व पुरुषहयगजगोमिढकुक्कुटतित्तिरवर्तकलावकचक्रछत्रचर्मदंडासिमणिकाकिणीरत्नलक्ष णानि॥ २६ ॥ सुभगमाकरोति सुभगाकाराविद्या, दुर्भगमाकरोति दुर्भगाकारा, गर्भकरा मो हनकरा आथर्वणी अथर्वणाख्या, सद्योऽनर्थकारिणी विद्या पाकशासनी इद्रजालविद्या कणवीरपुष्पादिनिर्द्रव्यैरुच्चाटनादिकार्यैर्होमोयस्या सा द्रव्यहोमा, क्षत्रविद्या धनुर्वेदा दिका, तामधीत्य प्रयुजते । ज्योतिषविद्यामाह । (चदचरियमित्यादि) चद्रचरित्र, नक्षत्र योगराहुग्रहणादिक सूर्यचरित्र, तथैव शुक्रबृहस्पतिचरितं उदयास्तवर्षकालादि । उल्का पातदिग्दाहमडलविचारेण शुभाशुभकारिणोमृगाहरिणशृगालादयआरण्यास्तेषा दर्शन ग्रामप्रवेशादौ शुभाशुभ यत्र चित्यते सग्रथोपि मृगचक्र वायसादीना पक्षिणा स्था नस्वरादिक शुभाशुभ चित्यते त द्वायसपरिमडल पांसुकेशमासरुधिरवृष्टयोऽनिष्टफलायत्र शास्त्रे चित्यते तत्तन्नाम तथा वेतालीविद्या सा च किल कतिभिर्जपैर्दडमुत्थापयति । अ धैवेताली त दडमुपशमयति । उपस्वापिनी, तालोद्घाटनी, श्वपाकी, शाबरी, द्राविडी, का लिंगी, गौरी, गाधारी अवपतनी, उत्पतनी, जृभणी, स्तभनी, श्लेषणी, आमयकरणी, वि शल्यकरणी, प्रक्रामणी, अतर्धानकरणी इत्यादिका विद्या अधीयते । आदिशब्दात्प्रज्ञप्त्याद योग्राह्या । एताश्च विद्या पाखडिकागृहस्थावा स्वयूथ्याद्रव्यलिगधारिणोवा अन्नपान वस्त्रलयनशयनार्थं प्रयुजति अन्येषा वा विरूपरूपाणा विचित्राणा कामभोगाना कृते प्र युजति । सामान्येन विद्यासेवनमनिष्टमित्याह । (तिरिमिति) तिरश्चानामननुकूला स दनुष्ठानप्रतिघातकारिणी तेऽनार्याविप्रतिपन्ना विद्या सेवते तेच यद्यपि क्षेत्रार्याभाषार्या स्तथाप्यनार्यकर्मकारित्वादनार्याएव ज्ञेया । तेच कालमासे मरणावसरे काल कृत्वा यदि कथचिद्देवलोकगामिनोभवति ततोन्यतरेषु आसुरीयकेषु किल्बिषिकादिस्थानेषु उ त्पत्स्यते ततोपि विप्रमुक्ताश्च्युतायदि मनुष्येपूत्पद्यते तदा एडमूकत्वेनाऽव्यक्तभाषित्वेन त मस्त्वेनाधतया मूकतयावा प्रत्यायाति ततोनरकतिर्यगादिपूत्पद्यते ॥ २७ ॥

॥ टीका–सांप्रत त्रयोदशसु क्रियास्थानेषु यन्नाभिहितं पापस्थानं तद्भिजणिषुराह । (अदुत्तरमित्यादि) अस्मात्त्रयोदशक्रियास्थानप्रतिपादनादुत्तरं यत्र न प्रतिपादितं त दधुनोत्तरभूतेनानेन सूत्रसंदर्भेण प्रतिपाद्यते । यथाऽऽचारे प्रथमश्रुतस्कंधे यन्नाभिहितं तदुत्तरभूतास्विश्चूलिकाभिः प्रतिपाद्यते । तथा चिकित्साशास्त्रे मूलसंहितायां श्लोक स्थाननिदानशारीरविकित्सितकल्पसंज्ञकायां कायं यन्नाभिहितं तदुत्तरेऽभिधीयते एवमन्य त्रापि दृढ मित्यादावुत्तरसंन्नायोऽवगंतव्यः । तदिहापि पूर्वेण यन्नाभिहितं तदनेनोत्तरग्रं थेन प्रतिपाद्यतइति । च समुच्चये । णमितिवाक्यालंकारे । पुरुषाविचीयंते मृग्यंते ज्ञि ज्ञानद्वारेणान्वेष्यन्ते येन स पुरुषविचयः पुरुषविजयोवा केषांचिदल्पसत्वानां तेन ज्ञानव लेनावधिप्रयुक्तेनानर्थानुवधेनाविजयादिति । सच विनंगवद्वविविपर्ययवद्विनगाज्ञानवि शेष पुरुषविचयश्चासौ विनंगश्च पुरुषविचयविनंगस्तमेवभूतं ज्ञानविशेषमाख्यास्यामि प्र तिपादयिष्यामि । यादृशानां चासौ भवति तान्लेशतः प्रतिपादयितुमाह । (इह खलुइ त्यादि) इह जगति मनुष्यक्षेत्रे प्रवचने वा नानाप्रकारा विचित्रक्षयोपशमात् प्रज्ञायतेऽन येति प्रज्ञा सा विचित्रा येषां ते नानाप्रज्ञास्तया वाऽल्पाल्पतराल्पतमया चिंत्यमाना पुरुषा षट्स्थानपतिताभवंति । यथा छदोऽभिप्राय सनानायेषां ते तथा तेषां नानाशी लानां तथा नानारूपा दृष्टिरंतःकरणप्रवृत्तिर्येषां ते तथा तेषामिति । तेषांच त्रीणि श तानि षष्ठ्यधिकानि प्रमाणमवगंतव्यं । तथा नाना रुचिर्येषां ते नानारुचयः । तथा हि । आहारविहारशयनासनाछादनाभरणयानवाहनगीतवादित्रादिषु मध्ये ऽन्यस्यान्यारु चिर्भवति तेषां नानारुचीनामिति । तथा नानारंभाणां कृषिपाशुपाल्यविपणिशिल्पिक मैसेवादिष्वन्यतरमारंभेणेति । तथा नानाध्यवसायसंयुतानां शुभाध्यवसायभाजां इह लोकमात्रप्रतिवद्धानां परलोकनिष्पिपासानां विषयतृषितानामिदं नानाविधं पापश्रुताध्य यनं भवति ॥२५॥ तद्यथा भौमं भव निर्घातभूकंपादिकं, तथोत्पातं कपिहसितादिकं, त था स्वप्नं गजवृषभसिंहादिकं, तथाऽंतरिक्षं मेघादिकं, तथांगे नवमांगं अक्षिवाहुस्फुर णादिकं, तथा स्वरलक्षणं काकस्वरगंभीरस्वरादिकं तथा लक्षणं यवमत्स्यपद्मशखच क्रश्रीवत्सादिकं व्यंजनं तिलकमाषादिकं, तथा स्त्रीलक्षणं रक्तकरचरणादिकं, एवंपुरुषा दीनां काकिणीरत्नपर्यंतानां लक्षणप्रतिपादकशास्त्रपरिज्ञानमवगंतव्यं ॥२६॥ तथा मंत्रवि शेषरूपाविद्या तद्यथा । दुर्भगमपि सुभगमाकरोमि सुभगकारां, तथा सुभगमपि दुर्भगमा करोमि दुर्भगकारां, तथा गर्भकरां गर्भाधानविधायिनीं तथा मोहोवेदादयोवा तत्करणं शीलामाथर्वणाभिधानां सद्याऽनर्थकारिणीं विद्यामभीधीयते तथा पाकशासनीमिंद्रजाल संज्ञिकां तथा नानाविधैर्द्रव्यैः कणवीरपुष्पादिभिर्मधुघृतादिभिर्होमादिनं कार्यं होमोद्दवनं यस्या सा द्रव्यहवना तां तथा क्षत्रियाणां मनुरमादिस्रापगं वा या स्वगात्रकर्मे

णायाता तामधीत्य प्रयुंजते । तथा नानाप्रकारं ज्योतिषमधीत्य व्यापारयतीति दर्शयति (चंदचरियमित्यादि) चंद्रस्य ग्रहपतेश्चरितं चंद्रचरितमिति । तच्च वर्णसंस्थानप्रमाण प्रनानक्षत्रयोगराहुग्रहादिकं । सूर्यचरितलिंदं । सूर्यस्यमंडलपरिमाणराशिपरिनोगोद्यो तावकाशराहूपरागादिकं । तथा शुक्रचारोवीथीत्रयचारादिकस्तथा बृहस्पति शुनाशुन फलप्रदं संवत्सरराशिपरिनोगादिकश्च तथोल्कापातादिग्दाहाश्च वायव्यादिषु मंडलेषु नवंत शस्त्राग्निक्षुत्पीडाविधायिनोनवंति । तथा मृगाहरिणशृगालादयश्चारण्यास्तेषां द र्शनरुतं ग्रामनगरप्रवेशादौ सति शुनाशुनं यत्र चिंत्यते तन्मृगचक्रं । तथा वायसादीनां प क्षिणां यत्र स्थानादिकं स्वराश्रयेणाऽशुनफलं चिंत्यते तद्वायसपरिमंडलं । तथा पांशु केशमांसरुधिरादिवृष्टयोऽनिष्टफलदायत्र शास्त्रे चिंत्यते तत्तदनिधानमेव नवति । त था विद्यानानाप्रकारा क्षुद्रकर्मकारिण्यस्ताश्चेमा । वैतालीनामविद्या । नियताक्षरप्रतिब द्धा । साच किल कतिनिर्जपैर्दंडमुत्थापयति तथार्धवैताली तमेवोपशमयति । तथोपस्वा पिनी तालोदघाटनी श्वापाकी शाबरी तथा परिद्राविडी कालिंगी गौरी गांधार्यवपतन्युत्पतनी जृंनणी स्तंननी श्लेषणी आमयकरणी विशल्यकरणी प्रक्रामण्यंतर्धानकरणीत्येवमादि काविद्याअधीयते । आसां चार्थः संज्ञातोऽवसेयइति न वरं । स्वापिनीद्राविडीकालिंग्य स्तद्देशोद्भवास्तन्नाषानिबद्धावा चित्रफला । अवपतनी नुजपत्स्वतएवपतत्यन्यं वापात यत्येवमुत्पतन्यपि द्रष्टव्या । तदेवमेवमादिकाविद्या । आदिग्रहणात्प्रज्ञप्त्यादयो गृह्यते । एताश्च विद्या पाषंडिकाअविदितपरमार्थागृहस्थावास्वयूथ्यावाद्रव्यलिंगधारिणोन्नपा नाद्यर्थं प्रयुंजंति अन्येषां वा विरूपाणामुच्चावचानां शब्दादीनां कामनोगानां कृते प्रयुं जंति । सामान्येन विद्यासेवनमनिष्टकारीति दर्शयितुमाह । (तिरिच्छमित्यादि) तिरश्ची नामनुकूलां सदनुष्ठानप्रतिपादिका घातिका ते अनार्यविप्रतिपन्ना विद्या सेवंते । तेच य द्यपि क्षेत्रार्यनापार्या स्तथापि मिथ्यात्वहतबुद्धयोऽनार्यकर्मकारित्वादनार्याएव द्रष्टव्या स्तेच स्वायुषः क्षये कालमासे कालंकृत्वा यदि कथंचिद्देवलोकगामिनोनवंति ततोऽन्यतरे षु आसुरीयकेषु किल्बिषिकादिषु स्थानेषूत्पत्स्यते ततोपि विप्रमुक्ताश्च्युतायदिवा मनुष्ये षूत्पत्स्यते तत्रच तत्कर्मशेषतयैडमूकेनाव्यक्तनाषिणस्तमस्त्वेनांधतया मूकतया वा प्र त्यागच्छति ततोपि नानाप्रकारेषु यातनास्थानेषु नरकतिर्यगादिषूत्पद्यते ॥ २७ ॥

से एगईन आयहेनवा णायहेनवा सयणहेनवा आगारहेनवा परि वारहेनवा नायगंवा सहवासियंवा णिस्साए अज्ञवा अणुगामिए अज्ञवा उवचरए अज्ञवा पडिपहिए अज्ञवा संधिवेदए अज्ञवा गंविने दए अज्ञवा उरप्निए अज्ञवा सोवरिए अज्ञवा वागुरिए अज्ञवा सोन

णिए अडुवा मत्थिए अडुवा गोघायए अडुवा गोवालए अडुवा सोव णिए अडुवा सोवणियंतिए ॥ २८ ॥

अर्थ—हवे गृहस्थ उद्देशीने अधर्म पक्ष कहेछे (सेएगईउं के०) ते गृहस्थ कोइ एक महा निर्दय परलोक थकी न बिहितो थको, संसारना सुख वांछतो छतो जे कर्कश कर्म करे ते कहेछे (आयहेउंवा के०) पोताने निमित्ते अथवा (णायहेउंवा के०) ज्ञातिने निमित्ते (सयणहेउंवा के०) स्वजनने निमित्ते (आगारहेउंवा के०) घरने निमित्ते (परिवारहेउंवा के०) परिवारने निमित्ते (नायगवा के०) परिचित एटले जाणेला पुरुषने निमित्ते (सहवासियवाणिस्साए के०) सहवासि एटले पाडोशीनी निश्राये, एटला अकार्य करे, ते कहेछे (अडुवा के०) अथवा (अणुगामिए के०) अकार्य करवाने अर्थे बीजो जतो होय तेनी पछवाडे जाय, (अडुवाउवचरए के०) अथवा अकार्य करवाने अर्थे तेने अनेक उपचार करे विश्वासे, (अडुवापडिपहिएके०) अथवा प्रतिपथिक एटले मार्गे जता माणसनी सन्मुख आवे (अडुवासंधिछेदएके०) संधिछेदक, एटले चोरी करे, (अडुवागंठिछेदए के०) अथवा ग्रंथिछेद करे, एटले गंठी छोडा थाय, (अडुवाउरब्भिए के०) अथवा छाली एटले गाडरा चरावे (अडुवासोवरिए के०) अथवा सूवर डुक्कर चरावे (अडुवावागुरिए के०) अथवा वाघरी थाय, एटले मृग मारवाना कर्म करे (अडुवासोउणिए के०) अथवा शकुनी एटले पक्षीउंने पाश नाखे, (अडुवामछिए के०) अथवा माछी थाय, (अडुवागोघायए के०) अथवा गोघातक कसाइ थाय, गायने मारे, अथवा गोधाने नाथे (अडुवागोवालए के०) गोवालिया पणु करे, इत्यादिक नीचकर्म करे, (अडुवासोवणिए के०) कुतरानो राखनार थाय, (अडुवा सोवणियंतिए के०) कुतराये करी शिकार खेले इत्यादिक बधा मलीने चउद प्रकारे करी अनेक जीवोनो विनाशकरे ॥ २८ ॥

॥ दीपिका–अथ गृहस्थानुद्दिश्याधर्मसेवामाह । (सेएगईउंआयहेउंवा) सएक कदाचिन्निस्त्रिंशयात्मनिमित्तं ज्ञातिहेतुवा अगारहेतु गृहसंस्करणार्थं परिवारहेतुवा ज्ञातक परिचितस्तं समुद्दिश्य सहवासिकं प्रातिवेश्मिकं निश्रीकृत्य एतानि कुर्यात् । तान्येवाह । (अडुवेत्ति) अथवेति पक्षांतरापेक्षया । गछंतमनुगछतीत्यनुगामुक सचाकार्यकरणमनास्तं गछंतमनुगछति । अथवाऽन्यस्य विरूपकरणावसरापेक्षी उपचारक स्यात् । अथवा उरभ्रेण चरत्यौरभ्रिक । अथवा सौकरिक । अथवा शकुनिभिश्चरति शाकुनिक अथवा वागुरिक अथवा मात्स्यिक अथवा गोघातक अथवा गोपालत्व भवति

अथवा श्वनिश्वरति शौवनिक शुना पालकइत्यर्थ । अथवा (सोवणियतएत्ति) श्वनि पापर्द्धिकुर्वन्मृगादीनामत करोतीत्यर्थ ॥ २८ ॥

॥ टीका–साप्रत गृहस्थानुद्दिश्या धर्मपक्षसेवनमुच्यते । (सेएगइउइत्यादि) सएक कदाचिन्निस्त्रिश साप्रत्यापेक्षयपगतपरलोकाध्यवसाय कर्मपरतया भोगलिप्सु ससारस्वभावानुवर्त्यात्मनिमित्त चेत्येतान्यनुगामुकान्यकर्तव्य हेतुभूतानि चतुर्दशासदनुष्टानानि विधत्ते तद्यथा ज्ञातय स्वजनास्तन्निमित्त तथाऽगारनिमित्त गृहसस्कारणार्थं सामान्येनवा कुटुबार्थ परिवारनिमित्तवा दासीदासकर्मकरादिपरिकररुते तथा ज्ञातएवज्ञातक परिचितस्त समुद्दिश्य तथा सहवासिकवा प्रातिवेश्मिकवा निश्रीरुत्येतानि वक्ष्यमाणानि कुर्यादिति सबध । तानिच दर्शयितुमाह । (अडुवेत्यादि) अथवेत्येव वक्ष्यमाणावेक्षया पक्षातरोपलक्षणार्थ । गछतमनुगछतीत्यनुगामुक सचाऽकायाध्यवसायेन विवक्षितस्थलाद्यपेक्षया विरूपकर्तव्यचिकीर्षुस्त गछतमनुगछति । अथवा तस्यापकर्तव्यस्यापकारावसरापेक्षुपचारकोभवत्यथवा तस्य प्रातिपथिकोभवति प्रतिमुख समुखीनमागछत्यथवाऽऽत्मस्वजनार्थ सधिछेदकोभवति चौर्यं प्रतिपद्यते अथवोरभ्रैर्मेषैश्वरत्यौरभ्रिकोथवा सौकरिकोभवत्यथवा शकुनिभि पक्षिभिश्वरतीति शकुनिकोऽथवा वागुरया मृगादिबधनो ज्ज्वा चरति वागुरिकोथवा मत्स्यैश्वरति मात्स्यकोथवा गोपालभाव प्रतिपद्यतेऽथवा गर घातक स्यादथवा श्वभिश्वरति शौवनिक शुना परिपाकोभवतीत्यर्थोऽथवा (सोवणियति) श्वभि पापर्द्धि कुर्वन्मृगादीनामत करोतीत्यर्थ ॥ २८ ॥

से एगइउ आणुगामियभाव पडिसधाय तमेव आणुगामियाणु गामिय हता छेत्ता भेत्ता लुपइत्ता विलुपइत्ता उद्दवइत्ता आहार आहारेति इति से महया पावेहि कम्मेहि अत्ताए उवरकाइत्ता भवइ ॥२९॥ से एगईउ उवचरय भाव पडिसधाय तमेव उवचरिय हता छेत्ता भेत्ता लुपइत्ता विलुपइत्ता उद्दवइत्ता आहार आहारेति इति से महया पावेहि कम्मेहि अत्ताए उवरकाइत्ता भवइ ॥३०

अर्थ–हवे ए चौद स्थानकने प्रत्येके प्रथम थकी विवर्णकरीने कहेछे (सेएगईउ आणुगामियभावपडिसधाय के०) ते कोइ एक पुरुष आत्माने अर्थे काइ एक ग्रामात रे जनारा पुरुषनी पासे इच्छे एवु जाणीने (तमेवआणुगामियाणुगामिय के०) तेमज तेनी पछवाडे जाय, पछी तेने विश्वास उपजावीन (हता के०) तेन हणे, छेदे, भेदे, लुटे, विशेपे लुटे, (उद्दवइत्ता के०) उपद्रव करे, जीवितव्य थकी विनाश करे, पछी

तेनु धनलइने ते धनेकरी अनेक प्रकारे (आहारआहारेति के०) अहार आहारे (इतिसेमहयापावेहिकम्मेहिअत्ताणउवरकाइत्ताजवइ के०) एवी रीते ते पुरुष महोटा क्रूर पाप कर्मानुष्ठाने, पोताना आत्माने डुर्गतिमाहे पाडे नरक तिर्यंचगतिने नामे विख्यात थाय ॥ २९ ॥ ते कोइएक पुरुष धनवंतनी वचना निमित्ते (उवचरयनावपडिसंधाय के०) उपचारक नाव आदरीने तेमज नाना प्रकारना उपाय करी विश्वास उपजावी तेने हणी, छेदी, नेदी, लुटी, विशेषे लुटी, उपद्रव करी, जीवितव्यथकी विनाशकरीने तेनु धनलेइने, तेधने करी अनेक प्रकारना आहार आहारे एरीते ते पुरुष महोटा क्रूर पापानुष्ठाने करीने पोताना आत्माने डुर्गतिमाहे पाडे चतुर्गतिक संसारमाहे परिच्रमणकरे नरकादि गतिने विषे विख्यात थाय ॥ ३० ॥

॥ दीपिका–एवमेतेषां चतुर्दशकर्तव्यानामुद्देशं कृत्वा तानि प्रत्येकं विवृणोति । तत्रैकः कश्चिदात्मार्थं ग्रामांतरं गछन् पुरुषस्य समीपे किंचिद्द्रव्यं ज्ञात्वा तद्विवृत्कुस्त्यानुगामुकनावं प्रतिसंधाय सहगमनेनानुकूल्यं प्रतिपद्य वचनावसरं समीहमानोगछंतमनुगछति । अवसरं लब्ध्वा तस्य हंता, दंडादिनिश्छेत्ता, खड्गादिना नेत्ता, वज्रमुष्ट्यादिना लुंपयिता, केशाकर्षणादिनिर्विलुंपयिता, कशाप्रहारादिनिः अपद्रावयिता, जीवितविनाशकः स्यात् इत्यादि कृत्वाऽहारमाहारयति इत्येवमसौ महद्भिः पापैः कर्मभिरात्मानमुपख्यापयिता नवति । अयं महापापकारीत्येवं लोके ख्यापयति ॥२९॥ तदेवमेकः कश्चिद्धनवतः कस्यचिदुपचरकनावमाश्रित्य तं विश्वासे पातयित्वा धनादिकृते तस्य हंता छेत्ता इत्यादि । एवमसौ महद्भिः पापैरुपख्यापयिता नवति ॥ ३० ॥

॥ टीका–तदेवमेतानि चतुर्दशाप्युद्दिश्य प्रत्येकमादितः प्रभृति विवृणोति । (सेएगइउइत्यादि) तत्रैकः कश्चिदात्मार्थं अपरस्य गतुर्ग्रामांतरं किंचिद्द्रव्यजातमवगम्य तदादित्सुस्तस्यैवानुगामुकनावं प्रतिसंधाय सहगतृनावेनानुकूल्यं प्रतिपद्य विवक्षितवचनावसरकालाद्यपेक्षी तमेवं गछंतमनुव्रजति तमेव चाभ्युत्थानविनयादिनिरत्यंतापचारैरुपचर्यानुव्रज्य च विवक्षितमवसरं लब्ध्वा, तस्यासौ हंता दंडादिनिस्तथा छेत्ता खड्गादिना हस्तपादादेस्तथा नेत्ता वज्रमुष्ट्यादिना तथा लुंपयिता केशाकर्षणादिकदर्थनैस्तथा विलुंपयिता कशाप्रहारादिनिरत्यंतडुःखोत्पादनेन तथा द्रावयिता जीविताद्व्यपरोपणतोनवतीत्येवमादिकं कृत्वाऽहारमाहारयत्यसौ । एतडुक्तं नवति । गलकर्तकः कश्चिदन्यस्य धनवताऽनुगामुकनावं प्रतिपद्य तं बहुविधैरुपायैर्विश्रंभे पातयित्वा नोगार्थी माहाधं सांप्रतेक्षितया तस्य । स्वयमेवाप्रकृत्याहारादिकाः नागक्रियाः विधत्ते । इत्येवमसौ महद्भिः क्रूरैः क

अथवा श्वभिश्चरति शौवनिक शुना पालकइत्यर्थ । अथवा (सोवणियतएत्ति) श्वभि पापर्द्धिकुर्वन्मृगादीनामंत करोतीत्यर्थ ॥ २८ ॥

॥ टीका–सांप्रत गृहस्थानुद्दिश्याधर्मपक्षसेवनमुच्यते । (सेएगइउइत्यादि) सएक क दाचिन्निस्त्रिंश सांप्रत्यापेक्ष्यपगतपरलोकाध्यवसाय कर्मपरतया जोगलिप्सु संसारस्वभा वानुवर्त्यात्मनिमित्त चेत्येतान्यनुगामुकान्यकर्तव्य हेतुभूतानि चतुर्दशासदनुष्ठानानि विधत्ते तद्यथा ज्ञातय स्वजनास्तन्निमित्त तथाऽगारनिमित्त गृहसंस्कारणार्थं सामान्येनवा कुटु बार्थं पारिवारनिमित्तवा दासीदासकर्मकरादिपरिकरकृते तथा ज्ञातएवज्ञातक परिचित स्त समुद्दिश्य तथा सहवासिकवा प्रातिवेश्मिकवा निश्रीकृत्येतानि वक्ष्यमाणानि कुर्यादि ति संबध । तानिच दर्शयितुमाह । (अडुवेत्यादि) अथवेत्येव वक्ष्यमाणावेक्षया पक्षा तरोपलक्षणार्थं । गछतमनुगछतीत्यनुगामुक सचाऽकायाध्यवसायेन विवक्षितस्थला द्यपेक्षया विरूपकर्तव्यचिकीर्षुस्त गछतमनुगछति । अथवा तस्यापकर्तव्यस्यापकाराव सरापेक्ष्युपचारकोजवत्यथवा तस्य प्रातिपथिकोजवति प्रतिमुख सम्मुखीनमागछत्यथवाऽऽ त्मस्वजनार्थ संधिछेदकोजवति चौर्य प्रतिपद्यते अथवौरञ्चैर्मेषैश्चरत्यौरभ्रिकोथवा सौ करिकोजवत्यथवा शकुनिभि पक्षिभिश्चरतीति शकुनिकोऽथवा वागुरया मृगादिबंधनो ज्ज्वा चरति वागुरिकोथवा मत्स्यैश्चरति मात्स्यकोथवा गोपालजाव प्रतिपद्यतेऽथवा गव घातक स्यादथवा श्वभिश्चरति शौवनिक शुना परिपाकोजवतीत्यर्थोऽथवा (सोवणिय ति) श्वभि पापर्द्धि कुर्वन्मृगादीनामंत करोतीत्यर्थ ॥ २८ ॥

से एगईउ आणुगामियजाव पडिसंधाय तमेव आणुगामियाणु गामिय हंता छेत्ता जेत्ता लुंपइत्ता विलुंपइत्ता उद्दवइत्ता आहार आहारेति इति से महया पावेहिं कम्मेहिं अत्ताण उवखाइत्ता जवइ ॥२९॥ से एगईउ उवचरय जाव प डिसंधाय तमेव उवचरिय हंता छेत्ता जेत्ता लुंपइत्ता विलुंपइत्ता उद्दवइत्ता आ हार आहारेति इति से महया पावेहिं कम्मेहिं अत्ताण उवखाइत्ता जवइ ॥३०

अर्थ–हवे ए चौद स्थानकने प्रत्येके प्रथम थकी विवर्णकरीने कहेछे (सेएगईउ आणुगामियजावपडिसंधाय के०) ते कोइ एक पुरुष आत्माने अर्थे कोइ एक ग्रामांत रे जनारा पुरुषनी पासे द्रव्यछे एवु जाणीने (तमेवआणुगामियाणुगामिय के०) तेमज तेनी पछवाडे जाय, पछी तेने विश्वास उपजावीने (हंता के०) तेने हणे, छेदे, जेदे, लु टे, विशेषे लुटे, (उद्दवइत्ता के०) उपद्रव करे, जीवितव्य थकी विनाश करे, पछी

तेनु धनलइने ते धनेकरी अनेक प्रकारे (आहारआहारेति के०) अहार आहारे (इतिसेमहयापावेहिकम्मेहिअत्ताणउवक्खाइत्ताभवइ के०) एवी रीते ते पुरुष महोटा क्रूर पाप कर्मानुष्ठाने, पोताना आत्माने दुर्गतिमाहे पाडे नरक तिर्यचगतिने नामे विख्यात थाय ॥ २९ ॥ ते कोइएक पुरुष धनवतनी वचना निमित्तें (उवचरयभावपडिसधाय के०) उपचारक भाव आदरीने तेमज नाना प्रकारना उपाय करी विश्वास उपजावी तेने हणी, छेदी, भेदी, लुटी, विशेषे लुटी, उपद्रव करी, जीवितव्यथकी विनाशकरीने तेनु धनलेइने, तेधने करी अनेक प्रकारना आहार आहारे एरीते ते पुरुष महोटा क्रूर पापानुष्ठाने करीने पोताना आत्माने दुर्गतिमाहे पाडे चतुर्गतिक संसारमाहे परिभ्रमणकरे नरकादि गतिने विषे विख्यात थाय ॥ ३० ॥

॥ दीपिका—एवमेतेषां चतुर्दशकर्तव्यानामुद्देशं कृत्वा तानि प्रत्येकं विवृणोति । तत्रैकः कश्चिदात्मार्थं ग्रामांतरं गच्छन् पुरुषस्य समीपे किंचिद्द्रव्यं ज्ञात्वा तज्जिघृक्षुस्तस्यानुगामुकभावं प्रतिसंधाय सहगमनेनानुकूल्यं प्रतिपद्य वचनावसरं समीहमानोगच्छंतमनुगच्छति । अवसरं लब्ध्वा तस्य हंता, दंडादिभिश्छेत्ता, खड्गादिना भेत्ता, वज्रमुष्ट्यादिना लुंपयिता, केशाकर्षणादिभिर्विलुंपयिता, कशाप्रहारादिभिः अपद्रावयिता, जीवितविनाशकः स्यात् इत्यादि कृत्वाऽहारमाहारयति इत्येवमसौ महद्भिः पापैः कर्मभिरात्मानमुपख्यापयिता भवति । अयं महापापकारीत्येवं लोके ख्यापयति ॥२९॥ तदेवमेकः कश्चिद्धनवतः कस्यचिदुपचरकभावमाश्रित्य तं विश्वासे पातयित्वा धनादिकृते तस्य हंता छेत्ता इत्यादि । एवमसौ महद्भिः पापैरुपख्यापयिता भवति ॥ ३० ॥

॥ टीका—तदेवमेतानि चतुर्दशाप्युद्दिश्य प्रत्येकमादित प्रभृति विवृणोति । (सेएगइओइत्यादि) तत्रैकः कश्चिदात्मार्थं अपरस्य गंतुर्ग्रामांतरं किंचिद्द्रव्यजातमवगम्य तदादित्सुस्तस्यैवानुगामुकभावं प्रतिसंधाय सहगत्वभावेनानुकूल्यं प्रतिपद्य विवक्षितवचनावसरकालाद्यपेक्षी तमेव गच्छंतमनुव्रजति तमेव चाभ्युत्थानविनयादिभिरत्यंतोपचारैरुपचर्यानुव्रज्य च विवक्षितमवसरं लब्ध्वा, तस्यासौ हंता दंडादिभिस्तथा छेत्ता खड्गादिना हस्तपादादेस्तथा भेत्ता वज्रमुष्ट्यादिना तथा लुंपयिता केशाकर्षणादिकदर्थनतस्तथा विलुंपयिता कशाप्रहारादिभिरत्यंतदुःखोत्पादनेन तथा द्रावयिता जीविताद्व्यपरोपणतामगती त्येवमादिकं कृत्वाऽहारमाहारयत्यसौ । एतदुक्तं भवति । गजकर्तकः कश्चिदन्यस्य धनवतोऽनुगामुकभावं प्रतिपद्य तं बहुविधैरुपायैर्विश्रंभे पातयित्वा भार्यां मोहाय साम्प्रतेऽपि तथा तस्य । रिक्थवतामकृत्याहारादिका भोगक्रिया विधत्ते । इत्येवमसौ महद्भिः क्रूरैः क

र्मभिरनुष्ठानैर्महापातकभूतैर्वा तीव्रानुभावैर्दीर्घस्थितिकैरात्मानमुपाख्यापयिता भवति त याह्यमसौ महापापकारीत्येवमात्मानं लोके ख्यापयत्यष्टप्रकारैः कर्मभिरात्मानं तथा बधयति यथा लोके तद्विपाकापादितेनावस्थाविशेषेण सता नारकतिर्यङ्नरामररूपत या ख्यापयतीति ॥२९॥ तदेवमेकः कश्चिदकर्तव्याभिसंधिना परस्य स्वापतेयवतस्तद्वना र्थमुपचरकभावं प्रतिज्ञाय पश्चात्तं नानाविधैर्विनयोपायैरुपचरति उपचर्य च विश्रंभे पा तयित्वा तद्द्रव्यार्थी तस्य हंता छेत्ता यावदपद्रावयिता भवतीत्येवमसावात्मानं पापैः क र्मभिः ख्यापयतीति ॥ ३० ॥

से एगईउ पाडिपहियभावं पडिसंधाय तमेव पाडिपहेठिच्चा हंता छेत्ता भेत्ता लुंपइत्ता विलुंपइत्ता उद्दवइत्ता आहारं आहारेति इति से महया पावेहिं कम्मेहिं अत्ताणं उवक्खाइत्ता भवइ ॥ ३१ ॥ से एगईउ संधिछे दगभावं पडिसंधाय तमेव संधिं छेत्ता भेत्ता जाव इति से महया पावेहिं कम्मेहिं अत्ताणं उवक्खाइत्ता भवइ ॥ ३२ ॥

अर्थ–ते कोइएक पुरुष (पाडिपहियभावपडिसंधाय के०) धनवंत पुरुष जाणी, मार्ग मां सन्मुख आवे, पछी (तमेवपडिपहेठिच्चा के०) तेने तेमज विश्वास उपजावी सन्मुख स्थित रहीने, हणी, छेदी, भेदी, लुंटीने, विशेषे लुंटीने, उपद्रव करे, जीवितव्य थकी विनाश करीने तेनुं धनलेइने अनेक प्रकारना आहार आहारे ते पुरुष महोटा क्रूर पापक र्मना अनुष्ठाने करी पोताना आत्माने डुर्गतिमां पाडे नरकादिक गतिने विषे विख्यात था य॥३१॥ कोइएक पुरुष धनवंत पुरुष जाणीने संधिछेदक एटले खातर पाडवानोभाव आदरीने, आजीविकाने अर्थे पारकुं धनलीए, छेदे, भेदे इत्यादिक पूर्ववत् जाणवुं॥३२॥

॥ दीपिका–अथैकः कश्चित्प्रतिपथेनाभिमुखेन चरतीति प्रातिपथिकस्तद्भावं प्रतिप द्य तस्यार्थवतोविश्रंभतोहंतेत्यादि पूर्ववत् ॥ ३१ ॥ एकः कश्चित्संधिछेदकभावं खात्र खननत्वं प्रतिपद्य ततोसौ संधिं छिंदन् खात्रं खनन् प्राणिनां छेत्तास्यादित्यादि ॥ ३२॥

॥ टीका–अथैकः कश्चित्प्रतिपथेनाभिमुखेन चरति प्रातिपथिकस्तद्भावं प्रतिपद्यापरस्या र्थवतस्तदेव प्रतिपथिकत्वं कुर्वन् प्रतिपथे स्थित्वा तस्यार्थवतोविश्रंभतश्छेत्ता यावदप द्रावयिता भवतीत्येवमसावात्मानं पापैः कर्मभिः ख्यापयतीति॥३१॥ अथैकः कश्चिद्विरू पकर्मणा जीवितार्थी संधिछेदकभावं खात्रखननत्वं प्रतिपद्यानेनोपायेनात्मानमहं कर्त यिष्यामीत्येवं प्रतिज्ञां कृत्वा तमेव प्रतिपद्यते ततोसौ संधिं छिंदन् खात्रं खनन् प्राणिनां

छेत्ता भेत्ता विलुपयिता भवतीत्येतच्च कलाऽहारमाहरयतीत्येतच्चोपलक्षणमन्याश्च काम भोगान् स्वतो भुक्तेऽन्यदपि ज्ञातिगृहादिक पालयतीत्येवमसौ महद्भि पापे कर्मभिरा त्मानमुपख्यापयति ॥ ३२ ॥

से एगइत्ते गठिछेदभाव पडिसधाय तमेवगठि छेत्ता भेत्ता जाव इति से मह या पावेहि कम्मेहि अत्ताए उवक्खाइत्ता भवइ ॥ ३३ ॥ से एगइत्ते उर भियभाव पडिसधाय उरभवा अण्णतर तस पाणहता जाव उवक्खाइत्ता भवइ एसो अभिलावो सवत्र ॥ ३४ ॥

अर्थ—कोइएक पुरुष गठीछेडानो भाव आदरीने, घुर्घुरादिक अनेक उपायकरी लोकने हणे, छेदे, भेदे, इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥३३॥ काइएक पुरुष औरभ्रिकभाव उरभ्र एटले उरणा बकरा तेना मासादिके करी आजीविका करे, ते उरभ्रिक उरणा तथा अ न्यत्रस प्राणीने हणे, छेदे, भेदे, इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥ ३४ ॥

॥ दीपिका—अथैक कश्चिद्ग्रथिछेदकभाव प्रतिपद्य घुर्घुरादिना ग्रथिछेत्तास्यादित्यादि ॥३३॥ अथैक कश्चिदधर्मवृत्ति उरभ्राउरणकास्तैश्चरति औरभ्रिक । सच तद्रूर्णया तन्मा सादिना वात्मान वर्तयति सतद्भाव प्रतिपद्य उरभ्रंवाऽन्यवा त्रस प्राणिन स्वपुष्टये ह ति तस्य वा हता छेत्ता इत्यादि पूर्ववत् ॥ ३४ ॥

॥ टीका—अथैक कश्चिदसदनुष्ठायी घुर्घुरादिना ग्रथिछेदकभाव प्रतिपद्य तमेवानुया ति । शेष पूर्ववत् ॥ ३३ ॥ अथैक कश्चिदधर्मकर्मवृत्तिरुरभ्राउरणकास्तैश्चरति य स औरभ्रिक सच तद्रूर्णया तन्मासादिना वात्मान वर्तयति तदेवमसौ तद्भाव प्रतिपद्योरभ्र वाऽन्यवा त्रस प्राणिन स्वमासपुष्ट्यर्थ व्यापादयति तस्य सवा हता छेत्ता भेत्ता भवतीति शेषपूर्ववत् ॥ ३४ ॥

से एगईत्ते सोवरिय भाव पडिसधाय महिसवा अण्णतरवा तस पाण जाव उवक्खाइत्ता भवइ ॥ ३५ ॥ से एगईत्ते वागुरिवभाव पडिसधाय मियवा अण्णतरवा तस पाण हता जाव उवक्खाइत्ता भवइ ॥ ३६ ॥

अर्थ—कोइएक पुरुष सौकरिक एटले खाटकीनो भाव अगीकार करीने खाटकी पडने अनेक महिषादिक तथा बीजा त्रस जीवोने हणे, छेद, भेदे, यावत् ससार परिभ्रमण करे इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥३५॥ ते कोइएक पुरुष, पापात्मा वाघरी पणु आदरीने मृ गादिक तथा बीजा त्रस जीवाने हणे छेदे, भेदे, इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥ ३६ ॥

र्मभिरनुष्ठानैर्महापातकभूतैर्वा तीव्रानुभावैर्दीर्घस्थितिकैरात्मानमुपाख्यापयिता नवति त थाह्ययमसौ महापापकारीत्येवमात्मानं लोके ख्यापयत्यष्टप्रकारे कर्मभिरात्मानं तथा बधयति यथा लोके तद्विपाकापादितेनावस्थाविशेषेण सता नारकतिर्यङ्नरामररूपत या ख्यापयतीति ॥२९॥ तदेवमेकः कश्चिदकर्तव्यानिसंधिना परस्य स्वापतेयवतस्तद्वना र्थमुपचरकनावं प्रतिज्ञाय पश्चात्त नानाविधैर्विनयोपायैरुपचरति उपचर्य च विश्रंने पा तयित्वा तद्द्रव्यार्थी तस्य हंता छेत्ता यावदपद्रावयिता नवतीत्येवमसावात्मानं पापैः क र्मभिः ख्यापयतीति ॥ ३० ॥

से एगईउ पाडिपहियनावं पडिसंधाय तमेव पाडिपहेठिच्चा हंता छेत्ता नेत्ता लुंपइत्ता विलुंपइत्ता उद्दवइत्ता आहारं आहारेति इति से महया पावेहिं कम्मेहिं अत्ताणं उवक्खाइत्ता नवइ ॥ ३१ ॥ से एगईउ संधिछे दगनावं पडिसंधाय तमेव संधिं छेत्ता नेत्ता जाव इति से महया पावेहिं कम्मेहिं अत्ताणं उवक्खाइत्ता नवइ ॥ ३२ ॥

अर्थ—ते कोइएक पुरुष (पाडिपहियनावपडिसंधाय के०) धनवंत पुरुष जाणी, मार्ग मां सन्मुख आवे, पढी (तमेवपडिपहेठिच्चा के०) तेने तेमज विश्वास उपजावी सन्मुख स्थित रहीने, हणी, छेदी, नेदी, लुंटीने, विशेषे लुंटीने, उपद्रव करे, जीवितव्य थकी विनाश करीने तेनुं धनलेइने अनेक प्रकारना आहार आहारे ते पुरुष महोटा क्रूर पापक र्मना अनुष्ठाने करी पोताना आत्माने दुर्गतिमां पाडे नरकादिक गतिने विषे विख्यात था य ॥३१॥ कोइएक पुरुष धनवंत पुरुष जाणीने संधिछेदक एटले खातर पाडवानोनाव आदरीने, आजीविकाने अर्थे पारकुं धनलीए, छेदे, नेदे इत्यादिक पूर्ववत् जाणवुं॥३२॥

॥ दीपिका—अथैकः कश्चित्प्रतिपथेनाभिमुखेन चरतीति प्रातिपथिकस्तन्नावं प्रतिप द्य तस्यार्थवतोविश्रंनतोहंतेत्यादि पूर्ववत् ॥ ३१ ॥ एकः कश्चित्संधिछेदकनावं खात्र खननत्वं प्रतिपद्य ततोसौ संधिं छिंदन् खात्रं खनन् प्राणिनां छेत्तास्यादित्यादि ॥३२॥

॥ टीका—अथैकः कश्चित्प्रतिपथेनाभिमुखेन चरति प्रातिपथिकस्तन्नावं प्रतिपद्यापरस्या र्थवतस्तदेव प्रतिपथिकत्वं कुर्वन् प्रतिपथे स्थित्वा तस्यार्थवतोविश्रंनतश्छेत्ता यावदप द्रावयिता नवतीत्येवमसावात्मानं पापैः कर्मभिः ख्यापयतीति॥३१॥ अथैकः कश्चिद्विरू पकर्मणा जीवितार्थी संधिछेदकनावं खात्रखननत्वं प्रतिपद्यानेनोपायेनात्मानमहं कर्त यिष्यामीत्येवं प्रतिज्ञां कृत्वा तमेव प्रतिपद्यते ततोसौ संधिं छिंदन् खात्रं खनन् प्राणिनां

छेत्ता नेत्ता विलुपयिता नवतीत्येतच्च कृत्वाऽहारमाहरयतीत्येतच्चोपलक्षणमन्यांश्च काम भोगान् स्वतो भुक्तेऽन्यदपि ज्ञातिगृहादिकं पालयतीत्येवमसौ महद्भिः पापैः कर्मभिरा त्मानमुपख्यापयति ॥ ३२ ॥

से एगइउ गठिछेदभाव पडिसधाय तमेवगठि छेत्ता नेत्ता जाव इति से मह या पावेहिं कम्मेहिं अत्ताए उवक्खाइत्ता नवइ ॥ ३३ ॥ से एगइउ उर भियभाव पडिसधाय उरब्भवा अएतर तस पाणहता जाव उवक्खाइत्ता नवइ एसो अभिलावो सवत्र ॥ ३४ ॥

अर्थ—कोइएक पुरुष गठीछोडानो भाव आदरीने, घुंघुरादिक अनेक उपायकरी लोकने हणे, छेदे, नेदे, इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥३३॥ कोइएक पुरुष औरभ्रिकभाव उरभ्र एटले उरणा बकरा तेना मांसादिकें करी आजीविका करे, ते उरभ्रिक उरणा तथा अ न्यत्रस प्राणीने हणे, छेदे, नेदे, इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥ ३४ ॥

॥ दीपिका—अथैकः कश्चिद्ग्रथिच्छेदकभावं प्रतिपद्य घुर्घुरादिना ग्रथिच्छेत्तास्यादित्यादि ॥३३॥ अथैकः कश्चिदधर्मवृत्तिः उरभ्राउरणकास्तैश्चरति औरभ्रिकः । सच तदूर्णया तन्मा सादिना वात्मानं वर्तयति सतद्भावं प्रतिपद्य उरभ्रंवाऽन्यवा त्रस प्राणिनं स्वपुष्ट्यै ह ति तस्य वा हता छेत्ता इत्यादि पूर्ववत् ॥ ३४ ॥

॥ टीका—अथैकः कश्चिदसदनुष्ठायी घुर्घुरादिना ग्रथिच्छेदकभावं प्रतिपद्य तमेवानुया ति । शेषं पूर्ववत् ॥ ३३ ॥ अथैकः कश्चिदधर्मकर्मवृत्तिरुरभ्राउरणकास्तैश्चरति य स औरभ्रिकः सच तदूर्णया तन्मांसादिना वात्मानं वर्तयति तदेवमसौ तद्भावं प्रतिपद्योरभ्रं वाऽन्यवा त्रसं प्राणिनं स्वमांसपुष्ट्यर्थं व्यापादयति तस्य सवा हता छेत्ता भेत्ता नवतीति शेषपूर्ववत् ॥ ३४ ॥

से एगईउ सोवरिय भाव पडिसधाय महिसवा अएतरवा तस पाण जाव उवक्खाइत्ता नवइ ॥ ३५ ॥ से एगईउ वागुरियभाव पडिसधाय मियवा अएतरवा तस पाण हता जाव उवक्खाइत्ता नवइ ॥ ३६ ॥

अर्थ—कोइएक पुरुष सौकरिक एटले खाटकीनो भाव अंगीकार करीने खाटकी थइने अनेक महिषादिक तथा बीजा त्रस जीवोने हणे, छेदे, नेदे, यावत् संसार परिभ्रमण करे इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥३५॥ ते कोइएक पुरुष, पापात्मा वागरी पणु आदरीने मृ गादिक तथा बीजा त्रस जीवोने हणे छेदे, नेदे, इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥ ३६ ॥

॥ दीपिका—अथेक कश्चित्सौकरिक श्वपचश्चाडाल खाटिकइत्यर्थ । तद्भावमाश्रित्य महिष वान्य त्रस प्राणिन हतीति तस्य हता छेत्ताइत्यादि ॥३५॥ अथेक कश्चिद्वागुरिकत्वमाश्रित्य मृग वाऽन्य प्राणिन हति तस्यच हता नवति शेप पूर्ववत् ॥ ३६ ॥

॥ टीका—अत्रातरे सोकरिकपद तच्च स्वबुध्या व्याख्येय। सौकरिका श्वपचाश्चांडाला खट्टिकाइत्यर्थ ॥३५॥ अथेक कश्चित्क्रुद्दसत्वोवागुरिकनाव लुब्धकत्व प्रतिसधाय प्रतिपद्य वागुरया मृग हरिणमन्यश्रा त्रस प्राणिन शशादिकमात्मवृत्यर्थ स्वजनाद्यर्थवा व्यापादयति तस्यच हता छेत्ता नवति । शेप पूर्ववत् ॥ ३६ ॥

से एगइउ सउणिय नाव पडिसधाय सउणिवा अस्रतरवा तस पाए हता जाव उवक्काइत्ता नवइ॥३७॥ से एगइउ मिच्छियनाव पडिसधाय मछवा अस्रतर वा तस पाए हता जाव उवक्काइत्ता नवइ ॥ ३८ ॥

अर्थ—कोइएक पुरुप, शाकुनी एटले पक्षीउनो विनाश करीने, आजीविका करे, एवो थको अनेक पक्षीउने हणे, छेदे, नेदे, इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥ ३७ ॥ कोइएक पुरुष अधमाधम माछी थइने अनेक माछलादिक जलचर जीवोने हणे, छेदे, नेदे, इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥ ३८ ॥

॥ दीपिका—अथेक कश्चिच्छकुनालावकादयस्तै श्वरति शाकुनिकस्तद्भावमाश्रित्य शकुनमन्यं वा त्रस हति तस्य च हननादिका क्रिया करोतीति ॥ ३७ ॥ अथैक कश्चिन्मात्स्यिकनावमाश्रित्य मत्स्य वाऽन्य त्रस वा जलचर प्राणिन हन्यात् । शेष सुगम ॥३८॥

॥ टीका—अथेक कश्चिदधमापापजीवी शकुनालावकादयस्तैश्वरति शाकुनिकस्तद्भाव प्रतिसधाय तन्मासाद्यर्थी शकुनमन्य वा त्रस व्यापादयति तस्यच हननादिका क्रियां करोतीति । शेप पूर्ववत् ॥३७॥ अथैक कश्चिदधमाधमोमात्स्यिकनाव प्रतिपद्य, मत्स्य वाऽन्य जलचर प्राणिन व्यापदयेद्धननादिका क्रिया कुर्यात् । शेप सुगम ॥ ३८ ॥

से एगईउ गोघायनाव पडिसधाय तमेव गोएवा अस्रयरवा तसं पाए हता जाव उवक्काइत्ता नवइ ॥३९॥ से एगईउ गोवालनाव पडिसधाय तमेव गोवालवा परिजविय परिजवियहता जाव उवक्काइत्ता नवइ॥ ४० ॥

अर्थ—कोइएक अधर्मी पुरुष, क्रूरकर्मनो करनार, गोघातकनो नाव आदरी, गाय, अथवा बीजा त्रस जीवोने छेदे, नेदे, इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥ ३९ ॥ कोइएक पुरुष, क्रूर

कर्मनो करनार गोपालनाव आदरीने, क्रोधे चड्यो थको गायने गोकुल माहेथी टाली तेने हणे, छेदे, नेदे, इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥ ४० ॥

॥ दीपिका–अथैक कश्चित्क्रूरकर्मा गोघातकनावमाश्रित्य गामन्य वा त्रस हति तस्य हता स्यात् ॥ ३९ ॥ अथैक कश्चिद्गोपालनाव प्रतिपद्य ता गा परिविच्य पृथक् रु त्वा तस्याहता नवति । शेष पूर्ववत् ॥ ४० ॥

॥ टीका–अथैक कश्चिद्गोपालनाव प्रतिपद्य कस्याश्चिद्गो कुपित सन् ता गा परि विच्य पृथक् कृत्वा तस्याहता छेत्ता नेत्ता नूयोनूयोनवति । शेष पूर्ववत् ॥ ३९ ॥ अथैक कश्चित्क्रूरकर्मकारी गोघातकनाव प्रतिपद्य, गामन्यतर वा त्रस प्राणिन व्यापाद येत्तस्य च हननादिका क्रिया कुर्यादिति ॥ ४० ॥

से एगइत्ते सोवणियनाव पडिसंधाय तमेव सुणगवा अन्नयरवा तसं पाण हंता जाव उवक्खाइत्ता नवइ ॥४१॥ से एगइत्ते सोवणियंतिय नाव पडिसंधाय तमेव मणुस्सवा अन्नयरवा तसं पाण हंता जाव आहार आहारेति इति से महया पावेहिं कम्मेहिं अत्ताण उवक्खाइत्ता नवइ ॥४२॥

अर्थ–कोइएक पुरुष शौवनिकनाव एटले श्वाने करी आहार करु एवो नाव आदरीने अनेक जीवने हणे, छेदे, नेदे, इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥ ४१ ॥ कोइएक पुरुष श्वानने पाले, श्वाननो परिग्रह करे, तेणे करी कोइएक आवता जता पथिकने, अथवा बीजा जीवने हणे, छेदे, नेदे, आहार आहारे इत्यादिक एरीते ते क्रूरकर्मे करी चतुर्गतिक ससार माहे पडे ॥ ४२ ॥ एटले आजीविका निमित्त पापनु कारण कह्यु

॥ दीपिका–अथैक कश्चित् श्वपापर्धिनाव प्रतिज्ञाय तमेव श्वान परवा त्रस मृग सूकरादिक हन्यात्तस्यच हतेत्यादिपूर्ववत् ॥ ४१ ॥ अथैक कश्चिदनार्य (सोवणिय तियति) श्वनिश्चरति शौवनिक अतोस्यास्तीत्यतिक अते वा चरति आतिक पर्यतवासी शौवनिकश्चासौ आतिकश्च शौवनिकातिक क्रूरसारमेयपरिग्रह प्रत्यतनिवासी च तद्भसा तन्नावमाश्रित्य मनुष्य कचन पथिकमन्यवा मृगसूकरादिक त्रस प्राणिन हता नव ति । हता इत्यत्र ताच्छीलिकस्तृन् । श्वस्तनीता वा तृच् स्यात्तदाप्याहारेण पूर्ववन्नेय । तथा पुरुष हति तस्य स हता नेत्तेत्यादि । तृन्श्वस्तन्यौ प्रागपि योज्यौ । सर्वत्र महद्भि पापकर्मभिरात्मानमुपख्यापयिता स्यादिति ॥ ४२ ॥

॥ दीपिका–अथैक कश्चित्सौकरिक श्वपचश्चाडाल खाटिकइत्यर्थ । तद्भावमाश्रित्य महिष वान्य त्रस प्राणिन हतीति तस्य हता छेत्ताइत्यादि ॥३५॥ अथैक कश्चिद्वा गुरिकत्वमाश्रित्य मृग वाऽन्य प्राणिन हति तस्यच हता नवति शेष पूर्ववत् ॥ ३६ ॥

॥ टीका–अत्रांतरे सौकरिकपद तच्च स्वबुध्या व्याख्येय। सौकरिका श्वपचाश्चांडाला खट्टिकाइत्यर्थ ॥३५॥ अथैक कश्चित्कुडसलोवागुरिकनाव लुब्धकत्व प्रतिसधाय प्रतिपद्य वागुरया मृग हरिणमन्यतरा त्रस प्राणिन शशादिकमात्मवृत्यथ स्वजनार्थवा व्यापादयति तस्यच हता छेत्ता नवति । शेप पूर्ववत् ॥ ३६ ॥

से एगईउ सउणिय नाव पडिसधाय सउणिवा अणतरवा तसं पाण हता जाव उवक्खाइत्ता नवइ॥३७॥ से एगइउ मिछियनाव पडिसधाय मछ्वा अणतर वा तस पाण हत्ता जाव उवक्खाइत्ता नवइ॥ ३८॥

अर्थ–कोइएक पुरुप, शाकुनी एटले पक्षीउनो विनाश करीने, अजीविका करे, एवो थको अनेक पक्षीउने हणे, छेदे, नेदे, इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥ ३७ ॥ कोइएक पुरुष अधमाधम माछी थइने अनेक माछलादिक जलचर जीवोने हणे, छेदे, नेदे, इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥ ३८ ॥

॥ दीपिका–अथैक कश्चिच्छकुनालावकादयस्तै श्चरति शाकुनिकस्तद्भावमाश्रित्य शकुनमन्य वा त्रस हति तस्य च हननादिका क्रिया करोतीति ॥ ३७ ॥ अथैक कश्चिन्मात्स्यिकनावमाश्रित्य मत्स्य वाऽन्य त्रस वा जलचर प्राणिन हन्यात् । शेष सुगम ॥३८॥

॥ टीका–अथैक कश्चिदधमोपापजीवी शकुनालावकादयस्तैश्चरति शाकुनिकस्तद्भाव प्रतिसधाय तन्मासाद्यर्थी शकुनमन्य वा त्रस व्यापादयति तस्यच हननादिका क्रिया करोतीति । शेप पूर्ववत् ॥३७॥ अथैक कश्चिदधमाधमोमात्स्यिकनाव प्रतिपद्य, मत्स्य वाऽन्य जलचर प्राणिन व्यापदयेद्धननादिका क्रिया कुर्यात् । शेप सुगम ॥ ३८ ॥

से एगईउ गोघायनाव पडिसधाय तमेव गोणवा अणयरवा तस पाण हता जाव उवक्खाइत्ता नवइ ॥३९॥ से एगईउ गोवालनाव पडिसधाय तमेव गोवालवा परिजविय परिजवियहता जाव उवक्खाइत्ता नवइ॥ ४०॥

अर्थ–कोइएक अधर्मी पुरुप, क्रूरकर्मनो करनार, गौघातकनो नाव आदरी, गाय, अथवा बीजा त्रस जीवोने छेदे, नेदे, इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥ ३९ ॥ कोइएक पुरुष, क्रूर

कोइएक (आयाणेणके०) शब्दादिक कारणे करी रीसाणो थको, (विरुद्धसमाणे के०) आगलानो विरोध करे ते कारण कहेछे (अडुवाखलदाणेण के०) सडेला अन्न तेने दाने करीनें, अथवा धान्यने खले अल्प दाने करीने, (अडुवासुराथालएणके०) अथवा थाल कोशादिक, कोइएक अधिकारादिक, तेने विषे वांछित लाभने अभावे रीसाणो थको (गाहवतीणवाके०) गृहपतिना, अथवा (गाहावइपुत्ताणवा के०) गृहपतिना पुत्रना धान्य खलादिकने (सयमेवके०) पोतें (अगणिकाएणके०) अग्नि काये करी, (सस्साइके०) ते धान्यादिकने (झामेइ के०) बाले (अन्नेणवित्रगणिकाएणसस्साइझामावेइ के०) अथवा रीसाणो थको बीजा पासे अग्निकाये करी ते धान्यादिकने बलावे (अगणिकाएणसस्साइझामतपिअन्नसमणुजाणइ के०) बीजो कोइ अग्नि काये करी ते धान्यने बालतो होय, तेने अनुमोदे एरीतें ते महोटा पापकर्मे करी पोताना आत्माने बांधे यावत् चतुर्गतिक संसार माहे परिभ्रमण करे ॥ ४४ ॥

॥ दीपिका–उक्ता सदा जीवनोपायभूता वृत्तिः । अथ क्वचित्कुतश्चिन्निमित्तात्सावद्यांगीकारं दर्शयति । पूर्वं वृत्तिरुक्ता प्रछन्नं वा प्राणिघातं कुर्यादिह तु कुतश्चिन्निमित्तात्साक्षाज्जनमध्ये प्राणिघातप्रतिज्ञया प्रवर्तते इत्याह । अथैकः कश्चिद्व्यसनेन क्रीडया कुपितोवा पार्षदोमध्ये गतउत्थाय एव प्रतिज्ञां कुर्यात् । अहमेनं प्राणिनं हनिष्यामीति प्रतिज्ञां कृत्वा तित्तिरादिकं हंता इत्यादि यावन्महान पापकर्मणा उपख्यापयिता भवति । पूर्वमपराधं विना क्रुद्धावुक्ता ॥४३॥ अथाऽपराधक्रुद्धान्दर्शयति । अथैकः कश्चित्प्रकृत्या क्रोधनः केनचिदादीयतइत्यादानं शब्दादिकं कारणं तेन विरुद्धः परस्य घातं कुर्यात् केनचिच्छब्देन क्रुष्टोनिंदितोवा विरुध्येत रूपेण बीभत्सं कंचित् दृष्ट्वाऽपशकुनोयमिति ध्यात्वा कुप्येत । गंधरसादिकं सूत्रेणैवाह । (अडुवाखत्ति) खलस्य कुपितस्य दानं खलके वाल्पधान्यादेर्दानं खलदानं तेन कुपितः । अथवा सुरायाः स्थालकं कोशकादि तेन वांछितलाभाभावात् कुपितोगृहपतेर्गृहपतिपुत्राणां वा स्वयं अग्निकायेन खलकवर्त्तीनि सस्यानि ध्मापयेद्दहेत् अन्येन वा दहतोऽन्यान्वा समनुजानीयात् । एवमसौ महापापैरात्मानमुपख्यापयिता स्यात्४४

॥ टीका–उक्ता सदा जीवनोपायवृत्तिरिदानीं कचित्कुतश्चिन्निमित्तादभ्युपगमं दर्शयति । (सेएगइउइत्यादि) अथ चात्र पूर्वस्माद्विशेषः । पूर्वत्र वृत्तिः प्रतिपादिता प्रछन्नं वा प्राणव्यपरोपणं कुर्यात् । इतरस्तु कश्चिन्निमित्तात्साक्षाज्जनमध्ये प्राणिव्यापादनप्रतिज्ञां विधायोत्थतइति दर्शयति । अथैकः कश्चिन्मांसादनेछया व्यसनेन क्रीडया कुपितावा पर्षदामध्यादभ्युत्थायैवभूतां प्रतिज्ञां विदध्यात् । यथाहमेनं वक्ष्यमाणं प्राणिनं हनिष्यामी

॥ टीका–अथैक कश्चिज्जघन्यकर्मकारी शौवनिकनाव प्रतिपद्य सारमेयपापर्द्धिनाव प्रतिज्ञाय तमेव श्वान तेन वा पर मृगसूकरादिक त्रस प्राणिन व्यापादयेत्तस्य च हननादि का क्रिया कुर्यादिति ॥ ४१ ॥ अथैक कश्चिदनार्योनिर्विवेक (सोवणियत्तिय नावत्ति) श्वनिश्चरति शौवनिक अतोस्यास्तीत्यतिकोऽतेवा चरत्यतिक पर्यंतवासीत्यर्थ । शौवनि कश्चासावतिकश्च शौवनिकातिक क्रूरसारमेयपरिग्रह प्रत्यतनिवासीच प्रत्यतनिवासिनि र्वा श्वनिश्चरतीति तदसौतन्नाव प्रतिसधाय डुष्टसारमेयपरिग्रह प्रतिपद्य, मनुष्यं वा कच नपथिकमन्यागतमन्य वा मृगसूकरादिक त्रस प्राणिन हता नवति । अय च ताच्छीलिक तृन् लुट् प्रत्ययोवा इष्टव्य । तृचि तु साध्याहार प्राग्वह्याख्येय। तद्यथा। पुरुष व्यापा दयेत्तस्प च हता छेत्ता इत्यादि । तृन्लुट्प्रत्ययो प्रागपि योजनीयाविति । तदेवमसौ म हाक्रूरकर्मकारी महद्भि कर्मनिरात्मानमुपख्यापयिता नवतीति ॥ ४२ ॥

से एगइउ परिसामज्जाउ उठिता अहमेय हणामित्ति कट्टु तित्तिरवा वट्ट गवा लावगवा कवोयगवा कविजलवा अन्नयरवा तस पाए हता जाव उवक्काइत्ता नवइ ॥ ४३ ॥ से एगइउ केणइ आयाणेण विरुद्धे समाणे अडुवा खलदाणेण अडुवा सुराथालएण गाहावतीणवा गाहावइपुत्ता णवा सयमेव अगणिकाएण सस्साइ झामेइ अन्नेणवि अगणिकाएण स स्साइ झामावेइ अगणिकाएण सस्साइ झामतपि अन्न समणुजाणइ इति से महया पावकम्मेहि अत्ताए उवक्काइत्ता नवइ ॥ ४४ ॥

अर्थ–हवे काहि एक पापनु विशेष कारण कहेछे जे प्रथम कह्यु, अने हवे कहेशे, तेमा विशेष एटलुजछे के, प्रथमजे जीवहिंसा कही ते हिंसा लोक थकी प्रछन्न पणे क रे, अने हवे जे कहेशे ते हिंसा लोकमा प्रगट पणे करे, एटलु विशेष जाणवु ते ए वी रीतें के, जेम कोइएक पुरुष मास नक्षण करवानी इच्छाये, अथवा व्यसनने लीधे अ थवा क्रीडाने निमित्ते (परिसामज्झाउउठित्ता के०) परिषदामाहेथी उठीने (अहमेय के०) हु आ अमुक जीवने (हणामित्तिकट्टु के०) हणीश एवी प्रतिज्ञा करीने, पछी (तित्तिरवा के०) तित्तर, अथवा (वट्टगवा के०) वर्त्तक, अथवा (लावगवा के०) लावक, अथवा (कवोयगवा के०) कपोत पक्षी, अथवा (कविजलवा के०) कपि जल एटले पारेवा, तथा सारस पक्षिविशेष जाणवा, अथवा (अन्नयरवा के०) अ न्य (तसपाण के०) त्रस जीवने हणे, छेदे, नेदे, इत्यादिक यावत् पोताना आत्माने कर्मबधन विषे पाडे ॥ ४३ ॥ हवे कोइएक पुरुष, प्रकृतिये क्रोधी थतो, (केणइ के०)

कोइएक (आयाणेणके०) शब्दादिक कारणे करी रीसाणो थतो, (विरुद्धेसमाणे के०) आगलानो विरोध करे ते कारण कहेछे (अदुवाखलदाणेण के०) सडेला अन्न तेने दाने करीनें, अथवा धान्यने खले अल्प दाने करीने, (अदुवासुराथालएणके०) अथवा थाल कोशादिक, कोइएक अधिकारादिक, तेने विषे वांछित लाजने अनावे रीसाणो थको (गाहवतीणवाके०) गृहपतिना, अथवा (गाहावइपुत्ताणवा के०) गृहपतिना पुत्रना धान्य खलादिकने (सयमेवके०) पोतें (अगणिकाएणके०) अग्नि कायें करी, (सस्सा इके०) ते धान्यादिकने (झामेइ के०) बाले (अन्नेणविअगणिकाएणसस्साइंझामावेइ के०) अथवा रीसाणो थको बीजा पासें अग्निकायें करी ते धान्यादिकने बलावे (अगणिकाएणसस्साइंझामतंपिअन्नंसमणुजाणइ के०) बीजो कोइ अग्नि कायें करी ते धान्यने बालतो होय, तेने अनुमोदे एरीतें ते महोटा पापकर्म करी पोताना आत्माने बांधे यावत् चतुर्गतिक संसार मांहे परिभ्रमण करे ॥ ४४ ॥

॥ दीपिका–उक्ता सदा जीवनोपायनूता वृत्ति । अथ कचित्कुतश्चिन्निमित्तात्सावद्यागीकारं दर्शयति । पूर्वं वृत्तिरुक्ता प्रछन्नं वा प्राणिघातं कुर्यादिह तु कुतश्चिन्निमित्तात्साक्षाज्जनमध्ये प्राणिघातप्रतिज्ञया प्रवर्तते इत्याह । अथैक कश्चिद्व्यसनेन क्रीडया कुपितोवा पार्षदोमध्ये गतउत्थाय एव प्रतिज्ञां कुर्यात् । अहमेनं प्राणिनं हनिष्यामीति प्रतिज्ञां कृत्वा तित्तिरादिकं हंता इत्यादि यावदात्मानं पापकर्मणा उपख्यापयिता नवति । पूर्वमपराधं विना क्रुधउक्ता ॥४३॥ अथाऽपराधक्रुद्धान्दर्शयति । अथैक कश्चित्प्रकृत्या क्रोधनः केनचिदादीयतइत्यादानं शब्दादिक कारणं तेन विरुद्ध परस्य घातं कुर्यात् केनचिच्छब्देन क्रुष्टोनिंदितोवा विरुध्येत रूपेण वीनत्सं कंचित् दृष्ट्वाऽपशकुनोयमिति ध्यात्वा क्रुप्येत । गंधरसादिक सूत्रेणैवाह । (अदुवाखत्ति) खलस्य कुपितस्य दानं खलके वाल्पधान्यादेर्दानं खलदानं तेन कुपित । अथवा सुराया स्थालकं कोशकादि तेन वांछितलानानावात् कुपितोगृहपतेर्गृहपतिपुत्राणां वा स्वयं अग्निकायेन खलकवर्त्तीनि सस्यानि ध्मापयेद्दहेत् अन्येन वा दहतोऽन्यान्वा समनुजानीयात् । एवमसौ महापापैरात्मानमुपख्यापयिता स्यात् ४४

॥ टीका–उक्ता सदा जीवनोपायवृत्तिरिदानीं कचित्कुतश्चिन्निमित्तादभ्युपगमं दर्शयति । (सेएगइओइत्यादि) अथ चात्र पूर्वस्माद्विशेष । पूर्वत्र वृत्ति प्रतिपादिता प्रछन्नं वा प्राणव्यपरोपणं कुर्यात् । इतरस्तु कश्चिन्निमित्तात्साक्षाज्जनमध्ये प्राणिव्यापादनप्रतिज्ञां विधायोयछतइति दर्शयति । अथैक कश्चिन्मासादनेछया व्यसनेन क्रीडया कुपितोवा पर्षदोमध्यादभ्युत्थायैवनूतां प्रतिज्ञां विदध्यात् । यथाहमेनं वक्ष्यमाणं प्राणिनं हनिष्यामी

ति प्रतिज्ञा कृत्वा पश्चात्तित्तिरादिक हत्वा छेत्तेति नेत्तेत्ति ताच्छीलिकस्तृन् तृच्प्रत्ययोवा। तस्य वा हतेत्यादि यावदात्मान पापेन कर्मणा ख्यापयिता नवतीति ॥४३॥ इह चाधर्म पाक्षिकेष्वनिधीयमानेषु सर्वेपि प्राणद्रोहकारिण कथंचिदनिधातव्यास्तत्र पूर्वमनपराधकृ द्व्यानिहिता साम्प्रतमपराधकृद्धान् दर्शयितुमाह ॥ (सेएगइउइत्यादि) अथैक कश्चि त्प्रकृत्या क्रोधनोऽसहिष्णुतया केनचिदादीयतइत्यादान शब्दादिक कारण तेन विरुद्ध स मान परस्यापकुर्यात्। शब्दादानेन तावत्केनचिदाकुष्टोनिहितोवाचा विरुध्येत। रूपादा नेनतु बीनत्स कंचन दृष्ट्वाऽपशकुनाध्यवसायेन कुप्येत। गधरसादिक त्वादान सूत्रेणै व दर्शयितुमाह। अथवा खलस्य कुथितादिविशिष्टस्य दान खलस्य वाल्पधान्यादेर्दान ख लदान तेन कुपितोऽथवा सुराया स्थालक कोशकादि तेन विवक्षितलानाऽनावात् कुपि त। गृहपत्यादेरेतत् कुर्यादित्याह। स्वयमेवाग्निकायेनाग्निना तत्सस्यानि खलकवर्तीनि शा लिव्रीह्यादीनि ध्मापयेद्दहेदन्येन वा दाहयेद्दहतोवाऽन्यान्समनुजानीयादित्येवमसौमहापा पकर्मनिरात्मानमुपख्यापयिता नवतीति ॥ ४४ ॥

से एगइउ केणइ आयाणेणवा विरुद्धे समाणे अडुवा खलदाणेण अ डुवा सुराथालएण गाहावतीणवा गाहावइपुत्ताणवा उट्टाणवा गो णाणवा घोडगाणवा गद्दनाणवा सयमेव घूराउ कप्पेति अन्नेणवि क प्पावेति कप्पतंपि अन्न समणुजाणइ इति से महया जाव नवइ ॥४५॥

अर्थ–अथ हवे कोइएक पुरुष कोइएक आदान एटले कारणे करी रीसाणो थको, अन्नने दाने अथवा धान्यना खलाने विषे अल्प दाने, अथवा कोइएक अधिकारादिकने विषे वांछित लाजने अनावे, गृहपतिना अथवा गृहपतिना पुत्रना (उट्टाणवाके०) उंट, अथवा(गोणाणवा के०) वृषन, (घोडगाणवा के०) घोडो, (गद्दनाणवा के०) गर्दन, तेनो (सयमेवघूराउकप्पेति के०) जंघादिक अवयव कल्पे छेदे, नेदे, वधन, नाथ, वाग प्रनृति आदि लेइने पोतेज कापे, बीजा पासे कपावे, बीजो कापतो होय तेने अनुमो दन आपे, एरीतें ते पुरुष महोटुपोपार्जन करे ॥ ४५ ॥

॥ दीपिका–अथैक कश्चित्केनचित्खलदानादिनाऽदानेन गृहपत्यादे कुपितस्तत्सब निनउष्ट्रादे स्वयमेव परशुप्रनृतिशस्त्रेण (घूराउत्ति) जंघाद्यवयवान् कल्पयति छिनत्ति अन्येन छेदयति छिदत समनुजानीते। एव पापकर्मणात्मान प्रसिद्धि नयति ॥ ४५ ॥

॥ टीका–सांप्रतमन्येन प्रकारेण पापोपादानमाह। (सेएगइउइत्यादि) अथैक क श्चित्केनचित् खलदानादिनाऽनेन गृहपत्यादे कुपितस्तत्सवधिनउष्ट्रादे स्वयमेवात्मना प

रथ्यादिना (घूरावंति) जघा खलकावा कल्पयति भिनत्त्यन्येन वा छेदयति अन्यवा छिदंतं समनुजानीते इत्येवमसावात्मानं पापेन कर्मणोपाख्यापयिता भवति ॥ ४५ ॥

से एगइउ केणइ आयाणेण वा विरुद्धे समाणे अडुवा खलदाणेण अडु वा सुराथालएण गाहावतीणवा गाहावइपुत्ताणवा उट्टसालाउवा गोणसालाउवा घोडगसालाउवा गद्दभसालाउवा कंटकबोंदियाए पडिपेहित्ता सयमेव अगणिकाएण झामेइ अन्नेणवि झामावेइ झामंतं पि अन्नं समणुजाणइ इति से महया जाव भवइ ॥ ४६ ॥

अर्थ–वली बीजी रीतें देखाडेछे कोइएक पुरुष, कोइएक कारणथी रीसाणो थको, अथवा वली अन्नने दाने, तथा धान्यने, थोडे दाने अथवा कोइएक अविकारादिकने विषे वांछित लाभने अभावे, गृहपति अथवा गृहपतिना पुत्रना उटशाला, वृषभशाला, अश्वशाला, गर्दभशालाने, कांटा ढांकीने पोते अग्निकाये करी बाले बीजा पासे बलावे, बीजो बालतो होय तेने अनुमोदे, एवी क्रिया करतो जीव, घणा पापकर्म उपार्जन करी, संसार मांहे परिभ्रमण करे ॥ ४६ ॥

॥ दीपिका–अथैकः कश्चित्केनचिन्निमित्तेन गृहपत्यादेः कुपितस्तत्सत्कभिनामुष्ट्रादीनां शाला गृहाणि (कटक बोंदियाएति) कटकशाखाभिः प्रतिविधाय पिहित्वा स्वयमग्निना दहेत्। शेषं पूर्ववत् ॥ ४६ ॥

॥ टीका–किंच (सेएगइउइत्यादि) अथैकः कश्चित्केन चिन्निमित्तेन गृहपत्यादेः कुपितस्तत्सत्कभिनामुष्ट्रादीनांशालागृहाणि (कटकबोंदियाएति) कटकशाखाभिः प्रतिविधाय पिहित्वा स्थगित्वा, स्वयमेवाग्निना दहेत्। शेषं पूर्ववत् ॥ ४६ ॥

से एगइउ केणइ आयाणेण विरुद्धे समाणे अडुवा खलदाणेण अडुवा सुराथालएण गाहावतीणवा गाहावइपुत्ताणवा कुंडलवा मणिवा मोत्तियवा सयमेव अवहरइ अन्नेणवि अवहरवइ अवहरंतं पि अन्नं समणुजाणइ इति से महया जाव भवइ ॥ ४७ ॥

अर्थ–कोइएक पुरुष, कोइएक कारणे रीसाणो थको, अन्न अथवा धान्यना खलाने विषे, अल्प धान्यना दाने अथवा कोहिएक अविकारादिकनेविषे वांछित लाभने अभावे, गृहपति अथवा गृहपतिना पुत्रना कानना कुंडल, अथवा मणी, रत्न, मोती, अथवा बीजा

ति प्रतिज्ञां कृत्वा पश्चात्तित्तिरादिक हता भेत्तेति नेतेत्ति ताच्छीलिकस्तृन् लुट्प्रत्ययोवा। तस्य वा हतेत्यादि यावदात्मान पापेन कर्मणा ख्यापयिता नवतीति ॥४३॥ इह चाधर्म पाक्षिकेष्वभिधीयमानेषु सर्वेपि प्राणद्रोहकारिण कथचिदभिधातव्यास्तत्र पूर्वमनपराधकृ द्भ्योभिहिता साप्रतमपराधकृद्भ्यान् दर्शयितुमाह ॥ (सेएगइओइत्यादि) अथैक कश्चि त्प्रकृत्या क्रोधनोऽसहिष्णुतया केनचिदादीयतइत्यादान शब्दादिक कारण तेन विरुद्ध स मान परस्यापकुर्यात्। शब्दादानेन तावत्केनचिदाकुष्टोभिहितोवाचा विरुध्येत। रूपादा नेनतु बीनत्स कचन दृष्ट्वाऽपशकुनाध्यवसायेन कुप्येत। गधरसादिक त्वादान सूत्रेणै व दर्शयितुमाह। अथवा खलस्य कुथितादिविशिष्टस्य दान खलस्य वाल्पधान्यादेर्दान ख लदान तेन कुपितोऽथवा सुराया स्थालक कोशकादि तेन विवक्षितलाभाऽनावात् कुपि त। गृहपत्यादेरेतत् कुर्यादित्याह। स्वयमेवाग्निकायेनाग्निना तत्सस्यानि खलकवर्तीनि शा लिव्रीह्यादीनि ध्मापयेद्दहेदन्येन वा दाहयेद्दहतोवाऽन्यान्समनुजानीयादित्येवमसौमहापा पकर्मनिरात्मानमुपख्यापयिता नवतीति ॥ ४४ ॥

से एगइओ केणइ आयाणेणवा विरुद्धे समाणे अदुवा खलदाणेण अ दुवा सुराथालएण गाहावतीणवा गाहावइपुत्ताणवा उट्टाणवा गो णाणवा घोडगाणवा गद्दनाणवा सयमेव घूराउ कप्पेति अन्नेणवि क प्पावेति कप्पतपि अन्न समणुजाणइ इति से महया जाव नवइ ॥४५॥

अर्थ–अथ हवे कोइएक पुरुष कोइएक आदान एटले कारणे करी रीसाणो थको, अन्नने दाने अथवा धान्यना खलाने विषे अल्प दाने, अथवा कोइएक अधिकारादिकने विषे वांछित लाभने अनावे, गृहपतिना अथवा गृहपतिना पुत्रना (उट्टाणवाके०) उट, अथवा(गोणाणवा के०) वृषन, (घोडगाणवा के०) घोडो, (गद्दनाणवा के०) गर्दन, तेनो (सयमेवघूराउकप्पेति के०) जघादिक अवयव कल्पे छेदे, नेदे, वधन, नाथ, वाग प्रनृति आदि लेइने पोतेज कापे, बीजा पासे कपावे, बीजो कापतो होय तेने अनुमो दन आपे, एरीतें ते पुरुष महोटुपोपार्जन करे ॥ ४५ ॥

॥ दीपिका–अथैक कश्चित्केनचित्खलदानादिनाऽदानेन गृहपत्यादे कुपितस्तत्सब धिनउष्ट्रादे स्वयमेव परशुप्रनृतिशस्त्रेण (घूराउत्ति) जघाद्यवयवान् कल्पयति छिनत्ति अन्येन छेदयति छिदत समनुजानीते। एव पापकर्मणात्मान प्रसिद्धि नयति ॥ ४५ ॥

॥ टीका–साप्रतमन्येन प्रकारेण पापोपादानमाह। (सेएगइओइत्यादि) अथैक क श्चित्केनचित्तु खलदानादिनाऽनेन गृहपत्यादे कुपितस्तत्सबधिनउष्ट्रादे स्वयमेवात्मना प

पित सन्नेतत्कुर्यादित्याह । तद्यथा । श्राम्यतीति श्रमणास्तेषामन्येषामपि तथाभू ताना केनचिदादानेन कुपित सन् दडकादिकमुपकरणजातमपहरेत् अन्येन वा हारये दन्यवा हरत समनुजानीयात् इत्यादिपूर्ववत् ॥ ४८ ॥

से एगइउ णोवितिगिछइ त गाहावतीणवा गाहावइपुत्ताणवा सयमेव अगणिकाएण उसहीउ झामेइ जाव अन्नपि झामत समणुजाणइ इति से महया जाव उवरकाइत्ता भवति ॥ ४९ ॥

अर्थ–हवे नि कारण पापनु विशेष कहेछे अथ कोइएक पुरुष, अत्यत मूर्खहतो (णोवितिगिछइके०) एवो विचार करे नही के, अकार्य करवा थकी मने आ भवमा अथ वा परभवमा अनिष्टफलनी प्राप्ति थशे, अथवा महारो अनुष्ठान अत्यत माठोछे एवु आलोचे नही, एवो छतो आलोक तथा परलोक विरुद्ध क्रिया करे ते देखाडेछे गृहप तिना अथवा गृहपतिना पुत्रना धान्यने नि कारणे पोते अग्निकाये करी प्रज्वाले, बी जाने हाथे प्रज्वालावे, बीजो कोइ प्रज्वालतो होय तेने अनुमोदे ॥ ४९ ॥

॥ दीपिका–पूर्व विरोधिनोऽभिहिता अथ इतरे कथ्यते । अथेक कश्चिन्मूढतया (णोवितिगिछइत्ति) न विमर्षति नविचारयति यन्ममानेन कृतेन परलोकेऽनिष्ट भावि । अथवा मदीयमिदमनुष्ठान पापानुबधीति न वेत्ति एवभूतश्च गृहपत्यादेर्निमित्तमेव त त्कोप विनैव स्वयमग्निना सस्यानि शालिव्रीह्यादीनि दहेदित्यादि ज्ञेय ॥ ४९ ॥

॥ टीका–एव तावद्विरोधिनोऽभिहिता साम्प्रतमितरेऽभिधीयते । (सेएगइउइत्यादि) अथै क कश्चित् दृढमूढतया (नोवितिगिछिइत्ति) न विमर्षति नमीमासते । यथाऽनेन कृतेन ममा ऽमुत्राऽनिष्टफल स्यात् तथा मदीयमिदमनुष्ठान पापानुबधीत्येव न पर्यालोचयति तभावाप न्नाश्च यत्किंचनकारितया इहलोकपरलोकविरोधिनी क्रिया कुर्यात् । एतदेवोद्देशतोदर्शयति तद्यथा गृहपत्यादेर्निमित्तमेव तत्तत्कोपमतरेणैव स्वयमेवात्मानाग्निकायेनौषधी शालिव्री ह्यादिका ध्मापयेद्दहेत्तथाऽन्येन दाहयेद्दहतं च समनुजानीयादित्यादि ॥ ४९ ॥

से एगइउ णोवितिगिछइ त गाहावतीणवा गाहावइपुत्ताणवा उट्टाणवा गोणाणवा घोडगाणवा गद्दभाणवा सयमेव घूराउकप्पइ अन्नेणवि क प्पावेति अन्नपि कप्पति त समणुजाणइ ॥५०॥ से एगइउ णोवितिगिछ इ त गाहावतीणवा गहावइपुत्ताणवा उट्टसालाउवा जाव गद्दभसाला

आभरणादिक द्रव्य, पोते अपहरे, बीजाने हाथे अपहरावे,बीजो कोइ अपहरतो होय तेने अनुमोदे, एम करतो जीव घणा पाप कर्मोपार्जन करे ॥ ४७ ॥

॥ दीपिका–अथैक केनचिदादानेन कुपितोगृहपत्यादे कुंडलादि द्रव्यमपहरेत् । शेष पूर्ववत् ॥ ४७ ॥

॥ टीका–अपिच (सेएगउइत्यादि) अथैक कश्चित्केनचिदादानेन कुपितोगृहपत्यादे सबधि कुंडलादिक द्रव्यजात स्वयमेवापहरेदवशिष्ट पूर्ववत् ॥ ४७ ॥

से एगइउ केणइवि आदाणेण विरुद्धे समाणे अडुवा खलदाणेण अडु वा सुराथालएण समणेणवा माहणेणवा छत्तगवा दम्डगवा जम्डगवा म त्तगवा लठिवा भिसिगवा चेलगवा चिलिमिलिगवा चम्मगवा छेयण गवा चम्मकोसियवा सयमेव अवहरति जाव समणुजाणइ इति से म हया जाव उवखाइत्ता जवइ ॥ ४८ ॥

अर्थ–हवे पाखंमी दर्शन उपर कोप्यो थको, जे करे, ते देखाडेछे कोइएक कारणे रीसाणो छतो वादीये जींत्यो अथवा पोताना दर्शनने दृष्टिरागे अथवा अन्न अने धा न्यने थोडे दाने, अथवा कोइएक अधिकारादिकने विषे वांछितलाभने अभावे, कोप्यो थको श्रमण अथवा ब्राह्मण तेना दम्ड, छत्र, माटीना भाम्ड, मात्रो,लाकडी, बेसवानो पाट, वस्त्र, मटको, ढाकवानो वस्त्र, चर्म, चर्मछेदनी तरवार, चर्मनी कोथळी इत्यादिक अनेक उपकरण पोतें अपहरे, बीजा ने हाथे अपहरावे, बीजो कोइ अपहरतो होय तेने अनुमोदन आपे, एरीते घणा कर्म उपार्जन करे एटला कारणे क्रोधे करी पापनु विशेषपणु कह्यु ॥ ४८ ॥

॥ दीपिका–अथ पाखंडिकोपरिकोपमाह । अथैक कश्चित्स्वमतानुरागेण वादपराजितो वा अन्येन वा केनचिन्निमित्तेन कुपित श्रमणाना ब्राह्मणाना छत्रक वा भाड किंचिद्वस्तु द डक वा भाडक किंचिद्वस्तुमात्रक पात्र (लठ्ठिग) यष्टि (भिसिग) वृसीमासनमिति या वत् । चेलक वस्त्र (चिलिमिलिग) प्रछादपटी चर्मक पाडुकादि चर्मछेदनक शस्त्रादि च र्मकोश शस्त्रक्षेपकोछलक स्वयमपहरेत् । शेषपूर्ववत् ॥ ॥ ४८ ॥

॥ टीका–साप्रतं पाखंडिकोपरि कोपेन यत्कुर्याचद्दर्शयितुमाह । (सेएगइउइत्यादि) अथैक कश्चित्स्वदर्शनानुरागेण वा वादपराजितोवान्येनवा केनवा केनचिन्निमित्तेन कु

पित सन्नेतत्कुर्यादित्याद् । तद्यथा । श्राम्यतीति श्रमणास्तेषामन्येषामपि तथानू ताना केनचिद्दादानेन कुपित सन् दडकादिकमुपकरणजातमपहरेत् अन्येन वा हारये दन्यवा हरत समनुजानीयात् इत्यादिपूर्ववत् ॥ ४८ ॥

से एगइउ णोवितिगिछइ त गाहावतीणवा गाहावइपुत्ताणवा सयमेव अगणिकाएण उसहीउ शामेइ जाव अन्नपि शामत समणुजाणइ इति से महया जाव उवरकाइत्ता नवति ॥ ४ए ॥

अर्थ–हवे नि कारण पापनु विशेष कहेछे अथ कोइएक पुरुष, अत्यत मूर्खछतो (णोवितिगिछइके०) एवो विचार करे नहीं के, अकार्य करवा थकी मने आ नवमा अथ वा परनवमा अनिष्टफलनी प्राप्ति थशे, अथवा महारो अनुष्ठान अत्यत मावोछे एवु आलोचे नहीं, एवो छतो आलोक तथा परलोक विरुद्ध क्रिया करे ते देखाडेछे गृहप तिना अथवा गृहपतिना पुत्रना धान्यने नि कारणे पोतें अग्निकायें करी प्रज्वाले, बी जाने हाथे प्रज्वालावे, बीजो कोइ प्रज्वालतो होय तेने अनुमोदे ॥ ४ए ॥

॥ दीपिका–पूर्व विरोधिनोऽनिहिता अथ इतरे कथ्यते । अथैक कश्चिन्मूढतया (णोवितिगिछइत्ति) न विमर्षति नविचारयति यन्ममानेन कृतेन परलोकेऽनिष्ट नावि । अथवा मदीयमिदमनुष्ठान पापानुबधीति न वेत्ति एवनूतश्च गृहपत्यादेर्निमित्तमेव त त्कोप विनैव स्वयमग्निना सस्यानि शालिव्रीह्यादीनि दहेदित्यादि ज्ञेय ॥ ४ए ॥

॥ टीका–एव तावद्विरोधिनोऽनिहिता साम्प्रतमितरेऽनिधीयते । (सेएगइउइत्यादि) अथै क कश्चित् दृढमूढतया (नोवितिगिछइत्ति) न विमर्षति नमीमासते । यथाऽनेन कृतेन ममा ऽमुत्राऽनिष्टफल स्यात् तथा मदीयमिदमनुष्ठान पापानुबधीत्येव न पर्यालोचयति तन्नावाप न्नाश्च यत्किचनकारितया इहलोकपरलोकविरोधिनी क्रिया कुर्यात् । एतदेवोद्देशतादर्शयति तद्यथा गृहपत्यादेर्निमित्तमेव तत्तत्कोपमतरेणैव स्वयमेवात्मानाग्निकायेनौषधी शालिव्री ह्यादिका ध्मापयेद्दहेत्तयाऽन्येन दाहयेद्दहत च समनुजानीयादित्यादि ॥ ४ए ॥

से एगइउ णोवितिगिछइ त गाहावतीणवा गाहावइपुत्ताणवा उट्ठाणवा गोणाणवा घोडगाणवा गद्दनाणवा सयमेव घूराउकप्पइ अन्नेणवि क प्पावेति अन्नपि कप्पति त समणुजाणइ ॥५०॥ से एगइउ णोवितिगिछ इ त गाहावतीणवा गहावइपुत्ताणवा उट्टसालाउवा जाव गद्दनसाला

आजरणादिक द्रव्य, पोतें अपहरे, बीजाने हाथे अपहरावे,बीजो कोइ अपहरतो होय तेने अनुमोदे, एम करतो जीव घणा पाप कर्मोपार्जन करे ॥ ४७ ॥

॥ दीपिका–अथैक केनचिदादानेन कुपितोगृहपत्यादे कुडलादि द्रव्यमपहरेत्। शेषं पूर्ववत् ॥ ४७ ॥

॥ टीका–अपिच (सेएगर्इत्यादि) अथैक कश्चित्केनचिदादानेन कुपितोगृहपत्यादे सबधि कुडलादिक द्रव्यजातं स्वयमेवापहरेदवशिष्ट पूर्ववत् ॥ ४७ ॥

से एगइउ केणइवि आदाणेण विरुद्धे समाणे अडुवा खलदाणेण अड वा सुराथालएण समणेणवा माहणेणवा छत्तगवा दमगंवा नमगवा म त्तगवा लठिवा निसिगवा चेलगवा चिलिमिलिगवा चम्मगवा छेयण गवा चम्मकोसियवा सयमेव अवहरति जाव समणुजाणइ इति से म हया जाव उवरकाइत्ता नवइ ॥ ४८ ॥

अर्थ–हवे पाखमी दर्शन उपर कोप्यो थको, जे करे, ते देखाडेछे कोइएक कारणे रीसाणो छतो वादीये जीत्यो अथवा पोताना दर्शनने दृष्टिरागे अथवा अन्न अने धान्यने थोडे दाने, अथवा कोइएक अधिकारादिकने विषे वाछितलाजने अजावे, कोप्यो थको श्रमण अथवा ब्राह्मण तेना दम, छत्र, माटीना जाम, मात्रो, लाकडी, बेसवानो पाट, वस्त्र, मटको, ढाकवानो वस्त्र, चर्म, चर्मछेदनी तरवार, चर्मनी कोथली इत्यादिक अनेक उपकरण पोतें अपहरे, बीजा ने हाथे अपहरावे, बीजो कोइ अपहरतो होय तेने अनुमोदन आपे, एरीते घणा कर्म उपार्जन करे एटला कारणे क्रोधे करी पापनु विशेषपणु कह्यु ॥ ४८ ॥

॥ दीपिका–अथ पाखडिकोपरिकोपमाह। अथैक कश्चित्स्वमतानुरागेण वादपराजितो वा अन्येन वा केनचिन्निमित्तेन कुपित श्रमणाना ब्राह्मणाना छत्रक वा नाड किंचिद्वस्तु द डक वा नाडक किंचिद्वस्तुमात्रक पात्र (लष्टिग) यष्टि (निसिग) वृसीमासनमिति या वत्। चेलक वस्त्र (चिलिमिलिग) प्रछादपटी चर्मक पाडकादि चर्मछेदनक शस्त्रादि च र्मकोश शस्त्रक्षेपकोछलक स्वयमपहरेत्। शेषपूर्ववत् ॥ ॥ ४८ ॥

॥ टीका–साप्रतं पाखडिकोपरि कोपेन यत्कुर्यात्तद्दर्शयितुमाह। (सेएगइर्इत्यादि) अथैक कश्चित्स्वदर्शनानुरागेण वा वादपराजितोवान्येनवा केनवा केनचिन्निमित्तेन कु

फरुसवदित्ता नवइ कालेणवि से अणुपविठस्स असणवा पाणवा जा
व णोदेवावेत्ता नवइ जे इमे नवइ वोनमता नारकता अलसगा वे
सलगा किवणगा निवक्कमा वणगा समणगा पव्वयति ॥ ५४ ॥

अर्थ—हवे मिथ्यादृष्टिना पापनो अधिकार विशेष कहेछे कोइएक मिथ्यादृष्टि पुरुष, श्रमण तपस्वी साधुनो निंदक होय, ते श्रमण अथवा ब्राह्मणने निसरता पेसता (दिस्सा के०) देखीने नानाप्रकारना पापोपार्जन करीने पोताना आत्माने दुर्गतिने विषे पाडे, तेज कारण कहेछे (अदुवाणअछराएके०) क्याहि एक साधुने देखीने पोतानी मिथ्यादृष्टीये करी एवु जाणेजे, ए मने अपशकुन थयु एम जाणतो थको पोतानी दृष्टिया गलथी ते साधुने अलगो करावे, अथवा (आफालित्तानवइ के०) चपटीये करी साधुने आस्फाले एटले तेने तिरस्कार करे, (अदुवाणफरुसवदित्तानवइ) अथवा कठोर वचन बोले, अरे मूर्ख! निरर्थक कायक्लेशना करनार! हे दुर्बुद्धि! माहारा आगलथी दूरथइजा एवा कठोर वचन बोले, तथा (कालेणविसेअणुपविठस्स के०) निक्षावेलाये ते चारित्रियाने अन्न पाणीने अर्थे आव्यो देखीने तेने (असणवापाणवा के०) अशन पानादिक देता अत्यंत दुष्टपणे पोते निंदे अने (जावणोदेवावेत्तानवइ के०) बीजो कोइ अशनपानादिक आपतो होय तेने निषेधे, तथा एवा दुर्वचन बोले के, (जेइमेनवइ के०) जे ए पाखंडीने आपवा थकी काही फल नथी एम कहे (वोनमता के०) ए तृण काष्ठना नारानो आणनारछे (नारकता के०) ए कुटुंबना नारनो निर्वाह करी शक्यो नथी, ते कारणे मुंडित थयोछे (अलसगा के०) आलसु क्रमागत कुटुंब धर्म पालवाने असमर्थ माटे पाखंडी थयोछे (वेसलगा के०) वृषल कोइएक क्षुद्र जातिछे तथा (किवणगानिवक्कमा के०) कृपण, निरुद्यमी, कोइपण कार्यनो उद्यम करी नशके ते कारणे (वणगासमणगापव्वयति के०) प्रवर्ज्या लिए ॥ ५४ ॥

॥ दीपिका—अथैक कश्चिदनिगृहीतमिथ्यादृष्टि साधुप्रत्यनीक श्रमण ब्राह्मण वा साधु दृष्ट्वा, अपशकुनोयमिति मन्यमान पापकर्मभिरात्मानमुपख्यापयिता नवति (अदुवाणेति) अथवा साधु दृष्ट्वाऽवज्ञयाऽप्सरायाश्च पुटिकाया आस्फालयिता नवति परुष कठिन वचोब्रूयात् निक्षाकालेपि (से) तस्य निक्षार्थमनुप्रविष्टस्यान्नान्दापयिता न नवति प्रत्यनीक सन्निंद ब्रूते।(जेइमेत्ति) पाखंडिका स्युस्ते चान्नमतस्तृणकाष्ठहारादिक कर्म त द्वियते येषा तेचान्नमत नाराक्रांता कुटुंब पालयितुमसमर्थास्ते पाखंडव्रतमाश्रयति । तथा वृषलाधमा कृपणा क्लीबाअकिंचित्करा श्रमणा स्यु प्रव्रज्या गृह्णतीति॥५४॥

तेवा कटकवोंढियाहिं पडिपेहित्ता सयमेव अगणिकाएणं झामेइ जाव समणु जाणइ ॥ ५१ ॥ से एगइउ णोवितिगिंछइ त गाहावतीणवा गाहावइपुत्ताणवा जाव मोत्तियवा सयमेव अवहरइ जाव समणु जाणइ॥ ५२ ॥ से एगइउ णोवितिगिंछइ तसमणवा माहणाणवा छत्तगवा दंमगवा जाव चम्मछेदणगवा सयमेव अवहरइ जाव समणुजाणइ इति सेमहया जाव उवक्खाइत्ता नवइ ॥ ५३ ॥

अर्थ–एरीतेज वली कोइएक पुरुष, गृहपति अथवा गृहपतिना पुत्रना उंट, गाय, बलद, घोडा, गर्दजना बधन, तथा वाग, नाथ, प्रमुख पोते कापे, बीजाने हाथे कपावे बीजो कापतो होय तेने अनुमोदे ॥ ५० ॥ तथा तेमज ते गृहपतिना तथा गृहपतिना पुत्रना उटनीशाला, यावत् गर्दजनी शालाने काटा थकी ढाकीने पोते बाले, बीजाने हाथे बलावे, बीजो बालतो होए तेने अनुमोदे ॥ ५१ ॥ तथा तेमज ते गृहस्थना अथवा गृहस्थना पुत्रना कुंमलादिक आजरण, तथा मौक्तिकादिक द्रव्य, पोतें अपहरे, बीजाने कहिने तेने हाथे अपहरावे, बीजो कोइ अपहरतो होय तेने अनुमोदे ॥ ५२ ॥ तथा कोइएक पुरुष, श्रमण ब्राह्मणना दंम छत्रादिक यावत् चर्मछेदक ए उपकरणोने पोते अपहरे बीजाने हाथे अपहरावे अपहरतो होय तेने अनुमोदे ए प्रथम लखेला पाच आलावा, तथा पाछलना आलावा चार ते सरखाजछे परंतु ते सकारण, अने निष्कारण, एटलु विशेपछे ॥ ५३ ॥

॥ दीपिका–अथैकोनिस्त्रिंशतया गृहपत्यादिसंबंधिनामुष्ट्रादीनां जंघाद्यवयवान् छिद्यात्यादि ॥ ५० ॥ कश्चिदुष्ट्रादिबंधन गृहाणि दहेत् ॥ ५१ ॥ सुगम ॥ ५२ ॥ निर्निमित्तमेवै तत्कुर्यात् व्याख्या पूर्ववत् ॥ ५३ ॥

॥ टीका–तथेहामुत्रच दोषापर्यालोचकोनिस्त्रिंशतया गृहपत्यादिसंबंधिनां क्रमेलकादीनां जंघादीनवयवांश्छिंद्यात् ॥ ५० ॥ तथा शाला दहेत् ॥ ५१ ॥ तथा गृहपत्यादेसंबंधि कुंडलमणिमोक्तिकादिकमपहरेत् ॥ ५२ ॥ तथा श्रमणब्राह्मणादीनां दंडादिकमुपकरणजातमपहरेदित्येवं प्राक्तनाएवालापकाआदानकुपितस्य येऽभिहितास्ततएव तदभावे नाभिधातव्याइति ॥ ५३ ॥

से एगइउ समणवा माहणवा दिस्सा णाणाविहेहिं पावकम्मेहिं अत्ताण उवक्खाइत्ता नवइ अडुवाण अछराए आफालित्ता नवइ अडुवाण

फरुसवदित्ता भवइ कालेणवि से अणुपविठस्स असणवा पाणवा जाव णोदेवावेत्ता भवइ जे इमे भवइ वोनमता भारकंता अलसगा वेसलगा किवणगा निउज्झमा वणगा समणगा पव्वयंति ॥ ५४ ॥

अर्थ–हवे मिथ्यादृष्टिना पापनो अधिकार विशेष कहेछे कोइएक मिथ्यादृष्टि पुरुष, श्रमण तपस्वी साधुनो निंदक होय, ते श्रमण अथवा ब्राह्मणने निसरता पेसता (दिस्सा के०) देखीने नानाप्रकारना पापोपार्जन करीने पोताना आत्माने डुर्गतिने विष पाडे, तेज कारण कहेछे (अडुवाणअडुराएके०) क्याहिं एक साधुने देखीने पोतानी मिथ्यादृष्टीये करी एवु जाणेजे, ए मने अपशकुन थयु एम जाणतो थको पोतानी दृष्टिथागलथी ते साधुने अलगो करावे, अथवा (आफालित्ताभवइ के०) चपटीये करी साधुने आस्फाले एटले तेने तिरस्कार करे, (अडुवाणफरुसवदित्ताभवइ) अथवा कठोर वचन बोले, अरे मूर्ख! निरर्थक कायक्लेशना करनार! हे डुर्बुद्धि! माहारा आगलथी दूरथइजा एवा कठोर वचन बोले, तथा (कालेणविसेअणुपविठस्स के०) भिक्षावेलाये ते चारित्रियाने अन्न पाणीने अर्थे आव्यो देखीने तेने (असणवापाणवा के०) अशन पानादिक देता अत्यंत डुष्टपणे पोते निंदे अने (जावणोदेवावेत्ताभवइ के०) बीजो कोइ अशनपानादिक आपतो होय तेने निषेधे, तथा एवा डुर्वचन बोले के, (जेइमेभवइ के०) जे ए पाखंमीने आपवा थकी काही फल नथी एम कहे (वोनमता के०) ए तृण काष्ठना भारानो आणनारछे (भारकंता के०) ए कुटुंबना भारनो निर्वाह करी शक्यो नथी, ते कारणे मुंमित थयोछे (अलसगा के०) आलसु क्रमागत कुटुंब धर्म पालवाने असमर्थ माटे पाखंमी थयोछे (वेसलगा के०) वृषल कोइएक क्षुद्र जातिछे तथा (किवणगानिउज्झमा के०) कृपण, निरुद्यमी, कोइपण कार्यनो उद्यम करी नशके ते कारणे (वणगासमणगापव्वयंति के०) प्रव्रज्या लिए ॥ ५४ ॥

॥ दीपिका–अथैक कश्चिदनिगृहीतमिथ्यादृष्टिः साधुप्रत्यनीकः श्रमणं ब्राह्मणं साधुं दृष्ट्वा, अपशकुनायमिति मन्यमानः पापकर्मभिरात्मानमुपख्यापयिता भवति (अडुवाणेति) अथवा साधुं दृष्ट्वाऽङ्गुल्याऽप्सरायाश्च पुटिकाया आस्फालयिता भवति परुष कठिनवचाश्रयात् भिक्षाकालेपि (से) तस्य भिक्षार्थिं भिक्षार्थमनुप्रविष्टस्यान्नादेर्दापयिता न भवति प्रत्यनीकः सन्निन्दं ब्रूते ।(जेइमत्ति) पाखंडिकाः स्युस्ते चान्नमतस्तृणकाष्ठहारादिकर्मतः क्लिश्यते येषां ते चान्नमतः भाराक्रांताः कुटुंबं पालयितुमसमर्थास्ते पाखंडव्रतमाश्रयंति । तथा वृषलाअधमाः कृपणाः क्लीबाअकिंचित्कराः श्रमणाः स्युः प्रव्रज्यां गृह्णतीति॥५४॥

॥ टीका–साप्रत विपर्यस्तदृष्टयोऽगाढमिथ्यादृष्टयोऽनिधीयते (सेएगइउइत्यादि) अथै क कश्चिदनिगृहीतमिथ्यादृष्टिरनइक साधुप्रत्यनीकतया श्रमणादीना निर्गछता प्रविश ता वा स्वतश्च निर्गछन् प्रविशन् वा नानाविधै पापोपादानजूतै कर्मनिरात्मानमुपख्या यिता नवतीत्येतदेव दर्शयति । अथवेत्ययमुत्तरापेक्षया पक्षातरोपग्रहार्थ । क्वचित्साधु दर्शने सति मिथ्यात्वोपहतदृष्टितयाऽपशकुनोयमित्येव मन्यमान सन् दृष्टिपथादपसारयन् साधुमुद्दिश्यावज्ञयाप्सरायाश्च पुटिकाया स्फालयिता नवत्यथवा तत्तिरस्कारमापादय न परुष वचोब्रूयात् । तद्यथोदनमुमनिरर्थककायक्लेशपरायणदुर्बुद्देऽपसरास्ततस्तदर्शी त्रुकुटि विदध्यादसत्यवा ब्रूयात् तथा निक्षाकालेनापि (मे) तस्य निक्षोरन्येन्योनिक्षा चरेन्योऽनु पश्चात्प्रविष्टस्य सतोऽत्यतदुष्टतयाऽन्नादेर्नादापयिता नवत्यपरच दानोद्यत नि षेधयति तत्प्रत्यनीकतयैतच्च ब्रूते । इमे पाखडिकानवति तएवनूतानवतीत्याह् ।(चो मुत्ति) तृणकाष्ठहारादिकमधमकर्म विद्यते येषा ते तद्धतस्तथा नारेण कुटुबनारेण पोट्ट लिकादिनारेण वाऽऽक्राता परानग्ना सुखलिप्सवोऽलसा क्रमागत कुटुब पालयितुमसम र्थास्तया पाखमव्रतमाश्रयति । तथाचोक्त । गृहाश्रमपर इत्यादि । तथा (वेसलगत्ति) वृषलाधमा शूद्रजातयस्त्रिवर्गप्रतिवारकास्तथा कृपणा क्लीबा अकिंचित्करा श्रमणा नवति प्रव्रज्या गृह्हतीति ॥ ५४ ॥

ते इणमेव जीवित धिज्जीवित सपडिवुहेति नाइ ते पारलोगस्स अठ ए किंचिवि सिलीसति ते झुक्कति तेसोयति तेजूरति तेतिप्पति तेपिट्ट ति तेपरितप्पति तेडुक्कण जूरण सोयण तिप्पण पिट्टण परितिप्पण वहवधणपरिकिलेसाउ अप्पडिविरया नवति ते महया आरन्नेण ते महया समारन्नेण तेमहया आरन्नसमारन्नेण विरूवरूवेहि पाव कम्मे किच्चेहि उरालाइ मणुस्सगाइ नोगन्नोगाइ नुजित्तारो नवति ॥ त जहा अन्न अन्नकाले पाण पाणकाले वत्थ वत्थकाले लेणलेणकाले सयणस्यणकाले पुव्वावरचण एहाए कयबलिकम्मे कयकोउयमगल पायच्छित्ते सिरस्साएहाए कठेमालाकडे आवद्धमणिसुवन्ने कप्पियमा लामउली पडिवद्धसरीरवग्घारियसोणिसुत्तगमल्लदामकलावे अ हतवत्थपरिहिए चदणोक्खितगायसरीरे महति महालियाए कूडा गारसालाए महति महालयसि सीहासणसि इत्थीगुम्मसपरि वुडे स

वराइएण जोइणाभ्रियायमाणाए महया हयनट्टगीयवाइय ततीतल तालतुडियघणमुइंगपडुपावाइय रवेण उरालाइ माणुस्सगाइ भोग भोगाइ भुजमाणे विहरइ ॥ ५५ ॥

अर्थ–(तेइणमेवजीवितविञ्जीवि के०) ते साधुना अवर्णवादि एम कहे जे आ साधुनु जीवितव्य धिक् छे (तसपडिवुहंति के०) अने पोताने प्रशसे जे अमे नला छेए, एरीते ते इह लोक प्रतिबध साधुना निंदक मोहाध पुरुष ते साधुनो अपवाद बोले, (नाइतेपारलोगस्सअट्ठाएकिंचिविसिलीसति के०) ए पुरुष, परलोकना अर्थनो साधनार एवो स्वल्प मात्र कार्हापण अनुष्ठान करे किंतु? परने डुर्वचनादिके करी पीडा उपजावे (तेडुखति के०) ते अज्ञानना अधकारे डु खी थाय (तेसोयति के०) ते अधिक शोचे, अन्यने शोक करावे (तेजूरति के०) ते जूरे तथा परने निंदे (तेतिप्पति के०) ते पोताने तथा परने सुख थकी चूकावे (तेपिट्टति के०) ते पोते पीडाय, अने वीजाने पीडावे (तेपरितप्पति के०) ते पोते माहोमाहे दाझे, वीजाने दझावे, (तेडुखणजूरणसोयण के०) ते पुरुष, एरीते डु ख, जूरण, शोक, इत्यादिक करता करावतो थको (तिप्पण के०) सुखनो टाळनार (पिट्टण के०) पीडानो करनार, (परितिप्पण के०) पश्चात्ताप करनार, (वहवधण के०) वध बधननो करनार (परिकिलेसाउ के०) महोटा क्लेश, तेथकी (अप्पडिविरयाभवति के०) नथी निवर्त्यां ते पुरुष, एवा छता ते महोटा आरभ प्राण वध रूप तथा महोटा समारभ परजीवने किलामणा उपजावी ते महोटा आरभ समारभे करीने नाना प्रकारना पापनुष्ठाने करीने प्रधान मनुष्य भाव सबधिया मधु मासादिक अनेक काम भोगने भोगवतो थको विचरनारो थाय (तजहा के०) तेज कहेछे (अन्नअन्नकाले के०) अन्नने काले अन्न, (पाणपाणकाले के०) पाणीने काले पाणी, (वत्थवत्थकाले के०) वस्त्रने काले वस्त्र, (लेणलेणकाले के०) घरने काले घर (सयणसयणकाले के०) शयनने काले शयन, (पुव्वावरचणएहाए के०) पहेले पहोरे, अने वली पाछले पहोरे स्नान करे, (कयबलिकम्मे के०) देवतादिक निमित्त बलि कर्म करे (कयकोउय के०) अनेक कौतुक उत्तारणादिक करे, (मगलपायच्छित्ते के०) दधि, दूर्वादिक मगल करे, डु स्वप्नादिकना निवारणने अर्थे ए क्रिया करे, (सिरसाएहाएकंठेमालाकडे के०) शिर स्नान करीने कठे माला पेरे, (आविद्धमणिसुवन्नेकप्पियमालामउली के०) आवद्ध एटले गुथेहेरे? ताके मणि अने सुवर्ण, यथा योग्य स्थानके पहेरे, अनेक हार, अर्धहार, कटीसूत्र, इत्यादिक आभरणे करीने, (पडिवद्धसरीरवग्घारीय के०) प्रतिबध नाम दृढ शरीर देहने जनो ...

॥ टीका–सांप्रतं विपर्यस्तदृष्टयोऽगाढमिथ्यादृष्टयोऽभिधीयते (सेएगइउइत्यादि) अथै क कश्चिदनिगृहीतमिथ्यादृष्टिरभद्रकः साधुप्रत्यनीकतया श्रमणादीनां निर्गच्छतां प्रविश तां वा स्वतश्च निर्गच्छन् प्रविशन् वा नानाविधैः पापोपादानभूतैः कर्मभिरात्मानमुपख्या पयिता भवतीत्येतदेव दर्शयति । अथवेत्ययमुत्तरापेक्षया पक्षांतरोपग्रहार्थः । कश्चित्साधु दर्शने सति मिथ्यात्वोपहतदृष्टितयाऽपशकुनोयमित्येवं मन्यमानः सन् दृष्टिपथादपसारयन् साधुमुद्दिश्यावज्ञयाप्सरायाश्च पुटिकाया स्फालयिता भवत्यथवा तत्तिरस्कारमापाद्य न परुषं वचोब्रूयात् । तद्यथोदनमुंडनिरर्थककायक्लेशपरायणदुर्बुद्धेऽपसराग्रतस्तदसौ भ्रुकुटिं विदध्यादसत्यवा ब्रूयात् तथा भिक्षाकालेनापि (से) तस्य भिक्षोरन्येभ्योभिक्षा चरेभ्योऽनु पश्चात्प्रविष्टस्य सतोऽत्यंतदुष्टतयाऽन्नादेर्नदापयिता भवत्यपरश्च दानोद्यतं नि षेधयति तत्प्रत्यनीकतयैतच्च ब्रूते । इमे पाखंडिकाभवंति तएवभूताभवंतीत्याह । (चो सुत्ति) तृणकाष्ठहारादिकमधमकर्म विद्यते येषां ते तथा तस्तथा भारेण कुटुंबभारेण पोट्ट लिकादिभारेण वाऽऽक्रांता परामग्ना सुखलिप्सवोऽलसा क्रमागतं कुटुंबं पालयितुमसम र्थास्तथा पाखंडव्रतमाश्रयंति । तथाचोक्तं । गृहाश्रमपरं इत्यादि । तथा (वेसलगत्ति) वृषलाअधमाः शूद्रजातयस्त्रिवर्गप्रतिवारकास्तथा कृपणा क्लीबा अकिंचित्करा श्रमणा भवंति प्रव्रज्यां गृह्णंतीति ॥ ५४ ॥

ते इणमेव जीवितं धिज्जीवितं संपडिवुहेंति नाइ ते पारलोगस्स अट्ठए किंचिवि सिलीसंति ते डुक्कंति तेसोयंति तेजूरंति तेतिप्पंति तेपिट्टं ति तेपरितप्पंति तेडुक्कण जूरण सोयण तिप्पण पिट्टण परितिप्पण वहबधणपरिकिलेसाउ अप्पडिविरया भवंति ते महया आरंभेणं ते महया समारंभेणं तेमहया आरंभसमारंभेणं विरूवरूवेहिं पाव कम्मे किच्चेहिं उरालाइं मणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजित्तारो भवंति ॥ तं जहा अन्नं अन्नकाले पाणं पाणकाले वत्थं वत्थकाले लेणलेणकाले सयणसयणकाले पुव्वावरंचणं ण्हाए कयबलिकम्मे कयकोउयमंगल पायच्छित्ते सिरस्साण्हाए कंठेमालाकडे आबद्धमणिसुवन्ने कप्पियमा लामउली पडिवद्धसरीरवग्घारियसोणिसुत्तगमल्लदामकलावे अ हतवत्थपरिहिए चंदणोक्खितगायसरीरे महति महालियाए कूडा गारसालाए महति महालयंसि सींहासणंसि इत्थीगुम्मसंपरि वुडे स

र्णानि येन सतथा अहतमखंडितं वस्त्रं परिहितं येन सतथा चंदनेन उक्षितं सिक्तं गात्रं शरीरावयवायस्य सतथा नानाविधविलेपनावलिप्तइत्यर्थः । महल्यामुच्चाया (महालियाइति) विस्तीर्णाया कूटागारशालीया महति महालये विस्तीर्णे सिंहासने भद्रासने स्थितः । स्त्रीगुल्मेन स्त्रियोयुवतयः गुल्मोऽन्यः परिवारस्तेन परिवृतः, निशि सर्वरात्रिसंबंधिना ज्योतिषा प्रदीपादिभावेन क्रियमाणेन दीप्यमानेन महता बृहत्तरेण प्रहतनाट्यगीतवादित्रतंत्रीतलतालत्रुटिकघनमृदंगपटुप्रवादितरवेण उदारान् मानुष्यकान् भोगभोगान् भुंजानोविहरति ॥ ५५ ॥

॥ टीका–सांप्रतमेषामगारिकाणामत्यंतविपर्यस्तमतीनामसद्वृत्तमाविर्भावयन्नाह । (तेइणमेवइत्यादि) तेहि साधुवर्गापवादिनः सद्धर्मप्रत्यनीकाइदमेव जीवितं परापवादोद्घाटनजीवितं धिक्जीवितं कुत्सितं जीवितं साधुजुगुप्सापरायणं संप्रतिब्रूहत्येतदेवासदृत्तजीवितं प्रशंसंतीति भावः । ते चेह लोकप्रतिबद्धाः साधुजुगुप्साजीविनोमोहाधाः साधूनपवदंति नापिच ते पारलौकिकस्यार्थस्य साधनमनुष्ठानं किंचिदपि स्वल्पमपि शिल्प्यते समाश्रयंति । केवलं ते परान् साधून् वाचादिभिरनुष्ठानैर्दुःखयंति पीडामुत्पादयंति आत्मनः परेषांच । तथा ते ज्ञानाधास्तथा तत्कुर्वंति येनाधिकं शोचंते परानपि शोचयंति दुर्भापितादिभिः शोकं चोत्पादयंति तथा ते परान् (जूरयंति) गर्हति तथा तिप्यंति सुखाद्यावयत्यात्मानं पराश्च तथा ते वराकायपुष्टधर्माणोऽसदनुष्ठानाः स्वतः पीडयंते पराश्च पीडयंति तयाते पापेन कर्मणा परितप्यतेंऽतर्दह्यंते पराश्च परितापयंति । तदेवं तेऽसहृत्तयः सतोदुःखीनः शोचनादिक्लेशादप्रतिविरताः सदा भवंति । एवं भूताश्च संतस्ते महताऽऽरंभेण प्राणिव्यापादनरूपेण तयोभाभ्यामप्यारंभसमारंभाभ्यां विरूपरूपैश्च नानाप्रकारैः सावद्यानुष्ठानैः पापकर्मकृत्यैरुदारानत्यंतोद्भटान्समग्रसामग्रीकान् मधुमद्यमांसाद्युपेतान् मानुष्यकान् मनुष्यभवयोग्यान् भोगेभ्योप्युत्कटान् भोगान् ते सावद्यानुष्ठायिनोभोक्तारोभवति ॥ एतदेवदर्शयितुमाह । (तंजहेत्यादि) तद्यथेत्युपदर्शने । अन्नमन्नकाले यथेप्सितं तत्पापानुष्ठानात्संपद्यते । एवं पानवस्त्रशयनासनादिकमपि । सर्वमेतद्यथाकालं सपूर्वापरं संपद्यते सहपूर्वेण पूर्वाह्णकर्तव्येनापरेण चापराह्णकर्तव्येन । यद्दिवा पूर्वं यत्क्रियते स्नानादिकं तथा परंच यत्क्रियते विलेपनभाजनादिकं तेन सह वर्ततइति सपूर्वापरं । इदमुक्तंभवति । यद्यदा प्रार्थ्यते तत्तदा संपद्यतइति । अभिलषितार्थप्राप्तमेव लेशतोदर्शयितुमाह । तद्यथा । विभूत्या स्नातस्तथा कृतं देवतादिनिमित्तं बलिकर्म येन स तथा तथाकृतानि कौतुकान्यवतारणकादीनि मंगलानिच सुवर्णचंदनदध्यक्षतदूर्वासिद्धार्थकादर्शस्पर्शनादीनि तथा दुःस्वप्नादिप्रतिघातकानि प्रायश्चित्तानि येन सकृतकौतुकम

प्रलंबित (सोणिसुत्तगमल्लदामकलावे के०) कडने विषे कदोरोठे जेने एवो, अने फुलनीमा लाना समूह पेरतो एवो, (अहतवत्थपरिहिए के०) अत्यंत बहु धोला निर्दोष वस्त्र पेहेरे, (चंदणोकितगायसरीरे के०) चंदने करी गात्रने विलेपन करे एवो थको, (महतिम हालियाए के०) अत्यंत महोटी (कूडागारसालाए के०) कूटने आकारे शिला तेने वि षे (महतिमहालयसिंसीहासणंसि के०) महोटा सिंहासने बेगे थको (इत्थिगुम्मसप रिवुडे के०) स्त्रीना वृंदे पर वर्यो (सव्वराइएण के०) सर्व रात्री सबंधि (जोइणा के०) प्रदीपनी ज्योति (झियायमाणाण के०) तेना अजवाला थकि (महयाहयनट्टगीयवाइ य के०) महोटा नट्ट, गीत, वाद्यादिक वाजीत्रादिकने शब्दे, (ततीतलतालतुडियतघणमुइ गपरुपावाइयरवेण के०) वीणा, हाथना ताल, काशियाना ताल, तुरी एटले वाजीत्र, हाथ विशेष, घन ध्वनि सरखो जेनो घोषठे, मृदंग, पटह, माह्या पुरुषे वजाव्याठे, तेने शब्दे करी, (उरालाइमाणुस्सगाइ के०) उदार प्रधान मनुष्य संबधीया (नोगनोगाइ के०) कामनोगने (नुजमाणे के०) नोगवतो थको (विहरइ) विचरे ॥ ५५ ॥

॥ दीपिका–अथ गृहस्थानामत्यंतविपरीतमतीनामसदाचारत्वं प्रकटयन्नाह । ते साधुधर्मप्रत्यनीकाइदमेव जीवितं परापवादप्रकटनजीवितं धिक्जीवितं कुत्सितं जीवि तं संप्रतिबृंहति प्रशंसंति ते परलोकस्यार्थाय किंचित्सदनुष्ठानं न श्लिष्यते नाश्रयते तेऽ पवादैः परान् डुःखयंति आत्मानंच अज्ञानाधास्तत्कुर्वंति येन शोचते परानपि शोचयति ते परान् (जूरयति) गर्हंति ते स्वकर्मभिः पीड्यते (तेतिप्पति) सुखाश्च्यावयत्यात्मा नं पराश्च ते पापेन परितप्यतेऽतर्दह्यते पराश्च परितापयंति । एवं ते डुःखनशोचनादि क्लेशादिप्रतिविरता स्युस्ते महतारंनेण प्राणिघातरूपेण महता समारंनेण प्राणि परितापरूपेण विरूपरूपैश्च नानाविधैः पापकर्मकृत्यैरुदारानुत्कृष्टान्मद्यमांसादियुतान् मानुष्यकान् मनुष्यनवयोग्यान् नोगेन्योप्युत्कटानोगानोगनोगास्तान् नोक्तार स्युः ॥ तद्यथा अन्नमन्नकाले यथेप्सितं तस्य पापानुष्ठानात्संपद्यते । एवं पानवस्त्रशयना सनादिकं संपूर्वापरं सहपूर्वकृत्येन स्नानादिना परकृत्येन विलेपननोजनादिना वर्ततइति संपूर्वापरं । कोऽर्थः । यद्यदा प्रार्थ्यते तत्तदा संपद्यतइति । तद्यथा । स्नातः कृ तं देवतानिमित्तं बलिकर्म येन स कृतबलिकर्मा कृतानि कौतुकान्यवतारणकादीनि मंगल सुवर्णचंदनाक्षतदूर्वासिद्धार्थादीनि प्रायश्चित्तानि डुःस्वप्नप्रतिघातकानि येन स कृतकौतुक मंगलप्रायश्चित्तः । शिरसि स्नातः कल्पितोयोमालाप्रधानोमुकुटः सविद्यते यस्य स क ल्पितमालामुकुटी प्रतिबद्धशरीरोद्दढागः । (वग्घारित) प्रलंबित श्रोणी श्रोत्रं कटिसू त्रं मल्लदामकलापश्च येन सतथा कृतः कृतमालः । आविद्धानि परिहितानि मणिसुव

र्णानि येन सतथा अहतमखंडितं वस्त्रं परिहितं येन सतथा चंदनेन उक्षितं सिक्त गात्रं शरीरावयवायस्य सतथा नानाविधविलेपनावलिप्तइत्यर्थं । महल्यामुच्चाया (महालियाइति) विस्तीर्णाया कूटागारशालीया महति महालये विस्तीर्णे सिंहासने नडास ने स्थित । स्त्रीगुल्मेन स्त्रियोयुवतय गुल्मोऽन्य परिवारस्तेन परिवृत, निशि सर्वरा त्रिसवधिना ज्योतिषा प्रदीपादिनिवेन क्रियमाणेन दीप्यमानेन महता बृहत्तरेण प्रहत नाटचगीतवादित्रतंत्रीतलतालत्रुटिकघनमृदंगपटुप्रवादितरवेण उदारान् मानुष्यकान् नो गन्नोगान् नुजानोविहरति ॥ ५५ ॥

॥ टीका–सांप्रतमेषामगारिकाणामत्यतविपर्यस्तमतीनामसद्वृत्तमाविर्भावयन्नाह । (तेइणमेवइत्यादि) तेहि साधुवर्गापवादिन सद्धर्मप्रत्यनीकाइदमेव जीवितं परापवादो द्धाटनजीवितं धिक्जीवितं कुत्सितं जीवितं साधुजुगुप्सापरायण सप्रतिवृद्धत्येतदेवासद्वृ त्तजीवितं प्रशसतीति नाव । ते चेह लोकप्रतिवद्धा साधुजुगुप्साजीविनोमोहांधा साधूनप वदति नापिच ते पारलौकिकस्यार्थस्य साधनमनुष्ठानं किंचिदपि स्वल्पमपि श्लिष्यते स माश्रयति । केवलं ते परान् साधून् वाचादिनिरनुष्ठानैर्दु खयति पीडामुत्पादयति आत्म न परेषाच । तथा ते ज्ञानांधास्तथा तत्कुर्वंति येनाधिकं शोचते परानपि शोचयति दु र्भाषितादिनि शोकं चोत्पादयति तथा ते परान् (जूरयति) गर्हति तथा तिप्पति सुखा च्च्यावयत्यात्मानं पराश्च तथा ते वराकाअपुण्यधर्माणोऽसदनुष्ठाना स्वत पीडयते परा श्च पीडयति तथाते पापेन कर्मणा परितप्यतेऽतर्दह्यते पराश्च परितापयति । तदेव तेऽ सहनय सतोडु खीन शोचनादिक्लेशादप्रतिविरता सदा नवति । एव नूताश्च सतस्ते महताऽऽरंनेण प्राणिव्यापादनरूपेण तथोनान्यामप्यारंनसमारंनान्या विरूपरूपैश्च नाना प्रकारै सावद्यानुष्ठाने पापकर्मकृत्यैरुदारानत्यतोत्कटान्समग्रसामग्रीकान् मधुमद्यमा सायुपेतान् मानुष्यकान् मनुष्यनवयोग्यान् नोगेन्योप्युत्कटान् नोगान् ते सावद्यानुष्ठा यिनानोक्तारोनवति ॥ एतदेवदर्शयितुमाह । (तंजहेत्यादि) तद्यथेत्युपदर्शने । अन्नमन्नकाले यथेप्सितं तत्पापानुष्ठानात्संपद्यते । एवं पानवस्त्रशयनासनादिकमपि । सर्वमेतद्यथाकाल सपूर्वापरं संपद्यते सहपूर्वेण पूर्वाह्णकर्तव्येनापरेण चापराह्णकर्तव्येन । यदिवा पूर्वं यत्क्रियते स्नानादिकं तथा परच यत्क्रियते विलेपननोजनादिकं तेन सह वर्ततइति सपूर्वा पर । इदमुक्तंनवति । यद्यदा प्रार्थ्यते तत्तदा संपद्यतइति । अनिलषितार्थप्राप्तमेव ले शतोदर्शयितुमाह । तद्यथा । विनूत्या स्नातस्तथा कृतं देवतादिनिमित्तं बलिकर्म येन स तथा तथाकृतानि कौतुकान्यवतारणकादीनि मंगलानिच सुवर्णचंदनदध्यक्षतदूर्वासिद्धा र्थकादर्शस्पर्शनादीनि तथा दुःस्वप्नादिप्रतिघातकानि प्रायश्चित्तानि येन सकृतकौतुकम

प्रलंबित (सोणिसुत्तगमल्लदामकलावे के०) कडने विषे कदोरोछे जेने एवो, अने फुलनीमा लाना समूह पेरतो एवो, (अहतवत्थपरिहिए के०) अत्यंत बहु धोला निर्दोष वस्त्र पेहेरे, (चंदणोक्खितगायसरीरे के०) चंदने करी गात्रने विलेपन करे एवो थको, (महतिम हालियाए के०) अत्यंत महोटी (कूडागारसालाए के०) कूटने आकारे शिला तेने वि षे (महतिमहालयसिंसीहासणंसि के०) महोटा सिंहासने बेगे थको (इत्थिगुम्मसप रिवुडे के०) स्त्रीना वृंदे पर वस्यो (सव्वराइएण के०) सर्व रात्री सर्वथि (जोइणा के०) प्रदीपनी ज्योति (झियायमाणाण के०) तेना अजवाला थकि (महयाहयनट्टगीयवाइ य के०) महोटा नट्ट, गीत, वाद्यादिक वाजीत्रादिकने शब्दे, (ततीतलतालतुडियतघणमुइं गपडुपावाइयरवेण के०) वीणा, हाथना ताल, काशियाना ताल, तुरी एटले वाजीत्र, हाथ विशेष, घन ध्वनि सरखो जेनो घोषछे, मृदंग, पटह, माह्या पुरुषे वजाड्याछे, तेने शब्दे करी, (उरालाइमाणुस्सगाइ के०) उदार प्रधान मनुष्य संबधीया (जोगनोगाइ के०) कामनोगने (भुंजमाणे के०) जोगवतो थको (विहरइ) विचरे ॥ ५५ ॥

॥ दीपिका—अथ गृहस्थानामत्यंतविपरीतमतीनामसदाचारत्वं प्रकटयन्नाह । ते साधुधर्मप्रत्यनीकाइदमेव जीवितं परापवादप्रकटनजीवितं धिक्जीवितं कुत्सितं जीवि तं संप्रतिबृंहति प्रशंसति ते परलोकस्यार्थाय किंचित्सदनुष्ठानं न श्लिष्यते नाश्रयते तेऽ पवादे परान् दुःखयंति आत्मानंच अज्ञानाधास्तत्कुर्वंति येन शोचते परानपि शोचयंति ते परान् (जूरयति) गर्हंति ते स्वकर्मभिः पीड्यते (तेतिप्पति) सुखाद्यावयत्यात्मा नं पराश्च ते पापेन परितप्यतेऽतर्दह्यते पराश्च परितापयंति । एवं ते दुःखनशोचनादि क्लेशादिप्रतिविरता स्युस्ते महतारंभेण प्राणिघातरूपेण महता समारंभेण प्राणि परितापरूपेण विरूपरूपैश्च नानाविधैः पापकर्मकृत्यैरुदारानुत्कृष्टान्मद्यमांसादियुतान् मानुष्यकान् मनुष्यनवयोग्यान् जोगेभ्योऽत्युत्कटाभोगाभोगभोगास्तान् नोक्तार स्युः ॥ तद्यथा अन्नमन्नकाले यथेप्सितं तस्य पापानुष्ठानात्संपद्यते । एवं पानवस्त्रशयना सनादिकं सपूर्वापरं सहपूर्वकृत्येन स्नानादिना परकृत्येन विलेपनजोजनादिना वर्ततइति सपूर्वापरं । कोऽर्थः । यद्यदा प्रार्थ्यते तत्तदा संपद्यतइति । तद्यथा । स्नातः कृ तं देवतानिमित्तं बलिकर्म येन स कृतबलिकर्मा कृतानि कौतुकान्यवतारणकादीनि मंगल सुवर्णचंदनाक्षतदूर्वासिद्धार्थादीनि प्रायश्चित्तानि दुःखप्रतिघातकानि येन स कृतकौतुक मंगलप्रायश्चित्तः । शिरसि स्नातः कल्पितोयोमालाप्रधानमुकुटः संविद्यते यस्य स क ल्पितमालामुकुटी प्रतिबद्धशरीरोदृढांगः । (वग्घारित) प्रलंबितः श्रोणी श्रोत्रं कटिसू त्रं मल्लदामकलापश्च येन सतथा कृते कृतमालः । आविद्धानि परिहितानि मणिसुव

र्णानि येन सतथा अहतमखंडितं वस्त्रं परिहितं येन सतथा चंदनेन उक्षितं सिक्तं गात्रं शरीरावयवायस्य सतथा नानाविधविलेपनावलिप्तइत्यर्थ । महत्यामुच्चाया (महालियाऽठि) विस्तीर्णाया कूटागारशालीया महति महालये विस्तीर्णे सिंहासने नद्रासने स्थित । स्त्रीगुल्मेन स्त्रियोयुवतय गुल्मोऽन्य परिवारस्तेन परिवृत , निशि सर्वरात्रिसवधिना ज्योतिषा प्रदीपादिनवेन क्रियमाणेन दीप्यमानेन महता बृहत्तरेण प्रहतनाट्यगीतवादित्रतंत्रीतलतालत्रुटिकघनमृदंगपटुप्रवादितरवेण उदारान् मानुष्यकान् नोगनोगान् नुजानोविहरति ॥ ५५ ॥

॥ टीका–सांप्रतमेषामगारिकाणामत्यंतविपर्यस्तमतीनामसद्वृत्तमाविर्नावयन्नाह । (तेइणमेवइत्यादि) तेहि साधुवर्गापवादिन सद्धर्मप्रत्यनीकाइदमेव जीवितं परापवादोद्घाटनजीवितं धिक्जीवितं कुत्सितं जीवितं साधुजुगुप्सापरायण सप्रतिव्रहत्येतदेवासद्वृत्तजीवितं प्रशंसतीति नाव । ते चेह लोकप्रतिबद्धा साधुजुगुप्साजीविनोमोहांधा साधूनपवन्ति नापिच ते पारलौकिकस्यार्थस्य साधनमनुष्ठानं किंचिदपि स्वल्पमपि शिलप्यते समाश्रयति । केवलं ते परान् साधून् वाचादिनिरनुष्ठानैर्डु खयति पीडामुत्पादयति आत्मन परेषांच । तथा ते ज्ञानाधास्तथा तत्कुर्वंति येनाधिकं शोचते परानपि शोचयति डुर्नापितादिनि शोकं चोत्पादयति तथा ते परान् (जूरयति) गर्हति तथा तिप्यति सुखाद्यावयत्यात्मानं पराश्च तथा ते वराकाअपुष्टधर्माणोऽसदनुष्ठाना स्वतं पीडयते पराश्च पीडयति तथाते पापेन कर्मणा परितप्यतेंऽतर्दह्यते पराश्च परितापयति । तदेवं तेऽसहत्वय सतोड्खीन शोचनादिक्लेशादप्रतिविरत्ता सदा नवति । एवं नूताश्च संतस्ते महताऽऽरंनेण प्राणिव्यापादनरूपेण तथोनान्यामप्यारंनसमारंनाभ्यां विरूपरूपैश्च नानाप्रकारैः सावद्यानुष्ठाने पापकर्मरुत्यैरुदारानत्यंतोत्कटान्समग्रसामग्रीकान् मधुमध्यमांसाद्युपेतान् मानुष्यकान् मनुष्यनवयोग्यान् नोगेन्योप्युत्कटान् नोगान् ते सावद्यानुष्ठायिनोनोक्तारोनवति ॥ एतदेवदर्शयितुमाह । (तजहेत्यादि) तद्यथेत्युपदर्शने । अन्नमन्नकाले यथेप्सितं तत्पापानुष्ठानात्संपद्यते । एवं पानवस्त्रशयनासनादिकमपि । सर्वमेतद्यथाकालं सपूर्वापरं संपद्यते सहपूर्वेण पूर्वाण्हकर्तव्येनापरेण चापराण्हकर्तव्येन । यदिवा पूर्वं यत्क्रियते स्नानादिकं तथा परंच यत्क्रियते विलेपननोजनादिकं तेन सह वर्ततइति सपूर्वापर । इदमुक्तंनवति । यद्यदा प्रार्थ्यते तत्तदा संपद्यतइति । अनिलषितार्थप्राप्तमेव लेशतोदर्शयितुमाह । तद्यथा । विनूत्या स्नातस्तथा रुतं देवतादिनिमित्तं बलिकर्म येन सतथा तथारुतानि कौतुकान्यवतारणकादीनि मंगलानिच सुवर्णचंदनदध्यक्षतदूर्वासिद्धार्थकादर्शस्पर्शनादीनि तथा डुःस्वप्नादिप्रतिघातकानि प्रायश्चित्तानि येन सरुतकौतुकम

प्रलंबित (सोणिसुत्तगमल्लदामकलावे के०) कडने विषे कंदोरोछे जेने एवो, अने फुलनीमा लाना समूह पेहेरतो एवो, (अहतवत्थपरिहिए के०) अत्यंत बहु धोला निर्दोष वस्त्र पेहेरे, (चंदणोकितगायसरीरे के०) चंदने करी गात्रने विलेपन करे एवो थको, (महतिम हालियाए के०) अत्यंत महोटी (कूडागारसालाए के०) कूटने आकारे शिला तेने वि षे (महतिमहालयसिंसीहासणंसि के०) महोटा सिंहासने बेगे थको (इच्छिगुम्मसंप रिवुडे के०) स्त्रीना वृंदे परवर्यो (सव्वराइएणं के०) सर्व रात्री संबधि (जोइणा के०) प्रदीपनी ज्योति (झियायमाणाए के०) तेना अजवाला थकि (महयाहयनट्टगीयवाइ य के०) महोटा नट्ट, गीत, वाद्यादिक वाजींत्रादिकने शब्दे, (ततीतलतालतुडियतघणमुइ गपरुपावाइयरवेण के०) वीणा, हाथना ताल, काशियाना ताल, तुरी एटले वाजींत्र, हाथ विशेष, घन ध्वनि सरखो जेनो घोषछे, मृदंग, पटह, माह्या पुरुषे वजाव्याछे, तेने शब्दे करी, (उरालाइमाणुस्सगाइ के०) उदार प्रधान मनुष्य संबंधीया (नोगनोगाइ के०) कामनोगने (जुंजमाणे के०) नोगवतो थको (विहरइ) विचरे ॥ ५५ ॥

॥ दीपिका–अथ गृहस्थानामत्यंतविपरीतमतीनामसदाचारत्वं प्रकटयन्नाह । ते साधुधर्मप्रत्यनीकाइदमेव जीवितं परापवादप्रकटनजीवितं धिक्जीवितं कुत्सितं जीवि तं संप्रतिबृंहति प्रशंसंति ते परलोकस्यार्थाय किंचित्सदनुष्ठानं न श्लिष्यते नाश्रयते तेऽ पवादे परान् दुःखयंति आत्मानंच अज्ञानाधास्तत्कुर्वंति येन शोचंते परानपि शोचयंति ते परान् (जूरयंति) गर्हंति ते स्वकर्मभिः पीड्यंते (तेतिप्पति) सुखाद्च्यावयत्यात्मा नं पराश्च ते पापेन परितप्यतेऽतर्दह्यते पराश्च परितापयंति । एवं ते दुःखनशोचनादि क्लेशादिप्रतिविरता स्युस्ते महतारंनेण प्राणिघातरूपेण महता समारंनेण प्राणि परितापरूपेण विरूपरूपैश्च नानाविधैः पापकर्मकृत्यैरुदारानुत्कृष्टान्मद्यमांसादियुतान् मानुष्यकान् मनुष्यनवयोग्यान् नोगेच्योप्युत्कटानोगाचोगनोगास्तान् नोक्तार स्यु ॥ तद्यथा अन्नमन्नकाले यथेप्सितं तस्य पापानुष्ठानात्संपद्यते । एवं पानवस्त्रशयना सनादिकं संपूर्वापरं सत्पूर्वकृत्येन स्नानादिना परकृत्येन विलेपननोजनादिना वर्ततइति संपूर्वापरं । कोऽर्थः । यद्यदा प्रार्थ्यते तत्तदा संपद्यतइति । तद्यथा । स्नातः कृ तं देवतानिमित्तं बलिकर्म येन स कृतबलिकर्मा कृतानि कौतुकान्यवतारणकादीनि मंगल सुवर्णचंदनाद्दतदूर्वासिद्धार्थादीनि प्रायश्चित्तानि दुःखप्रतिघातकानि येन स कृतकौतुक मंगलप्रायश्चित्तः । शिरसि स्नातः कल्पितयोमालाप्रधानोमुकुटः संविद्यते यस्य स क ल्पितमालामुकुटी प्रतिबद्धशरीरोदृढांगः । (वग्घारित) प्रलंबित श्रोणी श्रोत्रं कटिसू त्रं मल्लदामकलापश्च येन सतथा कटे कृतमालः । आविद्धानि परिहितानि मणिसुव

जेवो जीवछे, निश्चे ए पुरुष घणा लोकने आजीविकानो करनारछे, एने (अन्नेणविचण उव जिवति के०) बीजा घणा पुरुषो सेवेछे, एरीते ते राजादिकने देखीने अनार्य लोको कहे अने तेना वखाण करे हवे (तमेव पासित्ता के०) वली ते राजादिकने देखीने (आ रियावयति के०) आर्य पुरुष जे होयते एवु कहेके (अनिक्कतकूरकम्मेखलुअय पुरिसे के०) निश्चे ए पुरुष अत्यत क्रूर कर्मी हिंसादिक क्रियाने विषे प्रवर्त्तेछे, (अतिधूत्तेके०) तथा ए पुरुष अत्यत धूर्त्तछे घणा कर्म करी सहितछे, तथा (अइयायरक्केके०) घणा कर्मकरी आपणा आत्माने ससार माहे राखनारछे, (दाहिणगामिए नेरइए के०) त था ए दक्षणगामि नारकीमा उपजनार, प्राय जे क्रूरकर्मना करनार, साधुना निंदक, सा धुने दान आपवानो निषेध करनार होय, ते दक्षिणगामि नारकीमाहे उपजे तेमाटे ए पुरुष दक्षिण गामि जाणवो (कण्हपक्खिएके०) कृष्ण पाक्षिक नारकी थशे, कृष्ण पक्षि क नारकी माहे शु विशेषछे? ते कहेछे (आगमिस्साण दुल्लहवोहियाएयाविभविस्सइ के०) आगमिक काले दुर्लभ बाधी थशे एटले शु कह्यु? जे, दिशि माहे दक्षिणदिशि, अने अप्रशस्त गतिमाहे नरकगति, तथा पक्ष माहे कृष्ण पक्ष, एटला वाना अप्रशस्तछे तेम विषयाध पुरुष जे छेते परलोकना निस्पृहि, एवा साधुने देखीने तेने दानातरायना कर नार थायतो एवा अप्रशस्त पुरुषने बोधबीज पामवु दुर्लभछे तथा जे ए थकी विपरी त विषयने विषे निस्पृहि, परलोकना भीरु, तथा साधुनी प्रशसाना करनार, एवा पुरुष उत्तरदिशि तथा देवतानी गति अने शुक्लपक्ष, एटला वाना पामे तेने मनुष्य भवमा बो धबीज पामवु सुलभछे ॥ ५६ ॥

॥ दीपिका–तस्यैवभूतस्य पुरुषस्य कचित्कार्ये सति एकपुरुषमाज्ञापयतोयाव च्चत्वार पचवा पुरुषाअनुक्ताएव समुपतिष्ठते एव वदति च भण स्वामिन्! किकु र्मोवय किमाहराम आनयाम? किमुपनयामोढोकयाम? (किंआचिट्ठामोत्ति) किंभू षणादि परिधापयाम? कि युष्माक हृदयेप्सित? किंयुष्माकमास्यकस्य मुखस्य (सयइ त्ति) स्वदते स्वादु प्रतिभाति? अथवा यदेव तवास्यस्य भवति तव मुखान्निर्गच्छति तदे व वय कुर्मइति। (तमेवपासित्तत्ति) य राजान तथाक्रीडमान दृष्ट्वा अनार्याएव वदति देव खलु अय पुरुषोदेवस्नातकोदेवश्रेष्ठोवहूनामुपजीव्योऽन्योप्येनमुपजीवति तथा त तादृशमसदाचार दृष्ट्वाऽर्याविवेकिनोवदति अनिक्रांतक्रूरकर्मा अय पुरुषोहिंसादि क्रियाप्रवृत्त अतिधूर्तोवहुलकर्मा अतीवात्मान पापैरक्षतीत्यत्यात्मरक्ष दक्षिणदिग्गामी नैरयिक कृष्णपाक्षिक। कोर्थ। य क्रूरकर्मा साधुप्रत्यनीकस्तद्दानविषेधक सदक्षिण दिशि नरकतिर्यगादिरुत्पद्यते। दिक्षु मध्ये दक्षिणा दिक् अप्रशस्ता गतिषु नरकगति प

गलप्रायश्चित्त । तथा कल्पितश्चासौ मालाप्रधानोमुकुटश्च सतथा विद्यते यस्य सनवति कल्पितमालामुकुटी । तथा प्रतिबद्धशरीरोद्दटावयवकायोयुवेत्यर्थ । तथा (वग्धा रियति) प्रलंबित श्रोणीसूत्र कटिसूत्र मल्लदामकलापश्च येन सतथा तदेवमसौ शिरसि स्नात नानाविधविलेपनावलिप्तश्च कंठे कृतमालस्तथाऽपरयथोक्तभूषणभूषित सन्महत्या मुत्राया (महालियाएत्ति) विस्तीर्णाया कूटागारशालाया तथा महति महालये विस्ती र्णे सिंहासने भद्रासने समुपविष्ट स्त्रीवृंदेन युवतिजनेन सार्द्धमपरपरिवारेण सपरिवृतो वेष्टितोयस्तथा महता बृहत्तरेण प्रहतगीतवादित्रतत्र्यादिरवेणोदारान्मानुष्यकान भोगा भोगान्भुजानोविहरति प्रविचरति विजृंभतीत्यर्थ ॥ ५५ ॥

तस्सण एगमवि आणवेमाणस्स जाव चत्तारि पचजणा आवुत्ता चेव अब्भुठंति भणह देवाणुप्पिया किंकरेमो किंआहारेमो किंउवणेमो किं आचिट्ठामो किंभेहिय इच्छिय किंभेआसगस्स सयइ तमेवपासित्ता अणारिया एव वयंति देवे खलु अयपुरिसे देवसिणाए खलु अय पुरिसे देवजीवणिज्जे खलु अयपुरिसे अन्नेण विचण उवजीवति तमेव पासित्ता आरिया वयंति अभिक्कतकूरकम्मे खलु अयपुरिसे अति धुत्ते अइयायरक्खे दाहिणगामिए नेरइए कण्हपक्खिए आगमिस्साण दुल्लहबोहियाएयावि भविस्सइ ॥ ५६ ॥

अर्थ–(तस्सणएगमविआणवेमाणस्सके०) ते पुरुषने कोइ एक कार्य उपने एक माणसने आज्ञा देता (जावचत्तारिपचजणाके०) यावत् चार, पांच, पुरुष (आवुत्ताचेव के०) अणबो लाव्या (अब्भुठंतिके०) उठी सावधान थइने एम कहेके, (भणहदेवाणुप्पियाके०) हेस्वामि! आज्ञा आपो ? हे देवाणुप्रिय सरल स्वभावि! (किंकरेमोके०) शु कार्य अमे करियें ? जेवो आपनो हुकम होय ते करवाने तैयारछैए (किंआहारेमो के०) केवो आहार क रशो ? किंवा केवो आहार निपजावीये ? (किंउवणेमोके०) शु वस्तु लावी आपु? (किं आचिट्ठामो के०) शु स्थापना करू ? तथा केवा आभरण पेरशो ? (किंभेहियइच्छिय के०) शु तमारा हृदयने वल्लभछे एटले शु इच्छोछो ? (किंभेआसगस्सईके०) शु तमारा मुखने सयई रुचेछे ? जेकाइ तमारा मुख माहेथी वचन निकले ते अमे करिये, (तमे वपासित्ताके०) ते राजादिकने देखीने (अणारियाएववयतिके०) अनार्य एवु कहे के, (देवेखलु अयपुरिसे के०) खलुइति निश्चे ए पुरुष देव, (देवसिणाए खलु अय पुरिसे के०) ए पुरुष देव स्नातक, (देवेजीवणिज्जे खलुअय पुरिसे के०) ए पुरुषनो देवताना

जेवो जीवछे, निश्चे ए पुरुष घणा लोकने आजीविकानो करनारछे, एने (अन्नेणविचण उव जिवति के०) बीजा घणा पुरुषो सेवेछे, एरीते ते राजादिकने देखीने अनार्य लोको कहे अने तेना वखाण करे हवे (तमेव पासित्ता के०) वली ते राजादिकने देखीने (आ रियावयति के०) आर्य पुरुष जे होयते एवुं कहेके (अभिक्कतकूरकम्मेखलुअयं पुरिसे के०) निश्चे ए पुरुष अत्यंत क्रूर कर्मी हिंसादिक क्रियाने विषे प्रवर्त्तेछे, (अतिधूत्तेके०) तथा ए पुरुष अत्यंत धूर्त्तछे घणा कर्म करी सहितछे, तथा (अइयायरक्खेके०) घणा कर्मकरी आपणा आत्माने संसार माहे राखनारछे, (दाहिणगामिए नेरइए के०) त था ए दक्षणगामि नारकीमां उपजनार, प्राय जे क्रूरकर्मना करनार, साधुना निंदक, सा धुने दान आपवानो निषेध करनार होय, ते दक्षिणगामि नारकीमाहे उपजे तेमाटे ए पुरुष दक्षिण गामि जाणवो (कण्हपक्खिएके०) कृष्ण पाक्षिक नारकी थशे, कृष्ण पक्षि क नारकी माहे शुं विशेषछे? ते कहेछे (आगमिस्साणं दुल्लहबोहियाएयावि भविस्सइ के०) आगमिक काले दुर्लभ बोधी थशे एटले शुं कह्युं? जे, दिशि माहे दक्षिणदिशि, अने अप्रशस्त गतिमाहे नरकगति, तथा पक्ष माहे कृष्ण पक्ष, एटला वाना अप्रशस्तछे तेम विषयाध पुरुष जे छेते परलोकना निस्पृहि, एवा साधुने देखीने तेने दानांतरायना कर नार थायतो एवा अप्रशस्त पुरुषने बोधबीज पामवुं दुर्लभछे तथा जे ए थकी विपरी त विषयने विषे निस्पृहि, परलोकना भीरु, तथा साधुनी प्रशंसाना करनार, एवा पुरुष उत्तरदिशि तथा देवतानी गति अने शुक्लपक्ष, एटला वाना पामे तेने मनुष्य भवमां बो धबीज पामवुं सुलभछे ॥ ५६ ॥

॥ दीपिका–तस्यैवभूतस्य पुरुषस्य क्वचित्कार्ये सति एकपुरुषमाज्ञापयतोयाव च्चत्वारः पंचवा पुरुषाअनुक्ताएव समुपतिष्ठंते एवं वदंति च भण स्वामिन्! किंकु र्मोवयं किमाहराम आनयाम? किमुपनयामोढोकयाम? (किंआचिठ्ठामोत्ति) किंनू पणादि परिधापयाम? किं युष्माकं हृदयेप्सितं? किंयुष्माकमास्यकस्य मुखस्य (सयइ त्ति) स्वदते स्वादु प्रतिभाति? अथवा यदेव तवास्यस्य भवति तव मुखान्निर्गछति तदे व वयं कुर्मइति। (तमेवपासित्तत्ति) यं राजानं तथाक्रीडमानं दृष्ट्वा अनार्याएव वदंति देव खलु अयं पुरुषोदेवस्नातकोदेवश्रेष्ठोबहूनामुपजीव्योऽन्योप्येनमुपजीवति तथा तं तादृशमसदाचारं दृष्ट्वाऽर्याविवेकिनोवदंति अभिक्रांतक्रूरकर्मा अयं पुरुषोहिंसादि क्रियाप्रवृत्तः अतिधूर्तोबहुलकर्मा अतीवात्मानं पापैरक्षतीत्यत्यात्मरक्षः दक्षिणदिग्गामी नैरयिकः कृष्णपाक्षिकः। कोर्थः। यः क्रूरकर्मा साधुप्रत्यनीकस्तद्दाननिषेधकः सदक्षिण दिशि नरकतिर्यगादिषूत्पद्यते। दिक्षु मध्ये दक्षिणा दिक् अप्रशस्ता गतिषु नरकगति प

क्षयो रुष्णपक्ष । ततोऽस्य दिगादिकमप्रशस्तमुक्त । अन्यदपि अबोधिलाजादिकं योज्यं । (आगमिस्सन्ति) सचाऽऽगामिकाले डुर्ल्लभबोधिक स्यादिति ॥ ५६ ॥

॥ टीका–तस्यच क्वचित्प्रयोजने समुत्पन्ने सति एकमपि पुरुषमाज्ञापयतोयावच्चत्वा र पचवा पुरुषाअनुक्ताएव समुपतिष्ठते । तेच किंकुर्वाणाएत द्वक्ष्यमाणमूचु । तद्यथा । जणाज्ञापय स्वामिन् ! धन्यावय येन जवताप्येवमादिश्यते किंकुर्मइत्यादिसुगम । याव द्धृदयेप्सितमिति । तथा किंच ते युष्माकमास्यकस्य मुखस्य स्वदते स्वाडु प्रतिजा ति? यदिवा यदेवास्य जवदीयास्यस्य स्रवति निर्गच्छति तदेव वय कुर्मइति । तथा तमेवेत्यादि । तमेव राजान तथा क्रीडमान दृष्ट्वा अन्येऽनार्याएव वदति । तद्यथा । देव खल्वयपुरुषस्तथा देवस्नातकोदेवश्रेष्ठोवहूनामुपजीव्यस्तथा तमेवस्रा प्रतेद्धितया सदनुष्ठायिन दृष्ट्वा आर्याविवेकिन सदाचारवतएव ब्रुवते तद्यथाऽनिक्रा तक्रूरकर्मा खल्वय पुरुषोहिंसादिक्रियाप्रवृत्तइत्यर्थ । तथा धूयते रेणुव द्वायुनासस्रा रचक्रवाले भ्राम्यते येन तद्धूत कर्म । औणादिकोनक्प्रत्यय । अतीव प्रजूतधूतम ष्टप्रकार कर्म यस्य सोतिधूतस्तथाऽतीवात्मन परै पापकर्मभि रक्षा यस्य सोत्या त्मरक्षस्तथा दक्षिणस्या दिशि गमनशीलोदक्षिणगामुक । इदमुक्त जवति । योहि क्रूर कर्मकारी साधुनिंदापरायणस्तद्दाननिषेधक सन् दक्षिणगामुकइत्युक्त । इदमेवाह । (ने रइएइत्यादि) नरकेषु जवोनारक रुष्णपक्षोस्यास्तीति रुष्णपाक्षिकस्तथा आगामिनि काले नरकाडुद्धृतोडुर्ल्लजबोधिकश्चाय बाहुल्येन जविष्यतीति । इदमुक्त जवति । दिक्षुमध्ये द क्षिणा दिग् शस्ता गतिषु नरकगति , पक्षयो रुष्णपक्ष तदस्य विषयोस्येंडियानुकूलवर्तिन परलोकनिस्पृहमते साधुप्रद्वेषिणोदानातरायविधायिनोदिगादिकमशस्त दर्शितमन्यदपि यदशस्त तिर्यग्गत्यादिकमबोधिलाजादिक च तद्योजनीयमस्येति । एतद्विपरीतस्य तु वि षयनिस्पृहस्य इंडियानुकूलस्य परलोकजीरो साधुप्रशसावत सदनुष्ठानरतस्य दक्षिण गामुकत्व सुदेवत्व शुक्लपाक्षिकत्व तथा सुमानुषतया तस्य सुलजबोधित्वमित्येवमादिक सद्धर्मानुष्ठायिन सर्व जवतीति ॥ ५६ ॥

इच्चेयस्स ठाणस्स उठियावेगे अभिगिज्झति अणुठियावेगे अभि गिज्झति अभिऊऊाउरा अभिगिज्झति एसठाणे अणारिए अकेवले अ प्पडिपुन्ने अणेयाउए असंसुद्धे असल्लगत्तणे असिद्धिमग्गे अमुत्तिमग्गे अनिवाणमग्गे अणिज्जाणमग्गे असवडुक्खपहीणमग्गे एगंतमिच्छे अ साहु एसखलु पढमस्स ठाणस्स अधम्मपक्खस्स विभंगे एवमाहिए ॥५७॥

अर्थ-(इच्चेयस्सठाणस्सउछियावेगेके०) ए पूर्वोक्त स्थानक ऐश्वर्य लक्षण शृंगार मूल तेने कोइएक पाखंडीन मार्ग प्रवर्त्तता, परमार्थना अजाण, एवा पुरुष (अनिगिज्झतिके०) वांछे, नियाणादिक चिंतवे, तथा वली (अणुछियावेगेके०) कोइएक अनुत्थित गृहस्थ तेपण (अनिगिज्झति के०) वांछे, (अनिज्झाउरा के०) तृष्णावंत लोभिया तदातुर थका ते राजानी पदवीने (अनिगिज्झति के०) वांछे, (एसठाणेअणारिए के०) ए स्थानक अनार्य छे, महा पुरुषने अनाचीर्ण, (अकेवलेके०) एने विषे केवल ज्ञान नथी ए कारण माटे अशुद्ध तथा (अप्पडिपुन्ने के०) अप्रतिपूर्ण सद्गुण रहित तथा पूर्णता रहित तथा (अणेयाउए के०) अन्याय प्रवर्तक एटले न्यायमार्गे जेमां नथी, (असंसुद्धे के०) मलयुक्त (असल्लगत्तणे के०) तथा शल्यनुं कापनार नथी, (असिद्धिमग्गेके०) ए स्थानक थकी सिद्धिनो मार्ग नथी, एटले ए स्थानक सर्वडुःखना क्षयनो करनार नथी, (अमुत्तिमग्गे के०) कर्मबंधनुं स्थानक छे (अनिव्वाणमग्गे के०) असमाधिनुं स्थानक छे (अणिज्जाणमग्गेके०) मोक्षने नजाणवानो मार्ग छे, (असव्वडुक्खप्पहीणमग्गे के०) सर्वथा सर्वडुःखना क्षयनो मार्ग नथी, एवुं ए स्थानकछे (एगंतमिछे के०) ए एकांत मिथ्यात्वनुं स्थानकछे, एकारणे ए (असाहु के०) असाधुनो मार्गछे एसखलुके०) निश्चे थकी ए (पढमस्सठाणस्स के०) प्रथम स्थानकनुं (अधम्मपक्खस्स (वनंगे के०) अधर्म पक्षना विभंग एटले विचार (एवमाहिए के०) एम कह्यो ॥ ५७ ॥

॥ दीपिका-अस्योपसंहारमाह । इत्येतस्य स्थानस्य सावद्यरूपस्य एके उत्थिताः पाखंडाश्रिताः (अनिगिज्झति) लुभ्यंते लोभवशगाः स्युः । अनुत्थितागृहस्थाअपि सतोलुभ्यंते (ऊज्झाउरा) तृष्णातुरालुभ्यंते अतइदं स्थानमनार्यं अकेवलमशुद्धं अप्रतिपूर्णं गुणशून्यत्वात्तुछं अनैयायिकमन्यायवृत्तिकं असंशुद्धं समलं शल्यं मायानुष्ठानमकार्यं न शल्यकर्तनमशल्यकर्तनं । नविद्यते सिद्धेर्मार्गोयस्मिन् तदसिद्धिमार्गं नविद्यते मुक्तेर्मार्गोज्ञानादिकोयस्मिन् तदमुक्तिमार्गं नविद्यते निर्वाणस्य चित्तस्वास्थ्यस्य मार्गोयस्मिन् तत्तया अनिर्वाणमार्गं न संसारनिर्याणमार्गरूपमित्यर्थः । न सर्वडुःखप्रक्षेपमार्गरूपं यस्मादेकांतेन मिथ्यादृशा अगाधु असदाचारत्वात् । एषखलु प्रथमस्थानस्याधर्मपक्षस्य विभंगाविशेषस्वरूपमिति यावत् आख्यातं कथितं ॥ ५७ ॥

॥ टीका-सांप्रतमुपसंजिघृक्षुराह । (इच्चेइयस्सेत्यादि) इत्येतस्य पूर्वोक्तस्य स्थानस्य ऐश्वर्यलक्षणस्य शृंगारमूलस्य सांसारिकस्य परित्यागबुध्या एके केचन विपर्यस्तमतयः पापंडिकाद्यानेनाद्यिता परमार्थमजानात (अनिगिस्तितित्ति) आभिमुख्येन लुभ्यंते लोभ

क्षयो रुष्णपक्ष । ततोऽस्य दिगादिकमप्रशस्तमुक्त । अन्यदपि अबोधिलाभादिक योज्यं । (आगमिस्सत्ति) सचाऽऽगामिकाले डुर्लनबोधिक स्यादिति ॥ ५६ ॥

॥ टीका—तस्यच क्वचित्प्रयोजने समुत्पन्ने सति एकमपि पुरुषमाज्ञापयतोयावच्चत्वा र पचवा पुरुषाअनुक्ताएव समुपतिष्ठते । तेच किंकुर्वाणाएत द्वक्ष्यमाणमूचु । तद्यथा । नणाज्ञापय स्वामिन्! धन्यावय येन नवताप्येवमादिश्यते किंकुर्मइत्यादिसुगम । याव धृदयेप्सितमिति । तथा किंच ते युष्माकमास्यकस्य मुखस्य स्वदते स्वाडु प्रतिना ति? यदिवा यदेवास्य नवदीयास्यस्य स्वचति निर्गछति तदेव वय कुर्मइति । तथा तमेवेत्यादि । तमेव राजान तथा क्रीडमान दृष्ट्वा अन्येऽनार्याएव वदति । तद्यथा । देव खल्वयपुरुषस्तथा देवस्नातकोदेवश्रेष्ठोबहूनामुपजीव्यस्तथा तमेवसा प्रतेक्षितया सदनुष्ठायिन दृष्ट्वा आर्याविवेकिन सदाचारवतएव ब्रुवते तद्यथाऽनिक्का तक्रूरकर्मा खल्वय पुरुषोहिंसादिक्रियाप्रवृत्तइत्यर्थ । तथा धूयते रेणुव द्वायुनासंसा रचक्रवाले त्राम्यते येन तद्भूत कर्म । औणादिकोनक्प्रत्यय । अतीव प्रनूतधूतम ष्टप्रकार कर्म यस्य सोतिधूतस्तथाऽतीवात्मन परै पापकर्मनि रक्षा यस्य सोत्या त्मरक्षस्तथा दक्षिणस्या दिशि गमनशीलोदक्षिणगामुक । इदमुक्त नवति । योहि क्रूर कर्मकारी साधुनिंदापरायणस्तद्दाननिषेधक सन् दक्षिणगामुकइत्युक्त । इदमेवाह । (ने रइएइत्यादि) नरकेषु नवोनारक रुष्णपक्षोस्यास्तीति कृष्णपाक्षिकस्तथा आगामिनि काले नरकाद्धृतोडुर्लनबोधिकश्चाय बाहुल्येन नविष्यतीति । इदमुक्त नवति । दिक्षुमध्ये द क्षिणा दिग् शस्ता गतिषु नरकगति, पक्षयो कृष्णपक्ष तदस्य विषयोस्येंद्रियानुकूलवर्तिन परलोकनिस्पृहमते साधुप्रद्वेषिणोदानांतरायविधायिनोदिगादिकमशस्त दर्शितमन्यदपि यदशस्त तिर्यग्गत्यादिकमबोधिलानादिक च तद्योजनीयमस्येति । एतद्विपरीतस्य तु वि षयनिस्पृहस्य इंद्रियानुकूलस्य परलोकनीरो साधुप्रशंसावत सदनुष्ठानरतस्य दक्षिण गामुकत्व सुदेवत्व शुक्लपाक्षिकत्व तथा सुमानुषतया तस्य सुलनबोधित्वमित्येवमादिक सद्धर्मानुष्ठायिन सर्व नवतीति ॥ ५६ ॥

इच्चेयस्स ठाणस्स उठियावेगे अनिगिझति अणुठियावेगे अनि गिझति अनिऊंजाउरा अनिगिझति एसठाणे अणारिए अकेवले अ प्पडिपुन्ने अणेयाउए असंसुद्धे असल्लगत्तणे असिद्धिमग्गे अमुत्तिमग्गे अनिवाणमग्गे अणिज्जाणमग्गे असवडुक्खपहीणमग्गे एगंतमिछे अ साहु एसखलु पढमस्स ठाणस्स अधम्मपरकस्स विनंगे एवमाहिए ॥५७॥

अर्थ-(इच्चेयस्सठाणस्सउठियावेगेके०) ए पूर्वोक्त स्थानक ऐश्वर्य लक्षण शृंगार मूल तेने कोइएक पाखमीन मार्ग प्रवर्त्तता, परमार्थना अजाण, एवा पुरुष (अनिगिज्झतिके०) वाछे, नियाणादिक चितवे, तथा वली (अणुट्ठियावेगेके०) कोइएक अनुत्थित गृहस्थ तेपण (अनिगिज्झति के०) वाछे, (अनिज्झाउरा के०) तृष्णावंत लोभिया तदातुर थका ते राजानी पदवीने (अनिगिज्झति के०) वाछे, (एसठाणेअणारिए के०) ए स्थानक अनार्य छे, महा पुरुषने अनाचीर्ण, (अकेवलेके०) एने विषे केवल ज्ञान नथी ए कारण माटे अशुद्ध तथा (अप्पडिपुन्ने के०) अप्रतिपूर्ण सगुण रहित तथा पूर्णता रहित तथा (अणेयाउए के०) अन्याय प्रवर्तक एटले न्यायमार्ग जेमा नथी, (असंसुद्दे के०) मलयुक्त (असल्लगत्तणे के०) तथा शल्यनु कापनार नथी, (असिद्धिमग्गेके०) ए स्थानक थकी सिद्धिनो मार्ग नथी, एटले ए स्थानक सर्वज्ञ खना क्षयनो करनार नथी, (अमुत्तिमग्गे के०) कर्मबंधनु स्थानक छे (अनिवाणमग्गे के०) असमाधिनु स्थानक छे (अणिज्जाणमग्गेके०) मोक्षने नजाणवानो मार्ग छे, (असव्वदुक्खपहीणमग्गे के०) सर्वथा सर्वज्ञ खना क्षयनो मार्ग नथी, एवु ए स्थानकछे (एगतमिच्छे के०) ए एकात मिथ्यात्वनु स्थानकछे, एकारणे ए (असाहु के०) असाधुनो मार्गछे एसखलुके०) निश्चे थकी ए (पढमस्सठाणस्स के०) प्रथम स्थानकनु (अधम्मपरकस्स (वत्तगे के०) अधर्म पक्षना विभग एटले विचार (एवमाहिए के०) एम कह्यो ॥ ५७ ॥

॥ दीपिका-अस्योपसहारमाह । इत्येतस्य स्थानस्य सावद्यरूपस्य एके उत्थिता पाखडाश्रिता (अनिगिज्झति) लुभ्यते लाभरागा स्यु । अनुत्थितागृहस्थाअपि सताल्लुभ्यते (झझाउरा) तृष्णातुरालुभ्यते अतइद स्थानमनार्य अकेवलमशुद्ध अप्रतिपूर्ण गुणशून्यत्वात्तुच्छ अनैयायिकमन्यायवृत्तिक असशुद्ध समल शल्य मायानुष्ठानमकार्य न शल्यकर्तनमशल्यकर्तन । नविद्यते सिद्धेर्मार्गोयस्मिन् तदसिद्धिमार्ग नविद्यते मुक्तेर्मार्गोज्ञानादिकोयस्मिन् तदमुक्तिमार्ग नविद्यते निर्वाणस्य चित्तस्वास्थ्यस्य मार्गोयस्मिन् तत्तथा अनिर्वाणमार्ग न ससारनिर्याणमार्गरूपमित्यर्थ । न सर्वदु खप्रक्षेपमार्गरूप यस्मादेकातेन मिथ्यादृशा अगाधु असदाचारत्वात् । एपखलु प्रथमस्थानस्याधर्मपक्षस्य विभगोविशेपस्वरूपमिति यावत् आख्यात कथित ॥ ५७ ॥

॥ टीका-साप्रतमुपसजिहीर्षुराह । (इच्चेइयस्सत्यादि) इत्येतस्य पूर्वोक्तस्य स्थानस्य ऐश्वर्यलक्षणस्य शृगारमूलस्य ससारिकस्य परित्यागबुध्या एके कचन विपर्यस्तमतय पापडिकोत्थानेनोत्थिता परमार्थमजानात (अनिगिज्झतित्ति) आभिमुख्येन लुभ्यत लाभ

क्षयो रुप्णपक्ष । ततोऽस्य दिगादिकमप्रशस्तमुक्त । अन्यदपि अबोधिलाभादिक योज्यं । (आगमिस्सत्ति) सचाऽऽगामिकाले डुर्लभबोधिक स्यादिति ॥ ५६ ॥

॥ टीका–तस्यच क्वचित्प्रयोजने समुत्पन्ने सति एकमपि पुरुपमाज्ञापयतोयावच्चत्वा र पचवा पुरुपाअनुक्ताएव समुपतिष्ठते । तेच किंकुर्वाणाएत दृक्ष्यमाणमूचु । तद्यथा। नणाज्ञापय स्वामिन्! धन्यावय येन नवताप्येवमादिश्यते किंकुर्मऽत्यादिसुगम । याव न्हृदयेप्सितमिति । तथा किंच ते युप्माकमास्यकस्य मुखस्य स्वदते स्वाडु प्रतिभा ति? यदिवा यद्देवास्य नवदीयास्यस्य स्रवति निर्गच्छति तदेव वय कुर्मइति । तथा तमेवेत्यादि । तमेव राजान तथा क्रीडमान दृष्ट्वा अन्येऽनार्याएव वदति । तद्यथा । देव खल्वयपुरुपस्तथा देवस्नातकोदेवश्रेष्ठोवहूनामुपजीव्यस्तथा तमेवसा प्रतेक्षितया सदनुष्ठायिन दृष्ट्वा आर्याविवेकिन सदाचारवतएव ब्रुवते तद्यथाऽभिक्रा तक्रूरकर्मा खल्वय पुरुपोहिंसादिक्रियाप्रवृत्तइत्यर्थ । तथा धूयते रेणुवद्वायुनासता रचक्रवाले भ्राम्यते येन तद्धूत कर्म । औणादिकोनक्प्रत्यय । अतीव प्रभूतधूतम ष्टप्रकार कर्म यस्य सोतिधूतस्तथाऽतीवात्मन परै पापकर्मभि रक्षा यस्य सोत्या त्मरक्षस्तथा दक्षिणस्या दिशि गमनशीलोदक्षिणगामुक । इदमुक्त नवति । योहि क्रूर कर्मकारी साधुनिंदापरायणस्तद्दाननिषेधक सन् दक्षिणगामुकइत्युक्त । इदमेवाह । (ने रइएइत्यादि) नरकेषु नवोनारक कृष्णपक्षोस्यास्तीति कृष्णपाक्षिकस्तथा आगामिनि काले नरकाडुद्धृतोडुर्लभबोधिकश्चाय बाहुल्येन नविष्यतीति । इदमुक्त नवति । दिक्षुमध्ये द क्षिणा दिग् शस्ता गतिषु नरकगति, पक्षयो कृष्णपक्ष तदस्य विषयोस्येंद्रियानुकूलवर्तिन परलोकनिस्पृहमते साधुप्रद्वेषिणोदानातरायविधायिनोदिगादिकमशस्त दर्शितमन्यदपि यदशस्त तिर्यग्गत्यादिकमबोधिलाभादिक च तद्योजनीयमस्येति । एतद्विपरीतस्य तु वि पयनिस्पृहस्य इंद्रियानुकूलस्य परलोकभीरो साधुप्रशसावत सदनुष्ठानरतस्य दक्षिण गामुकत्व सुदेवत्व शुक्लपाक्षिकत्व तथा सुमानुषतया तस्य सुलभबोधित्वमित्येवमादिक सत्कर्मानुष्ठायिन सर्व नवतीति ॥ ५६ ॥

इच्चेयस्स ठाणस्स उठियावेगे अभिगिज्झत्ति अणुठियावेगे अभि गिज्झति अभिझझाउरा अभिगिज्झति एसठाणे अणारिए अकेवले अ प्पडिपुन्ने अणेयाउए असंसुद्धे असल्लगत्तणे असिद्धिमग्गे अमुत्तिमग्गे अनिव्वाणमग्गे अणिज्जाणमग्गे असव्वडुक्खपहीणमग्गे एगतमिच्छे अ साहु एसखलु पढमस्स ठाणस्स अधम्मपक्खस्स विभंगे एवमाहिए ॥५७॥

वशगाजवतीत्यर्थः । तथा एके केचन सांप्रतेक्षिणस्तस्मात्स्थानादनुपस्थितागृहस्थाए व सत (अनिगिझतित्ति) कक्षा तृष्णा तदातुरा सतोऽर्थेष्वत्यर्थं लुन्यते यतएवमतो द स्थानमनार्यानुष्ठानपरत्वादनार्यं महापुरुषानुचीर्णं नवति तथा नविद्यते केवलमस्मि न्नित्यकेवलमशुद्धमित्यर्थः । तथेतरपुरुषाचीर्णत्वादपरिपूर्णं सङ्गुणविरहात्तुच्छमित्यर्थः । तथा न्यायेन चरति नयायिकं न नैयायिकमनैयायिकमसन्न्यायवृत्तिकमित्यर्थः । तथा र गेलगेसवरणे । शोजन लगन संवरणं इंडियसयमरूपं सल्लगस्तन्नाव सल्लगत्ववा विद्यते सल्लगत्वमस्मिन्नित्यसल्लगत्वमिंडियासंवरणरूपमित्यर्थः । यदिवा शल्यवत्शल्यं मायानुष्ठा नकार्यं तज्जायति कथयति तच्छल्यगं यत्परिज्ञानं तन्नास्तीत्यशल्यगत्वमिति । तथा विद्यते सिद्धेर्मोक्षस्य विशिष्टस्थानोपलक्षितस्य मार्गोयस्मिंस्तदसिद्धिमार्गं तथा नविद्यते मुक्ते रशेषकर्मप्रच्युतिलक्षणायामार्गं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रात्मकोयस्मिंस्तदमुक्तिमार्गं तथा न विद्यते परिनिर्वृते परिनिर्वाणस्यात्मस्वास्थ्योत्पत्तिरूपस्य मार्गः पथा यस्मिन् स्थाने तदपरिनिर्वाणमार्गं तथा नविद्यते सर्वं दुःखानां शारीरमानसानां प्रक्षयमार्गः सदुपदेशा त्मकोयस्मिंस्तदसर्वदुःखप्रक्षीणमार्गं । कुतएवन्नूतं तत्स्थानमित्याशंक्याह । (एगंतेत्या दि) एकांतेनैव तत्स्थानं यतोमिथ्यान्नूतं मिथ्यात्वोपहतबुद्धीनां यतस्तन्नवत्यतएवासा ध्वसनत्वान्नह्यं सत्पुरुषसेवितं पथा येन विषयाधा प्रवर्ततइति । तदयं प्रथमस्य स्था नस्याधर्मपाक्षिकस्य पापोपादानन्नूतस्य विजंगोविनागोविशेषः स्वरूपमिति यावत् ॥५७॥

अहावरे दोच्चस्स ठाणस्स धम्मपरकस्स विन्नंग एव माहिज्जइ इह ख लु पाईणवा पडीणवा उदीणवा दाहिणवा संतेगइया मणुस्सा न्नवंति त जहा आयरियावेगे अणारियावेगे उच्चागोयावेगे णीयागोयावेगे कायमं तावेगे हस्समंतावेगे सुवन्नावेगे डुवन्नावेगे सुरूवावावेगे डुरूवावेगे तेसिं चणं खेत्तवत्थूणि परिग्गहियाइं न्नवंति एसोआलावगो जहा पोंमरीए तहा णेतव्वो तेणेव आलावेण जाव सव्वोवसंता सव्वताए परिनिव्वुमंत्तिबेमि॥५८॥ एसठाणे आरिए केवले जाव सव्वडुक्खपहीणमग्गे एगंतसम्मे साहु दोच्च स्स ठाणस्स धम्मपरकस्स विन्नंगे एव माहिए ॥५९॥

अर्थ—हवे अपर बीजु स्थानक धर्म पक्षनो विजंग एटले विचार कहियेछेए निश्चे आ जगत् माहे पूर्वदिशिये, पश्चिमदिशिये, उत्तरदिशिये, अने दक्षिण दिशिये, अथवा विदि शिये, एवा कोइएक मनुष्यछे, ते कहेछे एक आर्य, एक अनार्य, एक उचगोत्रना उपना, एक नीचगोत्रना उपना, एक महोटी कायाना धणी, एक न्हानी कायाना धणी, एक

सारावर्ण वाला, एक माठा वर्ण वाला, एक सुंदर स्वरूपवान्, एक कुरूपवान्, तेने क्षेत्र एटले उघाडी भूमिका, अने वस्तु एटले घर हाट, प्रमुख एवो परिग्रह होय इत्यादि (एसोआलावगोजहापोंमरीएतहाणेतवो के०) ए समस्त आलावो जेम पूर्वेना पौंमरीकाध्ययनमां कह्योछे तेमज जाणवु, एटले "तेएवंअलावेणजावसव्वोवसंता सव्वत्ताएपरिनिव्वुमत्तिबेमि" एटला सुधीनो पाठ पौंमरीक अध्ययनमांछे ते प्रमाणे अहीं पण जाणी लेवु अर्थात् तेज आलावे ज्यां सुधी सर्व प्रकारे उपशांत एटले कषायने जीपीने तथा सर्व प्रकारे सर्व पापस्थानकथकी उपशम्या ए कारणे सर्वात्मा, सर्व जीव उपर समनावे वर्त्तमान, शीतलीनूत थया ए प्रमाणे श्रीसुधर्मस्वामि जंबूप्रत्ये कहेछे के ते आलावो सर्व आहीं जाणवो ॥ ५८ ॥ ए स्थानकने आर्य रूडु जाणवु एने विषे केवल ज्ञान होय यावत् ए सर्व दुःख क्षय करवानो मार्ग छे, एकांत सम्यक्मार्ग, एकांत सम्यक्दृष्टीनो मार्ग ते कारणे ए साधुनु स्थानक जाणवु एटले बीजु स्थानक धर्मपक्ष, तेनो विनाग एटले विचार एरीतें कह्यो ॥ ५९ ॥

दीपिका-(अहावरेत्ति) अथापरो द्वितीयस्थानस्य धर्मपक्षस्य विनंगो विशेषएवमाख्यायते । तद्यथा (पाईणंति) प्राचीनं प्रतीचीनमुदीचीनं दक्षिणवा दिग्नागमाश्रित्य सत्येके केचन कल्याणनाज पुरुषा । तद्यथा आर्या एके अनार्याइत्यादि यथा पुंडरीकाध्ययने तथेहापि सर्वं वाच्यं यावत्ते एव सर्वपापस्थानेन्य उपशांताअतएव सर्वात्मतया परिनिर्वृता इत्यहं ब्रवीमि॥५८॥ एतत्स्थानमार्यं महापुरुषाचरितं केवलमित्यादिप्राग्वद्विपरीतं ज्ञेयं। यावद्द्वितीयस्थानस्य धर्मपक्षस्य विनंगोविशेषआख्यात ॥ ५९ ॥

टीका-सांप्रतं द्वितीयं धर्मोपादानजूतं पक्षमाश्रित्याह । (अहावरेइत्यादि) अथेत्यधर्मपाक्षिकस्थानादनंतरमयमपरोद्वितीयस्य स्थानस्य धर्मपाक्षिकस्य पुण्योपादानजूतस्य विनंगाविनागं स्वरूपं समाधीयते सम्यगाख्यायते । तद्यथा प्राचीनं प्रतीचीनमुदीच्यं दक्षिणवा दिग्विनागमाश्रित्य संतिवि यते एके केचन कल्याणपरंपरानाज पुरुषामनुष्यास्तेच वक्ष्यमाणस्वनावानवंति । तद्यथेत्ययमुपप्रदर्शनार्थं । आर्याएके कचनार्यदेशोत्पन्नास्तथाऽनार्या शकयवनशबरबर्बरादयइत्यादेव । यथा पौंडरीकाध्ययने तथेहापि सर्वं निरवयवं नणितव्यं एवं पूर्वोक्तेन प्रकारेण सर्वेन्य पापस्थानेन्यउपशांतास्तथा अतएव सर्वात्मतयापरिनिर्वृताइत्यहमेव ब्रवीमि॥५८॥ तदेवमेतत्स्थानं केवलिकं प्रतिपूर्णं नैयायिकमित्यादि प्राग्वद्विपर्ययेण नेयं । यावद्द्वितीयस्य स्थानस्य धार्मिकस्यैवं विनंगो विनागं सरूपमाख्यातमिति ॥ ५९ ॥

वशगानवतीत्यर्थः । तथा एके केचन सांप्रतेक्षिणस्तस्मात्स्थानादनुपस्थितागृहस्थाए व सत (अनिगिझतित्ति) ऊजा तृष्णा तदातुरा सतोऽर्थेष्वत्यर्थं लुन्यते यतएवमतो द स्थानमनार्यानुष्ठानपरत्वादनार्यं महापुरुषानुचीर्णं नवति तथा नविद्यते केवलमस्मि न्नित्यकेवलमशुद्धमित्यर्थः । तथेतरपुरुषाचीर्णत्वादपरिपूर्णं सद्गुणविरहात्तुच्छमित्यर्थः । तथा न्यायेन चरति नयायिक न नैयायिकमनैयायिकमसन्यायवृत्तिकमित्यर्थः । तथा र गेलगेसवरणे । शोनन लगन सवरण इन्द्रियसयमरूप सल्लगस्तन्नाव सल्लगत्ववा विद्यते सल्लगत्वमस्मिन्नित्यसल्लगत्वमिन्द्रियासवरणरूपमित्यर्थः । यदिवा शल्यवच्छल्य मायानुष्ठा नकार्यं तज्जायति कययति तच्छल्यग यत्परिज्ञान तन्नास्तीत्यशल्यगत्वमिति । तथा विद्यते सिद्धेर्मोक्षस्य विशिष्टस्थानोपलक्षितस्य मार्गोयस्मिंस्तदसिद्धिमार्गं तथा नविद्यते मुक्ते रशेषकर्मप्रच्युतिलक्षणायामार्गं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रात्मकोयस्मिंस्तदमुक्तिमार्गं तथा न विद्यते परिनिर्वृते परिनिर्वाणस्यात्मस्वास्थ्योत्पत्तिरूपस्य मार्गं पंथा यस्मिन् स्थाने तदपरिनिर्वाणमर्गं तथा नविद्यते सर्वे दुःखाना शारीरमानसाना प्रक्षयमार्गं सदुपदेशा त्मकोयस्मिंस्तदसर्वदुःखप्रक्षीणमार्गं । कुतएवनूतं तत्स्थानमित्याशंक्याह । (एगतेत्या दि) एकातेनैव तत्स्थान यतोमिथ्यानूत मिथ्यात्वोपहतबुद्धीना यतस्तन्नवत्यतएवाला ध्वस6नत्वान्नद्वाय सत्पुरुषसेवित पथा येन विषयाधा प्रवर्ततइति । तदय प्रथमस्य स्था नस्याधर्मपाक्षिकस्य पापोपादानजूतस्य विनगोविनागोविशेष स्वरूपमिति यावत् ॥५१॥

अहावरे दोच्चस्स ठाणस्स धम्मपक्खस्स विनंग एव माहिज्जइ इह ख लु पाईणवा पडीणवा उदीणवा दाहिणवा सतेगइया मणुस्सा नवति त जहा आयरियावेगे अणारियावेगे उच्चागोयावेगे णीयागोयावेगे कायम तावेगे हस्समतावेगे सुवन्नावेगे दुवन्नावेगे सुरूवावावेगे दुरूवावेगे तेसि चण खेत्तवत्थूणि परिग्गहियाइ नवति एसोआलावगो जहा पोंमरीए तहा णेतव्वो तेणेव आलावेण जाव सव्वोवसता सव्वताए परिनिवुमत्तिवेमि॥५८॥ एसठाणे आरिए केवले जाव सव्वदुक्खपहीणमग्गे एगतसम्मे साहु दोच्च स्स ठाणस्स धम्मपक्खस्स विनंगे एव माहिए ॥५९॥

अर्थ—हवे अपर बीजु स्थानक धर्म पक्षनो विनग एटले विचार कहियेछेए निश्चे आ जगत् माहे पूर्वदिशिये, पश्चिमदिशिये, उत्तरदिशिये, अने दक्षिण दिशिये, अथवा विदि शिये, एवा कोइएक मनुष्यछे, ते कहेछे एक आर्य, एक अनार्य एक उचगोत्रना उपना, एक नीचगोत्रना उपना, एक महोटी कायाना धणी, एक न्हानी कायाना धणी, एक

अरण्ये चरतीत्यारण्यिका कंदमूलफलाशिनस्तापसा आवसथोगृह् तेन चरतीत्यावस थिकागृह्णि । यद्यप्येते कायक्लेशेन देवा स्युस्तथापि आसुरीयेषु किल्बिषिकेषु उत्प द्यते ऽस्यादि सर्वं पूर्वोक्त वाच्य । यावत्ततश्च्युतानरजवे एलमूकत्वेन प्रत्यायाति तदेतत्स्था नमनार्थमित्यादि पूर्ववत् । एषस्तृतीयस्थानस्य मिश्रकस्य विजंगोविचारोज्ञेय ॥ ६० ॥

॥ टीका—सांप्रत धर्माधर्मयुक्त तृतीयस्थानमाश्रित्याह् । (अहावरेत्यादि) अथापरस्तृतीय स्य स्थानस्य मिश्रकाख्यस्य विजंगोविजाग सरूपमाख्यायते । अत्र चाधर्मपक्षेण युक्तोऽधर्म पक्षोमिश्रइत्युच्यते । तत्राधर्मस्येह् जूयिष्ठत्वादधर्मपक्षएवाय ऽष्टव्य । एतडुक्त जवति । यद्यपि मिथ्यादृष्टय काश्चित्तथाप्रकारा प्राणातिपातादिनिर्वृत्ति विदधति तथाप्याशया शुद्धत्वादजिनवे पित्तोदये सति शर्करामिश्रक्षीरपानवदूषरप्रदेशवृष्टिवद्विवक्षितार्थसाध कत्वान्निरर्थकतामापद्यते । ततोमिथ्यात्वानुजावात् मिश्रपक्षोप्यधर्मएवावगतव्य इति । एतदेव दर्शयितुमाह् ॥ (जेइमेजवतीत्यादि) ये इमेऽनंतरमुच्यमानाअरण्ये चरतीत्यार ण्यिका कंदमूलफलाशिनस्तापसादयोये चावसथिकाआवसथोगृह् तेन चरतीत्यावस थिकागृह्णिस्तेच कुतश्चित् पापस्थानान्निवृत्ताअपि प्रबलमिथ्यात्वोपहतबुद्धयस्ते यद्य प्युपवासादिना मह्ता कायक्लेशेन देवगतय केचन जवति तथापि ते आसुरीयेषु स्था नेषु किल्बिषिकेषूत्पद्यतइत्यादि सर्वं पूर्वोक्त जणनीय यावत्ततश्च्युतामनुष्यजव प्रत्याया ता एलमूकत्वेन तमोंधतया जायते । तदेवमेतत्स्थानमनार्यमकेवलमसपूर्णमनैयायि कमित्यादि यावदेकातमिथ्याजूत सर्वथेतदसाध्विति । तृतीयस्थानस्य मिश्रस्याय विज गोविजाग सरूपमाख्यातमिति ॥ ६० ॥

अहावरे पढमस्स ठाणस्स अधम्मपरकस्स विजंगे एव माहिज्जइ इह खलु पाईणंवा सतेगतिया मणुस्सा जवति गिहा महिछा महारंजा महापरि ग्गहा अधम्मिया अधम्माणुया अधम्मिठा अधम्मरकाई अधम्मपावजी वि अधम्मपलोई अधम्मवलजणा अधम्मसील ममुदायारा अधम्मेण चेव वित्तिं कप्पेमाणा विहरति ॥ ६१ ॥

अर्थ—हवे वली ए पूर्वे त्रण प्रकार जे कह्या, तेज प्रकार विशेष करी कहेछे तेमा प्रथम स्थानक कहेछे अथ हवे अपर प्रथम स्थानक अधर्म पक्षनो सरूप विचार आवीरीते कहेछे आजगतमाहे निश्चे पूर्वादिक चारदिशिने विषे काइएक मनुष्य छे ते केवा छे ताके (महिछा के०) महोटी जेनी इछाछे चित्तनी अविरतिछे, तथा (महार

अहावरे तच्चस्स ठाणस्स मिस्सगस्स विभंग एवं माहिज्जइ जे इमे भ वंति आरणिया आवसहिया गामणियंतिया कण्हुईरहस्सिता जाव ते तउविप्पमुच्चमाणा भुज्जो एलमूयत्ताए पच्चायंति एसठाणे अणारिए अ केवले जाव असव्वदुक्खपहीणमग्गे एगंतमिच्छे असाहु एसखलु तच्च स्स ठाणस्स मिस्सगस्स विभंगे एवं माहिए ॥ ६० ॥

अर्थ–अथ हवे अपर त्रीजुं स्थानक मिश्र पक्षनो विचार एम कहेछे (जेइमेभवंति के०) जे ए मिश्रस्थानकछे ते एने मिश्रस्थानक शा कारणे कहिये? तेमाटें विशेष कहेछे अधर्म पक्षें मिश्रित जे धर्म पक्ष, ते कारणे एने मिश्र पक्ष कहिये परंतु, अध र्मना बाहुल्य पणा थकी, ए अधर्म पक्षज जाणवो यद्यपि मिथ्यादृष्टि पण केटली एक विरति करेछे, तथापि ते चित्तने अशुद्ध पणे, अने परमार्थने अजाण पणे, तथा अभिनव पित्तनाभावने उदये, साकर मिश्रित दूधपाननी पेठें, तथा उखर क्षेत्रमा मेघ वृष्टि नी पेठें ते धर्म पण तेनो फलदायक नथाय ते कारणे मिश्र पक्ष, विशेष अधर्म पक्षने म लतोज छे (आरणिया के०) जे आरण्यक एटले कंदमूल फलाहारी वृक्षने मूले वसता (आवसहियाके०) कोइएक पानडानी झुंपडी करीने रहे, (गामणियंतिया के०) आ जीविका चलाववा निमित्ते ग्रामने समीपे रहे, (कण्हुईरहस्सिता के०) कोइएक कार्यने विषे रहस्यना करनार, एवा तापसादिक पूर्वोक्त जेहोय ते मिश्रपक्षवाला जाणवा (जावतेतउवि प्पमुच्चमाणाके०) यावत् यद्यपि ए काहीएक काय क्लेश करे तथापि ते आसुरी किल्बिषिया छने स्थानके जइ उपजे ते स्थानक थकी आयुष्यने क्षये चवीने, (भुज्जो के०) वली मनुष्य भव पामे तो, (एलमूयत्ताएके०) बेहेरा, मुगा, आंधला, जन्मांध, (पच्चायंति के०) एवा थाय एरीतें चतुर्गतिक संसार माहे परिभ्रमण करे ए कारणे ए स्थानक अनार्य एटले महापुरुषने अनाचरणीय छे, एने विषे केवलज्ञान नथी, यावत् सर्व दुःख ना क्षयनुं कारक ए स्थानक नथी ए मार्गे एकांत मिथ्यात्वनुं स्थानक, माटे ए असा धुनो पंथ जाणवो ए निश्चे त्रीजुं स्थानक जे मिश्रपक्ष, तेनो विचार एरीते कह्यो ॥६०॥

॥ दीपिका–अथापरस्तृतीयस्थानस्य मिश्रकाख्यस्य विभंगोविभाग कथ्यते । अत्र चाधर्मपक्षयुक्तोधर्मपक्षइति मिश्रउच्यते । तत्राधर्मस्येह बहुत्वादयमधर्मपक्षवज्ज्ञेय । यतोमिथ्यादृश काश्चिज्जीवहिंसादिनिवृत्तिं कुर्वंति तथापि चित्ताशुद्धेरज्ञानाद्नवीने पित्तो दये शर्करामिश्रक्षीरपानवत् उपरप्रदेशे वृष्टिवत्का कार्यासाधकत्वान्निरर्थकता याति सा । तथा मिथ्यात्वानुभवान्मिश्रपक्षोप्यधर्मपक्षएवेति दर्शयति । (जेइमेआरणिया) ये इमे

अरण्ये चरतीत्यारण्यिका कंदमूलफलाशिनस्तापसा आवसथोगृहं तेन चरतीत्यावस थिकागृहिण । यद्यप्येते कायक्लेशेन देवा स्युस्तथापि आसुरीयेषु किल्बिषिकेषु उत्प द्यते इत्यादि सर्वं पूर्वोक्त वाच्य । यावत्ततश्च्युतानरजवे एलमूकत्वेन प्रत्यायाति तदेतत्स्था नमनार्यमित्यादि पूर्ववत् । एषस्तृतीयस्थानस्य मिश्रकस्य विजंगोविचारोज्ञेय ॥ ६० ॥

॥ टीका–सांप्रत धर्माधर्मयुक्त तृतीयस्थानमाश्रित्याह । (अहावरेत्यादि) अथापरस्तृतीय स्य स्थानस्य मिश्रकाख्यस्य विजंगोविजाग स्वरूपमाख्यायते । अत्र चाधर्मपक्षेण युक्तोऽधर्म पक्षोमिश्रइत्युच्यते । तत्राधर्मस्येह जूयिष्ठत्वादधर्मपक्षएवाय द्रष्टव्य । एतडुक्त जवति । यद्यपि मिथ्यादृष्टय काचित्तथाप्रकारा प्राणातिपातादिनिर्वृत्ति विदधति तथाप्याशया शुद्धत्वादजिनवे पित्तोदये सति शर्करामिश्रक्षीरपानवदूपरप्रदेशवृष्टिवद्विवक्षितार्थसाध कत्वान्निरर्थकतामापद्यते । ततोमिथ्यात्वानुजावात् मिश्रपक्षोप्यधर्मएवावगतव्य इति । एतदेव दर्शयितुमाह ॥ (जेइमेजवतीत्यादि) ये इमेऽनतरमुच्यमानाअरण्ये चरतीत्यार ण्यिका कंदमूलफलाशिनस्तापसादयोये चावसथिकाआवसथोगृहं तेन चरतीत्यावस थिकागृहिणस्तेच कुतश्चित् पापस्थानान्निवृत्ताअपि प्रबलमिथ्यात्वोपहतबुद्धयस्ते यद्य प्युपवासादिना महता कायक्लेशेन देवगतय केचन जवति तथापि ते आसुरीयेषु स्था नेषु किल्बिषिकेषूत्पद्यतइत्यादि सर्वं पूर्वोक्त जणनीय यावत्ततश्च्युतामनुष्यजव प्रत्याया ता एलमूकत्वेन तमोधतया जायते । तदेवमेतत्स्थानमनार्यमकेवलमसंपूर्णमनैयायि कमित्यादि यावदेकातमिथ्याजूत सर्वथैतदसाध्विति । तृतीयस्थानस्य मिश्रस्याय विज गोविजाग स्वरूपमाख्यातमिति ॥ ६० ॥

अहावरे पढमस्स ठाणस्स अधम्मपरकस्स विजंगे एव माहिज्जइ इह खलु पाईणंवा संतेगतिया मणुस्सा जवंति गिहत्था महिच्छा महारंजा महापरि ग्गहा अधम्मिया अधम्माणुया अधम्मिठा अधम्मरकाई अधम्मपावजी वि अधम्मपलोई अधम्मवलजणा अधम्मसील ममुदायारा अधम्मेण चेव वित्तिं कप्पेमाणा विहरंति ॥ ६१ ॥

अर्थ–हवे वली ए पूर्वे त्रण प्रकार जे कह्या, तेज प्रकार विशेष करी कहेछे तेमा प्रथम स्थानक कहेछे अथ हवे अपर प्रथम स्थानक अधर्म पक्षनो स्वरूप विचार आवीरीते कहेछे आजगत्माहे निश्चे पूर्वादिक चारदिशिने विषे कोइएक मनुष्य छे ते केवा छे तोके, (महिछा के०) महोटी जेनी इछाछे चित्तनो अविरतिछे, तथा (महार

ना के०) कृष्यादिक महाआरंभना करनार, तथा (महापरिग्गहा के०) क्षेत्र, धन, धान्य, द्विपद, चतु पदादिक, अनेक परिग्रहवंत अधार्मिक अधर्मानुय एटले अधर्मनीज अनुमोदना करनारा, (अधम्मिठा के०) अधर्मज जेने इष्टछे वल्लभछे, (अधम्मक्खाई के०) अधर्मना बोलनार, अथवा अधर्मथीज ख्याति जेनी, अधर्म करी आजीविकाना करनार, एटले अधर्मेज जीवे, प्राण धारण करे तथा अधर्मज देखे तथा अधर्मनेज अंगीकार करवा प्रलोके एटले देखे, ते अधर्म प्रलोइ केवाय (अधम्मवलज्जणाके०) अधर्मने विषे राचे, अधर्मशील एटले अधर्मज जेनो स्वभावछे, (समुदायारा के०) तथा चारनो समुदाय छे जेनो (अधम्मेणचेववित्तिकप्पेमाणाविहरति के०) तथा जे अधर्मे करीनेज वृत्ति कल्पीने विचरे कालक्षेप करे ॥६१॥

॥ दीपिका–उक्तानि अधर्मधर्ममिश्रस्थानानि । अथ तेषां स्थानिनोऽभिधीयंते । अथवा पूर्वोक्तमेव प्रकारांतरेण विशिष्टतरमाह । अथापरं प्रथमस्थानस्य धर्मपक्षस्य विभंगोविभागएवमाख्या यते । (इहखलुइत्यादि) एते च प्रायोगृहस्थाएव स्युरित्याह । (गिहत्था) गृहस्था (महेच्छा) महारंभा महापरिग्रहाअधर्मेण चरंत्याधार्मिकाअधर्मानुज्ञा अधर्मिष्ठानिस्त्रिंशा अधर्माख्यायिनोऽधर्मवादिन अधर्मजीविनोऽधर्मप्रलोकिन अधर्मे प्रकर्षेण रज्यतइत्यधर्मप्ररक्तका अधर्मशील समुदाचारोयत्किंचनकारित्व येषां ते तथा अधर्मेण वृत्ति जीविका कल्पयत कुर्वंतोविहरंति तिष्ठंति । पापानुष्ठानमाह ॥६१॥

॥ टीका–उक्तान्यधर्मधर्ममिश्रस्थानानि । सांप्रतं तदाश्रिता स्थानिनोऽभिधीयंते । यदिवा प्राक्तनमेवान्येन प्रकारेण विशेषिततरमुच्यते । तत्राद्यमधर्मस्थानकमाश्रित्याह (अहावरेइत्यादि) अथापरोन्य प्रथमस्य स्थानस्याधर्मपाक्षिकस्य विभंगोविभाग आख्यायते (इहखलु इत्यादि) सुगमं । यावन्मनुष्याएवस्वभावाभवतीति । एते च प्रायोगृहस्थाएव भवतीत्याह । (महेच्छाइत्यादि) महती राज्यविभवपरिवारादिका सर्वातिशायिनी स्वच्छात करणप्रवृत्तिर्येषां ते महेच्छास्तथा महानारंभोवहनोष्ट्रमंडलिकागंत्रीप्रवाहकृषिपंडपोषणादिकोयेषां ते महारंभा । ये चैव भूतास्ते महापरिग्रहाधनधान्यद्विपदचतुष्पदवास्तुक्षेत्रादिपरिग्रहवंत क्वचिदप्यनिवृत्ताअतएवाधर्मेण चरंतीत्यधर्मिकास्तथा धर्मिष्ठानिस्त्रिंशकर्मकारित्वादधर्मबहुलास्ततश्चाधर्मे कर्तव्ये अनुज्ञाअनुमोदनं येषां ते भवत्यधर्मानुज्ञा एवमधर्ममाख्यातुं शीलं येषां ते तथा एवमधर्मप्रायजीविनस्तथा अधर्ममेव प्रविलोकयितु शीलं येषां ते भवत्यधर्मप्रविलोकिनस्तथा धर्मप्रायेषु कर्मसु प्रकर्षेण रज्यतइति अधर्मरक्ता । रलयोरैक्यमिति रस्य स्थाने लकारोऽत्र कृत इति ।

तथाऽधर्मशीलाअधर्मस्वभावास्तथाऽधर्मात्मक समुदाचारोयत्किंचनानुष्ठानं येषांते भव त्यधर्मशीलसमुदाचारास्तथाऽधर्मेण पापेन सावद्यानुष्ठानेनैव दहनांकननिलांछनादिके कर्मणा वृत्तिर्वर्तनं कल्पयंत कुर्वाणाविहरंतीति कालमतिवाहयंति ॥ ६१ ॥

हण छिंद भिंद विगत्तगा लोहियपाणी चंमा रुद्दा खुद्दा साहस्सिया उ क्कंचण वंचण मायाणियडि कूडकवडसाइ संपउगबहुला दुस्सीला दुव्व या दुप्पडियाणंदा असाहु सव्वाउ पाणाइवायाउ अप्पडिविरया जाव ज्जीवाए जाव सव्वाउ परिग्गहाउ अप्पडिविरया जाव जीवाए सव्वउ कोहाउ जाव मिच्छादंसणसल्लाउ अप्पडिविरया सव्वाउ एहाणुम्मद्दण म हण वण्णगंधविलेवणसद्द फरिसरसरूव गंधमल्लालंकाराउ अप्पडिवि रया जावजीवाए सव्वाउ सगड रहजाण जुगगिल्लिथिल्लिसिया संदमा णिया सयणासणजाण वाहणभोगभोयणपवित्थरविहीउ अप्पडिविरया जावजीवाएसव्वाउ कयविक्कयमासद्धमासरूवगसंववहाराउ अप्पडिवि रया जावजीवाए सव्वाउहिरण्ण सुवण्णधणधण्ण मणिमोत्तियसंखसिलप्प वालउ अप्पडिविरया जावजीवाए सव्वाउ कूडतुलकूडमाणाउ अप्पडिवि रया जावजीवाए सव्वाउ आरंभ समारंभाउ अप्पडिविरया जावजीवाए उ सव्वाउ करणकाराणाउ अप्पडिविरया जावजीवाए सव्वाउ पयण पायाणाउ अप्पडिविरया जावजीवाए सव्वाउ कुट्टणपिट्टणतज्जणताड णवहवधपरिकिलेसाउ अप्पडिविरया जावजीवाए जेआवण्णे तहप्प गारे सावज्जा अबोहिया कम्मंता परपाणपरियावणकरा जे अणारि एहि कज्जंति ततो अप्पडिविरया जावजीवाए ॥ ६२ ॥

अर्थ—हवे एनो अधर्माचार कहेछे ते पोते अधर्मी छता बीजाने पण एवा आदेश आपे ते कहेछे के, (हण के०) अरे एने हणो, (छिंद भिंद के०) कर्णादिक, छेदी शूलादिकें करी भेदी, (विगत्तगाके०) एना चर्म उखेडो, इत्यादिक कहीने प्राणीउंने दुःखना उ पजावनार थाय, ए कारणे (लोहियपाणी के०) सर्वकाल लोहीयें करी हाथ राताछे परंतु तेउ जीवाने हणीने कोइ वार हाथ पण धोवे नहीं, (चंमा के०) तीव्रक्रोध, (रुद्दा के०) रौद्र ध्यान, शाचरहितकर्मना करनार, (खुद्दाके०) क्षुद्र दुष्ट, नृमा, (साहस्सि

ना के०) कृष्यादिक महाआरंजना करनार, तथा (महापरिग्गहा के०) क्षेत्र, धन, धान्य, द्विपद, चतु पदादिक, अनेक परिग्रहवंत अधर्मिक अधर्मानुय एटले अधर्मनीज अनुमोदना करनारा, (अधम्मिठा के०) अधर्मज जेने इष्ट्रे वल्लनछे, (अधम्मस्काईके०) अधर्मना बोलनार, अथवा अधर्मेथीजे ख्याति जेनी, अधर्मे करी आजीविकाना करनार, एटले अधर्मेज जीवे, प्राण धारण करे तथा अधर्मेज देखे तथा अधर्मनेज अंगीकार क रवा प्रलोके एटले देखे, ते अधर्मे प्रलोइ केवाय (अधम्मवलक्कणाके०) अधर्मने विषे राचे, अधर्मशील एटले अधर्मेज जेनो स्वनावछे, (समुदायारा के०) तथा चारनो समुदाय छे जेनो (अधम्मेणचेववित्तिकप्पेमाणाविहरंति के०) तथा जे अधर्मे करीनेज वृत्ति कल्पीने विचरे कालक्षेप करे ॥६१॥

॥ दीपिका—उक्तानि अधर्मधर्ममिश्रस्थानानि । अथ तेषां स्थानिनोऽनिर्धीयंते । अथवा पूर्वोक्तमेव प्रकारांतरेण विशिष्टतरमाह । अथापरं प्रथमस्थानस्य धर्मपक्षस्य वि नंगोविनागएवमाख्या यते । (इहखलुइत्यादि) एते च प्रायोगृहस्थाएव स्युरित्याह । (गिहत्था) गृहस्था (महेछा) महारंना महापरिग्रहाअधर्मेण चरत्याधार्मिकाअध र्मानुज्ञा अर्धर्मिष्ठानिस्त्रिंशा अधर्माख्यायिनोऽधर्मवादिन अधर्मजीविनोऽधर्मप्रलोकिन अधर्मे प्रकर्षेण रज्यतइत्यधर्मप्ररक्तका अधर्मशील समुदाचारोयत्किंचनकारित्वं येषां ते तथा अधर्मेण वृत्तिं जीविकां कल्पयंत कुर्वंतोविहरंति तिष्ठंति । पापानुष्ठानमाह ॥६१॥

॥ टीका—उक्तान्यधर्मधर्ममिश्रस्थानानि । सांप्रत तदाश्रिता स्थानिनोऽनिधीयंते । यदिवा प्राक्तनमेवान्येन प्रकारेण विशेषिततरमुच्यते । तत्राद्यमधर्मस्थानकमाश्रित्याह (अहावरेइत्यादि) अथापरोन्य प्रथमस्य स्थानस्याधर्मपाक्षिकस्य विनंगोविनाग आख्यायते (इहखलु इत्यादि) सुगमं । यावन्मनुष्याएवस्वनावानवतीति । एते च प्रा योगृहस्थाएव नवंतीत्याह । (महेछाइत्यादि) महती राज्यविनवपरिवारादिका स र्वातिशायिनी सछात करणप्रवृत्तिर्येषां ते महेछास्तथा महानारंनोवहनोभ्रमडलिकाग त्रीप्रवाहकृषिपडपोषणादिकोयेषां ते महारंना । ये चेव नूतास्ते महापरिग्रहाधन धान्यद्विपदचतुष्पदवास्तुक्षेत्रादिपरिग्रहवंत क्वचिदप्यनिवृत्ताअतएवाधर्मेण चरंतीत्य धर्मिकास्तथा धर्मिष्ठानिस्त्रिंशकर्मकारित्वादधर्मबहुलास्ततश्चाधर्मे कर्तव्ये अनुज्ञाअनुमो दनं येषां ते नवंत्यधर्मानुज्ञा एवमधर्ममाख्यातुं शील येषां ते तथा एवमधर्मप्रायजीवि नस्तथा अधर्ममेव प्रविलोकयितुं शील येषां ते नवंत्यधर्मप्रविलोकिनस्तथा धर्मप्रायेषु क र्मसु प्रकर्षेण रज्यतइति अधर्मरक्ता । रलयोरैक्यमिति रस्य स्थाने लकारोऽत्र कृत इति ।

तथाऽधर्मशीलाश्चधर्मस्वनावास्तथाऽधर्मात्मक समुदाचारोयत्किंचनानुष्ठान येषाते जव त्यधर्मशीलसमुदाचारास्तथाऽधर्मेण पापेन सावद्यानुष्ठानेनैव दहनाकननिर्लाछनादिके कर्मणा वृत्तिर्वर्तन कल्पयत कुर्वाणाविहरंतीति कालमतिवाहयंति ॥ ६१ ॥

हण छिंद निंद विगत्तगा लोहियपाणी चंमा रुद्दा खुद्दा साहस्सिया उ क्कंचण वंचण मायाणियडि कूडकवडसाइ संपठगबहुला डूस्सीला डूव्व या डूप्पडियाणंदा असाहु सव्वाउ पाणाइवायाउ अप्पडिविरया जाव जीवाए जाव सव्वाउ परिग्गहाउ अप्पडिविरया जाव जीवाए सव्वउ कोहाउ जाव मिछादंसणसल्लाउ अप्पडिविरया सव्वाउ एहाणुच्चण म द्दण वस्रगंधविलेवणसद्द फरिसरसरूव गंधमल्लालंकाराउ अप्पडिवि रया जावजीवाए सव्वाउ सगड रहजाण जुगगिल्लिथिल्लिसिया संदमा णिया सयणासणजाण वाहणन्नोगन्नोयणपविठरविहीउ अप्पडिविरया जावजीवाएसव्वाउ कयविक्कयमासद्धमासरूवगसववहाराउ अप्पडिवि रया जावजीवाए सव्वाउहिरस्र सुवस्रधणधस्र मणिमोत्तियसंखसिलप्प वालउ अप्पडिविरया जावजीवाए सव्वाउ कूडतुलकुडमाणाउ अप्पडिवि रया जावजीवाए सव्वाउ आरंन समारन्नाउ अप्पडिविरया जावजीवाए उ सव्वाउ करणकाराणाउ अप्पडिविरया जावजीवाए सव्वाउ पयण पायाणाउ अप्पडिविरया जावजीवाए सव्वाउ कुट्टणपिट्टणतज्जणताड णवहबंधपरिकिलेसाउ अप्पडिविरया जावजीवाए जेआवस्रे तहप्प गारे सावज्जा अबोहिया कम्मंता परपाणपरियावणकरा जे अणारि एहिं कज्जंति ततो अप्पडिविरया जावजीवाए ॥ ६७ ॥

अर्थ—हवे एनो अधर्माचार कहेछे ते पोते अधर्मी छता बीजाने पण एवा आदेश आपे ते कहेछे. के, (हण के०) अरे एने हणो, (छिंद निंद के०) कर्णादिक, छेदी शूलादिकें करी नेदी, (विगत्तगाके०) एना चर्म वखेडो, इत्यादिक कहीने प्राणीउने डुःखना उ पजावनार थाय, ए कारणे (लोहियपाणी के०) सर्वकाल लोहीयें करी हाथ राताछे परंतु तेउ जीवाने हणीने कोइ वार हाथ पण धोवे नहीं, (चंमा के०) तीव्रक्रोध, (रुद्दा के०) रौद्र ध्यान, आचरहितकर्मना करनार, (खुद्दाके०) क्षुद्र डुष्ट, नमा, (साहस्सि

या के०) अणविमास्या कार्यना करनार, (उक्कंचण के०) तथा शूलिकारोपणने विषे ऊर्ध्वमहोटु करवु (वचण के०) वचणा एटले परने ठगवानी बुद्धिराखे, जेम अनयकुमारने चंडप्रद्योतनी गणिकाये वच्यो, तेनी पेठे वचक, (मायाणियडि के०) वचवानीबुद्धिये वाणीयानी पेठे मायानियड नियड एटले बगनी वृत्तिये वचवाने अर्थ साधुने स्वरूपे रहे जेम उदायिराजाने चलेईकिये वच्यो, मार्यो, तेनी पेठे जाणी लेवु (कूडके०) मृषा बोलवु (कवडसाइ के०) कपट एटले रूप पालटवु तथा नावादिक परावर्त एटले प्रकारे (सपउग के०) तथा ते तोलानु न्यूनाधिक करवु तथा नेलसेलनु करवु इत्यादिक व्यापार जाणवो (बहुला के०) घणाछे बहुलकर्म, ते उपर योगी सन्यासीनी कथा जाणवी (डुस्सीला के०) डु शील (डुवया के०) डुष्टव्रत वाला (डुप्पडियाणदा के०) डु खे आनंद पमाडिये जेने डु खे हर्ष पमाडिये डुराराध्य इत्यर्थ एवा (असाहु के०) असाधु (सव्वाउ के०) सर्वथा प्रकारे (पाणाइवायाउ के०) प्राणातिपात थकी, (अप्पडिविरया के०) अनिवृत्या, (जावजीवाए के०) जावजीवसुधी (जावसव्वाउपरिग्गहाउ के०) यावत् सर्वथा परिग्रह थकी, (अप्पडिविरया के०) अनिवृत्या (जावजीवाए के०) जावजीव सुधी (सव्वतोकोहाउ के०) सर्वथा प्रकारे क्रोध थकी (जावमिछादसणसल्लाउ के०) यावत् मिथ्यात्व दर्शन शल्य थकी, (अप्पडिविरया के०) अनिवृत्या (सव्वाउके०) सर्वथा (एहाणुचणके०) स्नान, (मद्दणके०) मर्दन करावु (वस्नके०) वर्ण ते अबीर, गुलाल, (गंधके०) सुवास, (विलेवणके०) विलेपन करवा थकी, (सद्दके०) शब्द, गीत, वाद्यादिकना (फरिसके०) आठ जातना स्पर्श, (रूवके०) रूप, सुंदराकारादिक, (गंध के०) कर्पूरादिकनी सुगंध (मल्लालंकाराउ के०) माला, अलंकार ते थकी, (अप्पडिविरया के०) अनिवृत्या (जावजीवाए के०) जावजीव सुधी (सव्वाउ के०) सर्वथा (सगड के०) शकट एटले गाडा (रह के०) रथ (जाणके०) वहेल (जुग के०) पुरुषे उपाड्यो आकाश यान तथा (गिल्लि के०) मोली, अथवा उटना पलाण (थिल्लिके०) हस्तिना पलाण, (सिया के०) शिबिका ते देशविशेष प्रसिद्ध यान शिबिका (संदमाणियाके०) शिबिका देशविशेषे अन्यजातिछे (सयणासणजाणवाहण के०) पर्यंकादिक आसयान वाहनादिकना (नोग के०) नोग थकी तथा (नोयण के०) नोजन (पविछर के०) घर वखारो (विहीउ के०) तेना विस्तारथी (अप्पडिविरया के०) अनिवृत्या (जावजीवाए के०) जावजीवसुधी (सव्वाउ के०) सर्व (कयविक्कय के०) क्रय वक्रय एटले लेवो वेचवो (मासद्धमासरूवग के०) माप अर्धमाप रूपादिक (सववहाराउ के०) इत्यादिक लेवा देवा रूप व्यापार थकी (अप्पडिविरया के०) अनिवृत्या (जावजीवाए के०) जावजीवसुधी सर्वथा हिरण्य एटले रु

पु, तथा सुवर्ण, धन, धान्य, चिंतामणी प्रमुख मणी, तथा मौक्तिक दक्षणावर्त्त शंख, राजपट, प्रवालादिक परिग्रह, तेथकी अनिवृत्या, तथा जावजीवसुधी सर्व कूडा तोला, कूडा मापथकी, नथी निवृत्या, तथा जावजीव सुधी सर्व आरंभ जे कर्षणादिक, तथा समारंभ विशेष, तेथकी नथी निवृत्या, तथा जावजीवसुधी सर्वथा करण करावण थकी नथी निवृत्या, तथा जावजीव सुधी पचन ते पोते पचाववानु करे, तथा पचावण ते वीजा पासे पचाववानु करावे, ए क्रिया थकी नथी निवृत्या, तथा सर्व कुटण पिट्टन तर्जन अंगुलीयेकरी तर्जना करे चपटीयादिके करी ताडन करे, वध, बंधन करे, इत्यादिक जीवने क्लेषना कारण थकी नथी निवृत्या, तथा जावजीव सुधी जे बीजा, तथाप्रकारे पाठज कह्या एवा सपापकारी परपीडाना करनार, सावद्य कर्म, (अबोहिया के०) वोधवीजना नसाडनार एवा (कम्मता के०) कर्म, परजीवने परितापना करनार जे अनार्य पुरुषोने करवा योग्य, तेथकी पण जावजीव सुधी निवृत्या नथी ॥ ६२ ॥

॥दीपिका-(हणछिंदत्ति) जहि दंडादिना, छिंधि कर्णादिकं, भिंधि शूलादिना, एवं परोपदेशं वदते । किंभूता विकर्तका प्राणिनां चर्मापनेतारस्तेन लोहितपाणयश्चंडारौद्रा निस्त्रिंशा क्षुद्रा साहसिकाअविचारितकारिण उत्कुंचनवंचनमायानिकृतिकूटकपटादिभि संप्रातिसंप्रयोगोगाढ्यं तेन बहुला । तत्र शूलाद्यारोपणार्थमूर्ध्वं कुंचनमुत्कुंचनं वंचनं प्रतारणं । यथाऽभयकुमार प्रद्योतगणिकाभिर्धर्मवचनया वंचित । माया, वंचनबुद्धि प्रायोवणिजामिव निकृतिस्तु बकवृत्त्या देशभाषावेषादिविपर्ययकरणं कूटं तु तुलामानादेर्न्यूनाधिककरणं, कपटं यथाषाढभूतिना वेषपरावृत्त्याचार्योपाध्यायसंघाटकार्थं चत्वारोमोदकालब्धा एवं मायाश्रुतानरा । पुन किंभूता । दुःशीलाश्चिर परिचिताअपि शीघ्रं विसंवदंतोदुष्टव्रताः खेन प्रत्यानयते दर्पतइति दुष्प्रत्यानयाअसाधवपापा सर्वत प्राणातिपातादप्रतिविरतालोकनिंद्यादपि ब्राह्मणघातादेरनिवृत्ताइति सर्वग्रहण । एवं यावज्जीवं सर्वतोमृषावादाऽदत्तादानमैथुनपरिग्रहादप्रतिविरता । एवं सर्वेभ्य क्रोधमानमायालोभेभ्यस्तथा प्रेमद्वेषकलहाभ्याख्यानपैशुन्यपरिवादाऽरतिरतिमायामृषावादमिथ्यादर्शनशल्यादिभ्योऽविरता स्नानोद्वर्तनवर्णकविलेपनशब्दस्पर्शरूपरसगंधमाल्यालंकारादप्रतिविरता सर्वत शकटरथादेर्यानादिकात्प्रविस्तरविधे परिकरादप्रतिविरता । अत्र शकटरथादिकमेव यानं शकटरथयानं युग्यतरोत्क्षिप्तं चाकाशयानं (गिल्लित्ति) दोलिका (थिल्लित्ति) तुरगद्वयनिर्मितं यानं (संदमाणिवत्ति) शिबिकाविशेष । तथा सर्वत क्रयविक्रयाभ्यां माषकार्धमाषकरूपकनाणकादिभि संव्यवहारस्तस्मादविरता सर्वस्माद्धिरण्यसुवर्णधान्यमणिमौक्तिकशंखशिलाप्रवालादिपरिग्रहात् कूटतुलाकूटमानात्

या के०) अणविमास्या कार्यना करनार, (उक्कंचण के०) तथा शूलिकारोपणने विषे ऊर्ध्वमहोटु करवु (वचण के०) वचणा एटले पग्ने तगरानी बुद्धिराखे, जेम अनयकुमारने चंडप्रद्योतनी गणिकाये वच्यो, तेनी पेरे वंचक, (मायाणियडि के०) वचवानीबुद्धिये वाणीयानी पेरे मायानियड नियड एटले वगनी वृत्तिये वचवाने अर्थ साधुने स्वरूपे रहे जेम उदायिराजाने चलेईकिये वच्यो, मास्यो, तेनी पेरे जाणी लेवु (कूडके०) मृषा बोलवु (कवडसाइ के०) कपट एटले रूप पालटवु तथा नायादिक परावर्त्त एटले प्रकारे (सपउग के०) तथा ते तोलानु न्यूनाधिक करवु तथा नेलसेलनु करवु इत्यादिक व्यापार जाणवो (बहुला के०) घणाले बहुलकर्म, ते उपर योगी सन्यासीनी कथा जाणवी (डुस्सीला के०) दु शील (डुव्वया के०) दुष्टव्रत वाला (डुप्पडियाणदा के०) दु खे आनद पमाडिये जेने दु खे हर्ष पमाडिये डुराराध्य इत्यर्थ एवा (असाहु के०) असाधु (सव्वाउ के०) सर्वथा प्रकारे (पाणाइवायाउ के०) प्राणातिपात थकी, (अप्पडिविरया के०) अनिवृत्या, (जावजीवाए के०) जावजीवसुधी (जावसव्वाउपरिग्गहाउ के०) यावत् सर्वथा परिग्रह थकी, (अप्पडिविरया के०) अनिवृत्या (जावजीवाए के०) जावजीव सुधी (सव्वतोकोहाउ के०) सर्वथा प्रकारे क्रोध थकी (जावमिच्छादसणसल्लाउ के०) यावत् मिथ्यात्व दर्शन शल्य थकी, (अप्पडिविरया के०) अनिवृत्या (सव्वाउके०) सर्वथा (एहाणुचणके०) स्नान, (मद्दणके०) मर्दन करावबु (वस्रके०) वर्ण ते अबीर, गुलाल, (गधके०) सुवास, (विलेवणके०) विलेपन करवा थकी, (सद्दके०) शब्द, गीत, वाद्यादिकना (फरिसके०) आठ जातना स्पर्श, (रूवके०) रूप, सुदराकारादिक, (गध के०) कर्पूरादिकनी सुगध (मल्लालकाराउ के०) माला, अलकार ते थकी, (अप्पडिविरया के०) अनिवृत्या (जावजीवाए के०) जावजीव सुधी (सव्वाउ के०) सर्वथा (सगड के०) शकट एटले गाडा (रह के०) रथ (जाणके०) वहेल (जुग के०) पुरुषे उपाड्यो आकाश यान तथा (गिल्लि के०) मोली, अथवा उटना पलाण (थिल्लिके०) हस्तिना पलाण, (सिया के०) शिबिका ते देशविशेष प्रसिद्ध यान शिबिका (सदमाणियाके०) शिबिका देशविशेषे अन्यजातिले (सयणासणजाणवाहण के०) पर्यकादिक आसयान वाहनादिकना (नोग के०) नोग थकी तथा (नोयण के०) नोजन (पविछर के०) घर वखारो (विहीउ के०) तेना विस्तारथी (अप्पडिविरया के०) अनिवृत्या (जावजीवाए के०) जावजीवसुधी (सव्वाउ के०) सर्व (कयविक्कय के०) क्रय वक्रय एटले लेवो वेचवो (मासद्धमासरूवग के०) माप अर्ध माप रूपादिक (सववहाराउ के०) इत्यादिक लेवा देवा रूप व्यापार थकी (अप्पडिविरया के०) अनिवृत्या (जावजीवाए के०) जावजीवसुधी सर्वथा हिरण्य एटले रु

पि कूटसाक्ष्यादेरप्रतिविरताइति । तथा सर्वस्मात्स्त्रीबालादे परद्रव्यापहरणादविरतास्तथा सर्वस्मात्परस्त्रीगमनादेर्मैथुनादविरताएव सर्वस्मात्परिग्रहाद्योनिपोपकादप्यविरताएव स र्वेभ्य क्रोधमानमायालोभेभ्योऽविरतास्तथा प्रेमद्वेपकलहाभ्याख्यानपैशुन्यपरपरिवादाऽर तिरतिमायामृषावादमिथ्यादर्शनशल्यादिभ्योऽसदनुष्ठानेभ्योयावज्जीव ये प्रतिविरताभव ति । तथा सर्वस्मात्स्नानोन्मर्दनवर्णकविलेपनशब्दस्पर्शरूपरसगधमाल्यालकारात्कामांगा न्मोहजनितादप्रतिविरतायावज्जीवयेति । इहच वर्णकग्रहणेन वर्णविशेषापादक लोधा दिक गृह्यते । तथा सर्वत शकटरथादेर्यानविशेषादिकात्प्रतिविस्तरविधे परिकररूपात्प रिग्रहादप्रतिविरता ।इहच शकटरथादिकमेव यान शकटरथयान युग्य पुरुपोत्क्षिप्तमा काशयान (गिल्लित्ति) पुरुषद्वयोत्क्षिप्ता झोल्लिका । (थिल्लित्ति) वेसरादिद्वयविनिर्मि तोयानविशेष तथा (सदमाणियत्ति) शिविकाविशेपएव । एतदेवमन्यस्मादपि वस्त्रा दे परिग्रहादुपकरणभूतादविरतास्तथा सर्वत सर्वस्मात्क्रयविक्रयाभ्या करणभूताभ्या यो मापकार्धमापकरूपकार्पापणादिभि पण्यविनिमयात्मक सव्यवहारस्तस्मादविरतायाव ज्जीवयेति । तथा सर्वस्माद्धिरण्यसुवर्णादे प्रधानपरिग्रहादविरतास्तथा कूटतुलाकूटमा नादेरविरतास्तथा सर्वत रुपिपाशुपाल्यादेर्यत्स्वत करणमन्येन च यत्किचित्कारयति त स्मादविरतास्तथा पचनपाचनतस्तथा कडनकुट्टनपिट्टनतर्जनताडनवधादिना य परिक्लेश प्राणिना तस्मादविरता । साम्प्रतमुपसहरति । ये चान्ये परपीडाकारिण सावद्या कर्मस मारम्भाद्यबोधिकावोयकारिणस्तथा परप्राणपरितापनकरागोग्रहवदीग्रहग्रामघातात्मकाये ऽना र्यै क्रूरकर्मभि क्रियते ततोऽप्रतिविरतायावज्जीवयेति ॥ ६२ ॥

से जहा णामए केइ पुरिसे कलममसूरतिलमुग्गमासनिप्फावकुलत्थ आलिसदग पलिमथगमादिएहिं अयते कूरे मिछादंड पउजति एवमेव तहप्पगारे पुरिसजाए तित्तिरवट्टगलावगकवोतकविजलमियमहिसव राहगाहगोहकुम्मसिरिसिवमादिएहिं अयते कूरेमिछादंड पउजति जा वियसे बाहिरिया परिसा भवइ तजहा दासेइवा पेसेइवा भयएइवा भा इल्लेइवा कम्मकरएइवा भोगपुरिसेइवा तेसिपियण अन्नयरसिवा अ हालहुगसि अवराहसि सयमेव गरुय दंड निवत्तेइ तजहा इमदंडेह इ ममुंडेह इमतज्जेह इमतालेह इम अडुयवधण करेह इमनियलब धण करे ह इमहडिबधण करेह इमचारगबधण करेह इमनियलजुयलसकोडिय मोडिय करेह इमहत्थच्छिन्नय करेह इमपायच्छिन्नय करेह इम कन्नच्छिण्णय

रूप्यादे स्वयंकरणमारंत्न परेण कारयणं समारंनस्तस्मात्, पचनपाचनत कंदनकु पिट्टनतर्जनताडनवधबंधादिनियं परिक्लेशस्तस्मादनिवृत्तायेचान्ये तथाप्रकारा सावद्य कर्मसमारंनाश्चबोधिकाबोधिनाशका परप्राणपरितापनकरायेऽनार्यं क्रियंते ततोनि नायावज्जीवयेति ॥ ६१ ॥

॥ टीका–पापानुष्ठानमेव लेशतोदर्शयितुमाह । (हणछिंदनिंदेत्यादि) स्वतएव हनना का क्रिया कुर्वाणाअपरेषामप्येवमात्मकमुपदेश ददति । तत्र हनन दंडादिनिस्तत्कार्यं तथा छिंधि कर्णादिक, निंधि शूलादिना, विकर्तका प्राणिनामजिनापनेतारोऽतएव लोहि पाणयस्तथा चडारौद्रानिस्त्रिशा क्षुद्रा क्षुद्रकर्मकारित्वात्तथा साहसिकाअसमीक्षितका णस्तथा उत्कुचनवचनमायानिकृतिकूटकपायादिनि सद्दातिसप्रयोगेगार्ध्यं तेन बहुला त्प्रचुरास्ते तथा तत्रोर्ध्व कुचन शूलाद्यारोपणार्थमुत्कुचन । वचन प्रतारण । तद्यथाऽन कुमार प्रद्योतगणिकानिर्धार्मिकवचनया वंचित । माया, वचनबुद्धि प्रायोवणिजामिव निकृतिस्तु बकवृत्त्या कुर्कुटादिकरणेन दंनप्रधानवणिक् श्रोत्रियसाध्वाकारेण परवचना गलकर्तकानामिवावस्थान । देशनापानेपथ्यादिविपर्ययकरण कपट । यथा आषाढनूति नटेन वा परापरवेषपरावृत्त्याचार्योपाध्यायसघाटकात्मार्थं चत्वारोमोदकाअवाप्ता । टतु कार्षापणतुलाप्रस्थादे परवचनार्थं नानाविधकरण । एतैरुत्कुचनादिनि सद्दाति येन प्रयोगोयदिवातिशयेन द्रव्येण कस्तूरिकादिना परस्य द्रव्यस्य सप्रयोग सोतिस योगस्तद्बहुलास्तत्प्रधानाइत्यर्थं । उक्तंच सोहोइ सातिजोगो,दव्व ज छादियसुदवेसु । सगुणावयणेसुय, अबविसवाइण कुणइ ॥ १ ॥.एते चोत्कुचनादयोमायापर्यायाइइश दिवत् कथंचित्क्रियानेदेपि द्रष्टव्या । तथा दुष्ट शील येषांते दुःशीलाश्चिरमुपचरिताअ क्षिप्र विसवदति । दुःखानुमेयादारुणस्वनावाइत्यर्थं । तथा दुष्टानि व्रतानि येषांते था । यथा मांसनक्षणव्रतकालसमाप्तौ प्रनूततरसत्वोपघातेन मासप्रदानमन्यदपि नक्ष जनादिक दुष्टव्रतमिति तथान्यस्मिन् जन्मांतरे मधुमद्यमासादिकमन्यवहरिष्यामीत्ये मज्ञानाधाजन्मातरविधिद्वारेण सनिदानमेव व्रतं गृह्णति, तथा दुःखेन प्रत्यानद्यते दुः त्यनद्या । इदमुक्त नवति । तैरानदितेनापरेण केनचित्प्रत्युपकारेप्सुना गर्वाध्माताइ खेन प्रत्यानद्यते । यदिवा सत्यप्युपकारे प्रत्युपकारनीरवोनैवानद्यते प्रत्युत शक्तयोपक रे दोषमेवोत्पादयति । तथा चोक्त ।प्रतिकर्तुमशक्तिष्ठानरा पूर्वोपकारिणां ॥ दोषमुत्पा गच्छति मक्नूनामिव वायसा ॥ १ ॥ यतएवमतोऽसाधवस्ते पापकर्मकारित्वात् तथा या ज्जीव यावत्प्राणधारणेन सर्वस्मात्प्राणातिपाताद्प्रतिविरतालोकनिंदनीयादपि ब्राह्मणघ तादेरविरताइति । सर्वग्रहण सर्वस्मादपि कूटसाक्ष्यादेरप्रतिविरताइति । तथा सर्वस्मा

पि कूटसाक्ष्यादेरप्रतिविरताइति । तथा सर्वस्मात्स्त्रीबालादे परद्रव्यापहरणादविरतास्तथा सर्वस्मात्परस्त्रीगमनादेर्मैथुनादविरताएव सर्वस्मात्परिग्रहाद्योनिपोपकादप्य विरताएव स र्वेभ्य क्रोधमानमायालोभेभ्योऽविरतास्तथा प्रेमद्वेपकलहाभ्याख्यानपैशुन्यपरपरिवादाऽर तिरतिमायामृपावादमिथ्यादर्शनशल्यादिभ्योऽसदनुष्ठानेभ्योयावज्जीव ये प्रतिविरतानव ति । तथा सर्वस्मात्स्नानोन्मर्दनवर्णकविलेपनशब्दस्पर्शरूपरसगंधमाल्यालंकारात्कामभोगा न्मोहजनितादप्रतिविरतायावज्जीवयेति । इहच वर्णकग्रहणेन वर्णविशेषापादक लोधा दिक गृह्यते । तथा सर्वत शकटरथादेर्यानविशेषादिकात्प्रतिविस्तरविधे परिकररूपात्प रिग्रहादप्रतिविरता । इहच शकटरथादिकमेव यान शकटरथयान युग्य पुरुपोत्क्षिप्तमा काशयान (गिल्लित्ति) पुरुप द्वयोत्क्षिप्ता झोल्लिका । (थिल्लित्ति) वेसरादि द्वयविनिर्मि तोयानविशेप तथा (सदमाणियत्ति) शिबिकाविशेपएव । एतदेवमन्यस्मादपि वस्त्रा दे परिग्रहाडुपकरणभूतादविरतास्तथा सर्वत सर्वस्मात्क्रयविक्रयाभ्या करणभूताभ्या यो मापकार्धमापकरूपकार्पापणादिभि पण्यविनिमयात्मक सव्यवहारस्तस्मादविरतायाव ज्जीवयेति । तथा सर्वस्माद्धिरण्यसुवर्णादे प्रधानपरिग्रहादविरतास्तथा कूटतुलाकूटमा नादेरविरतास्तथा सर्वत कृपिपाशुपाल्यादेर्यत्स्वत करणमन्येन च यत्किंचित्कारयति त स्मादविरतास्तथा पचनपाचनतस्तथा कडनकुट्टनपिट्टनतर्जनताडनवधादिना य परिक्लेश प्राणिना तस्मादविरता । साम्प्रतमुपसहरति । ये चान्ये परपीडाकारिण सावद्या कर्मस मारम्भाअबोधिकाबोधकारिणस्तथा परप्राणपरितापनकरागोग्रहवदीग्रहग्रामघातात्मकाये ऽनार्यै क्रूरकर्मभि क्रियते ततोऽप्रतिविरतायावज्जीवयेति ॥ ६२ ॥

से जहा णामए केइ पुरिसे कलममसूरतिलमुग्गमासनिप्फावकुलत्थ आलिसदग पलिमथगमादिएहिं अयते कूरे मिछादम पउजति एवमेव तहप्पगारे पुरिसजाए तित्तिरवट्टगलावगकवोतकविजलमियमहिसव राहगाहगोहकुम्मसिरिसिवमादिएहिं अयते कूरेमिछादम पउजति जा वियसे बाहिरिया परिसा भवइ तजहा दासेइवा पेसेइवा भयएइवा भा इल्लेइवा कम्मकरएइवा भोगपुरिसेइवा तेसिंपियण अन्नयरसिवा अ हालहुगसि अवराहसि सयमेव गरुय दम निवत्तेइ तजहा इमदमेह इ ममुंमेह इमतज्जेह इमतालेह इमअडुयबधण करेह इमनियलबधण करे ह इमहडिबधण करेह इमचारगबधण करेह इमनियलजुयलसकोडिय मोडिय करेह इमहत्थछिन्नय करेह इमपायछिन्नय करेह इम कन्नछिण्णय

करेह इमनकत्तठसीसमुहछिन्नय करेह वेयगछिय अगछिय इमपुक्का प्फोडिय करेह इम णयणुप्पाडिय करेह इमदसणुप्पाडिय वसणुप्पाडिय जि ब्भुप्पाडिय उल्लंबिय करेह घसिय करेह घोलिय करेह सूलाइय करेह सूला भिन्नय करेह खारवत्तिय करेह वभवत्तिय करेह सीहपुछियग करेह वसभपुछियग करेह दवग्गिदड्ढयग कागणिमसखावियग भत्तपा णनिरुद्धग इम जावजीव वहवधण करेह इम अन्नयरेण असुभेण कु मारेण मारेह ॥ ६३ ॥

अर्थ–हवे वली बीजा प्रकार अधर्मिक पुरुषनो विशेष कहेछे यथादृष्टातें नामएवी सजावनाये कोइएक पुरुष कलम एटले वटाणा, चणा, मसूरनी दाल, तल, मग, मास एटले अडद, निप्फाव एटले वाल, (कुलछ के०) तुवर, (आलिसदग पलिमथग मादिएहि के०) चउथ, कालाचणा, आदेलेइने जे धान्य विशेषछे तेने पच न पाचनादिक क्रियाये करी पोताने तथा परने अर्थे (अयते के०) अयत्नवता निर्दय भावे (कूरेके०) क्रूरपणे डुष्ट थको (मिच्छादमपउजति के०) मिथ्या दम प्रयूजे (ए वमेव के०) एरीते (तहप्पगारे के०) तथा प्रकारे पूर्वोक्त जे (पुरिसजाए के०) पुरुषजा ति छे ते निर्दय पणे त्तितर, वर्त्तक, लावक, कपोतपक्षी, कपिजलपक्षी, मृग पाडो, सूवर, मयूर, गौ नकुलादिक, जलचर घो,काचवो, अने भूजपुरी सर्प इत्यादिक प्राणीने विषे अर्थी अथवा अनर्थी थको यत्नविना निर्दय भावे क्रूर डुष्ट थकोमिथ्यादम प्रयूजे,एवा पुरुष ने परिवार पण एवोज सापडे " यथा राजा तथा प्रजा " इतिवचनात् ते देखाडेछे (जावियसेबाहिरियापरिसाभवइ के०) जेपण तेनी बाहेरनी परिषदा होय (तजहा के०) ते कहेछे (दासेइवा के०) ए दास आपणी दासीनो पुत्रछे (पेसेइवा के०) ए प्रेक्षक काम काज उपने ज्यां त्यां मोकलवु (भयएइवा के०) भृत ते मजूरीनो करना र, तथा (भाइल्लेइवा के०) भागीक, षष्ठादिक भागे कर्षणादिकने विषे प्रवर्त्त, (कम्मक रएइवा के०) कामनो करनार प्रसिद्ध ते कर्मकर कहिये (भोगपुरिसेइवा के०) स्वतंत्र भोगने मार्टे राखेलो दास तेपण बाहेरनी परिषदा माहे कोइ रूडो पुरुष होय (तेसि पियण के०) तेनो पण (अन्नयरसिवा के०) अन्य कोइ एकनो (अहालहुगसिके०) यथा शब्दादिक सामलेछते पछी तेनो एवो न्हानो (अवराहसिके०) अपराध उपने छते ते नायकना दासादिकपण (सयमेवगुरुयदमनिवत्तेइके०) पोतें तेनें महोटो दम करे (तजहा के०) ते केवा दम करे ते कहेछे (इमदमेह के०) एने दमो, एनु सर्व

स अपहरी ल्यो, (इमसुंमेह के०) एने सर्वमुन्न करावो (इमतज्जेह के०) एने अंगु लीयें करी तर्जना करो, (इमतालेह के०) एने चिपटे करी ताडन करो, (इमअडुय वधणकरेहके०) एने पठवाडे वाहु करीने बधने बधन करो, (इमनियलबधणकरेहके०) एना हाथमां बेडी नाखीने बंधन करो, (इमहडिवंधणकरेह) एने हडनु बंधन करो, (इ मचारगबंधणकरेह के०) एने जाकसी बंधन करो, (इमनियलजुयलसंकोडियमोडियक रेहके०) एने बेडीना युगलें करी संकोच करो, मोडिय एटले अंगोपांग जग करी मरडो, अथवा एना हाथ पग संकोचीने बांधो, (इमहडछिन्नयंकरेह के०) एना हाथ ठेदन करो, (इम पायछिन्नय करेह के०) एना पग ठेदन करो (इमकन्नछिन्नयकरेह के०) एमज एना कान ठेदन करो, (इमनक्कठहसीसमुहछिन्नयकरेहके०) एनु नाक ठेदन करो, एना होठ, एनु मस्तक, एनु मुख, ठेदन करो, (वेयगठहियअगठहिय के०) एनु वेदठेद करो, एना जीवताज हैयाने ठेदो, कापो, एम करो (इमपुरकाप्फोडियकरेहके०) एना शरीरनी खालने उपाडो एम करो, (इमणयणुप्पाडियकरेह के०) एनी आंख उखेडो एटले चक्कुकाढो, एम करो (इमदसणुप्पाडियवसणुप्पाडियजिप्नुप्पाडियउलंवियकरेह के०) एना दांत काढो, वृषण काढो, एनी जीन काढो एने उंचो बांधोएने कूप, पर्वत नदीने नाखो एम करो, (घसियकरेह के०) एने पग बांधीने घसो, (घोलिय करेहके०) एने विषे आवानी पेंठ घोलो, (सूलाइयकरेहके०) एने शूली उपर आरोपण करो, (सूलानि न्नयकरेहके०) एने त्रिशूलें नेद करो, (खारवत्तिय करेहके०) एने शस्त्रे करी ठेदीने लू णनु पाणी सींचो (वज्झवत्तिय करेह के०) एनु शरीर मार्गे करी, काश ठेदा (सीहपु छियग करेह के०) एने सिंहने पुठडे बांधो, (वसनपुछियग करेह के०) एने बलदने पुठडे बांधो (दवग्गिदठयग के०) एने दावानल माहे बालो, (कागणिमसखावियगके०) एने काक पक्षीनु मांस काढीनें खवरावो, तथा एनु पोतानु मांस काढीने एनेज खव रावो, (जत्तपाणनिरुद्धगके०) एने जात पाणीनो निरोध करो, (इमजावजीवबंधणकरेह के०) एने जावजीव सुधी बांधी मूको, वध, बंधन करो, (इमअन्नयरेणअसुजेणकुमारेणमारे हके०) एम एने बीजा केटलाएक अशुज मारे करीने मारो, इत्यादिक एवा दम तेने आपे ६३

॥ दीपिका–अधार्मिकपदमेव सविस्तरमाह । (सेजहेत्ति) तद्यथा । नामसन्नावने । सन्नाव्यते अत्र नवे केचिदेवन्नूतानरा ये क्लममसूरादिषु पचनादिक्रिययाऽयताअयत्न वतोनिष्क्रिया क्रूरा मिथ्या अपराध विना दोषमारोप्य दंडोमिथ्यादंडस्तं प्रयुंजति । त था एवमेव प्रयोजन विनैव तथाप्रकारानिर्दया पुरुषान्तिनिरिवर्तकादिग्राणिष्वयता क्रू रकर्माणोमिथ्यादंड प्रयुंजति तेषा परिकरोपि तादृश स्यादित्याह (जावियसेत्ति) यापिच

करेह इमनकडठसीसमुहछिन्नय करेह वेयगछहिय अगछहिय इमपुक्का प्फोडिय करेह इम णयणुप्पाडिय करेह इमदसणुप्पाडिय वसणुप्पाडिय जि प्रुप्पाडिय उलंबिय करेह घसिय करेह घोलिय करेह सूलाइय करेह सूला भिन्नय करेह खारवत्तिय करेह वज्झवत्तिय करेह सीहपुछियग करेह वसभपुछियग करेह दवग्गिदड्ढयग कागणिमसखावियग भत्तपा णनिरुद्धग इम जावजीव वहबधण करेह इम अन्नयरेण असुभेण कु मारेण मारेह ॥ ६३ ॥

अर्थ—हवे वली बीजा प्रकारे अधर्मिक पुरुषनो विशेष कहेछे यथादृष्टांतें नामएवी सजावनायें कोइएक पुरुष कलम एटले वटाणा, चणा, मसूरनी दाल, तल, मग, मास एटले अडद, निप्फाव एटले वाल, (कुलथ के०) तुवर, (आलिसदग पलिमथग मादिएहि के०) चवय, कालाचणा, आदेलेइने जे धान्य विशेषछे तेने पच न पाचनादिक क्रियाये करी पोताने तथा परने अथ (अयते के०) अयत्नछता निर्दय भावे (कूरेके०) क्रूरपणे दुष्ट थको (मिछादम्डपउजति के०) मिथ्या दम्ड प्रयूजे (ए वमेव के०) एरीते (तहप्पगारे के०) तथा प्रकारे पूर्वोक्त जे (पुरिसजाए के०) पुरुषजा ति छे ते निर्दय पणे तितर, वर्त्तक, लावक, कपोतपक्षी, कपिजलपक्षी, मृग पामो, सूवर, मयूर, गौ नकुलादिक, जलचर घो,काचबो, अने भूजपुरी सर्प इत्यादिक प्राणीने विषे अर्थी अथवा अनर्थी थको यत्नविना निर्दय भावे क्रूर दुष्ट थकोमिथ्यादम्ड प्रयूजे,एवा पुरुष ने परिवार पण एवोज सांपडे " यथा राजा तथा प्रजा " इतिवचनात् ते देखाडेछे (जावियसेबाहिरियापरिसाभवइ के०) जेपण तेनी बाहेरनी परिषदा होय (तजहा के०) ते कहेछे (दासेइवा के०) ए दास आपणी दासीनो पुत्रछे (पेसेइवा के०) ए प्रेक्षक काम काज उपने ज्यां त्यां मोकलछु (भयएइवा के०) भृत ते मजूरीनो करना र, तथा (भाइल्लेइवा के०) भागीक, पछादिक भागे कर्षणादिकने विषे प्रवर्त्ते, (कम्मक रएइवा के०) कामनो करनार प्रसिद्ध ते कर्मकर कहिये (भोगपुरिसेइवा के०) स्वतंत्र भोगने मार्टे राखेलो दास तेपण बाहेरनी परिषदा माहे कोइ रूडो पुरुष होय (तेसि पियण के०) तेनो पण (अन्नयरसिवा के०) अन्य कोइ एकनो (अहालहुगसिके०) यथा शब्दादिक साभलेछते पछी तेनो एवो न्हानो (अवराहसिके०) अपराध उपने छते ते नायकना दासादिकपण (सयमेवगुरुयदम्डनिवत्तेइके०) पोते तेने महोटो दम्ड करे (तजहा के०) ते केवा दम्ड करे ते कहेछे (इमदम्डेह के०) एने दम्डो, एनु सर्व

स्व अपहरी ल्यो, (इमर्सुंमेह के०) एने सर्वमुंमन करावो (इमतज्जेह के०) एने अंगु लीये करी तर्जना करो, (इमतालेह के०) एने चिपटे करी ताडन करो, (इमअंडुय वधणकरेह्के०) एने पठवाडे बाहु करीने वधने बंधन करो, (इमनियलबंधणकरेह्के०) एना हाथमां बेडी नाखीने बंधन करो, (इमहडिबंधणकरेह) एने हडनु बंधन करो, (इ मचारगबंधणकरेह के०) एने नाकसी बंधन करो, (इमनियलजुयलसंकोडियमोडियक रेह्के०) एने बेडीना युगलें करी संकोच करो, मोडिय एटले अंगोपांग नंग करी मरडो, अथवा एना हाथ पग संकोचीने बांधो, (इमहत्थछिन्नयंकरेह के०) एना हाथ छेदन करो, (इम पायछिन्नय करेह के०) एना पग छेदन करो (इमकन्नछिन्नयकरेह के०) एमज एना कान छेदन करो, (इमनक्कउठसीसमुहछिन्नयकरेह्के०) एनु नाक छेदन करो, एना होठ, एनु मस्तक, एनु मुख, छेदन करो, (वेयगछहियअंगछहिय के०) एनु वेदछेद करो, एना जीवताज देयाने छेदो, कापो, एम करो (इमपुरकाप्फोडियकरेह्के०) एना शरीरनी खालने उपाडो एम करो, (इमणयणुप्पाडियकरेह के०) एनी आंख उखेडो एटले चक्षुकाढो, एम करो (इमदसणुप्पाडियवसणुप्पाडियजिप्नुप्पाडियउंलंबियकरेह के०) एना दांत काढो, वृषण काढो, एनी जीन काढो एने उंचो बांधोएने कूप, पर्वत नदीने नाखो एम करो, (घसियकरेह के०) एने पग बांधीने घसो, (घोलिय करेह्के०) एने विषे आवानी पेंठे घोलो, (सूलाइयकरेह्के०) एने शूली उपर आरोपण करो, (सूलाभि न्नयकरेह्के०) एने त्रिशूलें नेद करो, (खारवत्तिय करेह्के०)एने शस्त्रे करी छेदीने जू णनु पाणी सींचो (वप्नवत्तिय करेह के०) एनु शरीर माचें करी, काशें छेदो (सीहपु छियग करेह के०) एने सिंहने पुठडे बांधो, (वसनपुछियग करेह के०) एने बलदने पुठडे बांधो (दवग्गिदड्ढयग के०) एने दावानल माहे बालो, (कागणिमसखावियगके०) एने काक पक्षीनु मांस काढीने खवरावो, तथा एनु पोतानु मांस काटीने एनेज खव रावो, (नत्तपाणनिरुद्धगके०) एने नात पाणीनो निरोध करो, (इमजावजीवबंधणकरेह के०)एने जावजीव सुधी बांधी मूको, वध, बंधन करो, (इमअन्नयरेणअसुनेणकुमारेणमारे ह्के०)एम एने बीजा केटलाएक अशुन्न मारे करीने मारो,इत्यादिक एवा दम तेने आपे ६३

॥ दीपिका–अधार्मिकपदमेव सविस्तरमाह । (सेजहेत्ति) तद्यथा । नामसन्नावने । सन्नाव्यते अत्र नवे केचिदेवनूतानरा ये कलममसूरादिषु पचनादिक्रियया ऽयताअयतन्न यतोनिष्क्रिया क्रूरा मिथ्या अपराध विना दोषमारोप्य दंडोमिथ्यादंडस्तं प्रयुंजति । त था एवमेव प्रयोजन विनैव तथाप्रकारानिर्दया पुरुषान्तित्तिरिवर्तकादिप्राणिष्वयता क्रू रकर्माणोमिथ्यादंड प्रयुंजति तेषां परिकरोपि तादृश स्यादित्याह (जावियसेत्ति) यापिच

तेषां बाह्या पर्षद्भवति । तद्यथा दास स्वदासीसुत प्रेष्य प्रेषणयोग्य भृतकोमूल्यगृहीत भागिक कृष्यादौ सभागग्राही कर्मकर प्रतीत भोगपरोनायकाश्रित कश्चित् ते दासादयोऽन्यतरस्मिन्स्वल्पेऽप्यपराधे स्वय गुरुतर दड प्रयुजति । सच नायकस्तेषां दासादीना यथा लघौ स्वल्पेऽपराधेपि गुरुदड वक्ष्यमाण प्रयुक्ते । तद्यथा इम दासं दंडयत यूयमित्यादि सुगम । यावदिममन्यतरेणाऽशुभेन कुत्सितमारेण मारयतइति॥ ६३ ॥

॥ टीका–पुनरन्यथा बहुप्रकारमधार्मिकपद प्रतिपिपादयिषुराह । (सेजहाणामएइत्यादि) तद्यथेत्युपदर्शनार्थोनामशब्द सभावनायां सभाव्यते । अस्मिन्विचित्रे ससारे केचनैवभूता पुरुषा केवलमसूरतिलमुद्गादिषु पचनपाचनादिकया क्रियया स्वपरार्थमयताअप्रयत्नवतोनिष्कृपा क्रूरामिथ्यादड प्रयुजति । मिथ्यैवाऽनपराधिष्वेव दोषमारोप्य दडोमिथ्यादडस्तं विदधति । तथैवेमे प्रयोजन विनैव तथाप्रकारा पुरुषानिष्करुणा जीवोपघातनिरतास्तित्तिरवर्तकलावकादिषु जीवनप्रियेषु प्राणिष्वयता क्रूरकर्माणोदड प्रयुजति । तेषा च क्रूरधिया "यथा राजा तथा प्रजा" इति प्रवादात् परिवारोपि तथाभूतएव भवतीति । तथा दर्शयितुमाह । (जावियसेइत्यादि) यापिच तेषा बाह्या पर्षद्भवति । तद्यथा । दास स्वदासीसुत प्रेष्य प्रेषणयोग्योभृत्योभृत्यदेश्योभृतकोवेतवेनोदकाद्यानयनविधायी तथा भागिकोय षष्ठषशादिलाभेन कृष्यादौ व्याप्रियते कर्मकर प्रतीतस्तथा नायिकाश्रित कश्चिद्भोगस्तदेव ते दासादयोऽन्यस्य लघावप्यपराधे गुरुतर दड प्रयुजति प्रयोजयतिच । सच नायकस्तेषां दासादीना बाह्यपर्षद्भूतानामन्यतरस्मिंस्तथा लघावपराधे शब्दश्रवणादिके गुरुतर दड वक्ष्यमाण प्रयुंक्ते । तद्यथा । इम दास प्रेष्यादिकवा सर्वस्वापहारेण दडयत यूयमित्यादि सूत्रसिद्ध यावदिममन्यतरेणाशुभेन कुत्सितमारेण व्यापादयत यूय ॥ ६३ ॥

जावियसे अभ्भितरिया परिसा भवइ तजहा मायाइवा पियाइवा भायाइवा भगिणीइवा भज्जाइवा पुत्ताइवा धूताइवा सुण्हाइवा तेसिपियण अन्नयरसि अहालहुगसि अवराहसि सयमेव गरुय दम णिवत्तेइ सीउदगवियडसि उबोलित्ता भवइ जहा मित्तदोसवत्तिए जाव अहिए परसि लोगसि तेडुक्कति सोयति जूरति तिप्पति पिट्टति परितप्पति ते डुक्कणसोयणजूरणपिट्टणपरितप्पणवहबधणपरिकिलेसाउ अपडिविरया भवति ॥ ६४ ॥

अर्थ–(जावियसेअभ्भितरियापरिसाभवइके०) जे पण तेनी अन्यतरनी परिषदा होय

जहा के०) ते कहेछे माता, अथवा पिता, अथवा भाइ, भगनी, स्त्री, पुत्र, बेटी, पुत्रनीस्त्री, इत्यादिक माहेली परिषदावालामाथी कोइकनो पण अजाण पणे यथा न्हानो सरखो अपराध उपने थके पोतेंज तेने महोटो दम करे, मारे, शीतकालें तेना शरीरने टाढापाणीमां बोले, एवा अकार्य करे, ए जेम पूर्वे मित्रदोष प्रत्ययिक क्रियास्थानक कह्युछे, तेमज अहीयां पण जाणीलेवु एवा दमनो करनार पुरुष, ते यावत् आ लोकने विषे अहित कारी अने परलोकने विषे आत्माने अहितकारी थाय ते अनेक जीवने डुःख उपजावे, शोक उपजावे, जूरावे, तपावे, पीटे, परिताप आपे, ते घणा जीवोने डुःखदायक शोकनो करनार गर्हा, निंदा करावनार, पीटीने पीडानो उपजावनार, परिताप करावनार, वध करावनार, बंधन करावनार, एवा महोटा क्लेश उपजाववाना कर्म थकी, जावजीव नथी निवृत्या एवो थका होय ॥ ६४ ॥

॥ दीपिका–यापि च तेषामन्यतरा पर्षद्भवति मातापित्रादिका मित्रदोष प्रत्ययिकाख्यदशमक्रियास्थानवज्ज्ञेयं यावदहितोऽस्मिन् लोके। ते क्रूरकर्माण स्वल्पापराधिनामपि गुरुतरदंडकरणाडुःखयंति शोकयति याव द्वधबंधपरिक्लेशादप्रतिविरताभवति ॥ ६४ ॥

टीका–यापिच क्रूरकर्मवतामन्यतरा पर्षद्भवति । तद्यथा । माता पित्रादिका मित्रदोष प्रत्ययिकक्रियास्थानवद्ज्ञेय यावदहितोयमस्मिन् लोके इति । तथाहि । आत्मनोऽपथ्यकारि परस्मिन्नपि लोके । तदेव ते मातृपित्रादीना स्वल्पापराधिनामपि गुरुतरदंडापादनतोडुःखमुत्पादयति तथा नानाविधैरुपायैस्तेषां शोकमुत्पादयति शोकयतीत्येव ते प्राणिना बहुप्रकारपीडोत्पादका याव द्वधबंधपरिक्लेशादप्रतिविरताभवति ॥ ६४ ॥

एवमेव ते इच्छिकामेहिं मुच्छिया गिद्धा गढिया अक्षोववन्ना जाव वासाइं चउपचमाइं छद्दसमाइंवा अप्पतरोवा भुज्जतरोवा काल भुंजित्तु भोग भोगाइं पविसुइत्ता वेरायतणाइं सचिणित्ता बहूइं पावाइं कम्माइं उस्सन्नाइं सभारकडेण कम्मणा से जहा णामए अयगोलइवा सेलगोलइवा उदगंसि पक्खित्ते समाणे उदगतलमइवइत्ताइं अहे धरणितल पइठाणे भवइ एवमेव तहप्पगारे पुरिसजाते वज्जबहुले धूतबहुले पंकबहुले वेरबहुले आप्पत्तियबहुले दंभबहुले णियडिबहुले साइबहुले अयसबहुले उस्सन्नतसपाणघाती कालमासे कालकिच्चा धरणितलमइवइत्ताइं अहे णरगतलपइठाणे भवइ ॥ ६५ ॥

तेषां बाह्या पर्षद्भवति । तद्यथा दास स्वदासीसुत प्रेष्य प्रेषणयोग्य नृतकोमूल्यगृहीत नागिक कृष्यादौ सन्नागग्राही कर्मकर प्रतीत नोगपरोनायकाश्रित कश्चित् ते दासादयोऽन्यतरस्मिन्स्वल्पेऽप्यपराधे स्वय गुरुतर दड प्रयुजति । सच नायकस्तेषां दासादीना यथा लघौ स्वल्पेऽपराधेपि गुरुदड वक्ष्यमाण प्रयुक्ते । तद्यथा इम दास दंडयत यूयमित्यादि सुगम । यावदिममन्यतरेणाऽशुचेन कुत्सितमारेण मारयतइति॥ ६३ ॥

॥ टीका–पुनरन्यथा बहुप्रकारमधार्मिकपद प्रतिपिपादयिषुराह । (सेजहाणामएइत्यादि) तद्यथेत्युपदर्शनार्थोनामशब्द सन्नावनाया सन्नाव्यते । अस्मिन्विचित्रे ससारे केचनैवनूता पुरुषा केवलमसूरतिलमुद्गादिषु पचनपाचनादिकया क्रियया स्वपरार्थमयताअप्रयत्नवतोनिष्कृपा क्रूरामिथ्यादड प्रयुजति । मिथ्यैवाऽनपराधिष्वेव दोषमारोप्य दडोमिथ्यादडस्त विदधति । तथैवेमे प्रयोजन विनैव तथाप्रकारा पुरुषानिष्करुणा जीवोपघातनिरतास्तित्तिरवर्तकलावकादिषु जीवनप्रियेषु प्राणिष्वयता क्रूरकर्माणोदड प्रयुजति। तेषा च क्रूरधिया "यथा राजा तथा प्रजा" इति प्रवादात् परिवारोपि तथानूतएव नवतीति । तथा दर्शयितुमाह । (जावियसेइत्यादि) यापिच तेषा बाह्या पर्षद्भवति । तद्यथा । दास स्वदासीसुत प्रेष्य प्रेषणयोग्योनृत्योनृत्यदेश्योनृतकोवेतवेनोदकाद्यानयनविधायी तथा नागिकोय षष्ठघशादिलानेन कृष्यादौ व्याप्रियते कर्मकर प्रतीतस्तथा नायिकाश्रित कश्चिद्भोगस्तदेव ते दासादयोऽन्यस्य लघावप्यपराधे गुरुतर दड प्रयुजति प्रयोजयतिच । सच नायकस्तेषां दासादीना बाह्यपर्षद्भूतानामन्यतरस्मिंस्तथा लघावपराधे शब्दश्रवणादिके गुरुतर दड वक्ष्यमाण प्रयुक्ते । तद्यथा । इम दास प्रेष्यादिकवा सर्वस्वापहारेण दडयत यूयमित्यादि सूत्रसिद्ध यावदिममन्यतरेणाशुचेन कुत्सितमारेण व्यापादयत यूय ॥ ६३ ॥

जावियसे अप्तितरिया परिसा नवइ तजहा मायाइवा पियाइवा नायाइवा नगिणीइवा नज्जाइवा पुत्ताइवा धूताइवा सुण्हाइवा तेसिपियण अन्नयरसि अहालहुगसि अवराहसि सयमेव गरुय दम णिवत्तेइ सीउदगवियडसि उबोलित्ता नवइ जहा मित्तदोसवत्तिए जाव अहिए परसि लोगसि तेडुक्कति सोयति जूरति तिप्पति पिट्टति परितप्पति ते डुक्कणसोयणजूरणपिट्टणपरितप्पणवहवधणपरिकिलेसाउ अपडिविरया नवति ॥ ६४ ॥

अर्थ–(जावियसेअप्तितरियापरिसानवइके०) जे पण तेनी अन्यतरनी परिषदा होय

ल प्रायस्त्रसघाती कालमासे स्वायुः क्षये कालं कृत्वा धरणितलं रत्नप्रभादिकायाः पृथिव्यास्तलमतिलंघ्याऽधोनरकतलप्रतिष्ठानं स्यात् ॥ ६५ ॥

॥ टीका–तेच विषयासक्ततया एतत्कुर्वंतीत्येतद्दर्शयितुमाह । (एवमेवइत्यादि) एवमेव पूर्वोक्तस्वभावाएव ते निष्कृपानिरनुक्रोशाबाह्यान्यतरपर्षदोरपि कर्णनासाविकर्तनादिना दंडपातनस्वभावाः स्त्रीप्रधानाः कामाः स्त्रीकामाः यदिवा स्त्रीषु मदनकामविषयभूतासु कामेषुच शब्दादिषु इच्छाकामेषु मूर्छिताग्रथिताग्रयिताअध्युपपन्नाः ।एते च शक्रपुरंदरादिवत्पर्याया कथंचिद्भेदं वाश्रित्य व्याख्येयाः । तेच भोगासक्ताव्यपगतपरलोकाव्यवसायायावद्वर्षाणि चतुः पचषट् सप्तवा दशवाल्पतरं वा कालं भुक्त्वा भोगासक्ततयाच परपीडोत्पादनतो वैरायतनानि वैरानुबंधानभूप्रसूयोत्पाद्य विधाय तथा संचयित्वा सचित्योपचित्य बहूनि प्रभूततरकालस्थितिकानि क्रूराणि क्रूरविपाकानि नरकादिषु यातनास्थानेषु क्रकचपाटनशाल्मल्यवरोहणतप्तत्रपुपानात्मकानि कर्माण्यष्टप्रकाराणि बद्धस्पृष्टनिधत्तनिकाचनावस्थानि विधाय तेनच संभारकृतेन कर्मणा प्रेर्यमाणास्तत्कर्मगुरवोवा नरकतलप्रतिष्ठानाभवंतीत्युत्तरक्रियायापादितबहुवचनरूपयेति संबंधः । अस्मिन्नेवार्थे सर्वलोकप्रतीतं दृष्टांतमाह । (सेजहाणामएइत्यादि) तद्यथानामायोगोलकोऽयस्पिंडः शिलागोलकोवृत्तात्मशकलं वोदके प्रक्षिप्तं समानसलिलतलमतिवर्त्यातिलंघ्या धोधरणीतले प्रतिष्ठानोभवति । अधुना दार्ष्टांतिकमाह । (एवमेवेत्यादि) यथासावयोगोलकोवृत्तत्वाच्छीघ्रमेवाधायात्येवमेव तथाप्रकारं पुरुषजातं । तमेव लेशतोदर्शयति । वज्रवद्वज्रं गुरुत्वात्कर्म तद्बहुलस्तत्करणप्रचुरस्तथा बध्यमानकर्मगुरुरित्यर्थः ।तथा धूयतइति धूतं प्राग्बद्धं कर्म तत्प्रचुरं ।पुनः सामान्येनाह । पकयतीति पकं पापं तद्बहुलस्तथा । तदेव कारणतादर्शयितुमाह । वैरबहुला वैरानुबंधप्रचुरस्तथा (पत्तियति) मनसोऽदुष्प्रणिधानं तत्प्रधानस्तथा दंभामायया परवचनतदुत्कटस्तथा निकृतिर्मायावेषभाषापरावृत्तिद्वारेण परद्रोहबुद्धिस्तन्मयस्तथा सातिबहुलइतिसातिशयेन द्रव्येणापरस्य हीनगुणस्य द्रव्यस्य संयोगः सातिस्तद्बहुलस्तत्करणप्रचुरस्तथाऽयशोश्लाघास्तद्बृत्ततया निंदा यानि यानि परापकारभूतानि कर्मानुष्ठानानि विधत्ते तेषु तेषु कर्मसु करचरणछेदनादिषु अयशोभाग्भवतीति । सएवभूतः पुरुषः कालमासे स्वायुषः क्षये कालं कृत्वा पृथिव्यारत्नप्रभादिकायास्तलमतिवर्त्य योजनसहस्रपरिमाणमतिलंघ्य नरकतलप्रतिष्ठानोऽसौ भवति ॥ ६५ ॥

तेणं णरगा अंतोवट्टा बाहिं चउरंसा अहे खुरप्पसंठाणसंठिया णिच्चंधकारतमसा ववगयगहचंदसूरनक्खत्तजोइसपहा मेदवसामंसरुहिरपूयपडलचिक्खललित्ताणुलेवणतला असुई वीसा परमदुब्भिगंधा कण्हा

अर्थ-एरीतें ते पूर्वोक्त स्वनाव वालो पुरुप निर्दय थको बाह्यान्यतर एवी पोतानी जे प रिपदा तेने पण पीडानो करनार एवो, ठतो स्त्रियादिकना काम नोगने विपे मूर्छित गृद्ध एट ले लोनी, नोगने विपे पोतें गुथाणो थको परम आसक्त ठतो, यावत् चार, तथा पांच, तथा सात,तथा दश वर्ष एम अल्प काल अथवा घणोकाल सुधी नोगववा योग्य नोग नोगवीने, घणा जीवोनी साथे अनेक जातना वैर उपजावी वैरनावना स्थानकनो संचय करीने, ज्यां घ णापापरूप हिंसादिक क्रूर कर्म सनारीकरी करेला कर्मने प्ररेतो एवा ठतो, नरक रूप स्था नकने पामे (सेजहाणामए के०) ते यथा दृष्टांते जेम (अयगोलइवा के०) लोहनो गोलो, (सेलगोलइवा के०) पाषाणनो गोलो, तेने (उदगसिपक्खित्तेसमाणे के०) पाणीना इहमां हे अथवा नदी तलाव माहे नाख्यो थको, (उदगतलमइवइत्ताइ के०) उपलु तलु अति क्रमीने पाणीना तलामा जइ पेसे, (अहेधरणितलपइठाणेनवइ के०) नीचे धरतिना त लाने विपे जइ बेसेठे (एवमेव के०) एरीतें (तहप्पगारे के०) तथा प्रकारें, ए पूर्वोक्त प्र कारना डुष्ट निर्दय नास्तिक वादि प्रमुख एवा जे (पुरिसजाते के०) पुरुप जातिठे ते (वज्ज बहुलेके०) घणा पापरूप कर्म, (धूतबहुलेके०) घणी कर्मरूपरज (पकबहुलेके०) घणो क र्मरूप कादव, (वेरबहुले के०) घणो जीवोनी साथे वैरनाव, (आप्पतियबहुले के०) अविश्वासलायक एवु मननु डुर्ध्यान (अयसबहुले के०) घणो अपयश (दनबहु ले के०) घणु कपट परने वचवा पणु ठे जेमा, (णियडिबहुले के०) घणो वेष तथा नापानु पलटाववुठे जेमा (साइबहुले के०) सातिशय इव्य साथे गुणहीन पुरुषोना इव्यनु मेलावबु (उस्सन्नतसपाणघाती के०) प्राय त्रस प्राणी जीवनो घात करनार, ते (कालमासेकालकिच्चा के०) कालने अवसरे काल करीने (धरणितलमइवइत्ताइ के०) पृथ्वीना तलाने सहस्र योजन प्रमाण अतिक्रमि जाये, जइने, (अहेणरगतल पइठाणेनवइ के०) नीचे नरकना तलियाना स्थानकने विपे तेनु पडवु थायठे ॥६५॥

॥दीपिका-(एवमेवत्ति) एवमेव ते निर्दया स्त्रीप्रधानेषु कामेषु मूर्छिता गृद्धाग्रथिता अध्युपपन्नायावद्वर्षाणि चतु पचपट्सप्त वा दशवाल्पतरप्रनूततर वा काल नोगान् नु क्त्वा वैरायतनानि वैरानुबधान् प्रविसूय उत्पद्य बहूनि पापकर्माणि सचित्य वर्धयित्वा उत्पन्न प्राय सनारकृतेन कर्मणा प्रेर्यमाणानरकतलप्रतिष्ठाना स्यु । यथाऽयोगोल शिलागोलकोवा उदकक्षिप्तउदकतलमतिवर्त्य उल्लघ्याधोधरणितलप्रतिष्ठानोनवति एवमे व सनरोवज्र वध्यमान कर्म तद्बहुल धून प्राग्बद्ध कर्म तत्प्रचुर पकबहुल पकपाप वैरबहुल (आप्पत्तियत्ति) मनसोडुर्ध्यान दनोमायया परवचन निकृतिर्नापावेपादिपरा वर्तेन परद्रोहबुद्धि सातिशयेन इव्येणहीनइव्यस्य मेलन साति तद्बहुल- अयशोबहु

ल प्रायस्त्रसघाती कालमासे स्वायु क्षये काल कृत्वा धरणितल रत्नप्रभादिकाया पृथिव्यास्तलमतिलंघ्याऽधोनरकतलप्रतिष्ठान स्यात् ॥ ६५ ॥

॥ टीका—तेच विषयासक्ततया एतत्कुर्वतीत्येतद्दर्शयितुमाह । (एवमेवइत्यादि) एवमेव पूर्वोक्तस्वभावाएव ते निष्कृपानिरनुक्रोशाबाह्याभ्यन्तरपर्षदोरपि कर्णनासाविकर्तनादिना दंडपातनस्वभावा स्त्रीप्रधाना कामा स्त्रीकामा यदिवा स्त्रीषु मदनकामविषयभूतासु कामेषुच शब्दादिषु इच्छाकामेषु मूर्छितागृद्धाग्रथिताअध्युपपन्ना ।एते च शक्रपुरंदरादिवत्पर्याया कथंचिद्भेद वाश्रित्य व्याख्येया । तेच भोगासक्ताव्यपगतपरलोकाध्यवसायायावद्वर्षाणि चतु पंचषट् सप्तवा दशवाऽल्पतर वा काल भुक्त्वा भोगासक्ततयाच परपीडोत्पादनतो वैरायतनानि वैरानुबंधानप्रसूयोत्पाद्य विधाय तथा संचयित्वा संचित्योपचित्य बहूनि प्रभूततरकालस्थितिकानि क्रूराणि क्रूरविपाकानि नरकादिषु यातनास्थानेषु क्रकचपाटनशाल्मल्यवरोहणतप्तत्रपुपानात्मकानि कर्माण्यष्टप्रकाराणि बद्धस्पृष्टनिधत्तनिकाचनावस्थानि विधाय तेनच संभाररूतेन कर्मणा प्रेर्यमाणास्तत्कर्मगुरवोवा नरकतलप्रतिष्ठानाभवंतीत्युत्तरक्रिययापादितबहुवचनरूपयेति संबंध । अस्मिन्नेवार्थे सर्वलोकप्रतीतं दृष्टांतमाह । (सेजहाणामएइत्यादि) तद्यथानामायोगोलकोऽश्मपिंड शिलागोलकोवृत्तात्मशकल वोदके प्रक्षिप्त समानसलिलतलमतिवर्त्यातिलंघ्या धोधरणीतले प्रतिष्ठानोभवति । अधुना दार्ष्टांतिकमाह । (एवमेवेत्यादि) यथासावयोगोलकोवृत्तत्वाल्लोप्रमेवाधायात्येवमेव तथाप्रकार पुरुषजात । तमेव लेशतोदर्शयति । वज्रवद्वज्र गुरुत्वात्कर्म तद्बहुलस्तत्कारणप्रचुरस्तथा बध्यमानकर्मगुरुरित्यर्थ ।तथा धूयतइति धूत प्राग्बद्ध कर्म तत्प्रचुर ।पुन सामान्येनाह। पकयतीति पंक पाप तद्बहुलस्तथा। तदेव कारणतादर्शयितुमाह । वैरबहुला वैरानु बंधप्रचुरस्तथा (पत्तियति) मनसोऽदुष्प्रणिधान तत्प्रधानस्तथा दंभामायया परवचनतदुत्कटस्तथा निकृतिर्मायावेषभाषापरावृत्तिच्छद्मना परद्रोहबुद्धिस्तन्मयस्तथा सातिबहुलऽतिसातिशयेन द्रव्येणापरस्य हीनगुणस्य द्रव्यस्य संयोग सातिस्तद्बहुलस्तत्करणप्रचुरस्तथाऽयशोश्लाघासद्वृत्ततया निंदा यानि यानि परापकारभूतानि कर्मानुष्ठानानि विधत्त तेषु तेषु कर्मसु करचरणछेदनादिषु अयशोभाग्भवतीति । सएवंभूत पुरुष कालमासे स्वायुष क्षये काल रुत्वा पृथिव्यारत्नप्रभादिकायास्तलमतिवर्त्य योजनसहस्रपरिमाणमतिलंघ्य नरकतलप्रतिष्ठानोऽसौ भवति ॥ ६५ ॥

तेण णरगा अंतोवट्टा बाहिं चउरंसा अहे खुरप्पसंठाणसंठिया णिच्चंधकारतमसा ववगयगहचंदसूरनक्खत्तजोइसपहा मेदवसामंसरुहिरपूयपडलचिक्खललित्ताणुलेवणतला असुई वीसा परमदुब्भिगंधा काण्हा

अर्थ–एरीते ते पूर्वोक्त स्वनाव वालो पुरुष निर्दय थको बाह्याभ्यंतर एवी पोतानी जे प रिपदा तेने पण पीडानो करनार एवो, छतो स्त्रियादिकना काम नोगने विषे मूर्छित गृद्ध एट ले लोनी, नोगने विषे पोतें गुथाणो थको परम आसक्त छतो, यावत् चार, तथा पांच, तथा सात, तथा दश वर्ष एम अल्प काल अथवा घणोकाल सुधी नोगववा योग्य नोग नोगवीने, घणा जीवोनी साथे अनेक जातना वैर उपजावी वैरनावना स्थानकनो संचय करीने, ज्यां घ णापापरूप हिंसादिक क्रूर कर्म संनारीकरी करेला कर्मने प्ररेतो एवा छतो, नरक रूप स्था नकने पामे (सेजहाणामए के०) ते यथा दृष्टांते जेम (अयगोलइवा के०) लोहनो गोलो, (सेलगोलइवा के०) पाषाणनो गोलो, तेने (उदगंसिपक्खित्तेसमाणे के०) पाणीना इहमां हे अथवा नदी तलाव माहे नाख्यो थको, (उदगतलमइवइत्ताइ के०) उपलु तलुं अति क्रमीने पाणीना तलामा जइ पेसे, (अहेधरणितलपइट्ठाणेनवइ के०) नीचे धरतिना त लाने विषे जइ बेसेछे (एवमेव के०) एरीते (तहप्पगारे के०) तथा प्रकारें, ए पूर्वोक्त प्र कारना दुष्ट निर्दय नास्तिक वादि प्रमुख एवा जे (पुरिसजाते के०) पुरुष जातिछे ते (वज्ज बहुलेके०) घणा पापरूप कर्म, (धूतबहुलेके०) घणी कर्मरूपरज (पंकबहुलेके०) घणो क र्मरूप कादव, (वेरबहुले के०) घणो जीवोनी साथे वैरनाव, (आप्पतियबहुले के०) अविश्वासलायक एवु मनतु दुर्ध्यान (अयसबहुले के०) घणो अपयश (दंनबहु ले के०) घणु कपट परने वंचवा पणु छे जेमा, (णियडिबहुले के०) घणो वेष तथा नाषानु पलटाववुछे जेमा (साइबहुले के०) सातिशय इव्य साथे गुणहीन पुरुषोना इव्यनु मेलाववु (उससन्नतसपाणघाती के०) प्राय त्रस प्राणी जीवनो घात करनार, ते (कालमासेकालकिच्चा के०) कालने अवसरे काल करीनें (धरणितलमइवइत्ताइ के०) पृथ्वीना तलाने सहस्र योजन प्रमाण अतिक्रमि जाये, जइने, (अहेणरगतल पइट्ठाणेनवइ के०) नीचे नरकना तलियाना स्थानकने विषे तेनु पडवु थायछे ॥६५॥

॥दीपिका–(एवमेवत्ति) एवमेव ते निर्दया स्त्रीप्रधानेषु कामेषु मूर्छिता गृद्धाग्रथिता अध्युपपन्नायावद्वर्षाणि चतु पंचषट्सप्त वा दशवाल्पतरप्रनूततर वा काल नोगान् नु क्त्वा वैरायतनानि वैरानुबंधान् प्रविसूय उत्पद्य बहूनि पापकर्माणि संचित्य वर्धयित्वा उत्पन्न प्राय संनारकृतेन कर्मणा प्रेर्यमाणानरकतलप्रतिष्ठाना स्यु । यथाऽयोगोल शिलागोलकोवा उदकक्षिप्तउदकतलमतिवर्त्य उद्यध्याधोधरणितलप्रतिष्ठानोनवति एवमे व सनरोवज्र बध्यमान कर्म तद्बहुल धून प्राग्बद्ध कर्म तत्प्रचुर पंकबहुल पंकपाप वैरबहुल (आप्पत्तियत्ति) मनसोदुर्ध्यान दंनोमायया परवचन निकृतिर्नाषावेषादिपरा वर्त्तन परद्रोहबुद्धि सातिशयेन इव्येणहीनइव्यस्य मेलन साति तद्बहुल· अयशोबहु

ल प्रायस्त्रसघाती कालमासे स्वायुःक्षये कालं कृत्वा धरणितलं रत्नप्रभादिकायाः पृथिव्यास्तलमतिलङ्घ्याऽधोनरकतलप्रतिष्ठानः स्यात् ॥ ६७ ॥

॥ टीका–तेच विषयासक्ततया एतत्कुर्वंतीत्येतद्दर्शयितुमाह । (एवमेवइत्यादि) एवमेव पूर्वोक्तस्वनावाएव ते निष्कृपानिरनुक्रोशाद्वाह्यान्यतरपर्षदोरपि कर्णनासाविकर्तनादिना दंडपातनस्वनावाः स्त्रीप्रधानाः कामाः स्त्रीकामाः यदिवा स्त्रीषु मदनकामविषयनूतासु कामेषुच शब्दादिषु इच्छाकामेषु मूर्छितागृद्धाग्रथिताअध्युपपन्नाः ।एते च शक्रपुरंदरादिवत्पर्याया कथंचिद्भेदं वाश्रित्य व्याख्येयाः । तेच नोगासक्ताव्यपगतपरलोकाध्यवसायायावद्वर्षाणि चतुःपंचषट् सप्तवा दशवाल्पतरं वा कालं नुक्त्वा नोगासक्ततयाच परपीडोत्पादनतो वैरायतनानि वैरानुबंधाननुप्रसूयोत्पाद्य विधाय तथा संचयित्वा संचित्योपचित्य बहूनि प्रनूततरकालस्थितिकानि क्रूराणि क्रूरविपाकानि नरकादिषु यातनास्थानेषु क्रकचपाटनशाल्मल्यवरोहणतप्तत्रपुपानात्मकानि कर्माण्यष्टप्रकाराणि बद्धस्पष्टनिधत्तनिकाचनावस्थानि विधाय तेनच संनारकृतेन कर्मणा प्रेर्यमाणास्तत्कर्मगुरवोवा नरकतलप्रतिष्ठानानवंतीत्युत्तरक्रियया पादितबहुवचनरूपयेति संबंध । अस्मिन्नेवार्थे सर्वलोकप्रतीतं दृष्टांतमाह । (सेजहाणामएइत्यादि) तद्यथानामायोगोलकोऽयस्पिंड शिलागोलकोवृत्तात्मशकलं वोदके प्रक्षिप्तः समानसलिलतलमतिवर्त्यातिलङ्घ्या धोधरणीतले प्रतिष्ठानोनवति । अधुना दार्ष्टांतिकमाह । (एवमेवेत्यादि) यथासावयोगोलकोवृत्तत्वान्नोन्मेवाधःपतत्येवमेव तथाप्रकारं पुरुषजातं । तमेव लेशतोदर्शयति । वज्रवद्वज्रं गुरुत्वात्कर्म तद्बहुलस्तत्करणप्रचुरस्तथा वध्यमानकर्मगुरुरित्यर्थः ।तथा धूयतइति धूतं प्राग्बद्धं कर्म तत्प्रचुरः ।पुनः सामान्येनाह । पंकयतीति पंकं पापं तद्बहुलस्तथा । तदेव कारणतोदर्शयितुमाह । वैरबहुलावैरानुबंधप्रचुरस्तथा (पत्तियति) मनसोऽदुष्प्रणिधानं तत्प्रधानस्तथा दंनामायया परवंचनं तद्बहुलस्तथा निकृतिर्मायावेषनाषापरावृत्तिव्यनाः परद्रोहबुद्धिस्तन्मयस्तथा सातिबहुलःसातिशयेन द्रव्येणापरस्य हीनगुणस्य द्रव्यस्य संयोगः सातिस्तद्बहुलस्तत्करणप्रचुरस्तथाऽयशोश्लाघासद्वृत्ततया निंदाः यानि यानि परापकारनूतानि कर्मानुष्ठानानि विधत्ते तेषु तेषु कर्मसु करचरणछेदनादिषु अयशोनाग्नवतीति । सएवंनूतः पुरुषः कालमासे स्वायुःक्षये कालं कृत्वा पृथिव्यारत्नप्रनादिकायास्तलमतिवर्त्य योजनसहस्रपरिमाणमतिलङ्घ्य नरकतलप्रतिष्ठानोऽसौ नवति ॥ ६५ ॥

तेणं णरगा अंतोवट्टा बाहिं चउरंसा अहे खुरप्पसंठाणसंठिया णिच्चंधकारतमसा ववगयगहचंदसूरनक्खत्तजोइसपहा मेदवसामंसरुहिरपूयपडलचिक्खललित्ताणुलेवणतला असुई वीसा परमदुब्भिगंधा काऊ

अगणिवन्नाना कक्खडफासा डुरुहियासा असुना णरगा असुना णरए सु वेयणाउ ॥ ६६ ॥

अर्थ-(तेणणरगाके०) ते नरकनु स्वरूप कहेछे (अतोवट्टा के०) सीमतादिक नरकावासा माहेली कोरे वाटलाआकारेछे, (वाहिचउरसा के०) बाहेर चारखुणाछे (अहेखुरप्पसगणसठिया के०) नीचे सजायानी धारने आकार सस्थितछे एटले रह्याछे (णिच्चधकारतमसा के०) नित्य सर्वकाल मेघ छायानी पेठे, कृष्णपक्षनी रात्रीनी पठे, महाअधकारे युक्तछे बहुल अधकारछे (ववगयचदसूरगहनखत्तजोइसप्पहा के०) बुधादिक ग्रह चद्रमा, सूर्य, नक्षत्र, ज्योतिष्य प्रकाश, ते थकी व्यपगत एटले रहितछे (मेदवसामसरुहिरपूयपडलचिक्खललित्ताणुलेवणतला के०) मेद, वसा, मास, रुधिर, परसेवो, तेना पडल एटले समूह तेना कादवे करी अनु लिप्तछे जेना भूमितल एवाछे, एटले जे एकवार लिपीयें तेने लिप्त कहिये अने जे वारवार लिपीये तेने अनुलिप्त कहियें, (असुईवीसापरमडुब्भिगधाकण्हा के०) अशुचि बीभत्सविष्टाये खरड्या कुत्सित एटले माससमान डुर्गेगध, खराब कृष्णवर्ण वाला (अगणिवन्नाभाके०) मशाणनो अग्नि, तथा धम्या लोहना अग्निनी ज्वालाउना जेवा वर्ण थाय ते समान आकारछे जेनो, जे अत्यत कगेर, सह न करता अत्यत डु सहछे (कक्खसफासाडुरुहियासा अशुभके०) डु खे सहन थाय एवा खरखरा कर्कश फरशछे जेने विषे, एवा अशुभ (णरगा के०) नरकने विषे (अशुभ णरए सुवेयणाउ के०) महा अशुभ वेदना प्रवर्त्तेछे ॥ ६६ ॥

॥ दीपिका-नरक स्वरूपमाह । ते नरकाअतर्वृत्ताबहिश्चतुरस्रा अधश्च क्षुरप्रसस्थान स्थिता । एतच्च सस्थान पुष्पावकीर्णाना तेषामेव प्रचुरत्वात् । आवलिकां गतास्तु वृत्त त्र्यस्रचतुरस्रसस्थानाएव तथा नित्याधकारतमसा भृश तमोबहुला व्यपगतग्रहचद्रसूर्यनक्षत्रज्योतिष्पथा । मेदवसामांसरुधिरपूयपटलैर्लिप्तानि अनुलेपनप्रधानानि तलानियेषां ते तथा। तथा अशुचयोविस्रा कुथितमासादिलिप्तत्वात् परमडुरभिगधा कृष्णाग्निवर्णाभा कर्कशस्पर्शाडु खेनाधिसह्यते यतोऽशुभास्तत्र नरकेषु अशुभाडु सहावेदना ॥ ६६ ॥

॥ टीका-नरकस्वरूपनिरूपणमाह । (तेणमित्यादि) णमिति वाक्यालकारे । ते नरका सीमतकादिकाबाहुल्यमगीकृत्यातर्मध्ये वृत्ताबहिरपि चतुरस्राअधश्च क्षुरप्रसस्थानसस्थिता । एतच्च सस्थान पुष्पावकीर्णानाश्रित्योक्त तेषामेव प्रचुरत्वात् । आवलिका प्रविष्टास्तु वृत्तत्र्यस्रचतुरस्रसस्थानाएव भवति । तथा नित्यमेवाधतमस येषु ते नित्याधतमसा । क्वचित्पाठोनित्याधकारतमसाइति । मेघावच्छिन्नाबरतलकृष्णपक्षरजनीवत् तमो

बहुलास्तथा व्यपगतोग्रहसूर्यचंद्रज्योतिः पर्यायेषां ते तथा । पुनरप्यनिष्टापादनार्थं तेषा मेव विशेषणान्याह । (मेदवसेत्यादि) दुष्कृतकर्मकारिणः ते नारकास्तद्दुःखोत्पादनार्थंव भूतानवति । तद्यथा । मेदवसामांसरुधिरपूयादीनां पटलानि संघास्तैर्लिप्तानि पिच्छिलीकृ तान्यनुलेपनतलान्यनुलेपनप्रधानानि तलानि येषां ते तथा अशुचयोविष्टासृक्क्लेदप्रधान त्वादतएव विश्रा कुथितमांसादिकटपकर्दमावलिप्तत्वात् । एवं परमदुर्गंधा कुथितगो मायुकलेवरादपि असह्यगंधास्तथा रुक्षाग्निवर्णाभारूपतः । स्पर्शतस्तु कर्कश कठिनोवज्र कंटकादप्यधिकतरः स्पर्शोयेषां ते तथा किंबहुनाऽतीव दुःखेनाविसह्यते । किमिति । यत स्ते नरकाः पंचानामपींद्रियार्थानामशोभनत्वादशुभास्तत्रच सत्वानामशुभकर्मकारिणामु दग्रदंडपातिनाच वज्रप्रचुराणां तीव्राध्यतिदुःसहवेदनाः शारीराः प्रादुर्भवति ॥ ६६ ॥

णोचेव णरएसु नेरइया णिद्दाय तिवा पलायतिवा सूइवा रतिवा धीति वा मतिवा उवलभते तेण तत्थ उज्जल विउल पगाढ कडुय कक्कस चंम दुक्ख दुग्ग तिव्व दुरहियास णेरइया वेयण पच्चणुब्भवमाणा विहरति ॥६७॥

अर्थ-(णोचेवणरएसुरनरइया के०) पणते नरकने विषे जे नारकी जीवोछे ते एटलावा ना पामता नथी शुं नथी पामता ? तोके (णिद्दापतिवा के०) निद्रा नथी पामता, (प लायतिवाके०) घणी निद्रा जे प्रचला ते पण नथी पामता, (सूइवाके०) श्रुति एटले विशेष ज्ञाननी स्मृति तेपण नथी पामता, (रतिवा के०) चित्तने विषे रति पामता नथी, (धतिवा के०) विशेष धैर्य धृतिने पण नथी पामता, तथा (मतिवा के०) बुद्धिने पण (उवलभते के०) पामे नही (तेणतत्थउज्जल के०) ते नारकी ते नरकने विषे प्रव र्त्तमान थका उज्वली केता तीव्र उत्कृष्ट (विउल के०) विस्तीर्ण (पगाढ के०) आकरी, (कडुय के०) कडवी, (कक्कस के०) कर्कश, (चंम के०) रौद्र, (दुक्ख के०) दुःखनुं कारण, (दुग्गतिव के०) तीव्र दुर्ग, तीक्ष्ण, (दुरहियास के०) दुःखे सहन करवा योग्य (णेरइयावेयण के०) नरकने विषे नारकीने वेदनाने (पच्चणुब्भवमाणाविहरतिके०) भोगवता थका विचरेछे काल अतिक्रमण करेछे ते उपर दृष्टांत कहेछे ॥ ६७ ॥

॥ दीपिका-(णोचेवत्ति) तेषु नरकेषु वेदनाभिभूता न निद्रायते न प्रचलायते ऽपनि द्रामपि नगच्छतीत्यर्थः । श्रुतिंवा रतिंवा धृतिंवा मतिंवा नोपलभते ते नारकास्तत्र उज्वला मुत्कटां विपुलां प्रगाढां कटुकां कर्कशां चंडां दुःखरूपां तीव्रां दुरधिसह्यां नरकवेदनां प्र त्यनुभवमानास्तिष्टंति ॥ ६७ ॥

अगणिवन्नाभा कक्खडफासा डुरुहियासा असुन्ना णरगा असुन्ना णरए सु वेयणाउ ॥ ६६ ॥

अर्थ-(तेणणरगाके०) ते नरकनु स्वरूप कहेछे (अतोवट्टा के०) सीमंतादिक नरकावासा माहेली कोरे वाटलाआकारेछे, (वाहिंचउरसा के०) बाहेर चारखुणाछे (अहेखुरप्पसंगाणसंठिया के०) नीचें सजायानी धारने आकारे संस्थितछे एटले रह्याछे (णिच्चंधकारतमसा के०) नित्य सर्वकाल मेघ छायानी पेठें, कृष्णपक्षनी रात्रीनी पठें, महाअंधकारे युक्तछे बहुल अंधकारछे (ववगयचंदसूरगहनक्खत्तजोइसप्पहा के०) बुधादिक ग्रह चंद्रमा, सूर्य, नक्षत्र, ज्योतिष्य प्रकाश, ते थकी व्यपगत एटले रहितछे (मेदवसामंसरुहिरपूयपडलचिक्खल्ललित्ताणुलेवणतला के०) मेद, वसा, मांस, रुधिर, परसेवो, तेना पडल एटले समूह तेना कादवे करी अनु लिप्तछे जेना भूमितल एवाछे, एटले जे एकवार लिपीयें तेने लिप्त कहिये अने जे वारवार लिपीये तेने अनुलिप्त कहियें, (असुईवीसापरमडुब्भिगंधाकएहा के०) अशुचि बीभत्सविष्टाये खरड्या कुत्सित एटले मांससमान डुर्गंध, खराब कृष्णवर्ण वाला (अगणिवन्नाभाके०) मशाणनो अग्नि, तथा धम्या लोहना अग्निनी ज्वालाउना जेवा वर्ण थाय ते समान आकारछे जेनो, जे अत्यंत कठोर, सहन करता अत्यंत डु सहछे (कक्कसफासाडुरुहियासा असुभके०) डु खे सहन थाय एवा खरखरा कर्कश फरशछे जेने विषे, एवा अशुभ (णरगा के०) नरकने विषे (असुभ णरए सुवेयणाउ के०) महा अशुभ वेदना प्रवर्त्तेछे ॥ ६६ ॥

॥ दीपिका-नरक स्वरूपमाह । ते नरकाअंतर्वृत्ताबहिश्चतुरस्रा अधश्च क्षुरप्रसंस्थानस्थिता । एतच्च संस्थान पुष्पावकीर्णाना तेषामेव प्रचुरत्वात् । आवलिकां गतास्तु वृत्तत्र्यस्रचतुरस्रसंस्थानाएव तथा नित्यांधकारतमसा भृश तमोबहुला व्यपगतग्रहचंद्रसूर्यनक्षत्रज्योतिष्पथा । मेदवसामांसरुधिरपूयपटलैर्लिप्तानि अनुलेपनप्रधानानि तलानियेषां ते तथा । तथा अशुचयोविस्रा कुथितमांसादिलिप्तत्वात् परमडुरभिगंधा कृष्णाग्निवर्णाभा कर्कशस्पर्शाडु खेनाधिसह्यते यतोऽशुभास्तत्र नरकेषु अशुभाडु सहावेदना ॥ ६६ ॥

॥ टीका-नरकस्वरूपनिरूपणमाह । (तेणमित्यादि) णमिति वाक्यालंकारे । ते नरका सीमंतकादिकाबाहुल्यमंगीकृत्यांतर्मध्ये वृत्ताबहिरपि चतुरस्राअधश्च क्षुरप्रसंस्थानसंस्थिता । एतच्च संस्थान पुष्पावकीर्णानाश्रित्योक्त तेषामेव प्रचुरत्वात् । आवलिकाप्रविष्टास्तु वृत्तत्र्यस्रचतुरस्रसंस्थानाएव भवति । तथा नित्यमेवांधतमस येषु ते नित्यांधतमसा । क्वचित्पाठोनित्यांधकारतमसाइति । मेघावच्छिन्नांबरतलकृष्णपक्षरजनीवत् तमो

॥ टीका–एवं तावदयोगोलपाषाणदृष्टांत शीघ्रमधोनिमज्जनार्थप्रतिपादक प्रदर्शितो ऽधुना शीघ्रपातार्थप्रतिपादकमेवापरं दृष्टांतमभिकृत्याह। (सेजहाणामएइत्यादि) तद्यथा नाम कश्चिद्वृक्ष पर्वताग्रे जातोमूले छिन्न शीघ्र यथा निम्न पतति एवमसावप्यसाधुकर्मकारी तत्कर्मैवातेरित शीघ्रमेव नरके पतति ततोप्युद्वृत्तोगनर्जिनमवश्य याति न तस्य किंचित्राण भवति यावदागामिन्यपि काले दुर्लभधर्मप्रतिपत्तिर्भवतीति । साम्प्रतमुपसंहरति (एसठाणेइत्यादि) तदेतत्स्थानमनार्य पापानुष्ठानपरत्वाद्यावदेकांतमिथ्यारूपमसाधु । तदेव प्रथमस्याधर्मपाक्षिकस्य स्थानस्य विभंगोविभाग स्वरूपमेव व्याख्यात ॥ ६८ ॥

अहावरे दोच्चस्स ठाणस्स धम्म पक्खस्स विभंगे एवं माहिज्जइ इह ख लु पाइणवा संतेगतिया मणुस्सा भवंति तंजहा अणारंभा अपरिग्गहा धम्मिया धम्माणुया धम्मिठा जाव धम्मेण चेव वित्ति कप्पेमाणा विहरंति सुस्सीला सुव्वया सुप्पडियाणंदा सुसाहु सव्वतो पाणातिवायाउ पडिविरया जावजीवाए जावजेयावन्ने तहप्पगारा सावज्जा अबोहिया कम्मता परपाणपरियावणकरा कज्जंति ततोविपडिविरता जाव जीवाए॥६९

अर्थ–अथ हवे बीजो स्थानक धर्म पक्षनो विचार कहिये छेय आजगत् माहे निश्चे पूर्वादिक दिशिने विषे कोइएक मनुष्य एवाछे ते कहेछे निरारंभी, नि परिग्रही धार्मिक धर्मानुगामि, धर्मज जेने इष्टछे यावत् धर्मकरी वृत्ति आजीविका करता थका विचरे छे सुशील, सुव्रत, रुडा आनंद पामनारा, सुसाधु, तथा सुखसाध्य पदवीरूप गुणे करी विराजमान, ते पुरुष सर्वथा प्राणातिपात थकी निवृत्या, जावजीव सुधी यावत् जे बीजा, तथा प्रकारना पापकारी, सावद्यकर्म अबोधिना करनार बीजा प्राणीने परितापना करनार कार्य करिये, तेवा कार्य थकी पण निवृत्या छे ॥ ६९ ॥

दीपिका–अथापरस्य द्वितीयस्थानस्य धर्मपक्षस्य विभंग स्वरूपमेवमाख्यायते । यथा प्राच्यादिदिक्षु मध्येऽन्यतरस्यां दिशि संति विद्यते केचिन्मनुष्याभवंति । तद्यथा अनारंभाअपरिग्रहाधार्मिकाधर्मानुगाधार्मिष्ठाधर्मेणैव वृत्तिं कल्पयंताविहरंति तथा सुशीला सुव्रता सुप्रत्यानंदा सुसाधव सर्वस्मात्प्राणातिपाताद्विरतायावत्परिग्रहाद्विरता । ये चान्ये तथाप्रकारा सावद्याअबोधिकारिण कर्मका कर्महेतव परप्राणपरितापनकरा आरंभाक्रियते ततोविरता ॥ ६९ ॥

॥ टीका–अथापरस्य द्वितीयस्य विभंगोविभाग स्वरूपमेव वक्ष्यमाणनीत्या व्याख्या

॥ टीका–तयाच वेदनयाभिभूतास्तेषु नरकेषु नारकानैवाक्षिनिमेषमपि कालं निद्रां ते नाप्युपविष्टाद्यवस्थाश्रक्षिसंकोचनरूपामीषन्निद्रामवाप्नुवंति । नह्येवंभूतवेदनाभिभूतस्य निद्रालाभोभवतीति दर्शयति । तामुज्वलां तीव्रानुभावेनोत्कटामित्यादि विशेषणविशिष्टां यावद्वेदयत्यनुभवतीति ॥ ६७ ॥

से जहाणामए रुक्खसिया पव्वयग्गे जाए मूले छिन्ने अग्गे गरुए ज ओणिन्न जओ विसम जओदुग्ग तओपवडति एवमेव तहप्पगारे पुरिसजाए गब्भातोगब्भ जम्मातोजम्म माराओमार णरगाओ णरग दुक्खाओ दुक्ख दाहि णगामिए णेरइए कण्हपक्खिए आगमिस्साए दुल्लभबोहिएयावि भवइ एसठाणे अणारिए अकेवले जाव असव्वदुक्खपहीणमग्गे एगतमिच्छे असाहू पढमस्स ठाणस्स अधम्मपक्खस्स विभंगे एव माहिए ॥६८॥

अर्थ–(सेजहाणामए के०) ते यथा दृष्टांते नाम एवी संभावनाये जेम कोइएक (रुक्खसिया के०) वृक्ष होय, (पव्वयग्गेजाए के०) पर्वतने अग्रे उपनो (मूलेछिन्ने के०) मूळ मांहेथी छेद्या (अग्गेगरुएके०) अग्रे भारी एवो छतो ते वृक्ष (जओणिन्न जओविसम के०) ज्यां ज्यां नीचा खाडानुं स्थानक होय, ज्यां त्यां विषम, समान नही, (जओदुग्गके०) ज्यां ज्यां दुर्गम कष्टस्थान होय, (तओपवडतिके०)त्यां ते वृक्ष उतावळो पडे (एवमेवतहप्पगारे के०) ए दृष्टांते तथा प्रकारना दुष्ट असाधु कर्मकारी पुरुष जाति ते कर्मरूपी वायरे प्रेर्यो छतो उतावळो नीचो नरकगतिमां जइ पडे, फरी त्यां थकी उद्धर्यो थको फरी गर्भ थकी गर्भ, जन्म थकीजन्म, मरण थकी मरण पामे, नरकथकी नरक पामे, दुःख थकी वळी दुःख पामे, एरीते दक्षिणदिशिनो जनारो, नारकी, कृष्णपक्षी ते दीर्घसंसार पणाने लीधे आगमिक काळे दुर्लभ बोधि थाय ए स्थानक अनार्य अकेवल यावत् जेमां सर्वदुःख थकी छुटवानो मार्ग नथी एकांत मिथ्यात्व असाधुनो मार्ग जा णवो ए प्रथम स्थानक अधर्म पक्षनो विचार एम कह्यो ॥ ६८ ॥

॥ दीपिका–(सेजहत्ति) तद्यथा नामकश्चिद्वृक्षः पर्वताग्रे जातोमूले छिन्नः शीघ्रं य था निम्नं नीचं स्थानं ततः पतति एवमसावसाधुरपि नरके पतति ततोऽप्युद्धृतो गर्भाद्ग र्भं याति एवं न तस्य किंचित्त्राणं भवति यावदागामिन्यपि कालेऽसोदुर्लभबोधि स्यात् (ए सठाणत्ति) तदेतत् स्थानमनार्यं यावदेकांतमिथ्यारूपमसाधु । तदेव प्रथमस्याधर्मपाक्षि कस्य स्थानस्य विभंगोविभागः समाख्यातः ॥ ६८ ॥

॥ टीका—एवं तावदयोगोलपाषाणदृष्टांत शीघ्रमधोनिमज्जनार्थप्रतिपादकं प्रदर्शितो ऽधुना शीघ्रपातार्थप्रतिपादकमेवापरं दृष्टांतमधिकृत्याह। (सेजहाणामएइत्यादि) तद्यथा नाम कश्चिद्वृक्षः पर्वताग्रे जातोमूले छिन्नः शीघ्रं यथा निम्नं पतति एवमसावप्यसाधुकर्मकारी तत्कर्मवातेरितः शीघ्रमेव नरके पतति ततोप्यु द्वृतोगर्भाद्गर्भमवश्यं याति न तस्य किंचित्त्राणं भवति यावदागामिन्यपि काले दुर्लभधर्मप्रतिपत्तिर्भवतीति। सांप्रतमुपसंहरति (एसठाणेइत्यादि) तदेतत्स्थानमनार्यं पापानुष्ठानपरत्वाद्यावदेकांतमिथ्यारूपमसाधु। तदेवं प्रथमस्याधर्मपाक्षिकस्य स्थानस्य विभंगोविभाग स्वरूपमेव व्याख्यातं ॥ ६८ ॥

अहावरे दोच्चस्स ठाणस्स धम्म पक्खस्स विभंगे एवं माहिज्जइ इह ख लु पाइणंवा संतेगतिया मणुस्सा भवंति तंजहा अणारंभा अपरिग्ग हा धम्मिया धम्माणुया धम्मिठा जाव धम्मेणं चेव वित्तिं कप्पेमाणा वि हरंति सुस्सीला सुव्वया सुप्पडियाणंदा सुसाहु सव्वतो पाणातिवायाउ प डिविरया जावजीवाए जावजेयावन्ने तहप्पगारा सावज्जा अबोहिया कम्मंता परपाणपरियावणकरा कज्जंति ततोविपडिविरता जाव जीवाए॥६९

अर्थ—अथ हवे बीजो स्थानक धर्म पक्षनो विचार कहिये छैये आजगत् माहे निश्चे पूर्वादिक दिशिने विषे कोइएक मनुष्य एवाछे ते कहेछे निरारंभी, नि परिग्रही धार्मिक धर्मानुगामि, धर्मज जेने इष्टछे यावत् धर्मकरी वृत्ति आजीविका करता थका विचरे छे सुशील, सुव्रत, रूडा आनंद पामनारा, सुसाधु, तथा सुखसाध्य पवर्वीरूप गुणे करी विराजमान, ते पुरुष सर्वथा प्राणातिपात थकी निवृत्या, जावजीव सुधी यावत् जे बीजा, तथा प्रकारना पापकारी, सावद्यकर्म अबोधिना करनार बीजा प्राणीने परिताप ना करनार कार्य करिये, तेवा कार्य थकी पण निवृत्या छे ॥ ६९ ॥

दीपिका—अथापरस्य द्वितीयस्थानस्य धर्मपक्षस्य विभंग स्वरूपमेवमाख्यायते। यथा प्राच्यादिदिक्षु मध्येऽन्यतरस्यां दिशि सति विद्यते केचिन्मनुष्याभवंति। तद्यथा अनारंभायपरिग्रहाधार्मिकाधर्मानुगाधार्मिष्ठाधर्मेणैव वृत्तिं कल्पयंतोविहरंति तथा सुशीला सुव्रता सुप्रत्यानंदा सुसाधवः सर्वस्मात्प्राणातिपाताद्विरतायावत्परिग्रहाद्विरता। ये चान्ये तथाप्रकारा सावद्याअबोधिकारिणः कर्मकाः कर्महेतवः परप्राणपरितापनकरा आरभ्यंते क्रियते ततोविरता ॥ ६९ ॥

॥ टीका—अथापरस्य द्वितीयस्य विभंगाविभाग स्वरूपमेव वक्ष्यमाणनीत्या व्याख्या

यते । तद्यथा (इहखलुइत्यादि) प्राच्यादिषु मध्येऽन्यतरस्या दिशि सति विद्यते ते चै वनूतान्नवतीति । तद्यथा । न विद्यते सावद्यआरम्नोयेषाते तथा अपरिग्रहानिष्किंचना धर्मेण चरंतीति धार्मिकायावद्धर्मेणैवात्मनोवृत्ति परिकल्पयति तथा सुशीला सुव्रता सु प्रत्यानंदा सुसाधव सर्वस्मात्प्राणातिपाताद्विरताएव यावत्परिग्रहाद्विरताइति । तथा ये चान्ये तथाप्रकारा सावद्याआरम्नायावदबोधिकारिणस्तेन्य सर्वेन्योपि विरताइति ॥६९

से जहा णामए अणगारा नगवंतो इरियासमिया नासासमिया एस णासमिया आयाणनमंमत्तणिक्खेवणासमिया उच्चारपासवणखेलसि घाणजल्लपारिठावणियासमिया मणसमिया वयसमिया कायसमिया मणगुत्ता वयगुत्ता कायगुत्ता गुत्ता गुत्तिंदिया गुत्तबन्नचारी अकोहा अ माणा अमाया अलोना संता पसंता उवसंता परिणिवुमा अणासवा अग्गंथा बिन्नसोया निरुवलेवा कसपाइ वमुक्कतोया संखइव णिरज णा जीवइव अपडिहयगती गगणतलंपिव निरालंवणा वाउरिव अपडि बधा सारदसलिलइव सुद्धहियया पुक्करपत्तइव निरुवलेवा कुम्मोइव गुत्तिंदिया विहगइव विप्पमुक्का खग्गविसाणंव एगजाया नारंमपक्खीव अप्पमत्ता कुंजरोइव सोमीरा वसन्नोइव जातथिमा सीहोइवडुद्धरिसा मं दरोइवअप्पकंपा सागरोइवगन्नीरा चंदोइवसोमलेसा सूरोइव दित्ततेया जच्च कंचणगंचइव जातरूवा वसुंधराइव सव्वफासविसहा सुहुयहुयासणो विव तेयसा जलंता णन्थिणं॥७०॥तेसिंनगवंताणं कंउविपडिबंधेनवइ से पडिबंधे चउविहे पन्नत्ते त जहा अंमएइवा पोंअतरेबोंमजेइवा पोयएइवा उग्गहेइवा पग्गहेइवा जंन्नजंन्नदिसं इछंति तंन्न,तंन्न दिसं अपडिबंद्धा सुइन्नूया अप्पलहुनूया अप्पग्गंथा संजमेणं तवसा अप्पाणं नावेमाणे विहरंति॥७१॥तेसिणं नगवंताणं इमा एतारूवा जाया माया वित्ती होब्बा तंजहा चउब्बेनत्ते ब्बेनत्ते अठमेनत्ते दसमेनत्ते डुवालसमे नत्ते चउदसमे नत्ते अद्धमासिएनत्ते मासिएनत्ते दोमासिए तिमासिए चाउम्मासिए प चमासिए छम्मासिए अडुत्तरंचणं उक्खित्तचरया णिक्खित्तचरया उक्खि त्तणिक्खित्तचरगा अंतचरगा पंतचरगा लूहचरगा समुदाणचरगा,स

सठचरगा असंसठचरगा तज्जातसंठचरगा दिठ्ठलाभिया अदिठ्ठला भिया पुठ्ठलाभिया अपुठ्ठलाभिया भिक्कुलाभिया अभिक्कुलाभिया अन्नायचरगा अन्नायलोगचरगा उवनिहिया संखादत्तिया परिमित पिम्मवाइया सुद्धेसणिया अंताहारा पंताहारा अरसाहारा विरसाहारा लूहाहारा तुछाहारा अंतजीवी पंतजीवी आयंबिलिया पुरिमठ्ठिया विग इया अमज्जमंसा ससिणो णोणियामरसभोइ ठाणाइया पडिमाठाणा इया उक्कडुआसणिया णेसज्जिया वीरासणिया दंमायतिया लगंमसाइ णो अप्पाउडाअगत्तया अकंमुया अणिठुहा धुतकेसमंसरोमनहा सव्वगा यपडिक्कम विप्पमुक्का चिठंति॥१२॥तेण एतेण विहारेण विहरमाणा बहुइ वासाइ सामन्नपरियाग पाउणति बहुबहु आबाहंसि उप्पन्नंसिवा अणु प्पन्नंसिवा बहुइभत्ताइ पच्चखाइ पच्चखाइत्ता बहुइ वासाइ अणसणाइ छेदिति अणसणाइ छेदित्ता जस्सठाएकीरति नग्गभावे मुंमभावे अ एहाणभावे अदंतवणगे अछत्तए अणोवाहणए भूमिसेज्जा फलगसेज्जा कठसेज्जा केसलोए बंभचेरवासे परघरपवेसे लद्धाअलद्ध माणाअमा णणाउ हीलणाउ निंदणाउ खिंसणाउ गरहणाउ तज्जणाउ तालणाउ उ च्चावयागामकंटगा बावीसपरीसहो वसग्गअहियासिज्जति तमठआरा हंति तमठ आराहित्ता चरमेहिं उस्सासनिस्सासेहिं अणंत अणुतरं निवाघातं निरावरणं कसिणं पडिपुण्णं केवलवरणाणदंसणसमुप्पाडेति समुप्पाडेतित्ता ततोपछा सिज्झतिबुज्झति मुच्चति परिणिवायति सव्वाय ति सव्वडुक्खाण अंतकरेति ॥ १३ ॥

अर्थ–वली बीजे प्रकारे साधुना गुण देखाडे छे ते यथा नाम एवी संभावनायें जे म कोइएक उत्तम सयमवंत, महाव्रतें करी सहित अणागार भगवंत होय, ते केवा होय? तोके इर्या समितियें समिता, भाषासमितियें समिता, एटले सत्यनिरवद्य भा षाना बोलनार, एषणासमितियें समिता, एटले बेंतालीश दोषरहित, आहारनी गवेष णाना करनार, (आयाणभंमत्तणिरकेवणासमितियेंसमिता) एटले माटीनुं भाजन, तथा मात्रां, अने वस्त्रादिक ने जयणायें पुंजी प्रमार्जीने मूकनारा, (उच्चारपासवणखेलसिंघाण

यते। तद्यथा (इहखलुइत्यादि) प्राच्यादिषु मध्येऽन्यतरस्या दिशि सति विद्यते ते चै वनूतान्नवतीति। तद्यथा। न विद्यते सावद्यआरंजोयेषांते तथा अपरिग्रहानिष्किंचना धर्मेण चरंतीति धार्मिकायावद्धर्मेणैवात्मनोवृत्ति परिकल्पयंति तथा सुशीला सुव्रता सु प्रत्यानंदा सुसाधव सर्वस्मात्प्राणातिपाताद्विरताएव यावत्परिग्रहाद्विरताइति। तथा ये चान्ये तथाप्रकारा सावद्याआरंजायावदबोधिकारिणस्तेन्य सर्वेन्योपि विरताइति ॥६९

से जहा णामए अणगारा नगवंतो इरियासमिया नासासमिया एस णासमिया आयाणनंमत्तणिरकेवणासमिया उच्चारपासवणखेलसि घाणजल्लपारिठावणियासमिया मणसमिया वयसमिया कायसमिया मणगुत्ता वयगुत्ता कायगुत्ता गुत्ता गुत्तिंदिया गुत्तबंनचारी अकोहा अ माणा अमाया अलोना संता पसंता उवसंता परिणिवुमा अणासवा अग्गंथा ग्निन्नसोया निरुवलेवा कंसपाइ वमुक्कतोया संखइव णिरंज णा जीवइव अपडिहयगती गगणतलंपिव निरालंवणा वाउरिव अपडि बधा सारदसलिलइव सुद्धहियया पुक्करपत्तइव निरुवलेवा कुम्मोइव गुत्तिंदिया विहगइव विप्पमुक्का खग्गविसाणंव एगजाया नारंमपरकीव अप्पमत्ता कुंजरोइव सोंमीरा वसनोइव जातत्थिमा सीहोइवडुद्धरिसा मंदरोइवअप्पकंपा सागरोइवगंनीरा चंदोइवसोमलेसा सूरोइव दित्ततेया जच्च कंचणगंचइव जातरूवा वसुंधराइव सव्वफासविसहा सुहुयहुयासणो विव तेयसा जलंता एत्थिणं॥७०॥तेसिंनगवंताणं कंवविपडिबंधेनवइ से पडिबंधे चउव्विहे पन्नत्ते तं जहा अंमएइवा पोठातरेवोंमजेइवा पोयएइवा उग्गहेइवा पग्गहेइवा जन्नंजन्नंदिसं इच्छति तन्न,तन्न दिसं अपडिबद्धा सुइनूया अप्पलहुनूया अप्पग्गंथा संजमेणं तवसा अप्पाणं नावेमाणे विहरंति॥७१॥तेसिंणं नगवंताणं इमा एतारूवा जाया माया वित्ती होच्चा तंजहा चउत्थेनत्ते छठेनत्ते अठमेनत्ते दसमेनत्ते डुवालसमे नत्ते चउदसमे नत्ते अद्धमासिएनत्ते मासिएनत्ते दोमासिए तिमासिए चाउम्मासिए प चमासिए छम्मासिए अडुत्तरचणं उक्खित्तचरया णिक्खित्तचरया उक्खि त्तणिक्खित्तचरगा अंतचरगा पंतचरगा लूहचरगा समुदाणचरगा सं.

ु पण, व्रतचार निर्वाह करवाने सामर्थ्यवान् धर्मधुरधर जाणवो, सिंहनी पेठें डुर्द्धर्ष एटले
सिंह जेम बीजा मृगादिक जानवरोने डुर्द्धर्ष एटले तेनाथी पराजवाये नही, तेम साधु
पण परीसह उपसर्गादिके करी पराजवाये नहीं मदर एटले मेरुपर्वतनी पेठें अप्रकंप, जे
म मेरुपर्वत कंपायमान न थाय, तेम साधु पण परीसह अने उपसर्गादिके कंपायमान
न थाय समुइनी पेठें गंजीर, एटले समुइ जेम गंजीर होयले, तेम साधु हर्ष शोकादि
क कारण रहित थका गंजीर होय चंइमानी पेठें सोम लेश्यावंत एटले चंइमा जेम
शीतल प्रकृतिवंत होय, तेम साधु सर्वकाल मननो उद्धार करनारो, महा शीतल प्रकृति
सहित होय, सूर्यनी पेठें दीप्ततेज एटले सूर्य जेम तेजवंत होयले, तेम साधुपण तपश्च
र्याये करी तेजवंत प्रतापवंत देखायले साचा सुवर्णनी पेठें जातिरूप सतेज, एटले सुवर्ण
ने जेम मेल न लागे, तेम साधुने पण कर्म मेल नलागे वसुधरानी पेठें सर्व स्पर्श स
हे एटले पृथ्वी जेम कांटा, कांकरी, अग्न्यादिकना सर्व स्पर्श सहन करे, तेम साधु प
ण क्षमागुणे सहित थको, टाढ तापादिकना स्पर्शने सहन करे सुहुयहुतासणोविव
तेयसाजलंता एटले रुडे इव्ये घृतादिके सींचता जेम हुताशन जे अग्नि ते सदा ते यसा ए
टले तेजवंत देखायले जाज्वल्यमान देखायले तेम,साधु पण ज्ञान तेजे करी सर्वकाल तेज
वंत देखायले ॥ ७० ॥ (णत्थिणतेसिंजगवताणकें०) ते जगवंत महिमावंत साधुने नथी क
्ठविपडिबंधेजवइ एटले क्यांहि पणप्रतिबंध नथी सेपडिबंधे चउव्विहेपन्नत्ते एटले ते प्रतिबं
ध चार प्रकारनो कह्योले, ते कहेले (अंमएइवा के०) जे अंम थकी उपजे एवा पक्षी कीडा म
यूरादिक ते आश्री प्रतिबंध नथी, (पोयएइवा के०) पोत ते हस्त्यादिकना बालक ते
आश्रित प्रतिबंध नथी, उग्गहेइवा के०) उग्रह एटले वस्ति पीठ फलगादिक तेनो
पण प्रतिबंध नथी, (पग्गहेइवा के०) उंघीक उपग्रहिक उपकरण तेनिमित्त प्रतिबंध
नथी, (जन्नजन्नदिसइच्छति के०) जे जे दिशाये विहार करवा वांछे, (तन्नतन्नदिस अ
प्पडिबद्धा के०) ते ते दिशाये अप्रतिबंध पणे विचरे (सुइनूया के०) शुचिर्नूत निर्म
लांतर आत्मावंत (अप्पलहुनूया के०) अल्प लघुनूत एटले अल्प परिग्रही थका,
(अप्पग्गयाके०) अल्प ग्रंथवंत बहुश्रुत, (संजमेणतवसा के०) संयम अने तपें करी
(अप्पाणंजावेमाणे के०) पोताना आत्माने जावता थका,(विहरंति के०) विचरे ॥७१॥
(तेसिणं जगवंताणं के०) ते जगवंत एटले साधुने, (इमाएतारूवा के०) एवा
ए तद्रूप (जायामायावित्तिहोंडा के०) संयमयात्रा एटले संयमना निर्वाह, तेने
अर्थे, मात्रावृत्ति प्रमाणोपेत जातपाणी लेवु, ते तपें करी निर्मल थाय (तंजहा
के०) ते कहेले एक उपवास, बे उपवास, त्रण उपवास, चार उपवास, पांच उप
वास, ल उपवास, सात उपवास, अर्द्धमासना उपवास, एक मास क्षमण, बे मास

जल्लपारिठावणियासमितिये समिता) एटले वडीनीत, लघुनीत, थूक नासीकानो सीं घाण, शरीरनो मल, तेने जयणा सहित परठवे एमपांच समितियें समिता, मन समि तिये सहित, वचन समितिये सहित, काय समितियें सहित, मन ने असयम थकी गो पवीने प्रवर्तावे, माटे मनगुप्तियें गुप्त, वचनने असयमथी गोपवीने प्रवर्त्तावे, माटे वच न गुप्तिये गुप्त, कायाने असयमथी गोपवीने प्रवर्त्तावे, माटे कायगुप्तियें गुप्त, एरीतें त्र ण गुप्तिये गुप्त, तथा गुप्तेंद्रिय एटले असयम थकी इंद्रियोने गोपवी राखनार, नववा डविशुद्ध ब्रह्मचर्यना पालनार, क्रोध रहित, मान रहित, माया रहित, लोभ रहित, संता एटले मध्यवर्त्तिये, अने पसता, एटले बाह्य वृत्तियें उवसता, एटले उपशांतते उनय थापि शातवृत्तिवाला, परिनिवृत्ता एटले समस्त संताप वर्जीत, अनाश्रय एटले पाप क र्म बंध थकी रहित, अग्रंथा एटले हिरण्यादिक परिग्रह थकी रहित, छिन्नश्रोत एटले छेद्योछे संसारनो प्रवाह जेणे, तथा निरुवलेवा एटले निर्लेप कर्म मल थकी रहित, क सपातीवमुक्ततोया एटले कासाना पात्रनी पेठें पापरूप पाणी जेने छबतु नथी, जेम कांसा ना पात्रने पाणी न लागे तेम, ते साधुने पापरूप पाणी लागे नहीं, तथा शखनी पेठें निरंजन एटले रागादिक रंग रहित, जीवनी पेठें अप्रतिहत गतिवाला जाणवा, एटले जेम जीवनी गति अप्रतिहतछे स्खलाय नही, तेम साधुने पण देश नगरादिकने विषे वि हार करवाने विषे अप्रतिहत अस्खलित गतिछे आकाशनी पेठें निरालंब एटले आका श जेम स्तंभादिकना आलबने रहितछे तेम, साधु पण गाम, नगर, कुलना आलबनथी रहितछे वायुनी पेठें अप्रतिबंध थका ग्रामने विषे एक रात्र, अने नगरने विषे पांच रा त्र, विचरे गामेएगराइय णगरेपचराइया इति वचनात् शारद एटले शीतकाल तेनु स लील एटले पाणी तेनी पेठें अथवा आश्विन, अने कार्तिक मासना पाणीजेम निर्मलहो य, तेनी पेठें निर्मल हृदय वाला (पुक्करपत्तइवनिरूवलेवा) एटले जेम कमलना पत्रने पाणी तथा कादव न लागे तेम, साधुने कर्म रूप लेप न लागे काचबानी पेठें गुप्तेंद्रि य, जेम काचबो, चार पग अने पाचमी ग्रीवा गोपवीने प्रवर्त्ते तेम, साधु इंद्रियो गोप वीने प्रवर्त्ते पक्षीनी पेठें विप्रमुक्त, अनियतवासी, एटले पक्षी जेम सर्व परिवार स्थान कनी ममता रहित होय तेम साधुपण परिवारादिकनी ममताथी रहित होय (खग्गवि साणवएगजाया) एटले गेंडानु शींगडु जेम एक होय, तेम साधु, राग द्वेष रहित थको क होय भारंडपक्षीनी पेठें अप्रमत्त होय, जेम भारंड पक्षी अप्रमादी होयछे, तेम सा धु प्रमाद रहित थको धर्म कार्यने विषे प्रवर्त्ते कुंजरनी पेठें शूरवीर एटले जेम हस्ती शूरवीर होय, तेम साधु कषायादिक निवारवाने शूरवीर होय, परंतु कायर पणु जणा वे नहीं, वृषभनी पेठें बलवंत जेम बेल भार उपाडे अंगीकार करे निर्वाह करे तेम सा

धु पण, व्रतनार निर्वाह करवाने सामर्थ्यवान् धर्मधुरंधर जाणवो, सिंहनी पेठें दुर्द्धर्ष एटले सिंह जेम बीजा मृगादिक जानवरोने दुर्द्धर्ष एटले तेनाथी पराजवाये नही, तेम साधु पण परीसह उपसर्गादिके करी पराजवाये नही मंदर एटले मेरुपर्वतनी पेठें अप्रकंप, जेम मेरुपर्वत कंपायमान न थाय, तेम साधु पण परीसह अने उपसर्गादिके कंपायमान न थाय समुद्रनी पेठें गंजीर, एटले समुद्र जेम गंजीर होयछे, तेम साधु हर्ष शोकादिक कारण रहित थका गंजीर होय चंद्रमानी पेठें सोम लेश्यावंत एटले चंद्रमा जेम शीतल प्रकृतिवंत होय, तेम साधु सर्वकाल मननो उद्धार करनारो, महा शीतल प्रकृति सहित होय, सूर्यनी पेठें दीप्ततेज एटले सूर्य जेम तेजवंत होयछे, तेम साधुपण तपश्चर्यायें करी तेजवंत प्रतापवंत देखायछे साचा सुवर्णनी पेठें जातिरूप सतेज, एटले सुवर्णने जेम मेल न लागे, तेम साधुने पण कर्म मेल नलागे वसुंधरानी पेठें सर्व स्पर्श सहे एटले पृथ्वी जेम कांटा, कांकरी, अग्न्यादिकना सर्व स्पर्श सहन करे, तेम साधु पण क्षमागुणे सहित थको, टाढ तापादिकना स्पर्शने सहन करे सुहुयहुतासणोविव तेयसाजलंता एटले रुडे द्रव्ये घृतादिक सींचता जेम हुताशन जे अग्नि ते सदा ते यसा एटले तेजवंत देखायछे जाज्वल्यमान देखायछे तेम,साधु पण ज्ञान तेजे करी सर्वकाल तेजवंत देखायछे ॥ ७० ॥ (णत्थिणतेसिनगवंताणके०) ते जगवंत महिमावंत साधुने नथी कञ्चविपडिबंधेनवइ एटले क्यांहि पणप्रतिबंध नथी सेपडिबंधे चउव्विहेपण्णत्ते एटले ते प्रतिबंध चार प्रकारनो कह्योछे, ते कहेछे (अंमएइवा के०) जे अंम थकी उपजे एवा पक्षी कीडा मयूरादिक ते आश्री प्रतिबंध नथी, (पोयएइवा के०) पोत ते हस्त्यादिकना बालक ते आश्रित प्रतिबंध नथी, उग्गहेइवा के०) उग्रह एटले वस्ति पीठ फलगादिक तेनो पण प्रतिबंध नथी, (पग्गहेइवा के०) उंधीक उपग्रहिक उपकरण तेनिमित्त प्रतिबंध नथी, (जन्नजन्नदिसइछति के०) जे जे दिशाय विहार करवा वाछे, (तन्नतन्नदिस अप्पडिबद्धा के०) ते ते दिशायें अप्रतिबंध पणे विचरे (सुइनूया के०) शुचिनूत निर्मलांतर आत्मावंत (अप्पलहुनूया के०) अल्प लघुनूत एटले अल्प परिग्रही थका, (अप्पग्गथाके०) अल्प ग्रंथवंत बहुश्रुत, (संजमेणतवसा के०) संयम अने तपें करी (अप्पाणंजावेमाणे के०) पोताना आत्माने जावता थका,(विहरंति के०) विचरे ॥ ७१॥ (तेसिणं जगवंताणं के०) ते जगवंत एटले साधुने, (इमाएतारूवा के०) एवा ए तद्रूप (जायामायाविलिहोठा के०) संयमयात्रा एटले संयमनो निर्वाह, तेने अर्थे, मात्रावृत्ति प्रमाणोपेत जातपाणी लेवु, ते तप करी निर्मल थाय (तंजहा के०) ते कहेछे एक उपवास, बे उपवास, त्रण उपवास, चार उपवास, पांच उपवास, छ उपवास, सात उपवास, अर्द्धमासना उपवास, एक मास क्षमण, बे मास

क्षमण, त्रण मास क्षमण, चतुर्मासिक, पंच मासिक, छ मासिक, एवा तपना करनारा, (अडुत्तरचण के०) अथवा एक साधु एवा अभिग्रहना करनाराछे, ते कहेछे (उक्खि त्तचरया के०) उत्क्षिप्तचर्या एटले पोताने अर्थे हांमली मांहे थकी काढयुं एवुं जे कु सार अन्न तेना लेनारा, (णिक्खित्तचरया के०) निक्षिप्तचर्या एटले पिरसवाने अर्थे हांमली मांहेथी काढी वली हांमली मांहे प्रक्षेप्यो, एवो जे आहार तेनी गवेषणा करनारा, (उक्खित्तणिक्खित्तचरगा के०) पूर्वोक्त बन्ने जातना आहारनी गवेषणा करनारा, (अं तचरगा के०) जे गाममांहे ससता मूल्यनो आहार मले, तेना लेनारा, (पंतचर गा के०) नीरस आहार जमता थका, तेमाथी जे वध्यो होय तेना लेनारा, (लूह चरगा के०) जावजीव सुधी लूखा आहारना लेनारा.(समुदाणचरगा के०) हर्ष सहित जे आहार आपे तेना लेनारा, (संसठ्ठचरगा के०) खरडे हाथे आहार आपे तेना ले नारा, (असंसठ्ठचरगा के०) अण खरडे हाथे आहार आपे तेना लेनारा, (तज्ञात संसठ्ठचरगा के०) ते जे द्रव्ये हाथ अथवा कडछी खरडी होय तेवा हाथे करी, अथ वा तेवी कडछीये करी, तेज आहार आपे, तेवा आहारना लेनारा, (दिठ्ठलाभिया के०) दीठा आहारनाज लेनारा, तथा (अदिठ्ठलाभिया के०) अणदीठो आहार, तथा अणदीठो दातार, तेनी गवेषणा करनारा, (पुठ्ठलाभिया के०) तथा पुछीनेज आहारना लेनारा, (अपुठ्ठलाभिया के०) अणपुछ्या आहारना लेनारा, (भिख्कूलाभिया के०) थोडुं अन्न आपे अने हेलणा करे एवा तुच्छ आहारना लेनारा,(अभिख्कूलाभिया के०) अतुच्छ आहारना लेनारा, (अन्नायचरगा के०) ज्यां कोइ पण ओलखे नही त्यां अज्ञात आहारना लेनारा,(अन्नायलोगचरगाके०) अज्ञात लोकना कुत्सित अन्नना लेनारा, (उवनिहिया के०) जे आहार पोता थकी नजीक जाणे, तेना लेनारा, (संखादत्तिया के०) दात्तिनी संख्याना करनारा, (परिमित्तपिंमवाइयाके०) प्रमा णोपेत पिंमना लेनारा, (सुद्धेसणिया के०) शुद्धएषणिक दोष रहित एवा आहार ना गवेषण हार, (अंताहारा के०) अंताहारी एटले वाल, चणकादिकना आहारना गवेषनारा, (पंताहारा के०) तेज टाढुं उगरयुं, एवा अन्नना लेनारा, (अरसा हारा के०) हिंग जीरादिकना वघारे रहित एवा अरस आहारना लेनारा (विरसाहा रा के०) जूना धान्य खाखेलाना आहारना लेनारा, (लूहाहारा के०) लूखा आहारना लेनारा, (तुच्छाहाराके०) तुच्छआहारना लेनारा,(अंतजीवीके०) अंताहारे जीवे,(पंतजीवी के०) प्रांतआहारे जीवे, (आयंबिलिया के०) कूर, अडदना, बाकला लेइ, आयंबिल सदाय करे (पुरमठ्ठिया के०) सर्व काल बे पहोर दिवस वित्या पछी आहार जमे, (णिव्व गइया के०) सर्वकाल निवी करे, विगय रहित अन्न जमे, (अमज्जमसासत्तीणो के०)

मद्य मासना परित्यागी होय, (णोणियामरसन्नोइ के०) सर्व काल अत्यंत सरस आ हार लीये नहीं, (ठाणाइया के०) सर्वकाल कायोत्सर्गना करनारा, (पडिमठाइया के०) प्रतिमाना वहणनारा, (उक्कडुआसणिया के०) एक स्थानके केटलो एक काल निवृत्तियें रहे,(णिसज्जियाके०) निषेद्यआसनना बेसनारा एटले निषेद्य पद्मयुक्तपृथवीपर बेसे, (वीरासणिया के०) वीरासने करी रहे, बाजोठ उपर बेशी, पग नीचामूके, पठी बाजोठ दूर करीने तेज आसने बेसे (दंमायतिया के०) दंमनी पेठ लांबो थयो थको रहे (लगंमसाइणो के०) वांका काष्ठनी पेठें शयन करे, मस्तक, पानी अने वासो, तेने भूमीलागे, परंतु वीजे नलागे (अप्पाउडाअगत्तया के०) वस्त्र रहित, वस्त्ररूप प्रावरण न राखे, (अकंडुयाके०) शरीरे खाजी नखणे, (अणिठुहाके०) मुखनु थूक परठवे नहीं, (धुतकेसमसरोमनहाके०) माथाना केश, गुह्यस्थानकना केश, दाढीमुठना केश, काखली ना केश, शरीरना रोम, तथा नख, समारे नहीं, (सव्वगायपडिक्कमविप्पमुक्का के०) सर्व गात्र एटले शरीरनी शुश्रूषा करवा थकी विप्रमुक्त, एटले मूकाणा थका, (चिठंतिके०) रहे ॥७४॥ (तेणएतेणविहारेणविहरमाणा के०) तेसाधु एवा उग्र विहारे करी विचरता थ का (बहुश्वासाइ के०) घणाएक वर्ष (सामन्नपरियागपाउणंति के०) चारित्र पर्याय पाले एवो चारित्र पाली (बहुबहुआबाहंसि के०) रोगादिकनी आवाधा (उपन्नंसिवा के०) उपनी, तथा (अणुपन्नंसिवा के०) अणउपने ठते (बहुइंनत्ताइपच्चक्काइंके०) घणाभात पाणी पच्चक्के (पच्चक्काइत्ता के०) ते पच्चक्कीने (बहुश्वासाइअणसणाइंठे दिति के०) घणा काल सुधी अनशन पाले,(अणसणाइंठेदित्ता के०) ते अनशन पाली ने किंबहुना शुभाशुकहेवाथी? (जस्सठाएकीरतिके०) जे साधुधर्मने अर्थे आधर्म एवोके, लोहगोलकनी पेठें निरास्वाद खड्गधारानी पेठें डुःसाध्य,एवो चारित्र पाले (नग्गभावेके०) नग्नपणानो भाव एटले प्रमाणोपेत वस्त्रपहेरे, (मुंमभावे के०) पांचइंद्रियो तथा चार कषायना संवर करे, (अण्हाणभावे के०) थपोल स्नान नो त्यागभाव करे, (अदंतव णगे के०) दातण करवानो परिहार करे, (अठत्तएके०) मस्तके ठत्र धरावे नहीं, (अणोवाहणए के०) पगरखाना त्याग करे, (भूमिसेज्जा के०) भूमिकाने विषे शय न करे, (फलगसेज्जा के०) पाट, पाटीया उपर शयन करे, (कठसेज्जा के०) काष्ठ, पाषाण उपर शयन करे (केसलोए के०) मस्तक केशनो लोच करे, (बंभचेरवासे के०) ब्रह्मचर्यने विषे वास करे, अर्थात् ब्रह्मचर्यने पाले, (परघरपवेसे के०) भिक्षा ने अर्थे पारका घरने विषे भ्रमण करे, (लद्धावलद्ध के०) त्यां परघर भ्रमण करता कदाचित् भिक्षानो प्रातियाय, अथवा नथाय, तोपण समता भाव धरे, (माणाव माणणाव के०) मान, अथवा अपमान, देता थका पण समता भाव धरे (हीलणा

उ के०) जन्मना कर्मरूपकरणीने उघाडी, हेलना करतां पण समता नाव धरे (निंदणाउ के०) कोइ निंदा करे, (खिसणाउ के०) कोइ बीजा लोकोनी साखें हेलना करे, (गरहणाउ के०) कोइ तेना मुख अगलज हेलना करे, (तज्जणाउ के०) कोइ तर्जना करे, (तालणाउ के०) कोइ ताडना करे, (उच्चावयगामकंटगा के०) उंचा नीचा ग्रामकंटक एटले ग्रामीण लोकना वचन, पांच इंडियने कंटक समान, तेने सहन करे, (बावीसपरीसहोवसग्ग के०) बावीश परिसह अने देवादिकना करेला उपसर्गादिक ए सर्वने (अहियासिज्जंति के०) मन वचन अने कायायें करी, अहियासे एटले सहन करे, (तमठ्ठआराहंति के०) साधु ते अर्थ जे सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्र रूप तेने आराधे, (तमठ्ठआराहित्ता के०) ते ज्ञान दर्शन चारित्ररूप अर्थ आराधिने, (चरमेहिंउस्सासनिस्सासेहिं के०) ठेला उश्वास, निःश्वासे ज्ञान उपजे ते केवो ज्ञान उपजे, ते कहेछे (अणंत के०) अंतरहित, (अणुत्तर के०) प्रधान, (निव्वाघाय के०) निर्व्याघात, (निरावरण के०) आवर्ण रहित, (कसिण के०) कृत्स्न संपूर्ण, (पडिपुण्ण के०) परिपूर्ण एवो, (केवलवरणाणदंसणसमुप्पाडेंति के०) प्रधान केवलज्ञान अने केवलदर्शन, पामे (समुप्पाडेतित्ताके०) ते केवल ज्ञान अने केवल दर्शन उपजावीने एटले पामिने, (ततोपच्छा के०) तेवार पढी (सिज्झंतिके०) सीजे एटले तेने सर्व अर्थेनी सिद्धि थाय, (बुज्झंति के०) चउदराज लोकनुं स्वरूप बुजे, (मुच्चंति के०) सर्वे डुःख थकी मूकाय, (परिणिव्वायंति के०) कर्मरूप दावानलने उपशमाववे करी शीतलीनूत थाय (सव्वडुक्खाणं अंतकरेंति के०) सर्वे डुःखनो अंत करें, ॥ ७२ ॥

॥दीपिका–प्रकारांतरेण पुनः साधुगुणानाह । (सेजहत्ति) तद्यथानाम केचन नगवतोऽनगारा नवंति । ईर्यासमिताइत्यादि सुगमं । यावत्सुहुतहुताशनइव दीप्तवन्हिरिव तेजसाज्वलंतो दीप्यमाना ॥७०॥(णत्थिणंति)नास्ति तेषां कुतश्चित्प्रतिबंधः । प्रतिबंधश्चतुर्विधः । तद्यथा। अंमजोहंसादि । अंडकवा मयूरांडकादि क्रीडामयूरादिहेतुः स्यात्तेन तत्र निबंधः स्यात् । पोतजे हस्त्यादौ पोतके वा शिशुत्वात्प्रतिबंधः स्यात् । अथवा (अंमजोइवाबोंडजोइवाइ तिपाठांतर) अंडजं शणिकादिवस्त्रं बोंडजं कार्पासं वस्त्रं तत्र प्रतिबंधः स्यात् (उग्गहेइवा) अवगृहीतं परिवेषणार्थमुत्पाटितं नक्तपानं प्रगृहीतं नोजनार्थमुत्पाटितं तदेव । अथवा अवग्रहिकं वसतिपीठफलकादि औपग्रहिकं वा दंडकाद्युपधिजातं प्रगृहीतंतु रजोहरणाद्यौघिकोपधिरूपं तत्र प्रतिबंधः स्यात् ।(जन्नंति) यां यां दिशमिच्छंति विहर्तुं तां तां दिशं विहरंति। किंनूता । अप्रतिबंधा शुचिर्नूताजावशुद्धिमंतः श्रुतिनूतावा प्राप्तसिद्धांता लघुता अल्पोपधयोऽगौरवाश्च अनल्पग्रंथाबद्धागमा न विद्यते आत्मनः संबंधी ग्रंथोहिरण्यादिर्येषां

पा तेऽनात्मग्रयाइति वा॥ ७१॥तेषा साधूना भगवता (इमाए) तद्रूपायात्रामात्रा वृत्ति सयम यात्राप्रमाणाजीविकाऽभवत्। तद्यथा। चतुर्थभक्तमेकोपवास षष्ठभक्त यावत्पण्मासिक। अयच (उक्खित्तचरयत्ति) उत्क्षिप्त स्वकार्याय पाकभाजनाडुद्धृत तदर्थमभिग्रहतश्चरति तद्गवे षणाय गच्छतीति उत्क्षिप्तचरका। (निक्खित्तचरयत्ति) निक्षिप्तभाजनादनुद्धृत तदर्थमभि ग्रहतश्चरति तद्गवेषणाय गच्छतीति निक्षिप्तचरका। (उक्खित्तनिक्खित्तचरयत्ति) पाकभा जनाडुत्क्षिप्त तत्रैवाऽन्यत्र वा स्थाने यदन्न तदर्थमभिग्रहवतश्चरति। अतेन प्रातेन रू क्षेण भक्तादिना चरति ये ते तथा समुदानेन भिक्षया चरतीति (ससठ्ठेन) खरटितेन हस्तादिना दीयमान ससृष्टमुच्यते उक्तविपरीतमससृष्ट तेन चरति (तज्जायत्ति) तज्जातेन देयद्रव्याविरोधिना यत्ससृष्ट हस्तादि तेन चरति ते तथा। (दिठ्ठलाभियत्ति) दृष्टस्यैव भक्तादेर्लाभ अदृष्टस्यापकवरकादिमध्यान्निर्गतस्य श्रोत्रादिभि कृतोपयोगस्य भक्तादेर्लाभस्तेन चरति ये ते तथा। (पुछ्लाभियत्ति) पृष्टस्यैव हे साधो! किते दीयते इत्यादिप्रश्नेन योलाभ सयेपामस्ति ते तथा। एवमपृष्टलाभिकाविपरीता। भिक्षेव भिक्षा तु छमवज्ञात वा तल्लाभोयेपामस्ति ते तथा अभिक्षालाभिका विपरीता। अज्ञातचरकाग्रज्ञा तगृहेपु चरतीत्यभिग्रहवत अन्न भोजन वा ग्लायति अन्नग्लायिकास्तेच अभिग्रहविशेषा त्प्रातरेवान्न गृण्हन्ति(उवणिहया) उपनिहि तंयथाकथचिदासन्नीभूत तेन चरति ये ते उपनि हितका सख्याप्रधानादत्तयोयेषा ते तथा। प्रातरेवग्रण्हभक्तादि(परिमियत्ति) परिमित पिंड पात अर्धपोपादिलाभोयेपामस्ति ते तथा। (सुद्धेसणिया) शुद्धेपणा शुद्धस्य वा निर्व्यजन स्य कूरादेरेपणा येपामस्ति ते अतप्रातवल्लवणकादि सग्राहारोयेषा ते तथा। विरस नीरस शीतलीभूत रूक्षाहारा (अबिलिया) आचाम्ल उदनकुल्मापादि तेन चरतीति। निर्विकृति का घृतादिविकृतित्यागिन अमद्यमासाशिन मद्यमास नाश्नतीति। (नोनियागत्ति) ननित्य रसभोजिन (नेसज्जीया) निपद्यायुतायां भूमौ उपविशन तया चरतीति नैपद्यका। वीरा सन सिंहासननिविष्टस्य भून्यस्तपादस्य सिंहासनापनोदे सति यादृशमवस्थान तद्यस्यास्ति सवीरासनिक (दडायतिया) दडस्येवायतमायामोयेषा ते दडायतिका। लगन्द वक्रका ष्ठ तद्वत् शेरते ये ते लगन्दशायिन पार्ष्णिका शिरश्च पृष्ठमेव वा भूमौ लगति तथा शयन कुर्वति आतापकाआतापनायाहिण (अप्पावडा) अप्रावृता प्रावरणवर्जका (अगडु या) अकडूयका (अनिठ्ठहा) अनिष्ठीवना (धुतमससत्ति) धूतानि भीतिकर्मतया त्य क्तानि केशश्मश्रुरोमाणि शिरोजकूर्चकक्षादिलोमानि यैस्ते तथा सर्वगरोरपरिकर्मणा रहि ताइत्यर्थ ॥७२॥(तेणत्ति) ते साधवएव विहृत्य बहूनि वर्षाणि श्रामण्यपर्यायमनुपाल्य (आ बाहसत्ति) रोगातंके उत्पन्नेऽनुत्पन्ने वा भक्तप्रत्याख्यान कुर्वति। किं बहुना यत्कृते क्रियते नग्नभावोमुडभावश्च (अण्हाणगे) स्नानाभाव अदतधावन अछत्रक। शरति आतपे प

उ के०) जन्मनां कर्मरूपकरणीने उघाडी, हेलना करतां पण समता जाव धरे (निंद णाउ के०) कोइ निंदा करे, (खिसणाउ के०) कोइ बीजा लोकोनी साखें हेलना करे, (गरहणाउ के०) कोइ तेना मुख अगलज हेलना करे, (तज्जणाउ के०) कोइ तर्जना करे, (तालणाउ के०) कोइ ताडना करे, (उच्चावयगामकटगा के०) उंचा नीचा ग्रामकटक एटले ग्रामीण लोकना वचन, पांच इंद्रियने कटक समान, तेने सहन करे, (बावीसपरीसहोवसग्ग के०) बावीश परिसह अने देवादिकना करेला उप सर्गादिक ए सर्वने (अहियासिज्जंति के०) मन वचन अने कायाये करी, अहियासे एटले सहन करे, (तमठ्ठआराहंति के०) साधु ते अर्थ जे सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्र रू प तेने आराधे, (तमठ्ठआराहित्ता के०) ते ज्ञान दर्शन चारित्ररूप अर्थ आराधिने, (चरमेहिंउस्सासनिस्सासेहिं के०) छेला उश्वास, नि श्वासे ज्ञान उपजे ते केवो ज्ञान उपजे, ते कहेछे (अणंत के०) अंतरहित, (अणुत्तर के०) प्रधान, (निव्वाघाय के०) निर्व्याघात, (निरावरण के०) आवर्ण रहित, (कसिण के०) कृत्स्न संपूर्ण, (पडिपु ण्ण के०) परिपूर्ण एवो, (केवलवरणाणदंसणसमुप्पाडेति के०) प्रधान केवलज्ञान अने केवलदर्शन, पामे (समुप्पाडेतित्ताके०) ते केवल ज्ञान अने केवल दर्शन उपजा वीने एटले पामिने, (ततोपच्छा के०) तेवार पछी (सिज्झंतिके०) सीजे एटले तेने सर्व अर्थनी सिद्धि थाय, (बुज्झंति के०) चउदराज लोकनुं स्वरूप बुजे, (मुच्चंति के०) स र्व दुःख थकी मूकाय, (परिनिव्वायंति के०) कर्मरूप दावानलने उपशमाववे करी शी तलीभूत थाय (सव्वदुक्खाणं अंतकरेंति के०) सर्व दुःखनो अंत करे, ॥ ७३ ॥

॥दीपिका—प्रकारांतरेण पुन साधुगुणानाह । (सेजहत्ति) तद्यथानाम केचन नगवतोऽन गारानवंति । ईर्यासमिताइत्यादि सुगम । यावत्सुहुतहुताशनइव दीप्तवन्हिरिव तेजसाज्वल तो दीप्यमाना ॥७०॥(णत्थिणंति)नास्ति तेषां कुतश्चित्प्रतिबंध । प्रतिबंधश्चतुर्विध । तद्यथा। अंमजोहंसादि । अंडकवा मयूरांडकादि क्रीडामयूरादिहेतु स्यात्तेन तत्र निबंध स्यात् । पोतजे हस्त्यादौ पोतके वा शिशुत्वात्प्रतिबंध स्यात् । अथवा (अंमजोइवाबोंडजोइवाइ तिपाठांतर) अंडज शणिकादिवस्त्र बोंडज कार्पास वस्त्र तत्र प्रतिबंध स्यात् (उग्गहेइवा) अवगृहीतं परिवेषणार्थमुत्पाटितं नक्तपानं प्रगृहीतं नोजनार्थमुत्पाटितं तदेव । अथवा अवग्रहिकं वसतिपीठफलकादि औपग्रहिकं वा दंडकाद्युपधिजातं प्रगृहीतंतु रजोहरणाद्यो घिकोपधिरूपं तत्र प्रतिबंध स्यात् ।(जण्णंति) यां यां दिशमिछंति विहर्तुं तां तां दिशं वि हरंति। किंनूता । अप्रतिबद्धा शुचिर्नूतानावशुद्धिमंत श्रुतिनूतावा प्राप्तसिद्धांता लघुता अल्पोपधयोऽगौरवाश्च अनल्पग्रयावद्भागमा न विद्यते आत्मनः संबधी ग्रंथोहिरण्यादिर्ये

वेमाणा पभासेमाणा गइकल्लाणा ठिइकल्लाणा आगमेसिभद्दयावि भवंति एसठाणे आयरिए जाव सवडुक्खपहीणमग्गे एगतसम्मे सुसा हू दोच्चस्स ठाणस्स धम्मपक्खस्स विभंगे एवमाहिए ॥ १४ ॥

अर्थ-(एगच्चाए के०) एम कोइ एक पुरुष (पुणे के०) वली (एगे के०) एक ज शरीरे एटले तेज एक जवमां (भयतारोभवति के०) सिद्धिगति गामि होय. (अवरेपुण के०) अपर एटले बीजा वली (पुवकम्मवसेसेण के०) जेने पूर्वकृत कर्म अवशेष रह्या होय तो तेवा पुरुष (कालमासेकालकिच्चा के०) कालने अवसरे काल करीने (अन्नयरेसु के०) अन्यत्र (देवलोएसु के०) देवलोकने विषे (देवत्ताएउववत्तारो भवति के०) देव पणे उपजनार थाय (तजहा के०) ते देवलोक केवा होय तेकहेछे (महड्डिएसु के०) महर्द्धिक महोटी ऋद्धिना धणी, (महज्जुत्तिएसु के०) महाद्युतिवान, (महापरिक्कमेसु के०) महोटा पराक्रम वाला, (महाजसेसु के०) महोटा यशना धणी, (महाबलेसु के०) महोटा बलवान, (महाणुभावेसु के०) महोटा अतिशयवान एवा महानुभाव वैक्रियादिक शक्तिये करी सहित होय (महासुखेसु के०) महोटा सुखना धणी, एटला वाना जेस्थानकने विषेछे (तेणतछदेवाभवति के०) ते त्या देवतापणे होय, ते देवता केवा होय ते कहेछे महोटी ऋद्धियादिक गुणे सहित यावत् महोटा सुख सहित (हारविराइयवच्छा के०) हारे करी विराजित शोभायमानछे, हृदयकमल जेना वली (कडगतुडियथंभियभूया अगयं के०) कटक, केयूर, अगदादिके करी स्तंभितछे भुजा जेनी, वली देदीप्यमान (कुंडलमट्टगंडयल के०) कुंडलें करी घसायेला एवा गालना तट जेणे शोभित कर्याछे (कन्नपीढधारी के०) कुंडलना आधार माटें कानछे माटे कर्णपीठ धारी कह्या अथवा कर्णपीठते कानतु आभरण विशेष जाणवु ते आजर्ण कुंडलछे, तेना धरनारा (विचित्तहत्थाभरणा के०) विचित्रप्रकारना मुद्रादिक आभरण जेना हाथमा रहेलाछे तेणेकरीसहित (विचित्तमालामउलिमउडाके०) विचित्र प्रकारनी माला सहित मुकुटना धरनार, (कल्लाणगंधपवरवत्थपरिहिया के०) कल्याणकारी सुगंधित वस्त्रना पेरनार, तथा (कल्लाणगपवरमल्लाणुलेवणधरा के०) कल्याणकारी प्रवर माल्य विलेपनना धरनार, (भासुरबोंदीपलंबवणमालधरा के०) देदीप्यमान शरीर प्रलंब एवी लटकतिजे वनमाला रूप आजर्ण विशेष, तेना धरनारा, (दिव्वेणरूवेण के०) प्रधान रूपें करी सहित, (दिव्वेणवन्नेण के०) दिव्य वर्णेकरी सहित, (दिव्वेणगंधेण के०) दिव्य गंधे करी सहित, (दिव्वेणफासेणके०) दिव्य स्पर्शे करी सहित, (दिव्वेणसंघाएण के०) दिव्य शरीरनो संघातन समुदाय तेणे करी सहित, (दिव्वेण

तत्यपि कवलवस्त्रादिधारणाजाव अनुपानत्कता पादुकाद्यजाव जूमिशयन फलकशयन काष्ठशयन केशलोच ब्रह्मचर्यधारण। निक्षार्थे परगृहप्रवेश लब्धमानापमानानि हेलन हिंसागर्हातर्जनताडनानि उच्चावचग्रामकटका शुजाशुजाइंद्रियविषयारागद्वेषरहिततया सोढव्याइत्यर्थ । द्वाविंशति परीषहा । देवादिकृताउपसर्गाअध्यास्यंते यदर्थमेताड्ष्करा क्रिया क्रियंते तमर्थ सम्यक् ज्ञानदर्शनचारित्राख्यमाराध्य चरमरुच्छ्वासनि श्वासै प्रांतसमय यावदित्यर्थ । ततोऽनतमनुत्तर निव्याघात प्रतिपूर्ण केवलवरज्ञानदर्शनमाप्नुवति तत सिध्यति मोक्षमाप्नुवतीति ॥ ७३ ॥

॥ टीका--पुनरन्येन प्रकारेण साधुगुणान् दर्शयितुमाह । (सेजहेत्यादि) तद्यथानाम केचनोत्तमसहननधृतिबलोपेताअनगाराजगवतोनवतीति । ते पचजि समितिजि समिता । एवमित्युपदर्शने। औपपातिकमाचारांगसवधि प्रथममुपाग। तत्र साधुगुणा प्रबध न व्यावर्ण्यते तदिहापि तेनैव क्रमेण इष्टव्यमित्यतिदेश । यावद्भूतमपनीत केशश्मश्रुलोम नखादिक यैस्ते तथा सर्वगात्रपरिकर्मविप्रमुक्तानिष्प्रतिकर्मशरीरास्तिष्ठतीति॥७०॥७१॥७२ तेचोग्रविहारिण प्रव्रज्यामनुपाल्य, बाधारूपे रोगातंके समुत्पन्नेऽनुत्पन्ने वा जक्तप्रत्याख्यान विदधति । किंबहुनोक्तेन यत्कृतेऽयमयोगोलकवन्निरास्वाद करवालधारामार्गवहुरध्यवसाय श्रमणजावोऽनुपाल्यते तमर्थ सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राख्यमाराध्य व्याहतमनत मोक्षकारण केवलज्ञानमाप्नुवति केवलज्ञानावाप्तेरूर्ध्व सर्वड्खविमोक्षलक्षण मोक्षमवाप्नुवतीति ॥ ७३ ॥

एगच्चाए पुणएगे जयतारो जवति अवरेगपुण पुव्वकम्मावसेसेण कालमासे काल किच्चा अन्नयरेसु देवलोएसु देवताए उववत्तारो जवति तजहा महड्ढिएसु महजुत्तिएसु महापरिक्कमेसु महाजसेसु महाबलेसु महाणुजावेसु महासुखेसु तेण तत्त देवा जवति महड्ढिया महजुत्तिया जाव महासुखा हारविराइयवच्छा कडगतुडियथंजियजुया अगय कुंमल मठगंमयल कन्नपीढधारी विचित्तहत्थाजरणा विचित्तमालामउलिमउडा कल्लाणगधपवर वत्थपरिहिया कल्लाणगपवरमल्लाणुलेवणधरा जासुरबोंदीपलंबवणमाल धरा दिव्वेण रूवेण दिव्वेण वन्नेण दिव्वेण गंधेण दिव्वेण फासेण दिव्वेण संघाएण दिव्वेण संठाणेण दिव्वाए इड्ढिए दिव्वाए जुत्तीए दिव्वाए पजाए दिव्वाए छायाए दिव्वाए अच्चाए दिव्वेण तेयण दिव्वाए लेसाए दसदिसाउ उज्जो

वेमाणा पन्नासेमाणा गइकल्लाणा ठिइकल्लाणा आगमेसिन्नद्दयावि
न्नवति एसठाणे आयरिए जाव सव्वदुक्खपहीणमग्गे एगंतसम्मे सुसा
हू ठोचस्स ठाणस्स धम्मपक्खस्स विन्नगे एवमाहिए ॥ ७४ ॥

अर्थ–(एगच्चाए के०) एम कोइ एक पुरुष (पुणे के०) वली (एगे के०) एक
ज शरीरे एटले तेज एक न्नवमां (नयतारोन्नवति के०) सिद्धिगति गामि होय (अ
वरेपुण के०) अपर एटले बीजा वली (पुव्वकम्मवसेसेण के०) जेने पूर्वकृत कर्म अ
वशेष रह्या होय तो तेवा पुरुष (कालमासेकालकिच्चा के०) कालने अवसरे काल क
रीने (अन्नयरेसु के०) अन्यत्र (देवलोएसु के०) देवलोकने विषे (देवत्ताएउववत्तारो
न्नवति के०) देव पणे उपजनार थाय (तजहा के०) ते देवलोक केवा होय तेकहेछे
(महड्ढिएसु के०) महर्द्धिक महोटी रुद्धिना धणी, (महज्जुत्तिएसु के०) महाद्युति
वान (महापरिक्कमेसु के०) महोटा पराक्रम वाला, (महाजसेसु के०) महोटा यश
ना धणी, (महाबलेसु के०) महोटा बलवान, (महाणुन्नावेसु के०) महोटा अतिश
यवान एटा महानुन्नाव वैक्रियादिक शक्तियें करी सहित होय (महासुखेसु के०) महोटा
सुखना धणी, एटला वाना जेस्थानकने विषेछे (तेणतच्छदेवान्नवति के०) ते त्यां देवता
पणे होय, ते देवता केवा होय ते कहेछे महोटी रुद्धियादिक गुणे सहित यावत् महो
टा सुख सहित (हारविराइयवच्छा के०) हारे करी विराजित शोन्नायमानछे, हृदय
कमल जेना वली (कडगतुडियथंनियन्नूया अगय के०) कटक, केयूर, अंगदादिकें
करी स्तंनितछे न्नुजा जेनी, वली देदीप्यमान (कुमलमट्ठगमयल के०) कुमलें करी
घसायेला एवा गालना तट जेणे शोन्नित कर्याछे (कन्नपीढधारी के०) कुमलना आधार
माटें कानछे माटे कर्णपीठ धारी कह्या अथवा कर्णपीठते काननुं आन्नरण विशेष जाणवु
ते आन्नर्ण कुमलछे, तेना धरनारा (विचित्तहत्थान्नरणा के०) विचित्रप्रकारना मुद्रादि
क आन्नरण जेना हाथमां रहेलाछे तेणेकरीसहित (विचित्तमालामउलिमउडाके०) वि
चित्र प्रकारनी माला सहित मुकुटना धरनार, (कल्लाणगधपवरवत्थपरिहिया के०) कल्या
णकारी सुगंधित वस्त्रना पेरनार, तथा (कल्लाणगपवरमल्लाणुलेवणधरा के०) कल्याण
कारी प्रवर माल्य विलेपनना धरनार, (न्नासुरबोंदीपलंबवणमालधरा के०) देदीप्य
मान शरीर प्रलंब एवी लटकतिजे वनमाला रूप आन्नर्ण विशेष, तेना धरनारा, (दि
व्वेणरूवेण के०) प्रधान रूप करी सहित, (दिव्वेणवन्नेण के०) दिव्य वर्णेकरी सहित,
(दिव्वेणगंधेण के०) दिव्य गंधे करी सहित, (दिव्वेणफासेणके०) दिव्य स्पर्शे करी सहि
त, (दिव्वेणसंघाएण के०) दिव्य शरीरनो संघातन समुदाय तेणे करी सहित, (दिव्वेण

तल्यपि कम्बलवस्त्रादिधारणाजाव अनुपानत्कता पाडुकाद्यजाव जूमिशयन फलकशयन काष्ठशयन केशलोच ब्रह्मचर्यधारण। निक्षार्थे परगृहप्रवेश लब्धमानापमानानि हेलन हिंसागर्हातर्जनताडनानि उच्चावचग्रामकटका शुनाशुनाऽइंद्रियविषयारागद्वेषरहिततया सोढव्याऽइत्यर्थ । द्वाविंशति परीषहा । देवादिकृताउपसर्गाअध्यास्यंते यदर्थमेताड प्करा क्रिया क्रियंते तमर्थ सम्यक् ज्ञानदर्शनचारित्राख्यमाराध्य चरमरुच्छ्वासनि श्वासे प्रांतसमय यावदित्यर्थं । ततोऽनंतमनुत्तर निर्व्याघातं प्रतिपूर्ण केवलवरज्ञानदर्शनमाप्नु वति तत सिध्यति मोक्षमाप्नुवतीति ॥ ७२ ॥

॥ टीका–पुनरन्येन प्रकारेण साधुगुणान् दर्शयितुमाह । (सेजहेत्यादि) तद्यथानाम केचनोत्तमसंहननधृतिबलोपेताअनगाराजगवतोजवंतीति । ते पंचजि समितिजि समिता । एवमित्युपदर्शने। औपपातिकमाचारांगसंबंधि प्रथममुपांग। तत्र साधुगुणा प्रबंध न व्यावर्ण्यंते तदिहापि तेनैव क्रमेण द्रष्टव्यमित्यतिदेश । यावद्भूतमपनीतं केशश्मश्रुलोम नखादिक यैस्ते तथा सर्वगात्रपरिकर्मविप्रमुक्तानिष्प्रतिकर्मशरीरास्तिष्ठंतीति॥७०॥७१॥७२ तेचोग्रविहारिण प्रव्रज्यामनुपाल्य, बाधारूपे रोगातंके समुत्पन्नेऽनुत्पन्ने वा जक्तप्रत्याख्या न विदधति । किंबहुनोक्तेन यत्कृतेऽयमयोगोलकवन्निरास्वाद करवालधारामार्गवद्दुरध्य वसाय श्रमणजावोऽनुपाल्यते तमर्थं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राख्यमाराध्य व्याहतमनं तं मोक्षकारण केवलज्ञानमाप्नुवंति केवलज्ञानावाप्तेरूर्ध्वं सर्वदु खविमोक्षलक्षण मोक्ष मवाप्नुवंतीति ॥ ७२ ॥

एगच्चाए पुणएगे जयतारो जवंति अवरेगपुण पुव्वकम्मावसेसेण कालमा से काल किच्चा अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो जवंति तंजहा म हड्ढिएसु महज्जुत्तिएसु महापरिक्कमेसु महाजसेसु महाबलेसु महाणुजावे सु महासुखेसु तेण तत्थ देवा जवंति महड्ढिया महज्जुत्तिया जाव महासुखा हारविराइयवच्छा कडगतुडियथंजियजुया अगय कुंडल मट्ठगंडयल कन्न पीढधारी विचित्तहत्थाजरणा विचित्तमालामउलिमउडा कल्लाणगंधपवर वत्थपरिहिया कल्लाणगपवरमल्लाणुलेवणधरा जासुरबोंदीपलंबवणमाल धरा दिव्वेण रूवेण दिव्वेण वन्नेण दिव्वेण गंधेण दिव्वेण फासेण दिव्वेण संघा एण दिव्वेण संठाणेण दिव्वाए इड्ढिए दिव्वाए जुत्तीए दिव्वाए पजाए दिव्वाए गयाए दिव्वाए अच्चाए दिव्वेण तेयण दिव्वाए लेसाए दसदिसाउ उज्जो

इसामानिकत्रयस्त्रिंशल्लोकपालपार्षदात्मरक्षप्रकीर्णेषु नानाविधसमृद्धिषु नवतीति नत्वा नियोगिककिल्विषिकादिष्विति । तदेवाह । (तजहेत्यादि) तद्यथा महर्ध्यादिषु देवलोके पूत्पद्यते । देवास्त्वेवनूतान्नवतीति दर्शयति । (तेणतछदेवा इत्यादि) ते देवानानाविध तपश्चरणोपात्तशुनकर्माणोमहर्ध्यादिगुणोपेतान्नवतीत्यादिक सामान्यगुणवर्णक । ततो हारविराजितवक्षसइत्यादिकत्र्यानरणवस्त्रपुष्पवर्णक । पुनरतिशयापादनार्थं दिव्यरूपादिप्रतिपादन चिकीर्षुराह । (दिव्वेणरूवेणमित्यादि) दिविनव दिव्य तेन रूपेणोपात्ताया वद्दिव्यया इव्यलेश्ययोपेतादशापि दिश समुद्योतयतस्तथा प्रन्नासयतोऽजकुर्वतोगत्या देव लोकरूपया कल्याणा शोननागत्या वा शीघ्ररूपया प्रशस्तविहायोगतिरूपया रा कल्याणास्तथा स्थित्या उत्कृष्टमध्यमया कल्याणास्ते नवति तथाऽऽगामिनि काले नद्रका शोननमनुष्यनवरूपसपडुपेतास्तथा सद्धर्मप्रतिपत्तारश्च नवतीति । तदेतत्स्थानमार्यमेकांतेनैव सम्यग्नूतं सुसाध्विति । एतद्वितीयस्य स्थानस्य धर्मपाक्षिकस्य विनगएवमाख्यात ॥७४॥

अहावरे तच्चस्स ठाणस्स मीसगस्स विन्नगे एव माहिज्जइ इह खलु पाईणवा सतेगतिया मणुस्सा नवति तजहा अप्पिछा अप्पारन्ना अप्पपरिग्गहा धम्मिया धम्माणुया जाव धम्मेण चेव वित्तिकप्पेमाणा विहरति सुसीला सुवया सुपडियाणंदा साहू एगच्चाउ पाणाइवायाउ पडिविरता जावजीवाए एगच्चाउ अप्पडिविरया जाव जेयावण्णे तहप्पगारा सावज्जा अबोहिया कम्मता परपाणपरितावणकरा कज्जति ततोवि एगच्चाउ अप्पडिविरया ॥ ७५ ॥

अर्थ-अथ हवे अपर त्रीजु स्थानक मिश्रपक्ष तेनो विचार कहिये ठेयें, यद्यपि ए स्थानक धर्म अधर्म करीने मिश्रितछे, तथापि एमा धर्मनु बाहुल्य पणुछे, तेमाटें ए धर्मपक्षज जाणवो आ जगत् माहे निश्चे पूर्वादिक दिशिने विषे काइ एक मनुष्य एवा ठे, ते कहेछे अल्प इछावाला, अल्पारन्नी एटले थोडेज आरन्ने व्यापारादिक साथे स बधछे जेने, अल्प परिग्रही एटले थोडोज परिग्रह संग्रह करवानी मूर्छा सबधि बुद्धि ने जेनी, धर्मानुगामि एटले धर्मजे श्रुत चारित्ररूप तेनीकेडे चालनार, यावत् देश थकी चारित्रने अथवा पालवे करी श्रुतने आराधवे करी आजीविका करता थका विचरेछे न लो ठे आचार जेनो,नला व्रतछे जेने, सुप्रत्यानद, साधु एटले सुखसाध्यसाधु, तथा साधु ने विषेज आनद हर्ष सहित वर्तेछे, तथा (एगच्चाउपाणाइवायाउ क०) एकेक प्राणी जे वे इंडियादिक त्रस जीवाछे, तेने हणवा थकी निवर्त्या एवा, तथा एकेक स्थूल

सगाणेण के०) दिव्य संस्थान समचतुरस्र रूप तेणे करी सहित, (दिवाएइडीए के०) दिव्य वैमानादिकनी ऋद्धि, तेणे करी सहित, (दिवाएजुत्तीए के०) दिव्यद्युति एटले प्रधान अन्योन्य जक्तिये करी सहित, (दिवाएप्पनाए के०) दिव्य प्रना एटले कांती तथाविध इव्य जोडवाने प्रजावे महात्मे करी सहित, (दिवाएछायाए के०) दिव्य प्रतिबिंब एवा रूपे करी सहित, (दिवाएअच्चाए के०) दिव्य अर्चा, (दिवेणतेयण के०) प्रधान एवी शरीर थकी निकलति जे तेजनी ज्वाला तेणे करी सहित, एटले दिव्यतेजे करी सहित, (दिवाएलेसाएके०) अन्यतरना परिणामरूप शुक्लादिक लेश्यायें करी सहित थका, (दसदिसाउज्जोवेमाणा के०) प्रधान शरीर माहेली कांतियें करी दशेदिशा उने उज्वल करता, (पनासेमाणा के०) दशेदिशाउने अलंकारता प्रकासता, (गइकल्लाणा के०) देवता संबंधिनी गतिये करी प्रधान, (विइकल्लाणा के०) देवता संबंधिनी स्थितिये करी कल्याण एटले प्रधान, (आगमेसिनद्दयाविनवंति के०) आगमिक कालें नइक प्रधान मनुष्य नव रूप संपदा पामवा आश्री तथा रूडा धर्म प्रतिपत्ति सहित प्रत्ये पामवा आश्री आगमिक कालें नइक कह्याछे ए स्थानक आर्य यावत् सर्व डुःख थकी रहित थवानो मार्ग एकांत सम्यक्, सत्य, सुसाधुनुं स्थानक छे, एटले बीजुं स्थानक धर्मपक्षनो विचार एम कह्यो ॥ ७४ ॥

॥ दीपिका-(एगच्चाएत्ति) एके पुनरेकयार्चया एकेन शरीरेण एकनवाद्वा मोक्षगता स्युः । एके पुनः पूर्वकर्मावशेषे सति कालं कृत्वाऽन्यतरेषु देवलोकेषु देवतयोत्पद्यते । तद्यथा । महर्द्धिमहाद्युतिमहाशुक्लमहाबलमहानुनावमहासुखेषु देवलोकेषु । देवास्ते प्येवनूताइत्याद् । महर्द्धिकादयस्तथा हारविराजितवक्षसः कटकत्रुटितस्तंनितनुजा अंगदकुंडलघृष्टगंडतलकर्णपीठधराविचित्रहस्तानरणा विचित्रमालामुकुलितमुकुटा परिहितकल्याणप्रवरवस्त्रा कल्याणप्रवरमाल्यानुलेपनधरा (नासुरबोंदी) नास्वरशरीरा प्रलंबवनमालाधरा (दिवेणत्ति) दिवि नव दिव्य तेन रूपेण यावद्दिव्यया इव्यलेश्यया युतादशदिशोविद्योतयंतः प्रनासयंतोगत्या देवलोकरूपया कल्याणा शोजना स्थित्या उत्कृष्टमध्यमया कल्याणा (आगमेसित्ति) आगामिनि काले नइका शोजनमनुष्यनव प्राप्ताः सद्धर्मप्रतिपत्तारः स्युः । तदेतत्स्थानमार्यं साधु श्रेष्ठं । एतद्वितीयस्य स्थानस्य धर्मपाक्षिकस्य विनंगोविचारः समाख्यातः ॥ ७४ ॥

॥ टीका-एके पुनरेकयार्चयैकेन शरीरेणैकस्माद्वा नवात्सिद्धिगतिं गतारोनवति अथ ते पुनस्तथाविधपूर्वकर्मशेषे सति तत्कर्मवशगाः कालं कृत्वा वैमानिकेषु देवेषूत्पद्यते तत्रे

इसामानिकत्रयस्त्रिंशल्लोकपालपार्षदात्मरक्षप्रकीर्णेषु नानाविधसमृद्धिषु भवतीति नत्वा भियोगिककिल्बिषिकादिष्विति । तदेवाह । (तत्थेत्यादि) तद्यथा महर्ध्यादिषु देवलोके पूत्पद्यते । देवास्त्वेवंभूताभवतीति दर्शयति । (तेणतत्थदेवा इत्यादि) ते देवानानाविध तपश्चरणोपात्तशुभकर्माणोमहर्ध्यादिगुणोपेताभवतीत्यादिक सामान्यगुणवर्णक । ततो हारविराजितवक्षसइत्यादिकआभरणवस्त्रपुष्पवर्णक । पुनरतिशयापादनार्थ दिव्यरू पादिप्रतिपादन चिकीर्षुराह । (दिव्वेणरूवेणमित्यादि) दिविभव दिव्य तेन रूपेणोपात्ताया वद्दिव्यया इव्यलेश्ययोपेतादशापि दिश समुद्योतयतस्तथा प्रभासयतोऽलंकुर्वतोगत्या देव लोकरूपया कल्याणा शोभनागत्या वा शीघ्ररूपया प्रशस्तविहायोगतिरूपया वा कल्या णास्तथा स्थित्या वरुत्कृष्टमध्यमया कल्याणास्ते भवति तथाऽऽगामिनि काले भद्रका शोभ नमनुष्यभवरूपसपद्युपेतास्तथा सद्धर्मप्रतिपत्तारश्च भवतीति । तदेतत्स्थानमार्यमेकांतेनैव सम्यग्भूत सुसाध्विति । एतद्द्वितीयस्य स्थानस्य धर्मपाक्षिकस्य विभगएवमाख्यात ॥३४॥

अहावरे तच्चस्स ठाणस्स मीसगस्स विभंगे एव माहिज्जइ इह खलु पाईणवा सतेगतिया मणुस्सा भवति तंजहा अप्पिछा अप्पारंभा अ प्पपरिग्गहा धम्मिया धम्माणुया जाव धम्मेण चेव वित्तिकप्पेमाणा विहर ति सुसीला सुव्वया सुपडियाणंदा साहू एगच्चाओ पाणाइवायाओ पडिविर ता जावज्जीवाए एगच्चाओ अपडिविरया जाव जेयावण्णे तहप्पगारा सावज्जा अबोहिया कम्मंता परपाणपरितावणकरा कज्जति ततोवि एगच्चाओ अ पडिविरया ॥ ३७ ॥

अर्थ–अथ हवे अपर त्रीजुं स्थानक मिश्रपक्ष तेनो विचार कहियें बैयें, यद्यपि ए स्था नक धर्म अधर्म करीने मिश्रितबे, तथापि एमां धर्मनुं बाहुल्य पणुबे, तेमाटें ए धर्म पक्षज जाणवो आ जगत् माहे निश्चे पूर्वादिक दिशिने विषे काइ एक मनुष्य एवा वे, ते कहेबे अल्प इहावाला, अल्पारंभी एटले थोडेज आरंभे व्यापारादिक साथे स घथबे जेने, अल्प परिग्रही एटले थोडाज परिग्रह संग्रह करवानी मूर्ग सबंधि बुद्धि बे जेनी, धर्मानुगामि एटले धर्मजे श्रुत चारित्ररूप तेनीकेडे चालनार, यावत् देश थकी चारित्रने अवलंब पालवे करी श्रुतने आराधने करी आजीविका करता थका विचरेबे भ लो बे आचार जेना,भलां व्रतबे जेने, सुप्रत्यानंद, साधु एटले सुससाध्यसाधु, तथा साधु ने विषेज आनंद हर्ष सहित वर्तेबे, तथा (एगच्चाओपाणाइवायाओ के०) एकेक प्राणी जे बे इंडियादिक त्रस जीवाबे, तेने हणवा थकी निवर्त्या एवा, तथा एकेक स्थूल

प्राणातिपात थकी, अत्यंत पणे विरम्याछे विरक्त थयाछे, जाव जीव सुधी एकेक प्राणी जे पृथिव्यादिक छार तेने हणवा थकीअत्यत विरम्या नथी उपसम्या नथी, एटले एक सूक्ष्म प्राणातिपात थकी अविरता इत्यादिक सर्वपद, जेम अविरतने आलावे कह्याछे, तेवा आहीं पण जाणीलेवा, परतु एटलु विशेषछे जे, एक पक्षे विरति, अने एक पक्षे अविरति, (जावजेयावन्ने के०) यावत् जेकाइ अनेरा तथाप्रकारना पूर्वोक्त सावद्य अबो धिना कारण एवा कर्म रूप व्यापार, बीजा जीवोने परितापना करनार नीपजावीयें, ते थकी पण एक पक्षे विरति, अने एक अपक्षे अविरति, ते विरताविरत कहियें ॥३५॥

॥ दीपिका–अथापरस्य तृतीयस्थानकस्य मिश्रकाख्यस्य विभग स्वरूपमाख्यायते । (इहखलु इत्यादि) एतच्च यद्यपि मिश्रत्वाद्धर्माधर्माभ्या युतं भवति तथापि धर्मभूयि ष्ठत्वाद्धार्मिकपक्षएवावतरति । यथा बहुपु गुणेपु मध्यपतितोऽल्पदोषोन स्वरूप लभते क लकश्च चद्रिकाया बहूदकमध्यपतितोमृत्खडावयवोन जल कलुपयितुमल एवमधर्मोपि धर्म, ततोय मिश्रपक्षोधर्मपक्षएवेति स्थित । इह जगति प्राच्यादिदिक्षु एके शुभकर्माणो मनुष्या स्यु । तद्यथा अल्पेच्छा अल्पारभाधार्मिकवृत्तय शीला सुव्रता सुप्रत्यानदा साधव स्यु । तेच एकस्मात् स्थूलात् सकल्पकृतात्प्राणातिपातान्निवृत्ता । एकस्माच्च सूक्ष्मादारभजादप्रतिविरता । एव शेषाण्यपि व्रतानि वाच्यानि । (जावजेयावन्नेत्ति) ये चान्ये सावद्या कर्मारभास्तेभ्यएकस्माद्यत्रपीडानिर्लाछनरूपीवलादेर्निवृत्ता । एकस्माच्च क्रयविक्रयादेरनिवृत्ता ॥ ३५ ॥

॥ टीका–अथापरस्य तृतीयस्य स्थानस्य मिश्रकाख्यस्य विभग समाख्यायते । (इहखलुइत्यादि) एतच्च यद्यपि मिश्रत्वाद्धर्माधर्माभ्यामुपेत तथापि धर्मभूयिष्ठत्वाद्धार्मि कपक्षएवावतरति । तद्यथा । बहुपु गुणेषु मध्यपतितोदोषोनात्मान लभते कलकइव चद्रिकायास्तथा बहूदकमध्यपतितोमृच्छकलावयवोनोदक कलुपयितुमल । एवमधर्मोपि धर्ममिति स्थित । धार्मिकपक्षएवाय । इहास्मिन् जगति प्राच्यादिषु दिक्षु एके केचन शु भकर्माणोमनुष्याभवतीति । अल्पा स्तोका परिग्रहारभेच्छिवज्ञात करणप्रवृत्तिर्येषा ते तथा एवभूताधार्मिकवृत्तय प्राय सुशीला सुव्रता सुप्रत्यानदा साधवोभवतीति । त थैकस्मात् स्थूलात्सकल्पकृतात् प्रतिनिवृत्ताएकस्माच्च सूक्ष्मादारभजादप्रतिनिवृत्ताएव शे पाण्यपि व्रतानि सयोज्यानि । एतस्मादपि सामान्येन निवृत्ताइत्यतिदिशन्नाह । (जेयाव न्नेइत्यादि) । ये चान्ये सावद्यानरकादिगमनहेतव कर्मसमारभास्तेभ्यएकस्माद्यत्रपी डननिर्लाछनरूपीवलादेर्निवृत्ताएकस्माच्च क्रयविक्रयादेरनिवृत्ताइति ॥ ३५ ॥

से जहा णामएसमणोवासगा भवति अभिगयजीवाजीवा उवलद्धपुण्णपा वा आसवसंवरवेयणाणिज्जरा किरियाहिगरणबंधमोक्खकुसला असहे ज्ज देवासुरनागसुवन्नजक्खरक्खसकिन्नरकिंपुरिसगरुलगंधव्वमहोरगा इए हिं देवगणेहिं निग्गंथाउ पावयणाउ अणइक्कमणिज्जा इणमे निग्गंथे पा वयणे णिस्संकिया णिक्कंखिया निव्वितिगिच्छा लद्धठा गहीयठा पुच्छियठा विणिच्छियठा अभिगयठा अठिमिंजपेम्माणुरागरत्ता अयमाउसो नि ग्गंथे पावयणे अयं परमठे सेसे अणठे उसियफलिहा अवंगुयदुवा रा अचियत्त तेउरपरघरपवेसा चाउद्दसठमुद्दिठपुण्णिमासिणीसुपडिपुन्न पोसहं सम्मं अणुपालेमाणा समणे निग्गंथे फासुए सणिज्जेणं असणं पाणखाइमसाइमेणं वत्थपडिग्गहकंबलपायपुंछणेणं उसहभेसज्जेणं पी ठफलगसेज्जासंथारएणं पडिलाभेमाणा बहूहिं सीलव्वयगुणवेरमणपच्च क्खाणपोसहोववासेहिं अहापरिग्गहिएहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमा णा विहरंति ॥७६॥ तेणं एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणा बहुइं वासाइं समणोवासगपरियागं पाउणंति पाउणंतित्ता आबाहंसि उप्पन्नंसिवा अ णुप्पन्नंसिवा बहुइं भत्ताइं अणसणाए पच्चक्खाए बहुइं भत्ताइं अणसणाए पच्चक्खाएत्ता बहुइं भत्ताइं अणसणाए छेदेइ बहुइं भत्ताइं अणासणाए छेदेइत्ता आलोइयपडिक्कंता समाहिपत्ता कालमासे कालं किच्चा अन्न यरेसु देवलोएसु देवताए उववत्तारोभवंति तंजहा महड्डिएसु महज्जु इएसु जाव महासुखेसु सेसं तहेव जाव एसठाणे आयरिए जाव एग तसम्मे साहू तच्चस्स ठाणस्स मिस्सगस्स विभंगेएवं आहिए ॥ ७७ ॥

अर्थ–वली विशेष कहियेछेयें ते यथा दृष्टांते नाम एवी संभावनायें जेम कोइ एक उत्तम पुरुष, विशिष्ट उपदेश सांभलवाथकी अर्थें (समणोवासगाभवंति के०) श्रमणो पासकनो धर्म सेवन करे, ते श्रमणोपासक विशेषत धर्मना करनार जाणवा, ते श्रम णोपासकना लक्षण कहेछे (अभिगय के०) अभिगत एटले ओलख्याछे जाण्याछे (जी वाजीवा के० जीव ते चेतन लक्षण रूप, अने अजीव जे चेतनरहित, एहने जीवा जीवना ओलखनार, तथा (उवलद्धपुण्णपावा के०) शुभ प्रकृतिरूपजे पुण्य, अने अशु

ज प्रकृतिरूपजे पाप, तेना स्वरूपने उपलब्ध एटले पाम्याछे, तथा (आसव के०) आश्रव ते शुभाशुभकर्मनु आववु, अने (सवर के०) सवर ते आवता कर्मनुं रोकवुं सवरवु, तथा (वेयणा के०) वेदना ते साता असातारुप बे प्रकारनी, (णिज्जराके०) निर्ज्जराते कर्मनु खपाववु, (किरियाहिगरण के०) क्रियाअधिकरण एटले घर, हाट, खक्र, कटारी, उखल, मुसल थकी कर्म बंधाय ते, (बधके०) बध चार प्रकारना तथा (मोरककके०) कर्म थकी मूकाववु ते जाणवाने विषे (कुसला के०) माह्याछे, (अस हेज्ज के०) कोइ कष्ट पडया थकी देवादिकनी सहायतानी वाछा न करे सहायरहित धर्मना करनार होय (देवासुरनागसुवन्नजरकररकसकिंन्नरकिंपुरिसगरुलगधवमहोरगाइए हिके०) तथा देव एटले वैमानिक देवो, असुर एटले असुर कुमार नवनवासी देवो, नाग कुमार, सुवर्ण कुमार, यक्ष, राक्षस, किन्नर, किंपुरिस, अश्वमुख गरुड, गधर्व, म होरगादिक, (देवगणेहि के०) इत्यादिक देवताना समूह ते, (निग्गथाउपावयणाउ के०) निग्रथना एटले भगवतना प्रवचन थकी तेने (अणइक्कमणिज्जा के०) च लावी नशके, मोलवी नशके (इणमेनिग्गथेपावयणेणिस्सकिया के०) तथा ए निग्रथना प्रवचनने विषे नि शकित एटले सदेहरहित होय, एटले जे श्रीवीतराग बोल्या तेज सत्य छे एम जाणे (णिक्कखियाके०) सूत्र छोडी बीजु शास्त्र वांछे नही, (निव्वितिगिच्छा के०) धर्मना फलने विषे सदेहरहित होय, तथा सूत्रोक्त साधुना मार्गने विषे डुगछारहित होय, (लद्धटा के०) सूत्रसाभलवा थकी लाधाछे सूत्रना अर्थ जेने,(गहीयट्ठा के०) धारणाये करी ग्रह्याछे अर्थ जेणे, (पुच्छियट्ठा के०) सशय उत्पन्न थया थकी पूछीने खरा कर्याछे अर्थ जेणे, (विणिच्छियट्ठा के०) वारवार विशेषे पूछीने निश्चित कर्याछे अर्थ जेणे, (अभिगयट्ठा के०) प्राप्त थयेला अर्थने पूछ्या पछी, निर्णय करी धार्याछे अर्थ जेणे, एटले प्रकारे तत्वार्थना जाण, (अट्ठिमिजपेम्मा णुरागरत्ता के०) अस्थि अने हाड मांहेली मिजा जे धातु विशेष ते भगवतना सिद्धां तरूप कसुबादिकने विषे प्रेमरूप रागे करी रगाणाछे एटले रागरक्तछे, तथा पांच मांहे मल्या थका एवी धर्मनी कथा कहे के, (अयमाउसो के०) अहो आयुष्मतो' (निग्ग थेपावयणेके०) निग्रथ एटले साधु सबधि जे प्रवचनसिद्धात छे (अयपरमट्ठेके०) एज आत्माने अर्थे उत्कृष्ट मोक्ष साधन रूप मार्गछे (सेसेअणट्ठे के०) अने शेष बीजा कपिलादिकना ग्रथ, तथा धनधान्यादिक पुत्रकलत्रादिक ए सहु अनर्थ कारीछे, ए सर्व असार एवोजे आ ससार तेनी वृद्धिना कारण रूपछे एवी कथा करे, एरीतें निग्रथना प्रवचनने विषे रागीछे, (उसियफलिहा के०) निर्मल स्फाटिकना जेवु चित्तछे जेनु, (अवगुयदुवारा के०) जेना घरना बारणा भोगल रहित एटले सर्व काल उघाडां छे,

(अचियत्ततेउरपरघरपवेसा के०) राजाना अंत पुरनी पेठें लोकना घरने विषे प्रवेश करवानो जेणे त्याग कस्योछे, अथवा अप्रीतिकारि छे परदर्शनादिकना घरने विषे प्रवेश जेनो, एतावता परतीर्थिकने पर घर जाणीने, घणा मजबूत कारणो विना, तेमने घरे न जाय, तथा (चाउद्दसट्ठमुद्दिट्ठ के०) चतुर्दशी, अष्टमी, अने उद्दिष्टा एटले महाकल्याणिक तिथि (पुण्णिमासिणीसु के०) पूर्णिमा चतुर्मासिक तिथि, एटला दिवसोने विषे (पडिपुन्नपोसहंसम्मंअणुपालेमाणा के०) प्रतिपूर्ण पोसहने सम्यक् प्रकारें पालता थका विचरेछे वली ते श्रावक कहेवाछे तोके, (समणेनिग्गंथे के०) श्रमण तपस्वी निग्रंथने (फासुएसणिज्जेण के०) प्राशुक एटले निर्जीव एषणीक, एटले बहेंतालीश दोषरहित एवो (असणपाणखाइमसाइमेण के०) अशन, पान, खादिम स्वादिम, (वत्थपडिग्गहकंबलपायपुंछणेण के०) तथा वस्त्र, पात्र, कंबल, पायपुंछण, (उसहभेसज्जेणके०) औषध, भैषज्य, (पीढफलगसेज्जासंथारएणपडिलाभेमाणा के०) पीठ, फलक, शय्या, संथारो तेणेकरी प्रतिलाभता थका, (बहुहिंसीलव्वयगुणवेरमणपच्चरकाणपोसहोववासेहिं के०) घणां एक शीलव्रत तथा शीलते शुभाचार, तथा स्थूल प्राणातिपात, वेरमणादिक गुण व्रत ते देशव्रतादिक योग्य पणे लीधेला, तथा नवकारसी पोरसी प्रमुख पच्चरकाणना करनार, तथा पौषध सहित उपवासना करनार, (अहापरिग्गहिएहिं के०) तथा यथा परिग्रहित एटले पोतानी इच्छा माफक आदस्याछे जेणे, ते शु आदस्याछे? तोके (तवोकम्मेहिं के०) तप कर्म, तेणे करी, (अप्पाणंभावेमाणाविहरंति के०) पोताना आत्मानें भावता थका विचरेछे ॥७८॥ (तेणंएयारूवेणविहारेणविहरमाणा के०) ते एतद्रूप पणे एटले एवा पूर्वोक्त श्रावकने आचारें प्रवर्त्तता थका, (बहुइंवासाइं के०) घणा वर्ष सुधी (समणोवासगपरियाग के०) श्रमणोपासकना पर्यायने (पाउणंति के०) पाले, (पाउणित्ताके०) पालीने (आबाहंसिउप्पन्नंसिवा के०) रोगादिक आबाधा उपनी, (अणुप्पन्नंसिवा के०) अथवा अनुत्पन्न एटले नउपनी छते (बहुइंभत्ताइं के०) घणा भात पाणीनो (अणसणाएपच्चरकाए के०) अनशनपच्चरके (पच्चरकाएत्ता के०) एम घणा भक्त पाननो अनशन पच्चखिने (बहुइंभत्ताइंअणसणाछेदइ के०) ते अनशनने विषे घणा भक्त पानने छेदे, एटले परिहरे (छेदेइत्ता के०) छेदी एटले परिहरीने, घणादिवस अनशन पालीने (आलोइयपडिकंता के०) आलोचे पडिकमे एटले जे पाप लागां होय, ते अरिहंतादिक आगल प्रकाशीने तेनां मिथ्या डुष्कृतादिक आपीने (समाहिपत्ता के०) ज्ञानादिकनी निर्व्याघात पणे समाधि पामिने एटले पडिकमीने समाधि प्राप्त थइने, मरणना अवसरें काल करीने एटले समाधि मरण करीने अनेरा देवलोकने विषे देवता पणे उपजनार थाय ते कहेछे, महाटी ऋद्धिछे वमानिकादिकनी तेने विषे, महो

न प्रकृतिरूपजे पाप, तेना स्वरूपने उपलब्ध एटले पाम्याछे, तथा (आसव के०) आश्रव ते शुनाशुनकर्मनुं आववुं, अने (संवर के०) संवर ते आवता कर्मनुं रोकवुं संवरवुं, तथा (वेयणा के०) वेदना ते साता असातारूप बे प्रकारनी, (णिज्जराके०) निर्ज्जराते कर्मनुं खपाववुं, (किरियाहिगरण के०) क्रियाअधिकरण एटले घर, हाट, खड्ग, कटारी, उखल, मुसल थकी कर्म बंधाय ते, (बंधके०) बंध चार प्रकारना तथा (मोक्खके०) कर्म थकी मूकावबुं ते जाणवाने विषे (कुसला के०) माह्याछे, (असहेज्ज के०) कोइ कष्ट पड्या थकी देवादिकनी सहायतानी वांछा न करे सहायरहित धर्मना करनार होय (देवासुरनागसुवन्नजक्खरक्खसकिंनरकिंपुरिसगरुलगंधव्वमहोरगाइए हिंके०) तथा देव एटले वैमानिक देवो, असुर एटले असुर कुमार नवनवासी देवो, नाग कुमार, सुवर्ण कुमार, यक्ष, राक्षस, किन्नर, किंपुरिस, अश्वमुख गरुड, गंधर्व, महोरगादिक, (देवगणेहिं के०) इत्यादिक देवताना समूह ते, (निग्गंथाउपावयणाउ के०) निग्रंथना एटले नगवतना प्रवचन थकी तेने (अणइक्कमणिज्जा के०) चलावी नशके, नोलवी नशके (इणमेनिग्गंथेपावयणेणिस्संकिया के०) तथा ए निग्रंथना प्रवचनने विषे निःशंकित एटले संदेहरहित होय, एटले जे श्रीवीतराग बोल्या तेज सत्य छे एम जाणे (णिक्कंखियाके०) सूत्र छोडी बीजुं शास्त्र वांछे नहीं, (निव्वितिगिछा के०) धर्मना फलने विषे संदेहरहित होय, तथा सूत्रोक्त साधुना मार्गने विषे डुगंछारहित होय, (लद्धहा के०) सूत्रसांनलवा थकी लाधाछे सूत्रना अर्थ जेने, (गहीयठा के०) धारणाये करी ग्रह्याछे अर्थ जेणे, (पुछियठा के०) संशय उत्पन्न थया थकी पूछीने खरा कर्याछे अर्थ जेणे, (विणिछियठा के०) वारवार विशेषे पूछीने निश्चित कर्याछे अर्थ जेणे, (अनिगयठा के०) प्राप्त थयेला अर्थने पूछ्या पछी, निर्णय करी धार्याछे अर्थ जेणे, एटले प्रकारे तत्वार्थना जाण, (अठिमिंजपेम्माणुरागरत्ता के०) अस्थि अने हाड मांहेली मिंजा जे धातु विशेष ते नगवतना सिद्धांतरूप कसुंबादिकने विषे प्रेमरूप रागे करी रंगाणाछे एटले रागरक्तछे, तथा पांच माहे मल्या थका एवी धर्मनी कथा कहे के, (अयमाउसो के०) अहो आयुष्मंतो! (निग्गंथेपावयणेके०) निग्रंथ एटले साधु संबंधि जे प्रवचनसिद्धांत छे (अयपरमठेके०) एज आत्माने अर्थे उत्कृष्ट मोक्ष साधन रूप मार्गछे (सेसेअणठे के०) अने शेष बीजा कपिलादिकना ग्रंथ, तथा धनधान्यादिक पुत्रकलत्रादिक ए सहु अनर्थ कारीछे, ए सर्व असार एवोजे आ संसार तेनी वृद्धिना कारण रूपछे एवी कथा करे, एरीतें निग्रंथना प्रवचनने विषे रागीछे, (उसियफलिहा के०) निर्मल स्फाटिकना जेवुं चित्तछे जेनुं, (अवगुयडुवारा के०) जेना घरना बारणा नोगल रहित एटले सर्व काल उघाडां छे,

(अचियत्ततेउरपरघरपवेसा के०) राजाना अंत पुरनी पेठें लोकना घरने विषे प्रवेश करवानो जेणे त्याग कस्योछे, अथवा अप्रीतिकारि छे परदर्शनादिकना घरने विषे प्रवेश जेनो, एतावता परतीर्थिकने पर घर जाणीने, घणा मजबूत कारणो विना, तेमने घरे न जाय, तथा (चाउद्दसठमुद्दिठ के०) चतुर्दशी, अष्टमी, अने उद्दिष्टा एटले महाकल्याणिक तिथि (पुण्णिमासिणीसु के०) पूर्णिमा चतुर्मासिक तिथि, एटला दिवसोने विषे (पडिपुन्नपोसहसम्मअणुपालेमाणा के०) प्रतिपूर्ण पोसहने सम्यक् प्रकारें पालता थका विचरेछे वली ते श्रावक कहेवाछे तोके, (समणेनिग्गथे के०) श्रमण तपस्वी निग्रथने (फासुएसणिज्जेण के०) प्रासुक एटले निर्जीव एषणीक, एटले बेहेतालीश दोरहित एवो (असणपाणखाइमसाइमेण के०) अशन, पान, खादिम स्वादिम, (वत्थपडिग्गहकवलपायपुच्छणेण के०) तथा वस्त्र, पात्र, कबल, पायपुछण, (उसहभेसज्जेणके०) औषध, भैषज्य, (पीठफलगसेज्जासथारएणपडिलाभेमाणा के०) पीठ, फलक, शय्या, संथारो तेणेकरी प्रतिलाभता थका, (बहुहिंसीलवयगुणवेरमणपच्चरकाणपोसहोववासेहि के०) घणां एक शीलव्रत तथा शीलते शुभाचार, तथा स्थूल प्राणातिपात, वेरमणादिक गुण व्रत ते देशव्रतादिक योग्य पणे लीधेला, तथा नवकारसी पोरसी प्रमुख पच्चरकाणना करनार, तथा पौषध सहित उपवासना करनार, (अहापरिग्गहिएहि के०) तथा यथा परिग्रहित एटले पोतानी इछा माफक आदस्याछे जेणे, ते शु आदस्याछे? तोके (तवोकम्मेहि के०) तप कर्म, तेणे करी, (अप्पाणभावेमाणाविहरति के०) पोताना आत्मानें भावता थका विचरेछे ॥७६॥ (तेणएयारूवेणविहारेणविहरमाणा के०) ते एतद्रूप पणे एटले एवा पूर्वोक्त श्रावकने आचारें प्रवर्त्तता थका, (बहुइवासाइ के०) घणा वर्ष सुधी (समणोवासगपरियाग के०) श्रमणोपासकना पर्यायने (पाउणति के०) पाले, (पाउणतित्ताके०) पालीने (आबाहसिउप्पन्नसिवा के०) रोगादिक आबाधा उपनी, (अणुप्पन्नसिवा के०) अथवा अनुत्पन्न एटले नउपनी छते (बहुइभत्ताइ के०) घणा भात पाणीनो (अणसणाएपच्चरकाए के०) अनशनपच्चरके (पच्चरकाएत्ता के०) एम घणा भक्त पाननो अनशन पच्चरकिने (बहुइभत्ताइअणसणाछेदइ के०) ते अनशनने विषे घणा भक्त पानने छेदे, एटले परिहरे (छेदेइत्ता के०) छेदी एटले परिहरीने, घणादिवस अनशन पालीने (आलोइयपडिक्कता के०) आलोचे पडिकमे एटले जे पाप लागा होय, ते अरिहतादिक आगल प्रकाशीने तेनां मिथ्या दुष्कृतादिक आपीने (समाहिपत्ता के०) ज्ञानादिकनी निर्व्याघात पणे समाधि पामिने एटले पडिकमीने समाधि प्राप्त थइने, मरणना अवसरें काल करीने एटले समाधि मरण करीने अनेरा देवलोकने विषे देवता पणे उपजनार थाय ते कहेछे, महोटी इध्दिने वमानिकादिकनी तेने विषे, महो

दा द्युतिने विषे, यावत् घणा सुख तेने विषे, इत्यादिक शेष बोल पूर्ववत् एटले तेमज जाणवा ज्यांसुधी एवु स्थानक आर्य एटले धर्मपक्ष साधुनु कह्यु यावत् एकांत सम्यक्त्व मार्गे साधु त्यांसुधीनो आलावो बधो केवो. ए त्रीजु स्थानक जे मिश्रपक्ष तेनुं विचार स्वरूप कह्यु एटले धर्म पक्ष, अधर्मपक्ष, अने मिश्रपक्ष, ए त्रणे पक्ष कह्या ॥ ३६ ॥

॥ दीपिका–तान् विशेषतआह । (सेजहत्ति) तद्यथा श्रमणोपासकाअधिगतजीवा जीवाउपलब्धपुण्यपापा । इह प्राय सूत्रादर्शेषु नानाविधानि सूत्राणि दृश्यंते । टीकानुगत सूत्र तु प्रायोन दृश्यते । परं इममेवादर्शमंगीकृत्य मया विवरण क्रियते इति सूत्रात रविसंवाददर्शनान्न व्यामोहोविधेयइति । तेच श्रावकाआश्रवसंवरवेदनानिर्जराक्रियाधिकरणबंधमोक्षकुशला (असहेज्जत्ति) असहायाअपि देवासुरादिनिर्नैर्ग्रंथात्प्रवचनमतादनतिक्रमणीयाअकंपनीया (इणमेत्ति) अस्मिन्नेव नैर्ग्रंथे प्रवचने नि शंकितानि कांक्षानिर्विचिकित्सालब्धार्थागृहीतार्थाविनिश्चितार्थाअधिगतार्था (अस्थिमिजा) अस्थिमध्य यावत्प्रेमानुरागरक्ता दर्शनेत्यर्त भावितमतयइत्यर्थ । अत्रार्थे कथानक । राजगृहे कश्चित्परिव्राजकोविद्यासिद्धोयाया स्त्रिय रम्या पश्यति तातामपहरति ततोलोकैर्नृपाय विज्ञप्त राज्ञोक्त गच्छत स्वस्थान यूय सुख तिष्ठत अह तं दुरात्मान यदि पचपैर्दिनैर्नलभे त दा वन्हौ प्रविशामि । गतानागरिका स्थान राज्ञा आरक्षकास्तदन्वेषणाय नियुक्ता स्वयं च खड्गपाणिर्भ्रमति नृप । नचोपलभ्यते चौरस्तत पचमदिने तांबूलपुष्पादि गृह्णन् रात्रौ नृपेण दृष्ट परिव्राट् तत्पृष्ठगामिना राज्ञा नगरोद्यानवृक्षकोटरप्रवेशेन गुहाभ्यंतरे प्रविश्य हत स । तत समर्पितं यद्धन यस्य सत्क स्त्रियोपि। तत्रैका कामिनी अत्यंतमोपर्धनर्भावितानेच्छति स्वपतिमपि तत प्राज्ञैरुक्त अस्याश्चौरास्थीनि दुग्धेन सह संघृष्य, यदि दीयते तदासौ तदाग्रह मुंचति तत स्वजनैरेव कृतं । यथायथा चासौ तदस्थीनि भक्षयति तथा स्नेहोयाति सर्वास्थिपाने च गत सर्वोपि चौरस्नेह अनुरक्तानूज्ञिजे भर्तरि। तदेव यथा सात्यत भाविता नेच्छत्यपर तथा श्रावकाअपि नितरा भाविता शासने नशक्यतेऽन्यथाकर्तु अत्यंत सम्यक्त्वौपधभावितत्वादिति । श्रावका किंभूता । (अयमाउसोत्ति) इदमायुष्मन् जैन शासन अर्थस्तत्त्वभूत अयमेव परमार्थ शेषोऽनर्थइति चिंतयत । तथा चतुर्दश्यष्टम्यादिषु प्रतिपूर्ण पोषध सम्यक्त्वमनुपालयत (उसियफलिहत्ति) उच्छ्रितानि स्फाटिकानि चित्तानि येषांते तथा वर्धमानपरिणामाइत्यर्थ । (अवगुयदुवारत्ति) अप्रावृतानि द्वाराणि येषांते तथा सन्मार्गलाभान्नकुतोपि भय कुर्वतीत्युद्घाटित द्वारा (अचियत्तत्ति) अचियत्तोऽनभिमतोऽत पुरप्रवेशवत्परगृहप्रवेशोयेषांते तथा श्रमणान्निग्रंथान् प्रासुकेनैषणीयेन अशनादिना वस्त्रप्रतिग्रहकंबलपादपुछनेन औषधभेषजे

न पीठफलकशय्यासंस्तारकेण प्रतिलाजयंतोबहूनि । शीलव्रतगुणविरमणप्रत्याख्यानपौष धोपवासैर्यथा परिगृहीतैस्तपः कर्मेनिरात्मानं जावयतस्तिष्ठति ॥७६॥ (तेणंति) ते श्रमणोपा सकाएतद्रूपेण विहारेण विहरमाणाबहूनि वर्षाणि श्रमणोपासक पर्याय प्रपाट्य रोगात के समुत्पन्नेऽनुत्पन्ने वा जक्त प्रत्याख्याय स्वायु क्षये देवेपूत्पद्यते ततोपि च्युता सुमानुप जव प्राप्य तेनैव जवेनोत्कृष्टत सप्तसु अष्टसु वा जवेषु सिध्यंति । तदेव स्थानमार्यं तृ तीयस्य स्थानस्यार्यं विजंगोविचारआख्यात ॥ ७७ ॥

॥ टीका–ताश्च विशेषतोदर्शयितुमाह (सेजहेत्यादि) विशिष्टोपदेशार्थं श्रमणानुपास ते सेवतइति श्रमणोपासकास्तेच श्रमणोपासनतोऽधिगतजीवाजीवस्वजावास्तथोपलब्धपु एयपापा । इह च प्रायः सूत्रादर्शेषु नानाविधानि सूत्राणि दृश्यते न टीकासंवाद्येकोप्यस्मा भिरादर्शः समुपलब्धोतएकमादर्शमंगीकृत्यास्माभिर्विवरणं क्रियते इत्येतदवगम्य सूत्रवि सवाददर्शनाच्चित्तव्यामोहोविधेयइति । ते श्रावकाः परिज्ञातबंधमोक्षस्वरूपाः सतोन धर्मा च्चाल्यते मेरुरिव निष्प्रकंपाहढमार्हते दर्शनेऽनुरक्ताः । अत्र चार्थे सुखप्रतिपत्त्यर्थं दृष्टांत नूतं कथानकं । तच्चेदं । तद्यथा राजगृहे नगरे कश्चिदेकः परिव्राट् विद्यामंत्रौषधिलब्ध सामर्थ्यः परिवसति सच विद्याविलेन पत्तने पर्यटन् यां यामभिरूपतरामंगनां पश्यति तां तामपहरति ततः सर्वैनागरैराज्ञे निवेदितं । यथा देव! प्रत्यहं पत्तनं मुष्यते केनापि नीयते सर्वसारमंगनाजनोपि यस्तस्यानिमितं सोऽत्र केवलमास्ते । तदेव क्रियतां प्रसादस्तदन्वे षणेनेति । राज्ञाभिहितं गछत यूयं विश्रब्धाजवतावश्यमहं तं डुरात्मानं लप्स्ये । किंचय दि पंचपैरहोभिर्न लजे चौरं विमर्षयुक्तोपि च त्वद्याम्यात्मानमहं ज्वालामालाकुले वन्हौ तदेव कृतप्रतिज्ञं राजानं प्रणम्य निर्गतानागरिकाः । राज्ञा च सविशेषं नियुक्ताथारक्षकाः । आत्मनाप्येकाकी खड्गखेटकसमेतोन्वेष्टुमारब्धोन चोपलज्यते चौरस्ततोराज्ञा निपुणतरम न्वेषता पंचमेऽहनि जोजनतांबूलगंधमाल्यादिकं गृह्णन् रात्रौ सतोनिर्गतेनोपलब्ध सपरिव्राट् तत्पृष्ठगामिना नगरोद्यानवृक्षकोटरप्रवेशेन गुहाभ्यंतरं प्रविश्य व्यापादितस्त दनंतरं समर्पितं यद्यस्य सत्कमंगनाजनोपीति । तत्र चैका सीमंतिनी अत्यंतमौषधिना विता नेछत्यात्मीयमपि जर्तारं ततस्तद्भिर्निरभिहितं यथाऽस्याः परिव्राट्सकाश्यस्थीनि डुग्धेन सह संघृष्य यदि दीयते तदेयं तदाग्रहं मुंचति ततस्तत्स्वजनैरेवमेव कृतं यथा यथा चासौ तदस्थ्यन्यवहारं विधत्ते तथातथा तत्स्नेहानुबंधोऽपैति सर्वास्थिपाने चापगत प्रेमानुबंधस्तदनुरक्ता निजे जर्तरि । तदेव यासावल्पत तेन परिव्राजा नेछत्यपरमेव श्रावक जनोपीति नितरां जावितात्मा मौनींद्रशासने न शक्यते अन्यथाकर्तुमल्पत सम्यक्त्वौषधे न वासितत्वादिति । पुनरपि श्रावकान् विशिनष्टि (जावतियफलिहाइत्यादि) नृता

टा द्युतिने विषे, यावत् घणा सुख तेने विषे, इत्यादिक शेष बोल पूर्ववत् एटले तेमज जाणवा ज्यांसुधी एवु स्थानक आर्य एटले धर्मपक्ष साधुनु कह्यु यावत् एकांत सम्यक्त्व मार्गे साधु त्यांसुधीनो आलावो बधो केवो, ए त्रीजुं स्थानक जे मिश्रपक्ष तेनुं विचार सरूप कह्यु एटले धर्म पक्ष, अधर्मपक्ष, अने मिश्रपक्ष, ए त्रणे पक्ष कह्या ॥ १४ ॥

॥ दीपिका–तान् विशेषतआह । (सेजहत्ति) तद्यथा श्रमणोपासकाअधिगतजीवाजीवाउपलब्धपुण्यपापा । इह प्राय सूत्रादर्शेषु नानाविधानि सूत्राणि दृश्यंते । टीकानुगत सूत्र तु प्रायोन दृश्यते । परं इममेवादर्शमंगीकृत्य मया विवरण क्रियते इति सूत्रांतरविसवाददर्शनान्न व्यामोहोविधेयइति । तेच श्रावकाआश्रवसंवरवेदनानिर्जराक्रियाधिकरणबंधमोक्षकुशला (असहेज्जत्ति) असहायाअपि देवासुरादिभिर्नैर्ग्रंथात्प्रवचनमतादनतिक्रमणीयाअकंपनीया (इणमेत्ति) अस्मिन्नेव नैर्ग्रंथे प्रवचने निःशंकितानि कांक्षानिर्विचिकित्सालब्धार्थागृहीतार्थाविनिश्चितार्थाअधिगतार्थां (अस्थिमिंजा) अस्थिमध्य यावत्प्रेमानुरागरक्ता दर्शनेत्यर्तं भावितमतयइत्यर्थ । अत्रार्थे कथानक । राजगृहे कश्चित्परिव्राजकोविद्यासिध्धोयाया स्त्रियं रम्यां पश्यति तातामपहरति ततोलोकैर्नृपाय विज्ञप्त राज्ञोक्त गच्छत स्वस्थानं यूयं सुखं तिष्ठत अह त दुरात्मानं यदि पंचभिर्दिनैर्नलभे त दा वन्हौ प्रविशामि । गतानागरिका स्थान राज्ञा आरक्षकास्तदन्वेषणाय नियुक्ता स्वयं च खड्गपाणिर्भ्रमति नृप । नचोपलभ्यते चौरस्तत पंचमदिने तांबूलपुष्पादि गृह्णन् रात्रौ नृपेण दृष्ट परिव्राट् तत्पृष्ठगामिना राज्ञा नगरोद्यानवृक्षकोटरप्रवेशेन गुहाभ्यंतरे प्रविश्य हत स । तत समर्पितं यद्धन यस्य सत्क स्त्रियोपि। तत्रैका कामिनी अत्यंतमोपधैर्भाविताने्च्छति स्वपतिमपि तत प्राज्ञैरुक्त अस्याश्चौरास्थीनि दुग्धेन सह संघृष्य यदि दीयते तदासौ तदाग्रह मुंचति तत स्वजनैरेव कृतं । यथायथा चासौ तदस्थीनि जक्षयति तथा स्नेहोयाति सर्वास्थिपाने च गत सर्वोपि चौरस्नेह अनुरक्ताभून्निजे भर्तरि। तदेव यथा सात्यंत भाविता नेच्छत्यपर तथा श्रावकाअपि नितरा भाविता शासने नशक्यतेऽन्यथाकर्तुं अत्यंत सम्यक्त्वौपधभावितत्वादिति । श्रावका किंभूता । (अयमाउसोत्ति) इदमायुष्मन् जैन शासन अर्थस्तत्त्वभूत अयमेव परमार्थ शेषोऽनर्थइति चिंतयत । तथा चतुर्दश्यष्टम्यादिषु प्रतिपूर्णं पोषध सम्यक्त्वमनुपालयत (उसियफलिहत्ति) उछ्रितानि स्फाटिकानि चित्तानि येषांते तथा वर्धमानपरिणामाइत्यर्थं । (अवगुयदुवारत्ति) अप्रावृतानि द्वाराणि येषांते तथा सन्मार्गलाभान्नकुतोपि भयं कुर्वतीत्युद्घाटितद्वारा (अचियत्तत्ति) अचियत्तोऽनभिमतोऽत पुरप्रवेशवत्परगृहप्रवेशोयेषांते तथा श्रमणान्निग्रथान् प्रासुकेनैषणीयेन अशनादिना वस्त्रप्रतिग्रहकंबलपादपुंछनेन औषधभेषजे

न पीवफलकशय्यासंस्तारकेण प्रतिलाजयतोवहूनि । शीलव्रतगुणविरमणप्रत्याख्यानपोष धोपवासैर्यथा परिगृहीतैस्तप कर्मेनिरात्मान जावयतस्तिष्ठति ॥१६॥ (तेणति) ते श्रमणोपा सकाएतद्रूपेण विहारेण विहरमाणावहूनि वर्षाणि श्रमणोपासक पर्याय प्रपाल्य रोगात के समुत्पन्नेऽनुत्पन्ने वा नक्तप्रत्याख्याय स्वायु क्षये देवेपूत्पद्यते ततोपि च्युता सुमानुष नव प्राप्य तेनैव नवेनोल्कृष्टत सप्तसु अष्टसु वा नवेषु सिध्यति । तदेव स्थानमार्य तृ तीयस्य स्थानस्याय विनगोविचारआख्यात ॥ १७ ॥

॥ टीका–ताश्च विशेषतोदर्शयितुमाह (सेजहेत्यादि) विशिष्टोपदेशार्थं श्रमणानुपास ते सेवतइति श्रमणोपासकास्तेच श्रमणोपालनतोऽनिगतजीवाजीवस्वनावास्तथोपलब्धपु ण्यपापा । इह च प्राय सूत्रादर्शेषु नानाविधानि सूत्राणि दृश्यते न टीकासंवादेकोप्यस्मा निरादर्शी समुपलब्धोतएकमादर्शमगीकृत्यास्माभिर्विवरण क्रियते इत्येतदवगम्य सूत्रवि सवाददर्शनाच्चित्तव्यामोहोविधेयइति । ते श्रावका परिज्ञातवधमोक्षस्वरूपा सतोन धर्मा च्याव्यते मेरुरिव निष्प्रकपादृढमार्हते दर्शनेऽनुरक्ता । अत्र चार्थे सुखप्रतिपत्त्यर्थं दृष्टांत नूतं कथानक । तच्चेद । तद्यथा राजगृहे नगरे कश्चिदेक परिव्राट् विद्यामत्रौषधिलब्ध सामर्थ्य परिवसति सच विद्याविवलेन पत्तने पर्यटन् या यामनिरूपतरामगना पश्यति तां तामपहरति तत सर्वनागरैराज्ञे निवेदितं । यथा देवा प्रत्यह पत्तन मुष्यते केनापि नीयते सर्वसारमगनाजनोपि यस्तत्स्थाननिमत सोऽत्र केवलमास्ते । तदेव क्रियतां प्रसादस्तदन्वे षणेनेति । राज्ञानिहितं गच्चत यूय विश्रब्धाजवतावश्यमह त डुरात्मान लप्स्ये । किंचय दि पचपैरहोनिर्न लने चौर विमर्पयुक्तोपि च त्यक्ष्याम्यात्मानमह ज्वालामालाकुले वन्हौ तदेव कृतप्रतिज्ञ राजान प्रणम्य निर्गतानागरिका । राज्ञा च सविशेष नियुक्तायारक्षका । आत्मनाप्येकाकी खड्गखेटकसमेतोन्वेष्टुमारब्धोन चोपलभ्यते चौरस्ततोराज्ञा निपुणतरम न्वेषता पचमेऽहनि जोजनतांबूलगधमाद्यादिक गृह्णन् रात्रौ स्वतोनिर्गतेनोपलब्ध सपरिव्राट् तत्पृष्ठगामिना नगरोद्यानवृक्षकोटरप्रवेशेन गुहाभ्यतर प्रविश्य व्यापादितस्त दनतर समर्पितं यद्यस्य सत्कमगनाजनोपीति । तत्र चैका सीमंतिनी अत्यतर्मांपविना विता नेच्छत्यात्मीयमपि नर्तारं ततस्तद्भिरनिहितं यथाऽस्या परिव्राट्सत्कान्यस्थीनि डुग्धेन सह सघृष्य यदि दीयते तदेयं तदाग्रह मुचति ततस्तत्सर्जनैरेवमेव कृतं यथा यथा चासौ तदस्थ्यन्यवहारं पिधत्ते तथातथा तत्स्नेहानुबधाऽपैति सर्वास्थिपाने चापगत प्रेमानुबधस्तदनुरक्ता निजे नर्तरि । तदेव यासावत्पतं तेन परिव्राजा नेच्छत्यपरमेव श्रावक जनोपीति नितरा नावितात्मा मौनींद्रशासने न शक्यते अन्यथाकर्तुमत्यत सम्यक्त्वौपधे न वासितत्वादिति । पुनरपि श्रावकान् विशिनष्टि (जावत्तियफलिहाइत्यादि) उच्छ्रिता

नि स्फाटिकानीव स्फाटिकानि अंत करणानि येषांते तथा । एतदुक्तं नवति । मौनींद्र दर्शनावाप्तौ सत्यां परितुष्टमानसाइति । तथा अप्रावृतानि द्वाराणि येस्ते तथा उद्घाटित गृहद्वारास्तिष्ठति सद्दर्शनलाजेन न कस्यचिद्बिन्यति शोजनमार्गपरिग्रहे नोद्घाटितशिरसो विश्रब्ध तिष्ठतीति अचिंतयन्तोऽननिमतोऽंत पुरप्रवेशवत्परगृहद्वारप्रवेशोऽन्यतीर्थिकप्र वेशोयेषा ते तथा अनवरतं श्रमणानुयुक्तविहारिणोनिग्रथान् प्रासुकेनैषणीयेनाशनादिना तथा पीठफलकशय्यासंस्तारकादिनाच प्रतिलाजयंतस्तथा बहूनि वर्षाणि शीलव्रतगुणव्रत प्रत्याख्यानपोषधोपवासैरात्मान नावयंतस्तिष्ठति॥७६॥ तदेव ते परमश्रावका प्रजूतकाल मणुव्रतशिक्षाव्रतानुष्ठायिन साधूनामौषधवस्त्रपात्रादिनोपकारिण सतोयथोक्तं यथाशक्ति सदनुष्ठान विधायोत्पन्ने वा कारणेऽनुत्पन्नेवा नक्त प्रत्याख्यायालोचितप्रतिक्रांता समाधि प्राप्ता सत कालमासे काल कृत्वाऽन्यतरेषु देवेपूत्पद्यंतइति । एतानि चाजिगतजीवाजी वादिकानि पदानि हेतुहेतुमद्भावेन नेतव्यानि । तद्यथा यस्मादजिगतजीवास्तस्माडुपल ब्धपुण्यपापा । यस्माडुपलब्धपुण्यपापास्तस्माडुच्छ्रितमनस । एवमुत्तरत्रापि एकैक पदस्य जन्निरेकैक चोत्तर गृएहन्निर्वाच्यं । तेच परेण दृष्टाअदृष्टावाएतदूचु । तद्यथाऽयमेव मौ नीन्द्रोमार्गा सदर्थ । शेषस्त्वनर्थोयस्मादेव प्रतिपद्यते तस्मात्ते समुच्छ्रितमनस सत साधुधर्म श्रावकधर्म च प्रकाशयतोविशेषेणैकादशोपासकप्रतिमा स्पृशतोविहरतोऽष्टमी च तुर्दश्यादिषु पोषधोपवासादौ साधून् प्रासुकेन प्रतिलाजयति पाश्चात्ये च कालेसंलिखि तकाया संस्तारकश्रमणनाव प्रतिपद्य नक्त प्रत्याख्यायायुप क्षये देवेषूत्पद्यते । ततोपि च्युता सुमानुषनाव प्रतिपद्य तेनैव नवेनोत्कृष्टत सप्तस्वष्टसु नवेषु सिल्यंतीति। तदे तत्स्थान कल्याणपरपरया सुखविपाकमिति कृत्वाऽर्यमिति । अयं विजगस्तृतीयस्य स्थानस्य मिश्रकाख्यस्याख्यातइति ॥ ७७ ॥

अविरइ पडुच्च बाले आहिज्जइ विरइ पडुच्च पंमिए आहिज्जइ विरया विरइ पडुच्च बाल पंमिए आहिज्जइ तत्रण जासा सवतो अविरइ एसठा णे आरंनठाणे अणारिए जाव असवड खप्पहीणमग्गे एगतमिच्छे अ साहू तत्रणं जासा सवताविरइ एसठाणे अणारंनठाणे आरिए जा व सवडुकप्पहीणमग्गे एगतसम्मे साहू तत्रण जासा सवत्ते विरया वि रई एसठाणे आरंनणोरंनठाणे एसठाणे आरिए जाव सवडुकप्पही णमग्गे एगतसम्मे साहू ॥ ७८ ॥

अर्थ–हवे ए त्रणे स्थानकनें संक्षेपें करी सविशेष कहेछे (अविरइपडुच्च के०)

अविरति एटले असंयम ते आदी सम्यक्त्वने अनावे जोपण मिथ्यादृष्टिनी विरतिछे, तोप ण तेने अविरतिज कहेवाय, ते अविरति आश्री तेने (बालेआहिज्जइ के०) बाल कहि ये, (विरईपडुच्चपंमिएआहिज्जइ के०) अने विरति एटले सावद्य परित्यागरूप ते आश्री तेने पंमित परमार्थनो जाण कहिये, (विरयाविरइपडुच्चबालपंमिएआहिज्जइ के०) त था विरताविरत एटले काइंक संयम काइंक असंयम ते आश्री तेने बाल पंमित कहिये, (तच्छणजासासव्वतोअविरइ के०) त्यां पूर्वोक्त त्रण स्थानकने विषे जे सर्व थकी अविरति स्थानकछे एटले जेमां सर्वथा विरति परिणामनो अनावछे (एसठाणे के०) ए स्थानक ते (आरंनठाणे के०) आरंननुं स्थानक, (अणारिए के०) अनार्य, (जावअसव्वडुरकप्प हीणमग्गे के०) यावत् सर्व डुःख थकी मूकाववानो मार्ग नथी (एगंतमिछेअसाहु के०) एकांत मिथ्यात्व मार्ग असाधु एटले ए सारो मार्ग नहीं हवे बीजुं धर्मपक्षनुं स्थानक कहेछे (तच्छणजासासव्वताविरइ के०) त्यां जे सर्व थकी विरति सम्यक् पूर्वक आरंन परित्यागरूप (एसठाणे के०) ए स्थानक (अणारंनठाणे के०) अनारंननुं स्थानक (आरिए के०) आर्य, (जावसव्वडुरकप्पहीणमग्गे के०) यावत् सर्व डुःख थकी मुका ववानो मार्ग, (एगंतसम्मेसाहु के०) एकांत सम्यक्त्व साधु मार्ग जाणवो हवे त्रीजुं मिश्रपक्षनुं स्थानक कहेछे (तच्छणजासासव्वउविरयाविरइएसठाणेआरंनणोरंनठाणे के०) त्यां जे सर्व थकी विरताविरत एटले संयमासंयमरूप स्थानक ते आरंन अने अनारंन रूप स्थानक जाणवुं (एसठाणे के०) ए स्थानक (आरिए के०) आर्य यावत् सर्व डुःख थकी मूकाववानो मार्ग एकांत सम्यक् नलो मार्ग जाणवो ॥ ७८ ॥

॥ दीपिका—अथेदं पक्षत्रयमुपसंहरन् संक्षेपतोवक्ति। अविरतिं प्रतीत्याश्रित्य बालआ धीयते स्थाप्यते विरतिमाश्रित्य बालपंडितइत्युच्यते । तत्र या अविरति । एतत् स्थानं यावन्नाय सर्वडुःखक्षयमार्गः किंतु? एकांतमिथ्यात्वमार्गोऽसाधुः । तत्र या सर्वविरति एतत्स्थानमनारंनस्थानं आर्यं यावदयं सर्वडुःखक्षयमार्गः साधुः शोननः । या सर्वतो विरताविरति । इदं स्थानमारंनानारंनस्थानं । इदमपि स्थानमार्यं परंपरया सर्वडुःख क्षयमार्गः एकांतः सम्यक् साधुः ॥७८॥

॥ टीका—उक्ता धार्मिकायधार्मिकास्तडुनयरूपाश्चानिहिता ।सांप्रतमेतदेव स्थानत्रिकमु पसंहारद्वारेण संक्षेपतोनिनणिषुराह । (अविरइइत्यादि) येयमविरतिरसंयमरूपा स म्यक्त्वानावान्मिथ्यादृष्टेर्व्यतोविरतिरप्यविरतिरेव तां प्रतीत्याश्रित्य बालवद्बालोऽज्ञः सद सद्विवेकविकलत्वात् इत्येवमाधीयते व्यवस्थाप्यते आख्यायते वा तया विरतिं चाश्रित्य

नि स्फाटिकानीव स्फाटिकानि अत करणानि येषाते तथा । एतडुक्तं नवति । मौनींद्र दर्शनावाप्तौ सत्यां परितुष्टमानसाइति । तथा अप्रावृतानि द्वाराणि येस्ते तथा उद्घाटित गृह द्वारास्तिष्ठति सद्दर्शनलानेन न कस्यचिद्बिन्यति शोननमार्गपरिग्रहे नोद्घाटितशिरसो विश्रब्ध तिष्ठतीति अचितयन्तोऽनजिमतोंऽत पुरप्रवेशवत्परगृह द्वारप्रवेशोऽन्यतीर्थिकप्र वेशोयेषा ते तथा अनवरतं श्रमणानुयुक्तविहारिणोनिग्रथान् प्रासुकेनैषणीयेनाशनादिना तथा पीठफलकशय्यासस्तारकादिनाच प्रतिलानयंतस्तथा बहूनि वर्षाणि शीलव्रतगुणव्रत प्रत्याख्यानपोषधोपवासैरात्मान नावयंतस्तिष्ठति ॥७६॥ तदेव ते परमश्रावका प्रनूतकाल मणुव्रतशिक्षाव्रतानुष्ठायिन साधूनामौषधवस्त्रपात्रादिनोपकारिण सतोयथोक्तं यथाशक्ति सदनुष्ठान विधायोत्पन्ने वा कारणेऽनुत्पन्नेवा नक्त प्रत्याख्यायालोचितप्रतिक्राता समाधि प्राप्ता सत कालमासे काल कृत्वाऽन्यतरेषु देवेषूत्पद्यंतइति । एतानि चानिगतजीवाजी वादिकानि पदानि हेतुहेतुमन्नावेन नेतव्यानि । तद्यथा यस्मादनिगतजीवास्तस्माडुपल ब्धपुण्यपापा । यस्माडुपलब्धपुण्यपापास्तस्माडुत्थितमनस । एवमुत्तरत्रापि एकैक पदस्य लब्धिरेकैक चोत्तर गृएह्णनिर्वाच्यं । तेच परेण पृष्टाअपृष्टावाएतद्ब्रूयु । तद्यथाऽयमेव मौ नीन्द्रोक्तोमार्ग सदर्थ । शेषस्त्वनर्थोयस्मादेव प्रतिपद्यते तस्मात्ते समुत्थितमनस सत साधुधर्मं श्रावकधर्मं च प्रकाशयतोविशेषेणैकादशोपासकप्रतिमा स्पृशतोविहरतोऽष्टमी च तुर्दश्यादिषु पोषधोपवासादौ साधून् प्रासुकेन प्रतिलानयति पाश्चात्ये च कालेसलिखि तकाया सस्तारकश्रमणनाव प्रतिपद्य नक्त प्रत्याख्यायायुप क्षये देवेषूत्पद्यते । ततोपि च्युता सुमानुषनाव प्रतिपद्य तेनैव नवेनोत्कृष्टत सप्तस्वष्टसु नवेषु सित्स्यंतीति । तदे तत्स्थान कल्याणपरपरया सुखविपाकमिति कृत्वाऽर्यमिति । अयं विनगस्तृतीयस्य स्थानस्य मिश्रकाख्यस्याख्यातइति ॥ ७७ ॥

अविरइ पडुच्च बाले आहिज्जइ विरइ पडुच्च पण्डिए आहिज्जइ विरया विरइ पडुच्च बाल पण्डिए आहिज्जइ तत्र्थण जासा सवतो अविरइ एसठा णे आरम्नठाणे अणारिए जाव असवडुक्खप्पहीणमग्गे एगतमिछे अ साहू तत्र्थण जासा सवताविरइ एसठाणे अणारम्नठाणे आरिए जा व सवडुक्खप्पहीणमग्गे एगतसम्मे साहू तत्थण जासा सवत्त विरया वि रई एसठाणे आरम्नणोरम्नठाणे एसठाणे आरिए जाव सवडुक्खप्पही णमग्गे एगतसम्मे साहू ॥ ७८ ॥

अर्थ—हवे ए त्रणे स्थानकनें सक्षेपें करी सविशेष कहेले (अविरइपडुच्च के०)

ते कहेछे (किरियावाईण के०) एक क्रियावादी, तेना एकसोने एंशी नेदछे (अकिरियावाईण के०) बीजा अक्रियावादी तेना चोराशी नेदछे (अन्नाणियवाईण के०) त्रीजा अज्ञानवादी, तेना सडसठ नेदछे (वेणइयवाईण के०) चोथो विनयवादी, तेना बत्रीश नेदछे एम सर्वे मली त्रणशेने त्रेसठ नेदोछे (तेवि निव्वाणमाहसु के०) ते पण सर्व पोत पोताना मतने अनुरागे निर्वाण एटले मोक्षनो मार्ग कहेछे (तेवि परिमोरकमाहसु के०) तेपण कर्म थकी मूकाववानो उपाय कहेछे (तेविलवतिसावगा के०) तेपण कहेछेके अहो श्रावको! अमे जे धर्म प्ररूपीये छैये ते धर्म तमे आदरो (तेविलवतिसावइत्तारो के०) तेपण कहेछे के, अमे धर्मना सजलावनारा छैये ॥१ए॥

॥ दीपिका—मिश्रपक्षोपि धर्माधर्मयोरेवातर्नवतीत्याह। एवमेव सक्षेपेण समनुगम्यमानाव्याख्यायमाना सम्यगनुगृह्यमाणाअनयोरेव धर्माधर्मपक्षयोरनुपतति । उपशातस्थान धर्मपक्ष अनुपशातस्थानमधर्मस्थान (तच्चणाति) तत्रच यत्प्रथमस्थानस्याधर्मपक्षस्य स्थान तत्रामूनि त्रीणि त्रिषष्टयधिकानि प्रावाडुकशतान्यतर्नवतीत्येवमाख्यात पूर्वाचार्ये । तद्यथा। क्रियावादिन अक्रियावादिन अज्ञानिकवादिनवेनयिकवादिन । अत्र पष्ठीबहुवचनेनेदमाह । क्रियावादिनामशीत्युत्तरशत १८० अक्रियावादिना चतुरशीति ८४ अज्ञानिकाना सप्तषष्टि ६७ वैनयिकाना द्वात्रिशत् ३२ सर्वे मिलिता ३६३ मीलनेदा । नेदानयने प्रकारश्चाय । जीवाजीवाश्रवसवरनिर्जरापुण्यपापबधमोक्षरूपान् नव पदार्थान् विन्यस्य जीवपदार्थस्याध स्वपरनेदौ स्थाप्यो । तयोरधोनित्यानित्यनेदौ तयोरप्यध काले १ श्वरा २ त्म ३ नियति ४ स्वनाव ५ नेदा पच स्थाप्या । ततएव नदा कार्या । अस्ति जीव स्वतोनित्य कालत १ अस्तिजीव स्वतोनित्यईश्वरत २ एवमात्मनियतिस्वनावैरपि । एव पच नेदानित्यपदेन लब्धा । अनित्यपदेनापि पच। एते दश विकल्पा स्वत पदेन लब्धा । एव दश विकल्पा परत पदेनापि । जाता विशतिर्जीवपदेन । एवमजीवाद्यष्टपदैरपि विशतिर्विंशति स्यु । नवनिर्विंशतिनिश्चाशीत्यधिक शत । एते क्रियावादिनेदा । न कस्यचित्पदार्थस्य क्रिया सनवति । उत्पत्त्यनतरमेव विनाशात् । क्षणिका सर्वसस्कारा अस्थिराणा कुत क्रिया इत्यादि ये वदति तेऽक्रियावादिन । तेषा नेदा ८४ । यथा । पुण्यपापवर्जितजीवाजीवादिपदार्थसप्तकस्य न्यास । तस्याध प्रत्येक स्वपरनेदौ असत्वादात्मनोनित्यानित्यविकल्पौ नस्त । कालादीना पचानामधस्तात्पष्ठी यदृच्छा स्थाप्या । इह यदृच्छावादिन सर्वेप्यक्रियावादिनएव । तत प्राक् यदृच्छा नोक्ता । ततएव नेदा कार्या । नास्ति जीव स्वत कालत १ नास्तिजीव स्वतईश्वरत २ एवमात्मादिनिरपि। एव षड्नेदा स्वत प

प्रतीत्य पापाङ्गीन पडित परमार्थज्ञोवेत्येवमाधीयते व्याख्यायते तथा विरताविरतिं चा श्रित्य बालपंडितइत्येतत्प्राग्वदायोज्यमिति । किमित्यविरतिविरत्याश्रयेण बालपंडितत्वा पत्तिरित्याशक्याह । तत्थणमित्यादि । तत्र पूर्वोक्तेषु येय सर्वात्मना सर्वस्मात् अविरति विरतिपरिणामाभाव । एतत्स्थान सावद्यारंभस्थानमाश्रयस्तदाश्रित्य सर्वाण्यपि कार्याणि क्रियते । यतएवमतएतदनार्यस्थान नि शूकतया यत्किंचनकारित्वाद्यावदसर्वज्ञ स्वप्रहीण मार्गोय तथैकातमिथ्यारूपोसाधुरिति । तत्र चेय विरति सम्यक्त्वापूर्विका सावद्यारंभा न्निवृत्ति सावद्यानुष्ठानरहितत्वात्सयमस्थान तत्र चैतत्स्थानमार्यस्थान । आराद्यातं स र्वहेयधर्मेभ्यइत्यार्य तथा सर्वज्ञ स्वप्रहीणमार्गोऽशेपकर्मक्षयपथस्तथैकात सम्यग्भूत । एतदेवाह । साधुरिति । साधुभूतानुष्ठानात्साधुरिति । तत्रच येय विरताविरतिरभिधीयते सैव मिश्रस्थानभूता तदेव तदारंभरूपस्थानमेतदपि कथचिदार्यमेव पारपर्येण सर्वज्ञ स प्रहीणमार्गस्तथैकातसम्यग्भूत साधुश्चेति तदेवमनेकविधोयमधर्मपक्षोधर्मपक्षस्तथा मि श्रपक्षश्चेति सक्षेपेणाभिहितपक्षत्रयसमाश्रयणेन ॥१८॥

एवमेव समणुगम्ममाणा इमेहिं चेव दोहिं ठाणेहिं समोअवतरंति तंज हा धम्मेचेव अधम्मेचेव उवसंतेचेव अणुवसंतेचेव तत्थण जे से पढमस्स ठा णस्स अधम्मपरकस्स विभंगे एवमाहिए तस्सण इमाइं तिन्नि तेवठाइं पावाडुयसयाइं भवंतीति मरकाइं तंजहा किरियावाईण अकिरियावाई ण अन्नाणियवाईण वेणइयवाईण तेवि निव्वाणमाहंसु तेवि परिमोरक माहंसु तेवि लवंति सावगा तेवि लवंति सावइत्तारो ॥ १९ ॥

अर्थ-(एवमेव के०) एप्रकारे (समणुगम्ममाणा के०) अन्य बीजा जे मार्ग, अ नेक उन्मार्गछे ते सर्वे, (इमेहिंचेवदोहिंठाणेहिंसमोअवतरंति के०) ते निश्चे थकी ए बे स्थानकने विषे अवतरेछे समायछे (तंजहा के०) ते बे स्थानकनां नाम कहेछे (धम्मेचेवअधम्मेचेव के०) एक धर्म स्थानक, बीजुं अधर्म स्थानक, (उवसंतेचेवअणु वसंतेचेवके०) एक ज्यां कषायादिक उपशम्याछे ते उपशांत स्थानक जाणवुं, अने बीजुं ज्यां कषायादिक उपशम्या नथी ते अनुपशांत स्थानक जाणवुं (तत्थणजेसेपढमस्सठाणस्स अधम्मपरकस्सविभंगेएवमाहिए के०) त्यां ए बेहु स्थानक माहे प्रथम स्थानक, ते अधर्म पक्षछे, तेनुं स्वरूप विचार एम कहियें (तस्सण के०) ते अधर्मपक्ष स्थानक माहे (इमाइं के०) ए (तिन्नितेवठाइंपावाडुयसयाइंभवंतीतिमरकाइं के०) त्रणशेंने त्रेशठ प्रावाडुक एटले पाखंमीना भेद अवतरेछे, एम भगवंते कह्युंछे (तंजहा के०)

ते कहेछे (किरियावाईण के०) एक क्रियावादी, तेना एकसोने एंशी भेदछे (अकिरियावाईण के०) बीजा अक्रियावादी तेना चोराशी भेदछे (अन्नाणियवाईण के०) त्रीजा अज्ञानवादी, तेना सडसठ भेदछे (वेणइयवाईण के०) चोथो विनयवादी, तेना बत्रीश भेदछे एम सर्व मली त्रणशेने त्रेसठ भेदोछे (तेवि निव्वाणमाहंसु के०) ते पण सर्व पोत पोताना मतने अनुरागे निर्वाण एटले मोक्षनो मार्ग कहेछे (तेवि परिमोरकमाहंसु के०) तेपण कर्म थकी मूकाववानो उपाय कहेछे (तेविलवतिसावगा के०) तेपण कहेछेके अहो श्रावको! अमे जे धर्म प्ररूपीये छैयें ते धर्म तमे आदरो (तेविलवतिसावइत्तारो के०) तेपण कहेछे के, अमे धर्मना संभलावनारा छैयें ॥७९॥

॥ दीपिका–मिश्रपक्षोपि धर्माधर्मयोरेवांतर्भवतीत्याह। एवमेव संक्षेपेण समनुगम्यमानाव्याख्यायमाना सम्यगनुगृह्यमाणाअनयोरेव धर्माधर्मपक्षयोरनुपतति । उपशांतस्थानं धर्मपक्षः अनुपशांतस्थानमधर्मस्थानं (तडणंति) तत्रच यत्प्रथमस्थानस्याधर्मपक्षस्य स्थानं तत्रामूनि त्रीणि त्रिषष्ट्यधिकानि प्रावादुकशतान्यतर्भवंतीत्येवमाख्यातं पूर्वाचार्यैः । तद्यथा। क्रियावादिनः अक्रियावादिनः अज्ञानिकवादिनवैनयिकवादिनः । अत्र षष्ठीबहुवचनेनेदमाह । क्रियावादिनामशीत्युत्तरशतं १८० अक्रियावादिनां चतुरशीतिः ८४ अज्ञानिकानां सप्तषष्टिः ६७ वैनयिकानां द्वात्रिंशत् ३२ सर्वे मिलिताः ३६३ मीलभेदाः । भेदानयने प्रकारश्चायं । जीवाजीवाश्रवसंवरनिर्जरापुण्यपापबंधमोक्षरूपान् नव पदार्थान् विन्यस्य जीवपदार्थस्याधः स्वपरभेदौ स्थाप्यौ । तयोरधोनित्यानित्यभेदौ तयोरप्यधः काले १ श्वरा २ त्म ३ नियति ४ स्वभाव ५ भेदाः पंच स्थाप्याः । ततएवं भेदाः कार्याः । अस्ति जीवः स्वतोनित्यः कालतः १ अस्तिजीवः स्वतोनित्यईश्वरतः २ एवमात्मनियतिस्वभावैरपि । एवं पंच भेदानित्यपदेन लब्धाः । अनित्यपदेनापि पंच। एते दश विकल्पाः स्वतः पदेन लब्धाः । एवं दश विकल्पाः परतः पदेनापि । जाता विंशतिर्जीवपदेन । एवमजीवाद्यष्टपदैरपि विंशतिर्विंशतिः स्युः । नवविंशतिभिःअशीत्यधिकं शतं । एते क्रियावादिभेदाः । न कस्यचित्पदार्थस्य क्रिया संभवति । उत्पत्त्यनंतरमेव विनाशात् । क्षणिकाः सर्वसंस्काराः अस्थिराणां कुतः क्रिया इत्यादि ये वदंति तेऽक्रियावादिनः । तेषां भेदाः ८४ । यथा । पुण्यपापवर्जितजीवाजीवादिपदार्थसप्तकस्य न्यासः । तस्याधः प्रत्येकं स्वपरभेदौ असत्वादात्मनोनित्यानित्यविकल्पौ नस्तः । कालादीनां पंचानामधस्तात्षष्ठी यदृच्छा स्थाप्या । इह यदृच्छावादिनः सर्वेप्यक्रियावादिनएव । ततः प्राक् यदृच्छा नाक्ता । ततएवं भेदाः कार्याः । नास्ति जीवः स्वतः कालतः १ नास्तिजीवः स्वतऽश्वरतः २ एवमात्मादिभिरपि। एवं षड्भेदाः स्वतः प

प्रतीत्य पापाल्लीन पडित परमार्थज्ञोवेत्येवमाधीयते व्याख्यायते तथा विरताविरतिं चा श्रित्य बालपण्डितइत्येतत्प्राग्वदायोज्यमिति । किमित्यविरतिविरत्याश्रयेण बालपण्डितत्वा पत्तिरित्याशक्याह । तत्थणमित्यादि । तत्र पूर्वोक्तेषु येय सर्वात्मना सर्वस्मात् अविरति र्विरतिपरिणामाभाव । एतत्स्थान सावद्यारम्भस्थानमाश्रयस्तदाश्रित्य सर्वाण्यपि कार्याणि क्रियते । यतएवमतएतदनार्यस्थान नि शूकतया यत्किंचनकारित्वाद्यावदसर्वज्ञ स्वप्रहीण मार्गोय तथैकांतमिथ्यारूपोसाधुरिति । तत्र चेय विरति सम्यक्त्वापूर्विका सावद्यारंभा न्निवृत्ति सावद्यानुष्ठानरहितत्वात्संयमस्थान तत्र चैतत्स्थानमार्यस्थान । आराद्यातं स र्वहेयधर्मेभ्यइत्यार्य तथा सर्वज्ञ स्वप्रक्षीणमार्गोऽशेषकर्मक्षयपथस्तथैकांत सम्यग्भूत । एतदेवाह । साधुरिति । साधुभूतानुष्ठानात्साधुरिति । तत्रच येय विरताविरतिरभिधीयते सैव मिश्रस्थानभूता तदेव तदारम्भरूपस्थानमेतदपि कथंचिदार्यमेव पारपर्येण सर्वज्ञ स्व प्रहीणमार्गस्तथैकांतसम्यग्भूत साधुश्चेति तदेवमनेकविधोयमधर्मपक्षोधर्मपक्षस्तथा मि श्रपक्षश्चेति सक्षेपेणाभिहितपक्षत्रयसमाश्रयणेन ॥७८॥

एवमेव समणुगम्ममाणा इमेहिं चेव दोहिं ठाणेहिं समोअवतरति तंज हा धम्मेचेव अधम्मेचेव उवसंतेचेव अणुवसंतेचेव तत्थणं जे से पढमठा णस्स अधम्मपक्खस्स विभंगे एवमाहिए तस्सणं इमाइं तिन्नि तेवठाइं पावाउयसयाइं भवंतीति मक्खाइं तंजहा किरियावाईणं अकिरियावाई णं अन्नाणियवाईणं वेणइयवाईणं तेवि निव्वाणमाहंसु तेवि परिमोक्ख माहंसु तेवि लवंति सावगा तेवि लवंति सावइत्तारो ॥ ७९ ॥

अर्थ–(एवमेव के०) एप्रकारे (समणुगम्ममाणा के०) अन्य बीजा जे मार्ग, अ नेक *उन्मार्गछे ते सर्व*, (*इमेहिंचेवदोहिठाणेहिंसमोअवतरति* के०) ते *निश्चे थकी* ए बे स्थानकने विषे अवतरेछे समायछे (तंजहा के०) ते बे स्थानकनां नाम कहेछे (धम्मेचेवअधम्मेचेव के०) एक धर्म स्थानक, बीजुं अधर्म स्थानक, (उवसंतेचेवअणु वसंतेचेवके०) एक ज्यां कषायादिक उपशम्याछे ते उपशांत स्थानक जाणवुं, अने बीजुं ज्यां कषायादिक उपशम्या नथी ते अनुपशांत स्थानक जाणवुं (तत्थणजेसेपढमठाणस्स अधम्मपक्खस्सविभंगेएवमाहिए के०) त्यां ए बेहु स्थानक माहे प्रथम स्थानक, ते अधर्म पक्षछे, तेनुं स्वरूप विचार एम कहियें (तस्सण के०) ते अधर्मपक्ष स्थानक माहे (इमाइं के०) ए (तिन्नितेवठाइंपावाउयसयाइंभवंतीतिमक्खाइं के०) त्रणशेंने त्रेशठ प्रावादुक एटले पाखंडीना भेद अवतरेछे, एम भगवते कह्युंछे (तंजहा के०)

प्येते मौलास्तच्छिष्याश्च प्रवदनशीलत्वात्प्रावाडुकास्तेषा च नेदसख्या परिज्ञानोपायश्चा चारएवानिहितइति नेह प्रतन्यते । तें सर्वेप्याईताइव परिनिर्वाणमशेष द्वन्द्वोपरमरूपव र्णगधरसस्पर्शस्वनावमनुपचरितपरमार्थस्थान ब्रह्मपदाख्यमबाधात्मक परमानदसुखस्व रूपमाहुरुक्तवतस्तथा तेपि प्रावाडुका ससारबधनान्मोचनात्मक मोक्षमाहु । पूर्वेण नि रुपाधिक कार्यमेव निर्वाणाख्यमुक्तमनेन तु तदेव कारणोपाधिकमित्यय विशेष । तत्र येषामप्यात्मा नास्ति ज्ञानसततिवादिना तेषामपि कर्मसतते ससारनिबधननूताया विछे दान्मोक्षनावाविरोध । तेषा चोपादानक्षयादनागतानुत्पत्ते सततिछेदएव मोक्ष प्रदी पस्येव तैलवर्त्यनावे निर्वाणमिति । तथाचाहु । न तस्य किंचिन्नवति न नवत्येव केव लमिति । एतच्च तेषा महामोहविजृंनित । यत । कर्म चास्ति फल चास्ति कर्ता नैवास्ति कर्मणा ॥ ससारमोक्षवादित्वमहोह्याध्यविजृंनितमिति ॥ येषा चात्मास्ति साख्यादीना तेषा प्रकृतिविकारवियोगोमोक्ष क्षेत्रज्ञस्य पचविशतितत्त्वपरिज्ञानाच्च विद्यमाने प्रधानवि कारविमोचन मोक्षइति । तेषामप्येकातनित्यवादितया मोक्षानाव । एवमन्येपि नैया यिकवैशेषिकादय ससारानावमिन्नतोपि न मुच्यते सम्यग्दर्शनादिकस्योपायस्यानावादि त्यन्यूह्याह । यदि न तेषा मोक्ष कथ ते लोकस्योपास्यान्नवतीत्याशक्याह । तेपि तीर्थि कालपति ब्रुवते मोक्ष प्रति धर्मदेशना विदधति । शृण्वतीति श्रावका हेश्रावका[1] एव गृण्ही त यूय यथाह देशयामि तथा तेऽपि धर्मश्रावयितार सतएव लपति नापते यथाऽनेनोपा येन स्वर्गमोक्षावाप्तिरिति तद्वचन मिथ्यात्वोपहतबुद्धयोवितथमेव गृण्हति कूटपण्यदायि ना विपर्यस्तमतयएवेति । तदेवमादितीर्थिकास्तच्छिष्याश्च पारपर्येण मिथ्यादर्शनानुनावा त्परान्प्रतारयति तेपिच तेषा प्रतारयति श्राहु कथमेते प्रवाडुकामिथ्यावादिनोनवति । श्र त्रोच्यते । यतस्तेप्यहिंसा प्रतिपादयति नच तां प्रधानमोक्षागनूता सम्यगनुतिष्ठति । कथ साख्याना तावज्ज्ञानादेव धर्मोन तेषामहिंसाप्राधान्येन व्यवस्थित किंतु पचयमाद्यत्यादि कोविशेषइति । तथा शाक्यानामपि दश कुशलाधर्मपथाश्रहिंसापि तत्राक्ता नतु सैव ग रीयसी धर्मसाधनत्वेन तैराश्रिता । वैशेषिकाणामपि श्रनिसेवनोपवासब्रह्मचर्यगुरुकुल वासप्रस्थादानयज्ञादिनक्षत्रमंत्रकालनियमाद्दृष्टास्तेषु चानिषेचनादिषु पर्यालोच्यमानेषु हिंसैव सपद्यते वैदिकाना हिंसैव गरीयसी धर्मसाधन यज्ञोपदेशात् तस्य च तयाविनाना वादित्यनिप्राय । उक्तच । ध्रुव प्राणिवधोयज्ञे ॥ ७९ ॥

ते सव्वे पावाजया श्रादिकरा धम्माण णाणापन्ना णाणाछदा णाणासीला णाणादिठी णाणारुई णाणारन्ना णाणाज्झवसाणसजुत्ता एगमह मम लिबध किच्चा सव्वे एगयाउ चिठंति ॥ ८० ॥

देन । परत पदेनापि पट् जाता १२ एवमजीवादिपदार्थेषु प्रत्येक १२ ततो द्वादश स प्तनिर्गुणिताजाता ८४ एते क्रियावादिन्नेदा । अज्ञानिकन्नेदा ६७ । यथा । जीवाजी वाद्यानव पदार्था स्थाप्यते । उत्पत्तिश्च दशमी नवपदार्थानामध प्रत्येक सप्त सत्वा य स्थाप्या । तद्यथा । सत्व असत्व सदसत्व अवाच्यत्व सदवाच्यत्व असदवाच्यत्व स दसदवाच्यत्व चेति । नवसप्तनिर्गुणिताजाता ६३ । उत्पत्तेश्चत्वारएवाद्याविकल्पा । त द्यथा । सत्व सदसत्व अवाच्यत्व चेति । शेषविकल्पत्रय तु उत्पत्तेरनतर पदार्थावयवापेक्ष अतउत्पत्तौ न सन्नवतीति चत्वारएव न्नेदास्त्रिपष्टिमध्ये क्षिप्ताजाता ६७ । एषामर्थ शोयथा । कोजानाति जीव सन्नित्येकोन्नेद १ कश्चिदपि नजानाति तद्ग्राहकप्रमाणाजा वादित्यर्थ । ज्ञातेन वा कि तेन प्रयोजन । ज्ञातस्य कदाग्रहतया परलोकप्रतिपथित्वात् । एवमसदादयोपि न्नगान्नाव्या । उत्पत्तिरपि किसतोऽसत सदसतोवाच्यस्य वेति कोजा नाति । ज्ञातेनवा नकिंचिदपि प्रयोजन । इत्यज्ञानिकन्नेदा । वैनयिका ३२ । यथा । सुरनृपतियतिज्ञातिस्थविराधममातृपितृरूपेषु अष्टसु स्थानेषु कायेन मनसा वाचा दाने नच देशकालोपपन्नेन विनय कार्यइति चत्वार कायादय स्थाप्या । चत्वारश्चाष्टनि गुणिताजाता ३२ । एव सर्वेपि मीलिताजाता ३६३ परवादिन्नेदा । एषा विशेषव्या ख्या प्रथमागतोज्ञेया । ते सर्वे प्रावाडुकाजैनाइव निर्वाण मोक्षमाहु । तेपि लपंति वद ति धर्मदेशना यथा हेश्रावका । शृण्वतीति श्रावका । एव गृह्णीत यूय यथाह देशयामीति। तथा तेपि धर्मश्रावयितार सतएव लपति तदनेनोपायेन स्वर्गमोक्षप्राप्तिरिति ॥ ७९ ॥

॥ टीका–साप्रतमसावपि मिश्रपक्षोधर्माधर्मसमाश्रयणेनानयोरतर्वर्ती नवतीति दर्श यति । (एवमेवेत्यादि) एवमेव सक्षेपेण सम्यगनुगम्यमानाव्याख्यायमाना सम्यगनु गृह्यमाणाअनयोरेव धर्माधर्मस्थानयोरनुपतति । किमिति । यतोयदुपशातस्थान तद्ध र्मपक्षस्थानमनुपशातस्थानमधर्मपक्षस्थानमिति । तत्रच यदधर्मपाक्षिक प्रथम स्थान तत्रामूनि त्रीणि पष्ट्यधिकानि प्रावाडुकशतान्यतर्न्नवतीति । एवमाख्यातं पूर्वाचार्यै रिति । एतानि वा सामान्येन दर्शयितुमाह । (तजहेत्यादि) तद्यथेत्युपदर्शनार्थे । क्रियां ज्ञा नादिरहितामेकामेव स्वर्गापवर्गसाधनत्वेन वदितु शील येषा ते क्रियावादिनस्ते च दीक्षा तएव मोक्ष वदतीत्येवमादयोऽष्टव्याइति । तेषाच बहवोन्नेदास्तथा क्रिया परलोक साधनत्वेन वदितु शील येषा ते तथा तेषामिति अज्ञानमेव श्रेयइत्येव वदितु शील येषा ते नवत्यज्ञानवादिनस्तेषा तथा विनयएव परलोकसाधने प्रधान कारण येषाते तथा तथा तेषामिति । अत्रच सर्वत्र षष्ठीबहुवचनेनेदमाह । तद्यथा क्रियावादिनामशीत्युत्तरश त अक्रियावादिना चतुरशीतिरज्ञानिकाना सप्तषष्टिर्वैनयिकाना द्वात्रिंशदिति । तत्र सर्वे

पुरिसेय सागणियाए इगालाए पाइ बहुपम्हिपुन्न गहाय अउमएण समासएण गहाय ते सवे पावाउए आइगरा धम्माए णाणापन्ना जाव णाणाज्झवसाणसजुत्ते एवं वयासीहन्नो पावाउया आइगरा धम्माण णाणापन्ना जाव णाणाअज्झवसाणसजुत्ता इम ताव तुम्ह सागणिया ण इगालाए पाइ बहुपडिपुन्न गहाय मुहुत्तय पाणिणा धरेह णोबहु समासग ससारिय कुज्जा णो बहुअग्गिथन्नणिय कुज्जा णोबहु साह म्मियवेयावडिय कुज्जा णोबहुपरधम्मियवेयावडिय कुज्जा उज्जयाणिया गपडिवन्ना अमाय कुव्वमाणा पाणि पसारेह इति वुच्चा से पुरिसे तेसि पावाडयाए त सागणियाए इगालाए पाइ बहुपडिपुन्न अउमएण समासएण गहाय पाणिसु णिसिरिंति तएण तेपावाडया आइगरा ध म्माए णाणापन्ना जाव णाणाज्झवसाणसजुत्ता पाणिपडिसाहरति तए ण से पुरिसे ते सवे पावाउए आदिगरे धम्माए जाव णाणाज्झवसाणस जुत्ता एव वयासी हन्नो पावाडया आइगरा धम्माए णाणापन्ना जाव णाणाज्झवसाणसजुत्ता कम्हाए तुम्ने पाणि पडिसाहरह पाणि नोम्हि ज्जा दड्डे कि नविस्सइ डुक्कति मन्नमाणा पडिसाहरह एसतुला एस प्पमाणे एस समोसरणे पत्तेयतुला पत्तेय पमाणे पत्तेय समोसरणे तत्थण जेते समणा माहणा एवमातिक्कति जाव परुवेति सवे पाणाजाव सत्ता हतवा अज्जावेयवा परिघेतवा परितावेयवा किलामेतवा उद्दवेतवा तेआगतुछेयाए तेआगतुन्नेयाए जाव ते आगतु जाइजरामरणजोणि जम्मणससारपुणन्नवगप्नवासन्नवपवच कलकलीनागिणो नविस्सति ॥

अर्थ–तेवारे कोई एक (पुरिसेय के०) पुरुष जैन मार्गनो जाण ते तेमने अहिंसा दिकने विषे पाडवाने अर्थे (सागणियाणइगालाण के०) अग्निये बलता अगारा तेणे करी एक लोढानु (पाइके०) पात्र एटले नाजन नरीने (बहुपडिपुन्न के०) घणो प्र तिपूर्ण नरीने (अउमएण के०) लोहना (समासएणगहाय के०) समासी सहित ग्र हण करीने (तेसवेपावाउए के०) ते सर्व प्रावाडुक एटले परदर्शनी (आइगराधम्माण के०) पोतपोताना धर्मनी आदिना करनार, (णाणापन्नाजावणाणाज्झवसाणसजुत्तेके०)

अर्थ-(तेसव्वेपावाउयाआदिकराधम्माण के०) ते सर्वे प्रावाडुक एटले पाखंमी पोता ने ढदे धर्मना आदिना करनार कहियें, परतु ते (णाणापन्ना के०) नाना प्रकारनी बु द्वि वाला, (णाणाछंदा के०) नाना प्रकारना अनिप्राय वाला, (णाणासीला के०) नानाप्रकारना आचारवाला, (णाणादिठी के०) नाना प्रकारनी दृष्टि वाला, (णाणारु ई के०) नाना प्रकारनी रुची वाला, (णाणारंना के०) नाना प्रकारना आरंजना करनारा, (णाणाज्ञवसाणसंजुत्ता के०) नाना प्रकारना अध्यवसाय तेणे करीने सहित एवा थका, पोतपोतानु (एगमहंमंमलिबंधकिञ्चा के०) एक महोटु मंमल बांधि करीने, एटले पंक्ति करीने, (सव्वेएगयाउचिठति के०) ते सर्व एकज प्रदेशें तिष्ठति एटले बेठाढे ॥ ८० ॥

॥ दीपिका-ते सर्वे प्रावाडुकाआदिकरा स्वधर्माणा।नानाप्रज्ञानानाढंदानानानिप्रायाना नाविधाद्दष्टिर्दर्शनं येषां ते तथा नानाविधा रुचियेषां ते तथा नानाविधारंजानानाविधा ध्यवसायसंयुक्ताएकं महांतमंडलिबंधं कृत्वा तिष्ठंति ॥८०॥

॥ टीका-तदेव सर्वप्रावाडुकामोक्षागमूलामहिंसां न प्राधान्ये न प्रतिपद्यतइति दर्शयि तुमाह । (तेसव्वेइत्यादि) प्रवदनशीला प्रावाडुका सर्वेपि त्रिषष्ट्युत्तरत्रिशतपरिमाणाअ पि आदिकरायथा स्व धर्माणा। येपिच तच्छिष्यास्तेपि सर्वे नानाभिन्ना प्रज्ञा ज्ञानं येषांते नानाप्रज्ञा । आदिकराइत्यनेनेदमाह । स्वरुचिविरचितास्ते नत्वनादिप्रवाहायाता । ननु चार्हतानामपि आदित्वविशेषणमस्त्येव सत्यमस्ति किंतु अनादिर्हेतुपरंपरेत्यनादित्व मेव तेषांच सर्वज्ञप्रणीतागमानाश्रयणान्निबंधनाजावस्तदजावाच्च जिन्नपरिज्ञानमतएव नानाछंदा ।छंदोऽनिप्राय । जिन्नानिप्रायाइत्यर्थ ।तथाहि । उत्पादव्ययध्रौव्यात्मके वस्तु नि सांख्यैरेकांतेनाविर्जावतिरोजावाश्रयणादन्वयिनमेव पदार्थं सत्यत्वेनाश्रित्य नित्यप क्ष समाश्रितास्तथा शाक्याअत्यंतक्षणिकेषु पूर्वोत्तरजिन्नेषु पदार्थेषु सत्सु सएवायमिति प्रत्यनिज्ञा प्रत्यय सदृशापरापरोत्पत्तिर्वितथाना जवतीत्येतत्पक्षसमाश्रयणादनित्यपक्ष समाश्रिताइति । तथा नैयायिकवैशेषिका केषांचिदाकाशपरमाण्वादीनामेकांतेन नित्य त्वमेवकार्यद्रव्याणांच घटपटादीनामेकांतेनानित्यत्वमेवाश्रिता । एवमनया दिशाऽन्येपि मीमांसकतापसादयोऽन्यूह्याइति । तथा ते तीर्थिकानानाशील येषां ते तथा शील व्रत विशेष सच जिन्नस्तेषामनुजवसिद्धएव । तथा नाना दृष्टिर्दर्शनं येषांते तथा नानारु चिरेषां ते नानारुचयस्तथा नानारूपमध्यवसानमंतःकरणप्रवृत्तिर्येषां ते तथा इदमुक्तं जवति । अहिंसा परमं धर्मांगं । साच तेषां नानानिप्रायत्वादविकलत्वेन व्यवस्थिता । तस्याएव सूत्रकार प्राधान्यं दर्शयितुमाह । ते सवेपि प्रावाडुकायथास्वपक्षमाश्रिताएक त्र प्रदेशे संयुतामंमलिबंधमाधाय तिष्ठंति ॥८०॥

पुरिसेय सागणियाण इंगालाण पाइ बहुपडिपुन्न गहाय अन्नमएण समासएण गहाय ते सव्वे पावाउए आइगरा धम्माणं णाणापन्ना जाव णाणाज्झवसाणसजुत्ते एव वयासीहंभो पावाउया आइगरा धम्माण णाणापन्ना जाव णाणाअज्झवसाणसजुत्ता इम ताव तुम्ह सागणिया ण इंगालाण पाइ बहुपडिपुन्न गहाय मुहुत्तय पाणिणा धरेह णोबहु समासग ससारिय कुज्जा णो बहुअग्गियम्नणिय कुज्जा णोबहु साह म्मियवेयावडिय कुज्जा णोबहुपरधम्मियवेयावडियं कुज्जा उज्जयाणिया गपडिवन्ना अमाय कुव्वमाणा पाणि पसारेह इति वुच्चा से पुरिसे तेसि पावाउयाण त सागणियाण इंगालाण पाइ बहुपडिपुन्न अन्नमएण समासएण गहाय पाणिसु णिसिरिंति तएण तेपावाउया आइगरा ध म्माण णाणापन्ना जाव णाणाज्झवसाणसजुत्ता पाणिपडिसाहरति तए ण से पुरिसे ते सव्वे पावाउए आदिगरे धम्माण जाव णाणाज्झवसाणस जुत्ता एव वयासी हंभो पावाउया आइगरा धम्माण णाणापन्ना जाव णाणाज्झवसाणसजुत्ता कम्हाण तुब्भे पाणि पडिसाहरह पाणि नोमहि ज्जा दड्ढे कि भविस्सइ डुक्कति मन्नमाणा पडिसाहरह एसतुला एस प्पमाणे एस समोसरणे पत्तेयतुला पत्तेय पमाणे पत्तेय समोसरणे तत्तण जेते समणा माहणा एवमातिक्कति जाव परुवेति सव्वे पाणाजाव सत्ता हतव्वा अज्जावेयव्वा परिघेतव्वा परितावेयव्वा किलामेतव्वा उद्दवेतव्वा तेआगतुछेयाए तेआगतुभेयाए जाव ते आगतु जाइजरामरणजोणि जम्मणससारपुणब्भवगब्भवासभवपवच कलकलीभागिणो भविस्सति ॥

अर्थ–तेवार कोई एक (पुरिसेय के०) पुरुष जैन मार्गना जाण ते तेमने अहिंसा दिकने विषे पाडवाने अर्थे (सागणियाणइंगालाण के०) अग्नियें बलता अंगारा तेणे करी एक लोढानु (पाइके०) पात्र एटले भाजन भरीने (बहुपडिपुन्न के०) घणो प्र तिपूर्ण भरीने (अन्नमएण के०) लोढना (समासएणगहाय के०) समासी सहित ग्र हण करीने (तेसव्वेपावावए के०) ते सर्व प्रावादुक एटले परदर्शनी (आइगराधम्माण के०) पोतपोताना धर्मनी आदिना करनार, (णाणापन्नाजावणाणाज्झवसाणसजुत्तेके०)

अर्थ-(तेसव्वेपावाउयाआदिकराधम्माण के०) ते सर्वे प्रावाडुक एटले पाखंमी पोता ने ठदे धर्मना आदिना करनार कहियें, परंतु ते (णाणापन्ना के०) नाना प्रकारनी बु द्धि वाला, (णाणाछंदा के०) नाना प्रकारना अभिप्राय वाला, (णाणासीला के०) नानाप्रकारना आचारवाला, (णाणादिठी के०) नाना प्रकारनी दृष्टि वाला, (णाणारु ई के०) नाना प्रकारनी रुची वाला, (णाणारंजा के०) नाना प्रकारना आरंजना करनारा, (णाणाझवसाणसंजुत्ता के०) नाना प्रकारना अध्यवसाय तेणे करीने सहित एवा थका, पोतपोतानु (एगमहमंमलिबंधकिच्चा के०) एक महोटु मंमल बांधि करीने, एटले पंक्ति करीने, (सव्वेएगयाउचिठंति के०) ते सर्व एकज प्रदेशें तिष्ठंति एटले बेगठे ॥ ८० ॥

॥ दीपिका-ते सर्वे प्रावाडुका आदिकरा स्वधर्माणां। नानाप्रज्ञानानाछंदानानाभिप्रायाना नाविधादृष्टिर्दर्शन येषां ते तथा नानाविधा रुचिर्येषां ते तथा नानाविधारंजानानाविधा ध्यवसायसंयुक्ताएकं महांतमंडलिबंधं कृत्वा तिष्ठंति ॥८०॥

॥ टीका-तदेव सर्वप्रावाडुकामोक्तांगनूतामहिंसां न प्राधान्ये न प्रतिपद्यतइति दर्शयि तुमाह। (तेसव्वेइत्यादि) प्रवदनशीला प्रावाडुका सर्वेपि त्रिपष्ट्युत्तरत्रिशतपरिमाणाश्च पि आदिकरायथा स्व धर्माणां। येपिच तच्छिष्यास्तेपि सर्वे नानाभिन्ना प्रज्ञा ज्ञानं येषांते नानाप्रज्ञा । आदिकराइत्यनेनेदमाह । स्वरुचिविरचितास्ते नत्वनादिप्रवाहायाता । ननु चार्हतानामपि आदित्वविशेषणमस्त्येव सत्यमस्ति किंतु अनादिर्हेतुपरंपरेत्यनादित्व मेव तेषांच सर्वज्ञप्रणीतागमानाश्रयणान्निबंधनाजावस्तदजावाच्च भिन्नपरिज्ञानमतएव नानाछंदा ।छंदोऽभिप्राय । भिन्नाभिप्रायाइत्यर्थः ।तथाहि । उत्पादव्ययध्रौव्यात्मके वस्तु नि सांख्यैरेकांतेनाविर्जावतिरोजावाश्रयणादन्वयिनमेव पदार्थं सत्यत्वेनाश्रित्य नित्यप क्ष समाश्रितास्तथा शाक्याअत्यंतक्षणिकेषु पूर्वोत्तरभिन्नेषु पदार्थेषु सत्सु सएवायमिति प्रत्यभिज्ञा प्रत्यय सदृशापरापरोत्पत्तिर्वितथाना नवतीत्येतत्पक्षसमाश्रयणादनित्यपक्ष समाश्रिताइति । तथा नैयायिकवैशेषिका केषांचिदाकाशपरमाण्वादीनामेकांतेन नित्य त्वमेवकार्यद्रव्याणांच घटपटादीनामेकांतेनानित्यत्वमेवाश्रिता । एवमनया दिशाऽन्येपि मीमांसकतापसादयोऽन्यूह्याइति । तथा ते तीर्थिकानानाशील येषां ते तथा शील व्रत विशेष सच भिन्नस्तेषामनुनवसिद्धएव । तथा नाना दृष्टिर्दर्शनं येषांते तथा नानारु चिरेषां ते नानारुचयस्तथा नानारूपमध्यवसानमंत करणप्रवृत्तिर्येषां ते तथा इदमुक्तं नवति । अहिंसा परमं धर्मांग । साच तेषां नानाभिप्रायत्वादविकलत्वेन व्यवस्थिता । तस्याएव सूत्रकार प्राधान्यं दर्शयितुमाह । ते सर्वेपि प्रावाडुकायथास्वपक्षमाश्रिताएक त्र प्रदेशे संयुतामंमलिबंधमाधाय तिष्ठंति ॥८०॥

पुरिसेय सागणियाण इंगालाण पाइ बहुपभिपुन्न गहाय अगमएण समासएण गहाय ते सव्वे पावाडए आइगरा धम्माण णाणापन्ना जाव णाणाअवसाणसजुत्ते एवं वयासीहन्नो पावाउया आइगरा धम्माण णाणापन्ना जाव णाणाअज्ञवसाणसजुत्ता इम ताव तुम्ह सागणिया ण इंगालाण पाइ बहुपडिपुन्न गहाय मुहुत्तय पाणिणा धरेह णोबहु समासग ससारिय कुज्जा णो बहुअग्गिथम्नणिय कुज्जा णोबहु साह म्मियवेयावडिय कुज्जा णोबहुपरधम्मियवेयावडिय कुज्जा उज्जयाणिया गपडिवन्ना अमाय कुव्वमाणा पाणि पसारेह इति वुच्चा से पुरिसे तेसिं पावाडयाण त सागणियाण इंगालाण पाइ बहुपडिपुन्न अगमएण समासएण गहाय पाणिसु णिसिरिंति तएण तेपावाडया आइगरा ध म्माण णाणापन्ना जाव णाणाअवसाणसजुत्ता पाणिपडिसाहरति तए ण से पुरिसे ते सव्वे पावाउए आदिगरे धम्माण जाव णाणाअवसाणस जुत्ता एव वयासी हन्नो पावाडया आइगरा धम्माण णाणापन्ना जाव णाणाअवसाणसजुत्ता कम्हाण तुम्ने पाणि पडिसाहरह पाणि नोम्हि ज्जा दड्ढे किं नविस्सइ डुक्कति मन्नमाणा पडिसाहरह एसतुला एस पमाणे एस समोसरणे पत्तेयतुला पत्तेय पमाणे पत्तेय समोसरणे तत्रण जेते समणा माहणा एवमातिक्कति जाव परुवेति सव्वे पाणाजाव सत्ता हतव्वा अज्जावेयव्वा परिघेतव्वा परितावेयव्वा किलामेतव्वा उद्दवेतव्वा तेआगतुछेयाए तेआगतुन्नेयाए जाव ते आगतु जाइजरामरणजोणि जम्मणससारपुणनवगप्नवासन्नवपवच कलंकलीनागिणो नविस्सति ॥

अर्थ–तेचार कोई एक (पुरिसेय के०) पुरुष जैन मार्गनो जाण ते तेमने अहिंसा दिकने विषे पाडवाने अर्थे (सागणियाणइंगालाण के०) अग्नियें बलता अंगारा तेणे करी एक लोढानु (पाइके०) पात्र एटले नाजन नरीने (बहुपडिपुन्न के०) घणो प्र तिपूर्ण नरीने (अगमएण के०) लोहना (समासएणगहाय के०) समासी सहित ग्र हण करीने (तेसव्वेपावाडए के०) ते सर्व प्रावाडक एटले परदर्शनी (आइगराधम्माण के०) पोतपोताना धर्मनी आदिना करनार, (णाणापन्नाजावणाणाअवसाणसज्जुत्तेके०)

अर्थ-(तेसव्वेपावाउयाआदिकराधम्माण के०) ते सर्वे प्रावाडुक एटले पाखंडी पोता ने ढदे धर्मना आदिना करनार कहियें, परंतु ते (णाणापन्ना के०) नाना प्रकारनी बु द्धि वाला, (णाणाछदा के०) नाना प्रकारना अभिप्राय वाला, (णाणासीला के०) नानाप्रकारना आचारवाला, (णाणादिठी के०) नाना प्रकारनी दृष्टि वाला, (णाणारु ई के०) नाना प्रकारनी रुची वाला, (णाणारंभा के०) नाना प्रकारना आरंभना करनारा, (णाणाश्रवसाणसंजुत्ता के०) नाना प्रकारना अध्यवसाय तेणे करीने सहित एवा थका, पोतपोतानु (एगमहंमंडलिबंधकिच्चा के०) एक महोटु मंमल बांधि करीने, एटले पंकि करीने, (सव्वेएगयाउचिठंति के०) ते सर्वे एकज प्रदेशें तिष्ठंति एटले बेगडे ॥ ८० ॥

॥ दीपिका–ते सर्वे प्रावाडुकाआदिकरा स्वधर्माणा।नानाप्रज्ञानानाछंदानानाभिप्रायाना नाविधादृष्टिर्दर्शनं येषां ते तथा नानाविधा रुचिर्येषां ते तथा नानाविधारंजानानाविधा ध्यवसायसंयुक्ताएकं महांतमंडलिबंधं कृत्वा तिष्ठंति ॥८०॥

॥ टीका–तदेव सर्वप्रावाडुकामोक्षागभूतामहिंसां न प्राधान्ये न प्रतिपद्यंतइति दर्शयि तुमाह। (तेसव्वेइत्यादि) प्रवदनशीला प्रावाडुका सर्वेपि त्रिषष्ठ्युत्तरत्रिशतपरिमाणाअ पि आदिकरायथा स्व धर्माणा। येपिच तच्छिष्यास्तेपि सर्वे नानाभिन्ना प्रज्ञा ज्ञानं येषांते नानाप्रज्ञा । आदिकराइत्यनेनेदमाह । स्वरुचिविरचितास्ते तत्वनादिप्रवाहायाता । ननु चार्हतानामपि आदित्वविशेषणमस्त्येव सत्यमस्ति किंतु अनादिर्हेतुपरंपरेत्यनादित्व मेव तेषांच सर्वज्ञप्रणीतागमानाश्रयणान्निबंधनाजावस्तदनावाच्च भिन्नपरिज्ञानमतएव नानाछंदा ।छंदोऽभिप्राय । भिन्नाभिप्रायाइत्यर्थ ।तथाहि । उत्पादव्ययध्रौव्यात्मके वस्तु नि सांख्यैरेकांतेनाविर्जावतिरोजावाश्रयणादन्वयिनमेव पदार्थं सत्यत्वेनाश्रित्य नित्यप क्ष समाश्रितास्तथा शाक्याअत्यंतक्षणिकेषु पूर्वोत्तरभिन्नेषु पदार्थेषु सत्सु सएवायमिति प्रत्यभिज्ञा प्रत्यय सदृशापरापरोत्पत्तिर्वितथाना नवतीत्येतत्पक्षसमाश्रयणादनित्यपक्ष समाश्रिताइति । तथा नैयायिकवैशेषिका केषांचिदाकाशपरमाण्वादीनामेकांतेन नित्य त्वमेवकार्यद्रव्याणांच घटपटादीनामेकांतेनानित्यत्वमेवाश्रिता । एवमनया दिशाऽन्येपि मीमांसकतापसादयोऽभ्यूह्याइति । तथा ते तीर्थिकानानाशील येषां ते तथा शील व्रत विशेष सच भिन्नस्तेषामनुजवसिद्धएव । तथा नाना दृष्टिर्दर्शनं येषांते तथा नानारु चिरेषां ते नानारुचयस्तथा नानारूपमध्यवसानमंत करणप्रवृत्तिर्येषां ते तथा इदमुक्त नवति । अहिंसा परमं धर्मांग । साच तेषां नानाभिप्रायत्वादविकलत्वेन व्यवस्थिता । तस्याएव सूत्रकार प्राधान्यं दर्शयितुमाह । ते सर्वेपि प्रावाडुकायथास्वपक्षमाश्रिताएक त्र प्रदेशे संयुतामंमलिबंधमाधाय तिष्ठंति ॥८०॥

प्रावाडुक पाखंमी दर्शनीउं बोल्या के, अमने डु:ख उपजेछे, तेवारें फरी ते पुरुष बोल्यो के, (डुरकतिमन्नमाणा के०) जो तमे डु:ख जाणता अग्निनी दाऊ थकी बीहिता थका हाथ ने (पडिसाहरहके०) पाछा करोगो ? तो जेम तमे डु:ख थकी बीक राखोछो, तेम सर्व जीवने (एसतुल्लाके०) ए तुल्य एटले बराबर छे, (एसप्पमाणेके०) एप्रमाणे जाणवु (एससमो सरणे के०) ए समोसरण) पत्तेयतुल्ला के०) प्रत्येक प्रत्येकने सरखु, अने (पत्तेयप्प माणे के०) प्रत्येक प्रत्येकने प्रमाण, एवु (पत्तेयसमोसरणेके०) प्रत्येक प्रत्येकने समोस रण जाणवु (तछणजेतेसमणामाहणाएवमातिरकति के०) त्या जे श्रमण ब्राह्मण एम कहेछे (जावपरूवेतिके०) यावत् एम प्ररूपे छे के, (सवेपाणाजावसत्ताहतवा के०) सर्व प्राणी, यावत् सर्व सत्वने हणवा, (अज्ञावेयवाके०) दम काशादिके करी ताडवा, (प रियेतवा के०) वलात्कारे करी दासनी पेठें परिग्रहवा (परितावेयवा के०) शारीरिक मानसीक पीडा उपजाववी, (किलामेतवा के०) किलामण उपजाववी (उद्दवेतवा के०) उपद्रववा, तथा जीव, काया थकी रहित करवा एवा वचनना बोलनारा, (ते आगतुछेयाए के०) ते आगमिक कालें वारवार पोताना शरीरनु छेदन पामशे (तेआ गतुनेयाए के०) ते आगमिक कालें भालादिके करी पोताना शरीरनु भेदन पामशे, (जावतेआगतु के०) यावत् ते जीव आगमिक कालें (जाइजरामरण जोणिजम्मण के०) जाति, जरा, मरण, तथा नवी नवी योनी माहे उपजवु, तथा जन्मना डु:ख (संसारके०) एरीतें संसार माहे परिभ्रमण करता (पुणभव के०) वली वली नव नवा भवनु करवु, (गप्रवास के०) वली वली गर्भवास माहे वसवु, एरीतें (भवपव च के०) संसारनो प्रपंच एटले संसारनो विस्तार, (कलकलि के०) कलकलाट एटले डु:खें करी व्याकुल पणु, तेना (नागिणोभविस्सति के०) विभागी थशे ॥ ८१ ॥

॥ दीपिका–(पुरिसेयत्ति) एक कश्चित्पुरुष साग्निकाना ज्वलतामगाराणां प्रतिपू र्णां (पाइ) पात्रीं अयोमयेन लोहमयेन संदशकेन गृहीत्वा तेषां ढौकितवान् उवाच । नो प्रावाडुका ! इदमगारभृतं भाजनं एकैकं मुहूर्तं प्रत्येकं बिभृत यूयं ? । नचेदं संदशकं सांसारिकं नापि चाग्निस्तंभनं विदध्युः । नापिच साधर्मिकानामग्निदाहोपशमादिना उ पकारं कुर्युरिति । ऋजवोमायामकुर्वाणा पाणिं प्रसारयत तेपि तथैव कुर्युः ततोसौ नर स्तद्भाजनं तत्पाणौ समर्पयति । तेपि च दाहभयाद्धस्तं संकोचयति । ततोसौ पुरुषस्तान् प्राह किमिति पाणिं संहरत यूयं ? । ते प्राहुर्दाहभयात् । नर प्राह । दग्धेन हस्तेन किंभावि ? । डु:खमिति चेदेवं यूयं दाहोत्पन्नडु:खभीरवः सुखलिप्सवः । एवं सति सर्वे पि जंतवः संसारवर्तिनएवंविधाएवेति आत्मतुलया आत्मतुल्यत्वेन यथा मम डु:ख

नद्दाना प्रकारनी प्रज्ञावाला, यावत् नाना प्रकारना जे अध्यवसाय तेणे करी सयुक्त ए वा परदर्शनी ते आगल आवीने, (एववयासी के०) एवु कहेछे के (हनोपावाउया के०) अहो प्रावाडुको! (आइगराधम्माण के०) तमे धर्मनी आदिना करनारछो, (णाणाप न्नाजावणाणाञ्चवसाणसजुत्ता के०) तमे न्हाना प्रकारनी बुद्धिवाला, तथा न्हाना प्रका रना जे अध्यवसाय तेणे करी सयुक्तछो ते माटे, (इमतावतुम्हेसागणियाणइगालाणके०) ए तुमे अग्नियें बलता अगारा तेणे करी सहित एवोआ एक लोहनु (पाइके०) नाजन (बहुपडिपुन्न के०) घणु प्रतिपूर्ण तेने (गहायमुहुत्तय के०) ग्रहण करीने, एक मुहूर्त मात्र (पाणिणाधरेह के०) हाथ माहे धरी राखो, (णोबहुसमासगससारियकुव्वा के०) घणी समासानो सहाय मकरो (णोबहुअग्गियनणियकुव्वाके०) घणो अग्निने स्तंजनी एटले स्यनि राखे तेवी वियानु सहाय मकरो (णोबहुसाहम्मियवेयावडियकुव्वाके०) घणो माहो माहे साधर्मिकनु वैयावच्च नो करवो, एटले अग्नि दीधानो उपशमाववु मकरो (णोबहुपरध म्मियवेयावडियकुव्वा के०) घणो परधर्मिकनो माहो माहे वैयावच्चनो करवो एटले अग्नि दीधानो उपशमाववु मकरो मात्र (उज्जुयाके०) सरल थका (णियागपडिवन्नाके०) मोक्ष मार्ग प्रतिपन्न थका,(अमायकुव्वमाणापाणिपसारेह के०) माया रहित पणु करता थका हाथ पसारो (इतिवच्चाके०) एम कहीने, (सेपुरिसेके०) ते पुरुष (तंसागणियाणइगा लाणपाइबहुपडिपुन्न के०) ते अग्नि बलता अगरानु नाजन घणु प्रतिपूर्ण नरीने (अ उमएणसमासएणगहाय के०) लोहना समासा सहित ग्रहीने (तेसिपावाउयाणके०) ते प्रावाडुकना (पाणिसु के०) हाथनी उपरे (णिसिरिंति के०) मूके (तएणके०) तेवारे (तेपावाडयाआइगराधम्माण के०) ते प्रावाडुक धर्मनी आदिना करनार (णा णापन्नाजावणाणाञ्चवसाणसजुत्ता के०) नाना प्रकारनी प्रज्ञा वाला यावत् नाना प्र कारना अध्यवसाय तेणे करी सहित एवा छता ते प्रावाडुकने हाथमा अग्नि आपे छते (पाणिपडिसाहरति के०) पोताना हाथ पाछा खेचे एम पाछा हाथ करता देखीने (तएण के०) तेवारे (सेपुरिसे के०) ते पुरुष ते सर्व प्रावाडक धर्मना अदिना करना र नाना प्रकारनी प्रज्ञावाला यावत् नाना प्रकारना अध्यवसाय तेणे करी सहित ते प्रत्ये (एववयासी के०) एम कहेके (हनोपावाडया के०) हे प्रावाडुको! पोताना छदे ध र्मनी आदिना करनाराउ! नाना प्रकारनी प्रज्ञा वाला यावत् नाना प्रकारना अध्यवसाय तेणे करी सहित (कम्हाणतुम्नेपाणिपडिसाहरह के०) शाकारणे तमे हाथ पाछा खे चोछो तेवारे ते बोल्या (पाणिनोमहज्जाके०) अमारा हाथ नथी बलताशु ? अमारा हाथ बलेछे दाजेछे ते कारण माटे हाथ पाछा खेची लीधाछे तेवारे ते पुरुष फरी बोल्यो के (दड्ढेकिंनविस्सइ के०) तमारो हाथ दाजवाथी शु थवानुछे एवु सानली फरी ते

प्रावाडुक पाखंमी दर्शनीउं बोल्या के, अमने दुःख उपजेछे, तेवारे फरी ते पुरुष बोल्यो के, (डुक्कतिमन्नमाणा के०) जो तमे दुःख जाणता अग्निनी दाऊ थकी बीहिता थका हाथ नें (पडिसाहरहके०) पाछा करोछो ? तो जेम तमे दुःख थकी बीऊ राखोछो, तेम सर्व जीवने (एसतुल्लाके०) ए तुल्य एटले बराबर छे, (एसप्पमाणेके०) एप्रमाणे जाणवुं (एससमो सरणे के०) ए समोसरण) पत्तेयतुल्ला के०) प्रत्येक प्रत्येकने सरखुं, अने (पत्तेयप्प माणे के०) प्रत्येक प्रत्येकने प्रमाण, एवुं (पत्तेयसमोसरणेके०) प्रत्येक प्रत्येकने समोस रण जाणवुं (तञ्जणजेतेसमणामाहणाएवमातिरकति के०) त्यां जे श्रमण ब्राह्मण एम कहेछे (जावपरूवेतिके०) यावत् एम प्ररुपे छे के, (सव्वेपाणाजावसत्ताहंतवा के०) सर्व प्राणी, यावत् सर्व सत्वने हणवा, (अज्जावेयव्वाके०) दंम काशादिके करी ताडवा, (प रिघेतव्वा के०) बलात्कारे करी दासनी पेठें परिग्रहवा (परितावेयव्वा के०) शारीरिक मानसीक पीडा उपजाववी, (किलामेतव्वा के०) किलामणा उपजाववी (उद्दवेतव्वा के०) उपद्रवा, तथा जीव, काया थकी रहित करवा एवां वचनना बोलनारा, (ते आगतुछेयाए के०) ते आगमिक कालें वारवार पोताना शरीरनुं छेदन पामशे (तेआ गतुनेयाए के०) ते आगमिक कालें नालादिके करी पोताना शरीरनुं नेदन पामशे, (जावतेआगतु के०) यावत् ते जीव आगमिक कालें (जाइजरामरण जोणिजम्मण के०) जाति, जरा, मरण, तथा नवी नवी योनी माहे उपजवुं, तथा जन्मना दुःख (ससारके०) एरीतें संसार माहे परिभ्रमण करता (पुणनव के०) वली वली नव नवा नवनुं करवुं, (गप्रवास के०) वली वली गर्नवास माहे वसवुं, एरीतें (नवपव च के०) संसारनो प्रपंच एटले संसारनो विस्तार, (कलकलि के०) कलकलाट एटले दुःखें करी व्याकुल पणुं, तेना (नागिणोनविस्सति के०) विनागी थशे ॥ ८१ ॥

॥ दीपिका–(पुरिसेयत्ति) एकः कश्चित्पुरुषः साग्निकानां ज्वलतामंगाराणां प्रतिपू र्णां (पाइं) पात्रीं अयोमयेन लोहमयेन संदंशकेन गृहीत्वा तेषां ढौकितवान् उवाच । नो प्रावाडुका ! इदमंगारनृतं नाजनं एकैकं मुहूर्तं प्रत्येकं विनृत यूयं ? । नचेदं संदंशकं सांसारिकं नापि चाग्निस्तंनन विदध्युः । नापिच साधर्मिकानामग्निदाहोपशमादिना उ पकारं कुर्युरिति । ऋजवोमायामकुर्वाणाः पाणिं प्रसारयत तेपि तथैव कुर्युः ततोसो नर स्तन्नाजनं तत्पाणौ समर्पयति । तेपि च दाहनयाध्दस्तं संकोचयंति । ततोसौ पुरुषस्तान् प्राह किमिति पाणिं संहरत यूयं ? । ते प्राहुर्दाहनयात् । नरः प्राह । दग्धेन हस्तेन किंनावि ? । दुःखमिति चेदेवं यूयं दाहोत्पन्नदुःखनीरवः सुखलिप्सवः । एवं सति सर्वे पि जंतवः संसारवर्तिनएवंविधाएवेति आत्मतुलया आत्मतुल्यत्वेन यथा मम दुःख

न समत तथा सर्वजीवानामित्येतत्प्रमाण । एपा युक्ति तदेतत्समवसरण एषधर्मे विचार । आत्मवत्सर्वभूतानि य पश्यति सपश्यतीति प्रत्येक तुलासाम्यमित्यादि (तत्रणति) तत्र एव सति ये श्रमणब्राह्मणादयएवमाख्याति । सर्वे प्राणाहतव्या दडादिनि परितापयितव्याधर्मार्थेमरघट्टादिवहनादिनि परिग्राह्या श्राद्धादौ मत्स्याइव अपद्रावयितव्यायागादौ मेषाइव । एव ये नापते ते आगामिनि काले स्वशरीरस्य छेदाय जेदायच नापते । तथाऽगामिनि काले जातिजरामरणानि बहूनि प्राप्नुवति योन्यां जन्म योनिजन्म तद्बहुशोगर्नजावस्थाया लजते ससारप्रपचातर्गतास्तेजोवायुषु उच्चैर्गोत्रो६ लनेन कलकलीजावनाजोडु खव्याकुला स्यु ॥ ८१ ॥

॥ टीका–तेपा चैव व्यवस्थितानामेक कश्चित्पुरुपस्तेषां सविदर्थं ज्वलतामगाराणां प्रतिपूर्णा पात्रीमयोमय जाजनमयोमयेनैव सदशकेन गृहीत्वा तेपा ढौकितवानुवाच तान् । यथा जो प्रावाडुका ! सर्वोक्तविशेषणविशिष्टाइदमगारनृतं जाजनमेकक मुहूर्त प्रत्ये क सासारिकाणामिवाऽग्निस्तज्जन विधत्ते नापिच साधर्मिकाऽन्यधार्मिकाणामग्निदाहोपश मादिनोपकार कुरुतइति ऋजवोमायामकुर्वाणा पाणि प्रसारयत ? तेपिच तथैव कुर्युस्त तोऽसौ पुरुप तन्नाजन पाणौ समर्पयति तेपिच दाहशकया हस्त सकोचयेयुरिति । त तोसौ तानुवाच । किमिति पाणि प्रतिसहरत ? यूय एवमभिहितास्ते कचुर्दाहजयादिति । एतडुक्त जवति । अवश्यमग्निदाहजयान्न कश्चिदग्न्यभिमुख पाणि ददातीत्येतत्परोयं दृष्टां त । पाणिना दग्धेनापि किन्नवता जविप्यतीति डु खमिति चेदयमेव जवतोदाहापादित डु खनीरव सुखलिप्सवस्तदेवसति सर्वेपि जतव ससारोदरविवरवर्तिनएवभूताएवेत्येव मात्मतुलयाऽत्मौपम्येन यथा मम नाभिमतं डु खमित्येव सर्वजतूनामित्यवगम्याहिंसैव प्राधान्येनाश्रयणीया तदेतत्प्रमाण एपा युक्ति । आत्मवत्सर्वभूतानि य पश्यति सप श्यति । तदेव समवसरण सएषधर्मविचारोयत्राहिंसा सपूर्णा ॥ तत्रैव परमार्थतोधर्म इत्येव व्यवस्थिते तत्र ये केचनाविदितपरमार्था श्रमणब्राह्मणादयएव वक्ष्यमाणमा चक्षते परेपामात्मदार्ढ्योत्पादनायैव जापते तथैवमेव धर्म प्रज्ञापयति व्यवस्थापयंति तथान्येन प्राण्युपतापकारिणा प्रकारेण परेपा धर्म प्ररूपयति व्याचक्षते । तद्यथा । सवे प्राणाइत्यादि यावद्धतव्यादडादिनि परितापयितव्याधर्मार्थेमरघट्टादिवहनादिनि परिग्राह्याविशिष्टकाले श्राद्धादौ रोहितमत्स्याइव तथाऽपद्रावयितव्यादेवतायागादिनिमि त्त वस्तादयइवेत्येव ये श्रमणादय प्राणिनामुपतापकारिणीं जापा जापते आगामिनि काले ऽनेकशोबहुश स्वशरीरच्छेदायच जापते तथा ते सावद्यजापिणोजविष्यति काले जातिजरामरणानि बहूनि प्राप्नुवति । योन्या जन्म योनिजन्म तदनेकशोबहुशोगर्नेऽडु

त्कातजावस्थाया प्राप्नुवंति तथा संसारप्रपंचातर्गतास्तेजोवायुष्वूच्चैर्गोत्रो च्छजनेन कलं कलीनावनाजोनवति बहुशोनविष्यति च ॥ ८१ ॥

ते बहुण दम्रणाए बहूण मुम्रणाए तज्जणाए तालणाए अडुबंधणाए जाव घोलणाए माइमरणाए पितामरणाए नाइमरणाए नगिणीमरणाए नज्जापुत्तधूत्तसुण्हामरणाए दारिद्दाए दोहग्गाए अप्पियसंवासाए पियविप्पनुगाए बहुण डुक्कदोमणस्साए आनागिणो नविस्संति अणादियंचणं अणवयग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं नुज्जोनुज्जो अणुपरियट्टिस्संति ते णोसिज्झिस्संति णोबुज्झिस्संति जाव णोसव्वडुक्खाणं अंतं करिस्संति एस तुल्ला एस पमाणे एस समोसरणे पत्तेयं तुल्ला पत्तेयं पमाणे पत्तेयं समोसरणे ॥ ८२ ॥

अर्थ-(तेबहूणदम्रणाए के०) ते जीव घणा दमाशे, (बहूणमुम्रणाए के०) ते जीव घणा शरीरादिके मुमाशे, (तज्जणाए के०) अंगुलीयादिकनी तर्जना पामशे, (तालणाए के०) दंमादिके ताडना पामशे, (अडुबंधणाए के०) बंधीखानानां बंधन पामशे, (जावघोलणाए के०) यावत् ग्रावानी पेठें घोलाशे, (माइमरणाए के०) ते जीव मातानां मरणना डुःखने पामशे, (पितामरणाए के०) पितानां मरण, (नाइमरणाएके०) नाइना मरण, (नगिणीमरणाएके०) बेहेनना मरण, (नज्जापुत्तधूतसुण्हामरणाएके०) नार्याना मरण, पुत्रना मरण, दीकरीना मरण, पुत्रनीबहुना मरण थशे, तेने देखीने डुःख पामशे, डुःखी थशे, ते पुरुष, (दारिद्दाएके०) दरिद्री थशे, (दोहग्गाए के०) दौर्नागी थशे, (अप्पियसंवासाएके०) अप्रियकारीयो साथे तेनो संवास थशे, (पियविप्पउगाए के०) ते प्राणी प्रियकारी वस्तुनो विप्रयोग एटले वियोग पामशे, (बहूणडुक्कदोमणस्साए के०) घणां डुःख अने दौर्मनस्य पणानो (आनागिणोनविस्संति के०) विनागी थशे, तेपुरुष, (अणादियंचणं के०) आदि रहित, (अणवयग्गं के०) अंत रहित, (दीहमद्धं के०) दीर्घकालपर्यंत एटले घणाकालसुधी (चाउरंतसंसारकंतारं के०) चारगतिरूप अंत अवयवछे जेने विषे तेने चाउरंत कहियें एवी संसार रूप अटवी तेने विषे, (नुज्जोनुज्जो के०) वली वली (अणुपरियट्टिस्संति के०) परिन्रमण परावर्त्तन करशे, (तणोसिज्झिस्संति के०) ते पापमी जीव सीजशे नही, एटले पाताना कार्यनी सिद्धि करश नही, (णोबुज्झिस्संति के०) लोकालोकना स्वरूपने बुजशे नही, (जावणोसव्वडुक्खाणयंतंकरिस्संति के०) यावत् ते प्राणी सर्वडुःखनो अंत क

न समत तथा सर्वजीवानामित्येतत्प्रमाण । एपा युक्ति तदेतत्समवसरण एषधर्म विचार । आत्मवत्सर्वभूतानि य पश्यति सपश्यतीति प्रत्येक तुलासाम्यमित्यादि (तभ्णति) तत्र एव सति ये श्रमणब्राह्मणादयएवमाख्याति । सर्वे प्राणाहतव्या दडादिभि परितापयितव्याधर्मार्थमरघट्टादिवहनादिभि परिग्राह्या श्राद्धादौ मत्स्याइव अपद्रावयितव्यायागादौ मेपाइव । एव ये भापते ते आगामिनि काले स्वशरीरस्य छेदाय भेदायच भापते । तथाऽगामिनि काले जातिजरामरणानि बहूनि प्राप्नुवति योन्यां जन्म योनिजन्म तद्दुःशोगर्भजावस्थाया लभते ससारप्रपचातर्गतास्तेजोवायुषु उच्चैर्गोत्रोद् ऌनेन कलकलीभावभाजोदुःखव्याकुला स्यु ॥ ८१ ॥

॥ टीका—तेपा चैव व्यवस्थितानामेक कश्चित्पुरुषस्तेषां सविदर्थं ज्वलतामगाराणां प्रतिपूर्णां पात्रीमयोमय भाजनमयोमयेनेव सदशकेन गृहीत्वा तेपा ढौकितवानुवाच तान्। यथा भो प्रावादुका ! सर्वोक्तविशेषणविशिष्टाइदमगारभृतं भाजनमेकक मुहूर्त प्रत्ये क सासारिकाणामिवाऽग्निस्तभन विधत्ते नापिच साधर्मिकाऽन्यधार्मिकाणामग्निदाहोपश मादिनोपकार कुरुतइति ऋजवोमायामकुर्वाणा पाणि प्रसारयत ? तेपिच तथैव कुर्युस्त तोऽसौ पुरुष तद्भाजन पाणौ समर्पयति तेपिच दाहशकया हस्त सकोचयेयुरिति । त तोसो तानुवाच। किमिति पाणि प्रतिसहरत? यूयं एवमभिहितास्ते ऊचुर्दाहभयादिति । एतदुक्त भवति । अवश्यमग्निदाहभयान्न कश्चिदग्न्यभिमुख पाणि ददातीत्येतत्परोयं दृष्टा त । पाणिना दग्धेनापि किंभवता भविष्यतीति दुःखमिति चेद्यद्येव भवतोवाङ्गापादित दुःखभीरव सुखलिप्सवस्तदेवसति सर्वेपि जतव ससारोदरविवरवर्तिनएवभूताएवेत्येव मात्मतुलयाऽत्मौपम्येन यथा मम नाभिमतं दुःखमित्येव सर्वजतूनामित्यवगम्याहिंसैव प्राधान्येनाश्रयणीया तदेतत्प्रमाण एषा युक्ति । आत्मवत्सर्वभूतानि य पश्यति सप श्यति । तदेव समवसरण सएपधर्मविचारोयत्राहिंसा सपूर्णा ॥ तत्रैव परमार्थतोधर्म इत्येव व्यवस्थिते तत्र ये केचनाविदितपरमार्था श्रमणब्राह्मणादयएव वक्ष्यमाणमा चक्षते परेपामात्मदार्ढ्योत्पादनार्थैव भापते तथैवमेव धर्म प्रज्ञापयंति व्यवस्थापयंति तथान्येन प्राण्युपतापकारिणा प्रकारेण परेपा धर्म प्ररूपयति व्याचक्षते । तद्यथा । सर्वे प्राणाइत्यादि यावद्धतव्यादडादिभि परितापयितव्याधर्मार्थमरघट्टादिवहनादिभि परिग्राह्याविशिष्टकाले श्राद्धादौ रोहितमत्स्याइव तथाऽपद्रावयितव्यादेवतायागादिनिमि त्त वस्तादयइवेत्येव ये श्रमणादय प्राणिनामुपतापकारिणीं भापा भापते आगामिनि काले ऽनेकशोबहुश स्वशरीरछेदायच भापते तथा ते सावद्यभाषिणोभविष्यति काले जातिजरामरणानि बहूनि प्राप्नुवति । योन्या जन्म योनिजन्म तदनेकशोबहुशोगर्भेषु

क्रांतजीवस्थायां प्राप्नुवंति तथा संसारप्रपंचांतर्गतास्तेजोवायुएचैर्गोत्रो ब्लनेन कल कलीनावनाजोनवति बहुशोन्नविष्यति च ॥ ७१ ॥

ते बहुण दम्मणाण बहूण मुम्मणाण तज्जणाण तालणाण अडुबंधणाण जाव घोलणाण माइमरणाण पितामरणाण नाइमरणाण नगिणीमरणाण नज्जापुत्तधूत्तसुण्हामरणाण दारिद्दाण दोहग्गाण अप्पियसंवासाण पियविप्पनंगाण बहुण डुक्कदोमणस्साण आन्नागिणो नविस्संति अणादियंचण अणवयग्ग दीहमद्ध चाउरंतसंसारकंतारं नुज्जोनुज्जो अणुपरियट्टिस्संति ते णोसिज्झिस्संति णोबुज्झिस्संति जाव णोसव्वडुक्काण अंतं करिस्संति एस तुल्ला एस पमाणे एस समोसरणे पत्तेयं तुल्ला पत्तेयं पमाणे पत्तेयं समोसरणे ॥ ७२ ॥

अर्थ-(तेबहूणदम्मणाण के०) ते जीव घणा दमाशे, (बहूणमुम्मणाण के०) ते जीव घणा शरीरादिके मुमाशे, (तज्जणाण के०) अंगुलीयादिकनी तर्जना पामशे, (तालणाण के०) दमादिके ताडना पामशे, (अडुबंधणाण के०) बधीखानानां बंधन पामशे, (जावघोलणाण के०) यावत् आवानी पेठें घोलाशे, (माइमरणाण के०) ते जीव मातानां मरणनां डुःखने पामशे, (पितामरणाण के०) पितानां मरण, (नाइमरणाणके०) नाइनां मरण, (नगिणीमरणाणके०) बेहेननां मरण, (नज्जापुत्तधूतसुण्हामरणाणके०) नार्यानां मरण, पुत्रनां मरण, दीकरीनां मरण, पुत्रनीवहुनां मरण थशे, तेने देखीनें डुःख पामशे, डुःखी थशे, ते पुरुष, (दारिद्दाणके०) दरिड्री थशे, (दोहग्गाण के०) दौर्न्नागी थशे, (अप्पियसंवासाणके०) अप्रियकारीयो साथे तेनो संवास थशे, (पियविप्पउंगाण के०) ते प्राणी प्रियकारी वस्तुनो विप्रयोग एटले वियोग पामशे, (बहूणडुक्कदोमणस्साण के०) घणां डुःख अने दौर्मनस्य पणानो (आन्नागिणोनविस्संति के०) निन्नागी थशे, तेपुरुष, (अणादियंचण के०) आदि रहित, (अणवयग्ग के०) अंत रहित, (दीहमद्ध के०) दीर्घकालपर्यंत एटले घणाकालसुधी (चाउरंतसंसारकंतार के०) चारगतिरूप अंत अवयवडे जेने विषे तेने चाउरंत कहियें एवी संसार रूप अटवी तेने विषे, (नुज्जोनुज्जो के०) वली वली (अणुपरियट्टिस्संति के०) परिन्रमण परावर्त्तन करशे, (तेणोसिज्झिस्संति के०) ते पांचमी जीव सीजशे नही, एटले पातानां कार्यनी सिद्धि करशे नही, (णोबुज्झिस्संति के०) लोकालोकनां स्वरूपने बुजशे नही, (जावणोसव्वडुक्काणअंतंकरिस्संति के०) यावत् ते प्राणी सर्वडुःखनो अंत क

रशे नहीं एवी रीते स्वदर्शनी पण, जे पूर्वोक्त नाषा बोलशे ते सीजसे नही एम निर्धे जाणवु हवे जे उत्तम पुरुषने एवी तुल्यता राखवी जे सर्व जीव प्रत्येक तुल्य, प्रत्ये क प्रमाण, एप्रमाणे प्रत्येक समोसरण पण ठे ॥ ७२ ॥

॥ दीपिका–ते नरावहूनां दडनादीनां शरीरड खानां नाजन नवति तथा मातृमरणा दीनां मानसड खाना तथाऽन्येषामप्रियसयोगार्थनाशादिनिर्ड खनागिनोनविष्यंति । किं बहुना । (अणादियत्ति) अनादिक नविद्यतेऽवदग्रोऽतोयस्य सोऽनवदग्रोऽनत तं दीर्घा ध्वान चतुर्गतिमार्गं चातुरतं ससारकांतारमनुपरिवर्तिष्यंते अरहट्टघटीवद्भ्रमिष्यति न बोध प्राप्स्यंति न सेत्स्यति सर्वड खानामतं न करिष्यति एपतुला एतत्साम्यं यत्सावद्याचारान सिध्यंति कुमतिन स्वमतेपि औद्देशिकादिन्नोजिनस्तथैव एतत्प्रमाण प्रत्यक्षादिक प्रत्य क्षेण चौराद्याबाध्यमानाद्दश्यते । एवमन्येपि एतत्समवसरण आगमविचार प्रत्येक प्र तिजीवमिद साम्य इष्टव्य ॥ ७२ ॥

॥ टीका–तथा ते बहूना दंडादीनां शारीराणां ड खानामात्मान नाजन कुर्वंति तथा ते निर्विवेकामातृवधादीना मानुषाणां ड खानां तथान्येपामप्रियसयोगार्थनाशादिनिर्ड खदौर्मनस्यानामाचागिनोनविष्यंतीति । किंबहुनोक्तेनोपसहारव्याजेन । गुरुतरमर्थंत बध दर्शयितुमाह । (अणादिय इत्यादि) नास्यादिरस्तीत्यनादि ससार। तदनेनेदमुक्तनव ति । यत्कैश्चिदनिहितं यथायमण्डकादिक्रमेणोत्पादितइत्येतदपास्तं । नविद्यतेऽवदग्र पर्यंतो यस्य सोयमनवदग्रोऽपर्यंतइत्यर्थ । तदनेनेदमुक्त नवति। यड्क्त कैश्चियथा प्रलय कालेऽशेपसागरजलप्लावन द्वादशादित्योजमेन चात्यतदाहइत्यादिक सर्व मिथ्येति दीर्घमि त्यनतपुजलपरावर्तरूप कालावस्थान तथा चत्वारोंतागतयोयस्य सतथा चातुर्गतिक इत्यर्थ । तत्ससारएव कांतार ससारकातारोनिर्जल सनयस्त्राणरहितोऽरण्यप्रदेश कांतार इति । तदेवनूत नूयोनूय पौन पुन्येनानुपरिवर्तिष्यते अरहट्टघटीन्यायेन तत्रैव भ्रमत स्थास्यंतीत्यतएवाह । यतस्ते प्राणिनां हतार कुतएतदिति चेत्सावद्योपदेशादेतदपि कथ मिति चेदतऔद्देशिकादिपरिनोगानुज्ञयेत्येवमवगतव्यमित्यतस्ते कुप्रावचनिकानैव से त्स्यंति नैव ते लोकाग्रस्थानमाक्रमिष्यति तथा न ते सर्वपदार्थान् केवलज्ञानावाप्त्या नो त्स्यंते । अनेन ज्ञानातिशयनावमाह । तथा न तेऽष्टप्रकारेण कर्मणा मोक्ष्यंते। अनेना प्यसिद्धिकैवल्यावाप्तेश्च कारणमाह । तथा परिनिर्वृति परिनिर्वाणमानंदसुखावाप्तिस्तां ते नैव प्राप्स्यते तेनापि सुखातिशयानाव प्रदर्शितोनवतीति। तथा नैते शारीरमानसानां ड खानामात्यंतिकमतं करिष्यतीत्यनेनाप्यपायातिशयानाव प्रदर्शितोनवति । एषातु

ला तदेतडुपमानं यथा सावद्यानुष्ठानपरायणा सावद्यनापिणश्च कुप्रावचनिकान सिध्यत्ये व स्वयूथ्या अप्यौद्देशिकादिपरिन्नोगिनोन सिध्यतीति। तदेतत्प्रमाणं प्रत्यक्षानुमानादिकं। तथाहि। प्रत्यक्षेणैव जीवपीडाकारि चौर्यादिर्बंधनान्न मुच्यते। एवमन्येपीत्यनुमानादि कमप्यायोज्य। तथा तदेतत्समवसरणमागमविचाररूपमिति प्रत्येकंच प्रतिप्राणि प्रतिप्रा वाडुकमेतत्तुजादिकं डृष्टव्यमिति ॥ ८२ ॥

तत्थ्ण जे ते समणा माहणा एवमाइक्कति जाव परूवेति सवे पाणा स वेन्नूया सवेजीवा सवेसत्ता णहतवा णअज्ञावेयवा णपरिघेतवा णउद्दवेय वा तेणो आगतुछेयाए तेणोआगतुन्नेयाए जाव जाइजरामरणजोणि जम्मण संसारपुणप्रवगप्रवासन्नवएव कलकलीनागिणो नविस्संति तेणोवढूण दम्नणाण जाव णोवढूणं मुम्नणाण जाव वढूण डुक्कदोमण स्साण णोन्नागिणो नविस्संति अणादियंचण अणवयग्गं दीहमद्ध चाउरंत संसारकंतारे नुज्जोनुज्जो णोअणुपरियट्टिस्संति तेसिं स्सिज्झंति जाव सवडुक्काण अंत करिस्संति ॥ ८३ ॥

अर्थ–त्याजे श्रमण ब्राह्मण, सर्व जीवने पोताना आत्मा समान लेखवीने एवो धर्म कहेशे, यावत् प्ररूपशे, के सर्व प्राणी, सर्वनूत, सर्व जीव, सर्व सत्वने हणवा नही, एकांतदया पालवी, यावत् सर्व सत्वने उपड्रववा नही, ते पुरुषो, आगमिक कालें पोताना शरीरनुं छेदन नहीं पामशे, ते आगमिक काले नेदन नहीं पामशे, ते पुरुष यावत् जाति, जरा, मरण, वली वली योनीमांहे उपजवु, जन्मनुं डुःख, संसारमांहे परिन्रमण करवु, वली वली गर्नवास मांहे वसवु, संसारनो विस्तार प्रपंच, तथा कलकलाट तेनो विनागी नहीं थशे ते पुरुष, घणो दमाशे नहीं, यावत् डुःख दौर्मनस्य पणानो विनागी नहीं थशे, आदिरहित अंतरहित दीर्घ पंथछे, एटले दीर्घ काल पर्यंत चारगति रूप संसार, तद्रूप अटवीने विषे वली वली परिन्रमण परावर्त्त नही करशे ए रीतें दया धर्मना प्ररुपनार पुरुषो सीजशे कार्यसिद्धि करशे, यावत् सर्व डुःखनो अंत करशे ॥ ८३ ॥

॥ दीपिका–अथैतद्विपरीतानाह। (तहणंति) तत्र ये ज्ञातव्या श्रमणमाहनास्ते ए वमाख्यांतीत्यादि सर्वं पूर्वसूत्रविपरीतं वाच्यं ॥ ८३ ॥

॥ टीका–ये पुनर्विदिततत्वायात्मौपम्येनात्मतुजया सर्वजीवेष्वहिंसां कुर्वाणाएवमा चक्षते। तद्यथा सर्वेपि जीवाडुःखद्विषः सुखलिप्सवस्ते न हंतव्याइत्यादि। तदेव पूर्वोक्तं वडनादिकं सप्रतिषेधं नणनीयं यावत्तंसारकांतारमचिरेणैव ते व्यतिक्रमिष्यतीति ॥ ८३

रशें नहीं एवी रीते स्वदर्शनी पण, जे पूर्वोक्त नाषा बोलशे ते सीजसे नही एम निर्वे जाणवु हवे जे उत्तम पुरुषने एवी तुल्यता राखवी जे सर्व जीव प्रत्येक तुल्य, प्रत्येक प्रमाण, एप्रमाणे प्रत्येक समोसरण पण छे ॥ ८२ ॥

॥ दीपिका–ते नराबहूनां दंडनादीनां शरीरदुःखानां नाजनं नवंति तथा मातृमरणादीनां मानसदुःखाना तथाऽन्येषामप्रियसंयोगार्थनाशादिनिर्दुःखनागिनोनविष्यंति । किं बहुना । (अणादियंति) अनादिकं नविद्यतेऽवदग्रोऽतोयस्य सोऽनवदग्रोऽनंतं तं दीर्घाध्वानं चतुर्गतिमार्गं चातुरंतं संसारकांतारमनुपरिवर्तिष्यंते अरहट्टघटीवद्भ्रमिष्यंति न बोधं प्राप्स्यंति न सेत्स्यंति सर्वदुःखानामंतं न करिष्यंति एषतुला एतत्साम्यं यत्सावद्याचारान सिध्यंति कुमतिन स्वमतेपि औद्देशिकादिनोजिनस्तथैव एतत्प्रमाणं प्रत्यक्षादिकं प्रत्यक्षेण चौराद्याबाध्यमानाद्दृश्यते । एवमन्येपि एतत्समवसरणं आगमविचारं प्रत्येकं प्रतिजीवमिदं साम्यं द्रष्टव्यं ॥ ८२ ॥

॥ टीका–तथा ते बहूनां दंडादीनां शारीराणां दुःखानामात्मानं नाजनं कुर्वंति तथा ते निर्विवेकामातृवधादीनां मानुषाणां दुःखानां तथान्येषामप्रियसंयोगार्थनाशादिनिर्दुःखदौर्मनस्यानामानागिनोनविष्यंतीति । किंबहुनोक्तेनोपसंहारव्याजेन । गुरुतरमर्थसंबंधं दर्शयितुमाह । (अणादियं इत्यादि) नास्यादिरस्तीत्यनादि संसारं। तदनेनेदमुक्तंनवति । यत्कैश्चिदनिहितं यथायमंमकादिक्रमेणेत्यादितइत्येतदपास्तं । नविद्यतेऽवदग्रं पर्यंतो यस्य सोयमनवदग्रोऽपर्यंतइत्यर्थः । तदनेनेदमुक्तं नवति । यदुक्तं कैश्चिद्यथा प्रलयकालेऽशेषसागरजलप्लावनं द्वादशादित्योज्मेन चात्यंतदाहइत्यादिकं सर्वं मिथ्येति दीर्घमित्यनंतपुज्जलपरावर्तरूपं कालावस्थानं तथा चत्वारोंतागतयोयस्य सतथा चातुर्गतिक इत्यर्थः । तत्संसारएव कांतारं संसारकांतारोनिर्जलं सनयस्त्राणरहितोऽरण्यप्रदेशः कांतार इति । तदेवनूतं नूयोनूयः पौनःपुन्येनानुपरिवर्तिष्यंते अरहट्टघटीन्यायेन तत्रैव भ्रमंतः स्थास्यंतीत्यतएवाह । यतस्ते प्राणिनां हंतारः कुतएतदिति चेत्सावद्योपदेशादेतदपि कथमिति चेदतऔद्देशिकादिपरिनोगानुज्ञयेत्येवमवगंतव्यमित्यतस्ते कुप्रावचनिकानैव सेत्स्यंति नैव ते लोकाग्रस्थानमाक्रमिष्यंति तथा न ते सर्वपदार्थान् केवलज्ञानावाप्त्या नोत्स्यंते । अनेन ज्ञानातिशयनावमाह । तथा न तेऽष्टप्रकारेण कर्मणा मोक्ष्यते । अनेनाप्यसिद्धेरकैवल्यावाप्तेश्च कारणमाह । तथा परिनिर्वृतिं परिनिर्वाणमानंदसुखावाप्तिस्तां ते नैव प्राप्स्यंते तेनापि सुखातिशयानाव प्रदर्शितोनवतीति । तथा नैते शारीरमानसानां दुःखानामात्यंतिकमंतं करिष्यंतीत्यनेनाप्यपायातिशयानाव प्रदर्शितोनवति । एषातु

योगने स्ववश करनार, ते श्रात्मयोगी कहेवाय श्रात्माना सुखनें श्रर्थे पराक्रमनो करनार, श्रात्मानो रक्षक, श्रात्माने श्रनुकपानो करनार, श्रात्मानो ससार थकी निस्तार करनार, श्रात्माने ए वार क्रियाना स्थानक थकी निवृत्तावे, 'तेने महा पुरुष जाणिये तिवेमिनो श्रर्थ पूर्ववत् जाणवो ए श्री सूयगडागसूत्रना बीजा श्रुतस्कधने विषे क्रिया स्थानक नामे बीजा श्रध्ययननो सक्षेपार्थ बालाववोध समाप्त थयो ॥ ७५ ॥

॥ दीपिका–तथा एतस्मिन् त्रयोदशे क्रियास्थाने धर्मपक्षावतार । ततोत्र वर्तमाना जीवा सिद्धा सिध्यति सेत्स्यंतीत्यादि । तदेव सनिकुर्द्वादशक्रियास्थानवर्जकोऽधर्मपक्षत्यागी धर्मपक्षस्थस्त्रयोदशक्रियास्थानवर्ती श्रात्मनोर्थे श्रात्मार्थे सविद्यते यस्य स श्रात्मार्थी श्रात्महित श्रात्मा गुप्तोयस्य सतथा श्रात्मयोग कुशलमन प्रवृत्तिरूप सय स्यास्ति सश्रात्मयोगी श्रात्मपराक्रम सय सयमानुष्ठानप्रवृत्त । श्रात्मा रक्षितोडुर्गतिपातायेन सश्रात्मरक्षित श्रात्मानमनर्थपरिहारेणानुकपते इत्यात्मानुकपक (श्रायनिप्फेडएत्ति) श्रात्मान सयमेन ससारचारकान्निष्कासयतीति श्रात्मान द्वादशक्रियास्थानेभ्य प्रतिसहरेत्समहापुरुष । इतिसमाप्तो । ब्रवीमीति पूर्ववत् ॥ ७५ ॥ इति तपागछाधिपतिश्रीहेमविमलसूरीश्वरशिष्यहर्षकुलपडितप्रणीताया श्रीसूत्रकृतागदीपिकाया द्वितीय श्रुतस्कधस्य क्रियास्थानाख्य द्वितीयमध्ययन समाप्त ॥ ॥ ॥

॥ टीका–साप्रत त्रयोदश क्रियास्थान दर्शयितुमाह । (एवमित्यादि) एतस्मिंस्त्रयोदशे क्रियास्थाने वर्तमानाजीवा सिद्धा सिध्यंति सेत्स्यंतीति यावत्सर्वडु खानामत करिष्यतीति स्थित । तदेव सनिकुर्य पौंडरीकाध्ययनेऽभिहितो द्वादशक्रियास्थानवर्जक श्रधर्मपक्षानुपशमपरित्यागी धर्मपक्षे स्थितउपशांतश्रात्मनोवार्थे श्रात्मार्थ सविद्यते यस्य सतथा योह्यन्यमपायेभ्योरक्षति स श्रात्मार्थ्यात्मवानित्युच्यते । हिताचाराश्चर्चारादयोनात्मवतोऽयंत्वात्महितऐहिकामुष्मिकापायभीरुत्वात्तयात्मागुप्तोयस्य तथा । एतडुक्तनवति । स्वयमेवासौ सयमानुष्ठाने पराक्रमते तथात्मयोगी श्रात्मनोयोग कुशलमनप्रवृत्तिरूपश्रात्मयोग सयस्यास्ति । सदाधर्मध्यानावस्थितइत्यर्थ । तथात्मा पापेभ्योडुर्गतिगमनादिभ्योरक्षितोयेन सतथा डुर्गतिगमनहेतुनिबधनस्य सावद्यानुष्ठानस्य निवृत्तत्वादितिनाव । तथात्मानमेवानर्थपरिहारद्वारेणानुकपते शुजानुष्ठानेन सद्गतिगामिन विधत्तइति । तथात्मान सम्यग्दर्शनादिकेनानुष्ठानेन ससारचारकान्नि सारयतीति । तथात्मानमनर्थभूतेभ्योद्वादशेभ्य क्रियास्थानेभ्य प्रतिसहरेत् । यदि वोपदेशश्यात्मान सर्वपापेभ्य प्रतिसहियात् सर्वानर्थेभ्योनिवर्तयेदित्येतस्मिन्महापुरुषे सनाव्यतइति । इति परि

इच्चेतेहिं बारसहिं किरियाठाणेहिं वट्टमाणा जीवा णोसिज्झिंसु णोबुज्झिं सु णोमुच्चिंसु णोपरिणिव्वाइंसु जाव णोसव्व दुक्खाणं अंतकरेंसुवा णो करेंतिवा णोकरिस्संतिवा ॥ ८४ ॥

अर्थ—ए पूर्वोक्त बार क्रियाना स्थानकने विषे वर्त्तता एवाजे जीव, ते कोइ अतीत कालें सिधा नथी, बुज्या नथी, कर्म थकी मूकाणा नथी, निवृत्या नथी, यावत् सर्वदु खनो अंत पण कोइये अतीत कालें कर्यो नथी, वर्त्तमान कालें करता नथी, आग मिक कालें पण करशे नहीं कारणके, ए बार क्रियाना स्थानक जे छे, ते अधर्मप क्षने मलताज छे ॥ ८४ ॥

॥ दीपिका—अथोपसंहरति । (इच्चेतेहिंति) इत्येतेषु द्वादशसु क्रियास्थानेषु अधर्म पक्षो ऽवतार्यते । ततएतेषुवर्त्तमानाजीवान सिद्धान सिध्यंति न सेत्स्यंति न मुक्तान मुच्यंते मो क्ष्यते न बुद्धान बुध्यंते न चोत्स्यते न सर्वदुःखानामंतं चक्रुर्न कुर्वंति न करिष्यंति ॥८४॥

॥ टीका—जणितानि क्रियास्थानाति साप्रतमुपसंजिघृक्षुरेतदेव पूर्वोक्त समासेन विचणि षुराह् (इच्चेतेहिंइत्यादि) इत्येतेषु द्वादशसु क्रियास्थानेष्वधर्मपक्षोऽनुपशमरूप समव तार्यते न एतेषु वर्तमानाजीवाअतीते काले सिद्धान वर्तमाने सिध्यंति न जविष्यति सेत्स्यं ति तथा न बुबुधिरे न बुध्यंते नच जोत्स्यंते तथा न मुमुचुर्न मुचंति नच मोक्ष्यंते तथा न नि वृत्ता न निर्वर्त्यंते नचनिर्वास्यंति तथा न दुःखानामंतं ययुर्न पुनर्याति नच यास्यंतीति॥८४

एयंसि चेव तेरसमे किरियाठाणे वट्टमाणा जीवा सिज्झिंसु बुज्झिंसु मुच्चिं सु परिणिव्वाइंसु जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेंसुवा करंति करिस्संतिवा एवं से जिक्खु आयट्ठी आयहिते आयगुत्ते आयजोगे आयपरक्कमे आयरक्खिए आयाणुकंपए आयनिप्फेडए आयाणमेवपडिसाहरेज्जा सि त्तिबेमि ॥८५॥ इति बीयसुयखंधस्सकिरियाठाणनामबीयमज्झयणंसम्मत्तं॥

अर्थ—ए पूर्वं कह्युजे निश्चे तेरमु क्रिया स्थानक तेने विषे वर्त्तता एवा जे जीव, ते जीव अतीत काले सिधा तत्वमार्गेने बुज्या, आठ कर्म थकी मूकाणा परिनिवृत्त शी तलीजूत थया, यावत् सर्व दुःखनो अतीत कालें अंत कीधो, वर्त्तमान कालें अंत करे छे, अने आगमिक कालें अंत करशे, एम ते साधु चारित्रिउ बार क्रिया स्थानकनो वर्ज नार मोक्षार्थी, आत्मार्थी, आत्मानु हित चिंतवनार, आत्मानो गोपवनार, मनादिक

भेद होय. (एवमाहिज्जइ के०) ते आ प्रकारे तीर्थंकरे कह्या (तंजहा के०) ते कहेछे (अग्गबीया के०) जेने अग्रे बीज उपजे ते अग्र बीज कहेवाय ते तिल, ताल, सह कारादिक अथवा शाल्यादिक जाणवा, तथा जे अग्र तेने विषे उत्पत्तिना कारणने पामे तेपण, अग्र बीज कहेवाय, ते कोरटकादिक जाणवा, एटले ए प्रथम भेद जाणवो तथा (मूलबीयाके०) आर्द्रकादिक ए बीजो भेद जाणवो, (पोरबीयाके०) पर्व बीज ते सेलडी प्रमुख, ए त्रीजो भेद जाणवो (स्कधबीयाके०) स्कधबीज ते सालरा नाग र्जुन प्रमुख, ए चोयो भेद जाणवो (तेसिंचणके०) ते चार प्रकारना वनस्पतिकाय (अ हाबीएणके०) यथा जे जेनु बीज उत्पत्ति कारण, ते यथा बीज एटले ते तेनु बीज जाणवु जेम शालीना अकुरनु शाली बीज उत्पत्ति कारणछे, एम अन्यत्र स्थानके पण जाणी लेवु (अहावगासेण के०) तथा जे जेनो अवकाश एटले उत्पत्ति स्थानक पृथवी, पाणी, काल, आकाश, बीज, सयोग, एने यथावकाश कहियें एम यथा बीजे तथा यथावकाशें करीने, (इहेगतियासत्ता के०) आ जगत्मांहे कोइ एक सत्व, तथाविध कर्मना उदय थकी, वनस्पतिने विषे उपजनार ठतो उपजे, ते वनस्पतिने विषे उपजतां (पुढवीजोणि याके०) पृथवीयोनिक थाय यद्यपि तेनु वनस्पतिज बीज कारणछे परतु, आधार विना उत्पत्तिनो अभावछे, ते कारण माटें पृथवीयोनिक कह्या जेम शेवालादिक कर्दमना आ धारेछे, पण पृथ्वी विना थाय नही, एम आहीं पण जाणी लेवु (पुढविसंनवाके०) पृथ वीने विषे वनस्पतिकायनो संनवछे (पुढवीवुक्कमाके०) तथा पृथवीने विषे विविध एटले नाना प्रकारें प्रबल पणे सक्रमणछे जेनु ते पृथवीवुक्कमाकहियें एटले एम कह्युजे पृथवीने विषे ते वनस्पतिकायनी उपर उपर वृद्धिछे (तज्जोणिया के०) ते पृथवीयोनिक होय (तस्संनवाके०) ते पृथवीने विषे वनस्पतिकायनो संनवछे,(तवुवक्कमाके०)ते पृथवीने विषे नाना प्रकारे प्रबल पणे सक्रमणछे,(कम्मोवगाके०)ते जीव तथाविध वनस्पतिकाय संनवि कर्म प्रेर्यमान ठता त्यां वनस्पतिने विषे उपशमीप पृथवीने विषे जाय, ते कारणे एने कम्मो वगा कहिये, एटले ते जीव कर्मना वशगत वनस्पतिकाय थकी आवीने वली तेज वनस्प तिकायने विषे उपजे,पण अन्यत्रथी आव्या अन्यत्र नउपजे जेम कुसम पुरियें वाव्यां एवा बीजोना मथुरायें अकुरो नमले, ज्यां जेहनु बीज, त्यांज तेना अकुरोनी उत्पत्ति जाणवी (कम्मणियाणेणके०) तथा ते जीव कर्मने कारणे आकर्षित (तछवुक्कमाके०) त्यां पृथ विने विषे तथा वनस्पतिने विषे, वुक्कमा एटले आव्या ठता (णाणाविहजोणितासुपुढ वीसु के०) नाना प्रकारयोनी पृथवीने विषे (रुक्कत्ताए के०) रूख पणे (विउट्टंतिके०) उपजे, (तेजीवातेसिंणाणाविहनाणियाणपुढवीण के०) ते जीव ते नाना प्रकार योनी पृथवीनो (सिणेहमाहारंति के०) स्नेह आहारे तेहीज तेनो आहार ते पृथवीना

समाप्त्यर्थे । ब्रवीमीति पूर्ववत् । नया पूर्ववव्द्याख्येया ॥ समाप्त क्रियास्थानाख्यं द्वितीयमध्ययनमिति ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

॥ अथ द्वितीयश्रुतस्कंधे तृतीयाध्ययनप्रारंभ ॥

हवे बार क्रिया स्थानकने वर्जनार एवा चारित्रवान पुरुषे शुद्धाहार लेवो, ते कारण माटे हवे आहार परिज्ञा नामे त्रीजुं अध्ययन प्रारंभियें ठैयें

सुयमे आउस तेण भगवया एव मक्खाय इह खलु आहारपरिन्नाणाम झयणे तस्सण अयमट्ठे इह खलु पाईणवा सवतो सवावतिचण लोगसि चत्तारि बीयकाया एव माहिज्जति तजहा अग्गबीया मूलबीया पोरबीया खंधबीया तेसिचण अहा बीएणं अहावगासेण इहेगतिया सत्ता पुढवीजोणिया पुढविसंभवा पुढवीवुक्कमये तज्जोणिया तस्स भवा तडवक्कमा कम्मोवगा कम्मणियाणेण तवुक्कमा णाणाविह जोणियासु पुढवीसु रुक्खत्ताए विउट्टति तेजीवा तेसिं णाणाविहजो णियाण पुढवीण सिणेह माहारेति॥१॥ते जीवा आहारेति पुढवीसरीरं आउसरीर तेउसरीर वाउसरीर वणस्सइसरीर णाणाविहाणतसथा वराण पाणाण सरीर अचित्त कुवति परिविद्धब त सरीर पुवाहारिय तयाहारिय विपरिणय सारूवियकड सत अवरेवियण तेसि पुढविजो णियाण रुक्खाण सरीरा णाणावन्ना णाणागधा णाणारसा णाणाफा सा णाणासठाणसठिया णाणाविहसरीरपुग्गलविउवित्ता तेजीवा कम्मोववन्नगा भवति तिमक्खायं ॥ २ ॥

अर्थ–(सुयमेआउसतेण के०) श्रीसुधर्मस्वामी जंबू प्रत्यें कहेछे के, मे एवुं सांभल्युं छे जे, आयुष्यमंत (भगवयाएवमक्खायं के०) भगवंत श्रीमहावीर देवें एम कह्युं छे (इहखलु के०) निश्चें आ जिनशासनने विषे (आहारपरिन्नाणामज्झयणे के०) आहारपरिज्ञा एवे नामे अध्ययन कह्युं (तस्सणअयमट्ठे के०) तेनो ए अर्थ आगल कहेछे (इहखलु के०) निश्चे आ जगत् मांहे (पाईणवा के०) पूर्वादिक चारदिशिने विषे तथा विदिशिने विषे (सवतोसव्वावतिचणलोगसि के०) सर्व थकी सर्व, एतावता सर्व लोकने विषे (चत्तारिबीयकाया के०) चार, बीज कायना प्रकार एटले उत्पत्तिमा

नेद होय. (एवमाहिज्जइ के०) ते आ प्रकारे तीर्थंकरे कह्या (तंजहा के०) ते कहेछे (अग्गवीया के०) जेने अग्रे वीज उपजे ते अग्र वीज कहेवाय ते तिल, ताल, सह कारादिक अथवा शाल्यादिक जाणवा, तथा जे अग्र तेने विषे उत्पत्तिना कारणने पामे तेपण, अग्र वीज कहेवाय, ते कोरंटकादिक जाणवा, एटले ए प्रथम नेद जाणवो तथा (मूलवीयाके०) आईकादिक ए वीजो नेद जाणवो, (पोरवीयाके०) पर्व वीज ते सेलडी प्रमुख, ए त्रीजो नेद जाणवो (खंधवीयाके०) स्कंधवीज ते सालरा नाग र्जुन प्रमुख, ए चोथो नेद जाणवो (तेसिंचणंके०) ते चार प्रकारना वनस्पतिकाय (अ हावीएणंके०) यथा जे जेनु वीज उत्पत्ति कारण, ते यथा वीज एटले ते तेनु वीज जाणवु जेम शालीना अंकुरनु शाली वीज उत्पत्ति कारणछे, एम अन्यत्र स्थानके पण जाणी लेवु (अहावगासेणं के०) तथा जे जेनो अवकाश एटले उत्पत्ति स्थानक पृथवी, पाणी, काल, आकाश, वीज, संयोग, एने यथावकाश कहियें एम यथा वीजे तथा यथावकाशें करीने, (इहेगतियासत्ता के०) आ जगत्मांहे कोइ एक सत्व, तथाविध कर्मना उदय थकी, वनस्पतिने विषे उपजनार ठतो उपजे, ते वनस्पतिने विषे उपजतां (पुढवीजोणि याके०) पृथवीयोनिक थाय यद्यपि तेनु वनस्पतिज वीज कारणछे परंतु, आधार विना उत्पत्तिनो अनावछे, ते कारण माटें पृथवीयोनिक कह्या जेम शेवालादिक कर्दमना आ धारेछे, पण पृथ्वी विना थाय नही, एम आहीं पण जाणी लेवु (पुढविसंनवाके०) पृथ वीने विषे वनस्पतिकायनो संनवछे (पुढवीवुक्कमाके०) तथा पृथवीने विषे विविध एटले नाना प्रकारें प्रबल पणे संक्रमणछे जेनु ते पृथवीवुक्कमाकहियें एटले एम कह्युजे पृथवीने विषे ते वनस्पतिकायनी उपर उपर वृद्धिछे (तज्जोणिया के०) ते पृथवीयोनिक होय (तस्संनवाके०) ते पृथवीने विषे वनस्पतिकायनो संनवछे,(तडुवक्कमाके०)ते पृथवीने विषे नाना प्रकारे प्रबल पणे संक्रमणछे,(कम्मोवगाके०)ते जीव तथाविध वनस्पतिकाय संनवि कर्म प्रेर्यमान ठता त्यां वनस्पतिने विषे उपशमीप पृथवीने विषे जाय, ते कारणे एने कम्मो वगा कहियें, एटले ते जीव कर्मना वशागत वनस्पतिकाय थकी आवीने वली तेज वनस्प तिकायने विषे उपजे,पण अन्यत्रथी आव्या अन्यत्र नउपजे जेम कुसम पुरियें वाव्यां एवा वीजोना मथुरायें अंकुरो नमले, ज्यां जेहनु वीज, त्यांज तेना अंकुरोनी उत्पत्ति जाणवी (कम्मणियाणेणके०) तथा ते जीव कर्मने कारणे आकर्षित (तञ्चवुक्कमाके०) त्यां पृथ विने विषे तथा वनस्पतिने विषे, वुक्कमा एटले आव्या ठता (णाणाविहजोणितासुपुढ वीसु के०) नाना प्रकारयोनी पृथवीने विषे (रुक्खत्ताए के०) रुख पणे (विउट्टंतिके०) उपजे, (तेजीवातेसिंणाणाविहजाणियाणपुढवीण के०) ते जीव ते नाना प्रकार योनी पृथवीना (सिणेहमाहारंति के०) स्नेह आहारे तेहीज तेनो आहार ते पृथवीना

समाप्त्यर्थं । ब्रवीमीति पूर्ववत् । नया पूर्ववव्द्याख्येया ॥ समाप्त क्रियास्थानाख्यं द्वितीयमध्ययनमिति ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

॥ अथ द्वितीयश्रुतस्कंधे तृतीयाध्ययनप्रारंभ ॥

हवे बार क्रिया स्थानकने वर्जनार एवा चारित्रवान पुरुषे शुद्धाहार लेवो, ते कारण माटे हवे आहार परिज्ञा नामे त्रीजुं अध्ययन प्रारंभियें ठैयें

सुयमे आउस तेण भगवया एव मरकाय इह खलु आहारपरिणाणाम ज्ञयणे तस्सण अयमठे इह खलु पाईणवा सवतो सवावतिचण लो गसि चत्तारि बीयकाया एव माहिज्जति तजहा अग्गबीया मूलबीया पोरबीया रकधबीया तेसिचण अहा बीएण अहावगासेण इहेगतिया सत्ता पुढवीजोणिया पुढविसंभवा पुढवीवुक्कमये तज्जोणिया तस्स भवा तडवक्कमा कम्मोवगा कम्मणियाणेण तव्वुक्कमा णाणाविह जोणियासु पुढवीसु रुरकत्ताए विउट्टति तेजीवा तेसिं णाणाविहजो णियाण पुढवीण सिणेह माहारेति ॥१॥ ते जीवा आहारेति पुढवीसरीर आउसरीर तेउसरीर वाउसरीर वणस्सइसरीर णाणाविहाणतसथा वराण पाणाण सरीर अचित्त कुवति परिविध्धठ त सरीर पुव्वाहारिय तयाहारिय विपरिणय सारूवियकड सत अवरेवियण तेसि पुढविजो णियाण रुरकाण सरीरा णाणावन्ना णाणागधा णाणारसा णाणाफा सा णाणासठाणसठिया णाणाविहसरीरपुग्गलविउवित्ता तेजीवा क म्मोववन्नगा भवति तिमरकायं ॥ २ ॥

अर्थ-(सुयमेआउसतेण के०) श्रीसुधर्मस्वामी जंबू प्रत्यें कहेछे के, मे एवुं सांभळ्युं छे जे, आयुष्मंत (भगवयाएवमरकायं के०) भगवंत श्रीमहावीर देवें एम कह्युंछे (इहखलु के०) निश्चे आ जिनशासनने विषे (आहारपरिणाणामज्झयणे के०) आ हारपरिज्ञा एवे नामे अध्ययन कह्युं (तस्सणअयमठे के०) तेनो ए अर्थ आगळ क हेछे (इहखलु के०) निश्चे आ जगत् मांहे (पाईणवा के०) पूर्वादिक चारदिशिने विषे तथा विदिशिने विषे (सव्वतोसव्वावतिचणलोगंसि के०) सर्व थकी सर्व, एतावता सर्व लोकने विषे (चत्तारिबीयकाया के०) चार, बीज कायना प्रकार एटले उत्पत्तिमा

नेद होय. (एवमाहिज्जइ के०) ते आ प्रकारे तीर्थंकरे कह्या (तंजहा के०) ते कहेछे (अग्गबीया के०) जेने अग्रे बीज उपजे ते अग्र बीज कहेवाय ते तिल, ताल, सह कारादिक अथवा शाल्यादिक जाणवा, तथा जे अग्र तेने विषे उत्पत्तिना कारणने पामे तेपण, अग्र बीज कहेवाय, ते कोरटकादिक जाणवा, एटले ए प्रथम नेद जाणवो तथा (मूलबीयाके०) आर्द्रकादिक ए बीजो नेद जाणवो, (पोरबीयाके०) पर्व बीज ते सेलडी प्रमुख, ए त्रीजो नेद जाणवो (स्कंधबीयाके०) स्कंधबीज ते सालरा नाग र्जुन प्रमुख, ए चोथो नेद जाणवो (तेसिंचणंके०) ते चार प्रकारना वनस्पतिकाय (अ हाबीएणंके०) यथा जे जेनु बीज उत्पत्ति कारण, ते यथा बीज एटले ते तेनु बीज जाणवु जेम शालीना अकुरनु शाली बीज उत्पत्ति कारणछे, एम अन्यत्र स्थानके पण जाणी लेवु (अहावगासेणं के०) तथा जे जेनो अवकाश एटले उत्पत्ति स्थानक पृथवी, पाणी, काल, आकाश, बीज, संयोग, एने यथावकाश कहियें. एम यथा बीजे तथा यथावकाशें करीने, (इहेगतियासत्ता के०) आ जगत्मांहे कोइ एक सत्व, तथाविध कर्मना उदय थकी, वनस्पतिने विषे उपजनार छतो उपजे, ते वनस्पतिने विषे उपजतां (पुढवीजोणि याके०) पृथवीयोनिक थाय यद्यपि तेनु वनस्पतिज बीज कारणछे परंतु, आधार विना उत्पत्तिनो अनावछे, ते कारण माटें पृथवीयोनिक कह्या जेम शेवालादिक कर्दमना आ धारेछे, पण पृथ्वी विना थाय नही, एम आहीं पण जाणी लेवु (पुढविसंनवाके०) पृथ वीने विषे वनस्पतिकायनो संनवछे (पुढवीवुक्कमाके०) तथा पृथवीने विषे विविध एटले नाना प्रकारे प्रबल पणे संक्रमणछे जेनु ते पृथवीवुक्कमाकहिये एटले एम कयुजे पृथवीने विषे ते वनस्पतिकायनी उपर उपर वृद्धिछे (तज्जोणिया के०) ते पृथवीयोनिक होय (तस्संनवाके०) ते पृथवीने विषे वनस्पतिकायनो संनवछे,(तडुवक्कमाके०)ते पृथवीने विषे नाना प्रकारे प्रबल पणे संक्रमणछे,(कम्मोवगाके०)ते जीव तथाविध वनस्पतिकाय संनवि कर्मे प्रेर्यमान छता त्यां वनस्पतिने विषे उपसमीप पृथवीने विषे जाय, ते कारणे एने कम्मो वगा कहियें, एटले ते जीव कर्मना वशगत वनस्पतिकाय थकी आवीने वली तेज वनस्प तिकायने विषे उपजे,पण अन्यत्रथी आव्या अन्यत्र नउपजे जेम कुसम पुरियें वाव्यां एवा बीजोना मथुरायें अकुरो नमले, ज्यां जेहनु बीज, त्यांज तेना अकुरोनी उत्पत्ति जाणवी (कम्मणियाणेणंके०) तथा ते जीव कर्मने कारणे आकर्षित (तज्ञवुक्कमाके०) त्यां पृथ विने विषे तथा वनस्पतिने विषे, वुक्कमा एटले आव्या छता (णाणाविहजोणितासुपुढ वीसु के०) नाना प्रकारयोनी पृथवीने विषे (रुक्खत्ताए के०) रूख पणे (विउट्टंतिके०) उपजे, (तेजीवातेसिंणाणाविहजोणियाणंपुढवीण के०) ते जीव ते नाना प्रकार योनी पृथवीना (सिणेहमाहारेंति के०) स्नेह आहारे तेहीज तेनो आहार ते पृथवीना

शरीरने आहारता पृथवीने पीडा उपजावे नहीं ॥ १ ॥ पठी (तेजीवा के०) ते जीव, (आहारेतिपुढवीसरीर के०) पृथवीनु शरीर आहारे, एमज (आउसरीर के०) अपकायनु शरीर, (तेउसरीर के०) तेज कायनु शरीर, (वाउसरीर के०) वायुकायनु शरीर, (वणस्सइसरीर के०) वनस्पतिकायनु शरीर, (णाणाविहाणततथावराण पाणाणसरीर के०) तथा नाना प्रकारना त्रस अने स्थावर प्राणीउंना शरीर आहारे, परतु तेमने पीडा नउपजावे तेनु कारण कहेछे, जेम अमजादिक जीव गर्नस्थ इतां माताना उदरनो आहार करे, परतु माताने पीडा उपजावे नहीं, तेम अहीं पण जाणी लेवु तथा उपन्या पठी वृद्धि प्राप्त अनेक वर्ण रसादिक गुण सहित थाय, तेवारें पण कांइ पीडा उपजावे एरीतें ते जीव पृथवीकाय प्रमुख जीवोनु (सरीरअचित्तकुवति के०) शरीर अचित्त करे (परिविद्धत्थ के०) परिविध्वस करें (तके०) ते वनस्पतिना जीव तेणे (सरीरपुव्वाहारिय के०) पृथवी कायादिकनु जे शरीर पूर्वे आहारयु, ते अधुना हमणा वनस्पतिना जीव उत्पद्यमान उपजता, अथवा उपना (तयाहारियं के०) त्वचाने स्पर्शे करी आहारीने, (विपरिणय के०) परिणमावीने (सारूविकडसत के०) पोतानी काया सरखा रूप करे, (अवरेविथण के०) अपर एटले अन्य बीजा शरीर मूल, शाखा, प्रतिशाखा, पत्र, पुष्प, फलादिक, एवा रूप करे तथा (तेसिं पुढवीजोणियाण के०) ते पृथवीयोनिक (रुक्खाण के०) वृक्ष, तेनां (सरीरा के०) शरीर, ते (णाणावसाण के०) नाना प्रकारना वर्ण, (णाणागधा के०) नाना प्रकारना गध, (णाणारसा के०) नाना प्रकारना रस, (णाणाफासा के०) नाना प्रकारना स्पर्श, (णाणासगणसठिता के०) नाना प्रकारना सस्थाने करी सस्थित, (णाणाविहसरीरपुग्गलविउव्विता के०) तथा नाना प्रकारना शरीरना पुद्गलें करी विकूर्व्या थका होय, एरीतें (तेजीवा के०) तेजीव (कम्मोववन्नगाभवति तिमरकाय के०) वनस्पतिने विषे तथाविध कर्मने उदये उपना होय परतु आहीं काल, ईश्वरादिक कारण कोइ समजवो नही एम नगवत श्रीतीर्थकर देवें कह्युं छे एटले पृथवीयोनिक वृक्ष कह्या ॥ २ ॥

॥ दीपिका–अथाहारपरिज्ञाख्य तृतीयमध्ययनमारभ्यते । तस्येदमादिसूत्र । (सुयं मे इत्यादि) श्रुतं मयाऽऽयुष्मद्भगवतेदमाख्यात आहारपरिज्ञानाख्यमध्ययन । तस्य चा यमर्थ । प्राच्यादिदिक्षु सर्वत (सव्वावतित्ति) सर्वस्मिन लोके चत्वारोबीजकायाबीजप्र कारानवति । तद्यथा । अग्रे बीज येपामुत्पद्यते तेऽग्रबीजास्तालसहकारादय । अथवाऽ ग्राएवोत्पत्तौ का [illegible] तेऽग्रबीजा कोरटादय । मूलबीजाआर्द्रकादय पर्वबीजा

इक्षुप्रमुखा स्कंधबीजा सल्लक्यादय । नागार्जुनीयास्तु पठंति । वणस्सइकायाइयाणं पचविहा बीजवक्कंति ॥ एवमाहिज्जइ त अग्गमूलपोरखंधबीयरुहा ॥ छट्ठाविएगेंतियास मुछिमावीयाजायंते । यथा दवदग्धभूमौ हरितानि विविधानि उत्पद्यंते (तेसिंचणंति) तेषां चतुर्विधानामपि वनस्पतिकायानां यद्यस्य बीजं तद्यथा बीज तेन यथाबीजेन । कोर्थ ? । शाल्यंकुरस्य शालिबीजमुत्पत्तिकारणं एवमन्यदपि ज्ञेयं । योयस्यावकाशोयद्यस्यो त्पत्तिस्थान तद्यथावकाश तेन इह जगति एके केचन जीवावनस्पतौ उत्पद्यमानाअपि पृथिवीयोनिका पृथिवीसंभवा । कोर्थ ? । बीजाडुत्पद्यमानोवनस्पतिकाय पृथिव्याधारे समुत्पद्यते । यथा शैवलकर्दमादयोजलाधारे जायंते तथा वनस्पतयोभूमौ जायंते इत्य र्थ । तथा पृथिव्या व्युत्क्रमोवृद्धिर्येषां ते तथा एव ते तद्योनिकास्तत्संभवास्तद्व्युत्क्रमा कर्मोपगा कर्मप्रेर्यमाणा कर्मनिदानेन तत्र पृथिव्यां वनस्पतौ वा व्युत्क्रांताआगता स तोनानाविधयोनिकासु पृथिवीषु षण्णां कायानां उत्पत्तिस्थानभूतासु सचित्ताचित्तमिश्रा सु वृक्षतया विवर्तंते जायंते । तेच तत्रोत्पन्नास्तासां पृथिवीनां स्नेहं स्निग्धभावमाहारंति गृण्हंति ॥१॥ तेच तत्रोत्पन्नाआहारंति पृथिवीशरीरं । एवमप्कायतेजोवायुवनस्पतिशरीर मपि । नानाविधानां त्रसस्थावराणां प्राणिनां यच्छरीरं तत्स्वकायेनाश्रित्याचित्तं कुर्वंति । यदिवा परिविध्वस्तं पृथिव्यादिशरीरं पूर्वाहारितमिति पूर्वमुत्पत्तिसमये पृथिव्यादिभिरेव आहारितमासीत् । तदधुना वनस्पतिजीवस्तत्रोत्पद्यमानउत्पन्नोवा त्वचा स्पर्शेनाहारय ति आहार्यंच स्वकायत्वेन विपरिणामितं स्वकायेन सह (सारूविंति) स्वरूपत नीतं तन्मयं स्यात् (अवरेवियत्ति) अपराण्यपि पृथिवीकानां वृक्षाणां शरीराणि नानाव र्णादीनि यथा स्कंधस्यान्योवर्णादिर्मूलस्यान्यएव एवं यावन्नानाविधशरीरपुद्गलविकुर्विता स्यु । तथाहि । नानारसवीर्यविपाकानानापुद्गलोपचयात्सुरूपसंस्थानादृढाल्पसंहनना श्च स्युरिति । ते जीवावनस्पतिकाया कर्मोत्पन्नाएव न पुन कालेश्वरादिना तत्रोत्पद्यंत इत्याख्यातमर्हदादिभि ॥ २ ॥

॥ टीका—द्वितीयाध्ययनानंतरं तृतीयमारभ्यते । अस्य चायमभिसंबंध । कर्मक्षपणा र्थमुद्यतेन भिक्षुणा द्वादशक्रियास्थानरहितेनात्यक्रियास्थानसेविना सदाहारगुप्तेन भवि तव्य । धर्माधारभूतस्य शरीरस्याधारोभवत्याहार । सच मुमुक्षुणादेशकादिरहितोग्राह्य । तेनच प्राय प्रतिदिन कार्यमित्यनेन संबंधेनाहारपरिज्ञाध्ययनमायातं । अस्य चत्वार्यनु योगद्वाराण्युपक्रमादीनि भवंति । तत्रेदमध्ययनं पूर्वानुपूर्व्यां तृतीयं पश्चानुपूर्व्यां पंचम मानुपूर्व्यांत्वनियतमित्यर्थाधिकार । पुनरत्राहार शुद्धाशुद्धभेदेन निरूप्यते । निक्षेपस्त्रि विधउघादिस्तत्रोघनिष्पन्ने निक्षेपेऽध्ययनं । नामनिष्पन्ने तु आहारपरिज्ञेति द्विपदनाम ।

शरीरने आहारता पृथवीने पीडा उपजावे नहीं ॥ १ ॥ पछी (तेजीवा के०) ते जीव
(आहारेतिपुढवीसरीर के०) पृथवीनु शरीर आहारे, एमज (आउसरीरं के०)
अपकायनु शरीर, (तेउसरीर के०) तेज कायनु शरीर, (वाउसरीर के०) वायुकायनुं
शरीर, (वणस्सइसरीर के०) वनस्पतिकायनु शरीर, (णाणाविहाणतसथावराणं
पाणाणसरीर के०) तथा नाना प्रकारना त्रस अने स्थावर प्राणीउना शरीर आहारे
परतु तेमने पीडा नउपजावे तेनु कारण कहेछे, जेम अमजादिक जीव गर्भस्थ छतां
माताना उदरनो आहार करे, परतु माताने पीडा उपजावे नहीं, तेम अहीं पण जाणं
लेवु तथा उपन्या पछी वृद्धि प्राप्त अनेक वर्ण रसादिक गुण सहित थाय, तेवारें पण
काइ पीडा उपजावे एरीतें ते जीव पृथवीकाय प्रमुख जीवोनु (सरीरअचित्तकुवति के०)
शरीर अचित्त करे (परिविद्धत्थ के०) परिविध्वस करें (तके०) ते वनस्पतिना जीव
तेणे (सरीरपुव्वाहारिय के०) पृथवी कायादिकनु जे शरीर पूर्वे आहायु, ते अधुना
हमणा वनस्पतिना जीव उत्पद्यमान उपजता, अथवा उपना (तयाहारिय के०)
त्वचाने स्पर्शें करी आहारीने, (विपरिणय के०) परिणमावीने (सारूवियकडसं
के०) पोतानी काया सरखा रूप करे, (अवरेवियण के०) अपर एटले अने
बीजा शरीर मूल, शाखा, प्रतिशाखा, पत्र, पुष्प, फलादिक, एवा रूप करे तथा (ते
पुढवीजोणियाण के०) ते पृथवीयोनिक (रुक्खाण के०) वृक्ष, तेनां (सरी
के०) शरीर, ते (णाणावन्नाण के०) नाना प्रकारना वर्ण, (णाणागधा के०
नाना प्रकारना गध, (णाणारसा के०) नाना प्रकारना रस, (णाणाफासा के०
नाना प्रकारना स्पर्शे, (णाणासठाणसठिता के०) नाना प्रकारना सस्थानें करी
सस्थित, (णाणाविहसरीरपुग्गलविउव्विता के०) तथा नाना प्रकारना शरीरना पु
लें करी विकूर्व्या थका होय, एरीतें (तेजीवा के०) तेजीव (कम्मोववन्नगाभव
तिसमाउट्ट के०) वनस्पतिने विषे तथाविध कर्मने उदये उपना होय परतु आर्वं
काल, ईश्वरादिक कारण कोइ समजवो नहीं एम भगवत श्रीतीर्थंकर देवें कह्युं छे
एटले पृथवीयोनिक वृक्ष कह्या ॥ १ ॥

॥ दीपिका—अथाहारपरिज्ञाख्य तृतीयमध्ययनमारभ्यते । तस्येदमादिसूत्र । (सु
मे इत्यादि) श्रुत मयाऽयुष्मन्भगवतेदमाख्यात आहारपरिज्ञानाख्यमध्ययन । तस्य च
यमर्थ । प्राच्यादिदिक्षु सर्वत (सव्वावतित्ति) सर्वस्मिन लोके चत्वारोबीजकायाबीज
काराभवति । तद्यथा । अग्रे बीज येषामुत्पद्यते तेऽग्रबीजास्तालसल्लकारादय । अथवा
ग्रएवोत्पत्तौ कारण येषा तेऽग्रबीजा कोरटादय । मूलबीजाआर्द्रकादय पर्वबीज

दितइति ज्ञातव्योभवति। पुनरप्येषामेव स्वामिविशेषेणविशेषमाविर्भावयन्नाह। "उंयाहारा जीवा, सवेव्यपजत्तगामुणेयव्वा ॥ पक्खत्तगायलोमे,परकेवेहोइनायव्वा " ॥४॥ (उंयाहारइत्यादि) य प्रागुक्त शारीरेणौजसाहारस्तेनाहारेणाहारकाजीवा सर्वेप्यपर्याप्तकाज्ञातव्या । सर्वाभि पर्याप्तिभिरपर्याप्तास्ते वेदितव्या । तत्र प्रथमोत्पत्तौ जीव पूर्वशरीरपरित्यागे विग्रहेणाविग्रहेण चोत्पत्तिदेशे तैजसेन कार्मणेन शरीरेण तप्तस्नेहपतितसपानकवत्तत्प्रदेशस्थानात्पुद्गलानादत्ते तदुत्तरकालमपि यावदपर्याप्तकावस्था तावदोजयाहारइति। पर्याप्तकास्त्विन्द्रियादिभि पर्याप्तिभि पर्याप्ता केषाचिन्मतेन शरीरपर्याप्तकावा गृह्यते । तदेव ते लोमाहाराभवति । तत्र स्पर्शेन्द्रियेणोष्मादिना तप्तच्छायया शीतवायुनोदकेन प्रीयते प्राणी गर्भस्थोपि पर्याप्त्युत्तरकाल लोमाहारएवेति । प्रक्षेपाहारे तु भजनीया यदेव प्रक्षेप कुर्वंति तदेव प्रक्षेपाहारानान्यदा लोमाहारता तु वाय्वादिस्पर्शात्सर्वदैवेति । सच लोमाहारश्चक्षुष्मतामर्वाग्दृष्टिमता न दृष्टिपथमवतरत्यतोऽसौ प्रतिसमयवर्ती प्रायश. । प्रक्षेपाहारस्तूपलभ्यते प्राय सच नियतकालीय । तद्यथा । देवकुरूत्तरकुरुप्रभवाग्रष्टमभक्ताहारा सख्येयवर्षायुषामनियतकालीय प्रक्षेपाहारइति । साप्रत प्रक्षेपाहार स्वामिविभागेन दर्शयितुमाह । "एगिंदियदेवाण, नेरइयाणच नत्थि परकेवो ॥ सेसाण परकेवो, ससारत्थाणजीवाण " ॥ ५ ॥ (एगिंदियइत्यादि) एकमेव स्पर्शेन्द्रिय येषा भवत्येकेन्द्रिया पृथिवीकायादयस्तेषां देवनारकाणाच नास्ति प्रक्षेपस्तेहि पर्याप्त्युत्तरकाल स्पर्शेन्द्रियेणैवाहारयंतीति कृत्वा लोमाहारा । तत्र देवाना मनसा परिकल्पिता शुभा पुद्गला सर्वेणैव कायेन परिणमति नारकाणा त्वशुभाइति । शेषास्त्वौदारिकशरीरार्द्वीन्द्रियादयस्तिर्यङ्मनुष्यास्तेषा प्रक्षेपाहारइति। तेषा ससारस्थिताना कायस्थितेरेवाभावात्प्रक्षेपमतरेण कावलिकथ्याहारोजिव्हेन्द्रियसद्भावादिति । अन्येत्वाचार्याअन्यथा व्याचक्षते । तत्र यो जिव्हेन्द्रियेण स्थूल शरीरे प्रक्षिप्यते सप्रक्षेपाहार । यस्तु घ्राणदर्शनश्रवणैरुपलभ्यते धातुभावेन परिणमति सओजाहार । य पुन स्पर्शेन्द्रियेणैवोपलभ्यते धातुभावेन प्रयाति स लोमाहारइति । सांप्रतं कालविशेषमधिकृत्याऽनाहाकानभिधित्सुराह । " एक्कच दोव समए, तिन्निव समए मुहुत्तमध्वा ॥ सादीयमनिहणपुण, कालमणाहारगाजीवा ॥ ६ ॥ (एक्कचेत्यादि) तत्र । विग्गहगइमावन्ना, केवलिणा समुहया अयोगीया ॥ सिद्धाय अणा हारा, सेसा आहारगाजीवा । अस्यालेशतोयमर्थ । उत्पत्तिकाले विग्रहगतौ वक्रगतिमापन्ना केवलिनोलोकपूरणकाले समुद्घातावस्थिताअयोगिन शैलेशावस्था सिद्धाश्चानाहारका शेषास्तु जीवाहारकाइत्यवगतव्य । तत्र भवाद्भवातर यदा समश्रेण्या याति । तदा नाहारकान लभ्यते । यदापि विश्रेण्यामेकेन वक्रेणोत्पद्यते तदापि प्रथमसमये पूर्वशरीरस्थेनाहारितं द्वितीयेत्ववक्रसमये समाश्रितशरीरस्थेनति ।

तत्राहारपदनिक्षेपार्थमाह निर्युक्तिकार ॥ "नामठवणादविए, खेत्ते भावेय होंति बोधव्वो॥ एसो खलु आहारे, निक्खेवो होइ पंचविहो" ॥ १ ॥ (नामठवणेत्यादि) नामस्थाप नाद्रव्यक्षेत्रभावरूप पंचप्रकारोभवति निक्षेपआहारपदाश्रयइति । तत्र नामस्थापने नादृत्य द्रव्याहार प्रतिपादयितुमाह । "दव्वेसच्चित्तादी, खेत्ते नगरस्स जणवउ होइ ॥ भा वाहारो तिविहो, उए लोमेयपक्खेवे" ॥ २ ॥ (दव्वेइत्यादि) द्रव्याहारे चिंत्यमाने सचि त्तादिराहारस्त्रिविधोभवति । तद्यथा । सचित्तोऽचित्तोमिश्रश्च । तत्रापि सचित्त षड्वि ध. पृथिवीकायादिक । तत्र सचित्तस्य पृथिवीकायस्य लवणादिरूपापन्नस्याहारोद्रष्ट व्य । तथाप्कायादेरपीति । एवमिश्रोऽचित्तश्चायोज्य नवरमग्निकायमचित्त प्रायशोमनु ष्याआहारयंति उदनादेस्तद्रूपत्वादिति । क्षेत्राहारस्तु यस्मिन्क्षेत्रे आहार क्रियते तत्र्य द्यते व्याख्यायते । यदिवा नगरस्य योदेशोधान्यधनादिनोपभोग्य सक्षेत्राहार । तद्यथा। मथुराया समासन्नोदेश परिभोग्योमथुराहारो मावरकाहार खेडाहारइत्यादि । भावाहार स्त्वय । क्षुधोदयाद्भक्ष्यपर्यायोपपन्न वस्तु यदाहारयति सभावाहारइति । तत्रापि प्रायशआ हारस्य जिव्हेंद्रियविषयत्वात्तिक्तकटुककषायाम्ललवणमधुररसागृह्यते । तथाचोक्त । राईभ त्ते भावउ तित्तेवाजावमधुरेत्यादि । अन्यदपि प्रसगेन गृह्यते । तद्यथा खरविशदमभ्यव हार्ये भक्ष्य । तत्रापि पुष्पाढ्यउदन प्रशस्यते न शीत । उदकतु शीतमेव । तथाचोक्त शैत्यमपां प्रधानोगुण । एव तावदभ्यवहार्य द्रव्यमाश्रित्य भावाहार प्रतिपादित । सांप्र तमाहारकमाश्रित्य भावाहार निर्युक्तिकृदाह । भावाहारस्त्रिविधस्त्रिप्रकारोभवति । आ हारकस्य जतोस्त्रिभि प्रकारैराहारोपादानादिति । प्रकारानाह । (उएत्ति) तैजसेन श रीरेण तत्सहचरितेनच कर्मणा कार्मणेनाभ्या द्वाभ्यामप्याहारयति यावदपरमौदारिक शरीर न निष्पद्यते । तथाचोक्त । तेएण कम्मएण आहारेइ अणतर जीवो ॥ तेण पर मिस्से ण, जाव शरीरस्स निप्पत्ती॥१॥ तथा । उआहाराजीवा,सव्वे आहारगाअपज्जत्ता ॥ लोमा हारस्तु शरीरपर्याप्त्युत्तरकाल बाह्यया त्वचा लोमभिराहारोलोमाहारस्तथा प्रक्षेपेण कव लादेराहार प्रक्षेपाहार सच वेदनीयोदयेन चतुर्भि स्थानैराहारसज्ञावाभवति ।तथाचोक्त। चउहि ठाणेहि आहारसण्णासमुप्पज्जइ तंजहा उमोयाए छुहावेयणिज्जस्स कम्मस्स उदए ण मई एतयठोवउगेणति । साप्रतमेतेषां त्रयाणामप्येकयैव गाथया व्याख्यान कर्तुमाह।"स रीरेणोयाहारो,तयाय फासेण लोमआहारो ॥ पक्खेवाहारो पुण,कावलितो होइनायव्वो"॥३ (सरीरेणेत्यादि) तैजसेन कार्मणेनच शरीरेणौदारिकादिशरीरानिष्पत्तेर्मिश्रेणच यआहारः ससर्वोप्योजाहारइति केचिद्व्याचक्षते ।औदारिकादिशरीरपर्याप्त्या पर्याप्तकोपींद्रियानापा नभाषामन पर्याप्तिभिरपर्याप्तक शरीरेणाहारयन् उजाहारइति गृह्यते । तदुत्तरकाल त्व चा स्पर्शेंद्रियेण आहार सलोमाहारइति । प्रक्षेपाहारस्तु कावलिक कवलप्रक्षेपनिष्पा

दितइति ज्ञातव्योभवति। पुनरप्येषामेव स्वामिविशेषेणविशेषमाविर्भावयन्नाह। "उयाहारा जीवा, सव्वेअपज्जत्तगामुणेयव्वा ॥ पज्जत्तगायलोमे, पक्खेवेहोइभायव्वा" ॥४॥ (उयाहारइत्यादि) य प्रागुक्त शरीरेणौजसाहारस्तेनाहारेणाहारकाजीवा सर्वेप्यपर्याप्तकाज्ञातव्या । सर्वाभि पर्याप्तिभिरपर्याप्तास्ते वेदितव्या । तत्र प्रथमोत्पत्तौ जीव पूर्वशरीरपरित्यागे विग्रहेणाविग्रहेण चोत्पत्तिदेशे तैजसेन कार्मणेन शरीरेण तप्तस्नेहपतितसपानकवत्तत्प्रदेशस्थानात्पुद्गलानादत्ते तदुत्तरकालमपि यावदपर्याप्तकावस्था तावदोजआहारइति। पर्याप्तकास्त्विन्द्रियादिभि पर्याप्तिभि पर्याप्ता केषांचिन्मतेन शरीरपर्याप्तकावा गृह्यते । तदेव ते लोमाहाराभवति । तत्र स्पर्शेन्द्रियेणोष्मादिना तप्तच्छायया शीतवायुनोदकेन प्रीयते प्राणी गर्भस्थोपि पर्याप्त्युत्तरकाल लोमाहारएवेति । प्रक्षेपाहारे तु भजनीया यदेव प्रक्षेप कुर्वंति तदेव प्रक्षेपाहारानान्यदा लोमाहारता तु वाय्वादिस्पर्शात्सर्वदैवेति । सच लोमाहारश्चक्षुष्मतामर्वाग्दृष्टिमता न दृष्टिपथमवतरत्यतोऽसौ प्रतिसमयवर्ती प्रायश । प्रक्षेपाहारस्तूपलभ्यते प्राय सच नियतकालीय । तद्यथा । देवकुरूत्तरकुरुभवाअष्टमभक्ताहारा सख्येयवर्षायुषामनियतकालीय प्रक्षेपाहारइति । साम्प्रत प्रक्षेपाहार स्वामिविभागेन दर्शयितुमाह । "एगिंदियदेवाण, नेरइयाणच नत्थि पक्खेवो ॥ सेसाण पक्खेवो, ससारत्थाणजीवाण" ॥ ५ ॥ (एगिंदियइत्यादि) एकमेव स्पर्शेन्द्रिय येषा भवत्येकेन्द्रिया पृथिवीकायादयस्तेषा देवनारकाणाच नास्ति प्रक्षेपस्तेहि पर्याप्त्युत्तरकाल स्पर्शेन्द्रियेणैवाहारयतीति कृत्वा लोमाहारा । तत्र देवाना मनसा परिकल्पिता शुभा पुद्गला सर्वेणैव कायेन परिणमति नारकाणा त्वशुभाइति । शेषास्त्वौदारिकशरीराद्वीन्द्रियादयस्तिर्यङ्मनुष्यास्तेषा प्रक्षेपाहारइति । तेषा ससारस्थिताना कायस्थितेरेवाभावात्प्रक्षेपमन्तरेण कावलिकआहारोजिन्हेन्द्रियसद्भावादिति । अन्येत्वाचार्याअन्यथा व्याचक्षते । तत्र यो जिन्हेन्द्रियेण स्थूल शरीरे प्रक्षिप्यते सप्रक्षेपाहार । यस्तु घ्राणदर्शनश्रवणैरुपलभ्यते धातुभावेन परिणमति सउजाहार । य पुन स्पर्शेन्द्रियेणैवोपलभ्यते धातुभावेन प्रयाति स लोमाहारइति । सांप्रतं कालविशेषमधिकृत्याऽनाहाकानभिधित्सुराह । "एक्कच दोव समए, तिन्निव समए मुहुत्तमद्धवा ॥ सादीयमनिहणपुण, कालमणाहारगाजीवा ॥ ६ ॥ (एक्कचेत्यादि) तत्र । विग्गहगइमावन्ना, केवलिणो समुहया अयोगीया ॥ सिद्धाय अणा हारा, सेसा आहारगाजीवा । अस्यालेशतोयमर्थ । उत्पत्तिकाले विग्रहगतौ वक्रगतिमापन्ना केवलिनालोकपूरणकाले समुद्घातावस्थिताअयोगिन शैलेश्यवस्था सिद्धाश्चानाहारका शेषास्तु जीवाहारकाइत्यवगतव्य । तत्र भवाद्भवांतर यदा समश्रेण्या याति । तदा नाहारकोन लभ्यते । यदापि विश्रेण्यामेकेन वक्रेणोत्पद्यते तदापि प्रथमसमये पूर्वशरीरस्थेनाहारितं द्वितीयेत्ववक्रसमये समाश्रितशरीरस्थेनति ।

तत्राहारपदनिक्षेपार्थमाह निर्युक्तिकारः ॥ "नामठवणादविए, खेत्ते जावेय होंति बोधव्वो॥ एसो खलु आहारे, निक्खेवो होइ पंचविहो" ॥ १ ॥ (नामठवणेत्यादि) नामस्थापनाद्रव्यक्षेत्रजावरूपः पंचप्रकारोजवति निक्षेपआहारपदाश्रयइति । तत्र नामस्थापने अनादृत्य द्रव्याहारं प्रतिपादयितुमाह । "दव्वेसच्चित्तादी, खेत्ते नगरस्स जणवउ होइ॥ जावाहारो तिविहो, उए लोमेयपक्खेवे" ॥ २ ॥ (दव्वेइत्यादि) द्रव्याहारे चिंत्यमाने सचित्तादिराहारस्त्रिविधोजवति । तद्यथा । सचित्तोऽचित्तोमिश्रश्च । तत्रापि सचित्तः षडिध पृथिवीकायादिकः । तत्र सचित्तस्य पृथिवीकायस्य लवणादिरूपापन्नस्याहारोऽवसेव्य । तथापकायादेरपीति । एवमिश्रोऽचित्तश्चायोज्य नवरमग्निकायमचित्तं प्रायशोमनुष्याआहारयंति उदनादेस्तद्रूपत्वादिति । क्षेत्राहारस्तु यस्मिन्क्षेत्रे आहारः क्रियते व्यपदिश्यते व्याख्यायते । यदिवा नगरस्य योदेशोधान्यधनादिनोपजोग्यः सक्षेत्राहारः । तद्यथा। मथुरायाः समासन्नोदेशः परिजोग्योमथुराहारो माथुरकाहारः खेडाहारइत्यादि । जावाहारस्त्वयं ।क्षुधोदयाद्भक्ष्यपर्यायोपपन्नं वस्तु यदाहारयति सजावाहारइति । तत्रापि प्रायशआहारस्य जिव्हेंद्रियविषयत्वात्तिक्तकटुककषायाम्ललवणमधुररसागृह्यते।तथाचोक्तं। राईन्ते जावउ तित्तेवाजावमधुरेत्यादि । अन्यदपि प्रसंगेन गृह्यते । तद्यथा खरविशदमन्यवहार्यं नद्रव्य । तत्रापि पुष्पाढ्यउदनः प्रशस्यते न शीतः । उदकंतु शीतमेव । तथाचोक्तं शैत्यमपां प्रधानोगुणः । एवं तावदन्यवहार्यं द्रव्यमाश्रित्य जावाहारः प्रतिपादितः । सांप्रतमाहारकमाश्रित्य जावाहारं निर्युक्तिकृदाह । जावाहारस्त्रिविधस्त्रिप्रकारोजवति । आहारकस्य जतोस्त्रिनिः प्रकारैराहारोपादानादिति । प्रकारानाह । (उहेत्ति) तैजसेन शरीरेण तत्सहचरितेनच कर्मणा कार्मणेनान्याभ्यामप्याहारयति यावदपरमौदारिकं शरीरं न निष्पद्यते । तथाचोक्तं। तेएण कम्मएणं आहारेइ अणंतरं जीवो॥ तेणं परं मिस्सेणं, जाव शरीरस्स निप्पत्ती॥१॥ तथा। उआहाराजीवा,सव्वे आहारगाअपज्जत्ता ॥ लोमाहारस्तु शरीरपर्याप्त्युत्तरकालं बाह्यया त्वचा लोमनिराहारोलोमाहारस्तथा प्रक्षेपेण कवलादेराहारः प्रक्षेपाहारः सच वेदनीयोदयेन चतुर्भिः स्थानैराहारसज्ञावाजवति ।तथाचोक्तं। चउहिं गणेहिं आहारसण्णासमुप्पज्जइ तंजहा उमोयरियाए बुहावेयणिज्जस्स कम्मस्स उदएण मईए तयट्ठोवउगेणति । सांप्रतमेतेषां त्रयाणामप्येकयैव गाथया व्याख्यानं कर्तुमाह।"सरीरेणोयाहारो,तयाय फासेण लोमआहारो ॥ पक्खेवाहारो पुण,कावलितो होइनायव्वो"॥३ (सरीरेणेत्यादि) तैजसेन कार्मणेनच शरीरेणौदारिकादिशरीरानिष्पत्तेर्मिश्रेणच यआहारः ससर्वोप्योजाहारइति केचिद्व्याचक्षते।औदारिकादिशरीरपर्याप्त्या पर्याप्तकोपींद्रियानापानजापामनःपर्याप्तिनिरपर्याप्तकः शरीरेणाहारयन् उजाहारइति गृह्यते । तदुत्तरकालं त्वचा स्पर्शेंद्रियेण आहारः सलोमाहारइति । प्रक्षेपाहारस्तु कावलिकः कवलप्रक्षेपनिष्पा

त्वान्नाहारग्रहणाय कारणीभवति । प्राणवृत्तिस्तु तस्यानुपवर्तित्वात् आयुषोऽनंतवीर्यत्वा च्चान्यथा सिद्धेव धर्मचितावसरस्त्वपगतोनिष्ठितार्थत्वात् । तदेव केवलिन कावलिका काहारोवल्हपायत्वान्न कथंचिद्घटतइति स्थितं। अत्रोच्यते। तत्र तावद्यदुक्त घातिकर्मक्षये केवलज्ञानोत्पत्तावनंतवीर्यत्वान्न केवलिनोभुक्तिरिति । तदागमानभिज्ञस्य तत्वविचाररहित स्य युक्तिहृदयमजानतोवचनं । तथाहि यदाहारनिमित्त वेदनीयं कर्म तत्तस्य तथैवास्ते । किमिति? । सा शारीरी स्थिति प्राक्तनी नभवति प्रमाणंच अस्ति केवलिनोभुक्ति समग्र सामग्रीकत्वात्पूर्वभुक्तिवत् । सामग्रीचेयं प्रदेपाहारस्य तथयापर्याप्तत्वं वेदनीयोदयं आहारपक्तिनिमित्तं तैजसशरीरं दीर्घायुष्कत्वंचेति । तानिच समस्तान्यपि केवलिनि स ति । यदपि दग्धरज्जुसस्थानिकत्वमुच्यते वेदनीयस्य । तदप्यनागमिकमयुक्तिसंगतंच आग मेह्यत्यंतोदया सा तस्य केवलिन्यभिधीयते युक्तिरपि । यदि घातिकर्मक्षयाज्ज्ञानादयस्त स्याभूवन् वेदनीयोभ्रवाया क्षुधः किमायातं येनासौ न भवति । नतयोश्छायातपयोरिव सहानवस्थानलक्षणानामपि भावाभावयोरिव परस्परपरिहारलक्षण कश्चिद्विरोधोस्ती ति। सातासातयोश्चांतर्मुहूर्तपरिवर्तमानतया यथा सातोदयएवमसातोदयोऽपीत्यनंतवीर्य त्वे सत्यपि शरीरबलापचयः क्षुद्वेदनीयोभवा च पीडा भवत्येव । नचाहारग्रहणे तस्य कि चित्क्षीयते केवलमाहोपुरुषिकामात्रमेवेति । यदप्युच्यते वेदनीयस्योदीरणायाद्यभावा त्प्रभूततरपुद्गलोदयाभावाच्चात्यंतं वेदनीयपीडाभावइति वाङ्मात्रं । तथाह्यविरतसम्यग्द ष्ट्यादिष्वेकादशसु स्थानेषु वेदनीयगुणश्रेणीसद्भावात्प्रभूतपुद्गलोदयसद्भावः किंतेषु प्राक् तेभ्योऽधिकपीडासद्भावइति । अपिच योजिने सातोदयस्तीव्र किमसौ प्रचुरपुद्गलोदये नेति अतोयत्किंचिदेतदिति । तदेव सातोदयवदसातोदयोपि केवलिन्यवतारितइति तयोर तर्मुहूर्तकालेन परिवर्तमानत्वात्। यद्यपि क्वचित्कैश्चिदभिधीयते विपच्यमानतीर्थंकरनाम्नो देवस्य च्यवनकाले पण्मासकालं यावदत्यंतं सातोदयएवेत्यसावपि यदिस्यान्न ततोबाधायै केवलिना भुक्तेरनिवारितत्वात्। यदप्युच्यते आहारविषयाकांक्षारूपा क्षुद्भवति अभिकां क्षावाऽहारपरिग्रहबुद्धिः साच मोहनीयविकारस्तस्य चापगतत्वात्केवलिनोन भुक्तिरिति। एतदप्यसमीचीनं । यतोमोहनीयविकारात्क्षुन्न भवति तद्विपाकस्य प्रतिपक्षभावनया प्र तिसंख्यानेन निवर्त्यमानत्वात् । तथाहि । कषाया प्रतिकूलभावनया निवर्त्यंते । तथा चोक्तं । उपसमेण हणे कोहं माणं मद्दवयाजिणे॥मायं चजवभावेन लोभं संतुठिए जिणे। मिथ्यात्वसम्यक्त्वयोश्च परस्परनिवृत्तिर्भावना रूता प्रतीतैव । वेदोदयोपि विपरीतभावन या निवर्तते । तदुक्तं । काम जानामि ते मूलं, संकल्पात्किल जायसे ॥ ततस्तं नवरिष्या मि, ततोमे न भविष्यसि ॥ १ ॥ हास्यादिषट्कमपि चेतोविकारूपतया प्रतिसंख्यानेन निवर्तंते क्षुद्वेदनीयंतु रोगशीतोष्णादिवज्जीवपुद्गलविपाकितया न प्रतीपवासनामात्रेण नि

वक्रद्वयेतु त्रिसमयोत्पत्तौ मध्यसमयेनाहारकइति इतरयोस्त्वाहारकइति । वक्रत्रये तु चतु समयोत्पत्तिके मध्यवर्तिनो समययोरनाहारकश्चतु समयोत्पत्तिश्चैव नवति । त्रस नाड्या बहिरुपरिष्टादधोधस्ता द्वा पर्युत्पद्यमानो दिशोविदिशि विदिशोवा दिशि यदोत्पद्यतेत दा लन्यते । तत्रैकेन समयेन त्रसनाडीप्रवेशो द्वितीयेनोपर्यधोवा गमन तृतीयेनच बहिर्नि सरण चतुर्थेन तु विदिक्कूत्पत्तिदेशप्राप्तिरिति । पचसमयास्तु त्रसनाड्यावहिरेव विदिशो विदिगुत्पत्तौ लन्यते । तत्रच मध्यवर्तिषु अनाहारकइत्यवगतव्य । आद्यतसमययोस्त्वा हारकइति । केवलिसमुद्घातेपि कार्मणशरीरवर्तित्वात् तृतीयचतु पचसमयेष्वनाहार कोइष्टव्य । शेपेषु तुत्वौदरिकत मिश्रवर्तित्वा तृतीयचतु पचम समयेष्वना हारको इ ष्टव्य शेपेपुतु त्वौदारिकतन्मिश्रवर्तित्वादाहारकइति । (मुहुत्तमद्धचत्ति) अतर्मुहू र्त गृह्यते । तच्च केवली स्वायुप क्षये सर्वयोगनिरोधे सति ह्रस्वपंचाक्षरोगिरणमात्रकाल यावदनाहारकइत्येवमवगतव्य । सिद्धजीवास्तु शैलेश्यवस्थायाआदिसमयादारन्यानत मपि कालमनाहारकाइति । सांप्रतमेतदेव स्वामिविशेपविशेपिततरमाह । " एक्कच दोव समए, केवलिपरिवज्जिया अणाहारा ॥ पचमि दोणि लोए, यपूरिए तिन्नि समयाउ ॥१॥ (एकचेत्यादि) केवलपरिवर्जिता ससारस्थाजीवाएक द्वौवा अनाहारकानवति । तेच द्विविग्रहत्रिविग्रहोत्पत्तौ त्रिचतु सामयिकाया इष्टव्या । चतुर्विग्रहपचसमयो त्पत्तिस्तु स्वल्पसत्वाश्रितेति न साक्षाडुपात्ता । तथा चान्यत्राप्यनिहितं । एक द्वौवा नाहारक । वाशब्दात् त्रीन् वा आनुपूर्व्या अन्युदयतत्कृष्टतोविग्रहगतौ चतुर समया नागमेऽनिहिता । तेच पचसमयोत्पत्तौ लन्यते नान्यत्रेति । नवस्थकेवलिनस्तु समुद घाते मथे तत्करणोपसहारावसरे तृतीयपचसमयौ द्वौ लोकपूरणाच्चतुर्थसमयेन सहि तास्त्रय समयानवतीति । पुनरपि निर्युक्तिकार सादिकमपर्यवसान कालमनाहारकत्व दर्शयितुमाह । ' अतोमुहुत्तमद्ध, सेलेसीए नवे अणाहारा ॥ सादीयमनिहणपुण, सिद्धायणाहारगाहोति " ॥ ८ ॥ (अतोमुहुत्तमित्यादि) शैलेश्यवस्थायाआरन्य सर्वयानाहारक सिद्धावस्थाप्राप्तावनतमपि काल यावदिति । पूर्वंतु कावलिकाख्यव्य तिरेकेण प्रतिसमयमनाहारक कावलिकेनतु कादाचित्कइति । ननु केवलिनोघाति कर्मक्षयेनतवीर्यत्वान्न नवत्येवकावलिकआहारक । तथाहि । आहारादाने यानि वेद नीयादीनि पट्कारणान्यनिहितानि तेषा मध्ये एकमपि नविद्यते केवलिनि तत्कथमसा वाहार बहुदोषदुष्ट गृह्णीयात् ? । तत्र न तावत्तस्यवेदनोत्पद्यते तद्वेदनीयस्य दग्धरज्जु स्थानिकत्वात्सत्यामपि न तस्य तत्कृता पीडा अनतवीर्यत्वात् । वैयावृत्यकरणतु नगव ति सुरासुरनराधिपतिसघेन सनाव्यतएवेति । ईर्यापथ पुन केवलज्ञानावरणपरिक्षया त्सम्यगवलोकयत्येवासो । सयमस्तु तस्य यथाख्यातचारित्रिणोनिष्ठितार्थत्वादनतवीर्य

त्वान्नाहारग्रहणाय कारणीभवति । प्राणवृत्तिस्तु तस्यानुपवर्तित्वात् आयुषोऽनंतवीर्यत्वा च्चान्यथा सिद्धेव धर्मचिंतावसरस्त्वपगतोनिष्ठितार्थत्वात् । तदेवं केवलिन कावलिका हारोबहूपायत्वान्न कथंचिद्घटतइति स्थितं। अत्रोच्यते। तत्र तावद्यडुक्तं घातिकर्मक्षये केवलज्ञानोत्पत्तावनंतवीर्यत्वान्न केवलिनोभुक्तिरिति । तदागमानभिज्ञस्य तत्वविचाररहित स्य युक्तिहृदयमजानतोवचनं । तथाहि यदाहारनिमित्तं वेदनीयं कर्म तत्तस्य तथैवास्ते । किमिति ? । सा शारीरी स्थितिः प्राक्तनी नभवति प्रमाणंच अस्ति केवलिनोभुक्तिः समग्र सामग्रीकत्वात्पूर्वभुक्तिवत् । सामग्रीचेयं प्रदेपाहारस्य तद्यथापर्याप्तत्वं वेदनीयोदय आहारपक्तिनिमित्तं तैजसशरीरं दीर्घायुष्कत्वंचेति । तानिच समस्तान्यपि केवलिनि स ति । यदपि दग्धरज्जुसस्थानिकत्वमुच्यते वेदनीयस्य । तदप्यनागमिकमयुक्तिसंगतंच आग मेह्यत्यंतोदया सा तस्य केवलिन्यभिधीयते युक्तिरपि । यदि घातिकर्मक्षयाज्ज्ञानादयस्त स्याभूवन् वेदनीयोद्भवाया क्षुधः किमायातं येनासौ न भवति । नतयोश्छायातपयोरिव सहानवस्थानलक्षणानामपि भावाभावयोरिव परस्परपरिहारलक्षणः कश्चिद्विरोधोस्ती ति । सातासातयोश्चांतर्मुहूर्तपरिवर्तमानतया यथा सातोदयएवमसातोदयोऽपीत्यनंतवीर्य त्वे सत्यपि शरीरबलापचयः क्षुद्वेदनीयोद्भवा च पीडा भवत्येव । नचाहारग्रहणे तस्य किं चित्क्षीयते केवलमाहोपुरुषिकामात्रमेवेति । यदप्युच्यते वेदनीयस्योदीरणायाअभावा त्प्रभूततरपुद्गलोदयाभावाच्चात्यंतं वेदनीयपीडाभावइति वाङ्मात्रं । तथाह्यविरतसम्यग्दृ ष्ट्यादिष्वेकादशसु स्थानेषु वेदनीयगुणश्रेणीसद्भावात्प्रभूतपुद्गलोदयसद्भावः किंतेषु प्राक्त नेभ्योऽधिकपीडासद्भावइति । अपिच योजिने सातोदयस्तीव्रः किमसौ प्रचुरपुद्गलोदये नेति अतोयत्किंचिदेतदिति । तदेवं सातोदयवदसातोदयोपि केवलिन्यवतारितइति तयोर तर्मुहूर्तकालेन परिवर्तमानत्वात् । यद्यपि क्वचित्कैश्चिदभिधीयते विपच्यमानतीर्थंकरनाम्नो देवस्य च्यवनकाले षण्मासकालं यावदत्यंतं सातोदयएवेत्यसावपि यदिस्यान्न ततोबाधायै केवलिना भुक्तेरनिवारितत्वात् । यदप्युच्यते आहारविषयाकांक्षारूपा क्षुद्भवति अभिका क्षावाऽहारपरिग्रहबुद्धिः साच मोहनीयविकारस्तस्य चापगतत्वात्केवलिनोन भुक्तिरिति । एतदप्यसमीचीनं । यतोमोहनीयविकारात्क्षुन्न भवति तद्विपाकस्य प्रतिपक्षभावनया प्र तिसंख्यानेन निवर्त्यमानत्वात् । तथाहि । कषाया प्रतिकूलभावनया निवर्त्यंते । तथा चोक्तं । उपसमेण हणे कोहं माणं मद्दवयाजिणे॥मायं चज्जवभावेन लोभं संतुट्ठिए जिणे। मिथ्यात्वसम्यक्त्वयोश्च परस्परनिवृत्तिर्भावना कृता प्रतीतैव । वेदोदयोपि विपरीतभावन या निवर्तते । तडुक्तं । काम जानामि ते मूलं, संकल्पात्किल जायसे ॥ ततस्त्वं नकरिष्या मि, ततोमे न भविष्यसि ॥ १ ॥ हास्यादिषट्कमपि चेतोविकारूपतया प्रतिसंख्यानेन निवर्तते क्षुद्वेदनीयतु रोगशीतोष्णादिवद्जीवपुद्गलविपाकितया न प्रतीपवासनामात्रेण नि

वक्रद्वयेतु त्रिसमयोत्पत्तौ मध्यसमयेनाहारकइति इतरयोस्त्वाहारकइति । वक्रत्रये तु चतु समयोत्पत्तिके मध्यवर्तिनो समययोरनाहारकश्चतु समयोत्पत्तिश्चैव नवति । त्रस नाड्या बहिरुपरिष्टादधोधस्ता द्वा पर्युत्पद्यमानो दिशोविदिशि विदिशोवादिशि यदोत्पद्यतेत दा लभ्यते । तत्रैकेन समयेन त्रसनाडीप्रवेशो द्वितीयेनोपर्यधोवा गमन तृतीयेनच बहिर्निः सरण चतुर्थेन तु विदिक्कूत्पत्तिदेशप्राप्तिरिति । पचसमयास्तु त्रसनाड्याबहिरेव विदिशो विदिगुत्पत्तौ लभ्यते । तत्रच मध्यवर्तिषु अनाहारकइत्यवगतव्य । आद्यतसमययोस्त्वा हारकइति । केवलिसमुद्घातेपि कार्मणशरीरवर्तित्वात् तृतीयचतु पंचसमयेष्वनाहार कोद्रष्टव्य । शेषेषु तुत्वौदारिकत मिश्रवर्तित्वा तृतीयचतु पचम समयेष्वना हारको इ ष्टव्य शेषेषुतु त्वौदारिकतन्मिश्रवर्तित्वादाहारकइति । (मुहुत्तमद्धचत्ति) अतर्मुहू र्तं गृह्यते । तच्च केवली स्वायुष क्षये सर्वयोगनिरोधे सति न्हस्वपंचाक्षरोत्गिरणमात्रकाल यावदनाहारकइत्येवमवगतव्य । सिद्धजीवास्तु शैलेश्यवस्थायाआदिसमयादारभ्यानत मपि कालमनाहारकाइति । सांप्रतमेतदेव स्वामिविशेषविशेषिततरमाह । “ एक्कच दोव समए, केवलिपरिवज्जिया अणाहारा ॥ पचमि दोण्णि लोए, यपूरिए तिन्नि समयाउ ॥१॥ (एकचेत्यादि) केवलपरिवर्जिता ससारस्थाजीवाएक द्वौवा अनाहारकानवति । तेच द्विविग्रहत्रिविग्रहोत्पत्तौ त्रिचतु सामयिकाया इष्टव्या । चतुर्विग्रहपचसमयो त्पत्तिस्तु स्वल्पसत्वाश्रितेति न साक्षादुपात्ता । तथा चान्यत्राप्यनिहितं । एक द्वौवा नाहारक । वाशब्दात् त्रीन् वा आनुपूर्व्या अभ्युदग्रउत्कृष्टतोविग्रहगतौ चतुर समया नागमेऽनिहिता । तेच पचसमयोत्पत्तौ लभ्यते नान्यत्रेति । नवस्थकेवलिनस्तु समुद् घाते मथे तत्करणोपसहारावसरे तृतीयपचसमयौ द्वौ लोकपूरणाच्चतुर्थसमयेन सहि तास्त्रय समयानवतीति । पुनरपि निर्युक्तिकार सादिकमपर्यवसान कालमनाहारकत्व दर्शयितुमाह । ‘ अतोमुहुत्तमद्ध, सेलेसीए नवे अणाहारा ॥ सादीयमनिहणपुण, सिद्धायणाहारगाहोति ” ॥ ८ ॥ (अतोमुहुत्तमित्यादि) शैलेश्यवस्थायाआरभ्य सर्वथानाहारक सिद्धावस्थाप्राप्तावनतमपि काल यावदिति । पूर्वेतु कावलिकाख्यव्य तिरेकेण प्रतिसमयमनाहारक कावलिकेनतु कादाचित्कइति । ननु केवलिनोघाति कर्मक्षयेनतवीर्यत्वान्न नवत्येवकावलिकआहारक । तथाहि । आहारादाने यानि वेद नीयादीनि षट्कारणान्यनिहितानि तेषा मध्ये एकमपि नविद्यते केवलिनि तत्कथमसा वाहार बहुदोषदुष्ट गृह्णीयात् ? । तत्र न तावत्तस्यवेदनोत्पद्यते तद्वेदनीयस्य दग्धरज्जु स्थानिकत्वात्सत्यामपि न तस्य तत्कृता पीडा अनतवीर्यत्वात् । वैयावृत्यकरणतु नगव ति सुरासुरनराधिपतिसघेन सनाथ्यतएवेति । ईर्यापथ पुन केवलज्ञानावरणपरिक्षया त्सम्यगवलोकयत्येवासौ । सयमस्तु तस्य यथाख्यातचारित्रिणोनिष्ठितार्थत्वादनतवीर्य

एत समयत्रय नवस्थकेवली च समुद्घातावस्थ समयत्रयमनाहारक शैलेश्यवस्थाया स्वतर्मुहूर्तं। सिद्धास्तु सादिकमपर्यंत कालमनाहारकाऽति स्थित। सांप्रत प्रथमाहारग्रहण येन शरीरेण करोति तद्दर्शयति । जोएण कम्मएण, आहारेइ अणंतर जीवा ॥ तेण पर मीसेण, जीवसरीरस्स पक्षत्ती „ ॥ ९ ॥ (जोएणेत्यादि) ज्योतिस्तेजस्तदेव तत्र वा नव तेजस कार्मणेन चाहारयति। तैजसकार्मणे हि शरीरे आसंसारनाविनी ताभ्यामेवोत्पत्तिदेश गताजीवा प्रथममाहार कुर्वति तत परमौदारिकमिश्रेण वैक्रियमिश्रणेन वा यावच्छरीर निष्पद्यते तावदाहारयति । शरीरनिष्पत्तौ त्वौदारिकेण वैक्रियेण वाऽहारयतीति स्थितं। सांप्रत परिज्ञानिक्षेपार्थमाह । ” णाम ठवणपरिन्ना, दव्वनावेय होइ नायव्वा ॥ दव्वपरिन्ना तिविहा, नावपरिन्ना नवे डुविहा„ ॥१०॥ (णाममित्यादि) तत्र नामस्थापना द्रव्यनाववनेदात्परिज्ञा चतुर्धा । तत्रापि नामस्थापने क्षुसुत्वादनादृत्य द्रव्यपरिज्ञा प्रतिपादयन् गाथापरार्द्धमाह । द्रव्यपरिज्ञेति । द्रव्यस्य द्रव्येण वा परिज्ञा सा च परिछेद्यद्रव्यप्रधान्यात्तस्यच सचित्ताचित्तमिश्रनेदेन त्रैविध्यात्रिविधेति । नावपरिज्ञापि ज्ञपरिज्ञाप्रत्याख्यानन्नेदेन द्विविधेति । शेषास्त्वागमनोआगमज्ञशरीरव्यतिरिक्तादिकानिचार शस्त्रपरिज्ञावद्द्रष्टव्य । गतानिक्षेपनिर्युक्तिरधुना सूत्रानुगमेऽस्खलितादिगुणोपेत सूत्रमुच्चारयितव्य । तच्चेद । (सुयमे आउसतेणमित्यादि) सुधर्मस्वामी जम्बूस्वामिनमुद्दिश्येदमाह । तद्यथा । श्रुत मयाऽऽयुष्मता तु नगवतेदमाख्यात । तद्यथा । आहारपरिज्ञेदमध्ययन तस्य चायमर्थ । प्राच्यादिषु दिक्षु सर्वतइत्यूर्ध्वाधोविदिक्षु च (सव्वावतिंसि) सर्वस्मिन्नपि लोके क्षेत्रे प्रज्ञापकनावदिगाधारनूतेऽस्मिन् चत्वारोवीजकायावीजमेव कायोयेषा ते तथा । वीज वक्ष्यमाण । चत्वारोवीजप्रकारा समुत्पत्तिनेदान्नवति । तद्यथा । अग्रे वीज येषामुत्पद्यते ते तनतालीसहकारादय शाल्यादयोवा । यदिवाऽग्राएवोत्पत्तौ कारणता प्रतिपद्यते येषा कोरटादीना ते अग्रवीजास्तथा मूलवीजाआर्द्रकादय पर्ववीजास्त्विक्ष्वादय स्कधवीजा सल्लक्यादय । नागार्जुनीयास्तु पठति । वणस्सइकाइयाण पचविहा वीजवक्कंती ॥ एवमाहिज्जइ तजहा अग्गमूलपोरुखधवीयरुहाछट्ठाविएगेंदियासमुच्छिमावीया जायते । यथा दग्धवनस्थलीषु नानाविधानि हारितान्युद्भवति पद्मिन्योवाऽनिनवतडागादाविति । तेषा च चतुर्विधानामपि वनस्पतिकायाना यद्यस्य वीजमुत्पत्तिकारण तद्यथावीन तेन यथा वीजेनेति । इदमुक्त नवति । शाल्यकुरस्य शालिवीजमुत्पत्तिकारण । एवमन्यदपि द्रष्टव्य । यथावकाशेति । योयस्यावकाश यद्यस्योत्पत्तिस्थानमथवा नूम्यनुकालाकाशवीजसयोगाययथावकाशो गृह्यते तेनेति । तत्रैव यथावीन यथावकाशेन चेहास्मिन् जगत्येके केचन सत्वाये तथाविधकर्मादया द्वनस्पतिपूत्पित्सवस्तेहि वनस्पतावुत्पद्यमानाअपि पृथिवीयोनिका नवति यथा तेषा वनस्पतिवीज कारणमेवमाधारमतरेणोत्पत्तेरनावात्पृथिव्यपि

वर्तेतेऽतोन मोहविपाकस्वभावा क्षुदिति । तदेवं व्यवस्थिते यत्कैश्चिदाभद्गृहीतिरभि
धीयते यथा प्रवर्त्यते रुतार्थे नायुर्ज्ञानादयोन हीयंते जगदुपकृतावनंतं वीर्यं किं गतहपो
भुक्तिस्तदेतत् प्लवते यतश्छद्मस्थावस्थायामप्येतदस्तीति तत्रापि किमिति भुंक्ते तत्र सम
स्तवीर्यांतरायक्षयाभावान्मुक्तिसद्भावइतिचेत्तदयुक्तं । यत किं तत्रायुपोपवर्तनं स्यात् किंवा
चतुर्णां ज्ञानानां काचिद्धानिं स्यायेन न भुक्तिरिति । तस्माद्यथा दीर्घकालस्थितेरायुष्कं
कारणमेवमाहारोपि । यथा सिद्धिगतेर्व्युपरतक्रियस्य ध्यानस्य चरमक्षण कारणमेव सम्य
क्त्वादिकमपीति । अनंतवीर्यतापि तस्याहारग्रहणे सति न विरुध्यते । यथा तस्य देवच्छंदा
दीनि विश्रामकारणानि गमनविपीदनानिच भवत्येवमाहारक्रियापि विरोधाभावान्नयत्र
बलवत्तरवीर्यवतोऽल्पीयसी क्षुदिति । एवच स्थिते यत्किंचिदेतत् । अपि चैकादशपरीषहावे
दनीयकृता जिने प्राडुष्यंति । अपरेतु एकादशज्ञानावरणीयादिकृतास्तत्क्षयेऽपगता इती
यमप्युपपत्ति केवलिनि भुक्तिं साधयति । तथाहि । क्षुत्पिपासाशीतोष्णदंशमशकनाग्न्यादिरि
ति स्त्रीचर्यानिषद्याशय्याक्रोशवधयाश्चालाभरोगतृणस्पर्शमलसत्कारपुरस्कारप्रज्ञानदर्शना
नीत्येते द्वाविंशतिर्मुमुक्षुणा परिसोढव्या परिषहास्तेषांच मध्ये ज्ञानावरणीयोद्भौ प्रज्ञा
ज्ञानाख्यौ दर्शनीयमोहनीयसंभवोदर्शनीयपरिषहोंतरायोद्भोलाभपरिषहोस्ति । चारित्र
हनीयसभूतास्त्वमी नामोयारतिस्त्रीनिषद्यायाश्चासत्कारपुरस्कारा । एते चैकादशापि जिने
केवलिनि न संभवति तत्कारणानामपगतत्वात् । नहिकारणाभावे क्वचित्कार्योपपत्ति ।
शेषास्त्वेकादश जिने संभवति तत्कारणस्य वेदनीयस्य विद्यमानत्वात् । तेचामी क्षुत्पि
पासाशीतोष्णदंशकचर्याशय्यावधरोगतृणस्पर्शमलाख्या । एतेच वेदनीयप्रभवास्तत्र केव
लिनि विद्यते । नच निदानानुच्छेदे निदानिनउच्छेद संभाव्यते अत केवलिनि क्षुद्वेदनी
यादिपीडा संभाव्यते । केवलमसावनंतवीर्यत्वान्न विह्वलीभवति । नचासौ निष्ठितार्थो
नि प्रयोजनमेव पीडामधिसहते । नच शक्यते वक्तुमेवंभूतमेव तस्य भगवत शारीरं यद्भुत
क्षुत्पीडा न बाधते आहारमंतरेण वर्तते यथास्वभावेनैव प्रस्वेदादिरहितमेव प्रक्षेपाहार
रहितं इत्येतच्चाप्रमाणकत्वादपकर्णनीय । अपिच केवलोत्पत्ते प्राग्भुक्तेरभ्युपगमात्केव
लोत्पत्तावपि तदेवौदारिक शरीरमाहाराद्युपसंस्कार्यमथान्यथाभाव केश्चिदुच्यते असाव
पि युक्तिरहितत्वादभ्युपगममात्रकएवेति । तदेवं देशोन पूर्वकोटिकालस्य केवलस्थिते सं
भवादौ दारिकशरीरस्थितेश्च यथायुष्कं कारणमेव प्रक्षेपाहारोपि । तथाहि । तैजसशरीरेण
मृडुकृतस्याभ्यवहृतस्य द्रव्यस्य स्वपर्यायैर्या परिणामितस्योत्तरोतरपरिणामक्रमेणौदारिक
शरीरिणामनेन प्रकारेण क्षुदुद्भवो भवति वेदनीयोदये सतीय च सामग्री सर्वापि भगवति
केवलिनि संभवति तत्किमर्थमसौ न भुंक्ते नच घातिचतुष्टयस्य सहकारिकारणभावोस्ति
येन तदभावात्तदभावइत्युच्यते । तदेवं संसारस्थाजीवाविग्रहगतौ जघन्येनैकं समयं उत्क

ष्टत समयत्रय नवस्थकेवली च समुद्घातावस्थ समयत्रयमनाहारक शैलेश्यवस्थाया त्वतर्मुहूर्त। सिद्धास्तु सादिकमपर्यंत कालमनाहारकाऽइति स्थित। सांप्रत प्रथमाहारग्रहण येन शरीरेण करोति तद्दर्शयति । जोएण कम्मएण, आहारेइ अणतर जीवा॥ तेण पर मीसेण, जीवसरीरस्स पज्जत्ती „ ॥ ए ॥ (जोएणेत्यादि) ज्योतिस्तेजस्तदेव तत्र वा नव तेजस कार्मणेन चाहारयति। तैजसकार्मणे हि शरीरे आससारनाविनी ताभ्यामेवोत्पत्तिदेश गताजीवा प्रथममाहार कुर्वति तत परमौदारिकमिश्रेण वैक्रियमिश्रणेन वा यावच्छरीर निष्पद्यते तावदाहारयति । शरीरनिष्पत्तौ त्वौदारिकेण वैक्रियेण वाऽहारयतीति स्थितं। सांप्रत परिज्ञानिक्षेपार्थमाह । ” णाम ठवणपरिन्ना, दव्वनावेय होइ नायव्वा॥ दव्वपरिन्ना तिविहा, नावपरिन्ना नवे डुविहा,, ॥१०॥ (णाममित्यादि) तत्र नामस्थापना ड्व्यनावनेदात्परिज्ञा चतुर्धा । तत्रापि नामस्थापने क्षुण्णत्वादनादृत्य ड्व्यपरिज्ञा प्रतिपादयन् गाथापरार्द्धमाह । ड्व्यपरिज्ञेति । ड्व्यस्य ड्व्येण वा परिज्ञा सा च परिच्छेद्यड्व्यप्रधान्यात्तस्यच सचित्ताचित्तमिश्रनेदेन त्रैविध्यात्त्रिविधेति । नावपरिज्ञापि ज्ञपरिज्ञाप्रत्याख्यानचेदेन द्विविधेति । शेषास्त्वागमनोआगमज्ञशरीरव्यतिरिक्तादिकोविचार शस्त्रपरिज्ञावद्रष्टव्य । गतानिक्षेपनिर्युक्तिरधुना सूत्रानुगमेऽस्खलितादिगुणोपेत सूत्रमुच्चारयितव्य । तच्चेद । (सुयमे आउसतेणमित्यादि) सुधर्मस्वामी जम्बूस्वामिनमुद्दिश्येदमाह । तद्यथा । श्रुत मयाऽऽयुष्मता तु नगवतेदमाख्यात । तद्यथा। आहारपरिज्ञेदमध्ययन तस्य चायमर्थ । प्राच्यादिषु दिक्षु सर्वतइत्यूर्ध्वाधोविदिक्षु च (सव्वावतित्ति) सर्वस्मिन्नपि लोके क्षेत्रे प्रज्ञापकनावदिगाधारनूतेऽस्मिन् चत्वारोबीजकायाबीजमेव कायोयेषा ते तथा । बीज वक्ष्यमाण । चत्वारोबीजप्रकारा समुत्पत्तिनेदाद्नवति । तद्यथा । अग्रे बीन येषामुत्पद्यते ते तलतालीसहकारादय शाल्यादयोवा । यदिवाऽग्राण्येवोत्पत्तौ कारणता प्रतिपद्यते येषा कोरंटादीना ते अग्रबीजास्तथा मूलबीजाआर्द्रकादय पर्वबीजास्त्विक्ष्वादय स्कधबीजा सल्लक्यादय । नागार्जुनीयास्तु पठति । वणस्सइकाइयाण पचविहा बीजवक्कती॥ एवमाहिज्जइ तजहा अग्गमूलपोरुखधबीयरुहाछहाविएगदियासमुच्छिमाबीया जायते । यथा दग्धवनस्थलीषु नानाविधानि हारितान्युद्नवति पद्मिन्योवाऽनिनवतडागादाविति । तेषा च चतुर्विधानामपि वनस्पतिकायाना यद्यस्य बीजमुत्पत्तिकारण तद्यथाबीन तेन यथा बीजेनेति । इदमुक्त नवति । शाल्यकुरस्य शालिबीजमुत्पत्तिकारण । एवमन्यदपि ड्रष्टव्य । यथावकाशेति । योयस्यावकाश यद्यस्योत्पत्तिस्थानमथवा नूम्यनुकालाकाशबीजसयोगायथावकाशे गृह्यते तेनेति । तत्रैव यथाबीन यथावकाशेन चहास्मिन् जगत्येके केचन सत्वाये तथाविधकर्मोदया द्वनस्पतिपूत्पित्सवस्तेहि वनस्पतावुत्पद्यमानाअपि पृथिवीयोनिका नवति यथा तेषा वनस्पतिबीज कारणमेवमाधारमतरेणोत्पत्तेरनावात्पृथिव्यपि

शेवालजबालादेरुदकवदिति। तथा पृथिव्या सजव सदा जवन येषां वनस्पतीनां तथा। इदमुक्त जवति न केवलं ते सद्योनिकायस्थितिकाश्चेति। तथा पृथिव्यामेव विविधमुत्प्राबल्येन क्रम क्रमण येषां ते पृथिव्युत्क्रमा। इदमुक्त जवति। पृथिव्यामेव तेषामूर्ध्वं क्रमणलक्षणाद्दि र्जवति। एवच ते तद्योनिकास्तत्संजवास्त द्व्युत्क्रमाइत्येतदनूद्याप्यपर विधातुकामआह। (कम्मोवगाइत्यादि) तेहि तथाविधेन वनस्पतिकायसंजवेन कर्मणा प्रेर्यमाणास्तेष्वेव वनस्पतिरूपसामीप्येन तस्यामेव च पृथिव्यां गच्छतीति कर्मोपगाजण्यते। तेहि कर्मवशगावनस्पतिकायादागत्य तेष्वेव पुनरपि वनस्पतिरूत्पद्यते न चान्यत्रोत्ताश्चन्यत्र जविष्यंतीति। उक्तंच। कुसुमपुरोप्ते बीजे, मथुरायां नाकुर समुद्भवति॥ यत्रैव तस्य बीज तत्रैवोत्पद्यते प्रसव। तथा ते जीवा कर्मनिदानेन कारणेन समाकृष्यमाणास्तत्र वनस्पतिकाये वा व्युत्क्रमा समागता सतोनानाविधयोनिकासु पृथिवीष्वित्यन्येषामपि षण्णां कायानामुत्पत्तिस्थानजूतासु सचित्ताऽचित्तमिश्रासु वा श्वेतकृष्णादिवर्णतिक्तादिरससुरन्यादिगंधमृदुकर्कशादिस्पर्शादिकैर्विकल्पैर्बहुप्रकारासु जूमिषु वृक्षतया विविध वर्तंते तेच तत्रोत्पन्नास्तासा पृथिवीना स्नेह स्निग्धजावमाददते सएवच तेषामाहारइति। नच ते पृथिवीशरीरमाहारयत पृथिव्या पीडामुत्पादयति ॥१॥ एवमप्कायतेजोवायुवनस्पतीनामायोज्य। अत्रच पीडानुत्पादनेऽर्थे दृष्टांत। तद्यथा। अंडोद्भवाद्याजीवामातुरुष्मणा विवर्धमानागर्जस्थाएवोदरगतमाहारयंतोनातीव पीडामुत्पादयत्येवमसावपि वनस्पतिकायिक पृथिवीस्नेहमाहारयन्नातीव तस्या पीडामुत्पादयति उत्पद्यमान समुत्पन्नश्च वृद्धिमुपगतोऽसदृशवर्णरसाद्युपेतत्वात् बाधा विदध्यादपीति। एवमप्कायस्य जौमस्यांतरिक्षस्य वा शरीरमाहारयति तथा तेजसोजस्मादिक शरीरमाददति। एव वाय्वादेरपीति द्रष्टव्य। किंबहुनोक्तेन नानाविधानां त्रसस्थावराणां प्राणिना यच्छरीर तत्ते समुत्पद्यमानाश्रचित्तमपि स्वकायेनावष्टन्य प्रासुकीकुर्वंति। यदिवा परिविध्वस्त पृथिवीकायादिशरीर किंचित्परितापितं कुर्वंति ते वनस्पतिजीवाएतेषा पृथिवीकायादीना तच्छरीर पूर्वमाहारितमिति तैरेव पृथिवीकायादिनिरुत्पत्तिसमये आहारितमासीत् स्वकायत्वेन परिणामितमासीत्। तदधुना वनस्पतिजीवस्तत्रोत्पद्यमानउत्पन्नोवा त्वचा स्पर्शेनाहारयत्याहार्य च स्वकायत्वेन विपरिणामयति विपरिणामितं च तच्छरीर स्वकायेन सह स्वरूपतां नीतं सत्तन्मयतां प्रतिपद्यते। अपराण्यपि मूलशाखाप्रतिशाखापत्रपुष्पफलादीनि तेषां पृथिवीकायिकाना वृक्षाणां नानावर्णानि। तथाहि। स्कंधस्यान्ययाजूतोवर्णोमूलस्य चान्यादृशइति। एव यावन्नानाविधशरीरेषु पुजलविकुर्वितास्ते जवतीति। तथाहि। नानारसवीर्यविपाकानानाविधपु[illegible]च्चयात्सुरूपकुरूपसंस्थानास्ते जवतीति। तथा दृढाल्पसहन[illegible] / मादिकानानाविधस्वरूपाणि विकुर्वंतीति स्थितं। केषां

ना[illegible]

चिह्नाक्यादीना वनस्पत्याद्या स्थावरजीवाएव न भवतीति अतस्तत्प्रतिषेधार्थमाह् ।(ते जीवाइत्यादि) ते वनस्पतिषूत्पन्नाजीवाउपयोगलक्षणत्वाज्जीवाना । तेषामप्याश्रयोत्स र्पणादिकया क्रिययोपयोगोलक्ष्यते । तथा विशिष्टाहारोपचयाऽपचयाभ्या शरीरोपचयाप चयसद्भावादनेकजीवा स्थावरास्तथा छिन्नप्ररोहणात्स्वापात्सर्वत्वगपहरणे मरणादित्येव मादयोहेतवोऽत्र इष्टव्या । यदत्र कैश्चित्स्पष्टेपि वनस्पतीना चैतन्ये सिद्धानैकातिकत्वादिक मुक्त स्वदर्शनानुरागात्तदपकर्णनीय। नहि सम्यगार्हतमताभिज्ञोसिद्धविरुद्धानैकातिकोपन्या सेन व्यामोह्यते सर्वस्य कथचिदभ्युपगतत्वात्प्रतिपिद्धत्वाच्चेति ते जीवास्तत्र वनस्पतिष्वतथा विधेन कर्मणा उपपन्नगा । तच्चेद एकेंद्रियजातिस्थावरनामवनस्पतियोग्यायुष्कादिकमिति तत्कर्मोदयेन तत्रोत्पन्नाउच्यते न पुन कालेश्वरादिना तत्रोत्पाद्यते इत्येवमाख्यातं तीर्थ करादिभिरिति । एवतावत्पृथिवीयोनिकावृक्षाअभिहिता ॥ २ ॥

अहावर पुरक्काय इहेगतिया सत्ता रुक्कजोणिया रुक्कसभवा रुक्कवु क्कमा तज्जोणिया तस्सभवा तडुवक्कमा कम्मोवगा कम्मनियाणेण तच्च वुक्कमा पुढवीजोणिएहि रुक्केहि रुक्कत्ताए विउट्टति ते जीवा तेसि पुढवी जोणियाण रुक्काण सिणेहमाहारेति तेजीवा आहारेति पुढवीसरीर आ उतेउवाउवणस्सइसरीर णाणाविहाण तसथावराण पाणाण सरीर अचि त्त कुव्वति परिविद्धत्थ त सरीर पुव्वाहारिय तयाहारिय विपरिणामिय सा रुविकड सत अवरेवि यण तेसि रुक्कजोणियाण रुक्काण सरीरा णाणाव न्ना णाणागधा णाणारसा णाणाफासा णाणासठाणसठिया णाणाविह सरीरपुग्गलविउव्विया ते जीवा कम्मोववन्नगा भवतीतिमक्काय ॥ ३ ॥

अर्थ–हवे तद्योनिक वनस्पतिने विषे अन्य बीजा जीव उपजे, ए देखाडेछे, श्री सु धर्मस्वामी श्री जबूस्वामि प्रत्यें कहेछे के, वली वनस्पतिनो (अहावरपुरक्काय के०) अ पर एटले बीजो प्रकार, पूर्व श्री तीर्थंकर देवें कह्योछे, ते हवे कहेछे (इहेगतिया के०) कोइ एक (सत्ता के०) जीव प्राणी, (रुक्कजोणिया के०) वृक्षज जेनी योनि एटले उत्पत्तिस्थानकछे, ते पृथ्वीयोनिक वृक्षने विषे वृक्ष पणेज उपजे (रुक्कसभवा के०) ते पृथ्वीयोनिक वृक्षने विषे वनस्पतिकायनो सभवछे (रुक्कवुक्कमा के०) तथा वृ क्षने विषे नाना प्रकारे प्रबल पणे सक्रमण छे जेनो, एटले वृद्धिछे (तज्जोणिया के०) तद्योनिकछे, (तस्सभवा के०) तत्सभवछे, (तडुवक्कमा के०) तेना सरखोछे उ

शैवालजबालादेरुदकवदिति। तथा पृथिव्या सम्भव सदा भवन येषां वनस्पतीनां तथा। इ दमुक्त भवति न केवल ते तद्योनिकायस्थितिकाश्चेति। तथा पृथिव्यामेव विविधमुत्प्रावल्येन क्रम क्रमण येषां ते पृथिव्युत्क्रमा। इदमुक्त भवति। पृथिव्यामेव तेषामूर्ध्वं क्रमणलक्षणाद्वृ द्धिर्भवति। एवच ते तद्योनिकास्तत्सम्भवास्त द्व्युत्क्रमाइत्येतदनूद्याप्यपर विधातुकामश्चाह। (कम्मोवगाइत्यादि) तेहि तथाविधेन वनस्पतिकायसम्भवेन कर्मणा प्रेर्यमाणास्तेष्वेव वन स्पतिषूपसामीप्येन तस्यामेव च पृथिव्यां गच्छतीति कर्मोपगाभण्यते। तेहि कर्मवशगावन स्पतिकायादागत्य तेष्वेव पुनरपि वनस्पतिषूत्पद्यते न चान्यत्रोत्ताश्चन्यत्र भविष्यतीति। उक्तंच। कुसुमपुरोप्ते बीजे, मथुरायां नांकुर समुद्भवति॥ यत्रैव तस्य बीज तत्रैवोत्प द्यते प्रसव। तथा ते जीवा कर्मनिदानेन कारणेन समाकृष्यमाणास्तत्र वनस्पतिका ये वा व्युत्क्रमा समागता सतोनानाविधयोनिकासु पृथिवीष्विस्यन्येषामपि चस्त्रां का यानामुत्पत्तिस्थानभूतासु सचित्ताऽचित्तमिश्रासु वा श्वेतकृष्णादिवर्णतिक्तादिरससुरभ्यादि गन्धमृदुकर्कशादिस्पर्शादिकैर्विकल्पैर्बहुप्रकारासु भूमिषु वृक्षतया विविध वर्तते तेच तत्रो त्पन्नास्तासा पृथिवीना स्नेह स्निग्धभावमाददते सएवच तेषामाहारइति। नच ते पृथि वीशरीरमाहारयत पृथिव्या पीडामुत्पादयति॥१॥ एवमप्कायतेजोवायुवनस्पतीनामा योज्य। अत्रच पीडानुत्पादनेऽयं दृष्टात। तद्यथा। अडोद्भवाद्याजीवामातुरुष्मणा वि वर्धमानागर्भस्थाएवोदरगतमाहारयतोनातीव पीडामुत्पादयत्येवमसावपि वनस्पतिका यिक पृथिवीस्नेहमाहारयन्नातीव तस्या पीडामुत्पादयति उत्पद्यमान समुत्पन्नश्च वृद्धि मुपगतोऽसदृशवर्णरसाद्युपेतत्वात् बाधा विदध्यादपीति। एवमप्कायस्य भौमस्यांतरि क्षस्य वा शरीरमाहारयति तथा तेजसोभस्मादिक शरीरमाददति। एव वाय्वादेरपीति द्रष्टव्य। किबहुनोक्तेन नानाविधानां त्रसस्थावराणां प्राणिना यच्छरीर तत्ते समुत्पद्यमा नाश्चित्तमपि स्वकायेनावष्टभ्य प्रासुकीकुर्वंति। यद्विवा परिविध्वस्त पृथिवीकायादिश रीर किंचित्परितापितं कुर्वंति ते वनस्पतिजीवाएतेषा पृथिवीकायादीना तच्छरीर पूर्वमा हारितमिति तैरेव पृथिवीकायादिनिरुत्पत्तिसमये आहारितमासीत् स्वकायत्वेन परिणा मितमासीत्। तदधुना वनस्पतिजीवस्तत्रोत्पद्यमानउत्पन्नोवा त्वचा स्पर्शेनाहारयत्याहा र्य च स्वकायत्वेन विपरिणामयति विपरिणामितं च तच्छरीर स्वकायेन सह स्वरूपतां नी तं सत्तन्मयतां प्रतिपद्यते। अपराण्यपि मूलशाखाप्रतिशाखापत्रपुष्पफलादीनि तेषा पृ थिवीकायिकाना वृक्षाणां नानावर्णानि। तथाहि। स्कंधस्यान्यथाभूतोवर्णोमूलस्य चान्या दृशइति। एव यावन्नानाविधशरीरेषु पुद्गलविकुर्वितास्ते भवतीति। तथाहि। नानारस वीर्यविपाकानानाविधपुद्गलोपचयात्सुरूपकुरूपसस्थानास्ते भवतीति। तथा दृढाल्पसहन ना कृशस्थूलस्कंधाश्च भवत्येवमादिकानानाविधस्वरूपाणि विकुर्वंतीति स्थितं। केचां

विज्ञाक्यादीना वनस्पत्याद्या स्थावरजीवाएव न भवतीति अतस्तत्प्रतिषेधार्थमाह । (ते जीवाइत्यादि) ते वनस्पतिपूत्पन्नाजीवाउपयोगलक्षणत्वाज्जीवाना । तेषामप्याश्रयोत्स र्पणादिकया क्रिययोपयोगोलक्ष्यते । तथा विशिष्टाहारोपचयाऽपचयाभ्या शरीरोपचयाप चयसद्भावादनेकजीवा स्थावरास्तथा छिन्नप्ररोहणात्स्वापात्सर्वत्वगपहरणे/मरणादित्येव मादयोहेतवोऽत्र द्रष्टव्या । यदत्र कैश्चित्दृष्टेपि वनस्पतीना चैतन्ये सिद्धानैकातिकत्वादिक मुक्त स्वदर्शनानुरागात्तदपकर्णनीय। नहि सम्यगार्हतमताभिज्ञो सिद्धविरुद्धानैकातिकोपन्या सेन व्यामोह्यते सर्वस्य कथचिदभ्युपगतत्वात्प्रतिषिद्धत्वाच्चेति ते जीवास्तत्र वनस्पतिपुतया वि येन कर्मणा उपपन्नगा । तच्चेद एकेंद्रियजातिस्थावरनामवनस्पतियोग्यायुष्कादिकमिति तत्कर्मोदयेन तत्रोत्पन्नाउच्यते न पुन कालेश्वरादिना तत्रोत्पाद्यते इत्येवमाख्यात तीर्थ करादिभिरिति । एवतावत्पृथिवीयोनिकावृक्षाश्च निहिता ॥ २ ॥

अहावर पुरक्खाय इहेगतिया सत्ता रुक्खजोणिया रुक्खसभवा रुक्खवु क्कमा तज्जोणिया तस्सभवा तदुवक्कमा कम्मोवगा कम्मनियाणेण तत्थ वुक्कमा पुढवीजोणिएहि रुक्खेहि रुक्खत्ताए विउट्टति ते जीवा तेसि पुढवी जोणियाण रुक्खाण सिणेहमाहारेति तेजीवा आहारेति पुढवीसरीर आ उतेउवाउवणस्सइसरीर णाणाविहाण तसथावराण पाणाण सरीर अचि त्त कुवति परिविद्धत्थ त सरीर पुव्वाहारिय तयाहारिय विप्परिणामिय सा रुविकड सत अवरेवि यण तेसि रुक्खजोणियाण रुक्खाण सरीरा णाणाव न्ना णाणागधा णाणारसा णाणाफासा णाणासठाणसठिया णाणाविह सरीरपुग्गलविउव्विया ते जीवा कम्मोववन्नगा भवतीतिमक्खाय ॥ ३ ॥

अर्थ—हवे तद्योनिक वनस्पतिने विषे अन्य बीजा जीव उपजे, ए देखाडेछे, श्री सु धर्मस्वामी श्री जबूस्वामि प्रत्यें कहेछे के, वली वनस्पतिनो (अहावरपुरक्खाय के०) अ पर एटले बीजो प्रकार, पूर्व श्री तीर्थंकर देवे कह्योछे, ते हवे कहेछे (इहेगतिया के०) कोइ एक (सत्ता के०) जीव प्राणी, (रुक्खजोणिया के०) वृक्ष जेनी योनि एटले उत्पत्तिस्थानकछे, ते पृथ्वीयोनिक वृक्षने विषे वृक्ष पणेज उपजे (रुक्खसभवा के०) ते पृथ्वीयोनिक वृक्षने विषे वनस्पतिकायना सभवछे (रुक्खवुक्कमा के०) तथा वृ क्षने विषे नाना प्रकारें प्रबल पणे सक्रमण छे जेनो, एटले वृद्धिछे (तज्जोणिया के०) तद्योनिकछे, (तस्सभवा के०) तत्सभवछे, (तदुवक्कमा के०) तेना सरखाछे व

शैवालजबालादेरुदकवदिति । तथा पृथिव्या सनव सदा नवन येषां वनस्पतीनां तथा । इदमुक्त नवति न केवल ते सद्योनिकायस्थितिकाश्चेति । तथा पृथिव्यामेव विविधमुत्प्राबल्येन क्रम क्रमण येषां ते पृथिव्युक्रमा । इदमुक्त नवति । पृथिव्यामेव तेषामूर्ध्वं क्रमणलक्षणावृद्धिर्नवति । एवच ते तद्योनिकास्तत्सनवास्त द्युक्रमाइत्येतदनूद्याप्यपर विधातुकामआह । (कम्मोवगाइत्यादि) तेहि तथाविधेन वनस्पतिकायसत्नवेन कर्मणा प्रेर्यमाणास्तेष्वेव वनस्पतिपूपसामीप्येन तस्यामेव च पृथिव्यां गच्छतीति कर्मोपगाजण्यते । तेहि कर्मवशगावनस्पतिकायादागत्य तेष्वेव पुनरपि वनस्पतिपूत्पद्यते न चान्यत्रोताश्चन्यत्र नविष्यतीति । उक्तच । कुसुमपुरोप्ते बीजे, मथुरायां नाकुर समुन्नवति ॥ यत्रैव तस्य बीज तत्रैवोत्पद्यते प्रसव । तथा ते जीवा कर्मनिदानेन कारणेन समाकृष्यमाणास्तत्र वनस्पतिकाये वा व्युक्रमा समागता सतोनानाविधयोनिकासु पृथिवीष्वित्यन्येषामपि षण्णां कायानामुत्पत्तिस्थानजूतासु सचित्ताऽचित्तमिश्रासु वा श्वेतरुक्तादिवर्णतिक्तादिरससुरन्यादिगधमृडुकर्कशादिस्पर्शादिकैर्विकल्पैर्वहुप्रकारासु नूमिषु वृक्षतया विविध वर्तते तेच तत्रोत्पन्नास्तासा पृथिवीना स्नेह स्निग्धनावमादद्ते सएवच तेषामाहारइति । नच ते पृथिवीशरीरमाहारयत पृथिव्या पीडामुत्पादयति ॥१॥ एवमप्कायतेजोवायुवनस्पतीनामायोज्य । अत्रच पीडानुत्पादनेऽयं दृष्टात । तद्यथा । अडोद्भवाद्याजीवामातुरुष्मणा विवर्धमानागर्नस्थाएवोदरगतमाहारयतोनातीव पीडामुत्पादयत्येवमसावपि वनस्पतिकायिक पृथिवीस्नेहमाहारयन्नातीव तस्या पीडामुत्पादयति उत्पद्यमान समुत्पन्नश्च वृद्धिमुपगतोऽसदृशवर्णरसाद्युपेतत्वात् बाधा विदध्यादपीति । एवमप्कायस्य नौमस्यांतरिक्षस्य वा शरीरमाहारयंति तथा तेजसोजस्मादिक शरीरमाददति । एव वाय्वादेरपीति डष्टव्य । किबहुनोक्तेन नानाविधानां त्रसस्थावराणां प्राणिना यच्छरीर तत्ते समुत्पद्यमानाश्चचित्तमपि स्वकायेनावष्टन्य प्रासुकीकुर्वंति । यदिवा परिविध्वस्त पृथिवीकायादिशरीर किंचित्परितापितं कुर्वंति ते वनस्पतिजीवाएतेषा पृथिवीकायादीना तच्छरीर पूर्वमाहारितमिति तैरेव पृथिवीकायादिनिरुत्पत्तिसमये आहारितमासीत् स्वकायत्वेन परिणामितमासीत् । तदधुना वनस्पतिजीवस्तत्रोत्पद्यमानउत्पन्नोवा त्वचा स्पर्शेनाहारयत्याहार्य च स्वकायत्वेन विपरिणामयति विपरिणामितं च तच्छरीर स्वकायेन सह स्वरूपतां नीतं सत्तन्मयतां प्रतिपद्यते । अपराण्यपि मूलशाखाप्रतिशाखापत्रपुष्पफलादीनि तेषा पृथिवीकायिकाना वृक्षाणां नानावर्णानि । तथाहि । स्कधस्यान्यथाजूतोवर्णोमूलस्य चान्यादृशइति । एव यावन्नानाविधशरीरेषु पुद्गलविकुर्वितास्ते नवतीति । तथाहि । नानारसवीर्यविपाकानानाविधपुद्गलोपचयात्सुरूपकुरूपसस्थानास्ते नवतीति । तथा दृढाल्पसहनना कृशस्थूलस्कधाश्च नवत्येवमादिकानानाविधस्वरूपाणि विकुर्वंतीति स्थितं । केषां

पक्रमजेनो (कम्मोवगाके०) कर्मना वश गत वनस्पतिकायथी आवी वली तेहीज वन स्पतिकायने विषे (कम्मनियाणेण के०) कर्मना कारण थकी आकर्षिता (तडवुकमा के०) त्यां आव्या छता (पुढवीजोणिएहिरुक्खेहिं के०) पृथ्वीयोनिक वृक्षनी पेठे (रुक्खत्ताएविउट्टंतिके०) वृक्ष पणे उपजे ते जीव तेहीज पृथ्वीयोनिक वृक्षनो स्नेह आहा र आहारे, तेणे करी उपचय पामे हवे ते जीवो शुं आहारे ? तोके पृथ्वी, अप, तेज, वायु अने वनस्पतिना शरीर, तथा नाना प्रकारना, त्रस स्थावर जीवोना शरीर, अचित्त करे, परंतु तेने पीडा न उपजावे, परिविध्वंस करे ते शरीरने पूर्व आहारयुं ते, अथवा हम णा उपजता आहारेछे, अथवा उपना पछी आहारेछे, त्वचाने स्पर्श करी आहारीने प रिणमावीने, पोतानी काया सरखा रूप करे इत्यादिक बीजुं सर्व पूर्ववत् जाणवुं ॥ ३ ॥

॥ दीपिका–पूर्व पृथिव्या ये वृक्षास्तत्पद्यते ते उक्ता । अत्र तु वृक्षेष्वेव ये वृक्षाजा यते तान् वक्ति (अहावरति) अथापरमेतदाख्यातं पुरार्हता । इहैके सत्वावृक्षएव योनिरु त्पत्तिस्थानमाश्रयोयेषा ते वृक्षयोनिकावृक्षा । इहच पूर्वं पृथिवीयोनिकेषु वृक्षेषु कथि तं यत्तदेवात्र व्याख्येयं पूर्ववत् ॥ ३ ॥

॥ टीका–सांप्रतं तद्योनिकेष्वेव वनस्पतिषु अपरे समुत्पद्यतइत्येतद्दर्शयितुमाह । (अहावरमित्यादि) सुधर्मस्वामी शिष्योद्देशेनेदमाह । अथापरमेतदाख्यातं पुरा तीर्थंक रेण । यदिवा तस्यैव वनस्पते पुनरपरं वक्ष्यमाणमाख्यातं । तद्यथेहास्मिन् जगत्येके केचन तथाविधकर्मोदयवर्तिन सत्वा प्राणिनोवृक्षाएव योनिरुत्पत्तिस्थानमाश्रयोयेषा ते वृक्षयोनिका । इहच यत्पृथिवीयोनिकेषु वृक्षेष्वभिहितं तदेतेष्वपि वृक्षयोनिकेषु व नस्पतिषु तदुपचयकर्तृ सर्वमायोज्य यावदाख्यातमिति ॥ ३ ॥

अहावरं पुरक्खायं इहेगतिया सत्ता रुक्खजोणिया रुक्खसंभवा रुक्ख वुक्कमा तज्जोणिया तस्संभवा तडवक्कमा कम्मोवगा कम्मणियाणेणं तब वुक्कमा रुक्खजोणिएसु रुक्खत्ताए विउट्टंति ते जीवा तेसिं रुक्खजोणिया णं रुक्खाणं सिणेहमाहारेंति ते जीवा आहारेंति पुढवीसरीरं आउतेउ वाउवणस्सइसरीरं तसथावराणं पाणाणं सरीरं अचित्तं कुव्वंति परि विद्धत्थं तं सरीरं पुव्वाहारियं तयाहारियं विपरिणामियं सारूविकडं संतं अवरेवि यणं तेसिं रुक्खजोणियाणं रुक्खाणं सरीरा णाणावन्ना जाव - ते जीवा कम्मोववन्नगा भवंतीति मक्खायं ॥ ४ ॥

अर्थ–हवे वनस्पतिना अवयवोनो अधिकार कहेछे (अहावरपुरक्खाय के०) अथ हवे अपर स्थानक तीर्थंकरे कह्युछे, ते कहेछे आ जगत् माहे कोइ एक जीव, वृक्ष ज जेनी योनि एटले उत्पत्तिस्थानकछे, वृक्षने विषेज जेनो संनवछे, एटले वृद्धिछे वृक्षने विषेज जेनु नाना प्रकारे संक्रमणछे, ते योनिक ते संनवछे कर्मना वशगत वन स्पतिकाय थकी आवी वली तेज वनस्पतिने विषे कर्मने कारणे आकर्षिता त्या आ व्या छता, वृक्षयोनिक वृक्षने विषे वृक्ष पणे उपजे ते जीव तेहज वृक्षयोनिक वृक्ष नो स्नेह आहारे ते जीव आहारे पृथ्वी, अप, तेज, वायु, अने वनस्पति कायनां शरीर, त्रस अने स्थावर प्राणीना शरीर अचित्त करे परिविध्वस करे ते वनस्पतिना जीव पृथ्वी कायादिकनु जे शरीर पूर्वे आहार्यु, तथा हमणा उपजता अथवा उपना पछी जे आ हारेछे, ते त्वचाने स्पर्शे करी आहारीने परणमावीने पोतानी काया सरखा रूप करे, ते अवयवरूप रूप करे, ते कहेछे एक मूल, बीजु कंद, त्रीजी त्वचा, चोथी शाखा, पांचमा प्रवाल एटले नवांकुर, छठा पुष्प, सातमा पत्र, आठमा फल, नवमा बीज, दश मो स्कंधनूत, ते वृक्षना ए दश स्थानकने विषे जीव उपजे छे ते वृक्ष योनिक, ते वृक्ष ना शरीर नाना प्रकारना वर्ण वाला यावत् ते वनस्पतिना जीव कर्मना उदये उपना होय एरीते नगवंत श्री तीर्थंकर देवे कह्या, परंतु काल ईश्वरादिक कारण कोइ नथी ॥४॥

॥ दीपिका–अथापरमेतदाख्यातं । इह वनस्पत्यवयवसूत्रं । यथा इहैके जीवावृक्षयो निका स्युस्तदवयवाश्रिताश्चान्ये वनस्पतिरूपाएव जीवा स्यु । तथाहि । योहि एकोव नस्पतिजीव सर्ववृक्षावयवव्यापी स्यात् तस्य चापरे तदवयवेषु मूल १ कंद २ त्वक् ३ शाखा ४ प्रवाल ५ पुष्प ६ पत्र ७ फल ८ बीज ९ स्कंध, १० नूतेषु दशस्थानेषु जीवा समुत्पद्यंते तेच तत्रोत्पद्यमानावृक्षयोनिकावृक्षोनवावृक्षव्युत्क्रमाश्चोत्पद्यते इति शेष पूर्ववत् । इह चत्वारि सूत्राणि यथापूर्वमुक्तानि । यथा वनस्पतय पृथिव्याश्रिता नवतीत्येकं १ तछरीरमप्कायादिशरीरं चाहारयंति २ वृक्षास्तदाहारितं शरीरमचित्तं वि ध्वस्तंच कृत्वात्मसात्कुर्वंति ३ अन्यान्यपि तेषा पृथिवीयोनिकाना वनस्पतीना शरीराणि मूलकंदादीनि नानावर्णानि नवंति ४ एवमत्रापि चत्वारि सूत्राणि ज्ञेयानि ॥ ४ ॥

॥ टीका–साप्रतं वनस्पत्यवयवानधिकृत्याऽऽह । (अहावरमित्यादि) अथापरमेतदा ख्यातं तद्दर्शयति । इहास्मिन् जगत्येके न सर्वे तथाविधकर्मोदयवर्तिनोवृक्षयोनिका स त्वानवंति तदवयवाश्रिताश्च परे वनस्पतिरूपाएव प्राणिनोनवंति । तथा यात्द्येकोवनस्प तिजीव सर्ववृक्षावयवव्यापी नवति तस्य चापरे तदवयवेषु मूलकंदस्कंधत्वक्शाखाप्रवा

पक्रमजेनो (कम्मोवगाके०) कर्मना वश गत वनस्पतिकायथी आवी वली तेहीज वन स्पतिकायने विषे (कम्मनियाणेण के०) कर्मना कारण थकी आकर्षता (तब्वुक्कमा के०) त्यां आव्या छता (पुढवीजोणिएहिरुक्खेहिं के०) पृथ्वीयोनिक वृक्षनी पेरें (रुक्खत्ताएविउट्टतिके०) वृक्ष पणे उपजे ते जीव तेहीज पृथ्वीयोनिक वृक्षनो स्नेह आहार आहारे, तेणे करी उपचय पामे हवे ते जीवो शुं आहारे ? तोके पृथ्वी, अप, तेज, वायु अने वनस्पतिना शरीर, तथा नाना प्रकारना, त्रस स्थावर जीवोना शरीर, अचित्त करे, परतु तेने पीडा न उपजावे, परिविध्वस करे ते शरीरने पूर्व आहारयुं ते, अथवा हम णा उपजता आहारेछे, अथवा उपना पछी आहारेछे, त्वचाने स्पर्श करी आहारीने प रिणमावीने, पोतानी काया सरखा रूप करे इत्यादिक बीजुं सर्व पूर्ववत् जाणवुं ॥ ३ ॥

॥ दीपिका–पूर्वं पृथिव्या ये वृक्षाउत्पद्यते ते उक्ता । अत्र तु वृक्षेष्वेव ये वृक्षाजा यते तान् वक्ति (अहावरति) अथापरमेतदाख्यात पुरार्हता । इहैके सत्वावृक्षएव योनिरु त्पत्तिस्थानमाश्रयोयेषा ते वृक्षयोनिकावृक्षा । इहच पूर्व पृथिवीयोनिकेषु वृक्षेषु कथि तं यत्तदेवात्र व्याख्येय पूर्ववत् ॥ ३ ॥

॥ टीका–साप्रतं तद्योनिकेष्वेव वनस्पतिषु अपरे समुत्पद्यतइत्येतद्दर्शयितुमाह । (अहावरमित्यादि) सुधर्मस्वामी शिष्योद्देशेनेदमाह । अथापरमेतदाख्यातं पुरा तीर्थक रेण । यदिवा तस्यैव वनस्पते पुनरपरं वक्ष्यमाणमाख्यात । तद्यथेहास्मिन् जगत्येके केचन तथाविधकर्मोदयवर्तिन सत्वा प्राणिनोवृक्षाएव योनिरुत्पत्तिस्थानमाश्रयोयेषा ते वृक्षयोनिका । इहच यत्पृथिवीयोनिकेषु वृक्षेष्वभिहित तदेतेष्वपि वृक्षयोनिकेषु व नस्पतिषु तदुपचयकर्तृ सर्वमायोज्य यावदाख्यातमिति ॥ ३ ॥

अहावर पुरक्खाय इहेगतिया सत्ता रुक्खजोणिया रुक्खसंभवा रुक्ख वुक्कमा तज्जोणिया तस्संभवा तदुवक्कमा कम्मोवगा कम्मणियाणेण तछ वुक्कमा रुक्खजोणिएसु रुक्खत्ताए विउट्टति ते जीवा तेसिं रुक्खजोणिया ण रुक्खाण सिणेहमाहारेति ते जीवा आहारेति पुढवीसरीर आउते उवाउवणस्सइसरीर तसथावराण पाणाण सरीर अचित्त कुव्वति परि विध्वत्थ त सरीर पुव्वाहारिय तयाहारिय विपरिणामिय सारूविकड सत अवरेवि यण तेसिं रुक्खजोणियाण रुक्खाण सरीरा णाणावन्ना जाव ते जीवा कम्मोववन्नगा भवतीति मक्खाय ॥ ४ ॥

अर्थ–हवे वनस्पतिना अवयवोनो अधिकार कहेछे (अहावरपुरक्खाय के०) अथ हवे अपर स्थानक तीर्थंकरे कह्युंछे, ते कहेछे आ जगत् माहे कोइ एक जीव, वृक्ष ज जेनी योनि एटले उत्पत्तिस्थानकछे, वृक्षने विषेज जेनो संजवछे, एटले वृक्षिछे वृक्षने विषेज जेनु नाना प्रकारे सक्रमणछे, ते योनिक ते संजवछे कर्मना वशगत वनस्पतिकाय थकी आवी वली तेज वनस्पतिने विषे कर्मने कारणे आकर्षिता त्यां आव्या छता, वृक्षयोनिक वृक्षने विषे वृक्ष पणे उपजे ते जीव तेहज वृक्षयोनिक वृक्षनो स्नेह आहारे ते जीव आहारे पृथ्वी, अप, तेज, वायु, अने वनस्पति कायना शरीर, त्रस अने स्थावर प्राणीना शरीर अचित्त करे परिविध्वस करे ते वनस्पतिना जीव पृथ्वी कायादिकनु जे शरीर पूर्वे आहार्यु, तथा हमणा उपजता अथवा उपना पछी जे आहारेछे, ते त्वचाने स्पर्शे करी आहारीने परणमावीने पोतानी काया सरखा रूप करे, ते अवयवरुप रूप करे, ते कहेछे एक मूल, बीजु कंद, त्रीजी त्वचा, चोथी शाखा, पाचमा प्रवाल एटले नवाङ्कुर, छठा पुष्प, सातमा पत्र, आठमा फल, नवमा बीज, दशमो स्कधजूत, ते वृक्षना ए दश स्थानकने विषे जीव उपजे छे ते वृक्ष योनिक, ते वृक्षना शरीर नाना प्रकारना वर्ण वाला यावत् ते वनस्पतिना जीव कर्मना उदये उपना होय एरीतें जगवत श्री तीर्थंकर देवे कह्या, परंतु काल ईश्वरादिक कारण कोइ नथी ॥४॥

॥ दीपिका–अथापरमेतदाख्यात । इह वनस्पत्यवयवसूत्र । यथा इहैके जीवावृक्षयोनिका स्युस्तदवयवाश्रिताश्चान्ये वनस्पतिरूपाएव जीवा स्यु । तथाहि । योहि एकोवनस्पतिजीव सर्ववृक्षावयवव्यापी स्यात् तस्य चापरे तदवयवेषु मूल १ कद २ त्वक् ३ शाखा ४ प्रवाल ५ पुष्प ६ पत्र ७ फल ८ बीज ९ स्कध, १० जूतेषु दशस्थानेषु जीवा समुत्पद्यते तेच तत्रोत्पद्यमानावृक्षयोनिकावृक्षोजवावृक्षव्युत्क्रमाश्चोत्पद्यते इति शेष पूर्ववत् । इह चत्वारि सूत्राणि यथापूर्वमुक्तानि । यथा वनस्पतय पृथिव्याश्रिता जवतीत्येक १ तच्छरीरमप्कायादिशरीर चाहारयति २ वृक्षास्तदाहारित शरीरमचित्त विध्वस्तच कृत्वात्मसात्कुर्वति ३ अन्यान्यपि तेषा पृथिवीयोनिकाना वनस्पतीना शरीराणि मूलकदादीनि नानावर्णानि जवति ४ एवमत्रापि चत्वारि सूत्राणि ज्ञेयानि ॥ ४ ॥

॥ टीका–साप्रतं वनस्पत्यवयवानधिकृत्याऽऽह । (अहावरमित्यादि) अथापरमेतदाख्यातं तद्दर्शयति । इहास्मिन् जगत्येके न सर्व तथाविधकर्मोदयवर्तिनोवृक्षयोनिका सत्वाजवति तदवयवाश्रिताश्च परे वनस्पतिरूपाएव प्राणिनोजवति । तथा योह्येकोवनस्पतिजीव सर्ववृक्षावयवव्यापी जवति तस्य चापरे तदवयवेषु मूलकदस्कधत्वक्शाखाप्रवा

लपत्रपुष्पफलबीजभूतेषु दशसु स्थानेषु जीवा समुत्पद्यते तेच तत्रोत्पद्यमानावृक्षयो
निकावृक्षव्युत्क्रमाश्चोच्यते इति । शेषपूर्ववत् । इहच प्राक्चतुर्विधार्थप्रतिपादकानि सू
त्राण्यभिहितानि । तद्यथा । वनस्पतय पृथिव्याश्रितात्नवतीत्येक तच्छरीरं १ अप्काया
दिशरीरं वाऽहारयतीति द्वितीयं २ तथा विरुद्धास्तदाहारितं शरीरमचित्तं विध्वस्तंच क
त्वात्मसात्कुर्वतीति तृतीयं ३ अन्यान्यपि तेषां पृथिवीयोनिकाना वनस्पतीनां शरीराणि
मूलस्कंधकंदादीनि नानावर्णानि नवतीति चतुर्थं ४ एवमत्रापि वनस्पतियोनिकानां वन
स्पतीनामेवंविधार्थप्रतिपादकानि चतु प्रकाराणि सूत्राणि द्रष्टव्यानीति यावत्ते जीवावन
स्पत्यवयवमूलस्कंधादिरूपा कर्मोपपन्नगानवत्येवमाख्यातं ॥ ४ ॥

अहावरं पुरक्खायं इहेगइया सत्ता रुक्खजोणिया रुक्खसंनवा रुक्खवुक्
मा तज्जोणिया तस्संनवा तव्वक्कमा कम्मोवगा कम्मनियाणेणं त
ब्भ वुक्कमा रुक्खजोणिएसु रुक्खेसु मूलत्ताए कंदत्ताए खंधत्ताए तयत्ता
ए सालत्ताए पवालत्ताए पत्तत्ताए पुप्फत्ताए फलत्ताए बीयत्ताए विउ
ट्टंति ते जीवा तेसिं रुक्खजोणियाणं रुक्खाणं सिणेहमाहारेंति ते जीवा आ
हारेंति पुढवीसरीरं आउतेउवाउवणस्सइ णाणाविहाणं तसथावराणं
पाणाणं सरीरं अचित्तं कुव्वंति परिविद्धत्थं तं सरीरगं जाव सारूविकड
संत अवरेवियणं तेसिं रुक्खजोणियाणं मूलाणं कंदाणं खंधाणं तयाणं
सालाणं पवालाणं जाव बीयाणं सरीरा णाणावण्णा णाणागंधा जाव णा
णाविहसरीर पुग्गल विउव्विता ते जीवा कम्मोववन्नगा नवंतीति मक्खायं॥५

अर्थ–अथ हवे अन्य स्थानक पूर्वे तीर्थंकरे कह्युंछे आ जगत् माहे कोइ एक वृक्ष
योनिक तथा अन्य तेना अवयवरूप प्राणी उपजे तथा जे एक वनस्पतिनो जीव सर्व
वृक्षना अवयव व्यापारे, अन्य जीव वली तेना अवयव व्यापारे, ते वृक्षने विषे मूल
पणे, कंद पणे, स्कंध पणे, त्वचा पणे, शाखा पणे, पत्र पणे फूल पणे, फल पणे अने
बीज पणे, प्रवाल एटले अंकुरपणे, एटला स्थानके उपजे ते जीव त्यां उपजता वृक्ष
योनिक वृक्षनो स्नेह आहारे इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु यावत् ते जीव मूल कंदादि
क वनस्पतिना अवयवरूप कर्मे तेने वशें त्यां उपजे एम श्रीतीर्थंकरे कह्युंछे ॥ ५ ॥

॥ दीपिका–अथवृक्षोपर्युत्पन्नान् वृक्षानाश्रित्याह । (अहावरमिति) अथापरमेतदा
ख्यातं । इहेके सत्वावृक्षयोनिका स्यु । तस्यैकस्य वनस्पतेर्मूलारंनस्य उपचयकारिण

स्ते वृक्षयोनिकाउच्यते । यदिवा मूलस्कंधादिका पूर्वोक्तदशस्थानवर्तिनस्ते एवमुच्यते। अत्रापि सूत्रचतुष्टय प्राग्वत् ॥ ५ ॥

॥ टीका–सांप्रतं वृक्षोपर्युत्पन्नान् वृक्षानाश्रित्याह । (अथावरमिति) अथापरमेतत्पुरा ऽऽख्यात य इक्ष्यमाणमिहैके सत्वावृक्षयोनिकाभवंति । तत्र ये ते पृथिवीयोनिकावृक्षास्ते ष्वेव प्रतिप्रदेशतया येपरे समुत्पद्यते तस्यैकस्य वनस्पतेर्मूलारंभकस्योपचयकारिणस्ते वृ क्षयोनिकाइत्यभिधीयंते । यदिवा ये ते मूलकंदस्कंधशाखादिका पूर्वोक्तदशस्थानवर्तिन स्तएवमभिधीयते तेषुच वृक्षयोनिकेषु वृक्षेषु कर्मोपादननिष्पादितेषु उपर्युपरि अध्यारोहं तीत्यध्यारुहावृक्षोपरिजातावृक्षाभिधाना कामवृक्षाभिधानावा इष्टव्यास्तदभावेऽवापरे व नस्पतिकाया समुत्पद्यते वृक्षयोनिकेषु वनस्पतिष्विति । इहापि प्राग्वच्चत्वारि सूत्रा णि इष्टव्यानि ॥ ५ ॥

अहावर पुरक्खाय इहेगतिया सत्ता रुक्खजोणिया रुक्खसंभवा रुक्खवु क्कमा तज्जोणिया तस्संभवा तदुवक्कमा कम्मोववन्नगा कम्मनियाणेण तत्थ वुक्कमा रुक्खजोणिएहिं रुक्खेहिं अज्झारोहत्ताए विउट्टति ते जीवा तेसिं रुक्खजोणियाण रुक्खाण सिणेहमाहारेंति ते जीवा आहारेंति पुढवीसरीरं जाव सारूविकड संत अवरेवि यण तेसि रुक्खजोणियाण अज्झारुहाण सरीरा णाणावन्ना जावमक्खाय ॥ ६ ॥

अर्थ–हवे वृक्ष उपरना वृक्ष आश्री कहेछे अथ हवे अन्य स्थानक श्री तीर्थंकरे क ह्युछे आजगत्माहे कोइ एक वृक्षयोनिक सत्व एटले जीव होयछे त्यां जे पृथ्वीयोनिक वृक्ष, ते वृक्षने विषेज बीजा मूलादिक वृद्धिना करनार, ते वृक्षयोनिक वृक्षने विषे अव यवरूपे उपजे, तेनी उपर उपर जे आरूढे ते वल्ली वृक्षादिक अथवा पींपलादिक वड वृक्षनी उपर उपजे, ते कामवृक्षादिक जाणवा ते कारणे एने अध्यारोह वृक्ष कहियें, ते अध्यारोह, वृक्षनोज स्नेह आहारे इत्यादिक सर्व पूर्ववत् जाणी लेवु ते यावत् पो ताना कर्मने वशे उपजे एटले अध्यारोहनु प्रथम सूत्र कह्यु ॥ ६ ॥

॥ दीपिका–वृक्षयोनिकेषु एके अध्यारोहाजायते वृक्षोपरिजातावृक्षाअध्यारोहाइत्यु च्यते । तेच वल्लीवृक्षाभिधाना । शेष प्राग्वत् । इद प्रथमसूत्र ॥ ६ ॥

॥ टीका–तद्यथा योनिकेषु वृक्षेष्वपरेऽध्यारुहा समुत्पद्यते तेच तत्रोत्पन्ना स्वयोनिभू

लपत्रपुष्पफलबीजभूतेषु दशसु स्थानेषु जीवा समुत्पद्यते तेच तत्रोत्पद्यमानावृक्षयो निकावृक्षव्युत्क्रमाश्चोच्यते इति । शेषपूर्ववत् । इहच प्राक्चतुर्विधार्थप्रतिपादकानि सु त्राण्यभिहितानि । तद्यथा । वनस्पतय पृथिव्याश्रितान्भवतीत्येक तच्छरीरं १ अप्काया दिशरीर वाऽहारयतीति द्वितीयं २ तथा विरुद्धास्तदाहारितं शरीरमचित्त विध्वस्तच स्वात्मसात्कुर्वतीति तृतीयं ३ अन्यान्यपि तेषां पृथिवीयोनिकाना वनस्पतीनां शरीराणि मूलस्कधकदादीनि नानावर्णानि भवतीति चतुर्थं ४ एवमत्रापि वनस्पतियोनिकानां वन स्पतीनामेवविधार्थप्रतिपादकानि चतु प्रकाराणि सूत्राणि द्रष्टव्यानीति यावत्ते जीवावन स्पत्यवयवमूलस्कधादिरूपा कर्मोपपन्नगाभवत्येवमाख्यातं ॥ ४ ॥

अहावर पुरक्खाय इहेगइया सत्ता रुक्कजोणिया रुक्कसभवा रुक्कवुक्क मा तज्जोणिया तस्सभवा तडुवक्कमा कम्मोवगा कम्मनियाणेण त ब वुक्कमा रुक्कजोणिएसु रुक्खेसु मूलत्ताए कदत्ताए खधत्ताए तयत्ता ए सालत्ताए पवालत्ताए पत्तत्ताए पुप्फत्ताए फलत्ताए बीयत्ताए वित इति ते जीवा तेसिं रुक्कजोणियाण रुक्काण सिणेहमाहारेति ते जीवा आ हारेंति पुढवीसरीर आउतेउवाउवणस्सइ णाणाविहाण तसथावराण पाणाण सरीर अचित्त कुवति परिविद्धत्थ त सरीरग जाव सारूविकड सत अवरेवियण तेसिं रुक्कजोणियाण मूलाण कदाण खधाण तयाण सालाण पवालाणं जाव बीयाण सरीरा णाणावण्णा णाणागधा जाव णा णाविहसरीर पुग्गल विउवित्ता ते जीवा कम्मोववन्नगा भवतीति मक्खाय॥५

अर्थ–अथ हवे अन्य स्थानक पूर्वे तीर्थंकरे कह्युछे आ जगत् माहे कोइ एक वृक्ष योनिक तथा अन्य तेना अवयवरूप प्राणी उपजे तथा जे एक वनस्पतिनो जीव सर्व वृक्षना अवयव व्यापारे, अन्य जीव वली तेना अवयव व्यापारे, ते वृक्षने विषे मूल पणे, कद पणे, स्कध पणे, त्वचा पणे, शाखा पणे, पत्र पणे फूल पणे, फल पणे अने बीज पणे, प्रवाल एटले अकुरपणे, एटला स्थानके उपजे ते जीव त्यां उपजता वृक्ष योनिक वृक्षनो स्नेह आहारे इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु यावत् ते जीव मूल कदादि क वनस्पतिना अवयवरूप कर्म तेने वशें त्यां उपजे एम श्रीतीर्थंकरे कह्युछे ॥ ५ ॥

॥ दीपिका–अथवृक्षोपर्युत्पन्नान् वृक्षानाश्रित्याह । (अहावरमिति) अथापरमेतदा ख्यात । इहैके सत्वावृक्षयोनिका स्यु । तस्यैकस्य वनस्पतेर्मूलारंभस्य उपचयकारिण

स्ते वृक्षयोनिकाउच्यते । यदिवा मूलस्कंधादिका पूर्वोक्तदशस्थानवर्तिनस्ते एवमुच्यते।
अत्रापि सूत्रचतुष्टय प्राग्वत् ॥ ५ ॥

॥टीका–सांप्रतं वृक्षोपर्युत्पन्नान् वृक्षानाश्रित्याह । (अथावरमिति) अथापरमेतत्पुरा
ऽऽख्यातं य वक्ष्यमाणमिहैके सत्वावृक्षयोनिकाजवति । तत्र ये ते पृथिवीयोनिकावृक्षास्ते
ष्वेव प्रतिप्रदेशतया येपरे समुत्पद्यते तस्यैकस्य वनस्पतेर्मूलारजकस्योपचयकारिणस्ते वृ
क्षयोनिकाइत्यनिधीयते । यदिवा ये ते मूलकंदस्कंधशाखादिका पूर्वोक्तदशस्थानवर्तिन
स्तएवमनिधीयते तेषुच वृक्षयोनिकेषु वृक्षेषु कर्मोपादननिष्पादितेषु उपर्युपरि अध्यारोहं
तीत्यध्यारुहावृक्षोपरिजातावृक्षानिधाना कामवृक्षानिधानावा इष्टव्यास्तदन्नावेऽथापरे व
नस्पतिकाया समुत्पद्यते वृक्षयोनिकेषु वनस्पतिष्विति । इहापि प्राग्वच्चत्वारि सूत्रा
णि इष्टव्यानि ॥ ५ ॥

अहावर पुरक्खायं इहेगतिया सत्ता रुक्खजोणिया रुक्खसंनवा रुक्खवु
क्कमा तज्जोणिया तस्संनवा तडुवक्कमा कम्मोववन्नगा कम्मनियाणेणं
तज वुक्कमा रुक्खजोणिएहिं रुक्खेहिं अज्ञारोहत्ताए विउट्टंति ते जीवा
तेसिं रुक्खजोणियाणं रुक्खाणं सिणेहमाहारेंति ते जीवा आहारेंति
पुढवीसरीरं जाव सारूविकडं संतं अवरेवि यणं तेसिं रुक्खजोणियाणं
अज्ञारुहाणं सरीरा णाणावन्ना जावमक्खायं ॥ ६ ॥

अर्थ–हवे वृक्ष उपरना वृक्ष आश्री कहेछे अथ हवे अन्य स्थानक श्री तीर्थंकरे क
ह्युं छे आजगत्माहे कोइ एक वृक्षयोनिक सत्व एटले जीव होयछे त्यां जे पृथ्वीयोनिक
वृक्ष, ते वृक्षने विषेज बीजा मूलादिक वृद्धिना करनार, ते वृक्षयोनिक वृक्षने विषे अव
यवरूपे उपजे, तेनी उपर उपर जे आरूढे ते वल्ली वृक्षादिक अथवा पींपलादिक वड
वृक्षनी उपर उपजे, ते कामवृक्षादिक जाणवा ते कारणे एने अध्यारोह वृक्ष कहियें,
ते अध्यारोह, वृक्षनोज स्नेह आहारे इत्यादिक सर्व पूर्ववत् जाणी लेवु ते यावत् पो
ताना कर्मने वशे उपजे एटले अध्यारोहनु प्रथम सूत्र कह्यु ॥ ६ ॥

॥ दीपिका–वृक्षयोनिकेषु एके अध्यारोहाजायते वृक्षोपरिजातावृक्षाअध्यारोहाइत्यु
च्यते । तेच वल्लीवृक्षानिधाना । शेषं प्राग्वत् । इदं प्रथमसूत्रं ॥ ६ ॥

॥ टीका–तद्यथा योनिकेषु वृक्षेष्वपरेऽध्यारुहा समुत्पद्यते तेच तत्रास्दन्ना सयोनिनू

त वनस्पतिशरीरमाहारयति तथा पृथिव्यप्तेजोवाय्वादीनां शरीरकमाहारयति तथा तच्छरीरमाहारित सदचित्त विध्वस्त परिणामितमात्मसात्कृत स्वकायावयवतया व्यवस्थापयंत्य पराणिच तेषामध्यारुहाणा नानाविधरूपरसगधस्पर्शोपेतानि नानासस्थानानि शरीराणि नवति ते जीवास्तत्र स्वकृतकर्मोपपन्ना नवतीत्येतदाख्यातमिति प्रथम सूत्र ॥ ६ ॥

अहावर पुरक्काय इहेगतिया सत्ता अज्झारोहजोणिया अज्झारोहस नवा जाव कम्मनियाणेण तत्र वुक्कमा रुक्कजोणिएसु अज्झारोहेसु अ ज्झारोहत्ताए विउट्टति ते जीवा तेसि अज्झारोहजोणियाण अज्झारोहाण सिणेहमाहारेति ते जीवा आहारेति ते जीवा पुढवीसरीर जाव सारूवि कड सत अवरेवि यण तेसि अज्झारोहजोणियाण अज्झारोहाण सरीरा णाणावन्ना जावमक्खायं ॥ ७ ॥

अर्थ–हवे अन्य स्थानक श्री तीर्थंकरे कहुछे, ते कहेछे जे प्रथम वृक्षयोनिक वृक्ष ने विषे अध्यारोह कह्या,तेनेज विषे वली बीजा प्रदेश वृद्धिना करनार एवा अध्यारोह वनस्पति पणे उपजे ते जीव अध्यारोह प्रदेशने विषे उपना ते वृक्षयोनिक अध्यारोहनो स्नेह आहारे इत्यादिक सर्व पूर्ववत् जाणवु एटले अध्यारोहनु बीजु सूत्र कहु ॥७॥

॥ दीपिका–प्राग्वृक्षयोनिकेषु वृक्षेष्वध्यारोहाउक्ता । अत्र तेष्वेवान्ये प्रतिप्रदेशोपच यकर्तारोऽध्यारोहवनस्पतित्वेन जायंते । तेच जीवाअध्यारोहप्रदेशेषूत्पन्नाअध्यारोहजी वास्तेषा स्वयोनिनूतानि शरीराणि आहारयति तत्र पराण्यपि पृथिव्यादिनि शरीराण्या हारयति अपराणि वाऽध्यारोहसनवानामध्यारुहजीवाना नानावर्णकादिकानि शरीराणि नवत्येवमाख्यातमिति द्वितीय सूत्र ॥ ७ ॥

॥ टीका–द्वितीय त्विदमथापर पुराख्यातं । ये ते प्राग्वृक्षयोनिषु वृक्षेषु अध्यारुहा प्रतिपादितास्तेष्वेवोपरि प्रतिप्रदेशोपचयकर्तारोऽध्यारुहवनस्पतित्वेनोपपद्यते । तेच जी वाअध्यारुहप्रदेशेषूत्पन्नाअध्यारुहजीवास्तेषा स्वयोनिनूतानि शरीराण्याहारयति । त थाऽपराण्यपि पृथिव्यादीनि शरीराणि आहारयति अपराणि चाध्यारुहसनवानामध्या रुहजीवाना नानाविधवर्णकादिकानि शरीराणि नवतीत्येवमाख्यात ॥ ७ ॥

अहावर पुरक्काय इहेगतिया सत्ता अज्झारोहजोणिया अज्झारोहसन वा जाव कम्मनियाणेण तत्र वुक्कमा अज्झारोहजोणिएसु अज्झारोह

त्ताए विउट्टति ते जीवा तेसिं अज्झारोहजोणियाणं अज्झारोहाणं सिणेह माहारेंति ते जीवा आहारंति पुढविसरीरा आउसरीरा जाव सारूविक ड संतं अवरेवि यणं तेसिं अज्झारोहजोणियाणं अज्झारोहाणं सरीरा णाणावन्ना जावमक्खायं ॥ ८ ॥

अर्थ-अथ हवे अन्य स्थानक तीर्थंकरे कह्युंछे आजगत् माहे कोइ एक जीव, अ ध्यारोहयोनियाछे, ते अध्यारोह योनिया तेने विषे वली अध्यारोह पणे उपजे, ते अ ध्यारोहयोनिक अध्यारोहना शरीर आहारे इत्यादिक पूर्ववत् जाणवुं आहीं पूर्वे बी जा सूत्रमां वृक्षयोनिक अध्यारोहनां शरीर बीजा अध्यारोह जीव अहारे, अने आ त्री जा सूत्रमां अध्यारोहयोनिक अध्यारोह जीवना शरीर अहारे, एटलुं विशेषछे ए अ ध्यारोहनुं त्रीजुं सूत्र कह्युं ॥ ८ ॥

॥ दीपिका-एके सत्वाअध्यारोहसंभवेषु अध्यारोहेषु अध्यारोहत्वेन जायते। येच एव जायते तेऽध्यारोहयोनिकानाध्यारोहाणां यानि शरीराणि तान्याहारयंति। द्वितीयसूत्रे वृक्ष योनिकानामध्यारोहाणां यानि शरीराणि तान्यपरेऽध्यारोहाजीवाआहारयंति। अत्रतु अ ध्यारोहयोनिकानां अध्यारोहजीवानां शरीराणीति विशेष । इदं तृतीयसूत्रं ॥ ८ ॥

॥टीका-तृतीयं त्विद (अहावरमित्यादि) अथापरं पुराख्यातं । तद्यथा । इहैके सत्वा अध्यारुहसंभवेष्वध्यारुहत्वेनोपपद्यते । ये चैवमुत्पद्यते तेऽध्यारुहजीवाआहारयंति । तृ तीये त्वध्यारुहयोनिकानामध्यारुहजीवानां शरीराणि द्रष्टव्यानीति विशेष ॥ ८ ॥

अहावरं पुरक्खायं इहेगतिया सत्ता अज्झारोहजोणिया अज्झारोह संभवा जाव कम्मनियाणेणं तत्थ वुक्कमा अज्झारोहजोणिएसु अज्झारोह सु मूलत्ताए जाव बीयत्ताए विउट्टति ते जीवा तेसिं अज्झारोहजोणियाणं अज्झारोहाणं सिणेहमाहारेंति जाव अवरेवि यणं तेसिं अज्झारोहजोणि याणं मूलाणं जाव बीयाणं सरीरा णाणावन्ना जावमक्खायं ॥ ९ ॥

अर्थ-हवे अध्यारोहनुं चोथुं सूत्र श्री तीर्थंकर कह्युंछे, ते कहछे आ जगत् माहे कोइ एक जीव, अध्यारोहयोनिक ते अध्यारोहने विषे मूल कंदादिक अवयव पणे उपजे, ते त्यां उपना थका तेना शरीर आहारे, इत्यादिक अर्थ पूर्ववत् जाणवो ॥९॥

॥ दीपिका-अथापरमिदमाख्यातं इहैके सत्वाअध्यारुहयोनिकेष्वध्यारोहेषु मूलकंद

त वनस्पतिशरीरमाहारयति तथा पृथिव्यप्तेजोवाय्वादीनां शरीरकमाहारयंति तथा तच्छरीरमाहारित सदचित्त विध्वस्त परिणामितमात्मसात्कृत स्वकायावयवतया व्यवस्थापयंत्य पराणिच तेषामध्यारुहाणा नानाविधरूपरसगंधस्पर्शोपेतानि नानासंस्थानानि शरीराणि नवति ते जीवास्तत्र स्वकृतकर्मोपपन्ना नवतीत्येतदाख्यातमिति प्रथम सूत्र ॥ ६ ॥

अहावर पुरक्खाय इहेगतिया सत्ता अज्झारोहजोणिया अज्झारोहस नवा जाव कम्मनियाणेण तत्थ वुक्कमा रुक्खजोणिएसु अज्झारोहेसु अ ज्झारोहत्ताए विउट्टति ते जीवा तेसिं अज्झारोहजोणियाण अज्झारोहाण सिणेहमाहारेति ते जीवा आहारेति ते जीवा पुढवीसरीर जाव सारूवि कड सत अवरेवि यण तेसिं अज्झारोहजोणियाण अज्झारोहाण सरीरा णाणावन्ना जावमक्खाय ॥ ७ ॥

अर्थ—हवे अन्य स्थानक श्री तीर्थंकरे कह्युछे, ते कहेछे जे प्रथम वृक्षयोनिक वृक्ष ने विषे अध्यारोह कह्या,तेनेज विषे वली बीजा प्रदेश वृद्धिना करनार एवा अध्यारोह वनस्पति पणे उपजे ते जीव अध्यारोह प्रदेशने विषे उपना ते वृक्षयोनिक अध्यारोहनो स्नेह आहारे इत्यादिक सर्व पूर्ववत् जाणवु एटले अध्यारोहनु बीजु सूत्र कह्यु ॥७॥

॥ दीपिका—प्राग्वृक्षयोनिकेषु वृक्षेष्वध्यारोहाउक्ता । अत्र तेष्वेवान्ये प्रतिप्रदेशोपच यकर्तारोऽध्यारोहवनस्पतित्वेन जायंते । तेच जीवाअध्यारोहप्रदेशेषूत्पन्नाअध्यारोहजीवास्तेषा स्वयोनिनूतानि शरीराणि आहारयति तत्र पराण्यपि पृथिव्यादिनि शरीराण्याहारयति अपराणि वाऽध्यारोहसंनवानामध्यारुहजीवाना नानावर्णकादिकानि शरीराणि नवत्येवमाख्यातमिति द्वितीय सूत्र ॥ ७ ॥

॥ टीका—द्वितीय त्विदमथापर पुराख्यातं । ये ते प्राग्वृक्षयोनिषु वृक्षेषु अध्यारुहा प्रतिपादितास्तेष्वेवोपरि प्रतिप्रदेशोपचयकर्तारोऽध्यारुहवनस्पतित्वेनोपपद्यते । तेच जीवाअध्यारुहप्रदेशेषूत्पन्नाअध्यारुहजीवास्तेषा स्वयोनिनूतानि शरीराण्याहारयति । तथाऽपराण्यपि पृथिव्यादीनि शरीराणि आहारयति अपराणि चाध्यारुहसंनवानामध्यारुहजीवाना नानाविधवर्णकादिकानि शरीराणि नवतीत्येवमाख्यात ॥ ७ ॥

अहावर पुरक्खाय इहेगतिया सत्ता अज्झारोहजोणिया अज्झारोहसंन वा जाव कम्मनियाणेण तत्थ वुक्कमा अज्झारोहजोणिएसु अज्झारोह

त्ताए विउट्टंति ते जीवा तेसिं अज्झारोहजोणियाणं अज्झारोहाणं सिणेह माहारेंति ते जीवा आहारंति पुढविसरीरा आउसरीरा जाव सारूविक ड संतं अवरेवि यणं तेसिं अज्झारोहजोणियाणं अज्झारोहाणं सरीरा णाणावन्ना जावमक्खायं ॥ ८ ॥

अर्थ-अथ हवे अन्य स्थानक तीर्थंकर कहुछे आजगत् माहे कोइ एक जीव, अध्यारोहयोनियाछे, ते अध्यारोह योनिया तेने विषे वली अध्यारोह पणे उपजे, ते अध्यारोहयोनिक अध्यारोहना शरीर आहारे इत्यादिक पूर्ववत् जाणवुं आंही पूर्व बीजा सूत्रमा वृक्षयोनिक अध्यारोहनां शरीर बीजा अध्यारोह जीव अहारे, अने आ त्रीजा सूत्रमा अध्यारोहयोनिक अध्यारोह जीवना शरीर अहारे, एटलुं विशेषछे ए अध्यारोहनुं त्रीजुं सूत्र कहुं ॥ ८ ॥

॥ दीपिका-एके सत्वाअध्यारोहसंभवेषु अध्यारोहेषु अध्यारोहत्वेन जायते। येच एव जायते तेऽध्यारोहयोनिकानाध्यारोहाणां यानि शरीराणि तान्याहारयति। द्वितीयसूत्रे वृक्षयोनिकानामध्यारोहाणां यानि शरीराणि तान्यपरेऽध्यारोहाजीवाआहारयति। अत्रतु अध्यारोहयोनिकानां अध्यारोहजीवानां शरीराणीति विशेषः । इत्नृतीयसूत्रं ॥ ८ ॥

॥टीका-तृतीयं त्विदं (अहावरमित्यादि) अथापरं पुराख्यातं । तद्यथा । इहैके सत्वा अध्यारुहसंभवेष्वध्यारुहत्वेनोपपद्यते । ये चैवमुत्पद्यते तेऽध्यारुहजीवाआहारयति । तृतीये त्वध्यारुहयोनिकानामध्यारुहजीवानां शरीराणि इष्टव्यानीति विशेषः ॥ ८ ॥

अहावरं पुरक्खायं इहेगतिया सत्ता अज्झारोहजोणिया अज्झारोह संभवा जाव कम्मनियाणेणं तत्थ वुकमा अज्झारोहजोणिएसु अज्झारोहेसु मूलत्ताए जाव बीयत्ताए विउट्टंति ते जीवा तेसिं अज्झारोहजोणियाणं अज्झारोहाणं सिणेहमाहारेंति जाव अवरेवि यणं तेसिं अज्झारोहजोणियाणं मूलाणं जाव बीयाणं सरीरा णाणावन्ना जावमक्खायं ॥ ९ ॥

अर्थ-हवे अध्यारोहनुं चोथुं सूत्र श्री तीर्थंकर कहुछे, ते कहछे आ जगत् माहे कोइ एक जीव, अध्यारोहयोनिक ते अध्यारोहने विषे मूल कंदादिक अवयव पणे उपजे, ते त्यां उपना थका तेना शरीर आहारे, इत्यादिक अर्थ पूर्ववत् जाणवा ॥९॥

॥ दीपिका-अथापरमिदमाख्यातं इहैके सत्वाअध्यारुहयोनिकेष्वध्यारोहेषु मूलकंद

स्कंधत्वक्शाखाप्रवालपत्रपुष्पफलबीजत्वेन जायते ते तथा कर्मोपगाजवतीत्याख्यात मिति चतुर्थं सूत्रं ॥ ९ ॥

॥ टीका–इदंतु चतुर्थंक । तद्यथा (अहावरमित्यादि) अथापरमिदमाख्यातं । तद्यथा इहैके सत्वाअध्यारुहयोनिकेष्वध्यारुहेषु मूलकंदस्कंधत्वक्शाखाप्रवालपत्रपुष्पफलबीज जावेनोत्पद्यते तेच तथाविधकर्मोपगाजवतीत्येतदाख्यातमिति शेष तदेवेति ॥ ९ ॥

अहावरं पुरक्खायं इहेगतिया सत्ता पुढविजोणिया पुढविसंजवा जाव णाणाविहजोणियासु पुढवीसु तणत्ताए विउट्टंति ते जीवा तेसिं णाणावि हजोणियाणं पुढवीणं सिणेहमाहारेंति जाव ते जीवा कम्मोववन्ना जवंती तिमक्खायं॥१०॥एवं पुढविजोणिएसु तणेसु तणत्ताए विउट्टंति जावमक्खा य ॥ ११ ॥ एवं तणजोणिएसु तणेसु तणत्ताए विउट्टंति तणजोणियं त णसरीरं च अहारेंति जावमक्खायं ॥१२॥ एवं तणजोणिएसु तणेसु मूल त्ताए जाव बीयत्ताए विउट्टंति तेजीवा जावएवं मक्खायं ॥१३॥ एवं उंस हीणवि चत्तारि आलावगा ॥१४॥ एवं हरियाणवि चत्तारि आलावगा॥१५॥

अर्थ–हवे वली वृक्ष वर्जीने बीजा वनस्पतिकायना विशेष आश्री कहेले हवे बीजु स्थानक पूर्वे तीर्थंकरे कह्युडे आ जगत् मांहे कोइ एक पृथ्वीकाय योनिक पृथ्वीनेविषे वनस्पतिकायनो संजवडे,पृथ्वीव्युत्क्रमडे, यावत् नाना प्रकारे योनिक, पृथ्वीने विषे तृण पणे उपजे, ते पृथ्वीनो आहार आहारे इत्यादिक जेम वृक्षनो पहेलो आलावो क ह्यो हतो, तेमज जाणवो एमज चार आलावा जेम वृक्षना कह्याडे, तेम तृणना पण जाणवा ॥ १० ॥ बीजे आलावे पृथ्वीयोनिक तृणनेविषे उपजे आगलनु सर्व पूर्ववत् जाणवु, ॥ ११ ॥ त्रीजे आलावे तृणयोनिक तृणनेविषे तृणपणे उपजे शेष पूर्ववत् जाणवु ॥ १२ ॥ चोथे आलावे तृणयोनिक तृणने विषे मूलकंदादिकने जावे उपजे शेष पूर्ववत् जाणवु, ॥ १३ ॥ (एवंउंसहीणविचत्तारिआलावगा के०) एज रीते उषधि एटले धान्यनी जाति तेना पण चार आलावा जाणवा ॥ १४ ॥ (एवंहरियाणविचत्ता रिआलावगा के०) एवं हरितकाय आश्री पण चार आलावा जाणवा ए सर्व मली ने वीश आलावा थया ॥ १५ ॥

॥ दीपिका–अथ वृक्षवर्जितं शेषवनस्पतिमाश्रित्याह । अथापरमिदमाख्यातं । इहै

के सत्वा पृथिवीयोनिका पृथिवीसंभवाइत्यादयोयथावृक्षेषु चत्वारि सूत्राणि एवं तृणा न्यप्याश्रित्य ज्ञेया । ते चामी नानाविधासु पृथिवीयोनिषु तृणत्वेनोत्पद्यते पृथिवीशरीरं चाहारयतीत्येकं, ॥१०॥ पृथिवीयोनिकेषु तृणेपूत्पद्यते तृणशरीरं चाहारयतीति द्वितीयं ॥११॥ तृणयोनिकेषु तृणेपूत्पद्यते तृणयोनिकतृणशरीरं चाहारयतीति तृतीयं ॥ १२ ॥ तृणयोनिकेषु तृणावयवेषु मूलादिषु दशस्थानेपूत्पद्यते तृणशरीरं चाहारयतीति चतुर्थं सूत्रं ॥ १३ ॥ (एवंऊसहीण) इत्यादि सुगमं ॥ १४ ॥ १५ ॥

॥ टीका–सांप्रतंवृक्षव्यतिरिक्तं शेषवनस्पतिकायमाश्रित्याह । (अथावरमित्यादि) अ थापरमिदमाख्यातं यदुत्तरत्र वक्ष्यते । तद्यथा । इहैके सत्वा पृथिवीयोनिका पृथिवी संभवा पृथिवीव्युत्क्रमाइत्यादयोयथावृक्षेषु चत्वारआलापकाएवं तृणान्यप्याश्रित्य द्रष्ट व्या । ते चामी नानाविधासु पृथिवीयोनिषु तृणत्वेनोपपद्यते पृथिवीशरीरं चाहारयंति ॥१०॥ द्वितीयंतु पृथवीयोनिकेषु तृणेपूत्पद्यते तृणशरीरं चाहारयतीति ॥ ११ ॥ तृतीयं तु तृणयोनिकेषु तृणेपूत्पद्यते तृणयोनिकशरीरं चाहारयतीति ॥१२॥ चतुर्थं तृणयोनिकेषु तृणावयवेषु मूलादिषु दशप्रकारेपूत्पद्यते तृणशरीरं चाहारयत्येवं यावदाख्यातमिति ॥१३॥ एवमौषध्याश्रयाश्चत्वारआलापकाजणनीया ॥१४॥ नवरमोषधिग्रहणं कर्तव्यमेवं हरिताश्रयाश्चत्वारआलापकाजणनीया । कुहणेषु त्वेकएवालापकोद्रष्टव्यस्तद्योनिकानाम परेषामनावादिति जावः ॥ १५ ॥

अहावरं पुरकायं इहेगतिया सत्ता पुढविजोणिया पुढविसंजवा जाव कम्म नियाणेणं तत्र वुक्कमा णाणाविहजोणियासु पुढवीसु आयत्ताए वायत्ताए कायत्ताए कूहणत्ताए कंडुकत्ताए उवेहणियत्ताए निवेहणियत्ताए सछत्ताए छत्तगत्ताए वासाणियत्ताए कूरत्ताए विउट्टंति ते जीवा तेसिं णाणाविहजो णियाणं पुढवीणं सिणेहमाहारेंति तेवि जीवा आहारेंति पुढविसरीरं जा व संतं अवरेवियणं तेसिं पुढविजोणियाणं आयत्ताणं जाव कूराणं सरी रा णाणावणा जावमरकायं एगोचेव आलावगो सेसा तिण्णि णत्थि ॥ १६ ॥

अर्थ–अथ हवे अन्य स्थानक पूर्वे तीर्थंकर देवे कह्युंछे आ जगत् माहे कोइ एक सत्व, पृथ्वीयोनिक पृथ्वीने विषे संजवछे यावत् कर्मने कारणे आकर्षिता त्यां उप ना थता नाना प्रकारनी योनीने विषे, पृथ्वीने विषे, आर्यनामा वनस्पति पणे, वाय नामा वनस्पति पणे, कायनामा वनस्पति पणे कुहणत्ताए एटले तोईकोडी नामा

स्कधत्वक्शाखाप्रवालपत्रपुष्पफलबीजत्वेन जायते ते तथा कर्मोपगानवतीत्याख्यात मिति चतुर्थ सूत्र ॥ ९ ॥

॥ टीका–इदतु चतुर्थक । तद्यथा (अहावरमित्यादि) अथापरमिदमाख्यातं । तद्यथा इहेके सत्वाअध्यारुह्योनिकेष्वध्यारुहेषु मूलकदस्कधत्वक्शाखाप्रवालपत्रपुष्पफलबीज भावेनोत्पद्यते तेच तथाविधकर्मोपगानवतीत्येतदाख्यातमिति शेष तदेवेति ॥ ९ ॥

अहावर पुरस्काय इहेगतिया सत्ता पुढविजोणिया पुढविसनवा जाव णाणाविहजोणियासु पुढवीसु तणत्ताए विउट्टति ते जीवा तेसि णाणावि हजोणियाण पुढवीण सिणेहमाहारेति जाव ते जीवा कम्मोववन्ना नवती तिमरकाय॥१०॥एव पुढविजोणिएसु तणेसु तणत्ताए विउट्टति जावमरका य ॥ ११ ॥ एव तणजोणिएसु तणेसु तणत्ताए विउट्टति तणजोणिय त णसरीर च अहारेति जावमरकाय ॥१२॥ एव तणजोणिएसु तणेसु मूल त्ताए जाव बीयत्ताए विउट्टति तेजीवा जावएव मरकाय ॥१३॥ एव उस हीणवि चत्तारि आलावगा ॥१४॥ एव हरियाणवि चत्तारि आलावगा॥१५॥

अर्थ–हवे वली वृक्ष वर्जीने बीजा वनस्पतिकायना विशेष आश्री कहेछे हवे बीजु स्थानक पूर्वे तीर्थकरे कह्युछे आ जगत् मांहे कोइ एक पृथ्वीकाय योनिक पृथ्वीनेविषे वनस्पतिकायनो सनवछे, पृथ्वीऽयुत्क्रमछे, यावत् नाना प्रकारे योनिक, पृथ्वीने विषे तृण पणे उपजे, ते पृथ्वीनो आहार आहारे इत्यादिक जेम वृक्षनो पहेलो आलावो क ह्यो हतो, तेमज जाणवो एमज चार आलावा जेम वृक्षना कह्याछे, तेम तृणना पण जाणवा ॥ १० ॥ बीजे आलावे पृथ्वीयोनिक तृणनेविषे उपजे आगलनु सर्व पूर्ववत् जाणवु, ॥ ११ ॥ त्रीजे आलावे तृणयोनिक तृणनेविषे तृणपणे उपजे शेष पूर्ववत् जाणवु ॥ १२ ॥ चोथे आलावे तृणयोनिक तृणने विषे मूलकदादिकने नावे उपजे शेष पूर्ववत् जाणवु, ॥ १३ ॥ (एवउसहीणविचत्तारिआलावगा के०) एज रीते उपधि एटले धान्यनी जाति तेना पण चार आलावा जाणवा ॥ १४ ॥ (एवहरियाणविचत्ता रिआलावगा के०) एव हरितकाय आश्री पण चार आलावा जाणवा ए सर्व मली ने वीश आलावा थया ॥ १५ ॥

॥ दीपिका–अथ वृक्षवर्जितं शेषवनस्पतिमाश्रित्याह । अथापरमिदमाख्यातं । इहै

वा जाणवा ए सर्व मली पच्चीश आलावा थया ॥ २५ ॥ तेमज अध्यारोहना पण उदक योनि आश्री चार आलावा कहेवा तेमज तृणना पण चार आलावा उदकयोनी आश्री कहेवा ॥ ३३ ॥ तथा उंपधिना पण चार आलावा कहेवा ॥ ३७ ॥ एम हरितकायना पण चार आलावा आदि उदकयोनिकने विषे जाणवा एम एकेकना चार चार आलावा करता बधा मलीने वीश आलावा उदक योनिक वनस्पतिना थया, तथा एकवीश आलावा पूर्वे पृथ्वीयोनिक वनस्पतिना कह्याछे, ए बधा मलीने एकतालीश आलावा वनस्पतिना थया ॥ १७ ॥

॥ दीपिका—अथाप्काययोनिकस्य वनस्पते स्वरूपमाह् । अथापरमाख्यातं । इहैके सत्वाउदक योनिरुत्पत्तिस्थानं येषां ते तथा तेच कर्मवशगानानाविधयोनिकेषु जलेषु वृक्षत्वेन पनकशैवलादित्वेन जायते तेच जलशरीरमाहारयति न केवलं तदेवान्यदपि पृथिव्यादिशरीरमाहारयति। यथा पृथ्वीयोनिकाना वृक्षाणां चत्वारआलापकास्तथा जलयोनिकाना वृक्षाणां न स्युः । तत्रोत्पन्नानामन्यविकल्पाभावात् किंतर्हि? एकएवाऽऽलापकः स्यात्॥ १७॥

॥ टीका—सांप्रतमप्काययोनिकस्य वनस्पते स्वरूपं दर्शयितुमाह् । (अथावरमित्यादि) अथानंतरमेतद्वक्ष्यमाणमाख्यातं । तद्यथा । इहैके सत्वास्तथाविधकर्मोपचयादुदक योनिरुत्पत्तिस्थानं येषां ते तथा तथोदके सनवोयेषां ते तथा यावत्कर्मनिदानेन सदानितास्तडुपक्रमाद्भवतीति । तेच तत्कर्मवशगानानाविधयोनिपूदकेषु वृक्षत्वेन व्युत्क्रामंत्युत्पद्यते । येच जीवाउदकयोनिकावृक्षत्वेनोत्पन्नास्ते तच्छरीरमुदक शरीरमाहारयति न केवलं तदेवान्यदपि पृथिवीकायादिशरीरमाहारयतीति । शेषं पूर्ववत् । यथा पृथिवीयोनिकानां वृक्षाणां चत्वारआलापकाएवमुदकयोनिकानामपि वृक्षाणां भवतीत्येव द्रष्टव्य । अपरस्य प्रागुक्तस्य विकल्पाभावादिति किंतर्हि? एकएवालापकोभवति ॥ १७ ॥

अहावरं पुरक्खायं इहेगतिया सत्ता उदगजोणिया उदगसंभवा जाव कम्मणियाणेणं तत्थ वुक्कमा णाणाविहजोणिएसु उदएसु उदगत्ताए अवगत्ताए पणगत्ताए सेवालत्ताए कलंवुगत्ताए हडत्ताए कसेरुगत्ताए कच्छभाणियत्ताए उप्पलत्ताए पउमत्ताए कुमुयत्ताए नलिणत्ताए सुभगत्ताए सोगंधियत्ताए पोंमरियमहापोंमरियत्ताए सयपत्ताए सहस्सपत्ताए एवं कल्हारकोकणयत्ताए अरविंदत्ताए तामरसत्ताए भिसभिसमुणालपुक्खलत्ताए पुक्खलत्थिभगत्ताए विउट्टंति ते जीवा तेसिं णाणाविह

वनस्पतिपणे, कडुकनामा वनस्पतिपणे, उवहिणिकानामा वनस्पतिपणे, निव्वहणीय नामा वनस्पतिपणे, सठत्रपणे, ठत्तगत्ताए पणे, वासाणितापणे, कुरुनामा वनस्पति पणे, उपजे ते जीव तेहीज नानाविध योनिक पृथ्वीनो स्नेह आहारे ते जीव पृथिव्या दिकना शरीर आहारीने, यावत् पोतानी काया सरखा रूप करे बीजा पण तेवा पृ थ्वीयोनिक आयनामा वनस्पति यावत् कुरनामा वनस्पतिना शरीर जेवा रूप करे ते शरीर नाना प्रकारना वर्णवाला होय इत्यादिक यावत् पूर्ववत् जगवते कह्यु ए कुहण नामा वनस्पतिनो विशेष ते आश्री एकज आलावो जाणवो कारण के, ते योनिक बीजा नथी, तेथी एना शेष त्रण आलावा नथी एनु विशेष श्रीपन्नवणा थकी जाणवु एव सर्वे मली एकवीश आलावा पृथ्वीयोनिक वनस्पतिना कह्या ॥ १६ ॥

॥ दीपिका—आर्यादयोवनस्पतिविशेषालोकतोज्ञेया । कुहणेषु तु एकएवालापकोवा च्य । शेपास्त्रयोन सति तद्योनिकानामन्येपामन्नावादिति ॥ १६ ॥

॥ टीका—इह चामी वनस्पतिविशेषालोकव्यवहारतोऽनुगतव्या प्रज्ञापनातोवावसेया इति । अत्रार्थे सर्वेपामेव पृथिवीयोनिकत्वात्पृथिवीसमाश्रयत्वेनाजिहिता । इह च स्था वराणा वनस्पतेरेव प्रस्पष्टचैतन्यलक्षणत्वात्तस्यैव प्राक्प्रदर्शित चैतन्य ॥ १६ ॥

अहावर पुरक्काय इहेगतिया सत्ता उदगजोणिया उदगसन्नवा जाव क म्मनियाणेण तत्र वुक्कमा णाणाविहजोणिएसु उदएसु रुक्कत्ताए विउट्टंति ते जीवा तेसि णाणाजोणियाण उदगाण सिणेहमाहारेति ते जीवा आ हारेति पुढविसरीर जाव सत अवरेवियण तेसि उदगजोणियाण रुक्का ण सरीरा णाणावसा जावमरकाय जहा पुढविजोणियाण चत्तारि गमा अज्ञारुहाणवि तहेव तणाण उसहीण हरियाण चत्तारि आलावगा न्न णियवाएक्केके तहा उदगजोणियाण रुक्काण इक्कके ॥ १७ ॥

अर्थ—हवे अप्काययोनिक वनस्पतिनु विशेष देखाडेठे ते अनेरु स्थानक पूर्वे श्री तीर्थंकर देवे कह्युठे, ते कहेठे आ जगत् माहे कोइ एक जीव उदकयोनिक उदक सन्नव शैवलादिक वनस्पति ते जीव, यावत् कर्मने उदये नानाविध योनिक पाणीने विषे वृक्षपणे उपजे त्या उपना ठता नानाविध योनिक उदकनो स्नेह आहारे पृथ्वीकायादिकनु शरीर आहारे इत्यादिक यावत् बीजु सर्वे पूर्वनी पेठें जाणवु ए जेम पूर्वे पृथ्वीयोनि कवृक्षना चार आलावा कह्या, तेम आहीं पण अप्काययोनिक वृक्षना चार आला

वा जाणवा ए सर्वं मळी पच्चीश आलावा थया ॥ २५ ॥ तेमज अध्यारोहना पण उदक योनि आश्री चार आलावा कहेवा तेमज तृणना पण चार आलावा उदकयोनी आश्री कहेवा ॥ ३३ ॥ तथा उंपधिना पण चार आलावा कहेवा ॥ ३७ ॥ एम हरितकायना पण चार आलावा आदि उदकयोनिकने विषे जाणवा एम एकेकना चार चार आलावा करता वधा मळीने वीश आलावा उदक योनिक वनस्पतिना थया, तथा एकवीश आलावा पूर्वं पृथ्वीयोनिक वनस्पतिना कह्याछे, ए वधा मळीने एकतालीश आलावा वनस्पतिना थया ॥ १७ ॥

॥ दीपिका—अथाप्काययोनिकस्य वनस्पते स्वरूपमाह् । अथापरमाख्यातं । इहैके सत्वाउदक योनिरुत्पत्तिस्थानं येषां ते तथा तेच कर्मवशगानानाविधयोनिकेषु जलेषु वृक्षत्वेन पनकशैवलादित्वेन जायते तेच जलशरीरमाहारयति न केवलं तदेवान्यदपि पृथिव्यादिशरीरमाहारयति। यथा पृथ्वीयोनिकाना वृक्षाणां चत्वारआलापकास्तथा जलयोनिकाना वृक्षाणा न स्युः । तत्रोत्पन्नानामन्यविकल्पाभावात् किंतर्हि? एकएवाऽऽलापक स्यात्॥१७॥

॥ टीका—सांप्रतमप्काययोनिकस्य वनस्पतेः स्वरूपं दर्शयितुमाह् । (अथावरमित्यादि) अथानंतरमेतद्वक्ष्यमाणमाख्यातं । तद्यथा । इहैके सत्वास्तथाविधकर्मोपचया उदक योनिरुत्पत्तिस्थानं येषां ते तथा तथोदके संभवोयेषां ते तथा यावत्कर्मनिदानेन सदानितास्तडुपक्रमाभवतीति । तेच तत्कर्मवशगानानाविधयोनिषूदकेषु वृक्षत्वेन व्युत्क्रामत्युत्पद्यते । येच जीवाउदकयोनिकावृक्षत्वेनोत्पन्नास्ते तच्छरीरमुदक शरीरमाहारयति न केवलं तदेवान्यदपि पृथिवीकायादिशरीरमाहारयतीति । शेषं पूर्ववत् । यथा पृथिवीयोनिकाना वृक्षाणां चत्वारआलापकाएवमुदकयोनिकानामपि वृक्षाणां भवतीत्येव द्रष्टव्य । अपरस्य प्रागुक्तस्य विकल्पाभावादिति किंतर्हि? एकएवालापकोभवति ॥ १७ ॥

अहावरं पुरक्खायं इहेगतिया सत्ता उदगजोणिया उदगसंभवा जाव कम्मणियाणेणं तत्थ वुक्कमा णाणाविहजोणिएसु उदएसु उदगत्ताए अवगत्ताए पणगत्ताए सेवालत्ताए कलंबुगत्ताए हडत्ताए कसेरुगत्ताए कच्छभाणियत्ताए उप्पलत्ताए पउमत्ताए कुमुयत्ताए नलिणत्ताए सुभगत्ताए सोगंधियत्ताए पोंडरियमहापोंडरियत्ताए सयपत्ताए सहस्सपत्ताए एवं कल्हारकोकणयत्ताए अरविंदत्ताए तामरसत्ताए भिसभिसमणालपुक्खलत्ताए पुक्खलच्छिभगत्ताए विउट्टंति ते जीवा तेसिं णाणाविह

जोणियाण उदगाण सिणेहमाहारेति ते जीवा आहारेंति पुढवीसरीर जाव सत अवरेवियण तेसि उदगजोणियाण उदगाण जाव पुक्खल च्छिन्नगाण सरीरा णाणावन्ना जावमक्खाय एगोचेव आलावगो ॥१८॥

अर्थ–हवे अनेरु स्थानक पूर्वे तीर्थंकरे कह्युछे आ जगत् माहें कोइ एक जीव उदकयोनिक उदकने विषे वनस्पतिकायनो सजव, यावत् कर्मने कारणे आकर्षिता त्यां आव्या छता नानाविध योनिक उदकने विषे उदक पणे, अवनक पणे, पणग एटले पन्य पणे, सेवाल पणे, कलबुक पणे, आहडपणे, कसेरुग पणे, कच्छनाण पणे, उत्पलनामा कमलनी जाति पणे, लाल वर्णे सूर्यविकाशी कमलनी जाति पणे, चंद्रविकासी कमलनी जाति पणे, नलिन कमलनी जाति पणे, सुन्नग कमल पणे, सुगध कमलनी जाति पणे, पुंडरीक एटले धवलश्वेत कमलनी जाति पणे, महापुंडरीक एटले अत्यत धवलश्वेत कमलनी जाति पणे,सो पाखडीछे जेनी एवा कमलनी जाति पणे पुष्कर जे थकी पान निकले ते पणे उपजे, हजार पाखडी छे जेनी एवा कमलनी जाति पणे, एम कह्लारनी जाति पणे, कोकणा पणे, अरविंद कमल पणे, तामरस कमल पणे, बीस मृणाल पणे, पुष्कर पणे, उपजे , एटले एवा एवा नावे उपजे, ते जीव नाना विध योनिक उदकनो स्नेह आहारे इत्यादिक सर्वे पूर्ववत् कहेवु एनो एकज आलावोछे, पण बीजा आलावा नथी ए उदक योनिक वनस्पतिनाएकवीश आलावा, एम वधामली वनस्पतिकायना बेहेंतालीश आलावा थया ॥ १८ ॥

॥ दीपिका–एतेषामुदकाकृतीनामवकपनकादीनामन्यस्य प्रागुक्तविकल्पस्याभावादेक एवालापक स्यात् । एते जलाश्रिता कलबकाहडादिवनस्पतयोलोकतोज्ञेया ॥ १८ ॥

॥ टीका–एतेषा हि उदकाकृतीना वनस्पतिकायाना तथावयवपनकशैवलादीनामपरस्य प्रागुक्तस्य विकल्पस्याभावादिति । एते च उदकाश्रयावनस्पतिविशेषा कलबुकाहडादयोलोकव्यवहारतोवसेयाइति ॥ १८ ॥

अहावर पुरक्खाय इहेगतिया सत्ता तेसि चेव पुढवीजोणिएहि रुक्खेहि रुक्खजोणिएहि रुक्खेहि रुक्खजोणिएहि मूलेहि जाव बीएहि रुक्खजोणिएहि अज्झारोहेहि अज्झारोहजोणिएहिं अज्झारुहेहि अज्झारोहजोणिएहि मूलेहि जाव बीएहि पुढविजोणिएहि तणेहि तणजोणिएहि तणेहि तणजोणिएहि मूलेहि जाव बीएहि एव उसहीहि वि तिन्नि आलावगा एव हरिएहि वि तिन्नि आ

लावगा पुढविजोणिएहिंवि आएहिं काएहि जाव कूरोहिं उदगजोणिएहिं रुक्खेहिं रुक्खजोणिएहिं रुक्खेहिं रुक्खजोणियेहिं मूलेहिं जाव बीएहिं एव अज्झारुहेहिंवि तिसि तणेहिंवि तिसि आलावगा उसहीहिंवि तिसिहरि एहिंवि तिसि उदगजोणिएहिं उदएहिं अवएहिं जाव पुक्खलच्छिन्न एहिं तसपाणत्ताएविउट्टति ॥ १९ ॥ तेजीवा तेसिं पुढवीजोणियाण उदगजो णियाण रुक्खजोणियाण अज्झारोहजोणियाण तणजोणियाण उसहीजो णियाण हरियजोणियाण रुक्खाणं अज्झारुहाण तणाण उसहीण हरि याण मूलाण जाव बीयाण आयाण कायाण जाव करवाण उदगाण अ वगाण जाव पुक्खलच्छिन्नगाण सिणेहमाहारेति ते जीवा आहारेति पु ढवीसरीर जाव संत अवरेवियणं तेसि रुक्खजोणियाण अज्झारोहजोणि याण तणजोणियाण उसहिजोणियाण हरियजोणियाण मूलजोणिया ण कदजोणियाण जाव बीयजोणियाण आयजोणियाण कायजोणिया ण जाव कूरजोणियाण उदगजोणियाण अवगजोणियाण जाव पुक्खल च्छिन्नगजोणियाण तसपाणाण सरीरा णाणावण्णा जाव मक्खाय ॥ २० ॥

अर्थ–हवे अन्यत्र प्रकारे वनस्पतिनु स्वरूप कहेछे हवे अनेरु स्थानक पूर्वे श्री तीर्थंक रदेवे कह्यु आजगत् मांहे कोइ एक जीव ते पृथ्वीयोनिक वृक्षे करी, तथा वृक्षयोनि क वृक्षे करी, तथा वृक्ष योनिक मूलें करी, यावत् बीजे करी, तथा वृक्षयोनिक अ ध्यारोह करी, तथा अध्यारोहयोनिक अध्यारोहे करी, तथा अध्यारोहयोनिक मूलें करी, यावत् बीजे करी, पृथ्वीयोनिक तृणे करी, तृणयोनिक तृणे करी, तृणयोनिक मू लेंकरी, यावत् बीजें करी, ए प्रकारें ए त्रणना त्रण त्रण आलावा जाणवा एरीतेंज व ली उषधियें करीपण, त्रण, त्रण, आलावा जाणवा एमज हरितकापना पण त्रण आलावा जाणवा पृथ्वीयोनिक, आयनामा वनस्पति, कायनामा वनस्पति, यावत् कुरवा दनामा वनस्पति, उदकयोनिकना वृक्षे करी, वृक्षयोनिकना वृक्षे करी, वृक्षयोनिकना मूलें करी, यावत् बीजें करी, एमज अध्यारोहना पण त्रण आलावा जाणवा तृणना पण त्रण आलावा जाणवा उषधियें करी पण,त्रण आलावा जाणवा, हरितें करी पण त्रण आलावा जाणवा, उदकयोनिक उदक अवकपनक यावत् पुक्खलच्छि जे थकी पान निकले तेने विषे, त्रस प्राणि पणे उपजे ए सवे, बत्रीश आलावा यथा अने आगलना

जोणियाण उदगाण सिणेहमाहारेंति ते जीवा आहारेंति पुढवीसरीर जाव सत अवरेवियण तेसिं उदगजोणियाण उदगाण जाव पुक्खल च्छिन्नगाण सरीरा णाणावस्रा जावमक्खाय एगोचेव आलावगो ॥१८॥

अर्थ–हवे अनेरु स्थानक पूर्वे तीर्थंकरे कह्युछे आ जगत् माहे कोइ एक जीव उदकयोनिक उदकने विषे वनस्पतिकायनो सभव, यावत् कर्मने कारणे आकर्षिता त्यां आव्या छता नानाविध योनिक उदकने विषे उदक पणे, अवनक पणे, पणग एटले पन्य पणे, सेवाल पणे, कलबुक पणे, आहडपणे, कसेरुग पणे, कछनाण पणे, उत्पलनामा कमलनी जाति पणे, लाल वर्णे सूर्यविकाशी कमलनी जाति पणे, चद्रविकासी कमलनी जाति पणे, नलिन कमलनी जाति पणे, सुभग कमल पणे, सुगध कमलनी जाति पणे, पुडरीक एटले धवलश्वेत कमलनी जाति पणे, महापुडरीक एटले अत्यत धवलश्वेत कमलनी जाति पणे,सो पाखडीछे जेनी एवा कमलनी जाति पणे पुष्कर जे थकी पान निकले ते पणे उपजे, हजार पाखडी छे जेनी एवा कमलनी जाति पणे, एम कल्हारनी जाति पणे, कोकणा पणे, अरविंद कमल पणे, तामरस कमल पणे, बीस मृणाल पणे, पुष्कर पणे, उपजे , एटले एवा एवा नावे उपजे, ते जीव नाना विध योनिक उदकनो स्नेह आहारे इत्यादिक सर्व पूर्ववत् कहेवु एनो एकज आलावोछे, पण बीजा आलावा नथी ए उदक योनिक वनस्पतिनाएकवीश आलावा, एम वधामली वनस्पतिकायना बेहेंतालीश आलावा थया ॥ १८ ॥

॥ दीपिका–एतेषामुदकाकृतीनामवकपनकादीनामन्यस्य प्रागुक्तविकल्पस्याभावादेक एवालापक स्यात् । एते जलाश्रिता कलबकाहडादिवनस्पतयोलोकतोज्ञेया ॥ १८ ॥

॥ टीका–एतेषा हि उदकाकृतीना वनस्पतिकायाना तथावयवपनकशैवलादीनामपरस्य प्रागुक्तस्य विकल्पस्याभावादिति । एत च उदकाश्रयावनस्पतिविशेषा कलबुकाहडादयोलोकव्यवहारतोवसेयाइति ॥ १८ ॥

अहावर पुरक्खाय इहेगतिया सत्ता तेसिं चेव पुढवीजोणिएहिं रुक्खेहिं रुक्खजोणिएहिं रुक्खेहिं रुक्खजोणिएहिं मूलेहिं जाव बीएहिं रुक्खजोणिएहिं अज्झारोहेहिं अज्झारोहजोणिएहिं अज्झारुहेहिं अज्झारोहजोणिएहिं मूलेहिं जाव बीएहिं पुढविजोणिएहिं तणेहिं तणजोणिएहिं तणेहिं तणजोणिएहिं मूलेहिं जाव बीएहिं एव उसहीहिं वि तिन्नि आलावगा एव हरिएहिं वि तिन्नि आ

थाएव णाम सजोगे समुप्पज्जइ ते दुहओवि सिणेहं संचिणंति तत्थ णं जीवा इत्थित्ताए पुरिसत्ताए णपुंसगत्ताए विउट्टंति ते जीवा माउओयं पिउसुक्कं तं तदुभय संसट्ठं कलुसं किव्विसं तं पढमत्ताए आहारमाहारेंति ततो पच्छा जं से माया णाणाविहाओ रसविगईओ आहारमाहारेंति ततो एगदेसेणं ओय माहारेंति आणुपुव्वेणं वुड्ढा पलिपागमणुपवन्ना ततोकायातो अभिनिवट्ट माणा इत्थिं वेगया जणयंति पुरिसं वेगया जणयंति णपुंसगं वेगया जणय ति ते जीवा डहरा समाणा माउक्खीरं सप्पिं आहारेंति आणुपुव्वेणं वुड्ढा ओ यणं कुम्मासं तसथावरेय पाणे ते जीवा आहारेंति पुढविसरीरं जाव सा रूविकडं संतं अवरेवियणं तेसिं णाणाविहाणं मणुस्सगाणं कम्मभूम गाणं अकम्मभूमगाणं अंतरद्दीवगाणं आरियाणं मिलक्खूणं स रीरा णाणावण्णा भवंतीतिमक्खायं ॥ २१ ॥

अर्थ—हवे त्रसकायनो अवसर छे ते त्रसकाय तो एक नारकी, बीजा तिर्यंच, त्रीजा मनुष्य, अने चोथा देवता, ए चार प्रकारे छे तेमाहें नारकी अप्रत्यक्ष पणे अनुमान ग्राह्य जाणवा अथवा दुष्कृत कर्मना जे फल तेना भोगवनार छे, तेने आहार पण, एकांते अशुभ पुद्गल थकी नीपनो ओज थकीछे, पण प्रक्षेप थकी नथी, अने देवता पण हमणां प्राय अनुमानगम्यछे, तेनो आहार एकांत शुभछे, तेनो पण ओजाहारछे परंतु प्रक्षेपकृत नथी देवतानो आहार बे प्रकारेछे एक आभोगिक बीजो अनाभोगि क, तेमां जे अनाभोगिक ते समय समयपर छे अने आभोगिक ते, जघन्यथीतो चतुर्थ भक्ते आहार, अने उत्कृष्ट तेत्रीश हजार वर्षे आहारछे हवे तिर्यंच अने मनुष्य माहें प्रथम मनुष्यनुं स्वरूप कहेछे अथ हवे बीजुं अन्य स्थानक श्री तीर्थंकर देवें प रापूर्वे कह्युंछे आ जगत् माहें नाना प्रकारना मनुष्यछे, एक आर्य, एक अनार्य, एक पन्नर कर्म भूमीना उपना, एक त्रीश अकर्म भूमीना उपना, एक अंतर द्वीपना उप ना, एक आर्य, एक म्लेछ छे (तेसिंचणंअहाबीएणं के०) तेनें यथा बीजें करी एटले स्त्री पुरुष नपुंसकने भेदें करी, जे जेनुं बीज ते यथा बीज, तेणे करी, तथा यथावकाशें एटले मातानी कुक्ष्यादिक जेम वाम कुक्षे स्त्री उपजे, दक्षिण कुक्षें पुरुष उपजे, अने वाम दक्षिणाश्रित नपुंसक उपजे,इत्यादिक यथावकाशें करी,(इत्थीएपुरिसस्सयके०) स्त्री पुरुषना वेदना उदय छते (कम्मकडाएजोणिएणं के०) पूर्वकर्म निर्मित योनिने विषे (एत्थणंमेहुण वत्तियाएनामके०) आहीं मैथुन प्रत्ययिक नाम अरणी अने काष्ठनी पेठ(संजोगेसमुप्पज्जइ

बेहेंतालीश बधामली चमोतेर आलावा थया ॥१९॥ ते जीव ते वनस्पतिने विषे उपना थका पृथ्वीयोनिक,उदकयोनिक वृक्षयोनिक अध्यारोहयोनिक,तृणयोनिक,उंषधियोनिक, हरितयोनिक, वृक्षनो, अध्यारोहनो, तृणनो,उंषधिनो, हरितनो,मूलनो, यावत् बीजनो, आयनो, कायनो,यावत् कुरवदनो, उदकनो, अवगाहिनो,यावत् पुक्खलछि एटले जे थकी पान निकले तेनो, स्नेह आहारे ते जीव पृथ्व्यादिकनां शरीर आहारीनें यावत् आप णा सरखा रूप करे इत्यादिक अर्थ पूर्ववत् जाणवो ते जीव वृक्षयोनिक, अध्यारोह योनिक तृणयोनिक, यावत् पुक्खलछि योनिक, त्रसप्राणिना, शरीरना नाना प्रकारना वर्ण, गध, रस, स्पर्शवाला होय ते पोताना कर्मने वश जाणवा यावत् एम श्री तीर्थंकर गणधरादिके कह्यु त्या सुधीनो आलावो जाणवो एटले वनस्पतिकायनु स्वरूप कह्यु, अने पृथ्वीकायादिक चार जातिना एकेंद्रियना स्वरूप आगल कहेशे ॥ २० ॥

॥ दीपिका—अथ प्रकारांतरेण वनस्पत्यालापकत्रयमाह । पृथिवीयोनिकैर्वृक्षैर्वृक्षयोनिकै र्मूलादिभिरिति । एव वृक्षयोनिकैरध्यारुहै अध्यारुहयोनिकैरध्यारुहै अध्यारुहयोनिकै र्मूलादिभिरिति । एवमन्येष्वपि तृणादयोज्ञेया । एवमुदकयोनिष्वपि वृक्षेषु योज्य॥१९॥ते व नस्पतिषूत्पन्नाजीवा पृथिवीयोनिकाना तथा उदकाना वृक्षाध्यारोहतृणौषधिहरितयोनि काना वृक्षाणा यावत् स्नेहमाहारयतीत्येतदाख्यातं । तत्र त्रसाना शरीरमाहारयंतीत्यंते ज्ञे य । इति वनस्पतीना स्वरूपमुक्त । शेषा पृथिवीकायादयश्चत्वारएकेंद्रियाअग्रे वक्ष्यंते॥२०॥

॥ टीका—साम्प्रतमन्येन प्रकारेण वनस्पत्याश्रयमालापकत्रय दर्शयितुमाह । तद्य था। पृथिवीयोनिकैर्वृक्षैर्वृक्षयोनिकैर्वृक्षैस्तथा वृक्षयोनिकैर्मूलादिभिरिति । एव वृक्षयोनिकै रध्यारुहैस्तथाध्यारुहयोनिकैर्मूलादिभिरिति । एवमन्येपि तृणादयोऽद्रष्टव्या । एवमुद कयोनिकेष्वपि वृक्षेषु योजनीय ॥१९॥ तदेव पृथिवीयोनिकवनस्पतेरुदकयोनिकवनस्प तेश्च भेदानुपदर्श्याऽधुना तदनुवादेनोपसजिघृक्षुराह । (तेजीवाइत्यादि) ते वनस्पति षूत्पन्नाजीवा पृथिवीयोनिकाना तथोदकवृक्षाध्यारुहतृणौषधिहरितयोनिकाना वृक्षाणां यावत्स्नेहमाहारयतीत्येतदाख्यातमिति। तथा त्रसाना प्राणिना शरीरमाहारयत्येतदवसा ने द्रष्टव्यमिति । तदेव वनस्पतिकायिकाना सुप्रतिपाद्यचैतन्याना स्वरूपमभिहितं । शे षा पृथ्वीकायादयश्चत्वारएकेंद्रियाउत्तरत्र प्रतिपादयिष्यते ॥ २० ॥

अहावर पुरक्खाय णाणाविहाण मणुस्साण तजहा कम्मभूमगाण अकम्म भूमगाण अतरदीवगाण आरियाण मिलुक्खयाण तेसिचण अहाबीएण अहावकासेण इत्थीए पुरिस्ससय कम्मकडाए जोणिए एत्थण मेहुणवत्ति

याएव णाम सजोगे समुप्पज्जइ ते डुहउवि सिणेह संचिणंति तत्थण जीवा इत्थित्ताए पुरिसत्ताए णपुंसगत्ताए विउट्टंति ते जीवा माउउय पिउसुक्क त तडुनय संसठ कलुस किव्विस त पढमत्ताए आहारमाहारेंति ततो पत्र ज से माया णाणाविहाउ रसविईउ आहारमाहारेति ततो एगदेसेण उय माहारेंति आणुपुवेण वुड्ढा पलिपागमणुविन्ना ततोकायातो अभिनिवट्ट माणा इत्थि वेगया जणयंति पुरिस वेगया जणयंति णपुंसग वेगया जणय ति ते जीवा महरा समाणा माउक्खीर सप्पि आहारेति आणुपुवेण वुड्ढा उ यण कुम्मास तसथावरेय पाणे ते जीवा आहारेंति पुढविसरीर जाव सा रूवि कड संत अवरेवियणं तेसिं णाणाविहाण मणुस्सगाण कम्मनूम गाण अकम्मभूमगाण अंतरदीवगाण आरियाण मिलक्कूण स रीरा णाणावण्णा भवंतीतिमक्खाय ॥ २१ ॥

अर्थ–हवे त्रसकायनो अवसर छे ते त्रसकाय तो एक नारकी, बीजा तिर्यंच, त्रीजा मनुष्य, अने चोथा देवता, ए चार प्रकारे छे तेमाहे नारकी अप्रत्यक्ष पणे अनुमान ग्राह्य जाणवा अथवा डुष्कृत कर्मना जे फल तेना भोगवनार छे, तेने आहार पण, एकाते अशुभ पुद्गल थकी नीपनो उज थकीछे, पण प्रक्षेप थकी नथी, अने देवता पण हमणां प्राय अनुमानगम्यछे, तेनो आहार एकांत शुभछे, तेनो पण उजाहारछे परतु प्रक्षेपकृत नथी देवतानो आहार बे प्रकारेछे एक आभोगिक बीजो अनाभोगि क, तेमा जे अनाभोगिक ते समय समयपर छे अने आभोगिक ते, जघन्यथीतो चतुर्थ भक्त आहार, अने उत्कृष्ट तेत्रीश हजार वर्षे आहारछे हवे तिर्यंच अने मनुष्य मांहे प्रथम मनुष्यनु स्वरुप कहेछे अथ हवे बीजु अन्य स्थानक श्री तीर्थंकर देवें प रापूर्व कह्युछे आ जगत् मांहे नाना प्रकारना मनुष्यछे, एक आर्य, एक अनार्य, एक पन्नर कर्म नूमीना उपना, एक त्रीश अकर्म भूमीना उपना, एक अंतर द्वीपना उप ना, एक आर्य, एक म्लेछ छे (तेसिचणंअहाबीएण के०) तेने यथा बीजे करी एटले स्त्री पुरुष नपुंसकने भेदे करी, जे जेनु बीज ते यथा बीज, तेणे करी, तथा यथावकाशें एटले मातानी कुक्षादिक जेम वाम कुक्षे स्त्री उपजे, दक्षिण कुक्षे पुरुष उपजे, अने वाम दक्षिणाश्रित नपुंसक उपजे,इत्यादिक यथावकाशें करी,(इत्थीएपुरिसस्सयके०) स्त्री पुरुषना वेदना उदय वर्ते (कम्मकडाएजोणिएण के०) पूर्वकर्म निर्मित योनिने विषे (एउणमेहुण वत्तियाएनामके०) आहीं मैथुन प्रत्ययिक नाम अरणी अने काष्ठनी पेठ(संजोगेसमुप्पज्जइ

वेहेतालीश बधामली चमोतेर आलावा थया ॥१९॥ ते जीव ते वनस्पतिने विषे उपना थका पृथ्वीयोनिक,उदकयोनिक वृक्षयोनिक अध्यारोहयोनिक,तृणयोनिक,उंषधियोनिक, हरितयोनिक, वृक्षनो, अध्यारोहनो, तृणनो, उंषधिनो, हरितनो,मूलनो, यावत् बीजनो, आयनो, कायनो,यावत् कुरवदनो, उदकनो, अवगाहिनो,यावत् पुस्कलछि एटले जे थकी पान निकले तेनो, स्नेह आहारे ते जीव पृथ्व्यादिकनां शरीर आहारीनें यावत् आपणा सरखा रूप करे इत्यादिक अर्थ पूर्ववत् जाणवो ते जीव वृक्षयोनिक, अध्यारोह योनिक तृणयोनिक, यावत् पुस्कलवि योनिक, त्रसप्राणिना, शरीरना नाना प्रकारना वर्ण, गध, रस, स्पर्शवाला होय ते पोताना कर्मने वश जाणवा यावत् एम श्री तीर्थकर गणधरादिके कह्यु त्या सुधीनो आलावो जाणवो एटले वनस्पतिकायनु स्वरूप कह्यु, अने पृथ्वीकायादिक चार जातिनां एकेंद्रियना स्वरूप आगल कहेशे ॥ २० ॥

॥ दीपिका—अथ प्रकारातरेण वनस्पत्यालापकत्रयमाह । पृथिवीयोनिकैर्वृक्षैर्वृक्षयोनिकै र्मूलादिभिरिति । एव वृक्षयोनिकेरध्यारुहै अध्यारुहयोनिकैरध्यारुहै अध्यारुहयोनिकै र्मूलादिभिरिति । एवमन्येष्वपि तृणादयोज्ञेया । एवमुदकयोनिष्वपि वृक्षेषु योज्य॥१९॥ते व नस्पतिपूत्पन्नाजीवा पृथिवीयोनिकाना तथा उदकाना वृक्षाध्यारोहतृणौपधिहरितयोनि काना वृक्षाणा यावत् स्नेहमाहारयतीत्येतदाख्यातं । तत्र त्रसाना शरीरमाहारयंतीत्यंते ज्ञे य । इति वनस्पतीना स्वरूपमुक्त । शेषा पृथिवीकायादयश्चत्वारएकेंद्रियाअग्रे वक्ष्यंते॥२०॥

॥ टीका—साप्रतमन्येन प्रकारेण वनस्पत्याश्रयमालापकत्रय दर्शयितुमाह । तद्य था। पृथिवीयोनिकैर्वृक्षैर्वृक्षयोनिकैर्वृक्षैस्तथा वृक्षयोनिकैर्मूलादिभिरिति । एव वृक्षयोनिकै रध्यारुहैस्तथाध्यारुहयोनिकैर्मूलादिभिरिति । एवमन्येपि तृणादयोद्रष्टव्या । एवमुद कयोनिकेष्वपि वृक्षेषु योजनीय ॥१९॥ तदेव पृथिवीयोनिकवनस्पतेरुदकयोनिकवनस्प तेश्च भेदानुपदर्श्याऽधुना तदनुवादेनोपसजिघृक्षुराह । (तेजीवाइत्यादि) ते वनस्पति पूत्पन्नाजीवा पृथिवीयोनिकाना तथोदकवृक्षाध्यारुहतृणौपधिहरितयोनिकाना वृक्षाणां यावत्स्नेहमाहारयतीत्येतदाख्यातमिति। तथा त्रसाना प्राणिना शरीरमाहारयत्येतदवसा ने द्रष्टव्यमिति । तदेव वनस्पतिकायिकाना सुप्रतिपाद्यचैतन्याना स्वरुपमभिहितं । शे षा पृथ्वीकायादयश्चत्वारएकेंद्रियाउत्तरत्र प्रतिपादयिष्यते ॥ २० ॥

अहावर पुरस्काय णाणाविहाण मणुस्साण तजहा कम्मभूमगाण अकम्म भूमगाण अतरदीवगाण आरियाण मिलुक्खयाण तेसिचण अहाबीएण अहावकासेण इत्थीए पुरिस्ससय कम्मकडाए जोणिए एछण मेहुणवत्ति

क्षिणा नरस्य, अनयाश्रिता पढस्येति। तत्र चाविध्वस्ता योनिरविध्वस्त वीज१ विध्वस्ता यो निर्विध्वस्तं बीज२ विध्वस्ता योनिरविध्वस्त वीज ३ अविध्वस्ता योनिर्विध्वस्त वीज। चतुर्षु नगेषु आद्यनगएव उत्पत्तेरवकाशोन शेषेषु त्रिषु। अत्रच स्त्रीपुसयोर्वेदोदये सति पूर्वकर्मकृताया योनौ मैथुनप्रत्ययिकोरतानिलापोदयजनितोऽग्निकारणयोररणिकाष्ठयोरिव सयोगोजायते तत्सयोगेच तच्छुक्रशोणिते तैजसकार्मणाभ्या गृहीत्वा तत्रोत्पद्यते जीवा। (तेदुहुउत्ति) ते जीवा प्रथममुनयोरपि स्नेहमाचिन्वति अविध्वस्तयोनौ। विध्वस्यते तु योनि। पचपचाशिका नारी सप्तसप्ततिक पुमानिति। द्वादशमुहूर्तान् यावद्बीजमविध्वस्त स्यात् ततऊर्ध्व ध्वसयति तत्र जीवा कर्मवशत स्त्रीपुनपुसकत्वेन (विउट्टति) जायते ते जीवामातु ऋतु शोणितं पितु शुक्र तत्तडुनयससृष्ट कलुष किल्बिष वीज त्स तत्प्रथमतयाऽऽहारमाहारयति तत पश्चात्सेतस्य माता यन्नानाविधरसवतमाहारमाहारयति तत्स्नेहेन तेषा जतूना वृद्धि स्यात् ततस्तदेकदेशेन त्वगेकदेशेनवा मातुराहार मोजसा मिश्रेण वा लोमनिवाऽऽहारयति आनुपूर्व्येण यथाक्रम पुष्टावृद्धि प्राप्ताजीवाग नेपरिपाक गर्भनिष्पत्तिमनुप्रपन्नास्ततोमातु कायादनिनिवर्तमाना पृथग्नवतोनिर्गच्छति। कर्मवशादात्मन स्त्रीनावमेके जनयति एके पुनाव नपुसकनाव वा तेच उहरावाला सतोमातु क्षीर स्तन्यमाहारयति वृद्धा सत्त सर्पिर्घृतं धान्यमोदन कुल्माषान् नुजते नानाविधान् त्रसस्थावरान् प्राणिनोजीवान् आहारयति। नानायोनिकजतुशरीराण्याहारयतीत्यर्थ। नानामनुष्याणा शरीराणि केचित्तद्योनिकत्वादाहारयति इत्याख्यातं ॥२१॥

॥ टीका–साप्रत त्रसकायस्यावसर सच नारकतिर्यङ्मनुष्यदेवनेदनिन्न। तत्र नारकाअप्रत्यक्षत्वेनानुमानग्राह्याडुष्कृतकर्मफलनुज केचन सतीत्येव ते ग्राह्या। तदाहारोप्येकातेनाशुनपुद्गलनिर्वर्तितओजसा प्रक्षेपेणेति। देवाअप्यधुना बाहुल्येनानुमानगम्याएव तेषामप्याहार शुनएकातेनोजोनिर्वर्तितोन प्रक्षेपकृतइति। सचाऽनोगनिर्वर्तितोनानोग कृतश्च। तत्र नानोगकृत प्रतिसमयनावी आनोगकृतश्च जघन्येन चतुर्नककृतउत्कृष्टतस्तु त्रयस्त्रिंशद्वर्षसहस्रनिष्पादितइति। शेषास्तु तिर्यङ्मनुष्यास्तेषाच मध्ये मनुष्याणामन्यर्हितत्वात्तानेव प्राग्दर्शयितुमाह। (अथावर पुरक्खायमित्यादि) अथानतरमेव तु पुरा पूर्वमाख्यात। तद्यथा। आर्याणामनार्याणा च कर्मनूमिजाऽकर्मनूमिजादीना मनुष्याणा नानाविधयोनिकाना स्वरूप वक्ष्यमाणनीत्या समाख्यातं। तेषाच स्त्रीनपुसक नेदनिन्नाना यथा वीजेनेति। यदस्य वीन तत्र स्त्रिया सत्रि शोणित पुरुषस्य शुक्र एतडुनयमप्यविध्वस्त शुक्राधिक सन्मनुष्यस्य, शाणिताधिक स्त्रियास्तत्समता नपुसकस्य कारणता प्रतिपद्यते तथा यथावकाशनति। यायस्यावकाशामातुरुदरकुक्ष्यादिकस्तत्रापि

के०) सयोग उपजे ते सयोग उपने छते त्यां जीव तेजस कार्मण शरीरे करी उपजे (तेउद्द उविसिणेहसचिणतिके०) ते जीव उपजता छता प्रथम समये वेहुनो स्नेह संचिणे एट ले आहारे, ते आहारीने, (तछणजीवा के०) त्यां ते जीव (इत्थित्ताएपुरिसत्ताएणपुसग त्ताएविउट्टति के०) स्त्री, पुरुष अथवा नपुसक पणे उपजे (तेजीवामाउउर्यपिउसुक्कं के०) तेजीव माता सबधि रक्त, अने पिता सबधि शुक्र, ते (तदुभयंसंसठं के०) बेहु मिश्रित एकठु मलेलु डुगछनिक (कलुसकिव्विसके०) कलुष मलीन बीभत्स (तंपढमत्ताए के०) तेनो, प्रथम समयने विषे (आहारमाहारेति के०) आहार आहारे (ततोप छा के०) त्यार पछी, (जसेमाया के०) जे तेनी माता (णाणाविहाउरसविई उ आहारमाहारेति के०) नाना प्रकारना रसवाला आहार आहारे, (ततोएगदेसेणउय माहारेतिके०) तेवार पछी तेनो एक देशे उज आहार आहारे (आणुपुव्वेणवुड्डापलिपा गमणुविन्नाके०) ते स्नेहे करी ते जीवनी अनुक्रमे निष्पति उपजे एवा अनुक्रमे वृद्धियें पहोते छते (ततोकायातोअभिनिवट्टमाणाके०) तेवार पछी तेनी काया थकी एटले तेनी योनि थकी निकले (इत्थिवेगयाजणयतिके०) ते एक स्त्री थइ निकले, (पुरिसवेगयाज णयति के०) एक पुरुष थइ निकले, (णपुसगवेगयाजणयंति के०) एक नपुसक थइ निकले, (तेजीवाडहरासमाणाके०) ते जीव बालक थका (माउक्खीरसप्पिआहारेतिके०) माताना स्तननु दुग्ध आहारे तथा मोटो थाय त्यारे घृत आहारे तेवार पछी (आणुपुव्वे णवुड्डाके०) अनुक्रमें वधता थका (उयणकुम्मासतसथावरेयपाणेतेजीवाआहारेति के०) उदन चावलादिक अडदादिक तथा त्रस अने स्थावर प्राणी पण आहारे (पुढविसरीरं के०)पृथ्वीनु शरीर जे लवणादिक ते आहारे ते आहार्यो छतो (जावसारूविकडसंतंके०) पोताना शरीर सरखो करे, एटले पोतानी काया रूप करे, एटले ते आहार धातु पणे परिणमावे (अवरेवियणंतेसि के०) तथा बीजा पण तेने (णाणाविहाण के०) नाना प्रकारना (मणुस्सगाण के०) कर्मभूमीने विषे उपना एवा मनुष्यनां, अकर्मभूमी ना मनुष्यना, अंतरद्वीपना मनुष्यनां, आर्य मनुष्यना, म्लेछ मनुष्यना, शरीर, नाना प्रकारना वर्ण गध रस स्पर्श करी सहित थका, एवा पोताना कर्मने वशें उपजे इत्या दिक पूर्ववत् यावत् श्री तीर्थंकर गणधरे कह्यु ॥ ११ ॥

॥ दीपिका–अथ त्रसकायेषु पूर्वं मनुष्यानाह । अथापरमाख्यात । नानाविधाना म नुष्याणा स्वरूपमुक्तमित्यर्थः । तद्यथा । कर्मभूमिजाइत्यादिमनुष्याणां (यथाबीजेनेति) यद्यस्य बीज तत्र शुक्राधिक नरस्य शोणिताधिक स्त्रिया उभयसमता नपुसकस्य कारणमि ति । यथावकाशेनेति । योयस्यावकाशोमातुरुदरकुक्षिप्रमुखस्तत्र वामा कुक्षि स्त्रिया , द

ङ्गिणा नरस्य, उभयाश्रिता पढस्येति। तत्र चाविध्वस्ता योनिरविध्वस्त बीज१ विध्वस्ता यो निर्विध्वस्तं बीज२ विध्वस्ता योनिरविध्वस्त बीज ३ अविध्वस्ता योनिर्विध्वस्त बीज। चतुर्षु भगेषु आद्यभगएव उत्पत्तेरवकाशोन शेषेषु त्रिषु। अत्रच स्त्रीपुंसयोर्वेदोदये सति पूर्वकर्मकृताया योनौ मैथुनप्रत्ययिकोरतानिलापोदयजनितोऽग्निकारणयोरराणकाष्ठयोरिव सयोगोजायते तत्सयोगेच तच्छुक्रशोणिते तैजसकार्मणाभ्यां गृहीत्वा तत्रोत्पद्यते जीवा। (तेदुहउत्ति) ते जीवा प्रथममुभयोरपि स्नेहमाचिन्वंति अविध्वस्तयोनौ। विध्वस्यते तु योनि। पचपचाशिका नारी सप्तसप्ततिक पुमानिति। द्वादशमुहूर्तान् यावद्बीजमविध्वस्त स्यात् ततऊर्ध्वं ध्वसयति तत्र जीवा कर्मवशत स्त्रीपुनपुंसकत्वेन (विउट्टति) जायते ते जीवामातु ऋतु शोणित पितु शुक्र तत्तदुभयसंसृष्ट कलुष किल्बिष बीभत्स तत्प्रथमतयाऽऽहारमाहारयति तत पश्चात्सेतस्य माता यन्नानाविधरसवतमाहारमाहारयति तत्स्नेहेन तेषा जतूना वृद्धि स्यात् ततस्तदेकदेशेन त्वगेकदेशेनवा मातुराहारमोजसा मिश्रेण वा लोमभिर्वाऽऽहारयति आनुपूर्व्येण यथाक्रम पुष्टावृद्धि प्राप्ताजीवाग र्भपरिपाक गर्भनिष्पत्तिमनुप्रपन्नास्ततोमातु कायादभिनिवर्तमाना पृथग्भवतोनिर्गच्छति। कर्मवशादात्मन स्त्रीभावमेके जनयति एके पुंभाव नपुसकभाव वा तेच उहराबाला सतोमातु क्षीर स्तन्यमाहारयति वृद्धा सत सर्पिर्घृत धान्यमोदन कुल्माषान् भुजते नानाविधान् त्रसस्थावरान् प्राणिनोजीवान् आहारयति। नानायोनिकजतुशरीराण्याहारयंतीत्यर्थ। नानामनुष्याणा शरीराणि केचित्तद्योनिकत्वादाहारयति इत्याख्यात ॥२१॥

॥ टीका—सांप्रत त्रसकायस्यावसर सच नारकतिर्यङ्मनुष्यदेवभेदभिन्न। तत्र नारकाअप्रत्यक्षत्वेनानुमानग्राह्याडुष्कृतकर्मफलभुज केचन सतीत्येव ते ग्राह्या। तदाहारोप्येकातेनाशुभपुद्गलनिर्वर्तितउजसा प्रक्षेपेणेति। देवाअप्यधुना बाहुल्येनानुमानगम्याएव तेषामप्याहार शुभएकातेनोजोनिर्वर्तितोन प्रक्षेपकृतइति। सचाऽभोगनिर्वर्तितोनाभोगकृतश्च। तत्र नाभोगकृत प्रतिसमयभावी आभोगकृतश्च जघन्येन चतुर्भक्तकृतउत्कृष्टतस्तु त्रयस्त्रिंशद्वर्षसहस्रनिष्पादितइति। शेषास्तु तिर्यङ्मनुष्यास्तेषाच मध्ये मनुष्याणामभ्यर्हितत्वात्तानेव प्राग्दर्शयितुमाह। (अथावर पुरक्खायमित्यादि) अथानतरमेव तु पुरा पूर्वमाख्यात। तद्यथा। आर्याणामनार्याणां च कर्मभूमिजाऽकर्मभूमिजादीनां मनुष्याणा नानाविधयोनिकाना स्वरूप वक्ष्यमाणनीत्या समाख्यातं। तेषाच स्त्रीनपुंसकभेदभिन्नाना यथा बीजेनेति। यद्यस्य बीज तत्र स्त्रिया सजवि शोणित पुरुषस्य शुक्र एतदुभयमप्यविध्वस्त शुक्राधिक सन्मनुष्यस्य, शोणिताधिक स्त्रियास्तत्समता नपुंसकस्य कारणता प्रतिपद्यते तथा यथावकाशनेति। योयस्यावकाशामातुरुदरकुक्ष्यादिकस्तत्रापि

के०) सयोग उपजे ते सयोग उपने छते त्यां जीव तैजस कार्मण शरीरें करी उपजे (तेइह उविसिणेहसंचिणतिके०) ते जीव उपजता छता प्रथम समये वेहुनो स्नेह संचिणे एट ले आहारे, ते आहारीने, (तत्तणजीवा के०) त्यां ते जीव (इच्छित्ताएपुरिसत्ताएणपुंसग त्ताएविउट्टंति के०) स्त्री, पुरुष अथवा नपुंसक पणे उपजे (तेजीवामाउउयंपिउसुक्कतं के०) तेजीव माता संबधि रक्त, अने पिता संबधि शुक्र, ते (तदुभयसंसट्ठ के०) बेहु मिश्रित एकठु मलेलु डुगच्छनिक (कलुसंकिव्विसंके०) कलुष मलीन बीभत्स (तंपढमत्ताए के०) तेनो, प्रथम समयने विषे (आहारमाहारेति के०) आहार आहारे (ततोप छा के०) त्यार पछी, (जंसेमाया के०) जे तेनी माता (णाणाविहाउरसविईउ आहारमाहारेति के०) नाना प्रकारना रसवाला आहार आहारे, (ततोएगदेसेणउंय माहारेतिके०) तेवार पछी तेनो एक देशे उज आहार आहारे (आणुपुव्वेणवुड्ढापलिपा गमणुविन्नाके०) ते स्नेहे करी ते जीवनी अनुक्रमे निष्पति उपजे एवा अनुक्रमे वृद्धियें पहोते छते (ततोकायातोअभिनिवट्टमाणाके०) तेवार पछी तेनी काया थकी एटले तेनी योनि थकी निकले (इत्थिवेगयाजणयंति के०) ते एक स्त्री थइ निकले, (पुरिसवेगयाज णयंति के०) एक पुरुष थइ निकले, (णपुंसगवेगयाजणयंति के०) एक नपुंसक थइ निकले, (तेजीवाडहरासमाणाके०) ते जीव बालक थका (माउक्खीरसप्पिआहारेतिके०) माताना स्तननु दुग्ध आहारे तथा मोटो थाय त्यारे घृत आहारे तेवार पछी (आणुपुव्वे णवुड्ढाके०) अनुक्रमे वधता थका (उंयणकुम्मासतसथावरेयपाणेतेजीवाआहारेति के०) उदन चावलादिक अडदादिक तथा त्रस अने स्थावर प्राणी पण आहारे (पुढविसरीरं के०)पृथ्वीनु शरीर जे लवणादिक ते आहारे ते आहार्यो छतो (जावसारूविकडसंतंके०) पोताना शरीर सरखो करे, एटले पोतानी काया रूप करे, एटले ते आहार धातु पणे परिणमावे (अवरेवियणंतेसिं के०) तथा बीजा पण तेने (णाणाविहाण के०) नाना प्रकारना (मणुस्सगाण के०) कर्मभूमीने विषे उपना एवा मनुष्यनां, अकर्मभूमी ना मनुष्यना, अंतरद्वीपना मनुष्यनां, आर्य मनुष्यना, म्लेच्छ मनुष्यना, शरीर, नाना प्रकारना वर्ण गंध रस स्पर्श करी सहित थका, एवा पोताना कर्मने वशें उपजे इत्या दिक पूर्ववत् यावत् श्रीतीर्थंकर गणधरे कह्यु ॥ २१ ॥

॥ दीपिका—अथ त्रसकायेषु पूर्वं मनुष्यानाह । अथापरमाख्यातं । नानाविधाना म नुष्याणां स्वरूपमुक्तमित्यर्थः । तद्यथा । कर्मभूमिजाइत्यादिमनुष्याणां (यथाबीजेनेति) यद्यस्य बीजं तत्र शुक्राधिकं नरस्य शोणिताधिकं स्त्रिया उभयसमता नपुंसकस्य कारणमि ति । यथावकाशेनेति । योयस्यावकाशोमातुरुदरकुक्षिप्रमुखस्तत्र वामा कुक्षि स्त्रिया , द

क्षिणा नरस्य, उनयाश्रिता पढस्येति। तत्र चाविध्वस्ता योनिरविध्वस्त वीज१ विध्वस्ता यो निर्विध्वस्त वीज२ विध्वस्ता योनिरविध्वस्त वीज ३ अविध्वस्ता योनिविध्वस्त वीज। चतुर्षु नगेषु आद्यनगएव उत्पत्तेरवकाशोन शेषेषु त्रिषु। अत्रच स्त्रीपुसयोर्वेदोदये सति पूर्वकर्मकृताया योनौ मैथुनप्रत्ययिकोरतानिलापोदयजनितोऽग्निकारणयोररणिकाष्ठयोरिव सयोगोजायते तत्सयोगेच तच्छुक्रशोणिते तैजसकार्मणाभ्या गृहीत्वा तत्रोत्पद्यते जीवा। (तेउहवत्ति) ते जीवा प्रथममुनयोरपि स्नेहमाचिन्वति अविध्वस्तयोनौ। विध्वस्यते तु योनि। पचपचाशिका नारी सप्तसप्ततिक पुमानिति। द्वादशमुहूर्तान् यावद्बीजमविध्वस्त स्यात् ततऊर्ध्व ध्वसयति तत्र जीवा कर्मवशात स्त्रीपुनपुसकत्वेन (विउट्टति) जायते ते जीवामातु रुतु शोणितं पितु शुक्र तत्तडुनयसंसृष्ट कलुष किल्विष वीज स्स तत्प्रथमतयाऽऽहारमाहारयति तत पश्चात्सेतस्य माता यन्नानाविधरसवतमाहारमाहारयति तत्स्नेहेन तेषा जतूना वृद्धि स्यात् ततस्तदेकदेशेन त्वगेकदेशेनवा मातुराहारमोजसा मिश्रेण वा लोमभिर्वाऽऽहारयति आनुपूर्व्येण यथाक्रम पुष्टावृद्धि प्राप्ताजीवागर्भपरिपाक गर्भनिष्पत्तिमनुप्रपन्नास्ततोमातु कायादभिनिवर्तमाना पृथग्नवतोनिर्गच्छति। कर्मवशादात्मन स्त्रीनावमेके जनयति एके पुनाव नपुसकनाव वा तेच डहरावाला सतोमातु क्षीर स्तन्यमाहारयति वृद्धा सत सर्पिर्घृत धान्यमोदन कुल्माषान् भुजते नानाविधान् त्रसस्थावरान् प्राणिनोजीवान् आहारयति। नानायोनिकजतुशरीराण्याहारयंतीत्यर्थ। नानामनुष्याणा शरीराणि केचित्तयोनिकत्वादाहारयति इत्याख्यातं ॥२१॥

॥ टीका–साप्रत त्रसकायस्यावसर सच नारकतिर्यङ्मनुष्यदेवनेदनिन्न। तत्र नारकाश्चप्रत्यक्षत्वेनानुमानग्राह्याडुष्कृतकर्मफलनुज केचन सतीत्येव ते ग्राह्या। तदाहारोप्येकातेनाशुभपुद्गलनिर्वर्तितउजसा प्रक्षेपेणेति। देवाश्चप्यधुना बाहुल्येनानुमानगम्याएव तेषामप्याहार शुभएकातेनोजोनिर्वर्तितोन प्रक्षेपकृतइति। सचाऽनोगनिर्वर्तितोनानोगकृतश्च। तत्र नानोगकृत प्रतिसमयनावी आनोगकृतश्च जघन्येन चतुर्नक्तकृतउत्कृष्टतस्तु त्रयस्त्रिंशद्वर्षसहस्रनिष्पादितइति। शेषास्तु तिर्यङ्मनुष्यास्तेषाच मध्ये मनुष्याणामभ्यर्हितत्वात्तानेव प्राग्दर्शयितुमाह। (अथावर पुरक्खायमित्यादि) अथानतरमेव तु पुरा पूर्वमाख्यात। तद्यथा। आर्याणामनार्याणा च कर्मनूमिजाऽकर्मनूमिजादीना मनुष्याणा नानाविधयोनिकाना स्वरूप वक्ष्यमाणनीत्या समाख्यातं। तेषाच स्त्रीनपुसकनेदनिन्नाना यथा वीजेनेति। यद्यस्य वीज तत्र स्त्रिया स्तवपि शोणित पुरुषस्य शुक्र एतडुनयमप्यविध्वस्त शुक्राधिक सन्मनुष्यस्य, शोणिताधिक स्त्रियास्तत्समता नपुसकस्य कारणता प्रतिपद्यते तथा यथावकाशेनेति। योयस्यावकाशामातुरुदरकुक्ष्यादिकस्तत्रापि

के०) सयोग उपजे ते सयोग उपने थते त्या जीव तेजस कार्मण शरीरे करी उपजे (तेडह उविसिणेहसचिणतिके०) ते जीव उपजता थता प्रथम समये बेहुनो स्नेह संचिणे एट ले आहारे, ते आहारीने, (तच्छणजीवा के०) त्यां ते जीव (इच्छित्ताएपुरिसत्ताएणपुंसग त्ताएविउट्टंति के०) स्त्री, पुरुष अथवा नपुंसक पणे उपजे (तेजीवामाउउर्यपिउसुक्कतं के०) तेजीव माता संबधि रक्त, अने पिता संबधि शुक्र, ते (तडुनयंससहं के०) बेहु मिश्रित एकतु नलेलु डुगंछनिक (कलुसकिव्विसके०) कलुष मलीन बीजत्स (तंपढमत्ताए के०) तेनो, प्रथम समयने विषे (आहारमाहारेति के०) आहार आहारे (ततोप छा के०) त्यार पछी, (जसेमाया के०) जे तेनी माता (णाणाविहाउरसविईउ आहारमाहारेति के०) नाना प्रकारना रसवाला आहार आहारे, (ततोएगदेसेणउंय माहारेतिके०) तेवार पछी तेनो एक देशे उंज आहार आहारे (आणुपुव्वेणवुड्ढापलिपा गमणुविन्नाके०) ते स्नेह करी ते जीवनी अनुक्रमे निष्पति उपजे एवा अनुक्रमें वृद्धियें पहोते छते (ततोकायातोअनिनिवट्टमाणाके०) तेवार पछी तेनी काया थकी एटले तेनी योनि थकी निकले (इच्छिवेगयाजणयंतिके०) ते एक स्त्री थइ निकले, (पुरिसवेगयाज णयंति के०) एक पुरुष थइ निकले, (णपुंसगवेगयाजणयंति के०) एक नपुंसक थइ निकले, (तेजीवाम्हरासमाणाके०) ते जीव बालक थका (माउरकीरसप्पिआहारेतिके०) माताना स्तननु डुग्ध आहारे तथा मोटो थाय त्यारे घृत आहारे तेवार पछी (आणुपुव्वे णवुड्ढाके०) अनुक्रमे वधता थका (उंयणकुम्मासतसथावरेयपाणेतेजीवाआहारेति के०) उदन चावलादिक अडदादिक तथा त्रस अने स्थावर प्राणी पण आहारे (पुढविसरीरं के०)पृथ्वीनु शरीर जे लवणादिक ते आहारे ते आहार्यो छतो (जावसारूविकडसंतंके०) पोताना शरीर सरखो करे, एटले पोतानी काया रूप करे, एटले ते आहार धातु पणे परिणमावे (अवरेवियणंतेसिं के०) तथा बीजा पण तेने (णाणाविहाण के०) नाना प्रकारना (मणुस्सगाण के०) कर्मनूमीने विषे उपना एवा मनुष्यनां, अकर्मनूमी ना मनुष्यना, अंतरद्वीपना मनुष्यनां, आर्य मनुष्यना, म्लेछ मनुष्यना, शरीर, नाना प्रकारना वर्ण गंध रस स्पर्श करी सहित थका, एवा पोताना कर्मने वशें उपजे इत्या दिक पूर्ववत् यावत् श्री तीर्थंकर गणधरे कह्यु ॥ २१ ॥

॥ दीपिका—अथ त्रसकायेषु पूर्वं मनुष्यानाह । अथापरमाख्यातं । नानाविधाना म नुष्याणां स्वरूपमुक्तमित्यर्थः । तद्यथा । कर्मनूमिजाइत्यादिमनुष्याणां (यथाबीजेनेति) यद्यस्य बीजं तत्र शुक्राधिकं नरस्य शोणिताधिकं स्त्रिया उन्नयसमता नपुंसकस्य कारणमि ति । यथावकाशेनेति । योयस्यावकाशोमातुरुदरकुक्षिप्रमुखस्तत्र वामा कुक्षि स्त्रिया , द

क्षिणा नरस्य, उभयाश्रिता पढस्येति। तत्र चाविध्वस्ता योनिरविध्वस्त वीज १ विध्वस्ता यो निर्विध्वस्तं वीज २ विध्वस्ता योनिरविध्वस्त वीज ३ अविध्वस्ता योनिर्विध्वस्त वीज। चतु र्पु भगेषु आद्यभगएव उत्पत्तेरवकाशोन शेषेषु त्रिषु । अत्रच स्त्रीपुंसयोर्वेदोदये सति पू र्वकर्मकृताया योनौ मैथुनप्रत्ययिकोरत्ताभिलापोदयजनितोऽग्निकारणयोररणिकाष्ठयोरिव सयोगोजायते तत्सयोगेच तच्छुक्रशोणिते तैजसकार्मणाभ्या गृहीत्वा तत्रोत्पद्यते जीवा । (तेदुहुओत्ति) ते जीवा प्रथममुभयोरपि स्नेहमाचिन्वंति अविध्वस्तयोनौ । विध्वस्यते तु योनि । पचपचाशिका नारी सप्तसप्ततिक पुमानिति । द्वादशमुहूर्तान् यावद्बीजमवि ध्वस्त स्यात् ततऊर्ध्वं ध्वसयति तत्र जीवा कर्मवशात स्त्रीपुनपुसकत्वेन (विउट्टति) जायते ते जीवामातु ऋतु शोणितं पितु शुक्र तत्तदुभयसस्पृष्ट कलुष किल्विष वीभ त्स तत्प्रथमतयाऽऽहारमाहारयति तत पश्चात्सेतस्य माता यन्नानाविधरसवतमाहारमा हारयति तत्स्नेहेन तेषा जतूना वृद्धि स्यात् ततस्तदेकदेशेन त्वगेकदेशेनवा मातुराहार मोजसा मिश्रेण वा लोमभिर्वाऽऽहारयति आनुपूर्व्येण यथाक्रम पुष्टावृद्धि प्राप्ताजीवाग र्भपरिपाक गर्भनिष्पत्तिमनुप्रपन्नास्ततोमातु कायादभिनिवर्तमाना पृथग्भवतोनिर्गच्छति । कर्मवशात्सात्मन स्त्रीभावमेके जनयति एके पुभाव नपुसकभाव वा तेच डहरावाला सतोमातु क्षीर स्तन्यमाहारयति वृद्धा सत सर्पिर्घृत धान्यमोदन कुल्मापान् भुजते नानाविधान् त्रसस्थावरान् प्राणिनाजीवान् आहारयति । नानायोनिकजतुशरीराण्याहा रयतीत्यर्थ । नानामनुष्याणा शरीराणि केचित्तद्योनिकत्वादाहारयति इत्याख्यात ॥२१॥

॥ टीका–साप्रत त्रसकायस्यावसर सच नारकतिर्यङ्मनुष्यदेवभेदभिन्न । तत्र नार काअप्रत्यक्षत्वेनानुमानग्राह्यादुष्कृतकर्मफलभुज केचन सतीत्येव ते ग्राह्या । तदाहारो प्येकातेनाशुभपुद्गलनिर्वाततओजसा प्रक्षेपेणेति। देवाअप्यधुना बाहुल्येनानुमानगम्याएव तेषामप्याहार शुभएकांतेनोजोनिर्वाततोन प्रक्षेपकृतइति । सचाऽऽभोगनिर्वाततोनाभोग कृतश्च । तत्र नाभोगकृत प्रतिसमयभावी आभोगकृतश्च जघन्येन चतुर्भक्तकृतउत्कृ ष्टतस्तु त्रयस्त्रिंशद्वर्षसहस्रनिष्पादितइति । शेषास्तु तिर्यङ्मनुष्यास्तेषाच मध्ये मनुष्या णामभ्यर्हितत्वात्तानेव प्राग्दर्शयितुमाह । (अथावर पुरक्खायमित्यादि) अथानतरमेव तु पुरा पूर्वमाख्यात । तद्यथा । आर्याणामनार्याणा च कर्मभूमिजाऽकर्मभूमिजादीनां म नुष्याणा नानाविधयोनिकाना स्वरूप वक्ष्यमाणनीत्या समाख्यातं । तेषाच स्त्रीनपुसक भेदभिन्नाना यथा वीजेनेति । यथस्य वीज तत्र स्त्रिया तदपि शोणित पुरुषस्य शुक्र एतदुभयमप्यविध्वस्त शुक्राधिक सन्मनुष्यस्य, शोणिताधिक स्त्रियास्तत्समता नपुसकस्य कारणता प्रतिपद्यते तथा यथावकाशेनेति । यायस्यावकाशामातुरुदरकुक्ष्यादिकस्तत्रापि

किल वामा स्त्रियोदक्षिणा कुक्षि पुरुपस्योनयाश्रित पढइति। अत्र चाविध्वस्ता योनिरवि ध्वस्तं बीजमिति चत्वारोन्नगा । तत्राप्याद्यएव नगकउत्पत्तेरवकाशोन शेषेषु त्रिष्विति। अत्रच स्त्रीपुसयोर्वेदोदये सति पूर्वकर्मनिर्वर्तिताया योनौ मैथुनप्रत्यायिकोरतानिलाषोदय जनितोऽग्निकारणयोररणिकाष्ठयोरिव सयोग समुत्पद्यते तत्सयोगेच तच्छुक्रशोणिते समुपा दाय तत्रोत्पित्सवोजतवस्तैजसकार्मणान्या शरीरान्या कर्मरज्जुसदानितास्तत्रोत्पद्यते। तेच प्रथममुनयोरपि स्नेहमाचिन्वत्यविध्वस्ताया योनौ सत्यामिति । विध्वस्यते तु योनि पचपचाशिका नारी सप्तसप्तति पुरुपइति। तथा द्वादशमुहूर्तानि यावच्छुक्रशोणिते अवि ध्वस्तयोनिके नवतस्ततऊर्ध्व ध्वसमुपगच्छतइति । तत्र जीवाउनयोरपि स्नेहमाहार्य स्वक र्मविपाकेन यथास्व स्त्रीपुन्नपुसकनावेन (विवट्टतित्ति) वर्तते समुत्पद्यतइति यावत् । तद्र नरकाल च स्त्रीकुक्षौ प्रक्षिप्ता सत स्त्रियाऽऽहारितस्याहारस्य निर्यास स्नेहमाददति त त्स्नेहेनच तेषा जतूनां क्रमोपचयादानेन क्रमेण निष्पत्तिरुपजायते । सत्ताह कललं होइ सत्ताह होइ बुब्बुयं इत्यादि । तदेवमनेन क्रमेण तदेकदेशेनवा मातुराहारमोजसा मि श्रेणवा लोमनिर्वाऽऽनुपूर्व्येणाहारयति यथाक्रममानुपूर्व्येण वृद्धिमुपागता सतोगर्नपरि पाक गर्ननिष्पत्तिमनुप्रपन्नास्ततोमातु कायादनिनिवर्तमाना पृथग्नवत सतस्तद्योनेर्नि र्गच्छति । तेच तथाविधकर्मोदयादात्मन स्त्रीनावमप्येकदा जनयत्युत्पादयत्यपरे केचन पुनाव नपुसकनावच। इदमुक्त नवति। स्त्रीपुनपुसकनाव प्राणिना स्वकृतकर्मनिर्वर्तितो नवति न पुनर्योयादृगिहनवे सोमुष्मिन्नेव तादृगेवेति । तेच तदहर्जातबालका सत पू र्वनवान्यासादाहारानिलाषिणोनवति मातु स्तन्यमाहारयंति तदाहारेण चानुपूर्व्येण च वृद्धास्तदुत्तरकाल नवनीतदध्योदनादिक यावत्कुल्माषान् नुजते तथाहारत्वेनोपगतान्त्र सास्थावराश्च प्राणिनस्ते जीवाआहारयति तथा नानाविधपृथिवीशरीर लवणादिक सचे तन वाऽऽहारयति तच्चाहारितमात्मसात्कृतं सारूप्यमापादितं सत् रसासृङ्मासमेदोस्थिम ज्जाशुक्राणि धातवइति सप्तधा व्यवस्थापयत्यपराण्यपि तेषा नानाविधमनुष्याणा शरीराणि नानावर्णान्याविर्नवति । तेच तद्योनिकत्वात्तदाधारनूतानि नानावर्णानि शरीराण्याहारयं तीत्येवमाख्यातमिति ॥ २१ ॥

अहावरं पुरक्खाय णाणाविहाण जलचराण पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं तजहा मच्छाण जाव सुसमाराण तेसिंचण अहाबीएण अहावगासेण इत्थीए पुरिसस्सयकम्मकडा तहेव जाव ततो एगदेसेण उयमाहारेति आ णुपुव्वेण वुड्ढा पलिपागमणुविन्ना ततोकायाउ अनिनिवट्टमाणा अम वेगया जणयति पोय वेगया जणयति से अमे उब्निज्जमाणे इत्थि वेगया

जणयति पुरिस वेगया जणयति नपुंसग वेगया जणयति ते जीवा महरा समाणा आउसिणेहमाहारेति आणुपुव्वेण वुड्ढा वणस्सतिकाय तसथा वरेयपाणे ते जीवा आहारेति पुढविसरीर जाव सत अवरेवियण ते सि णाणाविहाण जलचरपंचिदियतिरिक्खजोणियाण मच्छाण सुसुमा राण सरीरा णाणावण्णा जावमक्खाय ॥ २२ ॥

अर्थ—हवे अनेरु स्थानक परापूर्वे तीर्थंकरे कह्युंछे आ जगत् मांहे नाना प्रकारना जलचारी पचेंद्रिय तिर्यंच योनिक जीवछे, ते कहेछे माछला, कच्छप, मगरमच्छ, नक्र, चक्र, पाठीन, पीठ, ग्राहक, सुसुमारादिक, तेने यथाबीजे करी स्त्रियादिकना भेदें करी, यथावकाश एटले मातानी कुक्ष्यादिक जेम वाम कुक्षे स्त्री उपजे, इत्यादिक यथावकाशे करी स्त्री पुरुषादिक वेदने उदयें कर्म निर्वर्त्तित पूर्वयोनिने विषे, अहीं मैथुन प्रकृतिय नाम अरणीय काष्ठनी पेरें संयोगे उपजे (तहेव के०) तेमज यावत् ते जीव माता नी कुक्षियें उपना पछी एक देशे ओज आहारे, अनुक्रमे वृद्धिये पोहोतो छतो तेवार पछी ते काया थकी एटले योनिथकी काले करी निकले, निकलता थका त्यां एक जण अंम रूप, एक पोत रूप, त्यां अमथकी उद्भियमान ते स्त्री पुरुष नपुसक पणे उपजे, ते जीव बालक छतां अप्कायनो स्नेह आहारे पछी अनुक्रमे वर्द्धमान थका एटले वृद्धि पाम्या थका वनस्पतिकायनुं शरीर तथा त्रस अने स्थावर प्राणीने आहारे ते जीव पृथ्वीनु शरीर आहारे यावत् पोतानी काया सरखा रूप करे अन्य पण ते नाना प्रकारे जलचर पचेंद्रिय तिर्यंच योनिक यावत् सुसुमारना सरखा रूप करे ते कर्मने वश उपजे, ते नाना प्रकारना वर्ण गंध रस स्पर्शवान् थाय एम श्री तीर्थंकरे कह्यु ॥ २२॥

॥ दीपिका—गर्भजमनुष्यावुक्ता संमूर्छनजाश्चाग्रे वक्ष्यते सांप्रत तिर्यग्योनिकास्तत्रापि पूर्वं जलचरानाह । अथापरं तिर्यग्योनिकानां जलजरपंचेंद्रियाणां स्वरूपमाख्यात प्रथम मत्स्यकच्छपमकरग्राहसुसुमारादीनां यस्य यद्बीजं यस्योदराद्यवकाशोयस्तेन स्त्रिया पुरुषस्य च कर्मकृतायां योनौ जायंते । तेच तत्र मातुराहारेण वृद्धा स्त्रीपुनपुंसकानाम न्यतमत्वेन जायंते गर्भनिर्गताबाला सतो ऽपांस्नेहमप्कायमेवाहारयंति । वृद्धास्तु वनस्पतिकायं अन्यान् त्रसस्थावरांश्च यावत्पचेंद्रियानपि आहारयति । यदुक्तं । अस्ति मत्स्यस्तिमिर्नाम अस्तिमत्स्यस्तिमिंगिलः । तिमिंगिलगिलोप्यस्ति तद्गिलोप्यस्ति राघवः । तथा ते जीवा पृथ्वीशरीरं कर्दमस्वरूपमाहारयंति तच्चाऽऽहारितं तत्समानरूपीकृत्यात्मसात्परिणामयंति । शेषं सुगमं ॥ २२ ॥

॥ टीका—एव तावज्जन्मोत्क्रान्तजमनुष्या प्रतिपादितास्तदनतर सम्मूर्छनजानामवस रस्तांश्चोत्तरत्र प्रतिपादयिष्यामि साप्रतं तिर्यग्योनिकास्तत्रापि जलचरानुद्दिश्याह । (अहा वरमित्यादि) अथानन्तरमेतद्वक्ष्यमाण पूर्वमाख्यात । तद्यथा । नानाविधजलचरपंचेंद्रिय तिर्यग्योनिकाना सबंधिन कांश्चित्स्वनामग्राहमाह । तद्यथा । (मछाणजावसुसुमाराणमि त्यादि) तेषां मत्स्यकच्छपमकरग्राहसुसुमारादीना यस्य यथा यद्वीज तेन तथा यथावकाशेन योयस्योदरादावकाशस्तेन स्त्रिया पुरुषस्यच स्वकर्मनिर्वर्तिताया योनावुत्पद्यते । तेच तत्राभिव्यक्तामातुराहारेण वृद्धिमुपगता स्त्रीपुनपुसकानामन्यतमेनोत्पद्यते तेच जीवा जलचरागर्भाद्व्युत्क्रांता सतस्तदनतर यावड्डहरतिलघवस्तावदप्स्नेहमप्कायमेवाहा रयति । आनुपूर्व्येणच वृद्धा सतोवनस्पतिकाय तथापरांश्च त्रसास्थावरांश्चाहारयंति या वत्पचेंद्रियानप्याहारयति । तथा चोक्त । अस्ति मत्स्यस्तिमिर्नाम शतयोजनविस्तर ॥तिमि गिलगिलोप्यस्ति, तग्गिलोप्यस्ति राघव ! ॥१॥ तथा ते जीवा पृथिवीशरीर कर्दमस्वरूपं क्रमे ण वृद्धिमुपगता सतआहारयंति तच्चाऽऽहारितं सत्समानरूपीकृतमात्मसात्परिणामयंति शेष सुगम । यावत्कर्मोपगताभवतीत्येवमाख्यात ॥ २२ ॥

अहावर पुरक्खाय णाणाविहाण चउप्पयथलयरपचिंदियतिरिक्खजोणि याण एगखुराण डुखुराण गंडीपदाण सणप्फयाण तेसिंचण अहाबी एण अहावगासेण इत्थिपुरिसस्सयकम्मजाव मेहुणवत्तिए णाम स जोगे समुप्पज्जइ ते डुहउ सिणेह सचिणति तत्थण जीवा इत्थित्ताए पुरि सत्ताए जाव विउट्टति ते जीवा माउउंय पिउसुक्क एव जहा मणुस्साण इ त्थिवि वेगया जणयति पुरिसपि नपुसगपि तेजीवा डहरा समाणा माउ क्खीर सप्पि आहारेति आणुपुव्वेण वुड्ढा वणस्सइकाय तसथावरेयपाणे ते जीवा आहारेति पुढविसरीर जाव सत अवरेवियण तेसि णाणाविहा ण चउप्पयथलयरपचेंदियतिरिक्खजोणियाण एगखुराण जाव सणप्फ याण सरीरा णाणावणा जावमक्खाय ॥२३ ॥

अर्थ—हवे अन्य स्थानक तीर्थंकरे कह्युछे आ जगत माहे नाना प्रकारना चतुष्पद स्थलचर पचेंद्रिय तिर्यंच योनिया जीवछे, ते कहेछे एक खुर ते अश्वादिक, द्विखुर ते गो महिष वृषभादिक , गंडीपद ते हस्त्यादिक, तथा पट्पद ते सिंह व्याघ्रादिक, ते यथा बीजे यथावकाशें इत्यादिक पूर्वनी पेठें ते जीवोनी उत्पत्ति जाणवी ते जीव उप

जता मातानु रक्त अने पितानु शुक्र इत्यादिक आहारे एम मनुष्यनी पेठें एक स्त्री, एक पुरुष, एक नपुसक थाय ते जीव बालक थता मातानु दुग्धादिक आहारे, पछी अनुक्रमे वधता वनस्पतिकाय अने त्रस स्थावर प्राणिनो आहार करे इत्यादिक ते स्थलचारि चतुष्पदना शरीर नाना प्रकारना वर्ण गध रस स्पर्शवान् कर्मने वशे थाय इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥ २३ ॥

॥ दीपिका–अथस्थलचरानाह । अथापरमाख्यात नानाविधाना चतुष्पदाना स्वरूपं । तद्यथा । एकखुराणामश्वखरादीना द्विखुराणा गोमहिष्यादीनां गन्दीपदाना हस्तिगडकादीना सनखपदाना सिहव्याघ्रादीना यथाबीजेन यथावकाशेन सर्वपर्याप्तिमवाप्य उत्पद्यते उत्पन्नाश्च मातु स्तन्यमाहारयति वृध्दि प्राप्ता परेषा शरीरमप्याहारयंति । शेष सुगम ॥ २३ ॥

॥ टीका–साप्रत स्थलचरानुद्दिश्याह । (अहावरमित्यादि) अथापरमेतदाख्यात नानाविधाना चतुष्पदाना तद्यथा एकखुराणामित्यश्वखरादीना तथा द्विखुराणा गोमहिष्यादीना तथा गन्दीपदानां हस्तिगन्दकादीना तथा सनखाना सिहव्याघ्रादीना यथावीजेन यथावकाशेन सकलपर्याप्तिमवाप्योत्पद्यते तथोत्पन्ना ततस्तदनतर मातु स्तन्यमाहारयंतीति । क्रमेणच वृध्दिमुपगता सतोपरेषामपि शरीरमाहारयति शेष सुगम । यावत्कर्मोपगताजवतीति ॥ २३ ॥

अहावर पुरक्खाय णाणाविहाण उरपरिसप्पथलयरपांचेदियतिरिक्खजोणियाण तजहा अहीण अयगराण असालियाण महोरगाण तेसिचण अहाबीएण अहावगासेण इत्थीए पुरिस जावएत्थण मेहुणे एव त चेव नाणत्त अन्ह वेगइया जणयति पोय वेगइया जणयति से अन्हे उब्भिज्जमाणे इत्थि वेगइया जणयति पुरिसपि णपुसगपि ते जीवा डहरा समाणा वाउकायमाहारेंति आणुपुवेण वुड्ढा वणस्सइकाय तसथावरपाणे ते जीवा आहारेति पुढविसरीर जाव सत अवरेवियण तेसि णाणाविहाण उरपरिसप्पथलयरतिरिक्खापांचदियअहीण जाव महोरगाण सरीरा णाणावण्णा णाणागधा जावमक्खाय ॥ ७४ ॥

अर्थ–हवे अनेरु स्थानक परापूर्वे तीर्थकरे कहुंछे आ जगत्माह नाना प्रकारे उरपरिसर्प स्थलचर पचेंद्रिय तिर्यच योनियाछे ते कहेछे अही सर्प, अजगर सर्प, अ

॥ टीका–एव तावज्जर्नेव्युत्क्रातजमनुष्या प्रतिपादितास्तदनतर समूर्छनजानामवस रस्तांश्चोत्तरत्र प्रतिपादयिष्यामि सांप्रतं तिर्यग्योनिकास्तत्रापि जलचरानुद्दिश्याह । (अहा वरमित्यादि) अथानतरमेतद्वक्ष्यमाण पूर्वमाख्यात । तद्यथा । नानाविधजलचरपंचेंद्रिय तिर्यग्योनिकाना सबंधिन काश्चित्स्वनामग्राहमाह । तद्यथा । (मच्छाणजावसुसुमाराणमि त्यादि) तेषां मत्स्यकच्छपमकरग्राहसुपुमारादीना यस्य यथा यद्वीज तेन तथा यथावकाशेन योयस्योदरादावकाशस्तेन स्त्रिया पुरुषस्यच स्वकर्मनिर्वर्तितायां योनावुत्पद्यते । तेच तत्राभिव्यक्तामातुराहारेण वृद्धिमुपगता स्त्रीपुनपुसकानामन्यतमेनोत्पद्यते तेच जीवा जलचरागर्भाद्व्युत्क्रांता सततस्तदनतर यावड्डहरतिलघवस्तावदप्स्नेहमप्कायमेवाहा रयति । आनुपूर्व्येणच वृध्दा सतोवनस्पतिकाय तथापराश्च त्रसास्थावरांश्चाहारयंति या वत्पचेंद्रियानप्याहारयति । तथा चोक्त । अस्ति मत्स्यस्तिमिर्नाम शतयोजनविस्तर ॥ तिमि गिलगिलोप्यस्ति, तग्गिलोप्यस्ति राघव ॥१॥ तथा ते जीवा पृथिवीशरीर कर्दमस्वरूप क्रमे ण वृद्धिमुपगता सतआहारयंति तच्चाऽऽहारितं सत्समानरूपीकृतमात्मसात्परिणामयंति शेष सुगम । यावत्कर्मोपगताभवतीत्येवमाख्यात ॥ २१ ॥

अहावर पुरकाय णाणाविहाण चउप्पयथलयरपचिंदियतिरिक्खजोणि याण एगखुराण दुखुराण गंडीपदाण सणप्पयाण तेसिचण अहाबी एण अहावगासेण इत्थिपुरिसस्सयकम्मजाव मेहुणवत्तिए णाम स जोगे समुपज्जइ ते दुहउ सिणेह सचिणति तत्थण जीवा इत्थित्ताए पुरि सत्ताए जाव विउट्टति ते जीवा माउउंय पिउसुक्क एव जहा मणुस्साण इ त्थिवि वेगया जणयति पुरिसपि नपुसगपि तेजीवा डहरा समाणा माउ क्खीर सप्पि आहारेति आणुपुव्वेण वुड्ढा वणस्सइकाय तसथावरेयपाणे ते जीवा आहारेति पुढविसरीर जाव सत अवरेवियण तेसि णाणाविहा ण चउप्पयथलयरपचेंदियतिरिक्खजोणियाण एगखुराण जाव सणप्प याण सरीरा णाणावण्णा जावमक्खाय ॥२३ ॥

अर्थ–हवे अन्य स्थानक तीर्थंकरे कह्युछे आ जगत् माहे नाना प्रकारना चतुष्पद स्थलचर पचेंद्रिय तिर्यंच योनिया जीवछे, ते कहेछे एक खुर ते अश्वादिक, द्विखुर ते गो महिष वृषभादिक , गंडीपद ते हस्त्यादिक, तथा षट्पद ते सिंह व्याघ्रादिक, ते यथा बीज यथावकाशें इत्यादिक पूर्वेनी पेठें ते जीवोनी उत्पत्ति जाणवी ते जीव उप

जतां मातानु रक्त अने पितानु शुक्र इत्यादिक आहारे एम मनुष्यनी पेठें एक स्त्री, एक पुरुष, एक नपुसक थाय ते जीव बालक ठता मातानु डुग्धादिक आहारे, पठी अनुक्रमे वधता वनस्पतिकाय अने त्रस स्थावर प्राणिनो आहार करे इत्यादिक ते स्थलचारि चतुष्पदना शरीर नाना प्रकारना वर्ण गंध रस स्पर्शवान् कर्मने वशें थाय इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥ २३ ॥

॥ दीपिका–अथस्थलचरानाह । अथापरमाख्यात नानाविधाना चतुष्पदाना स्वरूपं । तद्यथा । एकखुराणामश्वखरादीना द्विखुराणा गोमहिष्यादीना गंमीपदाना हस्तिगंडकादीना सनखपदाना सिंहव्याघ्रादीना यथाबीजेन यथावकाशेन सर्वप र्याप्तिमवाप्य उत्पद्यते उत्पन्नाश्च मातु स्तन्यमाहारयति वृद्धि प्राप्ता परेषा शरीरम प्याहारयंति । शेष सुगम ॥ २३ ॥

॥ टीका–साप्रत स्थलचरानुद्दिश्याह । (अहावरमित्यादि) अथापरमेतदाख्यात नानाविधाना चतुष्पदाना तद्यथा एकखुराणामित्यश्वखरादीना तथा द्विखुराणा गोमहि ष्यादीना तथा गंमीपदानां हस्तिगंमकादीना तथा सनखाना सिंहव्याघ्रादीना यथाबीजेन यथावकाशेन सकलपर्याप्तिमवाप्योत्पद्यते तथोत्पन्ना सतस्तदनतर मातु स्तन्यमाहा रयतीति । क्रमेणच वृद्धिमुपगता सतोपरेषामपि शरीरमाहारयति शेष सुगम । यावत्क र्मोपगताभवतीति ॥ २३ ॥

अहावर पुरकाय णाणाविहाण उरपरिसप्पथलयरपांचदियतिरिक्खजोणियाण तजहा अहीण अयगराण असालियाण महोरगाण तेसिचण अहाबीएण अहावगासेण इत्थीए पुरिस जावएञ्ञण मेहुणे एव त चेव नाणत्त अम्न वेगइया जणयति पोय वेगइया जणयति से अम्हे उप्भिज्जमाणे इत्थि वेगइया जणयति पुरिसपि णपुसगपि ते जीवा म्हरा समाणा वाउकायमाहारेति आणुपुव्वेण वुड्ढा वणस्सइकाय तसथावरपाणे ते जीवा आहारेति पुढविसरीर जाव सत अवरेवियण तेसि णाणाविहाण उरपरिसप्पथलयरतिरिक्खपांचदियअहीण जाव महोरगाण सरीरा णाणावण्णा णाणागधा जावमक्खाय ॥ ७४ ॥

अर्थ–हवे अनेरु स्थानक परापूर्वे तीर्थंकर कह्युं ठे आ जगत्माह नाना प्रकारे उरपरिसर्प स्थलचर पचेंद्रिय तिर्यंच योनियाठे ते कहेंठे अही सर्प, अजगर सर्प, अ

सालिया सर्प्प, महोरग तथा हजार योजन प्रमाण शरीर वाला, इत्यादिक जीव छे तेने यथा बीजे यथावकाशें इत्यादिक पूर्ववत् ते जीवनी उत्पत्ति जाणवी एक अ मरूप निपजे, एक पोतरूप नीपजे, ते ते अमयकी उद्भियमान पुरुष, स्त्री, अने नपु सक थाय ते जीव बालक थका वायुकाय आहारे पछी अनुक्रमे वधता थका वनस्प तिकाय तथा त्रस स्थावर प्राणी आहारे इत्यादिक सर्व पूर्ववत् जाणवु ॥ २४ ॥

॥ दीपिका–अथ उर परिसर्प्पानाह् । उर परिसर्प्पाअहिप्रमुखाअमजत्वेन पोतजत्वे नवा गर्भान्निर्गछति तेच निर्गतामातुरूष्माण वायु चाहारयंति तेषां च जातिविशेषात्तेनैवा हारेण वृद्धिर्जायते । शेष सुगम ॥ २४ ॥

॥ टीका–साप्रतमुर परिसर्पानुदिश्याह । (अहावरमित्यादि) नानाविधाना बहुप्रका राणामुरसा ये प्रसर्प्पंति तेषा । तद्यथा अहीनामजगराणामाशालिकाना महोरगाणां य थावकाशेन यथाबीजत्वेन चोत्पत्त्यामजत्वेन पोतजत्वेनवा गर्भान्निर्गछतीति । तेच निर्गता मातुरूष्माण वायु चाहारयति तेषां जातिप्रत्ययेन तेनैवाहारेण क्षीरादिनैव वृद्धिरुपजाय ते । शेष सुगम यावदाख्यातमिति ॥ २४ ॥

अहावर पुरक्खायं णाणाविहाण भुयपरिसप्पथलयरपंचिंदियतिरिक्ख जोणियाण तजहा गोहाण नउलाण सिहाण सरडाण सल्लाण सरघा ण खाराण घरकोइलियाण विस्सभराण मुसगाण मगुसाण पयलाइ याण बिरालियाण जोहाण चउप्पाइयाण तेसिंचण अहाबीएण अहा वगासेण इत्थिए पुरिसस्सय जहा उरपरिसप्पाण तहाभाणियव्व जाव सारूवि कड सत अवरेवियण तेसिं णाणाविहाण भुयपरिसप्पपंचिंदि यथलयरतिरिक्खाण त गाहाण जावमक्खाय ॥ २५ ॥

अर्थ–हवे अनेरु स्थानक परापूर्वे श्रीतीर्थंकरे कह्युंछे आ जगत् मांहे नाना प्रकारे भुजपरि सर्प्प स्थलचर पचेंद्रिय तिर्यंच योनिक छे ते कहेछे गोहजाति, नोलिउ, सिह ल, सरड किरकांटीया प्रमुख, सलगा, सरवा, खारा, जीवविशेष घरकोइला, एटले गिलोइ, वि सभरा एटले छपका, मुसक एटले उंदर, खसकला पयालि, विरालि एवीरीतें चतुष्पद भुजपरिसर्प्प जीवविशेष छे ते जीवोनी उत्पत्ति यथा बीजे करी यथावकाशें करी

इत्यादिक जेम पूर्वे उर परिसर्पनो विचार कह्यो तेम जाणवो ते जीव अनुक्रमे वधता थका पृथ्व्यादिकनो आहार करे इत्यादिक सर्व अर्थ पूर्ववत् जाणवो ॥ २५ ॥

॥ दीपिका–भुजपरिसर्प्यानाह। भुजपरिसर्प्याणां गोधानकुलादीनां यथाबीजेन यथाव काशेनोत्पत्ति स्यात्। तेच अंडजत्वेन पोतजत्वेन वा उत्पन्नामातुरूष्मणा वायुना चाऽऽहारितेन वृद्धि याति। शेष सुगमं ॥ २५॥

॥ टीका–सांप्रतं भुजपरिसर्पानुद्दिश्याह (अहावरमित्यादि) नानाविधान्या भुजा न्या ये परिसर्प्पंति तेषां। तद्यथा। गोधानकुलादीनां स्वकर्मोपात्तेन यथाबीजेन यथाव काशेन चोत्पत्तिर्भवति। ते चांडजत्वेन पोतजत्वेन चोत्पन्नास्तदनंतरं मातुरूष्मणा वायुना वा हारितेन वृद्धिमुपयांति। शेषं सुगमं यावदाख्यातमिति ॥ २५ ॥

अहावरं पुरक्खायं णाणाविहाणं खहचरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं तंजहा चम्मपक्खीणं लोमपक्खीणं समुग्गपक्खीणं विततपक्खीणं ते सिंचणं अहाबीएणं अहावगासेणं इत्थीए जहा उरपरिसप्पाणं नाणत्तं ते जीवा डहरा समाणा माउगात्तं सिणेहं माहारिंति आणुपुवेणं वुड्डा व णस्सतिकायं तसथावरेय पाणे ते जीवा आहारेंति पुढविसरीरं जाव संतं अवरेवियणं तेसिं णाणाविहाणं खहचरपंचिंदियतिरिक्खजोणि याणं चम्मपक्खीणं जावमक्खायं ॥ २६ ॥

अर्थ–हवे अनेरु स्थानक श्री तीर्थंकरे कह्युं छे आ जगत् माहे नाना प्रकार खेचर पंचेंद्रिय तिर्यंचछे, ते कहेछे चर्मपक्षी ते वगुली प्रमुख, लोमपक्षी ते सारस राजहंसा दिक तथा समुद्गपक्षी अने विततपक्षी ए बे जाति, मनुष्य क्षेत्र थकी बाहेर जाणवी ते खेचर जातिने यथाबीजे यथावकाश जेम उर परिसर्प्पनी पूर्वे उत्पत्ति कही, तेमज ए जीवनी पण उत्पत्ति जाणवी ते जीव बालक छता मातानो स्नेह आहारे इत्यादिक आलावो सर्व पूर्ववत् जाणवो ॥ २६ ॥

॥ दीपिका–अथ खेचरानाह। खेचराणामुत्पत्तिरेवं ज्ञेया। तद्यथा। चर्मपक्षिणां चर्मकीटवल्गुलीचर्मचटकादीनां लोमपक्षिणां सारसराजहंसकाकबकादीनां समुद्गप क्षिणां विततपक्षिणश्च बहिर्द्वीपवर्तिनस्तेषां यथाबीजेन यथावकाशेन चोत्पन्नानामेवमाहारः स्यात्। ता पक्षिणी तदंडकं स्वपक्षाभ्यामावृत्य तावत्तिष्ठति यावत्तदंडकं तदू

ष्मणाऽऽहारितेन वृद्धि प्राप्त सत् कललावस्था त्यक्त्वा चचूप्रमुखान् अवयवान्निष्पाद्य भेद याति (माउगात्तसिणति) मातृगात्रोष्माणमित्यर्थ । तत पश्चादपि जननीसमानी तेनाहारेण वृद्धि प्राप्नोति । शेष प्राग्वत् ॥ २६ ॥

॥ टीका—साप्रतं खेचरानुद्दिश्याह । अहावरमित्यादि) नानाविधाना खेचराणामुत्प त्तिरेव द्रष्टव्या । यथा चर्मपक्षिणा चर्मकीटवल्गुलीप्रभृतीना तथा लोमपक्षिणां सारसरा जहसकाकबकादीना समुद्गपक्षिविततपक्षिणा बहिर्द्वीपवर्तिनामेतेषा यथाबीजेन य थावकाशेन चोत्पन्नानामाहारक्रियैवमुपजायते। तद्यथा । सा पक्षिणी तदडक पक्षा भ्यामावृत्य तावत्तिष्ठति यावत्तदडक तदूष्मणाहारितेन वृद्धिमुपगतं सत् कललावस्था परित्यज्य चच्चादिकानवयवान् परिसमापय्य भेदमुपयाति तदुत्तरकालमपि मात्रोपनीते नाहारेण वृद्धिमुपयाति । शेष प्राग्वत् ॥ २६ ॥

अहावर पुरक्खाय इहेगतिया सत्ता णाणाविहजोणिया णाणाविहसंभवा णाणाविहवुक्कमा तज्जोणिया तस्संभवा तदुवक्कमा कम्मोवगा कम्मणि याणेण तत्त वुक्कमा णाणाविहाण तसथावराण पोग्गलाण सरीरेसुवा स चित्तेसुवा अचित्तेसुवा अणुसूयत्ताए विउद्दति ते जीवा तेसिं णाणाविहा ण तसथावराण पाणाण सिणेहमाहारेति तेजीवा आहारेति पुढवि सरीर जाव सत अवरेवियण तेसिं तसथावरजोणियाण अणुसूयगाण सरीरा णाणावण्णा जावमक्खायं ॥ २७ ॥

अर्थ—हवे पूर्वे कह्यो जे मनुष्य तथा तिर्यचनो अधिकार तेथकी अपर एटले बीजु स्थानक तीर्थकरे कह्यु छे आ जगत् माहे कोइ एक जीव कर्मने उदये वर्त्तता नानाविध योनिया पोताना करेला कर्मने विशेषे नानाविध सभवछे नानाविधना आव्या छता ते जो णिया ते सभव तदुपक्रम कर्मना वशगत कर्मने कारणे आकर्षता त्या आव्या छता, ना ना प्रकारना त्रस अने स्थावर जीवोना पुद्गलने विषे,शरीरने विषे, सचित्तने विषे,अचित्तने विषे,अपर शरीरनी निश्राये उपजे ते विकलेंद्रिय जीव जाणवा अही सचित्त ते मनुष्यादि कना शरीरने विषे जू लीख,इत्यादिक नावें उपजे तथा अचित्त ते मनुष्यने परित्यज्यमाण एवा मचादिकने विषे माकडादिकने नावे उपजे ते जीव उपना थका ते नाना प्रकारना त्रस अने स्थावर प्राणीना स्नेह आहारे ते जीव पृथ्वीनु शरीर आहारीने, यावत् पो तानी काया सरखा रूप करे अनेरा पण ते त्रस अने स्थावर योनिक अपर शरीरनी

निश्राये विकलेंड्रियने जावे उपजे तेना शरीर नाना प्राकारना वर्ण गंध रस अने स्पर्शे वाला जाणवा एम यावत् तीर्थंकरे कह्यु ॥ २७ ॥

॥ दीपिका–उक्ता पंचेंड्रियामनुष्यास्तिर्यंचश्च । अथ विकलेंड्रियानाह । अथापरमाख्यात । इहैके सत्वा कर्मणा तत्रोत्पत्तिस्थाने उपक्रम्य आगत्य नानाविधत्रसस्थावराणां शरीरेषु सचित्तेषु अचित्तेषुवा (अणुसूयत्ताएत्ति) अन्यशरीराश्रिततया परनिश्रयाविवर्तंते उत्पद्यतइत्यर्थः । तेच विकलेंड्रिया सचित्तेषु मनुष्यादिशरीरेषु यूकालिक्षादिकत्वेन जायते नरभुज्यमानेषु मचकादिषु अचित्तेषु मत्कुणत्वेनोत्पद्यते तथा नरशरीरेषु विकलेंड्रियशरीरेषु वा सचित्ताचित्तेषु ते जीवा (अणुसूयत्ताएत्ति) अनुस्यूतत्वेन परिनिश्रयाकुम्यादित्वेन जायते । केचित्सचित्तेऽग्नौ मूषिकादितया यत्र चाग्निस्तत्र वायुरिति ते वायूद्भवाअपि ज्ञेया । पृथिवीमाश्रित्य कुंथुपिपीलिकादयोवर्षादौ ऊष्मणा सस्वेदजाजायते उदके पूतरकाडोल्लणकाभ्रमरिकादय । वनस्पतिकाये पनकभ्रमरादय एव ते जीवास्तानि स्वयोनिशरीराणि आहारयतीत्याख्यातं ॥ २७ ॥

॥ टीका–व्याख्याता पंचेंड्रियामनुष्यास्तिर्यंचश्च तेषा चाहारो द्वेधा । आभोगनिर्वर्तिताऽनाभोगनिर्वर्तितश्च । तत्रानाभोगनिर्वर्तित प्रतिक्षणभाव्याभोगनिर्वर्तितस्तु यथास्व क्षुद्वेदनीयोदयभावीति । सांप्रत विकलेंड्रियानुद्दिश्याह । (अहावरमित्यादि) अथानंतरमेतदाख्यातमिहास्मिन् संसारे एके केचन तथाविधकर्मोदयवर्तिन सत्वा प्राणिनोनानाविधयोनिका कर्मनिदानेन स्वकृतकर्मणोपादानभूतेन तत्रोत्पत्तिस्थाने उपक्रम्यागत्य नानाविधत्रसस्थावराणां शरीरेषु अचित्तेषु सचित्तेषुवा (अणुसुयत्ताएत्ति) अपरशरीराश्रिततया परनिश्रयाविवर्तंते समुत्पद्यते इति यावत् (तेच जीवाविकलेंड्रिया सचित्तेषु मनुष्यादिशरीरेषु यूकालिक्षादिकत्वेनोत्पद्यते तथा तत्परिभुज्यमानेषु मचकादिष्वचित्तेषु मत्कुणत्वेनाविर्भवति तथाऽचित्तीभूतेषु मनुष्यादिशरीरकेषु विकलेंड्रियशरीरेषुवा ते जीवाअनुस्यूतत्वेन परनिश्रयाकुम्यादित्वेनोत्पद्यते । अपरेतु सचित्त तेजकायादौ मूषिकादित्वेनोत्पद्यते । यत्र चाग्निस्तत्र वायुरित्यतस्तडुद्भवाअपि द्रष्टव्या । तथा पृथिवीमनुश्रित्य कुंथुपिपीलिकादयावर्षादावूष्मणा सस्वेदजाजायते तथोदके पूतरकाडोल्लणकभ्रमरिकाद्देनकादय समुत्पद्यते तथा वनस्पतिकाये पनकभ्रमरादयोजायते । तदेव ते जीवास्तानि स्वयोनिशरीराण्याहारयति इत्येवमाख्यातमिति ॥ २७ ॥

एवं डुरूवसंभवत्ताए ॥ २८ ॥

अर्थ–हवे पंचेंड्रियना मल मूत्र मांहे उपजता एवा, जीव आश्री कहेछे (एवंके०)

ष्मणाऽऽहारितेन वृद्धि प्राप्त सत् कललावस्था त्यक्त्वा चचूप्रमुखान् अवयवान्निष्पाद्य भेद याति (माउगात्तसिणति) मातृगात्रोष्माणमित्यर्थ । तत पश्चादपि जननीसमानी तेनाहारेण वृद्धि प्राप्नोति । शेष प्राग्वत् ॥ २६ ॥

॥ टीका–साप्रत खेचरानुद्दिश्याह । अहावरमित्यादि) नानाविधाना खेचराणामुत्प त्तिरेव द्रष्टव्या । यथा चर्मपक्षिणा चर्मकीटवल्गुलीप्रभृतीना तथा लोमपक्षिणा सारसरा जहसकाकवकादीना समुद्गपक्षिविततपक्षिणा बहिर्द्वीपवर्तिनामेतेषा यथाबीजेन य थावकाशेन चोत्पन्नानामाहारक्रियैवमुपजायते । तद्यथा । सा पक्षिणी तदडक पक्षा भ्यामावृत्य तावत्तिष्ठति यावत्तदडक तदूष्मणाहारितेन वृद्धिमुपगत सत् कललावस्था परित्यज्य चच्वादिकानवयवान् परिसमापय्य भेदमुपयाति तदुत्तरकालमपि मात्रोपनीते नाहारेण वृद्धिमुपयाति । शेष प्राग्वत् ॥ २६ ॥

अहावर पुरक्खाय इहेगतिया सत्ता णाणाविहजोणिया णाणाविहसभवा णाणाविहवुक्कमा तज्जोणिया तस्सभवा तडुवक्कमा कम्मोवगा कम्मणि याणेण तत्र वुक्कमा णाणाविहाण तसथावराण पोग्गलाण सरीरसुवा स चित्तेसुवा अचित्तेसुवा अणुसूयत्ताए विउट्टति ते जीवा तेसि णाणाविहा ण तसथावराण पाणाण सिणेहमाहारेति तेजीवा आहारेति पुढवि सरीर जाव सत अवरेवियण तेसि तसथावरजोणियाण अणुसूयगाण सरीरा णाणावण्णा जावमक्खायं ॥ २७ ॥

अर्थ–हवे पूर्वे कह्यो जे मनुष्य तथा तिर्यचनो अधिकार तेथकी अपर एटले बीजु स्थानक तीर्थकरे कह्यु छे आ जगत् माहे कोइ एक जीव कर्मने उदये वर्त्तता नानाविध योनिया पोताना करेला कर्मने विशेषे नानाविध सभवछे नानाविधना आव्या छता ते जो णिया ते सभव तदुपक्रम कर्मना वशगत कर्मने कारणे आकर्षता त्या आव्या छता, ना ना प्रकारना त्रस अने स्थावर जीवोना पुद्गलने विषे,शरीरने विषे, सचित्तने विषे,अचित्तने विषे,अपर शरीरनी निश्राये उपजे ते विकलेंद्रिय जीव जाणवा अही सचित्त ते मनुष्यादि कना शरीरने विषे जू लीख,इत्यादिक नावे उपजे तथा अचित्त ते मनुष्यने परिभुज्यमाण एवा मचादिकने विषे माकडादिकने नावे उपजे ते जीव उपना थका ते नाना प्रकारना त्रस अने स्थावर प्राणीना स्नेह आहारे ते जीव पृथ्वीनु शरीर आहारीने, यावत् पो तानी काया सरखा रूप करे अनेरा पण ते त्रस अने स्थावर योनिक अपर शरीरनी

॥ टीका–सांप्रतं सचित्तशरीराश्रयान् जंतून् प्रतिपादयितुमाह । (एवखुरडुगुत्ताएइ त्यादि) एवमिति यथा मूत्रपुरीशादावुत्पादस्तथा तिर्यक्शरीरेषु (खुरडुगुत्ताएत्ति) चर्मकीटतया समुत्पद्यते । इदमुक्तं नवति जीवतामेव गोमहिष्यादीनां चर्मणोंतः प्राणिनः संमूर्छंते तेच तन्मांसचर्मणी नक्षयंति नक्षयंतश्चर्मणोविवराणि विदधति गलछोणिते षु विवरेषु तिष्ठतस्तदेव शोणितमाहारयंति तथा अचित्तगवादिशरीरेपि तथा सचित्ताचित्त वनस्पतिशरीरेपि घुणकीटकाः समूर्छंते तेच तत्र समूर्छंतस्तछरीरमाहारयंतीति ॥२९॥

अहावरं पुरकायं इहेगतिया सत्ता णाणाविहजोणिया जाव कम्मणियाणेणं तत्थवुक्कमा णाणाविहाणं तसथावराणं पाणाणं सरीरेसु सचित्तेसु वा अचित्तेसुवा तं सरीरगं वायसं सिद्धंवा वायसंगहियंवा वायं परिगहियं उड्ढवाएसु उड्ढनागी नवति अहेवाएसु अहेनागी नवति तिरियवाएसु तिरियनागी नवति तंजहा उसा हिमए महिया करए हरतणुए सुद्धोदए तेजीवा तेसिं णाणाविहाणं तसथावराणं पाणाणं सिणेहमाहारेंति तेजीवा अहारेंति पुढविसरीरं जावसंतं अवरेवियणं तेसिं तसथावरजोणियाणं उसाणं जावसुद्धोदगाणं सरीरा णाणावण्णा जावमरकायं ॥ ३० ॥

अर्थ–हवे अप्कायनुं प्रतिपादन करे छे हवे बीजुं स्थानक छे श्री तीर्थंकर कहुंछे आ जगत् माहे कोइ एक जीव तथाविध कर्मने उदयें नानाविध योनिक छता यावत् कर्मने कारणे आकर्षिता त्यां आव्या छता नाना प्रकार त्रस ते दर्दुरादिक अने स्थावर ते हरिकाय लवणादिक प्राणीना सचित्त अचित्त शरीरने विषे ते अप्कायनुं शरीर वायुयें करी निपजाव्युं तथा (वायसंगहियंवा के०) वायरे करी सम्यक् प्रकार ग्रह्युं तथा (वायपरिहियं के०) वायरे करी अन्यान्य परिगत एटले माहोमांह मेलव्युं तथा (उड्ढवाएसुउड्ढनागीनवति के०) ऊर्ध्वगत वायराने विषे ऊर्ध्वगत नागी थाय एटले ऊर्ध्व वायु थके पाणी पण उपहरा रहे (अहेवाएसुअहेनागीनवतिके०) तथा निचे निचे वायरे निचो होय, (तिरियवाएसुतिरियनागीनवति के०) तिर्छ वायरे तिर्छो थाय, जे जे परिणामे वायु वर्त्ते, तेम तेम पाणी पण परिणमे (तंजहा के०) हवे तेना नाम कहेछे (उसा के०) उसपडे ते (हिमए के०) हिम (महिया के०) धूयरी (करए के०) करगडा (हरतणुए के०) तृणने अग्रे स्थित एवा पाणीना बिंदुआ (सुद्धोदए के०) शुद्धोदक ते लघु पाणी इत्यादिक पाणी जाति माहे जीव उपजे

ए जेम सचित्ताचित्त शरीरनी निश्रायें विकलेंद्रिय जीव उपजेछे तेम, तेना मल, मूत्र, वमनादिकने विषे (डुरूव के०) विरूपरूप एटले कृम्यादिकने नावे उपजे, ते जीव तेऐ विष्टादिकने विषे उपना छता तेहिज आहार लीये इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥ २७ ॥

॥ दीपिका–अथ पचेंद्रियमूत्रपुरीषोद्भवान् जीवानाह । (एवमित्यादि) एव पूर्वोक्त प्रकारेण सचित्ताचित्तशरीरनिश्रयायथा विकलेंद्रियाजायते । तथा तत्सनवेषु मूत्रपुरीष वातादिषु परे जतवोडुष्ट विरूप रूप येषा ते डुरूपास्तत्सनवत्वेन तद्भावेन जायते। तेच विष्टादौ शरीरान्निर्गते अनिर्गतेवा उत्पन्नास्तदेव विष्टादिकमाहारयतीति। शेष प्राग्वत्॥ २७॥

॥ टीका–साप्रतं पचेंद्रियमूत्रपुरीषोद्भवानसुमत प्रतिपादयितुमाह । (एवमित्यादि) एवमिति पूर्वोक्तपरामर्शी । यथा सचित्ताचित्तशरीरनिश्रयाविकलेंद्रिया समुत्पद्यते तथा तत्सनवेषु मूत्रपुरीषवातादिषु अपरे जतवोडुष्ट विरूप रूप येषा कृम्यादीना ते डुरूपास्तत्सनवत्वेन तद्भावेनोत्पद्यते । तेच तत्र विष्टादौ देहान्निर्गतेऽनिर्गतेवा समुत्पद्यमाना उत्पन्नाश्च तदेव विष्टादिक स्वयोनिभूतमाहारयति । शेष प्राग्वत् ॥ २७ ॥

एव खुरडुगत्ताए ॥ २९ ॥

अर्थ–हवे सचित्त शरीरनी निश्रायें जे जीव उपजे ते आश्री कहेछे. (एव के०) जेम मलमूत्रादिकने विषे जीवनी उत्पत्ति थायछे तेम तिर्यचना शरीरने विषे खुर एटले चर्मने विषे कीटकने नावे उपजे एटले गाय, नेंश प्रमुखना चर्म माहे प्राणियो समूर्छे, ते तेनु चर्म मास नक्षण करे, चर्म विवर करे, ते थकी जे अशुद्ध पुजल निकले तेज आहारे , तथा अचित्त गवादिक शरीरने विषे पण जीव उपजे तथा सचित्ताचित्त वनस्पति शरीरने विषे पण घूण कीटकादिक समूर्छे ते उपजता तेनुज शरीर आहारे इत्यादिक जाणवु ॥ २९ ॥

॥ दीपिका–अथ सचित्तदेहाश्रयान् जतूनाह । (एवखुरुडुगत्ताएत्ति) यथा मूत्रविष्टादावुत्पादस्तथा तिर्यग्देहेषु (खुरडुगुत्तेत्ति) चर्मकीटत्वेन जायते । तथाहि ।जीवतामेव गोमहिष्यादीना चर्मणोऽत प्राणिन समूर्छते । तेच तन्मासचर्मणी नक्षयति नक्षयतश्च तच्चर्मणोविवराणि कुर्वंति । गलच्छोणितेषु विवरेषुच तेषु तिष्ठतस्तदेव शोणित नक्षयति तथाऽचित्तगवादिदेहेपि तथा सचित्ताचित्तवनस्पतिशरीरेपि घुणकीटका समूर्छते तद्देहमेव नक्षयतीति ॥ २९ ॥

॥ टीका–सांप्रतं सचित्तशरीराश्रयान् जंतून् प्रतिपादयितुमाह । (एवखुरडुगत्ताएइ त्यादि) एवमिति यथा मूत्रपुरीषादावुत्पादस्तथा तिर्यक्शरीरेषु (खुरडुगत्ताएत्ति) चर्म कीटतया समुत्पद्यते । इदमुक्तं भवति जीवतामेव गोमहिष्यादीनां चर्मणोंत प्राणिनः संमूर्छंते तेच तन्मांसचर्मणी भक्षयंति भक्षयतश्चर्मणोविवराणि विदधति गलद्भोणिते षु विवरेषु तिष्ठतस्तदेव शोणितमाहारयंति तथा अचित्तगवादिशरीरेपि तथा सचित्ताचित्त वनस्पतिशरीरेपि घुणकीटकाः संमूर्छंते तेच तत्र संमूर्छतस्तच्छरीरमाहारयंतीति ॥२९॥

अहावरं पुरक्खायं इहेगतिया सत्ता णाणाविहजोणिया जाव कम्मणिया णेणं तत्थवुक्कमा णाणाविहाणं तसथावराणं पाणाणं सरीरेसु सचित्तेसु वा अचित्तेसुवा तं सरीरगं वायसंसिद्धंवा वायसंगहियंवा वाय परिग हियं उड्ढवाएसु उड्ढभागी भवति अहेवाएसु अहेभागी भवति तिरिय वाएसु तिरियभागी भवति तंजहा उसा हिमए महिया करए हरत णुए सुद्धोदए तेजीवा तेसिं णाणाविहाणं तसथावराणं पाणाणं सिणे हमाहारेंति तेजीवा अहारेति पुढविसरीरं जावसंत अवरेवियणं तेसिं तसथावरजोणियाणं उसाणं जावसुद्धोदगाणं सरीरा णाणावण्णा जावमक्खायं ॥ ३० ॥

अर्थ–हवे अप्कायनुं प्रतिपादन करे छे हवे बीजुं स्थानक छे श्री तीर्थंकरे कह्युछे आ जगत् माहे कोइ एक जीव तथाविध कर्मने उदयें नानाविध योनिक छता यावत् कर्मने कारणे आकर्षिता त्यां आव्या छता नाना प्रकारे त्रस ते दर्डुरादिक अने स्थावर ते हरिकाय लवणादिक प्राणीना सचित्त अचित्त शरीरने विषे ते अप्कायनुं शरीर वायुयें करी निपजाव्युं तथा (वायसंगहियंवा के०) वायरे करी सम्यक् प्रकारे ग्रह्युं तथा (वायपरिहिय के०) वायरे करी अन्योन्य परिगत एटले माहामांहे मेलव्युं तथा (उड्ढवाएसुउड्ढभागीभवति के०) ऊर्ध्वगत वायराने विषे ऊर्ध्वगत भागी थाय एटले ऊर्ध्व वायु थके पाणी पण उपहरो रहे (अहेवाएसुअहेभागीभवतिके०) तथा निचे निचे वायरे निचो होय, (तिरियवाएसुतिरियभागीभवति के०) तिर्छा वायरे ति र्छो थाय, जे जे परिणामे वायु वर्त्ते, तेम तेम पाणी पण परिणमे (तंजहा के०) हवे तेना नाम कहेछे (उसा के०) उसपडे ते (हिमएके०) हिम (महिया के०) धूयरी (करए के०) करगडा (हरतणुए के०) तृणने अग्रे स्थित थया पाणीना बिंदु आ (सुद्धादए के०) शुद्धोदक ते सर्व पाणी इत्यादिक पाणी जाति माहे जीव उपजे

ए जेम सचित्ताचित्त शरीरनी निश्राये विकलेंद्रिय जीव उपजेछे तेम, तेना मल, मूत्र, वमना दिकने विषे (दुरूव के०) विरूपरूप एटले कृम्यादिकने नावे उपजे, ते जीव तेणे वि ष्टादिकने विषे उपना थता तेहिज आहार लीये इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥ २८ ॥

॥ दीपिका–अथ पचेंद्रियमूत्रपुरीषोद्भवान् जीवानाह । (एवमित्यादि) एव पूर्वोक्त प्रकारेण सचित्ताचित्तशरीरनिश्रयायथा विकलेंद्रियाजायते । तथा तत्सनवेषु मूत्रपुरीष वातादिषु परे जतवोडुष्ट विरूप रूप येषा ते डुरूपास्तत्सनवत्वेन तद्भावेन जायते। तेच विष्टादौ शरीरान्निर्गते अनिर्गतेवा उत्पन्नास्तदेव विष्टादिकमाहारयतीति। शेष प्राग्वत्॥२८॥

॥ टीका–साप्रतं पचेंद्रियमूत्रपुरीषोद्भवानसुमत प्रतिपादयितुमाह । (एवमित्यादि) एवमिति पूर्वोक्तपरामर्श । यथा सचित्ताचित्तशरीरनिश्रयाविकलेंद्रिया समुत्पद्यते तथा तत्सनवेषु मूत्रपुरीषवातादिषु अपरे जतवोडुष्ट विरूप रूप येषा कृम्यादीना ते डुरूपा स्तत्सनवत्वेन तद्भावेनोत्पद्यते । तेच तत्र विष्टादौ देहान्निर्गतेऽनिर्गतेवा समुत्पद्यमाना उत्पन्नाश्च तदेव विष्टादिक स्वयोनिजूतमाहारयति । शेष प्राग्वत् ॥ २८ ॥

एव खुरडुगत्ताए ॥ २९ ॥

अर्थ–हवे सचित्त शरीरनी निश्राये जे जीव उपजे ते आश्री कहेछे (एव के०) जेम मलमूत्रादिकने विषे जीवनी उत्पत्ति थायछे तेम तिर्यचना शरीरने विषे खुर एट ले चर्मने विषे कीटकने नावे उपजे एटले गाय, नेश प्रमुखना चर्म माहे प्राणियो समूर्छे, ते तेनु चर्म मांस नक्षण करे, चर्मे विवर करे, ते थकी जे अशुद्ध पुजल निकले तेज आहारे , तथा अचित्त गवादिक शरीरने विषे पण जीव उपजे तथा सचित्ताचित्त वनस्पति शरीरने विषे पण घूण कीटकादिक समूछे ते उपजता तेनुज शरीर आहा रे इत्यादिक जाणवु ॥ २९ ॥

॥ दीपिका–अथ सचित्तदेहाश्रयान् जतूनाह । (एवखुरुडुगत्ताएत्ति) यथा मूत्रविष्टादा वुत्पादस्तथा तिर्यग्देहेषु (खुरडुगुत्तेत्ति) चर्मकीटत्वेन जायते । तथाहि ।जीवतामेव गोम हिष्यादीना चर्मणोऽत प्राणिन समूर्छयते। तेच तन्मासचर्मणी नक्षयति नक्षयतश्च तच्च र्मणोविवराणि कुर्वति । गलच्छोणितेषु विवरेषुच तेषु तिष्ठतस्तदेव शोणित नक्षयति तथाऽ चित्तगवादिदेहेपि तथा सचित्ताचित्तवनस्पतिशरीरेपि घुणकीटका समूर्छयते तद्देहमे व नक्षयतीति ॥ २९ ॥

॥ टीका–सांप्रतं सचित्तशरीराश्रयान् जंतून् प्रतिपादयितुमाह । (एवखुरडगुत्ताएइत्यादि) एवमिति यथा मूत्रपुरीषादावुत्पादस्तथा तिर्यक्शरीरेषु (खुरडगुत्ताएत्ति) चर्मकीटतया समुत्पद्यते । इदमुक्तं नवति जीवतामेव गोमहिष्यादीनां चर्मणोत प्राणिनः समूर्छंते तेच तन्मांसचर्मणी नक्षयंति नक्षयंतश्चर्मणोविवराणि विदधति गलच्छोणितेषु विवरेषु तिष्ठतस्तदेव शोणितमाहारयंति तथा अचित्तगवादिशरीरेपि तथा सचित्ताचित्तवनस्पतिशरीरेपि घुणकीटका समूर्छंते तेच तत्र समूर्छंतस्तछरीरमाहारयंतीति ॥ २९ ॥

अहावरं पुरकायं इहेगतिया सत्ता णाणाविहजोणिया जाव कम्मणिया णेणं तत्थवुक्कमा णाणाविहाणं तसथावराणं पाणाणं सरीरेसु सचित्तेसु वा अचित्तेसुवा तं सरीरगं वायसं सिद्धवा वायसंगहियंवा वायं परिगहियं उट्टंवाएसु उट्टनागी नवति अहेवाएसु अहेनागी नवति तिरियवाएसु तिरियनागी नवति तंजहा उसा हिमए महिया करए हरतणुए सुद्धोदए तेजीवा तेसिं णाणाविहाणं तसथावराणं पाणाणं सिणेहमाहारेंति तेजीवा अहारेति पुढविसरीरं जावसंतं अवरेवियणं तेसिं तसथावरजोणियाणं उसाणं जावसुद्धोदगाणं सरीरा णाणावण्णा जावमक्खायं ॥ ३० ॥

अर्थ–हवे अप्कायनुं प्रतिपादन करे छे हवे वीजुं स्थानक छे श्री तीर्थंकरे कह्युं छे आ जगत् माहे कोइ एक जीव तथाविध कर्मने उदयें नानाविध योनिक छता यावत् कर्मने कारणे आकर्षिता त्यां आव्या छता नाना प्रकार त्रस ते दर्दुरादिक अने स्थावर ते हरिकाय लवणादिक प्राणीना सचित्त अचित्त शरीरने विषे ते अप्कायनुं शरीर वायुयें करी निपजाव्युं तथा (वायसंगहियंवा के०) वायरे करी सम्यक् प्रकारे ग्रह्युं तथा (वायपरिहियं के०) वायरे करी अन्यान्य परिगत एटले माहोमाहे मेलव्युं तथा (उट्टवाएसुउट्टनागीनवति के०) ऊर्ध्वगत वायराने विषे ऊर्ध्वगत नागी थाय एटले ऊर्ध्व वायु थके पाणी पण उपहरो रहे (अहेवाएसुअहेनागीनवतिके०) तथा निचे निचे वायरे निचो होय, (तिरियवाएसुतिरियनागीनवति के०) तिछे वायरे तिर्छो थाय, जे जे परिणामे वायु वर्त्ते, तेम तेम पाणी पण परिणमे (तंजहा के०) हवे तेना नाम कहेछे (उसा के०) उसपडे ते (हिमएके०) हिम (महिया के०) धूयरी (करए के०) करगडा (हरतणुए के०) तृणने अग्रे स्थित एवा पाणीना बिंदुआ (सुद्धोदए के०) शुद्धोदक ते स्वछ पाणी इत्यादिक पाणी जाति माहे जीव उपजे

ते जीव त्या उपना थता ते नाना प्रकारना त्रस अने स्थावर प्राणियोनो स्नेह आहा रे इत्यादिक शेष सुगम ॥ एटले वात योनिक अप्काय देखाड्यो ॥ ३० ॥

॥ दीपिका—अथाप्काय वक्तुकामस्तत्कायकारणभूतवायुकथनपूर्वमाह । (अहावर मित्यादि) अथैतदाख्यातं । इहैके सत्वा कर्मोदयात्तत्र वायुयोनिकेऽप्काये व्युत्क्रम्यागम्य नानाविधानां त्रसानां दर्दुरादीनां प्राणिनां स्थावराणां च हरितलवणादीनां सचित्ताचित्त देहेषु तदप्कायशरीरं वायुयोनिकत्वादप्कायस्य वायुना उपादानहेतुभूतेन निष्पादितं तथा वातेन सगृहीतं अभ्रपटलातर्निर्वृत्तं तथा वातपरिगतं वायुनाऽन्योन्यानुगतं ऊर्ध्वगते वाते उर्ध्वभागभवति । गगनगतवायुवशाज्जल व्योम्नि समूर्छते । अधोगते वाते जलमप्यधः स्यात् तिर्यग्गतेच तिर्यक् वातयोनिकत्वाज्जलस्य यत्र यत्र वायु परिणमति तत्र तत्र तत्कार्यभूतं जलमपि समूर्छते । जलभेदान् वक्ति । (उसत्ति) अ वश्याय हिम महिकाधूमरीकरका (हरतणुत्ति) तृणाग्रप्राप्ताजलबिंदव शुद्धोदक प्रतीतं । इहैके जीवा शुद्धजले जातानानाविधत्रसस्थावराणा उत्पत्त्याऽऽधारभूतानां स्नेह भक्षयंति । शेषं सुगमं ॥ ३० ॥

॥ टीका—साम्प्रतमप्कायं प्रतिपादयिषुस्तत्कारणभूतवातप्रतिपादनपूर्वकं प्रतिपाद यतीत्याह । (अहावरमित्यादि) अथानन्तरमेतद्वक्ष्यमाणं पुरा पूर्वमाख्यातं । इहास्मि न् जगत्येके सत्वास्तथाविधकर्मोदयानानाविधयोनिका सतोयावत्कर्मनिदानेन तत्र तस्मिन्वातयोनिकेऽप्काये व्युत्क्रम्यागत्य नानाविधानां बहुप्रकाराणां त्रसानां दर्दुरप्रभृ तीनां स्थावराणांच हरितलवणादीनां प्राणिनां सचित्ताचित्तभेदभिन्नेषु शरीरेषु तदप्का यशरीरं वातयोनिकत्वादप्कायस्य वायुनोपादानकारणभूतेन सम्यक् ससिद्ध निष्पा दितं । तथा वातेनैव सम्यक्गृहीतमभ्रपटलातर्निर्वृत्तं तथा वातेनान्योन्यानुगतत्वा त्परिगतं तथोर्ध्वगतेषु वातेषूर्ध्वभागी भवत्यप्कायोगगनगतवातवशाद्दिवि समूर्छते जलं तथाऽधस्ताजतेषु तद्वशाद्भवत्यधोभागीत्यप्कायएव तिर्यग्गतेषु तिर्यग्भागी भवत्यप्काय । इदमुक्तं भवति । वातयोनिकत्वादप्कायस्य यत्र यत्रासौ तथाविधपरिणामपरिणतोभव ति तत्र तत्र तत्कार्यभूतं जलमपि समूर्छते । तस्य चाभिधानपूर्वकं भेदं दर्शयितुमा ह । तद्यथा । (उसत्ति) अवश्याय (हिमयेत्ति) शिशिरादौवातेरिताहिमकणामिहि का धूमिका करका प्रतीता (हरतणुयत्ति) तृणाग्रव्यवस्थिताजलबिंदव शुद्धोदकं प्रतीतमिति । इहास्मिन्नुदकप्रस्तावे एके सत्वास्तत्रोत्पद्यते स्वकर्मवशगास्तत्रोत्पन्नास्ते जीवास्तेषां नानाविधानां त्रसस्थावराणां स्वोत्पत्त्याधारभूतानां स्नेहमाहारयंति ते जीवा स्तच्छरीरमाहारयति अनाहारकान भवतीत्यर्थं ।शेषं सुगमं यावदेतदाख्यातमिति ॥३०॥

अहावर पुरक्खाय इहेगतियासत्ता उदगजोणिया उदगसंभवा जाव कम्मणियाणेण तत्थ वुक्कमा तसथावरजोणिएसु उदएसु उदगत्ताए विउट्टति तेजीवा तेसिं तसथावरजोणियाण उदगाण सिणेहमाहारेति तेजीवा आहारेति पुढविसरीर जाव सत अवरेवियण तेसि तसथावर जोणियाण उदगाण सरीरा णाणावण्णा जावमक्खाय ॥ ३१ ॥

अर्थ—हवे अप्काय योनिक अप्काय देखाडेछे अथ हवे अपर स्थानक श्री तीर्थंकरे कह्युछे आ जगत् मांहे कोइ एक जीव उदकयोनिक उदकने विषे संभवछे,यावत् कर्मने कारणे करी एटले तथाविध कर्मने उदये वातवशें उपना एवा त्रस अने स्थावर जीव, तेना शरीरने अधार भूत एवु उदक जे पाणी ते उदके उपना त्रस स्थावर योनिक उदक तेने विषे उदक पणे उपजे,ते जीव त्यां उपना थका ते उदकनो स्नेह आहारे इत्यादिक शेष सुगमम् ॥ ३१ ॥

॥ दीपिका—वातयोनिक जलमुक्त्वा जलसंभव जलमाह । (अहावरमित्यादि) इहैके सत्वावातवशोत्पन्नत्रसस्थावरदेहाधारभूतमुदक योनिरुत्पत्तिस्थान येषां ते तथा उदकसंभवास्त्रसस्थावरयोनिकेषु उदकेषु अपरोदकतया उत्पद्यते । तेच जलसत्वास्तेषां त्रसस्थावरयोनिकाना जलानां स्नेह पराण्यपि पृथिव्यादिशरीराणि चाहारयंति । तच्च पृथिव्यादिशरीर भक्षितं सत्सारूप्यमानीयात्मसात्कुर्वंति । अन्यान्यपि तत्र त्रसस्थावरशरीराणि वर्तंते तेषां च नीरयोनिकानां नीराणां नानाविधानि शरीराणि वर्तंते एतदाख्यात ॥३१॥

॥टीका—तदेव वातयोनिकमप्कायं प्रदर्श्याधुनाप्कायसंभवमेवाप्कायं दर्शयितुमाह । (अहावरमित्यादि) अथापरमाख्यातमिहास्मिन् जगति उदकाधिकारे वा एके सत्वास्तथाविधकर्मोदयाद्वातवशोत्पन्नत्रसस्थावरशरीराधारमुदक योनिरुत्पत्तिस्थान येषां ते तथा तथोदकसंभवा यावत्कर्मनिदानेन तत्रोत्पित्सवस्त्रसस्थावरयोनिकेषूदकेष्वपरोदकतया विवर्तंते समुत्पद्यंते ते चोदकजीवास्तेषां त्रसस्थावरयोनिकानामुदकानां स्नेहमाहारयंत्यन्यान्यपि पृथिव्यादिशरीराण्याहारयंति । तच्च पृथिव्यादिशरीरमाहारितं सत् सारूप्यमानीयात्मसात्प्रकुर्वंत्यपराण्यपि तत्र त्रसस्थावरशरीराणि विवर्तंते तेषां चोदकयोनिकानामुदकानां नानाविधानि शरीराणि विवर्तंते इत्येतदाख्यातं ॥ ३१ ॥

अहावर पुरक्खाय इहेगतिया सत्ता उदगजोणियाण जाव कम्मनियाणेण तत्थ वुक्कमा उदगजोणिएसु उदएसु उदगत्ताए विउट्टति ते जीवा तेसि

उदगजोणियाणं जीवाणं उदगाणं सिणेहमाहारेंति ते जीवा आहारेंति पुढविसरीरं जावसंतं अवरेवियणं जीवाणं उदगजोणियाणं उदगाणं सरीरा णाणावन्ना जावमक्खायं ॥ ३१ ॥

अर्थ–हवे अन्य स्थानक श्री तीर्थंकरे कह्यु छे आ जगत् माहे कोइ एक जीव तथाविध कर्मना उदय थकी उदक योनिक उदकने विषे उपजे त्यां उपना थका उदक जीवनो स्नेह आहारे, शेष सुगम ॥ ३१ ॥

॥ दीपिका–तदेव त्रसस्थावरदेहसंभवं जलयोनित्वेन प्रदर्श्याऽधुना निर्विशेषणं जलसंभवमेव जलं दर्शयति । (अहावरमिति) इह एके सत्वा उदकयोनिकेषु उदकेषूत्पद्यते तेच तेषां जलसंभवानां आत्माधारभूतानां शरीरं भक्षयंति । शेषं प्राग्वत् ॥ ३१ ॥

॥ टीका–तदेवं त्रसस्थावरसंभवमुदकयोनित्वेन प्रदर्श्याऽधुना निर्विशेषणमप्काय संभवमेवाप्कायं दर्शयितुमाह । (अहावरमित्यादि) अथापरमाख्यातमिहास्मिन् जगत्युदकाधिकारे वा एके सत्वा स्वकृतकर्मोदयाडुदकयोनिषूदकेषूत्पद्यते तेच तेषामुदक संभवानामुदकजीवानामात्माधारभूतानां शरीरमाहारयंति । शेषं सुगमं । यावदाख्यातमिति ३१

अहावरं पुरक्खायं इहेगतिया सत्ता उदगजोणियाणं जावकम्मनियाणेणं तत्थ वुक्कमा उदगजोणिएसु उदएसु तसपाणत्ताए विउट्टंति तेजीवा तेसिं उदगजोणियाणं उदगाणं सिणेहमाहारेंति तेजीवा आहारेंति पुढविसरीरं जावसंतं अवरेवियणं तेसिं उदगजोणियाणं तसपाणाणं सरीरा णाणावन्ना जावमक्खायं ॥ ३२ ॥

अर्थ–हवे अन्य स्थानक श्री तीर्थंकर देवे कह्यु आ जगत् माहे कोइ एक जीव कर्मे प्रेर्या थका उदक योनिक उदकने विषे पूयरादिक त्रस प्राण पणे उपजे ते उपना छता तेनु शरीर आहारे इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥ ३२ ॥

॥ दीपिका–अथ जलाधारभूतान् त्रसानाह । इहैके सत्वा उदकयोनिकेषूदकेषु त्रसप्राणितया पूतरकादित्वेन उत्पद्यते । तेच उत्पद्यमाना उत्पन्नाश्च तेषां जलयोनिकानां जलानां स्नेहमाहारयंति । शेषं प्राग्वत् ॥ ३२ ॥

॥ टीका–सांप्रतमुदकाधारानपरान् पूतरकादिकांस्त्रसान्दर्शयितुमाह । (अहावरमि

स्यादि) अथापरमेतदाख्यातमिहैके सत्वाउदकयोनिषु चोदकेषु त्रसप्राणितया पूतरक दित्वेन निवर्तंते समुत्पद्यते ते चोत्पद्यमाना समुत्पन्नाश्च तेषामुदकयोनिनामुदकाना स्ने हमाहारयति । शेष सुगम यावदाख्यातमिति ॥ ३३ ॥

अहावरं पुरकाय इहेगतिया सत्ता णाणाविहजोणिया जाव कम्मनिया णेण तत्र वुक्कमा णाणाविहाण तसथावराण पाणाण सरीरेसु मचित्ते सुवा अचित्तेसुवा अगणिकायत्ताए विउट्टति ते जीवा तेसि णाणावि हाण तसथावराण पाणाण सिणेहमाहारेति ते जीवा आहारेति पुढ विसरीर जाव सत अवरेवियण तेसि तसथावरजोणियाण अगणीण सरीरा णाणावसा जाव मरकाय सेसा तिन्नि आलावगा उदगाण ॥३४॥ अहावर पुरकाय इहेगतिया सत्ता णाणाविहजोणियाण जाव कम्मनि याणेण तत्र वुक्कमा णाणाविहाण तसथावराण पाणाण सरीरेसु सचि त्तेसुवा अचित्तेसुवा वाउक्कायत्ताए विउट्टति जहा अगणीण तहा भा णियव्वा चत्तारि गमा ॥ ३५ ॥

अर्थ—हवे अग्निकाय जीव आश्री कहेछे अथ हवे अनेरु स्थानक श्री तीर्थंकर देवे कह्यु आ जगत् माहें कोइ एक जीव नाना प्रकारना योनि वाला, ते एणे प्रकारनु कर्मोपार्जन करीने, नानाविध त्रस अने स्थावर प्राणिना शरीरने विषे सचित्तने विष, अचित्तने विषे, अग्निकाय पणे उपजे त्या उपजता थका, ते त्रस अने स्थावर प्राणीनो स्नेह आहारे इत्यादिक शेष सुगम ॥ अही अग्निकायने विषे शेष त्रण आलावा उदकना आलावानी पेठे जाणी लेवा ॥३४॥ हवे वायुकाय जीव आश्री कहेछे हवे अनेरु स्थानक श्री तीर्थंकरे कह्यु आ जगत् माहे कोइ एक जीव नानाविध योनिक कर्मने वशवर्त्ति थका नाना प्रकारना त्रस अने स्थावर जीवना शरीर सचित्त अने अचित्तने विषे वायुकाय पणे उपजे इत्यादिक जेम अग्निकायना चार आलावा कह्या तेम ए वायुकायना पण चार आलावा केहेवा ॥ ३५ ॥

॥ दीपिका—अथ तेज कायमाह । एके सत्वा कर्मोदयान्नानाविधाना त्रसस्थावरा णा देहेषु सचित्तेष्वचित्तेषु चाऽग्नित्वेन निवर्तंते प्रादुर्भवति । तथाहि । पचेद्रियतिरश्चा दतिमहिषादीना परस्पर युद्धावसरे दतशृगयोगऽग्निरुत्पद्यते । एवमचित्तेष्वपि तद स्थिघर्षणादग्निरुत्पत्ति । विकलेंद्रियशरीरेष्वपि यथासंभव वाच्य । स्थावरेषु वनस्पति

उदगजोणियाणं जीवाणं उदगाणं सिणेहमाहारेंति ते जीवा आहारेंति पुढविसरीरं जावसंतं अवरेवियणं जीवाणं उदगजोणियाणं उदगाणं सरीरा णाणावन्ना जावमक्खायं ॥ ३१ ॥

अर्थ–हवे अन्य स्थानक श्री तीर्थंकरे कह्यु छे आ जगत् माहे कोइ एक जीव तथाविध कर्मना उदय थकी उदक योनिक उदकने विषे उपजे त्यां उपना थका उदक जीवनो स्नेह आहारे, शेष सुगम ॥ ३१ ॥

॥ दीपिका–तदेव त्रसस्थावरदेहसंभवं जलयोनित्वेन प्रदर्श्याऽधुना निर्विशेषणजलसंभवमेव जलं दर्शयति । (अहावरमिति) इह एके सत्वाउदकयोनिकेषु उदकेषूत्पद्यते तेच तेषां जलसंभवानां आत्माधारभूतानां शरीरं भक्षयंति । शेषं प्राग्वत् ॥ ३१ ॥

॥ टीका–तदेव त्रसस्थावरसंभवमुदकयोनित्वेन प्रदर्श्याऽधुना निर्विशेषणमप्कायसंभवमेवाप्कायं दर्शयितुमाह । (अहावरमित्यादि) अथापरमाख्यातमिहास्मिन् जगत्युदकाधिकारे वा एके सत्वा स्वकृतकर्मोदयाउदकयोनिषूदकेषूत्पद्यते तेच तेषामुदक संभवानामुदकजीवानामात्माधारभूतानां शरीरमाहारयंति । शेषं सुगमं। यावदाख्यातमिति ३१

अहावरं पुरक्खायं इहेगतिया सत्ता उदगजोणियाणं जावकम्मनियाणेणं तत्थ वुक्कमा उदगजोणिएसु उदएसु तसपाणत्ताए विउट्टंति तेजीवा तेसिं उदगजोणियाणं उदगाणं सिणेहमाहारेंति तेजीवा आहारेंति पुढविसरीरं जावसंतं अवरेवियणं तेसिं उदगजोणियाणं तसपाणाणं सरीरा णाणावन्ना जावमक्खायं ॥ ३२ ॥

अर्थ–हवे अन्य स्थानक श्री तीर्थंकर देवे कह्यु आ जगत् माहे कोइ एक जीव कर्मे प्रेर्या थका उदक योनिक उदकने विषे पूयरादिक त्रस प्राण पणे उपजे ते उपना थता तेनु शरीर आहारे इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ॥ ३२ ॥

॥ दीपिका–अथ जलाधारभूतान् त्रसानाह । इहैके सत्वाउदकयोनिकेषूदकेषु त्रसप्राणितया पूतरकादित्वेन उत्पद्यते । तेच उत्पद्यमानाउत्पन्नाश्च तेषां जलयोनिकानां जलानां स्नेहमाहारयंति । शेषं प्राग्वत् ॥ ३२ ॥

॥ टीका–सांप्रतमुदकाधारानपरान् पूतरकादिकांस्त्रसान्दर्शयितुमाह । (अहावरमि

अर्थ—हवे पृथ्वीकाय जीव आश्री कहेछे हवे अन्य स्थानक पूर्वे श्री तीर्थंकरें कह्युछे अ जगत् माहे कोइ एक जीव, नाना प्रकार योनिक, यावत् कर्माधीन थका त्यां उपजे नान प्रकारना त्रस स्थावर प्राणीनां शरीरने विषे, सचित्तने विषे, अचित्तने विषे, शर्करा एटले काकरा पणे, वेलु एटले रेति पणे, इत्यादिक (इमाउंगाहाउ के०) ए आगलानी चा गाथाये करी पृथ्वीकायना भेद कहेशे ते प्रमाणे (अणुगंतव्वाउ के०) सर्वे जाणी ले वा (पुढवीय के०) पृथ्वी पणे (सक्करा के०) कांकरा पणे, (वालुयाय के०) वेलु ते रेती पणे, (उवले के०) उपल एटले पाषाणना कटका पणे, (सिलाय के०) म टी अने पाशाणनी शिलापणे, (लोणूसेके०) समुद्रादिकना लूण ते पणे, ऊसे एटले ऊस पणे, ते खारी धूल पणे, (अयत के०) लोह पणे, (उय के०) जसत तरुअ पणे, (तंब के०) त्रांबा पणे, (सिसग के०) शींसा पणे, (रुप्प के०) रूपा पणे (सुवण्णेय के०) सुवर्ण पणे, (वइरेय के०) वज्र, ते हीरा पणे, (हरियाले के० हरिताल पणे, (हिंगुलए के०) हिंगलो पणे, (मणोसिलाके०) मणसील पणे, (सासगंज णेके०) सासग एटले रत्ननीजाति, अजन एटले सुरमो ते पणे, (पवालेके०) परवाली (अब्भपडलब्भवालुय के०) अभ्रपडल अने अभ्रवालुक एटले आकाशना जलउंस तथ आकाशना जलउंस सहित धूल,ए (बायरकाय के०) बादरकाय, पृथ्वीना भेद कह्या ह (मणिविहाणा के०) मणिना भेद कहेछे (गोमेज्जएय के०) गोमेद्य रत्न, (रूयए के०) रुचक रत्न, (अंक के०) अंक रत्न, (फलिहिय के०) स्फाटिक रत्न, (लोहियखेय के० लोहिताक्ष रत्न, (मरगय के०) मरकत रत्न, (मसारगल्ले के०) मसारगल्ल रत्न (भूयमोयग के०) भूजमोचक रत्न, (इंदणीलेय के०) इंद्रनील रत्न, (चंदण के०) चंदन रत्न, (गेरुय के०) गेरुक रत्न, (हंसगब्भ के०) हंसगर्भ रत्न, (पुला के०) पुलाक रत्न, (सोगंधिएय के०) सुगंधिक रत्न, (बोधव्वे के०) जाणवो (चं दप्पभ के०) चंद्रप्रभ रत्न, (वेरुलिए के०) वैडूर्य रत्न, (जलकंते के०) जलकां रत्न, (सूरकंतेय के०) सूर्यकांति रत्न, सुरर्णकांत रत्न पण एनुं नाम छे ए चार गाथा ने विषे, पृथ्वीकायना नाम कह्यांछे यावत् सूर्यकांत पणे एटले एटला दूर लगे पृथ्वी कायने भावे जीव उपजे ते जीव त्यां उपजता छता ते नाना प्रकारना त्रस अने स्था वर प्राणीना स्नेह आहारे, इत्यादिक अर्थ सुगमछे ए पृथिवीकायना अर्थ त्रण आ लावा जेम उदकना कह्या तेनी पठे जाणी लेवा ॥ २६ ॥

॥ दीपिका—अथ पृथिवीकायमाह । इहैके सत्वा कर्मवशगानानाविधत्रसस्थावर णां देहेषु सचित्तेषु अचित्तेषुवा पृथिवीत्वेनोत्पद्यते । तद्यथा । सर्पशिरस्सु मणय करि

पाषाणादिषु सचित्ताचित्तेषु अग्निजीवा समुत्पद्यते । तेच तत्रोत्पन्नास्तेषां त्रसस्थावरा णा स्नेहमाहारयति । शेष सुगम । अन्ये त्रयोप्यालापकाउदकवद्द्रष्टव्या ॥३४॥ अथ वायुकायमाह । इदमग्निकायवद्व्याख्येय ॥ ३५ ॥

॥ टीका–साप्रत तेज कायमुद्दिश्याह । (अहावरमित्यादि) अथैतदपरमाख्यातं । इ हास्मिन् ससारे एके केचन सत्वा प्राणिनस्तथाविधकर्मोदयवर्त्तिनोनानाविधयोनय प्रा क् सत पूर्वजन्मनि तथाविध कर्मोपादाय तत्कर्मनिदानेन नानाविधाना त्रसस्थावराणां प्राणिना सचित्तेष्वचितेषु शरीरेषु चाग्नित्वेन विवर्तते प्राडुर्भवति । तथाहि । पचेंद्रियति रश्चा दतिमहिषादीना परस्पर युद्धावसरे विषाणसघर्षे सति अग्निरुत्तिष्ठते एवमचित्तेष्व पि तदस्थिसघर्षादग्नेरुत्थान तथा द्वीड्रियादिशरीरेष्वपि यथासभवमायोजनीयं । तथा स्थावरेष्वपि वनस्पत्युपलादिषु सचित्ताचित्तेष्वग्निजीवा समुत्पद्यते ते चाग्निजीवास्तत्रोत्प न्नास्तेषा नानाविधाना त्रसस्थावराणा स्नेहमाहारयति । शेष सुगम यावद्भवतीत्येवमा ख्यात ।अपरे त्रयोप्यालापका प्राग्वद्द्रष्टव्याइति ॥ ३४ ॥ साप्रत वायुकायमुद्दिश्याह। (अहावरमित्यादि) अथापरमेतदाख्यातमित्याद्यग्निकायागमेन व्याख्येय ॥ ३५ ॥

अहावर पुरक्खाय इहेगतिया सत्ता णाणाविहजोणियाण जाव कम्मनि याणेण तञ्च वुक्कम्मा णाणाविहाण तसथावराण पाणाण सरीरेसु सचि त्तेसुवा अचित्तेसुवा पुढवित्ताए सक्करत्ताए वालुयत्ताए इमाउ गाहा उ अणुगतवाउ “ पुढवीय सक्करा वा,लुयाय उवले सिलाय लोणू से ॥ अयत उय तव सीसग, रुप्प सुवण्णेय वइरेय ॥ १ ॥ हरियाले हि गुलए, मणोसिला सासगजणपवाले ॥ अब्भपडलब्भवालुय, बायरका ए मणिविहाणा ॥२॥ गोमेज्जए्य रूयए, अकेफलिहेय लोहियक्खेय ॥ मरगयमसारगल्ले, भूयमोयग इदणीलेय ॥ ३ ॥ चदण गेरुय हसगब्भे, पुलए सोगधिएय वोद्धवे ॥ चदप्पभ वेरुलिए, जलकते सूरकतेय ॥४॥ एयाउ एएसु भाणियव्वाएउ गाहाउ जाव सूरकताएवि वुट्टति तेजीवा ते सि णाणाविहाण तसथावराण पाणाण सिणेहमाहारेति तेजीवा आहारे ति पुढविसरीर जाव सत अवरेवियण तेसि तसथावरजोणियाण पुढ वीण जाव सूरकताण सरीरा णाणावण्णा जावमक्खाय सेस तिण्णिआल वगा जहा उदगाण ॥ ३६ ॥

॥ टीका–सांप्रतं सर्वोपसंहार द्वारेण सर्वजीवान् सामान्यतोविनणिषुराह् । (अहा वरमित्यादि) अथापरमेतदाख्यातं । तद्यथा। सर्वे प्राणा प्राणिनोऽत्रच प्राणिजूतजीवन त्वशब्दा पर्यायत्वेन ड्रष्टव्या कथंचिन्नेदं चाश्रित्य व्याख्येया । तेच नानाविधयोनिकास्तो नाविधासु योनिषूत्पद्यते नारकतिर्यङ्नरामराणां परस्परगमनसंनवात्तेच यत्र यत्रोत्पद्यंते ते तत्तच्छरीराण्याहारयंति तदाहारवतश्च तत्रागुप्ताश्रव द्वारतया कर्मवशगानारकतिर्यङ्नरा मरगतिषु जघन्यमध्यमोत्कृष्टस्थितयोनवंति।अनेनेदमुक्तं नवति । योयादृगिह् नवे स ता दृगेवामुत्रापि नवतीत्येतन्निरस्तं नवत्यपितु कर्मोपगा कर्मनिदाना कर्मायत्तगतयोनवंति तथा तेनैव कर्मणा सुखलिप्सवोपि तद्विपर्यासं डुःखमुपगच्छतीति ॥ ३७ ॥

से एवमायाणह् से एवमायाणित्ता आहारगुत्ते सहिए समिए सयाजए त्तिबेमि ॥ बियसुयक्खंधस्स आहारपरिणा णाम तईयमज्झयणं सम्मत्तं ॥३८॥

अर्थ–हवे गुरु, शिष्य प्रत्ये कहेने के, (सेएव के०) ते एम (मायाणह् के०) त मे जाणो जे, मे आदि थकी सर्वजीव आश्री आहारनुं विशेष संसार परिभ्रमण क ह्युं (सेएवमायाणित्ता के०) एवुं जाणीने जे विवेकी जन होय ते, (आहारगुत्ते के०) आहारने विषे गुप्त थाय एतावता शुद्ध निर्दोष एषणीक आहारनुं खप करे,अ ने (सहिए के०) ज्ञान दर्शन अने चारित्रे करी सहित थको (समिए के०) पांच समि तिये समितो, (सयाजए के०) सदा सर्वकाल एटले जावजीव सुधी संयमने विषे यत्न करे त्तिबेमिनो अर्थ पूर्ववत् जाणवो ॥ ए श्रीसूयगडांगसूत्रना बीजा श्रुतस्कंधने विषे, आहारपरिज्ञा नाम त्रीजा अध्ययननो संक्षेपार्थे बालावबोध समाप्त थयो ॥ ३८ ॥

॥दीपिका–(सेएवमायाणह्त्ति) तदेवं जानीत यूयं यत्पूर्वोक्तं सर्वं।एवं ज्ञात्वा चाहारगुप्त एवं समितियुतः समितः सहितोवा ज्ञानादिनिः सदा यतेत संयमे प्रयत्नवान् नवेदिति। ब्रवीमीति पूर्ववत्॥३८॥ इति द्वितीयश्रुतस्कंधे आहारपरिज्ञाख्यं तृतीयमध्ययनं समाप्तम्॥

॥ टीका–सांप्रतमध्ययनार्थमुपसंजिहीर्षुराह् । (सेएवमायाणहेत्यादि) यदेतन्मया ऽऽदितः प्रनृत्युक्तं।तद्यथा। योयत्रोत्पद्यते स तच्छरीराहारकोनवत्याहारगुप्तश्च कर्मादत्ते क र्मणाच नानाविधासु योनिषु अरहट्टघटीन्यायेन पौनःपुन्येन पर्यटतीत्येवमाजानीत यूयं एतद्विपर्यासं डुःखमुपगच्छतीति । एतत्परिज्ञायच सदसद्विवेक्याहारगुप्तः पंचनिः समिति निः समितायदिवा सम्यक् ज्ञानादिके मार्गे इतागतः समितस्तथा सह हितेन वर्तते सहित स्सदा सर्वकालं यावडुच्छ्वासं तावद्यतेत तत्संयमानुष्ठाने प्रयत्नवान् नवेदिति । इति परि समाप्त्यर्थे।ब्रवीमीति पूर्ववत्। गतोऽनुगमः ।सांप्रतं नयास्ते च प्राग्वद्द्रष्टव्या ॥३८॥ समा प्तमाहारपरिज्ञाख्यं तृतीयमध्ययनम् ॥ ३ ॥ ॥ ॥

तेषु मौक्तिकानि स्थावरेष्वपि वशादिषु तान्येव। एवमचित्तेषूषरादिषु लवणत्वेन जायंते तदेव पृथ्वीकायिकानानाविधासु पृथ्वीषु शर्करावालुकोपलशिलालवणादिनावेन तथा गोमेदकादिरत्ननावेन बादरमणिविधानतया समुत्पद्यते ॥ (एयाउंगाहाउत्ति) एतागाथा अनुगतव्या । एतज्ञाथानुगमेन पदानि वाच्यानि। (पुढवीयसक्करावालुयायइत्यादि) अत्र पदोच्चारोयथा पुढवित्ताए। सक्करत्ताए वालुयत्ताए इत्यादि । एव गाथानुसारेण पदानि वाच्यानि। यावत्सूरकतत्ताएत्ति। शेष सुगम। एव चत्वारोप्यालापकाउदकागमेन ज्ञेया ॥३६॥

॥ टीका–सांप्रतमशेषजीवाधार पृथिवीकायमधिकृत्याह। (अहावरमित्यादि) अथापरमेतत्पूर्वमाख्यातं। इहैके सत्वा पूर्वं नानाविधयोनिका स्वकृतकर्मवशानानाविध त्रसस्थावराणा शरीरेषु पृथिवीत्वेनोत्पद्यते। तद्यथा। सर्प्पशिर सु मणय करिदंतेषु मौक्तिकानि स्थावरेष्वपि वेणवादिषु तान्येवेति। एवमचित्तेषूषलादिषु लवणनावेनोत्पद्यते। तदेव पृथिवीकायिकानानाविधासु पृथिवीषु शर्करावालुकोपलसितालवणादिनावेन तथा गोमेदकादिरत्ननावेनच बादरमणिविधानतया समुत्पद्यते। शेष सुगम। यावच्चत्वारोप्यालापकाउदकागमेन नेतव्याइति ॥ ३६ ॥

अहावर पुरक्खाय सव्वेपाणा सव्वेनूता सव्वेजीवा सव्वेसत्ता णाणाविहजोणिया णाणाविहसनवा णाणाविहवुक्कमा सरीरजोणिया सरीरसनवा सरीरवुक्कमा सरीराहारा कम्मोवगा कम्मनियाणा कम्मगतीया कम्मठिइया कम्मणाचेव विप्परियासमुवेति ॥ ३७ ॥

अर्थ–हवे समस्त जीव आश्री कहेछे हवे अनेरु स्थानक पूर्वे श्री तीर्थंकरे कह्यु आ जगत् माहे सर्वप्राण, सर्वनूत, सर्वजीव, सर्वसत्व, नाना प्रकार योनिक नाना प्रकारनी योनिने विषे सनव एटले उत्पत्तिछे जेनी, नाना प्रकारे आव्या छता, शरीरयोनिक शरीरने विषे उपजे शरीरने विषे आव्या छता त्या उपजे एटले नरकादिक चार गतिने विषे शरीर पणे उपजे त्या त्या यथायोग्य शरीरनो आहार करे कर्मने वशे उपजे कर्मने कारणे करीने कर्म करी कर्मने अनुसारे गति पामे कर्म करी जघन्य मध्यम अने उत्कृष्ट स्थिति पामे एटले जे जीव आ नवमा जेवोछे तेवोज आगले नवे न थाय ए कारणे जीव, कर्मने वशें सुख वाछतो पण विपर्यास दुःख पामे ॥३७॥

॥ दीपिका–अथ सर्वजीवानाश्रित्याह। अथापरमिदमाख्यात । सर्वे जीवानानाविधयोनिकानानाविधयोनिषूत्पद्यते यत्रच उत्पद्यते तत्र तद्देहाऽऽहारिण स्यु। तेनाहारेण चाग्रुप्ता कर्मवशगाश्चतुर्गतिषु न्नमति ॥ ॥ ३७ ॥

॥ टीका–सांप्रतं सर्वोपसंहारद्वारेण सर्वजीवान् सामान्यतोविनणिषुराह । (अहावरमित्यादि) अथापरमेतदाख्यातं । तद्यथा । सर्वे प्राणा प्राणिनोऽत्रच प्राणिभूतजीवनत्वशब्दाः पर्यायत्वेन द्रष्टव्या कथंचिन्नेदं चाश्रित्य व्याख्येया । तेच नानाविधयोनिकास्तो नानाविधासु योनिषूत्पद्यन्ते नारकतिर्यङ्नरामराणां परस्परगमनसंनवात्तेच यत्र यत्रोत्पद्यन्ते ते तत्तच्छरीराण्याहारयंति तदाहारवंतश्च तत्रागुप्ताश्रवद्वारतया कर्मवशगानारकतिर्यङ्नरामरगतिषु जघन्यमध्यमोत्कृष्टस्थितयोनवंति।अनेनेदमुक्तं नवति । योपादृगिह नवे स तादृगेवामुत्रापि नवतीत्येतन्निरस्तं नवत्यपितु कर्मोपगा कर्मनिदाना कर्मायत्तगतयोनवंति तथा तेनैव कर्मणा सुखलिप्सवोपि तद्विपर्यासं दुःखमुपगच्छंतीति ॥ ३७ ॥

से एवमायाणह से एवमायाणित्ता आहारगुत्ते सहिए समिए सयाजए त्तिवेमि ॥ वियसुयक्खधस्स आहारपरिण्णा णाम तईयमज्झयणं सम्मत्तं ॥३८॥

अर्थ–हवे गुरु, शिष्य प्रत्यें कहेछे के, (सेएव के०) ते एम (मायाणह के०) तमे जाणो जे, मे आदि थकी सर्वजीव आश्री आहारनुं विशेष संसार परिभ्रमण करुंछे (सेएवमायाणित्ता के०) एवुं जाणीने जे विवेकी जन होय ते, (आहारगुत्ते के०) आहारने विषे गुप्त थाय एतावता शुद्ध निर्दोष एषणीक आहारनुं खप करे,अने (सहिए के०) ज्ञान दर्शन अने चारित्रे करी सहित थको (समिए के०) पांच समितिये समितो, (सयाजए के०) सदा सर्वकाल एटले जावजीव सुधी संयमने विषे यत्न करे त्तिबेमिनो अर्थ पूर्ववत् जाणवो ॥ ए श्री सूयगडांगसूत्रना बीजा श्रुतस्कंधने विषे, आहारपरिज्ञा नामे त्रीजा अध्ययननो संक्षेपार्थ बालावबोध समाप्त थयो ॥ ३८ ॥

॥दीपिका–(सेएवमायाणहत्ति) तदेव जानीत यूयं। यत्पूर्वोक्तं सर्वं।एवं ज्ञात्वा चाहारगुप्त एव समितियुतः समितः सहितोवा ज्ञानादिभिः सदा यतेत संयमे प्रयत्नवान् नवेदिति। ब्रवीमीति पूर्ववत्॥३८॥ इतिद्वितीयश्रुतस्कंधे आहारपरिज्ञाख्यं तृतीयमध्ययनं समाप्तम्॥

॥ टीका–सांप्रतमध्ययनार्थमुपसंजिघृक्षुराह । (सेएवमायाणहेत्यादि) यदेतन्मयाऽऽदितः प्रभृत्युक्तं।तद्यथा । योयत्रोत्पद्यते स तच्छरीराहारकोनवत्याहारगुप्तश्च कर्मादत्ते कर्मणाच नानाविधासु योनिषु अरहट्टघटीन्यायेन पौनःपुन्येन पर्यटतीत्येवमाजानीत यूयं। एतद्विपर्यासं दुःखमुपगच्छतीति । एतत्परिज्ञायच सदसद्विवेक्याहारगुप्तः पंचभिः समितिभिः समितोयदिवा सम्यक् ज्ञानादिके मार्गे इतोगतः समितस्तथा सह हितेन वर्तते सहितःसन्सदा सर्वकालं यावदुच्छ्वासं तावद्यतेत तत्संयमानुष्ठाने प्रयत्नवान् नवेदिति । इति परिसमाप्त्यर्थे।ब्रवीमीति पूर्ववत् । गतोऽनुगमः । सांप्रतं नयास्ते च प्राग्वद्द्रष्टव्या ॥३८॥ समाप्तमाहारपरिज्ञाख्यं तृतीयमध्ययनम् ॥ ३ ॥ ॥ ॥

अथ द्वितीयश्रुतस्कंधे चतुर्थाध्ययनप्रारंज

हवे चोथुं प्रत्याख्यान क्रियानामा अध्ययन प्रारंनियें बैयें त्रीजा अध्ययनमां आहार आश्री कर्मबंध थाय एम कह्यो ते कर्मबंध पच्चरकाण करवाथी टली जायबे, ते कारण माटे चोथुं अध्ययन प्रत्याख्यान क्रिया नामे कहियें बैयें

सुयमे आउसतेण जगवया एवमरकाय इह खलु पच्चरकाणकिरियाणामज्ञयणे तस्सणं अयमट्ठे पणत्ते आया अपच्चरकाणीयावि जवति॥ आया अकिरिया कुसलेयावि जवति आया मिठा सठियावि जवति आया एगंतदंमेयावि जवति आया एगंतबालेयावि जवति आया एगंतसुत्तेयावि जवति आया अवियारमणवयणकायवक्केयावि जवति आया अप्पडिहयअपच्चरकायपावकम्मेयावि जवति एस खलु जगवता अरकाए असंजते अविरते अप्पडिहयपच्चरकायपावकम्मे सकिरिए असंवुमे एगंतदंमे एगंतबाले एगंतसुत्ते सेबाले अवियारमणवयणकायवक्के सुविणमवि ण पस्सति पावेयसे कम्मे कज्जइ॥ १॥

अर्थ–सुधर्मा स्वामी जंबूस्वामि प्रत्यें कहेबे के, (सुयमे के०) मे एम सांजल्युंबे (आउसतेणं के०) आयुष्मन् (जगवयाएवमरकाय के०) जगवंत श्री महावीरदेव तीर्थंकर तेणे एम कह्युंबे (इहखलुपच्चरकाणकिरियाणामज्ञयणे के०) ए प्रवचनने विषे खलु ए वाक्यालंकारे प्रत्याख्यानक्रिया नामे अध्ययन, (तस्सणंअयमट्ठेपणत्ते के०) तेनो ए अर्थ जे आगल कहेशे, ते कहेबे, (आयाअपच्चरकाणियाविजवति के०) ए आत्मा जीव मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय, अने योग सहित स्वजावे रह्यो थको, अप्रत्याख्यानी होय अपि शब्द थकी तेहीज आत्मा, कोइ एक रूडा कारण थकी पच्चरकाणी पण होय (आयाअकिरियाकुसलेयाविजवति के०) ए आत्मा रूडा अनुष्ठाने रहित पण होय अपि शब्द थकी रूडा अनुष्ठानें सहित पण होय,तथा (आयामिठासठियाविजवति के०) ए आत्मा मिथ्यात्वे संस्थित पण होय, अने अपि शब्द थकी मिथ्यात्व थकी रहित पण होय, (आयाएगंतदंमेयाविजवति के०) ए आत्मा एकांते प्राणीउने दंमनो करनार पण होय, तथा (आयाएगंतबालेयाविजवति के०) ए आत्मा एकांत बाल पण होय, (आयाएगंतसुत्तेयाविजवति के०) तथा

ए आत्मा एकांत सुतो एटले शयन करनार पण होय, (आयाएगंतअवियारमणवयण कायवक्केयाविजवति के०) तथा ए आत्मा एकांत अविचारह्य कोइ कार्य करे, एवा मन वचन अने कायाये करी सहित पण होय, (आयाअपडिहयअपच्चरकायपावकम्मेया विजवति के०) तथा ए आत्मा, अप्रतिहत एटले विरतें करी नथी हण्या तथा नथी पच्चरव्या पाप कर्म जेणे एवो पण होय, (एसखलुजगवताअरकाए के०) एवो जीव श्री जगवते कह्योडे वली केवो कह्यो तो के? (असंजते के०) असयत (अविरते के०) अविरति (अपडिहयपच्चायपावकम्मे के०) अप्रतिहत एटलें नथी हण्या पच्चरकाणे करीने पाप कर्म जेणे, (सकिरिए के०) क्रिया सहित, (असंवुमे के०) संवर रहित (एगंतदंमे के०) एकांतें दंम, (एगंतबाले के०) एकांते बाल, (एगंत सुत्ते के०) ए कांतें सुतो एटले शयन करनार, एवो कह्यो (सेबालेअवियारमणवयणकायवक्केके०) ते बाल, अविचारवान् एवो मन वचन अने कायाये करी रहित ठतो, जे पाप कर्मने (सुविणमविणपस्सति के०) स्वप्नांतरे पण देखे नही (पावेयसेकम्मेकज्जइ के०) तो पण तेने तेवा पापकर्मनो बंध थायडे ॥ १ ॥

॥ दीपिका–अथ प्रत्याख्यानक्रियाख्यं चतुर्थमध्ययनमारज्यते । तस्येदमादिसूत्रं । (सुयमेइत्यादि) श्रुतं मयाऽऽयुष्मता जगवतेदमाख्यातं । इहागे प्रत्याख्यानक्रियानामा ध्ययनं तस्यायमर्थः । आत्मा स्वजावतएवाऽप्रत्याख्यानी जवति । अपिशब्दात्सकदा चित्प्रत्याख्यान्यपि जवति । आत्मा क्रियाकुशलः सदाचारः स्यादक्रियाकुशलोपि। आत्मा मि थ्यात्वसंस्थितः आत्मा एकांतदंडोहिंसकः स्यात् आत्मा बालः सुप्तोजावसुप्तश्च । अवि चाराणि अशोजनानि मनोवचःकायवाक्यानि यस्य स तथा । वाग्ग्रहणेनैव वाक्यस्य गता र्थत्वात्पुनर्वाक्यग्रहणं वाग्व्यापारस्य प्राचुर्यज्ञापनार्थं । तथाऽप्रतिहतप्रत्याख्यातपापक र्मा अप्रतिहतं अनिवारितं प्रत्याख्यातेन विरत्या पापकर्म येन स तथा एवमेषआत्मा असंयतोऽविरतोऽप्रतिहतप्रत्याख्यातपापकर्मा सक्रियोऽसंवृत एकांतदंड एकांतबाल एकांतसुप्तः स बालोऽविचारमनोवचःकायवाक्यः स एवंजूतः पटुविज्ञानरहितः स्वप्नमपि न पश्यति तेनाप्येवंजूतेनाव्यक्तज्ञानेनापि पापं कर्म बध्यते ॥ १ ॥

॥ टीका–तृतीयाध्ययनानंतरं चतुर्थमारज्यते। अस्य चायमजिसंबंधः । इहानंतराध्य यने आहारगुप्तस्य कर्मबंधाऽ निहितोऽत्र तत्प्रत्याख्यानं प्रतिपाद्यते । यदि वोत्तरगुणसं पादनार्थं शुद्धतराहारपरिज्ञोक्ता। सा चोत्तरगुणरूपा प्रत्याख्यानक्रियासमन्वितस्य जवती त्यतस्तथाहारपरिज्ञानंतरं प्रत्याख्यानक्रियाध्ययनमारज्यते इत्यनेन संबंधेनायातस्याऽध्यय

अथ द्वितीयश्रुतस्कंधे चतुर्थाध्ययनप्रारंज

हवे चोथुं प्रत्याख्यान क्रियानामा अध्ययन प्रारंजिये ठैये त्रीजा अध्ययनमां आहार आश्री कर्मबंध थाय एम कह्यो ते कर्मबंध पच्चरकाण करवाथी टली जायडे, ते कारण माटे चोथुं अध्ययन प्रत्याख्यान क्रिया नामे कहिये ठैये

सुयमे आउसतेणं जगवया एवमरकाय इह खलु पच्चरकाणकिरियाणा मज्झयणे तस्सणं अयमठे पणत्ते आया अपच्चरकाणीयावि जवति ॥ आया अकिरिया कुसलेयावि जवति आया मिठा सठियावि जवति आया एगंतदंमेयावि जवति आया एगंतबालेयावि जवति आया एगंतसुत्तेयावि जवति आया अवियारमणवयणकायवक्केयावि जवति आया अप्पडिहयअपच्चरकायपावकम्मेयावि जवति एस खलु जगवता अरकाए असंजते अविरते अप्पडिहयपच्चरकायपावकम्मे सकिरिए असंवुमे एगंतदंमे एगंतबाले एगंतसुत्ते सेबाले अवियारमणवयणकायवक्के सुविणमवि ण पस्सति पावेयसे कम्मे कज्जइ ॥ १ ॥

अर्थ—सुधर्म स्वामी जंबूस्वामि प्रत्ये कहेठे के, (सुयमे के०) मे [एम सांजल्युंठे (आउसतेणं के०) आयुष्मन् (जगवयाएवमरकाय के०) जगवंत श्री महावीरदेव तीर्थंकर तेणे एम कह्युंठे (इहखलुपच्चरकाणकिरियाणामज्झयणे के०) ए प्रवचनने विषे खलु ए वाक्यालंकारे प्रत्याख्यानक्रिया नामे अध्ययन, (तस्सणंअयमठेपणत्ते के०) तेनो ए अर्थ जे आगल कहेशें, ते कहेठे, (आयाअपच्चरकाणियावि जवति के०) ए आत्मा जीव मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय, अने योग सहित स्वनावे रह्यो थको, अप्रत्याख्यानी होय अपि शब्द थकी तेहीज आत्मा, कोइ एक रूडां कारण थकी पच्चरकाणी पण होय (आयाअकिरियाकुसलेयाविजवति के०) ए आत्मा रूडा अनुष्ठानें रहित पण होय अपि शब्द थकी रूडा अनुष्ठानें सहित पण होय,तथा (आयामिठासठियाविजवति के०) ए आत्मा मिथ्यात्वे संस्थित पण होय, अने अपि शब्द थकी मिथ्यात्व थकी रहित पण होय, (आयाएगंतदंमेयाविजवति के०) ए आत्मा एकांते प्राणीउने दमनो करनार पण होय, तथा (आयाएगंतबालेयाविजवति के०) ए आत्मा एकांत बाल पण होय, (आयाएगंतसुत्तेयाविजवति के०) तथा

ए आत्मा एकांत सुतो एटले शयन करनार पण होय, (आयाएगंतअवियारमणवयण कायवक्केयाविनवति के०) तथा ए आत्मा एकांत अविचारु कोइ कार्य करे, एवा मन वचन अने कायाये करी सहित पण होय, (आयाअपडिहयअपच्चरकायपावकम्मेया विनवति के०) तथा ए आत्मा, अप्रतिहत एटले विरते करी नथी हण्या तथा नथी पच्चख्या पाप कर्म जेणे एवो पण होय, (एसखलुनगवताअरकाए के०) एवो जीव श्री नगवते कह्योछे वली केवो कह्यो तो के? (असजते के०) असयत (अविरते के०) अविरति (अपडिहयपच्चायपावकम्मे के०) अप्रतिहत एटलें नथी हण्या पच्चरकाणे करीने पाप कर्म जेणे, (सकिरिए के०) क्रिया सहित, (असवुमे के०) सवर रहित (एगतदमे के०) एकातें दम, (एगतवाले के०) एकाते बाल, (एगत सुत्ते के०) एकातें सुतो एटले शयन करनार, एवो कह्यो (सेवालेअवियारमणवयणकायवक्केके०) ते बाल, अविचारवान् एवो मन वचन अने कायाये करी रहित बतो, जे पाप कर्मने (सुविणमविणपस्सति के०) स्वप्नातरे पण देखे नही (पावेयसेकम्मेकज्जइ के०) तो पण तेने तेवा पापकर्मनो बध थायछे ॥ १ ॥

॥ दीपिका–अथ प्रत्याख्यानक्रियाख्य चतुर्थमध्ययनमारन्यते । तस्येदमादिसूत्र । (सुयमेइत्यादि) श्रुत मयाऽऽयुष्मता नगवतेदमाख्यातं । इहागे प्रत्याख्यानक्रियानामा ध्ययन तस्यायमर्थ । आत्मा स्वनावतएवाऽप्रत्याख्यानी नवति । अपिशब्दात्सकदा चित्प्रख्यान्यपि नवति । आत्मा क्रियाकुशल सदाचार स्यादक्रियाकुशलोपि। आत्मा मि थ्यात्वसस्थित आत्मा एकातदडोहिसक स्यात् आत्मा बाल सुप्तोनावसुप्तश्च । अवि चाराणि अशोननानि मनोवच कायवाक्यानि यस्य स तथा । वाग्ग्रहणेनैव वाक्यस्य गता र्थत्वात्पुनर्वाक्यग्रहण वाग्व्यापारस्य प्राचुर्यज्ञापनार्थ । तथाऽप्रतिहतप्रत्याख्यातपापक र्मा अप्रतिहतं अनिवारित प्रत्याख्यातेन विरत्या पापकर्म येन स तथा एवमेपआत्मा असयतोऽविरतोऽ प्रतिहतप्रत्याख्यातपापकर्मा सक्रियोऽसवृत एकातदड एकातबाल एकातसुप्त स बालोऽविचारमनोवच कायवाक्य स एवनूत पटुविज्ञानरचित स्वप्नमपि न पश्यति तेनाप्येवनूतेनाव्यक्तज्ञानेनापि पाप कर्म बध्यते ॥ १ ॥

॥ टीका–तृतीयाध्ययनानतर चतुर्थमारन्यते। अस्य चायमनिसबध । इहानतराध्य यने आहारगुप्तस्य कर्मबधाऽ निहितोऽत्र तत्प्रत्याख्यान प्रतिपाद्यते । यदि वोत्तरगुणस पादनार्थ शुद्धतराहारपरिज्ञोक्ता। सा चोत्तरगुणरूपा प्रत्याख्यानक्रियासमन्वितस्य नवती त्यतआहारपरिज्ञानतर प्रत्याख्यानक्रियाध्ययनमारन्यते इत्यनेन सबधेनायातस्याऽध्यय

नस्योपक्रमादीनि चत्वार्यनुयोग द्वाराणि नवति । तत्रोपक्रमातर्गतोर्थाधिकारोयम्। तद्यथे ह कर्मोपादानजूतस्याशुजस्य प्रख्यान प्रतिपाद्यतइति। सांप्रत निक्षेपस्तत्राप्योघनिष्पन्नेऽ ध्ययन नामनिष्पन्ने प्रत्याख्यानक्रियेति द्विपद नाम । तत्र प्रत्याख्यानपदनिक्षेपार्थं निर्यु क्तिरुदाह ।" णाम ठवणादविए, अइछ पडिसेह एय जावेय॥ एसोपञ्चरकाण,स्स ढविहो होइनिरकेवो ,, ॥ १ ॥ (णामठवणेत्यादि)नामस्थापना इव्यादित्साप्रतिपेधजावरूप । प्रत्याख्यानस्याय पोढा निक्षेप । तत्रापि नामस्थापने सुगमे । इव्यप्रत्याख्यान इव्यस्य इव्येण इव्याद्इव्ये इव्यजूतस्य वा प्रत्याख्यान । तत्र सचित्ताचित्तजेदमिश्रस्य प्रत्याख्यान इव्यनिमित्त वा प्रत्याख्यान यथा धम्मिल्लस्य । एवमपराण्यपि कारकाणि स्वधिया योज नीयानि। तत्र दातुमिछा दित्सा न दित्सा अदित्सा तया प्रत्याख्यानमदित्साप्रत्याख्यान । सत्यपि देये सतिच सप्रदानकारके केवल दातुर्दातुमिछा नास्तीत्यतोऽदित्साप्रत्याख्या न तथा प्रतिपेधप्रत्याख्यानमिद । तद्यथा । विवक्षितइव्याजावाद्विशिष्टसप्रदानकारका जावाद्वा सत्यामपि दित्साया य प्रतिपेधस्तत्प्रत्याख्यान। जावप्रत्याख्यान तु द्विधाऽत्त करणशुद्धस्य साधो श्रावकस्य वा मूलगुणप्रत्याख्यानमुत्तरगुणप्रत्याख्यान चेति । च शब्दाद्विविधमपि नोआगमतोजावप्रत्याख्यान इष्टव्य नान्यदिति । साप्रत क्रियापद नि क्षेप्तव्य । तच्च क्रियास्थानाध्ययने निक्षिप्तमिति । न पुनर्निक्षिप्यते। इह पुनर्जावप्रत्याख्या ने नाधिकारइति दर्शयितुमाह ।" मूलगुणे सुयपगय, पञ्चरकाणे इह अधीगारो ॥ हो ऊ हुतपञ्चइया, अप्पञ्चरकाणकिरियाउ ,, ॥ २ ॥ (मूलगुणेसुयइत्यादि) मूलगुणा प्रा णातिपातविरमणास्तेपु प्रकृतमधिकार प्राणातिपातादे प्रत्याख्यान कर्तव्यमिति याव त् । इह प्रत्याख्यानक्रियाध्ययने नार्थाधिकारोयदि मूलगुणप्रत्याख्यान न क्रियते तत्रो पाय दर्शयितुमाह । प्रत्याख्यानाजावेऽनियतत्वाद्यत्किचनकारितया तत्प्रत्ययिका तन्नि मित्ताजावाडत्पद्यते प्रत्याख्यानक्रिया सावद्यानुष्ठानक्रिया तत्प्रत्ययिकश्च कर्मबधस्तन्निमि त्तश्च ससारइत्यत प्रत्याख्यानक्रिया मुमुक्षुणा विधेयेति । गतोनामनिष्पन्नोनिक्षेपोऽधुना सूत्रानुगमेऽस्खलितादिगुणोपेत सूत्रमुच्चारयितव्य । तच्चेद (सुयमेआउसतेणमित्यादि) अस्य चानतरपरपरसूत्रै सह सबधोवक्तव्य । सचायमिहानतराध्ययनपरिसमाप्ताविद सूत्रमाहारगुप्त समित सहित सदा यतेतेत्येतन्मया श्रुतमायुष्मता जगवतेदमाख्यातमे वमनया दिशा परपरसूत्रैरपि सबधोऽभ्यूह्य । इहास्मिन् प्रवचने सूत्रकृतागेवा । खल्विति वाक्यालकारे । प्रत्याख्यानक्रियानामाध्ययन तस्यायमर्थोवक्ष्यमाणलक्षण । अतती त्यात्मा जीव प्राणी सचानादिमिथ्यात्वाविरतिप्रमादयोगानुगततया स्वजावतएव प्रत्या ख्यान्यपि जवत्यपिशब्दात्सएव कुतश्चिन्निमित्तात्प्रत्याख्यान्यपि । तत्रात्मग्रहणमपरद र्शनव्युदासार्थ । तथाहि । साख्यानामप्रच्युतानुत्पन्नस्थिरैकस्वजावआत्मा । सच तृणकु

ञ्जीकरणेप्यसमर्थतया किंचित्करत्वान्न प्रत्याख्यानक्रियाया नवितुमर्हति। बौद्धानामप्या त्मनोनावात् ज्ञानस्य च क्षणिकतया स्थितेरनावात् कुत प्रत्याख्यानक्रियेति एवमन्य त्रापि प्रत्याख्यानक्रियायाश्चनावोवाच्य । तथा सदनुष्ठान क्रिया तस्या कुशल क्रि याकुशलस्तत्प्रतिपेधादक्रियाकुशलोप्यात्मा नवति । तथात्मा मिथ्यात्वोदयसंस्थितो नवति तथैकांतेन नापरान् प्राणिनोदमयतीति दमस्तद्वेवनूतश्चात्मा नवति तथाऽसा रतापादनाद्रागद्वेषाकुलितत्वाद्वालवद्वालआत्मा नवति तथा सुप्तवत्सुप्त । यथाहि द्रव्यसुप्त शब्दादीन् विपयान् न जानाति हिताहितप्राप्तिपरिहारविकलश्च तथा नाव सुप्तोप्यात्मैवनूतएव नवतीत्येवमविचारणीयान्यशोननतया निरुपणीयान्यपर्यालोच नीयानि मनोवाक्कायवाक्यानि यस्य स तथा। तत्र मनोंत करण वाग्वाणी कायोदेहो ऽर्थप्रतिपादक पदसमूहात्मक वाक्यमेकं तिङंत सुबंतंवा। तत्र वा ग्ग्रहणेनैव वाक्यार्थे स्य गतार्थत्वाद्यत्पुनर्वाक्यग्रहण करोति तदेव ज्ञापयतीह वाग्व्यापारस्य प्रचुरतया प्रा धान्य प्रायशस्तत्प्रवृत्त्यैव प्रतिपेधविधानेन तयोरन्येपां प्रवर्त्तन नवति । तदेवम प्रत्याख्यानक्रिय सन् आत्माऽविचारितमनोवाक्कायवाक्यश्चापि नवतीति। तथा प्रतिहत प्रतिस्खलित प्रत्याख्यातं विरतिप्रतिपत्त्या पापकर्माऽसदनुष्ठान येन स प्रतिहतप्रत्याख्या तपापकर्मा तत्प्रतिपेधादसदनुष्ठानपरश्चात्मा नवति । तदेवमेपपूर्वोक्ताऽसयतोऽविरतो ऽप्रतिहतप्रत्याख्यातपापकर्मा सक्रिय सावद्यानुष्ठानस्तथानूतश्चासंवृतोमनोवाक्कायैरगुप्तो गुप्तत्वाच्चात्मन परेपा च दंडहेतुत्वाद्दंडस्तदेवनूत ञ सन् एकांतेन बालवद्वाल सुप्तवदेका तेन सुप्तस्तद्वेवनूतश्च वालसुप्ततयाऽविचाराण्यविचारितरमणीयानि परमार्थविचारयुक्तया युक्त्या वा विघटमानानि मनोवाक्कायवाक्यानि यस्य स तथा। यदिवा परस्वध्यविचारितम नोवाक्कायवाक्य सत्क्रियासु प्रवर्त्तते तदेवनूतोनिर्विवेकतया पटुविज्ञानरहित स्वप्नम पि न पश्यति तस्य चाव्यक्तविज्ञानस्य स्वप्नमप्यपश्यत पाप कर्म वध्यते तेनैवनूतेनाव्य क्तविज्ञानेनापि पाप कर्म क्रियतइति नाव ॥ १ ॥

तत्थ चोयए पन्नवग एवं वयासि असतएण मणेण पावयण असतिया ए वतीयाए पावियाए असतएण काएण पावएण अहणतस्स अमण क्खस्स अ वियारमणवयकायवक्कस्स सुविणमवि अपस्सतं पावक म्मे णो कज्जइ कस्सण तहेउ चोयए एवं ववीति अन्नयरेण मणेण पाव एण मणवत्तिए पावे कम्मे कज्जइ अन्नयरीए वत्तिए पावियाए वत्तिवत्तिए पावे कम्म कज्जइ अन्नयरेण काएण पावएण कायवत्तिए पावे कम्मे कज्ज

नस्योपक्रमादीनि चत्वार्यनुयोगद्वाराणि जवति । तत्रोपक्रमांतर्गतोर्थाधिकारोयम् । तद्यथे ह कर्मोपादानजूतस्याशुजस्य प्रत्ख्यान प्रतिपाद्यतइति। सांप्रतं निक्षेपस्तत्राप्योघनिष्पन्नेऽ ध्ययन नामनिष्पन्ने प्रत्याख्यानक्रियेति द्विपद नाम । तत्र प्रत्याख्यानपदनिक्षेपार्थं निर्यु क्तिरुदाह ।" णाम ठवणादविए, अइन्न पडिसेह एय जावेय॥ एसोपच्चरकाण,स्स बविहो होइनिरकेवो „ ॥ १ ॥ (णामठवणेत्यादि) नामस्थापना इव्यादित्साप्रतिषेधजावरूप । प्रत्याख्यानस्याय पोढा निक्षेप । तत्रापि नामस्थापने सुगमे । इव्यप्रत्याख्यान इव्यम्य इव्येण इव्यादइव्ये इव्यजूतस्य वा प्रत्याख्यान । तत्र सचित्ताचित्तजेदमिश्रम्य प्रत्याख्यान इव्यनिमित्त वा प्रत्याख्यान यथा धम्मिल्लस्य । एवमपराण्यपि कारकाणि स्वधिया योज नीयानि। तत्र दातुमिच्छा दित्सा न दित्सा अदित्सा तया प्रत्याख्यानमदित्साप्रत्याख्यान । सत्यपि देये सतिच सप्रदानकारके केवल दातुर्दातुमिच्छा नास्तीत्यतोऽदित्साप्रत्याख्या न तथा प्रतिषेधप्रत्याख्यानमिद । तद्यथा । विवक्षितइव्याजावाद्विशिष्टसप्रदानकारका जावाद्वा सत्यामपि दित्सायाय प्रतिषेधस्तत्प्रत्याख्यान। जावप्रत्याख्यान तु द्विधाऽत्त करणशुद्धस्य साधो श्रावकस्य वा मूलगुणप्रत्याख्यानमुत्तरगुणप्रत्याख्यान चेति । च शब्दाद्विविधमपि नोआगमतोजावप्रत्याख्यान इष्टव्य नान्यदिति । साप्रत क्रियापद नि क्षेप्तव्य । तच्च क्रियास्थानाध्ययने निक्षिप्तमिति। न पुनर्निक्षिप्यते। इह पुनर्जावप्रत्याख्या ने नाधिकारइति दर्शयितुमाह । " मूलगुणे सुयपगय, पच्चरकाणे इह अधीगारो ॥ होज्ज हुतप्पच्चइया, अप्पच्चरकाणकिरियाउ „ ॥ २ ॥ (मूलगुणेसुयइत्यादि) मूलगुणा प्रा णातिपातविरमणास्तेषु प्रकृतमधिकार प्राणातिपातादे प्रत्याख्यान कर्तव्यमिति याव त् । इह प्रत्याख्यानक्रियाध्ययने नार्थाधिकारोयदि मूलगुणप्रत्याख्यान न क्रियते तत्रो पाय दर्शयितुमाह । प्रत्याख्यानाजावेऽनियतत्वाद्यत्किंचनकारितया तत्प्रत्ययिका तन्नि मित्ताजावाङ्कत्पद्यते प्रत्याख्यानक्रिया सावद्यानुष्ठानक्रिया तत्प्रत्ययिकश्च कर्मबधस्तन्निमि त्तश्च ससारइत्यत प्रत्याख्यानक्रिया मुमुक्षुणा विधेयेति । गतोनामनिष्पन्नोनिक्षेपोऽधुना सूत्रानुगमेऽस्खलितादिगुणोपेत सूत्रमुच्चारयितव्य । तच्चेद (सुयमेआउसतेणमित्यादि) अस्य चानतरपरपरसूत्रै सह सबधोवक्तव्य । सचायमिहानतराध्ययनपरिसमाप्ताविद सूत्रमाहारगुप्त समित सहित सदा यतेतेत्येतन्मया श्रुतमायुष्मता जगवतेदमाख्यातमे वमनया दिशा परपरसूत्रैरपि सबधोऽन्यूह्य । इहास्मिन् प्रवचने सूत्रकृतागेवा । खल्विति वाक्यालकारे । प्रत्याख्यानक्रियानामाध्ययन तस्यायमर्थोवक्ष्यमाणलक्षण । अततीत्यात्मा जीव प्राणी सचानादिमिथ्यात्वाविरतिप्रमादयोगानुगततया स्वजावतएव प्रत्या ख्यान्यपि जवत्यपिशब्दात्सएव कुतश्चिन्निमित्तात्प्रत्याख्यान्यपि । तत्रात्मग्रहणमपरद र्शनव्युदासार्थ । तथाहि । साख्यानामप्रच्युतानुत्पन्नस्थिरैकस्वजावआत्मा । सच तृणकु

जातिने यथायोग्ये पापकर्म लागे, बधाय (पुणरविचोयएएवबवीति के०) वली पण नोदक शिष्य, आचार्य प्रत्यें एम कहेछे (तत्रएजेतेएवमाहस्सु के०) त्या जे, ते एम कहेछे के, (असतएणमणेणपावएण के०) पापकर्मने विषे अछते मनें, (असतीयाएवत्तिएपावियाए के०) पापकर्मनें विषे अछते वचने, (असतएणकाएणपावएण के०) पापकर्मने विषे अछते कायायें करी, एटलें पापकर्मने विषे मन, वचन, अने कायाने अणप्रवर्त्तावतो तथा (अहणतस्सअमणस्कस्सअवियारमणवयणकायवक्कस्सके०) अण हणताने पाप उपर मन परिणाम रहित अणविचास्या मन वचन अने कायाने विषे, तेणे करी सहित (सुविणमविअपस्सउपावेकम्मेकज्जइ के०) स्वप्नांतरे पण पापकर्म करवाने विषे, बांधवाने विषे, अणदेखतो एवो जे होय ते पण पापकर्म बांधे, (तत्रएजेते के०) त्या जे ते (एवमाहस्सु के०) एम कहेछे (मिछातेएवमाहस्सु के०) ते मिथ्या एटले जुठू कहेछे ॥ २ ॥

॥ दीपिका–एवं स्थिते शिष्य प्रज्ञापकमाचार्यमेवमवादीत् अथवा आचार्याभिप्रायं शिष्योऽनूद्य निषेधति । (असतएणमित्यादि) असता अविद्यमानेन मनसाऽप्रवृत्तेनाऽशोभनेन तथा वाचा कायेनच पापेनाऽसता तथा सत्वान् घ्नत अमनस्कस्याविचारमनोवाक्कायवाक्यस्य स्वप्नमप्यपश्यत स्वप्नांतिक च कर्म नोपचय यातीत्येव अव्यक्तविज्ञानस्यापि पाप कर्म न बध्यते । कस्य हेतो केन कारणेन तत्पाप कर्म बध्यते? । नात्र कश्चिदव्यक्तविज्ञानत्वात्पाप कर्म बंधहेतुरित्यर्थ । तदेव शिष्यएव स्वाभिप्रायेण पापकमेवबंधहेतुमाह । (अन्नयरेणति) कर्माश्रवद्वारभूतेन मनोवाक्कायानामन्यतरेण क्लिष्टेन तत्प्रत्ययिक कर्म बध्यते तथा घ्नत सत्वान् समनस्कस्य सविचारमनोवाक्कायवाक्यस्य स्वप्नमपि पश्यत स्पष्टविज्ञानस्य एव गुणजातीयस्य पाप कर्म बध्यते न पुनरेकेंद्रियविकलेंद्रियादे पापकर्मसंभवइति । तेषां घातकस्य मनोवाक्कायव्यापारस्याभावात् । तस्मान्नैव स्वप्नांतिकमविज्ञोपचितं कर्म विद्यतइति । एवं सति ये ते एवमुक्तवतस्तथा । विद्यमानैरेवाशुभैर्योगैः पाप कर्म क्रियते मिथ्या ते एवमुक्तवतइति ॥ २ ॥

॥ टीका–तत्र चैव व्यवस्थिते चोदक प्रज्ञापकमेवमवादीत् । अत्र चाचार्याभिप्रायं चोदकोऽनूद्य निषेधयति। (असतएणमित्यादि) अविद्यमानेनाऽसताऽमनसाऽसत्प्रवृत्तेनाऽशोभनेन तथा वाचा कायेनच पापेनाऽसता तथा सत्वान् घ्नतस्तथा मनस्कस्याविचारमनोवाक्कायवाक्यस्य स्वप्नमप्यपश्यत स्वप्नांतिकच कर्म नोपचयं यातीत्येवमव्यक्तविज्ञानस्यापि पाप कर्म न बध्यते एवभूतविज्ञानेन पाप न क्रियतइति यावत् । कस्य हेतो केन हेतुना केन

इ हणतस्स समणस्कस्स सवियारमणवयकायवक्कस्स सुविणमवि पा
सर्ज एव गुणजातीयस्स पावे कम्मे कज्जइ पुणरवि चोयए एव ब
वीति तब्बण जेते एवमाहंसु असतएण मणेण पावएण असतीयाए व
त्तिए पावियाए असतएण काएण पावएण अहण तस्सअमणस्कस्स
अ वियारमणवयणकायवक्कस्स सुविणमवि अपस्सतं पावे कम्मे कज्ज
इ तब्बण जेते एवमाहंसु मिछा ते एवमाहंसु ॥ २ ॥

अर्थ—ए प्रकारे कहे थके, (तब्बचोयएपन्नवगएववयासि के०) त्या शिष्य प्रज्ञाप क एटले गुरु प्रत्ये एवु बोल्यो के, हे जगवन् ! (असतएण के०) अछते अप्रवर्ते (मणेण के०) मने (पावयण के०) पापकर्मने विषे, तथा (असतियाएवत्तिएपावियाए के०) अछते अप्रवर्त्ते वचनें पापकर्मने विषे, (असतएणकाएणपावएण के०) अछते अप्रवर्ते कायाये पापकर्मने विषे, (अहणतस्स के०) अणहणताने विषे, (अमणस्कस्स के०) पापकर्म उपर मनना परिणाम रहित, (अवियारमणवयकायवक्कस्स के०) अविचारवंत मन वचन काया एवा रहे, एटले पापकर्मना विचार विनाना रहे, (सुविणमविअप्पस्सउंपावकम्मेणोकज्जइ के०) स्वप्नांतरे पण पापकर्मने अण देखता, एटले जे पापकर्म स्वप्नांतरे पण देखे नही, तो तेने पापकर्म सर्वथाऽपि लागे नही, (कस्सणतंहेउ के०) तो शा कारणे ते पाप कर्म तेने लागे, ? अही अव्यक्त पणा थकी पापकर्म लागे, तेने कांइ बधनु कारण जाणवु नही (चोयएएवबवीति के०) तेहिज वली नोदक शिष्य, पोताना अजिप्राये करी पापकर्मना बधनु कारण आवी रीते कहेछे (अन्नयरेणमणेणपावएण के०) अन्य कोइ एक प्राणातिपातादिक पापकर्मने विषे मनें करी प्रवर्त्ते, (मणवत्तिएपावेकम्मेकज्जइ के०) ते मन निमित्ते पापकर्म करे बांधे, (अन्नयरीएवत्तिएपावियाए के०) अन्य कोइ एक प्राणातिपातादिक पापकर्मने विषे वचनें करी प्रवर्त्ते, (वत्तिवत्तिएपावेकम्मेकज्जइ के०) ते वचन निमित्ते पापकर्मने करे बांधे, (अन्नयरेणकाएणपावएण के०) अन्य कोइ एक प्राणातिपातादिक पापने विषे कायाने प्रवर्त्तावे (कायवत्तिएपावेकम्मेकज्जइ के०) ते कायनिमित्ते पाप कर्म करे, बांधे (हणतस्ससमणस्कस्ससवियारमणवयकायवक्कस्स के०) हणताने विषे पापकर्म उपर मन परिणाम सहितने विषे सविचार मनें करी, वचने करी, अने कायाये करी सहित, (सुविणमविपासउं के०) स्वप्नांतरने विषे पण पापकर्म देखे छे (एवगुणजातीयस्सपावेकम्मेकज्जइ के०) एम गुण

जातिनें यथायोग्यें पापकर्म लागे, बधाय (पुणरविचोयएएववबीति के०) वली पण नोदक शिष्य, आचार्य प्रत्यें एम कहेछे (तत्थणजेतेएवमाहंसु के०) त्यां जे, ते एम कहेछे के, (असतएणमणेणपावएण के०) पापकर्मने विषे अछते मनें, (असतीयाएवत्तिएपावियाए के०) पापकर्मनें विषे अछते वचने, (असतएणकाएणपावएण के०) पापकर्मने विषे अछते कायाये करी, एटलें पापकर्मने विषे मन, वचन, अने कायाने अणप्रवर्त्तावतो तथा (अहणतस्सअमणक्कस्सअवियारमणवयणकायवक्कस्सके०) अण हणताने पाप उपर मन परिणाम रहित अणविचाख्या मन वचन अनें कायानें विषे, तेणे करी सहित (सुविणमविअपस्सउपावेकम्मेकज्जइ के०) स्वप्नांतरे पण पापकर्म करवाने विषे, बांधवाने विषे, अणदेखतो एवो जे होय ते पण पापकर्म बांधे, (तत्थणजेते के०) त्यां जे ते (एवमाहंसु के०) एम कहेछे (मिछातेएवमाहंसु के०) ते मिथ्या एटले जुठुं कहेछे ॥ २ ॥

॥ दीपिका–एवं स्थिते शिष्यः प्रज्ञापकमाचार्यमेवमवादीत् अथवा आचार्याभिप्रायं शिष्योऽनूद्य निषेधति । (असतएणमित्यादि) असता अविद्यमानेन मनसाऽप्रवृत्तेनाऽशोभनेन तथा वाचा कायेनच पापेनाऽसता तथा सत्वान् घ्नतः अमनस्कस्याविचारमनोवाक्कायवाक्यस्य स्वप्नमप्यपश्यतः स्वप्नांतिकं च कर्म नोपचयं यातीत्येवं अव्यक्तविज्ञानस्यापि पापं कर्म न बध्यते । कस्य हेतोः केन कारणेन तत्पापं कर्म बध्यते? । नात्र कश्चिदव्यक्तविज्ञानत्वात्पापं कर्म बंधहेतुरित्यर्थः । तदेव शिष्यएव स्वाभिप्रायेण पापकर्मबंधहेतुमाह । (अन्नयरेणति) कर्माश्रवद्वारभूतेन मनोवाक्कायानामन्यतरेण क्लिष्टेन तत्प्रत्ययिकं कर्म बध्यते तथा घ्नतः सत्वान् समनस्कस्य सविचारमनोवाक्कायवाक्यस्य स्वप्नमपि पश्यतः स्पष्टविज्ञानस्य एवं गुणजातीयस्य पापं कर्म बध्यते न पुनरेकेंद्रियविकलेंद्रियादेः पापकर्मसंभवइति । तेषां घातकस्य मनोवाक्कायव्यापारस्याभावात् । तस्मान्नैव स्वप्नांतिकमविज्ञोपचितं कर्म विद्यतइति । एवं सति ये ते एवमुक्तवतस्तद्यथा । विद्यमानैरेवायुभैर्योगैः पापं कर्म क्रियते मिथ्या ते एवमुक्तवतइति ॥ २ ॥

॥ टीका–तत्र चैवं व्यवस्थिते चोदकः प्रज्ञापकमेवमवादीत् । अत्र चाचार्याभिप्रायं चोदकोऽनूद्य निषेधयति । (असतएणमित्यादि) अविद्यमानेनाऽसताऽमनसाऽसत्प्रवृत्तेनाऽशोभनेन तथा वाचा कायेनच पापेनाऽसता तथा सत्वान् घ्नतस्तथा मनस्कस्याविचारमनोवाक्कायवाक्यस्य स्वप्नमप्यपश्यतः स्वप्नांतिकंच कर्म नोपचयं यातीत्येवमव्यक्तविज्ञानस्यापि पापं कर्म न बध्यते एवंभूतविज्ञानेन पापं न क्रियतइति यावत् । कस्य हेतोः केन हेतुना केन

इ हणतस्स समणस्कस्स सवियारमणवयकायवक्कस्स सुविणमवि पा
सउ एव गुणजातीयस्स पावे कम्मे कज्जइ पुणरवि चोयए एव ब
वीति तत्थण जेते एवमाहसु अ्सतएण मणेण पावएण असतीयाए व
त्तिए पावियाए असतएण काएण पावएण अहण तस्सअमणस्कस्स
अ वियारमणवयणकायवक्कस्स सुविणमवि अपस्सउ पावे कम्मे कज्ज
इ तत्थण जेते एवमाहसु मिछा ते एवमाहसु ॥ २ ॥

अर्थ–ए प्रकारे कहे थके, (तत्थचोयएपन्नवगएववयासि के०) त्या शिष्य प्रज्ञाप
क एटले गुरु प्रत्ये एवु बोल्यो के, हे नगवन्! (असतएण के०) अछते अप्रवर्त्ते
(मणेण के०) मने (पावयण के०) पापकर्मने विषे, तथा (असतियाएवत्तिएपावि
याए के०) अछते अप्रवर्त्ते वचने पापकर्मने विषे, (असतएणकाएणपावएण के०)
अछते अप्रवर्ते कायाये पापकर्मने विषे, (अहणतस्स के०) अणहणताने विषे, (अ
मणस्कस्स के०) पापकर्म उपर मनना परिणाम रहित, (अवियारमणवयकायवक्कस्स
के०) अविचारवत मन वचन काया एवा रहे, एटले पापकर्मना विचार विनाना रहे,
(सुविणमविअप्पसउपावकम्मेणोकज्जइ के०) स्वप्नांतरे पण पापकर्मने अण देख
ता, एटले जे पापकर्म स्वप्नांतरे पण देखे नही, तो तेने पापकर्म सर्वथाऽपि लागे
नही, (कस्सणतंहेउ के०) तो शा कारणे ते पाप कर्म तेने लागे, ? अही अव्यक्त
पणा थकी पापकर्म लागे, तेने कांइ बधनु कारण जाणवु नही (चोयएएवबवीति
के०) तेहिज वली नोदक शिष्य, पोताना अनिप्राये करी पापकर्मना बंधनु कारण
आवी रीते कहेछे (अन्नयरेणमणेणपावएण के०) अन्य कोइ एक प्राणातिपाता
दिक पापकर्मने विषे मनें करी प्रवर्त्ते, (मणवत्तिएपावेकम्मेकज्जइ के०) ते मन नि
मित्ते पापकर्म करे बाधे, (अन्नयरीएवत्तिएपावियाए के०) अन्य कोइ एक प्राणाति
पातादिक पापकर्मने विषे वचनें करी प्रवर्त्ते, (वतिवत्तिएपावेकम्मेकज्जइ के०)
ते वचन निमित्ते पापकर्मने करे बांधे, (अन्नयरेणकाएणपावएण के०) अन्य कोइ एक
प्राणातिपातादिक पापने विषे कायाने प्रवर्त्तावे (कायवत्तिएपावेकम्मेकज्जइ के०)
ते कायनिमित्ते पाप कर्म करे, बाधे (हणतस्ससमणस्कस्ससवियारमणवयकाय
वक्कस्स के०) हणताने विषे पापकर्म उपर मन परिणाम सहितने विषे सविचार
मनें करी, वचने करी, अने कायाये करी सहित, (सुविणमविपासउ के०) स्वप्नांतर
ने विषे पण पापकर्म देखे छे (एवगुणजातीयस्सपावेकम्मेकज्जइ के०) एम गुण

ए ठ जीव निकायने विपे, (आयाअपडिहपच्चरकायपावकम्मे के०) आत्मा सर्व काल अप्रतिहत एटले हण्यां नथी पच्चरकाणे करी पापकर्म जेणे एवो,तथा (निच्चपसढविउ वातचित्तदंमे के०) नित्य शठ एटले जड जेवो, एनो परमार्थ जाणे नहीं, प्राणघातने विपे चित्तछे जेनु ते कारणे प्राणीउने दमनो करनार जाणवो (तंजहा के०) ते क हेछे (पाणातिवाए के०) प्राणातिपात आदे देइने, (जावपरिग्गहे के०) मृपावाद, अ दत्तादान, मैथुन, यावत् परिग्रह, अने (कोहे के०) क्रोध थी मांमीने, (जावमिछाद सणसल्ले के०) यावत् मिथ्यात्व दर्शन शल्य ए अढार पापस्थानकने विपे अनिवृत्ति छे एटले अढार पापस्थानक थकी निवृत्या नथी, ते कारण माटें एकेंड्रियादिक जीवोने पण अपच्चरकाणी क्रियानो बंध लागे छे ॥ ३ ॥

॥ दीपिका–एवमाचार्यपक्षं दूपयित्वा नोदकेन स्वपक्षे स्थापिते आचार्य आह । तह पन्नवएति) आचार्य स्वमतमनूद्य युक्त्या साधयति (तंसम्मति) तत्सम्यक् यन्मयोक्त अव्यक्तयोगानामपि कर्म बध्यतइति तद्युक्तं । एवमुक्ते शिष्यआह । कस्य हेतो केन का रणेन तत्सम्यक् गिति चेदाह। (तछखलु इत्यादि) तत्र जगवता षड्जीवनिकाया कर्मबंध हेतुत्वेन स्थापिता । तद्यथा । पृथिवीकायिकाइत्यादि । इत्येते षड्जीवनिकायैरात्मा प्रतिहतं विनितं प्रत्याख्यातं नियमित पाप कर्म येन स तथा जीवेषु विरत एवंजूतोन स अप्रतिहतप्रत्याख्यातपापकर्मा नित्य प्रकर्षेण शठ प्रशठ व्यतिपाते हिंसाया चित्त यस्य स व्यतिपातचित्त स्वपरदमहेतुत्वादम प्रशठश्चासौ व्यतिपातचित्तदमश्चेति । तद्यथा प्राणातिपाते विधेये प्रशठव्यतिपातचित्तदम । एव मृपावादादिष्वपि वाच्य यावन्मि थ्यादर्शनशल्य । तदेवमेकेंड्रियविकलेंड्रियाद्यपि हिंसादिदोपवत्तया मिथ्यात्वाविरतिप्रमा दकपाययोगाश्रितत्वेन असंज्ञाद्यवस्थायामपि कर्मबंधइति तन्निरस्तं ज्ञेयम् ॥ ३ ॥

॥ टीका–तदेव चोदकेनाचार्यपक्षं दूपयित्वा स्वपक्षव्यवस्थापिते सत्याचार्य आह (तछपन्नव इत्यादि) तत्राचार्य स्वमतमनूद्य तस्योपपत्तिक साधयितुमाह । (तंसम्म मित्यादि) यदेतन्मयोक्त प्राग् यथा स्पष्टाव्यक्तयोगानामपि कर्म बध्यते तत्सम्यक् ज्ञानेन युक्तिसगतमित्येवमुक्ते परआह।कस्य हेता केन कारणेन तत्सम्यगिति चेदाह (तछखलु इत्यादि) तत्रेति वाक्योपन्यासार्थ । खलुशब्दोवाक्यालंकार। जगवता वीरवर्द्धमानस्वा मिना षड्जीवनिकाया कर्मबंधहेतुत्वेनोपन्यस्ता । तद्यथा पृथिवीकायिकाइत्यादि या वत्त्रसकायिकाइति । कथमेते षड्जीवनिकाया कर्मबंधस्य कारणमित्याह (इच्चेएहि मित्यादि) इत्येतेषु पृथिव्यादिषु षड्जीवनिकायेषु प्रतिहत विनित प्रत्याख्यात नियमित

कारणेन तत्पाप कर्म बध्यते।? नात्र कश्चिदव्यक्तविज्ञानत्वात्पाप कर्म बधहेतुरिति नाव । त देव चोदकएव स्वानिप्रायेण पापकर्मबधहेतुमाह।(अन्नयरेण मित्यादि) कर्माश्रव द्वारजूतैर्म नोवाक्कायकर्मनि कर्म बध्यत इति दर्शयति। अन्यतरेण क्लिष्टेन प्राणातिपातादिप्रवृत्त्या म नसा वाचा कायेनच तत्प्रत्ययिक कर्म बध्यतइति।इदमेव स्पष्टतरमाह। अतस्सत्वान्समन स्कस्य समनोवाक्कायवाक्यस्य स्वप्नमपि पश्यत अस्पष्टविज्ञानस्यैतद्गुणजातीयस्य पाप क र्म बध्यते न पुनरेकेंद्रियविकलेंद्रियादे पापकर्मसन्नवइति तेषा घातकस्य मनोवाक्काय व्यापारस्यानावात्। अथैतद्व्यापारमतरेणापि कर्मबधइष्यते एवच सति मुक्तानामपिकर्म बध स्यात्।न चैतदिष्यते। तस्मान्नैव स्वप्नातिकमविज्ञोपचित कर्म बध्यतइति। तत्र य देवजूतैरेव मनोवाक्कायव्यापारै कर्मबधोऽन्युपगम्यते तदेव व्यवस्थिते सति ये ते एवमुक्त वतस्तयथा विद्यमानैरेवा शुनैर्योगै पाप कर्म क्रियते मिथ्या तएवमुक्तवतइति स्थितं॥२॥

तछ पन्नवए चोयग एव वयासी त सम्म ज मए पुव्वेवुत असतएण मणेण पावएण असतियाए वत्तिए पावियाए असतएण काएण पावएण अहण तस्स अमणक्खस्स अवियारमणवयकायवक्कस्स सुविणमवि अपस्सउ पावे कम्मे कज्जति त सम्म कस्सण त हेउ आचार्या आह तछ खलु नग वया छजीवणिकायहेऊपणत्ता त जहा पुढविकाइया जाव तसकाइया इच्चे एहि छहि जीवणिकाएहि आया अपडिहयपच्चक्खायपावकम्मे निच्च पसढविउवातचित्तदन्मे त जहा पाणातिवाए जाव परिग्गहे कोहे जाव मिच्छादसणसल्ले ॥ ३ ॥

अर्थ–एवु शिष्यें अचार्यना पक्षने दूषण आप्युं, (तछ के०) तेवारे (पन्नवएचोय ग के०) आचार्य पोताना शिष्यप्रत्ये (एववयासी के०) एवु बोल्या के, अहो शिष्य ! (तसम्म जमएपुव्वेवुतंके०) जे मे पूर्वे वचन कह्युके जे मन,वचन, अने कायानी प्रवर्त्ति विना पण पाप कर्म लागे ते सत्यछे इत्यादि पाठनो अर्थ सुलन छे माटे नथी लख्यो (तं सम्म के०) ते सत्य जाणजे,युक्तिसहित जाणजे एवु आचार्यनु वचन सानजी, फरी शिष्य बोल्यो के, (कस्सणतंहेउ के०) शो कारणे तमारु वचन सत्य छे ते कहो ? हवे (आचा र्याआह के०) आचार्य कहेछे (तछखलुनगवया के०) त्या खलु ए वाक्यालकारे नगवा न् श्रीवर्द्धमान स्वामी तेणे (छजीवणिकायहेऊपणत्ता के०) छ जीव निकाय कर्मबधनां कारण कह्याछे, (तंजहा के०) ते कहेछे (पुढविकाईया के०) पृथिवीकाय थकी मांमी ने (जावतसकाइया के०) यावत् त्रसकाय पर्यंत, (इच्चेएहिछहिजीवणिकाएहि के०)

चिंतवतो अवसर पामिने, तेना घर माहे प्रवेश करीश, अवसर देखीने तेने हणीश, एम चिंतवतो, दिवसे अथवा रात्रीये सुतो, अथवा जागतो, अमित्रनूत मिथ्यामित्र पणामा संस्थित एटले माठा कार्यने विषे रह्यो, (निच्चपसढ के०) नित्यज प्रशठ एट ले एनो परमार्थ जाणे नहीं (विकवायचित्त के०) प्राणिघात तेने विषे जेनु चित्तछे ते कारणे, (दमेंनवति के०) प्राणीउने दमनो करनार होय, ते पुरुष जीवनो विनाश न करतो थको पण वधक कहेवाय, किंवा न कहेवाय ? (एवंवियागरेमाणे के०) एरीतें आचार्ये कहे छते, (समियाएवियागरेचोयएहंतानवति के०) शिष्य बोल्यो के, हे नग वन् ! ए तमे सत्य बोल्या ते वधक कहेवाय ॥ ४ ॥

॥ दीपिका-अथाचार्य स्वमतसिद्ध्ये दृष्टांतमाह । (तत्थखलुइत्यादि) तत्र खलु नगवता वधकदृष्टांत प्रज्ञप्त । तद्यथानाम कश्चिद्वधक स्यात् गृहपतेर्गृहपतिपुत्रस्य वा राज्ञोराजपुरुषस्य वा उपरि कुतश्चिन्निमित्तात्कुपित सन् क्षणमवसर निदाय प्राप्य गृहे पुरे वा घाताय प्रवेक्ष्यामि क्षणमवसर छिद्रादिक लब्ध्वा वध्य हनिष्यामीति संप्रधा रयन् दिवा रात्रौ वा सुप्तोवा जाग्रद्वा मित्रनूतोमिथ्यासंस्थितोनित्य प्रशठव्यतिपातचित्त दमोहिंसाध्यवसायी नवति । अयमर्थ । कोऽपि कस्यापि गृहपत्यादेरुपरि कुपितस्तं ह तुकामोपि यावदवसर छिद्र न लनते तावत्कार्यांतरे प्रवृत्तोपि हिंसामकुर्वन्नपि वध्यस्य हिंसावसरापेक्षी नित्यं रागद्वेषाकुल स्यात् । एवमेकेंद्रियविकलेंद्रियाअपि विरतेरना वात्तदयोग्यतया हिंसामकुर्वंतोपि तत्प्रत्ययिकेन कर्मणा वध्यंतएवेत्यर्थ ॥ ४ ॥

॥ टीका-सांप्रतमाचार्य स्वपक्षसिद्ध्ये दृष्टांतमाह । (तत्थखलुनगवयाइत्यादि) त त्रेति वाक्योपन्यासार्थं । खलु शब्दोवाक्यालंकारे । नगवतैश्वर्यादिगुणोपेतेन चतुस्त्रिंश दतिसमयसमन्वितेन तीर्थकृता वधकदृष्टांत प्रज्ञप्त प्ररूपितस्तद्यथा नाम वधक कश्चि त्स्यादिति कुतश्चिन्निमित्तात्कुपित सन् कस्यचिद्वधपरिणत कश्चित्पुरुषोनवति । य स्यासौ वधकस्तं विशेषेण दर्शयितुमाह । (गाहावइस्सवेत्यादि) गृहस्य पतिर्गृहपति स्तत्पुत्रोवाऽनेन सामान्यत प्राकृतपुरुषोऽनिहितस्तस्योपरि कुतश्चिन्निमित्ताद्वधक कश्चि त्स्यात् सच वधपरिणामपरिणतोपि कस्मिंश्चित्क्षणे पापकारिणमेनं घातयिष्यामीति । तथा राज्ञस्तत्पुत्रस्योपरि कुपितएतत्कुर्यादित्याह । (खणनिदायइत्यादि) क्षणमवसर (णिदायत्ति) प्राप्य तथाविधस्य पुरे गृहे वा प्रवेक्ष्यामीत्येतदध्यवसायी नवति तथा क्ष णमवसर छिद्रादिकं वध्यस्य लब्ध्वा तदुत्तरकाल तं वध्य हनिष्यामीत्येवं संप्रधारयति। एतडुक्त नवति । गृहपते सामान्यपुरुषस्य राज्ञोवा विशिष्टतमस्य कस्यचिद्वधपरिणता

पाप कर्म येन सतथा पुनर्नञ्समासेनाऽप्रतिहतप्रत्याख्यातपापकर्मा यश्चात्मा जतुस्तथा तद्भावादेव नित्य सर्वकाल प्रकर्षेण शवस्तथा व्यतिपाते प्राणव्यपरोपणे चित्त यस्य स व्यतिपातचित्त स्वपरदम्हेतुत्वाद्दम प्रशवश्चासौ व्यतिपातचित्तदमश्चेति क मेधारय । इत्येतदेव प्रत्येक दर्शयितुमाह (तंजहेत्यादि) तद्यथा प्राणातिपाते विधे ये प्रशवचित्तदम्एव मृषावाददत्तादानमैथुनपरिग्रहेष्वपि वाच्य यावन्मिथ्यादर्शनशल्य मिति । तेषामिहैकेन्द्रियविकलेंद्रियादीनामनिवृत्तत्वान्मिथ्यात्वाविरतिप्रमादकषाययो गानुगतत्व इष्टव्य । तद्भावाच्च ते कथ प्राणातिपातादिदोषवत्तया व्यक्तविज्ञानाश्चपि स्वप्नाद्यवस्थायामिति ते कर्मबधकाएव । तदेव व्यवस्थिते यत्प्रागुक्त परेण यथा नाव्य क्तविज्ञानानामघ्नताममनस्काना कर्मबधइत्येतत् ब्रुवते ॥ ३ ॥

आचार्यआह तत्त खलु नगवया वहए दिठते पणत्ते से जहा णामए वहए सिया गाहावइस्सवा गाहावइपुत्तस्सवा रण्णोवा रायपुरिसस्सवा खण निद्दाए पविसिस्सामि खणलद्धूण वहिस्सामि पहारेमाणे से किंतु हुनाम से वहए तस्स गाहावइस्सवा गाहावइपुतस्सवा रण्णोवा राय पुरिसस्सवा खण निद्दाए पविसिस्सामि खण लद्धूण वहिस्सामि पहारे माणे दियावा राउवा सुत्तेवा जागरमाणेवा अमित्तनूत्ते मिछासठित्ते निच्च पसढविउवायचित्तदम्हे नवति एव वियागरेमाणे समियाए वि यागरे चोयए हता नवति ॥ ४ ॥

अर्थ—हवे आचार्य एनी उपर दृष्टांत कहेछे (तत्तखलुनगवया के०) त्यां निश्चे नगवंत श्री महावीर देवे (वहएदिठते के०) वधकनो दृष्टांत (पणत्ते के०) कह्यो छे (सेजहाणामए के०) ते जेम नाम एवी सनावनाये कोइ एक पुरुष, (वहएसिया के०) वधक होय ते कोइ एक कारणे कोप्यो थको, (गाहावइस्सवा के०) गृहपति उपर, तथा (गाहावइपुत्तस्सवा के०) गृहपतिना पुत्र उपर अथवा (रण्णोवा के०) राजा उपर, (रायपुरिसस्सवा के०) अथवा राजानो पुरुष, तेओनो विनाश करवा वाछतो, एवी चितवना करे के, (खणनिद्दाए के०) अवसर पामिने, एना घरमा (पविसिस्सा मि के०) प्रवेश करीश (खणलद्धूणवहिस्सामि के०) छिद्रादिक पामिने अथवा देखीने एने हणीश (पहारेमाणे के०) ते पुरुष एम चितवतो, (सेकिंतुहुनामसेवहए के०) ते केवो जाणवो? तु अवधारणे छे नाम सनावनाये छे तो के, ते वधक कहिये हवे ते वधक गृहपतिनो, अथवा गृहपतिना पुत्रनो, अथवा राजानो, अथवा राजपुरुषनो, वध

चितवतो अवसर पामिने, तेना घर माहें प्रवेश करीश, अवसर देखीने तेने हणीश, एम चितवतो, दिवसे अथवा रात्रीयें सुतो, अथवा जागतो, अमित्रभूत मिथ्यामित्र पणामां संस्थित एटले मागा कार्यने विषे रह्यो, (निच्चपसढ के०) नित्यज प्रशठ एट ले एनो परमार्थ जाणे नहीं (विउवायचित्त के०) प्राणिघात तेने विषे जेनुं चित्तछे ते कारणे, (दंमेनवति के०) प्राणीउंने दमनो करना होय, ते पुरुष जीवनो विनाश न करतो थको पण वधक कहेवाय, किंवा न कहेवाय ? (एवंवियागरेमाणे के०) एरीतें आचार्ये कहे ढते, (समियाएवियागरेचोयएहंताजवति के०) शिष्य बोल्यो के, हे नग वन् ! ए तमे सत्य बोल्या ते वधक कहेवाय ॥ ४ ॥

॥ दीपिका—अथाचार्यः स्वमतसिद्धये दृष्टांतमाह । (तत्रखलुइत्यादि) तत्र खलु नगवता वधकदृष्टांत प्रज्ञप्त । तद्यथानाम कश्चिद्वधक स्यात् गृहपतेर्गृहपतिपुत्रस्य वा राज्ञोराजपुरुषस्य वा उपरि कुतश्चिन्निमित्तात्कुपित सन् क्षणमवसर निदाय प्राप्य गृहे पुरे वा घाताय प्रवेक्ष्यामि क्षणमवसर छिद्रादिक लब्ध्वा वध्य हनिष्यामीति संप्रधा रयन् दिवा रात्रौ वा सुप्तोवा जाग्रद्वा मित्रजूतोमिथ्यासंस्थितोनित्य प्रशठव्यतिपातचित्त दमोहिंसाध्यवसायी जवति । अयमर्थः । कोऽपि कस्यापि गृहपत्यादेरुपरि कुपितस्तं ह तुकामोपि यावदवसर छिद्र न लनते तावत्कार्यांतरे प्रवृत्तोपि हिंसामकुर्वन्नपि वध्यस्य हिंसावसरापेक्षी नित्य रागद्वेषाकुल स्यात् । एवमेकेंद्रियविकलेंद्रियाअपि विरतेरना वात्तदयोग्यतया हिंसामकुर्वतोपि तत्प्रत्ययिकेन कर्मणा बध्यंतएवेत्यर्थः ॥ ४ ॥

॥ टीका—सांप्रतमाचार्यः स्वपक्षसिद्धये दृष्टांतमाह । (तत्रखलुनगवयाइत्यादि) त त्रेति वाक्योपन्यासार्थः । खलु शब्दोवाक्यालंकारे । नगवतैश्वर्यादिगुणोपेतेन चतुस्त्रिंश दतिसमयसमन्वितेन तीर्थकृता वधकदृष्टांत प्रज्ञप्त प्ररूपितस्तद्यथा नाम वधक कश्चि त्स्यादिति कुतश्चिन्निमित्तात्कुपित सन् कस्यचिद्वधपरिणत कश्चित्पुरुषोजवति । य स्यासौ वधकस्तं विशेषेण दर्शयितुमाह । (गाहावइस्सवेत्यादि) गृहस्य पतिर्गृहपति स्तत्पुत्रोवाऽनेन सामान्यत प्राकृतपुरुषोऽनिहितस्तस्योपरि कुतश्चिन्निमित्ताद्वधक कश्चि त्संवृत्त सच वधपरिणामपरिणतोपि कस्मिंश्चित्क्षणे पापकारिणमेन घातयिष्यामीति । तथा राज्ञस्तत्पुत्रस्योपरि कुपितएतत्कुर्यादित्याह । (खणनिद्दायइत्यादि) क्षणमवसर (णिदायत्ति) प्राप्य तथाविधस्य पुरे गृहे वा प्रवेक्ष्यामीत्येतदध्यवसायी जवति तथा क्ष णमवसर छिद्रादिक वध्यस्य लब्ध्वा तदुत्तरकाल तं वध्य हनिष्यामीत्येव संप्रधारयति। एतडुक्त नवति । गृहपते सामान्यपुरुषस्य राज्ञोवा विशिष्टतमस्य कस्यचिद्वधपरिणता

प्यात्मनो ऽवसरं लब्ध्वाऽपरकार्यक्षणे सति तथा वध्यस्यच छिद्रमपेक्षमाणस्तदवसरा पेक्षी किंचित्कालमुदास्ते सच तत्रौदासीन्यं कुर्वाणोऽपरकार्य प्रति व्यग्रचेता सस्तस्मि न्नवसरे वध प्रत्यस्पष्टविज्ञानोभवति । सचैवभूतोपि तथा तं वध्यं प्रति नित्यमेव प्रशठ व्यतिपातचित्तदण्डोभवत्येवमविद्यमानैरपि प्रव्यक्तैरशुभैर्योगैरेकेंद्रियविकलेंद्रियादयोऽस्पष्ट विज्ञानाअपि मिथ्यात्वाविरतिप्रमादकषाययोगानुगतत्वात्प्राणातिपातादिदोषवतोभवति । नच तेऽवसरमपेक्षमाणाउदासीनाअप्यवैरिणोन भवतीति । अत्रच वध्यवधकयो क्ष णापेक्षया चत्वारोभंगा । तद्यथा । वध्यस्याऽनवसरोवधकस्य च उभयोर्वाऽनवसरो द्व योरप्यवसरइति । नागार्जुनीयास्तु पठति । अप्पणो अरकाणया एतस्सवा पुरिसस्स छिद्द अलभमाणे णोवहे इतं जयामेरकणो भविस्सइ तस्स पुरिसस्स छिद्द लभिस्सामि तया मेस पुरिसे अवस्स वहयव्वे भविस्सइ एव मणोपहारे माणेत्ति सूत्र निगदसिद्ध ॥ ४ ॥

आचार्यआह जहासे वहए तस्स गाहावइस्सवा तस्स गाहावइपुत्त स्सवा रणोवा रायपुरिसस्स खण निद्दाए पविसिस्सामि खण लद्धूण वहिस्सामित्ति पहारेमाणे दियावा राउवा सुत्तेवा जागरमाणेवा अमि त्तभूए मिच्छासठित्ते निच्च पसढविउवायचित्तदण्डे एवमेव बालेवि सव्वेसि पाणाण जाव सव्वेसि सत्ताण दियावा राउवा सुत्तेवा जागरे माणेवा अमित्तभूए मिच्छासठिते निच्च पसढविउवायचित्तदण्डे त पाणाति वाए जाव मिच्छादसणसल्ले एवखलु भगवया अरकाए असजए अवि रए अप्पडिहयपच्चक्खायपावकम्मे सकिरिए असवुण्डे एगतदण्डे एगतबाले एगतसुत्तेयावि भवइ से बाल अवियारमणवयणकायवक्के सुविणम विणपस्सइ पावेय से कम्मे कज्जइ ॥ ५ ॥

अर्थ–तेवारे अचार्य बोल्या के, अहो शिष्य ! जेम ते वधक पुरुष, ते गृहपति, तथा गृहपतिना पुत्र, अथवा राजा, तथा राज पुरुष उपर विनाशनो भाव चितवतो प डो, तेमना विनाशनी क्रिया कर्या विना पण ते वधक कहेवाय, बीजा पदोनो अर्थ सु गम छे माटे आंही लख्यो नथी (एवमेव के०) एम ते, (बालेवि के०) बाल जीव पण, सर्व प्राणीने विषे यावत् सर्व सत्व, तेनो दिवसे अथवा रात्रिये सुता अथवा जागतां, अमित्रभूत एटले शत्रुभूत मिथ्यात्वसस्थित निरतर शठ,प्राणिघातने विषे चित्त छे जेनु, प्राणीयोने दण्ड कारक, (त के०) ते कहेछे- प्राणातिपात मृषावादथी मांमी

ने यावत् मिथ्यात्व दर्शन शल्य, एवा अढारे पापस्थानकने विषे अनिवृत्त हतो होय एम निश्चे भगवतें कह्युंछे, तेम असयति अविरति अप्रतिहत एटले पच्चखाणे करीने पाप कर्म जेणे हण्या नथी, क्रिया सहित संवर रहित एकांत दंडनो आपनार, एकांत बाल, एकांत शयन करनार होय ते बाल, अविचारवालो, एवा मन वचन अने काया तेणे करी सहित हतो जे पाप स्वप्नांतरमां पण देखे नहीं एवां पापकर्मनुं बंधन करे एम अविरतिपणाये करी तेने पापकर्म लागे ॥ ५ ॥

॥ दीपिका–अथाचार्यएव स्वाभिमतार्थं परप्रश्नपूर्वमाह । (सेकिंतुइत्यादि) आचार्य स्वयं निर्णीतार्थोपि ईर्ष्यया परं पृच्छति किमसौ वधकपुरुषोहननावसरापेक्षी नित्यं हिंसा नुगतचित्तः स्यात्किंवा न? इति पृष्टः परः समतया मध्यस्थः सन् यथास्थितमेव व्यागृणीया त् कथयेत् । तद्यथा हताचार्यभवत्यसौ अमित्रभूतइति ॥ अथ दार्ष्टांतिकं दर्शयति । (ज हासत्ति) यथासौ वधकइत्यादिना दृष्टांतमनूद्य दार्ष्टांतिकं दर्शयति । (एवमेवेत्यादि) यथासौ वधकोऽवसरापेक्षी वध्यस्य हिंसामकुर्वाणोपि अमित्रभूतोभवति एवमसावपि बा लो ऽस्पष्टविज्ञानोनिवृत्तेरभावाद्योग्यतया सर्वेषां प्राणिनां हंता स्यात् यावन्मिथ्यादर्श नशल्योपेतः स्यात् । कोर्थः । यद्यपि विनयादिकं कुतश्चित्कारणादसौ विधत्ते तथा पि उदायिनृपमारकवदतदुष्टएव नित्यं हिंसानुगतचित्तश्च । यथा परशुराम कृतवीर्यं ह त्वापि ततः सप्तवारं निःक्षत्रां पृथिवीं चकार । यदुक्तं । “ अपकारसमेन कर्मणा, न नर स्तुष्टिमुपैति शक्तिमान् ॥ अधिकां कुरुतेऽरियातनां द्विषतां मूलमशेषमुद्धरेत् ” ॥ १ ॥ एवमसावपि अमित्रभूतः स्यादिति । अथ पूर्वोक्तार्थमनुवदन्नुपसंहरति । (एवखलुभ गवयाइत्यादि) यथा वधकोऽनिवृत्तत्वाद्दुष्टएवमेकेंद्रियादिकाऽस्पष्टविज्ञानोपि अविरत त्वादुष्टएवेति । शेषं सुगमं । यावत्पापं कर्म क्रियतइति ॥ ५ ॥

॥ टीका–सांप्रतमाचार्यएव स्वाभिप्रेतमर्थं परप्रश्नपूर्वकमाविर्भावयन्नाह । (सेकिंतु हुइत्यादि) आचार्य स्वतोहि निर्णीतार्थोऽसूयया परं पृच्छति । किमिति परप्रश्ने । तुरिति वितर्के । हुशब्दोवाक्यालंकारे । किमसौ वधकपुरुषावसरापेक्षी छिद्रमवसरं प्रधारयन् पर्यालोचयन्नहर्निशं सुप्तोजाग्रदवस्थोवा तस्य गृहपतेराज्ञोवा वध्यस्या मित्रभूतोमिथ्यासंस्थितोनित्यं प्रशठव्यतिपातचित्तदंडोभवत्याहोस्विन्नेत्येवं पृष्टः परः समतया माध्यस्थ्यमवलंब्यमानोयथावस्थितमेव व्यागृणीयात् । तद्यथा हताचार्य नवत्यसावमित्रभूतइतीत्यादि ॥ तदेव दृष्टांतं प्रदर्श्य दार्ष्टांतिकं दर्शयितुमाह(ज हासेवहएइत्यादि) यथासौ वधकइत्यादिना दृष्टांतमनूद्य दार्ष्टांतिकमर्थं दर्शयितुमाह ।

प्यात्मनो ऽवसरं लब्ध्वाऽपरकार्यक्षणे सति तथा वध्यस्यच छिद्रमपेक्षमाणस्तदवसरा पेक्षी किंचित्कालमुदास्ते सच तत्रौदासीन्य कुर्वाणोऽपरकार्य प्रति व्यग्रचेता तस्मिन्नवसरे वध प्रत्यस्पष्टविज्ञानोभवति । सचैवभूतोपि तथा तं वध्यं प्रति नित्यमेव प्रशठव्यतिपातचित्तदंडोभवत्येवमविद्यमानैरपि प्रव्यक्तैरशुभैर्योगैरेकेंद्रियविकलेंद्रियादयोऽस्पष्ट विज्ञानाश्रपि मिथ्यात्वाविरतिप्रमादकषाययोगानुगतत्वात्प्राणातिपातादिदोषवतोभवति । नच तेऽवसरमपेक्षमाणाउदासीनाश्रप्यवैरिणोन भवतीति । अत्रच वध्यवधकयोः क्षणापेक्षया चत्वारोभंगा । तद्यथा । वध्यस्याऽनवसरोवधकस्य च उभयोर्वाऽनवसरो द्वयोरप्यवसरइति । नागार्जुनीयास्तु पठति। अप्पणो अक्खणया एतस्सवा पुरिसस्स छिद्द अलभमाणे णोवहे इत्तं जयामेखणो भविस्सइ तस्स पुरिसस्स छिद्द लभिस्सामि तया मेस पुरिसे अवस्स वहयव्वे भविस्सइ एव मणोपहारे माणेत्ति सूत्र निगदसिद्ध ॥ ४ ॥

आचार्यआह जहासे वहए तस्स गाहावइस्सवा तस्स गाहावइपुत्तस्सवा रस्रोवा रायपुरिसस्स खण निद्दाए पविसिस्सामि खण लद्धूण वहिस्सामित्ति पहारेमाणे दियावा राउवा सुत्तेवा जागरमाणेवा अमित्तभूए मिच्छासठिते निच्च पसढविउवायचित्तदंडे एवमेव बालेवि सव्वेसि पाणाण जाव सव्वेसि सत्ताण दियावा राउवा सुत्तेवा जागरेमाणेवा अमित्तभूए मिच्छासठिते निच्च पसढविउवायचित्तदंडे त पाणातिवाए जाव मिच्छादसणसल्ले एवखलु भगवया अक्खाए असजए अविरए अप्पडिहयपच्चक्खायपावकम्मे सकिरिए असवुडे एगतदंडे एगतबाले एगतसुत्तेयावि भवइ से बाल अवियारमणवयणकायवक्के सुविणम विणपस्सइ पावेय से कम्मे कज्जइ ॥ ५ ॥

अर्थ–तेवारे अचार्य बोल्या के, अहो शिष्य ! जेम ते वधक पुरुष, ते गृहपति, तथा गृहपतिना पुत्र, अथवा राजा, तथा राज पुरुष उपर विनाशनो भाव चिंतवतो थको, तेमना विनाशनी क्रिया कर्या विना पण ते वधक कहेवाय, बीजा पदोनो अर्थ सुगम छे माटे आहीं लख्यो नथी (एवमेव के०) एम ते, (बालेवि के०) बाल जीव पण, सर्व प्राणीने विषे यावत् सर्व सत्व, तेनो दिवसे अथवा रात्रिये सुता अथवा जागतां, अमित्रभूत एटले शत्रुभूत मिथ्यात्वसस्थित निरतर शठ,प्राणिघातने विषे चित्त छे जेनु, प्राणीयोने दंड कारक, (त के०) ते कहेछे- प्राणातिपात मृषावादथी मांडी

ना प्रत्येकममित्रभूतोभन्नपि मिथ्यासंस्थितोनित्यं प्रशठव्यतिपातचित्तदंभोभवति । एवं बालकएकेंद्रियादिरपि सर्वप्राणिनां विरतेरभावात्प्रत्येकं घातकचित्तं समादाय नित्यं प्रशठव्यतिपातचित्तदंभः स्यात्तत्प्रत्ययिकेन कर्मणा बध्यतइति ॥ ६ ॥

॥ टीका–तदेव दृष्टांतदार्ष्टांतिकप्रदर्शनेन पूर्वप्रतिपादितार्थस्य निगमनं कृत्वाऽधुना सर्वेषामेव प्रत्येकं प्राणिनां दुष्टात्मा भवति इत्येतत्प्रतिपादयितुकामआह । (जहासेवहएइत्यादि) यथाऽसौ वधकः परात्मनोरवसरापेक्षी तथास्य गृहपतेस्तत्पुत्रस्य वाऽन्यहितस्य वा राजादेस्तत्पुत्रस्य चैकमेकं पृथक् पृथक् सर्वेष्वपि वध्येषु घातकचित्तं समादाय प्राप्तावसरोऽहमेनं वैरिणं मदाविविधायिनं पातयिष्यामीत्येवं प्रतिज्ञाय दिवा रात्रौ वा सुप्तोवा जाग्रद्वा सर्वास्ववस्थासु सर्वेषामेव वध्यानां प्रत्येकममित्रभूतोऽवसरापेक्षितया भन्नपि मिथ्यासंस्थितोनित्यं प्रशठव्यतिपातचित्तदंभोभवति इति रागद्वेषाकुलितोबालवद्वालोऽज्ञानावृतएकेंद्रियादिरिति । सर्वेषामेव प्राणिनां विरतेरभावात्तद्योग्यतया प्रत्येकं वध्येषु घातकचित्तं समादाय नित्यं प्रशठव्यतिपातचित्तदंभोभवतीति । इदमुक्तं भवति । यथासौ तस्माद्गृहपतीराजानुघातादुपशांतवैरः कालावसरापेक्षितया वधमकुर्वाणोप्यविरतिसद्भावाद्वैरान्न निवर्त्तते तत्प्रत्ययिकेनच कर्मणा बध्यते । एवं मृषावादादत्तादानमैथुनपरिग्रहेष्वपि प्रतिज्ञाहेतुदृष्टांतोपनयनिगमनार्थविधानेन पंचावयवत्वं वाच्यमिति । इहैव पंचावयवस्य सूत्राणां विभागोदृष्टव्यः । तद्यथा । आया अपच्चरकाणीयावि भवतीत्यतआरभ्य यावत्पावेयसे कम्मे कज्जइत्ति इतीयं प्रतिज्ञा । तत्र परः प्रतिज्ञामात्रेणोक्तमनुक्तसममिति कृत्वा चोदयति । तद्यथा । तत्थ चोयए पन्नवगं एवं वयासीत्यतआरभ्य यावज्जते एवमाहिंसुमिच्छते एवमाहिंसुत्ति । तत्र प्रज्ञापकश्चोदकं प्रत्येवं वदेत् । तद्यथा । यन्मया पूर्वं प्रतिज्ञातं तत्सम्यक् कस्य हेतोः केन हेतुनेतिचेत् तत्र हेतुमाह । तत्थ खलु भगवया छज्जीवनिकायाहेऊपण्णत्ताइत्यतआरभ्य यावमिछादंसणसल्लेइत्ययं हेतुः । तदस्य हेतोरनैकांतिकत्वव्युदासार्थं स्वपक्षे सिद्धिं दर्शयितुं दृष्टांतमाह । तद्यथा । खलु भगवया वहए दिठ्ठंते पन्नत्ते इत्येतदारभ्य यावत्तस्याखणं लद्धूणं वहिस्सामीति पहारमाणेत्ति । तदेवं दृष्टांतं प्रदर्श्य तत्र च हेतोः सत्तां स्वाभिप्रेतां परेण भणयितुमाह । से किंतुहुणाम से वहए इत्यादेरारभ्य यावद्धता भवति । तन्नेव हेतोर्दृष्टांते सत्वं प्रसाध्य हेतोः पक्षधर्मत्वं दर्शयितुमुपनयार्थं दृष्टांतधर्मिणि हेतोः सत्तां परेणाभ्युपगतामनुवदति । जहासे वहए इत्यतआरभ्य यावन्निच्चं पसढविउवायचित्तदंभेत्ति । सांप्रतं हेतोः पक्षधर्मत्वमाह । एवमेव बालेअवीत्यादीत्यतआरभ्य यावत्पावेयसे कम्मे किज्जइत्ति । तदेवं प्रतिज्ञाहेतुदृष्टांतोपन

(एवमेवेत्यादि) एवमेवेति यथासौ वधकोऽवसरापेक्षितया वध्यस्य व्यापत्तिमकुर्वाणो ऽप्यमित्रभूतोभवत्येवमेवासावपि बालवद्बालोस्पष्टविज्ञानोभवत्येव निवृत्तेरभावाद्योग्य तया सर्वेषां प्राणिनां व्यापादकोभवति यावन्मिथ्यादर्शनशल्योपेतोभवति । इदमुक्त भ वति । यद्यप्युद्भानादिक विनय कुतश्चिन्निमित्तादसौ विधत्ते तथाप्युदायिनृपव्यापादक वदतर्डुष्टएवेति नित्य प्रशठव्यतिपातचित्तदडश्च यथा परशुराम कृतवीर्य व्यापाद्यापि तडुत्तरकाल सप्तवार नि क्षत्रा पृथिवी चकार (श्राहत्ति) “ श्रपकारसमेन कर्मणा, न नरस्तु ष्टिमुपैति शक्तिमान् ॥ श्रधिका कुरुतेऽरियातना, द्विषता मूलमशेषमुद्धरेत् ॥ १ ॥ इत्ये वमसावमित्रभूतोमिथ्याविनीतश्च भवतीति । साप्रतमुपसहरन् प्राक् प्रतिपादितमर्थमनु वदन्नाह । (एवखलुभगवयाइत्यादि) यथासौ वधक स्वपरावसरापेक्षी सन्न तावद्घात यत्यथवा निवृत्तत्वाद्दोषडुष्टएव एवमसावप्येकेंद्रियादिकोस्पष्टविज्ञानोपि तथाभूतएवावि रताप्रतिहतप्रत्याख्यातसत्क्रियादिदोषडुष्टइति । शेष सुगम । यावत्पाप कर्म क्रियतइति॥५॥

जहा से वहए तस्सवा गाहावइस्स जाव तस्सवा रायपुरिसस्स पत्तेय प त्तेय चित्तसमादाए दियावा राउवा सुत्तेवा जागरमाणेवा अमित्तभूते मिछासठिते निच्च पसढविउवायचित्तदंडे भवइ एवमेव बाले सव्वे सिं पाणाणं जाव सव्वेसि सत्ताणं पत्तेय पत्तेय चित्तसमादाए दियावा राउवा सुत्तेवा जागरमाणेवा अमित्तभूते मिछासठिते निच्च पसढ विउवायचित्तदंडे भवइ ॥ ६ ॥

अर्थ-(जहासेवहए के०) जेम ते वधक पुरुष, ते गृहपत्यादिक ऊपर प्रत्येक प्रत्ये क चित्ते करी विनाश चितवतो, दिवसे रात्रियें सुतो, जागतो थको अमित्रभूत एटले शत्रु समान मिथ्यात्व सस्थित निरतर शठ प्राणघातने विषे चित्तले जेनू माटे, प्राणीयोने दंडनो करनार होय तेने पापकर्म बधाय (एवमेव के०) एमज ए बाल जे एकेंद्रिया दिक जीवो ले ते पण सर्व प्राणी, सर्वभूत, सर्वजीव, सर्वसत्व, तेने विषे अविरति प णाने भावे ते सर्वने विषे प्रत्येक प्रत्येक चित्ते करी विनाश चितवतो, दिवसने विषे, रात्रिने विषे, सुतो, जागतो, अमित्र भूत मिथ्यात्व सस्थित, निरतर शठ, प्राणिघातने विषे चि त्तले जेनू, प्राणीयोने दंडनो करनार होय, एम बोलाय ते कारणे तेने पापकर्म बधाय॥६॥

॥ दीपिका—तदेव पूर्वोक्तार्थनिगमन कृत्वाऽधुना स सर्वप्राणिनां डुष्टात्मा स्यादिति दर्शयति । यथासौ वधकोगृहपत्यादे पत्येक सर्वेषु वध्येषु घातकचित्त समादाय प्राप्तावस रोऽहमेन हनिष्यामीति कृत्वा दिवा रात्रौवा सुप्तोजाग्रद्वा सर्वावस्थासु सर्वप्राणि

॥ प्रत्येकममित्रभूतोभवन्नपि मिथ्यासंस्थितोनित्यं प्रशठव्यतिपातचित्तदंमोभवति । एवं बालकएकेंद्रियादिरपि सर्वप्राणिनां विरतेरभावात्प्रत्येकं घातकचित्तं समादाय नित्यं प्रशठव्यतिपातचित्तदंडः स्यात्तत्प्रत्ययिकेन कर्मणा बध्यतइति ॥ ६ ॥

॥ टीका–तदेवं दृष्टांतदार्ष्टांतिकप्रदर्शनेन पूर्वप्रतिपादितार्थस्य निगमनं कृत्वाऽधुना सर्वेषामेव प्रत्येकं प्राणिनां दुष्टात्मा भवति इत्येतत्प्रतिपादयितुकामआह । (जहासेवहएइत्यादि) यथाऽसौ वधकः परात्मनोरवसरापेक्षी तथास्य गृहपतेस्तत्पुत्रस्य वाऽन्यस्थितस्य वा राजादेस्तत्पुत्रस्य चैकमेकं पृथक् पृथक् सर्वेष्वपि वध्येषु घातकचित्तं समादाय प्राप्तावसरोऽहमेनं वैरिणं मदापकारिणं पातयिष्यामीत्येवं प्रतिज्ञाय दिवा रात्रौ वा सुप्तोवा जाग्रद्वा सर्वास्ववस्थासु सर्वेषामेव वध्यानां प्रत्येकममित्रभूतोऽवसरापेक्षितया भवन्नपि मिथ्यासंस्थितोनित्यं प्रशठव्यतिपातचित्तदंमोभवति इति रागद्वेषाकुलितोबालवद्बालोज्ञानावृतएकेंद्रियादिरिति । सर्वेषामेव प्राणिनां विरतेरभावात्तद्योग्यतया प्रत्येकं वध्येषु घातकचित्तं समादाय नित्यं प्रशठव्यतिपातचित्तदंमोभवतीति । इदमुक्तं भवति । यथासौ तस्माद्गृहपतीराजानुघाताडुपशांतवैरः कालावसरापेक्षितया वधमकुर्वाणोप्यविरतिसद्भावाद्वैरान्न निवर्त्तते तत्प्रत्ययिकेनच कर्मणा बध्यते । एवं मृषावादादत्तादानमैथुनपरिग्रहेष्वपि प्रतिज्ञाहेतुदृष्टांतोपनयनिगमनार्थविधानेन पंचावयवत्वं वाच्यमिति । इहैव पंचावयवस्य सूत्राणां विभागोद्रष्टव्यः । तद्यथा । आया अपच्चक्खाणीयावि भवतीत्यतआरभ्य यावत्पावेयसे कम्मे कज्जइत्ति इतीयं प्रतिज्ञा । तत्र परः प्रतिज्ञामात्रेणोक्तमयुक्तमिति कृत्वा चोदयति । तद्यथा । तत्थ चोयए पन्नवगं एवं वयासीत्यतआरभ्य यावज्जेते एवमाहंसुमिच्छते एवमाहंसुत्ति । तत्र प्रज्ञापकश्चोदकं प्रत्येवं वदेत् । तद्यथा । यन्मया पूर्वं प्रतिज्ञातं तत्सम्यक् कस्य हेतोः केन हेतुनेतिचेत् तत्र हेतुमाह । तत्थ खलु भगवया छजीवनिकाया हेऊपण्णत्ताइत्यतआरभ्य यावमिच्छादंसणसल्लेइत्ययं हेतुः । तदस्य हेतोरनैकांतिकत्वव्युदासार्थं सपक्षे सिद्धिं दर्शयितुं दृष्टांतमाह । तद्यथा । खलु भगवया वहए दिट्ठंते पण्णत्ते इत्येतदारभ्य यावत्तस्याखणं लद्धूण वहिस्सामीति पहारमाणेत्ति । तदेवं दृष्टांतं प्रदर्श्य तत्र च हेतोः सत्तां स्वाभिप्रेतां परेण भणयितुमाह । से किंतुदुणाम से वहए इत्यादेरारभ्य यावद्भता भवति । तदेवं हेतोर्दृष्टांते सत्वं प्रसाध्य हेतोः पक्षधर्मत्वं दर्शयितुमुपनयार्थं दृष्टांतधर्मिणि हेतोः सत्तां परेणाभ्युपगतामनुवदति । जहासे वहए इत्यतआरभ्य यावण्णिच्च पसढविउवायचित्तदंमेत्ति । सांप्रतं हेतोः पक्षधर्मत्वमाह । एवमेव बालेअवीत्यादीत्यतआरभ्य यावत्पावेयसे कम्मे किज्जइत्ति । तदेवं प्रतिज्ञाहेतुदृष्टांतोपन

यनप्रतिपादकानि यथाविधिसूत्राणि विज्ञागत प्रदर्श्याधुना प्रतिज्ञाहेत्वो पुनर्वचन निगमनमित्येतत्प्रतिपादयितुमाह । जहा से वहए तस्सवागाहावइस्स इत्यादि यावणिच्चं पसढविउवायचित्तदम्हेत्ति) एतानि प्रतिज्ञाहेतुदृष्टांतोपनयनिगमान्यर्थत सूत्रे प्रदर्शितानि । प्रयोगस्त्वेव द्रष्टव्य । तत्राप्रतिहतप्रत्याख्यातक्रियआत्मा पापानुबधीति प्रतिज्ञा सदा पड्जीवनिकायेषु प्रशठव्यतिपातचित्तदम्हत्वादिति हेतु स्वपरावसरापेक्षितया कदाचिदव्यापादयन्नपि राजादिवधकवदिति दृष्टात । यथासौ वधपरिणामादनिवृत्तत्वा द्वध्यस्यामित्रनूतस्तथाऽत्माऽपि विरतेरजावात्सर्वेष्वपि सत्त्वेषु नित्यं प्रशठव्यतिपातचित्तदम्हइत्युपनय । यतएव तस्मात्पापानुवधीति निगमनम् । एव मृषावादादिष्वपि पचावयवत्व योजनीयमिति । केवल मृषावादादिशब्दोच्चारण विधेय तच्चानेन विधिना नित्यं प्रशठव्यतिपातचित्तदम्हत्वात्तथा नित्य प्रशठादत्तादानचित्तदमत्वादिति ॥ ६ ॥

णो इणठे समठे चोदक इह खलु वहवे पाणा जे इमेण सरीरसमणुस्स एण णो दिठावा सुयावा नाजिमयावा विन्नायावा जेसिं णो पत्तेय पत्तेय चित्तसमायाए दियावा राउवा सुत्तेवा जागरमाणेवा अमित्तनूते मिछा सठिते निच्च पसढविउवायचित्तदम्हे त पाणातिवाए जाव मिछादसण सल्ले ॥ ७ ॥

अर्थ—एम गुरुये कहे थके, हवे (चोदक के०) शिष्य बोल्योके, हे जगवन् ! तमे जे अर्थ कह्यो, ते योग्य नथी (णोइणठेसमठे के०) ते अर्थ समर्थ नथी, तेनू कारण कहेछे (इहखलु के०) आ चउदरज्ज्वात्मक लोकमाहे (बहवेपाणा के०) अनता प्राणीछे (जेइमेणसरीरसमणुस्सएण के०) जे आ शरीरे करी, समुणस्सए एटले पुन्ने करी, जीवे दृष्टिये करी कदाचित् कोइ वारे पण (णोदिठावा के०) दीठा नथी, (सुयावा के०) कानें सानव्या नथी, (नाजिमयावा के०) उजख्या पण नथी, अथवा (विन्नायावा के०) विशेषे करी, जाण्या पण नथी, (जेसिणोपत्तेयपत्तेयचित्तसमायाए के०) जेणे ए कारणे प्रत्येक प्रत्येक चित्ते करीने ए जीवोनो विनाश चितव्यो नथी तो दिवसने विषे, रात्रीने विषे, सुता, जागता, अमित्रनूत मिथ्यासस्थित निरतर शठ प्राणिना घातनेविषे चित्तछे जेनू प्राणीने दम्हकारक ते केम केहेवाय ? अने प्राणातिपात थकी मांमीने यावत् मिथ्यात्व दर्शन शल्य सुधी अढारे पापस्थानकने अण करवाथी तेने कर्मनु बधन केम लागे ? एतावता तेने नज लागे ॥ ७ ॥

॥ दीपिका—एव पड्जीवनिकायेषु प्रत्येक अमित्रनूततया पापानुबधित्वे दर्शिते

परोव्यभिचारं दर्शयति । (णोइणट्ठेइति) नायमर्थः समर्थोयत्सर्वेऽपि प्राणिनः सर्वेषां जीवानाममित्रभूताइति । तत्र परः स्वपक्षसिद्ध्ये युक्तिमाह । इह बहवोऽनंता प्राणिनः संति येऽमुना शरीरसमुच्छ्रयेणानेन शरीरेण न कदाचिद्दृष्टाश्चक्षुषा न श्रुताः कर्णाभ्यां नाभिमतानेष्टा । नच विज्ञाताज्ञानेनेति कथं तद्विषयस्तेषु ह्यमित्रभावः स्यात्? । तेषां जीवानां कदाचिदपि विषयमप्राप्तानां कथं वधं प्रति चित्तसमादानं स्यात्? । न चासौ तान् प्रति प्रशठव्यतिपातचित्तदंडः स्यात् । शेषं सुगमम् ॥ ७ ॥

॥ टीका–तदेवं सर्वात्मना षट्स्वपि जीवनिकायेषु प्रत्येकममित्रभूततया पापानुबंधित्वे प्रतिपादिते व्यभिचारं दर्शयन्नाह । (णोइणट्ठेसमट्ठेइत्यादि) नायमर्थः समर्थ इति प्रतिपत्तुं योग्यः । तद्यथा । सर्वे प्राणिनः सर्वेषामेव सत्वानां प्रत्येकममित्रभूता इति । तत्रापरः स्वपक्षसिद्ध्ये सर्वेषां प्रत्येकं मित्राभावं दर्शयितुं कारणमाह । इहास्मिंश्चतुर्दशरज्ज्वात्मके लोके बहवोऽनंताः प्राणिनः सूक्ष्मबादरभेदभिन्नाः संति । यद्येवं ततः किमित्याह । तेच देशकालस्वभावविप्रकृष्टास्तथाभूतावहवः संति । ये प्राणिनः सूक्ष्मादिविप्रकृष्टाद्यवस्था अमुना शरीरसमुच्छ्रयेणेत्यनेनेदमाह । प्रत्यक्षासन्नवाचित्वादिदमनेनार्वाग्दर्शिज्ञानसमन्वितसमुच्छ्रयेण न कदाचिद्दृष्टाश्चक्षुषा न श्रुताः श्रवणेंद्रियेण विशेषतोनाभिमताइष्टानच विज्ञाताः प्रतिभेवज्ञानेन स्वयमेवेत्यतः कथंचित्तद्विषयस्तस्य मित्रभावः स्यात् अतस्तेषां कदाचिदविज्ञातानां कथं प्रत्येकं वधं प्रति चित्तसमादानं न भवति । न चासौ तान् प्रति नित्यं प्रशठव्यतिपातचित्तदंडोभवतीति शेषं सुगमम् ॥ ७ ॥

आचार्यआह तत्थ खलु भगवया छज्जीवनिकायहेऊ पण्णत्ता तं सन्निदिट्ठंतेय असन्निदिट्ठंतेय से किंतं सन्निदिट्ठंते जे इमे सन्निपंचिंदिया पज्जत्तगा एतेसिणं छजीवनिकाए पडुच्च तं पुढवीकायं जाव तसकायं से एगइउ पुढवीकाएणं किच्चं करेइवि कारावेइवि तस्सणं एवं भवइ एवं खलु अहं पुढवीकाएणं किच्चं करेमिवि कारवेमिवि णो चेवणं से एवं भवइ इमेणवा इमेणवा से एतेणं पुढवीकाएणं किच्चं करेइवि कारावेइवि सेणं ताउ पुढवीकायाउ असंजय अविरय अप्पडिहयपच्चक्खाणपावकम्मेयावि भवइ एवं जाव तसकाएत्ति भाणियव्वं से एगइउ छजीवनिकाएहिं किच्चं करेइवि कारावेइवि तस्सणं एवं भवइ एवं खलु अहं छजीवनिकाएहिं किच्चं करेमिवि कारवेमिवि णो चेवणं से एवं भवइ इमेहिंवा से एतेहिं छ

जीवनिकाएहिं जाव कारवेइवि से यतेहिं ठहिं जीवनिकाएहिं असंज य अविरय अप्पडिहयपच्चरकायपावकम्मेहिं त पाणातिवाए ते जावमि छादसणसल्ले एस खलु नगवया अक्काए असजए अविरए अपडि हयपच्चरकायपावकम्मे सुविणमवि अपस्साउ पावेयसे कम्मे कक इ से त सन्निदिठ्तेण ॥ ८ ॥

अर्थ–हवे एम शिष्ये कह्यानतर आचार्य कहेछे (तछखलुनगवयाउवेदिठंतापस्त्ता के०) त्या निश्चे नगवते ए अर्थ उपर वे दृष्टात कह्याछे ते जेमछे, तेम कहेछे (तसन्निदिठ्तेय के०) एक सज्ञिदृष्टात, अने (असन्निदिठ्तेय के०) बीजो असज्ञिदृष्टात (सेकितसन्निदिठ्ते के०) त्या सज्ञिदृष्टात, कयो ? ते कहेछे (जेइमेसन्निपचिदियापज्जत्तगा के०) जे ए प्रत्यक्ष लक्षण सज्ञी पचेंद्रिय पर्यासा जीवछे (एतेसिण के०) तेमाहे कोइ एक (छजीवनिकाएपडुच्च के०) छ जीवनिकाय आश्री एवी प्रतिज्ञा करे, (त के०) ते छकायना नाम कहेछे (पुढवीकायजावतसकायं के०) पृथिवीकाय यावत् त्रसकाय पर्यंत (सेएगइउ के०) ते कोइ एक पुरुष एवी प्रतिज्ञा करे के, (पुढवीकाएणकिच्चकरेइवि के०) पृथिवीकाये करीनेज कार्य करीश (करावेइविके०) अने पृथिवीकायें करीज कार्य करावीश, एवो जेने नियमछे (तस्सणएवजवइ के०) तेने एम होय ते कहेछे (एवखलुअहपुढवीकाएण के०) एम निश्चे हु पृथिवीकाये करी (किच्चकरेमिविकारवेमिवि के०) कार्य करीश, अने बीजानी पासे पण करावीश परतु (णोचेवणसेएवजवइ के०) तेनें निश्चे एवो अनिप्राय नथी के (इमेणवाइमेणवा के०) अमुक अमुक दिशिना, तथा हु, अमुक अमुक कोइक कालें, अथवा धोले, नीले, पीले, राते, पृथिवीकाये कार्य करीश अथवा अनेक नेद पृथिवीकायना छे तेमाहेथी अमुक कोइ एक नेदेंज कार्य करीश, ज्या सुधी एवो अनिप्राय नथी त्या सुधी तेने सर्व पृथिवीकायनू कर्म लागेछे (सेएतेणपुढवीकाएणकिच्चकरेइविकारावेइवि के०) ते पुरुष ते पृथिवीकाये करी पोतें कार्य करे, बीजा पासे कार्य करावे, (सेणतातोपुढवीकायाउ के०) ते पुरुष ते पृथिवीकाययकी, (असजय के०) असयति अनिवृत्त (अविरय के०) अविरति, (अपडिहयपच्चरकाणपावकम्मेयाविनवइ के०) तथा नथी हण्या पच्चरकाणे करीने पापकर्म जेणे एवो छे, (एवजावतस्सकाएत्तिनाणियव्वे के०) एम यावत् त्रस काय सुधी एटले छए काय आश्री जाणीलेवु जेने जे कायनी अविरति होय तेने ते कायनु कर्म लागे ए रीतें को

६ एक पुरुष छजीव निकाये करीने कार्य पोतें करे, बीजा पासे करावे, ते पुरुष छजीव निकायने विषे अविरति असंयति केहेवाय ए आलावानो बीजो अर्थ पूर्वना आलावा मा लखाइ गयोछे, माटे आहीं लख्यो नथी ए रीते जे प्राणी प्राणातिपातथी मांमीने यावत् मिथ्यात्व दर्शन शल्य पर्यंत अढारे पापस्थानकने विषे असंयति अविरति तथा पच्चरकाणे करीने जेणे पापकर्म हण्या नथी एम अविरतिने नावे होय, तेने स्वप्ना तरे अणदीठु पण पापकर्म बंधाय, लागे एम निश्चे श्री नगवते कह्युछे, एटले सज्ञीयानो दृष्टांत कह्यो ॥ ८ ॥

॥ दीपिका–एवं सति न सर्वविषयं प्रत्याख्यानं युज्यते । ये जीवाहिंसादिविषयप्राप्ता स्युस्तेषामेव प्रत्याख्यानं क्रियते इति परेणोक्ते आचार्यआह । (तत्थखलुइत्यादि) यद्य पि सर्वजीवेषु हिंसापरिणामोनोत्पद्यते तथाप्यविरतिसद्भावात्तद्विषयं कर्मबंधोनिव त्येव । अत्र दृष्टांतद्वयमाह । सज्ञिदृष्टांतोऽसज्ञिदृष्टांतश्च । कोपं सज्ञिदृष्टांत ?। ये इमे स ज्ञिपंचेंद्रियास्तेषां मध्ये कश्चिदेकः षड्जीवनिकायान् प्रतीत्याश्रित्य एवं प्रतिज्ञां कुर्यात् । अहं पृथिवीकायेनैव एकेन कृत्यं करोमि कारयामि । सच एवं कृतप्रतिज्ञस्तेन तस्मात् त स्मिन् तंच करोति कारयतिच शेषकायेन्योनिवृत्तस्तस्य चैवंनूतोऽनिप्रायः । तद्यथा । अहं पृथिवीकायेन कृत्यं करोमि कारयामि एवं प्रतिज्ञाया कृतायां विशेषानिप्रायोन स्यात् यत् श्वेतेन कृष्णेनवा पृथिवीकायेन कृत्यं करोमि कारयामिच स तस्मात्पृथिवीकायादनिवृ त्तोऽप्रतिहतप्रत्याख्यातपापकर्मा नवति । एवमप्तेजोवायुवनस्पतिष्वपि वाच्यं । य था कश्चिदप्कायादनिवृत्तः कश्चित्तेजस्कायादिति । शेषकायैस्तु व्यापारं करोति कश्चित् प ट्स्वपि जीवनिकायेषु अनिवृत्तोऽसंयतत्वात्तैः कार्यं करोति कारयति न पुनस्तद्विशेषप्रति ज्ञा एवं मृषावादेऽपि वाच्यं । यथा इदं मया वक्तव्यमनृतं इदं न वक्तव्यं सच तस्मान्मृषावा दादनिवृत्तत्वादसंयतः स्यात् तथा इदमदत्तं मया ग्राह्यं इदंतु न ग्राह्यं । एवं मैथुनपरिग्र हेष्वपि वाच्यं । तथा क्रोधमानमायालोनेष्वपि स्वयं विचार्यं वाच्यं । तदेवमसौ हिंसादी न्यकुर्वन्नपि अविरतत्वात्तत्प्रत्ययिकं कर्म बध्नाति । ततोदेशकालस्वनावविप्रकृष्टेष्वपि जीवेषु अमित्रनूतोऽसौ स्यात् । यथा कश्चिद्ग्रामघातादौ प्रवृत्तः । यद्यपि तेन केचि न्नरान दृष्टास्तथापि तद्घातनिवृत्तेरनावायाग्यतया तद्घातकइत्युच्यते । एवं अविरते कर्मबंधाइव ॥ ८ ॥

॥ टीका–एवं व्यवस्थिते न सर्वं विषयं प्रत्याख्यानं युज्यते इत्येवं प्रतिपादिते परेण सत्याचार्यआह । (तत्थखलुनगवयाइत्यादि) यद्यपि सर्वेष्वपि देशकालस्वनावविप्र

जीवनिकाएहिं जाव कारवेइवि से यतेहिं छहिं जीवनिकाएहिं असंज य अविरय अप्पडिहयपच्चखायपावकम्मेहिं त पाणातिवाए ते जावमि छादसणसल्ले एस खलु नगवया अखाए असजए अविरए अपडि हयपच्चखायपावकम्मे सुविणमवि अपस्साउ पावेयसे कम्मे कज्ज इ से त सन्निदिठ्ठतेण ॥ ७ ॥

अर्थ–हवे एम शिष्यें कह्यानतर आचार्य कहेछे (तत्रखलुनगवयाडुवेदिठ्ठतापन्न त्ता के०) त्या निश्चे नगवते ए अर्थ उपर बे दृष्टात कह्याछे ते जेमछे, तेम कहेछे (तसन्निदिठ्ठेय के०) एक सज्ञिदृष्टात, अने (असन्निदिठ्ठेय के०) बीजो असज्ञिदृ ष्टात (सेकितसन्निदिठ्ठे के०) त्या सज्ञिदृष्टात, कयो ? ते कहेछे (जेइमेसन्निपचिंदि यापज्जत्तगा के०) जे ए प्रत्यक्ष लक्षण सज्ञी पचेद्रिय पर्याप्ता जीवछे (एतेसिएा के०) तेमाह कोइ एक (छजीवनिकाएपडुच्च के०) छ जीवनिकाय आश्री एवी प्रतिज्ञा करे, (त के०) ते छकायना नाम कहेछे (पुढवीकायजावतसकायं के०) पृथिवी काय यावत् त्रसकाय पर्यंत (सेएगइउ के०) ते कोइ एक पुरुष एवी प्रतिज्ञा करे के, (पुढवीकाएणकिच्चकरेइवि के०) पृथिवीकाये करीनेज कार्य करीश (करावेइविके०) अने पृथिवीकायें करीज कार्य करावीश, एवो जेने नियमछे (तस्सणएवनवइ के०) तेने एम होय ते कहेछे (एवखलुअहपुढवीकाएण के०) एम निश्चे हु पृथिवीकायें करी (किच्चकरेमिविकारवेमिवि के०) कार्य करीश, अने बीजानी पासे पण करा वीश परतु (णोचेवणसेएवनवइ के०) तेनें निश्चे एवो अनिप्राय नथी के (इमे णवाइमेणवा के०) अमुक अमुक दिशिना, तथा हु, अमुक अमुक कोइक कालें, अथ वा धोले, नीले, पीले, राते, पृथिवीकाये कार्य करीश अथवा अनेक नेद पृथिवीकायना छे तेमाहेथी अमुक कोइ एक नेदेंज कार्य करीश, ज्या सुधी एवो अनिप्राय नथी त्या सुधी तेने सर्व पृथिवीकायनू कर्म लागेछे (सेएतेणपुढवीकाएणकिच्चकरेइवि कारावेइवि के०) ते पुरुष ते पृथिवीकाये करी पोतें कार्य करे, बीजा पासे कार्य करावे, (सेणतातोपुढवीकायाउ के०) ते पुरुष ते पृथिवीकायथकी, (असजय के०) असयति अनिवृत्त (अविरय के०) अविरति, (अपडिहयपच्चखाणपाव कम्मेयाविनवइ के०) तथा नथी हण्या पच्चखाणे करीने पापकर्म जेणे एवो छे, (एवजावतस्सकाएत्तिनाणियवे के०) एम यावत् त्रस काय सुधी एटले छए काय आश्री जाणीलेवु जेने जे कायनी अविरति होय तेने ते कायनु कर्म लागे ए रीतें को

से किंत असन्निदिष्ठंते जेइमे असन्निणो पाणा तं पुढवीकाइया जाव वणस्स इकाइया छठावेगइया तसा पाणा जेसिं णो तक्काइवा सन्नातिवा पन्नातिवा मणातिवा वईवा सयवा करणाए अन्नेहिंवा कारावतए करतंवा समणुजाणित्तए तेविएं बाले सव्वेसिं पाणाएं जाव सव्वेसिं सत्ताणं दियावा राउवा सुत्तेवा जागरमाणेवा अमित्तनूतमिछामठिया निच्च पसढविउवातचित्तदमा तं पाणाइवा ते जाव मिछादसणसल्ले इच्चेव जाव णो चेवमणो णो चेववई पाणाण जाव सत्ताणं डुकणत्ताए सोयणत्ताए जूरणत्ताए तिप्पणत्ताए पिट्टणत्ताए परितप्पणत्ताए ते डुकणसोयणजावपरितप्पणवहवधणपरिकिलेसाउ अप्पडिविरया नवति ॥ ए ॥

अर्थ–(सेकिंतअसन्निदिष्ठंते के०) हवे असज्ञियानो दृष्टांत कयो ? ते कहेछे (जेइमेअसन्निणोपाणा के०) जे ए असज्ञी प्राणीउंछे (तं के०) ते कहेछे (पुढवीकाइया के०) पृथिवीकायिक, (जाववणस्सइकाइया के०) यावत् वनस्पतिकाय पर्यंत, ए पांच स्थावर जाणवा. (छठावेगइयातसापाणा के०) तथा छठा, कोइ एक त्रस प्राणीउं पण असज्ञी छे (जेसिंणोतक्काइवा के०) जेने तर्क नथी तर्क एटले ए स्तंनछे के, पुरुषछे ए आगल शुंछे ! एवो नाव जेने न उपजे, एटले सारु करवु देखीने कहेके, आ रुडू करेछे एवो नाव जेने नथी, (सन्नातिवा के०) तथा सज्ञा ते जे पूर्वदृष्टनु उलखवु ते जेनें नथी (पन्नातिवा के०) तथा जेनें प्रज्ञा एटले बुद्धि नथी, (मणातिवा के०) तथा जेनें मन नथी, (वईवा के०) तथा जेने वचन नथी, (सयवाकरणाए के०) तथा जेने पोते कार्य करवु नथी, अथवा (अन्नेहिंवाकारावतए के०) बीजा पासे कार्य करावबु नथी, (करतंवासमणुजाणित्तए के०) तथा बीजो कोइ कार्य करतो होय तेने देखीने कहेके, ए रुडू करेछे एम कहीने तेने अनुमोदन आपवु एवो नाव जेनें नथी, (तेविएंबाले के०) ते असज्ञी बाल अज्ञानी जीव, (सव्वेसिंपाणाणं के०) सर्व प्राणीनो (जावसव्वेसिंसत्ताणंके०) यावत् सर्वसत्वनो (दियावाराउवासुत्तेवाजागरमाणेवा के०) दिवसे रात्रे,सुता,जागता, (अमित्तनूत के०) जीवोना अमित्रनूत शत्रुसमान वांछियें कारणके, तेनें तेनु विरति पणु नथी. (मिछासठिया के०)ते मिथ्यात्व सहित (निच्चपसढविउवातचित्तदमा के०) निरंतर शठ एटले परमार्थ नथी जाणता,तथा प्राणघातने विषे जेनु चित्तछे, तथा प्राणीउंने दमना करनार, (तं के०) ते कहेछे (पाणाइवातेजावमिछादसणसल्ले के०) प्राणातिपात मृषावादादिकथी यावत् मिथ्यादर्शन शल्य पर्यंत ए अढार पा

रूपेषु वधकचित्त नोत्पद्यते तथाप्यसावविरतिप्रत्ययत्वात्तेष्वमुक्तवैरएव जवत्यस्य चार्थ
स्य सुखप्रतिपत्तये जगवता तीर्थरुता द्वौ दृष्टांतौ प्रज्ञप्तौ प्ररूपितौ । तद्यथा । सञ्ज्ञिदृष्टां
तोऽसञ्ज्ञिदृष्टांतश्च । अथ कोयं सञ्ज्ञिदृष्टांतो ये केचन इमे प्रत्यक्षासन्ना षड्जिरपि पर्याप्ति
जि पर्याप्तास्कहापोहविमर्शरूपा सञ्ज्ञा विद्यते येषा ते सञ्ज्ञिन पचेंद्रियाणि येषां ते पचेंद्रि
या करणपर्याप्त्या पर्याप्तकाएषा च मध्ये कश्चिदेक षड्जीवनिकायान् प्रतीत्यैवजूतां प्र
तिज्ञा नियम कुर्यात् । तद्यथा । षट्सु जीवनिकायेषु मध्ये पृथिवीकायेनैवैकेन वालुका
शिलोपललवणादिस्वरूपेण रुत्यं कार्यं कुर्या । सचैव रुतप्रतिज्ञस्तेन तस्मिन् तस्मात्
वा करोति कारयतिच शेषकायेन्योऽहं विनिवृत्तस्तस्यच रुतनियमस्यैवजूतोजवत्यध्यव
साय । तद्यथैव खल्वहं पृथिवीकायेन रुत्यं करोमि कारयामिच तस्यच सामान्यरुत
प्रतिज्ञस्य विशेषानिसंधिनैव जवति । तद्यथा । अमुना कृष्णेनामुना श्वेतेन पृथिवी
कायेन कार्यं करोति कारयतिच सतस्मात्पृथिवीकायादनिवृत्तोऽप्रतिहतप्रत्याख्यातपा
पकर्मा जवति । तत्र खननस्थाननिषीदनत्वग्वर्तनोच्चारप्रश्रवणादिकरणक्रियासद्भावा
देवमप्तेजोवायुवनस्पतिष्वपि वाच्यं । तत्राप्कायेन स्नानपानावगाहनजाण्डोपकरण
धावनादिषु प्रयोगस्तेज कायेनापि पचनपाचनप्रकाशनादिषु वायुनापि व्यजनतालवृंते
त्यादिव्यापारादिषु प्रयोजन वनस्पतिनापि कदमूलपुष्पफलपत्रत्वक्शाखाद्युपयोगएव विक
लेंद्रियपचेंद्रियेष्वप्यायोज्यमिति । तयेक कश्चित् षट्स्वपि जीवनिकायेषु अविरतोस
यतत्वाच्च तैरसौ कार्यं सावद्यानुष्ठान स्वय करोति कारयतिच परैस्तस्यच क्वचिदपि निवृत्ते
रजावादेवजूतोध्यवसायोजवति । तद्यथैव खल्वहं षड्जिरपि जीवनिकायैः सामान्येन रु
त्य करोमि न पुनस्तद्विशेषप्रतिज्ञेति । सच तेषु षड्स्वपि जीवनिकायेष्वसयतोऽप्रतिहतप्र
त्याख्यातपापकर्मा जवत्येव मृषावादेपि वाच्यं । तद्यथेद मया वक्तव्यमीदृग्जूतं तु न वक्तव्य
सच तस्मान्मृषावादादनिवृत्तत्वादसयतोजवति । तथा दत्तादानमप्याश्रित्य वक्तव्य । त
द्यथेद मया दत्तादान ग्राह्यमिदतु न ग्राह्यमित्येव मैथुनपरिग्रहेष्वपीति । तथा क्रोधमान
मायालोजेष्वपि स्वयमन्यूह्य वाच्य । तदेवमसौ हिंसादीन्यकुर्वन्नप्यविरतत्वात्तत्प्रत्ययिक
कर्म चिनोतीत्येव देशकालस्वजावविप्रकृष्टेष्वपि जतुष्वमित्रजूतोसौ जवति तत्प्रत्ययिक
च कर्म चिनोतीति सोय सञ्ज्ञिदृष्टांतोऽनिहित । सच कदाचिदेकमेव पृथिवीकाय व्यापाद
यति शेषेषु निवृत्त कदाचिद्द्वावेव त्रिकादिका सयोगाजणनीयायावत्सर्वानपि व्यापा
दयतीति । सचैव सर्वेषा व्यापादकत्वे न व्यवस्थाप्यते सर्वविषयारंजप्रवृत्तेस्तत्प्रवृत्तिरपि
तदनिवृत्ते । यथा कश्चिद्ग्रामघातादो प्रवृत्तोयद्यपिच न तेन विवक्षितकाले केचन पुरुषा
दृष्टास्तथाप्यसौ तत्प्रवृत्तिनिवृत्तेरजावात्तद्योग्यतया तद्घातकइत्युच्यते इत्येव दार्ष्टांति
केप्यायोज्यम् ॥ ८ ॥

शिष्टविमर्शोविद्यते यथा कस्यचित्सञ्जिनोमदमदप्रकाशे स्थाणुपुरुषोचिते देशे किमयं स्थाणुरुत पुरुषइत्येवमात्मककहस्तर्क संजवति नैव तेषामसञ्जिना तर्का संजवतीति । तथा सञ्ज्ञान सञ्ज्ञा पूर्वोपलब्धार्थेतडुत्तरकालपर्यालोचना तथा प्रज्ञान प्रज्ञा स्वबुध्योत्प्रे क्षण,सएवायमित्येवंजूतं प्रज्ञानंच तथा मनन मनोमतिरित्यर्थः । सा चावग्रहादिरूपा त था प्रस्पष्टवर्णा वाक् । साच न विद्यते तेषामिति । यद्यपिच द्वींडियादीना जिव्हेंडियजनवि वरादिकमस्ति तथापि न तेषा प्रस्पष्टवर्णत्व । तथा न चैषा पाप हिंसादिक करोमि कारया मीत्येवजूताध्यवसायपूर्विकामतिस्तथा स्वयं करोम्यन्यैर्वा कारयामीत्येवजूतोध्यवसायो न विद्यते तेषा । तदेवं तेप्यसञ्जिनोबालवद्वाला सर्वेषा प्राणिना घातनिवृत्तेरजावात्तद्यो ग्यतया घातकाव्यापादका । तथाहि । द्वींडियादय परोपघाते प्रवर्तते एव तज्ञक्षणादि ना अनृतजाषणमपि विद्यते तेषामविरतत्वात् केवलं कर्मपरतंत्राणा वागजावस्तथाऽद त्तादानमपि तेषामस्त्येव दव्यादिलक्षणात्तथेदमस्मदीयमिदंच पारक्यमित्येवंजूतविचारा जावाच्चेति । तथा तीव्रनपुंसकवेदोदयान्मैथुनाविरतेश्च मैथुनसञ्जावोपि तथाशनादे स्थाप नात्परिग्रहसञ्जावोपीत्येवं क्रोधमानमायालोजायावन्मिथ्यादर्शनशल्यसञ्जावश्च तेषामव गतव्यस्तजावाच्च ते दिवा रात्रौवा सुप्ताजाग्रदवस्थावा नित्यं प्रशठव्यतिपातचित्तदएमाजव ति । तदेवं दर्शयितुमाह । (तंजहाइत्यादि) तेह्यसञ्जिन क्वचिदपि निवृत्तेरजावा त्तत्प्रत्ययिककर्मबंधोपेताजवति । तद्यथा । प्राणातिपातयावन्मिथ्यादर्शनशल्यवंतो जवति । तदेवंतयाच यद्यपि वैशिष्ट्यमनोवाग्व्यापाररहितास्तथापि सर्वेषा प्राणिना डुःखोत्पादनतया तथा शोचनतया शोकोत्पादनत्वेन तथा जूरणतया जूरण वयोहानि रूप तत्करणशीलतया तथा त्रिज्योमनोवाक्कायेज्य पातन त्रिपातन तद्भावस्तथा यदिवा (तिप्पणयाएत्ति) परिवेदनतया तथा (पिट्टणया) मुष्टिलोष्टप्रहारेण परिता पनतया बहिरंत च पीडया ते चासञ्जिनोपि यद्यपि देशकाले स्वजावविप्रकृष्टाना न सर्वेषा डुःख समुत्पादयति तथापि विरतेरजावात्तद्योग्यतया डुःखपरितापक्लेशादेरप्रतिविरता जवति तत्तजावाच्च तत्प्रत्ययिकेन कर्मणा बध्यते ॥ ९ ॥

इति खलु से असन्निणोवि सत्ता अहोनिसि पाणातिवाए उवक्खाइज्जति जाव अहोनिसि परिग्गहे उवक्खाइज्जति जाव मिच्छादंसणसल्ले उवक्खाइज्ज ति एवंजूतवादी सवजोणियावि खलु सत्ता सन्निणो हुच्चा असन्निणो होंति असन्निणो हुच्चा सन्निणो होंति होच्चा सन्नी अडुवा असन्नी तत्थ से अविवि चित्ता अविधूणित्ता असमुच्छित्ता अणणुतावित्ता असन्निकायाउवा सन्नि

पस्थानकने नथी करता, तो पण तेने विषे अविरतिपणा थकी ते असज्ञी जीवोने कर्म लागेछे (इच्चेवजावणोचेवमणो के०)तथा यद्यपि ते असज्ञीया जीव मनना व्यापार रहित छे, (णोचेववई के०) तथा वचनना व्यापार रहितछे, तथापि (पाणाणजावसत्ताण के०) सर्वप्राणीने यावत् सर्व सत्वने (डुरकणत्ताए के०) डु खने उपजाववे करी, (सोयण त्ताए के०) शोकने उपजाववे करी, (जूरणत्ताए के०) वयनी हानीने करवे करी, (ति प्पणत्ताए के०) मन वचन अने काया ए त्रणेथी पीडवे करी, (पिट्टणत्ताए के०) यष्टि मुष्टिने प्रहारे करी, (परितप्पणत्ताए के०) बाहेर तथा अन्यतरने पीडवे करी, एवा ए वा प्रकारे यद्यपि ते असज्ञीया जीव समस्त जीवोने डु ख नथी उपजावता, तथापि ते विरतिपणाने अनावे सर्वे जीवोने डु खनु उपजाववु, शोक,जूरण, तिप्पण, पिट्टण, यावत् बाह्य तथा अन्यतरनु पीडवु वध बधननु करवु इत्यादिक क्लेशथकी विशेषे करी अनिवृत्याछे अविरति कहेवायछे ते विरतिपणाने अनावे ते जीवो तत्प्रत्ययिक कर्मेकरी बधायछे॥ए॥

॥ दीपिका–अथाऽसज्ञिदृष्टातमाह् । (सेकितमिति) ये इमेऽसज्ञिनस्तद्यथा पृथिवीका यायावद्वनस्पतिकायास्तथा षष्ठाअप्येके त्रसा यावत्समूर्छिमपचेद्रियास्ते सर्वेप्यसज्ञिनो येषा न तर्कोविचार न सज्ञा दीर्घकालसबधिनी न प्रज्ञा स्वबुद्धिकृता न मनोवग्रहादिमति न वाक्स्पष्टवर्णा तथा स्वयं करोमि अन्यँ कारयामि कुर्वतमनुजानामि इत्यभिप्रायोनास्ती ति । तेऽसज्ञिनोबाला सर्वेषा जीवाना घातनिवृत्तेरनावाद्योग्यतया घातकाएव असत्यज्ञापकाअपि अविरतत्वात् अदत्तग्राहिणोपि दध्यादिग्रहणात् तीव्रनपुसकवेदोदया न्मैथुननिवृत्तेरनावाच्च मैथुनप्रवृत्ता परिग्रहवतोपि अशनादे स्थापनात् । एव क्रोधमान मायालोनायावन्मिथ्यादर्शनसशल्यसद्भावश्च तेषां ज्ञेय । ततश्च ते कर्मबधका स्यु । त था यद्यपि ते विशिष्टमनोवाग्व्यापाररहितास्तथापि सर्वजतूना (डु खणत्ताएत्ति) डु खो त्पादनतया शोचनतया शोकोत्पादनत्वेन जूरण वयोहानिस्तत्कारणतया त्रिन्योमनोवा क्कायेन्य पातन त्रिपातन तद्भावस्तया (पिट्टणयाए) मुष्टिलोष्टादिन्नि कुट्टनेन परिताप नया बहिरतश्च पीडया तेऽसज्ञिनोयद्यपि दूरस्थाना विषयगताना जीवानां डु ख नोत्पा दयंति तथाप्यविरतत्वाद्दु खशोचनादेरविरता स्युस्ततश्च कर्मणा बध्यंते ॥ ए ॥

॥ टीका–सज्ञिदृष्टांतानतरमसज्ञिदृष्टांत प्रागुपन्यस्त सोऽधुना प्रतिपाद्यते । (सेकिंत असन्निदिठ्ठतेइत्यादि) सज्ञान सज्ञा सा विद्यते येषां ते सज्ञिनस्तत्प्रतिषेधादसज्ञिनोमन सोऽव्यतया अनावात्तीव्राऽतीव्राध्यवसायविशेषरहिता प्रसुप्तमत्तमूर्छितादिवदिति । ये इ मे सज्ञिनस्तद्यथा पृथिवीकायिकायावद्वनस्पतिकायिकास्तथा षष्ठाअप्येके त्रसा प्राणिनो विकलेंद्रियायावत्समूर्छिन पचेंद्रियास्ते सर्वेप्यसज्ञिनोयेषा न तत्कार्य विचारोमीमासावि

न्निकायाउवाअसन्निकायंसकमतिके०) बीजो नग, सज्ञिकाय थकी असज्ञिकाये सक्रमे, (सन्निकायाउवासन्निकायंसकमति के०) त्रीजो नग, सज्ञिकाय थकी सज्ञिकाये सक्रमे (असन्निकायाउवाअसन्निकायंसकमति के०) चोथो नग, असज्ञिकाय थकी असज्ञिकाये सक्रमे, एव चतुर्नग जाणवा (जेएएसन्निवाअसन्निवा के०) जे ए सज्ञिया अथवा असज्ञीया ठे (सवेतेमिछायारा के०) ए सर्व अपच्चरकाणीने नावे मिथ्याचार वाला जाणवा ते सर्व जीवने विषे नित्य अत्यत शठ एटले मूर्ख पणु ठता प्राणीघातने विषे जेनु चित्तठे तथा प्राणिउने दमना करनार केवाय यावत् मिथ्यादर्शन शल्य पर्यंत अ ढारे पापस्थानकना करनार ते केवाय ए रीतें नगवत श्री महावीरदेवे कह्युके जे असयति अविरति अप्रतिहत प्रत्याख्यान पापकर्म वाला, तथा सक्रिय असवर एकात दमना करनारा, एकांत बाल, एकात सुता कह्या ते बाल अविचारित मन वचन अने कायाना परिणाम वाला ठता जे पापकर्म स्वप्नातरे पण न देखे, तेनु पण कर्म तेने लागे ॥१०॥

॥ दीपिका–इति अमुना प्रकारेण । खलु वाक्यालकारे । ते पृथ्वीकायादयोऽसज्ञिन सतोऽहर्निश प्राणातिपाते कर्तव्ये तद्योग्यतया तदसप्राप्तावपि ग्रामघातकवदुपाख्यायते यावन्मिथ्यादर्शनशल्ये उपाख्यायते।तेच कर्मवशात्सर्वयोनिकाअपि जीवा पर्याप्त्यपेक्षया यावन्मन पर्याप्तिर्न निष्पद्यते तावत्करणतोऽसज्ञिन सत पश्चात्सज्ञिनोनवत्येकस्मि न्नेव जन्मनि । अन्यजन्मनितु एकेंड्रियादयोपि मनुष्यादय स्यु ।पर नव्यानव्यत्ववन्न नि यम । नव्यानव्यत्वेहि न कर्मायत्ते।अतोन तान्या व्यनिचार । ये पुन कर्मवशगास्ते पुन सज्ञिनोनूत्वाऽन्यत्रासज्ञिन स्यु असज्ञिनश्च नूत्वा सज्ञिनइति । तत्र यत्कर्म बद्धम स्ति तस्मिन् सत्येव तदविविच्यापृथक् कृत्याऽविधूयाऽसमुच्छियाऽननुताप्याएते चत्वारो पि शब्दाएकार्थिका । तदेवमत्यक्तकर्माणोऽसज्ञिकायात्सज्ञिकाय सक्रामति सज्ञिकायाद सज्ञिकायच सज्ञिकायात्सज्ञिकाय असज्ञिकायादसज्ञिकायच । एव चत्वारोनगा । उप सहरन्नाह । (जेएतेजीवन्ति) ये एते पर्याप्ताअपर्याप्ता सज्ञिनोऽसज्ञिनोवा सर्वे ते मिथ्याचाराअविरतत्वात् तथा सर्वयमपु नित्य प्रशठव्यतिपातचित्तदमा स्युरेवनूताश्च प्रा णातिपातादिषु सर्वेष्वप्याश्रवद्वारेषु वर्ततइति (एवखलुत्ति) एवमुक्तनीत्या खलु निश्चि तं नगवता आख्यातमित्यादिना पूर्वोक्तमनुवदति । यावत्पाप कर्म क्रियतइति ॥ १० ॥

॥ टीका–तदेव विप्रकृष्टविषयमपि कर्मबध प्रदर्श्योपसजिहीर्षुराह । (इतिखलुतेइत्या दि) इति रूपप्रदर्शने।खलुशब्दोवाक्यालकारे विशेषणे वा। किं विशिनष्टि । ये इमे पृथि वीकायादयोऽसज्ञिन प्राणिनस्तेषा नतर्को,नसज्ञा, नमनो, नवाक्, नस्वय कर्तु नान्येन

काय संकमति सन्निकायाउवा असन्निकाय संकमति सन्निकायाउवा स न्निकाय संकमति असन्निकायाउवा असन्निकाय संकमति जे एए सन्नि वा असन्निवा सवे ते मिछायारा निच्च पसढविउवायचित्तदमा त पाणा तिवाए जाव मिछादसणसल्ले एव खलु भगवया अक्खाए असजए अ विरए अपडिहयपच्चक्खायपावकम्मे सकिरिए असवुडे एगतदंडे ए गतवाले एगतसुत्ते से वाले अवियारमणवयकायवक्के सुविणमवि ण प सइ पावेयसे कम्मे कज्जइ ॥ १० ॥

अर्थ–(इतिखलुसेअसन्निणोविसत्ता के०) एणी परें निश्चे ते पृथिवीकायादिक असञ्ज्ञी जीव बता पण (अहोनिसिपाणातिवाए के०) रात्री दिवस प्राणातिपातने विषे,(उवक्खा इज्जति के०) कहिये, एटले तेने प्राणातिपातनु कर्म लागे, एम बोलिये (जावअहोनि सिपरिग्गहउवक्खाइज्जति के०) यावत् रात्री दिवस परिग्रहने विषे प्रवर्त्तता बोलिये, क हिये (जावमिछादसणसल्लेउवक्खाइज्जति के०) यावत् मिथ्यादर्शन शल्यने विषे प्रवर्त्तता कहिये, माटे असञ्ज्ञियाने पण पापकर्मनो उपाख्यान विरतिने अनावे कहिये हवे शिष्य पूछे छे के, एवनूतएटले वेदातवादी एम कहे छे के,जे पुरुषछे ते पुरुष पणुज पामे, अने जे पशु होय ते पशु पणुज पामे,तेम आही जैनशासनने विषे पण जे सञ्ज्ञिया ते सञ्ज्ञी पणुज पामे अने जे असञ्ज्ञीया ते असञ्ज्ञी पणुज पामे छे किवा बीजी कोइ रीतें छे? ते कहो एम पूछे बते शिष्य प्रत्ये आचार्य कहेछे (सवजोणियाविखलुसत्तासन्निणोहुच्चा के०) निश्चे सर्वयोनिक सत्व एटले जीव सञ्ज्ञिया पणे होइने (असन्निणोहोति के०) असञ्ज्ञिया पण होय, (असन्निणोहुच्चासन्निणो होति के०)असञ्ज्ञिया होइने सञ्ज्ञिया होय (होच्चासन्नीअडवाअसन्नी के०) एम सञ्ज्ञी अथवा असञ्ज्ञी होय एटले वेदातवादिनो पक्ष निराधार थयो, तथा कोइ एक सञ्ज्ञी पण तेज नवमा मूर्छादिकनी अवस्थाये असञ्ज्ञी थाय एम एकज नवमाहे सञ्ज्ञीया माहेथी असञ्ज्ञीउ थाय, मूर्छाने अनावे ते वली सञ्ज्ञीउ पण थाय, जो एकज नवमा एमछे तो जन्मातरनु केवुज शु । जेम कोइ एक जागतो मनुष्य निद्राना उदय थकी सुतो थको वली निद्राने अनावे जागतोज कहेवाय ए दृष्टात सञ्ज्ञी असञ्ज्ञी उपर जाणवो (तछसेअविविचित्ता के०) त्या ते जीवे पूर्वेनु कर्म जे बाध्युछे अथवा उदय आव्युछे तेने पृथक् अणकीधे, तथा (अविधूणित्ता के०) अण खपावे, तथा (असमुछित्ताके०) अणछेदे, (अणणुताविता के०) अण तपावे, थके (असन्निकाया उवासन्निकायंसकमति के०) पहेलो नग, असञ्ज्ञिकाय थकी सञ्ज्ञिकाये सक्रमे (स

प्रका अन्योन्यसंक्रमनाज सज्ञिनोऽसज्ञिनोवा सर्वेप्येते मिथ्याचाराअप्रत्याख्यानित्वादि त्यजिप्राय । तथा सर्वजीवेष्वपि नित्य प्रशठव्यतिपातचित्तदमाजवतीत्येवनूताश्च प्राणा तिपाताद्येषु सर्वेष्वप्याश्रवद्वारेषु वर्ततइति ॥ तदेव व्यवस्थिते यत्तडुक्त चोदकेन तद्य थेह्राविद्यमानाऽशुजयोगसजवे कथ पापं कर्म बध्यतइत्येतन्निराकृत्य विरतेरजावात्तद्योग्य तया पापकर्मसङ्गाव दर्शयति । (एव खलुइत्यादि) एवमुक्तनीत्या । खल्ववधारणे ऽल कारे वा । जगवता तीर्थकृतेत्यादिना यत्प्राक् प्रतिज्ञातं तदनुवदति । यावत्पाप च कर्म क्रियतइति ॥ १० ॥

चोदक से किंकुव किंकारव कह सजयविरयप्पडिहयपच्चक्खायपावकम्मे जवइ आचार्यआह तच खलु जगवया ठज्जीवणिकायहेऊ पणत्ता तं जहा पुढवीकाइया जाव तसकाइया से जहा णामए मम अस्सात दमेणवा अठीणवा मुठीणवा लेलूणवा कवालेणवा आतोमिज्जमाण स्सवा जाव उद्दविज्जमाणस्सवा जाव लोमुक्खणणमायमविहिंसाकार डुक्ख जय पडिसवेदेमि इच्चेव जाण सवे पाणा जाव सवे सत्ता दमेणवा जाव कवालेणवा आतोमिज्जमाणेवा हम्ममाणेवा तज्जिज्जमाणेवा ता लिज्जमाणेवा जाव उद्दविज्जमाणेवा जाव लोमुक्खणणमायमविहिंसा कार डुक्ख जय पडिसवेदेति एव णच्चा सवे पाणा जाव सवे सत्ता न हतवा जाव ण उद्दवेयवा एस धम्मे धुवे णिइए सासए समिच्चलोग खेयन्नेहिं पवेदिए एव से जिक्खू विरते पाणाइवायातो जाव मिच्छादसणसल्लाउ से जिक्खू णो दतपक्खालेण दतेपक्खालेज्जा णो अजण णो वमण णो धूव ण तपि न आढते से जिक्खू अकिरिए अलूसए अकोहे जाव अलोजे उवसते परिनिवुमे एस खलु जगवया अक्खाए सजयविरयपडिहय पच्चक्खायपावकम्मे अकिरिए सवुमे एगतपमिएयावि जवइ त्तिबेमि॥ इति बीयसुयक्खधस्स पच्चक्खाण किरियाणाम चउत्थ मज्झयण सम्मत्त॥ ११॥

अर्थ-(चोदक के०) हवे वली शिष्य पूछे के हे जगवन् ! (सेकिंकुवकिंकारवकहसजय के०)ते जीव केवा अनुष्ठान करतो,केवा अनुष्ठान करावतो,केवा प्रकार सयत (विरय के०) विरति (प्पडिहयपच्चक्खायपावकम्मेजवइ के०) प्रतिहत प्रत्याख्यान पापकर्मा होय, ते कहो? एवु सांजलीने (आचार्याह के०) आचार्य बोल्या (तउखलुजगवयाठज्जी

कारयितु न कुर्वतमनुमतु वा प्रवृत्तिरस्ति। ते चाऽहर्निशममित्रनूतामिथ्यासंस्थितानित्यं प्रशव्यतिपातचित्तदण्डखोत्पादनतया यावत्परितापनपरिक्लेशादेरप्रतिविरताअसज्ञिनो पि सतोऽहर्निशं सर्वकालमेव प्राणातिपाते कर्तव्ये तद्योग्यतया तदसप्राप्तावपि ग्रामघातकवडुपाख्यायंते यावन्मिथ्यादर्शनशल्यउपाख्यायंतइति । उपाख्यान वा सज्ञिनोपि । योग्यतया पापकर्मानिवृत्तेरित्यनिप्राय । तदेव दर्शिते दृष्टातद्वये तत्प्रतिबद्धमेवार्थशेष प्रतिपादयितु चोद्य क्रियते ।तद्यथा। किमेते सत्वा सज्ञिनश्च नव्यानव्यत्ववन्नियतरूपा एवाहोस्वित्सज्ञिनोनूत्वाऽसज्ञित्व प्रतिपद्यते।असज्ञिनोपि सज्ञित्वमित्येव चोदिते सत्वा द्दाचार्य (सव्वजोणियाविखलुइत्यादि) यदिवा सत्येवनूतावेदातवादिनोयएव प्रतिपादयंति पुरुष पुरुषत्वमश्नुते पशुरपि पशुत्वमिति। तदत्रापि सज्ञिन सज्ञिनएव नविष्यत्यसज्ञिनो प्यसज्ञिनइति । तन्मतव्यवच्छेदार्थमाह ।(सव्वजोणियावीत्यादि) यदिवा किं सज्ञिनोऽसज्ञि कर्मबध प्राक्तने सत्येव कर्मणि कुर्वंति किंवा नेत्येवमसज्ञिनोपि सज्ञिकर्मबध प्राक्तने सत्येव कुर्वत्याहोस्विन्नेत्येतदाशक्याह । (सव्वजोणियावीत्यादि) सर्वायोनयोयेषा ते सर्वयो नय सवृतविवृतोनयशीतोष्णनयसचित्ताऽचित्तोनयरूपायोनयइत्यर्थ । तेच नारकतिर्यङ् नरामराश्चपिशब्दाद्विशिष्टैकयोनयोपि । खल्विति विशेषणे । एतद्विशिनष्टि । तज्जन्मापेक्षया सर्वयोनयोपि सत्वा पर्याप्त्यपेक्षया यावन्मन पर्याप्तिर्न निष्पद्यते तावदसज्ञिन करणत सत पश्चात्सज्ञिनोनवत्येकस्मिन्नेव जन्मन्यन्यजन्मापेक्षयात्वेकेंद्रियादयो पि सत पश्चान्मनुष्यादयोनवतीति । तथानूतकर्मपरिणामात् पुनर्नव्यानव्यत्ववन्न व्यवस्थानियमोनव्यानव्यत्वे हि न कर्मायत्ते अतोनानयोर्व्यनिचार ।ये पुन कर्मवशगास्ते सज्ञिनोनूत्वाऽसज्ञिनोनवत्यसज्ञिनश्च नूत्वा सज्ञिनइति वेदांतवादिमतस्य प्रत्यक्षेणैव व्यनिचार समुपलन्यते । तद्यथा । सज्ञ्यपि कश्चिन्मूर्छाद्यवस्थायामसज्ञित्व प्रतिपद्यते तदपगमेतु पुन सज्ञित्वमिति ज मातरे तु सुतरा व्यनिचारइति । तदेव सज्ञ्यसज्ञिनो कर्मपरतंत्रत्वादन्योन्यानुगतिरविरुद्धा । यथा प्रतिबुद्धोनिद्रोदयात्स्वपिति सुप्तश्च प्रतिबुध्यते इत्येव स्वापप्रतिबोधयोरन्योन्यानुगमनमेवमिहापीति । तत्र प्राक्तन कर्म यदुदीर्णं यच्च बद्धमास्ते तस्मिन् सत्येव तदविविच्यापृथक्कृत्य तथाऽविधूयाऽसमुच्छिद्याऽननुताप्यैते चाविविच्यादयश्चत्वारोप्येकार्थिकाश्चवस्थाविशेष चाश्रित्य नेदेन व्याख्यातव्या । तदेवमपरित्यक्तप्राक्तनकर्मणोऽसज्ञिकायात्सज्ञिकाय सक्रामति तथा सज्ञिकायादसज्ञिकाय मिति । तथा नारका सावशेषकर्माणएव नरकादुद्धृत्य प्रतनुवेदनेषु तिर्यक्षूत्पद्यते एव देवाश्चपि प्रायशस्तत्कर्मशेषतया शुनस्थानेपूत्पद्यते इत्यवगतव्य ।अत्र चतुर्नंगकसनव सूत्रेणैव दर्शयति । साप्रतमध्ययनार्थमुपसजिघृक्षु प्राक् प्रतिपन्नमर्थं निगमयन्नाह । (जेए तेसेत्यादि) ये एते सर्वानिरपि पर्याप्तिनि पर्याप्ता लब्ध्या करणेन च द्विकलाश्चापर्या

मका अन्योन्यसंक्रमनाज संज्ञिनोऽसंज्ञिनोवा सर्वेप्येते मिथ्याचाराअप्रत्याख्यानित्वादि त्यभिप्राय । तथा सर्वजीवेष्वपि नित्य प्रशठव्यतिपातचित्तदमानवतीत्येवभूताश्च प्राणातिपाताद्येषु सर्वेष्वप्याश्रवद्वारेषु वर्ततइति ॥ तदेव व्यवस्थिते यत्तडुक्त चोदकेन तद्यथेहाविद्यमानाऽशुभयोगसभवे कथं पापं कर्म बध्यतइत्येतन्निराकृत्य विरतेरभावात्तद्योग्यतया पापकर्मसद्भाव दर्शयति । (एव खलुइत्यादि) एवमुक्तनीत्या । खल्ववधारणेऽलकारे वा । भगवता तीर्थकृतेत्यादिना यत्प्राक् प्रतिज्ञातं तदनुवदति । यावत्पाप च कर्म क्रियतइति ॥ १० ॥

चोदक मे किकुव किकारव कह संजयविरयपडिहयपच्चखायपावकम्मे भवइ आचार्यआह तछ खलु भगवया छज्जीवणिकायहेउ पण्णत्ता त जहा पुढवीकाइया जाव तसकाइया से जहा णामए मम अस्सात दमेणवा अट्ठीणवा मुट्ठीणवा लेलूणवा कवालेणवा आतोडिज्जमाणस्सवा जाव उद्दविज्जमाणस्सवा जाव लोमुक्खणणमायमविहिंसाकार डुक्ख भय पडिसवेदेमि इच्चेव जाण सवे पाणा जाव सवे सत्ता दमेणवा जाव कवालेणवा आतोडिज्जमाणेवा हम्ममाणेवा तज्जिज्जमाणेवा तालिज्जमाणेवा जाव उद्दविज्जमाणेवा जाव लोमुक्खणणमायमविहिंसा कार डुक्ख भय पडिसवेदेति एव णच्चा सवे पाणा जाव सवे सत्ता न हंतवा जाव ण उद्दवेयवा एस धम्मे धुवे णिइए सासए समिच्चलोग खेयन्नेहिं पवेदिए एव से भिक्खू विरते पाणाइवायातो जाव मिच्छादसणसल्लाउ से भिक्खू णो दतपक्खालेण दतेपक्खालेज्जा णो अजण णो वमण णो धूवण तपि न आदते से भिक्खू अकिरिए अलूसए अकोहे जाव अलोभे उवसते परिनिवुडे एस खलु भगवया अक्खाए संजयविरयपडिहयपच्चखायपावकम्मे अकिरिए सवुडे एगतपडिएयावि भवइ त्तिबेमि ॥ इति बीयसुयक्खधस्स पच्चक्खाण किरियाणाम चउत्थ मज्झयण सम्मत्त॥११॥

अर्थ--(चोदक के०) हवे वली शिष्य पूछे छे के हे भगवन्! (सेकिंकुवकिकारवकहसजय के०)ते जीव केवा अनुष्ठान करतो,केवा अनुष्टान करावतो,केवा प्रकार सयत (विरय के०) विरति (पडिहयपच्चखायपावकम्मेभवइ के०) प्रतिहत प्रत्याख्यान पापकर्मा होय, ते कहो? एवु सांभलीने (आचार्याह के०) आचार्य बोल्या (तछखलुभगवयाछज्जी

वणिकायहेउपसुत्ता के०) त्या सयत पणाने जावे जगवत् श्री वीतराग देवे छ जीवनि काय कारण कह्याछे (तंजहा के०) ते कहेछे (पुढवीकाइयाजावतसकाइया के०) पृथिवी कायथी माण्डीने यावत् त्रसकाय पर्यंत छे (सेजहाणामए के०) तेने जेम नाम एवो सजाव नाये (ममअस्सातं के०) मुजने अशाता उपजे छे ते प्रमाणे दण्डे करी हणता थका अस्थिये करी, मुष्टिये करी, पाषाणे करी, कपाल एटले ठीकरीये करी ताडता थका यावत् उद्वेग करता थका, एटले जीव काया थकी रहित करता थका, एक रोम उखेड वा मात्रे करीपण हिंसाकारक डुःख तथा जय हु वेडु ए रीते जाणवु के, सर्व प्राणी यावत् सर्व सत्वने महारी पेठें दण्डना प्रहारे करी, कपाल एटले ठीकरीये करी आक्रोश करावता ताडता थका, अथवा हणता थका, तर्ज्जनाकरता थका, यावत् उद्वेग करता थका, एक रोम मात्र उखेडवु एवु पण हिंसाकारी, कारण ते थकी ते जीवो पण डुःख अने जय एवुज वेदे (एवणच्चा के०)एम जाणीने सर्वप्राणी यावत् सर्व सत्वने हणवा नहीं, यावत् उपद्रववा नहीं, ए प्राणीनो दया लक्षण धर्म, ते ध्रौव, नित्य, शाश्वतो, एवो चउद रज्ज्वात्मक लोक जाणीने आलोचीने षट्जीवनिकायरूप डुःख समुद्रमा पड्यो ते पर जीवना डुःखना जाण, एवा खेदज्ञ श्रीजगवत तीर्थंकर देव तेणे जाष्यो छे (एवसेजिक्खू के०) एवु जाणीने ते साधु प्राणातिपात मृषावादादिक यावत् मिथ्यात्व दर्शन शल्य ए अढार पापस्थानक थकी निवृत्त्यो, तथा ते जिक्षु दत धावनें करी दत प्र क्षाले नहीं एमज अजन वमन विरेचनादिकक्रिया न करे, धूपन एटले वस्त्रादिकनु धूपन न करे (तपिनआदते के०) एटलावाना पोते आदरे नहि ते जिक्षु चारित्रिर्ड क्रिया रहित ढजीवनिकायनो अहिंसक तथा क्रोध रहित यावत् मान, माया, लोज रहित उ पशात एटले समाधिवत परिनिवृत्त एवो छतो होय तेनें निश्चे सयत विरति प्रतिहत पापकर्मा एटले पच्चरकाणे करी पापकर्मने हणनार, क्रिया रहित सवृत्त, एकात पमित एम जगवते कह्योछे त्तिबेमिनो अर्थ पूर्ववत् जाणवो ॥ ११ ॥ ए श्री सुयगडाग सूत्रना बीजा श्रुतस्कधनें विषे प्रत्याख्यान क्रियानामा चोथा अध्ययननो सक्षेपार्थ बालावबोध समाप्त थयो ॥ ११ ॥

॥ दीपिका–अथ सजातवैराग्य शिष्य प्रश्न करोति (सेकिंकुव्वमित्यादि) अथ किं कुर्वन् किंवा कारयन् कथ वा सयतविरतप्रतिहतप्रत्याख्यानपापकर्मा जतु स्यात् ? । आचार्ययाह । (तत्थखलुत्ति । तत्र सयतत्वसद्भावे । जगवता षड्जीवनिकायाहेतव प्रज्ञप्ता । तद्यथा । पृथिवीकाया यावत्त्रसकाया । यथाऽविरतस्य षड्जीवनिकाया नरकादिगतिहेतुत्वेनोक्तास्तथा विरतस्य तएव मोक्षहेतवोजवति । यदुक्त । " जेजत्ति

यायहेऊ, नवस्सते चेव वत्तिया मोरके ॥ गणणाईया लोया, दोसुहवि पुसा नवे तुल्लाइति (सेजहत्ति) तद्यथा नाम ममासातं दुःख दण्डादिना नोद्यमानस्य पीड्यमानस्य नवति रोमोत्खननमात्रमपि दुःखमहं प्रतिसंवेदयामि अनुनवामि ततइत्येव जानीहि त्वं सर्वेपि जीवादण्डादिना ताड्यमानादुःखिनः स्युः रोमोत्खननमात्रमपि दुःखमनुनवति । एवं ज्ञात्वा सर्वे प्राणान हंतव्या (एसधम्मेत्ति) एषधर्मोध्रुवोनित्यः परिणामानित्यतायामपि सत्या स्वरूपाच्यवनात्तया सूर्योज्ञतिरिव शश्वद्भवनात् शाश्वतः समेत्यावगम्य लोकं चतुर्दशरज्जुमितं खेदज्ञैः सर्वज्ञैः प्रवेदितं । तदेवं स निक्कुर्निवृत्तः सर्वाश्रवेन्योदतप्रक्षालनं न कुर्यात् न नेत्राजनं न वमनविरेचनादि वस्त्रधूपनंच न आदत्ते स निक्कुः क्रोधादिरहितोऽलूशकोऽहिंसकोयावदेकांतेन पण्डितोनवतीति । ब्रवीमीति पूर्ववत् ॥ ११ ॥ इति सूत्रकृतांगदीपिकायां द्वितीयश्रुतस्कंधस्य चतुर्थाध्ययनं समाप्तम् ॥ ४ ॥

॥ टीका—तदेवमप्रत्याख्यानिनः कर्मसंनवात्तत्संनवाच्च नारकतिर्यङ्नरामरगतिलक्षणं संसारमवगम्य संजातवैराग्यश्चोदकआचार्यं प्रति प्रवणचेताः प्रश्नयितुमाह । (सेकिंकुवं मित्यादि) अथ किमनुष्ठानं स्वतः कुर्वन् किंवा परं कारयन् कथंवा केन प्रकारेण संयतविरतप्रतिहतपापकर्मा जंतुर्नवति । संयतस्य हि विरतिसद्भावात्सावद्यक्रियानिवृत्तिस्तन्निवृत्तेश्च कृतकर्मसंचयान्नावस्तदनावान्नरकादिगत्यनावइत्येवं पृष्टे सत्याचार्यआह । (तत्थखलु इत्यादि) तत्र संयमसद्भावे षड्जीवनिकायानगवता हेतुत्वेनोपन्यस्ता । यथा प्रत्याख्यानरहितस्य षड्जीवनिकायाः संसारगतिनिबंधनत्वेनोपन्यस्ताएवं तएव प्रत्याख्यानिनोमोक्षाय नवतीति । तथा चोक्तं । "जेजेत्तियायहेऊ, नवस्सते चेव वत्तिया मोरके ॥ गणणाईया लोगा, दोसुहवि पुण्हा नवे तुल्लाइत्यादि" । इदमुक्तं नवति । यथात्मनोदण्डाद्युपघाते दुःखमुत्पद्यते एवं सर्वेषामपि प्राणिनामित्यात्मोपमया तदुपघातान्निवर्तते एषधर्मः सर्वोपायत्राणलक्षणोध्रुवोऽप्रच्युतानुत्पन्नस्थिरस्वनावोनित्यइति परिणामानित्यतायामपि सत्यां रूपाद्यच्यवनात् तथा आदित्योज्ञतिरिव शश्वद्भवनाच्छाश्वतः परैः कचिदप्यस्खलितायुक्तिसंगतत्वादित्यनिप्रायोयमेवंनूतश्च धर्मः समेत्यावगम्य लोकं चतुर्दशरज्ज्वात्मकं खेदज्ञैः सर्वज्ञैः प्रवेदितस्तदेवं स निक्कुर्निवृत्तश्च सर्वाश्रवद्वारेन्योदतप्रक्षालनादिकां क्रियां कुर्वन् सावद्यक्रियायाअनावादक्रियोऽक्रियत्वाच्च प्राणिनामलूपकोऽव्यापादकयावदेकांतेनैवासौ पण्डितानवति । इति परिसमाप्त्यर्थे । ब्रवीमीति पूर्ववत् नया प्राग्वद्व्याख्येया ॥ ११ ॥ समाप्तं प्रत्याख्यानाख्यं चतुर्थमध्ययनमिति ॥ ४ ॥

वणिकायहेउपस्सुत्ता के०) त्या सयत पणाने जावे नगवत् श्री वीतराग देवें ठ जीवनि काय कारण कह्याठे (तंजहा के०) ते कहेठे (पुढवीकाइयाजावतसकाइया के०) पृथिवी कायथी मांमीने यावत् त्रसकाय पर्यंत ठे (सेजहाणामए के०) तेने जेम नाम एवा सनाव नाये (ममअस्सात के०) मुजने अशाता उपजे ठे ते प्रमाणे दंमे करी हणता थका अस्थिये करी, मुष्टिये करी, पाषाणे करी, कपाल एटले ठीकरीये करी ताडता थका यावत् उद्वेग करता थका, एटले जीव काया थकी रहित करता थका, एक रोम उखेड वा मात्रे करीपण हिंसाकारक कुःख तथा नय हुं वेडं ए रीते जाणवुं के, सर्व प्राणी यावत् सर्व सत्वने महारी पेठें दंमना प्रहारे करी, कपाल एटले ठीकरीयें करी आक्रोश करावता ताडता थका, अथवा हणता थका, तर्जनाकरता थका, यावत् उद्वेग करता थका, एक राम मात्र उखेडवुं एवुं पण हिंसाकारी, कारण ते थकी ते जीवो पण कुःख अने नय एवुंज वेदे (एवणच्चा के०)एम जाणीने सर्वप्राणी यावत् सर्व सत्वने हणवा नहीं, यावत् उपड्रववा नहीं, ए प्राणीनो दया लक्षण धर्म, ते ध्रौव, नित्य, शाश्वतो, एवो चउद रज्ज्वात्मक लोक जाणीने आलोचीने षट्जीवनिकायरूप कुःखसमुड्मां पड्यो ते पर जीवना कुःखना जाण, एवा खेदज्ञ श्रीनगवत तीर्थंकर देव तेणे नाष्यो ठे (एवसेनिक्कू के०) एवुं जाणीने ते साधु प्राणातिपात मृषावादादिक यावत् मिथ्यात्व दर्शन शल्य ए अढार पापस्थानक थकी निवृत्त्यो, तथा ते निक्कु दंत धावनें करी दंत प्र क्षाले नहीं एमज अंजन वमन विरेचनादिकक्रिया न करे, धूपन एटले वस्त्रादिकनुं धूपन न करे (तपिनआदले के०) एटलावाना पोते आदरे नहि ते निक्कु चारित्रिउ क्रिया रहित ठजीवनिकायनो अहिंसक तथा क्रोध रहित यावत् मान, माया, लोन रहित उ पशांत एटले समाधिवंत परिनिवृत्त एवो ठतो होय तेनें निश्चे संयत विरति प्रतिहत पापकर्मा एटले पच्चरकाणे करी पापकर्मने हणनार, क्रिया रहित संवृत्त, एकांत पमित एम नगवते कह्योठे त्तिबेमिनो अर्थ पूर्ववत् जाणवो ॥ ११ ॥ ए श्री सुयगडांग सूत्रना बीजा श्रुतस्कंधनें विषे प्रत्याख्यान क्रियानामा चोथा अध्ययननो संक्षेपार्थ बालावबोध समाप्त थयो ॥ ११ ॥

॥ दीपिका–अथ सजातवैराग्य शिष्य प्रश्न करोति (सेकिंकुव्वमित्यादि) अथ किं कुर्वन् किंवा कारयन् कथं वा संयतविरतप्रतिहतप्रत्याख्यानपापकर्मा जंतुः स्यात् ? । आचार्यआह । (तत्त्वखलुत्ति । तत्र संयतत्वसद्भावे । नगवता षड्जीवनिकायाहेतव प्रज्ञप्ता । तद्यथा । पृथिवीकाया यावत्त्रसकाया । यथाऽविरतस्य षड्जीवनिकाया नरकादिगतिहेतुत्वेनोक्तास्तथा विरतस्य तएव मोक्षहेतवोनवति । यडुक्त । " जेजत्ति

यायदेक, नवस्सते चेव वत्तिया मोस्के ॥ गणणाईया लोया, दोसहवि पुस्रा नवे तुल्लाइति (सेजहत्ति) तद्यथा नाम ममासातं डुःख दमादिना नोद्यमानस्य पीड्यमानस्य नवति रोमोत्खननमात्रमपि डुःखमहं प्रतिसंवेदयामि अनुनवामि ततइत्येव जानीहि त्वं सर्वे पि जीवादमादिना ताड्यमानाडुःखिनः स्युः रोमोत्खननमात्रमपि डुःखमनुनवंति । एवं ज्ञात्वा सर्वे प्राणाः न हंतव्या (एसधम्मेत्ति) एषधर्मोध्रुवोनित्यः परिणामानित्यतायाम पि सत्या स्वरूपाच्यवनात्तथा सूर्योजतिरिव शश्वन्नवनात् शाश्वतः समेत्यावगम्य लोकं चतुर्दशरज्जुमितं खेदज्ञैः सर्वज्ञैः प्रवेदितः । तदेवं स निकुर्निवृत्तः सर्वाश्रवेन्योदतप्रक्षा लनं न कुर्यात् न नेत्रांजनं न वमनविरेचनादि वस्त्रधूपनंच न आदत्ते स निकुः क्रोधा दिरहितोऽलूशकोऽहिंसकोयावदेकांतेन पमितोनवतीति । ब्रवीमीति पूर्ववत् ॥ ११ ॥ इति सूत्रकृतांगदीपिकायां द्वितीयश्रुतस्कंधस्य चतुर्थाध्ययनं समाप्तम् ॥ ४ ॥

॥ टीका–तदेवमप्रत्याख्यानिनः कर्मसंनवात्तत्संनवाच्च नारकतिर्यङ्नरामरगतिलक्षणं संसारमवगम्य संजातवैराग्यश्चोदकआचार्यं प्रति प्रवणचेताः प्रश्नयितुमाह । (सेकिंकुव्वं मित्यादि) अथ किमनुष्ठानं स्वतः कुर्वन् किंवा परं कारयन् कथवा केन प्रकारेण संयत विरतप्रतिहतपापकर्मा जंतुर्नवति । संयतस्य हि विरतिसद्भावात्सावद्यक्रियानिवृत्तिस्तन्निवृ त्तेश्च कृतकर्मसंचयानावस्तदनावान्नरकादिगत्यनावइत्येवं पृष्टे सत्याचार्यआह । (तत्रखलु इत्यादि) तत्र संयमसद्भावे षड्जीवनिकायानगवता हेतुत्वेनोपन्यस्ता । यथा प्रत्याख्या नरहितस्य षड्जीवनिकायाः संसारगतिनिबंधनत्वेनोपन्यस्ताएवं तएव प्रत्याख्यानिनोमो क्षाय नवतीति । तथा चोक्तं । “जेजेत्तियायहेऊ, नवस्सते चेव नत्तिया मोस्के॥ गणणाईया लोगा, दोसहवि पुस्रा नवे तुल्लाइत्यादि” । इदमुक्तं नवति । यथात्मनोदमाद्युपघाते डुःखमुत्पद्यते एवं सर्वेषामपि प्राणिनामित्यात्मोपमया तडुपघातान्निवर्तते एषधर्मः सर्वोपा यत्राणलक्षणोध्रुवोऽप्रच्युतानुत्पन्नस्थिरस्वनावोनित्यइति परिणामानित्यतायामपि सत्या रूपायच्यवनात् तथा आदित्योजतिरिव शश्वन्नवनाच्छाश्वतः परे क्वचिदप्यस्खलितोयुक्ति संगतत्वादित्यनिप्रायोयमेवंनूतश्च धर्मः समेत्यावगम्य लोकं चतुर्दशरज्ज्वात्मकं खेदज्ञैः सर्वज्ञैः प्रवेदितस्तदेवं स निकुर्निवृत्तश्च सर्वाश्रवद्वारेन्यादतप्रक्षालनादिका क्रियाः कुर्वन् सावद्यक्रियायाअनावादक्रियाऽक्रियत्वाच्च प्राणिनामलूषकोऽव्यापादकोयावदेकांतेनैवासौ पमितानवति । इति परिसमाप्त्यर्थे । ब्रवीमीति पूर्ववत् नया प्राग्वद्व्याख्येया ॥११॥ समाप्तं प्रत्याख्यानाख्यं चतुर्थमध्ययनमिति ॥ ४ ॥

वणिकायहेउपसुत्ता के०) त्या सयत पणाने नावे नगवत् श्री वीतराग देवें ठ जीवनि काय कारण कह्याठे (तंजहा के०) ते कहेठे (पुढवीकाइयाजावतसकाइया के०) पृथिवी कायथी मांडीने यावत् त्रसकाय पर्यंत ठे (सेजहाणामए के०) तेने जेम नाम एवा सनाव नाये (ममअस्सातं के०) मुजने अशाता उपजे ठे ते प्रमाणे दंमे करी हणतां थकां अस्थिये करी, मुठिये करी, पापाणे करी, कपाल एटले ठीकरीये करी ताडता थका यावत् उद्वेग करता थका, एटले जीव काया थकी रहित करता थका, एक रोम उखेड वा मात्रे करीपण हिंसाकारक डुःख तथा नय हुं वेदुं ए रीते जाणवुं के, सर्वं प्राणी यावत् सर्व सत्वने महारी पेठें दमना प्रहारे करी, कपाल एटले ठीकरीये करी आक्रोश करावता ताडता थका, अथवा हणता थका, तर्जनाकरता थका, यावत् उद्वेग करता थका, एक रोम मात्र उखेडवु एवु पण हिंसाकारी, कारण ते थकी ते जीवो पण डुःख अने नय एवुज वेदे (एवणच्चा के०)एम जाणीने सर्वप्राणी यावत् सर्व सत्वने हणवा नहीं, यावत् उपद्रववा नहीं, ए प्राणीनो दया लक्षण धर्म, ते ध्रौव, नित्य, शाश्वतो, एवो चउद रज्ज्वात्मक लोक जाणीने आलोचीने षट्जीवनिकायरूप डुःख समुद्रमा पड्यो ते पर जीवना डुःखना जाण, एवा खेदज्ञ श्रीनगवत्त तीर्थंकर देव तेणे नाख्यो ठे (एवसेनिकू के०) एवु जाणीने ते साधु प्राणातिपात मृषावादादिक यावत् मिथ्यात्व दर्शन शल्य ए अढार पापस्थानक थकी निवृत्त्यो, तथा ते निकु दंत धावनें करी दंत प्र क्षाले नहीं एमज अंजन वमन विरेचनादिकक्रिया न करे, धूपन एटले वस्त्रादिकनुं धूपन न करे (तपिनआदते के०) एटलावाना पोते आदरे नहि ते निक्षु चारित्रिउक्रिया रहित ठजीवनिकायनो अहिंसक तथा क्रोध रहित यावत् मान, माया, लोन रहित उ पशांत एटले समाधिवंत परिनिवृत्त एवो ठतो होय तेनें निश्चे सयत विरति प्रतिहत पापकर्मा एटले पच्चरकाणे करी पापकर्मने हणनार, क्रिया रहित सवृत्त, एकांत पंमित एम नगवते कह्योठे त्तिबेमिनो अर्थ पूर्ववत् जाणवो ॥ ११ ॥ ए श्री सुयगडांग सूत्रना बीजा श्रुतस्कधनें विषे प्रत्याख्यान क्रियानामा चोथा अध्ययननो संक्षेपार्थ बालावबोध समाप्त थयो ॥ ११ ॥

॥ दीपिका–अथ सजातवैराग्य शिष्य प्रश्न करोति (सेकिंकुव्वमित्यादि) अथ किं कुर्वन् किंवा कारयन् कथ वा सयतविरतप्रतिहतप्रत्याख्यानपापकर्मा जंतु स्यात् ?। आचार्यआह् । (तत्रखलुत्ति । तत्र सयतत्वसद्भावे । नगवता षड्जीवनिकायाहेतव प्रज्ञप्ता । तद्यथा । पृथिवीकाया यावत्त्रसकाया । यथाऽविरतस्य षड्जीवनिकाया नरकादिगतिहेतुत्वेनोक्तास्तथा विरतस्य तएव मोक्षहेतवोनवति । यडुक्त । "जेजत्ति

वर्जयितव्वा सया अणायारा ॥ अवहुसुयस्स होजा, विरहेणाइड जइयव्वे,॥१॥(आचारसुयमित्यादि) आचारश्च श्रुतं च आचारश्रुतं। इहैकवद्भावस्तद्गुनयमपि नणितमुक्त। तत्राचार क्षुल्लिकाचारकथायामनिहित श्रुतं तु विनयश्रुते।नावार्थस्तु वर्जयितव्या परिहार्या सदा सर्वकाल यावज्जीव साधुरनाचारास्तांश्चाबहुश्रुतोऽगीतार्थोन सम्यक् जानातीत्यतस्तस्य विराधना नवेत् । वहुशब्दोऽवधारणे।वहुश्रुतस्यैव विराधना न गीतार्थस्येत्यतोत्र सदाचारे तत्परिज्ञानेच यतितव्य।तथाहि। मार्गज्ञ पथिक कुमार्गवर्जनेन नापथगामी नवति न चोन्मार्गदोषैर्युज्यते एवमनाचार वर्जयन्नाचारवान्नवति न चानाचारदोषैर्युज्य तइत्यतस्तत्प्रतिपेधार्थमाह । एयस्स पडिसेहो, इहमज्झयण मिहेति नायव्वा ॥ तोअणगार सुय इयि, होई नामतु एयस्स ॥ ३ ॥ (एयस्सइत्यादि) एतस्यानाचारस्य सर्वदोषास्पदस्य डुर्गतिगमनैकहेतो प्रतिषेधोनिराकरण सदाचारप्रतिपत्त्यर्थमिहाध्ययने ज्ञातव्य ।सच परमार्थतोऽनगारकारणमिति । तत । केषांचिन्मतेनैतस्याध्ययनस्याऽनगारश्रुतमित्येतन्नाम नवतीति। गतोनामनिष्पन्नो निक्षेपस्तदनतर सूत्रानुगमेऽस्खलितादिगुणोपेतं सूत्रमुच्चारयितव्यं । तच्चेद । (आदायबनचेरमित्यादिश्लोक) अस्य चानतरपरपरसूत्रे सबधोवाच्य स्तत्रानतरसूत्रेण सहायमेकातपंमितोनवति । कथमादाय ब्रह्मचर्यमिति । परपरसूत्रसबधस्त्वयं वुध्येत। तथा त्रोटयेद्बधन।किंकृत्वेत्याह। आदाय ब्रह्मचर्यमित्येवमन्यैरपि सूत्रैं सबधोवाच्योऽर्थस्त्वय। आदाय गृहीत्वा किं तद्ब्रह्मचर्य सत्यतपोनूतदयेंद्रियनिरोधलक्षण तच्चर्यतेऽनुष्ठीयते यस्मिन् तन्मौनीन्द्रप्रवचन ब्रह्मचर्यमित्युच्यते । तदादायाऽऽशुप्रज्ञ पटुप्रज्ञ सदसद्विवेकज्ञश्च। क्त्वाप्रत्ययस्योत्तरक्रियासव्यपेक्षित्वात्तामाह।इमां समस्ताध्ययनेनापि धीयमानां प्रत्यक्षासन्नजूता वाच इद शाश्वतमेवेत्यादिकां कदाचिदपि नाचरेन्नाभिदध्यात् तथाऽस्मिन्धर्मे सर्वज्ञप्रणीते व्यवस्थित सन्नानाचार सावद्यानुष्ठानरूपं न समाचरेन्न विदध्यादिति सबध ।यद्वाऽऽशुप्रज्ञ सर्वज्ञ प्रतिसमय केवलज्ञानदर्शनोपयोगित्वात्तत्सन्निधिनि धर्मे व्यवस्थितइमां वक्ष्यमाणां वाचमनाचार च कदाचिदपि नाचरेदितिश्लोकार्थ ॥१॥

अणादीय परिन्नाय, अणवदग्गेति वा पुणो ॥ सासयमसासए वा, इति दिठिं न धारए ॥ २ ॥

अर्थ—हवे आचार अने अनाचार देखाडवानी इछायें यथावस्थित लोकस्वरूप प्रकटन पूर्वक कहेडे (अणादीयंपरिन्नाय के०) ए चौद रज्जवात्मक लोक ते अनादि एटले नथी जेनी आदि एटले आदि रहितडे, एवु जाणीने (अणवदग्गेतिवापुणो के०) वली जेनो अत नथी, एवु जाणीने, (सासयमसासएवा के०) एकांत शाश्वत, अथ

अथ पंचमाध्ययनप्रारंभ

हवे चोथा अध्ययनने विषे प्रत्याख्यान क्रिया कही, तेवा आचार वालाने सम्यक् कहेवाय, ते कारणमाटें अनाचारनो त्याग करवो अने आचार अंगीकार करवो, माटें आचार श्रुत, अथवा अनाचार श्रुत, एवे नामे पांचमुं अध्ययन कहियें बैयें ॥

आदाय बंभचेरं च, आसुपन्ने इमं वइ ॥ अस्सिं धम्मे अणायारं, नायरेज्ज कयाइवि ॥ १ ॥

अर्थ-(आदायबंभचेरंच के०) ब्रह्मचर्य ग्रहण करीनें, (आसुपन्नेइमंवइ के०) आशुप्रज्ञ एटले विवेकी पुरुष, ए जे आगल कहेशे तेवी वाणी एटले वचन एम न कहे के, आ जगत् शाश्वत छे इत्यादिक नकहे (अस्सिंधम्मेअणायारं के०) ए धर्मने विषे प्रवर्त्ततो, अनाचार जे सावद्यानुष्ठानरूप, (नायरेज्जकयाइवि के०) तेनें क्यारे पण आचरे नही॥१॥

॥ दीपिका-अथ पंचमाध्ययनमारभ्यते तस्यानाचारवर्जनकथनादनाचारश्रुतमिति नाम । अथवा आचारप्रतिपादकत्वादाचारश्रुतमिति नाम । तस्येदं सूत्रं आदाय बंभचेरमिति ब्रह्म सत्यानुष्ठानं चर्यते सेव्यते यस्मिन् तद्ब्रह्मचर्यं जैनेंद्रशासनं आदाय गृहीत्वा आशुप्रज्ञः पंडितः इमां वक्ष्यमाणां वाचं इदं जगत् शाश्वतमेवेत्यादिकां नाचरेन्न वदेत् तथास्मिन् धर्मे स्थितोऽनाचारं नाचरेत्कदाचिदपि ॥ १ ॥

॥ टीका-सांप्रतं पंचममारभ्यते । अस्य चायमभिसंबंधः । इहानंतराध्ययने प्रत्याख्यानक्रियोक्ता । सा चाचारसव्यवस्थितस्य सतोभवतीत्यतस्तदनंतरमाचारश्रुताध्ययनमभिधीयते । यदिवा नाचारपरिवर्जनेन सम्यक् प्रत्याख्यानमस्खलितं भवतीत्यतोनाचारश्रुताध्यनमभिधीयते । यदिवा प्रत्याख्यानयुक्तः सन्नाचारवान् भवतीत्यतः प्रत्याख्यानक्रियानंतरमाचारश्रुताध्ययनं तत्प्रतिपक्षभूतमनाचारश्रुताध्ययनंवा प्रतिपाद्यतइत्यनेन संबंधेनाऽऽयातस्यास्याध्ययनस्योपक्रमादीनि चत्वार्यनुयोगद्वाराणि भवंति । तत्रोपक्रमांतर्गतोर्थाधिकारोयं । तद्यथा । अनाचारं प्रतिषिध्य साधूनामाचारः प्रतिपाद्यते । नाम निष्पन्नेतु निक्षेपे आचारश्रुतमिति द्विपदं नाम । तदनयोर्निक्षेपार्थं निर्युक्तिरुदाह । " णामं ठवणादविए दवे भावेय होंति नायवा ॥ एमेवय सुत्तस्सा, निक्खेवो चउविहो होति,,॥१॥ (णामठवणेत्यादि)तत्राचारोनाम स्थापना द्रव्यभावभेदभिन्नश्चतुर्धा द्रष्टव्यः । एवं श्रुतमपीति। तत्राचारश्रुतयोरन्यत्राभिहितयोर्लाघवार्थमतिदेशं कुर्वन्नाह । "आयारसुयं भणियं,

वर्ज्जयेत्वा सया अणायारा ॥ अवहुसुयस्स होज्जा, विरहेणाइ३ जइयवे,,॥१॥(आचारसुयमित्यादि) आचारश्च श्रुतं च आचारश्रुतं। एहैकवद्भावस्तदुनयमपि नणितमुक्तं। तत्राचार कुल्लिकाचारकथायामनिहितं श्रुतं तु विनयश्रुते। नावार्थस्तु वर्जयितव्या परिहार्या सदा सर्वकालं यावज्जीवं साधुरनाचारास्तांश्चावहुश्रुतोऽगीतार्थोन सम्यक् जानातीत्यतस्तस्य विराधना नवेत्। बहुशब्दोऽवधारणे। बहुश्रुतस्यैव विराधना न गीतार्थस्येत्यतोत्र सदाचारे तत्परिज्ञानेच यतितव्यं। तथाहि। मार्गज्ञः पथिकः कुमार्गवर्जनेन नापथगामी नवति न चोन्मार्गदोषैर्युज्यते एवमनाचारं वर्जयन्नाचारवान्नवति न चानाचारदोषैर्युज्यतइत्यतस्तत्प्रतिषेधार्थमाह। एयस्स पडिसेहो, इहमज्झयणे मिहेति नायवा॥ तोअणगार सुए इयि, होई नामतु एयस्स ॥ २ ॥ (एयस्सइत्यादि) एतस्यानाचारस्य सर्वदोषास्पदस्य डुर्गतिगमनैकहेतोः प्रतिषेधोनिराकरणं सदाचारप्रतिपत्त्यर्थमिहाध्ययने ज्ञातव्यं। सच परमार्थतोऽनगारकारणमिति। ततः। केषांचिन्मतेनैतस्याध्ययनस्याऽनगारश्रुतमित्येतन्नाम नवतीति। गतोनामनिष्पन्नो निक्षेपस्तदनंतरं सूत्रानुगमेऽस्खलितादिगुणोपेतं सूत्रमुच्चारयितव्यं। तच्चेदं। (आदायबनचेरमित्यादिश्लोकः) अस्य चानंतरपरंपरसूत्रैः सबंधोवाच्यस्तत्रानंतरसूत्रेण सहायमेकांतपक्षितोनवति। कथमादाय ब्रह्मचर्यमिति। परंपरसूत्रसंबंधस्त्वयं बुध्येत। तथा त्रोटयेद्बंधनं। किंकृत्वेत्याह। आदाय ब्रह्मचर्यमित्येवमन्यैरपि सूत्रैः संबधोवाच्योर्थस्त्वयं। आदाय गृहीत्वा किं तद्ब्रह्मचर्यं सत्यतपोनूतदयेंद्रियनिरोधलक्षणं तच्चर्यतेऽनुष्ठीयते यस्मिन् तन्मौनींद्रप्रवचनं ब्रह्मचर्यमित्युच्यते। तदादायाऽऽशुप्रज्ञः पटुप्रज्ञः सदसद्विवेकज्ञश्च। क्त्वाप्रत्ययस्योत्तरक्रियासव्यपेक्षित्वात्तामाह। इमां समस्ताध्ययनेनाभिधीयमानां प्रत्यक्षासन्नभूतां वाचं इदं शाश्वतमेवेत्यादिकां कदाचिदपि नाचरेन्नाभिदध्यात् तथाऽस्मिन्धर्मे सर्वज्ञप्रणीते व्यवस्थितः सन्नानाचारं सावद्यानुष्ठानरूपं न समाचरेन्न विदध्यादिति संबधः। यदिवाऽऽशुप्रज्ञः सर्वज्ञः प्रतिसमयं केवलज्ञानदर्शनोपयोगित्वात्तस्तत्प्रणीते धर्मे व्यवस्थितइमां वक्ष्यमाणां वाचमनाचारं च कदाचिदपि नाचरेदितिश्लोकार्थः ॥१॥

अणादीयं परिन्नाय, अणवदग्गेति वा पुणो ॥ सासयमसासए वा, इति दिठिं न धारए ॥ २ ॥

अर्थ–हवे आचार अने अनाचार देखाडवानी इच्छायें यथावस्थित लोकस्वरूप प्रकटन पूर्वक कहेछे (अणादीयंपरिन्नाय के०) ए चौद रज्ज्वात्मक लोक ते अनादि एटले नथी जेनी आदि एटले आदि रहितछे, एवुं जाणीने (अणवदग्गेतिवापुणो के०) वली जेनो अंत नथी, एवुं जाणीने, (सासयमसासएवा के०) एकांत शाश्वत, अथ

अथ पंचमाध्ययनप्रारंभ

हवे चोथा अध्ययनने विषे प्रत्याख्यान क्रिया कही, तेवा आचार वालानें सम्यक् कहेवाय, ते कारणमाटें अनाचारनो त्याग करवो अने आचार अंगीकार करवो, माटें आचार श्रुत, अथवा अनाचार श्रुत, एवे नामे पांचमुं अध्ययन कहियें ैयें ॥

आदाय बंभचेरं च, आसुपन्ने इमं वइ ॥ अस्सिं धम्मे अणायारं, नाय रेज्ज कयाइवि ॥ १ ॥

अर्थ-(आदायबंभचेरंच के०) ब्रह्मचर्य ग्रहण करीनें, (आसुपन्नेइमंवइ के०) आशुप्रज्ञ एटले विवेकी पुरुष, ए जे आगल कहेशे तेवी वाणी एटले वचन एम न कहे के, आ जगत् शाश्वत ठे इत्यादिक नकहे (अस्सिंधम्मेअणायारं के०) ए धर्मने विषे प्रवर्त्ततो, अनाचार जे सावद्यानुष्ठानरूप, (नायरेज्जकयाइवि के०) तेनें क्यारे पण आचरे नहीं॥१॥

॥ दीपिका-अथ पंचमाध्ययनमारभ्यते तस्यानाचारवर्जनकथनादनाचारश्रुतमिति नाम । अथवा आचारप्रतिपादकत्वादाचरश्रुतमिति नाम । तस्येदं सूत्रं आदाय बंभचेरमिति ब्रह्म सत्यानुष्ठानं चर्यते सेव्यते यस्मिन् तद्ब्रह्मचर्यं जैनेंद्रशासनं आदाय गृहीत्वा आशुप्रज्ञः पंडितः इमां वक्ष्यमाणां वाचं इदं जगत् शाश्वतमेवेत्यादिकां नाचरेन्न वदेत् तथास्मिन् धर्मे स्थितोऽनाचारं नाचरेत्कदाचिदपि ॥ १ ॥

॥ टीका-सांप्रतं पंचममारभ्यते । अस्य चायमभिसंबंधः । इहानंतराध्ययने प्रत्याख्यानक्रियोक्ता । सा चाचारसंव्यवस्थितस्य सतोभवतीत्यतस्तदनंतरमाचारश्रुताध्ययनमभिधीयते । यदिवा नाचारपरिवर्जनेन सम्यक् प्रत्याख्यानमस्खलितं भवतीत्यतोनाचारश्रुताध्ययनमभिधीयते । यदिवा प्रत्याख्यानयुक्तः सन्नाचारवान् भवतीत्यतः प्रत्याख्यानक्रियानंतरमाचारश्रुताध्ययनं तत्प्रतिपक्षभूतमनाचारश्रुताध्ययनंवा प्रतिपाद्यतइत्यनेन संबंधेनाऽऽयातस्यास्याध्ययनस्योपक्रमादीनि चत्वार्यनुयोगद्वाराणि भवंति। तत्रोपक्रमांतर्गतोर्थाधिकारोयं । तद्यथा । अनाचारं प्रतिषिध्य साधूनामाचारः प्रतिपाद्यते । नाम निष्पन्नेतु निक्षेपे आचारश्रुतमिति द्विपदं नाम । तदनयोर्निक्षेपार्थं निर्युक्तिकृदाह । " णामंठवणादविए दवे भावेय होति नायवा॥ एमेवय सुत्तस्सा, निक्खेवो चउविहो होति,,॥१॥ (णामठवणेत्यादि)तत्राचारोनामस्थापनाद्रव्यभावभेदभिन्नश्चतुर्धा द्रष्टव्यः । एवं श्रुतमपीति।तत्राचारश्रुतयोरन्यत्राभिहितयोर्लाघवार्थमतिदेशं कुर्वन्नाह । "आयारसुयं भणियं,

वर्जयितव्वा सया अणायारा ॥ अवहुसुयस्स होज्जा, विरहेणाइत्थ जइयव्वे,,॥२॥(आचारसुयमित्यादि) आचारश्च श्रुतं च आचारश्रुतं। एकैकवज्ञावस्तडुनयमपि नणितमुक्त। तत्राचार कुल्लिकाचारकथायामनिहित श्रुतं तु विनयश्रुते। नावार्थस्तु वर्जयितव्या परिहार्या सदा सर्वकाल यावज्जीव साधुरनाचारास्तांश्चावहुश्रुतोऽगीतार्थोन सम्यक् जानातीत्यत स्तस्य विराधना नवेत्। वहुशब्दोऽवधारणे। वहुश्रुतस्यैव विराधना न गीतार्थस्येत्यतोत्र सदाचारे तत्परिज्ञानेच यतितव्य। तथाहि। मार्गज्ञ पथिक कुमार्गवर्जनेन नापथगामी नवति न चोन्मार्गदोषैर्युज्यते एवमनाचार वर्जयन्नाचारवान्नवति न चानाचारदोषैर्युज्य तइत्यतस्तत्प्रतिषेधार्थमाह। एयस्स पडिसेहो, इहमज्झयण मिहेति नायव्वा॥ तोअणगार सुय इयि, होई नामतु एयस्स ॥ ३ ॥ (एयस्सइत्यादि) एतस्यानाचारस्य सर्वदोषास्पदस्य डुर्गतिगमनैकहेतो प्रतिषेधोनिराकरण सदाचारप्रतिपत्त्यर्थमिहाध्ययने ज्ञातव्य। सच परमार्थतोऽनगारकारणमिति। तत। केषांचिन्मतेनैतस्याध्ययनस्याऽनगारश्रुतमित्येतन्नाम नवतीति। गतोनामनिष्पन्नो निक्षेपस्तदनतर सूत्रानुगमेऽस्खलितादिगुणोपेतं सूत्रमुच्चारयितव्यं। तच्चेद। (आदायवन्नचेरमित्यादिश्लोक) अस्य चानतरपरंपरसूत्रे सवधोवाच्यस्तत्रानतरसूत्रेण सहायमेकातपक्षितोनवति। कथमादाय व्रह्मचर्यमिति। परपरसूत्रसवधस्त्वयं वुध्येत। तथा त्रोटयेद्वधन। किकृत्वेत्याह। आदाय व्रह्मचर्यमित्येवमन्यैरपि सूत्रैसवधोवाच्योर्थस्त्वय। आदाय गृहीत्वा किं तद्व्रह्मचर्य सत्यतपोनूतदयेंद्रियनिरोधलक्षण तच्चर्यतेऽनुष्ठीयते यस्मिन् तन्मौर्नीद्रप्रवचन व्रह्मचर्यमित्युच्यते। तदादायाऽऽशुप्रज्ञ पटुप्रज्ञ सदसद्विवेकज्ञश्च। क्त्वाप्रत्ययस्योत्तरक्रियासव्यपेक्षित्वात्तामाह। इमां समस्ताध्ययनेनापि धीयमानां प्रत्यक्षासन्ननूता वाच इद शाश्वतमेवेत्यादिकां कदाचिदपि नाचरेन्नाभिदध्यात् तथाऽस्मिन्धर्मे सर्व ज्ञप्रणीते व्यवस्थित सन्नानाचार सावद्यानुष्ठानरूपं न समाचरेन्न विदध्यादिति सवध। यदिवाऽऽशुप्रज्ञ सर्वज्ञ प्रतिसमय केवलज्ञानदर्शनोपयोगित्वात्तत्सवधिनि धर्मे व्यवस्थितइमां वक्ष्यमाणां वाचमनाचार च कदाचिदपि नाचरेदितिश्लोकार्थ ॥१॥

अणादीयं परिन्नाय, अणवदग्गेति वा पुणो ॥ सासयमसासए वा, इति दिठिं न धारए ॥ २ ॥

अर्थ—हवे आचार अने अनाचार देखाडवानी इच्छायें यथावस्थित लोकस्वरूप प्रकटन पूर्वक कहेछे (अणादीयंपरिन्नाय के०) ए चौद रज्ज्वात्मक लोक ते अनादि एटले नथी जेनी आदि एटले आदि रहितछे, एवु जाणीने (अणवदग्गेतिवापुणो के०) वली जेनो अंत नथी, एवु जाणीने, (सासयमसासएवा के०) एकांत शाश्वत, अथ

वा एकांत अशाश्वत, (इतिदिठ्ठिनधारए के०) एवी दृष्टि धरे नहीं, एटले पंमित जन एवो पक्ष आदरे नहीं ॥ २ ॥

॥ दीपिका-(अणादीयमिति) अनादिक जगत्प्रमाणे सांख्याभिप्रायेण परिज्ञाय अनवदग्रमनंतं च तन्मतएव ज्ञात्वा सर्वमिद शाश्वतं बौद्धाभिप्रायेणवाऽशाश्वतं इति दृष्टि न धारयेत् एन पक्ष नाश्रयेत् ॥ २ ॥

॥ टीका-तत्रानाचर नाचरेदित्युक्त । अनाचारश्च मौनींद्रप्रवचनादपरोनिर्धीयते मौनींद्रप्रवचन तु मोक्षमार्गहेतुतया सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रात्मक। सम्यग्दर्शनतु तत्त्वार्थ श्रद्धानरूप । तत्त्व तु जीवाजीवपुण्यपापाश्रवबधसवरनिर्जरामोक्षात्मक तथा धर्मा धर्माकाशपुद्गलजीवकालात्मक द्रव्य नित्यानित्यस्वभाव सामान्यविशेषात्मकोऽनाद्यप र्यवसानश्चतुर्दशरज्ज्वात्मकोलोकस्तत्त्वमिति । ज्ञानतु मतिश्रुतावधिमन पर्यायकेव लस्वरूप पचधा । चरित्र, सामायिक, छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धिय, सूक्ष्मसपराय, यथाख्यातरूप पचधैव मूलोत्तरगुणभेदतोवा नैकधेत्येव व्यवस्थिते मौनींद्रप्रवचनेन कदाचिदनीदृश जगदिति कृत्वाऽनाद्यपर्यवसाने लोके सति दर्शनाचारप्रतिपक्षभूतमना चार दर्शयितुकामआचार्योयथावस्थितलोकस्वरूपोद्घट्टनपूर्वकमाह (अणादीयमित्यादि) नास्य चतुर्दशरज्ज्वात्मकस्य लोकस्य धर्माधर्मादिकस्यवा द्रव्यस्यादि प्रथमोत्पत्तिर्विद्य तइत्यनादिकस्तमेवभूतं परिज्ञाय प्रमाणत परिछिद्य तथानवदग्रमपर्यवसानच परिज्ञा यानयात्मकव्युदासेनैकनयदृष्ट्यावधारणात्मक प्रत्ययमनाचार दर्शयति शश्वद्भवतीति शाश्वतं नित्यं सांख्याभिप्रायेणाप्रच्युतानुत्पन्नस्थिरैकस्वभाव स्वदर्शनेचानुयायिन सामा न्याशमवलब्य धर्माधर्माकाशादिष्वनादित्वमपर्यवसानत्व चोपलभ्य सर्वमिद शाश्वत मित्येवभूता दृष्टि नावधारयेदिति एव पक्ष न समाश्रयेत् । तथा विशेषपक्षमाश्रित्य वर्त्तमाननारकान् समुत्सेत्स्यतीत्येतच्च सूत्रमगीकृत्य यत्सत्तत्सर्वमनित्यमित्येवभूतबौद्ध दर्शनाभिप्रायेण च सर्वत्र शाश्वतमनित्यमित्येवभूताच दृष्टि न धारयेदिति ॥ २ ॥

एएहिं दोहिं ठाणेहिं, ववहारो ण विज्जई॥ एएहिं दोहिं ठाणेहिं, अणा यार तु जाणए॥ ३ ॥

अर्थ-हवे एनु कारण कहेछे सर्वलोक नित्यज छे अथवा अनित्यज छे, (एएहिंदो हिंठाणेहिं के०) ए बे स्थानके करीने (ववहाराणविज्जई के०) लोकनो व्यवहार न प्रवर्त्ते एटले आ लोक, तथा परलोक सबधि कार्य जे प्रवृत्ति निवृत्ति लक्षण, एवो व्यव

हार प्रवर्त्ते नहीं (एएहिंदोहिंठाणेहिंअणायारंतुजाणए के०) तथा ए वेहु स्थानके अ नाचार जाणवो, ए कारणे एकांत पक्ष आदरवो नहीं ॥ ३ ॥

॥ दीपिका-(एएहिति) एताभ्यां एकांतं नित्यं, एकांतमनित्यंचेति द्वाभ्यां स्थानाभ्यां व्यवहारोन विद्यते। एकांतनित्ये एकांतानित्येच वस्तुनि व्यवहारोव्यवस्था न घटतइ त्यर्थः। तस्मादेताभ्यां स्थानाभ्यां स्वीकृताभ्यामनाचारं जानीयात् ॥ ३ ॥

॥ टीका-किमित्येकांतेन शाश्वतमशाश्वतं वाऽस्त्वित्येवभूतां दृष्टिं न धारयेदित्याह। (एएहिंदोहिमित्यादि) सर्व नित्यमेवानित्यमेव चैताभ्यां द्वाभ्यां स्थानाभ्यामभ्युपगम्य मानाभ्यामनयोर्वा पक्षयोर्व्यवहरणं व्यवहारोलोकस्यैहिकामुष्मिकयोः कार्ययोः प्रवृत्ति निवृत्तिलक्षणोन विद्यते। तथाह्यप्रच्युतानुत्पन्नस्थिरैकस्वभावं सर्व नित्यमित्येवं न व्य वह्रीयते प्रत्यक्षेणैव नवपुराणादिभावेन प्रध्वंसाभावेन वा दर्शनात्तथैवच लोकस्य प्रवृत्तेरा मुष्मिकेपि नित्यत्वान्मनोबंधमोक्षाद्यभावेन दीक्षायमनियमादिकमनर्थकमिति न व्यवह्री यते। तथैकांतानित्यत्वेनापि न लोकोधनधान्यघटपटादिकमनागतभोगार्थं संगृह्णीयात् तथामुष्मिकेपि क्षणिकत्वादात्मनः प्रवृत्तिर्न स्यात्। तथाच दीक्षाविहारादिकमनर्थकं त स्मान्नित्यानित्यात्मकस्याद्वादे सर्वव्यवहारप्रवृत्तिरतएव तयोर्नित्यानित्ययोः स्थानयोरेकां तत्वेन समाश्रीयमाणयोरैहिकामुष्मिककार्यविध्वंसरूपमनाचारं मौनींद्रागमबाह्यरूपं विजानीयात्। तुशब्दाविशेषणार्थः। कथंचिन्नित्यानित्ये वस्तुनि व्यवहारायुज्यतइत्येतं विशिनष्टि। तथाहि सामान्यसमन्वयिनमंशमाश्रित्य स्यान्नित्यमिति भवति तथा विशेषांशं प्रतिक्षणमन्यथाच नवपुराणादिदर्शनतः स्यादनित्यइति भवति। तथोत्पादव्ययधौव्याणि चार्हद्दर्शनाश्रितानि व्यवहारानि भवंति। तथा चोक्तं "घटमौलिसुवर्णार्थी,नाशोत्पादस्थि तिं स्वयं ॥ शोकप्रमोदमाध्यस्थ्यं, जनोयाति सहेतुकं" मित्यादि। तदेवं नित्यानित्य पक्षयोर्व्यवहारोन विद्यते तथानयोरेवानाचारं विजानीयादिति स्थितं ॥ ३ ॥

समुच्छिंहिंति सत्थारो, सबे पाणा अणेलिसा ॥ गंठिगावा भ विस्संति, सासयंतिव णो वए ॥४॥ एएहिं दोहिं ठाणेहिं, वव हारो ण विज्जइ ॥ एएहिं दोहिं ठाणेहिं, अणायारं तु जाणए ॥५॥

अर्थ-वली पण अनाचार, निषेधवाने इछतो बतो कहेले (समुछिहिंति के०) सर्वथापि उछेद पामशे एटले क्षय थइ जाशे,अथवा सर्व सिद्धिने विषे जशे ते कारण जश तोके (सत्थारो के०) तीर्थंकर सर्वज्ञ, तथा जे तेना शासनमां प्रवर्त्ते ते सर्व

वा एकांत अशाश्वत, (इतिदिट्ठिनधारए के०) एवी दृष्टि धरे नहीं, एटले पंमित जन एवो पक्ष आदरे नहीं ॥ २ ॥

॥ दीपिका-(अणादीयमिति) अनादिक जगत्प्रमाणे सांख्याभिप्रायेण परिज्ञाय अनवदग्रमनतं च तन्मतएव ज्ञात्वा सर्वमिद शाश्वतं बौद्धाभिप्रायेणवाऽशाश्वतं इति दृष्टि न धारयेत् एन पक्ष नाश्रयेत् ॥ २ ॥

॥ टीका-तत्रानाचर नाचरेदित्युक्त । अनाचारश्च मौनींद्रप्रवचनादपरोभिधीयते मौनींद्रप्रवचन तु मोक्षमार्गहेतुतया सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रात्मक। सम्यग्दर्शनतु तत्त्वार्थ श्रद्धानरूप । तत्त्व तु जीवाजीवपुण्यपापाश्रवबधसवरनिर्जरामोक्षात्मक तथा धर्मा धर्माकाशपुद्गलजीवकालात्मक द्रव्य नित्यानित्यस्वनाव सामान्यविशेषात्मकोऽनाद्यप र्यवसानश्चतुर्दशरज्ज्वात्मकोलोकस्तत्त्वमिति । ज्ञानतु मतिश्रुतावधिमन पर्यायकेव लस्वरूप पचधा । चरित्र, सामायिक, छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धिय, सूक्ष्मसपराय, यथाख्यातरूप पचधैव मूलोत्तरगुणभेदतोवा नैकधेत्येव व्यवस्थिते मौनींद्रप्रवचनेन कदाचिदनीदृश जगदिति कृत्वाऽनाद्यपर्यवसाने लोके सति दर्शनाचारप्रतिपक्षनूतमना चार दर्शयितुकामश्चाचार्योयथावस्थितलोकस्वरूपोद्घट्टनपूर्वकमाह् (अणादीयमित्यादि) नास्य चतुर्दशरज्ज्वात्मकस्य लोकस्य धर्माधर्मादिकस्यवा द्रव्यस्यादि प्रथमोत्पत्तिर्विद्य तइत्यनादिकस्तमेवनूतं परिज्ञाय प्रमाणत परिछिद्य तथानवदग्रमपर्यवसानच परिज्ञा यानयात्मकव्युदासेनैकनयदृष्ट्यावधारणात्मक प्रत्ययमनाचार दर्शयति शश्वद्भवतीति शाश्वतं नित्यं साख्याभिप्रायेणाप्रच्युतानुत्पन्नस्थिरैकस्वनाव स्वदर्शनेचानुयायिन सामा न्याशमवलब्य धर्माधर्माकाशादिष्वनादित्वमपर्यवसानत्व चोपलभ्य सर्वमिद शाश्वत मित्येवनूता दृष्टि नावधारयेदिति एव पक्ष न समाश्रयेत् । तथा विशेषपक्षमाश्रित्य वर्त्तमाननारकान् समुत्सेत्स्यतीत्येतच्च सूत्रमगीकृत्य यत्सत्तत्सर्वमनित्यमित्येवनूतबौद्ध दर्शनाभिप्रायेण च सर्वत्र शाश्वतमनित्यमित्येवनूताच दृष्टि न धारयेदिति ॥ २ ॥

एएहिं दोहिं ठाणेहिं, ववहारो ण विज्जई॥ एएहिं दोहिं ठाणेहिं, अणा यार तु जाणए ॥ ३ ॥

अर्थ-हवे एनु कारण कहेछे सर्वलोक नित्यज छे अथवा अनित्यज छे, (एएहिदो हिठाणेहि के०) ए बे स्थानके करीनें (ववहाराणविज्जई के०) लोकनो व्यवहार न प्रवर्त्ते एटलें आ लोक, तथा परलोक सबधि कार्य जे प्रवृत्ति निवृत्ति लक्षण, एवो व्यव

हार प्रवर्त्ते नहीं (एएहिंदोहिंगणेहिंअणायारतुजाणए के०) तथा ए वेहु स्थानके अ नाचार जाणवो, ए कारणे एकात पक्ष आदरवो नहीं ॥ ३ ॥

॥ दीपिका–(एएहिति) एताभ्यां एकांतं नित्यं, एकांतमनित्यंचेति द्वाभ्यां स्थानाभ्यां व्यवहारोन विद्यते । एकांतनित्ये एकांतानित्येच वस्तुनि व्यवहारोव्यवस्था न घटतइ त्यर्थः । तस्मादेताभ्यां स्थानाभ्यां स्वीकृताभ्यामनाचारं जानीयात् ॥ ३ ॥

॥ टीका–किमित्येकांतेन शाश्वतमशाश्वतं वाऽस्तित्येवंनूता दृष्टिं न धारयेदित्याह । (एएहिंदोहिमित्यादि) सर्वं नित्यमेवानित्यमेव चैताभ्यां द्वाभ्यां स्थानाभ्यामभ्युपगम्य मानाभ्यामनयोर्वा पक्षयोर्व्यवहरणं व्यवहारोलोकस्यैहिकामुष्मिकयोः कार्ययोः प्रवृत्ति निवृत्तिलक्षणोन विद्यते । तथाह्यप्रच्युतानुत्पन्नस्थिरैकस्वनावं सर्वं नित्यमित्येवं न व्य वह्रियते प्रत्यक्षेणैव नवपुराणादिनावेन प्रध्वंसानावेन वा दर्शनात्तथैवच लोकस्य प्रवृत्तेरा मुष्मिकेपि नित्यत्वान्मनोबंधमोक्षाद्यनावेन दीक्षायमनियमादिकमनर्थकमिति न व्यवह्री यते । तथैकांतानित्यत्वेनापि न लोकोधनधान्यघटपटादिकमनागतनोगार्थं संगृह्णीयात् तथामुष्मिकेपि क्षणिकत्वादात्मनः प्रवृत्तिर्न स्यात् । तथाच दीक्षाविहारादिकमनर्थकं त स्मान्नित्यानित्यात्मकस्याद्वादे सर्वव्यवहारप्रवृत्तिरतएव तयोर्नित्यानित्ययोः स्थानयोरेकां तत्वेन समाश्रीयमाणयोरैहिकामुष्मिककार्यविध्वंसरूपमनाचारं मौनींऽागमबाह्यरूप विजानीयात् । तुशब्दोविशेषणार्थः । कथंचिन्नित्यानित्ये वस्तुनि व्यवहारोयुज्यतइत्येत द्विशिनष्टि । तथाहि सामान्यसमन्वयिनमंशमाश्रित्य स्यान्नित्यमिति नवति तथा विशेषांश प्रतिक्षणमन्यथाच नवपुराणादिदर्शनतः स्यादनित्यइति नवति । तथोत्पादव्ययध्रौव्याणि चार्हद्दर्शनाश्रितानि व्यवहारानि नवति । तथा चोक्तं "घटमौलिसुवर्णार्थी,नाशोत्पादस्थि तिं स्वयं ॥ शोकप्रमोदमाध्यस्थ्य, जनोयाति सहेतुकं" मित्यादि । सदैव नित्यानित्य पक्षयोर्व्यवहारोन विद्यते तथानयोरेवानाचारं विजानीयादिति स्थितं ॥ ३ ॥

समुच्छिंहिंति सत्थारो, सवे पाणा अणेलिसा ॥ गंठिगावा नवि स्सति, सासयंतिव णो वए ॥४॥ एएहिं दोहिं ठाणेहिं, वव हारो ण विज्जइ ॥ एएहिं दोहिं ठाणेहिं, अणायारं तु जाणए ॥५॥

अर्थ–वली पण अनाचार, निषेधवाने इहतो थको कहेने (समुच्छिहिंति के०) सर्वथापि उच्छेद पामशे एटले क्षय थइ जाशे,अथवा सर्वे सिद्धिने विषे जशे ते कोण जशे तोके (सत्थारो के०) तीर्थंकर सर्वज्ञ, तथा जे तेना शासनमां प्रवर्त्ते ते सर्वे

सिद्धिने योग्य एवा सर्वेनव्यजीव सिद्धिने विषे जशे एम करतां सर्व नव्यजीवनो विछेद थशे एवु वचन विवेकी पुरुष न बोले,तथा (सवेपाणाअणेलिसा के०) सर्व प्राणी एटले सर्व जीव ते अणेलिसा एटले सरखा नथी तथा सरखाछे तथा विलक्षणछे एवु वचन पण विवेकी जन एकांतें न बोले, तथा (गंठिगाएनविस्सति के०) तथा सर्व प्राणी कर्म ग्रंथि सहित थशे, एटले कर्मनी गांठ सहितज रेहेशे, एवु पण एकांतें वचन न बोले, (सासयंतिवणोवए के०) तथा सर्वज्ञ शाश्वताज सर्वकालें होशे, पण कदापि कालें विछे द नहीज पामे एवु वचन पण एकांतें बोले नहीं ॥४॥ (एएहिंदोहिंठाणेहिं के०) ए बे स्थानक जे तीर्थंकर विछेद पामशे, अथवा शाश्वताज रहेशे, अथवा सर्व नव्य जीव सिद्धिने पामशे, अथवा सर्व नव्य जीव कर्म सहितज रहेशे, ए बे स्थानक बे प्रकारना थयां एम कहेवु, ते (ववहारोणविज्जती के०) व्यवहार नथी एवु जाणे (एएहिंदोहिं ठाणेहिं के०) ए बेहु स्थानके करी, (अणायारंतुजाणई के०) अनाचार जाणे, एटले दर्शनाचार आश्री अनाचार कह्यो ॥ ५ ॥

॥ दीपिका-(समुछिहिंति) समुछेत्स्यति उछेद यास्यति शास्तारोनव्या सर्वेनव्या नां मुक्तिगमनेन नव्यशून्योलोक स्यादित्येव नो वदेत् । तथा सर्वे प्राणाअनीदृशाविस दृशाविलक्षणाएव न कथंचित्तेषा सादृश्यमस्तीत्यपि नो वदेत् । ग्रंथिका कर्मग्रंथोपेता एव नविष्यति सर्वे जीवाइत्यपि नो वदेत् । कोर्थ ? । सर्वे प्राणिन सेत्स्यंत्येव कर्मावृ तावा नविष्यतीत्येकमपि पक्षमेकांतेन न वदेत्तथा शाश्वतास्तीर्थकृतइत्यपि न वदेत्॥४॥ (एएहिंति) शास्तार क्षयं यास्यंति शाश्वतावा नविष्यतीति । यदिवा सर्वे प्राणाविल क्षणा सदृशावा तथा ग्रंथिकसत्वाएव तद्रहितं वा जगदिति वा एवमनयो स्थानयो र्व्यवहारोन विद्यते । इद पक्षद्वयमपि न घटतइत्यर्थ । यतोऽनागतकालस्येव नव्याना मनंतत्वान्निरंतर मुक्तिगमनेपि न नव्यशून्य जगदिति । केचिन्नव्याअपि सामग्र्यनावान्न सेत्स्यंति यथा प्रतिमायोग्यमपि दलिक सामग्री विना प्रतिमारूप न स्यादिति सर्वे जीवाअपि विचित्रकर्मसद्भावाद्विसदृशा कथंचित् उपयोगामूर्तत्वासख्यप्रदेशत्वादिधर्मैं सदृशाअपि । तथा सर्वेऽर्हंत प्रवाहापेक्षया शाश्वता एकैकापेक्षया अशाश्वताअपीति एताभ्यां द्वाभ्यामेकांतस्थानाभ्यामनाचार जानीयात् ॥ ५ ॥

॥ टीका-तथान्यमप्यनाचार प्रतिषेद्धुकामआह । (समुछिहिंतीत्यादि) सम्यक् निर्विशेषतयोत्सेत्स्यत[illegible]स्यति क्षय प्राप्स्यति सामस्त्येनोत्प्राबल्येन सेत्स्यति वा सिद्धि यास्यति । [illegible]रस्तीर्थकृत सर्वज्ञास्तच्छासनप्रतिपन्नावा सर्वे निरवशेषा

सिद्धिगमनयोग्याजव्यास्ततश्चोच्छिन्नजव्य जगत्स्यादिति शुष्कतर्काभिमानग्रहगृहीता युक्तिं चाभिदधति जीवसद्भावे सत्यप्यपूर्वोत्पादाजावादजव्यस्य च सिद्धिगमनासजवात्कालस्य वाऽनत्यादनारतसिद्धिगमनसजवेन तद्यथोपपत्तेरपूर्वायाजावाजव्योच्छेदइत्येव नो वदेत्त था सर्वेपि प्राणिनोजतवोऽनीदृशाविसदृशा सदा परस्परलक्षणाएव न कथचित्तेषां सादृश्यमस्तीत्येवमप्येकातेन नो वदेत् । यदिवा सर्वेषा जव्याना सिद्धिसद्भावे विशिष्टा स सारेऽनीदृशाश्चजव्याएव जवेयुरित्येव च नो वदेत् । युक्तिं चोत्तरत्र वक्ष्यति । तथा कर्मा त्मकोग्रथोयेषा विद्यते ते ग्रथिका सर्वेपि प्राणिन कर्मग्रथोपेताएव जविष्यतीत्येवम पि नो वदेत् । इदमुक्त जवति । सर्वेपि प्राणिन सेत्स्यत्येव कर्मावृतावा सर्वे जविष्यती त्येवमेकमपि पक्षमेकातिक नो वदेत् । यदिवा ग्रथिकाइति ग्रथिकसत्वाजविष्यतीति ग्र थिजेद कर्त्तुमसमर्थाजविष्यतीत्येव च नो वदेत्तथा शाश्वताइति शास्तार सदा सर्वकाल स्थायिनस्तीर्थंकरान जविष्यति न समुत्सेत्स्यति नोच्छेद यास्यतीत्येव नो वदेदिति ॥ ४ ॥ तदेव दर्शनाचारनिषेध वाङ्मात्रेण प्रदर्श्याऽधुना युक्तिं दर्शयितुकामश्राह । (एएहिं इत्या दि) एतयोरनतरोक्तयोर्द्वयो स्थानयो । तद्यथा । शास्तार क्षय यास्यंतीति शाश्वतावा जविष्यतीति । यदिवा सर्वे शास्तारस्तद्दर्शनप्रतिपन्नावा सेत्स्यति शाश्वतावा जविष्य ति । यदिवा सर्वे प्राणिनोह्यनीदृशा विसदृशासदृशावा तथा ग्रथिकसत्वास्तद्रहितावा ज विष्यंतीत्येवमनयो स्थानयोर्व्यवहरण व्यवहारस्तदास्तित्वे युक्तेरजावान्न विद्यते । तथा हि । यत्तावडुक्त सर्वेशास्तार क्षयं यास्यतीत्येतदयुक्त । क्षयनिबधनस्य कर्मणोजावात्सि द्धाना क्षयाजावोन जवस्थकेवल्यपेक्ष्येदमनिधीयते तदप्यनुपपन्न यतोनाद्यनत्ताना केवलि ना सद्भावात्प्रवाहापेक्षया तदजावाजाव । यदप्युक्तमपूर्वायाजावे सिद्धिगमनसद्भावेन च व्यपसद्भावाजव्यशून्य जगत् स्यादित्येतदपि सिद्धातपरमार्थाविदिनो वचन । यतोजव्यरा शेराज्ञांते जविष्यत्कालस्यवानत्यमुक्त तच्चैवमुपपद्यते । यदि क्षयोन जवति सतिच तस्मि न्नात्यंतं न स्यान्नापि चावश्य सर्वस्यापि जव्यस्य सिद्धिगमनेन जाव्यमित्याजत्याज्ज्याजव्यान तत् सामग्र्यजावाद्योग्यदलिकप्रतिमावत्तदनुपपत्तिरिति । तथा नापि शाश्वताएव जवस्थ केवलिना शास्तृणा सिद्धिगमनसद्भावात्प्रवाहापेक्षया शाश्वतत्वमेवात कथचिच्छाश्वता कथचिदशाश्वताइति । तथा सर्वेपि प्राणिनोविचित्रकर्मसद्भावान्नानागतिजातिशरीरागोपांगा दिसमन्वितत्वादनीदृशा विसदृशास्तथोपयोगासख्येयप्रदेशत्वामूर्तत्वादिनिर्धर्मै कथचित्स दृशास्तथोद्यसितसद्वीर्यतया केचिन्निन्नग्रथयोपरेच तथाविधपरिणामाजावाद्ग्रथिकसत्वा एव जवतीत्येव व्यवस्थितेनेकाते नैकातपक्षोजवतीति प्रतिपत्व्यस्तदेवमेतयोरेव द्वयो स्थानयोरुक्तनीत्या नानाचार विजानीयादिति स्थित । श्रपिचागमेथनतानतास्वप्युत्सर्पि एयवसर्पिणीषु जव्यानामनतजागएव सिद्ध्यतीत्ययमर्थ प्रतिपाद्यते । यदा चैवजूतं तदान

सिद्धिने योग्य एवा सर्वभव्यजीव सिद्धिने विषे जशे एम करतां सर्व भव्यजीवनो विछेद थशे एवु वचन विवेकी पुरुष न बोले, तथा (सव्वेपाणाअणेलिसा के०) सर्व प्राणी एटले सर्व जीव ते अणेलिसा एटले सरखा नथी तथा सरखाछे तथा विलक्षणछे एवु वचन पण विवेकी जन एकांते न बोले, तथा (गठिगाएभविस्सति के०) तथा सर्व प्राणी कर्म ग्रंथि सहित थशे, एटले कर्मनी गाठ सहितज रहेशे, एवु पण एकांते वचन न बोले, (सासयतिवणोवए के०) तथा सर्वज्ञ शाश्वताज सर्वकाले होशे, पण कदापि काले विछेद नहींज पामे एवु वचन पण एकांते बोले नहीं ॥४॥ (एएहिंदोहिंठाणेहिं के०) ए बे स्थानक जे तीर्थंकर विछेद पामशे, अथवा शाश्वताज रहेशे, अथवा सर्व भव्य जीव सिद्धिने पामशे, अथवा सर्व भव्य जीव कर्म सहितज रहेशे, ए बे स्थानक बे प्रकारना यथा एम कहेवु, ते (ववहारोणविज्जती के०) व्यवहार नथी एवु जाणे (एएहिंदोहिं ठाणेहिं के०) ए बेहु स्थानके करी, (अणायारंतुजाणई के०) अनाचार जाणे, एटले दर्शनाचार आश्री अनाचार कह्यो ॥ ५ ॥

॥ दीपिका–(समुछिहिति) समुछेत्स्यति उछेद यास्यति शास्तारोभव्या सर्वभव्यानां मुक्तिगमनेन भव्यशून्योलोक स्यादित्येव नो वदेत् । तथा सर्वे प्राणाअनीदृशाविसदृशाविलक्षणाएव न कथंचित्तेषां सादृश्यमस्तीत्यपि नो वदेत् । ग्रंथिका कर्मग्रंथोपेता एव भविष्यति सर्वे जीवाइत्यपि नो वदेत् । कोर्थ ? । सर्वे प्राणिन सेत्स्यंत्येव कर्मावृतावा भविष्यतीत्येकमपि पक्षमेकांतेन न वदेत्तथा शाश्वतास्तीर्थकृतइत्यपि न वदेत्॥४॥ (एएहिति) शास्तार क्षयं यास्यंति शाश्वतावा भविष्यंतीति । यदिवा सर्वे प्राणाविलक्षणा सदृशावा तथा ग्रंथिकसत्वाएव तद्रहितं वा जगदिति वा एवमनयो स्थानयो व्यवहारोन विद्यते । इद पक्षद्वयमपि न घटतइत्यर्थ । यतोऽनागतकालस्येव भव्यानामनंतत्वान्निरंतर मुक्तिगमनेपि न भव्यशून्य जगदिति । केचिद्भव्याअपि सामग्र्यभावान्न सेत्स्यति यथा प्रतिमायोग्यमपि दलिक सामग्री विना प्रतिमारूप न स्यादिति सर्वे जीवाअपि विचित्रकर्मसद्भावाद्विसदृशा कथंचित् उपयोगामूर्तत्वासख्यप्रदेशत्वादिधर्मैं सदृशाअपि । तथा सर्वेऽर्हंत प्रवाहापेक्षया शाश्वता एकैकापेक्षया अशाश्वताअपीति एताभ्यां द्वाभ्यामेकांतस्थानाभ्यामनाचार जानीयात् ॥ ५ ॥

॥ टीका–तथान्यमप्यनाचार प्रतिषेधुकामआह । (समुछिहितीत्यादि) सम्यक् निर्विशेषतयोत्सेत्स्यत्युछेद यास्यति क्षय प्राप्स्यति सामस्त्येनोत्प्राबल्येन सेत्स्यंति वा सिद्धि यास्यति । के ? ते शास्तारस्तीर्थकृत सर्वज्ञास्तच्छासनप्रतिपन्नावा सर्वे निरवशेषा

यस्स सकमणाए ॥ बावज्जिज्जकुलिंगी, । मरिज्जतज्जोगमासज्ज ॥ १ ॥ नयतस्स तन्निमि त्तो,बधेसुहुमोविदेसिउं समए॥ अणवज्जाउपउगेण,सव्वनावेणसोजह्मा ॥२॥ इत्यादि॥७॥

॥टीका–अधुना चारित्राचारमंगीकृत्याह॥(जेकेइइत्यादि)ये केचन क्षुद्रका सत्वा प्राणिन एकेंद्रिय द्वीद्रियादयोऽल्पकायावा पचेंद्रियाअथवा महालयामहाकाया सति विद्यते तेषा क्षुद्रकाणामल्पकायाना कुंथ्वादीना महानालय शरीर येषा ते महालयाहस्त्यादयस्तेषा च व्यापादने सदृश वैरमिति वज्रकर्म विरोधलक्षण वा वैर सदृश समान तुल्यप्रदेशत्वात्सर्वे जतूनामित्येवमेकातेन नो वदेत्तथा विसदृशमसदृश तद्व्यापत्तौ वैर कर्मबधोवा इंद्रियवि ज्ञानकायाना विसदृशत्वात् सत्यपि प्रदेशतुल्यत्वे न सदृश वैरमित्येवमपि नो वदेत्। यदि हि वध्यापेक्षएवकर्मबध स्यात्तत्तद्वशात्कर्मणोपि सादृश्यमसादृश्यवा रक्तु युज्यते। नच तद्वशादेव वधोपि त्वध्यवसायवशादपि ततश्च तीव्राध्यवसायिनोऽल्पकायसत्वव्यापादने पि महद्वैरमकामस्यतु महाकायसत्वव्यापादनेपि स्वल्पमिति ॥ ६ ॥ एतदेवसूत्रेणैव द र्शयितुमाह ॥ (एएहिमित्यादि) आभ्यामनतरोक्ताभ्या स्थानाभ्यामनयोर्वा स्थानयोरल्पका यसत्वमहाकायव्यापादनापादितकर्मबधसदृशत्वासदृशत्वयोर्व्यवहरण व्यवहारोनिर्युक्ति कत्वान्न युज्यते ।तथाहि। न वध्यस्य सदृशत्वमसदृशत्व चैकमेव कर्मबधस्य कारणमपितु वधकस्य तीव्रनावोमदनावोज्ञाननावोऽज्ञाननावोमहावीर्यत्वमल्पवीर्यत्व चेत्येतदपि । तदेव वध्यवधकयोर्विशेषात्कर्मबधविशेषइत्येव व्यवस्थिते वध्यमेवाश्रित्य सदृशत्वासदृश त्वव्यवहारोन विद्यतइति तथा तयोरेव स्थानयो प्रवृत्तस्यानाचार विजानीयादिति । तथा हि। यज्जीवसाम्यात्कर्मबधसदृशत्वमुच्यते तदयुक्त। यतोनहि जीवव्यापत्त्या हिंसोच्यते ।त स्य शाश्वतत्वेन व्यापादयितुमशक्यत्वादपि त्विंद्रियादिव्यापत्त्या ।तथाचोक्त। 'पचेंद्रियाणि त्रिविध बल च, उत्तासनि श्वासमथान्यदायु ॥प्राणादशैते नगवद्भिरुक्तास्तेषा वियोजीकर ण तु हिंसा" ॥१॥ इत्यादि। अपिच नावसव्यपेक्षस्यैव कर्मबधोन्युपेतु युक्त ।तथाहि। वैद्य स्यागमसव्यपेक्षस्य क्रिया कुर्वतोयद्यप्यातुरविपत्तिर्नवति तथापि न वैरानुषगोजवेद्दोषा नावादपरस्यतु सर्पबुद्ध्या रज्जुमपि घ्नतोनावदोषात्कर्मबधस्तइहितस्यतु न बधइत्युक्त चागमे । उच्चालियमियाएइत्यादि । तंमुजमस्याख्यानक तु सुप्रसिद्धमेव । तदेवविधव ध्यवधकनावापेक्षया स्यात् सदृशत्व स्यादसदृशत्वमित्यन्यथाऽनाचारइति ॥ ७ ॥

अहाकम्माणि नुजति, अणमणे सकम्मुणा॥ उवलित्तेति जाणि ज्जा, अणुवलित्तेति वा पुणो ॥८॥ एएहिं दोहिं ठाणेहिं, ववहा रो ण विज्जई, एएहिं दोहिं ठाणेहिं, अणायार तु जाणए ॥ ए ॥

११

त्वं तत्कथं तेषां क्षय युक्तिरप्यत्र सर्वथिशब्दावेतौ । मुक्ति ससारं विना न भवति संसा रोपि न मुक्तिमंतरेण । ततश्च जव्योच्छेदे ससारस्याप्यजाव स्यादतोऽनिधीयते नाऽनयोर्व्य वहारोयुज्यतइति ॥ ५ ॥

जे केइ खुद्दगा पाणा, अडुवा संति महालया ॥ सरिसतेहिंति वेर
ति असरिसतीय णो वदे ॥६॥ एएहिं दोहिं ठाणेहिं, ववहारो ण
विज्जई ॥ एएहिं दोहिं ठाणेहिं, अणायारंतु जाणए ॥ ७ ॥

अर्थ–हवे चारित्राचार आश्री कहेछे (जेकेइखुद्दगापाणा के०) जे कोइ आ जगत् मां लघुप्राणी एटले सूक्ष्मजीवछे एटले पृथ्विकायथी मांडीने पंचेंद्रियपर्यंत सूक्ष्म जीवछे, (अडुवासंतिमहालया के०) अथवा जे जीव महाकाय एटले महोटी कायावा लाछे, अहीं न्हानाजीव ते कुंथुआदिक, अने महोटा जीव ते हस्त्यादिक जाणवा (स रिसतेहिंतिवेर के०) ए बेहुनो विनाश करवा थकी सरखुंज वैर होय, एवुं एकांते वचन न बोले (असरिसतीयणोवदे के०) अथवा असरीखुं होय एटले सरखुं वैर न होय एवुं वचन पण एकांतें न बोले कारणके, कर्मबंधने विषे न्हाना मोटानुं कांइ विशेष नथी किंतु? अध्यवसाय विशेष कर्म बंधछे एवुं जाणे, अने बोले ॥६॥ ए बेहु स्थानक बोलतां व्यवहार प्रवर्त्ते नहीं, एवुं जाणे, तथा एवुं एकांतें बोलतां अनाचारछे एम जाणे ॥७॥

॥ दीपिका–(जेकेइत्यादि) ये केचित् क्षुद्रा प्राणिनएकेंद्रियद्वींद्रियादयोऽल्पकायावा पंचेंद्रिया । अथवा महालयामहाकाया संति तेषां क्षुद्राणां कुंथ्वादीनां महतां हस्त्या दीनां च हनने सदृश वैरं कर्मबंधस्तुल्यइत्येकांतेन नो वदेत् असदृश वातद्घाते वैरं कर्मबं धइंद्रियज्ञानकायानां विचित्रत्वादित्यपि नो वदेत् । नहि वध्यवशात्कर्मबंध किंतु? अध्य वसायवशात् तीव्राध्यवसायादल्पमपि सत्वं घ्नतोमहान् कर्मबंध अकामस्यतु महा कायप्राणिहननेपि स्वल्पबंधइत्यर्थ ॥६॥ (एएहिंइति) एताभ्यां तुल्यातुल्यविरूपाभ्यां स्था नाभ्यां व्यवहारोन विद्यते अध्यवसायस्यैव बंधाबंधहेतुत्वात् । एताभ्यां द्वाभ्यां स्थानाभ्यां प्रवृत्तस्यानाचारं जानीयात् । तथाहि । नहि जीववधे हिंसा स्यात्तस्य नित्यत्वात् । यदुक्तं "पंचेंद्रियाणि त्रिविधं बलंच, उच्छ्वासनिश्वासमथान्यदायु ॥ प्राणादशैते जगवद्भिरुक्तास्ते षां वियोजीकरणं तु हिंसा" इति । किंच जावापेक्षएव कर्मबंधोयथा वैद्यस्य सम्यक् क्रियां कुर्वतोयद्यपि रोगी म्रियते तथापि न वैद्यस्य कर्मबंधोदुष्टाध्यवसायाजावात् अन्यस्यतु सर्पबुध्या रज्जुमपि घ्नतोजावदोषात्कर्मबंध । यदागम । उच्चालियं मिपाए, इरियासमि

यस्स सकमहाए ॥ वावज्जिक्रुलिंगी, । मरिज्जतज्जोगमासज्ज ॥ १ ॥ नयतस्स तन्निमि त्तो,बंधेसुहमोविदेसिऊं समए॥ अणवज्जोउपऊंगेण,सव्वनावेणसोजह्मा ॥२॥ इत्यादि॥७॥

॥टीका--अधुना चारित्राचारमंगीकृत्याह॥(जेकेइइत्यादि)ये केचन क्षुद्रका सत्वा प्राणिन एकेंद्रियद्वींद्रियादयोऽल्पकायावा पचेंद्रियाअथवा महालयामहाकाया सति विद्यते तेषा क्षुद्रकाणामल्पकायाना कुंथ्वादीना महानालय शरीर येषा ते महालयाहस्त्यादयस्तेषा च व्यापादने सदृश वैरमिति वज्रकर्म विरोधलक्षण वा वैर सदृश समान तुल्यप्रदेशत्वात्सर्वे जतूनामित्येवमेकांतेन नो वदेत्तथा विसदृशमसदृश तद्व्यापत्ता वैर कर्मबंधोवा इंद्रियविज्ञानकायाना विसदृशत्वात् सत्यपि प्रदेशतुल्यत्वे न सदृश वैरमित्येवमपि नो वदेत् । यदि हि वध्यापेक्षएवकर्मबंध स्यात्तत्तद्वशात्कर्मणोपि सादृश्यमसादृश्यंवा वक्तु युज्यते । नच तद्वशादेव बंधोपि त्वध्यवसायवशादपि ततश्च तीव्राध्यवसायिनोऽल्पकायसत्वव्यापादनेपि महद्वैरमकामस्यतु महाकायसत्वव्यापादनेपि स्वल्पमिति ॥ ६ ॥ एतदेवसूत्रेणैव दर्शयितुमाह ॥ (एएहिमित्यादि) आभ्यामनंतरोक्ताभ्या स्थानाभ्यामनयोर्वा स्थानयोरल्पकायसत्वमहाकायव्यापादनापादितकर्मबंधसदृशत्वासदृशत्वयोर्व्यवहरण व्यवहारोनिर्युक्तिकत्वान्न युज्यते ।तथाहि। न वध्यस्य सदृशत्वमसदृशत्व चैकमेव कर्मबंधस्य कारणमपितु वधकस्य तीव्रनावोमंदनावोज्ञाननावोऽज्ञाननावोमहावीर्यत्वमल्पवीर्यत्व चेत्येतदपि । तदेव वध्यवधकयोर्विशेषात्कर्मबंधविशेषइत्येव व्यवस्थिते वध्यमेवाश्रित्य सदृशत्वासदृशत्वव्यवहारोन विद्यतइति तथा तयोरेव स्थानयो प्रवृत्तस्यानाचार विजानीयादिति । तथाहि। यज्जीवसाम्यात्कर्मबंधसदृशत्वमुच्यते तदयुक्त । यतोनहि जीवव्यापत्त्या हिंसोच्यते ।तस्य शाश्वतत्वेन व्यापादयितुमशक्यत्वादपि त्विंद्रियादिव्यापत्त्या ।तथाचोक्त। 'पचेंद्रियाणि त्रिविध बल च, उच्छ्वासनि श्वासमथान्यदायु ॥ प्राणादशैते नगवद्भिरुक्तास्तेषा वियोजीकरण तु हिंसा" ॥१॥ इत्यादि । अपिच नावसव्यपेक्षस्यैव कर्मबंधोभ्युपेतु युक्त । तथाहि। वैद्यस्यागमसव्यपेक्षस्य क्रिया कुर्वतायद्यप्यातुरविपत्तिर्नवति तथापि न वैरानुषंगोनैदोषा नावादपरस्यतु सर्पबुद्ध्या रज्जुमपि घ्नतोनावदोषात्कर्मबंधस्तद्दहितस्यतु न बंधइत्युक्त चागमे । उच्चालियंमियाएइत्यादि । तंदुलमत्स्याख्यानक तु सुप्रसिद्धमेव । तदेवविधवध्यवधकनावापेक्षया स्यात् सदृशत्व स्यादसदृशत्वमित्यन्यथाऽनाचारइति ॥ ७ ॥

अहाकम्माणि जुंजति, अणमणे सकम्मुणा॥ उवलित्तेति जाणिज्जा, अणुवलित्तेति वा पुणो ॥८॥ एएहिं दोहिं गणेहिं, ववहारो ण विज्जई, एएहिं दोहिं गणेहिं, अणायार तु जाणए ॥ ए॥

११

अर्थ—हवे आहार आश्री आचार अनाचार कहेले (अहाकम्माणिभुंजति के०) जे साधु आश्री छए कायनुं मर्दन करी,वस्तु जे नोजन उपाश्रयादिक कीधां होय, एटलानो जे उपनोग करे ते, (अम्मसमेसकम्मुणा के०) परस्पर माहोमाहे पोताने कर्मे, (उवलित्तेति जाणिज्जा के०) उपलिप्त जाणवा एवुं पण वचन एकांतें न बोले, (अणुवलित्तेतिवापुणो के०)अथवा पोताना कर्मे करी अनुपलिप्त,एटले उपलिप्त न जाणवा,एवुं पण वचन कातेतें न बोले,कारणके, जे आधाकर्मिक आहार होय, तेने पण श्रुतना उपदेशने अर्थे शुद्ध एवो करीने जमे तो ते कर्मे करी लेपाय नहीं अथवा सुजतो आहार होय,परंतु ते आहारने आहारगृद्धपणे जमे तो, ते कर्मे करी बंधायछे एवुं जाणीने, अनेकांत वचन बोले, पण एकांत वचन न बोले ॥८॥ ए वेहुस्थानके करी व्यवहार न जाणे, अने ए बेहु स्थानके करी अनाचार जाणे ॥ ए ॥

॥ दीपिका—(अहाकम्माणित्ति) आधाकर्माणि ये भुंजतेऽन्योन्य परस्पर तान्स्वकीयेन कर्मणा उपलिप्तान्वा नो वदेत् अनुपलिप्तान्वा न वदेत् । आधाकर्मापि श्रुतोपदेशेन शुद्धमिति कृत्वा भुंजानस्य न बंध श्रुतोपदेश विनाऽहारगृध्याऽधाकर्म भुंजानस्यापितु बंधस्तस्मादाधाकर्मभोगे कर्मबंध स्यान्न स्याद्वा इति वदेत् ॥ ८ ॥ (एएहिंदोहिंमिति) आधाकर्मभोगे कर्मबंध स्यादेव न स्यादेवेति द्वाभ्यां स्थानाभ्यां व्यवहारो न विद्यते द्वाभ्यां स्थानाभ्यां स्वीकृताभ्यामनाचारं जानीयात् ॥ ए ॥

॥ टीका—पुनश्चारित्रमधिकृत्याहारविषयानाचाराचारौ प्रतिपादयितुकामआह । (अहाकम्माणीत्यादि) साधु प्रधानकारणमादायाश्रित्य कर्माण्याधाकर्माणि । तानितु वस्त्रनोजनवसत्यादीन्युच्यते । एतान्याधाकर्माणि ये भुंजते एतैरुपनोगं ये कुर्वन्त्यन्योन्य परस्पर तान्स्वकीयेन कर्मणोपलिप्तान् विजानीयादित्येव नो वदेत्तथाऽनुपलिप्तानितिवा नो वदेत् । एतदुक्तं नवति । आधाकर्मापि श्रुतोपदेशेन शुद्धमिति कृत्वा भुंजान कर्मणा नोपलिप्यते तदाधाकर्मोपनोगेनावश्यतया कर्मबंधोनवतीत्येव नो वदेत्तथा श्रुतोपदेशमंतरेणाहारगृध्याऽधाकर्म भुंजानस्य तन्निमित्तकर्मबंधसद्भावात्सद्भावयोर्व्यवहरणं व्यवहारोनिर्युक्तिकत्वान्न युज्यते । तथाहि । न बंधस्य सद्भावासद्भावयोर्व्यवहरणं व्यवहारो निर्युक्तिकत्वान्न युक्तसद्भावत्वमतोनुलिप्तानपि नो वदेद्यथावस्थितमौनीन्द्रागमज्ञस्य त्वेवं युज्यते वक्तुमाधाकर्मोपनोगे न स्यात्कर्मबंध स्यान्नेति । यतउक्तं । "किंचिच्छुद्धं कल्पमकल्पंवा स्यादकल्पमपि कल्पं ॥ पिंम शय्या वस्त्र पात्रं वा नेषजाद्यं वा" ॥१॥ तथान्यैरप्यनिहितं । उत्पद्येतद्धि सावस्था देशकालामयान्प्रति॥ यस्यामकार्य कार्यं स्यात्कर्म कार्यंच

वर्जयेदित्यादि ॥८॥ किमित्येवं स्याद्वाद प्रतिपाद्यतइत्याह।(एएहिंदोहिमित्यादि) आभ्यां द्वाभ्यां स्थानाभ्यामाश्रिताभ्यामनयोर्व्यवस्थानयोराधाकर्मोपभोगेन कर्मबंधाभावाभावभूतयोर्व्यवहारोन विद्यते।तथाहि। यद्यवश्यमाधाकर्मोपभोगेनैकांतेन कर्मबंधोऽभ्युपगम्येत। एवं चाहाराभावेनापि क्वचित्सुतरामनर्थोदय स्यात्। तथाहि। क्षुत्प्रपीडितोन सम्यगीर्यापथं शोधयेत्ततश्च व्रजन् प्राण्युपमर्दमपि कुर्यात् मूर्छादिसद्भावतया देहपाते सत्यवश्यंभावी त्रसादिव्याघातोऽकालमरणे चाविरतिरंगीकृता भवत्यार्तध्यानापत्तौच तिर्यग्गतिरित्यागमश्च। सव्वछ संजमं संजमाउ अप्पाणमेव रक्केज्जाइत्यादिनापि तडुपभोगे कर्मबंधाभावइति। तथाहि। आधाकर्मण्यपि निष्पाद्यमाने षड्जीवनिकायवधस्तद्वधेच प्रतीत कर्मबंधइत्यतोऽनयो स्थानयोरेकांतेनाश्रीयमाणयोर्व्यवहरण व्यवहारोन युज्यते तथाभ्यामेव स्थानाभ्यां समाश्रिताभ्यां सर्वमनाचारं विजानीयादिति स्थितं ॥ ९ ॥

जमिदं उरालं माहारं, कम्मगं च तहेवयं ॥ सव्वछ वीरियं अछि,
णछि सव्वछ वीरियं ॥ १० ॥ एएहिं दोहिं ठाणेहिं, ववहारो ण
विज्जई ॥ एएहिं दोहिं ठाणेहिं, अणायारं तु जाणए ॥ ११ ॥

अर्थ–हवे बीजी रीते परदर्शनी आश्री बोलवानो अनाचार कहेछे (जमिदंउरालमाहार कम्मगचतहेवयं के०) जे ए शरीर सर्वलोक प्रसिद्ध औदारिक, ते तिर्यंच अने मनुष्यनु शरीर जाणवु, तथा जे चौदपूर्वधर मुनिराज होय,'ते कोइ एक संशय उपने छते शरीर करीने केवली पासे पूछवाने अर्थे मोकले,ते आहारक शरीर जाणवु एना ग्रहणथी वैक्रिय शरीर पण ग्रहण करवु, तथा कार्मण शरीर कर्मपुद्गलनिबद्ध जाणवु तेमज एनु सहचारी ते तैजस शरीर जाणवु, ए पांच शरीर जाणवा हवे कोइएकने ए पांच शरीरछे तेमाहेथी औदारिक वैक्रियादिकने विषे एकज शरीरनी आशंका उपजे एटले ते एम कहे के, जे औदारिक शरीर, तेहिज तेजस, कार्मण शरीरछे, अने तेजस कार्मण शरीर तेहिज औदारिक, वैक्रिय, अने आहारक शरीरछे परंतु एवी संज्ञा न करवी, तथा ए पांचे शरीर अत्यंत मांहो मांहे जुदां जुदांछे एवी पण संज्ञा न करवी त्यारे केवी संज्ञा करवी? तोके,ए जीव आश्री पांचे शरीर अभिन्नछे अने नामने भेद,पर्यायने भेदें,भिन्न पणछे एम कहेवु हवे सर्वद्रव्यनो भेदाभेद देखाडवामाटें कहेछे (सव्वछवीरियंअछि के०) सघलु द्रव्य, सर्वद्रव्यने विषेछे एवो सांख्यमतनो अभिप्राय जाणवो ते सांख्य मत एम कहेछे के, सत्व, रज, तमरूपें जे प्रधाननामा तत्व ते सर्वद्रव्यनु कारणछे, ए कारणे सर्वद्रव्य सर्वात्मक एवी व्यवस्था एटले सर्वत्र घट पटादिकद्रव्यने विषे अन्यद्रव्यनु

अर्थ–हवे आहार आश्री आचार अनाचार कहेछे (अहाकम्माणिभुंजति के०) जे साधु आश्री छए कायनु मर्दन करी,वस्तु जे भोजन उपाश्रयादिक कीधा होय, एटलानो जे उ पभोग करे ते, (अस्सुमस्सेसकम्मुणा के०) परस्पर मांहोमाहे पोतानें कर्मे, (उवलित्तेति जाणिज्जा के०) उपलिप्त जाणवा एवु पण वचन एकांते न बोले, (अणुवलित्तेतिवापु णो के०)अथवा पोताना कर्म करी अनुपलित,एटले उपलिप्त न जाणवा,एवु पण वचन कातेतें न बोले,कारणके, जे आधाकर्मिक आहार होय, तेनें पण श्रुतना उपदेशनें अर्थे शुद्ध एवो करीने जमे तो ते कर्म करी लेपाय नही अथवा भुजतो आहार होय,परतु ते आहारने आहारगृद्धपणे जमे तो, ते कर्मे करी बधायछे एवु जाणीनें, अनेकात वचन बोले, पण एकात वचन न बोले ॥८॥ ए बेहुस्थानके करी व्यवहार न जाणे, अनें ए बेहु स्थानके करी अनाचार जाणे ॥ ए ॥

॥ दीपिका–(अहाकम्माणित्ति) आधाकर्माणि ये भुजतेऽन्योन्य परस्पर तान्स्वकीये न कर्मणा उपलिप्तान्वा नो वदेत् अनुपलिप्तान्वा न वदेत् । आधाकर्मापि श्रुतोपदेशेन शुद्धमिति कृत्वा भुजानस्य न बध श्रुतोपदेश विनाऽहारगृध्याऽधाकर्म भुजानस्यापितु बधस्तस्मादाधाकर्मभोगे कर्मबध स्यान्न स्याद्वा इति वदेत् ॥ ८ ॥ (ए एहिदोहिमिति) आधाकर्मभोगे कर्मबध स्यादेव न स्यादेवेति द्वाभ्या स्थानाभ्या व्यवहारो न विद्यते द्वाभ्या स्थानाभ्या स्वीकृताभ्यामनाचार जानीयात् ॥ ए ॥

॥ टीका–पुनश्चारित्रमधिकृत्याहारविपयानाचाराचारौ प्रतिपादयितुकामआह । (अ हाकम्माणीत्यादि) साधु प्रधानकारणमादायाश्रित्य कर्माण्याधाकर्माणि ।तानितु वस्त्रभो जनवसत्यादीन्युच्यते । एतान्याधाकर्माणि ये भुजते एतैरुपभोग ये कुर्वत्यन्योन्य परस्प र तान्स्वकीयेन कर्मणोपलिप्तान् विजानीयादित्येव नो वदेत्तथाऽनुपलिप्तानितिवा नो व देत् । एतदुक्त भवति । आधाकर्मापि श्रुतोपदेशेन शुद्धमिति कृत्वा भुजान कर्मणा नो पलिप्यते तदाधाकर्मोपभोगेनावश्यतया कर्मबधोभवतीत्येव नो वदेत्तथा श्रुतोपदेशम तरेणाहारगृध्याऽधाकर्म भुजानस्य तन्निमित्तकर्मबधसद्दशत्वासद्दशत्वयोर्व्यवहरण व्यवहा रोनिर्युक्तिकत्वान्न युज्यते । तथाहि । न वध्यस्य सद्दशासद्दशत्वयोर्व्यवहरण व्यवहारो निर्युक्तिकत्वान्न युक्तसद्दशत्वमतोनुलिप्तानपि नो वदेद्यथावस्थितमौनीऽागमज्ञस्य त्वेव यु ज्यते वक्तुमाधाकर्मोपभोगे न स्यात्कर्मबध स्यान्नेति । यतउक्त । "किंचिच्छुद्ध कल्पमक ल्पवा स्यादकल्पमपि कल्प ॥ पिंड शय्या वस्त्र पात्र वा भेषजाद्य वा" ॥१॥ तथान्यैर प्यभिहित । उत्पद्येतहि सावस्था देशकालामयान्प्रति॥ यस्यामकार्य कार्यं स्यात्कर्म कार्यंच

न नियता युगपडुपलब्धिरित्येव च व्यवस्थिते कथंचिदेवोपलब्धेरभेद कथंचिच्च संज्ञा भेदाद्भेदइति स्थितं । तदेवमौदारिकादीनां शरीराणां भेदाभेदौ प्रदर्श्याधुना सर्वस्येव इ व्यस्य भेदाभेदौ प्रदर्शयितुकाम पूर्वपक्ष श्लोकपश्चार्द्धेन दर्शयितुमाह । (सव्वडवीरिय मित्यादि) सर्वं सर्वत्र वियतइतिकृत्वा सांख्याभिप्रायेण सत्वरजस्तमोरूपस्य प्रधानस्यै कत्वात्तस्यच सर्वस्यैव कारणत्वात् अत सर्वं सर्वात्मकमित्येव व्यवस्थिते घटपटाद्यवय वस्य व्यक्तस्य वीर्यं शक्तिर्वियते सर्वस्यैव हि व्यक्तस्य प्रधानकार्यत्वात्कार्यकारणयोश्चैकत्वा दत सर्वस्य सर्वत्र वीर्यमस्तीत्येव संज्ञा नो निवेशयेत्तथा सर्वे भावा स्वभावेन स्वस्वभावव्यव स्थिताइति प्रतिनियतशक्तित्वान्न सर्वत्र सर्वस्य वीर्यं शक्तिरित्येवमपि संज्ञा नो निवेशयेत्।यु क्तिश्चात्र यत्तावडुच्यते सांख्याभिप्रायेण सर्वं सर्वात्मकं देशकालाकारप्रतिबंधात्तु न समान कालोपलब्धिरिति तदयुक्तं। यतोभेदेन सुखडु खजीवितमरणादूरासन्नसूक्ष्मबादरसुरूपकुरू पादिकं संसारवैचित्र्यमध्यक्षेणाऽनुभूयते ।नच दृष्टेऽनुपपन्नं नाम।नच सर्वं मिथ्येत्यभ्युपप न्न युज्यते । यतोऽदृष्टहानिरदृष्टकल्पनाच पापीयसी। किंच सर्वैक्येऽभ्युपगम्यमाने संसार मोक्षाभावतया कृतनाशोकृताभ्यागमश्च बलादापतति। यच्चैतत्सत्वरजस्तमसां साम्यावस्था प्रकृति प्रधानमित्येतत्सर्वस्य जगत कारणं तन्निरतरां सुहृदं प्रत्येष्यति निर्युक्तिकत्वाद पिच सर्वथा सर्वस्य वस्तुनएकत्वेऽभ्युपगम्यमाने सत्वरजस्तमसामप्येकत्वं स्यात् तद्भेदे च सर्वस्य भेदइति। तथा यदप्युच्यते सत्वस्य व्यक्तस्य प्रधानकार्यत्वात्सत्कार्यवादत्वाच्च मयू रांमकरणे चचुपिच्छादीनां सतामेवोत्पादाभ्युपगमादसडुत्पादे चाम्रफलादीनामप्युत्पत्तिप्र संगादित्येतद्वाड्मात्रं । तथाहि। यदि सर्वथा कारणे कार्यमस्ति न तर्ह्युत्पादोनिष्पन्नघ टस्येवापिच मृत्पिण्डावस्थायामेव घटगतां कर्मगुणव्यपदेशानवेयुर्नच भवति ततोनास्ति कारणे कार्यमथाऽनभिव्यक्तमस्तीति चेन्न । तर्हि सर्वात्मना वियते नाप्येकांतेनासत्कार्य वाद एव । तन्नाभेहि व्योमारविंदानामप्येकांतेनासतोमृत्पिण्डादेर्घटादेरिवोत्पत्तिं स्यान्न चै तदृष्टमिष्टं वा।अपिचैव सर्वस्य सर्वस्माडुत्पत्ते कार्यकारणभावानियम स्यादवच न शाद्य कुरार्थीशालीबीजमेवादद्यापितु यत्किंचिदेवेति नियमेनच प्रेक्षापूर्वकारिणामुपादानकारणा दौ प्रवृत्तिरतोनासत्कार्यवादइति।तदेवं सर्वपदार्थानां सर्वज्ञेयत्वप्रमेयत्वादिभिर्धर्मैः कथंचि देकत्व तथा प्रतिनियतार्थकार्यतया यदेवार्थक्रियाकारि तदेव परमार्थत सदितिकृत्वा कथ चिद्भेदइति सामान्यविशेषात्मकं वस्त्विति स्थितं।अनेनच स्यादस्ति स्यान्नास्तीति भंगकद्वये न शेषभंगकाअपि दृष्टव्या । ततश्च सर्ववस्तु सप्तभंगीस्वभावं। ते चामी स्वद्रव्यक्षेत्रकालभा वापेक्षया स्यादस्ति परद्रव्यापेक्षया स्यान्नास्ति अनयोरेव धर्मयोर्युगपद्येनाभिधातुमशक्य त्वात्स्यादवक्तव्यं तथा कस्यचिदंशस्य स्वद्रव्याद्यपेक्षया विवक्षितत्वात्कस्यचिच्चांशस्य पर द्रव्याद्यपेक्षया स्याद्वा नास्तिवा वक्तव्य चेति। तथैकस्यांशस्य स्वद्रव्याद्यपेक्षया परस्य तु

वीर्यछे, एवी संज्ञा पण करवी नहीं (नत्थिसव्वत्थवीरिय के०) वली सर्वपदार्थने विषे सर्वड्व्यनुं वीर्य नथी, एवी संज्ञा पण करवी नहीं अहीं एकांतनो निषेध करीनें स्याद्वाद बोलवो इत्यर्थ ॥ १० ॥ अगीआरमी गाथानो अर्थ, पूर्ववत् जाणवो ॥ ११ ॥

॥ दीपिका–(जमिदमिति) यदिदमौदारिकं शरीरं आहारकंवा एतद्ग्रहणाद्वैक्रियमपि ग्राह्यं कार्मणं तथा तैजसमपि। एतेषां शरीराणामैक्यमेव तैजसकार्मणयोरभिन्नत्वात्। ततस्त्रयाणामेकत्वमेवेति नो वदेत् इत्यग्रेतनश्लोके संबंधः। तथा शरीराणां सर्वेषां सर्वथा भेदएवेत्यपि नो वदेत् कथंचिदेकत्वस्याप्यंगीक्रियमाणत्वात् तथा। (सव्वत्थ वित्ति) सर्वं सर्वत्रास्तीति सांख्याभिप्रायेण सत्वरजस्तमोरूपाया प्रकृतेरेकत्वात्तस्याएव हि सर्वस्य कारणत्वात्सर्वं सर्वात्मकमेव सति सर्वत्र घटपटादौ अन्यस्य व्यक्तस्य वीर्यं शक्तिरस्ति सर्वस्य व्यक्तस्य प्रकृतिकार्यत्वात्कार्यकारणयोश्चैकत्वात्सर्वं सर्वत्र सर्वस्य वीर्यमस्तीति संज्ञा न कुर्यात्। तथा सर्वे भावाः स्वस्वशक्तियुक्ताइति न सर्वस्य सर्वत्र शक्तिरित्यपि संज्ञा न कुर्यात् भेदाभेदस्वरूपत्वात्सर्वभावानामिति ॥१०॥ (एएहिंदोहिंगणेहिंति) द्वाभ्यामेताभ्यां सर्वत्र शक्तिरस्ति नास्तिवेति अथवा शरीराणां सर्वेषां भेदोऽभेदोवेति द्वाभ्यां स्थानाभ्यां व्यवहारोन विद्यते युक्त्ययोन संगच्छतीत्यर्थः। एतयोः स्थानयोः प्रवृत्तस्याऽनाचारं जानीयात् ॥११॥

॥ टीका–पुनरप्यन्यथादर्शनं प्रति चागमानाचारं दर्शयितुमाह। (जमिदउरालमित्यादि) यदि वा योयमनंतरमाहारः प्रदर्शितः स सति शरीरे भवति। शरीरं च पंचधा। तस्य चौदारिकादेः शरीरस्य भेदाभेदं प्रतिपादयितुकामः पूर्वपक्षद्वारेणाह। (जमिदमित्यादि) यदिदं सर्वजनप्रत्यक्षमुदारैः पुद्गलैर्निर्वृत्तमौदारिकमेतदेवोरालं निस्सारत्वादेतच्च तिर्यङ्मनुष्याणां भवति। तथा चतुर्दशपूर्वविदा क्वचित्संशयादावाह्रियतइत्याहारकमेतद्ग्रहणाच्च वैक्रियोपादानमपि दृष्टव्यं। तथा कर्मणा निर्वृत्तं कार्मणमेतत् सहचरितं तैजसमपि ग्राह्यं। औदारिकवैक्रियाहारकाणां प्रत्येकं तैजसकार्मणाभ्यां सह युगपडुपलब्धेः कस्यचिदेकत्वाऽशंका स्यादतस्तदपनोदार्थं तदभिप्रायमाह। तदेवं तद्यदेवौदारिकं शरीरं तएव तैजसकार्मणे शरीरे। एवं वैक्रियाहारकयोरपि वाच्यं। तदेवंभूतां संज्ञां नो निवेशयेदित्युत्तरश्लोके क्रिया। तथैतेषामात्यंतिकोभेदइत्येवंभूतामपि संज्ञां नो निवेशयेत्। युक्तिश्चात्र यद्येकांतेनाभेदएव। ततइदमौदारिकमुदारपुद्गलनिष्पन्नं तथैतत्कर्मणा निर्वर्त्तितं कार्मणं सर्वस्यैतस्य संसारचक्रवालस्य भ्रमणस्य कारणभूतं तेजोद्रव्यैर्निष्पन्नं तेजएव तैजसं आहारपक्तिनिमित्तं तैजसलब्धिनिमित्तं चेत्येवं भेदेन संज्ञानिरुक्तं कार्यंच न स्यात्। अथात्यंतिकोभेदएव ततोघटवद्भिन्नयोर्देशकालयोरप्युपलब्धिः स्यात्।

न नियता युगपडुपलब्धिरित्येव च व्यवस्थिते कथचिदेवोपलब्धेर्भेद कथचिच्च सज्ञा भेदाभेदइति स्थितं । तदेवमौदारिकादीना शरीराणा भेदाभेदौ प्रदर्श्याधुना सर्वस्येव द्रव्यस्य भेदाभेदौ प्रदर्शयितुकाम पूर्वपक्ष श्लोकपश्चार्द्धेन दर्शयितुमाह् । (सव्वछवीरियं मित्यादि) सर्वं सर्वत्र विद्यतइतिकृत्वा सांख्याभिप्रायेण सत्वरजस्तमोरूपस्य प्रधानस्यैकत्वात्तस्यच सर्वस्यैव कारणत्वात् अत सर्वं सर्वात्मकमित्येव व्यवस्थिते घटपटाद्यवयवस्य व्यक्तस्य वीर्यं शक्तिर्विद्यते सर्वस्यैव हि व्यक्तस्य प्रधानकार्यत्वात्कार्यकारणयोश्चैकत्वादत सर्वस्य सर्वत्र वीर्यमस्तीत्येव सज्ञा नो निवेशयेत्तथा सर्वे भावा स्वभावेन स्वस्वभावव्यवस्थिताइति प्रतिनियतशक्तित्वान्न सर्वत्र सर्वस्य वीर्यं शक्तिरित्येवमपि सज्ञा नो निवेशयेत्।युक्तिश्चात्र यत्तावडुच्यते सांख्याभिप्रायेण सर्वं सर्वात्मक देशकालाकारप्रतिबधात्तु न समानकालोपलब्धिरिति तदयुक्त। यतोभेदेन सुखदु खजीवितमरणादूरासन्नसूक्ष्मबादरसुरूपकुरूपादिक ससारवैचित्र्यमध्यक्षेणाऽनुभूयते ।नच दृष्टेऽनुपपन्न नाम।नच सर्वं मिथ्येत्यभ्युपपन्न युज्यते । यतोऽदृष्टाभिरदृष्टकल्पनाच पापीयसी। किंच सर्वैक्येऽभ्युपगम्यमाने ससारमोक्षाभावतया कृतनाशोऽकृताभ्यागमश्च बलादापतति। यच्चैतत्सत्वरजस्तमसा साम्यावस्था प्रकृति प्रधानमित्येतत्सर्वस्य जगत कारण तन्निरतरा सुहृद प्रत्येष्यति निर्युक्तिकत्वादपिच सर्वथा सर्वस्य वस्तुनएकत्वेऽभ्युपगम्यमाने सत्वरजस्तमसामप्येकत्व स्यात् तद्भेदे च सर्वस्य भेदइति। तथा यदप्युच्यते सत्वस्य व्यक्तस्य प्रधानकार्यत्वात्सत्कार्यवादत्वाच्च मयूराण्डकरणे चचुपिच्छादीना सतामेवोत्पादाभ्युपगमादसदुत्पादे चाम्रफलादीनामप्युत्पत्तिप्रसगादित्येतद्वाङ्मात्र । तथाहि । यदि सर्वथा कारणे कार्यमस्ति न तर्ह्युत्पादोनिष्पन्नघटस्येवापिच मृत्पिण्डावस्थायामेव घटगता कर्मगुणव्यपदेशाभवेयुर्नच भवति ततोनास्ति कारणे कार्यमथाऽनभिव्यक्तमस्तीति चेन्न । तर्हि सर्वात्मना विद्यते नाप्येकातेनासत्कार्यवाद एव । तद्भावेहि व्योमारविंदानामप्येकातेनासतोमृत्पिण्डादेर्घटादेरिवोत्पत्ति स्यान्न चैतदृष्टमिष्ट वा।अपिचैव सर्वस्य सर्वस्माडुत्पत्ते कार्यकारणभावानियम स्यादेवच न शाल्यकुरायोशालीबीजमेवादद्यात्पितु यत्किंचिदेवेति नियमेनच प्रेक्षापूर्वकारिणामुपादानकारणादौ प्रवृत्तिरतोनासत्कार्यवादइति।तदेव सर्वपदार्थाना सर्वज्ञेयत्वप्रमेयत्वादिभि र्धर्मै कथचिदेकत्व तथा प्रतिनियतार्थकार्यतया यदेवार्थक्रियाकारि तदेव परमार्थेत सदितिकृत्वा कथचिद्भिदइति सामान्यविशेषात्मक वस्त्विति स्थित।अनेनच स्यादस्ति स्यान्नास्तीति भगकद्वयेन शेषभगकाअपि द्रष्टव्या । तत श्च सर्ववस्तु सप्तभगीस्वभाव। ते चामी स्वद्रव्यक्षेत्रकालभावापेक्षया स्यादस्ति परद्रव्यापेक्षया स्यान्नास्ति अनयोरेव धर्मयोर्योगपद्येनाभिधातुमशक्यत्वात्स्यादवक्तव्य तथा कस्यचिदशस्य स्वद्रव्याद्यपेक्षया विवक्षितत्वादन्यस्यचाशस्य परद्रव्याद्यपेक्षया स्याद्वा नास्तिवा वक्तव्य चेति। तथैकस्याशस्य स्वद्रव्याद्यपेक्षया परस्य तु

सामस्त्येन स्वद्रव्याद्यपेक्षया विवक्षितत्वात्स्यादस्तिचावक्तव्यं चेति।तथैकांशस्य परद्रव्याद्यपेक्षया स्यान्नास्ति चावक्तव्य चेति तथैकस्यांशस्य स्वद्रव्याद्यपेक्षया परस्य तु परद्रव्याद्यपेक्षयाऽन्यस्य तु योगपद्येन स्वपरद्रव्याद्यपेक्षया विवक्षितत्वात्स्यादस्तिच नास्तिचाऽवक्तव्यं इय च सप्तभंगी यथायोगमुत्तरत्रापि योजनीयेति ॥ १० ॥ ११ ॥

णत्थि लोए अलोएवा, णेव सन्न निवेसए॥ अत्थि लोए अलोएवा, एव सन्न निवेसए॥ १२॥ णत्थि जीवा अजीवावा, णेव सन्न निवेसए॥ अत्थि जीवा अजीवावा, एव सन्न निवेसए॥ १३॥ णत्थि धम्मे अधम्मेवा, णेव सन्न निवेसए॥ अत्थि धम्मे अधम्मेवा, एव सन्न निवेसए ॥ १४॥

अर्थ—हवे सर्वशून्यवादीना मतनु निराकरण करवाने अर्थ,लोक अने अलोकनु अस्तिपणु देखाडेछे, (णत्थिलोएअलोएवा के०) चतुर्दशरज्ज्वात्मक एवो जे लोक,अथवा पचास्तिकायरूप एवो जे लोक, ते नथी,एवी सज्ञा न करवी,तथा आकाशास्तिकाय रूप एवो जे अलोक,ते पण नथी,ते एवी सज्ञा पण न करवी केमके,ए नास्तिकवादीनो मतछे हवे केवी सज्ञा करवी? ते कहेछे पचास्तिकायरूप लोक ते पण छे,तथा आकाशास्तिकाय रूप अलोक ते पणछे, एवी सज्ञा करवी ए केवलीनो मतछे॥१२॥हवे लोकालोकनु अस्तिपणु देखाडीने तेना विशेषभूत जीव अने अजीव तेनो अस्तिभाव देखाडेछे जीव ते, उपयोग लक्षण ससारीक, अथवा मुक्तिगत,ए पण नथी तथा अजीव ते धर्म, अधर्म, आकाश, पुद्गल,अने कालात्मक ए पण नथी एवी सज्ञा पण न करवी केमके,ए नास्तिकवादीनो मतछे त्यारे केवी सज्ञा करवी? तोके, जीव पणछे,अने अजीव पणछे एवी सज्ञा करवी ए केवली भगवतनो मतछे ॥१३॥ हवे एवा जीवनो अस्तिभाव देखाडीने तेने सदसत्क्रिया अनुष्ठानने विषे धर्म, अने अधर्म कारणछे,ते माटे हवे तेनो अस्तिभाव कहेछे श्रुतचारित्ररूप जे धर्म, ते कर्मक्षयनो कारणरूपछे ते पण नथी, तथा मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय, अने योगरूप जे अधर्मछे, ते कर्मबधनो कारणरूपछे, ते पण नथी, एवी सज्ञा पण न करवी परतु धर्म पणछे, अने अधर्म पणछे, एवी सज्ञा करवी ॥ १४ ॥

॥ दीपिका–(णत्थिलोएइत्यादि) शून्यवादिमताभिप्रायेण नास्ति लोक अलोकोपि नास्तीति सज्ञा नो निवेशयेन्न स्थापयेत् अस्ति लोक पचास्तिकायात्मक अस्ति वाऽलो

कश्चाकाशास्तिकायमात्रइति संज्ञां निवेशयेत् ॥ १२ ॥ (णत्थिजीवाइति) न सन्ति जीवाश्च जीवावा इति संज्ञा नो निवेशयेत् सन्ति जीवाश्चजीवाश्चेति संज्ञां कुर्यात् ॥ १३ ॥ (णत्थि धम्मइति) नास्ति धर्मः श्रुतचारित्रात्मकः नास्ति वाऽधर्मोमिथ्यात्वाविरतिप्रमादकषाययोग रूपः एवं संज्ञां न कुर्यात् अस्ति धर्मोऽधर्मोवा एवं संज्ञां कुर्यात् ॥ १४ ॥

॥ टीका–तदेवं सामान्येन सर्वस्यैव वस्तुनोभेदाभेदौ प्रतिपाद्याधुना सर्वशून्यवादिम तनिरासेन लोकालोकयोः प्रविभागेनास्तित्वं प्रतिपादयितुकामआह । (णत्थिलोए अलोएवाइत्यादि) यदि वा सर्वत्र वीर्यमस्ति नास्ति सर्वत्र वीर्यमित्यनेन सामान्येन वस्त्व स्तित्वमुक्तं । तथाहि । सर्वत्र वस्तुनोवीर्यं शक्तिरर्थक्रियासामर्थ्यं मनसः स्वविषयज्ञानोत्पा दनं तच्चैकांतेनात्यंताभावाच्चशविषाणादेरप्यस्तीत्येवं संज्ञां न निवेशयेत्सर्वत्र वीर्यं ना स्तीति नो एवं संज्ञां निवेशयेदिति । अनेनावशिष्टं वस्त्वस्तित्वं प्रसाधितमिदानीं तस्यैव वस्तुनईषद्विशेषितत्वेन लोकालोकरूपतयास्तित्वं प्रसाधयन्नाह । (णत्थिलोएअलोएइत्या दि) लोकश्चतुर्दशरज्ज्वात्मकोधर्माधर्माकाशादिपंचास्तिकायात्मकोवा स नास्तीत्येवं संज्ञां नो निवेशयेत् । तथाऽऽकाशास्तिकायात्मकस्त्वेकः सच न विद्यते एवेत्येवं संज्ञां नो निवेश येत् । तदभावप्रतिपत्तिनिबंधनं चेदं । तद्यथा प्रतिभासमानं वस्त्ववयवद्वारेणवा प्रति भासेतावयविद्वारेणवा तत्र न तावदवयवद्वारेण प्रतिभासनमुत्पद्यते निरंशपरमाणूनां प्र तिभासमानासनवात्सर्वारातीयभागस्य परमाण्वात्मकत्वात्तेषांच छद्मस्थविज्ञानेन द्रष्टुमश क्यत्वात् । तथाचोक्तं "यावद्दृश्यं परस्तावद्भागः सच न दृश्यते ॥ निरंशस्यच भागस्य नास्ति छ द्मस्थ दर्शनं" मित्यादि । नाप्यवयविद्वारेण विकल्प्यमानस्यावयविनएवाभावात् तथा ह्यसौ स्वावयवेषु प्रत्येकं सामस्त्येनवा वर्त्तेताऽऽशांशिभावेनवा सामस्त्येनावयविबहुत्वप्रसंगान्नाप्य शेन पूर्वविकल्पानतिक्रमेणानवस्थाप्रसंगात्तस्माद्विचार्यमाणं न कथंचिद्वस्त्वात्मकं भाव लभते ततस्तत्सर्वमेवैतन्मायास्वप्नेंद्रजालमरुमरीचिकाविज्ञानसदृशं । तथाचोक्तं । "यथा य थार्थाश्चिंत्यते विविच्यंते तथा तथा ॥ यद्येते स्वयमर्थेभ्योरोचते तत्र के वयं" मित्यादि । तदेवं वस्त्वभावे तद्विशेषलोकालोकाभावः सिद्धएवेत्येवं नो संज्ञां निवेशयेत् । किंत्वस्ति लोकऊर्ध्वाधस्तिर्यग्रूपोवैशाखस्थानस्थितकटिन्यस्तकरयुग्मपुरुषसदृशः पंचास्तिकायात्म कोवा तद्व्यतिरिक्तश्चालोकोप्यस्ति । सप्रतिपक्षत्वात्लोकव्यवस्थाऽनुपपत्तेरिति भाव । युक्ति श्चात्र यदि सर्वं नास्ति ततः सर्वांतःपातित्वात्प्रतिषेधकापि नास्तीत्यतस्तदभावात्प्रतिषे धाभावोपि च सति परमार्थभूते वस्तुनि माया स्वप्नेंद्रजालादिव्यवस्थान्यथा किमाश्रित्य कोवा मायादिकं व्यवस्थापयेदिति । अपिच "सर्वाभावाययान्नीष्टोयुक्त्यभावेन सिध्यति । सास्ति चेत्तैव नस्तत्व तत्सिद्धौ सर्ववस्तुस" दित्यादि । यदप्यवयवावयविविभागकल्पनया

सामस्त्येन स्वद्रव्याद्यपेक्षया विवक्षितत्वात्स्यादस्तिचावक्तव्यं चेति।तथैकांशस्य परद्रव्याद्य पेक्षया स्यान्नास्ति चावक्तव्यं चेति तथैकस्यांशस्य स्वद्रव्याद्यपेक्षया परस्य तु परद्रव्याद्यपे क्षयाऽन्यस्य तु योगपद्येन स्वपरद्रव्याद्यपेक्षया विवक्षितत्वात्स्यादस्तिच नास्तिचाऽवक्तव्यं इय च सप्तभंगी यथायोगमुत्तरत्रापि योजनीयेति ॥ १० ॥ ११ ॥

णत्थि लोए अलोएवा, णेवं सन्नं निवेसए॥ अत्थि लोए अ लोएवा, एवं सन्नं निवेसए॥ १२॥ णत्थि जीवा अजीवावा, णेवं सन्नं निवेसए॥ अत्थि जीवा अजीवावा, एवं सन्नं निवे सए॥ १३॥ णत्थि धम्मे अधम्मेवा, णेवं सन्नं निवेसए॥ अत्थि धम्मे अधम्मेवा, एवं सन्नं निवेसए ॥ १४॥

अर्थ—हवे सर्वशून्यवादीना मतनुं निराकरण करवाने अर्थे,लोक अने अलोकनुं अस्ति पणुं देखाडेले, (णत्थिलोएअलोएवा के०) चतुर्दशरज्ज्वात्मक एवो जे लोक,अथवा पंचा स्तिकायरूप एवो जे लोक, ते नथी,एवी संज्ञा न करवी,तथा आकाशास्तिकाय रूप एवो जे अलोक,ते पण नथी,ते एवी संज्ञा पण न करवी केमके,ए नास्तिकवादीनो मतले हवे केवी संज्ञा करवी? ते कहेले पंचास्तिकायरूप लोक ते पण ले,तथा आकाशास्तिकाय रूप अ लोक ते पणले, एवी संज्ञा करवी ए केवलीनो मतले॥१२॥हवे लोकालोकनुं अस्तिपणुं देखाडीने तेना विशेषभूत जीव अने अजीव तेनो अस्तिभाव देखाडेले जीव ते, उपयोग लक्षण संसारीक, अथवा मुक्तिगत,ए पण नथी तथा अजीव ते धर्म, अधर्म, आकाश, पु द्गल, अने कालात्मक ए पण नथी एवी संज्ञा पण न करवी केमके,ए नास्तिकवादीनो मतले त्यारे केवी संज्ञा करवी? तोके, जीव पणले,अने अजीव पणले एवी संज्ञा करवी ए केवली भगवतनो मतले ॥१३॥ हवे एवा जीवनो अस्तिभाव देखाडीने तेने सदसत्क्रिया अनु ष्ठानने विषे धर्म, अने अधर्म कारणले ते माटे हवे तेनो अस्तिभाव कहेले श्रुतचारित्ररूप जे धर्म, ते कर्मक्षयनो कारणरूपले ते पण नथी, तथा मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, क षाय, अने योगरूप जे अधर्मले, ते कर्मबंधनो कारणरूपले, ते पण नथी, एवी संज्ञा पण न करवी परंतु धर्म पणले, अने अधर्म पणले, एवी संज्ञा करवी ॥ १४ ॥

॥ दीपिका—(णत्थिलोएइत्यादि) शून्यवादिमताभिप्रायेण नास्ति लोकः अलोकोपि नास्तीति संज्ञा नो निवेशयेन्न स्थापयेत् अस्ति लोकः पंचास्तिकायात्मकः अस्ति वाऽलो

कथ्याकाशास्तिकायमात्रइति संज्ञा निवेशयेत् ॥ १२ ॥ (णत्थिजीवाइति) न संति जीवाअ जीवावा इति संज्ञा नो निवेशयेत् संति जीवाअजीवाश्चेति संज्ञा कुर्यात् ॥ १३ ॥ (णत्थि धम्मइति) नास्ति धर्मं श्रुतचारित्रात्मकं नास्ति वाऽधर्मोमिथ्यात्वाविरतिप्रमादकषाययोग रूप एवं संज्ञा न कुर्यात् अस्ति धर्मोऽधर्मोवा एवं संज्ञा कुर्यात् ॥ १४ ॥

॥ टीका–तदेवं सामान्येन सर्वस्यैव वस्तुनोभेदाभेदौ प्रतिपाद्याधुना सर्वशून्यवादिम तनिरासेन लोकालोकयोः प्रविभागेनास्तित्वं प्रतिपादयितुकामआह । (णत्थिलोए अलोएवाइत्यादि) यदि वा सर्वत्र वीर्यमस्ति नास्ति सर्वत्र वीर्यमित्यनेन सामान्येन वस्त्व स्तित्वमुक्तं । तथाहि । सर्वत्र वस्तुनोवीर्यं शक्तिरर्थक्रियासामर्थ्यं मनसः स्वविषयज्ञानोत्पा दनं तच्चैकांतेनात्यंताभावाद्दशविषाणादेरप्यस्तीत्येवं संज्ञा न निवेशयेत्सर्वत्र वीर्यं ना स्तीति नो एवं संज्ञा निवेशयेदिति । अनेनावशिष्टं वस्त्वस्तित्वं प्रसाधितमिदानीं तस्यैव वस्तुनईषद्विशेषितत्वेन लोकालोकरूपतयास्तित्वं प्रसाधयन्नाह । (णत्थिलोएअलोएइत्या दि) लोकश्चतुर्दशरज्ज्वात्मकोधर्माधर्माकाशादिपंचास्तिकायात्मकोवा स नास्तीत्येवं संज्ञा नो निवेशयेत् । तथाऽऽकाशास्तिकायात्मकस्त्वेकः सच न विद्यते एवेत्येवं संज्ञा नो निवेश येत् । तदभावप्रतिपत्तिनिबंधनं चिदं । तद्यथा प्रतिभासमानं वस्त्ववयवद्वारेणवा प्रति भासेतावयविद्वारेणवा तत्र न तावदवयवद्वारेण प्रतिभासनमुत्पद्यते निरंशपरमाणूनां प्र तिभासमानासंभवात्सर्वारातीयभागस्य परमाण्वात्मकत्वात्तेषांच छद्मस्थविज्ञानेन द्रष्टुमश क्यत्वात् । तथाचोक्तं 'यावद्दृश्यं परस्तावद्भागः सच न दृश्यते ॥ निरंशस्यच भागस्य नास्ति छद्मस्थ दर्शनं" मित्यादि । नाप्यवयविद्वारेण विकल्प्यमानस्यावयविनएवाभावात् तथा ह्यसो स्वावयवेषु प्रत्येकं सामस्त्येनवा वर्त्ततांऽशाशिभावेनवा सामस्त्येनावयविबहुत्वप्रसंगान्नाप्यं शेन पूर्वविकल्पानतिक्रमेणानवस्थाप्रसंगात्तस्माद्विचार्यमाणं न कथंचिद्वस्त्वात्मकं भाव लभते ततस्तत्सर्वमेवैतन्मायास्वप्नेंद्रजालमरुमरीचिकाविज्ञानसदृशं । तथाचोक्तं । "यथा य थार्थाश्चिंत्यंते विविच्यंते तथा तथा ॥ यद्येते स्वयमर्थेभ्यारोचंते तत्र के वयं" मित्यादि । तदेवं वस्त्वभावे तद्विशेषलोकालोकाभावः सिद्धएवेत्येवं नो संज्ञा निवेशयेत् । किंत्वस्ति लोकऊर्ध्वाधस्तिर्यग्रूपोवैशाखस्थानस्थितकटिन्यस्तकरयुग्मपुरुषसदृशः पंचास्तिकायात्म कोवा तद्व्यतिरिक्तश्चालोकोप्यस्ति । सवधिशब्दत्वाल्लोकव्यवस्थाऽनुपपत्तेरिति भावः । युक्ति भात्र यदि सर्वं नास्ति ततः सर्वांतःपातित्वात्प्रतिषेधकापि नास्तीत्यतस्तदभावात्प्रतिषे धाभावोपि च सति परमार्थभूते वस्तुनि माया स्वप्नेंद्रजालादिव्यवस्थान्यथा किमाश्रित्य कोवा माधायिकं व्यवस्थापयेदिति । अपिच "सर्वाभावोयथानीष्टायुक्त्यभावेन सिद्ध्यति । सास्ति चेत्सैव नस्तत्वं तत्सिद्धौ सर्ववस्तुस" दित्यादि । यदप्यवयवावयविविभागकल्पनया

सामस्त्येन स्वद्रव्याद्यपेक्षया विवक्षितत्वात्स्यादस्तिचावक्तव्यं चेति।तथैकांशस्य परद्रव्याद्यपेक्षया स्यान्नास्ति चावक्तव्य चेति तथैकस्यांशस्य स्वद्रव्याद्यपेक्षया परस्य तु परद्रव्याद्यपेक्षयाऽन्यस्य तु योगपद्येन स्वपरद्रव्याद्यपेक्षया विवक्षितत्वात्स्यादस्तिच नास्तिचाऽवक्तव्यं इय च सप्तभंगी यथायोगमुत्तरत्रापि योजनीयेति ॥ १० ॥ ११ ॥

णत्थि लोए अलोएवा, णेवं सन्नं निवेसए॥ अत्थि लोए अलोएवा, एवं सन्नं निवेसए॥ १२॥ णत्थि जीवा अजीवावा, णेवं सन्नं निवेसए॥ अत्थि जीवा अजीवावा, एवं सन्नं निवेसए॥ १३॥ णत्थि धम्मे अधम्मेवा, णेवं सन्नं निवेसए॥ अत्थि धम्मे अधम्मेवा, एवं सन्नं निवेसए ॥ १४॥

अर्थ–हवे सर्वशून्यवादीना मतनुं निराकरण करवाने अर्थे,लोक अने अलोकनुं अस्तिपणुं देखाडेछे, (णत्थिलोएअलोएवा के०) चतुर्दशरज्ज्वात्मक एवो जे लोक,अथवा पंचास्तिकायरूप एवो जे लोक, ते नथी,एवी संज्ञा न करवी,तथा आकाशास्तिकाय रूप एवो जे अलोक,ते पण नथी,ते एवी संज्ञा पण न करवी केमके,ए नास्तिकवादीनो मतछे हवे केवी संज्ञा करवी? ते कहेछे पंचास्तिकायरूप लोक ते पण छे,तथा आकाशास्तिकाय रूप अलोक ते पणछे, एवी संज्ञा करवी ए केवलीनो मतछे॥१२॥हवे लोकालोकनुं अस्तिपणुं देखाडीने तेना विशेषभूत जीव अने अजीव तेनो अस्तिभाव देखाडेछे जीव ते, उपयोग लक्षण संसारीक, अथवा मुक्तिगत,ए पण नथी तथा अजीव ते धर्म, अधर्म, आकाश, पुद्गल, अने कालात्मक ए पण नथी एवी संज्ञा पण न करवी केमके,ए नास्तिकवादीनो मतछे त्यारे केवी संज्ञा करवी? तोके, जीव पणछे,अने अजीव पणछे एवी संज्ञा करवी ए केवली भगवतनो मतछे ॥१३॥ हवे एवा जीवनो अस्तिभाव देखाडीने तेने सदसत्क्रिया अनुष्ठानने विषे धर्म, अने अधर्म कारणछे,ते माटे हवे तेनो अस्तिभाव कहेछे श्रुतचारित्ररूप जे धर्म, ते कर्मक्षयनो कारणरूपछे ते पण नथी, तथा मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय, अने योगरूप जे अधर्मछे, ते कर्मबंधनो कारणरूपछे, ते पण नथी, एवी संज्ञा पण न करवी परंतु धर्म पणछे, अने अधर्म पणछे, एवी संज्ञा करवी ॥ १४ ॥

॥ दीपिका–(णत्थिलोएइत्यादि) शून्यवादिमताभिप्रायेण नास्ति लोक अलोकोपि नास्तीति संज्ञा नो निवेशयेन्न स्थापयेत् अस्ति लोक पंचास्तिकायात्मक अस्ति वाऽला

कश्चाकाशास्तिकायमात्रइति संज्ञा निवेशयेत् ॥ १२ ॥ (णत्थिजीवाइति) न संति जीवाश्च जीवावा इति संज्ञा नो निवेशयेत् संति जीवाश्चजीवाश्चेति संज्ञा कुर्यात् ॥ १३ ॥ (णत्थि धम्मइति) नास्ति धर्मः श्रुतचारित्रात्मकः नास्ति वाऽधर्मोमिथ्यात्वाविरतिप्रमादकषाययोग रूपः एवं संज्ञा न कुर्यात् अस्ति धर्मोऽधर्मोवा एवं संज्ञा कुर्यात् ॥ १४ ॥

॥ टीका—तदेवं सामान्येन सर्वस्यैव वस्तुनोभेदाभेदौ प्रतिपाद्याधुना सर्वशून्यवादिम तनिरासेन *लोकालोकयोः प्रविभागेनास्तित्वं प्रतिपादयितुकामआह* । (णत्थिलोए अलोएवाइत्यादि) यदि वा सर्वत्र वीर्यमस्ति नास्ति सर्वत्र वीर्यमित्यनेन सामान्येन वस्त्व स्तित्वमुक्तं । तथाहि । सर्वत्र वस्तुनोवीर्यं शक्तिरर्थक्रियासामर्थ्यं मनसः स्वविषयज्ञानोत्पा दनं तच्चैकांतेनात्यंताभावाच्छशविषाणादेरप्यस्तीत्येवं संज्ञा न निवेशयेत्सर्वत्र वीर्यं ना स्तीति नो एवं संज्ञा निवेशयेदिति । अनेनावशिष्ट वस्त्वस्तित्वं प्रसाधितमिदानीं तस्यैव वस्तुनईषद्विशेषितत्वेन *लोकालोकरूपतयास्तित्वं प्रसाधयन्नाह* । (णत्थिलोएअलोएइत्या दि) लोकश्चतुर्दशरज्ज्वात्मकोधर्माधर्माकाशादिपंचास्तिकायात्मकोवा स नास्तीत्येवं संज्ञा नो निवेशयेत् । तथाऽऽकाशास्तिकायात्मकस्त्वेकः सच न विद्यते एवेत्येवं संज्ञा नो निवेश येत् । तदभावप्रतिपत्तिनिबंधनं त्विदं । तद्यथा प्रतिभासमानं वस्त्ववयवद्वारेणवा प्रति भासेतावयविद्वारेणवा तत्र न तावदवयवद्वारेण प्रतिभासनमुत्पद्यते निरंशपरमाणूनां प्र तिभासमानासंभवात्सर्वारातीयभागस्य परमाण्वात्मकत्वात्तेषाच छद्मस्थविज्ञानेन द्रष्टुमश क्यत्वात् । तथाचोक्तं 'यावद्दृश्यं परस्तावद्भागः सच न दृश्यते ॥ निरंशस्यच भागस्य नास्तिछ द्मस्थ दर्शन" मित्यादि ।नाप्यवयविद्वारेण विकल्प्यमानस्यावयविनएवाभावात् ।तथा ह्यसौ स्वावयवेषु प्रत्येकं सामस्त्येनवा वर्त्तेताऽशांशिभावेनवा सामस्त्येनावयविबहुत्वप्रसंगान्नाप्य शेन पूर्वविकल्पानतिक्रमेणानवस्थाप्रसंगात्तस्माद्विचार्यमाणं न कथंचिद्वस्त्वात्मकं भाव लभते ततस्तत्सर्वमेवैतन्मायास्वप्नेंद्रजालमरुमरीचिकाविज्ञानसदृशं । तथाचोक्तं । "यथा य थार्थाश्चिंत्यते विविच्यते तथा तथा ॥ यद्येते स्वयमर्थेभ्योरोचंते तत्र के वयं" मित्यादि । तदेवं वस्त्वभावे तद्विशेषलोकालोकाभावः सिद्धएवेत्येवं नो संज्ञा निवेशयेत् । किंत्वस्ति लोकऊर्ध्वाधस्तिर्यग्रूपोवैशाखस्थानस्थितकटिन्यस्तकरयुग्मपुरुषसदृशः पंचास्तिकायात्म कोवा तद्व्यतिरिक्तश्चालोकोप्यस्ति ।सवधिशब्दत्वाल्लोकव्यवस्थाऽनुपपत्तेरिति भाव । युक्ति भात्रं यदि सर्वं नास्ति ततः सर्वांतःपातित्वात्प्रतिषेधकापि नास्तीत्यतस्तदभावात्प्रतिषे धाभावोपि च सति परमार्थभूते वस्तुनि माया स्वप्नेंद्रजालादिव्यवस्थान्यथा किमाश्रित्य कोवा मायादिकं व्यवस्थापयेदिति । अपिच 'सर्वाभावाय थाभीष्टायुक्त्यभावेन सिध्यति । सास्ति चेत्सैव नस्तत्वं तत्सिद्धौ सर्ववस्तुस" दित्यादि । यदप्यवयवावयविविभागकल्पनया

दूषणमनिधीयते तदप्यार्हतमताननिज्ञेन । तन्मत चैवनूतं ।तद्यथा नैकांतोनावयवाएव नाप्यवयव्येव चेत्यत स्याद्वादाश्रयणात्पूर्वोक्तविकल्पदोषानुपपत्तिरित्यत कथचिल्लोको स्त्येवमलोकोपीति स्थितं ॥१२॥ तदेव लोकालोकास्तित्व प्रतिपाद्याधुना तद्विशेषनूत योर्जीवाजीवयोरस्तित्वप्रतिपादनायाह । (णत्थिजीवाअजीवेत्यादि) जीवाउपयोग लक्षणा ससारिणोमुक्तावा ते न विद्यते तथा अजीवाश्च धर्माधर्माकाशपुज्जलकाला त्मकागतिस्थित्यवगाहदानछायातपोद्योतादिवर्त्तनालक्षणान विद्यतइत्येव सज्ञां परि ज्ञान नो निवेशयेन्नास्तित्वनिबधन त्विद प्रत्यक्षेणानुपलन्यमानत्वाज्जीवान विद्यते कायाकारपरिणतानि नूतान्येव धावनवल्गनादिका क्रिया कुर्वंतीति । तथात्मा द्वैत वादमताभिप्रायेण पुरुषएवेद सर्वं यद्भूतं यच्च नाव्यमित्यागमात्तथा अजीवान विद्यते सर्वस्यैव चेतनाचेतनस्यात्ममात्रनिवर्त्तित्वान्नो एव सज्ञां निवेशयेत् किंत्वस्ति जीव सर्वस्यास्य सुखदुःखादेर्निबधननूत स्वसवित्तिसिद्धोऽह प्रत्ययग्राह्यस्तथा तद्व्यतिरि क्ताधर्माधर्माकाशपुज्जलादयश्च विद्यते । सकलप्रमाणज्येष्ठेन प्रत्यक्षेणानुनूयमानत्वा त्तज्जुणाना नूतचैतन्यवादीव वाच्य । कि तानि नवदभिप्रेतानि नूतानि नित्यान्युताऽनि त्यानि।यदि नित्यानि ततोऽप्रच्युतानुत्पन्नस्थिरैकस्वनावत्वान्न कायाकारपरिणतेऽन्युपगम नापि प्रागविद्यमानस्य चैतन्यमुत्पद्यते आहोस्विद्विद्यमान तावदविद्यमानमतिप्रसगाद न्युपेतागमलोपाद्वाऽथविद्यमानमेव सिद्ध तर्हि जीवत्व तथाऽत्मा द्वैतवाद्यपि वाच्य । यदि पुरुषमात्रमेवेद सर्वं कथं घटपटादिषु चैतन्य नोपलन्यते तथा तदैक्यनेदनिबधनाना पक्ष हेतुदृष्टातानामनावात्साध्यसाधनानावस्तस्मान्नैकातेन जीवाजीवयोरनावोपितु सर्वपदा र्थानां स्याद्वादाश्रयणाज्जीव स्यादजीव अजीवोपिच स्यादजीव स्याज्जीवइत्येतच्च स्या द्वादाश्रयण जीवपुज्जलयोरन्योन्यानुगतयो शरीरस्य प्रत्यक्षतयाऽध्यक्षेणैवोपलन्नाद्रष्ट व्यमिति ॥१३॥ जीवास्तित्वेच सिद्धे तन्निबधनयो सदसत्क्रियाद्वारायातयोर्धर्माधर्मयोर स्तित्वप्रतिपादनायाह । (णत्थिधम्मेअधम्मेवेत्यादि) धर्मं श्रुतचरित्राख्यात्मकोजीवस्या त्मपरिणाम कर्मक्षयकारणमात्मपरिणामएवमधर्मोपि मिथ्यात्वाविरतिप्रमादकषाययो गरूप कर्मबधकारणमात्मपरिणामएव।तावेवनूतो धर्माऽधर्मौ कालस्वनावनियतीश्वरादि मतेन न विद्येते इत्येव सज्ञा नो निवेशयेत्। कालादयएवास्य सर्वस्य जगद्वैचित्र्यस्य धर्मा धर्माव्यतिरेकेणैकातत कारणमित्येवमभिप्राय कुर्याद्यत तएवैककान कारणमपितु समु दिताएवेति।तथाचोक्त । " नहि कालादी हितो, केवल्ले हितो जायए किंचि ॥ इहमुग्गर धणा इवि, तासव्वे समुदिया हेक " इत्यादि । यतोधर्माधर्ममतरेण ससारवैचित्र्यं न घटामियर्त्यतोऽस्ति धर्मं सम्यग्दर्शनादिकोऽधर्मश्च मिथ्यात्वादिकइत्येव संज्ञा नो निवे शयेदिति ॥ १४॥

णत्थि बंधेव मोक्खेवा, णेव सन्न निवेसए॥ अत्थि बंधेव मोक्खेवा, एव सन्न निवेसए॥ १५॥ णत्थि पुन्नेव पावेवा, णेव सन्न निवेस ए॥ अत्थि पुन्नेव पावेवा, एव सन्न निवेसए॥ १६॥

अर्थ–हवे धर्माधर्मने अस्तिनावे, बंध अने मोक्षनो सद्भाव देखाडेछे प्रकृति, स्थिति, अनुनाग, अनें प्रदेशरूप,एवो जे चार प्रकारनो बंध, ते पण नथी, तथा मोक्ष पण नथी, एवी संज्ञा पण न करवी, परंतु ए बंध पणछे अने मोक्ष पणछे एवी संज्ञा करवी ॥१५॥ हवे बंधना सद्भावें अवश्य पुण्य अने पापनो पण सद्भावछे ते कहेछे पुण्य जे शुन प्रकृतिलक्षण ते पण नथी, तथा पाप जे अशुनप्रकृतिलक्षण ते पण नथी, एवी संज्ञा न करवी, परंतु पुण्य पणछे अने पाप पणछे एवी संज्ञा करवी ॥ १६ ॥

॥ दीपिका–(णत्थिबंधेऽति) नास्ति बंधोमोक्षोवेति संज्ञां न कुर्यात् बंधमोक्षसन्नाव मंगीकुर्यात् ॥ १५ ॥ (णत्थिपुन्नमिति) नास्ति पुण्य सत्कर्म, नास्ति पापमसत्कर्म इति नांगीकार्य तयोरस्तित्व मंतव्य ॥ १६ ॥

॥ टीका–ततोश्च धर्माधर्मयोर्बंधमोक्षसद्भावइत्येतद्दर्शयितुमाह । (णत्थिबंधेवमोक्खे वाइत्यादि) बंध प्रकृतिस्थित्यनुनावप्रदेशात्मकतया कर्मपुजलाना जीवेन स्वव्यापारत स्वीकरण। सचामूर्तस्यात्मनोगगनस्येव न वियतइत्येव नो संज्ञा निवेशयेत्। तथा तदनावाच्च मोक्षस्याप्यनावइत्येवमपि संज्ञा नो निवेशयेत्। कथतर्हि संज्ञा निवेशयेदित्युत्तरार्धेन दर्शयति।अस्ति बंध कर्मपुजलैर्जीवस्येत्येव संज्ञा निवेशयेदिति। यच्चूच्यते मूर्तस्यामूर्तिमता सबंधान युज्यतइति तदयुक्त । आकाशस्य सर्वव्यापितया पुजलै सबंधोऽनिवार्य । तदनावे तद्व्यापित्वमेव न स्यादन्यच्चास्य विज्ञानस्य हृत्पूरमदिरादिना विकार समुपलन्यते।नचासौ संबंधमृतेऽतोयत्किंचिदेतत्। अपिच संसारिणामसुमतां सदा तैजसकार्मणशरीरसन्नावादात्यतिकममूर्तत्व न नवतीति। तथा तत्प्रतिपक्षनूतामोक्षोप्यस्ति तन्नावे बंधस्याप्यनाव स्यादित्यतोऽशेषबंधनापगमस्वनावामोक्षोस्तीत्येव संज्ञा निवेशयेदिति ॥१५॥ बंधसन्नावे चावश्यं नावी पुण्यपापसन्नावइत्यतस्तन्नाव निषेध द्वारेणाह। (णत्थिपुण्ण इत्यादि) नास्ति न वियते पुण्य शुनकर्मप्रकृतिलक्षण तथा पाप तद्विपर्ययलक्षण नास्ति न वियते इत्येव नो संज्ञा निवेशयेत् । तदनावप्रतिपत्तिनिबंधन त्विद । तत्र केषांचिन्नास्ति पुण्यपापमेव स्वृत्कर्षास्य सुखदुःखनिबंधन तथा परेषा पाप नास्ति पुण्यमेव ह्यपचीयमान पाप कार्य कुर्यादित्यन्यपा तूनयमपि नास्ति । संसारवैचित्र्य तु नियतिस्वनावादिकृत तदेतदयुक्त । यत पुण्यपापशब्दौ सबंधिशब्दौ । संबंधिशब्दानामकस्य

दूषणमभिधीयते तदप्यार्हतमतानभिज्ञेन । तन्मत चैवभूतं ।तद्यथा नैकांतोनावयवाएव नाप्यवयव्येव चेत्यत स्याद्वादाश्रयणात्पूर्वोक्तविकल्पदोषानुपपत्तिरित्यत कथचिल्लोको स्त्येवमलोकोपीति स्थितं ॥१२॥ तदेव लोकालोकास्तित्व प्रतिपाद्याधुना तद्विशेषभूत योर्जीवाजीवयोरस्तित्वप्रतिपादनायाह । (णत्थिजीवाअजीवेत्यादि) जीवाउपयोग लक्षणा ससारिणोमुक्तावा ते न विद्यते तथा अजीवाश्च धर्माधर्माकाशपुद्गलकाला त्मकागतिस्थित्यवगाहदानछायातपोद्योतादिवर्त्तनालक्षणान विद्यतइत्येव सज्ञा परि ज्ञान नो निवेशयेन्नास्तित्वनिबधन त्विद प्रत्यक्षेणानुपलभ्यमानत्वाज्जीवान विद्यते कायाकारपरिणतानि भूतान्येव धावनवल्गनादिका क्रिया कुर्वंतीति । तथात्मा द्वैत वादमताभिप्रायेण पुरुषएवेद सर्व यद्भूतं यच्च भाव्यमित्यागमात्तथा अजीवान विद्यते सर्वस्यैव चेतनाचेतनस्यात्ममात्रनिवर्त्तित्वान्नो एव सज्ञां निवेशयेत् किंत्वस्ति जीव सर्वस्यास्य सुखदु खादेर्निबधनभूत स्वसविित्तिसिद्धोऽह प्रत्ययग्राह्यस्तथा तद्व्यतिरि क्ताधर्माधर्माकाशपुद्गलादयश्च विद्यते । सकलप्रमाणज्येष्ठेन प्रत्यक्षेणानुभूयमानत्वा त्तद्गुणाना भूतचैतन्यवादीव वाच्य । कि तानि भवदभिप्रेतानि भूतानि नित्यान्युताऽनि त्यानि।यदि नित्यानि ततोऽप्रच्युतानुत्पन्नस्थिरैकस्वभावत्वान्न कायाकारपरिणतेभ्युपगम नापि प्रागविद्यमानस्य चैतन्यमुत्पद्यते आहोस्विद्विद्यमान तावदविद्यमानमतिप्रसगाद भ्युपेतागमलोपाद्वा ऽथविद्यमानमेव सिद्ध तर्हि जीवत्व तथाऽत्मा द्वैतवाद्यपि वाच्य । यदि पुरुषमात्रमेवेद सर्व कथं घटपटादिषु चैतन्य नोपलभ्यते तथा तदैक्यभेदनिबधनाना पक्ष हेतुदृष्टातानामभावात्साध्यसाधनाभावस्तस्मान्नैकातेन जीवाजीवयोरभावोपितु सर्वपदा र्थानां स्याद्वादाश्रयणाज्जीव स्यादजीव अजीवोपिच स्यादजीव स्याज्जीवइत्येतच्च स्या द्वादाश्रयण जीवपुद्गलयोरन्योन्यानुगतयो शरीरस्य प्रत्यक्षतयाऽध्यक्षेणैवोपलभाद्द्रष्ट व्यमिति ॥१३॥ जीवास्तित्वेच सिद्धे तन्निबधनयो सदसत्क्रिया द्वारायातयोर्धर्माधर्मयोर स्तित्वप्रतिपादनायाह । (णत्थिधम्मेअधम्मेवेत्यादि) धर्म श्रुतचरित्राख्यात्मकोजीवस्या त्मपरिणाम कर्मक्षयकारणमात्मपरिणामएवमधर्मोपि मिथ्यात्वाविरतिप्रमादकषाययो गरूप कर्मबधकारणमात्मपरिणामएव।तावेवभूतो धर्माऽधर्मौ कालस्वभावनियतीश्वरादि मतेन न विद्येते इत्येव सज्ञा नो निवेशयेत्। कालादयएवास्य सर्वस्य जगद्वैचित्र्यस्य धर्मा धर्माव्यतिरेकेणैकातत कारणमित्येवमभिप्राय कुर्याद्यत तएवैककान कारणमपितु समु दिताएवेति। तथाचोक्त । " नहि कालादी हितो, केवले हितो जायए किंचि ॥ इहमुग्गर धणा इवि, तासवे समुदिया हेऊ " इत्यादि । यतो धर्माधर्ममतरेण ससारवैचित्र्यं न घटामियर्त्यतोऽस्ति धर्म सम्यग्दर्शनादिकोऽधर्मश्च मिथ्यात्वादिकइत्येव संज्ञां नो निवे शयेदिति ॥ १४॥

णत्थि बंधेव मोक्खेवा, णेवं सन्नं निवेसए ॥ अत्थि बंधेव मोक्खेवा, एवं सन्नं निवेसए ॥ १५ ॥ णत्थि पुण्णेव पावेवा, णेवं सन्नं निवेस ए ॥ अत्थि पुण्णेव पावेवा, एवं सन्नं निवेसए ॥ १६ ॥

अर्थ—हवे धर्माधर्मने अस्तिनावे, बंध अने मोक्षनो सद्भाव देखाडेले प्रकृति, स्थिति, अनुनाग, अने प्रदेशरूप,एवो जे चार प्रकारनो बंध, ते पण नथी, तथा मोक्ष पण नथी, एवी संज्ञा पण न करवी, परंतु ए बंध पणले अने मोक्ष पणले एवी संज्ञा करवी ॥१५॥ हवे बंधना सद्भावें अवश्य पुण्य अने पापनो पण सद्भावले ते कहेले पुण्य जे शुन प्रकृतिलक्षण ते पण नथी, तथा पाप जे अशुनप्रकृतिलक्षण ते पण नथी, एवी संज्ञा न करवी, परंतु पुण्य पणले अने पाप पणले एवी संज्ञा करवी ॥ १६ ॥

॥ दीपिका—(णत्थिबंधेति) नास्ति बंधोमोक्षोवेति संज्ञां न कुर्यात् बंधमोक्षसद्भाव मंगीकुर्यात् ॥ १५ ॥ (णत्थिपुस्मिति) नास्ति पुण्यं सत्कर्म, नास्ति पापमसत्कर्म इति नांगीकार्यं तयोरस्तित्वं मंतव्यं ॥ १६ ॥

॥ टीका—सतोश्च धर्माधर्मयोर्बंधमोक्षसद्भावइत्येतद्दर्शयितुमाह । (णत्थिबंधेवमोक्खे वाइत्यादि) बंधः प्रकृतिस्थित्यनुनावप्रदेशात्मकतया कर्मपुद्गलानां जीवेन स्वव्यापारतः स्वीकरणं। सचामूर्तस्यात्मनोगगनस्येव न विद्यतइत्येवं नो संज्ञां निवेशयेत्। तथा तदभावाच्च मोक्षस्याप्यनावइत्येवमपि संज्ञां नो निवेशयेत्। कथंतर्हि संज्ञां निवेशयेदित्युत्तरार्द्धेन दर्शयति।अस्ति बंधः कर्मपुद्गलैर्जीवस्येत्येवं संज्ञां निवेशयेदिति।यच्चूच्यते मूर्तस्यामूर्तिमता संबंधोन युज्यतइति तदयुक्तं । आकाशस्य सर्वव्यापितया पुद्गलैः संबंधोऽनिवार्यः । तदनावे तद्व्यापित्वमेव न स्यादन्यच्चास्य विज्ञानस्य हृत्पूरमदिरादिना विकारः समुपलभ्यते।नचासौ संबंधमृतेऽतायत्किंचिदेतत्। अपिच संसारिणामसुमतां सदा तैजसकार्मणशरीरसद्भावादात्यंतिकममूर्त्तत्वं न भवतीति। तथा तत्प्रतिपक्षभूतोमाऽप्यस्ति तन्नाबंधस्याप्यनावः स्यादित्यतोऽशेषबंधनापगमस्वनावोमोक्षोऽस्तीत्येवं संज्ञां निवेशयेदिति ॥१५॥ बंधसद्भावे चावश्यं भावी पुण्यपापसद्भावइत्यतस्तद्भाव निषेध द्वारेणाह। (णत्थिपुण्ण इत्यादि) नास्ति न विद्यते पुण्यं शुभकर्मप्रकृतिलक्षणं तथा पापं तद्विपर्ययलक्षणं नास्ति न विद्यते इत्येवं नो संज्ञां निवेशयेत्। तदभावप्रतिपत्तिनिबंधनं त्विदं । तत्र केषांचिन्नास्ति पुण्यंपापमेव स्वल्पपापस्य सत्सुखदुःखनिबंधनं तथा परेषां पापं नास्ति पुण्य मेव ह्यपचीयमानं पापं कार्यं कुर्यादित्यन्येषां तूभयमपि नास्ति । संसारवैचित्र्यं तु नियति स्वभावादिकृतं तदेतदयुक्तं । यतः पुण्यपापशब्दौ संबंधिशब्दौ । संबंधिशब्दानामेकस्य

सत्तापरसत्तानांतरीयकतोनेतरस्य सत्तेति नाप्युनयानाव शक्यते वक्तुं निबंधन स्य जगद्वैचित्र्यस्यानावात् । नहि कारणमंतरेण क्वचित्कार्यस्योत्पत्तिर्दृष्टा । नियतिस्वना वादिवादस्तु नष्टोत्तराणां पादप्रसारिकाणां पादप्रसारिका प्रायोपि च तद्वादेऽन्युपगम्यमाने सकलक्रियावैयर्थ्यं ततएव सकलकार्योत्पत्तिरित्यतोस्ति पुण्यं पापं चेत्येवं संज्ञां निवे शयेत् । पुण्यपापे चैव रूपे । तद्यथा ॥ "पुजलकर्म शुनं य,त्तत्पुण्यमिति जिनशासने दृष्ट म् ॥ यदशुनमथ तत्पाप,मिति नवति सर्वज्ञनिर्दिष्ट"मिति ॥ १६ ॥

णत्थि आसवे संवरेवा, णेवं सन्नं निवेसए ॥ अत्थि आसवे संवरेवा, एवं सन्नं निवेसए ॥ १७ ॥ णत्थि वेयणा णिज्जरावा, णेवं सन्नं निवेसए ॥ अत्थि वेयणा णिज्जरावा, एवं सन्नं निवेसए ॥ १८ ॥

अर्थ—हवे कारण विना कार्यनी उत्पत्ति नथी,माटें पुण्य अने पाप ए बेनु कारण आ श्रव अने संवरछे, तेथी हवे आश्रव अने संवर देखाडेछे प्राणातिपातादि रूप जे कर्म ग्रहण करवाना कारणछे ते आश्रव जाणवा अने जेणे करी आवता कर्मने रोकी रा खीये तेने संवर कहिये, माटें ए आश्रव अने संवर बन्ने नथी, एवी सज्ञा करवी नहीं, परंतु आश्रव पणछे, अने संवर पणछे, एम कहेवु ॥ १७ ॥ हवे आश्रव अने संवरने सन्नावे वेदना अने निर्जरानो सन्नाव देखाडेछे वेदना एटले कर्मनु अनुनववु, अनें नि र्जरा एटले कर्म पुजलनु साडवु, ए बेहु नथी एवी सज्ञा न करवी, परंतु वेदना पणछे अने निर्जरा पणछे एवी सज्ञा गीतार्थ साधु करे ॥ १८ ॥

॥ दीपिका—(णत्थिआसवेति) आश्रवसंवरसन्नावोंगीकार्यइति ॥ १७ ॥ (णत्थिवेय णेति) वेदना कर्मानुनवरूपा निर्जरा कर्मपुजलशाटरूपा एते द्वे अपि न स्तः । यतः प ल्योपमसागरोपममसातवेद्यं कर्म अंतर्मुहूर्तेनैव क्षयं याति । यडुक्तं । "जं अन्नाणी कम्मं, खवेइ बहुयाहिं वासकोडीहिं ॥ तन्नाणी तिहिं गुत्तो, खवेइ ऊसास मित्तेणमित्यादि । तथा क्षपकश्रेण्यां शीघ्रमेव कर्मणः क्षयात् यथाक्रमबद्धस्यानुनवानावे वेदनायाअनावस्तदना वेच निर्जरायाअप्यनावइत्येवं नांगीकुर्यात् । यतः कस्यचिदेव कर्मणएवमुक्तनीत्या क्षयं अन्यस्य तु प्रदेशानुनवेन नोगसन्नावादस्तिवेदना । यडुक्तं । "पुविंडच्चिन्नाणं डुप्पडिकंताणंक म्माणं॥वेइत्ता मोक्खो नत्थि अवेइत्ताइत्यादि । वेदनासन्नावेच निर्जराप्यस्तीति स्वीकुर्यात्॥१८॥

॥ टीका—न कारणम् ... पुण्यपापयो प्रागुक्तयो कारणानावा

श्रवसवरौ तत्प्रतिषेधद्वारेण दर्शयितुकामआह। (णत्थिआसवेसवरेवेत्यादि) आश्रवति प्रविशति कर्म येन सप्राणातिपातादिरूपआश्रव कर्मोपादानकारण तथा तन्निरोध सवर एतो द्वावपि न स्तइत्येव सज्ञा नो निवेशयेत्तदभावप्रतिपत्त्या शकाकारणत्विद कायवाङ्मन कर्मयोग स आश्रवइति यथेदमुक्त तथेदमप्युक्तमेव । (उच्चालियमिपाएइत्यादि) ततश्च कायादिव्यापारेण कर्मबधो न भवतीति युक्तिरपि । किमयमाश्रवआत्मनोभिन्नउताऽभिन्न । यदि भिन्नोनामासावाश्रवोघटादिवदन्येदेपि नाश्रवत्व सिद्धात्मनामपि आश्रवप्रसगात्तदभावेच तन्निरोधलक्षणस्य सवरस्याप्यभाव सिद्धएवेत्येवमात्मकमध्यवसाय न कुर्यात् । यतोयत्तदनेकातिकत्व कायव्यापारस्योच्चालयमि पाए इत्यादिनोक्त तदस्माकमपि समतमेव । यतोयमस्मानिरप्युपयुक्तकर्मबधोभ्युपगम्यते निरुपयुक्तस्य कर्मबधस्तथा भेदाभदोभयपक्षसमाश्रयणात्तदेकपक्षाश्रितदोषाभावइत्यस्त्याश्रवसद्भावस्तन्निरोधश्च सवरइति । उक्तच। "योग शुद्ध पुण्या,श्रवस्तु पापस्य तद्विपर्यास ॥ वाक्कायमनोगुप्ति,निराश्रव सवरस्तूक्त" इत्यतोस्त्याश्रवस्तथा सवरश्चेत्येव सज्ञा निवेशयेदिति ॥ १७ ॥ आश्रवसवरसद्भावे चावश्य भावी वेदनानिर्जरासद्भावइत्यतस्त प्रतिषेधनिषेधद्वारेणाह । (णत्थिवेयणेत्यादि) वेदना कर्मानुभवलक्षणा तथा निर्जरा कर्मपुद्गलशाटनलक्षणा । एते द्वे अपि न विद्येते इत्येव नो सज्ञा निवेशयेत् । तदभाव प्रत्याशकाकारणमिद । तद्यथा । पल्योपमसागरोपमशतानुभवनीय कर्मातर्मुहूर्तेनैव क्षयमुपयातीत्यभ्युपगमात् । तदुक्त । "ज अण्णाणी कम्म, खवेइ बहुयाइ वासकोडीहिं ॥ तण्णाणी तिहिं गुत्तोखवेइ ऊसासमित्तेण" इत्यादि। तथा क्षपकश्रेण्या च झटित्येव कर्मणोभस्मीकरणाद्यथाक्रमबद्धस्य चानुभवनाभावे वेदनायाअभावस्तदभावाच्च निर्जरायाअपीत्येव नो सज्ञा निवेशयेत् । किमिति । यत कस्यचिदेव कर्मणएवमनतरोक्तया नीत्या क्षपणात्तपसा प्रदेशानुभवेन चापरस्य तूदयोदीरणाभ्यामनुभवनमित्यतोस्ति वेदना । यतआगमोप्येवभूतएव । तद्यथा । 'पुव्विदुच्चिण्णाण, दुप्पडिकताणकम्माण ॥ वेइत्ता मोक्खो णत्थि अवेइत्ताइत्यादिवेदनासिद्धा च निर्जरापि सिद्धेत्यतोस्ति वेदना निर्जरावेत्येव सज्ञा निवेशयेदिति ॥ १८ ॥

णत्थि किरिया अकिरियावा, णेव सन्न निवेसए ॥ अत्थि किरिया अकिरियावा, एव सन्न निवेसए॥ १९ ॥ णत्थि कोहेव माणेवा, णेव सन्न निवेसए ॥ अत्थि कोहेव माणेवा, एव सन्न निवेसए ॥ २० ॥

अर्थ—हवे वेदना, अने निर्जरा, ए बन्ने क्रिया अने अक्रियाना थायतने माटें तेनो सद्भाव देखाडेछे क्रिया एटले करवु,अने जे ते थकी विपरीत ते अक्रिया,ए बन्ने नथी एवी

सत्तापरसत्तानांतरीयकत्तोनेतरस्य सत्वेति नाप्युनयानाव शक्यते वक्तुं निबंधन स्य जगद्वैचित्र्यस्यानावात् । नहि कारणमंतरेण क्वचित्कार्यस्योत्पत्तिर्दृष्टा । नियतिस्वना वादिवादस्तु नष्टोत्तराणां पादप्रसारिकाणां पादप्रसारिका प्रायोपि च तद्वादेन्युपगम्यमाने सकलक्रियावैयर्थ्यं ततएव सकलकार्योत्पत्तिरित्यतोस्ति पुण्यं पापं चेत्येव संज्ञां निवे शयेत् । पुण्यपापे चैवं रूपे । तद्यथा ॥ "पुजलकर्म शुनं यत्,तत्पुण्यमिति जिनशासने दृष्ट म् ॥ यदशुनमथ तत्पाप,मिति नवति सर्वज्ञनिर्दिष्ट"मिति ॥ १६ ॥

णत्थि आसवे संवरेवा, णेवं सन्नं निवेसए ॥ अत्थि आसवे संवरेवा, एवं सन्नं निवेसए ॥ १७ ॥ णत्थि वेयणा णिज्जरावा, णेवं सन्नं निवेसए ॥ अत्थि वेयणा णिज्जरावा, एवं सन्नं निवेसए ॥ १८ ॥

अर्थ—हवे कारण विना कार्यनी उत्पत्ति नथी,माटें पुण्य अने पाप ए बेनुं कारण आ श्रव अने संवरछे, तेथी हवे आश्रव अने संवर देखाडेछे प्राणातिपातादि रूप जे कर्म ग्रहण करवानां कारणछे ते आश्रव जाणवा अने जेणे करी आवता कर्मने रोकी रा खीये तेने संवर कहिये, माटें ए आश्रव अनें संवर बन्ने नथी, एवी संज्ञा करवी नहीं, परंतु आश्रव पणछे, अने संवर पणछे, एम कहेवुं ॥ १७ ॥ हवे आश्रव अने संवरने सद्भावे वेदना अने निर्जरानो सद्भाव देखाडेछे वेदना एटले कर्मनुं अनुनववुं, अनें नि र्जरा एटले कर्म पुजलनुं साडवुं, ए बेहु नथी एवी संज्ञा न करवी, परंतु वेदना पणछे अने निर्जरा पणछे एवी संज्ञा गीतार्थ साधु करे ॥ १८ ॥

॥ दीपिका—(णत्थिआसवेति) आश्रवसंवरसद्भावोंगीकार्यइति ॥ १७ ॥ (णत्थिवेय णेति) वेदना कर्मानुनवरूपा निर्जरा कर्मपुजलशाटरूपा एते द्वे अपि न स्तः । यतः प ल्योपमसागरोपममसातवेद्यं कर्म अंतर्मुहूर्तेनैव क्षयं याति । यडुक्तं । "जं अन्नाणी कम्मं, खवेइ बहुयाहिं वासकोडीहिं ॥ तन्नाणी तिहिं गुत्तो, खवेइ ऊसास मित्तेणमित्यादि । तथा क्षपकश्रेण्यां शीघ्रमेव कर्मणः क्षयात् यथाक्रमबद्धस्यानुनवानावे वेदनायाअनावस्तदना वेच निर्जरायाअप्यनावइत्येवं नांगीकुर्यात् । यतः कस्यचिदेव कर्मणएवमुक्तनीत्या क्षयः अन्यस्य तु प्रदेशानुनवेन नोगसद्भावादस्तिवेदना । यडुक्तं । "पुव्विंडच्चिन्नाणं डुप्पडिकंताणंक म्माणं॥वेइत्ता मोस्को नत्थि अवेइत्ताइत्यादि । वेदनासद्भावेच निर्जराप्यस्तीति स्वीकुर्यात्॥१८॥

॥ टीका—न कारणमंतरेण कार्यस्योत्पत्तिरतः पुण्यपापयोः प्रागुक्तयोः कारणनूतावा

श्रवसंवरौ तत्प्रतिषेधद्वारेण दर्शयितुकामश्चाह। (णत्थिआसवेसंवरेवेत्यादि) श्राश्रवति प्रविशति कर्म येन सप्राणातिपातादिरूपश्राश्रवः कर्मोपादानकारणं तथा तन्निरोधः संवरः एतौ द्वावपि न स्तइत्येवं संज्ञां नो निवेशयेत्तदभावप्रतिपत्त्या शंकाकारणत्विदं कायवाड्मनःकर्मयोगः स आश्रवइति यथेदमुक्तं तथेदमप्युक्तमेव। (उच्चालियंमिपाएइत्यादि) ततश्च कायादिव्यापारेण कर्मबंधो न भवतीति युक्तिरपि। किमयमाश्रवश्रात्मनोभिन्नउताऽभिन्नः। यदि भिन्नोनामासावाश्रवोघटादिवद्भेदेपि नाश्रवत्वं सिद्धात्मनामपि श्राश्रवप्रसंगात्तदभावेच तन्निरोधलक्षणस्य संवरस्याप्यभावः सिद्धएवेत्येवमात्मकमध्यवसाय न कुर्यात्। यतोयत्तदनेकांतिकत्वं कायव्यापारस्योच्चालयमि पाए इत्यादिनोक्तं तदसमाकमपि संमतमेव। यतोयमस्माभिरप्युपयुक्तकर्मबंधोभ्युपगम्यते निरुपयुक्तस्य कर्मबंधस्तथा भेदाभेदोभयपक्षसमाश्रयणात्तदेकपक्षाश्रितदोषाभावइत्यस्त्याश्रवसद्भावस्तन्निरोधश्च संवरइति। उक्तंच। "योगः शुद्धः पुण्याश्रवस्तु पापस्य तद्विपर्यासः ॥ वाक्कायमनोगुप्ति,निराश्रवः संवरस्तूक्त" इत्यतोस्त्याश्रवस्तथा संवरश्चेत्येवं संज्ञां निवेशयेदिति ॥ १७ ॥ आश्रवसंवरसद्भावे चावश्यं भावी वेदनानिर्जरासद्भावइत्यतस्तत्प्रतिषेधनिषेधद्वारेणाह। (णत्थिवेयणेत्यादि) वेदना कर्मानुभवलक्षणा तथा निर्जरा कर्मपुद्गलशाटनलक्षणा। एते द्वे अपि न विद्येते इत्येवं नो संज्ञां निवेशयेत्। तदभावः प्रत्याशंकाकारणमिदं। तद्यथा। पल्योपमसागरोपमशतानुभवनीयं कर्मांतर्मुहूर्तेनैव क्षयमुपयातीत्यभ्युपगमात्। तदुक्तं। "जं अन्नाणी कम्मं, खवेइ बहुयाइ वासकोडीहिं ॥ तन्नाणी तिहिं गुत्तोखवेइ ऊसासमित्तेण" इत्यादि। तथा क्षपकश्रेण्यां च झटित्येव कर्मणोभस्मीकरणाद्यथाक्रमबद्धस्य चानुभवनाभावे वेदनायाश्रभावस्तदभावाच्च निर्जरायाअपीत्येवं नो संज्ञां निवेशयेत्। किमिति। यतः कस्यचिदेव कर्मणएवमनंतरोक्तया नीत्या क्षपणात्तपसा प्रदेशानुभवेन चापरस्य तूदयोदीरणाभ्यामनुभवनमित्यतोस्ति वेदना। यतआगमोप्येवंभूतएव। तद्यथा। "पुव्विंदुच्चिन्नाणं, दुप्पडिकंताणकम्माणं॥ वेइत्ता मोक्खो णत्थि अवेइत्ताइत्यादिवेदनासिद्धा च निर्जरापि सिद्धेत्यतोस्ति वेदना निर्जरावेत्येवं संज्ञां निवेशयेदिति ॥ १८ ॥

णत्थि किरिया अकिरियावा, णेवं सन्नं निवेसए॥ अत्थि किरिया अकिरियावा, एवं सन्नं निवेसए॥ १९ ॥ णत्थि कोहेव माणेवा, णेवं सन्नं निवेसए ॥ अत्थि कोहेव माणेवा, एवं सन्नं निवेसए॥ २० ॥

अर्थ–हवे वेदना, अने निर्जरा, ए बन्ने क्रिया अने अक्रियाना थायतवे माटे तेनो सद्भाव देखाडेछे क्रिया एटले करवु,अने जे ते थकी विपरीत ते अक्रिया,ए बन्ने नथी एवी

सञ्ज्ञा न करवी, परंतु क्रिया पणछे, अनें अक्रिया पणछे एवी सञ्ज्ञा करवी ॥१९॥ हवे क्रियानें सद्भावे क्रोधादिकनो सद्भाव देखाडेछे जे पोतानें अनें परनें अप्रीतिनुं कारण ते क्रोध जाणवो, तथा जे गर्वलक्षण ते मान जाणवुं, ए बेहु नथी, एवी सञ्ज्ञा पण न करवी, परंतु क्रोध अने मान ए बेहुछे एवी सञ्ज्ञा करवी ॥ २० ॥

॥ दीपिका–(णत्थिकिरियेत्यादि) सांख्यादीनां सर्वव्यापकत्वादात्मनोव्योम्नइव परिस्पंदात्मिका क्रिया न विद्यते बौद्धानांतु क्षणिकत्वात्सर्वभावानां प्रतिक्षणमुत्पत्तिरेव नान्या काचित्क्रिया तथा सर्वपदार्थानां प्रतिक्षणमवस्थांतरगमनात्सक्रियत्वमेव अतोऽक्रिया न विद्यते एवं सञ्ज्ञां न कुर्यात् किंतु ? अस्ति क्रियाऽक्रियाचेति सञ्ज्ञां कुर्यात् । यतः क्रियाभावे व्योम्नइव बंधे मोक्षाभावः प्रसज्येत । बौद्धानामपि प्रतिक्षणोत्पत्तिक्रियैव ततोऽस्ति क्रिया तद्भावेच तद्विपक्षभूताऽक्रियाप्यस्तीति ॥१९॥ (णत्थिकोहेवेति) नास्ति क्रोधः सद्भिमानाशएव क्षपकश्रेण्यांच भेदेन क्षपणानंगीकारात् । तथा क्रोधः किं ? आत्मनोधर्मः किंवा कर्मणउतान्यस्य । तत्रात्मधर्मत्वे सिद्धानामपि क्रोधोदयप्रसंगः । अथ कर्मणस्ततस्तदन्यकषायोदयेपि तदुदयसंगात् अन्यधर्मत्वेऽकिंचित्करत्वमतोनास्ति क्रोधः । एवं मानाभावोऽपि वाच्यइत्येवं नांगीकुर्यात् । यतः क्रोधाध्मातः पुरुषः प्रत्यक्षेणैवोपलभ्यते नायं मानाशोनिमित्तभेदात् । तथा जीवकर्मणोर्द्वयोरप्ययं धर्मस्ततः पूर्वोक्तः प्रत्येकदोषासंभवस्ततः क्रोधोमानश्चास्तीति सञ्ज्ञां निवेशयेत् ॥ २० ॥

॥ टीका–वेदनानिर्जरेच क्रियाक्रियत्वे ततस्तद्भावप्रतिषेधनिषेधपूर्वकं दर्शयितुमाह । (णत्थिकिरियाअकिरियावाइत्यादि) क्रिया परिस्पंदलक्षणा तद्विपर्यस्तात्वक्रिया । ते द्वे अपि न स्तोन विद्येते । तथाहि । सांख्यानां सर्वव्यापित्वादात्मनआकाशस्येव परिनिस्पंदिका क्रिया न विद्यते । शाक्यानांतु क्षणिकत्वात्सर्वपदार्थानां प्रतिसमयमन्यथा चान्यथोत्पत्ते । पदार्थसत्तैव न तद्व्यतिरिक्ता काचित्क्रियास्ति ॥ तथा चोक्तं । भूतिर्येषां क्रिया सैव कारकस्यैव चोच्यतइत्यादि । तथा सर्वपदार्थानां प्रतिक्षणमवस्थांतरगमनात्सक्रियात्वमतोन क्रिया विद्यते इत्येवं सञ्ज्ञां नो निवेशयेत् कितर्ह्यस्ति क्रिया अक्रिया वेत्येवं सञ्ज्ञां निवेशयेत् । तथाहि ।शरीरात्मनोर्देशाद्देशांतरावाप्तिनिमित्ता परिस्पंदात्मिका क्रिया प्रत्यक्षेणैवोपलभ्यते । सर्वथा निष्क्रियत्वे चात्मनोऽभ्युपगम्यमाने गगनस्येव बंधमोक्षाद्यभावः सच दृष्टेष्टबाधितः । तथा शाक्यानामपि प्रत्यक्षेणोत्पत्तिरेव क्रियेत्यतः कथं क्रियायाअभावोपि चैकांतेन क्रियाभावे संसारमोक्षाभावः स्यादित्यतोऽस्ति क्रिया तद्विपक्षभूताचाक्रियेत्येवं सञ्ज्ञां निवेशयेदिति ॥ १९ ॥ तदेवं सक्रियात्मनि सति क्रोधादिसद्भावइ

त्येतद्दर्शयितुमाह । (णत्थिकोहेवमाणेवेत्यादि) स्वपरात्मनोरप्रीतिलक्षण क्रोध ॥ सचानंतानुबंध्यप्रत्याख्यानावरणसंज्वलनभेदेन चतुर्धाऽऽगमे पठ्यते। तथैतावद्भेदएव मानोगर्व । एतौ द्वावपि न स्तोन विद्येते। तथाहि। क्रोध केषांचिन्मतेन मानांशएवाभिमानग्रहगृहीतस्य तत्कृतावस्यतक्रोधोदयदर्शनात् क्षपकश्रेण्या च भेदेन क्षपणानभ्युपगमात्। तथा किमयमात्मधर्मस्याहोस्वित्कर्मणउतान्यस्येति । तत्रात्मधर्मत्वे सिद्धानामपि क्रोधोदयप्रसंगोऽथ कर्मणस्ततस्तदन्यकषायोदयेपि तदुदयप्रसंगान्मूर्तत्वाच्च कर्मणोहि घटस्येव तदाकारोपलब्धि स्यादन्यधर्मत्वे त्वकिंचित्करत्वमतोनास्ति क्रोधइत्येव मानाभावोपि वाच्य इत्येव संज्ञा नो निवेशयेत्। यत। कषाय कर्मोदयवर्ती दृष्टेष्ट रुतभ्रुकुटीभंगोरक्तवदनोगलत्स्वेदबिंदुसमाकुल क्रोधाध्मात समुपलभ्यते न चासौ मानांशस्तत्कार्याकरणात्तथा परनिमित्तोत्पादितत्वाच्चेति तथा जीवधर्मकर्मणोरुभयोरप्यय धर्मस्तत्धर्मत्वेनच प्रत्येकविकल्पदोषानुपपत्तिरनभ्युपगमात्ससार्यात्मना कर्मणा सार्द्धं पृथग्भवनाभावात्तदुभयस्यच न नरसिंहवद्वस्त्वंतरत्वादित्यतोऽस्ति क्रोधोमानश्चेत्येव संज्ञा निवेशयेत् ॥ २० ॥

णत्थि माया व लोभेवा, णेवं सन्नं निवेसए ॥ अत्थि माया व लो
भेवा, एवं सन्नं निवेसए॥ २१ ॥ णत्थि पेज्जेव दोसेवा, णेवं स
न्नं निवेसए ॥ अत्थि पेज्जेव दोसेवा, एवं सन्नं निवेसए ॥ २२ ॥

अर्थ—हवे माया अने लोभनो सद्भाव देखाडेछे, जे परवचनरूप ते माया, अने जे सन्निधि संचयरूप ते लोभ, ए बेहु नथी, एवी संज्ञा न करवी, परंतु माया पणछे, अने लोभ पणछे एवी संज्ञा करवी ॥ २१ ॥ हवे क्रोधादिक जेछे, तेनो संक्षेप थकी सद्भाव कहेछे प्रेम एटले प्रीतिलक्षण पुत्र, कलत्र, धन, धान्यादिक, विषेरागता ते राग, तथा अप्रीतिलक्षण ते द्वेष, ए बेहु नथी एवी संज्ञा न करवी, परंतु राग पणछे, अने द्वेष पणछे, एवी संज्ञा करवी ॥ २२ ॥

॥ दीपिका (णत्थिमायेवेति) मायालोभौ न स्त इति संज्ञा न निवेशयेत् मायालोभयोनिषेध पूर्ववत्। प्रत्यक्षदृश्यत्वान्मायालोभा स्तइति संज्ञा निवेशयेत् ॥ २१ ॥ (णत्थिपेज्जेवेति) प्रीति प्रेम पुत्रकलत्रधनादिषु रागस्तद्विपरीतोद्वेषस्तौ न स्त । यतामायालोभावेव राग क्रोधमानावेव द्वेषस्ताभ्यां रागद्वेषौ न स्त अस्ति प्रेमद्वेषोप्यस्तीति संज्ञां कुर्यात यस्माद्रागावयवी मायालोभौ अवयवौ तथा द्वेषोऽवयवी क्रोधमानौ अवयवौ अवयवीच अवयवेभ्य कथंचिद्भिन्नोऽभिन्नश्च तस्मान्मायालोभ व प्रेमद्वेषश्च कथंचिदस्ति

सज्ञा न करवी, परतु क्रिया पणछे, अनें अक्रिया पणछे एवी सज्ञा करवी ॥१९॥ हवे क्रियानें सन्नावे क्रोधादिकनो सन्नाव देखाडेछे जे पोताने अनें परनें अप्रीतिनु कारण ते क्रोध जाणवो, तथा जे गर्वलक्षण ते मान जाणवु, ए वेहु नथी, एवी सज्ञा पण न करवी, परतु क्रोध अने मान ए वेहुछे एवी सज्ञा करवी ॥ २० ॥

॥ दीपिका-(णत्थिकिरियेत्यादि) साख्यादीना सर्वव्यापकत्वादात्मनोऽव्योम्नइव परिस्पदात्मिका क्रिया न विद्यते बौद्धानातु क्षणिकत्वात्सर्वनावाना प्रतिक्षणमुत्पत्तिरेव नान्या काचित्क्रिया तथा सर्वपदार्थाना प्रतिक्षणमवस्थातरगमनात्सक्रियत्वमेव अतोऽक्रिया न विद्यते एव सज्ञा न कुर्यात् किंतु ? अस्ति क्रियाऽक्रियाचेति सज्ञा कुर्यात् । यत क्रियानावे व्योम्नइव बधे मोक्षानाव प्रसज्येत । बौद्धानामपि प्रतिक्षणोत्पत्तिक्रियैव ततोऽस्ति क्रिया तन्नावेच तद्विपक्षनूताऽक्रियाप्यस्तीति ॥१९॥ (णत्थिकोहेवेति) नास्ति क्रोध सद्दिमानाशएव क्षपकश्रेण्यांच नेदेन क्षपणानगीकारात् । तथा क्रोध किं ? आत्मनोधर्म किंवा कर्मणउतान्यस्य । तत्रात्मधर्मत्वे सिद्धानामपि क्रोधोदयप्रसग । अथ कर्मणस्तत स्तदन्यकपायोदयेपि तदुदयसगात् अन्यधर्मत्वेऽकिंचित्करत्वमतोनास्ति क्रोध । एव मानानावोऽपि वाच्यइत्येव नागीकुर्यात् । यत क्रोधाध्मात पुरुप प्रत्यक्षेणैवोपलन्यते नार्य मानाशोनिमित्तनेदात् । तथा जीवकर्मणोर्द्वयोरप्यय धर्मस्तत पूर्वोक्त प्रत्येकदोषासन वस्तत क्रोधोमानश्चास्तीति सज्ञा निवेशयेत् ॥ २० ॥

॥ टीका-वेदनानिर्जरेच क्रियाक्रियत्वे ततस्तन्नावप्रतिपेधनिपेधपूर्वक दर्शयितुमाह । (णत्थिकिरियाअकिरियावाइत्यादि) क्रिया परिस्पदलक्षणा तद्विपर्यस्तात्वक्रिया । ते द्वे अपि न स्तोन विद्येते । तथाहि । साख्याना सर्वव्यापित्वादात्मनआकाशस्येव परिनिस्पंदिका क्रिया न विद्यते । शाक्यानातु क्षणिकत्वात्सर्वपदार्थाना प्रतिसमयमन्यथा वान्यथोत्पत्ते । पदार्थसत्तैव न तद्व्यतिरिक्ता काचित्क्रियास्ति ॥ तथा चोक्त । नूतिर्येषा क्रिया सैव कारकस्यैव चोच्यतइत्यादि । तथा सर्वपदार्थाना प्रतिक्षणमवस्थातरगमनात्सक्रियात्वमतोन क्रिया विद्यते इत्येव सज्ञा नो निवेशयेत् कितर्ह्यस्ति क्रिया अक्रिया वेत्येव सज्ञां निवेशयेत् । तथाहि ।शरीरात्मनोर्देशादेशातरावाप्तिनिमित्ता परिस्पदात्मिका क्रिया प्रत्यक्षेणैवोपलन्यते । सर्वथा निष्क्रियत्वे चात्मनोऽन्युपगम्यमाने गगनस्येव बधमोक्षाद्यनाव सच दृष्टेष्टबाधित । तथा शाक्यानामपि प्रत्यक्षेणोत्पत्तिरेव क्रियेत्यत कथ क्रियायाश्च नावोपि चैकातेन क्रियानावे ससारमोक्षानाव स्यादित्यतोऽस्ति क्रिया तद्विपक्षनूताचाक्रियेत्येव सज्ञा निवेशयेदिति ॥ १९ ॥ तदेव सक्रियात्मनि सति क्रोधादिसन्नावइ

त्येतद्दर्शयितुमाह । (एत्थिकोहेवमाऐवेत्यादि) स्वपरात्मनोरप्रीतिलक्षण क्रोध ॥ सचानतानुबंध्यप्रत्याख्यानावरणसंज्वलनभेदेन चतुर्धाऽऽगमे पठ्यते । तथैतावन्नेदएव मा नोगर्वं । एतौ द्वावपि न स्तोन विद्येते । तथाहि । क्रोध केषाचिन्मतेन मानांशएवाभिमा नग्रहगृहीतस्य तत्कृतावत्यन्तक्रोधोदयदर्शनात् क्षपकश्रेण्या च भेदेन क्षपणानभ्युपगमात् । तथा किमयमात्मधर्मआहोस्वित्कर्मणउतान्यस्येति । तत्रात्मधर्मत्वे सिद्धानामपि क्रोधो दयप्रसंगोऽथ कर्मणस्ततस्तदन्यकषायोदयेपि तडुदयप्रसंगान्मूर्तत्वाच्च कर्मणोहि घटस्येव तदाकारोपलब्धिः स्यादन्यधर्मत्वे त्वकिंचित्करत्वमतोनास्ति क्रोधइत्येव मानाभावोपि वाच्य इत्येव संज्ञा नो निवेशयेत् । यत । कषाय कर्मोदयवर्ती दृष्टेष्ट रुतभ्रुकुटीभंगोरक्तवदनोग लत्स्वेदबिंडुसमाकुल क्रोधाध्मात समुपलभ्यते न चासौ मानांशस्तत्कार्यकिरणात्तथा प रनिमित्तोत्थापितत्वाच्चेति तथा जीवधर्मकर्मणोरुभयोरप्ययं धर्मस्तत्धर्मत्वेनच प्रत्येकवि कल्पदोषानुपपत्तिरनभ्युपगमात्संसारात्मना कर्मणा सार्द्धं पृथग्भवनाभावात्तडुभयस्यच न नरसिंहवद्वस्त्वंतरत्वादित्यतोऽस्ति क्रोधोमानश्चेत्येव संज्ञा निवेशयेत् ॥ २० ॥

णत्थि माया व लोभेवा, णेवं सन्न निवेसए ॥ अत्थि माया व लो
भेवा, एवं सन्न निवेसए ॥ २१ ॥ णत्थि पेज्जेव दोसेवा, णेवं स
न्न निवेसए ॥ अत्थि पेज्जेव दोसेवा, एवं सन्न निवेसए ॥ २२ ॥

अर्थ—हवे माया अने लोभनो सद्भाव देखाडेछे, जे परवचनरूप ते माया, अने जे स न्निधि संचयरूप ते लोभ, ए बेहु नथी, एवी संज्ञा न करवी, परंतु माया पणछे, अने लोभ पणछे एवी संज्ञा करवी ॥ २१ ॥ हवे क्रोधादिक जेछे, तेना संक्षेप थकी सद्भाव कहेछे प्रेम एटले प्रीतिलक्षण पुत्र, कलत्र, धन, धान्यादिक, विषेरागता ते राग, तथा अप्रीतिलक्षण ते द्वेष, ए बेहु नथी एवी संज्ञा न करवी, परंतु राग पणछे, अने द्वेष पणछे, एवी संज्ञा करवी ॥ २२ ॥

॥ दीपिका (णत्थिमायेवेति) मायालोभौ न स्त इति संज्ञा न निवेशयेत् मायालोभ याभिधं पूर्ववत् । प्रत्यक्षदृश्यत्वान्मायालोभा स्तइति संज्ञा निवेशयेत् ॥ २१ ॥ (णत्थिपेज्जेवेति) प्रीति प्रेम पुत्रकलत्रधनादिषु रागस्तद्विपरीतोद्वेषस्तौ न स्त । यतोमाया लोभावेव राग क्रोधमानावेव द्वेषस्तान्या रागद्वेषौ न स्त अस्ति प्रेमद्वेषोप्यस्तीति संज्ञा कुर्यात् यस्माद्रागावयवी मायालोभौ अवयवा तथा द्वेषोऽवयवी क्रोधमानौ अवयवौ अवयवीच अवयवेभ्य कथंचिद्भिन्नोऽभिन्नश्च तस्मान्मायालोभश्च प्रेमद्वेषश्च कथंचिदस्ति

सज्ञा न करवी, परतु क्रिया पणछे, अनें अक्रिया पणछे एवी सज्ञा करवी ॥१९॥ हवे क्रियानें सद्भावे क्रोधादिकनो सद्भाव देखाडेछे जे पोताने अने परनें अप्रीतिनु कारण ते क्रोध जाणवो, तथा जे गर्वलक्षण ते मान जाणवु, ए बेहु नथी, एवी सज्ञा पण न करवी, परतु क्रोध अने मान ए बेहुछे एवी सज्ञा करवी ॥ २० ॥

॥ दीपिका-(णत्थिकिरियेत्यादि) साख्यादीना सर्वव्यापकत्वादात्मनोऽव्योम्नइव परिस्पदात्मिका क्रिया न विद्यते बौद्धानांतु क्षणिकत्वात्सर्वभावाना प्रतिक्षणमुत्पत्तिरेव नान्या काचित्क्रिया तथा सर्वपदार्थाना प्रतिक्षणमवस्थातरगमनात्सक्रियत्वमेव अतोऽक्रिया न विद्यते एव सज्ञा न कुर्यात् किंतु ? अस्ति क्रियाऽक्रियाचेति सज्ञा कुर्यात् । यत क्रियाभावे व्योम्नइव बधे मोक्षाभाव प्रसज्येत । बौद्धानामपि प्रतिक्षणोत्पत्तिक्रियैव ततोऽस्ति क्रिया तद्भावेच तद्विपक्षभूताऽक्रियाप्यस्तीति ॥१९॥ (णत्थिकोहेवेति) नास्ति क्रोध सद्गिमानाशएव क्षपकश्रेण्यांच भेदेन क्षपणानगीकारात् । तथा क्रोध किं ? आत्मनोधर्म किंवा कर्मणउतान्यस्य । तत्रात्मधर्मत्वे सिद्धानामपि क्रोधोदयप्रसग । अथ कर्मणस्तत स्तदन्यकषायोदयेपि तदुदयसगात् अन्यधर्मत्वेऽकिंचित्करत्वमतोनास्ति क्रोध । एव मानाभावोऽपि वाच्यइत्येव नागीकुर्यात् । यत क्रोधाध्मात पुरुष प्रत्यक्षेणैवोपलभ्यते नार्य मानाशोनिमित्तभेदात् । तथा जीवकर्मणोर्द्वयोरप्ययं धर्मस्तत पूर्वोक्त प्रत्येकदोषासभवस्तत क्रोधोमानश्चास्तीति सज्ञा निवेशयेत् ॥ २० ॥

॥ टीका-वेदनानिर्जरेच क्रियाक्रियत्वे ततस्तभावप्रतिषेधनिषेधपूर्वक दर्शयितुमाह । (णत्थिकिरियाअकिरियावाइत्यादि) क्रिया परिस्पदलक्षणा तद्विपर्यस्तात्वक्रिया । ते द्वे अपि न स्तोन विद्येते । तथाहि । साख्याना सर्वव्यापित्वादात्मनआकाशस्येव परिनिस्पदिका क्रिया न विद्यते । शाक्यानातु क्षणिकत्वात्सर्वपदार्थाना प्रतिसमयमन्यथा वान्यथोत्पत्ते । पदार्थसत्तैव न तद्व्यतिरिक्ता काचित्क्रियास्ति ॥ तथा चोक्त । भूतिर्येषा क्रिया सैव कारकस्यैव चोच्यतइत्यादि । तथा सर्वपदार्थाना प्रतिक्षणमवस्थातरगमनात्सक्रियात्वमतोन क्रिया विद्यते इत्येव सज्ञा नो निवेशयेत् कितर्ह्यस्ति क्रिया अक्रिया वेत्येव सज्ञां निवेशयेत् । तथाहि । शरीरात्मनोदेशादेशातरावाप्तिनिमित्ता परिस्पदात्मिका क्रिया प्रत्यक्षेणैवोपलभ्यते । सर्वथा निष्क्रियत्वे चात्मनोऽभ्युपगम्यमाने गगनस्येव बधमोक्षाद्यभावश्च दृष्टेष्टबाधित । तथा शाक्यानामपि प्रत्यक्षेणोत्पत्तिरेव क्रियेत्यत कथ क्रियायाअभावोपि चैकातेन क्रियाभावे ससारमोक्षाभाव स्यादित्यतोऽस्ति क्रिया तद्विपक्षभूताचाक्रियेत्येव सज्ञा निवेशयेदिति ॥ १९ ॥ तदेव सक्रियात्मनि सति क्रोधादिसद्भावइ

॥ टीका सांप्रत कषायसद्भावे सिद्धे सति तत्कार्यभूतोऽवश्य भावी संसारसद्भाव इत्येतत्प्रतिषेधनिषेध द्वारेण प्रतिपादयितुमाह । (णत्थिचाउरंते इत्यादि) चत्वारोऽतागति भेदानरकतिर्यङ्नरामरलक्षणायस्य संसारस्यासौ चतुरंत संसारएव कांतारोनर्थैकहेतु त्वात् । सच चतुर्विधोपि न विद्यते अपितु सर्वेषा संसृतिरूपत्वात्कर्मबंधात्मकतया च दु खैकहेतुत्वादथवा नारकदेवयोरनुपलभ्यमानत्वात्तिर्यङ्मनुष्ययोरेव सुखदु खोत्क र्षतया तद्व्यवस्थानाद्विविध संसार पर्यायनयाश्रयणात्त्वनेकविधोऽतश्चातुर्विध्यं न क थंचिद्घटतइत्येव संज्ञा नो निवेशयेदपितु अस्ति चतुरंत संसारइत्येव संज्ञा निवेशयेत् । यत्तूक्तमेकविध संसारस्तन्नोपपद्यते यतोऽध्यक्षेण तिर्यङ्मनुष्ययोर्भेद समुपलभ्यते न चा सावेकविधत्वे संसारस्य घटते । तथा संभवानुमानेन नारकदेवानामप्यस्तित्वाभ्युपगमा द्वैविध्यमपि न विद्यते । संभवानुमानंतु पुण्यपापयो प्रकृष्टफलभुजस्तन्मध्यफलभु जा तिर्यङ्मनुष्याणां दर्शनादत संभाव्यते प्रकृष्टफलभुजोज्यतिषा च प्रत्यक्षेणैव दर्शनाद थ तद्विमानानामुपलंभएवमपि तदधिष्ठातृभि केश्चिद्भवितव्यमित्यनुमानेन गम्यते । ग्रहगृ हीतवरप्रदानादिना च तदस्तित्वानुमानमिति तदस्तित्वेतु प्रकृष्टपुण्यफलभुजइव प्रकृष्टपा पफलभुग्भिरपि भाव्यमित्यतोऽस्ति चातुर्विध्य । संसारस्य पर्यायनयाश्रयणेतु यदनेकवि धत्वमुच्यते तदयुक्त । यत सप्तपृथिव्याश्रिताअपि नारका समानजातीयाश्रयणादेकप्र काराएव तथा तिर्यंचोपि पृथिव्यादय स्थावरास्तथा द्वित्रिचतु पचेंद्रियाश्च द्विपदियानिल क्षप्रमाणा सर्वेप्येकविधाएव । तथा मनुष्याअपि कर्मभूमिजाऽकर्मभूमिजातरद्वीपक समूर्छनजात्मकभेदमनादृत्यैकविधत्वेनैवाश्रितास्तथा देवाअपि भवनपतिव्यंतरज्योतिष्क वैमानिकभेदेन भिन्नाएकविधत्वेनैव गृहीतास्तदेव सामान्यविशेषाश्रयणाच्चातुर्विध्य संसा रस्य व्यवस्थितं नैकविधत्व संसारवैचित्र्यदर्शनान्नाप्यनेकविधत्व सर्वेषा नारकादीना स्व जात्यनतिक्रमादिति ॥ २३ ॥ २४ ॥

णत्थि सिद्धी असिद्धीवा, णेव सन्न निवेसए ॥ अत्थि सिद्धी अ सिद्धीवा, एव सन्न निवेसए ॥ २५ ॥ णत्थि सिद्धी निय ठाण, णे व सन्न निवेसए ॥ अत्थि सिद्धी निय ठाण, एव सन्न निवेसए ॥ २६ ॥

अर्थ—हवे संसारने सद्भावे सिद्धिनो सद्भाव देखाडेछे समस्तकर्मक्षयनु स्थानक सिद्धि जाणवी अने तेथकी विपरीत ते असिद्धि जाणवी, ए बेहु नथी, एवी संज्ञा न करे, परंतु सिद्धि पणछे, अने असिद्धि पणछे, एवी संज्ञा पाताना चित्तने विषे स्थापन करे ॥२५॥ हवे सिद्धिना स्थानकना सद्भाव कहेछे समस्तकर्मक्षयलक्षण जे सिद्धि तेनु, (निय

ति स्वीकार्य ॥ २१ ॥ (एत्थिरागदोसाविति) रागद्वेपौ न स्तइति न स्वीकार्य तौ वि द्येते इति मति कार्या युक्ति । पूर्वोक्ता ॥ २२ ॥

॥ टीका साप्रत मायालोनयोरस्तित्व दर्शयितुमाह (एत्थिमायावलोनेत्यादि) अत्रा पि प्राग्वन्मायालोनयोरनाववादीना निराकृत्यास्तित्व प्रतिपादनीयमिति ॥ २१॥ साप्रत तेपाच क्रोधादीना समासेनास्तित्व प्रतिपादयन्नाह । (एत्थिपेज्जेवेत्यादि) प्रीतिलक्षण प्रेम पुत्रकलत्रधनधान्याद्यात्मीयेपु रागस्तद्विपरीतस्त्वात्मीयोपघातकारिणि द्वेपस्तावेतौ द्वावपि न विद्येते । तथाहि । केपाचिदनिप्रायोयदुत मायालोनावेवावयवौ विद्येते न तत्समुदायरूपोऽवयव्यस्ति । तथा क्रोधमानावेव स्त न तत्समुदायरूपोऽवयवी द्वेष इति । तथा ह्यवयवेन्योयद्यनिन्नोवयवी तर्हि तदनेदाचएव । नासावथ निन्न पृथ ग्रुपलन स्याद्घटपटवदितित्येवमसिद्धिकल्पमूढतया नो सज्ञा निवेशयेत् । यतोऽवयवा वयविनो कथचिद्भेदइत्येव नेदानेदाख्यतृतीयपक्षसमाश्रयणात्प्रत्येकपक्षाश्रितदोषानु पपत्तिरित्येव चास्ति प्रीतिलक्षण प्रेमाप्रीतिलक्षणश्च द्वेपइत्येव सज्ञा निवेशयेत् ॥२२॥

एत्थि चाउरते ससारे, णेव सन्न निवेसए ॥ अत्थि चाउरते ससारे, एव सन्न निवेसए ॥ २३ ॥ एत्थि देवोव देवीवा, णे व सन्न निवेसए ॥ अत्थि देवोव देवीवा, णेव सन्न निवेसए॥ २४ ॥

अर्थ—हवे पूर्वे कह्या जे क्रोधादिक चार कपाय ते कपायने सद्भावे, ससारनो सद्भा व देखाडेछे नरक, तिर्यंच, मनुष्य अने देवता, ए चतुर्गतिलक्षण ससार नथी एवी सज्ञा न करे, परतु ए चतुर्गतिलक्षण ससारछे एवी सज्ञा करे ॥ २३ ॥ हवे वली पण एज ससारनो सद्भाव देखाडेछे नुवनपति, व्यतर, ज्योतिपी, अने वैमानिक, ए चार जा तना देव, तथा एनी स्त्रियो ते देविउ ए बेहु नथी एवी सज्ञा न करे, परतु ए देव प णछे अने देवीउ पणछे, एवी सज्ञा करे एवी सनावनाये मनुष्य, नारकी, अने तिर्यंच नो पण सद्भाव जाणवो ॥ २४ ॥

॥ दीपिका (एत्थिचाउरतइति) नास्ति चातुरत चत्वारोऽतागतिनेदायत्र ससंसार श्चतुरतश्चतुर्विध ससारोनास्ति देवनारकयोरनुपलन्यमानत्वात् इति सज्ञा न निवेशयेत् अस्ति चतुर्विध ससार यत सति सुरनारका।प्रकृष्टपुण्यपापफलनोगस्यान्यथानुपपत्ते एव सज्ञा निवेशयेत् ॥ २४ ॥ (एत्थिदेवेति) नास्ति देवोदेवी वा इति मति न कुर्यात् अस्ति देवोवा देवी इति सज्ञा कुर्यात् अत्र प्रकृष्टपुण्यफलनोगएव हेतु ॥ २५ ॥

॥ टीका सांप्रत कपायसद्भावे सिद्धे सति तत्कार्यभूतोऽवश्य भावी संसारसद्भाव इत्येतत्प्रतिषेधनिषेध द्वारेण प्रतिपादयितुमाह । (णत्थिचाउरंते इत्यादि) चत्वारोंऽतागति भेदानरकतिर्यङ्नरामरलक्षणायस्य संसारस्यासौ चतुरंत संसारएव कांतारोनर्थैकहेतु त्वात् । सच चतुर्विधोपि न विद्यते अपितु सर्वेषां संसृतिरूपत्वात्कर्मबंधात्मकतया च दु खैकहेतुत्वादथवा नारकदेवयोरनुपलभ्यमानत्वात्तिर्यङ्मनुष्ययोरेव सुखदु खोत्क र्पतया तद्व्यवस्थानाद्विविध संसार पर्यायनयाश्रयणात्त्वनेकविधोऽतश्चातुर्विध्यं न क थंचिद्घटतइत्येवं संज्ञा नो निवेशयेदपितु अस्ति चतुरंत संसारइत्येवं संज्ञां निवेशयेत् । यत्तूक्तमेकविध संसारस्तन्नोपपद्यते यतोऽध्यक्षेण तिर्यङ्मनुष्ययोर्भेद समुपलभ्यते न चा सावेकविधत्वे संसारस्य घटते । तथा संभवानुमानेन नारकदेवानामप्यस्तित्वाभ्युपगमा द्वैविध्यमपि न विद्यते । संभवानुमानंतु पुण्यपापयो प्रकृष्टफलभुजस्तन्मध्यफलभु जा तिर्यङ्मनुष्याणां दर्शनादत संभाव्यते प्रकृष्टफलभुजोज्यतिषां च प्रत्यक्षेणैव दर्शनाद थ तद्विमानानामुपलंभएवमपि तदधिष्ठातृभि कैश्चिद्भवितव्यमित्यनुमानेन गम्यते । ग्रहगृ हीतवरप्रदानादिना च तदस्तित्वानुमानमिति तदस्तित्वेतु प्रकृष्टपुण्यफलभुजइव प्रकृष्टपा पफलभुग्भिरपि भाव्यमित्यतोऽस्ति चातुर्विध्य । संसारस्य पर्यायनयाश्रयणेतु यदनेकवि धत्वमुच्यते तदयुक्त । यत सप्तपृथिव्याश्रितायपि नारका समानजातीयाश्रयणादेकप्र काराएव तथा तिर्यंचोपि पृथिव्यादय स्थावरास्तथा द्वित्रिचतु पंचेंद्रियाश्च द्विपटियोनिल क्षप्रमाणा सर्वेप्येकविधाएव । तथा मनुष्यायपि कर्मभूमिजाऽकर्मभूमिजांतरद्वीपक संमूर्छनजात्मकभेदमनादृत्यैकविधत्वेनैवाश्रितास्तथा देवायपि भवनपतिव्यंतरज्योतिष्क वैमानिकभेदेन भिन्नाएकविधत्वेनैव गृहीतास्तदेवं सामान्यविशेषाश्रयणाच्चातुर्विध्य संसा रस्य व्यवस्थितं नैकविधत्व संसारवैचित्र्यदर्शनान्नाप्यनेकविधत्वं सर्वेषां नारकादीनां स्व जात्यनतिक्रमादिति ॥ २३ ॥ २४ ॥

णत्थि सिद्धी असिद्धीवा, णेव सन्नं निवेसए ॥ अत्थि सिद्धी अ
सिद्धीवा, एव सन्नं निवेसए ॥ २५ ॥ णत्थि सिद्धी नियं ठाण, णे
व सन्नं निवेसए ॥ अत्थि सिद्धी नियं ठाण, एवं सन्नं निवेसए ॥ २६ ॥

अर्थ–हवे संसारने सद्भावे सिद्धिनो सद्भाव देखाडेछे समस्तकर्मक्षयरूप स्थानक सिद्धि जाणवी अने तेथकी विपरीत ते असिद्धि जाणवी, ए भेद नथी, एवी संज्ञा न करे, परंतु सिद्धि पणछे, अने असिद्धि पणछे, एवी संज्ञा पोताना चित्तने विषे स्थापन करे ॥२५॥हवे सिद्धिना स्थानकनो सद्भाव कहेछे समस्तकर्मक्षयलक्षण जे सिद्धि तेज, (निय

गण के०) पोतानु स्थानक "इसीवप्नार" एवे नामेछे ते नथी, एवी सङ्गा न करे परंतु सिद्धि एवु निज पोतानु स्थानकछे, एवी सङ्गा चित्तने विषे स्थापन करे ॥ २६ ॥

॥ दीपिका–(एछिसिद्धीइति) नास्ति सिद्धि कर्मक्षयरूपा,असिद्धि ससाररूपा सापि नास्तीति सङ्गा न निवेशयेत् । ससारचातुर्विध्य पूर्वमेवोक्त । कियत कर्मक्षयस्यच पीडोप शमादिना प्रत्यक्षेण दर्शनात्कस्यचिदात्यतिककर्मक्षयोपि स्यात् तस्मादस्ति सिद्धिरसिद्धि रप्यस्तीति सङ्गा कुर्यात् ॥ २६ ॥ (एछिसेढाइति) सिढे सर्वकर्मक्षयरूपायानिज स्थान सिद्धिशिलोपरियोजनचतुर्थक्रोशोपरितनषड्नाग स नास्तीति सङ्गां न कुर्यात् अस्ति सिद्धिर्निज स्थानमिति सङ्गा च कुर्यात् आगमप्रमाणसिद्धत्वात् ॥ २७ ॥

॥ टीका–सर्वेनावाना सप्रतिपक्षत्वात्ससारसन्नावे सति अवश्यं तद्विमुक्तिलक्षणया सिद्ध्यापि नवितव्यमित्यतोऽधुना सप्रतिपक्षा सिद्धिं दर्शयितुमाह । (एछिसिद्धीत्यादि) सिद्धिरशेषकर्मच्युतिलक्षणा तद्विपर्यस्ताचासिद्धिर्नास्तीत्येव ना सङ्गां निवेशयेदपि त्वसि द्धे ससारविलक्षणायाश्चातुर्विध्येनानतरमेव प्रसाधितायाअविगाने नास्तित्व प्रति द्व तद्वि पर्ययेण सिद्धेरप्यस्तित्वमनिवारितमित्यतोस्ति सिद्धिरसिद्धिर्वेत्येव सङ्गा निवेशयेदिति स्थित । इदमुक्त नवति । सम्यग्दर्शनङ्गानचारित्रात्मकस्य मोक्षमार्गस्य सदावात्कर्मक्षय स्य च पीडोपशमादिनाऽध्यक्षेण दर्शनादत कस्यचिदात्यंतिककर्महानिसिद्धेरस्ति सिद्धिरि ति । तथा चोक्त । "दोषावरणयोर्हानिर्नि शेषास्त्यतिशायिनी ॥ क्वचिद्यथा स्वहेतुन्योब हिरतर्मलक्षय' इत्यादि। सर्वङ्गसन्नावोपि सनवानुमानाद्द्रष्टव्यस्तथात्यन्यस्यमानाया प्रङ्गा याव्याकरणादिना शास्त्रसस्कारेणोत्तरोत्तरवृद्ध्या प्रङ्गातिशयोद्रष्टव्य । तत्र कस्यचिदत्यता तिशयप्राप्ते सर्वङ्गत्व स्यादिति सनवानुमानेन चैतदाशकनीयं । तद्यथा । ताप्यमानमुद कमत्यतोस्रतामियान्नाग्निसान्नवेत् तथा दशहस्तातरं व्योम्नि योनामोत्प्लुत्य गछति। न यो जनमसौ गतु शक्नोत्यासशतैरपीति दृष्टांतदार्ष्टांतिकयोरसाम्यात् । तथाहि । ताप्यमान जल प्रतिक्षण क्षयं गछेत्प्रङ्गा तु विवर्द्धते। यदिवा क्षेपोपलब्धेरव्याहतमग्नित्व तथा प्लव नविषयेपि पूर्वमर्यादायाअनतिक्रमायोजनोत्प्लवनानावस्तत्परित्यागे चोत्तरोत्तर वृद्ध्या प्र ङ्गाप्रकर्षगमनवद्योजनशतमपि गछेदित्यतोदृष्टातदार्ष्टातिकयोरसाम्यात्तदेव नाशकनीयमि ति स्थित । प्रङ्गावृद्धेश्च बाधकप्रमाणानावादस्ति सर्वङ्गत्वप्राप्तिरिति । यदिवाजननृतसमुद्र कदृष्टातेन जीवाकुलत्वाज्जगतोहिसायाडुर्निवारत्वात्सिद्ध्यनाव । तथा चोक्त।"जले जी वा स्थले जीवाआकाशे जीवमालिनि॥ जीवमालाकुले लोके कथ निक्षुरहिसक"इत्यादि। तदेव सर्वस्यैव हिसकत्वात्सिद्ध्यनावइति। तदेतदयुक्त । तथाहि । सदोपयुक्तस्य पिहि

ताश्रवद्वारस्य पचसमितिसमितस्य त्रिगुप्तिगुप्तस्य सर्वथा निरवद्यानुष्ठायिनो द्विचत्वारिंश द्दोषरहितनिक्षाभुजईर्यासमितस्य कदाचिद्रूव्यत प्राणिव्यपरोपणेपि तत्कृतवधाजाव सर्वं था तस्यानवद्यत्वात् । तथाचोक्त । उच्चालियंमिपाए, इत्यपि प्रतीतं तदेव कर्मवधाजावात्सि द्धे सद्भावोव्याहत सामर्थ्यजावादसिद्धिसद्भावोपीति ॥ २५॥ साप्रत सिद्धाना स्थाननिरूप पणायाह । (णत्थिसिद्धीत्यादि) सिद्धिरशेषकर्मच्युतिलक्षणायानिज स्थानमीषत्प्राग्जारा ख्यं व्यवहारतोनिश्चयतस्तु तडुपरि योजनक्रोशषड्भागस्तत्प्रतिपादकप्रमाणाजावात्स ना स्तीत्येव सज्ञा नो निवेशयेत् । यतोबाधकप्रमाणाजावात्साधकस्य चागमस्य सद्भावात्तत्स त्ता डुर्निवारेति । अपिचापगताशेषकल्मषाणा सिद्धाना केनचिद्विशिष्टेन स्थानेन जा व्य तच्चतुर्दशरज्ज्वात्मकस्य लोकस्याग्रजूत इष्ठव्य । नच शक्यते वक्तुमाकाशवत्सर्वव्या पिन सिद्धाइति यतोलोकालोकव्याप्याकाश । न चालोके परद्रव्यस्याकाशमात्ररूपत्वात् लोकमात्रव्यापित्वमपि नास्ति विकल्पानुपपत्ते । तथाहि । सिद्धावस्थाया तेश व्यापित्व मभ्युपगतमुतप्रागपि न तावत्सिद्धावस्थायां तद्व्यापित्वजवने निमित्ताजावान्नापि प्रागव स्थाया तद्भावे सर्वससारिणा प्रतिनियतसुखडु खानुजवोन स्यान्नच शरीराद्बहिरवस्थित मवस्थानमस्ति । तत्सत्तानिबधनप्रमाणस्याजावादत सर्वव्यापित्व विचार्यमाण न कथ चिद्घटते तदजावे च लोकाग्रमेव सिद्धाना स्थान तज्गतिश्च कर्मविमुक्तस्योर्ध्वं गतिरिति। तथाचोक्त । "लाउ एरडफले,अग्गीधूमे उसुधणुविमुक्के ॥ गइ पुव्वपउगेण,एव सिद्धाणविग ईउ" इत्यादि । तदेवमस्ति सिद्धिस्तस्याश्च निज स्थानमित्येव सज्ञा निवेशयेदिति॥२६॥

णत्थि साहू असाहूवा,णेव सन्न निवेसए ॥ अत्थि साहू असाहू वा, एव सन्न निवेसए ॥ २७ ॥ णत्थि कल्लाण पावेवा, णेव सन्न निवेसए ॥ अत्थि कल्लाण पावेवा, एव सन्न निवेसए ॥ २८ ॥

अर्थ—हवे सिद्धिना साधनारा साधुओछे तेनो सद्भाव कहेछे ज्ञान, दर्शन, अनें चारित्ररूप रत्नत्रयने साधे,ते साधु जाणवा, ते पण नथी, तथा ए थकी विपरीत ते अ साधु जाणवा, ते पण नथी एवी सज्ञा न करवी, परतु साधु पणछे, अने असाधु प णछे, एवी सज्ञा करवी ॥ २७ ॥ हवे सामान्य प्रकारे कल्याण अनें पापनो सद्भाव देखाडेछे मनोवाछित ,अर्थनी प्राप्तिनु करनारु एवु कल्याण, ते पण नथी तथा ते थकी विपरीत जे पाप, ते पण नथी एवी सज्ञा न करे, किंतु? कल्याण पणछे, अने पाप पणछे एवी सज्ञा करे ॥२८॥

॥ दीपिका—(णत्थिसाहू इति) नास्ति साधुर्मुनि सपूर्णचारित्रगुणाजावात् तदजावे त

वाण के०) पोतानु स्थानक "इसीपब्भार" एवे नामेछे ते नथी, एवी संज्ञा न करे परंतु सिद्धि एवु निज पोतानु स्थानकछे, एवी संज्ञा चित्तने विषे स्थापन करे ॥ २६ ॥

॥ दीपिका-(णत्थिसिद्धीइति) नास्ति सिद्धि कर्मक्षयरूपा,असिद्धि संसाररूपा सापि नास्तीति संज्ञा न निवेशयेत् । संसारचातुर्विध्य पूर्वमेवोक्त । कियत कर्मक्षयस्यच पीडोपशमादिना प्रत्यक्षेण दर्शनात्कस्यचिदात्यंतिककर्मक्षयोपि स्यात् तस्मादस्ति सिद्धिरसिद्धिरप्यस्तीति संज्ञा कुर्यात् ॥ २६ ॥ (णत्थिसेदाइति) सिद्धे सर्वकर्मक्षयरूपायानिज स्थान सिद्धिशिलोपरियोजनचतुर्थक्रोशोपरितनषड्भाग स नास्तीति संज्ञां न कुर्यात् अस्ति सिद्धिर्निज स्थानमिति संज्ञा च कुर्यात् आगमप्रमाणसिद्धत्वात् ॥ २७ ॥

॥ टीका-सर्वेनावाना सप्रतिपक्षत्वात्संसारसद्भावे सति अवश्यं तद्विमुक्तिलक्षणया सिद्ध्यापि नवितव्यमित्यतोऽधुना सप्रतिपक्षा सिद्धिं दर्शयितुमाह । (णत्थिसिद्धीत्यादि) सिद्धिरशेषकर्मच्युतिलक्षणा तद्विपर्यस्ताचासिद्धिर्नास्तीत्येव ना संज्ञां निवेशयेदपि त्वसिद्धे संसारविलक्षणायाश्चातुर्विध्येनानंतरमेव प्रसाधितायाश्च विगाने नास्तित्व प्रसिद्ध तद्विपर्ययेण सिद्धेरप्यस्तित्वमनिवारितमित्यतोस्ति सिद्धिरसिद्धिर्वेत्येव संज्ञा निवेशयेदिति स्थित । इदमुक्त नवति । सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रात्मकस्य मोक्षमार्गस्य सदावाक्कर्मक्षयस्य च पीडोपशमादिनाऽध्यक्षेण दर्शनादत कस्यचिदात्यंतिककर्महानिसिद्धेरस्ति सिद्धिरिति । तथा चोक्त । "दोषावरणयोर्हानिर्निःशेषास्त्यतिशायिनी ॥ क्वचिद्यथा स्वहेतुभ्योबहिरंतर्मलक्षय' इत्यादि। सर्वज्ञसद्भावोपि सत्नवानुमानाद्दृष्टव्यस्तथात्यभ्यस्यमानाया प्रज्ञायाव्याकरणादिना शास्त्रसंस्कारेणोत्तरोत्तरवृद्ध्या प्रज्ञातिशयोदृष्टव्य । तत्र कस्यचिदत्यतातिशयप्राप्ते सर्वज्ञत्व स्यादिति सत्नवानुमानेन चैतदाशंकनीयं । तद्यथा । ताप्यमानमुदकमत्यतोऽलतामियान्नाग्निसाद्भवेत् तथा दशहस्तातरं व्योम्नि योनामोत्प्लुत्य गच्छति। न योजनमसौ गंतु शक्तोभ्यासशतैरपीति दृष्टांतदार्ष्टांतिकयोरसाम्यात् । तथाहि । ताप्यमान जल प्रतिक्षण क्षयं गच्छेत्प्रज्ञा तु विवर्द्धते। यदिवा क्लेशोपलब्धेरव्याहतमग्नित्व तथा प्लवनविषयेपि पूर्वमर्यादायाअनतिक्रमाद्योजनोत्प्लवनानावस्तत्परित्यागे चोत्तरोत्तर वृद्ध्या प्रज्ञाप्रकर्षगमनवद्योजनशतमपि गच्छेदित्यतोदृष्टांतदार्ष्टांतिकयोरसाम्यात्तदेव नाशकनीयमिति स्थित । प्रज्ञावृद्धेश्च बाधकप्रमाणानावादस्ति सर्वज्ञत्वप्राप्तिरिति । यदिवाजननृतसमुत्कटघातेन जीवाकुलत्वाज्जगतोहिंसायाडुर्निवारत्वात्सिद्ध्यनाव । तथा चोक्त। "जले जीवा स्थले जीवाआकाशे जीवमालिनि॥ जीवमालाकुले लोके कथ निक्षुरहिंसक"इत्यादि। तदेव सर्वस्यैव हिंसकत्वात्सिद्ध्यनावइति। तदेतदयुक्त । तथाहि । सदोषयुक्तस्य पिहि

ताश्रव द्वारस्य पंचसमितिसमितस्य त्रिगुप्तिगुप्तस्य सर्वथा निरवद्यानुष्ठायिनोद्विचत्वारिंश द्दोषरहितनिक्षाभुजईर्यासमितस्य कदाचिद्रव्यत प्राणिव्यपरोपणेपि तत्कृतवधाभाव सर्व था तस्यानवद्यत्वात् । तथाचोक्तं । उच्चालियंमिपाए, इत्यपि प्रतीतं तदेव कर्मबंधाभावात्सि द्धे सन्नावोव्याहत सामर्थ्यनावादसिद्धिसन्नावोपीति ॥२५॥ सांप्रत सिद्धाना स्थाननिरूप णायाह । (णत्थिसिद्धीत्यादि) सिद्धेरशेषकर्मच्युतिलक्षणायानिज स्थानमीषत्प्राग्भारा ख्य व्यवहारतोनिश्चयतस्तु तडुपरि योजनक्रोशषड्भागस्तत्प्रतिपादकप्रमाणाभावात्स ना स्तीत्येव संज्ञा नो निवेशयेत् । यतोबाधकप्रमाणाभावात्साधकस्य चागमस्य सन्नावात्तत्स त्ता डुर्निवारेति । अपिचापगताशेषकल्मषाणा सिद्धाना केनचिद्विशिष्टेन स्थानेन ना व्य तच्चतुर्दशरज्ज्वात्मकस्य लोकस्याग्रभूत द्रष्टव्य । नच शक्यते वक्तुमाकाशवत्सर्वव्या पिन सिद्धाइति यतोलोकालोकव्याप्याकाश । न चालोके परद्रव्यस्याकाशमात्ररूपत्वात् लोकमात्रव्यापित्वमपि नास्ति विकल्पानुपपत्ते । तथाहि । सिद्धावस्थाया तेषा व्यापित्व मभ्युपगतमुतप्रागपि न तावत्सिद्धावस्थायां तद्व्यापित्वभवने निमित्ताभावान्नापि प्रागव स्थाया तन्नावे सर्वसंसारिणा प्रतिनियतसुखडुःखानुभवोन स्यान्नच शरीराद्बहिरवस्थित मवस्थानमस्ति । तत्सत्तानिबंधनप्रमाणस्याभावादत सर्वव्यापित्व विचार्यमाणे न कथ चिद्घटते तदभावे च लोकाग्रमेव सिद्धानां स्थान तद्गतिश्च कर्मविमुक्तस्योर्ध्वं गतिरिति। तथाचोक्तं ।"लाउ एरंडफले,अग्गीधूमे उसुधणुविमुक्के ॥ गइ पुव्वपउंगेण,एवं सिद्धाणविग ईउ" इत्यादि । तदेवमस्ति सिद्धिस्तस्याश्च निज स्थानमित्येव संज्ञा निवेशयेदिति॥२६॥

णत्थि साहू असाहूवा,णेव सन्न निवेसए ॥ अत्थि साहू असाहू वा, एवं सन्न निवेसए ॥ २७ ॥ णत्थि कल्लाण पावेवा, णेव सन्न निवेसए ॥ अत्थि कल्लाण पावेवा, एवं सन्न निवेसए ॥ २८ ॥

अर्थ–हवे सिद्धिना साधनारा साधुयोठे तेनो सन्नाव कहेठे ज्ञान, दर्शन, अने चारित्ररूप रत्नत्रयने साधे,ते साधु जाणवा, ते पण नथी, तथा ए थकी विपरीत ते अ साधु जाणवा, ते पण नथी एवी संज्ञा न करवी, परंतु साधु पणठे, अने असाधु प णठे, एवी संज्ञा करवी ॥ २७ ॥ हवे सामान्य प्रकार कल्याण अने पापनो सन्नाव देखाडेठे मनोवांछित ,अर्थनी प्राप्तिनु करनारु एवु कल्याण, ते पण नथी तथा ते थकी विपरीत जे पाप, ते पण नथी एवी संज्ञा न करे, किंतु? कल्याण पणठे, अने पाप पणठे एवी संज्ञा करे ॥२८॥

॥ दीपिका–(णत्थिसाहू इति) नास्ति साधुर्मुनि संपूर्णचारित्रगुणाभावात् तदभावे त

द्विपरीतोऽसाधुरपि नास्ति एकस्याप्यनावे द्वितीयस्याप्यनाव द्वयो परस्परापेक्षत्वात्। एव सज्ञां न निवेशयेत्।किंतु ? अस्ति साधु सपूर्णगुणसद्भावात्। तथाहि। सम्यग्दृष्टेरर क्तद्विष्टस्य सत्संयमवत श्रुतानुसारेणाऽऽहारादिक शुद्धबुद्ध्या गृह्णत कचिदज्ञानादशुद्ध ग्रहणसनवेऽप्युपयुक्तस्य सपूर्णमेव रत्नत्रयानुष्ठानमिति। तदेव मुक्तिरुते प्रवर्त्तमानस्य साधुत्व इतरस्यासाधुत्व मतव्यं ॥ २८ ॥ (णत्थिकल्लाणमिति) वाञ्छितार्थप्राप्ति कल्या ण। कल्याणवांश्च कश्चिन्नास्ति सर्वपदार्थानामसारत्वाद्विनश्वरत्वाच्च। पापं पापवान् वा कश्चिन्नास्ति अद्वैतवादिमतेनाऽऽत्मान विना सर्वस्यानावात् एव सज्ञां न कुर्यात् एकां तेन सर्वनावानामसारत्वविनश्वरत्वानावादस्ति कल्याण तद्वांश्च अद्वैतमतस्य मिथ्या त्वात् पाप पापवांश्च विद्यते। अद्वैते हि सुखी दुःखी सुरूप कुरूपोधनी दरिद्रइत्यादि विश्ववैचित्र्यं न स्यादिति ॥ २९ ॥

॥ टीका–सांप्रत सिद्धे साधकानां साधूनां तत्प्रतिपक्षनूतानामसाधूना चास्तित्व प्र तिपिपादयिषु पूर्वपक्षमाह। (णत्थिसाहूअसाहूवाइत्यादि) नास्ति न विद्यते ज्ञानदर्श नचारित्रक्रियोपेतोमोक्षमार्गेव्यवस्थित साधु सपूर्णस्य रत्नत्रयानुष्ठानस्यानावात्तदना वाच्च तत्प्रतिपक्षनूतस्यासाधोरप्यनाव परस्परापेक्षित्वादेतद्व्यवस्थानस्यैकतरानावे द्वि तीयस्याप्यनावइत्येव सज्ञा नो निवेशयेदपित्वस्ति साधु सिद्धे प्राक्साधितत्वात्। सि द्धिसत्ता च न साधुमतरेण अत साधुसिद्धिस्तत्प्रतिपक्षनूतस्य वाऽसाधोरिति। यश्च स पूर्णरत्नत्रयानुष्ठानानाव प्रागाशकित स सिद्धांतानिप्रायमबुध्वैव। तथाहि। सम्यग्दृष्टे रुपयुक्तस्यारक्तद्विष्टस्य सत्संयमवत श्रुतानुसारेणाऽऽहारादिक शुद्धबुध्या गृह्णत क चिदज्ञानादनेपणीयग्रहणसनवेपि सततोपयुक्ततया सपूर्णमेव रत्नत्रयानुष्ठानमिति। य श्च नक्ष्यमिद चानक्ष्यं गम्यमिद वाऽगम्यं प्रासुकमेषणीयमिदमिदच विपरीतमित्येव रा गद्वेषसनवेन समनावरूपस्य सामायिकस्यानाव कैश्चिच्चोद्यते तत्तेषां चोदनमज्ञानविजृ नणात्। तथाहि। न तेषा सामायिकवता साधूना रागद्वेषतया नक्ष्यानक्ष्यादिविवेको ऽपितु प्रधानमोक्षांगस्य सच्चारित्रस्य साधनार्थमपि चोपकारापकारयो समनावतया सा मायिक न पुनर्नक्ष्यानक्ष्ययो समनाववृत्त्येति ॥ २८ ॥ तदेव मुक्तिमार्गप्रवृत्तस्य सा धुत्वमितरस्य चासाधुत्व प्रदर्श्याधुना च सामान्येन कल्याणपापवतो सद्भाव प्रतिषेधनि षेधद्वारेणाह। (णत्थिकल्लाणपावेवाइत्यादि) यथेष्टार्थफलसप्राप्ति कल्याण तन्न विद्य ते सर्वाऽशुचितया निरात्मकत्वात् सर्वपदार्थाना बौद्धानिप्रायेण तथा तदनावे कल्याणवा न्न कश्चिद्विद्यते तथात्मा नूतवाद्यनिप्रायेण पुरुषएवेद सर्वमितिकृत्वा पापं पापवा न्वा न कश्चिद्विद्यते तदेवमुनयोरप्यनाव। तथा चोक्त। "विद्याविनयसपन्ने ब्राह्मणे गवि

हस्तिनि ॥ शुनि चैव श्वपाके च पंमिता समदर्शिनः"इत्येवमेव कल्याणपापकाभावरू पा सञ्ज्ञा नो निवेशयेदपि त्वस्ति कल्याणं कल्याणवांश्च विद्यते तद्विपर्यस्तं पापं तद्वांश्च विद्यते इत्येवं सञ्ज्ञां निवेशयेत्। तथाहि। नैकांतेन कल्याणाभावोयोवौद्धैरभिहितः सर्वपदा र्थानामशुचित्वासनवात्सर्वाऽशुचित्वेच बुद्धस्याप्यशुचित्वप्राप्तेर्नापि निरात्मनः स्वद्रव्यक्षेत्र कालभावापेक्षया सर्वपदार्थाना विद्यमानत्वात्परद्रव्यादिभिस्तु न विद्यते सदसदात्मकत्वा द्वस्तुनः तदुक्तं स्वपरसत्ताव्युदासोपादानोत्पाद्य हि वस्तुनोवस्तुत्वमिति । तथात्मा चैतन्य वाभावात्पापाभावोपि नास्त्यचैतन्यावेहि सुखी दुःखी सरोगोनीरोगोसुरूपः कुरूपोडुर्भग सुभगोऽर्थवान् दरिद्रस्तथायमंतिकोऽयं तु दवीयान् इत्येवमादिकोजगद्वैचित्र्यभावोऽध्यक्ष सिद्धोपि न स्यात्।यच्च समदर्शित्वमुच्यते ब्राह्मणचांमालादिषु तदपि समानपीडोत्पादनतो द्रष्टव्यं।न पुनः कर्मोपादितवैचित्र्यभावोपि तेषां ब्राह्मणचामालादीनामस्तीति।तदेवं कथं चित्कल्याणमस्ति तद्विपर्यस्तं तु पापकमिति । नचैकांतेन कल्याणमेव यतः केवलिनां प्र क्षीणघनघातिकर्मचतुष्टयानां सातासातोदयसद्भावात्तथा नारकाणामपि पंचेंद्रियत्वविशि ष्टज्ञानादिसद्भावान्नैकांतेन तेऽपि पापवंतइति तस्मात्कथंचित्कल्याणं कथंचित्पापमि ति स्थितं ॥ २८ ॥

> कल्लाणे पावए वावि,ववहारो ण विज्जइ॥ज वेरं तं न जाणंति, स
> मणा वालपंमिया ॥२९॥ असेसं अक्खयं वावि, सव्वडुक्खेति वा
> पुणो ॥ वज्झा पाणा न वज्झंति, इति वायं न नीसरे ॥ ३० ॥ दी
> संति समियाचारा, भिक्खुणो साहुजीविणो ॥ एए मिछोवजीवं
> ति, इति दिठिं न धारए ॥ ३१ ॥

अर्थ—हवे अनेकांत मार्ग देखाडीने, एकांत मार्गनें, दूषवेछे ए पुरुष एकांतें कल्या णवंतज छे, अथवा ए पुरुष एकांतें पापवंतज छे, एवो व्यवहार नथी, कारणके, आ ज गत् मांहे एकांत काहीज नथी ते माटें जे पुरुष पुण्यवंत देखातो होय,परंतु ते अंत्या वस्थामां परिणामविशेषें डुर्गतियें जाय अथवा जे पापी पुरुष देखातो होय, ते परि णामविशेषे सद्गतिगामी थाय ए कारण माटें एकांत न बोले (जेवेरंतंनजाणंति के०) तथा जे वेर, ते कर्मनु कारणछे एम न जाणे, ते कोण न जाणे ? तोके श्रमण, वाल, एटले मूर्ख, अने पंमित एटले पंमितपणाना अभिमानी होय ते न जाणे ते शायकी न जाणे ? तोके जे कारणमाटें ते बाल, मूर्ख, परमार्थभूत, अहिंसालक्षण जे धर्म, तेनो तेने आश्रय नथी ते कारणे ते निरंता वरनु कारण जाणे नहीं इत्यर्थः ॥ २९ ॥ हवे

अन्य वचन आश्रि संयम कहेछे (असेसंअरकयंवावि के०) आ जगत् मांहें समस्त वस्तु जे घटपटादिकछे ते एकांतें नित्य,शाश्वतछे एवु वचन न बोले, (सव्वडुरकेतिवापुणो के०) तथा वली सर्व जगत् दु खात्मकज छे, एवु वचन पण न बोले,जे कारण माटें आ जगत् माहे एकेक जीवनें तो महा सुखछे, एम बोलायछे यत " तणसंथारनिसन्नो, विमुणि वरो नट्टरागमयमोहो ॥ जं पावइ मुत्तिसुहं, कत्तोतं चक्कवट्टिवि" ॥ १ ॥ इति वचनात् । माटे सर्व जगत् दुखीजछे, एवु वचन पण न बोले, (वज्ञापाणाअवज्ञति के०) तथा ए चोर छे, ए परदारानो सेवनारछे, माटे ए वध करवा योग्य छे एवु वचन न बोले, अथवा ए अमुक पुरुष अवध्य एटले वध करवा योग्य नथी (इतिवायंननीसरे के०) एवु वचन पण न बोले, कारणके, एम बोलतां तेना कर्मनी अनुमोदना लागे ए रीतें सिंह, व्याघ्र, मार्जारादिक हिंसक जीव देखीनें, चारित्रिउं मध्य स्थ पणु अवलंबन करे इत्यर्थ ॥ ३० ॥ हवे वली बीजो, वचननो प्रकार, मनसुधी आश्रि देखाडियें छैये (दीसंतिसमयाचारा के०) आ जगत् मांहें कोइ एक चारि त्रिया एवा देखायछे. के, समयाचारा एटले सिद्धांतोक्त आचारनें विषे प्रवर्त्तमा न, तथा (निरकुणासाहुजीविणो के०) निरकुणा एटले दोषरहित एवा आहा रना गवेषण हार, तथा साधुजीवि एटले पोताना आचार पालवा सारु जीवे छे, तथा क्षांत, जितेंद्रिय, जितक्रोध, दृढव्रतवान्, जुसर प्रमाण दृष्टियें मार्गना शोधनार, प्रा सुक उदकना पान करनार, मौनी,छजीवनिकायना रक्षण करनार, किं बहुना सराग छे, तो पण वीतरागनी पेठें रहेछे, एवा साधु देखीने (एएमिछोवजंवति के०) ए मिथ्यात्वो पजीवि बाह्य वृत्तिये करी लोकोने वचेछे (इतिदिठिंनधारए के०) एवी दृष्टि धरे नहीं, एतावता एवो नाव मनमाहे चिंतवे नहीं, वचनथकी कहे नहीं, किं बहुना स्वतीर्थि क परतीर्थिकने एवु वचन कहे नहीं ॥ ३१ ॥

॥ दीपिका–(कल्लाणेपावेति) सर्वथाऽयंकल्याणवानयं सर्वथा पापवान् एवमेकांते व्यवहारो न विद्यते । एकांतपक्षाश्रयणेन यद्वैर कर्मबंधस्तत् श्रमणा शाक्यादयोबाला पंडितमानिनः शुष्कतर्कदर्पोन्मत्तान् जानंति ॥ ३० ॥ (असेसमिति) अशेष सर्वं व स्तु सांख्यानिप्रायेणाक्षतं नित्य इति न ब्रूयात् । अपिशब्दादनित्यमपि न वदेत् । तथा सर्वं जगद् दुःखात्मकमित्यपि न वदेत् चारित्रादिपरिणते सुखस्यापि दर्शनात् । यदुक्तं । " तणसंथारनिसन्नो, विमुणिवरोनट्टरागमयमोहो ॥ जं पावइ मुत्तिसुहं, कत्तोतं चक्कवट्टी वि" ॥ १ ॥ चोरपारदारिकादयोवध्याअवध्यावा इति न वदेत् । तथा चोक्तं । " मार्जार व्याघ्रसिंहादीन् सत्वव्यापादनोद्यतान् ॥ दृष्ट्वा स्वार्थपरं साधुर्माध्यस्थ्यमवलंबत' इति॥१॥

एवमन्योपि वाक्संयमोऽेय । यथाऽसौ कुतीर्थिकोबाल किमपि न वेत्ति इत्यादिका पर स्याप्रीतिकारिणीं नापां न विसृजेत् ॥ यदुक्त। "अप्पत्तिय जेण सिया, आसु कुप्पिज्जवाप रो ॥ सव्वसो तं ण नासिज्जा, नास अहियगामिणीं ' इति ॥३१॥ (दीसतित्ति) दृश्यते स मिताचारा शास्त्रोक्ताचारपरानिक्षुवोनिक्षामात्रवृत्तय साधुना विधिना जीवतीति साधु जीविन । तथाहि । ज्ञातादाताजितेंद्रियाजितकपायास्तायिनस्तानेवनूतान् मत्वापि एते मिथ्योपजीविनइति दृष्टिं न धारयेत् नैवमनिप्राय कुर्यात् नाप्येव वदेत् यथा मिथ्योप चारप्रवृत्तमायाविनएते इति । छद्मस्थेन हि एवनूतनिश्चयस्य कर्तुमशक्यत्वादिति नाव । तेच स्वयूथ्यावा नवेयुस्तीर्थांतरीयावा उनावपि न वक्तव्यौ साधुना । यदुक्त ।"यावत्प रगुणपरदो,पकीर्तने व्याप्टतं मनोनवति । तावद्वर विशुद्धे,ध्याने व्यग्र मन कर्तु॥१॥३१॥

॥ टीका–तदेव कल्याणपापयोरनेकांतरूपत्व प्रसाध्यैकांतं दूपयितुमाह (कल्लाणेपा वएइत्यादि) कल्यं सुखमारोग्यं शोननत्व वा तदणतीति कल्याण तदस्यास्तीति कल्याणो मत्वर्थी याच्प्रत्ययातोऽर्शआदिन्योजित्यनेन । कल्याणवानिति यावत्। पापकशब्दोपि मत्व र्थी याच्प्रत्ययातोद्रष्टव्य । तदेव सर्वथा कल्याणवानेवाय तथा पापवानेवायमित्येवनूतो व्यवहारोन विद्यते तदेकांतनूतस्यार्थस्यैवानावात्तदनावस्यच सर्ववस्तूनामनेकांताश्रयणेन प्राक्प्रसाधितत्वादिति । एतच्च व्यवहारानावाश्रयण सर्वत्र प्रागपि योजनीयं । तद्यथा । सर्वत्र वीर्यमस्ति नास्तिवा सर्वत्र वीर्यमित्येवनूतएकांतिकोव्यवहारोन विद्यते। तथा नास्ति लोकोऽलोकोवा तथा सति जीवाअजीवाइति वेत्येवनूतोव्यवहारोन विद्यतइति सर्वत्र सवधनीय । तथा वेर वज्र तद्वत्कर्म वेर विरोधोवा वेर तद्येन परोपतापादिनैकांतपक्षस माश्रयणेन वा नवति।सत्ते श्रमणास्तीर्थिकावालाइव बालारागद्वेपकलिता पण्डिता पण्डि तानिमानिन शुष्कतर्कदर्पाध्मातान जानंति परमार्थनूतस्याहिंसालक्षणस्य धर्मस्याने कांतपक्षस्यवा नाश्रयणादिति । यदिवा यद्वर तत्ते श्रमणावाला पण्डितावान जानंतीत्ये व वाच न निसृजेदित्युत्तरेण सवध । किमिति न निसृजेद्यतस्ते किंचिज्ज्ञानत्येवापिच ते पा तन्निमित्तकोपोत्पत्ते । यच्चैवनूतं वचस्तन्न वान्य । यतउक्त। "अप्पत्तिय जेण सिया, आसु कुप्पिज्जवा परो ॥ सव्वसो तण नासेज्जा नास अहियगामिणि"मित्यादि ॥ ३० ॥ अपरमपि वाक्संयममधिकृत्याह । (असेसमित्यादि) अशेप कृत्स्न तत्सांख्यानिप्राये ण कृतं नित्यमित्येव न ब्रूयात् । प्रत्यर्थं प्रतिसमय चान्ययान्यथा नावदर्शनात्तएवा यमित्येवनूतस्यैकत्वसाधकस्य प्रत्यनिज्ञानस्य नून पुनर्जातेपु केशनखादिष्वपि प्रदर्श नात्तथापि शब्दादेकांतेन क्षणिकमित्येवमपि वाच न निसृजेत्सर्वथा क्षणिकत्वे पूर्वस्य सर्वथा विनष्टत्वाडुत्तरस्य निर्हेतुकउत्पाद स्यात्तथाच सति नित्य सत्वमसत्ववा दे

अन्य वचन आश्रि संयम कहेछे (असेसंअरकयंवावि के०) आ जगत् मांहे समस्त व
जे घटपटादिकछे ते एकांतें नित्य,शाश्वतछे. एवु वचन न बोले, (सवडुक्खेतिवापुणो वे
तथा वली सर्वे जगत् डुःखात्मकज छे, एवु वचन पण न वोले,जे कारण माटें आ श
मांहे एकेक जीवनें तो महा सुखछे, एम बोलायछे यत “ तणसंथारनिसन्नो, विमु
वरो नट्ठरागमयमोहो ॥ जं पावइ मुत्तिसुहं, कत्तोतं चक्कवट्टिवि” ॥ १ ॥ इति वचना
माटे सर्वे जगत् डुःखीजछे, एवु वचन पण न बोले, (वज्झापाणाअवज्झति के
तथा ए चोर छे, ए परदारानो सेवनारछे, माटे ए वध करवा योग्य छे एवु वचन
बोले, अथवा ए अमुक पुरुष अवध्य एटले वध करवा योग्य नथी (इतिवायंनर्न
के०) एवु वचन पण न बोले, कारणके, एम बोलतां तेना कर्मनी अनुमो
लागे ए रीतें सिंह, व्याघ्र, मार्जारादिक हिंसक जीव देखीनें, चारित्रिउं म
स्थ पणु अवलंबन करे इत्यर्थ ॥ ३० ॥ हवे वली बीजो, वचननो प्रकार, मना
आश्रि देखाडिये छैये (दीसंतिसमयाचारा के०) आ जगत् मांहे कोइ एक स
त्रिया एवा देखायछे. के, समयाचारा एटले सिद्धांतोक्त आचारनें विषे प्रवर्त
न, तथा (निक्कुणासाहुजीविणो के०) निक्कुणा एटले दोषरहित एवा अ
रना गवेषण हार, तथा साधुजीवि एटले पोताना आचार पालवा सारु जीवे छे, त
क्षांत, जितेंद्रिय, जितक्रोध, दृढव्रतवान्, जुसर प्रमाण दृष्टिये मार्गना शोधनार,
सुक उदकना पान करनार, मौनी,छजीवनिकायना रक्षण करनार, किं बहुना सराग
तो पण वीतरागनी पेठे रहेछे, एवा साधु देखीने (एएमिछोवजीवंति के०) ए मिथ्या
पजीवि बाह्य वृत्तियें करी लोकोने वंचेछे (इतिदिठिंनधारए के०) एवी दृष्टि धरे न
एतावता एवो नाव मनमांहे चिंतवे नहीं, वचनथकी कहे नहीं, किं बहुना स्वतं
क परतीर्थिकने एवु वचन कहे नहीं ॥ ३१ ॥

॥ दीपिका-(कल्लाणेपावेति) सर्वथाऽयंकल्याणवानयं सर्वथा पापवान् एवमेव
व्यवहारो न विद्यते । एकांतपक्षाश्रयणेन यद्वैर कर्मबंधस्तत् श्रमणा शाक्यादयोबा
पंडितमानिनं शुष्कतर्कदर्पोन्मत्तान जानंति ॥ ३० ॥ (असेसमिति) अशेष सर्व
स्तु सांख्याभिप्रायेणाक्षतं नित्य इति न ब्रूयात् । अपिशब्दादनित्यमपि न वदेत् । त
सर्वं जगद्दुःखात्मकमित्यपि न वदेत् चारित्रादिपरिणते सुखस्यापि दर्शनात् । यदु
“ तणसंथारनिसन्नो, विमुणिवरोनट्ठरागमयमोहो ॥ ज पावइ मुत्तिसुहं, कत्तोतं चक्क
वि” ॥ १ ॥ चोरपारदारिकादयोवध्याअवध्यावा इति न वदेत्। तथा चोक्तं । “ मार
व्याघ्रसिंहादीन् सत्वव्यापादनोद्यतान् ॥ दृष्ट्वा स्वार्थपरं साधुर्माध्यस्थ्यमवलंबते' इति॥

थकां वृत्तिछेद थाय. ए कारण माटे, (मेहावी के०) जे पण्डित होय, ते अस्ति, नास्ति, न कहे, तेवारे साधु केम बोले? ते कहेछे (संतिमग्गचवूहए के०) शांतिमार्गे एटले मोक्षमार्गे ज्ञान, दर्शन, चारित्ररूपनी वृध्धि थाय एवु वचन बोले एटले जे वचन बो लवा थकी असंयम सावद्य न थाय, तेवु वचन बोले इत्यर्थः ॥३२॥ हवे अध्ययन परि समाप्तिनें अर्थ कहेछे (इच्चेएहिंठाणेहिं के०) एम ए पूर्वोक्तस्थानके (जिणदिठेहिंसंजए के०) जिन एटले वीतरागभाषित वचने युक्त, एवा संयत एटले जे चारित्रिया (धारयंतेउ अप्पाण के०) ते पोताना आत्माने धारे, क्यां लगे धारे? तोके (आमोक्काएपरिवएज्जासि के०) ज्यां सुधी मोक्ष प्राप्ति थाय,त्यां सुधी धारे हवे एवो उपदेश शिष्यनी प्रत्ये गुरु कहे के अहो शिष्य! तु आवा आचारे प्रवर्त्तजे त्तिवेमिनो अर्थ पूर्ववत् जाणवो ॥ ३३ ॥ ए बीजा श्रुतस्कंधने विषे अनाचार नामे पांचमा अध्ययननो संक्षेपार्थे बालावबोध समाप्तथयो.

॥ दीपिका-(दक्खिणाएत्ति) दान दक्षिणा तस्या प्रतिलंभ प्राप्तिर्दानलाभ सोस्माद्गृहस्थादे सकाशादस्तिवा नास्तिवा इति न व्यागृणीयान्न वदेन्मेधावी किंतु? शांतिमार्गं मोक्षमार्ग वृद्धयेद्वृद्धिं प्रापयेत् यथा मोक्षमार्गवृद्धिर्भवति तथा वदेदित्यर्थः ॥ ३२ ॥ इत्येतैरनेकांतविधायिनि स्थानैर्जिनोद्दिष्टे संयतआत्मानं धारयन् आत्मानं प्रवर्तयन् आमोक्षाय कर्मक्षयार्थं परिव्रजेत्संयमे प्रवर्त्तेत ॥इति परिसमाप्तौ। ब्रवीमीति पूर्ववत् ॥३४ इति सूत्रकृतांगदीपिकायां द्वितीयश्रुतस्कंधेऽनाचारश्रुताख्यं पंचमाध्ययनं समाप्तम् ॥

॥ टीका-किंचान्यत्। (दक्खिणाएइत्यादि) दानं दक्षिणा तस्या प्रतिलंभ प्राप्तिः स दानलाभोऽस्माद्गृहस्थादे सकाशादस्ति नास्ति वेत्येवं न व्यागृणीयान्मेधावी मर्यादाव्यवस्थितः। यदिवा स्वयूथस्य तीर्थांतरीयस्य वा दानं ग्रहणंवा प्रतिलाभं सएकांते नास्ति समवति नास्ति वेत्येवं न ब्रूयादेकांतेन तद्दानग्रहणनिषेधे दोषोत्पत्तिसंभवात्। तथाहि। तद्दाननिषेधेंऽतरायसंभवस्तदविच्यच तद्दानानुमतावप्यधिकरणान्नवइत्यतोऽस्ति दानं न वेत्येवमेकांतेन न ब्रूयात्। कथं तर्हि ब्रूयादिति? दर्शयति। शांतिर्मोक्षस्तस्य मार्गः सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रात्मकस्तमुपबृंहयेद्वर्धयेत्। यथा मोक्षमार्गाभिवृद्धिर्भवति तथा ब्रूयादित्यर्थः। एतदुक्तं भवति। पृष्ठ केनचिद्विधिप्रतिषेधमंतरेण देयप्रतिग्राहकविषयं निरवद्यमेव ब्रूयादित्येवमादिकमन्यदपि ॥ ३२ ॥ सांप्रतमध्ययनार्थमुपसंजिघृक्षुराह (इच्चेएहिंमित्यादि) इत्येतैरेकांतनिषेधद्वारेणानेकांतविधायिनि स्थानैर्गांक्संयमप्रधानैः समस्ताध्ययनोक्तैरागद्वेषरहितैर्जिनैर्दृष्टैरुपलब्धैर्न समतिविकल्पोपादर्पितैः संयत सन् संयमवानात्मानं धारयन्नेर्निर्वाहविधधर्मदेशनावसरे वाच्यं। तथा चोक्तं। "सावज्जणवज्जा

तोरन्यानपेक्षणादिति । तथा सर्वं जगदु खात्मकमित्येवमपि न ब्रूयात्सुखात्मकस्यापि सम्यग्दर्शनादिभावेन दर्शनात् । तथा चोक्तं । "तणसंथारनिसण्णो, विमुणिवरो नहरागमयमोहो ॥ जं पावइ मुत्तिसुहं, कत्तोतं चक्कवट्टीवि" ॥१॥ तथा वध्याश्चौरपारदारिकादयोऽवध्यावा तत्कर्मानुमतिप्रसंगादित्येवंभूता वाचं स्वानुष्ठानपरायणः साधुः परव्यापारनिरपेक्षोन विसृजेत् । तथाहि । सिंहव्याघ्रमार्जारादीन्परसत्वव्यापादनपरायणान् दृष्ट्वा माध्यस्थ्यमवलंबयेत् । तथा चोक्तं । मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थ्यादीनि सत्वगुणाधिकक्लिश्यमानविनयेष्विति । एवमन्योपि वाक्संयमोऽनुष्टव्यः । तद्यथा । अमी गवादयोवाह्या न वाह्यास्तथामी वृक्षादयश्छेद्यान छेद्यावेत्यादिकं वचोन वाच्यं साधुनेति ॥३०॥ अयमपरोवाक्संयमप्रकारोऽतःकरणशुद्धिसमाश्रितः प्रदर्श्यते । (दीसतीत्यादि) दृश्यंते समुपलभ्यते स्वशास्त्रोक्तेन विधिना निभृतः संयतश्चात्मा येषां ते निभृतात्मानः । क्वचित्पाठ (समियाचारत्ति) सम्यक् स्वशास्त्रविहितानुष्ठानादविपरीतश्चाचारोऽनुष्ठानं येषां ते सम्यगाचाराः सम्यग्वा इतोव्यवस्थितश्चाचारोयेषां ते समिताचाराः । के ते ? । भिक्षणशीलाभिक्षवोभिक्षामात्रवृत्तयः । तथा साधुना विधिना जीवितुं शीलं येषां ते साधुजीविनः । तथाहि । ते न कस्यचिदुपरोधविधानेन जीवंति तथा क्षांतादांताजितक्रोधाः सत्यसंधादृढव्रतायुगांतरमात्रदृष्टयः परिपूतोदकपायिनोमौनिनस्सदा तायिनोविविक्तैकांतध्यानाध्यासिनोकौकुच्यास्तानेवंभूतानवधार्याअपि सरागाअपि वीतरागाइव चेष्टते इति मत्वैते मिथ्यात्वोपजीविनइत्येवं दृष्टिं न धारयेन्नैवंभूतमध्यवसायं कुर्यान्नाप्येवंभूतां वाचं निसृजेद्यथेते मिथ्योपचारप्रवृत्तामायाविनइति । छद्मस्थेन ह्यर्वाग्दर्शिनैवंभूतस्य निश्चयस्य कर्तुमशक्यत्वादित्यभिप्रायः । तेच स्वयूथ्यावा भवेयुस्तीर्थांतरीयावा तावुभावपि न वक्तव्यौ साधुना । यतउक्तं । "यावत्परगुणपरदो,षकीर्तने व्यापृतं मनोभवति ॥ तावद्वर विशुद्धे, ध्याने व्यग्रं मनः कर्तुं"मित्यादि ॥ ३१ ॥

दक्खिणाए पडिलंभो, अत्थिवा णत्थिवा पुणो ॥ ण वियागरेज्ज मेहावी,संतिमग्गं च बूहए ॥३२॥ इच्चेएहिं ठाणेहिं, जिणदिठेहिं संजए॥ धारयंतेउ अप्पाणं,आमोक्खाए परिवएज्जा सित्तिबेमि॥३३॥

इति बीयसुयक्खंधस्स अणायारणाम पंचमज्झयणं सम्मत्तं ॥

अर्थ—वली आचार देखाडेछे (दक्खिणा के०) दान तेनो प्रतिलंभ एटले गृहस्थे दान देवु, लेनारे दान लेवुं एवो व्यापार प्रवर्त्तमान देखी, अस्ति, अथवा नास्ति, एटले गुण, अथवा दूषण' काइ पण कहे नहीं (पुणो के०) असंयमनी अनुमोदन अने दूषण केतां

थका वृत्तिछेद थाय ए कारण माटे, (मेहावी के०) जे पंमित होय, ते अस्ति, नास्ति, न कहे, तेवारे साधु केम बोले? ते कहेछे (संतिमग्गचव्वूहए के०) शांतिमार्ग एटले मोक्षमार्ग ज्ञान, दर्शन, चारित्ररूपनी वृध्धि थाय एवु वचन बोले. एटले जे वचन बोलवा थकी असंयम सावद्य न थाय, तेवु वचन बोले इत्यर्थ ॥३२॥ हवे अध्ययन परिसमाप्तिनें अर्थ कहेछे (इच्चेएहिंठाणेहिं के०) एम ए पूर्वोक्तस्थानके (जिणदिठेहिंसंजए के०) जिन एटले वीतरागजाषित वचने युक्त, एवा संयत एटले जे चारित्रिया (धारयंतेउ अप्पाण के०) ते पोताना आत्माने धारे, क्यां लगे धारे? तोके (आमोरकाएपरिवएज्जासि के०) ज्यां सुधी मोक्ष प्राप्ति थाय,त्यां सुधी धारे हवे एवो उपदेश शिष्यनी प्रत्ये गुरु कहे के अहो शिष्य! तु आवा आचारे प्रवर्त्तजे त्तिवेमिनो अर्थ पूर्ववत् जाणवो ॥ ३३ ॥ ए बीजा श्रुतस्कंधने विषे अनाचार नामे पांचमाअध्ययननो संक्षेपार्थ बालावबोध समाप्तथयो

॥ दीपिका–(दक्खिणाएत्ति) दान दक्षिणा तस्या प्रतिलंज प्राप्तिर्दानलाज सोस्माद्गृहस्थादे सकाशादस्तिवा नास्तिवा इति न व्यागृणीयान्न वदेन्मेधावी किंतु? शांतिमार्गं मोक्षमार्ग वृंहयेद्वृद्धिं प्रापयेत् यथा मोक्षमार्गवृद्धिर्जवति तथा वदेदित्यर्थ ॥ ३३ ॥ इत्येतैरनेकांतविधायिनि स्थानैर्जिनोद्दिष्टै संयतआत्मानं धारयन् आत्मानं प्रवर्तयन् आमोक्षाय कर्मक्षयार्थं परिव्रजेत्संयमे प्रवर्त्तेत ॥इति परिसमाप्तौ। ब्रवीमीति पूर्ववत् ॥३४ इति सूत्रकृतांगदीपिकायां द्वितीयश्रुतस्कंधेऽनाचारश्रुताख्य पंचमाध्ययनं समाप्तम् ॥

॥ टीका–किंचान्यत् । (दक्खिणाएइत्यादि) दानं दक्षिणा तस्या प्रतिलंज प्राप्ति स दानलाजोऽस्माद्गृहस्थादे सकाशादस्ति नास्ति चेत्येवं न व्यागृणीयान्मेधावी मर्यादाव्यवस्थित । यदिवा स्वयूथ्यस्य तीर्थांतरीयस्य वा दानं ग्रहणंवा प्रतिलाजं सएकांतेनास्ति संजवति नास्ति वेत्येवं न ब्रूयादेकांतेन तद्दानग्रहणनिषेधे दोषोत्पत्तिसंजवात् । तथाहि । तद्दाननिषेधेंऽतरायसंजवस्तद्वैचित्र्यंच तद्दानानुमतावप्यधिकरणोद्भवइत्यतोऽस्ति दानं न वेत्येवमेकांतेन न ब्रूयात् । कथं तर्हि ब्रूयादिति? दर्शयति । शांतिर्मोक्षस्तस्य मार्ग सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रात्मकस्तमुपबृंहयेद्वर्धयेत् । यथा मोक्षमार्गाभिवृद्धिर्जवति तथा ब्रूयादित्यर्थ । एतदुक्तं जवति । पृष्ठ केनचिद्विधिप्रतिषेधमंतरेण देयप्रतियाहकविषयं निरवद्यमेव ब्रूयादित्येवमादिकमन्यदपि ॥ ३२ ॥ सांप्रतमध्ययनार्थमुपसंजिघृक्षुराह (इच्चेएहिंमित्यादि) इत्येतैरेकांतनिषेधद्वारेणानेकांतविधायिनि स्थानैर्वाक्संयमप्रधानैः समस्ताध्ययनोक्तैरागद्वेषरहितैर्जिनैर्दृष्टैरुपलब्धैर्न स्वमतिविकल्पोत्थापितै संयत सन् संयमवानात्मानं धारयन्नेनिर्विविधधर्मदेशनावसरे वाच्य । तथा चोक्तं। "सावज्जणवज्जा

ए वयणाए जो नयाएइविसेसमित्यादिस्यानेरात्मान वर्तयान्नामोह्नायाशेषकर्मक्षया र्थं मोक्ष यावत्परिसमताात्संयमानुष्ठाने व्रजेब्नेत्स्त्वमिति विधेयस्योपदेश । इति परिस माप्त्यर्थं । ब्रवीमीति पूर्ववत् । नयाअनिहिताअनिधास्यमानलक्षणाश्चेति ॥ ३३ ॥ समाप्तमनाचारश्रुताख्यं पचममध्ययनमिति ॥

॥ हवे छछु अध्ययन प्रारनिये छैये ॥

पांचमा अध्ययनने विषे आचारनी आचरणा करवी, अने अनाचारनी परिहरणा ए टले अनाचारनो त्याग करवो एम कह्यु हवे ते प्रमाणे जे महानाग्यवान् पुरुषथी करा यछे, ते आर्डकुमारना दृष्टातनी पेठें देखाडेछे जेम आर्डकुमारनो गोशालक सार्थे वाद थयो, ते रीतेज आ छठा अध्ययनमा कहेछे प्रत्येक बुद्ध आर्डकुमार, एकदा प्रस्तावें श्री महावीरदेवनी पासे आवता अतरालें गोशालके बोलाव्यो ते कथा कहेछे –

पुराकड अद्द इम सुणेह, मेगतयारी समणे पुरासी ॥ से भिक्खु
णो उवणेत्ता अणेगे, आइक्खतिण्हिं पुढोविच्छिरेण ॥ १ ॥ साजी
वियापट्ठविता थिरेण, सन्नागउ गणउ भिक्खुमझे ॥ आइक्ख
माणो बहुजन्नमब, नसधयाती अवरेण पुव ॥ २ ॥

अर्थ–हवे आर्डकुमारनें गोशालक बोलावीने कहेछे के, (अद्दइमसुणेह के०) नो आर्द्रकुमार ! जे हु कहुछु ते तु सांनल (पुराकड के०) परापूर्वे जे जे आ ताहारे ती र्थकरे कह्युछे, ते हु कहुछु ते सानल ते शु कह्युछे? तोके, (मेगतयारीसमणेपुरासी के०) ए श्रमण नगवत महावीर पूर्वे प्रथम एकातचारी विहार करता हता एटले एकातें लोक रहित एवा प्रदेशे विचरता हता, अने अनेक प्रकारनां उग्रतप करता हता, ते हमणा उग्रतप आचरवा थकी नग थया थका मुजनें छोडीनें एटले महारो परित्याग करीने, (सेभिक्खुणोउवणेत्ताअणेगे के०) ते साधु शिष्यो एकठा करीने अनेक देव, दे वी, मनुष्य, अने स्त्रीना वृंद मांहें बेठा थका धर्म कहेछे (आइक्खतिण्हिंपुढोविच्छिरेण के०) तथा घणा शिष्य एकठा करी, तमारा जेवा मुग्ध जनने विप्रतारवा माटे पृथक् पृथक् जुदा जुदा विस्तारे करी धर्म कहेछे ॥ १ ॥ वली गोशालक कहेछे के, (साजीवि यापट्ठवितायिरेण के०) अहो आर्डकुमार ! ताहारे गुरुयें घणा लोक मांहे बेशी धर्म देशनाने मिशे आजीविका मामीछे, केमके, एकाकी विचरता लोक परानव करेछे, एवु

जाणीने, पक्ति निमित्ते, घणो महोटो परिवार कस्योछे, वली ए तमारो गुरु केवोछे, तो के, अस्थिर एटले प्रथम माहारी साथे एकलो अत प्रांत आहारी शून्य एवा देवकुला दिक स्थानकोने विषे रहेतो हतो, अने तेवो उग्रआचार वेलूना कवलनी पेठे नि स्वाद, जाव जीवसुधी करवानें अशक्तछे, ते कारणे महारो समागम मुकीने घणा शिष्योने नि ग्रतारी एवे घटाटोपे विचरेछे, ते कारणे अस्थिरछे ते अस्थिर पणु देखाडेछे (सन्नाग उं के०) सन्ना जे देव अने मनुष्यनी परषदा मांहे वेगे (गणउंनिरकुमझे के०) अने क निकुना समुदाय मांहे रहेतो थको (आइरकमाणोवहुजनमह के०) घणालोकने हितनो कारक, एवो अर्थ कहेतो देखायछे ते कारणे (नसंधयातीअवरिणपुव के०) माहोमाहे आचार तेनो संधि मलतो नथी, एटले प्रथमना आचारमा अने हमणाना आचारमां माहोमाहे विरोध देखायछे, ते ए प्रकारे के, सिंहासन,अशोक वृक्ष,नामंमल, छत्र, चामरादिक मंमाण जो मोक्षनु अंग होय तो, प्रथम जे उग्रक्रिया एणे कीधी तेतो नि केवल क्लेश नणीज कीधी, अथवा जो ते क्रिया कर्म निर्जरवानु कारण हती, तो हमणानी क्रिया पण बीजाने विप्रतारवाने अर्थे,पाखमरूप जाणीये ठैये वली प्रथमतो मौनपणु रुडु जाणीने अंगीकार कयु हतु, त्यार हमणा धर्मदेशना आपवानु शु कामछे? जो धर्मदेशना देवी, ए रुडुछे तो पहेला मौनपणु आदखु हतु ते अत्यंत अयोग्यछे॥२॥

दीपिका–अथ षष्ठाध्ययनमारभ्यते । तत्राईककुमारकथासंबंधत्वादाईकीयाभिधानं । तत्कथाचेयं । मगधदेशे वसंतपुरे सामायिकोनाम कुटुंबी वसति । स वैराग्यत श्रीधर्मघो षाचार्यपार्श्वे पत्नीयुत प्रव्रज्या गृहीत्वा साधुभि सह विहरति । सोऽन्यदा स्वपत्नीं साध्वीं भिक्षामटतीं दृष्ट्वा रागी जात । स्वाभिप्राय परस्य साधोस्तेन निवेदित । तेनापि तत्प्रवर्ति न्यास्तयापि तस्या साध्व्या । तत स्वपतिमनुरक्तं ज्ञात्वा साध्व्या भक्तप्रत्याख्यानपूर्वमा त्मोद्बंधनमकारि । मृत्वा स्वर्गमगात् । तदाकर्ण्य तत्पति साधुरपि गुरुमनापृच्छ्य भक्तं प्र त्याख्याय दिवं गत । ततश्च्युत्वा आर्द्रकपुरे नगरे आर्द्रकसुतआर्द्रकाभिधोजात । साऽपि तत्पत्नी स्वर्गच्युता वसंतपुरे श्रेष्ठिपुत्री जाता । आर्द्रकापि युवा परमसुभग संपन्न । अन्यदाईकपित्रा जनहस्ते राजगृहे श्रेणिकराज्ञ प्राभृतं प्रेषितं । आर्द्रककुमारेण श्रेणि कसुतायाऽभयकुमाराय स्नेहकरणार्थं प्राभृतं तस्यैव हस्तेन प्रेषितं । जनोराजगृहे गत्वा श्रेणिकराज्ञ प्राभृतानि निवेदितवान् समानितश्च राज्ञा । आर्द्रकप्रहितानि प्राभृतानि चाऽ भयकुमाराय दत्तवान् । कथितानि स्नेहोत्पादकानि वचनानि । अभयेनाचिंति । नूनम सौ भव्य स्यादासन्नसिद्धिकोयोमया सार्द्धं प्रीतिमिच्छतीति।ततोऽभयेन प्रथमजिनप्रतिमा बहुप्राभृतयुताईकुमाराय प्रहिता। इद प्राभृतमेकांते निरूपणीयमित्युक्तं जनस्य । साऽप्या र्द्रकपुरं गत्वा यथोक्तं कथयित्वा प्राभृतमार्पयत् । प्रतिमां निरूपयत कुमारस्य जातिस्म

रणमुत्पन्न धर्मे प्रतिबुद्ध मन अजय स्मरन् वैराग्यात्कामजोगेष्वनासक्तस्तिष्ठति । पित्रा ज्ञात मा क्वचिदसौ यायादिति पचशतसुजटैर्नित्य रक्ष्यते । आर्द्रककुमारोप्यश्ववाहनिकाया निर्गत प्रधानाश्वेन दूर गत्वा पलायित । तत प्रव्रज्या गृह्णन् देवतया निषिद्धोपि प्रव्रज्यान्यतरप्रतिमाप्रतिपन्नोवसतपुरे कायोत्सर्गस्थोदेवलोकच्युतया तया श्रेष्ठिपुत्र्याऽन्यबालिकाजि सह क्रीडन्त्याऽय मम जर्तेत्युक्ते सन्निहितदेवतया सार्द्धत्रयोदशकोटिमिता सुवर्णवृष्टि कृता । राजा तत्सुवर्ण गृह्णन् देवतया वारित । इद स्वर्णमस्याबालिकायाएवेत्युक्त च ततस्तत्पित्रा गृहीतं स्वर्ण । अनुकूलोपसर्ग मत्वार्द्रमुनिरन्यत्र गत । पुत्रीवरणार्थ वरा समायाति पुत्र्या कथित पितु एते वरा स्वस्थान यातु अह तस्मै दत्ता त्वया यत्सबधि हिरण्य जवता जगृहे। पित्रोक्त त्व तं जानीपे कथ ? तयोक्त । तच्चरणगतांजिज्ञानदर्शनाज्जानामि । तत सा दानशालाया स्थिता जिक्षार्थिनामाहार दत्ते। ततो द्वादशवर्षैर्गतै कदाचिच्चासौ जवितव्यवशात्तत्रैव विहरन् समागत पादचिन्हदर्शनाडपलक्षितश्च तया। तत सा बाला सपरिवारा तत्पृष्ठतोगता। आर्द्रककुमारोपि देवतावचन स्मरन् कर्मोदयात्प्रतिजग्नस्तया सार्द्ध ज़ुनक्ति जोगान् पुत्रोजात । आर्द्रकेणोक्त सांप्रतं ते पुत्रोद्वितीयोजूत्रिर्वाहक । अह स्वकार्यमाचरामि तया सुतज्ञापनार्थ कार्पासककर्तनमारब्ध । पृष्ट च पुत्रेण किमातरिदमारब्ध जवत्या ? सा प्राह। वत्स ! तव पिता प्रव्रज्यां ग्रहीतुकाम त्व तु शिशुरद्यापि द्रव्यार्जनेऽसमर्थस्ततोहमनया निर्द्यवृत्याऽनया जीवनमिच्छामीति । तेन बालेन तत्कालोत्पन्नबुद्ध्या तत्कर्त्तितसूत्रेण क्वाय मया बद्धोयास्यतीति मन्मनजाषिणोपविष्टएव पिता वेष्टित । पित्रा चिंतितं यावतोमी वेष्टनसूत्रतंतवस्तावंति वर्षाणि मया स्थातव्य । तंतवश्च द्वादश । ततोसौ द्वादशवर्षाणि गृहे तस्थौ । तत प्रव्रजित सूत्रार्थनिपुणएकाकी विहरन् राजगृह प्रतिप्रस्थितस्तदंतराले तद्रक्षणार्थ यानि प्राक् पित्रा पच राजपुत्रशतानि मुक्तानि तानि कुमारे नष्टे राजजयात्तत्राटव्या चौर्येण जीवति । तैश्चार्द्रकमुनिर्दृष्टउपलक्षितश्च । तेन पृष्टास्ते किमिदमनार्य कर्मारब्ध जवद्भि ? तैश्च राजजयादि कथितं। मुनिवचनात्सबुद्धास्ते प्रव्रजिता । तथा राजगृहनगरप्रवेशे गोशालकोहस्तितापसाब्राह्मणाश्च वादे पराजिता । तथार्द्रकुमारदर्शनादेव हस्ती बधनाद्विमुक्त । तेच हस्तितापसादयआर्द्रमुनिधर्मकथाक्षिप्ता श्री वीरपार्श्वे निष्क्राता । राज्ञा ज्ञातस्वरूपेण पृष्ट । जगवन् ! कथ त्वद्दर्शनत करी बधनान्मुक्तइत्युक्ते मुनिराह। "न डुक्कर वारणपासमोयण गयस्स मत्तस्स वणमि राय॥ एयतु मझ पडिहाइ डुक्कर बद्धस्स तक्कावलिएण ततुणा" ॥१॥ डुष्करमेतन्नरपाशैर्बद्धस्य गजस्य मत्तस्य विमोचन वने राजन् ! एततु मे प्रतिजाति डुष्कर यत्तर्कुकावलितेन तंतुना बद्धस्य मम प्रतिमोचनमिति। स्नेहतंतवोहि जतूना डुर्भेदाजवतीति जाव ॥ आर्द्रकमुनिकथा समाप्ता ॥

सांप्रतं सूत्रं व्याख्यायते तच्चेदं।(पुराकडमिति)यथा गोशालकेन सार्द्धं वादोनूदार्द्रककुमारस्य तथाऽस्मिन्नध्ययने कथ्यते तं चार्द्रमुनिं प्रत्येकवुद्ध श्रीवीरांतिकमागच्छंतं गोशालोनवीद्यथा नोआर्द्रक! यदहं वदामि तच्छृणु। पुरा पूर्वं नवत्तीर्थकृता यत्कृतं तद्दर्शयति।एकांते जनरहितस्थाने चरतीत्येकांतचारी श्रमण पुरासीत्तपश्चरणोद्यत ।सांप्रतं तु तपश्चारित्रनिर्जल्लितो मां विहाय देवादिमध्यगतोधर्ममाख्याति। तथा बहून् शिष्यान् उपनीय बहुशिष्यपरिवारं कृत्वा, नवाद्दशमुग्धाना इदानीं पृथग्विस्तारेण धर्ममाख्याति॥१॥या नवद्गुरुणा देशना क्रियते सा जीविका प्रकर्षेण स्थापिता एकाकी विहरन् लोके परिनूयतइति। यडुक्तं। “उत्र उात्र पात्र,वस्त्र यष्टिं च चर्चयति निकु ॥वेषेण परिकरेण च,कियतापि विना न निक्षापि”॥१॥इति कृत्वा तेन परिवार कृत । तदनेन दंनप्रधानेन जीविकार्थमिदमारब्धं। किंनूतेन श्रस्थिरेण पूर्वं मया सार्द्धमेकाकी श्रतप्रांताहारेण शून्यवनादौ वृत्तिं कृतवान्। नच तादृशं डुष्करमनुष्ठानं यावज्जीवं कर्तुमलं । ततो मां त्यक्त्वा बहून् शिष्यान् विधायाम्बरेण चरति ततोऽस्थिरश्चपल पूर्वाचारत्यागात् तथा सत्नागतोऽयं गणशोऽनेकशोनिक्षुमध्यस्थितश्चाचक्षाणोबहुजनेन्योहितं बहुजन्यमर्थं कथयन् विहरति एतच्चास्यानुष्ठानं पूर्वापरेण न संधत्ते। तथाहि। यदि सांप्रतीयं वृत्तं प्राकारत्रयसिंहासनाशोकवृक्षनामण्डलचामरादिकं मोक्षांगमनविघ्नततोया प्राक्तन्येकचर्या क्लेशबहुलानेन कृतेनाक्लेशाय केवलमस्येत्यथ सा कर्मनिर्जरणहेतुका परमार्थनूता तत सांप्रतावस्था परप्रतारकत्वाद्दंनकल्पेत्यत पूर्वोत्तरयोरनुष्ठानयोर्मौनव्रतिकधर्मदेशनारूपयो परस्परतोविरोधइति। श्रतएवास्य चरित्रं पूर्वापरेण न सदधाति पूर्वापरविरोधीत्यर्थ ॥ २ ॥

॥टीका—उक्त पंचममध्ययनं।सांप्रतं षष्ठमारन्यते। श्रस्य चायमनिसंबंध । इहानंतराध्ययने *श्राचार प्रतिपादितोऽनाचारपरिहारश्च सच येनाचीर्ण परिहृतश्चासावधुना प्रतिपाद्य*ते। यदिवाऽनंतराध्ययने स्वरूपमाचारानाचारयो प्रतिपादितं तच्चाशक्यानुष्ठानं न नवत्यतस्तदा सेवकोदृष्टांतनूतश्रार्द्रक प्रतिपाद्यतइत्यथवाऽनाचारफलं ज्ञात्वा सदाचारे प्रयत्न कार्योयथार्द्रककुमारेण कृतइत्येतदर्शनार्थमिदमध्ययनं।श्रस्य चत्वार्यनुयोगद्वाराण्युपक्रमादीनि वाच्यानि। तत्रोपक्रमांतर्गतोर्थाधिकारोयं।तद्यथा श्रार्द्रककुमारवक्तव्यता यथा सावद्यकुमारप्रतिमाव्यतिकरात्प्रतिबुद्धस्तथात्र सर्वं प्रतिपाद्यतइति।निक्षेपस्त्रिधा। तत्रौघनिष्पन्ने निक्षेपेऽध्ययनं नाम निष्पन्ने निक्षेपेत्वार्द्रकीयं। तत्रार्द्रपदनिक्षेपार्थं निर्युक्तिरुवाह।
“नाम ठवणा श्रद्द,दव्वद्द चेव होइ नावद्द॥ एसो खलु श्रद्दस्सउ निरकेवो चउविहो होइ”॥१॥ (नामठवणाश्रद्दमित्यादि) नामस्थापनाद्रव्यनावनेदाच्चतुर्धार्द्रकस्य निक्षेपाइष्टव्य । तत्र नामस्थापनेऽनादृत्य द्रव्यार्द्रप्रतिपादनार्थमाह। ‘उदगद्द सारद्द,उवियद्द खलु तहासि

रणमुत्पन्न धर्मे प्रतिबुद्ध मन अनय स्मरन् वैराग्यात्कामभोगेष्वनासक्तस्तिष्ठति । पित्रा ज्ञात मा क्वचिदसौ यायादिति पचशतसुभटैर्नित्य रक्ष्यते । आर्द्रककुमारोप्यश्ववाहनिकाया निर्गत प्रधानाश्वेन दूर गत्वा पलायित । तत प्रव्रज्या गृह्णन् देवतया निषिद्धोपि प्रव्रज्यान्यतरप्रतिमाप्रतिपन्नोवसतपुरे कायोत्सर्गस्थोदेवलोकच्युतया तया श्रेष्ठिपुत्र्याऽन्यबालिकाभि सह क्रीडन्त्याऽय मम भर्त्तेत्युक्ते सन्निहितदेवतया सार्द्धत्रयोदशकोटिमिता सुवर्णवृष्टि कृता । राजा तत्सुवर्ण गृह्णन् देवतया वारित । इद स्वर्णमस्याबालिकायाएवेत्युक्त च ततस्तत्पित्रा गृहीतं स्वर्ण । अनुकूलोपसर्ग मत्वार्द्रमुनिरन्यत्र गत । पुत्रीवरणार्थं वरा समायाति पुत्र्या कथित पितु एते वरा स्वस्थान यातु अह तस्मै दत्ता त्वया यत्सबधि हिरण्य भवता जगृहे। पित्रोक्त त्व तं जानीषे कथ ? तयोक्त । तच्चरणगतान्निज्ञानदर्शनाज्ज्ञानामि । तत सा दानशालाया स्थिता भिक्षार्थिनामाहार दत्ते । ततो द्वादशवर्षैर्गतै कदाचिद्भ्रासौ भवितव्यवशात्तत्रैव विहरन् समागत पादचिन्हदर्शनाड्पलक्षितश्च तया । तत सा बाला सपरिवारा तत्पृष्ठतोगता । आर्द्रककुमारोपि देवतावचन स्मरन् कर्मोदयात्प्रतिभग्नस्तया सार्द्ध भुनक्ति भोगान् पुत्रोजात । आर्द्रकेणोक्त सांप्रतं ते पुत्रोद्वितीयोभून्निर्वाहक । अह स्वकार्यमाचरामि तया सुतज्ञापनार्थं कार्पासिककर्त्तनमारब्ध । दृष्ट च पुत्रेण किमातरिदमारब्ध भवत्या ? सा प्राह । वत्स ! तव पिता प्रव्रज्यां ग्रहीतुकाम त्व तु शिशुरद्यापि द्रव्यार्जनेऽसमर्थस्ततोहमनघा निष्प्रवृत्त्याऽनया जीवनमिच्छामीति । तेन बालेन तत्कालोत्पन्नबुद्धया तत्कर्त्तितसूत्रेण क्वाय मया बद्धोयास्यतीति मन्मनभाषिणोपविष्टएव पिता वेष्टित । पित्रा चिंतितं यावन्तोमी वेष्टनसूत्रतंतवस्तावति वर्षाणि मया स्थातव्य । ततवश्च द्वादश । ततोसौ द्वादशवर्षाणि गृहे तस्थौ । तत प्रव्रजित सूत्रार्थनिपुणएकाकी विहरन् राजगृह प्रतिप्रस्थितस्तदतराले तद्रक्षणार्थं यानि प्राक् पित्रा पच राजपुत्रशतानि मुक्तानि तानि कुमारे नष्टे राजभयात्तत्राटव्या चौर्येण जीवति । तैश्चार्द्रकमुनिर्दृष्टउपलक्षितश्च । तेन दृष्टास्ते किमिदमनार्य कर्मारब्ध भवद्भि ? तैश्च राजभयादि कथितं । मुनिवचनात्सबुद्धास्ते प्रव्रजिता । तथा राजगृहनगरप्रवेशे गोशालकोहस्तितापसाब्राह्मणाश्च वादे पराजिता । तथार्द्रकुमारदर्शनादेव हस्ती बधनाद्विमुक्त । तेच हस्तितापसादयआर्द्रमुनिधर्मकथाक्षिप्ता श्री वीरपार्श्वे निष्क्राता । राज्ञा ज्ञातस्वरूपेण दृष्ट । भगवन् ! कथ त्वद्दर्शनत करी बधनान्मुक्तइत्युक्ते मुनिराह । "न दुक्कर वा रणपासमोयण गयस्स मत्तस्स वणमि रायं॥ एयतु मज्झ पडिहाइ दुक्कर बद्धस्स तक्काव भिएण ततुणा" ॥१॥ दुष्करमेतन्नरपाशैर्बद्धस्य गजस्य मत्तस्य विमोचन वने राजन् ! एतत्तु मे प्रतिभाति दुष्कर यत्तर्कुकावलितेन तंतुना बद्धस्य मम प्रतिमोचनमिति । स्नेहतंतवोहि जतूना दुछेदाभवतीति भाव ॥ आर्द्रकमुनिकथा समाप्ता ॥

पि कोप्यर्थस्तस्मिन्समये तथा क्षेत्रेच कुतश्चिदार्द्रकाद्दे सकाशादाविर्नावमास्कदति सते न व्यपदिश्यते । तथा पूर्वमप्यनावर्योऽन्यमुद्दिश्योक्तोऽनुमतश्च नवति ऋषिनाषितेपूत्तरा ध्ययनादिषु यथेति । सांप्रतं विशिष्टतरमध्ययनोत्थानमाह । "अद्दइएणगोसा,लनिरकु बनवतीति दहीण ॥ जह हत्थितावसाण,कहिय इणमो तहावुद्धं" ॥७॥ (अद्दइएणेत्या दि) आर्यार्द्रकेण समवसरणाभिमुखमुच्चलितेन गोशालकभिक्षोस्तथा ब्रह्मव्रतिना त्रिदंमि ना यथा हस्तितापसानां च कथितमिदमध्ययनार्थ जातं तथा वक्ष्ये सूत्रेणेति । सांप्रतं स पूर्वनवमार्द्रककथानकं गाथाभिरेव निर्युक्तिरुदाह । "गामे वसंतपुरये,सामश्तिोधरणि सहितोनिरकंतो ॥ निरकायरियादिहा,उंहासिय नत्तवेहास" ॥७॥ संवेगसमावन्नो,माईन त चइत्तुदिय लोए ॥ चउकण अद्दपुरे, अद्दसुतं अद्दउं जाउं ॥ए॥ पीतीयदोएहदूतं पुत्र णमनयस्स पन्नवे सोउं ॥ तेणावि सम्मद्दिहिति होऊ, पडिमारहंमि गया ॥ १० ॥ दहु संबुझो रकिउं य, आसाणवाहणपलातो ॥ पवावंतो धरितो, रज्जं न करेति कोअन्नो ॥ ११ ॥ अगणितो निरकंतो, विहरइ पडिमाइदारिगावरिईउं ॥ सुवरणवसुहाराउं, र न्नो कहण च देवीए ॥ १२ ॥ तं नइ पिता तीसे, पुछणकहण च वरणदोवारे ॥ जाणाइ पायबिंव,आगमण कहणनिग्गमणं ॥ १३ ॥ पडिमागतीसमीवे,सपरीवारानिरकपडिवय ण ॥ नोगमुतापुछणसु,वधपुत्तेयनिग्गमणं ॥१४॥ रायगिहागमचोरा,रायनया कहणतेसिं दिरकाया ॥ गोसालनिरकुवनी,तिदंमियातावसेहिं सहवादो ॥१५॥ वादे पराइयत्तो,सबे विय सरणमप्पुवगतातो ॥ अद्दगसहिया सवे, जिणवीरसासिनिरकंता ॥१६॥ (गामेइत्यादिगा थाष्टक) आसां चार्थः कथानकादवसेयस्तच्चेदं । मगधजनपदे वसंतपुरे ग्रामे तत्र सामा यिकोनाम कुटुंबी प्रतिवसति । सच संसारजयोद्विग्नोधर्मघोषाचार्यांतिके धर्मं श्रुत्वा स पत्नीकः प्रव्रजितः सच सदाचारतः संविग्नैः साधुभिः सार्द्धं विहरतीतरानि साध्वी भिः । सहेति । कदाचिच्चासावेकस्मिन्नगरे भिक्षार्थमटंतीं दृष्ट्वा तामसौ तथाविधकर्मोदया त्पूर्वरतानुस्मरणेन तस्यामध्युपपन्नस्तेन चात्मीयोऽभिप्रायो द्वितीयस्य साधोर्निवेदितस्ते नापि चैतत्प्रवर्तिन्यास्तयापि चाभिहितं न मम देशांतरे एकाकिन्या गमनं युज्यते न चा सौ तत्राप्यनुबंधं त्यक्ष्यतीत्यतो ममास्मिन्नवसरे नक्तप्रत्याख्यानमेव श्रेयोन पुनर्व्रतवि लोपनमित्यतस्तया नक्तप्रत्याख्यानपूर्वकमात्मोद्बंधनमकारि मृता सागाच्च देवलोकं । श्रुत्वा चैनं व्यतिकरमसौ संवेगमुपगतश्चिंतितं च तेन । तया व्रतनंगनयादिदमनुष्ठितं म मत्वसौ संजातएवेत्यतोहमपि नक्तप्रत्याख्यानं करोमीत्याचार्यस्यानिवेद्यैवासौ मायाव्यथ च परमसंवेगापन्नोऽसावपि नक्तं प्रत्याख्याय दिवंगतस्ततोपि च प्रत्यागत्यार्द्रपुरे नगरे आर्द्रकसुतआर्द्रकाभिधानोजात । सापिच देवलोकाच्च्युता वसंतपुरे नगरे श्रेष्ठिकुले दारिका जाता इतरापिच परमरूपसंपन्नायौवनस्थ सल्लोन्यदासावार्द्रकपिता राजगृहन

ऐवह ॥ एयं दव्व खलु,नावेण होइ रागह " ॥२॥ (उदगद्दमित्यादि) तत्र इव्यार्ड द्विधा आगमतोनो आगमतश्च।आगमतोज्ञाता तत्र चानुपयुक्तोऽनुपयोगो इव्यमितिकृत्वा नो आगमस्तु ज्ञशरीरनव्यशरीरव्यतिरिक्त यडुदकेन मृत्तिकादिक इव्यमार्द्रीकृतं तडुदकार्ड । सारार्डतु यद्दहि शुष्कार्डमप्यतर्मध्ये सार्डमास्ते यथा श्रीपर्णसौवर्चलादिक।छविआर्डतु यत् स्निग्धत्वग्इव्य मुक्ताफलरक्ताशोकादिक तदनिधीयते नसयोपलितं वाला‍र्ड तथा श्लेष्मार्ड यवक्लेपाद्युपलिप्त स्तंनकुड्यादिक यद्द्रव्य तत्स्निग्धाकारतया श्लेष्मार्डमिनिधीयते। एतदसर्वमप्युदकार्डादिक इव्यार्डमेवानिधीयते। खलुशब्दस्येवकारार्थत्वात् । नावार्ड तु पुन राग स्नेहानिष्वगस्तेनार्ड यज्जीवइव्य तन्नावार्डमित्यनिधीयते । सांप्रतमार्डककुमारमधिकृत्यान्यथा इव्यार्ड प्रतिपादयितुमाह ।"एगनवियबद्धाउं,या अनिमुहउं नामगोएय॥ एते तिन्ना देसा,दव्वंमि अद्दगेहोंति"॥३॥ (एगनवियइत्यादि) एकेन नवेन योजीव स्वर्गादेरागत्यार्डककुमारत्वेनोत्पत्स्यते तथा ततोप्यासन्नतरोबद्धायुष्कस्तथा ततोप्यासन्नतमोनिमुखनामगोत्रोयोनतरसमयमेवार्डकत्वेन समुत्पत्स्यते।एते त्रयोपि प्रकाराइव्यार्डके इष्टव्याइति। सांप्रतं नावार्डकमधिकृत्याह ।"अद्दपुरा अद्दसुतो नामेण अद्द गोय अणगारो॥ तत्तो समुट्ठियमिणं,अज्झयण अद्दइज्जंति"॥४॥(अद्दपुराइत्यादि) आर्डकायुष्कनामगोत्राण्यनुनवन्नावार्डो नवति। यद्यपि शृंगवेरादीनामप्यार्डकसंज्ञाव्यवहारोस्ति तथापि नेदमध्ययन तेन्य समुत्थितमतोन तैरिहाधिकार किंत्वार्डककुमारानिधानगारात्समुत्थितमतस्तेनैवेहाधिकारइतिकृत्वा तद्वक्तव्यताऽनिधीयते । एतदेव निर्युक्तिकृदाह । (अद्दपुराइत्यादि) अस्या समासेनायमर्थ । आर्डकपुरे नगरे आर्डकोनाम राजा तत्सुतोप्यार्डकानिधान कुमारस्तद्दशजा किल सर्वेप्यार्डकानिधानाएव नवतीतिकृत्वा सचानगार सवृत्तस्तस्य च श्रीमन्महावीरवर्धमानस्वामिसमवसरणे गोशालकेन सार्ध हस्तितापसैश्च वादोनूत्तेनच ते एतदध्ययनार्थोपन्यासेन पराजिताअतइदमनिधीयते । ततस्तस्मादार्डकात्समुत्थितमिदमध्ययनमार्डकीयमिति गाथासमासार्थ । व्यासार्थं तु स्वतएव निर्युक्तिकृदार्डकपूर्वनवोपन्यासेनोत्तरत्र कथयिष्यतीति। ननुच शाश्वतमिदं द्वादशागमपि गणिपिटकमार्डककथानकं तु श्रीवर्धमानतीर्थावसरे तत्कथमस्य शाश्वतत्वमित्याशंक्याह ।" कामं डुवालसंग,जिणवयणं सासयं महानागं । सव्वज्झयणाइ तहा,सव्वक्खरसन्निवाउय "॥५॥ (काममित्यादि) काममित्येतदन्युपगमे इष्टमेवेतदस्माक।तद्यथा। द्वादशागमपि जिनवचनं नित्यं शाश्वतं महानागं महानुनावमामर्षौषध्यादिऋद्धिसमन्वितत्वान्न केवलमिदं सर्वाण्यप्यध्ययनान्येवनूतानि तथा सर्वाक्षरसन्निपाताश्च मेलापकाइव्यार्थादेशान्नित्याएवेति । ननुच मतानुज्ञानामनिग्रहस्थान नवतइत्याशंक्याह।"तहवियकोईअत्तो,अप्पज्झतितम्मि समयंमि ॥ पुव्व नणिउं अणुमतो इति इसिनासिए य जहा " ॥६॥ (तहवियइत्यादि) यद्यपि सर्वमपीद इव्यार्थत शाश्वतं तथा

पि कोप्यर्थस्तस्मिन्समये तथा क्षेत्रेच कुतश्चिदाईकार्दे सकाशादाविर्नावमास्कंदति सते न व्यपदिश्यते । तथा पूर्वमप्यभावयोऽन्यमुद्दिश्योक्तोऽनुमतश्च नवति ऋषिनाषितेपूत्तरा ध्ययनादिषु यथेति । सांप्रतं विशिष्टतरमध्ययनोत्थानमाह । "अद्ददएणगोसा,लनिरकु षजवतीति दडीण ॥ जह हत्थितावसाण,कहियं इणमो तहावुछं" ॥७॥ (अद्ददएणेत्या दि) आर्याईकेण समवसरणानिमुखमुञ्चलितेन गोशालकनिक्षोस्तथा ब्रह्मव्रतिनां त्रिदंमि नां यथा हस्तितापसानां च कथितमिदमध्ययनार्थं जातं तथा वक्ष्ये सूत्रेणेति । सांप्रतं स पूर्वनवमाईककथानकं गाथानिरेव निर्युक्तिरुदाह । "गामे वसंतपुरये,सामश्तिोधरणि सहितोनिरकतो ॥ निरकायरियादिहा,उंहासिय नत्तवेहासं" ॥७॥ सवेगसमावन्नो,माईन त चइत्तुदियं लोए ॥ चउकण अद्दपुरे, अद्दसुर्ड अद्दर्ड जाउं ॥८॥ पीतीपदोएहदूर्ड पुन्न णमनयस्स पन्नवे सोर्ड ॥ तेणावि सम्मद्दिहिति होज्ज, पडिमारहमि गया ॥ १० ॥ दट्ठु संबुद्धो रकिर्ड य, आसाणेवाहणपलातो ॥ पव्वावतो धरितो, रक्कं न करेति कोअन्नो ॥ ११ ॥ अगणितो निरकतो, विहरइ पडिमाइदारिगावरिईउं ॥ सुवरणवसुहाराउं, र न्नो कहण च देवीए ॥ १२ ॥ तं नइ पिता तीसे, पुच्छणकहण च वरणदोवारे ॥ जाणाइ पायबिंब,आगमण कहणनिग्गमणं ॥ १३ ॥ पडिमागतीसमीवे,सपरीवारानिरकपडिवय ए ॥ नोगमुतापुठ्ठणसु,सवधपुन्नेयनिग्गमणं ॥१४॥ रायगिहागमचोरा,रायजया कहणतेसिं विरकाया ॥ गोसालनिरकुवनी,तिदंमियातावसेहिं सहवादो॥१५॥वादे पराइयत्तो,सवे विय सरणमझुवगतातो ॥ अद्दगसहिया सवे, जिणवीरसासिनिरकता ॥१६॥ (गामेइत्यादिगा थाष्टक) आसां चार्थ कथानकादवसेयस्तच्चेद । मगधजनपदे वसंतपुरे ग्रामे तत्र सामा यिकोनाम कुटुंबी प्रतिवसति । सच संसारनयोद्विग्नोधर्मघोषाचार्यांतिके धर्मं श्रुत्वा स पत्नीकः प्रव्रजित सच सदाचारत संविग्नैः साधुनिः सार्द्धं विहरतीतरानि साध्वी नि ।सहेति । कदाचिच्चासावेकस्मिन्नगरे निक्षार्थमटतीं दृष्ट्वा तामसौ तथाविधकर्मोदया त्पूर्वरतानुस्मरणेन तस्यामध्युपपन्नस्तेन चात्मीयोऽनिप्रायो द्वितीयस्य साधोर्निवेदितस्ते नापि चेतत्प्रवर्तिन्यास्तयापि चानिहितं न मम देशांतरे एकाकिन्या गमनं युज्यते न चा सौ तत्राप्यनुबंधं त्यत्त्यतीत्यतो ममास्मिन्नवसरे नक्तप्रत्याख्यानमेव श्रेयान् पुनर्व्रतवि लोपनमित्यतस्तया नक्तप्रत्याख्यानपूर्वकमात्मोद्बंधनमकारि मृता सागाच्च देवलोकं । श्रुत्वा चैनं व्यतिकरमसौ संवेगमुपगतश्चिंतितं च तेन । तथा व्रतनगनयादिदमनुष्ठितं म मत्वसौ सजातएवेत्यतोहमपि नक्तप्रत्याख्यानं करोमीत्याचार्यस्यानिवेद्यैवासौ मापाध्य च परमसंवेगापन्नोऽसावपि नक्तं प्रत्याख्याय दिवंगतस्ततोपि च प्रत्यागत्याईपुरे नगरे आईकसुतआईकानिधानोजातः । सापिच देवलोकाच्च्युता वसंतपुरे नगरे श्रेष्ठिकुले

[illegible] स्थ सद्भावान्यदासावार्द्रकपिता राजगृहन

गरे श्रेणिकस्य राज्ञः स्नेहाविष्करणार्थं परमप्राभृतोपेतं महत्तमं प्रेषयत्यार्द्रककुमारेणासौ दृष्टो यथा कस्यैतानि महार्हाण्यत्युग्राणि प्राभृतानि मत्पित्रा प्रेषितानि यास्यतीत्यसावाक यद्यथार्यदेशे तव पितुः परममित्रश्रेणिकोमहाराजा तस्यैतानीत्यार्द्रककुमारेणाप्य भाणि किं तस्यास्ति कश्चिद्योग्य पुत्रोस्तीत्याह। यद्येव मत्प्रहितानि प्राभृतानि भवता त स्य समर्पणीयानीति भणित्वा महार्हाणि प्राभृतानि समर्प्याभिहितं वक्तव्योसौ मद्व नाद्यथार्द्रककुमारस्त्वयि स्निह्यतीति सच महत्तमोगृहीतोभयप्राभृतोराजगृहमगाद्गत्वा च राजद्वारपालनिवेदितोराजकुलं प्रविष्टो दृष्टश्च श्रेणिकः प्रणामपूर्वं निवेदितानि प्राभृतानि कथितं च यथासंदिष्ट। तेनाप्यासनाशनताम्बूलादिना यथार्हप्रतिपत्त्या सन्मानितो द्वितीये चान्ह्यार्द्रककुमारसत्कानि प्राभृतान्यभयकुमारस्य समर्पितानि कथिता निच तत्प्रीत्युत्पादकानि तत्संदिष्टवचनान्यभयकुमारेणापि परिणामिक्यबुद्ध्या परिणामि तं नूनमसौ भव्यः समासन्नमुक्तिगमनश्च तेन मया सार्द्धं प्रीतिमिच्छतीति। तदिदमत्र प्राप्तकालं यदादितीर्थंकरप्रतिकरप्रतिमासंदर्शनेन तस्यानुग्रहः क्रियतइतिमत्वा तथैव कृतं महार्हाणिच प्रेषितानि प्राभृतानीति। उक्तश्च। महत्तमोयथा मत्प्रहितप्राभृतमेतदेकान्ते निरूपणीयं तेनापि तथैव प्रतिपन्नं गतश्चासावार्द्रकपुरं समर्पितं च प्राभृतं राज्ञोद्वितीये चान्ह्यार्द्रककुमारस्येति कथितंच यथासंदिष्टं तेनाप्येकान्ते स्थित्वा निरूपिता प्रतिमा ताच निरूपयतऊहापोहविमर्शनेन समुत्पन्नं जातिस्मरणं चिंतितंच तेन यथा ममाभयकुमारेण महानुपकारोऽकारि सद्धर्मप्रतिबोधतइति। ततोसावार्द्रकः संजातजातिस्मरणो चिंतयद्यस्य मम देवलोकभोगैर्यथेप्सितं संपद्यमानैस्तृप्तिर्नाभूत्तस्यामीभिस्तुच्छैर्मानुषैः स्वल्पकालीनैः कामभोगैस्तृप्तिर्भविष्यतीति कुतस्त्यमित्येतत्परिगणय्य निर्विण्णकामभोगो यथोचितभोगमकुर्वन् राज्ञा संजातभयेन मा क्वचिद्यास्यत पंचभिः शतैराजपुत्राणां रक्षयितुमारेभे। आर्द्रककुमारोऽप्यश्ववाहनिकया विनिर्गतः प्रधानाश्वेन प्रपलायितः ततश्च प्रव्रज्यां गृह्णन् देवतया सोपसर्गं भवतोद्यापि भणित्वा निवारितोप्यसावार्द्रकोराज्यं तावन्न करोति कोन्योमां विहाय प्रव्रज्यां ग्रहीष्यतीत्यभिसंधाय तां देवतामवगणय्य प्रव्रजितोविहरन्नन्यदान्यतरप्रतिमाप्रतिपन्नः कायोत्सर्गव्यवस्थितोवसंतपुरे तथा देवलोकाच्च्युतया श्रेष्ठिदुहित्रा परदारिकामध्यगतया रमत्येषमम भर्त्तेत्येवमुक्ते सत्यनंतरमेव तत्संनिहितदेवतयार्द्धत्रयोदशकोटिपरिमाणा शोभनं वृतमनयेति भणित्वा हिरण्यवृष्टिर्मुक्ता ताच हिरण्यवृष्टिं राजा गृह्णन् देवतया सर्पाद्युत्थानतोविधृतोऽभिहितं च तया यथैतद्धिरण्यं जातमस्यादारिकाया नान्यस्य कस्यचिदित्यतस्तत्पित्रा सर्वं संगोपितमार्द्रककुमारोप्यनुकूलोपसर्गइतिमत्वाऽश्वेनान्यत्र गतोगच्छतिच। काले दारिकाया वरका समागच्छति दृष्टौच पितरौ तया किमेषामागमनप्रयोजनं? कथितंच ताभ्यां यथैते

तव वरकाऽस्ति । ततस्तयोक्तं तात ! सकृत्कन्या प्रदीयते नानेकशोदत्ता चाहं तस्मै यत्त वंध हिरण्यजातं नवद्भिर्गृहीतं ततः सा पित्राऽभाणि । किं त्वं तं जानीषे ? तयोक्तं तत्पादग ताभिज्ञानदर्शनतोजानामीति । तदेवमसौ तत्परिज्ञानार्थं सर्वस्य भिक्षार्थिनोभिक्षां दापयितुं निरूपिता ततो द्वादशभिर्वर्षैर्गतैः कदाचिच्चासौ नवितव्यतानियोगेन तत्रैव वि हरन्समायातः प्रत्यभिज्ञातश्च तया तत्पादचिन्हदर्शनतस्ततोसौ दारिका सपरिवारा तत्पृ ष्ठतोजगामाईककुमारोपि देवतावचनं स्मरंस्तथाविधकर्मोदयादवश्यं नवितव्यतानियो गेन च प्रतिभग्नस्तया सार्द्धं भुनक्ति नोगान् पुत्रश्चोत्पन्नः पुनराईककुमारेणासावभिहिता सांप्रतं ते पुत्रो द्वितीयोहं स्वकार्यमनुतिष्ठामि तया सुतव्युत्पादनार्थं कार्पासकर्त्तनमारब्धं पृष्टा चासौ बालकेन किमर्वेतं नवत्या प्रारब्धमितरजनाचरितं ततोसाऽववोचद्यथा तव पि ता प्रव्रजितुकामस्त्वं चाद्यापि शिशुरसमर्थोर्थार्जनेततोहमनाथा स्त्रीजनोचितेनानिंद्ये न विधिनाऽऽत्मानं नवंतं च किल पालयिष्यामीत्येतदालोच्येदमारब्धमिति । तेनापि बा लकेनोत्पन्नप्रनूतया तत्कर्त्तितसूत्रेणैव काय मद्वध्नोयास्यतीति मन्मनोनापिणोपविष्टए वासौ पिता परिवेष्टितस्तेनापि चिंतितं यावतार्भी बालकृतवेष्टनततवस्तावन्त्येव वर्षाणि मया गृहेस्थातव्यमिति निरूपिताश्च ततवोयावद्वादश तावन्त्येव वर्षाण्यसौ गृहवासे व्य वस्थितः पूर्णेषु द्वादशसु संवत्सरेषु गृहान्निर्गतः प्रव्रजितश्चेति । ततोसौ सूत्रार्थनिष्पन्न एकाकिविहारेण विहरन् राजगृहाभिमुखं प्रस्थितस्तदंतराले च तद्रक्षणार्थं या नि प्राक् पित्रा निरूपितानि पंचराजपुत्रशतानि तस्मिन्नश्वे नष्टे राजनयाद्देशद्वयाच्च न रा जांतिकं जग्मुस्तत्राटवीर्दुर्गेण चौर्येण वृत्तिं कल्पितवतस्तैश्चासौ दृष्टः प्रत्यभिज्ञातश्च ते च तेन पृष्टाः किमिति नवद्भिरेवंनूतं कर्माश्रितं ? तैश्च सर्वं राजनयादिकं कथितमाईकंकु मारवचनाच्च संबुद्धाः प्रव्रजिताश्च । तथा राजगृहनगरप्रवेशे गोशालकोहस्तितापसा ब्रा ह्मणाश्च वादे पराजिताः । तथाईककुमारदर्शनादेव हस्ती बंधनाद्विमुक्तस्तेच हस्तिताप सादयआईककुमारधर्मकथाक्षिप्ताजिनवीरसमवसरणे निष्क्रांताः । राज्ञा च विदितवृत्तांत त्वेन महाकुतूहलापूरितहृदयेन पृष्टोनगवान् कथं त्वद्दर्शनतोहस्ती निरर्गलः संवृत्तइति महान् नगवतः प्रजावस्त्येवमभिहिते सन्नाईककुमारोब्रवीन्नवमगाथयोत्तरं ॥" ण दुक्करं वारणपासमोयणं,गयस्स मत्तस्स वणंमिराय ॥ जहा ववत्ता,वलिएण तंतुणा, सुदुक्करमे प डिहाइमोयणं ॥१७॥ (णदुक्करमित्यादि) न दुष्करमेतन्नरपाशर्वबद्धमत्तवारणस्य विमोचनं वनेराजन्नेतत्तु मे प्रतिभाति दुष्करं यच्च तत्रावर्जितेन तंतुना बद्धस्य मम प्रतिमोचनमिति । स्नेहतंतवोहि जंतूनां दुरुच्छेदाभवंतीति नावः । गतमाईककथानकं ॥

नामनिष्पन्ननिक्षेपश्च । तदनंतरं सूत्रानुगमेऽस्खलितादिगुणोपेतं सूत्रमुच्चारयितव्यं । तच्चे दं ।(पुराकडमित्यादि)यथा च गोशालकेन सार्द्धं वादोनूदाईककुमारस्य तथानेनाध्ययनेनोप

गरे श्रेणिकस्य राज्ञः स्नेहाविष्करणार्थं परमप्राभृतोपेतं महत्तमं प्रेषयत्यार्द्रककुमारेणासौ दृष्टोयथा कस्यैतानि महार्हाण्यत्युग्राणि प्राभृतानि मत्पित्रा प्रेषितानि यास्यतीत्यसावक थयद्यथार्यदेशे तव पितुः परममित्रश्रेणिकोमहाराजा तस्यैतानीत्यार्द्रककुमारेणाप्य नाणि किं तस्यास्ति कश्चिद्योग्यः पुत्रोस्तीत्याह। यदेव मत्प्रहितानि प्राभृतानि, नवता त स्य समर्पणीयानीति नणित्वा महार्हाणि प्राभृतानि समर्प्यानिहितं वक्तव्योसौ मद्व नाद्यथार्द्रककुमारस्त्वयि स्निह्यतीति सच महत्तमोगृहीतोनयप्राभृतोराजगृहमगात्तत्र च राजद्वारपालनिवेदितोराजकुलं प्रविष्टो दृष्टश्च श्रेणिकः प्रणामपूर्वं निवेदितानि प्राभृतानि कथितं च यथासंदिष्टं। तेनाप्यासनाशनताबूलादिना यथार्हप्रतिपत्त्या सन्मानितो द्वितीये चान्ह्यार्द्रककुमारसत्कानि प्राभृतान्यनयकुमारस्य समार्पतानि कथिता निच तत्प्रीत्युत्पादकानि तत्संदिष्टवचनान्यनयकुमारेणापि परिणामिक्यबुध्धा परिणामि तं नूनमसौ नव्यः समासन्नमुक्तिगमनश्च तेन मया सार्द्धं प्रीतिमिच्छतीति। तदिदमत्र प्राप्तकालं यदादितीर्थकरप्रतिकरप्रतिमासंदर्शनेन तस्यानुग्रहः क्रियतइतिमत्वा तथैव कृतं महार्हाणिच प्रेषितानि प्राभृतानीति। उक्तश्च। महत्तमोयथा मत्प्रहितप्राभृतमेतदेकांते निरूपणीयं तेनापि तथैव प्रतिपन्नं गतश्चासावार्द्रकपुरं समर्पितं च प्राभृतं राज्ञो द्वितीये चान्ह्यार्द्रककुमारस्येति कथितंच यथासंदिष्टं तेनाप्येकांते स्थित्वा निरूपिता प्रतिमा ताच निरूपयतऊहापोहविमर्शनेन समुत्पन्नं जातिस्मरणं चिंतितंच तेन यथा ममान यकुमारेण महानुपकारोऽकारि सद्धर्मप्रतिबोधतइति। ततोसावार्द्रकः संजातजातिस्मरणो चिंतयद्यस्य मम देवलोकन्नोगैर्यथेप्सितं संपद्यमानैस्तृप्तिर्नाभूत्तस्यामीनिस्तुच्छैर्मानुषैः स्वल्पकालीनैः कामन्नोगैस्तृप्तिर्नविष्यतीति कुतस्त्यमित्येतत्परिगणय्य निर्विण्णकामन्नोगो यथोचितन्नोगमकुर्वन् राज्ञा संजातनयेन मा क्वचिद्यायात्यत पंचनिः शतैराजपुत्राणां रक्षयितुमारेन्ने। आर्द्रककुमारोऽप्यश्ववाहनिकया विनिर्गतः प्रधानाश्वेन प्रपलायित ततश्च प्रव्रज्यां गृह्णन् देवतया सोपसर्गं नवतोद्यापि नणित्वा निवारितोप्यसावार्द्रकोराज्यं तावन्न करोति कोन्योमां विहाय, प्रव्रज्यां ग्रहीष्यतीत्यभिसंधाय तां देवतामवगणय्य प्रव्रजितोविहरन्नन्यदान्यतरप्रतिमाप्रतिपन्नः कायोत्सर्गेव्यवस्थितोवसंतपुरे तथा देवलोकाच्युतया, श्रेष्ठिदुहित्रा परदारिकामध्यगतया रमत्येषममं नर्तेत्येवमुक्ते सत्यनंतरमेव तत्संनिहितदेवतयाऽर्द्धत्रयोदशकोटिपरिमाणा शोनन वृतमनयेति नणित्वा हिरण्य वृष्टिर्मुक्ता ताच हिरण्यवृष्टिं राजा गृह्णन्, देवतया सर्पाद्युत्थानतोविधृतोऽनिहितं च तया यथैतद्धिरण्यं जातमस्यादारिकाया नान्यस्य कस्यचिदित्यतस्तत्पित्रा सर्वं संगोपितमार्द्रककुमारोप्यनुकूलोपसर्गइतिमत्वाऽश्वेनान्यत्र गतोगच्छतिच। काले, दारिकाया वरका समागच्छति दृष्टौच पितरौ तया किमेषामागमनप्रयोजनं? कथितंच ताभ्यां यथैते

थी थको जो साधुपदनुं मानछे तो, प्रथम थकीज ए आचार केम न आदस्यो ? माटे (दोवग्गमन्नमनतमेतिजम्हा के०) ए बेहु आचार, गयानी अने तडकानी पेरें माहो मा हे मलता नथी, तथा जो मौनपणाने विषे धर्मछे तो ए, धर्मदेशना शा माटे आपे ने ? अथवा जो धर्मदेशनाने विषेज धर्मछे, तो मौनव्रत आदरवानुं शुं कारण हतुं? ते कारण माटे ताहरो गुरु अत्यंत विरुद्धाचारी देखायछे एवां वचन गोशालकनां सांभली ने हवे गाथाना उत्तरार्द्धवडे आर्डकुमार, ते गोशालकने उत्तर आपेछे (पुव्विचइण्हिंव अणागतवा के०) पूर्व कालें जे मौनपणुं अने एकचर्या, श्री महावीरदेवे आदरी हती ते छद्मस्थ पणाथकी घातिया चार कर्मनो क्षय करवाने अर्थ जाणवी, अनें हमणा जे अनेक लोक आगल धर्मनुं प्रकाशवुं करेछे, ते वली अघातिया चार कर्मनी शुभ प्र कृति खपाववाने अर्थे जाणवुं ए कारणे प्रथम तथा हमणा तथा अनागत एटले आ गमिककालें राग द्वेषने अभावे, एकत्वपणुज सभावियें छेये (एगतमेवपडिसधयाति के०) तेथी एना प्रथमना अने पाछलना आचारनो कांइ भेद नथी, माटें जे ताहरा मनथी पूर्वापर आचारनो विरोध जणायछे ते खोटो जाणवो, तुं जोतो खरो ! के, एना धर्मोपदेश करी केटला एक प्राणीउने उपकार थायछे के,नथी थतो? ॥३॥ तेहिज क हेछे (समिच्चलोगतसथावराण के०) लोक जे षट् द्रव्यात्मक, तेने समिच्च एटले केवल ज्ञानें करी जाणीने, त्रस अनें स्थावर जे प्राणीउंछे, एतावता चोराशी लक्ष जीवा योनि छे तेने,(खेमकरे के०) क्षेमना करनार, तथा (समणे के०) श्रमण एटले बार भेदे तपना करनार, तथा (माहणेवा के०)कोइ जीवने म हणो एवा जेनो उद्देशछे ते माहण अथवा ब्राह्मण एवा जे श्री महावीर देव, ते प्राणीउंना हितने अर्थे (आइक्खमाणोवि सहस्समज्झे के०) रागद्वेषरहित धर्म, मनुष्यना सहस्रमध्ये प्रकाशता छता (एगतयसा रयतितहच्चे के०) तेमज पूर्वनी पेरें एकांत पणुज साधेछे एनी पूर्वनी अवस्थामा अने हमणानी अवस्थामा कांइ पण अंतर नथी,तथा अर्चा एटले शुक्ल ध्यानरूप जे लेश्या, ते छे जेने एवा, तथा अशोकादि अष्ट महाप्रातिहार्य तेणे युक्तछे तो पण, अहंकार नथी, तथा शरीर संस्कारभणी यत्न पण करता नथी ए कारण माटें ते भगवंत अनेक लोक परवस्या थका पण, राग द्वेषना अभावथकी एकाकीज जाणवा इत्यर्थ ॥ ४ ॥

॥ दीपिका-(एगतमेवमित्यादि) यद्येकांतचारित्रमेव शोभनं पूर्वमाश्रितत्वात्तत सर्वदा निरपेक्षैस्तदेव कर्तव्यं अथ चेद सांप्रतं परिकरवद्गुत्वं श्रेयस्तदा पूर्वं तदेव कार्यं हि अप्येते छायातपवदत्यतं विरोधिनी वृत्ते नैकत्र समवाय गच्छतस्तथा यदि मौनेन धर्मस्त त किमिपि महता प्रबंधेन धर्मदेशनाऽथानर्थेव धर्मस्ततः किमिति पूर्वं मौनव्रतमने

दिश्यते तंच राजपुत्रकमार्द्रककुमार प्रत्येकबुद्ध नगवत्समीपमागछतं गोशालकोब्रवीयथा हे आर्द्रक! यदहं ब्रवीमि तत्शृणु। पुरा पूर्वं यदनेन नगवत्तीर्थंरुता कृतं तद्वेदमिति दर्शयति। एकाते जनरहिते प्रदेशे चरितु शीलमस्य येत्येकातचारी तथा श्राम्यतीति श्रमण पुरासीदप श्चरणोद्युक्त. साप्रतं तूग्रैस्तपश्चरण विशेषैर्निर्नर्त्सितोमा विहाय देवादिमध्यगतोसौ धर्मं किल कथयति तथा निक्षून् बहूनुपनीय प्रनूतशिष्यपरिकर कृत्वा नवद्विधानां मुग्धजनानामिवा नी पृथक् पृथग्विस्तरेणाचष्टे धर्ममिति शेष ॥१॥ पुनरपि गोशालकएव (साजीविए) इ त्यादाह् येय बहुजनमध्यगतेन धर्मदेशना युष्मजुरुणारब्धा सा जीविका प्रकर्षेण स्थापि ता प्रस्थापिता एकाकी विहरल्लौकिकै परिनूयतइतिमत्वा लोकपंक्तिनिमित्तं महान् परिकर कृत । तथाचोच्यते । "छत्र, छात्र, पात्र, वस्त्र यष्टि च चर्चयति निक्षु ॥ वेषेण प रिकरेणच, कियतापि विना न निक्षापि" ॥ तदनेन दजप्रदानेन जीविकार्थमिवमारब्धं। किंनूतेनास्थिरेण पूर्वं ह्ययं मया सार्धमेकाक्यंतप्रांताशनेन शून्यारामदेवकुलादौ वृ त्तिं कल्पितवान्न च तथानूतमनुष्ठान सिकताकवलवन्निरास्वाद यावज्जीव कर्तुमल मतोमां विहायायं बहून् शिष्यान् प्रतार्येवनूतेन स्फुटाटोपेन विहरतीत्यत कर्तव्ये स्थिरश्चपल पूर्वचर्यापरित्यागेनापरकल्पसमाश्रयात् । एतदेव दर्शयति। सनायां ग त सदेवमनुजपर्षदि व्यवस्थितो (गणउत्ति) गणशोबहुशोऽनेकशइति यावत् नि क्षूणा मध्ये गतोव्यवस्थितआचक्षणोबहुजनेन्योहितोबहुजन्योर्थस्तमर्थं बहुजनहितं कथयन् विहरति एतच्चास्यानुष्ठान पूर्वापरेण न सघत्ते । तथाहि । यदि सांप्रतीयं वृत्त प्राकारत्रयं सिंहासनाशोकवृक्षनामरुलचामरादिक मोक्षागमनविष्यततोया प्रा क्तन्येकचर्या क्लेशबहुला तेन कृता सा क्लेशाय केवलमस्येरयथ कर्मनिर्जरणहेतुका पर मार्थनूता तत सांप्रतावस्था परप्रतारकत्वादनकल्पेत्यत पूर्वोत्तरयोरनुष्ठानयोर्मौ नव्रतिकधर्मदेशनारूपयो परस्परतोविरोधइति ॥ २ ॥

एगतमेवं अडुवा विइस्हि, दोवग्गमन्नं न समेति जम्हा ॥ पु
व्विं च इस्हिं च अणागत वा, एगंतमेवं पडिसधयाति ॥ ३ ॥ स
मिच्च लोग तसथावराण, खेमकरे समणे माहणे वा ॥ आइ
क्खमाणोवि सहस्समस्से, एगतय सारयति तहच्चे ॥ ४ ॥

अर्थ—वली गोशालक कहेछे के, अहो आर्द्रकुमार! (एगतमेव के०) जो एकांत विचरवुज रूडुछे, एवु जाणीने ताहरे गुरुयें आदर्युं हतुं, तो सदैव तेनोज अंगीका र करवो हतो, (अडुवाविइस्हि के०) अथवा हमणां अनेक साधुना परिवारें परव

थो थको जो साधुपदनु मानेछे तो, प्रथम थकीज ए आचार केम न आदर्यो ? माटे (दोवग्गमन्नंनसमेतिजम्हा के०) ए बेहु आचार, गयानी अने तडकानी पेठें माहो मा हे मलता नथी, तथा जो मौनपणाने विषे धर्मछे तो ए, धर्मदेशना शा माटे आपे छे ? अथवा जो धर्मदेशनाने विषेज धर्मछे, तो मौनव्रत आदरवानु शु कारण हतु? ते कारण माटे ताहरो गुरु अत्यंत विरुद्धाचारी देखायछे एवा वचन गोशालकना सांभली ने हवे गाथाना उत्तरार्द्धवडे आर्डकुमार, ते गोशालकने उत्तर आपेछे (पुव्विंचइण्हिंच अणागतंवा के०) पूर्वं कालें जे मौनपणु अने एकचर्या, श्री महावीरदेवे आदरी हती ते छद्मस्थ पणाथकी घातिया चार कर्मनो क्षय करवाने अर्थे जाणवी, अने हमणा जे अनेक लोक आगल धर्मनु प्रकाशवु करेछे, ते वली अघातिया चार कर्मनी शुभ प्र कृति खपाववाने अर्थे जाणवु ए कारणे प्रथम तथा हमणा तथा अनागत एटले आ गमिककाले राग द्वेषने अभावे, एकत्वपणुज सभाविये छैये (एगंतमेवपडिसंधयाति के०) तेथी एना प्रथमना अने पाछलना आचारनो काइ भेद नथी, माटें जे ताहरा मनथी पूर्वापर आचारनो विरोध जणायछे ते खोटो जाणवो, तु जोतो खरो ! के, एना धर्मोपदेश करी केटला एक प्राणीउने उपकार थायछे के,नथी थतो? ॥३॥ तेहिज क हेछे (समिच्चलोगंतसथावराणं के०) लोक जे षट् द्रव्यात्मक, तेने समिच्च एटले केवल ज्ञाने करी जाणीने, त्रस अने स्थावर जे प्राणीउछे, एतावता चोराशी लक्ष जीव योनि छे तेने, (खेमकरे के०) क्षेमना करनार, तथा (समणे के०) श्रमण एटले बार भेद तपना करनार, तथा (माहणेवा के०)कोइ जीवने म हणो एवो जेनो उदेशछे ते माहण अथवा ब्राह्मण एवा जे श्री महावीर देव, ते प्राणीउना हितने अर्थे (आइक्खमाणोवि सहस्समज्झे के०) रागद्वेषरहित धर्म, मनुष्यना सहस्रमध्य प्रकाशता छता (एगंतयसा रयतितहच्चे के०) तेमज पूर्वनी पेठे एकांत पणुज साधेछे एनी पूर्वनी अवस्थामा अने हमणानी अवस्थामा काइ पण अंतर नथी,तथा अर्चा एटले शुक्ल ध्यानरूप जे लेश्या, ते छे जेने एवा, तथा अशोकादि अष्ट महाप्रातिहार्य तेणे युक्तछे तो पण, अहंकार नथी, तथा शरीर संस्कारभणी यत्न पण करता नथी ए कारण माटें ते भगवंत अनेक लोके परवर्या थका पण, राग द्वेषना अभावथकी एकाकीज जाणवा इत्यर्थ ॥ ४ ॥

॥ दीपिका-(एगंतमेचमित्यादि) यद्येकांतचारित्रमेव शोभनं पूर्वमाश्रितत्वात्तत सर्वदा निरपेक्षैस्तदेव कर्तव्यं अथ चेदं साम्प्रतं परिकरवदुदार श्रेयस्तदा पूर्वं तदेव कार्यं हे अप्येते गयातपवदत्यंतं विरोधिनी वृत्ती नेकत्र समवाप गच्छतस्तया यदि मौनेन धर्मस्त त किमिय महता प्रबंधेन धर्मदेशनाऽयानर्थंव धर्मस्ततः किमिति पूर्वं मौनव्रतमने

दिश्यते तंच राजपुत्रकमार्द्रककुमार प्रत्येकबुद्ध नगवत्समीपमागच्छंतं गोशालकोब्रवीद्यथा हे आर्द्रक। यदहं ब्रवीमि तच्छृणु। पुरा पूर्वं यदनेन नगवत्तीर्थंकृता कृतं तच्चेदमिति दर्शयति। एकांते जनरहिते प्रदेशे चरितु शीलमस्येत्येकांतचारी तथा श्राम्यतीति श्रमणः पुरासीत्तप श्चरणोद्युक्त, सांप्रतं तूग्रैस्तपश्चरणविशेषैर्निर्भर्त्सितोमा विहाय देवादिमध्यगतोसौ धर्मं किल कथयति तथा निक्षून् बहूनुपनीय प्रचूतशिष्यपरिकरं कृत्वा नवद्विधानां मुग्धजनानामिवा नी पृथक् पृथग्विस्तरेणाचष्टे धर्ममिति शेषः ॥१॥ पुनरपि गोशालकएव (साजीविए) इ त्याद्याह येय बहुजनमध्यगतेन धर्मदेशना युष्मद्गुरुणारब्धा सा जीविका प्रकर्षेण स्थापि ता प्रस्थापिता एकाकी विहरल्लौकिकैः परिनूयतइतिमत्वा लोकपंक्तिनिमित्तं महान् परिकरः कृतः। तथाचोच्यते। "छत्र, छात्र, पात्र, वस्त्र यष्टिं च चर्चयति निक्षु ॥ वेषेण प रिकरेणच, कियतापि विना न निक्षापि"॥ तदनेन दंनप्रदानेन जीविकार्थमिदमारब्ध। किंनूतेनास्थिरेण पूर्वं ह्ययं मया सार्द्धमेकात्यंतप्रांताशनेन शून्यारामदेवकुलादौ वृ त्तिं कल्पितवान्न च तथानूतमनुष्ठानं सिकताकवलवन्निरास्वादं यावज्जीवं कर्तुमल मतोमां विहायार्य बहून् शिष्यान् प्रतार्येवचूतेन स्फुटाटोपेन विहरतीत्यतः कर्तव्ये स्थिरश्चपल पूर्वचर्यापरित्यागेनापरकल्पसमाश्रयात्। एतदेव दर्शयति। सनायां ग त सदेवमनुजपर्षदि व्यवस्थितो (गणउत्ति) गणशोबहुशोऽनेकशइति यावत् नि क्षूणां मध्ये गतोव्यवस्थितआचक्षणोबहुजनेन्योहितोबहुजन्योर्थस्तमर्थं बहुजनहितं कथयन् विहरति एतच्चास्यानुष्ठानं पूर्वापरेण न सधत्ते। तथाहि। यदि सांप्रतीयं वृत्तं प्राकारत्रयं सिंहासनाशोकवृक्षनामण्डलचामरादिकं मोक्षागमनविष्यंतोया प्रा क्तन्येकचर्या क्लेशबहुला तेन कृता सा क्लेशाय केवलमस्येत्यथ कर्मनिर्जरणहेतुका पर मार्थनूता ततः सांप्रतावस्था परप्रतारकत्वाद्दंनकल्पेत्यतः पूर्वोत्तरयोरनुष्ठानयोर्मौ नव्रतिकधर्मदेशनारूपयोः परस्परतोविरोधइति ॥२॥

> एगंतमेवं अडुवा विइण्हिं, दोवग्गमन्नं न समेति जम्हा ॥ पु
> विं च इण्हिं च अणागतं वा, एगंतमेवं पडिसंधयाति ॥ ३ ॥ स
> मिच्च लोगं तसथावराणं, खेमंकरे समणे माहणे वा ॥ आइ
> क्खमाणोवि सहस्समक्षे, एगंतयं सारयति तहच्चे ॥ ४ ॥

अर्थ—वली गोशालक कहेले के, अहो आर्द्रकुमार! (एगंतमेव के०) जो एकांत विचरवुज रूडुले, एवु जाणीने ताहरे गुरुये आदर्यु हतुं, तो सदैव तेनोज अंगीका र करवो हतो, (अडुवाविइण्हिं के०) अथवा हमणां अनेक साधुना परिवारें परव

र श्राम्यतीति श्रमणो द्वादशप्रकारतपोनिष्टप्तदेहस्तथा माहणत्ति प्रवृत्तिर्यस्यासौ माहनो ब्राह्मणोवा स एवनूतोनिर्ममोरागद्वेषरहित प्राणिहितार्थं न लानपूजाख्यात्यर्थं धर्ममा चक्षाणोपि प्राग्वत् ढद्मस्थावस्थायां मौनव्रतिकइव वाक्संयत । उत्पन्नदिव्यज्ञानत्वाद्भाषा गुणदोषविवेकज्ञतया नाषणेनेव गुणावाप्तेरनुत्पन्नदिव्यज्ञानस्य तु मौनव्रतिकत्वेनेति तथा देवासुरनरतिर्यक्सहस्रमध्येऽपि व्यवस्थित पंकाधारपंकजवत्तद्दोषव्यासंगाजावान्ममत्व विरहाद्वागद्वेषविकलत्वादेकांतमेवासौ सारयति प्रख्याति नयति साधयतीति याव त्। ननु चैकाकिपरिकरोपेतावस्थयोरस्ति विशेष प्रत्येकफलोपजन्यमानत्वात्तस्य मस्ति विशेषोबाह्यतोन त्वांतरतोपि दर्शयति । तथा प्राग्वदर्चा लेश्या शुक्लध्याना ख्या यस्य स तथार्चं । यदिवार्चा शरीर तच्च प्राग्वद्यस्य सतथार्चस्तथाह्यसावशोका द्यष्टप्रातिहार्योपेतोपि नोत्सेक याति नापि शरीर संस्कारायत्त विदधाति सहि नगवाना त्यतिकरागद्वेषप्रहाणादेकाक्यपि जनपरिवृतोप्येकाकी न तस्य तयोरवस्थयो कश्चि द्विशेषोस्ति । तथाचोक्त। 'रागद्वेषौ विनिर्जित्य,किमरण्ये करिष्यति । अथ नो निर्जितावे तौ, किमरण्ये करिष्यसि'' ॥ इत्यतोबाह्यतन गमनांतरमेव कषायजयादिक प्रधान कार णमिति स्थित ॥ ४ ॥

धम्म कहं तस्सउ णत्थि दोसो, खतस्स दंतस्स जितिंदिय स्स ॥ नासायदोसेय विवज्जगस्स, गुणेयनासाय णिसेवगस्स ॥ ५ ॥ महव्वए पंच अणुव्वएय, तहेव पंचासव संवरेय ॥ विरतिं इह सामणियंमि पन्ने, लवावसक्की समणे त्तिबेमि ॥ ६ ॥

अर्थ–हवे राग द्वेष विना धर्म कहेता थका कोइ प्रकारनो दोष नथी, एवो नाव दे खाडेळे (धम्मकहंतस्सउणत्थिदोसो के०) ते नगवंत, समस्त लोकनो उद्धार करवाने प्रवर्त्तमान ढता, धर्मदेशना करेळे, तेथी तेने दोष नथी, ते नगवंत केवाळे तो के, (ख तस्सदंतस्सजितिंदियस्स के०) क्षमावंत, दमितेंद्रिय, एटले इंद्रियना दमनहार,वली जि तेंद्रिय, (नासायदोसेयविवज्जगस्स के०) तथा नाषाना दोष टालनार, अने (गुणेयना सायणिसेवगस्स के०) नाषाना गुणना सेवनार, एवा नगवंत बोलता थका, पण तेउंनु मौनव्रत पणुज जाणवु ॥ ५ ॥ हवे श्री महावीर नगवंत, केवो धर्म कहे, ते कहेळे (महव्वएपंचअणुव्वएय के०) पांच महाव्रत जे प्राणातिपातविरमणादिक साधुनो धर्म ळे, ते कहे, तथा श्रावक देशथी स्थूलप्राणातिपात विरमणादिक,पांच अणुव्रत कहे (तहेव के०) तेमज (पंचासव के०) पांच आश्रव ते कर्मने आववाना स्थानकळे,ते

नाललाप यस्मादेव तस्मात्पूर्वापरविरोध । एव गोशालकेनोक्ते आर्द्रककुमार श्लोकपश्चार्द्धेनोत्तरदानायाह । पूर्व यदेकत्व मौनव्रतिकत्व च भगवत तच्छद्मस्थत्वाद् घातिकर्मचतुष्टयक्षयार्थं सांप्रत बहुपरिवारस्य यद्धर्मदेशकत्व तच्छेपकर्मक्षयाय तीर्थकृन्नाम कर्म वेदनार्थंच तत पूर्वमिदानीमनागतेच काले रागद्वेपरहितत्वादेकत्वभावनया एकत्व मेव धर्म कथयन् प्रतिसदधाति न तस्य पूर्वापरविरोधोस्ति आशसारहितत्वात् ॥ ३ ॥ लाभार्थं देशना करोतीत्याह । समेत्य लोक यथावस्थित ज्ञात्वा त्रसस्थावराणां क्षेमक रोरक्षक श्रमणो द्वादशधा तप प्रवृत्त माहणत्ति प्रवृत्तिर्यस्य स माहनोब्राह्मणोवा समतया धर्ममाचक्षाणोपि मोनी च वाक्सयतएव तथा सहस्राणा मध्ये स्थितोपि एकातमेव सा रयति साधयति तस्मात्तथार्च तथेव प्राग्वदर्चा लेश्या यस्य स तथार्च । यदिवार्चा शरीर तच्च प्राग्वद्यस्य स तथार्चस्तथाह्यशोकाद्यष्टप्रातिहार्योपेतोपि नोत्सेक याति नापि शरीरसस्काराय यत्न विदधाति सहि भगवानात्यतिकप्रहाणादेकाकी जनपरिवृ तोप्येकाकी न तस्य तयोरवस्थयो कश्चिद्विशेपोस्ति रागद्वेपमुक्तत्वात्पूर्व पश्चाच्च तुल्याश यइत्यर्थ । यदुक्त । "रागद्वेषौ विनिर्जित्य, किमरण्ये करिष्यसि ॥ अथ नो निर्जितावे तौ, किमरण्ये करिष्यसी"ति ॥ ४ ॥

॥ टीका—अपिच (एगतमित्यादि) यद्येकातचारित्रमेव शोभन पूर्वमाश्रितत्वात्त त सर्वदान्यनिरपेक्षैस्तदेव कर्तव्यमथचेद सांप्रत महापरिवारवृत साधु मन्यसे ततस्तदे वादावप्याचरणीयमासीदपिच द्वे अप्येते छायातपवदत्यतविरोधिनी वृत्ते नेकत्र समवा य गच्छतस्तथा यदि मोनेन धर्मस्तत किमिय महता प्रबधेन धर्मदेशनाऽथानयैव धर्म स्तत किमिति पूर्व मौनव्रतमालाप यस्मादेव तस्मात्पूर्वोत्तरव्याहति । तदेव गोशालकेन पर्यनुयुक्तआर्द्रककुमार श्लोकपश्चार्द्धेनोत्तरदानायाह । पूर्व पूर्वस्मिन्काले यन्मोनव्रतिकत्व या चैकचर्या तच्छद्मस्थत्वाद् घातिकर्मचतुष्टयक्षयार्थ । सांप्रतं यन्महा जनपरिवृतस्य धर्मदेशनाविधान तत्प्राग्बद्धभवोपग्राहिकर्मचतुष्टयक्षपणोद्यतस्य विशे पतस्तीर्थकरनाम्नोवेदनार्थमपरासा चोच्चैर्गोत्रशुभायुर्नामादीना शुभप्रकृतीनामिति । यदिवा पूर्व सांप्रतमनागते च काले रागद्वेपरहितत्वादेकत्वभावनानतिक्रमणाच्चैकत्वमेवा नुपचरित भगवानशेपजनहित धर्म कथयन् प्रतिसदधाति न तस्य पूर्वोत्तरयोरवस्थयोरा शसारहितत्वाद्भेदोऽस्त्यतोयदुच्यते भवता पूर्वोत्तरयोरवस्थयोरसागत्य तत् प्लवतइति ॥३॥ एतद्धर्मदेशनया प्राणिना कश्चिदुपकारोभवत्युत नेति ? भवतीत्याह । (समिच्चलोयमित्या दि) सम्यग्यथावस्थित लोक पड्द्रव्यात्मक मत्वावगम्य केवलालोकेन, परिछिद्य त्रस्यती ति त्रसास्त्रसनामकर्मोदया द्वीन्द्रियादयस्तथा तिष्ठतीति स्थावरा स्थावरनामकर्मोदया त्स्थावरा पृथिव्यादयस्तेपामुभयेषामपि जतूना क्षेम शाति रक्षा तत्करणशील क्षेमक

र श्राम्यतीति श्रमणो द्वादशप्रकारतपोनिष्टप्तदेहस्तथा माहणत्ति प्रवृत्तिर्यस्यासौ माहनो ब्राह्मणोवा स एवंभूतोनिर्ममोरागद्वेषरहित प्राणिहितार्थं न लाभपूजाख्यात्यर्थं धर्ममा चक्षाणोपि प्राग्वत् छद्मस्थावस्थाया मौनव्रतिकइव वाक्संयत । उत्पन्नदिव्यज्ञानत्वाद्भाषा गुणदोषविवेकज्ञतया भाषणेनैव गुणावाप्तेरनुत्पन्नदिव्यज्ञानस्य तु मौनव्रतिकत्वेनेति तथा देवासुरनरतिर्यक्सहस्रमध्येऽपि व्यवस्थित पंकाधारपंकजवत्तद्दोषव्यासंगाभावान्ममत्व विरहादाशंसादोषविकलत्वादेकांतमेवासौ सारयति प्रख्याति नयति साधयतीति याव त् । ननु चैकाकिपरिकरोपेतावस्थयोरस्ति विशेष प्रत्येक्षेणैवोपलभ्यमानत्वात्सत्य मस्ति विशेषोबाह्यतोन त्वांतरतोपि दर्शयति । तथा प्राग्वदर्चा लेश्या शुक्लध्याना ख्या यस्य स तथार्च । यदिवार्चा शरीर तच्च प्राग्वद्यस्य सतथार्चस्तथाह्यसावशोका द्यष्टप्रातिहार्योपेतोपि नोत्सेक याति नापि शरीर संस्कारायत्त विदधाति सहि भगवाना त्यतिकरागद्वेषप्रहाणादेकाक्यपि जनपरिवृतोप्येकाकी न तस्य तयोरवस्थयो कश्चि द्विशेषोस्ति । तथाचोक्त । 'रागद्वेषौ विनिर्जित्य,किमरण्ये करिष्यसि । अथ नो निर्जितावे तौ, किमरण्ये करिष्यसि'' ॥ इत्यतोबाह्यतन गमनातरमेव कषायजयादिक प्रधान कार णमिति स्थित ॥ ४ ॥

धम्म कह तस्सउ णत्थि दोसो, खतस्स दतस्स जितिंदिय
स्स ॥ भासायदोसेय विवज्जगस्स, गुणेयभासाय णिसेवगस्स
॥ ५ ॥ महव्वए पच अणुव्वएय, तहेव पचासव सवरेय ॥ विरति
इह सामणियमि पन्ने, लवावसक्की समणे त्तिबेमि ॥ ६ ॥

अर्थ—हवे राग द्वेष विना धर्म कहेता थका कोइ प्रकारनो दोष नथी, एवो भाव दे खाडेछे (धम्मकहतस्सउणत्थिदोसो के०) ते भगवंत, समस्त लोकनो उद्धार करवाने प्रवर्त्तमान छता, धर्मदेशना करेछे, तेथी तेने दोष नथी, ते भगवंत केवाछे तो के, (ख तस्सदतस्सजितिंदियस्स के०) क्षमावंत, दमितेंद्रिय, एटले इंद्रियना दमनहार,वली जि तेंद्रिय, (भासायदोसेयविवज्जगस्स के०) तथा भाषाना दोष टालनार, अने (गुणेयभा सायणिसेवगस्स के०) भाषाना गुणना सेवनार, एवा भगवत बोलता थका, पण तेउनु मौनव्रत पणुज जाणवु ॥ ५ ॥ हवे श्री महावीर भगवंत, केवा धर्म कहे, ते कहेछे (महव्वएपचअणुव्वएय के०) पाच महाव्रत जे प्राणातिपातविरमणादिक साधुना धर्म छ, ते कहे, तथा श्रावक उद्देशीने स्थूलप्राणातिपात विरमणादिक,पाच अणुव्रत कहे (तहेव के०) तेमज (पचासव के०) पाच आश्रव ते कर्मने आववानां स्थानकछे,ते

कहे, तथा (संवरेय के०) पांच संवर ते सत्तरभेद युक्त संवर ते कहे, (विरतिंइह के०) वली विरतिनो उपदेश ते संवरना धरनारने कहे, वली इह एटले आ प्रवचननें विषे (सामणियं मिपन्ने के०) संपूर्ण संयमने विषे मूलगुण,ते पांच महाव्रतरूप तथा उत्तरगुण,ते संवर विरतिरूप, ते प्रज्ञावंत एवा, स्वामी कहे वली ते केवाछे, तोके, (लवावसक्की के०) कर्मना टालनार, तथा (समणेत्तिबेमि के०) श्रमण एटले तपस्वी, एवा श्री महावीर देव ते लोकना हितने अर्थे धर्म कहेता थका आचारवंतज जाणवा हुं एम कहुंबुं ॥६॥

॥ दीपिका—क्षांतस्याक्रोधस्य दांतस्य मानरहितस्य जितेंद्रियस्य निर्लोभस्य लोभत्या गान्निर्मायस्येत्यपि इष्टव्य ।भाषादोषाअसत्यसत्यामृषाकर्कशाऽसभ्यशब्दोच्चारणादय तद्व र्जकस्य भाषागुणाहितमितदेशकालासंदिग्धभाषणादय तन्निषेधकस्य सतोधर्म कथयतो पि नास्ति दोष ।छद्मस्य हि प्रायोमौनमेव श्रेय । केवलिनस्तु भाषणमपि गुणायेति ॥५॥ कीदृश धर्म वक्तीत्याह । पंचमहाव्रतानि साधूनां पंचगुणव्रतानि श्राद्धानां प्रज्ञापि तवान् तथैव पंचाश्रवान् प्राणातिपातादिरूपान् तत्संवर च सप्तदशप्रकार संयम विरतिं च कथितवान् इह शासने श्रामण्य संपूर्णसंयमस्तस्मिन्कर्तव्ये पूर्णकृत्स्ने मूलोत्तरगुणान् पूर्वोक्तान् कथितवान् ।किंभूतोऽसौ लवःकर्म तस्मा(दवसक्कइति)अवसर्प्पणशीलोऽवसर्प्पी श्रमणइति । अथ गोशालकोवक्ति (वेमित्ति) यदह ब्रवीमि हे आर्द्रक ! तत्त्व शृणु॥६॥

॥ टीका—अपगतरागद्वेषस्य प्रभाषमाणस्यापि दोषाभाव दर्शयितुमाह । (धम्मकहंतस्से त्यादि) तस्य भगवतोपगतघनघातिकलकस्योत्पन्नसकलपदार्थाविर्भावज्ञानस्य जगदभ्यु द्धरणप्रवृत्तस्यैकांतपरहितप्रवृत्तस्य स्वकार्यनिरपेक्षस्य धर्म कथयतोपि तुशब्दस्यापिशब्दार्थ त्वान्नास्ति कश्चिद्दोष ।किंभूतस्येत्याह। क्षांतिसंपन्नस्यानेन क्रोधनिरासमाह । तथा दांत स्योपशांतस्यानेन मानव्युदास।तथा जितानि स्वविषयप्रवृत्तिनिषेधेनेंद्रियाणि येन स जितें द्रियोऽनेन तु लोभनिरासमाचष्टे मायायास्तु लोभनिरासादेव निरासोऽद्रष्टव्यस्तन्मूलत्वात्तस्य भाषादोषाअसत्यसत्यामृषकर्कशासभ्यशब्दोच्चारणादयस्तद्विवर्जकस्य तत्परिहर्तुस्तथा भा षायाये गुणा हितमितदेशकालासंदिग्धभाषणादयस्तन्निषेधकस्य सतोब्रुवतोपि नास्ति दोष छद्मस्थस्य हि बाहुल्येन मौनव्रतमेव श्रेय समुत्पन्नकेवलस्य तु भाषणमपि गुणाये ति ॥ ५ ॥ किंभूत धर्ममसौ कथयतीत्याह । (महव्वएपंचेत्यादि) महांति च तानि व्रता नि प्राणातिपातविरमणादीनि तानि च साधूनां प्रज्ञापितवान् पंचापि तदपेक्षयाणूनि ल घूनि व्रतानि पंचैव तानि श्रावकानुद्दिश्य प्रज्ञापितवांस्तथैव पंचाश्रवान् प्राणातिपातादि रूपान् कर्मण प्रवेशद्वारभूतांस्तत्संवर च सप्तदशप्रकार संयम प्रतिपादितवान् संवरवतो

ह्रि विरतिर्नवतीत्यतोविरतिं च प्रतिपादितवाञ्शब्दातत्फलजूतौ निर्जगमोक्षौ च इहास्मि न्प्रवचने लोके वा श्रमणनाव श्रामण्य संपूर्ण संयमस्तस्मिन् वा विधेये मूलगुणान् म हाव्रताणुव्रतरूपास्तयोत्तरगुणान् महाव्रताणुव्रतरूपान् रुस्ने संयमे विधातव्ये प्राज्ञइति क्वचित्पाव । प्रज्ञाने तत्प्रतिपादित्तवानिति । किंजूतोऽसौ जव कर्म तस्मा(दवसक्कइति) श्र वसर्प्पणशीलोऽवसर्प्पी श्रम्यतीति श्रमण तपश्चरणयुक्तइत्येतदह ब्रवीमि स्वयमेव च जग वान्पंचमहाव्रतोपपन्नइंडियनोइंडियगुप्तोविरतश्चासौ जवावसर्प्पीसन् सतोन्येषामपि तथा जूतमुपदेशं दत्तवानित्येतद् ब्रवीमीति। यदि वाऽर्द्रककुमारवचनमाकर्ण्याऽसो गोशालकस्तत्प्र तिपक्षजूत वक्तुकामइदमाह । इत्येतद्वक्ष्यमाण यदह ब्रवीमि तच्छृणु ! त्वमिति ॥ ६ ॥

सीतंदगं सेवउ बीयकायं, आहायकम्मं तह इत्थियाउ ॥ एगंत
चारिस्सिह अम्हधम्मे, तवस्सिणो णाभिसमेति पावं ॥ ७ ॥
सीतोदगं वा तह बीयकायं, आहायकम्मं तह इत्थियाउ॥एयाइं
जाणं पडिसेवमाणा, अगारिणो अस्समणा नवंति ॥ ८ ॥

अर्थ-हवे एवुं आर्द्रकुमारनुं पूर्वोक्त वचन सांजलीने,फरी गोशालक कहेछे के,अहो आर्द्रकुमार! तें एम कह्युं जे ए परहित जणी प्रवर्त्तिने धर्म कहेवायकी दोष नथी, तथा लोक परिवारनो पण दोष नथी,तो हुं कहुं तुं ते पण सांजल के,जे अमारा सि द्धातमां कह्युंछे तेनो पण दोष नथी ते शुं कह्युंछे ! ते कहेछे (सीतंदगमेवउबीयका य के०) सचितपाणी तेने सेवो, एटले पान करो,तथा बीजकायनो उपजोग करो,(आहा यकम्मं के०) तथा आधाकर्मी आहार ल्यो, (तह के०) तेमज(इत्थियाउ के०) स्त्रीनो प्रसंग पण करो,एटले पोताना अने परना उपकारनुं कारण, अने धर्मनुं आधार एवुं जे शरीर तेने अर्थ जे काइ करियें,तेमां दोष नथी केमके,(एगंतचारिस्सिहअम्हधम्मे के०) अमारा धर्मने विषे प्रवर्त्तमान तथा आराम उद्यानादिकने विषे एकाकी विचरतो एवो, (तवस्सिणोणाभिसमेतिपावं के०) कोइ एक तपस्वी तेने पाप लागे नहीं जे कारण माटे यद्यपि शीतोदकादिक काइक कर्मबंधनुं कारणछे तथापि तेनो, उपजोग, धर्माधारजूत एवुं जे शरीर तेने कारणे करता थका काइ पण दोष नथी इति जाव ॥ ७ ॥ हवे वली आर्द्रकुमार कहेछे के, अहो गोशालक ! शीतोदक अने बीजकायनो उपजोग करवो, तथा आधाकर्मी आहार लेवो, अने स्त्रीयादिकना प्रसंग करवो, इत्यादिक बोल जे तें पूर्वे कह्या, तेना पडिसेवनारा तो आगारी एटले गृहस्थज कहेवाय, परंतु एवा श्रमण एटले साधु न होय ॥ ८॥

कहे, तथा (सवरेय के०) पाच सवर ते सत्तरभेद युक्त सवर ते कहे, (विरतिइह के०) वली विरतिनो उपदेश ते सवरना धरनारने कहे, वली इह एटले आ प्रवचननें विषे (सामणियं मिपन्ने के०) सपूर्ण सयमने विषे मूलगुण,ते पाच महाव्रतरूप तथा उत्तरगुण,ते संवर विरतिरूप, ते प्रज्ञावत एवा, स्वामी कहे वली ते केवाछे, तोके, (लवावसक्की के०) कर्मना टालनार, तथा (समणेत्तिबेमि के०) श्रमण एटले तपस्वी, एवा श्री महावीर देव ते लोकना हितने अर्थे धर्म कहेता थका आचारवतज जाणवा हु एम कहुबु ॥६॥

॥ दीपिका–क्षांतस्याक्रोधस्य दांतस्य मानरहितस्य जितेंद्रियस्य निर्लोभस्य लोनत्यागान्निर्मायस्येत्यपि इष्टव्य ।नाषादोषाअसत्यसत्यामृषाकर्कशाऽसन्यशब्दोच्चारणादय तद्वर्जकस्य नाषागुणाहितमितदेशकालासदिग्धनाषणादय तन्निषेधकस्य सतोधर्म कथयतोपि नास्ति दोष ।छद्मस्थ हि प्रायोमौनमेव श्रेय । केवलिनस्तु नाषणमपि गुणायेति ॥५॥ कीदृश धर्म वक्तीत्याह । पचमहाव्रतानि साधूना पचगुणव्रतानि श्राद्धानां प्रज्ञापितवान् तथैव पचाश्रवान् प्राणातिपातादिरूपान् तत्सवर च सप्तदशप्रकार सयम विरतिं च कथितवान् इह शासने श्रामण्ये सपूर्णसयमस्तस्मिन्कर्तव्ये पूर्णकृत्स्ने मूलोत्तरगुणान् पूर्वोक्तान् कथितवान्।किंनूतोऽसौ लवःकर्म तस्मा(दवसक्कइति)अवसर्प्पणशीलोऽवसर्प्पी श्रमणइति । अथ गोशालकोवक्ति (वेमित्ति) यदह ब्रवीमि हे आर्द्रक ! तत्त्व शृणु॥६॥

॥ टीका–अपगतरागद्वेषस्य प्रनाषमाणस्यापि दोषानाव दर्शयितुमाह । (धम्मकहतस्से त्यादि) तस्य नगवतोपगतघनघातिकलकस्योत्पन्नसकलपदार्थाविर्नाविज्ञानस्य जगदभ्युद्धरणप्रवृत्तस्यैकांतपरहितप्रवृत्तस्य स्वकार्यनिरपेक्षस्य धर्म कथयतोपि तुशब्दस्यापिशब्दार्थत्वान्नास्ति कश्चिद्दोष ।किंनूतस्येत्याह। क्षांतिसपन्नस्यानेन क्रोधनिरासमाह । तथा दांतस्योपशांतस्यानेन मानव्युदास।तथा जितानि स्वविषयप्रवृत्तिनिषेधेनेंद्रियाणि येन स जितेंद्रियोऽनेन तु लोननिरासमाचष्टे मायायास्तु लोननिरासादेव निरासोद्रष्टव्यस्तन्मूलत्वात्तस्य नाषादोषाअसत्यसत्यामृषकर्कशासन्यशब्दोच्चारणादयस्तद्विवर्जकस्य तत्परिहर्तुस्तथा नाषायाये गुणाहितमितदेशकालासदिग्धनाषणादयस्तन्निषेधकस्य सतोब्रुवतोपि नास्ति दोष छद्मस्थस्य हि बाहुल्येन मौनव्रतमेव श्रेय समुत्पन्नकेवलस्य तु नाषणमपि गुणाये ति ॥ ५ ॥ किंनूत धर्ममसौ कथयतीत्याह । (महव्वएपचेत्यादि) महांति च तानि व्रतानि प्राणातिपातविरमणादीनि तानि च साधूना प्रज्ञापितवान् पचापि तदपेक्षायाणूनि लघूनि व्रतानि पचैव तानि श्रावकानुद्दिश्य प्रज्ञापितवांस्तथैव पचाश्रवान् प्राणातिपातादिरूपान् कर्मण प्रवेशद्वारनूतास्तत्सवर च सप्तदशप्रकार सयम प्रतिपादितवान् सवरवतो

यादिकनो प्रसग तेना, (पडिसेवमाणासमणाजवतु के०) परिजोगना करनार श्रमण होय तो, (अगारिणोविसमणाजवतु के०) आगारी जे गृहस्थछे ते पण श्रमण थाय केमके, (सेवतिउतेवितहप्पगार के०) आगारी पण सचित वीज उदकादिना सेवनारछे, वली धन ने अर्थें देशांतरनें विषे विचरे छे, वली एकला पण परदशने विषे घणा काल पर्यंतर हेछे, तथा अनार्थी थका, कुधातृषादिकना कष्ट पण सहन करेछे, माटे ए रीते ते पण तथा प्र कारना एटले श्रमण जेवा कष्ट सहन करेछे, ए कारणे ते गृहस्थने पण तपस्वीज गण वा ॥ ए ॥ वली पण आर्डकुमार कहेछे के, (जेयाविबीउदगजोतिनिरक् के०) जे जि ह्लुक छता, बीज उदकना जोगवनार, द्रव्यब्रह्मचारी एवा, (निरकविहजायतिजीवि यठी के०) आजीविका चलाववानें अर्थें निक्षा मागे, (तेणातिसजोगमविप्पहा य के०) ते ज्ञातिसयोग ठाडीने (कायोवगाणतकराजवति के०) छ कायनामर्दन कर नार एवा, पोतानी कायाना राखनार एवा, अने कर्मना करनार ते, आगमिककालें अनत ससारी थशे ॥ १० ॥

॥ दीपिका–आर्डकएव पुनराह । यदि वीजादिजोजिन श्रमणा स्युस्तदागारिणोपि श्रमणा स्यु तेपि गृहस्थाअपि सेवते तथाप्रकारमेकलविहारादिक । गृहस्थानामपि पथिकलावस्थायामाशसावतामपि निष्किचनतयैकाकिविहारित्व क्षुत्पिपासादिपीडन जवत्येवेति ॥ए॥ ये चापिजिक्षवोबीजोदकजोजिन सतोजिक्षा च यावतोजीवितार्थिनस्ते ज्ञातिसयोग स्वजनसबध प्रविहाय त्यक्त्वा कायात्कायेषु च उपगछतीति कायोप जो गास्तडुपमर्दारंजप्रवृत्ता ससारस्यानतकरा स्यु ससारस्य अतकरान जवतीत्यर्थ ॥१०॥

॥ टीका–पुनरप्यार्डकएनेतद्दूषणायाह । (सियायेत्यादि) स्याहेतऋवदीय मतं य था ते एकातचारिण क्षुत्पिपासादिप्रधानतपश्चरणपीडिताश्च तत्कथ ते न तपस्विनइत्येत दाशक्याईक आह। यदि बीजाद्युपजोगिनोपि श्रमणाइत्येव जवताज्युपगम्यते एव तर्ह्यगा रिणोपि गृहस्था श्रमणाजवतु तेषामपि देशिकावस्थायामाशसावतामपि निष्किचनतयै काकिविहारित्व क्षुत्पिपासादिपीडनच सजाव्यत। अतआह (सेवतिउ) तुरवधारणे सेवत्ये व तेऽपिगृहस्थास्तथाप्रकारमेकाकिविहारादिकमिति ॥ ए ॥ पुनरप्यार्डकाबीजादकादिजो जिनां दोषानिधित्सयाह । (जेयावीत्यादि) ये चापि जिक्षव प्रव्रजिताबीजादकजोजि न सताइव्यतोब्रह्मचारिणापि जिक्षा याऽटति जीवितार्थिनस्ते तथाजूताज्ञातिसयोग स्वजनसबध विप्रहाय त्यक्त्वा कायात्कायेषु चापगछतीति कायोपजोगास्तडुपमर्दकारजाप्र वृत्तत्वात्ससारस्यानतकराजवतीति। इदमुक्त। जवति कवल स्त्रीपरिजोगएव त परित्यक्तो

॥दीपिका—त्वयेदमुक्तं यत्परार्थं प्रवृत्तस्याशोकादिप्रातिहार्यपरिग्रहः शिष्यादिपरिकरो धर्मदेशना च न दोषायेति यथा तथास्माकमप्येतन्न दोषाय यच्छीतोदकं सचित्तोदकं तत्सेवनं करोतु । बीजकायोपजोगमाधाकर्माश्रयणं स्त्रीप्रसंगं च करोतु। अनेन स्वपरोपकारः स्यादित्याह (एगंतत्ति) अस्मद्धर्मे प्रवृत्तस्यैकांतचारिण एकाकिविहारोद्यतस्य तपस्विनोनाभिसमेति न संबध्यते पापं। यद्यपि शीतोदकादीनि ईषत्कर्मबंधाय तथापि धर्माधारस्य शरीरस्य रक्षणाय क्रियमाणानि एकांतचारितपस्विनः कर्मबंधाय न जवंती त्यर्थः ॥ ७ ॥ अस्योत्तरमाह मुनिः । शीतोदकादीनि प्रतिसेवमानाअगारिणोगृहस्थास्ते जवंत्यश्रमणाश्चेति त्वं जानीहि । एतद्भोगे यदि श्रमणत्वं स्यात्तदा गृहस्थत्वं केन स्या दित्यर्थः ॥ ८ ॥

॥टीका—यथाप्रतिज्ञातमेवाह गोशालकः । (सीउदगमित्यादि) जगवतेदं मुद्ग्राहितं परार्थं प्रवृत्तस्याशोकादिप्रातिहार्यपरिग्रहस्तथा शिष्यादिपरिकरोधर्मदेशनाच न दोषायेति । यथा तथास्माकमपि सिद्धांते यदेतद्वक्ष्यमाणं तन्न दोषायेति। शीतं च तदुदकं च शीतोदकमप्रासुकोदकं तत्सेवनं परिजोगं करोतु। तथा बीजकायोपजोगमाधाकर्माश्रयणं स्त्रीप्रसंगं च निदधात्वनेन च स्वपरोपकारं कृतोजवतीत्यस्मदीये धर्मे प्रवृत्तस्य एकांतचारिणआरामोद्यानादिष्वेकाकिविहारोद्यतस्य तपस्विनोनाभिसमेति न संबंधमुपयाति पापमशुजकर्मेति। इदमुक्तं जवत्येतानि शीतोदकादीनि यद्यपीषत्कर्मबंधाय तथापि धर्माधारं शरीरं प्रतिपालयतएकांतचारिणस्तपस्विनोबंधाय न जवंतीति ॥ ७ ॥ एतत्परिहर्तुकामआह । (सीतोदगमित्यादि) एतानि प्रागुपन्यस्तानि अप्रासुकोदकपरिजोगादीनि प्रतिसेवतोऽगारिणोगृहस्थास्ते जवंत्यश्रमणाश्चाप्रव्रजिताश्चैव जानीहि ॥ यतः अहिंसासत्यमस्तेयं, ब्रह्मचर्यमलुब्धता ॥ इत्येतच्छ्रमणलक्षणं चैषां शीतोदकबीजाधाकर्मस्त्रीपरिजोगवतां नास्तीत्यतस्ते नामाकाराभ्यां श्रमणान् परमार्थानुष्ठानतइति ॥ ८ ॥

सियाय बीउदगं इत्थियाउ, पडिसेवमाणा समणा जवंतु ॥
अगारिणोवि समणा जवंतु, सेवंतिउ तेवि तहप्पगारं ॥९॥ जे
यावि बीउदगजोत्ति जिक्खू, जिक्खं विहंजायति जीवियही ॥
ते णातिसंजोगमविप्पहाय, कायोवगाणंतकरा जवंति॥ १० ॥

अर्थ—वली आर्द्रकुमार कहेडे के, अहो गोशालक! ताहारो मत एवोडे जे एकांतचारी, क्षुधा तृषादिकना सहन करनार,तपस्वी न होय ते केम न होय? तेहनो प्रत्युत्तर सांजल (सियायबीउदगइत्थियाउ के०) ते जो कदाचित् सचित्त बीज, सचित्त पाणी, अने स्त्री

यादिकनो प्रसंग तेना, (पडिसेवमाणासमणाजवंतु के०) परिभोगना करनार श्रमण होय ता, (अगारिणोविसमणाजवंतु के०) आगारी जे गृहस्थठे ते पण श्रमण थाय केमके, (सेवंतिउतेवितहप्पगार के०) आगारी पण सचित बीज उदकादिना सेवनारठे,वली धन नें अर्थें देशांतरनें विषे विचरे ठे,वली एकला पण परदेशने विषे घणा काल पर्यंतर हेठे, तथा धनार्थी थका, क्षुधातृषादिकना कष्ट पण सहन करेठे, माटे ए रीते ते पण तथा प्र कारना एटले श्रमण जेवा कष्ट सहन करेठे, ए कारणे ते गृहस्थने पण तपस्वीज गण वा ॥ ए ॥ वली पण आर्द्रकुमार कहेठे के, (जेयाविबीउंदगजोत्तिनिरकू के०) जे नि क्षुक ठता, बीज उदकना जोगवनार, इव्यब्राह्मचारी एवा, (निरकविहंजायंतिजीवि यठी के०) आजीविका चलाववानें अर्थें निक्षा मागे, (तेणातिसंजोगमविप्पहा य के०) ते ज्ञातिसयोग ठामीने (कायोवगाणंतकराजवंति के०) ठ कायनामर्दन कर नार एवा, पोतानी कायाना राखनार एवा, अने कर्मना करनार ते, आगमिककाले अनंत संसारी थशे ॥ १० ॥

॥ दीपिका–आर्द्रकएव पुनराह । यदि बीजादिभोजिन श्रमणा स्युस्तदागारिणोपि श्रमणा स्यु तेपि गृहस्थाअपि सेवंते तथाप्रकारमेकल्वविहारादिकं । गृहस्थानामपि पथिकत्वावस्थायामाशंसावतामपि निष्किंचनतयैकाकिविहारित्वं क्षुत्पिपासादिपीडनं जवत्येवेति ॥ए॥ ये चापिनिक्षवोबीजोदकजोजिन संतोनिक्षां च यावंतोजीवितार्थिनस्ते ज्ञातिसयोगं स्वजनसंबंधं प्रविहाय त्यक्त्वा कायात्कायेषु च उपगछंतीति कायाय जो गास्तडपमर्दारंनप्रवृत्ता संसारस्यांनतकरा स्यु संसारस्य अंतकरान जवंतीत्यर्थ ॥१०॥

॥ टीका–पुनरप्यार्द्रकएवेतद्दूषणायाह । (सियायेत्यादि) स्यादेतन्नवदीय मतं य था ते एकांतचारिण क्षुत्पिपासादिप्रधानतपश्चरणपीडिताश्च तत्कथं ते न तपस्विनइत्येत दाशंक्याऽर्द्रक आह। यदि बीजाद्युपजोगिनोपि श्रमणाइत्येवं जवताभ्युपगम्यते एवं तर्ह्यगा रिणोपि गृहस्था श्रमणाजवंतु तेषामपि देशिकावस्थायामाशंसावतामपि निष्किंचनतयै काकिविहारित्वं क्षुत्पिपासादिपीडनंच संजाव्यते। अतआह (सेवंतिउ) तुरवधारणे सेवंत्ये व तेऽपिगृहस्थास्तथाप्रकारमेकाकिविहारादिकमिति ॥ ए ॥ पुनरप्यार्द्रकाबीजादकादिजो जिनां दोषाभिधित्सयाह । (जेयावीत्यादि) ये चापि निक्षव प्रव्रजिताबीजोदकजोजि न संताइव्यतोब्रह्मचारिणोपि निक्षां वाऽटंति जीवितार्थिनस्ते तथाभूताज्ञातिसंयोगं स्वजनसंबंध विप्रहाय त्यक्त्वा कायात्कायेषु चोपगछंतीति कायोपजोगास्तडपमर्दकारंजात्प्र वृत्तत्वात्संसारस्यानंतकराजवंतीति।इदमुक्तं।जवति केवलं स्त्रीपरिजोगएव तैं परित्यक्तो

॥दीपिका—त्वयेदमुक्तं यत्परार्थं प्रवृत्तस्याशोकादिप्रातिहार्यपरिग्रहः शिष्यादिपरिकरो धर्मदेशना च न दोषायेति यथा तथास्माकमप्येतन्न दोषाय यच्छीतोदकं सचित्तोदकं तत्सेवनं करोतु । बीजकायोपभोगमाधाकर्माश्रयणं स्त्रीप्रसंगं च करोतु। अनेन स्वपरोपकारः स्यादित्याह (एगंतत्ति) अस्मद्धर्मे प्रवृत्तस्यैकांतचारिणः एकाकिविहारोद्यतस्य तपस्विनोनाभिसमेति न संबध्यते पापं। यद्यपि शीतोदकादीनि ईषत्कर्मबंधाय तथापि धर्माधारस्य शरीरस्य रक्षणाय क्रियमाणानि एकांतचारितपस्विनः कर्मबंधाय न भवंतीत्यर्थः ॥ ७ ॥ अस्योत्तरमाह मुनिः ।शीतोदकादीनि प्रतिसेवमाना अगारिणोगृहस्थास्ते भवंत्यश्रमणाश्चेति त्वं जानीहि । एतद्भोगे यदि श्रमणत्वं स्यात्तदा गृहस्थत्वं केन स्यादित्यर्थः ॥ ८ ॥

॥टीका—यथाप्रतिज्ञातमेवाह गोशालकः । (सीउदगमित्यादि) भगवतेदमुद्ग्राहितं परार्थं प्रवृत्तस्याशोकादिप्रातिहार्यपरिग्रहस्तथा शिष्यादिपरिकरोधर्मदेशनाच न दोषायेति । यथा तथास्माकमपि सिद्धांते यदेतद्वक्ष्यमाणं तन्न दोषायेति । शीतं च तदुदकं च शीतोदकमप्रासुकोदकं तत्सेवनं परिभोगं करोतु। तथा बीजकायोपभोगमाधाकर्माश्रयणं स्त्रीप्रसंगं च विदधात्वनेन च स्वपरोपकारः कृतोभवतीत्यस्मदीये धर्मे प्रवृत्तस्य एकांतचारिणआरामोद्यानादिष्वेकाकिविहारोद्यतस्य तपस्विनोनाभिसमेति न संबधमुपयाति पापमशुभकर्मेति। इदमुक्तं भवत्येतानि शीतोदकादीनि यद्यपीषत्कर्मबंधाय तथापि धर्माधारं शरीरं प्रतिपालयतएकांतचारिणस्तपस्विनाबंधाय न भवंतीति ॥ ७ ॥ एतत्परिहर्तुकामआह । (सीतोदगमित्यादि) एतानि प्रागुपन्यस्तानि अप्रासुकोदकपरिभोगादीनि प्रतिसेवतोऽगारिणोगृहस्थास्ते भवंत्यश्रमणाअप्रव्रजिताश्चैव जानीहि ॥ यतः अहिंसासत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यमलुब्धता ॥ इत्येतच्छ्रमणलक्षणं चैषां शीतोदकबीजाधाकर्मस्त्रीपरिभोगवतां नास्तीत्यतस्ते नामाकाराभ्यां श्रमणान परमार्थानुष्ठानतइति ॥ ८ ॥

सियाय बीउदगं इत्थियाउ, पडिसेवमाणा समणा भवंतु ॥
अगारिणोवि समणा भवंतु, सेवंतिउ तेवि तहप्पगारं ॥ए॥ जे
यावि बीउदगभोत्ति भिक्खू, भिक्खं विहंजायति जीवियही ॥
ते णातिसंजोगमविप्पहाय, कायोवगाणंतकरा भवंति ॥ १० ॥

अर्थ—वली आर्द्रकुमार कहेछे के, अहो गोशालक! ताहारो मत एवोछे जे एकांतचारी, क्षुधा तृषादिकना सहन करनार,तपस्वी न होय ते केम न होय? तेहनो प्रत्युत्तर सांभल (सियायबीउदगइत्थियाउ के०) ते जो कदाचित् सचित बीज, सचित पाणी, अने स्त्री

॥ दीपिका–अथ गोशालोन्यतीर्थिकान्सहायान्कृत्वा सोल्लुंठमसार प्राह् । इमां पूर्वोक्ता वाच त्व प्राडुष्कुर्वन्सर्वान् प्रावाडुकान् गर्हसि ? । यत सर्वेपि तीर्थिका बीजोदकादिन्नोजिनापि नवोछेदाय प्रवर्त्तते ते तुऽप्रावाडुका पृथक् पृथक् स्वीया दृष्टि प्रत्येक स्वदर्शन प्राडुष्कुर्वेति प्रकाशयति । अथवा श्लोकपश्चार्द्ध आर्द्रमुनिराह् । सर्वेपि प्रावाडुका स्वमत प्रकाशयति तथा वयमपि स्वदर्शन प्राडुष्कुर्मोयद्बीजोदकादिन्नोगिन कर्मबंधोन नवोछेदइति स्थिते कात्र परनिंदा कोवा आत्मोत्कर्षइति ॥ ११ ॥ ते प्रावाडुकाअन्योन्यस्य परदर्शन गर्हमाणा स्वदर्शनगुणानाख्याति यथा स्वतइति स्वकीये पक्षे स्वमतेस्ति पुण्य अस्वत परमते नास्ति पुण्यमित्येव तीर्थिका परस्परव्याघातेन प्रवृत्ता वय तु तत्वप्ररूपणादेकातदृष्टि गर्हाम नहि एकातपक्षोयुक्तिसगतइति वदतो वयं न किंचिद्गर्हाम । काणांधादिवस्तुस्वरूपकथनेन परापवाद । तथाचोक्त । "नेत्रैर्निरीक्ष्य बिलकंटककीटसर्प्पान्, सम्यग्यथा व्रजत तान्परिहृत्य सर्वान् ॥ कुज्ञानकुश्रुतिकुमार्गकुदृष्टिदोषान्, सम्यग्विचारयत कोत्र परापवाद" इति ॥ १२ ॥

॥ टीका–अधुनैतदाकर्ण्य गोशालकोपरमुत्तर दातुमसमर्थोऽन्यतीर्थिकान्सहायान् विधाय सोल्लुंठमसार वक्तुकामआह् (इमवयत्वित्यादि) इमा पूर्वोक्ता वाच । तुशब्दोविशेषणार्थे । त्व प्राडुष्कुर्वन्प्रकाशयन्सर्वानपि प्रावाडुकान् गर्हसि जुगुप्ससे यस्मात्सर्वेऽपि तीर्थिकाबीजोदकादिन्नोजिनोपि ससारोछित्तये प्रवर्त्तते तेतु नवता नाभ्युपगम्यते तेतु प्रावाडुका पृथक् पृथक् स्वीया स्वीया दृष्टि प्रत्येक स्वदर्शन कीर्तयत प्राडुष्कुर्वेति प्रकाशयति । यदिवा श्लोकपश्चार्द्धमार्द्रककुमारआह् । सर्वे प्रावाडुकायथावस्थितं स्वदर्शन प्राडुष्कुर्वति तत्प्रामाण्याच्च वयमपि स्वदर्शनाविर्नावन कुर्मस्तयथा ह्यप्राशुकेन बीजोदकादिपरिन्नोगिन कर्मबंधएव केवल न ससारोछेदइतीदमस्मदीय दर्शनमेव व्यवस्थिते कात्र परनिंदा कोवात्मोत्कर्षइति ॥ ११ ॥ किंच । (तेअन्नमन्नस्सेत्यादि) तेप्रावाडुकायन्योन्यस्य परस्परेणतु स्वदर्शनप्रतिष्ठाशया परदर्शन गर्हमाणा स्वदर्शन गुणानाचक्षते तुशब्दात्परस्परतोव्याहृतमनुष्ठान चानुतिष्ठति ते च श्रमणानिर्ग्रंथादयो ब्राह्मणाद्विजातय सरप्येते स्वक पक्ष समर्थयति परकीय च दूषयति। तदेव पश्चार्द्धेन दर्शयति। स्वतइति। स्वकीये पक्षे स्वाभ्युपगमेस्ति पुण्य तत्कार्यंच स्वर्गापवर्गादिकमस्त्यत स्वपराभ्युपगमात्र नास्ति पुण्यादिकमित्येव सर्वेऽपि तीर्थिका परस्परव्याघातेन प्रवृत्ताअ्रतायवमपि यथावस्थिततत्वप्ररूपणतोयुक्तिविकलत्वादेकातदृष्टि गर्हामोजुगुप्सामोन ह्यसावेकातोयथावस्थिततत्वाविर्नावकोनवतीत्येव व्यवस्थिते तत्वस्वरूप वयमाचक्षाणा न किंचिद्गर्हाम काणकुव्जकुष्ठनादिप्रकारेण केवल स्वपरस्वरूपाविर्नावन कुर्मान च व

ऽसावपि द्रव्यत शेपेण तु बीजोदकाद्युपभोगेन गृहस्थकल्पाएव ते। यत्तु भिक्षाटनादिक मुपन्यस्त तेषा तद्गृहस्थानामपि केषांचित्संभाव्यते नैतावता श्रमणभावइति ॥ १० ॥

इम वयंत तुमपाउ कुव्व, पावाइणो गरिहसि सव्वएव ॥ पावाइ णो पुढो किट्टयंता, सयंसय दिठिकरेति पाउ ॥११॥ ते अन्नम न्नस्स विगरहमाणा, अक्खंतिउ समणामाहणाय ॥ संतोय अ त्थी असतोय एत्थी, गरहामोदिठि ए गरहामोकिंचि ॥ १२॥

अर्थ–हवे आर्द्रकुमारना ए पूर्वोक्त वचन सांभळीने गोशालक बीजो उत्तर आपवानें असमर्थ थतो, अन्य तीर्थिकोने पोताना सहायकारी करीने सोल्लंठ एटले असार वचन बोलेछे के, अहो आर्द्रकुमार! (इमवयंततुमपाउकुव्व के०) तुं एवा पूर्वोक्त वचन कहेतो थतो (पावाइणोगरिहसिसव्वएव के०) सर्वे प्रावादुक एटले अन्यदर्शनीउनें निंदेछेज, कारणके आ जगत् माहे सर्वे दर्शनीउ बीज उदकादिकनुं सेवन करता थका, संसार उच्छेदवाने अर्थे प्रवर्त्तेछे,तो तेने मानिये नही एवुं वचन सांभळीने आर्द्रकुमार ते गोशालकने उत्तर आपवाने अर्थे बोल्यो, ते गाथाना उत्तरार्द्ध वडे कहेछे के, अहो गोशालक! (पावाइणोपुढोकिट्टयंतासयंसयदिठिकरेतिपाउ के०) सर्वे प्रावादुक एटले सर्वे दर्शनी पोत पोतानी जुदी जुदी दृष्टीये जुदी जुदी मतिये पोतपोतानुं दर्शन प्रगट करेछे जेम ते पोतपोताना दर्शननी स्थापना करेछे, तेम हुं पण अमारा दर्शननी प्रभावना करुं छुं के, सचितपाणी,बीजादिकना परिभोगथकी नि केवल कर्मनुं बंधनछे,पण एथकी संसारनो उच्छेद काइ पण नथी एवो अमारा दर्शननो मतछे, तो अहीं निंदा पण शानी? अने उत्कर्षपण शानो?॥११॥वळी आर्द्रकुमार कहेछे (तेअन्नमन्नस्सविगरहमाणा के०) ए समस्त परवादी परस्पर माहोमाहे पारका दर्शनने निंदेछे, अने पोताना दर्शनना गुण बोलेछे, (अक्खंतिउसमणामाहणाय के०) ते श्रमण ब्राह्मण सर्वे पोतपोताना पक्षने समर्थेछे अने परना पक्षने दूषण आपेछे तेज गाथाना उत्तरार्द्ध वडे देखाडेछे (संतोयअत्थीअसंतोयणत्थी के०) अमारा पक्षने अंगीकार करवा थकी पुण्यछे, अने स्वर्गापवर्गादिकना सुख प्राप्त थायछे, अने परना पक्षनें अंगीकार करवा थकी पुण्य नथी अने पुण्यने अभावे स्वर्गापवर्गादिकनी प्राप्ति पण नथी ए रीतें सर्वे तीर्थिक माहोमांहे व्याघातें प्रवर्त्तेछे तेम अमे पण यथावस्थित तत्त्वनुं कथन करनारा छैये तेणे करी, (गरहामोदिठिणगरहामोकिंचि के०) एकांतवादीने अमे काइ गर्हता नथी, निंदता नथी, केमके, सत्य कहेता थका काइ प्रवाद नथी इत्यर्थ ॥ १२ ॥

एटले निंदे नहीं माटे रागद्वेषरहित पणे यथातथ्य वस्तुनुं स्वरूप केहेता थका काइ निंदा नथी जो कदापि यथातथ्य वस्तुनुं स्वरूप केहेता थका निंदा होय तो, अग्नि उष्ण छे, अने उदक शीतल छे, विष खाधा थकी मरण नीपजे,इत्यादिक खरुं बोलवुं ते पण युक्त नथी। परंतु ए रीतें सत्य कहेवामां काइ दोष नथी ॥ १४ ॥

॥ दीपिका–न किंचन श्रमणं ब्राह्मणं वा स्वरूपेणानिधारयामोगर्हणबुद्ध्याउद्घट्ट याम । केवलं स्वदृष्टिमार्गं तदंगीकृतं दर्शनं प्रादुष्कुर्मः । तद्यथा । "ब्रह्मा लूनशिराहरिर्दृशि सरुग्व्यालुप्तशिश्नोहरः, सूर्योऽप्युल्लिखितोऽनलोऽप्यखिलभुक्सोमः कलंकांकितः ॥ स्वर्नाथोपि विसंस्थुलः खलु वपुः संस्थैरुपस्थैः कृतः, सन्मार्गस्खलनाद्भवति विपदः प्रायः प्रभूणामपि" । एतच्च तैरेव स्वागमे पठ्यते वयंतु श्रोतारः केवलमिति । मग्गेइमेत्ति । अयं मार्गः सम्यग्दर्शनादिकः कीर्त्तितआर्यैः सर्वज्ञैः । किंभूतोमार्गोऽनुत्तरः प्रधानः । आर्यैः किंभूतैः सत्पुरुषैः । मार्गः किंभूतोऽञ्जुः प्रकटः ऋजुर्वा ॥ १३ ॥ ऊर्ध्वमधस्तिर्यक्च ये त्रसा येच स्थावराश्च प्राणिनस्तेषु भूताभिशंकया प्राणिविनाशशंकया सावद्यक्रियां जुगुप्स मानोगर्हन् नैवान्यं लोकं कंचन गर्हतः निंदति (वुसिमं) संयमवान् । तदेव रागद्वेषमुक्तस्य वस्तुस्वरूपकथने न काचिन्निंदा यथा उष्णोऽग्नि शीतलं जलं विषं मारणात्मकं भयकरः सर्प्पः व्यथकः कंटकइत्यादि ॥ १४ ॥

॥टीका–एतदेव स्पष्टतरमाह । (नकिंचिरूवेणेत्यादि) न कंचन श्रमणं ब्राह्मणं वा स्वरूपेण जुगुप्सितांगावयवोद्घट्टनेन जात्या तल्लिंगग्रहणोद्घट्टनेन वाऽनिधारयामोगर्ह णाबुद्ध्योद्घट्टयामः केवलं स्वदृष्टिमार्गं तदभ्युपगतं दर्शनं प्रादुष्कुर्मः प्रकाशयामः । तद्य था । "ब्रह्मा लूनशिराहरिर्दृशिसरुग्व्यालुप्तशिश्नोहरः, सूर्योऽप्युल्लिखितोऽनलोऽप्यखिलभु क्सोमः कलंकांकितः ॥ स्वर्नाथोपि विसंस्थुलः खलु वपुः संस्थैरुपस्थैः कृतः, सन्मा र्गस्खलनाद्भवति विपदः प्रायः प्रभूणामपी' त्यादि । एतच्च तैरेव स्वागमे पठ्यते । वयं तु श्रोतारः केवलमिति । आर्द्रककुमारएवं परपक्षं दूषयित्वा स्वपक्षसाधनार्थं श्लोकपश्चा र्द्धेनाह । अयं मार्गः पथा सम्यग्दर्शनादिकः किर्त्तिताव्यावर्णितः । कैरार्यैः सर्वज्ञैरस्त्या ज्यधर्मेदूरवर्तिभिः । किंभूताधर्मोनास्माउत्तरः प्रधानाविद्यतइत्यनुत्तरः पूर्वापराव्याहतत्वा द्यथावस्थितजीवादिपदार्थस्वरूपनिरूपणाच्च । किंभूतैराय सतश्च ते पुरुषा च सत्पुरुषास्तै श्चतुस्त्रिंशदतिशयोपेतैराविर्भूत समस्तपदार्थाविर्भावकदिव्यज्ञानैः । किंभूतामार्गोऽञ्जु व्यक्तः निर्दोषत्वात्प्रकटः ऋजुर्वा वक्रैकांतपरित्यागादकुटिलऽति ॥ १३ ॥ पुनरपि स्वसद्धर्मे स्वरूपनिरूपणायाह । (उड्ढंअहेयमित्यादि) ऊर्ध्वमधस्तिर्यक्चैव सर्वास्वपि दिक्षु प्रकाराप

स्तु स्वरूपाविर्नावने परापवाद । तथाचोक्तं। "नेत्रैर्निरीक्ष्य बिलकंटककीटसर्प्पान्, सम्यक् यथा व्रजत तान्परिहृत्य सर्वान् ॥ कुज्ञानकुश्रुतिकुमार्गकुदृष्टिदोषा,न्सम्यग्विचारयत कोत्र परापवाद"इत्यादि। यदिचैकांतवादिनामेवास्त्येव नास्त्येवाभ्युपगमवतामय परस्प रगर्हाख्योदोषोनास्माकमनेकवादिना सर्वस्यापि सदादे कथंचिदभ्युपगमात् । एतदेव श्लो कपश्चार्द्धेन दर्शयति (स्वतइति) स्वद्रव्यक्षेत्रकालजावैरस्ति तथा (परतइति) परद्रव्या दिनिर्नास्तीत्येव पराभ्युपगमं दूषयतोगर्हामोऽन्यानेकांतवादिनस्तत्स्वरूपनिरूपणतस्तु रा गद्वेषविरहान्न किंचिजर्हामइति स्थितं ॥ १२ ॥

ए किंचि रूवेए निधारयामो, सदिठिमग्गं तु करेमि पाऊ ॥ म ग्गे इमे किट्टिए आरिएहिं, अणुत्तरे सप्पुरिसेहिं अजू ॥१३॥ उड्ढं अहेय तिरियं दिसासु,तसाय जे थावरजेयपाणा॥ नूयाहिं संकाभि डुगुंडमाणा, णो गरहती वुसिमं किंचि लोए ॥१४॥

अर्थ—वली आर्द्रकुमार कहेठे के, अहो गोशालक ! अमे (एकिंचिरूवेएनिधारया मो के०) कोइ पण श्रमण ब्राह्मणने रूवेण एटले कुगठनिक एवा अंगोपांगने उघाड वे, अथवा जातिना दोषने अनिधारयामो एटले प्रगट करीने निंदता नथी, किंतु ? (सदिठिमग्गंतुकरेमिपाउ के०) स्वदृष्टिमार्ग एटले पोतानुं शासन प्रगट करिये बैये, अथवा तेउंना मार्गनुं स्वरूप कहिये बैये, वली जे विधिये ते पोताना मार्गनी स्थिति कहेबे के, " ब्रह्मा लूनशिरा " इत्यादिक ते अमे पण साजलिये बैये, परंतु अमे कोइ नो अपवाद बोलता नथी हवे आर्द्रकुमार, गाथाना उत्तरार्द्धवडे पोताना दर्शननुं स्व रूप कहेबे (मग्गेइमेकिट्टिएआरिएहिं के०) ए मार्ग जे सम्यक् दर्शनादिकठे, ते आर्य एवा जे श्रीसर्वज्ञदेव तेणे कह्यो ते मार्ग केवोबे तोके, (अणुत्तरेसप्पुरिसेहिंअजू के०) ए मार्ग अनुत्तर एटले एना सरखो बीजो कोइ पण मार्ग जगत् माहे नथी, वली ते सर्वज्ञ के वाठे तोके सत्पुरुष चोत्रीश अतिशये करी बिराजमान, एवाप्रधान पुरुष जगत् माहे बीजा कोइ नथी, ते कारणे सत्पुरुष केवायठे, वली ए मार्ग केवोबे तोके, अजू एटले सरल अकुटिल बे ॥१३॥ वली पण धर्मनुं स्वरूप कहेबे (उड्ढंअहेयतिरियंदिसासु के०) ऊर्ध्व अधा अने तिर्यक् ए समस्त दिशाउंने विषे एतावता चौदरज्ज्वात्मक लोक माहे, (तसायजेथावरजेयपाणा के०) जे त्रस अने स्थावर प्राणीउंठे तेना पालनार, तथा (नूयाहिंसकाभिडुगुंडमाणा के०) प्राणघातनी शंकाये सावद्यानुष्ठानने डुगं उता, (णो गरहतीवुसिमंकिंचिलोए के०) एवा संयमवंत पुरुषो लोक माहे जे बे, ते कोइने गर्ह

एटले निंदे नहीं माटे रागद्वेषरहित पणे यथातथ्य वस्तुनुं स्वरूप केहेतां थकां काइ निंदा नथी जो कदापि यथातथ्य वस्तुनुं स्वरुप केहेतां थका निंदा होय तो, अग्नि उष्णछे, अने उदक शीतलछे, विष खाधा थकी मरण नीपजे,इत्यादिक खरुं बोलवुं ते पण युक्त नथी ! परंतु ए रीते सत्य कहेवामां काइ दोष नथी ॥ १४ ॥

॥ दीपिका–न किंचन श्रमणं ब्राह्मणं वा स्वरूपेणाविधारयामोगर्हेणवुक्ष्याउद्घट्टयाम । केवलं स्वदृष्टिमार्गं तदंगीकृतं दर्शनं प्राडुष्कुर्मं । तद्यथा । "ब्रह्मा लूनशिराद्दरिर्दृशि सरुग्व्यालुप्तशिश्नोहर , सूर्योप्युल्लिखितोऽनलोप्यखिलभुक्सोम कलंकांकित ॥ स्वर्नाथोपि विसंस्थुल खलु वपुः संस्थैरुपस्थैः कृत , सन्मार्गस्खलनाद्भवति विपदः प्राय प्रभूणामपि" । एतच्च तैरेव स्वागमे पठ्यते वयंतु श्रोतारः केवलमिति । मग्गेइमेत्ति । अय मार्गः सम्यग्दर्शनादिकः कीर्त्तितआर्यैः सर्वज्ञैः । किंभूतोमार्गोऽनुत्तरः प्रधान । आर्यैः किंभूतैः सत्पुरुषैः । मार्गः किंभूतोजू प्रकटः ऋजुर्वा ॥ १३ ॥ ऊर्ध्वमधस्तिर्यक्च ये त्रसा येच स्थावराश्च प्राणिनस्तेषु भूताभिशंकया प्राणिविनाशशंकया सावद्यक्रियां जुगुप्समानोगर्हन् नैवान्यं लोकं कंचन गर्हते निंदति (वुसिम) संयमवान् । तदेव रागद्वेषमुक्तस्य वस्तुस्वरूपकथने न काचिन्निंदा यथा उष्णोऽग्नि शीतलं जलं विषं मारणात्मकं भयकरः सर्पः व्यथकः कंटकइत्यादि ॥ १४ ॥

॥टीका–एतदेव स्पष्टतरमाह । (नकिंचिरूवेणेत्यादि) न कंचन श्रमणं ब्राह्मणं वा स्वरूपेण जुगुप्सितागावयवोद्घट्टनेन जात्या तल्लिंगग्रहणोदघट्टनेन वाऽविधारयामोगर्हणावुक्ष्योद्घट्टयाम केवलं स्वदृष्टिमार्गं तदभ्युपगतं दर्शनं प्राडुष्कुर्मं प्रकाशयाम । तद्यथा । "ब्रह्मा लूनशिराहरिर्दृशिसरुग्व्यालुप्तशिश्नोहर , सूर्योप्युल्लिखितोऽनलोप्यखिलभुक्साम कनकांकित ॥ स्वर्नाथोपि विसंस्थुल खलु वपु संस्थैरुपस्थैः कृत , सन्मार्गस्खलनाद्भवति विपद प्राय प्रभूणामपी"त्यादि । एतच्च तैरेव स्वागमे पठ्यते । वयं तु श्रोतारः केवलमिति । आर्द्रककुमारएव परपक्षं दूषयित्वा स्वपक्षसाधनार्थं माकपश्चाह । अय मार्गः पथा सम्यग्दर्शनादिकः किर्त्तिताव्यावर्णित । केरार्यैः सर्वज्ञैरस्त्याज्यधर्मेदूरवर्तिभि । किंभूताधर्मोनास्माद्युत्तर प्रधानाविद्यतइत्यनुत्तरः पूर्वापराव्याहतत्वायथावस्थितजीवादिपदार्थस्वरुपनिरूपणाच्च । किंभूतैरार्यैः सतश्च ते पुरुषाश्च सत्पुरुषास्तैश्चतुस्त्रिंशदतिशयापेतैराविर्भूत समस्तपदार्थाविर्भावकदिव्यज्ञानैः । किंभूतामार्गोऽञ्जुव्यक्त निर्दोषत्वात्प्रकट ऋजुर्वा भ्रकांतपरित्यागादकुटिलऽति ॥ १३ ॥ पुनरपि स्वसमय स्वरूपनिरूपणायाह । (उड्ढमहयमित्यादि) ऊर्ध्वमधस्तिर्यक्चैव सर्वास्वपि दिक्षु प्रकारापे

स्तु स्वरूपाविर्भावने परापवाद । तथाचोक्त । "नेत्रैर्निरीक्ष्य बिलकटककीटसर्पान्, सम्यक् यथा व्रजत तान्परिहृत्य सर्वान् ॥ कुज्ञानकुश्रुतिकुमार्गकुदृष्टिदोषा,न्सम्यग्विचारयत कोत्र परापवाद"इत्यादि । यदिचैकातवादिनामेवास्त्येव नास्त्येवाभ्युपगमवतामयं परस्प रगर्हाख्योदोषोनास्माकमनेकवादिना सर्वस्यापि सदादे कथचिदभ्युपगमात् । एतदेव श्लो कपश्चार्द्धेन दर्शयति (स्वतइति) स्वद्रव्यक्षेत्रकालभावैरस्ति तथा (परतइति) परद्रव्या दिभिर्नास्तीत्येव पराभ्युपगम दूषयतोगर्हामोऽन्यानेकातवादिनस्तत्स्वरूपनिरूपणतस्तु रा गद्वेषविरहान्न किंचिद्गर्हामैइति स्थित ॥ १२ ॥

ण किंचि रूवेण भिधारयामो, सद्दिठिमग्ग तु करेमि पाउ ॥ म
ग्गे इमे किट्टिए आरिएहिं, अणुत्तरे सप्पुरिसेहि अजू
॥१३॥ उड्ड अहेय तिरिय दिसासु,तसाय जे थावरजेयपाणा॥
भूयाहि सकाभि डुगुछमा णा, णो गरहती वुसिम किंचि लोए ॥१४॥

अर्थ–वली आर्द्रकुमार कहेछे के, अहो गोशालक ! अमे (णकिंचिरूवेणभिधारया मो के०) कोइ पण श्रमण ब्राह्मणने रूवेण एटले कुछनिक एवा अगोपागने उघाड वे, अथवा जातिना दोषने अभिधारयामो एटले प्रगट करीने निंदता नथी, किंतु ? (सद्दिठिमग्गतुकरेमिपाउ के०) स्वदृष्टिमार्ग एटले पोतानु शासन प्रगट करियें छैयें, अथवा तेउना मार्गनु स्वरूप कहिये छैये वली जे विधिये ते पोताना मार्गनी स्थिति कहेछे के, " ब्रह्मा लूनशिरा " इत्यादिक ते अमे पण साभलिये छैयें, परतु अमे कोइ नो अपवाद बोलता नथी हवे आर्द्रकुमार, गाथाना उत्तरार्द्धवडे पोताना दर्शननु स्व रूप कहेछे (मग्गेइमेकिट्टिएआरिएहि के०) ए मार्ग जे सम्यक् दर्शनादिकछे, ते आर्य एवा जे श्रीसर्वज्ञदेव तेणे कह्यो ते मार्ग केवोछे तोके,(अणुत्तरेसप्पुरिसेहिअजू के०) ए मार्ग अनुत्तर एटले एना सरखो बीजो कोइ पण मार्ग जगत् माहे नथी, वली ते सर्वज्ञ के वाछे तोके सत्पुरुष चोत्रीश अतिशये करी विराजमान, एवाप्रधान पुरुष जगत् माहे बीजा कोइ नथी, ते कारणे सत्पुरुष केवायछे, वली ए मार्ग केवोछे तोके, अजू एटले सरल अकुटिल छे ॥१३॥ वली पण धर्मनुज स्वरूप कहेछे (उड्डअहेयतिरियदिसासु के०) ऊर्ध्व अधो अने तिर्यक् ए समस्त दिशाउने विषे एतावता चौदरज्ज्वात्मक लोक माहे, (तसायजेथावरजेयपाणा के०) जे त्रस अने स्थावर प्राणीउछे तेना पालनार, तथा (भूयाहिसकाभिडुगुछमाणा के०) प्राणघातनी शकायें सावद्यानुष्ठानने डुग छता, (णो गरहतीवुसिमकिंचिलोए के०) एवा सयमवत पुरुषो लोक माहे जे छे, ते कोइने गर्हे

बुद्धिये करी सहित, (सुत्तेहिंअत्थेहियणिच्छयन्ना के०) वली सूत्र अने अर्थना निश्चयना करनार, (अणगारअन्ने के०) एवा कोइ एक अन्य अणगार होय ते (पुछिंसुमा ऐ के०) मुजने काइ सूत्रार्थ पूछे तेनो उत्तर महाराथकी अपाशे नहीं, तेथी महारु मान जग यशे, (इतिसंकमाणोणउवेतितत्थ के०) एवी वातोथी शंका पामतो थको ताहारो गुरु तेवा पूर्वोक्त स्थानकोने विषे वास करतो नथी, ते कारण माटें तमारो मार्ग रूजु नथी ॥ १६ ॥

॥ दीपिका–एव गोशालकमतानुसारी त्रैराशिकोनिराकृतोपि पुनराह। योभवतस्तीर्थंकर सरागद्वेषभययुक्त। तथाहि। आगतुकाना कार्पटिकादीना अगार आगतागार आरामेऽगार आरामागार तत्रासौ श्रमणोभीत सर्व न वासमुपैति। किं तत्र भयमित्याह। दक्षा पण्डितादुर्यस्माद्भव सति मनुष्या। तद्भीतोसौ तत्र न याति। कना स्वतोहीनाअतिरिक्तावा जात्यादिना सति केचित् ते पराजितस्य महान् कलाभ्रंश स्यात्। ते नरा किंभूता लपाशाचालाघोपिततर्कदमका तथाऽलपामौनव्रतिकागुटिकादिविद्यायुक्ता यद्वशा द्रागेव न निस्सरति मुखात् यत्रयात्तेषु गृहेष्वसौ न यातीति ॥ १५ ॥ मेधाविनोग्रहणधारणसमर्थाबुद्धिमत शिक्षिता सूत्रेयेच निश्चयज्ञास्ते ईदृशा सूत्रार्थविषय प्रश्नमाक्षुरनगाराएके इत्यसौ शंकमानोबिभ्यत्र तत्र तेषा मध्ये उपैति याति तथानार्यदेशे न धर्म कथितवान् आर्येतु देशना करोति तत्रापि न सर्वत्र किंतु? कुत्रचिदेवेति ततोसौ रागद्वेषाकुलोवीर ॥ १६ ॥

॥ टीका–सएव गोशालकमतानुसारी त्रैराशिकोनिराकृतोपि पुनरन्येन प्रकारेणाह। (आगतागारेइत्यादि) सविप्रतिपन्न सन्नाईकमेवाह। योसौ भवत्सद्धर्मी तीर्थंकर सरागद्वेषभययुक्तस्तथाह्यसावागतुकाना कार्पटिकादीनामगारमागतागार तथाऽरामेऽगारमारामागार तत्रासौ श्रमणोभवत्तीर्थंकर। तुशब्दएवकारार्थे। भीतएवासो तपध्वसनभयात्तत्रागतागारादौ न वासमुपैति न तत्रासनस्थानशयनादिका क्रिया कुरुते। किं तत्र भयकारणमितिचेत्तदाह। दक्षा निपुणा प्रभूतशास्त्रविशारदा। हुशब्दोयस्मादर्थ। यस्माद्भव सति मनुष्यास्तस्मादसो तद्भीतान वास तत्र समुपैति न तत्र समातिष्ठते। किंभूता न्यूना सतोऽवमाहीनाजात्याद्यतिरिक्तावा तान्या पराजितस्य महा-ठायाभ्रंशइति। तानेव विशिनष्टि। लपंतीति लपावाचाला घोपितानेकतर्कविचित्रदमकास्तथा न लपामौनव्रतिकानिष्ठितयोगा गुटिकादियुक्तावा यद्वशादनिषेधविषयावागेव न प्रवर्तते ततस्तद्भयेनासो युष्मत्तीर्थंकरुदागतागारादौ नैव व्रजतीति ॥ १५ ॥ पुनरपि गोशालकएवाह। (मेहावि

क्षया नावदिगपेक्षया वा तासु ये त्रसाये च स्थावरा प्राणिन । चशब्दौ स्वगतानेकभेदसंसूच को। नूत सन्नूतं तथ्य तत्रानिशंकया तथ्यनिर्णयेन प्राणातिपातादिकं पातकं जुगुप्समा नोगर्हमाणोयदिवा नूतानिशंकया सर्वसावद्यमनुष्ठानं जुगुप्समानोनैवापरलोकं कंचन गर्हति निंदति (वुसिमंति) संयमवानिति। तदेव रागद्वेषवियुक्तस्य वस्तुस्वरूपाविर्जाव ने न काचिद्गर्हेत्यथ तत्रापि गर्हा नवति नह्यग्नोग्नि शीतमुदकं विषं मारणात्मकमित्येव मादि किंचिद्वस्तुस्वरूपमाविर्जावनीयमिति ॥१४ ॥

आगतगारे आरामगारे,समणेउ नीते ण उवेति वासं ॥ दस्का
हुसंते बहवे मणुस्सा, ऊणातिरित्ताय लवालवाय ॥ १५ ॥
मेहाविणो सिक्किय बुद्धिमंता, सुत्तेहिं अत्थेहिंय णिच्छयन्ना ॥ पु
च्छिसुमाणे अणगार अन्ने, इति संकमाणो ण उवेति तन्न ॥१६॥

अर्थ–हवे गोशालकमतानुसारी त्रैराशिक बीजा प्रकारे करी फरी आर्द्रकुमार प्र त्ये कहेछे के, अहो आर्द्रकुमार! ताहरो तीर्थंकर राग, द्वेष, अने नय, तेणे करी सहित छे, ए कारण माटे ते बीहितो थको (आगतगारे के०) शून्यघर धर्मशालादिक तथा (आरामगारे के०) उद्यानादिकने विषे (समणेउनीते के०) श्रमण अने माहण थ की बीहितो थको (णउवेतिवास के०) वास करतो नथी, वली शा थकी बीहितो थको वास करतो नथी? ते कहेछे (दस्काहुसंते के०) दक्ष एटले माह्या, घणां शास्त्र ना जाणनार, पंमित, (बहवेमणुस्सा के०) एवा घणा पुरुषो ते पूर्वोक्त शून्य घरादिक स्थानकने विषे आवे, माटे तेवा पुरुषोथकी बीहितो थको, तेवा स्थानकने विषे ताह रो त्यां गुरु आवतो नथी पण, ते पुरुषो केवाछे तोके, (ऊणातिरित्ताय के०) तमारा तीर्थंकरथकी कोइ एक जात्यादिक गुणे करी ऊणाछे न्यूनछे,तथा कोइ एक अधिकछे, तो तेवानी साथे बोलता कदाचित् हारी जाय तो मानम्लान थाय, ते कारणमाटें एवा स्थानक छांमीने त्यागीने देवादिकनी परषदामांहे एकांते बेसेछे वली ते पुरुषो केवाछे तोके, (लवालवाय के०) एकतो लव एटले अनेक विचित्र तर्कना बोलनार, तथा ए क अलव एटले मौनव्रती, अथवा मंत्रवादी छे के, जेनी आगल बोलता वादीना मुख मांहेथी वचन पण निकले नही, ते कारण माटे तेनी बीकथकी ताहरा तीर्थंकरे आरा म उद्यानादिक मांहे निवास करवानो त्याग कस्योछे ॥ १५॥ वली गोशालक कहेछे के, (मेहाविणोसिक्कियबुद्धिमंता के०) मेधावी जे पंमितछे ते ग्रहण करवा, धारण करवाने सामर्थ्यवान् तथा आचार्यादिकनी पासेथी शिखेला एवा उत्पातादिक चार प्रकारनी

पकार न देखे तो पासे आवेलाने पण धर्म न कहे ए कारणमाटे तेनें रागद्वेषनी स नावना नथी, तथा (आसुपन्न के०) सर्वज्ञ (समिया के०) समदृष्टि पणे एटले कोइ चक्रवर्त्ति आवी पूछे अथवा कोइ रांक आवी पूछे, अथवा अणपूछे थके पण, धर्म क हे तथा स्वामी जे अनार्य देशने विषे जता नथी तेनु कारण हु तुने कहुं बुं ते तुं सां नल (अणारियादसणार्उपरित्ता के०) अनार्य लोक अनाचारी ठता दर्शनथकी पण ज्रष्टछे (इतिसंकमाणाणउवेतितञ्ज के०) ए माटे शंकामान थका त्यां जता नथी, ते जीव श्री वीतरागने देखी अवहेलनादिक कर्मोपार्जनकरी पोताने अनंत संसार नीवृद्धि करशे, एवुं जाणीने स्वामी त्यां पधारता नथी, परंतु तेमनी साथे परमेश्वर ने द्वेषनाव कांइ पण नथी तेमाटे राग, द्वेष, अने नय, तेमने कांइ नथी तथा अहो गोशालक ! जे तुं एम कहेछे के, अनेक शास्त्रज्ञ पुरुषना प्रश्नथकी बीहितो थको तेनी सनामांहे रहेतो नथी ए पण ताहारुं वचन बाल प्रलाप प्राय जाणीय ठेये, केमके, जे कारण माटे ए म्हारा गुरु सर्वज्ञ नगवंत केवलीछे तो तेनुं समस्त परवादिउं मुख, पण जोई न शके, तो पछी वादनुं केवुंज शुं ? माटे म्हारा स्वामीने परवादीनो पराज व कांइ नथी ए नगवंत केवलज्ञाने करी पोतानो परनो उपकार देखे त्यां जइने धर्मो पदेश करे इत्यर्थ ॥ १८ ॥

दीपिका–इति गोशालकेनोक्ते आर्द्रककुमारआह । सनगवानकामकृत्योन स्यात् अ निञ्चाकारी न नवतीत्यर्थ । य प्रेक्षापूर्वकारी न स्यात्सोनिष्टमपि स्वपरयोर्निरर्थकमपि कृत्यं कुर्यात । नगवांस्तु सर्वज्ञः प्रेक्षापूर्वकारी कथं स्वपरयोर्निरुपकारकमेव कुर्यात् बाल स्येव कृत्यं यस्य सबालकृत्योनासौ बालवदनालोचितकारी न राजानियोगेनासौ देशनां करोति तत कुतस्तस्य नयेन प्रवृत्ति स्यादेव सति केनचित्कृत प्रश्नं व्यागृणीयाद्वदेद्यदि त स्योपकार स्याडुपकारं विना नवा नैव वदेत् । अथवानुत्तरसुराणां मन पर्यायज्ञानिनां च इव्यमनसैव तन्निर्णयादतान वदेत् सकामकृत्येन स्वेछाकारितया तीर्थकृन्नामकर्मण क्षपणाय न यथाकथंचिदतोसौ इहार्यक्षेत्रे आर्याणामुपकारसनवे धर्म वदेत् ॥ १७ ॥ गंता चत्ति) सनगवान् गत्वापि शिष्यसमीपं अथवा तत्राऽगत्वा यथा सत्वोपकार स्यात्तथा व्यागृणीयात् देशनां कुर्यात् उपकारे सति गत्वापि कथयति असतितु स्थितापि न वदति ततोन तेषा रागद्वेषसनव केवलमाशुप्रज्ञ सर्वज्ञ समतया वदेत् । "जहा पुस्सस्स क हइ तहा तुहस्स कहइ" इतिवचनाच्चक्रवर्तिइमकादिषु दृष्टोष्टावा तुल्यं व्यागृणीयादि त्यर्थ । कथमनार्येषु सन यातीत्याह । (अणारियात्ति) अनार्यादर्शनत सम्यक् त्वात्परीतान्नष्टाइति । शंकमानोविचारयन् नगवान्न तत्रोपेति । तेहि वर्त्तमानसुखमेव

णोइत्यादि) मेधा विद्यते येषा ते मेधाविनोग्रहणधारणसमर्थास्तथाऽऽचार्यादे समीपे शिक्षा ग्राहिता शिक्षितास्तथोत्पत्तिक्या दिचतुर्विधबुद्ध्युपेताबुद्धिमतस्तथासूत्रेपि सूत्रविषये विनिश्चयज्ञाययथावस्थितसूत्रार्थवेदिनइत्यर्थ । ते चैवभूता सूत्रार्थविषयं मा प्रश्नमकार्पुरन्येऽनगाराएके केचनेत्येवमसौ शंकमानास्तेषा बिभ्यन्न तत्र तन्मध्ये उपैत्युपगच्छतीति ततश्च न ऋजुर्मार्गइति भययुक्तत्वात्तस्य तथा म्लेच्छविषय गत्वा न कदाचिद्धर्मदेशनां च करोत्यार्यदेशेपि न सर्वत्रापितु कुत्रचिदेवेत्यतोविषमदृष्टित्वाद्रागद्वेषवत्यसाविति ॥ १६ ॥

णो कामकिच्चा णय बालकिच्चा, रायाभिउगेण कुउ भएण ॥ वियागरेज्जा पसिणं नवावि, सकाम किच्च णिहआरियाए ॥ १७ ॥ गता च तत्थ अदुवा अगता, वियागरेज्जा समिया सुपन्ने ॥ अणारिया दसणाउ परित्ता, इति सकमाणा ण उवेति तत्थ ॥ १८ ॥

अर्थ—एम गोशालके कहे थके, हवे आर्द्रकुमार गोशालक प्रत्ये कहेछे के,(णोकामकिच्चा के०) अहो गोशालक' ते भगवत कामकृत्य नथी एनो अर्थ कहेछे के, जे अविमाश्याने करनार होय ते पोतानें तथा परने, निरर्थक कार्य करे परंतु श्री भगवत तो सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, परना हितना करनार, ते पोतानें तथा परने निरुपकारी केम थाय? ते कारण माटे स्वामी निरर्थक कामना करनार नथी, (णयबालकिच्चा के०) तथा स्वामी बालकृत्य नथी, एटले बालकनी पेठे अणविचार्यु कार्य न करे, (रायाभिउगेण के०) तथा राजानियोगे करी धर्मदेशनादिकनें विषे प्रवर्त्ते नही, (कुउभएणवियागरेज्जा के०) तथा कोइना भयथकी प्रश्न वागरे एटले कहे नही, (पसिणनवावि के०) उपकार न होय तो कहे नहीं, एटले प्रश्न वागरे नही कि बहुना उपकार विना कोइनें काइ न कहे अनुत्तरविमानवासी देवतानें पण, मन थकीज पूछेला प्रश्ननो निर्णय करे हवे जे ए श्री वीतरागनो धार्मिक थाय ते केवा कार्यो करे? एवी आशंका टाळी तेनो प्रत्युत्तर चोथे पदें कहेछे (सकामकिच्चणिहआरियाए के०) पोताना कामने अर्थे एतावता तीर्थंकरनामकर्म खपाववा भणी आर्य क्षेत्रमा आर्य लोकने प्रतिबोधवा वास्ते धर्म देशना करे, परतु बीजु कोइ आत्मप्रशसादिक कार्य न करे ॥ १७ ॥ वळी आर्द्रकुमार कहेछे के,(गताचतत्थ अदुवाअगता के०) ते भगवत परहितने अर्थे त्या जइने, अथवा त्या न जइने, किंतु जेम जेम भव्य जीवोनो उपकार थाय, तेम तेम (वियागरेज्जा के०) धर्मदेशना आपे जो उपकार थशे, एम जाणे तो त्या जइने पण धर्म देशना आपे अथवा ते उ

त समस्तैरपि प्रावाडुकैर्मुखमप्यवलोकयितु न शक्यते वादस्तु दूरोत्सादितएवेत्यत कुतस्तस्य पराभव । भगवास्तु केवलालोकेन यत्रैव स्वपरोपकार पश्यति तत्रैव गत्वा पि धर्मदेशना विधत्तइति ॥ १७ ॥

पन्न जहा वणिए उदयही, आयस्स हेउ पगरेति सग ॥ तऊवमे समणे नायपुत्ते, इच्चेव मे होति मती वियक्को ॥१ए॥ नव न कुज्जा विहुणे पुराण, विच्चा मइ ताइयमाह एवं ॥ पन्नावया बन्नवतित्ति वुत्ता तस्सोदयही समणे त्तिबेमि ॥ २० ॥

अर्थ–वली बीजा प्रकारे गोशालक केहेछे के,अहो आर्द्रकुमार! (पन्नजहावणिए उदयही के०) जेम कोइ वाणियो उदयार्थी एटले लाभार्थी थतो व्यवहार योग्यकरियाणु एटले कर्पूर, अगर, कस्तूरी, अने वस्त्रादिक, ते देशातरथकी लेइ आवे (आयस्सहेउपगरेतिसग के०) पोताना लाभनें अर्थे महाजननो सग करे, (तऊवमेसमणेनायपुत्ते के०) तेम तमारो तीर्थंकर श्रमण, ज्ञातपुत्र पण ते वाणियासमान जाणवो के मके, कोइ एक लाभने अर्थे अनेक महाजनना वृंद माहे बेसेछे, (इच्चेवमेहोतिमतीवियक्को के०) माटे ए प्रकारे महारी मतिछे, अने एवो माहारो वितर्कछे, एटले विचारणा छे, इत्यर्थ ॥१ए॥ हवे गोशालक प्रत्ये आर्द्रकुमार कहेछे के, अहो गोशालक! जे, तें ए वाणियानो दृष्टात देखाडयो, ते सर्वथकी सरखो, किंवा देशथकी सरखो ? माटे जो ते दृष्टात देशथकी सरखाछे, ए रीतें ते जो वाणियानो दृष्टात देखाडया होय तो, ए वातें अमने अलाभ काइ नथी कारण के, वाणियो ज्या ज्या लाभ देखे, त्या त्या क्रय विक्रयादिक व्यापार करे ए प्रकारे ए तहारो दृष्टात देश पणाथी सरखाछे अथवा जो सर्वथकी सरखोछे ? एम तु कहीश तो, ए वात, घटेज नहीं,कारणके,भगवत श्री महावीर देव,सावद्यानुष्ठान रहित,(नवनकुज्जाविहुणेपुराण के०) तथा ते नवु कर्म कोइ पण करे नहीं,अने पुरातन कर्मने खपावे एवाछे तथा (विच्चामइ के०) विच्चा एटले विशेष त्याग करीने अमइ एटले डुर्मतिने जेणे, (ताइयमाहएव के०) त्रायी एटले छ जीवनिकायनो रक्ष पाल, एव एटले एवा जे श्री महावीर स्वामी ते (पन्नावयाबन्नवतित्तिवुत्ता के०) एम कहे के, जेम डुर्मतिने परित्यागी जीव मुक्तिगामी थाय, एवु बालें, सामीनु वचन ते ब्रह्मव्रत छे एटले ब्रह्म शब्दें मोक्ष व्रत कह्यु एवु ब्रह्मव्रत रूप जे स्वामिनु वचन तेने मान्य करी, अनेक लोक मुक्तियें जाय एटले डुर्मतिने परित्यागे जीव मुक्तिगामी थाय (तस्सोदयहीसमणेत्तिबेमि के०) तेना लाभना अर्थी श्रमण श्री महावीरदेवज जाणवा,

मन्यते न परलोकसुखमिति लाभादर्शनात्तत्र न याति जगवान्नतु द्वेषबुद्ध्या । यदप्युक्तं । पन्नितनरगुटिकादिविद्यासिद्धजयान्न तेपा स्थाने यातीत्येतत्प्रलापप्राय । यत । स वैरपि तीर्थिकै सर्वज्ञस्य जगवतोमुखमप्यवलोकयितु न शक्यते वादस्तु दूरापास्तएवेति॥१७॥

॥ टीका–एतज्ञोशालकमतं परिहर्तुकामआर्द्रकआह् । (णोकामकिच्चाइत्यादि) सहि जगवान्प्रेक्षापूर्वकारितया नाकामकृत्योजवति कमन कामइन्ना न कामोऽकामस्तेन कृत्यं कर्तव्य यस्यासावकामकृत्य सएवजूतोन जवत्यनिन्नाकारी न जवतीत्यर्थ । योह्युत्प्रेक्षा पूर्वकारितया वर्तते सोऽनिष्टमपि स्वपरात्मनोनिरर्थकमपि कृत्य कुर्वीत जगवास्तु सर्व ज्ञ सर्वदर्शी परहितैकरत कथ स्वपरात्मनोर्निरुपकारकमेव कुर्यात्तथाच बालस्येव कृत्यं यस्य सबालकृत्योन चासौ बालवदनालोचितकारी न परानुरोधान्नापि गौरवाद्धर्मदे शादिक विधत्तेऽपितु यदि कस्यचिद्भव्यसत्वस्योपकाराय तद्भाषितं जवति तत प्रवृत्तिर्जवति नान्यथा तथा न राजानियोगेनासौ धर्मदेशनादौ कथचित्प्रवर्तते तत कु तस्तस्य नयेन प्रवृत्ति स्यादित्येव व्यवस्थिते केनचित्कचित्सशयरुत प्रश्न व्यागृणीया द्यदि तस्योपकारोजवत्युपकारमतरेण नच नेव व्यागृणीयाद्यदिवाऽनुत्तरसुराणा मन पर्यायज्ञानिनांच इव्यमनसैव तन्निर्णयसनवादतोन व्यागृणीयादित्युच्यते । यदप्युच्यते नवता यदि वीतरागोऽसौ किमिति धर्मकथा करोतीति चेदित्याशक्याह् । स्वकामकृत्ये न स्वेन्नाचारिकारितयाऽसावपि तीर्थकृन्नामकर्मण क्षपणाय न यथाकथचिदतोऽसावग्ला नइहास्मिन्ससारे आर्यक्षेत्रे चोपकारयोग्यआर्याणां हि सर्वहेयधर्मदूरवर्तिना तडपकारा धर्मदेशना व्यागृणीयादसाविति ॥ १७ ॥ किचान्यत् । (गतेत्यादि) सहि जगवान् परहितैकरतोगत्वापि विनेयासन्नमथवाप्यगत्वा यथाजव्यसत्वोपकारोजवति तथातथा ज गवतोर्हतोधर्मदेशना विदधत्युपकारे सति गत्वापि कथयत्यसतितु स्थिताअपि न कथय तीत्यतोन तेपा रागद्वेपसनवइति केवलमाशुप्रज्ञ सर्वज्ञ समतया समदृष्टितया चक्रवर्ति इमकादिषु पृष्टोवा धर्म व्यागृणीयात् । जहा पुणस्स कब्बइ तहा तुब्बस्स कबइ इति वच नादित्यतोन रागद्वेषसद्भावस्तस्येति।यत्पुनरनार्यदेशमसौ न व्रजति तत्रेदमाह् । अनार्या क्षेत्रजापाकर्मनिर्बहिष्कृतादर्शनतोपि परिसमतादितागता प्रत्रष्टाइति यावत्। तदेवमसौ जगवानित्येतत्तेषु सम्यग्दर्शनमात्रमपि कथचिन्न जवतीत्याशकमानस्तत्र न व्रजतीति। यदिवा विपरीतदर्शिनोन जवत्यनार्या शकयवनादयस्तेहि वर्तमानसुखमेवैकमगीक त्य प्रवर्तते न पारलौकिकमगीकुर्वत्यत सद्धर्मपराङ्मुखेषु तेषु जगवान्न याति न पुनस्तद्वे पादिबुद्ध्येति । यदप्युच्यते त्वया यथानेकशास्त्रविशारदगुटिकासिद्धविद्यासिद्धादितीर्थि कपराजवजयेन न तत्समाजे गन्नतीत्येतदपि बालप्रजल्पितप्राय । यत सर्वज्ञस्य जगव

त समस्तैरपि प्रावाडकैर्मुखमप्यवलोकयितु न शक्यते वादस्तु दूरोत्सादितएवेत्यत कुतस्तस्य परानव । नगवास्तु केवलालोकेन यत्रैव स्वपरोपकार पश्यति तत्रैव गत्वा पि धर्मदेशनां विधत्तइति ॥ १७ ॥

पन्न जहा वणिए उदयही, आयस्स हेउ पगरेति सग ॥ तऊवमे समणे नायपुत्ते, इच्चेव मे होति मती वियक्को ॥१ए॥ नव न कुज्जा विहुणे पुराण, विच्चा मइ ताइयमाह एवं ॥ पन्नावया बन्नवतित्ति वुत्ता तस्सोदयही समणे त्तिबेमि ॥ २० ॥

अर्थ—वली बीजा प्रकारे गोशालक केहेले के,अहो आर्द्रकुमार! (पन्नजहावणिए इयही के०) जेम कोइ वाणियो उदयार्थी एटले लाजार्थी उतो व्यवहार योग्यकरियाणु एटले कर्पूर, अगर, कस्तूरी, अने वस्त्रादिक, ते देशातरथकी लेइ आवे (आयस्सहेउपगरेतिसग के०) पोताना लाननें अर्थे महाजननो सग करे, (तऊवमेसमणेनायपुत्ते के०) तेम तमारो तीर्थकर श्रमण, ज्ञातपुत्र पण ते वाणियासमान जाणवो के मके, कोइ एक लाजनें अर्थे अनेक महाजनना वृद माहे वेसेछे, (इच्चेवमेहोतिमतीवियक्को के०) माटे ए प्रकारे महारी मतिछे, अने एवो माहारो वितर्कछे, एटले विचारणाछे, इत्यर्थ ॥१ए॥ हवे गोशालक प्रत्ये आर्द्रकुमार कहेछे के, अहो गोशालक! जे, तें ए वाणियानो दृष्टात देखाडयो, ते सर्वथकी सरखो, किंवा देशथकी सरखो? माटे जो ते दृष्टात देशथकी सरखोछे, ए रीतें तें जो वाणियानो दृष्टात देखाडयो होय तो, ए वातें अमने अलाज काइ नथी कारण के, वाणियो ज्या ज्या लाज देखे, त्या त्या क्रय विक्रयादिक व्यापार करे ए प्रकारे ए तहारो दृष्टात देश पणाथी सरखोछे अथवा जो सर्वथकी सरखोछे? एम तु कहीश तो, ए वात, घटेज नहीं,कारणके,नगवत श्री महावीर देव,सावद्यानुष्ठान रहित,(नवनकुज्जाविहुणेपुराण के०) तथा ते नवु कर्म कोइ पण करे नहीं,अने पुरातन कर्मने खपावे एवाछे तथा (विच्चामइ के०) विच्चा एटले विशेषे त्याग करीने अमइ एटले कुमतिने जेणे, (ताइयमाहएव के०) त्रायी एटले ब जीवनिकायना रक्ष पाल, एव एटले एवा जे श्री महावीर स्वामी ते (पन्नावयाबन्नवतित्तिवुत्ता के०) एम कहे के, जेम कुगतिने परित्यागी जीव मुक्तिगामी थाय, एवु वालें, स्वामीनु वचन ते ब्रह्मव्रत छे एटले ब्रह्म शब्दें मोक्ष व्रत कह्यु एवु ब्रह्मव्रत रूप जे स्वामिनु वचन तेने मान्य करी, अनेक लोक मुक्तियें जाय एटले कुमतिने परित्यागे जीव मुक्तिगामी थाय (तस्सोदयहीसमणेत्तिबेमि के०) तेना लाजना अर्थी श्रमण श्री महावीरदेवज जाणवा,

हु एम कहु छु,ए कारणे सर्व प्रकारथकी वाणियानी ते स्वामीने उपमा न संजवे,परंतु देशथकी ज्यां ज्यां स्वामी लाज देखे, त्यां त्यां विचरे ए उपमा सत्यछे इत्यर्थ ॥१०॥

॥ दीपिका–अथ गोशाल प्राह । यथा वणिक् उदयार्थी लाजार्थी पण्यक्रयाणकं देशांतरे गत्वा विक्रीणाति आयस्य लाजस्य हेतोर्महाजनसंग प्रकरोति तडुपमया श्रमणोज्ञातपुत्रइत्येव मे मम मति स्यात् वितर्कोविचारणा च ॥ १९ ॥ आर्द्रकमुनिराह । जगवान् सावद्यानुष्ठानरहितोनव कर्म न कुर्यात् पुरातन च विधूनाति अपनयति त्यक्त्वा अमतिं विमति त्रायी सजगवान् परेन्योप्येवमाह । यथा विमतित्यागेन मोक्षगामी स्यादिति । एतावता ग्रथेन ब्रह्मणोमोक्षस्य व्रतमित्युक्त तस्य मोक्षानुष्ठानस्य उदयार्थी लाजार्थी श्रमणोजगवान् । ततोवणिग्दृष्टांत सर्वसाधर्म्येण न प्रवर्त्तते जगवत साव द्यानुष्ठानरहितत्वात् देशसाधर्म्यंतु युक्तमेव यथा वणिग्यत्र लाज पश्यति तत्र क्रियां व्यापारयति तथा जगवानपीति एतदहं ब्रवीमीत्यार्द्रकमुनिराह ॥ २० ॥

॥टीका–पुनरन्येन प्रकारेण गोशालकआह ॥ (पन्नजहेत्यादि) यथा वणिक् कश्चिडुद यार्थी पण्य व्यवहारयोग्य जाण्ड कर्पूरागरुकस्तूरिकावरादिक देशांतर गत्वा विक्रीणाति त था आयस्य लाजस्य हेतो कारणान्महाजनसंग विधत्ते तडुपमोयमपि जवत्तीर्थकर श्र मणोज्ञातपुत्रइत्येव मे मम मतिर्जवति वितर्कोमीमांसावेति ॥ १९ ॥ एवमुक्तोगोशाल केनार्द्रकआह ।(नवनकुज्जाइत्यादि) योप जवता दृष्टांत प्रदर्शित सकिं सर्वसाधर्म्येणो त देशत ?। यदि देशतस्ततोन न क्षतिमावहति । यतोवणिग्वत् यत्रैवोपचर्य पश्यति त त्रैव क्रिया व्यापारयति न यथाकथंचिदित्येतावता साधर्म्यमस्त्येव । अथ सर्वसाधर्म्येणे ति तन्न युज्यते । यतोजगवान् विदितवेद्यतया सावद्यानुष्ठानरहितोनव प्रत्यग्र कर्म न कुर्यात् तथा विधूनयत्यपनयति पुरातन यन्नवोपग्राहि कर्मचतुष्टय तथा त्यक्त्वा अमतिं वि मतिं त्रायी जगवान् सर्वस्य परित्राणशीलोविमतिपरित्यागेन चैवजूतएव जवतीति जा च । त्रायी वा मोक्षप्रति। अयवयमयपयचयतयणयगतावित्यस्य रूप । सएव जगवाने वाह । यथा विमतिपरित्यागेन चैवजूतएव जवतीत्येतावता च सदर्नेण ब्रह्मणोमोक्षस्य व्रतं ब्रह्मव्रतमित्येतडुक्त । तस्मिन् चोक्ते तदर्थे वाऽनुष्ठाने क्रियमाणे तस्योदयार्थी श्रम णइति ब्रवीम्यहमिति ॥ २० ॥

समारजंते वणिया जूयगाम,परिग्गहं चेव ममायमाणा॥ ते णा
तिसजोगमविप्पहाय, आयस्स हेउं पगरंति संगं ॥२१ ॥ वित्ते

सिणो मेहुणसंपगाढा, ते भोयणठ्ठा वणिया वयंति ॥ वयंतु कामेसु अज्ञोववन्ना, अणारिया पेमरसेसु गिद्धे ॥ २२ ॥

अर्थ–वली आर्द्रकुमार कहेछे के, (समारजतेवणियाभूयगाम के०) ते वाणियो चतुर्दश प्रकार पणे, भूतग्राम एटले जीवनो समूह समारंभे, एतावता छकायनी हणनार एवी क्रियाने विषे प्रवर्त्ते, एटले क्रयविक्रयने अर्थे शकट, उंट, घोडा, तथा बलदने पीडा उपजावे, (परिग्गहंचेवममायमाणा के०) तथा परिग्रह, चतुष्पदादिक तेने विषे ममत्व करे वली (तेणातिसंजोगमविप्पहायआयस्सहेउपगरंतिसंग के०) ते वाणिया ज्ञाति स्वजनादिकनो संयोग छांड्याविना, लाभनें कारणे अन्य बीजा साथे संबंध करे, अने श्री वीतराग तो केवा छे ? तो के, छजीवनिकायना रक्षपाल, नि परिग्रही, ज्ञातिस्वजननो संग त्यागीने, सर्वत्र अप्रतिबंध नि केवल धर्मनोज लाभ गवेषता धर्म देशना आपेछे ए कारणमाटें भगवंत अने वाणियाने सर्वथकी सरखा पणु नथी ॥२१॥ वली आर्द्रकुमारज कहेछे के, हे गोशालक ! (वित्तेसिणो के०) वली वाणिया वित्त एटले धनना गवेषण हार होय, तथा (मेहुणसंपगाढा के०) मैथुननें विषे आसक्त होय, (तेभोयणठ्ठावणियावयंति के०) तथा भोजनने अर्थे ज्यां त्यां परिभ्रमण करे,माटे अमे ते वाणियाने एवा कहियें छैयें (वयंतुकामेसुअज्झोववन्ना के०) वली जो ते वाणीया कामभोगने विषे गृद्ध, तथा (अणारियापेमरसेसुगिद्धे के०) अनार्य कर्मना करनार, तथा प्रेमरसने विषे गृद्ध एटले मूर्छित छे, अने भगवंत श्री अरिहंत देव एवा नथी तो ते वाणियानी साथे सरखा पणु भगवंतने केम कहियें ? ॥ २२॥

॥ दीपिका–वणिजोभूतग्रामं समारभंते हिंसंति परिग्रहं स्वीकुर्वंति ममायमाणाममेदमिति व्यवस्थापयंत ते वणिजोज्ञातिसंयोगमविप्रहायात्यक्त्वा यस्य लाभस्य हेतोरपरेण सह संग संबंध कुर्वंति ॥ २१ ॥ वणिजोवित्तैषिणोधनार्थिन मैथुने संप्रगाढा प्रसक्ता तथा ते भोजनार्थमहारार्थमितश्चेतश्च व्रजंति । वयंतु एवं ब्रूमोयथा ते वणिजकामेष्वध्युपपन्नागृद्धाअनार्या प्रेमरसेषु गृद्धा अतोभगवंत सर्वसाधर्म्यं नास्ति ॥ २२॥

॥ टीका–नचैवंभूतावणिजइत्येतदार्द्रककुमारोदर्शयितुमाह । (समारभंतइत्यादि) ते हि वणिजश्चतुर्दशप्रकारमपि भूतग्रामं जंतुसमूहं समारभंते तडुपमर्दिका क्रिया प्रवर्त्तयंति क्रयविक्रयार्थं शकटयानवाहनोष्ट्रमंडलिकादिनिरनुष्ठानैरिति तथा परिग्रहं द्विपदचतुष्पदधनधान्यादिकं ममीकुर्वंति ममेदमित्येवं व्यवस्थापयंति ते हि वणिजोज्ञातिभिः स्वजनैः सह यः संयोगस्तमविप्रहायापरित्याज्य यस्य लाभस्य हेतोर्निमित्तादपरेण सार्द्ध

सग सबध कुर्वंति । जगवांस्तु षड्जीवरक्षापरोपरिग्रहस्त्यक्तस्वजनपक्ष सर्वत्राप्रतिबद्धो धर्मार्थमन्वेषयन् गत्वापि धर्मदेशना विधत्ते अतोजगवतोवणिग्भि सार्द्ध न सर्वसाधर्म्य मस्तीति ॥ २१ ॥ पुनरपि वणिजा दोषमुद्भावयन्नाह । (वित्तेसिणोइत्यादि) वित्त इव्यं तदन्वेष्टु शील येषां ते वित्तेषिणस्तथा मैथुने स्त्रीसपर्के सम्प्रगाढाअध्यूपपन्नास्तथा ते जो जनार्थमाहारार्थं वणिजइतश्चेतश्च व्रजति वदति वा तास्तु वणिजोवयमेव ब्रूमोयथैते का मेष्वध्युपपन्नागृद्धाअनार्यकर्मकारित्वादनार्यारसेषुच सातागौरवादिषु गृद्धामूर्छितानन्वे वभूतानगवतोर्हत कथं तेषा ते सह साधर्म्यमिति? । दूरतएव निरस्तैषा कथेति ॥ २२ ॥

आरंजग चेव परिग्गह च, अविउस्सिया णिस्सिय आयदंमा ॥
तेसिं च से उदए ज वयासी, चउरतणताय डुहायणेह ॥२३॥ णेग
त णच्चतिय उदएव, वयति ते दोवि गुणोदयमि ॥ से उदए साति
मणतपत्ते, तमुदय साहयइ ताइ णाइ ॥ २४ ॥

अर्थ—वली आर्द्रकुमारज कहेछे (आरंजगचेवपरिग्गहच के०) आरंज जे सावद्या नुष्ठान रूप, तथा परिग्रह ते धनधन्यादिक, नव प्रकारे तेनी ममत्वने (अविउस्सियाणि स्सिय के०) न ठामीने, तेहिज आरंज परिग्रहने विषे निश्चे थकी बधाणा एवा वाणिया होय वली केवा होय? तोके, (आयदंमा के०) पोताना आत्माने दंमनार, (तेसिंच सेउदएजवयासी के०) वली हे गोशालक ! तु कहेछे के, ते वाणिया लाजना अर्थीछे माटें ते लाज तो एवो वाणियानो जाणवो के, (चउरतणतायडुहायणेह के०) ते वाणि याने जे लाजछे ते लाज चतुर्गतिक ससारने, तथा तेना डुःखनें अर्थे थाय, अने ते वा णियानो लाज एकातिक एटले एकात पण न होय ॥२३॥ वली तेहिज देखाडेछे (णे गतणच्चतियउदएव के०) वली अहो गोशालक ! ते वाणियानो लाज पण एकांतिक नथी, कोई वारे लाज वाढता अलाज पण थाय तथा आत्यंतिक एटले सर्वकालजावी लाज पण नथी, कोइ वारे होय, अने कोइ वारे न पण होय (वयतितेदोविगुणोदयं मि के०) ते व्यापारना जाण एम कहेछे के, नफो पण थाय अथवा टोटो पण थाय, ए बे जाव होय, माटें ते बे जाव विगतगुणोदय जाणवा तो ते लाजथकी शुं, जे एकां तिक अने आत्यंतिक नहीं, अनें वली ते लाज अनर्थ जणी प्रवर्त्ते? (सेउदएसातिमणंत पत्ते के०) अने ते जे श्री जगवतनो केवलज्ञान प्राप्ति लक्षण, तथा निर्जरानु कारण, एवो जे लाज, ते सादि अनंत जाणवो (तमुदयसाहयइताइणाइ के०) एवा लाज सहित पोतें जगवत छे, अनें बीजानें पण एवो लाज आपेछे ते जगवत कहेवाछे ! तो

के, त्रायी एटले आसन्न नव्यने डुःखथकी राखनार ने, तथा ज्ञानी एटले जाणेली व स्तुने विद्यमान जेनें एवा नगवंतने वाणियानी उपमा केम देवाय ? ॥ २४ ॥

॥ दीपिका–सारंनपरिग्रहं वाऽव्युत्सृज्याऽत्यक्त्वा तत्रैव निःसृतावद्धाआत्मैव दंमोदि सकोयेषां ते तथा तेषां च वणिजामुदयोलानोयदर्थं ते प्रवृत्ता यं च त्वं लानं वदसि स तेषां चतुरंतश्चतुर्गतिकोयं संसारोऽनंतस्तस्मै तदर्थं नवति तथा डुःखाय नवति नच स लानोऽपि तस्यैकांतिकः ॥ २३ ॥ एतदेवाह । एकांतिकः आत्यंतिकश्च तेषां वणिजामुद योलानोन विद्यते । लानार्थं प्रवृत्तस्य हानेरपि दर्शनात् । एवं वदंति तद्विदः तौ च द्वावपि नावौ विगतगुणोदयौ । कोर्थः । योनैकांतिकः १ अनात्यंतिकश्च २ किं तेन लाने नेति यः सेतस्य नगवतउदयोलानोधर्मदेशनादिः सच सादिरनंतश्च एवंनूतमुदयं प्राप्तो ऽन्येषामपि तादृशं साधयति कथयति । त्रायी ज्ञातीच ज्ञातं वस्तु विद्यते यस्य सज्ञा ती ज्ञातसर्वज्ञेयः एवंनूतेन नगवता तेषां पूर्वोक्तानां वणिजां कथं सर्वसाम्यमिति ॥२४॥

॥ टीका–किंचान्यत् । (आरंनगंचेवइत्यादि) आरंनं सावद्यानुष्ठानं च तथा परिग्रहं वाऽ व्युत्सृज्यापरित्यज्य तस्मिन्नेवारंने क्रयविक्रयपचनपाचनादिके तथा परिग्रहेचधनधान्यहिर ण्यसुवर्णद्विपदचतुष्पदादिके निश्चयेन श्रितावद्धानि श्रितावणिजोनवंति तथात्मैव दंमोदम यतीति दंमोयेषां ते नवंत्यात्मदंमाअसदाचारप्रवृत्तेरिति। नावोपि चैषां वणिजां परिग्रहारंन वतां सउदयोलानोयदर्थं ते प्रवृत्ताय च त्वं लानं वदसि सतेषां चतुरंतश्चतुर्गतिकोयं संसा रोऽनंतस्तस्मै तदर्थं नवतीति न चेद्दासावेकांतेन तत्प्रवृत्तस्यापि नवतीति ॥२३॥ एतदेव दर्शयितुमाह । (णेगंतिणच्चंतिइत्यादि) एकांतेन नवतीत्येकांतिकस्तथा तल्लानार्थं प्रवृ त्तस्य विपर्ययस्यापि दर्शनात्तथा नात्यात्यंतिकः सर्वकालनावी तत्क्षयदर्शनात्ततेषां उदयोलानोनेकांतिकोनात्यंतिकश्चेत्येवं तद्विदोवदंति । तौच द्वावपि नावौ विगतगुणो दयौ नवतः । एतडुक्तं नवति । किं तेनादयेन लानरूपेण योनेकांतिकोनात्यंतिकश्च प श्चादर्थायेति । यश्च नगवतः सेतस्य दिव्यज्ञानप्राप्तिलक्षणउदयोलानोयोवा धर्मदेशनावाप्त निर्जरालक्षणः सच सादिरनंतश्च तमेवनूतमुदयं प्राप्तोनगवानन्येषामपि तथानूतमेवोदयं साधयति कथयति श्लाघते वा । किंनूतोनगवास्तायी। थयवयमयपयचयतयणयगतावित्य स्य दंमकधातोर्णिनिप्रत्यये रूपं । मोक्षं प्रति गमनशीलइत्यर्थः । त्रायी वासन्ननव्यानां त्राण करणात्तथा ज्ञातीज्ञाता क्षत्रियाज्ञातं वा वस्तुजातं विद्यते यस्य सज्ञाती विदितसमस्तवेद्य इत्यर्थः । तदेवंनूतेन नगवता तेषां वणिजां निर्विवेकिनां कथं सर्वसाधर्म्यमिति ॥ २४ ॥

अहिंसय सव्वपयाणुकंपी, धम्मे ठियं कम्मविवेगहेऊ॥ तमाय दंमेहि समायरंता, अबोहीए ते पडिरूवमेयं ॥२५॥ पिन्नागपिंमी मवि विद्ध सूले, केई पएज्जा पुरिसे इमेत्ति॥ अलाउयं वावि कुमा रएत्ति, स लिप्पती पाणिवहेण अम्ह ॥ २६ ॥

अर्थ–हवे वली कहेले के, देवोना करेला समवसरण, सोनानुं कमल, देवछंदो, सिंहासन इत्यादिक पदार्थोनो परिजोग करतो थको ते,कर्मो थकी शी रीतें न लेपाय? एवुं गोशालकनुं वचन आशंकीनें,आर्द्रकुमार कहेले के,(अहिंसय के०) ए जगवंत श्री महावीर देव सर्वजीवनें अहिंसता एटले अणहणता थका,समवसरणादिकनो उपजोग करेले,परं तु ते समवसरणादिक उपर, श्री वीतरागदेवनो लगारमात्र पण प्रतिबंध नथी, ए कारण माटे एमने कर्म न लागे वली स्वामी कहेवाले? तो के,(सव्वपयाणुकंपी के०) सर्व प्रजा एटले सर्वजीव तेनी अनुकंपाना करनार,(धम्मेठियकम्मविवेगहेऊ के०) एवा श्री जगवंत धर्मने विषे प्रवर्त्तता कर्म विवेकना कारण जूत,एवा तेउंने (तमायदंमेहिसमायरंता के०) आत्मदंम एटले अनेक असमंजस वचने करी तारा सरखा, आत्मदंमने आचारता थका वणिक्नो दृष्टांत देले, माटे (अबोहीएतेपडिरूवमेयं के०) ते अबोधी एटले अज्ञानी प्रतिरूप जाणवा, एयं एटले ए एक तेनुं अज्ञान पणुंज जाणवुं, केमकें एक तो पोतें अज्ञान पणे प्रवर्त्ते,ए पेहेलुं अज्ञान पणुं वली त्रिजगत् पूज्य, सर्व अतिशयना निधान, एवा अरिहंतने वैश्यादिकनी उपमा आपे, ते बीजुं अज्ञान पणुं माटे ते जीव एम करता थका पोताना बोध बीजनो नाश करेले इत्यर्थः ॥ २५ ॥ हवे इत्यादिक पूर्वोक्त गोशालकनां वचनोनुं निराकरण करीनें आर्द्रकुमार मुनि आगल चाल्या, तेवारे वच्चे शाक्यपुत्रियदर्शी नी एटले बौद्ध मल्या तेणे एम कह्युं के,हे आर्द्रकुमार! तें गोशालक प्रत्ये वाणियानो दृष्टांत दूषव्यो ते युक्तज कह्युं, कारण के, बाह्य अनुष्ठान, प्राय शून्यले, अंतरंग अनु ष्ठाननेज मोक्षांग प्रधान जाणवुं, ए कारण माटे अमारा सिद्धांतमांहे ते अंतरंगानुष्ठाननुं साधवुं कह्युंले ते अमे कहिये बैये माटें तुं सावधान थको सांजल ? (पिन्नागपिंमीमवि विद्धसूले के०) पिन्नाग पिंमी एटले खलपिंमी ते अचेतनजले अने ते कोइ एक स्थानके ले तेनीपर कोइ एक पुरुषे वस्त्र नाख्युं, पढी ते खलपिंमने शूलीये प्रोइने, (केइपएज्जा पुरिसेइमेत्ति के०) कोइ एक म्लेछें पुरुषनी बुद्धिये लइने अग्नि उपर पचाव्यो, तथा वली (अलाउयवाविकुमारएत्ति के०) तुंबडुं देखीने ए कुमारले एवी बुद्धियें एक पुरुषे तेने अग्नि उपर पचाव्यो,(सलिप्पतीपाणिवहेणअम्ह के०) तो हवे ए बेहुजण, पुरुष अने कु मारहत्याने पापे लेपाय अमारा सिद्धांतमांहे ए जावले शुजाशुज बंधनुं मूल मन परि

णामज जाणवु, चित्तमांहे जो जीवघातनो परिणामछे तो थणकखु थकु पण, प्राणघातनु पाप लागेछे ॥ २६ ॥

॥ दीपिका–असो जगवान्समवसरणाद्युपजोग कुर्वन्नप्यहिंसन् । कोर्थ । नहि तत्रार्हत कोप्याशंसाप्रतिबंधोवास्ति साम्यरसलीनत्वात् । सर्वेषां प्रजाजतवस्तेषामनुकंपी एवंविध धर्मे स्थितं तं जवादृशाश्चात्मदंमै समाचरतोवणिगादितुल्य कुर्वंति एतच्चाबोधेरज्ञातस्य प्रतिरूप अज्ञानविलसितमित्यर्थः । एवं गोशाले निराकृते बौद्धा प्राडुस्त्वया वणिग्दृष्टांतदूषणेन बाह्यानुष्ठानदूषितं तद्वर रुतं यतोऽस्मत्सिद्धातेप्यांतरमेवानुष्ठान जवमोक्षयो प्रधानांगमिति । तत्त्व शृणु ॥२७॥ पिण्याक खलस्तस्य पिंमी शकलमचेतनमपि कदाचिन्म्लेछादिविषये संभ्रमे केनचिन्नश्यता खलोपरि वस्त्र क्षिप्त तच्च म्लेछेन पुरुषोयमिति बुद्ध्या गृहीतं ततोसौ म्लेछोवस्त्रवेष्टिता खलपिंमी पुरुषबुद्ध्या शूले प्रोता पावके पचेत् तथाऽलाबुक तुंबक कुमारोयमिति मत्वाऽग्नौ पचेत् अस्माकं मते सप्राणिवधेन लिप्यते चित्तस्य डुष्टत्वात् ॥ २६ ॥

॥ टीका–सांप्रतं रुतदेवसमवसरणपद्मावलीदेवछंदकसिंहासनाद्युपजोग कुर्वन्नप्याधाकर्मकृतवसतिनिषेधकसाधुवत्कथं तदनुमतिरुतेन कर्मणाऽसौ न लिप्यतइत्येतजोशालकमतमाशंक्याह । (अहिंसयमित्यादि) असौ जगवान् समवसरणाद्युपजोग कुर्वन्नप्यहिंसक स न्नुपजोग करोति । एतडुक्त जवति नहि तत्र जगवतोमनागप्याशंसाप्रतिबंधोवा विद्यते समतृणमणिमुक्तालोष्टकांचनतया तडुपजोग प्रति प्रवृत्तेर्देवानामपि प्रवचनोद्भिनायिपूणा कथनु नाम जव्यानां धर्माभिमुख प्रवृत्तिर्यथा स्यादित्येवमर्थमात्मलाजार्थ च प्रवर्त्तनादतोजगवानहिंसकस्तथा सर्वेषां प्रजायतइति प्रजाजतवस्तदनुकंपी च तान्संसारे पर्यटतोनुकंपयते तच्छीलश्च तमेवरूप धर्मपरमार्थरूपे व्यवस्थित कर्मविवेकहेतुभूतं जवद्विधाश्चात्मदंमै समाचरतश्चात्मकल्प कुर्वंति । वणिगादिनिरुदाहरणैरेतच्चाबोधेरज्ञानस्य प्रतिरूप वर्तते एक तावदिदमज्ञान यत्स्वत कुमार्गप्रवर्तन । द्वितीय चैतत्प्रतिरूपमज्ञान यज्जगवतामपि जगद्यानां सर्वातिशयनिधानजूतानामितरै समत्वापादनमिति ॥ २५॥ सांप्रतमार्द्रककुमारमपहस्तितगोशालक ततोजगवदभिमुखं गच्छतं दृष्ट्वाथांतराले शाक्यपुत्रीयाभिक्षवइदमूचुर्यदेत द्वणिग्दृष्टांतदूषणेन बाह्यमनुष्ठान दूषितं तच्चोजन रुतं जवता यतोऽतिफल्गुप्राय बाह्यमनुष्ठान आंतरमेव त्वनुष्ठान संसारमोक्षयो प्रधानांगमस्मत्सिद्धांते चैतदेव व्यावर्ण्यते । इत्येतदार्द्रककुमार जो राजपुत्र! त्वमवहित शृणु श्रुत्वाचावधारयेति जणित्वा ते भिक्षुका आंतरानुष्ठानसमर्थकमात्मीयसिद्धांताविर्जावनायेदमाहु । (पिन्नागेत्यादि) पिण्याक

खलस्तस्य पिंडिर्नितक तदचेतनमपि ,सत् कस्मिंश्चित्सन्नमे म्लेछादिविषये केनचित्पस्य ता प्रावरण खलोपरि क्षिप्त तच्च म्लेछेनान्वेष्टु प्रवृत्तेन पुरुषोयमिति मत्वा खलपिंमया स ह गृहीतं ततोसौ म्लेछोवस्त्रवेष्टिता ता खलपिंमीं पुरुषबुद्ध्या शूले प्रोतां पावके पचेत् तथाऽलाबुक तुंबक कुमारोयमिति मत्वाऽग्नावेंव पपाच सचैवचित्तस्य दुष्टत्वात्प्राणिवध जनितेन पातकेन युज्यते। अस्मत्सिद्धांते चित्तमूलत्वाच्छुभाशुभबधस्येत्येव तावदकुशल चित्तप्रामाण्यादकुर्वन्नपि प्राणातिपातप्रतिघातफलेन युज्यते ॥ २६ ॥

अहवावि विद्धूण मिलक्खु सूले, पिन्नागबुद्धीइ नरं पएज्जा ॥
कुमारगं वावि अलावुयंति, न लिप्पइ पाणिवहेण अम्हं ॥२७॥
पुरिसं च विद्धूण कुमारगं वा,सूलंमि केई पएज्जायतेए ॥ पिन्नाय
पिंमे सति मारुहेत्ता, बुद्धाण तं कप्पति पारणाए ॥ २८ ॥

अर्थ—वली एहिज दृष्टांत विपरीत पणे करीने कहेछे (अहवावि कें०) अथवा कोइ एक सत्यपुरुषने (पिन्नागबुद्धिइ के०) खलपिंमीनी बुद्धिये करी कोइ एक (मिल क्खु के०) म्लेछ, (सूले के०) शूलिये करी (विद्धूण के०) विंधीने प्रोइने (नरं के०) मनुष्यने, (पएज्जा के०) अग्नियें करी पचावे, अने (कुमारगवाविअलाबुयंति के०) त था कुमार बालकने देखीने तेने तुंबडानी बुद्धि लावीने, अग्निमां पचावे, ए बेहुजणनें मनपरिणाम विशेष एवु (नलिप्पइपाणिवहेणअम्हं के०) प्राणवधनु पाप लागे नहीं, ए अमारा शास्त्रनु रहस्य जाणवु ॥२७॥ वली पण तेहिज दृष्टांत कहेछे (पुरिसंचविद्धूण कुमारगंवा के०) पुरुष अथवा कुमारने (सूलंमि के०) शूलीये (विद्धूण के०) वींधीने प्रोइने (केइपएज्जायतेएके०) कोइएक पुरुष अग्निनें विषे पचावे (पिन्नायपींमेसतिमारु हेत्ता के०) अने मनमाहें एवो नाव आणे के ए खलपिंमीछे (बुद्धाणतंकप्पतिपारणाए के०) तेनी बुद्धदर्शीजनने पण पारणा नणी कल्पेतो, अन्य बीजानु शु कहेवु? एताव ता मनसाथे असंकल्पितछे माटे कर्म न लागे एवो अमारो मतछे ॥ २८ ॥

॥दीपिका—अथवा सत्य पुरुष खलबुद्ध्या कश्चिन्म्लेछ शूले प्रोतमग्नौ पचेत् कुमारकं बाल वाऽलाबुबुद्ध्या पचेन्नासौ प्राणिवधेन लिप्यतेस्माकमिति प्राणिवधाभिप्रायाभावात् ॥ २७ ॥ पुरुष कुमारकंवा शूले विध्वा कश्चिज्जाततेजसि वन्हौ आरुह्य पचेत् खलपिं मीयमिति मत्वा सतीं शोजना तदेतद्बुद्धाना शाक्याना कल्पते पारणाय नोजनाय। एव मसंकल्पित कर्मचय न यात्यस्मन्मते ॥ २८ ॥

॥ टीका–अमुमेव दृष्टांतं वैपरीत्येनाह । (अहवावीत्यादि) अथवापि सत्पुरुष 'खलबुद्ध्या कश्चिन्म्लेछ शूलप्रोतमग्नो पचेत्तथा कुमारक बाल तुंबकबुद्ध्याग्नावेव पचेन्नै वमेवासौ प्राणिवधजनितेन पातकेन लिप्यतेऽस्माकमिति ॥ २७ ॥ किंचान्यत् । (पुरिस मित्यादि) पुरुष वा कुमार वा विध्वा शूले कश्चित्पचेज्जाततेजस्यग्नावारुह्य खलपिंमीयमि ति मत्वा सतीं शोभना तदेतद्बुद्धानामपि पारणाय भोजनाय कल्पते योग्य भवति कि मुतापरेषामेव सर्वास्ववस्थास्वचिंतितं मनसा सकल्पित कर्मचय नागछत्यस्मत्सिद्धांते । त डुक्त अविज्ञानोपचितं परिज्ञानोपचितमीर्यापथिक स्वप्नांतिक चेति कर्मोपचय न याति ॥२७

सिणायगाण तु डुवे सहस्से, जे भोयए णितिए भिक्कुयाण॥ ते पुन्नखंध सुमहं जिणित्ता, भवंति आरोप्प महंतसत्ता॥ २ए॥ अ जोगरूवं इह संजयाण, पावं तु पाणा णयसज्झकाउ॥ अबोहि ए दोएहवि तं असाहु, वयंति जेया विपडिस्सुणंति ॥ ३० ॥

अर्थ–हवे वली शाक्यदर्शनीउ दानफलनो अधिकार कहेछे (सिणायगाणतुडुवेसह स्से के०) स्नातक एटले बौद्धमत प्रधान दर्शनी, तेना जे बे सहस्र तेने (जेभोयएणि तिएभिक्कुयाण के०) जे कोइ पोताना शाक्यपुत्रीय धर्म प्रवर्त्ततो एवो उपासक, प चनादिक क्रिया करीने भिक्कुने निरंतर जमाडे, (तेपुन्नखंधसुमहंजिणित्ता के०) ते पुरुष महान् पुण्यस्कंध उपार्जीने, (भवंतिआरोप्पमहंतसत्ता के०) महोटा सत्ववालो एटले श्रद्धावंत थको आरोप्य एवे नामे सर्वोत्तम देवता थाय इत्यर्थ ॥ २ए ॥ ए रीते बौद्धदर्शी नी पोताना धर्मनुं रहस्य, आर्द्रकुमार प्रत्यें देखाडीने तेने कहेवा लागा के, अहो आर्द्रकुमार ! तुं अमारो धर्म मान्य कर ! एवुं कहे थके, हवे आर्द्रकुमार तेमने क हेछे के, अहो शाक्यदर्शनीउ ! (अजोगरूवइहसंजयाण के०) अहीं तमारा दर्श नने विषे जे पूर्व भोजन आश्री वचन कह्यु ते, संयतपणाने अयोग्य छे कारणके, अहिं सानें अर्थे प्रवर्त्तमान, समिति अनें गुप्तियें करी सहित, एवा साधु होय, तेने भावशु द्धि फलदायिनी थाय ए वात खरीछे, परंतु तमारी वक्तव्यतायें, खल अनें पुरुषनी व्यक्ति पण जे न जाणे, तेनेंज भावशुद्धि कही ए कारणेज बौद्धमतिउ खल पिंमीनी बुद्धियें पुरुषनो विनाश करीने, तेना गुरुने मांस भक्षण करावे ते अत्यं त अयुक्तछे, तेज कहेछे (पावंतुपाणाणयसज्झकाउ के०) प्राणी एटले जीव, तेना विनाशरूप पाप करीने, प्रकर्षे रसगृद्ध थका रजी तेनज पुण्य बोले माटे,(अबोहिए दोएहवितंअसाहु के०) ए पाप, अबोधीनुं कारणछे तेथी ते बेहुने असाधु जाणवा, ते बे

खलस्तस्य पिण्डिन्तक तदचेतनमपि सत् कस्मिंश्चित्सन्नमे म्लेछादिविषये केनचिन्नस्य ता प्रावरण खलोपरि क्षिप्त तच्च म्लेछेनान्वेष्टु प्रवृत्तेन पुरुषोयमिति मत्वा खलपिंडमयास ह गृहीतं ततोसौ म्लेछोवस्त्रवेष्टिता ता खलपिण्डीं पुरुषबुद्ध्या शूले प्रोतां पावके पचेत् तथाऽलाबुक तुबक कुमारोयमिति मत्वाऽग्नावेव पपाच सचैवचित्तस्य दुष्टत्वात्प्राणिवध जनितेन पातकेन युज्यते। अस्मत्सिद्धांते चित्तमूलत्वाबुनाद्यनवधस्येत्येव तावदकुशल चित्तप्रामाण्यादकुर्वन्नपि प्राणातिपातप्रतिघातफलेन युज्यते ॥ २६ ॥

अहवावि विद्धूण मिलक्खु सूले, पिन्नागबुद्धीइ नर पएज्जा ॥
कुमारग वावि अलाबुयति, न लिप्पइ पाणिवहेण अम्ह ॥२७॥
पुरिस च विद्धूण कुमारग वा, सूलंमि केई पएज्जायतेए ॥ पिन्नाय
पिण्डे सति मारुहेत्ता, बुद्धाण त कप्पति पारणाए ॥ २८ ॥

अर्थ–वली एहिज दृष्टांत विपरीत पणे करीने कहेछे (अहवावि के०) अथवा कोइ एक सत्यपुरुषने (पिन्नागबुद्धिइ के०) खलपिंडीनी बुद्धियें करी कोइ एक (मिल क्खु के०) म्लेछ, (सूले के०) शूलिये करी (विद्धूण के०) विंधीने प्रोइने (नर के०) मनुष्यने (पएज्जा के०) अग्निये करी पचावे, अने (कुमारगवाविअलाबुयंति के०) त था कुमार बालकने देखीने तेने तुंबडानी बुद्धि लावीने, अग्निमा पचावे, ए बेहुजणनें मनपरिणाम विशेष एवु (नलिप्पइपाणिवहेणअम्ह के०) प्राणवधनु पाप लागे नहीं, ए अमारा शास्त्रनु रहस्य जाणवु ॥२७॥ वली पण तेहिज दृष्टांत कहेछे (पुरिसचविद्धूण कुमारगवा के०) पुरुष अथवा कुमारने (सूलमि के०) शूलीये (विद्धूण के०) वींधीने प्रोइने (केइपएज्जायतेएके०) कोइएक पुरुष अग्निनें विषे पचावे (पिन्नायपीण्डेसतिमारु हेत्ता के०) अने मनमाहे एवो नाव आणे के ए खलपिण्डीछे (बुद्धाणतंकप्पतिपारणाए के०) तेनी बुद्धदर्शीजनने पण पारणा जणी कल्पेतो, अन्य बीजानु शु कहेवु? एताव ता मनसाथे असंकल्पितछे माटे कर्म न लागे एवो अमारो मतछे ॥ २८ ॥

॥दीपिका–अथवा सत्य पुरुष खलबुद्ध्या कश्चिन्म्लेछ शूले प्रोतमग्नौ पचेत् कुमारकं बाल वाऽलाबुबुद्ध्या पचेन्नासौ प्राणिवधेन लिप्यतेस्माकमिति प्राणिवधाभिप्रायाभावात् ॥ २७ ॥ पुरुष कुमारकवा शूले विध्वा कश्चिज्जाततेजसि वन्हौ आरुह्य पचेत् खलपि ण्डीयमिति मत्वा सतीं शोभना तदेतद्बुद्धाना शाक्याना कल्पते पारणाय भोजनाय। एव मसंकल्पित कर्मचय न यात्यस्मन्मते ॥ २८ ॥

तेन्य शृण्वत्येतयोर्द्वयोरपि वर्गयोरसाध्वेतदिति। अपिच नाज्ञानावृतमूढजनभावशुद्ध्य शुद्धिर्भवति। यदिच स्यात्संसारमोचकादीनामपि तर्हि कर्मविमोक्षः स्यात्तथा भावशुद्धिमेव केवलामभ्युपगच्छता भवता शिरस्तुंडमुंडनपिंडपातादिकं चैत्यकर्मादिकं चानुष्ठानमनर्थक मापद्यते तस्मान्नैवविधया भावशुद्ध्या शुद्धिरुपजायतइति स्थितं ॥३०॥

उद्धं अहेयं तिरियं दिसासु, विन्नाय लिंगं तसथावराणं ॥ भूया भिसंकाइ डुगंछमाणा, वदे करेज्जाव कुओ विहऽत्थि ॥३१॥ पुरिसे त्ति विन्नत्ति न एवमत्थि, अणारिए से पुरिसे तहा हु ॥ कोसंभवो पिन्नगपिंडियाए, वायावि एसा वुइया असच्चा ॥ ३२ ॥

अर्थ–हवे आर्द्रकुमार, जैनमार्गना गुण कहेछे (उड्ढअहेयतिरियदिसासु के०) उंची, नीची, अने तिर्छि जे दिशिउंछे, ते दिशिउंने विषे (तसथावराण के०) त्रस अने स्था वर जीवोनी (लिंग के०) अहिनाण, चलन, स्पंदन, अंकुरोद्भवादिक, उत्पत्तिने (वि न्नाय के०) जाणीने, (भूयाभिसंकाइडुगंछमाणा के०) भूत जे जीव तेनी अभिशंकायें के, रखे कोइ जीवनो घात उपजे। एवा भावे पापना भयथकी, सर्व सावद्यानुष्ठानने डु गंछता जीवना मर्दनने परिहरता थका, (वदे के०) वदे एटले धर्मोपदेश आपे (क रेज्जाव के०) तथा यावत् क्रिया अनुष्ठान पण करे,(कुओविहऽत्थि के०) तो हवे एवी रीते अनु ष्ठान करता, तथा बोलता अमारा पक्षने विषे तमारो उपजावेलो दोष कोइ नथी॥३१॥ हवे खलपिंमीने विषे पुरुषनी बुद्धिनो असंभव देखाडेछे (पुरिसेत्तिविन्नत्तिनएवम त्थि के०) खलपिंमीने विषे ए पुरुषजछे एवी बुद्धि तो जे अत्यंत मूर्ख होय तेने पण न उपजे? ते कारणे (अणारिएसेपुरिसेतहाहु के०) जे एवी बुद्धि करे, अने एम कहे के एने हणतामा दोष नथी, ते निश्चे थकी अनाचारी पुरुष जाणवो,(कोसंभवोपिन्नगपिंडि याए के०) खलपिंडिकाने विषे जे पुरुषनी बुद्धि करवी, ते वातज केम संभवे। माटे (वा याविएसावुइयाअसच्चा के०) एवी वाणी बोलवी ते पण असत्य कहीजे, माटे एवी भाषा नो बोलनार निर्विवेकी, कर्म बंधने करी बंधाय अने अनंतो संसार वधारे इत्यर्थः ॥३२॥

॥ दीपिका–ऊर्ध्वमधस्तिर्यक्च सर्वदिक्षु त्रसस्थावराणां लिंगं जीवत्वचिन्हं विज्ञाय भूताभिशंकया जीवघातोत्र भावीति बुद्ध्या सर्वमनुष्ठानं जुगुप्समानस्तद्व्यातं परिहरन्वदे त्कुर्यादपीति कुतास्मीदं त्वदुक्तोदोषः । न कश्चितत्रास्मन्मते दोषोस्तीत्यर्थः ॥ ३१ ॥ त स्यां पिण्याकपिंड्यां पुरुषायमिति विज्ञप्तिर्मतिर्नास्ति जडस्यापि तस्मात्यएवं वक्ति सपुरुषा

हु कोण? ते कहेछे (वयंतिजेयाविपडिस्सुणंति के०) एक तो जे खलपिंमीनी बुद्धियें पु रुषने पचावे, अने तेमांहे पाप नथी एम कहे, अनें बीजो जे तेमनु एवु वचन अंगी कार करे, ए वेहुने जलू नथी एवी जावशुद्धियें मोक्ष नथी, माटें हु एवो मा र्ग केम आदरु? ॥ ३० ॥

॥ दीपिका–स्नातकाबोधशिष्यास्तेषां जिक्षुकाणां सहस्रद्वयं निजे बौद्धधर्मे कश्चि दुपासकः पचनाद्यारंज कृत्वापि जोजयेत् ते बहवोपि श्रद्धालवः पुण्यस्कंधं महांतं स मावर्ज्यारोप्याख्यादेवाजवंति महासत्वाः ॥ २ए ॥ बौद्धैरित्युक्ते आर्द्रक प्राह । यत्त व मते कथितं तत्सयतानामयोग्यरूपमघटमानमिदं यत्प्राणानामिंद्रियादीनां घातेन पा पं कृत्वा तदजावं वदति खलबुद्ध्या पुरुषं घ्नतोपि न पापमिति पुरुषबुद्ध्या खलघाती पा पवानिति वचनं तेषां अबोध्ये अबोधिलाजार्थं तयोर्द्वयोरपि स्यात् । कौ द्वौ? ये एवं पू र्वोक्तं वदति येच तेन्य शृण्वंति तयोर्द्वयोरपि असाध्वेतत् अज्ञानावृतमूढजनजावशु द्धया शुद्धिर्न स्यादित्यर्थः ॥ ३० ॥

॥ टीका–पुनरपि शाक्यएव दानफलमधिकृत्याह । (सिणायगाणमित्यादि) स्नात काबोधिसत्वा । तुशब्दात्पचशिक्षापदिकादिपरिग्रह । तेषां जिक्षुकाणां सहस्रद्वयं निजे शाक्य पुत्रिये धर्मे व्यवस्थितः कश्चिदुपासकः पचनपाचनाद्यपि कृत्वा जोजयेत्समासगुडदाडिमे नेप्सेन जोजनेन ते पुरुषामहासत्वाः श्रद्धालवः पुण्यस्कंधं महांतं समावर्ज्य तेनच पुण्य स्कंधेनारोप्याख्यादेवाजवत्याकाशोपगाः सर्वोत्तमां देवगतिं गच्छतीत्यर्थः ॥ २ए ॥ तदेव बुद्धेन दानमूलः शीलमूलश्च धर्मः प्रवेदितस्तदेह्यागच्छ बौद्धसिद्धांतं प्रतिपद्यस्वेत्येवं जि क्षुकैरजिहितः सन्नार्द्रकोऽनाकुलया दृष्ट्या तान्वीक्ष्योवाचेदं वक्ष्यमाणमित्याह । (अ जोगरूवमित्यादि) इहास्मिन्जवदीये शाक्यमते संयतानां जिक्षूणां यदुक्तं प्राक् दत्यते नायोग्यरूपमघटमानकं तथा ह्यहिंसार्थमुत्थितस्य त्रिगुप्तिगुप्तस्य पंचसमितिसमितस्य स तः प्रव्रजितस्य सम्यक् ज्ञानपूर्विका क्रिया कुर्वतोजावशुद्धिः फलवती जवति तद्विपर्य स्तमतेस्त्वज्ञानावृतस्य महामोहाकुलीकृतांतरात्मतया खलपुरुषयोर्विवेकमजानतः कुत स्त्याजावशुद्धिरत्यंतमसांप्रतमेतद्बुद्धमतानुसारिणां यत्खलबुद्ध्या पुरुषस्य शूले प्रोतनपच नादिकं तथा बुद्धस्यैवान्नबुद्ध्यापिशितजक्षणानुमत्यादिकमिति । एतदेव दर्शयति । प्राणा नामिंद्रियाणामपगमेन तुशब्दस्यैवकारार्थत्वात्पापमेव कृत्वा रससातागौरवादिगृद्धास्तदजा वं व्यावर्णयत्येतच्च तेषां पापाजावव्यावर्णनमबोध्यै अबोधिलाजार्थं तयो द्वयोरपि संपद्यते ऽतोसाध्वेतत् । कयोर्द्वयोरित्याह । ये वदंति पिण्याकबुद्ध्या पुरुषपाकेपि पातकाजावं येच

तेन्य शृण्वत्येतयोर्द्वयोरपि वर्गयोरसाध्वेतदिति। अपिच नाज्ञानावृतमूढजनभावशुद्ध्य शुद्धिर्भवति। यदिच स्यात्संसारमोचकादीनामपि तर्हि कर्मविमोक्षः स्यात्तथा भावशुद्धिमेव केवलामन्युपगछता भवता शिरस्तुंमुंडनपिंडपातादिकं चैत्यकर्मादिकं चानुष्ठानमनर्थक मापद्यते तस्मान्नैवंविधया भावशुद्ध्या शुद्धिरुपजायतइति स्थितं ॥३०॥

उड्ढं अहेयं तिरियं दिसासु, विन्नाय लिंगं तसथावराणं ॥ भूया भिसंकाइ दुगंछमाणा, वदे करेज्जाव कुओ विहत्थि ॥३१॥ पुरिसेत्ति विन्नत्ति न एवमत्थि, अणारिए से पुरिसे तहा हु ॥ कोसंभवो पिन्नगपिंडियाए, वायावि एसा बुइया असच्चा ॥ ३२ ॥

अर्थ–हवे आर्द्रकुमार, जैनमार्गना गुण कहेछे (उड्ढंअहेयंतिरियंदिसासु के०) उंची, नीची, अने तिर्छि जे दिशिउंछे,ते दिशिउंनें विषे (तसथावराणं के०) त्रस अने स्थावर जीवोनी (लिंगं के०) अहिनाण, चलन, स्पंदन, अंकुरोद्भवादिक, उत्पत्तिने (विन्नाय के०) जाणीने, (भूयाभिसंकाइदुगंछमाणा के०) भूत जे जीव तेनी अभिशंकायें के, रखे कोइ जीवनो घात उपजे' एवा भावे पापना भयथकी, सर्वं सावद्यानुष्ठाननें दुगंछता जीवना मर्दनने परिहरता थका, (वदे के०) वदे एटले धर्मोपदेश आपे (करेज्जाव के०) तथा यावत् क्रिया अनुष्ठान पण करे,(कुओविहत्थि के०) तो हवे एवी रीते अनुष्ठान करता, तथा बोलता अमारा पक्षने विषे तमारो उपजावेलो दोष कोइ नथी॥३१॥ हवे खलपिंमीनें विषे पुरुषनी बुद्धिनो असंभव देखाडेछे (पुरिसेत्तिविन्नतिनएवमत्थि के०) खलपिंमीने विषे ए पुरुषछे एवी बुद्धि तो जे अत्यंत मूर्ख होय तेने पण न उपजे' ते कारणे (अणारिएसेपुरिसेतहादु के०) जे एवी बुद्धि करे, अने एम कहे के एने हणवामा दोष नथी, ते निश्चे थकी अनाचारी पुरुष जाणवो,(कोसंभवोपिन्नगपिंमियाए के०) खलपिंमिकाने विषे जे पुरुषनी बुद्धि करवी, ते वातज केम संभवे' माटें (वायाविएसावुइयाअसच्चा के०) एवी वाणी बोलवी ते पण असत्य कहीछे, माटें एवी भाषानो बोलनार निर्विवेकी, कर्म बंधनें करी बंधाय अने अनंतो संसार वधारे इत्यर्थः ॥३२॥

॥ दीपिका–ऊर्ध्वमधस्तिर्यक्च सर्वदिक्षु त्रसस्थावराणां लिंगं जीवत्वचिन्हं विज्ञाय भूताभिशंकया जीवघाताद्रं भावीति बुद्ध्या सर्वमनुष्ठानं जुगुप्समानस्तद्घातं परिहरन्वदेत्कुर्यादपीति कुतोस्तीदं त्वदुक्तोदोषः । न कश्चितत्रास्मन्मते दोषोस्तीत्यर्थः ॥ ३१ ॥ तस्यां पिण्याकपिंड्यां पुरुषायमिति विज्ञप्तिर्मतिर्नास्ति जडस्यापि तस्मादयएवं वक्ति सपुरुषा

ऽनार्यएव। क सन्नव पिण्याकपिण्ड्या पुरुषबुद्धे ? अतोवागप्येषाऽसत्या कथिता तस्मात्पि ण्याककाष्ठादावपि प्रवर्त्तमानेन जीवोपमर्द्दभीरुणा साशकेनैव प्रवर्त्तितव्यं ॥ ३१ ॥

॥ टीका–परपक्षं दूषयित्वाऽर्द्रक स्वपक्षाविर्भावनायाह । (उड्ढमहेयमित्यादि) ऊर्ध्व मधस्तिर्यक्षु यादिश प्रज्ञापनादिकास्तासु सर्वास्वपि दिक्षु त्रसाना स्थावराणां च जंतूनां यत्त्रसस्थावरत्वेन जीवलिंग चलनस्पंदनाकुरोद्भवच्छेदम्लानादिक तद्विज्ञायते भूतानिश कया जीवोपमर्दोत्र भविष्यतीत्येवबुद्ध्या सर्वमनुष्ठान जुगुप्समानस्तदुपमर्द्द परिहरन् व देत् कुतोप्यत कुतोस्तीहास्मिन्नेवभूतेऽनुष्ठाने क्रियमाणे प्रोच्यमाने वास्मत्पक्षे युष्मदा पादितोदोषइति ॥ ३१ ॥ अधुना पिण्याके पुरुषबुद्ध्याऽसत्त्वमेव दर्शयितुमाह । (पु रिसेत्यादि) तस्या पिण्याकबुद्ध्यां पुरुषोयमित्येवमत्यंतजडस्यापि विज्ञप्तिरेव नास्ति त स्माद्यएव वक्ति सोऽत्यंतोपुरुषस्तथाभ्युपगमेन ह्रुशब्दस्यैवकारार्थत्वेऽनार्यएवासौ य पुरु षमेव खलोयमिति मत्वा हतेपि नास्ति दोषइत्येव वदेत् । तथाहि । क सन्नव पिण्ड्यां पुरुषबुद्धेरित्यतोवागपीयमीदृगसत्येति सत्वोपघातकत्वात्ततश्च नि शंकप्रहार्यनालोचको निर्विवेकतया बध्यते तस्मात्पिण्याककाष्ठादावपि प्रवर्त्तमानेन जीवोपमर्द्दभीरुणा सा शंकेन प्रवर्त्तितव्यमिति ॥ ३२

वायाभियोगेण जमावहेज्जा, णो तारिस वायमुदाहरिज्जा ॥ अ
ठाणमेय वयण गुणाण, णो दिक्खिए बूयसुरालमेय ॥३३॥ लद्धे
अठे अहो एव तुम्मे, जिवाणुभागे सुविचिंतिए एव ॥ पुव्व समुद्द अ
वर च पुठे, उलोइए पाणितले ठिएवा ॥ ३ ४ ॥

अर्थ–वली पण आर्द्रकुमार कहेछे के, (वायाभियोगेण के०) वचनने अभियोग पणे एटले (जमावहज्जा के०) वचन मात्र बोलता थका पण जे पाप लागे, (णोता रिसवायमुदाहरिज्जा के०) तादृश तेवु वचन विवेकी पुरुष न बोले (अठाणमेयंवय णगुणाणणोदिक्खिएबूयसुरालमेय के०) गुणनु अस्थानरूप एवु असार वचन, तेनें जे दीक्षित माह्यो पुरुष होय ते न बोले, के जे खलपिंडने पुरुष, अने पुरुषने खलपिंड, तथा तुंबडानें बालक, अने बालकने तुंबडु, इत्यादिक वचन उत्तम पुरुष न बोले इत्य र्थ ॥३३॥ वली पण आर्द्रकुमारज कहेछे के, (लद्धअठेअहोएवतुम्मे के०) अहो शाक्य दर्शनीओ तमने एवे ज्ञाता पणे करीने जाणिये छैये, जे तमोनें विज्ञान ते यथावस्थित तत्व, लाध्यु एटले तमे तत्व पाम्या (जिवाणुभागेसुविचिंतिएव के०) तथा तमे जीवनो अनु भाग जे कर्मविपाक, ते रुडीरीतें चिंतव्यो, (पुव्वसमुद्दअवरचपुठे के०) तथा एवा वि

ज्ञानें करी तमारो यश पूर्व अनें पश्चिम समुड् सुधी पहोतो, विस्तार पाम्यो, (वलोइए पाणितलेछिएवा के०) तथा तमोयें एवे विज्ञाने करी, अवलोकन करवे करी, ए लोकनें पाणितलस्थितनी पेठे अवलोक्यो, तो अहो! अमे तमारा विज्ञानना अतिशयनु वर्णन शु करियें? एवु तमारा सरखु ज्ञातापणु क्याही पण देखातु नथी,जे खलपिंम अ ने पुरुप, तथा तुवडु, अने बालकनो अतर काइ पण जणाय नहीं, तो वली हवे जाण पणामा बाकी पण शु रह्यु? ॥ ३४ ॥

॥ दीपिका–वाचानियोगोवागनियोगस्तेन यदावहेत्कुर्यात् पाप कर्म तादृशीं वाच नोदाहरेन्न वदेत् एतद्वचन गुणानामस्थान दीक्षितोन ब्रूयात् उदार सुष्टु नि सारमिति यत्खलेपि पुरुप पुरुषोपि खल अलावुकबालक बालकोवाऽलावुकमिति नि सारत्वमि त्यर्थ ॥ ३३ ॥ अहो! एवमगीकृते सति युष्मानिरथानतरमर्थस्तत्व लब्ध जीवानामनु कर्मविपाक नाग सुविचितित एवन्नूतेन ज्ञानेन नवता यश पूर्व समुड्मपर च प्रप्त गतमित्यर्थ । नवद्भिरवलोकितएवाय लोक पाणितलस्थितइवेति ॥ ३४ ॥

॥ टीका–किचान्यत् । (वायानियोगेणमित्यादि) वाचानियोगोवागनियोगस्तेना पि यद्यस्मादावहेत्पाप कर्म ततोविवेकी नाषागुणदोपज्ञोन तादृशीं नाषामुदाहरेन्नाभि दध्यादतएव ततोऽस्थानमेतद्वचनं गुणाना नहि प्रव्रजितोयथावस्थितोर्थाभिधाय्येत डुदार सुष्टु परिस्थूर नि सार निरुपपत्तिक वचन न ब्रूयात् तद्यथा पिण्याकोपि पुरुप पुरु पोपि पिण्याकस्तथाऽलावुकमेव बालकोबालकएवाऽलावुकमिति ॥३३ ॥ साम्प्रतमार्द्रकक्कु मारएव तं निक्षुक युक्तिपराजितं सतं सोप्लुठ विज्ञपिपुराह । (लद्धेत्यादि) अहो युष्मा निरथानतर्यं एवन्नूतान्युपगमे सति लब्धार्थोविज्ञान यथावस्थितं तत्वमिति तथावगत सुचिंतितोनवद्भिर्जीवानामनुनाग कर्मविपाकस्तत्पीडेति तथैवन्नूतेन विज्ञानेन नवतां यश पूर्वसमुड्मपरच प्रप्त गतमित्यर्थ । तथा नवद्भिरेवविधविज्ञानावलोकनेनावलो कित पाणितलस्थइवाय लोकइति अहो! नवता विज्ञानातिशयोयद्भत नवत पि ण्याक पुरुपयोर्वालालावुकयोर्वा विशेपानभिज्ञया पापस्य कर्मणोयथैतन्नावानाव प्रा दुर्भावितवतइति ॥ ३४ ॥

जीवाणुनाग सुविचिंतयता, आहारिया अन्नविहायसोहिं ॥ न
वियागरे छन्नपउपजीवि, एसोणुधम्मोइह सजयाण ॥ ३५ ॥
सिणायगाण तु डुवे सहस्से, जे नोयए निइए निक्खुयाण ॥ अ
सजए लोहियपाणि सेऊ, णियहत्त गरिहमिहेव लोए ॥ ३६ ॥

ऽनार्यएवा क सनव पिण्याकपिन्यां पुरुषवुद्धे ? अतोवागप्येषाऽसत्या कथिता तस्मात्पि ण्याककाष्ठादावपि प्रवर्त्तमानेन जीवोपमर्दनीरुणा साशकेनैव प्रवर्त्तितव्यं ॥ ३१ ॥

॥ टीका–परपक्षं दूषयित्वार्द्रक स्वपक्षाविर्भावनायाह । (उड्ढमहेयमित्यादि) ऊर्ध्व मधस्तिर्यक्षु यादिश प्रज्ञापनादिकास्तासु सर्वास्वपि दिक्षु त्रसानां स्थावराणां च जंतूनां यत्त्रसस्थावरत्वेन जीवलिंग चलनस्पदनांकुरोद्भवच्छेदम्लानादिक तद्विज्ञायते भूताभिश कया जीवोपमर्दोत्र नविष्यतीत्येवबुद्ध्या सर्वमनुष्ठान जुगुप्समानस्तदुपमर्द परिहरन् व देत् कुतोप्यत कुतोस्तीहास्मिन्नेवभूतेऽनुष्ठाने क्रियमाणे प्रोच्यमाने वास्मत्पक्षे युष्मदा पादितोदोषइति ॥ ३१ ॥ अधुना पिण्याके पुरुषबुद्ध्याऽसत्नवमेव दर्शयितुमाह । (पु रिसेत्यादि) तस्या पिण्याकबुद्ध्या पुरुषोयमित्येवमत्यंतजडस्यापि विज्ञप्तिरेव नास्ति त स्माद्यएव वक्ति सोऽत्यतोपुरुषस्तथाभ्युपगमेन हुशब्दस्यैवकारार्थत्वेऽनार्यएवासौ य पुरु षमेव खलोयमिति मत्वा हतेपि नास्ति दोषइत्येव वदेत् । तथाहि । क सनव पिन्या पुरुषबुद्धेरित्यतोवागपीयमीदृगसत्येति सत्वोपघातकत्वात्ततश्च नि शंकप्रहार्यनालोचको निर्विवेकतया बध्यते तस्मात्पिण्याककाष्ठादावपि प्रवर्त्तमानेन जीवोपमर्दनीरुणा सा शकेन प्रवर्त्तितव्यमिति ॥ ३२

> वायाभियोगेण जमावहेज्जा, णो तारिस वायमुदाहरिज्जा ॥ अ
> ठाणमेय वयण गुणाण, णो दिक्खिए बूयसुरालमेय ॥३३॥ लद्धे
> अठे अहो एव तुम्हे, जिवाणुभागे सुविचिंतिएव ॥ पुव्व समुद्द अ
> वर च पुठे, उलोइए पाणितले ठिएवा ॥ ३४ ॥

अर्थ–वली पण आर्द्रकुमार कहेछे के, (वायाभियोगेण के०) वचननें अभियोग पणे एटले (जमावहेज्जा के०) वचन मात्र बोलता थका पण जे पाप लागे, (णोता रिसवायमुदाहरिज्जा के०) तादृश तेवु वचन विवेकी पुरुष न बोले (अठाणमेयवय णगुणाणणोदिक्खिएबूयसुरालमेय के०) गुणनु अस्थानरूप एवु असार वचन, तेने जे दीक्षित माह्यो पुरुष होय ते न बोले, के जे खलपिन्नने पुरुष, अने पुरुषने खलपिन्न, तथा तुवडानें बालक, अने बालकने तुवडु, इत्यादिक वचन उत्तम पुरुष न बोले इत्य र्थ ॥३३॥ वली पण आर्द्रकुमारज कहेछे के, (लद्धेअठेअहोएवतुम्हे के०) अहो शाक्य दर्शनीउं तमने एवे ज्ञाता पणे करीने जाणिये छैये, जे तमोनें विज्ञान ते यथावस्थित तत्व, लाध्यु एटले तमे तत्व पाम्या (जिवाणुभागेसुविचिंतिएव के०) तथा तमे जीवनो अनु भाग जे कर्मविपाक, ते रुडीरीतें चिंतव्यो, (पुव्वसमुद्दअवरचपुठे के०) तथा एवा वि

पायेति । तथा उन्नपदोपजीवी मातृस्थानोपजीवी सन् न व्यागृणीयादेपोनतरोक्तोऽनु पश्चाद्धर्मोनुधर्मस्तीर्थकरानुष्ठानादनतर नवतीत्यमुना विशिष्यते। इहास्मिन् जगति प्रवच ने वा सम्यग्यताना सत्साधूना नतु पुनरेवविधो निक्षूणामिति।यच्च नवन्निरोदनादेरपि प्राण्य गसमानतया हेतुनूततया मासादिसादृश्य चोत्पद्यते तदविज्ञाय लोकतीर्यातरीयमतं । तथाहि। प्राण्यगत्वे तुल्येपि किंचिन्मास किंचिच्चामासमित्येव व्यवह्रियते।तद्यथा गोक्षीररु धिरादेर्नक्ष्यानक्ष्यव्यवस्थितिस्तथा समानेपि स्त्रीत्वे नार्याश्वश्र्वादौ गम्यागम्यव्यवस्थि तिरिति। तथा क्षुप्कतर्कदृष्ट्या योय प्राण्यगत्वादिति हेतुर्नवतोपन्यस्यते। तद्यथा "नक्षणीयं नवेन्मास, प्राण्यगत्वेन हेतुना ॥ ओदनादिवदित्येव कश्चिदाहेति तार्किक " ॥१ ॥ सो सिद्धानैकातिकविरुद्धदोपडुष्टत्वादपकर्णनीय । तथाहि । निरंशत्वाद्वस्तुनस्तदेव मास त देव च प्राण्यगमिति प्रतिज्ञार्थैकदेशादसिद्ध । तद्यथा नित्य शब्दोनित्यत्वादथ निन्न प्रा ण्यग तत सुतरामसिद्धोव्यधिकरणत्वाद्यथा देवदत्तस्य गृह काकस्य कार्ष्ण्यात्तथानैकांति कोपि श्वादिमासस्यानक्ष्यत्वादथ तदपि क्वचित्कथंचित्केपाचिन्नक्ष्यमिति चेदेव च सत्य श्वादेर्नक्ष्यत्वादनेकातिकत्व। तथा विरुद्धाव्यनिचार्यपि यथार्यहेतुर्मासस्य नक्ष्यत्व साधयत्येव वुद्धास्वामपूजात्वमपि। तथा लोकविरोधिनी चेय प्रतिज्ञा। मासोदनयोरसा म्याद्दृष्टांतविरोधश्चेत्येव व्यवस्थिते यदुक्त प्राग्यथावुद्धानामपि पारणाय कल्पतएतदि ति तदसाध्विति इति स्थित ॥ ३५ ॥ अन्यदपि निक्षुकोक्तमार्डकुमारोऽनूद्य दूपयितुमाह । (सिणायगाणतुइत्यादि) स्नातकाना वोधिसत्वकल्पाना निक्षूणा नित्य य सहस्र द्वयं नोजयेदित्युक्त प्राक् तद्रूपयत्यसयत सन् रुधिरक्लिन्नपाणिरनार्यइव गर्हा निंदा जुगुप्साप दवी साधुजनानामिह लोकएव निश्चयेन गच्छति परलोके वाऽनार्यगम्या गति यातीति॥३६॥

थूलं उरप्नं इह मारियाण, उद्दिट्ठनत्तं च पगप्पएत्ता ॥ तं लोणतेल्लेण उवक्खडेत्ता, सपिप्पलीयं पगरंति मंसं ॥ ३७ ॥ तं नुंजमाणा पिसितं पनूतं, ण उवलिप्पामो वयं रएणं ॥ इच्चेव माहंसु अणज्जधम्मं, अणारिया बाल रसेसु गिद्धा ॥ ३८ ॥

अर्थ–वली पण आर्द्रकुमार ते कुमतिना मतनी वात कहेने के,(थूलं के०) महोटी कायायें उपचित मांस शोणित युक्त एवो, (उरप्नं के०) उरणो तेने (इह के०) आ शाक्यना शासननें विषे सघनी नक्तिनें अर्थे (मारियाण के०) विनाशीनें मारीने (उद्दिट्ठनत्तंचपगप्पएत्ता के०) उद्दिष्ट नोजन कल्पीनें (तंलोणतेल्लेणउवक्खडेत्ता के०) ते मांसने लूण, अने तेल साथे पचावीनें, (सपिप्पलीपपगरंतिमंसं के०) पिप्पली स

अर्थ—हवे आर्द्रकुमार जैनमतनी स्थापना करेछे (जीवाणुजागसुविचितयंता के०) जिनशासननें विषे प्रतिपन्न जे पुरुष ते, जीवनो अणुजाग अवस्थाविशेष, तेनुं मर्दन जे पी डानी उत्पत्तिरूप दुःख तेने रुडी रीतें चितवता थका, (आहारियाअन्नविहायसोहिं के०) आहारिया एटले अन्नपाणीने विषे विशुद्धता आदरेछे एटले बहेंतालीश दोष रहित एवो विशुद्ध आहार लियेछे, परंतु तमारी पेठे मासादिक पण, पात्रें पड्यो दोष नथी न थाय, तेम तेने नथी? अने तमे तो केवाछो, तो के (नवियागरेछन्नपउपजीवि के०) छिन्नपदोप जीवि एटले हिंसाने स्थानके करी उपजीवन करोछो, पण इत्यादिक वचन प्रसिन्नपणे न बोलो तेवा जैनमतना धारक पुरुष न होय? (एसोणुधम्मोइहसंजयाण के०) ए पूर्वोक्त निर्दोष आहारनें लेवे करी, छ कायने पालवे करी, तीर्थंकरने अनुयायि, होय ते संयत ए टले साधुनो धर्म जाणवो ॥३५॥ वली आर्द्रकुमार कहेछे, शुं कहेछे? तो के, (सिणायगा णतुडुवेसहस्से के०)स्नातक जे बौद्धमति दर्शन धारक तेना बे हजार भिक्षुक एटले शाक्य पुत्रीयधर्मे प्रवर्त्तता भिक्षुक तेने (जेजोयएनिइएभिरकुयाण के०) जे पचन पाचनादिक क्रिया करीने नित्य जमाडे, तेने लाभ थायछे, पुण्य थायछे, एवुं तमे कहोछो परंतु, (असंजए लोहियपाणिसेऊ के०) ते असंयत लोहितपाणि एटले जेना हाथ सदा काल लोहियें करी खरडयाछे तेवो ते अनार्य पुरुष, (णियछतीगरिहमिहेवलोए के०) प्रथमतो आ लोकमांहेज गर्हा पामे, अने परलोके परजवे दुर्गतिमा जाय केमके एवा सावद्यानुष्ठा नना करनार, अभक्ष अने अपेयनुं जे दान, तेना अनुमोदनार एवा कुपात्रनें जे दान देवुं ते कर्म बंधनुं कारणछे ॥ ३६ ॥

॥ दीपिका—सोपहासमुक्त्वार्द्रकमुनिः स्वपक्षमाह जिनमतप्रतिपन्ना जीवानुभागं सुष्ठु विचिंतयतोऽन्नविधौ शुद्धिमाहृतवंतः स्वीकृतवंतः । भवता तु मासाद्यपि पात्रपतितं न दोषाय तथा छन्नपदं मातृस्थानं तेनोपजीवी सन्न व्यागृणीयात् मायया न वदेदित्यर्थः। एषपश्चाद्धर्मोऽनुधर्मइह जैनमते संयतानां साधूनां अर्हदनुष्ठानानंतरं स्यादित्यनुधर्मः ॥३५॥ स्नातकानां बौद्धानां भिक्षूणां नित्यं यः सहस्रद्वयं भोजयेदित्युक्तं प्राक् तद्दूषयति । असंयतः सन् रुधिरक्लिन्नपाणिरिहैव लोके सगर्हां नियच्छति निश्चयेन गच्छति॥३६॥

॥ टीका—तदेव परपक्षं दूषयित्वा स्वपक्षस्थापनायाह । (जीवाणुभागमित्यादि) मौ नींद्रशासनप्रतिपन्नाः सर्वज्ञोक्तमार्गानुसारिणोजीवानामनुभागमवस्थाविशेषं तदुपमर्देन पीडां वा सुष्ठु विचिंतयंतः पर्यालोचयंतोन्नविधौ शुद्धिमाहृतवंतः स्वीकृतवंतोद्विचत्वारिं शद्दोषरहितेनाशुद्धेनाहारेणाहारं कृतवंतोनतु यथा भवता पिशिताद्यपि पात्रपतितं न दो

नथी एवी असत्य वाणी पण बोले नहि किंबहुना वधारे शुं कहिये ॥ ३ए॥ हवे मासादिक तो अजक्ष्य कहेवाय, त्यारे बीजो आहार साधुने अजक्ष्य होय के नहीं ? त्या कहेवे के, बीजो पण सदोष आहार, साधुने परिहरवो (सवेसिजीवाणदयहयाए के०) स र्व जीव एकेंद्रियादिक तेनी दयाने अर्थ, दयाने निमत्ते (सावज्जदोसपरिवज्जयता के०) सावद्य जे आरम्नादिक, तेने महा दोषरूप जाणी, परिहरता थका (तस्सकिणोइसि णोनायपुत्ता के०) ते सावद्यना दोष थकी शंकाता एटले बीहिता एवा महाक्षत्रीश्वर ज्ञात पुत्र श्रीमहावीर देव तेमना शिष्यो होय ते (उद्दिठ्ठनत्तपरिवज्जयंति के०) उद्दि ष्टनक्त एटले जे साधुने देवाने अर्थेज कल्पेलो एवो आहार होय, तेने परिहरे वर्जे ए साधुनो आचार जाणवो ॥ ४० ॥

॥ दीपिका–ये बाढ्यापि तथाप्रकारं मांसं नुजते ते पापमजानतोनिर्विवेकिनः सं त सेवते । यदुक्तं । “ हिंसामूलममेध्यमास्पदमलं ध्यानस्य रौद्रस्य य,द्वीनत्सं रुधिराविलं कृमिगृहं दुर्गंधिपूयादिकं ॥ शुक्रासृक्प्रनवं नितांतमलिनं सद्भिः सदा निंदितं, कोनुक्ते नरकाय राक्षससमोमांसं तदात्मद्रुहः ॥ १ ॥ तथा । मां स नक्षयिताऽमुत्र यस्य मांसमि हाद्म्यहं ॥ एतन्मांसस्य मांसत्वं प्रवदंति मनीषिणः ॥ २ ॥ योऽत्ति यस्य च तन्मांसमुनयोः पश्यतांतरं ॥ एकस्य क्षणिका तृप्तिरन्यः प्राणैर्वियुज्यते” ॥३॥ तदेवं दोषं मत्वा कुशला मांसाभिलाषे मनोन कुर्वंति वागप्येषा न मांसनक्षणे दोषइत्यादिका उक्ता सती मिथ्या निवृत्तिस्तु महागुणाय । यदुक्तं । ‘श्रुत्वा डुःखपरंपरामतिघृणां मांसाशिनां डुर्गतिं, ये कुर्वं ति शुनोदयेन विरतिं मांसादनस्यादरात् ॥ तद्दीर्घायुरदूषितं तदरुजास्तनाव्य यास्यंति ते, मर्त्येपूद्भटनोगधर्ममतिषु स्वर्गापवर्गेषु वा” इति ॥ ३ए ॥ सर्वेषां जीवानां दयार्था य सावद्यदोषं परिवर्जयंतः तच्छंकिनोदोषशंकिनः ऋषयोज्ञातपुत्रीया श्री वीरशिष्याः उ द्दिष्टनक्तं परिवर्जयंति ॥ ४० ॥

॥ टीका–इत्येतच्च तेषां महतेऽनर्थायेति दर्शयति (जेयावीत्यादि) येचापि रसगौर वगृद्धा शाक्योपदेशवर्त्तिनस्तथाप्रकारं स्थूलोरभ्रसंस्कृतं घृतलवणमरिचादिसंस्कृतं पि शितं नुजतेऽश्नंति तेऽनार्या पापं कल्मषमजानानाविवेकिनः सेवंते याद्दवते । तथा चोक्तं । ”हिंसामूलममेध्यमास्पदमलं ध्यानस्य रौद्रस्य य,द्वीनत्सं रुधिराविलं कृमिगृहं डुर्गं धिपूयादिकं ॥ शुक्रासृक्प्रनवं नितांतमलिनं सद्भिः सदा निंदितं, कोनुक्ते नरकाय राक्ष ससमोमांसं तदात्मद्रुहः ॥ १ ॥ अपिच । मां स नक्षयिताऽमुत्र यस्य मांसमिहाद्म्यहं । एतन्मांसस्य मांसत्वं प्रवदंति मनीषिणः ॥ २ ॥ तथा । योऽत्ति यस्य च तन्मांसमुनयो

हित मांस करे ॥ ३७ ॥ एवु मांस करीने पढी शु करे, ? ते कहेछे के, (तंभुंजमाणा पिसितंपभूतं के०) ते मास, प्रभूत एटले घणु जमता थका भोगवता थका एम क हेछे के, (णउवलिप्पामोवयंरएण के०) अमे एनी पापरूप रजें करी लेपाता नथी (इच्चेवमाहुसुअणज्जधम्म के०) एवु वचन कहे, ते अनार्यधर्मी जाणवा, कारण के, ते वृष्ट पणु आदरेछे (अणारियाबालरसेसुगिद्धा के०) ते अनाचारी बाल, एटले अ ज्ञानी रसगृद्धी थका एवा वचन कहेछे ॥ ३८ ॥

॥ दीपिका—आर्द्रकएव तन्मतमाह । स्थूलमुरभ्र इह बौद्धमते हत्वा उद्दिष्टभक्तच प्र कल्प्य, तन्मास लवणतैलाभ्या सस्कृत्य सपिप्पलीक कुर्वंति ॥ ३७ ॥ तत्पिशितं मास प्रभूतं भुजानाअपि वय रजसा नोपलिप्यामहे । एवमनार्यधर्मा दुष्टस्वभावाअनार्या इवाऽनार्याबाला रसेषु मासादिषु गृद्धा ॥ ३८ ॥

॥ टीका—एव तावत्सावद्यानुष्ठानानुमतृणामपात्रभूताना यद्दान तत्कर्मबंधायेत्युक्त । किचान्यत् । (थूलउरभ्रमित्यादि) आर्द्रकुमारएव तन्मतमाविष्कुर्वन्निदमाह स्थूल बृह त्कायमुपचित मांसशोणितमुरभ्रमूरणकमिह शाक्यशासने भिक्षुकसघोद्देशेन व्यापाद्य घातयित्वा तथोद्दिष्टभक्तच प्रकल्पयित्वा तमुरभ्र तन्मासच लवणतैलाभ्यामुपसस्कृत्य पाचयित्वा सपिप्पलीकमपरद्रव्यसमन्वितं प्रकर्षेण भक्षणयोग्य मास कुर्वतीति ॥ ३७ ॥ सस्कृत्यच यत्कुर्वंति तद्दर्शयितुमाह (तंभुजमाणाइत्यादि) तत्पिशितं शुक्रशोणितसभू तमनार्याइव भुजानाअपि प्रभूतं तद्रजसा पापेन कर्मणा न वयमुपलिप्यामहइत्येव धा र्ष्ट्योपेता प्रोचुरनार्याणामिव धर्म स्वभावोयेषा तें तथानार्यकर्मकारित्वादनार्याबाला इव बालाविवेकरहितत्वाद्रसेषुच मासादिकेषु गृद्धाअध्युपपन्ना ॥ ३८ ॥

जे यावि भुजति तहप्पगार, सेवति ते पावमजाणमाणा ॥ मण
न एय कुसला करेती,वायावि एसा बुइयाउ मिच्छा ॥३ए॥ सव्वेसि
जीवाणदयठ्याए, सावज्जदोसं परिवज्जयता ॥ तस्सकिणो इ
सिणो नायपुत्ता, उद्दिठ्भत्त परिवज्जयति ॥ ४० ॥

अर्थ—हवे ते मांसाशीने एनो विपाक कहेछे (जेयाविभुजतितहप्पगारं के०)जे रसगृद्ध थता तथा प्रकारें मांसनें जमे, (सेवतितेपावमजाणमाणा के०) ते अज्ञानी पुरुषो नि केवल पापनु सेवन करेछे (मणनएयकुसलाकरेति के०)जे कुशल एटले पंडित होय ते मांसभक्ष ण करीयें, एवु मन पण न करे तथा (वायाविएसाबुइयाउमिच्छा के०) मांसभक्षणथी दोष

नथी एवी असत्य वाणी पण बोले नहि किंबहुना वधारे शु कहिये ॥ ३९॥ हवे मासादिक तो अनक्ष्य कहेवाय, त्यारे बीजो आहार साधुने अनक्ष्य होय के नही ? त्या कहेछे के, बीजो पण सदोष आहार, साधुने परिहरवो (सव्वेसिजीवाणदयठयाए के०) सर्वे जीव एकेंद्रियादिक तेनी दयाने अर्थ, दयाने निमत्तें (सावज्जदोसपरिवज्जयता के०) सावद्य जे आरंनादिक, तेनें महा दोषरूप जाणी, परिहरता थका (तस्सकिणोइसिणोनायपुत्ता के०) ते सावद्यना दोष थकी शंकाता एटले बीहिता एवा महाऋषीश्वर ज्ञात पुत्र श्रीमहावीर देव तेमना शिष्यो होय ते (उद्दिठनत्तपरिवज्जयंति के०) उद्दिष्टनक्त एटले जे साधुने देवाने अर्थेज कल्पेलो एवो आहार होय, तेने परिहरे वर्जे ए साधुनो आचार जाणवो ॥ ४० ॥

॥ दीपिका–ये बाल्हाअपि तथाप्रकार मांस नुंजते ते पापमजानतोनिर्विवेकिन संत सेवते । यदुक्त । “हिंसामूलममेध्यमास्पदमलं ध्यानस्य रौद्रस्य य,द्बीनत्स रुधिराविलं रुमिगृहं डुर्गंधिपूयादिकं ॥ शुक्रासृक्प्रनवं नितांतमलिनं सद्भि सदा निंदितं, कोऽत्तुके नरकाय राक्षससमोमांसं तदात्मद्रुहं ॥ १ ॥ तथा । मां स नक्षयिताऽमुत्र यस्य मांसमिहाद्म्यहं ॥ एतन्मांसस्य मांसत्वं प्रवदंति मनीषिण ॥ २ ॥ योऽत्ति यस्य च तन्मांसमुनयो पश्यतांतर ॥ एकस्य क्षणिका तृप्तिरन्य प्राणैर्वियुज्यते” ॥३॥ तदेवं दोषं मत्वा कुशला मांसानिलापे मनोन कुर्वंति वागप्येषा न मांसनक्षणे दोषइत्यादिका उक्ता सती मिथ्या निवृत्तिस्तु महागुणाय । यदुक्त । “श्रुत्वा डु खपरंपरामतिघृणां मांसाशिनां डुर्गतिं, ये कुर्वंति शुनोदयेन विरतिं मांसादनस्यादरात् ॥ तद्दीर्घायुरदूषितं तदरुजास्तनाब्य यास्यंति ते, मर्त्येपूद्भटनोगधर्ममतिषु स्वर्गापवर्गेषु वा” इति ॥ ३९ ॥ सर्वेषां जीवानां दयार्थाय सावद्यदोषं परिवर्जयंत तच्छंकिनोदोषशंकिन ऋषयोज्ञातपुत्रीया श्री वीरशिष्याउद्दिष्टनक्तं परिवर्जयंति ॥ ४० ॥

॥ टीका–इत्येतच्च तेषां महतेऽनर्थायेति दर्शयति (जेयावीत्यादि) येचापि रसगौरवग्रस्ता शाक्योपदेशवर्त्तिनस्तथाप्रकार स्थूलोरब्रसत्रुतं घृतलवणमरिचादिसंस्कृतं पिशितं नुंजतेऽश्नंति तेऽनार्या पापं कल्मषमजानानिर्विवेकिन सेवंते आददते । तथा चोक्तं । ”हिंसामूलममेध्यमास्पदमलं ध्यानस्य रौद्रस्य य,द्बीनत्सं रुधिराविलं रुमिगृहं डुर्गंधिपूयादिकं ॥ शुक्रासृक्प्रनवं नितांतमलिनं सद्भि सदा निंदितं, कोत्तुके नरकाय राक्षससमोमांसं तदात्मद्रुहं ॥ १ ॥ अपिच । मांस नक्षयिताऽमुत्र यस्य मांसमिहाद्म्यहं । एतन्मांसस्य मांसत्वं प्रवदंति मनीषिण ॥ २ ॥ तथा । योऽत्ति यस्य च तन्मांसमुनयो

पश्यतातर । एकस्य क्षणिका तृप्तिरन्य प्राणैर्वियुज्यते" ॥ ३ ॥ तदेव महादोषं मांसादन मिति मत्वा यद्विधेयं तद्दर्शयति । एतदेवभूतं मांसादनाभिलापरूप मनोंत करण कुश लानिपुणामांसाशित्वविपाकवेदिनस्तन्निवृत्तिगुणाभिज्ञाश्च न कुर्वंति तदभिलाषादात्म नोनिवर्त्तयतीत्यर्थः ।आस्तां तावद्भक्षण वागप्येपा यथा मांसभक्षणेऽदोषइत्यादिका नारत्व निहितोक्ता मिथ्या । तुशब्दान्मनोपि तदनुमत्यादौ न विधेयमिति तन्निवृत्तौ चेहेवानुपमा श्लाघाऽमुत्र च स्वर्गापवर्गगमनमिति । तथाचोक्त । "श्रुत्वा दुःखपरंपरामतिघृणां मां साशिना दुर्गतिं, ये कुर्वंति शुनोदयेन विरतिं मांसादनस्यादरात् । तद्दीर्घायुरदूषितं गदरुजा संभाव्य यास्यंति ते, मर्त्येपूद्भटभोगधर्ममतिषु स्वर्गापवर्गेषु चेत्यादि" ॥ ३ए ॥ न केवलं मां सादनमेव परिहार्यमन्यदपि मुमुक्षूणां परिहर्तव्यमिति दर्शयितुमाह । (सवेसिमित्यादि) सर्वेषां जीवानां प्राणार्थिनां न केवलं पंचेंड्रियाणामेवेति सर्वग्रहणं दयार्थतया दयानिमि त्तं सावद्यमारंभं महानयं दोषइत्येवं मत्वा तत्परिवर्जयत साधवस्तद्भकिनोदोषशंकिन ऋषयोमहामुनयोज्ञातपुत्रीया श्रीमन्महावीरवर्द्धमानशिष्या उद्दिष्ट दानाय परिकल्पि तं यद्भक्तपानादिकं तत्परिवर्जयति ॥ ४० ॥

भूयाभिसंकाए डुगंछमाणा, सवेसिपाणाण निहाय दंम ॥ तम्हा ण भुंजति तहप्पगारं, एसोणुधम्मो इह संजयाण ॥ ४१ ॥ निग्गं थधम्ममि इमं समाहिं, अस्सिं सुठिच्चा अणिहे चरेज्जा ॥ बुद्धे मुणी सीलगुणोववेए, अवंडते पाउणती सिलोगं ॥ ४२ ॥

अर्थ–वली पण साधुनो आचार कहेछे (भूयाभिसंकाएडुगंछमाणा के०) भूत जे प्राणी तेना मर्दननी शंकाये सावद्यानुष्ठानने डुगंछता निंदता, तथा (सवेसिपाणाण निहायदंम के०) सर्व प्राणीनो दंम एटले विनाश, तेने निहाय एटले छांमीनें त्याग करी ने सम्यक् आचारे प्रवर्त्तता एवा साधु (तम्हाणभुंजतितहप्पगार के०) ते कारणे त था प्रकारना एटले आधाकर्मादिक दोषे दूषित एवा ते आहारने ण भुंजति एटले न ज मे, न जोगवे (एसोणुधम्मोइहसंजयाण के०) आ जगत्मांहे यतिनो धर्म, ते अ णुधर्म, एटले श्री तीर्थंकरनी पढवाडे जाणवो जेम श्री तीर्थंकरे निर्दोष आहार ग्रह णादिक धर्म आचस्यो, तेम तेनें अनुसारे साधु पण, एहिज धर्म आचरे इत्यर्थः ॥ ४१ ॥ व ली पण साधुनो आचार कहेछे (निग्गंथधम्ममिइमंसमाहिं के०) नथी जेने विषे बा ह्य अने अन्यतर ग्रंथि एवो जे धर्म, तेने विषे ए पुर्वोक्त जे समाधि एटले सुजता अहारनुं ले वुं, (अस्सिंसुठिच्चाअणिहेचरेज्जा के०) इत्यादिकने पामीनें सम्यक् अनुष्ठानरूप समाधिनें

विषे स्थित एटले प्रवर्त्तमान एवो साधु अणिहे एटले मायारहित थको अथवा, स्नेहरहित थको, संयमानुष्ठाननें आचरे, एटले पाले (बुद्धेमुणीसीलगुणोववेए के०) बुद्ध एटले तत्त्वनो जाण, मुणी एटले त्रिकालवेदी, त्रण कालनो जाण, सील एटले आचार ते उपशमादिक तथा गुण, एटले मूलोत्तर गुणरूप तेणे करी उपपेत एटले सहित, एवो साधु, (अच्चतेपाउणतीसिलोग के०) अत्यर्थ एटले सर्वगुणसंपन्न ते, लोक एटले आ लोकने विषे, अनें लोकोत्तरने विषे, सतोपकारक श्लाघाने पाउणत्ती एटले पामे॥४२॥

॥ दीपिका–नूतानां प्राणिनां हिंसानिशंकया सावद्यव्यापारं जुगुप्समानं परिहरन् सर्वेषां प्राणिनां दमं निहाय त्यक्त्वा साधवस्तथाप्रकारमशुद्धाहारं न भुंजते तस्मादेषो नुधर्मः संयतानामिह जेनमते तीर्थंकराचरणादनुपश्चाच्चर्यतइत्यनुधर्मइति ॥ ४१ ॥ निर्ग्रंथधर्मे साधुमार्गे स्थितःमपूर्वोक्तं समाधिं प्राप्तोऽस्मिन्समाधौ सुष्ठु स्थित्वाऽनिहोनिर्माय सन् चरेत्संयमे बुद्धोज्ञाततत्त्वोमुनिः शीलेन क्रोधोपमेन गुणैश्च मूलोत्तरनूतैरुपेतो युक्तोत्यर्थं तां सर्वातिशायिनीं श्लाघां प्राप्नोति । यदुक्तं । " राजानं तृणतुल्यमेव मनुते शक्रेपि नैवादरो, वित्तोपार्जनरक्षणव्ययकृतां प्राप्नोति नो वेदनां ॥ संसारांतर्ग्वर्त्यपीह लनते शं मुक्तवन्निर्नयं, संतोषात्पुरुषोमृतत्वमचिराद्यायात्सुरेंद्रार्चितं " इति ॥ ४२ ॥

॥ टीका–किंच । (नूयानिसंकाएइत्यादि) नूतानां जीवानां उपमर्दशंकया सावद्यमनुष्ठानं जुगुप्समानापरिहरंतस्तथा सर्वेषां प्राणिनां दमयतीति दमः समुपतापस्तं निहाय परित्यज्य सम्यगुत्थिताः सत्साधवोयतस्ततोन भुंजते तथाप्रकारमाहारमशुद्धजातीयमेषोनुधर्मइहास्मिन् प्रवचने संयतानां यतीनां तीर्थंकराचरणादनुपश्चाच्चर्यतइत्यनुना विशेष्यते । यदि चाणुरिति स्तोकेनाप्यतिचारेण वा बाध्यते शिरीषपुष्पमिव सुकुमारइत्यतो ऽणुता विशेष्यतइति ॥ ४१ ॥ किंचान्यत् ॥ (णिग्गंथधम्ममित्यादि) नास्मिन्मौर्नांद्धर्मं बाह्यान्यंतररूपोग्रंथोस्यास्तीति निर्ग्रंथः सचासौ धर्मश्च निर्ग्रंथधर्मः सच श्रुतचारित्राख्यः क्षात्यादिकोवा सर्वज्ञोक्तस्तस्मिन्नेवनूते धर्मे व्यवस्थितःइमं पूर्वोक्तसमाधिमनुप्राप्तोऽस्मिं शुद्धाहारपरिहाररूपे समाधौ सुष्ठु अतिशयेन स्थित्वाऽनिहोऽमायाऽथवा निहन्यतइति निहानं निहोऽनिहः परीषहैरपीडितो यदिवा स्निहबंधने स्निहइति स्नेहरूपबंधनरहितः संयममनुष्ठानं चरेत् तथा बुद्धोऽवगततत्त्वोमुनिः कालत्रयवेदी शीलेन क्रोधाद्युपशमरूपेण गुणैश्च मूलोत्तरगुणनूतैरुपेतोयुक्तइत्येवं गुणकलितोऽत्यर्थेता सर्वगुणातिशायिनीं सर्वद्धापरमरूपां सतांधार्मिकां श्लाघां प्रशंसां लोके लोकोत्तरेवाऽऽप्नोति। तथा चोक्तं। "राजानं तृणतुल्यमेव मनुते शक्रेपि नैवादरो, वित्तोपार्जनरक्षणव्ययकृतां प्राप्नोति नो वेदनां ॥

ससारांतरवर्त्यपीह लभते श मुक्तवन्निर्भय , सतोपात्पुरुषोमृतत्वमचिरायायास्तुरैश्चर्चित " इत्यादि ॥ ४२ ॥

सिणायगाण तु डुवे सहस्से, जे नोयए णितिए माहणाणं ॥ ते पुन्नखधे सुमहज्जणित्ता, नवति देवा इति वेयवाउ ॥४३॥ सिणायगाण तु डुवे सहस्से, जे नोयए णितिए कुलालयाण॥ से गब्ब ति लोलुवसपगाढे, तिवाभितावी णरगाभिसेवी ॥ ४४ ॥

अर्थ–ए रीतें आर्द्रकुमार गोशालक तथा बौधमतिउने परास्त करीने आगल चाल्यो तेवारे, वच्चे ब्राह्मण मल्या, ते ब्राह्मण बोल्या के,अहो आर्द्रकुमार ! तें रूडू कर्यु के, जे ए पूर्वोक्त बेहु मत वेदबाह्य हता, तेनु ते निराकरण कर्यु, तो हवे ए जैनमत पण वेद बाह्यछे एवु जाणीने, तमारा सरखाने आश्रय करवा योग्य नथी केमके,तु क्षत्री छो अनें क्षत्रीनें सर्व वर्णोत्तम एवा ब्राह्मणनेज सेववा योग्यछे, परतु शूद्र सेववा नही ए कारण माटें वेदोक्त विधिये यज्ञादिकमार्गेनी तमारे सेवा करवी इत्यादिक ते ब्राह्मणो पोतानो मार्ग देखाडेछे (सिणायगाणतुडुवेसहस्से के०)स्नातक एटले षट्कर्मने विषे निरत, अने वेदना जाणनार, पोताना आचारनें विषे तत्पर,नित्य स्नातक, ब्रह्मचारी, एवा बेसहस्र(माहणाण के०) ब्राह्मणनें(जेनोयएणितिए के०)जे पुरुष नित्य जमाडे, एटले तेनें मनोवाछित आहार आपे, (तेपुन्नखधेसुमहज्जणित्ता के०) ते पुरुष घणो महोटो पुण्यनो स्कध उपार्जन करीने, (नवतिदेवाइतिवेयवाउ के०) देवता थाय एवु अमारा वेदनु वाक्यछे, एम जाणीने ए वेदोक्त मार्ग आदरवो ॥४३॥ हवे आर्द्रकुमार उत्तर कहेछे के, अहो ब्राह्मणो ! (सिणायगाणतुडुवेसहस्से के०) स्नातकना बे सहस्रने (जेनोयएणितिएकुलालयाण के०) जे दातार नित्य जमाडे ते स्नातक केवाछे तोके, कुलालग एटले मार्जार ते सरखा ब्राह्मण पण जाणवा,कारण के, ए पण सावद्याहार वाछता, सर्वकाल घर घरनें विषे भ्रमण करे एवा, एक निद्य आजीविकाना करनार, ते कुपात्रने दान देवाथी,(सेगब्बति लोलुवसपगाढे के०)ते लोलपी ब्राह्मण सहित एवो दातापण गच्छति एटले डुर्गतियें जाय, डुर्गतिमा कया स्थानके जाय ? तोके, (तिवाभितावीणरगाभिसेवी के०) तीव्रवेदनाना सहन करनार, एतावता तेत्रीश सागरोपम पर्यंत पूर्ण आयुष्ये ते बेहु जण नरकना स्थानकने विषे नारकी थाय ॥ ४४ ॥

॥ दीपिका–एव गोशालकमते बौद्धमते च निरस्ते द्विजातय प्राहु नो आर्द्रकुमार ! शोभन कृतं यदेते वेदबाह्ये द्वे अपि मते क्षिप्ते अथ जैनमतमपि वेदबाह्य ततोनादरणयोग्यं

तस्माद्ब्राह्मणसेवेव युक्तेत्याह। स्नातकानां षट्कर्मरतानां विप्राणां सहस्रद्वयं ये भोजयंति नित्यं ते पुण्यसंचयं सुमहांतमुर्ज्य देवाः स्युरिति वेदवादः ॥ ४३ ॥ आर्द्रकमुनिरेतद्दूषयन्नाह। (सिणायेति)। स्नातकानां सहस्रद्वयं ये भोजयंति। किंभूतानां कुलानि गृहाणि मांसार्थिनोयेऽटंति ते कुलाटामार्जारा कुलाटाइव कुलाटास्तेषां सतांद्दग्ब्राह्मणभोजनकोबहुवेदनासु गतिषु याति। किंभूतः लोलुपैरामिषगृद्धैः संप्रगाढोव्याप्तः तीव्रोऽसह्योभितापोयस्य एवंभूतः सन्नरकाभिसेवी स्यात् ॥ ४४ ॥

॥ टीका–तदेवमार्द्रककुमारं निराकृतगोशालकाजीवकबौद्धमतमभिसमीक्ष्य सांप्रतं द्विजातयः प्रोचुः। तद्यथा भो आर्द्रककुमार! शोभनमकारि भवता यदेते वेदबाह्ये द्वे अपि मते निरस्ते तत्सांप्रतमप्यार्हतं वेदबाह्यमेवातस्तदपि नाश्रयणार्हं भवद्विधानां तथाहि भवान् क्षत्रियवरः क्षत्रियाणां च सर्ववर्णोत्तमाब्राह्मणाएवोपास्यान शूद्राअतोयागादिविधिना ब्राह्मणसेवैव युक्तिमतीत्येतत्प्रतिपादनायाह। (सिणायगाणतुइत्यादि) तुशब्दोविशेषणार्थः। षट्कर्माभिरतावेदाध्यापकाः शौचाचारपरतया नित्यं स्नायिनोब्रह्मचारिणः स्नातकास्तेषां सहस्रद्वयं नित्यं ये भोजयेयुः कामिकाहारेण ते समुपार्जितपुण्यस्कंधाः संतोदेवाः स्वर्गनिवासिनोभवंतीत्येवंभूतोवेदवादइति ॥ ४३ ॥ अधुनार्द्रककुमारएतद्दूषयितुमाह। (सिणायगाणतुइत्यादि) स्नातकानां सहस्रद्वयमपि नित्यं येभोजयति। किंभूतानां कुलानि गृहाण्यामिषान्वेषणार्थिनोनित्यं येऽटंति तेकुलाटामार्जाराः कुलाटाइव कुलाटाब्राह्मणाः। यदिवा कुलानि क्षत्रियादिगृहाणि तानि नित्यं पिंमपातान्वेषिणः परतर्कुकाणामालयोयेषां ते कुलालयास्ते नित्यजीविकोपगतानामेवंभूतानां योसहस्रद्वयं भोजयेत्स सत्पात्रनिक्षिप्तदानोगच्छति बहुवेदनासु गतिषु। किंभूतः सन् लोलुपैरामिषपरैः गृद्धरससातागौरवाद्युपपन्नैः जिह्वेंद्रियवशगैः संप्रगाढोव्याप्तोयदिवा किंभूते नरके याति लोलुपैरामिषगृध्नुभिरसुमभिव्याप्तोयोनरकस्तस्मिन्निति। किंभूतश्चासौ दाता नरकाभिसेवी भवति तद्दर्शयति। तीव्रोऽसह्योयोऽभितापः ककचपाटनकुंभीपाकतप्तत्रपुपानशाल्मल्यालिंगनादिरूपः सविद्यते यस्यासौ तीव्राभितापीत्येवंभूतवेदनाभितप्तस्त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमानि यावदप्रतिष्ठाननरकाधिवासी भवतीति ॥ ४४ ॥

दयावरं धम्मडुगंछमाणा, वहावहं धम्मपसंसमाणा ॥ एगं
पि जे भोययती असीलं, णिवोणिसं जाति कुउ सुरेहिं ॥ ४५ ॥
दुहउवि धम्मं मिसमुठ्ठियामो, अस्सिं सुठ्ठिचा तह एमकालं ॥
आयारसीले वुइए इनाणी, ण संपरायंमि विसेसमत्थि ॥ ४६ ॥

अर्थ–वली आर्द्रकुमार कहेछे के, (दयावरधम्मदुगछमाणा के०) जेमां दया प्रधा नछे एवा धर्मने निंदता, (वहावहधम्मपससमाणा के०) तथा हिंसारूप धर्मनी प्रशं सा करता, (असील के०) आचार रहित एवा, (एगपि के०) एकनें पण (जेनो ययती के०) जे कोइ नृप राजा अथवा बीजो कोइ मूढमति धार्मिक पुरुष, पात्रनी बुद्धियें करी जमाडे, तो (णीयोणिसजातिकुडंसुरेहि के०) ते नृप राजा, अथवा बीजो कोइ मूढमति पुरुष होय, ते निशा एटले सदैव कृष्णांधकार रात्रीसमान काल वर्तेछे जेमा एवी नरकभूमिनेविषे नरकमाहे जाय ए वचन सत्य करी जाणवुं अनें तमे कह्यु जे देवता थाय, ते वात मृषाछे तेवा पुरुषने असुरने विषे पण गति न जा णवी, तो वैमानिक देवता क्याथी थाय !॥ ४५॥ हवे आर्द्रकुमार ब्राह्मणोनो मत परास्त करीनें आगल चाल्यो, एटले एक दंमिया सांख्य मति मल्या, ते एम कहेछे के, अ हो आर्द्रकुमार ! तें रूडू कीधु के, जे ए ब्राह्मणो सर्व आरंभने विषे प्रवर्त्तता गृहस्थ छ ता, पोतामा गुरुपणु मानता, एवा ए राक्षस सरखा ब्राह्मणनु निराकारण कर्यु? सांप्रत अमारा सिद्धांतसाथे तमारासिद्धातनो कांइ नेद नथी, अमारो सिद्धांत पंचविंशति तत्व रूपछे हवे ते पण कहुंछु सांजल, हैयानेविषे धारण कर (डुहउविधम्मसिसमुठियामो के०)जे अमारो धर्म, अने तमारो धर्म, ए बेहु सरखाज जाणियें छैयें कारण के, तमारे पण जीवनें अस्तिनावे पुण्य, पाप, बंध, अने मोक्षनो सन्नावछे,अने अमारे पण एमज छे तमारे पण पाच महा व्रतछे, अनें अमारे पण अहिंसादिक पांच यमछे,तथा इंद्रिय अनें नोइंद्रियना नियमो तो आपण बेहुनें सरखाजछे तेमाटें बेहुधर्मने विषे अमनें अने तमने प्रवर्त्तता सम्यक् प्रकारज जाणवो अने(अस्सिसुठिच्चा के०)एहिज धर्मनें विषे रहिनें, (तहएसकाल के०) तथा अतीतकाले, वर्त्तमानकालें, अनें आगमिक कालें, जे पूर्वो क्त अंगीकार करेला धर्मना प्रतिपालनहार आपणे छैये तेवा बीजा कोइ नथी (आया रसीलेवुइएहनाणी के०) तथा आपणो आचार जे यम नियमलक्षण, ते प्रधान शील कह्योछे, परंतु आजीविकानु कारण आपणनें कोइ पण नथी? तथा वली आपण बेहुनें ज्ञान, मोक्षनु अंग कह्युंछे (णसपरायमिविसेसमत्थि के०)तथा कर्मे करीने भ्रमण करेछे प्राणी जेमां ते संपराय कहिये, एवो संपराय जे, संसार, ते जेम तमारे नित्यछे, तेम अमारे पण नित्यजछे तेमाटे ए सिद्धांतमा अमारे तमारे विशेष कांइ नथी॥ ४६ ॥

॥ दीपिका–दयया वर प्रधान धर्मं जुगुप्समानोनिंदन् वधावहं हिंसाकर धर्मं प्रश संन्नेकमपि अशील निर्व्रतं षड्जीवोपमर्दन योजोजयेत्कि पुनर्बहून् नृपोराजाऽन्योवा य क श्चिन्मूढ सवराको निशेव नित्याधकारत्वान्निशा नरकभूमिस्ता याति कुतस्तस्यासुरेष्वधम

देवेष्वपि प्राप्तिरिति । अथार्द्रक मुनिमेकदण्डिन <u>साख्या</u> प्राहु नो आर्द्रक वर कृतं यदेते सर्वारंजप्रवृत्तामासाशिनोधिग्ज्ञातयोनिरस्ता । इदानीमस्मत्सिद्धातं शृणु ॥ ४५ ॥ यो यमस्मद्धर्मे यश्च त्वदीयोजैन सउजयरूपोपि कथचित्तुल्य । पचयमाअस्माक जवता तएव महाव्रतानि पुण्यपापबधमोक्षसद्भावोस्माक जवता च तदेवमुजयस्मिन्नपि धर्मे सम्यु स्थितायूयं वयच पूर्वस्मिन्काले वर्त्तमाने एष्येच गृहीतप्रतिज्ञानिर्वाहका आचारप्रधान शीलमुदितं कथितं अथ ज्ञान मोक्षागमुक्त क्षान्त्या आवयो संपराये ससारे च न विशेपोस्ति ॥ ४६ ॥

॥ टीका–(दयावरमित्यादि) दया प्राणिषु कृपा तया वर प्रधानोयोधर्मस्तमेव ध र्मं जुगुप्समानोनिदस्तथा वध प्राण्युपमर्दमावहतीति वधावहस्तं तथाजूतं धर्मं प्रशसन्स्तु वन् एकमप्यशील निर्व्रतं षड्जीवकायोपमर्दन योजोजयेत् किं पुन प्रजूतान् नृपोराज न्योवा य कश्चिन्मूढमतिर्धार्मिक आत्मान मन्यमान सवराकोनिशेव नित्याधकारत्वान्नि शारकजूमित्वां याति कुतस्तस्यासुरेष्वप्यधमदेवेष्वपि प्राप्तिरिति । तथा कर्मवशादसुमतां विचित्रजातिगमनाञ्जातेरशाश्वतत्वमतोन जातिमदोविधेयइति । यदपि केश्चिडुच्यते य या ब्राह्मणाब्रह्मणोमुखाद्विनिर्गतावाहुज्या क्षत्रियाऊरुज्या वैश्या पद्भ्याशूद्राइत्येत दप्यप्रमाणत्वादति फल्गुप्राय तदभ्युपगमे च न विशेषोवर्णाना स्यादेकस्मात्प्रसूतेर्वृक्षशा खाप्रतिशाखायजूतपनसोडुंबरादिफलवद्ब्रह्मणोवा मुखादेरवयवानां चातुर्वर्ण्यावाप्ति स्यान्न चैतदिष्यते जवद्भिस्तथा यदि ब्राह्मणादीना ब्रह्मणोमुखादेरुद्भव साप्रतं किं न जायते ? अ थ युगादावेतदित्येव सति दृष्टहानिरदृष्टकल्पना स्यादिति । तथा यदि कैश्चिदन्यधायि सर्व ज्ञनिक्षेपावसरे तद्यथा सर्वज्ञरहितातीत काल कालत्वाद्वर्तमानकालवदेवच सत्येतदपि शक्यते वक्तु यथा नातीत कालोब्रह्ममुखादिविनिर्गतचातुर्वर्ण्यसमन्वित कालत्वाद्वर्त्तमा नकालवद्भवति च विशेषे पक्षीकृते सामान्यहेतुरित्यत प्रतिज्ञार्थैकदेशा सिद्धता नाशकनी येति। जातेश्चानित्यत्व युष्मत्सिद्धातएवाभिहितं। तद्यथा शृगालोवा एपजायते य सपुरी षोदह्यतइत्यादिना । तथा सद्य पतति मांसेन लाक्षया लवणेन च ॥ त्र्यहेन शूद्रीजवति ब्राह्मण क्षीरविक्रयीत्यादि लोके चावश्यजावी जातिपात । यतउक्त । "कायिके कर्मणा दोषैर्याति स्थावरतां नर ॥ वाचिके पक्षिमृगता मानसैरन्त्यजातितां" ॥१॥ इत्यादिगुणैर प्येवविधेर्न ब्राह्मणत्व युज्यते।तद्यथा । "षट्शतानि नियुज्यते पशूनां मध्यमेहनि । अ श्वमेधस्य वचनान्यूनानि पशुनिस्त्रिजिरित्यादि वेदोक्तत्वान्नाय दोषइति चेन्नन्विदमभिहित मेव न हिंस्यात्सर्वभूतानीत्यत पूर्वोत्तरविरोधस्तया ।" आततायिनमायातमपि वेदांतग रणे । जिघांसतं जिघांसीयान्न तेन ब्रह्महा नवेत् ॥ तथा शूद्र हत्वा प्राणायाम जपेत

अर्थ–वली आर्द्रकुमार कहेछे के, (दयावरधम्मदुगंछमाणा के०) जेमां दया प्रधा नछे एवा धर्मने निंदता, (वहावहंधम्मपसंसमाणा के०) तथा हिंसारूप धर्मनी प्रशं सा करता, (असील के०) आचार रहित एवा, (एगंपि के०) एकनें पण (जेजो ययती के०) जे कोइ नृप राजा अथवा बीजो कोइ मूढमति धार्मिक पुरुष, पात्रनी बुद्धिये करी जमाडे, तो (णीयोणिसंजातिकुर्उंसुरेहिं के०) ते नृप राजा, अथवा बीजो कोइ मूढमति पुरुष होय, ते निशा एटले सदैव कृष्णांधकार रात्रीसमान काल वर्तेछे जेमां एवी नरकभूमिनेविषे नरकमांहे जाय ए वचन सत्य करी जाणवुं अनें तमे कह्युं जे देवता थाय, ते वात मृषाछे तेवा पुरुषनें असुरने विषे पण गति न जा णवी, तो वैमानिक देवता क्याथी थाय ! ॥ ४५ ॥ हवे आर्द्रकुमार ब्राह्मणोनो मत परास्त करीनें आगल चाल्यो, एटले एक दमिया सांख्य मति मल्या, ते एम कहेछे के, अ हो आर्द्रकुमार ! तें रूडूं कीधुं के, जे ए ब्राह्मणो सर्व आरंभने विषे प्रवर्त्तता गृहस्थ छ ता, पोतामां गुरुपणुं मानता, एवा ए राक्षस सरखा ब्राह्मणनुं निराकरण कर्युं? सांप्रत अमारा सिद्धांतसाथे तमारासिद्धांतनो कांइ भेद नथी, अमारो सिद्धांत पंचविंशति तत्व रूपछे हवे ते पण कहुंबु सांभल, हैयानेविषे धारण कर (डुहर्उवियम्ममिसमुछियामो के०)जे अमारो धर्म, अने तमारो धर्म, ए बेहु सरखाज जाणियें छैयें कारण के, तमारे पण जीवनें अस्तिभावे पुण्य, पाप, बंध, अने मोक्षनो सद्भावछे,अने अमारे पण एमज छे तमारे पण पांच महा व्रतछे, अनें अमारे पण अहिंसादिक पांच यमछे,तथा इंद्रिय अनें नोइंद्रियना नियमो तो आपण बेहुने सरखाजछे तेमाटें बेहुधर्मने विषे अमने अने तमने प्रवर्त्तता सम्यक् प्रकारज जाणवो अने(अस्सिंसुट्ठिच्चा के०)एहिज धर्मनें विषे रहिनें, (तहएसकाल के०) तथा अतीतकाले, वर्त्तमानकालें, अने आगमिक कालें, जे पूर्वो क्त अंगीकार करेला धर्मना प्रतिपालनहार आपणे छैयें तेवा बीजा कोइ नथी (आया रसीलेवुइएहनाणी के०) तथा आपणो आचार जे यम नियमलक्षण, ते प्रधान शील कह्योछे, परंतु आजीविकानुं कारण आपणने कोइ पण नथी? तथा वली आपण बेहुनें ज्ञान, मोक्षनुं अंग कह्युंछे (णसंपरायंमिविसेसमत्थि के०)तथा कर्मे करीनें भ्रमण करेछे प्राणी जेमां ते संपराय कहियें, एवो संपराय जे, संसार, ते जेम तमारे नित्यछे, तेम अमारे पण नित्यजछे तेमाटे ए सिद्धांतमां अमारे तमारे विशेष कांइ नथी ॥ ४६ ॥

॥ दीपिका–दयया वर प्रधान धर्मं जुगुप्समानोनिंदन् वधावहं हिंसाकरं धर्मं प्रश ंसन्नेकमपि अशील निर्व्रतं षड्जीवोपमर्दनं योभोजयेत्कि पुनर्बहून् नृपोराजाऽन्योवा य क श्चिन्मूढ संवराको निशेव नित्यांधकारत्वान्निशा नरकभूमिस्तां याति कुतस्तस्यासुरेष्वधम

तथा (महंत के०) महांत एटले समस्तलोकमा व्यापी रह्योछे, तथा (सणातण के०) सनातन एटले शाश्वतो छे, यद्यपि नाना प्रकारनी गति करेछे तथापि, चैतन्य लक्षण जे आत्मस्वरूपछे ते क्यांहि पण जतु नथी, तथा (अरकय के०) अक्षय एटले कोइ पण प्रदेशनो खय करी न शकीये तथा (मव्वयच के०) अव्यय एटले अनंतकालें कोइ एक प्रदेशनो पण व्यय न थाय एटले विछेद न थाय किंबहुना (सव्वेसुभूतेसुविसव्वतोमे के०) सर्वभूतने विषे, शरीर शरीरप्रत्ये ए आत्मा एकज व्यापी रह्योछे,ते उपर दृष्टांत देखाडेछे (चंदोवतारादिसमत्तरूवे के०) जेम चंद्रमा अश्विन्यादिक नक्षत्र करी, स मस्तरूप थको संबंध पामे, तेम ए आत्मा, शरीर शरीर प्रत्यें संपूर्ण संबंध पामे यदु क्त " एकएव हि भूतात्मा भूते भूते व्यवस्थित ॥ एकधा बहुधा चैव दृश्यते जलचंद्रव त् " इत्यादि ॥ ४७ ॥ हवे तेप्रत्ये आर्द्रकुमार कहेछे (एवणमिक्कतिणससरती के०) ए रीतें जेम तमारे दर्शने एकांतवादें आत्मा एक, नित्य, अविकारी, एम जे कहिये, ते संभवे नहीं, एम कहिये तो सर्व पदार्थ नित्य ठरेछे, तेम ठतां तो बंध मोक्षनो पण सद्भाव क्यांथी थाय? अने बंधने अभावे चतुर्गतिक संसारनो पण अभाव, अने मोक्ष नो पण अभाव थाय अने मोक्षने अभावे तमे जे यम नियमादिक व्रतनु ग्रहण कह्यो छो ते पण निरर्थक थशे, ए कारण माटे आत्मा सर्व व्यापी एकजछे ए जे तमारु बो लवुछे ते अयुक्तछे, एम कहेतां तो नरक, तिर्यंच, मनुष्य, अने देवता, तथा बाल, कुमा र, सुभग, दुर्भग, धनाढ्य,दरिद्री, इत्यादिक भेदें जूदा जूदा पदार्थो न जाणिये ? तथा पो ताना करेला कर्म करी प्रेर्या जीव, नाना प्रकारनी गतिने विषे परिभ्रमण पण न करे? (नमाहणाखत्तियवेसयस्सा कीडायपरकीयसरीसिवायनरायसव्वेतहदेवलोए के०)तथा आ त्माने सर्वव्यापक पणुज कहेतां थकी एकत्व भावेज आत्मा थया, तेवारें ब्राह्मण, क्षत्रि य, तथा वैश्य, अनें शूद्र, तथा कीटक, पक्षी, तथा सरीसिव एटले सर्प्प, तथा नर ए टले मनुष्य, तथा सर्व देवलोक इत्यादिक, नाना प्रकारनी गतिना गामी जीव न होय? ए कारण माटें आत्मा सर्व व्यापक नथी, तथा आत्मा एक पण नथी, ते माटें तमा रो आगम, सर्वज्ञभाषित नथी, अने सर्वज्ञभाषित विना याथातथ्य न होय ॥ ४८ ॥

॥दीपिका–भवंत पुरुषजीव स्वीकृतवंतस्तथा वयमपि। किंभूत? अव्यक्तरूप महांतं व्याप क सनातन नित्य अक्षतं प्रदेशाना खमश कर्तुमशक्यत्वात् अव्यय अनंतकालेनापि ए कप्रदेशस्यापि व्ययाभावात्। तथा सर्वेषु भूतेषु शरीरवस्तु प्रतिशरीर सर्वत सामस्त्यादसा वात्मा भवति। यथा चंद्रस्ताराभि संपूर्ण समस्तरूप संबध्यते एव जीवोपि शरीरे संपूर्णे संबध्यते अयमेव श्लोकोऽद्वैतवादिवेदांतिमते व्याख्येय । न वर सर्वभूतेषु सर्वत सर्वा ...

अपहृतिर्त वा कुर्यात् यत्किंचिद्वा वदात् तथा नास्थिजतूनां शकटजरं मारयित्वा ब्राह्म ए नोजयेदित्येवमादिका देशना विद्वज्ञनमनांसि न रञ्जयतीत्यतोऽत्यर्थमसमजसमिव ल क्ष्यते युष्मद्दर्शनमिति । तदेवमाईककुमार निराकृतब्राह्मणविवाद जगवदंतिकं गच्छंत दृष्ट्वा एकदंमिनांतराले एवोचुस्तयथा नो आईककुमार! शोजन कृतं जवता यदेते सर्वारं जप्रवृत्तागृहस्था शब्दादिविपयपरायणा पिशिताशनेन राक्षसकल्पाद्विजातयोनिराकृता स्तत्साप्रतमस्मत्सिद्धांतं शृणु श्रुत्वाचावधारय । तद्यथा सत्वरजस्तमसां साम्यावस्थाप्रक ति प्रकृतेर्महांस्ततोहंकारस्तस्माजणश्च पोडशकस्तस्मादपि पोडशकात्पंच तन्मात्राणि ते न्य पंच जूतानि तथा चैतन्य पुरुपस्य स्वरूपमित्येतत्त्वार्द्दतैरप्याश्रितमत पंचविंशतित त्वपरिज्ञानादेव मोक्षावाप्तिरित्यतोऽस्मत्सिद्धांतएव श्रेयान्नापरइति ॥ ४५ ॥ तथा न युष्मत्सिद्धांतोतिदूरेण नियतइत्येतद्दर्शयितुमाह । (इहवीत्यादि) योयस्माद्धर्मोजव दीयश्चार्हत सउनयरूपोपि कथंचित्समानस्तथाहि युष्माकमपि जीवास्तित्वे सति पुण्य पापबंधमोक्षसद्भावोन लोकायतिकानामिव तदजावे प्रवृत्तिर्नापि बौद्धानामिव सर्वाधा रजूतस्यांतरात्मनएवाजावस्तथास्माकमपि पंच यमाश्चहिंसादयोजवता च तएव पंचमहा व्रतरूपास्तथेंद्रियनोइंद्रियनियमोप्यावयोस्तुल्यएव तदेवमुजयस्मिन्नपि धर्मे बहुसमाने सम्यगुब्रानोछितायूय वयंच तस्माद्धर्मे सुष्टु स्थिता पूर्वस्मिन् काले वर्तमाने एष्यंच यथा गृहीतप्रतिज्ञानिर्वोढारोन पुनरन्ये यथाव्रतेश्वरयागविधानेन प्रव्रज्या मुक्तवतो मुंचति मो क्षति चेति तथाचारप्रधान शीलमुक्त यमनियमलक्षण न फल्गुवल्ककुहकाजीवनरूपमथा नतर ज्ञानच मोक्षागतयाजिहितं तच्च श्रुतज्ञान केवलाख्यंच यथा स्वमावयोदर्शने प्रसिद्ध तथा संपर्यते स्वकर्मनिर्भ्राम्यते प्राणिनोयस्मिन्नसंपराय संसारस्तस्मिश्चावयोर्न विशे पोस्ति । तथाहि । यथा जवता कारणे कार्यं नैकांतेनासदुत्पद्यते अस्माकमपि तथैव इव्यात्मतया नित्यत्व जवद्भिरप्याश्रितमेव तथोत्पादविनाशावपि युष्मदजिप्रेतावाविर्भा वतिरोजावाश्रयादस्माकमपीति ॥ ४६ ॥

अव्वत्तरूव पुरिस महंत, सणातण अक्खयमव्वय च ॥ सव्वे
सु जूतेसु विसव्वतोसे, चदोवताराहि समत्तरूवे ॥ ४७ ॥ एव
ए मिज्जति ए संसरती, ए माहणाखत्तिय वेसयस्सा ॥ कीडाय
पक्कीय सरीसिवाय नराय सव्वे तह देवलोए ॥ ४८ ॥

अर्थ—वली एक दंमिज कहेले (पुरिस के०) पुरुष शब्दें जीव तेनें जे रीतें तमें जाणोगे, ते रीतें अमे पण जाणियें बैये (अव्वत्तरूव के०) आत्मा अव्यक्तरूपछे, कर, चरणादिक जे अवयव तेणे करी लख्योनजाय ते कारण माटे अव्यक्तरूपछे

तथा (महंत के०) महांत एटले समस्तलोकमां व्यापी रह्योछे, तथा (सणातण के०) सनातन एटले शाश्वतो छे, यद्यपि नाना प्रकारनी गति करेछे तथापि, चैतन्य लक्षण जे आत्मस्वरूपछे ते क्यांहि पण जतुं नथी, तथा (अरकय के०) अक्षय एटले कोइ पण प्रदेशनो खंम करी न शकीये तथा (अव्वयच के०) अव्यय एटले अनंतकालें कोइ एक प्रदेशनो पण व्यय न थाय एटले विछेद न थाय किंबहुना (सव्वेसुभूतेसुविसव्वतोसे के०) सर्वभूतने विषे, शरीर शरीरप्रत्ये ए आत्मा एकज व्यापी रह्योछे,ते उपर दृष्टांत देखाडेछे (चंदोवताराहिंसमत्तरूवे के०) जेम चंद्रमा अश्विन्यादिक नक्षत्रे करी, समस्तरूप थको संबंध पामे, तेम ए आत्मा, शरीर शरीर प्रत्यें संपूर्ण संबंध पामे यदुक्तं " एकएव हि भूतात्मा भूते भूते व्यवस्थितः ॥ एकधा बहुधा चैव दृश्यते जलचंद्रवत् " इत्यादि ॥ ४७ ॥ हवे तेप्रत्यें आर्द्रकुमार कहेछे (एवणमिक्कतिणससरंती के०) ए रीतें जेम तमारे दर्शने एकांतवादें आत्मा एक, नित्य, अविकारी, एम जे कहियें, ते संभवे नहीं, एम कहिये तो सर्व पदार्थ नित्य ठरेछे, तेम छतां तो बंध मोक्षनो पण सद्भाव क्यांथी थाय? अने बंधने अभावे चतुर्गतिक संसारनो पण अभाव, अने मोक्षनो पण अभाव थाय अने मोक्षने अभावे तमे जे यम नियमादिक व्रतनुं ग्रहण कह्यो छो ते पण निरर्थक थशे, ए कारण माटे आत्मा सर्व व्यापी एकजछे ए जे तमारु बोलवुंछे ते अयुक्तछे, एम कहेतां तो नरक, तिर्यंच, मनुष्य, अने देवता, तथा बाल, कुमार, सुभग, दुर्भग, धनाढ्य,दरिद्री, इत्यादिक भेदें जूदा जूदा पदार्थो न जाणिये ? तथा पोताना करेला कर्म करी प्रेर्या जीव, नाना प्रकारनी गतिने विषे परिभ्रमण पण न करे ? (नमाहणाखत्तियवेसयस्साकीडायपरकीयसरीसिवायनरायसव्वेतहदेवलोए के०)तथा आत्माने सर्वव्यापक पणुज कहेवा थकी एकत्व भावेज आत्मा थया, तेवारे ब्राह्मण, क्षत्रिय, तथा वैश्य, अनें शूद्र, तथा कीटक, पक्षी, तथा सरीसिव एटले सर्प्प, तथा नर एटले मनुष्य, तथा सर्व देवलोक इत्यादिक, नाना प्रकारनी गतिना गामी जीव न होय ? ए कारण माटें आत्मा सर्व व्यापक नथी, तथा आत्मा एक पण नथी, ते माटें तमारो आगम, सर्वज्ञभाषित नथी, अने सर्वज्ञभाषित विना याथातथ्य न होय ॥ ४८ ॥

॥दीपिका—भवंत पुरुषजीवः स्त्रीरुतवतस्तथा वयमपि। किंभूत? अव्यक्तरूपः महांतं व्यापक सनातनं नित्यः अक्षतं प्रदेशाना खंमशः कर्तुमशक्यत्वात् अव्यय अनंतकालेनापि एकप्रदेशस्यापि व्ययाभावात्। तथा सर्वेषु भूतेषु शरीरवत्सु प्रतिशरीरं सर्वतः सामस्त्यादसावात्मा भवति। यथा चंद्रस्ताराभिः संपूर्णः समस्तरूपः संबध्यते एवं जीवोपि शरीरैः संपूर्णः संबध्यते अयमेव श्लोकोऽद्वैतवादिवेदांतिमते व्याख्येयः । न वरं सर्वभूतेषु सर्वतः सर्वा

त्मतयाऽसौ स्थित यथा तारास्वेकएव चंड तथात्मापि सर्वत्र सब्रध्यतइति ॥४७॥ अथार्द्रकमुनिराह । आत्मनोऽविकारित्वे आत्माऽद्वैते वा स्वीकृते डुर्भगसुजगादिनेदेन जीवा न मीयेरन्न ज्ञायते स्वकर्मप्रेरितानरकादिगतिषु न ससरति सर्वव्यापित्वादेकत्वाद्वा तथा न ब्राह्मणान क्षत्रियान वैश्यान प्रेष्यान शूद्रानापि कीटपक्षिसरीसृपाश्च नवति नरा श्च सर्वेपि देवलोकाश्चेत्येव गतिनेदोन स्यात् ? ॥ ४ए ॥

॥ टीका–पुनरपि तथैवैकदम्भिन संसारिकजीवपदार्थसाम्यापादनायाह । (अव्वत्तरूव मित्यादि) पुरि शयनात्पुरुषोजीवस्तं यथा नवतोन्युपगतवतस्तथा वयमपि तमेव विम्नष्टि। अमूर्त्तत्वादव्यक्त रूपमस्यासावव्यक्तरूपस्तथा करचरणशिरोग्रीवाद्यवयवतया स्वतो वस्थानात्तथा महांतं लोकव्यापिन तथा सनातन शाश्वत इव्यार्थतया नित्यं नानाविधग तिसन्नवेपि चैतन्यलक्षणात्मस्वरूपस्याप्रच्युतेस्तथा क्षय केनचित्प्रदेशाना खमश कर्तुमश क्यत्वात्तथाऽव्ययमनतेनापि कालेनैकस्यापि तत्प्रदेशस्य व्ययाजावात्तथा सर्वेष्वपि जूतेषु कायाकारपरिणतेषु प्रतिशरीर सर्वत सामस्त्यान्निरंशत्वादसावात्मा जवति कइव ? च इइव शशीव ताराजिरश्विन्यादिजिर्नक्षत्रैर्यथा समस्तरूप सपूर्ण सबधमुपयात्येवम सावपि आत्मा प्रत्येक शरीरे सह सपूर्ण सबधमुपयाति तदेवमेकदम्भिनिर्दर्शन साम्यापादनेन सामवादपूर्वक स्वदर्शनारोपणार्थमार्द्रककुमारोजिहितोयत्रैतानि सपूर्णा नि निरुपचरितानि पूर्वोक्तानि विशेषणानि धर्मससारयोर्विद्यते सएव पक्ष सश्रुतिकेन स माश्रयितव्योनवति । एतानि चास्मदीयएव दर्शने यथोक्तानि सति नार्हतेऽतोनवताप्य स्मदर्शनमेवाच्युपगतव्यमिति ॥ ४७ ॥ तदेवमजिहित सन्नार्द्रकुमारस्तडुत्तरदानायाह । (एवमित्यादि) यदिवा प्राक्तनश्लोक (अव्वत्तरूवमित्यादि) कोवेदांतवाद्यात्मा द्वैतमते न व्याख्यातव्यस्तथाहि ते एकमेवाव्यक्त पुरुषमात्मान महातमाकाशमिव सर्वव्यापिन स नातनमनतमक्षयमव्यय सर्वेष्वपि जूतेषु चेतनाचेतनेषु सर्वत सर्वात्मतया सोव्यव स्थितइत्येवच्युपगतवतोयथा सर्वास्वपि तारास्वेकएव चंड सबधमुपयात्येव चासा वपीत्यस्य चोत्तरदानायाह । (एवमित्यादि) एवमिति तथा नवता दर्शने एकाते नैव नित्योविकार्यात्माच्युपगम्यते इत्येव पदार्था सर्वेपि नित्यास्तथाचसति कुतोबध मोक्षसद्भावोबधाजावाच्च न नारकतिर्यङ्नरामरलक्षणश्चतुर्गतिक ससारोमोक्षाजावा च्च निरर्थक व्रतग्रहण नवता पचरात्रोपदिष्टयमनियमप्रतिपत्तिश्चेत्येव च यडुच्यते न वता यथाऽऽवयोस्तुल्योधर्मइति तदयुक्तमुक्त । तथा ससारातर्गतानाच पदार्थाना न सा म्य तथाहि नवता इव्यैकत्ववादिना सर्वस्य प्रधानादजिन्नत्वात्कारणमेवास्ति कार्यच कार णाजिन्नत्वात्सर्वात्मना न विद्यते अस्माकच इव्यपर्यायोजयवादिना कारणे कार्य इव्या

रमतया विद्यते न पर्यायात्मकतया अपिचास्माकमुत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तमेव सदित्युच्यते ज्ववतातु ध्रौव्य युक्तमेव सदिति । यावप्याविर्भावतिरोभावौ ज्ववतोच्येते तावपि नोत्पाद विनाशावत्तरेण ज्ववितुमुत्सहेते तदेवमैहिकामुष्मिकचिंतायामावयोर्न कथंचित्साम्यं किं च? सर्वव्यापित्वे सर्वात्मनामक्रिकारित्वे चात्मा हते चाज्युपगम्यमाने नारकतिर्यङ्नरा मरज्ञेदेन बालकुमारकसुजगडुर्जगाढ्यदरिद्राद्विज्ञेदेनवा न मीयेरन्न परिछेदेरन् नापि स्व कर्मचोदितानानागतिषु ससरति सर्वव्यापित्वादेकत्वाद्वा तथा न ब्राह्मणान क्षत्रियान वै श्यान प्रेष्यान शूद्रा नापि कीटपक्षिसरीसृपाश्च ज्ववेयुस्तथा नराश्च सर्वेपि देवलोकाश्चेत्ये व नानागतिज्ञेदेनोनियेरन्नतोन सर्वव्यापी आत्मा नाप्यात्मा हेतवादोप्यायात्यत प्रत्ये क सुखडुखानुज्ञव समुपजन्यते तथा शरीरत्वक्पर्यंतमात्रएवात्मा तत्रैव तद्गुणविज्ञा नोपलब्धेरिति स्थितं ॥ ४८ ॥

> लोयं अयाणित्ति ह केवलेण, कहंति जे धम्ममजाणमाणा॥णा
> संति अप्पाणपरं च णठा, संसारघोरं मिअणोरपारे ॥ ४९ ॥
> लोयं विजाणंति ह केवलेण, पुन्नेण नाणेण समाहिजुत्ता॥धम्मं
> समत्तं च कहंति जेऊ, तारंति अप्पाणपरं च तिन्ना ॥ ५० ॥

अर्थ– वली आर्द्रकुमार कहेछे के, (लोयं के०) ए लोक जे चौदरज्ज्वावात्मक, तेनें (अयाणित्तिहकेवलेण के०) केवलज्ञान करीनें न जाणे, एवा आ जगत् माहें (कहं तीजेधम्ममजाणमाणा के०) जे दर्शनीउं अजाणता थका धर्म कहेछे (णासंति अप्पाणपरंचणठा के०) ते पोताना आत्मानें ज्रष्ट करता थका बीजानें पण ज्रष्ट क रेछे किंबहुना (संसारघोरमिअणोरपारे के०) ते घोर एटले रौड, अपारावार, एवो जे संसार ते माहे पोतें पण पडे, अनें बीजानें पण पाडे ॥ ४९ ॥ हवे आर्द्रकुमार, सम्यक्ज्ञानवंत धर्मना कहेनार, एवा पुरुषोना गुण कहेछे (लोयंविजाणंतिहकेवलेण के०) चौद रज्ज्वात्मक लोक, तेने केवलज्ञान करी केवली, नानाप्रकार जाणे (पुन्ने णनाणेणसमाहिजुत्ता के०) तथा संपूर्ण ज्ञानें करी, समाधिसहित थका, (धम्मंसम त्तंचकहंतिजेउ के०) संपूर्ण श्रुतचारित्ररूप धर्म, परना हितनें अर्थे जे कहे (तारं तिअप्पाणपरंचतिन्ना के०) ते पोतें पण संसार समुद्र थकी तरे, अनें बीजानें पण तारे एवा जे जिनड मार्ग, केवलीनापित, ते सत्य जाणवो ॥ ५० ॥

॥ दीपिका–लोकं चराचरमज्ञात्वा केवलेन दिव्यज्ञानेन इह जगति ये कथयंति । ध र्ममजानाना ते स्वयं नष्टा आत्मना परं च नाशयंति क्व? घोरे संसारे अणारपारे अवी

त्मतयाऽसौ स्थित यथा तारास्वेकएव चद्र तथात्मापि सर्वत्र सबध्यतइति ॥४७॥ अ थार्द्रकमुनिराह । आत्मनोऽविकारित्वे आत्माऽद्वैते वा स्वीकृते द्विजंगसुजगादिभेदेन जीवा न मीयेरन्न ज्ञायते स्वकर्मप्रेरितानरकादिगतिषु न ससरति सर्वव्यापित्वादेकत्वाद्दा तथा न ब्राह्मणान क्षत्रियान वैश्यान प्रेष्यान शूद्रानापि कीटपक्षिसरीसृपाश्च जवति नरा श्च सर्वेपि देवलोकाश्चेत्येव गतिभेदोन स्यात् ? ॥ ४८ ॥

॥ टीका–पुनरपि तथैवैकदम्भिन ससारिकजीवपदार्थसाम्यापादनायाह । (अवत्तरूव मित्यादि) पुरि शयनात्पुरुषोजीवस्त यथा जवतोन्युपगतवतस्तथा वयमपि तमेव विश्व नद्दि । अमूर्तत्वादव्यक्त रूपमस्यासावव्यक्तरूपस्तथा करचरणशिरोग्रीवाद्यवयवतया स्वतो वस्थानात्तथा महात लोकव्यापिन तथा सनातन शाश्वत द्रव्यार्थतया नित्य नानाविधग तिसन्नवेपि चैतन्यलक्षणात्मस्वरूपस्याप्रच्युतेस्तथा क्षय केनचित्प्रदेशाना खमश कर्तुमश क्यत्वात्तथाऽव्ययमनतेनापि कालेनैकस्यापि तत्प्रदेशस्य व्ययाजावात्तथा सर्वेष्वपि जूतेषु कायाकारपरिणतेषु प्रतिशरीर सर्वत सामस्त्यान्निरशत्वादसावात्मा जवति कइव ? च द्रइव शशीव तारानिरश्विन्यादिभिर्नक्षत्रैर्यथा समस्तरूप सपूर्ण सबधमुपयात्येवम सावपि आत्मा प्रत्येक शरीरे सह सपूर्ण सवधमुपयाति तदेवमेकदम्भिनिर्दर्शन साम्यापादनेन सामवादपूर्वक स्वदर्शनारोपणार्थमार्द्रककुमारोभिहितोयत्रैतानि सपूर्णा नि निरुपचरितानि पूर्वोक्तानि विशेषणानि धर्मससारयोर्विद्यते सएव पक्ष सश्रुतिकेन स माश्रयितव्योजवति । एतानि चास्मदीयएव दर्शने यथोक्तानि सति नार्हतेऽतोजवताप्य स्मद्दर्शनमेवान्युपगतव्यमिति ॥ ४७ ॥ तदेवमभिहित सन्नार्द्रकुमारस्तदुत्तरदानायाह । (एवमित्यादि) यदिवा प्राक्तनश्लोक (अवत्तरूवमित्यादि) कोवेदातवाद्यात्मा द्वैतमते न व्याख्यातव्यस्तथाहि ते एकमेवाव्यक्त पुरुषमात्मान महातमाकाशमिव सर्वव्यापिन स नातनमनतमक्षयमव्यय सर्वेष्वपि जूतेषु चेतनाचेतनेषु सर्वत सर्वात्मतया सोव्यव स्थितइत्येवन्युपगतवतोयथा सर्वास्वपि तारास्वेकएव चद्र सबधमुपयात्येव चासा वपीत्यस्य चोत्तरदानायाह । (एवमित्यादि) एवमिति तथा जवता दर्शने एकांते नैव नित्योविकार्यात्मान्युपगम्यते इत्येव पदार्था सवेपि नित्यास्तथाचसति कुतोबध मोक्षसद्भावोबधाजावाच्च न नारकतिर्यङ्नरामरलक्षणश्चतुर्गतिक ससारोमोक्षाजावा च्च निरर्थक व्रतग्रहण जवता पचरात्रोपदिष्टयमनियमप्रतिपत्तिश्चेत्येव च यदुच्यते ज वता यथाऽऽवयोस्तुल्योधर्मइति तदयुक्तमुक्त । तथा ससारातर्गतानाच पदार्थाना न सा म्य तथाहि जवता द्रव्यैकत्ववादिना सर्वस्य प्रधानादभिन्नत्वात्कारणमेवास्ति कार्यंच कार णाभिन्नत्वात्सर्वात्मना न विद्यते अस्माकच द्रव्यपर्यायोजयवादिना कारणे कार्यं द्रव्या

ए बेहुनो अनुष्ठान तमारी मतियें सरखो कहेवो (अहाउसोविप्परियासमेव के०)अहो आयुष्यमन् एक दंमियाउ! तेथी तेवु कहेनाराने विपर्यास एटले विपरीत मतिवाला जाण वा अनें ए प्रमाणे कहेनारनु वचन उन्मत्त प्रलाप समान जाणियें ठेयें साचु, अनें जूठु ए बे धर्म,सरखाज केम होय? ॥५१॥ ए रीतें एकदंमियाना मतनु निराकरण करीने जेटले स्वामीना समवसरण नणी आर्द्रकुमार चाल्या,एटले अंतरालें हस्तितापस आवीने बोल्या के, अहो आर्द्रकुमार! सश्रुतिक पुरुषने अल्पबहुत्व आलोचवो जोइये शामाटें? तेनु कारण कहु ते तु सांजल के जे बीजा तापस, कंद, मूल, फलना नक्षण करनार,ते घणा एक स्थावर जीवोनो विनाश करे, तथा ते स्थावरनें आश्रित जे जंगम जीव होय, तेनो पण विनाश करे,तथा जे निक्षा मागीने पोतानी आजीविका करेछे ते पण,आशंसादोषें करी दूषितछे,कारण के जिहां तिहां परिभ्रमण करता कीडी,मकोडी प्रमुख अनेक जीवनें उद्वेछे अनें अमेतो,(संवछरेणावियएगमेगं के०) वर्ष वर्ष दिवसें,तथा अपिशब्दें करी ठ मासें एकज, (वाणेणमारेउमहागयंतु के०) महाकाय एटले महोटी कायावालो एवो जे हस्ती तेनें बाणनें प्रहारें विनाशीने, (सेसाणजीवाणदयठ्याए के०) शेष बीजा जीवोनी दयानें अर्थें, मात्र ते एकज हस्तीना मांसें करीने, (वासवयवित्तिपकप्पयामो के०) वर्ष दिवस सुधी अमे अमारी आजीविका चलावियें ठेयें ए रीतें थोडा जीव नो उपघात करी, घणा जीवोनी अमें रक्षा करियें ठेयें ए माटें विशेषे करी, अमारो मा र्ग बीजा सर्वमार्गथकी श्रेष्ठज जाणवो ॥ ५२ ॥

॥दीपिका—ये गर्हितं नियनिर्विवेकिजनाचरितं स्थानं इह जगत्याश्रयंति ये चापि लो के चरणोपेतं संयमरूपं स्थानं सेवते तद्द्वयमपि यैरसर्वज्ञैः समं तुल्यमेवोदाह्रतं कथितं स्वमत्या स्वाभिप्रायेण। अथायुष्मन् हे सांख्य! विपर्यासइति तन्मत्तोन्मत्तप्रलापवदिति एव मेकदंमिनोनिरस्यार्द्रमुनिर्जिनवत्समीपे याति । तावता हस्तितापसास्तमेव प्रोचुः ॥५१ ॥ जो आर्द्रक! ये तापसाः कंदमूलफलाशिनस्ते बहूनां स्थावराणां तदाश्रितत्रसानांच घा तकाः ये च निक्षां सेवते तेप्याशंसादोषदूषिताः भ्रमतश्च पिपीलिकादिजंतुघातकाः वयं तु संवत्सरेणाप्येकं महागजं बाणेन व्यापाद्य शेषाणां जीवानां दयार्थं आत्मनोवृत्तिं जी विकां तन्मांसेन वर्षं यावत्कल्पयामः कुर्मः ततोवयं बहुजीवरक्षकाः ॥ ५२ ॥

॥ टीका—पुनरप्यार्द्रककुमारएवाह । (जेगरहियमित्यादि) अतत्त्वज्ञप्ररूपणमेवभूतं नवति । तद्यथा ये केचित्संसारांतर्वर्तिनोऽशुनकर्मणोपेताः समन्वितास्तद्विपाकसहायाग र्हितं निंदितं जुगुप्सितं निर्विवेकिजनाचरितं स्थानं पदं कर्मानुष्ठानरूपमिहास्मिन् जग

र्भागपरभागरहितेऽनायनतइत्यर्थ ॥४७॥ पूर्णेन ज्ञानेन केवलेन समाधियुक्तालोक चतु र्दशरज्जुमितं ज्ञात्वा इह शासने समस्तं धर्मं श्रुतचारित्ररूपं कथयति ते आत्मना तीर्णाः संसारसागरं तारयंति च परं सदुपदेशादिति ॥ ५० ॥

॥ टीका–तदेवं व्यवस्थिते युष्मदागमोयथार्थाभिधायी न भवत्यसर्वज्ञप्रणीतत्वादसर्वे ज्ञप्रणीतत्वं चैकांतपक्षसमाश्रयणादित्येवमसर्वज्ञस्य मार्गोद्भावने दोषमाविर्भावयन्नाह । (लोयमित्यादि) लोकं चतुर्दशरज्ज्वात्मकं चराचरं वा लोकमज्ञात्वा केवलेन दिव्यज्ञाना वभासेनेहास्मिन् जगति ये तीर्थिकाअजानानाअविद्वांसोधर्मं दुर्गतिगमनमार्गस्यार्गला भूतं कथयंति प्रतिपादयंति ते स्वतोनष्टा अपरानपि नो त्रायंति क ? घोरे भयानके संसार सागरे (अणोपारेत्ति) अर्वाग्भागपरभागवर्जितेनायनतइत्येवभूते संसारार्णवे आ त्मानं प्रक्षिपतीति यावत् ॥ ४७ ॥ सांप्रतं सम्यक्ज्ञानवतामुपदेष्टणां गुणानाविर्भा वयन्नाह । (लोयमित्यादि) लोकं चतुर्दशरज्ज्वात्मकं केवलालोकेन केवलिनोविविधमने कप्रकारं जानंति विदंतीहास्मिन् जगति प्रकर्षेण जानाति प्रज्ञ पुण्यहेतुत्वात् पुण्यं तेन तथाभूतेन ज्ञानेन समाधिना च युक्ता समस्तं धर्मं श्रुतचारित्ररूपं येतु परहितैषिणः कथ यंति प्रतिपादयंति ते महापुरुषास्ततः संसारसागरं तीर्णाः परंच तारयंति सदुपदेशदानत इति केवलिनोलोकं जानंतीत्युक्ते यत्पुनर्ज्ञानेनेत्युक्तं तद्बौद्धमतोद्भेदनं ज्ञानाधारआत्मा अस्तीति प्रतिपादनार्थमिति । एतदुक्तं भवति यथाऽऽदेशिकः सम्यक्मार्गज्ञआत्मानं परं च तदुपदेशवर्तिनं महाकांताराद्विवक्षितदेशप्रापणेन निस्तारयत्येवं केवलिनोप्यात्मानं परं च संसारकांतारान्निस्तारयंतीति ॥५०॥

> जे गरहियं ठाणमिहावसंति, जेयावि लोए चरणोववेया ॥ उदा
> हडं तं तु समं मईए, अहाउसो विप्परियासमेव ॥ ५१ ॥ सं
> वच्छरेणावि य एगमेगं,बाणेण मारेउ महागयं तु॥ सेसाणजीवा
> णदयध्याए, वासं वयं वित्ति पकप्पयामो ॥ ५२ ॥

अर्थ– हवे वली मिथ्यावादीनी केवी प्ररूपणा होय ? ते आर्द्रकुमार कहेछे (जे के०) जे कोइ संसारमाहे वर्तता अशुभ कर्मना करनार, (गरहियं के०) गर्हित ए टले निंदित, निर्विवेकीये आचरण करेलुं (ठाणमिहावसंति के०) एवुं क्रिया अनुष्ठा नरूप जे स्थानक, तेनुं इह एटले आ जगत् माहे सेवन करे, आजीविकाने कारणे ते नो आश्रय करे, (जेयाविलोएचरणोववेया के०) तथा जे वली रूडा उपदेशना देना रा, लोक माहे विरति परिणामरूप चारित्रे करी सहितछे (उदाहडंतंतुसमंमईए के०)

ए वेहुनो अनुष्ठान तमारी मतियें सरखो कहेवो (अहावसोविप्परियासमेव के०)अहो आयुष्मन् एक दम्मियाउ! तेथी तेवु कहेनाराने विपर्यास एटले विपरीत मतिवाला जाण वा अनें ए प्रमाणे कहेनारनु वचन उन्मत्त प्रलाप समान जाणियें छैयें साचु, अनें जूठु ए बे धर्म,सरखाज केम होय? ॥५१॥ ए रीतें एकदम्मियाना मतनु निराकरण करीने जेटले स्वामीना समवसरण नणी आईकुमार चाल्या,एटले अतराले हस्तितापस आवीनें बोल्या के, अहो आईकुमार! सश्रुतिक पुरुषने अल्पबहुत्व आलोचवो जोइये शामाटे? तेनु कारण कहु ते तु साजन्न के जे बीजा तापस, कद, मूल, फलना नक्षण करनार,ते घणा एक स्थावर जीवोनो विनाश करे, तथा ते स्थावरने आश्रित जे जगम जीव होय, तेनो पण विनाश करे,तथा जे निक्षा मागीने पोतानी आजीविका करेछे ते पण,आशसादोपें करी दूषितछे,कारण के जिहा तिहा परिन्रमण करता कीडी,मकोडी प्रमुख अनेक जीवन हुहवेछे अने अमेतो,(सवच्चरेणाविपएगमेग के०) वर्प वर्प दिवसे,तथा अपिशब्दे करी छ मासे एकज, (बाणेणमारेउमहागयतु के०) महाकाय एटले महोटी कायावालो एवो जे हस्ती तेनें बाणनें प्रहारे विनाशीने, (सेसाणजीवाणदयठ्याए के०) शेप बीजा जीवोनी दयानें अर्थें, मात्र ते एकज हस्तीना मासे करीने, (वासवयवित्तिपकप्पयामो के०) वर्प दिवस सुधी अमे अमारी आजीविका चलावियें छैयें ए रीतें थोडा जीव नो उपघात करी, घणा जीवोनी अमे रक्षा करियें छैयें ए माटें विशेपे करी, अमारो मा र्गे बीजा सर्वमार्गथकी श्रेष्ठज जाणवो ॥ ५२ ॥

॥दीपिका–ये गर्हितं नित्यनिर्विवेकिजनाचरितं स्थान इह जगत्याश्रयति ये चापि लो के चरणोपेत सयमरूप स्थान सेवते तद्द्वयमपि यैरसर्वज्ञैः सम तुल्यमेवादाल्हत कथितं स्वमत्या स्वाभिप्रायेण। अथायुष्मन् हे साख्य! विपर्यासइति तन्मत्तोन्मत्तप्रलापवदिति एव मेकदण्डिनोनिरस्याईमुनिर्निर्गवत्समीपे याति । तावता हस्तितापसास्तमेव प्रोचु ॥५१ ॥ नो आईक! ये तापसा कदमूलफलाशिनस्ते बहूना स्थावराणा तदाश्रितत्रसानाच घा तका ये च निक्षा सेवते तेप्याशसादोपदूपिता न्रमतश्च पिपीलिकादिजतुघातका वय तु सवत्सरेणाप्येक महागज बाणेन व्यापाद्य शेपाणा जीवाना दयार्थं आत्मनोवृत्ति जी विका तन्मांसेन वर्प यावत्कल्पयाम कुर्म ततोवय बहुजीवरक्षका ॥ ५२ ॥

॥ टीका–पुनरप्याईककुमारएवाह । (जेगरहियमित्यादि) असर्वज्ञप्ररूपणमेवन्नूतं नवति । तद्यथा ये केचित्ससारांतर्वर्तिनोऽशुनकर्मणोपेता समन्वितास्तद्विपाकसहायाग र्हितं निदितं जुगुप्सितं निर्विवेकिजनाचरितं स्थान पद कर्मानुष्ठानरूपमिहास्मिन् जग

ग्भागपरभागरहितेऽनाद्यनंतइत्यर्थ ॥४९॥ पूर्णेन ज्ञानेन केवलेन समाधियुक्तालोकं चतु र्दशरज्जुमितं ज्ञात्वा इह शासने समस्तं धर्मं श्रुतचारित्ररूपं कथयंति ते आत्मना तीर्णाः संसारसागरं तारयंति च परं सदुपदेशादिति ॥ ५० ॥

॥ टीका–तदेवं व्यवस्थिते युष्मदागमोयथार्थाभिधायी न भवत्यसर्वज्ञप्रणीतत्वात्सर्व ज्ञप्रणीतत्वं चैकांतपक्षसमाश्रयणादित्येवमसर्वज्ञस्य मार्गोद्भावने दोषमाविर्भावयन्नाह । (लोयमित्यादि) लोकं चतुर्दशरज्ज्वात्मकं चराचरं वा लोकमज्ञात्वा केवलेन दिव्यज्ञाना वभासेनेहास्मिन् जगति ये तीर्थिकाअजानानाअविद्वांसोधर्मं दुर्गतिगमनमार्गस्यार्गला भूतं कथयंति प्रतिपादयंति ते स्वतोनष्टा अपरानपि नो त्रायंति क ? घोरे भयानके संसार सागरे (अणोपारेत्ति) अर्वाग्भागपरभागवर्जितेनाद्यनंतइत्येवंभूते संसारार्णवे आ त्मानं प्रक्षिपंतीति यावत् ॥ ४९ ॥ सांप्रतं सम्यक्ज्ञानवतामुपदेष्टणां गुणानाविर्भा वयन्नाह । (लोयमित्यादि) लोकं चतुर्दशरज्ज्वात्मकं केवलालोकं न केवजिनोविविधमने कप्रकारं जानंति विदंतीहास्मिन् जगति प्रकर्षेण जानाति प्रज्ञ पुण्यहेतुत्वात् पुण्यं तेन तथाभूतेन ज्ञानेन समाधिना च युक्ता समस्तं धर्मं श्रुतचारित्ररूपं येतु परहितैषिणः कथ यंति प्रतिपादयंति ते महापुरुषास्ततः संसारसागरं तीर्णाः परंच तारयंति सदुपदेशदानत इति केवलिनोलोकं जानंतीत्युक्ते यत्पुनर्ज्ञानेनेत्युक्तं तद्बौद्धमतोच्छेदेन ज्ञानाधारआत्मा अस्तीति प्रतिपादनार्थमिति । एतदुक्तं भवति यथाऽऽदेशिकः सम्यक्मार्गज्ञआत्मानं परं च तदुपदेशवर्तिनं महाकांताराद्विवक्षितदेशप्रापणेन निस्तारयत्येवं केवलिनोप्यात्मानं परं च संसारकांतारान्निस्तारयंतीति ॥५०॥

> जे गरहियं ठाणमिहावसंति, जेयावि लोए चरणोववेया ॥ उदा
> हडं तं तु समं मईए, अहाउसो विप्परियासमेव ॥ ५१ ॥ सं
> वच्छरेणावि य एगमेगं,बाणेण मारेउ महागयं तु॥ सेसाणजीवा
> णदयघयाए, वासं वयं वित्ति पकप्पयामो ॥ ५२ ॥

अर्थ– हवे वली मिथ्यावादीनी केवी प्ररूपणा होय ? ते आर्द्रकुमार कहेबे (जे के०) जे कोइ संसारमाहे वर्तता अशुभ कर्मना करनार, (गरहिय के०) गर्हित ए टले निंदित, निर्विवेकीये आचरण करेलुं (ठाणमिहावसंति के०) एवुं क्रिया अनुष्ठा नरूप जे स्थानक, तेनुं इह एटले आ जगत् माहे सेवन करे, आजीविकाने कारणे ते नो आश्रय करे, (जेयाविलोएचरणोववेया के०) तथा जे वली रूडा उपदेशना देना रा, लोक माहे विरति परिणामरूप चारित्रे करी सहितबे (उदाहडंतंतुसममईए के०)

होय, तेने कयो आशंसा दोष ? अने पिपीलिकानो घात पण केम होय? अने तमो एवा म होटा जीवनो उपघात करीनें पण पोताने निर्दोष मानोगो, ते जो एवी रीतें निर्दोष पणु थतु होय तो, आपणी आजीविकाने निमित्ते आरंभने विषे प्रवर्त्तता (सियायथोवगिहि णोवितम्हा के०) कदाचित् पोतानु क्षेत्र टाली अन्य जीवोनो उपघात अण करता गृहस्थ पण तमारी पेठें थोडा जीव हणता,घणा जीव पालता थका तमारा सरखा निर्दोषज जाणवा एम थयु ॥५३॥ वली आर्द्रकुमार कहेछेके,(संवछरेणावियएगमेगपाणहणता समणेव्वएसु के०) अहो हस्तितापसो! जे तमारा दर्शनी, श्रमणना व्रतने विषे प्रवर्त्तता ठता संवत्सर संवत्सर प्रत्यें तथा ठमास प्रत्ये एकेक जीव हणे,अने वली एहिज धर्मनो उपदेश आपे, (आयाहिएतंपुरिसेअणज्जे के०) ते अनार्य अनाचारी पोतानें तथा परने अहितना करनार जाणवा केम के,(णतारिसेकेवलिणोभवंति के०)ते पुरुष साद्दशकेवली न होय? ते अशुद्धमार्गना प्रवर्त्तक अने सत्यमार्गना द्वेषी जाणवा जे कारणे ते वर्षवर्ष प्रत्ये एकेक जीवनो विनाश करे, तेनु मांस वर्ष वर्ष दिवस सुधी राखे तेमाहे अनेक असंख्यात बीजा त्रस जीव उपजे, तेथी तेनें पचावता ते जीवोनो विनाश थाय ए कारण माटें घणा जीवोनो विनाश करता पण एम कहे के, अमे थोडा जीवोनो विना श करिये ठैये, ते माटें तेमिथ्यावादी जाणवा तेनु वचन अमे प्रमाण नथी करता इ त्यादिक वचन कही अन्य दर्शनीनें प्रतिबोधि, श्री महावीर देवनें समवसरणे जइ, ती र्थंकरने वांदीनें, आर्द्रकुमार, आज्ञानो आराधक थयो ॥ ५४ ॥ हवे अध्ययन परिस माप्ति जणी कहेछे (बुद्धस्सआणाएइमंसमाहिं के०) बुद्ध एटले तत्वना जाण, एवा श्री महावीर देव, तेनी आज्ञायें आ समाधि, धर्मप्राप्ति लक्षण लहीने, (अस्सिंसुठि च्चातिविहेणताई के०) ए समाधिने विषे प्रवर्त्ततो त्रिविध त्रिविध प्रकारें ठ कायनो र क्षपाल एवो साधु, (तरिउंसमुद्दंचमहाभवोघं के०) अपकर संसार समुद्र तरीनें (आ याणवंतंसमुदाहरेज्जा के०) आदानवंत एटले सम्यक् ज्ञान, दर्शन, अने चारित्र सहि त थको, एम आर्द्रकुमारनी पेरें यथावस्थित प्ररूपणाये करी परदर्शनीनो निराकरण करीनें मोक्षनो मार्ग प्रगट करे, ते साधु जाणवो त्तिबेमिनी व्याख्या, पूर्ववत् जाणवी ॥ ५५ ॥ ए आर्द्रइज्जनामे ठठा अध्ययननो संक्षेपार्थे बालावबोध समाप्त थयो ॥ ६ ॥

॥ दीपिका–अथार्द्रकुमार प्राह ॥ संवत्सरेणाप्येकैकं प्राणिनं घ्नंतं प्राणातिपातादनिवृ त्तत्वान्निवृत्तदोषास्ते स्युः साधूनां तु सूर्यप्रकाशिते मार्गे युगमात्रदृष्ट्या इर्यासमित्या गच्छतां निर्दोषाहारान्वेषिणां समचित्तानां क आशंसादोषः ? क कीटिकादिघातोवेत्यर्थः ।स्तोकजी वघाते च दोषाभावस्तदा गृहस्थाअपि स्वारंभदेशस्थान् जीवान् प्रति घ्नंतः शेषाणां च जीवानां

त्यासेवंति जीविकाहेतुमाश्रयंति तथाच ये सदुपदेशवर्तिनोलोकेस्मिन् चरणेन विरतिप रिणामरूपेणोपेता समन्वितास्तेषामुत्तयेषामपि यदनुष्ठानं शोभनाशोभनस्वरूपमपि स तु तदसर्वज्ञैरर्वाग्दर्शिभि ममसदृशं तुल्यमुदाहृतं उपन्यस्तं स्वमत्या स्वाभिप्रायेण न पुन र्यथावस्थितपदार्थनिरूपणेनाथवाऽऽयुष्मन् हे एकदण्डिन्! विपर्यासमेव विपर्ययमेवो दाहरेदसर्वज्ञोयदशोभनं तच्छोभनत्वेनेतरत्त्वितरथेति यदिवा विपर्यासइति मत्तोन्मत्तप्र लापवदित्युक्तं भवतीति ॥ ५१ ॥ तदेवमेकदण्डिनोनिराकृत्यार्द्रककुमारोयावद्भगवदंतिकं व्रजति तावद्धस्तितापसा परिवृत्य तस्थुरिदं च प्रोचुरित्याह । (संवच्छरेणइत्यादि) ह स्तिनं व्यापाद्यात्मनोवृत्तिं कल्पयंतीति हस्तितापसास्तेषां मध्ये कश्चिद्वृद्धतमएतदुवाच तद्यथा भो आर्द्रककुमार! सश्रुतिकेन सदाल्पबहुत्वमालोचनीयं तत्र ये अमी तापसा कंदमूलफलाशिनस्ते बहूनां सत्त्वानां स्थावराणां तदाश्रितानां चोडुंबरादिषु जगमानामु पघाते वर्तंते येपि च भैक्ष्येणात्मानं वर्तयंति तेप्याशंसादोषदूषिताइतश्चेतश्चाटयमाना पि पीलिकादिजंतूनां उपघाते वर्तंते वयंतु संवत्सरेणावि अपिशब्दात् षण्मासेन चैकैकं हस्ति नं महाकायं बाणप्रहारेण व्यापाद्य शेषसत्वानां दयार्थमात्मनोवृत्तिं वर्त्तनं तदामिषेण वर्षमेकं यावत्कल्पयामस्तदेव वयमल्पसत्वोपघातेन प्रभूततरसत्वानां रक्षां कुर्मइति॥५२॥

> संवच्छरेणाविय एगमेगं, पाणं हणंता अणियत्तदोसा ॥ सेसा
> णजीवाणवहेणाय, सियाय थोवं गिहिणोवि तम्हा ॥ ५३ ॥
> संवच्छरेणाविय एगमेगं, पाणं हणंता समणे वएसु ॥ आया
> हिए त पुरिसे अणज्जे, ण तारिसे केवलिणो भवंति ॥५४॥ बुद्ध
> स्स आणाए इमं समाहिं, अस्सि सुठिच्चा तिविहेण ताई ॥तरिउं
> समुद्द च महाभवोघं, आयाणवंतं समुदाहरेज्जा त्तिबेमि ॥५५॥
> इति अद्दइज्जणाम छट्ठमज्झयणं सम्मत्तं ॥

अर्थ—हवे आर्द्रकुमार कहेछे के, अहो हस्तितापसो! तमे (संवच्छरेणावियएगमेगंपा णंहणंताअणियत्तदोसा के०) वर्ष वर्ष प्रत्ये, तथा छ मासप्रत्ये तमे एकेक महोटो जीव हणता थका दोषथकी, निवर्त्या एम कहेवाउंज नहीं (सेसाणजीवाणवहेणाय के०) कारणके, घणा जीवने न हणता अनें वर्षमां, तथा छमासमां एकजीवने हणता एवा तमो ने पंचेंद्रियमहाकाय जीवना वधनो, आशंसा दोष, पण लागेछे अनें साधु तो, सूर्य किरणे प्रकाशित मार्गनेंविषे जूसर मात्र दृष्टि शोधता, इर्यासमितें समितावंत छता, बेंतालीश दोष रहित आहारनी गवेषणा करता, आहारना लाभे, अथवा अलाभे, समवृत्ति वाला

त्मान परेषा चाहितास्ते पुरुषा । बहुवचनमार्षत्वात्र । तादृशा केवलिनोनवति तथा लोक स्य प्राणिन संवत्सरेणापि घाते येन्ये पिशिताश्रितास्तत्संस्कारेच क्रियमाणे स्थावरज गमाविनाशमुपयाति ते तै प्राणिवधोपदेष्टृभिर्न दृष्टा । नच तैर्निरवद्योपायोमाधुकर्या वृ त्त्या योनवति सदृष्टोतस्तेन केवलमकेवलिनोविशिष्टविवेकरहिताश्चेति । तदेव हस्तिताप सान्निराकृत्य नगवदंतिक गच्छतमार्द्रककुमार महता कलकलेन लोकेनाभिष्टूयमान त समुप लन्य अभिनव गृहीत संपूर्णलक्षणसंपूर्णोहस्ती समुत्पन्नस्तथाविधविवेकोचित यत् य थार्द्रकुमारोयमपकृताशेषतीर्थिकोनिष्प्रत्यूह सर्वज्ञपादपद्मांतिक वंदनाय व्रजति तथाहम पियद्यप्यपगताशेषबंधन स्या ततएन महापुरुषमार्द्रककुमार प्रतिबुद्धतस्करपंचशतोपेत त था प्रतिबोधितानेकवादिगणसमन्वित परमया नक्त्यैतदंतिक गत्वा वंदामीत्येव यावद सौ हस्ती कृत्यसंकल्पस्तावच्चटच्चटदिति त्रुटितसमस्तबंधन सन्नार्द्रककुमारानिमुख प्रदत्त कर्णतालस्तथोर्ध्वप्रसारितदीर्घकर प्रधावितस्तदनंतर लोकेन कृतहाहारवगर्भकलकलेन पूत्कृत यथा धिक कष्ट हतोयमार्द्रककुमारोमहर्षिर्महापुरुषस्तदेव प्रलपतोलोकाइतश्चेत श्च प्रपलायमाना । असावपि वनहस्ती समागत्यार्द्रककुमारसमीप नक्तिसंभ्रमावनताग्रना गोत्तमांगोनिर्वृतकर्णतालस्त्रि प्रदक्षिणीकृत्य निहितचरणीतलदंताग्रनाग स्पृष्टकराग्रतच्च रणयुगल सुप्रणिहितमना प्रणिपत्य महर्षिवनानिमुख ययाविति । तदेवमार्द्रककुमार तपोनुनावाद्दनोन्मुख महागजमुपलन्य सपौरजनपद श्रेणिकराजस्तमार्द्रककुमार म हर्षि तत्तप प्रनाव चानिनद्यानिवंद्य च प्रोवाच नगवन्नाश्चर्यमिद यदसौ वनहस्ती तादृ ग्विधादृढलोहशृंखलाबंधनाद्युष्मत्तप प्रनावान्मुक्तइत्येतदतिदुष्करमित्येवमभिहिते आ र्द्रकुमार प्रत्याह । नो श्रेणिक महाराज ! नैतदुष्कर यदसौ वनहस्ती बंधनान्मुक्तोपि त्वेत दुष्कर यत्स्नेहपाशमोचन एतच्च प्राङ्निर्युक्तिगाथया प्रदर्शित । साचेय । "ण दुक्कर वारणपा समोयण, गयस्स मत्तस्स वणमि राय॥जहा उवत्तावलिएण ततुणा,सुदुक्करमे पडिहाइ मा यण ॥ १ ॥ एवमार्द्रककुमारेण राजान प्रतिबोध्य तीर्थकरांतिक गत्वाऽनिवंद्य च नगवत नक्तिनरनिर्नरश्चासाचक्रे नगवानपि तानि पंचापि शतानि प्रव्राज्य तच्छिष्यत्वेनापनिन्य इति ॥ ५४ ॥ सांप्रत समस्ताध्ययनार्थोपसंहारार्थाह । (बुद्धस्सेत्यादि) बुद्धोऽवगत तत्व सर्वज्ञोवीरवर्द्धनस्वामी तस्याज्ञया तदागमेन इम समाधि सद्धर्मावाप्तिलक्षण अ वाप्यास्मिन्न समाधौ सुष्ठु स्थित्वा मनोवाक्कायैश्च प्रणिहितेंद्रियोन मिथ्यादृष्टिमनुमन्यते केवल तदावरणजुगुप्सा त्रिविधेनापि करणेन न त्रियत्ते सएवनूतश्चात्मन परेषाच त्राण शीलस्तायी ना गमनशीलोमाक्ष प्रति सएवनूतस्तरीतुमतिलघ्य समुद्रमिव दुस्तर महाभवो घ माक्षार्थमादीयतइत्यादान सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूप तद्विद्यते यस्यासावादानवान् साधु सच सम्यग्दर्शनेन सता परतीर्थिकृतप समृद्ध्यादिदर्शनेन मौनींद्रदर्शनान्न प्रच्यव

वधे न लग्ना तस्मात्स्यादेव स्तोक स्वल्प यस्माद्घ्नंति ततस्तेपि निर्दोषा ॥५३॥ श्रमणव्रतेषु स्थिताअपि संवत्सरेणाप्येकैक जंतु येघ्नंति येच उपदिशंति तेऽनार्या आत्महिता पुरुषा न तादृशा केवलिनोभवंति॥५४॥ एवं हस्तितापसान्निरस्यार्द्रककुमारं भगवदंतिकं प्रयांतं दृष्ट्वाऽभिनवगृहीतो वनहस्ती चिंतयतिस्म। यद्यहं बंधनमुक्त स्यां तदार्द्रककुमारं प्रतिबुद्ध तस्करपंचशतोपेत तथा प्रतिबोधितानेकवादिगणसमन्वितं गत्वा वंदेयं वंदेव हस्तिना चिंतितं तावता तस्य बंधनानि त्रुटितानि आर्द्रमुनिसंमुख त्वरया चलित करी ततोलोकै पूत्कृतं हा हतोयं मुनिरिति हस्ती च ससंभ्रम मुनिपार्श्वमागत्य त्रि प्रदक्षिणी कृत्य दत्ताग्रस्पृष्टभूमि साधु नत्वा वन ययौ तत श्रेणिकनृप सपौरलोकस्तं मुनि सप्र भाव नत्वा प्रोवाच।भगवन्नाश्चर्यमिद यदयं करी बंधनान्मुक्त ततोमुनिराह। हे नृप' नै तदाश्चर्य यत्करी मुक्तोबंधनात्। यत्तु स्नेहपाशमोचन तदुष्कर तच्च प्रागुक्त निर्युक्तिकृता। यथा। "न डुक्कर वारणपासमोयण,गयस्स मत्तस्स वणमि रायं ॥ जहाउच तावलिएण ततुणा, त डुक्कर मेपडिहाइ मोयण ॥१॥ अस्यार्थ प्रागध्ययनप्रारंभे प्रोक्त । एवमार्द्रकुमारोनृप प्रतिबोध्य श्रीवीरांतिकं गत्वा भगवंत भक्तिभृतआसीन । भगवानपि तानि पं चापि शतानि प्रव्राज्य तव शिष्यत्वेन ददौ ॥ अथाध्ययनोपसंहारमाह । (बुद्धस्सइत्यादि) बुद्धस्य तत्वज्ञस्य श्रीवीरस्याज्ञया इमा समाधि धर्मावाप्ति प्राप्यास्मिन्समाधौ सुष्ठुस्थित्वा मनोवाक्कायैस्त्रायी रक्षकस्तीर्त्वाऽतिक्रम्य समुद्रमिव महाभवौघ। आदान सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूप विद्यते यस्य सआदानवान् धर्म परहितैषी उदाहरेत्कथयेत्। इति ब्रवीमीति पूर्ववत् ॥ ५५ ॥ इत्यार्द्रकीयाध्ययनमिदं षष्ठ समाप्तम् ॥

॥ टीका—सांप्रतमेतदेवार्द्रककुमारोहस्तितापसमतं दूषयितुमाह । (संवच्छरेणइत्यादि) संवत्सरेणैकैक प्राणिन घ्नतोपि प्राणातिपातादनिवृत्तदोषास्ते भवत्याशंसादोषश्च भवतां पंचेंद्रियमहाकायसत्ववधपरायणानामतिदुष्टोभवति साधूनां तु सूर्यरश्मिप्रकाशितवीथिषु युगमात्रदृष्ट्या गच्छतामीर्यासमितिसमितानां द्विचत्वारिंशद्दोषरहितमाहारमन्वेषयतां लाभालाभसमवृत्तीनां कुतस्त्यआशंसादोष पिपीलिकादिसत्वोपघातोवेत्यर्थ स्तोकसत्वोपघा तेनैवभूतेन दोषाभावोभवताभ्युपगम्यते तथाच सति गृहस्थाअपि स्वारंभदेशवर्तिनए व प्राणिनोघ्नंतीति शेषाणांच जंतूनां क्षेत्रकालव्यवहितानां भवदभिप्रायेण वधेन प्रवृत्तायतएव तस्मात्कारणात्स्यादेव स्तोकमिति स्वल्प यस्मात् घ्नंति ततस्तेपि दोषरहिताइति ॥ ५३ ॥ सांप्रतमार्द्रककुमारोहस्तितापसान्दूषयित्वा तदुपदेष्टारं दूषयितुमाह। (संवच्छरेणेत्यादि) श्रमणानां यतीनां व्रतानि श्रमणव्रतानि तेष्वपि व्यवस्थिता स तएकैक संवत्सरेणापि ये घ्नंति ये चोपदिशंति तेऽनार्या असत्कर्मानुष्ठायित्वात्तथा आ

पाडो केवोछे ? तोके, (अणेगभवणसयसन्निविठा के०) अनेक घरना शेकडाये करी स हितछे इत्यादिक (जावपडिरूवा के०) यावत् प्रतिरूप ए वर्णन जाणवु ॥ १ ॥

॥ दीपिका—अथ सप्तमाध्ययनमारभ्यते । अस्य च नालदीयमिति नाम । तस्यायम र्थः । नालंदा राजगृहनगरे बाहिरिका तस्यां भव नालदीयमिति । पूर्वं सकलेन सूत्र कृतांगेन साध्वाचार प्ररूपित । अत्र तु श्रावकविधिरुच्यते । तस्येदं सूत्र । तस्मिन् का ले तस्मिन् समयेऽवसरे राजगृह नाम नगरमभवत् । ऋद्धिस्फीतं समृद्ध वर्णकोवाच्य यावत्प्रतिरूपमनन्यसदृश तस्य नगरस्य बहिरुत्तरपूर्वस्या दिशि नालंदानाम बाहिरिका सीत्साचानेकभवनशतसन्निविष्टाऽनेकगृहसकीर्णेत्यर्थः ॥ १ ॥

॥ टीका—व्याख्यात षष्ठमध्ययनमधुना सप्तममारभ्यते । अस्यायमभिसंबध । इह प्रा ग्व्याख्यातेनाखिलेनापि सूत्रकृतांगेन स्वसमयपरसमयप्ररूपणा द्वारेण प्राय साधूनामाचा रोऽभिहितोऽनेन तु श्रावकगतोविधिरुच्यते । यदिवानंतराध्ययने परवादनिराकरण कृत्वा साध्वाचारस्य यदुपदेष्टा सदुदाहरण द्वारेण प्रदर्शित । इहतु श्रावकधर्मस्य यदुपदेष्टा सदुदाहरण द्वारेणैव प्रदर्श्यते । यदिवाऽनंतराध्ययने परतीर्थिकैः सह वादइह तु स्वयूथ्यै रित्यनेन संबंधेनायातस्याध्ययनस्य चत्वार्यनुयोग द्वाराण्युपवर्णितव्यानि उपक्रमादीनि तत्रापि नामनिष्पन्ने निक्षेपे नालदीयाभिधानमिदमध्ययनमिद चैव व्युत्पाद्यते । प्रतिषेध वाचिनोनकारस्य तदर्थस्यैवालशब्दस्य डुदाञ् दाने इत्येतस्य धातोर्मीलनेन नाल ददातीति नालंदा । इदमुक्त भवति । प्रतिषेधप्रतिषेधेन धात्वर्थस्यैव प्राकृतस्य गमनात्सदार्थिभ्योयथा ऽभिलषित ददातीति नालंदा राजगृहनगरबाहिरिका तस्यां भव नालंदीयमिदमध्ययनमने न चाभिधानेन समस्तोप्युपोद्घातउपक्रमरूपश्चावेदितोभवति तत्स्वरूपच पर्यते स्वतएव निर्युक्तिकार पासावच्चिज्जे इत्यादिगाथया निवेदयिष्यतीति । साम्प्रतं सन्नचिनमलशब्दस्य निक्षेप नादो परित्यज्य कर्तुमाह । "णाम अल ठवणअल, दव्वअल चेव होइ भावअल॥ एसो अलसद्दमि, निक्खेवो चउविहो होइ ,, ॥१॥ (णामअलमिति) तत्रामानोना प्रतिपेध वाचका । तद्यथा । अगौरघटइत्याद्याकार प्रायोद्रव्यस्यैव प्रतिषेधवाचीत्यलदानेन सहा स्यप्रयोगाभावमकारस्त्वनागतक्रियायानिषेध विधत्ते । तद्यथा नो घटोघटैकदेशनिषेधेन त था हास्यादयोनो कपाया कषायमोहनीयैकदेशभूता ।नकारस्तु समस्तद्रव्यक्रियाप्रतिषेधा भिधायी। तद्यथा न द्रव्य न कर्म न गुणोभावस्तथा नाकार्षं न करोमि न करिष्यामीत्यादि। तथाऽन्यैरप्युक्त।न याति नच तत्रासीदस्ति प च्यान्नवांशकाङ्क्षहाति पूर्व नाधारमहो व्यसन संतति ।किंचान्यत् ।' गतं न गम्यते तावदगतं नैव गम्यते ।गतागतविनिर्मुक्त गम्यमानंतु ग म्यत' इत्यादि । तदेयमत्र नकार प्रतिषेधविधायकोप्युपात्त ।अलशब्दोपि यद्यप्यल पर्याप्ति

ते सम्यक्ज्ञानेनतु यथावस्थितवस्तुप्ररूपणत समस्तप्रावाडुकवादिनिराकरणेनापरेषां यथावस्थितमोक्षमार्गमाविर्भावयतीति सम्यक्चारित्रेण तु समस्तभूतग्रामहितैषया निरुद्धा श्रवद्वार सन् तपोविशेषाच्चानेकभवोपार्जित कर्म निर्जरयति स्वतोन्येषां चैव प्रकारमेव धर्ममुपाहरे द्व्याग्रणीयादित्यर्थ । इति परिसमाप्त्यर्थे। ब्रवीमीति नयाश्च प्राग्वदेव वाच्या वक्ष्यते चोत्तरत्र ॥ ५५ ॥ समाप्त चेदमार्द्रकीयाख्य षष्ठमध्ययनमिति ॥ ६ ॥

॥ अथ सप्तमाध्ययन प्रारंभ ॥

छठा अध्ययनमा स्वसमय, परसमय, प्ररूपणाये करी, प्राय समस्त सुयगडांग सूत्रनें विषे साधुना आचारनी प्ररूपणा करी, हवे आ सातमा अध्ययनमा श्रावकनो आचार कहे छे,अथवा छठा अध्ययनमा परतीर्थिकना वादनु निराकरण कह्यु, अने हवे आ सातमा अध्ययनमा स्वतीर्थिक साथे वाद कहेशे, ए सबंधे आव्यु जे सातमु अध्ययन तेने कहेछे

तेण कालेण तेण समएण रायगिहे नामं नयरे होत्था रिद्धि
त्थीत समिद्धे वण्णउ जाव पडिरूवे तस्सण रायगिहस्स नयर
स्स बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए एच्छण नालंदानाम बाहि
रिया होत्था अणेगभवणसयसन्निविठ्ठा जाव पडिरूवा ॥ १ ॥

अर्थ–(तेणकालेण के०) ते कालने विषे (तेणसमएण के०) ते समयनें विषे, (रायगिहेनामनयरेहोत्था के०) राजगृह नामा नगर हतु, ते राजगृहनामा नगर कहेवु हतु ? तोके, (रिद्धि के०) भवनादिके करी सहित, (त्थीत के०) स्थित निर्भय रहित, (समिद्धे के०) धन धान्यादिके करी समृद्धिमान् एटले सहित, (वण्णउजावपडिरूवे के०) यावत् प्रतिरूप एटले स्वर्गनु प्रतिरूप एनु वर्णन उववाइ उपागनी पेठें जाणवु यद्यपि ते राजगृह नगर हमणा पण वर्त्तेछे, तथा आगमिक कालें पण हशे, परतु सूत्रमाहे अतीत कालेज वखाण्यु तेनु कारण शु ? तोके, जेवु विशिष्ट लक्षणोपेत अतीतकालें हतु, तेवु वर्त्तमान कालें अने आगमिक कालें नथी ए कारण जाणवु (तस्सणरायगिहस्सनयरस्सबहिया के०) त्या ते राजगृह नगरना बाहिरना प्रदेशें, (उत्तरपुरच्छिमेदिसीभाए के०) ईशानकोणने विषे (एछण के०) अहीया (नालंदानामबाहिरियाहोत्था के०) नालंदा एवे नामे बाहिरिया एटले पाडोविशेष हतो ते

वुध्येत यदेत दृश्यतइति। सूत्रार्थस्त्वयं। सप्तम्यर्थे तृतीया। यस्मिन्काले यस्मिंश्चावसरे राजगृहं नगरं यथोक्तविशेषणविशिष्टमासीत्तस्मिन् काले तस्मिंश्च समये इदमभिधीयते। राजगृहमेवविशिनष्टि। प्रासादा संजातायस्मिंस्तत्प्रासादितमाभोगवद्वा अतएव दर्शनीयं दर्शनयोग्यं दृष्टिसुखहेतुत्वात्तथाभिमुख्येन रूपं यस्य तदभिरूपं तथा प्रतिरूपमनन्यसदृशं प्रतिरूपं वा प्रतिविंबं वा स्वर्गनिवेशस्य तदेवभूतं राजगृहनाम नगरं (होत्थात्ति) आसीत्। यद्यपि तत्कालत्रयेपि सत्ता विजर्त्ति तथाप्यतीताख्यानसमाश्रयणादासीदित्युक्तं। तस्य च राजगृहस्य वहिरुत्तरपूर्वस्यां दिशि नालंदानाम वाहिरिका आसीत् साचानेकभवनशतसन्निविष्टा अनेकभवनशतसंकीर्णेत्यर्थः ॥ १ ॥

तत्थणं नालंदाए वाहिरियाए लेवे नामं गाहावई होत्था अड्ढे दित्ते वित्ते विच्छिण्णविपुलभवणसयणासणजाणवाहणाइण्णे वहुधणवहुजायरूवरजते आउगपउगसपउत्ते विच्छड्डियपउरभत्तपाणे वहु दासी, दास, गोमहिस, गवेलगप्पभूए वहुजणस्स अपरिभूएयावि होत्था ॥ २ ॥

अर्थ—(तत्थणंनालंदाएवाहिरियाए के०) ते नालंदा नामें वाहिरिया एटले पाडाने विषे (लेवेनामगाहावईहोत्था के०) लेप एवे नामें गृहपति कुटुंवी हतो ते केवो हतो? तोके, (अड्ढे के०) धनवंत, (दित्ते के०) दीप्त तेजस्वी, (वित्ते के०) सर्वजनमां विख्यात, (विच्छिण्ण के०) विस्तीर्ण, (विपुल के०) घणा एवा (भवण के०) भुवन, (सयणासण के०) शय्यासनादिक, तथा (जाणवाहणाइण्णे के०) यान एटले रथ वेहेलादिक, वाहन एटले अश्वादिक, तेणे करी इण्णे एटले आकीर्ण व्याप्त, (वहुधण के०) घणु धन, (वहुजायरूवरजते के०) घणु जात एटले सुवर्ण,तथा रूपु, तेणे करी सहित, (आउग के०) धननो उपाय एटले यानपात्रादिकनो संग्रह तथा (पउग के०) प्रयोग एटले व्यापारादिक प्रयोजन तेणे करी (संपउत्ते के०) संप्रयुक्त एटले सहित (वि के०) विशेष करी (छड्डिय के०) ज्यां त्यां नाख्योछे (पउर के०) घणा एवो (भत्तपाणे के०) भातने पाणी जेणे, एटले जेने घरे निरंतर लोक जमेछे विशेष करी देवरावेछे (वहुदासीदास के०) घणां दासी, तथा दास, (गोमहिस्स के०) गाय, अने भेंस, (गवेलग के०) गाडर गाडी, तेणे करी (प्पभूए के०) परिवृत्त तेमाट (वहुजणस्सअपरिभूएयाविहोत्था के०) घणा लोकोयें पण पराभव करी न शकाय एवो हतो एटला वर्णन करी एनी इभ्यसंपदा कहीछे ॥ २ ॥

वारणनूषणेष्वपीति त्रिष्वर्थेषु पठ्यते तथापीह प्रतिषेधवाचकेन नत्रा साहचर्यात्प्रति धार्थएव गृह्यते तत्र चालशब्द ।नामस्थापना इव्यनावनेदाच्चतुर्विधोनिक्षेपोनवति। तत्र नामाल यस्य चेतनस्य वालमिति नाम क्रियते। स्थापनालतु यत्र क्वचिच्चित्रपुस्तकादौ पाप निषेध कुर्वन्साधु स्थाप्यते इव्यनिषेधस्तु नो आगमतोज्ञशरीरनव्यशरीरव्यतिरिक्तोइव्यस्य चौराद्यात्द्दतस्यैहिकपापनीरुणा योनिषेध क्रियते सइव्यनिषेध । एव इव्येण इव्याइव्ये वा निषेध । नावनिषेधतु स्वतएव निर्युक्तिकारोलशब्दस्य सन्ननिनमर्थं दर्शयन्निनणिदुरा ह । "पञ्जत्ती नावे खलु, पढमो बीऊ नवेयलकारे ॥ ततितो उप्पडिसेहे, अलसद्दो होई ना यव्वो ,, ॥ २ ॥ (पञ्जतीनावइत्यादि) पर्याप्तनाव सामर्थ्यं तत्रालशब्दोवर्तते । अल मल्लोमल्लाय समर्थइत्यर्थ । लोकोत्तरोपि विनाल तेताणाएवासरणाएवा। अन्यैरप्युक्त। "इव्यास्तिकरथारूढ पर्यायोद्यतकार्मुक ॥ युक्तिसन्नाहवान्वादी कुवादिन्योनवत्यल"॥१॥ अय प्रथमोलशब्दार्थोनवति । खलुशब्दोवाक्यालकारे द्वितीयस्त्वर्थालकारविषये नवेत्स नावनाया लिङ्। तद्यथाल रुतदेवदत्तेन स्वकुल जगच्च नानिसूनुनेत्यादि। तृतीयस्त्वलशब्दा र्थे प्रतिषेधे ज्ञातव्योनवति । तद्यथाल मे गृहवासेन तथाल पापेन कर्मणा । उक्तच । "अल कुतीर्थैरिह पर्युपासितै,रल वितर्काकुलकाहलैर्मतै ॥अलच मे कामगुणैर्निषेवितै, र्न यकरायेहि परत्र चेहच' ॥१॥ तदिह प्रतिषेधवाचिनालशब्देनाधिकारइत्येतदर्शयितुमाह। "पडिसेहणणगारस्स इहिसहेण चेव अलसहो॥रायगिहे नयरमि नालदा होइ बाहिरिया" ॥३॥ (पडिसेहणेत्यादि) सत्यप्यलशब्दस्यार्थत्रये नकारस्य सान्निध्यात्प्रतिषेधविधानाद प्येवेह गृह्यते ततश्च निरुक्तविधानादयमर्थ ।नाल ददातीति नालदा वाहिरिकाया स्त्रियोहे शकत्वेनच नालशब्दस्य स्त्रीलिंगता साच सदैहिकामुष्मिकसुखहेतुत्वेन सुखप्रदा राजगृह नगरबाहिरिका धनकनकसमृद्धत्वेन सत्साध्वाश्रयत्वेनच सर्वकामप्रदेति ।साप्रत प्रत्यया र्थ दर्शयितुकामआह "नालदाए समिवे,मणोरहे नासि इदनूइणा॥ अज्झयण उदगस्सउ, एय नालदइज्ज तु" ॥४॥(नालिदाएइत्यादि) नालदाया समीपे मनोरथाख्ये उद्याने इन्नू मिना गणधरेणोदकाख्यनिर्ग्रथपृष्टेन तुशब्दस्यैवकारार्थत्वात्तस्यैव नापितमिदमध्ययन।ना लदाया नव नालदीय नालदासमीपोद्यानकथनेन वा निवृत्त नालदीय। यथाचेदमध्ययन नालदाया सवृत्त तथा "पासावच्चिज्जोपुच्छियाइउ अज्जगोयम उदगो॥ सावगपुच्छाधम्म सो उ कहियमि उवसता,, ॥५॥ अनायापासावच्चिज्जेत्यादिकया सूत्रस्पर्शिकगाथयाविष्करिष्य ते । साप्रतं सूत्रानुगमेऽस्खलितादिगुणोपेत सूत्रमुच्चारयितव्य । तच्चेद । (तेणकालेणमि त्यादि) अस्य चानतरपरपरसूत्रै सह सबधोवाच्यस्तत्रानतराध्ययनपर्यते सूत्रमिदमादान वान् धर्ममुदाहरेत्। धर्मश्च साधुश्रावकनेदेन द्विधा।तत्र पूर्वोक्तेनाग द्वयेन प्राय साधुगतोविधि रनिहितोनेनतु श्रावकगतोविधिरुच्यते। परपरसूत्रसबधस्त्वय बुध्येतेत्येतदादिसूत्र।कि तत्र

के०) प्राप्त थयाछे सिद्धांतना अर्थ जेने (गहियठे के०) ग्रहण कर्याछे मोक्षमार्गरूप अर्थ जेणे, तथा (पुच्छियठे के०) विशेषे करी पुछयुछे मोक्षस्वरूप जेणे, तथा (विणिच्छियठे के०) निश्चय कर्योछे सिद्धांतनो अर्थ जेणे, तथा (अभिगहियठे के०) प्रतीत थयोछे अर्थ जेने, तथा (अट्ठिमिंजापेमाणुरागरत्ते के०) प्रेम करीने रंगित छे अस्थिमिंजा जेना, एटले अत्यंतछे हृदयने विषे प्रेम जेने, तथा (अयमाउसो के०) कोइ एके स्वधर्म पुछे थके, तेने ए प्रकारे उत्तर आपे के, हे आयुष्मन्! (निग्गथेपावयणे के०) आ जिनप्रवचन निस्संशयछे, तथा सत्यछे वली (अयमट्ठेअयं परमट्ठे के०) आ जैन शासनरूप अर्थ ए परमार्थरूप छे, तथा (सेसेअणट्ठे के०) अन्य लौकिक सर्व दर्शन ते पुरुषोना कल्पना करेलाछे वली तेना गुणो कहेछे (उसियफलिहे के०) स्फाटिक सरखु उज्ज्वलछे यश जेनु, एटले प्रख्यातछे यश जेनु, एवो, तथा (अप्पावयडुवारे के०) अप्रावृत एटले निरंतर उघाडु रहेछे द्वार जेनु, अने (वियत्ततेउरप्पवेसे के०) कोइ एक परतीर्थिक पोताना घरमां आवीने जो स्वधर्म कहे! तो तेनो प्रतिबंध अनुचरो पण करी न शके, तथा (चाउद्दसट्ठमुद्दिट्ठपुण्णमासिणीसु के०) चउदश, आठम, पुन्यम एटले चोमासानी त्रण पुन्यम वगेरे पुण्यतिथीयोने विषे, (पडिपुन्नपोसहसम्मअणुपालेमाणे के०) परिपूर्ण रूडा प्रकार पोषधने पालतो एवो, (समणेनिग्गथेतहाविहेणएसणिज्जेणअसणपाणखाइमसाइमेणपडिलाभेमाणे के०) ते प्रकारना धर्मने पालता एवा जे श्रमण ब्राह्मण, तेने शुद्ध आहार जलें करी संतोष पमाडतो एवो, तथा (बहुहिसीलव्वयगुणविरमणपच्चखाणपोसहोववासेहि के०) शील, व्रत, गुण, विरमण, पच्चखाण, पोषहादिक उपवास, तेणे करीने (अप्पाणंभावेमाणे के०) पोताना आत्माने भावना करतो एवो छतो (एवंचणविहरइ के०) ए प्रकारे धर्म आचरण करतो थको विचरेछे ॥ ३ ॥

॥ दीपिका–संक्षेपोनाम गृहपति श्रमणोपासकोनिगतजीवाजीवइत्यादि । (निग्गंथेत्ति) आर्हते प्रवचने निःशंकितोनिःकांक्षितोऽन्यतमोनिराकांक्ष विचिकित्साचित्तविप्लुतिर्विद्वज्जुगुप्सा वा तद्रहितोनिर्विचिकित्स लब्धार्थोज्ञाततत्व गृहीतार्थ स्वीकृतमोक्षमार्ग पृष्टार्थत्वादविनिश्चितार्थ अभिगत प्रतीतोर्थोयेन सतथा अस्थिमिंजास्थिमध्य यावद्धर्मे प्रेमानुरागेण रक्तोऽत्यंतं सम्यक्त्ववासितचित्तइत्यर्थ । केनचिद्धर्मं पृष्ट प्राह । अयमायुष्मन्! जैनधर्मोर्थ सत्य परमार्थरूपशेष सर्वोप्यनर्थ । (उसियफलिहेत्ति) उच्छ्रितं प्रख्यातं स्फटिकवन्निर्मलं यशोयस्य अप्रावृतं अस्थगितं द्वारं गृहस्य येन सोऽप्रावृतद्वार परतीर्थिकोपि गृहं प्रविश्य धर्मं यदि वदेत् तवत्तु न तस्य परिजनोपि सम्य

॥ दीपिका–(तछण) तस्या नालंदाया लेपोनाम गृहपति कुटुंबिकआसीत् सच आढ्योदीप्तस्तेजस्वी वित्तोविख्यातोविस्तीर्णविपुलभवनशयनासनयानवाहनाकीर्णोबहुधनो बहुजातरूपरजत आयोगाप्रयोगोपाया. प्रयोग" प्रयोजनानि ते सप्रयुक्त संयुत. इतश्चे तश्च विच्छितप्रचुरभक्तपानोबहुदास्यादिपरिवृतोबहुजनस्यापरिभूतआसीत् ॥ २ ॥

॥ टीका–तस्याचलेपोनाम गृहपति कुटुंबिकआसीत्सचाढ्योदीप्तस्तेजस्वी वित्त सर्वजनविख्यातोविस्तीर्णविपुलभवनशयनासनयानवाहनाकीर्णोबहुधनबहुजातरूपरजत आयोग अर्थोपाया यानपात्रोष्ट्रमण्डलिकादयस्तया प्रयोजनमयोग प्रायोगिकत्व तैरायोगप्रयोगै सप्रयुक्त समन्वितस्तथेतश्चेतश्च विच्छिप्तप्रचुरभक्तपानोबहुदास्यादिपरिवृतोबहुजनस्यापरिभूतश्चासीत्तदियता विशेषणकदंबकेनैहिकगुणाविष्करणेन द्रव्यसंपदभिहिता॥२॥

सेण लेवे नाम गाहावई समणोवासएयावि होत्था अभिगयजीवाजीवे जाव विहरइ निग्गंथे पावयणे निस्संकिए निक्कंखिए निवितिगिछे लद्धढे गहियठे पुछियठे विणिछियठे अभिगिहियठे अछिमिजा पेमाणुरागरत्ते अयमाउसो निग्गंथे पावयणे अयं अट्ठे अयं परमट्ठे सेसे अणट्ठे उसियफलिहे अप्पावयडुवारे वियत्ततेउरप्पवेसे चाउद्दसट्ठमुद्दिट्ठपुण्णमासिणीसु पडिपुन्न पोसहं सम्म अणुपालेमाणे समणे निग्गंथे तहाविहेण एसणिज्जेण असणपाण खाइमसाइमेण पडिलाभेमाणे बहूहि सीलवयगुणविरमणपच्चक्खाणपोसहोववासेहि अप्पाण भावेमाणे एवंचण विहरइ ॥ ३ ॥

अर्थ–हवे एनी भाव संपदा कहिये छैये (सेण के०) ते (लेवेनामगाहावईसमणोवासएयाविहोत्था के०) लेपनामा गृहपति श्रमणोपासक हतो, श्रमण एटले साधु, तेनी जे निरंतर सेवा करे, तेने श्रमणोपासक कहिये (अभिगयजीवाजीवेजावविहरइ के०) अभिगत एटले जाण्याछे जीव अने अजीवना भाव जेणे एवो छतो, यावत् विचरेछे हवे तेनुं रूडा प्रकारे सम्यक् ज्ञानपणु कहिये छैये (निग्गंथेपावयणेनिस्संकिए के०) जिनशासन प्रवचनने विषे शंकारहित एवो, तथा (निक्कंखिए के०) अन्य दर्शनने विषे निराकांक्ष एटले आकांक्षारहित एवो, तथा (निवितिगिछे के०) विद्वान् जे ज्ञानी पुरुषो तेनी निंदा एटले जुगुप्सा तेणे करीरहीत ते कारण माटेज (लद्धट्ठे

के०) प्राप्त थयाछे सिद्धातना अर्थ जेने (गहियठे के०) ग्रहण कस्याछे मोक्षमार्गरूप अर्थ जेणे, तथा (पुच्छियठे के०) विशेषें करी पुछ्युछे मोक्षस्वरूप जेणे, तथा (विणिच्छियठे के०) निश्चय कस्योछे सिद्धातनो अर्थ जेणे, तथा (अनिगहियठे के०) प्रतीत थयोछे अर्थ जेने, तथा (अठिमिजापेमाणुरागरत्ते के०) प्रेमे करीने रगित छे अस्थिमिजा जेना, एटले अत्यंतछे हृदयने विषे प्रेम जेने, तथा (अयमाउसो के०) कोइ एक स्वधर्मी पुछे थके, तेने ए प्रकारे उत्तर आपे के, हे आयुष्मन्! (निग्गथेपावयणे के०) आ जिनप्रवचन निस्सशयछे, तथा सत्यछे वली (अयमठेअय परमठे के०) आ जैन शासनरूप अर्थ ए परमार्थरूप छे, तथा (सेसेअणठे के०) अन्य लौकिक सर्व दर्शन ते पुरुषोना कल्पना करेलाछे वली तेना गुणो कहेछे (उसियफलिहे के०) स्फाटिक सरखु उज्ज्वलछे यश जेनु, एटले प्रख्यातछे यश जेनु, एवो, तथा (अप्पावयडुवारे के०) अप्रावृत एटले निरतर उघाडु रहेछे द्वार जेनु , अने (वियत्ततेउरप्पवेसे के०) कोइ एक परतीर्थिक पोताना घरमा आवीने जो स्वधर्म कहे! तो तेनो प्रतिबध अनुचरो पण करी न शके, तथा (चाउद्दसठमुदिठपुन्नमासिणीसु के०) चउदश, आठम, पुन्यम एटले चोमासानी त्रण पुन्यम वगेरे पुण्यतिथीयोनें विषे, (पडिपुन्नपोसहसम्मअणुपालेमाणे के०) परिपूर्ण रूडा प्रकार पोषधनें पालतो एवो, (समणेनिग्गथेतहाविहेणएसणिज्जेणअसणपाणखाइमसाइमेणपडिलाभेमाणे के०) ते प्रकारना धर्मने पालता एवा जे श्रमण ब्राह्मण,तेने शुद्ध आहार जलें करी सतोष पमाडतो एवो,तथा (बहुहिसीलव्वयगुणविरमणपच्चखाणपोसहोववासेहि के०) शील, व्रत, गुण, विरमण, पच्चखाण, पोषहादिक उपवास, तेणे करीने (अप्पाणभावेमाणे के०) पोताना आत्माने भावना करतो एवो छतो (एवचणविहरइ के०) ए प्रकारे धर्म आचरण करतो थको विचरेछे ॥ ३ ॥

॥ दीपिका–सलेपोनाम गृहपति श्रमणोपासकोनिगतजीवाजीवइत्यादि । (निग्गथेत्ति) आर्हते प्रवचने नि शकितोनि काक्षितोऽन्यतमोनिराकांक्ष विचिकित्साचित्तविप्लुतिर्विद्वज्जुगुप्सा वा तद्रहितोनिर्विचिकित्स लब्धार्थोज्ञाततत्व गृहीतार्थ स्वीकृतमोक्षमार्ग पृष्टार्थत्वादविनिश्चितार्थ अनिगत प्रतीतोर्थोयेन सतथा अस्थिमिजास्थिमध्य यावद्धर्मे प्रेमानुरागेण रक्तोऽत्यतं सम्यक्त्ववासितचित्तइत्यर्थ । केनचिद्धर्मं पृष्ट प्राह । अयमायुष्मन्! जैनधर्मोर्थ सत्य परमार्थरूपशेष सर्वोप्यनर्थ । (उसियफलिहत्ति) उच्छ्रितं प्रख्यातं स्फटिकवन्निर्मल यशोयस्य अप्रावृतं अस्थगितं द्वार गृहस्य येन सोऽप्रावृतद्वार परतीर्थिकोपि गृह प्रविश्य धर्मं यदि वदेत् तदनु न तस्य परिजनोपि सम्य

क्लाद्यालयितु शक्यते तन्नीत्या न द्वारप्रदानमित्यर्थ । प्रातिहारी राजांत पुरेपि प्रवेशोय स्य सतथा कोर्थ ? पुरेहि कोपि न प्रवेश्य तत्राप्यसो प्रतीतगुणत्वे प्रवेशयोग्यइत्यर्थः। तथा चतुर्दश्यष्टम्यादिषु तिथिषु उपदिष्टासु महाकल्याणकसबंधितया पुण्यतिथित्वेन प्रति ख्यासु तथा पौर्णमासीषु च तिसृष्वपि चतुर्मासकतिथिषु एवनूतेषु धर्मदिवसेषु सुष्ठु अतिश येन प्रतिपूर्ण सपूर्णमाहारशरीरसत्कारब्रह्मचर्याव्यापाररूप पोषधमनुपालयन् तथावि धान् सद्गुणान् श्रमणान् एषणीयेन शुद्धेनाशनादिना प्रतिलाजयन् (बहुर्हि) बहुनि शीलव्रतगुणविरमणप्रत्याख्यानपोषधोपवासैरात्मान नावयन् एव पूर्वोक्तप्रकारेण। च स मुच्चये ए वाक्यालकारे । विहरति आस्ते ॥ ३ ॥

॥ टीका—अधुनाऽमुष्मिकगुणाविर्नावेन नावसपदनिधीयते । (सेणलेवेइत्यादि) ए मिति वाक्यालकारे। सलेपाख्योगृहपति श्रमणान् साधूनुपास्ते प्रत्यह सेवतइति श्रमणो पासकस्तदनेन विशेषणेन तस्य जीवादिपदार्थाविनावकश्रुतज्ञानसपदा वेदिता नवत्येत देव दर्शयत्यनिगतजीवाजीवेत्यादिना ग्रथेन।यावदसहायोपि देवासुरादिनिर्देवगणैरनति क्रमणीयोऽनतिलघनीयोधर्मादप्रच्यावनीयइति यावत् । तदियता विशेषणकलापेन त स्य सम्यक्ज्ञानित्वमावेदित नवति । साप्रत तत्तस्य विशिष्टसम्यग्दर्शनित्वमापादयितुमा ह । (निग्गथेत्यादि) निर्ग्रंथे आर्हते प्रवचने निर्गता शका देशसर्वरूपा यस्य स नि शक तदेव सत्य नि शक यज्जिनै प्रवेदितमित्येव कृताध्यवसायस्तथा निर्गता काङ्क्षान्यान्यद र्शनग्रहणरूपा यस्यासौ निराकाङ्क्षस्तथा निर्गता विचिकित्सा चित्तविप्लुतिर्वि द्वज्जुगुप्सा यस्यासौ निर्विचिकित्सोयतएवमतोलब्धउपलब्धोर्थ परमार्थरूपोयेन स लब्धार्थो ज्ञाततत्वइत्यर्थ ।तथा गृहीत स्वीकृतोर्थोमोक्षमार्गरूपोयेन सगृहीतार्थस्तथा विशेषत पृष्टोर्थोयेन स पृष्टार्थोयतएवमतोविनिश्चितार्थस्ततोनिगत पृष्टनिर्वचनत प्रतीतोर्थो येन सोनिगतार्थस्तथाऽस्थिमिजाऽस्थिमध्य यावत्सधर्मे प्रेमानुरागेण रक्तोत्यतसम्यक्त्व वासितात्मेताइति यावत् । एतदेवाविर्नावयन्नाह । (अयमाउसोइत्यादि) केनचिद्द मैसर्वस्व पृष्ट सन्नेतदाचष्टे । तद्यथा नो आयुष्मन्निद निग्रथमौनीइप्रवचनमर्थ सद्भू तार्थस्तथा प्ररूपणतया तथेदमेवाह । अयमेव परमार्थ कपतापच्छेदैरस्यैव शुद्धत्वेन नि र्घटितत्वात् । शेषस्तु सर्वोपि लौकिकतीर्थिकपरिकल्पितोऽनर्थस्तदनेन विशेषणकदबकेन सम्यक्त्वगुणाविष्करण कृत नवति । साप्रतं तस्यैव सम्यग्दर्शनज्ञानान्या कृतोयोगुणस्त दाविष्करणायाह । (उसियइत्यादि) उछूत प्रख्यात स्फटिकवन्निर्मल यशोयस्यासावुछ्रित स्फटिक प्रख्यातनिर्मलयशाइत्यर्थ । तथाऽप्रावृतमस्थगित द्वार गृहमुख यस्य सोप्रा वृत द्वार । इदमुक्त नवति । गृह प्रविश्य परतीर्थिकोपि यद्यत्कथयति तदसौ कथयतु

न तस्य परिजनोप्यन्यथा नावयितु सम्यक्त्वाद्व्यावयितु शक्यतइति यावत्। तथा राज्ञा वल्ल नात पुर द्वारेषु प्रवेष्टु शील यस्य सतथा। इदमुक्त नवति प्रतिपिद्धान्यजनप्रदेशान्यपि या नि स्थानानि नाण्डागारात पुरादीनि तेष्वप्यसौ प्रख्यात श्रावकाख्यगुणत्वेनास्खलित प्रवेशस्तथा चतुर्दश्यष्टम्यादिषु तिथिषूपदिष्टासु तथा पौर्णमासीसुच तिसृष्वपि चतुर्मा सकतिथिष्वित्यर्थः। एवन्नूतेषु धर्मदिवसेषु सुष्ठुतिशयेन प्रतिपूर्णोय पौषधोव्रताजिग्र हविशेषस्त प्रतिपूर्णमाहारशरीरसत्कारब्रह्मचर्याव्यापाररूप पौषधमनुपालयन् सपूर्ण श्रावकधर्ममनुचरति तदनेन विशेषणकलापेन विशिष्ट देशचारित्रमावेदितं नवति। सा प्रतं तस्यैवोत्तरगुणाख्यापनेन दानधर्ममधिकृत्याह। (समणेणनिग्गथइत्यादि) सुगम (या वत्पडिलानेमाणेत्ति) साप्रतं तस्यैव शीलतपोनावनात्मक धर्ममावेदयन्नाह (बहूहिमि त्यादि) बहुनि शीलव्रतगुणविरमणप्रत्याख्यानपौषधोपवासैस्तथा यथा परिगृहीतैश्च त प कर्मनिरात्मान नावयन्नेव चानतरोक्तया रीत्या विहरति धर्ममाचरस्तिष्ठति। च समुच्च ये। णमिति वाक्यालकारे ॥ ३ ॥

तस्सणं लेवस्स गाहावइस्स नालदाए बाहिरियाए उत्तर पुरत्थिमे दिसिन्नाए एत्थणं सेसदवियानाम उदगसाला हो त्था अणेगखन्नसयसन्निविठा पासादीया जावपडिरूवा तिस्से णं सेसदवियाए उदगसालाए उत्तरपुरत्थिमे दिसिन्नाए ए त्थणं हत्थिजामे नाम वणसण्डे होत्था किण्हे वण्णउ वणसण्डस्स॥ ४ ॥

अर्थ-(तस्सणं के०) ते लेप नामा गृहपतिनें नालिंदा नामा पाडा थकी, उत्तर अ नें पूर्वदिशाने वच्चे, एटले ईशान कोणे (एत्थणंसेसदवियानामउदगसालाहोत्था के०) जि हां तिहां घर करावतां जे काइ पाट पीठिकादिक उपकरण उगर्या होय,वधेला होय एवा उपकरणे करीने निपजावेली एटले करावेली एवी सेसदविया नामें उदकशाला हती वली ते उदकशाला केवी हती? तोके, (अणेगखन्नसयसन्निविठा के०) अनेक स्तंनना शकडा तेना उपर रहेली, तथा तेणे करी सहित, (पासादीयाजावपडिरूवा के०) प्रासादवत, दर्शनीय यावत् प्रतिरूप,(तिस्सेणंसेसदवियाएउदगसालाएउत्तरपुरत्थिमेदिसिन्नाए के०) ते सेसदविया नामा उदकशाला थकी ईशान कोणनी दिशायें (एत्थणंहत्थिजामेनामवण सण्डेहोत्था के०) हस्तियाम नामें वनखण्ड हतो, (किण्हेवण्णउवणसण्डस्स के०) ते वन खण्ड, काले वर्णे हतो, एनु विशेष वर्णन जेम, श्री उववाई उपागमा कह्युं छे तेम जाणवु

॥ दीपिका-तस्य लेपस्य गृहपते सत्कधिनी नालदाया पूर्वोत्तरस्या दिशि शेषद्र

क्त्वाचालयितुं शक्यते तन्नीत्या न द्वारप्रदानमित्यर्थः । प्रातिहारी राजांतःपुरेपि प्रवेशोऽस्य सतया कोर्थः ? पुरेहि कोपि न प्रवेश्य तत्राप्यसो प्रतीतगुणत्वे प्रवेशयोग्यइत्यर्थः। तथा चतुर्दश्यष्टम्यादिषु तिथिषु उपदिष्टासु महाकल्याणकसंबंधितया पुण्यतिथित्वेन प्रसिद्धासु तथा पोर्णमासीसु च तिसृष्वपि चतुर्मासकतिथिषु एवंनूतेषु धर्मदिवसेषु सुष्ठु अतिशयेन प्रतिपूर्णं संपूर्णमाहारशरीरसत्कारब्रह्मचर्याव्यापाररूपं पोषधमनुपालयन् तथाविधान् सद्गुणान् श्रमणान् एषणीयेन शुद्धेनाशनादिना प्रतिलानयन् (बहुहिं) बहुनिः शीलव्रतगुणविरमणप्रत्याख्यानपोषधोपवासैरात्मानं नावयन् एवं पूर्वोक्तप्रकारेण। च समुच्चये ण वाक्यालंकारे । विहरति आस्ते ॥ ३ ॥

॥ टीका—अधुनाऽमुष्मिकगुणाविर्नावेन नावसंपदभिधीयते । (सेणंलेवेइत्यादि) णमिति वाक्यालंकारे। सलेपाख्योगृहपतिः श्रमणान् साधूनुपास्ते प्रत्यहं सेवतइति श्रमणोपासकस्तदनेन विशेषणेन तस्य जीवादिपदार्थाविनार्वकश्रुतज्ञानसंपदा वेदिता नवत्येतदेव दर्शयत्यनिगतजीवाजीवेत्यादिना ग्रंथेन। यावदसहायोपि देवासुरादिनिर्देवगणैरनतिक्रमणीयोऽनतिलंघनीयोधर्मादप्रच्यावनीयइति यावत् । तदियता विशेषणकलापेन तस्य सम्यक्ज्ञानित्वमावेदितं नवति । सांप्रतं तस्य विशिष्टसम्यग्दर्शनित्वमापादयितुमाह । (निग्गथेत्यादि) निर्ग्रंथे आर्हते प्रवचने निर्गता शंका देशसर्वरूपा यस्य स निःशंकः तदेव सत्यं निःशंकं यज्जिनैः प्रवेदितमित्येवं कृताध्यवसायस्तथा निर्गता कांक्षान्यान्यदर्शनग्रहणरूपा यस्यासौ निराकांक्षस्तथा निर्गता विचिकित्सा चित्तविप्लुतिर्विद्वज्जुगुप्सा यस्यासौ निर्विचिकित्सोयतएवमतोलब्धउपलब्धोर्थः परमार्थरूपोयेन स लब्धार्थो ज्ञाततत्वइत्यर्थः ।तथा गृहीतः स्वीकृतोर्योमोक्षमार्गरूपोयेन सगृहीतार्थस्तथा विशेषतः पृष्टोर्थोयेन स पृष्टार्थोयतएवमतोविनिश्चितार्थस्ततोनिगतः पृष्टनिर्वचनतः प्रतीतोर्थो येन सोनिगतार्थस्तथाऽस्थिमिंजाऽस्थिमध्यं यावत्सधर्मे प्रेमानुरागेण रक्तोत्यतसम्यक्त्ववासितांतश्चेताइति यावत् । एतदेवाविर्नावयन्नाह । (अयमाउसोइत्यादि) केनचिद्धर्मसर्वस्वं पृष्ट सन्नेतदाचष्टे । तद्यथा नो आयुष्मन्निदं निग्रंथमौनींद्रप्रवचनमर्थः सद्भूतार्थस्तथा प्ररूपणतया तथेदमेवाह । अयमेव परमार्थः कषतापच्छेदैरस्यैव शुद्धत्वेन निर्घटितत्वात् ।शेषस्तु सर्वोपि लौकिकतीर्थिकपरिकल्पितोऽनर्थस्तदनेन विशेषणकदंबकेन सम्यक्त्वगुणाविष्करणं कृतं नवति । सांप्रतं तस्यैव सम्यग्दर्शनज्ञानान्यां कृतोयोगुणस्तदाविष्करणायाह । (उसियइत्यादि) उच्छ्रृतं प्रख्यातं स्फटिकवन्निर्मलं यशोयस्यासावुच्छ्रितस्फटिकः प्रख्यातनिर्मलयशाइत्यर्थः । तथाऽप्रावृतमस्थगितं द्वारं गृहमुखं यस्य सोप्रावृतद्वारः । इदमुक्तं नवति । गृहं प्रविश्य परतीर्थिकोपि यद्यत्कथयति तदसौ कथयतु

जनें कह्यो. (सवायनगवगोयमेउदयपेढालपुत्तएववयासी के०) हवे नगवंत श्री गौतमस्वामी वादसहित उदकपेढालपुत्र प्रत्ये एवुं बोल्या के, (अवियाइआउसोसोच्चानिसम्मजाणिस्सामो के०) अपि संनावनाये अहो आयुष्यमन् उदक ? तमारो प्रश्न सांनलीनें गुणदोषनी विचारणाये हैयामां सम्यक् रीतें धारण करीनें हुं जाणीश, तेवी रीतनो प्रश्न यथायोग्य पूढो (सवायउदएपेढालपुत्तेनगवगोयमएववयासी के०) ते वारे ते उदकपेढालपुत्र, वादसहित आ प्रकारे नगवंत श्रीगौतमस्वामी प्रत्यें बोल्या. ॥५॥

॥ दीपिका–तस्मिन् वनखण्डगृहप्रदेशे नगवान् गोतमोविहरति तस्मिन्नारामे स्थितः । अथ उदकाख्योनिर्ग्रंथः पेढालपुत्रः पार्श्वापत्यस्य पार्श्वशिष्यस्यापत्यं शिष्यः सच मेदार्यगोत्रेण (जेणेवत्ति) यस्यां दिशि गौतमस्तत्रागत्येदं प्राह । आयुष्मन् नो गौतम ! अस्ति मम कश्चित्प्रदेशः प्रष्टव्यः तं प्रदेशं मम यथाश्रुतं त्वया यथा दर्शितं श्रीवीरेण तथा व्यागृणीहि कथय सचायं नगवान् यदिवा सह वादेन सवादं पृष्टस्तमुदकं पेढालघुपुत्रमेवमवादीत् । अपिचायुष्मन्नुदक ! श्रुत्वा त्वदीयं प्रश्नं निशम्य चावधार्य गुणदोषविचारेण सम्यक् ज्ञास्येहं तडुच्यतां विश्रब्धं त्वया स्वाजिप्रायः सचायं ससद्वाचवा उदक पेढालपुत्रोगौतममेवमवादीत् ॥ ५ ॥

॥ टीका–तस्मिंश्च वनखण्डप्रदेशे नगवान् गौतमस्वामी श्रीवर्धमानस्वामिगणधरोविहरति । अथानंतरं नगवान् गौतमस्वामी तस्मिन्नारामे सह साधुनिर्व्यवस्थितोऽथानंतरं णमिति वाक्यालंकारे उदकाख्योनिर्ग्रंथः पेढालपुत्रः पार्श्वापत्यस्य पार्श्वस्वामिशिष्यस्यापत्यं शिष्यः पार्श्वापत्यीयः सच मेदार्यगोत्रेण । येनेवेति सप्तम्यर्थे तृतीया । यस्यां दिशि यस्मिन्वा प्रदेशे नगवान् श्रीगौतमस्वामी तस्यां दिशि तस्मिन्वा प्रदेशे समागत्येदं वक्ष्यमाणं प्रोवाचेति । अत्र निर्युक्तिकारोऽध्ययनोत्थानं तात्पर्यंच गाथया दर्शयितुमाह । " पासावच्चिज्जो पुच्चियाइर्ज अज्जगोयमं उदगो ॥ सावगपुच्छा धम्मं सोउं कहियंमि उवसंता " ॥ १ ॥ (पासावच्चिज्जेत्यादि) पार्श्वनाथशिष्यउदकाजिधानआर्यगौतमं पृष्टवान् किं तत् श्रावकगतं श्रावकविषयं प्रश्नं तद्यथा नो इन्द्रनूते साधो ! श्रावकाणुव्रतदाने सति स्थूलप्राणातिपातादिविषये तदन्येषां सूक्ष्मबादराणां प्राणिनामुपघाते सत्यारंनजनिते तदनुमतिप्रत्ययजनितः कर्मबंधः कस्मान्न नवति ? तथा स्थूलप्राणातिपातादिविषये व्रतिनस्तमेव पर्यायांतरगतं व्यापादयतोनागरिकवधनिवृत्तस्य तमेव बहिस्थं व्यापादयतश्च तद्व्रतनंगजनितः कर्मबंधः कस्मान्न नवतीत्येतत्प्रश्नस्योत्तरं गृहपतिचौरग्रहणविमोक्षणोपमया दत्तवान् तच्च श्रावकप्रश्नस्योपम्यं गोतमस्वामिना कथितं श्रुत्वोदकाख्यानिर्ग्रंथउपशांतापगतस

व्यानाम गृहोपयुक्तशेषद्रव्येण कृता उदकशालासीदनेकस्तंभशतसन्निविष्टा प्रासादीया यावत्प्रतिरूपा तस्याश्चोत्तरपूर्वे दिग्भागे हस्तियामाख्योवनखण्डआसील्कृष्णइत्यादिवर्णकोऽ खण्डस्य वाच्य ॥ ४ ॥

॥ टीका–तस्य चैवभूतस्य लेपोपासकस्य गृहपते सत्कनी नालंदाया पूर्वोत्तरस्य दिशि शेषद्रव्याभिधाना गृहोपयुक्तशेषद्रव्येण कृता शेषद्रव्ये तदेवाभिधानमस्याउदकशालाया सैवभूतासीदनेकस्तंभशतसन्निविष्टा प्रासादीया दर्शनीयाभिरूपाप्रतिरूपेति तस्य श्चोत्तरपूर्वदिग्विभागे हस्तियामाख्योवनखण्डआसील्कृष्णावभासइत्यादिवर्णक ॥ ४ ॥

तस्सिंचणं गिहपदेसंमि भगवं गोयमे विहरइ भगवंचणं अहे आरामंसि अहेणं उदए पेढालपुत्ते भगवं पासावच्चिज्जे नियंठे मेयज्जे गोत्तेणं जेणेव भगवं गोयमे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता भगवं गोयमं एवं वयासी आउसंतो गोयमा अत्थि खलु से केइ पदेसे पुच्छियव्वे तंचमे आउसो अहासुयं अहादरिसियमे वियागरेहि सवायं भगवं गोयमे उदय पेढालपुत्तं एवं वयासी अवियाइ आउसो सोच्चा निसम्म जाणिस्सामो सवायं उदए पेढालपुत्ते भगवं गोयमं एवं वयासी ॥ ५ ॥

अर्थ–हवे (तस्सिंचणंगिहपदेसंमिभगवंगोयमेविहरइ के०) ते वनखंड गृहप्रदेशने विषे भगवंत श्री गौतमस्वामी विचरेछे (भगवंचणंअहेआरामंसि के०) भगवंत श्रीगौतमस्वामी साधुना परिवार सहित आराम हेठल रह्या (अहेणं के०) अथ हवे ए एवे वाक्यालंकारे (उदएपेढालपुत्ते के०) उदकनामे निर्ग्रंथ, पेढालनो पुत्र, अने (भगवंपासावच्चिज्जेनियंठे के०) श्री पार्श्वनाथना शिष्यनो शिष्य, (मेयज्जेगोत्तेणं के०) गोत्रे करी मेदार्यछे ते उदकनिर्ग्रंथ, (जेणेवभगवंगोयमेतेणेवउवागच्छइ के०) ज्यां भगवंत श्रीगौतमस्वामी छे, त्यां आव्यो (उवागच्छित्ता के०) त्यां आवीने (भगवंगोयमंएवंवयासी के०) भगवंत श्रीगौतमस्वामी प्रत्यें एवुं बोल्या के, (आउसंतोगोयमा के०) अहो आयुष्यमन् गौतम ! सुजनें तमारा समीपे (अत्थिखलुसेकेइपदेसेपुच्छियव्वे के०) निश्चे ते कोइ एक प्रदेश एटले प्रश्न पुछवोछे (तंचमेआउसो के०) ते प्रश्न सुजनें, अहो आयुष्यमन् ! (अहासुयं के०) यथाश्रुत एटले जेम तमे श्रीमहावीर स्वामी पासेथी सांभल्युं, (अहादरिसियंमेवियागरेहि के०) जेम तमे अवधार्युं होय, तेम सु

जनें कह्यो. (सवायन्नगवगोयमेउदयपेढालपुत्तएववयासी के०) हवे नगवंत श्री गौतमस्वामी वादसहित उदकपेढालपुत्र प्रत्यें एवुं बोल्या के, (अवियाइआउसोसोच्चानिसम्मजाणिस्सामो के०) अपि संनावनाये अहो आयुष्यमन् उदक ? तमारो प्रश्न सानलीनें गुणदोषनी विचारणाये हैयामां सम्यक् रीतें धारण करीनें हुं जाणीश, तेवी रीतनो प्रश्न यथायोग्य पूढो (सवायउदएपेढालपुत्तेनगवगोयमएववयासी के०) ते वारे ते उदकपेढालपुत्र, वादसहित आ प्रकारे नगवंत श्रीगौतमस्वामी प्रत्ये बोल्या ॥५॥

॥ दीपिका–तस्मिन् वनखमग्रहप्रदेशे नगवान् गौतमोविहरति तस्मिन्नारामे स्थित । अथ उदकाख्योनिर्ग्रंथ पेढालपुत्र पार्श्वापत्यस्य पार्श्वशिष्यस्यापत्य शिष्य सच मेदार्यगोत्रेण (जेणेवत्ति) यस्यां दिशि गौतमस्तत्रागत्येदं प्राह । आयुष्मन् नो गौतम ! अस्ति मम कश्चित्प्रदेश प्रष्टव्य तं प्रदेशं मम यथाश्रुतं त्वया यथा दर्शितं श्रीवीरेण तथा व्यागृणीहि कथय सचाय नगवान् यदिवा सह वादेन सवाद पृष्टस्तमुदक पेढाललघुपुत्रमेवमवादीत् । अपिचायुष्मन्नुदक ! श्रुत्वा त्वदीयं प्रश्नं निशम्य चावधार्य गुणदोषविचारेण सम्यक् ज्ञास्येहं तडुच्यतां विश्रब्धं त्वया स्वानिप्राय सचाय ससद्भावं वा उदक पेढालपुत्रोगौतममेवमवादीत् ॥ ५ ॥

॥ टीका–तस्मिंश्च वनखमप्रदेशे नगवान् गौतमस्वामी श्रीवर्धमानस्वामिगणधरोविहरति । अथानंतरं नगवान् गौतमस्वामी तस्मिन्नारामे सह साधुनिर्व्यवस्थितोऽथानंतरं णमिति वाक्यालंकारे उदकाख्योनिर्ग्रंथ पेढालपुत्र पार्श्वापत्यस्य पार्श्वस्वामिशिष्यस्यापत्य शिष्य पार्श्वापत्यीय सच मेदार्यगोत्रेण । येनेवेति सप्तम्यर्थे तृतीया । यस्यां दिशि यस्मिन्वा प्रदेशे नगवान् श्रीगौतमस्वामी तस्यां दिशि तस्मिन्वा प्रदेशे समागत्येदं वक्ष्यमाणंप्रोवाचेति । अत्र निर्युक्तिकारोऽध्ययनोत्थान तात्पर्यंच गाथया दर्शयितुमाह । " पासावच्चिज्जो पुच्चियाइर्ड अज्जगोयम उदगो ॥ सावगपुच्छा धम्मं सोउं कहियंमि उवसंता " ॥ १ ॥ (पासावच्चेत्यादि) पार्श्वनाथशिष्यउदकानिधानआर्यगौतमं पृष्टवान् किं तत् श्रावकगतं श्रावकविषयं प्रश्नं तद्यथा नो इन्नूते साधो ! श्रावकाणुव्रतदाने सति स्थूलप्राणातिपातादिविषये तदन्येषां सूक्ष्मबादराणां प्राणिनामुपघाते सत्यारंजजनितं तदनुमतिप्रत्ययजनितं कर्मबंध कस्मान्न नवति ? तथा स्थूलप्राणातिपातादिविषये व्रतिनस्तमेव पर्यायांतरगतं व्यापादयतोनागरिकवधनिवृत्तस्य तमेव बहिस्थं व्यापादयतइव तद्व्रतनंगजनितं कर्मबंधं कस्मान्न नवतीत्येतत्प्रश्नस्याजर गृहपतिचोरग्रहणविमोक्षणोपमया दत्तवान् तच्च श्रावकप्रश्नस्योपम्यं गौतमस्वामिना कथितं श्रुत्वादकाख्यानिर्ग्रंथउपशांतापगतस

देह सवृत्तइति। सांप्रतं सूत्रमनुश्रियते सउदकोगौतस्वामिसमीपं समागत्य जगवतमिद मवादीत्तद्यथा आयुष्मन्गौतम ! अस्ति मम विद्यते कश्चित्प्रदेश प्रष्टव्यस्तत्र सदेहस्तंच प्रदेश यथाश्रुतं जगवता यथाच जगवता सदर्शितं तथैव मम व्यागृणीहि प्रतिपादय। ए व पृष्ट सचार्य जगवान् यदिवा सह वादेन सवाद पृष्ट सह्वाद वा शोजनजारती वा प्रश्नं पृष्टस्तमुदक पेढालपुत्रमेवमवादीत्तद्यथाऽपिचायुष्मन्नुदक ! श्रुत्वा जवदीय प्रश्न निशम्य चा वधार्यच गुणदोषविचारणत सम्यगह ज्ञास्ये तडुच्यता विश्रव्ध जवता स्वाजिप्रायं तथा च चोदक पेढालपुत्रोजगवतं गौतममेवमवादीत् ॥ ५ ॥

आउसो गोयमा अत्थि खलु कुमारपुत्तिया नाम समणा निग्गं था तुम्हाण पवयण पवयमाणा गाहावइ समणोवासग उवसपन्नं एव पच्चक्खावेति णन्नत्थ अजिउगेण गाहावइचोरग्गहणविमो क्खणयाए तसेहिं पाणेहिं णिहाय दम एवण्ह पच्चक्खताण डुप्प च्चक्खाय जवइ एवण्ह पच्चक्खावेमाणाण डुपच्चक्खावियव्व जवइ एव ते पर पच्चक्खावेमाणा अतियरति सय पत्तिण कस्सणं त हेउ सा सारिया खलु पाणा थावरावि पाणा तसत्ताए पच्चायति तसावि पाणा थावरत्ताए पच्चायति थावरकायाउ विप्पमुच्चमाणा तसका यसि उववज्जति तसकायाउ विप्पमुच्चमाणा थावरकायसि उववज्ज ति तेसिंचण थावरकायसि उववन्नाण ठाणमेय घत्त ॥ ६ ॥

अर्थ-(आउसोगोयमा के०) अहो आयुष्मन् गौतम ! (अत्थिखलुकुमारपुत्तियाना मसमणानिग्गथा के०) निश्चे कुमारपुत्र एवे नामे, श्रमण निर्ग्रंथछे (तुम्हाणपवयणपव यमाणा के०) ते तमारु प्रवचन बोलता प्ररूपता, (गाहावइसमणोवासगउवसपन्नए वपच्चक्खावेति के०) गृहपति श्रमणोपासकनियमोद्युक्तने आवी रीतें पच्चक्खाण करावेछे ते कहेछे के, जेमा त्रसप्राणीयोनो दम, एटले विनाश, तेनो त्याग करे, ए रीतें प्राणाति पातनी विरति करावेछे (णन्नत्थअजिउगेण के०) तथा राजादिकने अजियोगे जे प्रा णीउनो उपघात थाय, ते टालीने अन्यनी विरति करावेछे तो ए रीतें स्थूलप्राणातिपात नी विरति कहेतां थका, अन्य जीवने उपघातनी अनुमतिनो दोष लागेछे ? ए रीतें श का जाणीने कहेछे (गाहावइचोरग्गहणविमोक्खणयाए के०) गृहपति ग्रहण मोक्ष ने अर्थे, एटले मूकाववाने अर्थे, एनो विशेष अर्थ आगल कहेशे एतावता श्री वीरना शासनने विषे श्रावकने अधिकारे (तसेहिंपाणेहिंणिहायदम के०) त्रसप्राणी

ना दमनो निषेध कह्यो तेने उदक पोताना अजिप्रायें करी दूषवेछे (एवएहपच्च क्खताणंडुपच्चक्खायंनवइ के०) अहो गौतम! ए एवे वाक्यालंकारे ए रीतें त्रसप्रा णीना दमनो निषेध करीनें पच्चखाण करता डुष्ट प्रत्याख्यान थाय (एवएहप च्चक्खावेमाणाणंडुपच्चक्खावियव्वनवइ के०) एम पच्चखाण करावनारने पण, डुष्ट प्र त्याख्यान कराव्युं, एम थाय ते कहेवे (एवतेपरपच्चक्खावेमाणा के०) ए रीतें ते पच्चखाण करनार श्रावक, अनें पच्चखाण करावनार साधु बेहु, (सयपत्तिणं के०) पोतानी प्रतिज्ञाने (अतियरति के०) उल्लंघन करेछे, एतावता व्रतजंग करेछे (क स्सणंतंहेउ के०) ते केवा हेतु थकी प्रतिज्ञा जंग थाय? ते प्रतिज्ञा जंगनुं कारण कहेछे (सासारियाखलुपाणा के०) निश्चे संसारी जीव, (थावराविपाणा के०) जे पृथ्वी, अप्, तेउ, वायु, अने वनस्पति रूप स्थावर जीव ते पण (तसत्ताएपच्चायति के०) तेवा कर्मना उदयथकी त्रस पणे उपजे, (तसाविपाणाथावरत्ताएपच्चायति के०) तथा त्रस जे बेइंडि यादिक जीवोछे ते पण स्थावर पणे उपजे, (थावरकायाउविप्पमुच्चमाणातसकायंसिउवव ज्जंति के०) स्थावरनी कायथकी मूकाणा त्रसकायने विषे उपजे (तसकायाउविप्पमुच्च माणाथावरकायंसिउववज्जंति के०) त्रसकाय थकी मूकाणा थका स्थावरकायने विषे उप जे ए कारणमाटें (तेसिंचणंथावरकायंसिउववन्नाणं के०) त्रसजीव स्थावरकाय माहे जे वारे उपना, तेवारे (ठाणमेयंघत्तं के०) ते स्थानक त्रसकायनुं हणाणुं ए कारण मा टे प्रतिज्ञाजंग थाय जेम कोइ एके एवी प्रतिज्ञा करी जे म्हारे नागरीक पुरुष हणवो नहीं अने पढी तेज नागरीक पुरुष कोइ आरामादिकने विषे बेठो होय, त्यां तेने हणे तो तेथी शुं तेनी प्रतिज्ञाजंग न थाय? अपितु थायज तेम अहीं पण त्रसजीवना घातनी निवृत्ति करी, अनें स्थावर जीवना घातनी निवृत्ति नथी करी तो, जे वारें त्रसजीव स्थावर मांहे आवी उपजे तेवारे तेणे ते त्रसजीवज विणाश्या, एम करतां प्रतिज्ञानो जंग थयो ॥ ६ ॥

॥ दीपिका—जो गौतम! अस्ति सति कुमारपुत्रानाम निर्ग्रंथा युष्मदीय प्रवचन प्रवदत। तथाहि गृहपति श्रमणोपासक उपसपन्न नियमग्रहणोद्यत प्रत्याख्यापयति प्रत्याख्यान कारयंति तद्यथा। त्रसेषु दम हिसा निहाय त्यक्त्वा प्राणातिपातनिवृत्तिं कुर्वंति (णणुछे ति) नान्यत्र समतेरन्यत्र राजाद्यनियोगेन य प्राणिघातोन तत्र निवृत्तिरिति तत्र स्थूल प्राणिविशेषणात्तदन्येषा जीवानां हिसातु मतिदोष स्यादित्याशंकावान् प्राह। (गाहा वइचारत्ति) यस्यार्थोऽग्रे जावयिष्यते (एवएहुति) वदकएवाह। एहमिति वाक्याल कारे। एव प्रत्याख्यान कुर्वतां श्राद्धानां डुःप्रत्याख्यातं जवति अप्रत्याख्यानजगसजावा

तथा एव प्रत्याख्यापयतां प्रत्याख्यान कारयतां साधूनां डुष्ट प्रत्याख्यानदान जवति एव प्रत्याख्यान कुर्वंत कारयतश्च स्वा प्रतिज्ञामतिचरत्यतिलघयंति (कस्सणंतंहेंऊं) कस्मा द्धेतोरित्यर्थ । प्रतिज्ञाजगकारणमाह । (ससारियाइत्यादि) सांसारिका खलु प्राणिन स्था वराश्चपि प्राणिनस्त्रसतया प्रत्यायाति त्रसाश्च स्थावरत्वेनेति । एवसति प्रतिज्ञालोप स्यात् यथा नागरिकोन हतव्यइति प्रतिज्ञा येन कृता सयदि उद्यानस्थ नागरिक हन्यात्तदा त स्य किं प्रतिज्ञालोपोन स्यात् ? एवमत्रापि येन त्रसवधनिवृत्ति कृता स यदि तमेव त्रस स्था वरकायस्थित हति तदा तस्य किं न जवेत्प्रतिज्ञालोप ? जवत्येवेत्यर्थ । त्रसकायान्मुच्यमा ना स्थावरकाये उत्पद्यते स्थावरकायान्मुच्यमानाश्च त्रसकाये नच किंचिल्लिंगमस्ति येन ज्ञायतेऽय त्रसोऽजूत्पूर्व स्थावरोवेति (तेसिंचण) तेषा त्रसाना स्थावरकाये उत्पन्नानां श्राद्धस्यारजवत स्थानमिद स्थावराख्य घात्य स्यात् ॥ ६ ॥

॥ टीका–तद्यथा जो गौतम ! अस्तीत्यय विजक्तिप्रतिरूपकोनिपातइति बव्हर्थवृत्तिर्गृही तस्ततश्चायमर्थ । सति विद्यते कुमारपुत्रानाम निर्ग्रथायुष्मदीय प्रवचन वदतस्तद्यथा गृह पतिं श्रमणोपासकमुपसपन्न नियमायोत्थितमेव प्रत्याख्यापयति प्रत्याख्यान कारयंति । त द्यथा स्थूलेषु प्राणिषु दंमयतीतिदम प्राण्युपमर्दस्तं निहाय परित्यज्य प्राणातिपातनिवृ त्ति कुर्वंति । तामेवापवदति । नान्यत्रेति । स्वमनीषिकायाश्चन्यत्र राजाद्यभियोगेन य प्राण्युप पघातोन तत्र निवृत्तिरिति । तत्र किल स्थूलप्राणिविशेषणात्तदन्येषामनुमतिप्रत्ययदोष स्यादित्याशंकावानाह । (गाहावइइत्यादि) अस्य चार्थमुत्तरत्राविर्जावयिष्याम । येनाभिप्रा येणोदकश्चोदितवास्तमाविष्कुर्वन्नाह (एवएहमित्यादि) एहमिति वाक्यालकारे अवधार णेवा । एवमेव त्रसप्राणिविशेषत्वेनापरस्त्रत्रसजूतविशेषणरहितत्वेन प्रत्याख्यान गृह्हता श्रावकाणा डुष्प्रत्याख्यान जवति प्रत्याख्यानजगसद्भावात्तथैवमेव प्रत्याख्यापयतामपि साधूना डुष्ट प्रत्याख्यानदान जवति । किमित्यतआह । एव ते श्रावका प्रत्याख्यान गृ ह्णत साधवश्च पर प्रत्याख्यापयंत स्वा प्रतिज्ञामतिचरत्यतिलघयत्ति (कस्सणहेउंति) प्राकृतशैल्या कस्माद्धेतोरित्यर्थ । तत्र प्रतिज्ञाजगकारणमाह । (सासारियाइत्यादि) ससा रोविद्यते येषा ते सासारिका । खलुरलकारे । प्राणिनोजतव स्थावरा प्राणिन पृथिव्यप्ते जोवायुवनस्पतय सतोपि तथाविधकर्मोदयात्त्रसतया त्रसत्वेन द्वीडियादिजावे प्रत्यायां त्युत्पद्यते तथा त्रसाश्चपि स्थावरतयेत्येव च परस्परगमने व्यवस्थितेत्यवश्य जावी प्रतिज्ञाविलोप । तथाहि । नागरिकोमया न हतव्यइत्येवजूता येन प्रतिज्ञा गृहीता सयदा बहिरारामादौ व्यवस्थित नागरिक व्यापादयेत्किमेतावता तस्य न जवेत्प्रतिज्ञाविलोप ? एवमत्रापि येन त्रसवधनिवृत्ति कृता सयदातमेव त्रस प्राणिन स्थावरकायस्थितं व्या

पादयेत्कि तस्य न भवेत्प्रतिज्ञाविलोप ? भवेदेवेत्यर्थः । एवमपि त्रसस्थावरकाये समुत्प न्नाना त्रसाना यदि तथाभूत किंचिदसाधारणलिंग स्यात्ततस्ते त्रसा स्थावरत्वेनाप्युत्प न्ना शक्यते परिहर्तु नच तदस्तीत्येतद्दर्शयितुमाह । (थावरकायाउइत्यादि) स्थावरका यात्सकाशाद्विविधमनेकै प्रकारै प्रकर्षेण मुच्यमाना स्थावरकायायुषा तद्योग्यैश्चापरै कर्मभि सर्वात्मना त्रसकाये समुत्पद्यते तथा त्रसकायादपि सर्वात्मना विमुच्यमानास्त त्कर्मभि स्थावरकाये समुत्पद्यते तत्र चोत्पन्नाना तथाभूतत्रसलिंगाभावात्प्रतिज्ञालोप इत्येतत्सूत्रेणैव दर्शयितुमाह । (तेसिंचणमित्यादि) तेषा त्रसाना स्थावरकाये समुत्प न्नाना गृहीतत्रसप्राणातिपातविरते श्रावकस्याप्यारम्भप्रवृत्तत्वेनैतत्स्थावराख्य घात्य स्थान भवति तस्मादनिवृत्तत्वात्तस्येति ॥ ६ ॥

एवएह पच्चक्कताणं सुपच्चक्काय भवइ एवएह पच्चक्कावेमाणा ण सुपच्चखाविय भवइ एव ते पर पच्चक्कावेमाणा णातियर ति सय पइम्म णएाउ अभिर्जुगेण गाहावइचोरग्गहणवि मोक्कणया तसभूएहि पाणेहि णिहाय दम एवमेव सइ भा साए परक्कमे विज्जमाणे जे ते कोहावा लोहावा पर पच्चक्कावेति अयपि णो उवएसे णो णेआउए भवइ अवियाइ आउसो गोयमा तुम्भपि एव रोयइ ॥ ७ ॥

अर्थ–हवे उदक पोताना अभिप्राये जेम प्रतिज्ञा भग न होय, तेम कहेछे (एव ण्हपच्चक्कताण के०) के जेम हु कहुछु तेम पच्चखाण करता (सुपच्चक्कायभवइ के०) रूडु पच्चक्काण थाय (एवएहपच्चक्कावेमाणाण के०) एम पच्चक्काण करावता थका (सुपच्चक्काविय भवइ के०) रूडु पच्चक्काण कराव्यु एम थाय (एवतेपरपच्चक्कावेमाणा के०) ए रीतें ते श्रावक पच्चक्काण करता थका अनें साधुए पच्चक्काण करावता थका (णा तियरतिसयपइम्म के०) पोतानी प्रतिज्ञानु उल्लघन न करे केवी रीतें उल्लघन न क रे ? ते कहेछे (णएउअभिउगेणगाहावइचोरग्गहणविमोक्कणया के०) जे गृह पति एवी रीतें पच्चक्काण करे के राजादिकना अभियोग थकी अन्य चोरग्रहण चो रीकरी ग्रह्यो ते मोक्षणनें न्यायें ए पण युक्त परतु, (तसभूएहिपाणेहिणिहायदम के०) त्रस भूत प्राणीनो विनाश नहीं करु, एटले एना शु अर्थ ? तो के, भूत शब्दनु भिले पण अधिक कहियें ता पच्चखाण न भागे ज्यां सुधी ते त्रसजीव त्रसन रूपेछे, त्यां सु धी न हणवो, जेम कोइ एकनें दुधनी विगयनो पच्चक्काणछे तेन दधिने जमवे करी दो

प नथी, तेम त्रसनूत सत्व, हणवा नही एवी प्रतिज्ञाना करनारनें स्थावरनें हणवा थकी, पच्चरकाणनो नग न थाय. (एवमेवसइनासाएपरक्कम्मे के०) तो जूवो [१] के, एने एवु नाषानु पराक्रम (विज्जमाणे के०) विद्यमान बते त्रसने स्थानकें त्रसनूत ए वी नाषाने बोलतां (जेते के०) जे कोइ साधु (कोहावालोहावापरंपच्चरकावेंति के०) क्रोध थकी, अथवा लोन थकी, परने एटले बीजाने नूत शब्द टाली त्रस जीवनो प च्चरकाण करावे, तो तेने मृषावाद लागे, ने एवा पच्चरकाणना लेनारनें अवश्य निश्चे व्रतनग थाय (अयंपिणोउवएसेकिणोणेआउएनवइ के०) ए रीतें जोतां, ए उपदेश नलो नथी, ए न्याय मार्ग नथी, हु एम जाणुं मार्टे (अवियाइआउसोगोयमा के०) अपिसनावनाये अहो आयुष्यमन् गौतम ! (तुप्नंपिएवरोयइ के०) तमनें पण हु कहु बु ए वात रूचे एवीबे ए वात वखाणवा योग्यबे ॥ ७ ॥

॥ दीपिका–एव नागरिकदृष्टांतेन त्रसमेव घ्नत प्रतिज्ञालोप स्यात् । उदक पुन स्वानिप्रायमाह । एव प्रत्याख्यान कुर्वता सुप्रत्याख्यातं नवति एव प्रत्याख्यापयतांच त देव । एव प्रत्याख्यान कुर्वता कारयतांच न स्वप्रतिज्ञालोप । यथा (एसुबेत्यादि) एव गृ हस्थ प्रत्याख्याति त्रसनूतेषु वर्तमानकाले त्रसत्वेनोत्पन्नेषु प्राणिषु दंमं वध निहाय त्यक्ता प्रत्याख्यान करोति । तदिह नूतत्वविशेषणात् स्थावरपर्यायप्राप्तस्य वधेपि न प्र तिज्ञालोप नान्यत्रानियोगेन राजाद्यनियोगादन्यत्र प्रत्याख्यान गृहपतिचौरविमोक्षण तयेति सम्यगुक्त । तस्मान्नूतत्वाविशेषणांगीकारे यथा क्षीरविकृतिप्रत्याख्यायिनोदधिन क्षणेपि न प्रतिज्ञानग तथा त्रसनूतान हतव्याइति प्रतिज्ञावत स्थावरहिंसायामपि न प्रत्याख्यानातिचार । एव विद्यमाने सति नाषाया प्रत्याख्यानवाच पराक्रमे नूताविशेष णाद्दोषपरिहारसामर्थ्ये । एव दोषपरिहारोपाये सति केचन क्रोधाद्वा लोनाद्वा श्रावक नि र्विशेषणमेव प्रत्याख्यापयंति तेषां मृषावाद स्यात् गृह्णतांच व्रतलोप । तदेवमयमपि नोस्मदीयोऽगीकार कि नवता नो नैयायिकोन्यायोपपन्नोनवति अपिवायुष्मन्गौतम ! एषपक्षस्तुन्यमपि रोचते ॥ ७ ॥

॥ टीका–तदेव व्यवस्थिते नागरिकदृष्टांतेन त्रसमेव स्थावरत्वेनायातं व्यापादयंतोऽव श्यंनावी प्रतिज्ञाविलोपोयतस्ततएव मङ्क्षया वक्ष्यमाणनीत्या प्रत्याख्यान कुर्वता सुप्र त्याख्यातं नवत्येवच ते प्रत्याख्यापयंतोनातिचरति स्वीयां प्रतिज्ञामित्येतद्दर्शयितुमाह । (एणबेत्यादि) तत्र गृहपति प्रत्याख्यानमेव गृह्णाति तद्यथा त्रसनूतेषु वर्तमानका ले त्रसत्वेनोत्पन्नेषु प्राणिषु दमयतीतिदम प्राण्युपमर्दस्तं विहाय परित्यज्य प्रत्याख्यान

करोति तदिह नूतत्वविशेषणात्स्थावरपर्यायापन्नवधेपि न प्रतिज्ञाविलोप । तथा त्रसनू ता सत्वान हतव्याइत्येव प्रतिज्ञावत स्थावरहिंसायामपि तत्प्रत्याख्यानातिचार । त देव विद्यमाने सति नापाया प्रत्याख्यानवाच पराक्रमे नूतविशेषणाद्दोषपरिहारसामर्थ्ये एव पूर्वोक्तया नीत्या सति दोषपरिहरणोपाये ते केचन क्रोधाद्वा लोभाद्वा पर श्रावकादि क निर्विशेषणमेव प्रत्याख्यापयति तेषा प्रत्याख्यान ददता मृषावादोनवति गृह्णता चा वश्यनावी व्रतविलोपइति। तदेवमयमपि नोऽस्मदीयोपदेशोन्युपगमोनूतत्वविशेषणविशि ष्ट पक्ष किं नवता नो नैव नैयायिकोन्यायोपपन्नोनवतीदमुक्त नवति नूतत्वविशेषणेन हि त्रसान् स्थावरोत्पन्नान् हिंसतोपि न प्रतिज्ञातिचारइत्यपि चैतदायुष्मन् गौतम ! । तु भ्यमपि रोचते ॥ ७ ॥

सवाय नगवं गोयमे उदयं पेढालपुत्त एवं वयासी आउसंतो उदगा नो खलु अम्हे एव रोयइ जे ते समणावा माहणावा ए वमाइक्खंति जाव परूवेति णो खलु ते समणा वा णिग्गथावा नास नासति अणुतावियं खलु ते नास नासति अप्नाइक्खंति खलु ते समणे समणोवासएवा जेहिंवि अन्नेहिं जीवेहिं पाणेहिं नूएहिं सत्तेहिं सजमयति ताणवि ते अप्नाइक्खंति कस्सण त हेउ सासारिया खलु पाणा तसावि पाणा थावरत्ताए पच्चायति थावरावि पाणा तसत्ताए पच्चायति तसकायाउ विप्पमुच्चमाणा थावरकायंसि उववज्जति थावरकायाउ विप्पमुच्चमाणा तसकाय सि उववज्जति तेसिंचण तसकायंसि उववन्नाण ठाणमेय अघत्त ॥ ८ ॥

अर्थ–ए प्रकारे कहे उते, (सवायनगवगोयमेउदयपेढालपुत्तएववयासी के०) वाद स हित नगवान् श्री गौतम, आ प्रकार उदक पेढालपुत्र प्रत्यें बोल्या के, (आउसतोउदगा नोखलुअम्हेएवरोयइ के०) अहो आयुष्मन् उदक ! ए जे तें वचन कह्यांजे ते नि श्चेथी अमने रुचतां नथी, (जेतेसमणावामाहणावाएवमाइक्खंति के०) जे ते श्रमण, ब्रा ह्मण, नूत शब्द पालीनें त्रसजीवनो पच्चरकाण करियें एम कहे, (जावपरूवेंति के०) यावत् प्ररूपे, (णोखलुतेसमणावाणिग्गथावा के०) निश्चे ते श्रमण निर्ग्रंथ न होय का रण के, (नासनासति के०) ते एवी निरति नाषा बोलेजे (अणुतावियखलुतेनासनास ति के०) जे अन्यनु अन्य प्ररूपता एटले एकनु बीजु प्ररूपतां सांनलनारनें केवल अ

नुताप उपजे, ते कारणे निश्चें ते अनुतापित नापा बोलेले (अप्राइक्खतिख लुतेसमणेसमणोवासएवा के०) निश्चे ते श्रमण ब्राह्मण, साधुनें, तथा श्रमणोपा कनें, अन्याख्यान आपे, एटले जूठो कलंक आपे, (जेहिविअन्नेहिं के०) तथा जे बी जा पण, (जीवेहिंपाणेहिंनूएहिंसत्तेहिंसंजमयंति के०) जीव, प्राण, नूत, अनें सत्वनें विषे जे संयम पाले, (ताणवि के०) ते पण (तेअप्नाइक्खंति के०) तेने अन्याख्यान ना णवु (कस्सणंतंहेउ के०) तेनो हेतु शु ? ते कहेले (संसारियाखलुपाणा के०) जे कारण मार्टे निश्चे संसारी जीव जेठे ते परस्पर जाति माह्यो मांहे संक्रमे, त्रस जीव विणशीने स्थावर पणे उपजे, अनें स्थावर प्राणी विणशीने, त्रसपणे उपजे, तथा त्रसकाय सर्वथा त्रसनु आयुष्य त्यागीनें स्थावरकाय माहे उपजे, अनें स्थावरजीव सर्वथापि स्थावरनु आयुष्कर्म त्यागीने त्रसकायने विषे उपजे, ते त्रसकायनें विषे उप ना त्रसकायनु स्थानक ए अघात्य एटले घातवानु कर्म लागे नहीं जे कारण मार्टे ते श्रावके त्रसजीव उद्देशीनि स्थूलप्राणातिपातनो विरमण कर्योठे अनें स्थावरकायने वि षे अविरतिठे ए कारण माटे व्रतनंग न कहेवाय परंतु जे, तमारे अनिप्रायें जुदा जु दा जीव उद्देशीने प्राणातिपातनी निवृत्ति कीधी, ते कीधे ठते अन्य पर्याये पहोता एवा जीवनी विराधना करता व्रतनंग थाय, तो कोइने पण सम्यक् व्रतनु पालवु देखातु न थी ए कारणे तमे अन्याख्यान नापा बोलोठो, तथा अहीं नूतशब्दनु ग्रहण करोठो, ते पण नि केवल व्यामोहने अर्थेजठे जे कारण मार्टे नूतशब्द उपमाये प्रवर्त्तेठे, जेम देवलोकनूत नगर, पर नतु देवलोक तेम अहींया तमे पण वक्तव्यताये त्रसनूत केतां त्रस सरखा जीव जाणवा परनतु त्रस, अथवा जे नूतशब्द तदर्थवाची वर्त्तेठे जेम शी तनूत उदक केतां शीतलजलज जाणवु तेम त्रसनूत केता त्रसज केवाय, अहींयां नू तशब्द केता पुनरोक्ति दोषठे एम श्री गौतमस्वामिये नूतशब्दनु निराकरण कर्यु ॥ ८ ॥

॥ दीपिका-सवाद नगवान् गौतमस्तं उदक पेढालपुत्रमेवमवादीत् । आयुष्मन्नुदक ! नो खलु अस्मन्यमेतद्रोचते यदिदं त्रसकायविरतौ नूतत्वविशेषणं तदस्मन्य न रोचतइत्य र्थ । एवसति ये श्रमणावा ब्राह्मणावा एवमाख्याति ते यथार्थां नापा न नाषते किंतु? अनुतापिनीनाषा नाषते अन्यथा नापणेहि परस्यानुतापोनवति तेऽन्याख्याति श्रमणो पासकान सद्भूतदोषप्रकटनेनान्याख्यान ददते (जेहिति) येप्वपि अन्येषु जीवेषु ये स यमयति सयम कुर्वति तथा ब्राह्मणामया न हतव्याइत्युक्ते सयदा वर्णांतरे तिर्यक्षु वा स्थितस्तद्वधे ब्राह्मणवधआपद्यते नूतशब्दविशेषणानावात् । एव सूकरादिर्न हतव्यइ त्यादिविशेषव्रतानि तेऽन्याख्याति दूषयति कस्माद्धेतो ? यस्मात्सासारिका प्राणास्त्रसा

स्थावरत्वेन स्थावरास्त्रसत्वेन प्रत्यायाति त्रसकायात्तदायुष्केन मुच्यमाना स्थावरकाये स्थावरकायाच्च तद्योग्यकर्मणा मुच्यमानास्त्रसकाये उत्पद्यते तेषां त्रसकाये समुत्पन्नाना स्थानमेतत्त्रसकायाख्यमघात्य अघातार्ह नवति स्थूलप्राणिघातान्निवृत्त श्राद्ध तन्निवृ त्याच त्रसस्थानमघात्य स्यात् तस्य तीव्राध्यवसायोत्पादकत्वाल्लोकगर्हितत्वाच्च स्थावर कायाच्चानिवृत्तइति तत्स्थानमस्य घात्यमित्युदकआह ॥ ८ ॥

॥ टीका–एवमेतद्यथा मया व्याख्यातमनिह्नितोगौतम सद्भाव सवाद वा तमुदक पे ढालपुत्रमेव वक्ष्यमाणमवादीत् तद्यथा । नो खल्वायुष्मन्नुदकास्मन्यमेतदेव तद्यथा त्वयो च्यते तद्रोचतइति । इदमुक्त नवति यदिद त्रसकायविरतो नूतत्वविशेषण क्रियते तन्नि रर्थकतयास्मन्य न रोचतइति । तदेव व्यवस्थिते नो उदक ! एते श्रमणाब्राह्मणावा एव नू तशब्दविशेषणत्वेन प्रत्याख्यानमाचक्षते । तद्यथा । परे प्रष्टास्तथैव नाषते प्रत्याख्यान स्व त कुर्वत कारयतश्चैवमिति सविशेषण प्रत्याख्यान नाषते तथैवमेव सविशेषणप्रत्या ख्यानरूपणावसरे सामान्येन प्ररूपयत एवच प्ररूपतोन खलु ते श्रमणावा निर्ग्रंथावा व्य र्थी नाषा नाषतेऽपित्वनुतापयतीत्यनुतापिका तां तथानूता च खलु ते नाषा नाषते अन्यथा नाषणे ह्यपरेण जानता बोधितस्य सतोनुतापोनवतीत्यतोनुतापिकेत्युच्यतइति । पुनरपि तेषां सविशेषणप्रत्याख्यानवतामुल्बणदोषोद्भिनावयिषयाह । (अन्नाइक्खतीत्यादि) ते हि सविशेषणप्रत्याख्यानवादिनोयथावस्थितं प्रत्याख्यान ददत साधून् गृण्हतश्च श्रम णोपासकानन्याख्यात्यनूतदोषोन्नावनतोऽन्याख्यान ददति । किंचान्यत् । (जेहिंवीत्यादि) येष्वप्यन्येषु प्राणिनूतेषु जीवेषु सत्वेषु विषयनूतेषु विशिष्य ये सयम कुर्वंति सयमयति। तद्यथा ब्राह्मणोन मया हतव्यइत्युक्ते सयदा वर्णांतरे तिर्यक्षु वा व्यवस्थितोनवति त द्वधे ब्राह्मणवधआपद्यते नूतशब्दविशेषणात्तदेव तान्यपि विशेषव्रतानि सुकरोमया न ह तव्यइत्येवमादीनि विशेषणवादिनोऽन्याख्यांति दूषयति । किमित्यतआह । (कस्सणमित्या दि) कस्माद्धेतोस्तदसन्नूतं दूषण नवतीति यस्मात्सासारिका खलु प्राणा परस्परजातिसक्र मणनाजायतस्तत्रसा प्राणिन स्थावरत्वेन प्रत्यायाति स्थावराश्च त्रसत्वेनेति । त्रसका याच्च सर्वात्मना त्रसायुष्कं परित्यज्य स्थावरकाये तद्योग्यकर्मोपादानादुत्पद्यते तथा स्थाव रकायाच्च तदायुष्कादिना कर्मणा विमुच्यमानास्त्रसकाये समुत्पद्यते तेषाच त्रसकाये स मुत्पन्नानां स्थानमेतत्त्रसकायाख्यमघात्यमघातार्ह नवति । तस्मात्तेन श्रावकेण त्रसानुद्दि श्य स्थूलप्राणातिपातविरमण कृतं तस्य तीव्राध्यवसायोत्पादकत्वाल्लोकगर्हितत्वान्नेति । तत्रासौ स्थूलप्राणातिपातान्निवृत्तस्तन्निवृत्त्याच त्रसस्थानमघात्य वर्तते स्थावरकायाच्चा निवृत्तइति तद्योग्यतया तत्स्थान घात्यमिति । तदेव सनवदनिप्रायेण विशिष्टसत्वाविशे

नापि प्राणातिपातनिवृत्तौ कृतायामपरपर्यायापन्न प्राणिन व्यापादयतोव्रतभंगोभवति स तश्च न कस्यचिदपि सम्यग्व्रतपालन स्यादित्येवमाख्यातमभूतदोषोद्भावनं भवतोभवति। यदपि भवद्भिर्वर्तमानकाल विशेषणत्वेन किलायं भूतशब्दउपादीयतेऽसावपि व्यामोहाय केवलमुपतिष्ठते । तथाहि । भूतशब्दोयमुपमाने वर्तते । तद्यथा देवलोकभूतं नगरमिदं न देवलोकएव तथापि त्रसभूतानां त्रससदृशानामेव प्राणातिपातनिवृत्तिः कृता स्यान्न तु त्रसानामित्यथ तादर्थ्ये भूतशब्दोय यथा शीतीभूतमुदक शीतमित्यर्थः । एव त्रसभू तास्त्रसत्व प्राप्तास्तथा च सति त्रसशब्देनैव गतार्थत्वात्पौनरुक्त्यं स्यादथैवमपि स्थिते भूत शब्दोपादान क्रियते तथा च सत्यतिप्रसग स्यात्। तथाहि । क्षीरभूतविकृते प्रत्याख्यान करोम्येव घृतभूतं मे ददस्वेव घटभूत पटभूतइत्येवमादावप्यायोज्यमिति ॥ ८ ॥

सवाय उदए पेढालपुत्ते भगव गोयम एव वयासी कयरे खलु ते आउसतो गोयमा तुम्हे वयह तसपाणा तसा आउ अन्नहा सवा य भगव गोयमे उदय पेढालपुत्त एव वयासी आउसतो उदगा जे तुम्हे वयह तसभूता पाणा तसा ते वय वयामो तसा पाणा जे वय वयामो तसा पाणा ते तुम्हे वयह तसभूया पाणा एए सति डुवेठाणा तुल्ला एगठा किमाउसो इमे भे सुप्पणीयतराए भव इ तसभूया पाणा तसा इमे भे डुप्पणीयतराए भवइ तसा पाणा तसा ततोएगमाउसो पडिकोसह एक्क अभिणदह अयपि भेदो से णो णेआउए भवइ ॥ ९ ॥

अर्थ–हवे वाद सहित उदकपेढाल पुत्र, भगवत श्री गौतमस्वामि प्रत्ये बोल्यो के, अहो आयुष्मन् गौतम ! (तुम्हे के०) तमे (कयरे के०) प्राणीने केवा (वयह के०) कहोछो ? ए टले (तसपाणातसा के०) त्रसप्राणीज जे होय तेनेज त्रस कहोछो (आउ के०) अथ वा (अन्नहा के०) कोइ बीजे प्रकारे कहोछो ? एम पुछया थका भगवत श्री गौतमस्वामी वादसहित उदयपेढाल पुत्र प्रत्ये बोल्या के, अहो आयुष्मन् उदक ! जे तमे कहो छो के, त्रसभूत प्राणी त्रस एटले अतीत अनें अनागतनो निषेध करी, तमें वर्त्तमान कालज लीधो, ए कारणमाटे जेनें तमे त्रसभूतप्राणी त्रस कहोछो, तेनें अमे त्रसप्राणी त्रस कहियें छैयें, (एएसतिडुवेठाणातुल्ला के०) ए बे स्थानक अमारी तमारी वक्तव्य तायें परमार्थेतो, (एगठा के०) एकार्थ एटले सरखाजछे, एमा अर्थ भेद कांही नथी (किमाउसोइमेभेसुप्पणीयतराएभवइ के०) तो केवी रीतें अहो आयुष्मन् ! ए तमारो

पक्ष सुप्रणीत एटले रूडोछे एम अमे केम जाणियें ? त्रसनूतप्राणी त्रस, ए तमारो पक्ष छे, अनें त्रसप्राणी त्रस ए अमारो पक्षछे, तो ते अमारो पक्ष केवी रीतें दुःप्रणीत एटले मागो थाय ? त्रसप्राणी त्रस, एम एकार्थे वर्त्तमान ए शब्दनो तमनें केवो व्यामोह उपनो ? जे, (ततोएगमाउसोपडिकोसह के०) तेमां तमे एक पक्षनी प्रशंसा करोछो एटले स्थापन करोछो (एक्कअनिणंदह के०) एक पक्षनी निंदा करोछो (अयंपिन्नेदो के०) ए तमारो नेद पणछे, (सेणोणेआउएनवइ के०) ते न्यायोपपन्न न होय, ए न्यायमार्ग नथी ॥ ९ ॥

॥ दीपिका–उदकआह । उदकोगौतममवादीत् हे आयुष्मन् गौतम ! कतरान्प्राणिनो यूयं वदथ त्रसप्राणिनइति । अथ स वाच गौतमउदकमवादीत् आयुष्मन्नुदक ! यान्प्राणिनोयूयं वदथ त्रसनूतास्त्रसत्वेन वर्तमानानप्येष्यास्तानेव वयं वदामस्त्रसाइति । ये यान् वयं वदामस्त्रसास्तान्यूयं वदथ त्रसनूतान् एते द्वे स्थाने तुल्ये एकार्थे एव नात्र कश्चिदर्थनेद । एवं सत्ययं युष्मदीयः पक्षः किं सूपनीततरोयुक्तियुक्तः त्रसनूताः प्राणाइत्ययंतु पक्षोदुःप्रणीततरोऽयुक्तः प्रतिनासते कोयं व्यामोहोनवतां येन शब्दनेदादिकं पक्षमाक्रोशय द्वितीयं त्वनिनंदथ । इत्ययमेवांगीकारोनवतां नो नैयायिकोन न्यायोपपन्न उनयोरपि पक्षयोस्तुल्यत्वात् ॥ ९ ॥

॥ टीका–तदेव निरस्ते नूतशब्दे सत्युदकआह । (सवायंउदएइत्यादि) स वाच स वादं चोदकः पेढालपुत्रोनगवंतं गौतममेवमवादीत् । तद्यथा । हे आयुष्मन् गौतम ! कतरान्प्राणिनोयूयं वदथ त्रसनूतास्त्रसत्वेनाविर्नूताः प्राणिनस्तएव त्रसाः प्राणाइत्युतान्यथेत्येवं पृष्टोनगवान् गौतमस्तमुदकं स वाच पेढालपुत्रमेवमवादीत् । तद्यथा । आयुष्मन्नुदक ! यान्प्राणिनोयूयं वदथ त्रसनूतास्त्रसत्वेनाविर्नूताः प्राणिनोनातीतानाप्येष्या किंतु ? वर्तमानकालएव त्रसाः प्राणाइति तानेव वयं वदामस्त्रसास्त्रसत्वं प्राप्तास्तत्कालवर्तिनएव त्रसाः प्राणाइति । एतदेव व्यत्ययेन विनणिपुराह । (जेवयमित्यादि) यान्वयं वदामस्त्रसाएवप्राणास्त्रसाः प्राणास्तानेव यूयमेव वदथ त्रसनूताएवप्राणास्त्रसाः प्राणाः एवंच व्यवस्थिते एते अनंतरोक्ते द्वे अपि स्थाने एकार्थे तुल्ये नवतोनह्यत्रार्थनेदः कश्चिदस्त्यन्यशब्दनेदादित्येवं व्यवस्थिते किमायुष्मन् ! युष्माकमयं पक्षः सुष्ठु प्रणीततरोयुक्तियुक्तः प्रतिनासते । तद्यथा । त्रसनूताएव प्राणास्त्रसनूताः प्राणाइत्ययं पक्षोदुःप्रणीततरोनवति प्रतिनासते नवतां । तद्यथा । त्रसाएव प्राणास्त्रसाः प्राणाः सति चैकार्थत्वेन नवतां कोयं व्यामोहोयेन शब्दनेदमाश्रित्यातएकं पक्षमाक्रोशथ द्वितीयं त्वनिनंदथ इति । तद

नापि प्राणातिपातनिवृत्तौ कृतायामपरपर्यायापन्न प्राणिन व्यापादयतोव्रतभंगोभवति न तश्च न कस्यचिदपि सम्यग्व्रतपालन स्यादित्येवमाख्यातमनूतदोषोभावन नवतोव्रति। यदपि नवद्भिर्वर्तमानकाल विशेषणत्वेन किलायं नूतशब्दउपादीयतेऽसावपि व्यामोहाय केवलमुपतिष्ठते । तथाहि । नूतशब्दोयमुपमाने वर्तते । तद्यथा, देवलोकनूतं नगरमिदं न देवलोकएव तथापि त्रसनूतानां त्रससदृशानामेव प्राणातिपातनिवृत्ति कृता स्यान्न तु त्रसानामित्यथ तादर्थ्ये नूतशब्दोय यथा शीतीनूतमुदक शीतमित्यर्थ । एव त्रसनूतास्त्रसत्व प्राप्तास्तथा च सति त्रसशब्देनैव गतार्थत्वात्पौनरुक्त्य स्यादथैवमपि क्रियते नूत शब्दोपादान क्रियते तथा च सत्यतिप्रसग स्यात्। तथाहि । क्षीरनूतविकृते प्रत्याख्यान करोम्येव घृतनूतं मे ददस्वैव घटनूत पटनूतइत्येवमादावप्यायोज्यमिति ॥ ७ ॥

सवाय उदए पेढालपुत्ते नगव गोयम एव वयासी कयरे खलु ते आउसतो गोयमा तुझे वयह तसपाणा तसा आउ अन्नहा सवा य नगव गोयमे उदय पेढालपुत्त एव वयासी आउसतो उदगा जे तुझे वयह तसनूता पाणा तसा ते वय वयामो तसा पाणा जे वय वयामो तसा पाणा ते तुझे वयह तसनूया पाणा एए सति डुवेठाणा तुल्ला एगठा किमाउसो इमे ने सुप्पणीयतराए नव इ तसनूया पाणा तसा इमे ने डुप्पणीयतराए नवइ तसा पाणा तसा ततोएगमाउसो पडिकोसह एक्क अनिणदह अयपि नेदो से णो णेआउए नवइ ॥ ए ॥

अर्थ–हवे वाद सहित उदकपेढाल पुत्र, नगवत श्री गौतमस्वामि प्रत्यें बोल्यो के, अहो आयुष्यमन् गौतम ! (तुझे के०) तमे (कयरे के०) प्राणीनें केवा (वयह के०) कहोठो ? ए टले (तसपाणातसा के०) त्रसप्राणीज जे होय तेनेज त्रस कहोबो (आउ के०) अथ वा (अन्नहा के०) कोइ बीजे प्रकारे कहोठो ? एम पुठया थका नगवत श्री गौतमस्वामी वादसहित उदयपेढाल पुत्र प्रत्ये बोल्या के, अहो आयुष्यमन् उदक ! जे तमें कहो ठो के, त्रसनूत प्राणी त्रस एटले अतीत अनें अनागतनो निषेध करी, तमें वर्त्तमान कालज लीधो, ए कारणमाटे जेनें तमें त्रसनूतप्राणी त्रस कहोठो, तेनें अमे त्रसप्राणी त्रस कहियें ठैये, (एएसतिडुवेठाणातुल्ला के०) ए बे स्थानक अमारी तमारी वक्तव्य तायें परमार्थेंतो, (एगठा के०) एकार्थ एटले सरखाजठे, एमां अर्थ नेद कांही नथी (किमाउसोइमेनेसुप्पणीयतराएनवइ के०) तो केवी रीतें अहो आयुष्यमन् ! ए तमारो

पक्ष सुप्रणीत एटले रूडोछे एम अमे केम जाणियें ? त्रसभूतप्राणी त्रस, ए तमारो पक्ष छे, अनें त्रसप्राणी त्रस ए अमारो पक्षछे, तो ते अमारो पक्ष केवी रीतें दुःप्रणीत एटले मागो थाय ? त्रसप्राणी त्रस, एम एकार्थ वर्त्तमान ए शब्दनो तमनें केवो व्यामोह उपनो ? जे, (ततोएगमाउसोपडिकोसह के०) तेमां तमे एक पक्षनी प्रशंसा करोछो एटले स्थापन करोछो (एकंअभिणंदह के०) एक पक्षनी निंदा करोछो (अयं पिभेदो के०) ए तमारो भेद पणछे, (सेणोऐआउएभवइ के०) ते न्यायोपपन्न न होय, ए न्यायमार्ग नथी ॥ ए ॥

॥ दीपिका–उदकआह । उदकोगौतममवादीत् हे आयुष्मन् गौतम ! कतरान्प्राणिनो यूयं वदथ त्रसप्राणिनइति । अथ स प्राच गौतमउदकमवादीत् आयुष्मन्नुदक ! यान्प्राणिनोयूयं वदथ त्रसभूतास्त्रसत्वेन वर्तमानानप्येप्यास्तानेव वयं वदामस्त्रसाइति । ये यान् वयं वदामस्त्रसास्तान्यूयं वदथ त्रसभूतान् एते द्वे स्थाने तुल्ये एकार्थे एव नात्र कश्चिदर्थभेद । एवं सत्ययं युष्मदीय पक्ष किं सूपनीततरोयुक्तियुक्त त्रसभूता प्राणाइत्ययंतु पक्षोदुःप्रणीततरोऽयुक्त प्रतिभासते कोयं व्यामोहोभवतां येन शब्दभेदादिकं पक्षमाक्रोशथ द्वितीयं त्वभिनंदथ । इत्ययमेवांगीकारोभवतां नो नैयायिकोन न्यायोपपन्न उभयोरपि पक्षयोस्तुल्यत्वात् ॥ ए ॥

॥ टीका–तदेवं निरस्ते भूतशब्दे सत्युदकआह । (सवायंउदएइत्यादि) स प्राच स वादं चोदक पेढालपुत्रोभगवतं गौतममेवमवादीत् । तद्यथा । हे आयुष्मन् गौतम ! कतरान्प्राणिनोयूयं वदथ त्रसभूतास्त्रसत्वेनाविर्भूता प्राणिनस्तएव त्रसा प्राणाइत्युतान्यथेत्येवं पृष्टोभगवान् गौतमस्तमुदकं स प्राच पेढालपुत्रमेवमवादीत् । तद्यथा । आयुष्मन्नुदक ! यान्प्राणिनोयूयं वदथ त्रसभूतास्त्रसत्वेनाविर्भूता प्राणिनोनातीतानाप्येप्या किंतु ? वर्तमानकालएव त्रसा प्राणाइति तानेव वयं वदामस्त्रसास्त्रसत्वं प्राप्तास्तत्कालवर्तिनएव त्रसा प्राणाइति । एतदेव व्यत्ययेन बिभणिषुराह । (जेवयमित्यादि) यान्वयं वदामस्त्रसाएवप्राणास्त्रसा प्राणास्तानेव यूयमेव वदथ त्रसभूताएवप्राणास्त्रसा प्राणा एवंच व्यवस्थिते एते अनन्तरोक्ते द्वे अपि स्थाने एकार्थे तुल्ये भवतोनह्यत्रार्थभेद कश्चिदस्त्यन्यशब्दभेदादित्येवं व्यवस्थिते किमायुष्मन् ! युष्माकमयं पक्ष सुप्रु प्रणीततरोयुक्तियुक्त प्रतिभासते । तद्यथा । त्रसभूताएव प्राणास्त्रसभूता प्राणाइत्ययं पक्षोदुःप्रणीततरोभवति प्रतिभासते भवतां । तद्यथा । त्रसाएव प्राणास्त्रसा प्राणा सति चैकार्थत्वेन भवतां कोयं व्यामोहोयेन शब्दभेदमाश्रित्यातएकं पक्षमाक्रोशथ द्वितीयं त्वभिनंदथ इति । तद

यमपि तुल्येप्यर्थे सत्येकपक्षस्याक्रोशनमपरस्य विशेषणपक्षस्याभिनंदनमित्येवंबोधान्युप गमोभवता नो नैयायिकोन न्यायोपपन्नोभवत्युभयोरपि पक्षयो समानत्वात्केवलं सविशेषणपक्षे भूतशब्दोपादान मोहमावहतीति ॥ ए ॥

भगवचण उदाहु संतेगइआ मणुस्सा भवंति तेसिंचण एवं वुत्त पुव भवइ णो खलु वय संचाएमो मुंमा भवित्ता आगा राउ अणगारिय पव्वइत्तए पावय एह अणुपुवेण गुत्तस्स लिसि स्सामो ते एव सखेवेति ते एव संख ठवयंति ते एव सख ग वयंति नन्नह अभिउएण गाहावइचोरग्गहणविमोक्कणयाए त सेहिं पाणेहिं निहाय दम तपि तेसिं कुसलमेव भवइ ॥ १० ॥

अर्थ–हवे एज अर्थनें दीपाववा माटें (भगवचणउदाहु के०) भगवंत श्री गौतम स्वामी कहेछे (संतेगइयामणुस्साभवंति के०) कोइ एक हलवा कर्म वाला मनुष्य हो य, अनें ते प्रवज्र्या पालवाने असमर्थ होय, (तेसिंचणएववुत्तपुवभवइ के०) तेणे पू र्वे एम कह्यु होय, शु कह्यु होय? ते कहेछे (णोखलुवयसंचाएमोमुंमाभवित्ता के०) निश्चे अमे मुंमित होवानें समर्थ नथी,(आगाराउअणगारियपव्वइत्तए के०)गृहस्थावास त्यागिनें अणगारपणु अंगीकार करी शकता नथी (पावयएहअणुपुवेण के०) अमे घर थकी निकलीने प्रवज्र्या लेइने अनुक्रमे, (गुत्तस्सलिसिस्सामो के०) साधुपणु पालशु, एट ले शु कह्यु? तोके, प्रथमतो देशविरतिरूप, श्रावकनो धर्म पालशु, अनें अनुक्रमे प छी श्रमणनो धर्म पालशु (तेएवसखेवेति के०) ते एवी व्यवस्था सजलावे (तेएवस खठवयंति के०) ते पुरुष, एवी व्यवस्था स्थापन करे एटले एवी रीतें पच्चखाण करे, (तेएवसखगवयंति के०) ने पछी तेज प्रमाणे मनमा रुडा प्रकारे स्थापन करे ते कहेछे के, (नन्नहअभिउएण के०) राजादिकना अभियोगे करी त्रसप्राणीनी घातथी अमारो व्रतभंग नथी इत्यादिक पच्चखाण, साधुनो उपदेश सांभली करे तेनी उपर (गाहावइचोरग्गहणविमोक्कणयाए के०) गृहपति जे चोर तेनु ग्रहण तथा विमोक्ष णछे जेमां, एवो गृहपति तथा राजानो दृष्टांत कहेछे

रत्नपुरनामा नगरने विषे रत्नशेखर राजा हतो तेणे एकदा एवो विचार कर्यो के, आपणे कौमुदीमहोत्सव करवो पछी रत्नमाला प्रमुख पोतानी स्त्रीयोनें आ वा तनी विज्ञापना करावी जे, स्वतंत्रक्रीडा, चंद्रनी चांदनीमां आपणे करवी वली पोता ना नगरमा पण उद्घोषणा देवरावी जे, कोइ मनुष्ये आज रात्रे नगरमा न रहेवु, अने

बाहेर उद्यानमा सायंकालें जवुं अने कोइ नगरमां रहेशे तेना शरीरनो निग्रह राजा करशे ते प्रमाणे राजानी उद्घोषणाथी सर्व मनुष्य सायंकालें नगर बाहेर गया, तथा राजा पण सपत्नीक गयो हवे ते पछी, कोइ एक वैश्यना छ पुत्र हता ते क्रयविक्रय व्यापारना व्यग्रपणाथी नगरमांज रहि गया, एटलामां सूर्यास्त थयो तेवारे नगर बाहेर निकलवा लाग्या परंतु गोपुर जे नगरना दरवाजा, ते बंध थइ गया दीठा तेवारे भ यभ्रांत थता नगरमांहेज कोइ स्थले पोतें गुप्त रह्या पछी कौमुदी महोत्सव संपू र्ण थया नंतर राजाये आरक्षकने तेडावी कह्युं के, अहो आरक्षको ! तमें रूडी री तें कोइ पुरुष, नगरमां रहेलो होयतो तेने जुवो ? तेवार पछी नगरमां जोतां श्रेष्ठी ना छ पुत्रो दीठा तेनें देखीनें, आरक्षकोये राजाने विनव्यो के, स्वामी ! कोइ एक श्रेष्ठी ना छ पुत्र नगरमां रह्याछे तेवारे राजाये ते छए पुत्रनो विनाश करवाने आदेश आ प्यो एवुं सांभली श्रेष्ठी, पुत्रशोके व्याकुल थतो राजापासे आवीने एम कहेवा लाग्यो के, हे स्वामी! अमारा कुलनो क्षय म करो अने जे कांइ अमारा घरमां कुलक्रमागत धन छे ते सर्व लेइने अमारा छए पुत्रनें जीवता मूको? ए प्रमाणे श्रेष्ठियें कहे थके, रा जा अत्यंत क्रोधे व्याप्त थयो थको, श्रेष्ठि प्रत्ये कहेवा लाग्यो के, अरे पापिष्ठ ! राजानी आज्ञा ते राजाना प्राणसमान! जेणे राजानी आज्ञा न मानी, तेणे राजाना प्राण हर्या माटे तहारा पुत्रने जीवता मूकुं नहि एवो राजानो घणो आग्रह जाणीने फरी श्रेष्ठी ये पांच पुत्रने जीवता मूकवानी विनंति राजाने करी, तोपण राजायें मान्युं नहीं ते वारे चार पुत्र मुकावनी विनती करी ते पण मानी नहीं, तेवारे त्रण पुत्र मुकाववाने अर्थे विनंति करी तेपण राजाये मानी नहीं, तेवार बे पुत्र मुकाववानी विनंति करी, ते पण राजायें न मानी एवो राजानो आग्रह जाणी श्रेष्ठीये नगरमांहेला महोटा महोटा लोकोनें एकठा करी, ते बधाने राजापासे लइ जइने राजाने विनव्यो के, हेस्वामी ! त मे प्रजाना पिता छो तो सर्वथा प्रकार अमारा कुलनो क्षय करवा शुं मांडयोछे ? अहिं यां आवेला अमोने तमेंज शरण छो एटले अमारे तमारोज आश्रय छे तमने भावे तो मारो ? अने भावेतो जीवाडो ? एम कहि श्रेष्ठी राजानें पगे लागो ते वारे राजायें अ नुकंपा करीने छ पुत्रमांहेथी एक महोटा पुत्रने जीवतो मूक्यो ए द्रव्य थकी दृष्टांत कह्यो, हवे दृष्टांतनी योजना करेछे के, जेम श्रेष्ठी तेम आदि श्रावक जाणवो, जेम त्यां छ पुत्र तेम आदि छकाय जाणवा जेम श्रेष्ठीयें विलाप करवाथकी रा जायें छ पुत्र मांहथी एक पुत्र जीवतो मूक्यो, तेवार श्रेष्ठी पोतानें कृतार्थ मान तो, एटले बीजा पांच पुत्रनी उपर श्रेष्ठीने विनाश करवानो भाव नथी, परंतु शुं करे ! जे राजा कांइ रीते मूके नहि ? तेम अहीं पण साधुउं श्रावकने संरक्षण

करवाने उपदेश आपेछे. परतु श्रावक पोतें अशक्तपणानें लीधे एक त्रसकाय राखी शके छे ते वारे साधु पण जे कांइ श्रावक राखे ते श्रावकनें कृतार्थ पोतें जाणे, परंतु बीजा पाच काय श्रावक विराधे छे तेनी अनुमति साधुनें नथी, ए कारणें तेनुं कर्म कांइ लागे नही ए न्याय उपर "गाहावइचोरग्गहणविमोस्कणयाए" ए पदनो अर्थ समाप्त थयो हवे सूत्रथकी आगलनो संबध देखाडेछे (तसेहिंपाणेहिंनिहायदंमं के०) त्रस बे इंड्रियादिक प्राण, तेहनो वध छांमिनें श्रावक जे विरति करे (तंपि के०) ते विरति पण (तेसिकुसलमेवभवइ के०) ते श्रावकने पुण्यरूप होय एम जाणवुं॥१०॥

॥ दीपिका–कुमतनिषेधमाह। भगवचण उदाहु रिति। भगवान् गौतम पुनराह। सति एके केचन मनुष्या येषा साधोर्धर्मकथकस्य पुरइदमुक्त भवति यथा न खलु वयं शुंभाल वितु प्रव्रज्या ग्रहीतु शक्नुम अगारादनगारिता प्रव्रजितु वयमानुपूर्व्येण क्रमेण गोत्रं साधु त्वमनुश्लेषयिष्याम। कोऽर्थ? वय देशविरतिं पालयाम तत क्रमेण चारित्र ततएव ते सख्या व्यवस्था श्रावयंति प्रत्याख्यान कुर्वत प्रकाशयंति ते एव व्यवस्थां स्थापयंति स्व पस्थापयतिच नान्यत्रानियोगेन। अनियोगोराजानियोगादि। तेन त्रस घ्नतोपि न व्रतभ ग तथा गृहपतिचोरविमोक्षणतयेति। अस्यार्थ कथागम्य। सा चेयं। रत्नपुरे रत्नशे खरराज्ञा स्वात पुरादिस्त्रीणां स्वैरक्रीडारूप कौमुदीमहोत्सवोऽनुज्ञात पुरुषेण केना पि नगरमध्ये न स्थेयमित्याघोषणा कारिता नृपादय पुरुषा सर्वेपि उद्याने सार्यं ज ग्मु। एकस्य वणिज षट् पुत्रा क्रयविक्रयादिव्यग्रा पुरमध्यएव तस्थु। स्थगितानि गोपुराणि ततस्ते निष्क्राते महे राज्ञा रक्षकाणामुक्त पश्यत नगरे कोपि नरोस्ति नवेति? तैर्विलोकयद्भि षट् पुत्रास्ते दृष्टा राज्ञोनिवेदिता राज्ञा कुपितेन षण्णामपि वध समा दिष्ट। ततस्तत्पिता शोकाकुलोराजान विज्ञापयतिस्म। देव! मा कृथा कुलक्षयमस्माकं। सर्वधन गृह्यता मुच्यता पुत्रा। एवमुक्तेपि राजा कथमपि न मुंचति पुत्रान् तत पिता स र्वपुत्रघातप्रवृत्त राजान ज्ञात्वा पचाना मोचन याचितवान् राजा पंचानपि न मुंचति तत श्चत्वारोयाचिता तथापि न मन्यते नृप। ततस्त्रयोयाचितास्तेपि न मुक्ता। ततो द्वौ मार्गितौ तावपि अमुच नृपएक पुत्र याचित समग्रपौरजनविज्ञप्तोनृप पुत्रमेक ज्येष्ठं मुक्तवान्। अत्रेयं दृष्टातयोजना। सम्यक्त्ववान् श्राद्ध सर्वप्राणातिपातविरतिं कर्तुमश क्तोनृपस्थानीय षट्कायपितृतुल्येन साधुना प्रेरितोपि सर्वविरतिं नागीकुरुते षमपि जी वकायान्मोचयति साधु। श्राद्धस्तु षण्णा मोचनेऽशक्तोज्येष्ठमेक त्रसकायं मुचति पालय तीत्यर्थ। साधुरेकमोचनेनापि कृतार्थमात्मान मन्यते। यथाच तस्य वणिजोन शेषपंच पुत्रवधानुज्ञा एव साधोरपि न शेषप्राणिवधानुमति किंतु? यदेव व्रतं गृहीत्वा यानेव स्थू

त्रसत्वात् सकटपवधनिवृत्तोरक्षति श्राद्ध । तन्निमित्त कुशलानुबंधएवेत्याह । (तसेहिं) त्रसेन्योदम हिसा त्यक्त्वा यावद्विरमति तावत्तस्य कुशल पुण्यमेवेति ॥ १० ॥

॥ टीका–यच्च नवतास्माक प्राग्दोषोद्भावनमकारि तद्यथा त्रसाना वधनिवृत्तो तद न्येषा वधानुमति स्यात् साधोस्तथानूतशब्दानुपादानेनांतरमेव त्रस स्थावरपर्यायापन्न व्यापादयतोव्रतनगइत्येतत्कुचोद्यजात परिहर्तुकामआह । (नगवचणमित्यादि) णमि ति वाक्यालंकारे। नगवान्गौतमस्वामी चशब्द पुन शब्दार्थे। पुनराह । तद्यथा । संति वि द्यते एके केचन लघुकर्माणोमनुष्या प्रव्रज्या कर्तुमसमर्थास्तद्व्यतिरेकेणैव धर्म चिकीर्ष वस्तेषा चैवमध्यवसायिना साधोर्धर्मोपदेशप्रवणस्याग्रतइदमुक्तपूर्व नवति । तद्यथा । नो साधो ! न खलु वयं शक्नुमोमुण्डानवितु प्रव्रज्या ग्रहीतुमगाराद्गृहादनागारता साधुनाव प्र तिपत्तु वयं त्वानुपूर्व्येण क्रमशोगोत्रस्येति गा त्रायइति गोत्र साधुत्व तस्य साधुनावस्य पर्यायेण परिपाल्यात्मानमनुश्लेषयिष्याम ।इदमुक्त नवति । पूर्व देशविरतिरूपतया श्रा वकधर्म गृहस्थयोग्यमनिद्यमनुपालयामस्ततोनुक्रमेण पश्चाच्छ्रमणधर्ममिति । ततएव ते स ख्या व्यवस्था श्रावयति प्रत्याख्यान कुर्वत प्रकाशयति । तद्यथा । नान्यत्रानियोगेन । सचाभियोगोगणाभियोगोबलाभियोगोदेवताभियोगोगुरुनिग्रहश्चेत्येवमादिनाभियोगेन व्या पादयतोपि त्रस न व्रतनंग । तथा गृहपतिचोरविमोक्षणतयेत्यस्यायमर्थ । कस्यचिद्गृ हपते षट् पुत्रास्तैश्च सत्यपि पितृपितामहक्रमायाते महति वित्ते तथाविधकर्मोदयाद्रा जकुलनाण्डागारे चौर्यमकारि राजपुरुषैश्च नवितव्यताभियोगेन गृहीतास्ते इत्येके । परे त्वन्यथा व्याचक्षते । तद्यथा। रत्नपुरे नगरे रत्नशेखरानाम राजा तेन च परितुष्टेन रत्न मालाग्रमहिषीप्रमुखात पुरस्य कौमुदीप्रचारोऽनुज्ञातस्तदवगम्य नागरलोकेनापि राजानु मत्या स्वकीयस्य स्त्रीजनस्य तथैव क्रीडनमनुमत राज्ञाच नगरे संभिभिमशब्दमाघोषित । तद्यथास्तमनोपरि कौमुदीमहोत्सवे प्रवृत्ते य कश्चित्पुरुष समुपलभ्यते नगरमध्ये त स्याविज्ञप्तिक शरीरनिग्रह क्रियतइत्येव च व्यवस्थिते सत्येकस्य वणिज षट् पुत्रास्ते च कौमुदीदिने क्रयविक्रयसव्यवहारव्यग्रतया तावत्स्थितायावत्सवितास्तमुपगत । तदंतर मेव स्थगितानि च नगरद्वाराणि तेषाच तत्कालात्ययान्न निर्गमनमभूत्ततस्ते नयसंभ्रा तानगरमध्यएवात्मान गोपयित्वा स्थितास्ततातिक्रान्ते कौमुदीप्रचारे राज्ञा रक्षिका स मादृयादिष्टायथा सम्यक् निरूपयत यूय नात्र नगरे कौमुदीचारे कश्चित्पुरुषोव्यवस्थित ? इति । तैरप्यारक्षिकै सम्यक् निरूपयद्भिरुपलभ्य षड्वणिक्पुत्रवृत्तांतोयथावस्थितएव राज्ञ निवेदित । राज्ञाप्याज्ञाभगकुपितेन तेषा षण्णामपि वध समादिष्टस्ततस्तत्पिता पुत्रवध समाकर्णनगुरुशोकविह्वलोऽकाण्डपतितवज्रद्रयाघ्रातइवाचन नि कर्तव्यतामूढतया गणि

तविधेयाविधेयविशेषोराजानमुपस्थितोऽवादीच्च गद्गदया गिरा यथा मा कृथादेवास्माकं कु लक्षय गृह्यतामिदमस्मदीय कुलक्रमायात स्वभुजोपार्जितं प्रभूतं द्रविणजातं मुच्यतां मु च्यताममी षट् पुत्रा क्रियतामयमस्माकमनुग्रहइति । एवमभिहितोराजा तद्वचनमाक र्ण्य पुनरपि सविशेषमादिदेश असावपि वणिक्सर्वथागकी सर्वमोचनानभिप्रायं राजानम वेत्य पचाना मोचन याचितवान् तानप्यसौ राजा नमोक्तुमनाद्दत्येवमभिगम्य चतुर्मोच नकृते सादर विज्ञप्तवास्त तथापि राजा तमनादृत्य कुपितवदनएव स्थितस्ततस्त्रयाणां वि मोचने कृतादरस्तत्पिताऽभूत् तानप्यमुचत राजान ज्ञात्वा गणितस्वापराधो द्वयोर्मोचन प्रार्थितवास्तथाप्यवज्ञाप्रधान नृपतिमवगम्य तत पौरमहत्तमसमेतोराजानमेव विज्ञप्त वास्तद्यथा देवाऽकाण्डएवास्माक कुलक्षय समुपस्थित तस्माच्च भवतएव त्राणायालम त क्रियतामेकमत्पुत्रविमोचनेन प्रसादइति भणित्वा पादयो सर्पौरमहत्तम पतितोरा ज्ञापि सजातानुकपेन मुक्तस्तदेकोज्येष्ठपुत्रइति । तदेवमस्य दृष्टांतस्य दार्ष्टांतिकयोजनेयं । तद्यथा साधुनाभ्युपगतसम्यग्दर्शनमवगम्य श्रावकमखिलप्राणातिपातविरतिग्रहण प्रति चोदितोप्यशक्तितया यदा न सर्वप्राणातिपातविरति प्रतिपद्यते यथाऽसौ राजा वणिजोत्य र्थं विज्ञपितोपि न षडपि पुत्रान् मुमुक्षति नापि पचचतुस्त्रिद्वि सख्यान् पुत्रानिति । ततएक विमोक्षणेनात्मान कृतार्थमिव मन्यमान स्थितोसावेव साधोरपि श्रावकस्य यथाशक्तिव्रतं गृह्णतस्तदनुरूपमेवाणुव्रतदानमविरुद्धमिति यथाच तस्य वणिजोन शेषपुत्रवधानुमिति लेशयोप्यस्त्येव साधोरपि न शेषप्राणिवधानुमिति प्रत्ययजनित कर्मबधोभवति किं तर्हि? य देव व्रत गृहीत्वा यानेव सत्वान् बादरान् सकल्पजप्राणिवधनिवृत्त्या रक्षति तन्निमित्त कु शलानुबधएवेत्येतत्सूत्रेणैव दर्शयितुमाह । (तसेहिमित्यादि) त्रस्यतीति त्रसा द्वीन्द्रियादय स्तेभ्य सकाशान्निधाय निहाय वा परित्यज्येति यावत् दण्डयतीति दण्डस्त परित्यज्य त्रसेषु प्राणातिपातविरति गृहीत्वेत्यर्थस्तदपि च त्रसप्राणातिपातविरमणव्रतं तेषा देशविरतानां कुशलहेतुत्वात्कुशलमेव भवति ॥ १० ॥

तसावि वुच्चति तसा तससंभारकडेण कम्मुणा णामचण अप्पु वगय भवइ तसाउयचण पलिक्खीण भवइ तसकायट्ठिइया ते तउ आउय विप्पजहति ते तउ आउय विप्पजहित्ता थावरत्ता ए पच्चायति थावरावि वुच्चति थावरा थावरसंभारकडेण कम्मु णा णामचण अप्पुवगय भवइ थावरा आउयचण पलिक्खी ण भवइ थावरकायट्ठिइया तउ आउय विप्पजहति तउ आ

उय विप्पजहित्ता भुज्जो परलोइयत्ताए पच्चायंति ते पाणावि वुच्च
ति ते तसावि वुच्चंति ते महाकायाए ते चिरट्ठिइया ॥ ११ ॥

अर्थ–हवे जे उदयपेढालपुत्रनो अभिप्राय पूर्वे कह्यो ते एवो जे,त्रस जीव,स्थावर मांहे उपनो तेनो, आराम केता अरण्यमांहे वेठे विनाश करता, नागरिक पुरुषनी पेठें अवश्य व्रत जंग थाय ए दोष टालवा माटे कहेछे (तसाविवुच्चंति के०) त्रस एटले बे इंद्रियादिक एम पण कहिये, (तसातससंनारकडेणकम्मुणाणामचणंअप्नुवगयंनवइ के०) ते त्रस, पूर्वेबंध त्रसनाम कर्मने उदये त्रसनुं नाम पामे, पठी (तसाउयचणपलिरकीणंनवइ के०) ण एवे वाक्यालंकारे जेवारे ते त्रसकायनुं आयुष्य परिक्षीण थाय ते त्रसकायनी स्थिति क्यां सु धी होय? ते कहेछे (तसकायट्ठिइयाते के०) ते त्रसकायस्थिति, जघन्यथकी अंतरमुहूर्त्त अने उत्कृष्टसाधिक बे हजार सागरोपम प्रमाणे होय (ततोआउयंविप्पजहंति के०) ते वार पठी ते त्रसपणुं ठांमे (विप्पजहित्ता के०) ते त्रसपणुं ठांमीने (थावरत्ताएपच्चायंति के०) स्थावर पणे उपजे, (थावराविवुच्चंति के०) तेवार तेने स्थावर पण कहिये (थाव राथावरसंनारकडेणकम्मुणाणामचणंअप्नुवगयंनवइ के०) ते स्थावर, पूर्व बंध कर्यु जे स्थावरनाम कर्म, तेना उदयथी स्थावर एवुं नाम पामे, एटले स्थावर होय, (थावरा आउयचणपलिरकीणंनवइ के०) वली ते जेटले ते स्थावरनुं आयु कर्म परिक्षीण थाय (थावरकायट्ठिइया के०) हवे स्थावरकायनी स्थिति केवी होय? तो के, जघन्य अंतर मुहूर्त्त अने उत्कृष्ट थकी अनंतो काल असंख्यात पुजलपरावर्त्त पर्यंत, एवी स्थिति होय पठी एटली स्थिति खपावीने, (तउआउयंविप्पजहंति के०) तेवार पठी स्थावर पणुं ठांमे, (तउआउयंविप्पजहित्ता के०) ते स्थावर स्थिति ठांमीने (भुज्जोपरलोइयत्ताए पच्चायंति के०) वली परलोक पणे उपजे एतावता त्रसपणुं पामे (तेपाणाविवुच्चंतितेत साविवुच्चंति के०) ते प्राण पण कहिये,ते त्रसनामकर्मने उदये,त्रसनाम पणे उपनाछे,मा टे त्रसप्राण एवे नामे कहिये, तथा त्रस पण कहिये (तेमहाकायाए के०) ते महो टी काया एटले लक्ष योजन प्रमाण वैक्रिय शरीर वाला एवा महाकाय कहियें तथा (तेचिरट्ठिइयाए के०) ते चिरस्थितिक, जवस्थितिनी अपेक्षायें तेत्रीश सागरोपम प्रमाण स्थिति जाणवी तो अहींया श्रावक त्रसनुंज पच्चरकाण कीधुंछे परंतु स्थावरकायपणे उपना ते जीवोनुं पच्चरकाण नथी कर्यु ते कारणे कयां व्रत जंग थया? तथा तमे जे नागरीकना दृष्टांत देखाड्यो ते दृष्टांत पण अहीं संजव नहीं ते दृष्टांत देवाथी अमे एम जाणीयें वयें जे, तमे गुरुना मुख थकी सूत्रार्थ लीधा नथी केमके, नगरना धर्मे सहित ते नागरिक कहिये ते नागरिक पुरुष महारे हणवो नहीं, एवी प्रतिज्ञा ग्रहण करीने प

डी ते नागरिक वाहिर आरामने विपे वेहेजाने विणाशतां व्रतभंग थाय? ए दृष्टांत अहीं त्रस, अने स्थावरने नेदें मजतो नथी केमके, ते नागरिक पुरुष जो वाहेर आरामादि कने विपे स्थित होय तो पण, तेनु नागरिक पणु गु जतु रह्यु ? त्यां पण ते नागरिक तेज आकारेछे तेहिज वर्णछे, तेहिज परिणामेछे, ए दृष्टात पर्यायें त्रसनें मळे नही, एवु जाणी, तमे अयुक्त वोलोगो ॥ ११ ॥

॥ दीपिका—त्रसाअपि द्वीडियादयोपि त्रसाउच्यते त्रसास्त्रससनारकृतेन कर्मणा स्यु । सनारोनाम कर्मणोऽवश्य विपाकानुनवेन वेदन। तच्च त्रसनाम प्रत्येकनाम इत्या दिक त्रसत्वेन सवद्ध यदायुष्क उदयप्राप्त स्यात्तदा त्रसनामादिकर्मणा त्रसाउच्यते। त्र सायुर्यदा क्षीण स्यात्त्रसकायस्थितिश्च क्षीणा स्यात् साच जघन्येनातर्मुहूर्त उत्कृष्टत सातिरेकसहस्र द्वयसागरमानास्ततस्ते त्रसायुस्त्यजति अन्यान्यपि तत्सहचरकर्माणि त्यक्त्वा स्थावरत्वेन प्रत्यायाति । स्थावराअपि तथव कर्मणा स्थावरत्वेनोत्पद्यते एवस ति स्थावरकाय घ्नत श्राद्धस्य कथ स्थूलप्राणातिपातनिवृत्तिव्रतजगइति । किच (थाव राआउति) यदा स्थावरायुष्कमपि क्षीण स्यात्तथा स्थावरकायस्थितिश्च सा जघन्येनातर्मु हूर्त उत्कृष्टतोनतकालमसख्येया पुज्जलपरावर्ता । ततस्ते स्वायु परित्यज्य नूय पुनर पि परलोकतया स्थावरकायस्थितेरजावात्सामर्थ्यात्त्रसत्वेन प्रत्यायाति ते त्रसा प्राणाअप्यु च्यते त्रसाअप्युच्यते । महाकायास्ते योजनलक्षप्रमाणशरीरविकुर्वणात् चिरस्थितिका स्ते जवस्थित्यपेक्षया त्रयस्त्रिंशत्सागरायुष्कजावात् । ततस्त्रसनिवृत्तिरेव श्राद्धेन कृता न तु स्थावराणा। नागरिकदृष्टातोप्ययुक्त ।नागरिकोन हतव्यइति प्रतिज्ञा कृत्वा बहि स्थित तमेव पर्यायापन्न घ्नतोव्रतजगइति त्वत्पक्ष । सचायुक्तोयोहि नगरधर्मैरुपेत स वहि स्थो पि नागरिकएवात पर्यायापन्नइति विशेपणमयुक्त ।सर्वथा नगरधर्मत्यागेतु तमेवेति नो पद्यते । सचान्यएवेति तथा त्रसत्वत्यागाद्यदा स्थावरत्व प्राप्तस्तदान्यएवायमिति तं घ्न तोन व्रतजग ॥ ११ ॥

॥ टीका—यच्च प्रागनिहित तद्यथा तमेव त्रस स्थावरपर्यायापन्न नागरिकमिव बहि स्थ व्यापादयतोऽवश्यनावी व्रतजगइत्येतत् परिहर्तुकामआह । (तसावीत्यादि) त्रसा अपि द्वीडियादयोपि सत्तनारकृतेन कर्मणा नवति । सनारोनामावश्यतया कर्मणोविपा कानुनवने वेदन। तच्चेह त्रसनाम प्रत्येकनामेत्यादिक नामकर्माच्युपगतं नवति त्रसत्वेन य त्परिवद्धमायुष्क तद्यदोदयप्राप्त नवति तदा त्रससनारकृतेन कर्मणा त्रसाइति व्यपदि श्यते न तदा कथचित्स्थावरत्वव्यपदेशोयदाच तदायु परिक्षीण नवति। एमिति वाक्य

लकारे। त्रसकायस्थितिकं च कर्म यदा परिक्षीणं भवति तच्च जघन्यतोंतर्मुहूर्तमुत्कृष्टतः सातिरेकसहस्रद्वयसागरोपमपरिमाणं तदा ततस्त्रसकायस्थितेरभावात्तदायुष्कं ते परित्यजंत्यपराण्यपि तत्सहचरितानि कर्माणि परित्यज्य स्थावरत्वेनोदयं याति। इत्येवंच व्यवस्थिते कथं स्थावरकायं व्यापादयतोगृहीतत्रसकायप्राणातिपातनिवृत्तं श्रावकस्य व्रतभंगइति? । किंचान्यत् (थावराओवियणमित्यादि) यदा तदपि स्थावरायुष्कं परिक्षीणं भवति तथा स्थावरकायस्थितिश्च सा जघन्यतोंतर्मुहूर्तमुत्कृष्टतोऽनंतकालमसंख्येयाः पुद्गलपरावर्ताइति ततस्तत्कायस्थितेरभावात्तदायुष्कं परित्यज्य भूयः पुनरपि पारलौकिकत्वेन स्थावरकायस्थितेरभावात् त्रसत्वेन सामर्थ्यात्प्रत्यायाति। तेषांच त्रसानामन्वर्थितान्यभिधानान्यभिधातुमाह । (तेपाणावीत्यादि) ते त्रससंभारकृतेन कर्मणा समुत्पन्नाः संतः सामान्यसंज्ञया प्राणाअप्युच्यते। तथा विशेषतस्त्रसंभयचलनयोरिति धात्वर्थानुगमाद्भयचलनाभ्यामुपेतास्त्रसाअप्युच्यते तथा महान् कायोयेषां ते महाकायाः योजनलक्षप्रमाणशरीरविकुर्वणात्तथा चिरस्थितिकाअप्युच्यते । भवस्थित्यपेक्षया त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमायुष्कसद्भावात्ततस्त्रसपर्यायव्यवस्थितानामेव प्रत्याख्यानं तेन गृहीतं नतु स्थावरकायत्वेन व्यवस्थितानामपीति। यस्तु नागरिकदृष्टांतोभवतोपन्यस्तोऽसावपि दृष्टांतदार्ष्टांतिकयोरसाम्यात्केवलं भवतोनुपासितगुरुकुलवासित्वमाविष्करोति । तथाहि । नगरधर्मैरुपयुक्तो नागरिकः सच मया न हंतव्यइति प्रतिज्ञा गृहीत्वा यदा तमेव व्यापादयति बहिःस्थितं पर्यायापन्नं तदा तस्य किल व्रतभंगइति भवतः पक्षइति । सच न घटते । यतोयोहि नगरधर्मैरुपेतः सबहिस्थोपि नागरिकएवातः पर्यायापन्नइत्येतद्विशेषणं नोपपद्यते अथ सामस्त्येन परित्यज्य नगरधर्मं नासौ वर्तते अतस्तमेवेत्येतद्विशेषणं नोपपद्यते तदेवमत्र त्रसः सर्वात्मना त्रसत्वं परित्यज्य यदा स्थावरः समुत्पद्यते तदा पूर्वपर्यायपरित्यागादपरपर्यायापन्नत्वाच्च सएवासौ न भवति तद्यथा नागरिकः पल्ल्यां प्रविष्टस्तद्धर्मोपेतत्वात्पूर्वधर्मपरित्यागाच्च नागरिकएवासौ न भवतीति ॥ ११ ॥

सवायं उदए पेढालपुत्ते भयवं गोयमं एवं वयासी आउसंतो गोयमा एखिण से केइ परियाए जण्णं समणोवासगस्स एगपाणातिवायविरएवि दंमे निक्खित्ते कस्सणं तं हेउ सासारिया खलु पाणा थावरावि पाणा तसत्ताए पच्चायंति तसावि पाणा थावरत्ताए पच्चायंति थावरकायाउ विप्पमुच्चमाणा सव्वे तसकायंसि उववज्जंति तसकायाउ विप्पमुच्चमाणा सव्वे थावरकायंसि उववज्जंति तेसिंचणं थावरकायंसि उववन्नाणं ठाणमेयं घत्तं ॥ १२ ॥

अर्थ–हवे वादसहित उदयपेढालपुत्र, जगवत श्रीगौतम प्रत्यें बोल्या के, कहो आयुष्मन् गौतम! ते कोइ पर्याय नथी के, जेणे करी श्रमणोपासक श्रावकनें एक प्राणातिपातविरति विषयिक दमनो त्याग कस्यो जाय ते केवा हेतुथी? ए कारण देखाडे ले संसारी प्राणी परस्पर मांहो माहे गतिना करनारले स्थावरप्राणी त्रस पण उपजे, अने त्रसप्राणी पण स्थावर पणे उपजे हवे वली विशेषे कहेले स्थावर काय थकी मूकाता थका एतावता स्थावरकायनुं आयुष्य त्यागी सर्व त्रसकाय पणे उपजे, पाछल कोइ स्थावर रहे नहीं, तथा वली त्रसकाय थकी मूकाता एतावता त्रसकायनुं आयुष्य त्यागीने सर्व, स्थावरकाय माहे उपजे, पाछल कोइ त्रस रहे नहीं, तेवारे ते श्रावकने स्थावर माहे उत्पन्न त्रसनुं स्थानक हणाणुं, ए व्रतजंग थयो ॥१२॥

॥ दीपिका–पुनरुदक प्राह। सवादमुदकोगौतममवादीत्। हे गौतम! नास्ति सकश्चित्पर्याय यस्मिन्नेकप्राणातिपातविरमणेपि श्रमणोपासकस्य दमोवधोनिक्षिप्त परित्यक्त स्यात्। कोर्थ। श्राद्धेन त्रसमुद्दिश्य प्रत्याख्यान कृत। संसारिणा वान्योन्यगमनसंजवात्त्रसा सर्वेपि स्थावरत्व प्राप्तास्तदा त्रसानामजावान्निर्विषय प्रत्याख्यानमित्यर्थ। (कस्सणंति) केन हेतुना इदमुच्यते सांसारिका खलु प्राणा स्थावरास्त्रसतया त्रसाअपि स्थावरतया प्रत्यायांति स्थावरकायाद्विप्रमुच्यमाना स्वायुषा सर्वे निरवशेषकास्त्रसकाये समुत्पद्यते त्रसकायादपि तदायुषा मुच्यमाना सर्वे स्थावरकाये समुत्पद्यते तेषां त्रसाना स्थावरकायोत्पन्नाना स्थानमेतद्घात्य। यथा केनचित्प्रतिज्ञात मया नगरनिवासी न हंतव्य तच्च उद्वसित नगर ततोनिर्विषय प्रत्याख्यान। एवमत्रापि त्रसानामजावान्निर्विषयत्वमिति ॥ १२ ॥

॥ टीका–पुनरप्यन्यथोदक पूर्वपक्षमारचयितुमाह। (सवायंउदएइत्यादि) स हाच सवाद वोदक पेढालपुत्रोजगवंत गौतममेवमवादीत्। तद्यथाऽऽयुष्मन् गौतम! नास्त्यसौ कश्चित्पर्यायोयस्मिन्नेकप्राणातिपातविरमणेपि श्रमणोपासकस्य विशिष्टविषयामेव प्राणातिपातनिवृत्ति कुर्वतोदम प्राण्युपमर्दनरूपोनिक्षिप्तपूर्व परित्यक्तपूर्वोजवति। इदमुक्त जवति। श्रावकेण त्रसपर्यायमेकमुद्दिश्य प्राणातिपातविरतिव्रत गृहीत संसारिणा च परस्परगमनसंजवात्तेच त्रसा सर्वेपि किल स्थावरत्वमुपगतास्ततश्च त्रसाजावान्निर्विषय यत्प्रत्याख्यानमिति। एतदेव प्रश्नपूर्वक संदर्शयितुमाह। (कस्सणंतहेउमित्यादि) णमिति वाक्यालंकारे। कस्य हेतोरिदमजिधीयते केन हेतुनेत्यर्थ। सांसारिका प्राणा परस्परसंसरणशीलायतस्तत स्थावरा सामान्येन त्रसतया प्रत्यायांति त्रसाअपि स्थावरतया प्रत्या

याति। तदेव संसारिणा परस्परगमनं प्रदर्श्याधुना यत्परेण विवक्षितं तदाविष्कुर्वन्नाह। (थावरकायाउइत्यादि) स्थावरकायाद्विप्रमुच्यमानाः स्वायुषा तत्सह्चरितश्च कर्मणि स र्वे निरवशेषास्त्रसकाये समुत्पद्यते ते त्रसकायादपि तदायुषा विप्रमुच्यमानाः सर्वे स्थावर काये समुत्पद्यते तेषांच त्रसानां सर्वेषां स्थावरकायसमुत्पन्नानां स्थानमेतद्घात्यं वर्तते तेन श्रावकेण स्थावरकायवधनिवृत्तेरकारणादतः सर्वस्य त्रसकायस्य स्थावरकायत्वेनो त्पत्तेर्निर्विषयं तस्य त्रसवधनिवृत्तिरूपं प्रत्याख्यानं प्राप्नोति। तद्यथा केनचिद्कृतमेवंभूतं गृहीतं यथा मया नगरनिवासी न हन्तव्यस्तञ्चोद्वसितं नगरमतोनिर्विषयं तत्तस्य प्रत्या ख्यानमेवमत्रापि सर्वेषां त्रसानामनावान्निर्विषयत्वमिति॥ १२॥

सवायं नगवं गोयमे उदयं पेढालपुत्तं एवं वयासी णो खलु आ उसो अस्साकं वत्तवएणं तुम्नंचेव अणुप्पवादेणं अत्थिणं से परि याए जेणं समणोवासगस्स सवपाणेहिं सवनूएहिं सवजीवेहिं सवसत्तेहिं दंमे निक्खित्ते नवइ कस्सणं तं हेउ संसारिया खलु पाणा तसावि पाणा थावरत्ताए पच्चायंति थावरावि पाणा तस त्ताए पच्चायंति तसकायाउ विप्पमुच्चमाणा सवे थावरकायंसि उव वज्जंति थावरकायाउ विप्पमुच्चमाणा सवे तसकायंसि उववज्जंति तेसिंचणं तसकायंसि उववन्नाणं ठाणमेयं अघत्तं ते पाणावि वुच्च ति ते तसावि वुच्चंति ते महाकाया ते चिरठिइया ते बहुयरगा पाणा जेहिं समणोवासगस्स सुपच्चक्खायं नवति ते अप्पयरागा पाणा जे हिं समणोवासगस्स अपच्चक्खायं नवइ से महया तसकायाउ उवसंतस्स उवठियस्स पडिविरयस्स जन्नं तुम्नेवा अन्नोवा एवं वदह णत्थिणं से समणो केइ परियाए जं से समणोवासगस्स एग पाणा पविरएवि दंमे णिक्खित्ते अयंपि नेदे से णो णेयाउए नवइ॥ १३॥

अर्थ—हवे एम कहे बते वादसहित नगवंत श्रीगौतम स्वामी, उदयपेढाल पुत्र प्रत्यें एम बोल्या के, निश्चे अहो आयुष्मन् उदक! (अस्साकवत्तवएणं के०) अमारी वक्तव्य तायें जे तुं वचन कहेने, तेम थयुं पण नथी, अने थशे पण नहीं, ते केमके, समस्त स्थावरजीव, त्रस पणे उपजे एम तमे कहाशो तो, जगत् मांहे त्रस जीवतो असंख्या ताबे, अने स्थावर अनंताबे तो, अनंता असंख्याता मांहे शी रीत समाय? तथा वली

समस्त त्रस जीव पण स्थावर पणु न पामे केम के कोइ वारें पण त्रसशून्य संसार य, तेमज स्थावरशून्य पण ससार न थाय, ए अमारो मतछे हवे तमारो पक्ष अभिप्राये करी निराकरण करियें छैये ते साजलो (तुम्रचेवअणुप्पवादेण के०) वा प्रमाणे (अन्निणसेपरियाए के०) ते पर्यायछे के जे पर्यायें करी प्राण, सर्व नूत, सर्वजीव, सर्वसत्व, तेनो घात ठमायछे एटले त्याग थायछे केमके, तम री वक्तव्यताये जे वारें सर्व स्थावरजीव त्रसपणे उपना तेवारे सर्व प्राण विषे पच्चक्खा ण श्रावकनो थयो, ते कारण माटे श्रावक, त्रसनो घात न करे ए विशेष सूत्रें करी देखाडेछे (कस्सणतहेउ के०) तेनो हेतु कयो? ते देखाडेछे निश्चे सासारिक प्राणी, त्रस प्राणी पण स्थावर पणे उपजे, अने स्थावर प्राणी त्रस पणे उपजे, त्रसकाय थकी मूका ता सर्व स्थावर पणे उपजे, अने स्थावर कायथकी मूकाता सर्व त्रस पणे उपजे तेवारें (तेसिचणतसकायसिउववन्नाणगणमेयअधत्त के०) जो स्थावरकाय पणु त्यागीनें त्रस पणे उपजे, तेवारे श्रावकने त्रसना स्थानक नणी अघत्त एटले विराधनानु कांहि कारण नथी, जे कारणे (तेपाणाविवुच्चति के०) ते त्रसप्राण पण कहिये, अने तेने त्रस पण कहि ये, ते महाकाय, ते चिरस्थितिक, ए अर्थ पूर्ववत् जाणवो (तेबहुयरगापाणा के०) ते घ णा त्रसप्राणीयो जेणे करी श्रमणोपासकने रूडो पच्चक्खाण थाय (तेअप्पयरागापाणा के०) ते प्राण, आहीं अल्प शब्द सर्वथा अनावने अर्थेछे जे कारणे सर्व स्थावर फीटी त्रस थाय, तेवारे स्थावर जीवनो अनाव थयो एम तमारी वक्तव्यतायेंज श्रावकने घणु रू डु पच्चक्खाण थाय अने जे तमे कहोछो के श्रावकने अपच्चक्खाण थाय, ते तो उलटु रू डु पच्चक्खाण थाय ते श्रावक महोटी त्रसकायना आरंनथी उपशम्या सावधान थया विशेषथी निवर्त्या, तेने रूडु पच्चक्खाण थाय (जन्न के०) जे कारण माटे तमे अथ वा बीजा (एववदह के०) एम कहे के जे एवु कोइ पर्याय नथी, के जे पर्यायें श्रावकने प्राणातिपातनो पच्चक्खाण थाय ए तमारु केहेवु ते न्यायमार्गेनु नथी॥ १२॥

॥ दीपिका—अथ गौतम प्राह सवाच गौतम उदकमवादीत् । अस्माकमिति मगध देशे सर्वजनप्रसिद्ध संस्कृतमेवोच्चार्यते तथैवात्र पवित । तदेवमस्माक सबधिना वक्तव्येन नैतदशोनन किं तर्हि? युष्माकमेवानुप्रवादेन एतदशीजनमिति । अस्म द्वक्तव्येनास्य चोद्य स्यानुत्थानमेव । तथाहि । नैतद्भूतं न नवति नापिच नविष्यति यत्सर्वेपि स्थावराख्य सत्व प्रतिपद्यते स्थावराणामानन्त्यात्त्रसाना वाऽसख्येयत्वेन तदाधारत्व न युक्त । त्रसाश्च पि स्थावरत्व न प्रतिपन्नानच प्रतिपद्यते नापि प्रतिपत्स्यते । नच कदाचित्त्रसशून्य ससा र स्यादिति नवदाक्षेपोनृथैव। अस्त्यय पर्यायोयच्छ्रमणोपासकस्य सर्वप्राणिनिस्त्रसत्वेन

नूतैरुत्पन्नैर्दंमोनिक्षिप्तोव्यस्त्यक्त । केन हेतुनेत्याह । संसारियाइत्यादि पूर्ववत् । याव त्रसकाये उत्पन्नाना स्थानमेतदघात्य स्यात् । तेच त्रसाप्राणाउच्यते त्रसाअप्युच्यते । ते महाकायाश्चिरस्थितिका । ते त्रसावहवोयें श्राद्धस्य तु प्रत्याख्यात नवति । नवदनिप्रा येण सर्वस्थावराणां त्रसत्वेनोत्पत्ते । तेऽल्पतरका ये श्राद्धस्याप्रत्याख्यान नवति । अ ल्पशब्दोनाववाचक । न सन्त्येव त्वदनिप्रायेण ते जीवा येषु अप्रत्याख्यानमिति । एव सेत स्य श्राद्धस्य महतस्त्रसकायाडुपशातस्य विरतस्य सुप्रत्याख्यान स्यादिति । एवसति य यूय वदथान्योवा वदति यन्नास्त्यसौ पर्यायइत्यादि सुगम यावणोऐयाउएनवइत्ति ॥ १२ ॥

॥ टीका–एवमुदकेनानिहिते सति तदन्युपगमेनेव गौतमस्वामी दूषयितुमाह । (स वायमित्यादि) स द्धाच नाद वा तमुदक पेढालपुत्र गौतमस्वाम्येवमवादीत् । तद्यथा नो खल्वायुष्मन्नुदकास्माकमिय्येतन्मगधदेशे आगोपालागनादि प्रसिद्ध संस्कृतमेवोच्चार्यते त दिहापि तथैवोच्चारितमिति । तदेवमस्माक सत्रविना वक्तव्येन नैतदशोनन किं तर्हि युष्मा कमेवानुप्रवादेनैतदशोनन । इदमुक्त नवत्यस्म द्वक्तव्येनास्य चोद्यस्यानुत्थानमेव । तथाहि । नैतद्भूत न च नवति नापि कदाचिद्भविष्यति यद्दुत सर्वेपि स्थावरानिर्लेपतया त्रसत्व प्रतिपद्यते स्थावराणामानन्त्यात्त्रसाना चासख्येयत्वेन तदाधारत्वानुपपत्तेरित्यनिप्राय । तथा त्रसाअपि सर्वे न स्थावरत्व प्रतिपन्नान प्रतिपत्स्यते । इदमुक्त नवति । यद्यपि विवक्षितकालवर्तिनस्त्रसा कालपर्यायेण स्थावरकायत्वेन यास्यति तथा च परपरापर त्रसोत्पत्त्या त्रसजात्यनुच्छेदान्न कदाचिदपि त्रसकायशून्य संसारोनवतीति । तदेव मस्मन्मतेन चोद्यानुत्थानमेवान्युपगम्यच नवदीय पक्ष युष्मदन्युपगमेनेव परिह्रियते तदेव परानिप्रायेण परिहरतस्तस्यासौ पर्याय । सचाय नवदनिप्रायेण यदा सर्वेपि स्थावरास्त्रसत्व प्रतिपद्यते यस्मिन्पर्यायेऽवस्थाविशेषे श्रमणोपासकस्य कृतप्राणा तिपातनिवृत्ते सत त्रसत्वेन च नवदन्युपगमेन सर्वप्राणिनामुत्पत्ते । तेश्च सर्वप्राणिनिस्त्र सत्वेन नूतैरुत्पन्नै करणनूतैस्तेषु वा विषयनूतेषु दमोनिक्षिप्त परित्यक्त । इदमुक्त नव ति । यदा सर्वेपि स्थावरा नवदनिप्रायेण त्रसत्वेनोत्पद्यते तदा सर्वप्राणिविषय प्रत्या ख्यान श्रमणोपासकस्य नवतीति । एतदेव प्रश्नपूर्वक दर्शयितुमाह । (कस्सणहेउमित्या दि) सुगम । यावघसकाये समुत्पन्नानां स्थानमेतदघात्यमघातार्ह तत्र विरतिसद्भावादि त्यनिप्राय । तेच त्रसानारकतिर्यङ्नरामरनाज सामान्यसज्ञया प्राणिनोप्यनिधीयत त था विशेषसज्ञया नयचलनापेतत्वात्त्रसाअप्युच्यते । तथा महान् काय शरीर येषां ते महाकाया वैक्रियशरीरस्य योजनलक्षप्रमाणत्वादिति । तथा चिरस्थितिकाया त्रयस्त्रिंश त्सागरोपमपरिमाणत्वान्नवस्थितेस्तथा ते प्राणिनस्त्रसावहुतमानूयिष्ठायें श्रमणोपास

कस्य सुप्रत्याख्यानं नवति। त्रसानुद्दिश्य तेन प्रत्याख्यानस्य स्थावराणां त्रसत्वेनोत्पत्तेरतस्तेऽल्पतरका प्राणिनोये कारणनूते न नवति । इदमुक्तं नवति । अल्पशब्दस्याजाववाचित्वान्न सत्येव ते त्येव पूर्वोक्तया नीत्या सेतस्य श्रमणोपासकस्य महतस्त्रसकायादुपशांतस्योपरतस्य विरतस्य सत सुप्रत्याख्यानं नवतीति सर्वथस्तदेव व्यवस्थिते। णमिति वाक्यालंकारे। य वदथान्योवा कश्चित्तथा नास्त्यसावित्यादि सुगमं यावत्सोणेयावएनवइत्ति ॥ १३ ॥

नगवचणं उदाहु नियंठा खलु पुच्छियवा आउसंतो नियंठा इह खलु संतेगइया मणुस्सा नवंति तेसिंचणं एवं वुत्तं पुव्वं नवइ जे इमे मुंमे नवित्ता आगाराउ आणगारियं पवइत्ता एएसिंचणं आ मरणंताए दंमे णिक्खित्ते जे इमे आगारमावसंति एएसिणं आम रणंताए दंमे णो णिक्खित्ते केइ तचणं समणा जाव वासाइं चउपंच माइं उद्दसमाइं अप्पयरोवा नुज्जयरोवा देसं दूईज्जित्ता आगार मावसेज्जा हंता वसेज्जा तस्सणं तं गारउ वहमाणस्स से पच्चक्खाणे नंगे नवइ णेतिणठे समठे एवमेव समणोवास गस्सवि तसेहिं पाणेहिं दंमे णिक्खित्ते थावरेहिं पाणेहिं दंमे णो णिक्खित्ते तस्सणं तं थावरकायं वहमाणस्स से पच्चक्खाणे णो न गे नवइ से एवं मायाणह णियंठाए से एवं मायाणियवं ॥ १४ ॥

अर्थ—हवे श्रीगौतमस्वामिजि स्थावर पर्याये पहोता एवा त्रस जीवोनें विनाशवा थकी, व्रतनंग न थाय। एवा अर्थनी प्रसिद्धिनें अर्थे त्रण दृष्टांत देखाडेछे (नगवचणं उदाहु के०) नगवंत श्रीगौतमस्वामी पोतानुं उद्धत पणुं टालवा माटे बीजा स्थवि रने साक्षी करी बोलेछे, एटले पोतानी पासे कोइ एक स्थविर बेठाछे तेनें उद्देशी कहेछे के, अहो उदक। जे अर्थ हुं कहुं छुं तेना साक्षी (नियंठाखलुपुच्छियवा के०) निश्चे आ निर्ग्रंथोने पूछवुं एम कही निर्ग्रंथ प्रत्यें कहेछे के, (आउसंतोनियंठा के०) अहो आयु ष्मंत निर्ग्रंथो। जे हुं आगल कहीश, ते वचन तमारे मनमां मान्य थाय छे किंवा नथी थतुं? ते वचन हुं कहुंछुं, तमे सांनलो (इहखलु के०) आ जगत् माहे निश्चे (संतेग इयामणुस्सानवंति के०) कोइ एक मनुष्य शांतिप्रधान एवा होय, (तेसिंचणंएवंवुत्तंपुव्वंनवइ

के०) तेणे पोतानुं एवुं व्रतविशेष पूर्वे कह्युंछे, ते केवुं कह्युंछे? ते कहेछे (जेइमेमुंमे नवित्ता के०) जे ते हुं मुंम थइश. (आगाराउअणगारियपव्वइत्ता के०) गृहस्थावास छांमीने अणगार पणुं प्रव्रजीश (एएसिंचणआमरणंताएदंमेणिक्खित्ते के०) एने विषे मरणांतिक एटले मरणांतसुधी मे दंम छांम्यो, एतावता ए प्रव्रजीतने एटले यतिपणाने पामेलोने विणाशवो नही (जेइमेआगारमावसंति के०) जे गृहस्थावास विषे वसतो पुरुष, (एएसिणंआमरणंताएदंमेणोणिक्खित्ते के०) तेनुं मरणना अंतसुधी, दंम एटले हणवुं निषेध्युं नथी एवुं तेनुं व्रत विशेषछे, (केइंतंचणसमणाजाववासाइंचउपंचमाइंछहसमाइं के०) तेवारे कोइ एक श्रमण, प्रवर्ज्या पर्याय पाली यावत् चार, पांच, छ, तथा दश वर्ष, इत्यादिक (अप्पयरोवाभुज्जियरोवा के०) अल्पकाल, अथवा घणा काल सुधी (देसंदूइज्जित्ता के०) चारित्रनें विषे विचरी, तथाविध कर्मने उदये वली, (आगारमावसेज्जा के०) गृहस्थावास सेवन करे, ए भाव संभवे किंवा न संभवे? तेवारे आगल बेठेला निर्ग्रंथी बोल्या के, (हंतावसेज्जा के०) हा, चारित्रिया थकी गृहस्थ थाय जे कारण माटे कर्मनी गति विचित्रछे हवे वली गौतम स्वामी कहेछे (तस्सणंतंगारत्थवहमाणस्स के०) हवे ते पुरुष के, जेनें चारित्रियापणे विनाशवानो नियमछे अने गृहस्थपणे विनाशवानो नियम नथी, तेवारे ते चारित्रियो फीटी गृहस्थ थयो छे तेवाने विनाशता तेनुं, (सेपच्चक्खाणेभंगेभवइ के०) ते पच्चख्खाण भाजे, किंवा न भाजे? ते कहो तेवारे ते बोल्या (णोतिणट्ठेसमट्ठे के०) ए अर्थ समर्थ न थाय, अर्थात् तेनुं व्रत न भाजे (एवमेवसमणोवासगस्सवि के०) एणी पर श्रमणोपासकने पण (तसेहिंपाणेहिंदंमेणिक्खित्ते के०) त्रस प्राणिने विषे घात करवानो नियमछे परंतु (थावरेहिंपाणेहिंदंमेणाणिक्खित्ते के०) अने स्थावर प्राणिनें घात करवानो नियम नथी, ते कारण माटे जे त्रस फीटीने स्थावर थयो, (तस्सणं के०) तेना, (तंथावरकाय के०) ते स्थावरकायनी, (वहमाणस्स के०) विराधना करनार श्रावकनुं (सेपच्चक्खाणे के०) ते पच्चख्खाण (णोभंगेभवइ के०) भंग न थाय (सेएवमायाणह के०) ते एम जाणो (णियंठाए के०) अहो निर्ग्रंथो! (सेएवमायाणियव्वं के०) ते बीजुं पण एमज जाणवुं ॥ १४ ॥

॥ दीपिका—अथ त्रसानां स्थावरत्व प्राप्तानां वधेपि न व्रतभंग स्यादित्यत्र दृष्टांतत्रयमाह। भगवान्। गौतमउवाह भवंतान् निर्ग्रंथा प्रष्टव्या । निर्ग्रंथानां सर्वेषामप्येतत्संमतमिति ज्ञापनाय निर्ग्रंथप्रश्न। किमुक्तवानित्याह । शांतिप्रधानाइह केचिन्मनुष्या स्युस्तेषामेतदुक्तपूर्वं भवति । अथ व्रतग्रहणविशेष स्यात् यइमे मुंमाभूत्वाऽगारान्निर्गत्याऽनगारितां प्रतिपन्नाएषामुपरि मया मरणांतोदंमानिक्षिप्तावधस्त्यक्त । कोर्थ ? केनापि यती

नाश्रित्य व्रतं गृहीतं । यथा यावज्जीव मया यतयोन हंतव्याइति । येच इमेऽगार गृहे वसति तेषा दमोन त्यक्त । गृहस्थानां हिंसा न प्रत्याख्याताइत्यर्थः। तत्र केचिच्छ्रमणा कियंतमपि काल प्रव्रज्यां प्रतिपाल्य । कालमानमाह । वासाइति । वर्षाणि पंच षट् दशवा । अस्योपलक्षणादन्योपि कालविशेषोज्ञेयस्तमेवाह । अप्पतरं- प्रभूततरं वा कालं । तथा देसदूइज्ज विहृत्य कर्मोदयाद्गृहमावसेयुर्गृहस्थाजवेयु एवंभूतः पर्यायः कि सनाव्यते उत नेति ? एष्टानिर्ग्रंथा प्रत्यूचु हंत गृहवासं व्रजेयु । तस्य च यतिवधगृहीतव्रतस्य तं गृहस्थ घ्नत कि व्रतजंगोजवेत् ? उतनेति ते आहुर्नेति । एव श्रावकस्य त्रसवधनिवृत्तस्य स्थावरस्य प्राप्त त्रस घ्नतोन स्याद्व्रतजग ॥ १४ ॥

॥ टीका—सांप्रतं त्रसाना स्थावरपर्यायापन्नाना व्यापादनेनापि न व्रतजंगोजवतीत्यर्थस्य प्रसिद्धये दृष्टांतमाह ।(जगवचणमित्यादि) णमिति वाक्यालंकारे। चशब्द पुनःशब्दार्थे।पुनरपि जगवान् गौतमस्वाम्येवाह। स्वौद्धत्यपरिहरणार्थमपरानपि स्थविरान् साक्षिण कर्तुमिदमाह । ते निर्ग्रंथायुष्मत्स्थविरा खलु प्रष्टव्यास्तद्यथा आयुष्मतोनिर्ग्रंथायुष्माकमप्येतद्वक्ष्यमाणमजिमतमाहोस्विन्नेत्यवष्टंजेन चेदमाह । युष्माकमप्येतदजिमतं यदहं वच्मि। तद्यथा। शांतिरुपशमस्तत्प्रधानाएके केचन मनुष्याजवंति न नारकतिर्यग्देवा कि तर्हि मनुष्यास्तेपि - नाकर्मजूमिजानापि म्लेछाअनार्यावा तेषा चार्यदेशोत्पन्नानामुपशमप्रधानानामेतदुक्तपूर्वं जवति अथ व्रतग्रहणविशेषोजवति। तद्यथा। यइमे मुंमा जूत्वाऽगाराद्गृहान्निर्गत्यानगारता प्रतिपन्ना प्रव्रजिताइत्यर्थ । एतेषा चोपचर्यामरणांतं मया दमोनिक्षिप्त परित्यक्तोजवति । इदमुक्त जवति कश्चित्तथाविधोमनुष्योयतीनुद्दिश्य व्रत गृण्हाति तद्यथा न मया यावज्जीव यतयोहंतव्यास्तथा ये चेमेऽगार गृहवा समावसति तेषा दमोनिक्षिप्तइत्येव केषांचिद्व्रतग्रहणविशेषे सति व्यवस्थिते इदमपदिश्यते तत्र केचन श्रमणा प्रव्रजिता कियतमपि काल प्रव्रज्यापर्याय प्रतिपाल्य तमेव कालविशेष दर्शयति। याव द्वर्षाणि चत्वारि पच वा षड् दश वास्य चोपलक्षणत्वादन्योपि कालविशेषोऽष्टव्य । तमेवाह। अल्पतर प्रजूततर वा काल तथा देशंच दूइज्जइत्ति । विहृत्य कुतश्चित्कर्मोदयात्तथाविधपरिणतेरगार गृहवास वसेयुर्गृहस्थाजवेयुरित्येवंजूत पर्याय कि सनाव्यते?उत नेत्येव एष्टानिर्ग्रंथा प्रत्यूचु हंत गृहवास व्रजेयुस्तस्य च यतिवधगृहीतस्य तं गृहस्थ व्यापादयत कि व्रतजंगोजवेदुत नेति ? आहुर्नेति। एवमेव श्रमणोपासकस्यापि त्रसेषु दमोनिक्षिप्तोन स्थावरेष्विति अतस्त्रस स्थावरपर्यायापन्न व्यापादयतस्तत्प्रत्याख्यानजंगोन जवतीति ॥ १४ ॥

भगवंचणं उदाहु नियंठा खलु पुच्छियव्वा आउसंतो नियंठा इह खलु गाहावइ गहावइपुत्तोवा तहप्पगारेहिं कुलेहिं आगम्मा धम्मं सवणवत्तियं उवसकमेज्जा हंता उवसकमेज्जा तेसिंचणं तहप्पगाराणं धम्मं आइक्खियव्वे हंता आइक्खियव्वे किं ते तहप्पगारं धम्मं सोच्चा णिसम्म एवं वएज्जा इणमेव निग्गंथं पावयणं सच्चं अणुत्तरं केवलियं पडिपुण्णं संसुद्धं णेयाउयं सल्लकत्तणं सिद्धिमग्गं मुत्तिमग्गं निज्जाणमग्गं निव्वाणमग्गं अवितहमसंदिद्धं सव्वदुक्खपहीणमग्गं एत्थठिया जीवा सिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति परिणिव्वायंति सव्वदुक्खाणमंतं करेंति तं माणाए तहा गच्छामो तहा चिट्ठामो तहा णिसियामो तहा सुयट्टामो तहा भुंजामो तहा भासामो तहा अब्भुट्ठामो तहा उट्ठाए उट्ठेमोत्ति पाणाणं भूयाणं जीवाणं सत्ताणं संजमेणं संजमामोत्ति वएज्जा हंता वएज्जा किं ते तहप्पगारा कप्पंति पव्वावित्तए हंता कप्पंति किं ते तहप्पगारा कप्पंति मुंडावित्तए हंता कप्पंति किं ते तहप्पगारा कप्पंति सिक्खावित्तए हंता कप्पंति किं ते तहप्पगारा कप्पंति उवट्ठावित्तए हंता कप्पंति तेसिंचणं तहप्पगाराणं सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं दंडे णिक्खित्ते हंता णिक्खित्ते सेणं एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणा जाव वासाइं चउपंचमाइं छद्दसमाइंवा अप्पयरोवा भुज्जयरोवा देसं दूइज्जेत्ता आगारं वएज्जा हंता वएज्जा तस्सणं सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं दंडे णो णिक्खित्ते से जे से जीवे जस्स परेणं सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं दंडेणो णिक्खित्ते से जे से जीवे जस्स आरेणं सव्वपाणेहिं जाव सत्तेहिं दंडे णिक्खित्ते से जे से जीवे जस्स इयाणिं सव्वपाणेहिं जाव सत्तेहिं दंडे णो णिक्खित्ते भवइ परेणं असंजए आरेणं संजए इयाणिं असंजए असंजयस्स णं सव्वपाणेहिं जावसत्तेहिं दंडे णो णिक्खित्ते भवइ सएव मायाणंद णियंठा से एवं मायाणियव्वं ॥ २५ ॥

नाश्रित्य व्रतं गृहीतं । यथा यावज्जीव मया यतयोम हंतव्याइति । येच इमेऽगारं गृ वसति तेषा दमोन त्यक्त । गृहस्थानां हिंसा न प्रत्याख्याताइत्यर्थ । तत्र केचिद्भ्रम कियंतमपि काल प्रव्रज्यां प्रतिपाल्य । कालमानमाह । वासाइत्ति । वर्षाणि पंच च न्दशवा । अस्योपलक्षणादन्योपि कालविशेषोज्ञेयस्तमेवाह । अल्पतरं प्रभूततरं काल । तथा देसदूइज्ज विहृत्य कर्मोदयादगृहमावसेयुर्गृहस्थाजवेयु एवंजूत पर्या कि सनाव्यते उत नेति ? एष्टानिर्ग्रंथा प्रत्यूचु हत गृहवासं व्रजेयु । तस्य च यतिवध हीतव्रतस्य तं गृहस्थ व्रत कि व्रतजगोजवेत् ? उतनेति ते श्राहुर्नेति । एव श्राद्धस्य त्र सवधनिवृत्तस्य स्थावरस्य प्रात त्रस व्रतोन स्याद्व्रतजग ॥ १४ ॥

॥ टीका—साप्रतं त्रसाना स्थावरपर्यायापन्नाना व्यापादनेनापि न व्रतजगोजवतीत्यर्थ स्य प्रसिद्ध्ये दृष्टांतमाह ।(जगवचणमित्यादि) णमिति वाक्यालंकारे। चशब्द पुनःशब्दा र्थे।पुनरपि जगवान् गौतमस्वाम्येवाह। स्वौद्धत्यपरिहरणार्थमपरानपि स्थविरान् साक्षि ण कर्तुमिदमाह । ते निर्ग्रंथायुष्मत्स्थविरा, खलु प्रष्टव्यास्तद्यथा आयुष्मतोनिर्ग्रंथायु ष्माकमप्येत द्वक्ष्यमाणमनिमतमाहोस्विन्नेत्यवष्टनेन चेदमाह । युष्माकमप्येतदजिप्रेतं यदह वच्मि। तद्यथा। शांतिरुपशमस्तत्प्रधानाएके केचन मनुष्याजवति न नारकतिर्यग्दे वा कि तर्हि मनुष्यास्तेपि, नाकर्मजूमिजानापि म्लेछाअनार्यावा तेषा चार्यदेशोत्पन्ना नामुपशमप्रधानानामेतदुक्तपूर्वं जवति अथ व्रतग्रहणविशेषोजवति। तद्यथा। यइमे मुंमा जूत्वाऽगाराजृहान्निर्गत्यानगारता प्रतिपन्ना प्रव्रजिताइत्यर्थ । एतेषा चोपचर्यामरणांतं मया दमोनिक्षिप्त परित्यक्तोजवति। इदमुक्त जवति कश्चित्तथाविधोमनुष्योयतीनुद्दि श्य व्रत गृण्हाति तद्यथा न मया यावज्जीव यतयोहतव्यास्तथा ये चेमेऽगार गृहवा समावसति तेषा दमोनिक्षिप्तइत्येव केषाचिद्व्रतग्रहणविशेषे सति व्यवह्रियते इदमपदि श्यते तत्र केचन श्रमणा प्रव्रजिता कियतमपि काल प्रव्रज्यापर्याय प्रतिपाल्य तमेव काल विशेष दर्शयति। याव द्वर्षाणि चत्वारि पंच वा षड् दश वास्य चोपलक्षणत्वादन्योपि काल विशेषोद्रष्टव्य । तमेवाह। अल्पतर प्रजूततर वा काल तथा देशाच दूइज्जइत्ति । विहृत्य कुतश्चित्कर्मोदयात्तथाविधपरिणतेरगार गृहवास वसेयुर्गृहस्थाजवेयुरित्येवजूत पर्याय कि सनाव्यते? उत नेत्येव एष्टानिर्ग्रंथा प्रत्यूचु हत गृहवास व्रजेयुस्तस्य च यतिवधगृहीत स्य तं गृहस्थ व्यापादयत कि व्रतजगोजवेदुत नेति ? आहुर्नेति । एवमेव श्रमणोपासक स्यापि त्रसेषु दमोनिक्षिप्तोन स्थावरेष्विति अतस्त्रस स्थावरपर्यायापन्न व्यापादयतस्तत्प्र त्याख्यानजगोन जवतीति ॥ १४ ॥

भगवचण उदाहु नियंठा खलु पुच्छियव्वा आउसंतो नियंठा इह खलु गाहावइ गहावइपुत्तोवा तहप्पगारेहिं कुलेहिं आगम्मा धम्म सवणवत्तिय उवसंकमेज्जा हंता उवसंकमेज्जा तेसिंचण तहप्पगाराणं धम्म आइक्खियव्वे हंता आइक्खियव्वे किं ते तहप्पगार धम्म सोच्चा णिसम्म एवं वएज्जा इणमेव निग्गंथ पावयण सच्चं अणुत्तरं केवलियं पडिपुण्ण संसुद्ध णेयाउयं सल्लकत्तण सिद्धिमग्ग मुत्तिमग्ग निज्जाणमग्ग निव्वाणमग्ग अवितहमसंदिद्ध सव्व डुक्खपहीणमग्ग एत्थठिया जीवा सिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति परिणिव्वायंति सव्वडुक्खाणमंत करेंति तं माणाए तहा गच्छामो तहा चिठामो तहा णिसियामो तहा सुयट्टामो तहा भुंजामो तहा भासामो तहा अब्भुठामो तहा उठाए उठेमोत्ति पाणाणं भूयाणं जीवाणं सत्ताणं संजमेणं संजमामोत्ति वएज्जा हंता वएज्जा किं ते तहप्पगारा कप्पंति पव्वावित्तए हंता कप्पंति किं ते तहप्पगारा कप्पंति मुंडावित्तए हंता कप्पंति किं ते तहप्पगारा कप्पंति सिक्खावित्तए हंता कप्पंति किं ते तहप्पगारा कप्पंति उवठावित्तए हंता कप्पंति तेसिंचण तहप्पगाराणं सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं दंडे णिक्खित्ते हंता णिक्खित्ते सेणं एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणा जाव वासाइ चउपंचमाइ छद्दसमाइवा अप्पयरोवा भुज्जयरोवा देसं दूइज्जेत्ता आगारं वएज्जा हंता वएज्जा तस्सणं सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं दंडे णो णिक्खित्ते से जे से जीवे जस्स परेणं सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं दंडेणो णिक्खित्ते से जे से जीवे जस्स आरेणं सव्वपाणेहिं जाव सत्तेहिं दंडे णिक्खित्ते से जे से जीवे जस्स इयाणिं सव्वपाणेहिं जाव सत्तेहिं दंडे णो णिक्खित्ते भवइ परेणं असंजए आरेणं संजए इयाणिं असंजए असंजयस्स णं सव्वपाणेहिं जावसत्तेहिं दंडे णो णिक्खित्ते भवइ सएवं मायाणहं णियंठा से एवं मायाणियव्वं ॥ १५ ॥

नाश्रित्य व्रतं गृहीतं । यथा यावज्जीव मया यतयोन हंतव्याइति । वसति तेषा दमोन त्यक्त । गृहस्थानां हिंसा न प्रत्याख्याताइत्यर्थः। तत्र कियतमपि काल प्रव्रज्यां प्रतिपाल्य । कालमानमाह । वासाइणि । म्दशवा । अस्योपलक्षणादन्योपि कालविशेषोज्ञेयस्तमेवाह । अन्यतर प्रभूततर काल । तथा देसदूइज्ज विहत्य कर्मोदयाद्गृहमावसेयुर्गृहस्थाजवेयु एवंभूतं पर्याय कि सनाव्यते व्रत नेति ? एष्टानिर्ग्रंथा प्रत्यूचु र्हत गृहवासं व्रजेयु । तस्य च यतिवधगृहीतव्रतस्य तं गृहस्य घ्नत कि व्रतजगोनवेत् ? उतनेति ते आहुर्नेति । एवं श्रावकस्य त्रसवधनिवृत्तस्य स्थावरस्य घ्नत त्रस घ्नतोन स्याद्व्रतजग ॥ १४ ॥

॥ टीका–साप्रतं त्रसाना स्थावरपर्यायापन्नाना व्यापादनेनापि न व्रतजगोनवतीत्यर्थस्य प्रसिद्धये दृष्टांतमाह ।(जगवचणमित्यादि) णमिति वाक्यालकारे। चशब्द पुनःशब्दार्थे।पुनरपि जगवान् गौतमस्वाम्येवाह। स्वोद्धत्यपरिहरणार्थमपरानपि स्थविरान् साक्षिण कर्तुमिदमाह । ते निर्ग्रंथायुष्मत्स्थविरा खलु प्रष्टव्यास्तद्यथा आयुष्मतोनिर्ग्रंथायुष्माकमप्येत द्वद्यमाणमजिमतमाहोस्विन्नेत्यवष्टंजेन चेदमाह । युष्माकमप्येतदजिप्रेत यदह् वच्मि। तद्यथा। शातिरुपशमस्तत्प्रधानाएके केचन मनुष्याजवति न नारकतिर्यग्देवा कि तर्हि मनुष्यास्तेपि नाकर्मजूमिजानापि म्लेछाअनार्यावा तेषा चार्यदेशोत्पन्नानामुपशमप्रधानानामेतदुक्तपूर्व जवति अथ व्रतग्रहणविशेषोजवति।तद्यथा। यइमे मुण्माजूत्वाऽगाराद्गृहान्निर्गत्यानगारता प्रतिपन्ना प्रव्रजिताइत्यर्थ । एतेषा चोपचर्यामरणांतं मया दमोनिक्षिप्त परित्यक्तोजवति । इदमुक्त जवति कश्चित्तथाविधोमनुष्योयतीनुद्दिश्य व्रत गृह्णाति तद्यथा न मया यावज्जीव यतयोहतव्यास्तथा ये चेमेऽगार गृहवास समावसति तेषा दमोनिक्षिप्तइत्येव केषाचिद्व्रतग्रहणविशेषे सति व्यवस्थिते इदमपदिश्यते तत्र केचन श्रमणा प्रव्रजिता कियतमपि काल प्रव्रज्यापर्याय प्रतिपाल्य तमेव काल विशेष दर्शयति। याव द्वर्षाणि चत्वारि पच वा पड् दश वास्य चोपलक्षणत्वादन्योपि कालविशेषोद्दृष्टव्य । तमेवाह। अल्पतर प्रजूततर वा काल तथा देशाच दूइज्जइत्ति । विहृत्य कुतश्चित्कर्मोदयात्तथाविधपरिणतेरगार गृहवास वसेयुर्गृहस्थाजवेयुरित्येवजूत पर्याय किं सजाव्यते?व्रत नेत्येव एष्टानिर्ग्रंथा प्रत्यूचु हत गृहवास व्रजेयुस्तस्य च यतिवधगृहीतस्य तं गृहस्य व्यापादयत कि व्रतजगोनवेडुत नेति ? आहुर्नेति। एवमेव श्रमणोपासकस्यापि त्रसेषु दमोनिक्षिप्तोन स्थावरेष्विति अतस्त्रस स्थावरपर्यायापन्न व्यापादयतस्तत्प्रत्याख्यानजगोन नवतीति ॥ १४ ॥

भगवंचणं उदाहु नियंठा खलु पुछियव्वा आउसंतो नियंठा इह खलु गाहावइ गहावइपुत्तोवा तहप्पगारेहिं कुलेहिं आगम्मा धम्म सवणवत्तियं उवसंकमेज्जा हंता उवसंकमेज्जा तेसिंचणं तहप्पगाराणं धम्मं आइक्खियव्वे हंता आइक्खियव्वे किं ते तहप्पगारं धम्मं सोच्चा णिसम्म एवं वएज्जा इणमेव निग्गंथं पावयणं सच्चं अणुत्तरं केवलियं पडिपुन्नं संसुद्धं णेयाउयं सल्लकत्तणं सिद्धिमग्गं मुत्तिमग्गं निज्जाणमग्गं निव्वाणमग्गं अवितहमसंदिद्धं सव्व दुक्खपहीणमग्गं एत्थठिया जीवा सिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति परिणिव्वायंति सव्वदुक्खाणमंतं करेंति तं माणाए तहा गच्छामो तहा चिट्ठामो तहा णिसियामो तहा सुयट्टामो तहा भुंजामो तहा भासामो तहा अब्भुट्ठामो तहा उठाए उट्ठेमोत्ति पाणाणं भूयाणं जीवाणं सत्ताणं संजमेणं संजमामोत्ति वएज्जा हंता वएज्जा किं ते तहप्पगारा कप्पंति पव्वावित्तए हंता कप्पंति किं ते तहप्पगारा कप्पंति मुंडावित्तए हंता कप्पंति किं ते तहप्पगारा कप्पंति सिक्खावित्तए हंता कप्पंति किं ते तहप्पगारा कप्पंति उवट्ठावित्तए हंता कप्पंति तेसिंचणं तहप्पगाराणं सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं दंडे णिक्खित्ते हंता णिक्खित्ते सेणं एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणा जाव वासाइं चउपंचमाइं छद्दसमाइंवा अप्पयरोवा भुज्जयरोवा देसं दूइज्जेत्ता आगारं वएज्जा हंता वएज्जा तस्सणं सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं दंडे णो णिक्खित्ते से जे से जीवे जस्स परेणं सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं दंडेणो णिक्खित्ते से जे से जीवे जस्स आरेणं सव्वपाणेहिं जाव सत्तेहिं दंडे णिक्खित्ते से जे से जीवे जस्स इयाणिं सव्वपाणेहिं जाव सत्तेहिं दंडे णो णिक्खित्ते भवइ परेणं असंजए आरेणं संजए इयाणिं असंजए असंजयस्स णं सव्वपाणेहिं जावसत्तेहिं दंडे णो णिक्खित्ते भवइ सएवं मायाणहणियंठा से एवं मायाणियव्वं ॥ १५ ॥

अर्थ—नगवत श्रीगौतम स्वामी,वली बीजो दृष्टांत देखाडता छता
तमां निर्यथोनें निश्रें पूछवु अहो आयुष्यमत निर्ग्रथो ! आ
गृहपतिना पुत्र, ते तथाप्रकारना रूडा कुलने विषे (आगम्मा के०)
वणवतिय के०) धर्म सांजलवाने (उवसकमेज्ञा के०) उद्यम करे ? एवुं
रे निर्ग्रथ बोल्या, (हताउवसकमेज्ञा के०) हा रूडा कुलना उपना होय, ते
उद्यम करे तेवारें फरी श्रीगौतमस्वामी बोल्या (
यवे के०) तेवा गृहस्थने तथा प्रकारनो धर्म कहेवो ? तेवारें निर्ग्रथ बोल्या (हंताआइक्खि
यवे के०) हा ते ग्रहस्थने धर्म कहेवो फरी श्री गौतमस्वामी बोल्या के, (किंतेतहप्पगारं
म्मसोच्चा के०) केम के ते गृहस्थ, तेवा तथा प्रकारनो धर्म सांनलीनें (णिसम्म के०)
हृदयनें विषे अवधारीने (एववएज्जा के०) एवु वचन बोले शु बोले ? तोके (इणमेव
निग्गथपावयणसच्च के०) ए तीर्थंकरनाषित निर्ग्रथनु प्रवचन, ते सत्यछे समस्त जी
वने हितकारीछे, अनुत्तर अन्यशास्त्रमा प्रधान, केवलिनाषित, उत्तम मनोहर एवो बी
जो कोइ मार्ग नथी (पडिपुण्णसंसुद्धणेयाउय के०) मोक्षमार्गेना गुणे करी प्र
तिपूर्ण, सशुद्ध एटले अत्यंत शुद्ध मोक्षार्थीजीवने न्यायसपन्न (सल्लकत्तणं के०) स
म्यक्प्रकारे मायादिक शल्यनो कापनार सिद्धिनो मार्ग, मुक्तिनो मार्ग, एटले निर्लोन
पणानो मार्ग, निर्वाण एटले सिद्धनो मार्ग, अर्थात् समस्तकर्मक्षय करवानो मार्ग, ते
निर्वाणमार्ग (अवितह के०) अवितथ्य सत्य, (असंदिद्ध के०) असदिग्ध एटले स
देह रहित मार्ग, सर्वडुख प्रक्षीण करवानो मार्ग, (एछवियाजीवा के०) ए मार्गनें
विषे स्थित एटले रहेला जीव, सीझति एटले कार्य सिद्धि करे, लोकालोकनु स्वरूप बूजे,
सर्वडुखथकी मूकाय, (परिणिव्वायंति के०) कर्म रूपदावानलनें उपशमाववे करी,
शीतलीनूत थाय, एटले सर्व समाधि पामे, सर्व डुखनो अत करे, ए मार्गनें अमे पण
आदरीनें (तमाणाए के०) तमारी आज्ञाये (तहागछामो के०) तेम चालियें (त
हाचिहामो के०) तेम उनारहिये (तहाणिसियामो के०) तेम बेशियें (तहासुयट्टामो
के०) तेम सुये, एटले निद्रा करियें, (तहाजुंजामो के०) तेम जमियें (तहानासा
मो के०) तेम बोलिये (तहाअब्भुट्ठामो के०) तेम सावधान पणे प्रवर्त्तियें (तहाउ
ट्ठाए के०) तेम उठवे करी उठिये (उट्ठेमोत्ति के०), उठीनें जेम सर्व प्राण, नूत,
जीव, सत्व, तेनी विराधना न थाय (सजमेण के०) एवा आचारे करी, (सजमामो
त्तिवएज्जा के०) सयम पालि ते गृहपति एम कहे ए प्रकारे गौतम प्रनुये कह्यु, तेवारें
निर्ग्रथ बोल्या (हतावएज्जा के०) हा ते गृहस्थ जेम तमे बोल्या, तेमज कहे वली गौत
म स्वामी कहेछे (किंतेतहप्पगाराकप्पंतिपव्वावित्तए के०) केम ते गृहीने तथा प्रकारनु

प्रव्रज्या व्रत कल्पे, एटले दीक्षा आपवी कल्पे ? तेवारे निर्ग्रंथ बोल्या (हंताकप्पंति के०) हा कल्पे. तेवारे श्री गौतम बोल्या केम तेवा गृहीने मुंम करवा कल्पे ? निर्ग्रंथ बोल्याके, हा कल्पे गौतम बोल्या तेवा गृहीने शीखाववु कल्पे ? निर्ग्रंथ बोल्या हा कल्पे. तेवा गृहीने धर्मने विषे उठाववो कल्पे ? निर्ग्रंथ बोल्या के, हा कल्पे तेवा गृहीनें चारित्र लीधा अनंतर सर्वप्राण, नूत, जीव, सत्व, तेने विषे घात करवानो त्याग एटले नाखवा पण कल्पे ? तेवारे निर्ग्रंथ बोल्या के,हा कल्पे (सेण के०) ते, ण ए वे वाक्यालंकार एतद्रूपेण एटले एवे विहारे विचरता यावत् चार, तथा पांच, ठ, तथा दश वर्ष, अथवा अल्पकाल, अथवा घणा काल पर्यंत देशमांहे, अथवा संयममांहे विचरी तथाविध चारित्रावरणीय कर्मने उदये वली गृहवास सेवे ? तेवारे निर्ग्रंथ बोल्या हा सेवे जे कारण माटें कर्मनी गति वैचित्र्यछे तेथी जेणे चारित्र मूकीने गृहवास आदस्यो छे तेने सर्वप्राण, नूत, जीव, अनें सत्वने विषे घात मूकाणो ? अर्थात् नही मूकाणो, तो हवे जुउ के (सेजेसेजीवे के०) ते जीव, जे प्रथम गृहस्थ हतो तेवार पछी ते जीव चारित्रियो थयो तेवार पण तेज जीव हतो,तेवार पछी वली गृहस्थ थयो तेवारे पण तेहिज जीव छे (जस्सपरेण के०) जेने प्रथम, सर्व प्राण,नूत,जीव,सत्वना वधनो दम नथी ठमाणो तेज जीव,अनें जेने आरेण एटले वच्चे ठमाणो अने जेने इयाणि एटले हमणा वर्त्तमाने वली नथी ठमाणो,ए रीतें तेनी त्रण अवस्था थइ प्रथम असंयत हतो,वच्चे संयत थयो, तेवार पछी वली असंयत थयो तेवारे तेने सर्व प्राण, यावत् सर्व सत्वना वधनो दम, ठमाणो न होय, ए जीव काइ सर्वकाल असंयत न कहेवाय' परंतु जेवारे जेवो होय तेवारें तेवो कहेवाय तो अहो निर्ग्रंथो त्रस' अने स्थावरने विषे पण एम जाणवु माटें जेवारे त्रस तेवारे त्रस, अने जेवारे स्थावर तेवारे स्थावर ए बीजो दृष्टांत कह्यो ते एम जाणे अने बिजु पण एप्रमाणे मानवु ॥ १५ ॥

॥ दीपिका—अथ द्वितीयदृष्टांतं प्रत्याख्यातृविषयगतं दर्शयन्नाह । नगवान् गौतम प्राह । निर्ग्रंथा प्रष्टव्या इह खलु गृहपतिर्वा गृहपतिपुत्रोवा तथाप्रकारेषु श्रेष्ठकुलेषु उत्पद्य धर्मश्रवणार्थमागछेयु तेषां धर्मआख्यातव्यइति पृष्टे श्रमणायाहु । हंत आख्यातव्य किं ते तथाप्रकार शुद्ध धर्मं श्रुत्वा एवं वदेयु । इदमेव निर्ग्रंथसत्कं प्रवचनं सत्यं यावत् सर्वड खप्रहीणमार्गं इच्छति । अत्र स्थिताजीवा सिद्ध्यति । यावत्सर्वड खानामंत कुर्वंति तदाज्ञया तथा गच्छाम तथा वेष्टामहे यावत् तथा उच्चया प्रयत्नेन प्राणिनां संयमेन हिंसानिवृत्या संयमामोसयम कुर्मायथा जिनाज्ञा एव ते वदेयु इति पृष्टे श्रमणायाहु हंत वदेयु । पुन श्रमणान् पृछति । किं ते तादृशायाग्या कल्पते प्रव्राजयितु । श्रमणाआहुर्हंत कल्पते इत्यादि । तेसिंचण तेस्तथाविधै सर्वजीवेभ्योदमस्त्य

क एवविधास्ते विहरतोवर्षाणि चत्वारि पंच वा षट् दश वा अल्पतरं बहुतरं वा का देशग्रामादावुद्यतविहारेण विहृत्य पश्चात्पतितपरिणामा सतोगारं व्रजेयुर्गृहस्था त्यर्थ । निग्रंथा एष्टोत्तरमाहु । हत व्रजेयु तेषां सर्वप्राणिव्योदंमौनो निक्षिप्त मवस्थात्रयमाह । पूर्वं गृहस्थत्वे सर्वजतुवधोन त्यक्त अथ य सत्साधुत्वे सर्व स्तेन त्यक्त ।पुन साधुत्व मुक्त्वेदानी गृहस्थे जाते सर्वजंतुवधोन त्यक्त । पूर्वमसयत छारत सयत २ इदानीमसयत ३ असंयतस्य सर्वजंतुवधोन त्यक्त । तदेवं जानीहि थास्तदेवमाज्ञातव्यं । एव यथावस्थात्रयेप्यन्यथात्व स्यादेव त्रसस्थावरयोरपि ज्ञेयं ॥ १ ॥

॥ टीका—साप्रतं पुनरपि पर्यायापन्नस्यान्यथात्व दर्शयितु द्वितीयं दृष्टांतं प्रत्याख्या विषयगतं दर्शयितुमाह (नगवचणमित्यादि) नगवानेव गौतमस्वाम्याह । तद्यथा गृ स्था यतीनामतिके समागत्य धर्मं श्रुत्वा सम्यक्त्व प्रतिपद्य तदुत्तरकाल संजातवैराग्य प्रव्रज्या गृहीत्वा पुनस्तथाविधकर्मोदयात्तामेव त्यजति तेच पूर्वं गृहस्था सर्वारंभप्रवृ स्तदा रता प्रव्रजिता सतोजीवोपमर्दपरित्यक्तदमा पुन प्रव्रज्यापरित्यागे सति नो परि क्तदमा । तदेव तेषा प्रत्याख्यातॄणा यथावस्थात्रयेप्यन्यथात्व नवत्येव त्रसस्थावरयो पि द्रष्टव्यमेतच्च नगवचणमुदाहुरित्यादेर्ग्रंथस्य सेएवमायाणियव इत्येतत्पर्यवसानं तात्पर्यं । अक्षरघटना तु सुगमेति स्वबुध्या कार्या ॥ १५ ॥

नगवचणं उदाहु णियठा खलु पुच्छियव्वा आउसंतो नियठा इह ख लु परिव्वाइयवा परिव्वाइआउआ अन्नयरेहितो तिच्छायय णेहितो आगम्मधम्म सवणवत्तिय उवसंकमेज्जा हताउवसकमेज्जा, कि ते सि तहप्पगारेणं धम्मे आइक्खियव्वे हता आइक्खियव्वे तचेव उवठा वित्तिए जाव कप्पति हंता कप्पति कि ते तहप्पगारा कप्पंति सचुंजि त्तए हता कप्पनि तत्तेण एयारूवेण विहारेण विहरमाणा तचेव जा व आगार वएज्जा हता वएज्जा तेण तहप्पगारा कप्पति संनुजित्तए णो इणठे समठे से जे से जीवे जे परेण तो कप्पति सनुजित्तए से जे से जीवे आरेण कप्पति सनुजित्तए से जे से जीवे जे इयाणी णो कप्पति संनुजित्तए परेण अस्समणे आरेण समणे इयाणि अस्स मणे अस्समणेण सिद्धि णो कप्पति समणेण निग्गथाण सनुजि त्तए से एव मायाणह णियठा सेएव मायाणियव ॥ १६ ॥

अर्थ–हवे भगवंत श्री गौतमस्वामी त्रीजो दृष्टांत कहेले के, आ दृष्टांतने विषे प ण, निश्चें निर्ग्रंथोने पूछवुं ए कारण माटे निर्ग्रंथ उद्देशीने पूछे ले के, अहो आयुष्यमंत निर्ग्रंथो! निश्चे आ जगत् माहे परिव्राजक सन्यासी, परिव्राजिका सन्यासिणी, तथा (अन्नयरेहितोतिउाययणेहितो के०) अन्य तीर्थायतनथकी आवीने (आगम्मधम्मसव णवत्तियं के०) आगम धर्म सांभळवाने साधु पासे आवी ते(उवसंकमेज्जा के०) उद्यम करे? (हंताउवसंकमेज्जा के०) हा आवीने उद्यम करे, तो केम तथाप्रकारना परिव्राज क, तथा परिव्राजिकाने धर्म कहेवो? हा धर्म कहेवो (तचेवउवहावित्तिए के०) तेम कहे वो के, ज्यांसुधि तेने उठाववुं कल्पे? हा, कल्पे ते वळी परिव्राजक थका चारित्रिया थयाने, तेने मंमलें बेसाडवा कल्पे? हा, बेसाडवा कल्पे तथा आहार पाणी लेवो कल्पे? हा, कल्पे एवा विहार विचरता ते वळी ज्यां सुधी तथाविधकर्मने उदय करी गृहस्थावास सेवे? हा, सेवे तेवार तेने तथाप्रकारें आहारपाणी करवा, मंमळीमां बेसाडवा कल्पे? तेवारे निर्ग्रंथबोल्या, के, (णोइणहेसमहे के०) ए अर्थ समर्थ नथी एतावता तेने मंमळीमां बेसा डवुं न कल्पे तो हवे जुओ! के तेनो तेज जीव, तेनी सायें प्रथम आहार पाणी करवो न कल्पे, वळी वळी आहारपाणी करवो कल्पे, अने वळी तेज जीव साथे हमणां आहार पाणी करवो न कल्पे एम तेनी त्रण अवस्था थइ प्रथम अश्रमण, पछी वच्चे श्रमण, ने हमणां वळी अश्रमण ते अश्रमणपणाये सहित एवा ते श्रमण निर्ग्रंथने मंमळीमां पोतानी साथे बेसारी जमाडवो न कल्पे अहो निर्ग्रंथो! ए दृष्टांतनी पेठें त्रस स्था वरने विषे पण जाणवुं जेवार त्रस तेवार त्रसज, अने जेवारे स्थावर, तेवार स्था वरज, जाणवा ए रीतें माना, अने एवी रीत जाणवुं एप्रमाणे निर्ग्रंथनी साक्षिये दे शविरति प्रमाण करी ॥ १६ ॥

॥ दीपिका–अथ तृतीय दृष्टांतं परतीर्थिकानुद्दिश्याह । सुगमार्थमिदं सूत्रं । तात्पर्यार्थ स्त्वयं पूर्वं परिव्राजकादयः संतोऽसंभोग्या साधूनां गृहीतश्रामण्याश्च साधूनां संभोग्याः पुनः श्रामण्यत्यागेऽसंभोग्या एवं पर्यायान्यथात्वं त्रसस्थावराणामपि याज्यं ॥ १६ ॥

॥ टीका–तदेवं द्वितीय दृष्टांतं प्रदर्श्याधुना तृतीय दृष्टांतं परतीर्थिकोद्देशेन दर्शयितुमा ह । (भगवंचणमुदाहुरित्यादि जावसेएवमायाणियव्वत्ति) उत्तानार्थं । तात्पर्यार्थस्त्वयं पू र्वं परिव्राजकादयः संतोऽसंभोग्याः साधूनां गृहीतश्रामण्याश्च साधूनां संभोग्याः तद्वृत्ता पुनस्तदभावे त्वसंभोग्याइत्येवं पर्यायाऽन्यथात्वं त्रसस्थावराणामप्यायोजनीयमिति॥१६॥

भगवंचणं उदाहु संतेगइया समणोवासगा भवंति तेसिंचणं एवं वुत्तपुव्वं भवइ णो खलु वयं संचाएमो मुंमा भवित्ता आ

क एवविधास्ते विहरतोवर्षाणि चत्वारि पंच वा षट् दश वा अल्पतरं बहुतरं वा कालं देशग्रामादावुद्यतविहारेण विहृत्य पश्चात्पतितपरिणामा सतोगारं व्रजेयुर्गृहस्थीभवेयुरित्यर्थ । निर्ग्रंथा प्रष्टोत्तरमाहु । हत व्रजेयु तेषां सर्वप्राणिन्योदंडोनो निक्षिप्तः । इत्येवमवस्थात्रयमाह । पूर्वं गृहस्थत्वे सर्वजंतुवधोन त्यक्त अथ य सत्साधुत्वे सर्वजंतुवधस्तेन त्यक्त ।पुन साधुत्वं मुक्त्वेदानीं गृहस्थे जाते सर्वजंतुवधोन त्यक्त । पूर्वमसंयत थारत सयत २ इदानीमसंयत ३ असंयतस्य सर्वजंतुवधोन त्यक्त । तदेवं जानीत निर्ग्रंथास्तदेवमाज्ञातव्य । एव यथावस्थात्रयेप्यन्यथात्वं स्यादेव त्रसस्थावरयोरपि ज्ञेयं ॥१५॥

॥ टीका–साप्रतं पुनरपि पर्यायापन्नस्यान्यथात्व दर्शयितु द्वितीयं दृष्टांतं प्रत्याख्यानविषयगतं दर्शयितुमाह (नगवचणमित्यादि) नगवानेव गौतमस्वाम्याह । तद्यथा गृहस्था यतीनामतिके समागत्य धर्मं श्रुत्वा सम्यक्त्व प्रतिपद्य तदुत्तरकाल संजातवैराग्या प्रव्रज्या गृहीत्वा पुनस्तथाविधकर्मोदयात्तामेव त्यजति तेच पूर्वं गृहस्था सर्वारंभप्रवृत्तास्तदा रता प्रव्रजिता सतोजीवोपमर्दपरित्यक्तदंडा पुन प्रव्रज्यापरित्यागे सति नो परित्यक्तदंडा । तदेव तेषां प्रत्याख्यातॄणां यथावस्थात्रयेप्यन्यथात्व नवत्येव त्रसस्थावरयोरपि इष्टव्यमेतच्च नगवचणमुदाहुरित्यादेर्ग्रंथस्य सेएवमायाणियव्व इत्येतत्पर्यवसानस्य तात्पर्यं । अक्षरघटना तु सुगमेति स्वबुध्या कार्या ॥ १५ ॥

नगवंचणं उदाहु णियंठा खलु पुछियव्वा आउसंतो नियंठा इह खलु परिवाइयवा परिवाइआउवा अन्नयरेहितो तित्थाययणेहिंतो आगम्मधम्म सवणवत्तिय उवसंकमेज्जा, हंताउवसंकमेज्जा, किं तेसि तहप्पगारेणं धम्मे आइक्खियव्वे हंता आइक्खियव्वे तचेव उवठावित्तिए जाव कप्पति हंता कप्पति किं ते तहप्पगारा कप्पति संभुंजित्तए हंता कप्पति तत्तेण एयारूवेण विहारेण विहरमाणा तचेव जाव आगारं वएज्जा हंता वएज्जा तेण तहप्पगारा कप्पति संभुंजित्तए णो इणठे समठे से जे से जीवे जे परेण तो कप्पति संभुंजित्तए से जे से जीवे आरेण कप्पति संभुंजित्तए से जे से जीवे जे इयाणीं णो कप्पंति संभुंजित्तए परेण अस्समणे आरेण समणे इयाणिं अस्समणे अस्समणेण सिद्धिं णो कप्पति समणेण निग्गंथाण संभुंजित्तए से एव मायाणह णियंठा सेएव मायाणियव्व ॥ १६ ॥

अर्थ—हवे भगवंत श्री गौतमस्वामी त्रीजो दृष्टांत कहेछे के, आ दृष्टांतने विषे प ण, निश्चे निग्रंथोने पूछवु ए कारण माटे निग्रंथ उद्देशीने पूछे छे के, अहो आयुष्यमंत निग्रंथो! निश्चे आ जगत् माहे परिव्राजक सन्यासी, परिव्राजिका सन्यासिणी, तथा (अन्नयरेहितोतिछाययणेहितो के०) अन्य तीर्थायतनपकी आवीने (आगम्मधम्मसव णवत्तियं के०) आगम धर्म सांभळवाने साधु पासे आवी ते(उवसकमेज्जा के०) उद्यम करे? (हंताउवसकमेज्जा के०) हा आवीने उद्यम करे, तो केम तथाप्रकारना परिव्राज क, तथा परिव्राजिकाने धर्म कहेवो? हा धर्म कहेवो (तचेवउवट्ठावित्तिए के०) तेम कहे वो के, ज्यांसुधि तेने उठाववु कल्पे? हा, कल्पे ते वळी परिव्राजक थका चारित्रिया थयाछे, तेने मंडळे वेसाडवा कल्पे? हा, वेसाडवा कल्पे तथा आहार पाणी लेवो कल्पे? हा, कल्पे एवा विहार विचरता ते वळी ज्या सुधी तथाविधकर्मने उदये करी गृहस्थावास सेवे? हा, सेवे तेवारे तेने तथाप्रकार आहारपाणी करवा, मंडळीमा वेसाडवा कल्पे? तेवारे निग्रंथबोल्या, के, (णोइणट्ठेसमट्ठे के०) ए अर्थ समर्थ नथी एतावता तेने मंडळीमा वेसा डवु न कल्पे तो हवे जुउं! के तेनो तेज जीव, तेनी साथे प्रथम आहार पाणी करवो न कल्पे, वच्चे वळी आहारपाणी करवो कल्पे, अने वळी तेज जीव साथ हमणा आहार पाणी करवो न कल्पे एम तेनी त्रण अवस्था थइ प्रथम अश्रमण, पछी वच्चे श्रमण, ने हमणा वळी अश्रमण ते अश्रमणपणाये सहित एवा ते श्रमण निग्रंथने मंडळीमां पोतानी साथे वेसारी जमाडवो न कल्पे अहो निग्रंथा! ए दृष्टांतनी पेठे त्रस स्था वरने विषे पण जाणवु जेवारे त्रस तेवारे त्रसज, अने जेवारे स्थावर, तेवारे स्था वरज, जाणवा ए रीते मानो, अने एरी रीते जाणवु एप्रमाणे निग्रंथनी साक्षिये दे शविरति प्रमाण करी ॥ १६ ॥

॥ दीपिका—अथ तृतीय दृष्टांतं परतीर्थिकानुद्दिश्याह। सुगमार्थमिदं सूत्रं। तात्पर्यार्थ स्त्वयं पूर्वं परिव्राजकादयः सतोऽसंभोग्याः साधूनां गृहीतश्रामण्याश्च साधूनां संभोग्याः पुनः श्रामण्यत्यागेऽसंभोग्या एव पर्यायान्यथात्वं त्रसस्थावराणामपि वाच्यं ॥ १६ ॥

॥ टीका—तदेवं द्वितीयं दृष्टांतं प्रदर्श्याधुना तृतीयं दृष्टांतं परतीर्थिकादेशेन दर्शयितुमा ह। (भगवंचणमुदाहुरित्यादि जावसेएवमायाणियव्वंत्ति) उत्तानार्थं। तात्पर्यार्थस्त्वयं पू र्वं परिव्राजकादयः सताऽसंभोग्याः साधूनां गृहीतश्रामण्याश्च साधूनां संभोग्याः तत्त्यागा पुनस्तदभावे त्वसंभोग्याइत्येवं पर्यायाऽन्यथात्वं त्रसस्थावराणामप्यायोजनीयमिति॥ १६॥

भगवंचणं उदाहु संतेगइया समणोवासगा भवंति तेसिंचणं एवं वुत्तं पुव्वं भवइ णो खलु वयं संचाएमो मुंडा भवित्ता आ

गाराउ अणगारियं पव्वइत्ताए वय ण चाउद्दसठमुदिठपुणि मासिणीसु पडिपुणं पोसहं सम्मं अणुपालेमाणा विहरि स्सामो थूलग पाणाइवाय पच्चक्खाइस्सामो एवं थूलगं मुसा वाय थूलग अदिन्नादाण थूलग मेहुण थूलग परिग्गहं प च्चक्खाइस्सामो इच्छापरिमाण करिस्सामो डुविहं तिविहेण मा खलु मम हाए किंचि करेहवा करावेहवा तत्त विपच्चक्खाइस्सा मो ते ण अनोच्चा अपिच्चा असिणाइत्ता आसदीपेढियाउ प च्चारुहित्ता ते तहा कालगया कि वत्तव्वसिया सम्मं कालग ताविं वत्तव्वसिया ते पाणावि वुच्चति ते तसावि वुच्चति ते महा काया ते चिरठिइया ते बहुतरगा पाणा जेहिं समणोवासग स्स सुपच्चक्खाय नवइ ते अप्पयरागा पाणा जेहिं समणोवास गस्स अपच्चक्खाय नवइ इति से महयाउ जण्ण तुन्भे वयह त चेव जाव अयपि नेदे से णो णेयाउए नवइ ॥ १७ ॥

अर्थ–वली उदक प्रत्ये नगवत श्री गौतमस्वामी वोल्या के, निश्चे आ जगत् मां हे कोइ एक श्रमणोपासक होय, तेणे एवु व्रत विशेष पूव उच्चार कर्यु होय के, नि श्चे अमे मुंम थई गृहस्थावास थकी, अणगार पणु आदरी शकवाने समर्थ नथी तेथी, अमे चतुर्दशी, अष्टमी, चोमासानी त्रण पूर्णिमा, तथा उद्दिष्टतिथि ते महा कल्याणिक तिथि, एटले दिवसे प्रतिपूर्ण सम्यक् प्रकारे पौषध पालता विचरशु, तथा वली स्थूल प्राणातिपात पच्चक्खीशु एणी पेरे स्थूल मृषावाद, स्थूल अदत्तान, स्थूल मैथुन, स्थूल परिग्रह, पच्चक्खीशु इच्छा प्रमाणे करीशु, "डुविहतिविहेण" इत्यादिक नागाये करी पच्चखीशु (माखलुममहाए के०) निश्चे महारे अर्थे पौषध माहे काहि पचन पाचनादिक म करवु बीजा पासे म करावबु, त्या पण एवु पूर्वोक्त अ मे पच्चक्खाण करीशु (तेण के०) ते एवा व्रतना उच्चार करनार श्रावक, (अनो च्चा के०) अणजम्या, (अपिच्चा के०) पाणी पीधा विनाना, (असिणाइत्ता के०) अने स्नान कर्या विना, पोसहव्रत करे पोसहव्रतमा एटला वाना न करे (आसदी के०) मचक, (पेढियाउ के०) पीढी, माची इत्यादिक, ते थकी (पच्चारु हित्ता के०) उत्तरीने सम्यक् प्रकारे पौषध लीये (तेतहाकालगयाकिंवत्तव्वसिया

के०) तेणे तथा प्रकारे काल कीधो, तो तेनें केवा कहिये, ते रुडी पेरे मरण पाम्या कहिये किंवा नहीं ? तेवारें निर्ग्रंथ वोल्या के, (सम्मकालगयाविवत्तवसिया के०) ते सम्यक् प्रकार रूडी रीतें कालगत थया एम कहिये, तेवारें श्रीगौतम वोल्या के, ए रीतें जेणे काल कीधो, तेने अवश्य देवलोकनें विषे उत्पत्ति जाणीये वैये केमके, रुडे परिणामें जे मरण पामे ते देव थाय (तेपाणाविवुच्चति के०) त्यां थका तेने प्राण पण कहिये, (तेतसाविवुच्चति के०) तेने त्रस पण कहिये, ते महाकाय कहीये, तेने चिरस्थितिक कहिये, तो ए कारणे (तेवहुतरगापाणा के०) ते घणा जीव के, (जेहिंसमणोवासगस्ससुप च्चखायमवइ के०) जेने विषे श्रावकने रुडू पच्चरकाण होय अने ते थोडा जीव, के जेने विषे श्रावकने पच्चरकाण नथी एम ते श्रावकने महोटी त्रसकाय थकी उपशमवे ते पच्चखाण राखवानो उद्यमवे तेने विराधवानी विरतिवे एवा श्रावकने तमे कहोवो के, एवो कोइ पर्याय नथी के, जेणे करी श्रावकने एक पण प्राणातिपातनु पच्चरकाण थाय ते तमारु वचन न्यायमार्गनु नथी ॥ १७ ॥

॥ दीपिका—एवं दृष्टांतत्रयेण निर्दोषां देशविरतिं प्रसाध्य पुनरपि तद्गतमेव विचारमाह । भगवान् गौतमउदकं प्रत्याह । शांतिप्रधानाएके श्रमणोपासकाभवंति तेषां च इदमुक्तपूर्वं भवति । यथा न खलु वयं शक्नुमः प्रव्रज्यां ग्रहीतुं किंतु ? वयं चतुर्दश्यष्टम्यादिषु तिथिषु संपूर्णं पौषधं सम्यगनुपालयंतो विहरिष्यामः तथा स्थूलप्राणातिपातमृषावादादत्तादानमैथुनपरिग्रहं प्रत्याख्यास्यामः । द्विविधं कृतकारितभेदात् श्राद्धस्यानुमतेरनिषिद्धत्वात् त्रिविधं मनोवचनकायैः मा निषेधे पोषधस्थस्य मम कृते किंचित्पचनपाचनादिकं मा कार्षि परेण मा कारयत सर्वथाऽसंभविनो वस्तुनोऽनुमतेरपि निषेधः तत्रापि प्रत्याख्यास्याम ते श्रावकाअभुक्त्वाऽपीत्वाऽस्नात्वा च पोषधयुतत्वादासंदीपीठिकातः प्रत्यारुह्याऽपतीर्य सम्यक् पौषधं कृत्वा कालं कृतवंतः ते किं सम्यक्कृतकालाउतासम्यक् ? एवं पृष्टैर्निर्ग्रंथैरवश्यमेव वक्तव्यं ते सम्यक्कालगता । एवं कालगतानामवश्यभावी देवलोकोत्पादः तत्रोत्पन्नाश्च ते त्रसाएव ततश्च कथं निर्विषयता प्रत्याख्यानस्येति ॥ १७ ॥

॥ टीका—तदेव दृष्टांते प्रत्याख्यातृविषयगतोगृहस्थयतिपुनर्गृहस्थभेदेन पर्यायभेदं प्रदर्शितं । तृतीयेतु दृष्टांते परतीर्थिकसाधुभावोनिष्क्रमणभेदेन सभाग द्वारेण पर्यायभेदं व्यवस्थापितइति । तदेवं दृष्टांतप्राचुर्येण निर्दोषां देशविरतिं प्रसाध्य पुनरपि तद्गतमेव विचारं कर्तुकामआह । (भगवंचणमुदाहुरित्यादि) पुनरपि गौतमस्वाम्युदकं प्रतीदमाह । तद्यथा वहुभिः प्रकारैस्त्रसत्वार्थ संभाव्यते तत एवाशून्यस्तु संसारस्तदशून्यत्वे

तन्निर्विषय श्रावकस्य त्रसवधनिवृत्तिरूपप्रत्याख्यान । तदधुना ता ससारस्य दर्शयति । नगवानाह् । सति विद्यते शातिप्रधानावा एके केचन पासकानवति तेपा चेदमुक्तपूर्वं नवति सनाव्यते च श्रावकाणामेवनूतस्य वचस सनव इति । तद्यथा । न खलु वय शक्नुम प्रव्रज्या ग्रहीतु किंतु ? वयं । एमिति वाक्यालंकारे । चतुर्दश्यष्टमीपौर्णमासीपु सपूर्णं पौपधमाहारशरीरसत्कारब्रह्मचर्याव्यापाररूपं पौषधं सम्यगनुपालयतोविहरिष्याम तथा स्थूलप्राणातिपातमृपावाददत्तादानमैथुनपरिग्रह प्रत्याख्यास्यामोद्विविधमिति कृतकारितप्रकार द्वयेनानुमते श्रावकस्याप्रतिषिद्धत्वात्तथा त्रिविधेनेति मनसा वाचा कायेन च तथा मा इति निपेधे खलु इति वाक्यानकारे मदर्थं पचनपाचनादिक पौपधस्य मम कृते मा कार्ष्ट तथा परेण मा कारयत तत्राप्यनुमतावपि सर्वथा यदसनवति तत्प्रत्याख्यास्याम ते एवनूतकृतप्रतिज्ञा सत श्रावका अनुक्त्वाऽपीत्वाऽस्नात्वा च पोपधोपेतत्वादासदीपीठिकात प्रत्यारुह्यावतीर्य सम्यक् पौषध गृहीत्वा काल कृतवतस्ते तथाप्रकारेण कृतकाला सत कि सम्यक्कृतकालास्तेतासम्यगिति ? कथ वक्तव्य स्यादित्येव पृष्टैर्निर्ग्रंथैरवश्यमेव वक्तव्य स्यात् सम्यक्कालगताइत्येव कालगतानामवश्यनावी तेपा देवलोकेपूत्पादस्तत्पन्नश्च त्रसएव ततश्च कथ निर्विषयता प्रत्याख्यानस्योपासकस्येति ॥ १७ ॥

नगवचण उदाहु सतेगइया समणोवासगा नवति तेसिचण ए व वुत्त पुव्व नवइ णो खलु वय सचाएमो मुन्मा नवित्ता आगा राउ जाव पव्वइत्तए णो खलु वय सचाएमो चाउद्दसठमुदि ठपुण्ण मासिणीसु जाव अणुपालेमाणा विहरित्तए वय ए अपछिम मारणतिय सलेहणा जूसणा जूसिए नत्तपाण पडियाइक्खिया जाव काल अणवकखमाणा विहरिस्सामो सव्व पाणाइवाय पच्च क्खाइस्सामो जाव सव्व परिग्गह पच्चक्खाइस्सामो तिविह तिविहे ए मा खलु ममठाए किंचिवि जाव आसदीपेढियाउ पच्चारुहित्ता एते तहा कालगयाइ कि वत्तव्वसिया सम्म कालगयाइ वत्तव्व सिया ते पाणावि वुच्चति जाव अयपि नेदे से णो णेयाउए नवइ ॥ १८ ॥

अर्थ—वली गैातम स्वामी कहेछे कोइ एक श्रमणोपासक एवा होय, तेणे एवु पूर्वे व्रत उच्चारवानु वचन कह्यु होय के, निश्चे अमे मुन्म थइने गृहस्थावास थका यावत् अ

णगार पण आदरी शकवाने समर्थ नथी चतुर्दशी, अष्टमी, त्रण चोमासानी पूर्णिमा, तथा महाकल्याणिक तिथिने विषे पौषध लइ न शकिये अमारे ठेले काले मरणने अंते शरीर पातलु पाडवा संलेषणाने विषे जूसणा एटले आत्मा स्थापवो, स्थापीने नात, एटले अन्न पाणी निषेधिने यावत् मरणकाल अण वांछता मरणा निजापा अण करता विचरीशु यावत् सर्व प्राणातिपात, सर्व मृषावाद, सर्व अदत्तादान, सर्व मैथुन, सर्व परिग्रह, त्रिविध त्रिविध प्रकारे पच्चरकीशु, तथा अमारे अर्थे काइ पण पचन पाचनादिक म करो,म करावो,एवु पण पच्चरकाण करीशु ते श्रावको ए रीतें अण जमते,पाणी अणपीते, स्नानादिक अण करते, मचक, माची इत्यादिक थकी उतरीने ते प्रकारे काल करे तो तेनें केवा कहिये, रूडा मरणना करनार कहिये के, माठा मरणना करनार कहिये ? ते वारें निर्ग्रंथ बोल्या, ते रुडी पेरें कालगत थया कहेवाय, तेपाणाविवुच्चति इत्यादिक शब्दोनो अर्थ, पूर्ववत् जाणवो यावत् तमारु एवु बोलवु, ते न्याय मार्गेनु नथी त्या सुधी जाणवु ॥ १८ ॥

॥ दीपिका–पुन श्राद्धोद्देशेन प्रत्याख्यानविषय दर्शयति । गौतम प्राह । सति विद्यते एके केचन श्रमणोपासकास्तेषामेतदुक्तपूर्व नवति । यथा न शक्नुमोवय प्रव्रज्यां ग्रहीतु नापि चतुर्दश्यादिषु सम्यक् पौषध पालयितु वय चापश्चिमया संलेखनक्षपणया क्षपितकाया । यदिवा संलेखनाजोषणया सेवनया जोषिता सेविताउत्तमार्थगुणैरेव नूता सतोनक्तपान प्रत्याख्याय काल दीर्घकालमनवकाङ्क्षमाणाविहरिष्याम । कोर्थ ? न खलु वय दीर्घकाल व्रतं पालयितु समर्था किंतु वय सर्वमपि प्राणातिपातादिक प्रत्याख्याय संलेखनया संलिखितकायाश्चतुर्विधाहारत्यागेन जीवितं त्यक्तु समर्था । इति सूत्रेणैवाह । (सवपाणाइत्रायमित्यादि) यावत्त तथा कालगता किं वक्तव्यमेतत्स्यात् सम्यक् ते कालगताइति पृष्टानिर्ग्रंथाआहुर्यथा ते सन्मनस शोजनचित्ता कालगता इति । ते काल कृत्वा सुरलोकेषूत्पद्यते तत्र चोत्पन्नायद्यपि हतु न शक्यते तथापि त्रसत्वात्ते श्राद्धस्य त्रसवधनिवृत्तिप्रत्याख्यानस्य विषया स्यु ॥ १८ ॥

॥ टीका–पुनरन्यथा श्रावकादेशेनैव प्रत्याख्यानस्य विषय प्रदर्शयितुमाह । (नगरचणमित्यादि) गौतमस्वाम्येवाह । तद्यथा सति विद्यते एक केचन श्रमणोपासकास्तेषा चैतदुक्तपूर्व नवति । तद्यथा । खलु न शक्नुमोवय प्रव्रज्यां ग्रहीतु नापि चतुर्दश्यादिषु सम्यक् पौषध पालयितु वय चापश्चिमया संलेखनक्षपणया क्षपितकायायदिवा संलेखनाजोषणया सेवनया जोषिता सेविताउत्तमार्थगुणैरित्येवनूता सतोनक्तपान प्रत्याख्या

तन्निर्विषय श्रावकस्य त्रसवधनिवृत्तिरूपप्रत्याख्यान । तदधुना बहुप्रकारत्रससंनूत्याऽऽप्त ता ससारस्य दर्शयति । नगवानाह । सति विद्यते शातिप्रधानावा एके केचन श्रमणो पासकान्नवति तेषा चेदमुक्तपूर्वं नवति सनाव्यते च श्रावकाणामेवनूतस्य वचस संनव इति । तद्यथा । न खलु वय शक्नुम प्रव्रज्या ग्रहीतु किंतु ? वयं । एमिति वाक्यालंकारे । चतुर्दश्यष्टमीपौर्णमासीषु सपूर्ण पौषधमाहारशरीरसत्कारब्रह्मचर्याव्यापाररूपं पौषधं सम्यगनुपालयतोविहरिष्याम तथा स्थूलप्राणातिपातमृषावादादत्तादानमैथुनपरिग्र ह प्रत्याख्यास्यामोद्विविधमिति कृतकारितप्रकार द्वयेनानुमते श्रावकस्याप्रतिषिद्धत्वात्तथा त्रिविधेनेति मनसा वाचा कायेन च तथा मा इति निषेधे खलु इति वाक्यालंकारे मदर्थं पचनपाचनादिक पौषधस्य मम कृते मा कार्ष्ट तथा परेण मा कारयत तत्राप्यनुमतावपि सर्वथा यदसन्नवति तत्प्रत्याख्यास्याम ते एवन्नूतकृतप्रतिज्ञा सत श्रावका अनुक्त्वाऽ पीत्वाऽस्नात्वा च पौषधोपेतत्वादासदीपीठिकात प्रत्यारुह्यावतीर्य सम्यक् पौषध गृही त्वा काल कृतवतस्ते तथाप्रकारेण कृतकाला सत किं सम्यक्कृतकालाउतासम्यगिति ? कथ वक्तव्य स्यादित्येव पृष्टैर्निर्ग्रंथैरवश्यमेव वक्तव्य स्यात् सम्यक्कालगताइत्येव कालग तानामवश्यन्नावी तेषां देवलोकेषूत्पादस्तत्रुत्पन्नश्च त्रसएव ततश्च कथ निर्विषयता प्रत्याख्यानस्योपासकस्येति ॥ १७ ॥

नगवचण उदाहु सतेगइया समणोवासगा नवंति तेसिचण ए व वुत्त पुव्व नवइ णो खलु वय सचाएमो मुंमा नवित्ता आगा राउ जाव पव्वइत्तए णो खलु वय सचाएमो चाउद्दस ठमुद्दिठ्ठपुस मासिणीसु जाव अणुपालेमाणा विहरित्तए वय ण अपच्छिम मारणतिय सलेहणा जूसणा जूसिए नत्तपाण पडियाइक्खिया जाव काल अणवकंखमाणा विहरिस्सामो सव्व पाणाइवाय पच्च क्खाइस्सामो जाव सव्व परिग्गह पच्चक्खाइस्सामो तिविह तिविहे ण मा खलु ममठ्ठाए किंचिवि जाव आसंदीपेढियाउ पच्चारुहित्ता एते तहा कालगयाइ किं वत्तव्वसिया सम्म कालगयाइ वत्तव्व सिया ते पाणावि वुच्चति जाव अयपि नेदे से णो णेयाउए नवइ ॥ १८ ॥

अर्थ—वली गौतम स्वामी कहेछे कोइ एक श्रमणोपासक एवा होय, तेणे एवु पूर्वे व्रत उच्चारवानु वचन कह्यु होय के, निश्चे अमे मुंम थइने गृहस्थावास थका यावत् अ

॥ दीपिका–पुन प्रत्याख्यानविषयमाह् । न प्रथमव्रतग्रहण ततआरभ्य मरणातं या वद्दण्डोनिक्षिप्तस्त्यक्त । तेच तस्मान्नवात्स्वायुष जहति त्यक्त्वा त्रसजीवित स्वक पाप मादाय गृहीत्वा डुर्गतिगामिन स्यु । महारम्भपरिग्रहत्वात्ते मृतानरके नारकत्रसत्वेनोत्प न्ना सामान्येन प्राणिनउच्यते विशेषतस्तु त्रसामहाकायाइत्यादि पूर्ववत् ॥ १९ ॥

॥ टीका–पुनरन्यथा प्रत्याख्यानस्य विषयमुपदर्शयितुमाह् । (नगवचणउदाहुरित्यादि) नगवानाह् । एके केचन मनुष्याएवनूतानवति । तद्यथा महेच्छामहारम्भामहापरिग्रहा इत्यादि सुगम । यावद्येषु वा श्रमणोपासकस्यादीयतइत्यादान प्रथमव्रतग्रहण ततआ रभ्याऽऽमरणात्तावद्दण्डोनिक्षिप्त परित्यक्तोनवति। तेच तादृग्विधास्तस्मान्नवात्कालात्स्वा युष विजहति त्यक्त्वा त्रसजीवित ते नूय पुन स्वकर्म स्वकृतकिल्बिषमादाय गृही त्वा डुर्गतिगामिनोनवति एतडुक्त नवति । महारम्भपरिग्रहत्वात्ते मृता पुनरन्यतरपृथिव्या नारकत्रसत्वेनोत्पद्यते तेच सामान्यसंज्ञया प्राणिनोविशेषसंज्ञया त्रसामहाकाया चिर स्थितिकाइत्यादिपूर्ववद्यावत् (णोणेयाउएत्ति) ॥ १९ ॥

नगवचण उदाहु संतेगइया मणुस्सा नवति तजहा अणारम्ना अ परिग्गहा धम्मिया धम्माणुया जाव सवाउ परिग्गहाउ पडिवि रया जाव जीवाए जेहिं समणोवासगस्स आयाणसो आम रणताए दण्डे णिक्खित्ते ते तउ आउग विप्पजहति ते तउ नुज्जो सग मादाए सग्गइगामिणो नवति ते पाणावि वुच्चति जाव णो णेयाउ ए नवइ ॥ २० ॥

अर्थ–वली एहिज अर्थ दीपाववा नणी, गौतम स्वामी कहेछे के, आ जगत् मांहे का इ एक मनुष्य, एवा होय के, निरारम्नी, नि परिग्रही, धार्मिक धर्मनीज अनुमोदना क रनार, इत्यादिक त्यां सुधी कहेवु, ज्यां सुधी सर्वपरिग्रह थकी विरति एटले निवृत्याने सर्व विरतिना पालनार, जावजीव सुधी, जेने विषे श्रमणोपासकन प्रथम व्रतग्रहण का ल प्रारम्नी मरणातसुधी घातनो निषेध कर्योछे ते तेवा सर्वविरति वाला मनुष्य, नव स वधीनु आयुष्य गमीने पाताना पूर्वोपार्जित शुन कर्म लेइन सद्गतिगामि थाय ते त्यां थता प्राण पण कहेवाय इत्यादिक बीजो पाठ, सर्व पूर्ववत् जाणवो ए कारणे ए तमारु वचन रूडु न्याय मार्गनु नथी ॥ २० ॥

॥ दीपिका–पुन प्रत्याख्यानविषय दर्शयति । पूर्वोक्तेभ्योमहारम्नादिन्योविपरीता

य कालं दीर्घमनवकाङ्क्षमाणा विहरिष्याम । इदमुक्तं भवति । न वयं दीर्घकालं पौषधादिक व्रतं पालयितुं समर्थाः किंतु ? वय सर्वमपि प्राणातिपातादिक प्रत्याख्याय संलेखनया संलिखितकायाश्चतुर्विधाहारपरित्यागेन जीवितं परित्यक्तुमलमिति । एतत्सूत्रेणैव दर्शयति (सव्वपाणाइवायमित्यादि) सुगम । यावत्ते तथा कालगता किं वक्तव्यमेतस्याल्लभ्यं ते कालगताइत्येव एष्टानिर्ग्रंथाएतदूचुर्यथा ते सन्मनस शोभनमनसस्ते कालगताइति तेच सम्यक् संलेखनया यदा कालं कुर्वंति तदाऽवश्यमन्यतमेषु देवलोकेपूत्पद्यंते तत्र चोत्पन्नायद्यपि ते व्यापादयितुं न शक्यते तथापि त्रसत्वात्ते श्रावकस्य त्रसवधनिवृत्तस्य विपयता प्रतिपद्यते ॥ १८ ॥

भगवचण उदाहु संतेगइया मणुस्सा भवति तजहा महइच्छा महारंभा महापरिग्गहा अहम्मिया जाव डुप्पडियाणंदा जाव सव्वाउ परिग्गहाउ अप्पडिविरया जाव जीवाए जेहिं समणोवासगस्स आयाणसो आमरणंताए दंमे णिक्खित्ते ते ततो आउगं विप्पजहंति ततो भुज्जो सगमादाए डुग्गइगामिणो भवति ते पाणावि वुच्चति ते तसावि वुच्चति ते महाकाया ते चिरठिइया ते बहुयरगा आयाणसोइति से महयाउ ण जन्नं तुन्ने वदह तचेव अयपि भेदे से णो णेयाउए भवइ ॥ १९ ॥

अर्थ–वली गोतम स्वामी कहेछे आ जगत् माहे कोइ एक एवा होय, ते कहेछे (महइच्छा के०) महोटी इच्छावाला एटले महालोभी, महाआरंभी, महापरिग्रही, अधार्मिक यावत् डुष्प्रत्यानंदी, एटले कोइनु बुरू थाय तो पोते आनंद पामे, यावत् सर्व परिग्रह थकी अविरति एटले निवर्त्या नथी जाव जीव लगे जेने विषे श्रमणोपासकने (आयाणसो के०) प्रथम व्रत ग्रहण प्रारंभीने मरणांत सुधी त्रस पणाने लीधे तेनो घात दमाणोछे हवे ते सर्वथा अविरति मनुष्यनो ते भवसबंधी आयुष्यनो क्षय थये थके ते आयुष्य त्यागीनें (भुज्जोसगमादाए के०) वली पोताना उपार्जन करेला कर्मो लेइनें (डुग्गइगामिणोभवति के०) दोर्गतिगामि थाय, एटले शु कह्यु ? तोके, जे महारंभी, महापरिग्रही होय, ते नरकादिक डुर्गतिये जाय त्या छता तेने प्राण पण बोलिये, अने त्रस पण बोलिये, ते महाकायवाला कहिये, तेने घणी स्थिति होय, एम पण कहिये, ते घणा जीवनी त्रस जाति पणाने पामे माटे तेनो विनाश करवाने विषे श्रावकने रूडू पच्चक्खाण होय इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु ए कारणे तमारु बोलवु न्याय मार्गनु नथी॥१९॥

भगवंचण उदाहु संतेगइया मणुस्सा भवति तं जहा आरणिया आवसहिया गामणियंतिया कण्हुई रहस्सिया जेहि समणोवा सगस्स आयाणसो आमरणताए दंभे णिक्खित्ते भवइ णो बहु संजया णो बहुपडिविरया पाण भूय जीव सत्तेहिं ते संतो अप्पणा सच्चा मोसाइ एव विप्पडिवेदेति अहं ण हंतवो अन्ने हंतवा जाव कालमासे कालं किच्चा अन्नयराइं आसुरियाइं किब्बिसियाइं जाव उववत्तारो भवति तउ विप्पमुच्चमाणा भुज्जो एलमुयत्ताए तमोरुवत्ताए पच्चायति ते पाणावि वुच्चति जाव णो णेयाउए भवइ॥२९॥

अर्थ–वली गौतम स्वामी कहेछेके,आ जगत्माहे कोइएक मनुष्य एवा होय के,आरणिक एवु तीर्थविशेष तेने विषे रहेनार ते आरण्यवासी,तथा कंदमूलफलाहारी,वृक्षने मूले वसनार एवा पुरुष,तापस विशेष जाणवा (आवसहिया के०) वली कोइएक पानडानी पर्ण कूटी करी रहेनारा, ग्राम निमंत्रिक एटले आजीविका निमित्ते ग्राम समीपे वसनारा,(कण्हुईरहस्सिया के०) कोइएक कार्यने विषे रहस्यना करनार,इत्यादि तापस विशेष,जेने विषे श्रमणोपासकने व्रतग्रहण प्रारंभीने मरणांत सुधी हिंसानो निषेध छे हवे ते तीर्थिक केवाछे ? तोके घणा संयत नथी,कारणके तेमाहे सम्यक् ज्ञान नथी, ते माटे ते पूर्ण संयमने जाणता नथी,तथा प्राण,भूत,जीव,अने सत्वने विषे जेने घणु व्रतिपणु नथी ते पोते पोता थकी एवी सत्यामृषा भाषा प्रयुंजीने लोक आगल आवी रीते बोले ते कहेछे मने ब्राह्मण पणाने लीधे दंडादिक करी हणशो नही बीजा शुद्रादिकाने हणशो इत्यादिक पूर्व अध्ययनने विषे कह्युछे,ते सर्व अहीं जाणी लेवु एवा मनुष्य,कालमासे काल करीने बालतपश्चर्याने योग अनेरा आसुरिय किल्बिषीयादिकनी गतिने विषे जाय जे कारण माटे ते जीवघातना उपदेशना देनार,नागाविज्ञापी तापसा, नित्याधिकार सहित एवी नरकादिक गतिमाहे जाय वली बालतपने योगे तेने प्रथमतो पूर्वोक्त नीचगति प्राप्त थाय, ते वार पछी वली ते आसुरीयादिक गतिथकी आयुष्यने क्षये चवीने वली वली बेहेरा, मूगा, एवा तमोरूप अंध मनुष्य थाय एवा छता तेने त्रस कहियें. तेने प्राण कहियें, इत्यादिक पूर्ववत् जाणवु इत्यादिक यावत् ए तमारु वचन न्यायमार्गनु नथी ॥ २९ ॥

॥ दीपिका–क्वचान्यत् एक मनुष्याएवभूता स्यु आरण्यिकाआरण्यगामिन आवसथिकाग्रामनिमंत्रिका (कण्हुईरहस्सिया) कचित्काय रहस्यका एते सर्वपि त॥ यकविशेषा

सुशीला साधव एते च सामान्यश्रावकास्तेपि त्रसेष्वेव देवेषूत्पद्यंते ततोपि न नि र्विपय प्रत्याख्यान ॥ २० ॥

॥ टीका–पुनरन्येन प्रकारेण प्रत्याख्यानस्य विपय दर्शयितुमाह । (भगवचणउदा हुरित्यादि) पूर्वोक्तेन्योमहारंजपरिग्रहवदादिन्योविपर्यस्ता सुशीला सुप्रत्यानंदा सा धवइत्यादि सुगम। यावत् (एोऐयाउएजवइत्ति)। एते च सामान्यश्रावकास्तेपि त्रसेष्वे वान्यतरेषु देवेषूत्पद्यते ततोपि न निर्विपय प्रत्याख्यानमिति ॥ २० ॥

भगवचण उदाहु संतेगइया मणुस्सा भवति त जहा अप्पेहा अ प्पारंभा अप्पपरिग्गहा धम्मिया धम्माणुया जाव एगच्चाउं परि ग्गहाउ अप्पडिविरया जेहिं समणोवासगस्स आयाणसो आम रणताए दंमे णिक्खित्ते ते तउ आउग विप्पजहति ततो भुज्जो सग मादाए सग्गइगामिणो भवति ते पाणावि वुच्चति जाव णो णेया उए भवइ ॥ २१ ॥

अर्थ–वली गोतम स्वामी कहेछे निश्चें आ जगत् माहे कोइ एक मनुष्य, एवा हो य, ते कहेछे अल्पइछा एटले अल्पलोभी, अल्पारंभी, अल्पपरिग्रही, धार्मिक धर्मानु ग, प्राणातिपातादिक थकी एकपक्षे विरति, अनें एकपक्षे अविरति, ए कारण माटें ते विरताविरत कहेवाय जेने विषे श्रमणोपासकने व्रतग्रहणकाल प्रारंभी मरणातसु धी जीवघातरूप दंमनो निपेधछे ते विरताविरत पुरुष, ते भव संबधी आयुष्य छांमीनें, पछी पोताना पूर्वोपार्जित शुभ कर्म लेइने, सद्गतिये जाय ते त्यां छता प्राण पण क हेवाय, त्रस पण कहेवाय, इत्यादिक पाठ सर्व, पूर्ववत् जाणवो ज्यां सुधी तमारु बो लवु न्यायमार्गनु नथी ॥ २१ ॥

॥ दीपिका–किंच । सुगममिद सूत्र एते चाल्पेछादिविशेषणाअवश्य प्रकृतिभद्रतया सद्गतिगामित्वेन त्रसेषूत्पद्यते ॥ २१ ॥

॥ टीका–किंचान्यत् । (भगवचणउदाहुरित्यादि) सुगम यावरोोऐयाउएत्ति । ए ते चाल्पेछादिविशेषणविशिष्टाअवश्य प्रकृतिभद्रतया सद्गतिगामित्वेन त्रसकायेषूत्पद्य तइति द्रष्टव्य ॥ २१ ॥

ते चोनयोरप्यवस्थायास्त्रसत्वं न व्यभिचरति । इत्यतो न निर्विषयं प्रत्याख्यानमेतेषु च द्व्यतोपि प्राणातिपातं संभवतीति ॥ २२ ॥

भगवंचणं उदाहु संतेगइया पाणा दीहाउया जेहिं समणोवा सगस्स आयाणसो आमरणंताए जाव दंमे णिक्खित्ते भवइ ते पुव्वामेव कालं करेति करेतित्ता पारलोइयत्ताए पच्चायंति ते पाणावि वुच्चंति ते तसावि वुच्चंति ते महाकाया ते चिरट्ठिइ या ते दीहाउया ते बहुयरगा जेहिं समणोवासगस्स सुपच्चक्खा य भवइ जाव णो णेयाउए भवइ ॥ २३ ॥

अर्थ-वली भगवंत श्रीगौतम स्वामी बोल्या के,आ जगत्माहे एकेक प्राणी एवाछेके, जे श्रावक पच्चखाण करेछे, ते थकी ते प्राणी दीर्घायुवालाछे,ते देवता, नारकी, तिर्यंच, अने मनुष्यपणे परलोकमांहे उपजे,तेने प्राण पण कहियें, तेने त्रस पण कहियें, तेने मोहोटी काया ना धणी पण कहियें,तेने घणी स्थिति कहियें तेने घणा प्रकारना जीव कहियें, जेने विषे श्रमणोपासकने व्रतग्रहण प्रारंभीने मरणांतसुधि विनाशवानो निषेधछे, अने ते श्रावक तो, तेनी पूर्वेज काल करे ते कारण माटे ते श्रमणोपासकने, तेने वि नाशवानो निषेधछे, परंतु ते दीर्घायुत्रसने विषे प्राणातिपात विरमणव्रत शामाटे पले नही? तमे ज कहोछे के, एवो पर्याय कोइ नथी के, जेणे करी श्रावक पच्चखाण करे ते तमारु वचन न्यायमार्गेनु नथी ॥ २३ ॥

॥ दीपिका-अथ प्रकटमेव विरतिविषयमाह । भगवानाह । योहि प्रत्याख्यानं गृ ह्णाति तस्माद्दीर्घायुष्काः प्राणिनस्ते च नारकमनुष्यदेवाद्वित्रिचतुःपंचेंद्रियतिर्यंचश्च सं भवंति ततः कथं निर्विषयं प्रत्याख्यानमिति ? शेषं सुगमम् ॥ २३

॥ टीका-सांप्रतं प्रत्यक्षसिद्धएव विरतेर्निर्विषयं दर्शयितुमाह । (भगवंचणंउदाहुरि त्यादि) भगवानाह यांहि प्रत्याख्यानं गृह्णाति तस्माद्दीर्घायुष्का प्राणा प्राणिनस्ते च नारकमनुष्यदेवाद्वित्रिचतुःपंचेंद्रियतिर्यंचश्च संभवंति ततः कथं निर्विषयं प्रत्याख्यान मिति ? शेषं सुगमं यावण्णो णेयाउए भवइ ॥ २३ ॥

भगवंचणं उदाहु संतेगइया पाणा समाउया जेहिं समणोवास गस्स आयाणसो आमरणंताए जाव दंमे णिक्खित्ते भवइ ते सममेव कालं करेति करेतित्ता पारलोइयत्ताए पच्चायंति ते पाणा

तेच नो बहुसयता क्रियासु नो बहुप्रतिविरता सर्वजतुरक्षान्न निवृत्ता सत्यामृषाणि वा क्यानि परेषु एव वक्ष्यमाणप्रकारेण प्रयुजति (एवविप्पडिवेदेंति) क्वचित्पाठ एव विवि धप्रकारेण प्रतिवेदयति ज्ञापयति । यथा । अहं न हतव्योऽन्ये हतव्या ।अहं नाज्ञापयि तव्योन्येऽज्ञापयितव्याइत्यादीन्युपदेशवाक्यानि ददति ।एवन्नूतास्ते कामासक्ता किंचिदज्ञा नतप परा काल कृत्वाऽन्यतरेष्वासुरीयेषु स्थानेषु किल्बिषिकेषु असुरदेवाधमेषूत्पद्यते अ थवा प्राण्युपघातकोपदेशदातारोनोगमूर्छिताअसूर्येषु नित्यांधकारेषु किल्बिषप्रधानेषु नरक स्थानेषु समुत्पद्यते ते च देवानारकास्त्रसत्व न व्यनिचरति तेषुच यद्यपि इव्यप्राणातिपातो न सन्नवति तथापि नावप्राणातिपातस्य विरतेर्विषयता प्रतिपद्यते ततोदेवलोकाच्युतान रकाडुद्धृतावा क्लिष्टपचेंद्रियतिर्यक्षु हीनमनुष्येषुवा एडमूकतया तमोरूपतया अधबधिर तया प्रत्यायाति ते चावस्थाद्वयेपि त्रसत्व न व्यन्निचरति ततोन निर्विषय प्रत्याख्यान एषु च इव्यप्राणातिपातोपि सन्नवति ॥ २२ ॥

॥ टीका–किंचान्यत् । (नगवचणउदाहुरित्यादि) गौतमस्वाम्येव प्रत्याख्यानस्य वि पर्यं दर्शयितुमाह । एके केचन मनुष्याएवन्नूतान्नवति तद्यथा अरण्ये नवाआरण्यका स्तीर्थिकविशेषास्तथा आवसथिकास्तीर्थिकविशेषाएव तथा ग्रामनिमन्त्रिकास्तथा (कण्हु ईरहस्सियात्ति) क्वचित्कार्ये रहस्यका क्वचिद्रहस्यकाएते सर्वेपि तीर्थिकविशेषास्तेच नो बहुसयताहस्तपादादिक्रियासु तथा ज्ञानावरणीयावृतत्वान्न बहुविरता सर्वप्राणन्नूतजी वसत्वेन्यस्तत्स्वरूपापरिज्ञानात्त द्वधादविरताइत्यर्थः । ते तीर्थिकविशेषाबव्हसयता स्वतो विरताआत्मना सत्यामृषाणि वाक्यान्येवमिति वक्ष्यमाणरीत्या वियुजति । (एव विप्प डिवेदंति) क्वचित्पाठोस्यायमर्थः । एव विविधप्रकारेण परेषां प्रतिवेदयति तानि पुनरेवन्नू तानि वाक्यानि दर्शयति । तद्यथा । अहं न हतव्योऽन्ये पुनर्हतव्या तथाहं नाज्ञापयि तव्योऽन्ये पुनराज्ञापयितव्या इत्युदीरितान्युपदेशवाक्यानि ददति । ते चैवमेवोपदेशदायि न स्त्रीकामेषु मूर्छिताग्रद्धाअध्युपपन्नायावद्वर्षाणि चतु पचानिवा षड्दशमानि वा ते ऽप्यल्पतर वा प्रनूततरवा काल शुत्कोत्कटान्नोगन्नोगास्तास्ते तथान्नूता किंचिदज्ञानतप कारिण कालमासे काल कृत्वाऽन्यतरेष्वासुरीयेषु स्थानेषु किल्बिषिष्वसुरदेवाधमेषु स्था नेषूपपत्तारोनवति यदि प्राण्युपमर्दोपदेशदायिनोन्नोगान्निलाषुकाअसूर्येषु नित्यांधकारे षु किल्बिषप्रधानेषु नरकस्थानेषु ते समुत्पद्यते तेच देवानारकावा त्रसत्व न व्यन्निचर ति तेषु च यद्यपि इव्यप्राणातिपातोन सन्नवति तथापि ते नावतोय प्राणातिपातस्त द्विरतेर्विषयता प्रतिपद्यते ततोपि देवलोकाच्च्युतानरकोद्धृता क्लिष्टपचेंद्रियतिर्यक्षु त थाविधमनुष्येषु चैडमूकतया समुत्पद्यते तथा तमोरूपत्वापत्तिमधबधिरतया प्रत्यायाति

॥ दीपिका–इदमल्पायुष्कसूत्रमपि स्पष्टं नवरं यावत्ते न म्रियते तावत्प्रत्याख्यानस्य विषयं त्रसेषु वा समुत्पन्ना सतोविषयता प्रतिपद्यते ॥ २५ ॥

॥ टीका–तथाऽल्पायुष्कसूत्रसिद्धमेव । इयांस्तु विशेषोयावत्ते न म्रियते तावत्प्रत्याख्यानस्य विषयस्त्रसेषु वा समुत्पन्ना सतोविषयतां प्रतिपद्यतइति ॥ २५ ॥

भगवंचणं उदाहु संतेगइया समणोवासगा भवंति तेसिंचणं एवं वुत्तं पुव्वं भवइ णो खलु वयं संचाएमो मुंडे भवित्ता जाव पव्वइत्तए णो खलु वयं संचाएमो चाउद्दसट्ठमुद्दिट्ठपुण्णमासिणीसु पडिपुण्णं पोसहं अणुपालित्तए णो खलु वयं संचाएमो अपच्छिमं जाव विहरित्तए वयंचणं सामाइयं देसावगासियं पुरत्था पाईणं पडिणंवा दाहिणं उदीणं एतावता जाव सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं दंडे णिक्खित्ते सव्वपाणभूयजीवसत्तेहिं खेमंकरेहिं अहमंसि तत्थ आरेणं जे तसा पाणा जेहिं समणोवासगस्स आयाणसो आमरणंताए दंडे णिक्खित्ते तउ आउं विप्पजहंति विप्पजहित्ता तत्थ आरेणं चेव जे तसा पाणा जेहिं समणोवासगस्स आयाणसो जाव ते सुपच्चायंति जेहिं समणोवासगस्स सुपच्चक्खायं भवइ ते पाणावि जाव अयंपि भेदे से ॥ २६ ॥

अर्थ–वली गौतम स्वामी बोल्या के,आ जगत् माहे एकेक श्रमणोपासक एवा होयछे के जेनें पूर्वे एवा व्रतनो उच्चार होयछे के,निश्चे अमें मुंड थइ आगारवास छांडीने चारित्र लइ शकता नथी निश्चे अम चतुर्दशी,अष्टमी,उद्दिष्ट एटले कल्याणिक तिथि,अने पूर्णमासी एटले चोमासानी त्रण पुन्यम ते दिवसे प्रतिपूर्ण पोषध पाली शक्ता नथी (णोखलु वयसंचाएमो के०) निश्चे करी अमे समर्थ नथी,शुं करवाने समर्थ नथी? (अपच्छिमजावविहरित्तए के०) ताके अपश्चिम संलेषणा करी अणसण पणु उच्चरी शकवाने समर्थनथी (वयंचणसामाइयदेसावगासियपुरच्छा के०) किंतु अमे सामायक तथा देशावकाशिक ए व्रत पालशुं, एटले जावजीव सुधी दिनप्रत्यें दिशाउनुं परिमाण करीशुं तथा पुरच्छा एटले प्रभातें पच्चखाणने अवसर (पाईण के०) पूर्वदिशायें,पश्चिम दिशायें,दक्षिण दिशायें,उत्तर दिशायें,ए चारे दिशायें, अमुक अमुक भूमि सुधी जाशुं, उपरांत भूमियें जवानुं पच्चख्खाण करीशुं,एवुं व्रत पालीशुं, एतावता जेटलुं दिशिनुं परिमाण कीधुंछे ते दिशि थकी उपरांत

वि वुच्चति तसावि वुच्चति ते महाकाया ते समाउया ते बहुयरगा जेहिं समणोवासगस्स सुपच्चखाय भवइ जाव णो णेयाउए भवइ ॥ २४ ॥

अर्थ–वली श्रीगौतमस्वामी कहेछे के, जे श्रावक पच्चख्काण करेछे, तेथकी आ जगत् माहे कोइ एक प्राणी (समाउया के०) समायुष्य एटले सरखा आयुष्य वाला छे, जेने विषे श्रमणोपासकने प्रथम व्रत ग्रहण प्रारंभी मरणांत सुधी हिंसानो नियमछे, ते वार पछी ते समकाले काल करे, सरखा काल करीनें परलोके उपजे तेनें प्राण पण कहिये, तेने त्रस पण कहिये, तेनें महोटी कायाना धणी कहिये, तेने घणा प्रकारें जीव कहिये, जेने विषे श्रमणोपासकने निषेधवानो नियमछे एकारणे श्रावकनें पच्चख्काण केम न होय ? ते माटे ए तमारु बोलवु भलु नथी ॥ २४ ॥

॥ दीपिका–इद समायुष्कसूत्र पूर्ववत् ॥ २४ ॥

॥ टीका–एवमुत्तरसूत्रमपि तुल्यायुष्कविषय समानयोगक्षेमत्वाद्व्याख्येयं ॥ २४ ॥

भगवचण उदाहु संतेगइया पाणा अप्पाउया जेहिं समणोवासगस्स आयाणसो आमरणंताए जाव दंमे णिखित्ते भवइ ते पुवामेव काल करेति करेतित्ता पारलोइत्ताए पच्चायति ते पाणा वि वुच्चति ते तसावि वुच्चति ते महाकाया ते अप्पाउया ते बहुयरगा पाणा जेहिं समणोवासगस्स सुपच्चखाय भवइ जाव णो णेयाउए भवइ ॥ २५ ॥

अर्थ–वली भगवंत श्री गौतम स्वामी बोल्या के, आ जगत् माहे एकेक प्राणी एवा छे के, ते श्रावक थकी अल्प एटले थोडा आयुष्य वालाछे, जेने आश्री श्रमणोपासकनें रूडु पच्चख्काणछे एतावता घणा प्राणने विषे पच्चख्काणछे अने थोडा प्राणने विषे अपच्चख्काणछे एतावता जाव जीव सुधी जे जीव ते नियम करनार श्रावक थकी अल्पायुष्यवालाछे ते ज्या सुधी मरण न पामे, त्या सुधी त्रस आश्री ते श्रावकनें पच्चख्काणछे, ते कदापि मरण पामीनें फरी तेहिज त्रसकायमा उपजे तेवारे ते पच्चख्काण आगल पण पले ए कारणे निर्विषय पच्चख्काण केम कहिये ? माटे तमारु वचन अयुक्तछे अहीं बीजा रही गयेला पदोनो अर्थ पूर्ववत् जाणवो ॥ २५ ॥

केन सर्वप्राणिन्योगृहीतपरिमाणात्परेण दण्मोनिक्षिप्त परित्यक्तोनवति ततश्चासौ श्रावक सर्वप्राणभूतजीवसत्वेषु क्षेमकरोहमस्मिन्नित्येवमध्यवसायी भवति तत्र गृहीत परिमाणे देशे ये आरेण त्रसा प्राणायेषु श्रमणोपासकस्य दानतइत्यादेरारन्यामरणातो दण्मोनिक्षिप्त परित्यक्तोनवति तेच त्रसा प्राणा स्वायुष्क परित्यज्य तत्रव गृहीतपरिमाणदेशएव योजनादिदेशान्यितरएव त्रसा प्राणास्तेषु प्रत्यायाति। इदमुक्त नवति। गृहीतपरिमाणदेशत्रसायुष्क परित्यज्य त्रसेष्वेवोत्पद्यते ततश्च तेषु श्रमणोपासकस्य सुप्रत्याख्यान नवत्युनयथापि त्रसत्वसन्नावात्। शेष सुगम यावत् णो णेयाउए नवतित्ति॥२६॥

तञ आरेण जे तसा पाणा जेहिं समणोवासगस्स आयाणसो आमरणताए दण्मे णिक्खित्ते ते तउ आउ विप्पजहति विप्पजहतित्ता तञ आरेण चेव जाव थावरा पाणा जेहिं समणोवासगस्स अघाए दण्मे अणिक्खित्ते अणघाए दण्मे णिक्खत्ते तेसु पच्चायति तेहिं समणोवासगस्स अघाए दण्मे अणिक्खित्ते अणघाए दण्मे णिक्खित्ते ते पाणावि वुच्चति ते तसा ते चिरहिइया जाव अयपि नेदे से ॥ २७ ॥ तञ जे आरेण तसा पाणा जेहिं समणोवासगस्स आयाणसो आमरणताए तउ आउ विप्पजहति विप्पजहतित्ता तञ परेण जे तसा थावरा पाणा जेहिं समणोवासगस्स आयाणसो आमरणताए तेसु पच्चायति तेहिं समणोवासगस्स सुपच्चक्खाय नवइ ते पाणावि जाव अयपि नेदे से ॥ २८ ॥ तञ जे आरेण थावरा पाणा जेहिं समणोवासगस्स अघाए दण्मे अणिक्खित्ते अणघाए णिक्खित्ते ते तउ आउ विप्पजहति विप्पजहतित्ता तञ आरेण चेव जे तसा पाणा जेहिं समणोवासगस्स आयाणसो आमरणताए ते सुपच्चायति तेसु समणोवासगस्स सुपच्चक्खाय नवइ ते पाणावि जाव अयपि नेदे से णो ॥२९॥ तञ जे ते आरेण जे थावरा पाणा जेहिं समणोवासगस्स अघाए दण्मे अणिक्खित्ते अणघाए णिक्खित्ते ते तउ आउ विप्पजहति विप्पजहतित्ता ते तञ आरेण चेव जे थावरा पाणा जेहिं समणोवासगस्स अघाए दण्मे अणिक्खित्ते अणघा

नी नूमिमांहे जेटला प्राणीठे यावत् सर्व सत्वठे तेनें घात करवानो त्याग करीशुं एटले ते उपरात सर्व प्राण, नूत, जीव, अने सत्वठे, अर्थात् जे काइ त्रस, अनें स्थावर प्राणीओठे तेनें (खेमकरे के०) तेनी दया पालीशु (अहमसितउआरेणजेतसापाणा के०)ते नूमिमांहे पण वली जे त्रस प्राणीयोठे तेनें आश्री ते श्रमणोपासके मरणांत सुधी तेनो दंम निषेध्योठे ते त्रस जीव त्यांथी पोतानु आयुष्य त्यागीने वली तेहिज नूमिने विषे त्रसप्राणमांहे आवी उपजे एटले जेने विषे श्रमणोपासकनें पच्चरकाण होय जे कारण माटें त्यां जेटला त्रस जीवठे तेने विषे ते श्रावकनें मरणांत सुधी दंमनो निषेध ठे ते कारणें ते श्रावकने रुडुं पच्चरकाण कहिये ते माटे ए तमारु वचन रूडु नथी ए प्रथमनंग थयो ए रीतें वली, बीजा आठ नंग आगल कहेठे ॥ २६ ॥

॥दीपिका–पुन श्रावकाणा दिग्व्रताश्रयेण प्रत्याख्यानविषय दर्शयति । सुगम नवरं (देसावगासियत्ति) पूर्वगृहीतस्य दिग्व्रतस्य योजनशतादिकस्य यत्प्रतिदिन सक्षिपयो जनगतादियान करोति तद्देशावकाशिकमुच्यते । तथाहि । पुरन्नापायीणमिति । (पुरन्नात्ति) प्रातरेव प्रत्याख्यानावसरे दिगाश्रितमेवनूत प्रत्याख्यान करोति यथा प्राचीन पूर्वाभिमुख पूर्वदिशि एतावन्मयाऽद्य गतव्य प्रतीचीन पश्चिमाया दिशि दक्षिणस्या मुदीच्यामुत्तरस्या एतावद्गतव्य एव प्रत्यह प्रत्याख्यान करोति तेन च व्रतेन गृहीतपरिमाणे देशे ये आरेण त्रसा येषु श्रावकस्यादानत प्रथमव्रतादारन्यामरणातं दंम त्यक्ते त्रसा स्वायुष्क परित्यज्य तत्रैव गृहीतमानदेशएव त्रसत्वेन प्रत्यायाति गृहीतपरिमाणदेशे त्रसायुष्क परित्यज्य त्रसेष्वेवोत्पद्यते तेषु श्राद्धस्य सुप्रत्याख्यान स्याद्नयथापि त्रसत्वसद्भावादिति । शेष सुगमम् ॥ २६ ॥

॥ टीका–पुनरपि श्रावकाणामेव दिग्व्रतसमाश्रयणत प्रत्याख्यानस्य विषयं दर्शयितुमाह । (नगवचणमित्यादि) सुगम यावत् वयणसामाइय देशावकासियत्ति । देशोवकाशोदेशावकाश तत्र नव देशावकाशिक । इदमुक्त नवति । पूर्वगृहीतस्य दिग्व्रतस्य योजनशतादिकस्य यत्प्रतिदिन सक्षिप्ततर योजनगव्यूतिपत्तनगृहमर्यादादिक परिमाण विधत्ते तद्देशावकाशिकमित्युच्यते । तदेव दर्शयति । (पुरन्नापायीणमित्यादि) पुरन्नित्ति प्रातरेव प्रत्याख्यानावसरे दिगाश्रितमेव नूत प्रत्याख्यान करोति तद्यथा प्राचीन पूर्वाभिमुख प्राच्या दिश्येतावन्मयाऽद्य गतव्य तथा प्रतीचीन प्रतीच्यामपरस्या दिशि तथा दक्षिणाभिमुख दक्षिणस्यामेवोदीच्या दिश्येतावन्मयाऽद्य पचयोजनमात्र तदधिकमूनतर वा गतव्यमित्येवनूत सप्रतिदिन प्रत्याख्यान विधत्ते तेनच गृहीतदेशावकाशिकेनोपास

अविरतिछे ते थकी उरे एटले आगल, (जेतसापाणा के०) जे त्रस प्राणीछे (जेहिंसम णोवासगस्स के०) जेने विषे श्रमणोपासके (आयाणसो के०) व्रत ग्रहण प्रारंनीने (आ मरणताए के०) मरणांत सुधी (दमेणिक्खित्ते के०) घात करवानो निषेध्योछे, (तउ आउंणिप्पजहति के०) पछी ते जीव त्यां थकी आयुष्य पूर्ण करे (विप्पजहत्तित्ता के०) त्यांथी आयुष्य पूर्ण करीने (तचआरेणचेव के०) फरी त्यां मर्यादा वाली नूमियेज निश्चे (जावथावरापाणा के०) यावत् जे स्थावर प्राणीछे (जेहिंसमणोवासगस्स के०) जे स्थाव रप्राणीने विषे श्रमणोपासकने (अठाएदमेअणिक्खित्ते के०) अर्थदम एटले अर्थे हणवा नो निषेध नथी, अने (अणठाएदमेणिक्खित्ते के०) अनर्थदम एटले, अनर्थ विनाश करवा नो निषेधछे (तेसुपच्चायति के०) तेवा स्थावर जीवोनें विषे ते पूर्वोक्त त्रस जीव आवी उप जे (तेहिंसमणोवासगस्स के०) तेनेविषे श्रमणोपासकने (अठाएदमेअणिक्खित्ते के०)अ र्थदम गमयो नथी(अणठाएदमेणिक्खित्ते के०)अने अनर्थ दम गमयोछे (तेपाणाविवुच्चति के०) तेने प्राण पण कहिये, तेने त्रस पण कहिये,तेने चिरस्थितिक पण कहिये,(जावअयं पिनेदे के०) यावत् ए नेदवालु पण (से के०) ते तमारु वचन, न्याय मार्गनु नथी ए प्र थम नग कह्यो ॥२७॥ हवे बीजो नग कहेछे जेटली नूमिकानी अविरतिछे ते नूमिका माहे लाज त्रस जीव होय ते मरण पामिने फरी नियम करेली नूमिका माहे जे त्रस अने स्थावर जीवोछे तेमाहे आवी उपजे ए बीजो नग ॥२८॥ हवे त्रीजो नग कहेछे जेटली नूमिकानी अविरतिछे ते माहेला स्थावर जीव,ते मरण पामीने फरी तेहिज प्रत्याख्यान करेली नूमि का माहे जे त्रस जीवोछे तेमाहे आवी उपजे ॥२ए॥ हवे चोथो नग कहेछे जेटली नू मिकानी अविरतिछे ते माहेला स्थावर जीव, मरण पामीने फरी तेहिज नूमि माहेला स्थावर माहे आवी उपजे ॥३०॥ हवे पांचमो नग कहेछे जेटली नूमिकानी अविरति छे जे नियम करेली नूमिकाछे ते माहेला स्थावर जीवछे ते मरण पामीने ते मांहे आ वीने स्थावर पणे उपजे ॥३१॥ हवे छठो नग कहेछे नियम करेली नूमिका मांहेला त्रस अने स्थावर जीव,ते त्यांथी मरण पामीने जेटली नूमिकानी अविरतिछे ते नूमि मांहेला त्रस जीवोने विषे आवी उपजे ॥ ३२ ॥ हवे सातमो नग कहेछे- नियम करे ली नूमिका माहेला त्रस, अने स्थावर जीव, ते त्यांथी मरण पामीने जेटली नूमिका नी अविरतिछे ते मांहेला स्थावर जीवोने विषे आवी उपजे ॥३३॥ हवे आठमो नग कहेछे नियम करेली नूमिका माहेला त्रस अने स्थावर जीव,ते त्यांथी मरण पामीन फरी तेहिज नियम करेली नूमिका मांहे त्रस, अन स्थावरने विष आवी उपजे, एटले ए आठ नग थया अन नवमा नग प्रथम कह्या, एम सघा मली नव नग थया हवे ए नव प्रकार करी श्रावकने पच्चरकाण दखाडेछे ते कवी रीत? ताके, ए नांगा माहे ज्यां

ए णिक्खित्ते ते सुपच्चायति तेहिं समणोवासगस्स अघाए अण घाए ते पाणावि जाव अयपि नेदे से णो ॥३०॥ तत्र जे ते आरे ण थावरा पाणा जेहिं समणोवासगस्स अघाए दंमे अणिक्खि त्ते अणघाए णिक्खित्ते ततो आउ विप्पजहति विप्पजहतित्ता तत्र परेण जे तसथावरापाणा जेहि समणोवासगस्स आयाणसो आमरणताए ते सुपच्चायति तेहिं समणोवासगस्स सुपच्चक्खायं नवइ ते पाणावि जाव अयपि नेदे से णो णेयाउए नवइ ॥३१॥ तत्र जे ते परेण तसथावरा पाणा जेहिं समणोवासगस्स आया णसो आमरणताए ते तउ आउ विप्पजहति विप्पजहतित्ता तत्र आरेण जे तसा पाणा जेहिं समणोवासगस्स आयाणसो आ मरणताए ते सुपच्चायति तेहिं समणोवासगस्स सुपच्चक्खाय नव इ ते पाणावि जाव अयपि नेदे से णो णेयाउए नवइ॥ ३२ ॥ तत्र जे ते परेण तसथावरा पाणा जेहिं समणोवासगस्स आया णसो आमरणताए ते तउ आउ विप्पजहति विप्पजहतित्ता तत्र आरेण जे थावरा पाणा जेहिं समणोवासगस्स अघाए दंमे अ णिक्खित्ते अणघाए णिक्खित्ते ते सुपच्चायति जेहि समणोवास गस्स अघाए अणिक्खित्ते अणघाए णिक्खित्ते जाव ते पाणावि जाव अयपि नेदे से णो ॥३३॥ तत्र जे ते परेण तसथावरा पाणा जेहिं समणोवासगस्स आयाणसो आमरणताए ते तउ आउ विप्पजहति विप्पजहतित्ता ते तत्र परेण चेव जे तसथावरा पाणा जेहिं समणोवासगस्स आयाणसो आमरणताए ते सुपच्चायति ते समणोवासगस्स सुपच्चक्खाय नवइ ते पाणावि जाव अयपि नेदे से णो ॥ ३४॥

अर्थ—ते आठ नग माहे प्रथम नग कहेछे जेटली नूमिकानी अविरति छे ते मांहे जे त्रस जीवोछे ते त्रस, तेहिज नूमिका माहे जे स्थावर जीवोछे, ते माहे आवी उप जे ए प्रथम नगछे ते सूत्रना अर्थथी कहेछे (तत्रआरेण के०) त्या जेटली नूमिनी

भगवंचण उदाहु ण एतं भूयं ण एतं भवं ण एतं भविस्सति जण्णं तसा पाणा वोच्छिज्जिहिंति थावरा पाणा भविस्सति थावरा पाणावि वोच्छिज्जिहिंति तसा पाणा भविस्सति अवोच्छिन्नेहिं तसथावरेहिं पाणेहिं जणं तुब्भेवा अन्नोवा एवं वदह णत्थिणं से केइ परियाए जाव णो णेयाउए भवइ ॥ ३५ ॥

अर्थ–हवे वली उदक पेढालपुत्र प्रत्ये, भगवंत श्री गौतमस्वामी कहेछे के,अहो उदक ! (णएतंभूयं के०) भूतकालने विषे ए वात थइ नथी, (णएतंभवं के०) वर्त्तमानकालें ए वात थाय नही, (णएतंभविस्सति के०) आगमिक कालें ए वात थशे नहीं (जणंतसापाणावोच्छिज्जिहिंति के०) जे त्रसप्राणी सर्वथापि विछेद थशे (थावरापाणाभविस्सति के०) अने जगत् माहे स्थावर प्राणीज रहेशे, अथवा स्थावरप्राणी सर्वथा विछेद पामशे, अने जगत् माहे त्रस प्राणीज रहेशे यद्यपि तेनें परस्पर माहो मांहे गतिछे जे स्थावर फीटी त्रस थाय, अने त्रस फीटी, स्थावर थाय, परंतु समस्त पणे एकनो बीजा माहे सद्भाव न थाय तथा एवी पण संभावना नथी जे, एक पच्चरकाणना करनार टाली अन्य नारकी, बेइंद्रियादिक, तिर्यंच, मनुष्य, देवता,ए समस्तनो अभाव होय? जो एमज होय तो त्रसनुं पच्चरकाण निर्विषय थाय परंतु ए वात संभवे नहीं ! (अवोछिन्नेहिंतसथावरेहिंपाणेहिं के०) एम त्रस अने स्थावर प्राणीनो अविछेद होय (जणंतुब्भेवाअन्नोवाएववदह के०) माटे जे तमे अथवा बीजो कोइ, एम कहेके (णत्थिणसेकेइपरियाए के०) ते कोइ पर्याय नथी के जे पर्याये करी श्रावकने प्राणातिपातनुं पच्चरकाण थाय ते वचन, (जावणोणेयाउएभवइ के०) यावत् न्यायोक्त नथी ॥ ३५ ॥

॥ दीपिका–तदेवं बहुदृष्टांतै श्रावकप्रत्याख्यानस्य सविषयतां प्रसाध्याधुना परप्रश्नस्यात्यंतासंबद्धतां दर्शयन्नाह। गौतमस्वामी उदकं प्राह।नैतद्भूतं नैतद्भव्यं नैतद्भविष्यं यत्त्रसाः सर्वथा उच्छेत्स्यंति स्थावराएव भविष्यंति तथा स्थावराउच्छेत्स्यंति त्रसाएव भविष्यंति एतद्रूपं न संभवति नहि कदाप्येवं संभवास्ति यत्प्रत्याख्यानिनमेकं विहायान्येषां नारकाणां द्वींद्रियादितिरश्चां मनुष्याणां देवानां च सर्वथाप्यभाव । एवंहि च प्रत्याख्यानं निर्विषयं स्यायदि प्रत्याख्यानिनोजीवतएव नारकादयस्त्रसा समुच्छियंते नचायं प्रकार संभवी स्थावराणां वानंतत्वात्ऽसंख्येयेषु त्रसेषूत्पादसंभव एवं सति यद्भवंत यूयमन्योवा वदति तद्यथा नास्त्यसौ पर्यायोयत्रावकस्यैकत्र सविषयात्प्रत्यागइति तदेवं त्वदीयं प्रेर्यं सर्वमज्ञाननमिति ॥ ३५ ॥

त्रस जीव कह्याछे तेनो सर्वथा प्रकारे श्रावकने श्रामरणांत सुधी पच्चक्काणछे अनें ज्यां ज्यां स्थावर बोल्याछे त्यां त्यां श्रावकें श्रनर्थे पच्चक्काण कखुछे. तेथी तेमांहे ते जीव, उपना जणी, ए पण पच्चक्काण थाय एटले नरे जग माहे श्रावकनें पच्चक्काण होय ए रीतें जाणवु एवी रीतें घणा दृष्टातें करी श्रावकना पच्चक्काणनो विषय देखाड्यो ॥३४॥

॥ दीपिका–अत्र आरादेशवर्तिनस्त्रसाआरादेशवर्तिषु स्थावरेषूत्पद्यते ॥ २७ ॥ अत्र आरादेशवर्तिनस्त्रसागृहीतपरिमाणोद्देशाद्वहिर्येत्रसा स्थावराश्च तेषूत्पद्यते ॥ २८ ॥ आरादेशवर्तिनोये स्थावरास्ते आरादेशवर्तिनोये त्रसास्तेषूत्पद्यते ॥ २९ ॥ आरादेश वर्तिनोये स्थावरास्तेषु तद्देशवर्तिष्वेव स्थावरेषूत्पद्यते ॥ ३० ॥ आरादेशवर्तिनोये स्थावरास्ते परदेशवर्तिषु त्रसस्थावरेषूत्पद्यते ॥३१॥ परदेशवर्तिनोये त्रसा स्थावरास्ते आरादेशवर्तिषु त्रसेषूत्पद्यते ॥ ३२ ॥ परदेशवर्तिनोये त्रसा स्थावरास्ते आरादेशव र्तिषु स्थावरेषूत्पद्यते ॥ ३३ ॥ परदेशवर्तिनोये त्रसास्थावरास्ते परदेशवर्तिष्वेव त्रस स्थावरेषूत्पद्यते । एव नवापि सूत्राणि नणितानि तत्र, यत्र यत्र त्रसास्तत्रादानश प्रथम व्रतग्रहणादारभ्य श्रावकेणामरणांतोदम परित्यक्तइति योज्य । यत्र तु स्थावरास्तत्रार्था य दमोन निक्षिप्तोन त्यक्त अनर्थाय च दम परित्यक्तइति । शेष सुगमम् ॥ ३४ ॥

॥ टीका–एवमन्यान्यप्यष्ट सूत्राणि द्रष्टव्यानि सर्वाण्यपि नवर तत्र प्रथमे सूत्रे तदेव यद्व्याख्यात तच्चैव नूत तद्यथा गृहीतपरिमाणे देशे ये त्रसास्ते गृहीतपरिमाणदेशास्तेष्वे व । तथा द्वितीय सूत्र त्वारादेशवर्तिनस्त्रसा आरादेशवर्तिषु स्थावरेषूत्पद्यते ॥ २७ ॥ तृतीये त्वारादेशवर्तिनस्त्रसागृहीतपरिमाणादेशाद्वहिर्ये त्रसा स्थावरास्तेषूत्पद्यते॥२८॥ तथा चतुर्थसूत्रे त्वारादेशवर्तिनोये स्थावरास्ते तद्देशवर्तिष्वेव त्रसेषूत्पद्यते ॥ २९ ॥ पंचम सूत्र तु आरादेशवर्तिनोये स्थावरास्तेषु तद्देशवर्तिष्वेव स्थावरेषूत्पद्यते ॥ ३० ॥ षष्ठ सूत्र तु दूरदेशवर्तिनो ये स्थावरास्ते गृहीतपरिमाणास्तेषुत्रसस्थावरेषूत्पद्यते ॥३१॥ सप्तमसूत्रत्विद परदेशवर्तिनोये त्रसा स्थावरास्ते आरादेशवर्तिषु त्रसेषूत्पद्यते ॥३२ ॥ अष्टमसूत्र तु परदेशवर्तिनोये त्रसा स्थावरास्ते आरादेशवर्तिषु स्थावरेषूत्पद्यते ॥ ३३ ॥ नवमसूत्र तु परदेशवर्तिनोये त्रसा स्थावरास्ते परदेशवर्तिष्वेव त्रसस्थाव रेषूत्पद्यते । एवमनया प्रक्रियया नवापि सूत्राणि नणनीयानि । तत्र यत्र यत्र त्रसास्त त्रादानशआदेरारभ्य श्रमणोपासकेनामरणातोदमस्त्यक्तइत्येव योजनीय । तत्र तु स्था वरास्तत्रार्थाय दमो न निक्षिप्तोन परित्यक्तोऽनर्थायच दम परित्यक्तइति । शेषाक्षरघट ना तु स्वबुद्ध्या विधेयेति ॥ ३४ ॥

कर्मने अण करवा नणी उठ्यो एटले सावधान थयो (सेखलुपरलोगपलिमथत्ताए चिठ्ठइ के०) ते पण निश्चे परलोकना विघात नणी तिष्टे, एटले रहे, एटले शु कह्यु? तोके, चारित्रिउं पुरुष घणोज गुणवान् होय परतु यथोक्त श्रमण ब्राह्मणनी निंदा करे, ते परलोकनो, तथा संयमनो विराधक कहेवाय हवे जे गुणवंतना गुण ग्रहण करे, तेनां फल देखाडेछे जे महासत्ववंत पुरुष रत्नाकरनी पेरे गंजीर, श्रमण ब्राह्मणने निंदे नही, ते सहित थको तेनी साथें मैत्री नाव पोषण करे, सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन, अने सम्यक् चारित्रने यथोक्त पालतो हतो, पापकर्मने अण करवा नणी उठ्यो एटले सावधान थयो ते निश्चे थकी परलोकनो तथा संयमनो आराधक थाय ए कारण माटे श्रमण ब्रह्मणनी निंदा न करे। ते पुरुष रूडो जाणवो एवु जाणीने ए निंदा परिहरवी अने सूधो संयम पालवो (तएणसे के०) तेवार पछी ते उदक पेढाल पुत्र, नगवन् श्री गौतम समीपें एवा अर्थो सानलीनें, श्रीगौतम स्वामीने आदर दीधा विना पूछया विना जे दिशा थकी आव्यो हतो, तेहिज दिशा तरफ फरी गमन चिंतवन करतो हवो॥३६॥

॥ दीपिका–अथोपसंहारमाह। गौतमस्वाम्याह। आयुष्मन्नुदक! य खलु श्रमणं यथोक्तक्रियाकारिणं माहनं वा सद्ब्रह्मचर्योपेतं परिनापते मैत्रीं मन्यमानोपि निंदति सम्यक् ज्ञानदर्शनं चारित्रं च आगम्य प्राप्य पापकर्मणामकरणायोद्यित खलु लघुप्रकृति पन्नितंमन्य परलोकस्य सुगते पलिमथाय विघाताय तिष्ठति य पुनर्महासत्व सागरवज्ञीर श्रमणादीन्न परिनापते न निंदति तेषु च परमां मैत्रीं मन्यते सम्यक् ज्ञानादीन्यनुगम्य पापकर्मणामकरणायोद्यित सखलु परलोकविशुद्ध्या तिष्ठति अनेन वाक्येन परनिंदावर्जनाद्यथावस्थितार्थकथनेन श्रीगौतम सौहृत्य परिहरतिस्म एवं श्रीगौतमेन यथास्थितार्थेज्ञापितोप्युदकोयदा गौतममनाद्रियमाणोयस्याएव दिश प्रादुर्नूतस्तामेव दिश गमनाय प्रधारितवान् चिंतितवान्॥ ३६॥

॥ टीका–सांप्रतमुपसंजिघृक्षुराह। (नगवचणउदाहुरित्यादि) गौतमस्वाम्याह। आयुष्मन्नुदक! य खलु श्रमणं वा यथोक्तकारिणं माहनं वा सद्ब्रह्मचर्योपेतं परिनापते निंदति मैत्रीं मन्यमानोपि तथा सम्यक्ज्ञानमागम्य तथा दर्शनं चारित्रं च पापानां कर्मणामकरणाय समुद्यित स खलु लघुप्रकृति पन्नितंमन्य परलोकस्य सुगतिलक्षणस्य तत्कारणस्य वा सत्संयमस्य पनिमथाय तद्विलोडनाय तद्विघाताय तिष्ठति यस्तु पुनर्महासत्वोरत्नाकरवज्ञीरोन श्रमणादीन् परिनापते तेषु च परमां मैत्रीं मन्यते सम्यग्दर्शनचारित्राण्यनुगम्य तथा पापानां कर्मणामकरणायोद्यित स खलु परलोकविशुद्ध्यावतिष्ठते अनेन च परपरिनापावर्जनेन यथावस्थितार्थसरूपदर्शनतागौतमस्वामिना स्वौद्धत्य

॥ टीका—तदेव बहुनिर्दृष्टांतैः स्वस्वविषयतां श्रावकप्रत्याख्यानस्य प्रसाध्याधुनात्यंताबंधतां चोद्यस्य सूत्रेणैव दर्शयितुमाह । (नगवचणउदाहुरित्यादि) नगवान् गौतमस्वाम्युदक प्रत्येतदाह । तद्यथा नैतद्भूतमनादिके काले प्रागतिक्रांते नाप्येतद्भव्यऽनते काले नाव्यं नाप्येतद्वर्तमानकाले नवति । ये त्रसा प्राणा सर्वथा निर्लेपतया स्वजात्युच्छेतोच्छेत्स्यंति स्थावराजविष्यंतीति तथा स्थावराश्च प्राणिन कालत्रयेपि नैव समुच्छेत्स्यंति त्रसानविष्यंति यद्यपिच तेषां परस्परसक्रमेण गमनमस्ति तथापि न सामस्त्येनान्यतरेषामितरत्र सद्भावस्तथाहि न ह्येवनूत सजवोस्ति यदुत प्रत्याख्यानिनमेक विहाय परेषा नारकाणा द्वीन्द्रियादीना तिरश्चां मनुष्यदेवानां च सर्वदाप्यनाव एवच त्रसविषयं प्रत्याख्यान निर्विषयं नवति यदि तस्य प्रत्याख्यानिनोजीवतएव सर्वेपि नारकादयस्त्रसा समुच्छिद्यते न चास्य प्रकारस्य सजवोस्त्युक्तन्यायेनेति स्थावराणा चानतानामनतत्वादेव नासख्येयेषु त्रसेषूत्पादइति सुप्रतीतमिद तदेव नव्यवच्छिन्नैस्त्रसै स्थावरैश्च प्राणिनिर्यद्वदत यूयमन्योवा कश्चिद्वदति तद्यथा नास्त्यसौ पर्यायोयत्र श्रमणोपासकस्यैकत्रसविषयोपि दमपरित्यागइति तदेतदुक्तनीत्या सर्वमशोननमिति ॥ ३५ ॥

नगवंचण उदाहु आउसतो उदगा जे खलु समण वा माहण वा परिनासेइ मिति मन्नति आगमित्ताणाण आगमित्तादंसण आगमित्ताचरित्त पावाण कम्माण अकरणयाए से खलु परलोगपलिमथत्ताए चिठइ जे खलु समण वा माहण वा णो परिनासइ मिति मन्नति आगमित्ताणाण आगमित्तादसण आगमित्ताचरित्त पावाण कम्माण अकरणयाए से खलु परलोगविसुद्धीए चिठइ तएण से उदय पेढालपुत्ते नगव गोयम अणाढायमाणा जामेव दिसि पाउन्नूते तामेव दिसिं पहारेत्थगमणाए ॥ ३६ ॥

अर्थ—वली गौतम स्वामी कहेछे, के, अहो आयुष्मन् उदक ! खलु इति निश्चे जे पुरुष यथोक्त क्रियानुष्ठाननो करनार एवो श्रमण होय, अथवा माहण एटले ब्रह्मचर्यनो पालनार एवो ब्राह्मण होय तेने (परिनासेइ के०) निंदे, (मितिमन्नति के०) तेने विषे मैत्री नाव मानतो थतो (आगमित्ताणाण के०) तथा सम्यक् ज्ञान, पोताने विषे आणीनें, (आगमित्तादसण के०) सम्यक् दर्शन पोताने विषे आणीने, (आगमित्ताचरित्त के०) सम्यक् चारित्र पोताने विषे आणीने, एतावता सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन, अने सम्यक् चारित्रनो पालनार पण होय (पावाणकम्माणअकरणयाए के०) पाप

॥ टीका–तं चेवमभिप्रायमुदकं दृष्ट्वा भगवान्गौतमस्वाम्याह। तद्यथा। आयुष्मन्नुदक! य खलु तथाभूतस्य श्रमणस्य ब्राह्मणस्य वांतिके समीपे एकमपि योगक्षेमाय पद्यते गम्यते येनार्थस्तत्पदं योगक्षेमपदं किंभूतमार्यमार्यानुष्ठानहेतुत्वादार्यं तथा धार्मिकं शोभनवचनं सुवचनं सद्गतिहेतुत्वात्तदेवंभूतं पदं श्रुत्वा निशम्यावगम्याचात्मनएव तदनुत्तरं योगक्षेमपदमित्येवमवगम्य सूक्ष्मया कुशाग्रीयया बुध्या प्रत्यपेक्ष्यपर्यालोच्य तद्यथाहमनेनैव भूतमर्थपदं लंभितं प्रापितं सन्नसावपि तावल्लौकिकस्तमुपदेशदातारमाद्रियते पूज्योयमित्येव जानाति तथा कल्याणं मंगलं देवतामिव स्तौति पर्युपास्ते च यदप्यसौ पूजनीयं किमपि नेच्छति तथापि तेन तस्य परमार्थोपकारिणोयथाशक्ति विधेयम्॥ ३७॥

तएणं से उदए पेढालपुत्ते भगवं गोयमं एवं वयासी एतेसिणं भंते पदाणं पुव्विं अन्नाणयाए असवणयाए अबोहिए अणभिगमेणं अदिठ्ठाणं असुयाणं अमुयाणं अविन्नायाणं अवोगडाणं अणिगूढाणं अविछिन्नाणं अणिसिठ्ठाणं अणिवूढाणं अणुवहारियाणं एयमठ्ठं णो सद्दहिय णो पत्तिय णो रोइय एतेसिणं भंते पदाणं एण्हिं जाणयाए सवणत्ताए बोहए जाव उवहारणयाए एयमठ्ठं सद्दहामि पत्तियामि रोएमि एवमेव से जहेयं तुप्भे वदह॥ ३८॥

अर्थ–तेवार पठी ते उदकपेढालपुत्र, भगवंत श्रीगौतम स्वामी प्रत्ये एम बोल्या के, (एतेसिणभंतेपदाणं के०) हेभगवन्! तमे एटला पद कह्यां, ते मे (पुव्विंअन्नाणयाए के०) पूर्वे न जाण्यां (असवणयाए के०) पूर्वे न सांभल्यां, (अबोहिए के०) जिनधर्मनी अप्राप्तिने लीधे एनी बोधि उपनी नहीं (अणभिगमेणं के०) विस्तारे बोधिना रहितपणा थकी एनो अभिगम न थयो, (अदिठ्ठाणं के०) पूर्वे साक्षात् पोतायी दीठां नहीं एटले पाम्यां नहीं ते भणी अदृष्ट (असुयाणं के०) कोइनी पासेथी सांभल्यां नहीं, (अमुयाणं के०) स्मरण कस्यां नहीं, (अविन्नायाणं के०) अविज्ञात एटले विशिष्ट बोधरहित (अवोगडाणं के०) विशेषथी गुरुयें कह्यां नहीं (अणिगूढाणं के०) अप्रगट एटले प्रगट न थयां (अविछिन्नाणं के०) विपक्षादिक संदेह छेद्यां नहीं (अणिसिठ्ठाणं के०) अनिश्रित काइयें सनजाव्यां नहीं (अणिवूढाणं के०) अण सांभल्यां माटे निर्वाह्यां नहीं (अणुवहारियाणं के०) अणविरत पणे हृदयने विषे अवधास्यां नहीं (एयमठ्ठं के० (ए प्रकारें पदाना अर्थ, (णोसद्दहिय के०) सद्दह्यो नहीं, एटले श्रद्धाकरी नहीं, (णोपत्तिय के०) प्रतित करी नहीं, (णो

परिहृतं भवति तदेव यथावस्थितमर्थं गौतमस्वामिनावगतोप्युदक पेढालपुत्रोयदा भगवं तं गौतममनाद्रियमाणोयस्याएव दिश प्रादुर्भूतस्तामेव दिश गमनाय सम्प्रधारितवान्॥३६

भगवचण उदाहु आउसतो उदगा जे खलु तहाभूतस्स समणस्सवा माहणस्सवा अतिए एगमवि आरिय धम्मिय सुवयण सोच्चा निसम्म अप्पणो चेव सुहम्माए पडिलेहीए अणुत्तर जोगखेमपय लभिएसमाणे सोवित्तावत आढाइ परिजाणेति वदति नमसति सक्कारेइ समाणेइ जाव कल्याण मगल देवय चेइय पज्जुवासति ॥ ३७ ॥

अर्थ—भगवत श्रीगौतम स्वामी बोल्या के, अहो आयुष्यमन् उदक ! खलु इति निश्चे जे कोइ तथाभूत श्रमण ब्राह्मणने समीपे एक पण आर्य धर्म संबधिक रूडु वचन सांभलीने सम्यक् प्रकारे सयमने विषे धारीने (अप्पणोचेवसुहम्माए के०) पोता थकी सूक्ष्म ,कुशाग्र वत् बुद्धियें करी (पडिलेहीए के०) आलोचीनें विचारीनें जाणे के, आ रूडा वचनें करी हु (अणुत्तर के०) प्रधान, (जोगखेमपयंलभिएसमाणे के०) यो गक्षेमपद एटले रूडु मुक्ति साधवा योग्य पद, तेने विषे पहोंचो एतावता ए थकी मे रूडु एक पद लाध्यु (सोवित्तावतं के०) ते पुरुष, ते उपदेशना देनार पुरुषनें (आढाइ के०) आदर करे, तथा (परिजाणेति के०) ए पुज्यछे एवु करी जाणे, तथा तेने वादे, ते आगल अजली करे (नमसति के०) मस्तक नमावे, (सक्कारेइ के०) सत्कार करे, वस्त्रादिके करी प्रतिलाभे (समाणेइ के०) अभ्युत्थानादिक करें, तथा यावत् कल्याणमगल देवता चैत्य एनी उपमा मानि स्तुति करे, तथा, (पज्जुवासति के०) पर्युपासना करे, यद्यपि ते उपदेशनो दातार कांइ वदनादिक वांछे नही,तथापि ते सांभलनारे ते परमार्थे उपकारी भणी यथाशक्तिये विनयादिक समाचरवो ॥३७॥

॥ दीपिका—तदा । भगवान् गौतमश्चाह । हे आयुष्मन्नुदक ! य खलु तथाभूतस्य श्रमणस्य ब्राह्मणस्य वांतिके समीपे एकमप्यर्थ धार्मिक सुवचन श्रुत्वानिशम्यावधार्यात्मनएव तदनुत्तर योगक्षेमपदमित्यवगम्य सूक्ष्मया बुद्ध्या प्रत्युपेक्ष्य विचार्येदमनेन योगक्षेमपदमनुत्तर लभित प्रापित सन् सोपि तावल्लौकिकोपि तमुपदेशदातारमाद्रियते पूज्योयमिति जानाति कल्याण मगल देवता चैत्यमिव पर्युपास्ते प्राकृतजनोपि चेद्धितोपदेशदातार पूजयति तदा किं पुनर्वाच्यमनुत्तरधर्मोपदेशकपूजायां विवेकिजनस्येति ! भाव ॥ ३७ ॥

॥ टीका–तं चैवमभिप्रायमुदकं दृष्ट्वा भगवान्गौतमस्वाम्याह । तद्यथा । आयुष्मन्नुदक ! य खलु तथाभूतस्य श्रमणस्य ब्राह्मणस्य वांतिके समीपे एकमपि योगक्षेमाय पद्यते गम्यते येनार्थस्तत्पदं योगक्षेमपदं किंभूतमार्यमार्यानुष्ठानहेतुत्वादार्यं तथा धार्मिकं शोभनवचनं सुवचनं सद्गतिहेतुत्वात्तदेवंभूतं पदं श्रुत्वा निशम्यावगम्याचात्मनएव तदनुत्तरं योगक्षेमपदमित्येवमवगम्य सूक्ष्मया कुशाग्रीयया बुद्ध्या प्रत्यपेक्ष्यपर्यालोच्य तद्यथाह्मने नैव भूतमर्थपदं लभितं प्रापितं सन्नसावपि तावल्लौकिकस्तमुपदेशदातारमाद्रियते पूज्योयमित्येवं जानाति तथा कल्याणं मंगलं देवतामिव स्तौति पर्युपास्ते च यदप्यसौ पूजनीयः किमपि नेछति तथापि तेन तस्य परमार्थोपकारिणोयथाशक्ति विधेयम् ॥ ३७ ॥

तएणं से उदए पेढालपुत्ते भगवं गोयमं एवं वयासी एतेसिणं भंते पदाणं पुव्विं अन्नाणयाए असवणयाए अबोहिए अणभिगमेणं अदिठाणं असुयाणं अमुयाणं अविन्नायाणं अवोगडाणं अणिगूढाणं अविछिन्नाणं अणिसिठाणं अणिवूढाणं अणुवहारियाणं एयमठं णो सद्दहियं णो पत्तियं णो रोइयं एतेसिणं भंते पदाणं एण्हिं जाणयाए सवणत्ताए बोहए जाव उवहारणयाए एयमठं सद्दहामि पत्तियामि रोएमि एवमेव से जहेयं तुझे वदह ॥ ३८ ॥

अर्थ–तेवार पठी ते उदकपेढालपुत्र, भगवंत श्रीगौतम स्वामी प्रत्यें एम बोल्या के, (एतेसिणंभंतेपदाणं के०) हेभगवन् ! तमे एटलां पद कह्यां, ते में (पुव्विंअन्नाणयाए के०) पूर्वे न जाण्यां (असवणयाए के०) पूर्वें न सांभल्यां, (अबोहिए के०) जिनधर्मनी अप्राप्तिने लीधे एनी बोधि उपनी नहीं (अणभिगमेणं के०) विस्तारे बोधिना रहितपणा थकी एनो अनिगम न थयो, (अदिठाणं के०) पूर्वें साक्षात् पोतायी दीठां नहीं एटले पाम्यां नहीं ते भणी अदृष्ट (असुयाणं के०) कोइनी पासेथी सांभल्यां नहीं, (अमुयाणं के०) स्मरण कस्यां नहीं, (अविन्नायाणं के०) अविज्ञात एटले विशिष्ट बोधरहित (अवोगडाणं के०) विशेषथी गुरुयें कह्यां नहीं (अणिगूढाणं के०) अप्रगट एटले प्रगट न थयां (अविछिन्नाणं के०) विपक्षादिक संदेह ठेद्यां नहीं (अणिसिठाणं के०) अनिश्चित कार्यें समजाव्यां नहीं (अणिवूढाणं के०) अण सांभल्यां माटे निर्वाह्यां नहीं (अणुवहारियाणं के०) अणनिरंतपणे हृदयने विषे अवधार्यां नहीं (एयमठं के० (ए प्रकारें पदाना अर्थ, (णोसद्दहियं के०) सद्दह्यो नही, एटले श्रद्धाकरी नहीं, (णोपत्तियं के०) प्रतित करी नहीं, (णो

रोयिय के०) प्रत्याख्यानमां रुचिपण न करी ते अर्थ रुच्यो नहीं (एतेसिपंचतेपया ण के०) एटला पद, हे नगवन्! (एण्हिं के०) हमणा (जाणयाए के०) जाण्यां, सांनव्यां, बोध थयो, यावत् हृदयने विषे अवधार्यां ते कारण माटें ए पदमो अर्थ, सद्दहुं, प्रतितमां आणुंडुं, तथा रुचेडे. किं बहुना (सेजहेयंतुप्नेवदह के०) ते जेम त में कहोडो (एवमेव के०) एमजडे ॥ ३७ ॥

॥ दीपिका–उदकोगौतमस्वामिनमाह । यथा एतेषां पदानां पूर्वमज्ञाततयाऽश्रवणत याऽनाकर्णनेन अबोध्याश्रवणेप्यनवबोधात् अनभिगमेन बोधेपि सम्यगप्रतिपत्याऽदृष्टा नामविज्ञातानामश्रुतानामविसृष्टानां गुरुणाऽदत्तानामनिर्गूढानां स्थिरतया स्थापितानाम नुपधारितानामनवधारितानां चानिर्णीतानां न श्रद्धानं कृतवान् न प्रत्याख्यानरुचिं च कृ तवान् । इदानीं तु युष्मदंतिके श्रुत्वा ज्ञात्वावदृष्टादिविशिष्टानां पदानामेनमर्थं श्रद्दधे प्रत्ययरुचिं च करोमि एवमेतद्यथा यूयं वदथ ॥ ३७ ॥

॥ टीका–तदेवं गौतमस्वामिनाभिहितउदकइदमाह । एतद्यथेतेषां पदानां पूर्वमज्ञा तया श्रवणतया बोध्याचेत्यादिना विशेषणकदंबकेन श्रद्धानं कृतवान् सांप्रतं तु युष्मद तिके विज्ञायैनमर्थं श्रद्दधेहं ॥ ३७ ॥

तएणं नगवं गोयमं उदयं पेढालपुत्तं एवं वयासी सद्दहाहिणं अज्जो पत्ति याहिणं अज्जो रोएहिणं अज्जो एवमेयं जहाणं अम्हे वयामो तएणं से उदए पेढालपुत्ते नगवं गोयमं एवं वयासी इच्छामि णं नंते तुप्नं अंतिए चाउज्जामो उ धम्माउ पंचमहव्वयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ॥३९॥

॥ अर्थ–तेवारे नगवंत श्रीगौतमस्वामी उदयपेढाल पुत्र प्रत्यें एम बोल्या के, अहो आर्य उदक! ए अर्थनी सद्दहणा कर केम के,श्री वीतरागनो नांखेलो अर्थ अन्यथा नथी, अहो आर्य! तथा (पत्तियाहिण के०)ए वचननी प्रतीत आण तथा ए वचननी रुचि कर. ए अर्थ एमज जेम हुं कहुं बुं ते नगवंतनो नाखेलोडे माटें ते तहत्ति करी जाणजे तेवार पडी ते उदक पेढालपुत्र, नगवंत श्री गौतम स्वामी प्रत्ये बोल्या के (इच्छामिणंनंते के०) इडुं बुं हे नगवन्! हुं तमारा (अंतिए के०) पासेथी चातुर्याम धर्म थकी पंच महाव्रत रूप धर्म, तथा पडिक्कमणा सहित धर्मने (उवसंपज्जित्ताणं के०),अंगीकार करीने (विहरित्त ए के०) विचरवाने वांडुं बुं ॥ ३९ ॥

॥ दीपिका–ततः श्रीगौतममुदकमेवमवादीद्यथा । अस्मिन्नर्थे श्रद्धानं कुरु हे आर्य! प्रत्ययं रुचिं च कुरु । एवमेतद्यथा वयं वदामः तथा त्वं प्रत्येहि । ततः स उदकः श्रीगौतममेवमवादीत् । इच्छाम्यहं भदंते युष्मत्समीपे चातुर्मासिकाच्चतुर्व्रतरूपाद्धर्मात्पंचयामिकं पंच महाव्रतरूपं सप्रतिक्रमणं धर्ममुपसंपद्य स्वीकृत्य विहर्तुमिति ॥ ३९ ॥

॥ टीका–एवमवगम्य गौतमस्वाम्युदकमेवाह । यथास्मिन्नर्थे श्रद्धानं कुरु नान्यथा सर्वज्ञोक्तं भवतीति मत्वा पुनरप्युदकएवमाह । इदमेवैतन्मे किंत्वमुष्माच्चातुर्यामिकाद्धर्मात्पंचयामिकं धर्मं सप्रति सप्रतिक्रमणमुपसंपद्य विहर्तुमिच्छामि ॥ ३९ ॥

तएणं से भगवं गोयमे उदयं पेढालपुत्तं गहाय जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छइत्ता तएणं से उदए पेढालपुत्ते समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करित्ता वंदइ नमंसति नमंसतित्ता एवं वयासी इच्छामि णं भंते तुम्नं अंतिये चाउज्जामाउ धम्माउ पंच महव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए तएणं समणे भगवं महावीरे उदयं एवं वयासी अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंधं करेहि तएणं से उदए पेढालपुत्ते समणस्स भगवउ महावीरस्स अंतिए चाउज्जामाउ धम्माउ पंच महव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ त्तिबेमि॥इति नालंदइज्जं सत्तमं अज्झयणं सम्मत्तं ॥ इति सूयगडांगबीयसुयक्खंधोसम्मत्तो ॥४०॥ ग्रंथाग्र ॥ २१०० ॥

अर्थ–ते वार पछी एवुं वचन सांभळीने भगवंत श्री गौतमस्वामी, ते उदक पेढाळ पुत्रने सघातें लइने ज्यां श्रमण भगवंत श्रीमहावीर देवछे, त्यां आव्या. तेवार पछी ते उदकपेढाळ पुत्र, श्रमण भगवंत श्रीमहावीर देवने (तिक्खुत्तो के०) त्रणवार प्रदक्षिणा पूर्वक वांदी नमस्कार करे, त्रण वार प्रदक्षिणा पूर्वक नमस्कार करीने एवी रीते बोल्याके, (इच्छामिणंभंते के०) हे भगवन्! तमारा समीपें हुं इच्छुं छुं शुं इच्छुं छुं? तोके चातुर्यामिक धर्म थकी रहित थइने पंच महाव्रत, तथा सप्रतिक्रमण धर्म, अंगीकार करी विचरवाने वांछुं छुं. तेवार श्रमण भगवान् श्रीमहावीर देव बोल्या के, (अहासुहंदेवाणुप्पिया के०) हे देवानुप्रिय! जेम तमारे सुख उपजे, तेम करो! (मापडिबंधकरेह के०) धर्मने विषे विलंब म करो. तेवार पछी ते उदक पेढाळपुत्र एवुं सांभळीने, श्रमण भगवंत श्रीमहावीर देवने

समीपें चातुर्यामिक धर्मथकी पंचमहाव्रत सप्रतिक्रमण धर्म आदरीने विचरेछे, सर्वज्ञ भाषितधर्म पालेछे (त्तिबेमि के०) श्री सुधर्मस्वामी पोताना शिष्यो प्रत्यें कहेछे के, मेंतो भगवंत श्री महावीरदेव पासेथी सांनल्युंछे, तेवुं तमने कहुं छुं इत्यादिक अर्थ, पूर्ववत् जाणवो॥४०॥एरीतें "णालंदइज्ज" नामा सातमा अध्ययननो अल्पार्थबालावबोध समाप्त थयो॥ ए बीजा श्री सूयगडांगना बीजा श्रुतस्कंधनो संक्षेपार्थ बालावबोध समाप्त थयो॥ समाप्तं च सूयगडांग आदितः ॥ सर्वाणि अध्ययनानि त्रयोविंशतिकानि संपूर्णानि ॥ श्री साधुरत्नशिष्येण पाशचंद्रेण वृत्तितः कृतबालावबोधार्थं द्वितीयांगस्य वार्तिकं समाप्तम् ॥१॥

॥ दीपिका–ततोभगवान् गौतमस्तं प्राक् प्रतिपन्नश्रीपार्श्वशासनव्रतमुदकं गृहीत्वा यत्र श्रीवीरोभगवांस्तत्रैवोपागच्छति । ततः स उदकः श्रमणं भगवंतं त्रिः कृत्वः आदक्षिण प्रदक्षिणं करोति तिस्रः प्रदक्षिणाः करोतीति कृत्वा च वंदते नमस्यति वंदित्वा नमस्यित्वा च एवमवादीत् इच्छामि भवदंते युष्मदंतिके चातुर्यामात्पंच महाव्रतिकं धर्ममुपसंपद्य विहर्तुमिति । ततः श्रीवीरस्तमुदकमेवमवादीद्यथा सुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबंध धर्मांतराय कार्षीरिति । ततः स उदकः श्रीवीरांतिके पंच महाव्रतिकग्रहणायोद्यतः भगवता तस्य सप्रतिक्रमणः पंचमहाव्रतिकोधर्मोनुज्ञातः स च तं धर्ममुपसंपद्य स्वीकृत्य विहरतीति। इति परिसमाप्त्यर्थं।ब्रवीमीति पूर्ववत्। सुधर्मस्वामी स्वशिष्यानिदमाह । तदहं सोहं ब्रवीमि येन मया भगवदंतिके श्रुतमिति ॥४०॥ नालंदीयाख्यमिदं सप्तममध्ययनं समाप्तं । तत्समाप्तौ च समाप्तोयं द्वितीयः श्रुतस्कंधस्तत्संपूर्त्तौ च पूर्णेयं श्रीसूत्रकृतदीपिका ॥ ग्रंथसंख्या ॥ सुमारे॥ (७०००)

॥ अथ प्रशस्तिः ॥ आर्या वृत्तम् ॥

निस्तंद्रचंद्रवारुणि,चंद्रकुले चरणचातुरीभाजः।विख्याततपेत्याख्या,जगति जगच्चंद्रसूरयोऽभूवन् ॥ १ ॥तेषां दोषाशमुषां, संताने सुकृतसंचयवितानें॥ श्रीसोमसुंदरगुरू,त्तमाद्भुमागमाश्चभवन्॥२॥तत्पट्टस्फुटकमला,भाले कालेयतिलकसंकाशः ॥श्रीमुनिसुंदरगुरवः,कामितसंपत्तिसुरतरवः ॥३॥ वात्येपि भारतीभि,रुदपादि वादिवर्गे यैः ॥ श्रीजयचंद्रमुनींद्रा,परगजेषु सिंहसदृशाः ॥४॥ तत्पदविशदस्थाने,स्थाने शृंगारसारतां भेजुः ॥श्रीरत्नशेखराः जगति यतः ख्यातिमापुस्ते॥५॥तेषामनकपट्टे,गुणसंघट्टे प्रभावकपपट्टे॥प्राप्ताधिकनिष्ठाः श्रीलक्ष्मीसागरा शिष्टाः ॥६॥ भर्त्सितकलिकालुष्या,शिष्याभापायथार्थनामानः ॥ श्रीसुमतिसाधुगुरवो,लक्ष्मीसुरभीकारसाद्यशोगुरवः ॥७॥ तत्पट्टे प्रवादेप्सित, पूरणचिंतामणीयमानानाम् ॥ लब्धाधिकमानानां, सुहेमविमलाभिधानानाम् ॥८॥ सूरीपगच्छनायक, देवीप्राप्तप्रभाप्रतिष्ठानाम् ॥ शिष्याणुर्गुणशासन,जननीतिथिसमिते (१५७३) वर्षे ॥९॥ विबुधः

मकशिष्य स्वस्य स्मृतये,परोपकृतये च ॥सूत्रकृतांगस्यैतां दर्पकुन्नोदीपिकामलिखत् ॥१०॥ काश्चित्प्रमाणयुक्ती,रग्रथयन्नात्र सुगमनाहेतो ॥ ततएव नैव विहितो,लक्षणसरिस्तथा कापि ॥११॥ सूत्रासंगतमत्रा,वादि कथंचिन्मया यदज्ञतया॥तच्छोधयंतु सुधिय ,कृपया मात्सर्यमुत्सार्य॥१२॥ग्रंथमितिरनुमिताऽत्र च,सप्तसहस्राणि किंचिदूनानि॥ विबुधजनवाच्यमानो, ग्रंथोय जगति जयतु चिरम् ॥१३॥ ॥ इति श्रीसूत्रकृतांगदीपिकायां प्रशस्तिं संपूर्णा ॥

॥ टीका—ततोसौ गौतमस्वामी तं गृहीत्वा तीर्थकरांतिकं जगाम । उदकश्च जगवंतं वंदित्वा पंचयामिकधर्मग्रहणायोद्यतोजगवतापि तस्य सप्रतिक्रमणं पंचयामोधर्मोनुज्ञातः सच तं तथाजूतं धर्ममुपसंपद्य विहरतीति । इति परिसमाप्त्यर्थे ब्रवीमीति सुधर्मस्वामी स्वशिष्यमिदमाह । तद्यथा सोहं ब्रवीमि येन मया जगवदंतिके श्रुतमिति गतोनुगमः । सांप्रतं नयास्ते चामी । नैगम,२संग्रह,३व्यवहार,४ ऋजुसूत्र, ५ शब्द, समभिरूढे, ६ वंभूता, ७ख्या सप्तैव । तेषां च मध्ये नैगमाद्याश्चत्वारोप्यर्थनयाः । अर्थमेव प्राधान्येन शब्दोपसर्जनमिच्छंति शब्दाद्यास्तु त्रयः शब्दनयाः शब्दप्राधान्येनार्थमिच्छंति । तत्र नैगमस्येदं स्वरूपं तद्यथा सामान्यविशेषात्मकस्य वस्तुनोनैकेन प्रकारेणावगमः परिच्छेदोनिगमस्तत्र जवोनैगमोमहासामान्यावांतरालसामान्यविशेषाणां परिच्छेदकस्तत्र महासामान्यं सर्वपदार्थानुयायिनी सत्तावांतराळसामान्यं द्रव्यत्वजीवत्वाजीवत्वादिकं विशेषाः परमाणवादयस्तद्गतावा शुक्लादयोगुणास्तदेवं तत्रितयमप्यसावेिच्छतीति निलयनप्रस्थकादिदृष्टांतैरनुयोगद्वारप्रतिपादितैस्तत्स्वरूपमवसेयमयं च नैगमः सामान्यविशेषात्मवस्तुसमाश्रयणेपि न सम्यग्दृष्टिर्नैदेनैव सामान्यविशेषयोराश्रयणात्तन्मताश्रितनैयायिकवैशेषिकवत् । तथा संग्रहोप्येवं स्वरूपस्तद्यथा सम्यक् पदार्थानां सामान्याकारतया ग्रहणं संग्रहस्तथा ह्ययमनुत्पन्नानुत्पन्नस्थिरैकस्वनावमेव सत्तारूपं वस्त्वसावन्युपगच्छति सत्तातोव्यतिरिक्तस्यावस्तुत्वं खरविषाणस्येव सच संग्रहः सामान्यविशेषात्मकस्य वस्तुनः सामान्यांशस्यैवाश्रयणान्मिथ्यादृष्टिस्तन्मताश्रितसांख्यवत् । व्यवहारनयस्य तु स्वरूपमिदं तद्यथा यथा लोकश्राह्यमेव वस्तु यथा च शुष्कताकिंके स्वानिप्रायकृतलक्षणानुगतं तथाजूतं वस्तु न जवत्येव नहि प्रतिलक्षणमर्थानामात्मजेदोजवति किं तर्हि यथा यथा लोके न विशिष्टजूयिष्ठतयार्थक्रियाकारि वस्तु व्यवह्रियते तथैव तदस्तित्वात्वाबालगोपालांगनादिप्रसिद्धत्वा दस्तुस्वरूपस्येत्ययमप्युत्पादव्ययधर्भाव्ययुक्तस्य वस्तुनोनान्युपगमात् मिथ्यादृष्टिस्तयाविधरथ्यापुरुषवदिति । ऋजुसूत्रमतं त्विदं ऋजुप्रगुणं तत्वविनष्टानुत्पन्नतयातीतानागतचक्रपरित्यागेन वर्तमानकाललक्षणजावि यद्वस्तु तत्सूत्रयति प्रतिपादयत्याश्रयतीति ऋजुसूत्रस्तस्यैवार्थक्रियाकारितया वस्तुत्वलक्षणयोगादित्ययमपि सामान्यविशेषोनयात्मकस्य वस्तुनः सामा

न्यांशपरित्यागेन विशेषांशस्यैव समाश्रयणाद्यो द्योदनिबन्ध सम्यग्दृष्टि
नभ्युपगमेन तदाश्रितविशेषस्यैव भावादिति । शब्दनयस्वरूपत्विद तद्यथा
स्वार्थप्रतीत्यभ्युपगमाल्लिंगवचनसाधनोपग्रहकालभेदाभिहितं वस्तु
गभेदाभिहितं वस्त्वन्यदेव भवति तद्यथा पुष्यस्तारकानक्षत्रमेव संख्याभिन्न
स्तु साधनभेदस्त्वय एहिमन्ये रथेन यास्यसि यातस्ते पिता अस्यायमर्थ
न्यसे यथाह रथेन यास्यामीत्यत्र मध्यमपुरुषयोर्व्यत्यय उपग्रहस्तु
योर्व्यत्ययस्तद्यथा तिष्ठति प्रतिष्ठते रमते उपरमतीत्यादि कालभेदस्त्वग्निष्टोमयाजी
स्य भविता अस्यायमर्थोग्निष्टोमयाजी अग्निष्टोमेनेष्टवान् भूते णिनिर्भवितेति
नद्यतने लुट् तत्रायमर्थ णिनिप्रत्ययोभवितेत्यस्य सव गाभूतकालता परित्यज्य भवि
त्काजता प्रतिपद्यते तेनेदमुक्त भवत्येवभूतोऽस्य पुत्रोभविष्यति योऽग्निष्टोमेन यक्ष्यति
वभूतं व्यवहारनयशब्दनयोनेच्छति लिंगाद्यभिन्नास्तु पर्याया अनेकविषयत्वेनेच्छति
घट कुभ इद शक्र पुरंदरइत्यादि। अयमर्थव्यञ्जनपर्यायोभयरूपस्य
यस्येव समाश्रयणान्मिथ्यादृष्टिरिति । तथा पर्यायाणां नानार्थतया
निरूढोभ ह्ययं घटादिपर्यायाणामेकार्थतामिच्छति तथाहि घटनाद्घट कुट्टनात्कुट
तीति कुम्भोनहि घटन कुट्टन भवति तथेदनादिद पुदारणात्पुरंदरइत्यादेरपि
निमित्तस्य न परस्परानुगतिरिति तदयमपि मिथ्यादृष्टि पर्यायाभिहितधर्मेव
यणाद्गृहीतप्रत्येकावयवाधहस्तिज्ञानवदिति। एवभूताभिप्रायस्त्वयं यदैव
मित्त चेष्टादिक तस्मिन्घटादिके वस्तुनि तदेवासौ भुवतिभ
वृत्तोघटोभवति न निर्व्यापारएव एवभूत तस्यार्थस्य समाश्रय- एवभू
ति । तदयमप्यनन्तधर्माध्यासितस्य वस्तुनोनाश्रयणान्मिथ्यादृष्टि । रत्नावल्यवयवे
अरागादौ कृतरत्नावलीव्यपदेशपुरुषवदिति । तदेव सर्वे नया प्रत्येक मिथ्यादृष्टयोऽ
न्यसव्यपेक्षास्तु सम्यक्त्व भजति अत्र च ज्ञानक्रियाभ्या मोक्षइतिकृत्वा ज्ञानक्रियानय
सर्वेप्येते स्वधिया समवतारणीया तत्रापि ज्ञाननयऐहिकामुष्मिकयोर्ज्ञानमेव फल
धकत्वेनेच्छति न क्रिया । क्रियानयस्तु क्रियामेव न ज्ञान परमार्थस्तूभयमपि समुदितम
न्यसव्यपेक्ष पग्वधवदभिप्रेतफलसिद्धयेऽलमिति एतद्भनयद्युक्तएव साधुरभिप्रेतमर्थ सा
द्युक्त च । सव्वेसि पिणयाण, बहुविहवत्तव्वय णिसामेत्ता ॥ तं सवणय विसुद्ध, ज च
गुणट्ठिउ साहू ॥ १ ॥ ४० ॥ समाप्तमिद नालंदाख्य सप्तममध्ययनम् ॥ इति समा
सूत्रकृतद्वितीयांगस्य टीका। कृता चेयं शीलाचार्येण वाहरिगणिसहायेन ॥ श्लोक
यदवाप्त मत्र पुण्य, टीकाकरणे मया समाधिभृता ॥ तेनापेततमस्को,भव्य- कल्य
भाग् भवतात् ॥ १ ॥ ग्रथाग्र (१२८५०) ॥